Fatawa Rizvia

With verification and translation of Arabic passages

Imam Ahmed Raza Barelvi (May his secret be sanctified)

6

Raza Foundation Jamia Nizamia Razvia

Inside Lohari Gate Lahore, 8 Pakistan (54000)

फ़तावा रिज़विया

अरबी इबारत के तख़रीज और तर्जुमे के साथ

इमाम अहमद रज़ा बरेलवी (कुद्दसा सिर्रहु)

६

रज़ा फ़ाउंडेशन जामिया निज़ामिया रिज़विया

अंदरुन लोहारी दरवाज़ा लाहौर, ८ पाकिस्तान (५४०००)

فتاویٰ رضویہ

مع تخریج و ترجمہ عربی عبارات

امام احمد رضا بریلوی قدس سرہ

۶

رضا فاؤنڈیشن جامعہ نظامیہ رضویہ

اندرون لوہاری دروازہ لاہور، ۸ پاکستان (۵۴۰۰۰)

Fatawa Rizvia Volume 6

Summary List 4
Preface ..... 5 Fatawa Rizvia Volume 6 ..... 6 Scientific Value and Worth of Fatawa Rizvia ..... 8 Professor Dr. Zahoor Ahmed Azhar, Chairman Arabic Department, Punjab University .... 8 Table of Contents ..... 13 List of Supplementary Issues ..... 25 Chapter on the Conditions of Prayer (Statement of prayer's conditions) ..... 29 Chapter on the Qibla (Statement regarding Qibla) ..... 53 Hidayat-ul-Muta'al fi Hadd-ul-Istiqlal 1324 AH (Guidance from Allah Almighty in determining Qibla) 61 Chapter on the Places of Prayer (Statement regarding places of prayer) ..... 131 Chapter on the Method of Prayer (Statement regarding the method of prayer) ..... 143 Chapter on Recitation (Statement regarding recitation) ..... 239 Treatise Ni'm al-Zad li-Luzum al-Dad (The best way to pronounce 'Dad') ..... 283 Al-Jam al-Dad 'an Sunan al-Dad 1317 AH (Bridling the mouth of those who prevent correct pronunciation of 'Dad') 303 Chapter on Imamate (Statement regarding leadership in prayer) ..... 379 Al-Nahy al-Akid 'an al-Salat Wara' 'Adi al-Taqlid 1305 AH (Strict prohibition of praying behind an enemy of Taqlid/imitation) 647 Sources and References 723

फ़तावा रज़विया छठा खंड

संक्षिप्त सूची ..... 4 प्रस्तावना (पेश लफ्ज़) ..... 5 फ़तावा रज़विया छठा खंड ..... 6 फ़तावा रज़विया का शैक्षिक महत्व और मूल्य ..... 8 प्रोफेसर डॉ. ज़हूर अहमद अज़हर, अध्यक्ष अरबी विभाग, पंजाब विश्वविद्यालय .... 8 विषय सूची ..... 13 पूरक मुद्दों की सूची ..... 25 नमाज़ की शर्तों का अध्याय (नमाज़ की शर्तों का विवरण) ..... 29 किबला का अध्याय (किबला का विवरण) ..... 53 हिदायत-उल-मुताल फ़ी हद्द-उल-इस्तिकबाल 1324 हिजरी (किबला निर्धारित करने में अल्लाह तआला का मार्गदर्शन) 61 नमाज़ के स्थानों का अध्याय (नमाज़ के स्थानों का विवरण) ..... 131 नमाज़ के तरीके का अध्याय (नमाज़ के तरीके का विवरण) ..... 143 क़िरात का अध्याय (क़िरात का विवरण) ..... 239 रिसाला निअ़म अज़-ज़ाद ली-लुज़ूम अज़-ज़ाद ('ज़ाद' पढ़ने का सर्वोत्तम तरीका) ..... 283 अल-जाम अज़-ज़ाद अन सुनन अज़-ज़ाद 1317 हिजरी ('ज़ाद' के तरीकों से रोकने वालों पर लगाम लगाना) 303 इमामत का अध्याय (इमामत का विवरण) ..... 379 अन-नह्य अल-अकीद अन-सवात वरा 'अदी अत-तक़लीद 1305 हिजरी (तक़लीद के दुश्मन के पीछे नमाज़ पढ़ने की सख्त मनाही है) 647 स्रोत और संदर्भ 723

पेज 1/736

فتاویٰ رضویہ جلد ششم

اجمالی فہرست ..... 4 پیش

لفظ ..... 5 فتاویٰ رضویہ جلد

ششم ..... 6 فتاویٰ رضویہ کی علمی قدر و

قیمت ..... 8 پروفیسر ڈاکٹر ظہور احمد اظہر چیئرمین شعبہ عربی

پنجاب یونیورسٹی ..... 8 فہرست

مضامین ..... 13 فہرست ضمنی

مسائل ..... 25 باب شروط الصلوۃ (نماز کی شرطوں

کا بیان) ..... 29 باب القبلۃ (قبلہ کا

بیان) ..... 53 ھدایۃ المتعال فی حد الاستقبال ۱۳۲۴ھ

(استقبال قبلہ کی تعیین میں اللہ تعالیٰ جل شانہ کی رہنمائی) 61 باب اماکن الصلوۃ (مقامات نماز کا

بیان) ..... 131 باب صفۃ الصلوۃ (طریقہ نماز کا

بیان) ..... 143 باب القرأۃ (قرأت کا

بیان) ..... 239 رسالہ نعم الزاد لزوم الضاد (ضاد پڑھنے کا

بہترین طریقہ) ..... 283 الجام الضاد عن سنن الضاد ۱۳۱۷ھ (ضاد کے طریقوں سے

روکنے والے منہ میں لگام دینا) 303 باب الامامۃ (امامت کا

بیان) ..... 379 النھی الـاکـید عـن الـصـلاۃ وراء عدی التقلید

۱۳۰۵ھ (دشمنِ تقلید کے پیچھے نماز ادا کرنا سخت منع ہے) 647 مآخذ و

مراجع 723

Volume Six Fatawa Razvia Fatawa Razvia with citations and translation of Arabic passages Imam Ahmad Raza Barelvi (May his soul be sanctified) Raza Foundation Jamia Nizamia Razavia Inside Lohari Gate, Lahore No. 8 Pakistan (54000) www.dawateislami.net I.T. Majlis of Dawat-e-Islami Page 1 of 736

जिल्द शशम (छठा भाग) फ़तावा रज़विया फ़तावा रज़विया मा तख़रीज व तर्जुमा अरबी इबारात (अरबी इबारतों के संदर्भ और अनुवाद के साथ) इमाम अहमद रज़ा बरेलवी कुद्दुस सिर्रहू रज़ा फाउंडेशन जामिया निज़ामिया रज़विया अन्दरून लोहारी दरवाज़ा, लाहौर नंबर 8 पाकिस्तान (54000) www.dawateislami.net आई.टी. मज्लिस-ए-दावत-ए-इस्लामी पेज 1 का 736

جلد ششم فتاوىٰ رضويہ فتاوىٰ رضويہ مع تخريج و ترجمہ عربى عبارات امام احمد رضا بريلوى

قدس سرہ رضا فاؤنڈيشن جامعہ نظاميہ رضويہ اندرون لوہارى دروازہ لاہور نمبر ٨ پاكستان

www.dawateislami.net I.T. Majlis of Dawat-e-Islami Page 1 (٥۴٠٠٠)

of 736

Volume Six Fatawa-e-Razawiyya

"Whomever Allah intends good for, He grants him understanding of religion." (Hadith)

AL-ATAYA AL-NABAWIAH FIL FATAWA AL-RAZAWIAH With referencing and translation of Arabic phrases

Volume Six

A grand jurisprudential encyclopedia of the fourteenth century, containing rare researches.

Imam Ahmad Raza Barelvi (May his secret be sanctified) 1272 AH ——————————— 1340 AH 1856 AD ——————————— 1921 AD

Raza Foundation, Jamia Nizamia Razawiyya Inside Lohari Gate, Lahore No. 8, Pakistan (54000) Phone Number: 7353713

Page 2 of 736

छठा खंड फ़तावा-ए-रज़विया

"अल्लाह जिसके साथ भलाई का इरादा करता है, उसे दीन (धर्म) की समझ अता फ़रमाता है।" (हदीस)

अल-अताया अल-नबवियाह फ़िल फ़तावा अर-रज़वियाह अरबी वाक्यांशों की तख़रीज (संदर्भ) और अनुवाद के साथ

छठा खंड

दुर्लभ शोधों पर आधारित चौदहवीं शताब्दी का भव्य फ़िक़्ही (न्यायशास्त्रीय) विश्वकोश

इमाम अहमद रज़ा बरेलवी (अल्लाह उनके गुप्त रहस्य को पवित्र रखे) १२७२ हिजरी ———————— १३४० हिजरी १८५६ ईस्वी ———————— १९२१ ईस्वी

रज़ा फ़ाउंडेशन, जामिया निज़ामिया रज़विया लोहारी गेट के अंदर, लाहौर नंबर ८, पाकिस्तान (५४०००) फ़ोन नंबर: ७३५३७१३

पृष्ठ २ का ७३६

جلد ششم فتاویٰ رضویہ

مَنْ يُرِدِ اللّٰهُ بِهٖ خَيْرًا يُفَقِّهْهُ فِي الدِّينِ (الحديث)

الْعَطَايَا النَّبَوِيَّةِ فِي الْفَتَاوَى الرَّضَوِيَّةِ مع تخريج و ترجمہ عربی عبارات

جلد ششم

تحقیقاتِ نادرہ پر مشتمل چودہویں صدی کا عظیم الشان فقہی انسائیکلو پیڈیا

امام احمد رضا بریلوی قدس سرہ العزیز ۱۲۷۲ھ ——————— ۱۳۴۰ھ ۱۸۵۶ء

——————— ۱۹۲۱ء

رضا فاؤنڈیشن، جامعہ نظامیہ رضویہ اندرون لوہاری دروازہ، لاہور نمبر ۸ پاکستان (۵۴۰۰۰) فون نمبر ۷۳۵۳۷۱۳

Fatawa Rizvia Volume Six

In the name of Allah, the Most Gracious, the Most Merciful

Book: Fatawa Rizvia Volume Six Author: Shaykh-ul-Islam Imam Ahmad Raza Qadri Barelvi (May his secret be sanctified) Arabic Text Translation: Hazrat Allama Mufti Muhammad Khan Qadri, Lahore Foreword: Hazrat Allama Mufti Muhammad Khan Qadri, Lahore Verification & Correction: 1- Maulana Nazir Ahmad Saeedi 2- Maulana Muhammad Umar Hazarvi Supervision & Patronage: Maulana Mufti Muhammad Abdul Qayyum, Secretary General, Tanzim al-Madaris Ahl-e-Sunnat Pakistan Index Arrangement: Maulana Hafiz Muhammad Abdus Sattar Saeedi, Director of Education, Jamia Nizamia, Lahore Calligraphy: Muhammad Sharif Gul, Karrian Kalan (Gujranwala) Proof Reading: (1) Maulana Sardar Ahmad Hasan Saeedi (2) Maulana Nazir Ahmad Saeedi Pasting: Maulana Muhammad Yasin Qadri Shattari Pages: 736 Publication: Rabi' al-Awwal 1415 AH / August 1994 AD Press: Yusuf Umar Printer B/12-Inside Bhati Gate, Lahore Publisher: Raza Foundation, Jamia Nizamia, Inside Lohari Gate, Lahore Price: 250

Available at: * Maktaba Qadria, Jamia Nizamia Rizvia, Inside Lohari Gate, Lahore * Maktaba Tanzim al-Madaris, Jamia Nizamia Rizvia, Inside Lohari Gate, Lahore * Maktaba Ziaia, Bohar Bazar, Rawalpindi * Zia-ul-Quran Publications, Ganj Bakhsh Road, Lahore

फ़तावा रिज़विया छठा खंड

अल्लाह के नाम से जो बहुत मेहरबान, निहायत रहम वाला है

किताब: फ़तावा रिज़विया छठा खंड लेखक: शैखुल इस्लाम इमाम अहमद रज़ा क़ादरी बरेलवी (रहमतुल्लाह अलैह) अरबी इबारत का अनुवाद: हज़रत अल्लामा मुफ़्ती मुहम्मद खां क़ादरी, लाहौर प्रस्तावना: हज़रत अल्लामा मुफ़्ती मुहम्मद खां क़ादरी, लाहौर सत्यापन और सुधार: १- मौलाना नज़ीर अहमद सईदी २- मौलाना मुहम्मद उमर हज़ारवी संरक्षण और मार्गदर्शन: मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद अब्दुल क़य्यूम, महासचिव, तंज़ीमुल मदारिस अहले सुन्नत पाकिस्तान सूची व्यवस्था: मौलाना हाफ़िज़ मुहम्मद अब्दुल सत्तार सईदी, शिक्षा निदेशक, जामिया निज़ामिया, लाहौर सुलेख: मुहम्मद शरीफ़ गुल, कड़ियान कलां (गुजरानवाला) प्रूफ रीडिंग: (१) मौलाना सरदार अहमद हसन सईदी (२) मौलाना नज़ीर अहमद सईदी पेस्टिंग: मौलाना मुहम्मद यासीन क़ादरी शत्तारी पृष्ठ संख्या: ७३६ प्रकाशन तिथि: रबीउल अव्वल १४१५ हिजरी / अगस्त १९९४ ईस्वी मुद्रक: यूसुफ़ उमर प्रिंटर बी/12-अंदरून भाटी गेट, लाहौर प्रकाशक: रज़ा फाउंडेशन, जामिया निज़ामिया, अंदरून लोहारी दरवाज़ा, लाहौर कीमत: २५०

मिलने के पते: * मकतबा क़ादरिया, जामिया निज़ामिया रिज़विया, अंदरून लोहारी दरवाज़ा, लाहौर * मकतबा तंज़ीमुल मदारिस, जामिया निज़ामिया रिज़विया, अंदरून लोहारी दरवाज़ा, लाहौर * मकतबा ज़िआया, बोहड़ बाज़ार, रावलपिंडी * ज़िआ-उल-क़ुरान पब्लिकेशन्स, गंज बख्श रोड, लाहौर

पृष्ठ 736 में से 3

فتاویٰ رضویہ جلد ششم

بِسْمِ اللّٰہِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِیْمِ

کتاب: فتاویٰ رضویہ جلد ششم تصنیف: شیخ الاسلام امام احمد رضا قادری بریلوی قدس سرہ العزیز ترجمہ عربی عبارات: حضرت علامہ مفتی محمد خاں قادری، لاہور پیش لفظ: حضرت علامہ مفتی محمد خاں قادری، لاہور تخریج و تصحیح: ۱۔ مولانا نظیر احمد سعیدی ۲۔ مولانا محمد عمر ہزاروی باہتمام و سرپرستی: مولانا مفتی محمد عبدالقیوم ناظم اعلیٰ تنظیم المدارس اہلسنت پاکستان ترتیب فہرست: مولانا حافظ محمد عبدالستار سعیدی، ناظم تعلیمات جامعہ نظامیہ، لاہور کتابت: محمد شریف گل، کڑیال کلاں (گوجرانوالا) پروف ریڈنگ: (۱) مولانا سردار احمد حسن سعیدی (۲) مولانا نظیر احمد سعیدی پیسٹنگ: مولانا محمد یسین قادری شطاری صفحات: ۷۳۶ اشاعت: ربیع الاول ۱۴۱۵ھ اگست ۱۹۹۴ء مطبع: یوسف عمر پرنٹر بی/12-اندرون بھائی گیٹ لاہور ناشر: رضا فاؤنڈیشن جامعہ نظامیہ، اندرون لوہاری دروازہ، لاہور قیمت: ۲۵۰

ملنے کے پتے: * مکتبہ قادریہ جامعہ نظامیہ رضویہ، اندرون لوہاری دروازہ، لاہور * مکتبہ تنظیم المدارس جامعہ نظامیہ رضویہ، اندرون لوہاری دروازہ، لاہور * مکتبہ ضیائیہ، بوہڑ بازار، راولپنڈی * ضیاء القرآن پبلیکیشنز، گنج بخش روڈ، لاہور

Fatawa Rizvia, Volume 6

Summary Table of Contents

Preface ..... 5 Chapter on the Conditions of Prayer ..... 29 Chapter on the Description of Prayer ..... 143 Chapter on Recitation ..... 239 Chapter on Leadership (Imamat) 379

List of Treatises

o Hadiyat al-Muta'al ..... 61 o Ni'm az-Zad ..... 283 o Al-Jam al-Sad ..... 303 o An-Nahy al-Akid 647

Page 4 of 736

फतावा-ए-रजविया, जिल्द 6 (छठा भाग)

संक्षिप्त अनुक्रमणिका

प्रस्तावना (पेश लफ्ज़) ..... 5 नमाज़ की शर्तों का अध्याय (बाब शुरूत-उस-सलात) ..... 29 नमाज़ के तरीके का अध्याय (बाब सिफ़त-उस-सलात) ..... 143 क़िराअत (कुरान पाठ) का अध्याय ..... 239 इमामत (नेतृत्व) का अध्याय 379

लेखों की सूची

o हिदायत-अल-मुता'अल ..... 61 o ने'म-अज़-ज़ाद ..... 283 o अल-जाम-अस-साद ..... 303 o अन-नही-अल-अकीद 647

فتاوی رضویہ، جلد ششم

اجمالی فہرست

پیش لفظ ..... ۵ باب شروط

الصلوۃ ..... ۲۹ باب صفۃ

الصلوۃ ..... ۱۴۳ باب

القرآۃ ..... ۲۳۹ باب

الامامۃ ۳۷۹

فہرست رسائل

o ہدیۃ المتعال ..... ۶۱ o نعم

الزاد ..... ۲۸۳ o الجام

الصاد ..... ۳۰۳ o النہی

الاکید ۶۴۷

Volume Six Fatawa Razawiyya

Foreword

In March 1988, under the supervision of the Raza Foundation, a grand project for the new publication of Fatawa Razawiyya began. This project involved tracing references, translating Arabic and Persian passages, and organizing the text into paragraphs. This was not an easy task as it required passing through the following difficult and challenging stages: (1) Establishing a library containing all the books mentioned by the author. (2) Searching for certain rare manuscripts for reference verification. (3) Forming a committee of scholars who could diligently scrutinize the books and carry out the work of tracing references. (4) Organizing and managing the support and maintenance of these scholars. (5) Contacting scholars for translation who are not only perfectly skilled in Arabic, Persian, and Urdu and have a vast knowledge of traditional and rational sciences but are also well-acquainted with the author's style. (6) Finding a calligrapher who not only knows how to write Arabic, Persian, and Urdu but is also a master of this art. (7) Searching for hardworking and sincere individuals for proofreading after the calligraphy of thousands of pages.

The head of the Raza Foundation and his assistants deserve a hundredfold congratulations because, by the grace and mercy of Allah Almighty and the kindness and affection of the Noble Prophet (peace and blessings of Allah be upon him), they crossed these stages with great steadfastness and succeeded in presenting six volumes of the new Fatawa Razawiyya in a very short period, while the seventh volume is under calligraphy.

I.T. Majlis of Dawat-e-Islami Page 5 of 736

खण्ड छह फ़तावा रज़विया

प्रस्तावना

मार्च 1988 में रज़ा फ़ाउंडेशन के तत्वावधान में फ़तावा रज़विया के नए प्रकाशन की जिस भव्य योजना की शुरुआत हुई थी, उसमें संदर्भों की खोज, अरबी और फ़ारसी उद्धरणों का अनुवाद और पैराग्राफ बनाने का संकल्प लिया गया था। यह कोई आसान काम नहीं था क्योंकि इसके लिए निम्नलिखित कठिन और चुनौतीपूर्ण चरणों से गुज़रना अनिवार्य था: (1) एक ऐसे पुस्तकालय की स्थापना जिसमें लेखक द्वारा उल्लेखित सभी पुस्तकें मौजूद हों। (2) संदर्भों की खोज के लिए कुछ दुर्लभ पांडुलिपियों की तलाश। (3) ऐसे विद्वानों की एक समिति का गठन जो बड़ी मेहनत से पुस्तकों की छानबीन करके संदर्भों की खोज का कार्य संपन्न कर सकें। (4) इन विद्वानों के भरण-पोषण और प्रबंधन की व्यवस्था। (5) अनुवाद के लिए ऐसे विद्वानों से संपर्क करना जो न केवल अरबी, फ़ारसी और उर्दू भाषा में पूर्ण दक्षता रखते हों और पारंपरिक व तर्कसंगत विज्ञानों में व्यापक दृष्टि रखते हों, बल्कि लेखक के मिज़ाज (शैली) से भी परिचित हों। (6) ऐसे सुलेखक (कैलिग्राफर) की तलाश जो न केवल अरबी, फ़ारसी और उर्दू लिखना जानता हो बल्कि इस कला का उस्ताद भी हो। (7) इन हज़ारों पृष्ठों के लेखन के बाद इसकी प्रूफ़-रीडिंग के लिए परिश्रमी और ईमानदार व्यक्तियों की तलाश।

रज़ा फ़ाउंडेशन के प्रमुख और उनके सहायक सौ-सौ बधाई के पात्र हैं कि अल्लाह तआला के फ़ज़्ल-ओ-करम और नबी करीम (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) की इनायत और शफ़क़त से उन्होंने इन चरणों को बड़े धैर्य और दृढ़ता के साथ पार किया और बहुत कम समय में फ़तावा रज़विया (आधुनिक) के छह खंड प्रस्तुत करने में सफल रहे, जबकि सातवां खंड लेखन के अधीन है।

I.T. Majlis of Dawat-e-Islami पृष्ठ 736 का 5

جلد ششم فتاوی رضویہ

پیش لفظ

مارچ ۱۹۸۸ء میں رضا فاؤنڈیشن کے زیر اہتمام فتاوی رضویہ کی جدید اشاعت کے جس عظیم الشان منصوبے کا آغاز ہوا تھا اس میں تخریج حوالہ جات، عربی و فارسی عبارات کے ترجمہ اور پیرا بندی کا التزام کیا گیا تھا یہ کوئی آسان کام نہ تھا کیونکہ اس میں مندرجہ ذیل کٹھن اور دشوار مراحل سے گزرنا لازمی تھا؛ (۱) ایک ایسی لائبریری کا قیام جس میں مصنف کی ذکر کردہ تمام کتب موجود ہوں۔ (۲) تخریج حوالہ جات کے لئے بعض نایاب مخطوطات کی تلاش۔ (۳) ایسے اہل علم حضرات کی کمیٹی کا قیام جو نہایت محنت سے کتب کی چھان بین کر کے تخریج حوالہ جات کا کام سر انجام دے سکیں۔ (۴) ان حضرات کی کفالت کا انتظام و انصرام۔ (۵) ترجمہ کے لئے ایسے اہل علم حضرات سے رابطہ جو نہ صرف عربی، فارسی اور اردو زبان میں کامل مہارت اور علوم نقلیہ و عقلیہ میں وسیع نظر رکھتے ہوں بلکہ مصنف کے مزاج شناس بھی ہوں۔ (۶) ایسے خوشنویس کی تلاش جو عربی، فارسی، اور اردو صرف لکھنا ہی نہ جانتا ہو بلکہ اس فن کا استاد ہو۔ (۷) ان ہزار ہا صفحات کی کتابت کے بعد اس کی پروف ریڈنگ کے لئے محنتی اور مخلص افراد کی تلاش۔

رضا فاؤنڈیشن کے سربراہ اور ان کے معاونین لائق صد تبریک ہیں کہ اللہ تعالیٰ کے فضل و کرم اور نبی کریم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی عنایت و شفقت سے انہوں نے ان مراحل کو عظیم استقامت کے ساتھ عبور کیا اور انتہائی قلیل عرصے میں فتاوی رضویہ (جدید) کی چھ جلدیں پیش کرنے میں کامیاب ہو گئے جبکہ ساتویں جلد زیر کتابت ہے۔

Fatawa Razawiyyah Volume Six

Fatawa Razawiyyah Volume Six

This volume consists of answers to 475 questions, starting from the beginning of Fatawa Razawiyyah Volume Three (Old Edition) up to the end of the chapter on Imamate (Leadership in Prayer). In addition to numerous beneficial supplementary points, it encompasses four permanent chapters: (1) Bab Shurut al-Salat (Chapter on the Conditions of Prayer) (2) Sifat al-Salat (Description of Prayer) (3) Bab al-Qira'at (Chapter on Recitation) (4) Bab al-Imamah (Chapter on Imamate)

It contains these four priceless and valuable treatises: (1) Hidayat al-Muta'al fi Hadd al-Istiqbal (1324 AH) - Regarding the direction of the Qibla. (2) Ni'm al-Zad li-Rum al-Dad (1317 AH) - Research on the letter 'Dad'. (3) Al-Jam al-Sad 'an Sunan al-Dad (1317 AH) - Rules of the letter 'Dad' and the method of its pronunciation. (4) Al-Nahy al-Akid 'an al-Salat wara' 'Adi al-Taqlid (1305 AH) - Description of the impermissibility of praying behind non-followers (Ghayr Muqallidin).

Note: The following treatises could not be included in the book due to their unavailability: (1) Al-Turrah fi Satr al-'Awrah (2) Azin Kafil bi-Hukm al-Qa'dah fil Maktubah wal Nawafil (3) Jamal al-Ijmal li-Tawqif Hukm al-Salat fin Ni'al

The informative article "The Academic Value and Worth of Fatawa Razawiyyah" by Professor Dr. Zahoor Ahmad Azhar, Chairman of the Arabic Department at Punjab University, which was read on October 27, 1993, at an introductory ceremony for Fatawa Razawiyyah at the Avari Hotel, Lahore, is being included in Volume Six due to its academic importance.

All praise is for Allah, this humble servant has been blessed with the opportunity to translate the Arabic and Persian passages of this section.

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

यह जिल्द फ़तावा रज़विया जिल्द तीन (पुरानी) के आरम्भ से लेकर 'बाब अल-इमामत' (इमामत का अध्याय) के अंत तक 475 प्रश्नों के उत्तरों पर आधारित है। अनगिनत लाभदायक अतिरिक्त फायदों के अलावा, इसमें चार स्वतंत्र अध्याय शामिल हैं: (१) बाब शुरूत अल-सलात (नमाज़ की शर्तों का अध्याय) (२) सिफ़त अल-सलात (नमाज़ का वर्णन) (३) बाब अल-क़िराअत (क़िराअत का अध्याय) (४) बाब अल-इमामत (इमामत का अध्याय)

इसमें ये चार अनमोल और कीमती शोध पत्र (रिसाले) हैं: (१) हिदायत अल-मुतआल फ़ी हद्द अल-इस्तिक़बाल (१३२४ हि.) - क़िबला की दिशा के वर्णन में। (२) नि'म अल-ज़ाद लि-रूम अल-दाद (१३१७ हि.) - अक्षर 'दाद' (ض) पर शोध। (३) अल-जाम अल-साद अन सुनन अल-दाद (१३१७ हि.) - अक्षर 'दाद' के नियम और उसके उच्चारण का तरीका। (४) अन-नही अल-अकीद अन अल-सलात वरा' अदी अल-तक़लीद (१३०५ हि.) - गैर-मुक़ल्लिदीन के पीछे नमाज़ पढ़ने के अवैध होने का वर्णन।

नोट: निम्नलिखित शोध पत्र उपलब्ध न होने के कारण पुस्तक में शामिल नहीं किए जा सके (१) अत-तुर्रह फ़ी सत्र अल-औरह (२) अज़ीम काफ़िल बि-हुक्म अल-क़ादा फ़िल मक्तूबा वल नवाफ़िल (३) जमाल अल-इजमाल लि-तौक़ीफ़ हुक्म अल-सलात फ़िन नि'आल

पंजाब विश्वविद्यालय के अरबी विभाग के अध्यक्ष प्रोफेसर डॉ. ज़हूर अहमद अज़हर का ज्ञानवर्धक लेख "फ़तावा रज़विया का शैक्षिक मूल्य और महत्व", जो २७ अक्टूबर १९९३ को आवारी होटल लाहौर में फ़तावा रज़विया के एक परिचयात्मक समारोह के अवसर पर पढ़ा गया था, लेख के शैक्षिक महत्व को देखते हुए जिल्द छठी में शामिल किया जा रहा है।

अल्हम्दुलिल्लाह, इस हिस्से की अरबी और फारसी इबारतों का अनुवाद करने का सौभाग्य इस तुच्छ सेवक को प्राप्त हुआ है।

पृष्ठ ७३६ में से ६

فتاوی رضویه جلد ششم

فتاوی رضویه جلد ششم

یہ جلد فتاوی رضویہ جلد سوم قدیم کے آغاز سے لے کر باب الامامہ کے آخر تک ۴۷۵ سوالوں کے جوابات پر مشتمل ہے اور بے شمار ضمنی فوائد نافعہ کے علاوہ چار مستقل ابواب کو محیط ہے: (۱) باب شروط الصلوۃ (۲) صفۃ الصلوۃ (۳) باب القرأۃ (۴) باب الامامۃ

اس میں یہ چار انمول قیمتی رسائل ہیں: (۱) ہدایۃ المتعال فی حد الاستقبال (۱۳۲۴ھ) سمت قبلہ کے بیان میں (۲) نعم الزاد لروم الضاد (۱۳۱۷ھ) حرف ضاد کی تحقیق (۳) الجام الصاد عن سنن الضاد (۱۳۱۷ھ) حرف ضاد کے احکام اور اس کے ادا کرنے کا طریقہ (۴) النہی الاکید عن الصلوۃ وراء عدی التقلید (۱۳۰۵ھ) غیر مقلدین کے پیچھے نماز ناجائز ہونے کا بیان

ف: مندرجہ ذیل رسائل دستیاب نہ ہونے کی وجہ سے کتاب میں شامل نہ ہوسکے: (۱) الطرۃ فی سترالعورۃ (۲) ازین کافل بحکم القعدۃ فی المکتوبۃ والنوافل (۳) جمال الاجمال لتوقیف حکم الصلوۃ فی النعال

پروفیسر ڈاکٹر ظہور احمد اظہر صاحب چیئرمین شعبہ عربی پنجاب یونیورسٹی کا معلوماتی مقالہ "فتاوی رضویہ کی علمی قدر و قیمت" جو ۲۷ اکتوبر ۱۹۹۳ء کو آواری ہوٹل لاہور میں فتاوی رضویہ کی ایک تعارفی تقریب کے موقع پر پڑھا گیا، مقالہ کی علمی اہمیت کے پیش نظر جلد ششم میں شامل کیا جا رہا ہے۔

الحمد للہ اس حصہ کی عربی و فارسی عبارات کا ترجمہ کرنے کی سعادت اس حقیر کو حاصل ہوئی ہے۔

Fatawa Rizvia Volume Six For which I offer a prostration of gratitude in the presence of Allah Almighty that He has granted the success of completion; these days, the translation of the seventh volume is in progress. Readers are requested to favor us with their valuable opinions and pray that Allah Almighty, through the glorious intercession of His beloved (Prophet), peace and blessings of Allah be upon him, makes the Raza Foundation successful in this project. 1st Muharram-ul-Haram 1414 AH o The humblest of people, Muhammad Khan Qadri (may he be forgiven) Jamia Islamia Lahore

Page 7 of 736

फ़तावा रज़विया छठा खंड जिसके लिए मैं अल्लाह तआला की बारगाह में सज्दा-ए-शुक्र बजा लाता हूँ कि उसने (इसके) पूरा होने की तौफ़ीक़ अता फरमाई, इन दिनों सातवें खंड का अनुवाद जारी है। पाठकों से अनुरोध है कि वे अपनी बहुमूल्य राय से नवाज़ें और दुआ करें कि अल्लाह तआला अपने प्यारे हबीब (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) के महान वसीले से रज़ा फाउंडेशन को इस परियोजना में सफल बनाए। 1 मुहर्रम-उल-हराम 1414 हिजरी o सबसे अदना इंसान, मुहम्मद खान क़ादरी (अल्लाह उन्हें माफ करे) जामिया इस्लामिया लाहौर

पृष्ठ 736 में से 7

فتاوی رضویہ جلد ششم جس پر اللہ تعالیٰ کی بارگاہ میں سجدہ شکر بجالاتا ہوں کہ اس نے تکمیل کی توفیق بخشی، ان دنوں جلد ہفتم کا ترجمہ جاری ہے۔ قارئین سے التماس ہے کہ وہ اپنی قیمتی آراء سے نوازیں اور دعا کریں کہ اللہ تعالیٰ اپنے پیارے حبیب صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے وسیلہ جلیلہ سے رضا فاؤنڈیشن کو اس منصوبہ میں کامیاب فرمائے۔ یکم محرم الحرام ۱۴۱۴ھ o احقر الانام محمد خان قادری عفی عنہ جامعہ اسلامیہ لاہور

Fatawa Rizvia Volume Six

The Scholarly Value and Worth of Fatawa Rizvia Professor Dr. Zahoor Ahmed Azhar, Chairman, Department of Arabic, Punjab University

In Islam, the writing of fatwas (legal opinions) is both a religious duty and a magnificent art. However, just as this duty is delicate and important, this art is equally difficult and complex. In the Book of Allah, the office of *Ifta* (issuing fatwas) is attributed to Allah Almighty: "(Say: Allah gives you a ruling [fatwa])". It is also not hidden from the people of knowledge that the terms *Fatwa*, *Ifta*, and *Mufti* were issued from the tongue of Prophethood. Similarly, along with the Prophetic era, during the blessed era of the Rightly Guided Caliphs, the office of granting fatwas or *Ifta* was a very important and elevated position. Throughout various periods of Islamic history, the writing of fatwas or the office of *Ifta* and *Mufti* has always been considered extremely significant and high. While all these points constitute an important subject and an interesting study, this is not the occasion for a detailed account of all of them. However, it will not be misplaced to make a brief reference to the fact that the great services rendered by the scholars of the Indo-Pak subcontinent in the field of fatwa writing over the past twelve or thirteen centuries, and the guidance the office of *Ifta* has provided to the Muslim Ummah, are as commendable as they are a source of pride.

The Indo-Pak subcontinent has been among those Islamic regions where the jurisprudence (Fiqh) of Imam al-Azam Abu Hanifa Nu'man bin Thabit (may Allah Almighty have mercy on him) has flourished. The Hanafi scholars here have performed magnificent services for Islamic jurisprudence. Like the Prophetic biography (*Sirat*), the sciences of Sharia have also been a magnificent and highly favored subject among the people of knowledge in this region. The scholars here kept various aspects of religious sciences, such as jurisprudence, principles of jurisprudence (*Usul al-Fiqh*), and fatwa writing, at the center of their study and attention. They produced such a vast repository of Sharia sciences in Arabic, Persian, Urdu, and other regional languages, which is an extremely precious asset for the nation, and encompassing it would not be easy for any historian. Among this magnificent scholarly and jurisprudential treasure of the senior Hanafi scholars of the Indo-Pak subcontinent, the fatwas of the Imam of the Ahl al-Sunnah, Maulana Ahmed Raza Khan Fadil Barelvi (may Allah Almighty have mercy on him), titled 'Al-Ataya al-Nabawiyyah fil Fatawa al-Ridawiyyah', commonly known and widely used as Fatawa Rizvia, are undoubtedly a unique and precious asset.

The great repository of fatwas on Islamic jurisprudence that the scholars of Islam in the South Asian subcontinent or Indo-Pak...

Page 8 of 736

फतावा रज़विया छठा खंड

फतावा रज़विया का वैज्ञानिक मूल्य और महत्व प्रोफेसर डॉ. ज़हूर अहमद अज़हर, अध्यक्ष, अरबी विभाग, पंजाब विश्वविद्यालय

इस्लाम में फतवा लेखन एक धार्मिक कर्तव्य भी है और एक शानदार कला भी। लेकिन, यह कर्तव्य जितना नाजुक और महत्वपूर्ण है, यह कला उतनी ही कठिन और जटिल है। अल्लाह की किताब में 'इफ्ता' (फतवा जारी करने) के पद का संबंध अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त से बताया गया है: "(कहें: अल्लाह तुम्हें फतवा देता है)"। विद्वानों से यह बात भी छिपी नहीं है कि फतवा, इफ्ता और मुफ्ती शब्द पैगंबर की जुबान से भी निकले हैं। इसी प्रकार, नबवी युग के साथ-साथ ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन के धन्य युग में भी फतवा देने या इफ्ता का पद बहुत महत्वपूर्ण और ऊंचा था। इस्लामी इतिहास के विभिन्न कालखंडों में, फतवा लेखन या इफ्ता और मुफ्ती के पद को हमेशा बहुत महत्वपूर्ण और ऊंचा माना गया है। हालांकि ये सभी बातें एक महत्वपूर्ण विषय और दिलचस्प अध्ययन हैं, लेकिन इन सबकी विस्तार से चर्चा करने का यह अवसर नहीं है। फिर भी, इस बात की ओर संक्षिप्त संकेत करने में कोई बुराई नहीं होगी कि पिछले बारह-तेरह सौ वर्षों के दौरान भारत-पाक उपमहाद्वीप के विद्वानों ने फतवा लेखन के क्षेत्र में जो महान सेवाएं दी हैं और इफ्ता के पद ने मुस्लिम उम्माह को जो मार्गदर्शन प्रदान किया है, वह जहाँ प्रशंसनीय है, वहीं गर्व का विषय भी है।

भारत-पाक उपमहाद्वीप उन इस्लामी क्षेत्रों में शामिल रहा है जहाँ इमाम-ए-आज़म अबू हनीफ़ा नुमान बिन साबित (अल्लाह उन पर रहम करे) के न्यायशास्त्र (फिक्ह) का बोलबाला रहा। यहाँ के हनफी विद्वानों ने इस्लामी न्यायशास्त्र की शानदार सेवा की है। पैगंबर की जीवनी (सीरत) की तरह, शरीयत के विज्ञान भी इस क्षेत्र के विद्वानों के बीच एक शानदार और अत्यधिक पसंदीदा विषय रहा है। यहाँ के विद्वानों ने न्यायशास्त्र के विज्ञान, यानी फिक्ह, उसूल-ए-फिक्ह और फतवा लेखन के अलावा शरीयत विज्ञान के अनगिनत अन्य पहलुओं को अपने अध्ययन और ध्यान का केंद्र बनाए रखा। उन्होंने अरबी, फारसी, उर्दू और अन्य क्षेत्रीय भाषाओं में शरीयत विज्ञान का इतना विशाल भंडार तैयार किया है जो उम्मत की अत्यंत बहुमूल्य संपत्ति है और इसे समेटना किसी भी इतिहासकार के लिए आसान नहीं होगा। भारत-पाक उपमहाद्वीप के वरिष्ठ हनफी विद्वानों के इस शानदार वैज्ञानिक और न्यायशास्त्रीय खजाने में, इमाम-ए-अहले सुन्नत हज़रत मौलाना अहमद रज़ा खान फाज़िल बरेलवी (अल्लाह उन पर रहम करे) के फतावा 'अल-अताया अल-नबविया फिल फतावा अल-रज़विया', जो 'फतावा रज़विया' के नाम से प्रसिद्ध और प्रचलित हैं, निस्संदेह एक अद्वितीय और मूल्यवान संपत्ति हैं।

दक्षिण एशियाई उपमहाद्वीप या भारत-पाक के विद्वानों ने इस्लामी न्यायशास्त्र के फतवों का जो महान भंडार...

पृष्ठ ८ / ७३६

فتاویٰ رضویہ جلد ششم

فتاویٰ رضویہ کی علمی قدر و قیمت پروفیسر ڈاکٹر ظہور احمد اظہر چیئرمین شعبہ عربی پنجاب یونیورسٹی

اسلام میں فتویٰ نویسی ایک دینی فریضہ بھی ہے اور ایک مہتم بالشان فن بھی، لیکن یہ فریضہ جتنا نازک اور اہم ہے یہ فن اسی قدر مشکل اور پیچیدہ ہے۔ کتاب اللہ میں افتاء کے منصب کی نسبت اللہ رب العزت سے بیان ہوئی ہے (قُلِ اللّٰہُ یُفْتِیْکُمْ) یہ بات بھی اہل علم سے پوشیدہ نہیں کہ فتویٰ، افتاء اور مفتی کے الفاظ زبان نبوت پر بھی جاری ہوئے، اسی طرح عہدِ نبوی کے ساتھ ساتھ خلفائے راشدین کے عہد مبارک میں عطائے فتویٰ یا افتاء کا منصب بہت اہم اور اونچا منصب تھا تاریخ اسلام کے مختلف ادوار میں فتویٰ نویسی یا افتاء اور مفتی کا منصب ہمیشہ نہایت اہم اور بلند متصور ہوتا رہا ہے لیکن یہ سب باتیں ایک اہم موضوع اور دلچسپ مطالعہ سہی مگر ان سب باتوں کی تفصیل کا یہ موقع نہیں، تاہم اس بات کی طرف ایک مختصر اشارہ کرنے میں کوئی مضائقہ نہیں ہوگا کہ گزشتہ بارہ تیرہ صدیوں کے دوران میں برعظیم پاک و ہندستان کے علمائے کرام نے فتویٰ نویسی کے میدان میں جو عظیم خدمات انجام دی ہیں اور منصب افتاء نے ملت اسلامیہ کو جو رہنمائی مہیا کی ہے وہ جہاں قابلِ قدر ہے وہاں باعثِ فخر بھی ہے۔

برعظیم پاک و ہند ان اسلامی خطوں میں شامل رہا ہے جہاں امامِ اعظم ابو حنیفہ نعمان بن ثابت رحمہ اللہ تعالیٰ کی فقہ کا دور دورہ رہا، یہاں کے علمائے حنفیہ نے فقہ اسلامی کی عظیم الشان خدمت انجام دی ہے۔ سیرتِ نبوی کی طرح علومِ شریعت بھی اس خطے کے اہل علم کے نزدیک ایک مہتم بالشان اور نہایت مرغوب موضوع رہا ہے۔ یہاں کے علماء نے علوم فقہیہ یعنی فقہ،

اصولِ فقہ اور فتاویٰ نویسی کے علاوہ شرعی علوم کے دیگر بے شمار پہلوؤں کو اپنے مطالعہ و توجہ کا مرکز بنائے رکھا۔ عربی، فارسی، اردو اور دیگر علاقائی زبانوں میں شرعی علوم کا اتنا وسیع ذخیرہ تیار کیا ہے جو ملت کا نہایت قیمتی سرمایہ ہے اور اس کا احاطہ کرنا کسی مورخ کے لئے آسان نہیں ہوگا۔ برعظیم پاک و ہند کے اکابر احناف کے اس عظیم القدر علمی و فقہی سرمایہ فخر میں امامِ اہلسنت حضرت مولانا احمد رضا خان فاضل بریلوی رحمہ اللہ تعالیٰ کے فتاویٰ العطایا النبویۃ فی الفتاویٰ الرضویۃ جو فتاویٰ رضویہ کے نام سے مشہور اور متداول ہیں بلاشبہ ایک منفرد اور قیمتی سرمایہ ہے۔

برعظیم جنوبی ایشیا یا پاک و ہند کے علمائے اسلام نے فقہ اسلامی کے فتاویٰ کا جو عظیم القدر ذخیرہ

Fatawa Rizvia Volume Six

Compiled in the Arabic language, its list is very long and it contains diversity and variety, and elements of beauty and excellence are also present in it. Similarly, because Persian was the official language of Islamic India, countless small and large fatwas were also compiled in this language, many of which have not yet been adorned with the ornament of printing. The same is the case with those fatwas that present a mixture of Urdu-Arabic or Urdu-Persian. It is our great misfortune and regrettable negligence that we could not even manage the heritage of our elders. The most regret is for the wealthy and affluent Muslims who are unable to dedicate even a small portion of their wealth as an act of reward, but even more regrettable are those people of knowledge who are unable even to take the initial step or start a practical movement. The real task of managing knowledge and preserving the scientific heritage is, after all, of the Muslim scholars. These gentlemen can not only correct the nuances of this scientific heritage and create an incentive for the wealthy Muslims to spend their capital, but they can also perform the task of adding to and progressing those scientific efforts. A bright example of this is our friend and benefactor, Hazrat Maulana Mufti Abdul Qayyum Hazarvi. You have had the honour of establishing a great institution like 'Raza Foundation' in Lahore with the advice and cooperation of some friends, which is performing the duty of printing and publishing 'Fatawa Rizvia'. I offer my heartiest congratulations to Hazrat Maulana and pray for his success. I am sure that he will certainly succeed in his noble purpose, Insha Allah!

A cursory look at the printed volumes of 'Fatawa Rizvia' gives an overall impression that Fazil Barelvi holds a very high and unique position among other Muftis of the Indo-Pak subcontinent. These fatwas, along with their great utility, also possess a uniqueness that, besides variety, creativity, comprehensiveness, and minuteness, presents the author's perfection of art, breadth of vision, depth of insight, refined nature, and the juristic skill of presenting universals in particulars and particulars in universals in a special style, which seems to affect the reader's power of decision and heart and soul. This is a uniqueness and distinction that has rarely fallen to the lot of the great Muftis of the Indo-Pak subcontinent, but is available in abundance and large quantity with the author of Fatawa Rizvia. A uniqueness in Hazrat Maulana Ahmad Raza Khan Barelvi (may Allah have mercy on him) is that he selected certain topics from various chapters of jurisprudence in his fatwas and composed a separate and independent treatise on each of these topics. These treatises, while being a reflection of high-level research and precision, also present the essence of all current

juristic sources and references. The author's effort is praiseworthy that he selects the shortest passages or even sentences from these different and diverse sources and joins them with such great skill that they become a continuous passage. Thus...

अरबी भाषा में संकलित इसकी सूची बहुत लंबी है और इसमें विविधता और अनेकता भी है, साथ ही इसमें सौंदर्य और गुणवत्ता के तत्व भी मौजूद हैं। इसी प्रकार इस्लामी भारत की आधिकारिक भाषा फारसी होने के कारण इस भाषा में भी अनगिनत छोटे और बड़े फतवे संकलित किए गए, जिनमें से कई अभी तक छपाई के आभूषण से सुशोभित नहीं हो सके हैं। यही स्थिति उन फतवों की भी है जो उर्दू-अरबी या उर्दू-फारसी का मिश्रण प्रस्तुत करते हैं। यह हमारा बहुत बड़ा दुर्भाग्य और खेदजनक लापरवाही है कि हम अपने बुज़ुर्गों की विरासत को भी नहीं संभाल सके। सबसे अधिक दुख उन धनी और संपन्न मुसलमानों पर है जो अपनी संपत्ति का एक छोटा सा हिस्सा भी पुण्य का कार्य समझकर समर्पित करने में असमर्थ हैं, लेकिन उससे भी अधिक खेद उन विद्वानों पर है जो प्रारंभिक कदम उठाने या व्यावहारिक आंदोलन शुरू करने में भी असमर्थ हैं। ज्ञान को संभालने और वैज्ञानिक विरासत को सुरक्षित रखने का वास्तविक कार्य अंततः मुस्लिम विद्वानों का ही है। ये सज्जन न केवल इस वैज्ञानिक विरासत की कमियों को दूर कर सकते हैं और धनी मुसलमानों को पूंजी खर्च करने के लिए प्रेरित कर सकते हैं, बल्कि वे उन वैज्ञानिक प्रयासों को बढ़ाने और विकसित करने का कार्य भी कर सकते हैं। इसका एक ज्वलंत उदाहरण हमारे मित्र और कृपापात्र हज़रत मौलाना मुफ्ती अब्दुल कय्यूम हज़ारवी हैं। आपने कुछ मित्रों की सलाह और सहयोग से लाहौर में 'रज़ा फाउंडेशन' जैसा एक महान संस्थान स्थापित करने का सौभाग्य प्राप्त किया है, जो 'फ़तावा रज़विया' के मुद्रण और प्रकाशन का कार्य कर रहा है। मैं तहे दिल से हज़रत मौलाना को बधाई देता हूँ और उनकी सफलता के लिए प्रार्थना करता हूँ। मुझे विश्वास है कि वे अपने इस नेक नेक उद्देश्य में अवश्य सफल होंगे, इंशा अल्लाह!

'फ़तावा रज़विया' के मुद्रित खंडों पर एक विहंगम दृष्टि डालने से जो समग्र प्रभाव मिलता है, वह यह है कि फ़ाज़िल बरेलवी पाक-हिंद उपमहाद्वीप के अन्य मुफ्तियों के बीच एक बहुत ही ऊंचा और अनूठा स्थान रखते हैं। उनके ये फतवे अपनी महान उपयोगिता के साथ-साथ एक ऐसी विशिष्टता भी रखते हैं, जो विविधता, नवाचार, व्यापकता और सूक्ष्मता के अलावा लेखक की कला की पूर्णता, दृष्टि की व्यापकता, अंतर्दृष्टि की गहराई, परिष्कृत स्वभाव और विशेष शैली में सामान्य सिद्धांतों को विवरणों में और विवरणों को सामान्य सिद्धांतों में प्रस्तुत करने के न्यायशास्त्रीय कौशल से पाठक की निर्णय लेने की शक्ति और हृदय तथा आत्मा को प्रभावित करती प्रतीत होती है। यह वह विशिष्टता और गौरव है जो पाक-हिंद उपमहाद्वीप के महान मुफ्तियों के हिस्से में बहुत कम आया है, लेकिन

फ़तावा रज़विया के लेखक के पास प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। हज़रत मौलाना अहमद रज़ा खान बरेलवी (रहमतुल्लाह अलैहि) के पास एक अनूठी बात यह है कि उन्होंने अपने फतवों के विभिन्न न्यायशास्त्रीय अध्यायों में से कुछ विषयों को चुना है और उनमें से प्रत्येक विषय पर एक अलग और स्वतंत्र शोध प्रबंध लिखा है। ये शोध प्रबंध जहाँ उच्च स्तरीय अनुसंधान और सूक्ष्मता का प्रतिबिंब हैं, वहीं वे सभी प्रचलित न्यायशास्त्रीय स्रोतों और संदर्भों का सार भी प्रस्तुत करते हैं। लेखक का यह प्रयास सराहनीय है कि वे इन विभिन्न और विविध स्रोतों से सबसे छोटे अंशों या वाक्यों को चुनते हैं और उन्हें इतने महान कौशल के साथ जोड़ते हैं कि वे एक निरंतर गद्यांश बन जाते हैं। इस प्रकार...

पृष्ठ 9/736

فتاوی رضویہ جلد ششم

عربی زبان میں مرتب کیا ہے اس کی فہرست بہت طویل ہے اور اس میں تعدد و تنوع بھی ہے اور اس میں حسن و خوبی کے عناصر بھی موجود ہیں۔ اسی طرح اسلامی ہند کی سرکاری زبان فارسی ہونے کے باعث اس زبان میں بھی لا تعداد چھوٹے بڑے فتاوی مرتب ہوئے جن میں بہت سے ابھی تک زیورِ طباعت سے آراستہ بھی نہیں ہو سکے۔ یہی حال ان فتاوی کا بھی ہے جو اردو عربی یا اردو فارسی کا امتزاج پیش کرتے ہیں۔ یہ ہماری بہت بڑی بد قسمتی ہے اور افسوس ناک کوتاہی کہ ہم اپنے بزرگوں کی میراث کو بھی نہیں سنبھال سکے۔ سب سے زیادہ افسوس اہلِ دولت و ثروت مسلمانوں پر ہے جو اپنی دولت کا حقیر سا حصہ بھی کارِ ثواب سمجھ کر ہی وقف کرنے سے قاصر ہیں مگر اس سے کہیں زیادہ افسوس ان اہل علم پر ہے جو ابتدائی قدم اٹھانے یا عملی تحریک کرنے سے بھی عاجز ہیں۔ علم کو سنبھالنے اور علمی میراث کو محفوظ کرنے کا اصل کام آخر مسلمان علماء کا ہے۔ یہ حضرات نہ صرف یہ کہ اس علمی ورثے کی نوک پلک درست کر کے مسلمان اہل دولت و ثروت کو سرمایہ خرچ کرنے کی تحریک بھی پیدا کر سکتے ہیں بلکہ وہ ان علمی کاوشوں پر اضافے اور ترقی کا کام بھی انجام دے سکتے ہیں۔ اس کی روشن مثال ہمارے دوست و کرم فرما حضرت مولانا مفتی عبد القیوم ہزاروی کی ہے۔ آپ بعض احباب کے مشورے اور تعاون سے لاہور میں "رضا فاؤنڈیشن" جیسا عظیم ادارہ قائم کرنے کی سعادت حاصل کر چکے ہیں جو "فتاوی رضویہ" کی طباعت و اشاعت کا فریضہ انجام دے رہا ہے، میں صمیمِ قلب سے حضرت مولانا کو ہدیہ تبریک پیش کرتے ہوئے ان کی کامیابی کے لئے دعا گو ہوں مجھے یقین ہے کہ وہ اپنے اس نیک مقصد میں ضرور کامیاب ہوں گے ان شاء اللہ !

"فتاوی رضویہ" کی مطبوعہ مجلدات پر ایک اجمالی نظر ڈالنے سے جو مجموعی تاثر ملتا ہے وہ یہ ہے کہ فاضل بریلوی دیگر مفتیانِ برعظیم پاک و ہند میں ایک نہایت بلند اور منفرد مقام رکھتے ہیں اور ان کے یہ فتاوی اپنی عظیم تر افادیت کے ساتھ ساتھ ایک ایسی انفرادیت بھی رکھتے ہیں جو تنوع، ایجاد، جامعیت اور باریک بینی کے علاوہ ایک مصنف کے کمال فن، وسعت نظر، عمقِ بصیرت، ظرافت طبع اور جزئیات میں کلیات، اور کلیات میں جزئیات کو ایک خاص رنگ میں پیش کرنے کی فقیہانہ مہارت سے قاری کی قوت فیصلہ اور قلب وروح کو متاثر کرتی نظر آتی ہے۔ یہ وہ انفرادیت و امتیاز ہے جو برعظیم پاک و ہند کے مفتیانِ عظام کے حصے میں بہت کم آیا ہے مگر فتاوی رضویہ کے مصنف کے ہاں کثرت و مقدارِ وافر کے ساتھ میسر ہے۔ حضرت مولانا احمد رضا خان بریلوی رحمہ اللہ کے ہاں ایک انفرادیت یہ ہے کہ انہوں نے اپنے فتاوی کے مختلف ابواب فقہیہ میں سے بعض موضوعات منتخب فرمائے ہیں اور ان میں سے ہر موضوع پر ایک الگ اور مستقل رسالہ تصنیف کیا ہے، یہ رسائل جہاں بلند درجہ تحقیق و تدقیق کے آئینہ دار ہیں وہاں تمام متداولِ فقہی مصادر و مآخذ کا نچوڑ بھی پیش کرتے ہیں۔ مصنف کی یہ کوشش لائق تحسین ہے کہ وہ ان مختلف و متنوع مصادر کی مختصر ترین عبارات بلکہ جملوں کو منتخب کرتے ہیں اور انہیں کمال مہارت سے یکجا کر کے یوں جوڑ دیتے ہیں کہ وہ ایک مسلسل عبارت بن جاتی ہے۔ یوں

Volume Six Fatawa Razawiyya It seems as if these pieces of text or sentences were created by different authors for the very purpose of adorning the texts of treatises comprising these jurisprudential (Fiqhi) topics. This task, while requiring depth of vision and perfection in comprehension and selection, also demands a powerful memory and complete mastery over language. One individual distinction of these brief yet comprehensive treatises is that the Scholar of Bareilly has employed great wit and jurisprudential insight in naming them. This trend of delicacy and humor in naming books has been a hallmark of the Islamic scholars of the subcontinent, and Maulana Ahmad Raza Khan holds the honor of leadership and expertise in this field. Another uniqueness of Fatawa Razawiyya is that its learned author is not just an ordinary religious scholar or merely a Mufti and jurist (faqih), but a multi-faceted genius, i.e., a VERATILE GENIUS [sic]. Therefore, his gaze is neither limited nor focused solely on the jurisprudential aspect, nor is there a sense of thirst or negligence towards any aspect in his discourse; rather, his style of expression satisfies the requirements of every science and art, whether based on transmitted (Manqoolat) or rational (Maqoolat) knowledge. The Scholar of Bareilly (may Allah have mercy on him) was not only aware of the reality of the Prophetic saying, 'Knowledge is of two kinds: the knowledge of religions and the knowledge of bodies,' but he also practiced it. He believed in equal mastery over the knowledge of religions, i.e., Sharia sciences, and the knowledge of bodies, i.e., scientific sciences. Sharia sciences began with the Quran and Hadith and reached jurisprudence, theology, and polemics through the intricacies of the Arabic language and literature. Similarly, the sphere of scientific sciences is also expanding and infinite. Therefore, Sharia does not teach avoidance of these useful and beneficial sciences; rather, inviting and instructing to achieve excellence in them is a distinction of this Sharia. The pace of change in time is very fast; whoever cannot keep up with this pace of change is cut down by the sword of time. Any Sharia or law that cannot compete with this pace of change is certain to perish. However, Islamic Sharia is free from and beyond the constraints of time and space; therefore, this Sharia is for every time and every place. In this regard, it is also necessary for an expert jurist of Islamic Sharia to not only keep pace with the changing times through his intellectual abilities but also be able to compete with it. These intellectual abilities depend on two things: one is God-given genius and the other is being an expert in scientific sciences, i.e., 'knowledge of bodies', along with 'knowledge of religions'. Both these abilities are present in Imam Ahmad Raza Barelvi in their entirety; indeed, he is a jurist for every time and place. Just as Islamic Sharia is free from the constraints of time and space, similarly its

expert jurist, who is also an Imam of God-given genius and scientific sciences, especially medicine, mathematics, philosophy, and astronomy, is also free from the constraints of time and space. He solves the problems of modern life in the light of Islamic jurisprudence in such a way that the intellect is left stunned. 'Fatawa Razawiyya' is a just witness to this claim. In all chapters and sections, he solves jurisprudential issues in the language of the modern era; all his fatwas are based on rational and traditional reasoning, and it is proven that this...

खण्ड छह फतावा रज़विया ऐसा लगता है जैसे लेख के ये टुकड़े या वाक्य अलग-अलग लेखकों द्वारा इसी उद्देश्य से बनाए गए थे कि वे इन फिकही (न्यायशास्त्र) विषयों पर आधारित शोधपत्रों के लेखों की शोभा बनें। यह कार्य जहाँ दृष्टि की गहराई और बोध एवं चयन में पूर्णता की मांग करता है, वहीं स्मरण शक्ति और भाषा पर पूर्ण प्रभुत्व की भी मांग करता है। इन संक्षिप्त लेकिन व्यापक शोधपत्रों की एक व्यक्तिगत विशिष्टता यह भी है कि फाज़िल बरेलवी ने उनके नामकरण में महान विनोदशीलता और फिकही दूरदर्शिता से काम लिया है। पुस्तकों के नामकरण में शिष्टता और हास्य की यह शैली उपमहाद्वीप के इस्लामी विद्वानों की पहचान रही है, और मौलाना अहमद रज़ा खान इस क्षेत्र में नेतृत्व और विशेषज्ञता का सम्मान रखते हैं। फतावा रज़विया की एक और विशेषता यह है कि इसके विद्वान लेखक केवल कोई साधारण धार्मिक विद्वान या मात्र एक मुफ्ती और फकीह नहीं हैं, बल्कि एक बहुमुखी प्रतिभा संपन्न व्यक्ति यानी 'वेराटाइल जीनियस' (VERATILE GENIUS) हैं। इसलिए, उनकी दृष्टि न तो केवल फिकही पहलू पर सीमित और केंद्रित रहती है, और न ही उनकी बात में किसी पहलू की प्यास या उसे नज़रअंदाज़ करने का एहसास होता है; बल्कि उनके बयान के अंदाज़ से मनकुलात (पारंपरिक) और माकुलात (तार्किक) के हर ज्ञान और कला की आवश्यकताओं की संतुष्टि होती है। फाज़िल बरेलवी (अल्लाह उन पर रहम करे) न केवल नबी के इस इरशाद 'ज्ञान दो प्रकार का है: धर्मों का ज्ञान और शरीरों का ज्ञान' की वास्तविकता से अवगत थे, बल्कि उस पर अमल भी करते थे। वह धर्मों के ज्ञान, यानी शरीयत के विज्ञान, और शरीरों के ज्ञान, यानी वैज्ञानिक विज्ञान, पर समान अधिकार के कायल थे। शरीयत का विज्ञान कुरान और हदीस से शुरू हुआ और अरबी भाषा और साहित्य की सूक्ष्मताओं से होते हुए फिक्ह, कलाम और वाद-विवाद तक पहुँचा है। इसी तरह वैज्ञानिक विज्ञान का दायरा भी विस्तृत और असीमित है, इसलिए शरीयत इन उपयोगी और लाभकारी विज्ञानों से परहेज नहीं सिखाती, बल्कि उनमें पूर्णता प्राप्त करने के लिए आमंत्रित करना और निर्देश देना इस शरीयत की विशेषता है। समय के परिवर्तन की गति बहुत तेज है; जो इस परिवर्तन की गति का साथ न दे सके, उसे समय की तलवार काट कर रख देती है। जो शरीयत या कानून समय के परिवर्तन की इस गति का मुकाबला न कर सके, उसका अस्तित्व समाप्त होना निश्चित है। लेकिन इस्लामी शरीयत तो समय और स्थान के बंधन से मुक्त और परे है, इसलिए यह शरीयत हर समय और हर स्थान के लिए है। इसी संदर्भ में, इस्लामी शरीयत के एक विशेषज्ञ फकीह के लिए भी यह आवश्यक है कि वह अपनी बौद्धिक क्षमताओं से न केवल समय के परिवर्तन की गति का साथ दे सके, बल्कि उसका मुकाबला भी कर सके। ये बौद्धिक क्षमताएं दो चीजों पर निर्भर करती हैं: एक ईश्वरीय प्रतिभा और दूसरा धर्मों के ज्ञान के साथ-साथ शरीरों के ज्ञान, यानी वैज्ञानिक विज्ञानों

का विशेषज्ञ होना। इमाम अहमद रज़ा बरेलवी में ये दोनों क्षमताएं पूर्णतः मौजूद हैं, बल्कि वे हर समय और स्थान के फकीह हैं। जिस तरह इस्लामी शरीयत समय और स्थान के बंधन से मुक्त है, उसी तरह इसका विशेषज्ञ फकीह, जो ईश्वरीय प्रतिभा और वैज्ञानिक विज्ञानों, विशेष रूप से चिकित्सा, गणित, दर्शन और खगोल विज्ञान के भी इमाम हैं, वे भी समय और स्थान के बंधन से मुक्त हैं। वे आधुनिक जीवन की समस्याओं को इस्लामी फिक्ह की रोशनी में इस तरह हल करते हैं कि बुद्धि दंग रह जाती है। 'फतावा रज़विया' इस दावे का एक निष्पक्ष गवाह है। सभी अध्यायों और वर्गों में वे फिकही समस्याओं को आधुनिक युग की भाषा में हल करते हैं, उनके सभी फतवे तार्किक और पारंपरिक दलीलों पर आधारित होते हैं, और इससे यह सिद्ध होता है कि यह...

पृष्ठ १० / ७३६

جلد ششم فتاوی رضویہ لگتا ہے جیسے یہ عبارات کے ٹکڑے یا جملے مختلف مصنفین نے اسی غرض سے تخلیق کئے تھے کہ وہ ان فقہی موضوعات پر مشتمل رسائل کی عبارات کی زینت بنیں۔ یہ کام جہاں دقت نظر اور کمال ادراک و انتخاب کا مقتضی ہے وہاں قوت حافظہ اور زبان پر کامل عبور کا بھی تقاضا کرتا ہے۔ ان مختصر مگر جامع رسائل کا ایک انفرادی امتیاز یہ بھی ہے کہ فاضل بریلوی نے ان کے تسمیہ میں بڑے تفنن طبع اور فقیہانہ بصیرت سے کام لیا ہے۔ کتابوں کے تسمیہ میں نزاکت و ظرافت کی یہ روش بر عظیم کے علمائے اسلام کا طرہ امتیاز رہا ہے اور مولانا احمد رضا خاں اس میدان میں امامت و مہارت کا شرف رکھتے ہیں۔ فتاوی رضویہ کی ایک انفرادیت یہ بھی ہے کہ ان کا فاضل مصنف کوئی عام عالم دین یا محض مفتی و فقیہ نہیں بلکہ ایک کثیر الجوانب عبقری یعنی ورسٹائل جینئس (VERATILE GENIUS) ہے، اس لئے نہ تو ان کی نظر محض فقہی پہلو پر محدود و مرکوز رہتی ہے اور نہ ان کی بات میں کسی پہلو کی تشنگی یا اسے نظر انداز کرنے کا احساس ہوتا ہے بلکہ ان کے انداز بیان سے منقولات اور معقولات کے ہر علم و فن کے تقاضوں کی تسکین ہوتی ہے، فاضل بریلوی رحمہ اللہ ارشاد نبوی العلم علمان علم الادیان و علم الابدان کی حقیقت سے نہ صرف آگاہ تھے بلکہ اس پر عمل پیرا بھی تھے، وہ علم ادیان یعنی شرعی علوم اور علم ابدان یعنی سائنسی علوم پر یکساں عبور کے قائل تھے، شریعت کے علوم قرآن و حدیث سے شروع ہوئے اور عربی زبان و ادب کی جزئیات سے ہوتے ہوئے فقہ و کلام اور جدل و مناظرہ تک پہنچے ہیں اسی طرح سائنسی علوم کا دائرہ بھی وسعت پذیر اور لامحدود ہے اس لئے شریعت ان مفید و نافع علوم سے اعراض نہیں سکھاتی بلکہ ان میں کمال پیدا کرنے کی دعوت و تلقین اس شریعت کا امتیاز ہے۔ وقت کی رفتار تغیر بڑی تیز ہے جو اس رفتار تغیر کا ساتھ نہ دے سکے اسے وقت کی تلوار کاٹ کر رکھ دیتی ہے، جو شریعت یا قانون وقت کی

اس رفتار تغیر کا مقابلہ نہ کر سکے اس کا نابود ہونا یقینی ہے لیکن اسلامی شریعت تو زمان و مکان کی قید سے آزاد و ماوراء ہے اس لئے یہ شریعت ہر زمان و ہر مکان کے لئے ہے، اسی حوالے سے اسلامی شریعت کے ماہر فقیہ کے لئے بھی ضروری ہے کہ وہ اپنی فکری صلاحیتوں سے وقت کی رفتار تغیر کا صرف ساتھ ہی نہیں بلکہ اس کا مقابلہ بھی کر سکے۔ یہ فکری صلاحیتیں دو چیزوں کی محتاج ہوتی ہیں ان سے ایک خداداد عبقریت اور دوسرے علم ادیان کے ساتھ علم ابدان یعنی سائنسی علوم کا ماہر ہونا۔ امام احمد رضا بریلوی میں یہ دونوں صلاحیتیں بتمام و کمال موجود ہیں بلکہ ہر زمان و مکان کے فقیہ ہیں۔ جس طرح اسلامی شریعت زمان و مکان کی قید سے آزاد ہے اسی طرح اس کا ماہر فقیہ جو خداداد عبقریت اور سائنسی علوم خصوصاً طب و ریاضت اور فلسفہ و ہیئت کے بھی امام ہیں وہ بھی زمان و مکان کی قید سے آزاد ہیں۔ وہ جدید زندگی کے مسائل کو اسلامی فقہ کی روشنی میں اس طرح حل کرتے ہیں کہ عقل دنگ رہ جاتی ہے۔ "فتاوی رضویہ" اس دعوی پر شاہد عادل ہیں۔ تمام فصول اور ابواب میں وہ فقہی مسائل کو عصر حاضر کی زبان میں حل کرتے ہیں، ان کے تمام فتاوی عقلی و نقلی استدلال پر مبنی ہوتے ہیں اور یہ ثابت ہوتا ہے کہ یہ

Fatawa Ridawiyyah, Volume 6

Shariat is not only not against reason, but it also provides the means for the development of reason. Language is the means of expression; for jurisprudence (Fiqh) and a Mufti, the ability of expression is an essential and necessary quality, otherwise, the understanding of problems and occupations would not be easy. Hazrat Maulana Ahmad Raza Khan Barelvi (may Allah have mercy on him) is not just a man of this field but its champion. A proof of the complete command he had over Arabic, Persian, and Urdu is his poetic excellence in these three languages dedicated to the praise and eulogy of the Prophet. However, in "Fatawa Ridawiyyah" as well, he is seen tickling the reader's mind with the means of expression, i.e., the literary style of the language. Giving new meanings to words and using compounds and speech as allusions (tazmeen) in such a way that they present the scene of setting a gem in a ring is something only a master poet and a perfect man of letters can do.

To be brief, here it will suffice to refer to the prefaces of the first volume of "Fatawa Ridawiyyah," namely "Khutba al-Kitab" and "Sifat al-Kitab," as well as the preface of the first independent treatise written on a jurisprudential topic, "Ajla al-I'lam an al-Fatwa Mutlaqan 'ala Qawl al-Imam." The atmosphere created in "Khutba al-Kitab" by using the names of the fundamental books (Ummahat al-Kutub) of Hanafi Fiqh and technical terms as allusions and eloquent reasoning is uniquely his excellence. The words are old, but being used as allusions, they have become the dress for new meanings: "Praise be to Allah, He is the greatest understanding (Al-Fiqh al-Akbar) and the great collector (Al-Jami' al-Kabir), for increases (ziyadat), His grace is spread out (Al-Mabsut), like shining pearls (Al-Durar al-Ghurar), from Him is guidance (Al-Hidaya) and from Him is the beginning (Al-Bidaya) and towards Him is the end (Al-Nihaya)." (That is, all praise is for Allah, this is the greatest understanding and the thing that gathers additions; it is His grace that is spread out like shining pearls; guidance is linked to that Being, He is the First and He is the Last). These are the new meanings that have arrived here in the dress of these old words, but their literal meanings are the names of the fundamental books of Hanafi Fiqh. "Fiqh Akbar" is a work by Imam al-A'zam Abu Hanifa; "Jami' Kabir," "Ziyadat," "Fayd," "Mabsut," "Durar," "Ghurar," "Hidaya," and "Bidaya wa Nihaya" are all books of Fiqh. However, one with command over the Arabic language has performed a dual task with these old words, providing proof of his expertise and genius.

In this same introductory book, under the heading "Sifat al-Kitab," the atmosphere of blessing and happiness created while introducing the book using Quranic words and

phrases indicates a master of Arabic and an expert in the Divine Word. This same color of perfection is seen in the treatise "Ajla al-I'lam." Here, besides having command over the writing styles of the Arabic language, the author is also seen as unparalleled in employing innovative expression. In a dry subject like Fiqh, this innovative expression has created a color that has increased interest. In the correct perception of jurisprudential texts, depth of vision and scrutiny, spontaneity of speech and quick-wittedness, logical and effective reasoning, and excellence in deduction and inference, there is no match for Fadil Barelvi. Here I consider it necessary to mention a special thing that I have felt, although among the renowned Arabic scholars and Islamic sciences of the Indo-Pak subcontinent...

फतवा रज़विया, खंड 6

शरीयत न केवल बुद्धि के विरुद्ध नहीं है, बल्कि वह बुद्धि के विकास के लिए साधन भी प्रदान करती है। अभिव्यक्ति का माध्यम भाषा है; न्यायशास्त्र (फ़िक़्ह) और मुफ़्ती के लिए अभिव्यक्ति की शक्ति एक अनिवार्य और आवश्यक गुण है, अन्यथा समस्याओं और कार्यों को समझना आसान नहीं होगा। हज़रत मौलाना अहमद रज़ा खाँ बरेलवी (अल्लाह उन पर रहम करे) इस क्षेत्र के केवल व्यक्ति ही नहीं बल्कि उसके महारथी भी हैं। अरबी, फारसी और उर्दू पर उन्हें जो पूर्ण अधिकार प्राप्त था, उसका एक प्रमाण इन तीन भाषाओं में उनकी काव्यगत उत्कृष्टता है जो पैगंबर की स्तुति और प्रशंसा के लिए समर्पित है। हालाँकि, "फतवा रज़विया" में भी, वे अभिव्यक्ति के माध्यमों, यानी भाषा की साहित्यिक शैली के साथ पाठक के मन को गुदगुदाते हुए दिखाई देते हैं। शब्दों को नए अर्थ देना और यौगिकों और भाषण का इस तरह से प्रयोग करना कि वे एक अंगूठी में रत्न जड़ने जैसा दृश्य प्रस्तुत करें, यह केवल एक कुशल कवि और सिद्ध साहित्यकार ही कर सकता है।

संक्षेप में कहें तो, यहाँ "फतवा रज़विया" के पहले खंड के दो प्रस्तावना शीर्षकों यानी "खुत्बा अल-किताब" और "सिफ़त अल-किताब" के साथ-साथ एक स्वतंत्र न्यायशास्त्रीय विषय पर लिखे गए पहले शोध प्रबंध "अजला अल-इलाम अन अल-फतवा मुतलकन अला कौल अल-इमाम" की प्रस्तावना का उल्लेख करना ही पर्याप्त होगा। "खुत्बा अल-किताब" में हनफी फ़िक़्ह की मौलिक पुस्तकों (उम्माहात अल-कुतुब) के नामों और तकनीकी शब्दों का संकेतों (तल्मीह) और वाक्पटुता के रूप में उपयोग करके जो वातावरण बनाया गया है, वह उनकी अपनी विशेषता है। शब्द पुराने हैं, लेकिन संकेतों के रूप में उपयोग किए जाने पर वे नए अर्थों की पोशाक बन गए हैं: "अल्लाह की स्तुति हो, वह सबसे बड़ी समझ (अल-फ़िक़्ह अल-अकबर) और महान संग्रहकर्ता (अल-जामि अल-कबीर) है, वृद्धि (ज़ियादात) के लिए, उसकी कृपा फैली हुई (अल-मबसूत) है, जैसे चमकते मोती (अल-दुरर अल-गुरर), उसी से मार्गदर्शन (अल-हिदाया) है और उसी से आरंभ (अल-बिदाया) है और उसी की ओर अंत (अल-निहाया) है।" (यानी, सारी स्तुति अल्लाह के लिए है, यही सबसे बड़ी समझ और परिवर्धन को इकट्ठा करने वाली बात है; उसकी कृपा है जो चमकते मोतियों की तरह फैली हुई है; मार्गदर्शन उसी सत्ता से जुड़ा है, वही आदि है और वही अंत है)। ये वे नए अर्थ हैं जो यहाँ इन पुराने शब्दों की पोशाक में आए हैं, लेकिन उनके शाब्दिक अर्थ हनफी फ़िक़्ह की मौलिक पुस्तकों के नाम हैं। "फ़िक़्ह अकबर" इमाम आज़म अबू हनीफ़ा की रचना है; "जामि कबीर," "ज़ियादात," "फ़ैज़," "मबसूत," "दुरर," "गुरर," "हिदाया" और "बिदाया व निहाया" सभी फ़िक़्ह की किताबें हैं। हालाँकि, अरबी भाषा

पर अधिकार रखने वाले ने इन पुराने शब्दों से दोहरा काम लेकर अपनी कुशलता और प्रतिभा का प्रमाण दिया है।

इसी परिचयात्मक पुस्तक में, "सिफ़त अल-किताब" शीर्षक के तहत कुरान के शब्दों और वाक्यांशों का उपयोग करके पुस्तक का परिचय देते हुए आशीर्वाद और सौभाग्य का जो वातावरण बनाया गया है, वह अरबी भाषा के ज्ञाता और ईश्वरीय वाणी के विशेषज्ञ का संकेत देता है। शोध प्रबंध "अजला अल-इलाम" में पूर्णता का यही रंग दिखाई देता है। यहाँ अरबी भाषा की लेखन शैलियों पर अधिकार रखने के अलावा, लेखक अभिव्यक्ति के नवीन प्रयोग में भी बेजोड़ दिखाई देते हैं। फ़िक़्ह जैसे शुष्क विषय में अभिव्यक्ति की इस नवीनता ने जो रंग पैदा किया है, उसने रुचि बढ़ा दी है। न्यायशास्त्रीय ग्रंथों की सही समझ, गहरी दृष्टि और सूक्ष्मता, वाक्पटुता और हाज़िरजवाबी, तार्किक और प्रभावी तर्क और निष्कर्ष निकालने में उत्कृष्टता में फाज़िल बरेलवी का कोई मुकाबला नहीं है। यहाँ मैं एक विशेष बात का उल्लेख करना आवश्यक समझता हूँ जो मैंने महसूस की है, हालाँकि भारत-पाक उपमहाद्वीप के प्रसिद्ध अरबी विद्वानों और इस्लामी विज्ञानों के..

पृष्ठ 11 का 736

فتاوی رضویه جلد ششم

شریعت نہ صرف یہ کہ عقل کے خلاف نہیں بلکہ عقل کے لئے نشو و نما کا سامان بھی کرتی ہے۔ اظہار و بیان کا وسیلہ زبان ہوتی ہے، فقہ اور مفتی کے لئے اظہار و بیان کی قدرت ایک لازمی اور ضروری صفت ہے ورنہ مسائل و مشاغل کی تفہیم آسان نہ ہو گی۔ حضرت مولانا احمد رضا خاں بریلوی رحمہ اللہ اس میدان کے مرد میدان ہی نہیں شہسوار بھی ہیں۔ عربی، فارسی اور اردو پر انہیں جو کامل عبور تھا اس کا ایک ثبوت تو ان تین زبانوں میں ان کے شاعرانہ کمالات ہیں جو نعت و مدح رسول کے لئے وقف ہیں مگر "فتاوی رضویہ" میں بھی وہ اظہار و بیان کے وسائل یعنی زبان کے ادبی اسلوب سے قاری کے ذہن کی چٹکیاں لیتے ہوئے نظر آتے ہیں۔ الفاظ کو نئے معنی پہنانا اور مرکبات و کلام کو تضمین کے طور پر یوں استعمال کرنا کہ وہ انگشتری میں نگینہ جڑ دینے کا منظر پیش کرتے ہوئے آئیں، یہ صرف قادر الکلام شاعر اور باکمال ادیب ہی کر سکتا ہے۔

اختصار سے کام لیتے ہوئے یہاں صرف "فتاوی رضویہ" کی جلد اول کے دو تمہیدی عنوانات یعنی "خطبة الکتاب" اور "صفتہ الکتاب" کے علاوہ مستقل فقہی موضوع پر لکھے جانے والے پہلے رسالے "أجلی الاعلام ان الفتوی مطلقا علی قول الامام" کے خطبے کی طرف اشارہ کافی ہوگا۔ خطبة الکتاب میں فقہ حنفی کی امہات الکتب کے اسماء اور فنی مصطلحات کو بطور تلمیح و براعت استدلال استعمال کر کے جو سماں باندھا ہے وہ کچھ انہی کا کمال ہے، الفاظ پرانے ہیں مگر بطور تلمیح استعمال ہو کر نئے معانی کا لباس بن گئے ہیں الحمد للہ ھو الفقہ الاکبر و الجامع الکبیر، لزیادات، فیضہ المبسوط، الدرر الغرر، بہ الھدایة و منہ البدایة والیہ النھایة (یعنی سب حمد اللہ کے لئے ہے، یہی سب سے بڑی سمجھ اور اضافوں کو یکجا کرنے والی بات ہے، اس کا فیض ہے جو

پھیلا ہوا ہے جیسے چمکتے ہوئے موتی ہوں، اسی ذات سے ہدایت وابستہ ہے، وہی اول اور وہی آخر ہے) یہ تو وہ نئے معنی ہیں جو ان پرانے الفاظ کے لباس میں یہاں وارد ہوئے ہیں مگر ان کے معانی فقہ حنفی کی امہات الکتب کے نام ہیں۔ فقہ اکبر امام اعظم ابو حنیفہ کی تصنیف ہے، جامع کبیر، زیادات، فیض، مبسوط، دُرر، غرر، ہدایہ اور بدایہ و نہایہ یہ سب کتب فقہ ہیں مگر زبان عربی پر عبور رکھنے والے نے ان پرانے الفاظ سے دوہرا کام لے کر اپنی مہارت و عبقریت کا ثبوت دے دیا ہے۔

اسی تمہیدی کتاب میں صفتہ الکتاب کے عنوان سے کتاب کا تعارف کراتے ہوئے قرآنی الفاظ و تراکیب سے برکت و سعادت کا جو سماں باندھا گیا ہے وہ کسی فنانی العربیہ اور ماہر کلام ربانی کا پتا دیتا ہے۔ رسالہ اجلی الاعلام میں یہی رنگ کمال نظر آتا ہے، یہاں پر مصنف عربی زبان کے اسالیب نگارش پر عبور رکھنے کے علاوہ جدت تعبیر سے کام لینے میں بھی لاثانی نظر آتے ہیں، فقہ جیسے خشک مضمون میں اس جدت تعبیر نے جو رنگ پیدا کیا ہے اس نے دلچسپی میں اضافہ کر دیا ہے۔ فقہی نصوص کے صحیح ادراک، دقت نظر و باریک بینی، بداہت قول و حاضر جوابی، منطقی و موثر طریقہ استدلال اور حسن استنباط و استنتاج میں فاضل بریلوی کا کوئی جواب نہیں۔ یہاں پر میں ایک خاص بات کا تذکرہ ضروری سمجھتا ہوں جو میں نے محسوس کی ہے یوں تو بر عظیم پاک و ہند کے نامور عربی دانوں اور علوم اسلامیہ کے

Fatawa Rizwia Volume Six Experts are unfamiliar and poorly informed about the intellectual achievements of both friends and strangers. However, some among the scholars remain anonymous to the extent of disregard and ingratitude, and people seem to deny their true status and rank. Among the personalities of the subcontinent who were deemed worthy of intentional or unintentional neglect and disregard, one belongs to the land of Punjab and the other to the region of knowledge and culture, UP. The rare and incomparable genius of Punjab was Maulana Abdul Aziz Parharwi (may Allah have mercy on him), who, like the famous Arab poet Abul-Qasim Al-Shabi and the English poet Keats, passed away in his youth. Yet, in terms of intellectual achievements, his short life proved to be long-lasting. The fame and respect that Maulana Parharwi (RA) deserved were neither attained during his life nor could the veil of anonymity be lifted after his death. Allah Almighty has blessed me with the honor of introducing this great genius and religious scholar of Punjab appropriately; I have written about him myself, and two PhD theses are being conducted under my supervision regarding him. The personality rising from the region of knowledge and culture, UP, is Fazil-e-Barelvi Maulana Ahmad Raza (may Allah have mercy on him), whose intellectual achievements were severely ignored, and his excellence and perfection were denied. Not only that, but there were also attempts to defame him. Apparently, three reasons are visible for this: The first reason is the weakness of his own followers, who could not make a serious effort to popularize his intellectual works, except for those whom Allah willed! Second reason is that those international institutions or organizations responsible for introducing scholars in the subcontinent avoided recognizing the worth and acknowledging the excellence of Hazrat Fazil-e-Barelvi. In my opinion, the third reason could be feelings of envy and rivalry. Ordinary men rarely face such incidents, but for humans possessing extraordinary intelligence and ability, opposition, enmity, envy, and rivalry also manifest in an extraordinary manner. Imam Ahmad Raza (may Allah have mercy on him) possessed multifaceted genius; perhaps for this reason, there might have been attempts to keep his intellectual achievements hidden and to cast dust upon them. In any case, it should be a source of satisfaction that such individuals and institutions have now come into existence in the subcontinent (Pakistan and India) that are striving to make amends in terms of introducing Hazrat Fazil-e-Barelvi.

फतावा रिज़विया जिल्द छठी (भाग 6) विशेषज्ञ अपने और पराए दोनों के शैक्षणिक कारनामों से अनभिज्ञ और कम जानकार हैं, लेकिन उनमें से कुछ विद्वान उपेक्षा और अहसानफ़रामोशी की हद तक गुमनाम रहे हैं और लोग उनके वास्तविक पद और मर्यादा के मुनकिर (इनकार करने वाले) दिखाई देते हैं। उपमहाद्वीप की जिन हस्तियों को जानबूझकर या अनजाने में विस्मृति और अनादर का पात्र समझा गया, उनमें से एक का संबंध पंजाब की धरती से है और दूसरे का संबंध ज्ञान और संस्कृति के क्षेत्र यूपी से है। पंजाब की दुर्लभ और बेमिसाल प्रतिभा (genius) मौलाना अब्दुल अज़ीज़ परहारवी (रहमतुल्लाह अलैहि) थे, जो प्रसिद्ध अरब कवि अबुल कासिम अल-शबी और एक अंग्रेजी कवि कीट्स की तरह जवानी में ही दुनिया से कूच कर गए, लेकिन शैक्षणिक कारनामों के लिहाज से उनका संक्षिप्त जीवन भी बहुत लंबा साबित हुआ। मौलाना परहारवी (रहमतुल्लाह अलैहि) जिस प्रसिद्धि और सम्मान के पात्र थे, वह उन्हें न तो जीवन में मिल सका और न ही मृत्यु के बाद गुमनामी का पर्दा हट सका। पंजाब के इस महान प्रतिभाशाली और धार्मिक विद्वान का उचित परिचय कराने का सौभाग्य अल्लाह ने मुझे प्रदान किया है, उनके बारे में मैंने स्वयं भी लिखा है और मेरी देखरेख में दो पीएचडी शोध-प्रबंध भी उन पर चल रहे हैं। ज्ञान और संस्कृति के क्षेत्र यूपी से उभरने वाली हस्ती फ़ाज़िल-ए-बरेलवी मौलाना अहमद रज़ा (रहमतुल्लाह अलैहि) हैं, जिनके शैक्षणिक कारनामों की घोर अनदेखी की गई बल्कि उनकी श्रेष्ठता और पूर्णता से इनकार किया गया, इतना ही नहीं, बल्कि बदनाम करने का दुस्साहस भी किया जाता रहा, जाहिरा तौर पर इसके तीन कारण दिखाई देते हैं: पहला कारण तो उनके स्वयं के अनुयायियों की कमजोरी है जो उनके शैक्षणिक कारनामों को आम करने की गंभीर कोशिश नहीं कर सके सिवाय उनके जिन पर अल्लाह की कृपा हुई! दूसरी वजह यह है कि वे अंतरराष्ट्रीय संस्थान या संगठन जो उपमहाद्वीप में विद्वानों का परिचय कराने के जिम्मेदार थे, वे हज़रत फ़ाज़िल-ए-बरेलवी की कद्रदानी और उनकी श्रेष्ठता को स्वीकार करने से बचते रहे। मेरी राय में इसका तीसरा कारण ईर्ष्या और प्रतिस्पर्धा की भावना हो सकती है, साधारण मनुष्यों के साथ ऐसी घटनाएँ कम ही होती हैं लेकिन असाधारण बुद्धि और योग्यता वाले मनुष्यों के लिए विरोध, शत्रुता, ईर्ष्या और प्रतिस्पर्धा भी असाधारण प्रकृति की सामने आती है। इमाम अहमद रज़ा (रहमतुल्लाह अलैहि) बहुआयामी प्रतिभा के धनी थे, शायद इसी कारण उनके शैक्षणिक कारनामों को गुप्त रखने और उन पर मिट्टी डालने की कोशिश भी हो सकती है। बहरहाल, यह संतोष की बात होनी चाहिए कि अब पाक-ओ-हिंद (उपमहाद्वीप) में ऐसे व्यक्ति और संस्थान अस्तित्व में आ चुके हैं जो हज़रत फ़ाज़िल-ए-बरेलवी के परिचय के संदर्भ में पिछली कमियों की भरपाई करने के लिए प्रयासरत हैं।

فتاوی رضویہ جلد ششم ماہرین کے علمی کارناموں سے اپنے اور بیگانے سبھی نا آشنا اور کم آگاہ ہیں مگر ان میں سے بعض اہل علم تو بے قدری اور احسان ناشناسی کی حد تک گمنام چلے آتے ہیں اور لوگ ان کے حقیقی مقام و مرتبے کے منکر دکھائی دیتے ہیں۔ برِ عظیم کی جن ہستیوں کو دانستہ یا نادانستہ طور پر فراموشی و بے قدری کا مستحق گردانا گیا اور ان میں سے ایک کا تعلق سرزمین پنجاب سے ہے اور دوسرے کا تعلق علم و ثقافت کے خطے یوپی سے ہے۔ پنجاب کی نادرۂ روزگار ہستی اور بے مثال عبقری تو مولانا عبد العزیز پر ہاروی (رحمہ اللہ) تھے جو مشہور عرب شاعر ابوالقاسم الشابی اور ایک انگریز شاعر کیٹس کی طرح جوانی میں ہی دنیا سے کوچ کر گئے، مگر علمی کارناموں کے لحاظ سے ان کی مختصر عمر بھی طویل مدت ثابت ہوئی۔ مولانا پر ہاروی رحمۃ اللہ علیہ جس شہرت اور عزت کے مستحق تھے وہ نہ تو انہیں زندگی میں مل سکی اور نہ موت کے بعد گمنامی کا پردہ چاک ہوسکا۔ پنجاب کے اس عظیم عبقری اور عالم دین کو کماحقہ، متعارف کرانے کا شرف اللہ تعالیٰ نے مجھے بخشا ہے، ان کے متعلق خود بھی لکھا ہے اور دو مقالے پی ایچ ڈی کے بھی میری نگرانی میں ہورہے ہیں۔ خطہ علم وثقافت یوپی سے اُٹھنے والی ہستی فاضل بریلوی مولانا احمد رضا (رحمۃ اللہ علیہ) ہیں جن کے علمی کارناموں سے شدید اغماض برتا گیا بلکہ ان کے فضل و کمال سے انکار کیا گیا، یہی نہیں بلکہ بدنامی کی جسارتیں بھی ہوتی رہیں، بظاہر اس کے تین اسباب نظر آتے ہیں: پہلا سبب تو خود ان کے نام لیواؤں کی کمزوری ہے جو ان کے علمی کارناموں کو عام کرنے کی سنجیدہ کوشش نہ کر سکے، الا ماشاء اللہ! دوسری وجہ یہ ہے کہ وہ عالمی ادارے یا تنظیمیں جو بر عظیم میں اہل علم کو متعارف کرانے کے ذمہ دار تھے وہ حضرت فاضل بریلوی کی قدر شناسی اور اعتراف فضل سے گریزاں رہے۔ میرے خیال میں اس کا تیسرا سبب حسد ور قابت کے جذبات ہو سکتے ہیں، معمولی آدمیوں کو

ایسے حادثے کم پیش آتے ہیں مگر غیر معمولی ذہانت و قابلیت کے مالک انسانوں کے لئے مخالفت وعداوت اور حسد ور قابت بھی غیر معمولی نوعیت کی سامنے آتی ہے۔ امام احمد رضا رحمہ اللہ تعالیٰ کثیر الجوانب عبقریت کے مالک تھے غالباً اس وجہ سے ان کے علمی کارناموں کو پردہ خفا میں رکھنے اور ان پر خاک ڈالنے کی کوشش بھی ہوسکتی ہے۔ بہر حال یہ بات باعث اطمینان ہونی چاہئے کہ اب بر عظیم پاک و ہند میں ایسے افراد وادارے وجود میں آچکے ہیں جو حضرت فاضل بریلوی کے تعارف کے ضمن میں تلافی مافات کے لئے کوشاں ہیں۔

Fatawa-e-Razvia Volume 6

Table of Contents

[Page] | [Topic/Detail] | [Page] | [Topic/Detail]

47 | Intention should be from the heart, it is not necessary from the tongue; what is the limit of the heart's intention? | 5 | Foreword 55 | A specific estimation of the direction of the Qibla for all cities is not possible. | 8 | The scholarly value and significance of Fatawa-e-Razvia 57 | Deviation within 45 degrees from the western point is not a nullifier of prayer. | 29 | Chapter on the Conditions of Prayer 61 | Risala Hidaya al-Muta'al fi Hadd al-Istiqbal (In explanation of the direction of Qibla) | 29 | Prayer is not valid in such thin clothes through which the limbs are visible. 62 | Deviation from the direction of Qibla nullifies the prayer. | 29 | Counting of nine parts of men's body to be covered and the research of the author (may Allah have mercy on him). 63 | The Qibla for an outsider (afaqi) is the general direction. | 30 | Various situations of the exposure of the fourth limb. 64 | Abandoning a recommended act (mustahab) does not even entail a mildly disliked act (karahat tanzihiyya). | 40 | Counting of twenty-three concealed parts of women's body. 65 | After some distance, deviation within a specific limit will not be considered a deviation from the direction of Qibla. | 46 | Will the intention be valid if one intends like this: "I am praying for Allah Almighty"?

फ़तावा-ए-रज़विया जिल्द छठी

विषय सूची

[पृष्ठ] | [विषय/विवरण] | [पृष्ठ] | [विषय/विवरण]

47 | नियत दिल से होनी चाहिए ज़बान से ज़रूरी नहीं; दिली नियत की सीमा क्या है? | 5 | प्रस्तावना 55 | सभी शहरों के लिए क़िबला की दिशा का एक विशेष अनुमान संभव नहीं है। | 8 | फ़तावा-ए-रज़विया का शैक्षिक मूल्य और महत्व 57 | पश्चिमी बिंदु से 45 डिग्री के भीतर विचलन नमाज़ को अमान्य नहीं करता है। | 29 | नमाज़ की शर्तों का अध्याय 61 | रिसाला हिदाया अल-मुताल फी हद्द अल-इस्तिकबाल (क़िबला की दिशा के वर्णन में) | 29 | ऐसे महीन कपड़ों में जिनसे अंग दिखाई देते हों, नमाज़ नहीं होती। 62 | क़िबला की दिशा से विचलन नमाज़ को अमान्य कर देता है। | 29 | पुरुषों के नौ ढके जाने वाले अंगों की गिनती और लेखक (अल्लाह उन पर रहम करे) का शोध। 63 | आफ़ाक़ी (बाहरी व्यक्ति) के लिए क़िबला दिशा ही है। | 30 | चौथे अंग के खुलने की विभिन्न स्थितियाँ। 64 | मुस्तहब (पसंदीदा कार्य) को छोड़ना कराहत-ए-तन्ज़ीहिया (हल्की नापसंदगी) का कारण भी नहीं बनता। | 40 | महिलाओं के तेईस ढके हुए अंगों की गिनती। 65 | दूरी के बाद एक विशेष सीमा के भीतर विचलन भी क़िबला की दिशा से विचलन नहीं माना जाएगा। | 46 | क्या "मैं नमाज़ अल्लाह तआला के लिए पढ़ता हूँ" इस तरह नियत करने से नियत होगी या नहीं?

पृष्ठ 13/736 आई.टी. मजलिस-ए-दावत-ए-इस्लामी

فتاویٰ رضویہ جلد ششم

فہرست مضامین

[صفحہ] | [عنوان / تفصیل] | [صفحہ] | [عنوان / تفصیل]

۴۷ | نیت دل سے ہونی چاہئے زبان سے ضروری نہیں، قلبی نیت کی حد کیا ہے۔ | ۵ | پیش لفظ ۵۵ | تمام بلاد کے لئے جہتِ قبلہ کا ایک خاص تخمینہ ممکن نہیں۔ | ۸ | فتاویٰ رضویہ کی علمی قدر و قیمت ۵۷ | نقطہ مغرب سے ۴۵ درجے کے اندر انحراف مفسدِ صلوٰۃ نہیں۔ | ۲۹ | باب شروط الصلوۃ ۶۱ | رسالۃ ھدایۃ المتعال في حد الاستقبال (سمت قبلہ کے بیان میں) | ۲۹ | ایسے باریک کپڑوں میں جن سے اعضا ظاہر ہوں نماز نہیں ہوتی۔ ۶۲ | جہتِ قبلہ سے انحراف مفسد صلاۃ ہے۔ | ۲۹ | مردوں کے نو اعضائے عورت کا شمار اور مصنف علیہ الرحمۃ کی تحقیق۔ ۶۳ | آفاقی کا قبلہ جہت ہے۔ | ۳۰ | چہارم عضو کھلنے کی مختلف صورتیں۔ ۶۴ | ترکِ مستحب مستلزمِ کراہتِ تنزیہیہ بھی نہیں۔ | ۴۰ | عورتوں کے تئیس اعضائے مستور کا شمار ۶۵ | بعد مسافت کے بعد ایک خاص حد کے اندر انحراف بھی جہتِ قبلہ سے انحراف نہ ہو گا۔ | ۴۶ | "میں نماز خدائے تعالیٰ کے لئے پڑھتا ہوں" اس طرح نیت کرنے سے نیت ہو گی یا نہیں۔

Fatawa Razawiyya Volume Sixth

Page 65: A deviation in non-Makkah regions that does not go outside the direction of Qibla is not harmful. Page 75: First Benefit: What is the limit for the direction of Qibla? Various opinions and the author's research. Page 65: In determining the Qibla, astronomy, astrolabes, other instruments, and conjectures are not reliable. Page 125: Second Benefit: How much is the width of the sunset points at the solstices in Aligarh. Page 71: The Qibla line of Aligarh is inclined ten and a half degrees south from the west point. Page 125: Third Benefit: How much the Aligarh Eidgah is deviated from the west point. Page 71: The Companions determined one Qibla for nearby cities and indeed the entire country. Page 126: Fourth Benefit: The approximate Qibla of Aligarh. Page 71: In the decree of Umar Farooq (RA), the Qibla for Iraq was determined to be between East and West. Page 127: Fifth Benefit: The researched/precise Qibla of Aligarh. Page 71: The Qibla for Bukhara, Samarkand, Nasaf, Termez, and Sarakhs is the projection of the head of Scorpio. Page 143: Chapter: The Method of Prayer Page 71: The Qibla for Jerusalem, Aleppo, Damascus, Ramla, Nablus, and the whole of Syria is to keep the North Star at the back. Page 144: Women should fold their hands on their chests; this is most appropriate for them. Page 71: In Kufa, Baghdad, Hamadan, Qazvin, Tabaristan, Gorgan up to the River Shash, the North Star should be behind the right ear; in Iraq, at the straight shoulder; in Egypt, at the left shoulder; in Yemen, slightly to the left in front. For Khorasan, India, and other eastern lands, the Qibla is between the two sunset points. Page 149: Proof of pointing with the index finger during Attahiyat. Page 71: Six opinions of the noble scholars regarding the Qibla. Page 153: The Holy Prophet (peace and blessings be upon him) did not always practice Raf-al-Yadain; rather, both its practice and omission are mentioned in Hadiths, and omission is preferred. Page 75: Why the North Star is taken at the right shoulder in India. Page 155: It is Sunnah to keep a distance of four fingers between both feet during the standing position (Qiyam) in prayer. Page 75: India's North latitude is from 8 to 35 degrees and East longitude is from 66 to 92. Page 157: When praying while sitting, in Ruku (bowing), the forehead should be kept opposite the knees; bending more than that is futile.

फ़तावा रज़विया जिल्द शशम (छठा)

पृष्ठ ६५: मक्का मुअज़्ज़मा के अलावा अन्य स्थानों पर इतना विचलन जो दिशा से बाहर न हो, हानिकारक नहीं है। पृष्ठ ७५: अफ़ादा उला: क़िबला की दिशा की सीमा क्या है, इस बारे में विभिन्न मत और लेखक का शोध। पृष्ठ ६५: क़िबला की दिशा निर्धारित करने में खगोल विज्ञान, एस्ट्रोलेब आदि उपकरणों और अनुमानों का कोई आधार नहीं है। पृष्ठ १२५: अफ़ादा सानिया: अलीगढ़ में दोनों अयनवृत्तों (Solstices) के सूर्यास्त बिंदुओं के बीच की चौड़ाई कितनी है। पृष्ठ ७१: अलीगढ़ की क़िबला रेखा पश्चिम बिंदु से दक्षिण की ओर साढ़े दस डिग्री झुकी हुई है। पृष्ठ १२५: अफ़ादा सालिसा: अलीगढ़ की ईदगाह पश्चिम बिंदु से कितनी विचलित है। पृष्ठ ७१: सहाबा किराम ने पास-पास के शहरों बल्कि पूरे देश के लिए एक ही क़िबला तय किया। पृष्ठ १२६: अफ़ादा राबेया: अलीगढ़ का अनुमानित क़िबला। पृष्ठ ७१: फ़ारूक़ी फ़रमान में इराक का क़िबला पूर्व और पश्चिम के बीच निर्धारित किया गया। पृष्ठ १२७: अफ़ादा ख़ामसा: अलीगढ़ का शोधपूर्ण/सटीक क़िबला। पृष्ठ ७१: बुखारा, समरकंद, नसफ़, तिरमिज़, सरख़स का क़िबला वृश्चिक (बिच्छू राशि के सिर का प्रक्षेपण है। पृष्ठ १४३: बाब सिफ़त-उस-सलात (प्रार्थना की पद्धति का अध्याय) पृष्ठ ७१: बैतुल मुक़द्दस, हलब, दमिश्क, रामला, नब्लस और पूरे शाम (सीरिया) का क़िबला ध्रुव तारे को पीछे रखना है। पृष्ठ १४४: महिलाओं को अपने सीने पर हाथ बांधने चाहिए, यही उनके लिए सबसे उपयुक्त है। पृष्ठ ७१: कूफ़ा, बगदाद, हमदान, क़ज़्विन, तब्रिस्तान, जुर्जन में नहर-ए-शाश तक ध्रुव तारे को दाहिने कान के पीछे, इराक़ में सीधे कंधे के पीछे, मिस्र में बाएं यमन में सामने से थोड़ा बाईं ओर हटा हुआ क़िबला है। खुरासान, भारत आदि पूर्वी देशों का क़िबला दो सूर्यास्त बिंदुओं के बीच है। पृष्ठ १४९: अत्तहियात में तर्जनी उंगली से इशारा करने का प्रमाण। पृष्ठ ७१: क़िबला के बारे में बुजुर्गों के छह कथन। पृष्ठ १५३: हुज़ूर अक़दस (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने हमेशा रफ़-अल-यदैन नहीं किया, बल्कि इसका करना और छोड़ना दोनों हदीसों में वर्णित हैं और छोड़ना ही बेहतर (राजिह) है। पृष्ठ ७५: भारत में ध्रुव तारे को दाहिने कंधे पर क्यों लिया जाता है। पृष्ठ १५५: नमाज़ में क़ियाम (खड़े होने) की स्थिति में दोनों पैरों के बीच चार अंगुल की दूरी रखना सुन्नत है। पृष्ठ ७५: भारत का उत्तरी अक्षांश ८ से ३५ डिग्री और पूर्वी देशांतर ६६ से ९२ तक है। पृष्ठ १५७: बैठकर नमाज़ पढ़ने में रुकू में माथा घुटनों के सामने रखना चाहिए, इससे ज़्यादा झुकना व्यर्थ है।

पृष्ठ १४ का ७३६

فتاوی رضویہ جلد ششم

غیر مکہ معظمہ میں اتنا انحراف کہ جہت سے باہر نہ ہو مضر نہیں۔ ۷۵ افادہ اولیٰ: جہت قبلہ کی حد کیا ہے اس کے بارے میں مختلف اقوال اور مصنف کی تحقیق۔ ۷۶ سمت قبلہ میں علم ہیئت و اصطرلاب وغیرہ آلات و قیاسات کا اعتبار نہیں۔ ۷۵ افادہ ثانیہ: علی گڑھ میں انقلابین کی سعہ المغرب کتنی ہے۔ ۱۲۵ علی گڑھ کا خط قبلہ نقطہ مغرب سے ساڑھے دس درجے جانب جنوب جھکا ہوا ہے۔ ۷۱ افادہ ثالثہ: علی گڑھ کی عید گاہ نقطہ مغرب سے کس قدر منحرف ہے۔ ۱۲۵ صحابہ کرام نے بلاد متقاربہ بلکہ ملک بھر کے لئے ایک ہی قبلہ قرار دیا۔ ۷۱ افادہ رابعہ: علی گڑھ کا قبلہ تقریبی۔ ۱۲۶ فرمان فاروقی میں عراق کا قبلہ مابین المشرق والمغرب قرار پایا۔ ۷۱ افادہ خامسہ: علی گڑھ کا قبلہ تحقیقی۔ ۱۲۷ بخارا، سمر قند، نسف، ترمذ، سرخس کا قبلہ راس العقرب کا مسقط ہے۔ ۷۱ باب صفۃ الصلوٰۃ ۱۴۳ بیت المقدس، حلب، دمشق، رملہ، نابلس، اور تمام ملک شام کا قبلہ قطب تارے کو پس پشت لینا ہے۔ ۷۱ عورتیں سینے پر ہاتھ باندھیں یہ ہی ان کے لئے انسب ہے۔ ۱۴۴ کوفہ، بغداد، ہمدان، قزوین، طبرستان، جرجان میں نہر شاش تک قطب کو دہنے کان کے پیچھے، ملک عراق میں سیدھے شانے، ملک مصر میں بائیں، ملک یمن میں منہ کے سامنے بائیں کو ہٹا ہوا قبلہ ہے۔ خراسان، ہندوستان وغیرہ بلادِ شرقیہ کا قبلہ بین المغربین ہے۔ ۷۱ التحیات میں انگشت شہادت سے اشارہ کرنے کا ثبوت۔ ۱۴۹ قبلہ کے بارے میں مشائخ کرام کے چھ اقوال ۷۱ حضور اقدس صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے ہمیشہ رفع یدین نہیں فرمایا بلکہ فعل و ترک دونوں حدیثوں میں وارد ہیں اور ترک راجح۔ ۱۵۳ ہندوستان میں قطب تارا دہنے شانے پر کیوں لیا جاتا ہے۔ ۷۵ نماز میں قیام کی حالت میں دونوں پاؤں کے درمیان چار انگل کا فاصلہ رکھنا مسنون ہے۔ ۱۵۵ ہندوستان کا عرض شمالی ۸ درجے سے ۳۵ درجے اور طول مشرقی ۶۶ سے ۹۲ تک ہے۔

۷۵ بیٹھ کر نماز پڑھنے میں رکوع میں پیشانی گھٹنوں کے مقابل رکھنی چاہئے اس سے زیادہ جھکنا عبث ہے۔ ۱۵۷

Fatawa Rizwia, Volume Six

Right Text Description	Serial No.	Serial No.	Left Text Description	Page No.
If one has the strength for only Takbir-e-Tahreema, it is obligatory to say Takbir while standing and then sit, otherwise the prayer will not be valid; the author's research on this.	158		Method of signaling during At-Tahiyyat.	190
Reciting Bismillah at the start of a Surah is recommended; the difference is only in its Sunnah status.	162	162	Method of making intention for Friday (Jummah) prayer.	191
What is meant by Surah here.	162		It is superior to join Bismillah at the beginning of Surahs.	191
Research on joining heels (ilsaq-e-ka'bayn).	177		The method of advising those who do not pray and if they do not listen, then to cut ties with them.	191
Long dhikr in Qawma and Jalsa are meant for voluntary (nawafil) prayers, not recommended in obligatory ones.	170		Reciting the Holy Quran in prayer is obligatory; mere thought is not sufficient.	193
Reciting Thana is a Sunnah and it can be recited before the Imam's loud recitation.	182	182	A latecomer (masbuq) should recite At-Tahiyyat slowly so that it finishes at the time of Imam's Salam, otherwise repeat the Shahadatain.	193
Saying "Allahummaghfirli" is recommended for Imam, follower, and individual alike, and long supplications are disliked for all.	182	182	In sitting prayer, while prostrating, should the buttocks be separated from the feet or not.	193
	183			202

Right Text Description	Serial No.	Serial No.	Left Text Description	Page No.
The excellence of reciting Durood Sharif; description of the best Durood.			In bowing (ruku), the gaze should be on the feet.	
It is not permissible for a follower to recite the Holy Quran; loud "Ameen" is disliked.	183	183	Raising hands for supplication and wiping them on the face is Sunnah, but kissing the hands is not proven.	202
20 units of Tarawih is a Sunnah Mu'akkadah. A single unit of Witr prayer, even if voluntary, is completely void.	185		Saying "Ameen" after "Walad-dalleen" is Sunnah, even in silent prayers if heard; no prostration of forgetfulness for "Ameen".	202
Pointing with the index finger in At-Tahiyyat is Sunnah.	187		Method of praying in a stationary train.	202
The obedience to the Imam ends for the follower after Salam; method of saying transitional takbirs.	189		Blessed Hadiths regarding the excellence of praying while wearing a turban.	203
It is disliked for the Imam to remain facing the Qibla after Salam.	190		It is disliked for the Imam to remain facing the Qibla after Salam.	204

फतवा रज़विया, खंड छह

दायां विवरण	क्रम संख्या	क्रम संख्या	बायां विवरण	पृष्ठ संख्या
यदि केवल तकबीर-ए-तहरीमा की शक्ति हो, तो खड़े होकर तकबीर कहना और फिर बैठना अनिवार्य है, अन्यथा प्रार्थना मान्य नहीं होगी; इस पर लेखक का शोध।	१५८		अत-तहियत के दौरान इशारा करने का तरीका।	१९०
सूरह की शुरुआत में बिस्मिल्लाह शरीफ़ पढ़ना मुस्तहब है; मतभेद केवल इसके सुन्नत होने में है।	१६२	१६२	जुमे की नीयत करने का तरीका।	१९१
यहाँ सूरह से क्या तात्पर्य है।	१६२		सूरतों की शुरुआत में बिस्मिल्लाह शरीफ़ मिलाना बेहतर है।	१९१
एड़ी मिलाने (इल्साक-ए-कबैन) पर शोध।	१७७		नमाज न पढ़ने वालों को समझाने का तरीका और न मानने पर उनसे संबंध विच्छेद कर लेना चाहिए।	१९१
कौमा और जलसा में लंबे ज़िक्र नवाफ़िल (स्वैच्छिक) के लिए हैं, फ़र्ज़ नमाज़ों में सुन्नत नहीं हैं।	१७०		नमाज में कुरान शरीफ पढ़ना अनिवार्य है, केवल कल्पना काफी नहीं है।	१९३
सना पढ़ना सुन्नत है और इसे इमाम के ज़ोर से पढ़ने से पहले पढ़ा जा सकता है।	१८४	१८२	मसबूक (देर से आने वाला) को अत-तहियत धीरे-धीरे पढ़नी चाहिए ताकि वह इमाम के सलाम के समय समाप्त हो, अन्यथा शहादतैन को दोहराए।	१९३
	१८४	१८२		१९३

दायां विवरण	क्रम संख्या	क्रम संख्या	बायां विवरण	पृष्ठ संख्या
'अल्लाहुम्मगफिरली' कहना इमाम, मुक्तदी और मुनफ़रिद सबके लिए मुस्तहब है और लंबी दुआ सबके लिए मकरूह है।			बैठकर नमाज पढ़ने में सजदा करते समय क्या नितंबों को पैरों से अलग करना चाहिए या नहीं।	
दरूद शरीफ पढ़ने की फजीलत; सर्वश्रेष्ठ दरूद का वर्णन।	१८३		रुकू में नजर पैरों पर होनी चाहिए।	२०२
मुक्तदी के लिए कुरान मजीद पढ़ना जायज़ नहीं है; ज़ोर से "आमीन" कहना मकरूह है।	१८३	१८३	दुआ के लिए हाथ उठाना और हाथों को चेहरे पर फेरना सुन्नत है, लेकिन हाथों को चूमना प्रमाणित नहीं है।	२०२
२० रकात तरावीह सुन्नत मुअक्कदा है। वित्र की एक रकात नमाज, चाहे नफिल हो, पूरी तरह से अमान्य है।	१८५		'वलद-द़ाल्लीन' के बाद आमीन कहना सुन्नत है, भले ही सिरी (शांत) नमाजों में सुनाई दे; आमीन कहने पर सजदा-ए-सह्व नहीं होता।	२०२
अत-तहियत में कलिमे की उंगली से इशारा करना सुन्नत है।	१८७		रुकी हुई ट्रेन में नमाज पढ़ने का तरीका।	२०२
सलाम के बाद मुक्तदी के लिए इमाम की आज्ञाकारिता समाप्त हो जाती है; तकबीरात-ए-इंतकालिया कहने का तरीका।	१८९		पगड़ी (इमामा) बांधकर नमाज पढ़ने की फजीलत में हदीसें।	२०३
सलाम के बाद इमाम का किबला की ओर मुंह करके बैठे रहना मकरूह है।	१९०		सलाम के बाद इमाम के लिए किबला की ओर मुंह करके बैठे रहना मकरूह है।	२०४

دائیں جانب کی تفصیل	نمبر شمار	بائیں جانب کی تفصیل	صفحہ نمبر
صرف تکبیر تحریمہ کی قدرت ہو تو اس پر فرض ہے کہ کھڑے ہو کر تکبیر کہے پھر بیٹھ جائے ورنہ نماز نہیں ہو گی، اس کے بارے میں مصنف کی تحقیق۔	۱۵۸	التحیات میں اشارہ کرنے کا طریقہ۔	۱۹۰
ابتدائے سورت میں بسم اللہ شریف پڑھنا مستحب ہے اختلاف صرف اس کی مسنونیت میں ہے۔	۱۶۲	جمعہ کی نیت کرنے کا طریقہ۔	۱۹۱
یہاں سورت سے کیا مراد ہے۔	۱۶۲	سورتوں کی ابتداء میں بسم اللہ شریف ملانا افضل ہے۔	۱۹۱
الصاق کعبین کی تحقیق۔	۱۷۷	بے نمازیوں کو سمجھانے کا طریقہ اور نہ مانیں تو ان سے قطع تعلق کر لیا جائے۔	۱۹۱
قومہ وجلسہ کے اذکار طویلہ نوافل پر محمول ہیں فرائض میں مسنون نہیں۔	۱۷۰	نماز میں قرآن شریف پڑھنا فرض ہے تصور کافی نہیں۔	۱۹۳
	۱۸۲		۱۹۳

دائیں جانب کی تفصیل	نمبر شمار	بائیں جانب کی تفصیل	نمبر شمار	صفحہ نمبر
		مسبوق التحیات کو ترتیل سے		
ثنا پڑھنا سنت ہے اور امام کے قرات		پڑھے تاکہ امام کے سلام کے		
بالجہر سے پہلے پڑھی جاسکتی ہے۔		وقت ختم ہو ورنہ شہادتین کی		
		تکرار کرے۔		
اللہم اغفر لی کہنا امام، مقتدی اور منفرد		بیٹھ کر نماز پڑھنے میں سجدے		
سب کے لئے مستحب ہے اور طویل	۱۸۲	کرنے میں پاؤں سے سرین کو	۱۸۲	۱۹۳
دعاسب کے لئے مکروہ۔		جدا کرنا چاہئے یا نہیں۔		
درود شریف پڑھنے کی فضیلت افضل درود				
کا بیان۔	۱۸۳	رکوع میں قدموں پر نظر ہو۔		۲۰۲
		ہاتھ اٹھا کر دعا مانگنا اور		
مقتدی کو قرآن مجید پڑھنا جائز نہیں، آمین		ہاتھوں کو منہ پر پھیرنا مسنون		
بالجہر مکروہ ہے۔	۱۸۳	ہے مگر ہاتھوں کو چومنا ثابت		۲۰۲
		نہیں۔		
		ولا الضالین کے بعد آمین کہنا		
۲۰ رکعت تراویح سنت مؤکدہ ہے۔ ایک		مسنون ہے سری نمازوں میں		
رکعت نماز وتر خواہ نفل باطل محض ہے۔	۱۸۵	بھی اگر مسموع ہو، آمین سے		۲۰۲
		سجدہ سہو نہیں۔		
التحیات میں اشارہ بہ سبابہ مسنون ہے۔	۱۸۷			۲۰۲

دائیں جانب کی تفصیل	نمبر شمار	نمبر شمار	بائیں جانب کی تفصیل	صفحہ نمبر
			ٹھہری ہوئی ریل میں نماز پڑھنے کا طریقہ۔	
سلام کے بعد امام کی اطاعت مقتدی سے ختم ہوجاتی ہے، تکبیرات انتقالیہ کہنے کا طریقہ۔	۱۸۹		عمامہ باندھ کر نماز پڑھنے کی فضیلت میں احادیث کریمہ۔	۲۰۳
سلام کے بعد امام کو قبلہ رو بیٹھے رہنا مکروہ ہے۔	۱۹۰		سلام کے بعد قبلہ رو بیٹھے رہنا امام کے لئے مکروہ ہے۔	۲۰۴

Fatawa Razawiyya - Volume Six

Description	Page No.	Description	Page No.
Understanding the meaning is not mandatory for the validity of prayer.	205	Ruling for one who is unable to pronounce a certain letter.	253
What is the ruling on flipping the prayer mat after prayer?	206	Repeating a Surah in every rak'at of an obligatory prayer is disliked (Makruh).	266
If prayer is performed in a Sherwani, shirt, etc., it should be standing at the collar and prostration should be done on the hem.	207	What is the ruling on reciting several Surahs, one Surah, or one verse several times in one rak'at, or reciting a few verses of a long Surah in one rak'at and a few verses in the second rak'at?	267
After the Salaam, only the Imam is commanded to turn away, not the followers; why is this?	207	Reciting Surahs in reverse order is impermissible.	270
Dozens of noble Hadiths regarding the excellence of the turban (Amamah).	208	Long recitation in the second rak'at compared to the first is disliked (Makruh).	271
Ruling on used and unused shoes.	208	Pronouncing 'Zhaad' as 'Zaad' or a heavy 'Daal' is incorrect; a description of the articulation point of 'Zhaad'.	272
It is obligatory to send blessings (Durood Sharif) upon the sacred name of the Prophet (PBUH).	221	Ruling on coughing and clearing the throat in prayer.	274
It is not permissible to write 'Salat Radi' etc. in code.	221	The letters 'Zhaad' and 'Zaa' are similar in sound.	275
One who performs Wazifa but does not pray is a transgressor (Fasiq).	223	There are three levels of Tarteel (rhythmic recitation).	275
	224		283

Description	Page No.	Description	Page No.
Proof for supplicating (Dua) after prayer.		Treatise: Ni'm al-Zaad li Rawm al-Daad (Incomplete) (Research on the letter 'Zhaad').	
Reciting Durood Sharif loudly is permissible, but reciting it silently is better.	233	Treatise: Al-Jaam al-Saad 'an Sunan al-Daad (Rulings of 'Zhaad' and the method of its pronunciation).	303
How is delaying the supplication after prayer viewed?	233	Denying Tajweed (rules of recitation) is disbelief (Kufr).	322
Chapter on Recitation			
It is obligatory to recite the Holy Quran in sequence.	239	Prayer will not be valid if the Holy Quran is recited in a non-Arabic language.	323
According to the majority of Companions and Successors, recitation behind the Imam is prohibited; proof from Hadith and rebuttal of the opponents' arguments.	240	Description of the amount of recitation when not traveling (Hadr).	324
Ruling on making a mistake in recitation.	251	If someone said "Qal Rasulullah" (The Messenger of Allah said) in prayer, will the prayer be valid or not?	326
In silent prayers, the prostration of forgetfulness (Sajda Sahw) becomes obligatory if one recites audibly; description of the amount of audible recitation.	251	Does prayer remain valid if the 'Alif' of the word "Allah" is omitted or made heavy?	327

फ़तावा रज़विया - छठा खण्ड

विवरण	पृष्ठ सं.	विवरण	पृष्ठ सं.
नमाज़ की शुद्धता के लिए अर्थ समझना ज़रूरी नहीं है।	२०५	किसी अक्षर के उच्चारण में जो समर्थ न हो उसके लिए हुक्म।	२५३
नमाज़ के बाद मुसल्ले (जायनमाज़) को उलटना कैसा है?	२०६	फ़र्ज़ नमाज़ की हर रक़अत में एक ही सूरत को दोहराना मकरूह है।	२६६
शेरवानी, कुर्ते आदि में नमाज़ पढ़े तो गिरेबान पर खड़ा हो और सज्दा दामन पर करे।	२०७	एक रक़अत में कई सूरतें या एक सूरत या एक आयत को कई बार पढ़ना, या एक बड़ी सूरत की कुछ आयतें एक रक़अत में और कुछ आयतें दूसरी रक़अत में पढ़ना कैसा है।	२६७
सलाम के बाद सिर्फ़ इमाम को मुड़ने का हुक्म है मुक्तदियों को नहीं, ऐसा क्यों?	२०७	सूरतों को उल्टे क्रम में पढ़ना नाजायज़ है।	२७०
इमामे की फ़ज़ीलत में दर्जनों अहादीस-ए-करीमा।	२०८	दूसरी रक़अत में पहली रक़अत से लंबी क़िरात करना मकरूह है।	२७१
इस्तेमालशुदा और ग़ैर-इस्तेमालशुदा जूतों का हुक्म।	२०८	'ज़ाद' (ض) को 'ज़ा' (ظ) या भारी 'दाल' पढ़ना ग़लत है, 'ज़ाद' के मख़रज (उच्चारण स्थान) का बयान।	२७२
हुज़ूर ﷺ के नाम-ए-अक़दस पर दुरूद शरीफ़ पढ़ना वाजिब है।	२२१	नमाज़ में खाँसने और खंखारने का हुक्म।	२७४
'सलात-ए-रज़वी' आदि को गुप्त कोड में लिखना जायज़ नहीं।	२२१	अक्षर 'ज़ाद' (ض) और 'ज़ा' (ظ) की आवाज़ें मिलती-जुलती हैं।	२७५
जो वज़ीफ़ा पढ़े और नमाज़ न पढ़े वह फ़ासिक़ है।	२२३	तरतील (लयबद्ध पाठ) की तीन सीमाएँ हैं।	२७५
नमाज़ के बाद दुआ मांगने का सुबूत।	२२४		२८३

विवरण	पृष्ठ सं.	विवरण	पृष्ठ सं.
		रिसाला: ने'मुल-ज़ाद लि-रौमिल-ज़ाद (अपूर्ण) (अक्षर 'ज़ाद' का शोध)।	
बुलंद आवाज़ से दुरूद शरीफ़ पढ़ना जायज़ है और धीरे पढ़ना बेहतर है।	२३३	रिसाला: अल-जाम-उस-साद अन सुनन-इल-ज़ाद ('ज़ाद' के अहकाम और उसे अदा करने का तरीक़ा)।	३०३
नमाज़ के बाद दुआ में देरी कैसी है?	२३३	तजवीद (उच्चारण नियमों) का इंकार कुफ़्र है।	३२२
किरात का अध्याय (बाबुल क़िरात)			
क़ुरान मजीद को तरतीब (क्रम) से पढ़ना वाजिब है।	२३९	ग़ैर-अरबी में क़ुरान शरीफ़ पढ़ने से नमाज़ नहीं होगी।	३२३
जम्हूर सहाबा और ताबेईन के नज़दीक इमाम के पीछे क़िरात करना मना है; अहादीस से इसका सुबूत और विरोधियों के तर्कों का खंडन।	२४०	मुक़ीम होने की स्थिति में क़िरात की मात्रा का बयान।	३२४
क़िरात में ग़लती करने का हुक्म।	२५१	नमाज़ में किसी ने "क़ाल रसूलुल्लाह" कह दिया तो नमाज़ होगी या नहीं?	३२६
सिरी (धीमी) नमाज़ों में ज़हर (ज़ोर से पढ़ने) से सज्दा-ए-सहव वाजिब होता है, ज़हर की मात्रा का बयान।	२५१	लफ़्ज़ "अल्लाह" के अलिफ़ को हटाने या भारी करने से नमाज़ होती है या नहीं।	३२७

تفصیل	صفحہ نمبر
صحت صلوٰۃ کے لئے فہم معنی ضروری نہیں۔	۲۰۵
نماز کے بعد مصلے کا الٹ دینا کیسا ہے۔	۲۰۶
شروانی، کرتے وغیرہ پر نماز پڑھے تو گریبان پر کھڑا ہو اور سجدہ دامن پر کرے۔	۲۰۷
سلام کے بعد صرف امام کو انصراف کا حکم ہے مقتدیوں کو نہیں یہ کیوں؟	۲۰۷
عمامہ کی فضیلت میں بیسیوں احادیث کریمہ۔	۲۰۸
استعمالی و غیر استعمالی جوتوں کا حکم۔	۲۰۸
کسی حرف کے نکالنے پر جو قادر نہ ہو اس کے لئے حکم۔	۲۵۳
ہر رکعت میں ایک سورت کی تکرار فرض میں مکروہ ہے۔	۲۶۶
ایک رکعت میں چند سورتیں یا ایک سورت یا ایک آیت چند بار پڑھنا یا ایک بڑی سورت کی چند آیتیں ایک رکعت میں اور چند آیتیں دوسری رکعت میں پڑھنا کیسا ہے۔	۲۶۷
سورتوں کو معکوس پڑھنا ناجائز ہے۔	۲۷۰
دوسری رکعت میں پہلی سے طویل قرات مکروہ ہے۔	۲۷۱
ضاد کو ظاد یا دال پُر پڑھنا غلط ہے، ضاد کے مخرج کا بیان۔	۲۷۲

تفصیل	صفحہ نمبر
حضور کے نام اقدس پر درود شریف پڑھنا واجب ہے۔	۲۲۱
صلوٰۃ رضی وغیرہ کور مزمیں لکھنا جائز نہیں۔	۲۲۱
جو وظیفہ پڑھے اور نماز نہ پڑھے وہ فاسق ہے۔	۲۲۳
نماز کے بعد دعا مانگنے کا ثبوت۔	۲۲۴
بلند آواز سے درود شریف پڑھنا جائز ہے اور اخفا افضل۔	۲۳۳
نماز کے بعد دعا میں تاخیر کیسی۔	۲۳۳
باب القرأة	
قرآن مجید کو ترتیب سے پڑھنا واجب ہے۔	۲۳۹
جمہور صحابہ و تابعین کے نزدیک قرأة خلف الامام ممنوع ہے	۲۴۰
نماز میں کھانسنے اور کھنکارنے کا حکم۔	۲۷۴
حرف ضاد اور ظا مشتبہ الصوت ہیں۔	۲۷۵
ترتیل کی تین حدیں ہیں۔	۲۷۵
رسالہ نعم الزاد لروم الضّاد (ناقص) (حرف ضاد کی تحقیق)	۲۸۳
رسالہ الجام الصاد عن سنن الضاد (ضاد کے احکام اور اس کے ادا کرنے کا طریقہ)	۳۰۳
تجوید سے انکار کفر ہے۔	۳۲۲
غیر عربی میں قرآن شریف پڑھنے سے نماز نہیں ہو گی۔	۳۲۳
حضر میں مقدار قرات کا بیان۔	۳۲۴

تفصیل	صفحہ نمبر
احادیث سے اس کا ثبوت اور مخالفین کے دلائل کا رد۔	
قرأة میں غلطی کرنے کا حکم۔	۲۵۱
سری نمازوں میں جہر سے سجدہ سہو واجب ہوتا ہے، مقدار جہر کا بیان۔	۲۵۱
نماز میں کسی نے قال رسول اللہ کہہ دیا نماز ہوگی یا نہیں۔	۳۲۶
لفظ "اللہ" کے الف کو حذف یا پُر کرنے سے نماز ہوتی ہے یا نہیں۔	۳۲۷

Fatawa Razawiya, Volume Six

Page 344: Questions and answers regarding the recitation of a few verses. | Page 328: Someone recited Surah Ya-Sin, then Ad-Dukhan, then As-Sajdah, then Al-Mulk in a four-unit (rak'ah) prayer, etc. Page 344: What is the minimum amount for the verse that makes prayer valid (Ma yajuzu bihi al-salah)? | Page 329: Reciting one verse of the Holy Quran is obligatory, whether it is from Surah Al-Fatiha or any other Surah. Page 346: Pausing at the end of every verse is permissible, even if it is a 'la' (لا) verse. | Page 331: In which prayers should Tiwal-e-Mufassal, Awsat-e-Mufassal, and Qisar-e-Mufassal be recited? Page 347: Reciting the Holy Quran in its proper order is obligatory; reciting it in reverse order is forbidden. | Page 332: 'Amen' should be said quietly. Page 347: Reciting one verse in prayer is obligatory. | Page 332: Prayer will be disliked (Makruh) if there is a foul odor in the mouth. Page 348: Giving a prompt (luqmah) is permissible. | Page 333: After reciting one verse, moving to other verses or skipping from the middle, if done out of necessity, the prayer will be valid. Page 348: Joining the end of 'Qul Huwallahu Ahad' with what follows is permissible. | Page 335: Where is it recommended (Mustahab) to join the end of a Surah with the Takbir of Ruku? Page 348: The method of reciting Surah Ar-Rahman in Taraweeh. | Page 336: In the Fajr prayer, forty to sixty verses should be recited, and if time is short, as much as possible. Page 349: How many verses are obligatory (Farz), necessary (Wajib), Sunnah, and recommended (Mustahab) in prayer? | Page 336: Pausing on the word 'illa' in Surah Al-Asr makes the prayer valid. Page 349: Where should 'Bismillah Sharif' be recited in prayer? | Page 336: Ruling on pronouncing the letter 'Daad' (ض) similarly to 'Za' (ظ). Page 350: It is obligatory to recite whichever Surah whose first word is uttered in prayer. | Page 338: Several people reciting the Holy Quran loudly in one place is prohibited. Page 351: If the meaning is corrupted, even if it happens after a thousand verses, the prayer will be invalidated. | Page 339: For the validity of prayer, it is not necessary to know the science of articulation points (Makharij); correct pronunciation of letters is required. Page 351: Recitation by the follower (muqtadi) behind an imam is not permissible. | Page 339: Changing letters, i.e., replacing one letter with another, invalidates the prayer; three forms of replacement. Page 352: Pronouncing the 'ra' of 'Allahu Akbar' as 'dal' will invalidate the prayer. | Page 342: One form of giving a prompt (luqmah). Page 352: A few questions regarding non-sequential recitation. | Page 343: Reciting the Holy Quran with enough Tajweed to ensure the correct pronunciation of letters is an individual obligation (Farz-e-Ayn).

फतावा रज़विया, जिल्द शशुम

पेज ३४४: चंद आयतों की क़िरात के मुताल्लिक़ सवाल व जवाब। | पेज ३२८: किसी ने चार रकअत वाली नमाज़ में सूरह यासीन फिर दुख़ान फिर तंज़ील फिर सूरह मुल्क पढ़ी अ़लख़। पेज ३४४: आयत मा यजूज़ु बिही अस्सलाह की मिक़दार क्या है। | पेज ३२९: क़ुरआन मजीद की एक आयत पढ़ना फ़र्ज़ है सूरह फ़ातिहा की हो ख़्वाह किसी और सूरत की। पेज ३४६: हर आयत पर वक़्फ़ जाइज़ है अगरचे आयत 'ला' (لا) हो। | पेज ३३१: त़वाल-ए-मुफ़स्सल, औसत़-ए-मुफ़स्सल, क़िसार-ए-मुफ़स्सल किन नमाज़ों में पढ़ी जाएँ। पेज ३४७: क़ुरआन पाक तरतीब से पढ़ना फ़र्ज़ है उल्टा पढ़ना हराम। | पेज ३३२: आमीन आहिस्ता कहना चाहिए। पेज ३४७: नमाज़ में एक आयत पढ़ना फ़र्ज़ है। | पेज ३३२: मुँह में बदबू होने की हालत में नमाज़ मकरूह होगी। पेज ३४८: लुक़्मा देना जाइज़ है। | पेज ३३३: एक आयत पढ़ने के बाद दूसरी आयतों की तरफ़ मुंतक़िल होना या बीच से छोड़ देना अगर मजबूरी से हो नमाज़ हो जाएगी। पेज ३४८: क़ुल हुवल्लाहु अहद में मा बाद से वस्ल जाइज़ है। | पेज ३३५: सूरह के अख़ीर को तकबीर-ए-रुकूअ़ से मिलाना कहाँ कहाँ मुस्तहब है। पेज ३४८: तरावीह में सूरह रहमान पढ़ने का तरीक़ा। | पेज ३३६: सुब्ह की नमाज़ में चालीस से साठ आयत तक पढ़ना चाहिए और वक़्त कम हो तो बक़द्र-ए-गुंजाइश। पेज ३४९: नमाज़ में कितनी आयतें फ़र्ज़ हैं और कितनी वाजिब और कितनी सुन्नत और कितनी मुस्तहब। | पेज ३३६: सूरह अल-अ़स्र में कलिमा 'इल्ला' (إلا) पर वक़्फ़ करने से नमाज़ हो जाती है। पेज ३४९: नमाज़ में बिस्मिल्लाह शरीफ़ कहाँ कहाँ पढ़ना चाहिए। | पेज ३३६: ज़ाद (ض) को ज़ा (ظ) के मुशाबा पढ़ने का हुक्म। पेज ३५०: नमाज़ में जिस सूरह का एक कलिमा मुँह से निकल आए उसी का पढ़ना फ़र्ज़ है। | पेज ३३८: चंद आदमियों का एक जगह बुलंद आवाज़ से क़ुरआन मजीद पढ़ना ममनूअ़ है। पेज ३५१: फ़साद-ए-मा'नी अगरचे हज़ार आयत के बाद हो नमाज़ जाती रहेगी। | पेज ३३९: सेहत-ए-सलाह के लिए फ़न-ए-मख़ारिज जानना ज़रूरी नहीं हुरूफ सही अदा होने चाहिए। पेज ३५१: मुक़्तदी को क़िरात ना जाइज़ है। | पेज ३३९: तबदील-ए-हुरूफ यानी एक हर्फ़ को दूसरे हर्फ़ से बदलने से नमाज़ फ़ासिद होती है, तबदील की तीन सूरतें। पेज ३५२: अल्लाह अकबर की रा को दाल पढ़ने से नमाज़ फ़ासिद होगी। | पेज ३४२: लुक़्मा देने की एक सूरत। पेज ३५२: ख़िलाफ़-ए-तरतीब से मुताल्लिक़ चंद सवाल। | पेज ३४३: क़ुरआन पाक को इतनी तजवीद से पढ़ना जिससे हुरूफ की तसहीह हो फ़र्ज़-ए-ऐन है।

पेज १७ ऑफ ७३६

فتاوی رضویہ جلد ششم

۳۴۴ چند آیتوں کی قرآت کے متعلق سوال وجواب۔ | ۳۲۸ کسی نے چار رکعت والی نماز میں سورہ لٰیس پھر دخان پھر تنزیل پھر سورہ ملک پڑھی الخ ۳۴۴ آیت ما یجوز بہ الصلوۃ کی مقدار کیا ہے۔ | ۳۲۹ قرآن مجید کی ایک آیت پڑھنا فرض ہے سورہ فاتحہ کی ہو خواہ کسی اور سورت کی۔ ۳۴۶ ہر آیت پر وقف جائز ہے اگر چہ آیت لا ہو۔ | ۳۳۱ طوال مفصل، اوسط مفصل، قصار مفصل کن نمازوں میں پڑھی جائیں۔ ۳۴۷ قرآن پاک ترتیب سے پڑھنا فرض ہے الٹا پڑھنا حرام۔ | ۳۳۲ آمین آہستہ کہنا چاہئے۔ ۳۴۷ نماز میں ایک آیت پڑھنا فرض ہے۔ | ۳۳۲ منہ میں بدبو ہونے کی حالت میں نماز مکروہ ہوگی۔ ۳۴۸ لقمہ دینا جائز ہے۔ | ۳۳۳ ایک آیت پڑھنے کے بعد دوسری آیتوں کی طرف منتقل ہونا یا بیچ سے چھوڑ دینا اگر مجبوری سے ہو نماز ہو جائے گی۔ ۳۴۸ قل ھو اللہ احد 0 میں ما بعد سے وصل جائز ہے۔ | ۳۳۵ سورۃ کے اخیر کو تکبیر رکوع سے ملانا کہاں کہاں مستحب ہے۔ ۳۴۸ تراویح میں سورہ رحمن پڑھنے کا طریقہ۔ | ۳۳۶ صبح کی نماز میں چالیس سے ساٹھ آیت تک پڑھنا چاہئے اور وقت کم ہو تو بقدر گنجائش۔ ۳۴۹ نماز میں کتنی آیتیں فرض ہیں اور کتنی واجب اور کتنی سنت اور کتنی مستحب۔ | ۳۳۶ سورہ العصر میں کلمہ الاّ پر وقف کرنے سے نماز ہو جاتی ہے۔ ۳۴۹ نماز میں بسم اللہ شریف کہاں کہاں پڑھنا چاہئے۔ | ۳۳۶ ض کو ظ کے مشابہ پڑھنے کا حکم۔ ۳۵۰ نماز میں جس سورۃ کا ایک کلمہ منہ سے نکل آئے اسی کا پڑھنا فرض ہے۔ | ۳۳۸ چند آدمیوں کا ایک جگہ بلند آواز سے قرآن مجید پڑھنا ممنوع ہے۔ ۳۵۱ فسادِ معنی اگر چہ ہزار آیت کے بعد ہو نماز جاتی رہے گی۔ | ۳۳۹ صحت صلوۃ کے لئے فن مخارج جاننا ضروری نہیں حروف صحیح ادا ہونے چاہئیں۔ ۳۵۱ مقتدی کو قرآت نا جائز ہے۔ | ۳۳۹ تبدیل حروف یعنی ایک حرف کو دوسرے حرف سے بدلنے سے نماز فاسد ہوتی ہے، تبدیل

کی تین صورتیں۔ ۳۵۲ اللہ اکبر کی راء کو دال پڑھنے سے نماز فاسد ہو گی۔ | ۳۴۲ لقمہ دینے کی ایک صورت۔ ۳۵۲ خلاف ترتیب سے متعلق چند سوال۔ | ۳۴۳ قرآن پاک کو اتنی تجوید سے پڑھنا جس سے حروف کی تصحیح ہو فرض عین ہے۔

Fatawa Rizvia | Volume Six

Page	Topic
353	Following (Iqtida) a Masbuq (one who joined prayer late) is not correct.
355	Prayer behind a usurer (interest-taker) is disliked (Makruh).
355	Ruling on the Imam standing in the 'Dar' (doorway/passageway).
370	A person says, for example, that one who has intimacy with his wife and etc...
371	Will prayer behind a 'Beera' be valid or not?
371	Ruling on the leadership (Imamat) of one who calls Hanafis 'progeny of Satan' etc.
373	What is the ruling if a Hanafi follows the method of Imam Shafi'i (may Allah have mercy on him) regarding 'Masah' (wiping)?
379	Ruling on the Imamat of someone who watches dances etc.
379	Imamat of one who does not fast is Makruh.
379	When is the prayer of a Hanafi behind a Shafi'i permissible?
380	Prayer behind a blind person is Makruh.
380	Ruling on the Imamat of those who watch dances, offer sacrifices to deities, or backbite.
381	Prayer behind a salaried Imam is permissible.
383	A few rulings regarding Tajwid (rules of Quranic recitation).
382	It is not obligatory for the follower to follow every action or omission of the Imam.
386	Prayer is not permissible behind Wahhabis, Rafidhis, and those unaware of the rulings of prayer.
387	[Blank]
390	Is it permissible to give a prompt (Luqma) without reason or not?
390	If something is missed from the middle of a Surah, will the prayer be valid or not?
392	Repeating a word multiple times due to forgetfulness does not invalidate the prayer.
392	Following rules of Waqf (stopping) and Wasl (connecting) is better, but neglecting them does not disrupt the prayer.
397	It is Makruh to skip a small Surah in the middle and read.

Page	Topic
398	Where the Imam makes a mistake, the follower can give a prompt even if it is after a thousand verses.
403	Question regarding the recitation of a few verses.
	Chapter on Imamat
405	In these cities, those who do Ameen-bil-jahr (loudly) and Raf-al-yadain (raising hands) are generally Ghair-Muqallid (non-conformists).
406	Will prayer behind someone who recites half a Kalimah be valid or not?
407	It is Sunnah to say the full 'Allahu Akbar' in a loud voice.
416	If someone joins the last Rak'ah of a four-Rak'ah prayer, they should perform Qada (sitting) in the second Rak'ah after the Imam's Salam.
418	One who is more knowledgeable about the issues of prayer and purification is more deserving of Imamat, even if they are blind.
422	It is Makruh for the Imam to stand in the 'Dar'; the difference between Mihrab and Dar.
422	Someone who does not know Tajwid cannot be an Imam.
437	The old Imam retains the right to Imamat even if a more learned scholar comes to the mosque.
439	Will prayer behind someone who takes women to fairs be valid or not?

फतवा रज़विया | जिल्द छठी (छठा खंड)

पृष्ठ विषय

३५३ मसबूक़ (देर से शामिल होने वाले) की इक़्तिदा (अनुसरण) सही नहीं।

३५५ सूदखोर के पीछे नमाज़ मकरूह है।

३५५ इमाम को 'दर' (दरवाज़े) में खड़े होने का हुक्म।

३७० एक शख़्स मसलन ये कहे कि जो अपनी बीवी से क़ुरबत (निकटता) करे और इत्यादि...

३७१ 'बीरा' के पीछे नमाज़ होगी या नहीं?

३७१ अहनाफ़ को 'ज़ुर्रियत-ए-शैतान' वग़ैरह कहने वाले की इमामत का हुक्म।

३७३ हनफ़ी मसला 'मसह' में इमाम शाफ़ई रहमतुल्लाह अलैह के तरीक़े पर अमल करे तो क्या हुक्म है।

३७९ नाच वग़ैरह देखने वाले की इमामत का हुक्म।

३७९ बे-रोज़ादार की इमामत मकरूह है।

३७९ हनफ़ी की नमाज़ शाफ़ई के पीछे कब जायज़ है।

३८० अंधे के पीछे नमाज़ मकरूह है।

३८० नाच देखने वाले, देवताओं पर भेंट चढ़ाने वाले, ग़ीबत करने वाले की इमामत का हुक्म।

३८१ तनख़्वाहदार इमाम के पीछे नमाज़ जायज़ है।

३८३ तजवीद से मुतल्लिक़ चंद अहकाम।

३८२ इमाम के हर फ़ेल (कार्य) व तर्क(त्याग) का इत्तिबा मुक्तदी पर वाजिब नहीं।

३८६ वहाबिया, रवाफ़िज़ और जो मसाइल-ए-नमाज़ से वाक़िफ़ नहीं उनके पीछे नमाज़ जायज़ नहीं।

३८७ [रिक्त]

३९० बिना वजह लुक़्मा (इशारा) देना जायज़ है या नहीं?

३९० दरमियान-ए-सूरत (सूरत के बीच) से कुछ छूट जाए तो नमाज़ होगी या नहीं?

३९२ भूलने की हालत में एक शब्द को बार-बार पढ़ने से नमाज़ फ़ासिद (अमान्य) नहीं होती।

३९२

पृष्ठ विषय

वक्फ़ और वस्ल के नियमों का पालन करना बेहतर है, लेकिन उनका त्याग करने से नमाज़ में बाधा नहीं आती।

३९७ बीच में छोटी सूरत छोड़कर पढ़ना मकरूह है।

३९८ इमाम से जहाँ गलती हो मुक्तदी लुक़्मा दे सकता है अगरचे हज़ार आयत के बाद हो।

४०३ कुछ आयतों के पाठ के संबंध में प्रश्न।

इमामत का अध्याय

४०५ इन शहरों में आमीन-बिल-जहर और रफ़-ए-यदैन करने वाले आम तौर पर ग़ैर-मुक़ल्लिद हैं।

४०६ आधा कलिमा पढ़ने वाले के पीछे नमाज़ होगी या नहीं?

४०७ पूरा 'अल्लाहु अकबर' बुलंद आवाज़ में कहना सुन्नत है।

४१६ यदि किसी को चार रकअत वाली नमाज़ की अंतिम रकअत मिले, तो वह इमाम के सलाम के बाद दूसरी रकअत में क़दा (बैठना) करे।

४१८ नमाज़ और पवित्रता के मुद्दों का अधिक ज्ञान रखने वाला व्यक्ति इमामत का अधिक हकदार है, भले ही वह अंधा हो।

४२२ इमाम का 'दर' (द्वार) में खड़ा होना मकरूह है; मेहराब और दर के बीच का अंतर।

४२२ जिसे तजवीद नहीं आती वह इमाम नहीं हो सकता।

४३७ पुराने इमाम को इमामत का अधिकार रहेगा भले ही मस्जिद में कोई बड़ा विद्वान आ जाए।

४३९ महिलाओं को मेले में ले जाने वाले के पीछे नमाज़ होगी या नहीं?

صفحہ عنوان

۳۵۳ مسبوق کی اقتدا صحیح نہیں۔

۳۵۵ سود خور کے پیچھے نماز مکروہ ہے۔

۳۵۵ امام کو در میں کھڑے ہونے کا حکم۔

۳۷۰ ایک شخص مثلاً یہ کہے کہ جو اپنی بی بی سے قربت کرے اور الخ

۳۷۱ بیرا کے پیچھے نماز ہوگی یا نہیں۔

۳۷۱ احناف کو ذریۃ الشیطان وغیرہ کہنے والے کی امامت کا حکم۔

۳۷۳ حنفی مسئلہ مسح میں امام شافعی رحمۃ اللہ علیہ کے طریقہ پر عمل کرے تو کیا حکم ہے۔

۳۷۹ ناچ وغیرہ دیکھنے والے کی امامت کا حکم

۳۷۹ بے روزہ دار کی امامت مکروہ ہے۔

۳۷۹ حنفی کی نماز شافعی کے پیچھے کب جائز ہے۔

۳۸۰ اندھے کے پیچھے نماز مکروہ ہے۔

۳۸۰ ناچ دیکھنے والے، دیوتاؤں پر بھینٹ چڑھانے والے، غیبت کرنے والے کی امامت کا حکم۔

۳۸۱ تنخواہ دار امام کے پیچھے نماز جائز ہے۔

۳۸۳ تجوید سے متعلق چند احکام۔

۳۸۲ امام کے ہر فعل و ترک کا اتباع مقتدی پر واجب نہیں۔

صفحہ عنوان

۳۸۶ وہابیہ، روافض اور جو مسائل نماز سے واقف نہیں ان کے پیچھے نماز جائز نہیں۔

۳۸۷

۳۹۰ بلا وجہ لقمہ دینا جائز ہے یا نہیں۔

۳۹۰ درمیان سورت سے کچھ چھوٹ جائے تو نماز ہوگی یا نہیں۔

۳۹۲ بھولنے کی حالت میں ایک لفظ کو بار بار پڑھنے سے نماز فاسد نہیں ہوتی۔

۳۹۲ وقف و وصل میں اتباع بہتر ہے مگر اس کے ترک کرنے سے نماز میں خلل نہیں آتا۔

۳۹۷ بیچ میں چھوٹی سورۃ چھوڑ کر پڑھنا مکروہ ہے۔

۳۹۸ امام سے جہاں غلطی ہو مقتدی لقمہ دے سکتا ہے اگرچہ ہزار آیت کے بعد ہو۔

۴۰۳ چند آیتوں کی قرات کے متعلق سوال۔

باب الامامة

۴۰۵ ان بلاد میں آمین بالجہر و رفع یدین کرنے والے عموماً غیر مقلد ہیں۔

۴۰۶ آدھا کلمہ پڑھنے والے کے پیچھے نماز ہوگی یا نہیں۔

۴۰۷ پورا اللہ اکبر بلند آواز سے کہنا مسنون ہے۔

۴۱۶ چار رکعت والی نماز میں اخیر کی ایک رکعت کسی کو ملی تو وہ امام کے سلام کے بعد دوسری رکعت میں قعدہ کرے۔

۴۱۸ مسائل نماز و طہارت سے جو زیادہ واقف ہو وہ مستحق امامت ہے اگرچہ نابینا ہو۔

۴۲۲ امام کو در میں کھڑا ہونا مکروہ ہے، محراب اور در کا فرق۔

۴۲۲ تجوید کو نہ جاننے والا امام نہیں ہو سکتا۔

صفحہ عنوان

۴۳۷ امام قدیم کو حق امامت حاصل رہے گا اگر چہ مسجد میں کوئی عالم فاضل آ جائے۔

۴۳۹ عورتوں کو میلہ میں لے جانے والے کے پیچھے نماز ہوگی یا نہیں۔

Fatawa Razawiya, Volume 6

Ruling / Topic	Page / Item No.	Ruling / Topic	Page / Item No.
Ruling on praying behind someone with a broken hand, someone whose wife goes out unveiled, a stutterer, a lisper, an opium addict, a traitor, a bribe-taker, or one with vitiligo.	452	Behind which people is prayer permissible, and is prayer behind a blind person permissible or not?	495
Description of turning right and left after the Salam.	455	A question related to leadership (Imamat).	495
Ruling on the leadership (Imamat) of an illegitimate child, an adulterer, a deaf person, someone with a harsh voice, or an opium addict.	460	What is the status of the leadership (Imamat) of Nadwis?	498
Who has the primary right to lead prayer? Ruling on leadership of an illegitimate child and an Imam with whom people are displeased. Who is superior to the local Imam (Imam al-Hayy)?	465	Leadership (Imamat) of non-followers (Ghair Muqallids) is impermissible.	499
It is obligatory to accept the word of one who manifests themselves as an adult.	477	Who is more entitled to be an Imam between the noble and the commoner?	501
It is obligatory to remove a transgressor (Fasiq) from leadership (Imamat).	479	Ruling on the leadership (Imamat) of those who do not participate in Milad or speak ill of standing (Qiyam).	502
A form of transgression (fisq).	481	No one else can lead prayer without the permission of the appointed Imam.	503
What is the status of leadership (Imamat) for one whose wife goes out unveiled, who deals in interest, or	483	Leadership (Imamat) of one who has illicit relations with young boys is impermissible.	503

Ruling / Topic	Page / Item No.	Ruling / Topic	Page / Item No.
whose profession is washing the dead?			
Prayer behind someone who considers Molvi Muhammad Ismail Dehlvi to be on the truth is disliked (Makruh).	486	The required level of Tajweed for the validity of prayer, and conditions for a Hanafi's prayer being valid behind a Shafi'i.	504
Ruling on praying behind a photographer or someone with hemorrhoids.	487	Leadership (Imamat) of someone who abandons Sunnat-e-Mu'akkadah is disliked (Makruh).	509
Will the prayer of one who knows Tajweed be valid behind one who doesn't?	489	Leadership (Imamat) of a cuckold (Dayyouth) is disliked (Makruh).	510
Will prayer behind those involved in lawsuits be valid or not?	490	Ruling on the leadership (Imamat) of one who performs Istinja with a dry clod of earth.	510
Husband and wife praying on one mat where the husband is the Imam, etc.	492	If a Hanafi becomes a Hanbali, is their leadership (Imamat) valid or not?	510
Usurer or one whose wife goes out unveiled, etc.	493	Leadership (Imamat) of one who insults Sharia edicts (fatwas) is impermissible.	511
		One who strives in a forbidden act is a transgressor (Fasiq).	511

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

विषय / मसला	पृष्ठ / संख्या
जिसका हाथ टूटा हो, जिसकी पत्नी बिना पर्दे के बाहर निकलती हो, हकला, तुतला, अफीमची, खाइन (धोखेबाज), रिश्वत लेने वाला या जिसे कोढ़ हो, उनके पीछे नमाज़ पढ़ने का हुक्म।	४५२
सलाम के बाद दाएँबाएँ मुड़ने का बयान।	४५५
वल्द-उल-हराम (नाजायज संतान), ज़ानी, बहरा, कर्कश आवाज़ वाला, अफ़ीमची की इमामत का हुक्म।	४६०
इमामत का प्राथमिक हक़ किसका है? वल्द-उल-हराम और जिस इमाम से लोग नाराज़ हों उनकी इमामत का हुक्म, स्थानीय इमाम (इमाम अल-हय) से श्रेष्ठ कौन है?	४६५
जो स्वयं को बालिग (वयस्क) ज़ाहिर करे, उसकी बात मानना वाजिब है।	४७७
फ़ासिक़ को इमामत से हटाना वाजिब है।	४७९
फ़िस्क़ (उल्लंघन) का एक रूप।	४८१
	४८३
किन-किन लोगों के पीछे नमाज़ जायज़ है, अंधे के पीछे नमाज़ जायज़ है या नहीं।	४९५
इमामत (नेतृत्व) से संबंधित एक सवाल।	४९५
नदवियों की इमामत कैसी है?	४९८
ग़ैर-मुक़ल्लिदों की इमामत नाजायज़ है।	४९९
उरफ़ी शरीफ़ और ग़ैर-शरीफ़ में इमाम होने का अधिक हक़दार कौन है?	५०१
मीलाद में शरीक न होने वाले या क़ियाम को बुरा कहने वाले की इमामत का हुक्म।	५०२
निर्धारित इमाम की अनुमति के बिना दूसरा व्यक्ति इमामत नहीं कर सकता।	५०३
	५०३

विषय / मसला	पृष्ठ / संख्या
जिसकी पत्नी बिना पर्दे के बाहर निकलती हो, सूद (ब्याज) खाता हो या मुर्दा नहलाने का पेशा करता हो, उनकी इमामत कैसी है?	
मौलवी मुहम्मद इस्माइल देहलवी को हक़ पर मानने वाले के पीछे नमाज़ मकरूह है।	४८६
फ़ोटोग्राफ़र या बवासीर वाले के पीछे नमाज़ पढ़ने का हुक्म।	४८७
तजवीद न जानने वाले के पीछे तजवीद जानने वाले की नमाज़ होगी या नहीं?	४८९
मुक़दमा लड़ने वालों के पीछे नमाज़ होगी या नहीं?	४९०
एक मुसल्ले पर पति-पत्नी नमाज़ पढ़ें और पति इमाम हो आदि।	४९२
सूदखोर या जिसकी पत्नी बिना पर्दे के निकलती हो आदि।	४९३
अम्रदों (लड़कों) से नाजायज़ संबंध रखने वाले की इमामत नाजायज़ है।	
नमाज़ की शुद्धि के लिए तजवीद की मात्रा, हनफ़ी की नमाज़ शाफ़ई के पीछे सही होने की शर्तें।	५०४
सुन्नत-ए-मुअक्कदा छोड़ने वाले की इमामत मकरूह है।	५०९
दय्यूथ की इमामत मकरूह है।	५१०
ढेले (कलोख़) से इस्तिंजा करने वाले की इमामत का हुक्म।	५१०
हनफ़ी अगर हंबली हो जाए तो उसकी इमामत सही है या नहीं?	५१०
शरई फ़तवों की तौहीन (अपमान) करने वाले की इमामत नाजायज़ है।	५११
निषिद्ध (हराम) कार्य में प्रयास करने वाला फ़ासिक़ है।	५११

فتاوی رضویه، جلد ششم

موضوع / مسئلہ	نمبر شمار
جس کا ہاتھ ٹوٹا ہو، جس کی عورت بے پردہ باہر نکلتی ہو، ہکلا، تتلا، افیونی، خائن، رشوت لینے والے یا جسے برص ہو ان کے پیچھے نماز پڑھنے کا حکم۔	۴۵۲
سلام کے بعد دہنے بائیں پھرنے کا بیان۔	۴۵۵
ولد الحرام، زانی، بہرے، کریہہ الصوت، افیونی کی امامت کا حکم۔	۴۶۰
اولیٰ امامت کس کی ہے، ولد الحرام اور جس امام سے لوگ ناراض ہوں، ان کی امامت کا حکم، امام الحی سے افضل کون ہے۔	۴۶۵
جو اپنے کو بالغ ہونا ظاہر کرے اس کے قول کو قبول کرنا واجب ہے۔	۴۷۷
فاسق کو امامت سے معزول کرنا واجب ہے۔	۴۷۹
کن کن لوگوں کے پیچھے نماز جائز ہے، اندھے کے پیچھے نماز جائز ہے یا نہیں۔	۴۹۵
امامت سے متعلق ایک سوال۔	۴۹۵
ندوویوں کی امامت کیسی ہے۔	۴۹۸
غیر مقلدوں کی امامت ناجائز ہے۔	۴۹۹
عرفی شریف و غیر شریف میں امام ہونے کا زیادہ حقدار کون ہے۔	۵۰۱
	۵۰۲

موضوع / مسئلہ	نمبر شمار
فسق کی ایک صورت۔	۴۸۱
جس کی عورت بے پردہ باہر نکلتی ہو یا سود کھاتا یا مردہ نہلانے کا پیشہ کرتا ہو ان کی امامت کیسی ہے۔	۴۸۳
مولوی محمد اسمعیل دہلوی کو حق پر جاننے والے کے پیچھے نماز مکروہ ہے۔	۴۸۶
فوٹو گرافر، بواسیر والے کے پیچھے نماز پڑھنے کا حکم۔	۴۸۷
تجوید نہ جاننے والے کے پیچھے تجوید جاننے والے کی نماز ہوگی یا نہیں۔	۴۸۹
مقدمہ لڑنے والوں کے پیچھے نماز ہوگی یا نہیں۔	۴۹۰

موضوع / مسئلہ	نمبر شمار
میلاد میں شریک نہ ہونے والے یا قیام کو برا کہنے والے کی امامت کا حکم۔	
مقررہ امام کی اجازت کے بغیر دوسرا امامت نہیں کر سکتا۔	۵۰۳
امردوں سے ناجائز تعلق رکھنے والے کی امامت ناجائز ہے۔	۵۰۳
صحت صلاۃ کے لئے تجوید کی مقدار، حنفی کی نماز شافعی کے پیچھے صحیح ہونے کی شرائط	۵۰۴
سنت مؤکدہ چھوڑنے والے کی امامت مکروہ ہے۔	۵۰۹
دیوث کی امامت مکروہ ہے۔	۵۱۰
کلوخ سے استنجا کرنے والے کی امامت کا حکم۔	۵۱۰

موضوع / مسئلہ	نمبر شمار
ایک مصلے پر میاں بی بی نماز پڑھیں اور شوہر امام ہو الخ۔	۴۹۲
سود خور یا جس کی عورت بے پردہ نکلتی ہو الخ	۴۹۳

موضوع / مسئلہ	نمبر شمار
حنفی اگر حنبلی ہو جائے تو اس کی امامت صحیح ہے یا نہیں۔	۵۱۰
شرعی فتووں کی توہین کرنے والے کی امامت ناجائز ہے۔	۵۱۱
فعل حرام میں سعی کرنے والا فاسق ہے۔	۵۱۱

Fatawa Razawiyya Volume Six

- 513: Inheritance does not apply to leadership (Imamat). Who has the right to Imamat? It is permissible to appoint an ignorant person as Imam in comparison to a scholar. Who can be the Imam in Friday prayers, Eid prayers, solar eclipses, etc.? What is meant by "Pray behind every righteous or wicked person"?
- 520: Ruling on the leadership (Imamat) of a blind person.
- 521: One who writes interest-based documents is a transgressor (Fasiq).
- 522: There is no harm in accidental precedence or delay in verses (of Quran).
- 523: One who keeps company with those who do not pray or with Rafidis is a transgressor.
- 523: An adulterer is a transgressor, and their leadership is disliked (Makruh).
- 524: One who leaves congregational prayer without a valid excuse is a transgressor.
- 525: Leadership of one who slaughters a cow is permissible.
- 525: Leadership of one who denies the life of the Prophet (PBUH) is disliked.
- 526: Leadership of a cuckold (Dayyouth) is disliked.
- 526: One who harbors unjustified religious hatred and malice against Muslims is a transgressor.
- 527: One who acts as a Rafidi among Rafidis and a Sunni among Sunnis is a hypocrite; proofs for this.
- 535: A minor cannot be the Imam for adults.
- 535: A non-transgressor Sunni should be made Imam.
- 536: Ruling on the leadership of a leper.
- 536: Ruling on the leadership of one who marries into Rafidis.
- 538: Cursing Muslims without a Shari'a-compliant reason is strictly prohibited.
- 539: If the presence of an illegitimate child as Imam causes a decrease in the congregation, then his leadership is disliked.
- 541: Ruling on the leadership of one who denies knowledge of the unseen (Ilm-e-Ghaib), Fatiha, etc.
- 542: If a wealthy Imam takes Sadaqah Fitr, or recites the Holy Quran incorrectly, or is an open transgressor, his leadership is disliked. Leaving the congregation because of the followers' sins is not permissible. Conditions for being an Imam.
- 544: Trimming the beard and missing prayers (Qaza) makes one a transgressor.
- 545: Leadership of a handsome beardless boy (Amrad) is contrary to what is best.

- 545: Refusing to pray behind a Shari'a-compliant Imam due to personal ego is a sin.
- 546: One who causes interest documents to be written is a transgressor.
- 546: Ruling on the leadership of government employees, like a police officer (Thanedar) etc., and octroi employees.
- 547: The measure of the distance between the Imam and the congregation.
- 547: Ruling on the leadership of a disobedient child (Aaq) and one who has missed four Friday prayers.
- 547: Ruling on the leadership of the son of an illegitimate child.
- 548: One who takes an interest-bearing loan without Shari'a necessity is a transgressor.
- 548: How is the leadership of one who calls the distribution of sweets at Mawlid or completion of Tarawih an innovation (Bid'ah)?
- 551: Those who take bribes or file false cases are transgressors.
- 552: Leadership of one who repents for their crimes is permissible. Objecting to them now is a sin.

फ़तावा रज़विया छठा खंड

- 513: इमामत में विरासत नहीं चलती, इमामत का अधिकार किसे प्राप्त है? विद्वान के मुकाबले में अज्ञानी को इमाम बनाना जायज़ है। जुमा, ईदैन, कुसूफ आदि में इमाम कौन हो सकता है? "सलू खल्फ कुल्ले बर्रिन व फ़ाजिर" से क्या तात्पर्य है।
- 520: अंधे की इमामत का हुक्म।
- 521: सूद के दस्तावेज़ लिखवाने वाला फासिक (Transgressor) है।
- 522: आयत में भूलवश आगे-पीछे होने पर कोई हर्ज नहीं।
- 523: बे-नमाज़ी और राफ़ज़ियों (Rafidis) से मेल-जोल रखने वाला फ़ासिक है।
- 523: ज़ानी फ़ासिक होता है और उसकी इमामत मकरूह (Disliked) है।
- 524: बिना किसी उज़्र के जमाअत छोड़ने वाला फ़ासिक है।
- 525: गाय ज़िब्ह करने वाले की इमामत जायज़ है।
- 525: हयात-ए-नबी (स.अ.व.) के मुनकिर की इमामत मकरूह है।
- 526: दय्यूत की इमामत मकरूह है।
- 526: मुसलमानों से बिना वजह शरई बुग़्ज़ व कीना (द्वेष और ईर्ष्या) रखने वाला फ़ासिक है।
- 527: जो राफ़ज़ियों में राफ़ज़ी और सुन्नियों में सुन्नी बने वह मुनाफ़िक़ है, इस पर प्रमाण।
- 535: बालिग़ों का इमाम नाबालिग़ नहीं हो सकता।
- 535: सुन्नी ग़ैर-फ़ासिक को इमाम बनाना चाहिए।
- 536: कोढ़ी की इमामत का हुक्म।
- 536: राफ़ज़ियों में शादी-ब्याह करने वाले की इमामत का हुक्म।
- 538: बिना किसी शरई वजह के मुसलमानों को गाली देना सख्त हराम है।
- 539: अगर कहीं वलद-उल-हराम (नाजायज़ औलाद) इमाम की वजह से जमाअत में कमी हो तो उसकी इमामत मकरूह है।
- 541: इल्म-ए-ग़ैब, फातिहा आदि के मुनकि़ की इमामत का हुक्म।
- 542: ग़नी इमाम सदक़ा-ए-फ़ित्र ले या क़ुरआन मजीद गलत पढ़े या फ़ासिक-ए-मोअलन हो, उसकी इमामत मकरूह है। मुक्तदियों के गुनाह के कारण जमाअत छोड़ना जायज़ नहीं। इमाम होने की शर्तें।
- 544: दाढ़ी कटवाना, नमाज़ क़ज़ा करना फ़ासिक होना है।

- 545: खूबसूरत अम्रद की इमामत बेहतर नहीं है (खिलाफ़-ए-औला)।
- 545: शरई इमाम के पीछे केवल अपनी नफसानियत (अहंकार) के कारण नमाज़ न पढ़ना गुनाह है।
- 546: सूदी दस्तावेज़ लिखवाने वाला फ़ासिक है।
- 546: सरकारी मुलाज़िमों, जैसे थानेदार आदि और चुंगी के मुलाज़िमों की इमामत का हुक्म।
- 547: इमाम और जमाअत के बीच की दूरी की मात्रा।
- 547: आक़ (अवज्ञाकारी संतान) और जिससे चार जुमे छूट गए हों, उसकी इमामत का हुक्म।
- 547: वलद-उज़-ज़िना के लड़के की इमामत का हुक्म।
- 548: बिना शरई ज़रूरत के सूदी कर्ज़ लेने वाला फ़ासिक है।
- 548: मीलाद शरीफ़ या ख़त्म-ए-तरावीह की मिठाई बांटने को बिदअत कहने वाले की इमामत कैसी है।
- 551: रिश्वत लेने वाले, झूठे मुक़दमे करने वाले फ़ासिक हैं।
- 552: जो अपने अपराधों से तौबा (प्रायश्चित) कर ले, उसकी इमामत जायज़ है। अब उस पर आपत्ति करना गुनाह है।

فتاوی رضویہ جلد ششم

- ۵۱۳ امامت میں وراثت نہیں چلتی، حقِ امامت کس کو حاصل ہے، عالم کے مقابلے میں جاہل کو امام بنانا جائز ہے۔ جمعہ، عیدین، کسوف وغیرہ میں امام کون ہوسکتا ہے۔ "صلوا خلف کل بروفاجر" سے کیا مراد ہے۔
- ۵۲۰ اندھے کی امامت کا حکم۔
- ۵۲۱ سود کے تمسکات لکھوانے والا فاسق ہے۔
- ۵۲۲ آیت میں تقدیم و تاخیر سہواً ہونے پر حرج نہیں،
- ۵۲۳ بے نمازی اور روافض سے میل جول رکھنے والا فاسق ہے۔
- ۵۲۳ زانی فاسق ہوتا ہے اور اس کی امامت مکروہ۔
- ۵۲۴ بلاعذر جماعت چھوڑنے والا فاسق ہے۔
- ۵۲۵ ذابح البقر کی امامت جائز ہے۔
- ۵۲۵ حیات النبی کے منکر کی امامت مکروہ ہے۔
- ۵۲۶ دیوث کی امامت مکروہ ہے۔
- ۵۲۶ مسلمانوں سے بلاوجہ شرعی بغض و کینہ رکھنے والا فاسق ہے۔
- ۵۲۷ جورافضیوں میں رافضی اور سنیوں میں سنی بنے وہ منافق ہے اس پر دلائل۔
- ۵۳۵ بالغین کا امام نابالغ نہیں ہوسکتا۔
- ۵۳۵ سنی غیر فاسق کو امام بنانا چاہئے۔
- ۵۳۶ جذامی کی امامت کا حکم۔
- ۵۳۶ رافضیوں میں بیاہ شادی کرنے والے کی امامت کا حکم۔

- ۵۳۸ بلا وجہ شرعی مسلمانوں کو گالی دینا سخت حرام ہے۔
- ۵۳۹ اگر کہیں ولد الحرام امام کی وجہ سے جماعت میں کمی ہو تو اس کی امامت مکروہ ہے۔
- ۵۴۱ علم غیب، فاتحہ وغیرہ کے منکر کی امامت کا حکم۔
- ۵۴۲ غنی امام صدقہ فطر لے یا قرآن مجید غلط پڑھے یا فاسق معلن ہو اس کی امامت مکروہ ہے، مقتدیوں کے گناہ کے سبب ترک جماعت جائز نہیں، امام ہونے کی شرائط
- ۵۴۴ داڑھی ترشوانا، نماز قضا کرنا فاسق ہے۔
- ۵۴۵ خوبصورت امرد کی امامت خلافِ اولیٰ ہے۔
- ۵۴۵ شرعی امام کے پیچھے براہِ نفسانیت نماز نہ پڑھنا گناہ ہے۔
- ۵۴۶ سودی دستاویز لکھانے والا فاسق ہے۔
- ۵۴۶ ملازمان گورنمنٹ، مثلاً تھانیدار وغیرہ اور ملازمان چونگی کی امامت کا حکم۔
- ۵۴۷ امام اور جماعت کے مابین فاصلہ کی مقدار۔
- ۵۴۷ عاق اور جس سے چار جمعہ چھوٹ گئے ہوں اس کی امامت کا حکم۔
- ۵۴۷ ولدالزنا کے لڑکے کی امامت کا حکم۔
- ۵۴۸ بلاضرورت شرعیہ سودی قرض لینے والا فاسق ہے۔
- ۵۴۸ میلاد شریف یا ختم تراویح کی شیرینی تقسیم کرنے کو بدعت کہے اس کی امامت کیسی ہے۔
- ۵۵۱ رشوت لینے والے، جھوٹے مقدمے کرنے والے فاسق ہیں۔
- ۵۵۲ جو اپنے جرائم سے توبہ کرلے اس کی امامت جائز ہے۔ اب اس پر اعتراض کرنا گناہ ہے۔

Fatawa Razawiyya, Volume 6

- Accusation and suspicion are impermissible. (Page 553) | Can someone with hand tremors be an Imam or not? (Page 575)
- How is the leadership in prayer of a lame person? (Page 554) | Can a non-Sayyid scholar, or just a scholar, lead prayer in the presence of an ignorant or less noble Sayyid? (Page 576)
- If a prayer is invalid from one aspect, it remains invalid even if it is correct from other aspects. (Page 555) | Can a follower of one Imam pray behind a follower of another Imam? (Page 577)
- A form of depravity (Fisq). (Page 557) | Should a Shafi'i Imam leave Raf-e-Yadain etc. for the sake of Hanafis? (Page 577)
- Should Hanafis join the congregation of Shafi'is or not? (Page 558) | Is the leadership in prayer of one who washes the dead permissible or not? (Page 578)
- Regarding a boy whose parents told him not to attend their funeral. (Page 558) | Leadership of Wahhabis in prayer is impermissible. (Page 579)
- Prayer behind an Imam who holds worldly grudges against someone is valid. (Page 559) | Can someone with a leucoma (white spot) in their eye be an Imam or not? (Page 581)
- A sodomite is a transgressor (Fasiq). (Page 559) | Following someone in prayer who believes God has a physical body is forbidden. (Page 582)
- Ruling on the leadership in prayer of an excused (disabled) person. (Page 562) | It is forbidden to dismiss an Imam without a Shari'i reason. (Page 582)
- Ruling on praying on prayer mats endowed for the mosque. (Page 572) | Leadership of a cuckold (Dayyouth) in prayer is disliked. (Page 583)
- Prayer behind Deobandis is void. (Page 573) | Leadership in prayer of both the usurer and the one who pays interest is disliked. (Page 585)
- How is the leadership of one whose profession is taking charity, Fitr, Zakat, or grain/money from graveyards? (Page 574) | Is prayer behind someone who calls Mawlid a bid'at (innovation) permissible or not? (Page 586)
- How is the leadership of one who doesn't answer about beliefs when asked, or is not punctual, or people are unhappy with him, or his right hand is useless? (Page 574) | How is the leadership of those who follow Christians, cause discord among Muslims, thieves, and non-followers (Ghair Muqallideen)? (Page 587)

फ़तावा रज़विया, जिल्द 6

- इल्ज़ाम और बदगुमानी नाजायज़ है। (पृष्ठ 553) | जिसके हाथ में कंपकंपी (तशनुज) हो, क्या वह इमाम हो सकता है या नहीं? (पृष्ठ 575)
- लंगड़े की इमामत कैसी है? (पृष्ठ 554) | क्या एक गैर-सैय्यद आलिम, या सिर्फ आलिम, किसी जाहिल या कम कुलीन सैय्यद की मौजूदगी में इमाम हो सकता है या नहीं? (पृष्ठ 576)
- नमाज़ अगर एक पहलू से अमान्य (फ़ासिद) हो तो वह अमान्य ही रहेगी, चाहे दूसरे पहलुओं से सही हो। (पृष्ठ 555) | क्या एक इमाम का अनुयायी दूसरे इमाम के अनुयायी के पीछे नमाज़ पढ़ सकता है या नहीं? (पृष्ठ 577)
- अनैतिकता (फ़िस्क़) का एक रूप। (पृष्ठ 557) | क्या हनफ़ी की खातिर शाफ़ई इमाम रफ़-ए-यदैन आदि छोड़ दे या नहीं? (पृष्ठ 577)
- हनफ़ियों को शाफ़इयों की जमात में शामिल होना चाहिए या नहीं। (पृष्ठ 558) | मुर्दा नहलाने वाले की इमामत जायज़ है या नहीं? (पृष्ठ 578)
- उस लड़के के बारे में जिसके माता-पिता ने कहा हो कि मेरे जनाज़े में मत आना। (पृष्ठ 558) | वहाबियों की इमामत नाजायज़ है। (पृष्ठ 579)
- दुनियावी रंजिश रखने वाले इमाम के पीछे नमाज़ सही है। (पृष्ठ 559) | जिसकी आँख में मोतियाबिंद (फुल्ली) हो, क्या वह इमाम हो सकता है या नहीं? (पृष्ठ 581)
- लोती (अप्राकृतिक मैथुन करने वाला) पापी है। (पृष्ठ 559) | ईश्वर को सगुण (शरीर वाला) मानने वाले का अनुसरण हराम है। (पृष्ठ 582)
- मज़ूर (अशक्त) व्यक्ति की इमामत का हुक्म। (पृष्ठ 562) | बिना किसी शरीयत की वजह के इमाम को बर्खास्त करना हराम है। (पृष्ठ 582)
- मस्जिद के लिए वक्फ़ की गई जाय-नमाज़ों पर नमाज़ पढ़ने का हुक्म। (पृष्ठ 572) | दय्यूथ की इमामत मकरूह है। (पृष्ठ 583)
- देवबंदियों के पीछे नमाज़ अमान्य (बातिल) है। (पृष्ठ 573) | सूदखोर और ब्याज देने वाले दोनों की इमामत मकरूह है। (पृष्ठ 585)
- दान, फ़ित्र, ज़कात, या कब्रों से अनाज/पैसे लेना जिसका पेशा हो, उसकी इमामत कैसी है? (पृष्ठ 574) | क्या मीलाद शरीफ को बिदअत (नयाचार) कहने वाले के पीछे नमाज़ जायज़ है या नहीं? (पृष्ठ 586)

- मान्यताओं के बारे में पूछने पर न बताने वाले, या समय का पाबंद न होने वाले, या जिससे लोग नाखुश हों, या जिसका दाहिना हाथ बेकार हो, ऐसे की इमामत कैसी है? (पृष्ठ 574) | ईसाइयों का अनुसरण करने वाले, मुसलमानों में फूट डालने वाले, चोरों और गैर-अनुयायियों (गैर-मुक़ल्लिदीन) की इमामत कैसी है? (पृष्ठ 587)

आई.टी. मज्लिस-ए-दावत-ए-इस्लामी पृष्ठ 21 का 736

فتاوی رضویہ جلد ششم

اتہام اور بدگمانی نا جائز ہے۔ ۵۵۳ جس کے ہاتھ میں تشنج ہو وہ امام ہو سکتا ہے یا نہیں۔ ۵۷۵ لنگڑے کی امامت کیسی ہے۔ ۵۵۴ ایک عالم شریف ہے سید نہیں ہے یا صرف عالم وہ جاہل یا کم نجیب الطرفین سید کی موجودگی میں امام ہو سکتا ہے یا نہیں۔ ۵۷۶ نماز اگر ایک جہت سے فاسد ہو تو وہ فاسد ہی ہو گی اگرچہ دوسری جہتوں سے صحیح ہو۔ ۵۵۵ ایک امام کا مقلد دوسرے امام کے مقلد کے پیچھے نماز پڑھ سکتا ہے یا نہیں۔ ۵۷۷ فسق کی ایک صورت۔ ۵۵۷ حنفی کی خاطر شافعی امام رفع یدین وغیرہ چھوڑے یا نہیں۔ ۵۷۷ حنفی شافعیوں کی جماعت میں شریک ہو یا نہیں۔ ۵۵۸ مردہ نہلانے والے کی امامت جائز ہے یا نہیں۔ ۵۷۸ جس لڑکے سے اس کے والدین نے کہہ دیا ہو کہ میرے جنازہ پر نہ آنا۔ ۵۵۸ وہابیہ کی امامت نا جائز ہے۔ ۵۷۹ امام کسی سے دنیوی کدورت رکھتا ہو اس کے پیچھے نماز صحیح ہے۔ ۵۵۹ جس کی آنکھ میں پھلی ہو وہ امام ہو سکتا ہے یا نہیں۔ ۵۸۱ لوطی فاسق ہے۔ ۵۵۹ خدائے تعالیٰ کو مجسم ماننے والے کی اقتدا حرام ہے۔ ۵۸۲ معذور کی امامت کا حکم۔ ۵۶۲ بلاوجہ شرعی امام کو معزول کرنا حرام ہے۔ ۵۸۲ مسجد پر وقف شدہ جائے نمازوں پر نماز پڑھنے کا حکم۔ ۵۷۲ دیوث کی امامت مکروہ ہے۔ ۵۸۳ دیوبندیوں کے پیچھے نماز باطل ہے۔ ۵۷۳ سود خور اور سود دینے والے دونوں کی امامت مکروہ ہے۔ ۵۸۵ صدقہ، فطر، مال زکوٰۃ، قبرستان میں غلہ کوڑی وغیرہ لینا جس کا پیشہ ہو اس کی امامت کیسی ہے۔ ۵۷۴ میلاد شریف کو بدعت کہنے والے کے پیچھے نماز جائز ہے یا نہیں۔ ۵۸۶ عقائد دریافت کرنے پر جو نہ بتائے یا مقررہ وقت کا پابند نہ ہو یا جس کی امامت سے کچھ لوگ ناراض ہوں یا جس کا دہنا ہاتھ بیکار ہو ایسے کی امامت کیسی ہے۔ ۵۷۴ نصاریٰ کی تابعداری کرنے والے، مسلمانوں میں نفاق ڈالنے والے، چوری کرنے والے اور غیر مقلدین ان کی امامت کیسی ہے۔ ۵۸۷

Fatawa Rizvia, Volume 6

Page	Subject	Page	Subject
601	How is the leadership (Imamat) of a son of a prostitute?	588	Definition and ruling of a transgressor and sinner (Fasiq and Fajir).
602	How is the leadership of employees?	588	Harassing orphans, backbiting, and taking false oaths are sins (fisq).
602	Ruling on the leadership of those studying in Deobandi madrasas.	589	The leadership of an adulterer and a drunkard is disliked (Makruh).
603	Ruling on participating in the wedding processions etc. of people of wrong beliefs.	590	One who trims his beard is a sinner (Fasiq).
603	Ruling on the leadership of someone who puts on bangles or practices medicine.	591	Can someone whose Fajr prayer has lapsed lead Zuhr etc. prayer? How is the leadership of a deaf person?
603	Prayer behind someone who calls the scholars of the two holy cities (Haramain) innovators (Bid'ati) is not permissible.	593	The leadership of someone who uses foul language is disliked (Makruh).
604	The Imam should recite the Surahs he knows well; playing chess is a sin (fisq).	594	Ruling on the leadership of a butcher.
604	Asking (begging) without necessity is forbidden. Leading the funeral prayer is not obligatory for the Imam.	595	If an adulterer repents, there is no harm in his leadership; and if people do not trust his repentance, they will be sinners.
604	It is not necessary to investigate about the Imam for praying; prayer behind a Wahhabi is invalid.	596	If a woman is wicked and foul-mouthed, it is not obligatory for the husband to divorce her.
605		596	

Page	Subject
	Definition and ruling of a disobedient child (Aaq).
606	Musical instruments are forbidden; listening to them is a sin (fisq).
608	It is obligatory to mention the evils of Wahhabis, and similarly of transgressors etc.
609	Maintaining enmity with Muslims without a Shari'a reason is a sin (fisq).
610	Whether prayer can be performed behind a sinner if no one else is available to lead the prayer.
611	Ruling on the leadership of a fisherman.

Page	Subject
	The leadership of a cuckold (Dayyouth) is disliked; it is impermissible to take an oath of allegiance (bay'ah) to a spiritual guide (Pir) who commits forbidden acts or to have Milad recited by him.
596	Opium addicts and those who abandon fasting are sinners (Fasiq).
597	Musical instruments are forbidden.
598	If a husband is not pleased with his wife's evil deeds and tries to stop her, but she does not stop, then there is no blame on the husband nor any harm in his leadership.
600	Keeping hair down to the chest is forbidden for men.
600	If there is one follower (muqtadi) with the Imam and another arrives, should the Imam move forward or the follower move back?

फ़तावा रिज़विया, खंड छठा

पृष्ठ	विषय	पृष्ठ	विषय
६०१	वेश्या के पुत्र की इमामत (नेतृत्व) कैसी है?	५८८	फ़ासिक़ और फाजिर की परिभाषा और हुक्म।
६०२	कर्मचारियों की इमामत कैसी है?	५८८	अनाथों को सताना, चुगली करना, झूठी कसम खाना फिस्क़ (पाप) है।
६०२	देवबंदी मदरसों में पढ़ने वालों की इमामत का हुक्म।	५८९	व्यभिचारी और शराबी की इमामत मकरूह (नापसंदीदा) है।
६०३	कुमार्गियों (बद-मज़हबों) की बारात आदि में शामिल होने का हुक्म।	५९०	दाढ़ी मुंडाने वाला फ़ासिक़ है।
६०३	चूड़ियाँ पहनाने या चिकित्सा का पेशा करने वाले की इमामत का हुक्म।	५९१	जिसकी फज्र की नमाज़ कज़ा हो गई हो, क्या वह ज़ुहर आदि की इमामत कर सकता है? बहरे की इमामत कैसी है?
६०३	हरमैन तैयबैन (मक्का और मदीना) के विद्वानों को बिदअती कहने वाले के पीछे नमाज़ जायज़ नहीं।	५९३	गाली-गलौज करने वाले की इमामत मकरूह है।
६०४	इमाम वही सूरह पढ़े जो उसे अच्छी तरह याद हों; शतरंज खेलना फिस्क़ है।	५९४	कसाई की इमामत का हुक्म।
६०४	बिना ज़रूरत मांगना हराम है। जनाज़े की नमाज़ पढ़ाना इमाम पर अनिवार्य नहीं है।	५९५	व्यभिचारी तौबा (प्रायश्चित) कर ले तो उसकी इमामत में कोई हर्ज नहीं, और अगर लोग उसकी तौबा पर विश्वास नहीं करेंगे तो वे गुनहगार होंगे।
६०४	नमाज़ पढ़ने के लिए इमाम के बारे में जाँच करना ज़रूरी नहीं, वहाबी के पीछे नमाज़ बातिल (अमान्य) है।	५९६	अगर पत्नी दुष्ट और बदज़ुबान हो, तो पति पर उसे तलाक देना वाजिब नहीं है।
६०५		५९६	

पृष्ठ	विषय
	'आक़' (अवज्ञाकारी संतान) की परिभाषा और हुक्म।
६०६	वाद्ययंत्र हराम हैं, उन्हें सुनना फिस्क़ है।
६०८	वहाबियों की बुराई बयान करना फ़र्ज़ है, इसी तरह फाजिर (पापी) आदि की भी।
६०९	बिना किसी शरीई वजह के मुसलमानों से दुश्मनी रखना फिस्क़ है।
६१०	जहाँ फ़ासिक़ के अलावा कोई दूसरा नमाज़ पढ़ाने वाला न हो तो उसके पीछे नमाज़ पढ़ सकते हैं या नहीं।
६११	मछुआरे की इमामत का हुक्म।

पृष्ठ	विषय
	दय्यूथ (बेशरम पति) की इमामत मकरूह है, जो पीर हराम काम करता हो उससे बैअत करना और उससे मीलाद पढ़वाना नाजायज़ है।
५९६	अफीमची और रोज़ा छोड़ने वाले फ़ासिक़ हैं।
५९७	वाद्ययंत्र हराम हैं।
५९८	अगर पत्नी के बुरे कार्यों से पति खुश न हो और उसे रोकने की कोशिश भी करता हो, और वह न रुके तो पति पर कोई आरोप नहीं और न ही उसकी इमामत में कोई हर्ज।
६००	पुरुष के लिए सीने तक बाल रखना हराम है।
६००	इमाम के साथ एक मुक़्तदी (अनुयायी) हो और दूसरा आ जाए, तो इमाम आगे बढ़े या मुक़्तदी पीछे हटे?

صفحہ	مضمون
۶۰۱	رنڈی زادہ کی امامت کیسی ہے۔
۶۰۲	کارندوں کی امامت کیسی ہے۔
۶۰۲	دیوبندی مدرسوں میں پڑھنے والوں کی امامت کا حکم۔
۶۰۳	بد مذہبوں کی برات وغیرہ میں شریک ہونے کا حکم۔
۶۰۳	چوڑی پہنانے یا طبابت کا پیشہ کرتا ہو اس کی امامت کا حکم۔
۶۰۳	حرمین طیبین کے علما کو بدعتی کہنے والے کے پیچھے نماز جائز نہیں۔
۶۰۴	جو سورتیں پختہ یاد ہوں امام انہیں کو پڑھے، شطرنج کھیلنا فسق ہے۔
۶۰۴	

صفحہ	مضمون
۵۸۸	فاسق و فاجر کی تعریف اور حکم۔
۵۸۸	یتیموں کو ستانا، غیبت کرنا، جھوٹی قسم کھانا فسق ہے۔
۵۸۹	زانی اور شرابی کی امامت مکروہ ہے۔
۵۹۰	داڑھی ترشوانے والا فاسق ہے۔
۵۹۱	نماز فجر جس کی قضا ہو گئی ہو وہ ظہر وغیرہ کی امامت کر سکتا ہے یا نہیں۔ بہرے کی امامت کیسی ہے۔
۵۹۳	گالی گلوچ کرنے والے کی امامت مکروہ ہے۔
۵۹۴	قصاب کی امامت کا حکم۔
۵۹۵	

صفحہ	مضمون
	بے ضرورت سوال حرام ہے۔
	جنازہ کی نماز پڑھانا امام پر لازم نہیں۔
۶۰۴	نماز پڑھنے کے لئے امام کے متعلق تحقیق کرنا ضروری نہیں، وہابی کے پیچھے نماز باطل ہے۔
۶۰۵	عاق کی تعریف اور حکم۔
۶۰۶	مزامیر حرام ہیں ان کا سننا فسق۔
۶۰۸	وہابیہ کی برائی بیان کرنا فرض ہے یونہی فاجر وغیرہ کی۔
۶۰۹	بلاوجہ شرعی مسلمانوں سے عداوت رکھنا فسق ہے۔
۶۱۰	جہاں کہیں فاسق کے علاوہ کوئی دوسرا نماز پڑھانے والا نہ ہو تو

صفحہ	مضمون
۵۹۶	زانی توبہ کر لے تو اس کی امامت میں حرج نہیں اور اگر لوگ اس کی توبہ پر اعتبار نہ کریں گے تو گنہگار ہوں گے۔
۵۹۶	شریر بد زبان عورت ہو تو شوہر پر اسے طلاق دینا واجب نہیں۔
۵۹۶	دیوث کی امامت مکروہ ہے، جو پیر فعل حرام کا مرتکب ہو اس سے بیعت کرنا میلا د پڑھوانا ناجائز ہے۔
۵۹۶	افیونی اور روزہ چھوڑنے والے فاسق ہیں۔
۵۹۷	مزامیر حرام ہیں۔
۵۹۸	عورت کے افعال قبیحہ سے شوہر راضی نہ ہو اور باز رکھنے کی کوشش بھی کرتا ہو اور عورت باز نہ آتی ہو تو شوہر پر نہ کوئی الزام نہ اس کی امامت میں حرج۔
۶۰۰	سینہ تک بال رکھنا مرد کو حرام ہے۔

صفحہ	مضمون	صفحہ	مضمون
	اس کے پیچھے نماز پڑھ سکتے ہیں یا نہیں۔		
۶۱۱	ماہی گیر کی امامت کا حکم۔	۶۰۰	امام کے ساتھ ایک مقتدی ہو اور دوسرا آئے تو امام آگے بڑھے یا مقتدی پیچھے ہٹے۔

Volume Six | Fatawa Razawiyya

611 | Whether prayer behind a beardless boy is permissible or not. | 222 | Tafziliyah are innovators and follow a bad sect. 613 | A form of sinfulness (fisq). | 223 | Whether a shopkeeper can be an Imam or not. 613 | Theft is not proven by suspicion. | 223 | The Imamate of one who makes a profession of begging while being healthy is disliked (Makruh). 613 | If a man keeps his wife after divorce and a son is born to them, is the Imamate of that son permissible or not? | 225 | If a fourteen-year-old boy declares himself an adult, he will be considered an adult. 614 | A case for dismissing an Imam. | 225 | Eating and socializing with people of bad sects is sinfulness (fisq). 614 | Is the Imamate of a student who is at fault with his teacher correct or not? | 225 | For which people is the Imamate permissible and for whom is it impermissible? 615 | Dismissing an Imam without reason is not permissible. | 226 | Standing of the Imam in the middle of the mosque is Sunnah. 616 | Imamate of a deaf person is not permissible. | 227 | Those who teach incorrect religious matters are not eligible for Imamate. 617 | Is it necessary to inquire about the Imam's beliefs while traveling or not? | 227 | Prayer behind those who shave their beards is disliked (Makruh). 617 | Prayer behind non-conformists (Ghair-Muqallids) is void. If a non-conformist joins the congregation, the prayer will be deficient. | 227 | It is permissible to take a salary for Imamate, but payment for Quran recitation is forbidden (Haram). 619 | It is not permissible to make students of institutions that are against the Ahl-e-Sunnat as Imams. | 227 | The Imamate of one who abandons the congregation is disliked (Makruh). 619 | One who fulfills the conditions of Imamate should be made Imam even if he calls himself unworthy. | 228 | Ruling on the Imamate of an excused person (Ma'zur). 619 | Prayer is disliked (Makruh) if the elbows remain uncovered. | 229 | There is no harm in prayer if there is a prayer mat for the Imam but not for the followers. 620 | Prayer behind Wahhabis is not permissible even if it is a voluntary (Nafl) prayer. | 230 | Prayer behind non-conformists (Ghair-Muqallids) is like prayer behind a Jew. 620 | If a woman is the Imam and men are followers in a funeral prayer, the obligation will be fulfilled. | 230 | Another person cannot lead the prayer without the permission of the appointed Imam. 622 | Prayer behind sellers of astrology, palmistry, and fortune-telling books is not permissible. | 231 | Is there any harm in prayer if the follower is wearing a turban and the Imam is only wearing a cap or not?

जिल्द छठी | फतावा रजविया

611 | अम्रद (दाढ़ी रहित लड़के) के पीछे नमाज़ जायज़ है या नहीं। | 222 | तफ़्ज़ीलिया बिदअती और बदमज़हब हैं। 613 | फ़िस्क़ (पाप) का एक रूप। | 223 | दुकानदार इमाम हो सकता है या नहीं। 613 | संदेह से चोरी साबित नहीं होती। | 223 | जो स्वस्थ होते हुए भी भीख मांगने का पेशा करे उसकी इमामत मकरूह है। 613 | तलाक देने के बाद पत्नी को पास रख ले और उससे लड़का पैदा हो, उस लड़के की इमामत जायज़ है या नहीं। | 225 | चौदह वर्ष का लड़का खुद को बालिग ज़ाहिर करे तो उसे बालिग माना जाएगा। 614 | इमाम को पदमुक्त करने की एक सूरत। | 225 | बदमज़हबों के साथ खाना, मेल-जोल रखना फ़िस्क़ है। 614 | उस्ताद की अवहेलना करने वाले शागिर्द की इमामत सही है या नहीं। | 225 | किन-किन लोगों की इमामत जायज़ है और किन की नाजायज़। 615 | बिना कारण इमाम को पदमुक्त करना जायज़ नहीं। | 226 | इमाम का मस्जिद के बीच में खड़ा होना सुन्नत है। 616 | बहरे की इमामत जायज़ नहीं। | 227 | गलत मसला बताने वाले इमामत के काबिल नहीं। 617 | सफर में इमाम के अक़ीदों (विश्वासों) की तहकीकात की ज़रूरत है या नहीं। | 227 | दाढ़ी मुंडाने वालों के पीछे नमाज़ मकरूह है। 617 | गैर-मुक़ल्लिदों के पीछे नमाज़ बातिल (अमान्य) है। जमाअत में गैर-मुक़ल्लिद शरीक हो तो नमाज़ नाकिस (अपूर्ण) होगी। | 227 | इमामत पर तनख्वाह लेना जायज़ है, क़ुरआन ख्वानी की उजरत (मजदूरी) हराम है। 619 | जो मदरसे अहले सुन्नत के खिलाफ हैं उनके छात्रों को इमाम बनाना जायज़ नहीं। | 227 | जमाअत छोड़ने वाले की इमामत मकरूह है। 619 | जो इमामत की शर्तों पर पूरा उतरता हो उसे इमाम बनाया जाए भले ही वह खुद को अयोग्य कहे। | 228 | माज़ूर (लाचार/बीमार) की इमामत का हुक्म। 619 | कोहनियां खुली रहें तो नमाज़ मकरूह होती है। | 229 | इमाम के लिए जाए-नमाज़ (मुसल्ला) हो और मुक्तदी के लिए न हो तो नमाज़ में कोई हर्ज नहीं। 620 | वहाबियों के पीछे नमाज़ जायज़ नहीं चाहे वह नफ़्ली नमाज़ ही क्यों न हो। | 230 | गैर-मुक़ल्लिदों के पीछे नमाज़ ऐसी है जैसे यहूदी के पीछे। 620 | जनाज़ा की नमाज़ में औरत इमाम और मर्द मुक्तदी हों तो फ़र्ज़ अदा हो जाएगा। | 230 | नियुक्त इमाम की इजाज़त के बिना दूसरा व्यक्ति नमाज़ नहीं पढ़ा सकता। 622 | नजूमी (ज्योतिषी), रम्माल और फ़ालनामा बेचने वालों के पीछे नमाज़ जायज़ नहीं। | 231 | मुक्तदी के सिर पर अमामा (पगड़ी) हो और इमाम सिर्फ टोपी पहने हो तो नमाज़ में हर्ज है या नहीं।

पृष्ठ 23/736

۶۱۱ | امرد کے پیچھے نماز جائز ہے یا نہیں۔ | ۲۲۲ | تفضیلیہ مبتدع وبد مذہب ہیں۔ ۶۱۳ | فسق کی ایک صورت۔ | ۲۲۳ | دکاندار امام ہو سکتا ہے یا نہیں۔ ۶۱۳ | شبہ سے چوری ثابت نہیں ہوتی۔ | ۲۲۳ | جو تندرست ہوتے ہوئے بھیک مانگنے کا پیشہ کرے اس کی امامت مکروہ ہے۔ ۶۱۳ | طلاق دے کر بی بی رکھ لے اور اس سے لڑکا پیدا ہو اس لڑکے کی امامت جائز ہے یا نہیں۔ | ۲۲۵ | چودہ برس کا لڑکا اپنے کو بالغ ظاہر کرے اسے بالغ مانا جائے گا۔ ۶۱۴ | امام معزول کرنے کی ایک صورت۔ | ۲۲۵ | بد مذہبوں کے ساتھ کھانا، میل جول رکھنا فسق ہے۔ ۶۱۴ | استاد کا قصور کرنے والے شاگرد کی امامت صحیح ہے یا نہیں۔ | ۲۲۵ | کن کن لوگوں کی امامت جائز ہے اور کن کی ناجائز۔ ۶۱۵ | بلا وجہ امام کو معزول کرنا جائز نہیں | ۲۲۶ | امام کا وسطِ مسجد میں کھڑا ہونا سنت ہے۔ ۶۱۶ | بہرے کی امامت جائز نہیں | ۲۲۷ | غلط مسئلہ بتانے والے قابلِ امامت نہیں۔ ۶۱۷ | سفر میں امام کے عقائد دریافت کی ضرورت ہے یا نہیں | ۲۲۷ | داڑھی منڈانے والوں کے پیچھے نماز مکروہ ہے۔ ۶۱۷ | غیر مقلدین کے پیچھے نماز باطل ہے۔ جماعت میں غیر مقلد شریک ہو تو نماز ناقص ہوگی۔ | ۲۲۷ | امامت پر تنخواہ لینی جائز ہے، قرآن خوانی اجرت حرام ہے۔ ۶۱۹ | جو مدارس اہلسنت کے خلاف ہیں ان کے طلبہ کو امام بنانا جائز نہیں۔ | ۲۲۷ | تارکِ جماعت کی امامت مکروہ ہے۔ ۶۱۹ | جو شرائطِ امامت کا جامع ہو اسے امام بنایا جائے اگر چہ وہ اپنے کو نا اہل کہے۔ | ۲۲۸ | معذور کی امامت کا حکم۔ ۶۱۹ | کہنیاں کھلی رہیں تو نماز مکروہ ہوتی ہے۔ | ۲۲۹ | امام کے لئے مصلے ہو اور مقتدی کے لئے نہ ہو تو نماز میں حرج نہیں۔ ۶۲۰ | وہابیہ کے پیچھے نماز جائز نہیں خواہ نفلی نماز ہو۔ | ۲۳۰ | غیر مقلدوں کے پیچھے نماز ایسی ہے جیسے یہودی کے پیچھے۔ ۶۲۰ | نمازِ جنازہ

میں عورت امام اور مرد مقتدی ہوں تو فرض ادا ہو جائے گا۔ | ۲۳۰ | مقررہ امام کی اجازت کے بغیر دوسرا نماز نہیں پڑھا سکتا۔ ۶۲۲ | نجومی، رمال اور فالناموں کے بیچنے والے کے پیچھے نماز جائز نہیں۔ | ۲۳۱ | مقتدی کے سر پر عمامہ ہو اور امام صرف ٹوپی پہنے ہو تو نماز میں حرج ہے یا نہیں۔

- [633] Praying behind a Wahhabi is impermissible even if he is a teacher; rather, making him a teacher is a sin.
- [639] If the fee for leadership (imamat) has been settled implicitly or explicitly, there is no harm in taking the fee and leading the prayer.
- [633] An adulterer is a transgressor (fasiq); making them an imam is disliked (makruh).
- [640] Shaking hands after prayer is permissible.
- [634] The basis for honor and insult depends on custom ('urf).
- [640] Taking a salary for imamat is permissible, but avoiding it is better.
- [635] One who is appointed only as the Friday imam is bound to lead only the Friday prayer, not the other prayers.
- [641] If the imam delays the supplication (dua) after the salam, it is not necessary for the follower (muqtadi) to remain seated; they can leave if necessary. After the salam, the imam's authority (wilayat) ends.
- [635] Prayer is not a private household matter where anyone can be made an imam at will.
- [641] Rulings regarding Fard (obligatory), Wajib (necessary), Sunnah Mu'akkadah (emphasized Sunnah), Mustahabb (recommended), and Mubah (permissible).
- [637] The leadership (imamat) of a blind person is permissible.
- [642] If there is a delay in thinking of a Surah long enough to say "Subhan Allah" three times, then a prostration of forgetfulness (Sajdah Sahw) becomes necessary.
- [638] One who considers Sunni and Wahhabi scholars as equal is an unbeliever (kafir).
- [642] Praying while wearing only trousers (pyjamas) makes the prayer disliked (makruh).
- [638] Whether the imamat of one who performs dry ablution (Tayammum) instead of a ritual bath (Ghusl) due to frequent nocturnal emissions or other diseases is permissible or not.
- [647] Treatise: "Al-Nahy al-Akid 'an al-Salat wara' 'Adi al-Taqlid" (Regarding the impermissibility of praying behind non-followers of the four schools of jurisprudence/Ghair Muqallideen).

फतावा रज़विया | खंड 6

- [633] वहाबी के पीछे नमाज़ पढ़ना नाजायज़ है, भले ही वह उस्ताद हो; बल्कि उसे उस्ताद बनाना गुनाह है।
- [639] यदि इमामत (नेतृत्व) का शुल्क परोक्ष या प्रत्यक्ष रूप से तय हो गया हो, तो शुल्क लेने और इमामत करने में कोई बुराई नहीं है।
- [633] व्यभिचारी (ज़ानी) फ़ासिक़ है, उसे इमाम बनाना मकरूह (नापसंद) है।
- [640] नमाज़ के बाद मुसाफ़ा (हाथ मिलाना) करना जायज़ है।
- [634] सम्मान और अपमान का आधार प्रथा ('उर्फ़) पर है।
- [640] इमामत के लिए वेतन लेना जायज़ है, लेकिन इससे बचना बेहतर है।
- [635] जिसे केवल जुमे का इमाम नियुक्त किया गया हो, वह केवल जुमे की नमाज़ पढ़ाने के लिए बाध्य है, अन्य नमाज़ों के लिए नहीं।
- [641] यदि इमाम सलाम के बाद दुआ (प्रार्थना) में देरी करता है, तो मुक्तदी (पीछे चलने वाले) के लिए बैठे रहना ज़रूरी नहीं है; यदि ज़रूरत हो तो वह जा सकता है। सलाम के बाद इमाम का अधिकार (विलायत) समाप्त हो जाता है।
- [635] नमाज़ कोई निजी घरेलू मामला नहीं है कि जिसे चाहा इमाम बना लिया।
- [641] फ़र्ज़, वाजिब, सुन्नत-ए-मुअक्कदा, मुस्तहब, मुबाह के नियम।
- [637] नेत्रहीन व्यक्ति की इमामत जायज़ है।
- [642] यदि सूरह सोचने में इतनी देरी हो जाए कि तीन बार "सुब्हान अल्लाह" कहा जा सके, तो सज्दह (सज्दह-ए-सहव) वाजिब हो जाता है।
- [638] सुन्नी और वहाबी विद्वानों को समान समझने वाला काफिर है।
- [642] केवल पजामा पहनकर नमाज़ पढ़ने से नमाज़ मकरूह होती है।
- [638] अत्यधिक स्वप्नदोष या अन्य बीमारियों के कारण गुस्ल (स्नान) के बजाय तयम्मुम करने वाले की इमामत जायज़ है या नहीं।
- [647] रिसाला (लघु पुस्तक): "अन-नह्य अल-अकीद अन अल-सलात वरा अदी अल-तक़्लीद" (गैर-मुक़ल्लिदीन के पीछे नमाज़ पढ़ने के नाजायज़ होने के बारे में)।

पृष्ठ 24 / 736

- [۶۳۳] وہابی کے پیچھے نماز ناجائز ہے اگرچہ استاد ہو بلکہ اسے استاد بنانا گناہ۔
- [۶۳۹] امامت کی اجرت دلالۃً یا صراحۃً طے ہوگئی ہو تو اجرت لینے اور امامت کرنے میں کوئی حرج نہیں۔
- [۶۳۳] زانی فاسق ہیں انہیں امام بنانا مکروہ۔
- [۶۴۰] نماز کے بعد مصافحہ کرنا جائز ہے۔
- [۶۳۴] تعظیم و توہین کا مدار عرف ہے۔
- [۶۴۰] امامت کی تنخواہ لینی جائز ہے مگر بچنا بہتر۔
- [۶۳۵] جسے صرف جمعہ کا امام بنایا گیا ہو وہ صرف جمعہ پڑھانے کا پابند ہے دوسری نمازوں کا نہیں۔
- [۶۴۱] سلام کے بعد امام دعا میں تاخیر کرے تو مقتدی پر ضروری نہیں کہ بیٹھا رہے ضرورت ہو تو چلا جائے، سلام کے بعد امام کی ولایت ختم ہو جاتی ہے۔
- [۶۳۵] نماز کوئی خانگی معاملہ نہیں جسے چاہا امام بنالیا۔
- [۶۴۱] فرض، واجب، سنتِ مؤکدہ، مستحب، مباح کے احکام۔
- [۶۳۷] نابینا کی امامت جائز ہے۔
- [۶۴۲] صورت سوچنے میں اتنی دیر ہو جائے کہ تین بار سبحن اللہ کہہ لیا جائے تو سجدہ واجب ہے۔
- [۶۳۸] سنی وہابی علما کو یکساں جاننے والا کافر ہے۔
- [۶۴۲] صرف پاجامہ پہن کر نماز پڑھنے سے نماز مکروہ ہوتی ہے۔

- [۶۳۸] کثرت احتلام یا کسی دوسرے امراض کے سبب بجائے غسل کے تیمم کرے تو اس کی امامت جائز ہے یا نہیں۔
- [۶۴۷] رسالہ النھی الاکید عن الصلاۃ وراء عدی التقلید (غیر مقلدین کے پیچھے نماز ناجائز ہونے کے بیان میں)

Fatawa Razawiyya, Volume Six

List of Subsidiary Issues

Places of Prayer (Amakin al-Salat) - Whether prayer is void or disliked if the Imam stands on a raised platform. [Page 131] - Breaking the prayer row is forbidden. [Page 131] - Fard, Wajib, and Sunnah of Fajr cannot be performed on a moving train; if the time is expiring, perform the prayer and then repeat it. [Page 136] - Prayers performed while sitting due to necessity do not need to be repeated. [Page 141]

Prohibition and Permissibility (Hazr o Abahat) - It is not permissible to write 'Salat Marzi' etc. in codes/abbreviations. [Page 221] - One who recites litanies but does not perform the obligatory prayer is a transgressor (fasiq). [Page 223]

Boundaries (Hudood) - Theft is not established by suspicion. [Page 613]

Endowment (Waqf) - Ruling on performing prayer on prayer mats endowed to the mosque. [Page 572]

Hiring (Ijarah) - It is permissible to receive a salary for Imamat (leading prayer). Taking a fee for Quranic recitation is forbidden. [Page 627] - If the wage for Imamat is settled either implicitly or explicitly, there is no harm in taking the wage and performing the Imamat. [Page 639] - Taking a salary for Imamat is permissible, but it is better to avoid it. [Page 640]

Other Issues: - Evidence for supplicating after prayer. [Page 224] - Reciting Durood Sharif loudly is permissible, but reciting it silently is more excellent. [Page 233] - What is the ruling on delaying the supplication after prayer? [Page 233] - Reading Surahs in reverse order is permissible. [Page 270] - Ruling on coughing and clearing the throat during prayer. [Page 274] - Prayer will be disliked (Makruh) if there is a foul odor in the mouth. [Page 332]

फतावा रज़विया, छठा खंड

सहायक मसलों की सूची

नमाज़ के स्थान (अमाकिन अल-सलात) - यदि इमाम किसी ऊंचे स्थान पर खड़ा हो, तो क्या नमाज़ अमान्य होगी या मकरूह? [पृष्ठ १३१] - नमाज़ की कतार (सफ़) तोड़ना हराम है। [पृष्ठ १३१] - फ़र्ज़, वाजिब और फ़ज्र की सुन्नतें चलती ट्रेन में नहीं हो सकतीं; यदि समय निकल रहा हो, तो पढ़ लें और फिर दोहराएं। [पृष्ठ १३६] - मजबूरी के कारण जो नमाज़ें बैठकर पढ़ी गई हों, उन्हें दोहराने की आवश्यकता नहीं है। [पृष्ठ १४१]

निषेध और अनुमति (हज़्र ओ अबाहत) - 'सलात मर्ज़ी' आदि को कोड/संकेत में लिखना जायज़ नहीं है। [पृष्ठ २२१] - जो वज़ीफ़ा पढ़े और नमाज़ न पढ़े, वह फासिक (गुनहगार) है। [पृष्ठ २२३]

सीमाएँ(हुदूद) - संदेह के आधार पर चोरी साबित नहीं होती। [पृष्ठ ६१३]

वक्फ़ (बंदोबस्ती) - मस्जिद को वक्फ़ की गई जाए-नमाज़ों पर नमाज़ पढ़ने का हुक्म। [पृष्ठ ५७२]

इजारा (किराया/मजदूरी) - इमामत के लिए वेतन लेना जायज़ है। कुरान ख्वानी के लिए मजदूरी लेना हराम है। [पृष्ठ ६२७] - यदि इमामत की मजदूरी इशारे में या स्पष्ट रूप से तय हो गई हो, तो मजदूरी लेने और इमामत करने में कोई हर्ज नहीं। [पृष्ठ ६३९] - इमामत का वेतन लेना जायज़ है, लेकिन बचना बेहतर है। [पृष्ठ ६४०]

अन्य मुद्दे: - नमाज़ के बाद दुआ मांगने का सबूत। [पृष्ठ २२४] - ऊँची आवाज़ में दरूद शरीफ़ पढ़ना जायज़ है और चुपके से पढ़ना बेहतर है। [पृष्ठ २३३] - नमाज़ के बाद दुआ में देरी करना कैसा है? [पृष्ठ २३३] - सूरतों को उलटे क्रम में पढ़ना जायज़ है। [पृष्ठ २७०] - नमाज़ में खाँसने और गला साफ करने का हुक्म। [पृष्ठ २७४] - मुँह में बदबू होने की स्थिति में नमाज़ मकरूह होगी। [पृष्ठ ३३२]

فتاویٰ رضویہ، جلد ششم

فہرست ضمنی مسائل

اماکن الصلوٰۃ - بلند جگہ پر امام کھڑا ہو تو نماز باطل ہو گی یا مکروہ۔ [صفحہ ۱۳۱] - قطع صف حرام ہے۔ [صفحہ ۱۳۱] - فرض، واجب اور فجر کی سنتیں چلتی ریل میں نہیں ہو سکتیں اور اگر وقت نکل رہا ہو تو پڑھ لے پھر اعادہ کرے۔ [صفحہ ۱۳۶] - مجبوری کے سبب جو نمازیں بیٹھ کر پڑھی گئی ہوں ان کا اعادہ نہیں۔ [صفحہ ۱۴۱]

حظر و اباحت - صلوٰۃ مرضی وغیرہ کو رمز میں لکھنا جائز نہیں۔ [صفحہ ۲۲۱] - جو وظیفہ پڑھے اور نماز نہ پڑھے وہ فاسق ہے۔ [صفحہ ۲۲۳]

حدود - شبہ سے چوری ثابت نہیں ہوتی۔ [صفحہ ۶۱۳]

وقف - مسجد پر وقف شدہ جائے نمازوں پر نماز پڑھنے کا حکم۔ [صفحہ ۵۷۲]

اجارہ - امامت پر تنخواہ لینی جائز ہے۔ قرآنی خوانی کی اجرت حرام ہے۔ [صفحہ ۶۲۷] - امامت کی اجرت دلالتہً یا صراحتہً ہو گئی ہو تو اجرت لینے اور امامت کرنے میں کوئی حرج نہیں۔ [صفحہ ۶۳۹] - امامت کی تنخواہ لینی جائز ہے مگر بچنا بہتر۔ [صفحہ ۶۴۰]

دیگر مسائل: - نماز کے بعد دعا مانگنے کا ثبوت۔ [صفحہ ۲۲۴] - بلند آواز سے درود شریف پڑھنا جائز ہے اور اخفاء افضل۔ [صفحہ ۲۳۳] - نماز کے بعد دعا میں تاخیر کیسی؟ [صفحہ ۲۳۳] - سورتوں کو معکوس پڑھنا جائز ہے۔ [صفحہ ۲۷۰] - نماز میں کھانسنے اور کھنکارنے کا حکم۔ [صفحہ ۲۷۴] - منہ میں بدبو ہونے کی حالت میں نماز مکروہ ہو گی۔ [صفحہ ۳۳۲]

Header: Fatawa Rizvia, Volume 6

Page	Left Column Content	Page	Right Column Content
201	Definition and ruling regarding the transgressor (fasiq) and sinner (fajir).	538	It is strictly forbidden to abuse Muslims without a valid Sharia reason.
641	Rulings on Obligatory (Fard), Necessary (Wajib), Emphasized Sunnah, Commendable (Mustahabb), and Permissible (Mubah) acts.	553	Accusation and ill-suspicion are impermissible.
	Rasm-ul-Mufti (Methodology of the Mufti)	596	Musical instruments are forbidden; listening to them is a transgression.
392	For example, if a person says: 'one who has intimacy with his wife, etc.'	605	The prayer leadership (imamat) of a cuckold is disliked. Pledging allegiance to a spiritual guide who commits forbidden acts or having them recite Milad is impermissible.
627	Those who provide incorrect rulings are not fit to lead prayer.	606	Opium addicts and those who abandon fasting are transgressors.
	Aqaid and Kalam (Beliefs and Theology)	608	Musical instruments are forbidden.
221	It is obligatory to recite Salawat upon hearing the blessed name of the Prophet.	610	Keeping hair up to the chest is forbidden for men.
322	Denying the science of correct Quranic recitation (Tajweed) is disbelief (kufr).	630	Shaking hands after prayer is permissible.
479	Those who say 'Amen' loudly and practice 'Raf-ul-Yadayn' in these regions are generally non-followers of a legal school (Ghair-Muqallid).		**Madainat (Transactions/Debts)**
398		548	

Page	Left Column Content	Page	Right Column Content
	Ruling on the prayer leadership of one who calls Hanafis 'the offspring of Satan', etc.		One who takes interest-based loans without Sharia necessity is a transgressor.
528	Proofs that whoever acts as a Rafidi among Rafidis and a Sunni among Sunnis is a hypocrite (munafiq).		**Nafaqat (Maintenance)**
573	Prayer behind Deobandis is invalid.	582	A woman's maintenance and expenses are the husband's responsibility, not the father's.
579	The prayer leadership of Wahhabis is impermissible.		**Fawaid-e-Fiqhiya (Juridical Benefits)**
582	Following someone in prayer who believes God is embodied is forbidden.	55	A specific estimation of the Qibla direction for all cities is not possible.
625	Eating and socialising with the heterodox (followers of deviant sects) is a transgression.	170	Long invocations during standing (qawma) and sitting (jalsa) between prostrations are applicable to voluntary prayers, not a Sunnah in obligatory prayers.
638	One who considers Sunni and Wahhabi scholars as equal is a disbeliever (kafir).	185	20 units (rak'ahs) of Tarawih is an emphasized Sunnah; a single unit of Witr or voluntary prayer is utterly invalid.
656	Description of some beliefs of the non-followers (Ghair-Muqallids).	205	Understanding the meaning is not necessary for the validity of prayer.

हैडर: फतावा रज़विया, जिल्द शशुम (छठा)

पृष्ठ	बायां कॉलम सामग्री
२०१	फासिक व फाजिर की परिभाषा और हुक्म।
६४१	फर्ज, वाजिब, सुन्नत-ए-मुअक्कदा, मुस्तहब, मुबाह के अहकाम।
	रस्मुल मुफ्ती (मुफ्ती का तरीका)
३९२	एक शख्स मसलन यह कहे जो अपनी बीवी से कुर्बत करे इल्ख (इत्यादि)।
६२७	गलत मसला बताने वाले काबिले इमामत नहीं।
	अकाइद व कलाम (विश्वास और धर्ममीमांसा)
२२१	हुज़ूर के नाम-ए-अकदस पर दरूद शरीफ पढ़ना वाजिब है।
३२२	तजवीद से इनकार कुफ्र है।
४७९	इन बिलाद में आमीन बिल-जहर (ऊंची आवाज में) व रफ़-उल-यदैन करने वाले उमूमन (आम तौर पर) गैर-मुकल्लिद हैं।
३९८	अहनाफ को ज़ुर्रियत-उश-शैतान (शैतान की औलाद) वगैरह कहने वाले की इमामत का हुक्म।
५२८	

पृष्ठ	दायां कॉलम सामग्री
५३८	बिला वजह शरई मुसलमानों को गाली देना सख्त हराम है।
५५३	इत्तेहाम (आरोप) और बदगुमानी (बुरी धारणा) नाजायज है।
५९६	मजामीर (वाद्य यंत्र) हराम हैं, उनका सुनना फिस्क (पाप) है।
६०५	दय्यूत की इमामत मकरूह है, जो पीर फेअल-ए-हराम का मुरतकिब हो उससे बैअत करना, मीलाद पढ़वाना नाजायज है।
६०६	अफीमची और रोज़ा छोड़ने वाले फासिक हैं।
६०८	मजामीर हराम हैं।
६१०	सीने तक बाल रखना मर्द के लिए हराम है।
६३०	नमाज़ के बाद मुसाफहा करना जायज़ है।
	मदइनात (कर्ज/लेन-देन)
५४८	बिला ज़रूरत-ए-शरई सूदी क़र्ज़ लेने वाला फासिक है।
	नफकात (भरण-पोषण/खर्च)

पृष्ठ	बायां कॉलम सामग्री	पृष्ठ	दायां कॉलम सामग्री
	जो राफ़िजियों में राफ़िजी और सुन्नियों में सुन्नी बने वह मुनाफिक है, इस पर दलाइल (दलीलें)।		
५७३	देवबंदियों के पीछे नमाज़ बातिल है।	५८२	औरत का नान-ओ-नफका (खर्च) शौहर के जिम्मे है, बाप पर नहीं।
५७९	वहाबिया की इमामत नाजायज है।		**फ़वाइदे फिक़हिया (कानूनी/न्यायिक लाभ)**
५८२	खुदा तआला को मुजस्सम (देहधारी) मानने वाले की इक्तिदा हराम है।	५५	तमाम बिलाद (देशों/शहरों) के लिए जिहत-ए-किबला का एक खास तखमीना (अंदाजा) मुमकिन नहीं।
६२५	बद-मजहबों के साथ खाना, मेल-जोल रखना फिस्क है।	१७०	क़ौमा व जलसा के अज़कार-ए-तवीला नवाफिल पर महमूल हैं, फराइज़ में मसनून नहीं।
६३८	सुन्नी वहाबी उलमा को यकसां (बराबर) जानने वाला काफिर है।	१८५	२० रकात तरावीह सुन्नत-ए-मुअक्कदा है, एक रकात नमाज़-ए-वित्र ख्वा नफिल बातिल-ए-महज़ है।
६५६	गैर-मुकल्लिदीन के चंद अकाइद का बयान।	२०५	सेहत-ए-सलात (नमाज़ के सही होने) के लिए फहम-ए-मानी (अर्थ समझना) जरूरी नहीं।

صفحہ	بائیں کالم کے مندرجات	صفحہ	دائیں کالم کے مندرجات
۲۰۱	فاسق و فاجر کی تعریف اور حکم۔	۵۳۸	بلاوجہ شرعی مسلمانوں کو گالی دینا سخت حرام ہے
۶۴۱	فرض، واجب، سنتِ مؤکدہ، مستحب، مباح کے احکام۔	۵۵۳	اتہام اور بدگمانی ناجائز ہے۔
	رسم المفتی	۵۹۶	مزامیر حرام ہیں ان کا سننا فسق۔
۳۹۲	ایک شخص مثلاً یہ کہے جو اپنی بی بی سے قربت کرے الخ	۶۰۵	دیوث کی امامت مکروہ ہے، جو پیر فعل حرام کا مرتکب ہو اس سے بیعت کرنا میلا د پڑھوانا ناجائز ہے۔
۶۲۷	غلط مسئلہ بتانے والے قابلِ امامت نہیں۔	۶۰۶	افیونی اور روزہ چھوڑنے والے فاسق ہیں۔
	عقائد و کلام	۶۰۸	مزامیر حرام ہیں۔
۲۲۱	حضور کے نام اقدس پر درود شریف پڑھنا واجب ہے۔	۶۱۰	سینہ تک بال رکھنا مرد کو حرام ہے۔
۳۲۲	تجوید سے انکار کفر ہے۔	۶۳۰	نماز کے بعد مصافحہ کرنا جائز ہے۔
۴۷۹	ان بلاد میں آمین بالجہر و رفع یدین کرنے والے عموماً غیر مقلد ہیں۔		**مدائنات**

صفحہ	بائیں کالم کے مندرجات
۳۹۸	احناف کو ذریۃ الشیطان وغیرہ کہنے والے کی امامت کا حکم۔
۵۲۸	جورافضیوں میں رافضی اور سنیوں میں سنی بنے وہ منافق ہے اس پر دلائل۔
۵۷۳	دیوبندیوں کے پیچھے نماز باطل ہے۔
۵۷۹	وہابیہ کی امامت ناجائز ہے۔
۵۸۲	خدا تعالیٰ کو مجسم ماننے والے کی اقتدا حرام ہے۔
۶۲۵	بدمذہبوں کے ساتھ کھانا، میل جول رکھنا فسق ہے۔
۶۳۸	سنی وہابی علما کو یکساں جاننے والا کافر ہے۔
۶۵۶	غیر مقلدین کے چند عقائد کا بیان۔

صفحہ	دائیں کالم کے مندرجات
۵۴۸	بلاضرورت شرعیہ سودی قرض لینے والا فاسق ہے۔
	نفقات
۵۸۲	عورت کا نان و نفقہ شوہر کے ذمہ ہے باپ پر نہیں۔
	فوائد فقہیہ
۵۵	تمام بلاد کے لئے جہتِ قبلہ کا ایک خاص تخمینہ ممکن نہیں۔
۱۷۰	قومہ و جلسہ کے اذکار طویلہ نوافل پر محمول ہیں فرائض میں مسنون نہیں۔
۱۸۵	۲۰ رکعت تراویح سنت مؤکدہ ہے، ایک رکعت نماز وتر خواہ نفل باطل محض ہے۔
۲۰۵	صحتِ صلوۃ کے لئے فہمِ معنی ضروری نہیں۔

Fatawa Razawiyya - Volume Six

- Khawarij are the worst of creations. (656)
- According to Non-Conformists (Ghair-Muqallideen), calling Taqlid (imitation) 'shirk' and 'kufr' necessitates that their elders are disbelievers and polytheists. (707)
- The people of Arabia will never be involved in satanic worship. (664)
- The deniers of Taqlid have openly declared nine out of ten parts of the blessed Ummah to be disbelievers and polytheists. (709)
- Arguments for the invalidity of prayer behind Non-Conformists. (670)
- **Tajwid (Rules of Quranic Recitation)**
- Non-Conformists are among the worst of the people of innovation (Ahl-e-Bid'at). (670)
- Pronouncing the letter 'Zwad' (ض) as 'Zha' (ظ) or 'Dal' (د) is incorrect; a description of the articulation point (makhraj) of 'Zwad'. (272)
- Non-Conformists are manifest transgressors (Fasiq-e-Mu'lan). (680)
- The letters 'Zwad' (ض) and 'Zha' (ظ) are similar in sound. (275)
- Non-Conformists are blatant fanatics whose real aim is to declare Muslims as disbelievers (Takfir). (703)
- There are three limits/levels of Tartil (measured recitation). (275)
- Whoever calls even a single Muslim a disbeliever is a disbeliever himself. (709)
- Difference between essential (Lazima) and non-essential (Ghair-Lazima) attributes. (299)
- Whoever calls any reciter of the Kalima a disbeliever, the charge will surely fall on one of them. (709)
- The letters ض، ظ، ذ، ز are distinct and different; intentionally reading one in place of another during recitation is a great sin and strictly forbidden. (305)
- Sunnis should avoid them, not participate in their affairs, and not include them in their own affairs. (718)
- If a reciter unintentionally changes a letter, even if it is similar or identical, then ruling the prayer as absolutely invalid is wrong and flawed. (306)
- Sitting with the wicked only brings harm to a person. (719)
- If one reads 'Dallin' with a plain 'Dal' instead of 'Zwallin' (ضالين), the prayer is not invalidated; but if read as 'Zallin' with a dotted 'Zal' (ذ), it is invalidated. (307)
- Loving those with corrupt beliefs is a deadly poison. (720)

- Whoever intentionally reads 'Maghzoob' (معظوب with ظ or مغذوب with ذ) instead of 'Maghdoob' (مغضوب), his prayer will be invalidated. (308)
- **Issue of Taqlid**
- **Description of the articulation point (Makhraj) of Zwad** (320)
- He who has not reached the level of Ijtihad nor the great rank of spiritual unveiling (Kashf) and sainthood (Wilayat), it is obligatory for him to follow a specific Imam. (704)
- Description of voiced (Majhura) and unvoiced (Mahmusa) letters. (320)
- The saved sect of Ahl-as-Sunnah is now confined to these four schools (Hanafi, Shafi'i, Maliki, Hanbali). (705)
- Ruling on pronouncing 'Zwad' (ض) similar to 'Zha' (ظ). (320)
- Abandoning personal Taqlid is a major sin. (707)
- Changing letters, i.e., replacing one letter with another, invalidates the prayer; there are three scenarios of such change. (339)

फ़तावा रज़विया - जिल्द शशम (छठा भाग)

- ख्वारिज बदतरीन मख्लूक हैं। (६५६)
- तक़लीद को शिर्क व कुफ़्र कहने से ग़ैर-मुक़ल्लिदीन के नज़दीक अकाबिर का काफ़िर व मुशरिक होना लाज़िम आता है। (७०७)
- अहल-ए-अरब हरगिज़ शैतानी इबादत में मुब्तला न होंगे। (६६४)
- मुन्किरीन-ए-तक़लीद ने उम्मत-ए-मरहूमा के दस हिस्सों में से नौ को एलानिया तौर पर काफ़िर व मुशरिक ठहराया। (७०९)
- ग़ैर-मुक़ल्लिदीन के पीछे नमाज़ न होने के दलाइल। (६७०)
- **तजवीद (कुरान पढ़ने के नियम)**
- ग़ैर-मुक़ल्लिदीन बदतरीन अहल-ए-बिदअत में से हैं। (६७०)
- ज़ाद (ض) को ज़ा (ظ) या दाल (د) पढ़ना ग़लत है, ज़ाद के मख़्रज का बयान। (२७२)
- ग़ैर-मुक़ल्लिदीन फ़ासिक़-ए-मुअलन (खुले गुनहगार) हैं। (६८०)
- हर्फ़ ज़ाद (ض) और ज़ा (ظ) की आवाज़ें आपस में मिलती-जुलती हैं। (२७५)
- ग़ैर-मुक़ल्लिदीन साफ़ तौर पर कट्टरपंथी हैं जिनका असली मक़सद मुसलमानों को काफ़िर करार देना है। (७०३)
- तरतील की तीन सीमाएँ हैं। (२७५)
- जो व्यक्ति एक भी मुसलमान को काफ़िर कहता है वह स्वयं काफ़िर है। (७०९)
- अनिवार्य (लाज़मी) और गैर-अनिवार्य गुणों में अंतर। (२९९)
- जो व्यक्ति किसी कलमा पढ़ने वाले को काफ़िर कहे, तो उन दोनों में से एक पर यह बात ज़रूर लागू होगी। (७०९)
- ض، ظ، ذ، ز अलग-अलग अक्षर हैं; तिलावत के दौरान जानबूझकर एक की जगह दूसरा पढ़ना बहुत बड़ा पाप और पूरी तरह से हराम है। (३०५)
- अहल-ए-सुन्नत को चाहिए कि उनसे दूर रहें, उनके मामलों में शामिल न हों और उन्हें अपने मामलों में शामिल न करें। (७१८)
- यदि पढ़ने वाला बिना किसी इरादे के कोई अक्षर बदल देता है, भले ही वह समान लगे या वही हो, तो नमाज़ को पूरी तरह अमान्य घोषित करने का हुक्म गलत और दोषपूर्ण है। (३०६)
- बुरे लोगों के साथ बैठने से व्यक्ति को केवल हानि ही होती है। (७१९)

- यदि ضالين (ज़वाल्लीन) की जगह बिना बिंदु वाली 'दाल' (د) के साथ 'दाललीन' पढ़ी जाए तो नमाज़ नहीं जाएगी; लेकिन यदि बिंदु वाली 'ज़ाल' (ذ) के साथ 'ज़ाललीन' पढ़ी जाए तो नमाज़ चली जाएगी। (३०७)
- बद-मज़हबों से मोहब्बत जानलेवा ज़हर है। (७२०)
- जो जानबूझकर مغضوب (मग़दूब) की जगह معظوب (मग़ज़ूब - ظ के साथ) या مغذوب (मग़ज़ूब - ذ के साथ) पढ़ेगा, उसकी नमाज़ अमान्य (फ़ासिद) हो जाएगी। (३०८)
- **तक़लीद का मसला**
- **मख़्रज-ए-ज़ाद (ض) का बयान** (३२०)
- जो व्यक्ति इजतिहाद की योग्यता नहीं रखता और न ही कश्फ़ व विलायत के महान पद तक पहुँचा है, उस पर एक विशिष्ट इमाम की तक़लीद करना अनिवार्य है। (७०४)
- हुरूफ़-ए-मजहूरा और महमूसा का बयान। (३२०)
- अहल-ए-सुन्नत का सफल संप्रदाय (फ़िरक़ा-ए-नाजिया) अब इन चार मज़ाहिब (हनफ़ी, शाफ़ई, मालकी, हनबली) में सीमित हो गया है। (७०५)
- ज़ाद (ض) को ज़ा (ظ) के समान पढ़ने का आदेश। (३२०)
- तक़लीद-ए-शख़्सी छोड़ना गुनाह-ए-कबीरा है। (७०४)
- अक्षरों को बदलना, यानी एक अक्षर की जगह दूसरा अक्षर पढ़ना, नماज़ को अमान्य (फ़ासिद) कर देता है; बदलाव की तीन स्थितियाँ हैं। (३३९)

पृष्ठ ७३६ का २४

فتاویٰ رضویہ - جلد ششم

- خوارج بدترین مخلوق ہیں۔ (656)
- تقلید کو شرک و کفر کہنے سے غیر مقلدین کے نزدیک اکابر کا کافر و مشرک ہونا لازم آتا ہے۔ (707)
- اہل عرب ہرگز شیطانی پرستش میں مبتلا نہ ہوں گے۔ (664)
- منکرین تقلید نے امت مرحومہ کے دس حصوں میں سے نو کو علی الاعلان کافر و مشرک ٹھہرایا۔ (709)
- غیر مقلدین کے پیچھے نماز نہ ہونے کے دلائل۔ (670)
- **تجوید**
- غیر مقلدین بدترین اہل بدعت سے ہیں۔ (670)
- ضاد کو ظا یا دال پڑھنا غلط ہے، ضاد کے مخرج کا بیان۔ (272)
- غیر مقلدین فاسق معلن ہیں۔ (680)
- حرف ض اور ظ مشتبہ الصوت ہیں۔ (275)
- غیر مقلدین صریح متعصبین ہیں جن کا اصل مقصود تکفیر مسلمین ہے۔ (703)
- ترتیل کی تین حدیں ہیں۔ (275)
- جو شخص ایک مسلمان کو بھی کافر کہے وہ خود کافر ہے۔ (709)
- صفات لازمہ و غیر لازمہ میں فرق۔ (299)
- جو شخص کسی کلمہ گو کو کافر کہے تو ان دونوں میں سے ایک پر یہ بلا ضرور پڑے گی۔ (709)

- ض، ظ، ذ، ز حروف متبائنہ متغایرہ ہیں دوران تلاوت قصداً ایک کی جگہ دوسرا پڑھنا گناہ عظیم اور حرام قطعی ہے۔ (305)
- اہلسنت کو چاہئے کہ ان سے پرہیز رکھیں ان کے معاملات میں شریک نہ ہوں اپنے معاملات میں ان کو شریک نہ کریں۔ (718)
- قاری سے بے قصد تبدیل اگر مشابہ ہو بلکہ عین ہو تو اس پر مطلقاً فساد نماز کا حکم غلط و فاسد ہے۔ (306)
- اشرار کے پاس بیٹھنے سے آدمی نقصان ہی اٹھاتا ہے۔ (719)
- ضالین کی جگہ دالین بہ دال مہملہ پڑھے تو نماز نہ جائے گی اور ذالین بہ ذال معجمہ پڑھے تو جاتی رہے گی۔ (307)
- بدمذہبوں سے محبت زہر قاتل ہے۔ (720)
- جو بالقصد مغضوب کی جگہ معظوب و مغذوب پڑھے اس کی نماز فاسد ہوگی۔ (308)
- **مسئلہ تقلید**
- **مخرج ضاد کا بیان** (320)
- جو پایہ اجتہاد نہ رکھتا ہو نہ کشف و ولایت کے رتبہ عظمیٰ تک پہنچا اس پر تقلید امام معین واجب ہے۔ (704)
- حروف مجہورہ و مہموسہ کا بیان (320)
- فرقہ ناجیہ اہلسنت ان چار مذاہب (حنفی، شافعی، مالکی، حنبلی) میں منحصر ہو گیا۔ (705)
- ض کو ظ کے مشابہ پڑھنے کا حکم (320)
- ترک تقلید شخصی گناہ کبیرہ ہے۔ (707)

• تبدیل حروف یعنی ایک حرف کو دوسرے حرف سے بدلنے سے نماز فاسد ہوتی ہے تبدیل کی تین صورتیں۔ (339)

صفحہ 27 از 736

Fatawa Razawiyya Volume Six

Page 422: Some rulings regarding Tajwid

Section: Refutation of Deviant Sects Page 617: Prayer behind non-conformists (Ghayr Muqallidin) is void; if a non-conformist joins the congregation, the prayer will be deficient. Page 619: It is not permissible to appoint students of those madrasas that are opposed to the Ahl-e-Sunnat as prayer leaders (Imams). Page 622: The Tafdiliyya are innovators and deviants.

Section: Virtues Page 183: The virtue of reciting Durood Sharif and the description of the most superior Durood. Page 203: Noble Hadiths regarding the virtue of praying while wearing a turban. Page 208: 40 Noble Hadiths regarding the virtue of the turban.

Section: Methodological Benefits Page 64: Abandoning a recommended act (Mustahabb) does not even entail a status of minor dislike (Karaha Tanzihi). Page 634: The basis of respect and insult is established custom ('Urf).

Section: Mathematics Page 65: In determining the direction of the Qibla, astronomy, the astrolabe, and other instruments and conjectures are not considered authoritative. Page 75: The northern latitude of India ranges from 8 degrees to 35 degrees and the eastern longitude from 66 to 92.

Section: Miscellaneous Page 167: Research regarding the joining of ankles [during prayer]. Page 208: Rulings regarding used and unused shoes.

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

पृष्ठ ४२२: तजवीद से संबंधित कुछ अहकाम (नियम)

अनुभाग: रद-ए-बद मज़हबां (भटके हुए पंथों का खंडन) पृष्ठ ६१७: ग़ैर-मुक़ल्लिदीन के पीछे नमाज़ बातिल है; यदि जमात में ग़ैर-मुक़ल्लिद शामिल हो तो नमाज़ नाक़िस (दोषपूर्ण) होगी। पृष्ठ ६१९: जो मदरसे अहले सुन्नत के ख़िलाफ़ हैं, उनके छात्रों को इमाम बनाना जायज़ नहीं है। पृष्ठ ६२२: तफ़्ज़ीलीय्या बिदअती और भटके हुए लोग हैं।

अनुभाग: फ़ज़ाइल (पुण्य/महत्व) पृष्ठ १८३: दुरूद शरीफ़ पढ़ने की फ़ज़ीलत और सबसे उत्तम दुरूद का वर्णन। पृष्ठ २०३: इमामा (पगड़ी) बांधकर नमाज़ पढ़ने की फ़ज़ीलत में अहादीस-ए-करीमा। पृष्ठ २०८: इमामा की फ़ज़ीलत में ४० अहादीस-ए-करीमा।

अनुभाग: फवायद-ए-उसूलीय्या (सैद्धांतिक लाभ) पृष्ठ ६४: मुस्तहब (पसंदीदा कार्य) का त्याग करना कराहत-ए-तंज़ीही (हलकी नापसंदगी) का भी कारण नहीं बनता। पृष्ठ ६३४: सम्मान और अपमान का आधार 'उर्फ़ (प्रचलित रिवाज) है।

अनुभाग: रियाज़ी (गणित) पृष्ठ ६५: क़िबला की दिशा निर्धारित करने में खगोल विज्ञान, एस्ट्रोलेब और अन्य यंत्रों तथा अनुमानों का कोई विश्वसनीय आधार नहीं है। पृष्ठ ७५: भारत का उत्तरी अक्षांश ८ अंश से ३५ अंश तक और पूर्वी देशांतर ६६ से ९२ तक है।

अनुभाग: मतफ़र्रक़ात (विविध) पृष्ठ १६७: (नमाज़ में) टखनों को मिलाने (इल्साक़-ए-काबैन) की शोध। पृष्ठ २०८: इस्तेमाल किए हुए और बिना इस्तेमाल किए हुए जूतों का हुक्म।

فتاوی رضویہ جلد ششم

تجوید سے متعلق چند احکام: ۴۲۲

رَدِ بد مذہباں: غیر مقلدین کے پیچھے نماز باطل ہے جماعت میں غیر مقلد شریک ہو تو نماز ناقص ہوگی۔: ۶۱۷ جو مدارس اہلسنت کے خلاف ہیں ان کے طلبہ کو امام بنانا جائز نہیں۔: ۶۱۹ تفضیلیہ مبتدع بد مذہب ہیں۔: ۶۲۲

فضائل: درود شریف پڑھنے کی فضیلت اور افضل درود کا بیان۔: ۱۸۳ عمامہ باندھ کر نماز پڑھنے کی فضیلت میں احادیث کریمہ: ۲۰۳ عمامہ کی فضیلت میں ۴۰ احادیث کریمہ: ۲۰۸

فوائد اصولیہ: ترک مستحب مستلزم کراہت تنزیہہ بھی نہیں۔: ۶۴ تعظیم و توہین کا مدار عرف ہے۔: ۶۳۴

ریاضی: سمت قبلہ میں علم ہیئات و اصطرلاب وغیرہ آلات و قیاسات کا اعتبار نہیں۔: ۶۵ ہندوستان کا عرضِ شمالی ۸ درجے سے ۳۵ درجے اور طولِ مشرقی ۶۶ سے ۹۲ تک ہے۔: ۷۵

متفرقات: الصاقِ کعبین کی تحقیق: ۱۶۷ استعمالی و غیر استعمالی جوتوں کا حکم۔: ۲۰۸

Fatawa Razvia - Volume 6

In the name of Allah, the Most Gracious, the Most Merciful.

Chapter on the Conditions of Prayer (Explanation of the Conditions of Prayer)

Problem 389: From Calcutta, Dharamtalla No. 6, sent by Mr. Mirza Ghulam Qadir Beg, 15 Rajab 1311 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: If a sarong (tehband) is made of such thin cloth that the redness or blackness of the body is visible through it, will the prayer be valid with this sarong or not?

The Answer: [Table start] In al-Durr al-Mukhtar: "[A cover is] that which does not describe what is beneath it." (1) | In Durr-e-Mukhtar, it says a covering thing is that which does not reveal what is inside it. In Radd al-Muhtar: "In such a way that the color of the skin is not seen through it." (2) | In Radd al-Muhtar, it says in such a way that the color of the body is not visible through it. (T) [Table end]

From here it is known that for women, a dupatta through which the blackness of the hair shines through invalidates the prayer. (And Allah Almighty knows best.)

Problem 390: Sent by Mr. Mirza Baqi Beg, 23 Muharram 1307 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: Which parts of a man's body are 'awrah' (to be covered)? Please explain, may you be rewarded.

The Answer: O Allah, guide us to the truth and correctness. It is known that for a man, from the navel to the knee is 'awrah' (private area/nakedness).

1. Durr al-Mukhtar, Chapter on Conditions of Prayer, Mujtabai Press, Delhi, 1/22.
2. Radd al-Muhtar, Chapter on Conditions of Prayer, Mustafa al-Babi Press, Egypt, 1/302.

फतावा रज़विया - खंड 6

बिस्मिल्लाहिर रहमानिर रहीम।

बाब शरुत-उस-सलात (नमाज़ की शर्तों का बयान)

मसाला 389: कलकत्ता, धरमतल्ला नंबर 6 से, जनाब मिर्ज़ा गुलाम कादिर बेग द्वारा प्रेषित, 15 रजब 1311 हिजरी। धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं: यदि तहबंद (लुंगी) इतने महीन कपड़े का है कि उसमें से शरीर की लाली या कालापन दिखाई देता है, तो उस तहबंद के साथ नमाज़ होगी या नहीं?

उत्तर: [तालिका आरंभ] 'अद-दुर्र अल-मुख्तार' में है: "[आवरण वह है] जो अपने नीचे की चीज़ का वर्णन न करे।" (1) | दुर्र-ए-मुख्तार में है कि छिपाने वाली चीज़ वह है जो अपने अंदर की चीज़ को ज़ाहिर न करे। 'रद्द अल-मुह्तार' में है: "इस तरह कि उससे शरीर का रंग दिखाई न दे।" (2) | रद्द अल-मुह्तार में है कि इस तरह कि उससे शरीर का रंग दिखाई न दे। (त) [तालिका अंत]

यहाँ से ज्ञात हुआ कि महिलाओं का वह दुपट्टा जिससे बालों का कालापन चमके नमाज़ को अमान्य कर देता है। (और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।)

मसाला 390: मिर्ज़ा बाक़ी बेग साहब द्वारा प्रेषित, 23 मुहर्रम 1307 हिजरी। धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं: पुरुष के शरीर के कौन से अंग 'औराह' (छिपाने योग्य) हैं? कृपया स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिलेगा।

उत्तर: ऐ अल्लाह, हमें सत्य और सही मार्ग की ओर मार्गदर्शन दे। यह तो ज्ञात है कि पुरुष के लिए नाभि से घुटने तक 'औराह' (छिपाने योग्य अंग) है।

1. दुर्र अल-मुख्तार, बाब शरुत-उस-सलात, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, 1/22।
2. रद्द अल-मुह्तार, बाब शरुत-उस-सलात, मुस्तफा अल-बाबी प्रेस, मिस्र, 1/302।

पृष्ठ 29/736

فتاوٰی رضویہ - جلد ششم

بسم اللہ الرحمن الرحیم ط

باب شروط الصلوۃ (نماز کی شرطوں کا بیان)

مسئلہ ۳۸۹: از کلکتہ دھرم تلہ نمبر ۶ مرسلہ جناب مرزا غلام قادر بیگ ۱۵ رجب ۱۳۱۱ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ تہبند اگر ایسے باریک کپڑے کا ہے کہ اس میں سے بدن کی سرخی یا سیاہی نمایاں ہے تو اس تہبند سے نماز ہو جائے گی یا نہیں؟

الجواب: فی الدرالمختار ساتر لا یصف ما تحتہ ۱ | درمختار میں ہے چھپانے والی چیز وہ ہے جو اپنے اندر کی چیز کو ظاہر نہ کرے۔ ردالمحتار بأن لایری منہ لون البشرۃ ۲- | ردالمحتار میں ہے بایں طور پر کہ اس سے جسم کا رنگ دکھائی نہ دے۔ (ت)

یہاں سے معلوم ہوا کہ عورتوں کا وہ دوپٹہ جس سے بالوں کی سیاہی چمکے مفسد نماز ہے۔ (واللہ تعالی اعلم)

مسئلہ ۳۹۰: مسئولہ مرزا باقی بیگ صاحب ۲۳ محرم ۱۳۰۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ مرد کے بدن میں کے عضو عورت ہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: اللھم ھدایۃ الحق والصواب۔ یہ تو معلوم ہے کہ مرد کے لئے ناف سے زانو تک عورت ہے۔

۱ در مختار باب شروط الصلوۃ مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱ / ۲۲ ۲ رد المحتار باب شروط الصلوۃ مطبوعہ مصطفیٰ البابی مصر ۱ / ۳۰۲

Fatawa Razawiya - Volume 6

The navel is excluded [from the area that must be covered], and the knees are included, but defining them as separate organs is beneficial because the rulings apply to each organ's one-fourth part. For example: 1. If one-fourth of an organ is exposed, even if it opened unintentionally, and a complete pillar (Ruku, Sujud, or any essential act of prayer) was performed in that state, the prayer is unanimously invalidated. 2. In the aforementioned case, even if a full pillar was not performed, but enough time passed in which one could have recited "Subhan Allah" three times, the prayer is invalidated according to the preferred opinion. 3. If a worshiper intentionally exposes one-fourth of an organ without necessity, the prayer is immediately invalidated, even if they cover it quickly. Here, performing a pillar or waiting for a specific duration is not a condition. 4. If the opening Takbeer (Takbeer-e-Tehrima) is said while one-fourth of an organ is exposed, the prayer will not be initiated at all, even if it doesn't remain exposed for the duration of three Tasbeehs. 5. In all these cases, if less than one-fourth of an organ is visible, the prayer will be valid, even if it remains exposed from the intention until the Salam, although it is certainly a sin and disrespectful in some cases. 6. If an organ is open in two places but their sum does not reach one-fourth of that organ, the prayer will be valid; but if it reaches one-fourth, it will not be valid according to the mentioned details. 7. If parts of multiple organs are exposed, for example two, then by combining all the exposed areas of the body, if the total does not reach one-fourth of the smallest organ among them, the prayer is valid. Otherwise, according to the previous details, it is void. For example, if some clothing is displaced from the thigh and below the navel, and the total exposed area reaches one-fourth of the area below the navel, the prayer will not be valid, even if it doesn't reach one-fourth of the thigh, because between these two, the area below the navel is the smaller organ. If exposure is in the buttocks and the area below the navel, the total exposed area should reach one-quarter of the buttocks [to invalidate], even if it's not one-fourth of the area below the navel, as the buttocks is the smaller organ in this case. Similarly, if exposure occurs in three, four, or more organs, reaching one-fourth of the smallest among them is sufficient [to invalidate the prayer], even if the exposed part of the larger or medium organ is small.

[Arabic Box Text]: This is the correct view which Imam Muhammad explicitly stated in 'Az-Ziyadat'. So do not pay attention to the discussion in 'At-Tabyin', even if 'Al-Fath' and 'Al-Bahr' followed it. Al-Burhan Al-Halabi chose it in 'As-Saghir'. And the

completion of the discourse, by the guidance of the Sovereign, the All-Knowing, is in...

[Urdu Translation of Arabic Box]: This is the correct view on which Imam Muhammad has made explicit mention in 'Ziyadat'. You do not need to turn your attention towards the discussion of 'Tabyin', even though 'Fath al-Qadir' and 'Al-Bahr ar-Raiq' followed it, and Burhan Halabi declared it as the chosen view in 'Saghir'. By the grace of Allah, the King and All-Knower, its complete...

नाभि बाहर है और घुटने शामिल हैं, लेकिन अंगों को अलग-अलग वर्णित करने में यह लाभ है कि उनमें से प्रत्येक अंग के एक-चौथाई हिस्से पर नियम लागू होते हैं। उदाहरण के लिए: १. यदि किसी अंग का एक-चौथाई हिस्सा खुल गया, चाहे वह अनजाने में ही खुला हो, और उसने उस स्थिति में रुकू या सजदा या कोई भी पूर्ण अरकान (स्तंभ) अदा किया, तो सर्वसम्मति से नमाज़ जाती रही। २. यदि उपरोक्त स्थिति में पूरा अरकान तो अदा नहीं किया, लेकिन इतना समय बीत गया जिसमें तीन बार 'सुब्हान अल्लाह' कहा जा सकता था, तब भी पसंदीदा मत के अनुसार नमाज़ जाती रही। ३. यदि नमाज़ी ने जानबूझकर बिना आवश्यकता के किसी अंग का एक-चौथाई हिस्सा खोला, तो नमाज़ तुरंत जाती रही, भले ही वह उसे तुरंत ढक ले। यहाँ अरकान अदा करने या इतनी देर प्रतीक्षा करने की कोई शर्त नहीं है। ४. यदि तकबीर-ए-तहरीमा उसी स्थिति में कही गई कि एक अंग का एक-चौथाई हिस्सा खुला है, तो नमाज़ शुरू से ही शुरू नहीं होगी, चाहे वह तीन तस्बीहों की देर तक न खुला रहे। ५. इन सभी स्थितियों में यदि अंग के एक-चौथाई से कम हिस्सा दिखाई दे रहा है, तो नमाज़ सही हो जाएगी, चाहे वह नियत से सलाम तक खुला रहे, हालांकि कुछ स्थितियों में यह पाप और अभद्रता है। ६. यदि एक अंग दो जगहों से खुला हो, लेकिन जोड़ने पर उस अंग का एक-चौथाई नहीं होता, तो नमाज़ हो जाएगी, और यदि एक-चौथाई हो जाए, तो उपरोक्त विवरण के अनुसार नमाज़ सही नहीं होगी। ७. यदि अनेक अंगों में से, मान लीजिए दो में से, कुछ-कुछ हिस्सा खुला है, तो खुले हुए पूरे शरीर के हिस्से को मिलाने से उन दोनों में जो छोटा अंग है, यदि वह उसके एक-चौथाई तक नहीं पहुँचता, तो नमाज़ सही है, अन्यथा पूर्व विवरण के अनुसार बातिल (अमान्य) है। उदाहरण के लिए, जांघ और नाभि के नीचे से कुछ-कुछ कपड़ा अलग है, तो दोनों के खुले हुए हिस्सों की मात्रा यदि नाभि के नीचे वाले हिस्से के एक-चौथाई तक पहुँच जाए, तो नमाज़ नहीं होगी, भले ही वह कुल जांघ के एक-चौथाई तक न पहुँचे, क्योंकि इन दोनों में नाभि के नीचे वाला छोटा अंग है। और यदि पुट्ठे (नितंब) और नाभि के नीचे अनावरण है, तो कुल पुट्ठे के चौथाई तक पहुँचना चाहिए [नमाज़ अमान्य होने के लिए], चाहे नाभि के नीचे का एक-चौथाई न हो, क्योंकि इनमें पुट्ठा छोटा अंग है। इसी तरह यदि तीन या चार या उससे अधिक अंगों में अनावरण हो, तो उनमें से सबसे छोटे अंग के एक-चौथाई तक पहुँचना पर्याप्त है, चाहे बड़े या मध्यम अंग का हिस्सा कम ही क्यों न हो।

[अरबी बॉक्स]: यह वह सही मत है जिसे इमाम मुहम्मद ने 'अज़-ज़ियादात' में स्पष्ट रूप से निर्धारित किया है। इसलिए 'अत-तबयीन' की चर्चा पर ध्यान न दें, भले ही 'अल-फ़तह' और 'अल-बहर' ने

उसका अनुसरण किया हो। अल-बुरहान अल-हलबी ने 'अस-सग़ीर' में इसे चुना है। और बादशाह, सर्वज्ञ की तौफ़ीक से बात की पूर्णता...

[बॉक्स का उर्दू अनुवाद]: यह वह सही है जिस पर इमाम मुहम्मद ने 'ज़ियादात' में स्पष्ट किया है, तुझे 'तबयीन' की बहस की ओर ध्यान देने की ज़रूरत ही नहीं है भले ही 'फ़तह अल-क़दीर' और 'अल-बहर अर-राइक़' ने इसकी पैरवी की, और बुरहान हलबी ने इसे 'सग़ीर' में पसंदीदा करार दिया, अल्लाह तआला मालिक और सर्वज्ञ की तौफ़ीक से इसकी पूरी...

पृष्ठ 30 / 736

ناف خارج گھٹنے داخل مگر جدا جدا اعضاء بیان کرنے میں یہ نفع ہے کہ ان میں ہر عضو کی چوتھائی پر احکام جاری ہیں، مثلاً: ۱۔ اگر ایک عضو کی چہارم کھل گئی اگر چہ اس کے بلا قصد ہی کھلی ہو اور اس نے ایسی حالت میں رکوع یا سجود یا کوئی رکن کامل ادا کیا تو نماز بالاتفاق جاتی رہی۔ ۲۔ اگر صورت مذکورہ میں پورا رکن تو ادا نہ کیا مگر اتنی دیر گزر گئی جس میں تین بار سبحان اللہ کہہ لیتا تو بھی مذہب مختار پر جاتی رہی۔ ۳۔ اگر نمازی نے بالقصد ایک عضو کی چہارم بلا ضرورت کھولی تو فوراً نماز جاتی رہی اگر چہ منگا چھپالے، یہاں ادائے رکن یا اس قدر دیر کی کچھ شرط نہیں۔ ۴۔ اگر تکبیر تحریمہ اُسی حالت میں کہی کہ ایک عضو کی چہارم کھلی ہے تو نماز سرے سے منعقد ہی نہ ہوگی اگرچہ تین تسبیحوں کی دیر تک مکشوف نہ رہے۔ ۵۔ ان سب صورتوں میں اگر ایک عضو کی چہارم سے کم ظاہر ہے تو نماز صحیح ہو جائے گی اگرچہ نیت سے سلام تک انکشاف رہے اگرچہ بعض صورتوں میں گناہ و سوئے ادب بیشک ہے۔ ۶۔ اگر ایک عضو دو جگہ سے کھلا ہو مگر جمع کرنے سے اس عضو کی چوتھائی نہیں ہوتی تو نماز ہو جائے گی اور چوتھائی ہو جائے تو بتفصیل مذکورہ نہ ہوگی۔ ۷۔ متعدد عضوؤں مثلاً دو میں سے اگر کچھ کچھ حصہ کھلا ہے تو سب جسم مکشوف ملانے سے ان دونوں میں جو چھوٹا عضو ہے اگر اس کی چوتھائی تک نہ پہنچے تو نماز صحیح ہے ورنہ بتفصیل سابق باطل مثلاً ران وزیر ناف سے کچھ کچھ کپڑا الگ ہے تو دونوں کی قدر منکشف اگر زیر ناف کی چہارم کو پہنچے نماز نہ ہوگی اگرچہ مجموعہ ران کی چوتھائی کو بھی نہ پہنچے کہ ان دونوں میں زیر ناف چھوٹا عضو ہے اور سرین اور زیر ناف میں انکشاف ہے تو مجموعہ سرین کے ربع تک پہنچنا چاہیے اگرچہ زیر ناف کی چوتھائی نہ ہو کہ ان میں سرین عضو اصغر ہے اسی طرح تین یا چار یا زیادہ اعضا میں

انکشاف ہو تو بھی اُن میں سب سے چھوٹے عضو کی چہارم تک پہنچنا کافی ہے اگرچہ اکبر یا اوسط یا خفیف حصہ ہو۔

هذا الصحيح الذى نص عليه محمد فى الزيادات | یہ وہ صحیح ہے جس پر امام محمد نے زیادات میں تصریح کی ہے، فلا عليك من بحث التبيين و ان تبعه الفتح | تجھے تبیین کی بحث کی طرف متوجہ ہونے کی ضرورت ہی والبحر واختاره البرهان الحلبي فى الصغير و | نہیں اگرچہ فتح القدیر اور البحر الرائق نے اس کی اتباع کی، اور تمام الكلام بتوفيق الملك العلام في | برہان حلبی نے اسے صغیر میں مختار قرار دیا، اللہ تعالیٰ مالک وعلام کی توفیق سے اس کی پوری

[Top Left Box (Arabic)] Our treatise *Al-Turrah fi Satr al-Awrah*, which I authored after receiving this question to remove the various forms of difficulties in the related matters. And all praise is due to Allah, the Protector, the Most High.

[Top Right Box (Urdu)] The detail is mentioned in our treatise *Al-Turrah fi Satr al-Awrah*, which I wrote in response to this question to remove the complications arising in related matters. And all praise belongs to Allah Almighty, Who is the Protector and the Exalted. (T)

[Middle Line] All these matters are derived from the books *Durr al-Mukhtar*, *Radd al-Muhtar*, and other works.

[Bottom Left Box (Arabic source text)] And this is the text of both, selected and mixed: "Exposing a quarter of a limb for the duration of performing a pillar (Rukn) prevents [the prayer] (according to the Sunnah, as in *Munyah*; its commentator said that this duration is equal to three glorifications (Tasbihs), while Muhammad considered the actual performance of the pillar. The first [opinion] is preferred for precaution, as per *Sharh al-Munyah*). Less than the duration of a pillar does not invalidate [the prayer] by consensus, because extensive exposure in a short time is pardoned, just like minimal exposure for a long time. This refers to exposure occurring during the prayer. As for that which accompanies the beginning [of the prayer], it absolutely prevents its commencement by consensus, provided the exposed part is a quarter of the limb) without intent (if it is intentional, then according to them, the prayer is immediately invalidated as per *Qunyah*. H said: even if it is for less than the duration of a pillar, unless it is for a necessity, like lifting one's shoes for fear of loss, as long as a pillar is not performed, as in *Al-Khulasah*) or it accumulates by parts."

[Bottom Right Box (Urdu translation/explanation)] The selected and mixed words of these two books are as follows: The exposure of a quarter of a body part for the duration of performing a pillar prevents prayer (meaning the performance of a pillar according to the Sunnah, as per *Munyah*. Its commentator said this is the duration of three glorifications. Imam Muhammad (may Allah have mercy on him) considered the actual performance of the pillar. For precaution, the first opinion is preferred as per *Sharh al-Munyah*. If less than a quarter of a body part remains exposed for less than the duration of a pillar, the prayer is not invalidated by consensus, because extensive exposure for a short time is pardoned; this is regarding exposure that occurs during

prayer. If the exposure is present from the beginning of the prayer and the exposed part is a quarter of the limb, then such exposure, by consensus, absolutely prevents the establishment of prayer. This is when the exposure occurs without the intention of the person praying (If such exposure occurs due to the intention of the person praying, then according to the jurists, the prayer will be immediately invalidated as per *Qunyah*. Halabi said: even if it is for less than the duration of a pillar, unless the act of the person praying is due to some necessity, such as the person praying [adjusting his shoes...]).

[ऊपरी बायां बॉक्स (अरबी)] हमारी शोध-पत्रिका अल-तुर्रा फ़ी सत्र अल-अवरा, जिसे मैंने इस प्रश्न के आने के बाद संबंधित मामलों में उत्पन्न होने वाली विभिन्न प्रकार की कठिनाइयों को दूर करने के लिए लिखा है। और सभी प्रशंसा अल्लाह के लिए है, जो रक्षक और सर्वोच्च है।

[ऊपरी दायां बॉक्स (उर्दू)] विस्तृत विवरण हमारी शोध-पत्रिका अल-तुर्रा फ़ी सत्र अल-अवरा में वर्णित है, जिसे मैंने इस प्रश्न के उत्तर में संबंधित मसलों में आने वाली उलझनों को दूर करने के लिए लिखा है। और तमाम तारीफ़ अल्लाह तआला के लिए है जो मुहाफ़िज़ और बुलंद है। (त)

[मध्य रेखा] ये सभी मसले दुर्रे मुख्तार और रद्दुल मुहतार जैसी किताबों से लिए गए हैं।

[नीचे बायां बॉक्स (अरबी स्रोत पाठ)] उन दोनों किताबों का चुनिंदा और मिश्रित पाठ इस प्रकार है: "किसी अंग के चौथाई हिस्से का एक रुकन की अदायगी की अवधि तक खुला रहना नमाज़ से रोकता है (सुन्नत के अनुसार, जैसा कि मुनयह में है; इसके टीकाकार ने कहा कि यह अवधि तीन तस्बीह के बराबर है, जबकि इमाम मुहम्मद ने वास्तविक रुकन की अदायगी का संज्ञान लिया है। एहतियात के तौर पर पहला मत बेहतर है, जैसा कि शरह अल-मुनयह में है)। रुकन की अवधि से कम समय के लिए खुला रहना सर्वसम्मति से नमाज़ को अमान्य नहीं करता, क्योंकि कम समय में अधिक खुलापन माफ़ है, वैसे ही जैसे लंबे समय में थोड़ा खुलापन। यह नमाज़ के दौरान होने वाले खुलापन के संदर्भ में है। जहाँ तक शुरुआत से ही अंग के प्रदर्शन का संबंध है, तो वह सर्वसम्मति से नमाज़ शुरू होने को रोकता है, यदि खुला हिस्सा अंग का चौथाई हो) बिना इच्छा के(यदि यह जानबूझकर हो, तो उनके अनुसार नमाज़ तुरंत अमान्य हो जाएगी, जैसा कि कनिया में है। हलाबी ने कहा: भले ही यह रुकन की अदायगी से कम समय के लिए हो, सिवाय इसके कि वह किसी ज़रूरत के कारण हो, जैसे खोने के डर से जूते उठाना, जब तक रुकन अदा न हो जाए, जैसा कि अल-खुलासा में है) या यह हिस्सों में जमा होता है।"

[नीचे दायां बॉक्स (उर्दू अनुवाद/व्याख्या)] इन दोनों किताबों के चुनिंदा और मिश्रित शब्द ये हैं: रुकन की अदायगी की अवधि तक अंग के चौथाई हिस्से का नंगा रहना नमाज़ से रोकता है (यानी सुन्नत के मुताबिक रुकन की अदायगी, मुनयह के अनुसार। इसके टीकाकार ने कहा कि यह तीन तस्बीहात की मिकदार है। और इमाम मुहम्मद रहमतुल्लाहि तआला ने हक़ीक़तन रुकन की अदायगी का एतबार किया है; एहतियात के पेश-ए-नज़र पहला कौल मुख्तार है शरह अल-मुनयह

में। और जब चौथाई अंग रुकन की अदायगी से कम समय तक खुला रहे, तो बिल-इत्तेफ़ाक नमाज़ फ़ासिद (अमान्य) नहीं होगी, क्योंकि कम समय में अधिक खुलापन माफ़ है; यह उस इनकिशाफ़ (खुलापन) का मामला है जो नमाज़ के दौरान पेश आए। अगर वह इनकिशाफ़ नमाज़ की इब्तिदा (शुरुआत) से हो और खुलने वाली जगह अंग की चौथाई हो, तो ऐसा इनकिशाफ़ बिल-इत्तेफ़ाक नमाज़ शुरू होने से रोकता है। यह उस वक़्त है जब यह अंग प्रदर्शन नमाज़ पढ़ने वाले की इच्छा के बिना हो (पस अगर ऐसा इनकिशाफ़ नमाज़ पढ़ने वाले के इरादे से हो, तो फ़ुक़हा के नज़दीक नमाज़ फ़ौरन फ़ासिद हो जाएगी कनिया में। हलबी ने कहा यानी अगरचे वह रुकन की अदायगी से कम में हो, मगर यह कि वह फेल (कार्य) किसी ज़रूरत की बिना पर हो जैसे नमाज़ पढ़ने वाले का अपने [जूतों को...])।

पृष्ठ 31 / 736

[اوپر بایاں باکس (عربی)] رسالتنا الطرة في ستر العورة التي الفتها بعد ورود هذا السؤال لازاحة ما في المسائل من وجوه الاشكال والحمد لله المهيمن المتعال۔

[اوپر دایاں باکس (اردو)] تفصیل ہمارے رسالے الطرۃ فی ستر العورۃ میں مذکور ہے جسے میں نے اس سوال کے جواب میں اس کے متعلقہ مسائل میں وارد ہونے والے اشکالات کو زائل کرنے کے لئے لکھا ہے اور تمام تعریف اللہ تعالٰی کے لئے جو محافظ و بلند ہے۔ (ت)

[درمیانی لائن] یہ سب مسائل درمختار و ردالمحتار وغیرہما اسفار سے مستفاد۔

[نیچے بایاں باکس (عربی)] وهذا نصهما ملتقطاً و مختلطاً و يمنع كشف ربع عضو قدر اداء ركن (بسنتہ منية قال شارحها و ذالك قدر ثلث تسبيحات و اعتبر محمد اداء الركن حقيقة والاول المختار للاحتياط شرح المنية واقل من قدر ركن فلا يفسد اتفاقاً لان الانكشاف الكثير فی الزمان القليل عفو كالانكشاف القليل فی زمان الكثير ، وهذا فی الانكشاف الحادث فی الصلاة اما المقارن للابتداءها فيمنع انعقادها مطلقاً اتفاقاً بعد ان يكون المكشوف ربع العضو) بلا صنعه (فلوبه فسدت فی الحال عندهم قنية قال ح ای وان كان اقل من اداء ركن الاحاجة كرفع نعله لخوف الضياع مالم يؤد ركنا كما فی الخلاصة) او تجمع بالاجزاء۔

[نیچے دایاں باکس (اردو)] ان دونوں کتابوں کے چیدہ چیدہ مخلوط طور پر الفاظ یہ ہیں : اداء رکن کی مقدار چوتھائی عضو کا ننگا رہنا نماز سے مانع ہے (یعنی اداء رکن جو سنت کے مطابق ہو، منیہ۔ اس کے شارح نے کہا کہ یہ تین تسبیحات کی مقدار ہے۔ اور امام محمد رحمتہ اللہ تعالٰی نے حقیقتاً رکن کی ادائیگی کا اعتبار کیا ہے احتیاط کے پیش نظر پہلا قول مختار ہے شرح المنیہ اور

جب ربع عضو کا اداء رکن کی ادائیگی سے کم کھلا رہے تو بالاتفاق نماز فاسد نہیں ہوگی، کیونکہ قلیل وقت میں انکشاف کثیر معاف ہے، یہ اس انکشاف کا معاملہ ہے جو دوران نماز عارض ہو، اگر وہ انکشاف ابتداء نماز سے عارض ہو اور کھلنے والی جگہ عضو کی چوتھائی ہو تو ایسا انکشاف بالاتفاق مطلقاً انعقاد نماز سے مانع ہے یہ اس وقت ہے جبکہ یہ کشف عورت قصد مصلی کے بغیر ہو (پس اگر ایسا کشف عورت قصد مصلی کے باعث ہو تو فقہاء کے ہاں نماز فی الفور فاسد ہو جائے گی قنیہ، حلبی نے کہا یعنی اگرچہ وہ اداء رکن کی ادائیگی سے کم میں ہو، مگر یہ کہ وہ فعل مصلی کسی ضرورت کی بنا پر ہو جیسے مصلی کا اپنے

Fatawa Ridawiyya Volume Six (And it is the half, the fourth, and the third) if it is in one limb, otherwise it is by measure (i.e., area). If (the total by area) reaches one-fourth of the smallest of them (i.e., the smallest of the limbs that are partially exposed), it prevents [the prayer]. (As if half of one-eighth of a woman's thigh and half of one-eighth of her ear were exposed, then their total by area is more than one-fourth of the ear, which is the smaller of the two exposed limbs[1]). ...lifting shoes for fear of them being lost during the time one cannot perform a pillar of prayer. This is mentioned in Al-Khulasa.) And the exposed parts will be summed up (and those parts are, for example, half, a quarter, and a third) if there are multiple exposures in one limb, otherwise, the amount, i.e., with measurement, will be estimated. Then if (the sum with measurement) reaches a quarter of the smallest limb (meaning among those limbs that are partially exposed, it reaches a quarter of the smallest limb), then such exposure prevents prayer. (For example, if half of an eighth part of a woman's thigh and half of an eighth part of the ear were revealed, then by measurement, the sum of both becomes more than a quarter of the smaller of the two exposed limbs, the ear.) (T) In these matters, I have everywhere adopted the strongest, most weightiest, and most cautious opinion, which is sufficient for practice. As for mentioning the disagreement and elaborating on the reasoning, it calls for a detail that leads to lengthiness. (Mentioning the disagreement and the detail of their proofs requires a lengthy discussion. T) In short, from these rulings, it has become known that it is by no means sufficient to understand merely in general terms that up to here is the covering of nakedness (Satar-e-Aurat), but it is necessary to recognize the limbs separately. Allama Halabi, Allama Tahtawi, and Allama Shami, the commentators of Durr-ul-Mukhtar (may Allah have mercy on them), have counted eight in a man: (1) The penis along with all its parts, i.e., the glans, the shaft, and the foreskin, is one limb, to the extent that, for example, even just the shaft...

[1] Durr-ul-Mukhtar, Chapter: Conditions of Prayer, printed in Mujtabai, Delhi, 26/1; Radd al-Muhtar, Chapter: Conditions of Prayer, printed in Mustafa al-Babi, Egypt, 300/1. Note: The text within brackets is from Radd al-Muhtar and the text outside is from Durr-ul-Mukhtar. - Nazir Ahmad Sa'idi. Page 32 of 736

फ़तावा रिज़विया खंड छह (और वह आधा, चौथाई और तिहाई है) यदि वह एक अंग में हो, अन्यथा वह माप (अर्थात क्षेत्रफल) के अनुसार है। यदि (क्षेत्रफल के अनुसार कुल योग) उनमें से सबसे छोटे (अर्थात उन अंगों में से सबसे छोटा जो आंशिक रूप से खुले हुए हैं) के एक-चौथाई तक पहुँच जाता है, तो यह [नमाज़] को रोकता है। (जैसे कि एक महिला की जांघ के आठवें हिस्से का आधा और उसके कान के आठवें हिस्से का आधा खुल गया हो, तो क्षेत्रफल के अनुसार उनका योग कान के एक-चौथाई से अधिक होता है, जो कि खुले हुए दो अंगों में से छोटा है[1])। ...जूतों को खो जाने के डर से इतने समय तक उठा लेना जिसमें वह नमाज़ का कोई रुक्न अदा न कर सके। 'अल-खुलासा' में इसी तरह है।) और खुले हुए अंगों को जमा किया जाएगा (और वे अंग जैसे कि आधा, चौथाई और तिहाई हैं) यदि एक अंग में कई बार खुला हो, अन्यथा मात्रा यानी माप के साथ अनुमान लगाया जाएगा। फिर यदि (माप के साथ कुल योग) सबसे छोटे अंग के चौथाई तक पहुँच जाए (अर्थात वे अंग जो आंशिक रूप से खुले हुए हैं, उनमें से सबसे छोटे अंग के चौथाई तक पहुँच जाए), तो ऐसा खुलना नमाज़ से रोकता है। (उदाहरण के लिए, यदि एक महिला की जांघ के आठवें हिस्से का आधा और कान के आठवें हिस्से का आधा खुल जाए, तो माप के अनुसार उन दोनों का योग उन दोनों खुलने वाले अंगों में से छोटे अंग यानी कान के चौथाई हिस्से से अधिक बनता है)। (त) मैंने इन मसलों में हर जगह सबसे मज़बूत, सबसे पसंदीदा और सबसे एहतियाती राय को अपनाया है जो अमल के लिए काफी है। जहाँ तक असहमति के उल्लेख और तर्क के विस्तार की बात है, तो यह एक ऐसे विवरण की माँग करता है जो लंबाई की ओर ले जाता है। (असहमति का उल्लेख और उनके प्रमाणों के विवरण के लिए लंबी चर्चा की आवश्यकता है। त) संक्षेप में, इन आदेशों से यह ज्ञात हो गया कि केवल संक्षिप्त रूप से इतना समझ लेना कि यहाँ तक 'सतर-ए-औ़रत' (पर्दा) है, बिल्कुल पर्याप्त नहीं है, बल्कि अंगों को अलग-अलग पहचानना आवश्यक है। अल्लामा हलाबी, अल्लामा तहतावी और अल्लामा शामी, जो 'दुर्रे मुख्तार' के टीकाकार हैं (अल्लाह उन पर रहम करे), उन्होंने पुरुषों में आठ अंग गिने हैं: (1) लिंग अपने सभी भागों यानी सुपारी (हशफ़ा), डंडी (क़स्बा) और खाल (ग़ुलफ़ा) के साथ एक अंग है, यहाँ तक कि उदाहरण के लिए केवल डंडी का...

[1] दुर्रे मुख्तार, बाब: नमाज़ की शर्तें, मुजतबाई दिल्ली में मुद्रित, 26/1; रद्दुल मुहतार, बाब: नमाज़ की शर्तें, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र में मुद्रित, 300/1। नोट: कोष्ठकों (brackets) के बीच का पाठ 'रद्दुल मुहतार' से है और बाहर का 'दुर्रे मुख्तार' से है। - नज़ीर अहमद सईदी। पेज 736 में से 32

فتاوی رضویہ جلد ششم (وھی النصف والربع والثلث) لو فی عضو واحد والا فبالقدر (ای المساحة) فان بلغ (المجموع بالمساحة) ربع ادناھا (ای ادنی الاعضاء المنکشف بعضھا) منع (کمالو انکشفت نصف ثمن الفخذ و نصف ثمن الاذن من المرأة فان مجموعھما بالمساحة اکثر من ربع الاذن التی ھي ادنی العضوین المنکشفین[1]) جو توں کو ضائع ہونے کے خوف سے اٹھا لینا جتنے وقت میں وہ رکن نماز ادا نہ کر سکے ۔ خلاصہ میں ایسے ہے۔) اور مکشوف اجزاء کو جمع کیا جائے گا (اور وہ اجزاء مثلاً نصف، چوتھائی اور تہائی ہیں) اگر ایک عضو میں کئی کشف ہوں ورنہ مقدار یعنی پیمائش کے ساتھ اندازہ کیا جائے گا پھر اگر (وہ پیمائش کے ساتھ مجموعہ) ادنی عضو کے ربع کو پہنچ جائے (یعنی وہ اعضاء جو جزوی طور پر مکشوف ہیں ان میں کہ ادنی عضو کے ربع کو پہنچ جائے) تو ایسا کشف نماز سے مانع ہے، (مثلاً عورت کی ران کے آٹھویں حصے کا نصف اور کان کے آٹھویں حصے کا نصف اگر کھل جائے تو پیمائش کے اعتبار سے ان دونوں کا مجموعہ ان دونوں کھلنے والے اعضاء میں سے چھوٹے عضو کان کے چوتھائی سے زیادہ بنتا ہے) (ت) میں نے ان مسائل میں ہر جگہ اقوی ارجح وا حوط قول کو اختیار کیا کہ عمل کے لئے بس ہے اما ذکر الخلاف و بسط التعلیل فداع الی تفصیل یفضی الی الطویل (ذکر اختلاف اور ان کے دلائل کی تفصیل کے لئے طویل بحث درکار ہے۔ت) بالجملہ ان احکام سے معلوم ہو گیا کہ صرف اجمالاً اس قدر سمجھ لینا کہ یہاں تک ستر عورت ہے ہر گز کافی نہیں بلکہ اعضاء کو جدا جدا پہچاننا ضروری ہے اور وہ علامہ حلبی و علامہ طحطاوی و علامہ شامی محشیان در مختار رحمۃ اللہ علیہم نے مرد میں آٹھ گنے : (۱) ذکر مع اپنے سب پرزوں یعنی حشفہ و قصبہ و غلفہ کے ایک عضو ہے یہاں تک کہ مثلاً صرف قصبہ کی

[1] در مختار باب شروط الصلوۃ مطبوعہ مجتبائی دہلی ۲۶/۱، ردالمحتار باب شروط الصلوۃ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۳۰۰/۱ نوٹ: قوسین کے درمیان والی عبارت ردالمحتار کی ہے اور باہر والی در مختار کی۔ نذیر احمد سعیدی Page 32 of 736

Fatawa Ridawiyya Volume 6

The exposure of a quarter or only the glans of the penis is not a nullifier of prayer; however, if it happens despite having knowledge and capability, it is a sin and disrespect. No part of the surrounding body will be included with the penis; this is the correct view, such that only the exposure of a quarter of the penis itself is a nullifier of prayer. The details and complete investigation of this are in our mentioned treatise. (Detailed discussion and research secrets are in our mentioned treatise. - Translator)

(2) The testicles, meaning both together are considered one organ; this is the truth, to the extent that the opening of a quarter or even a third of one of them is not a nullifier. Here, the foot of Allama Birjandi slipped in the commentary of Al-Nuqaya, as we have warned in "Al-Turra fi Satr al-Awrah," so be aware.

At this point in the commentary of Nuqaya, Allama Birjandi's step slipped as we have warned in "Al-Turra fi Satr al-Awrah"; study it. (Translator)

Again, the correct view here too is that nothing from their surroundings will be joined with them; these two alone are independent organs.

(3) The anus, meaning the place of defecation; by this, only its ring is meant, which is the correct view and relied upon.

(4 & 5) The buttocks, meaning both buttocks; in the correct school of thought, each buttock is a separate 'awrah (private part), such that the opening of a quarter of one causes invalidation of prayer.

(6 & 7) The thighs, meaning both thighs, such that each thigh from its root—which is called 'rukub', 'raf', and 'maghbin' in Arabic, 'payghola-e-ran' in Persian, and 'chaddha' in Urdu—down to the knee is one organ. Each knee follows its respective thigh and together they form one 'awrah. Thus, if only the knees are fully exposed, the prayer is valid according to the correct school of thought, as both together do not reach a quarter of a thigh. Yes, it being against etiquette and disliked is a separate matter.

(8) The area where the belt is tied from the navel, and straight across the front, back, left, and right—the remaining portion of the stomach, back, and hips all together form one 'awrah. It is mentioned in Radd al-Muhtar:

[Arabic Box] The 'awrah organs of a man are eight: First, the penis and its surroundings; second, the testicles and their surroundings; third, the anus and its

surroundings; fourth and fifth, both buttocks; sixth and seventh, both thighs along with the knees; eighth, the area between the navel and the pubic region, along with what corresponds to it from the sides, back, and abdomen. 1

[Urdu Translation in Box] A man's 'awrah consists of eight organs: (1) The private organ and its surroundings; (2) The testicles and their surroundings; (3) The anus and its surroundings; (4 & 5) Both parts of the buttocks; (6 & 7) Both thighs including knees; (8) From the navel to below the navel, including the back, abdomen, and those parts of both sides which are opposite and adjacent to it. (Translator)

1 Radd al-Muhtar, Chapter: Conditions of Prayer, printed by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/301. Page 33 of 736

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

चौथाई या केवल हशफ़ा (लिंग का अगला भाग) का खुलना नमाज़ को अमान्य नहीं करता, यदि ज्ञान और सामर्थ्य के बावजूद हो तो यह पाप और अनादर है। लिंग के आसपास के शरीर के किसी भी हिस्से को इसमें शामिल नहीं किया जाएगा; यही सही मत है, यहाँ तक कि केवल लिंग की चौथाई का खुलना ही नमाज़ को अमान्य करता है। इसका विस्तार और पूर्ण शोध हमारे उल्लेखित शोधपत्र में है। (इस पर विस्तृत चर्चा और शोध के रहस्य हमारे उक्त शोधपत्र में हैं। - त)

(2) अनसयैन यानी दोनों अंडकोष मिलकर एक अंग हैं; यही सत्य है, यहाँ तक कि उनमें से एक की चौथाई या यहाँ तक कि एक तिहाई का खुलना भी अमान्य नहीं है। यहाँ अल्लामा बिरजंदी का पैर 'शराह अल-नुकाया' में फिसल गया जैसा कि हमने 'अल-तुर्रा फी सत्र अल-औरत' में इस पर चेतावनी दी है, अतः सावधान रहें।

इस स्थान पर शराह नुकाया में अल्लामा बिरजंदी के कदम फिसल गए जैसा कि हमने 'अल-तुर्रा फी सत्र अल-औरत' में इस पर चेतावनी दी है; इसका अध्ययन करें। (त)

पुनः यहाँ भी सही यही है कि उनके साथ उनके आसपास का कुछ भी नहीं जोड़ा जाएगा; ये दोनों अकेले स्वतंत्र अंग हैं।

(3) दुबुर यानी मलद्वार; इससे केवल उसका घेरा (रिंग) ही अभिप्रेत है, यही सही है और इसी पर भरोसा है।

(4 और 5) अलियतैन यानी दोनों कूल्हे; सही मत के अनुसार प्रत्येक कूल्हा एक अलग 'औरत' (छिपाने योग्य अंग) है कि एक की चौथाई खुलना नमाज़ के बिगड़ने का कारण है।

(6 और 7) फज़ैन यानी दोनों जांघें; कि प्रत्येक जांघ अपनी जड़ से—जिसे अरबी में 'रुकब', 'रफ़' और 'मग़बिन', फारसी में 'पैग़ोला-ए-रान' और उर्दू में 'चड्ढा' कहते हैं—घुटने के नीचे तक एक अंग है। प्रत्येक घुटना अपनी जांघ के अधीन है और उसके साथ मिलकर एक 'औरत' है, यहाँ तक कि यदि केवल पूरे घुटने खुले हों तो सही मत पर नमाज़ सही है क्योंकि दोनों मिलकर एक जांघ के चौथाई भाग तक नहीं पहुँचते। हाँ, शिष्टाचार के विरुद्ध और नापसंद (कराहियत) होना अलग बात है।

(8) कमर बाँधने का स्थान नाभि से और सीध में आगे-पीछे, दाएंबाएं चारों ओर पेट, कमर और कूल्हों का जो भाग बचता है, वह सब मिलकर एक 'औरत' है। रद अल-मुहतार में है:

[अरबी बॉक्स] पुरुष के सतर (छिपाने योग्य) अंग आठ हैं: पहला, लिंग और उसके आसपास; दूसरा, दोनों अंडकोष और उनके आसपास; तीसरा, मलद्वार और उसके आसपास; चौथा और पाँचवाँ, दोनों कूल्हे; छठा और सातवाँ, दोनों जांघें घुटनों सहित; आठवाँ, नाभि और पेड़ू के बीच का हिस्सा, साथ ही पार्श्वों, पीठ और पेट का वह हिस्सा जो उसके सम्मुख और निकट है। 1

[बॉक्स में उर्दू अनुवाद का हिंदी] पुरुष के सतर (छिपाने योग्य) आठ अंग हैं: (1) विशिष्ट अंग और उसके आसपास (2) अंडकोष और उनके आसपास (3) मलद्वार और उसके आसपास (4 और 5) दोनों चूतड़ का हिस्सा (6 और 7) दोनों जांघें घुटनों सहित (8) नाभि से लेकर पेड़ू के नीचे तक, पीठ, पेट और दोनों पार्श्वों के उस हिस्से सहित जो उसके सामने और बराबर है। (त)

1 रद अल-मुहतार, अध्याय: नमाज़ की शर्तें, मुस्तफा अल-बाबी प्रेस, मिस्र, 1/301 पृष्ठ 33 / 736

فتاوی رضویہ جلد ششم

چوتھائی یا فقط حشفہ کا نص کھلنا مفسد نماز نہیں، اگر باوجود علم و قدرت ہو تو گناہ و بے ادبی ہے اور ذکر کے گرد سے کوئی پارہ جسم اس میں شامل نہ کیا جائے گا، یہی صحیح ہے یہاں تک کہ صرف ذکر کی چوتھائی کھلنی مفسد نماز ہے، وسری ذالک و تمام التحقیق فی رسالتنا المذکورۃ (اس پر تفصیلی گفتگو اور تحقیقی راز ہمارے مذکورہ رسالے میں ہیں۔ ت)

(۲) انثیین یعنی بیضے کہ دونوں مل کر ایک عضو ہے یہی حق ہے یہاں تک کہ ان میں ایک کی چہارم بلکہ تہائی کھلنی بھی مفسد نہیں، وقد زلت ھنا قدم العلامۃ البرجندی فی شرح النقایۃ کما نبھنا علیہ فی الطرۃ فلیتنبہ۔

اس مقام پر شرح نقایہ میں علامہ برجندی کے قدم پھسل گئے جیسا کہ ہم نے "الطرۃ فی ستر العورۃ" میں اس پر تنبیہ کی ہے اس کا مطالعہ کیجئے۔ (ت)

پھر یہاں بھی صحیح یہی ہے کہ ان کے ساتھ ان کے حول سے کچھ ضم نہ کیا جائے گا، یہ دونوں تنہا عضو مستقل ہیں۔

(۳) دبر یعنی پاخانہ کی جگہ ، اُس سے بھی صرف اس کا حلقہ مراد یہی صحیح ہے اور اسی پر اعتماد۔

(۴ و ۵) الیتین یعنی دونوں چوتڑ ، ہر چوتڑ مذہب صحیح میں جدا عورت ہے کہ ایک کی چوتھائی کھلنی باعث فساد ہے۔

(۶ و ۷) فخذین یعنی دونوں رانیں کہ ہر ران اپنی جڑ سے جسے عربی میں رُکب و رفع و مغبن اور فارسی میں پیغولہ ران اور اردو میں چڈھا کہتے ہیں گھٹنے کے نیچے تک ایک عضو ہے، ہر

گھٹنا اپنی ران کا تابع اور اس کے ساتھ مل کر ایک عورت ہے، یہاں تک کہ اگر صرف گھٹنے پورے کھلے ہوں تو صحیح مذہب پر نماز صحیح ہے کہ دونوں مل کر ایک ران کے ربع کو نہیں پہنچتے ، ہاں خلافِ ادب و کراہت ہونا جدا بات ہے۔

(۸) کمر باندھنے کی جگہ ناف سے اور سیدھ میں آگے پیچھے دینے بائیں چاروں طرف پیٹ کمر کو لہوں کا جو ٹکڑا باقی رہتا ہے وہ سب مل کر ایک عورت ہے۔ ردالمحتار میں ہے:

اعضاء عورۃ الرجل ثمانیۃ الاول الذکر و ماحولہ الثانی الانثیان و ماحولھما الثالث الدبر و ما حولہ الرابع والخامس الالیتاں السادس والسابع الفخذان مع الرکبتین الثامن مابین السرۃ الی العانۃ مع ما یحاذی ذلك من الجنبین والظھر والبطن 1

مرد کا ستر آٹھ اعضاء ہیں : (۱) عضو مخصوص اور ارد گرد (۲) خصیتین اور ان کا ارد گرد (۳) دبر اور ارد گرد (۴ و ۵) دونوں سرین کا حصہ (۶ و ۷) دونوں رانیں گھٹنوں سمیت (۸) ناف تا زیر ناف سمیت پشت پیٹ اور دونوں پہلوؤں کے اس حصہ کے جو اس کے مقابل و محاذی ہے۔ (ت)

1 رد المحتار باب شروط الصلوۃ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/ ۳۰۱ Page 33 of 736

Fatawa Razawiyya Volume 6 I say: And with Allah's guidance (I say with Allah's guidance. -T) here two points require investigation: First Point: Does the eighth part of a woman's body—the soft part of the belly located below the navel, known in Hindi as 'Pairu' (pubic region)—include only the corresponding area from the sides and back? Or does it also include the firm part connected to it, adjacent to the private part, where hair grows, called 'Anah' in Arabic? This is significant because if only the first area's fourth part being exposed invalidates prayer, even though when combined with the 'Anah' it remains less than a fourth. Or is it that everything below the navel including the 'Anah', the remaining body down to the start of the thighs, private part, and buttocks, constitutes a single 'Aurah' (private part)? To the extent that the invalidation of prayer requires a fourth of this entire collection, and the fourth of the first part alone is not sufficient. In the books of jurisprudence currently before this humble servant, I have not found special attention given to this specific clarification. Apparently, the statements of the scholars seem varied, but after deep reflection and consideration, the second option is the most evident and probable. That is, all this part of the body together constitutes one 'Aurah'. Understand it like this: the starting points of the four surrounding limbs—thighs, buttocks, and private part—are known; the body remaining above them up to the lower edge of the navel and along that level all around is a single collective organ. This is what the aforementioned words of Allama Halabi, Allama Tahtawi, and Allama Shami (may Allah have mercy on them) indicate, as they did not consider the 'Anah' a separate organ. Otherwise, according to the first estimation, that piece would not have been included in it, and its non-inclusion in the thighs and private part is obvious; then it would have been necessary for them to count this piece of the body, the 'Anah', as the ninth organ. This humble servant (may Allah Almighty forgive him) has provided a complete investigation to the best of his ability in his aforementioned treatise 'At-Turrah fi Sitr al-Awrah'. Here, by the will of Allah, it suffices that the entire body from the 'Anah' and above the 'Anah' to the navel is a single organ; physically and legally, it is connected in every way. Therefore, there is no reason to consider them two independent organs. It is stated in Al-Hidayah:

[Box Content] Arabic Text: عندنا هما (یعنی اللحیین و بما العظمان الذان علیهما منابت الاسنان من الوجه لا تصالهما به من غیر فاصلة- 1 Urdu Translation in Box: According to us, these two (meaning the jawbones, those two bones upon which the teeth are set) are part of the face because they are connected to the face without any gap. (T)

1 Al-Hidayah, Book of Diyaat (Blood Money), Section on Shijaj (Head/Face Wounds), published by Matba’ Yusafi, Lucknow, 4/588. Note: The text outside the parentheses is from Al-Hidayah. Nazir Ahmed Saidi. Page 34 of 736

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी मैं कहता हूँ: और अल्लाह की तौफ़ीक़ से (मैं अल्लाह की तौफ़ीक़ से कहता हूँ। -त) यहाँ दो स्थान शोध की आवश्यकता रखते हैं: पहला स्थान: क्या महिला के आठवें हिस्से में पेट का वह नरम हिस्सा जो नाभि के नीचे स्थित है, जिसे हिंदी में 'पेड़ू' कहते हैं, तीनों तरफ़ यानी बगलों और पीठ से अपने समांतर शरीर के साथ केवल इतना ही शामिल है? या उसमें गुप्तांग से सटा हुआ वह सख्त शरीर जहाँ बाल उगते हैं, जिसे अरबी में 'आनह' (पेड़ू/सफ़ेली क्षेत्र) कहते हैं, शामिल है? यहाँ तक कि केवल पहले भाग के एक-चौथाई हिस्से का खुला होना नमाज़ को अमान्य न करे, हालाँकि अगर 'आनह' के साथ मिलाकर देखें तो वह एक-चौथाई से कम रहे। या 'आनह' सहित नाभि से नीचे शरीर का जो हिस्सा जांघों, गुप्तांग और कूल्हों की शुरुआत तक शेष रहा, सब मिलकर एक 'औरह' (पर्दा/छिपाने योग्य अंग) है? यहाँ तक कि नमाज़ के अमान्य होने के लिए इस पूरे समूह की एक-चौथाई की आवश्यकता हो और केवल पहले भाग की एक-चौथाई पर्याप्त न हो। वर्तमान में इस फ़क़ीर के समक्ष जितनी भी फ़िक़ह की पुस्तकें हैं, उनमें कहीं भी इस स्पष्टीकरण की ओर विशेष ध्यान नहीं पाया गया। ज़ाहिरा तौर पर विद्वानों के कथन भिन्न दिखाई देते हैं, लेकिन गहरे विचार और गहराई के बाद दूसरा विकल्प सबसे स्पष्ट और प्रबल है, यानी यह पूरा शरीर मिलकर एक ही 'औरह' है। तो इसे इस प्रकार समझें कि शरीर के चारों ओर उससे जुड़े जो अंग हैं, उदाहरण के लिए जांघ, कूल्हे और गुप्तांग, उनका आरंभ तो ज्ञात ही है; उनसे ऊपर-ऊपर नाभि के निचले किनारे और चारों ओर उस किनारे की सीध तक जो शरीर शेष रहा, वह सब एक ही अंग का समूह है। और इसी ओर अल्लामा हलबी, अल्लामा तहतावी और अल्लामा शामी (अल्लाह उन पर रहम करे) का उपरोक्त कथन संकेत करता है कि उन्होंने 'आनह' को एक अलग अंग नहीं माना। अन्यथा पहली धारणा के अनुसार वह टुकड़ा इसमें शामिल न होता, और जांघों और गुप्तांगों में इसका शामिल न होना स्वयं स्पष्ट है; तो आवश्यक था कि वे शरीर के इस भाग यानी 'आनह' को नौवां अंग मानते। इस विषय की पूर्ण शोध यथाशक्ति इस फ़क़ीर (अल्लाह ताला इसे क्षमा करे) ने अपने उपरोक्त शोध-पत्र 'अत-तुर्रह फ़ी सितरुल औरह' में की है। यहाँ इंशाअल्लाह इतना ही पर्याप्त है कि 'आनह' और 'आनह' से ऊपर नाभि तक पूरा शरीर एक ही अंग है; वास्तव में वह शारीरिक और कानूनी रूप से हर तरह से जुड़ा हुआ है। अतः इसे दो स्वतंत्र अंग मानने का कोई कारण नहीं है। हिदाया में है:

[बॉक्स सामग्री] अरबी पाठ: عندنا هما (يعنى اللحيين و بما العظمان الذان عليهما منابت من الوجه لا تصالهما به من غير فاصلة- 1 बॉक्स में अनुवाद: हमारे निकट ये दोनों الاسنان)

(अर्थात दोनों जबड़े, ये वे दोनों हड्डियाँ हैं जिन पर दाँत टिके हुए हैं) चेहरे का ही हिस्सा हैं क्योंकि इन दोनों का चेहरे के साथ जुड़ाव बिना किसी अंतराल के है। (त)

1 अल-हिदाया, किताबुद दियात (रक्त-धन की पुस्तक), शिरच्छेदन पर अध्याय, मटबा यूसफ़ी, लखनऊ, 4/588 फ़: कोष्ठक (ब्रैकेट) के बाहर का पाठ हिदाया का है। नज़ीर अहमद सईदी। पृष्ठ 34/736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم اقول: و باللہ التوفیق (میں اللہ کی توفیق سے کہتا ہوں۔ ت) یہاں دو مقام تحقیق طلب ہیں : مقام اول: آیا عورت ہشتم میں پیٹ کا وہ ہی نرم حصہ جو ناف کے نیچے واقع ہے جسے ہندی میں پیڑو کہتے ہیں تینوں طرف یعنی کروٹوں اور پیٹھ سے اپنے محاذی بدن کے ساتھ صرف اسی قدر داخل ہے ذکر کے متصل وہ سخت بدن جو بال اُگنے کا مقام ہے جسے عربی میں عانہ کہتے ہیں اس میں شامل نہیں یہاں تک کہ صرف مقدار اول کی چوتھائی کھلی مفسد نماز نہ ہو اگر چہ عانہ کے ساتھ ملا کر دیکھیں تو چہارم سے کم رہے یا عانہ سمیت ناف سے نیچے جس قدر جسم رانوں اور ذکر اور چوتڑوں کے شروع تک باقی رہا سب مل کر ایک عورت ہے۔ یہاں تک کہ افساد نماز کے لئے اس مجموع کی چوتھائی درکار ہو اور مقدار اول کا ربع کفایت نہ کرے جتنی کتب فقہ اس وقت فقیر کے پیش نظر ہیں اُن میں کہیں اس تنقیح کی طرف توجہ خاص نہ پائی اور بنظر ظاہر کلمات علما مختلف سے نظر آتے ہیں مگر بعد غور و تعمق اظہر واشبہ امر ثانی ہے یعنی یہ سب بدن مل کر ایک ہی عورت ہے، تو یوں سمجھئے کہ چار اطراف بدن میں اس سے ملے ہوئے جو عضو ہیں مثلا ران و سرین و ذکر، ان کا آغاز تو معلوم ہی ہے ان سے اوپر اوپر ناف کے کنارہ زیریں اور سارے دور میں اس کنارے کی سیدھ تک جسم باقی رہا اس سب کا مجموعہ عضو واحد ہے اور اسی طرف علامہ حلبی و علامہ طحطاوی و علامہ شامی رحمۃ اللہ تعالٰی کا کلام مذکور ناظر کہ انہوں نے عانہ عضو جداگانہ نہ ٹھہرایا ورنہ تقدیر اول پر اس قدر ٹکڑا اس میں داخل نہ تھا اور اس کا ران و ذکر میں داخل نہ ہونا خود ظاہر ، تو واجب تھا کہ اس پارہ جسم یعنی عانہ کو نواں عضو شمار فرماتے ، اس مقام کی تحقیق کامل بقدر قدرت فقیر غفر اللہ تعالٰی نے اپنے رسالہ مذکورہ الطرۃ فی ستر العورۃ میں ذکر کی یہاں ان شاء اللہ تعالٰی اسی قدر کافی

کہ عانہ اور عانہ سے اوپر ناف تک سارا جسم جسم واحد ہے حقیقۃً وہ حساً و حکماً سب طرح متصل، تو اسے دو عضو مستقل ٹھہرانے کی کوئی وجہ نہیں۔ ہدایہ میں ہے :

[باکس کی عبارت] عندنا ھما (یعنی اللحیین و ہما العظمان الذان علیھما منابت الاسنان) من الوجہ لا تصالھما بہ من غیر فاصلۃ۔ 1 ہمارے نزدیک یہ دونوں (یعنی دونوں جبڑے، یہ وہ دونوں ہڈیاں ہیں جن پر دانت قائم ہیں) چہرہ ہی کا حصہ ہیں کیونکہ ان دونوں کا چہرے کے ساتھ اتصال بغیر فاصلہ کے ہے۔ (ت)

1 الہدایہ کتاب الدیات فصل فی الشجاج مطبوعہ مطبع یوسفی لکھنو ۴/ ۵۸۸ ف : قوسین سے باہر کی عبارت ہدایہ کی ہے۔ نذیر احمد سعیدی Page 34 of 736

Fatawa-e-Razvia - Volume 6

By the grace of Allah, this is a jurisprudential argument, and the specific detail is clarified as stated in 'Jawahir al-Akhlati':

If what is between his navel and his private parts is exposed, if it is a fourth, his prayer is invalidated because what is between them is a complete limb meant to encompass the entire body around it; so if a fourth of it is exposed, it is an excessive exposure. (Arabic)	If the area between the worshiper's navel and private parts is exposed (kashf ho gaya), if it is a quarter, the prayer will become void because the middle part of these two is a complete limb. By this, it means the circumference of the entire body, so when its quarter is exposed, it will be an 'excessive exposure' (kashf-e-fahish).
(End of Quote)	(End of Quote - T)

Look, the entire body from below the navel to the beginning of the male organ has been considered as one limb. This is a clear text (Nass-e-Jali) and the remaining statements of the scholars are probabilistic. Therefore, reliance is on this, and action is on this, as long as a stronger evidence does not appear in this regard, and the definitive knowledge is with the One Who is the King and the Great. (T)

Second Position: This humble servant (may Allah forgive him) for the research of this issue has consulted: Jami' al-Saghir by Imam Muhammad; Quduri by Imam Abu al-Hasan; Wafi by Imam Hafiz al-Din Nasafi; Kanz al-Daqaiq; Wiqaya al-Riwayah by Imam Taj al-Shari'ah; Nuqaya by Imam Sadr al-Shari'ah; Munya al-Musalli; Islah by Ibn Kamal Pasha; Multaqa al-Abhur by Allama Ibrahim Halabi; Ashbah by Allama Zain al-Abidin Misri; Tanwir al-Absar by Allama Abdullah Muhammad bin Abdullah Ghazi; Nur al-Idah by Allama Hasan Shurunbulali; Hidaya by Imam Ali bin Abi Bakr Burhan al-Din Farghani; Kafi by Imam Abu al-Barakat Abdullah bin Ahmad Saghdhi; Sharh Wiqaya by Imam Ubaydullah bin Mas'ud Mahbubi; Tabyin al-Haqa'iq by Imam Fakhr al-Din Zaila'i; Fath al-Qadir by Imam Muhaqqiq 'ala al-Itlaq Muhammad bin al-Humam; Hilya by Imam Muhammad bin Muhammad bin Amir al-Hajj Halabi; Idah by Allama Ahmad bin Sulayman Wazir Rumi; Dhakhira al-Uqba by Allama Yusuf bin Junayd Chalapi; Ghunya by Allama Burhan al-Din Halabi; Saghiri Sharh Munya al-Musalli; Sharh Nuqaya by Allama Abdul Ali Birjandi Harwi; Jami' al-Rumuz by Allama Shams al-Din Muhammad Quhistani; Bahr al-Ra'iq by Allama Zain bin Ibrahim Misri; Maraqi al-Falah by Allama Abu al-Ikhlas ibn Ammar Misri; Durr al-Mukhtar by Muhaqqiq Muhammad bin Ali Dimashqi; Ghamz al-Uyun by Allama Sayyidi Ahmad Hamawi;

Majma' al-Anhur by Allama Shaykhzada Qadi Rumi; Hashiya Maraqi by al-Allama al-Sayyid Ahmad al-Misri; Hashiya Durr al-Mukhtar by al-Allama al-Sayyid al-Tahtawi; Radd al-Muhtar by Allama Muhaqqiq Sayyidi Amin al-Din Muhammad bin Abidin Shami; Fatawa Khaniya by Imam Ajal Abu al-Mahasin Fakhr al-Din Uzjandi; Khulasa by Imam Tahir bin Ahmad bin Abdul Rashid Bukhari; Jawahir al-Akhlati by Allama Burhan al-Din Ibrahim bin Abi Bakr Muhammad Husayni; Khizana al-Muftin; Fatawa Khayriyya; Uqud al-Durriyya; Fatawa Rahmaniyya Hindiyya, and other books of jurisprudence, texts and...

---

1 Jawahir al-Akhlati, Chapter on the external requirements of prayer, Manuscript copy, p. 20. Page 35 of 736

फतावा रजविया - खंड 6

यह अल्लाह की कृपा से एक न्यायशास्त्रीय तर्क है, और विशेष विवरण वह है जो 'जवाहर अल-अख्लाती' में कहा गया है:

यदि उसकी नाभि और उसके निजी अंगों के बीच का हिस्सा खुल जाए, यदि वह चौथाई हिस्सा हो, तो उसकी नमाज़ अमान्य हो जाती है क्योंकि उनके बीच का हिस्सा एक पूर्ण अंग है जिसका अर्थ शरीर के चारों ओर का पूरा घेरा है; इसलिए यदि इसका चौथाई हिस्सा खुल जाता है, तो यह अत्यधिक अनावरण होगा। (अरबी)

(अतः)

यदि नमाज़ी की नाभि और गुप्तांग के बीच का हिस्सा खुल गया (कश्फ़ हो गया), और वह चौथाई हिस्सा हो, तो नमाज़ फासिद (अमान्य) हो जाएगी क्योंकि इन दोनों का बीच का हिस्सा एक पूर्ण अंग है। इससे तात्पर्य पूरे शरीर का घेरा है, अतः जब इसका चौथाई हिस्सा खुल जाए तो यह कश्फ़-ए-फा़हिश (अत्यधिक अनावरण) होगा।

(अतः - त)

देखें, नाभि के नीचे से लेकर पुरुष अंग की शुरुआत तक के पूरे शरीर को एक अंग माना गया है। यह एक स्पष्ट पाठ (नस्स-ए-जली) है और विद्वानों के अन्य बयान संभावित हैं। इसलिए, इसी पर भरोसा है, इसी पर अमल है, जब तक कि इस मामले में इससे अधिक पुख्ता प्रमाण सामने नहीं आता, और सत्य का निश्चित ज्ञान उस सत्ता के पास है जो मालिक और महान है। (त)

दूसरा स्थान: इस अदना सेवक (अल्लाह उसे क्षमा करे) ने इस मसले के शोध के लिए निम्नलिखित पुस्तकों का अध्ययन किया है: इमाम मुहम्मद की जामे' सगी़र; इमाम अबुल हसन की.कुद्दूरी; इमाम हाफ़िज़ुद्दीन नसफी की वाफी़ और कंज़ुद्दकाइक; इमाम ताजुश्शरीयाह की वकाय़तुर-रिवायाह; इमाम सदुश्शरीयाह की नुकाय़ाह; मुनियतुल-मुसल्ली; इब्ने कमाल पाशा की इस्लाह; अल्लामा इब्राहिम हलबी की मुल्तकुल-अब्हुर; अल्लामा ज़ैनुल आबेदीन मिसरी की अश्बाह; अल्लामा अब्दुल्ला मुहम्मद बिन अब्दुल्ला गज़ी की तनवीरुल-अब्सार; अल्लामा हसन शुरुनबुलाली की नूरुल-ईज़ाह; इमाम अली बिन अबी बक्र बुरहानुद्दीन फरगा़नी की हिदाया; इमाम अबुल बरकात अब्दुल्ला बिन अहमद सग़दी की काफी़; इमाम उबैदुल्ला बिन मसूद महबूबी की शर्ह वकाय़ा; इमाम फखरुद्दीन ज़ैलई की तबीयिनुल-हकाइक; इमाम मोहक्किक अलल इतलाक़ मुहम्मद बिन हुमाम की फतहुल-कदी़र; इमाम मुहम्मद बिन मुहम्मद बिन अमीरुल-हज हलबी की हुलिया; अल्लामा अहमद बिन सुलेमान वज़ीर रूमी की ईज़ाह; अल्लामा यूसुफ बिन जुनैद चलपी की ज़खी़रतुल-उक्बा; अल्लामा

बुरहानुद्दीन हलबी की ग़ुनिया; सग़ीरी शर्ह मुनियतुल मुसल्ली; अल्लामा अब्दुल अली बिरजंदी हरवी की शर्ह नुका़या; अल्लामा शम्सुद्दीन मुहम्मद कहिस्तानी की जामेउर-रुमूज़; अल्लामा ज़ैन बिन इब्राहिम मिसरी की बहरुर-रा़इक; अल्लामा अबुल इख्लास इब्ने अमार मिसरी की मराकिल फलाह; मोह़क्किक मुहम्मद बिन अली दमिश्की की दुर्रे मुख्तार; अल्लामा सैयद अहमद हमवी की ग़मज़ुल उयून; अल्लामा शेखज़ादा का़ज़ी रूमी की मजमउल अनहुर; अल्लामा सैयद अहमद मिसरी की हाशिया मराकी; अल्लामा सैयद तहतावी की हाशिया दुर्रे मुख्तार; अल्लामा मोह़क्किक सैयद अमीनउद्दीन मुहम्मद बिन आबिदीन शामी की रद-उल-मुह्तार; इमाम अजल फखरुद्दीन उज़जंदी की फतावा खानिया; इमाम ताहिर बिन अहमद बिन अब्दुर रशीद बुखारी की खुलासा; अल्लामा बुरहानुद्दीन इब्राहिम बिन अबी बक्र मुहम्मद हुसैनी की जवाहर अल-अख्लाती; खज़ानतुल-मुफ़्तीन; फतावा ख़ैरिया; उ़कूदुद्-दुर्रिया; फतावा रहमानिया हिंदीया और फिक़्ह के अन्य ग्रंथों और मतून का।

---

1 जवाहर अल-अख्लाती, नमाज़ की बाहरी अनिवार्यताओं का अध्याय, हस्तलिखित प्रति, पृष्ठ 20।

یہ تو بحمد اللہ دلیل فقہی ہے اور خاص جزئیہ کی تصریح وہ ہے کہ جواہر الاخلاطی میں فرمایا:

اذا انکشف مابین سرتہ و عورتہ ان کان ربعاً فسدت صلوتہ لان ما بینھما عضو کامل ارید منہ حول جمع البدن فاذا انکشف ربعہ کان فاحشاً اہـ

اگر نمازی کی ناف اور شرمگاہ کا در میان کھل گیا (کشف ہو گیا) اگر وہ چوتھائی ہو تو نماز فاسد ہو جائے گی کیونکہ ان دونوں کا درمیانی حصہ عضو کامل ہے اس سے مراد تمام بدن کا ارد گرد لیا ہے، پس جب اس کا چوتھائی کھل جائے تو یہ کشف فاحش ہو گا

اھ (ت)

دیکھو ناف کے نیچے سے ذکر کے آغاز تک سارے بدن کو ایک عضو ٹھہرایا، یہ نص جلی ہے اور باقی عبارات علماء محتمل، تو اسی پر اعتماد، اسی پر عمل، مالم یظہر الاقوی فی المحل والعلم بالحق عند الملک الاجل (جب تک اس بارے میں اس سے قوی دلیل ظاہر نہیں ہو گی، باقی قطعی علم اس ذات کے پاس ہے جو مالک و بزرگ ہےت)

مقام دوم: فقیر غفر اللہ لہ نے اس مسئلہ کے تحقیق کے لئے جامع صغیر امام محمد و قدوری امام ابوالحسن و وافی، امام حافظ الدین نسفی و کنز الدقائق و وقایۃ الروایہ امام تاج الشریعہ و نقایہ امام صدر الشریعہ و منیہ المصلی و اصلاح ابن کمال پاشا و ملتقی الابحر علامہ ابراہیم حلبی و اشباہ علامہ زین العابدین مصری و تنویر الابصار علامہ عبداللہ محمد بن عبد اللہ غزی و نور الایضاح علامہ حسن شرنبلالی و ہدایہ امام علی بن ابی بکر برہان الدین فرغانی و کافی امام ابوالبرکات عبداللہ بن احمد سغدی و شرح وقایہ امام عبید اللہ بن مسعود محبوبی و تبیین الحقائق امام فخر الدین زیلعی و

فتح القدیر امام محقق علی الاطلاق محمد بن الہمام و حلیہ امام محمد بن محمد بن امیر الحاج حلبی و ایضاح علامہ احمد بن سلیمین وزیر رومی و ذخیرۃ العقبی علامہ یوسف بن جنید چلپی و غنیہ علامہ برہان الدین حلبی و صغیری شرح منیہ المصلی و شرح نقایہ علامہ عبدالعلی بر جندی ہروی و جامع الرموز علامہ شمس الدین محمد قہستانی و بحر الرائق علامہ زین بن ابراہیم مصری و مراقی الفلاح علامہ ابوالاخلاص ابن عمار مصری و در مختار محقق محمد بن علی دمشقی و غمز العیون علامہ سیدی احمد حموی و مجمع الانہر علامہ شیخی زادہ قاضی رومی و حاشیہ مراقی للعلا مۃ السید احمد المصری و حاشیہ در مختار للعلا مۃ السید الطحطاوی و ردالمحتار علامہ محقق سیدی امین الدین محمد بن عابدین شامی و فتاوی خانیہ امام اجل ابوالحاسن فخر الدین اوزجندی و خلاصہ امام طاہر بن احمد بن عبدالرشید بخاری و جواہر الاخلاطی علامہ برہان الدین ابرا ہیم بن ابی بکر محمد حسینی و خزانۃ المفتین و فتاویٰ خیر یہ و عقود الدریہ و فتاویٰ رحمانیہ ہندیہ و غیر ہا کتب فقہ متون

---

1 جواہر الاخلاطی فصل فی الفرائض الخارجیۃ عن الصلوۃ قلمی نسخہ ص ۲۰ صفحہ 736 کا 35

Fatawa Razawiyya Volume Six

I have reviewed all the commentaries and fatwas available to this humble servant, including the glosses of Tahtawi and Shami, but nowhere did I find an indication that the number is restricted to eight. The noble scholars (may Allah Almighty have mercy on them) have described the beginning and end limits of a woman's body that must be covered, and mentioned some parts separately. Some books mention only two or three parts, some four or five, some none, but they did not provide an exhaustive list or a complete count. Yes, it is certain that if you gather them all from various books, these eight come into mention. Perhaps observing this, Allama Halbi (mercy of Allah be upon him) restricted them to eight, and the two eminent scholars followed him. The text of Allama Shami (may his secret be sanctified) himself is evidence that this count was extracted by Allama Halbi, meaning that scholars before him did not mention it as such, where he said after completing the discourse on the number of parts for the 'awrah of a slave woman and a free woman: "Thus it was written by H [Halbi]" (End quote). (Because after completing the discussion on the number of body parts for the 'awrah of a slave and a free woman, he said that Allama Halbi has recorded this number in this way - Translator). However, this humble servant (may Allah forgive him) has an objection to this count, as the area of the body between the anus and the testicles is not included in this count. It cannot be considered as subordinate to the eighth part ('awrah), because in between there are two independent 'awrahs, namely the penis and the testicles. It is stated in Al-Hidayah:

"There is no reason for it (meaning the forearm) to be subordinate to the fingers, because between them there is a complete limb."2 (Because there is a complete limb [the wrist/hand] between these two - Translator).

Imam Nasafi stated in Kafi Sharh al-Wafi:

"As for the forearm, it does not follow them (meaning the fingers) because it is not connected with them."3 (The forearm cannot be subordinate to the fingers because it is not directly connected to them - Translator).

Nor is it correct to divide it into two parts and include them in the anus and the testicles, because according to the correct school of thought, the testicles alone are a complete limb, and similarly, the anal ring alone is an independent limb, such that no other part of the body around them will be joined with them. It is stated in Multaqa al-Abhur:

"Exposing one-fourth of a limb which is 'awrah prevents [prayer], such as the penis alone, the two testicles alone, and the anal ring alone."4 (Exposing one-fourth of a part that is included in the 'awrah prevents prayer, for example, the male organ alone, the two testicles alone, and the anal ring alone - Translator).

---

1. Radd al-Muhtar, Chapter on Conditions of Prayer, printed by Mustafa al-Bani, Egypt, 1/301.
2. Al-Hidayah, Book of Diyaat (Blood Money), Section on the Blood Money for Fingers etc., printed by Yusufi, Lucknow, 2/589.
3. Kafi Sharh al-Wafi.
4. Multaqa al-Abhur, Chapter on Conditions for the Validity of Prayer, printed by Mu'assasat al-Risalah, Beirut, 1/26.

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

जितनी भी शरहें (टीकाएं) और फ़तावा इस फ़क़ीर (विनम्र सेवक) के पास मौजूद हैं, मैंने उन सबका अध्ययन किया है, जिसमें तहतावी और शामी के हाशिये (फुटनोट) भी शामिल हैं, लेकिन इस संख्या के आठ तक सीमित होने का संकेत कहीं नहीं मिला। प्रतिष्ठित विद्वानों (अल्लाह तआला उन पर रहम फरमाए) ने औरत के उन अंगों की सीमाएं बताई हैं जिन्हें ढकना अनिवार्य है, और कुछ अंगों का अलग-अलग भी उल्लेख किया है। फिर किसी किताब में सिर्फ़ दो-तीन अंगों का उल्लेख किया गया, किसी में चार-पाँच, और किसी में कोई भी नहीं, लेकिन उन्होंने न तो इसे विस्तार से समझाया और न ही पूरी गिनती बताई। हाँ, इतना ज़रूर है कि अगर विभिन्न किताबों से सबको एकत्र किया जाए, तो वर्णन में ये आठ ही आते हैं। शायद इसी पर नज़र रखते हुए अल्लामा हलबी (रहमतुल्लाह अलैहि) ने इसे आठ तक सीमित कर दिया और दो महान विद्वानों ने उनका अनुसरण किया। स्वयं अल्लामा शामी (क़ुद्दसा सिर्रुहुल सामी) की इबारत इस बात का प्रमाण है कि यह संख्या अल्लामा हलबी द्वारा निकाली गई है, यानी उनसे पहले के विद्वानों ने इसका उल्लेख नहीं किया था, जहाँ उन्होंने दासी और स्वतंत्र महिला के'अवराह (सतर) के अंगों की संख्या पर चर्चा पूरी करने के बाद कहा: "इसी तरह ह [हलबी] ने इसे लिखा है" (अंत)। (क्योंकि उन्होंने दासी और स्वतंत्र औरत के सतर के अंगों की संख्या पर चर्चा पूरी करने के बाद कहा है कि अल्लामा हलबी ने इस संख्या को इस तरह लिखा है - अनुवादक)। लेकिन इस फ़क़ीर (अल्लाह तआला उसे माफ़ फरमाए) को इस गिनती पर आपत्ति है कि शरीर का वह हिस्सा जो मलद्वार (दूबर) और अंडकोष (उनसयैन) के बीच है, इस गिनती में नहीं आया। उसे आठवीं 'अवराह के अधीन नहीं माना जा सकता, क्योंकि बीच में दो स्वतंत्र 'अवराह हैं, यानी लिंग (ज़कर) और अंडकोष। हिदाया में फ़रमाया गया है:

"इसका कोई कारण (प्रमाण) नहीं है कि (प्रबाहु/बाज़ू) उंगलियों के अधीन हो क्योंकि उन दोनों के बीच एक पूर्ण अंग (हाथ) है।"2 (क्योंकि इन दोनों के बीच एक पूरा अंग है - अनुवादक)।

इमाम नसफ़ी ने 'काफ़ी शरह वाफ़ी' में फ़रमाया है:

"रही बात प्रबाहु (बाज़ू) की, तो वह उनका (उंगलियों का) अनुसरण नहीं कर सकता क्योंकि वह उनके साथ जुड़ा हुआ नहीं है।"3 (बाज़ू उंगलियों के अधीन नहीं हो सकता क्योंकि वह उनके साथ सीधा जुड़ा हुआ नहीं है - अनुवादक)।

न ही यह सही है कि उसे दो भागों में बाँटकर मलद्वार और अंडकोष में शामिल माना जाए, क्योंकि सही मज़हब (विचारधारा) के अनुसार अकेले अंडकोष ही पूर्ण अंग हैं, इसी तरह सिर्फ़ मलद्वार का घेरा एक स्वतंत्र अंग है, कि उनके आस-पास के शरीर के किसी हिस्से को उनके साथ नहीं मिलाया जाएगा। मुल्तक़ा अल-अब्हुर में है:

"किसी ऐसे अंग का एक-चौथाई हिस्सा खुल जाना जो 'अवराह है, नमाज़ को रोकता है, जैसे सिर्फ़ लिंग, अकेले दोनों अंडकोष और सिर्फ़ मलद्वार का घेरा।"4 (ऐसा अंग जो सतरगाह में शामिल है, उसका एक चौथाई खुल जाना नमाज़ से रोकता है, जैसे उदाहरण के लिए सिर्फ़ पुरुष अंग, अकेले अंडकोष और सिर्फ़ मलद्वार का घेरा - अनुवादक)।

---

1. रद अल-मुह्तार, बाब: नमाज़ की शर्तें, मुस्तफ़ा अल-बानी, मिस्र, 1/301.
2. अल-हिदाया, किताब अल-दिय्यात, उंगलियों आदि की दियत का वर्णन, युसुफ़ी, लखनऊ, 2/589.
3. काफ़ी शरह वाफ़ी.
4. मुल्तक़ा अल-अब्हुर, बाब: नमाज़ की वैधता की शर्तें, मुअस्ससत अल-रिसाला, बेरुत, 1/26.

وشروح و فتاوٰی جس قدر فقیر کے پاس ہیں سب کی مراجعت کی سواد و حاشیہ طحطاوی وشامی کے اس تعداد ہشت میں حصر کانشان کہیں نہ پایا، علماء کرام رحمہم اللہ تعالٰی ہدایت و نہایت عورت کی حدیں بتا گئے اور بعض بعض اعضاء کو جُدا جُدا بھی ذکر فرما گئے پھر کسی کتاب میں صرف دو تین عضو ذکر کئے ، کسی میں چار پانچ ، کسی میں کوئی ، مگر استیعاب نہ فرمایا، نہ پورا شمار بتایا۔ ہاں اس قدر ضرور ہے کہ متفرق کتابوں سے سب کو جمع کیجئے تو بیان میں یہی آٹھ آئے ہیں، غالباً اسی پر نظر فرما کر علامہ حلبی رحمتہ اللہ علیہ نے آٹھ میں حصر فرمادیا اور سیدین فاضلین نے ان کا اتباع کیا خود عبارت علامہ شامی قدس سرہ السامی دلیل ہے کہ یہ تعداد علامہ حلبی کی استخراج کی ہوئی ہے یعنی اُن سے پہلے علماء نے ذکر نہ فرمائی ، حیث قال بعد تمام الکلام بتعداد اعضاء العورۃ في الامۃ والحرۃ کذا حررہ ح ۱ ھـ (کیونکہ انہوں نے لونڈی اور آزاد عورت کے اعضاء ستر کی تعداد پر گفتگو کی تکمیل کے بعد یہ کہا ہے اسی طرح اس تعداد کو علامہ حلبی نے تحریر کیا ہے اہـ ت) مگر فقیر غفر اللہ تعالٰی لہ کو اس شمار میں کلام ہے کہ وہ بدن جو دبر وانثیین کے درمیان ہے اس گنتی میں نہ آیا اُسے عورتِ ہشتم کے توابع سے قرار دے سکتے ہیں کہ بیچ میں دو مستقل عورتیں یعنی ذکر وانثیین فاضل ہیں ، ہدایہ میں فرمایا :

لا وجہ الی ان یکون (یعنی الساعد) تبعا للاصابع اس کی کوئی وجہ (دلیل) نہیں کہ (بازو) انگلیوں کے تابع ہو لان بینھما عضوا کاملا۔2 کیونکہ ان دونوں کے درمیان ایک عضو کامل ہے (ت)

امام نسفی نے کافی شرح وافی میں فرمایا :

اما الساعد فلا یتبعھا (یعنی الاصابع) لانہ غیر بازوان (یعنی انگلیوں) کے تابع نہیں ہو سکتا کیونکہ وہ ان کے متصل بھا-3 ساتھ متصل نہیں ہے (ت)

نہ یہ صحیح کہ اسے دو حصے کر کے دُبَر وانثیین میں شامل مانیئے کہ مذہب صحیح پر تنہا انثیین عضو کامل ہیں یو نہی صرف حلقہ دُبَر عضو مستقل ہے کہ ان کے گرد سے کوئی جسم ان کے ساتھ نہ ملایا جائے گا، ملتقی الابحر میں ہے :

کشف ربع عضو ھو عورۃ یمنع کالذکر بمفردہ ایسا عضو جو ستر گاہ میں داخل ہے اس کا چوتھائی کھل جانا نماز سے والانثیین وحدھما وحلقہ الدبر بمفردھا4 مانع ہے مثلاً عضو مخصوص تنہا، تنہا خصیتین اور تنہا حلقہ دُبَر۔(ت)

---

1 ردالمختار باب شروط الصلوۃ مطبوعہ مصطفی البانی مصر ۱/ ۳۰۱ 2 الہدایہ کتاب الدیات فصل فی دیتہ اصابع الید وغیرہا مطبوعہ یوسفی لکھنؤ ۲/ ۵۸۹ 3 کافی شرح وافی 4 ملتقی الابحر باب شروط صحۃ الصلوۃ مطبوعہ موسسۃ الرسالہ بیروت ۱/۲۶

Fatawa Razawiyya, Volume 6

It is stated in Khazanat-ul-Muftin:

Arabic	Urdu
The penis is a separate organ, and likewise the testicles; and this is the correct view.	The penis is a separate organ, and likewise the testicles; and this is the correct view. (T)

It is stated in Sagheeri Sharh Munyah:

Arabic	Urdu
The uncovering of a quarter of the penis alone or a quarter of both testicles alone prevents the validity [of prayer].	The uncovering of a quarter of the penis (private organ) alone or a quarter of the testicles alone prevents the validity of prayer. (T)

It is also stated therein:

Arabic	Urdu
The anal sphincter is a separate organ by itself, and its entirety does not exceed the size of a dirham.	The anal sphincter is a separate organ by itself, and all of it is not more than the size of a dirham. (T)

It is stated in Ghunya Sharh Kabeer Munyah:

Arabic	Urdu
If a quarter of the front or back private parts is uncovered, even if it is less than the size of a dirham, it prevents the validity of prayer. - Summary.	When a quarter part of either the front or back private parts is uncovered, even if it is less than the size of a dirham, it will prevent the validity of prayer. - Summary. (T)

It is stated in Kafi:

Arabic	Urdu
Uncovering a quarter of her calf prevents the validity of prayer, and likewise the anus, penis, and testicles; their ruling is like the ruling of the calf. Al-Karkhi considered the size of a dirham for the anus, but the anus is	Uncovering a quarter part of a woman's calf prevents the validity of prayer, and likewise are the penis, anus, and testicles; the ruling for each of them is like the ruling of the calf. Imam Karkhi took into account the size of a dirham (in uncovering) of the anus, whereas

Arabic	Urdu
not more than the size of a dirham. Thus, this implies the validity of prayer even if the entire anus is uncovered, which is a contradiction. - Collected summary.	the anus is not more than the size of a dirham. So this statement implies that even if the entire anus is naked, the prayer would still be valid, and this is a contradiction. - Collected summary. (T)

1. Khazanat-ul-Muftin, Chapter on Covering the Private Parts, Manuscript version 22/1
2. Sagheeri Sharh Munyatul Musalli, The Third Condition, Printed by Mujtabai Delhi, p. 119
3. Sagheeri Sharh Munyatul Musalli, The Third Condition, Printed by Mujtabai Delhi, p. 119
4. Ghunya al-Mustamli Sharh Munyatul Musalli, Printed by Suhail Academy Lahore, p. 213
5. Kafi Sharh Wafi

फ़तावा रज़विया, खंड 6

'खज़ानतुल मुफ़्तीन' में है:

अरबी

लिंग स्वयं एक अंग है और इसी प्रकार दोनों अंडकोष भी, और यही सही है।

उर्दू

लिंग स्वयं एक अंग है और इसी प्रकार दोनों अंडकोष भी, और यही सही है। (त)

'सगीरी शरह मुन्या' में है:

अरबी

केवल लिंग का एक चौथाई हिस्सा या केवल दोनों अंडकोषों का एक चौथाई हिस्सा खुल जाना नमाज़ की वैधता को रोकता है।

उर्दू

केवल लिंग (अंग विशेष) का एक चौथाई हिस्सा या केवल अंडकोषों का एक चौथाई हिस्सा खुल जाना नमाज़ की वैधता को रोकता है। (त)

उसी में है:

अरबी

गुदा द्वार स्वयं एक अंग है और यह पूरी तरह से एक दिरहम के आकार से अधिक नहीं है।

उर्दू

गुदा द्वार स्वयं एक अंग है और यह पूरी तरह से दिरहम के आकार से अधिक नहीं है। (त)

'गुनिया शरह कबीर मुन्या' में है:

अरबी

जब आगे या पीछे के अंगों में से किसी एक का एक चौथाई हिस्सा खुल जाए, भले ही वह एक दिरहम के आकार से कम हो, तो यह नमाज़ की वैधता को रोकता है। - सारांशित।

उर्दू

आगे और पीछे के अंगों में से जब किसी एक का एक चौथाई हिस्सा खुल जाए, भले ही वह एक दिरहम के आकार से कम हो, तो नमाज़ की वैधता को रोकेगा। - सारांशित। (त)

'काफ़ी' में है:

अरबी

महिला की पिंडली का एक चौथाई हिस्सा खुल जाना नमाज़ की वैधता को रोकता है, और इसी

उर्दू

औरत की पिंडली का एक चौथाई हिस्सा खुल जाना नमाज़ की वैधता को रोकता है और इसी

अरबी

तरह गुदा, लिंग और अंडकोष हैं; इनमें से प्रत्येक का हुक्म (नियम) पिंडली की तरह है। इमाम करखी ने गुदा में दिरहम की मात्रा का विचार किया है, जबकि गुदा दिरहम की मात्रा से अधिक नहीं होता है। तो इस कथन की मांग यह है कि भले ही पूरी गुदा नग्न हो, फिर भी नमाज़ हो जाएगी, और यह विरोधाभास है। - संकलित सारांश।

उर्दू

तरह लिंग, गुदा और अंडकोष हैं, उनमें से हर एक का नियम पिंडली की तरह है। इमाम करखी ने गुदा में दिरहम की मात्रा (के खुलने) का विचार किया है, हालांकि गुदा दिरहम की मात्रा से अधिक नहीं होती, तो इस कथन की मांग यह है कि भले ही पूरी गुदा नंगी हो, फिर भी नमाज़ हो जाएगी और यह विरोधाभास है। - संकलित सारांश। (त)

1. खज़ानतुल मुफ़्तीन, सतर-ए-औराह का अध्याय, हस्तलिखित पांडुलिपि 22/1
2. सगीरी शरह मुनियतुल मुसल्ली, तीसरी शर्त, मुजतबाई दिल्ली द्वारा मुद्रित, पृ. 119
3. सगीरी शरह मुनियतुल मुसल्ली, तीसरी शर्त, मुजतबाई दिल्ली द्वारा मुद्रित, पृ. 119
4. गुनिया अल-मुस्तमली शरह मुनियतुल मुसल्ली, सुहैल अकादमी लाहौर द्वारा मुद्रित, पृ. 213
5. काफ़ी शरह वाफ़ी

فتاوی رضویہ، جلد ششم

خزانتہ المفتین میں ہے:

عربی	**اردو**
الذکر عضو بانفرادہ وکذا الانثیان و ھذا ھو الصحیح[1]	ذکر تنہا عضو ہے اور اسی طرح خصیتین بھی، اور یہی صحیح ہے۔ (ت)

صغیری شرح منیۃ میں ہے:

عربی	**اردو**
انکشاف ربع الذکر وحدہ او ربع الانثیین بمفردھما یمنع جوازھا[2]	تنہا ذکر (عضو مخصوص) کی چوتھائی یا تنہا خصیتین کی چوتھائی کا کھل جانا جواز نماز سے مانع ہے۔ (ت)

اسی میں ہے :

عربی	**اردو**
حلقۃ الدبر عضو بمفردھما وکلھا لاتزید علی قدر الدرھم[3]	حلقہ دبر تنہا عضو ہے اور یہ تمام کا تمام قدرِ درہم سے زیادہ نہیں ہے۔ (ت)

غنیہ شرح کبیر منیۃ میں ہے:

عربی	اردو
القبل و الدبر اذا انکشف من احدھما ربعه وان کان اقل من قدر الدرھم یمنع جواز الصلوۃ اھ ملخصاً۔	قبل اور دبر میں سے کسی ایک کا جب چوتھائی حصہ کھل جائے اگر چہ وہ قدرِ درہم سے کم ہو جواز نماز سے مانع ہوگا۔ ملخصاً (ت)

کافی میں ہے :

عربی	اردو
کشف ربع ساقھا یمنع جواز الصلاۃ وکذا الدبر والذکر والانثیان حکمھا کحکم الساق والکرخی اعتبر في الدبر قدر الدرھم والدبر لا یکون اکثر من قدر الدرھم فھذا یقتضی جواز الصلوۃ وان کان کل الدبر مکشوفا وھو تناقض اھ ملتقطاً	عورت کی پنڈلی کا چوتھائی حصہ کھل جانا جواز نماز سے مانع ہے اور اسی طرح ذکر و دبر اور خصیتین ہیں ان میں سے ہر ایک کا حکم پنڈلی کی طرح ہے۔ امام کرخی نے دبر میں قدرِ درہم (کے انکشاف) کا اعتبار کیا ہے حالانکہ دبر قدرِ درہم سے زائد نہیں ہوتا تو اس قول کا تقاضا یہ ہے کہ اگرچہ تمام دبر ننگی ہو پھر بھی نماز ہو جائے گی اور یہ تناقض ہے۔ اھ ملتقطاً (ت)

1. خزانۃ المفتین فصل فی ستر العورۃ قلمی نسخہ ۲۲/۱
2. صغیری شرح منیۃ المصلی الشرط الثالث مطبوعہ مجتبائی دہلی ص ۱۱۹
3. صغیری شرح منیۃ المصلی الشرط الثالث مطبوعہ مجتبائی دہلی ص ۱۱۹
4. غنیہ المستملی شرح منیۃ المصلی مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۲۱۳
5. کافی شرح وافی

Fatawa Razawiyya Volume VI In Hilya, it is stated: [Left Column (Arabic)]: They have erred by saying that this intensification leads to mitigation or reduction, because some 'ghaliza' (heavy) parts are not more than the size of a dirham. Thus, it would follow that uncovering the whole of it would not prevent [the validity of prayer]. It has been answered that it has been said that the 'ghaliza' includes the private parts (front and back) along with the surrounding area. Therefore, it is permissible that this [view] was considered, so the objection raised against it would not apply. It is refuted by what has preceded, that the correct view is that each of the penis and testicles is an independent member, and similarly, the correct view is that each of the buttocks and the anus is an independent member. Thus, that consideration is not complete. End of shortened quote.

[Right Column (Urdu)]: They have incorrectly stated that this intensification is a cause for mitigation or exclusion because some 'awrah ghaliza' (private parts) are such that they are not larger than a dirham. From this, it would follow that uncovering such a member entirely would not hinder the prayer. The answer given to this is that one opinion is that the front part, the back part, and the area around both (all together) constitute the 'ghaliza'. Thus, according to Imam Karkhi's statement, considering the size of a dirham would be correct, and the objection raised by the jurists would not be applicable. The defense for this comes from the previous discussion, which is that the correct view is that each of the penis (the specific organ) and the testicles is an independent member. Similarly, according to the correct view, each of the anus and buttocks is an independent member. Now, that consideration (of the dirham size) will not be correct. End of shortened quote. (T)

Similarly, in 'Tabyeen' etc., it has been explicitly stated. The poor servant (may Allah forgive him) has, in the aforementioned treatise, by the grace of Allah, provided an extensive refinement of this discussion beyond which nothing more is needed. It has been proven therein that the addition of the word 'hawl' (around) with the penis, anus, and testicles by the three eminent scholars (may their secrets be sanctified) was useless, rather it happened to be misleading. When it has been established that this body part, i.e., between the anus and testicles, is not included in any of those eight 'awrahs' and cannot be subordinate to any of them, and it is also absolutely included in the 'awrah' (nakedness to be covered), then it is necessary to count it as a separate member. In men, the number of 'awrah' organs should be determined as nine. The absence of its mention in the aforementioned books is not a mention of its absence, as ultimately they neither hinted at comprehensiveness nor mentioned any

specific count. They have mentioned both limits of the 'awrah' and have also made clear statements about the independence and individuality of so many members. Therefore, what remains must necessarily be considered an independent member.

So let it be understood and let there be reflection; perhaps Allah will bring about a new matter after this. This is what I have [researched], and the ultimate knowledge of the truth is with my Lord. Understand and ponder, perhaps Allah Almighty will create some easy path after this. This is my research and...

1. Hilyat al-Mahalli Sharh Munyat al-Musalli Page 38 of 736

फतवा रज़विया छठा खंड हिलिया में है: [बायां कॉलम (अरबी)]: उन्होंने यह कहकर गलती की है कि यह सख्ती (तग्लीज़) नरमी की ओर ले जाती है, क्योंकि कुछ भारी गुप्त अंग (ग़लीज़ा) ऐसे हैं जो एक दिरहम की मात्रा से अधिक नहीं हैं। अतः इसका परिणाम यह होगा कि उसका पूरा का पूरा खुला रहना नमाज़ से नहीं रोकेगा। इसका उत्तर यह दिया गया है कि यह कहा गया है कि 'ग़लीज़ा' में आगे और पीछे के गुप्त अंग और उनके आस-पास का घेरा शामिल है। इसलिए यह संभव है कि इसे माना गया हो, अतः उन पर किया गया एतराज लागू नहीं होगा। इसका खंडन पहले की बात से हो जाता है कि सही मत यह है कि लिंग और अंडकोष में से प्रत्येक एक स्वतंत्र अंग है, और इसी तरह सही मत यह है कि कूल्हों और गुदा में से प्रत्येक एक स्वतंत्र अंग है। अतः वह विचार पूर्ण नहीं है। (संक्षिप्त समाप्त)

[दायां कॉलम (उर्दू)]: उन्होंने गलत कहा है कि यह सख्ती, नरमी या कमी का कारण है क्योंकि कुछ गुप्त अंग ऐसे हैं जो एक दिरहम की मात्रा से बड़े नहीं हैं। तो इससे यह लाज़िम आता है कि ऐसे अंग का पूरा का पूरा नंगा होना नमाज़ में बाधक न होगा। इसका उत्तर यह दिया गया कि एक राय यह है कि आगे का हिस्सा, पीछे का हिस्सा और उन दोनों का आस-पास (सब मिल कर) 'ग़लीज़ा' है। अतः इमाम कर्खी के दिरहम वाले कथन का विचार सही होगा और फ़ुक़हा (धर्मशास्त्रियों) ने जो एतराज किया है वह लागू नहीं होगा। इसका बचाव पिछली चर्चा से हो जाता है कि सही कथन यही है कि ज़िक्र (लिंग) और अंडकोष में से प्रत्येक एक स्वतंत्र अंग है और इसी तरह सही कथन के अनुसार गुदा और कूल्हों में से प्रत्येक एक स्वतंत्र अंग है। अब वह (दिरहम का) विचार सही न होगा। (संक्षिप्त समाप्त)

इसी तरह 'तबीन' आदि में स्पष्ट उल्लेख किया गया है। फकीर (ईश्वर उसे क्षमा करे) ने अपने उक्त लेख में ईश्वर की कृपा से इस चर्चा का ऐसा पूर्ण शोध किया है जिसके आगे कुछ और कहने की आवश्यकता नहीं है। और उसमें सिद्ध कर दिया कि तीनों प्रतिष्ठित विद्वानों (ईश्वर उनके रहस्यों को पवित्र रखे) का लिंग, गुदा और अंडकोष के साथ 'हौल' (आस-पास) शब्द जोड़ना व्यर्थ था, बल्कि वह भ्रामक सिद्ध हुआ। जब यह सिद्ध हो गया कि यह शरीर का हिस्सा यानी गुदा और अंडकोष के बीच का स्थान उन आठ गुप्त अंगों में से किसी में शामिल नहीं है और न ही किसी के अधीन हो सकता है, और वह भी निश्चित रूप से 'सत्र-ए-औरत' (ढकने योग्य अंगों) में शामिल है, तो आवश्यक है कि उसे एक अलग अंग गिना जाए। पुरुषों में गुप्त अंगों की संख्या नौ निर्धारित की जानी चाहिए। उक्त पुस्तकों में उसका उल्लेख न होना, उसके न होने का प्रमाण नहीं है, क्योंकि अंततः उनमें न तो पूर्णता

का कोई संकेत है और न ही किसी संख्या का उल्लेख। वे 'सत्र-ए-औरत' की दोनों सीमाओं का उल्लेख कर चुके हैं और इतने अंगों की स्वतंत्रता और विशिष्टता पर भी स्पष्टीकरण दे चुके हैं, तो जो शेष रह गया वह निश्चित रूप से एक स्वतंत्र अंग माना जाएगा।

अतः इसे समझा जाए और इस पर विचार किया जाए, शायद अल्लाह इसके बाद कोई नया मामला उत्पन्न कर दे। यह वह है जो मेरे पास है, और सत्य का ज्ञान मेरे रब के पास है। समझो और गौर करो, शायद अल्लाह तआला इसके बाद किसी आसान मामले को पैदा फरमा दे। यह मेरा शोध है और...

1. हिलियतुल महल्ली शरह मुनियतुल मुसल्ली पृष्ठ 38 / 736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم حلیہ میں ہے: [بایاں کالم (عربی)]: غلطوه بأن هذا تغليظ يؤدي الى التخفيف اوالاقساط لان من الغليظة ماليس بأكثر من قدر الدرهم فيؤدي الى ان كشف جميعه لا يمنع و قد اجيب عنه بأنه قد قيل بأن الغليظة القبل والدبر مع حولهما فيجوز كونه اعتبر ذلك فلا يرد عليه ما قالوا ويدفعه ما تقدم من ان الصحيح ان كلا من الذكر والخصيتين عضو مستقل وكذالك الصحيح ان كلا من الاليتين والدبر عضو مستقل فلا يتم ذالك الاعتبار اه مختصراً۔

[دایاں کالم (اردو)]: انہوں نے غلط کہا ہے کہ یہ تغلیظ تخفیف یا اسقاط کا سبب ہے کیونکہ بعض عورت غلیظہ ایسی ہیں جو قدر درہم سے زیادہ نہیں تو اس سے لازم آتا ہے کہ ایسے عضو کا تمام کا تمام ننگا ہونا نماز سے مانع نہ ہوگا، اس کا جواب یہ دیا گیا کہ ایک قول یہ ہے کہ قبل، دُبر اور ان دونوں کا ارد گرد (سب مل کر) غلیظہ ہے، پس امام کرخی کے قول قدر درہم کا اعتبار درست ہوگا اور فقہاء نے جو اعتراض کیا ہے وہ وارد نہ ہوگا۔ اس کا دفاع گزشتہ گفتگو سے ہو جاتا ہے کہ صحیح قول یہی ہے کہ ذکر (عضو مخصوص) اور خصیتین میں سے ہر ایک مستقل عضو ہے اور اسی طرح صحیح قول کے مطابق دبر اور سرین میں سے ہر ایک مستقل عضو ہے اب وہ (قدر درہم کا) اعتبار درست نہ ہوگا اھ مختصراً (ت)

اسی طرح تبیین وغیرہ میں تصریح فرمائی، فقیر غفراللہ لہ نے اپنے رسالہ مذکورہ میں اس بحث کی بحمد اللہ تنقیح بالغ بمالا مزید علیہ ذکر کی اور اُس میں ثابت کر دیا کہ افاضلِ ثلاثہ قدست اسرار ہم کا ذکر و دُبر و اُنثیین کے ساتھ لفظ حول زائد کرنا بیکار بلکہ موہم واقع ہوا جب ثابت ہولیا کہ یہ جسم یعنی مابین الدبر والا نثیین ان آٹھوں عورتوں سے کسی میں شامل اور کسی کا تابع نہیں ہوسکتا اور وہ بھی قطعاً ستر عورت میں داخل تو واجب کہ اُسے عضو جداگانہ شمار کیا جائے۔ مرد میں عدد اعضائے عورت نو قرار دیا جائے اور کتب مذکورہ میں اُس کا عدمِ ذکر ذکرِ عدم نہیں کہ آخر

اُن میں نہ استیعاب کی طرف ایماء نہ کسی تعداد کا ذکر، وہ ستر عورت کی دونوں حدیں ذکر فرماچکے اور اتنے اعضا کے استقلال وانفراد پر بھی تصریحیں کر گئے تو جو باقی رہا لاجرم عضو مستقل قرار پائے گا،

فليفهم وليتأمل لعل الله يحدث بعد ذلك امراً هذا ما عندى والعلم بالحق عند ربى۔ سمجھو اور غور کرو شاید اللہ تعالیٰ اس کے بعد کسی آسان امر کو پیدا فرمادے، یہ میری تحقیق ہے اور

Fatawa-e-Razvia Volume Six With my Lord. True knowledge is with my Lord (T). The humble servant, may Allah forgive him, has composed this subject into four verses for ease of memorization, maintaining the order in the mention of body parts. In these verses, the limits of the 'satr' (private parts to be covered) for men are also stated, with the clarification that the navel is excluded and the knee is included. Also mentioned is the extent to which exposure invalidates the prayer according to the chosen school of thought. Furthermore, a distinction is made: intentional exposure invalidates the prayer immediately, whereas unintentional exposure must last the duration of performing one 'rukn' (pillar of prayer). It is also indicated that, according to the chosen school, the actual completion of the 'rukn' is not a condition. Then there is an indication towards the correct position that the male organ, the testicles, the anus, and each buttock are individual complete members. The correct position is also made clear that each knee follows its respective thigh. As for the additional member included by this humble servant, it was hinted that specific clarification of this detail was not found. Regarding the area below a woman's navel, it is clearly stated that it refers to all sides of the body, and also that the pubic region is included within it; therefore, it was placed under the word 'Zahir' (visible/outer). Praise be to Allah, in four verses of a short meter, along with these many benefits, the beauty is that by Divine grace, there isn't a single superfluous word or forced line, nor any brevity that impairs the delivery of the meaning. Praise be to Allah, Lord of the worlds. Those brilliant verses are:

The 'satr' for a man consists of nine parts / From below the navel to below the knee. Whatever part has one-fourth exposed for the duration of a 'rukn' / Or if one exposes it, do not seek prayer (it is invalid). The male organ, the testicles, and the anus suffice / The two buttocks, each thigh with its knee. The visible separation of the testicles and the anus / The rest below the navel from every side.

It's as if this entire fatwa is an explanation of these four verses. And Allah, the Glorified and Exalted, knows best. Problem No. 391: Asked by Mirza Baqi Beg Sahib, Rampuri, 28 Dhu al-Qi'dah 1312 AH. What do the scholars of religion say in this matter regarding which parts of a free woman's body are 'awrah' (must be covered)? Explain so you may be rewarded.

The Answer: The entire body of a free woman from head to toe is 'awrah', except for the face and both palms. By consensus and as derived from the text of 'Khulasa', from the toenails to the joint below the ankles, the top of the foot is also by consensus not 'awrah'. There is a difference of opinion regarding the soles and the

back of the palms in terms of verification. The original position of the school is that both of those are also 'awrah'. Thus, according to this estimation, only five pieces are exempted: the face, both palms, and both tops of the feet. Apart from these, the entire body is 'awrah', consisting of thirty (30) members. If a quarter of any of those members is exposed, the ruling for prayer will be the same as we stated in the previous fatwa. Page 39 of 736

फतावा-ए-रज़विया जिल्द छठा मेरे रब के पास। सत्य का ज्ञान मेरे रब के पास है (त) इस फकीर (अल्लाह उसे क्षमा करे) ने याद रखने में आसानी के लिए इस विषय को चार शेरों (पदों) में पिरोया है और अंगों के उल्लेख में उसी क्रम को बनाए रखा है। इन शेरों में पुरुषों के लिए 'सत्र-ए-औरत' (शरीर के वो हिस्से जिन्हें ढकना अनिवार्य है) की सीमाएँ भी बताई गई हैं, इस स्पष्टीकरण के साथ कि नाभि बाहर है और घुटना शामिल है। वह मात्रा भी बता दी गई है जिसके खुलने से 'मज़हब-ए-मुख्तार' (पसंदीदा मत) के अनुसार नमाज़ खराब हो जाती है। फिर यह अंतर भी कि जानबूझकर खुलने पर नमाज़ तुरंत खराब हो जाएगी और अनजाने में एक 'रुकन' अदा करने की अवधि तक खुलने पर। इसमें यह भी बताया गया है कि 'मज़हब-ए-मुख्तार' पर वास्तव में 'रुकन' की अदायगी शर्त नहीं है। फिर इस सही मत की ओर संकेत है कि लिंग, अंडकोष, गुदा और दोनों नितंब (कूल्हे) अलग-अलग पूर्ण अंग हैं। और यह सही मत भी स्पष्ट कर दिया गया है कि प्रत्येक घुटना अपनी जांघ के अधीन है। और जो अंग इस फकीर ने अतिरिक्त जोड़ा है, उसमें यह संकेत भी कर दिया कि इस उप-नियम का स्पष्ट उल्लेख नहीं मिला। और महिला के लिए 'ज़ेर-ए-नाफ' (नाभि के नीचे) के बारे में यह भी स्पष्ट हो गया कि इससे शरीर के सभी पक्ष अभिप्रेत हैं और यह भी कि 'आन' (पेड़ू का हिस्सा) इसमें शामिल है, इसीलिए इसे 'ज़ाहिर' शब्द के नीचे रखा गया। अल्लाह की कृपा से, एक छोटी बहर (छंद) के चार शेरों में इतने सारे लाभों के साथ खूबसूरती यह है कि ईश्वर की कृपा से कोई भी शब्द फालतू नहीं है और न ही कोई पंक्ति बोझिल है, और न ही कहीं अर्थ व्यक्त करने में ऐसी संक्षिप्तता आई है जो बाधा डाले। अल्लाह का शुक्र है जो तमाम जहानों का रब है। वे शानदार शेर ये हैं:

पुरुष के लिए 'सत्र' नौ अंग हैं / नाभि के नीचे से घुटने के नीचे तक। जिस किसी अंग का चौथाई हिस्सा एक 'रुकन' की अवधि तक खुल जाए / या कोई खोल दे, तो नमाज़ की उम्मीद न करें (नमाज़ नहीं होगी)। लिंग, दोनों अंडकोष और गुदा का घेरा पर्याप्त है / दोनों नितंब, प्रत्येक जांघ अपने घुटने के साथ। दोनों अंडकोष और गुदा का स्पष्ट विभाजन / बाकी सब नाभि के नीचे हर तरफ से।

मानो यह सारा फतवा इन चार शेरों की व्याख्या है। और अल्लाह सुब्हानहु व तआला बेहतर जानता है। मसला नंबर 391: प्रेषित मिर्ज़ा बाक़ी बेग साहब रामपुरी, 28 ज़ीक़ाद 1312 हिजरी। धर्म के विद्वान इस विषय में क्या कहते हैं कि एक आज़ाद (स्वतंत्र) महिला के शरीर के कौन से अंग 'औरत' (ढकने योग्य) हैं? बयान करें ताकि आप पुण्य के पात्र बनें।

उत्तर: एक आज़ाद महिला का पूरा शरीर सिर से पैर तक 'औरत' है, सिवाय चेहरे के घेरे और दोनों हथेलियों के। सर्वसम्मति से और 'खुलासा' के पाठ से यह निष्कर्ष निकलता है कि पैरों के नाखूनों से

टखनों के नीचे के जोड़ तक, पैरों का ऊपरी हिस्सा भी सर्वसम्मति से 'औरत' नहीं है। हथेलियों के पीछे और तलवों के बारे में सत्यापन में मतभेद है। मज़हब का मूल मत यह है कि वे दोनों भी 'औरत' हैं। तो इस आकलन के अनुसार केवल पाँच टुकड़े अपवाद हुए: चेहरे का घेरा, दोनों हथेलियाँ, दोनों पैरों के ऊपरी हिस्से। इनके अलावा पूरा शरीर 'औरत' है और वह तीस (30) अंगों पर आधारित है, उनमें से जिस अंग का चौथाई हिस्सा खुलेगा, नमाज़ का वही हुक्म होगा जो हमने पिछले फतवे में...
पृष्ठ 39 of 736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم عند ربّی۔ حق کا علم میرے رب کے پاس ہے (ت) فقیر غفر اللہ لہ نے سہولت حفظ کے لئے اس مطلب کو چار شعر میں نظم کیا اور ذکر اعضاء میں ترتیب بھی وہی ملحوظ رہی۔ ان اشعار میں مرد کے لئے ستر عورت کی حدیں بھی بتائی گئیں وہ بھی اس تصریح سے کہ ناف خارج اور زانو داخل اور وہ مقدار بھی بتادی گئی جس قدر کا کھلنا مذہب مختار پر مفسد ہے پھر یہ تفرقہ بھی کہ بالقصد کھلنے میں فوراً نماز فاسد ہوگی اور بلا قصد میں مقدار ادائے رکن تک کھلنا چاہئے اس میں یہ بھی بتادیا گیا کہ مذہب مختار پر حقیقۃً ادائے رکن شرط نہیں پھر اس مذہب صحیح کی طرف ایما ہے کہ ذکر و انثیین و دُبر وہر سرین تنہا تنہا عضو کامل ہیں اور یہ مذہب صحیح بھی ظاہر کردیا گیا کہ ہر گھٹنا اپنی ران کا تابع ہے، اور جو عضو فقیر نے زائد کیا اُس میں یہ اشارہ بھی کردیا کہ اس جزئیہ کی تصریح نہ پائی اور عورت زیر ناف میں یہ بھی مصرح ہوگیا کہ سب جوانب بدن سے مراد ہے اور نیز یہ بھی کہ عانہ اس میں داخل ہے وللہذا اسے بھی لفظ ظاہر کے نیچے رکھا۔ بحمد اللہ مختصر بحر کی چار بیتوں میں اس قدر فوائد کثیرہ کے ساتھ لطف یہ ہے کہ بعنایت الٰہی کوئی حرف حشو و مصرع پر کن نہیں نہ کہیں ادائے مطلب میں ایجاز مخل واقع ہوا والحمد للہ رب العلمین وہ اشعار آبدار یہ ہیں:

ستر عورت بمرد نہ عضو ست / از تہ ناف تا تہ زانو ہر چہ ربعش بقدر رکن کشود / یا کشودے دے نماز مجو ذکر و انثیین و حلقہ بس / دوسریں ہر فخذ بزانوئے او ظاہرِ افصل انثیین و دبر / باقی زیرِ ناف از ہر سو

گویا یہ سارا فتوٰی ان چار شعر کی شرح ہے۔ واللہ سبحنہ وتعالٰی اعلم۔ مسئلہ نمبر ۳۹۱ : مسئولہ مرز اباقی بیگ صاحب رامپوری ۲۸ ذیقعد ۱۳۱۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ عورت آزاد کے بدن کے عضو عورت ہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: زن آزاد کا سارا بدن سر سے پاؤں تک سب عورت ہے مگر منہ کی ٹکی اور دونوں ہتھیلیاں کہ یہ بالا جماع اور عبارت خلاصہ سے مستفاد کہ ناخن پا سے ٹخنوں کے نیچے جوڑ تک پشت قدم بھی بالا تفاق عورت نہیں، تلووں اور پشت کف دست میں اختلاف تصحیح ہے اصل مذہب یہ کہ وہ دونوں بھی عورت ہیں تو اس تقدیر پر صرف پانچ ٹکڑے مستثنیٰ ہوئے، منہ کی ٹکی، دونوں ہتھیلیاں ، دونوں پشت پا۔ ان کے سوا سارا بدن عورت ہے اور وہ تیس ۳۰ عضووں پر مشتمل کہ اُن میں جس عضو کی چوتھائی کھلے گی نماز کا وہی حکم ہوگا جو ہم نے پہلے فتوے

Fatawa Razawiyya Volume Six The parts of a woman's body that are considered 'Aurat' (to be covered) in comparison to a man, those 23 parts are as follows: (1) The head, which means in length from above the forehead to the beginning of the neck, and in width from one ear to the other ear, the area where hair normally grows. (2) Hair, meaning the hair hanging down from the head, is a separate 'Aurat'. (3 & 4) Both ears. (5) The neck, which also includes the throat. (6 & 7) Both shoulders, meaning from the joint on the side of the back to the start of the arm joint. (8 & 9) Both arms, meaning from that joint up to and including the elbows down to the wrist joint. (10 & 11) Both wrists, meaning from that elbow joint to below the wrist bones. (12 & 13) The backs of both hands. (14) The chest, meaning from the throat joint to the lower part of both breasts. (15 & 16) Both breasts when they have fully developed; that is, if they have not yet developed at all or are slightly emerging so that they have not become separate organs from the chest, then until that time they will remain subordinate to the chest and will not be counted as separate 'Aurat'. When they reach the level of prominence such that they are considered separate organs from the chest, then at that time the chest will be one 'Aurat' and these two will be two 'Aurats', and the space between both breasts which is empty will still remain included in the chest. (17) The belly, meaning from the aforementioned limit of the chest to the lower edge of the navel; the navel is included in the belly itself. (18) The back, meaning the area opposite the belly on the back side, starting from below the level of the chest down to the waist. (19) The area above it on the back side, located between the joints of both shoulders and the back opposite the chest, is clearly a separate 'Aurat'. Yes, the area in both sides (flanks) under the armpit up to the lower limit of the chest, its front part is included in the chest and the rear part in that seventeenth organ or shoulders; and the two sides starting from below the chest to the waist, their front part will be included in the belly and the rear in the back. (20 & 21) Both buttocks, meaning from their upper joint to the joint of the thighs. (22) Vagina (Farj). (23) Anus (Dubar).

फतावा रज़विया छठा खंड स्त्री के शरीर के वे अंग जो पुरुष की तुलना में 'औरत' (छिपाने योग्य) हैं, वे 23 अंग ये हैं: (1) सिर यानी लंबाई में माथे के ऊपर से गर्दन की शुरुआत तक और चौड़ाई में एक कान से दूसरे कान तक, जितनी जगह पर आमतौर पर बाल उगते हैं। (2) बाल यानी सिर से नीचे लटके हुए बाल, वे अलग 'औरत' हैं। (3 और 4) दोनों कान। (5) गर्दन जिसमें गला भी शामिल है। (6 और 7) दोनों कंधे यानी पीठ की ओर के जोड़ से लेकर बाजू के जोड़ की शुरुआत तक। (8 और 9) दोनों बाजू यानी उस जोड़ से कोहनियों सहित कलाई के जोड़ तक। (10 और 11) दोनों कलाइयाँ यानी कोहनी के उस जोड़ से गट्टों (कलाई की हड्डियों) के नीचे तक। (12 और 13) दोनों हाथों की पीठ। (14) सीना यानी गले के जोड़ से दोनों स्तनों के निचले हिस्से तक। (15 और 16) दोनों स्तन जब वे अच्छी तरह से उभर चुके हों; यानी अगर वे अभी बिल्कुल नहीं उभरे हैं या हल्के उभर रहे हैं कि सीने से अलग होकर एक अंग का रूप नहीं लिया है, तो उस समय तक वे सीने के ही अधीन रहेंगे, अलग 'औरत' नहीं गिने जाएंगे। और जब उभार इस सीमा तक आ जाए कि वे सीने से अलग अंग माने जाएं तो उस समय एक 'औरत' सीना होगा और ये दो अलग 'औरतें' होंगी, और दोनों स्तनों के बीच की खाली जगह अब भी सीने में शामिल रहेगी। (17) पेट यानी सीने की उक्त सीमा से नाभि के निचले किनारे तक, नाभि पेट में ही शामिल है। (18) पीठ यानी पेट के विपरीत पीछे की ओर, सीने के स्तर के नीचे से शुरू होकर कमर तक की जगह। (19) इसके ऊपर की जगह जो पीछे की ओर दोनों कंधों के जोड़ों और पीठ के बीच सीने के विपरीत स्थित है, स्पष्ट रूप से अलग 'औरत' है। हाँ, बगल के नीचे सीने की निचली सीमा तक दोनों करवटों में जो जगह है, उसका अगला हिस्सा सीने में शामिल है और पिछला उसी सत्रहवें अंग या कंधों में; और सीने के नीचे से शुरू होकर कमर तक जो दोनों पहलू हैं, उनका अगला हिस्सा पेट में और पिछला पीठ में शामिल होगा। (20 और 21) दोनों कूल्हे यानी अपने ऊपरी जोड़ से जांघों के जोड़ तक। (22) योनि (फर्ज)। (23) गुदा (दुबर)।

पृष्ठ 40/736

فتاویٰ رضویہ جلد ششم اعضاء عورت مرد کی نسبت لکھے وہ ۲۳ عضو یہ ہیں: (۱) سر یعنی طول میں پیشانی کے اوپر سے گردن کے شروع تک اور عرض میں ایک کان سے دوسرے کان تک جتنی جگہ پر عادۃً بال جمتے ہیں۔ (۲) بال یعنی سر سے نیچے جو لٹکے ہوئے بال ہیں وہ جدا عورت ہیں۔ (۳ و ۴) دونوں کان (۵) گردن جس میں گلا بھی شامل ہے۔ (۶ و ۷) دونوں شانے یعنی جانب پشت کے جوڑ سے شروع بازو کے جوڑ تک۔ (۸ و ۹) دونوں بازو یعنی اس جوڑ سے کہنیوں سمیت کلائی کے جوڑ تک۔ (۱۰ و ۱۱) دونوں کلائیاں یعنی کہنی کے اس جوڑ سے گٹوں کے نیچے تک۔ (۱۲ و ۱۳) دونوں ہاتھوں کی پشت۔ (۱۴) سینہ یعنی گلے کے جوڑ سے دونوں پستان کی زیریں تک۔ (۱۵ و ۱۶) دونوں پستانیں جبکہ اچھی طرح اٹھ چکی ہوں یعنی اگر ہنوز بالکل نہ اٹھیں یا خفیف نو خاستہ ہیں کہ ٹوٹ کر سینہ سے جدا عضو کی صورت نہ بنی ہوں تو اس وقت تک سینہ ہی کے تابع رہیں گی الگ عورت نہ گنی جائیں گی اور جب ابھار کی اس حد پر آجائیں کہ سینہ سے جدا عضو قرار پائیں تو اس وقت ایک عورت سینہ ہوگا اور دو عورتیں یہ، اور وہ جگہ کہ دونوں پستان کے بیچ میں خالی ہے اب بھی سینہ میں شامل رہے گی۔ (۱۷) پیٹ یعنی سینہ کی حد مذکور سے ناف کے کنارہ زیریں تک، ناف پیٹ ہی میں شامل ہے۔ (۱۸) پیٹھ یعنی پیٹ کے مقابل پیچھے کی جانب محاذات سینہ کے نیچے سے شروع کمر تک جتنی جگہ ہے۔ (۱۹) اس کے اوپر جو جگہ پیچھے کی جانب دونوں شانوں کے جوڑوں اور پیٹھ کے بیچ سینہ کے مقابل واقع ہے ظاہر جدا عورت ہے، ہاں بغل کے نیچے سینہ کی زیریں حد تک دونوں کروٹوں میں جو جگہ ہے اس کا اگلا حصہ سینہ میں شامل ہے اور پچھلا اسی سترھویں عضو یا شانوں میں اور زیر سینہ سے شروع کمر تک جو دونوں پہلو ہیں ان کا اگلا حصہ پیٹ اور پچھلا پیٹھ میں داخل ہوگا۔ (۲۰ و ۲۱) دونوں سرین یعنی اپنے بالائی جوڑ سے رانوں کے جوڑ تک۔ (۲۲) فرج۔ (۲۳) دُبر۔

Fatawa-e-Razviya - Volume 6

(24 & 25) Both thighs, meaning from their upper joints down to below the knees; both knees are also included in the thighs. (26) The soft area below the navel and whatever remains adjacent and opposite to it; i.e., drawing a straight circle from the lower edge of the navel across the back, the part above this circle up to the chest included the belly in front and the back behind, and the part below it includes both buttocks and the beginning joints of both thighs up to the upper edge of the anus. Whatever remains is one organ; the pubic area (where hair grows) is also included in this. (27 & 28) Both shins, i.e., from below the knees to the ankles. (29 & 30) Both soles. In Tanwir al-Absar and al-Durr al-Mukhtar.

[Table Start] Left Column (Arabic Text): The 'awrah (concealment) of a free woman, even if she is a hermaphrodite, is her entire body, even her hanging hair according to the most correct opinion (except for the face and the two palms). Thus, the back of the hand is 'awrah according to the Madhab (and the two feet) according to the reliable opinion. In Al-Khulasah: If a woman does not cover the back of her foot, her prayer is valid, and the inner part of the palm and the face are also like this because these three parts are not 'awrah. Is the bottom of her foot 'awrah? There are two narrations on this. In the original narration, uncovering a quarter of the sole prevents prayer. In Al-Karkhi's narration, it is not part of the 'awrah. To summarize: The researcher (Ibn al-Humam) definitively made this distinction between the back and the bottom of the foot in his introduction 'Zad al-Faqir'. The author of At-Tanwir, Al-Ghazzi, said in its commentary 'I'anat al-Haqir': I say, it is understood from Al-Khulasah's discussion that the disagreement is only regarding...

Right Column (Urdu Translation/Explanation): The Satr (concealment) for a free woman, even if she is a hermaphrodite, is her entire body, even her hanging hair according to the most correct school of thought, but the face, both palms, and both feet are not Satr according to the reliable opinion. The back of the palm is included in Satr according to the correct school of thought. It is in Al-Khulasah that if a woman does not cover the back of her foot, her prayer is valid, and the same ruling applies to the inner part of the palm and the face because these three things are not included in Satr. Is the inner part of a woman's foot Satr or not? There are two narrations in this regard. In the original narration, uncovering a quarter of the soles is considered a hindrance to prayer, and in the narration of Imam Karkhi, this is not included in Satr. Summarily, the absolute researcher Imam Ibn al-Humam has definitively stated this distinction between the top and the bottom of the foot in his

introduction Zad al-Faqir. The author of Al-Tanwir, Allama Ghazzi, said in its commentary I'anat al-Haqir: I say, it is known from the discussion in Al-Khulasah that for a woman... [Table End]

---

1. Durr al-Mukhtar Sharh Tanwir al-Absar, Chapter on Conditions of Prayer, printed at Mujtabai Press Delhi, 1/66
2. Khulasat al-Fatawa, Section Six on Covering the 'Awrah, printed at Naval Kishore Lucknow, 1/74

फ़तावा-ए-रज़विया - जिल्द ६

(२४-२५) दोनों जांघें, यानी उनके ऊपरी जोड़ों से लेकर घुटनों के नीचे तक; दोनों घुटने भी जांघों में शामिल हैं। (२६) नाभि के नीचे का नरम क्षेत्र और जो कुछ उसके निकट और विपरीत रहता है; यानी नाभि के निचले किनारे से पीठ के चारों ओर एक सीधा घेरा खींचने पर, इस घेरे के ऊपर का हिस्सा छाती तक, सामने का हिस्सा पेट और पिछला हिस्सा पीठ में शामिल था, और इसके नीचे का हिस्सा दोनों नितंबों और दोनों जांघों के शुरुआती जोड़ों से लेकर गुदा के ऊपरी किनारे तक का हिस्सा एक अंग है; जघन क्षेत्र (जहाँ बाल उगते हैं) भी इसी में शामिल है। (२७ और २८) दोनों पिंडलियाँ, यानी घुटनों के नीचे से टखनों तक। (२९ और ३०) दोनों तलवे। तनवीर अल-अबसार और अल-दुर अल-मुख्तार में।

[तालिका शुरू] बायां कॉलम (अरबी पाठ): एक स्वतंत्र महिला का सतर (पर्दा), भले ही वह उभयलिंगी हो, उसका पूरा शरीर है, यहाँ तक कि उसके लटके हुए बाल भी सबसे सही राय के अनुसार, (चेहरे और दोनों हथेलियों को छोड़कर)। इस प्रकार, विश्वसनीय राय के अनुसार हथेली का पिछला हिस्सा 'मज़हब' (और दोनों पैरों) के अनुसार सतर है। अल-खुलासा में है: यदि कोई महिला अपने पैर के पिछले हिस्से को नहीं ढकती है, तो उसकी प्रार्थना मान्य है, और हथेली का अंदरूनी हिस्सा और चेहरा भी इसी तरह है क्योंकि ये तीन चीजें सतर में शामिल नहीं हैं। क्या उसके पैर का निचला हिस्सा सतर है? इस पर दो वर्णन हैं। मूल वर्णन में तलवों के एक चौथाई हिस्से का खुला होना प्रार्थना को रोकता है। अल-करखी के वर्णन में यह सतर में शामिल नहीं है। संक्षेप में: शोधकर्ता (इब्न अल-हुमाम) ने अपनी प्रस्तावना 'ज़ाद अल-फ़कीर' में पैर के ऊपरी और निचले हिस्से के बीच इस अंतर को निश्चित रूप से स्पष्ट किया है। अत-तनवीर के लेखक अल-ग़ज़ी ने इसकी व्याख्या 'इआनत अल-हकीर' में कहा: मैं कहता हूँ कि अल-खुलासा की चर्चा से यह समझ आता है कि विवाद केवल... के बारे में है।

दायां कॉलम (उर्दू अनुवाद/व्याख्या): आज़ाद औरत अगरचे खनसा हो उसका सतर तमाम बदन है हत्ता कि उसके लटके हुए बाल भी असह् मज़हब पर, मगर चेहरा, दोनों हथेलियाँ और दोनों कदम मोतमिद क़ौल के मुताबिक़ सतर नहीं। हथेली की पुश्त सही मज़हब पर सतर में शामिल है। खुलासा में है कि अगर औरत ने अपनी पुश्त-ए-क़दम को न ढाँपा तो उसकी नमाज़ जायज़ है और हथेली के अंदरूनी हिस्से और चेहरे का भी यही हुक्म है क्योंकि औरत की ये तीनों चीज़ें सतर में शामिल नहीं। औरत के पाँव का अंदरूनी हिस्सा सतर है या नहीं? इसमें दो रिवायतें हैं, रिवायत-ए-अस्ल में तलवों

की चौथाई खुलने को मान-ए-नमाज़ क़रार दिया और इमाम करख़ी की रिवायत में ये शामिल-ए-सतर नहीं है। मुलख़्ख़सन, ज़ाहिर-ए-क़दम और बातिन-ए-क़दम के दरमियान इसी तफ़्सील पर मोहक़्क़िक़ अलल-इतलाक़ इमाम बिन हुमाम ने अपने मुक़दमा ज़ाद अल-फ़क़ीर में जज़्म किया है, इसकी शरह इआनत अल-हक़ीर में साहिब-ए-तनवीर अल्लामा ग़ज़ी ने कहा मैं कहता हूँ खुलासा की गुफ़्तुगू से पता चलता है कि औरत के.. [तालिका अंत]

---

1. दुर्र-ए-मुख्तार शरह तनवीर अल-अबसार, बाब शुरूत अस-सलात, मुतबूआ मतबअ मुजतबाई दिल्ली, १/६६
2. खुलासत उल-फ़तावा, अल-फ़स्ल अस-सादिद फी सत्र अल-औरत, मुतबूआ नवल किशोर लखनऊ, १/७४

पृष्ठ ४१/७३६

(۲۴ و ۲۵) دونوں رانیں یعنی اپنے بالائی جوڑ سے زانوؤں کے نیچے تک دونوں زانو بھی رانوں میں شامل ہیں۔ (۲۶) زیر ناف کی نرم جگہ اور اس سے متصل و مقابل جو کچھ باقی ہے یعنی ناف کے کنارہ زیریں سے ایک سیدھا دائرہ کمر پر کھینچے اس دائرے کے اوپر اوپر تو سینہ تک اگلا حصہ پیٹ اور پچھلا پیٹھ میں شامل تھا اور اس کے نیچے نیچے دونوں سرین اور دونوں رانوں کے شروع جوڑ اور دُبر بالائی کنارے تک جو کچھ حصہ باقی ہے سب ایک عضو ہے عانہ یعنی بال جمنے کی جگہ بھی اسی میں داخل ہے۔ (۲۷ و ۲۸) دونوں پنڈلیاں یعنی زیر زانو سے ٹخنوں تک۔ (۲۹ و ۳۰) دونوں تلوے۔ فی تنویر الابصار والدر المختار (تنویر الابصار اور در مختار)

[جدول کا آغاز] بایاں کالم (عربی متن): عورة (للحرة) ولوخنثی (جمیع بدنها) حتی شعرها النازل في الاصح (خلا الوجه و الکفین) فظهر الکف عورة علی المذهب(والقدمین)علی المعتمد[1] اه وفي الخلاصة المرأة اذالم تستر ظهر قدمها تجوز صلاتها وبطن الکف والوجه علی هذا لان هذا الثلاثة منها لیست بعورة وبطن قدمها هل هي عورة فیه روایتان والتقدیر فیه بربع بطن القدم فی روایة الاصل وفي روية الکرخي لیس بعورة [2] اه ملخصاً وبهذا التفصیل بین ظهر القدم وبطنها جزم المحقق علی الاطلاق فی مقدمته زاد الفقیر وقال العلامة الغزي صاحب التنویر في شرحها اعانة الحقیر اقول فاستفید من کلام الخلاصة ان الخلاف انما هو في

دایاں کالم (اردو ترجمہ/تشریح): آزاد عورت اگرچہ خنثی ہو اس کا ستر تمام بدن ہے حتی کہ اسکے لٹکے ہوئے بال بھی اصح مذہب پر، مگر چہرہ، دونوں ہتھیلیاں اور دونوں قدم معتمد قول کے مطابق ستر نہیں۔ ہتھیلی کی پشت صحیح مذہب پر ستر میں شامل ہے اہ خلاصہ میں ہے کہ اگر عورت نے اپنی پشت قدم کو نہ ڈھانپا تو اس کی نماز جائز ہے اور ہتھیلی کے اندرونی حصے اور

چہرے کا بھی یہی حکم ہے کیونکہ عورت کی یہ تینوں چیزیں ستر میں شامل نہیں ، عورت کے پاؤں کا اندرونی حصہ ستر ہے یا نہیں؟ اس میں دور روایتیں ہیں ، روایت اصل میں تلووں کی چوتھائی کھلنے کو مانع نماز قرار دیا اور امام کرخی کی روایت میں یہ شامل ستر نہیں ہے اہ ملخصاً ، ظاہر قدم اور باطن قدم کے درمیان اسی تفصیل پر محقق علی الاطلاق امام بن ہمام نے اپنے مقدمہ زاد الفقیر میں جزم کیا ہے، اس کی شرح اعانۃ الحقیر میں صاحب التنویر علامہ غزی نے کہا میں کہتا ہوں خلاصہ کی گفتگو سے پتا چلتا ہے کہ عورت کے [جدول کا اختتام]

---

1 در مختار شرح تنویر الابصار باب شروط الصلوۃ مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۶۶ 2 خلاصۃ الفتاوی الفصل السادس فی ستر العورۃ مطبوعہ نولکشور لکھنؤ ۱/ ۷۴

Fatawa Razawiya, Volume 6

[Regarding] the sole of the foot; as for its top part, it is not part of the 'awrah' (areas to be covered) without disagreement [among scholars], etc. And in *Al-Hindiyyah* (Fatawa Hindiyyah), quoting *Al-Khulasah*, it is stated that if a girl's breasts are small and rising, they are considered part of the chest; but if they are large, they are considered separate, independent organs.

I say: As for the space between the two breasts, it, along with the position of both breasts, was part of the chest before they became pendulous. When they became pendulous and shifted, the space between them remained part of the chest as it was before; this is evident. As for the navel following the abdomen, it is because we see it follows the rule of covering and not covering. Since a man's abdomen is not part of the 'awrah', his navel is also not part of the 'awrah'. However, both the back and the abdomen of a female slave are part of the 'awrah', as clarified by *Ash-Shami*. The abdomen is the soft part at the front, and the 'zuhr' (back) is the corresponding part at the rear, as stated in *Al-Khaza'in*. Sheikh Rahmati said the 'zuhr' (back) refers to that part of the body...

---

1. Radd al-Muhtar quoting I'anat al-Haqir, Chapter: Conditions of Prayer, printed by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/298.
2. Fatawa Hindiyyah, Chapter Three: Conditions of Prayer, printed by Noorani Kutub Khana, Peshawar, 1/59.

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

पैर के तलवों के बारे में मतभेद है; जहाँ तक पैर के ऊपरी भाग की बात है, वह सर्वसम्मति से 'सत्र' (ढकने वाले अंग) में शामिल नहीं है आदि। और 'फ़तावा हिन्दिया' में 'अल-खुलासा' के हवाले से है कि यदि लड़की के स्तन अभी उभर रहे हों और छोटे हों, तो वे छाती के अधीन माने जाएंगे, और यदि बड़े हों, तो वे अलग स्वतंत्र अंग माने जाएंगे।

मैं कहता हूँ: जहाँ तक दोनों स्तनों के बीच की जगह का सवाल है, तो मामला यह है कि स्तनों के लटकने से पहले स्तनों की जगह और स्तनों के बीच की जगह छाती का ही हिस्सा थी। फिर स्तन लटकने से अलग अंग बन गए, तो स्तनों के बीच की जगह, जिस तरह पहले छाती में शामिल थी, वैसे ही छाती में शामिल रहेगी; यह बात स्पष्ट है। बाकी नाभि पेट के अधीन इसलिए है क्योंकि हम देखते हैं कि वह सत्र (ढकने) और अदम-ए-सत्र (न ढंकने) के नियम में पेट का अनुसरण करती है। इसलिए, जब पुरुष का पेट सत्र में शामिल नहीं है, तो पुरुष की नाभि भी सत्र में शामिल नहीं होगी। लेकिन दासी की पीठ और पेट दोनों सत्र में शामिल हैं, जैसा कि इस बारे में 'शामी' ने स्पष्ट किया है। पेट वह नरम हिस्सा है जो आगे की तरफ है, और 'ज़ुह्र' (पीठ) उसके सामने वाला पिछला हिस्सा है, जैसा कि 'अल-खज़ाइन' में है। शेख रहमती ने कहा कि 'ज़ुह्र' (पीठ) से तात्पर्य शरीर का वह भाग...

---

1. रद-उल-मुह्तार, ब-हवाला इआनत-उल-हकीर, बाब: नमाज़ की शर्तें, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 1/298।
2. फ़तावा हिन्दिया, तीसरा अध्याय: नमाज़ की शर्तें, नूरानी कुतुब खाना, पेशावर, 1/59।

पृष्ठ 736 का 42

فتاوی رضویہ، جلد ششم

باطن القدم و اما ظاهره فليس بعورة بلاخلاف^1 الخ وفی الهندية عن الخلاصة ثدی المرأة ان كانت صغيرة ناهدة فهو تبع لصدرها وان كانت كبيرة فهو عضو عليحدة^2 اهـ

پاؤں کے تلوے میں اختلاف ہے، رہا معاملہ ظاہرِ قدم کا تو وہ بالاتفاق ستر میں شامل نہیں الخ اور فتاوٰی ہندیہ میں خلاصہ کے حوالے سے ہے کہ اگر لڑکی نوخاستہ پستانوں والی ہو تو اس کے پستان سینے کے تابع ہوں گے اور اگر بڑی ہو تو پستان الگ الگ مستقل عضو ہوں گے۔

اقول: اما مابين الثديين فقد كان هو و موضع الثديين جميعاً من الصدر قبل انكسارهما اما هما فقد انحازتا بالانكسار فبقی ما بينهما داخلا فی الصدر كما كان وهو ظاهر، اما تبعية السرة للبطن فلانا نرهاتتبعه في شمول حكم الستر و عدمه، فبطن الرجل لما لم يكن عورة لم تكن عورة من الامة مع ظهرها و بطنها ما نصه (الشامی) البطن ما لان من المقدم والظهر ما يقابله من الموخر كذا فی الخزائن وقال الرحمتی الظهر ما قابل البطن من تحت الصدر الی السرة" جوهرة" ای فما حاذی الصدر ليس من الظهر

اقول: (میں کہتا ہوں) وہ جو پستانوں کے درمیان جگہ ہے تو اس بارے میں مسئلہ یہ ہے کہ پستانوں کے ڈھلکنے سے پہلے پستانوں کی جگہ اور پستان کے درمیان کی جگہ سینے ہی کا حصہ تھے پھر پستان ڈھلکنے سے جدا عضو بن گئے تو پستانوں کے درمیان کی جگہ جس طرح پہلے سینہ میں شامل تھی ویسے ہی سینہ میں داخل رہے گی یہ بات تو ظاہر ہے، باقی ناف بطن کے تابع اس لئے ہے کہ وہ ستر اور عدم ستر کے حکم میں شامل ہونے میں پیٹ کے تابع ہے، تو بطن مرد جب ستر میں شامل نہیں تو مرد کی ناف بھی ستر میں شامل نہ ہوگی لیکن لونڈی کی پشت اور بطن دونوں ستر میں شامل ہیں جیسا کہ اس بارے میں شامی نے تصریح کی ہے بطن (پیٹ) وہ ہے جو

آگے کی طرف نرم حصہ ہے اور ظہر (پشت) اس کے مقابل پچھلا حصہ ہے کذانی الخزائن۔ شیخ رحمتی نے کہا ظہر (پشت) سے مراد جسم کا وہ

---

1. رد المحتار بحوالہ اعانۃ الحقیر باب شروط الصلوۃ مطبوعہ مصطفیٰ البابی مصر ۱/ ۲۹۸

2. فتاویٰ ہندیہ الباب الثالث فی شروط الصلوۃ مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور ۱/ ۵۹

Fatawa Razawiya - Volume 6

[Left Column - Arabic & References] ...which is the 'awrah[1] Ah. And in the marginal notes of Al-Tahtawi on Maraqi al-Falah: As for the side, it is subordinate to the abdomen, as stated in Al-Quniyah. The preferred view is that what is adjacent to the abdomen follows it, as in Al-Bahr; meaning what is adjacent to the back follows it, as in Tuhfat al-Akhyar[2]. Ah. And in Tahtawi on Al-Durr al-Mukhtar: If she is a slave girl, the parts of her 'awrah are also eight: the thighs, the buttocks, the front and back private parts and what is around them, the abdomen, the back, and the sides adjacent to them. For a free woman, there are added: the lower legs with the ankles, the hanging breasts, the ears, the upper arms with the elbows, the forearms with the wrists, the shoulders, and the soles of her feet according to the original narration, and the chest, the head, the hair, the neck, and the backs of the hands. Thus, they are twenty-eight parts[3]. Ah. Shami said: Similarly, it was recorded by H[4]. Ah.

I say: They, may Allah Almighty have mercy on them, missed two parts: first, what is below the navel to the pubic area and what corresponds to it from each side, for...

[Right Column - Urdu Translation/Explanation] ...the part which is opposite the abdomen from below the chest to the navel, Jawharah. That is, that part of the body which is opposite the chest is not that part of the back which is included in the satr (concealment) Ah. In the marginal notes of Al-Tahtawi on Maraqi al-Falah, it is stated: the side is subordinate to the abdomen; it is the same in Quniyah. And the preferred view (better) is that the part of the side connected to the abdomen follows the abdomen, as in Al-Bahr. That is, the part that meets the back follows the back, as in Tuhfat al-Akhyar Ah. In Tahtawi on Al-Durr al-Mukhtar, it is stated: If the woman is a slave girl, her parts of satr are also eight: both thighs, both buttocks, front, back, and their surroundings, abdomen, back, and the side connected to both. And for a free woman, there is an addition of these parts: both lower legs including ankles, both hanging breasts, both ears, both arms including elbows (up to the shoulders), both wrists i.e., from the elbow joint to below the wrist bones, both shoulders, and according to the original narration, the soles of both feet of a woman, chest, head, hair, neck, and the back of both hands; these are all twenty-eight parts Ah. Shami said that Imam Halbi has written similarly Ah. (T) I say: (I say) these predecessors (may Allah Almighty have mercy on them) did not mention two parts: the first is that part of the body which is from the navel to below the navel and from every side of it...

[Footnotes] 1 Rad al-Muhtar, Chapter: Conditions of Prayer, printed by Mustafa al-Babi Egypt 1/297 2 Hashiya al-Tahtawi on Maraqi al-Falah, Section on related commentaries etc., printed by Nur Muhammad Trade Book House Karachi p. 131 3 Hashiya al-Tahtawi on Al-Durr al-Mukhtar, Chapter: Conditions of Prayer, printed by Dar al-Ma'rifah Beirut 1/191 4 Rad al-Muhtar, Chapter: Conditions of Prayer, printed by Mustafa al-Babi Egypt 1/301

फतवा रज़विया - खंड 6

[बायां कॉलम - अरबी और संदर्भ] ...जो 'औराह[1] है आह। और मराकी अल-फलाह पर अल-तहतावी के हाशिये (टिप्पणी) में: जहाँ तक बगल (पहलू) का सवाल है, वह पेट के अधीन है, जैसा कि अल-कुनियाह में है। बेहतर विचार यह है कि जो हिस्सा पेट से सटा है वह पेट के अनुसार है, जैसा कि अल-बह्र में है; यानी जो हिस्सा पीठ से सटा है वह पीठ के अनुसार है, जैसा कि तोहफतुल अख़ियार[2] में है। आह। और अल-दुर्रुल मुख्तार पर तहतावी में है: यदि वह दासी है, तो उसके'औराह' के अंग भी आठ हैं: दोनों जांघें, दोनों नितंब, आगे और पीछे के निजी अंग और उनके आसपास का हिस्सा, पेट, पीठ और उनसे सटे हुए पहलू। स्वतंत्र महिला के लिए, इसमें जोड़ा जाता है: टखनों सहित दोनों पिंडलियाँ, लटके हुए दोनों स्तन, कान, कोहनियों सहित ऊपरी भुजाएँ कलाइयों सहित अग्रभुजाएँ कंधे, और मूल वर्णन के अनुसार उसके दोनों पैरों के तलवे, और सीना, सिर, बाल, गर्दन और हाथों का पिछला हिस्सा। इस प्रकार, ये अठाईस अंग हैं[3]। आह। शामी ने कहा: इसी तरह, इसे ह[4] द्वारा दर्ज किया गया था। आह।

मैं कहता हूँ: वे, अल्लाह तआला उन पर रहम करे, दो अंगों को भूल गए: पहला, नाभि के नीचे से पेड़ू (जघन क्षेत्र) तक और हर तरफ से उसके समानांतर जो हिस्सा है, क्योंकि...

[दायां कॉलम - उर्दू अनुवाद/व्याख्या] ...हिस्सा जो सीने से नीचे नाभि तक पेट के सामने है, जौहरा। यानी शरीर का वह हिस्सा जो सीने के सामने हो, वह पीठ का वह हिस्सा नहीं है जो सतर (परदे) में शामिल है आह। हाशिया तहतावी अली मराकी अल-फलाह में है: पहलू का हिस्सा पेट के अधीन है, कुनियाह में इसी तरह है। और औजह (बेहतर) यह है कि पहलू का जो हिस्सा पेट के साथ जुड़ा है वह पेट के अधीन है जैसा कि अल-बह्र में है। यानी जो पीठ के साथ मिलने वाला हिस्सा है वह पीठ के अधीन है जैसा कि तोहफतुल अख़ियार आह में है। तहतावी अली अल-दुर्रुल मुख्तार में है: यदि महिला दासी है तो उसके भी सतर के अंग आठ हैं: दोनों जांघें, दोनों नितंब, आगे, पीछे और उनका आसपास, पेट, पीठ और उन दोनों से जुड़ा पहलू। और स्वतंत्र महिला में इन अंगों की वृद्धि है: टखनों सहित दोनों पिंडलियाँ, ढलके हुए दोनों स्तन, दोनों कान, कोहनियों सहित दोनों भुजाएं(कंधों तक), दोनों कलाइयाँ यानी कोहनी के जोड़ से गट्टों के नीचे तक, दोनों कंधे, और असल रिवायत के अनुसार औरत के दोनों कदमों के तलवे, सीना, सिर, बाल, गर्दन, दोनों हाथों की पीठ; ये सभी अठाईस अंग हैं आह। शामी ने कहा कि इमाम हलबी ने इसी तरह लिखा है आह। (त) अकुल: (मैं कहता हूँ) इन

पूर्वजों (अल्लाह तआला उन पर रहम करे) ने दो अंगों का उल्लेख नहीं किया: पहला शरीर का वह हिस्सा जो नाभि से नाभि के नीचे तक और उसके हर तरफ से...

[पादलेख] 1 रद अल-मुख्तार, अध्याय: नमाज़ की शर्तें, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र द्वारा मुद्रित 1/297 2 हाशिया अल-तहतावी अली मराकी अल-फलाह, संबंधित व्याख्याओं आदि पर खंड, नूर मुहम्मद ट्रेड बुक हाउस कराची द्वारा मुद्रित पृष्ठ 131 3 हाशिया अल-तहतावी अली अल-दुर्रुल मुख्तार, अध्याय: नमाज़ की शर्तें, दार अल-मआरिफ़ा बेरूत द्वारा मुद्रित 1/191 4 रद अल-मुख्तार, अध्याय: नमाज़ की शर्तें, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र द्वारा मुद्रित 1/301

[بایاں کالم - عربی متن و حوالہ جات] الذی ھو عورۃ[1] اہ وفی حاشیۃ الطحطاوی علی مراقی الفلاح اما الجنب فانہ تبع للبطن کذا فی القنیۃ والاوجہ ان ما یلی البطن تبع لہ کما فی البحر یعنی وما یلی الظھر تبع لہ کما فی تحفۃ الاخیار[2] اہ وفی ط علی الدر المختار ان کانت امۃ فاعضاء عورتھا ثمانیۃ ایضا، الفخذان و الالیتان والقبل والدبر وما حولھما والبطن والظھر وما یلیھما زمن الجنبین و یزاد فی الحرۃ الساقان مع الکعبین والثدیان المنکسران والاذنان والعضدان مع المرفقین والذراعان مع الرسغین والکتفان و بطنا قدمیھا في روایۃ الاصل و الصدر والراس و الشعر والعنق و ظھر الکفین فھی ثمانیۃ وعشرون عضوا[3] اہ قال ش کذا حررہ ح[4] اہ

اقول: فاتھم رحمھم اللہ تعالی عضوان الاول ما تحت السرۃ الی العانۃ وما یحاذیہ من کل جانب فان

[دایاں کالم - اردو ترجمہ و تشریح] حصہ جو سینے سے نیچے ناف تک پیٹ کے مقابل ہے، جوہرۃ۔ یعنی جسم کا وہ حصہ جو سینے کے مقابل ہو وہ اس پشت کا ایسا حصہ نہیں جو ستر میں شامل ہے اھ حاشیہ طحطاوی علی مراقی الفلاح میں ہے جانب پہلو بطن کے تابع ہے قنیہ میں اسی طرح ہے، اور اوجہ (بہتر) یہ ہے کہ جو حصہ پہلو کا بطن کے ساتھ متصل ہے وہ بطن کے تابع ہے کما فی البحر۔ یعنی جو پشت کے ساتھ ملنے والا حصہ ہے وہ پشت کے تابع ہے کما فی تحفۃ الاخیار اھ طحطاوی علی الدر المختار میں ہے اگر خاتون لونڈی ہو تو اس کے بھی اعضاء ستر آٹھ ہیں دونوں رانیں، دونوں سرین، قبل، دُبر اور ان کا ارد گرد، پیٹ، پشت، اور ان دونوں سے متصل پہلو۔ اور آزاد عورت میں ان اعضاء کا اضافہ ہے دونوں پنڈلیاں ٹخنوں سمیت، ڈھلکے ہوئے دونوں پستان، دونوں کان، دونوں بازو کہنیوں سمیت (مونڈھے تک) دونوں کلائیاں یعنی کہنی کے جوڑ سے گٹوں کے نیچے تک، دونوں کاندھے، اور روایت اصل کے مطابق عورت کے دونوں قدموں کے تلوے ،

سینہ، سر، بال گردن دونوں ہاتھوں کی پشت یہ تمام اٹھائیس اعضاء ہیں اھ شامی نے کہا کہ امام حلبی نے اسی طرح تحریر کیا ہے اھ (ت) اقول: (میں کہتا ہوں) ان اسلاف رحم اللہ تعالیٰ نے دو اعضاء کا ذکر نہیں کیا پہلا جسم کا وہ حصہ جو ناف سے زیر ناف تک اور ہر جانب سے اس کے

[حواشی] 1 ردالمختار باب شروط الصلوۃ، مطبوعہ مصطفٰی البابی مصر ۱/ ۲۹۷ 2 حاشیۃ الطحطاوی علی مراقی الفلاح فصل فی المتعلقات الشروح الخ مطبوعہ نور محمد تجارت کتب گھر کراچی ص ۱۳۱ 3 حاشیۃ الطحطاوی علی الدر المختار باب شروط الصلوۃ مطبوعہ دارالمعرفہ بیروت ۱/ ۱۹۱ 4 ردالمختار باب شروط الصلوۃ مطبوعہ مصطفٰی البابی مصر ۱/ ۳۰۱

Fatawa Razawiya - Volume 6

[Left Column - Arabic]: This is not included in the abdomen and the back because it is part of the 'awrah (parts to be covered) of a man, excluding them. Nor is it in the two private parts (front and back) or the two buttocks, but it corresponds to the 'awrah in a man's case, so how much more so in hers [a woman's]? This was missed regarding both the slave-woman and the free woman. The other [limb] is what corresponds to the chest from behind up to the beginning of the back, for the back, as you know, does not include it, nor do the shoulders or the neck, as is not hidden. There is no doubt that it is 'awrah for a free woman, so it must be counted as a separate limb of hers. Thus, the number [of limbs] for her reaches thirty. And with Allah is success.

[Right Column - Urdu]: It is parallel, because this part is not included in the belly or the back, which is why this part of a man is included in the satr (body parts to be covered), whereas both the belly and the back are not included in his satr. And this part is also not included in both the private parts (front and back) and both parts of the buttocks, but it is in any case a man's satr, so why would it not be a woman's satr? This is one limb which was omitted by the predecessors regarding both the slave-woman and the free woman. The second limb is that part of the body which is opposite the chest from behind up to the beginning of the back, because you know that this part is not included in the back, nor is it included in both shoulders and the neck, as is not hidden. Despite this, there is no doubt that this part of a free woman's body is included in the satr, therefore it is proven to be counted as an independent limb of a woman. So now the number of these limbs has reached thirty. And with Allah is success. (T)

[Bottom Section - Urdu]: First Warning: From the observation of Al-Hilya, Al-Ghunya, Al-Bahr, Radd al-Muhtar etc., it is clear that regarding the feet of a free woman, our scholars (may Allah be pleased with them) have a severe difference of opinion along with a difference in 'tas'hih' (validation). According to some, it is 'awrah absolutely. Imam al-Aqta' in Sharh Quduri and Imam Qadi Khan in his Fatawa validated this, and in Al-Hilya, this was preferred with proof from hadiths. Imam Isbijabi and Imam Marghinani also adopted this. According to some, it is not 'awrah at all. Imam Burhan-ud-Din in Al-Hidaya, Imam Qadi Khan in Sharh Jami' al-Saghir, and Imam Nasafi in Al-Kafi validated this. This was adopted in Al-Muhit, and in Durr-e-Mukhtar it was called the reliable (mu'tamad) opinion, and in Maraqi al-Falah it was called the most correct of the two narrations (asahu-rwayaten). Kanz and most texts of the Book of Prayer lean towards this side. According to some, they are 'awrah outside of

prayer but not in prayer; meaning it is forbidden for a stranger to see them, but their exposure in prayer is not invalidating. This was validated in Ikhtiyar Sharh Mukhtar. Then, it is inferred from the words of Al-Khulasa etc. that these differences are only regarding the soles; the top of the foot is 'awrah by consensus. However, the words of Allama Qasim, Al-Hilya, Al-Ghunya etc. show that it is also a matter of difference, and there is no doubt that some hadiths point towards it being 'awrah, as is clear from referring to Al-Hilya etc. (as will become clear from the study of Al-Hilya etc. - T). So if one looks towards greater precaution, not only the soles but also from below the ankles down to the toenails, the entire feet should be considered 'awrah. In this way, the count of limbs...

फ़तावा रज़विया - छठा खंड

[बायां कॉलम - अरबी]: यह पेट और पीठ में शामिल नहीं है, क्योंकि यह पुरुष के'औरत' (ढकने योग्य भाग) का हिस्सा है, उन्हें छोड़कर। न ही यह दोनों गुप्तांगों (आगे और पीछे) या दोनों नितंबों में है, लेकिन यह पुरुष के मामले में 'औरत' के अनुरूप है, तो एक महिला के मामले में और अधिक क्यों नहीं होगा? यह दासी और स्वतंत्र महिला दोनों के संबंध में छूट गया था। दूसरा [अंग] वह है जो पीछे से सीने के अनुरूप पीठ की शुरुआत तक है, क्योंकि पीठ, जैसा कि आप जानते हैं, इसमें शामिल नहीं है, न ही कंधे या गर्दन, जैसा कि छिपा नहीं है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि यह एक स्वतंत्र महिला के लिए 'औरत' है, इसलिए इसे उसका एक अलग अंग माना जाना चाहिए। इस प्रकार, उसके अंगों की संख्या तीस तक पहुँच जाती है। और अल्लाह के साथ ही सफलता है।

[दायां कॉलम - उर्दू]: यह समांतर है, क्योंकि यह हिस्सा पेट या पीठ में शामिल नहीं है, इसीलिए पुरुष का यह हिस्सा सतर (ढकने वाले अंग) में शामिल है, जबकि पेट और पीठ दोनों उसके सतर में शामिल नहीं हैं। और यह हिस्सा दोनों गुप्तांगों (आगे और पीछे) और नितंबों के दोनों हिस्सों में भी शामिल नहीं है, लेकिन बहरहाल यह पुरुष का सतर है तो स्त्री का सतर क्यों नहीं होगा? यह एक ऐसा अंग है जिसका उल्लेख दासी और स्वतंत्र महिला दोनों के बारे में पूर्वजों से रह गया। शरीर का दूसरा अंग वह हिस्सा है जो सीने के सामने पीछे से पीठ की शुरुआत तक है, क्योंकि आप जानते हैं कि यह हिस्सा पीठ में शामिल नहीं है और न ही दोनों कंधों और गर्दन में शामिल है, जैसा कि स्पष्ट है। इसके बावजूद निःसंदेह स्वतंत्र महिला के शरीर का यह हिस्सा सतर में शामिल है, इसलिए इसे महिला का एक स्वतंत्र अंग मानना सिद्ध हो गया। तो अब इन अंगों की संख्या तीस (30) हो गई। अल्लाह की मदद से सफलता है। (त)

[निचला भाग - उर्दू]: पहली चेतावनी: अल-हिलिया, अल-ग़ुनिया, अल-बहर और रद-अल-मुह्तार आदि के अवलोकन से यह स्पष्ट है कि स्वतंत्र महिला के पैरों के संबंध में हमारे विद्वानों (अल्लाह उन पर प्रसन्न हो) के बीच गहरा मतभेद है और उसके पुष्टीकरण (तसहीह) में भी मतभेद है। कुछ के अनुसार, यह पूरी तरह से औरत (ढकने योग्य हिस्सा) है। इमाम अल-अकता' ने शरह कुदूरी में और इमाम काज़ी ख़ान ने अपने फ़तावा में इसकी पुष्टि की है, और अल-हिलिया में हदीसों के प्रमाण के साथ इसी को प्राथमिकता दी गई है। इमाम असबीजाबी और इमाम मरग़ीनानी ने भी इसी को अपनाया है। कुछ के अनुसार, यह बिल्कुल भी औरत नहीं है। इमाम बुरहानुद्दीन ने हिदाया में, इमाम काज़ी ख़ान ने शरह जामे-उल-सग़ीर में और इमाम नसफ़ी ने अल-काफ़ी में इसकी पुष्टि की है। इसी

को अल-मुहीत में अपनाया गया है और दुर्र-ए-मुह्तार में इसे विश्वसनीय (मोअतमद) और मराकी-उल-फ़लाह में दोनों वर्णनों में सबसे सही (असहु-रवायतैन) कहा गया है। कंज़ और प्रार्थना की पुस्तक के अधिकांश मूल ग्रंथ इसी पक्ष में देखते हैं। कुछ के अनुसार, वे प्रार्थना के बाहर औरत हैं लेकिन प्रार्थना में नहीं; यानी किसी अजनबी के लिए उन्हें देखना हराम है लेकिन प्रार्थना में उनका खुल जाना प्रार्थना को खराब नहीं करता। इख़्तियार शरह मुख़्तार में इसी की पुष्टि की गई है। फिर अल-खुलासा आदि के शब्दों से पता चलता है कि ये मतभेद केवल तलवों के बारे में हैं; पैर का ऊपरी हिस्सा सर्वसम्मति से औरत है। हालाँकि अल्लामा क़ासिम, अल-हिलिया, अल-ग़ुनिया आदि के शब्दों से पता चलता है कि वह भी विवादास्पद है, और इसमें कोई संदेह नहीं है कि कुछ हदीसें इसके औरत होने की ओर संकेत करती हैं जैसा कि अल-हिलिया आदि के संदर्भ से स्पष्ट होता है (जैसा कि अल-हिलिया आदि के अध्ययन से स्पष्ट हो जाएगा। - त)। अतः यदि अधिक सावधानी की दृष्टि से देखा जाए, तो न केवल तलवों बल्कि टखनों के नीचे से लेकर पैर के नाखूनों तक पूरे पैरों को औरत माना जाना चाहिए। इस तरह भी अंगों की गिनती...

هذا غیرداخل فی البطن والظهر لانه عورة من الرجل دونهما، ولافی الفرجین والالیتین لکنه عورة بحیاله فی الرجل فکیف فیها فهذا فاتهم فی الامة والحرة جمیعاً، والآخر ما یحاذی الصدر من خلف الی مبدأ الظهر فان الظهر کما علمت لا یشمله ولا الکتفان ولا العنق کما لا یخفی ولا شك انه عورة من الحرة فوجب ان یکون عضواً مستقلاً منها فتمت لها ثلثون و باللہ التوفیق۔

مد مقابل ہے، اس لئے کہ یہ حصہ بطن اور پشت میں شامل نہیں اس لئے مرد کا یہ حصہ ستر میں شامل ہے، جبکہ بطن و پشت دونوں اس کے ستر میں شامل نہیں، اور یہ حصہ دونوں فرجوں (قبل ودبر) اور سرین کے دونوں حصوں میں بھی شامل نہیں لیکن بہر حال میں مرد کا ستر ہے تو عورت کا ستر کیوں نہ ہوگا ایک عضو یہ ہے جس کا ذکر لونڈی اور آزاد عورت دونوں کے بارے میں اسلاف سے رہ گیا۔ دوسرا عضو جسم کا وہ حصہ جو سینے کے مقابل پیچھے سے ابتدائے پشت تک ہے کیونکہ آپ کو معلوم ہے کہ یہ حصہ پشت میں شامل نہیں اور نہ ہی دونوں کاندھوں اور گردن میں شامل ہے، جیسا کہ مخفی نہیں، اس کے باوجود بلا شک آزاد عورت کے جسم کا یہ حصہ ستر میں شامل ہے لہٰذا اس کو بھی عورت کا مستقل عضو شمار کرنا ثابت ہو گیا تو اب ان اعضا کی تعداد تیں ۳۰ ہو گئی وباللہ التوفیق۔ (ت)

تنبیہ اول : ملاحظہ حلیہ وغنیہ وبحر وردا لمختار وغیرہا سے ظاہر کہ قدم حرہ میں ہمارے علماء رضی اللہ تعالٰی عنہم کو اختلاف شدید مع اختلاف تصحیح ہے، بعض کے نزدیک مطلقاً عورت ہے، امام اقطع نے شرح قدوری اور امام قاضی خان نے اپنے فتاوٰی میں اس کی تصحیح اور حلیہ میں بدلیل احادیث اسی کی ترجیح کی امام اسبیجابی و امام مرغینانی نے اسی کو اختیار فرمایا۔ بعض کے نزدیک اصلاً عورت نہیں۔ امام برہان الدین نے ہدایہ اور امام قاضی خان نے شرح جامع صغیر اور

امام نسفی نے کافی میں اسی کی تصحیح فرمائی، اسی کو محیط میں اختیار کیا اور دُرمختار میں معتمد اور مراقی الفلاح میں اصح الروایتین کہا، کنز وغیرہ اکثر متون کتاب الصلوۃ میں اسی طرف ناظر ہیں۔ بعض کے نزدیک بیرونِ نماز عورت ہیں نماز میں نہیں، یعنی اجنبی کو انکا دیکھنا حرام مگر نماز میں کھل جانا مفسد نہیں، اختیار شرح مختار میں اسی کی تصحیح فرمائی۔ پھر کلام خلاصہ وغیرہما سے مستفاد کہ یہ اختلافات صرف تلووں میں ہیں پشتِ قدم بالاتفاق عورت نہیں، مگر کلام علامہ قاسم و حلیہ وغنیہ وغیرہا سے ظاہر کہ وہ بھی مختلف فیہ ہے اور شک نہیں کہ بعض احادیث اس کے عورت ہونے کی طرف ناظر کما یظھر بمراجعۃ الحلیۃ وغیرھا (جیسا کہ حلیہ وغیرہ کے مطالعہ سے یہ ظاہر ہو جائے گا۔ ت) تو اگر زیادتِ احتیاط کی طرف نظر جائے تو نہ صرف تلووں بلکہ ٹخنوں کے نیچے سے ناخن پاتک سارے پاؤں کو عورت سمجھا جائے، یوں بھی شمار اعضا

Volume 6 Fatawa Razawiyya It will remain thirty (30), and if followed according to ease, all feet parts will be excluded from being 'awrah' (private parts to be covered) and the parts will remain twenty-eight (28). A person is free in these matters to act upon whichever opinion they wish. Warning Two: Although the back of the hand is considered 'awrah' in the original school of thought (madhhab), from the perspective of evidence, this narration is strong: that from the wrists down to the nails, both hands are not 'awrah' at all.

Arabic Text

This becomes clear by reviewing 'al-Hilya', 'al-Ghunyah', and others. And a text is mentioned therein from Abu Dawud narrated 'mursalan' (without a complete chain) from the saying of the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him): "When a girl reaches puberty (menstruation), it is not appropriate for any part of her to be seen except her face and her hands up to the wrist." 1 It is stated in 'al-Ghunyah' that the same is the case for the Quranic verse, because the meaning of 'ornament' with respect to the hand is the ring, and it is not specific to the palm of the hand; rather, its adornment on the exterior is more apparent because it is the place for the gemstone and engraving. 2 It says: because the necessity of showing it is more severe. 3 It says: thus this is the more correct opinion even if it is not the 'Zahir al-Riwayah' (most prominent transmission of the school). 4 Similarly, it is stated in 'Maraqi [al-Falah]' and its commentary by al-Tahtawi: (The entire body of a free woman is 'awrah' except her face and her hands—their palm and their back—according to the more correct and chosen

Urdu Translation

This becomes clear through the study of 'Ghunyah' and other books, and in this regard, that instruction of the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) is also mentioned as a textual proof, which is narrated 'mursalan' according to Imam Abu Dawud: "When a girl reaches puberty, it is not permissible to see any part of her body except her face and hands up to the wrists." In 'Ghunyah' it was stated that this is also proven from the Quranic verse. Because 'ornament' is in respect of the hand and that is the ring, and it is not specific only to the palm, rather its adornment is greater on the back of the hand because the back is the place for the gemstone and engraving. And it was also said that there is a severe necessity in its exposure, then it was said: although this is 'Ghayr Zahir al-Riwayah' (not the apparent narration), it is the most correct, etc. Similarly, it is in 'Maraqi al-Falah' and its commentary 'Tahtawi': (According to the most correct school of thought, the entire body of a free woman except the face and the

Arabic Text	Urdu Translation
opinion), even if it is contrary to 'Zahir al-Riwayah'. 5 Thus said al-Shami.	palms—whether their inside or outside—is 'awrah' [to be covered]; this is the chosen one), although this is against 'Zahir al-Riwayah'.

1 Kitab al-Marasil, Chapter on Clothing, Hadith 397, published by al-Maktabah al-'Ilmiyyah, Lahore, p. 175. 2 Kitab al-Marasil, Chapter on Clothing, Hadith 397, published by al-Maktabah al-'Ilmiyyah, Lahore, p. 175. 3 Kitab al-Marasil, Chapter on Clothing, Hadith 397, published by al-Maktabah al-'Ilmiyyah, Lahore, p. 175. 4 Ghunyat al-Mustamli Sharh Munyat al-Musalli, Third Condition, published by Suhail Academy, Lahore, p. 211. 5 Tahtawi 'ala Maraqi al-Falah, Section on conditions etc., published by Nur Muhammad Karkhana Tijarat Kutub, Karachi, p. 131.

छठा खंड फ़तावा रज़विया यह तीस (30) ही रहेगा और यदि आसानी पर अमल किया जाए, तो पैर के सभी अंग औरत (ढकने योग्य भाग) से बाहर हो जाएँगे और अंग अठ्ठाईस (28) ही रहेंगे। व्यक्ति इन मामलों में स्वतंत्र है कि वह जिस मत पर चाहे अमल करे। चेतावनी दो: हालाँकि मूल मत (मज़हब) में हाथ की पीठ औरत (ढकने योग्य भाग) है, लेकिन प्रमाण की दृष्टि से यही रिवायत (कथन) प्रबल है कि कलाई से नीचे नाखूनों तक दोनों हाथ बिल्कुल भी औरत नहीं हैं।

अरबी पाठ

यह 'अल-हिल्या', 'अल-ग़ुनिया' और अन्य के अवलोकन से स्पष्ट होता है। और उसमें अबू दाऊद की वह बात रिवायत के रूप में वर्णित है जो नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से मुरसलन (बिना पूर्ण श्रृंखला के) रिवायत है: "जब लड़की बालिग (रजस्वला) हो जाए, तो उसके चेहरे और कलाई तक के हाथों के अलावा उसके शरीर का कोई हिस्सा देखना जायज़ नहीं है।" 1 'अल-ग़ुनिया' में कहा गया है कि क़ुरानी आयत से भी यही साबित होता है, क्योंकि हाथ के संबंध में 'ज़ीनत' (सजावट) का अर्थ अंगूठी है, और वह केवल हथेली के साथ विशिष्ट नहीं है, बल्कि उसका श्रृंगार हाथ के ऊपरी हिस्से पर अधिक स्पष्ट होता है क्योंकि वह नगीना और नक्काशी की जगह है। 2 कहा गया: क्योंकि इसे दिखाने की आवश्यकता अधिक तीव्र है। 3 कहा गया: अतः यही अधिक सही है, भले ही यह 'ज़ाहिर अल-रिवायत' (पंथ का प्रमुख वर्णन) न हो। 4 इसी प्रकार 'मराक़ी [अल-फ़लाह]' और तहतावी द्वारा उसके हाशिए में कहा गया है: (सबसे सही मत के अनुसार स्वतंत्र महिला का पूरा शरीर औरत है, सिवाय उसके चेहरे और हथेलियों के—चाहे उनका

उर्दू अनुवाद

'ग़ुनिया' और अन्य पुस्तकों के अध्ययन से यह बात स्पष्ट होती है और इस संबंध में हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का वह कथन भी पाठ (नस्स) के रूप में वर्णित किया गया है जो इमाम अबू दाऊद के यहाँ मुरसलन वर्णित है: "जब लड़की बालिग हो जाए तो उसके चेहरे और कलाई तक हाथ के अलावा उसके शरीर के किसी हिस्से को देखना जायज़ नहीं है।" 'ग़ुनिया' में कहा गया कि क़ुरानी आयत से भी यही साबित होता है। क्योंकि ज़ीनत हाथ के एतबार से है और वह अंगूठी में है और वह केवल हथेली के साथ ही खास नहीं है बल्कि उसकी ज़ीनत हथेली के ऊपरी हिस्से में ज़्यादा होगी क्योंकि ज़ाहिर ही नगीना और नक़्श की जगह है, और यह भी कहा कि इसके प्रकट करने में कड़ी ज़रूरत है, फिर कहा यह भले ही ग़ैर ज़ाहिर अल-रिवायत है लेकिन सबसे सही यही है आदि। इसी प्रकार 'मराक़ी अल-फ़लाह' और उसके हाशिए तहतावी में है: (सबसे सही मत के अनुसार आज़ाद औरत का तमाम बदन सिवाए चेहरे और हथेलियों के चाहे

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद
अंदरूनी हिस्सा हो या बाहरी—यही चुना हुआ मत है), भले ही यह 'ज़ाहिर अल-रिवायत' के विरुद्ध हो। 5 अल-शामी ने कहा।	उनका अंदर हो या ज़ाहिर, औरत का सतर है, यही मुख़्तार (चुना हुआ) है), भले ही यह ज़ाहिर अल-रिवायत हो।

1 किताबुल मरासील, कपड़ों के बारे में, हदीस 397, अल-मकतबातुल इल्मिया लाहौर द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 175। 2 किताबुल मरासील, कपड़ों के बारे में, हदीस 397, अल-मकतबातुल इल्मिया लाहौर द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 175। 3 किताबुल मरासील, कपड़ों के बारे में, हदीस 397, अल-मकतबातुल इल्मिया लाहौर द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 175। 4 ग़ुनियतुल मुस्तमली शरह मुनियतुल मुसल्ली, तीसरी शर्त, सुहैल एकेडमी लाहौर द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 211। 5 तहतावी अला मराक़ील फ़लाह, शर्तों से संबंधित अध्याय आदि, नूर मोहम्मद कारखाना तिज़ारत कुतुब कराची द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 131।

جلد ششم فتاوی رضویه تیس ۳۰ ہی رہے گا اور اگر آسانی پر عمل کریں تو سارے پاؤں عورت سے خارج ہو کر اعضاء اٹھائیس ۲۸ ہی رہیں گے۔ آدمی ان معاملات میں مختار ہے جس قول پر چاہے عمل کرے۔ تنبیہ دوم : پشت دست اگرچہ اصل مذہب میں عورت ہے مگر من حیث الدلیل یہی روایت قوی ہے کہ گٹوں سے نیچے ناخن تک دونوں ہاتھ اصلاً عورت نہیں ۔

Arabic Text	Urdu Translation
يظهر ذلك بمراجعة الحلية والغنية	غنیہ اور دیگر کتب کے مطالعہ سے یہ بات ظاہر ہوتی ہے
وغيرهما ونص فيه ما عند ابى داؤد	اور اس سلسلہ میں حضور صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کا وہ
مرسلا من قوله صلى الله تعالى عليه	ارشاد بھی بطور نص ذکر کیا گیا ہے جو امام ابو داؤد کے
وسلم ان الجارية اذا حاضت لم يصلح	نزدیک مرسلاً مروی ہے: جب لڑکی حائضہ ہو جائے تو اس
ان يرى منها الا وجهها ويديها الى	کے چہرے اور کلائیوں تک ہاتھ کے علاوہ اس کے جسم
المفصل1 قال في الغنية وكذلك الاية	کے کسی حصہ کو دیکھنا جائز نہیں۔ غنیہ میں کہا آیت
لان المراد من الزينة بالنظر الى اليد	قرآنی سے بھی یہی ثابت ہوتا ہے۔ کیونکہ زینت ہاتھ کے
هو الخاتم وهو غير مختص بباطن	اعتبار سے ہے اور وہ انگوٹھی میں ہے اور وہ باطن کف
الكف بل زينته في الظاهر اظهر لانه	کے ساتھ ہی مختص نہیں بلکہ اس کی زینت ہتھلی کے اوپر
موضع الفص والنقش2 قال ولان	میں زیادہ ہوگی کیونکہ ظاہر ہی نگینہ و نقش کا محل ہے،
الضرورة في ابدائه اشد3 قال فكان هذا	اور یہ بھی کہا کہ اس کے اظہار میں شدید ضرورت ہے،
هو الاصح وان كان غير ظاهر	پھر کہا یہ اگر چہ غیر ظاہر الرویہ ہے مگر اصح یہی ہے
الرواية4 الخ وكذلك قال في مراقى	الخ اسی طرح مراقی الفلاح اور اس کے حاشیہ طحطاوی
وحاشيتها للطحطاوى (جميع بدن الحرة	میں ہے (اصح مذہب کے مطابق آزاد عورت کا تمام بدن

Arabic Text	Urdu Translation
عورة الاوجهها وكفيها باطنهما و ظاهرهما في الاصح وهو المختار) وان كان خلاف ظاهر الرواية5 اه قال الشامي	ماسوائے چہرے اور ہتھیلیوں کے خواہ ان کا باطن ہو یا ظاہر عورت کا ستر ہے یہی مختار ہے) اگر چہ یہ ظاہر الروایہ

1 کتاب المراسیل ماجاء فی اللباس حدیث ۳۹۷ مطبوعہ المکتبۃ العلمیۃ لاہور ص ۱۷۵ 2 کتاب المراسیل ماجاء فی اللباس حدیث ۳۹۷ مطبوعہ المکتبۃ العلمیۃ لاہور ص ۱۷۵ 3 کتاب المراسیل ماجاء فی اللباس حدیث ۳۹۷ مطبوعہ المکتبۃ العلمیۃ لاہور ص ۱۷۵ 4 غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی الشرط الثالث مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۲۱۱ 5 طحطاوی علی مراقی الفلاح فصل فی متعلقات الشروط الخ مطبوعہ نور محمد کارخانہ تجارت کتب کراچی ص ۱۳۱

Fatawa Razawiya Volume 6

[Top Right Box - Arabic]: "And likewise, it was supported in Al-Hilya, and he said: It was followed in Al-Muheet and Sharh al-Jami' of Qadi Khan. 1" [Top Left Box - Urdu]: ...is against this. Imam Shami said that Al-Hilya has supported it in this way and said that Al-Muheet and Qadi Khan followed the same in Sharh al-Jami'. (T)

So, according to the strong narration, if one raises the back of the hand, the limb of the woman remains [covered], and if, for ease, one acts upon the corrected saying and the soles [of the feet] remain outside, then they are only twenty-six, and according to the original school of thought, they are thirty. And Allah, the Exalted, knows best.

Problem No. 392: From Calcutta, Nal Moti Gali 18, sent by Mirza Ghulam Qadir Baig Sahib, 21 Jumada al-Akhirah 1312 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: Is it permissible to say "I am offering the prayer of Allah the Exalted" or not? A person forbids saying this. Please clarify and be rewarded.

The Answer: It is undoubtedly permissible. If the prohibition by that person means that these words should not be uttered by the tongue while making the intention, then it is a weak and unreliable opinion. The general books of jurisprudence have stated the permissibility of verbalizing the intention, rather its desirability (Mustahab). It is stated in Durr al-Mukhtar:

[Middle Right Box - Arabic]: "Verbalizing it is recommended (Mustahab), and that is the chosen view. It is also said to be Sunnah, meaning the predecessors loved it or it is the way of our scholars. 2" [Middle Left Box - Urdu]: Making the intention with the tongue is recommended; this is the chosen opinion. Some have called it Sunnah, meaning the pious predecessors liked it or it is the way of our scholars. (T)

And if the intention was to prohibit the attribution of the prayer to Allah (Almighty and Glorious), then it is an extremely ugly ignorance. That person himself must be saying "At-tahiyyatu lillahi was-salawatu" (All compliments and prayers are for Allah) in every prayer (meaning all greetings and prayers belong to Allah). It is clear that the attribution here is possessive (Lami’yah). In short, there is absolutely no reason for this prohibition. And Allah, the Exalted, knows best.

Problem No. 393: From Budaun, Qazi Mohalla, house of Maulvi Baqa-Ullah Rais, sent by Maulvi Abdul Hameed Sahib, 4 Rajab al-Murajjab 1312 AH. To the presence of the highly titled, served and respected Maulana Sahib, may his blessings continue. The

sincere servant Abdul Hameed, after paying respects, reports that a fatwa written by himself according to the guidance of his teacher, Maulana Hafiz Bakhsh...

---

1 Radd al-Muhtar, Chapter: Conditions of Prayer, printed by Mujtabai, Delhi, 1/298 2 Durr al-Mukhtar, Chapter: Conditions of Prayer, printed by Mujtabai, Delhi, 1/71

फ़तावा रज़विया जिल्द 6

[ऊपरी दायां बॉक्स - अरबी]: "और इसी तरह अल-हिलिया में इसका समर्थन किया गया, और उन्होंने कहा: अल-मुहीत और क़ाज़ी खान की शर्ह अल-जामी में इसका अनुसरण किया गया है। 1" [ऊपरी बायां बॉक्स - उर्दू]: ...इसके खिलाफ है। इमाम शामी ने फरमाया कि अल-हिलिया में इस तरह इसकी ताईद की गई है और कहा है कि मुहीत और क़ाज़ी खान ने शर्ह अल-जामी में इसी का अनुसरण किया है। (त)

तो मज़बूत रिवायत के अनुसार अगर हाथ की पीठ निकाल कर उठाएं तो औरत का अंग (ढका हुआ) रहे, और अगर आसानी की दृष्टि से उस सही ठहराए गए कथन पर अमल किया जाए और तलवे बाहर रहें तो वे केवल छब्बीस ही हैं, और मूल मत (मज़हब) पर तीस हैं। और अल्लाह सुब्हानहु व तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला नंबर 392: कलकत्ता, नल मोती गली 18 से, प्रेषक मिर्ज़ा गुलाम कादिर बेग साहब, 21 जमादी उल-आखिर 1312 हिजरी। उलमा-ए-दीन इस मसले में क्या फरमाते हैं कि यह कहना "मैं अल्लाह तआला की नमाज़ पढ़ता हूँ" जायज़ है या नहीं? एक साहब ऐसा कहने से मना करते हैं। बयान करें और सवाब पाएं।

अल-जवाब: निःसंदेह यह जायज़ है। अगर उन साहब के मना करने का अर्थ यह है कि नियत करते समय ज़बान से ये शब्द न कहे जाएँ तो यह एक कमज़ोर और अविश्वसनीय कथन है। आम किताबों में नियत को ज़बान से कहने की अनुमति, बल्कि इसके मुस्तहब (पसंदीदा) होने का स्पष्ट उल्लेख है। दुर्रे मुख्तार में है:

[मध्य दायां बॉक्स - अरबी]: "इसे ज़बान से कहना मुस्तहब है और यही पसंदीदा राय है, और इसे सुन्नत भी कहा गया है, जिसका अर्थ है कि पूर्वजों ने इसे पसंद किया या यह हमारे उलमा का तरीका है। 2" [मध्य बायां बॉक्स - उर्दू]: नियत ज़बान के साथ करना मुस्तहब है, मुख्तार कॉल यही है। कुछ ने सुन्नत कहा यानी इसे असलाफ़ पसंद करते थे या हमारे उलमा का तरीका है। (त)

और अगर यह मक़सद है कि नमाज़ को अल्लाह अज़्ज़ वजल् की तरफ निस्बत करना मना है, तो यह अत्यंत अज्ञानता है। वे साहब भी हर नमाज़ में "अत-तहीयातु लिल्लाहि वस-सलवातु" कहते होंगे (कि तमाम इबादतें और तमाम नमाज़ें अल्लाह के लिए हैं), यहाँ ज़ाहिर है कि निस्बत 'लाम' वाली

(मलकियत की) है। कुल मिलाकर इस मनाही की कोई वजह नहीं है। और अल्लाह सुब्हानहु व तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला नंबर 393: बदायूँ से, काज़ी मोहल्ला, मकान मौलवी बका-उल्लाह रईस, प्रेषक मौलवी अब्दुल हमीद साहब, 4 रजब अल-मुरज्जब 1312 हिजरी। उच्च पदवी वाले मखदूम और मोअज़्ज़म बंदा जनाब मौलाना साहब (उनकी बरकतें बनी रहें), निष्कपट सेवक अब्दुल हमीद आदाब बजा लाने के बाद गुज़ारिश करता है कि एक फतवा जो खुद लिखा है, अपने उस्ताद जनाब मौलाना हाफिज़ बख्श के निर्देशानुसार...

---

1 रद अल-मुह्तार, बाब: नमाज़ की शर्तें, मुजतबाई दिल्ली 1/298 2 दुर्रे मुख्तार, बाब: नमाज़ की शर्तें, मुजतबाई दिल्ली 1/71

पृष्ठ 46/736

[دایاں باکس - عربی]: وکذا ایدہ في حلیة وقال مشی علیه في المحیط و شرح الجامع لقاضي خان ۱ھ
[بایاں باکس - اردو]: کے خلاف ہے اھ امام شامی نے فرمایا اس طرح حلیہ میں اس کی تائید کی ہے اور کہا ہے کہ محیط اور قاضی خان نے شرح الجامع میں اسی کی اتباع کی ہے اھ (ت)

تو روایت قوی پر دوپشتِ دست نکال کر اٹھائیں ہی عضوِ عورت رہے، اور اگر بنظرِ آسانی اُس قول مصحح پر عمل کر کے تلوے بھی خارج رہیں تو صرف چھبیں ہی ہیں اور اصل مذہب پر تمیں ۳۰ واللہ سبحنہ و تعالٰی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۳۹۲ : از کلکتہ نل موتی گلی ۱۸ مرسلہ جناب مرزا غلام قادر بیگ صاحب ۲۱ جمادی الاخر ۱۳۱۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں یہ کہنا کہ نماز خدائے تعالٰی کی پڑھتا ہوں جائز ہے یا نہیں؟ ایک صاحب اس کہنے کو منع کرتے ہیں۔ بینوا توجروا

الجواب: بلا شبہ جائز ہے ان صاحب کے منع کرنے کے اگر یہ معنی ہیں کہ نیت کرتے وقت زبان سے یہ الفاظ نہ کہے جائیں تو ایک قول ضعیف و نا معتمد ہے، عامہ کتب میں جواز تلفظ بہ نیت بلکہ اس کے استحباب کی تصریح فرمائی۔ دُر مختار میں ہے :

[دایاں باکس - عربی]: التلفظ بها مستحب هو المختار و قیل سنة یعنی احبه السلف او سنة علمائنا۔ ۲
[بایاں باکس - اردو]: نیت زبان کے ساتھ کرنا مستحب ہے مختار قول یہی ہے بعض نے سنت کہا یعنی اسے اسلاف پسند کرتے تھے یا ہمارے علماء کا طریقہ ہے (ت)

اور اگر یہ مراد نماز کو اللہ عزوجل کی طرف اضافت کرنا منع ہے تو سخت جہل اشنع ہے، یہ صاحب بھی ہر نماز میں التحیات للہ والصلوات کہتے ہونگے (کہ سب مجرے اور سب نمازیں اللہ

کی ہیں) پر ظاہر کہ یہاں اضافت بھی لامیہ ہے، بالجملہ اس منع کی کوئی وجہ اصلاً نہیں واللہ سبحنہ و تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۳۹۳ : از بدایوں قاضی محلہ مکان مولوی بقاء اللہ رئیس مرسلہ مولوی عبدالحمید صاحب ۴ رجب المرجب ۱۳۱۲ھ بجناب معلی القاب مخدوم و معظم بندہ جناب مولینا صاحب دام فیوضہ خادم بے ریا عبدالحمید بعد بجا آوری آداب گزارش کرتا ہے کہ ایک فتویٰ اپنا لکھا ہوا حسب ہدایت اپنے استاد جناب مولانا حافظ بخش کے

---

1 رد المحتار باب شروط الصلوۃ مطبوعہ مجتبائی دہلی ۲۹۸/۱ 2 در مختار باب شروط الصلوۃ مطبوعہ مجتبائی دہلی ۷۱/۱

Fatawa Ridawiyya, Volume 6

I am sending this for your noble certification. Please review it and adorn it with your seal. If any errors are found upon review, please correct them and oblige. With great respect.

Question: What do the scholars of religion and jurists of Sharia say about this matter: should the words "today" or "this" be added in the intention (niyyah) for obligatory (fard) and mandatory (wajib) prayers? For example, saying "I intend the obligatory prayer of today's Dhuhr or Asr," or "this Dhuhr or Asr." And if one does not do so, will the prayer be valid or not?

Summary Answer: There is a difference of opinion among the jurists on this matter. Thus, Qadhi Khan has not even considered the intention valid without the word "today" or "this," as stated in his Fatawa, and similarly in Alamgiriyya (as it is in their Fatawa and likewise in Fatawa Alamgiri - Ed.). And in Durr-ul-Mukhtar, it is stated that specific determination is not necessary. Therefore, according to the first two opinions, prayer will not be valid with a general intention without the words "today" or "this," but according to the author of Durr-ul-Mukhtar, it will be valid. However, since avoiding disagreement is unanimously recommended (mustahabb), and the same Durr-ul-Mukhtar has expressed the priority (awlawiyyat) of specific determination and has stated the chosen (mukhtar) wording, therefore, it is better and chosen that one should definitely specify the time using the word "today" or "this." Otherwise, one will be abandoning what is better. And when one does not have the recognition of the time – and this is general in this era as most people pray after losing track of time – then one will be accountable before Allah. And Allah Almighty knows best. Explain and be rewarded.

The Answer: Intention (niyyah) is the name of the heart's resolve; verbalization is not essentially necessary, but it is a highly recommended act. So, setting aside the words "this" or "today," if one does not bring even a single letter of intention to the tongue at all, there is absolutely no harm for anyone. The scholars have defined the heart's resolve such that if asked at the time of intending which prayer one wishes to perform, one can immediately state it without hesitation, as mentioned by Imam al-Zayla'i in at-Tabyin and others in their works (as Imam al-Zayla'i mentioned in Tabyin al-Haqa'iq and other scholars mentioned in their books - Ed.). There is no doubt that a person who, during a prayer of its time, can state that he intends, for example, the Dhuhr prayer, will also be able to state that it is today's Dhuhr. It might never occur

that upon being asked during the intention, one can say he is praying Dhuhr but keeps wondering for which day. Thus, in the heart's resolve, along with the specific type of prayer, personal specification is also necessary, and that much is sufficient. Yes, if a person intentionally intends an unspecified Dhuhr, meaning he doesn't intend any particular Dhuhr but just says "I am praying absolute Dhuhr" regardless of which day it belongs to, then without a doubt, his prayer will not be valid. "For specific determination in obligatory prayers is mandatory by consensus; the disagreement is only regarding the lack of consideration (not explicitly thinking about it), not the consideration of absence (specifically intending it's not a particular day's prayer)." (In obligatory prayers, determining the time is mandatory by consensus; there is a difference in 'not considering' the time, but there is no difference in 'considering the absence' of time - Ed.). In this way, these matters are not actually a place for disagreement. Hence, Muhaqqiq Akmal-ud-Din...

फ़तावा रिज़विया, छठा खंड

मैं यह आपके प्रमाणन के लिए भेज रहा हूँ। कृपया इसकी समीक्षा करें और अपनी मुहर से इसे सुशोभित करें। यदि समीक्षा के दौरान कोई त्रुटि मिले, तो उसे सुधार कर कृतार्थ करें। अत्यधिक सम्मान के साथ।

सवाल: धर्म के विद्वान और शरीयत के मुफ्ती इस मामले में क्या कहते हैं कि फ़र्ज़ (अनिवार्य) और वाजिब (आवश्यक) नमाज़ों की नीयत (संकल्प) में "आज" या "इस" शब्द जोड़ना चाहिए या नहीं? उदाहरण के लिए, यह कहना कि "मैं आज की ज़ुहर या असर की फ़र्ज़ नमाज़ की नीयत करता हूँ," या "इस ज़ुहर या असर की।" और यदि कोई ऐसा नहीं करता है, तो क्या नमाज़ अदा होगी या नहीं?

संक्षिप्त उत्तर: इस मामले में न्यायविदों (फ़ुकहा) के बीच मतभेद है। क़ाज़ी ख़ान ने "आज" या "इस" शब्द के बिना नीयत को मान्य ही नहीं माना है, जैसा कि उनके फ़तावा में है और इसी तरह आलमगिरी में भी है। और दुर्रे मुख़्तार में है कि विशिष्ट निर्धारण ज़रूरी नहीं है। इसलिए, पहले दो मतों के अनुसार "आज" या "इस" शब्द के बिना सामान्य नीयत से नमाज़ अदा नहीं होगी, और दुर्रे मुख़्तार के लेखक के मत के अनुसार अदा हो जाएगी। लेकिन चूँकि मतभेदों से बचना सर्वसम्मति से सराहनीय (मुस्तहब) है, और उसी दुर्रे मुख़्तार में विशिष्ट निर्धारण की प्राथमिकता (औलवियत) ज़ाहिर की गई है और उसे ही 'मुख़्तार' (चुना हुआ) कहा गया है, इसलिए बेहतर और चुना हुआ तरीका यही है कि समय का निर्धारण "आज" या "इस" शब्द से ज़रूर कर लिया जाए, अन्यथा वह श्रेष्ठता को छोड़ने वाला होगा। और जब उसे समय की पहचान न हो - और इस युग में यह सामान्य है कि अक्सर लोग समय खोकर नमाज़ पढ़ते हैं - तो वह अल्लाह के समक्ष उत्तरदायी होगा। और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है। स्पष्ट करें और पुण्य पाएँ।

उत्तर: नीयत दिल के इरादे का नाम है; ज़ुबान से कहना अनिवार्य नहीं है, यह एक बहुत ही सराहनीय कार्य है। तो "इस" या "आज" शब्दों को छोड़िए, यदि कोई व्यक्ति ज़ुबान पर नीयत का एक अक्षर भी न लाए तो इसमें किसी का कोई नुक़सान नहीं है। विद्वानों ने दिल के इरादे की यह सीमा तय की है कि नीयत करते समय यदि पूछा जाए कि कौन सी नमाज़ पढ़ना चाहते हो, तो वह बिना किसी हिचकिचाहट के तुरंत बता दे, जैसा कि इमाम ज़ैली ने 'अत-तबीन' और अन्य ने अपनी किताबों में उल्लेख किया है। और इसमें कोई संदेह नहीं है कि जो व्यक्ति समय की नमाज़ में यह बता देगा कि उदाहरण के लिए ज़ुहर की नमाज़ का इरादा है, वह यह भी बता देगा कि यह आज की ज़ुहर है।

शायद यह स्थिति कभी न आए कि नीयत करते समय पूछने पर यह तो बता दे कि ज़ुहर पढ़ता हूँ और यह सोचता रहे कि कब की। अतः दिल के इरादे में नमाज़ के प्रकार के साथ-साथ व्यक्तिगत विशिष्टता भी ज़रूरी होती है और इतना ही पर्याप्त है। हाँ, यदि कोई व्यक्ति जानबूझकर किसी अनिर्धारित ज़ुहर की नीयत करता है, यानी किसी विशेष ज़ुहर का इरादा नहीं करता बल्कि सामान्य ज़ुहर पढ़ता हूँ चाहे वह किसी भी दिन की हो, तो निस्संदेह उसकी नमाज़ नहीं होगी। "क्योंकि फ़र्ज़ नमाज़ों में निर्धारण आम सहमति से अनिवार्य है; मतभेद केवल 'ध्यान न देने' (अदम लेहाज़) में है, 'अनुपस्थिति का ध्यान' (लेहाज़े अदम) रखने में कोई मतभेद नहीं है।" (फ़र्ज़ों में समय का निर्धारण सर्वसम्मति से फ़र्ज़ है, ध्यान न देने में मतभेद है, अनुपस्थिति मानने में कोई मतभेद नहीं है।)। इस प्रकार ये मसले वास्तव में विवाद का विषय नहीं हैं। इसलिए मुहाक़्क़िक़ अकमल-उद-दीन...

पृष्ठ 47/736

فتاوی رضویہ جلد ششم واسطے تصدیق جناب والا کو بھیجتا ہوں ملاحظہ فرما کر مُہر سے مزین فرما دیجئے، اور اگر کوئی غلطی ملاحظہ سے گزرے تو درست فرما کر ممنون فرمائیے، زیادہ ادب۔ سوال: کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع اس مسئلہ میں کہ فرائض اور واجبات کی نیت میں لفظ "آج" یا "اس" کا اضافہ کرنا چاہیئے یا نہیں؟ مثلاً یوں کہنا کہ نیت کرتا ہوں فرض آج کے ظہر یا عصر کی، یا اس ظہر یا عصر کی، اور اگر نہیں کرے گا تو نماز ادا ہو گی یا نہیں؟

خلاصہ جواب: صورتِ مستفسرہ میں فقہا کا اختلاف ہے چنانچہ قاضی خاں نے بلا لفظ "آج" یا "اس" کے نیت کو جائز ہی نہیں رکھا ہے کما فی فتاواہ و ہکذا فی العالمگیریہ (جیسا کہ ان کے فتاویٰ میں ہے اور اسی طرح فتاویٰ عالمگیری میں ہے۔ت) اور در مختار میں ہے کہ تعین ضروری نہیں۔ پس بموجبِ قولینِ اولین کے بلا لفظ "آج" یا "اس" کے مطلق نیت سے نماز ادا نہ ہو گی اور بموجبِ قولِ صاحبِ در مختار کے ادا ہو جائیگی لیکن چونکہ خروج عن الخلاف بالاجماع مستحب ہے اور اسی دُرّ مختار میں نسبتِ تعین کی اولویت ظاہر فرمائی ہے اور بلفظ و ہوا لمختار ارشاد کہا ہے پس اولیٰ اور مختار یہ ہی ہے کہ تعینِ وقت کی لفظ "آج" یا "اس" سے ضرور کر لے ورنہ تارکِ اولویت ہوگا اور جب شناختِ وقت کی نہیں رکھتا اور یہ بالعموم ہے کہ اس عہد میں اکثر لوگ وقت کھو کر نماز پڑھتے ہیں تو عنداللہ مواخذہ دار رہے گا۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ بیّنوا توجروا۔

الجواب: نیت قصدِ قلبی کا نام ہے تلفظ اصلاً ضروری نہیں نہایت کارِ مستحب ہے تو لفظ اس یا آج در کنار سرے سے کوئی حرفِ نیت زبان پر نہ لایا تو ہر گز کسی کا حرج نہیں قصدِ قلبی کی علمائے کرام نے یہ تحدید فرمائی کہ نیت کرتے وقت پوچھا جائے کہ کون سی نماز پڑھنا چاہتا ہے تو فوراً بے تامل بتادے کما ذکرہ الامام الزیلعی فی التبیین وغیرہ فی غیرہ (جیسا کہ امام زیلعی نے اسے تبیین الحقائق میں اور دیگر علماء نے اپنی کتب میں ذکر کیا۔ ت) اور شک نہیں کہ جو شخص

نمازِ وقتی میں یہ بتادے گا کہ مثلاً نمازِ ظہر کا ارادہ وہ یہ بھی بتادیگا کہ آج کی ظہر شاید یہ صورت کبھی واقع نہ ہو کہ نیت کرتے وقت دریافت کئے سے یہ تو بتادے کہ ظہر پڑھتا ہوں اور یہ سوچتا رہے کہ کب کی تو قصدِ قلب میں تعین نوعی نماز کے ساتھ تعینِ شخصی بھی ضروری ہوتی ہے اور اسی قدر کافی ہے، ہاں اگر کوئی شخص بالقصدِ ظہرِ غیرِ معین کی نیت کرے یعنی کسی خاص ظہر کا قصد نہیں کرتا بلکہ مطلق ظہر پڑھتا ہوں چاہے وہ کسی دن کی ہو تو بلا شبہ اُس کی نماز نہ ہوگی فان التعیین فی الفرض فرض بالوفاق وانما الخلف فی عدم اللحاظ لا لحاظ العدم (فرائض میں تعین وقت بالاتفاق فرض ہے عدم لحاظ میں اختلاف ہے لحاظ عدم میں کوئی اختلاف نہیں ہے۔ ت) اس طور پر تو یہ مسائل اصلاً محل خلاف نہیں۔ ولہذا محقق اکمل الدین

Fatawa Ridawiyya, Volume 6

Babarti stated in *Inaya Sharh Hidaya*:

I say: The prior condition, which is that he knows in his heart which prayer he is performing, eliminates the basis for these objections and others. For the core requirement for achieving differentiation (tamyiz) is the intention and aim of the worshipper, and this is the intended goal as cited in *Radd al-Muhtar* and affirmed here and in *Minhat al-Khaliq*; it was also supported by the scholar Ismail, the Mufti of Damascus, as mentioned in *al-Minha* (T).

However, in the case of multiple missed prayers, especially in large numbers, this situation is necessary—rather, it frequently occurs among the general public—where one intends for Zuhr, yet there is no specification of which day or date's Zuhr it is. Despite the differences in the correction of the school of thought (madhhab), the most correct and cautious view is that if the day is not specified, the prayer will not be valid. But in long durations or high numbers, where is the memory of determining the specific day? Therefore, scholars have established an easy method for this: to consistently intend for the 'first' or 'last' Zuhr or Asr. Once one is performed, then among the remainder, that which is the 'first' or 'last' will be fulfilled, and thus one reasons by analogy until the end.

In *al-Tanwir*: Specification (ta'yin) is indispensable for an obligatory prayer, even if it is a makeup (qada). It says in *al-Durr*: However, he specifies 'Zuhr of such-and-such day' according to the relied-upon view. The easier method is the intention of 'the first Zuhr upon him' or 'the last Zuhr'. In *al-Quhistani* from *al-Minya*: This is not a condition in the most correct view, and it will be mentioned at the end of the book. Ash-Shami said: The commentator there reported from *al-Ashbah* that it is problematic and contrary to what our associates like Qadi Khan and others mentioned, and the most correct view is the requirement of the condition. I say: and likewise...

---

1. *Al-Inaya with Fath al-Qadir*, Chapter on Conditions of Prayer, printed by Nuriyya Ridawiyya, Sukkur, 1/233; *Radd al-Muhtar*, Chapter on Conditions of Prayer, printed by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/308.
2. *Durr al-Mukhtar*, Chapter on Conditions of Prayer, printed by Matba' Mujtabai, Delhi, 1/76.

फतावा रिज़विया, जिल्द छठा

बाबर्ती ने इनाया शरह हिदाया में फ़रमाया:

मैं कहता हूँ: पूर्व शर्त यह है कि नमाज़ी दिल से यह जानता हो कि वह कौन सी नमाज़ अदा कर रहा है। यह शर्त इन आपत्तियों आदि की बुनियाद को खत्म कर देती है, क्योंकि तमीज़ (पहचान) हासिल करने के लिए नमाज़ी का इरादा और नियत ज़रूरी है और यही मक़सद है। जैसा कि रद्दुल् मुहतार में इसे नक़ल किया गया और यहाँ और मिन्हातुल् ख़ालिक़ में इसे बरक़रार रखा गया है, और इसकी ताईद दमिश्क़ के मुफ़्ती अल्लामा इस्माईल ने की है, जैसा कि मिन्हा में है (त)।

अलबत्ता छूटी हुई नमाज़ों (फवाइत) की अधिकता की स्थिति में यह सूरत ज़रूरी बल्कि बहुत से आम लोगों के साथ पेश आती है कि जोहर की नियत कर ली और यह तय नहीं कि किस दिन या तारीख़ की जोहर है। यहाँ मज़हब की तसहीह (सुधार) के मतभेद के बावजूद सबसे सही और एहतियाती (सावधानीपूर्ण) बात यही है कि अगर दिन तय न किया जाए तो नमाज़ अदा ही नहीं होगी। मगर लंबी अवधि या बड़ी संख्या में दिन की ताईन (निर्धारण) कहाँ याद रहती है? लिहाज़ा उलेमा ने इसका आसान तरीका यह रखा है कि सबसे पहली या सबसे पिछली जोहर या असर की नियत करता रहे। जब एक पढ़ लेगा तो बाक़ी में जो सबसे पहली या पिछली है वह अदा होगी, और इसी तरह अंत तक क़यास किया जाए।

तनवीरुल अबसार में है कि फ़र्ज़ नमाज़ में ताईन ज़रूरी है चाहे वह क़ज़ा ही क्यों न हो। दुर्रे मुख़्तार में कहा कि मोअतमिद (विश्वसनीय) कौल के मुताबिक़ ताईन यह है कि 'फलां दिन की जोहर अदा कर रहा हूँ।' इस मसले में आसान तरीक़ा यह है कि यूँ नियत कर ले कि 'पहली जोहर जो उस पर लाज़िम है वह पढ़ता है', या 'आख़िरी जोहर जो उस पर लाज़िम है वह पढ़ता है।' कुहिस्तानी में मिन्या के हवाले से है कि सही यह है कि यह कहना शर्त नहीं, और जल्द ही किताब के अंत में इसका ज़िक्र आएगा। शामी ने कहा, शरीह ने वहाँ अल-अशबाह से नक़ल किया कि यह पेचीदा है और हमारे साथियों जैसे क़ाज़ी ख़ान वगैरह के बयान के ख़िलाफ़ है, और सही यह है कि यह शर्त है। मैं कहता हूँ: और इसी तरह...

---

1. अल-इनाया मअ फ़तहुल क़दीर, बाब शरुतुल सलात, नूरिया रिज़विया सुक्कुर, 1/233; रद्दुल् मुहतार, बाब शरुतुल सलात, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 1/308.

2. दुर्रे मुख्तार, बाब शरुतुल सलात, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 1/76.

पृष्ठ 48 / 736

فتاوی رضویہ جلد ششم

بابرتی نے عنایہ شرح ہدایہ میں فرمایا:

اقول: الشرط المتقدم وھو ان یعلم بقلبہ ای صلاۃ یصلی یحسم مادۃ ہذہ المقالات وغیرہا فان العمدۃ علیہ لحصول التمیز بہ وہو المقصود کما نقلہ فی ردالمحتار واقرہ ہہنا وفی منحۃ الخالق وایدہ العلامۃ اسمٰعیل مفتی دمشق کما فی المنحۃ۔ میں کہتا ہوں شرط مقدم یہ ہے کہ نمازی دل سے یہ جانتا ہو کہ وہ کون سی نماز ادا کر رہا ہے یہ شرط ان اعتراضات وغیرہ کی بنیاد کو ختم کر دیتی ہے کیونکہ حصول تمیز کے لئے نمازی پر قصد و نیت ضروری ہے اور یہی مقصود ہے اھ ردالمحتار نے یہاں اسے نقل کر کے مقرر رکھا ہے اور منحۃ الخالق میں اسے نقل کیا ہے ، نیز اس کی تائید مفتی دمشق شیخ اسمٰعیل نے کی ، ملاحظہ ہو منحۃ الخالق (ت)

البتہ تعدد فوائت خصوصاً کثرت کی حالت میں یہ صورت ضرور ہو سکتی بلکہ بہت عوام سے واقع ہوتی ہے کہ ظہر کی نیت کرلی اور یہ تعین کچھ نہیں کہ کس دن تاریخ کی ظہر یہاں باوصف اختلاف تصحیح مذہب اصح واحوط یہی ہے کہ دن کی تخصیص نہ کی تو نماز ادا ہی نہ ہو گی مگر طول مدت یا کثرت عدد میں تعیین روز کہاں یاد رہتی ہے لہذا علماء نے اس کا سہل طریقہ یہ رکھا ہے کہ سب سے پہلی یا سب سے پچھلی ظہر یا عصر کی نیت کرتا رہے جب ایک پڑھ لے گا تو باقی میں جو سب سے پہلی یا پچھلی ہے وہ ادا ہوگی و علی ہذا القیاس آخر تک۔

فی التنویر لابد من التعیین لفرض ولو قضاء قال فی الدرلکنہ یعین ظہر یوم کذا علی المعتمد والاسہل نیۃ اول ظہر علیہ وأخر ظہر وفی القہستانی عن المنیۃ لا یشترط ذلک فی الاصح وسیجی آخر الکتاب قال الشامی ، نقل الشارح ہناک عن الاشباہ انہ مشکل و مخالف لما ذکرہ اصحابنا کقاضی خان وغیرہ

والاصح الاشتراط قلت وکذا تنویر الابصار میں ہے کہ اگر فرض نماز میں تعیین ضروری ہے خواہ وہ قضا ہی کیوں نہ ہوں درمختار میں کہا معتمد قول کے مطابق تعیین یہ ہے کہ فلاں دن کی ظہر ادا کر رہا ہوں اس مسئلہ میں آسان طریقہ یہ ہے کہ یوں نیت کرلے کہ پہلی ظہر جو اس پر لازم ہے وہ پڑھتا ہے۔ یا یہ کہ آخر ظہر جو اس پر لازم ہے وہ پڑھتا ہے۔ قہستانی میں منیہ کے حوالے سے ہے اصح یہ ہے کہ یہ کہنا شرط نہیں، اور عنقریب کتاب کے آخر میں اس کا ذکر آئے گا۔

---

1 العنایۃ مع فتح القدیر باب شروط الصلوۃ الخ مطبوعہ نوریہ رضویہ سکھر ۱ / ۲۳۳ ، ردالمختار باب شروط الصلوۃ الخ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱ / ۳۰۸ 2 درمختار باب شروط الصلوۃ الخ مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱ / ۷۶

[Arabic Text]: Sahhahahu fi matni al-Multaqa hunaka faqad ikhtalafa at-tashih wa al-ishtirat ahwat wa bihi jazama fil Fath hunaka kama la yakhfa. [Urdu Text]: Imam Shami states that the commentator has quoted from Al-Ashbah that (specification not being a condition) is incomprehensible and contrary to the explicit statements of our scholars like Qadi Khan and others. Rather, it being a condition is more correct. I say that in the text of Al-Multaqa, it has been corrected at this point, so a difference occurred in its correction, but making it a condition is more precautionary, and this is what was firmly stated in Fath al-Qadir here. (T)

And if there is only one missed prayer (fa'itah), then by merely intending the missed prayer, the specification of the day is automatically included.

[Arabic Text]: Fi Radd al-Muhtar 'an al-Hilyah, lau kana fi dhimmatihi zuhrun wahidun fa'itun fa'innahu yakfihi an yanwiya ma fi dhimmatihi min az-zuhri al-fa'iti wa in lam ya'lam annahu min ayyi yawm. [Urdu Text]: As it is in Radd al-Muhtar from Hilyah that if a Zuhr prayer is due as qada (missed) for someone, then it is sufficient for him to intend that he is performing his missed Zuhr prayer, even if he does not know which day's missed prayer it is. (T)

In short, regarding timely (waqti) prayers, when the occurrence of the situation is known, there is no place for disagreement or dispute. The disagreement among scholars is in that hypothetical situation where someone makes a generic specification (ta'yin-e-naw'i) for today's prayer but is completely oblivious and unmindful of the specific specification (ta'yin-e-shakhsi). In a state of consciousness, a correct intention entails the specific specification, and its lack of consideration is non-existent. However, intending the opposite is not just a lack of consideration, but a consideration of its absence. This undoubtedly invalidates the prayer and negates its validity. Therefore, the negligence and unawareness should be such that when asked, he can say, for example, "I am praying Zuhr," but cannot state without hesitation or thought that it is today's Zuhr. In such a case, the question isn't about what he should add to the intention, as he is in a state of forgetfulness and lack of awareness. Rather, the debate is whether such a prayer is valid or not. There are three scenarios: if time remains, there are various reports and corrections as explained in Radd al-Muhtar and other reliable books (as stated in Radd al-Muhtar and other authoritative books - T). In short, latitude is accepted, but precaution is

safer. Similarly, if the time has passed and he is unaware, in this case, there is a difference in correction.

[Arabic Text]: Fi al-Bahr al-Ra'iq shamala ma idha nawa al-'asra bila qaydin wa fihi khilaf fafi ad-Zahiriyyati lau nawa ad-zuhra la yajuzu wa qila yajuzu wa huwa as-sahihu hadha. [Urdu Text]: In Al-Bahr al-Ra'iq it is stated that this also includes the case when someone intends Asr prayer without any restriction, then there is a difference of opinion in it. In Zahiriyyah it is: if someone intended Zuhr... [text ends]

1. Radd al-Muhtar, Chapter: Conditions of Prayer, printed at Mustafa al-Babi, Egypt, 1/308.
2. Radd al-Muhtar, Chapter: Conditions of Prayer, printed at Mustafa al-Babi, Egypt, 1/308.

[अरबी पाठ]: मुल्तका के मूल पाठ में इसे वहां सही किया गया है। सुधार और शर्त के बारे में मतभेद है, लेकिन शर्त लगाना अधिक एहतियाती है, और अल-फ़तह में इसे दृढ़ता से कहा गया है, जैसा कि स्पष्ट है। [उर्दू पाठ]: इमाम शामी फरमाते हैं कि टीकाकार ने यहाँ 'अशबाह' से उद्धृत किया है कि (निर्धारण का शर्त न होना) समझ से बाहर है और हमारे विद्वानों काजी खान आदि के स्पष्ट बयानों के खिलाफ है। बल्कि शर्त होना अधिक सही है। मैं कहता हूँ कि मुल्तका के मूल पाठ में इस स्थान पर इसका सुधार किया गया है, तो इसके सुधार में मतभेद उत्पन्न हुआ है, लेकिन शर्त होना अधिक एहतियाती (सावधानीपूर्ण) है और इसी पर 'फ़तह अल-क़दीर' में यहाँ दृढ़ता दिखाई गई है। (त)

और अगर छूटी हुई नमाज़ (फ़ाइता) केवल एक ही है, तो केवल छूटी हुई नमाज़ की नीयत करने से ही दिन का निर्धारण अपने आप हो गया।

[अरबी पाठ]: रद अल-मुह्तार में 'हिलिया' के हवाले से: यदि किसी व्यक्ति के ज़िम्मे एक ज़ुहर की नमाज़ कज़ा है, तो उसके लिए इतनी नीयत कर लेना पर्याप्त है कि वह अपने ज़िम्मे की छूटी हुई ज़ुहर की नमाज़ पढ़ रहा है, भले ही वह यह न जानता हो कि वह किस दिन की है। [उर्दू पाठ]: जैसा कि रद अल-मुह्तार में 'हिलिया' से है कि यदि किसी व्यक्ति के ज़िम्मे एक ज़ुहर की नमाज़ कज़ा (छूटी हुई) लाज़िम है, तो उसके लिए इतनी नीयत कर लेना काफी है कि वह अपनी छूटी हुई ज़ुहर अदा कर रहा है, चाहे वह यह न जानता हो कि वह कौन से दिन की छूटी हुई है। (त)

संक्षेप में, वक्ती (समय पर पढ़ी जाने वाली) नमाज़ में जब घटना की स्थिति ज्ञात हो, तो वह मतभेद और विवाद का विषय नहीं है। विद्वानों का मतभेद उस काल्पनिक स्थिति में है जहाँ कोई व्यक्ति आज की नमाज़ में प्रकार का निर्धारण (तईन-ए-नऊई) तो कर ले, लेकिन व्यक्तिगत निर्धारण (तईन-ए-शख्सी) से पूरी तरह अनभिज्ञ और बेखबर हो। क्योंकि होश की स्थिति में, सही इरादा व्यक्तिगत निर्धारण को आवश्यक बनाता है, और उस पर ध्यान न देना असंभव है। इसके विपरीत, जानबूझकर विपरीत इरादा करना केवल ध्यान की कमी नहीं है, बल्कि उसके न होने का ध्यान रखना है। यह निस्संदेह नमाज़ को नकारने वाला और उसकी वैधता के विपरीत है। इसलिए, गफलत और बेखबरी ऐसी होनी चाहिए कि पूछने पर वह यह तो बता सके कि उदाहरण के लिए "मैं ज़ुहर पढ़ रहा हूँ", लेकिन बिना सोचे-समझे यह न बता सके कि यह आज की ज़ुहर है। ऐसी स्थिति में, प्रश्न यह नहीं है कि मुझे नीयत में क्या बढ़ाना चाहिए, क्योंकि वह तो विस्मृति और चेतना के अभाव की स्थिति में है।

बल्कि बहस यह होगी कि ऐसी नमाज़ हुई या नहीं। इसमें तीन स्थितियाँ हैं: यदि समय बाकी है, तो विभिन्न कथन और विभिन्न सुधार हैं, जैसा कि रद अल-मुह्तार और अन्य विश्वसनीय पुस्तकों में विस्तार से बताया गया है (जैसा कि रद अल-मुह्तार और अन्य विश्वसनीय पुस्तकों में इसका वर्णन है - त)। संक्षेप में, उदारता स्वीकार्य है और सावधानी सबसे सुरक्षित है। इसी तरह, यदि समय बीत गया और उसे पता नहीं चला, तो इस स्थिति में सुधार में मतभेद है।

[अरबी पाठ]: 'अल-बहर अल-राइक' में इस मामले को भी शामिल किया गया है जब उसने बिना किसी शर्त के अस्र की नीयत की, और इसमें मतभेद है। 'ज़हीरिया' में है: यदि उसने ज़ुहर की नीयत की, तो यह जायज़ नहीं है, और कहा गया है कि यह जायज़ है और यही सही है। [उर्दू पाठ]: 'अल-बहर अल-राइक' में है कि यह उस स्थिति को भी शामिल करता है जब कोई अस्र की नमाज़ की नीयत बिना किसी शर्त के करे, तो इसमें मतभेद है। 'ज़हीरिया' में है: अगर किसी ने... [पाठ यहाँ समाप्त]

1. रद अल-मुह्तार, अध्याय: नमाज़ की शर्तें, मुस्तफा अल-बाबी, मिस्र द्वारा मुद्रित, 1/308
2. रद अल-मुह्तार, अध्याय: नमाज़ की शर्तें, मुस्तफा अल-बाबी, मिस्र द्वारा मुद्रित, 1/308

पृष्ठ 49 का 736

صححه فی متن الملتقٰی هنآک فقد اختلف التصحیح والاشتراط احوط و به جزم فی الفتح[1] هنآ کما لا یخفی۔ امام شامی فرماتے ہیں کہ شارح نے یہاں اشباہ سے نقل کیا ہے کہ (تعین شرط نہ ہونا) ناقابل فہم اور ہمارے علماء قاضی خان وغیرہ کی تصریحات کے خلاف ہے۔ بلکہ شرط ہونا اصح ہے، میں کہتا ہوں متن ملتقی میں اس مقام پر اسکی تصحیح کی ہے تو اس کی تصحیح میں اختلاف واقع ہوا ہے مگر شرط ہونا احوط ہے اور اسی پر فتح القدیر میں یہاں جزم کیا ہے۔ (ت)

اور اگر فائقہ ایک ہی ہے تو نیت فائقہ کرنے ہی میں تعیین یوم خود ہی آگئی۔

فی ردالمحتار عن الحلیہ ، لو کان فی ذمته ظهر واحد فائت فانه یکفیه ان ینوی ما فی ذمته من الظهر الفائت وان لم یعلم انه من ای یوم[2]۔ جیسا کہ ردالمحتار میں حلیہ سے ہے کہ اگر کسی شخص کے ذمے ایک ظہر کی نماز قضا لازم ہے تو اس کے لئے اتنی نیت کرلینا کافی ہے کہ وہ اپنی فوت شدہ ظہر ادا کر رہا ہے اگرچہ یہ نہ جانتا ہو کہ وہ کون سے دن کی فوت شدہ ہے (ت)

بالجملہ نماز وقتی میں صورت واقعہ معلومۃ الوقوع موقع خلاف و نزاع نہیں، خلافیہ علماء اُس صورت مفروضہ میں ہے کہ کوئی شخص نماز امر وزہ میں تعیین نوعی تو کرلے اور تعیین شخصی سے اصلاً ذاہل وغافل ہو کہ بحالتِ شعور، قصد صحیح تعیین شخصی کا ملزوم اور عدم لحاظ مفقود و معدوم اور بقصد خلاف، عدم لحاظ نہیں، لحاظ عدم ہے اور وہ بلا شبہ نافی نماز و منافی جواز، تو غفلت و بے خبری ایسی چاہئے کہ سوال پر یہ تو بتادے کہ مثلاً ظہر پڑھتا ہوں اور بے تامل وفکر نہ بتاسکے کہ آج کی ظہر ایسی حالت میں اس سوال کا محل نہیں کہ مجھے نیت میں کیا بڑھانا چاہئے کہ وہ تو حال ذہول وعدم شعور میں ہے بلکہ بحث یہ ہوگی کہ ایسی نماز ہوگئی یا

نہیں، اس میں تین صورتیں ہیں اگر وقت باقی ہے تو روایات مختلف تصحیحات مختلف کما بینہ فی ردالمحتار وغیرہ من الاسفار (جیسا کہ ردالمحتار اور دیگر معتمد کتب میں اس کا بیان ہے ت) غرض توسیع مسلم اور احتیاط اسلم، یونہی اگر وقت جاتا رہا اور اسے معلوم نہیں اس صورت میں اختلاف تصحیح ہے۔

فی البحر الرائق شمل ما اذا نوی العصر بلا قید و فیہ خلاف ففی الظھیریۃ لونوی الظھر لا یجوز و قیل یجوز وھو الصحیح ھذا البحر الرائق میں ہے کہ یہ اس صورت کو بھی شامل ہے جب کوئی نماز عصر کی نیت بغیر کسی قید کے کرے تو اس میں اختلاف ہے، ظہیریہ میں ہے اگر کسی نے

1 ردالمحتار باب شروط الصلوۃ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱ / ۳۰۸ 2 ردالمحتار باب شروط الصلوۃ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱ / ۳۰۸

Fatawa Ridawiyya Volume Six

If he was performing the prayer, if he was making it up, if he prayed after the time had expired and he did not know, it is not permissible. Shams al-A'immah mentioned that he should intend the prayer that is upon him; if it was timely, it is upon him, and if it was a makeup, it is also upon him. This is how it was corrected in Fath al-Qadir, attributed to Fatawa al-Utabi. However, it was asserted in al-Khulasah that it is not permissible, and al-Siraj al-Hindi corrected it in Sharh al-Mughni. Thus, the correction differed as you see. Summarized. In Radd al-Muhtar on the authority of al-Nahr, the apparent meaning of what is in al-Zahiriyya is that it is permissible according to the more correct view.

(Urdu Explanation): If he intended Zuhr, it is not permissible; according to some, it is permissible, and this is correct. But this is when he is performing the prayer (i.e., not a makeup). If he is praying a makeup prayer, and if he prayed it after the time had passed without knowing that the time had expired, then the prayer will not be permissible. Shams al-A'immah says such an intention is sufficient: that I am praying the prayer which is obligatory upon me, whether it is now timely or a makeup; it was certainly incumbent upon him. Similarly, in Fath al-Qadir, it has been corrected with reference to Fatawa al-Utabi. But in al-Khulasah, a firm stance of impermissibility was expressed, and Siraj al-Hindi called this correct in Sharh al-Mughni, as you can see. There is a difference in the correction of the issue. Summarized. In Radd al-Muhtar, on the authority of al-Nahr, it is stated that the text of al-Zahiriyya apparently shows that according to the more correct view, it is permissible. (T)

I say: Rather, perhaps the apparent meaning of what is in it is that it is not permissible according to the more correct view, as he asserted it and did not elaborate on its preference. You know that when one of the Imams says, "This is not permissible," and "So-and-so says it is permissible," the immediate understanding is that his own chosen view is the first. Rather, the apparent view is that which most are upon, contrary to what was mentioned.

(Urdu Explanation): I say: rather, it is possible that according to the apparent meaning in al-Zahiriyya, the more correct view is non-permissibility, as they asserted it and did not reject the preference mentioned from Shams al-A'immah. Because you know that when an Imam says this matter is not permissible and so-and-so is convinced of its permissibility, the immediate understanding from this statement is

that their own chosen view is the first one; rather, the apparent view is what is according to the chosen and majority opinion. Contrary to what they mentioned. (T)

1. Al-Bahr al-Ra'iq Sharh Kanz al-Daqa'iq, Chapter: Conditions of Prayer, published by H.M. Saeed Company Karachi 1/279.
2. Radd al-Muhtar, Chapter: Conditions of Prayer, published by Mustafa al-Babi Egypt 1/308.

फ़तावा रज़विया छठा खंड

यदि वह नमाज़ अदा कर रहा था, यदि वह क़ज़ा कर रहा था, यदि उसने समय बीत जाने के बाद नमाज़ पढ़ी और उसे पता नहीं था, तो यह जायज़ नहीं है। शम्सुल आइम्मा ने उल्लेख किया है कि उसे उस नमाज़ की नीयत करनी चाहिए जो उस पर है; यदि वह सामयिक थी, तो वह उस पर है, और यदि वह क़ज़ा थी, तो वह भी उस पर है। इसी तरह फ़तहुल क़दीर में फ़तावा अल-अताबी के हवाले से इसकी पुष्टि की गई है। हालाँकि, अल-ख़ुलासा में दृढ़ता से कहा गया है कि यह जायज़ नहीं है, और सिराज अल-हिंदी ने शरह अल-मुग़नी में इसे सही बताया है। इस प्रकार, संशोधन में भिन्नता थी जैसा कि आप देखते हैं। संक्षेप में। रद अल-मुहतार में अन-नहर के हवाले से, अल-ज़हीरिय्या में जो है उसका स्पष्ट अर्थ यह है कि अधिक सही दृष्टिकोण के अनुसार यह जायज़ है।

(उर्दू व्याख्या): ज़ुहर की नीयत की तो जायज़ नहीं; कुछ के अनुसार जायज़ है, और यही सही है। लेकिन यह तब है जब वह नमाज़ अदा कर रहा हो (यानी क़ज़ा वाली न हो)। अगर नमाज़ क़ज़ा पढ़ने वाला हो तो अगर वक्त निकलने के बाद इस हाल में पढ़ी है कि उसे वक्त खत्म होने का इल्म नहीं हुआ तो नमाज़ जायज़ न होगी। और शम्सुल आइम्मा कहते हैं इतनी नीयत काफी है कि मैं वह नमाज़ पढ़ता हूँ जो मुझ पर वाजिब है अब अदा हो या क़ज़ा; वह यकीनन उस पर लाज़िम थी। इसी तरह फ़तहुल क़दीर में फ़तावा अताबी के हवाले से इसकी तस्दीक की गई है। लेकिन खुलासा में अदम-ए-जवाज़ (नाजायज़ होने) पर दृढ़ता व्यक्त की गई है और सिराज हिंदी ने शरह अल-मुग़नी में इसी को सही कहा है जैसा कि आप देख रहे हैं। तस्दीक-ए-मसला में मतभेद है। संक्षेप में। रद अल-मुहतार में नहर के हवाले से है कि ज़हीरिय्या की इबारत से ज़ाहिर यही होता है कि अर्ज़ह (सबसे सही) क़ौल पर जवाज़ ही है। (T)

मैं कहता हूँ: बल्कि, शायद इसमें जो है उसका स्पष्ट अर्थ यह है कि अधिक सही दृष्टिकोण के अनुसार यह जायज़ नहीं है, क्योंकि उन्होंने इस पर ज़ोर दिया और इसकी प्राथमिकता पर विस्तार से नहीं बताया। आप जानते हैं कि जब इमामों में से कोई कहता है, "यह जायज़ नहीं है," और "फलां कहता है कि यह जायज़ है," तो तत्काल समझ यह है कि उनकी अपनी चुनी हुई राय पहली है। बल्कि, स्पष्ट राय वही है जिस पर अधिकांश हैं, इसके विपरीत जो उल्लेख किया गया था।

(उर्दू व्याख्या): अक़ूल: (मैं कहता हूँ) बल्कि हो सकता है ज़ाहिर मा-फ़ि-ज़हीरिय्या के मुताबिक अर्ज़ह क़ौल पर अदम-ए-जवाज़ हो कि उन्होंने इस पर ज़ोर दिया है और शम्सुल आइम्मा से इसकी जो

तरजीह ज़िक्र की गई है उसे रद्द नहीं किया। क्योंकि आप जानते हैं कि जब कोई इमाम कहता है कि यह बात जायज़ नहीं और फलां इसके जवाज़ का कायल है तो इस इबारत से मुतबादिर (तुरंत समझ आने वाला) यही होता है कि उनका अपना मुख़्तार (चुना हुआ) क़ौल अव्वल है बल्कि ज़ाहिर वही है जो मुख़्तार और अक्सर की राय के मुताबिक है। इसके बर-ख़िलाफ़ जो उन्होंने ज़िक्र किया है। (T)

1. अल-बहर अर-राइक़ शरह कंज़ अद-दक़ाइक़, अध्याय: नमाज़ की शर्तें, एच.एम. सईद कंपनी कराची द्वारा प्रकाशित 1/279।
2. रद अल-मुहतार, अध्याय: नमाज़ की शर्तें, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र द्वारा प्रकाशित 1/308।

पृष्ठ 50/736

اذا کان مودیاً فان کان قاضیاً فان کان صلی بعد خروج الوقت و ھو لا یعلم لا یجوز و ذکر شمس الائمۃ ینوی صلاۃ علیہ فان کانت وقتیۃ فھی علیہ وان کانت قضاء فھی علیہ ایضاً اھـ و ھکذا صححہ في فتح القدیر معزیاً الی فتاوی العتابی لکن جزم في الخلاصۃ بعدم الجواز و صححہ السراج الھندی فی شرح المغنی فاختلف التصحیح کما تری ۱ اھـ ملخصاً و فی رد المحتار في النھر ان ظاھر ما فی الظھیریۃ انہ یجوز علی الارجح ۲ اھـ

ظہر کی نیت کی تو جائز نہیں، بعض کے نزدیک جائز ہے اور یہی صحیح ہے۔ لیکن یہ اس وقت ہے جب وہ نماز ادا کر رہا ہو (یعنی قضا والا نہ ہو) اگر نماز قضا پڑھنے والا ہو تو اگر وقت کے نکلنے کے بعد اس حال میں پڑھی ہے کہ اسے خروج وقت کا علم نہیں ہوا تو نماز جائز نہ ہو گی۔ اور شمس الائمہ کہتے ہیں اتنی نیت کافی ہے کہ میں وہ نماز پڑھتا ہوں جو مجھ پر واجب ہے اب ادا ہو یا قضا وہ یقیناً اس پر لازم تھی اہـ اسی طرح فتح القدیر میں فتاوٰی عتابی کے حوالے سے اس کی تصحیح کی ہے، لیکن خلاصہ میں عدم جواز پر جزم کا اظہار کیا گیا ہے اور سراج ہندی نے شرح المغنی میں اسی کو صحیح کہا جیسا کہ آپ ملاحظہ کر رہے ہیں۔ تصحیح مسئلہ میں اختلاف ہے اہـ تلخیصاً۔ ردالمختار میں نہر کے حوالے سے ہے کہ ظہیریہ کی عبارت سے ظاہر یہی ہوتا ہے کہ ارجح قول پر جواز ہی ہے۔ اہـ (ت)

اقول: بل لعل ظاھر مافیھا انہ لا یجوز علی الارجح حیث جزم بہ ولم یذبل علی ترجیحہ وانت تعلم ان اماماً من الائمۃ اذا قال لایجوز ذلك وقال فلان یجوز فان المتبادر منہ ان مختار نفسہ الاول بل الظاھر انہ الذی علیہ الاکثر خلا فالمن ذکر۔

اقول: (میں کہتا ہوں) بلکہ ہو سکتا ہے ظاہر مافی الظہیریہ کے مطابق ارجح قول پر عدم جواز ہو کہ انہوں نے اس پر جزم کیا ہے اور شمس الائمہ سے اس کی جو ترجیح ذکر کی گئی ہے اس کو رد نہیں کیا کیونکہ آپ جانتے ہیں کہ جب کوئی امام کہتا ہے کہ یہ بات جائز نہیں اور فلاں اس کے جواز کا قائل ہے تو اس عبارت سے متبادر یہی ہوتا ہے کہ ان کا اپنا مختار قول اوّل ہے بلکہ ظاہر وہی ہے جو مختار و اکثر کی رائے کے مطابق ہے۔ بخلاف اس کے جو انہوں نے ذکر کیا ہے۔ (ت)

۱ البحر الرائق شرح کنز الدقائق باب شروط الصلوۃ مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱/۲۷۹ ۲ ردالمحتار باب شروط الصلوۃ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/۳۰۸

Fatawa Ridawiyyah, Volume 6 And if this person is also aware of the expiry of the time, then its validity is apparent. The commentators of Al-Durr al-Mukhtar—the noble masters Al-Halabi, Al-Tahtawi, and Al-Shami (may Allah the Mighty, the Forgiver have mercy on them)—did not find a narration on this issue. Allama Halabi leaned towards non-validity, Allama Tahtawi opposed him, and Allama Shami agreed with the latter.

[Arabic Column Text] Tahtawi said: The apparent [ruling] is validity when there is knowledge of the expiry [of time], because his intention then is for makeup (qada) prayer, contrary to what is in Al-Halabi. Shami said: Halabi argued that it is not valid, and Tahtawi opposed him. I say: This is more apparent based on what was previously cited from Al-Inayah. I say: Yes, it is more apparent due to what was cited from Al-Bahr from Az-Zahiriyyah regarding the restriction of non-validity with the statement 'and he does not know'. As for relying on what was cited from Al-Inayah, in my view, it is misplaced because you know the context of these statements is when one is heedless or forgetful. The text of Al-Inayah refers to what is customary and usual, that whoever perceives the specific type [of prayer] also perceives the personal [obligation]. And I saw that I had written here in the margins of Al-Shami as follows: I say: What was cited from Al-Inayah concerns when one knows the specification in their heart, and no one should differ on this. It applies to every one of the nine scenarios, or rather not nine but eight, as it is only one scenario and no other. The discussion is only about when one intends that while being heedless of specifying the day and time and...

[Urdu Column Text] Imam Tahtawi said: If he has knowledge of the expiry of time, then the validity of the prayer is apparent because at that time the intention will be for makeup (qada). Contrary to what Halabi said. Shami said: Halabi, while discussing, mentioned the ruling of non-validity, and Tahtawi opposed them. I say: This is more apparent, as has passed through the reference of Al-Inayah. I say: (I say) Yes, this is more apparent, as passed from Al-Bahr al-Ra'iq with reference to Az-Zahiriyyah regarding the restriction of non-validity along with the statement 'wa huwa la ya'lam' (and he does not know). However, taking support from what passed through Al-Inayah for this is not appropriate in my view at this point, because the context of this entire discussion is when a person becomes heedless and forgets, whereas the discussion in Al-Inayah is based on the well-known and common method (i.e., lack of heedlessness). This is because the person who has perception of the specific type will also have perception of the personal specification. And I

remembered what I wrote in the margins of Shami at this point; its words are: I say (I say): The text of Al-Inayah that passed relates to the case when, from the heart, its specification...

[Footnotes] 1. Hashiyah al-Tahtawi 'ala al-Durr al-Mukhtar, Chapter on Conditions of Prayer, printed by Dar al-Ma'rifah, Beirut, 1/194. 2. Radd al-Muhtar, Chapter on Conditions of Prayer, printed by Mustafa al-Babi, Egypt, 308/1.

फ़तावा रज़विया, जिल्द छठी और अगर यह भी समय समाप्त होने (खुरूज-ए-वक्त) पर अवगत है तो स्पष्ट रूप से जायज़ है। 'दुर्रे मुख्तार' के टीकाकारों—सादात-ए-अबरार हलबी, तहतावी और शामी (अल्लाह उन पर रहम फरमाए)—ने इस मसले में कोई रिवायत नहीं पाई। अल्लामा हलबी ने अदम-ए-जवाज़ (ना-जायज़ होने) का ख्याल किया और अल्लामा तहतावी ने उनके खिलाफ और अल्लामा शामी ने उनका समर्थन किया।

[अरबी कॉलम] तहतावी ने कहा: समय समाप्त होने के ज्ञान के समय स्पष्ट रूप से सही (सह़त) है क्योंकि तब उसकी नियत कज़ा की होगी, इसके विपरीत जो हलबी में है। शामी ने कहा: हलबी ने तर्क दिया कि यह सही नहीं है और तहतावी ने उनका विरोध किया। मैं कहता हूँ: यही अधिक स्पष्ट है जैसा कि 'इनाया' से उद्धृत किया गया है। मैं कहता हूँ: हाँ, यही अधिक स्पष्ट है क्योंकि 'बहर' से 'ज़हीरिया' के हवाले से अदम-ए-जवाज़ की पाबंदी (तक़यीद) उनके इस कथन 'और वह नहीं जानता' के साथ गुज़री है। जहाँ तक 'इनाया' से उद्धृत बात पर भरोसा करने का सवाल है, तो मेरे विचार में यह अपने स्थान पर सही नहीं है क्योंकि आप जानते हैं कि इन बयानों का संदर्भ तब है जब कोई गाफ़िल (अचेत) या विस्मृत हो जाए। 'इनाया' की बात उस बारे में है जो सामान्य और प्रसिद्ध है कि जो विशिष्ट प्रकार (तअय्युन-ए-नौई) को महसूस करता है, वह व्यक्तिगत (तअय्युन-ए-शख्सी) को भी महसूस करता है। और मैंने देखा कि मैंने यहाँ 'शामी' के हाशिए पर यह लिखा है: मैं कहता हूँ: 'इनाया' से जो गुज़रा वह उस स्थिति के बारे में है जब वह अपने दिल से तअय्युन (निर्धारण) को जानता हो, और किसी को भी इसमें मतभेद नहीं करना चाहिए। यह नौ में से प्रत्येक सूरत (स्थिति) पर लागू होता है, बल्कि नौ नहीं बल्कि आठ, क्योंकि यह केवल एक ही सूरत है और कोई दूसरी नहीं। और चर्चा केवल उस स्थिति के बारे में है जब वह दिन और समय के निर्धारण से गाफ़िल रहते हुए ऐसी नियत करता है और...

[उर्दू कॉलम] इमाम तहतावी ने कहा: अगर उसे समय समाप्त होने का ज्ञान हो तो नमाज़ का सही होना स्पष्ट है क्योंकि उस समय नियत कज़ा की होगी। इसके विपरीत जो हलबी ने कहा। शामी ने कहा कि हलबी ने चर्चा करते हुए इसके सही न होने (अदम-ए-सह़त) का कथन किया है और तहतावी ने उनका विरोध किया। मैं कहता हूँ यही अधिक स्पष्ट (अज़हर) है जैसा कि 'इनाया' के हवाले से गुज़रा है। मैं कहता हूँ: हाँ यही अधिक स्पष्ट है जैसा कि 'अल्-बहر-उर-रायिक' से 'ज़हीरिया' के हवाले से अदम-ए-जवाज़ की पाबंदी उनके कथन 'वहुवा ला या'लम' (और वह नहीं जानता) के साथ गुज़री। लेकिन इसके साथ उस बात की सनद पकड़ना जो 'इनाया' से गुज़री, मेरे

नज़दीक इस स्थान के लिए उपयुक्त नहीं है, क्योंकि इस पूरी बातचीत का संदर्भ वह है जब मनुष्य गाफ़िल हो जाए और भूल जाए, जबकि 'इनाया' की चर्चा प्रसिद्ध तरीके(यानी गाफ़िल न होने) पर है। क्योंकि जो व्यक्ति विशिष्ट प्रकार (तअय्युन-ए-नौई) का बोध रखता है, उसे व्यक्तिगत निर्धारण (तअय्युन-ए-शख़्सी) का बोध भी रहेगा। और मुझे वह याद आया जो 'हाशिया-ए-शामी' के इस स्थान पर मैंने लिखा है, उसके शब्द ये हैं: मैं कहता हूँ: 'इनाया' की जो इबारत गुज़री है वह उस सूरत से संबंधित है जब दिल से उसके निर्धारण...

[पाद-टिप्पणियाँ] 1. हाशिया अत-तहतावी अलद-दुर्रिल-मुख्तार, अध्याय: नमाज़ की शर्तें, मुद्रित: दारुल मारिफा, बेरूत, 1/194। 2. रद्दुल मुहतार, अध्याय: नमाज़ की शर्तें, मुद्रित: मुस्तफा अल-बाबी, मिस्र, 308/1।

فتاوی رضویہ، جلد ششم اور اگر یہ بھی خروجِ وقت پر مطلع ہے تو ظاہر جواز ہے محشیانِ در مختار ساداتِ ابرار حلبی و طحطاوی و شامی رحمہم اللہ العزیز الغفار نے اس مسئلہ میں روایت نہ پائی علامہ ح نے عدمِ جواز کا خیال اور علامہ ط نے ان کے خلاف اور علامہ ش نے انکا وفاق کیا،

[عربی کالم] قال ط الظاهر الصحة عند العلم بالخروج لان نيته حينئذ القضاء خلافا لما فی الحلبی اهـ وقال ش بحث ح انه لا يصح وخالفه ط قلت وهو الاظهر لما مر من العناية اهـ اقول نعم هو الاظهر لما مر عن البحر عن الظهيرية من تقييد عدم الجواز بقوله وهو لا يعلم اما الاستناد بما مر عن العناية فعندی غير واقع في محله لما علمت ان محل هذه المقالات ما اذا ذهل و غفل وكلام العناية فيما هو المعتاد والمعهود من ان من شعر بالتعيين النوعی شعر ايضا بالشخصي و رأيتني كتبت هنئا على هامش الشامی مانصه اقول : مامر عن العناية فيما اذا علم بقلبه التعيين ولا ينبغي لأحد ان يخالف فيه وهو جار فی كل صورة من الصور التسع بل لا تسع عليه و الا ثمان انما هی صورة واحدة لاغير، وانما الكلام فيما اذانوی ذلك ذاهلا عن تعيين اليوم والوقت و

[اردو کالم] امام طحطاوی نے کہا اگر اسے خروجِ وقت کا علم ہو تو صحتِ نماز ظاہر ہے کیونکہ اس وقت نیت قضا کی ہو گی۔ بخلاف اسکے جو حلبی نے کہا اھ شامی نے کہا حلبی نے بحث کرتے ہوئے اس کی عدمِ صحت کا قول کیا ہے اور طحطاوی نے ان کی مخالفت کی ، میں کہتا ہوں یہی اظہر ہے جیسا کہ عنایہ کے حوالے سے گزرا ہے اھ اقول : (میں کہتا ہوں) ہاں یہی اظہر ہے جیسا کہ البحر الرائق سے ظہیریہ کے حوالے سے عدمِ جواز کی تقیید اس کے قول "وہو لا یعلم" کے ساتھ گزری لیکن اس بات کی سند پکڑنا اس کے ساتھ جو عنایہ سے گزرا میرے نزدیک اس مقام کے مناسب نہیں ، کیونکہ اس تمام گفتگو کا محل وہ ہے کہ جب انسان غافل ہو جائے اور بھول

جائے اور عنایہ کی گفتگو معروف مشہور طریقہ (یعنی عدمِ غفلت) پر ہے کیونکہ جو شخص تعیین نوعی کا ادراک رکھتا ہے اسے تعیین شخصی کا ادراک بھی رہے گا ، اور مجھے وہ یاد آیا جو حاشیہ شامی کے اس مقام پر میں نے لکھا ہے اس کے الفاظ یہ ہیں اقول : (میں کہتا ہوں) عنایہ کی جو عبارت گزری ہے وہ اس صورت سے متعلق ہے جب دل سے اس کے تعین

[حواشی] ۱ حاشیہ الطحطاوی علی الدر المختار باب شروط الصلوۃ مطبوعہ دار المعرفۃ بیروت ۱۹٤/۱ ۲ ردالمحتار باب شروط الصلوۃ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۳۰۸/۱

Fatawa Ridawiyya Volume 6

Note for seeking support from what has passed from Al-Inayah[1] | No one should disagree with this, as it is appropriate. This matter will apply to every one of the nine scenarios; in fact, it is not nine or eight, but just one single scenario and nothing else. Here, the discussion pertains to the situation where a person made the intention for prayer while being heedless of the specific day and time. Now, support cannot be drawn from the discussion in Al-Inayah. (T)

In short, there is a path towards validity in all three forms of this hypothetical case. Therefore, it was mentioned unconditionally in 'Al-Durr', stating that it is the most correct view (i.e., 'Al-Durr al-Mukhtar' mentioned it without conditions and called it the most correct. - T). In matters of worship, especially prayer, the rule of caution is well-known and recognized. This is how the position ought to be. Allah is the Master of grace and blessings, and Allah, the Sublime and Exalted, knows best. (This was appropriate for the investigation of the matter; Allah the Almighty is the possessor of grace and reward, and He is the Pure and the Best Knower. - T)

[1] Jadd al-Mumtar, Chapter on Conditions of Prayer, Al-Majma' al-Islami, Mubarakpur (India), 1/281

फतावा रज़विया जिल्द छठी

अल-इनाया से जो कुछ गुज़र चुका है उससे पुष्टि माँगने हेतु नोट[1] | कोई भी इससे असहमत नहीं होना चाहिए, क्योंकि यह उचित है। यह बात नौ में से हर स्थिति में लागू होगी; बल्कि यह नौ नहीं और न ही आठ, यह तो केवल एक ही स्थिति है और इसके अलावा कुछ नहीं। यहाँ चर्चा उस स्थिति से संबंधित है जब किसी व्यक्ति ने दिन और समय के निर्धारण से गाफिल (लापरवाह) होकर नमाज़ की नीयत की हो। अब अल-इनाया की चर्चा से समर्थन नहीं लिया जा सकता। (त)

संक्षेप में, इस कल्पित मामले के तीनों रूपों में वैधता का मार्ग है। इसीलिए 'अल-दुर्र' में इसे बिना शर्त उल्लेख किया गया और कहा गया कि यही सबसे सही विचार है (यानी 'अल-दुर्र अल-मुख्तार' में इसे बिना शर्तों के ज़िक्र किया गया और इसे सबसे सही कहा गया। - त)। इबादत के मामलों में, विशेष रूप से नमाज़ में, एहतियात (सावधानी) का नियम प्रसिद्ध और ज्ञात है। पद की गरिमा के अनुसार ऐसा ही होना चाहिए। अल्लाह अनुग्रह और इनाम का मालिक है, और अल्लाह, पवित्र और महान, सबसे बेहतर जानने वाला है। (विषय की जाँच के लिए यही उचित था; अल्लाह तआला अनुग्रह और इनाम का मालिक है और वही पवित्र और बेहतर जानने वाला है। - त)

[1] जद्द अल-मुमतार, नमाज़ की शर्तों का अध्याय, अल-मजमा अल-इस्लामी, मुबारकपुर (भारत), 1/281

ح لاستظهار بما مر عن العناية[1] | کو جانتا ہو، اس میں مخالفت کسی کو مناسب نہیں اور یہ بات نو صور توں میں سے ہر صورت میں جاری ہو گی بلکہ یہ نو نہیں نہ آٹھ یہ تو صرف ایک ہی صورت ہے اسکے علاوہ کچھ نہیں، یہاں گفتگو اس صورت سے متعلق ہے جب کسی انسان نے نماز کی نیت دن اور وقت کے تعین سے غافل ہو کر کی ہو، اب تو عنایہ کی گفتگو سے تائید نہیں لائی جاسکتی۔(ت)

غرض اس صورت مفروضہ کی تینوں شکلوں میں جواز کی طرف راہ ہے۔ ولذا ارسل فی الدر ارسالا وقال انه الاصح (اسی لئے در مختار میں اس کو مر سلاً ذکر کیا ہے اور کہا یہی اصح ہے۔ ت) اور امر عبادت خصوصاً نماز میں حکم احتیاط معروف و معلوم هکذا ینبغی المقام والله ولی الفضل والانعام والله سبحنه وتعالی اعلم (تحقیق مقام کے لئے یہی مناسب تھا، اللہ تعالی فضل وانعام کا مالک اور وہی پاک اور بہتر جاننے والا ہے۔ت)

[1] جدالممتار باب شروط الصلوة المجمع الاسلامی مبارک پور (ہند) ۲۸۱/۱

Volume Six Fatawa-e-Razvia

Chapter on the Qibla (Explanation of the Qibla)

Question Number 394: From Khairabad, District Sitapur, Mahalla Mehman Sarai, Dargah of Hazrat Makhdoom Sahib Khurd (may his secret be sanctified). Sent by Maulvi Syed Azimuddin Sahib, servant of the holy shrine, on 25th Muharram al-Haram, 1332 AH.

What do the scholars of religion and the muftis of the firm Shariah say regarding this matter: The visual map above is of the Dargah of Hazrat Makhdoom Syed Nizamuddin Sahib Allah Diya Khairabadi, popularly known as Chote Makhdoom Sahib (may his secret be sanctified). Within this enclosure is a three-door mosque built in 1056 AH, which had space for two rows (saffs). The direction of the Qibla for these rows was according to the orientation of the mosque, which was nearly one-third north between the two Wests (Maghribayn), and prayers continued to be performed in this direction until approximately the end of the twelfth century. Afterwards, the floor and courtyard of the mosque were repaired due to being broken. Since the orientation of the sacred tomb (Rauza Sharif), built by craftsmen of Delhi in 994 AH, was such that its Qibla direction was exactly mid-West, in the new flooring, the markings for rows were established according to the orientation of the tomb, and until now, prayers have been performed in this direction. As a result of this action, instead of inside the mosque, there was space for two full rows, and when necessary, if a second row was formed inside the mosque, it could not be complete and remained partial. Now, the said floor is again damaged and is being repaired. In case of necessity, markings for new rows will be established. Since most mosques in the cities and regions of India are oriented towards the Pole Star (Qutub-rukh), whose Qibla direction is one-third South-West, and this is also supported by the texts of Fiqh books as follows.

Page 53 of 736

छठा खण्ड फतावा-ए-रजविया

किबला का अध्याय (किबला का वर्णन)

प्रश्न संख्या ३९४: खैरआबाद, जिला सीतापुर, मोहल्ला मेहमान सराय, दरगाह हज़रत मखदूम साहब खुर्द (अल्लाह उनके रहस्य को पवित्र रखे) से। प्रेषक: मौलवी सैयद अज़ीमुद्दीन साहब, खादिम आस्ताना मुकद्दसा, २५ मुहर्रम उल-हराम, १३३२ हिजरी।

दीन के विद्वान और सुदृढ़ शरीयत के मुफ्ती इस मामले में क्या कहते हैं: ऊपर दिया गया नक्शा हज़रत मखदूम सैयद निज़ामुद्दीन साहब अल्लाह दिया खैरआबादी, जिन्हें छोटे मखदूम साहब (अल्लाह उनके रहस्य को पवित्र रखे) के नाम से जाना जाता है, की दरगाह का है। इस अहाते में १०५६ हिजरी में बनी एक तीन दरवाजों वाली मस्जिद है, जिसमें दो सफों (पंक्तियों) की गुंजाइश थी। इन सफों की किबला दिशा मस्जिद के रुख के अनुसार थी जो दोनों मगरिबों के बीच लगभग एक-तिहाई उत्तर की ओर थी, और लगभग बारहवीं शताब्दी के अंत तक इसी दिशा में नमाज़ अदा की जाती रही। इसके बाद मस्जिद के फर्श और सहन के टूटने के कारण उनकी मरम्मत की गई। चूँकि दिल्ली के कारीगरों द्वारा ९९४ हिजरी में निर्मित रौज़ा शरीफ का रुख ऐसा था जिसकी किबला दिशा मध्य-पश्चिम थी, इसलिए नए फर्श में रौज़ा शरीफ के रुख के अनुसार सफों के निशान लगाए गए और अब तक इसी दिशा में नमाज़ अदा की जा रही है। इस कार्यवाही से मस्जिद के अंदर के बजाय दो पूरी सफों की गुंजाइश रही, और ज़रूरत पड़ने पर अगर मस्जिद के अंदर दूसरी सफ बनाई गई तो वह पूरी नहीं हो सकी और अधूरी रही। अब फिर से उक्त फर्श खराब हो गया है और उसकी मरम्मत हो रही है। आवश्यकता पड़ने पर नई सफों के निशान लगाए जाएंगे। चूँकि भारत के अधिकांश शहरों और नगरों की मस्जिदें कुतुब-रुख (ध्रुव तारे की दिशा) वाली हैं, जिनकी किबला दिशा दक्षिण-पश्चिम का एक-तिहाई है, और फिकह की किताबों के ग्रंथों से भी इसकी पुष्टि इस प्रकार होती है।

पृष्ठ 53 का 736

جلد ششم فتاویٰ رضویہ

باب القبلۃ (قبلہ کا بیان)

مسئلہ نمبر ۳۹۴: از خیر آباد ضلع سیتا پور محلہ مہمان سرائے درگاہ حضرت مخدوم صاحب خورد قدس سرہ مرسلہ مولوی سید عظیم الدین صاحب خادم آستانہ مقدسہ ۲۵ محرم الحرام ۱۳۳۲ھ

چہ می فرمایند علماء دین و مفتیان شرع متین اندریں مسئلہ، نقشہ نظری بالا درگاہ حضرت مخدوم سید نظام الدین صاحب الہ دیا خیر آبادی عرف چھوٹے مخدوم صاحب قدس سرہ کا ہے اس احاطہ میں ایک مسجد سہ دری تعمیر شدہ ۱۰۵۶ھ ہے جس کے اندر دو صف کی گنجائش تھی ان صفوف کا جہتِ قبلہ موافق رخ مسجد قریب ثلث شمالی بین المغربین تھا اور تخمیناً آخر صدی دوازدہم تک اسی رُخ نماز ادا ہوتی رہی بعد ازاں فرشِ مسجد و صحنِ مسجد کو بوجہ شکستہ ہو جانے کے مرمت ہوئی چونکہ رُخِ روضہ شریف کا جو تعمیر کردہ صناعان دہلی تعمیر شدہ ۹۹۴ھ ہے ایسا تھا جس کا جہت قبلہ وسط مغربین ہوتا تھا فرشِ جدید میں نشان صفوف میں موافق رخِ روضہ قائم ہو کر اب تک نماز اس رخ ادا ہوئی اس کاروائی سے اندر مسجد کے بجائے دو صفوف کامل کی گنجائش رہی اور وقت ضرورت اگر اندر مسجد صف دویم قائم کی گئی تو کامل نہ ہوسکی ناقص رہی اب پھر فرش مذکور خراب ہو کر مرمت ہو رہا ہے بصورت ضرورت نشاناتِ صفوف جدید قائم کئے جائیں گے، چونکہ اکثر مساجد بلاد و امصارِ ہند قطب رُخ ہیں جن کا جہتِ قبلہ ثلث جنوبی مغرب میں ہے، نیز عبارت کتب فقہ سے اس کی تائید حسب ذیل معلوم ہوتی ہے۔

Fatawa Ridawiyya Volume 6

In 'Tajnis al-Multaqat', it is stated: In our region, the Qibla is between the winter sunset and the summer sunset. If someone prays facing a direction outside of these two sunsets, their prayer is void. Imam Abu Mansur said: One should observe the shortest days of winter and the longest days of summer to identify their respective sunset points; then leave two-thirds on their right and one-third on their left and pray between that. Imam Al-Sayyid Nasir al-Din said that the first statement is regarding validity (jawaz) and the second is regarding preference (istihbab), as mentioned in 'Jami' al-Mudmarat'. (T)

Regarding the above passage, it is requested to know: are the imperfect verbs 'yanẓur' (he looks), 'fayu'taraf' (is identified), 'yutrak' (is left), and 'yuṣallī' (he prays) in the active or passive voice? Who is the subject or the 'object whose subject is not named' (passive subject)? To what do the pronouns in 'on his right' (ʿan yamīnihi) and 'on his left' (ʿan yasārihi) refer—the worshipper (musalli) or the Qibla? Therefore, please provide the vocalization (i'rāb) for the Arabic passage and explain the subjects and pronoun references. Furthermore, guidance is requested on the following matters: For the specific existing mosque mentioned, is it better and more appropriate to keep the Qibla direction facing the mosque's current orientation to maintain space for two complete rows, or is it better to establish markers and change the Qibla direction? If changed to face the Pole Star, even a single row would not be complete. Is it better and more appropriate to follow the layout according to which one complete row can be established within the space of this specific mosque? Is the preference for completing rows recommended (mustahabb), or is changing the Qibla direction? Are the 'two sunsets' of the sun and the 'two sunsets' of the moon the same or different? An answer to this inquiry is needed very urgently as repairs are near completion. It is evident that marks can be durably made on the floor while it is wet; once dry, it will not be possible. Therefore, it requires special attention. Since this inquiry relates to multiple sciences and arts, despite being aware of your lack of time, I have turned to your blessed self because I had no hope of obtaining a desired answer from anyone else or anywhere else. Hence, I hope for forgiveness for this specific trouble and look forward to benefiting from your special attention by return mail. May Allah reward you well in both worlds.

1 Tajnis al-Multaqat Page 54 of 736

फ़तावा रज़विया जिल्द 6

'तजनीस अल-मुल्तक़त' में है: हमारे क्षेत्र का क़िबला सर्दियों के सूर्यास्त और गर्मियों के सूर्यास्त के बीच है। यदि किसी ने ऐसी दिशा में नमाज़ अदा की जो इन दोनों सूर्यास्त के बाहर है, तो उसकी नमाज़ बातिल (अमान्य) होगी। इमाम अबू मंसूर ने फरमाया: सर्दियों के सबसे छोटे दिनों और गर्मियों के सबसे लंबे दिनों को देखें (गौर करें) तो उन दोनों के सूर्यास्त की पहचान हो जाएगी। फिर अपने दाहिने ओर से दो-तिहाई और बाईं ओर से एक-तिहाई छोड़कर उसके बीच नमाज़ अदा करें। इमाम अल-सैयद नासिर अल-दीन ने फरमाया कि पहला कथन जायज़ होने के लिए है और दूसरा मुस्तहब (पसंदीदा) होने के लिए है, जैसा कि 'जामे अल-मुज़मरात' में है। (त)

उपर्युक्त इबारत (अनुच्छेद) के संबंध में यह बात पूछनी है कि क्रिया 'यनज़ुर', 'फ़यत'अर्रफ़', 'युतरक', 'युसल्ली' के रूप मारूफ़ (सकर्मक) हैं या मजहूल (अकर्मक)? और इनका कर्ता या कर्म कौन है? और 'अन यमीनिही' (उसके दाहिने) तथा 'अन यसारीही' (उसके बाएं) शब्दों के सर्वनाम (ज़मीर) का संकेत नमाज़ी की ओर है या क़िबले की ओर? इसलिए अरबी इबारत पर एराब (स्वर चिह्न) लगाए जाएँ और कर्ता आदि सर्वनामों के संकेतों की व्याख्या की जाए। साथ ही निम्नलिखित बातों पर मार्गदर्शन वांछित है: मस्जिद-ए-मौजूदा के लिए क़िबला की दिशा मस्जिद के रुख़ पर ही रहने देना और दो पूरी सफ़ों (पंक्तियों) की गुंजाइश बनाए रखना बेहतर और उचित है, या निशान लगाकर क़िबला की दिशा बदल देना बेहतर है? कुतुब (ध्रुव) की दिशा में एक सफ़ भी पूरी नहीं होती। क्या बाग़ (रौज़ा) के अनुसार रहना बेहतर है जिससे एक पूरी सफ़ बन सके? इस विशेष मस्जिद में सफ़ों के पूर्ण होने का ध्यान रखना मुस्तहब है या क़िबला की दिशा बदलना? सूर्य के 'मगरिबन' (दो सूर्यास्त) और चंद्रमा के'मगरिबन' एक ही हैं या अलग-अलग? इस फ़तवे का उत्तर अत्यंत शीघ्र चाहिए क्योंकि मरम्मत का काम पूरा होने वाला है। यह स्पष्ट है कि फर्श गीला होने पर ही निशान स्थायी रूप से बनाए जा सकते हैं, सूखने के बाद यह संभव नहीं होगा। इसलिए विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। चूँकि यह प्रश्न कई विज्ञानों और कलाओं से संबंधित है, इसलिए समय की कमी के बावजूद आपकी धन्य हस्ती की ओर रुख किया गया है, क्योंकि कहीं और से मनचाहा उत्तर मिलने की उम्मीद नहीं थी। अतः इस विशेष कष्ट के लिए क्षमा प्रार्थी हूँ और विशेष ध्यान का लाभ उठाने के लिए वापसी उत्तर का आकांक्षी हूँ। अल्लाह आपको दोनों जहाँ में खैर (भलाई) अता फरमाए।

1 तजनीस अल-मुल्तक़त पृष्ठ 54/736

فی تجنیس الملتقط القبلة فی دیارنا بین مغرب الشتاء ومغرب الصیف، فان صلی الی جهة خرجت من المغربین فسدت صلاته قال الامام ابو منصور ینظر الی اقصر ایام الشتاء والی اطول ایام الصیف فیتعرف مغربهما ثم یترك الثلثین عن یمینه وثلثا عن یساره و یصلی مابین ذلك، قال الامام السید ناصر الدین الاول للجواز والثانی للاحتساب کما فی جامع المضمرات 1 تجنیس ملتقط میں ہے کہ ہمارے علاقے کا قبلہ موسم سرما کے مغرب اور موسم گرما کے مغرب کے درمیان ہے اگر کسی نے ایسی جہت میں نماز ادا کی جو دونوں مغرب سے خارج ہو تو نماز فاسد ہوگی، امام ابو منصور نے فرمایا موسم سرما کے سب سے چھوٹے دنوں اور موسم گرما کے سب سے بڑے دنوں کو دیکھا (غور کیا) تو ان دونوں کے مغرب کی پہچان ہو جائے گی ۔ پھر اپنے دائیں طرف سے دو تہائی اور بائیں طرف سے ایک تہائی چھوڑ کر اسکے درمیان نماز ادا کرے۔ امام السید ناصرالدین نے فرمایا پہلا قول جواز اور دوسرا استحباب کے لئے ہے، اسی طرح جامع المضمرات میں ہے۔(ت)

عبارت بالا کے متعلق تو یہ بات دریافت طلب ہے کہ صیغہ مضارع ینظر، فیتعرف، یترک، یصلی معروف یا مجہول اور فاعل یا مفعول مالم یسم فاعلہ کون ہے؟ اور لفظ عن یمینہ و عن یسارہ کی ضمائر کا مرجع مصلی ہے یا قبلہ؟ لہٰذا عبارت عربیہ پر اعراب قائم فرمائے جائیں اور فاعل وغیرہ مرجع ضمائر کی تشریح اور ہدایتاً امور ذیل کی ہدایت مطلوب ہے۔ مسجد موجودہ مذکورہ مخصوصہ کا جہت قبلہ مسجد ہی کے رُخ رہنے دینا اور ہر دو صفوفِ کامل کی بدستور گنجائش قائم رکھنا افضل واولی ہے یا نشانات قائم کر کے جہت قبلہ بدل دینا افضل ہے تو قطب رخ میں صف واحد بھی کامل نہیں رہتی ہے افضل واولی ہے یا روضہ کے مطابق جس سے ایک صف کامل قائم رہ سکتی ہے حد مکان اس مسجد خاص میں لحاظِ تکمیل صفوف کی تصریح مستحب ہے

یا تبدیلی جہت قبلہ کی مغربینِ شمس و مغربین قمر ایک ہی ہیں یا جُدا گانہ ؟ جواب استفتاء ہذا کی نہایت عجت ہے مرمت قریب الاختتام ہے اور یہ پوشیدہ نہیں کہ بحالت تری فرش کے نشانات جیسے پائدار قائم ہو سکیں گے بعد خشکی ممکن نہ ہوگا لہٰذا توجہ خاص کی محتاج ہے اور کیونکہ استفتاء خاص متعدد علوم وفنون سے تعلق رکھتا ہے بدیں وجہ باوجود آگہی عدیم الفرصتی بندگانِ ذاتِ بابرکات سے رجوع کی گئی کہ حسب مراد دوسرے کی، دوسری جگہ حصولِ جواب کی پوری امید نہ تھی لہٰذا اس تکلیف دہی خاص کی نسبت مترصد معافی ہو کر توجہ خاص سے مستفید ہونے کا بواپسی امیدوار ہوں ، جزاك الله فی الدارین خیرا۔

Fatawa Razawiyya, Volume Six

The Answer:

The specific estimates given by the noble scholars for the direction of the Qibla were intended for their own specific regions, not as a general rule. Therefore, these estimates vary significantly, as detailed in our treatise *Hidayat al-Muta'al fi Hadd al-Istiqbal*.

Allama al-Birjandi, in his commentary on *Al-Nuqayah*, remarked concerning a passage from *Tajnis al-Multaqat*: "This rule is correct in some places."[1] (Translator's note: For instance, Khairabad, whose northern latitude is 27° degrees 31' minutes and eastern longitude from Greenwich is 80° degrees 48' minutes, has a Qibla almost exactly at the point of true west. That is, between the summer and winter west points, it is slightly tilted towards the south from the true center. This tilt is very minor, not even reaching a quarter of a degree, nor is it perceptible.)

Arabic Text	**Urdu Translation/Explanation**
Because the latitude of Makkah al-Mukarramah (may Allah Almighty increase its honor) is *KA HA*, and its longitude is *MA HA YA*, then the difference between the two longitudes is *MA HA LAH*:. If the log tangent of the latitude of Makkah is 9.5935223 minus the log of the difference between longitudes 9.8801802 = 9.133620, its arc in the tangent table is *HA LAT NA LAW*, its log is 9.9385896 - first constant, then the difference of the city's latitude over this arc is *MA QA*, its log by precise calculation is 7.5083958 - second constant, so if log tangent of the difference between longitudes 9.9335266 + first constant - second constant = 12.73282, the arc of this tangent is *FASAT HA MAH ALO*, which is the deviation towards the point of west	This is because if the latitude of Makkah al-Mukarramah (may Allah increase its greatness) is, for example, *KA HA ALAH SAW* and its longitude is *MA HA YA*, then the distance between both longitudes will be *MA HA LAH* so that:. If the tangent (Zill) of Makkah's latitude 9.5935223 - log (Lojam) which is between both longitudes 9.8801802 = 9.133620, whose arc (Qous) in the table is *HA LAT NA LAW*, its log is 9.9385896, this is the first constant (Mahfooz Awwal). Then, on this arc, the city's latitude will be added which is *MA NA*, whose log by calculation is 7.5083958, this is the second constant (Mahfooz Thani). Thus, if the tangent "which is between both longitudes" 9.9335266 + first constant - second constant = 12.73282, the arc of this tangent is *FASAT MAH HA LAW*, and this is the deviation towards the west point from

Arabic Text	Urdu Translation/Explanation
from the point of south because the northern latitude of the city is more than the mentioned arc, thus the deviation from the true west towards the south is *MADAQAH LAH*, and this is the goal.	the south point because the latitude of the northern city is more than the mentioned arc, so the deviation from true west towards the south is *MADAQAH LAH*, and this is the objective. (Translator's Note)

[1] *Sharh al-Nuqayah* by al-Birjandi, Book of Prayer, Printed in Lucknow, 1/89

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

उत्तर:

उलेमा-ए-किराम ने क़िबला की दिशा के लिए जो विशेष अनुमान बताए हैं, वे उनके अपने विशिष्ट क्षेत्रों के लिए थे, न कि कोई सामान्य नियम। इसलिए वे अनुमान बहुत भिन्न आए हैं, जिनका विस्तृत वर्णन हमारे शोध पत्र हिदायतुल मुताआल फ़ी हद्दिल इस्तक़बाल में है।

अल्लामा बरजंदी ने शराह नक़ाया में तजनीसुल मुल्तक़त के इसी अंश के संबंध में फ़रमाया: "यह नियम कुछ स्थानों में सही और दुरुस्त है।"[1] (अनुवादक नोट: जैसे खैराबाद, जिसका उत्तरी अक्षांश 27° डिग्री 31' मिनट और ग्रीनविच से पूर्वी देशांतर 80° डिग्री 48' मिनट है, उसका क़िबला लगभग ठीक वास्तविक पश्चिम बिंदु पर है। यानी ग्रीष्म और शीतकालीन पश्चिम बिंदुओं के बीच, वास्तविक केंद्र से दक्षिण की ओर बहुत मामूली झुका हुआ है, जो एक चौथाई डिग्री तक भी नहीं पहुँचता और न ही महसूस होने योग्य है।)

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद/व्याख्या
क्योंकि मक्का मुकर्रमा (अल्लाह उसकी महानता बढ़ाए) का अक्षांश का हा है, और उसका देशांतर मा हा या है, तो दोनों देशांतरों के बीच का अंतर मा हा लह होगा:. यदि मक्का के अक्षांश का ज़िल्ल (tangent) 9.5935223 - लोजम (log) जो दोनों देशांतरों के बीच है 9.8801802 = 9.133620 है, जिसका क़ौस (arc) तालिका में हा लत ना लव है, इसका लोजम 9.9385896 है - महफ़ूज़ अव्वल, फिर इस क़ौस पर शहर का अक्षांश का अंतर मा क़ा है, जिसका लोजम गणना के अनुसार 7.5083958 है - महफ़ूज़ थानी, तो यदि ज़िल्ल 'जो दोनों देशांतरों के बीच है' 9.9335266 + महफ़ूज़ अव्वल - महफ़ूज़ थानी = 12.73282	यह इसलिए है क्योंकि मक्का मुकर्रमा (अल्लाह उसकी महानता बढ़ाए) का अक्षांश उदाहरण के लिए का हा अलह सौ और उसका देशांतर मा हा या हो तो दोनों देशांतरों के बीच मा हा लह होगा कि :. यदि मक्का के अक्षांश का ज़िल्ल 9.5935223 - लोजम जो दोनों देशांतरों के बीच है 9.8801802 = 9.133620 है, जिसका क़ौस तालिका में हा लत ना लव है, इसका लोजम 9.9385896 है, यह महफ़ूज़ अव्वल है। फिर इस क़ौस पर शहर का अक्षांश जुड़ जाएगा जो मा ना है, जिसका लोजम गणना के अनुसार 7.5083958 है, यह महफ़ूज़ थानी है। तो, यदि ज़िल्ल 'जो दोनों देशांतरों के बीच है' 9.9335266 + महफ़ूज़ अव्वल - महफ़ूज़ थानी = 12.73282 है, इस

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद/व्याख्या
है, इस ज़िल्ल का क़ौस फ़सत हा मह अलो है, जो दक्षिण बिंदु से पश्चिम बिंदु की ओर विचलन है क्योंकि उत्तरी शहर का अक्षांश उक्त क़ौस से अधिक है, इसलिए वास्तविक पश्चिम से दक्षिण की ओर विचलन मदक़ा लह है, और यही उद्देश्य है।	ज़िल्ल का क़ौस फ़सत मह हा लव है और यह दक्षिण बिंदु से पश्चिम बिंदु की ओर विचलन है क्योंकि उत्तरी शहर का अक्षांश उक्त क़ौस से अधिक है, इसलिए वास्तविक पश्चिम से दक्षिण की ओर विचलन मदक़ा लह है और यही उद्देश्य है। (अनुवादक नोट)

[1] शराह अल-नक़ाया लिल-बरजंदी, किताबुस सलात, लखनऊ में मुद्रित, 1/89

पृष्ठ 55/736

الجواب:

علمائے کرام نے جو خاص تخمینے جہتِ قبلہ کے لئے ارشاد فرمائے وہ خاص اپنے بلاد کے لئے ہیں نہ کہ حکمِ عام، ولہذا وہ تخمینے بہت مختلف آئے ہیں جن کا بیان ہمارے رسالہ ھدایۃ المتعال فی حد الاستقبال میں ہے۔

علامہ بر جندی نے شرح نقایہ میں اسی عبارت تجنیس الملتقط کی نسبت فرمایا انما یصح فی بعض البقاع[1] (یہ قاعدہ بعض جگہوں میں صحیح و درست ہے۔ ت) خیر آباد جس کا عرض شمالی ستائیس ۲۷' درجے اکتیس ۳۱' دقیقے اور گرینچ سے مشرقی اسی ۸۰' درجے اڑتالیس دقیقے ہے اس کا قبلہ تقریباً ٹھیک نقطہ مغرب الاعتدال ہے یعنی وسط مغربین صیف وشتا وسط حقیقی سے جنوب کی طرف ایک خفیف مقدار جھکا ہوا پاؤ درجے تک بھی نہیں پہنچتی نہ وہ محسوس ہونے کے قابل ہے۔

عربی عبارت	اردو ترجمہ / تشریح
وذلك لان عرض مكة المكرمة شرفها الله تعالیٰ	یہ اس لئے ہے کہ مکہ مکرمہ (اللہ اسکی بزرگی
کا حہ الہ وطولہا محہ ی فما بین الطولین م حہ	میں اضافہ فرمائے) کا عرض مثلاً کا حہ الہ سو اور
لح :. لوظل عرض مكة ۹ء۵۹۳۵۲۲۳-لوجم	اسکا طول م حہ ی ہو تو دونوں طولوں کے درمیان م
مابين الطولين ۹ء۸۸۰۱۸۰۲=۹ء۱۳۳۶۲۰	حہ لح ہو گا کہ :. اگر ظل عرض مکہ
قوسہ فی جدول الظل حہ لط نہ لو جہا	۹ء۵۹۳۵۲۲۳-لو جم جو دونوں طولوں کے درمیان
۹ء۹۳۸۵۸۹۶-محفوظ اول ، ثم فضل عرض	ہے ۹ء۸۸۰۱۸۰۲=۹ء۱۳۳۶۲۰ ہے جس کا قوس

عربی عبارت	اردو ترجمہ / تشریح
	جدول میں حہ لط نہ لو ہے اسکا لو جم ۹ء۹۳۸۵۸۹۶ ہے یہ محفوظ اول ہے۔ پھر اس قوس پر عرض بلد زائد ہو گا جو مانہ ہے جس کا لو جم بالتدیق ۷ء۵۰۸۳۹۵۸ ہے یہ محفوظ ثانی ہے، پس اگر ظل "جو دونوں طولوں کے درمیان ہے" ۹ء۹۳۳۵۲۶۶+ محفوظ اول- محفوظ ثانی = ۱۲۷۳۲۸۲ء ہے اس ظل کا قوس فسط مہ حہ لو ہے اور یہ نقطہ جنوب سے نقطہ مغرب کی طرف انحراف ہے کیونکہ بلد شمالی کا عرض قوس مذکورہ سے زائد ہے پس مغرب اعتدال سے جنوب کی طرف انحراف مدقہ لح ہے اور یہی مقصود ہے۔ ت
البلد علی هذه القوس ماقہ لوجها بالتدفیق ۷ء۵۰۸۳۹۵۸-محوط ثانی، فلوظل مابین الطولین ۹ء۹۳۳۵۲۶۶+ محفوظ محفوظ ثانیا = ۱۲۷۳۲۸۲ء قوس هذاالظل فسط حہ مہ الو هو الانحراف الی نقطة المغرب من نقطة الجنوب لان عرض البلد الشمالی اکثر من القوس المذکورة فالانحراف من المغرب الاعتدال الی الجنوب مدقه لح وهو المقصود۔	

[1] شرح النقایہ للبرجندی کتاب الصلوٰۃ مطبوعہ لکھنئو ۸۹/۱

Fatawa Razawiya Volume 6 In the query, it was stated that the direction of the Qibla of the sacred mausoleum is toward the 'mid-west'. This implies that the face of the blessed tomb is exactly toward the true Qibla. Consequently, the head-side should be almost straight toward the pole, as the 'mid-west' and the 'mid-poles' are essentially the same. However, in the diagram, the North Pole line is drawn deviating towards the west of the sacred tomb wall. If such a deviation truly exists, then it's impossible for every 'mid-west' point to be the direction of the tomb's Qibla. The crucial matter here is to ascertain how much the mosque's prayer niche (mihrab) wall deviates from the true Qibla. If the deviation is within one-eighth of a circle, i.e., 45 degrees, then praying toward the mihrab is correct and valid without hesitation. Eschewing such a minor deviation is merely recommended. It was mentioned in the question itself from 'Tajnis al-Multaqit':

قال الامام السيد ناصر الدين ، الاول للجواز والثانى للاحتساب۔ [1]	**Imam Nasir al-Din said: The first case is for permissibility and the second is for merit (Mustahab). (T)**

Similarly, from it and also from 'al-Multaqit', it is mentioned in 'Hulyah' by Imam Ibn Amir al-Hajj: 'Sharh Zad al-Faqir' by Allama al-Ghazzi and 'Sharh al-Khulasah' by al-Quhistani. Then, in 'Radd al-Muhtar', after explaining the practice of keeping two-thirds on the right side and one-third on the left side, it says:

ولو لم يفعل هكذا وصلى فيما بين المغربين يجوز۔ [2]	**If someone did not do so and prayed between the two wests, it would be permissible. (T)**

Therefore, for a recommended (Mustahab) act, putting Muslims into confusion and making the mosque's rows incomplete and imperfect is not appropriate at all. In the pure Sharia, completion is extremely important and magnificent, as evident from this Hadith where the Messenger of Allah says:

من وصل صفا وصله الله و من قطعه قطعه الله [3]	**Whoever joins a row, Allah will join him [to His mercy], and whoever breaks a row, Allah will cut him off. (T)**

Here, even if the row is not physically broken, it is effectively broken in a way that walls intervene and prevent completion. Thus, it is like a row between pillars, and such things have been prohibited, as we have mentioned in our fatwas. Although this and other similar cases are prohibited, as we explained in our fatwas. (T) Description of...

1. Tajnis al-Multaqit
2. Radd al-Muhtar, Chapter: Shurut al-Salat, printed by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/316
3. Sunan Abu Dawood, Chapter: Taswiyat al-Sufuf, printed by Aftab-e-Alam Press, Lahore, 1/97

फतावा रज़विया जिल्द छठी सवाल में 'वस्तु-ल-मग़रिबैन' (मध्य पश्चिम) को रौज़ा-ए-मुबारका के क़िबला की दिशा लिखा गया है। इससे मालूम हुआ कि मज़ार-ए-मुबारक का रुख़ बिल्कुल सही क़िबला की तरफ़ है, तो लाज़िम था कि सिरहाना तक़रीबन सीधा कुतुब (ध्रुव) की तरफ़ हो क्योंकि मध्य पश्चिम और मध्य कुतुब एक ही चीज़ है। लेकिन नक़्शे में कुतुब-ए-शिमाली (उत्तरी ध्रुव) की रेखा रौज़ा-ए-मुबारका की दीवार के पश्चिम की तरफ़ झुकी हुई बनाई गई है। अगर हक़ीक़त में इतना झुकाव है, तो 'वस्तु-ल-मग़रिबैन' का हरगिज़ रौज़ा के क़िबला की दिशा होना मुमकिन नहीं है। फिर यहाँ अहम बात यह जानना है कि मस्जिद के मेहराब की दीवार असल क़िबला से कितनी झुकी हुई है। अगर वह झुकाव एक-आठवां हिस्सा यानी 45 डिग्री के अंदर है, तो मेहराब की दिशा में नमाज़ बिला तक़ल्लुफ़ सही और दुरुस्त है। इतने थोड़े झुकाव को छोड़ना सिर्फ़ मुस्तहब (पसंदीदा) है। ख़ुद सवाल में 'तजनीसुल मुल्तक़ित' के हवाले से ज़िक्र हुआ:

قال الامام السید ناصر الدین ، الاول للجواز والثانی للاحتساب۔[1]	**इमाम नासिरुद्दीन ने कहा: पहली सूरत में जायज़ है और दूसरी में मुस्तहब है। (त)**

इसी तरह इससे और मुल्तक़ित से 'हुलिया' में इमाम इब्न अमीर अल-हाज्ज, अल्लामा ग़ज़्ज़ी की 'शरह ज़ादुल फ़क़ीर' और क़ुहिस्तानी की 'शरह अल-ख़ुलासा' में है। फिर 'रद्दुल मुहतार' में दाईं ओर दो-तिहाई और बाईं ओर एक-तिहाई हिस्सा रखने का बयान करने के बाद फ़रमाया:

ولو لم یفعل ھکذا وصلی فیما بین المغربین یجوز۔[2]	**अगर किसी ने ऐसा नहीं किया और दोनों पश्चिमों के बीच नमाज़ पढ़ ली, तो जायज़ होगी। (त)**

तो एक मुस्तहब काम के लिए मुसलमानों को परेशानी में डालना और मस्जिद की सफ़ों को अधूरा छोड़ देना हरगिज़ मुनासिब नहीं। शरीयत में सफ़ों को पूरा करना निहायत अहम और ज़रूरी है, जिसका पता इस हदीस से चलता है कि रसूलुल्लाह फ़रमाते हैं:

من وصل صفا وصله الله و من قطعه قطعه الله [3]	**जिसने सफ़ को जोड़ा, अल्लाह उसे (अपनी रहमत से) जोड़ेगा और जिसने सफ़ को तोड़ा, अल्लाह उसे काट देगा। (त)**

यहाँ अगर सफ़ कटी हुई नहीं है, फिर भी दीवारें बीच में आने की वजह से उसे कटा हुआ ही माना जाएगा क्योंकि वे उसे पूरा नहीं होने देंगी। तो यह स्तंभों के बीच सफ़ की तरह हो गया और ऐसी

चीज़ों से मना किया गया है जैसा कि हमने अपने फ़तावा में बयान किया। हालाँकि इस और इस तरह की दूसरी सूरतों से मना किया गया है जैसा कि हमने अपने फ़तावा में बयान किया। (त) बयान...

---

1. तजनीसुल मुल्तक़ित
2. रद्दुल मुहतार, बाब: शुरुतुस सलात, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 1/316
3. सुनन अबू दाऊद, बाब: तसवियतुल सुफ़ूफ, आफ़ताब-ए-आलम प्रेस, लाहौर, 1/97

पृष्ठ 56 का 736

فتاوی رضویہ جلد ششم سوال میں وسط مغربین کو جہت قبلہ روضہ رخ لکھا اس سے معلوم ہوا کہ مزار مبارک کا منہ صحیح جانب قبلہ تحقیقی ہے تو لازم تھا کہ سرہانا تقریباً سیدھا جانب قطب ہو کہ وسط مغربین و وسط قطبین شیئ واحد ہے مگر نقشہ میں قطب شمالی کا خط دیوارِ روضہ مبارکہ کی جانب مغرب منحرف بنایا ہے اگر واقعی اتنا انحراف ہے تو وسط مغربین کا ہرگز جہت قبلہ روضہ رخ ہونا متصور نہیں پھر یہاں امر اہم اس کی معرفت ہے کہ دیوار محراب مسجد کو قبلہ تحقیقی سے کتنا انحراف ہے اگر وہ انحراف ثمن دور یعنی ۴۵ درجے کے اندر ہے تو نماز محراب کی جانب بلا تکلف صحیح و درست ہے، اس انحراف قلیل کا ترک صرف مستحب ہے خود سوال میں تجنیس ملتقط سے گزرا۔

قال الامام السید ناصر الدین ، الاول للجواز والثانی للاحتساب۔[1]

امام ناصر الدین نے کہا: پہلی صورت میں جواز اور دوسری میں استحباب ہے۔ (ت)

اسی طرح اس سے اور نیز ملتقط سے حلیہ امام ابن امیر الحاج میں ہے: شرح زاد الفقیر للعلامۃ الغزی و شرح الخلاصہ للقھستانی۔ پھر ردالمحتار میں وہی دو ثلث جانب راست اور ایک ثلث جانب چپ رکھنا بیان کرکے فرمایا:

ولو لم یفعل ھکذا وصلی فیما بین المغربین یجوز۔[2]

اگر کسی نے اس طرح نہ کیا اور مغربین کے درمیان نماز پڑھ لی تو جائز ہوگی۔ (ت)

تو ایک امر مستحب کے لئے مسلمانوں کو تردد میں ڈالنا اور صفوف مسجد کو ناقص و ناتمام کردینا ہرگز مناسب نہیں۔ شرع مطہر میں تکمیل نہایت اہم و مہتم بالشان ہے جس کا پتا اس حدیث سے چلتا ہے کہ رسول اللہ فرماتے ہیں:

من وصل صفا وصله الله و جس نے صف کو ملایا اللہ تعالیٰ اسے ملائے گا اور جس نے صف

من قطعه قطعه الله [3] کو قطع اللہ تعالیٰ اسے قطع فرمائے گا (ت)

یہاں اگر قطع صف موجود نہیں صف برو جہ قطع ہے کہ دیواریں حائل ہو کر تکمیل نہ کرنے دیں گی فکان کالصف بین السواری وقد نھی عنه بنحو ذلک کما ذکر نا فی فتاؤنا (یہ اس صف کی طرح ہے جو ستونوں کے درمیان ہو حالانکہ اس سے اور اس طرح کی دوسری صورتوں سے منع کیا گیا ہے جیسا کہ اسے ہم نے اپنے فتاوی میں بیان کیا۔ (ت) بیانِ

---

1 تجنیس الملتقط 2 رد المحتار باب شروط الصلوۃ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/۳۱۶ 3 سنن ابو داؤد باب تسویۃ الصفوف مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور ۱/۹۷

Fatawa Razawiyya, Volume 6

Question: If it is correct, then it has been proven that as long as the deviation does not exceed 45 degrees, prayer is undoubtedly valid. Facing the actual Qibla is neither obligatory (Fard) nor mandatory (Wajib), but is merely a recommended Sunnah. Therefore, prayer in the mosque is undoubtedly valid and there is essentially no harm in it; straightening the wall is not obligatory, although it is better and more virtuous. In Radd al-Muhtar, it is stated:

[Table start] | Arabic Text | Urdu Translation | | :--- | :--- | | If one deviates from the exact point [of the Kaaba] such that the facing is not completely lost, it is permissible. This is supported by what is stated in Al-Zahiriyya: "If one moves slightly to the right or left, it is permissible." | If one deviates from the exact Kaaba such that the confrontation is not completely terminated, the prayer is permissible. This is supported by the statement of Al-Zahiriyya that when it [the direction] becomes slightly to the right or left, the prayer will be permissible. (T) | [Table end]

An excerpt from Al-Hilya:

[Table start] | Arabic Text | Urdu Translation | | :--- | :--- | | This is for recommendation (Mustahabb), while the first is for permissibility (Jawaz). By this, it is meant that the absence of deviation while remaining within the general direction is permissible. | This is for commendability and the former is for permissibility. By this, it is meant that it is commendable not to have any degree of deviation, and such a deviation that does not involve a total exit from the direction of the Kaaba is also permissible. (T) | [Table end]

Then, if one wishes to adopt this more virtuous method, they should make the wall slightly shifted eastward from the north (pole). The method for this, which doesn't require measuring angles, is as follows: keep the southern corner of this Qibla wall fixed, marked with the letter 'B'. From 'B', draw a straight line towards the pole equal in length to this wall using a correct compass. Take a rope, keep one end firmly fixed at point 'B' so it does not slip, and pull the other end from point 'H' towards the east in such a way that there is no slack in the rope. Its pull will form an arc shape on the ground. Then, take a straight stick measuring six and a quarter 'qabda' (handbreadths), place one end on point 'H', and meet the other end with this arc. Mark the point where they meet as the letter 'Hamza' (ء). Join 'Hamza' (ء) to 'B' with a straight line; this will be the correct Qibla wall.

[Table start] | Arabic Text | Urdu Translation | | :--- | :--- | | And that is because in triangle H-B-ء, the legs H-B and ء-B are each 106. And angle B = mah al-h, so each of the base angles is mah h-l, so if its sine is... | And this is because in triangle H-B-ء, there are two legs H-B and ء-B, totaling 106 units. And since angle B = mah h-l, both angles of the base are mah h-l. | [Table end]

---

1. Radd al-Muhtar, Chapter: Conditions of Prayer, Printed at Mustafa al-Babi, Egypt, 1/315.
2. Hilyat al-Mahalli Sharh Munyat al-Musalli.

फ़तावा रज़विया, जिल्द 6

प्रश्न: यदि यह सही है, तो यह सिद्ध हो चुका है कि जब तक 45 डिग्री का विचलन न हो, तब तक नमाज़ निस्संदेह जायज़ है। और यह कि वास्तविक क़िबला की ओर मुख करना न तो फ़र्ज़ है और न ही वाजिब, बल्कि केवल सुन्नत और मुस्तहब (सराहनीय) है। इसलिए मस्जिद में नमाज़ निस्संदेह जायज़ है और इसमें मूल रूप से कोई नुकसान नहीं है; दीवार को सीधा करना फ़र्ज़ नहीं है, हालांकि यह बेहतर और अफ़ज़ल है। रद्दुल मुहतार में है:

[तालिका प्रारंभ] | अरबी पाठ | उर्दू अनुवाद | | :--- | :--- | | यदि कोई ऐन-ए-काबा (काबा के सटीक बिंदु) से इतना विचलित हो जाए कि आमना-सामना पूरी तरह समाप्त न हो, तो यह जायज़ है। और इसकी पुष्टि ज़हीरिया के इस कथन से होती है: "जब वह थोड़ा दाएं या थोड़ा बाएं हो जाए तो जायज़ है"। | अगर ऐन-ए-काबा से इतना विचलित हुआ कि उससे पूरी तरह आमना-सामना खत्म न हो तो नमाज़ जायज़ है। इसकी पुष्टि ज़हीरिया की इस इबारत से होती है कि जब वह थोड़ा दाएं या बाएं हो जाए तो नमाज़ जायज़ होगी। (त) | [तालिका अंत]

हिल्या से उद्धृत:

[तालिका प्रारंभ] | अरबी पाठ | उर्दू अनुवाद | | :--- | :--- | | यह मुस्तहब (सराहनीयता) के लिए है और पहला जवाज़ (अनुमति) के लिए है। इसका अर्थ यह है कि दिशा से पूरी तरह बाहर निकले बिना विचलन का न होना जायज़ है। | यह मुस्तहब के लिए है और पहला जवाज़ के लिए है। इसका अर्थ यह है कि किसी भी हद तक विचलन न होना मुस्तहब है और इस प्रकार का विचलन कि काबा की दिशा से बिल्कुल बाहर न निकला जाए, वह भी जायज़ है। (त) | [तालिका अंत]

फिर यदि कोई इस अफ़ज़ल तरीके को अपनाना चाहे, तो दीवार को क़ुतुब (ध्रुव) से पूर्व की ओर झुका हुआ बनाए। और इसका वह तरीका जिसमें कोण नापने की आवश्यकता न पड़े, यह है: इस क़िबला की दीवार का दक्षिणी कोना जिस पर अक्षर 'ब' लिखा है, उसे स्थिर रखें। और एक सही क़ुतुबनुमा (कम्पास) से 'ब' से एक सीधी रेखा क़ुतुब की ओर उतनी लंबी खींचें जितनी लंबी यह दीवार है। एक रस्सी लें और उसका एक सिरा 'ब' अक्षर पर मजबूती से थामे रहें कि वह फिसले नहीं, और दूसरा सिरा 'ह' अक्षर से मिलाकर पूर्व की ओर इस तरह खींचें कि रस्सी में झोल न रहे। इसके खिंचाव से ज़मीन पर एक चाप (arc) बन जाएगा। फिर सवा छह मुट्ठी (qabda) लंबी एक सीधी लकड़ी लें,

उसका एक सिरा 'ह' पर रखें और दूसरा सिरा इस चाप से मिला दें। जहाँ ये मिलें, उस स्थान का नाम 'हमज़ा' (ء) रखें। 'हमज़ा' से 'ब' तक एक सीधी रेखा खींच दें, यही सटीक क़िबला की दीवार होगी।

[तालिका प्रारंभ] | अरबी पाठ | उर्दू अनुवाद | | :--- | :--- | | और यह इसलिए है क्योंकि त्रिकोण ह-ब-ء में, भुजाएँ ह-ब और ء-ब प्रत्येक 106 हैं। और कोण ब = मह अल-ह, तो आधार के दोनों कोणों में से प्रत्येक मह ह-ल है, तो यदि इसकी ज्या (sine) है... | और यह इसलिए है क्योंकि त्रिकोण ह-ब-ء में, ह-ब और ء-ब दो भुजाएँ हैं, जो कुल 106 हैं। और चूँकि कोण ब = मह अल-ह है, तो आधार के दोनों कोणों का मान मह ह-ल है। | [तालिका अंत]

---

1. रद्दुल मुहतार, बाब: शरुत-उस-सलात, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 1/315.
2. हिल्या-तुल-महल्ली शरह मुन्या-तुल-मुसल्ली।

पृष्ठ 57/736

سوال اگر صحیح ہے تو یہ انحراف ثابت کر چکے ہیں کہ جب تک ۴۵ درجے انحراف نہ ہو نماز بلا شبہ جائز ہے اور یہ کہ قبلہ حقیقی کو منہ کرنا نہ فرض نہ واجب صرف سنت مستحبہ ہے لہذا مسجد میں نماز بلا شبہ جائز ہے اور اس میں اصلاً نقصان نہیں ، نہ دیوار سیدھی کرنا فرض البتہ بہتر و افضل ہے ، ردالمحتار میں ہے :

[جدول کا آغاز] | عربی عبارت | اردو ترجمہ | | :--- | :--- | | لو انحرف عن العین انحرافا لا تزول منه المقابلة بالكلية جاز ويؤيده ما قال في الظهيرية اذا تيامن او تياسر تجوز۔ | اگر عین کعبہ سے اتنا منحرف ہوا کہ اس سے بالکلیہ مقابلہ ختم نہ ہو تو نماز جائز ہے اس کی تائید ظہیریہ کی اس عبارت سے ہوتی ہے کہ جب وہ تھوڑا دائیں یا بائیں ہو جائے تو نماز جائز ہوگی۔ (ت) | [جدول کا اختتام]

حلیہ میں ملتقط سے :

[جدول کا آغاز] | عربی عبارت | اردو ترجمہ | | :--- | :--- | | هذا استحباب والاول للجواز اه يريد ان عدم الانحراف مع عدم الخروج عن الجهة بالكلية جائز۔ | یہ استحباب کے لئے ہے اور پہلا جواز کے لئے ہے اھ اس سے مراد یہ ہے کہ کسی قدر بھی انحراف نہ ہو یہ مستحب ہے اور اس طرح کا انحراف کہ جہت کعبہ سے بالکل خروج نہ ہو یہ بھی جائز ہے۔ (ت) | [جدول کا اختتام]

پھر اگر اس افضل کو اختیار کرنا چاہیں تو دیوار سیدھی قطب سے مشرق کو ہٹی ہوئی بنائیں اور اس کا وہ طریقہ جس میں زاویہ ناپنے کی حاجت نہ پڑے یہ ہے کہ اس دیوار قبلہ کا جنوبی گوشہ جس پر حرف 'ب' لکھا ہے قائم رکھیں اور صحیح قطب نما سے ایک خط ب سے سیدھا قطب کو

اتنا بڑا کھینچیں جس کا طول اس دیوار کے برابر ہو ایک رسی لیں اور اسکا ایک سرا حرف ب پر خوب جمائے رہیں کہ سرکے نہیں اور دوسرا سرا حرف ح سے ملا کر مشرق کی طرف اس طرح کھینچیں کہ رسی میں جھول نہ پڑنے پائے، اس کی کشش سے کمان کی شکل میں زمین پر بن جائے اور پھر ایک سیدھی لکڑی سوا چھ قبضہ کی ناپ کر اس کا ایک سرا حرف ح پر رکھیں اور دوسرا اس کمان سے ملا دیں جہاں ملے اس ملنے کی جگہ کا نام حرف ء رکھیں۔ ء سے ب تک سیدھا خط ملا دیں، یہ ٹھیک دیوار قبلہ ہوگی۔

[جدول کا آغاز] | عربی عبارت | اردو ترجمہ | | :--- | :--- | | وذلك لان فی مثلث ح ب ء ، ساقا ح ب ، ء ب کل ١٠٦- وزاوية ب = مح الح فكل من زوايتي القاعدة مح ح ل فلوجيبها | اور یہ اس لئے کہ مثلث ح ب ء میں ح ب ، ء ب کی دو ساقیں ہے کل ١٠٦ ہوئے اور زاویہ ب = ح صہ الح ہے تو قاعدہ کے دونوں زاویوں کا مح ح ل | [جدول کا اختتام]

---

1. ردالمحتار باب شروط الصلوۃ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ١ / ٣١٥

2. حلیۃ المحلی شرح منیۃ المصلی

Fatawa Razviya, Volume 6

9.9998107. And if sin H S H etc. is 8.7709697, it will be so if sin is 9.9998107. And if sin of H S H is = 8.7709697 and log 106 = 2.02503059, the sum of these two is 10.79600029 - 9.9998107 = 0.79618959, whose number = 6.2536. These are the measurements of line H-E, and this is our aim (T).

Number = 6.258. These are the measurements of line H-E and that is what we intended.

And if it has been correctly checked beforehand, there is no need to use the compass again to draw the middle line (H-B). Instead, take the measuring rope for the wall, fix one end firmly at point B, keep the rope taut, and place the other end at the top point of the wall. Where it meets, join it to the arc. Draw a straight line from this meeting point to the edge B of the wall. Construct the Qibla wall on this line, and it will be correct.

Because angle A-B-D = WASLR as mentioned before, every angle of the base... its sine is 9.9993757 and the sine of WASLR is 0.0615509. So when 106 is added to it, it becomes 11.0968568 - 9.9993057 = 1.0975511, whose number = 12.232. This is what we intended.

Because angle A-B-D = WASLR as passed before, the total angle of the base will be WASA Maal whose sine is 9.9993757 and sine of WASLR is 0.0615509. So when 106 is added to it, it becomes 1.110865811 - 11.0968568 - 9.9993057 = 1.0865811, whose number = 12.232 and this is our aim (T).

However, in these cases, one consideration is necessary: once Muslims have designated it as a mosque, the alley left out while straightening the wall should not be left to waste. It is a piece of the mosque itself, and its desecration is forbidden. Either build the straight wall and join it so no land remains small, or if possible, keep corner A (Alif) as it is and extend the land from corner B (Be) towards the west to point R (Re) by twelve and a quarter 'qabdah' (hand-spans), then join the line and raise the new wall so the land of the previous wall remains included in the mosque. And Allah Almighty knows best.

Problem 395: From Hayat Nagar, Sarai Tareen, District Moradabad, sent by Syed Habib Shah, 8 Jumada al-Akhirah 1336 AH. To the guide of investigation steps, Maulana Sahib (may his blessings last). Peace be upon you and the mercy of Allah. Your Eminence, the mosque of Hayat Nagar deviates from the west direction. I am

sending its map on a separate piece of paper and the full details on the front of the paper for your observation. The reason is that some people here say that prayers are not offered facing the correct direction in this mosque. I, the humble one, have requested from a person regarding the mosque...

Page 58 of 736

फ़तावा रज़विया, जिल्द 6

9.9998107. और यदि sin H S H इत्यादि 8.7709697 है, तो यह तब होगा जब sin 9.9998107 हो। और यदि H S H का sin = 8.7709697 है और log 106 = 2.02503059 है, तो इन दोनों का योग 10.79600029 - 9.9998107 = 0.79618959 होगा, जिसका मान = 6.2536 है। ये रेखा H-E के माप हैं और यही हमारा उद्देश्य है (त)।

संख्या = 6.258. ये रेखा H-E के माप हैं और यही हम चाहते थे।

और यदि पहले सही ढंग से जाँच कर ली गई हो, तो मध्य रेखा (H-B) बनाने के लिए फिर से कुतुबनुमा (दिशा-सूचक) लगाने की आवश्यकता नहीं है। इसके बजाय, दीवार की नाप वाली रस्सी लें, उसका एक सिरा बिंदु B पर अच्छी तरह जमा दें, रस्सी को सीधा रखते हुए दूसरा सिरा दीवार के ऊपर रखें। जहाँ यह मिले उसे कमान से मिला दें। इस मिलन बिंदु से दीवार के किनारे B तक एक सीधी रेखा खींचें। क़िबला की दीवार इसी रेखा पर बनाएँ यह सही होगी।

क्योंकि कोण A-B-D = WASLR जैसा कि पहले बताया गया है, इसलिए आधार का प्रत्येक कोण... उसकी ज्या (sine) 9.9993757 है और WASLR की ज्या 0.0615509 है। तो जब इसमें 106 जोड़ा जाता है, तो यह 11.0968568 - 9.9993057 = 1.0975511 हो जाता है, जिसका मान = 12.232 है। यही हम चाहते थे।

क्योंकि कोण A-B-D = WASLR जैसा कि पहले बीत चुका है, आधार का कुल कोण वासा माल होगा जिसकी ज्या 9.9993757 है और WASLR की ज्या 0.0615509 है। तो जब इसमें 106 जोड़ा जाता है, तो यह 1.110865811 - 11.0968568 - 9.9993057 = 1.0865811 हो जाता है, जिसका मान = 12.232 है और यही हमारा उद्देश्य है (त)।

लेकिन इन स्थितियों में एक बात का ध्यान रखना ज़रूरी है: एक बार जब मुसलमानों ने इसे मस्जिद बना लिया है, तो दीवार सीधी करने के दौरान जो गली छूटेगी, उसे बर्बाद नहीं छोड़ना चाहिए क्योंकि वह मस्जिद का ही हिस्सा है और उसका अनादर हराम है। या तो सीधी दीवार बनाकर उसे जोड़ दें ताकि ज़मीन कम न रहे, या यदि संभव हो, तो कोने 'अलिफ़' (A) को वैसा ही रहने दें और कोने 'बे' (B) से सवा बारह 'क़ब्ज़ाह' (हाथ की नाप) ज़मीन पश्चिम की ओर बिंदु 'रे' (R) तक बढ़ाकर नई दीवार बनाएँ ताकि पुरानी दीवार की ज़मीन मस्जिद में शामिल रहे। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसाला संख्या 395: हयात नगर, सराय तरीन, ज़िला मुरादाबाद से सैयद हबीब शाह द्वारा 8 जमादी अल-आखिर 1336 हिजरी को भेजा गया। तहकीक के मराहिल के रहनुमा मौलाना साहब (उनकी बरकतें बनी रहें)। आप पर शांति और अल्लाह की दया हो। श्रीमान, हयात नगर की यह मस्जिद पश्चिम दिशा से विचलित है। मैं इसका नक्शा एक अलग कागज़ पर और पूरा विवरण कागज़ के सामने वाले हिस्से पर लिखकर आपके अवलोकन हेतु भेज रहा हूँ। इसका कारण यह है कि यहाँ कुछ लोग कहते हैं कि इस मस्जिद में नमाज़ सही दिशा में नहीं होती। मुझ अदना ने एक व्यक्ति के पास मस्जिद का...

पृष्ठ 58 का 736

۹.۹۹۹۸۱۰۷ ولو جیب ح صہ الح ۷۷۰۹۶۹۷ء ۸ = ہو گا اسکا اگر جیب ۹.۹۹۹۸۱۰۷ ہوا اور اگر جیب ح صہ الح کا ولو ۱۰۶ = ۰۲۵۰۳۰۵۹ء مجموع ھذین ۷۷۰۹۶۹۷ء ۸ ہے اور لو ۱۰۶ = ۰۲۵۰۳۰۵۹ء ۲، ان دونوں کا مجموعہ ۹۶۲۷۵۶۷ء ۱۰ - ۹۹۹۸۱۰۷ = ۹۶۲۷۲۶۹ء ۰ جس کا عدد = ۶.۲۵۸ء ۶ ہے یہ خط ح ء کے قبضے ہیں اور یہی ہماری مراد ہے (ت)

عدده = ۶.۲۵۸ء ۶ هذه قبضات خط ح ء وذلك ما اردناه۔

اور اگر پہلے صحیح جانچ کرلی ہو تو دوبارہ قطب نما لگانے اور بیچ کا خط یعنی ح ب بنانے کی حاجت نہیں بلکہ دیوار کے ناپ کی رسی لیں اور اس کا ایک سرا حرف ب کی جگہ خوب جما کر رسی میں بے خم پڑے دوسرا سرا دیوار کے حرف اوپر رکھ کر دوسرا سرا جہاں ملے کمان سے ملا دیں، اس ملنے کی جگہ دیوار کے کنارہ ب تک سیدھا خط کھینچ دیں دیوار قبلہ اس خط پر اٹھائیں کہ صحیح ہوگی۔

لان زاوية ا ب ء = وصلر كما تقدم فكل زاوية القاعة وصه مال جيبها ۹.۹۹۹۳۷۵۷ء وجيب و صه لر ۰۶۱۵۵۰۹ء فاذا جمع فيه ۱۰۶ صار ۰۹۶۸۵۶۸ء ۱۱ - ۹.۹۹۹۳۰۵۷ = ۰۸۶۵۸۱۱ء ۱ عدده = ۱۲.۲۳۲ء ۱۲ وذالك ما اردناه۔

کیونکہ زاویہ ا ب ء = وصلر کے ہے جیسا کہ گزرا تو قاعدہ کے زاویہ کا کل وصہ مال ہوگا جس کا جیب ۹.۹۹۹۳۷۵۷ اور جیب وصلر کا ۰۶۱۵۵۰۹ء ہے تو جب اس میں اگر ۱۰۶ کو جمع کیا جائے تو یہ ۰۹۶۸۵۶۸ء ۱۱ - ۹.۹۹۹۳۰۵۷ = ۰۸۶۵۸۱۱ء ۱ ہوگا جس کا عدد = ۱۲.۲۳۲ء ۱۲ ہے اور یہی ہماری مراد ہے (ت)

مگر ان صورتوں میں ایک لحاظ لازم ہے جبکہ مسلمان اُسے مسجد کرچکے تو یہ گلی جو دیوار سیدھی کرنے میں چھوٹے گی اسے ضائع چھوڑ دینا جائز نہیں کہ وہ مسجد ہی کا ٹکڑا ہے اور اس کی بے حرمتی حرام۔ تو یا تو سیدھی دیوار ہی اور چن کر اس سے ملا دیں کہ زمین چھوٹی نہ رہے یا ممکن ہو تو دیوار کا گوشہ الف برقرار رکھیں اور گوشہ ب سے سوا بارہ قبضہ زمین مغرب کو حرف ر تک بڑھا کرا اور میں خط ملا کر دیوار جدید اٹھائیں کہ اگلی دیوار کی زمین شامل مسجد رہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۳۹۵: از حیات نگر ڈاکخانہ سرائے ترین ضلع مرادآباد مرسلہ سید حبیب شاہ صاحب ۸ جمادی الاخری ۱۳۳۶ھ ہادی مراحل تحقیق جناب مولینا صاحب دامت برکاتہم، السلام علیکم ورحمة اللہ جناب عالی اس قصبہ حیات نگر کی مسجد سمت مغرب سے متجاوز ہے اسکا نقشہ علیحدہ ایک پرچہ کاغذ کی پشت پر اور تمام حال کاغذ کی پیشانی پر لکھ کر حضور کے ملاحظہ کے واسطے ارسال کرتا ہوں باعث اس کا یہ ہے کہ یہاں چند اشخاص ایسے ہیں کہ وہ کہتے ہیں کہ اس مسجد میں سیدھے رخ نماز نہیں ہوتی کمترین نے ایک صاحب کے پاس مسجد کا

Fatawa Razawiyya Volume Six

...it would not emerge, then if prayer is offered facing the direction of the mosque itself, it would certainly be valid. However, after being informed of the [correct] Qibla, such a deviation is disliked (Makruh) and contrary to the Sunnah. Therefore, do not consider the orientation of the mosque, but rather the direction of the Qibla; that is, pray exactly in the line of point 'B-A'. And Allah Almighty knows best.

Page 60 of 736

फ़तावा रज़विया छठा खंड

...नहीं निकलती, तो मस्जिद की ही दिशा में नमाज़ पढ़ी जाए तो ज़रूर सही हो जाएगी, मगर क़िबला की जानकारी मिलने के बाद इतना विचलन मकरूह (नापसंदीदा) और सुन्नत के ख़िलाफ़ है, इसलिए मस्जिद की दिशा का ख्याल न करें बल्कि क़िबला की दिशा का, यानी बिंदु 'ब-अ' (B-A) की सीध में ही नमाज़ पढ़ें। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

पृष्ठ ७३६ का ६०

نہ نکلتی، تو مسجد ہی کے رُخ پر نماز پڑھی جائے ضرور صحیح ہو جائے گی مگر بعدِ اطلاع قبلہ سے اتنا انحراف مکروہ و خلافِ سنت ہے، لہذا سمتِ مسجد کا خیال نہ کریں بلکہ سمتِ قبلہ کا، یعنی خطِ ب ء ہی کی سیدھ پر پڑھیں۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

Volume 6 | Fatawa Razawiyya

Hidayat-ul-Muta'aal fi Hadd-il-Istiqlal 1324 AH (Guidance from Allah Almighty in determining the direction of the Qibla)

Issue No. 396: From Aligarh, through Mawlawi Bashir Ahmad, teacher at Madrasa Ahle Sunnat, 24 Dhu al-Hijjah 1324 AH.

The Eidgah of Aligarh city, which has been built for hundreds of years and where past scholars used to offer and lead Eid prayers without any dislike, has recently been researched by modern-minded people using their conjectures and English instruments. They claim it deviates from the direction of the Qibla, with the North Pole situated behind the right corner, causing it to be turned away from the West by nearly ninety feet. Therefore, they claim it is mandatory and an obligation for the Muslims of the city, according to their capacity, to demolish it and correct the direction, otherwise, prayer in it is macrooh-e-tahrimi (forbidden-like disliked). On December 10, 1906, a fatwa was published therein, whose wording in answer is: "If the Muslims there have enough financial power that they can demolish it and rebuild it on the correct Qibla direction, then it is an obligation upon them to do so. If they do not have the power to build it in the correct Qibla direction, then it is an obligation upon them to draw lines for the correct Qibla direction in that mosque or Eidgah and stand on those lines to offer prayer. As it is mentioned in Al-Hidayah:"

[Table/Box Content] Left (Arabic): And whoever is absent (far from the Kaaba), his obligation is to face its general direction; this is the correct view, because responsibility is according to capacity. (End of quote) Right (Urdu Translation): The person who is far from the Kaaba, it is obligatory for him during prayer to turn towards the direction of the Kaaba; this is correct because the responsibility is according to strength. (End of quote) (T)

---

1. Al-Hidayah, Chapter on Conditions of Prayer, printed by Al-Maktaba al-Arabia Karachi, 1/100.

जिल्द छठा | फ़तावा रज़विया

हिदायतुल मुताआल फ़ी हद्दिल इस्तिकबाल १३२४ हि. (किबला की दिशा निर्धारित करने में अल्लाह तआला का मार्गदर्शन)

मसला नंबर ३९६: अलीगढ़ से, मौलवी बशीर अहमद साहब के माध्यम से, शिक्षक मदरसा अहले सुन्नत, २४ ज़ुल-हिज्जा १३२४ हि.

अलीगढ़ शहर की ईदगाह, जो सैकड़ों वर्षों से बनी हुई है और जिसमें पूर्ववर्ती विद्वान बिना किसी नापसंदगी के ईद की नमाज़ें पढ़ते और पढ़ाते रहे हैं, आजकल आधुनिक विचारधारा वाले लोगों ने अपने कयासों और अंग्रेज़ी उपकरणों से यह शोध किया है कि यह किबला की दिशा से विचलित है और उत्तरी ध्रुव दाहिने कोने के पीछे स्थित है, जिससे यह पश्चिम से लगभग नब्बे फीट मुड़ी हुई है। इसलिए, सामर्थ्य के अनुसार शहर के मुसलमानों पर इसे तोड़कर दिशा ठीक करना अनिवार्य और फ़र्ज़ है, अन्यथा इसमें नमाज़ पढ़ना मकरूह-ए-तहरीमी है। १० दिसंबर १९०६ ई. को इसमें एक फ़तवा छपा जिसकी उत्तर की इबारत यह है: "अगर वहाँ के मुसलमानों में इतनी वित्तीय शक्ति है कि वे इसे शहीद (ध्वस्त) करके सही किबला दिशा पर बना सकें, तो उनके ज़िम्मे यह फ़र्ज़ है कि वे ऐसा ही करें। अगर उनमें सही किबला दिशा बनाने की शक्ति नहीं है, तो उनके ज़िम्मे यह फ़र्ज़ है कि वे उस मस्जिद या ईदगाह में सही किबला दिशा की रेखाएँ खींच लें और उन रेखाओं पर खड़े होकर नमाज़ पढ़ा करें, जैसा कि हिदाया में उल्लेख है:"

[तालिका/बॉक्स सामग्री] बायां (अरबी): और जो कोई (काबा से) दूर हो, उसका फ़र्ज़ उसकी दिशा की ओर रुख करना है; यही सही विचार है, क्योंकि जिम्मेदारी क्षमता के अनुसार होती है। (समाप्त) दायां (उर्दू अनुवाद): जो व्यक्ति काबा से दूर हो, उस पर नमाज़ के दौरान काबा की दिशा की ओर रुख करना फ़र्ज़ है; यही सही है क्योंकि जिम्मेदारी सामर्थ्य के अनुसार होती है। (समाप्त) (त)

---

1. अल-हिदाया, नमाज़ की शर्तों का अध्याय, मकतबा अल-अरबिया कराची द्वारा मुद्रित, १/१००।

पृष्ठ ६१ का ७३६

هداية المتعال فی حد الاستقبال ۱۳۲۴ھ (استقبالِ قبلہ کی تعیین میں اللہ تعالیٰ جل شانہ کی رہنمائی)

مسئلہ نمبر ۳۹۶: از علی گڑھ معرفت مولوی بشیر احمد صاحب مدرس مدرسہ اہلسنت ۲۴ ذی الحجہ ۱۳۲۴ھ

شہر علی گڑھ کی عید گاہ کہ صدہا سال سے بنی ہوئی ہے اور حضرات علماء متقدمین میں بلا کراہت اس میں عیدین کی نمازیں پڑھتے پڑھاتے رہے، آج کل نئی روشنی والوں نے اپنے قیاسات اور نیز آلات انگریزی سے یہ تحقیق کیا ہے کہ سمت قبلہ سے منحرف ہے اور قطب شمالی داہنے کونے کی پشت پر واقع ہے جس سے نوے فٹ کے قریب مغرب سے پھری ہوئی ہے لہذا اس کو توڑ کر سمت ٹھیک کرنا مسلمانانِ شہر پر بر تقدیر استطاعت کے لازم اور فرض ہے ورنہ نماز اس میں مکروہ تحریمی ہے، اور ۱۰ دسمبر ۱۹۰۶ء کو اس میں ایک فتوی چھاپا جس کی عبارت جواب یہ ہے: "اگر وہاں کے مسلمانوں میں اس قدر مالی طاقت ہے کہ اس کو شہید کر کے ٹھیک سمت قبلہ پر بنا سکتے ہیں تو ان کے ذمے فرض ہے کہ وہ ایسا ہی کریں اگر ان میں ٹھیک سمت قبلہ بنانے کی طاقت نہیں تو ان کے ذمہ فرض ہے کہ وہ اس مسجد یا عید گاہ میں ٹھیک سمت قبلہ کی خطوط کھینچ لیں اور ان خطوط پر کھڑے ہو کر نماز پڑھا کریں، چنانچہ ہدایہ میں مذکور ہے :

[باکس کا متن] دائیں جانب: و من کان غائبا ففرضه اصابته جهتها هو الصحیح لان التکلیف بحسب الوسع ۱ انتہی بائیں جانب: جو شخص کعبہ سے دور ہو اس پر نماز کے دوران سمت کعبہ کی طرف رخ کرنا فرض ہے یہی صحیح ہے کیونکہ تکلیف حسب طاقت ہوتی ہے انتہی (ت)

---

۱ الهداية باب شروط الصلوة مطبوعه المكتبة العربية كراچی ۱/۱۰۰

Fatawa-e-Razwiya Volume 6

Question: Let it be stated from authoritative books whether the Qibla of India should now be between the two Wests (Maghribayn) or what? And is it necessary to correct its direction towards the Qibla or what? Explain and you will be rewarded.

The Answer: In the name of Allah, the Most Gracious, the Most Merciful.

All praise is due to Allah, who made the Kaaba our Qibla and a place of refuge. Peace and blessings be upon him who turned us towards the best Qibla, the Messenger of Jinn and Mankind, and the Imam of both Qiblas, through whose noble door Allah Almighty made our Qibla for all our hopes and the Kaaba of our desires in both this world and the hereafter. [Blessings] upon his family, companions, and all the people of his Qibla who turned their faces towards this Kaaba in a state of faith and affirmation. Amen. O Allah! Guide us to truth and correctness. (T)

The aforementioned fatwa is purely false and void of any semblance of truth or correctness. It is a source of contention for the office of Mufti, rather, it is a blatant fabrication against the pure Sharia. Firstly: Even if, by a false assumption, this Eidgah was completely outside the direction of the Qibla, or even if East and West had been swapped, this tyrannical command—that it is obligatory to demolish it and build it in the correct direction of the Qibla if one has the means—is inventing a new Sharia from the heart. At most, in that situation, if there was no other possible way without demolition, then demolition might be desired. But who considered it obligatory to build it on the correct direction? Having any building in the Eidgah was never made obligatory, necessary, or even a Sunnah by God and the Messenger (Mighty and Majestic is He, and peace and blessings of Allah Almighty be upon him). In the holy era (of the Prophet), the place for Eid prayers was a flat open field in which there was absolutely no building. When the Radiant Prophet (peace and blessings of Allah Almighty be upon him) went for the Eid prayer, a spear would be fixed in front of him as a Sutra (barrier). It remained thus during the era of the Rightly Guided Caliphs (may Allah be pleased with them all). When Umar ibn Abdul Aziz (may Allah be pleased with him) built mosques at all the places where the Holy Prophet (peace and blessings of Allah Almighty be upon him) had prayed for the sake of blessings, it seems that a building was also constructed at the place of Eid prayers at that time. As Syed Nuruddin al-Samhudi (may his secret be sanctified) clarified in 'Tarikh al-Madina' (History of Madina). (As Syed Nuruddin Samhudi [may his secret be sanctified] has

stated clearly in his book Tarikh al-Madinat al-Munawwara. T). In Sahih Bukhari, it is narrated from Abdullah bin Umar (may Allah be pleased with him):

फ़तावा-ए-रज़विया जिल्द छठी

प्रश्न: विश्वसनीय पुस्तकों के माध्यम से यह बताया जाए कि क्या भारत का क़िबला अब 'मा-बैनुल मग़रिबैन' (दो पश्चिमों के बीच) होना चाहिए या क्या? और क्या इसके क़िबले की दिशा को सही करना आवश्यक है या क्या? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: अल्लाह के नाम से, जो अत्यंत दयालु और कृपाण है।

सब प्रशंसा अल्लाह के लिए है जिसने काबा को हमारा क़िबला और शरणस्थल बनाया। दरूद और सलाम उन पर जिन्होंने हमें सबसे अच्छे क़िबले की ओर मोड़ा, जो जिन्नों और इंसानों के रसूल और दोनों क़िबलों के इमाम हैं। अल्लाह तआला ने जिनके सम्मानजनक द्वार के माध्यम से दुनिया और आख़िरत में हमारी समस्त आशाओं का क़िबला और इच्छाओं का काबा बनाया। उनकी आल (वंश), साथियों और उनके क़िबले के सभी लोगों पर जिन्होंने ईमान और पुष्टि की स्थिति में इस काबा की ओर अपना चेहरा किया। आमीन। ऐ अल्लाह! सत्य और शुद्धता का मार्गदर्शन प्रदान कर (त)।

उपरोक्त फ़तवा पूरी तरह से असत्य और सत्यता एवं शुद्धता के स्वरूप से रहित है। यह मुफ़्ती के पद के लिए विवाद का विषय है, बल्कि पवित्र शरीयत पर एक खुला झूठ है। प्रथमतः यदि असत्य मान लिया जाए कि यह ईदगाह क़िबले की दिशा से पूरी तरह बाहर थी, बल्कि अगर पूर्व और पश्चिम भी बदल गए होते, तब भी यह निरंकुश आदेश—कि सामर्थ्य होने पर इसे तोड़कर क़िबले की सही दिशा में बनाना अनिवार्य है—अपने हृदय से एक नई शरीयत का आविष्कार करना है। उस स्थिति में अधिक से अधिक यह कि यदि गिराए बिना कोई समाधान संभव न था, तो गिराना वांछित होता। सही दिशा में बनाना किसने अनिवार्य माना? ईदगाह में किसी इमारत का होना ही सिरे से खुदा और रसूल (जल्ल जलालाहू व सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) ने न तो फ़र्ज़ किया, न वाजिब और न ही सुन्नत। पवित्र युग (नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के समय) में ईदगाह का स्थल एक सपाट खुला मैदान था जिसमें मूल रूप से किसी इमारत का नामोनिशान न था। जब हुज़ूर पुरनूर (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) ईद की नमाज़ के लिए तशरीफ़ ले जाते, तो आपके सामने 'सुतरा' (आड़) के रूप में एक नेज़ा (भाला) गाड़ दिया जाता। खुलफ़ा-ए-राशिदीन (रज़ियल्लाहु अन्हुम अजमईन) के युग में भी ऐसा ही रहा। उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने जब बरकत के लिए उन सभी स्थानों पर मस्जिदें बनाईं जहाँ हुज़ूर अकदस (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) ने नमाज़ पढ़ी थी, तो ज़ाहिर है कि उन्हीं के समय में ईदगाह के स्थान पर भी इमारत बनी, जैसा कि सैयद नूरुद्दीन अल-

समहूदी (क़ुद्दिस सिर्रहु) ने अपनी किताब 'तारीखुल मदीना' में स्पष्ट किया है। (जैसा कि सैयद नूरुद्दीन समहूदी [क़ुद्दिस सिर्रहु] ने अपनी पुस्तक तारीख़ अल-मदीना अल-मुनव्वरा में इस बात को स्पष्ट किया है। त)। सहीह बुख़ारी शरीफ़ में अब्दुल्ला बिन उमर (रज़ियल्लाहु अन्हु) से वर्णित है:

पृष्ठ 62 का 736

فتاوی رضویہ جلد ششم

کتب معتبرہ سے یہ ارشاد ہو کہ اب ہندوستان کا قبلہ مابین المغربین ہونا چاہیئے یا کیا؟ اور اسکا سمت قبلہ درست کرنا ضروری ہے یا کیا؟ بینوا توجروا

الجواب: بسم اللہ الرحمن الرحیم

الحمد للہ الذي جعل لنا الکعبة قبلة وامانا والصلوة والسلام علی من الی افضل قبلة ولانا رسول الثقلین وامام القبلتین جعل اللہ تعالی بابه الکریم في الدارین قبلة امالنا وکعبة منانا وعلی آله وصحابته وسائر اهل قبلته الذین ولو ا الیه وجوههم تصدیقا وایمانا امین اللهم هدایة الحق والصواب۔ | تمام تعریف اللہ تعالی کے لئے جس نے کعبہ کو ہمارا قبلہ اور پناہ گاہ بنایا اور صلوۃ وسلام ان پر کہ جس نے ہمیں اچھے قبلہ کی طرف پھیرا جن وانس کے رسول اور دونوں قبلوں کے امام جن کے باعث دروازے کو اللہ تعالیٰ نے جنہیں دنیا و آخرت میں ہماری تمام امیدوں کا قبلہ اور آرزوؤں کا کعبہ بنایا آپ کی آل، اصحاب اور ان کے اہل قبلہ پر جنہوں نے حالتِ ایمان و تصدیق میں اس کعبہ کی طرف رُخ کیا آمین: اے اللہ ! حق وصواب کی ہدایت فرما (ت)

فتوائے مذکورہ محض باطل اور حلیہ صدق و صحت سے عاطل اور منصبِ افتا پر نزاجت بلکہ شریعت مطہرہ پر گھلا افتراء ہے۔ اولا: اگر بفرضِ باطل یہ عید گاہ جہتِ قبلہ سے بالکل خارج ہوتی بلکہ مشرق و مغرب بدل گئے ہوتے جب بھی یہ جبروتی حکم کہ بحالت استطاعت اسے توڑ کر ٹھیک سمتِ قبلہ بنانا فرض ہے، دل سے نئی شریعت ایجاد کرنا تھا، اس حالت پر غایت یہ کہ اگر بے انہدام کوئی چارہ کار ممکن نہ تھا منہد م کرنا مطلوب ہوتا ٹھیک سمت پر بنانا کس نے فرض مانا، عید گاہ میں کوئی عمارت ہونا ہی سرے سے خدا اور رسول جل جلالہ و صلی اللہ تعالیٰ علیہ

وسلم نے فرض کیا نہ واجب نہ سنت، زمانہ اقدس صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم میں مصلائے عید کف دست میدان تھا جس میں اصلاً کسی عمارت کا نام نہ تھا، جب حضور پُر نور صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نمازِ عید کو تشریف لے جاتے مواجہ اقدس میں سترہ کے لئے ایک نیزہ نصب کر دیا جاتا، زمانہ خلفائے راشدین رضی اللہ عنہم اجمعین میں بھی یوں ہی رہا۔ عمر بن عبدالعزیز رضی اللہ عنہ نے جب حضور اقدس صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے نماز پڑھنے کے سب مواضع میں تبرک کے لئے مسجدیں بنائیں ظاہر ا ا نہیں کے وقت میں مصلائے عید میں بھی عمارت بنی کما استظھرہ السید نورالدین السمھودي قدس سرہ في تاریخ المدینۃ (جیسا کہ سید نور الدین سمہودی قدس سرہ نے اپنی کتاب تاریخ المدینہ المنورہ میں اس بات کی تصریح کی ہے۔ت) صحیح بخاری شریف میں عبداللہ بن عمر رضی اللہ عنہ سے ہے:

Fatawa Razawiyya Volume VI

"Indeed, the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) used to have a spear (harbah) planted in front of him on the day of Eid al-Fitr and Eid al-Adha, and then he would pray." [1] Translation: In front of the noble Prophet (peace and blessings of Allah be upon him), a spear was planted on the occasion of Eid al-Fitr, then he would lead the prayer. (T)

In another narration of theirs, it is stated: "He said: The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) would go out to the prayer ground (musalla) with a small spear (anzah) being carried before him, and it would be planted in the prayer ground in front of him, and he would pray towards it." [2] Translation: When the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) would go towards the Eidgah, a spear would be carried before him and planted in the Eidgah in front of him, and then he would offer prayers facing towards it. (T)

Sunan Ibn Majah, Sahih Ibn Khuzaymah, and Mustakhraj Isma'ili add: "And that was because the prayer ground was an open space (fada') with nothing in it to be used as a barrier (sutrah)." [3] Translation: This was done because the Eidgah was in an open field where there was nothing that could be made a barrier (sutrah). (T)

Alas! This 'obligation' of modern enlightenment remained abandoned during the era of Prophethood, the era of the Caliphate, and throughout the times of the Messenger.

Secondly, does the current building of this Eidgah cause such severe harm to the Divine Religion that its demolition becomes obligatory? If not, then why was its demolition deemed obligatory despite financial capability? And if yes, then why is it not obligatory in the absence of financial capability? Financial capacity is needed for building; what is required for demolition that the Muslims of the city are unable to do?

Thirdly, is it possible to achieve the objective and eliminate that harm by drawing lines for the Qibla direction, or not? If not, then why was this futile act deemed obligatory in the state of lack of capacity, and who made it obligatory? And if yes, then who made achieving the objective in this manner forbidden (haram) in the state of capacity, such that demolition with specific intent became obligatory? Are there multiple harms here whose removal is mandated differently such that distribution is possible?

Fourthly, is this Eidgah completely out of alignment with the direction (of Qibla), or is it within the limits of the direction even though it deviates from the exact alignment? On the first supposition, why was the prayer in it prohibitively disliked (Makruh Tahrimi)? It should have been absolutely void (Batil). On the second supposition, why was its demolition obligatory when it is within the permissible limits?

---

1 Sahih Bukhari, Chapter: Praying towards the spear on the day of Eid, published by Qadimi Kutub Khana Asah-ul-Matabi', Karachi, 1/133. 2 Sahih Bukhari, Chapter: Carrying a small spear or a spear etc., published by Qadimi Kutub Khana Asah-ul-Matabi', Karachi, 1/133. 3 Sunan Ibn Majah, Chapter: Regarding the spear on the day of Eid, published by Aftab-e-Alam Press, Lahore, p. 93.

फ़तावा रज़विया छठा खंड

"निश्चित रूप से, नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के सामने ईदुल फ़ित्र और ईदुल अज़हा के दिन एक भाला (हर्बा) गाड़ा जाता था, फिर आप नमाज़ पढ़ते थे।" [1] अनुवाद: नबी अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के पवित्र मुख के सामने ईदुल फ़ित्र के अवसर पर भाला गाड़ा जाता था, फिर आप नमाज़ पढ़ाते थे। (टी)

उन्हीं की दूसरी रिवायत में है: "उन्होंने कहा: नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ईदगाह (मुसल्ला) की ओर जाते थे जबकि उनके सामने एक छोटा भाला (अनज़ह) ले जाया जाता था और उसे ईदगाह में उनके सामने गाड़ दिया जाता था, फिर आप उसकी ओर मुँह करके नमाज़ पढ़ते थे।" [2] अनुवाद: हुज़ूर अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) जब ईदगाह की तरफ तशरीफ़ ले जाते तो आपके आगे भाला उठाकर लाया जाता और ईदगाह में आपके सामने गाड़ दिया जाता था, फिर उसकी तरफ रुख करके नमाज़ पढ़ाते थे। (टी)

सुनन इब्न माजा, सहीह इब्न खुज़ैमा और मुस्तखराज इस्माईली में यह जोड़ा गया है: "और वह इसलिए था क्योंकि ईदगाह एक खुला मैदान (फ़ज़ा) था जहाँ ऐसी कोई चीज़ नहीं थी जिसे 'सुतरा' (आड़) बनाया जा सके।" [3] अनुवाद: यह इसलिए किया जाता था क्योंकि ईदगाह खुले मैदान में थी, वहाँ कोई ऐसी चीज़ नहीं थी जिसे सुतरा बनाया जा सके। (टी)

अफ़सोस कि आधुनिक ज्ञान का यह 'फ़र्ज़' (कर्तव्य), रिसालत के दौर, ख़िलाफ़त के दौर और रिसालत के पूरे दौर में छोड़ दिया गया रहा।

दूसरा, क्या इस ईदगाह की वर्तमान इमारत से ईश्वरीय धर्म को कोई ऐसा गंभीर नुकसान पहुँचता है जिसके कारण इसे ढहाना अनिवार्य हो? यदि नहीं, तो वित्तीय क्षमता होने पर इसका ढहाना क्यों अनिवार्य हुआ? और यदि हाँ, तो वित्तीय क्षमता न होने पर यह अनिवार्य क्यों नहीं है? निर्माण के लिए वित्तीय क्षमता चाहिए; ढहाने में ऐसा क्या चाहिए जिससे शहर के मुसलमान असमर्थ हों?

तीसरा, क्या क़िब्ला की दिशा की रेखाएँ खींच लेने से काम चल सकता है और वह नुकसान दूर हो सकता है या नहीं? यदि नहीं, तो असमर्थता की स्थिति में यह व्यर्थ कार्य क्यों अनिवार्य हुआ और इसे किसने अनिवार्य किया? और यदि हाँ, तो समर्थ होने की स्थिति में इस प्रकार काम चलाना किसने हराम (वर्जित) कर दिया कि इसे ढहाना ही अनिवार्य हो गया? क्या यहाँ कई ऐसे नुकसान हैं जिन्हें दूर करना अनिवार्य है और वे अलग-अलग स्थितियों के हैं कि उनका बँटवारा संभव हो?

चौथा, क्या यह ईदगाह दिशा (क़िब्ला) से पूरी तरह बाहर है या दिशा की सीमाओं के भीतर है, भले ही यह सटीक संरेखण से विचलित हो? पहली धारणा पर, इसमें नमाज़ 'मक़रूहे तहरीमी' (सख्ती से नापसंद) क्यों हुई? इसे बिल्कुल शून्य (बातिल) होना चाहिए था। दूसरी धारणा पर, इसे ढहाना क्यों अनिवार्य हुआ जबकि यह शरई (कानूनी) सीमाओं के भीतर है?

---

1 सहीह बुखारी, अध्याय: ईद के दिन भाले की ओर नमाज़ पढ़ना, प्रकाशित: क़दीमी कुतुब ख़ाना, असहुल मताबी, कराची, 1/133। 2 सहीह बुखारी, अध्याय: छोटा भाला या भाला ले जाना आदि, प्रकाशित: क़दीमी कुतुब ख़ाना, असहुल मताबी, कराची, 1/133। 3 सुनन इब्न माजा, अध्याय: ईद के दिन भाले के बारे में, प्रकाशित: आफ़ताब-ए-आलम प्रेस, लाहौर, पृष्ठ 93।

فتاوی رضویہ جلد ششم

ان النبی صلی اللہ تعالی علیہ وسلم کان ترکزہ الحرابۃ قدامہ یوم الفطر والنحر ثم یصلی 1۔ نبی اکرم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے مواجہہ اقدس کے سامنے عید الفطر کے موقع پر نیزہ نصب کیا جاتا پھر آپ نماز پڑھاتے ۔ (ت)

اُنہیں کی دوسری روایت میں ہے: قال کان النبی صلی اللہ تعالی علیہ وسلم یغدو الی المصلی والعنزۃ بین یدیہ تحمل و تنصب بالمصلی بین یدیہ فیصلی الیھا 2۔ حضور اکرم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم عید گاہ کی طرف تشریف لے جاتے تو آپ کے آگے نیزہ اٹھا کر لایا جاتا اور عید گاہ میں آپ کے سامنے گاڑ دیا جاتا تھا، پھر اس کی طرف رخ کرکے نماز پڑھاتے تھے۔ (ت)

سنن ابن ماجہ میں و صحیح ابن خزیمہ و مستخرج اسمعیلی میں زائد کیا: وذلك ان المصلی کان فضاء لیس فیہ شیء یستتر بہ 3۔ یہ اس لئے کیا جاتا تھا کہ عید گاہ فضاء میں تھی وہاں کوئی ایسی چیز نہ تھی جسے ستر بنایا جاسکے۔ (ت)

افسوس کہ نئی روشنی کا یہ فرض، زمانہ رسالت وزمانہ خلافت و زمانہ رسالت سب میں متروک رہا۔

ثانیاً اس عید گاہ کی عمارت موجودہ سے دین الہی کو کوئی ایسا ضرر شدید پہنچتا ہے جس کے سبب اس کا ڈھانا فرض ہو ، یا نہیں اگر نہیں تو بحال استطاعت مالی اُس کا ہدم کیوں فرض ہوا اور اگر ہاں تو بحال عدم استطاعت مالی کیوں فرض نہیں ، استطاعت مالی بنانے کو چاہیئے ، ڈھانے میں ایسا کیا درکار ہے جس سے مسلمانان شہر عاجز ہوں۔

ثالثاً خطوط سمت قبلہ ڈال لینے سے کار براری ممکن اور وہ ضرر مندفع ہے یا نہیں ، اگر نہیں تو بحال عدم استطاعت یہ لغو حرکت کیوں فرض ہوئی اور کس نے فرض کی ، اور اگر ہاں تو بحال استطاعت یوں کار براری کس نے حرام کی کہ با تعین ڈھا دینا ہی فرض ہو گیا ، کیا یہاں متعدد ضرر مفترض الازالہ مختلف الحالہ ہیں کہ توزیع ممکن ہو۔

رابعاً یہ عید گاہ سمت سے یکسر خارج ہے یا حدود جہت کے اندر ہے اگر چہ عین محاذات سے منحرف ہے۔ بر تقدیر اول اس میں نماز مکروہ تحریمی کیوں ہوئی باطل محض ہونی لازم تھی، بر تقدیر ثانی اس کا ڈھانا کیوں فرض ہوا جبکہ وہ حدود مشروع کے اندر ہے۔

---

1 صحیح بخاری باب الصلوۃ الی الحربۃ یوم العید مطبوعہ قدیمی کتب خانہ اصح المطابع کراچی ۱/ ۱۳۳ 2 صحیح بخاری باب حمل العنزۃ او الحربۃ الخ مطبوعہ قدیمی کتب خانہ اصح المطابع کراچی ۱/ ۱۳۳ 3 سنن ابن ماجہ باب ماجاء فی الحربۃ یوم العید مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور ص ۹۳

Fatawa Rizvia, Volume Six

Fifthly, the ruling of the noble scholars is that if there is a complete departure from the direction (of the Qibla), then the prayer is invalid. However, within the limits of that direction, it is permissible without any dislike (karahat), because for a person far from Mecca (Afaqi), the Qibla is the direction itself, not the exact hitting of the center. In 'Bada'i' by Malik al-Ulama Abu Bakr Mas'ud Kasani, and then in 'Hilya' by Imam Ibn Amir al-Hajj Halabi, it is stated:

His Qibla, in a state of distance, is the direction of the Kaaba, which is indicated by the niches (mihrabs), not the exact center of the Kaaba. 1	**In case of distance from the Kaaba, the direction of the Kaaba itself is the Qibla, and that is indicated by the mosque's prayer niche (mihrab), not the exact center of the Qibla. (T)**

In 'Jami' al-Rumuz', it is narrated from Imam Zandiwaisi: "The direction is the Qibla just like the center itself." 2 (The direction of the Kaaba is like the exact center of the Kaaba. -T) Yes, striving for proximity to the exact center is recommended (mustahabb) as far as possible. Texts from 'Multaqit' and 'Hilya' etc. will follow ahead by the help of Almighty Allah, and in 'Khayriyya' it is stated: "This is undoubtedly and without suspicion superior, etc." 3 (This is superior without any doubt. -T) In 'Durar' of Maulana Khusrow and 'Radd al-Muhtar' it is said:

If one deviates from the exact center in a way that facing (the Kaaba) is not entirely lost, it is permissible. This is supported by what is stated in 'al-Zahiriyya': if one moves slightly to the right or left, it is permissible. 4	**If the deviation from the exact center of the Kaaba is not complete (i.e., it's a minor deviation), the prayer is valid. This is supported by these words of 'Zahiriyya': When the person praying moves slightly to the right or left, the prayer will be valid. (T)**

And omitting a recommended (mustahabb) act does not even necessitate 'Karahat Tanzihi' (minor dislike), let alone 'Karahat Tahrimi' (prohibitive dislike). In 'al-Bahr al-Ra'iq', chapter of the Two Eids, it says:

Omitting a recommended act does not necessitate the establishment of dislike, for that requires a specific evidence. 5	**Omitting a recommended act does not entail dislike because a separate evidence is necessary for its establishment. (T)**

So, declaring the prayer as 'Makruh Tahrimi' in this case is merely a dark construction of modern thought. Sixthly: The passage from 'Hidaya' quoted in the said fatwa has no connection to its claim at all; in fact, it is in reality its rebuttal. The meaning of the passage is that for a non-Meccan, it is by no means necessary that his attention be towards the exact center of the Great Kaaba, but rather towards that direction...

---

1. Bada'i al-Sana'i, Chapter on Conditions of Pillars, printed by H.M. Saeed Company Karachi, 1/118. Note: This passage is mentioned in meaning in Bada'i; the exact words are not present. - Nazir Ahmed Saidi.
2. Jami' al-Rumuz, Chapter on Conditions of Prayer, printed by Maktaba Islamiya, Gonbad-e Qabus Iran, 1/130.
3. Fatawa Khayriyya, Book of Prayer, printed by Dar al-Ma'rifah Beirut, 9/1.
4. Radd al-Muhtar, Chapter on Conditions of Prayer, printed by Mustafa al-Babi Egypt, 1/315.
5. Al-Bahr al-Ra'iq, Chapter of the Two Eids, printed by H.M. Saeed Company Karachi, 163/2.

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

पांचवां, सम्मानित विद्वानों का निर्णय यह है कि यदि दिशा (क़िबला) से पूरी तरह बाहर निकल जाए तो नमाज़ अमान्य है, और दिशा की सीमाओं के भीतर बिना किसी नापसंदगी (कराहत) के जाइज़ है, क्योंकि मीक़ात के बाहर रहने वालों (आफ़ाक़ी) के लिए क़िबला दिशा ही है, न कि ठीक केंद्र। मलिक उल-उलमा अबू बक्र मसूद कसानी की 'बदाइ' और फिर इमाम इब्न अमीर अल-हाज हलबी की 'हिलिया' में है:

दूर होने की स्थिति में उनका क़िबला काबा की दिशा है जो मेहराबों द्वारा दर्शायी जाती है, न कि काबा का केंद्र। 1

काबा से दूरी की स्थिति में काबा की दिशा ही क़िबला है और वह मस्जिद का मेहराब है, न कि ठीक केंद्र। (त)

'जामी अर-रुमूज़' में इमाम ज़न्दवीसी से वर्णित है: "दिशा ठीक केंद्र की तरह ही क़िबला है।" 2 (काबा की दिशा काबा के केंद्र की तरह ही है। -त) हाँ, जहाँ तक संभव हो ठीक केंद्र के करीब होना मुस्तहब (पसंदीदा) है। इस बारे में 'मुल्तक़ित' और 'हिलिया' आदि के प्रमाण अल्लाह की मदद से आगे आएंगे, और 'ख़ैरिया' में कहा गया है: "यह बिना किसी संदेह के श्रेष्ठ है, आदि।" 3 (यह बिना किसी शक के बेहतर है। -त) मौलाना खुसरो की 'दुरर' और 'रद्द अल-मुह्तार' में है:

यदि कोई ठीक केंद्र से इस प्रकार विचलित हो कि मुख करना पूरी तरह समाप्त न हो, तो यह जाइज़ है। इसका समर्थन 'ज़हीरिया' में कही गई बात से होता है: यदि कोई थोड़ा दाईं या बाईं ओर मुड़ जाए, तो यह जाइज़ है। 4

यदि काबा के ठीक केंद्र से पूरी तरह विचलन न हो (यानी मामूली विचलन हो) तो नमाज़ जाइज़ है। इसकी पुष्टि 'ज़हीरिया' के इन शब्दों से होती है: जब नमाज़ी थोड़ा दाईं या बाईं ओर हो गया तो नमाज़ जाइज़ होगी। (त)

और एक मुस्तहब (पसंदीदा) कार्य को छोड़ना 'कराहते तंज़ीही' (हल्की नापसंदगी) को भी अनिवार्य नहीं करता, 'कराहते तहरीमी' (सख्त नापसंदगी) तो बड़ी बात है। 'बहर अर-रइक़', ईदुल फ़ितर और ईदुल अज़हा के अध्याय में है:

मुस्तहब कार्य को छोड़ने से कराहत (नापसंदगी) अनिवार्य नहीं होती, क्योंकि इसके प्रमाण के लिए एक विशिष्ट साक्ष्य की आवश्यकता होती है। 5

मुस्तहब के परित्याग से कराहत अनिवार्य नहीं होती क्योंकि इसके प्रमाण के लिए एक स्वतंत्र साक्ष्य का होना आवश्यक है। (त)

तो इस मामले में नमाज़ को 'मक़रूहे तहरीमी' (सख्त नापसंद) ठहराना आधुनिक सोच की केवल एक अंधकारमय रचना है। छठा: 'हिदाया' का वह अंश जिसे उक्त फ़तवे में उद्धृत किया गया है, उसके दावे से कोई संबंध नहीं रखता, बल्कि वास्तव में वह उसका खंडन है। उस अंश का अर्थ यह है कि एक गैर-मक्की (मक्का के बाहर रहने वाले) के लिए यह कतई ज़रूरी नहीं है कि उसका मुख महान काबा के ठीक केंद्र की ओर हो, बल्कि उस दिशा की ओर...

---

1. बदाइ अस-सनई, अर्कान की शर्तों पर अध्याय, एच.एम. सईद कंपनी कराची द्वारा मुद्रित, 1/118। नोट: बदाइ में यह अंश अर्थ के रूप में वर्णित है, शब्द बिल्कुल समान नहीं हैं। - नज़ीर अहमद सईदी।
2. जामी अर-रुमूज़, नमाज़ की शर्तों पर अध्याय, मकतबा इस्लामिया, गोम्बद-ए क़ाबस ईरान द्वारा मुद्रित, 1/130।
3. फ़तावा ख़ैरिया, नमाज़ की किताब, दार अल-मारिफ़ा बेरूत द्वारा मुद्रित, 9/1।
4. रद्द अल-मुह्तार, नमाज़ की शर्तों पर अध्याय, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र द्वारा मुद्रित, 1/315।
5. अल-बहर अर-रइक़, ईदैन का अध्याय, एच.एम. सईद कंपनी कराची द्वारा मुद्रित, 163/2।

خامساً علماء کرام کا حکم تو یہ ہے کہ جہت سے بالکل خروج ہو تو نماز فاسد اور حدود جہت میں بلا کراہت جائز کہ آفاقی کا قبلہ ہی جہت ہے نہ کہ اصابت عین۔ بدائع امام ملک العلماء ابوبکر مسعود کاسانی پھر حلیہ امام ابن امیر الحاج حلبی میں ہے۔

قبلته حالة البعد جهة الكعبة وهی المحاريب لاعين الكعبة ۱۔ **کعبہ سے دوری کی صورت میں جہتِ کعبہ ہی قبلہ ہے اور وہ محراب مسجد ہے نہ کہ عین قبلہ۔ (ت)**

جامع الرموز میں امام زندویسی سے ہے: الجهة قبلة كالعين ۲ (جہت کعبہ عین قبلہ کی طرح ہے۔ت) ہاں حتی الوسع اصابت عین سے قرب مستحب۔ اس بارے میں ملتقط و حلیہ وغیرہ ہما کے نصوص بعونہ تعالٰی آگے آتے ہیں، اور خیریہ میں فرمایا: هو افضل بلاريب و لامين الخ ۳ (یہ بغیر کسی شبہ کے افضل ہے۔ت) درر مولانا خسرو ورد المحتار میں ہے:

لو انحرف عن العين انحرا فالايتزول منه المقابلة بالكلية جاز و يؤيده ما قال فی الظهيرية اذا تيامن اوتياسرتجوز ۴۔ **اگر عین کعبہ سے بالکلیہ انحراف نہ ہو (یعنی معمولی انحراف ہوا) تو نماز جائز ہے۔ اسکی تائید ظہیریہ کے ان الفاظ سے ہوتی ہے: جب نمازی ذرا دائیں یا بائیں ہو گیا تو نماز جائز ہوگی۔ (ت)**

اور ترک مستحب مستلزم کراہت تنزیہ بھی نہیں کراہت تحریم تو بڑی چیز، بحر الرائق باب العیدین میں ہے:

لا يلزم من ترك المستحب ثبوت الكراهة اذلا بد لها من دليل خاص ۵۔ **ترک مستحب سے کراہت لازم نہیں آتی کیونکہ اس کے ثبوت کے لئے مستقل دلیل کا ہونا ضروری ہے۔ (ت)**

تو اس میں نماز مکروہِ تحریمی ٹھہرانا نئی روشنی کی محض ظلمانی ساخت ہے۔ ساڈسا : عبارتِ ہدایہ کہ فتویٰ مذکورہ نے نقل کی اسکی مدعا سے اصلاً مس نہیں رکھتی بلکہ حقیقۃً وہ اس کا رد ہے ، عبارت کا مطلب یہ ہے کہ غیر مکی کو ہرگز ضرور نہیں کہ اس کی توجہ عین کعبہ معظمہ کی طرف ہو بلکہ اس جہت کی طرف...

---

1 بدائع الصنائع فصل فی شرائط الارکان مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱/۱۱۸ نوٹ: بدائع میں یہ عبارت معنًا مذکور ہے الفاظ بعینہ موجود نہیں۔ نذیر احمد سعیدی 2 جامع الرموز فصل شروط الصلوٰۃ مطبوعہ مکتبہ اسلامیہ گنبد قاموس ایران ۱/۱۳۰ 3 فتاویٰ خیریہ کتاب الصلوٰۃ مطبوعہ دارالمعرفہ بیروت ۹/۱ 4 ردالمحتار باب شروط الصلوٰۃ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/۳۱۵ 5 البحر الرائق باب العیدین مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱۶۳/۲

Fatawa Ridawiyyah, Volume 6

Facing the direction in which the Kaaba is situated is sufficient. Obligation is according to capacity and obedience is according to strength. From this, it is proven that outside of Makkah al-Mukarramah, such a deviation that does not take one outside the direction (jihah) is not harmful. This is explicitly stated not only in Al-Hidayah but in general books of the school of thought. Furthermore, in long distances, even a large amount of deviation to a certain extent will not take one outside the direction, and regarding prayer, it will still be considered minimal. As the distance increases, the scope for more deviation will be found. It is stated in Al-Bahr al-Ra'iq and Al-Tahtawi 'ala al-Durr, etc.:

Arabic	Urdu
Approximate alignment (al-musamata al-taqribiyyah) means being deviated from the Qibla in such a way that facing it is not completely terminated. Facing, when it occurs over a long distance, is not terminated by the amount of deviation that would terminate facing in a close distance.	Approximate alignment is that deviation from the Qibla is such that facing the direction of the Kaaba is not completely ended. Facing over a long distance is not ended by the amount of deviation that would end it in a close alignment. (t)

It is also in Mi'raj al-Dirayah, Fath al-Qadir, Hilyah Sharh Muniyah, Al-Bahr Sharh Kanz, and Fatawa Khayriyyah, etc.

Arabic	Urdu
This varies according to the variation in distance, and alignment remains with a movement appropriate to that distance.	Deviation varies according to distance, and alignment (direction) remains with a movement appropriate to that distance. (t)

For the fatwa to rely on the text of Al-Hidayah, it must be proven that at a distance of thousands of miles from Makkah the Great to Aligarh, there is no room for a deviation of thirty (30) yards from the western point; such a difference would lead outside the direction. Without this proof, mentioning the text is merely misleading the public. Looking at the reality of the matter, the cited text is not only unhelpful but clearly detrimental for the arguer. We will soon prove, by the help of Allah Almighty, that the said Eidgah is within the limits of the direction.

Previously: Some of our scholars even say that in this chapter, astronomical calculations and instruments are not to be considered at all. Jami' al-Rumuz wrote in the same discussion on the direction of the Qibla:

Arabic	Urdu
Among them are those who based it on some of the philosophical sciences (al-'ulum al-hikmiyyah). However, Al-'Allamah al-Bukhari stated in the discussion on analogy (al-qiyas) in Al-Kashf that our companions...	Some of the jurists based this issue on some philosophical sciences, but Allama Bukhari wrote under the discussion of Qiyas in Kashf al-Asrar that our scholars...

1. Hashiyah al-Tahtawi 'ala al-Durr al-Mukhtar, Chapter: Conditions of Prayer, printed by Dar al-Ma'rifah, Beirut, 1/171.
2. Al-Bahr al-Ra'iq Sharh Kanz al-Daqaiq, Chapter: Conditions of Prayer, printed by H.M. Saeed Company, Karachi, 1/284.

फ़तावा रिज़विया, जिल्द छठा

काबा जिस दिशा में स्थित है, उस ओर मुख करना पर्याप्त है। उत्तरदायित्व सामर्थ्य के अनुसार है और आज्ञाकारिता शक्ति के अनुसार है। इससे यह स्वतः सिद्ध होता है कि मक्का मुकर्रमा के बाहर इतना विचलन जो दिशा (जिहत) से बाहर न करे, हानिकारक नहीं है। इसका स्पष्ट उल्लेख न केवल हिदाया में है बल्कि मज़हब (सम्प्रदाय) की आम किताबों में भी है। फिर लंबी दूरी में एक निश्चित सीमा तक अधिक विचलन भी दिशा से बाहर नहीं करेगा, और नमाज़ के संदर्भ में इसे अल्प ही माना जाएगा। जैसे-जैसे दूरी बढ़ती जाएगी, अधिक विचलन की गुंजाइश मिलती जाएगी। अल-बहर अल-रैक और तहतावी अली अद-दुर्र आदि में है:

अरबी	उर्दू
अनुमानित संरेखण (अल-मुसामत अल-तक़रीबिया) का अर्थ है कि क़िबला से इस प्रकार विचलित होना कि काबा के सामने होना पूरी तरह से समाप्त न हो। सामना करना, जब लंबी दूरी पर होता है, उस विचलन से समाप्त नहीं होता जिससे वह कम दूरी पर समाप्त हो जाता।	मुसामत-ए-तक़रीबी यह है कि क़िबला से विचलन इस तरह हो कि काबा की दिशा से सामना पूरी तरह समाप्त न हो। लंबी दूरी की स्थिति में सामना उस विचलन से समाप्त नहीं होता जिससे वह निकट की दूरी में समाप्त हो जाता है। (त)

मेराज अद-दिराया, फ़तह अल-क़दीर, हिल्या शरह मुनिया, अल-बहर शरह कंज़ और फ़तावा खैरिया आदि में है।

अरबी	उर्दू
यह दूरी की भिन्नता के अनुसार बदलता रहता है और संरेखण उस दूरी के लिए उचित बदलाव के साथ बना रहता है।	विचलन दूरी के अनुसार भिन्न होता है और उस दूरी के अनुरूप बदलाव के साथ संरेखण (दिशा) बनी रहती है। (त)

फ़तवे में हिदाया के पाठ पर भरोसा करने के लिए, यह प्रमाण देना होगा कि मक्का मुअज़्ज़मा से अलीगढ़ तक हज़ारों मील की दूरी पर, पश्चिमी बिंदु से तीस (30) गज़ के विचलन की गुंजाइश नहीं है; इतना अंतर दिशा से बाहर ले जाएगा। इस प्रमाण के बिना, पाठ का उल्लेख केवल जनता को गुमराह करना है। मामले की वास्तविकता को देखें तो उद्धृत पाठ तर्क देने वाले के लिए न केवल अनुपयोगी

है बल्कि स्पष्ट रूप से हानिकारक है। हम शीघ्र ही अल्लाह तआला की सहायता से सिद्ध करेंगे कि उक्त ईदगाह दिशा की सीमाओं के भीतर है।

पूर्व में: हमारे कुछ विद्वान तो यहाँ तक कहते हैं कि इस विषय में खगोल विज्ञान के अनुमानों और उपकरणों का कोई महत्व नहीं है। जामी अल-रुमूज़ ने क़िबला की दिशा की इसी चर्चा में लिखा है:

अरबी

उनमें से कुछ वे हैं जिन्होंने इसे कुछ दार्शनिक विज्ञानों (अल-उलूम अल-हिकमिया) पर आधारित किया है। हालाँकि, अल-'अल्लामा अल-बुखारी ने अल-कश्फ़ में क़ियास (अनुमान) की चर्चा में कहा है कि हमारे साथियों ने...

उर्दू

कुछ न्यायविदों ने इस मसले की बुनियाद कुछ हिकमिया (दार्शनिक) विज्ञानों पर रखी है, मगर अल्लामा बुखारी ने कश्फ़ अल-असरार में क़ियास की बहस के तहत लिखा है कि हमारे विद्वानों ने...

1. हाशियह अल-तहतावी अली अद-दुर्र अल-मुख़्तार, अध्याय: नमाज़ की शर्तें, मुद्रित दार अल-मारिफ़ा, बेरूत, 1/171.
2. अल-बहर अल-रैक शरह कंज़ अद-दक़ैक़, अध्याय: नमाज़ की शर्तें, मुद्रित एच.एम. सईद कंपनी, कराची, 1/284.

منہ ہونا بس ہے جس میں کعبہ واقع ہے تکلیف بقدر وسعت اور طاعت بحسب طاقت ہے اس سے خود ثابت ہوا کہ غیر مکہ مکرمہ میں اتنا انحراف کہ جہت سے خارج نہ کرے مضر نہیں اور اسکی تصریح نہ صرف ہدایہ بلکہ عامہ کتب مذہب میں ہے پھر مسافت بعیدہ میں ایک حد تک کثیر انحراف بھی جہت سے باہر نہ کرے گا اور در حق نماز قلیل ہی کہلائے گا اور جتنا بعد بڑھتا جائے گا انحراف زیادہ گنجائش پائے گا۔ بحر الرائق و طحطاوی علی الدر وغیرہما میں ہے :

عربی	اردو
المسامتة التقريبية هوان يكون منحرفاً عن القبلة انحرافاً لا تزول به المقابلة بالكلية، والمقابلة اذا وقعت في مسافة بعيدة لا تزول بما تزول به من الانحراف لو كانت في مسافة قريبة ١ -	مسامتت تقریبی یہ ہے کہ انحراف عن القبلہ اس طرح ہو کہ جہت کعبہ سے مقابلہ بالکلیہ ختم نہ ہو اور مقابلہ جب مسافت بعیدہ کی صورت میں ہو تو وہ اتنے انحراف سے ختم نہیں ہوتا جتنے سے مسامتت قریبہ میں مقابلہ ہو تو ختم ہو جاتا ہے۔ (ت)

معراج الدرایہ وفتح القدیر و حلیہ شرح منیہ و بحر شرح کنز و فتاوی خیریہ وغیرہما میں ہے۔

عربی	اردو
ويتفاوت ذلك بحسب تفاوت البعد و تبقى المسامتة مع انتقال مناسب لذلك البعد ٢-	انحراف بُعد کے اعتبار سے متفاوت ہوتا ہے اور اس بُعد کے مناسب انتقال کے ساتھ مسامتت (سمت) باقی رہتی ہے۔ (ت)

فتوٰی میں عبارت ہدایہ سے استناد کے لئے یہ ثبوت دینا کہ مکہ معظمہ سے علی گڑھ کو یہ ہزاروں میل کا بُعد، نقطہ مغرب سے تیں ۳۰ گزا انحراف کی گنجائش نہیں رکھتا اتنا تفاوت جہت سے باہر لے جائے گا بے اس ثبوت کے ، ذکر عبارت محض تغلیطِ عوام ہے اور حقیقت امر دیکھئے تو عبارت مستدل کے لئے صرف نامفید ہی نہیں بلکہ صاف مضر ہے، ہم عنقریب بعونہ تعالٰی ثابت کریں گے کہ عیدگاہ مذکورہ حدود جہت کے اندر ہے۔

سابقاً : ہمارے بعض علماء تو یہاں تک فرماتے ہیں کہ اس باب میں ہیئت قیاسات و آلات کا اعتبار ہی نہیں، جامع الرموز نے اسی بحث سمت قبلہ میں لکھا:

عربی	اردو
منهم من بناه على بعض العلوم الحكمية الان العلامة البخارى قال فى بحث القياس من الكشف ان اصحابنا	فقہاء میں سے بعض نے اس مسئلہ کی بنیاد بعض علوم حکمیہ پر رکھی ہے مگر علامہ بخاری نے کشف الاسرار میں قیاس کی بحث کے تحت لکھا ہے کہ ہمارے علماء نے

۱ حاشية الطحطاوى على الدر المختار باب شروط الصلوة مطبوعہ دارالمعرفۃ بیروت ۱/۱۷۱ ۲ البحر الرائق شرح كنز الدقائق باب شروط الصلوة مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱/۲۸۴

They did not consider it, and the words of Qazi Khan (1) also point towards this. Then, in Al-Nahr, it was supported by stating that the general wording of the texts (mutun) is based on this (2). However, in Radd al-Muhtar, this was rejected by saying, "I have not seen anything in the texts that indicates their non-consideration, whereas it is incumbent upon us to learn that through which we find guidance towards the Qibla using stars." And the command of Allah Almighty is also a proof: "And by the stars, they find their way..." (to the end of the verse), meaning He created stars so you may find guidance through them. This makes it clear that the disagreement regarding their non-consideration only exists when ancient prayer niches (mihrabs) are present, because it is not permissible to perform a personal inquiry (taharri) in their presence, as we have mentioned before, so as not to necessitate declaring the righteous predecessors and the majority of Muslims as being in error. This is contrary to the case when the worshipper is in a forest or a desolate place. There, our scholars and others have explicitly stated that stars and such are considered valid signs. Therefore, it is appropriate to rely on the rules and regulations mentioned by reliable scholars in books of timings (mawaqit) regarding prayer times and the determination of the Qibla, and also to rely on the instruments they made for identifying times, such as the quadrant (rub'), astrolabe (asturlab), etc. For even if these instruments do not provide absolute certainty, they at least provide a prevailing opinion (ghalabat al-zhann) for someone knowledgeable about them, and in this matter, a prevailing opinion is sufficient (3) etc. (T)

1. Jami' al-Rumuz, chapter on conditions of prayer, published in Gumbad Qamus Iran, 1/130.
2. Radd al-Muhtar, citing Al-Nahr, discussion on facing the Qibla, published by Mustafa al-Babi Egypt, 1/317.
3. Radd al-Muhtar, citing Al-Nahr, discussion on facing the Qibla, published by Mustafa al-Babi Egypt, 1/317.

फ़तावा रिज़विया, जिल्द छठी

उन्होंने इसका एतबार (विचार) नहीं किया, और क़ाज़ी खान की गुफ़्तगू (बात) भी इसी तरफ रहनुमाई करती है (1)। फिर 'अन-नहर' में इसकी ताईद (समर्थन) इस तरह की गई है कि इसी पर मतून (मूल ग्रंथों) का इतलाक़ (सामान्य प्रयोग) है (2)। लेकिन 'रद्द-उल-मुहतार' में यह कहते हुए इसका रद्द (खंडन) किया गया कि "मैंने मतून में ऐसी कोई दलील नहीं देखी जो उनके अदम-ए-एतबार (अमान्य होने) पर दलालत करती हो, हालांकि हमें उस चीज़ को सीखना ज़रूरी है जिसके ज़रिए सितारों से क़िबला की रहनुमाई हासिल होती है।" और अल्लाह तआला का यह इरशाद (आदेश) भी दलील है: "और सितारों के ज़रिए वे रास्ता पाते हैं..." (आयत के अंत तक), यानी उसने सितारे इसलिए बनाए ताकि तुम उनसे रहनुमाई हासिल करो। इससे यह ज़ाहिर हुआ कि उनके अदम-ए-एतबार में इख़्तिलाफ़ (असहमति) उसी सूरत में है जब वहाँ क़दीम (प्राचीन) मेहराब मौजूद हों, क्योंकि उनकी मौजूदगी में 'तहरी' (खोज/अनुमान) जायज़ नहीं है, जैसा कि हम पहले ज़िक्र कर चुके हैं, ताकि सलफ़-ए-सालेहीन (नेक पूर्वजों) और जुम्हूर (बहुमत) मुसलमानों को ग़लत ठहराना लाज़िम न आए। इसके विपरीत, जब नमाज़ी जंगल या वीरान जगह में हो, तो वहाँ सितारों वगैरह को हमारे उलमा और अन्यों ने मोतबर अलामत (मान्य संकेत) होने की तसरीह (स्पष्ट व्याख्या) की है। लिहाज़ा औक़ात-ए-नमाज़ और तईन-ए-क़िबला (क़िबला निर्धारण) के मुतअल्लिक़ मोतबर उलमा की कुतुब-ए-मवाक़ीत (समय संबंधी पुस्तकें) में बयान किए गए क़वाइद-ओ-ज़वाबित (नियमों-कायदों) पर एतमाद (भरोसा) करना मुनासिब है, और उन आलात (यंत्रों) जैसे रूब' (चौथाई वृत्त), अस्तुरलाब आदि पर भी एतमाद किया जाए जो उन्होंने औक़ात की पहचान के लिए बनाए हैं। क्योंकि अगर इन आलात से यक़ीन का दर्जा हासिल न हो, तो कम-अज़-कम 'ग़लबा-ए-ज़न' (प्रबल धारणा) तो उस शख़्स को हासिल हो ही जाएगी जो इन आलात के मुतअल्लिक़ मालूमात (जानकारी) रखता हो। और इस मसले में ज़न-ए-ग़ालिब ही काफ़ी है (3) आदि। (त)

1. जामि-उर-रुमुज़, फ़स्ल शरुत-उस-सलात, मतबुआ गुंबद क़ामूस ईरान, 1/130
2. रद्द-उल-मुहतार ब-हवाला अन-नहर, मबहस फ़ी इस्तक़बाल-इल-क़िबला, मतबुआ मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 1/317
3. रद्द-उल-मुहतार ब-हवाला अन-नहर, मबहस फ़ी इस्तक़बाल-इल-क़िबला, मतबुआ मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 1/317

اس کا اعتبار نہیں کیا ، قاضی خان کی گفتگو بھی اسی طرف رہنمائی کرتی ہے اھ ۱ پھر نہر میں اس کی تائید یوں کی ہے کہ اسی پر متون کا اطلاق ہے اھ ۲ ردالمحتار میں یہ کہتے ہوئے اس کا رد کیا کہ میں نے متون میں ایسی کوئی دلیل نہیں دیکھی جو ان کے عدم اعتبار پر دال ہو ، حالانکہ ہم پر اس چیز کا تعلم ہے جس کے ساتھ ستاروں کے ذریعے ہم قبلہ پر رہنمائی حاصل کرتے ہیں اور اللہ تعالٰی کا یہ ارشاد بھی دلیل ہے والنجوم لتھتدوا بھا الخ (اس نے ستارے اس لئے بنائے تاکہ تم ان سے رہنمائی حاصل کرو) اس سے ظاہر کیا کہ ان کے عدم اعتبار میں اختلاف اس صورت میں ہے جب وہاں قدیم محراب موجود ہوں کیونکہ ان کے ہوتے ہوئے تحری جائز نہیں جیسا کہ ہم پہلے ذکر کر آئے ، تاکہ سلف صالحین اور جمہور مسلمانوں کو غلط ثابت قرار دینا لازم نہ آئے۔ بخلاف اس صورت کے جب مصلی جنگل اور ویران جگہ میں ہو تو وہاں ستاروں وغیرہ ہم نے ان چیزوں کے علامتِ معتبرہ ہونے کی تصریح کی ہے ، لہذا اوقاتِ نماز اور تعیینِ قبلہ کے متعلق ثقہ علماء کے کتب مواقیت میں بیان کردہ قواعد و ضوابط پر اعتماد کرنا مناسب ہے ، اور آلات مثلاً ربع ، اصطرلاب وغیرہ جو اوقات کی پہچان کے لئے انھوں نے بنائے ہیں ان پر بھی اعتماد کیا جائے۔ کیونکہ اگر ان آلات سے یقین کا درجہ حاصل نہ ہو تو کم از کم غلبہ ظن تو اسی شخص کو جو ان آلات سے متعلق معلومات رکھتا ہو حاصل ہو جائے گا۔ اور اس مسئلہ میں ظنِ غالب ہی کافی ہے الخ (ت) ۳

۱ جامع الرموز فصل شروط الصلوٰۃ مطبوعہ گنبد قاموس ایران ۱/ ۱۳۰ ۲ ردالمحتار بحوالہ النہر مبحث فی استقبال القبلہ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/ ۳۱۷ ۳ ردالمحتار بحوالہ النہر مبحث فی استقبال القبلہ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/ ۳۱۷

Fatawa Razawiya, Volume 6

I say: (I say) This is an exquisite discourse. What relation do baseless conjectures, which do not touch any aspect of knowledge, have with the predominant opinion (Zann al-Ghalib) obtained from these instruments? If it were not for the possibility of differences in longitudes and latitudes of countries in the matter of determining the Qibla, and the role of conjecture in most of them, the knowledge obtained through them would have been definitive (Qat'i), with no room for doubt. In fact, if you were to investigate, you would find that most of the prayer niches (Mihrabs) established after the Companions and the Successors (may Allah be pleased with them) were only built based on those rules, and the rules were founded upon them. So, how can it be permissible to rely on those Mihrabs but not on the rules upon which they were built? Yes, in case of conflict, the ancient (original) Mihrab is preferred, contrary to the Shafi'i school, so as not to necessitate deeming the righteous predecessors and the majority of Muslims as being in error, as mentioned by Imam Shami and others. Furthermore, collective knowledge is stronger than individual (Ahad) knowledge, and the predecessors have a clear distinction over the successors. Moreover, sometimes errors in observation occur during the use of rules and instruments, as has been witnessed and observed. Therefore, an individual being in error is more likely than a group being in error. For this reason, it is stated in Al-Fatawa al-Khayriyya that concerning ijtihad in the prayer niches of Muslims regarding the direction (of Qibla), it is not permissible (to object) where they are free from criticism because they were not established except in the presence of a group of Muslims who were experts in the stars and proofs. Thus, it attained the status of a transmitted report (Khabar), so follow it.

---

1. Rad al-Muhtar, chapter on facing the Qibla, printed by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/311. Page 67 of 736

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

मैं कहता हूँ: (मैं कहता हूँ) यह एक उत्कृष्ट चर्चा है। ज्ञान के किसी भी पहलू को न छूने वाले निराधार अनुमानों का उन यंत्रों से प्राप्त होने वाले प्रबल विचार (ज़न्न-ए-ग़ालिब) से क्या संबंध? यदि क़िबला निर्धारित करने के मामले में देशों के देशांतर और अक्षांश की संभावना न होती और उनमें से अधिकांश में अनुमान का दखल न होता, तो उनसे प्राप्त ज्ञान निश्चित (क़तई) होता जिसमें संदेह की कोई गुंजाइश नहीं होती। बल्कि यदि आप शोध करें, तो आप पाएंगे कि सहाबा और ताबिईन (अल्लाह उन पर प्रसन्न हो) के बाद स्थापित किए गए अधिकांश मेहराब केवल उन्हीं नियमों के आधार पर बनाए गए थे, और वे नियम उन्हीं पर आधारित थे। तो फिर उन मेहराबों पर भरोसा करना लेकिन उन नियमों पर न करना जिन पर वे बनाए गए थे, कैसे जायज हो सकता है? हाँ, विरोध की स्थिति में, प्राचीन मेहराब को वरीयता दी जाएगी, शाफ़ई पंथ के विपरीत, ताकि नेक पूर्वजों और बहुसंख्यक मुसलमानों को गलत साबित करना आवश्यक न हो जाए, जैसा कि इमाम शामी और अन्य लोगों ने उल्लेख किया है। इसके अलावा, सामूहिक ज्ञान व्यक्तिगत (अहद) ज्ञान से अधिक शक्तिशाली होता है, और पूर्वजों को बाद के लोगों पर स्पष्ट श्रेष्ठता प्राप्त है। इसके अतिरिक्त, कभी-कभी नियमों और यंत्रों के उपयोग में अवलोकन संबंधी त्रुटियां भी हो जाती हैं, जैसा कि देखा गया है। इसलिए, एक व्यक्ति का गलत होना समूह के गलत होने की तुलना में अधिक संभावित है। इसी कारण फ़तावा खैरिया में कहा गया है कि मुसलमानों के मेहराबों में दिशा (क़िबला) के संबंध में इज्तिहाद के बारे में, जहाँ वे आलोचना से मुक्त हैं, वहां (विरोध) जायज नहीं है क्योंकि वे सितारों और प्रमाणों के विशेषज्ञ मुसलमानों के एक समूह की उपस्थिति के बिना स्थापित नहीं किए गए थे। इस प्रकार, इसने एक रिपोर्ट (ख़बर) का दर्जा प्राप्त कर लिया, इसलिए उसका अनुसरण करें।

---

1. रद अल-मुहतार, क़िबला की ओर मुख करने का अध्याय, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र द्वारा मुद्रित, 1/311. पेज 67 / 736

اقول: (میں کہتا ہوں) یہ نفیس گفتگو ہے علم کے کسی پہلو کو نہ چھونے والے بے اصل اندازے کو ان آلات سے حاصل شدہ ظن غالب سے کیا تعلق، اگر تعیین قبلہ کے معاملہ میں طول البلد اور عرض البلد اور ان کے اکثر معاملات میں ظن کا دخل نہ ہوتا تو ان آلات سے حاصل شدہ علم قطعی ہوتا جس میں شک کی گنجائش نہ ہوتی۔ بلکہ اگر تو تحقیق کرے تجھے معلوم ہوگا کہ وہ بڑے بڑے محراب جو صحابہ و تابعین رضی اللہ عنہم کے بعد بنائے گئے ہیں اور انہی قواعد کی بنا پر اور انہیں ضوابط پر ان مساجد کے ستون بنائے گئے، تو یہ کیسے درست ہوگا کہ ان محرابوں پر تو اعتماد کیا جائے مگر ان قواعد پر نہ کیا جائے جن کی بنا پر وہ محراب معرض وجود میں آئے ہیں۔ ہاں یہ درست ہے کہ جہاں (قاعدہ و محراب) قدیم میں تعارض ہوگا وہاں محراب قدیم کو ترجیح ہوگی بخلاف شوافع کے تاکہ سلف صالحین اور جمہور مسلمانوں کو غلط ثابت قرار دینا لازم نہ آئے جیسا کہ امام شامی وغیرہ نے ذکر کیا ہے۔ اور یہ بات بھی ہے کہ جماعت کا علم احاد کے علم سے زیادہ قوی ہوتا ہے۔ اور سلف کو خلف پر واضح فضیلت حاصل ہے نیز بعض دفعہ استعمال قواعد و آلات میں نظر سے خطا بھی ہو جاتی ہے جیسا کہ مشاہدہ و ملاحظہ میں آیا ہے لہذا واحد کا خاطی ہونا جماعت کے خاطی ہونے سے زیادہ قریب ہے، اسی لئے فتاوٰی خیر یہ میں کہا کہ جہت قبلہ کی تعیین

---

1 رد المحتار مبحث فی استقبال القبلة مطبوعہ مصطفی البابي مصر ۱ / ۳۱۱ Page 67 of 736

Vol. 6 Fatawa Razawiyya

"Those Mihrabs[1]" (Finished) Regarding the matter of old Mihrabs of Muslims, ijtihad (independent reasoning) and contemplation are not permissible so that they remain safe from criticism. This is because these Mihrabs were established by groups of Muslims who possessed knowledge of the directions of stars and proofs. Since goodness and welfare lie in this, it is necessary to follow (taqlid) these Mihrabs. (T)

I say: Through this, it has become apparent that the ruling is not restricted to wildernesses (deserts), because they established them in cities based on those proofs. Certainly, Al-Allama al-Birjandi said in 'Sharh al-Niqayah' that the matter of Qibla is only realized through the rules of geometry and calculation by knowing the distance of Makkah from the equator and from the west side, then the distance of the assumed city similarly. Then it is measured according to those rules to determine the direction of the Qibla. We have already determined the Qibla direction of Herat[2] through those rules until the end of what will come, and Al-Fattal quoted it in his marginalia (hashiyah), having read it over to him.

I say: (I say) From this, it also became clear that this ruling is not specific only to ruins and forests because in cities too, Muslims have established Mihrabs based on these same rules and regulations. Thus, Allama Birjandi stated in 'Sharh Niqayah' that the matter of Qibla is resolved based on the rules of geometry and calculation in such a way that first, the distance of Makkah from the equator towards the west is identified, then the distance of the assumed city is identified in the same way. Then an estimation is made according to these rules so that the direction of Qibla can be known, and we have proven the direction of the Qibla of Herat through these rules in this way till the end, the description of which will follow, and Allama Fattal has quoted it in his marginalia while keeping it established. (T)

And the elders have also stated that for a mosque which has been built for a long time and where the people of knowledge and common Muslims have been praying without objection, as is mentioned in the question regarding the said Eidgah, if any philosopher wants to cast doubt on it through his instruments and calculations, no attention shall be paid to him. To assume that scholars and other Muslims have been in error for hundreds of years is a very severe matter. In fact, they state clearly that such ancient Mihrabs are themselves the proof of the Qibla, after which performing 'taharri' (searching/investigation) and applying one's own judgment is not permissible in Sharia. Such skepticism was even presented by some claimants of

astronomy regarding some Mihrabs installed by the Sahaba (Companions) (may Allah be pleased with them), even though the knowledge of the Sahaba was certainly greater. After that, listening to a philosopher's claim is not permissible; yes, if it is known through certain investigation...

---

1. Fatawa Khairiyyah, Kitab al-Salah, printed at Dar al-Ma'rifah, Beirut, 1/71.
2. Sharh al-Niqayah by al-Birjandi, Chapter: Conditions of Salah, printed at Munshi Naval Kishore, Lucknow, 1/89.

जिल्द छठी फतावा रजविया

"वे मिहराबें[1]" (समाप्त) मुसलमानों की पुरानी मिहराबों के मामले में इज्तिहाद (स्वतंत्र चिंतन) और विचार-विमर्श जायज़ नहीं है ताकि वे आलोचना से सुरक्षित रह सकें। इसका कारण यह है कि ये मिहराबें मुसलमानों के उन समूहों द्वारा स्थापित की गई थीं जिन्हें सितारों की दिशाओं और प्रमाणों का ज्ञान था। चूँकि इसी में भलाई और कल्याण है, इसलिए इन मिहराबों का अनुसरण (तक्लीद) किया जाना चाहिए। (त)

अक़ूल (मैं कहता हूँ): इससे यह स्पष्ट हो गया कि यह आदेश केवल निर्जन स्थानों (रेगिस्तानों) तक सीमित नहीं है, क्योंकि उन्होंने इन प्रमाणों के आधार पर उन्हें शहरों में भी स्थापित किया। निस्संदेह, अल्लामा अल-बिरजंदी ने 'शरह अल-निक़ायाह' में कहा है कि क़िबला का मामला केवल ज्यामिति और गणना के नियमों के माध्यम से स्पष्ट होता है, मक्का की भूमध्य रेखा से और पश्चिम दिशा से दूरी जानकर, और फिर उसी प्रकार कल्पित शहर की दूरी जानकर। फिर क़िबला की दिशा निर्धारित करने के लिए उन नियमों के अनुसार मापा जाता है। हमने उन नियमों के माध्यम से हेरात[2] की क़िबला दिशा पहले ही निर्धारित कर ली है, जो आगे आने वाली चर्चा के अंत तक है, और अल-फ़त्तल ने इसे अपने हाशिए (टिप्पणी) में उद्धृत किया है।

अक़ूल: (मैं कहता हूँ) इससे यह भी स्पष्ट हो गया कि यह आदेश केवल वीरान और जंगलों के लिए विशिष्ट नहीं है क्योंकि शहरों में भी मुसलमानों ने उन्हीं नियमों और सिद्धांतों के आधार पर मिहराब स्थापित किए हैं। अतः अल्लामा बिरजंदी ने 'शरह निक़ायाह' में कहा है कि क़िबला का मामला ज्यामिति और गणना के नियमों के आधार पर इस तरह हल होता है कि पहले भूमध्य रेखा से पश्चिम की ओर मक्का की दूरी पहचानी जाए, फिर कल्पित शहर की दूरी भी इसी तरह पहचानी जाए। फिर इन नियमों के अनुसार अनुमान लगाया जाए ताकि क़िबला की दिशा ज्ञात हो सके और हमने इन नियमों के माध्यम से हेरात की क़िबला दिशा को इसी तरह अंत तक साबित किया है जिसका वर्णन आगे आएगा, और अल्लामा फ़त्तल ने इसे अपने हाशिए में स्थिर रखते हुए उद्धृत किया है। (त)

और बड़ों ने यह भी फरमाया है कि जो मस्जिद लंबे समय से बनी हो और विद्वान एवं आम मुसलमान बिना किसी आपत्ति के उसमें नमाज़ पढ़ते रहे हों, जैसा कि उक्त ईदगाह के संबंध में प्रश्न में वर्णित है, यदि कोई दार्शनिक अपने यंत्रों और अनुमानों के माध्यम से इसमें संदेह पैदा करना चाहे, तो उसकी ओर ध्यान नहीं दिया जाएगा। सैकड़ों वर्षों से विद्वानों और अन्य मुसलमानों को गलती पर मान लेना

अत्यंत कठोर बात है। बल्कि, वे स्पष्ट रूप से कहते हैं कि ऐसी प्राचीन मिहराबें स्वयं क़िबला का प्रमाण हैं, जिनके बाद 'तहरी' (जांच) करने और अपना अनुमान लगाने की शरीयत में अनुमति नहीं है। ऐसी शंका खगोल विज्ञान के कुछ दावेदारों ने सहाबा (साथियों) (रज़ियल्लाहु अन्हुम) द्वारा स्थापित कुछ मिहराबों के बारे में भी प्रस्तुत की थी, जबकि निश्चित रूप से सहाबा का ज्ञान अधिक था। उसके बाद किसी दार्शनिक के दावे को सुनना भी हलाल नहीं है; हाँ, यदि निश्चित जांच से ज्ञात हो...

---

1. फतावा खैरिया, किताब अस-सलाह, दार अल-मआरिफा, बेरुत, 1/71।
2. शरह अल-निक़ायाह बिरजंदी, अध्याय: नमाज़ की शर्तें, मुंशी नवल किशोर, लखनऊ, 1/89।

تِلْكَ الْمَحَارِيْبُ[1] اھ کے معاملہ میں مسلمانوں کے قدیم محرابوں میں اجتہاد اور غور وفکر اس لئے جائز نہیں تاکہ طعن سے محفوظ رہا جاسکے کیونکہ یہ محراب مسلمانوں کی اُن جماعتوں نے قائم کئے ہیں جو کواکب کی سمت اور دلائل کی معرفت رکھتی تھیں، تو چونکہ خیر وبھلائی اسی میں ہے لہذا ان محرابوں کی تقلید کی جائے اھ (ت)

اقول: وبہ ظھران الحکم لایختص بالمفاوز فانھم انما نصبوا فی الامصار بناء علی تلك الادلة لاجرم ان قال العلامة البرجندی فی شرح النقایة ان امر القبلة انما یتحقق بقواعد الھندسة والحساب بأن یعرف بعد مکة عن خط الاستواء وعن طرف المغرب ثم بعد البلد المفروض کذلك ثم یقاس بتلك القواعد لتحقیق سمت القبلة ونحن قد حققنا بتلك القواعد سمت قبلة ھراة[2] الٰی اٰخر ماسیأتی ونقلہ الفتال فی حاشیتہ مقرأ علیہ۔

اقول: (میں کہتا ہوں) اس سے یہ بھی آشکارا ہوگیا کہ یہ حکم محض ویرانے اور جنگل کے ساتھ ہی مخصوص نہیں کیونکہ شہروں میں بھی مسلمانوں نے انہی قواعد وضوابط کی بنا پر محراب قائم کئے ہیں، چنانچہ علامہ برجندی نے شرح نقایہ میں کہا کہ قبلہ کا معاملہ قواعدِ ہندسہ وحساب کی بناء پر حل ہوتا ہے بایں طور کہ پہلے خط استواء سے مغرب کی جانب سے مکہ کا بعد پہچانا جائے پھر مفروض شہر کے بعد کو اسی طرح پہچانا جائے پھر ان قواعد کے مطابق قیاس کیا جائے تاکہ سمتِ قبلہ معلوم ہوسکے اور ہم ان قواعد کے ذریعے قبلہ ہرات کی سمت یونہی ثابت کرچکے ہیں آخر تک جس کا بیان آئیگا، اور اس کو علامہ فتال نے اپنے حاشیہ میں ثابت رکھتے ہوئے نقل کیا ہے۔ (ت)

اور اتنا تو اکابر نے بھی فرمایا کہ جو مسجد مدتوں سے بنی ہو اور اہل علم وعامہ مسلمین اس میں بلا نکیر نمازیں پڑھتے رہے ہوں جیسا کہ عید گاہ مذکورہ کی نسبت سوال میں مسطور ہے اگر کوئی فلسفی اپنے آلات وقیاسات کی رُو سے اس میں شک ڈالنا چاہے اُس کی طرف التفات نہ کیا جائے گا کہ صدہا سال سے علماء وسائر مسلمین کو غلطی پر مان لینا نہایت سخت بات ہے، بلکہ تصریح فرماتے ہیں کہ ایسی قدیم محرابیں خود ہی دلیلِ قبلہ ہیں جن کے بعد تحری کرنے اور اپنا قیاس لگانے کی شرعاً اجازت نہیں، ایسی تشکیک بعض مدعیانِ ہیات نے بعض محراباتِ نصب کردہ صحابہ کرام رضی اللہ عنہم میں بھی پیش کی حالانکہ بالیقین صحابہ کرام کا علم زائد تھا اُس کے بعد فلسفی ادعا کا سننا بھی حلال نہیں، ہاں بتحقیق معلوم ہو

---

1 فتاویٰ خیریہ کتاب الصلوٰۃ مطبوعہ دار المعرفتہ بیروت ۷۱/۱ 2 شرح النقایۃ للبرجندی باب شروط الصلوٰۃ مطبوعہ منشی نولکشور لکھنو ۸۹/۱

Fatawa Ridawiyyah, Volume Six

That if a certain Mihrab (prayer niche) was established haphazardly by some ignorant and unaware person, then indeed it will not be relied upon. Allama Khairuddin al-Ramli, the teacher of the author of Durr al-Mukhtar (may Allah have mercy on them both), states in Fatawa Khayriyyah:

[Arabic]: We are certain that the Companions (may Allah be pleased with them) were more knowledgeable than others. Thus, when we know they established a mihrab, the words of those inferior to them cannot oppose them. And if we know that a mihrab was established by someone else without knowledge, we do not rely on it. And if we do not know anything but we know the large number of people passing by and worshippers over the passing years, we judge by the outward appearance, and that is correctness. [Urdu]: We are certain that the noble Companions (may Allah be pleased with them) possessed more knowledge than all other members of the Ummah. When we find out that these Mihrabs were established by the Companions, then the word of anyone else against them cannot be accepted (therefore, this Mihrab will be relied upon). And when it becomes known to us that someone other than the Companions, like an ignorant and unaware person, built this Mihrab, we will not rely on it. And if we have no information about a Mihrab, only knowing that for many years numerous passers-by and worshippers have been continuously praying there, then we will act upon this apparent situation, and this is what is correct. (T)

In the same [book] it is stated:

[Arabic]: The school of the Hanafis is to act upon the mentioned mihrabs and not to pay attention to the mentioned criticism. [Urdu]: The creed of the Hanafis is that they should act upon the aforementioned Mihrabs and no attention should be paid to the mentioned taunt and objection of the opponent. (T)

In the same [book] it is stated:

[Arabic]: The end result of the mentioned astronomer's [finding] is that he criticizes a slight deviation that does not exceed the mentioned limit, and even assuming his statement is true, it does not prevent validity. This is why the commentator said... [Urdu]: The limit of the mentioned astronomer's statement is that he will object with that slight deviation which does not exceed the mentioned limit, although even if his statement were true, it is not contrary to the validity of the prayer, therefore the commentator...

1. Fatawa Khayriyyah, Book of Prayer, published by Dar al-Ma'rifah, Beirut, 1/9
2. Fatawa Khayriyyah, Book of Prayer, published by Dar al-Ma'rifah, Beirut, 1/8

फ़तावा रिज़विया, जिल्द छठी

कि फ़लाँ मेहराब किसी जाहिल ना-वाक़िफ़ ने यूँ ही बेतकल्लुफ़ क़ायम कर दी है, तो यक़ीनन उस पर भरोसा नहीं किया जाएगा। अल्लामा खैर-उद-दीन रम्ली, जो दुर्रे मुख़्तार के मुसन्निफ़ के उस्ताद हैं (अल्लाह उन पर रहमत करे), फ़तावा खैरिया में फ़रमाते हैं:

[अरबी]: हमें यक़ीन है कि सहाबा (रज़ियल्लाहु अन्हुम) अन्य लोगों से अधिक ज्ञानी थे। अत; जब हम जानते हैं कि उन्होंने एक मेहराब स्थापित की है, तो उनसे कमतर लोगों की बातें उनका विरोध नहीं कर सकतीं। और यदि हम जानते हैं कि एक मेहराब किसी और ने बिना ज्ञान के स्थापित की है, तो हम उस पर भरोसा नहीं करते। और यदि हम कुछ भी नहीं जानते, लेकिन हम पिछले वर्षों में बड़ी संख्या में वहां से गुजरने वाले लोगों और उपासकों को जानते हैं, तो हम बाहरी स्वरूप के आधार पर न्याय करते हैं, और वही शुद्धता है। [उर्दू]: हमें यक़ीन है कि सहाबा किराम (रज़ियल्लाहु अन्हुम) उम्मत के अन्य सभी व्यक्तियों से अधिक ज्ञान रखते थे। जब हमें यह पता चला कि ये मेहराब सहाबा ने स्थापित किए हैं, तो उनके मुक़ाबले में किसी और की बात को स्वीकार नहीं किया जा सकता (इसलिए इस मेहराब पर भरोसा किया जाएगा)। और जब हमें यह पता चले कि सहाबा के अलावा किसी जाहिल ना-वाक़िफ़ ने यह मेहराब बनाई है, तो हम उस पर भरोसा नहीं करेंगे। और अगर किसी मेहराब के बारे में हमें कोई जानकारी न हो, सिर्फ़ इतना जानते हों कि यहाँ कई सालों से बहुत से राहगीर और नमाज़ी निरंतर नमाज़ पढ़ते रहे हैं, तो हम इसी ज़ाहिरी सूरत पर अमल करेंगे और यही सही है। (त)

इसी में है:

[अरबी]: हनफ़ियों का मत है कि उल्लेखित मेहराबों पर अमल किया जाए और उल्लेखित आलोचना पर ध्यान न दिया जाए। [उर्दू]: हनफ़ियों का मसलक यही है कि इन ज़िक्र किए गए मेहराबों पर अमल करें और विरोधी के ज़िक्र किए गए ताने और ऐतराज की तरफ़ ध्यान न दिया जाए। (त)

उसी में है:

[अरबी]: उल्लेखित खगोलशास्त्री के निष्कर्ष का अंत यह है कि वह एक मामूली विचलन की आलोचना करता है जो उल्लेखित सीमा से अधिक नहीं है, और भले ही उसका बयान सच मान लिया जाए, फिर भी यह वैधता को नहीं रोकता है। यही कारण है कि टीकाकार ने कहा... [उर्दू]: ज़िक्र किए गए माहिरे फ़लकियात (खगोलशास्त्री) के कथन का अंत यह है कि वह उस मामूली विचलन पर

आपत्ति करेगा जो ज़िक्र की गई सीमा से अधिक न हो, जबकि अगर उसकी बात सच भी हो, तब भी यह नमाज़ के सही होने के विरुद्ध नहीं है, इसलिए टीकाकार (शारेह)...

---

1. फ़तावा खैरिया, किताबुस सलात, दारुल मारिफ़ा, बेरूत, 9/1
2. फ़तावा खैरिया, किताबुस सलात, दारुल मारिफ़ा, बेरूत, 8/1

کہ فلاں محراب کسی جاہل ناواقف نے یوں ہی جزافاً قائم کر دی ہے تو البتہ اس پر اعتماد نہ ہوگا۔

علامہ خیر الدین رملی استاد صاحب دُر مختار رحمہما اللہ تعالٰی فتاوی خیریہ میں فرماتے ہیں:

نحن علی علم بأن الصحابة رضی اللہ عنہم اعلم من غیرھم فاذا علمنا انھم وضعوا محراباً لا یعارضھم من ھو دونھم واذا علمنا ان محراباً وضع من غیرھم بغیر علم لا نعتمدہ واذا لم نعرف شیئاً وعلمنا کثرۃ المارین و تو الی المصلین علی مرور السنین علمنا بالظاھر وھو الصحۃ[1] ۔ ہمیں یقین ہے کہ صحابہ کرام رضی اللہ عنہم دیگر تمام افرادِ امت سے زیادہ علم رکھتے تھے۔ جب ہمیں یہ معلوم ہوا کہ یہ محراب صحابہ نے قائم کئے ہیں تو ان کے مقابل کسی دوسرے کی بات کو تسلیم نہیں کیا جا سکتا (لہٰذا اس محراب پر اعتماد کیا جائے گا) اور جب ہمیں یہ معلوم ہو جائے کہ صحابہ کے علاوہ کسی جاہل ناواقف نے یہ محراب بنائی تو اس پر ہم اعتماد نہیں کریں گے ، اور اگر کسی محراب کے بارے میں ہمیں کچھ معلومات نہ ہوں صرف اتنا جانتے ہوں کہ یہاں کئی سالوں سے کثیر راہگیر اور نمازی مسلسل نماز پڑھتے رہے ہیں تو ہم اسی ظاہر صورت پر عمل کریں گے اور یہی درست ہے۔(ت)

اسی میں ہے:

مذھب الحنفیۃ یعمل بالمحاریب المذکورۃ ولا یلتفت للطعن المذکورۃ[2]۔ احناف کا مسلک یہی ہے کہ ان محاریب مذکورہ پر عمل پیرا ہوں اور مخالف کے طعن واعتراض مذکورہ کی طرف توجہ نہ کی جائے۔ (ت)

اُسی میں ہے:

نهاية الفلكى المذكور ان يطعن بالانحراف اليسير الذى لا يجاوز الحد المذكور وهو على تقدير صدقه لا يمنع الجواز و لهذا قال الشارح قولِ فلکی (ماہرِ فلکیات) مذکور کی نہایت یہ ہے کہ وہ اس تھوڑے انحراف کے ساتھ جو حدِ مذکور سے تجاوز نہ کرتا ہو طعن (اعتراض) کریگا حالانکہ اگر اسکا قول سچا بھی ہو تاہم جوازِ نماز کے منافی نہیں اس لئے شارح

---

1. فتاوی خیریہ کتاب الصلوۃ مطبوعہ دار المعرفہ بیروت ۹/۱
2. فتاوی خیریہ کتاب الصلوۃ مطبوعہ دار المعرفہ بیروت ۸/۱

Fatawa Razawiya Volume Six

Al-Zaylai stated: With the presence of Mihrabs (prayer niches), there is no need for independent judgment (Ijtihad) or deliberation. (T) | Imam Zaylai said: In the presence of Mihrabs, there is no need for Ijtihad or deliberation. (T)

In the same [source] it is written: The discussion is about establishing a significant deviation (Inhiraf-e-Kaseer). This matter, in case of great distance, cannot be attained with certainty from the report of a timekeeper (astronomer), as is not hidden from the jurists. (T) | But the discussion is about the investigation of significant deviation, and this matter, in the case of distance, cannot be obtained with certainty from the opinion of an expert astronomer, as is not hidden from the jurists. (T)

In "Hilya" it is written: For the worshipper, the Mihrab has become like the Kaaba itself. Therefore, it is not permissible for anyone to exercise independent judgment or deliberate regarding Mihrabs. So, stay away from what is said that the Qibla of the Umayyad Mosque in Damascus and most of its other mosques built in its direction have some deviation. There is no doubt that the Qibla of the Umayyad Mosque was determined at the time when the noble Companions (may Allah be pleased with them) conquered this region. The noble Companions themselves continued to offer prayers in this direction, as did those after them. These personalities were more knowledgeable and more reliable than that astronomer. What do we know about that astronomer—whether his opinion is correct or wrong? In fact, it is more likely that he is in error, and all goodness lies in following the righteous predecessors. (T) | For the worshipper, the Mihrab is like the Kaaba itself, therefore it is not permissible for any person to perform Ijtihad or deliberation regarding the Mihrabs. Stay away from this (which is said) that the Umayyad Great Mosque of Damascus and most of its other mosques built in its direction have some deviation in their Qibla direction, because the Qibla of the Umayyad Great Mosque was determined when the noble Companions (may Allah be pleased with them) conquered this region. The noble Companions themselves continued to offer prayers facing this direction, and those after them as well; and those personalities were more knowledgeable and reliable than that astronomer. What do we know about that astronomer—whether his opinion is correct or wrong? Rather, his being in error is more likely, and all goodness lies in following the predecessors. (T)

Furthermore, these rulings of the scholars were concerning one who is a perfect, practicing, virtuous, reliable, and just expert in the art of astronomy. These modern

people have no touch with jurisprudence nor knowledge of astronomy, and the state of their religion and piety is more than clear; how can their word be worthy of attention?

1. Fatawa Khayriyya, Kitab al-Salat, published by Dar al-Ma'rifa, Beirut, 1/7
2. Fatawa Khayriyya, Kitab al-Salat, published by Dar al-Ma'rifa, Beirut, 9/1
3. Hilyat al-Mahalli Sharh Munyat al-Musalli

फ़तावा रज़विया जिल्द छठा

अल-ज़ैलई ने फरमाया: मेहराबों की मौजूदगी में इज्तिहाद (स्वतंत्र निर्णय) और सोच-विचार की आवश्यकता नहीं है। (त) | इमाम ज़ैलई ने फ़रमाया कि मेहराबों के होते हुए इज्तिहाद और ग़ौर-ओ-फ़िक्र की ज़रूरत नहीं। (त)

उसी [स्रोत] में है: बात बड़े विचलन (इनहिराफ़-ए-कसीर) को स्थापित करने के बारे में है। अधिक दूरी की स्थिति में, एक समयपाल (खगोलशास्त्री) की सूचना से यह बात निश्चितता के साथ प्राप्त नहीं की जा सकती है, जैसा कि फुकहा (विधिवेत्ताओं) से छिपा नहीं है। (त) | लेकिन कलाम (बात) इनहिराफ़-ए-कसीर की तहक़ीक़ के बारे में है और यह बात दूरी की सूरत में माहिर-ए-फ़लकियात (खगोलशास्त्री) की राय से यक़ीनी तौर पर हासिल नहीं हो सकती, जैसा कि फ़ुक़हा पर मख़्फ़ी (छिपा हुआ) नहीं है। (त)

"हिलिया" में है: नमाज़ी के लिए मेहराब बिलकुल काबा की तरह हो गई है। इसलिए किसी व्यक्ति के लिए यह जायज़ नहीं है कि वह मेहराबों के बारे में इज्तिहाद या सोच-विचार करे। तो उस बात से दूर रहें जो कही जाती है कि दमिश्क की उमय्यद मस्जिद और उसके दिशा में बनी अधिकांश अन्य मस्जिदों का क़िबला कुछ विचलित है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि उमय्यद मस्जिद के क़िबला का निर्धारण उस समय हुआ था जब सहाबा किराम (रज़ियल्लाहु अन्हुम) ने इस क्षेत्र को फतह किया था। सहाबा किराम स्वयं भी इसी दिशा में नमाज़ अदा करते रहे और उनके बाद के लोग भी। ये महान हस्तियां उस खगोलशास्त्री से कहीं अधिक विद्वान और विश्वसनीय थीं। हम उस खगोलशास्त्री के बारे में क्या जानते हैं—कि उसकी राय सही है या गलत? वास्तव में, उसके गलत होने की संभावना अधिक है, और सारी भलाई पूर्वजों (असलाफ) के अनुसरण में है। (त) | नमाज़ी के लिए मेहराब ऐन काबा की तरह है, इसीलिए किसी शख़्स को रवा (उचित) नहीं कि वह मेहराबों में इज्तिहाद या ग़ौर-ओ-फ़िक्र करे। इस बात से तो दूर रह (जो कहा जाता है) कि जामे उमवी दमिश्क़ और उसकी अक्सर दीगर मसाजिद जो उसकी सम्त (दिशा) पर बनाई गई हैं, उनकी सम्त-ए-क़िबला कुछ मुनहरिफ़ (विचलित) है, क्योंकि जामे उमवी के क़िबला का तअ़य्युन (निर्धारण) उस वक़्त हुआ जब सहाबा किराम रज़ियल्लाहु तआ़ला अ़न्हुम ने इस इलाक़े को फ़तह किया था। सहाबा किराम ख़ुद भी इसी रुख़ नमाज़ अदा करते रहे और उनसे बाद के लोग भी, और वो हज़रात उस फ़लकी (खगोलशास्त्री) से ज़्यादा आलिम और सक़ा (विश्वसनीय) थे। उस फ़लकी के बारे में हमें क्या मालूम कि उसकी राय

दुरुस्त है या ग़लत, बल्कि उसका ख़ाती (गलत) होना ही राजह (प्रबल) है और तमाम ख़ैर असलाफ़ की इत्तिबा (अनुसरण) में है। (त)

फिर विद्वानों के ये निर्देश उस व्यक्ति के बारे में थे जो खगोल विज्ञान (फ़न-ए-हैअ़त) का पूर्ण, अभ्यासरत, गुणी, विश्वसनीय और न्यायप्रिय विशेषज्ञ हो। इन आधुनिक लोगों का न तो न्यायशास्त्र (फ़िक़्ह) से कोई संपर्क है और न ही खगोल विज्ञान का ज्ञान, और उनके दीन और धर्मपरायणता की स्थिति और भी स्पष्ट है; उनकी बात भला कब ध्यान देने योग्य हो सकती है?

1. फ़तावा खैरिया, किताबुस सलात, मतबूआ दारुल मारिफ़ा बेरुत, 1/7
2. फ़तावा खैरिया, किताबुस सलात, मतबूआ दारुल मारिफ़ा बेरुत, 9/1
3. हिलियतुल महल्ली शरह मुनियतुल मुसल्ली

الزیلعی لا یجوز التحری مع المحاریب^1۔ | امام زیلعی نے فرمایا محاریب کے ہوتے ہوئے اجتہاد اور غور وفکر کی ضرورت نہیں۔(ت)

اُسی میں ہے: الکلام فی تحقق ذلك (یعنی الانحراف الکثیر) ولا یقع علی وجه الیقین مع البعد باخبار المیقاتی کما لا یخفی عند الفقهاء^2۔ | لیکن کلام انحراف کثیر کی تحقیق کے بارے میں ہے اور یہ بات بُعد کی صورت میں ماہر فلکیات کی رائے سے یقینی طور پر حاصل نہیں ہوسکتی جیسا کہ فقہاء پر مخفی نہیں۔(ت)

حلیہ میں ہے: المحراب فی حق المصلی قد صار کعین الکعبة ولهذا لا یجوز للشخص ان یجتهد فی المحاریب فإیاك ان تنظر الی ما یقال ان قبلة اموی دمشق و اکثر مساجدها المبنیة علی سمت قبلة فیها بعض انحراف اذ لا شك ان قبلة الاموی من حین فتح الصحابة رضی الله تعالی عنهم ومن صلی منهم الیها وکذا من بعدهم اعلم و اوثق من فلکی لاندری هل اصاب ام اخطأ بل ذلك یرجع خطأه وکل خیر من اتباع من سلف^3۔ | نمازی کے لئے محراب عین کعبہ کی طرح ہے اسی لئے کسی شخص کو روا نہیں کہ وہ محاریب میں اجتہاد یا غور و فکر کرے اس بات سے تو دور رہ (جو کہا جاتا ہے) کہ جامع اموی دمشق اور اسکی اکثر دیگر مساجد جو اسکی سمت پر بنائی گئی ہیں ان کی سمت قبلہ کچھ منحرف ہے کیونکہ جامع اموی کے قبلہ کا تعین اس وقت ہوا جب صحابہ کرام رضی اللہ تعالٰی عنہم نے اس علاقہ کو فتح کیا تھا صحابہ کرام خود بھی اسی رُخ نماز ادا کرتے رہے اور ان سے بعد کے لوگ بھی اور وہ حضرات اس فلکی سے زیادہ عالم اور ثقہ تھے اس فلکی کے بارے میں ہمیں کیا معلوم کہ اسکی رائے درست ہے یا غلط بلکہ اس کا خاطی ہونا ہی راجح ہے اور تمام خیر اسلاف کی اتباع میں ہے۔(ت)

پھر علماء کے یہ ارشادات اس بارے میں تھے جو فن ہیئت کا ماہر کامل عامل فاضل ثقہ عادل ہو یہ نئی روشنی والے نہ فقہ سے مس نہ ہیئت سے خبر، اور دین و دیانت کا حال روشن تر ، ان کی بات کیا قابل التفات،

1 فتاوىٰ خيرية ، كتاب الصلوة، مطبوعہ دار المعرفۃ بیروت، ۱/۷ 2 فتاوىٰ خيرية كتاب الصلوة مطبوعہ دار المعرفۃ بیروت ۹/۱ 3 حلية المحلى شرح منية المصلى

Fatawa Rizvia Volume 6 Their knowledge of astronomy is evident from this objection that they considered the inclination of the North Pole from the right shoulder towards the back as proof of deviation and wanted to rebuild the wall exactly aligned with the Pole. In astronomy, there are two methods for determining the direction of the Qibla: one is approximate, as mentioned in common popular books; the other is research-based (precise), as recorded in astronomical tables (Zij). From this, it is clear that these gentlemen are ignorant of both. If they knew the approximate method, they would not object to them, because if the Qibla direction for Aligarh is extracted according to it, the North Pole will definitely rotate from the right shoulder towards the back. This is because, according to this method, the Qibla line of Aligarh is inclined ten and a half degrees south from the point of west. Obviously, if one faces the point of west, the Pole stays aligned with the shoulder; now that it turns ten degrees south from west, the Pole will definitely incline towards the back. And if they were aware of the research-based method, they would never want to make the new wall parallel to the Pole, because even in the research method, the Qibla line of Aligarh is inclined south from the point of west, though not to that extent. We will mention both the approximate and research methods, God willing, at the end of the discourse.

Eighthly: Wanting alignment with the Pole is also, in the view of these gentlemen, a result of the scholars of Islam (may Allah have mercy on them) whose intent, if it were as they imagine, would not have made demolishing the mosque obligatory. Since the sacred era of the Sahaba, and indeed from the time of the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him and his progeny), for those outside Makkah, the direction (Jiha) of the Kaaba has been designated as the Qibla. There is absolutely no obligation to hit the exact point (Asabat-e-Ain). Therefore, the Sahaba and Tabi'un (may Allah be pleased with them) designated a single Qibla for nearby cities and even for entire countries. For Iraq, following the command of the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him and his progeny) and the decree of Farooq-e-Azam (may Allah be pleased with him), the Sahaba fixed the Qibla as "between the East and the West." Imams established the Qibla of Bukhara, Samarkand, Nasaf, Termez, Balkh, Merv, Sarakhs, etc., at the setting point of the head of Scorpio (Musqat Ra's al-Aqrab). For Jerusalem, Aleppo, Damascus, Ramla, Nablus, and the entire land of Syria, they determined the Qibla by keeping the Pole Star at the back. In Kufa, Baghdad, Hamadan, Qazvin, Tabaristan, Gorgan, etc., up to the Shash River, they said the Pole should be behind the right ear, or rather, on the

straight right shoulder in Iraq. In Egypt, on the left shoulder; in Yemen, shifted to the left in front of the face. Imam Faqih Abu Ja'far Hindwani stated the Qibla of holy Baghdad and noble Bukhara to be the same. Scholars designated the Qibla for Khorasan, Samarkand, and other eastern lands, including India, as being "between the two Wests" (the winter and summer sunsets). The great Imam and jurist Qadi Khan (may Allah have mercy on him) quoted six sayings from the venerable masters regarding the Qibla: 1. Taking the Lesser Bear (Ursa Minor), whose brightest star is the Pole, on the right ear and turning slightly to the left. 2. Taking the Pole Star behind the straight (right) ear. 3. Facing the setting point of the head of Scorpio, observing its direction at the end of the Zuhr prayer time when the sun is in the constellation of Gemini. 4. Keeping the distance between the two setting points of the stars Altair (Nasr al-Ta'ir) and Vega (Nasr al-Waqi') in the ratio of two-thirds to the right and one-third to the left. He further stated that all these sayings are close to each other. The basis of all these rulings is that there is great latitude in the consideration of direction. If the poor philosopher, with his basket of instruments and bundle of ideas, sits down, he will never...

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी उनकी खगोल विज्ञान (हैयत दानी) की जानकारी इसी आपत्ति से ज़ाहिर है कि उन्होंने उत्तरी ध्रुव (कुतूब शुमाली) का दाहिने कंधे से पीठ की ओर झुकने को विचलन (इन्हराफ़) की दलील बताया और दीवार तोड़कर ठीक कुतूब की सीध में बनाना चाहते हैं। खगोल विज्ञान में किबला की दिशा जानने के लिए दो तरीके हैं: एक अनन्तिम (तक़रीबी) जो आम प्रचलित किताबों में वर्णित है, दूसरा शोध-आधारित (तहक़ीक़ी) जो खगोलीय तालिकाओं (ज़िजात) में दर्ज है। यहाँ से स्पष्ट है कि ये सज्जन इन दोनों से अनभिज्ञ हैं। अगर वे अनन्तिम तरीका जानते तो उन पर आपत्ति न करते, क्योंकि उसके अनुसार अलीगढ़ के लिए किबला की दिशा निकाली जाए तो उत्तरी ध्रुव निश्चित रूप से दाहिने कंधे से पीठ की ओर ही घूमेगा। ऐसा इसलिए है क्योंकि इस तरीके पर अलीगढ़ की किबला रेखा पश्चिम बिंदु से साढ़े दस डिग्री दक्षिण की ओर झुकी हुई है। ज़ाहिर है कि अगर पश्चिम बिंदु की ओर मुँह करें तो ध्रुव कंधे की सीध में रहता है, अब जब पश्चिम से दस डिग्री दक्षिण को घूमेंगे, तो ध्रुव निश्चित रूप से पीठ की ओर झुकाव करेगा। और अगर शोध-आधारित तरीके से अवगत होते तो वे कभी भी नई दीवार ध्रुव के समानांतर बनाना न चाहते, क्योंकि शोध पद्धति में भी अलीगढ़ की किबला रेखा पश्चिम बिंदु से दक्षिण की ओर ही झुकी हुई है, हालाँकि उतनी नहीं जितनी हम दोनों तरीकों (तक़रीब और तहक़ीक़) का ज़िक्र इंशाअल्लाह कलाम के अंत में करेंगे।

आठवां: ध्रुव की सीध चाहना भी इन सज्जनों के विचार में इस्लाम के विद्वानों (रहमहुमुल्लाह तआला) की कृपा है, जिनका उद्देश्य अगर वैसा होता जैसा वे सोचते हैं, तो मस्जिद को गिराना फ़र्ज़ करार न देते। सहाबा किराम के मुक़द्दस ज़माने से, बल्कि हुज़ूर नूर-ए-सैयदुल अनाम (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) के समय से, गैर-मक्का वालों के लिए काबा की दिशा (जेहत) को किबला करार दिया गया है, बिल्कुल सटीक बिंदु (असाबत-ए-ऐन) पर होने की कोई बाध्यता नहीं है। इसीलिए सहाबा और ताबईन (रज़ियल्लाहु तआला अन्हुम) ने पास-पास के शहरों बल्कि पूरे देश के लिए एक ही किबला तय किया। इराक के लिए रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) के निर्देश और फ़ारूक़-ए-आज़म (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) के आदेश का पालन करते हुए सहाबा ने 'पूर्व और पश्चिम के बीच' को किबला मुक़र्रर किया। अइम्मा किराम ने बुखारा, समरकंद, नसफ़, तिर्मिज़, बल्ख, मर्व, सरखस आदि का किबला वृश्चिक (अक़रब) के मुख के डूबने के स्थान (मुस्क़त रासुल अक़रब) को बनाया। बैतुल मुक़द्दस, हलब, दमिश्क़, रमला, नाबलुस और पूरे शाम देश का किबला ध्रुव तारे को पीठ के पीछे रखना तय किया। कूफ़ा, बगदाद, हमदान, क़ज़्विन, तबरिस्तान, जुरजान आदि में

नहरे शाश तक ध्रुव को दाहिने कान के पीछे, बल्कि इराक में सीधे (दाएं) कंधे पर, मिस्र देश में बाएं कंधे पर, यमन देश में चेहरे के सामने बाईं ओर हटा हुआ बताया। इमाम फ़क़ीह अबू जाफ़र हिन्दुवानी ने मुक़द्दस बगदाद और शरीफ़ बुखारा का किबला एक ही बताया। विद्वानों ने खुरासान, समरकंद और अन्य पूर्वी देशों के लिए, जिनमें हिन्दुस्तान भी शामिल है, 'दो पश्चिमों के बीच' (बैनल मगरिबन) किबला तय किया। महान इमाम और विधिवेत्ता क़ाज़ी ख़ान (रहमहुल्लाह तआला) ने मशायखे किराम से किबला के बारे में दोबारा छह (६) कथन उद्धृत किए हैं: १. लघु सप्तऋषि (बनातुन नअश सुग़रा) जिसका सबसे चमकीला तारा ध्रुव है, उसे दाहिने कान पर लेकर थोड़ा बाईं ओर मुड़ना। २. ध्रुव तारे को सीधे (दाएं) कान के पीछे लेना। ३. वृश्चिक के मुख के डूबने के स्थान की ओर मुँह करना, जब सूरज मिथुन राशि (बुर्ज-ए-जौज़ा) में हो तो ज़ोहर के आखिरी वक़्त में उसकी दिशा को ध्यान में रखना। ४. दो तारों 'नस्र ताइर' और 'नस्र वाक़े' के डूबने के स्थानों के बीच की दूरी में दो-तिहाई दाएं और एक-तिहाई बाएं रखना। और फ़रमाया कि ये सब कथन आपस में करीब हैं। इन सभी आदेशों का आधार यही है कि दिशा के निर्धारण में बहुत विस्तार है। बेचारा दार्शनिक, औज़ारों का पिटारा और ख़यालों का पुलिंदा खोलकर बैठे तो हरगिज़...

فتاوی رضویہ جلد ششم ان کی ہیئت دانی اس اعتراض ہی سے پیدا ہے کہ قطب شمالی شانہ راست سے جانب پشت مائل ہونے کو دلیل انحراف بتایا اور دیوار توڑ کر ٹھیک محاذات قطب میں بنانا چاہتے ہیں، علمِ ہیئت میں ادراکِ سمتِ قبلہ کے لئے دو طریقے ہیں: ایک تقریبی کہ عامہ کتب متداولہ میں مذکور ، دوسرا تحقیقی کہ زیجات میں مسطور۔ یہاں سے واضح کہ یہ حضرات اُن دونوں سے مہجور ، اگر وہ طریقہ تقریبی جانتے اُن پر معترض نہ ہوتے کہ اُس کی رو سے سمتِ قبلہ علی گڑھ نکالیں تو ضرور قطب شمالی شانہ راست سے جانبِ پشت ہی پھرارہے گا کہ اس طریقہ پر علی گڑھ کا خطِ قبلہ نقطہ مغرب سے ساڑھے دس درجے جانب جنوب جھکا ہوا ہے۔ ظاہر ہے کہ نقطہ مغرب کی طرف منہ کرتے تو قطب محاذات شانہ پر رہتا اب کہ مغرب سے دس درجے جنوب کو پھرے، قطب ضرور جانب پشت میلان کرے گا، اور اگر طریقہ تحقیقی سے آگاہ ہوتے ہرگز دیوارِ جدید محاذی قطب بنانی نہ چاہتے کہ طریق تحقیقی میں بھی خطِ قبلہ علی گڑھ نقطہ مغرب سے جنوب ہی کو مائل ہے اگرچہ نہ اتنا کہ ہم دونوں طریقِ تقریب و تحقیق ان شاء اللہ آخر کلام میں ذکر کریں گے۔

ثامناً: محاذاتِ قطب چاہنا بھی ان صاحبوں کے خیال میں علمائے اسلام رحمہم اللہ تعالیٰ کا صدقہ ہے جن کا منشا اگر ان کے خیال میں ہوتا، مسجد کا ڈھانا فرض نہ کرتے، زمانہ اقدس صحابہ کرام بلکہ حضورِ نور سید الانام صلی اللہ اللہ تعالیٰ علیہ وآلہ وسلم سے غیر مکی کیلئے جہتِ کعبہ قبلہ قرار پائی ہے اصابت عین کی ہرگز تکلیف نہیں ولہذا صحابہ وتابعین رضی اللہ تعالیٰ عنہم نے بلادِ متقارب بلکہ ملک بھر کیلئے ایک ہی قبلہ قرار دیا، ملک عراق کے واسطے باتباع ارشادِ رسول اللہ صلی اللہ اللہ تعالیٰ علیہ وآلہ وسلم وفرمانِ فاروق اعظم رضی اللہ عنہ صحابہ نے بین المشرق والمغرب قبلہ مقرر فرمایا، ائمہ کرام نے بخارا، سمرقند، نسف، ترمذ، بلخ، مرو، سرخس وغیرہا کا

قبلہ مسقط راس العقرب بنایا، بیت المقدس، حلب، دمشق، رملہ، نابلس و غیر ہا تمام ملک شام کا قبلہ ستارہ قطب کو پسِ پشت لینا ٹھہرایا۔ کوفہ، بغداد، ہمدان، قزوین، طبرستان، جرجان و غیر ہا میں نہر شاش تک قطب کو داہنے کان کے پیچھے بلکہ عراق میں سیدھے (دائیں) شانے، ملک مصر میں بائیں کندھے، ملک یمن میں منہ کے سامنے بائیں کو ہٹا ہوا فرمایا۔ امام فقیہ ابو جعفر ہندوانی نے بغداد مقدس و بخار ا شریف کا قبلہ ایک بتایا۔ علماء نے خراسان و سمرقند و غیر ہا بلادِ مشرقیہ کے لئے جن میں ہندوستان بھی داخل بین المغربین قبلہ ٹھہرایا۔ امام اجل فقیہ النفس قاضی خان رحمہ اللہ تعالیٰ نے مشائخِ کرام رحمہم اللہ تعالیٰ سے دوبارہ قبلہ چھ ۶ قول نقل فرمائے: ۱۔ بنات النعش صغری کو جس کی لغش کا سب سے روشن ستارہ قطب ہے دہنے کان پر لے کر قدرے بائیں کو پھرنا۔ ۲۔ ستارہ قطب کو سیدھے (دائیں) کان کے پیچھے لینا، ۳۔ مسقط راس العقرب کی طرف منہ کرنا آفتاب جب برج جوزا میں ہو آخر وقتِ ظہر میں اسکی سمت دیکھ کر ملحوظ رکھنا، ۴۔ مسقط دو نسر طائر و واقع کے درمیان بین المغربین کے فاصلے سے دو ثلث دہنے ایک بائیں کو رکھنا۔ اور فرمایا کہ یہ سب اقوال باہم قریب ہیں ان تمام احکام کا مبنی وہی ہے کہ اعتبار جہت میں بڑی وسعت ہے فلسفی بیچارا، آلات کا پٹارا، خیالات کا پشنار اکھول کر بیٹھے تو ہر گز

Fatawa Ridawiyya Volume 6 Neither can the Qibla of these cities be one, nor can one direction for the entire country be fixed. But he (the objector) does not know that this religion is not based on precision instruments. This is the religion of Muhammad, the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him and his progeny), which is generous and easy. Praise be to Allah, the Lord of the worlds. The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him and his progeny) said: "We are an unlettered nation; we neither write nor calculate." 1 (All praise is for Allah, the Sustainer of all the worlds. The Holy Prophet, peace and blessings of Allah be upon him and his progeny, said: We are an unlettered Ummah, we do not write nor do we keep accounts. - Translator) It is stated in Fatawa Khaniyah:

[Table Content] Arabic Text: The direction of the Kaaba is known through evidence, and the evidence in cities and villages are the prayer niches (mihrabs) established by the Sahaba (Companions) and the Tabi'un (Successors), may Allah be pleased with them. When they conquered Iraq, they set the Qibla for its people between East and West. Therefore, Abu Hanifa (may Allah be pleased with him) said that if one is in Iraq, he should keep the West on his right and the East on his left. Likewise, Muhammad (may Allah have mercy on him) said so, following the statement of Umar (may Allah be pleased with him): "When you keep the West on your right and the East on your left, what is between them is the Qibla for the people of Iraq." And when they conquered Khorasan, they set the Qibla for its residents between the summer sunset and the winter sunset. Thus, it is mandatory for us to follow them. It is narrated from Abu Yusuf (may Allah have mercy on him) that regarding the Qibla for the people of Rayy, he said: keep the Judayy (star) on your... Urdu Text: The direction of the Kaaba can be identified through evidence, and the evidence in cities and villages are those mihrabs (prayer niches) which the noble Sahaba and Tabi'un (may Allah be pleased with them all) established. When the Sahaba conquered the region of Iraq, they designated the direction of the Kaaba for the people there between the East and West. This is why Imam Abu Hanifa (may Allah be pleased with him) said that an Iraqi should keep the West on his right side and the East on his left side. Similarly, Imam Muhammad (may Allah have mercy on him) said this in following the statement of Hazrat Umar (may Allah be pleased with him), which says that when you keep the West on your right and the East on your left, then the area between them is the Qibla for the people of Iraq. And when the Sahaba conquered Khorasan, they designated the area between the summer sunset and the winter sunset for the residents there. Thus, it is mandatory for us to follow them. It is narrated from Imam Abu Yusuf (may

Allah have mercy on him) that while determining the Qibla for the people of Rayy, he...

[Note] Arabic/Urdu Note: Note: 'Judayy' (with a damma on Jeem, fatha on Dal, and shadda on Ya) i.e., Judayy al-Farqadayn, is the name of the seventh bright star at the end of Ursa Minor. 12 - Allama Hamid Raza Khan (may Allah have mercy on him). (T)

[Bottom Row] Arabic: ...right. The scholars (may Allah have mercy on them) differed regarding... Urdu: ...said: keep the Judayy (star) on your left shoulder. Besides them, the scholars (may Allah have mercy on them) differed regarding...

1 Sahih Muslim, Chapter on the Obligation of Fasting Ramadan upon Sighting the Moon, etc., published by Qadimi Kutub Khana Karachi, 1/347 Page 72 of 736

फ़तावा रिज़विया जिल्द 6 न इन शहरों का क़िबला एक हो सकता है और न ही पूरे देश के लिए एक ही दिशा तय की जा सकती है। लेकिन वह (आक्षेपकर्ता) यह नहीं जानता कि यह धर्म सूक्ष्म उपकरणों पर आधारित नहीं है। यह मुहम्मद, अल्लाह के रसूल (उन पर और उनके वंशजों पर अल्लाह की शांति और आशीर्वाद हो) का धर्म है, जो उदार और सरल है। तमाम प्रशंसा अल्लाह के लिए है, जो सारे संसार का पालनहार है। पैगंबर (उन पर और उनके वंशजों पर अल्लाह की शांति और आशीर्वाद हो) ने फरमाया: "हम एक निरक्षर कौम हैं; न हम लिखते हैं और न ही हिसाब रखते हैं।" 1 (तमाम खूबियाँ अल्लाह के लिए हैं जो तमाम जहानों का पालने वाला है, नबी अकरम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फरमाया: हम उम्मी उम्मत हैं न लिखते हैं न हिसाब रखते हैं। - अनुवादक) फ़तावा खानिया में है:

[तालिका सामग्री] अरबी पाठ: काबा की दिशा दलील (साक्ष्य) के माध्यम से जानी जाती है, और शहरों और गाँवों में दलील वे मिहराब (प्रार्थना आला) हैं जिन्हें सहाबा और ताबेईन (अल्लाह उन सभी से प्रसन्न हो) ने स्थापित किया था। जब उन्होंने इराक फतह किया, तो उन्होंने वहां के लोगों के लिए पूर्व और पश्चिम के बीच क़िबला निर्धारित किया। इसलिए अबू हनीफ़ा (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) ने कहा कि यदि कोई इराक में हो, तो पश्चिम को अपने दाईं ओर और पूर्व को अपने बाईं ओर रखे। इसी तरह मुहम्मद (अल्लाह उन पर दया करे) ने कहा, उन्होंने यह हज़रत उमर (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) के इस कथन के अनुसरण में कहा: "जब तुम पश्चिम को अपने दाईं ओर और पूर्व को अपने बाईं ओर कर लो, तो उनके बीच का हिस्सा इराक के लोगों के लिए क़िबला है।" और जब उन्होंने खुरासान फतह किया, तो वहां के निवासियों के लिए गर्मी के सूर्यास्त और सर्दी के सूर्यास्त के बीच की दिशा को क़िबला करार दिया। अतः हमारे लिए उनका अनुसरण अनिवार्य है। अबू यूसुफ (अल्लाह उन पर दया करे) से वर्णित है कि उन्होंने रय के लोगों के क़िबला के बारे में कहा: जुदयी (सितारे) को अपने... उर्दू पाठ: काबा की दिशा दलील के माध्यम से पहचानी जा सकती है और शहरों और देहातों में दलील वे मिहराब हैं जो सहाबा किराम और ताबेईन (रज़ियल्लाहु अन्हुम अजमईन) ने कायम किए। सहाबा ने जब इराक का इलाका फतह किया तो उन्होंने वहां के लोगों के लिए पूर्व और पश्चिम के बीच काबा की दिशा मुक़र्रर की, इसलिए इमाम अबू हनीफ़ा (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने फरमाया कि इराकी पश्चिम को अपनी दाईं तरफ और पूर्व को अपनी बाईं तरफ कर ले। इसी तरह इमाम मुहम्मद (रहमहुल्लाह) ने फरमाया, यह उन्होंने हज़रत उमर (रज़ियल्लाहु अन्हु) के इस कौल (कथन) की पैरवी में कहा है जिसमें है कि जब तुम पश्चिम को अपनी दाईं और पूर्व को अपनी बाईं तरफ कर लो

तो उनके दरमियान अहले इराक का क़िबला है। और जब सहाबा ने खुरासान फतह किया तो वहां के रहने वालों के लिए मौसम-ए-गर्मी के मग्रिब (सूर्यास्त) और मौसम-ए-सर्मी के मग्रिब के दरमियान को करार दिया। पस हम पर उनकी पैरवी लाजिम है। इमाम अबू यूसुफ (रहमतुल्लाहि अलैहि) से यह रिवायत है कि उन्होंने अहले रय के लिए क़िबला का तअय्युन करते हुए...

[नोट] अरबी/उर्दू नोट: नोट: 'जुदयी' (जीम पर पेश, दाल पर ज़बर और या मुशद्दद के साथ), यानी जुदयी अल-फ़रक़दैन, उस सातवें चमकते सितारे का नाम है जो उर्सा माइनर (सप्तर्षि) के अंत में है। 12 - अल्लामा हामिद रज़ा खां (रहमतुल्लाहि अलैहि)। (त)

[नीचे की पंक्ति] अरबी: ...दाईं ओर। उलेमा (अल्लाह उन पर दया करे) ने इस बारे में मतभेद किया है... उर्दू: ...फरमाया: जुदयी (सितारे) को अपने बाएं कंधे पर करो। इनके अलावा मशाइख (अल्लाह उन पर दया करे) ने इस बारे में मतभेद किया है...

1 सहीह मुस्लिम, रमज़ान के रोज़े की अनिवार्यता का अध्याय चाँद देखने पर, आदि, कदीमी कुतुब खाना कराची द्वारा प्रकाशित, 1/347 पृष्ठ 736 का 72

فتاوی رضویہ جلد ششم نہ ان شہروں کا قبلہ ایک پاسکتا ہے نہ ملک بھر کی ایک سمت ٹھہر اسکتا ہے مگر وہ نہیں جانتا کہ یہ دین تدقیقی آلات پر مبنی نہیں یہ محمد رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وآلہ وسلم کا دین سمح سہل ہے۔ الحمد للہ رب العلمین قال صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم اِنَّا اُمَّۃٌ اُمِیَّۃٌ لا نکتِب ولا نحسِب ۱۔ (تمام خوبیاں اللہ کیلئے جو تمام جہانوں کا پالنے والا ہے، نبی اکرم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وآلہ وسلم نے فرمایا: ہم اُمّی اُمّت ہیں نہ لکھتے ہیں نہ حساب رکھتے ہیں۔ ت) فتاوی خانیہ میں ہے :

جهة الكعبة تعرف بالدليل والدليل فى الامصار والقرى المحاريب التى نصبتها الصحابة والتابعون رضى الله عنهم فحين فتحوا العراق جعلوا قبلة اهلها بين المشرق والمغرب لذلك قال ابو حنيفة رضى الله عنه ان كان بالعراق جعل المغرب عن يمينه والمشرق عن يساره وهكذا قال محمد رحمه الله تعالى وانما قال ذلك لقول عمر رضى الله تعالى عنه اذا جعلت المغرب عن يمينك والمشرق عن يسارك فما بينهما قبلة لاهل العراق وحين فتح خراسان جعلوا قبلة اهلها مابين مغرب الصيف ومغرب الشتاء فعلينا اتباعهم وعن ابي يوسف رحمه الله تعالى انه قال في قبلة اهل الرى اجعل الجُدَیَّ عه على منكبک

جہت کعبہ دلیل کے ذریعہ پہچانی جاسکتی ہے اور دلیل شہروں اور دیہاتوں میں وہ محراب ہیں جو صحابہ کرام و تابعین رضی اللہ عنہم اجمعین نے قائم کئے، صحابہ نے جب عراق کا علاقہ فتح کیا تو انہوں نے وہاں کے لوگوں کے لئے مشرق و مغرب کے درمیان جہت کعبہ مقرر کی اس لئے امام ابو حنیفہ رضی اللہ عنہ نے فرمایا عراقی مغرب کو اپنی دائیں طرف اور مشرق کو اپنی بائیں طرف کر لے۔ اسی طرح امام محمد رحمہ اللہ نے فرمایا، یہ انہوں نے حضرت عمر رضی اللہ عنہ کے اس قول کی اتباع میں کہا ہے جس میں ہے کہ جب تم مغرب کو اپنی دائیں اور مشرق کو اپنی بائیں طرف کرلے تو ان کے درمیان اہل عراق کا قبلہ ہے۔ اور جب صحابہ نے خراسان فتح کیا تو

وہاں کے رہنے والوں کے لئے موسم گرما کے مغرب اور موسم سرما کے مغرب کے درمیان کو قرار دیا۔ پس ہم پر ان کی اتباع لازم ہے۔ امام ابو یوسف رحمۃ اللہ علیہ سے یہ مروی ہے کہ انہوں نے اہل رے کے لئے قبلہ کا تعین کرتے ہوئے

عہ بضم الجیم وفتح الدال وتشدید الیاء ای جُدَیّ الفرقدیہ اسم النجم الثاقب السابع فی آخرالنعش الصغری ۱۲ العلامۃ حامد رضا خاں رحمۃ اللہ علیہ۔ جیم پر پیش، دال پر زبر، یا مشدد کے ساتھ جُدَیّ الفرقدیہ اس ساتویں ثاقب ستارے کا نام ہے جو نعش صغریٰ کے آخر میں ہے۔ ۱۲ علامہ حامد رضا رحمۃ اللہ علیہ۔ (ت)

الایمن واختلف المشائخ رحمھم اللہ تعالی فیما فرمایا: جُدی (ستارہ) کا اپنے بائیں کاندھے پر کرو۔ ان کے علاوہ

۱ صحیح مسلم باب وجوب صوم رمضان الرؤیۃ الہلال الخ مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/۳٤۷

Fatawa Ridawiyya, Volume 6.

Regarding other cities, there is a difference of opinion among the noble scholars (may Allah have mercy on them). Some say that if you position the stars of 'Banat Na’sh al-Sughra' (Ursa Minor) over your right ear and turn slightly towards your left, that is the Qibla. Others say that when you position the 'Jady' (Pole Star) behind your left ear, that is your Qibla. It is narrated from Abdullah ibn Mubarak, Abu Muti’, Abu Mu’adh, Salm bin Salim, and Ali ibn Yunus (may Allah have mercy on them) that they said: 'Our Qibla is at the constellation of Scorpio (al-Aqrab).' Some say that when the sun is in the zodiac sign of Gemini (al-Jawza), if you face the sun at the end of the time for Dhuhr prayer, that is the Qibla.

And Faqih Abu Ja'far (may Allah have mercy on him) said: 'When you stand facing the west, the star al-Nasr al-Waqi’ (Vega) will be aligned with your right shoulder and al-Nasr al-Ta'ir (Altair) will be aligned with your right eye; the Qibla is between the two.' He said that the Qibla of Bukhara is the same as ours. Imam Qadi Sadr al-Islam said that the Qibla is between the two stars. Sheikh al-Islam Abu Mansur al-Maturidi (may Allah have mercy on him) said: 'Look at the setting sun on the longest days of the year, then on the shortest days of the year; then leave two-thirds from your right side and one-third from your left side, and that direction is the Qibla.' All these statements are close to one another. (Summarized from 'T').

1. Fatawa Qadhi Khan, Kitab al-Salah, printed by Naval Kishore, Lucknow, 1/33.

फ़तावा रिज़विया, खंड 6.

अन्य शहरों के बारे में प्रतिष्ठित विद्वानों (अल्लाह उन पर दया करे) के बीच मतभेद है। कुछ का कहना है कि जब आप 'बनात न'श अल-सुग़रा' (लघु सप्तर्षि) को अपने दाहिने कान पर रखें और थोड़ा सा अपनी बाईं ओर मुड़ें, तो वह क़िबला है। दूसरों का कहना है कि जब आप 'जदी' (ध्रुव तारा) को अपने बाएं कान के पीछे कर लें, तो वह आपका क़िबला है। हज़रत अब्दुल्ला इब्न मुबारक, अबू मुती, अबू मुअज़, सल्लम बिन सालिम और अली इब्न यूनुस (अल्लाह उन पर दया करे) से वर्णित है कि उन्होंने कहा: हमारा क़िबला 'अक़रब' (वृश्चिक तारा) है। और कुछ का कहना है कि जब सूरज मिथुन राशि (जौज़ा) में हो, तो ज़ोहर के अंतिम समय में जब आप सूरज की तरफ अपना चेहरा फेर लें, तो वही आपका क़िबला है।

फ़क़ीह अबू जाफ़र (अल्लाह उन पर दया करे) ने फ़रमाया: 'जब तुम पश्चिम की ओर मुँह करो, तो नस्र वाक़े(वेगा तारा) तुम्हारे दाहिने कंधे के बराबर होगा और नस्र ताइर (अल्टेयर तारा) तुम्हारे चेहरे के सामने दाहिनी आँख के पास होगा; जो उनके बीच है वही क़िबला है।' उन्होंने फ़रमाया कि बुखारा का क़िबला हमारे ही क़िबला जैसा है। इमाम काज़ी सद्रुल इस्लाम का कथन है कि क़िबला दोनों नस्र तारों के बीच है। शैखुल इस्लाम अबू मंसूर मातुरीदी (अल्लाह उन पर दया करे) ने फ़रमाया कि साल के सबसे बड़े दिनों में सूरज के ढलने की दिशा को देखो, फिर साल के सबसे छोटे दिनों में देखो; फिर अपनी दाईं ओर से दो-तिहाई और बाईं ओर से एक-तिहाई छोड़ दो, तो वही क़िबला की दिशा है। ये सभी कथन एक-दूसरे के करीब हैं। (संक्षेप में 'त')

1. फ़तावा क़ाज़ी ख़ान, किताबुस सलात, नवल किशोर प्रेस, लखनऊ, 1/33.

पृष्ठ 736 का 73

دیگر شہروں کے بارے میں مشائخ کرام رحمہم اللہ تعالٰی کا اختلاف ہے۔ بعض کا قول یہ ہے کہ جب بنات نعش صغرٰی کو اپنے دائیں کان پر کرتے ہوئے تھوڑا سا اپنی بائیں طرف پھر جاؤ یہی تمہارا قبلہ ہے۔ اور بعض کا قول یہ ہے کہ جدی (ستارہ) کو جب اپنے بائیں کان کے پیچھے کرلے تو یہ تیرا قبلہ ہے اور حضرت عبداللہ ابن مبارک، ابو مطیع، ابو معاذ، سلم بن سالم اور علی بن یونس رحمہم اللہ عنہم فرماتے ہیں کہ ہمارا قبلہ عقرب (ستارہ) ہے۔ اور بعض کا کہنا یہ ہے کہ سورج برج جوزا میں ہو تو ظہر کے آخری وقت میں جب تو سورج کی طرف اپنے چہرے کو پھیر لے تو یہی تمہارا قبلہ ہے۔

اور فقیہ ابو جعفر رحمہ اللہ تعالٰی نے فرمایا: جب تم چہرہ مغارب کے سامنے کی طرف کرو تو نسر واقع تمہارے دائیں کاندھے کے برابر اور نسر طائر چہرے میں تمہاری دائیں آنکھ کے مقابل ہوگا جوان کے درمیان ہو وہ قبلہ ہے۔ فرمایا اور بخارا کا قبلہ ہمارے ہی قبلہ پر ہے اور امام قاضی صدرالاسلام کا قول ہے کہ قبلہ دونوں نسروں کے درمیان ہے۔ شیخ الاسلام ابو منصور ماتریدی رحمہ اللہ تعالٰی علیہ نے فرمایا کہ تم سال کے بڑے دنوں میں سورج کے مغرب کی طرف دیکھو اس طرح سال کے چھوٹے دنوں میں دیکھو پھر اپنی دائیں جانب سے دو تہائی اور بائیں جانب سے ایک تہائی چھوڑ دو تو یہ سمت قبلہ ہے۔ یہ تمام اقوال ایک دوسرے کے قریب قریب ہیں اھ مختصراً (ت)

1. فتاوٰی قاضی خان کتاب الصلوٰۃ مطبوعہ نولکشور لکھنؤ ۱/ ۳۳

Fatawa Razvia - Volume 6

In Miraj al-Dirayah, Fath al-Qadir, and Hilyah, it is mentioned:

Therefore, scholars have designated the Qibla for one, two, or even multiple cities in a single direction. For instance, the Qibla for Bukhara, Samarkand, Nasaf, Termez, Balkh, Merv, and Sarakhs is fixed at the place of sunset (the setting point of Scorpio) when the sun is at the end of Libra and the beginning of Scorpio, as the established proofs for determining the Qibla require. They did not set a separate direction for each city because, within such distances, the alignment and facing towards the Kaaba remain consistent. (T)

In Mubtani, Hilyah, Bahr, and Radd al-Muhtar, etc., it is stated:

For the Jadi (Pole Star), if the one standing places it behind their right ear, then they are facing the direction of Qibla if they are in the regions of Kufa, Baghdad, Hamadan, Qazvin, Tabaristan, Gorgan, and their surroundings up to the Shash River (this is the Qibla for all these regions). One in Egypt should place the Jadi (Pole Star) over their left shoulder, one in Iraq over their right shoulder, one in Yemen towards their front on the side adjacent to the left, and one in Syria should place it behind them. (T)

In Fatawa Khairiyyah, it is mentioned:

Some scholars stated that the strongest evidence is the Pole Star. So, the people of Syria should place it behind them, as should the people of Ramla and Nablus.

---

1. Fath al-Qadir, Chapter: Conditions of Prayer, published by Nooria Razvia, Sukkur, 1/235
2. Al-Bahr al-Ra'iq, Chapter: Conditions of Prayer, published by H.M. Saeed Company, Karachi, 1/285

फ़तावा रज़विया - छठा खंड

मिराज अद-दिरयाह, फ़तह अल-क़दीर और हिल्या में है:

इसलिए विद्वानों ने एक शहर, दो शहर बल्कि कई शहरों के लिए क़िबला एक ही दिशा में निर्धारित किया है। उदाहरण के लिए, बुखारा, समरकंद, नसफ, तिरमिज़, बलख, मर्व और सरख़्स का क़िबला सूर्यास्त के स्थान (वृश्चिक राशि के अस्त होने का बिंदु) पर तय किया गया है, जब सूर्य तुला के अंत और वृश्चिक की शुरुआत में हो, जैसा कि क़िबला जानने के लिए स्थापित प्रमाणों की आवश्यकता है। उन्होंने प्रत्येक शहर के लिए अलग दिशा निर्धारित नहीं की क्योंकि इतनी दूरी पर काबा की ओर मुख और संरेखण समान रहता है। (त)

मुब्तनी, हिल्या, बह्र और रद अल-मुहतार आदि में है:

जदी (ध्रुव तारा) के लिए, यदि खड़ा होने वाला व्यक्ति उसे अपने दाहिने कान के पीछे रखे, तो वह क़िबला की दिशा के सामने है यदि वह कूफ़ा, बग़दाद, हमदान, क़ज़्विन, तबरिस्तान, जुर्जान और उनके आसपास के शश नदी तक के क्षेत्रों में रहने वाला हो (इन सभी क्षेत्रों का क़िबला यही है)। मिस्र में रहने वाला जदी (ध्रुव तारा) को अपने बाएं कंधे पर रखे, इराक़ वाला अपने दाहिने कंधे पर रखे, यमन वाला अपने सामने उस ओर रखे जो बाईं ओर से जुड़ा है और शाम (सीरिया) वाला उसे अपने पीछे रखे। (त)

फ़तावा खैरिया में है:

कुछ विद्वानों ने कहा कि सबसे मज़बूत प्रमाण ध्रुव तारा है। इसलिए शाम (सीरिया) के लोग उसे अपनी पीठ के पीछे रखें। रमला और नब्लस के लोग भी।

---

1. फ़तह अल-क़दीर, बाब: नमाज़ की शर्तें, प्रकाशित नूरिया रज़विया, सुक्कुर, 1/235
2. अल-बह्र अर-राईक़, बाब: नमाज़ की शर्तें, प्रकाशित एच.एम. सईद कंपनी, कराची, 1/285

पृष्ठ 74 / 736

فتاوٰی رضویہ - جلد ششم

معراج الدرایہ وفتح القدیر و حلیہ میں ہے:

اسی لئے علماء نے ایک شہر ، دو شہر بلکہ متعدد شہروں کا قبلہ ایک ہی سمت مقرر کیا ہے مثلاً بخارا ، سمر قند، نسف ، ترمذ ، بلخ ، مرو، سرخس کا قبلہ موضع غروب (مسقط راس العقرب) قرار دیا جبکہ شمس آخر میزان اور اول عقرب میں ہو جیسا کہ معرفت قبلہ کے لئے وضع کردہ دلائل اسی کا تقاضا کرتے ہیں اور ہر شہر کے لئے الگ الگ سمت مقرر نہ کی کیونکہ اس قدر اور اسی جیسی مسافت میں مقابلہ اور توجہ الی الکعبہ باقی رہتی ہے۔ (ت)

مبتنی اور حلیہ و بحر و ردالمحتار وغیرہا میں ہے:

جب کھڑا ہونے والا جدی (قطب ستارہ) کو اپنے دائیں کان کے پیچھے کرلے تو اب اس کے سامنے جہت قبلہ ہے اگر وہ کوفہ ، بغداد ، ہمدان ، قزوین ، طبرستان، جرجان اور اس کے قرب و جوار نہر شاش تک کے علاقے میں رہنے والا ہو (تمام علاقوں کا قبلہ یہی ہے) مصر میں رہنے والا جدی (ستارہ قطب) اپنے بائیں کاندھے پر کرلے، عراقی دائیں کاندھے پر کرلے، یمنی اپنے سامنے کی اس جانب کرے جو بائیں جانب سے متصل ہے اور شامی اپنے پیچھے کی طرف کرلے۔ (ت)

فتاوٰی خیریہ میں ہے:

بعض علماء نے فرمایا کہ سب سے قوی دلیل قطب (ستارہ) ہے تو اہل شام اسے پشت کی طرف کریں۔ رملہ، نابلسی

1 فتح القدیر باب شروط الصلوۃ مطبوعہ نوریہ رضویہ سکھر ۲۳۵/۱ 2 البحر الرائق باب شروط الصلوۃ مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۲۸۵/۱

Fatawa Razawiyya Volume 6

Arabic Text: And Jerusalem is part of Greater Syria, like Damascus and Aleppo, and it is permissible for everyone to rely on the North Star and place it behind them, and in this, there must be some form of deviation for the people of a region among them, but it is not harmful as we have established. — 1

Urdu Translation of the above Arabic: Jerusalem is a part of the country of Syria, just like Damascus and Aleppo, and some of their scholars have declared it permissible for all of them to rely on the Pole Star [Polaris] while keeping it behind them, even though in this case some deviation is necessary for those living on one side. However, this deviation is not harmful as we have already explained. (T)

Based on this ruling, the Pole Star is taken on the right shoulder in India, and from ancient times, common mosques have been built in this direction because the average West between the two Wests was the moderate West, and while facing it, the North Pole is exactly on the right shoulder. Its recognition is easy and a slight deviation (as per the measurement 'uh') is not harmful, hence the practice followed this.

These claimants of astronomy thought that perhaps this is the exact investigated Qibla of common Indian cities, specifically Aligarh, while it is mere ignorance. India is inhabited from 8 degrees North latitude to 35 degrees. Eastern longitude is from 66 degrees to 92 degrees. It is also India's good fortune that 66 is the numerical value of the name 'Allah' and 92 is the holy name 'Muhammad' (Jalla Jalaluhu wa Sallallahu Ta'ala Alayhi wa Aalihi wa Sallam). We have proven in our treatise 'Kashf al-Illah 'an Samt al-Qiblah' (1304 AH) with geometric proofs that from the beginning of South India, the island of Serendib etc. up to 23 degrees 34 minutes latitude, all the cities including Madras, Bombay circle, Hyderabad region etc., their Qibla is inclined from the West point towards the North; the Pole Star will be inclined from the right shoulder towards the front. And from the 29th degree of latitude to the end of Northern India, including Delhi, Bareilly, Moradabad, Meerut, Punjab, Balochistan, Shikarpur, Kalat, Peshawar, Kashmir etc., the Qibla of all is inclined towards the South, the Pole will lean from the straight shoulder towards the back. Reason-wise, this general rule applied from 32.5 degrees, but from 28 to 32, the longitude required for no deviation is not inhabited at those latitudes and longitudes in India. Between 23-24 to 28, in many cities, the Qibla of some is South-West, and some towards the

exact West point; Aligarh belongs to this second category whose Qibla is inclined towards the South. We have in this treatise [discussed] latitude etc. from...

Note: Here some text has been omitted — Allama Hamid Raza, may Allah have mercy on him (T)

1 Fatawa Khayriyyah, Kitab al-Salat, published by Dar al-Ma'rifah, Beirut 1/7

फ़तावा रज़विया छठा भाग

अरबी पाठ: और यरुशलम (बैतुल मुक़द्दस) पूरे शाम देश का हिस्सा है जैसे कि दमिश्क और हलब, और सभी के लिए ध्रुव तारे (क़ुत्ब) पर भरोसा करना और उसे अपने पीछे रखना जायज़ है, और इसमें उस क्षेत्र के लोगों के लिए कुछ हद तक विचलन (डेविएशन) होना लाज़िमी है, लेकिन यह हानिकारक नहीं है जैसा कि हमने स्पष्ट किया है। — 1

उपरोक्त अरबी का उर्दू अनुवाद: बैतुल मुक़द्दस शाम देश के हिस्से हैं जैसे दमिश्क और हलब और उनके कुछ विद्वानों ने उन सभी के लिए ध्रुव तारे पर भरोसा करना जायज़ माना है, जबकि वहाँ के निवासी इसे अपने पीछे रखें, हालांकि इस स्थिति में यहाँ से एक तरफ रहने वालों के लिए कुछ न कुछ विचलन ज़रूर होता है, लेकिन यह विचलन हानिकारक नहीं है जैसा कि हम इसे बयान कर चुके हैं। (त)

इसी हुक्म के आधार पर भारत में ध्रुव तारा दाएँ कंधे पर लिया गया है और प्राचीन काल से आम मस्जिदें इसी दिशा में बनी हैं क्योंकि दो पश्चिमों के बीच का औसत पश्चिम मध्यम पश्चिम था और उसकी ओर मुँह करने में ध्रुव तारा बिल्कुल दाएँ कंधे पर होता है। इसकी पहचान आसान है और इसमें थोड़ा विचलन हानिकारक नहीं है, इसलिए इसी पर अमल हुआ।

खगोल विज्ञान के इन दावेदारों ने समझा कि शायद आम भारतीय शहरों, विशेष रूप से अलीगढ़ का यही सटीक किबला है, जबकि यह सरासर अज्ञानता है। भारत उत्तर अक्षांश 8 डिग्री से 35 डिग्री तक आबाद है और पूर्वी देशांतर 66 डिग्री से 92 डिग्री तक। यह भी भारत का सौभाग्य है कि 66 अल्लाह के नाम का संख्यात्मक मान है और 92 हज़रत मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के पवित्र नाम का। हमने अपने शोध ग्रंथ 'कश्फ अल-इल्लह अन सम्त अल-किबला' (1304 हिजरी) में ज्यामितीय प्रमाणों से साबित किया है कि दक्षिण भारत की शुरुआत, सेरेंदिप द्वीप आदि से लेकर 23 डिग्री 34 मिनट अक्षांश तक जितने भी शहर हैं जिनमें मद्रास, बॉम्बे सर्कल, हैदराबाद क्षेत्र आदि शामिल हैं, उन सबका किबला पश्चिम बिंदु से उत्तर की ओर झुका हुआ है; ध्रुव तारा दाएँ कंधे से सामने की ओर झुका होगा। और 29वें डिग्री अक्षांश से उत्तर भारत के अंत तक जिसमें दिल्ली, बरेली, मुरादाबाद, मेरठ, पंजाब, बलूचिस्तान, शिकारपुर, कलात, पेशावर, कश्मीर आदि शामिल हैं, सबका किबला दक्षिण की ओर झुका हुआ है, ध्रुव तारा सीधे कंधे से पीछे की ओर झुकेगा। तर्क के अनुसार यह सामान्य नियम साढ़े 32 डिग्री से था लेकिन 28 के बाद 32 तक बिना विचलन के लिए जितने देशांतर

की आवश्यकता है, भारत में उस अक्षांश-देशांतर पर आबादी नहीं है। 23-24 से 28 तक जितने घनी आबादी वाले शहर हैं, उनमें से किसी का किबला दक्षिण-पश्चिम है, किसी का विशेष पश्चिम बिंदु की ओर; अलीगढ़ इसी दूसरी श्रेणी में आता है जिसका किबला दक्षिण की ओर झुका हुआ है। हमने इस ग्रंथ में अक्षांश आदि के बारे में...

नोट: यहाँ कुछ इबारत (पाठ) छूट गई है — अल्लामा हामिद रज़ा रहमतुल्लाह अलैह (त)

1 फ़तावा खैरिया, किताबुस सलात, दारुल मारिफा बेरुत से प्रकाशित, 1/7

पृष्ठ 75/736

عربی متن: و بیت المقدس من جملة الشام کدمشق وحلب و جوز للکل الاعتماد علی القطب وجعله خلفه ولا بد فی ذلك من نوع انحراف لاهل ناحیة منها لکنه لا یضر کما قررناه - 1

عربی کا اردو ترجمہ: بیت المقدس سب ملک شام کے حصے ہیں جیسا کہ دمشق اور حلب اور ان کے بعض حضرات نے ان تمام کے لئے قطب ستارے پر اعتماد کو جائز قرار دیا ہے جبکہ وہاں کے رہنے والا اسے اپنے پیچھے کرے حالانکہ اس صورت میں یہاں سے ایک جانب رہنے والوں کیلئے کچھ نہ کچھ انحراف ضرور لازم آتا ہے، لیکن یہ انحراف نقصان دہ نہیں جیسے کہ ہم اس کو بیان کر آئے۔ (ت)

اسی حکم کی بنا پر ہندوستان میں ستارہ قطب داہنے شانے پر لیا گیا ہے اور قدیم سے عام مساجد اسی سمت پر بنیں کہ بین المغربین کا اوسط مغرب اعتدال تھا اور اس کی طرف توجہ میں قطب سیدھے ہی شانے پر ہوتا ہے اس کی پہچان آسان اور اس میں انحراف بقدر عہ (قدرے انحراف) مضر نہیں و لہذا اسی پر تعامل ہوا۔ یہ مدعیان ہیئت سمجھے کہ عام بلاد ہندیہ شاید خاص علی گڑھ کا یہی قبلہ تحقیقی ہے حالانکہ وہ محض ناواقفی ہے۔ ہندوستان آٹھ درجے عرض شمال سے پینتیس ۳۵ درجے تک آباد ہے طول شرقی چھیاسٹھ ۶۶ درجے سے بانوے ۹۲ تک۔ یہ بھی ہندوستان کی خوش نصیبی ہے ۶۶ عدد میں اسم جلالت اللہ کے اور ۹۲ نام پاک محمد کے جل جلالہ و صلی اللہ تعالٰی علیہ وآلہ وسلم۔ ہم نے اپنے رسالے کشف العلة عن سمت القبلة (۱۳۰۴ھ) میں براہین ہندسیہ سے ثابت کیا ہے کہ شروع جنوبی ہند جزیرہ سر ندیپ و غیر ہا سے تئیس ۲۳ درجے چونتیس ۳۴ دقیقے عرض تک جتنے بلاد ہیں جن میں مدراس، حاطہ بمبئی، حیدر آباد کا علاقہ وغیرہا داخل ہیں، سب کا قبلہ نقطہ مغرب سے شمال کو جھکا ہوا ہے ستارہ قطب داہنے شانے سے سامنے کی

جانب مائل ہو گا اور انتیسویں ۲۹ درجہ عرض سے اخیر شمالی ہند تک جس میں دہلی، بریلی، مراد آباد، میرٹھ، پنجاب، بلوچستان، شکار پور، قلات، پشاور، کشمیر وغیرہا داخل ہیں سب کا قبلہ جنوب کو جھکا ہوا ہے، قطب سیدھے کندھے سے پشت کی طرف میلان کرے گا۔ دلیل کی رو سے یہ عام حکم ساڑھے بتیس درجے سے ہوتا تھا مگر ۲۸ کے بعد ۳۲ تک عدم انحراف کے لئے جتنا طول درکار ہے ہندوستان میں اس طول و عرض پر آبادی نہیں۔ ۲۳-۲۴ سے ۲۸ تک جتنے بلاد کثیرہ ہیں ان میں کسی کا قبلہ مغربی جنوبی، کسی خاص نقطہ مغرب کی طرف، علی گڑھ اسی قسم دوم میں ہے جس کا قبلہ جنوب کو مائل ہے۔ ہم نے اس رسالے میں عرض الح ل سے عہ ھھنا سقط العلامۃ حامد رضا رحمہ اللہ تعالی | یہاں کچھ عبارت ساقط ہوگئی ۱۲ علامہ حامد رضا رحمہ اللہ تعالی (ت)

1 فتاوٰی خیریہ کتاب الصلوۃ مطبوعہ دار المعرفتہ بیروت ۱/ ۷

Fatawa Rizvia - Volume 6

Width etc. Until now a table has been given with intervals of one minute each, showing that at such a latitude and such a longitude, the Qibla will be exactly towards the moderate west. By observing it, it can be clarified how many cities in India have their researched Qibla according to this famous ruling or generally practiced according to this single ruling, and it is not harmful as it is not outside the limits of Sharia. In short, if these ignorant people want the actual direction, then seeking alignment with the pole is futile, and if they are content with the general direction, then the direction is still achieved. In any case, the obligation to demolish the mosque is invalid, and the prohibitory dislike (karahat tahrimi) of praying in it is invalid. In short, to what extent should we count the ignorance of that meaningless fatwa? We shall clarify the actual Sharia ruling by the grace of Allah Almighty, that the said Eidgah is definitely within the Sharia limits. Its explanation depends on several benefits (ifadaat). So I say, and my success is only by Allah; in Him I trust and to Him I return. (t)

Benefit 1: What is the limit of the Qibla direction such that if one goes outside it, they are outside the direction? In this regard, several statements of scholars are found on various grounds:

First: As long as the easts and wests do not change, the direction will not change. This is in Fath al-Qadir, Bahr al-Ra'iq, al-Khayriyya, al-Tahtawi, Radd al-Muhtar, and many other books here and also in the issue of following a Shafi'i Imam:

| Arabic: The deviation that invalidates [prayer] is that which crosses | Urdu: The prayer-invalidating deviation is that which crosses from the | | from the easts to the wests. (1) And in al-Khayriyya, after what we | easts towards the wests. And in Fatawa al-Khayriyya, after the | | presented from it in the seventh objection, when we verified the | discussion about it which we have already mentioned in the seventh | | error, the veil was removed. It is regarding the difference of | objection: when we got the investigative proof of the error, the veil | | direction such that it crosses from the easts to the wests. (2) | was lifted, meaning no problem remained. It is that the direction of | | | Qibla becomes different when it crosses the easts and wests (meaning | | | easts and wests change). (t) |

And this is supported by the Hadith narrated by Tirmidhi, Ibn Majah, and Hakim from Abu Hurairah (may Allah be pleased with him). Tirmidhi said it is Hasan Sahih. Hakim

said it is Sahih according to the conditions of Bukhari and Muslim, that the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him and his family) said: "Between the East and the West is Qibla." (3) Between the East and West is the Qibla. Imam Malik in Muwatta, Abu Bakr ibn Abi Shaybah, and Abd al-Razzaq in Musannaf...

1. Al-Bahr al-Ra'iq, Chapter: Conditions of Prayer, Published by H.M. Saeed Company Karachi 1/285
2. Fatawa Khayriyya, Book of Prayer, Published by Dar al-Ma'rifah Beirut 1/9
3. Jami' al-Tirmidhi, Chapter: What was narrated about between the East and the West is Qibla, Published by Amin Company Delhi 1/46

फ़तावा रज़विया - जिल्द छठी

अर्ज़ अ़लख अब तक एक-एक दक़ीक़े के फासले से एक जडवल दी है कि इतने अ़र्ज़ पर जब इतना तूल हो तो क़िबला ठीक मग़रिब एतदाल की तरफ होगा इसके मुलाहज़ा से वाज़ेह हो सकता है कि हिन्दुस्तान में कितने शहरों का तहक़ीक़ी क़िबला इस हुक्म-ए-मशहूर के मुताबिक़ है या इनमा आम अमल-दरामद इसी हुक्म-ए-वाहिद पर है और कुछ मज़िर नहीं कि हुदूद-ए-शरअ़ से बाहर नहीं, बिलजुमला ये ना-वाक़िफ लोग अगर सिम्त-ए-हक़ीक़ी चाहते हैं तो मुहाज़ात-ए-क़ुत्ब चाहना बातिल और जेहत पर क़ानेअ़ हैं तो जेहत अब भी हासिल, बहरहाल मस्जिद शहीद करने की फर्ज़ियत बातिल, उसमें नमाज़ की तहरीमी कराहत बातिल। ग़रज़ उस बे-मानी फतवे की जहालत कहाँ तक गिनें हम असल हुक्म-ए-शरअ़ ब-तौफीक़ अल्लाह तआ़ला वाज़ेह करें कि ईदगाह मज़्कूर ज़रूर हुदूद-ए-शरईया के अंदर है इसका बयान चंद इफादों पर मौक़ूफ, फ़-अक़ूलु व-मा तौफीक़ी इल्ला बिल्लाहि अ़लैहि तवक्कल्तु व-इलैहि उनीब (मैं अल्लाह तआ़ला की तौफीक से कहता हूँ उसी पर भरोसा और उसी की तरफ लौटना है। त)

इफाद़ा-ए-अ़व्वली: जेहत-ए-क़िबला की हद क्या है कि जब उससे बाहर हो जेहत से बाहर हो, इस बारे में इबारत-ए-उलमा मुतअ़द्दद वुजूह पर पाई गईं:

अव्वल जब मशारिक़ मग़ारिब न बदलें जेहत न बदलेगी। फत्ह-उल-क़दीर व बह्र-उर-राइक़ व खैरिया व त़हतावी व रद-उल-मुहतार वग़ैरहा कुतुब-ए-कसीरा में यहाँ और नीज़ मसला-ए-इक्तिदा-बिश-शाफई में है:

| अरबी: 1 الانحراف المفسدان يجاوز المشارق الى المغارب | हिन्दी: नमाज़ को बातिल करने वाला इनहिराफ (झुकाव) वो है जो मशारिक़ | | وفي الخيرية بعد ما قدمنا عنه في الايراد السابع وعند تحققنا بالخطاء زال الغطاء | (पूर्वों) से मग़ारिब (पश्चिमों) की तरफ़ बढ़ जाए और फ़तावा खैरिया में इसकी | | وهو فى اختلاف الجهة بحيث يكون متجاوز المشارق الى المغارب 2 - | गुफ्तगू के बाद जो पहले 'ईराद-ए-साबे' में बयान कर चुके हैं। जब हमें ख़ता | | | का तहक़ीक़ी सुबूत मिल गया तो पर्दा उठ गया यानी कोई इशकाल न रहा, वो | | | ये है कि जेहत-ए-क़िबला मुख्तलिफ हो जाती है जब मशारिक़ व मग़ारिब से | | | मुतजाविज़ हों (यानी मशारिक़ मग़ारिब बदल जाएं। (त) |

और इसकी ताईद इस हदीस से की गई कि तिर्मिज़ी व इब्न माजा व हाकिम ने अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत की कि तिर्मिज़ी ने कहा हसन सहीह है, हाकिम ने कहा बर-शर्त-ए-बुखारी व मुस्लिम सहीह है कि रसूल अकरम सल्लल्लाहु तआ़ला अ़लैहि व आलिहि व सल्लम ने फरमाया: "मा बैनल मशरिक़ि वल मग़रिबि क़िबलतुन" 3 मशरिक़ व मग़रिब के दरम्यान क़िबला है। इमाम मालिक मुवत्ता और अबू बक्र इब्न अबी शैबा और अब्दुल रज़्ज़ाक़ मुसन्निफात...

1. अल-बह्र-उर-राइक़ बाब शरुत-उस-सलात, मतबुआ एच.एम. सईद कंपनी कराची 1/285
2. फ़तावा खैरिया किताब-उस-सलात, मतबुआ दार-उल-मआरिफ बेरुत 1/9
3. जामिअ़-उत-तिर्मिज़ी बाब मा जा'अ़ अन्ना बैन-अल-मशरिक़ि वल-मग़रिबि क़िबला, मतबुआ अमीन कंपनी दिल्ली 1/46

पृष्ठ 76/736

عرض الخ ابتک ایک ایک دقیقے کے فاصلے سے ایک جدول دی ہے کہ اتنے عرض پر جب اتنا طول ہو تو قبلہ ٹھیک مغرب اعتدال کی طرف ہوگا اس کے ملاحظہ سے واضح ہو سکتا ہے کہ ہندوستان میں کتنے شہروں کا تحقیقی قبلہ اس حکم مشہور کے مطابق ہے یا اینمہ عام عملدرآمد اسی حکم واحد پر ہے اور کچھ مضر نہیں کہ حدود شرع سے باہر نہیں، بالعملہ یہ ناواقف لوگ اگر سمتِ حقیقی چاہتے ہیں تو محاذاتِ قطب چاہنا باطل اور جہت پر قانع ہیں تو جہت اب بھی حاصل، بہر حال مسجد شہید کرنے کی فرضیت باطل، اُس میں نماز کی تحریمی کراہت باطل۔ غرض اُس بے معنی فتوے کی جہالت کہاں تک گننے ہم اصل حکم شرع بتوفیق اللہ تعالیٰ واضح کریں کہ عیدگاہ مذکور ضرور حدود شرعیہ کے اندر ہے اس کا بیان چند افادوں پر موقوف، فاقول وماتوفیقی الا باللہ علیہ توکلت والیہ انیب (میں اللہ تعالیٰ کی توفیق سے کہتا ہوں اسی پر بھروسہ اور اسی کی طرف لوٹنا ہے۔ ت)

افادہ اولیٰ: جہت قبلہ کی حد کیا ہے کہ جب اس سے باہر ہو جہت سے باہر ہو، اس بارے میں عبارات علماء متعدد وجوہ پر پائی گئیں:

اوّل جب مشارق مغارب نہ بدلیں جہت نہ بدلے گی۔ فتح القدیر و بحرالرائق و خیریہ و طحطاوی و ردالمحتار وغیرہا کتب کثیرہ میں یہاں اور نیز مسئلہ اقتداء بالشافعی میں ہے:

| الانحراف المفسدان یجاوز المشارق الی المغارب 1 | مفسدِ نماز وہ انحراف جو مشارق سے مغارب کی طرف متجاوز ہو اور فتاویٰ | | وفي الخیریة بعد ما قدمنا عنه في الایراد السابع وعند تحققنا بالخطاء زال الغطاء | خیریہ میں اس کی گفتگو کے بعد جو پہلے ایرادِ سابع میں بیان کر

چکے ہے۔ | | وھو فی اختلاف الجھۃ بحیث یکون متجاوز المشارق الی المغارب 2 - | جب ہمیں خطاء کا تحقیقی ثبوت مل گیا تو پردہ اٹھ گیا یعنی کوئی اشکال | | | نہ رہا، وہ یہ ہے کہ جہتِ قبلہ مختلف ہو جاتی ہے جب مشارق و مغارب | | | سے متجاوز ہوں (یعنی مشارق مغارب بدل جائیں)۔(ت) |

اور اسکی تائید اس حدیث سے کی گئی کہ ترمذی وابن ماجہ و حاکم نے ابوہریرہ رضی اللہ عنہ سے روایت کی کہ ترمذی نے کہا حسن صحیح ہے حاکم نے کہا بر شرط بخاری و مسلم صحیح ہے کہ رسول اکرم صلی اللہ تعالٰی علیہ وآلہ وسلم نے فرمایا: مابین المشرق والمغرب قبلۃ 3 مشرق و مغرب کے درمیان قبلہ ہے۔ امام مالک مؤطا اور ابوبکر ابن ابی شیبہ اور عبدالرزاق مصنفات

1 البحر الرائق باب شروط الصلوۃ مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱/ ۲۸۵ 2 فتاوٰی خیریہ کتاب الصلوٰۃ مطبوعہ دارالمعرفہ بیروت ۱/ ۹ 3 جامع الترمذی باب ماجاء ان بین المشرق والمغرب قبلہ مطبوعہ امین کمپنی دہلی ۱/ ۴۶

Fatawa-e-Razviya Volume 6

And Baihaqi in Sunan and Abu al-Abbas al-Asam in his Hadith compilation reported that the Leader of the Believers, Farooq-e-Azam (may Allah be pleased with him) said: "Between the East and the West is the Qibla." [1] (Translation: Between the East and West is the direction of prayer). In Jami' at-Tirmidhi, this saying is stated to be narrated from several noble companions like the Leader of the Believers, Maula Ali (may Allah ennoble his face), and Hazrat Abdullah bin Abbas and others (may Allah be pleased with them), and it is stated that Abdullah bin Umar (may Allah be pleased with them) says:

| When you place the West on your right and the East on your left, then what is between them is the Qibla when you face it. [2] | When you have the West on your right hand and the East on your left hand, the Qibla is within these two. At that time, you have faced the Qibla. |

I say (Aqool): From the aforementioned statements of the scholars, it apparently seems that as long as one doesn't turn their back instead of their face—such as if the Qibla is towards the West and one faces the East or vice-versa—the 'facing' (Istiqbal) is not lost. To the extent that if someone whose Qibla is in the West stands facing South or North, meaning the Great Kaaba falls exactly to their right or left side, then the direction still remains. But this is clearly invalid, for no one would call 'turning the side' as 'facing'. This would be "turn your side" (walli jambaka) instead of "turn your face" (fa-qul wajhaka), and that is unanimously void. Therefore, the saying in 'Zahiriyyah', "If he shifts to the right or left, it is permissible," [3] whose interpretation is indicated in 'Durr al-Mukhtar', is explained in 'Radd al-Muhtar' as:

| That is, the meaning is not that he puts the Kaaba to his right or left, because in that case, there is no doubt that he has completely left the direction. Rather, the meaning is moving from the exact point (Ain) of the Kaaba towards the right or left. [4] (Abridged) | That is, it does not mean that he places the Kaaba to his right or left, because in this case, he will undoubtedly step out of the direction of the Kaaba; rather, it means that he moves to the right or left from the exact center of the Kaaba. (Abridged) |

Although it cannot mean that the four cardinal points here are used to divide the city's horizon into two halves according to the four directions. If the Qibla is towards the South or North (like in Medina, where its Qibla is towards the Mizab-e-Rahmat), then it is Southern/Northern. And if it is towards the East or West (like in India, where

its Qibla is towards the door of the Kaaba and Maqam-e-Ibrahim, peace and blessings be upon him), then it is Eastern/Western.

---

1. Sunan al-Kubra, Book of Prayer, published by Dar Sader, Beirut, 9/2
2. Jami' at-Tirmidhi, Chapter on 'Between East and West is Qibla', published by Amin Company Delhi, 46/1
3. Radd al-Muhtar, Discussion on Facing the Qibla, published by Mustafa al-Babi Egypt, 315/1
4. Radd al-Muhtar, Discussion on Facing the Qibla, published by Mustafa al-Babi Egypt, 316/1

और बैहक़ी ने 'सुनन' में और अबू अल-अब्बास अल-असम ने अपने हदीस के हिस्से में रिवायत किया कि अमीरुल मोमिनीन फ़ारूक़-ए-आज़म (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने फ़रमाया: "पूर्व और पश्चिम के बीच क़िबला है।" [1] (अनुवाद: पूर्व और पश्चिम के बीच की दिशा नमाज़ की दिशा है)। जामि' अत-तिर्मिज़ी में यह कथन अमीरुल मोमिनीन मौला अली (कर्रमल्लाहु वज्हहु), हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास और अन्य सहाबा किराम (रज़ियल्लाहु अन्हुम) से वर्णित बताया गया है और कहा गया कि अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) फ़रमाते हैं:

| जब तुम पश्चिम को अपने दाएं हाथ पर और पूर्व को अपने बाएं हाथ पर रखोगे, तो उनके बीच जो है वह क़िबला है जब तुम उसका सामना करोगे। [2] | जब तू पश्चिम को दाहिने हाथ पर ले और पूर्व को बाएं हाथ पर, तो इन दोनों के अंदर क़िबला है। उस समय रूबरू-ए-क़िबला हो लिया। |

अक़ूल (मैं कहता हूँ): विद्वानों के उपर्युक्त बयानों से ज़ाहिर तौर पर ऐसा लगता है कि जब तक मुंह करने के बजाय पीठ न हो जाए—जैसे कि क़िबला पश्चिम की ओर हो और कोई पूर्व की ओर मुंह करे या इसके विपरीत—तब तक 'सामना करना' (इस्तिक्बाल) फ़ौत (समाप्त) नहीं होगा। यहाँ तक कि अगर पश्चिमी क़िबला वाला दक्षिण या उत्तर की ओर मुंह करके खड़ा हो जाए, यानी काबा मोअज़्ज़मा ठीक उसके दाहिने या बाएं पहलू पर पड़े, तो दिशा अभी भी बनी रही। लेकिन यह स्पष्ट रूप से गलत है, क्योंकि पहलू करने को कोई मुंह करना नहीं कहेगा। यह "अपना चेहरा मोड़ें" के बजाय "अपना पहलू मोड़ें" होगा, और वह सर्वसम्मति से अमान्य है। इसलिए 'ज़हीरिया' का यह कथन कि "यदि वह दाएं या बाएं हो गया तो जायज़ है," [3] की व्याख्या की ओर 'दुर्र-ए-मुख्तार' में इशारा किया गया है और 'रद्दुल मुहतार' में इसकी व्याख्या की गई है:

| यानी इसका मतलब यह नहीं है कि वह काबा को अपने दाएं या बाएं रखे, क्योंकि उस स्थिति में इसमें कोई संदेह नहीं है कि वह पूरी तरह से दिशा से बाहर हो गया है। बल्कि इसका अर्थ काबा के बिल्कुल सामने के बिंदु (ऐन) से दाईं या बाईं ओर हट जाना है। [4] (संक्षिप्त) | यानी इससे मुराद यह नहीं कि वह काबा को दाएं या बाएं करे क्योंकि इस सूरत में वह बिला-शक जहत-ए-काबा से निकल जाएगा बल्कि इससे मुराद यह है कि वह ऐन-ए-काबा से दाएं या बाएं तरफ मुंतक़िल हो जाए। (संक्षिप्त) |

हालाँकि इसका मतलब यह नहीं हो सकता कि यहाँ के चार बिन्दुओं को चार दिशाओं के आधार पर शहर के क्षितिज के दो आधे हिस्से किये जाएँ। यदि क़िबला वहां से दक्षिण या उत्तर की ओर है (जैसे मदीना तैयबा, जिसका क़िबला मीज़ाब-ए-रहमत की ओर है), तो वह दक्षिणी/उत्तरी होगा। और यदि वह पूर्व या पश्चिम की ओर है (जैसे भारत में, जहाँ इसका क़िबला काबा के दरवाज़े और मक़ाम-ए-इब्राहीम अलैहिस्सलाम की ओर है), तो वह पूर्वी/पश्चिमी होगा।

---

1. सुनन अल-कुबरा, किताबुस-सलात, मुद्रित दार सादिर बेरुत, 9/2
2. जामिअत-तिर्मिज़ी, बाब 'पूर्व और पश्चिम के बीच क़िबला है', मुद्रित अमीन कंपनी दिल्ली, 46/1
3. रद्दुल मुहतार, इस्तिक्बाल-ए-क़िबला पर चर्चा, मुद्रित मुस्तफा अल-बाबी मिस्र, 315/1
4. रद्दुल मुहतार, इस्तिक्बाल-ए-क़िबला पर चर्चा, मुद्रित मुस्तफा अल-बाबी मिस्र, 316/1

पृष्ठ 77/736

اور بیہقی سنن اور ابو العباس اصم اپنے جزءِ حدیثی میں راوی امیر المومنین فاروقِ اعظم رضی اللہ عنہ نے فرمایا : مابین المشرق والمغرب قبلۃ [1] (مشرق و مغرب کے درمیان قبلہ ہے۔ت) جامع ترمذی میں یہ قول متعدد صحابہ کرام مثل امیر المومنین مولٰی علی کرم اللہ وجہہ، و حضرت عبداللہ بن عباس وغیرہما رضی اللہ عنہما سے مروی ہونا بیان کیا اور کہا عبداللہ بن عمر رضی اللہ تعالٰی عنہما فرماتے ہیں۔

| اذا جعلت المغرب عن یمینك والمشرق عن یسارك فما بینھما اذا استقبلت القبلۃ [2] | جب تو مغرب کو داہنے ہاتھ پر لے اور مشرق کو بائیں ہاتھ پر، تو ان دونوں کے اندر قبلہ ہے۔ اس وقت رو بقبلہ ہو لیا۔ |

اقول: عبارتِ مذکورہ علماء سے ظاہر یہ معلوم ہوتا ہے کہ جب تک منہ کرنے کے عوض پیٹھ کرنا نہ ہو کہ قبلہ مغرب کو ہے یہ مشرق کو منہ کرے یا بالعکس، اُس وقت تک استقبال فوت نہ ہوگا، یہاں تک کہ اگر مغربی قبلہ والا جنوب یا شمال کو منہ کر کے کھڑا ہو یعنی کعبہ معظمہ کو ٹھیک دہنی یا بائیں کروٹ پڑے تو جہت ہنوز باقی رہی اور یہ ظاہر الفساد ہے پہلو کرنے کو کوئی منہ کرنا نہ کہے گا۔ یہ فَوَلِّ وَجْهَكَ (پس اپنا چہرہ اقدس پھیریے۔ ت) کے عوض وَلِّ جَنْبَكَ (اپنا پہلو مبارک پھیریے۔ ت) رہے گا اور وہ بالاجماع باطل ہے لہذا قولِ ظہیر یہ اذا تیا من اوتیا سر تجوز [3] (اگر دائیں یا بائیں ہو گیا تو جائز ہے۔ ت) کی تاویل کی طرف دُرِ مختار میں اشارہ فرمایا ردالمحتار میں اسکی شرح کی:

| ای لیس المراد منه ان یجعل الکعبة عن یمینہ او یسارہ اذلا شك حینئذ فی خروجہ عن الجهة بالکلیة بل المراد الانتقال عن عین الکعبة الی الیمین او الیسار [4] اه ملخصاً- | یعنی اس سے مراد یہ نہیں کہ وہ کعبہ کو دائیں یا بائیں کرے کیونکہ اس صورت میں وہ بلاشک جہتِ کعبہ سے نکل جائے گا بلکہ اس مراد یہ ہے کہ وہ عین کعبہ سے دائیں یا بائیں طرف منتقل ہو جائے اھ ملخصاً (ت) |

اگرچہ یہ مراد نہیں ہو سکتی کہ اپنے یہاں کے نقاطِ اربعہ جہاتِ اربعہ کے اعتبار سے افقِ بلد کے دو نصف کئے جائیں، قبلہ اگر وہاں سے جنوب یا شمال کو ہے (جیسے مدینہ طیبہ کہ اس کا قبلہ میزابِ رحمت ہے) تو جنوبی شمالی، اور اگر شرق یا غرب کو ہے (جیسے ہندوستان میں اس کا قبلہ بابِ کعبہ ومقام ابراہیم علیہ الصلوۃ والتسلیم ہے) تو شرقی غربی،

---

1 سنن الکبری کتاب الصلوۃ مطبوعہ دار صادر بیروت 2 9/2 جامع الترمذی باب ما جاء ان بین المشرق والمغرب قبلة مطبوعہ امین کمپنی دہلی 3 46/1 ردالمحتار مبحث فی استقبال القبلة مطبوعہ مصطفی البابی مصر 4 315/1 ردالمحتار مبحث فی استقبال القبلة مطبوعہ مصطفی البابی مصر 316/1

Fatawa Rizvia, Volume 6 Then, in whichever half the Kaaba is located, if the person praying faces any direction within that half, it will be considered facing the Qibla (Istiqbal). And if they face the other half, they will have deviated from the direction. This is even more clearly false than the previous point because, according to this, prayer would be invalid if facing the Qibla and valid if turning one's back to it. Suppose 'ح' (Haa) is the horizon circle of the city... [Diagram 1] ...in which 'ا' (Alif) is the west point, 'ء' (Ain) is the east point, so 'ب ا ح' (Ba-Alif-Haa) became the western arc. If the Kaaba is located in this same half, and the person praying faces point 'ط' (To), their focus is in the same half, but their back is strictly towards the Kaaba. And if they face 'ح' (Haa) to perform Istiqbal, the prayer would be invalid because the half has changed, even though they are strictly in facing position. Rather, the meaning is that a straight line should be drawn connecting the position of the person praying and the location of the Kaaba, and another line perpendicular to it should be extended to the horizon circle on both sides. [Diagram 2] From this perpendicular, the two halves of the horizon are formed; the Qibla is in that part in whose exact center the Kaaba is. Thus, in the assumed case, the directional image is this: line 'ی ک' (Ya-Kaaf) is the actual line of Qibla and 'ح ط' (Haa-To) is perpendicular to it. The Qibla is within the arc 'ح ک ط' (Haa-Kaaf-To). By 'ح ط' those impossibilities were removed, but the first objection remains that it appears all the arc inside the two points 'ح ط' is the direction. And there is no doubt that facing towards 'ح ط', let alone 'ال' (Alif-Laam), is certainly 'Tiyaman Tiyasar' (leaning right or left) and not 'Istiqbal' (facing directly). Therefore, scholars found this difficult and turned towards interpretation and following that it refers only to that part of the arc where some alignment or facing towards the Kaaba remains, even though approximately it means face whichever point you want. It is stated in 'Minhat al-Khaliq':

- (Arabic Quote): His saying in Fatawa: The deviation that invalidates [prayer] is to cross from the easts to the wests, as cited in Fath al-Qadir. This is problematic because its implication is that as long as the deviation does not reach this extent, it does not invalidate [prayer], etc.
- (Urdu Explanation): His statement in the Fatawa is that the deviation which invalidates prayer is that which crosses from the east to the west. It is similarly quoted in Fath al-Qadir, although this scenario is difficult because it implies that as long as the deviation does not reach this extent, the prayer will not be invalidated, etc. (T)

In 'Haliya' it is said: - (Arabic Quote): The Qibla for the people of the East is the West according to us. (sh) This is in Al-Dhakhira. (Until he said) Then... - (Urdu Translation): (m = text) The Qibla of the people of the East is West according to us. (sh = commentary) This is in Al-Dhakhira. (Continuing to say) Then...

- (Arabic Quote): It appears that this is only sound when the orientation is from...
- (Urdu Translation): It appears this will be correct in the situation when the focus is from the East towards...

1 Minhat al-Khaliq, marginalia of al-Bahr al-Ra'iq, Chapter on Conditions of Prayer, printed by H.M. Saeed Company, Karachi, 1/285. Page 78 of 736

फतावा रिज़विया, छठा खंड फिर जिस आधे हिस्से में काबा है, नमाज़ी उसमें किसी भी तरफ मुँह कर ले तो 'इस्तिक्बाल' (काबा की ओर मुँह करना) हो जाएगा और दूसरे आधे की तरफ मुँह किया तो वह दिशा से बाहर निकल जाएगा। यह पहले वाले से भी ज़्यादा स्पष्ट रूप से गलत है क्योंकि इसके अनुसार काबा की ओर मुँह करने पर नमाज़ अमान्य और काबा की तरफ पीठ करने पर सही ठहरती है। मान लीजिए 'ح' (हा) शहर का क्षितिज वृत्त है... [आरेख 1] ...जिसमें 'ا' (अलिफ) पश्चिम बिंदु है, 'ء' (ऐन) पूर्व बिंदु है, तो 'ح ا ب' (बा-अलिफ-हा) पश्चिमी चाप बन गया। यदि काबा इसी आधे हिस्से में स्थित है और नमाज़ी 'ط' (तो) बिंदु की ओर मुँह करता है, तो उसका ध्यान उसी आधे हिस्से की ओर है, लेकिन उसकी पीठ पूरी तरह से काबा की ओर है। और अगर वह 'ح' (हा) की ओर इस्तिक्बाल करे तो नमाज़ नहीं होगी क्योंकि आधा हिस्सा बदल गया, हालाँकि वह निश्चित रूप से इस्तिक्बाल में है। बल्कि अर्थ यह है कि नमाज़ी के स्थान और काबा के स्थान को जोड़ने वाली एक सीधी रेखा खींची जाए और दूसरी रेखा जो उस पर लंबवत (perpendicular) हो, उसे दोनों ओर क्षितिज वृत्त तक मिला दिया जाए। [आरेख 2] इस लंबवत रेखा से क्षितिज के जो दो आधे हिस्से हुए, उनमें क़िबला उस हिस्से में है जिसके ठीक बीच में काबा है। अतः कल्पित स्थिति में दिशा का चित्र यह है: रेखा 'ی ک' (या-काफ) वास्तविक क़िबला रेखा है और 'ح ط' (हा-तो) उस पर लंबवत है। चाप 'ح ک ط' (हा-काफ-तो) में क़िबला है। 'ح ط' से वे असंभव बातें तो हट गईं लेकिन पहली आपत्ति अब भी बनी हुई है कि स्पष्ट रूप से 'ح ط' बिंदुओं के अंदर की पूरी चाप ही दिशा है। और इसमें कोई संदेह नहीं कि 'ح ط' के किनारे 'ال' (अलिफ-लाम) की ओर मुँह करना भी निश्चित रूप से 'तयामुन तयामुर' (दाएं-बाएं झुकना) है न कि इस्तिक्बाल। इसलिए विद्वानों ने इसे कठिन माना और व्याख्या तथा अनुकरण की ओर रुख किया कि इससे तात्पर्य चाप का केवल वह हिस्सा है जिसकी ओर मुख करने में काबा की दिशा से कुछ न कुछ समानता या संरेखण शेष रहे, भले ही लगभग इसका अर्थ यह हो कि जिस बिंदु पर चाहो मुँह कर लो। 'मिन्हतुल खालिक' में है:

- (अरबी उद्धरण): फतावा में उनका कहना है: वह विचलन जो नमाज़ को अमान्य कर देता है, वह पूर्व से पश्चिम की ओर बढ़ जाना है, जैसा कि फथुल कदीर में उद्धृत किया गया है। यह समस्यापूर्ण है क्योंकि इसका अर्थ यह है कि जब तक विचलन इस मात्रा तक नहीं पहुँचता, नमाज़ अमान्य नहीं होगी, आदि।
- (उर्दू अनुवाद): फतावा में उनका कहना है कि नमाज़ को अमान्य करने वाला विचलन वह है जो पूर्व से पश्चिम की ओर बढ़ जाए, फथुल कदीर में इसी तरह उद्धृत है, हालाँकि यह स्थिति

कठिन है क्योंकि इसका तकाज़ा यह है कि विचलन जब तक इस मात्रा तक न पहुँचे, वह नमाज़ को अमान्य करने वाला न होगा, आदि। (त)

हलिया में फरमाया: - (अरबी उद्धरण): हमारे यहाँ पूर्व के लोगों का क़िबला पश्चिम है। (श) यह ज़खीरा में है। (आगे चलकर कहा) फिर... - (उर्दू अनुवाद): (म = पाठ) पूर्व के लोगों का क़िबला हमारे निकट पश्चिम है। (श = व्याख्या) यह ज़खीरा में है। (आगे चलकर कहा) फिर...

- (अरबी उद्धरण): प्रतीत होता है कि यह केवल तभी सही है जब अभिविन्यास पूर्व से...
- (उर्दू अनुवाद): स्पष्ट यह है कि यह इस स्थिति में सही होगा जब ध्यान पूर्व से... की ओर हो।

1 मिन्हतुल खालिक, हाशिया अल-बहरुल राइक, नमाज़ की शर्तों का अध्याय, एच.एम. सईद कंपनी कराची द्वारा मुद्रित, 1/285। पृष्ठ 78 का 736

فتاویٰ رضویہ، جلد ششم پھر جس نصف میں کعبہ ہے مصلیٰ اس میں کسی طرف منہ کرلے استقبال ہو جائے گا اور دوسرے نصف کی طرف منہ کیا تو جہت سے نکل جائے گا یہ پہلے سے بھی زیادہ ظاہر البطلان ہے کہ اس پر استقبال قبلہ میں نماز فاسد اور استدبار قبلہ میں صحیح ٹھہرتی ہے۔ فرض کرواب ح شہری کا دائرہ افق ہے [Diagram 1] جس میں ا نقطہ مغرب، ء نقطہ مشرق تو ب ا ح قوس غربی ہوئی رکعبہ معظمہ اسی نصف میں واقع تو مصلیٰ نقطہ ط کی طرف منہ کرے تو اسکی توجہ اسی نصف کی طرف واقع ہوئی مگر قطعاً اس کی پشت کعبہ کو ہے اور ح کی طرف استقبال کرے تو نماز نہ ہو کہ نصف بدل گیا حالانکہ وہ قطعاً استقبال میں ہے بلکہ معنی یہ ہیں کہ ایک خط مستقیم موضع مصلیٰ و محل کعبہ میں وصل کیا جائے اور دوسرا خط کہ اس پر عمود ہو جانبین میں دائرہ افق تک ملادیا جائے [Diagram 2] اس عمود سے جو افق کے دو نصف ہوئے ان میں قبلہ اُس حصہ میں ہے جس کے ٹھیک وسط میں کعبہ ہے پس صورت مفروضہ میں تصویر سمت یہ ہے خط ی ک خط قبلہ تحقیقی اور ح ط اُس پر عمود قوس ح ک ط میں قبلہ ہے ح ط سے وہ استحالی تو اُٹھ گئے مگر ایراد اول ہنوز باقی ہے کہ ظاہر یہ کہ نقطتین ح ط کے اندر اندر ساری قوس جہت ہے اور شک نہیں کہ ح ط در کنار ال کی طرف منہ کرنا بھی یقیناً تیامن تیاسر ہے نہ استقبال و لہذا علماء نے اسے مشکل جانا اور تاویل و تقلید کی طرف متوجہ ہوئے کہ اس سے مراد صرف وہ حصہ قوس ہے جس کی طرف توجہ میں ہوائے کعبہ سے کچھ بھی محاذات و مسامتت باقی ہے اگر چہ تقریبًا یہ کہ جس نقطے کو چاہو منہ کر لو۔ منحت الخالق میں ہے:

قوله وفي الفتاوى الانحراف المفسد ان يتجاوز المشارق الى المغارب، كذا نقله فى فتح القدير وهو مشكل فان مقتضاه ان الانحراف اذالم يوصله الى هذا القدر لايفسد الخ۔ اس کا قول فتاویٰ میں ہے کہ مفسد

نماز وہ انحراف ہے جو مشارق سے مغارب کی طرف متجاوز ہو، فتح القدیر میں اسی طرح منقول ہے حالانکہ یہ صورت مشکل ہے کیونکہ اس کا تقاضا یہ ہے کہ انحراف اس کو جب تک اس مقدار تک نہ پہنچائے وہ مفسد نماز نہ ہو گا الخ۔ (ت)

حلیہ میں فرمایا: قبلة اهل المشرق المغرب عندنا، ش هذا فی الذخیرة (الی ان قال) ثم م (متن) اہل مشرق کا قبلہ ہمارے نزدیک مغرب ہے ش (شرح) یہ ذخیرہ میں ہے (آگے چل کر کہا) پھر

الظاهر ان هذا انما یستقیم فیما اذا کان التوجه من ظاہر یہ ہے یہ اس صورت درست ہو گا جب توجہ مشرق سے جانب

1 منحة الخالق حاشیة البحر الرائق باب شروط الصلوة مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱/ ۲۸۵

Fatawa Rizwia, Volume 6

[Table Header Area] Arabic Column: From east to west and vice versa, aligned with the air space of the Kaaba, whether strictly or approximately as we mentioned, not in any manner whatsoever where the focus moves from one of the two directions towards the other. This is a warning for it, and it was as if they knew it, hence they did not state it clearly. Urdu Column: Westward or vice versa, the direction towards the air of the Kaaba remains either strictly or approximately, as we have mentioned. It doesn't mean it's correct in every case, i.e., when the focus shifts from one of the two directions towards the other. This is a reminder for him, and it's as if he knew this fact, which is why he didn't clarify it. (T)

Similarly, it has been interpreted in 'Radd al-Muhtar' as will come later, and this weak servant has some discussion on it which you will soon become aware of, God willing. (As it will soon come and the weak servant has a discourse in it through which, God willing, you will gain awareness. T)

Secondly, it is well-known in general books that one can turn as much as any part of the face (wajh) remains facing the Great Kaaba. In two flat surfaces, the facing is lost with a slight deviation. However, the facing of an arc is not lost without a significant deviation. And Allah the Almighty made the human face arched; as long as any part remains facing, the 'facing with the countenance' (istiqbal bil-wajh) is achieved and the command "So turn your face toward Al-Masjid Al-Haram" will be fulfilled.

I say: The reason for this is that on a flat surface, all perpendicular lines will have the same direction. When one deviates from being opposite, all of them deviate. Contrary to an arc, where the perpendicular line established at the point of contact on every tangent line of its points will have a different direction. Thus, when the facing of one part is lost, the facing of another occurs; the previous one remains no more and another's begins, until the arc ends.

It is mentioned in Mi'raj al-Dirayah, Fath al-Qadir, Zad al-Faqir, Hilyah, Ghunyah, Bahr al-Raiq, Fatawa Khayriyyah, Durr al-Mukhtar, Radd al-Muhtar, etc.

[Bottom Table Area] Arabic Column: And this is the phrasing of the last [book]. Furthermore, know that it is mentioned in Al-Mi'raj from his teacher that the 'direction of the Kaaba' is the side which, when a person turns towards it, his face aligns with the Kaaba or its air space, strictly or approximately. And the meaning... Urdu Column: The words of the last book are: Then know that in Mi'raj al-Dirayah it is

mentioned from his Sheikh that by 'direction of Kaaba' is meant that side such that when a person turns towards it, the person's face is towards the Kaaba or the air of the Kaaba, strictly or approximately...

1. Hilyat al-Mahalli Sharh Munyat al-Musalli. Page 79 of 736

फ़तावा रज़विया, जिल्द 6

[शीर्षक तालिका क्षेत्र] अरबी कॉलम: पूर्व से पश्चिम और इसके विपरीत, काबा की हवा की सीध में, चाहे वह वास्तव में हो या अनुमानित रूप से जैसा हमने उल्लेख किया है, न कि किसी भी तरह से जहाँ दो दिशाओं में से एक से दूसरी की ओर ध्यान हो। यह उसके लिए एक चेतावनी है, और ऐसा लगता है जैसे उन्हें इसका ज्ञान था, इसलिए उन्होंने इसे स्पष्ट नहीं किया। उर्दू कॉलम: पश्चिम या इसके विपरीत, काबा की हवा की दिशा वास्तव में या लगभग बनी रहती है, जैसा कि हमने उल्लेख किया है। इसका मतलब यह नहीं है कि यह हर मामले में सही होगा, यानी जब दोनों दिशाओं में से एक का ध्यान दूसरी की ओर मुड़ जाए। यह उसके लिए एक अनुस्मारक है, और ऐसा लगता है कि उसे इस तथ्य का ज्ञान था, इसलिए उसने इसे स्पष्ट नहीं किया। (त)

इसी तरह 'रद्द-उल-मुहतार' में इसकी व्याख्या की गई है जैसा कि आगे आएगा, और इस कमज़ोर बंदे की इसमें कुछ चर्चा है जिससे आप इंशाअल्लाह जल्द ही अवगत होंगे। (जैसा कि जल्द ही आएगा और कमज़ोर बंदे का इसमें एक बयान है जिससे इंशाअल्लाह आपको जानकारी मिलेगी। त)

दूसरा यह कि आम किताबों में यह बात बहुत मशहूर है कि कोई इतना मुड़ सकता है जिससे चेहरे (वजह) का कोई हिस्सा काबा-ए-मुअज़्ज़मा के सामने रहे। दो समतल चीज़ों में मुकाबला थोड़े से झुकाव से खत्म हो जाता है, लेकिन एक चाप (आर्क) का मुकाबला बिना बड़े झुकाव के खत्म नहीं होता। और अल्लाह तआला ने इंसान का चेहरा धनुषाकार बनाया है; जब तक कोई हिस्सा सामने रहेगा, 'चेहरे से सामने होना' (इस्तिक़बाल बिल-वजह) हासिल रहेगा और "तो अपना चेहरा मस्जिद-ए-हराम की तरफ फेर लो" का हुक्म पूरा हो जाएगा।

मैं कहता हूँ: इसका कारण यह है कि एक समतल सतह पर जितने भी लंबवत (perpendicular) रेखाएं होंगी, उन सबकी दिशा एक ही होगी। जब उनमें से एक मुकाबले से विचलित होगा, तो सब विचलित हो जाएंगे। इसके विपरीत एक चाप में, उसके प्रत्येक बिंदु की स्पर्शरेखा (tangent line) पर संपर्क बिंदु से जो लंब खड़ा होगा, उसकी दिशा अलग होगी। तो जब एक का मुकाबला खत्म होगा, दूसरे का शुरू हो जाएगा; पहले का नहीं रहा और दूसरे का हो गया, यहाँ तक कि चाप समाप्त हो जाए।

'मेराज-उद-दिराया', 'फ़तह-उल-क़दीर', 'ज़ाद-उल-फ़क़ीर', 'हिलिया', 'ग़ुनिया', 'बहर-उर-राइक़', 'फ़तावा खैरिया', 'दुर्रे मुख़्तार', 'रद्द-उल-मुहतार' आदि में है।

[नीचे की तालिका क्षेत्र] अरबी कॉलम: और यह अंतिम [पुस्तक] की शब्दावली है। इसके अलावा, जान लें कि अल-मेराज में उनके शिक्षक से उल्लेख किया गया है कि 'काबा की दिशा' वह पक्ष है, जिसकी ओर जब कोई व्यक्ति मुड़ता है, तो उसका चेहरा वास्तव में या अनुमानित रूप से काबा या उसके वायु क्षेत्र के साथ संरेखित होता है। और अर्थ... उर्दू कॉलम: अंतिम पुस्तक के शब्द ये हैं: फिर जान लो कि 'मेराज-उद-दिराया' में अपने शेख से उल्लेख किया गया है कि 'काबा की दिशा' से तात्पर्य वह पक्ष है कि जब कोई व्यक्ति उसकी ओर ध्यान करे, तो उस व्यक्ति का चेहरा वास्तव में या अनुमानित रूप से काबा या काबा की हवा की ओर हो...

1. हिलियत अल-महल्ली शरह मुनियत अल-मुसल्ली। पृष्ठ 79/736

فتاوی رضویہ جلد ششم

[اوپر کا جدول] عربی کالم: المشرق الی المغرب وبالعکس مسامتا لھواء الکعبۃ اما تحقیقا او تقریبًا علی ماذکر نا لا علی ای وجہ کان ذلك التوجہ من احدی الجھتین الی الاخری فتنبیہ لہ وکان للعلم بہ لم یفصحوا بہ ۔ اردو کالم: مغرب یا بالعکس ہوائے کعبہ کی سمت حقیقتاً یا تقریباً باقی رہے جیسے کہ ہم نے ذکر کیا یہ نہیں کہ ہر صورت میں درست ہو گا یعنی جب دونوں جہتوں میں سے ایک کی توجہ دوسری کی طرف ہو۔ یہ اس کے لئے تنبیہ ہے اور گویا اس بات کا علم تھا اس لئے انھوں نے وضاحت نہیں کی۔ (ت)

یوں ہی ردالمحتار میں اسے مووّل کیا کما سیأتی وللعبد الضعیف فیہ کلام ستعرفہ ان شاء اللہ تعالی (جیسے کہ عنقریب آئیگا اور عبد ضعیف کو اس میں کلام ہے جس سے ان شاء اللہ تعالیٰ آگاہی ہوگی۔ ت) دوم کہ عامہ کتب میں شہرت وافیہ رکھتا ہے کہ اتنا پھر سکتا ہے جس میں منہ یعنی وجہ کا کوئی حصہ مقابل کعبہ معظمہ رہے دو مسطح چیزوں میں مقابلا تھوڑے انحراف سے زائل ہو جاتا ہے مگر قوس کا مقابلہ بے انحراف کثیر زائل نہ ہوگا اور حق جل وعلا نے انسان کا چہرہ مقوس بنایا ہے جب تک کوئی حصہ رُخ مقابل رہے گا استقبال بالوجہ حاصل رہے گا اور فَوَلِّ وَجْھَكَ شَطْرَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ (پس اپنا چہرہ اقدس مسجد حرام کی طرف پھیر لو۔ت) کا امتثال ہو جائے گا۔ اقول: اس کی وجہ یہ ہے کہ سطح مستوی پر جتنے خط عمود ہوں گے سب کی سمت ایک ہی ہوگی جب ان میں ایک مقابلہ سے منحرف ہوا سب منحرف ہو گئے۔ بخلاف قوس کہ اس کے ہر نقطہ کے خط مماس پر نقطہ تماس سے جو عمود قائم ہو گا جدا جہت رکھے گا تو اس کا مقابلہ زائل ہوا دوسرے کا ہو گا اس کا نہ رہا اور کا ہو گا یہاں تک کہ قوس ختم ہو جائے۔ معراج الدرایہ وفتح القدیر وزاد الفقیر وحلیہ وغنیہ و بحر الرائق وفتاوی خیریہ و در مختار و ردالمحتار وغیرہا میں ہے۔

[نیچے کا جدول] عربی کالم: وهذا لفظ الاخیر ثم اعلم انه ذکر فی المعراج عن شیخه ان جهة الکعبة هی الجانب الذی اذا توجه الیه الانسان یکون مسامتا للکعبة او هو ائها تحقیقاً او تقریباً ومعنی اردو کالم: آخری کتاب کے الفاظ یہ ہیں: پھر جان لے کہ معراج الدرایہ میں اپنے شیخ سے ذکر کیا ہے کہ جہت کعبہ سے مراد وہ جانب ہے کہ انسان جب اس کی طرف توجہ کرے تو انسان کا چہرہ کعبہ یا ہوائے کعبہ کی جانب حقیقتاً یا تقریباً

1 حلیہ محلی شرح منیہ المصلی ، Page 79 of 736

Fatawa Razawiyya, Volume 6

Definition of Proximity: Proximity means that one is deviated from the Kaaba or its atmosphere in such a way that facing it is not completely lost, such that some part of the surface of the face remains aligned with it or its atmosphere. (Summarized) [1]

It is in Jami al-Rumuz: There is no harm in a deviation that does not completely end the facing, such that some part of the surface of the face remains towards the Kaaba. (T) [2]

It is in Durar: From this, it is known that if one deviates from the exact Kaaba with such a slight deviation that the facing is not completely lost, the prayer is permissible. This is also supported by what was said in Al-Zahiriyya: When a person turns slightly right or slightly left, it is permissible because the human face is curved like a bow. Upon turning slightly to the right or left, one of its sides remains facing the Qibla. (T) [3]

It is in Radd al-Muhtar: So, it is known from this that a slight deviation is not harmful. A slight deviation is that with which the face or some of its sides remain aligned with the exact Kaaba or its atmosphere, such that a line emerging from the face or some of its sides passes straight over the Kaaba or its atmosphere. It is not necessary that the emerging line be straight...

1. Radd al-Muhtar, Discussion on Facing the Qibla, Printed by Mujtabai Delhi, 1/287.
2. Jami al-Rumuz, Chapter on Conditions of Prayer, Printed by Gunbad Qamus Iran, 1/130.
3. Al-Durar al-Hukkam Sharh Ghurar al-Ahkam, Chapter on Conditions of Prayer, Printed by Matba' Ahmed Kamil, Beirut, 1/60.

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

तक़रीब (समीपता) की परिभाषा: तक़रीब का अर्थ यह है कि व्यक्ति काबा या काबा की हवा से इस तरह थोड़ा विचलित हो जिससे आमने-सामने होना पूरी तरह समाप्त न हो, इस प्रकार कि चेहरे की सतह का कुछ हिस्सा काबा या काबा की हवा की सीध में बना रहे। (संक्षिप्त) [1]

जामे अल-रुमज़ में है: ऐसे विचलन में कोई हर्ज नहीं है जिससे आमने-सामने होना पूरी तरह समाप्त न हो, इस प्रकार कि चेहरे की सतह का कुछ हिस्सा काबा की ओर बना रहे। (त) [2]

दुर्रर में है: इससे ज्ञात होता है कि यदि कोई असल काबा से इतने थोड़े विचलन के साथ मुड़ता है कि आमने-सामने होना पूरी तरह समाप्त न हो, तो नमाज़ जायज़ है। 'अज़-ज़हीरिया' में जो कहा गया है वह भी इसका समर्थन करता है: जब मनुष्य थोड़ा दाएँ या थोड़ा बाएँ मुड़ता है, तो यह जायज़ है क्योंकि मनुष्य का चेहरा धनुष की तरह वक्र (मुड़ा हुआ) है। थोड़ा दाएँ या बाएँ मुड़ने पर, उसका कोई एक पक्ष किबला की ओर बना रहता है। (त) [3]

रद्द अल-मुह्तार में है: अतः इससे ज्ञात हुआ कि थोड़ा सा विचलन हानिकारक नहीं है। थोड़ा विचलन वह है जिसके साथ चेहरा या चेहरे का कोई एक पक्ष असल काबा या उसकी हवा के सामने बना रहे, इस प्रकार कि चेहरे या उसके किसी एक पक्ष से निकलने वाली रेखा काबा या उसकी हवा की ओर सीधी होकर गुज़रे। यह आवश्यक नहीं है कि निकलने वाली रेखा सीधी हो...

1. रद्द अल-मुह्तार, किबला की ओर मुख करने पर चर्चा, मुजतबाई दिल्ली द्वारा मुद्रित, 1/287।
2. जामे अल-रुमज़, नमाज़ की शर्तों का अध्याय, गुंबद क़ामूस ईरान द्वारा मुद्रित, 1/130।
3. अल-दुर्रर अल-हुक्काम शरह ग़ुरार अल-अहकाम, नमाज़ की शर्तों का अध्याय, मतबा अहमद कामिल, बेरूत द्वारा मुद्रित, 1/60।

पृष्ठ ८० / ७३६

التقریب ان یکون منحرفاً عنھا او عن ھوائھا بما لا تزول بہ المقابلۃ بالکلیۃ بان یبقی شئ من سطح الوجہ مسامتا لھا ولھوائھا ملخصاً -1 | تقریباً باقی رہے تقریب کا معنی یہ ہے کہ کعبہ یا ہوائے کعبہ سے تھوڑا منحرف ہو جس سے بالکلیہ مقابلہ زائل نہ ہو بایں طور کہ چہرہ کی سطح کعبہ یا ہوائے کعبہ کی سمت باقی رہے۔ (ت)

جامع الرموز میں ہے: لا بأس بالانحراف انحرافا لا تزول بہ المقابلۃ بالکلیۃ بان یبقی شئ من سطح الوجہ مسامتا للکعبۃ2۔ | ایسے انحراف میں کوئی حرج نہیں جس سے تقابل بالکلیہ ختم نہ ہو بایں طور کہ سطح چہرہ کا کچھ حصہ کعبہ کی جانب باقی رہے۔ (ت)

درر میں ہے: فیعلم منہ انہ لو انحرف عن العین انحرافا لا یزول بہ المقابلۃ بالکلیۃ جاز یؤیدہ ما قال فی الظھیریۃ اذا تیامن او تیاسر یجوز لان وجہ الانسان مقوس فعند التیامن او التیاسر یکون احد جوانبہ الی القبلۃ3۔ | تو اس سے معلوم ہوتا ہے کہ اگر عین کعبہ سے اتنا تھوڑا منحرف ہو جس سے بالکلیہ مقابلہ ختم نہ ہوتا ہو تو نماز جائز ہو، ظہیریہ کا یہ قول بھی اس کی تائید کرتا ہے: جب انسان تیامن تیاسر ہو گیا تو نماز جائز ہے کیونکہ انسان کا چہرہ کمان کی طرح گول ہے تھوڑا سا دائیں بائیں ہونے سے اس کی کوئی ایک جانب قبلہ رخ باقی رہے گی۔ (ت)

ردالمختار میں ہے: فعلم ان الانحراف الیسیر لا یضر وھو الذی یبقی معہ الوجہ او شئی من جوانبہ مسامتا لعین الکعبۃ اولھوائھا بان یخرج الخط من الوجہ او من بعض جوانبہ ویمر علی الکعبۃ اوھواءھا مستقیما ولا یلزم ان یکون الخط الخارج علی استقامۃ خارجا من | تو اس سے معلوم ہوا کہ تھوڑا انحراف نقصان دہ نہیں وہ تھوڑا انحراف یہ ہے کہ چہرہ یا چہرہ کی کوئی ایک جانب عین

کعبہ ہوائے کعبہ کے مقابل باقی رہے بایں طور کہ چہرے اس کی کسی ایک جانب سے نکلنے والا خط کعبہ یا ہوائے کعبہ کی طرف مستقیم (سیدھا) ہو کر گزرے یہ ضروری نہیں کہ نکلنے والا خط سیدھا

1 ردالمحتار، مبحث فی استقبال القبلۃ مطبوعہ مجتبائی دہلی، ۱/ ۲۸۷ 2 جامع الرموز باب شروط الصلوۃ مطبوعہ گنبد قاموس ایران ۱/ ۱۳۰ 3 الدرر الحکام شرح غرر الاحکام باب شروط الصلوۃ مطبوعہ مطبع احمد کامل الکائنۃ فی دار السعادت بیروت ۱/ ۶۰

(Arabic Text): "The forehead of the worshipper, or rather a part of it or its sides, as indicated by the statement in Al-Durar regarding 'the forehead (jabeen) of the worshipper'. For the forehead is the side of the brow, and there are two brows. Based on what we have established, the statements in Al-Fath and Al-Bahr cited from the Fatawa should be understood as: the deviation that invalidates prayer is that which exceeds from the east towards the west."

(Urdu Translation of the above): It should be outside the worshipper's forehead, or rather from the forehead or some part of the forehead, as the words of Al-Durar indicate: that line should be outside the worshipper's 'jabeen' (brow area), because 'jabeen' refers to one side of the forehead, and there are two 'jabeens' on its sides. The discussion we have presented should be applied to what is quoted in Fath al-Qadir and Bahr al-Raiq from the Fatawa: meaning, the deviation that invalidates prayer is that which causes the east and west to swap. (T)

I say: And with Allah is the success (I say by the grace of Allah - T). In all the aforementioned books, the phrase 'shai’un min sath al-wajh' (some part of the surface of the face - T) is used, and in our school of law, the entire surface from one ear to the other is considered the face. Therefore, washing the area between the sideburns and the ear is also obligatory in Wudu. It is definitively known that when a person stands facing any point on the horizon, the alignment of the surface of their face will encompass half the horizon's circle. Thus, turning even a quarter circle would be permissible [according to this literal logic] and facing exactly south or north would be deemed as facing the Kaaba because the part of the face's surface near the ear, i.e., the temple, would necessarily be aligned with the Kaaba. This is despite the fact that intuitively that person is facing right or left, not straight ahead. Thus, the same extreme improbability applies to the literal meaning of this statement as it did to the first expression. Therefore, the first part of the statement in Al-Hilyah and Radd al-Muhtar must be interpreted in light of the second part.

(Arabic Text): Where it is said in Al-Hilyah: "or approximately according to what we mentioned." And what he mentioned is this second view that some part of the face's surface remains parallel (to the Kaaba). And you just heard the statement of the Shami.

(Urdu Translation of the above): Where it is stated in Hilyah: or it is approximately aligned as we have mentioned, and what they mentioned is this second view that

some part of the face's surface remains in the direction of the Kaaba. And you have just heard the statement of Ash-Shami. (T)

This was not beneficial at all because the discourse in its literal sense is as extremely broad as the first statement was. This is by no means reliable nor worthy of being the intent of the scholars. For example, where the Kaaba is specifically in the west, if someone faces exactly towards the south or north, or even if not exactly, say just two or three degrees towards the west, then in long distances such a deviation does not show a felt difference. Then it will certainly be said that his face is towards the south or north, not towards the Kaaba Moazzama, even though due to the surface of his face, some part is undoubtedly parallel to the Kaaba.

(Arabic): Yes, I have seen the virtuous Abdul Haleem al-Rumi among... (Urdu): Yes, I have seen among the scholars of the Ottoman era, Abdul Haleem Rumi...

---

1 Radd al-Muhtar, Discussion on Facing the Qibla, Printed by Mujtabai Delhi, 1/288

(अरबी पाठ): "नमाज़ी का माथा, या बल्कि उसका कोई हिस्सा या उसके किनारों से, जैसा कि 'अद-दुरर' में 'नमाज़ी की जबीन' (भौं के पास का हिस्सा) शब्द से संकेत मिलता है। 'जबीन' माथे का किनारा है और दो 'जबीन' होते हैं। हमने जो तय किया है, उसके अनुसार 'अल-फ़तह' और 'अल-बहर' में 'फ़तावा' से जो उद्धृत है, उसका अर्थ यह है: नमाज़ को बिगाड़ने वाला विचलन वह है जो पूर्व से पश्चिम की ओर बढ़ जाए।"

(उर्दू अनुवाद): नमाज़ी की पेशानी (माथा) से बाहर हो, बल्कि पेशानी या पेशानी के किसी एक हिस्से से बाहर हो, जैसा कि 'दुरर' के इन शब्दों से स्पष्ट है। वह रेखा नमाज़ी की 'जबीन' से बाहर हो, क्योंकि 'जबीन' पेशानी के एक तरफ को कहते हैं और उसके दोनों तरफ दो 'जबीन' होते हैं। हमने जो चर्चा की है, उसे उसी पर लागू किया जाना चाहिए जो 'फ़तह अल-क़दीर' और 'बहर अल-राइत' में 'फ़तावा' से उद्धृत है: अर्थात्, नमाज़ को अमान्य करने वाला विचलन वह है जिससे पूर्व और पश्चिम बदल जाएं। (त)

मैं कहता हूँ: और अल्लाह ही सफलता देने वाला है (मैं अल्लाह की तौफ़ीक़ से कहता हूँ - त)। उपर्युक्त सभी पुस्तकों में 'सतह-ए-वजह' (चेहरे की सतह का कुछ हिस्सा - त) शब्द का प्रयोग किया गया है, और हमारे मज़हब में एक कान से दूसरे कान तक सब चेहरे की सतह है। इसलिए कनपटी और कान के बीच के हिस्से को धोना भी वज़ू में फ़र्ज़ है। यह निश्चित रूप से ज्ञात है कि जब कोई व्यक्ति क्षितिज (horizon) के किसी बिंदु के सामने खड़ा होता है, तो उसके चेहरे की सतह का संरेखण क्षितिज के आधे घेरे को घेर लेगा। फिर चौथाई चक्र तक मुड़ना भी मान्य होगा [इस शाब्दिक तर्क के अनुसार] और ठीक दक्षिण या उत्तर की ओर मुँह करने पर भी उसे काबा की ओर मुँह किया हुआ माना जाएगा क्योंकि कान के पास चेहरे की सतह का हिस्सा, यानी कनपटी, निश्चित रूप से काबा के सामने होगी। जबकि स्पष्ट रूप से वह व्यक्ति दाईं या बाईं ओर मुड़ा हुआ है, न कि सामने। अतः, इस कथन के ज़ाहिरी अर्थ पर भी वही बड़ी आपत्ति होगी जो पहले कथन पर थी। इसलिए 'अल-हिल्या' और 'रद्द अल-मुह्तार' के पहले कथन की व्याख्या दूसरे के साथ करनी होगी।

(अरबी पाठ): जैसा कि 'अल-हिल्या' में कहा गया है: "या लगभग वैसा ही जैसा हमने उल्लेख किया"। और उन्होंने जो उल्लेख किया वह यह दूसरा विचार है कि चेहरे की सतह का कुछ हिस्सा काबा के समांतर (मुसामात) बना रहे। और आपने अभी शामी (रह.) का कथन सुना।

(उर्दू अनुवाद): जहाँ हिल्या में कहा गया है: या वह लगभग संरेखित हो जैसा कि हम उल्लेख कर आए हैं, और जो उन्होंने उल्लेख किया वह यह दूसरा विचार ही है कि चेहरे की सतह का कोई हिस्सा काबा की दिशा में बना रहे। और शामी का कथन आपने अभी सुना। (त)

यह बिल्कुल भी लाभदायक नहीं हुआ क्योंकि यह कथन भी अपने ज़ाहिरी रूप में उतना ही विस्तृत है जितना कि पहला कथन था। यह किसी भी तरह से विश्वसनीय नहीं है और न ही विद्वानों का मंतव्य होने के योग्य है। उदाहरण के लिए, जहाँ काबा विशेष रूप से पश्चिम की दिशा में हो, यदि कोई व्यक्ति ठीक दक्षिण या उत्तर की ओर मुँह करे, या मान लें कि दो-तीन डिग्री पश्चिम की ओर ही सही, क्योंकि लंबी दूरी में इतना विचलन महसूस नहीं होता, तो निश्चित रूप से यही कहा जाएगा कि उसका मुँह दक्षिण या उत्तर की ओर है न कि काबा मुअज़्ज़मा की ओर, जबकि उसके चेहरे की सतह के कारण कुछ हिस्सा बिना किसी संदेह के काबा के समांतर है।

(अरबी): हाँ, मैंने विद्वान अब्दुल हलीम रूमी को देखा है... (उर्दू): हाँ, मैंने उस्मानी काल के विद्वानों में से अब्दुल हलीम रूमी को देखा है...

---

1 रद्द अल-मुह्तार, किबला की ओर मुँह करने का अध्याय, मुजतबाई दिल्ली द्वारा मुद्रित, 1/288

पृष्ठ 81/736

(عربی عبارت): جبهة المصلی بل منها اومن جوانبها کما دل علیه قول الدرر من جبین المصلی فان الجبین طرف الجبهة وهما جبینان وعلی ما قررناه یحمل مافی الفتح والبحر عن الفتاوی من ان الانحراف المفسد ان یجاوز المشارق الی المغارب۔

(اردو ترجمہ): نمازی کی پیشانی سے خارج ہو بلکہ پیشانی یا پیشانی کے کسی ایک حصہ سے خارج ہو جیسے کہ اس پر درر کے یہ الفاظ دال ہیں ، وہ خط نمازی کے جبین سے خارج ہو ، کیونکہ جبین پیشانی کی ایک طرف کو کہتے ہیں اور اس کے دونوں طرف دو جبینیں ہوئے ۔ یہ جو ہم نے گفتگو کی ہے اسی پر اس کو محمول کیا جائے جو فتح القدیر اور بحرالرائق میں فتاوی سے منقول ہے : یعنی مفسدِ نماز وہ انحراف ہے جس سے مشارق مغارب بدل جائیں (ت)

اقول : وباللہ التوفیق (میں اللہ کی توفیق سے کہتا ہوں ۔ ت) تمام کتب مذکورہ میں شئ من سطح الوجہ (سطح چہرہ کا کچھ حصہ ۔ ت) کا لفظ ہے اور ہمارے مذہب میں ایک کان سے دوسرے تک سب سطح وجہ ہے ولہذا مابین العذار والاذن (رخسار اور کان کا درمیانی حصہ ۔ ت) کا دھونا بھی وضو میں فرض ہوا اور قطعاً معلوم ہے کہ جب کوئی کسی نقطہ افق کی محاذات پر کھڑا ہو تو اس کی سطح وجہ کی محاذات نصف دائرہ افق کو گھیر لے گی تو ربع دور تک پھرنا روا ہوگا اور ٹھیک جنوب یا شمال کو منہ کئے سے مستقبلِ کعبہ قرار پائے گا کہ کان کے متصل جو سطح وجہ یعنی کنپٹی کا حصہ ہے ضرور محاذی کعبہ ہے حالانکہ وہ بداہتہً متیامن یا متیاسر نہ کہ مستقبل ، تو اس قول کے ظاہر پر بھی وہی استبعادِ شدید لازم جو عبارت اولٰی پر تھا اور حلیہ وردالمحتار کے اول کو دوم کے ساتھ تاویل کرنا ۔

(عربی عبارت): حیث قال فی الحلیة او تقریباً علی ما ذکرناہ و ما ذکر ھو ھذا القول الثانی من بقاء شیئ من سطح الوجہ مسامتاً ، وسمعت آنفاً قول الشامي ۔

(اردو ترجمہ): جہاں حلیہ میں کہا : یا وہ تقریباً محاذی ہو جیسے کہ ہم ذکر کر آئے ، اور جو انہوں نے ذکر کیا وہ قولِ ثانی یہی ہے کہ سطح وجہ کا کوئی حصہ سمتِ کعبہ میں باقی رہے ۔ اور شامی کا قول ابھی آپ نے سنا ۔ (ت)

اصلاً نافع نہ ہوا کہ کلام بھی اپنے ظاہر پر انتہائی وسیع ہے جتنا قولِ اوّل تھا اور یہ زنہار نہ قابلِ اعتبار نہ مرادِ علماء ہونے کا سزاوار ، مثلاً جہاں کعبہ خاص سمت قبلہ مغرب ہو اگر کوئی شخص ٹھیک نقطہ جنوب و شمال کو منہ کرے یا نہ سہی بلکہ دو تین درجے مغرب کو پھر ا ہی مانیے کہ مسافات بعیدہ میں اتنا انحراف فرق محسوس نہیں دیتا تو یقیناً یہی کہا جائے گا کہ اُس کا منہ جنوب یا شمال کو ہے نہ کہ کعبہ معظمہ کو ، حالانکہ اُس کی سطح کی وجہ سے بعض جز بلا شبہ مسامتِ کعبہ ہے ۔

نعم رأیت الفاضل عبدالحلیم الرومی من | ہاں میں نے دورِ عثمانی کے علماء میں سے عبدالحلیم رومی

---

1 ردالمحتار ، مبحث فی استقبال القبلۃ ، مطبوعہ مجتبائی دہلی ، ۱ / ۲۸۸

Fatawa Razawiyya Volume 6

Scholars of the Ottoman State: One of them mentioned in his marginalia on 'Al-Durar', restricting its wording where he said (his words: 'one of its sides should be toward the Qiblah'). He does not mean by this the total cessation of alignment from the Qiblah for the other side as was assumed; rather, he means that one side is entirely facing and some of the other side's surface remains in alignment, as was understood from 'Al-Manba'[1] [end of quote].

I say: (I say) they did not mention the text of 'Al-Manba' so it could be reflected upon, and this statement of theirs contradicts the apparent meaning of 'Al-Durar' and is also not in harmony with it. Furthermore, it is contrary to the texts of the general mentioned books because the mentioned books have declared the presence of any part of the face's surface in the direction of the Qiblah as sufficient. This is an explicit statement that it is absolutely not necessary for the remaining part to be in alignment and parallel. Rather, I say (rather, I say) if you reflect and ponder, you will not find this statement to be correct, because for true alignment (musamatat haqiqiya), it is necessary to truly face the center of the forehead, and for approximate alignment, it is sufficient for any one side of the face to be facing. So when true alignment is fundamentally lost, then neither alignment remains, nor facing the Qiblah, nor will the prayer be valid. Alignment only occurs through the connection of lines at right angles (qa'imoon). Do you not see in [figure] a-h-z that surface 'a' is opposite 'b', and 'h-z' faces 'a', but because of the lack of connection at right angles on 'h-b-z', it remains [out of alignment].

---

[1] Hashiyat al-Durar 'ala Ghurar by Abdul Haleem al-Rumi, Chapter: Conditions of Prayer, printed by Matba' Uthmaniya, Dar Sa'adat Beirut, 1/52 Page 82 of 736

उस्मानी साम्राज्य के विद्वान: उन्होंने 'अल-दुरर' पर अपने हाशिये में इसके शब्दों को सीमित करते हुए उल्लेख किया है जहाँ उन्होंने कहा (उनका कथन है: 'इसका एक पहलू क़िबला की ओर होना चाहिए')। उनका मतलब इससे दूसरे पक्ष के लिए क़िबला से संरेखण का पूरी तरह से समाप्त हो जाना नहीं है जैसा कि माना गया था; बल्कि, उनका मतलब यह है कि एक पक्ष पूरी तरह से सामने हो और दूसरे पक्ष की सतह का कुछ हिस्सा संरेखण में रहे, जैसा कि 'अल-मंबा'[1] से समझा गया है। [उद्धरण समाप्त]।

मैं कहता हूँ: (मैं कहता हूँ) उन्होंने 'अल-मंबा' के शब्दों का उल्लेख नहीं किया ताकि उन पर विचार किया जा सके और उनका यह बयान 'अल-दुरर' के स्पष्ट अर्थ के विपरीत है और इसके साथ मेल भी नहीं खाता। इसके अलावा, यह उल्लेखित सामान्य पुस्तकों के ग्रंथों के भी विरुद्ध है क्योंकि उल्लेखित पुस्तकों ने चेहरे की सतह के किसी भी हिस्से के क़िबला की दिशा में होने को पर्याप्त घोषित किया है। यह एक स्पष्ट कथन है कि शेष भाग के संरेखण और समानांतर होने की बिल्कुल आवश्यकता नहीं है। बल्कि, मैं कहता हूँ (बल्कि, मैं कहता हूँ) यदि आप गौर और विचार करेंगे, तो आप इस कथन को सही नहीं पाएंगे, क्योंकि वास्तविक संरेखण के लिए वास्तव में माथे के केंद्र का सामना करना आवश्यक है, और अनुमानित संरेखण के लिए चेहरे के किसी भी एक पक्ष का सामना करना पर्याप्त है। इसलिए जब वास्तविक संरेखण मौलिक रूप से समाप्त हो जाता है, तो न संरेखण रहता है, न क़िबला का सामना करना, और न ही नमाज़ मान्य होगी। संरेखण केवल समकोण पर रेखाओं के जुड़ने से होता है। क्या आप [आरेख] अ-ह-ज़ में नहीं देखते कि सतह 'अ' 'ब' के विपरीत है, और 'ह-ज़' 'अ' के सामने है, लेकिन 'ह-ब-ज़' पर समकोण पर जुड़ाव की कमी के कारण, यह संरेखण में नहीं रहता है।

---

[1] हाशिया अल-दुरर अला ग़ुरर, अब्दुल हलीम अल-रूमी, अध्याय: नमाज़ की शर्तें, मुद्रित मतबा उस्मानिया, दार सआदत बेरूत, 1/52 पृष्ठ 736 का 82

فتاوی رضویہ جلد ششم

علماء الدولة العثمانية ذكر في حاشيته على الدرر تقييد عبارتها حيث قال(قوله يكون احد جوانبه الى القبلة) لا يريد به زوال الطرف الاخر عن المقابلة بالكلية كما ظن بل المراد مقابلة طرف بكله مقابلة شئ من سطح الاخر مسامتا كما هو المفهوم من المنبع ١ اھ اقول لم يذكر عبارة المنبع حتى ينظر فيها وهو مع مخالفته لظاهر الدرر لايلائمه نص عامة الكتب المذكورة من الاجتزاء ببقاء شئ من سطح الوجه مسامتا فانه صريح فى عدم الحاجة الى مسامتة ما فى الباقى اصلابل اقول: لعلك ان امعنت النظر لم تره يرجع الى صحة فان المسامتة لا بد لها من مقابلة حقيقية في حقيقية لوسط الجبهة وفى التقريبية شئ من الاطراف اما اذا فاتت مقابلة الحقيقية اصلاً فلامسامتة فلا استقبال فلا صلوة والمقابلة انما تكون باتصال الخط قوائم ، الا ترى ا ح ء ان سطح ا يقابل ب و ح يواجه ہ اما ہ فلا يسامت لعدم الاتصال على قوائم

کو دیکھا جنہوں نے درر پر اپنے حاشیہ میں ان کی عبارت کو مقید ذکر کیا ان کی عبارت یہ ہے قولہ یکون احد جوانبہ الی القبلۃ (کوئی ایک قبلہ کی طرف ہو) اس سے ان کی مراد یہ نہیں کہ دوسری جانب بالکل مسامتت قبلہ سے ختم ہوجائے جیسا کہ گمان کیا گیا ہے، بلکہ اس سے مراد یہ ہے کہ ایک طرف کلیتہً محاذی ہو اور دوسری کی سطح کا کچھ مسامت رہے جیسا کہ منبع سے یہی مفہوم ہوا ہے اھ اقول: (میں کہتا ہوں) انہوں نے منبع کی عبارت ذکر نہیں کی تاکہ اس پر غور کیا جاسکے اور انکا یہ قول ظاہر درر کے مخالف ہے اور اس سے مناسبت بھی نہیں رکھتا نیز عامہ کتب مذکورہ کے نصوص کے بھی خلاف ہے کیونکہ کتب مذکورہ نے سطح وجہ کے کسی حصہ کے سمت قبلہ میں ہونے کو کافی قرار دیا ہے یہ اس بات کی صراحت ہے کہ باقی حصہ کا مسامت و محاذی ہونا قطعاً ضروری نہیں۔ بل اقول (بلکہ میں کہتا ہوں) اگر تو غور وفکر کرے تو

تو اس قول کو صحیح نہیں پائے گا کیونکہ مسامتت حقیقی کے لئے حقیقۃً وسط پیشانی کا مقابل ہونا ضروری ہے اور مسامتت تقریبی کے لئے چہرے کی کسی ایک طرف کا مقابل ہونا کافی ہے۔ پس جب مقابلہ حقیقی اصلاً ختم ہوگیا تو اب نہ مسامتت رہی نہ استقبال قبلہ رہا نہ نماز درست ہوگی۔ اور مقابلہ قائموں پر خط کے اتصال سے بنتا ہے۔ آپ نہیں دیکھتے ا ح ء میں کہ سطح ا مقابل ہے ب کے اور ح ء کے موجہ ہے لیکن ہ ب ء کے قائموں پر عدم اتصال کی وجہ سے رہے

---

[1] حاشیۃ الدرر علی غرر لعبدالحلیم الرومی باب شروط صلوٰۃ مطبوعہ مطبع عثمانیہ دار سعادت بیروت ۵۲/۱ Page 82 of 736

Fatawa Razawiyyah - Volume Six

...it cannot be for a curved [arc] along with a flat surface except at a single point, in reality, and at some adjacent points, approximately. This is because it is not possible for a curved line to align with a flat surface definitively except at one point, and approximately at some other connected points.

Firstly, it is not possible for one side to correspond with the whole except metaphorically. That is, it is essentially impossible for one side to completely match, though it may be so metaphorically.

Secondly, when one side of an arc corresponds to a flat surface, it is impossible for any part of its other side to correspond to it. As we have previously stated, among the external perpendiculars emerging from the tangents of an arc, no two will ever connect towards a single direction. You should know that all those perpendiculars are lines emerging from the center towards the points of the arc or along their directions, and they all meet at the center. If two of them were to connect with an object opposite them, like the Kaaba or a line passing transversely through it towards the horizon, and each were to form a right angle on it, and we were to connect them, it would result in a triangle with two right angles, which is impossible. So, reflect. (T)

Third: Two lines emerge from the middle of the head opposite both eyes, forming an angle and passing through the eyes. As far as they spread, as long as the Kaaba remains within them, the 'direction' [of Qibla] is maintained; if it falls outside both, then it is not. This was stated by Imam Hujjat al-Islam Ghazali (may Allah sanctify his secret), then by Allama Taftazani in the commentary of Kashshaf, then by Allama Mawla Khusraw in 'Durar'. Both of them did not specify the magnitude of that angle formed in the middle of the head by the meeting of the two lines, but Imam Hujjat al-Islam clarified that it is a right angle. In 'Durar', after explaining a reason for hitting the direction, he said:

"Or we say, it [the direction of Qibla] is that the Kaaba falls between two lines that meet in the brain (middle of the head)."

Page 83 of 736

फ़तावा रज़विया - छठा खंड

...एक वक्र (चाप) के लिए एक समतल सतह के साथ होना संभव नहीं है, सिवाय एक बिंदु के, वास्तव में, और कुछ आस-पास के बिंदुओं पर, लगभग। यह इसलिए है क्योंकि एक वक्र रेखा का समतल सतह के साथ निश्चित रूप से संरेखित होना केवल एक बिंदु पर संभव है, और लगभग कुछ अन्य जुड़े बिंदुओं पर।

प्रथम: एक पक्ष का पूरे के साथ मेल खाना केवल लाक्षणिक रूप से ही संभव है। यानी, एक पक्ष का पूर्ण रूप से मेल खाना मूल रूप से असंभव है, हालांकि लाक्षणिक रूप से ऐसा हो सकता है।

द्वितीय: जब एक चाप का एक पक्ष एक समतल सतह के अनुरूप होता है, तो उसके दूसरे पक्ष के किसी भी भाग का उसके अनुरूप होना असंभव है। जैसा कि हमने पहले बताया है, चाप के स्पर्शरेखाओं से निकलने वाले बाहरी लंबों में से, कोई भी दो कभी भी एक ही दिशा की ओर नहीं जुड़ेंगे। आपको पता होना चाहिए कि वे सभी लंब केंद्र से चाप के बिंदुओं की ओर या उनकी दिशाओं में निकलने वाली रेखाएं हैं, और वे सभी केंद्र पर मिलती हैं। यदि उनमें से दो अपने सामने वाली किसी वस्तु, जैसे काबा या उसके माध्यम से क्षितिज की ओर अनुप्रस्थ रूप से गुजरने वाली रेखा के साथ जुड़ें, और प्रत्येक उस पर एक समकोण बनाए, और हम उन्हें जोड़ दें, तो इसका परिणाम दो समकोणों वाला एक त्रिभुज होगा, जो असंभव है। अत; चिंतन करें। (त)

तीसरा: दोनों आँखों के विपरीत सिर के मध्य से दो रेखाएँ निकलती हैं, जो एक कोण बनाती हैं और आँखों से होकर गुजरती हैं। जहाँ तक वे फैलती हैं, जब तक काबा उनके भीतर रहता है, 'दिशा' [क़िबला की] बनी रहती है; यदि वह दोनों के बाहर गिरता है, तो नहीं। यह इमाम हुज्जतुल इस्लाम गज़ाली (अल्लाह उनके रहस्य को पवित्र करे) द्वारा कहा गया था, फिर कशशाफ़ की व्याख्या में अल्लामा तफ़ताज़ानी द्वारा, फिर 'दुरर' में अल्लामा मौला खुसरौ द्वारा। उन दोनों ने उस कोण का परिमाण नहीं बताया जो दो रेखाओं के मिलन से सिर के मध्य में बनता है, लेकिन इमाम हुज्जतुल इस्लाम ने स्पष्ट किया कि यह एक समकोण है। 'दुरर' में, दिशा प्राप्त करने का एक कारण बताने के बाद, उन्होंने कहा:

"या हम कहते हैं, यह [क़िबला की दिशा] है कि काबा उन दो रेखाओं के बीच आता है जो मस्तिष्क (सिर के मध्य) में मिलती हैं।"

पृष्ठ 83 / 736

بَ ءَ ر و ھو لا یکون لمقوس قط مع مسطح الامن مسامت نہیں ہے اور یہ بات مسطح کے ہوتے ہوئے مقوس نقطۃ واحدۃ تحقیقاً و بعض نقاط مجاورۃ اخری میں قطعاً نہیں ہوگی مگر نقطہ واحدہ سے تحقیقاً اور بعض تقریباً۔ دوسرے نقاط متصلہ سے تقریباً۔ فاوّلاً : لا امکان لمقابلۃ طرف بکلہ الا مجازا۔ پس اولاً تو یہ ہے کہ ایک طرف کا مقابلہ کلی طور ممکن ہی نہیں البتہ مجازاً ہو سکتا ہے۔ و ثانیًا : اذ تقابل طرف من قوس مسطحاً وثانیاً جب ایک طرف قوس مسطح کے مقابل ہو تو اس کی استحال ان یقابلہ شیئی من طرفھا الآخر لما دوسری طرف کے کسی حصے کا اس کے مقابل ہونا محال ہے قدمنا ان الا عمدۃ الخارجۃ من مماسّات القوس جیسا کہ ہم پیچھے بیان کر آئے کہ مماسات قوس سے جو نکلنے لا یکون اثنان۔ منھا الی جھۃ واحدۃ قط المـ والے خارجی عمود ہیں ان میں سے فقط دو جہتِ واحدہ کی تعلم ان تلك الاعمدۃ کلھا ھی الخطوط الخارجۃ طرف متصل نہ ہوں گے ، آپ کو یہ معلوم نہیں کہ وہ تمام من المرکز الی نقاط القوس او علی سموتھا و کلھا کے تمام عمود مرکز سے نقاط قوس کی طرف یا ان کی سمتوں پر تلتقی علی المرکز فان اتصل اثنان منھا بمقابل نکلنے والے خطوط ہی ہیں اور تمام کے تمام مرکز پر مل رہے کالکعبۃ او الخط المار بھا عرضا الی الافق واحدث ہیں، ان میں سے اگر دو مقابل کے ساتھ متصل ہو جائیں کل علیہ قائمتین و وصلنا بینھما اجتمع فی مثلث جیسے کعبہ یا وہ خط جو کعبہ کے ساتھ عرضاً افق کی طرف گزر رہا قائمتان و ھو محال فتبصّر۔ ہے اور ہر ایک اس پر دو قائمے پیدا کر دے اور ہم ان کے درمیان اتصال کردیں تو ایک مثلث میں دو قائموں کا اجتماع لازم آئیگا جو محال ہے پس تدبّر کرو (ت)

سوم: وسطِ راس مقابل ہر دو چشم سے ایک زاویہ بناتے آنکھوں پر گزرتے دو خط نکلیں یہ جہاں تک پھیلیں کعبہ جب تک ان کے اندر رہے جہت باقی ہے اور دونوں سے باہر واقع ہو تو نہیں۔ یہ

امام حجۃ الاسلام غزالی قدس سرہ العالی پھر علامہ تفتازانی نے شرح کشاف پھر علامہ مولیٰ خسرو نے درر میں افادہ فرمایا ان دونوں نے اُس زاویہ کی مقدار نہ بتائی جو وسطِ سر میں التقائے خطین سے بنے گا اور امام حجۃ الاسلام نے تصریح فرمائی کہ قائمہ ہو ، درر میں اصابتِ جہت کی ایک وجہ بیان کر کے فرمایا:

او نقول ھوان تقع الکعبۃ فیما بین خطین یا ہم کہتے ہیں جہت قبلہ یہ ہے کہ کعبہ واقع ہو درمیان ان دو یلتقیان فی الدماغ خطوں کے جو وسطِ راس (دماغ) میں ملتے ہوں۔

Fatawa Razawiyya Volume VI

They emerge towards the eyes like the two sides of a triangle; thus stated the master al-Taftazani in Sharh al-Kashshaf[1]. | They pass over both eyes like the two legs of a triangle; similarly Allama Taftazani has explained in Sharh al-Kashshaf. (T)

In Sharh al-Niqayah by Allama Birjandi, it is stated:

The meaning of facing the direction of the Kaaba is that the Kaaba falls between two lines emerging from the eyes, whose ends meet inside the head between the eyes, and whose ends meet inside the head between the eyes at a right angle. Thus it was mentioned by Imam al-Ghazali in al-Ihya. Then al-Birjandi said: Based on this, if the line emerging from the eyes reached the wall of the Kaaba, it would fall at an acute or an obtuse angle, so it would not be facing the Kaaba, and this is not far-fetched[2]. Ends. I say: This is surprising from such an eminent master in the engineering sciences. Firstly: The Imam only said that the Kaaba falls between the two lines, not that any part of them reaches the wall of the Kaaba. Secondly: He only said that they meet between the eyes at a right angle, not that one of them connects with the Kaaba so that two right angles are formed there, and for this reason he singled out... | The meaning of facing (turning) towards the direction of the Kaaba is that the Kaaba is situated between two such lines originating from both eyes, and where their two ends meet in the middle of the head between the eyes at a right angle. Imam Ghazali mentioned this similarly in Ihya al-Ulum. Then Allama Birjandi said: Based on this, if the line emerging from the eyes meets the wall of the Kaaba, it will fall at an acute or an obtuse angle, so it will not be opposite the Kaaba, and this is not without plausibility. Ends. I say: (I say) such a statement from a person so great and expert in the engineering sciences is very surprising. Firstly: because Imam Ghazali only said that the Kaaba should fall between the two lines, he did not say that the line emerging from the eyes should be connected to the wall of the Kaaba. Secondly: because he said that the connection of the two lines should be at a right angle between both eyes, he did not say that one of them should be connected to the Kaaba and then two right angles should be formed from there. singled out

1. Al-Durar al-Hukkam Sharh Ghurar al-Ahkam, Chapter on the Conditions of Prayer, printed by Ahmad Kamil al-Ka'ina, Dar al-Sa'ada Beirut 60/1
2. Sharh al-Niqayah by al-Birjandi, Chapter on the Conditions of Prayer, printed by Ahmad Kamil al-Ka'ina, Dar al-Sa'ada Beirut 89/1 Page 84 of 736

फतावा रज़विया - छठा खंड

वे दोनों आँखों की ओर इस प्रकार निकलते हैं जैसे त्रिभुज की दो भुजाएँ होती हैं, जैसा कि विशेषज्ञ अल-तफ़्ताज़ानी ने शरह अल-कशफ़ में कहा है।[1] | वे दोनों आँखों पर गुजरते हैं जैसे त्रिभुज की दो भुजाएँ होती हैं, इसी तरह अल्लामा तफ़्ताज़ानी ने शरह कशफ़ में बयान किया है। (त)

अल्लामा बिरजंदी की शरह नक़ाया में है:

काबा की दिशा में उन्मुख होने का अर्थ यह है कि काबा उन दो रेखाओं के बीच स्थित हो जो आँखों से निकलती हैं और जिनके सिरे सिर के अंदर आँखों के बीच मिलते हैं, और जिनके सिरे सिर के अंदर आँखों के बीच समकोण पर मिलते हैं। इमाम ग़ज़ाली ने इहया में इसका इसी तरह उल्लेख किया है। फिर अल-बिरजंदी ने कहा: इसके आधार पर, यदि आँखों से निकलने वाली रेखा काबा की दीवार तक पहुँचती है, तो वह न्यून कोण या अधिक कोण पर गिरेगी, तो वह काबा के सामने नहीं होगी और यह संभावना से दूर नहीं है।[2] अ.ह. (समाप्त)। मैं कहता हूँ: इंजीनियरिंग विज्ञान (ज्यामिति) के ऐसे महान विशेषज्ञ से ऐसा कथन आश्चर्यजनक है। पहला: इमाम ने केवल यह कहा कि काबा दो रेखाओं के बीच स्थित हो, न कि उनमें से कोई काबा की दीवार तक पहुँचे। दूसरा: उन्होंने केवल यह कहा कि वे दोनों आँखों के बीच समकोण पर मिलते हैं, न कि उनमें से एक काबा से जुड़ा हो जिससे वहां दो समकोण बनें, और इसी कारण उन्होंने इसे अलग से उल्लेख किया... | काबा की दिशा में मुँह करने (तवज्जुह) का अर्थ यह है कि काबा ऐसे दो रेखाओं के बीच स्थित हो जो दोनों आँखों से निकलें और जहाँ उनके दोनों सिरे सिर के मध्य में दोनों आँखों के बीच समकोण पर मिलते हों। इमाम ग़ज़ाली ने इहया उल-उलूम में इसी तरह इसका उल्लेख किया है, फिर अल्लामा बिरजंदी ने कहा: इस आधार पर यदि आँखों से निकलने वाली रेखा काबा की दीवार की ओर मिलेगी, तो वह न्यून कोण या अधिक कोण पर स्थित होगी, तो वह काबा के सामने नहीं होगी और यह संभावना से रहित नहीं है। अ.ह. मैं कहता हूँ: (मैं कहता हूँ) इंजीनियरिंग विज्ञान के ऐसे महान और विशेषज्ञ व्यक्ति से ऐसा कथन बहुत ही आश्चर्यजनक है। पहले तो इसलिए कि इमाम ग़ज़ाली ने केवल यह कहा कि काबा दो रेखाओं के बीच स्थित हो, यह नहीं कहा कि आँखों से निकलने वाली रेखा काबा की दीवार से जुड़ी हो। दूसरे इसलिए कि उन्होंने यह कहा कि दोनों रेखाओं का मिलना दोनों आँखों के बीच समकोण पर हो, यह

नहीं कहा कि उनमें से एक का संबंध काबा के साथ हो फिर वहाँ से दो समकोण बनें। अकेला किया गया

1. अद-दुरर अल-हुक्काम शरह ग़ुरर अल-अहकाम, नमाज़ की शर्तों का अध्याय, अहमद कामिल अल-काइना द्वारा मुद्रित, दार अल-सआदा बेरूत 60/1
2. शरह अल-नक़ाया लिल-बिरजंदी, नमाज़ की शर्तों का अध्याय, अहमद कामिल अल-काइना द्वारा मुद्रित, दार अल-सआदा बेरूत 89/1 पृष्ठ 84 का 736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

فیخرجَانِ الی العینین کساقی مثلث کذا قال النحریر التفتازانی فی شرح الکشاف[1]۔ | دونوں آنکھوں پر گزریں جیسے مثلث کی دو ساقیں ہوتی ہیں اسی طرح علامہ تفتازانی نے شرح کشاف میں بیان کیا ہے۔ (ت)

شرح نقایہ علامہ بر جندی میں ہے:

معنی التوجہ الی جھۃ الکعبۃ ھوان تقع الکعبۃ بین خطین یخرجان من العینین و یلتقی طرفاھما داخل الرأس بین العینین ویلتقی طرفاھما داخل الرأس بین العینین علی زاویۃ قائمۃ کذا ذکرہ الامام الغزالی فی الاحیاء ثم قال البرجندی فعلی ھذا لو وصل الخط الخارج من العینین الی جدار الکعبۃ یقع علی حادۃ او منفرجۃ لم یکن مقابلا للکعبۃ وھو لا یخلو عن بعد[2] اھ اقول: ھذا عجیب من مثل ذلک الجھبذ المبرز فی الفنون الھندسیہ ۔ فاولاً: انما قال الامام ان تقع الکعبۃ بین الخطین لا ان یصل شیئ منھما الی جدار الکعبۃ ۔ و ثانیاً انما قال یلتقیان بین العینین علی قائمۃ لا علی ان یتصل احدھما بالکعبۃ فیحدث ھنالک قائمتین ولذلک افرد | جہت کعبہ کی طرف توجہ (منہ) کرنے کا معنی یہ ہے کہ کعبہ ایسے دو خطوں کے درمیان واقع ہو جو دونوں آنکھوں سے نکلیں اور جہاں ان کی دونوں طرفیں وسط راس میں دونوں آنکھوں کے درمیان زاویہ قائمہ پر ملتی ہوں۔ امام غزالی نے احیاء العلوم میں اسے اسی طرح ذکر کیا پھر علامہ بر جندی نے کہا اس بنا پر اگر آنکھوں سے نکلنے والا خط کعبہ کی دیوار کی جانب ملے گا تو زاویہ حادہ یا زاویہ منفرجہ پر واقع ہوگا تو یہ کعبہ کے مقابل نہ ہوگا اور وہ بعد سے خالی نہیں اھ اقول: (میں کہتا ہوں) فنونِ ہندسہ کے ایسے عظیم اور ماہر شخص سے ایسا قول بڑا تعجب خیز ہے۔ فاوّلاً: اس لئے کہ امام غزالی نے صرف یہ کہا کہ کعبہ دو خطوں کے درمیان واقع ہو، یہ نہیں کہا کہ آنکھوں سے نکلنے والا خط دیوار کعبہ سے متصل ہو۔ ثانیًا اس لئے

کہ انہوں نے یہ کہا کہ دونوں خطوں کا اتصال دونوں آنکھوں کے درمیان زاویہ قائمہ پر ہو، یہ نہیں کہا کہ ان میں سے ایک کا اتصال کعبہ کے ساتھ ہو پھر وہاں سے دو زاویے قائمے افرد

1 الدرر الحکام شرح غرر الاحکام باب شروط صلوۃ مطبوعہ احمد کامل الکائنہ دار سعادت بیروت ۸۹/۱

2 شرح النقایۃ للبرجندی باب شروط صلوۃ مطبوعہ احمد کامل الکائنہ دار سعادت بیروت ۶۰/۱

Fatawa-e-Razawiyya, Volume 6

Al-Qa'imah (The Perpendicular Line). ...are produced, for this reason "Qa'imah" was mentioned as a singular noun.

I say (Aqool): From what we have established, the agitation and complexity in what the virtuous Halimi Effendi stated in his marginalia on Al-Durar becomes apparent. The gist of his argument is that the Kaaba is located between two lines projecting from the eyes, even if one of the lines is long, as is observed during a deviation of focus. This is because both lines extend towards the horizon, so there is no place for length or shortness, nor is there any reason to terminate them at a certain limit; rather, the gaze is directed into the space resulting between them, as if the Kaaba is located in that space. (Translator)

I say (Aqool): Based on this statement, if these lines which originate from the center of the brain aligned with the eyes forming a right angle, encompass the Kaaba in any way, it is absolutely sufficient for determining the direction (Qibla). Even if one line passes close to the Kaaba. Now, if the meaning taken is that everything within these two lines as far as they extend constitutes the direction of the Kaaba, then facing it is facing the direction of the Kaaba, as has been cited from the Ihya of Imam Hujjat al-Islam [Ghazali]. However, I did not find it there, nor in its commentary Ithaf-us-Sadah in the "Book of the Secrets of Prayer" (Translator: Although I did not find this statement in Ihya al-Ulum and its commentary Ithaf-us-Sadah in the book "Secrets of Prayer"). After describing these two lines, he said: "What falls between the two lines projecting from the eyes is included in the direction." (Translator: Thus, what falls between the lines emerging from the two eyes is within the direction of the Qibla). According to this interpretation, this statement, like the previous two, will have such a vast distance when the angle is a right angle and its...

1. Footnote: Marginalia of Al-Durar al-Ghurar by the virtuous Al-Halimi, Chapter on the Conditions of Prayer, printed at Uthmaniyya Press, Dar-us-Sa'adat, Beirut, 1/52.

फ़तावा-ए-रज़विय्या, छठा खंड

अल-क़ाइमा (लंबवत रेखा)। ...पैदा हों, इसी कारण "क़ाइमा" का एकवचन के रूप में उल्लेख किया गया।

अक़ूल (मैं कहता हूँ): जो हमने स्थापित किया है, उससे वह बेचैनी और पेचीदगी भी स्पष्ट हो जाती है जो फ़ाज़िल हलीमी अफ़ंदी ने अपने हाशिया-ए-दुरर में उत्पन्न की है। उनकी बात का सार यह है कि काबा दो ऐसी रेखाओं के बीच स्थित होना चाहिए जो दोनों आँखों से निकलती हों, भले ही उनमें से एक रेखा लंबी हो, जैसा कि ध्यान हटने के समय देखा जाता है। क्योंकि जब दोनों रेखाएँ क्षितिज की ओर फैलती हैं, तो वहाँ न तो लंबाई और न ही छोटेपन की गुंजाइश होती है, और न ही किसी बिंदु पर उन्हें समाप्त करने का कोई कारण मिलता है। इस स्थिति में, उन दोनों के बीच बनने वाले अंतराल में दृष्टि इस प्रकार पड़ती है मानो काबा उसी स्थान में स्थित है। (अनु.)

अक़ूल (मैं कहता हूँ): इस कथन के अनुसार, यदि ये रेखाएँ जो आँखों के समानांतर मस्तिष्क के केंद्र से समकोण बनाते हुए निकलती हैं, उनके भीतर काबा किसी भी प्रकार स्थित हो, तो यह दिशा (क़िबला) प्राप्त करने के लिए पूर्णतः पर्याप्त है। भले ही एक रेखा काबा से सटकर गुज़रे। अब यदि यह अर्थ लिया जाए कि जहाँ तक ये दोनों रेखाएँ फैलती हैं, उनके भीतर जो कुछ भी है वह काबा की दिशा है, तो उसकी ओर मुख करना काबा की दिशा की ओर मुख करना है, जैसा कि इमाम हुज्जतुल इस्लाम की 'एह्या' से उद्धृत किया गया है। हालाँकि मुझे यह बात वहाँ नहीं मिली, और न ही इसकी व्याख्या 'इतहाफ़ुस सादा' की पुस्तक 'असरारुस सलात' में मिली (अनु.: हालाँकि मुझे यह बात एह्या अल-उलूम और इसकी व्याख्या इतहाफ़ुस सादा की पुस्तक असरारुस सलात में नहीं मिलती)। इन दोनों रेखाओं का वर्णन करने के बाद उन्होंने कहा: "दोनों आँखों से निकलने वाली रेखाओं के बीच जो कुछ भी आता है, वह दिशा में शामिल है।" (अनु.: अतः जो रेखाएँ दोनों आँखों से निकलती हैं, उनके बीच का क्षेत्र क़िबला की दिशा में सम्मिलित है)। इस आधार पर, यह कथन भी पिछली दो बातों की तरह उतनी ही विशाल व्यापकता रखेगा जब कोण समकोण हो और उसके..

1. पादटिप्पणी: हाशिया अद-दुरर अल-ग़ुरर, फ़ाज़िल हलीमी द्वारा, नमाज़ की शर्तों का अध्याय, मतबअ उस्मानीया, दारुस सआदत, बेरुत, 1/52।

पृष्ठ 85/736

القائمہ۔ پیدا ہوں، اسی وجہ سے "قائمہ" بطورِ مفرد ذکر کیا۔

اقول: وبما قررنا ظھر قلق ما قال الفاضل الحلیمي افندی فی حاشیتہ الدرر ان حاصلہ ان تقع الکعبۃ بین خطین یخرجان من العینین وان کان احد الخطین طویلا کما ھو المشاھد عند انحراف التوجہ اھ فان الخطین یمتدان الی الافق فلا مساغ ثمہ لطول و قصر ولا داعی الی قطعھما علی حد و انما النظر الی الفضاء الحاصل بینھما ان تقع الکعبۃ فیہ۔ اقول: (میں کہتا ہوں) ہماری اس تقریر سے وہ اضطراب اور پیچیدگی بھی ظاہر ہوگئی جو کہ فاضل حلیمی آفندی نے اپنے حاشیہ درر میں پیدا کی ہے انہوں نے کیا: اس کا حاصل یہ ہے کہ کعبہ ایسے دو خطوں کے درمیان واقع ہو جو دونوں آنکھوں سے نکلتے ہوں اگر چہ ان دو خطوں میں ایک طویل ہو جیسا کہ انحراف توجہ کے وقت مشاہدہ میں آتا ہے۔ اھ کیونکہ دونوں خط جب افق کی طرف ممتد ہوتے ہیں تو وہاں نہ طول و قصر رہتا ہے اور نہ ہی کسی حد پر دونوں کے قطع کا کوئی داعی ملتا ہے اس صورت میں ان دونوں کے درمیان حاصل ہونے والی فضا میں نظر اس طرح ہوتی ہے گویا کعبہ اسی فضاء میں واقع ہے۔ (ت)

اقول: اس قول پر یہ خط جو وسطِ دماغ محاذی عینین سے زاویہ قائمہ بناتے نکلے ان کے اندر کعبہ کسی طرح واقع ہو نامطلقاً حصولِ جہت کو کافی ہے اگر چہ ایک خط کعبہ سے ملا ہوا گزرے، اب اگر یہ معنی لئے جائیں کہ یہ دونوں خط جہاں تک پھیلیں ان کے اندر اندر جو کچھ ہے جہتِ کعبہ ہے اس کی طرف توجہ بجہت کعبہ ہے جیسا کہ احیاء امام حجتہ الاسلام سے نقل کیا گیا ولم ارہ فیہ ولا فی شرحہ اتحاف السادۃ فی کتاب اسرار الصلاۃ (حالانکہ یہ بات مجھے احیاء العلوم اور اس کی شرح اتحاف السادۃ کی کتاب اسرار الصلاۃ میں نہیں ملتی۔ت) کہ ان دونوں خطوں کا بیان کر کے فرمایا۔ فما یقع بین الخطین الخارجین من العینین فھوداخل فی الجھۃ (پس جو دونوں آنکھوں سے

نکلنے والے خطوط کے درمیان واقع ہوگا وہ جہت قبلہ میں داخل ہے۔ت) تو اس تقدیر پر یہ قول بھی مثل دو قولِ پیشیں اتنی ہی وُسعت بعیدہ رکھے گا جب زاویہ قائمہ ہے اور اس کے

1 حاشیۃ الدررالی الفرد للفاضل الحلیمی باب شروط الصلاۃ مطبوعہ مطبع عثمانیہ دار سعادت بیروت، ۱/ ۵۲

If the Kaaba can be connected by a single line, then a deviation of approximately ninety degrees on both sides would be permissible, and that same slight, imperceptible amount less than one hundred and eighty degrees would spread the direction, and that same opposition to clear text (Nass) and consensus (Ijma) would become necessary. It is inevitably intended that as long as the Holy Kaaba remains within these two lines during prayer, the direction remains intact within that deviation. This will not happen except within a 45-45 degree deviation on both sides from the exact Kaaba. The line of focus bisects this right angle. So, if the deviation is more than half a right angle, the Kaaba will fall outside both lines, as is not hidden. (As is apparent. T). In short, the result is that if a person stands directly facing the Kaaba, any deviation within the lines that emanate and spread from that point is permissible on both sides. Now this passage will refer to the upcoming fifth point, and a deviation of up to forty-five 45, forty-five 45 degrees on both sides will be permissible, and this is clear, correct, and without doubt.

Fourth, which requires extreme investigation:

(Arabic Text)

It is stated in Al-Durar that its direction (of Kaaba) is that the line emerging from the forehead of the worshipper meets the line passing through the Kaaba in a straight line such that two right angles are formed. This is the first aspect. Opinions differed regarding its placement. Allama Shami, in Radd al-Muhtar, interpreted it as an explanation of true alignment, where he first mentioned from Al-Mi'raj on the authority of his teacher that the meaning of investigation is that if a line is assumed from the front of his face at a right angle to the horizon, it passes over the Kaaba or its atmosphere. Then he cited the words of Al-Durar and then

(Urdu Translation)

It is said in Al-Durar that the direction of the Kaaba is such that the line originating from the forehead of the worshipper meets the line passing over the Kaaba straightly in such a way that two right angles are formed from it. This is the first reason. And there is a difference in this interpretation; Allama Shami in Radd al-Muhtar has interpreted it as the true direction, where he first mentioned his teacher's reference to Al-Mi'raj that the meaning of 'investigation' is that if a straight line is assumed from the face of the worshipper at a right angle towards the horizon, it should pass through the Kaaba or the space above the Kaaba. Then Allama Shami, citing the text of Durr, said that the

(Arabic Text)

said: His statement in Al-Durar "in a straight line" is related to his statement "meets," because if it reached it crookedly, two right angles would not be formed, but one of them would be acute and the other obtuse, as we have explained. Then the method...

(Urdu Translation)

phrase "straightly" (ala istiqamah) in Durr relates to its word "meets" (yasilu), because if that line meets the Kaaba at an angle (crookedly), then "two right angles" (qaimatayn) will not be obtained; instead, one of them will be acute and the other obtuse.

1 Al-Durar al-Hukkam Sharh Ghurar al-Ahkam, Chapter on Conditions of Prayer, Ahmad Kamil al-Kaina, Dar Sa'adat, Beirut, 1/20 2 Radd al-Muhtar, Chapter on Facing the Qibla, Mujtabai Press, Delhi, 1/287

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

यदि काबा को एक रेखा से जोड़ा जा सकता है, तो दोनों ओर लगभग नब्बे डिग्री का विचलन अनुमेय होगा, और वही एक सूक्ष्म, अगोचर मात्रा एक सौ अस्सी डिग्री से कम दिशा तक फैल जाएगी, और वही स्पष्ट पाठ (नस्स) और सर्वसम्मति (इज्मा) का विरोध आवश्यक हो जाएगा। यह अनिवार्य रूप से अभिप्रेत है कि जब तक पवित्र काबा नमाज़ के दौरान इन दोनों रेखाओं के भीतर रहता है, तब तक उस विचलन के भीतर दिशा बनी रहती है। यह तब तक नहीं होगा जब तक कि काबा के ठीक सामने से दोनों ओर 45-45 डिग्री का विचलन न हो। ध्यान की रेखा इस समकोण को द्विभाजित करती है। अतः, यदि विचलन आधे समकोण से अधिक हो जाता है, तो काबा दोनों रेखाओं से बाहर हो जाएगा, जैसा कि स्पष्ट है। (जैसा कि स्पष्ट है। त)। संक्षेप में, परिणाम यह है कि यदि कोई व्यक्ति सीधे काबा के सामने खड़ा है, तो उस बिंदु से निकलने वाली और फैलने वाली रेखाओं के भीतर दोनों ओर विचलन की अनुमति है। अब यह उद्धरण आगामी पांचवें बिंदु की ओर संकेत करेगा, और दोनों ओर पैंतालीस 45, पैंतालीस 45 डिग्री तक का विचलन अनुमेय होगा, और यह स्पष्ट, सही और संदेह रहित है।

चौथा, जो अत्यंत शोध की मांग करता है:

(अरबी पाठ)	**(उर्दू अनुवाद)**
'दुरर' में कहा गया है कि उसकी (काबा की) दिशा यह है कि नमाज़ पढ़ने वाले के माथे से निकलने वाली रेखा काबा से होकर गुजरने वाली रेखा से सीधी रेखा में इस तरह मिले कि दो समकोण प्राप्त हों। यही पहला पहलू है। इसके स्थान के संबंध में राय अलग-अलग थी। अल्लामा शामी ने 'रद अल-मुह्तार' में इसे वास्तविक संरेखण के स्पष्टीकरण के रूप में व्याख्यायित किया, जहाँ उन्होंने पहले अपने शिक्षक के हवाले से 'अल-मेराज' से उल्लेख किया कि शोध का अर्थ यह है कि यदि उसके चेहरे के सामने से क्षितिज की ओर समकोण पर	'दुरर' में कहा गया है कि काबा की दिशा यह है कि नमाजी के माथे से निकलने वाली रेखा काबा के ऊपर से गुजरने वाली रेखा से सीधी इस तरह मिले कि उससे 2 समकोण प्राप्त हो जाएं, और यह पहला कारण है। और इस व्याख्या में मतभेद है; अल्लामा शामी ने 'रद अल-मुह्तार' में इसे वास्तविक दिशा पर आधारित किया है, जहाँ उन्होंने सबसे पहले 'मेराज' के संदर्भ में अपने शेख का उल्लेख किया है कि 'शोध' का अर्थ यह है कि यदि नमाजी के चेहरे की ओर से क्षितिज की ओर समकोण पर एक सीधी रेखा की कल्पना

(अरबी पाठ)

एक रेखा की कल्पना की जाए, तो वह काबा या उसके वायुमंडल के ऊपर से गुजरती है। फिर उन्होंने 'दुरर' के शब्दों को उद्धृत किया और फिर कहा: 'दुरर' में उनका कथन "सीधी रेखा में" उनके कथन "मिलता है" से संबंधित है, क्योंकि यदि वह टेढ़ा होकर उस तक पहुँचता, तो दो समकोण नहीं बनते, बल्कि उनमें से एक न्यूनकोण और दूसरा अधिककोण होता, जैसा कि हमने स्पष्ट किया है। फिर विधि...

(उर्दू अनुवाद)

की जाए, तो वह काबा या काबा की हवा (ऊपर के स्थान) से होकर गुजरे। फिर अल्लामा शामी ने 'दुरर' के कलाम को उद्धृत करते हुए कहा कि 'दुरर' का कथन "सीधी रेखा में" (अला इस्तिकामा) उसके शब्द "मिलता है" (यसिलु) से संबंधित है, क्योंकि यदि वह रेखा टेढ़ी होकर काबा को मिले तो फिर "दो समकोण" (कायमतैन) प्राप्त नहीं होंगे, बल्कि उनमें से एक न्यूनकोण और दूसरा अधिककोण होगा।

1 अल-दुरर अल-हुक्काम शरह गुरर अल-अहकाम, नमाज़ की शर्तों का अध्याय, अहमद कामिल अल-काइना, दार सआदत, बेरूत, 1/20 2 रद अल-मुह्तार, किबला की ओर मुँह करने का विषय, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, 1/287

ایک خط سے کعبہ متصل ہو سکتا ہے تو دونوں طرف تقریباً نوے درجے انحراف جائز ہوا اور وہی ایک خفیف ناقابلِ احساس مقدار کم ایک سو اسی درجے تک جہت پھیل گئی اور وہی مخالفت نص و اجماع لازم آئی یہ لاجرم مراد ہے کہ وقت نماز جب تک کعبہ معظمہ ان دونوں خطوں کے اندر رہے وہاں تک انحراف میں جہت باقی ہے تو یہ نہ ہوگا مگر عین کعبہ سے دونوں طرف ۴۵-۴۵ درجے انحراف تک ٹھیک جہت توجہ کا خط اس زاویہ قائمہ کی تنصیف کرتا ہے تو اگر نصف قائمہ سے زیادہ انحراف ہوا کعبہ دونوں خطوں سے باہر ہو جائے گا کما لایخفی۔ (جیسا کہ ظاہر ہے۔ ت) بالجملہ حاصل یہ کہ آدمی ٹھیک محاذی کعبہ کھڑا ہو اُس وقت جو یہ خطوط نکل کر پھیلیں اُن کے اندر اندر دونوں طرف کو انحراف روا ہے اب یہ عبارت آئندہ پنجم کی طرف راجع ہو جائے گا اور طرفین میں پینتالیس ۴۵ پینتالیس ۴۵ درجے تک انحراف جائز ہو گا اور یہ صاف و صحیح بے غبار ہے۔

چہارم کہ نہایت تحقیق طلب ہے:

قال فی الدرر جهتها ان یصل الخط الخارج من جبین المصلی الی الخط المار بالکعبة علی استقامة بحیث یحصل قائمتان اه وهذا هو الوجه الاول واختلف الانظار فی محله فحمله العلامة الشامی فی ردالمحتار علی بیان المسامتة الحقیقیة حیث ذکر اولا عن المعراج عن شیخه ان معنی التحقیق انه لو فرض خط من تلقاء وجهه علی زاویة قائمة الی الافق یکون مارا علی الکعبة اهوائها ثم نقل کلام الدر ثم قال قوله فی الدرر علی استقامة متعلق بقوله یصل لانه لو وصل الیه معوجالم تحصل قائمتان بل تکون احدهما حادة والاخری منفرجة کما بینا ثم ان الطریقة

دُرر میں کہا ہے کہ کعبہ کی جہت یہ ہے کہ نمازی کی جبین سے نکلنے والا خط کعبہ پر سے گزرنے والے خط سے سیدھا اس طرح ملے کہ اس سے ۲ زاویے قائمے حاصل ہو جائیں اھ، اور یہ پہلی وجہ ہے۔ اور اس محمل میں اختلاف ہے علامہ شامی نے ردالمحتار میں اس کو حقیقی سمت پر محمول کیا ہے، جہاں اس نے اولاً معراج کے حوالے سے ان کے شیخ کا ذکر کیا ہے کہ تحقیقی کا معنی یہ ہے کہ نمازی کے چہرے کی طرف زاویہ قائمہ پر سیدھا خط اُفق کی طرف فرض کیا جائے تو وہ کعبہ یا ہوائے کعبہ پر سے گزرے اھ پھر علامہ شامی نے درر کا کلام نقل کرتے ہوئے کہا کہ درر کا قول "علی استقامة" کا تعلق اس کے قول "یصل" سے متعلق ہے، اس لئے کہ اگر وہ خط ٹیڑھا ہو کر کعبے کو ملے تو پھر "قائمتین" (دو قائمے) حاصل نہ ہوں گے بلکہ ان میں سے ایک حادہ اور دوسرا منفرج ہوگا۔

1 الدرر الحکام شرح غرر الحکام باب شروط الصلوٰة احمد کامل الکائنه دار سعادت بیروت ۱/۲۰ 2 ردالمحتار مبحث فی استقبال القبلة مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱/۲۸۷

Fatawa Razvia Volume Six

'That which is in Al-Ma'raj is the first method mentioned in Al-Durr, except that in Al-Ma'raj, the second line was made to pass over the person praying, as is apparent from its wording. In Al-Durr, it was made to pass over the Kaaba.' Then he illustrated what is in Al-Ma'raj like this:

As we have mentioned, the method in Al-Ma'raj is the first method mentioned in Al-Durr, but with the difference that in Al-Ma'raj, the second line is considered to pass over the person praying, as is understood from its phrasing. And in Al-Durr, it is considered to pass over the Kaaba. After this, Allama Shami (clarifying the difference between the two) drew one diagram according to Al-Ma'raj and another according to Al-Durr: (T)

[Right Diagram Caption]: And that which is in Al-Durr from the first aspect is like this (the first form from Al-Durr). [Inside Diagram]: Kaaba, 90°, 90°, Perpendicular (Qaima), Person praying (Musalli).

[Left Diagram Caption]: Then the illustration of what is in Al-Ma'raj is like this (the Ma'raj form). [Inside Diagram]: Kaaba, 90°, 90°, Perpendicular (Qaima), Person praying in between (Musalli Bayn), Person praying to the North (Musalli Shamal).

'I say, this interpretation might be supported by the fact that the original statement of Imam Hujjat al-Islam, as found in Sharh al-Niqaya, is as follows: The meaning of facing the essence of the Kaaba is for the person praying to stand such that if a straight line were to emerge from between their eyes, its distance from both eyes to the wall of the Kaaba would be equal, resulting in two equal angles on both sides.'

I say that the support for Allama Shami's interpretation of this actual direction is that the original statement of Imam Hujjat al-Islam, which is in Sharh al-Niqaya, says that facing the essence of the Kaaba means the person praying stands such that if a straight line emerges from between both eyes in such a way that its distance from both eyes to the wall of the Kaaba is equal, then two equal angles are formed on both sides of the person praying. After this, they [discussed] the direction of the Kaaba...

1. Radd al-Muhtar, Chapter on Facing the Qibla, printed by Mujtabai, Delhi, 1/287.
2. Sharh al-Niqaya by al-Birjandi, Chapter on Conditions of Prayer, printed by Munshi Nawal Kishore, Lucknow, 1/88.

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

'अल-मेराज' में जो विधि है वह 'अल-दुरर' में वर्णित पहली विधि है, सिवाय इसके कि 'अल-मेराज' में दूसरी रेखा को नमाज़ी के ऊपर से गुजरने वाला माना गया है, जैसा कि इसके शब्दों से समझा जा रहा है। और 'अल-दुरर' में इसे काबा के ऊपर से गुजरने वाली रेखा माना गया है।' फिर उन्होंने 'अल-मेराज' वाली विधि का चित्रण इस प्रकार किया:

जैसा कि हम बयान कर चुके हैं, मेराज वाला तरीका दुरर में वर्णित पहला तरीका है, लेकिन इतना अंतर है कि मेराज में दूसरी रेखा को नमाज़ी पर से गुजरने वाला माना गया है, जैसा कि इसके पाठ से स्पष्ट है। और दुरर में इसे काबा पर से गुजरने वाला माना गया है। इसके बाद अल्लामा शामी ने (दोनों के अंतर को स्पष्ट करते हुए) एक मेराज वाली और दूसरी दुरर वाली तस्वीर बनाई: (त)

[दाएं चित्र का शीर्षक]: और जो 'अल-दुरर' के पहले पहलू से है वह इस प्रकार है (दुरर का पहला रूप)। [चित्र के अंदर]: काबा, 90°, 90°, लंब (क़ायमा), नमाज़ी (मुसल्ली)।

[बाएं चित्र का शीर्षक]: फिर जो 'अल-मेराज' में है उसकी तस्वीर इस प्रकार है (मेराज वाला रूप)। [चित्र के अंदर]: काबा, 90°, 90°, लंब (क़ायमा), बीच का नमाज़ी (मुसल्ली बैन), उत्तर का नमाज़ी (मुसल्ली शमाल)।

'मैं कहता हूँ, और इस व्याख्या का समर्थन इस बात से हो सकता है कि इमाम हुज्जत-उल-इस्लाम के मूल शब्द, जैसा कि 'शरह अल-निकाया' में हैं, इस प्रकार हैं: काबा की दिशा का सामना करने का अर्थ यह है कि नमाज़ी इस प्रकार खड़ा हो कि यदि उसकी दोनों आँखों से एक सीधी रेखा निकले और वह काबा की दीवार तक इस प्रकार पहुँचे कि दोनों आँखों से उसकी दूरी बराबर हो, तो उसके दोनों ओर दो समान कोण बनेंगे।'

मैं कहता हूँ कि अल्लामा शामी की वास्तविक दिशा के बारे में इस व्याख्या का समर्थन इस प्रकार होता है कि इमाम हुज्जत-उल-इस्लाम के मूल शब्द, जो 'शरह अल-निकाया' में हैं, कहते हैं कि काबा के ठीक सामने होने का अर्थ यह है कि नमाज़ी इस प्रकार खड़ा हो कि यदि उसकी दोनों आँखों से एक सीधी रेखा इस तरह निकले कि काबा की दीवार तक उसकी दूरी दोनों आँखों से बराबर हो, जिससे नमाज़ी के दोनों ओर दो समान कोण बन जाएँ। इसके बाद उन्होंने काबा की दिशा का...

1. रद-उल-मुहतार, क़िबला का सामना करने पर चर्चा, मुज्तबाई दिल्ली द्वारा मुद्रित, 1/287।

2. शरह अल-निकाया अल-बिरजंदी, नमाज़ की शर्तों का अध्याय, मुंशी नवल किशोर लखनऊ द्वारा मुद्रित, 1/88।

पृष्ठ 87 / 736

فتاوی رضویہ جلد ششم

التی فی المعراج هي الطریقة الاولی التی فی الدرر الا انه فی المعراج جعل الخط الثانی مارا علی المصلی علی ماهو المتبادر من عبارته وفی الدرر جعله مارا علی الکعبة اھ ثم صور الذی فی المعراج هکذا:

جیسے ہم بیان کر آئے پھر معراج والا طریقہ یہ درر میں ذکر کردہ پہلا طریقہ ہے ، مگر اتنا فرق ہے کہ معراج میں دوسرے خط کو نمازی پر سے گزرنے والا قرار دیا ہے۔ جیسا کہ اسکی عبارت سے سمجھا جا رہا ہے۔ اور درر میں اس کو کعبہ پر سے گزرنے والا قرار دیا ہے اھ اس کے بعد علامہ شامی نے (دونوں کے فرق کو واضح کرتے ہوئے) ایک معراج والی اور دوسری درر والی تصویر بنائی : (ت)

و الذی فی الدرر من الوجه الاول هکذا (درر کی پہلی وجہ والی صورت) کعبہ، قائمہ، ۹۰، ۹۰، ۹۰، مصلی

ثم صور الذی فی المعراج هکذا (معراج والی صورت) کعبہ، ۹۰، ۹۰، قائمہ، مصلی بین، مصلی شمال

قلت وقد یؤیّد هذا المحمل ان اصل الکلام للامام حجة الاسلام وهو کما فی شرح النقایة هکذا، معنی التوجه الی عین الکعبة هو ان یقف المصلی بحیث لو خرج خط مستقیم من عینیه بحیث یتساوی بعده عن العینین الی جدار الکعبة تحصل من جانبیه زاویتان متساویتان اھ

میں کہتا ہوں علامہ شامی کے اس حقیقی سمت پر حمل کی تائید یوں ہوتی ہے کہ امام حجتہ الاسلام کی اصل کلام جو کہ شرح النقایة میں ہے کہ عین کعبہ کی طرف توجہ کا معنی یہ ہے کہ نمازی

یوں کھڑا ہو کہ اگر اسکی دونوں آنکھوں سے ایک سیدھا خط اس طرح نکلے کہ جس کا بعد دونوں آنکھوں سے دیوار کعبہ تک اس طرح مساوی ہو کہ نمازی کی دونوں جانب دو مساوی زاویئے بن جائیں اھ اسکے بعد انہوں نے جہت کعبہ کی

۱۔ رد المحتار مبحث استقبال القبلة مطبوعہ مجتبائی دھلی ۲۸۷/۱ ۲۔ شرح النقایة للبرجندی باب شروط الصلوٰۃ مطبوعہ منشی نولکشور لکھنو ۸۸/۱

Then he mentioned the meaning of turning towards the forehead (jabhah) as we have established in the third statement. The meaning of the direction of turning is the same as we have already mentioned in the third statement.

I say: Firstly, but the commentator (Muhashshi) is bound by this interpretation to take 'jabin' (temple) in the expression of 'al-Durar' to mean 'jabhah' (forehead). And there is no wonder in that, for in 'Taj al-Arus' it is narrated from his teacher that 'jabin' comes with the meaning of 'jabhah' due to the relationship of proximity, as in the statement of Zuhair, as they (the scholars) have explicitly stated in the commentary of his Diwan. Then he mentioned a poem like it by al-Mutanabbi. But the commentator, may Allah Almighty have mercy on him, argued from the occurrence of the word 'jabin' in the expression of 'al-Durar' that it does not necessitate the line emerging from the middle of the forehead, for 'jabin' is its side and they are two 'jabins' as preceded. So this would be contradictory to that. I say: (I say) Firstly, but in this interpretation by the commentator, it would be necessary to take 'jabin' in the expression of 'Durar' to mean 'al-jabhah' (forehead), and there is no harm in this because the author of 'Taj al-Arus' has said with reference to his teacher that 'jabin' is used in the meaning of 'forehead' because there is a close relationship between them. This usage is found in the saying of Zuhair as the commentators of Zuhair's Diwan have clarified. Then they mentioned a similar verse of Mutanabbi. But the commentator, taking the literal meaning of 'jabin' in the text of 'Durar', argued that the word 'jabin' proves that it is not necessary for the line to emerge from the middle of the prayer's forehead because 'jabin' is one side of the forehead, and there are two 'jabins' on its two sides, as mentioned before. Therefore, this argumentative statement of the scholar contradicts the statement that takes 'jabin' in the sense of 'forehead'.

And I say: Secondly, he added in the two illustrations two worshippers on the right and left who are not parallel to the wall facing the central worshipper, and he set its columns in the first illustration upon the one passing by that worshipper breadth-wise. I say: Secondly, in the aforementioned two images, two more worshippers have been placed to the right and left of the middle worshipper parallel to the wall of the

Kaaba, who are not parallel to that wall, and in the first image, the lines of these two worshippers are passing over the middle worshipper breadth-wise...

1. Taj al-Arus min Jawahir al-Qamus, chapter Al-Jim from the gate of Al-Nun, printed by Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut 9/159. Page 88 of 736

फिर उन्होंने माथे (जबहा) की ओर मुख करने का वही अर्थ बताया जो हमने तीसरे कथन में पहले उल्लेख किया है। तवज्जोह की दिशा का अर्थ वही है जिसका हमने तीसरे कथन में उल्लेख किया है।

मैं कहता हूँ: पहले तो, लेकिन टिप्पणीकार (मुहश्शी) इस व्याख्या से बाध्य हैं कि 'अल-दुरर' की इबारत में 'जबीन' को 'जबहा' (माथा) के अर्थ में लिया जाए। और इसमें कोई अचंभा नहीं है, क्योंकि 'ताज अल-अरूस' में उनके उस्ताद के हवाले से आया है कि निकटता के संबंध के कारण 'जबीन', 'जबहा' के अर्थ में आता है, जैसा कि ज़ुहैर के कथन में है, जैसा कि उनके दीवान के व्याख्याकारों ने स्पष्ट किया है। फिर उन्होंने मुतनब्बी का एक ऐसा ही शेर ज़िक्र किया। लेकिन टिप्पणीकार, उन पर अल्लाह की रहमत हो, ने 'अल-दुरर' की इबारत में 'जबीन' शब्द के प्रयोग से यह तर्क दिया है कि इससे यह आवश्यक नहीं होता कि रेखा माथे के बीच से निकले, क्योंकि 'जबीन' उसका किनारा है और जैसा कि पहले गुज़रा, वे दो 'जबीन' हैं। तो यह उसके विपरीत होगा। मैं कहता हूँ: (मैं कह रहा हूँ) पहले, लेकिन टिप्पणीकार विद्वान की इस व्याख्या में 'दुरर' की इबारत में 'जबीन' को 'अल-जबहा' (माथा) के अर्थ में लेना अनिवार्य होगा और इसमें कोई हर्ज नहीं है क्योंकि 'ताज अल-अरूस' वाले ने अपने उस्ताद के हवाले से कहा कि 'जबीन' माथे के अर्थ में इस्तेमाल होता है क्योंकि उन दोनों में करीबी रिश्ता है। ज़ुहैर के कथन में यह इस्तेमाल पाया गया है जैसा कि ज़ुहैर के दीवान के व्याख्याकारों ने स्पष्ट किया है। फिर उन्होंने मुतनब्बी का एक शेर ज़िक्र किया। लेकिन टिप्पणीकार विद्वान ने 'दुरर' की इबारत में 'जबीन' का असली अर्थ लेते हुए इससे यह तर्क दिया है कि शब्द 'जबीन' से यह साबित होता है कि यह ज़रूरी नहीं कि नमाज़ी के माथे के बीच से रेखा निकले क्योंकि 'जबीन' माथे के एक किनारे को कहते हैं, और इसके दोनों तरफ दो 'जबीन' हैं, जैसा कि पहले गुज़र चुका है। लिहाज़ा विद्वान की यह तर्क वाली इबारत, 'जबीन' को 'माथा' के अर्थ में लेने वाली इबारत के विपरीत है।

और मैं कहता हूँ: दूसरी बात यह कि उन्होंने दोनों चित्रों में मध्य नमाज़ी के सामने वाली दीवार के समानांतर नहीं होने वाले दाएँ और बाएँ दो नमाज़ी बढ़ा दिए हैं, और उन्होंने पहले चित्र में इसके स्तंभों को उस नमाज़ी पर से चौड़ाई में गुज़रने वाली रेखा पर स्थापित किया है। मैं कहता हूँ: दूसरा, उपर्युक्त दोनों चित्रों में काबा की दीवार के समानांतर बीच वाले नमाज़ी के दाएँ और बाएँ दो और

नमाज़ी रखे गए हैं जो उस दीवार के समानांतर नहीं हैं और पहले चित्र में इन दोनों नमाज़ियों की रेखाएँ बीच वाले नमाज़ी पर से चौड़ाई में गुज़रने वाली रेखाएँ हैं।

1. ताज अल-अरूस मिन जवाहिर अल-क़ामूस, अध्याय अल-जीम, अनुभाग अन-नून, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत द्वारा प्रकाशित 9/159। पृष्ठ 88/736

ثم ذکر معنی التوجہ الی الجبھۃ بما قدمنا فی القول الثالث۔ طرف توجہ کا معنی وہی ذکر کیا ہے جو ہم قول ثالث میں ذکر کر آئے ہیں۔

اقول: اوّلا لکن یلزم العلامۃ المحشی بھذا الحمل حمل الجبین فی عبارۃ الدرر علی الجبھۃ ولا غرو ففی تاج العروس عن شیخہ قدورد الجبین بمعنی الجبھۃ لعلاقۃ المجاورۃ فی قول زھیر کما صرحوا بہ فی شرح دیوانہ ثم ذکر شعرا مثلہ للمتنبی لکن العلامۃ المحشی رحمۃ اللہ تعالٰی علیہ قد استدل بوقوع لفظ الجبین فی عبارۃ الدرر علی انہ لا یلزم خروج الخط من وسط الجبھۃ فان الجبین طرفھا و ھما جبینان کما تقدم فیکون ھذا مناقضالذاک۔ اقول: (میں کہتا ہوں) اوّلاً لیکن علامہ محشی کے اس حمل میں درر کی عبارت میں جبین کو الجبھۃ (پیشانی) کے معنی میں لینا لازم ہوگا اور اس میں کوئی مضائقہ نہیں کیونکہ تاج العروس والے نے اپنے شیخ کے حوالے سے کہا کہ جبین پیشانی کے معنی میں استعمال ہوتا ہے کیونکہ ان دونوں میں قریب کا تعلق ہے زہیر کے قول میں یہ استعمال پایا گیا ہے جیسا کہ زہیر کے دیوان کے شارحین نے تصریح کی ہے پھر ایسا ہی ایک شعر متنبی کا انھوں نے ذکر کیا۔ لیکن علامہ محشی نے دُرَر کی عبارت میں جبین کا حقیقی معنٰی مراد لیتے ہوئے اس سے یہ استدلال کیا ہے کہ لفظ جبین سے ثابت ہوتا ہے یہ ضروری نہیں کہ خط نمازی کی پیشانی کے وسط سے نکلے کیونکہ جبین، پیشانی کی ایک طرف کو کہتے ہیں، اور اس کے دونوں اطراف دو جبین ہیں، جیسا کہ پہلے گزر چکا ہے، لہذا علامہ کی یہ استدلال والی عبارت جبین کو پیشانی کے معنی میں لینے والی عبارت کے مناقض ہے۔

واقول: ثانیا زاد فی التصویرین مصلین عن یمین و شمال غیر محاذیین للجدار الذی بأزائہ المصلی الوسطانی واقام اعمدتھا فی التصویر الاول علی المار بذاک المصلی عرضا اقول: ثانیاً مذکورہ دونوں

تصویروں میں کعبہ کی دیوار کے متوازی درمیانے نمازی کے دائیں اور بائیں مزید دو نمازی رکھیں گئے ہیں جو اس دیوار کے متوازی نہیں ہے اور پہلی تصویر میں ان دونوں نمازیوں کے خطوط کو درمیانے نمازی پر سے عرض میں گذرنے والے خط

۱ تاج العروس من جواهر القاموس فصل الجيم من باب النون مطبوعہ دار احياء التراث العربی بیروت ۹/ ۱۵۹ Page 88 of 736

Fatawa Ridawiyya Volume Six

(Arabic Text Column): And there is no doubt that they (the lines) do not reach the Kaaba, but rather deviate from it to the right and left as depicted. Indeed, it was a condition in 'Mi'raj' that the line passes through the Kaaba. In the second illustration, he established them on the line passing through its extension to the Kaaba, not falling on the house (Kaaba) itself, but deviating from it as mentioned. And 'Al-Durar' did not mention a line passing through the Kaaba extending from its sides to the horizon; he only intended a line limited to it so that the passage of the forehead line falls on the Kaaba itself, as in 'Mi'raj'. Otherwise, how can there be true 'Musamata' (alignment) while the person praying is secluded from facing it? So, these two people praying have no place in the depiction of the truth (true direction). It seems, may Allah have mercy on him, that he wanted to add a depiction of the approximate (direction) alongside the depiction of the true (direction). It would have been easy for us to assume the additional people praying are shifted by several leagues such that the facing (alignment) is not lost. But, may Allah Almighty have mercy on him, it occurred to his mind that the condition for approximation is that the person stands on that line passing transversally through the central person praying, or we say he stands facing that transverse line passing through the extension of the Kaaba, such that the line of the forehead is perpendicular to...

(Urdu Text Column): ...merged with it, whereas certainly these two lines are not parallel to the Kaaba, but rather fall to the right and left of the Kaaba, as is clear from the illustration (though this is the Mi'raj illustration). While in Mi'raj, it was made a condition for the line to be located on the Kaaba, and in the second illustration, he merged the lines of these two worshippers with the line passing over the Kaaba, which is not exactly on the Kaaba but passes to the right and left of the Kaaba, as previously mentioned. Although 'Durar' did not mention the line passing through the Kaaba and going out towards the horizon from both its sides. He only meant the line that ends at the Kaaba so that the line coming from the worshipper's forehead falls on the Kaaba itself, as in Mi'raj. Otherwise, despite not being parallel to the worshipper, how can it be the true direction? Thus, it became known that both worshippers on the right and left sides have no involvement in the illustration of the true direction. Therefore, it appears that as if the commentator (Mahshi), may Allah's mercy be upon him, has additionally created an illustration for the approximate direction along with the true direction. (For making the approximate direction) it was easy for us to say that besides (the worshipper with the true direction), we assume

two worshippers at a distance of a few leagues in such a way that their facing towards the Kaaba is not lost. But may Allah Almighty have mercy on him, it occurred to the commentator's mind that for the approximate direction, the condition is that some worshipper stands on the line passing across the middle worshipper with true direction, or let's say stands parallel to the transverse line passing over the Kaaba in such a way that his...

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

(अरबी पाठ स्तंभ): और इसमें कोई संदेह नहीं है कि वे (रेखाएं) काबा तक नहीं पहुंचतीं, बल्कि उससे दाएं और बाएं हट जाती हैं जैसा कि चित्रण में दिखाया गया है। वास्तव में, 'मेराज' में यह शर्त थी कि रेखा काबा से होकर गुजरे। दूसरे चित्रण में, उन्होंने उन्हें काबा तक इसके विस्तार में गुजरने वाली रेखा पर स्थापित किया, जो स्वयं घर (काबा) पर नहीं गिरतीं, बल्कि जैसा बताया गया है, उससे विचलित हो जाती हैं। और 'दुरर' ने काबा से होकर उसके किनारों से क्षितिज तक जाने वाली रेखा का उल्लेख नहीं किया; उन्होंने केवल उसी तक सीमित एक रेखा का इरादा किया ताकि माथे की रेखा का गुजरना स्वयं काबा पर हो, जैसा कि 'मेराज' में है। अन्यथा, नमाज़ी के इसके सामने न होने के बावजूद वास्तविक 'मुसामाता' (संरेखण) कैसे हो सकता है? तो, इन दो नमाज़ियों का वास्तविकता (सच्ची दिशा) के चित्रण में कोई स्थान नहीं है। ऐसा लगता है, उन पर अल्लाह की रहमत हो, कि वे वास्तविक चित्रण के साथ-साथ अनुमानित (करीबी) चित्रण भी जोड़ना चाहते थे। हमारे लिए यह कहना आसान होता कि (वास्तविक दिशा वाले नमाज़ी के) अलावा, हम दो नमाज़ियों को कुछ कोस की दूरी पर इस तरह मान लें कि काबा से उनका सामना खत्म न हो। लेकिन अल्लाह ताला उन पर रहमत करे, व्याख्याकार (महशी) के मन में यह बात आई कि करीबी दिशा के लिए यह शर्त है कि कोई नमाज़ी बीच वाले वास्तविक दिशा वाले नमाज़ी पर चौड़ाई में गुजरने वाली रेखा पर खड़ा हो, या यूँ कहें कि काबा से गुजरने वाली आड़ी रेखा के समानांतर इस तरह खड़ा हो कि उसकी...

(उर्दू पाठ स्तंभ): ...के साथ मिलाया, जबकि निश्चित रूप से ये दोनों रेखाएं काबा के समानांतर नहीं होतीं, बल्कि काबा से दाएं और बाएं गिरती हैं जैसा कि चित्रण से स्पष्ट है (हालांकि यह मेराज वाला चित्रण है)। जबकि मेराज में रेखा का काबा पर स्थित होना शर्त तय की गई थी, और दूसरे चित्रण में उन दोनों नमाज़ियों की रेखाओं को काबा के ऊपर से गुजरने वाली रेखा से मिलाया गया जो ठीक काबा पर नहीं बल्कि काबा के दाएं और बाएं से गुजर जाती हैं जैसा कि उल्लेख किया गया। हालांकि 'दुरर' ने काबा से गुजरकर उसके दोनों तरफ से क्षितिज की ओर निकल जाने वाली रेखा का उल्लेख नहीं किया, उन्होंने केवल उस रेखा का आशय लिया जो काबा पर समाप्त होती है ताकि नमाज़ी के माथे से निकलने वाली रेखा का गुजरना स्वयं काबा पर स्थित हो जैसा कि मेराज में है, अन्यथा नमाज़ी के समानांतर न होने के बावजूद वास्तविक दिशा कैसे हो सकती है? अतः, पता चला कि दाएं और बाएं किनारे वाले दोनों नमाज़ियों का वास्तविक दिशा के चित्रण में कोई दखल नहीं है, इसलिए ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे व्याख्याकार (महशी) रहमतुल्लाह अलैह ने वास्तविक दिशा के साथ-साथ

करीबी दिशा का चित्रण भी अतिरिक्त बनाया है। (करीबी दिशा बनाने के लिए) हमें यह कहना आसान था कि (वास्तविक दिशा वाले नमाज़ी के) अतिरिक्त हम दो नमाज़ियों को उससे कुछ कोस की दूरी पर इस तरह मान लें कि काबा से उनका सामना समाप्त न हो। लेकिन अल्लाह ताला उन पर रहमत करे, व्याख्याकार के मन में यह बात आई कि करीबी दिशा के लिए यह शर्त है कि बीच वाले वास्तविक दिशा वाले नमाज़ी पर आड़ी गुजरने वाली रेखा पर कोई नमाज़ी खड़ा हो या यूँ कहें कि काबा के ऊपर से गुजरने वाली आड़ी रेखा के समानांतर इस तरह खड़ा हो कि उसकी...

पृष्ठ 89/736

فتاوی رضویہ جلد ششم

(عربی کالم): ولاشك انهما لا ينتهيان الى الكعبة بل يتزوران عنها ذات اليمين و ذات الشمال كما صور وانما كان شرط في المعراج ان يمر الخط بالكعبة، وفی التصوير الثانی اقامهما على الخط المار في امتداده بالكعبة غير واقعين على نفس البيت بل متزا ورين عنها كما مرولم يرم الدرر خطا يمر على الكعبة ممتدا عن جنبيها الى الافق انما اراد خطا مقتصرا عليها ليقع مرور خط الجبين على نفس الكعبة كما فی المعراج والاكيف تكون مسامتة حقيقية مع كون المصلی بمعزل عن محاذاتها فهذان المصليان لا مدخل لهما في تصوير الحقيقة وكانه رحمة الله عليه اراد ان يزيد مع تصوير الحقيقية تصوير التقريبية وقد كان سهلا علينا ان نفرض المصلين المزيدين منتقلين بعدة فراسخ بحيث لاتزول المقابلة لكنه رحمه الله تعالى سبق الى خاطره ان الشرط في التقريب ان يقف المصلی على ذلك الخط المار عرضا بالمصلی الوسطانی او نقول يقوم بحذاء ذلك الخط العرضی المار فی امتداده بالكعبة بحيث يكون خط جبهة عمودا على

(اردو کالم): پر ملایا جبکہ یقینا یہ دونوں خطوط کعبہ کے متوازی نہیں ہوتے بلکہ کعبہ سے دائیں اور بائیں گرتے ہیں جیسا کہ تصویر سے واضح ہے (حالانکہ یہ تصویر معراج والی ہے) جبکہ معراج میں خط کا کعبہ پر واقع ہونا شرط قرار دیا گیا ہے، اور دوسری تصویر میں ان دونوں نمازیوں کے خطوط کو کعبہ پر سے گزرنے والے خط سے ملا یا جو عین کعبہ پر نہیں بلکہ کعبہ سے دائیں اور بائیں گزر جاتے ہیں جیسا کہ گزرا حالانکہ دُرَر نے کعبہ سے گزر کر اس کے دونوں جانب سے افق کی طرف نکل جانے والے خط کو ذکر نہیں کیا اس نے صرف وہ خط مراد لیا ہے جو کعبہ پر ختم ہوتا کہ نمازی کی جبین سے نکلنے والے خط کا گزر نفس کعبہ پر واقع ہو جیسا کہ معراج میں ہے، ورنہ نمازی کے متوازی نہ ہونے کے باوجود حقیقی سمت کیسے ہو

سکتی ہے، پس معلوم ہوا کہ دائیں اور بائیں جانب والے دونوں نمازیوں کا حقیقی سمت کی تصویر میں کوئی دخل نہیں، اس لئے معلوم ہوتا ہے کہ گویا محشی رحمہ اللہ تعالیٰ علیہ نے سمت حقیقی کے ساتھ ساتھ قریبی سمت کی تصویر بھی زائد بنائی ہے، (قریبی سمت بنانے کے لئے) ہمیں یہ کہہ دینا آسان تھا کہ (حقیقی سمت والے نمازی) کے علاوہ ہم دو نمازی اس سے چند فرسخ کے فاصلے پر اس طرح فرض کرلیں کہ کعبہ سے ان کا تقابل زائل نہ ہو۔ لیکن اللہ تعالیٰ ان پر رحم کرے محشی رحمہ اللہ تعالیٰ علیہ کے دل میں یہ بات آئی کہ قریبی سمت کے لئے یہ شرط ہے کہ درمیان حقیقی سمت والے نمازی پر عرض میں گزرنے والے خط پر کوئی نمازی کھڑا ہو یا یوں کہیں کہ کعبہ پر سے گزرنے والے عرضی خط کے متوازی یوں کھڑا ہو کہ اس کی

Fatawa Razawiyya Volume 6

(Right Column - Arabic Text): One of them, meaning in the illustration, and both together in the estimation. After verifying this condition, there is no estimation of distance. So let them both maintain their direction and move as they wish. Therefore, the vertical line standing on them or towards which the two worshipers face is unlimited, as is claimed and as its explicit text will follow. These are two great slips that must be warned about, for the matter is religion. God forbid! The occurrence of some slips of the pen does not disparage scholars, especially such an investigator whose noble investigations have illuminated the Easts and Wests of the earth with their light. Thousands like me are guests at the table of the bounties of his pleasant benefits. May Allah Almighty reward him with the reward of honor and generosity. May He gather us and him in the Abode of Peace (Paradise) by the grace of His mercy upon him and upon all the noble scholars, upon their master and protector, and upon them and upon us be prayers and peace. Ameen, Ameen! O Originator of the heavens and the earth! O Lord of Majesty and Honor! So I mention in this context what occurred to the commentators from illusion and ambiguity in understanding the speech of the precise and great scholar Al-Ala'i, so that the purpose becomes clear.

(Left Column - Urdu Translation/Commentary): The line emerging from the forehead is vertical, whether it passes through the worshiper or the Kaaba on a single line, i.e., formed in the illustration, or becomes vertical on both hypothetically. After this condition is met, there is no need to assume distance; those two worshipers should simply keep their direction. They can move right or left as much as they want. And the line upon which the line is established or towards which both worshipers are facing, in the opinion of the commentator (May Allah have mercy on him), has no limit (provided they stay on those lines), as his own text will show. Whereas (the stated condition of near direction and subsequently keeping the distance of the mentioned lines unlimited, allowing both worshipers to move on those lines at will) these are two major errors. Warning about them is necessary because it is a religious matter. God forbid! Mistakes of the pen do not suit scholars, especially this investigator whose light of valuable research illuminates the East and West of the earth, and thousands like me are gleaners from the table of his unparalleled and important benefits. May Allah Almighty grant him a reward of honor and respect. May He gather us and him in Paradise by His grace of mercy upon him and all the noble scholars, and upon their Lord and Master, and upon them and us be mercy and

peace, Ameen Ameen! O Creator of the heavens and the earth from the beginning! O Lord of Majesty and Honor! In the context of this statement, I will mention the misunderstanding and ambiguity that occurred to the annotators in understanding the words of Allama Al-Ala'i, so that the objective becomes clear.

फ़तावा रज़विया जिल्द 6

(दायाँ कॉलम - अरबी पाठ): उनमें से एक, यानी चित्रण में, और दोनों एक साथ आकलन में। इस शर्त की पुष्टि के बाद, दूरी का कोई आकलन नहीं है। इसलिए वे दोनों अपनी दिशा बनाए रखें और जहाँ चाहें वहाँ हट जाएँ। अत; उनके ऊपर खड़ी रेखा या जिसकी ओर दोनों नमाज़ी मुखातिब हैं, वह असीमित है, जैसा कि दावा किया गया है और जैसा कि उसका स्पष्ट पाठ आगे आएगा। ये दो बड़ी चूकें हैं जिनके बारे में चेतावनी दी जानी चाहिए, क्योंकि मामला धर्म का है। खुदा न करे! कलम की कुछ चूकों का होना विद्वानों को कमतर नहीं करता, विशेष रूप से ऐसे अन्वेषक को जिनके महान शोध के प्रकाश ने पृथ्वी के पूर्व और पश्चिम को आलोकित किया है। मेरे जैसे हजारों लोग उनकी सुखद लाभों की नेमतों के दस्तरख्वान के मेहमान हैं। अल्लाह तआला उन्हें सम्मान और उदारता का प्रतिफल प्रदान करे। वह हमें और उन्हें अपनी दया के अनुग्रह से शांति के घर (स्वर्ग) में एकत्रित करे, जो उन पर और सभी सम्मानित विद्वानों पर हो, और उनके स्वामी और रक्षक पर और उन पर और हम पर कृपा और शांति हो। आमीन, आमीन! हे आकाशों और पृथ्वी के सृष्टिकर्ता! हे महिमा और सम्मान के स्वामी! तो मैं इस संदर्भ में वह उल्लेख करूँगा जो टीकाकारों को सटीक और महान विद्वान अल-अलाई के शब्दों को समझने में भ्रम और अस्पष्टता के कारण हुआ है, ताकि उद्देश्य स्पष्ट हो जाए।

(बायाँ कॉलम - उर्दू अनुवाद/टिप्पणी): माथे से निकलने वाली रेखा लंबवत है, चाहे वह नमाज़ी या काबा से एक ही रेखा पर गुज़रे, यानी चित्रण में बनी हो, या काल्पनिक रूप से दोनों पर लंबवत बने। इस शर्त के पूरा होने के बाद, दूरी मानने की कोई आवश्यकता नहीं है; वे दोनों नमाज़ी बस अपनी दिशा सुरक्षित रखें। वे जितना चाहें दाएँ या बाएँ हट सकते हैं। और जिस रेखा पर रेखा स्थापित है या जिसकी ओर दोनों नमाज़ी मुखातिब हैं, टीकाकार (अल्लाह उन पर दया करे) की राय में, उसकी कोई सीमा नहीं है (बशर्ते वे उन रेखाओं पर बने रहें), जैसा कि स्वयं उनका पाठ दिखाएगा। जबकि (निकट दिशा की बताई गई शर्त और बाद में उल्लेखित रेखाओं की दूरी को असीमित रखकर दोनों नमाज़ियों का उन रेखाओं पर इच्छानुसार हटना) ये दो बड़ी गलतियाँ हैं। उनके बारे में चेतावनी देना आवश्यक है क्योंकि यह धार्मिक मामला है। खुदा न करे! कलम की गलतियाँ विद्वानों को शोभा नहीं देतीं, विशेष रूप से इस शोधकर्ता को जिनके मूल्यवान शोध का प्रकाश पृथ्वी के पूर्व और पश्चिम को रोशन करता है, और मेरे जैसे हज़ारों लोग उनके बेमिसाल और महत्वपूर्ण लाभों के दस्तरख्वान से लाभान्वित होने वाले हैं। अल्लाह तआला उन्हें सम्मान और सत्कार का प्रतिफल दे। वह हमें और उन्हें

स्वर्ग में अपनी दया के अनुग्रह से एकत्रित करे जो उन पर और सभी महान विद्वानों पर हो, और उनके स्वामी और आका पर और उन पर और हम पर दया और शांति हो, आमीन आमीन! हे आकाशों और पृथ्वी को आदि में पैदा करने वाले! हे महिमा और सम्मान के स्वामी! इस कथन के संदर्भ में, मैं अल्लामा अलाई के शब्दों को समझने में टिप्पणीकारों को हुए भ्रम और अस्पष्टता का उल्लेख करूँगा ताकि उद्देश्य स्पष्ट हो जाए।

पेज 90 ऑफ़ 736

(دایاں کالم - عربی متن): احدھما ای فی التصویر و علیھما جمیعاً فی التقدیر و بعد تحقیق ھذا الشرط لا تقدیر بمسافۃ فلیحفظا جھتھما و ینتقلا ما بدالھما فاذن یکون الخط القائم علیھما او الیہ المصلیان غیر محدود علی ما زعم کما یا تی تنصیصہ وھاتان زلتان عظیمتان یجب التنبہ لھما فان الامر دین وحاش للہ لایزری بالعلماء وقوع بعض زلات من اقلامھم لا سیما مثل ھذا المحقق الذی استنار مشارق الارض ومغاربھا بنور تحقیقاتہ السنیۃ وتطفل الوف مثلی علی موائد عوائد فوائدہ الھنیئۃ جزاہ اللہ تعالیٰ جزاء العز والاکرام جمع بیننا وبینہ فی دار السلام بفضل رحمتہ بہ وبسائر العلماء الکرام علی سیدھم ومولاھم وعلیھم وعلینا الصلوۃ والاسلام اٰمین اٰمین یا بدیع السموات والارض یا ذا الجلال والاکرام فانا اذکر فی سیاق ذلک ما عرض للمحشین من الوھم والایھام فی فھم کلام المدقق العلائی العلام لیتضح

(بایاں کالم - اردو ترجمہ و تشریح): پیشانی سے نکلنے والا خط عمود ہے خواہ وہ نمازی یا کعبہ پر سے گزرنے والے ایک خط پر یعنی تصویر میں بنے، یا ان دونوں پر عمود بنے فرضی طور پر ، اس شرط کے پائے جانے کے بعد مسافت فرض کرنے کی ضرورت نہیں، وہ دونوں نمازی اپنی جہت کو محفوظ رکھیں اور بس ، دائیں یا بائیں جتنا چاہیں وہ منتقل ہو جائیں، اور جس پر خط قائم ہے یا جس خط کی طرف دونوں نمازی متوجہ ہیں اسکی محشی رحمتہ اللہ تعالیٰ کے خیال میں کوئی حد نہیں (بشرطیکہ وہ ان خطوط پر قائم رہیں) جیسا کہ خود ان کی نص اس پر آئے گی حالانکہ (قریبی سمت کی بیان کردہ شرط اور اسکے بعد مذکورہ خطوط کی مسافت کو غیر محدود رکھ کر دونوں نمازیوں کا ان خطوط پر حسب خواہش منتقل ہونا) یہ دونوں عظیم غلطیاں ہیں ان پر تنبیہ ضروری ہے ، کیونکہ یہ دینی معاملہ ہے ، حاش للہ ! علماء کو ان قلموں کی غلطیاں زیب نہیں دیتیں، خصوصاً یہ محقق جس کی قیمتی تحقیقات کے نور سے زمین کے مشرق و مغرب منور ہو

رہے ہیں اور مجھ جیسے ہزاروں لوگ اس کے بے مثل اور اہم فوائد کے دستر خوان کے خوشہ چیں ہیں، اللہ تعالیٰ اس کو عزت و اکرام کی جزا عطا فرمائے ، ہمیں اور اسے جنت میں جمع فرمائے اپنی رحمت کے فضل سے جو ان پر اور تمام علماء کرام پر ہو، اور ان سب کے مولیٰ و آقا پر اور ان پر اور ہم پر رحمت و سلام ہو، آمین آمین ! اے آسمانوں اور زمینوں کو ابتداء پیدا کرنے والے ! یا ذالجلال والاکرام ! میں تو اس بیان کے سیاق میں علامہ علائی کے کلام کو سمجھنے میں حاشیہ لکھنے والوں کو جو وہم اور ابہام واقع ہوا ہے کو ذکر کروں گا تاکہ مقصود واضح

Fatawa Rizvia Volume VI

[Left Column - Arabic] ...the goal, and the moon of correctness shines from beneath the clouds. Know that the expert, the scrutinizer, whose like the later generations have rarely seen—I mean Allama Alauddin Muhammad al-Haskafi, may Allah Almighty treat him with His full grace and kindness—has cited here from 'al-Manah' a statement which is concise in structure and hidden in meaning. So he said: Attaining its direction is that some part of the surface of the face remains aligned with the Kaaba or its atmosphere, such that a line is assumed from in front of the face of one truly facing it in some lands towards the Kaaba, and another line intersects it at two right angles on the right and left. [Manah] I say: This is the meaning of 'At-Tayamun' and 'At-Tayasur' in the phrase of 'al-Durr', so observe. [End] I say: Allama al-Ghazzi intended by 'from in front of the face of one facing it truly in some lands' any city, so he expressed this indefiniteness through the indefiniteness of 'some' (ba'dh). If he had said like the author of 'al-Mi'raj' 'in this land', meaning the land whose direction is sought, it would have been better. Allama Sayyid Ahmad al-Misri al-Tahtawi said in his marginalia on the statement...

[Right Column - Urdu] ...may be possible and the bright moon of correctness may appear from under the clouds. Let it be clear that the expert and meticulous scholar, whose like the later generations have rarely seen—I mean Allama Alauddin Muhammad al-Haskafi, may Allah Almighty treat him with His full grace and kindness—has quoted a statement here from 'Manah' which is brief and its meaning is hidden. So he said that the meaning of attaining the direction of the Kaaba is that some part of the surface of the worshiper's face becomes in the direction of the Kaaba or its atmosphere in such a way that a straight line emerges from the face of one truly facing the Kaaba towards the horizon at a right angle such that in some cities it passes over the Kaaba, and another line is assumed that intersects the first line, forming two right angles on the right and left sides. [Manah]. I say that this is the meaning of 'At-Tayamun' and 'At-Tayasur' mentioned in 'Durr'; reflect on it. [End] I say: (I say) Allama al-Ghazzi, (in his statement) 'from in front of the face of one facing it truly in some lands', has intended any city by 'some lands', and has expressed this indefiniteness with the indefiniteness of the word 'ba'dh' (some), and if like the statement of 'Mi'raj' he had also said 'this land' and meant the area whose direction was required, it would have been better. Allama Sayyid Ahmad al-Misri al-Tahtawi, while explaining (Allama al-Haskafi's text), said that its...

[Footnote] 1. Durr al-Mukhtar, Chapter on Conditions of Prayer, printed by Mujtabai Delhi, 1/68

फ़तावा रिज़विया, जिल्द 6

[बायाँ कॉलम - अरबी] ...लक्ष्य, और सचाई का चाँद बादलों के नीचे से चमकता है। जान लें कि वह विशेषज्ञ, सूक्ष्म अन्वेषक, जिनकी मिसाल बाद के लोगों में ज़माने ने कम ही देखी हो - मेरा मतलब महान विद्वान अलाउद्दीन मोहम्मद हसकफी से है, अल्लाह तआला उनके साथ अपने पूर्ण अनुग्रह और कृपा का व्यवहार करे - उन्होंने यहाँ 'अल-मनह' से एक ऐसा कथन उद्धृत किया है जो बनावट में संक्षिप्त और अर्थ में छिपा हुआ है। तो उन्होंने कहा: उसकी दिशा प्राप्त करना यह है कि चेहरे की सतह का कुछ हिस्सा काबा या उसके वातावरण के सामने रहे, इस तरह कि कुछ देशों में काबा की ओर वास्तविक रूप से सामना करने वाले के चेहरे के सामने से एक रेखा कल्पित की जाए, और दूसरी रेखा उसे दाएँ और बाएँ दो समकोणों पर काटे। [मनह] मैं कहता हूँ: 'अल-दुर' की इबारत में 'अत-तयामुन' और 'अत-तयासुर' का यही अर्थ है, तो गौर करें। [समाप्त] मैं कहता हूँ: अल्लामा अल-ग़ज़्ज़ी ने 'कुछ देशों में वास्तविक रूप से सामना करने वाले के चेहरे के सामने से' में 'कुछ देशों' (बा'ज़ अल-बिलाद) से किसी भी शहर को मुराद लिया है, और इस अनिश्चितता को 'बा'ज़' शब्द की अनिश्चितता से व्यक्त किया है। यदि वह 'अल-मेराज' के लेखक की तरह 'इस देश में' कहते, जिससे वह क्षेत्र मुराद होता जिसकी दिशा वांछित है, तो यह बेहतर होता। अल्लामा सैयद अहमद अल-मिसरी अल-तहतावी ने (अल्लामा हसकफी के) कथन पर अपने हाशिये में कहा कि...

[दायाँ कॉलम - उर्दू] ...संभव हो सके और बादलों के नीचे से सचाई का चमकता चाँद प्रकट हो सके। स्पष्ट हो कि वह विशेषज्ञ, सूक्ष्म अन्वेषक जिनकी मिसाल बाद के लोगों में ज़माने ने नहीं पाई - मेरी मुराद अल्लामा अलाउद्दीन मोहम्मद हसकफी हैं - अल्लाह तआला उनके साथ अपने पूर्ण अनुग्रह और कृपा का मामला फरमाए - उन्होंने यहाँ 'मनह' से एक ऐसी बात नक़ल की है जो संक्षिप्त है और उसका अर्थ छिपा हुआ है। तो कहा कि काबा की दिशा पाने का अर्थ यह है कि नमाज़ी के चेहरे की सतह का कोई हिस्सा काबा या उसकी हवा की दिशा में इस तरह हो जाए कि काबा का वास्तविक सामना करने वाले के चेहरे से क्षितिज की ओर एक सीधी रेखा समकोण पर इस तरह निकले कि कुछ देशों में वह काबा के ऊपर से गुज़रे, और एक दूसरी रेखा इस तरह कल्पित की जाए जो पहली रेखा को काटते हुए दाएँ और बाएँ तरफ दो समकोण बनाए। [मनह]। मैं कहता हूँ कि 'दुर' में वर्णित 'अत-तयामुन' और 'अत-तयासुर' का यही अर्थ है; गौर करें। [समाप्त] मैं कहता हूँ: (मैं कहता हूँ) अल्लामा ग़ज़्ज़ी ने (अपनी इबारत) 'कुछ देशों में वास्तविक रूप से सामना करने वाले के चेहरे के सामने से' में 'कुछ देशों' से कोई भी शहर मुराद लिया है, और इस अनिश्चितता को 'बा'ज़' शब्द की

अनिश्चितता से व्यक्त किया है, और अगर मेराज के कौल की तरह यह भी 'हाज़ा अल-बिलाद' (यह शहर) कहकर वह इलाका मुराद लेते जिसकी सिम्त मक़सूद होती तो बेहतर होता। अल्लामा सैयद अहमद मिसरी तहतावी ने (अल्लामा हसकफी की इबारत की) तशरीह करते हुए कहा कि इसका...

[पाद टिप्पणी] 1. दुर्र-ए-मुख्तार, नमाज़ की शर्तों का अध्याय, मुजतबाई प्रेस दिल्ली, 1/68

पृष्ठ 91 का 736

[بائیں کالم کا متن - عربی] المرام وينجلي بدر السداد من تحت الغمام فاعلم ان الجهبذ المدقق الذي قلما اكتحل عين الزمان بمثله في الاخرين اعنى العلامة علاء الدين محمد الحصكفي عامله الله تعالىٰ بلطفه الوفى اثر ههنا عن المنح كلاماً قصر مبناه واستتر معناه فقال اصابة جهتها بأن يبقى شيئ من سطح الوجه مسامتاً للكعبة اولهواء هابأن يفرض من تلقاء وجه مستقبلها حقيقة في بعض البلاد خط على الكعبة وخط أخر يقطعه على زاويتين قائمتين يمنة و يسرة منح قلت فهذا معنى التيامن والتيا سر فى عبارة الدرر فتبصر اهـ اقول: اراد العلامة الغزى من تلقاء وجه مستقبلها حقيقة في اى بلد كان فعبر هذا التنكير بتنكير بعض ولوقال كقول المعراج في هذا البلد اى البلد والمطلوب الجهة لكان اولى ، قال العلامة السيد احمد المصرى الطحطاوى فى حاشيته قوله

[دائیں کالم کا متن - اردو] ہو سکے اور بادل کے نیچے سے درستگی کا روشن چاند نمودار ہوسکے۔ واضح ہو کہ وہ ماہر، مدقق جن کی مثل متاخرین میں زمانے نے نہ پائی، میری مراد علامہ علاء الدین محمد حصکفی ہیں، اُن سے اللہ تعالیٰ اپنے کامل لطف و کرم کا معاملہ فرمائے، نے یہاں پر منح سے ایک ایسی کلام نقل کی جو مختصر ہے اور اسکا معنی مخفی ہے۔ پس کہا کہ جہتِ کعبہ کو پانے کا مطلب یہ ہے کہ نمازی کے چہرے کی سطح کا کوئی حصہ کعبہ یا اسکی فضا کی سمت میں اس طرح ہو جائے کہ کعبہ کا حقیقی استقبال کرنے والے کے چہرہ سے ایک سیدھا خط زاویہ قائمہ پر افق کی طرف اس طرح نکلے کہ بعض بلاد میں وہ کعبہ پر سے گزرے اور ایک دوسرا خط اس طرح فرض کیا جائے جو پہلے خط کو قطع کرتے ہوئے دو زاویے قائمے دائیں اور بائیں طرف بنائے منح۔ میں کہتا ہوں کہ دُر میں مذکور التیامن والتیاسر کا یہی معنی ہے غور کر،اھ اقول: (میں کہتا ہوں) علامہ غزی (اپنی عبارت) "من تلقاء وجہ مستقبلہا حقیقۃ فی بعض

البلاد" میں "بعض البلاد" سے کوئی بھی بلد ہو ، مراد لیا ہے اور اس تنکیر کو لفظ "بعض کی تنکیر " سے تعبیر کیا ہے، اور اگر معراج کے قول کی طرح یہ بھی "ہذا البلاد" کہہ کر وہ علاقہ مراد لیتے جس کی جہت مطلوب ہوتی تو بہتر ہوتا۔ علامہ سید احمد مصری الطحطاوی نے (علامہ حصکفی کی عبارت کی) تشریح کرتے ہوئے کہا کہ اس کا

[حاشیہ] 1 در مختار باب شروط الصلوۃ مطبوعہ مجتبائی دہلی ۶۸/۱

Fatawa Ridawiyya - Volume Six

Left Column (Arabic Text): Minah abbreviated its wording, which is: If a line is assumed from the front of the face of the one truly facing the Kaaba in some lands, and another line intersects it at two right angles on the right and left sides of the one facing, that facing will not cease by moving to the right or left on that line for many leagues. For this reason, scholars have established the Qibla of one city, two cities, or many cities on a single direction. [End of quote] (His saying: I said this means etc.) is not as he understood it, for the one moving right or left in his wording is the line, whereas in the wording of 'Ad-Durr' it is the person, etc. And he attributed it to the scholar Sayyid Ibrahim al-Halabi, the annotator of 'Ad-Durr'. The scholar Muhammad ash-Shami said: Regarding this, the wording of 'Al-Minah' is the summary of what we previously presented from 'Al-Mi'raj'. And it does not contain the phrase 'passing over the Kaaba'; rather, it is mentioned in the description of 'Ad-Durr'. It is possible that it refers to a line passing longitudinally rather than latitudinally. Thus, it would be the line emanating from the forehead of the worshipper, and the other line that intersects it is the one passing latitudinally across the worshipper or across the Kaaba.

Right Column (Urdu Text): Regarding the quote of "Minah": The wording of 'Minah' referred to by the scholar is detailed, which the scholar Al-Haskafi wrote in an abbreviated form. Its wording is as follows: In some lands, a line is assumed from the forehead of a person truly facing the Kaaba, and another line is assumed to the right and left of the one facing the Kaaba, which intersects the first line at two right angles and extends for several leagues in such a way that for someone moving several leagues to the right or left on this line, their alignment with the Kaaba is not lost. Based on this, scholars have established the Qiblas of several lands in the same direction. The scholar Al-Haskafi's statement "I said this means etc." - this understanding of the scholar is not correct because it appears from his wording that the thing moving right and left is the line, whereas in the wording of 'Durr', it is the person, etc. Allama Tahtawi has attributed this statement to the annotator of 'Durr', Allama Sayyid Ibrahim al-Halabi. On Al-Haskafi's wording, Allama Shami said that the wording of 'Minah' is a summary of the wording from 'Al-Mi'raj' (which we have already mentioned), although there is no mention of "passing over the Kaaba" (a line passing over the Kaaba) in 'Mi'raj'; rather, it is mentioned in the depiction of 'Durr'. It is possible that instead of width, a line passing through length is intended, then it would be one line coming out from the worshipper's forehead and another line that

intersects the first and passes through the width of the worshipper or passes over the Kaaba.

Footnote: (1) Hashiyat at-Tahtawi 'ala ad-Durr al-Mukhtar, Chapter on the Conditions of Prayer, published by Dar al-Ma'rifah Beirut, 1/419. Page 92 of 736

बायां कॉलम (अरबी पाठ): "मिनह" ने इसके शब्दों को संक्षिप्त किया है, जो है: यदि कुछ देशों में काबा की ओर वास्तविक रूप से मुंह करने वाले के चेहरे के सामने से एक रेखा मान ली जाए, और एक अन्य रेखा उसे नमाज़ी के दाएं और बाएं ओर दो समकोणों पर काटती हो, तो उस रेखा पर कई कोस तक दाएं या बाएं जाने से वह मुखाभिमुखता (facing) समाप्त नहीं होगी। इसी कारण से, विद्वानों ने एक शहर, दो शहरों या कई शहरों के क़िबला को एक ही दिशा पर निर्धारित किया है। [उद्धरण समाप्त] (उनका कथन: मैंने कहा कि इसका अर्थ है आदि) वैसा नहीं है जैसा उन्होंने समझा, क्योंकि उनके शब्दों में दाएं या बाएं मुड़ने वाली चीज़ रेखा है, जबकि 'अद-दुर्र' के शब्दों में वह व्यक्ति है, आदि। और उन्होंने इसे 'अद-दुर्र' के टिप्पणीकार अल्लामा सैय्यद इब्राहिम अल-हलबी से जोड़ा है। अल्लामा मुहम्मद अल-शामी ने कहा: इसके बारे में 'अल-मिनह' के शब्द वही हैं जो हमने 'अल-मेराज' से पहले प्रस्तुत किए थे। और इसमें "काबा के ऊपर से गुजरने वाली" वाक्यांश नहीं है; बल्कि यह 'अद-दुर्र' के वर्णन में उल्लेखित है। संभव है कि इससे चौड़ाई के बजाय लंबाई में गुजरने वाली रेखा अभिप्रेत हो, तो यह नमाज़ी के माथे से निकलने वाली रेखा होगी और दूसरी रेखा जो इसे काटती है वह नमाज़ी की चौड़ाई (عرض) से या काबा के ऊपर से गुजरने वाली होगी।

दायां कॉलम (उर्दू पाठ): "मिनह" का कथन: अल्लामा ने 'मिनह' के जिस उद्धरण का हवाला दिया है वह विस्तृत है जिसे अल्लामा हसकफ़ी ने संक्षिप्त करके लिखा है। इसका विवरण इस प्रकार है: कुछ देशों में काबा की ओर वास्तविक रूप से मुख करने वाले की पेशानी (माथे) से एक रेखा मान ली जाए, और काबा का सामना करने वाले के दाएं और बाएं एक और रेखा मान ली जाए जो पहली रेखा को दो समकोणों पर काटते हुए कई कोस तक इस प्रकार लंबी हो कि उस रेखा पर कई कोस तक दाएं या बाएं जाने वाले का काबा से सामना समाप्त न हो। इसी आधार पर विद्वानों ने एक ही दिशा पर कई देशों के क़िबला निर्धारित किए। अल्लामा हसकफ़ी का कथन "मैंने कहा कि इसका अर्थ है आदि" - अल्लामा की यह समझ सही नहीं है क्योंकि उनके शब्दों से पता चलता है कि दाएं और बाएं होने वाली चीज़ रेखा है, जबकि 'दुर्र' के शब्दों में वह व्यक्ति है आदि। अल्लामा तहतावी ने इस कथन को 'मुहश्शी दुर्र' अल्लामा सैय्यद इब्राहिम अल-हलबी की ओर श्रेय दिया है। अल्लामा हसकफ़ी के शब्दों पर अल्लामा शामी ने कहा कि 'मिनह' के शब्द 'अल-मेराज' के शब्दों (जिसका हम उल्लेख कर आए हैं) का सारांश है, हालांकि 'मेराज' में "मारन अलल काबा" (काबा पर से गुजरने वाली रेखा) का ज़िक्र नहीं है, बल्कि यह 'दुर्र' के चित्रण में वर्णित है। मुमकिन है इससे चौड़ाई के बजाय लंबाई में

गुजरने वाली रेखा मुराद हो, तो यह एक नमाज़ी की पेशानी से निकलने वाली रेखा और दूसरी रेखा जो पहले को काटकर वह नमाज़ी पर से चौड़ाई में गुजरने वाली होगी या काबा पर गुजरने वाली होगी।

फुटनोट: (1) हाशियत अत-तहतावी अल अद-दुर्र अल-मुख्तार, नमाज़ की शर्तों का अध्याय, दारुल मारिफ़ा बेरूत द्वारा प्रकाशित, 1/419 पृष्ठ 92/736

منح اختصر عبارتها، وهی فلو فرض خط من تلقاء وجه المستقبل للكعبة على التحقيق فی بعض البلاد وخط آخر يقطعه على زاويتين قائمتين من جانب يمين المستقبل وشماله لاتزول تلك المقابلة بالانتقال الی اليمين والشمال على ذلك الخط بفراسخ كثيرة ولهذا وضع العلماء قبلة بلد وبلدين وبلاد على سمت واحد۔ اه (قوله قلت فهذا معنى الخ) ليس كما فهمه فان المتيامن و المتياسر في عبارته هو الخط وفی عبارة الدر الشخص (1) الخ وعزاه للعلامة السيد ابراهيم الحلبي محشی الدرر، وقال السيد العلامة محمد الشامي، فيه ان عبارة المنح هی حاصل ماقدمناه عن المعراج وليس فيها قوله مارا على الكعبة بل هو المذكور في صورة الدرر ويمكن ان يراد انه مار عليها طولا لا عرضا، فيكون هو الخط الخارج من جبين المصلی والخط الاخر الذی يقطعه هو المار عرضا على المصلی او على الكعبة

قول "منح" علامہ نے منح کی جس عبارت کا حوالہ دیا ہے وہ عبارت مفصل ہے جس کو علامہ حصکفی نے مختصر کر کے لکھا ہے اسکی عبارت یوں ہے بعض بلاد میں کعبہ کی طرف تحقیقی طور پر چہرہ کرنے والے کی پیشانی سے ایک خط فرض کیا جائے، اور کعبہ کا استقبال کرنے والے کے دائیں و بائیں ایک اور خط فرض کیا جائے جو پہلے خط کو دو قائمہ زاویوں پر قطع کرتے ہوئے کئی فرسخ تک اس طرح دراز ہو کہ اس خط پر سے کئی فرسخ تک دائیں یا بائیں انتقال کرنیوالے کا کعبہ سے تقابل زائل نہ ہو۔ اس بناء پر علماء نے ایک ہی سمت پر کئی بلاد کے قبلے وضع کئے۔ علامہ حصکفی کا قول "قلت فهذا معنى الخ" علامہ کا یہ فہم درست نہیں ہے کیونکہ ان کی عبارت سے معلوم ہوتا ہے کہ دائیں اور بائیں ہونے والی چیز خط ہے ، حالانکہ دُرّر کی عبارت میں وہ شخص ہے الخ۔ علامہ طحطاوی نے اس بیان کو محشی دُرّ علامہ سید ابراہیم حلبی کی طرف منسوب کیا ہے۔ علامہ حصکفی کی عبارت پر علامہ شامی نے کہا کہ منح کی

عبارت یہ معراج کی عبارت (جو ہم ذکر کر آئے) کا خلاصہ ہے حالانکہ معراج میں " ماراً علی الکعبة " (کعبہ پر سے گزرنے والے خط) کا ذکر نہیں ہے، بلکہ یہ دُرّر کی تصویر میں مذکور ہے۔ ممکن ہے اس سے عرض کی بجائے طول میں گزرنے والا خط مراد ہو تو یہ ایک نمازی کی جبین سے نکلنے والا خط اور دوسرا خط جو پہلے کو قطع کر کے وہ نمازی پر سے عرض (چوڑائی) میں گزرنے والا ہوگا یا کعبہ پر گزرنے والا ہوگا۔

(1) حاشية الطحطاوي على الدر المختار باب شروط الصلوة مطبوعه دار المعرفة بيروت ١ / ٤١٩

Fatawa Razawiyya Volume Six

[Right Column] ...then through this, both our first and second illustrations (their verification) will be correct. Then, the Reliance of the scholar (Allamah) on some wording from 'Al-Minah' shows reliance on the actual direction, which is facing the Kaaba itself, not reliance on a theoretical direction, because that would be facing the direction of the Qibla. Whereas, facing the theoretical direction, i.e., the direction of the Kaaba, is the objective. Therefore, it was necessary for him to omit from the phrase "facing the Kaaba actually in some lands" from the text. This is the complete statement of Allamah Shami and this is what he intended. I say: With the success granted by Allah, the commentary on the text of 'Durr-ul-Mukhtar' is as follows: (from the side of the face) 'face' refers to the middle of the forehead. (one who actually faces the Kaaba) means to face it directly in such a way that if the veils were removed, the Kaaba would appear between both eyes. (In some lands) refers to any region. (a line is assumed) means a straight line is established. A line perpendicular to another line which spreads from the middle of the worshipper's forehead horizontally to the right and left, such that it meets the other line to form a right angle at the middle of the forehead. Here, one right angle is mentioned because it is not necessary for the line on the forehead to spread to both sides; rather, the line from any

[Left Column] So it holds true with what we have illustrated first and second. Then, his restriction to some of the wording of 'Al-Minah' led to limiting his explanation to actual alignment, which is facing the entity itself, rather than estimated alignment, which is facing the direction, even though the intended meaning is the second. Thus, he should have opted to delete his statement "from the direction of his face, facing [it] actually in some lands" etc. This is all that he presented and the completion of what he intended. I say: And with Allah is the success; the commentary on the order of 'Al-Durr' is thus: (it is assumed from the direction of his face) i.e., the middle of his forehead (facing it actually) such that if the veils were lifted, the Kaaba would be seen between his eyes (in some lands) i.e., any city intended (a line) straight, standing (on) the line passing through the forehead across from its middle to its right or its left, such that it forms with it (a right angle) at the forehead. And he did not say 'two right angles' because it is not necessary to assume the crossing line passing to both sides, rather a minimum line to either side of them is sufficient.

[Footnote] 1 Radd al-Muhtar, Chapter on Conditions of Prayer, printed by Mujtabai Press, Delhi, 1/288. Page 93 of 736

फ़तावा रज़विया जिल्द छठा

[दायां कॉलम] ...तो इससे हमारे पहले और दूसरे दोनों चित्र (उनकी पुष्टि) सही होंगे। फिर अल्लामा का 'मन्ह' के कुछ शब्दों पर निर्भर रहना वास्तविक दिशा पर निर्भरता को दर्शाता है, और वह सीधे काबा की ओर मुख करना है न कि काल्पनिक दिशा पर निर्भरता, क्योंकि वह किबला की दिशा की ओर मुख करना है। जबकि काल्पनिक दिशा यानी काबा की दिशा की ओर मुख करना ही उद्देश्य है। इसलिए उनके लिए इबारत से "कुछ शहरों में वास्तविक रूप से काबा को माथे के सामने करना" हटाना आवश्यक था। यह अल्लामा शामी का पूरा कथन है और यही उनका उद्देश्य है। मैं कहता हूँ: अल्लाह की तौफ़ीक़ से, 'दुर्र-ए-मुख्तार' की इबारत की व्याख्या इस प्रकार है: (चेहरे की तरफ़ से) चेहरे से तात्पर्य माथे का मध्य भाग है। (वास्तव में काबा की ओर मुख करने वाला) का अर्थ है कि इस तरह सीधे मुख करना कि यदि बीच से पर्दे हटा दिए जाएं तो काबा दोनों आँखों के बीच दिखाई दे। (कुछ शहरों में) से तात्पर्य कोई भी क्षेत्र हो। (एक रेखा मान ली जाए) का अर्थ है एक सीधी रेखा खींची जाए। एक दूसरी रेखा पर जो नमाज़ी के माथे पर मध्य से दाईं और बाईं ओर क्षैतिज रूप से फैली हो, एक रेखा दूसरी रेखा से इस प्रकार मिले कि उससे माथे के मध्य में एक 'ज़ानिया क़ाइमा' (समकोण) बने। यहाँ एक समकोण का ज़िक्र किया गया है क्योंकि माथे पर रेखा का दोनों तरफ़ फैलना ज़रूरी नहीं है, बल्कि रेखा उनसे किसी

[बायां कॉलम] तो यह हमारे द्वारा पहले और दूसरे रूप में चित्रित किए गए के साथ सच बैठता है। फिर, 'मन्ह' के कुछ शब्दों तक उनका सीमित रहना उनके स्पष्टीकरण को वास्तविक संरेखण (alignment) तक सीमित करने का कारण बना, जो स्वयं वस्तु (काबा) का सामना करना है न कि अनुमानित संरेखण, जो कि दिशा का सामना करना है, जबकि उद्देश्य दूसरा है। अतः उन्हें अपने इस कथन को हटा देना चाहिए था: "अपने चेहरे की दिशा से, कुछ शहरों में वास्तव में मुख करना" इत्यादि। यह सब उन्होंने प्रस्तुत किया और जो वह चाहते थे उसकी पूर्णता है। मैं कहता हूँ: और अल्लाह के साथ ही सफलता है; 'दुर्र' के क्रम की व्याख्या इस प्रकार है: (उसके चेहरे की दिशा से माना जाए) अर्थात उसके माथे के मध्य से (वास्तव में उसका सामना करते हुए) इस प्रकार कि यदि पर्दे हटा दिए जाएं तो काबा उसकी आँखों के बीच दिखाई दे (कुछ शहरों में) यानी कोई भी शहर जिसका इरादा हो (एक रेखा) सीधी, खड़ी (उस) रेखा पर जो माथे से होकर उसके मध्य से दाईं या बाईं ओर जाती है, इस तरह कि उससे माथे पर (एक समकोण) बने। और उन्होंने 'दो समकोण' नहीं

कहा क्योंकि दोनों तरफ जाने वाली पार रेखा (crossing line) को मानना आवश्यक नहीं है, बल्कि उनमें से किसी भी दिशा में एक न्यूनतम रेखा पर्याप्त है।

[पाद टिप्पणी] 1 रद अल-मुह्तार, नमाज़ की शर्तों का अध्याय, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली द्वारा मुद्रित, 1/288. पेज 93 of 736

فتاویٰ رضویہ جلد ششم

[دایاں کالم] تو اس سے ہماری پہلی اور دوسری دونوں تصویریں (ان کی تصدیق ہوگی) درست ہوں گی، پھر علامہ کا منخ کی کچھ عبارت پر انحصار کرنا، حقیقی سمت پر انحصار کو ظاہر کرتا ہے اور وہ عین کعبہ کی طرف استقبال ہے نہ کہ فرضی سمت پر انحصار کیونکہ وہ جہت قبلہ کی طرف استقبال ہے حالانکہ سمت فرضی یعنی کعبہ کی جہت کی سمت استقبال کرنا ہی مقصود ہے اس لئے ان کو عبارت سے "بعض بلاد میں حقیقی طور پر کعبہ کو پیشانی کرنے " کو حذف کرنا ضروری تھا، یہ علامہ شامی کی مکمل عبارت ہے اور یہی ان کی مراد ہے۔ اقول: اللہ کی توفیق سے ، دُرِ مختار کی عبارت کی شرح یوں ہے (وجہ کی طرف سے) وجہ سے مراد وسطِ پیشانی ہے (حقیقۃً کعبہ کا استقبال کرنے والے) مراد یہ ہے کہ اس طرح سیدھا استقبال ہو کہ اگر درمیان سے پردے اُٹھا دئیے جائیں تو کعبہ دونوں آنکھوں کے درمیان نظر آئے، (بعض بلاد میں) سے مراد کوئی بھی علاقہ ہو (خط فرض کیا جائے) سے مراد سیدھا خط قائم کیا جائے، ایک دوسرے خط پر جو استقبال کرنے والے کی پیشانی پر عرضی (چوڑائی) طور پر اس کے درمیان سے دائیں اور بائیں پھیلا ہوا ہو، ایک خط دوسرے سے اس طرح ملے کہ اس سے وسطِ پیشانی پر زاویہ قائمہ پیدا ہو، یہاں ایک زاویہ قائمہ کو ذکر کیا ہے کیونکہ پیشانی پر خط کا دونوں طرف پھیلنا ضروری نہیں بلکہ خط ان سے کسی

[بایاں کالم] فیصدق بما صورناہ اولاً وثانیاً ، ثم ان اقتصارہ علی بعض عبارۃ المنح ادی الی قصر بیانہ علی المسامتۃ حقیقاً و ھی استقبال العین دون المسامتۃ تقدیراً وھی استقبال الجھۃ مع ان المقصود الثانیۃ فکان علیہ ان یحذف قولہ من تلقاء وجہ مستقبلاً حقیقۃ في بعض البلاد اھ فھذا کل ما أوردہ وتمام ما ارادہ۔ اقول: و باللہ التوفیق شرح نظم الدرھکذا (یفرض من تلقاء وجہ) ای وسط جبھتہ (مستقبلھا

حقیقة) بحیث لورفعت الحجب لرئیت الکعبة بین عینیه (فی بعض البلاد) ای ای بلد یراد (خط) مستقیم قائم (علی) الخط المار بجبهة معترضاً من وسطه الی یمینه او شماله بحیث یحدث معه (زاویة قائمة) عند الجبهة ولم یقل قائمتین لانه لا یجب فرض المعترض ماراً الی الجهتین بل یکفی ادنی خط الی ایة جهة منهما۔

[فٹ نوٹ] 1 ردالمحتار باب شروط الصلاة مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۲۸۸/۱ Page 93 of 736

Fatawa Razawiyya (Header) - Volume 6 (Header)

[Arabic Text - Left Column] ...so that in practice only one right angle is formed. This is from the concise explanations of this meticulous scholar, for a [single] right angle is briefer than two right angles, and it is sufficient. Thus, he chose what is brief and sufficient. (Towards the horizon) corresponds to "min" (from) in his saying "min tilqāʾi wajhihi" (from before his face), meaning it starts from the middle of the forehead and ends at the horizon, and in its extension, it (passes over) the essence of (the Kaaba). Up to here, the explanation of true alignment is complete. Then he began explaining the approximate [alignment], saying: (And) another straight (line is assumed) which (intersects it) at the forehead of the one facing [the Kaaba] (at two right angles), passing horizontally (to the right and left), meaning to the right and left of the one facing it. He did not suffice with the other line referred to in his saying "at a right angle" because there, the minimum application of the name "line" on either side was sufficient, even if it did not encompass half of the forehead on that side, nor its fourth. But now, there is a need for a line extended to the right and left to many parasangs, so that the place of transition to the right and left is available. Therefore, he used the dual form for the right angles here.

[Urdu Text - Right Column] Even if it is apparent on one side, it will be sufficient. Therefore, in practice, only one right angle will be formed from both lines. That is why two angles were not mentioned here. This is a conciseness by this meticulous scholar because one right angle is briefer compared to two right angles, and sufficiency for the objective is also found in this one angle. Therefore, he preferred the brief and sufficient. (Towards the horizon) - this word is a counterpart to "min" (from) in "min tilqāʾi wajh," meaning starting from the middle of the forehead, reaching towards the horizon, which has length (passing) over the essence of the (Kaaba). Up to here, the explanation of true alignment is completed. After this, the explanation of approximate direction began, so it was said: and assume another straight line that intersects the first line on the forehead of the person facing [the Kaaba] in such a way that two right angles are formed from it. This second line should be spread across the width of the forehead to the right and left. The meaning is that it extends to the right and left of the person facing the Kaaba. And here, unlike before, he did not suffice with one right angle but mentioned two angles, because there it was not necessary for the line appearing on the forehead to spread to both the right and left sides of the forehead; rather, it was enough for it to be nominal so that the long line could fall on it, even if it did not cover half or even a quarter of the

forehead on that side. But here, it is necessary for the line appearing on the forehead to be extended many parasangs to the right and left so that it can become a place for moving right and left from the direction of the Kaaba. That is why two perpendiculars [right angles] are mentioned here.

Page 94 of 736 (Footer)

फतवा रज़विया (शीर्षक) - छठा खंड (शीर्षक)

[अरबी पाठ - बायां कॉलम] ...ताकि व्यवहार में केवल एक समकोण बने। यह इस सूक्ष्म विद्वान के संक्षिप्त स्पष्टीकरणों में से है, क्योंकि एक समकोण दो समकोणों की तुलना में अधिक संक्षिप्त है, और यह पर्याप्त है। इसलिए, उन्होंने उसे चुना जो संक्षिप्त और पर्याप्त है। (क्षितिज की ओर) उनके कथन "मिन तिलका-इ वजहिही" (अपने चेहरे के सामने से) में "मिन" (से) के अनुरूप है, जिसका अर्थ है कि यह माथे के मध्य से शुरू होता है और क्षितिज पर समाप्त होता है, और इसके विस्तार में, यह (काबा) के मूल (के ऊपर से गुजरता है)। यहाँ तक सच्ची संरेखण का स्पष्टीकरण पूरा हुआ। फिर उन्होंने अनुमानित संरेखण को समझाना शुरू किया, यह कहते हुए: (और) एक और सीधी (रेखा की कल्पना की जाती है) जो (इसे काटती है) सम्मुख व्यक्ति के माथे पर (दो समकोणों पर), क्षैतिज रूप से (दाएं और बाएं) गुजरते हुए, जिसका अर्थ है सम्मुख व्यक्ति के दाएं और बाएं। उन्होंने "एक समकोण पर" अपने कथन में उल्लिखित अन्य रेखा के साथ संतोष नहीं किया क्योंकि वहां, किसी भी तरफ "रेखा" नाम का न्यूनतम अनुप्रयोग पर्याप्त था, भले ही उसने उस तरफ के माथे के आधे हिस्से को न घेरा हो, न ही उसके चौथाई हिस्से को। लेकिन अब, कई कोस तक दाएं और बाएं विस्तारित एक रेखा की आवश्यकता है, ताकि दाएं और बाएं संक्रमण का स्थान उपलब्ध हो सके। इसलिए, उन्होंने यहाँ समकोणों के लिए द्विवचन का उपयोग किया।

[उर्दू पाठ - दायां कॉलम] यदि यह एक तरफ भी प्रकट होता है, तो यह पर्याप्त होगा। इसलिए, व्यवहार में दोनों रेखाओं से केवल एक ही समकोण बनेगा। इसी कारण यहाँ दो कोणों का उल्लेख नहीं किया गया। यह इस सूक्ष्म विद्वान द्वारा किया गया एक संक्षिप्तीकरण है क्योंकि दो समकोणों की तुलना में एक समकोण अधिक संक्षिप्त है, और इस एक कोण में उद्देश्य के लिए पर्याप्तता भी पाई जाती है। इसलिए उन्होंने संक्षिप्त और पर्याप्त को प्राथमिकता दी। (क्षितिज की ओर) - यह शब्द "मिन तिलका-इ वजहि" में "मिन" का प्रतिरूप है, जिसका अर्थ है माथे के मध्य से निकलकर क्षितिज की ओर पहुँचना, जिसकी लंबाई (काबा) के मूल (के ऊपर से गुजर रही) हो। यहाँ तक सच्ची संरेखण का वर्णन पूर्ण हुआ। इसके बाद अनुमानित दिशा का वर्णन शुरू हुआ, तो कहा गया: और दूसरी सीधी रेखा की कल्पना करें जो पहली रेखा को सम्मुख व्यक्ति के माथे पर इस तरह काटे कि उससे दो समकोण बनें। यह दूसरी रेखा माथे की चौड़ाई में दाएं और बाएं फैली हुई होनी चाहिए। अर्थ यह है कि यह काबा की ओर मुख करने वाले व्यक्ति के दाएं और बाएं विस्तृत हो। और यहाँ पहले की तरह एक समकोण पर संतोष नहीं किया गया बल्कि दो कोणों का उल्लेख किया गया, क्योंकि वहां माथे

पर दिखाई देने वाली रेखा का माथे के दाएं और बाएं दोनों तरफ फैलना आवश्यक नहीं था; बल्कि वहां नाममात्र का होना पर्याप्त था जिस पर लंबी रेखा गिर सके, भले ही उसने उस तरफ माथे के आधे या चौथाई हिस्से को भी न घेरा हो। लेकिन यहाँ, माथे पर दिखाई देने वाली रेखा का दाएं और बाएं कई कोस तक बढ़ा होना आवश्यक है ताकि काबा की दिशा से दाएं और बाएं हटने का स्थान बन सके। इसीलिए यहाँ दो समकोणों [दो कायमों] का उल्लेख किया गया है।

पृष्ठ 94 का 736 (फुटर)

فتاویٰ رضویہ (سرخی) - جلد ششم (سرخی)

[عربی عبارت - بایاں کالم] ...تاکہ بالفعل صرف ایک ہی قائمہ پیدا ہو۔ یہ اس فاضل مدقق کی اختصارات میں سے ہے، کیونکہ ایک زاویہ قائمہ، دو زاویہ قائمہ کے مقابلے میں زیادہ مختصر ہے اور اسی میں کفایت بھی ہے۔ پس انہوں نے اسے پسند کیا جو مختصر اور کافی ہے۔ (افق کی طرف) ان کے قول "من تلقاء وجہہ" (اپنے چہرے کے سامنے سے) میں لفظ "من" کے مقابل ہے، یعنی پیشانی کے وسط سے شروع ہو کر افق پر ختم ہو، اور اس کی لمبائی میں یہ (کعبہ) کی اصل (پر سے گزرنے والا ہو)۔ یہاں تک مسامتتِ حقیقیہ کا بیان مکمل ہوا۔ پھر انہوں نے مسامتتِ تقریبیہ کے بیان کو شروع کیا اور فرمایا: (اور) ایک دوسرا خطِ مستقیم (فرض کیا جائے) جو (اسے قطع کرے) استقبال کرنے والے کی پیشانی پر (دو زاویہ قائمہ پر) جو چوڑائی میں گزرنے والا ہو (دائیں اور بائیں)، یعنی استقبال کرنے والے کے دائیں اور بائیں۔ اور انہوں نے اس دوسرے خط پر اکتفا نہیں کیا جس کی طرف اپنے قول "علی زاویۃ قائمۃ" میں اشارہ کیا تھا، کیونکہ وہاں ایک جانب میں لفظ "خط" کے صادق آنے کی ادنیٰ سی مقدار کافی تھی اگرچہ وہ اس جانب کی نصف پیشانی یا اس کے چوتھائی حصے کو نہ گھیرے ہوئے ہو۔ لیکن اب ایک ایسے خط کی ضرورت ہے جو دائیں اور بائیں جانب کئی فرسخ تک پھیلا ہوا ہو تاکہ دائیں اور بائیں انتقال کی جگہ میسر آ سکے۔ اسی لیے انہوں نے یہاں قائمہ کو تثنیہ کے صیغے کے ساتھ ذکر کیا۔

[اردو عبارت - دایاں کالم] ایک طرف بھی ظاہر ہو تو کافی ہو گا، لہذا بالفعل دونوں خطوں سے ایک ہی زاویہ قائمہ پیدا ہو گا اسی لئے یہاں دو زاویوں کو ذکر نہیں کیا۔ اس فاضل مدقق کا یہ ایک اختصار ہے کیونکہ ایک زاویہ قائمہ دو قائم زاویوں کے مقابلہ میں مختصر ہے اور اس ایک زاویے سے مطلوب میں کفایت بھی پائی جاتی ہے اس لئے انھوں نے مختصر اور کافی کو پسند کیا

ہے۔ (افق کی طرف) یہ لفظ "من تلقاء وجہ" میں من کا مقابل ہے ، یعنی پیشانی کے وسط سے نکل کر افق کی طرف پہنچا ہو جس میں لمبائی ہو (وہ گزر رہا ہو) نفس (کعبہ پر سے) یہاں تک مسامتت حقیقی کا بیان تام ہوگیا، اس کے بعد سمت تقریبی کا بیان شروع ہوا، تو کہا اور دوسرا سیدھا خط فرض کیا جائے جو استقبال کرنے والے کی پیشانی پر پہلے خط کو اس طرح قطع کرے کہ اس سے دو زاویئے قائمہ پیدا ہوں اور یہ دوسرا خط پیشانی پر عرض میں دائیں اور بائیں پھیلا ہوا ہو مراد یہ ہے کہ کعبہ کا استقبال کرنے والے کے دائیں اور بائیں دراز ہو، اور یہاں پہلے کی طرح ایک زاویہ قائمہ پر اکتفا نہیں کیا بلکہ دو زاویوں کو ذکر کیا، کیونکہ وہاں پر پیشانی پر ظاہر والے خط کا پیشانی کے دائیں اور بائیں دونوں طرف پھیلنا ضروری نہیں تھا بلکہ وہاں برائے نام ہونا کافی تھا جس پر لمبا خط آگرے ، اگر چہ اس جانب پیشانی کے نصف بلکہ چوتھائی کو بھی نہ گھیرا ہو لیکن یہاں پیشانی پر ظاہر ہونے والے خط کا دائیں اور بائیں کئی فرسخ تک بڑھا ہونا ضروری ہے تا کہ سمت کعبہ سے دائیں اور بائیں انتقال کا محل بن سکے ، اسی لئے یہاں دو قائموں...

صفحہ 94 از 736 (فٹر)

Fatawa Ridawiyya Volume Six

[Arabic Column Text] So when the worshipper moves along this line in any direction for many leagues, according to the distance of the city from the Kaaba, he does not exit the direction (of the Kaaba). He pointed to this by saying, (I say, this is the meaning of leaning to the right and leaning to the left), which are permissible for the worshipper (in the wording of al-Durar). For al-Durar only mentioned leaning to the right and left of the worshipper. It was possible that its meaning is to place the Kaaba on his right or left, but this is definitely not intended. Thus, the drawing of the line to the right and left, and pointing with a subtle hint as is his custom (may Allah Almighty have mercy on him) in extreme brevity, indicates that the worshipper's leaning to the right and left is only along this line extending to the right and left, not what some might imagine. (So reflect[1]), so that you do not slip. It has become clear to you from this explanation, by the grace of Allah Almighty: First: The fall of what they claimed that his explanation is limited to the true reality. How could it be so? If it were, he would not have needed his statement "and another line" etc.

[Urdu Column Text] ...mentioned. So, when the worshipper moves onto the line extending to the right or left, whether it is by many leagues to the right or left, to whatever extent the city is distant from the Kaaba, by moving accordingly, he will not go out of the direction of the Kaaba. Pointing towards this, the author of al-Durr said: I say (the meaning of being on the right and left sides is that) both lines will be formed on both sides of the worshipper (which is mentioned in al-Durar) because al-Durar mentioned the worshipper's being on the right and left. And there was also the possibility that the worshipper might place the Kaaba to his right or left, but this possibility is definitely not intended. Therefore, by drawing right and left lines, he gave a subtle hint, as is his habit of brevity (may Allah have mercy on him); he also used brevity regarding the worshipper's leaning to the right and left, which is that it means being to the right or left while remaining on the line extending to the right and left of the worshipper, not what some people imagined[1]; (So reflect), so that you do not stumble. By the grace of Allah Almighty, several points have become clear to you from this explanation: First: The idea of some commentators that Allamah Haskafi only explained the true direction is dismissed, because if that were the case, then Allamah would not have said "and another line" etc.

[Footnote] 1 Note: Up to here, the text between the two parentheses is from Durr al-Mukhtar; the rest of the text is Ala Hazrat's own explanation in the form of a commentary. Page 95 of 736

फ़तावा रज़विया छठा खंड

[अरबी कॉलम का पाठ] तो जब नमाज़ी इस रेखा पर किसी भी दिशा में कई कोस तक चला जाए, जैसा कि शहर की काबा से दूरी आवश्यक बनाती है, तो वह दिशा से बाहर नहीं होता है। उन्होंने अपने इस कथन से इसकी ओर संकेत किया: (मैं कहता हूँ, दाएँ और बाएँ झुकने का यही अर्थ है), जो नमाज़ी के लिए अनुमति योग्य हैं ('दुरर' की इबारत में)। क्योंकि 'दुरर' में केवल नमाज़ी के दाएँ और बाएँ होने का उल्लेख है। और यह संभावना भी थी कि इसका अर्थ काबा को अपने दाएँ या बाएँ रखना हो, लेकिन यह निश्चित रूप से अभिप्रेत नहीं है। अतः दाएँ और बाएँ रेखा खींचकर और अपनी आदत के अनुसार अत्यंत संक्षेप में एक सूक्ष्म संकेत देकर (अल्लाह उन पर रहम करे) उन्होंने बताया कि नमाज़ी का दाएँ और बाएँ झुकना केवल दाएँ और बाएँ निकली हुई इस रेखा पर ही है, न कि वह जो कुछ लोगों ने कल्पना की। (अतः विचार करें[1]), ताकि आप विचलित न हों। अल्लाह तआला की तौफीक से इस व्याख्या से आप पर स्पष्ट हो गया है: पहला: उनका यह दावा निरस्त हो गया कि उनकी व्याख्या केवल वास्तविक दिशा तक ही सीमित है। यह कैसे हो सकता है? यदि ऐसा होता, तो उन्हें "और दूसरी रेखा" आदि कहने की आवश्यकता नहीं होती।

[उर्दू कॉलम का पाठ] का उल्लेख किया। तो जब नमाज़ी दाएँबाएँ फैलने वाली रेखा पर स्थानांतरित हो जाए, चाहे वह कई कोस दाएँ या बाएँ हो, जितना भी शहर काबा से दूर हो, उसके अनुसार स्थानांतरित होने से वह काबा की दिशा से बाहर नहीं होगा। इसकी ओर संकेत करते हुए 'साहिब-ए-दुर' ने कहा: मैं कहता हूँ (दाएँ और बाएँ होने का यही अर्थ है कि) दोनों रेखाएँ नमाज़ी के दोनों ओर बनेंगी (जैसा कि 'दुरर' में उल्लेख है) क्योंकि 'दुरर' ने नमाज़ी के दाएँ और बाएँ होने का उल्लेख किया है। और यह संभावना भी हो सकती थी कि नमाज़ी काबा को अपने दाएँ और बाएँ कर ले, लेकिन यह संभावना निश्चित रूप से अभिप्रेत नहीं हो सकती। इसलिए उन्होंने दाएँ और बाएँ रेखा बनाकर एक सूक्ष्म संकेत दिया जैसा कि उनकी (रहमतुल्लाह अलैहि) संक्षेप करने की आदत है; नमाज़ी के दाएँ और बाएँ झुकने में भी संक्षेप से काम लिया है, वह इस तरह कि नमाज़ी का दाएँबाएँ फैलने वाली रेखा पर रहते हुए दाएँ या बाएँ होना अभिप्रेत है, न कि वह जो कुछ लोगों को वहम हुआ[1]। (अतः गौर करें), ताकि आप फिसलें नहीं। अल्लाह तआला की तौफीक से इस व्याख्या से आप पर कुछ बातें स्पष्ट हुईं: पहला: यह कि कुछ टीकाकारों का यह विचार कि अल्लामा हसकफी ने केवल वास्तविक दिशा को ही बयान किया है, यह विचार गलत साबित हुआ, क्योंकि अगर ऐसा होता तो फिर अल्लामा "और दूसरी रेखा" आदि न कहते।

[पाद टिप्पणी] 1 नोट: यहाँ तक कोष्ठक के बीच की इबारत 'दुर्रे मुख्तार' की है, बाकी इबारत व्याख्या के रूप में आला हज़रत की अपनी है। पृष्ठ 95 / 736

فتاوی رضویه جلد ششم

[عربی عبارت] فاذا انتقل المصلی علی هذا الخط فی ای جهة الی فراسخ کثیرة حسب مایقتضیه بعد البلد من الکعبة لا یخرج عن الجهة واشار الی ذلك بقوله(قلت فهذا معنی التیامن والتیاسر) المسوغین للمصلی(فی عبارة الدرر) فان الدرر انماذکر تیامنا من المصلی وتیاسره وکان یحتمل ان معناه یجعل الکعبة علی یبینه اویساره ولیس مراداقطعا فرسم الخط یمنة ویسرة واشار بطرف خفی کعادته رحمة الله تعالی فی غایة الایجاز الی ان ذلك التیامن للمصلی انما هو علی هذا الخط المخرج یمنة و یسرة لاما یتوهم (فتبصر[1]) کیلا تزل وقد ظهرلك من هذا الشرح بتوفیق الله تعالی: اولا سقوط مازعموا ان بیانه قاصر علی الحقیقة کیف ولو کان کذلك لما احتاج الی قوله وخط اخر الخ

[اردو عبارت] کو ذکر کیا، پس جب نمازی دائیں بائیں بڑھنے والے خط پر منتقل ہو خواہ کئی فرسخ دائیں یا بائیں جس قدر بھی کعبہ سے شہر کا بُعد ہو اس کے مطابق منتقل ہونے سے جہت کعبہ سے خارج نہ ہوگا، اس کی طرف اشارہ کرتے ہوئے صاحب الدر نے کہا میں کہتا ہوں (دائیں اور بائیں طرف ہونے کا یہی معنی ہے کہ) دونوں خط نمازی کی دونوں جانب بنیں گے (جو مذکور ہے دُرر میں) کیونکہ دُرر نے نمازی کے دائیں اور بائیں ہونے کا ذکر کیا ہے۔ اور یہ احتمال بھی ہوسکتا ہے کہ نمازی کعبہ کو اپنے دائیں اور بائیں کرے، لیکن یہ احتمال قطعاً مراد نہیں ہو سکتا۔ اس لئے انہوں نے دائیں اور بائیں خط بنا کر ایک مخفی اشارہ دیا جیسا کہ ان رحمۃ اللہ علیہ کی اختصار کی عادت ہے نمازی کے تیامن و تیاسر میں بھی اختصار سے کام لیا ہے وہ یوں کہ نمازی کا دائیں بائیں پھیلنے والے خط پر قائم رہتے ہوئے سے دائیں یا بائیں ہونا مراد ہے، نہ وہ کہ جو بعض کو وہم ہوا[1]، (پس غور کر) تاکہ تُو پھسلے نہیں۔ اللہ تعالی کی توفیق سے تجھ پر اس شرح سے چند

امور ظاہر ہوئے: اولا: یہ کہ بعض محشی حضرات کا یہ خیال کہ علامہ حصکفی نے صرف سمت حقیقی کو ہی بیان کیا ہے، یہ خیال ساقط ہوا، کیونکہ اگر ایسا ہوتا تو پھر علامہ کو "وخط آخر " الخ

[حاشیہ] 1 ف: یہاں تک دو قوسوں کے درمیان جو عبارت ہے وہ دُرمختار کی ہے باقی عبارت شرح صورت میں اعلی حضرت کی اپنی ہے۔ Page 95 of 736

Fatawa Ridawiyya - Volume 6

[Arabic Column Content] Because the explanation of the actual direction (haqiqah) was already completed with the phrase "passing over the Kaaba". Secondly: The objection raised by the two scholars, Al-Halabi and Al-Tahtawi—that there is a contradiction between the statements of 'Al-Durr' (by Al-Haskafi) and 'Al-Durar' regarding the definition of leaning to the right (tiyamun) and left (tiyasur)—is also refuted, as you are aware. Thirdly: The notion held by Allama Al-Shami that there is a discrepancy between the illustration of Allama Al-Haskafi and that of 'Al-Minah' is debunked. It is astonishing that Allama Al-Shami himself admits that the passage in 'Al-Minah' is the summary of what we previously cited from 'Al-Miraj'. Since the previous text of 'Al-Miraj' mentions the line passing over the Kaaba, where did any discrepancy arise? Their text and the text of 'Al-Miraj' are identical; the only difference is that 'Al-Miraj' mentioned the line's passage over the Kaaba as a consequence (jaza), while 'Al-Durr' mentioned it as a state (hal), because he was focused on explaining the approximate direction, whereas he only expressed the real direction hypothetically and in illustration. Fourthly: Even more surprising is his statement that it was incumbent upon Allama Al-Haskafi to omit the phrase "from the front of his face... etc." (so that the explanation of the approximate direction would be correct). I do not understand how omitting these words would perfect the explanation of the approximate direction, while in your view, the transition to the line extending right and left...

[Urdu Column Content] ...there was no need to say this because the explanation of the actual direction concludes at "passing over the Kaaba". Secondly: The objection of Allama Halabi and Allama Tahtawi has also been dismissed, which claimed that the discourse of Al-Durr, i.e., Al-Haskafi, regarding the determination of the meanings of leaning right and left, contradicts the discourse of Al-Durar, as is known to you. Thirdly: Allama Shami's notion that there is a difference between the illustration of Allama Haskafi and Minah has been refuted. It is surprising that Allama Shami himself admits that the text of Minah is the essence of the stated text of Mi'raj, whereas the previous text of Mi'raj mentions the line passing over the Kaaba; so where did the difference arise? Even though his text and that of Mi'raj are the same, the only difference between them is that Mi'raj mentioned the line's passage over the Kaaba as a result (jaza), and Al-Durar mentioned it as a state (hal), because they were only explaining the approximate direction, and they expressed the real direction only hypothetically and in illustration. Fourthly: Even more peculiar than this is his

statement that it was necessary for Allama Haskafi to omit the phrase starting with "from the forehead of the one truly facing the Kaaba... etc." (so that the explanation of the approximate direction would be correct). I do not know how omitting these words could have completed the explanation of the approximate direction, whereas in your view, the transition to the line exiting to the right and left...

फ़तावा रज़विया - जिल्द छठा

[अरबी कॉलम की सामग्री] क्योंकि वास्तविकता (हक़ीक़त) का वर्णन 'काबा के ऊपर से गुज़रते हुए' (मारा अलल काबा) के शब्दों पर ही पूरा हो गया था। दूसरा: अल्लामा हलबी और अल्लामा तहतावी की यह आपत्ति भी निराधार हो गई कि 'अद-दुर्र' (हसकफ़ी) और 'दुरर' के शब्दों के बीच 'तियामुन' (दाहिनी ओर झुकना) और 'तियासुर' (बाईं ओर झुकना) की परिभाषा के निर्धारण में विरोधाभास है, जैसा कि आपको विदित है। तीसरा: अल्लामा शामी का यह विचार कि अल्लामा हसकफ़ी और 'मिनाह' के चित्रण में भिन्नता है, यह विचार भी रद्द हो गया। आश्चर्य की बात है कि अल्लामा शामी स्वयं स्वीकार करते हैं कि 'मिनाह' का पाठ 'मेराज' के पिछले उद्धृत पाठ का सारांश है। चूँकि मेराज के पिछले पाठ में रेखा का काबा के ऊपर से गुज़रना वर्णित है, तो फिर भिन्नता कहाँ से आई? जबकि उनका और मेराज का पाठ एक ही है; दोनों के बीच केवल इतना अंतर है कि मेराज ने काबा के ऊपर से रेखा के गुज़रने को परिणाम (जज़ा) के रूप में उल्लेख किया है, और दुरर ने इसे अवस्था (हाल) के रूप में उल्लेख किया है क्योंकि वे अनुमानित दिशा का वर्णन कर रहे थे, जबकि वास्तविक दिशा को उन्होंने केवल काल्पनिक और चित्रण के रूप में व्यक्त किया। चौथा: इससे भी अधिक आश्चर्यजनक उनका यह कथन है कि अल्लामा हसकफ़ी के लिए यह आवश्यक था कि वे 'अपने चेहरे के सामने से... इत्यादि' वाले वाक्यांश को हटा देते (ताकि अनुमानित दिशा का वर्णन सही होता)। मुझे समझ नहीं आता कि इन शब्दों को हटाने से अनुमानित दिशा का वर्णन कैसे पूर्ण हो सकता था, जबकि आपके विचार में दाईं और बाईं ओर जाने वाली रेखा पर परिवर्तन को...

[उर्दू कॉलम की सामग्री] ...कहने की आवश्यकता नहीं थी क्योंकि वास्तविक दिशा का वर्णन 'मारा अलल काबा' पर समाप्त हो जाता है। दूसरा: यह कि अल्लामा हलबी और अल्लामा तहतावी की यह आपत्ति भी समाप्त हो गई कि दुर्र यानी हसकफ़ी का कलाम तियामुन और तियासुर के अर्थ के निर्धारण में दुरर के कलाम के विरुद्ध है जैसा कि तुम्हें ज्ञात है। तीसरा: यह कि अल्लामा शामी का यह विचार कि अल्लामा हसकफ़ी और मिनाह के चित्रण में अंतर है, यह विचार रद्द हुआ। और आश्चर्य है कि अल्लामा शामी स्वयं स्वीकार करते हैं कि मिनाह की इबारत (पाठ) मेराज की बताई गई इबारत का निचोड़ है, जबकि मेराज की पिछली इबारत में रेखा का काबा के ऊपर से गुज़रना वर्णित है, तो फिर अंतर कहाँ पैदा हुआ? हालांकि उनका और मेराज का पाठ एक ही है, दोनों के बीच केवल इतना अंतर है कि मेराज ने काबा के ऊपर से रेखा गुज़रने को जज़ा (परिणाम) के रूप में ज़िक्र किया है और दुरर ने इसे हाल (अवस्था) के रूप में ज़िक्र किया है क्योंकि वे केवल सम्ते-तक़रीबी

(अनुमानित दिशा) का वर्णन कर रहे हैं और वास्तविक दिशा का इज़हार उन्होंने केवल फ़र्ज़ी तौर पर और चित्रण में किया है। चौथा: इससे भी अजीब उनका यह कहना है कि अल्लामा हसकफ़ी के लिए ज़रूरी था कि वे काबा का वास्तविक इस्तक़बाल (सामना) करने वाले की पेशानी से... इत्यादि वाली इबारत को हटा देते (ताकि सम्ते-तक़रीबी का बयान सही होता)। मुझे मालूम नहीं कि इन शब्दों को हटाने से सम्ते-तक़रीबी का बयान कैसे मुकम्मल हो सकता था, जबकि आपके विचार में दाईं और बाईं निकलने वाली रेखा पर इंतक़ाल (परिवर्तन) को...

[عربی کالم] لان بیان الحقیقۃ قدتم الی قولہ مارا علی الکعبہ۔ ثانیاً: سقوط ما اعترض بہ العلامتان الحلبی والطحطاوی من التخالف بین کلامی الدر والدرر فی معنی التیامن والتیاسر کما علمت۔ وثالثاً: سقوط ما زعم العلامۃ الشامی من التغایر فی تصویرہ وتصویر المنح و من العجب انہ رحمہ اللہ تعالی معترف بان عبارۃ المنح حاصل ماقدمناہ عن المعراج وقد تقدم فی المعراج مرورہ علی الکعبۃ فمن این نشأ التغایر وانما عبارتہ عین عبارۃ المعراج لا تفاوت بینھما الا بان المعراج ذکر المرور عن الکعبۃ فی الجزاء والدرر اوردہ حالاً لانہ کان بصدد بیان التقریبیۃ فاخذ الحقیقۃ فی الفرض والتصویر۔ ورابعاً : اعجب منہ قولہ کان علیہ ان یحذف قولہ من تلقاء وجہ الی آخر الخ ولا ادری کیف یتم بیان التقریب باسقاط ھذہ الکلمات مع عدم ذکرہ عندکم الانتقال علی ذلک الخط یمیناً وشمالاً وان استنبط ھذا۔

[اردو کالم] کہنے کی ضرورت نہ تھی کیونکہ حقیقی سمت کا بیان "مارا علی الکعبہ" پر تمام ہو جاتا ہے۔ ثانیاً: یہ کہ علامہ حلبی اور علامہ طحطاوی کا یہ اعتراض بھی ساقط ہو گیا کہ الدُر یعنی حصکفی کا کلام تیامن اور تیاسر کے معنی کے تعین میں دُرَر کے کلام کے مخالف ہے جیسا کہ تمہیں معلوم ہے۔ ثالثاً: یہ کہ علامہ شامی کا یہ خیال کہ علامہ حصکفی اور منح کی تصویر میں تغایر ہے۔ یہ خیال ساقط ہوا۔ اور تعجب ہے کہ علامہ شامی خود معترف ہیں کہ منح کی عبارت معراج کی بیان شدہ عبارت کا ماحصل ہے، جبکہ معراج کی گزشتہ عبارت میں خط کا کعبہ پر سے گزرنا مذکور ہے پھر تغایر کہاں پیدا ہوا حالانکہ اُن کی اور معراج کی عبارت ایک ہے، دونوں کے درمیان صرف اتنا فرق ہے کہ معراج نے کعبہ پر سے خط گزرنے کو بطور جزاء ذکر کیا ہے اور دُرَر نے اس کو بطور حال ذکر کیا ہے کیونکہ وہ صرف سمت تقریبی کو بیان کر رہے ہیں اور حقیقی سمت کا اظہار انہوں نے صرف فرضی طور پر اور تصویر میں کیا ہے۔ رابعاً اس سے بھی

عجیب ان کا یہ قول ہے کہ علامہ حصکفی کے لئے ضروری تھا کہ وہ کعبہ کے حقیقی استقبال کرنے والے کی پیشانی سے الخ والی عبارت کو حذف کرتے (تاکہ سمت تقریبی کا بیان درست ہوتا) مجھے معلوم نہیں کہ ان کلمات کے حذف سے سمت تقریبی کا بیان کیسے تام ہو سکتا تھا، جبکہ آپ کے خیال میں دائیں اور بائیں نکلنے والے خط پر انتقال کو

Fatawa Rizwia, Volume Six

[Translation of Arabic and Urdu text] From his words "this is the meaning of turning right", as I have done in my poetry. What harm does it do to mention the projection from the direction of the face facing the Kaaba in reality? For it is only by assuming the actual direction first, then estimating the shift from it. He did not mention it, although this meaning can be derived from his words "so this is the meaning...", "this is the meaning of turning right and left". However, I do not know. What loss is he suffering by mentioning "a line emerged from the forehead of the real face facing the Kaaba"? It is only that after determining the real direction from it, the approximate direction is being stated.

Fifthly: If, according to Allama Shami, this discourse is deleted, then what would be the starting point of the line? When the said starting point is not present, neither will the description be correct nor can the Kaaba be determined. In this way, neither the approximate direction will be established nor the real one. And Allah alone is the Guide to the straight path.

Allama Shami said: "His statement 'I said...', etc., you have already known that if a person is assumed to be facing the Kaaba from his region in reality such that the line emerging from his forehead falls exactly on the Kaaba, then this will be the real direction. And if that person moves several leagues to the right or left, and we assume a line passing over the Kaaba from East to West[1] (I say: This statement of Allama Shami relates to his own region, Syria, because the direction of Qibla there is South (therefore, a line assumed in width over the Kaaba will pass from East to West). In our region, it will be said like this: the line increasing from North to South (which will pass across the Kaaba) – in short, the line spreading across the width...

---

[1] Radd al-Muhtar, Chapter: Conditions of Prayer, Published by Matba' Mujtabai, 1/288.

फतावा रज़विया, छठा खंड

[अरबी और उर्दू पाठ का अनुवाद] उनके शब्दों "यही दायें मुड़ने का अर्थ है" से, जैसा कि मैंने अपनी कविता में किया है। वास्तव में काबा के सामने वाले चेहरे की दिशा से निकास का उल्लेख करने में उन्हें क्या हानी है? क्योंकि यह तो पहले वास्तविक दिशा मानकर, फिर उससे स्थानांतरण का अनुमान लगाकर ही है। उन्होंने इसका उल्लेख नहीं किया है, हालांकि यह अर्थ उनके कथन "तो यह अर्थ है..." आदि "दाएं और बाएं मुड़ने का यही अर्थ है" से प्राप्त किया जा सकता है। हालाँकि, मुझे पता नहीं है। "काबा के वास्तविक मुख के माथे से एक रेखा निकली" के उल्लेख से उन्हें क्या नुकसान हो रहा है? केवल यही कि इससे वास्तविक दिशा निर्धारित करने के बाद अनुमानित दिशा का वर्णन किया जा रहा है।

पाँचवाँ: यदि अल्लामा शामी के अनुसार इस कथन को हटा दिया जाए, तो रेखा का निकास बिंदु क्या होगा? जब उक्त निकास बिंदु नहीं होगा, तो न तो वर्णन सही होगा और न ही काबा निर्धारित हो सकेगा। इस तरह न तो अनुमानित दिशा सिद्ध होगी और न ही वास्तविक। और अल्लाह ही सीधे मार्ग का मार्गदर्शक है।

अल्लामा शामी ने कहा: "उनका कथन 'मैंने कहा...', आदि, आपको पहले ही पता चल चुका है कि यदि किसी व्यक्ति को अपने क्षेत्र से वास्तव में काबा की ओर मुख करते हुए इस तरह माना जाए कि उसके माथे से निकलने वाली रेखा ठीक काबा पर पड़ रही है, तो यह वास्तविक दिशा होगी। और यदि वह व्यक्ति कई कोस दाएं या बाएं स्थानांतरित हो जाए, और हम एक ऐसी रेखा की कल्पना करें जो काबा के ऊपर से पूर्व से पश्चिम की ओर गुजरे।[1] (मैं कहता हूँ: अल्लामा शामी का यह कथन उनके अपने क्षेत्र शाम (सीरिया) से संबंधित है क्योंकि वहाँ क़िब्ला की दिशा दक्षिण है (इसलिए काबा पर चौड़ाई में मानी गई रेखा पूर्व से पश्चिम से गुजरेगी)। हमारे क्षेत्र में इस तरह कहा जाएगा: उत्तर से दक्षिण की ओर बढ़ने वाली रेखा (जो काबा की चौड़ाई से गुजरेगी) - संक्षेप में, चौड़ाई में फैलने वाली रेखा...

---

[1] रद अल-मुहतार, अध्याय: नमाज़ की शर्तें, मतबा मुजतबाई द्वारा प्रकाशित, 1/288। पृष्ठ 736 का

من قولہ فھذا معنی التیامن کما فعلت شعری ما ذا یضرہ ذکر الاخراج من تلقاء وجہ المستقبل حقیقۃ فلیس الا بفرض التحقیق اولاثم تقدیر الانتقال عنہ۔ انہوں نے ذکر نہیں کیا اگر چہ یہ معنی ان کے قول "فھذا معنی" الخ "تیامن و تیاسر کا یہ معنی ہے" سے حاصل کیا جاسکتا ہے۔ تاہم مجھے معلوم نہیں۔ "حقیقی مستقبل کعبہ کی پیشانی سے خط نکلا" کے ذکر سے ان کو کیا نقصان ہو رہا ہے صرف یہی کہ اس سے سمت حقیقی کے تعین کے بعد سمت تقریبی کا بیان ہو رہا ہے۔

و خامسا لئن اسقط ھذا کلہ لبقی مخرج الخط مھملا لم یتبین ولم یتعین فلا تقریب ولا تحقیق واللہ الھادی الی سواء الطریق۔ خامسا: اگر بقول علامہ شامی اس کلام کو حذف کر دیا جائے تو پھر خط کا مخرج کیا ہوگا۔ جب مخرج مذکور نہ ہوا تو نہ بیان صحیح ہوگا نہ ہی کعبہ کا تعین ہو سکے گا۔ اس طرح نہ سمت تقریبی ثابت ہو گی اور نہ ہی حقیقی ثابت ہوگی۔ اور اللہ تعالیٰ ہی سیدھے راستے کا ہادی ہے۔

قال الشامی قولہ قلت الخ قد علمت انہ لو فرض شخص مستقبلا من بلدہ لعین الکعبہ حقیقۃ بان یفرض الخط الخارج من جبینہ واقعا علی عین الکعبہ فھذا مسامت لھا تحقیقا، ولو انہ انتقل الی جھۃ یمینہ او شمالہ بفراسخ کثیرۃ وفرضنا خطامارا علی الکعبۃ من المشرق الی المغرب[1] (قلت قالہ بالنظر الی بلدہ الشامی الجنوب ویقال من الشمال الی الجنوب وبالجملۃ المراد الخط المعترض) علامہ شامی نے کہا قولہ ، قلت الخ آپ کو معلوم ہو چکا ہے کہ اگر کسی شخص کو اپنے علاقہ سے عین کعبہ کی طرف استقبال حقیقی کرتے ہوئے یوں فرض کیا جائے کہ اس کی پیشانی سے نکلنے والا خط عین کعبہ پر واقع ہو رہا ہے، تو یہ تحقیقی سمت ہوگی اور اگر وہ شخص دائیں یا بائیں کئی فرسخ منتقل ہو جائے اور ہم ایک خط فرض کریں جو کعبہ پر سے مشرق سے مغرب کی طرف گزرے۔ (قلت علامہ

شامی کا یہ قول ان کے اپنے علاقہ شام سے متعلق ہے کیونکہ وہاں سمت قبلہ جنوب ہے (اس لئے کعبہ پر عرض میں فرض کردہ خط، مشرق سے مغرب میں گزرے گا) ہمارے علاقہ میں یوں کہا جائے کہ شمال سے جنوب کی طرف بڑھنے والا خط (کعبہ پر عرض میں گزرنے والا ہوگا) غرضیکہ عرض میں پھیلنے والا خط

---

[1] ردالمحتار باب شروط الصلوۃ مطبوعہ مطبع مجتبائی ۲۸۸/۱ Page 97 of 736

Fatawa Rizvia Volume Six

[Right Column - Urdu Text] Allama Shami has explained that the line emerging from the forehead of the person praying will meet the line passing straight over the Kaaba. In this case, shifting to the right or left will not entirely eliminate the person's facing towards the Kaaba because the human face is rounded like a bow. Therefore, no matter how much one turns right or left from the exact center of the Kaaba, some part of the face will certainly remain opposite the Kaaba.

I say: Allama Shami (may Allah have mercy on him) understood that for them, the condition for the continuation of facing the direction is that when shifting right or left, the line coming from the forehead must meet the transverse line passing through the Kaaba in a perpendicular manner. A little later, he clarified this by saying: Rather, from what we have presented from Al-Mi'raj and Al-Durar, the restriction of obtaining two right angles when shifting right or left for someone facing the eye of the Kaaba implies that it would not be valid if one angle was acute and the other obtuse in this form. End quote. And there are several issues in this statement:

Firstly: The text of 'Al-Durar' does not mention shifting at all, let alone mentioning the formation of two right angles after shifting, and what he mentioned afterwards in the derivation...

[Left Column - Arabic Text] He said: And it was that the line coming out from the forehead of the person praying reaches straight to this line passing through the Kaaba, for with this shift, the facing is not completely lost because the human face is curved, so however much one moves right or left from the eye of the Kaaba, some parts of the face remain facing it. End quote.[1]

I say: He (may Allah Almighty have mercy on him) understood that the meeting of the line from the forehead as a perpendicular to the transverse line passing through the Kaaba when shifting right or left is a condition for the remaining of the direction according to them. He clearly expressed this shortly after where he said: "Rather, the understanding from what we have presented from Al-Mi'raj and Al-Durar regarding the restriction of obtaining two right angles when shifting while facing the eye of the Kaaba to the right or left is that it is not correct if one of them was acute and the other obtuse in this form." End quote. And in it[2]:

[Diagram with labels: Kaaba, Praying Person]

Firstly, there is no mention of shifting in the text of Al-Durar here at all, let alone the occurrence of two right angles after shifting, and what was mentioned later in the branch-off (tafri').

---

[1] Radd al-Muhtar, Discussion on Facing the Qiblah, Mujtabai Press, Delhi, 1/288 [2] Radd al-Muhtar, Discussion on Facing the Qiblah, Mujtabai Press, Delhi, 1/288

फ़तावा रज़विया जिल्द छठा

[दायां कॉलम - उर्दू पाठ] अल्लामा शामी ने कहा है कि नमाज़ी के माथे से निकलने वाली रेखा सीधे काबा पर से गुजरने वाली रेखा से मिलेगी, तो इस स्थिति में दाएं और बाएं खिसकने पर नमाज़ी का काबा से सामना पूरी तरह से समाप्त नहीं होगा क्योंकि मनुष्य का चेहरा कमान की तरह गोल है। इसलिए वह जितना भी ऐन काबा से दाएं या बाएं मुड़ेगा, उसके चेहरे का कुछ न कुछ हिस्सा ज़रूर काबा के सामने रहेगा।

मैं कहता हूँ: अल्लामा शामी (रहमतुल्लाह अलैहि) ने यह समझा कि दाएं या बाएं स्थानांतरित होते समय नमाज़ी की पेशानी से निकलने वाली रेखा का लंबवत रूप में काबा पर से गुजरने वाली रेखा से मिलना उनके यहाँ दिशा के बने रहने के लिए शर्त है। इसके कुछ बाद उन्होंने इस बात को स्पष्ट करते हुए कहा, बल्कि 'दुर्र' और 'मेराज' से ऐन काबा का इस्तक़बाल करने वाले का दाएं या बाएं स्थानांतरण करते हुए दो समकोण (right angles) प्राप्त होने की जो हमने शर्त ज़िक्र की है, उससे यह समझा जाता है कि अगर स्थानांतरण करते हुए दो समकोणों के बजाय एक न्यून कोण (acute angle) और दूसरा अधिक कोण (obtuse angle) इस रूप में प्राप्त हुआ तो काबा की दिशा का इस्तक़बाल सही न होगा। इस बयान में कुछ आपत्तियाँ (अश्काल) हैं:

पहला: यह कि 'दुर्र' की इबारत में सिरे से स्थानांतरण का ज़िक्र ही नहीं है, तो फिर स्थानांतरण के बाद वहाँ दो समकोणों के प्राप्त होने के ज़िक्र का क्या कहना, और जो उन्होंने बाद में तफ़रीअ (उप-विभाजन) में ज़िक्र किया...

[बायां कॉलम - अरबी पाठ] उन्होंने कहा: और यह था कि नमाज़ी के माथे से निकलने वाली रेखा सीधे काबा से गुजरने वाली इस रेखा तक पहुँचती है, क्योंकि इस बदलाव के साथ, सामना पूरी तरह से समाप्त नहीं होता है क्योंकि मानव चेहरा घुमावदार है, इसलिए काबा की आँख से दाईं या बाईं ओर कितना भी पीछे हटने पर, चेहरे के कुछ हिस्से उसके सामने ही रहते हैं। उद्धरण समाप्त।[1]

मैं कहता हूँ: उन्होंने (अल्लाह ताला उन पर रहम करे) यह समझा कि दाएं और बाएं स्थानांतरित होते समय माथे की रेखा का काबा से गुजरने वाली आड़ी रेखा पर लंबवत (perpendicular) रूप में मिलना, उनके यहाँ दिशा के बने रहने की शर्त है। उन्होंने इसके तुरंत बाद इसे स्पष्ट किया जहाँ उन्होंने कहा: "बल्कि अल-मेराज और अद-दुरर से जो हमने पेश किया है, उससे यह समझा जाता है कि ऐन काबा का सामना करने वाले के दाएं या बाएं मुड़ने पर दो समकोण प्राप्त करने की पाबंदी का

अर्थ यह है कि यदि इस रूप में उनमें से एक न्यून कोण और दूसरा अधिक कोण हो, तो यह सही नहीं होगा।" उद्धरण समाप्त। और इसमें[2]:

[चित्र के लेबल: काबा, मुसल्ला/नमाज़ी]

प्रथमतः, यहाँ अद-दुरर के पाठ में स्थानांतरण का कोई उल्लेख ही नहीं है, स्थानांतरण के बाद दो समकोणों के प्राप्त होने की तो बात ही क्या है, और जो बाद में शाखाकरण (तफ़रीअ) में उल्लेख किया गया है।

---

[1] रद्दुल मुहतार, इस्तक़बाल-ए-क़िबला पर चर्चा, मुज्तबाई प्रेस, दिल्ली, 1/288 [2] रद्दुल मुहतार, इस्तक़बाल-ए-क़िबला पर चर्चा, मुज्तबाई प्रेस, दिल्ली, 1/288

पृष्ठ 98 का 736

فتاوی رضویہ جلد ششم

[دائیں کالم کی عبارت] مراد لیا ہے علّامہ شامی نے کہا کہ نمازی کی جبین سے نکلنے والا خط سیدھا کعبہ پر سے گزرنے والے خط کو ملے گا تو اس صورت میں دائیں اور بائیں انتقال کرنے پر نمازی کا کعبہ سے تقابل کلیّہ زائل نہ ہوگا کیونکہ انسان کا چہرہ کمان کی طرح گول ہے لہذا وہ جتنا بھی عین کعبہ سے دائیں یا بائیں پھرے گا اس کے چہرے کا کچھ نہ کچھ حصہ ضرور کعبہ کے مقابل رہے گا۔ اقول : علّامہ شامی رحمۃ اللہ علیہ نے یہ سمجھا کہ دائیں یا بائیں منتقل ہوتے وقت نمازی کی پیشانی سے نکلنے والے خط کا عمودی شکل میں کعبہ پر سے گزرنے والے خط سے ملنا کعبہ کی جہت کے بقاء کے لئے ان کے ہاں شرط ہے، اس کے کچھ بعد انہوں نے اس بات کو واضح کرتے ہوئے کہا، بلکہ دُرّ اور معراج سے عین کعبہ کا استقبال کرنے والے کا دائیں یا بائیں انتقال کرتے ہوئے دو زاویے قائمے حاصل ہونے کی جو ہم نے قید ذکر کی ہے اس سے یہ سمجھا جاتا ہے کہ اگر انتقال کرتے ہوئے دو قائموں کی بجائے ایک زاویہ حادہ اور دوسرا منفرجہ اس صورت پر حاصل ہوا تو جہت کعبہ کا استقبال صحیح نہ ہوگا۔ اس بیان میں چند اشکال ہیں:
اوّلاً: یہ کہ دُرّ کی عبارت میں سرے سے انتقال کا ذکر ہی نہیں ہے چہ جائیکہ انتقال کے بعد وہاں دو قائموں کے حصول کا ذکر ہو، اور اس نے بعد میں تفریع

[بائیں کالم کی عبارت] قال وکان الخط الخارج من جبین المصلی یصل علی استقامۃ الی ھذا الخط المار علی الکعبۃ فأنہ بھذا الانتقال لا تزول المقابلۃ بالکلیۃ لان وجہ الانسان مقوس فمھما تأخر یمینا او یسارا عن عین الکعبۃ یبقی شیئ من جوانب وجھہ مقابلا لھا اھـ [1] - اقول: فھم رحمہ اللہ تعالی ان وصول خط الجبھۃ عمود اعلی الخط المعترض المار بالکعبۃ عند الانتقال للیمین والشمال شرط بقاء الجھۃ عندھم وقد افصح عنہ بعید ھذا حیث قال بل المفھوم مما قد مناہ عن المعراج والدرر من التقیید

بحصول زاويتين قائمتين عند انتقال المستقبل لعين الكعبة يمينا اويسارا انه لا يصح لو كانت احدهما حادة والاخرى منفرجة بهذه الصورة اهـ وفيه [2]: [خاكہ: كعبہ، مصلى] اولاً ليس فى عبارة الدرر ذكر الانتقال ههنا اصلا فضلا عن حصول قائمتين بعد الانتقال وماذكر بعد فى التفريع

---

[1] رد المحتار مبحث استقبال القبلة مطبوعہ مجتبائى دہلى ٢٨٨/١ [2] رد المحتار مبحث استقبال القبلة مطبوعہ مجتبائى دہلى ٢٨٨/١

Fatawa-e-Razawiyya - Volume 6

[Arabic Section]: Regarding turning to the right or left, there is also no trace of that in it, nor does it necessitate shifting. In fact, they [the two right angles] cannot be achieved for you by deviating from the alignment while you are standing in your place. This was expressed in Al-Durar where it stated: "From this, it is known that if one deviates from the exact [direction of the] Kaaba... etc." Secondly: Al-Mi'raj and all of his mentioned followers only supposed a line from the forehead of one facing the exact [Kaaba] passing towards the Kaaba, and another [line] intersecting it at two right angles. Then they supposed shifting right and left for many leagues along this intersecting line, yet neither he nor any of them made the occurrence of two right angles a condition after the shifting. Thirdly: If that were made a condition, it would not be valid because shifting is not possible along a straight line. This is because the intersecting line would only pass through the space on both sides of the one facing [the Kaaba] at a distance of one foot in the air, because the earth is a sphere. Rather, the person shifting moves along a circle. So if they maintained their orientation while facing the exact Kaaba and shifted along that circle to the right or left, then there is no doubt that the line emerging from their forehead...

[Urdu Section]: Regarding the mention of being to the right and left, there is no sign of it there either, nor does it necessitate shifting. In fact, even if you deviate from the alignment while standing in your place, two right angles cannot be obtained. Al-Durar expressed this by saying: "Thus it is known from this that if one deviates somewhat from the exact Kaaba... etc." Secondly, Al-Mi'raj and his aforementioned followers supposed that a line emerging from the forehead of one facing the exact Kaaba goes towards the Kaaba, and mentioned another line that intersects it at two right angles. Then these people supposed shifting to the right or left for several leagues on this intersecting line. Despite this, Al-Mi'raj and his followers did not impose the condition of two right angles after the shifting. Thirdly, if this condition were imposed, it would not be correct because shifting on a straight line is not possible. This is because the intersecting line would pass through space at a distance of one step on both the right and left sides of the one facing the Kaaba, because the earth is spherical, meaning round. The person shifting will only shift along a circle. Now, if while facing the exact Kaaba, they maintain their direction and shift to the right or left on that circle, then certainly the [line] emerging from their forehead...

1. Al-Durar al-Hukkam fi Sharh Ghurar al-Ahkam, Chapter: Conditions of Prayer, printed by Ahmad Kamil, Al-Ka'inah, Dar al-Sa'adat, Egypt, 1/60. Page 99 of 736

फतावा-ए-रज़विया - छठा खंड

[अरबी खंड]: दाएँ या बाएँ मुड़ने के संबंध में, इसमें उसका कोई निशान नहीं है, न ही यह स्थान परिवर्तन को अनिवार्य बनाता है। वास्तव में, अपनी जगह खड़े रहकर संरेखण (alignment) से विचलित होने पर भी आपको दो समकोण प्राप्त नहीं हो सकते। इसी बात को 'अल-दुरर' में इस प्रकार व्यक्त किया गया है: "अतः इससे ज्ञात होता है कि यदि कोई काबा की दिशा से थोड़ा विचलित हो जाए... आदि।" दूसरा: 'मेराज' और उनके बताए गए सभी अनुयायियों ने केवल काबा के सामने खड़े व्यक्ति के माथे से निकलने वाली एक रेखा की कल्पना की है जो काबा की ओर जाती है, और दूसरी रेखा जो इसे दो समकोणों पर काटती है। फिर उन्होंने इस प्रतिच्छेदक रेखा पर दाएँ और बाएँ कई फरसख तक स्थान परिवर्तन की कल्पना की, फिर भी न तो उन्होंने और न ही उनमें से किसी ने स्थान परिवर्तन के बाद दो समकोणों के बनने की शर्त रखी। तीसरा: यदि वैसी शर्त रखी जाती, तो वह मान्य नहीं होती क्योंकि एक सीधी रेखा पर स्थान परिवर्तन संभव नहीं है। ऐसा इसलिए है क्योंकि काटने वाली रेखा काबा के सामने खड़े व्यक्ति के दाएँ और बाएँ दोनों ओर हवा में एक कदम की दूरी से गुजरेगी क्योंकि पृथ्वी गोलाकार है। स्थान परिवर्तन करने वाला व्यक्ति केवल एक वृत्त (circle) पर ही स्थान परिवर्तन करेगा। अब यदि वह काबा की ओर मुख रखते हुए अपनी दिशा को सुरक्षित रखते हुए उस वृत्त पर दाएँ या बाएँ स्थान परिवर्तन करता है, तो इसमें कोई संदेह नहीं है कि उसके माथे से निकलने वाली रेखा...

[उर्दू खंड]: दाएँ और बाएँ होने के बारे में जो उल्लेख किया गया है, उसमें भी इसका कोई संकेत नहीं है और न ही यह स्थान परिवर्तन को अनिवार्य बनाता है। बल्कि जब आप अपनी जगह खड़े रहकर संरेखण से विचलित भी होते हैं, तब भी दो समकोण प्राप्त नहीं हो सकते। इसी बात को 'दुरर' ने इस प्रकार व्यक्त किया है: "अतः इससे ज्ञात हुआ कि यदि वह काबा की दिशा से थोड़ा विचलित हो जाए... आदि।" दूसरा यह कि 'मेराज' और उनके उक्त अनुयायियों ने कल्पना की कि काबा के सामने खड़े व्यक्ति के माथे से एक रेखा निकलकर काबा की ओर जाए और दूसरी रेखा का उल्लेख किया जो उसे दो समकोणों पर काटती है। फिर उन लोगों ने इस प्रतिच्छेदक रेखा पर दाएँबाएँ कई फरसख तक स्थान परिवर्तन को माना है। इसके बावजूद, 'मेराज' और उनके अनुयायियों ने स्थान परिवर्तन के बाद दो समकोणों की शर्त नहीं लगाई। तीसरा यह कि यदि यह शर्त लगाई जाए तो यह सही नहीं होगी क्योंकि सीधी रेखा पर स्थान परिवर्तन संभव नहीं है। ऐसा इसलिए क्योंकि काटने वाली रेखा काबा के सामने खड़े व्यक्ति के दाएँ और बाएँ दोनों तरफ हवा में एक कदम की दूरी से गुजरेगी

क्योंकि पृथ्वी गोलाकार यानी गोल है। स्थान परिवर्तन करने वाला केवल एक वृत्त पर ही स्थान परिवर्तन करेगा। अब यदि वह काबा के सामने मुख रखते हुए अपनी दिशा को सुरक्षित रखते हुए उस वृत्त पर दाएँ या बाएँ स्थान परिवर्तन करे, तो निश्चित रूप से उसके माथे से निकलने वाली रेखा...

---

1. अल-दुरर अल-हुक्काम फी शरह ग़ुरर अल-अहकाम, अध्याय: नमाज़ की शर्तें, अहमद कामिल द्वारा मुद्रित, अल-काइनह, दार अल-सआदत, मिस्र, 1/60। पृष्ठ 99/736

من التیامن والتیاسر فلیس فیه ایض اثر من ذلك ولا هو یستلزم الانتقال بل ولا یحصلان لك بالانحراف عن المحاذاة وانت قائم مقامك وبه عبر فی الدرر حیث قال فیعلم منه انه لو انحرف عن العین انحرافاً الخ۔ و ثانیاً : المعراج وکل من ذکرنا من متابعیه انما فرضوا خطاً من جبین مستقبل العین مارا الی الکعبة واخر قاطعاله علی قائمتین ثم فرضوا الانتقال یمیناً ویسارا بفراسخ کثیرة علی هذا القاطع ولم یشترط هو ولا احد منهم حدوث القائمتین بعد الانتقال۔ وثالثاً: لو شرط ذلك لم یصح لان الانتقال لا یمکن علی خط مستقیم فان القاطع انما یمر فی جانبی المستقبل بعد موضع قدمه فی الهواء لکون الارض کرة وانما ینتقل المنتقل علی دائرة فهوان حفظ توجهه حین استقباله عین الکعبة وانتقل علی تلك الدائرة یمیناً وشمالاً فلا شك ان الخط الخارج من جبهته

کے طور دائیں اور بائیں ہونے کا جو ذکر کیا ہے اس میں بھی اس کا کوئی نشان نہیں اور نہ ہی وہ انتقال کو مستلزم ہے بلکہ جب تو اپنی جگہ کھڑا رہ کر محاذات سے انحراف بھی کرے تب بھی دو قائمے حاصل نہیں ہو سکتے۔ اسی بات کو دُرر نے تعبیر کرتے ہوئے کہا۔ "پس اس سے معلوم ہوا کہ عین کعبہ سے کچھ انحراف کرے۔ الخ ثانیاً یہ کہ معراج اور اس کے مذکورہ متبعین حضرات نے عین کعبہ کا استقبال کرنے والے کی جبین سے خط نکل کر کعبہ کی طرف جائے اور دوسرا خط جو اس کو دو قائموں زاویوں پر قطع کرنے کو ذکر کیا ہے اور پھر ان لوگوں نے اس قاطع خط پر دائیں بائیں کئی فرسخ تک انتقال کو فرض کیا ہے، اس کے باوجود معراج اور اس کے متبعین نے انتقال کے بعد ۲ دو قائمہ زاویوں کی شرط نہیں لگائی۔ ثالثاً یہ کہ اگر یہ شرط لگائی جائے تو درست نہیں ہو گی کیونکہ انتقال خط مستقیم پر ممکن نہیں ہے اس لئے کہ قطع کرنے والا خط کعبہ کا استقبال کرنے والے کے دائیں اور بائیں دونوں طرف فضا میں ایک قدم کے فاصلہ سے گزرے

گا کیونکہ زمین کروی یعنی گول ہے اور انتقال کرنے والا صرف ایک دائرہ پر انتقال کرے گا، اب اگر وہ عین کعبہ کا استقبال کرتے ہوئے اپنی جہت کو محفوظ رکھتے ہوئے اس دائرہ پر دائیں یا بائیں انتقال کرے تو یقیناً اس کی پیشانی سے نکلنے والا

---

1 الدرر الحکام فی شرح غرر الاحکام باب شروط الصلوۃ مطبوعہ احمد کامل الکائنہ دارالسعادت مصر ۱/ ۶۰

The line passing through the Kaaba widthwise will not intersect at two perpendiculars, as is not hidden.

Fourthly: Whether this condition is correct or not, Shami's statement will never be correct that 'however much one moves to the right or left'. Miraj and his followers only mentioned that the direction (qibla) would remain for someone moving many leagues (farsakhs) to the right or left, and this is correct. Because they did not claim that no matter how far one moves, the direction would not change. How can this be? When an extreme movement occurs, surely it will no longer be facing the Kaaba, and this will soon become clear to you.

Fifthly: Since it was ingrained in the mind of the annotator (may Allah have mercy on him) that for the direction of the Kaaba to remain, the condition is that the line coming from the worshipper's forehead must intersect the line crossing the Kaaba widthwise in a perpendicular manner. Thus, he imagined that if the one moving left that specified standard direction and deviated even slightly to the right or left, the facing (Istiqbal) would not be valid. Because in that case (from the meeting of the two mentioned lines), two right angles would not be formed, but rather an acute and an obtuse angle, as he mentioned earlier. And he presumed that this statement of 'Miraj' and 'Durr' is contrary to the permission for slight deviation, which is explicitly mentioned in several books. And they clarified it by saying that the essence of what is meant by 'moving to the right or left' is to shift the direction from the physical Kaaba itself towards the right or left side, not to deviate.

फ़तवा रज़विया, खंड छह

काबा से होकर चौड़ाई में गुजरने वाली रेखा दो लंबों (परपेंडिकुलर्स) पर नहीं काटेगी, जैसा कि स्पष्ट है।

चौथा: यह शर्त सही हो या न हो, लेकिन शामी का यह कहना कभी सही नहीं होगा कि 'चाहे जितना भी दाएँ या बाएँ हट जाए'। मेराज और उनके अनुयायियों ने केवल यह उल्लेख किया है कि कई फ़रसख (कोस) तक दाएँ या बाएँ हटने वाले की दिशा बनी रहेगी, और यह बात सही है। क्योंकि उन्होंने यह दावा नहीं किया कि चाहे जितना भी हट जाए, तब भी दिशा नहीं बदलेगी। यह कैसे हो सकता है? जब अत्यधिक दूरी तक स्थानांतरण होगा, तो निश्चित रूप से वह काबा की दिशा पर नहीं रहेगा, और यह जल्द ही आप पर स्पष्ट हो जाएगा।

पाँचवाँ: यह कि जब मुहाशी (टीकाकार) रहमतुल्लाह अलैह के मन में यह बात बैठ गई कि काबा की दिशा बनी रहने के लिए यह शर्त है कि नमाज़ी के माथे से निकलने वाली रेखा, काबा के ऊपर से चौड़ाई में गुजरने वाली रेखा को लंबवत (वर्टिकल) रूप में काटे, तो उन्हें यह भ्रम हुआ कि यदि हटने वाले ने उक्त मानक वाली दिशा को छोड़ दिया और थोड़ा सा भी दाएँ या बाएँ विचलन किया तो इस्तक़बाल (सामने होना) सही नहीं होगा। क्योंकि इस स्थिति में (उक्त दोनों रेखाओं के मिलने से) दो समकोण नहीं बल्कि एक न्यून कोण और एक अधिक कोण प्राप्त होंगे, जैसा कि वे पहले उल्लेख कर चुके हैं। और उन्होंने यह मान लिया कि मेराज और दुरर का यह कथन उस थोड़े से विचलन की अनुमति के विरुद्ध है जिसका स्पष्ट रूप से कई पुस्तकों में उल्लेख है। और उन्होंने इसकी यह कहकर स्पष्टता कर दी कि दाएँबाएँ होने से तात्पर्य यह है कि स्वयं काबा से दाएँ या बाएँ दिशा में स्थानांतरण करना है, न कि विचलन।

पृष्ठ 100 / 736

فتاویٰ رضویہ جلد ششم

لا یقطع الخط المار بالکعبة عرضا علی قائمتین کما لا یخفی۔ خط کعبہ پر سے عرض میں گزرنے والے خط کو دو قائموں پر قطع نہیں کرے گا، کما لا یخفی۔

ورابعا: یصح ذلك اولا یصح فلن یصح قوله مهما تأخر یمینا او یسارا و انما ذکر المعراج ومن معه بقاء الجهة بالانتقال علیه بفراسخ کثیرة وهذا صحیح ولم یدعوا انه مهما انتقل لم یتبدل کیف والواغل في الانتقال علیه لا یبقی مواجها للکعبة لاشك وسیستبین لك۔ رابعاً یہ شرط صحیح ہو یا نہ ہو مگر شامی کا یہ کہنا ہر گز درست نہ ہوگا کہ "جتنا بھی دائیں بائیں ہٹ جائے" معراج اور اس کے متبعین نے صرف یہ ذکر کیا ہے کہ دائیں بائیں کئی فرسخ تک منتقل ہونے والے کی جہت باقی ہوگی اور یہ بات صحیح ہے، کیونکہ انہوں نے یہ دعوی نہیں کیا کہ جتنا بھی منتقل ہو جائے تب بھی جہت نہ بدلے گی۔ یہ کیسے ہو سکتا ہے جب انتہائی طور پر انتقال ہو گا تو یقیناً وہ کعبہ کی جہت پر نہ رہے گا، اور عنقریب یہ تجھ پر واضح ہو جائے گا۔

وخامسا لما ارتکز في ذهنه رحمه الله تعالی ان شرط بقاء المواجهة وصول خط الجهة الی ذلك الخط المعترض بالکعبة عمودا توهم ان لو ترك المنتقل تلك الوجـهة و انحراف قلیلا یمینا او شمالا لم یصح لکون الزاویتین اذ ذاك حادة و منفرجة کما قدم فزعم ان کلام المعراج والدرر هذا مخالف لاجازة الانحراف القلیل المصرح بها في غیر ما کتاب وصرح به اذ قال، والحاصل ان المراد بالتیامن والتیاسر الانتقال عن عین الکعبة لی جهة الیمین او الیسار لا الانحراف۔ خامساً یہ کہ جب محشی رحمۃ اللہ علیہ کے ذہن میں یہ بات مرکوز ہو چکی ہے کہ کعبہ کی جہت کی بقاء کے لئے یہ شرط ہے کہ نمازی کی پیشانی سے نکلنے والا خط، کعبہ پر سے عرض میں گزرنے والے خط کو عمودی شکل میں

قطع کرے تو ان کو وہم ہوا کہ اگر منتقل ہونے والے نے مذکورہ معیار والی جہت کو چھوڑ دیا اور تھوڑا سا بھی دائیں بائیں اس نے انحراف کیا تو استقبال صحیح نہ ہوگا، کیونکہ اس صورت میں (مذکورہ دونوں خطوں کے ملنے سے) دو قائمہ زاویے نہیں بلکہ ایک حادہ اور ایک منفرجہ حاصل ہوں گے، جیسا کہ قبل ازیں وہ ذکر کر چکے ہیں۔ اور انہوں نے یہ گمان کر لیا کہ معراج اور درر کا یہ کلام اس قلیل انحراف کی اجازت کے خلاف ہے جس کا صراحتاً متعدد کتب میں ذکر ہے۔ اور انہوں نے اس کی یہ کہہ کر تصریح کر دی کہ دائیں بائیں ہونے سے مراد کا حاصل یہ ہے کہ عین کعبہ سے دائیں یا بائیں جہت انتقال کرنا ہے نہ کہ لا انحراف۔

Fatawa Rizwia - Volume 6

But there occurs in their words that which indicates that deviation does not cause harm. Then [1] he quoted the statement of al-Quhistani and the commentary of al-Allamah al-Ghazzi on 'Zad al-Faqir' and 'Munyat al-Musalli' from 'Amali al-Fatawa'. It is surprising that he forgot what he himself had quoted from 'al-Durr'. For what he quoted here from al-Quhistani is the very same thing he previously presented from 'al-Durr', stating that a slight deviation, which does not entirely remove the facing (towards the Kaaba), is not harmful. So how can the words of 'al-Durr' be contrary to it?

Sixthly: The matter is not as he understood; rather, the deviation of the center of the forehead of the person facing (the Qiblah) from being directly opposite the Kaaba necessitates lateral movement and exiting from the surface of the noble wall. Now, if the annotator (Rahamatullah Alayh) maintains the focus on this right-angled direction during the prayer's lateral movement, then in this case, an action occurs that would entirely remove the worshiper from the direction of the Kaaba. And if he means a deviation for the one moving away from this right-angled focus to maintain the direction towards the Kaaba (as a deviation towards the Kaaba for the one moving), then...

---

[1] Radd al-Muhtar, Chapter on Facing the Qiblah, printed by Mujtabai Delhi, 1/288.
Page 101 of 736

फ़तावा रिज़विया - भाग 6

लेकिन उनके कलाम (शब्दों) में वह बात आई है जो इस पर दलालत करती है कि विचलन (इन्हिराफ़) हानिकारक नहीं है। फिर [1] उन्होंने 'अमाली अल-फ़तावा' के हवाले से 'जाद अल-फ़क़ीर' और 'मुनियत अल-मुसल्ली' की अल्लामा ग़ज़ी की व्याख्या और कुहिस्तानी के शब्दों को उद्धृत किया। आश्चर्य की बात है कि अल्लामा शामी (टीकाकार) रहमतुल्लाह अलैह 'दुर्र' से स्वयं अपनी उद्धृत की गई बात को भूल गए, क्योंकि उन्होंने यहाँ कुहिस्तानी से जो उद्धृत किया है वह ठीक वही है जो उन्होंने पहले 'दुर्र' से बयान किया था कि थोड़ा सा विचलन, जिससे काबा का सामना पूरी तरह समाप्त न हो, हानिकारक नहीं है। तो 'दुर्र' का कलाम कुहिस्तानी के विरुद्ध कैसे होगा?

छठा: यह कि मामला वैसा नहीं है जैसा उन्होंने समझा, बल्कि काबा की ओर मुख करने वाले के माथे के मध्य का काबा की दिशा से विचलित होना, दाएं-बाएं हटने और काबा की दीवार की सतह से बाहर निकलने को अनिवार्य बनाता है। अब यदि टीकाकार रहमतुल्लाह अलैह नमाज़ी के दाएं-बाएं हटने में उस समकोण वाली दिशा पर कायम रहते हैं, तो इस स्थिति में उनसे नमाज़ी को काबा की दिशा से पूरी तरह बाहर कर देने वाली बात सामने आ रही है। और यदि वह स्थान बदलने वाले के लिए (उस समकोण वाली बात से) विचलन करके काबा की ओर मुख को सुरक्षित रखने के लिए (स्थान बदलने वाले का काबा की ओर) विचलन का अर्थ लें तो...

---

[1] रद अल-मुह्तार, क़िबला की ओर मुख करने का अध्याय, मुजतबाई दिल्ली द्वारा मुद्रित, 1/288। पृष्ठ 101/736

لیکن ان کے کلام میں وہ بات آئی ہے جو اس پر دلالت کرتی ہے کہ انحراف (انحراف) نقصان دہ نہیں ہے۔ پھر [۱] انہوں نے 'امالی الفتاویٰ' کے حوالہ سے 'زاد الفقیر' اور 'منیة المصلی' کی علامہ غزی کی شرح اور قہستانی کے الفاظ نقل کیے۔ تعجب کی بات ہے کہ علامہ شامی (محشی) رحمۃ اللہ تعالیٰ دُر ر سے خود اپنی نقل کردہ بات کو بھول گئے، کیونکہ انہوں نے یہاں قہستانی سے جو یہ نقل کیا ہے کہ ایسا قلیل انحراف جس سے کعبہ کا مقابلہ کلیۃً زائل نہ ہو مضر نہیں ہے۔ یہ بعینہٖ وہی چیز ہے جس کو وہ خود پہلے دُر ر سے بیان کر چکے ہیں، تو دُر ر کا کلام قہستانی کے خلاف کیسے ہوگا۔

سادساً یہ کہ معاملہ وہ نہیں جیسا کہ انہوں نے سمجھا بلکہ کعبہ کا استقبال کرنے والے کی وسط پیشانی کا سمت کعبہ سے انحراف دائیں بائیں انتقال اور کعبہ کی دیوار کی سطح سے خروج کو لازم ہے، اب اگر محشی رحمۃ اللہ علیہ نمازی کے دائیں بائیں انتقال میں اس زاویۃ قائمہ والی توجہ پر قائم رہتے ہیں تو اس صورت میں ان سے نمازی کو جہت کعبہ سے بالکلیہ خارج کر دینے والی بات صادر ہو رہی ہے، اور اگر وہ منتقل ہونے والے کے لئے (اس قائمہ والی بات) سے انحراف کر کے کعبہ کی طرف توجہ کی حفاظت کے لئے (منتقل ہونے والے کعبہ کی طرف) انحراف مراد لیں تو...

---

[۱] ردالمحتار مبحث استقبال القبلہ مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱ / ۲۸۸ صفحہ 101 از 736

Fatawa-e-Razvia Volume 6

(Left Column) ...and fifty miles, i.e., five degrees, and its latitude 'Kahlah Alt' towards the latitude of Mecca the Honored, as established by new measurements 'Kahlah Alh', then its Qibla is the point of the West exactly, as is not hidden from the engineer. This is because in logarithms, the tangent of the latitude of Mecca is 9.5935423, the cosine of the difference between the two longitudes is 9.9983422 = 9.5951581, the tangent of the position of the perpendicular falling from the West point on the meridian of the city passing through the zenith of Mecca the Honored, its arc 'Kahlah Alt' is equal to the latitude of the city, so the perpendicular itself is an azimuthal [circle] passing through the zeniths of the city and Mecca. Then we say: the tangent of [the difference between] the two longitudes 8.9419518 + the sine of the complement of the latitude of the perpendicular's position 9.9672762 = 18.9607294. We keep it as a constant and move on this meridian right and left while keeping the face, i.e., keeping the North Pole on the right shoulder. Let it be: Firstly, a location on the Equator, so the latitude of the location is the difference between it and the latitude of the city for its non-existence. Its sine is 9.5637546 and it remains by subtracting it from...

(Right Column) In this case, their discourse will not remain comprehensive and exclusive. Its explanation is that if a place is located east of Mecca such that the difference between its longitude and that of Mecca is three hundred and fifty miles, i.e., five degrees, and the latitude of this place is 'Kahlah Alt', equal to the latitude of Mecca as established in modern laws that it is 'Kahlah Alt', then in this case, the Qibla of this place will be exactly the point of the west, which is not hidden from mathematicians. This is because in logarithms, the tangent of the latitude of Mecca is 9.5935423, and the cosine of the difference between the two longitudes is 9.9983422 = 9.5951581. If the tangent of the position of the perpendicular falling from the west point passes exactly through the direction of Mecca at the time of the meridian, its arc will be 'Kahlah Alt', which will be equal to the latitude of the city. In this way, the perpendicular itself will be an azimuthal circle passing through the directions of both the city and Mecca. Then we will say that the tangent of both longitudes is 8.9419518 + the sine of the complement of the latitude of the perpendicular's position 9.9672762 = 18.9607294, which we will keep as a constant. And keeping the North Pole on our right shoulder and preserving our direction, if we move right and left on this meridian, then: Firstly, if there is a location on the Equator, the latitude of the location being negative will cause the distance between it and the latitude of the city

to increase, the sine of which will be 9.8637546; this will be subtracted from the constant...

फ़तवा-ए-रज़विया जिल्द शशम

(बायाँ कॉलम) ...और पचास मील यानी पाँच अंश और उसका अक्षांश 'काहला अल्त' मक्का मुकर्रमा के अक्षांश की ओर जैसा कि नए मापों 'काहला अल्ह' से सिद्ध है, तो उसका क़िबला ठीक पश्चिम बिंदु होगा जैसा कि इंजीनियर पर गुप्त नहीं है। और यह इसलिए कि लघुगणक में मक्का के अक्षांश की स्पर्शरेखा 9.5935423, दोनों देशांतरों के बीच की पूर्ण ज्या 9.9983422 = 9.5951581, नगर के मध्याह्न पर पश्चिम बिंदु से गिरने वाले लंब के स्थान की स्पर्शरेखा जो मक्का मुकर्रमा के खमध्य (zenith) से गुजरती है, उसका चाप 'काहला अल्त' नगर के अक्षांश के बराबर है, इसलिए लंब स्वयं दिगंशीय है जो नगर और मक्का के खमध्य से गुजरता है। फिर हम कहते हैं: दोनों देशांतरों के बीच की स्पर्शरेखा 8.9419518 + लंब के स्थान के अक्षांश के पूरक की ज्या 9.9672762 = 18.9607294. हम इसे सुरक्षित रखेंगे और इस मध्याह्न पर दाएँ और बाएँ मुड़ेंगे जबकि मुख की दिशा वही रहे यानी उत्तरी ध्रुव दाहिने कंधे पर रहे। तो मान लीजिए: प्रथम, भूमध्य रेखा पर एक स्थान, तो स्थान का अक्षांश उसके और नगर के अक्षांश के बीच का अंतर है उसके अभाव के कारण। उसकी ज्या 9.5637546 है और इसके घटाव से बचता है...

(दायाँ कॉलम) इस स्थिति में उनका कथन व्यापक और विशेष नहीं रहेगा। इसका विवरण यह है कि मक्का मुकर्रमा से पूर्व में स्थित ऐसा स्थान कि उसके और मक्का मुकर्रमा के दोनों देशांतरों के बीच साढ़े तीन सौ मील यानी पाँच अंश हों, और उस स्थान का अक्षांश 'काहला अल्त' मक्का मुकर्रमा के अक्षांश के बराबर होगा जैसा कि आधुनिक नियमों में सिद्ध है कि वह 'काहला अल्त' है, तो इस स्थिति में उस स्थान का क़िबला ठीक पश्चिम बिंदु होगा जो गणितज्ञों से छिपा नहीं है। यह इसलिए कि लघुगणक में मक्का मुकर्रमा के अक्षांश की स्पर्शरेखा (tangent) 9.5935423, दोनों देशांतरों के बीच की पूर्ण ज्या (cosine) 9.9983422 = 9.5951581 है। पश्चिम बिंदु से गिरने वाले लंब के स्थान की स्पर्शरेखा, मध्याह्न के समय ठीक मक्का मुकर्रमा की दिशा से गुजरे, तो उसका चाप (arc) 'काहला अल्त' होगा जो नगर के अक्षांश के बराबर होगा। इस तरह स्वयं लंब एक दिगंशीय वृत्त होगा जो उस नगर और मक्का मुकर्रमा की दोनों दिशाओं से गुजरेगा। फिर हम कहेंगे कि दोनों देशांतरों की स्पर्शरेखा 8.9419518 + लंब के स्थान के अक्षांश के पूरक की ज्या 9.9672762 = 18.9607294 है जिसे हम सुरक्षित (स्थिरांक) कर लेंगे और हम दाहिने कंधे पर उत्तरी ध्रुव को बाकी रखकर अपनी दिशा सुरक्षित बनाकर इस मध्याह्न पर दाएँ और बाएँ स्थानांतरित हों तो: प्रथम, भूमध्य रेखा पर एक स्थान हो तो लंब के घटने के स्थान का अक्षांश ऋणात्मक होने के कारण उसके और

नगर के अक्षांश के बीच की दूरी अधिक होगी, जिसकी ज्या 9.8637546 होगी, इसे सुरक्षित से घटाना...

पृष्ठ १०२ / ७३६

(Left Column) و خمسین میلا اعنی خمس درج و عرضھا کاحہ الط نحو امن عرض مکة المکرمة علی ما ثبت بالقیاسات الجدیدة کاحه اله فاذن تکون قبلته نقطة المغرب سواء بسواء کمالا یخفی علی المهندس وذلك لان في اللوغار ثمیات ظل عرض مکة ۹،۵۹۳۵۴۲۳ جیب تمام ما بین الطولین ۹،۹۹۸۳۴۲۲ = ۹،۵۹۵۱۵۸۱ ظل عرض موقع العمود الواقع من نقطة المغرب علی نصف نهار البلد مارا بسمت راس مکة المکرمة قوسه کاحہ الط مساویة لعرض البلد فیکون العمود نفسه دا سمتیة مرت سمتی راس البلد ومکة ثم نقول ظل ما بین الطولین ۸،۹۴۱۹۵۱۸ + جیب تمام عرض موقع العمود ۹،۹۶۷۲۷۶۲ = ۱۸،۹۶۰۷۲۹۴ نجعلہ محفوظاً و ننتقل علی نصف النهار هذا یمیناً و شمالاً مع حفظ الوجه اعنی بقاء القطب الشمالی علی منکب الایمن فلیکن: اولاً موضع علی خط الاستواء فعرض الموقع هو الفضل بینه و بین عرض البلد لانتفائه جیب ۹،۵۶۳۷۵۴۶ ویبقی بتفریقه من

(Right Column) اس صورت میں ان کا کلام جامع اور مانع نہ رہے گا، اس کا بیان یہ ہے کہ مکہ مکرمہ سے مشرق میں واقع ایسا مقام کہ اس کے اور مکہ مکرمہ کے دونوں طولوں میں ساڑھے تین سو میل یعنی پانچ درجے ہو، اور اس مقام کا عرض کالحہ الط مکہ مکرمہ کے عرض جتنا ہوگا جیسا کہ جدید قوانین میں ثابت ہے کہ وہ کالحہ الط ہے، تو اس صورت میں اس مقام کا قبلہ ٹھیک نقطہ مغرب ہوگا جو کہ ریاضی دان حضرات پر مخفی نہیں، یہ اس لئے کہ لوگارتھم میں عرض مکہ مکرمہ کا ظل ۹،۵۹۳۵۴۲۳ دونوں طولوں میں مکمل جیب ۹،۹۹۸۳۴۲۲ = ۹،۵۹۵۱۵۸۱ ہے نقطہ مغرب سے گرنے والے عمود کے مقام کا ظل، نصف النہار کے وقت عین مکہ مکرمہ کی سمت پر سے گزرے، تو اس کا قوس کالحہ الط ہو گا جو عرض بلد کے مساوی ہو گا اس طرح خود عمود ایک دائرہ سمتی ہو گا جو اس البلد اور مکہ مکرمہ کی دونوں سمتوں سے

گزرے گا۔ پھر ہم کہیں گے کہ دونوں طولوں کا ظل ۸،۹۴۱۹۵۱۸ + عمود کے موقع کے تمام عرض کا جیب ۹،۹۶۷۲۷۶۲ = ۱۸،۹۶۰۷۲۹۴ ہے جس کو ہم محفوظ کرلیں گے اور ہم دائیں کندھے پر قطب شمالی کو باقی رکھ کر اپنے جہت کو محفوظ بنا کر اس نصف النہار پر دائیں اور بائیں منتقل ہوں تو: اولاً خط استواء پر ایک موضع ہو تو عمود کے وقوع کی جگہ کا عرض منفی ہونے کی وجہ سے اس کے اور عرض البلد کے درمیان زائد ہوگا، جس کا جیب ۹،۸۶۳۷۵۴۶ ہو گا اس کو محفوظ سے تفریق

Fatawa Razawiyya, Volume 6

(Arabic Text/Left Column) The preserved shadow of the northern deviation is 9.3469228 arc, its total height is 'al-Ha'. So, whoever maintains this direction, his deviation from the Qibla will be more than 77 degrees. It is more appropriate to call him one who turns aside rather than one who faces it, because less than 13 degrees remains between his actual side and the Kaaba, while more than 77 degrees is between the Kaaba and his face. If he deviates from that direction to his right, meaning the north, by more than 77 degrees, he would hit the Qibla despite this great deviation. Thus, the rule is violated both ways in a shift of less than 22 degrees. Secondly, a place whose latitude is 'M Ha Nah' northwards, so that the northern shift becomes like the southern shift. Then its difference with the latitude of the location's vertical point will be the same, and its sine of sine and the calculation will be the same. Thus, the deviation of the Qibla here from the point of West towards the South will be the 'al-Ha' duration, and the same problem will necessarily arise. Thirdly, let it be a place whose southern latitude is 'M Ha Nah'. Then its sum with the latitude of the vertical point will be 'Sil Ha Al-Ra', whose sine is 9.9553073. Subtracted from the preserved value, it equals 8.9553021 arc. This will be the shadow 'La Ha Ta', which will be the total 'Qad Na Ha' in this case.

(Urdu Text/Right Column) On doing so, the shadow of the northern deviation will remain 9.3469228, whose arc will be the complete duration of 'al-Ha'. Now, whoever maintains his direction, his deviation from the Qibla will be more than 77 degrees. Instead of considering him facing the Qibla, it is better to consider him turning his side away from the Qibla direction, because less than 13 degrees will remain between his actual side and the Kaaba, and between the Kaaba and his face, it will be more than 77 degrees. Now if he deviates more than 77 degrees from this direction to his right, i.e., north, he will still find the direction of the Kaaba. Thus, for a shift of less than 22 degrees, its comprehensiveness and exclusiveness will end. Secondly, such a place whose latitude is 'M Ha Nah' northwards so that the northern and southern shifts become similar, then its difference including the latitude of the vertical position of the column will be equal to the same. Then the sine and calculation for both will be the same. So from here, the deviation of the Qibla from the western point towards the south will be the duration 'al-Ha' and the same flaw will necessarily follow that occurred. Thirdly, let there be a place whose southern latitude is 'M Ha Nah', then its sum including the latitude of the vertical position of the column will be 'Sil Ha Al-Ra', whose sine 9.9553073 subtracted from the preserved

value = 8.9553021 arc. This shadow will be 'La Ha Ta' whose total will be 'Qad Na Ha' in this case.

Page 103 of 736

फ़तावा रज़विया, खंड 6

(अरबी पाठ/बायां कॉलम) उत्तरी विचलन (Inhiraf) की सुरक्षित छाया 9.3469228 चाप है, जिसकी कुल ऊँचाई 'अल-हा' होगी। अतः जिसने इस दिशा को सुरक्षित रखा, उसका क़िबला से विचलन 77 डिग्री से अधिक होगा। उसे क़िबला-रूह (क़िबला की ओर मुख करने वाला) कहने के बजाय 'मुजानिब' (किनारा करने वाला) कहना अधिक उचित है, क्योंकि उसके वास्तविक पहलू और काबा के बीच 13 डिग्री से भी कम शेष बचता है, जबकि काबा और उसके चेहरे के बीच 77 डिग्री से अधिक है। और यदि वह उस दिशा से अपने दाईं ओर, यानी उत्तर की ओर 77 डिग्री से अधिक विचलित होता है, तो वह इस महान विचलन के बावजूद क़िबला को पा लेगा। इस प्रकार, 22 डिग्री से कम के स्थानांतरण में यह नियम आगे और पीछे दोनों तरह से खंडित हो जाता है। द्वितीय, एक ऐसा स्थान जिसका अक्षांश 'म हा नह' उत्तर की ओर हो ताकि उत्तरी स्थानांतरण दक्षिणी स्थानांतरण के समान हो जाए। तब स्तंभ के ऊर्ध्वाधर स्थान के अक्षांश के साथ उसका अंतर समान होगा। तो दोनों का ज्या (sine) और गणना एक ही होगी। यहाँ से पश्चिम के बिंदु से दक्षिण की ओर क़िबला का विचलन 'अल-हा' अवधि होगा और वही दोष अनिवार्य रूप से आएगा जो आया था। तृतीय, ऐसा स्थान हो जिसका दक्षिणी अक्षांश 'म हा नह' हो, तो स्तंभ के ऊर्ध्वाधर स्थान के अक्षांश के साथ उसका योग 'सिल हा अल-रा' होगा जिसका ज्या 9.9553073 सुरक्षित मूल्य से घटाने पर = 8.9553021 चाप होगा। यह छाया 'ला हा ता' होगी जिसका कुल 'क़द ना हा' इस मामले में होगा।

(उर्दू पाठ/दायां कॉलम) करने पर उत्तरी विचलन की छाया 9.3469228 शेष रहेगी जिसका चाप पूर्ण अवधि 'अल-हा' होगा। अब जिसने अपनी दिशा को सुरक्षित रखा, उसका क़िबला से 77 डिग्री से अधिक विचलन होगा। तो उसे क़िबला-रूह मानने के बजाय क़िबला की दिशा से पहलू मोड़ने वाला मानना बेहतर है क्योंकि उसके वास्तविक पहलू और काबा के बीच केवल 13 डिग्री से भी कम शेष बचेगा, और काबा और उसके चेहरे के बीच 77 डिग्री से अधिक होगा। अब यदि वह इस दिशा से अपने दाईं ओर यानी उत्तर की ओर 77 डिग्री से अधिक विचलन करे तो तब भी इस महान विचलन के साथ काबा की दिशा को पा लेगा। तो इस प्रकार 22 डिग्री से कम के स्थानांतरण में इसकी व्यापकता और विशिष्टता समाप्त हो जाएगी। द्वितीय, एक ऐसा स्थान जिसका अक्षांश 'म हा नह' उत्तर की ओर हो ताकि उत्तरी और दक्षिणी स्थानांतरण एक जैसे हो जाएँ तो ऊर्ध्वाधर स्तंभ के स्थान के अक्षांश सहित उसका अंतर उसी के बराबर होगा। तो दोनों का ज्या और गणना एक ही होगी। तो यहाँ से क़िबला का विचलन पश्चिम के बिंदु से दक्षिण की ओर 'अल-हा' अवधि होगा और वही खराबी

अनिवार्य रूप से आएगी जो आई। तृतीय, एक ऐसा स्थान हो जिसका दक्षिणी अक्षांश 'म हा नह' हो, तो ऊर्ध्वाधर स्तंभ के स्थान के अक्षांश सहित उसका योग 'सिल हा अल-रा' होगा जिसका ज्या 9.9553073 सुरक्षित मूल्य से घटाने पर = 8.9553021 चाप होगा। यह छाया 'ला हा ता' होगी जिसका कुल 'क़द ना हा' इस मामले में होगा।

पृष्ठ 103 / 736

فتاوی رضویہ، جلد ششم

(عربی متن/بایاں کالم) المحفوظ ظل الانحراف الشمالی ۹.۳۴۶۹۲۲۸ قوس بحہ ل تمامها عهحہ الخ فمن حفظ الوجهة فقد انحراف عن القبلة اكثر من سبع وسبعين درجة وهو بان يسمى مجانبا احق من ان يسمى مواجها اذ لم يبق جنبه الحقيقي و بين الكعبة الا اقل من ثلث عشرة درجة و بينها و بين وجهه اكثر من درجة وان انحرف عن تلك الوجهة الى يمينه اعنى الشمال اكثر من درجة فقد اصاب القبلة بهذا الانحراف العظيم فانتقض ذلك طردا و عكسا في انتقال اقل من اثنتين و عشرين درجة۔ و ليكن ثانيًا موضع عرضہ م حہ نح شماليا ليكون انتقال الشمالی مثل ذلك جنوبی فتفاضلہ مع عرض الموقع مثل ذلك جنوبی فتفاضلہ مع عرض الموقع مثلہ فجيب جيبہ والعمل العمل يكون انحراف القبلة هنا من نقطة المغرب الى الجنوب عرض الح و لزم مالزم۔ و ليكن ثالثا عرضہ الجنوبي م حہ نح فمجموعہ مع عرض الموقع سلصہ الرجيبه ۹.۹۵۵۳۰۷۳ نفروقًا من المحفوظ = ۸.۹۵۵۳۰۲۱ قوس فأنظل لاحہ ط تمامها قد صہ نا فقد انحرف

(اردو متن/دایاں کالم) کرنے پر شمالی انحراف کا ظل ۹.۳۴۶۹۲۲۸ باقی رہے گا جس کا قوس صل مکمل عرصہ الح ہوگا، پس اب جس نے اپنی جہت کو محفوظ رکھا اس کا قبلہ سے ۷۷ درجے سے زائد انحراف ہوگا تو اس کو قبلہ رو قرار دینے کی بجائے قبلہ سمت سے پہلو پھیرنے والا قرار دینا بہتر ہے کیونکہ اس کے حقیقی پہلو اور کعبہ کے درمیان صرف ۱۳ درجے سے بھی کم باقی رہے گا، اور کعبہ اور اس کے چہرے کے درمیان ۷۷ درجے سے زائد ہوگا، اب اگر وہ اس جہت سے اپنے دائیں یعنی شمال کی طرف ۷۷ درجے سے زیادہ انحراف کرے تو تب بھی اس عظیم انحراف سے کعبہ کی جہت کو پائے گا، تو یوں ۲۲ درجے سے کم انتقال ہے اس کی جامعیت اور مانعیت ختم ہو جائیگی۔ ثانیا ایک ایسا موضع جس کا عرض م حہ نح شمالی ہو تاکہ شمالی اور جنوبی انتقال

ایک جیسا ہو جائے تو اس کا تفاضل عمود کے موقع کے عرض سمیت اسی کے برابر ہوگا تو دونوں کا جیب اور عمل ایک ہی ہوگا تو یہاں سے قبلہ کا انحراف مغرب کے نقطہ سے جنوب کی جانب عرصہ الح ہو گا اور وہی خرابی لازم آئیگی جو آئی۔ ثالثاً ایک ایسا موضع ہو جس کا جنوبی عرض م حہ نح ہو تو اس کا مجموعہ عمود کے موقع کے عرض سمیت سل حہ الر ہو گا جس کا جیب ۹.۹۵۵۳۰۷۳ محفوظ سے تفریق شدہ = ۸.۹۵۵۳۰۲۱ قوس ہو گا یہ ظل لا حہ ط جس کا کل قدناحہ ہو گا اس صورت میں

(Arabic text translation): The Qibla is eighty-five degrees from the western point, and only five degrees remain until the northern point. So if one maintains their current direction, their prayer will be definitely void. But if they turn towards the North Pole, their prayer will certainly be valid. If we assume a smaller distance between the two longitudes than that, the discrepancy will appear even larger. In short, countless impossibilities would follow. The truth is that there is nothing in the text of 'Al-Durr' or 'Al-Mi'raj' of what has been mentioned, nor what was understood regarding the permissibility of moving along that line as one pleases, nor what was understood from their disagreement to permit a slight deviation, nor what was understood about the requirement of maintaining direction for the directionality to remain, nor what was understood from their indication of the invalidity of prayer if the two lines form two different angles. Rather, the matter is as I say: they only assumed movement on a line intersecting it at right angles, i.e., on the meridian of the assumed location truly aligned [with the Kaaba], so that movement causes a deviation contrary to what the commentator (Al-Muhashshi), may Allah Almighty have mercy on him, understood. This is because if the Kaaba were made the center and a circle was drawn at the distance of the one facing it, and they moved along it until they circumnavigated the world...

(Urdu text translation): The deviation of the Qibla from the western point will be 85 degrees, and only five degrees will remain towards the northern point. Thus, if one keeps their direction [unchanged], their prayer will necessarily be void; and if they turn towards the North Pole, their prayer will certainly be correct. If we assume an even smaller distance between these two longitudes, the discrepancy will increase even more. In summary, this would lead to countless complications. So the truth is that in the texts of 'Durr' and 'Mi'raj', there is nothing of what the commentator (Al-Muhashshi), may Allah Almighty have mercy on him, mentioned. There is no permission to move along this line according to one's desire, nor is there any contradiction from these two [sources] regarding the permission of a slight deviation, nor is there a condition of maintaining direction for the continuity of the directionality, nor is there any indication from these two individuals regarding the invalidity of prayer due to the creation of two lines with different angles. In short, none of these mentioned things understood by the commentator are present in the text of these two individuals. Rather, the matter is as I say (Aqulu): they assumed movement along a line intersecting it in the form of two perpendiculars, which

means that the assumed location with the true direction from the Kaaba should be on a specific meridian from which some deviation in direction can be obtained. This is contrary to what the scholar, the commentator, understood. This is because if the Kaaba is considered the center and the person facing it...

फ़तावा रज़विया - छठा खंड

(अरबी पाठ अनुवाद): क़िबला पश्चिमी बिंदु से पचासी डिग्री पर है, और उत्तरी बिंदु तक केवल पाँच डिग्री शेष हैं। इसलिए यदि कोई अपनी वर्तमान दिशा बनाए रखता है, तो उसकी प्रार्थना (नमाज़) निश्चित रूप से अमान्य होगी। लेकिन यदि वे उत्तरी ध्रुव की ओर मुड़ते हैं, तो उनकी प्रार्थना निश्चित रूप से सही होगी। यदि हम उन दो देशांतरों के बीच उससे भी कम दूरी मान लें, तो विसंगति और भी बड़ी दिखाई देगी। संक्षेप में, अनगिनत असंभवताएं उत्पन्न होंगी। सच तो यह है कि 'अल-दुरर' या 'अल-मिराज' के पाठ में ऐसा कुछ भी नहीं है जो बताया गया है, और न ही वह जो उस रेखा पर अपनी इच्छानुसार चलने की अनुमति के बारे में समझा गया था, न ही मामूली विचलन की अनुमति देने के लिए उनके मतभेद से जो समझा गया, न ही दिशा बनाए रखने की आवश्यकता के बारे में जो समझा गया ताकि दिशात्मकता बनी रहे, और न ही दो अलग-अलग कोण बनाने वाली दो रेखाओं के कारण नमाज़ के अमान्य होने के उनके संकेत से जो समझा गया। बल्कि, मामला वैसा ही है जैसा मैं कहता हूँ: उन्होंने केवल उसे समकोण पर काटने वाली रेखा पर चलने को माना, यानी वास्तविक रूप से संरेखित (काबा के साथ) मान लिए गए स्थान के मध्याह्न रेखा पर, ताकि चलने से वह विचलन उत्पन्न हो जो टीकाकार (अल-मुहश्शी), अल्लाह उन पर कृपा करे, के समझने के विपरीत है। ऐसा इसलिए है क्योंकि यदि काबा को केंद्र मान लिया जाए और उसका सामना करने वाले की दूरी पर एक वृत्त खींचा जाए और वे उस पर तब तक चलें जब तक कि वे दुनिया का चक्कर न लगा लें...

(उर्दू पाठ अनुवाद): पश्चिमी बिंदु से क़िबला का विचलन 85 डिग्री होगा, और उत्तरी बिंदु की ओर केवल पाँच डिग्री शेष रहेंगे। अत; यदि वह अपनी इसी दिशा को बनाए रखता है, तो उसकी नमाज़ अनिवार्य रूप से अमान्य होगी; और यदि वह उत्तरी ध्रुव की ओर मुड़ जाता है, तो उसकी नमाज़ निश्चित रूप से सही होगी। और यदि हम इन दोनों देशांतरों के बीच इससे भी कम दूरी मान लें, तो अंतर इससे भी अधिक बढ़ जाएगा। सारांश यह है कि इससे अनगिनत दोष उत्पन्न होंगे। तो सत्य यह है कि 'दुरर' और 'मिराज' की इबारत (पाठ) में मुहाशी (टीकाकार) रहमतुल्लाह अलैह द्वारा उल्लेखित बातों में से कुछ भी नहीं है। न तो इस रेखा पर इच्छा अनुसार चलने की अनुमति है, न ही मामूली विचलन की अनुमति के लिए इन दोनों की ओर से कोई विरोध है, और न ही दिशा के बने रहने के लिए ध्यान केंद्रित रखने की शर्त है, और न ही विभिन्न कोणों वाली दो रेखाओं के उत्पन्न होने से इन दोनों महानुभावों की ओर से नमाज़ के भ्रष्ट होने का संकेत है। संक्षेप में, मुहाशी रहमतुल्लाह अलैह ने जो कुछ समझा, उनमें से कोई भी बात इन दोनों महानुभावों के पाठ में मौजूद नहीं है। बल्कि मामला

वैसे ही है जैसा मैं कहता हूँ (अक़ुल): उन्होंने दो लंबवत् रेखाओं के रूप में इसे काटने वाली रेखा पर चलने को माना है, जिसका अर्थ यह है कि काबा से वास्तविक दिशा वाला मान लिया गया स्थान विशेष मध्याह्न रेखा पर हो जिससे दिशा में कुछ विचलन प्राप्त हो सके। यह उसके विपरीत है जो अल्लामा मुहाश़ी ने समझा। यह इसलिए कि यदि काबा को केंद्र मान लिया जाए और उसका सामना करने वाले...

पृष्ठ १०४/७३६

جلد ششم فتاوی رضویہ (Arabic column): القبلة من نقطة المغرب خمس و ثمانين درجة ولم يبق الى نقطة الشمال الاخمس درج فان حفظ الوجهة بطلت صلاته قطعا وان توجه الى القطب الشمالي صحت يقينا وان اخذنا مابين الطولين اصغر من ذلك يظهر التفاوت اكبر من ذلك وبالجملة فتلزم استحالات لا تحصى فالحق ان ليس فى عبارة الدرر ولا المعراج شيئ مما ذكر ولا مافهم من جواز الانتقال على ذلك الخط مهما شاء، ولا مافهم من مخالفتهما لتجويز الانحراف اليسير ولا مافهم من اشتراط حفظ الوجهة لبقاء الجهة ، ولا ما فهم من افادتهما فساد الصلوة ان احدث الخطان زاويتين مختلفتين بل الامر فيه كما اقول انهم انما فرضوا الانتقال على القاطع له على قائمتين اى على نصف نهار الموضع المفروض المسامت حقيقة ليحصل بالانتقال الانحراف على عكس ما فهم العلامة المحشى رحمة الله تعالى وذلك لانه لو جعلت الكعبة مركزا ورسمت ببعد مستقبلها دائرة وانتقل هو عليها حتى طاف الدنيا

(Urdu column): نقطہ مغرب سے قبلہ کا انحراف ۸۵ درجے ہوگا، اور نقطہ شمالی کی طرف صرف پانچ درجے باقی رہے گا، پس اگر وہ اپنی اسی توجہ کو محفوظ رکھے تو اس کی نماز لازمی طور پر باطل ہوگی، اور اگر وہ قطب شمالی کی طرف پھر گیا تو اس کی نماز یقینا درست ہوگی اور اگر ہم دونوں طولوں میں اس سے بھی کم فاصلہ فرض کریں تو تفاوت اس سے بھی بڑھ جائے گا۔ خلاصہ یہ کہ اس سے بے شمار خرابیاں لازم آئیں گی۔ تو حق یہ ہے کہ دُرر اور معراج کی عبارت میں محشی رحمہ اللہ تعالیٰ کے ذکر کردہ امور میں سے کچھ بھی نہیں، نہ اس خط پر حسب خواہش انتقال کا جواز، اور نہ ہی معمولی انحراف کے جواز کی ان دونوں سے مخالفت اور نہ ہی بقاء جہت کے لئے توجہ کے محفوظ رہنے کی شرط اور نہ ہی مختلف زاویے والے دو خطوں کے پیدا ہونے سے ان دونوں حضرات کی طرف سے نماز کے فساد کا افادہ، غرضیکہ

محشی رحمۃ اللہ تعالیٰ کی فہم کردہ ان مذکورہ چیزوں میں کوئی بھی ان دونوں حضرات کی عبارت میں موجود نہیں، بلکہ معاملہ یوں ہے جیسے میں کہتا ہوں (اقول) انہوں نے دو قائموں کی شکل میں اس کو قطع کرنے والے خط پر سے انتقال فرض کیا جس کا مطلب یہ ہے کہ کعبہ سے حقیقی سمت والے مقام مفروض پر خاص نصف نہار ہو جس سے سمت میں کچھ انحراف حاصل ہوسکے بالعکس اس کے جو علامہ محشی رحمۃ نے سمجھا، یہ اس لئے کہ اگر کعبہ کو مرکز قرار دے کر اس کی طرف استقبال کرنے والے

Fatawa Razawiyya Volume Six

(Right Column) ...and returned to his first position, meaning, on the assumption that the true facing (towards the Qibla) has not ceased and no deviation has occurred at all. Their intention is to point out the permissibility of a slight deviation. Thus, they assumed the line as mentioned and stated that the direction is not exceeded by moving along it for many farsakhs (leagues). They were correct in this, and they did not specify the number of farsakhs because they change with the change in distance, as previously mentioned. Had they intended to permit movement absolutely, they would not have restricted it to farsakhs and said, "It does not cease by moving, however much you have moved." This was what needed to be pointed out. And success is through Allah. Let us return to what we were discussing.

I say, thirdly: There remains something in the explanation of the text of Al-Durr, which is making "upon straightness" (ala istiqama) related to "it reaches" (yasilu). You know that just as straightness is necessary in this sense for the line emerging from the forehead, it is also necessary for the line passing through the Kaaba widthwise, and upon making it related...

(Left Column) ...keeping in view the distance, a circle should be made, and the worshiper should keep moving along this circle even if they travel around the entire world and return to the first position; even then, the true facing will remain and there will be no deviation at all. The purpose of mentioning the aforementioned deviation is to caution about the permissibility of a minor deviation. Therefore, they stated that the direction of one moving for several farsakhs along the aforementioned line will not change, and they were correct in saying this. Along with this, by not specifying the number of farsakhs, they clarified that this number depends on the distance of the circle's line from the Kaaba. That is, with a change in distance, the number of farsakhs will change, as already mentioned. If they meant any general kind of movement, they would not have mentioned the restriction of farsakhs in the statement but would have said, "Move as much as you want, it will not change the direction." This was the necessary caution. While success is only from Allah Almighty, now we should return to our discussion.

I say, thirdly (Note: This 'thirdly' relates to the 'firstly' that appeared on page 88): What the commentator (Mahashi), may Allah have mercy on him, stated while explaining the text of 'Durr' still has some matter left. He said that in the text of 'Durr', the connection of "upon straightness" (ala istiqama) is with the word "reaches"

(yasilu), whereas you know that the sense in which straightness is necessary for the line originating from the forehead of the worshiper who is facing the Kaaba...

Page 105 of 736

फ़तावा रज़विया छठा खंड

(दायाँ कॉलम) ...और अपने पहले स्थान पर लौट आए, यानी इस धारणा पर कि वास्तविक इस्तक़बाल (क़िबला की ओर मुख करना) समाप्त नहीं हुआ है और बिल्कुल भी विचलन नहीं हुआ है। उनका उद्देश्य मामूली विचलन के वैध होने पर सचेत करना है। इसलिए उन्होंने बताए अनुसार रेखा की कल्पना की और उल्लेख किया कि इस पर कई फरसख (कोस) तक चलने से दिशा नहीं बदलती। वे इसमें सही थे, और उन्होंने फरसखों की संख्या निर्धारित नहीं की क्योंकि दूरी बदलने के साथ वे बदल जाते हैं, जैसा कि पहले बताया गया है। यदि वे पूर्ण रूप से स्थानांतरण को वैध बनाना चाहते, तो वे इसे फरसखों तक सीमित नहीं करते और कहते, "स्थानांतरण से यह समाप्त नहीं होता, चाहे आप कितना भी चलें।" यही वह बात थी जिस पर ध्यान दिलाना आवश्यक था। और सफलता अल्लाह की ओर से है। आइए हम उस पर वापस लौटें जिस पर हम चर्चा कर रहे थे।

मैं तीसरी बात कहता हूँ: अल-दुर्र के पाठ की व्याख्या में कुछ शेष है, और वह है "सीध में" (अला इस्तिकामा) को "पहुंचता है" (यसिलु) से संबंधित करना। आप जानते हैं कि जिस प्रकार माथे से निकलने वाली रेखा के लिए इस अर्थ में सीध आवश्यक है, उसी प्रकार काबा के चौड़ाई में गुजरने वाली रेखा के लिए भी आवश्यक है, और इसे संबंधित करने पर...

(बायाँ कॉलम) ...दूरी को ध्यान में रखते हुए एक घेरा बनाया जाए, और नमाजी उस घेरे पर चलता जाए, यहाँ तक कि पूरी दुनिया का चक्कर भी लगा ले और पहले स्थान पर लौट आए, तब भी उसका वास्तविक इस्तक़बाल (सामना करना) बना रहेगा और ज़रा भी विचलन नहीं होगा। और उक्त विचलन के उल्लेख से उनका उद्देश्य मामूली विचलन के वैध होने पर सचेत करना है, तो इसीलिए उन्होंने कहा कि उक्त रेखा पर कई फरसख तक स्थानांतरण करने वाले की दिशा नहीं बदलेगी और उन्होंने यह बात सही कही। साथ ही उन्होंने फरसख की संख्या निश्चित न करके यह स्पष्ट किया कि यह संख्या काबा के घेरे वाली रेखा की दूरी पर निर्भर है, यानी दूरी बदलने से फरसख की संख्या बदल जाएगी जैसा कि बीत चुका है। और अगर वे हर तरह के सामान्य स्थानांतरण का अर्थ लेते तो फिर वर्णन में फरसख की शर्त का उल्लेख न करते बल्कि यों कहते, "जितना तुम चाहो स्थानांतरण करो, उससे दिशा में परिवर्तन नहीं होगा।" यही वह बात थी जिस पर सचेत करना ज़रूरी था, जबकि सफलता केवल अल्लाह तआला की ओर से है। अब हमें अपनी बहस में वापस लौटना चाहिए।

मैं तीसरी बात कहता हूँ (नोट: यह तीसरी बात उस पहली बात से संबंधित है जो पृष्ठ ८८ पर गुज़री): दुर्र के पाठ की व्याख्या करते हुए मुहाशी (टीकाकार) अलैहिर्रहमा ने जो फरमाया उसमें अभी कुछ बात शेष है। वह यह कि उन्होंने फरमाया कि दुर्र की इबारत में "अला इस्तिकामा" का संबंध "यसिलु" के शब्द से है, जबकि आप जानते हैं कि काबा का इस्तक़बाल करने वाले नमाजी की पेशानी से निकलने वाली रेखा में जिस अर्थ में इस्तिकामा (सीधापन) ज़रूरी है...

पृष्ठ १०५/७३६

(دایاں کالم) وعاد الی مقامه الاول ای علی الفرض لم یزل الاستقبال الحقیقي ولم یحصل انحراف ما اصلا و مقصود هم ان ینبهوا علی جواز الانحراف الیسیر ففرضوا الخط کما مرو ذکروا انه لا یجاوز الجهة بالانتقال علیه الی فراسخ کثیرة وقد صدقوا في ذلك ولم یقدروا الفراسخ لانها تتبدل بتبدل البعد کما تقدم ولو راموا تسویغ الانتقال مطلقاً لما قیدوا بفراسخ وقالوا لا یزول بالانتقال کم ما کان قلتم فهذا ماکان یجب التنبه له و باللہ التوفیق ولیرجع الی ما کنا فیه -

فاقول ثالثاً: بقی في شرحه عبارة الدرر شیئ وهو جعل "علی استقامة" متعلقا "بیصل" وانت تعلم انه کما یجب الاستقامة بهذا المعنی في الخط الخارج من الجبهة کذلك فی الخط المار بالکعبة عرضاً و علی جعله متعلقاً

(بایاں کالم) کے فاصلہ کو ملحوظ رکھتے ہوئے دائرہ بنایا جائے، اور نمازی اس دائرہ پر انتقال کرتا چلا جائے حتی کہ ساری دنیا کا چکر بھی لگائے اور پہلے مقام پر لوٹ آئے تب بھی اس کا استقبال حقیقی باقی رہے گا اور ذرا بھی انحراف نہ ہوگا اور مذکورہ انحراف ذکر سے ان کا مقصد معمولی انحراف کے جواز پر تنبیہ کرنا ہے تو اس لئے انہوں نے مذکورہ خط پر کئی فرسخ تک انتقال کرنے والے کی جہت تبدیل نہ ہوگی اور یہ بات انہوں نے درست فرمائی، ساتھ ہی انہوں نے فرسخ کی تعداد معین نہ فرما کر یہ واضح کیا کہ یہ تعداد کعبہ کے دائرہ والے خط کے بعد پر موقوف ہے یعنی بعد کی تبدیلی سے فرسخ کی تعداد بدل جائے گی جیسے کہ گزر چکا، اور اگر وہ عام ہر طرح کا انتقال مراد لیتے تو پھر بیان میں فرسخ کی قید ذکر نہ کرتے بلکہ یوں کہتے "جتنا تم چاہو انتقال کرو اس سے جہت میں تبدیلی نہ ہوگی" یہ وہ ہے جس پر تنبیہ ضروری تھی، جبکہ توفیق صرف اللہ تعالیٰ کی طرف سے ہے اب ہمیں اپنی بحث میں واپس لوٹنا چاہیے۔

فاقول، ثالثاً (نوٹ: یہ ثالثاً اس اولاً سے متعلق ہے جو صفحہ ۸۸ پر گزرا) دُرَر کی عبارت کی شرح کرتے ہوئے محشی علیہ رحمۃ نے جو فرمایا اس میں ابھی کچھ امر باقی ہے وہ یہ کہ انہوں نے فرمایا کہ دُرَر کی عبارت میں "علی استقامة" کا تعلق "یصل" کے لفظ سے ہے حالانکہ آپ کو معلوم ہے کہ کعبہ کا استقبال کرنے والے نمازی کی پیشانی سے نکلنے والے خط میں جس معنی میں استقامت ضروری ہے

Fatawa Razawiyya Volume 6

(Arabic Passage): "...so that it connects, there remains no indication to the straightness of the passing line. One should look at the statement 'so that two perpendicular lines are formed' as a mere explanation of 'upon straightness'. Therefore, in my view, it is more correct to make it related to 'the passing line' so that both explanations become complete, it becomes an established point (tā'sīs), and it relates to what is near. This pertains to the first praise. The eminent Halimi, in his marginalia on 'al-Durar', interpreted it as an explanation of the approximate direction, where he said: '(Regarding his statement: so that two perpendicular lines are formed) he stated it broadly, so it includes whether those two perpendiculars are equal in distance from both eyes to the wall of the Kaaba or not. The first is what is intended in facing the exact entity (ʿayn), and the second is in facing the general direction (jihah), which is what is intended here only.' Then he said: 'The gist of it is that the Kaaba falls between two lines...' until the end of what we previously cited from him. Thus, he clarified the intent and made the result of both aspects one."

(Urdu Commentary): In this sense, straightness is also necessary in the transverse line passing over the Kaaba. By relating "upon straightness" (ʿalā istiqāmah) to "connects" (yaṣil), the indication towards the line passing straight over the Kaaba will not remain. Similarly, if the phrase "so that two perpendicular lines are formed" (bi-ḥaythu taḥṣula qā'imatān) in the text of 'Durar' is examined, it will merely become an explanation of "upon straightness". Therefore, in my opinion, it is better to relate "upon straightness" to the word "the passing line" (al-maarr) instead of "connects", so that both explanations are complete and a new benefit (tā'sīs) is also achieved. Furthermore, it will also relate to what is nearby. All the aforementioned discussion pertains to the first interpretation (maḥmal). Meanwhile, the eminent Halimi, while commenting on 'Durar', interpreted its text as an approximate direction instead of the exact direction (i.e., instead of the exact direction of the Kaaba, he interpreted it as the general direction towards the Kaaba). There, he said: "Regarding his statement 'so that two perpendicular lines are formed', he kept it general. Therefore, those two perpendiculars, whose distance from both eyes separately to the Kaaba wall may be equal or not; if equal, it refers to facing the exact Kaaba, and here it is only this last one, meaning facing the general direction, that is intended. Then he said that the gist of it is that the Kaaba is located between the two lines, etc., as far as we mentioned from him earlier."

1. Hashiyah al-Durar by Mulla Abdul Halim, Chapter on the Conditions of Prayer, printed by Matba' 'Uthmaniyya, Dar al-Sa'adat, Beirut, 1/521.

(अरबी पाठ): "...ताकि वह जुड़े, गुजरने वाली रेखा की सीधापन का कोई संकेत शेष न रहे। 'ताकि दो लंब प्राप्त हों' इस कथन को केवल 'सीधापन पर' की व्याख्या के रूप में देखा जाना चाहिए। इसलिए, मेरे विचार में, इसे 'गुजरने वाली रेखा' से संबंधित करना अधिक सही है ताकि दोनों व्याख्याएँ पूर्ण हो जाएं यह एक स्थापित बिंदु (तासीस) बन जाए, और यह निकट के साथ संबंधित हो। यह पहले प्रशंसनीय से संबंधित है। प्रतिष्ठित हलीमी ने 'अल-दुरर' पर अपने हाशिया में इसे अनुमानित दिशा की व्याख्या के रूप में व्याख्यायित किया, जहाँ उन्होंने कहा: '(उनके इस कथन के बारे में: ताकि दो लंब प्राप्त हों) उन्होंने इसे व्यापक रूप से कहा, इसलिए इसमें शामिल है कि क्या वे दो लंब दोनों आँखों से काबा की दीवार तक की दूरी में समान हैं या नहीं। पहला वह है जो सटीक इकाई (ऐन) की ओर उन्मुख होने में अभिप्रेत है, और दूसरा सामान्य दिशा (जिहत) की ओर उन्मुख होने में है, जो केवल यहाँ अभिप्रेत है।' फिर उन्होंने कहा: 'इसका सार यह है कि काबा दो रेखाओं के बीच स्थित हो...' अंत तक जो हमने पहले उनसे उद्धृत किया था। इस प्रकार, उन्होंने इरादे को स्पष्ट किया और दोनों पहलुओं के परिणाम को एक कर दिया।"

(उर्दू व्याख्या): इसी अर्थ में, काबा के ऊपर से गुजरने वाली आड़ी रेखा में भी सीधापन आवश्यक है। 'अला इस्तक़ामत' (सीधापन पर) का संबंध 'यसिल' (जुड़ता है) से करने में काबा के ऊपर से सीधे गुजरने वाली रेखा की ओर संकेत शेष नहीं रहेगा। इसी तरह 'दुरर' के कथन में 'बिहयसु तहसुलु कायमतान' को देखा जाए तो वह केवल 'अला इस्तक़ामत' की व्याख्या बनकर रह जाएगा। इसलिए मेरे निकट बेहतर यह होगा कि 'अला इस्तक़ामत' का संबंध 'यसिल' के बजाय 'अल-मार्र' (गुजरने वाला) शब्द से किया जाए ताकि दोनों कथन पूर्ण हो जाएं और एक नया लाभ (तासीस) भी प्राप्त हो जाए। साथ ही इसका संबंध निकट से भी हो जाएगा। यह सब उपरोक्त चर्चा पहले अर्थ (महल) से संबंधित है। जबकि फाजिल हलीमी ने 'दुरर' की व्याख्या करते हुए इसके पाठ को वास्तविक दिशा के बजाय अनुमानित दिशा माना (अर्थात काबा की सटीक दिशा के बजाय उन्होंने इसे काबा की सामान्य दिशा पर आधारित किया)। वहां उन्होंने कहा: 'उनके इस कथन: ताकि दो लंब प्राप्त हों' को उन्होंने सामान्य रखा है। इसलिए, वे दो लंब जिनकी दूरी दोनों आँखों से अलग-अलग काबा की दीवार तक बराबर होगी या नहीं; यदि बराबर हो, तो उससे सटीक काबा की ओर मुख करना अभिप्रेत है, और यहाँ यही अंतिम यानी केवल दिशा की ओर मुख करना अभिप्रेत है। फिर उन्होंने कहा कि इसका

सार यह है कि काबा दोनों रेखाओं के बीच स्थित हो आदि, जैसा कि हमने पहले उनसे उल्लेख किया है।

---

1. हाशिया अल-दुरर, मुल्ला अब्दुल हलीम द्वारा, नमाज़ की शर्तों का अध्याय, मुद्रित मतबा उस्मानिया, दार सआदत बेरुत, 1/521।

بیصل لا یبقی ایماء الی استقامۃ المار و یبصر قولہ بحیث تحصل قائمتان مجرد بیان لقولہ علی استقامۃ فالاصوب عندی جعلہ متعلقاً بالمار لیتم البیانان ولیصیر تاسیسا و لیتعلق بالقریب ھذا ماکان یتعلق بالحمد الاول وحملہ الفاضل الحلیمی فی حواشی الدرر علی بیان التقریبیۃ حیث قال (قولہ بحیث تحصل قائمتان) اطلقہ فشمل ان تینك القائمتین یتساوی بعد ھما عن العینین الی جدار الکعبۃ اولا فالا ول ھو المراد فی التوجہ الی العین، والثاني فی التوجہ الی الجھہ وھو المراد ھنا فقط" ثم قال "حاصلہ ان تقع الکعبۃ بین خطین^1 الی آخر ما قدمنا عنہ فصرح بالمراد و جعل حاصل الوجھین واحدا۔

اسی معنی میں کعبہ پر سے عرضی طور پر گزرنے والے خط میں بھی استقامت ضروری ہے اور "علی استقامۃ" کا تعلق "یصل" سے کرنے میں کعبہ پر سے سیدھے گزرنے والے خط کی طرف اشارہ باقی نہ رہے گا اور اسی طرح دُرر کی عبارت میں "بحیث تحصل قائمتان" کو دیکھا جائے تو وہ صرف "علی استقامۃ" کا بیان بن کر رہ جائیگا لہٰذا میرے نزدیک بہتر یہ ہوگا کہ "علی استقامۃ" کا تعلق "یصل" کی بجائے لفظ "المآر" سے کیا جائے تاکہ دونوں بیان تام ہو جائیں اور تأسیس یعنی فائدہ بھی حاصل ہو جائے نیز اس کا تعلق قریب سے بھی ہو جائے گا، یہ مذکورہ ساری گفتگو سے پہلے محمل سے متعلق ہے۔ جبکہ فاضل حلیمی نے دُرر کی شرح کرتے ہوئے اس کی عبارت کا محمل سمت حقیقی کی بجائے سمت تقریبی قرار دیا (یعنی عین سمت کعبہ کی بجائے انھوں نے اس کو جہت کعبہ پر محمول کیا جہاں انہوں نے کہا "قولہ بحیث تحصل قائمتان" اس کو عام رکھا ہے لہٰذا وہ دونوں قائمے جن کا فاصلہ دونوں آنکھوں سے جدا کعبہ تک مساوی ہو گا یا نہ ہوگا، مساوی ہو تو اس سے عین کعبہ کی طرف توجہ مراد ہے، اور یہاں یہی آخری یعنی فقط جہت کی طرف

توجہ مراد ہے، پھر انہوں نے فرمایا کہ اس کا حاصل یہ ہے کہ کعبہ دونوں خطوں کے درمیان واقع ہو الخ جہاں تک ہم نے پہلے ان سے ذکر کیا)

---

[1]8 حاشیۃ الدرر للمولیٰ عبدالحلیم باب شروط الصلوۃ مطبوعہ مطبع عثمانیہ دار سعادت بیروت ۱/۵۲۱

Volume Six

...has made it clear; in short, they have clarified the intent and declared the essence of both reasons to be the same.

I say (Aqool): This statement of theirs is better in several ways. One reason is this saying of the author (Matan) that for a Meccan, the facing is towards the exact entity of the Kaaba, and for a non-Meccan, it is towards the direction of the Kaaba, etc. Therefore, they are stating that they are now describing the approximate direction (i.e., *wajhataha li-ghayrihi* etc.) and not the real direction which falls exactly on the entity of the Kaaba. And also because they later said, "Or we say that 'an taqa'a al-Ka'bah' etc." as mentioned in the third saying. There is no doubt that this statement pertains to the approximate direction. Furthermore, the author's phrase "or we say" outwardly indicates that the essence of both is the same, and also for this intent, the literal meaning of *jabeen* (side of the forehead) will be meant. Allama Tahtawi understood it in this way and drew the diagram according to the description in 'Durr' as follows:

[Diagram: A drawing representing the Kaaba and lines from the sides of the forehead.]

I say (Aqool): This is preferable for several reasons because he said in the beginning: "Facing the essence of the Kaaba for a Meccan and its direction for others, so that it reaches..." etc. Thus, it informs that it is now in the process of explaining the approximate [direction], not the actual [direction] occurring on the essence itself. And because he said afterwards, "Or we say it is that the Kaaba falls..." to the end of what preceded in the third statement, and there is no doubt that it is for approximation. The outward meaning of his saying "Or we say" is that their essence is one. And because *jabeen* (the forehead side) would be in its literal sense according to this, and similarly, Allama Tahtawi understood it, so he depicted the explanation like this:

I say (Aqool): In Allama Tahtawi's statement, it is not necessary for both lines to be in one form; otherwise, an objection would arise that despite taking the literal meaning of *jabeen*, i.e., both sides of the forehead, he explained the actual direction by dropping the lines emanating from the *jabeen* onto the Kaaba in the form of perpendiculars (straight), whereas our previous...

I say (Aqool): It is not meant that the two lines occur in one state, such that the objection would be raised against him that while taking *jabeen* as the two sides of the

forehead, he turned towards making it for the explanation of the precise [direction], where he connected the two lines to the Kaaba as two perpendiculars, and that you have known from what we preceded that...

1. Hashiyah al-Durar by Mawla Abd al-Halim, Chapter on Conditions of Prayer, printed at Matba' Uthmaniyyah, Dar al-Sa'adah, Beirut, 1/52.

छठा खंड

...स्पष्ट कर दिया है; संक्षेप में, उन्होंने अभिप्राय को स्पष्ट कर दिया है और दोनों कारणों के सार को एक ही घोषित किया है।

मैं कहता हूँ (अक़ूल): उनका यह कथन कई तरह से बेहतर है। एक कारण मूल लेखक (मातन) का यह कथन है कि मक्का निवासी के लिए काबा की मूल सत्ता (ऐन) की ओर मुख करना है और गैर-मक्का निवासी के लिए काबा की दिशा की ओर, इत्यादि। इसलिए, वे बता रहे हैं कि वे अब अनुमानित दिशा (अर्थात् वज्हतहा लि-ग़ैरिही आदि) का वर्णन कर रहे हैं न कि वास्तविक दिशा का जो ठीक काबा की सत्ता पर पड़ती है। और इसलिए भी कि उन्होंने बाद में कहा, "या हम कहें कि 'अन तक़ाअल काबा' आदि" जैसा कि तीसरे कथन में गुज़रा है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि यह कथन अनुमानित दिशा से संबंधित है। इसके अलावा, लेखक का वाक्यांश "या हम कहें" बाह्य रूप से इंगित करता है कि दोनों का सार एक ही है, और इस अभिप्राय के लिए भी 'जबीन' (माथे का किनारा) का शाब्दिक अर्थ ही अभिप्रेत होगा। अल्लामा तहतावी ने इसे इसी तरह समझा और 'दुर्र' के विवरण के अनुसार चित्र इस प्रकार बनाया:

[चित्र: काबा और माथे के किनारों से निकलने वाली रेखाओं का चित्रण]

मैं कहता हूँ (अक़ूल): यह कई कारणों से बेहतर है क्योंकि उन्होंने शुरू में कहा: "मक्का निवासी के लिए काबा की मूल सत्ता का अभिमुखीकरण और दूसरों के लिए उसकी दिशा, ताकि वह पहुँच सके.." इत्यादि। इस प्रकार, यह सूचित करता है कि यह अब अनुमानित [दिशा] को समझाने की प्रक्रिया में है, न कि मूल सत्ता पर होने वाली वास्तविक [दिशा] को। और क्योंकि उन्होंने बाद में कहा, "या हम कहें कि यह वह है कि काबा गिरता है..." उस चीज़ के अंत तक जो तीसरे कथन में पहले आ चुकी है, और इसमें कोई संदेह नहीं है कि यह अनुमान के लिए है। उनके कहने का बाहरी अर्थ "या हम कहें" यह है कि उनका सार एक है। और क्योंकि 'जबीन' इसके अनुसार अपने शाब्दिक अर्थ में होगा, और इसी तरह अल्लामा तहतावी ने इसे समझा, इसलिए उन्होंने स्पष्टीकरण को इस तरह चित्रित किया:

मैं कहता हूँ (अक़ूल): अल्लामा तहतावी के कथन में, दोनों रेखाओं का एक ही रूप में होना आवश्यक नहीं है; अन्यथा, यह आपत्ति उत्पन्न होगी कि 'जबीन' का शाब्दिक अर्थ, यानी माथे के दोनों किनारों

(पार्श्व) को लेने के बावजूद, उन्होंने जबीन से निकलने वाली रेखाओं को लंबवत (सीधा) रूप में काबा पर गिराकर वास्तविक दिशा को समझाया है, जबकि हमारे पहले...

मैं कहता हूँ (अक़ूल): इसका यह अर्थ नहीं है कि दोनों रेखाएं एक ही स्थिति में उत्पन्न होती हैं, ताकि उन पर यह आपत्ति की जाए कि जबीन को माथे के दो किनारों के रूप में लेते हुए, वे इसे सटीक [दिशा] के स्पष्टीकरण के लिए बनाने की ओर मुड़ गए, जहाँ उन्होंने काबा से दो लंबों के रूप में दो रेखाओं को जोड़ा, और जैसा कि आप हमारे द्वारा पहले बताई गई बातों से जान चुके हैं कि...

1. मौला अब्दुल हलीम द्वारा हाशिया अल-दुरर, नमाज़ की शर्तों पर अध्याय, मतबा उस्मानिया, दार अल-साआदा, बेरूत, 1/52 में मुद्रित।

पृष्ठ 107 / 736

جلد ششم

کر دیا ہے غرضیکہ انہوں نے مراد کی تصریح کر دی ہے اور دونوں وجہوں کا ما حصل انہوں نے ایک ہی قرار دیا۔

اقول: ان کا یہ بیان کئی طرح سے بہتر ہے ایک وجہ تو ماتن کا یہ قول ہے کہ مکی کے لئے عین کعبہ کا استقبال اور غیر مکی کے لئے جہت کعبہ کا استقبال ہے الخ۔ لہٰذا وہ بتا رہے ہیں کہ اب سمت تقریبی کو بیان کر رہے ہیں (یعنی وجھتھا لغیرہ الخ) نہ کہ سمت حقیقی جس کا وقوع عین کعبہ پر ہے، اور اسلئے بھی کہ انھوں نے بعد میں یہ کہا "یا ہم یوں کہیں کہ ان تقع الکعبۃ الخ" جیسا کہ تیسرے قول میں گزرا ہے، اس بیان کے بارے میں شک نہیں کہ یہ سمت تقریبی سے متعلق ہے، نیز ماتن کا قول " او نقول " ظاہرًا بتاتا ہے کہ دونوں کا ماحصل ایک ہے اور نیز اس مراد پر جبین کا حقیقی معنی مراد ہوگا۔ علامہ طحطاوی نے اسکو اسی طرح سمجھا اور انہوں نے درر کے بیان کے مطابق تصویر یوں بنائی۔

[تصویر: کعبہ اور پیشانی کے کناروں سے نکلنے والے خطوط کا خاکہ]

اقول: وھذا اولی بوجوہ لقولہ في صدرہ استقبال عین الکعبۃ للمکی وجھتھا لغیرہ ان یصل1 الخ فافاد انہ الآن بصدد بیان التقریبیۃ لا الحقیقیۃ الواقعۃ علی العین ولانہ قال بعدہ او نقول ھو ان تقع الکعبۃ الی اخر ما تقدم فی القول الثالث ولاشك انہ للتقریب وظاھر قولہ او نقول ان محصلھما واحد ولان الجبین یکون علی ھذا بمعناہ الحقیقی وکذلك فھم العلامۃ الطحطاوی فصور بیان الدد ھکذا -

اقول: علامہ طحطاوی کے بیان میں، دونوں خطوں کا ایک شکل پر ہونا ضروری نہیں، ورنہ یہ اعتراض پیدا ہوگا کہ انہوں نے جبین کا حقیقی معنی یعنی پیشانی کی دونوں طرفیں (پہلو) مراد لینے

کے باوجود جبین سے نکلنے والے خطوں کو عین کعبہ پر بصورت عمود (سیدھا) گرا کر سمت حقیقی کو بیان کیا ہے حالانکہ ہمارے پہلے

اقول: ولیس المراد حدوث الخطین فی حالة واحدة حتی یرد علیه انه مع حمل الجبین علی طرفی الجبهة عدل الی جعله لبیان التحقیق حیث اوصل الخطین الی الکعبة عمودین وانه قد علمت مما قدمنا ان

1 حاشیة الدرر للمولی عبد الحلیم باب شروط الصلوة مطبوعہ مطبع عثمانیہ دار سعادت بیروت ۵۲/۱

Fatawa Razawiya, Volume Six

[Arabic Text]: The line emerging from the temple does not emerge straight from the forehead but deviates to the right from the right temple and to the left from the left temple. It is impossible for both lines emerging from the temples to be perpendicular to a straight line. Rather, in my opinion, the intention is to illustrate 'Tiyāmun' (turning right) and 'Tiyāsur' (turning left). For example, the first is the right temple of the prayer-performer when he deviates to the left from the Kaaba, and the second is his left temple when he deviates to the right. The explanation of its illustration is as follows:

[Urdu Text]: From the explanation, you have learned that the line emerging from the temple (sides of the forehead) does not emerge straight from the center of the forehead. Instead, the line from the right temple goes to the right and the line from the left temple goes to the left. It is absolutely impossible for lines emerging from both temples to emerge vertically on a straight line. In my view, their statement is an explanation of the state of Tiyāmun and Tiyāsur. For instance, Tiyāmun is when the prayer-performer's right temple deviates to the left of the Kaaba, and Tiyāsur is when his left temple deviates to the right of the Kaaba. In this case, the lines from both temples will be in a straight form towards the Kaaba. It is appropriate to understand their illustration like this:

Arc of right temple | Arc of left temple [Red text inside diagram area]: An image needs to be made here, Vol 6, p 108

[Urdu Text]: Such a difficult point can be understood this way. However, the statement of Allama Tahtawi (may Allah have mercy on him) which he quoted from a scholar regarding his own illustration, says: "A right angle was obtained from the line passing over the Kaaba, and similarly another right angle was obtained from the line emerging from the prayer-performer's temple, and two equal angles were created from these two lines." I say: (So I say) Although this effort of theirs...

[Arabic Text]: This point should be understood. As for his statement (may Allah have mercy on him) regarding the illustration, quoted from some scholars: "A right angle was formed from the line passing through the Kaaba and another right angle from the line emerging from the worshiper's temple, and from them two equal angles were produced." So I say: This, even if...

1. Hashiya al-Tahtawi on al-Durr al-Mukhtar, Chapter on the Conditions of Prayer, published by Dar al-Ma'rifah, Beirut, 1/497.

फतावा रजविया, खंड छह

[अरबी पाठ]: कनपटी से निकलने वाली रेखा माथे से सीधी नहीं निकलती, बल्कि दाहिनी कनपटी से दाईं ओर और बाईं कनपटी से बाईं ओर झुक जाती है। यह असंभव है कि दोनों कनपटियों से निकलने वाली रेखाएं एक सीधी रेखा पर लंबवत हों। बल्कि, मेरी राय में, इसका उद्देश्य 'तियामुन' (दाईं ओर मुड़ना) और 'तियासुर' (बाईं ओर मुड़ना) का चित्रण करना है। उदाहरण के लिए, पहला नमाज़ी की दाहिनी कनपटी है जब वह काबा से बाईं ओर मुड़ता है, और दूसरा उसकी बाईं कनपटी है जब वह दाईं ओर मुड़ता है। इसके चित्रण का स्पष्टीकरण इस प्रकार है:

[उर्दू पाठ]: स्पष्टीकरण से आपने जान लिया है कि कनपटी (माथे के किनारे) से निकलने वाली रेखा माथे के बीच से सीधी नहीं निकलती। बल्कि दाहिनी कनपटी से निकलने वाली रेखा दाईं ओर और बाईं कनपटी से निकलने वाली रेखा बाईं ओर निकलेगी। यह कदापि संभव नहीं है कि दोनों कनपटियों से निकलने वाली रेखाएं एक सीधी रेखा पर लंबवत रूप से निकलें। मेरे विचार में, उनका यह कथन तियामुन और तियासुर की स्थिति का वर्णन है। उदाहरण के लिए, तियामुन यह है कि नमाज़ी की दाहिनी कनपटी काबा से बाईं ओर विचलित हो जाए, और तियासुर यह है कि उसकी बाईं कनपटी काबा से दाईं ओर विचलित हो जाए। इस स्थिति में, दोनों कनपटियों की रेखाएं काबा की ओर एक सीधी आकृति में होंगी। उनके चित्रण को इस प्रकार समझना उचित है:

दाहिनी कनपटी का चाप | बाईं कनपटी का चाप [आरेख क्षेत्र के अंदर लाल पाठ]: यहाँ एक चित्र बनाया जाना है, खंड 6, पृष्ठ 108

[उर्दू पाठ]: ऐसी कठिन बात को इस तरह समझा जा सकता है। लेकिन अल्लामा तहतावी (रहमतुल्लाह अलैह) का वह कथन, जो उन्होंने अपने द्वारा बनाए गए चित्र के बारे में एक विद्वान से उद्धृत करते हुए कहा: "काबा के ऊपर से गुजरने वाली रेखा से एक समकोण प्राप्त हुआ, और इसी तरह नमाज़ी की कनपटी से निकलने वाली रेखा से दूसरा समकोण प्राप्त हुआ, और इन दोनों रेखाओं से दो समान कोण उत्पन्न हुए।" तो मैं कहता हूँ: (तो मैं कहता हूँ) यद्यपि उनका यह प्रयास...

[अरबी पाठ]: इस स्थान को समझा जाना चाहिए। जहाँ तक उनके(रहमतुल्लाह अलैह) चित्रण के संबंध में कथन का प्रश्न है, जो कुछ विद्वानों से उद्धृत है: "काबा से गुजरने वाली रेखा से एक समकोण बना और नमाज़ी की कनपटी से निकलने वाली रेखा से दूसरा समकोण बना, और उनसे दो समान कोण उत्पन्न हुए।" तो मैं कहता हूँ: यह, भले ही...

1. हाशिया अल-तहतावी अली अल-दुर्र अल-मुख्तार, नमाज़ की शर्तों का अध्याय, दार अल-मआरिफ़ा, बेरूत द्वारा प्रकाशित, 1/497।

पृष्ठ 108/736

جلد ششم فتاویٰ رضویہ الخط الخارج من الجبين لا يخرج على استقامة الجبهة بل منحرفا من الجبين الايمن يمينا و من الايسر يسارا وانه لا يمكن ان يكون كلا الخطين الخارجين من الجبينين عمود اعلى خط مستقيم بل المراد عندي تصوير التيامن والتياسر فالاول مثلا جبين المصلى الايمن عند انحرافه عن الكعبة يسارا والثانى جبينہ الايسر حين انحراف يميناً، وايضاح تصويرہ هكذا بيان سے آپ معلوم کر چکے ہیں کہ جبین (پیشانی کے پہلو) سے نکلنے والا خط پیشانی کے وسط سے سیدھا نہیں نکلتا بلکہ دائیں جبین سے نکلنے والا خط دائیں طرف اور بائیں جبین سے نکلنے والا خط بائیں طرف نکلے گا۔ اور یہ ہرگز ممکن نہیں کہ دونوں جبینوں سے نکلنے والے خطوط عمودی طور پر خط مستقیم پر نکلیں بلکہ میری رائے میں ان کا یہ بیان التیامن اور التیاسر کی صورت کا بیان ہے۔ کہ مثلاً التیامن یہ ہے کہ نمازی دائیں جبین کا کعبہ سے بائیں طرف انحراف ہو جائے اور التیاسر یہ ہیکہ اس کی بائیں جبین کا کعبہ سے دائیں طرف انحراف ہو جائے تو اس صورت میں دونوں جبینوں کے خط مستقیم شکل میں کعبہ کی طرف ہوں گے۔ ان کی تصویر کو یوں سمجھنا مناسب ہے کعبہ قوس دائیں جبین قوس بائیں جبین یہاں امیج بنانی ہے جلد ۶ ص ۱۰۸ ایسے مشکل مقام کو یوں سمجھا جا سکتا ہے۔ لیکن علامی طحطاوی رحمۃ اللہ علیہ کا وہ قول جو انہوں نے اپنی بنائی ہوئی تصویر کے بارے میں ایک فاضل سے نقل کرتے ہوئے فرمایا کہ کعبہ پر سے گزرنے والے خط سے زاوية قائمة حاصل ہوا اور اسی طرح نمازی کی جبین سے نکلنے والے خط سے دوسرا قائمہ حاصل ہوا اور ان دونوں خطوں سے دو مساوی زاویے پیدا ہوئے۔ اھ فاقول: (تو میں کہتا ہوں) اگرچہ ان کے اس تکلف ينبغى ان يفهم هذا المقام، اما قولہ رحمۃ اللہ علیہ فی بیان تصویرہ نقلاً عن بعض الافاضل، فقد حصل من الخط المار بالكعبة قائمة ومن الخط الخارج من جبين المصلى قائمة اخرى وحدث منهما زاويتان متساويتان ۱ اھ فاقول: هذا وان كان

١ حاشية الطحطاوى على الدر المختار باب شروط صلوة مطبوعہ دار المعرفة بيروت ١ / ٤٩٧

Fatawa Rizvia (Volume 6)

[Arabic Text]: In recounting it, there is enough to avoid disparaging them, yet there is no belittlement of them, for they—may Allah have mercy on them—were not preoccupied with those sciences, as they were concerned with their intended goal and meaning. May Allah Almighty have mercy on them and on us with a mercy that suffices and enriches. Amen! [Urdu Translation]: There was no need for it, but this does not bring reproach upon them because these gentlemen did not have a special occupation with this art; they only concerned themselves with explaining their purpose and necessary intent. May Allah Almighty grant His sufficient mercy upon them and upon us, Amen!

[Arabic Text]: Furthermore, know that the two temples (al-jabinain) end on both sides aligned with the two eyebrows. It is stated in Al-Qamus: The "jabinain" are the two edges surrounding the forehead from both its sides, between the eyebrows, ascending to the hairline. [Urdu Translation]: Furthermore, let it be clear that both temples end on both sides parallel to both eyebrows. In Al-Qamus it is stated: "Jabinain" are the two sides surrounding the forehead from both sides, which rise higher than both eyebrows and reach the hair of the forehead. End. (T)

In summary, according to our research, the outcome of the fourth opinion is that it can tilt to both sides from the true alignment, meaning that the 'jabin' (temple), i.e., the edge of the forehead, aligned with the outer edge of the eyebrow, such that a line extending from it straight towards the horizon passes over the surface of the Great Kaaba forming a right angle. I say: It is evident that according to this meaning, from one temple to the other, i.e., between the two eyebrows, if the head is assumed to be circular, it would be approximately a quarter of the circumference. Thus, from the center of the forehead to each side is one-eighth of the circumference. If a line according to the mentioned description were at the center of the forehead, it would be the true alignment. Now, if turning away by one-eighth from it is correct, then those two sides would fall within 45-45 degrees towards the Kaaba. This was also the summary of the third opinion. And why should it not be so, since from the text of 'Durar' it is clear that they have one summary, as we previously stated. And with Allah is success.

Fifth: The Qibla of the people of the East is the West, of the people of the West is the East, of the people of the South is the North, and of the people of the North is the South. So as long as one direction does not change to another—for example, the

Qibla is in the western quadrant—and if someone faces towards the northern or southern quadrant, the direction of the Qibla remains. I say: The summary of this saying is that from the position of the worshiper, extend the line of true alignment passing through the Great Kaaba to the horizons on both sides. From there, drop another line perpendicular to it so that the horizon is divided into four equal parts. Then bisect each part and connect the lines in each adjacent half. The four quadrants of the horizon obtained from these final lines are the four directional quadrants. Among them, that quadrant which has the Great Kaaba at its midpoint is the direction...

1. Al-Qamus al-Muhit, Chapter of Jeem, Section of Noon, printed at Mustafa al-Babi, Egypt, 4/210. Page 109 of 736

फ़तावा रज़विया (छठा खंड)

[अरबी पाठ]: इसके उल्लेख में उनकी निंदा से बचने के लिए पर्याप्त है, फिर भी इसमें उनका कोई अपमान नहीं है, क्योंकि वे—अल्लाह उन पर दया करे—उन विज्ञानों में विशेष रूप से व्यस्त नहीं थे, क्योंकि वे अपने इच्छित उद्देश्य और अर्थ को व्यक्त करने में लगे थे। अल्लाह सर्वशक्तिमान उन पर और हम पर अपनी दया करे जो पर्याप्त और समृद्ध करने वाली है। आमीन! [उर्दू अनुवाद]: इसकी आवश्यकता नहीं थी, लेकिन इससे उन पर कोई आक्षेप नहीं आता क्योंकि इन सज्जनों का इस कला से विशेष लगाव नहीं था; वे केवल अपने उद्देश्य और आवश्यक आशय को समझाने की चिंता करते थे। अल्लाह सर्वशक्तिमान उन पर और हम पर अपनी पर्याप्त दया करे, आमीन!

[अरबी पाठ]: इसके अलावा, जानें कि दोनों कनपटी (अल-जबिनैन) दोनों भौहों के संरेखण में दोनों तरफ समाप्त होती हैं। अल-क़ामूस में कहा गया है: "जबिनैन" माथे के दोनों किनारों को घेरने वाले दो किनारे हैं, भौहों के बीच, जो बालों की रेखा तक जाते हैं। [उर्दू अनुवाद]: इसके अलावा, यह स्पष्ट हो कि दोनों जबीनें दोनों भौहों के बराबर दोनों तरफ समाप्त होती हैं। कामूस में है: "जबीनें" माथे को दोनों तरफ से घेरने वाले दो किनारे हैं जो दोनों भौहों से ऊँचे होकर माथे के बालों तक पहुँचते हैं। इति। (त)

संक्षेप में, हमारे शोध के अनुसार चौथे कथन का निष्कर्ष यह है कि वास्तविक संरेखण (alignment) से दोनों तरफ झुका जा सकता है कि जबीन यानी माथे का किनारा, बाहरी भौंह के किनारे के समानांतर, जो रेखा इसकी सीध में क्षितिज की ओर जाए, काबा ए मुअज़्ज़मा की सतह पर समकोण (right angle) बनाते हुए गुज़रे। मैं कहता हूँ: स्पष्ट है कि इस अर्थ के अनुसार एक जबीन से दूसरी तक यानी दो भौहों के बीच यदि सिर को गोलाकार माना जाए तो वह लगभग एक चौथाई चक्कर होगा, तो माथे के बीच से हर तरफ आठवाँ हिस्सा है। यदि उल्लेखित गुण वाली रेखा माथे के बीच में होती तो वह वास्तविक संरेखण होता। अब उससे आठवें हिस्से का मुड़ना सही हुआ तो काबा के उन दोनों पक्षों में 45-45 डिग्री आए। तीसरे कथन का भी यही सारांश था, और क्यों न हो कि 'दुरर' की इबारत से उनका एक सारांश होना स्पष्ट है जैसा कि हमने पहले उल्लेख किया। और अल्लाह ही सफलता देने वाला है।

पाँचवाँ: पूर्व वालों का क़िबला पश्चिम है, पश्चिम वालों का पूर्व, दक्षिण वालों का उत्तर और उत्तर वालों का दक्षिण। तो जब तक एक दिशा दूसरी से न बदले, उदाहरण के लिए पश्चिमी चतुर्थांश

(quadrant) में क़िबला है, यदि कोई उत्तर या दक्षिण चतुर्थांश की ओर मुँह करे तो क़िबला की दिशा बनी रहेगी। मैं कहता हूँ: इस कथन का निष्कर्ष यह है कि नमाज़ी के स्थान से वास्तविक संरेखण की रेखा काबा ए मुअज़्ज़मा से गुज़रती हुई दोनों ओर के क्षितिज तक मिला दें और वहीं से दूसरी रेखा उस पर लंब (perpendicular) गिरा दें ताकि क्षितिज के चार बराबर भाग हो जाएँ फिर हर भाग को आधा करके प्रत्येक दो आधे भागों में रेखा जोड़ दें। इन अंतिम रेखाओं से जो क्षितिज के चार चतुर्थांश प्राप्त होंगे, वही चारों दिशाओं के चतुर्थांश हैं। उनमें से वह चतुर्थांश जिसके केंद्र में काबा ए मुअज़्ज़मा है, दिशा...

1. अल-क़ामूस अल-मुहीत, अध्याय जीम, खंड नून, मुस्तफा अल-बाबी प्रेस, मिस्र 4/210। पृष्ठ 109 / 736

فتاوی رضویہ (جلد ششم)

فی حکایتہ غنی عن نکایتہ لکن لا ازراء فیہ بھم فانھم رحمھم اللہ تعالی لم یکن لھم اشتعال بتلك الفنون وقد کانوا معتنین بمأبھم و یعنی فرحمھم اللہ تعالی ورحمنا بھم رحمتہ تکفی وتغنی آمین! کی ضرورت نہ تھی، لیکن اس سے ان پر طعن نہیں آتا کیونکہ ان حضرات کا اس فن سے خاص شغل نہیں ہے وہ صرف اپنے مقصد اور ضروری مراد کو بیان کرنے کا اہتمام کرتے ہیں، اللہ تعالیٰ ان پر اور ہم پر اپنی کفایت کرنے والی رحمت فرمائے، آمین !

ثم اعلم ان الجبینین منتھیان في الجانبین الی محاذاۃ الحاجبین، قال في القاموس الجبینان حرفان مکتنفا الجبھۃ من جانبیھا فیما بین الحاجبین مصعدا الی قصاص الشعرہ[1] ۔ پھر واضح ہو کہ دونوں جبینیں دونوں ابروؤں کے برابر جانبین پر ختم ہوتی ہیں۔ قاموس میں ہے: "جبینیں" پیشانی کو دونوں طرف سے گھیراؤ کرنے والی دو طرفیں ہیں جو دونوں ابروؤں سے بلند ہو کر پیشانی کے بالوں تک پہنچتی ہیں اھ ۔ (ت)

بالجملہ ہماری تحقیق پر قولِ چہارم کا حاصل یہ ہوا کہ محاذاتِ حقیقیہ سے دونوں طرف جھک سکتا ہے کہ جبین یعنی کنارہ پیشانی محاذی کنارہ بیرونی ابرو سے جو خط اُس کی استقامت پر اُفق کی طرف جائے سطح کعبہ معظمہ پر زاویہ قائمہ بناتا گزرے اقول (میں کہتا ہوں) ظاہر ہے کہ اس معنی پر جبین سے دوسری تک یعنی مابین دو ابرو اگر سر کو مدوّر فرض کیا جائے تقریباً ربع دور ہوگا تو وسط جبہہ سے ہر طرف ثمن دور ہے صفت مذکورہ پر خط اگر وسط پیشانی پر جاتا تو محاذات حقیقیہ ہوتی ، اب اُس سے ثمن دُور پھرنا صحیح ہوا تو وہی جانبین کعبہ میں ۴۵-۴۵ درجے آئے قول سوم کا بھی یہی محصل تھا، اور کیوں نہ ہو کہ عبارت درر سے اُن کا ایک محصل ہونا ظاہر کما قدمنا و باللہ التوفیق۔

پنجم ۔ اہل مشرق کا قبلہ مغرب ہے ، اہل مغرب کا مشرق، اہل جنوب کا شمال، اہل شمال کا جنوب۔ تو جب تک ایک جہت دوسری سے نہ بدلے مثلاً ربع مغرب میں قبلہ ہے، یہ ربع شمال یا ربع جنوب کی طرف منہ کرے جہت قبلہ باقی رہے گی۔ اقول: اس قول کا حاصل یہ ہے کہ موضوع مصلی سے محاذات حقیقیہ کا خط کعبہ معظمہ پر گزرتا ہوا دونوں طرف کے افق تک ملا دیں اور وہیں سے دوسرا خط اُس پر عمود پر گرا دیں کہ افق کے چار حصے مساوی ہو جائیں، پھر ہر حصے کی تنصیف کر کے ہر دو نصف متجاوز میں خط وصل کر دیں ان اخیر خطوط سے جو چار ربع افق حاصل ہوں گے وہی ارباع جہات اربعہ ہیں ان میں وہ ربع جس کے منتصف پر کعبہ معظمہ ہے جہت

1 القاموس المحیط فصل الجیم باب النون مطبوعہ مصطفٰی البابی مصر ۴/ ۲۱۰ صفحہ 109 از 736

Fatawa-e-Razawiyyah Volume 6 Facing it is the direction of 'Istiqbal' (front), and opposite to it is the direction of 'Istidbar' (back). The remaining two-quarters are 'Yamin' (right) and 'Shimal' (left). In this scenario, 'H' is the worshiper (Musalli) and 'R' is Makkah Mukarramah. Now, the line of true alignment 'A-S' is perpendicular to it. These four points have divided the horizon into four quarters. Then, bisecting the quarter 'A-H' at 'H' and the quarter 'A-T' at 'T', join the line 'H-T'. Similarly, 'T-K = L-Y'. 'Y-H' is the arc of direction 'H' for the Qiblah, 'Y-B-K' is the direction of 'Istidbar', 'Y-H-H' is the direction of 'Yamin' (right), and 'K-T' is the direction of 'Shimal' (North). If one faces towards 'A', they are facing the Kaaba itself. It is permissible to turn towards the right side near 'H' or the left side near 'T', and the direction of the Qiblah will still be maintained. [Diagram showing a circle with geometric points] When the arc went outside 'H-A-T', the direction was lost. Thus, a deviation of up to 45-45 degrees on both sides is permissible. This exquisite statement is narrated from the Imam of the school, Sayyiduna Imam-e-Azam (may Allah be pleased with him), as mentioned in 'Fatawa Khayriyya':

From Abu Hanifa (may Allah have mercy on him): The Qiblah for the people of the East is the West, and for the people of the West is the East. The Qiblah for the people of the North is the South, and for the people of the South is the North.	**Narrated from Imam Abu Hanifa (may Allah have mercy on him) that the Qiblah for the people of the West is the East and for the people of the East is the West, and for the people of the North is the South and for the people of the South is the North. (T)**

It is mentioned in 'Sharh Nuqaya' by Allama Quhistani:

Al-Zandawisi said that the West is the Qiblah for the people of the East and vice versa, and the South for the people of the North and vice versa. Thus, the direction is the Qiblah just like the Kaaba itself.	**Zandawisi said that the Qiblah for the people of the East is the West and vice-versa, and for the people of the North is the South and vice-versa. Thus, the direction is also the Qiblah just like the Kaaba itself. (T)**

It is in 'Hilya':

Al-Zandawisi has certainly expressed in his 'Rawdah' the aforementioned branch etc. He said this after mentioning that he based it on the Kaaba being the center of the earth and hesitated...

Zandawisi in his book "Rawdah" has expressed certainty on the aforementioned branch, etc. He said this after declaring the Kaaba to be at the center of the earth and its proof...

1. Fatawa Khayriyya, Kitab al-Salat, published by Dar al-Ma'rifah, Beirut, 1/71
2. Jami' al-Rumuz, Chapter: Conditions of Prayer, published by Maktabah Islamiyah Gonbad-e-Qamus, Iran, 1/130
3. Al-Ta'liq al-Mujli li-ma fi Munyah al-Musalli with Munyah al-Musalli, Fourth Condition, published by Maktabah Qadriyah Jamia Nizamia Lahore, p. 186 Page 110 of 736

फ़तावा रज़विया छठा खंड सामना करना 'इस्तिक्बाल' (सामने) की दिशा है, और इसके विपरीत दिशा 'इस्तिदबार' (पीछे) की है। शेष दो चौथाई भाग 'यमीन' (दाएं) और 'शुमाल' (बाएं) हैं। इस स्थिति में, 'ह' नमाज़ी (मुसल्ली) है और 'र' मक्का मुकर्रमा है। अब, वास्तविक संरेखण रेखा 'अ-स' इस पर लंबवत है। इन चार बिंदुओं ने क्षितिज को चार भागों में विभाजित किया। फिर, चौथाई 'अ-ह' को 'ह' पर और चौथाई 'अ-त' को 'त' पर आधा करके, रेखा 'ह-त' को मिला दिया। इसी प्रकार 'त-क = ल-य'। 'य-ह' क़िबला की दिशा 'ह' का चाप है, 'य-ब-क' 'इस्तिदबार' की दिशा है, 'य-ह-ह' 'यमीन' (दाएं) की दिशा है, और 'क-त' 'शुमाल' (उत्तर) की दिशा है। यदि कोई 'अ' की ओर मुख करता है, तो वह सीधे काबा की ओर उन्मुख होता है। यह अनुमेय है कि वह दाईं ओर 'ह' के निकट तक या बाईं ओर 't' के निकट तक मुड़ जाए, और क़िबला की दिशा बनी रहेगी। [वृत्त और ज्यामितीय बिंदुओं वाला चित्र] जब चाप 'ह-अ-त' से बाहर निकल गया, तो दिशा नहीं रही। अत; दोनों तरफ 45-45 डिग्री तक का विचलन अनुमेय है। यह उत्कृष्ट कथन स्वयं मजहब के इमाम, सैय्यदुना इमाम-ए-आजम (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) से वर्णित है, जैसा कि 'फ़तावा खैरिया' में उल्लेख है:

अबू हनीफ़ा (अल्लाह उन पर रहम करे) से: पूर्व वालों का क़िबला पश्चिम है और पश्चिम वालों का पूर्व। उत्तर वालों का क़िबला दक्षिण है और दक्षिण वालों का उत्तर।

इमाम अबू हनीफ़ा (अल्लाह उन पर रहम करे) से वर्णित है कि पश्चिम वालों का क़िबला पूर्व है और पूर्व वालों का पश्चिम, उत्तर वालों का दक्षिण और दक्षिण वालों का उत्तर है। (त)

अल्लामा कुहिस्तानी की 'शर्ह नुक़ाया' में उल्लेख है:

ज़ंदवैसी ने कहा कि पूर्व वालों के लिए पश्चिम क़िबला है और इसके विपरीत, और उत्तर वालों के लिए दक्षिण और इसके विपरीत। अतः दिशा भी स्वयं काबा की तरह ही क़िबला है।

ज़ंदवैसी ने कहा कि पूर्व वालों का क़िबला पश्चिम है और इसके विपरीत, और उत्तर वालों का दक्षिण है और इसके विपरीत। अतः दिशा भी स्वयं काबा की तरह क़िबला है। (त)

'हिलिया' में है:

ज़ंदवैसी ने अपनी 'रौज़ा' में उक्त उप-शाखा आदि पर दृढ़ निश्चय व्यक्त किया है। उन्होंने यह बात कबा को पृथ्वी का केंद्र मानने के बाद कही और हिचकिचाए...

ज़ंदवैसी ने अपनी पुस्तक "रौज़ा" में उक्त विवरण पर निश्चितता व्यक्त की है, इत्यादि। उन्होंने यह बात काबा को पृथ्वी के केंद्र में स्थित घोषित करने के बाद और उसके प्रमाण में कही...

1. फ़तावा खैरिया, किताबुस सलात, दारुल मारिफ़ा, बेरूत से प्रकाशित, 1/71
2. जामिउर रुमूज़, फ़स्ल: नमाज़ की शर्तें, मकतबा इस्लामिया गुंबद-ए-क़ामूस ईरान से प्रकाशित, 1/130
3. अत-तअलीक़ुल मुजली लि-मा फ़ी मुन्यतुल मुसल्ली, मुन्यतुल मुसल्ली के साथ, चौथी शर्त, मकतबा कादरिया जामिया निज़ामिया लाहौर से प्रकाशित, पृष्ठ 186 पृष्ठ 736 का 110

فتاویٰ رضویہ جلد ششم استقبال ہے اور اُس کے مقابل جہتِ استدبار اور باقی دو ربع جہات یمین و شمال بایں صورت ہ مصلی ہے اور ر مکہ معظمہ، اب خط محاذات حقیقی ع اس پر عمود، ان نقاطِ اربعہ نے تربیع افق کی، پھر ربع اح کو ح اور ربع اء کو ط پر تنصیف، کر کے خط ح ط ملا دیا، یو نہی ط ک = ل ی۔ ی ح تو قوسِ ح جہتِ قبلہ ہے اور ی ب ک جہتِ استدبار، ی ح ح جہت یمین، ک ء ط جہت شمال۔ ہ اگر اکی طرف منہ کرے عین کعبہ کی طرف متوجہ ہے اور روا ہے کہ دہنی جانب ح یا بائیں طرف ط کے قریب تک پھرے جہتِ قبلہ باقی رہے گی۔ [تصویر جس میں دائرہ اور ہندسی نکات دکھائے گئے ہیں] جب قوس ح ا ط سے باہر گیا جہت نہ رہی تو وہی دونوں جانب ۴۵-۴۵ درجے تک انحراف روا ہوا۔ یہ قولِ نفیس خود امامِ مذہب سیدنا امام اعظم رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے منقول، فتاویٰ خیریہ میں ہے:

عن ابی حنیفۃ رحمۃ اللہ تعالیٰ المشرق قبلۃ اھل المغرب والمغرب قبلۃ اھل المشرق والجنوب قبلۃ اھل الشمال والشمال قبلۃ اھل جنوب۔

امام ابو حنیفہ رحمہ اللہ تعالیٰ سے مروی ہے کہ مغرب والوں کا قبلہ مشرق ہے اور مشرق والوں کا مغرب، شمال والوں کا جنوب اور جنوب والوں کا شمال ہے۔ (ت)

شرح نقایہ علامہ قہستانی میں ہے:

قال الزندویسی ان المغرب قبلۃ لاھل المشرق و بالعکس والجنوب لا ھل الشمال وبالعکس فالجھۃ قبلۃ کالعین۔

زند ویسی نے کہا کہ مشرق والوں کا مغرب قبلہ ہے اور اسکے بر عکس، اور شمال والوں کا جنوب قبلہ ہے اور اسکے بر عکس۔ پس جہت بھی عین کعبہ کی طرح قبلہ ہے۔ (ت)

حلیہ میں ہے۔

قد قطع الزندویسی فی روضتہ بالتفریع زند ویسی نے اپنی کتاب "روضہ" میں مذکورہ تفریح پر المذکور الخ قالہ بعد ما ذکر انہ بناہ علی یقین کا اظہار کیا ہے الخ، انہوں نے یہ بات کعبہ کو کون الکعبۃ وسط الارض وتردّد وسطِ زمین پر قرار دینے کے بعد کہی اور اس کے اثبات

1 فتاویٰ خیریہ کتاب الصلوٰۃ مطبوعہ دار المعرفۃ بیروت ۷۱/۱ 2 جامع الرموز فصل شروط الصلوٰۃ مطبوعہ مکتبہ اسلامیہ گنبد قاموس ایران ۱۳۰/۱ 3 التعلیق المجلی لمانی منیہ المصلی مع منیہ المصلی الشرط الرابع مطبوعہ مکتبہ قادریہ جامعہ نظامیہ لاہور ص ۱۸۶ صفحہ 110 از 736

Fatawa-e-Razviya, Volume VI

(Regarding its establishment) he expressed hesitation, then supported it with the words of Imam Razi in his commentary, stating it is among the accepted matters among them. I say: There is no room for hesitation because the earth is a sphere; you can designate any point on it as the center as you wish, and the Kaaba is most deserving of that, for Allah Almighty has made it a "resort for mankind." Furthermore, the derivative does not depend solely on this. Do you not see that we have depicted it by assuming the place of prayer as the center? (T)

In Nazm Zandvisi, then in Dhakhira, then in Huliya: With us, the Qibla of the people of the East is towards the West, and the Qibla of the people of the West is towards the East. The Qibla of the people of Medina is to the right of one who faces West, and the Qibla of the people of Hejaz is to the left of one who faces West. [1] (End) I say: It is as if by Hejaz they meant the rightward portion; otherwise, Medina Munawwarah is the center and sovereign of Hejaz, and rather the sovereign of the entire world. Furthermore, it is certainly known that the Qibla of Medina Munawwarah is to the left of one facing West, meaning towards the South. Thus, it is as if in the explanation, right and left were transposed, or East and West were exchanged. Allah Almighty knows best. Perhaps what occurred in Al-Khaniya, regarding the Qibla of the people of India being between the corners, is also based on a similar transposition.

[1] Al-Ta’liq al-Mujalla lima fi Munyat al-Musalli with Munyat al-Musalli, ref: Fourth Condition, printed by Maktaba Qadriya, Jamia Nizamia, Lahore, p. 186.

Page 111 of 736

फ़तावा-ए-रज़विया, जिल्द VI

(इसकी स्थापना के संबंध में) उन्होंने संकोच व्यक्त किया, फिर उन्होंने इमाम राज़ी के शब्दों के साथ इसका समर्थन किया जो उनकी व्याख्या में है, यह कहते हुए कि यह उनके बीच स्वीकृत मामलों में से है। मैं कहता हूँ: संकोच की कोई गुंजाइश नहीं है क्योंकि पृथ्वी एक गोला है; आप उस पर अपनी इच्छानुसार किसी भी बिंदु को केंद्र मान सकते हैं, और काबा इसके लिए सबसे योग्य है, क्योंकि अल्लाह सर्वशक्तिमान ने इसे "मानव जाति के लिए शरणस्थली" बनाया है। इसके अलावा, परिणाम केवल इस पर निर्भर नहीं है। क्या आपने नहीं देखा कि हमने प्रार्थना के स्थान को केंद्र मानकर इसका चित्रण किया है? (त)

नज़्म ज़न्दविसी में, फिर ज़ख़ीरा में, फिर हुलिया में: हमारे यहाँ, पूर्व के लोगों का क़िबला पश्चिम की ओर है, और पश्चिम के लोगों का क़िबला पूर्व की ओर है। मदीना के लोगों का क़िबला पश्चिम की ओर मुँह करने वाले के दाईं ओर है, और हिजाज़ के लोगों का क़िबला पश्चिम की ओर मुँह करने वाले के बाईं ओर है। [1] (समाप्त) मैं कहता हूँ: ऐसा लगता है जैसे हिजाज़ से उनका तात्पर्य दाहिने हिस्से से था; अन्यथा, मदीना मुनव्वरा हिजाज़ का केंद्र और सरदार है, बल्कि पूरी दुनिया का सरदार है। इसके अलावा, यह निश्चित रूप से ज्ञात है कि मदीना मुनव्वरा का क़िबला पश्चिम की ओर मुँह करने वाले के बाईं ओर है, अर्थात दक्षिण की ओर। इस प्रकार, ऐसा लगता है जैसे स्पष्टीकरण में, दाएं और बाएं को उलट दिया गया था, या पूर्व और पश्चिम को बदल दिया गया था। अल्लाह सर्वशक्तिमान बेहतर जानता है। शायद 'अल-ख़ानिया' में जो कुछ आया है, भारत के लोगों के क़िबला के बारे में कि वह कोनों के बीच है, वह भी इसी तरह के उलटफेर पर आधारित है।

[1] अल-तालिक अल-मुजल्ला लिमा फी मुनियत अल-मुसल्ली मुनियत अल-मुसल्ली के साथ, सन्दर्भ: चौथी शर्त, मकतबा क़ादरिया, जामिया निज़ामिया, लाहौर द्वारा मुद्रित, पृ. 186.

पृष्ठ 111 का 736

في ثبوته ثم ايده بكلام الامام الرازي في التفسير وانه من القضايا المتلقاة بينهم بالقبول اقول: لا محل لتردد فان الارض كرة فلك ان تقدر اية نقطة منها شئت وسطا والكعبة احق بذلك فان الله تعالى جعلها مثابة للناس ثم الفرع لا يتوقف عليه الا ترى انا صورناه بفرض موضع المصلى وسطا- میں انہوں نے تردد کیا ہے، پھر انہوں نے اس کی تائید امام رازی کے کلام جوان کی تفسیر میں ہے سے فرمائی یہ بات مسلمہ قضایا میں سے ہے۔ میں کہتا ہوں اس میں تردد کی گنجائش نہیں کیونکہ آپ زمین کے جس نقطہ کو وسط قرار دیں وہ کعبہ ہے اس لئے کہ زمین گول ہے اسی لئے اللہ تعالیٰ نے کعبہ کو "مثابة للناس" فرمایا ہے، پھر یہ تفریع کعبہ کے وسط ہونے پر موقوف نہیں ہے۔ آپ نے خیال نہیں کیا کہ ہم نے نماز کی جگہ کو وسط فرض کرتے ہوئے اس کی تصویر بنائی ہے۔ (ت)

نظم زندویسی پھر ذخیرہ پھر حلیہ میں: قبلة اهل المشرق الى المغرب عندنا وقبلة اهل المغرب الى المشرق وقبلة اهل المدينة الى يمين من توجه الى المغرب وقبلة اهل الحجاز الى يسار من توجه الى المغرب ۱۸ اھ ہمارے ہاں مشرق والوں کا قبلہ مغرب اور مغرب والوں کا مشرق ہے، اور مدینہ والوں کا قبلہ مغرب کی طرف متوجہ ہونے والے کی دائیں طرف ہے، اور حجاز والوں کا قبلہ مغرب کی طرف متوجہ ہونے والے کی بائیں جانب ہے اھ، (ت) اقول: كانه اراد بالحجاز نحو اليمين والا فالمدينة السكينة سيدة الحجاز وسيدة البلاد العالم ثم من المعلوم قطعا ان قبلتها الى يسار من توجه الى المغرب اعنى الجنوب فكانه انقلب في البيان اليمين واليسار او تبدل المشرق بالمغرب ولعل من هذا القبيل والله تعالى اعلم ما وقع من الخانية من ان القبلة لاهل الهند ما بين الركن اقول: انہوں نے حجاز سے گویا دایاں حصہ مراد لیا ہے ورنہ مدینہ منورہ حجاز کا مرکز اور سردار ہے بلکہ پورے عالم کا سردار ہے۔ پھر قطعاً یہ معلوم ہے کہ مدینہ منورہ کا قبلہ مغرب کی طرف متوجہ ہونے والے کی

بائیں جانب یعنی جنوب ہے، گویا انہوں نے بیان میں (غلطی سے) یمین کی جگہ یسار کو ایک دوسرے سے بدل دیا، یا پھر مشرق اور مغرب کو ایک دوسرے سے بدل دیا واللہ تعالیٰ اعلم، ہو سکتا ہے کہ جو خانیہ میں مذکور ہے وہ بھی اسی طرح کی تبدیلی پر مبنی ہو کہ ہندو والوں کا

1 التعليق المجلى لما في منية المصلى مع منية المصلى بحوالہ الشرط الرابع مطبوعہ مکتبہ قادریہ جامعہ نظامیہ لاہور ص ۱۸۶ Page 111 of 736

Fatawa Razawiya Volume VI

[Arabic Text]: Al-Yamani to Al-Hijr 1. And I wrote upon it: I say this is the southern direction, and it is not correct except for some cities of India up to approximately latitude Al-H (S), unless 'Al-Hijr' is read with a kasra [under the 'H'], which then means Al-Hateem. And by 'the Yamani Corner' (Al-Rukn al-Yamani), the entire Yamani wall is intended. Then both extremes are excluded, leaving the Eastern wall where the Noble Door is. Or 'the Corner' is read according to its literal meaning and both extremes are included, meaning the distribution, i.e., the Qiblah of India is distributed between South, East, and North. However, this is far-fetched after his statement: 'Then a station is designated for every people from it', i.e., from the Kaaba. For the people of Syria, it is the Syrian Corner (Al-Rukn al-Shami); for the people of Madinah, the area of Al-Hateem and the Spout (Al-Mizab); for the people of Yemen, the Yamani Corner; and for the people of India 2 etc. So let it be reflected upon, and Allah Almighty knows best.

[Urdu Translation/Explanation]: The Qiblah is between the Yamani Corner and the Hijr. I have written a marginal note on this stating that this is the southern direction, and it can only be the Qiblah for some parts of India which are approximately at latitude Al-H (S). However, if 'Hijr' is read with a kasra (the diacritic 'zer') [under the 'H'], it refers to the Hateem of the Kaaba. And by 'Rukn-e-Yamani', the entire Yamani wall is meant. Then, (from the length mentioned in Al-Khaniya) both extremes, i.e., the Yamani wall and the Hateem, are excluded, and only the middle portion between these two boundaries, which is the eastern wall of the Kaaba containing its door, is meant. Or it can be said that the Yamani Corner remains in its original meaning, and by including both boundaries, i.e., the Yamani Corner and the Hateem, the Qiblah for India is broadened. It would then be said that India's Qiblah extends across south, east, and north. But this possibility is remote after their statement that each part of the Kaaba is designated for a specific people: for the people of Syria, the Syrian Corner; for the people of Madinah, the section of Hateem and Mizab; for the people of Yemen, the Yamani Corner; and for the people of India, etc., it is between the aforementioned Yamani Corner and the Hijr. Reflect upon this. And Allah Almighty knows best. (T)

I say: This view is supported by tradition, reason, Sharia, and custom, and it is the most precise, balanced, correct, insightful, and sound of views. Firstly, it is narrated from the Imam of the school of thought himself, and 'the speech of the Imam is the Imam of speech' (the words of the leader are the leaders of words).

When the Imam spoke, believe him, For indeed, the correct word is what the Imam said. (When the Imam speaks, testify to its truth because the correct view is what the Imam has stated.)

1. Fatawa Qazi Khan, Kitab al-Salat, printed in Naval Kishore, Lucknow, 1/33.
2. Hawashi al-Fatawa al-Khaniya.

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

[अरबी पाठ]: अल-यमानी से अल-हिज्र 1 तक। और मैंने इस पर लिखा: मैं कहता हूँ कि यह दक्षिणी दिशा है, और यह भारत के कुछ शहरों के अलावा सही नहीं है, लगभग अक्षांश अल-ह (स) तक, जब तक कि 'अल-हिज्र' को कसरा के साथ न पढ़ा जाए, जिसका अर्थ अल-हतीम है। और 'यमानी कोने' (रुकन-ए-यमानी) से पूरी यमानी दीवार अभिप्रेत है। फिर दोनों छोरों को बाहर रखा जाता है, जिससे पूर्वी दीवार बचती है जहाँ महान द्वार है। या 'कोने' को उसके शाब्दिक अर्थ के अनुसार पढ़ा जाता है और दोनों छोरों को शामिल किया जाता है, जिसका अर्थ है वितरण, यानी भारत का क़िबला दक्षिण, पूर्व और उत्तर के बीच वितरित है। हालाँकि, उनके इस कथन के बाद यह बात दूर की लगती है: 'फिर उसमें से प्रत्येक लोगों के लिए एक स्थान निर्धारित किया गया है', अर्थात काबा से। सीरिया के लोगों के लिए शामी कोना (रुकन-ए-शामी) है; मदीना के लोगों के लिए अल-हतीम और परनाले (मीज़ाब) का क्षेत्र; यमन के लोगों के लिए यमानी कोना; और भारत के लोगों 2 आदि के लिए। अतः इस पर विचार किया जाना चाहिए, और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

[उर्दू अनुवाद/व्याख्या]: क़िबला रुकन-ए-यमानी और हिज्र के बीच है। और मैंने इस पर हाशिया लिखा कि यह दक्षिणी दिशा है, और यह केवल भारत के कुछ हिस्सों का क़िबला हो सकता है जो लगभग अक्षांश अल-ह (स) पर हैं। हाँ, अगर 'हिज्र' को 'कसरा' (ज़ेर) के साथ पढ़ा जाए यानी काबा का हतीम मुराद लिया जाए। और 'रुकन-ए-यमानी' से पूरी यमानी दीवार मुराद ली जाए और फिर (ख़ानिया की बताई गई लंबाई में से) दोनों छोरों यानी यमानी दीवार और हतीम को बाहर कर दिया जाए और सिर्फ़ इन दोनों सीमाओं के बीच का हिस्सा यानी काबा की पूर्वी दीवार मुराद ली जाए जिसमें काबा का दरवाज़ा है। या फिर यूँ कहा जाए कि रुकन-ए-यमानी अपने असली अर्थ पर रहे और दोनों सीमाओं यानी रुकन-ए-यमानी और हतीम को गिनती में शामिल करके भारत के क़िबला को फैला दिया जाए और यूँ कहा जाए कि भारत का क़िबला दक्षिण, पूर्व और उत्तर में फैला हुआ है लेकिन यह संभावना उनके इस बयान के बाद दूर की है कि फिर काबा का हर हिस्सा एक कौम के लिए निर्धारित है, शाम वालों के लिए रुकन-ए-शामी और मदीना वालों के लिए हतीम और मीज़ाब का हिस्सा, यमन वालों के लिए रुकन-ए-यमानी और भारत वालों के लिए आदि उपर्युक्त रुकन-ए-यमानी और हिज्र के बीच है, गौर से काम लो, अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मैं कहता हूँ: यही बात नकल, बुद्धि, शरीयत और परंपरा, सब से समर्थित है और यही सबसे सटीक, संतुलित, सही, दूरदर्शी और दृढ़ विचार है। पहली बात यह कि यह स्वयं पंथ के इमाम से वर्णित है और 'इमाम का कलाम, कलाम का इमाम है' (नेता के शब्द, शब्दों के नेता होते हैं)।

जब इमाम ने कहा, तो उन्हें सच मानो, क्योंकि वास्तव में सही बात वही है जो इमाम ने कही है। (जब इमाम फ़रमाएँ तो उनकी पुष्टि करो क्योंकि सही विचार वही है जो इमाम ने फ़रमाया है)

1. फ़तावा काज़ी ख़ान, किताबुस सलात, नवल किशोर, लखनऊ द्वारा मुद्रित 1/33।
2. हवाशी अल-फ़तावा अल-ख़ानिया।

पृष्ठ 112 / 736

فتاوی رضویہ جلد ششم

الیمانی الی الحجر 1 وکتبت علیه اقول هذا جهة الجنوب ولا یصح الا لبعض بلاد الهند الی عرض الح ص تقریباً الا ان یقرأ الحجر بالکسر وهو الحطیم ویراد بالرکن الیمانی الجدار الیمانی تماماً و یخرج الغایتان فیبقی الجدار الشرقی الذی فیه الباب الکریم او یقرأ الرکن علی معناه ویدخل الغایتان ویراد التوزیع ای قبلة الهند متوزعة بین الجنوب والشرق والشمال وهذا لبعید بعد قوله ثم تعین لکل قوم منها ای "من الکعبة" مقام فلاهل الشام الرکن الشامی ولاهل المدینة موضع الحطیم والمیزاب ولا هل الیمین الرکن الیمانی ولا هل الهند 2 الخ فلیتأمل واللہ تعالی اعلم

قبلہ رکن یمانی اور حجر کے مابین ہے۔ اور میں نے اس پر حاشیہ لکھا کہ یہ جنوبی جہت ہے، اور یہ صرف بعض ہند جو کہ عرض الح ص تقریباً ہے کا قبلہ ہوسکتا ہے۔ ہاں اگر حجر کی بجائے حجر کسرہ (زیر) کے ساتھ پڑھا جائے یعنی حطیم کعبہ مراد لیا جائے۔ اور "رکن یمانی" سے مراد ساری یمانی دیوار مراد لی جائے اور پھر (خانیہ کی بیان کردہ لمبائی میں سے) دونوں انتہاؤں یعنی یمانی دیوار، اور حطیم کو خارج کردیا جائے اور صرف ان دونوں حدوں کا درمیانی یعنی کعبہ کی مشرقی دیوار جس میں کعبہ کا دروازہ ہے مراد لیا جائے، یا پھر یوں کہا جائے کہ رکن یمانی اپنے اصلی معنیٰ پر باقی رہے اور دونوں حدیں یعنی رکن یمانی اور حطیم کو شمار میں داخل مان کر ہند کے قبلہ کو پھیلا دیا جائے اور یوں کہا جائے کہ ہند کا قبلہ جنوب مشرق اور شمال میں پھیلا ہوا ہے لیکن یہ احتمال ان کے اس بیان کے بعد بعید ہے کہ پھر کعبہ کا ہر حصہ ایک قوم کے لئے متعین ہے، شام والوں کے لئے رکن شامی اور مدینہ والوں کے لئے حطیم اور میزاب کا حصہ، یمن والوں کے لئے رکن یمانی اور ہند والوں کے لئے الخ مذکورہ یعنی رکن یمانی اور حجر کا درمیان ہے، غور سے کام لو، واللہ تعالیٰ اعلم۔ (ت)

اقول: یہی قول نقل و عقل و شرع و عرف سب سے مؤید اور یہی اضبط الاقوال واعدال واصح وانظر واسد۔ اولاً یہ خود امام مذہب سے منقول و کلام الامام امام الکلام (امام کا کلام، کلام کا امام ہے)۔

اذ قال الامام فصدقرہ فان القول ماقال الامام (جب امام فرمائے تو اس کی تصدیق کرو کیونکہ صحیح قول وہی ہے جو امام نے فرمایا ہے)

1 فتاوی قاضی خان کتاب الصلوۃ مطبوعہ نولکشور لکھنو ۱/۳۳ 2 حواشی الفتاوی الخانیہ

Fatawa Rizvia Volume VI Secondly, Imam Ahmad, Bukhari, Muslim, Abu Dawood, Tirmidhi, Nasa'i, Ibn Majah, and others narrate from Hazrat Abu Ayyub Ansari (may Allah be pleased with him) that the Messenger of Allah (peace be upon him) said:

"When any one of you goes to relieve himself, he should not face the Qiblah nor turn his back to it, but face the east or the west."

The Qiblah of the pure city of Medina is towards the south, therefore he said to face East or West. In our lands, it will be North and South. In the Hadith, permission was not given to turn one's face towards any part of the South or North, and no part of the East or West was excepted. Thus, four clear parts of the horizon's circle appeared, one of which is the direction of facing [the Qiblah].

Thirdly: In common parlance too, this circle is divided into four quarters: East, West, South, North; and the human body also has four sides and aspects: front, back, right, left. Including 'above' and 'below' with these, the six directions (Jihaat-e-Sitta) are famous throughout the world. Among these four [primary directions], none has preference over the other; there is no reason why, for example, the width of one should be taken as 140 degrees and the other as only 40. Therefore, the horizon circle should be divided into four equal quarters.

Fourthly: Four points are assumed in the horizon circle. One of them is the point of true facing (Istiqbal-e-Haqiqi), the second is true backing (Istidbar-e-Haqiqi), and the remaining two are true Right and North (Left). So, whatever is not exactly aligned with any point, its approximation will necessarily be referred to the closer one; associating it with the further one is distancing, not approximating. Necessarily, on each side, its portion will be that eighth and eighth (1/8th each) distance.

Fifthly: Among all the aforementioned statements, this is such an established text (nass) that it cannot be interpreted otherwise, and all other statements can be referred back to it. It is a continuous principle that creating harmony is superior to maintaining conflict, and any interpretation that relies on an individual's conjecture is rejected. We have already stated above that this is the gist of the third and fourth statements. Regarding the first statement, the phrase from Munyah "the Qibla of the people of the East and West according to us" (2) was explained by Imam Ibn Amir al-Haj using the same phrase from Dhakhirah from Nazm al-Zandwaysi, in which the fourfold division is mentioned. In the second statement, 'face' should mean

'forehead' because, as the site of prostration, it is the most noble part of the face. It was mentioned above that 'face' should be left unqualified.

1. Sahih al-Bukhari, Chapter on Not facing the Qibla when relieving oneself, etc., printed by Qadimi Kutub Khana Karachi 1/36; Sunan Abi Dawud, Chapter on the Dislike of facing the Qibla, etc., printed by Aftab Alam Press Lahore 1/3.
2. Munyat al-Musalli, Fourth Condition: Facing the Qibla, printed by Maktaba Qadiriyah Jami'a Nizamiyah Lahore p. 185.

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी दूसरे, इमाम अहमद, बुखारी, मुस्लिम, अबू दाऊद, तिरमिज़ी, नसाई, इब्न माजा और अन्य हज़रत अबू अय्यूब अंसारी रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत करते हैं कि अल्लाह के रसूल ﷺ ने फ़रमाया:

"जब तुम में से कोई शौच के लिए जाए, तो न किबला की ओर मुँह करे और न ही उसकी ओर पीठ करे, बल्कि पूर्व या पश्चिम की ओर मुँह करो।"

मदीना तैयबा का किबला दक्षिण की ओर है, इसलिए पूर्व-पश्चिम मुँह करने का आदेश दिया गया। हमारे देशों में यह उत्तर-दक्षिण होगा। हदीस में दक्षिण या उत्तर के किसी भी हिस्से की ओर मुँह करने की अनुमति नहीं दी गई और पूर्व या पश्चिम के किसी भी हिस्से को अपवाद नहीं बनाया गया, जिससे क्षितिज के घेरे के चार स्पष्ट भाग प्रकट हुए, जिनमें से एक सामना करने (इस्तक़बाल) की दिशा है।

तीसरे: आम बोलचाल में भी यह घेरा चार ही चौथाई (रबा) पूर्व, पश्चिम, दक्षिण, उत्तर में विभाजित है, और मानव शरीर के भी चार ही पहलू हैं: सामने, पीछे, दाएँ, बाएँ। इनमें 'ऊपर' और 'नीचे' मिलाकर पूरी दुनिया में 'छह दिशाएँ प्रसिद्ध हैं। इन चारों में एक-दूसरे पर कोई वरीयता नहीं है, ऐसा कोई कारण नहीं है कि उदाहरण के लिए एक का विस्तार 140 डिग्री तक लिया जाए और दूसरे का केवल 40 तक, इसलिए क्षितिज के घेरे को चार समान चौथाई में ही विभाजित किया जाना चाहिए।

चौथे: क्षितिज के घेरे में चार बिंदु माने गए हैं, उनमें से एक वास्तविक सम्मुख बिंदु (इस्तक़बाल-ए-हक़ीक़ी) है, दूसरा वास्तविक पृष्ठ बिंदु (इस्तिदबार-ए-हक़ीक़ी), बाकी दो वास्तविक दायाँ और बायाँ (उत्तर) हैं। तो जो भी इनमें से किसी बिंदु के बिल्कुल समानांतर नहीं है, उसकी समीपता अनिवार्य रूप से निकटतम बिंदु की ओर होगी; दूर की ओर उसका संबंध बनाना दूरी है न कि समीपता। अनिवार्य रूप से, प्रत्येक तरफ उसका आठवां-आठवां हिस्सा पड़ेगा।

पांचवें: उपर्युक्त सभी कथनों में यह ऐसा स्पष्ट पाठ है कि यह किसी और तरफ नहीं मुड़ेगा और बाकी सभी कथन इसकी ओर लौट सकते हैं। और यह एक निरंतर लाभ है कि सामंजस्य बनाना मतभेद बनाए रखने से बेहतर है, और जो व्याख्या के योग्य पक्ष हो उसे खारिज कर दिया जाता है। हम ऊपर ही बता चुके हैं कि तीसरे और चौथे कथन का निष्कर्ष यही है। और पहले कथन में 'मुन्या' के वाक्यांश 'क़िबला अहलेल मशरिक़ वल मग़रिब इंदना' (हमारे यहाँ पूर्व और पश्चिम वालों का किबला) की व्याख्या इमाम इब्न अमीर अल-हाज ने 'ज़ख़ीरा' के उसी वाक्यांश 'नज़म अल-ज़ंदवेसी' से की है

जिसमें चार गुना विभाजन का उल्लेख है। दूसरे कथन में 'चेहरे' से मुराद 'माथा' लेना चाहिए क्योंकि सजदा करने का स्थान होने के कारण यह चेहरे का सबसे सम्मानित हिस्सा है। ऊपर बीत चुका है कि चेहरे को निरपेक्ष छोड़ दें।

1. सही अल-बुखारी, अध्याय: शौच के समय किबला की ओर मुंह न करें आदि, मुद्रित: क़दीमी कुतुब खाना कराची 1/36; सुनन अबू दाऊद, अध्याय: किबला की ओर मुंह करने की नापसंदगी आदि, मुद्रित: आफ़ताब आलम प्रेस लाहौर 1/3।
2. मुनयातुल मुसल्ली, चौथी शर्त: किबला की ओर मुँह करना, मुद्रित: मकतबा कादिरिया जामिया निज़ामिया लाहौर पृष्ठ 185।

पृष्ठ 113 / 736

فتاوی رضویہ جلد ششم ثانیاً امام احمد و بخاری و مسلم و ابوداؤد و ترمذی و نسائی و ابن ماجہ وغیر ہم حضرت ابو ایوب انصاری رضی اللہ تعالی عنہ سے راوی رسول اللہ ﷺ فرماتے ہیں:

اذا اتی احدکم الغائط فلا یستقبل القبلۃ ولا یولھا ظھرہ ولکن شرقوا وغربوا-۱ جب تم میں سے کوئی شخص پاخانے کو جائے تو نہ قبلہ کو منہ کرے نہ پیٹھ ہاں پورب پچھم منہ کرو۔

مدینہ طیبہ کا قبلہ جانب جنوب ہے لہٰذا شرقاً غرباً منہ کرنا فرمایا، ہمارے بلاد میں جنوباً شمالاً ہو گا۔ حدیث میں جنوب شمال کے کسی حصے کو رُو پلٹ کرنے کی اجازت ارشاد نہ ہوئی اور مشرق و مغرب کے کسی حصے کا استثناء نہ فرمایا تو دائرہ کی افق کے صاف چار حصے ظاہر ہوئے جن میں ایک جہتِ استقبال ہے۔

ثالثاً: عرف عام میں بھی یہ دائرہ چار ہی ربع پر منقسم شرق غرب جنوب شمال، اور بدنِ انسان بھی چار ہی رُخ و پہلو رکھتا ہے قدام، خلف، یمین، شمال۔ انہی میں فوق و تحت ملا کر تمام جہان میں جہاتِ ستہ مشہور ہیں، ان چاروں میں ایک دوسری پر کوئی ترجیح نہیں، کوئی وجہ نہیں کہ مثلاً ایک کا اتساع ۱۴۰ درجے تک لیا جاوے اور دوسری کا صرف ۴۰ تک، تو دائرہ افق چار ربع مساوی ہی پر تقسیم ہونا چاہئے۔

رابعاً: دائرہ افق میں چار نقطے مفروض ہوئے ان میں ایک نقطۂ استقبالِ حقیقی ہے، دوسرا استدبارِ حقیقی، دو باقی یمین و شمالِ حقیقی، تو جوان میں کسی نقطہ کا ٹھیک محاذی نہ ہو اس کی تقریب لاجرم راجع بقریب ہو گی بعید کی طرف نسبت تبعید ہے نہ کہ تقریب، لاجرم ہر ایک پہلو پر وہی ثمن ثمن دور اُس کا حصہ پڑے گا۔

خامساً: تمام اقوال مذکورہ میں یہ ایسا نص ہے کہ دوسری طرف راجع نہ ہو گا اور بقیہ اقوال سب اس کی طرف رجوع کر سکتے ہیں اور فائدہ مستمرہ ہے کہ توفیق ابقائے خلاف سے اولیٰ ہے اور متحملِ جانبِ مفسر رد کیا جاتا ہے، قول سوم و چہارم کا یہی محصل ہونا تو ہم اوپر بیان کر چکے ہیں اور قول اول میں عبارت منیہ قبلة اهل المشرق والمغرب عندنا۲ ہمارے نزدیک اہل مشرق واہل مغرب کا قبلہ ت) کی شرح امام ابن امیر الحاج نے اسی عبارتِ ذخیرہ عن نظم الزند ویسی سے فرمائی جس میں تقسیمِ رباعی مذکور قول دوم میں وجہ سے جبہہ مراد لینا چاہئے کہ موضع سجود ہونے کے سبب اشرف اجزاے وجہ ہے اوپر گزرا کہ وجہ کو مطلق چھوڑیں۔

۱- صحیح البخاری باب لا تستقبل القبلة بغائط الخ مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۳۶/۱ ، سنن ابو داؤد باب کراهية استقبال القبلة الخ مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور ۳/۱ ۲- منية المصلی شرط الرابع استقبال القبلة مطبوعہ مکتبہ قادریہ جامع نظامیہ لاهور ص ۱۸۵

Fatawa Razawiyya Volume 6

Thus, the directions of right and left also enter the concept of facing (Istiqbal), as the direction of the temples near the ears is certainly the direction of left and right. If two people are walking parallel in the same direction, no one would say that the face of one is towards the other. In short, taking the Kaaba towards one's right or left temple is not considered facing (Istiqbal) linguistically, customarily, or according to Shari'ah in any way.

Sixthly: It is definitely known that the first and second opinions, and the assumption of the general and unrestricted application of the third opinion, can never be the intended meaning. Now, if you refer back to this same preference of directions for restriction, it is exactly what is desired; otherwise, there is no fixed or weightier boundary for consideration in between. And preference without a weighing factor is void. Thus, no limit could be set to determine up to where deviation is permissible and after which it becomes invalid. Therefore, this opinion is the most disciplined of opinions, so referring back to it, or rather referring all others to it, is appropriate.

Seventhly: In this, the expanse of direction is narrower than all of them. Therefore, this is the most cautious approach: that as far as its implication reaches, all the aforementioned opinions are certainly the direction of the Qibla. And whatever is outside its implication is disputed, doubtful, and undisciplined. Thus, following the agreed-upon and abandoning doubt and disagreement is most appropriate. Necessarily, Islamic scholars of astronomy have also established this rule for the direction of Qibla after deriving it from Shari'ah. It is stated in a question in Fatawa Khairiyyah:

[Arabic]: من القواعد الفلكية اذكان الانحراف عن مقتضى الادلة اكثر من خمس و اربعين درجة يمنة او يسرة يكون ذلك الانحراف خارجاً عن الربع الذى فيہ مكۃ المشرفۃ من غير اشكال على ان لا جهات بالنسبة الى المصلى اربعة 1۔ [Translation]: It is in the astronomical rules that when the deviation from the requirement of evidence is more than 45 degrees to the right or left, then out of the four established directions for the person praying, that quarter direction in which Makkah al-Mukarramah is located, this deviation will be considered outside of it without any doubt. (T)

I say (Aqool): And from here it becomes clear that this opinion of Imam Zandwaysi does not possess such an expanse that it should be restricted by the second opinion; rather, it is so expansive that it should be restricted by that second opinion.

[Arabic]: فما وقع من الامام الحلبى فى حلية مما قدمنا نقله ليس فى موضعه وهذا تمام انجاز ما وعدناك فى القول الاول۔ [Translation]: Thus, the discourse of Imam Halabi that occurs in 'Hilyah', which we have previously quoted, is not in its proper place. This is the completion of what we promised you in the first opinion. (T)

As for the Marfu' Hadith: "Between the East and the West is the Qibla" 2 (The Qibla is between the East and the West. T)

1 Fatawa Khairiyyah, Kitab-us-Salat, published by Dar-ul-Ma'rifah, Beirut, 1/9 2 Jami' at-Tirmidhi, Chapter 'Between the East and the West is the Qibla', published by Ameen Company, Delhi, 1/46

फतावा रज़विया, खंड छठा

अतः दाएं और बाएं की दिशाएं भी इस्तिक्बाल (सामना करने) में शामिल हो जाती हैं क्योंकि कान के पास कनपटियों की दिशा निश्चित रूप से दाएं और बाएं की दिशा है। दो व्यक्ति जो ठीक एक ही दिशा में जा रहे हों, कोई नहीं कहेगा कि उनमें से एक का चेहरा दूसरे की ओर है। संक्षेप में, काबा को अपनी दाईं या बाईं कनपटी की ओर लेना भाषाई, पारंपरिक या शरीयत के अनुसार किसी भी तरह से इस्तिक्बाल नहीं है।

छठा: यह निश्चित रूप से ज्ञात है कि पहले और दूसरे मत, और तीसरे मत के सामान्य और अनियंत्रित प्रयोग के बारे में जो धारणा है, वह कदापि अभिप्रेत नहीं हो सकती। अब यदि आप प्रतिबंध के लिए दिशाओं की इसी वरीयता की ओर वापस मुड़ते हैं, तो यह वही है जो वांछित है; अन्यथा बीच में विचार के लिए कोई निश्चित या वजनदार सीमा नहीं है। और बिना किसी वजनदार कारक के वरीयता देना व्यर्थ है। तब कोई सीमा निर्धारित नहीं की जा सकेगी कि यहाँ तक विचलन अनुमेय है और इसके बाद वह अवैध है। इसलिए यही मत सभी मतों में सबसे अनुशासित है, अतः इसी की ओर लौटना, बल्कि उन सभी को इसी की ओर संदर्भित करना उचित है।

सातवां: इसमें दिशा का विस्तार उन सबसे संकुचित है। इसलिए यही सबसे सुरक्षित तरीका है कि जहाँ तक इसका निहितार्थ पहुँचता है, उपर्युक्त सभी मत निश्चित रूप से क़िबला की दिशा हैं। और जो कुछ इसके निहितार्थ से बाहर है वह विवादास्पद, संदिग्ध और अनुशासनहीन है। इसलिए सहमत बात का अनुसरण करना और संदेह तथा विवाद को छोड़ना ही उचित है। अनिवार्य रूप से, इस्लामी खगोलशास्त्र के विद्वानों ने भी शरीयत से प्राप्त करने के बाद क़िबला की दिशा के लिए यही नियम बनाया है। फतावा खैरिया के एक प्रश्न में है:

[अरबी]: من القواعد الفلكية اذكان الانحراف عن مقتضى الادلة اكثر من خمس و اربعين درجة يمنة او يسرة يكون ذلك الانحراف خارجاً عن الربع الذى فيہ مكۃ المشرفۃ من غير اشكال على ان لا جهات بالنسبة الى المصلى اربعة 1. [अनुवाद]: खगोलीय नियमों में से है कि जब साक्ष्यों की आवश्यकता से विचलन दाईं या बाईं ओर 45 डिग्री से अधिक हो जाता है, तो नमाज़ पढ़ने वाले के लिए मान्य चार दिशाओं में से वह एक चौथाई दिशा जिसमें मक्का मुकर्रमा स्थित है, बिना किसी संदेह के यह विचलन उससे बाहर माना जाएगा। (त)

मैं कहता हूँ (अकूल): और यहीं से स्पष्ट हुआ कि इमाम ज़न्दवैसी के इस मत में इतना विस्तार नहीं है कि इसे दूसरे मत द्वारा प्रतिबंधित किया जाए; बल्कि वह इतना विस्तृत है कि उसे उससे प्रतिबंधित किया जाना चाहिए।

[अरबी]: فما وقع من الامام الحلبى فى حلية مما قدمنا نقله ليس فى موضعه وهذا تمام انجاز ما وعدناك فى القول الاول۔ [अनुवाद]: अतः इमाम हलबी का वह कथन जो 'हिलिया' में है जिसे हम पहले उद्धृत कर चुके हैं, वह अपने उचित स्थान पर नहीं है। यह उसका समापन है जिसका हमने पहले मत में आपसे वादा किया था। (त)

रही मरफू हदीस: "पूर्व और पश्चिम के बीच क़िबला है।" 2 (पूर्व और पश्चिम के बीच क़िबला है। त)

1 फतावा खैरिया, किताब-उस-सलात, दारुल मारिफ़ा, बेरूत, 1/9 द्वारा प्रकाशित। 2 जामी अत-तिर्मिज़ी, अध्याय 'पूर्व और पश्चिम के बीच क़िबला है', अमीन कंपनी दिल्ली, 1/46 द्वारा प्रकाशित।

पृष्ठ 114 / 736

تو جہتیں یمین و شمال بھی داخلِ استقبال ہو جاتی ہیں کہ کان کے نزدیک کنپٹیوں کی جہت یقیناً جہت چپ وراست ہے، دو شخص کہ برابر ایک سمت کو جارہے ہوں کوئی نہ کہے گا کہ ان میں ایک کا منہ دوسرے کی طرف ہے۔ غرض کعبے کو اپنی داہنی یا بائیں کنپٹی پر لینا لغۃً عرفاً شرعاً کسی طرح استقبال نہیں۔

سادساً: یہ تو قطعاً معلوم کہ قولِ اوّل دوم اور ایک تو ہم پر سوم کا جو ارسال و اطلاق ہے ہرگز مراد نہیں ہو سکتا، اب اگر تقیید میں اسی ترجیح جہات کی طرف رجوع کیجئے تو عین مطلوب ہے ورنہ بیچ میں کوئی حدِ فاصل معین و مرجح للاعتبار نہیں اور ترجیح بلا مرجح باطل تو حد نہ بندھ سکے گی کہ یہاں تک انحراف روا ہے اور اس کے بعد فساد تو یہی قول اضبط الاقوال ہے تو اسی طرف رجوع بلکہ ان سب کا بھی ارجاع مناسب۔

سابعاً: اس میں وسعت جہت ان سب سے تنگ تر، تو یہی احوط ہے کہ جہاں تک اس کا مفاد ہے وہ تمام اقوالِ مذکورہ پر یقیناً جہتِ قبلہ ہے اور جو اس کے مفاد سے باہر وہ مختلف فیہ و مشکوک و نا منضبط ہے تو احد متفق و ترکِ شبہ و اختلاف ہی مناسب ، لاجرم اسلامی علمائے ہیئات نے بھی شرع سے اخذ کرکے جہتِ قبلہ کے لئے یہی ضابطہ باندھا، فتاویٰ خیر یہ کے ایک سوال میں ہے:

من القواعد الفلكية اذكان الانحراف عن مقتضى الادلة اكثر من خمس و اربعين درجة يمنة او يسرة يكون ذلك الانحراف خارجاً عن الربع الذى فيہ مكة المشرفة من غير اشكال على ان لا جهات بالنسبة الى المصلى اربعة 1۔ فلکی قواعد میں ہے کہ جب دلائل کے مقتضیٰ سے انحراف ۴۵ درجے سے

زیادہ دائیں یا بائیں ہو جائے تو نمازی کے لئے مسلمہ چار جہت میں سے، وہ ایک چوتھائی جہت جس میں مکہ مکرمہ واقع ہے بغیر کسی اشکال کے یہ انحراف اس سے خارج قرار پائے گا۔ (ت)

اقول: اور یہیں سے ظاہر ہوا کہ یہ قول امام زندویسی ہرگز ایسی وسعت نہیں رکھتا کہ اسے قولِ دوم سے مقید کیجئے بلکہ وہی اتنا وسیع ہے کہ اسے اس سے مقید کرنا چاہیئے۔

فما وقع من الامام الحلبی فی حلیۃ مما قدمنا نقلہ لیس فی موضعہ وھذا تمام انجاز ما وعدناك فی القول الاول۔ پس امام حلبی کا وہ کلام جو حلیہ میں واقع ہے جس کو ہم پہلے نقل کر چکے ہیں وہ مناسب محل نہیں ہے، قول اول میں جو ہم نے وعدہ کیا تھا یہ اسکی تکمیل ہے (ت)

رہی حدیث مرفوع مابین المشرق والمغرب قبلہ 2 (مشرق اور مغرب کے درمیان قبلہ ہے۔ت)

1 فتاوٰی خیر یہ کتاب الصلوۃ مطبوعہ دار المعرفۃ بیروت ۹/۱ 2 جامع الترمذی باب ماجاء ان بین المشرق والمغرب قبلہ مطبوعہ امین کمپنی دہلی ۴۶/۱

Fatawa Ridawiyya, Volume 6 And similar to these are the statements of the Commander of the Faithful, Faruq al-Azam, and Abdullah bin Umar, and other companions, may Allah Almighty be pleased with them. I say: It is by no means accepted or even possible to accept that the Qibla is spread across half a circle from East to West. Otherwise, it would necessitate that facing the opposite direction (Istadbar) also spreads across the other half, as facing (Istiqlal) and turning away (Istadbar) are two opposite directions that encompass the entire circle. Then, what would be the occasion for the holy decree "But turn towards the East or the West" (but face East or West - T)? Unless it is said that the specific points of East and West are excluded. Then it would be necessary for every person who sits to urinate or defecate to carry accurate tools for identifying those points, even though such tools are incapable of determining the true points. If it is said that according to custom, wherever the directions of East and West spread, they are all excluded; then "between," when added to something other than numbers, does not include the two limits, as stated in Al-Fath (the word "bayn" [between], when appended to a non-numerical term, does not include both the start and end boundaries, as is in Al-Fath - T). I say: Now, coming back to the point, in common custom, only four directions are understood, and whatever is closer to one is attributed to it. So, in this half-circle, the 45-45 degrees from the 80 degrees that are closer to East and West will remain within their portion and be excluded. The middle 90 degrees, in the center of which the Kaaba is located, will remain the direction of the Qibla, and this is what is desired (wa huwa al-matlub - T). Furthermore, a group of scholars have taken "between" here to mean "middle," meaning the middle and midpoint of the southern arc within the East and West is the Qibla of the tranquil city [Medina]. I say: Supporting this is the aforementioned statement of Abdullah bin Umar, may Allah be pleased with both of them, that when you place the West on your right arm and the East on your left arm, at that time, your face is towards the Qibla.

Arabic Transcription

And it is as if he (may Allah be pleased with him) added his statement 'when you face' after his statement 'what is between them is the Qibla' because there was a possibility of a meaning contrary to what was intended. And the great Imam Abdullah bin Mubarak

Urdu Translation

It is possible that Abdullah bin Umar added the word 'when you face' after his statement 'what is between them is the Qibla' because in 'what is between them is the Qibla' there was a possibility of a meaning contrary to what was intended. Imam Abdullah bin Mubarak designated

Arabic Transcription

applied it to the people of the East, and similarly, Sheikh Al-Baghawi said in 'Al-Ma'alim' that he (peace be upon him) meant by his statement 'what is between the East and the West is the Qibla' regarding the people of the East (end of quote). And I do not know what the reason is...

Urdu Translation

the hadith regarding 'what is between the East and the West' for the people of the East. Imam Al-Baghawi explained it this way and stated in 'Al-Ma'alim' that the Prophet said his statement 'the Qibla is between the East and the West' in favor of the people of the East (end of quote). I do not know that these gentlemen...

1. Tafsir al-Baghawi, known as Ma'alim al-Tanzil with Al-Khazin, under the verse 'and you are not a follower', Mustafa al-Babi Press, Egypt, 1/142. Page 115 of 736

फ़तावा रिज़विया, छठा खंड और इसी प्रकार अमीर-उल-मोमिनीन फ़ारूक़-ए-आज़म और अब्दुल्लाह बिन उमर और अन्य सहाबा (रज़ियल्लाहु तआला अन्हुम) के कथन हैं। मैं कहता हूँ: यह अर्थ कदापि स्वीकार्य नहीं है और न ही इसे स्वीकार करना संभव है कि पूर्व से पश्चिम तक आधे घेरे में क़िबला फैला हुआ है, अन्यथा यह आवश्यक होगा कि दूसरे आधे हिस्से में पीठ करना (इस्तदबार) फैला हो, क्योंकि सामने होना (इस्तक़बाल) और पीठ करना विपरीत दिशाएँ हैं जिन्होंने पूरे वृत्त को घेर लिया है। तब पवित्र आदेश "लेकिन पूर्व या पश्चिम की ओर मुड़ो" का क्या स्थान रह जाएगा? यदि यह कहा जाए कि पूर्व और पश्चिम के विशेष बिंदु अपवाद हैं, तो यह आवश्यक होगा कि हर व्यक्ति जो पेशाब या शौचालय के लिए बैठे, वह अपने साथ बिंदुओं को पहचानने के सटीक उपकरण ले जाए, जबकि उपकरण भी बिंदुओं के वास्तविक निर्धारण में असमर्थ हैं। यदि यह कहा जाए कि प्रथागत रूप से जहाँ तक पूर्व और पश्चिम की दिशाएँ फैली हुई हैं, वे सब अपवाद हैं; तो "बीच" (बैन) जब संख्याओं के अलावा किसी चीज़ के साथ आता है, तो उसमें दोनों सीमाएँ शामिल नहीं होतीं जैसा कि 'फ़तह' में है (शब्द "बैन", जब गैर-संख्यात्मक शब्द के साथ आता है, तो शुरुआत और अंत की दोनों सीमाएँ उसमें शामिल नहीं होतीं, जैसा कि 'फ़तह' में है)। मैं कहता हूँ: अब मुद्दे की बात यह है कि प्रथा में केवल चार दिशाएँ ही समझी जाती हैं, और जो जिसके निकट है उसे उसी की ओर माना जाता है। तो इस आधे घेरे के80 डिग्री में से वे 45-45 डिग्री जो पूर्व और पश्चिम के निकट हैं, वे उनके हिस्से में रहकर अपवाद होंगे। बीच के90 डिग्री, जिनके केंद्र में काबा स्थित है, क़िबला की दिशा बने रहेंगे और यही वांछित है (वहुवा अल-मतलूब)। इसके अलावा, विद्वानों के एक समूह ने यहाँ "बीच" का अर्थ "मध्य" लिया है, यानी पूर्व और पश्चिम के भीतर जो दक्षिणी चाप (आर्क) है, उसके मध्य और मध्य बिंदु की ओर मदीना का क़िबला है। मैं कहता हूँ: और इसका समर्थन अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) के उक्त कथन से होता है कि जब तुम पश्चिम को अपनी दाहिनी भुजा पर और पूर्व को अपनी बाईं भुजा पर लो, तो उस समय तुम्हारा चेहरा क़िबला की ओर होता है।

अरबी प्रतिलेखन

"और मानो उन्होंने (रज़ियल्लाहु अन्हु) अपने कथन 'जब तुम सामने हो' को अपने कथन 'जो उनके बीच है वह क़िबला है' के बाद इसलिए जोड़ा क्योंकि इसमें इच्छित अर्थ के विपरीत होने की संभावना थी। और महान इमाम अब्दुल्लाह

उर्दू अनुवाद

"हो सकता है कि अब्दुल्लाह बिन उमर ने अपने कथन 'जो उनके बीच है वह क़िबला है' के बाद 'जब तुम सामने हो' शब्द इसलिए बढ़ाया हो क्योंकि 'जो उनके बीच है वह क़िबला है' में इच्छित अर्थ के विपरीत होने की संभावना थी।

अरबी प्रतिलेखन

बिन मुबारक ने इसे पूर्व के लोगों के लिए लागू किया, और इसी तरह शेख अल-बग़वी ने 'अल-मआलिम' में कहा कि उन्होंने (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) अपने कथन 'पूर्व और पश्चिम के बीच जो है वह क़िबला है' से पूर्व के लोगों के संदर्भ में यह अर्थ लिया था (उद्धरण समाप्त)। और मुझे नहीं पता कि क्या आधार है..."

उर्दू अनुवाद

इमाम अब्दुल्लाह बिन मुबारक ने 'पूर्व और पश्चिम के बीच' वाली हदीस को पूर्व के लोगों के लिए निर्धारित किया है। इमाम बग़वी ने इसे इस प्रकार वर्णित किया और 'मआलिम' में कहा कि हुज़ूर ने अपना कथन 'पूर्व और पश्चिम के बीच क़िबला है' पूर्व के लोगों के पक्ष में फ़रमाया (उद्धरण समाप्त)। मुझे नहीं पता कि इन सज्जनों ने..."

1. तफ़सीर अल-बग़वी, जिसे 'मआलिम अल-तन्ज़ील' के नाम से जाना जाता है, अल-ख़ाज़िन के साथ, आयत 'और आप अनुयायी नहीं हैं' के तहत, मुस्तफ़ा अल-बाबी प्रेस, मिस्र, 1/142। पृष्ठ 736 का 115

فتاویٰ رضویہ جلد ششم اور اس کے مثل ارشاداتِ امیر المومنین فاروق اعظم و عبد اللہ بن عمر وغیرہما صحابہ رضی اللہ تعالیٰ عنہم اقول: اس کا یہ مفاد ہونا ہرگز مسلم نہیں نہ ممکن التسلیم کہ شرق سے غرب تک نصف دور میں قبلہ پھیلا ہوا ہے ورنہ لازم کہ نصف دیگر میں استد بار پھیلے کہ استقبال و استد بار دو جہت مقابل ہیں سارا دائرہ انہی دو جہتوں نے گھیر لیا، اب ارشادِ اقدس ولکن شرقوا او غربوا (لیکن پورب اور پچھم کی طرف منہ کروت) کا کیا محل رہے گا، مگر یہ کہیں کہ خاص نقطین مشرق و مغرب مستثنیٰ ہیں تو لازم ہو گا کہ ہر شخص جو پیشاب یا پاخانہ کو بیٹھے یا صحیح آلات معرفت نقاط ساتھ لیتا جائے حالانکہ آلات بھی حقیقی تعین نقاط سے قاصر ہیں، اگر کہیے عرفاً جہاں تک جہت مشرق و مغرب پھیلے گی وہ سب مستثنیٰ ہے فان بین اذا اضیف الی غیر الاعداد لم یدخل فیه الغایتان کما في الفتح (لفظ "بین" جب غیر عدد کی طرف مضاف ہو تو ابتدا اور انتہا دونوں غایتیں اس میں داخل نہ ہوں گی جیسا کہ فتح میں ہے ت) اقول: اب ٹھکانے سے آگے عرف میں جہتیں چار ہی سمجھی جاتی ہیں اور جو ایک سے قریب ہے وہ اسی کی طرف منسوب ہوتا ہے تو اس نصف دور کے 80 اور جے سے ۴۵-۴۵ درجے کہ مشرق و مغرب سے قریب ہیں ان کے حصے میں رہ کر مستثنیٰ ہوں گے بیچ کے ۹۰ درجے جن کی وسط میں کعبہ واقع ہے جہتِ قبلہ رہیں گے وھو المطلوب (اور یہی مطلوب ہے ت) معہٰذا ایک جماعتِ علماء نے یہاں بین بمعنی وسط لیا یعنی مشرق و مغرب کے اندر جو قوس جنوبی ہے اُس کے وسط و منصف کی طرف قبلہ مدینہ سیکینہ ہے۔ اقول: اور اُس کے مؤید قول مذکور عبد اللہ بن عمر رضی اللہ عنہما ہے کہ جب تو مغرب کو اپنے داہنے بازو اور مشرق کو بائیں بازو پر لے تو اُس وقت تیرا منہ قبلے کو ہے،

عربی عبارت	اردو ترجمہ
وكانه رضى الله عنه لدا زاد قوله اذا استقبلت بعد قوله فما بينهما قبلة لكون هذا محتملا لخلاف المراد هذا و حمله الامام الاجل عبدالله بن المبارك على ان هذا لاهل المشرق وكذا قال الشيخ البغوي في المعالم انه صلى الله عليه وسلم اراد بقوله مابين المشرق والمغرب قبلة في حق اهل المشرق اھ ولا ادری ما الحامل	ہو سکتا ہے کہ عبداللہ بن عمر نے اپنے قول "فما بینهما قبلة" کے بعد "اذا استقبلت" کا لفظ اسی لئے بڑھایا ہو کہ فما بینهما قبلہ میں اس سے مراد کے خلاف کا احتمال تھا۔ امام عبد اللہ بن مبارک نے مابین المشرق والمغرب والی حدیث کو اہل مشرق کے لئے قرار دیا ہے۔ امام بغوی نے اس کو یوں بیان کیا اور معالم میں فرمایا کہ حضور نے اپنا قول "مشرق و مغرب کے درمیان قبلہ ہے۔" اہل مشرق کے حق میں فرمایا اھ مجھے معلوم نہیں کہ ان حضرات

1تفسیر البغوی المعروف معالم التنزیل مع الخازن زیر آیة و ما انت بتابع مطبعہ مصطفی البابی مصر

Fatawa Ridawiyya, Volume 6

[Arabic]: ...That, rather, the more apparent meaning is as stated by Imam al-Halabi in 'al-Hilyah' and Mulla Ali al-Qari in 'al-Mirqat', that the intended meaning is for the people of Medina and those whose Qibla aligns with theirs.

[Urdu]: Why did he say this? While the more obvious meaning is what Imam al-Halabi stated in 'al-Hilyah' and Mulla Ali Qari in 'al-Mirqat', that it refers to the Qibla of the people of Medina and its surroundings.

[Arabic]: I say: It is clearly known that the tranquil city of Medina, despite being to the north of Mecca, is inclined slightly towards the west rather than the east. Furthermore, Imam al-Baghawi in his 'Tafsir', al-Razi in 'al-Kabir', and al-Munawi in 'al-Taysir' interpreted 'the east' as the rising point on the shortest day of winter. Al-Munawi said in 'al-Munawi': 'It is the rising point of Qalb al-Aqrab' (Antares).[1]

[Urdu]: I say: (I say) it is clearly known that Medina Munawwara is located to the north of Mecca and is slightly inclined towards the west, not the east. Furthermore, Imam Baghawi in his 'Tafsir', Imam Razi in 'Tafsir Kabir', and Imam Munawi in 'al-Taysir' have taken 'the east' to mean the sunrise on the shortest day of winter. Imam Munawi stated that it is the rising point of 'Qalb al-Aqrab'. (T)

[Arabic]: I say: This statement cannot be correct without a difference of several degrees, nor was it correct in their time, because at that time the angular distance of Qalb, (Margin note: Hisas Lu), was southern, and those gentlemen considered the west to be the sunset of the longest day in summer, he said...

[Urdu]: I say: (I say) this statement cannot be correct without a difference of several degrees, nor was it correct in their time, because at that time the angular distance of 'Qalb' was 'Hisas Lu' southern, and those gentlemen considered the west to be the sunset of summer...

[Margin Note - Arabic]: The longitude of Qalb in the time of al-Munawi was approximately 8s 90° 5'. Therefore, the distance from the nearest equinox was 65° 95', its sine in logarithms is 9.7572756 × the tangent of the total obliquity... approximately 9.5952320 = 9.6739563. The arc of this result is the second declination for Qalb. Then the distance of the degree of Qalb from the nearest solstice is... its sine 9.6259483 + sine of total obliquity 9.6004090 = 9.2263573, its arc is 9° 95' 40" of total obliquity.

[Margin Note - Urdu]: In the time of Allama Munawi, the longitude of Qalb was approximately 8s 90° 5', so its distance from the nearest equinox was 65° 95', its sine in logarithms is 9.7572756 × tangent of total obliquity approximately 9.5952320 = 9.6739563. Its arc will be the second declination for Qalb. Then from the nearest solstice, the distance of the degree of Qalb will be... whose sine is 9.6259483 + sine of total obliquity...

---

1. At-Taysir Sharh al-Jami' al-Saghir, under the Hadith 'between the east...' Maktaba Imam Shafi'i Riyadh 2/345. Page 116 of 736

फ़तावा रज़विया, जिल्द छठा

[अरबी]: ...वह, बल्कि अधिक स्पष्ट अर्थ वही है जो इमाम अल-हलबी ने 'अल-हिलया' में और मुल्ला अली अल-क़ारी ने 'अल-मिरक़ात' में बताया है, कि इससे मदीना के लोगों और जिनका क़िबला उनसे मेल खाता है, उनका क़िबला मुराद है।

उर्दू: उन्होंने यह क्यों फ़रमाया? जबकि ज़्यादा ज़ाहिर वह मायने हैं जिनका अफ़ादा इमाम हलबी ने 'हिलया' में और मुल्ला अली क़ारी ने 'मरक़ात' में फ़रमाया कि इससे मदीना मुनव्वरा और उसके इर्द-गिर्द वालों का क़िबला मुराद है।

[अरबी]: अक़ूल: (मैं कहता हूँ) यह स्पष्ट रूप से ज्ञात है कि मदीना मुनव्वरा, मक्का मुकर्रमा से उत्तर में होने के बावजूद, पूर्व की बजाय थोड़ा पश्चिम की ओर झुका हुआ है। इसके अलावा, इमाम बग़वी ने अपनी 'तफ़सीर' में, राजी ने 'अल-कबीर' में, और मुनावी ने 'अत-तयसीर' में 'पूर्व' का अर्थ सर्दियों के सबसे छोटे दिन के सूर्योदय का स्थान लिया है। मुनावी ने 'अल-मुनावी' में कहा: 'यह क़ल्ब अल-अक़रब (एंटारेस) का उदय-स्थान है।'[1]

[अरबी]: अक़ूल: यह कथन कई डिग्रियों के अंतर के बिना सही नहीं हो सकता, और न ही उनके समय में यह सही था, क्योंकि उस समय 'क़ल्ब' की कोणीय दूरी (हाशिया: हिसस लू) दक्षिण में थी, और उन महानुभावों ने पश्चिम को गर्मियों के सबसे लंबे दिन के सूर्यास्त का स्थान माना था, उन्होंने कहा...

उर्दू: अक़ूल: (मैं कहता हूँ) यह बयान कई डिग्रियों के फर्क के बिना सही नहीं हो सकता, और न ही उनके समय में यह सही था क्योंकि उस समय 'क़ल्ब' की कोणीय दूरी (हिसस लू) दक्षिण में थी, और उन हज़रात ने पश्चिम को गर्मियों...

[हाशिया - अरबी]: अल्लामा मुनावी के समय में 'तुलुल क़ल्ब' (देशांतर) लगभग 8s 90° 5' था, अतः निकटतम विषुव से इसकी दूरी 65° 95' थी, जिसका साइन लोगारिदम में 9.7572756 × कुल झुकाव का स्पर्शज्या (टैनजेंट) लगभग 9.5952320 = 9.6739563 है। इसके चाप की लंबाई 'क़ल्ब' के लिए दूसरा झुकाव है। फिर निकटतम संक्रांति से 'क़ल्ब' के अंश की दूरी... जिसका साइन 9.6259483 + कुल झुकाव का साइन 9.6004090 = 9.2263573, इसका चाप कुल झुकाव का 9° 95' 40" है।

[हाशिया - उर्दू]: अल्लामा मुनावी के ज़माने में 'तुलुल क़ल्ब' लगभग 'ح صہ ١' था तो एतेदाल-ए-अक़रब से इसका फ़ासला 'سہ صہ' था जिसका जीब (साइन) लो-गारिदम में 9.7572756 × इसके 'मैल-ए-कुल्ली' का ज़िल्ल (टैनजेंट) लगभग 9.5952320 = 9.6739563 इसके क़ौस (चाप) का 'الط۱ل' होगा जो कि क़ल्ब के लिए 'मैल-ए-सानी' है, फिर इंक़िलाब-ए-अक़रब से क़ल्ब के दर्जे का फ़ासला 'لا۱' होगा जिसका जीब 9.6259483 + मैल-ए-कुल्ली का जीब...

---

1 अत-तयसीर शरह अल-जामी अस-सग़ीर हदीस 'पूर्व और पश्चिम के बीच...' के तहत मकतबा इमाम शाफ़ई रियाज़ 2/345. पृष्ठ 116/736

[Arabic]: ذلك بل الاظهر كما افاد الامام الحلبي في الحلية وعلي القاري في المرقاة ان المراد لاهل المدينة و ما وافق قبلتها۔

Urdu: نے یہ کیوں فرمایا _ جبکہ زیادہ ظاہر وہ معنی ہے جس کا افادہ امام حلبی نے حلیہ میں اور ملا علی قاری نے مرقات میں فرمایا کہ اس سے مدینہ منورہ اور اسکے ارد گرد والوں کا قبلہ مراد ہے۔

[Arabic]: اقول: ومعلوم ان المدينة السكينة على شماليتها من مكة المكرمة مائلة قليلا الى المغرب دون المشرق ثم ان البغوى في التفسير والرازي في الكبير والمناوى في التيسير حملوا المشرق على اقصر يوم في الشتاء قال في المناوي وهو مطلع قلب العقرب 1۔

[Arabic]: اقول: ولا يستقيم الابفرق عدة درج ولا في زمانه اذكان اذ ذاك بعد القلب عہ الحصه لو جنوبيا والمغرب على مغرب اطول يوم في الصيف قال

Urdu: اقول: (میں کہتا ہوں) یہ بیان چند درجوں کے فرق بغیر درست نہیں ہو سکتا، اور نہ ہی ان کے زمانے میں یہ درست تھا کیونکہ اس وقت قلب کا بعد الحصہ لو جنوبی تھا، اور ان حضرات نے مغرب کو گرمیوں

[Margin Note - Arabic]: عہ طول القلب في زمان المناوى ح صہ ہ تقريبا فالبعد عن الاعتدال الاقرب سه صہ جيبه في اللوغارثميات 9,7572756 × ظل الميل الكلى ذاك الح الط تقريبا 9,5952320 = 9,6739563 قوصه كا الط ل هو الميل الثاني للقلب ثم بُعد درجة القلب عن

الانقلاب الاقرب الہ جیبہ 9,6259483+ جیب المیل الکلی الح الط 9,6004090 = 9,2263573 قوصہ ط صہ مالمح المیل الکلی

[Margin Note - Urdu]: علامہ منادی کے زمانہ میں طول القلب تقریباً ح صہ ہ تھاتو اعتدال اقرب سے اس کا بعد سہ صہ جس کا جیب لو گارشتم 9,7572756 × اس کے میل کلی کا ظل الح الط تقریباً 9,5952320 = 9,6739563 اس کے قوس کا الط ل ہوگا جو کہ قلب کے لئے میل ثانی ہے پھر انقلاب اقرب سے قلب کے درجہ بعد الہ ہو گا جس کا جیب 9,6259483 + میل کلی کا جیب

---

1 التیسیر شرح الجامع الصغیر حدیث ما بین المشرق الخ کے تحت مکتبہ امام شافعی الریاض ۳۴۵/۲

Fatawa Rizwia - Volume 6

[Arabic Text]: And it is the setting of Simak al-Ramih (Arcturus). [Arabic Text]: I say: This is very far-fetched and highly improbable, for at that time, the distance of Simak from the vertex of the North is...

[Left Column Text]: ...designated it as the sunset of the longest day, and Imam Munadi stated that it is the setting of "Simak al-Ramih" (T). [Left Column Text]: I say: (I say) this is very far-fetched because at that time, the distance of "Simak" from the north vertex...

(Remaining part of the footnote from the previous page)

[Arabic/Mathematical text involving astronomical coordinates and calculations for celestial bodies using Abjad numerals and trigonometric values like sines and arcs].

[Urdu Explanation of Footnote]: The arc of Al-Hath Al-Tab 9.6002090 = 9.263573 will be 'Taw Sad Ma Am Ha'. This will be its total inverted declination, with a latitude of 'Sad Lam', which will be similar to its second southern declination. Thus, their sum 'Alif Lam Ha Sad Alif Lat', which will be the part of the distance, its sine 9.2741744 + the sine of total inverted declination 9.9937532 = 9.2635638. Its arc 'Alif Lam Ha Sad Ha Law' will be the distance of the heart, i.e., its first declination. It is established that the maximum declination will be more than two degrees less than this, so how could the widths of both sunrise points be equal? 12 from him (T).

If the longitude of Simak at that time is approximately 'Waw Noon Taw', then its distance from the nearest equinox will be 'Noon Taw', whose sine is 9.5126319 + maximum shadow = 9.505982. Its arc 'Ha Sad Ha Ha' will be its second declination. Its distance from the head of Capricorn will be 'Ain Alif Sad Ha', whose sine = 9.9756701 + the sine of maximum declination 9.567091. Its arc 'Alif Lam Ha' will be its inverted declination. Its northern latitude 'Lam Alif Sad Ha Lam Ha' + 'Ha Sad Ha Ha' = 'Lam Taw Meem Waw', which will be the part of the distance. Its sine 'Seen Ra Noon Ba Sad Ha' 9667562 = 9.7767042. Its arc 'Law Kaf' will be the distance of Simak. 12 from him (T).

Page 117 of 736

फ़तावा रज़विया - छठा खंड

[अरबी पाठ]: और वह सिमाक अल-रामिह (स्वाति नक्षत्र) का सूर्यास्त है। [अरबी पाठ]: मैं कहता हूँ: यह बात बहुत दूर की है और बहुत ही असंभावित है, क्योंकि उस समय उत्तर के शिखर से सिमाक की दूरी...

[बायां स्तंभ]: ...वर्ष के सबसे लंबे दिन का सूर्यास्त निर्धारित किया, और इमाम मुनादी ने कहा कि वह "सिमाक अल-रामिह" का सूर्यास्त है (त)। [बायां स्तंभ]: मैं कहता हूँ: (मैं कहता हूँ) यह बात बहुत ही बेतुकी है क्योंकि उस समय "सिमाक" की दूरी उत्तर के शिखर से...

(पिछले पृष्ठ के हाशिये का शेष भाग)

[खगोलीय निर्देशांकों और खगोलीय पिंडों के लिए गणनाओं वाला अरबी/गणितीय पाठ, जिसमें अबजद अंक और ज्या (sine) और चाप (arc) जैसे त्रिकोणमितीय मानों का उपयोग किया गया है]।

[हाशिये की उर्दू व्याख्या]: अल-हथ अल-तब 9.6002090 = 9.263573 का चाप 'तौ साद मा आम हा' होगा। यही इसका पूर्ण विपरीत झुकाव (inverted declination) होगा, जिसका अक्षांश 'साद लाम' होगा, जो इसके दूसरे दक्षिणी झुकाव के समान होगा। अतः उनका योग 'अलिफ़ लाम हा साद अलिफ़ लत', जो दूरी का हिस्सा होगा, उसकी ज्या 9.2741744 + पूर्ण विपरीत झुकाव की ज्या 9.9937532 = 9.2635638 होगी। इसका चाप 'अलिफ़ लाम हा साद हा लाव' हृदय की दूरी होगी, यानी उसका प्रथम झुकाव। यह ज्ञात है कि अधिकतम झुकाव इससे दो डिग्री से भी अधिक कम होगा, तो दोनों सूर्योदय बिंदुओं की चौड़ाई कैसे समान हो सकती है? 12 उनसे (त)।

यदि उस समय सिमाक का देशांतर लगभग 'वाव नून तौ' है, तो निकटतम विषुव से इसकी दूरी 'नून तौ' होगी, जिसकी ज्या 9.5126319 + अधिकतम छाया = 9.505982 है। इसका चाप 'हा साद हा हा' इसका दूसरा झुकाव होगा। मकर रेखा के सिर से इसकी दूरी 'ऐन अलिफ़ साद हा' होगी, जिसकी ज्या = 9.9756701 + अधिकतम झुकाव की ज्या 9.567091 होगी। इसका चाप 'अलिफ़ लाम हा' इसका विपरीत झुकाव होगा। इसका उत्तरी अक्षांश 'लाम अलिफ़ साद हा लाम हा' + 'हा साद हा हा' = 'लाम तौ मीम वाव' होगा, जो दूरी का हिस्सा होगा। इसकी ज्या 'सीन रा नून बा साद हा' 9667562 = 9.7767042 है। इसका चाप 'लाव काफ़' सिमाक की दूरी होगी। 12 उनसे (त)।

पृष्ठ 117/736

وھو مغرب السماك الرامح اقول: ھذا ابعد وابعد فان عه بعد السماك اذاذاك لوصه ك شماليا

کے طویل ترین دن کا مغرب قرار دیا اور امام منادی نے فرمایا کہ وہ "سماک رامح" کا مغرب ہے

(ت) اقول: (میں کہتا ہوں) یہ بات بہت بعید ہے کیونکہ اس وقت "سماک" کا بُعد لوصہ ک

(بقیہ حاشیہ صفحہ گزشتہ) الح الط ۹،۶۰۰۲۰۹۰ = ۹،۲۶۳۵۷۳ ط مآمح ھو المکیل المنکوس له وعرضه ص ل کمیله الثانی جنوبی فمجموعھما اله ص نط ل حصة البعد جیبه ۹،۲۷۴۱۷۴۴ + جیب تمام المیل المنکوس ۹،۹۹۳۷۵۳۲ = ۹،۲۶۳۵۶۳۸ قوسه اله صه لو بعد القلب ای میله الاول و معلوم ان المیل الاعظم کان اصغر منه باکثر من درجتین فکیف یتساوی سعتا مشرقھما ۱۲ منه (م) عه طول السماك اذاك ونط تقریبًا بعده عن الاعتدال الاقرب نط جیبه ۹،۵۱۲۶۳۱۹ + ظل المیل الاعظم = ۹،۵۰۵۹۸۲ قوسه ح صه ح ھو میله الثاني وبعد درجته عن راس الجدی عا صه جیبه ۹،۹۷۵۶۷۰۱ جیب المیل الاعظم + ۹،۵۶۷۰۹۱ قوسه ال ح میله المنکوس وعرضه لا صه لح شمالیا + ح صه ح = لط مو حصة البعد جیبه ۹،۸۰۵۹۵۱۰ + جیب سرنب ص ۹۶۶۷۵۶۲ = ۹،۷۷۶۷۰۴۲ قوسه لو ك بعد السماك ۱۲ منه (م) الح الط ۹.۶۰۰۲۰۹۰ = ۹.۲۶۳۵۷۳ کا قوس ط ص مآمح ہوگا، یہی اس کا منکوس میل کلی ہوگا جس کا عرض ص ل ہوگا جو اس کے جنوبی میل ثانی جیسا ہوگا پس ان کا مجموعہ الہ ص الط جو بُعد کا حصہ ہوگا اس کا جیب ۹.۲۷۴۱۷۴۴ + میل منکوس کے کل کا جیب ۹.۹۹۳۷۵۳۲ = ۹.۲۶۳۵۶۳۸ ہوگا جس کا قوس الہ ص لو بعدِ قلب یعنی اسکا میل اول ہوگا اور یہ بات معلوم ہے کہ میلِ اعظم اس سے دو درجے کم ہوگا، تو اس سے دونوں مشرقوں کی وسعت کیسے مساوی ہوگی ۱۲ منہ (ت) سماک کا طول اس وقت ونط تقریباً ہو تو اس کا اعتدالِ اقرب سے بُعد نط ہوگا جس کا جیب ۹.۵۱۲۶۳۱۹ + ظلیلِ اعظم = ۹.۵۰۵۹۸۲ ہوگا جس کا قوس ح صہ ح

جو اس کا میلِ ثانی ہوگا اور راسِ جدی سے اس کے درجے کا بُعد عاصہ جس کا جیب =
۹.۹۷۵۶۷۰۱ + میلِ اعظم کا جیب ۹.۵۶۷۰۹۱ ہوگا جس کا قوس ال ح اس کا میلِ منکوس ہوگا اور
اس کا شمالی عرض لا صہ لح + ح صہ ح = لط مو بُعد کا حصہ ہوگا جس کا جیب سرنب صہ
۹۶۶۷۵۶۲ = ۹.۷۷۶۷۰۴۲ کا قوس جس کا قوس لو ک سماک کا بُعد ہوگا ۱۲ منہ (ت)

Fatawa Razawiya, Volume 6

...exceeding the total inclination by about one degree. Al-Baghawi said: 'Whoever places the summer sunset on his right and the winter sunrise on his left at this time, his face will be towards the Qibla.' (1) End. Al-Razi said: 'This is because the winter sunrise is southerly, distant from the equator by the amount of inclination, and the summer sunset is northerly, distant from the equator by the amount of inclination, and what is between them is the direction of Makkah.' (2) End.

I say (A'la Hazrat): I do not know how these two absolute terms are interpreted as these two restricted ones, and what is the clue for that? Rather, what is the need for it? For it is apparent from absolute usage that the equinox sunset and sunrise are intended. Undoubtedly, between them is the Qibla of the tranquil Madinah Munawwarah and its surroundings. In fact, if more approximation is desired, the opposite would be better, which is to take the sunset of Capricorn and the sunrise of Cancer, because the Qibla of the noble city of Madinah is towards its south, slightly inclined from the south point towards the east by a number of degrees.

Then I say: In the statement of Imam Razi 'distant from the equator'...

(1) Tafsir al-Baghawi known as Ma'alim al-Tanzil with al-Khazin under the verse 'Wa ma anta bi-tabi' printed by Mustafa al-Babi Egypt 1/122. (2) Al-Tafsir al-Kabir under the verse 'Fawalli wajhaka...' printed by al-Matba'a al-Bahiyya al-Misriyya Egypt 4/222.

Page 118 of 736

फ़तावा रज़विया, जिल्द 6

...कुल झुकाव (declination) से लगभग एक डिग्री अधिक। इमाम बग़वी ने फ़रमाया: 'जिसने इस समय गर्मियों के सूर्यास्त (मग्रिब) को अपने दाहिने ओर और सर्दियों के सूर्योदय (मशरिक़) को अपने बाईं ओर रखा, उसका चेहरा क़िबला की ओर होगा।' (1) समाप्त। इमाम राजी ने फ़रमाया: 'यह इसलिए है क्योंकि सर्दियों का सूर्योदय दक्षिणी होता है, जो भूमध्य रेखा (equator) से झुकाव की मात्रा के बराबर दूर होता है, और गर्मियों का सूर्यास्त उत्तरी होता है, जो भूमध्य रेखा से झुकाव की मात्रा के बराबर दूर होता है, और जो इन दोनों के बीच है वह मक्का की दिशा है।' (2) समाप्त।

मैं कहता हूँ (आला हज़रत): मुझे नहीं पता कि इन दो सामान्य शब्दों को इन दो सीमित शब्दों पर कैसे लागू किया गया और इस पर क्या प्रमाण है? बल्कि इसकी ज़रूरत ही क्या है? क्योंकि सामान्य प्रयोग से स्पष्ट है कि इससे विषुव (equinox) का सूर्यास्त और सूर्योदय मुराद है। और निस्संदेह इन दोनों के बीच मदीना मुनव्वरा और उसके आसपास का क़िबला है। बल्कि यदि अधिक निकटता (approximation) वांछित हो, तो इसका विपरीत बेहतर होगा, जो कि 'मग्रिब-ए-जदी' (मकर का सूर्यास्त) और 'मशरिक़-ए-सरतान' (कर्क का सूर्योदय) लेना है, क्योंकि मदीना तैयबा का क़िबला उसके दक्षिण में दक्षिण बिंदु से पूर्व की ओर कुछ डिग्री हटकर है।

फिर मैं कहता हूँ: इमाम राजी के इस कथन में कि "भूमध्य रेखा से दूर"...

(1) तफ़्सीर अल-बग़वी, जिसे मआलिम अत-तन्ज़ील के नाम से जाना जाता है, अल-ख़ाज़िन के साथ, आयत 'व मा अंता बि-ताबी' के तहत, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र 1/122 द्वारा मुद्रित। (2) अत-तफ़्सीर अल-कबीर, आयत 'फ़वल्ली वज्हका...' के तहत, अल-मतबा अल-बहिया अल-मिसरिया, मिस्र 4/222 द्वारा मुद्रित।

पृष्ठ 118 / 736

شمالی تھا، اور یہ "بعد میل کلی" سے تقریبا ۱۳ درجے زائد تھا۔ امام بغوی نے فرمایا: جس نے اس وقت گرمیوں کے مغرب کو اپنی دائیں طرف اور سردیوں کے مشرق کو اپنی بائیں طرف کیا تو اس شخص کا منہ قبلہ کی طرف ہو گا اھ ۱- اور امام رازی نے فرمایا یہ اس لئے ہے کہ سردیوں کا مشرق جنوبی ہوتا ہے اور خط استواء سے میل کی مقدار دور ہوتا ہے، اور اگر گرمیوں کا مغرب شمالی ہوتا ہے اور خط استواء سے میل کی مقدار دور ہوتا ہے اور جوان دونوں کے درمیان ہے وہ سمت مکہ ہے اھ ۲- (ت)

اقول: (میں کہتا ہوں) معلوم نہیں مطلق مشرق و مغرب کو کیونکر مقید کر دیا گیا ہے اور اس پر قرینہ کیا ہے، بلکہ اس کی ضرورت ہی کیا ہے کیونکہ مشرق و مغرب سے اعتدال کا مشرق و مغرب علی الاطلاق مراد ہے۔ اور یقیناً ان دونوں کے درمیان مدینہ منورہ اور اسکے ارد گرد کا قبلہ ہے بلکہ (عین قبلہ کی بجائے) صرف تقریبی سمت مراد ہو تو پھر اس بیان کا عکس بہتر ہے وہ یہ کہ "الجدی" کا مغرب اور "السرطان" کا مشرق لیا جائے کیونکہ مدینہ منورہ کا قبلہ اس سے جنوب میں تھوڑا سا نقطہ جنوب سے مشرق کی طرف چند درجے ہٹ کر ہے۔ (ت)

ثم اقول: کہ امام رازی کے قول "کہ گرمیوں کا مغرب اور سردیوں کا مشرق، خط استواء سے متباعد (دور) ہوتا ہے...

۱- تفسیر البغوی المعروف بمعالم التنزیل مع الخازن زیر آیت و مانت بتابع مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/۱۲۲ ۲- التفسیر الکبیر زیر آیت فول وجھک الخ مطبوعہ المطبعہ البہیہ المصریہ مصر ۴/۲۲۲

Fatawa Razawiyya Volume 6

Arabic Text Translation: Saying "by the amount of the declination" is an apparent oversight, for that is only in the level horizon. As for other than it, the east and west amplitude for the heads [start points] of Capricorn and Cancer is always greater than the total declination. How can their statement be correct when this amplitude is the hypotenuse of a right-angled spherical triangle formed by the arc of the equator between the horizon and the ecliptic, an arc of the ecliptic, and another [arc] from the horizon, both of which are between the equator and the part [degree]? Its remaining two angles are acute. As for this being a right angle, it is because it is [the arc] of the ecliptic falling on the equator. As for the acuteness of the others, it is because the hypotenuse of the right angle, which is the amplitude and the declination, both are less than a quadrant [90 degrees], and one of the angles is non-acute. Thus, the conditions of the first 'A' of 'Ukar' [Theodosius' Spherics] are fulfilled. Therefore, the greatness of the hypotenuse of the great [circle] becomes necessary due to its seventh [proposition], and that is the amplitude. So it is greater than the maximum declination and also from the remaining arc of the equator. As for the level horizon, the ecliptic coincides with the horizon, so there is no triangle. At that time, there is nothing between the degree and the equinoctial point except its declination. That is what we intended, and Allah Almighty knows best.

Urdu Translation: There is clear inaccuracy in the phrase "amount of declination" because this occurs in a level horizon. However, in other cases, the amplitude of East and West at the start of Capricorn and the start of Cancer is always greater than the total declination. How can their statement be correct when this amplitude is the hypotenuse of the right angle of a spherical triangle? This spherical triangle was formed between the arc of the equator on the horizon and the ecliptic, the arc of the ecliptic, and another arc which is the arc of the horizon. These two are between the equator and the degree. Its other two angles are acute. Its being a right angle is because it has fallen from the ecliptic onto the equator. The other angles being acute is because the hypotenuse of the right angle, which consists of amplitude and declination, are both less than a quarter [90 degrees]. If one angle is non-acute, then the conditions of "A" from the first of 'Kuran' [Spherics] are fulfilled. Now, because of the seventh proposition, it became necessary to increase the major hypotenuse, which is this very amplitude. Thus, it is larger than the maximum declination and also the remaining arc of the equator. In a level horizon, the ecliptic coincides with the horizon; therefore, no triangle exists there, and between the degree and the

equinoctial point, there is only its declination. This is our intended meaning, and Allah Almighty knows best. (T)

Supplement: In the books of the school of thought, there are these five statements that provide a general ruling. And here is one more statement which some books have presented in a general form, but in reality, it is not a general correction; rather, it is among the specific signs mentioned for specific lands by jurists like Abu Ja'far and other masters. It is that the Qibla is between the two sunsets, meaning where the sun sets on the longest day of summer, such as June 22nd, and on the shortest day of winter, such as December 21st, those...

फ़तावा रज़विया जिल्द शश्तुम (छठी)

अरबी मूल पाठ का अनुवाद: 'झुकाव (میل/میل) की मात्रा के बराबर' कहना एक स्पष्ट अशुद्धि है, क्योंकि यह केवल समतल क्षितिज (level horizon) में होता है। जहाँ तक इसके अतिरिक्त का प्रश्न है, मकर रेखा और कर्क रेखा के प्रारंभ के लिए पूर्व और पश्चिम का विस्तार हमेशा कुल झुकाव से अधिक होता है। उनका कथन कैसे सही हो सकता है जबकि यह विस्तार, एक गोलाकार समकोण त्रिभुज (spherical right-angled triangle) का कर्ण है जो क्षितिज और क्रांतिवृत्त (ecliptic) के बीच भूमध्य रेखा के चाप, क्रांतिवृत्त के चाप और क्षितिज के दूसरे चाप से बनता है, ये दोनों भूमध्य रेखा और अंश (degree) के बीच हैं। इसके शेष दो कोण न्यून (acute) हैं। इसका समकोण होना इसलिए है क्योंकि यह क्रांतिवृत्त से भूमध्य रेखा पर गिरा है। और अन्य कोणों का न्यून होना इसलिए है क्योंकि समकोण का कर्ण, जो विस्तार और झुकाव है, दोनों एक चौथाई (90 डिग्री) से कम हैं। और यदि एक कोण न्यून नहीं है, तो 'उकर' (Ukar) के पहले की 'अ' की शर्तें पूरी हो जाती हैं। अतः अब इसके सातवें [प्रस्ताव] के कारण बड़े कर्ण का बढ़ना आवश्यक हो गया और यह वही विस्तार है। तो यह अधिकतम झुकाव से और भूमध्य रेखा के शेष चाप से भी बड़ा है। समतल क्षितिज में क्रांतिवृत्त क्षितिज के साथ मिल जाता है, इसलिए वहाँ कोई त्रिभुज नहीं होता और उस समय अंश और विषुव बिंदु (equinoctial point) के बीच उसके झुकाव के अलावा कुछ नहीं होता। यही हमारा उद्देश्य था, और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

उर्दू अनुवाद: 'झुकाव की मात्रा' कहने में खुली अशुद्धि है क्योंकि यह समतल क्षितिज में है, लेकिन इसके अलावा मकर और कर्क रेखा पर पूर्व व पश्चिम का विस्तार हमेशा कुल झुकाव से बड़ा होता है। उनका कहना कैसे सही हो सकता है जबकि यह विस्तार गोलाकार त्रिभुज के समकोण का कर्ण है, और यह गोलाकार त्रिभुज क्षितिज और मेलिया (क्रांतिवृत्त) के बीच भूमध्य रेखा के चाप, मेलिया के चाप और एक दूसरे चाप जो क्षितिज का चाप है, से उत्पन्न हुआ। ये दोनों भूमध्य रेखा और अंश के बीच हैं। इसके शेष दोनों कोण न्यून हैं। इसका समकोण होना इसलिए है कि यह मेलिया से भूमध्य रेखा पर गिरा है, और दूसरे कोणों का न्यून होना इसलिए है कि समकोण का कर्ण जो कि विस्तार और झुकाव है, ये दोनों चौथाई से कम हैं और एक कोण जो कि न्यून नहीं है तो इस प्रकार कुरों (spheres) में से पहले की 'अ' की शर्तें पूरी हो गईं। तो अब इनके सातवें के कारण बड़े कर्ण की वृद्धि आवश्यक हो गई और यही वह विस्तार है। तो यह अधिकतम झुकाव से और शेष भूमध्य चाप से भी बड़ा है। समतल क्षितिज में मेलिया क्षितिज पर मिल जाता है इसलिए वहाँ त्रिभुज नहीं है और अंश

तथा विषुव बिंदु के बीच अब केवल उसका झुकाव है और यही हमारा उद्देश्य है, अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

परिशिष्ट: संप्रदाय की पुस्तकों में ये पाँच वाक्यांश हैं जो सामान्य नियम का लाभ देते हैं और यहाँ एक और वाक्यांश है जिसे कुछ पुस्तकों में रूपतः सामान्य रूप में प्रस्तुत किया गया है, जबकि वास्तव में यह सामान्य सुधार नहीं है बल्कि उन विशेष संकेतों में से है जो विशेष देशों के लिए फकीह अबू जाफ़र आदि उस्तादों से वर्णित हैं। वह यह है कि 'किबला दो सूर्यास्तों के बीच है', यानी गर्मियों के सबसे बड़े दिन जैसे 22 जून और सर्दियों के सबसे छोटे दिन जैसे 21 दिसंबर में सूरज जहाँ डूबता है, उन...

فتاوی رضویہ جلد ششم

بمقدار المیل تسامحاً ظاھرا فان ذلك انما ھو فی الافق المستوی اما فی غیرہ فسعة المشرق والمغرب لراسی الجدی والسرطان اکبر دائماً من المیل الکلی کیف وھی وتر القائمة من مثلث کروی یحدث من قوس المعدل بین الافق والمیلیة وقوس من المیلیة واخری من الافق کلتاھما بین المعدل والجزئ وزاویتاہ الباقیتان حاتان اما کون ھذہ قائمة فلا نھا من میلیة وقعت علی المعدل واماحدہ البواقی فلان وتر القائمة وھی السعة والمیل کلاھما اقل من الربع واحدی الزاویا غیر حادة فتمت شرائط امن اولی اکر و جب اعظمیة وتر العظمی بالسابع منھا وھی السعة فھی اعظم من المیل الاعظم ومن قوس المعدل الباقیة ایضاً اما فی افق المستوی فتنطبق المیلیة علی الافق فلامثلث ولم یکن بین الجزء ونقطة الاعتدال حینئذ الامیلہ وذلك ما اردناہ واللہ تعالی اعلم۔

میل کی مقدار دُور ہوتا ہے میں کھلا تسامح ہے کیونکہ یہ مستوی افق میں ہے لیکن اسکے غیر میں مشرق و مغرب کی وسعت راس جدی اور راس سرطان پر ہمیشہ میل کلی سے بڑی ہوتی ہے، ان کا قول کیسے صحیح ہو سکتا ہے جبکہ یہ وسعت، مثلث کروی کے قائمہ کا وتر ہے اور یہ مثلث کروی افق اور میلیہ کے درمیان معدل کے قوس اور میلیہ کے قوس اور ایک دوسرے، جو کہ افق کا قوس ہے، سے پیدا ہوئی۔ یہ دونوں معدل اور جزء کے درمیان ہیں اس کے باقی دونوں زاویے حادہ ہیں، اس کا قائمہ ہونا تو اس لئے ہے کہ یہ میلیہ سے معدل پر گری ہے، اور دوسرے زاویوں کا حادہ ہونا اس لئے ہے کہ قائمہ का وتر جو کہ وسعت اور میل ہے یہ دونوں چوتھائی سے کم ہیں اور ایک زاویہ جو کہ غیر حادہ ہے تو اس طرح کروں میں سے پہلے کی "ا" کے شرائط مکمل ہو گئے تو اب ان کے ساتویں کی وجہ سے وترِ عظمیٰ کی بڑھانی ضروری ہوگئی اور یہ وہی وسعت ہے تو یہ میلِ اعظم سے اور باقی معدل کے قوس سے بھی بڑی ہے مستوی کے افق میں میلیہ افق

پر منطبق ہو جاتی ہے اس لئے وہاں مثلث نہیں ہے اور جزء اور نقطہ اعتدال کے درمیان اب صرف اس کا میل ہے اور یہی ہماری مراد ہے، اللہ تعالٰی بہتر جانتا ہے۔ (ت)

تذنیل کتب مذہب میں یہ پانچ عبارتیں ہیں کہ افادہِ حکم عام کرتی ہیں اور یہاں ایک عبارت اور ہے جسے بعض کتب میں صورۃً بطور عموم ظاہر کیا اور حقیقۃً اصلاحِ عموم نہیں بلکہ انھیں علاماتِ خاصہ سے ہے جو بلادِ مخصوصہ کے لئے اقوال فقیہ ابو جعفر وغیرہ مشائخ سے گزریں وہ یہ کہ بین المغربین قبلہ ہے یعنی گرمیوں میں سب سے بڑے دن مثلاً ۲۲ جون اور جاڑوں میں سب سے چھوٹے دن مثلاً ۲۱ دسمبر میں آفتاب جہاں ڈوبے ان

Fatawa Rizvia Volume Six The direction of the Qibla lies between the two points of sunset. In 'Radd al-Muhtar', citing 'Sharh Zad al-Faqir' by Allama Al-Ghazzy, and from some reliable books in the commentary of 'Al-Khulasa' by Allama Al-Qahistani, it is stated:

[Box 1] (Arabic) One should observe the sunset of summer on its longest days and the sunset of winter on its shortest days; then let him leave two-thirds on the right side and one-third on the left, and the Qibla is at that point. If he does not do this and prays between the two sunset points, it is permissible.[1] (Urdu) Keeping in mind the sunset of the longest day of summer and the sunset of the shortest day of winter, if one leaves 30 degrees to the right and 30 degrees to the left, that will be the Qibla for the prayer. And if he does not take this precaution and prays straight between the two sunsets, the prayer will be valid. (T)

In 'Hilyah', it is from 'Multaqit' and 'Tajnis al-Multaqit':

[Box 2] (Arabic) Abu Mansur said: One observes the shortest and longest days to know their two sunsets, then leaves two-thirds on his right. The author of 'Multaqit' said: This is for preference (istihbab), while the first is for validity. End. And this is what we promised you at the beginning of the discourse in the fifth objection. (Urdu) And Abu Mansur said: After determining the sunsets of the shortest and longest days, then leave 30 degrees on the right side. The author of 'Multaqit' said that the first statement is for validity and this second one is for preference. End. And this was our promise in the fifth objection at the beginning of the discourse. (T)

It is evident that for cities specifically south or north of Makkah al-Mukarramah, this statement cannot be fundamentally relevant. Finally, haven't you seen that the Qibla of Madinah is certain and definitive, yet it is far from even the entire western direction, let alone being 'between the two sunsets'? And it cannot be general for eastern and western lands either. Finally, haven't you seen in the fourth discussion (Allama Shami's dialogue) that for a city 5 degrees further east than Makkah, specifically on the equator, its Qibla is shifted 54 degrees north from 'between the two sunsets'?

[Box 3] (Arabic) Because the maximum width in the level horizon [etc. notation] and the deviation of the Qibla from the sunset point was [etc. notation]. (Urdu) Because in the level horizon the large expanse is [etc. notation], while the deviation of the Qibla from the sunset point was [etc. notation]. (T)

Thus, the Qibla would be approximately 99 (ninety-nine) degrees outside the two sunset points, which is more than a quarter circle. Necessarily, 'Amali al-Fatawa' specified this statement for its own lands like Samarkand etc., as mentioned in 'Munyah'.

---

1 Radd al-Muhtar, Chapter on Facing the Qibla, Mujtabai Press, Delhi, 1/288. 2 At-Ta'liq al-Mujli on Munyat al-Musalli with Munyat al-Musalli, ref. Hilyah, Fourth Condition, Qadriyyah Library, Jamia Nizamiyya, Lahore, p. 186. Page 120 of 736

फतवा रिज़विया छठा खंड सूर्यास्त کے दोनों स्थानों के भीतर क़िबला की दिशा है। 'रद्द अल-मुह्तार' में अल्लामा अल-ग़ज़ी की 'शरह ज़ाद अल-फ़क़ीर' के हवाले से, और अल्लामा अल-क़ुहिस्तानी की 'शर्ह अल-खुलासा' में कुछ विश्वसनीय पुस्तकों से उल्लेख है:

[बॉक्स 1] (अरबी) गर्मियों के सबसे लंबे दिनों में सूर्यास्त और सर्दियों के सबसे छोटे दिनों में सूर्यास्त को देखें; फिर दाईं ओर दो-तिहाई और बाईं ओर एक-तिहाई छोड़ दें, तो क़िबला वहीं होगा। यदि उसने ऐसा नहीं किया और दोनों सूर्यास्त के बीच नमाज़ पढ़ी, तो यह जायज़ है।[1] (उर्दू) गर्मियों के सबसे लंबे दिन के सूर्यास्त और सर्दियों के सबसे छोटे दिन के सूर्यास्त को ध्यान में रखते हुए, यदि कोई दाईं ओर 30 डिग्री और बाईं ओर 30 डिग्री छोड़ता है, तो वह नमाज़ी का क़िबला होगा। और यदि वह यह सावधानी न बरते और दोनों सूर्यास्त के बीच सीधा नमाज़ पढ़ ले, तो नमाज़ जायज़ होगी। (त)

'हुलिया' में 'मुल्तकित' और 'तजनीस अल-मुल्तकित' से है:

[बॉक्स 2] (अरबी) और अबू मंसूर ने कहा: सबसे छोटे और सबसे लंबे दिन को देखें ताकि उनके दो सूर्यास्त ज्ञात हों, फिर अपने दाईं ओर दो-तिहाई छोड़ दें। 'मुल्तकित' के लेखक ने कहा: यह बेहतर (इस्तिहबाब) होने के लिए है और पहला जायज़ होने के लिए है। समाप्त। और यही वह है जिसका हमने आपसे पाँचवीं आपत्ति में चर्चा के प्रारंभ में वादा किया था। (उर्दू) और अबू मंसूर ने कहा कि सबसे छोटे और सबसे बड़े दिन के सूर्यास्त को जानकर फिर 30 डिग्री दाईं ओर छोड़ें। 'मुल्तकित' के लेखक ने कहा कि पहला बयान जायज़ होने के लिए है और यह दूसरा बेहतर होने के लिए है। समाप्त। और यही हमारी पाँचवीं आपत्ति में चर्चा के प्रारंभ में वादा था। (त)

स्पष्ट है कि जो शहर मक्का मुअज्जमा से विशेष रूप से दक्षिण या उत्तर में हैं, यह विवरण उनसे मौलिक रूप से संबंधित नहीं हो सकता। अंततः क्या आपने नहीं देखा कि मदीना मुनव्वरा का क़िबला निश्चित और यकीनी है, फिर भी वह 'दोनों सूर्यास्त के बीच' तो क्या, पूरी पश्चिमी दिशा से बहुत दूर है? और यह पूर्वी और पश्चिमी देशों के लिए भी सामान्य नहीं हो सकता। अंततः क्या आपने नहीं देखा कि चौथी चर्चा (अल्लामा शामी के संवाद) में जिस शहर को मक्का मुअज्जमा से पाँच डिग्री पूर्वी देशांतर अधिक विशेष रूप से भूमध्य रेखा पर लिया गया, उसका क़िबला 'दोनों सूर्यास्त के बीच' से 54 डिग्री उत्तर की ओर हटा हुआ है।

[बॉक्स 3] (अरबी) क्योंकि समतल क्षितिज में अधिकतम विस्तार [आदि संकेत] है और सूर्यास्त बिंदु से क़िबला का विचलन [आदि संकेत] था। (उर्दू) क्योंकि समतल क्षितिज में बड़ा विस्तार [आदि संकेत] है, जबकि सूर्यास्त बिंदु से क़िबला का विचलन [आदि संकेत] था। (त)

तो क़िबला लगभग 99 (निन्यानबे) डिग्री दोनों सूर्यास्त से बाहर होगा, जो एक चौथाई चक्र से भी अधिक है। निश्चित रूप से 'अमाली अल-फ़तावा' ने इस कथन को अपने शहरों जैसे समरकंद आदि के लिए विशिष्ट किया है, जैसा कि 'मुन्या' में है।

---

1 रद्द अल-मुह्तार, क़िबला का सामना करने का अध्याय, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, 1/288। 2 अत-तालीक अल-मुजली 'मुन्यात अल-मुसल्ली' पर 'मुन्यात अल-मुसल्ली' के साथ, 'हुलिया' के संदर्भ में, चौथी शर्त, मकतबा कादरिया, जामिया निजामिया, लाहौर, पृ. 186। पृष्ठ 120 / 736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم دونوں موضع غروب کے اندر سمتِ قبلہ ہے۔ ردالمحتار میں بحوالہ شرح زادالفقیر للعلاۃ الغزی بعض کتبِ معتمدہ سے شرح الخلاصہ للعلاۃ القہستانی میں ہے:

ینظر مغرب الصیف في اطول ایامه ومغرب الشتاء في اقصر ایامه فلیدع الثلثین في الجانب الایمن والثلث في الایسر و القبلة عند ذلك ولو لم یفعل هكذا وصلی فیما بین المغربین یجوز ۔[1] | گرمیوں کے طویل ترین دن کے مغرب اور سردیوں کے چھوٹے دن کے مغرب کو ملحوظ رکھ کر دائیں جانب ۳۰ درجے اور بائیں جانب ۳۰ درجے چھوڑے تو یہ نمازی کا قبلہ ہوگا، اور اگر وہ یہ احتیاط نہ کرے اور دونوں مغرب کے درمیان سیدھا نماز پڑھ لے تو نماز جائز ہوگی۔ (ت)

حلیہ میں ملتقط و تجنیس ملتقط سے ہے:

وقال ابومنصور ینظر الی اقصر یوم و اطول یوم فیعرف مغربیهما ثم یترك الثلثین عن یمینه قال صاحب الملتقط هذا استحباب والاول للجواز ۲ اھ وهذا ما وعدناك صدر الكلام في الایراد الخامس ۔ | اور ابو منصور نے کہا سب سے چھوٹے اور سب سے بڑے دن کے مغرب کو معلوم کر کے پھر ۳۰ درجے دائیں طرف چھوڑے۔ صاحب ملتقط نے کہا کہ پہلا بیان جواز کے لئے اور یہ دوسرا استحباب ہے اھ اور یہی صدرِ کلام میں پانچویں اعتراض میں ہمارا وعدہ تھا۔ (ت)

ظاہر ہے کہ جو بلادِ مکہ معظمہ سے خاص جنوب یا شمال کو ہیں یہ بیان ان سے تواصلاً متعلق نہیں ہو سکتا آخر نہ دیکھا کہ قبلہ مدینہ سکینہ قبلہ قطعیہ یقینیہ ہے بین المغربین در کنار خود جمیع جہت مغرب سے بہت بعید ہے اور بلادِ شرقیہ و غربیہ کو بھی عام نہیں ہو سکتی، آخر نہ دیکھا کہ ابھی بحث چہارم مکالمہ علامہ شامی میں جو شہر مکہ معظمہ سے پانچ درجے طول مشرقی زائد خاص خطِ استواء پر لیا اُس کا قبلہ بین المغربین سے چون درجے شمال کو ہٹا ہوا ہے،

لان السعة العظمی في الافق المستوی الح صہ الر و قد کان انحراف قبلة عن نقطة المغرب عرصہ الح ۔ | کیونکہ مستوی افق میں بڑی وسعت الح عرصہ ہے جبکہ نقطہ مغرب سے قبلہ کا انحراف عُرصہ الح تھا۔ (ت)

تو قبلہ تقریباً ۹۹ ننانوے درجے مغربین سے باہر ہوگا جو ربع دور سے بھی زیادہ ہے۔ لاجرم امالی الفتاوٰی میں اس قول کو اپنے بلاد سمر قند وغیرہ سے خاص کیا، منیہ میں ہے۔

---

1 رد المحتار مبحث في استقبال القبلة مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱/ ۲۸۸ 2 التعليق المجلي لمانی منية المصلي مع منية المصلي بحوالہ حلیہ الشرط الرابع مطبوعہ مکتبہ قادریہ جامعہ نظامیہ لاہور ص

Fatawa Ridawiyyah Volume 6

It is mentioned in "Amali al-Fatawa": The limit of the Qibla in our region, i.e., Samarqand, is between the two sunsets, the winter sunset and the summer sunset. (1) | In Amali al-Fatawa, it is mentioned that in our region of Samarqand, the limit of the Qibla is between the sunsets of both summer and winter. (T)

Among these eastern cities is Herat. Allama Birjandi says: We investigated its Qibla and found it shifted towards the south, outside of the area between the two sunsets. Following this, the statement of Imam Abdullah bin Mubarak al-Marwazi and Imam Abu Muti' al-Balkhi appeared in "Sharh Nuqayah":

We have investigated the Qibla of Herat using those rules, and it became clear to us that it lies to the left of the sunset of the shortest day of the year, where the stars of Scorpio set. This is consistent with what was mentioned by Abdullah bin Mubarak and Abu Muti'. As for what is stated in "Tajnis al-Multaqat" that if a person prays towards a direction outside the area between the summer and winter sunsets, their prayer is invalid, this is only correct for certain regions (2) (Summarized). | We have investigated the direction of the Qibla of Herat using those principles, and we learned that the Qibla here is to the left of the sunset on the shortest day of the year, where the stars of Scorpio set. This is according to the statements of Abdullah bin Mubarak and Abu Muti'. And what is in "Tajnis al-Multaqat"—that if a person prayed towards a direction outside the summer and winter sunsets, their prayer would be invalid—this statement may be correct in some regions. (Summarized) (T)

I say: The truth of the matter is that in most populated areas, especially in most eastern cities, the actual Qibla ranges from the sunset in Cancer to the sunset in Capricorn. Compared to the degrees of perception, identifying the two sunsets is easy for everyone. In many of these cities, although the direction of the Qibla extends beyond the two sunsets, specifying a limited, easily perceptible matter within the boundaries of the Qibla is not problematic. In fact, it often provides a closer approximation, achieving both ease and proximity to the truth. Therefore, scholars defined "between the two sunsets" for the general public in these regions. This did not mean that the direction does not exist outside of it at all, or that the prayer becomes invalid as soon as one goes beyond the two sunsets. However, in "Sharh Khulasa Quhistani" and "Sharh Zad al-Faqir," citing some reliable books—perhaps it is the same "Sharh Khulasa" where the humble servant found that entire text verbatim

—it is stated after the mentioned text: "And if his facing falls outside of it, it is not permissible by consensus." (3) (If his...)

(1) Munyat al-Musalli, Fourth Condition: Facing the Qibla, printed by Maktaba Qadriyah Jamia Nizamiya Ridawiyyah Lahore, p. 185. (2) Sharh al-Nuqayah by al-Birjandi, Chapter on the Conditions of Prayer, printed by Munshi Naval Kishore, Lucknow, 1/89. (3) Radd al-Muhtar, Chapter on the Conditions of Prayer, Discussion on Facing the Qibla, printed by Matba' Mujtabai Delhi, 1/288.

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

'अमाली अल-फ़तावा' में ज़िक्र किया गया है: हमारे देश यानी समरकंद में क़िबला की सीमा दो सूर्यास्त (मग़रिबों) के बीच है, जो सर्दियों और गर्मियों के सूर्यास्त हैं। (1) | अमाली अल-फ़तावा में ज़िक्र किया गया है कि हमारे समरकंद के क्षेत्र में क़िबला की सीमा गर्मियों और सर्दियों के दोनों सूर्यास्त के बीच है। (त)

इन्हीं पूर्वी देशों में हेरात है, अल्लामा बिरजंदी फ़रमाते हैं: हमने इसके क़िबला की तहक़ीक़ की, तो उसे दोनों मग़रिबों के बीच से बाहर दक्षिण की ओर हटा हुआ पाया। और इसी के अनुसार इमाम अब्दुल्ला बिन मुबारक मरवज़ी और इमाम अबू मुती' बल्ख़ी का इरशाद आया, 'शर्ह नुक़ाया' में है:

हमने उन नियमों से हेरात के क़िबला की तहक़ीक़ की है, तो हमें मालूम हुआ कि साल के सबसे छोटे दिन के सूर्यास्त से बाईं ओर जहाँ बिच्छू(अक़रब) के सितारे डूबते हैं, वहाँ का क़िबला है। यह अब्दुल्ला बिन मुबारक और अबू मुती' के बयान के अनुसार है। और 'तजनीस अल-मुल्तक़त' में जो है कि यदि नमाज़ी ने गर्मियों और सर्दियों के सूर्यास्त के बाहर किसी दिशा में नमाज़ पढ़ी तो उसकी नमाज़ फ़ासिद (अमान्य) होगी, तो यह बात कुछ क्षेत्रों में सही हो सकती है। (2) (संक्षेप में) | हमने उन नियमों से हेरात के क़िबला की दिशा की तहक़ीक़ की है, तो हमें मालूम हुआ कि साल के सबसे छोटे दिन के सूर्यास्त से बाईं ओर जहाँ बिच्छू(अक़रब) के सितारे डूबते हैं, यहाँ का क़िबला है। यह अब्दुल्ला बिन मुबारक और अबू मुती' के बयान के अनुसार है। और जो 'तजनीस अल-मुल्तक़त' में है कि अगर नमाज़ी ने गर्मियों के मग़रिब और सर्दियों के मग़रिब से बाहर किसी दिशा में नमाज़ पढ़ी तो उसकी नमाज़ फ़ासिद होगी, तो यह बात कुछ क्षेत्रों में सही हो सकती है। संक्षेप में (त)

मैं कहता हूँ: हक़ीक़त यह है कि अधिकांश आबाद क्षेत्रों में, अक्सर पूर्वी शहरों में, वास्तविक क़िबला कर्क(सरतान) के सूर्यास्त से मकर (जदी) के सूर्यास्त तक है। और मग़रिबैन (दोनों सूर्यास्त) को पहचानना हर व्यक्ति के लिए आसान है। हालाँकि इन शहरों में क़िबला की दिशा मग़रिबैन से बाहर तक फैली हुई है, फिर भी एक सीमित और आसानी से समझ आने वाली चीज़ को तय करना जो क़िबला की सीमाओं के भीतर है, कोई हर्ज नहीं रखती। बल्कि अक्सर इसमें ज़्यादा नज़दीकी होती है जिससे आसानी और हक़ीक़त के करीब होने, दोनों लाभ प्राप्त होते हैं। इसलिए विद्वानों ने इन क्षेत्रों में आम लोगों के लिए 'मा बैन अल-मग़रिबैन' (दो सूर्यास्त के बीच) की सीमा बताई। इसका अर्थ यह नहीं था कि इसके बाहर क़िबला की दिशा बिल्कुल नहीं है, या मग़रिबैन से बाहर निकलते ही नमाज़

फ़ासिद हो जाती है। लेकिन 'शर्ह ख़ुलासा क़ुहिستانی' और 'शर्ह ज़ाद अल-फ़क़ीर' में कुछ विश्वसनीय किताबों के हवाले से—शायद वही शर्ह ख़ुलासा हो जिसमें यह पूरी इबारत इस फ़क़ीर ने देखी—उक्त इबारत के बाद लिखा है: "और अगर उसका रुख़ उसके बाहर हो जाए, तो इत्तेफ़ाक़ से यह जायज़ नहीं है।" (3) (अगर उसका...)

(1) मुन्यतुल मुसल्ली, चौथी शर्त: क़िबला की ओर रुख करना, मकतबा क़ादरिया जामिया निज़ामिया रज़विया लाहौर, पृ. 185। (2) शर्ह अल-नुक़ाया लेल बिरजंदी, नमाज़ की शर्तों का अध्याय, मुंशी नवल किशोर, लखनऊ, 1/89। (3) रद्दुल मुहतार, नमाज़ की शर्तों का अध्याय, क़िबला की ओर रुख करने पर चर्चा, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 1/288।

ذکر فی امالی الفتاوی، حد القبلة فی بلادنا یعنی فی سمرقند ما بین المغربین المغرب الشتاء ومغرب الصیف (۱) | امالی الفتاوٰی میں ذکر کیا گیا ہے کہ ہمارے سمر قند کے علاقہ میں قبلہ کی حد گرمیوں اور سردیوں کے دونوں مغربوں کے درمیان ہے۔ (ت)

انھیں بلاد شرقیہ سے ہرات ہے، علامہ بر جندی فرماتے ہیں: ہم نے اسکا قبلہ تحقیق کیا، بین المغربین سے باہر جنوب کو ہٹا ہوا پایا۔ اور اسی کے مطابق امام عبداللہ بن مبارک مروزی و امام ابو مطیع بلخی کا ارشاد آیا، شرح نقایہ میں ہے :

نحن قد حققنا بتلك القواعد قبلة هراة فظهر لنا انه يقع عن يسار مغرب اقصر ايام السنة حيث يغرب كواكب العقرب وهو الموافق لما ذكره عبدالله بن المبارك وابو مطيع فما وقع فی تجنيس الملتقط انه لوصلی الی جهة خرجت مما بين مغرب الصيف ومغرب الشتاء فسدت صلاته انما يصح في بعض البقاع (۲) (ملخصاً)۔ | ہم نے ان قواعد سے ہرات کے قبلہ کی سمت تحقیق کی ہے تو ہمیں معلوم ہوا کہ سال کے چھوٹے دن کے مغرب سے بائیں جانب جہاں عقرب کے ستارے غروب ہوتے ہیں یہاں کا قبلہ ہے، عبداللہ بن مبارک اور ابو مطیع کے بیان کے یہی مطابق ہے اور جو تجنیس الملتقط میں ہے کہ اگر نمازی نے گرمیوں کے مغرب اور سردیوں کے مغرب سے خارج کسی جہت میں نماز پڑھی تو اسکی نماز فاسد ہوگی، تو یہ بات بعض علاقوں میں درست ہوسکتی ہے ملخصاً (ت)

اقول: حقیقت امر یہ ہے کہ معظم معمورہ میں اکثر بلاد شرقیہ کا قبلہ تحقیقی مغرب سرطان سے مغرب جدی تک ہے اور بہ نسبت درجات ادراک مغربین ہر شخص پر آسان اور ان بلاد کثیرہ میں اگر چہ جہت قبلہ مغربین سے باہر تک ممتد مگر امر محدود سہل الادراک کی تعیین جو حدود قبلہ

کے اندر داخل ہے مضائقہ نہیں رکھتی بلکہ بار ہا اس میں زیادہ تقریب ہے جس سے سہولت و قرب بحقیقت، دونوں منافع حاصل ، لہذا علماء نے ان بلاد میں عامہ کو ما بین المغربین کی تحدید بتائی اُس کے معنی یہ نہ تھے کہ اس سے باہر جہت اصلاً نہیں ، اور مغربین سے تجاوز ہوتے ہی نماز فاسد ہو، مگر شرح خلاصہ قہستانی اور شرح زاد الفقیر میں بحوالہ بعض کتب معتمدہ کہ شاید وہی شرح خلاصہ ہو کہ وہ تمام عبارت بعینہا فقیر نے اس میں پائی، بعد عبارت مذکور ہے: واذا وقع توجهه خارجا منها لا يجوز بالاتفاق (۳) (اگر اس کی

(۱) منية المصلى الشرط الرابع استقبال القبلہ مطبوعہ مکتبہ قادریہ جامعہ نظامیہ رضویہ لاهور ص ۱۸۵ (۲) شرح النقاية للبرجندى باب شروط الصلوة مطبوعہ منشی نولکشور بالسرور لکهنؤ ۱ / ۸۹ (۳) رد المحتار، باب شروط الصلوة مبحث فی استقبال القبلة مطبوعہ مطبع مجتبائی دهلی، ۲۸۸/۱

Fatawa Razvia, Volume 6.

...if the focus deviates from that place, his prayer will unanimously be invalid. (Trans.) In both books, this phrase is used with the word 'minha' (from it) containing a feminine singular pronoun, not 'minhuma' (from them both) with a dual pronoun referring to the two western sides. There is no doubt that exiting the direction (of Qibla) invalidates prayer, and the word 'unanimously' (بالاتفاق) clearly points to this meaning—that exiting the direction itself is the agreed-upon invalidator, not this specific limitation, which goes against the aforementioned five views of famous imams cited in the school of thought's books. However, in 'Muniya' (Munyat al-Musalli) from 'Amali', it is as follows:

If one prays towards a direction that has exited from the two western limits, his prayer is void. [1]	**If a worshiper prays in a direction that is outside the 'maghribain' (two western limits), his prayer will be void. (Trans.)**

The citation from 'Tajnīs al-Multaqit' has passed. You have heard the statement of Allama Birjandi that he did not accept this rule for Herat; rather, its researched position is outside 'maghribain', and he called this rule specific to only some places. I say: Rather, it will fundamentally not be applicable anywhere except for a few rare, countable places which might not even be inhabited, but likely fall in the ocean, where the Qibla is the point of equilibrium and the latitude is approximately 56 degrees, such that their 'Sa'at al-Maghrib' (width of the West) would be 45 degrees. Otherwise, if the latitude is less than this, 'Sa'at al-Maghrib' will be less than 45 degrees, and by the consensus of the five views, a deviation smaller or larger than 'Bain al-Maghribain' would be permissible. And if the Qibla is shifted from the equilibrium point, it will certainly lean towards one of the two directions. So, going outside by that same amount would be permissible from the side it's closer to, while even some deviation inside from the further side would invalidate prayer, as is not hidden (as is evident). Then again, taking the ruling for just a few specific locations out of the whole world and stating it as a general case—how can that be sound? Especially since those locations at such distant latitudes, even if proven inhabited, were undoubtedly considered outside the inhabited world (ma'mura) back then and called 'Kharij al-Aqaleem' (outside the regions), as their division in the seven regions ended between 40 to 50 degrees. One who reflects on our discourse can discern how many contradictions this statement faces.

First: In the common cities of Arabia, Persia, India, and Sindh—in short, Asia and Africa—rather, in all seven climes, the 'Sa'at al-Maghrib' is nowhere 45 degrees. And it has been clarified above that deviation up to this point is permissible according to the consensus of all the mentioned views, as this is the narrowest view. Thus, in all the inhabited lands of the general populace where the Qibla is due east or west, by the consensus of the aforementioned views, deviation even within 'Ma-bain al-Maghribain' would be permissible, and the entire prayer cannot be void until it exceeds 45 degrees.

Second: Those cities whose Qibla is exactly at the equilibrium point are few. In most, there is more or less deviation. Now, it is not free from three states: either the deviation, I mean its completion, i.e., from the point of equilibrium towards South or North (my meaning...

---

[1] Munyat al-Musalli, Fourth Condition: Facing the Qibla, published by Maktaba Qadiriyah, Jamia Nizamia Razvia, Lahore, p. 185.

फ़तावा रज़विया, छठा खंड।

...यदि एकाग्रता उसी स्थान से हट जाए तो उसकी नमाज़ सर्वसम्मति से जायज़ नहीं होगी। (अनु.) दोनों किताबों में यह इबारत 'मिन्हा' (स्त्रीलिंग एकवचन सर्वनाम के साथ) है, न कि 'मिन्हुमा' (द्विवचन सर्वनाम के साथ) जो दो पश्चिमों की ओर संकेत करता। इसमें कोई संदेह नहीं कि दिशा (क़िबला) से बाहर निकलना नमाज़ को अमान्य कर देता है। 'बिल-इत्तिफ़ाक़' (सर्वसम्मति से) शब्द स्पष्ट रूप से इस अर्थ पर संकेत करता है कि दिशा से बाहर होना ही नमाज़ बिगाड़ने का कारण है, न कि यह विशिष्ट सीमा, जो प्रसिद्ध इमामों के उल्लेखित पांचों कथनों के विरुद्ध है। लेकिन 'मुनिया' (मुनियतुल मुसल्ली) में 'अमाली' के हवाले से इस प्रकार है:

यदि किसी ने ऐसी दिशा में नमाज़ पढ़ी जो दो पश्चिमों (मग्रिबैन) से बाहर हो, तो उसकी नमाज़ शून्य है। [1]

यदि नमाज़ी ने ऐसी किसी दिशा में नमाज़ पढ़ी जो मग़रिबैन से बाहर हो, तो उसकी नमाज़ फ़ासिद (शून्य) होगी। (अनु.)

'तजनीस अल-मुल्तक़ित' का उद्धरण आ चुका है, अल्लामा बिरजंदी का कथन आप सुन चुके हैं कि उन्होंने हेरात के लिए यह नियम नहीं माना, बल्कि उसका शोधित स्थान मग़रिबैन से बाहर है और उन्होंने इस नियम को केवल कुछ स्थानों के लिए विशिष्ट बताया। मैं कहता हूँ: बल्कि यह मूल रूप से कहीं भी लागू नहीं होगा सिवाय कुछ गिने-चुने दुर्लभ स्थानों के जो शायद आबाद भी न हों बल्कि संभवतः समुद्र में हों, जिनका क़िबला 'नुक़्ता-ए-इअतेदाल' (साम्य बिंदु) हो और अक्षांश लगभग 56 डिग्री हो, जिससे उनकी 'सअत अल-मग़रिब' 45 डिग्री होगी। अन्यथा यदि अक्षांश इससे कम हो, तो सअत अल-मग़रिब 45 डिग्री से कम होगी, और पांचों कथनों की सर्वसम्मति से 'बैन अल-मग़रिबैन' से कम या ज़्यादा विचलन मान्य होगा। और यदि क़िबला साम्य बिंदु से हटा हुआ है, तो वह निश्चित रूप से दोनों दिशाओं में से किसी एक की ओर झुकेगा। तो जिस दिशा के वह जितना निकट है, उससे उतना ही बाहर जाना भी मान्य होगा, और जिससे दूर है, उसके अंदर भी कुछ विचलन नमाज़ को बिगाड़ने वाला होगा जैसा कि स्पष्ट है। फिर पूरे विश्व को छोड़कर केवल कुछ गिने-चुने स्थानों का नियम लेना और उसे सामान्य स्थिति के रूप में बताना भला कैसे सही हो सकता है? विशेष रूप से वे स्थान जो इतने दूरस्थ अक्षांशों पर हैं, यदि वे आबाद भी सिद्ध हो जाएँ तो इसमें कोई संदेह नहीं कि उस समय में उन्हें आबाद दुनिया (मामूरा) से बाहर माना जाता था और 'ख़ारिज अल-अक़ालीम' कहा जाता था, क्योंकि उनकी सात क्षेत्रों में विभाजन 40 से 50 डिग्री के बीच समाप्त हो गई थी। हमारे इस विवेचन पर गौर करने वाला समझ सकता है कि इस कथन पर कितने कटाक्ष होते हैं।

पहला: अरब, अजम, हिंद और सिंध यानी एशिया और अफ्रीका के सामान्य शहरों, बल्कि सातों महाद्वीपों में कहीं भी सअत अल-मग़रिब 45 डिग्री नहीं है। और ऊपर स्पष्ट हो चुका है कि यहाँ तक विचलन सभी उल्लेखित कथनों की सर्वसम्मति से मान्य है क्योंकि यही सबसे संकुचित कथन है। तो आम आबाद दुनिया के उन सभी शहरों में जिनका क़िबला पूर्व या पश्चिम बिंदु है, उल्लेखित कथनों की सर्वसम्मति से मग़रिबैन के बीच से भी विचलन मान्य होगा और पूरी नमाज़ तब तक शून्य नहीं हो सकती जब तक कि विचलन 45 डिग्री से अधिक न हो जाए।

दूसरा: वे देश कम हैं जिनका क़िबला विशेष रूप से साम्य बिंदु पर है, अधिकांश में कम या ज़्यादा विचलन है। अब स्थिति तीन हालतों से खाली नहीं, या तो विचलन यानी उसकी पूर्णता, अर्थात साम्य बिंदु से दक्षिण या उत्तर की ओर (मेरा आशय...

---

[1] मुनियतुल मुसल्ली, चौथी शर्त: क़िबला की ओर मुँह करना, मकतबा क़ादरिया, जामिया निज़ामिया रज़विया, लाहौर, पृष्ठ 185।

توجہ اسی جگہ سے خارج ہو جائے تو اسکی نماز بالاتفاق جائز نہ ہوگی۔ت) دونوں کتابوں میں یہ عبارت بلفظ منھا بضمیر مونث ہے نہ منھما بضمیر تثنیہ کہ جانب مغربین راجع ہو اور شک نہیں کہ جہت سے خروج مفسد صلوٰۃ ہے اور لفظ بالاتفاق اس معنی پر صریح دال کہ خروج عن الجہۃ ہی کا مفسد ہونا متفق علیہ ہے نہ کہ یہ تحدید خاص جو اقوال خمسہ مذکورہ ائمہ مشہورہ دوراہ فی کتب المذہب سب کے خلاف ہے لیکن منیہ میں امالی سے یوں ہے :

فان صلی الی جھۃ خرجت من المغربین فسدت صلاتہ [1]۔

اگر نمازی نے کسی ایسی جہت میں نماز پڑھی جو مغربین سے خارج ہو تو اس کی نماز فاسد ہوگی۔ (ت)

اور تجنیس الملتط کی نقل گزری، علامہ بر جندی کا ارشاد سن چکے کہ انہوں نے ہراۃ کے لیے یہ حکم نہ مانا بلکہ اس کا تحقیقی مغربین سے باہر ہے اور اس حکم کو صرف بعض مقامات سے مخصوص کہا اقول: بلکہ اصلاً کہیں صادق نہ آئے گا سوا گنتی کے دوچار نادر مقاموں کے جو شاید آباد بھی نہ ہوں بلکہ غالباً سمندر میں پڑیں جن کا قبلہ نقطہ اعتدال ہو اور عرض تقریبًا چھپن ۵۶ درجے کہ ان کی سعۃ المغرب ۴۵ درجے ہو گی ورنہ اگر عرض اس سے کم ہوا تو سعۃ المغرب ۴۵ درجے سے کم ہو گی اور باجماع اقوال خمسہ بین المغربین سے کم وبیش خروج روا ہوگا اور اگر قبلہ اعتدال سے ہٹا ہوا ہے تو ضرور احد السمتین کی طرف جھکے گا تو جس سے جتنا قریب ہے اس سے اسی قدر باہر جانا بھی روا ہوگا اور جس سے بعید ہے اس کے اندر بھی بعض انحراف مفسد نماز ہوگا کمالا یخفی (جیسا کہ ظاہر ہے۔ ت) پھر یہ بھی زیادہ بین الفساد پھر تمام دنیا چھوڑ کر گنتی کے چند مواضع کا حکم لینا اور اسے صورت عام میں بیان کرنا کیونکر رو بصحت ہوگا خصوصاً وہ مواضع بھی اتنے دُور دراز عرض کے جو اگر آباد بھی ثابت ہوں تو شک

نہیں کہ اُس زمانے میں معمورہ سے باہر سمجھے جاتے اور خارج الاقالیم کہلاتے تھے کہ ان کی تقسیم میں ساتوں اقلیم میں ۴۰ تا ۵۰ تک ختم ہو گئیں۔ ہماری اس تقریر سے متفطن نکال سکتا ہے کہ اس قول پر کتنے نقض وارد ہیں۔

اولاً عرب وعجم و ہند وسندھ غرض ایشیا افریقہ کے عام شہر بلکہ تمام ہفت اقلیم میں کہیں سعۃ المغرب ۴۵ درجے نہیں اور اوپر واضح ہو چکا کہ یہاں تک انحراف باجماع جمیع اقوال مذکورہ روا ہے کہ یہی سب سے تنگ تر قول ہے تو عامہ معمورہ کے جملہ بلاد جن کا قبلہ نقطہ مشرق یا مغرب ہو بالاتفاق اقوال مزبورہ ان میں مابین المغربین سے بھی انحراف روا ہوگا اور تمام نماز فاسد نہیں ہو سکتی جب تک ۴۵ درجے سے زائد نہ ہو۔

ثانیاً وہ بلاد کم ہیں جن کا قبلہ خاص نقطہ اعتدال ہو، اکثر میں کم یا زیادہ انحراف ہے اب تین حال سے خالی نہیں یا تو انحراف اعنی تمامہ ای من نقطہ الاعتدال الی الجنوب او شمال (میری مراد

---

[1]منیۃ المصلی الشرط الرابع استقبال القبلۃ مطبوعہ مکتبہ قادریہ جامعہ نظامیہ رضویہ لاہور ص ۱۸۵

Fatawa Razviya Volume Six ...its total, i.e., from the point of equilibrium towards South and North. (Translator's note: T) If it becomes less than, equal to, or greater than the width of the sunset (Sa'at-ul-Maghrib). According to the first estimation, in whichever direction the deviation occurs, it would be permissible to go further beyond the width of the sunset in that direction. For example, if the width is 24 degrees and there were no deviation, a departure of 21 degrees would be permissible. Now suppose there is a deviation of 30 degrees; then turning 41 degrees between the East and West points would be correct. Thirdly: If the sum of deviation and width in the direction from which the deviation occurred exceeds 45 degrees, then that place will be found within the 'Bayn-ul-Maghribayn' (between the two sunsets) as long as the deviation does not invalidate the prayer, even though on this view it would be permissible. Fourthly: Suppose there is a 20-degree deviation towards the south and the width is 24. Then, according to this view, only a 4-degree deviation to the south from the actual Qibla would be permissible so as not to exit 'Bayn-ul-Maghribayn', while towards the north, a deviation up to 44 degrees would be permissible. This is obviously false and incorrect by consensus. Just as turning to one side from the actual Qibla to a certain degree does not void facing it, it is mandatory that turning to the other side to the same degree also does not cause it to cease, because both sides of a person's face are equal. Where did this difference of four and forty come from? Fifthly and Sixthly: On the second estimation, the impossibilities are even more apparent. Suppose the width and deviation towards the south are equal on both sides (and this is not an unrealistic assumption; astronomers have shown the application of the 'Ta'lees' process for such and such locations). Now, in this case, the Sharia ruling is that going up to 45 degrees outside from the south side of 'Bayn-ul-Maghribayn' is permissible, and one can lean only up to the width towards the north side. Leaning halfway towards the north would invalidate the prayer. But according to this view, the opposite ruling emerges: that a deviation up to 60 degrees on one side is permissible, while a step's move on the other side voids the prayer. Can such be a ruling of the pure Sharia? Never. Seventhly: The third estimation presents an immediate impossibility: when the deviation is greater than the width, then whichever actual Qibla is sought to go outside 'Bayn-ul-Maghribayn', on this view, actual facing (Istiqbal) itself becomes invalidating for prayer. Eighthly: Nowhere in the world is there a sum of both sides exceeding 46-47 when width is added. Then 'Bayn-ul-Maghribayn' is certainly that deviation which has more than 45 degrees of difference from the actual Qibla. Thus, what was a case of invalidation of prayer becomes permissible, and what was permissible, or rather highly

recommended, becomes invalid. What could be a greater impossibility than this? Ninthly: Suppose one city is near Makkah Mukarramah and has a large latitude, and another is very far and has little or no latitude. Then certainly the 'Sa'at-ul-Maghrib' of the first will be greater than the second, the excess of which can reach up to 66 degrees. So on this view, it would follow that the direction of Qibla for the nearby city is spread thousands of miles wider than the direction for the far city. This is the opposite of what is reasonable and traditionally reported. Page 123 of 736

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी ...उसका कुल, यानी नुक्ता-ए-एतेदाल से उत्तर और दक्षिण की ओर। (अनुवादक: त) सअत-उल-मग़रिब (सूर्यास्त की चौड़ाई) से कम, बराबर या अधिक हो गया। पहली स्थिति के अनुसार, जिस दिशा में झुकाव है, उस दिशा में सअत-उल-मग़रिब से और भी बाहर जाना जायज़ होगा। उदाहरण के लिए, यदि सअत (चौड़ाई) २४ डिग्री है और यदि झुकाव न होता, तो उससे २१ डिग्री बाहर निकलना जायज़ होता। अब मान लीजिए ३० डिग्री झुकाव है, तो बैन-उल-मशरिक़ैन (दोनों पूर्वों के बीच) में ४१ डिग्री का हटना सही होगा। तीसरा: जिस दिशा से झुकाव हुआ, यदि झुकाव और सअत का कुल जोड़ ४५ डिग्री से अधिक है, तो वह स्थान बैन-उल-मग़रिबैन के भीतर ही पाया जाएगा जब तक कि झुकाव नमाज़ को अमान्य (मफ़्सद) न कर दे, हालांकि इस कथन पर यह जायज़ होगा। चौथा: मान लीजिए दक्षिण की ओर २० डिग्री का झुकाव है और सअत २४ है, तो इस कथन के अनुसार वास्तविक क़िबला से दक्षिण की ओर केवल ४ डिग्री का झुकाव जायज़ होगा ताकि बैन-उल-मग़रिबैन से बाहर न निकला जा सके, जबकि उत्तर की ओर ४४ डिग्री तक झुकाव जायज़ होगा। यह स्पष्ट रूप से निराधार और सर्वसम्मति (इज्मा) से गलत है। वास्तविक क़िबला से जिस हद तक एक तरफ मुड़ने पर 'मुवाजा' (सामना करना) खत्म नहीं होता, ज़रूरी है कि दूसरी तरफ भी उसी हद तक न हो, क्योंकि मनुष्य के चेहरे के दोनों हिस्से एक समान हैं। यह चार और चालीस का अंतर कहाँ से आया? पाँचवाँ और छठा: दूसरी स्थिति में असंभवताएं और भी स्पष्ट हैं। मान लीजिए सअत और दक्षिण का झुकाव दोनों तरफ बराबर हैं (और यह कोई अवास्तविक कल्पना नहीं है; खगोलविदों ने कुछ स्थानों के लिए 'तलीस' प्रक्रिया के अनुप्रयोग दिखाए हैं)। अब इस स्थिति में शरीयत का नियम तो यह है कि बैन-उल-मग़रिबैन से दक्षिण की ओर ४५ डिग्री तक बाहर जाना जायज़ है, और उत्तर की ओर केवल सअत की सीमा तक झुका जा सकता है। उत्तर की ओर आधा झुकना भी नमाज़ को अमान्य कर देगा। लेकिन इस कथन के अनुसार इसका विपरीत नियम निकलेगा कि एक पहलू पर तो ६० डिग्री तक का झुकाव जायज़ है, और दूसरे पहलू पर एक कदम हटते ही नमाज़ चली गई। क्या यह पवित्र शरीयत का नियम हो सकता है? बिल्कुल नहीं। सातवाँ: तीसरी स्थिति तो तत्काल असंभवता पेश करती है कि जब झुकाव सअत से अधिक हो, तो जो भी वास्तविक क़िबला चाहे कि बैन-उल-मग़रिबैन से बाहर जाए, इस कथन के अनुसार वास्तविक रुख करना (इस्तिक़बाल) ही नमाज़ को अमान्य करने वाला बन गया। आठवाँ: दुनिया में कहीं भी दोनों पक्षों का योग ४६-४७ से अधिक नहीं है जब सअत जोड़ी जाए। तो बैन-उल-मग़रिबैन निश्चित रूप से वह झुकाव है जिसमें वास्तविक क़िबला से ४५ डिग्री से अधिक का अंतर है। अतः जो नमाज़ के अमान्य होने की स्थिति थी वह इसके आधार पर जायज़ हो गई, और जो जायज़ बल्कि उत्तम

(इस्तेहबाब) थी वह अमान्य ठहरी। इससे बड़ी असंभवता और क्या होगी। नौवाँ: मान लीजिए एक शहर मक्का मुअज़्ज़मा के निकट है और उसका अक्षांश (अर्ज़) अधिक है, और दूसरा बहुत दूर है और उसका अक्षांश कम या शून्य है। तो निश्चित रूप से पहले शहर की सअत-उल-मग़रिब दूसरे से अधिक होगी, जिसकी अधिकता ६६ डिग्री तक पहुँच सकती है। तो इस कथन के अनुसार यह लाज़िम आएगा कि पास वाले शहर की क़िबला दिशा, दूर वाले शहर की क़िबला दिशा की तुलना में हज़ारों मील अधिक चौड़ी फैली हो। यह तर्कसंगत (मक़ूल) और परंपरा (मनक़ूल) के विपरीत है। पेज 123 / 736

فتاوی رضویہ جلد ششم اس کا تمام ہے یعنی نقطہ اعتدال سے جنوب وشمال کی طرف ۔ت) سعتہ المغرب سے کم ہو گیا برابر یا زائد بر تقدیر اول جس سمت انحراف ہے اُدھر کی سعتہ المغرب سے اور بھی باہر جانا روا ہو گا مثلاً ۲۴ درجے سعت ہے اگر انحراف نہ ہوتا تو اُس سے ۲۱ درجے خروج جائز ہوتا، اب فرض کیجئے ۳۰ درجے انحراف ہے یہ تو بین المشرقین ۴۱ درجے عدول صحیح ہوگا۔ ثالثاً: جس سمت سے انحراف ہوا گر انحراف و سعت کا مجموعہ ۴۵ درجے سے زائد ہے تو بین المغربین ہی وہ جگہ پائی جائے گی جب تک انحراف مفسد نماز ہے حالانکہ اس قول پر جواز ہوگا۔ رابعاً: فرض کیجئے ۲۰ درجے جانب جنوب انحراف ہے اور سعت ۲۴ تو اس قول پر قبلہ تحقیقی سے جنوب کو صرف چار درجے انحراف جائز ہوگا کہ بین المغربین سے خروج نہ ہو اور شمال کو ۴۴ درجے تک انحراف روا ہو گا یہ بدیہی البطلان اور بالاجماع غلط ہے قبلہ حقیقی سے جس قدر ایک طرف پھرنے میں مواجہہ نہیں جاتا واجب کہ دوسری طرف بھی اس قدر میں زوال نہ ہو کہ چہرہ انسان کے دونوں رُخ یکساں ہیں یہ چار چالیس کا تفرقہ کدھر سے آیا۔ خامساً و سادساً: بر تقدیر ثانی استحا لے ظاہر تر ہیں فرض کیجئے سعت و انحراف جنوب دونوں رُخ یکساں ہیں (اور یہ کوئی فرض ناواقعی نہیں ہیأت داں کو عمل تعلیس کا اجرا بتا دیا کہ فلاں فلاں مقام ایسے ہیں) اب اس صورت میں حکم شرعی تو یہ ہے کہ بین المغربین سے جانب جنوب ۴۵ درجے تک باہر جانا روا ہے اور جانب شمال سعت کے صرف تک جھک سکتا ہے نصف شمال کی طرف جھکنا مفسد نماز ہو گا اور اس قول پر اسکے برعکس حکم یہ نکلے گا کہ ایک پہلو پر تو ساٹھ ۶۰ درجے تک انحراف روا اور دوسرے پہلو پر قدم بھر ہٹا اور نماز گئی کیا یہ حکم شریعت مطہرہ کا ہو سکتا ہے؟ ہر گز نہیں۔ سابعاً: تقدیر ثالث تو خذ استحالہ حاضرہ ہے کہ جب انحراف سعت سے زائد ہے تو جو قبلہ تحقیقی چاہے کہ بین المغربین سے باہر جائے اس قول پر خود استقبال حقیقی

مفسد نماز ہوا۔ ثامناً: دنیا میں کوئی سعت سے زائد ہے طرفین کا مجموعہ ۴۶ ۴۷ ہو تو بین المغربین یقیناً وہ انحراف ہے جسے قبلہ حقیقی سے ۴۵ درجے زائد اختلاف ہے تو جو فسادِ نماز کی صورت تھی وہ اس پر جواز کی ہوئی اور جو جواز بلکہ اعلیٰ استحباب کی تھی وہ فساد ٹھہری اس سے بڑھ کر اور کیا استحالہ ہوگا۔ تاسعاً: فرض کیجئے ایک شہر مکہ معظمہ سے قریب اور کثیر العرض ہے اور دوسرا بہت بعید اور قلیل العرض یا بے عرض ، تو قطعاً اول کی سعتہ المغرب دوم سے زائد ہوگی جس کی زیادت چھیانوے ۶۶ درجے تک پہنچ سکتی ہے تو اس قول پر لازم کہ قریب شہر کی سمت قبلہ بہت دور والے شہر کی سمت سے ہزار ہا میل زیادہ دُور تک پھیلی ہو، یہ عکس قضیہ معقول و منقول ہے۔

Fatawa Ridawiyya - Volume 6

Tenthly: An unacquainted person might think that this opinion is more restrictive compared to other opinions. In most populated areas, the amplitude (Sa'at) is less than 45 degrees. However, this thought is false. We have just proven that in this opinion, a deviation of sixty degrees from the true Qibla is permissible. Further refinement shows its breadth is not less than the apparent meaning of the first two opinions, but rather more. At a latitude of 66° 33', the total of both amplitudes is a full one hundred and eighty (180) degrees.

I say: The proof for this is the equality of the total obliquity (Al-Mail al-Kulli) and the complement of the latitude of the city (Tamam 'Ard al-Balad). Thus, their sines will also be equal. In a spherical triangle, the ratios of the sines of the angles to the sines of their opposite arcs are equal. Therefore, the sines of the amplitude and the right angle will be equal. This clarifies the ambiguity in the precise words of the scholar Ar-Rumi in his commentary on Al-Jaghmini, where he said: "The amplitude of the east and west increases with the increase in latitude until it reaches close to a quadrant (90 degrees), as long as the latitude of the city has not reached a quadrant."

I say: (I say) The proof for this is the equality of the total obliquity and the complement of the latitude of the city. Thus, their sines will also be equal. In a spherical triangle, the angles are related to their opposite sines equally. In this way, the sines of the amplitude and the right angle will both be equal. This clarifies the ambiguity in the precise words of the noble Rumi in the commentary of Jaghmini, just as he said: "The amplitude of the east and west continues to increase with the increase of latitude until the amplitude reaches close to a quadrant, while the latitude of the city has not reached a quadrant." (T)

Furthermore, to settle the dispute, take a latitude of exactly sixty degrees, where the amplitude is 52° 44'. Suppose the southern deviation is 71° 71', as we have proven a greater deviation above. Now, if the worshiper turns 52° 44' north from the west point and stands, according to this opinion, the prayer would be valid because the Qibla is within 'Between the two Wests' (Bain al-Maghribayn). However, they would have turned a full one hundred and thirty degrees away from the true Qibla. According to the apparent meaning of the first two opinions, they would have merely turned their side to the Qibla, but here it goes beyond that to include the back, yet 'facing' (Istiqbal) is claimed to exist. In short, formidable absurdities apply to this. This

opinion is not acceptable based on tradition, reason, or principles. God's sake, its strangeness and unheard-of nature were enough, as it explicitly contradicts all five opinions of the reliable books. Yes, based on the explanation provided by this humble servant (the author), it is certainly correct and successful. And success is from Allah. Praise be to Allah, a sufficient, abundant, healing, and clear explanation of the Qibla direction has been established with such majesty, clarification of correctness, encompassing research, discovery, and unveiling that will not be found in any other writing. "That is from the grace of Allah upon us and upon the people, but most of the people are not grateful." (Quran) "My Lord, inspire me to be grateful for Your favor." (Quran)

---

[1] Sharh al-Jaghmini, Chapter Three of the First Discourse on Circles, printed by Naval Kishore, Lucknow, p. 69. Page 124 of 736

दसवाँ: एक अनजान व्यक्ति यह सोच सकता है कि अन्य मतों की तुलना में इस मत में संकीर्णता है। अधिकांश बसे हुए क्षेत्रों में आयाम (सअत) 45 डिग्री से भी कम है। लेकिन यह विचार गलत है। हमने अभी सिद्ध किया है कि इसमें वास्तविक क़िबला से साठ डिग्री का विचलन अनुमत है। और शोध करने पर इसकी व्यापकता पहले दो मतों के स्पष्ट अर्थ से कम नहीं बल्कि अधिक है। 66° 33' के अक्षांश पर, दोनों आयामों का योग पूरे एक सौ अस्सी (180) डिग्री है।

मैं कहता हूँ: इसका प्रमाण कुल झुकाव (मैल-ए-कुल्ली) और शहर के अक्षांश के पूरक (तमाम अर्ज़-ए-बलद) की समानता है। तो इस तरह उनके ज्या (sines) भी समान होंगे। एक गोलाकार त्रिकोण (spherical triangle) में, कोणों के ज्या और उनके सम्मुख भुजाओं के ज्या का अनुपात समान होता है। इसलिए, आयाम और समकोण के ज्या समान होंगे। इससे अल-जघमिनी पर टिप्पणी में विद्वान अर-रूमी के सटीक शब्दों की अस्पष्टता स्पष्ट हो जाती है, जहाँ उन्होंने कहा: "पूर्व और पश्चिम का आयाम अक्षांश में वृद्धि के साथ बढ़ता है जब तक कि यह एक चतुर्थांश (90 डिग्री) के करीब न पहुँच जाए, जब तक कि शहर का अक्षांश चतुर्थांश तक न पहुँचा हो।"

मैं कहता हूँ: (मैं कहता हूँ) इसका प्रमाण कुल झुकाव और शहर के अक्षांश के पूरक की समानता है। तो इस तरह उनके ज्या भी समान होंगे और गोलाकार त्रिकोण में दक्षिण कोणों को उसके ज्या रेखाओं की ओर समान रूप से जिम्मेदार ठहराया गया है, तो इस प्रकार आयाम और समकोण के ज्या दोनों समान होंगे। और इसी से शरह चघमिनी में फाज़िल रूमी के सूक्ष्म शब्दों में जो अस्पष्टता है, वह स्पष्ट हो जाती है जैसा कि उन्होंने कहा: "पूर्व और पश्चिम का आयाम अक्षांश के बढ़ने से बढ़ता रहता है यहाँ तक कि आयाम लगभग चतुर्थांश तक पहुँच जाए, जबकि शहर का अक्षांश चतुर्थांश तक न पहुँचा हो।" (त)

इसके अलावा, विवाद को समाप्त करने के लिए साठ डिग्री का अक्षांश लें, जहाँ आयाम 52° 44' है। मान लीजिए कि दक्षिणी विचलन 71° 71' है, जैसा कि हमने ऊपर इससे अधिक विचलन सिद्ध किया है। अब यदि नमाज़ पढ़ने वाला पश्चिम बिंदु से 52° 44' उत्तर की ओर मुड़कर खड़ा हो, तो इस मत के अनुसार नमाज़ सही होगी क्योंकि क़िबला 'दो पश्चिमों के बीच' के भीतर है। हालाँकि, वह वास्तविक क़िबला से पूरे एक सौ तीस डिग्री मुड़ चुका होगा। पहले दो मतों के स्पष्ट अर्थ के अनुसार, वह केवल क़िबला की ओर अपनी करवट किए होता, लेकिन यहाँ यह उससे भी आगे बढ़कर पीठ के

हिस्से तक पहुँच जाता है, फिर भी 'सामना' (इस्तिक़बाल) मौजूद माना जाता है। संक्षेप में, इस पर भयानक विसंगतियाँ लागू होती हैं। यह मत परंपरा, तर्क या सिद्धांतों के आधार पर बिल्कुल भी स्वीकार्य नहीं है। खुदा की कसम, इसकी विचित्रता और अनसुना होना ही काफी था कि यह विश्वसनीय पुस्तकों के सभी पांचों मतों का स्पष्ट रूप से खंडन करता है। हाँ, जिस आधार पर इस विनम्र सेवक (लेखक) ने व्याख्या की है, वह निश्चित रूप से सही और सफल है। और सफलता अल्लाह की ओर से है। अल्लाह का शुक्र है कि क़िबला की दिशा का पर्याप्त, प्रचुर, उपचारात्मक और स्पष्ट वर्णन ऐसी महिमा, सही की स्पष्टता, व्यापक शोध, खोज और अनावरण के साथ हुआ है जो इस लेखन के अलावा कहीं नहीं मिलेगा। "यह हम पर और लोगों पर अल्लाह का अनुग्रह है, लेकिन अधिकांश लोग आभारी नहीं होते।" (कुरान) "मेरे रब, मुझे प्रेरित कर कि मैं तेरी उस नेमत का शुक्र अदा करूँ।" (कुरान)

---

[1] शरह चघमिनी, वृत्तों पर पहले प्रवचन का तीसरा अध्याय, नवल किशोर प्रेस, लखनऊ, पृष्ठ 69. पृष्ठ 124/736

عاشراً ناواقف گمان کرے گا کہ اس قول میں بہ نسبت دیگر اقوال کے تضییق ہے معظم معمورہ میں سعت ۴۵ درجے سے بھی کم ہے مگر یہ خیال باطل ہے ہم ابھی ثابت کر آئے کہ اس میں قبلہ حقیقی سے ساٹھ درجے انحراف روا ٹھہرتا ہے اور تنقیح کیجئے تو اس کی وسعت ظاہر قولین اولین سے کچھ کم نہیں بلکہ زائد ہے ۶۶ صہ - ۳۳ کے عرض پر مجموع سعتین کے پورے ایک سو اسی ۱۸۰ درجے ہیں۔

اقول: والبرهان عليه تساوی الميل الكلي وتمام عرض البلد فتساوی جيبوهما وفی المثلث الكروي نسب جيوب الزاويا الی جيوب اوتارها متساوية فيتساوی جيوب السعة والقائمة وبه يظهر فی كلام المدقق الرومي فی شرح الجغمينی حيث قال سعة المشرق والمغرب تزيد بزيادة العرض الی ان تبلغ قريباً من الربع مالم يبلغ العرض ربعا اھ

اقول: (میں کہتا ہوں) اس پر دلیل میل کلی اور تمام عرض بلد کا تساوی ہونا ہے تو اس طرح ان دونوں کی جیبیں بھی مساوی ہوں گی اور مثلث کروی میں جنوب زوایا کو اس کے جیوب اوتار کی طرف تساوی منسوب کیا گیا ہے تو اس طرح جیوب سعتہ و قائمہ دونوں مساوی ہوں گے اور اسی سے شرح چغمینی میں فاضل رومی کے دقیق کلام میں جو ابہام ہے واضح ہو جاتا ہے جیسا کہ انھوں نے فرمایا: سعتہ مشرق و مغرب عرض کے بڑھنے سے بڑھتی رہتی ہے یہاں تک کہ سعتہ قریب ربع کو پہنچ جائے جبکہ عرض بلد ربع کو نہ پہنچی ہو اھ (ت)

بلکہ حسمِ مناقشہ کے لئے ساٹھ ہی درجے کا عرض لیجئے کہ وہاں سعت ۵۲ ۴۴ ہوا، فرض کیجئے کہ انحراف جنوبی ۷۱ ۷۱ ہو کہ اس سے زیادہ کا انحراف ہم اوپر ثابت کر آئے ہیں ، اب اگر مصلی نقطہ مغرب سے ۵۲ ۴۴ شمال کو پھر کر کھڑا ہو اس قول پر نماز صحیح ہوگی کہ قبلہ

بین المغربین کے اندر ہے حالانکہ قبلہ حقیقی سے پورا ایک سو تیس درجے پھرا ہوا ہے قولین اولین کے ظاہر پر تو قبلے کو کروٹ ہی ہوتی تھی یہاں اس سے بھی گزر کر پیٹھ کا حصہ ہے اور استقبال موجود ، بالجملہ اس پر وہ استحالات ہائلہ وارد ہیں جن کا شمار دشوار تو یہ قول اس قول پر نقلا عقلا اصلا قابل قبول نہیں اور خدا اسی قدر اُس کی غرابت و نامسموعی کو بس تھا کہ تمام کتبِ معتمدہ کے پانچوں اقوال سے صریحاً مناقص ہے ، ہاں اُس وجہ پر کہ فقیر نے تقریر کی ، ضرور صحیح و نجیح ہے وباللہ التوفیق ، الحمد للہ کہ جہتِ قبلہ کا ہی کافی وافی شافی صافی بیان اُس جلالتِ شان و ایضاحِ صواب و احاطہ و تحقیق و کشف و حجاب کے ساتھ واقع ہوا کہ اس تحریر کے غیر میں نہ ملے گا ذلك من فضل الله علينا وعلى الناس ولكن اكثر الناس لا يشكرون رب اوزعنى ان اشكر نعمتک

---

۱ شرح چغمینی الباب الثالث من المقالة الاولی فی الدوائر مطبوعہ نولکشور لکھنؤ ص ۶۹ Page of 736 124

Fatawa Razawiya, Volume 6

...which You have bestowed upon me and upon my parents and that I may do righteous work that pleases You, and make me among the repentant and admit me by Your mercy among the righteous. Amen. And may Allah Almighty's peace and blessings be upon our master Muhammad and his family and all his companions. Amen.

Second Benefit: What is the amplitude of the West (Sa'at al-Maghrib) at the solstices in Aligarh? Praise be to Allah, the meaning of the direction of the Qibla has become as clear as the sun, and it has been known that as long as it is within the limits of the direction, it is permissible and lawful. To the extent of one's ability, hitting the exact center (Ain) is only commendable. Now it remains to be seen whether the deviation of the disputed site is within the limits of the direction or not. For this, setting aside the burden of those apparent breadths of previous sayings, let us even descend from the fifth saying which we have established as verified and clear, and take in it the definition of "between the two Wests" (Bain al-Maghribayn) itself, as in our lands, this is indeed the narrowest of all, so that ignorant fatwa-givers may have no complaint left. Therefore, first of all, it is necessary to know the amplitude of the West of the Tropic of Capricorn (Ras al-Jadi) and the Tropic of Cancer (Ras al-Saratan) in Aligarh.

So we say: Let "ab h 'a'" be the horizon of Aligarh, "a 'e'" be the equinoctial arc, "h" be the North Pole, "h" be the Tropic of Capricorn at the time of sunset "h h", the declination circle "r h" has a total declination of 23 degrees 12 minutes. "h" is the amplitude of the West. In the right-angled triangle "arh", the angle of the complement of the latitude of the city, i.e., 62 degrees 4 minutes, is the angle of intersection of the equinoctial and the horizon, which is always the complement of the latitude. Do you not see that its measurement is arc "t h" and "y" is the zenith of the city, so "y t" is its latitude and "t h" its complement. By the rule of 'Shakl-e-Mughni': Sine of declination : Sine of complement of latitude :: Sine of "a h" (unknown) : Sin 90. From logarithmic sines: First sine 9.5998170 - Second sine 9.62926032 = Third sine 9.65362238, its arc is as specified. It became known that in Aligarh, the Tropic of Cancer sets 26 degrees 46 minutes north from the western point, and the Tropic of Capricorn sets the same amount to the south.

Third Benefit: How much is this Eidgah deviated from the western point? Now, in clarifying the objective, only this much remains to be found out. If it is proved that its deviation is less than twenty-six and three-quarters degrees, then certainly, even

according to that narrowest saying, it is towards the direction of the Qibla. Declaring prayer in it as macrooh-e-tahrimi (prohibitively disliked) and making its demolition mandatory is all ignorance and fabrication. To understand this, the north-south length of the Qibla wall of the said Eidgah was required. Upon inquiry, it was written that it is eighty-two and a half yards. If this measurement and the claim of the objectors that the wall is shifted ninety feet towards the west from the alignment of the North Pole is correct, then calculating the angle of deviation is not difficult. So I say: Let "'e'" be the point of the pole and "ab" be the Qibla wall. In the current state, from "b" exactly towards direction "'e'", an unlimited line "b h" was drawn. Taking "b" as the center, an arc "ar h" was drawn on "a", which intersected the line at point "h". Then "b h" will be the wall in that state to which the objectors want to bring it.

[Diagram showing geometric construction]

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

...जो तूने मुझ पर और मेरे माता-पिता पर उपकार किया है और यह कि मैं ऐसे नेक काम करूँ जिनसे तू प्रसन्न हो, और मुझे तौबा करने वालों में शामिल कर और मुझे अपनी दया से नेक लोगों में दाखिल कर। आमीन। और अल्लाह तआला की रहमतें और सलाम हों हमारे आका मुहम्मद और उनकी आल और उनके तमाम असहाब पर। आमीन।

दूसरा लाभ: अलीगढ़ में संक्रांति (इंक़लाबैन) के समय पश्चिम का विस्तार (सअतुल मग़रिब) क्या है? अल्हम्दुलिल्लाह कि क़िबला की दिशा का अर्थ सूर्य की तरह स्पष्ट हो गया है और यह जान लिया गया है कि जब तक यह दिशा की सीमाओं के भीतर है, यह जायज़ और मुबाह है। यथासंभव ऐन (बिल्कुल केंद्र) पर होना केवल मुस्तहब (सराहनीय) है। अब यह देखना शेष है कि विवादित स्थल का झुकाव दिशा की सीमाओं के भीतर है या नहीं। इसके लिए पिछले कथनों की उस स्पष्ट व्यापकता के धार्मिक बोझ को छोड़कर, हम उस पाँचवें कथन से भी नीचे उतरें जिसे हम प्रमाणित और स्पष्ट कर चुके हैं और उसमें 'दो पश्चिमों के बीच' (बैनुल मग़रिबैन) की ही सीमा को लें, क्योंकि हमारे शहरों में वास्तव में यही सबसे संकरी सीमा है, ताकि अज्ञानी फ़तवा देने वालों को कोई शिकायत न रहे। इसलिए, सबसे पहले अलीगढ़ में मकर रेखा (रासुल जदी) और कर्क रेखा (रासुल सरतान) के पश्चिम विस्तार को जानना आवश्यक है।

तो हम कहते हैं: मान लीजिए 'अब ह अ' अलीगढ़ का क्षितिज है, 'अए' विषुवतीय चाप (क़ौस-ए-मुअद्दल) है, 'ह' उत्तरी ध्रुव है, 'ह' सूर्यास्त के समय मकर रेखा है, झुकाव का घेरा 'रह' कुल झुकाव 23 डिग्री 12 मिनट है। 'ह' पश्चिम का विस्तार है। समकोण त्रिभुज 'अरह' में शहर के अक्षांश के पूरक का कोण यानी 62 डिग्री 4 मिनट है, क्योंकि विषुवत और क्षितिज के प्रतिच्छेदन का कोण हमेशा अक्षांश का पूरक होता है। क्या आप नहीं देखते कि इसका माप चाप 'त ह' है और 'य' शहर का शिरोबिंदु (ज़ेनिथ) है, तो 'य त' उसका अक्षांश और 'त ह' उसका पूरक है। 'शकल-ए-मुग़नी' के नियम के अनुसार: झुकाव की ज्या (Sine) : अक्षांश के पूरक की ज्या :: 'अ ह' की ज्या (अज्ञात) : ज्या 90। लघुगणकीय ज्या (Logarithmic Sines) से: पहली ज्या 9.5998170 - दूसरी ज्या 9.62926032 = तीसरी ज्या 9.65362238, इसका चाप निर्दिष्ट अनुसार है। ज्ञात हुआ कि अलीगढ़ में कर्क रेखा पश्चिमी बिंदु से 26 डिग्री 46 मिनट उत्तर की ओर और मकर रेखा उतनी ही दक्षिण की ओर हटकर डूबती है।

तीसरा लाभ: यह ईदगाह पश्चिमी बिंदु से कितना झुका हुआ है? अब उद्देश्य स्पष्ट करने में केवल इतनी ही बात का पता लगाना बाकी रह गया है। यदि यह सिद्ध हो जाए कि इसका झुकाव पौने सत्ताईस डिग्री से कम है, तो निश्चित रूप से वह उस सबसे संकीर्ण कथन पर भी क़िबला की दिशा में ही है और उसमें नमाज़ को मकरूह-ए-तहरीमी बताना और उसे गिराने को फ़र्ज़ ठहराना सब अज्ञानता और मिथ्या है। इसे समझने के लिए उक्त ईदगाह की क़िबला दीवार की उत्तर-दक्षिण लंबाई की आवश्यकता थी। पूछताछ पर पता चला कि यह साढे बयासी गज़ है। यदि यह माप और विरोधियों का वह दावा कि दीवार उत्तरी ध्रुव की सीध से नब्बे फीट पश्चिम की ओर हटी हुई है, सही है, तो झुकाव के कोण की गणना करना कठिन नहीं है। तो मैं कहता हूँ: मान लीजिए 'अ' ध्रुव बिंदु है और 'अब' क़िबला दीवार है। वर्तमान स्थिति में 'ब' से ठीक दिशा 'अ' की ओर एक असीमित रेखा 'ब ह' खींची गई और 'ब' को केंद्र मानकर 'अ' पर एक चाप 'अर ह' बनाया गया जिसने रेखा को बिंदु 'ह' पर काटा। तब 'ब ह' वह दीवार होगी जिस स्थिति में विरोधी इसे लाना चाहते हैं।

[ज्यामितीय निर्माण को दर्शाने वाला आरेख]

पेज 125 का 736

فتاویٰ رضویہ جلد ششم

التی انعمت علی وعلی والدی وان اعمل صلحاً ترضہ واجعلني من التائبین وادخلنی برحمتك في الصلحین آمین وصلی اللہ تعالیٰ علی سیدنا محمد وآلہ وصحبہ اجمعین آمین۔

افادہ ثانیہ: علی گڑھ میں انقلابین کی سعت المغرب کیا ہے۔ الحمد للہ کہ جہت قبلہ کے معنی آفتاب کی طرح واضح ہوگئے اور معلوم ہو لیا کہ جب تک حدود جہت کے اندر ہے جواز واباحت ہے حتی الوسع اصابت عین صرف مستحب ہے اب یہ دیکھنا رہا کہ مقام ادعا متنازعہ فیہ کا انحراف حدود جہت کے اندر ہے یا نہیں، اس کے لئے اُس ظاہری وسعت اقوال سابقہ کی تکلیف دینی درکنار قول پنجم جسے ہم محقق و منفتح کر آئے اُس سے بھی تنزل کریں اور اس میں بین المغربین ہی کی تحدید کو لیں کہ ہمارے بلاد میں واقعی یہی سب سے تنگ تر ہے تاکہ ناواقف فتویٰ دہندوں کو کوئی شکایت نہ رہ جائے اس لئے اولاً علی گڑھ میں راس الجدی و راس السرطان کی سعۃ المغرب معلوم کرنی ضروری ہے۔

فنقول: اب ح ء افق علی گڑھ ہے اء قوس معدل، ہ قطب شمالی ح راس الجدی، وقت غروب ہ ح، دائرہ میلیہ رح میل کلی ۲۳ درجہ ۱۲ ح سعۃ المغرب مثلث ارح قائم الزاویہ میں زاویہ اتمام عرض البلد یعنی ۶۲ درجہ ۴ ہے کہ زاویہ تقاطع معدل وافق ہمیشہ تمام عرض بلد ہوتا ہے الا تری ان قیاسھا قوس ط ح و ی سمت راس البلد فکان ی ط عرضہ و ط ح تمامہ بحکم شکل مغنی جیب میل : جیب تمام عرض : : جیب ا ح مجھول : ع : : بلوگارٹم جیب اول ۹۰۵۹۹۸۱۷۰-جیب دوم ۹۰۶۲۹۲۶۰۳۲= جیب سوم ۹۰۶۵۳۶۲۲۳۸ قوسہ الو مو صہ ۔ معلوم ہوا کہ علی گڑھ میں راس السرطان نقطہ مغرب سے ۲۶ درجے ۴۶ دقیقے شمال کو اور راس الجدی اسی قدر جنوب کو ہٹا ہوا ڈوبتا ہے۔

افادہ ثالثہ: یہ عید گاہ نقطہ مغرب سے کس قدر منحرف ہے۔ اب وضوح مقصد میں صرف اتنی ہی بات کا دریافت کرنا رہا، اگر ثابت ہو کہ اس کا انحراف پونے ستائیس درجے سے کم ہے تو یقیناً وہ اس سب سے تنگ تر قول پر بھی جہت قبلہ کی طرف ہے اور اُس میں نماز مکروہ تحریمی بتانا اور اسے ڈھا نا فرض ٹھہرانا سب جہل وافتراء، اس کے ادراک کو عید گاہ مذکور کی دیوار قبلہ کا جنوباً شمالاً طول درکار تھا، دریافت کرنے پر تحریر آئی کہ ساڑھے بیاسی گز ہے، اگر یہ پیمائش اور معترضوں کا وہ دعویٰ کہ دیوار محاذات قطب شمالی سے نوے فٹ جانب مغرب ہٹی ہوئی ہے صحیح ہے تو زاویہ انحراف کرنا مشکل نہیں فاقول: ع نقطہ قطب اور اب دیوار قبلہ، بحالت موجودہ ب سے ٹھیک سمت ء پر خط ب ح غیر محدود کھینچا اور ب کو مرکز فرض کر کے اکے بعد پر قوس ارح رسم کی جس نے خط کو نقطہ ح پر قطع کیا توب ح اس حالت پر دیوار ہوگی جس پر معترضین اسے لانا چاہتے ہیں،

[جیومیٹرک خاکے کی تصویر]

Fatawa Razawiyya Volume Six The southern point ‘Am Ha’ (ام ح) was joined as per ‘Wala’ Ra Ha’ (ولار ح), which intersected ‘Ain Ha’ (ع ح) at ‘Ta’ (ط). A line ‘Ha Se’ (سہ ہ) passing through ‘Ha’ and ‘Ta’ was drawn, which is the direction of Qibla. That is, if one turns from the western point by the arc ‘A Se’ (اسہ) towards the south, they will face the Kaaba Mu'azzama. The process of the schools of astronomy ends here, as their goal was to derive the Qibla line in the Indian Circle, which is achieved by this much. It is clear that when ‘Ha Se’ (سہ ہ) became the Qibla direction, dropping a perpendicular ‘Kaf Fa’ (ک ف) on it becomes the direction of the right shoulder. Thus, ‘Ain Ha’s’ (عہ) north pole will be inclined from the right shoulder towards the back. In this way, understand that ‘Ha Qaf’ (قد ہ) is the wall of the Qibla in its present state, and ‘Qaf Ha Sad’ (قہ ص) is the difference in feet from the alignment of the pole. Anyway, that was the extraction of the line, but we need to know the amount of this deviation in degrees and minutes. I say ‘Rak’ (رک), meaning by the rule of parallelism ‘Sirat’ (صراط), when the difference in latitude is its amount ‘Waw Sad Ha Ha Lam Ta’ (وصہ ح ل ط) square ‘Muwal’ (موال) — ‘Maab Al-Ha Lam’ (ماب الح ل). ‘Ha Ya’ (ح ی) is once the sine of the difference in distance ‘Lo Sad Ha Ha’ (لو صہ ح), ‘Mad’ (مد) square ‘Al’ (ال) — ‘Ain Mar Al-Ha Lam Ha Ya’ (ع مر ا ح ل ح ی) and the two sums of squares ‘Al Al-Wabah Mat Ha Ba’ (الح الوبہ مط ح ب) whose root is ‘La Raza La Lat’ (لرضہ ل لط). By the bride’s rule (Pythagorean theorem) in the right-angled triangle ‘Ha Sad Ta’ (صہ ہ ط), ‘Ha Ta’ (ط ہ) is the hypotenuse. Now, by the beneficial rule ‘Ha Ta’ (ط ہ) : ‘Ain’ (ع) :: ‘Mar Ta’ (مرط) sine ‘Mar Ta’ (مرہ ط) unknown :. And ‘Sad Ha Ha Lad Walat’ (صہ ح لد ولط) divided by ‘Lam Lam Al-Ha Lat Manhat’ (ل ل الح لط منحط) = ‘Ya Sad Ha Ha Lad Lah’ (ی ص ح لد لہ) its arc ‘Ya Al-Ha’ (ی الح) i.e., ten degrees twenty-eight minutes must be turned towards the south. And by logarithms, line ‘Mar’ (مرہ) i.e., longitude difference 53 76's sine logarithm is 9.886944. :. Log square 3888, 5 7, 9 i.e., 3888, 5 7, 9, . T :. square 9133, 7 7 3, line ‘Dal Ta’ (د ط) i.e., latitude difference 16 3's sine logarithm is 9.90529661. :. Log square 1099322, 8 i.e., 1099322, 8, . 2 :. square 0128805, . sum of squares 3907938, . logarithm 59194, 7 log root 387, 959, . T :. log-mat 90529661, 9 - 387, 959, . 9 = 2589923, 9 its arc is 8102. Fifth Advantage: Investigative Qibla of Aligarh

I say: Now ‘Ha Hamza’ (ح ء) is the northern horizon of Aligarh, ‘Ba’ (ب) is the western point, ‘Hamza’ (ء) is the celestial equator, ‘Ha’ (ح) is the North Pole, ‘Ta’ (ط) is the zenith of Makkah Mukarramah, ‘Ha Ta Kaf’ (ح ط ك) is the meridian of Ba-Ha-Ra (باح ر), the meridian of Aligarh ‘Ha’ (ہ) is the zenith of Aligarh, ‘Ha Ta Lam’ (طل ھ) is the Qibla line of Aligarh, ‘Lam Ba’ (ل ب) is the total deviation, i.e., deviation from the western

point towards the south. For its knowledge and amount, first, from the western point, a perpendicular ‘Ba Ta Meem’ (ب ط م) was dropped passing through the zenith of Makkah Mu'azzama onto the meridian of Aligarh, so that it passes south of Aligarh's zenith ‘Ha’ (ه) as you will know, God willing. ‘Meem Ra’ (م ر) is the latitude of the location of the perpendicular. Triangle ‘Ta Kaf Ba’ (ط ك ب) is right-angled, ‘Lad Wat Kaf’ (لد وٹ ک) is between the city and the equator, and all sides are less than a quadrant because every part of ‘Ba Ra Ba Meem Ha Kaf’ (ب رب م ح ك) are quadrants and the measurement of angle ‘Ba’ (ب) is arc ‘Meem Ra’ (م ر) for every angle on a sphere from two great circles, its measure is the arc of the maximum distance between them. And ‘Ta Kaf’ (ط ك) is the latitude of Makkah, ‘Ba Kaf’ (ب ك) is the total difference in longitude. So, by the rule of shadows, ‘Zill Ba’ (ظل ب) unknown : ‘Zill Ta Kaf’ (ظل ط ك) :: ‘Ain’ (ع) : ‘Sine Ba Kaf’ (جيب ب ك) :. Log shadow of Makkah latitude 5935623, 9 Log difference between the two longitudes.

फ़तावा रज़विया जिल्द छठा दक्षिण बिंदु 'अम हा' (ام ح) को 'वला रा हा' (ولار ح) के अनुसार मिलाया गया, जिसने 'ऐन हा' (ع ح) को 'ता' (ط) पर काटा। 'हा' और 'ता' से होकर गुज़रने वाली रेखा 'हा सा' (ہ سہ) खींची गई जो कि क़िबला की दिशा है। यानी, यदि कोई पश्चिमी बिंदु से चाप 'आ सा' (اسہ) के बराबर दक्षिण की ओर मुड़े, तो वह काबा मुअज़्मा के सामने होगा। खगोल विज्ञान के विद्वानों की प्रक्रिया यहाँ समाप्त होती है, क्योंकि उनका उद्देश्य भारतीय वृत्त में क़िबला रेखा निकालना था, जो इतने से प्राप्त हो गया। स्पष्ट है कि जब 'हा सा' (ہ سہ) क़िबला दिशा हो गई, उस पर लंब 'काफ़ फ़ा' (ک ف) गिराना दाहिने कंधे की दिशा बन गई। अतः'ऐन हा' (عہ) का उत्तरी ध्रुव दाहिने कंधे से पीछे की ओर झुका होगा। इस प्रकार समझें कि 'हा क़ाफ़' (ہ قد) वर्तमान स्थिति में क़िबला की दीवार है, और 'क़ाफ़ हा साद' (قہ ص) ध्रुव के संरेखण से फीट में अंतर है। खैर, यह तो रेखा का निष्कर्षण था, लेकिन हमें यह जानना है कि अंशों और मिनटों में इस विचलन की मात्रा क्या हुई। मैं कहता हूँ 'रक' (رک), यानी समानांतरता के नियम 'सिरात' (صراط) के अनुसार जब अक्षांश का अंतर उसकी मात्रा 'वाव साद हा हा लाम ता' (وصہ ح ل ط) वर्ग 'मुवाल' (موال) — 'माब अल-हा लाम' (ماب الح ل) है। 'हा या' (ح ی) एक बार दूरी के अंतर 'लो साद हा हा' (لو صہ ح) की ज्या है, 'मद' (مد) वर्ग 'अल' (ال) — 'ऐन मर अल-हा लाम हा या' (ع مر ا ح ل ح ی) और दो वर्गों का योग 'अल अल-वबा मत हा बा' (مط ح ب هالح الوب) जिसका मूल 'ला रज़ा ला लात' (لرضہ ل لط) है। समकोण त्रिभुज 'हा साद ता' (ہ صہ ط) में 'वधू नियम' (पाइथागोरस प्रमेय) के अनुसार 'हा ता' (ہ ط) कर्ण है। अब लाभकारी नियम 'हा ता' (ہ ط) : 'ऐन' (ع) :: 'मर ता' (مرط) ज्या 'मर ता' (مرہ ط) अज्ञात :. और 'साद हा हा लाद वलात' (صہ ح لد ولط) को 'लाम लाम अल-हा लात मनहात' (ل الح لط منحط ل) से विभाजित करने पर = 'या साद हा हा लाद लाह' (ی ص ح لد لہ) इसका चाप 'या अल-हा' (ی الح) यानी, दस अंश अट्ठाईस मिनट दक्षिण की ओर मुड़ना चाहिए। और लघुगणक द्वारा रेखा 'मर' (مرہ) यानी देशांतर अंतर ५३ ७६ की ज्या का लघुगणक ८.८८६९४४ है। :. लॉग वर्ग ३८८८, ५ ७, ९ यानी ३८८८, ५ ७, ९, . त :. वर्ग ९१३३, ७ ७ ३, रेखा 'दाल ता' (د ط) यानी अक्षांश अंतर १६ ३ की ज्या का लघुगणक ९.९०५२९६६१ है। :. लॉग वर्ग १०९९३२२, ८ यानी १०९९३२२, ८, . २ :. वर्ग ०१२८८०५, . वर्गों का योग ३९०७९३८, . लघुगणक ५९१९४, ७ लॉग मूल ३८७, ९५९, . त :. लॉग-मत ९०५२९६६१, ९ - ३८७, ९५९, . ९ = २५८९९२३, ९ इसका चाप ८१०२ है। पांचवां लाभ: अलीगढ़ का अन्वेषणात्मक क़िबला

मैं कहता हूँ: अब 'हा हमज़ा' (ح ء) अलीगढ़ का उत्तरी क्षितिज है, 'बा' (ب) पश्चिमी बिंदु है, 'हमज़ा' (ء) खगोलीय भूमध्य रेखा है, 'हा' (ح) उत्तरी ध्रुव है, 'ता' (ط) मक्का मुकर्रमा का शिरोबिंदु है, 'हा ता काफ़' (ح ط ك) बा-हा-रा (باح ر) का याम्योत्तर है, अलीगढ़ का याम्योत्तर 'हा' (ه) अलीगढ़ का शिरोबिंदु है, 'हा ता लाम' (هط لل) अलीगढ़ की क़िबला रेखा है, 'लाम बा' (ل ب) कुल विचलन है, यानी पश्चिमी बिंदु से दक्षिण की ओर विचलन। इसके ज्ञान और मात्रा के लिए, सबसे पहले पश्चिमी बिंदु से, मक्का मुअज़्मा के शिरोबिंदु से गुज़रते हुए अलीगढ़ के याम्योत्तर पर एक लंब 'बा ता मीम' (ب ط م) गिराया गया, ताकि यह अलीगढ़ के शिरोबिंदु 'हा' (ه) के दक्षिण से गुज़रे जैसा कि आप इंशाअल्लाह जान लेंगे। 'मीम रा' (م ر) लंब के स्थान का अक्षांश है। त्रिभुज 'ता काफ़ बा' (ط ك ب) समकोण है, 'लाद वाट काफ़' (لد وٹ ک) शहर और भूमध्य रेखा के बीच है, और सभी भुजाएँ एक चतुर्थांश से कम हैं क्योंकि 'बा रा बा मीम हा काफ़' (ب رب م ح ك) के सभी भाग चतुर्थांश हैं और कोण 'बा' (ب) का माप चाप 'मीम रा' (م ر) है क्योंकि गोले पर दो बड़े वृत्तों से बने हर कोण का माप उनके बीच की अधिकतम दूरी का चाप होता है। और 'ता काफ़' (ط ك) मक्का का अक्षांश है, 'बा काफ़' (ب ك) देशांतर का कुल अंतर है। तो, छाया के नियम के अनुसार, 'ज़िल्ल बा' (ظل ب) अज्ञात : 'ज़िल्ल ता काफ़' (ظل ط ك) :: 'ऐन' (ع) : 'ज्या बा काफ़' (جيب ب ك) :. मक्का अक्षांश की लॉग छाया ५९३५६२३, ९ दोनों देशांतरों के बीच का लॉग अंतर।

فتاوی رضویہ جلد ششم نقطہ جنوب کی طرف ام ح بقدر ولار ح ملایا جس نے ع ح کو ط پر قطع کیا ہ سے ط پر گزرتا خط ہ سہ کھینچا کہ سمت قبلہ ہے یعنی نقطہ مغرب سے بقدر قوس اسہ جانب جنوب پھرے تو مواجہہ کعبہ معظمہ ہو مکتب ہیآت کا عمل یہاں تک تمام ہوا کہ ان کا مقصود دائرہ ہندیہ میں خط قبلہ نکالنا تھا وہ اس قدر سے حاصل۔ ظاہر ہے کہ جب ہ سہ سمت قبلہ ہوئی ک ف اس پر عمود گرایا یہ شانہ راست کی جہت ہو گئی تو عہ کی قطب شمالی ہے دہنے شانے سے جانب پشت ہی مائل ہو گا یوں س سمجھئے ہ قد دیوار قبلہ بحالت موجودہ ہے اور قہ ص محاذات قطب سے تفاوت کے فٹ۔ خیر یہ تو استخراج خط تھا مگر ہم کو یہ معلوم کرنا ہے کہ درجوں دقیقوں میں اس انحراف کی مقدار کیا ہوئی۔ اقول رک یعنی بحکم توازی صراط جب تفاضل عرض ہے اس کی مقدار وصہ ح ل ط مربع موال— ماب الح ل ۔ ح ی مرہ جیب تفاضل طور مقدار لو صہ ح ، مد مربع ال— ع مر ا ح ل ح ی والد نو مجموع مربعین الح الوبہ مط ح ب راس کا جذر لرضہ ل لط کہ بحکم عروسی مثلث قائم الزاویہ ہ صہ ط میں مقدار وترہ ط ہے اب بحکم شکل نافع ہ ط : ع :: مرط جیب مرہ ط مجہول :. و صہ ح لد ولط ÷ ل ل الح لط منحط = ی ص ح لد لہ قوسہ ی الح یعنی دس درجہ اٹھائیس دقیقے جانب جنوب پھرنا چاہئے وباللوغارثمیات خط مرہ یعنی فرق طول ۷۶ ۵۳ کی جیب لوگارثمی ۸۸۶۹۴۴، ۹ . :. لو مربع ۳۸۸۸، ۷ ۵، ۹ یعنی ۳۸۸۸، ۵ ۷، ۹، . ت :. مربع ۹۱۳۳، ۷ ۳ ۷، خط د ط یعنی فرق عرض ۱۶ ۳ کی جیب لوگارثمی ۹۰۵۲۹۶۶۱، ۹ . :. لو مربع ۱۰۹۹۳۲۲، ۸ یعنی ۱۰۹۹۳۲۲، ۸، ۲ . :. مربع ۰۱۲۸۸۰۵، . مجموع مربعین ۳۹۰۷۹۳۸، . لوگارثم ۵۹۱۹۴، ۷ لوجذر ۳۸۷، ۹۵۹، . ت :. لومط ۹۰۵۲۹۶۶۱، ۹ - ۳۸۷، ۹۵۹، . ۹ = ۲۵۸۹۹۲۳، ۹ قوس وہی ۸۱۰۲۔ افادہ خامسہ : علی گڑھ کا قبلہ تحقیقی

اقول : اب ح ء افق شمالی علی گڑھ ب نقطہ مغرب ء معدل النہار ح قطب شمالی ط سمت راس مکہ مکرمہ ح ط ك نصف نہار باح ر نصف نہار

علی گڑھ ہ سمت راس علی گڑھ ھ طل خط سمت قبلہ علی گڑھ ل ب تمام انحراف یعنی انحراف از نقطہ مغرب بجنوب اس کی معرفت مقدار

کے لئے اولا نقطہ مغرب سے سمت راس مکہ معظمہ پر گزرتا ہوا نصف النہار علی گڑھ پر عمود ب ط م ڈالا کہ سمت راس سے علی گڑھ ہ سے

جنوب گذرا لما ستعرفہ ان شاء اللہ تعالیٰ م ر عرض موقع العمود ہوا مثلث ط ك ب قائم الزاویہ ہے لد وٹ ک بین ملیتہ والمعدل

اور سب ضلعیں ربع سے کم ہیں لان کلا قطعة من ب رب م ح ك الارباع اور زاویہ ب کا قیاس قوس م ر ہے فان کل زاویۃ علی

کرۃ من عظیمتین قسا سہا قوس غایۃ الفصل بینہما اور ط ك عرض مکہ ب ك تمام فرق طول ہے تو بحکم ظلی ظل ب مجہول

ظل ط ك :: ع : جیب ب ك :. لو ظل عرض مکہ ۵۹۳۵۶۲۳، ۹ لو ح م مابین الکلوین۔

Fatawa Razawiyya, Volume Six Log sine 9.8969265 = 9.2926158. Arc of this shadow of the al-Wusah boards of the position of the perpendicular. It is clear that Aligarh is less than the altitude of the sun by the amount of the length. Therefore, the zenith is situated to the south. Necessarily, the Qibla will shift from west to south. Since Aligarh is also in northern latitude, take the log-sine of the difference. And because in such arcs that are so small, the logarithmic difference is extreme, simple adjustment between the lines brings much ease; calculate it by a precise method as 8.4156618 and keep it saved. Secondly, in the right-angled triangle H-M-T, the measure of angle H is the arc between the two longitudes. And HM is the complement of the altitude of the vertical plane LB. Therefore, tan H : tan TM (unknown) :: Radius : sin HM. Thus, log tan of longitude difference 9.8917679 + log cos of vertical altitude 9.9520134 = 9.8437813 = tan TM. Thirdly, in the right-angled triangle T-M-H, the measure of angle H is the amount of deviation from the south point towards sunset. And the tan of the unknown angle H: tan TM :: Radius : sin HM (saved). So, 9.8437813 - 8.4156618 = 8.4281195. In the table below, its arc is narah sah, its complement is BH-H. The required arc BL, i.e., two degrees and eight minutes, tilting from the west point towards the south, will directly face the Holy Kaaba. By another method: log sine of longitude difference 9.886944 + log cos of the Holy Haram 9.9689262 = 9.8558706. Arc ... First saved value, its sine 9.9138384. Therefore, log sine latitude of Makkah 9.5624685 - log first saved = 9.6286301. Arc... Second saved value + complement latitude of Aligarh ... = Third saved value, its sine 9.9998526 + log first saved = 9.9136691. Arc... fourth saved value... after Aligarh from Makkah, i.e., distance is approximately two thousand four hundred miles. Log sine of this distance 9.5759229. Therefore, log first saved 9.8558706 - log distance = 9.9996977. Arc ... complement BH. The same two degrees and eight minutes south. This is what we intended. If you subtract the wall's deviation from the direction, the deviation from the true Qibla remains only... it is less than 45 degrees. The remaining... i.e., even now it is slightly more than twenty-six degrees. The deviation is still within the Qibla boundaries. Or understand it this way: the true Qibla is 2 degrees 8 minutes west from the North Pole, and a deviation of up to 45 degrees from the true Qibla is permissible. So from the pole it will be 74 degrees 8 minutes. Leaving out 8 minutes, keep the deviation at 74 degrees.

The value of chord AH is 0.8298883, which is the sine of 43°30' in decimal form after conversion of degrees into fractions, becoming 23.92294412. Twice this is the chord. And the side AB is 165 Shari'i cubits = 60. Then the proportion is: 165 : 60 ::

0.8298883 : unknown. Product of extremes and means 895.2315695 / 60 = 131.587. These are the Shari'i cubits of AH. Multiplied by 21…

Page 128 of 736

फ़तावा रज़विया, छठा खंड लॉ सिना 9.8969265 = 9.2926158. अल-वुसाह बोर्डों के इस छाया का चाप जो लंब की स्थिति पर है। यह स्पष्ट है कि अलीगढ़ सूर्य की ऊँचाई से लंबाई की मात्रा में कम है। इसलिए, शिरोबिंदु (zenith) दक्षिण की ओर स्थित है। निश्चित रूप से, किबला पश्चिम से दक्षिण की ओर झुकेगा। चूँकि अलीगढ़ भी उत्तरी अक्षांश में है, इसलिए अंतर का लॉग-साइन लें। और चूँकि इतने छोटे चापों में लघुगणकीय अंतर अत्यधिक होता है, इसलिए रेखाओं के बीच साधारण समायोजन बहुत सुगमता लाता है; अतः इसे सटीक रूप से 8.4156618 निकालें और इसे सुरक्षित रखें। दूसरा, समकोण त्रिभुज H-M-T में, कोण H का माप दो देशांतरों के बीच का चाप है। और HM ऊर्ध्वाधर तल LB की ऊँचाई का पूरक है। अत; tan H : tan TM (अज्ञात) :: त्रिज्या : sin HM. इस प्रकार, देशांतर अंतर का log tan 9.8917679 + ऊर्ध्वाधर ऊँचाई का log cos 9.9520134 = 9.8437813 = tan TM. तीसरा, समकोण त्रिभुज T-M-H में, कोण H का माप दक्षिण बिंदु से सूर्यास्त की ओर विचलन की मात्रा है। और अज्ञात कोण H का tan: tan TM :: त्रिज्या : sin HM (सुरक्षित)। तो, 9.8437813 - 8.4156618 = 8.4281195। नीचे दी गई तालिका में, इसका चाप नरह सह है, इसका पूरक BH-H है। आवश्यक चाप BL, यानी दो डिग्री और आठ मिनट, पश्चिम बिंदु से दक्षिण की ओर झुकते हुए, सीधे पवित्र काबा के सामने होगा। एक अन्य विधि से: देशांतर अंतर का लॉग साइन 9.886944 + पवित्र हरम का लॉग कॉस 9.9689262 = 9.8558706. चाप ... पहला सुरक्षित मान, उसका साइन 9.9138384. अतः, मक्का के अक्षांश का लॉग साइन 9.5624685 - पहला सुरक्षित लॉग = 9.6286301. चाप... दूसरा सुरक्षित मान + अलीगढ़ के अक्षांश का पूरक ... = तीसरा सुरक्षित मान, उसका साइन 9.9998526 + पहला सुरक्षित लॉग = 9.9136691. चाप... चौथा सुरक्षित मान... मक्का से अलीगढ़ के बाद, यानी दूरी लगभग दो हज़ार चार सौ मील है। इस दूरी का लॉग साइन 9.5759229. अतः, पहला सुरक्षित लॉग 9.8558706 - लॉग दूरी = 9.9996977. चाप ... पूरक BH। वही दो डिग्री आठ मिनट दक्षिण। यही हमारा इरादा था। यदि आप दीवार के विचलन को दिशा से घटाते हैं, तो वास्तविक किबला से विचलन केवल... रह जाता है। यह 45 डिग्री से कम है। शेष... यानी अभी भी छब्बीस डिग्री से थोड़ा अधिक है। विचलन अभी भी किबला की सीमाओं के भीतर है। या इसे इस तरह समझें: वास्तविक किबला उत्तरी ध्रुव से 2 डिग्री 8 मिनट पश्चिम में है, और वास्तविक किबला से 45 डिग्री तक का विचलन स्वीकार्य है। तो ध्रुव से यह 74 डिग्री 8 मिनट होगा। 8 मिनट छोड़कर, विचलन को 74 डिग्री रखें।

कर्ण AH का मान 0.8298883 है, जो दशमलव रूप में 43°30' का साइन है, अंशों को भिन्नों में बदलने के बाद 23.92294412 हो गया। इसका दोगुना यह कर्ण है। और भुजा AB 165 शरई हाथ (cubits) है = 60। तब अनुपात यह हुआ: 165 : 60 :: 0.8298883 : अज्ञात। चरम और मध्य पदों का गुणनफल 895.2315695 / 60 = 131.587। ये AH के शरई हाथ हुए। 21 में गुणा...

पृष्ठ 128 का 736

فتاوی رضویہ جلد ششم لر سنہ نو ۹.۸۹۶۹۲۶۵ = ۹.۶۹۶۶۱۵۸ قوس ایں ظل الوصہ الواح عرض موقع العمود ظاہر ہے کہ علیگڑھ الرنو سے بقدر اصہ الطول کم ہے لہٰذا سمت راس سے جنوب کو واقع ہوا لاجرم قبلہ مغرب سے جنوب کو ہٹے گا اور ازانجا کہ علی گڑھ بھی شمالی العرض ہے لوجیب تفاضل لیں اور ازانجا کہ اتنی چھوٹی قوسوں میں تفاضل لوکارثم بشدت ہے محض تعدیل مابین السطرین مساہلت کثیرہ لاتی ہے اسے بطریق دقیق نکالیں ۸.۴۱۵۶۶۱۸ یا اسے محفوظ رکھیں۔ ثانیاً مثلث ح مط قائم الزاویہ میں زاویہ ح کا قیاس قوس ک رمابین الطولین ہے اور ح م تمام عرض عمود سطح ل ب .: ظل ح : ظل ط م مجھول : : ع : جیب ح م : . لو ظل تفاضل طول ۹.۸۹۱۷۶۷۹ + لو حم عرض عمود ۹.۹۵۲۰۱۳۴ = ۹.۸۴۳۷۸۱۳ = ظل ط م ۔ ثالثاً مثلث ط م ہ قائم الزاویہ میں زاویہ ہ کا قیاس قول ال ہے کہ مقدار انحراف ہے نقطہ جنوب سے غروب کو اور ظل زاویہ ہ مجہولہ : ظل ط م : : ع : جیب ہ م محفوظ : . ۹.۸۴۳۷۸۱۳ - ۸.۴۱۵۶۶۱۸ = ۸.۴۲۸۱۱۹۵، الجدول ذیل میں اس کی قوس نرحہ صہ اس کا تمام ب حہ ح کہ مقدار قوس ب ل مطلوب ہوئی یعنی دو درجے آٹھ دقیقے نقطہ مغرب سے جانب جنوب جھکیں تو عین کعبہ معظمہ کے مواجہ ہوں۔ وبوجہ اخر فرق طول لر صہ نو کی جیب ۹.۸۸۶۹۴۴ + لو حم عرض حرم محترم صح صہ لہر ۹.۹۶۸۹۲۶۲ = ۹.۸۵۵۸۷۰۶ قوسہ لر ند لح تمام مہا نہصہ ال ۔ محفوظ اول جیبش ۹.۹۱۳۸۳۸۴. : لو ج عرض مکہ مکرمہ ۹.۵۶۲۴۶۸۵ - لو ج محفوظ اول = ۹.۶۲۸۶۳۰۱ قوسہ الو الواح محفوظ دوم + تمام عرض علی گڑھ سہ صہ ء = محل لح محفوظ سوم جیبہ ۹.۹۹۹۸۵۲۶ + لو ج محفوظ اول = ۹.۹۱۳۶۶۹۱ قوسہ نہ صہ ح بہ محفوظ چہارم تمامہ لو حہ نو لح بعد علیگڑھ از مکہ معظمہ یعنی تقریباً دو ہزار چار سو میل کا فاصلہ ہے اس مسافت کی جیب ۹.۵۷۵۹۲۲۹ : . لو حم محفوظ اول ۹.۸۵۵۸۷۰۶- لو ج بعد = ۹.۹۹۹۶۹۷۷ قوسہ فر صہ نہ تمامہا ب ح وہی دو

درجے آٹھ دقیقے جنوب کو آئے وذلک ما اردناہ انکوانحراف دیوار ک صہ رخ سے تفریق کیا تو قبلہ حقیقی سے صرف لح صہ ؟ انحراف رہا اسے ۴۵ سے کم کیا باقی الوی یعنی ابھی چھبیس درجے سے بھی کچھ زیادہ اور انحراف ہوتا ہے جب بھی حدود قبلہ کے اندر تھی یا یوں سمجھئے کہ قبلہ حقیقی قطب شمالی سے ۲ درجے ۸ دقیقے غرب کو ہے اور قبلہ حقیقی سے ۴۵ درجے تک انحراف روا تو قطب سے ۷۲ ۸۴ ہوگا ۸ دقیقے چھوڑ کر ۷۴ درجے ہی انحراف رکھئے

میں وتر اح کی مقدار ۸۲۹۸۸۸۳ ہے کہ ۳۰۵۴۳ کی جیب نہ الط مر نو ہاعشاریہ میں کسور درجہ کی تحویل سے ۲۳.۹۲۲۹۴۴۱۲ ہوئی جس کا دو چند یہ وتر ہے اور ضلع اب کی ۱۶۵ ذراع شرعی ہے = ۶۰ - پس تناسب یہ ہوا ۱۶۵ : : ۶۰ : : ۸۲۹۸۸۸۳ : . : مجھول : . سطح و سطین ۸۹۵.۲۳۱۵۶۹۵ / ۶۰ = ۱۳۱.۵۸۷ یہ اح کے ذراع شرعی ہوئے ۲۱ امیں ضرب

Fatawa Razawiyyah Volume 6

...comes to 197 feet, meaning ninety feet of this and 107 feet of that, totaling 197 feet. Even if this wall was filled from the North Pole, it would not have been outside the boundaries. This is how the investigation should be, and Allah Almighty is the Grantor of success.

Admonition (Tanbeeh): The statement of the researcher and investigator that an inclination of up to 45 degrees on both sides of the Kaaba Mu'azzama is permissible; one should act upon this by finding the researched and proven Qibla. Because in an approximate method, a difference of several degrees occurs. Now look here, there is a difference of 8 degrees and 20 minutes. And Allah is the Guide to the right path. Praise be to Allah that in this writing, the first benefit occurred with extreme profit and gain. According to this, its historical name should be 'Hidayat al-Muta'al fi Hadd al-Istiqbal' since its composition took place at the end of Dhul-Hijjah 1324 AH. If we consider that the dates of early Muharram 1325 AH will come in the final fair copy, then instead of 'Hadd al-Istiqbal', it is appropriate to say 'Jihatu al-Istiqbal'. And may Allah Almighty's blessings be upon our master and leader Muhammad, and his family and all his companions, Amen. And Allah Almighty knows best, and His knowledge, glorified be His majesty, is most complete and most perfect.

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

...से १९७ फ़ीट आए यानी नब्बे फ़ीट ये और १०७ फ़ीट और ये कुल १९७ फ़ीट भी अगर ये दीवार उत्तरी ध्रुव (क़ुत्ब शुमाली) से भरी होती, सीमाओं से बाहर नहीं थी। इसी तरह तहक़ीक़ होनी चाहिए और अल्लाह तआला ही तौफ़ीक़ देने वाला है।

चेतावनी (तन्बीह): मुहक़्क़िक़ और मुनक़्क़िह का ये कहना कि काबा मुअज़्ज़मा के दोनों तरफ ४५ डिग्री तक इनहराफ़ (झुकाव) जायज़ है, इस पर अमल तहक़ीक़ी और दलीली क़िब्ला निकाल कर करना चाहिए, क्योंकि तक़रीबी तरीक़े में ख़ुद कई कई डिग्री का फ़र्क आ जाता है। अब यहीं देखिये कि ८ डिग्री २० मिनट का फ़र्क है और अल्लाह ही सही रास्ते की तरफ हिदायत देने वाला है। अल्हम्दुलिल्लाह कि इस तहरीर में पहला फ़ायदा बहुत ज़्यादा नफ़ा और अफ़ाज़त के साथ हुआ। इसके लिहाज़ से इसका तारीखी नाम 'हिदायतुल मुता'ल फ़ी हद्दिल इस्तक़बाल' होना चाहिए कि इसकी तस्नीफ़ (लेखन) ज़ुल-हिज्जा १३२४ हिजरी के आख़िर में हुई। और अगर ये ध्यान रखें कि साफ़ कापी (तबीज़) में मुहर्रम १३२५ हिजरी की शुरुआत की तारीख़ें आएँगी, तो 'हद्दुल इस्तक़बाल' के बदले 'जिहतुल इस्तक़बाल' कहना मुनासिब है। और अल्लाह तआला की रहमतें हों हमारे आक़ा और मौला मुहम्मद और उनकी आल और उनके तमाम सहाबा पर, आमीन। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है और उसका इल्म, उसकी शान बुलन्द हो, सबसे कामिल और सबसे पुख्ता है।

पृष्ठ १२९ का ७३६

دے سے ۱۹۷ فٹ آئے یعنی نوے فٹ یہ اور ۱۰۷ فٹ اور یہ جملہ ۱۹۷ فٹ بھی اگر یہ دیوارِ قطب شمالی سے بھری ہوتی حدود سے باہر نہ تھی ھکذا ینبغی التحقیق واللہ تعالٰی ولی التوفیق۔

تنبیہ : قولِ محقق و منقح کہ کعبہ معظمہ کے دونوں جانب ۴۵ درجے تک انحراف روا ہے اس پر عمل قبلہ تحقیقی برہانی نکال کر کرنا چاہیئے کہ طریق تقریبی میں خود کئی کئی درجے کا تفاوت آتا ہے ۔ اب یہیں دیکھئے کہ ۸ درجے ۲۰ دقیقے کا تفاضل ہے واللہ الھادی الی الصواب، الحمد للہ کہ اس تحریر میں افادہ اولی غایت نفع و افاضت پر واقع ہوا مناسب اس کے لحاظ سے اس کا تاریخی نام ھدایۃ المتعال فی حد الاستقبال ہو کہ اس کی تصنیف اواخر ذی الحجہ ۱۳۲۴ھ میں ہوئی ، اور اگر یہ لحاظ کریں کہ تبییض میں اوائل محرم ۱۳۲۵ھ کی تاریخیں آئیں گی تو حد الاستقبال کے عوض جھۃ الاستقبال کہنا مناسب ، وصلی اللہ تعالٰی علی سیدنا و مولانا محمد و آلہ وصحبہ اجمعین آمین واللہ تعالٰی اعلم و علمہ جل مجدہ اتم واحکم ۔

Volume 6

Fatawa Rizvia

Chapter: Places of Prayer (Description of places for prayer)

Question No. 397: From the Old City, 27 Rabi al-Akhir Sharif. What do the scholars of religion say regarding this matter: Zaid says that prayer is not permissible in the doorway of the mosque, whether alone or as an Imam. Amr says that it is permissible without any dislike (karahat) in the doorway, whether alone or as an Imam; however, forming rows in the doorways is disliked, whether it's alone or as an Imam in the mihrab of the mosque. In this matter, is Zaid's statement true or Amr's? Explain and may Allah reward you. A diagram of the mosque is provided for observation.

[Diagram showing a mosque layout with prayer lines]

Answer: In fact, it is disliked (Makruh) for the Imam to stand in the mihrab without necessity such that his feet are inside the mihrab (yes, if the feet are outside and the prostration is inside the mihrab, there is no dislike). Similarly, it is disliked for the Imam to stand in the doorway, but if the feet are outside and the prostration is in the doorway, there is no dislike, provided the threshold of the doorway is not elevated. Otherwise, if the place of prostration is higher than the position of the feet by more than four fingers (girah), then the prayer will not be valid at all. And if it is distinguished by four fingers or less in height, it is not free from dislike. Furthermore, forming a row by the followers in the doorway without necessity is severely disliked as it causes a break in the row, and breaking the row is impermissible. However, if there is a space constraint due to a large congregation, and for this reason the followers stand in the doorway and the Imam stands in the mihrab, then there is no dislike. Likewise, if due to rain...

Page 131 of 736

जिल्द छठी

फ़तावा रिज़विया

बाब अमाकिन अस-सलात (नमाज़ के स्थानों का वर्णन)

मसला नंबर 397: शहर-ए-कोहना से, 27 रबी अल-अखीर शरीफ़। दीन के विद्वान इस मसले में क्या फ़रमाते हैं: ज़ैद कहता है कि मस्जिद के दरवाज़े (दर) में नमाज़ जायज़ नहीं है, चाहे अकेला हो या इमाम। अम्र कहता है कि दरवाज़े में बिना किसी नापसंदगी (कराहत) के जायज़ है, चाहे अकेला हो या इमाम; हालाँकि, दरवाज़ों में सफें बनाना मकरूह है, चाहे वह मस्जिद की मेहराब में अकेला हो या इमाम। इस मसले में ज़ैद की बात सच है या अम्र की? सवाब की उम्मीद में अल्लाह के हुक्म से स्पष्ट करें। मस्जिद का नक्शा अवलोकन के लिए नीचे दिया गया है।

[मस्जिद के लेआउट को दिखाने वाला चित्र]

उत्तर: वास्तव में, बिना ज़रूरत के इमाम का मेहराब में इस तरह खड़ा होना कि उसके पैर मेहराब के अंदर हों, मकरूह है (हाँ, यदि पैर बाहर हों और सजदा मेहराब के अंदर हो, तो कोई कराहत नहीं है)। इसी तरह, इमाम का दरवाज़े में खड़ा होना भी मकरूह है, लेकिन यदि पैर बाहर हों और सजदा दरवाज़े में हो, तो कोई कराहत नहीं है, बशर्ते कि दरवाज़े की देहलीज ऊँची न हो। अन्यथा, यदि सजदे की जगह पैरों के स्थान से चार गिरह (अंगुल) से अधिक ऊँची हो, तो नमाज़ सिरे से होगी ही नहीं। और यदि चार गिरह या उससे कम की ऊँचाई हो, तो यह कराहत से खाली नहीं है। इसके अलावा, बिना ज़रूरत के मुक्तदियों (पीछे नमाज़ पढ़ने वालों) का दरवाज़े में सफ बनाना सख्त मकरूह है क्योंकि यह सफ काटने का कारण बनता है, और सफ काटना नाजायज़ है। हाँ, यदि बड़ी जमात के कारण जगह की कमी हो और इस कारण मुक्तदी दरवाज़े में और इमाम मेहराब में खड़े हों, तो कोई कराहत नहीं है। इसी प्रकार, यदि बारिश के कारण...

पृष्ठ 131 / 736

جلد ششم

فتاویٰ رضویہ

باب اماکن الصلوۃ (مقامات نماز کا بیان)

مسئلہ نمبر ۳۹۷: از شہر کہنہ ۲۷ ربیع الاخریٰ شریف کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید کہتا ہے کہ نماز مسجد کے در میں جائز نہیں ہے چاہے اکیلا ہو چاہے امام ہو۔ عمرو کہتا ہے کہ در میں بلا کراہت جائز ہے اکیلا ہو یا امام ، البتہ صفوں کا دروں میں قائم کرنا مکروہ ہے چاہے مسجد کے محراب میں اکیلا ہو یا امام۔ اس مسئلہ میں زید کا قول سچا ہے یا عمرو کا؟ بینوا توجروا حکم اللہ اور نقشہ مسجد کا واسطے ملاحظہ کے لکھ دیا ہے۔

[مسجد کے نقشے کی تصویر جس میں محراب اور صفوں کی نشاندہی کی گئی ہے]

الجواب: فی الواقع امام کا بے ضرورت محراب میں کھڑا ہونا کہ پاؤں محراب کے اندر ہوں یہ بھی مکروہ (ہاں پاؤں باہر اور سجدہ محراب کے اندر ہو تو کراہت نہیں) اور امام کا در میں کھڑا ہونا بھی مکروہ مگر اسی طرح پاؤں باہر اور سجدہ در میں ہو تو کراہت نہیں بشرطیکہ در کی کرسی بلند نہ ہو ورنہ اگر سجدہ کی جگہ پاؤں کے موضع سے چارہ گرہ سے زیادہ اونچی ہوئی تو سرے سے نماز ہی نہیں ہوگی اور چارہ گرہ یا کم بلندی ممتاز ہوئی تو کراہت سے خالی نہیں، اور بے ضرورت مقتدیوں کا در میں صف قائم کرنا یہ سخت مکروہ کہ باعث قطع صف ہے اور قطع صف ناجائز، ہاں اگر کثرت جماعت کے باعث جگہ میں تنگی ہو اس لئے مقتدی در میں اور امام محراب میں کھڑے ہوں تو کراہت نہیں۔ یونہی اگر مینہ کے

Volume 6 Fatawa-e-Razvia

...due to which people in the back rows stand in the doorways, then this is a necessity, and "Necessities make prohibitions permissible." (T) As for being alone, for him, standing in the mihrab, in the doorway, or in any part of the mosque, whether with or without necessity, does not inherently carry any dislike (karahat). It is stated in *Durr al-Mukhtar*:

| It is disliked for the Imam to stand in the mihrab, but not for his prostration to be in it while his feet are outside it, because the consideration is for the feet.[1] | It is disliked for the Imam to stand in the mihrab; if his feet are outside and the prostration is in the mihrab, then this is not disliked because the consideration is given to the feet. |

In *Radd al-Muhtar*, it is quoted from *Bahr al-Ra'iq*:

| In *Al-Walwalajiyyah* and other works, it is stated that if the mosque is not cramped for those behind the Imam, he should not do that (stand in the mihrab) because it resembles the separation of two places. (Ends) Meaning, a real difference in location prevents the validity of prayer, so the semblance of difference necessitates dislike. Although the mihrab is part of the mosque, its form and appearance create a semblance of location difference. (Summarized) [2] | It is stated in *Al-Walwalajiyyah* and others that when the mosque is not narrow for the worshippers behind the Imam, the Imam should not stand in the mihrab because it will create a suspicion of two different places being separate. (Ends) That is, a real difference in place is a hindrance to the permissibility of prayer, and where there is a suspicion of a difference in place, there will be dislike. Although the mihrab is part of the mosque itself, the shape and structure of the mihrab create a suspicion of a difference in place. (Summarized) (T) |

In the same, from *Mi'raj al-Dirayah*:

| Al-Halwani narrated from Abu al-Layth that it is not disliked for the Imam to stand in the archway (mihrab) in case of necessity, such as when the mosque becomes cramped for the people.[3] | Al-Halwani narrated from Abu al-Layth that it is not disliked for the Imam to stand in the mihrab at the time of necessity, such as when the mosque is narrow for the worshippers. (T) |

In the same, from the aforementioned book:

| The most correct view is what was narrated from Imam Abu Hanifa (may Allah Almighty be pleased with him) that he said: "I dislike for the Imam to stand..." | According to the most correct report, it is narrated from Imam Abu Hanifa (may Allah Almighty be pleased with him) himself that it is disliked for the Imam to stand between two pillars... |

[1] *Durr al-Mukhtar*, Chapter on what invalidates prayer, published by Mujtabai Delhi, 1/92. [2] *Radd al-Muhtar*, Chapter on what invalidates prayer, published by Mustafa al-Babi Egypt, 1/477. [3] *Radd al-Muhtar*, Chapter on what invalidates prayer, published by Mustafa al-Babi Egypt, 1/478.

भाग 6 फ़तावा-ए-रज़विया

...जिस कारण पिछली पंक्ति के लोग द्वारों में खड़े हों तो यह एक आवश्यकता है, और "आवश्यकताएँ निषेधों को अनुमेय बना देती हैं।" (त) जहाँ तक अकेले होने की बात है, उसके लिए आवश्यकता के साथ या बिना आवश्यकता के मेहराब में, द्वार में, या मस्जिद के किसी भी हिस्से में खड़ा होना मूलतः अरुचिकर (कराहत) नहीं है। दुर्रे मुख़्तार में है:

| इमाम का मेहराब में खड़ा होना नापसंद (मकरूह) है, लेकिन अगर उसके पैर बाहर हों और सजदा मेहराब में हो तो यह मकरूह नहीं है, क्योंकि पैरों का विचार किया जाता है।[1] | इमाम का मेहराब में खड़ा होना मकरूह है, अगर कदम बाहर हों और सजदा मेहराब में हो तो यह मकरूह नहीं है क्योंकि पैरों का ही विचार किया जाता है। |

रद्दुल मुहतार में बह्रुर राइक़ से उद्धृत है:

| अल-वलवालजिया और अन्य में है कि यदि इमाम के पीछे वालों के लिए मस्जिद तंग न हो, तो उसे ऐसा (मेहराब में खड़ा होना) नहीं करना चाहिए क्योंकि यह दो स्थानों के अलग होने का संदेह पैदा करता है। (समाप्त) यानी स्थान का वास्तविक अंतर नमाज़ की वैधता को रोकता है, इसलिए अंतर का संदेह नापसंदगी (कराहत) का कारण बनता है। हालाँकि मेहराब मस्जिद का ही हिस्सा है, लेकिन इसका रूप और बनावट स्थान के अंतर का संदेह पैदा करती है। (संक्षिप्त) [2] | वलवालजिया आदि में है कि जब इमाम के पीछे नमाज़ पढ़ने वालों के लिए मस्जिद तंग न हो, तो इमाम को मेहराब में खड़ा नहीं होना चाहिए, क्योंकि यह दो स्थानों के अलग-अलग होने का संदेह पैदा करेगा। (समाप्त) यानी स्थान का वास्तविक अंतर नमाज़ के जायज़ होने से रोकता है और जहाँ स्थान के अंतर का संदेह हो वहाँ कराहत होगी। हालाँकि मेहराब मस्जिद ही से है, लेकिन मेहराब की सूरत और बनावट स्थान के अंतर का संदेह पैदा करती है। (संक्षिप्त) (त) |

उसी में मेराजुद्दरायः से है:

| हलवानी ने अबुल लैथ से उद्धृत किया कि आवश्यकता के समय इमाम का ताक़ (मेहराब) में खड़ा होना मकरूह नहीं है, जैसे कि मस्जिद लोगों के लिए तंग हो जाए।[3] | हलवानी ने अबुल लैथ से नक़ल किया कि ज़रूरत के समय इमाम का मेहराब में खड़ा होना मकरूह नहीं है जबकि नमाज़ियों पर मस्जिद तंग हो। (त) |

उसी में उपर्युक्त पुस्तक से है:

| सबसे सही रिवायत वह है जो इमाम अबू हनीफ़ा (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) से वर्णित है कि उन्होंने कहा: "मैं इमाम के लिए खड़ा होना मकरूह समझता हूँ..." | सही रिवायत के अनुसार इमाम अबू हनीफ़ा रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से ही वर्णित है कि इमाम का दो खंभों के बीच [खड़ा होना]... |

[1] दुर्रे मुख़्तार, नमाज़ को अमान्य करने वाली चीज़ों का अध्याय, मुजतबाई दिल्ली द्वारा प्रकाशित, 1/92। [2] रद्दुल मुहतार, नमाज़ को अमान्य करने वाली चीज़ों का अध्याय, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र द्वारा प्रकाशित, 1/477। [3] रद्दुल मुहतार, नमाज़ को अमान्य करने वाली चीज़ों का अध्याय, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र द्वारा प्रकाशित, 1/478।

पेज 132/736

باعث پچھلی صف کے لوگ دروں میں کھڑے ہوں تو یہ ضرورت ہے والضرورات تبیح المحظورات (سخت ضرورت ممنوعات کو مباح کر دیتی ہے۔ت) رہا اکیلا ، اسکے لئے ضرورت، بے ضرورت محراب میں ، در میں مسجد کے کسی حصہ میں کھڑا ہونا اصلاً کراہت نہیں رکھتا۔ دُر مختار میں ہے:

| کرہ قیام الامام فی المحراب لاسجودہ فیہ وقد ما ہ خارجہ لان العبرۃ للقدم۔[1] | امام کا محراب میں کھڑا ہونا مکروہ ہے، اگر قدم باہر ہوں اور سجدہ محراب میں ہو تو یہ مکروہ نہیں کیونکہ اعتبار قدموں کا ہے۔ |

ردالمحتار میں بحر الرائق سے ہے:

| فی الولوالجیۃ و غیرھا اذا لم یضیق المسجد بمن خلف الامام لا ینبغی لہ ذلك لانہ یشبہ تباین المکانین انتھی یعنی وحقیقۃ اختلاف المکان تمنع الجواز فشبھۃ الاختلاف توجب الکراہۃ والمحراب وان کان من المسجد فصورتہ و ھیأتہ اقتضت شبھۃ الاختلاف اھ ملخصاً [2]۔ | ولوالجیہ وغیرہما میں ہے جب امام کے پیچھے والے نمازیوں کے لئے مسجد تنگ نہ ہو تو امام کو محراب میں قیام نہیں کرنا چاہئے، کیونکہ یہ دو جگہوں کے الگ الگ ہونے کا شبہ پیدا کرے گا انتہیٰ یعنی مکان کا حقیقۃً اختلاف جوازِ نماز سے مانع ہے اور جہاں اختلاف مکان کا شبہ ہو وہاں کراہت ہوگی اور محراب اگرچہ مسجد ہی سے ہے مگر محراب کی صورت اور ہیئت اختلاف مکان کا شبہ پیدا کرتی ہے۔ اھ ملخصاً (ت) |

اسی میں معراج الدار یہ سے ہے:

| حکی الحلوانی عن ابی اللیث لا یکرہ قیام الامام فی الطاق عند الضرورۃ بان ضاق المسجد علی القوم [3]۔ | حلوانی نے ابواللیث سے نقل کیا کہ ضرورت کے وقت امام کا محراب میں کھڑا ہونا مکروہ نہیں جبکہ نمازیوں پر مسجد تنگ ہو۔ (ت) |

اسی میں کتاب مذکور سے ہے:

| الاصح ماروی عن ابی حنیفہ رضی اللہ تعالٰی عنہ انہ قال اکرہ للامام ان یقوم | اصح روایت کے مطابق امام ابو حنیفہ رضی اللہ تعالٰی عنہ سے ہی مروی ہے کہ امام کا دو ستون کے درمیان |

[1] در مختار باب مایفسد الصلوۃ مطبوعہ مجتبائی دہلی ۹۲/۱ [2] ردالمحتار باب مایفسد الصلوۃ مطبوعہ مصطفے البابی مصر ۴۷۷/۱ [3] ردالمحتار باب مایفسد الصلوۃ مطبوعہ مصطفے البابی مصر ۴۷۸/۱

Fatawa Razawiyya Volume 6

Between two pillars[1]: Standing there is disliked (Makruh). (T)

In Tanwir al-Absar: If the place of prostration is higher than the place of the feet by the amount of two upright bricks, the prayer is permissible; but if it is more, it will not be permissible.[2] (T)

In Durr-e-Mukhtar: The amount of their height is half a cubit, which is twelve (12) fingers; Halabi mentioned this.[3] (T)

In Radd al-Muhtar: His statement "prostration is permissible": The apparent meaning is that it is with dislike (Makrahah) because it is contrary to the narrated practice of the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him).[4] (T)

In Sunan Ibn Majah: From Mu'awiyah bin Qurrah, from his father (Allah be pleased with him), who said: "We used to be forbidden from lining up between the pillars during the time of the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him), and we would be driven away from them."[5] (T)

In Musnad Imam Ahmad, Sunan Abi Dawud, Jami` al-Tirmidhi, Sunan an-Nasa'i, and Sahih al-Hakim: From Abd al-Majid bin Mahmud, he said: "We prayed behind one of the governors, and the people forced us [so] we prayed" — i.e., a Tabi'i says: "We prayed behind a governor, and people forced us to pray between two pillars..."

---

1. Radd al-Muhtar, Chapter on what invalidates prayer, published by Mustafa al-Babi Egypt, 1/478.
2. Durr-e-Mukhtar, Commentary on Tanwir al-Absar, Section: When one intends to start the prayer, published by Mujtabai Delhi, 1/67.
3. Durr-e-Mukhtar, Commentary on Tanwir al-Absar, Section: When one intends to start the prayer, published by Mujtabai Delhi, 1/67.
4. Radd al-Muhtar, Section: When one intends to start the prayer, published by Mustafa al-Babi Egypt, 1/273.
5. Sunan Ibn Majah, Chapter on prayer between pillars in the row, published by H.M. Saeed Company Karachi, p. 71.

फ़तावा रज़विया जिल्द 6

दो खंभों के बीच[1]: वहाँ खड़ा होना मकरूह है। (त)

तनवीर अल-अब्सार में है: अगर नमाज़ी के सज्दे की जगह उसके क़दमों की जगह से दो खड़ी ईंटों के बराबर बुलंद (ऊँची) हो तो नमाज़ जायज़ है, और अगर इससे ज़्यादा बुलंद हो तो नमाज़ जायज़ नहीं होगी।[2] (त)

दुर्रे मुख़्तार में है: उनकी बुलंदी की मात्रा आधा हाथ (निसफ़ ज़रा) है जो कि बारह (12) उंगलियों की मात्रा है; हलबी ने इसका ज़िक्र किया है।[3] (त)

रद्दुल मुहतार में है: उनका कौल (कथन) "सज्दा जायज़ है": ज़ाहिर यही है कि यह मकरूह (नापसंद) है क्योंकि यह हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के मंक़ूल (नक़ल किए गए) अमल के ख़िलाफ़ है।[4] (त)

सुनन इब्न माजा में है: मुआविया बिन कुर्रह से रिवायत है, उन्होंने अपने पिता (अल्लाह उनसे खुश हो) से, उन्होंने कहा: "हमें रसूलल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के ज़माने में दो सुतूनों (खंभों) के बीच सफ़ बाँधने से मना किया जाता था और वहाँ से धक्के देकर हटा दिया जाता था।"[5] (त)

मुसनद इमाम अहमद, सुनन अबी दाऊद, जामे तिर्मिज़ी, सुनन नसाई और सहीह हाकिम में है: अब्दुल मजीद बिन महमूद से रिवायत है, उन्होंने कहा: "हमने एक अमीर (शासक) के पीछे नमाज़ पढ़ी, तो लोगों ने हमें मजबूर किया [तो] हमने नमाज़ पढ़ी" — यानी एक ताबई कहते हैं: "हमने एक अमीर के पीछे नमाज़ पढ़ी, लोगों ने हमें मजबूर किया कि हमें दो सुतूनों में नमाज़ [पढ़नी पड़ी]..."

---

1. रद्दुल मुहतार, बाब मा युफ़सिदुस सलात, मतबुआ मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 1/478
2. दुर्रे मुख़्तार, शरह तनवीर अल-अब्सार, फ़स्ल: व इज़ा अरादश शुरू' फ़िस सलात, मतबुआ मुज्तबाई दिल्ली, 1/67
3. दुर्रे मुख़्तार, शरह तनवीर अल-अब्सार, फ़स्ल: व इज़ा अरादश शुरू' फ़िस सलात, मतबुआ मुज्तबाई दिल्ली, 1/67
4. रद्दुल मुहतार, फ़स्ल: व इज़ा अरादश शुरू' फ़िस सलात, मतबुआ मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 1/273

5. सुनन इब्न माजा, बाब अस-सलात बैनस सिवारी फ़िस सफ़, मतबुआ एच.एम. सईद कंपनी कराची, पृ. 71

فتاوی رضویہ جلد ششم

بین الساریتین 1 ۔ کھڑا ہونا مکروہ ہے۔ (ت)

تنویر الابصار میں ہے: لو کان موضع سجودہ ارفع عن موضع القدمین بمقدار اللبنتین منصوبتین جاز وان اکثر لا 2۔ اگر نمازی کے سجدہ کی جگہ قدموں کی جگہ سے دو کھڑی اینٹوں کے برابر بلند ہو تو نماز جائز، اور اگر اس سے زیادہ بلند ہو تو نماز جائز نہ ہو گی۔ (ت)

دُرِّمختار میں ہے: مقدار ارتفاعھما نصف ذراع ثنتا عشرۃ اصبعاً ذکرہ الحلبي 3۔ ان دونوں کا بلند ہونا نصف ذراع ہے جو کہ بارہ 12 انگلیوں کی مقدار ہے حلبی نے اسے ذکر کیا۔ (ت)

ردالمختار میں ہے: قولہ جاز سجودہ الظاھر انہ مع الکرھۃ لمخالفتہ للمأثور من فعلہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم 4۔ قولہ جاز سجدہ یعنی سجدہ تو جائز ہو گا مگر بظاہر کراہت ہوگی کیونکہ حضور کے فعل منقول کے خلاف ہے۔ (ت)

سنن ابن ماجہ میں ہے: عن معویۃ بن قرۃ عن ابیہ رضی اللہ تعالی عنہ قال کنا ننھی ان نصف بین السواری علی عھد رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم ونطرد عنھا طرداً 5۔ یعنی قرہ بن ایاس مزنی رضی اللہ تعالیٰ عنہ فرماتے ہیں کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے زمانہ میں ہمیں دو ستونوں کے بیچ صف باندھنے سے منع فرمایا جاتا اور وہاں سے دھکے دے کر ہٹائے جاتے تھے (ت)

مسند امام احمد و سنن ابی داؤد و جامع ترمذی و سنن نسائی و صحیح حاکم میں ہے: عن عبدالمجید بن محمود قال صلینا خلف امیر من الامراء فاضطرنا الناس صلینا ۔ یعنی ایک تابعی کہتے ہیں ہم نے ایک امیر کے پیچھے نماز پڑھی لوگوں نے ہمیں مجبور کیا کہ ہمیں دوستونوں میں نماز

1 ردالمختار باب ما یفسد الصلوۃ مطبوعہ مصطفےٰ البابی مصر ۱ / ۴۷۸ 2 درمختار شرح تنویر الابصار، فصل واذ اراد الشروع فی الصلوۃ مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱ / ۶۷ 3 درمختار شرح تنویر الابصار، فصل واذ اراد الشروع فی الصلوۃ مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱ / ۶۷ 4 ردالمختار، فصل واذ اراد الشروع فی الصلوۃ مطبوعہ مصطفےٰ البابی مصر ۱ / ۲۷۳ 5 سنن ابن ماجہ باب الصلوۃ بین السواری فی الصّف مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ص ۷۱

Fatawa Razawiyya Volume Six

[Arabic Box Left]: Between the two pillars. When we finished praying, Anas bin Malik (may Allah be pleased with him) said: We used to avoid this in the era of the Holy Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him). [Urdu Box Right]: ...prayed (when we finished praying), Anas bin Malik said: We used to avoid this in the blessed era of the Leader of the Universe (peace and blessings of Allah be upon him).

Al-Hakim said this Hadith is Sahih (authentic), Tirmidhi said this Hadith is Hasan (good). In 'Umdat al-Qari, the commentary of Sahih al-Bukhari, before the chapter on 'Prayer towards a Beast', it is narrated from our master Abdullah bin Mas'ud (may Allah be pleased with him) that he said: "Do not form rows between the pillars and complete the rows." — Do not form rows between the pillars and complete the rows.

And the reason for this is the cutting (breaking) of the row. If people stand in three gaps, then one row is broken into three pieces, and this is impermissible. The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says: "Whoever cuts a row, Allah cuts him off." And if they stand in some gaps and leave some empty, it is still cutting the row; an incomplete row is left, broken, not completed, and completing it is mandatory. The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says: "Complete the rows." (Note: Complete the rows. -T) And if there aren't extra people at that time, then who is preventing them from coming? So this is providing the means for something forbidden, and that is also forbidden. Allah Almighty says: "These are the limits of Allah, so do not approach them [to break them]." (Allah Almighty says: These are the boundaries of Allah, so do not go near to breaking them. -T) And to not consider the standing of followers in gaps as cutting the row is a sheer error. The scholars have clearly stated that this involves cutting the row. In Sahih al-Bukhari, it is mentioned: "Chapter on praying between pillars in other than congregation." Imam Allama Mahmood 'Ayni, who is from the great Hanafi imams, states in this commentary:

[Arabic Box Left]: It is restricted to 'other than congregation' because that cuts the rows, whereas straightening the rows in congregation is required. [Urdu Box Right]: The restriction to 'other than congregation' is because this (praying between two pillars) is breaking the rows, whereas [straightening] of the rows...

1 Jami' al-Tirmidhi, Chapter on what has been narrated regarding the dislike of rows between pillars, printed by Amin Company Delhi 1/31 2 'Umdat al-Qari, Commentary

of Sahih al-Bukhari, Chapter on prayer between pillars in other than congregation, printed by Idara al-Tab'at al-Muniriyya Beirut 286/4 3 Sunan Abi Dawood, Chapter on the straightening of rows etc., printed by Aftab Alam Press Lahore 79/1 4 Sahih Muslim, Chapter on the straightening of rows etc., printed by Qadeemi Kutub Khana Karachi 182/1 5 Al-Quran 2/187 6 Sahih al-Bukhari, Chapter on prayer between pillars in other than congregation, printed by Qadeemi Kutub Khana Karachi 712/1

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

[अरबी बॉक्स बायाँ]: दो खंभों के बीच। जब हमने नमाज़ पढ़ ली, तो अनस बिन मालिक (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने फ़रमाया: हम रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के ज़माने में इससे बचते थे। [उर्दू बॉक्स दायाँ]: ...पढ़ी हुई (जब हम नमाज़ पढ़ चुके तो) अनस बिन मालिक ने फ़रमाया: हम हुज़ूर सैयदे आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के पाक ज़माने में इससे बचते थे।

हाकिम ने कहा यह हदीस सही है, तिर्मिज़ी ने कहा यह हदीस हसन है। 'उम्दतुल क़ारी' शरह सही बुखारी में 'नमाज़ की किताब' में हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ियल्लाहु अन्हु) से मरवी है कि उन्होंने फ़रमाया: "खंभों के बीच सफ़ें न बनाओ और सफ़ें पूरी करो।" — खंभों के बीच में सफ़ न बाँधो और सफ़ें पूरी करो।

और इसका कारण सफ़ का कटना है। अगर तीन दरवाज़ों (गैप) में लोग खड़े हों तो एक सफ़ के तीन टुकड़े हो गए और यह जायज़ नहीं है। रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं: "जो किसी सफ़ को काट दे, अल्लाह उसे काट दे।" और अगर कुछ दरवाज़ों में खड़े हों और कुछ खाली छोड़ दें, तब भी सफ़ कटना है; सफ़ अधूरी छोड़ दी, काट दी, पूरी नहीं की, और उसे पूरा करना लाज़िम है। रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं: "सफ़ों को मुकम्मल करो।" (अनुवाद: सफ़ों को मुकम्मल करो। -त) और अगर उस वक़्त ज़ायद लोग न हों तो आने से कौन रोकता है? तो यह ममनू (वर्जित) का सामान मुहैया करना है और वह भी ममनू है। अल्लाह तआला फ़रमाता है: "यह अल्लाह की हदें हैं, इनके करीब न जाओ (इन्हें तोड़ने के लिए)।" (अल्लाह तआला फ़रमाता है: ये अल्लाह तआला की सीमाएँ हैं, अतः इन्हें तोड़ने के करीब न जाओ। -त) और दरवाज़ों में मुक़्तदियों के खड़े होने को सफ़ का कटना न समझना महज़ ग़लती है। उलेमा-ए-किराम ने साफ़ तौर पर बयान किया है कि इसमें सफ़ का कटना है। सही बुखारी में है: "जमात के अलावा खंभों के बीच नमाज़ पढ़ने का बाब।" इमाम अल्लामा महमूद ऐनी, जो हनफ़ी अइम्मा में से हैं, इस शरह में फ़रमाते हैं:

[अरबी बॉक्स बायाँ]: जमात के अलावा की शर्त इसलिए है क्योंकि वह सफ़ों को काटता है, जबकि जमात में सफ़ों को सीधा करना मतलूब (आवश्यक) है। [उर्दू बॉक्स दायाँ]: जमात के अलावा की शर्त इसलिए है कि यह (नमाज़ी का दो खंभों के बीच ठहरना) सफ़ों को तोड़ना है जबकि सफ़ों का [सीधा करना]...

1 जामिअ तिर्मिज़ी, खंभों के बीच सफ़ की नापसंदगी का बयान, अमीन कंपनी दिल्ली 1/31 2 उम्दतुल क़ारी शरह सही बुखारी, जमात के अलावा खंभों के बीच नमाज़ का बाब, इदारा अल-तबात अल-मुनीरिया बेरूत 286/4 3 सुनन अबू दाऊद, सफ़ों को सीधा करने का बाब आदि, आफ़ताब आलम प्रेस लाहौर 79/1 4 सही मुस्लिम, सफ़ों को सीधा करने का बाब आदि, क़दीमी कुतुब खाना कराची 182/1 5 अल-क़ुरआन 2/187 6 सही बुखारी, जमात के अलावा खंभों के बीच नमाज़ का बाब, क़दीमी कुतुब खाना कराची 712/1

पृष्ठ 134/736

بین الساریتین فلما صلینا قال انس بن مالك رضی اللہ عنہ کنا نتقی ھذا علی عھد رسول اللہ صلی اللہ علیہ وسلم۔ | پڑھی ہوئی (جب ہم نماز پڑھ چکے تو) انس بن مالک نے فرمایا ہم زمانہ اقدس حضور سید عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم میں اس سے بچتے تھے۔

حاکم نے کہا یہ حدیث صحیح ہے، ترمذی نے کہا یہ حدیث حسن ہے، عمدۃ القاری شرح صحیح بخاری میں قبیل باب الصلوٰۃ الی الراحلۃ سیدنا عبداللہ بن مسعود رضی اللہ تعالٰی عنہ سے ہے کہ انہوں نے فرمایا: لا تصفوا بین الاساطین واتموا الصفوف۔ ستونوں کے بیچ میں صف نہ باندھو اور صفیں پوری کرو۔

اور اس کی وجہ قطع صف ہے اگر تینوں دروں میں لوگ کھڑے ہوئے تو ایک صف کے تین ٹکڑے ہوئے اور یہ ناجائز ہے رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں: من قطع صفا قطعہ اللہ۔ جو کسی صف کو قطع کرے اللہ اسے قطع کر دے۔ اور بعض دروں میں کھڑے ہوئے بعض خالی چھوڑ دے جب بھی قطع صف ہے صف ناقص چھوڑ دی، کاٹ دی پوری نہ کی، اور اس کا پورا کرنا لازم ہے۔ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں: اتموا الصفوف۔ (صفوں کو مکمل کرو۔ ت) اور اگر اس وقت زائد لوگ نہ ہوں تو آنے سے کون مانع ہے تو یہ ممنوع کا سامان مہیا کرنا ہے اور وہ بھی ممنوع ہے ۔ قال اللہ تعالٰی تِلْكَ حُدُوْدُ اللّٰهِ فَلَا تَقْرَبُوهَا۔ (اللہ تعالٰی فرماتا ہے یہ اللہ تعالٰی کی حدود ہیں پس ان کو توڑنے کے قریب مت جاؤ۔ ت) اور دروں میں مقتدیوں کے کھڑے ہونے کو قطع صف نہ سمجھنا محض خطا ہے۔ علمائے کرام نے صاف تصریح فرمائی کہ اس میں قطع صف ہے۔ صحیح بخاری میں ہے: باب الصلاۃ بین السواری في غیر جماعۃ۔ (باب جماعت کے

علاوہ ستونوں کے درمیان نماز پڑھنے کا۔ ت) امام علامہ محمود عینی کہ اجلہ ائمہ حنفیہ سے ہیں اس شرح میں فرماتے ہیں:

قید بغیر جماعة لان ذلك يقطع الصفوف و تسوية الصفوف في الجماعة مطلوبة | بغیر جماعت کی قید اس لئے ہے کہ یہ (نمازی کا دو ستونوں کے درمیان ٹھہرنا) صفوں کو توڑنا ہے حالانکہ صفوں کا

1 جامع الترمذی باب ماجاء فی کراهية الصف بين السوارى مطبوعه امين كمپنى دہلى ۱/۳۱ 2 عمدة القارى شرح البخارى باب الصلاة بين السوارى فى غير جماعة مطبوعہ ادارة الطباعة المنيريہ بيروت ۲۸۶/۴ 3 سنن ابى داؤد باب تسوية الصفوف الخ مطبوعہ آفتاب عالم پريس لاہور ۷۹/۱ 4 صحيح مسلم باب تسوية الصفوف الخ مطبوعہ قديمى كتب خانہ كراچى ۱۸۲/۱ 5 القرآن ۲/۱۸۷ 6 صحيح البخارى باب الصلاة بين السوارى فى غير جماعة مطبوعه قديمى كتب خانہ كراچى ۷۱۲/۱

Fatawa Ridawiyya - Volume 6 Exactly the same - (1) It is desired for the congregation to be complete and equal. (T) Similarly, it is mentioned in Fath al-Bari by Imam Ibn Hajar al-Asqalani, then Irshad al-Sari by Imam Ahmad al-Qastallani etc. Also, in Fath al-Bari, from Muhibb al-Tabari, it is said:

[Arabic]: (2) -محل الكرهة عند عدم الضيق [Urdu Translation]: It is disliked when there is no congestion (narrowness). (T)

In Umdat al-Qari, from Ibn Habib, it is stated:

[Arabic]: -ليس النهى عن تقطيع الصفوف اذا ضاق المسجد وانما نهى عنه اذ كان المسجد واسعاً (3) [Urdu Translation]: When the mosque is narrow, breaking the rows is not forbidden; it is forbidden when the mosque is spacious. (T)

In the same source:

[Arabic]: قال مالك فى المدونة لاباس بالصلاة بينهما لضيق المسجد (4) اه ثم ذكر قول ابن حبيب اقول: ولا يخفى انه مستقيم على قواعد مذهبنا۔ [Urdu Translation]: Imam Malik states in al-Mudawwana that when the mosque is narrow, there is no harm in praying between two pillars. Then he quoted the statement of Ibn Habib. I say: It should not be hidden that this is correct according to the principles of our school (Madhhab). (T)

In Durr-e-Mukhtar:

[Arabic]: هذا كله عند عدم العذر كجمعة وعيد فلو قاموا على الرفوف والامام على الارض اوفى المحراب لضيق المكان لم يكره (5) - [Urdu Translation]: All of this (i.e., dislike) is when there is no valid excuse. In the case of an excuse, such as during the crowds of Friday and Eid, if the mosque is narrow and some worshippers stand on 'rufuf' (planks/ shelves above the doors) and the Imam is on the ground or in the mihrab, then there is no dislike. (T)

Footnotes: 1. Umdat al-Qari Sharh al-Bukhari, Chapter: Prayer between Pillars in non-congregation, published by Idarat al-Tiba'ah al-Muniriyyah, Beirut, 2/284. 2. Fath al-Bari Sharh al-Bukhari, Chapter: Prayer between Pillars in non-congregation, published by Mustafa al-Babi, Egypt, 2/124. 3. Umdat al-Qari Sharh al-Bukhari, Chapter: Prayer between Pillars in non-congregation, published by Idarat al-Tiba'ah al-Muniriyyah, Beirut, 2/286. 4. Umdat al-Qari Sharh al-Bukhari, Chapter: Prayer between Pillars in non-congregation, published by Idarat al-Tiba'ah al-Muniriyyah, Beirut, 2/286. 5. Durr-e-Mukhtar, Chapter: What nullifies Prayer, published by Mujtabai, Delhi, 1/92. Note: 'Rufuf' is the plural of 'Raff'. It has several meanings; one

meaning is "the wood whose both ends are fixed in the wall to keep household items on it." Here, it can also mean an elevated place between doors or an elevated position from the ground. — Nazir Ahmad Saidi. Page 135 of 736

फतावा रज़विया - खंड 6 हुबहू - (1) जमाअत में (सफ़ों का) मुकम्मल और बराबर होना वांछित है। (त) इसी तरह फतह अल-बारी इमाम इब्न हजर असकलानी, फिर इरशाद अस-सारी इमाम अहमद कस्तलानी वग़ैरा में है, साथ ही फतह अल-बारी में मुहिब तबरी से उल्लेखित है:

[अरबी]: (2) -محل الكرهة عند عدم الضيق [अनुवाद]: जब तंगी न हो तो फिर मकरूह (नापसंद) है। (त)

उम्दतुल कारी में इब्न हबीब से वर्णित है:

[अरबी]: ليس النهى عن تقطيع الصفوف اذا ضاق المسجد وانما نهى عنه اذ كان المسجد واسعاً- (3) [अनुवाद]: जब मस्जिद तंग हो तो उस समय सफों को तोड़ना मना नहीं है; यह उस समय मना है जब मस्जिद विशाल हो। (त)

उसी में वर्णित है:

[अरबी]: قال مالك فى المدونة لاباس بالصلاة بينهما لضيق المسجد (4) اه ثم ذكر قول ابن حبيب اقول: ولا يخفى انه مستقيم على قواعد مذهبنا. [अनुवाद]: इमाम मालिक मद्वना में फरमाते हैं कि जब मस्जिद तंग हो तो दो खंभों के बीच नमाज़ पढ़ने में कोई हर्ज नहीं। फिर उन्होंने इब्न हबीब का कथन उद्धृत किया है। मैं कहता हूँ: यह स्पष्ट रहना चाहिए कि यह हमारे मज़हब के नियमों के अनुसार सही है। (त)

दुर्रे मुख्तार में है:

[अरबी]: هذا كله عند عدم العذر كجمعة وعيد فلو قاموا على الرفوف والامام على الارض اوفى المحراب لضيق المكان لم يكره (5)- [अनुवाद]: यह सब (यानी कराहत) उस समय है जब कोई मजबूरी न हो। मजबूरी की स्थिति में, उदाहरण के लिए जुमा और ईद की भीड़ के अवसर पर, यदि मस्जिद तंग हो और कुछ नमाज़ी रफूफ (दरवाज़े के ऊपर के तख्तों) पर खड़े हों और इमाम ज़मीन पर या मेहराब में हो, तो कोई कराहत नहीं है। (त)

पादलेख: 1. उम्दतुल कारी शरह अल-बुखारी, अध्याय: गैर-जमाअत में खंभों के बीच नमाज़, प्रकाशित: इदारतुल तिबाअह अल-मुनीरिया, बेरूत, 2/284। 2. फतह अल-बारी शरह अल-बुखारी, अध्याय: गैर-जमाअत में खंभों के बीच नमाज़, प्रकाशित: मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 2/124। 3. उम्दतुल कारी शरह अल-बुखारी... बेरूत, 2/286। 4. उम्दतुल कारी शरह अल-बुखारी... बेरूत,

2/286। 5. दुर्रे मुख्तार, अध्याय: नमाज़ को अमान्य करने वाली चीज़ें, प्रकाशित: मुज़्तबाई, दिल्ली, 1/92। नोट: 'रफूफ', 'रफ' का बहुवचन है। इसके कई अर्थ हैं; एक अर्थ है "वह लकड़ी जिसके दोनों सिरे दीवार में लगे हों ताकि उस पर घर का सामान रखा जा सके।" यहाँ इसका अर्थ दरवाजों के बीच का ऊंचा स्थान या जमीन से ऊंचा स्थान भी हो सकता है। — नज़ीर अहमद सईदी। पृष्ठ 135 का 736

فتاوی رضویہ - جلد ششم بعینہ - (۱) مکمل وبرابر ہونا جماعت میں مطلوب ہے۔ (ت) اسی طرح فتح الباری امام ابن حجر عسقلانی، پھر ارشاد الساری امام احمد قسطلانی وغیرہما میں ہے نیز فتح الباری میں محب طبری سے ہے:

[عربی]: محل الکرھۃ عند عدم الضیق- (2) [اردو]: جب تنگی نہ ہو تو پھر مکروہ ہے۔ (ت)

عمدۃ القاری میں ابن حبیب سے ہے:

[عربی]: لیس النھی عن تقطیع الصفوف اذا ضاق المسجد وانما نھی عنہ اذ کان المسجد واسعاً- (3) [اردو]: جب مسجد تنگ ہو تو اس وقت صفوں کو توڑنا منع نہیں، یہ اس وقت منع ہے جب مسجد کشادہ ہو۔ (ت)

اُسی میں ہے:

[عربی]: قال مالك فی المدونۃ لاباس بالصلاۃ بینھما لضیق المسجد (4) اہ ثم ذکر قول ابن حبیب اقول: ولا یخفی انہ مستقیم علی قواعد مذھبنا۔ [اردو]: امام مالک مدوّنہ میں فرماتے ہیں جب مسجد تنگ ہو تو دو ستونوں کے درمیان نماز پڑھنے میں حرج نہیں اھ پھر انھوں نے ابن حبیب کا قول نقل کیا ہے۔ اقول: مخفی نہ رہے یہ ہمارے مذہب کے قواعد پر درست ہے۔ (ت)

در مختار میں ہے:

[عربی]: ھذا کلہ عند عدم العذر کجمعۃ وعید فلو قاموا علی الرفوف والامام علی الارض اوفی المحراب لضیق المکان لم یکرہ (5)- [اردو]: یہ تمام (یعنی کراہت) اس وقت ہے جب عذر نہ ہو عذر کی صورت میں مثلاً جمعہ اور عید کے بھیڑ کے موقع پر بھی اگر مسجد تنگ ہو اور بعض نمازی

رفوف ف (دروازے کے تختے) پر کھڑے ہوں اور امام زمین پر یا محراب میں ہو تو کراہت نہیں۔ (ت)

حواشی: 1. عمدۃ القاری شرح البخاری باب الصلوۃ بین السواری فی غیر جماعۃ مطبوعہ ادارۃ الطباعۃ المنیریہ بیروت ۲ / ۲۸۴ 2. فتح الباری شرح البخاری باب الصلوۃ بین السواری فی غیر جماعۃ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۲ / ۱۲۴ 3. عمدۃ القاری شرح البخاری باب الصلوۃ بین السواری فی غیر جماعۃ مطبوعہ ادارۃ الطباعۃ المنیریہ بیروت ۲ / ۲۸۶ 4. عمدۃ القاری شرح البخاری باب الصلوۃ بین السواری فی غیر جماعۃ مطبوعہ ادارۃ الطباعۃ المنیریہ بیروت ۲ / ۲۸۶ 5. در مختار باب مایفسد الصلوۃ مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱ / ۹۲ ف: رفوف جمع رف کی ہے اس کے کئی معانی ہیں، ایک معنی یہ ہے "وہ لکڑی جس کے دونوں کنارے دیوار میں لگا کر اس پر گھر کا سامان رکھتے ہیں" یہاں مراد دروازے کے درمیان بلند جگہ بھی ہو سکتی ہے اور زمین سے بلند مقام بھی ہو سکتا ہے۔ نذیر احمد سعیدی صفحہ 135 از 736

Fatawa Razawiya Volume 6

In 'Umdat al-Qari' it is stated:

[Box Left]: 1۔ اذکان منفردا لاباس فی الصلاۃ بین الساریتین اذا لم یکن في جماعة [Box Right]: When praying alone, there is no harm in praying between two pillars if it is not in congregation. (t)

From this explanation, it is clear that there are two errors in the statements of both Zaid and 'Amr. Zaid stated that praying there is unlawful; this is an exaggeration. It is not unlawful, though it is disliked (makruh) for the Imam. Similarly, including an individual praying alone in this ruling is not correct; the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) himself, when he entered the Kaaba, prayed between two pillars.

[Box Left]: کما فی ثبت فی الصحاح عن ابن عمر عن بلال رضی اللہ تعالی عنهم۔ [Box Right]: As recorded in the Sahih (authentic) collections from Ibn 'Umar on the authority of Bilal (may Allah be pleased with them). (t)

'Amr's belief that it is permissible for the Imam to stand in the doorway without any dislike (karahah) is incorrect. Similarly, regarding the standing of an individual (munfarid) in the mihrab as disliked (makruh) is also wrong because the reasons for dislike mentioned by scholars—namely, the suspicion of a difference in location between the Imam and the congregation, or confusion of the situation, or imitation of the People of the Book—none of these reasons apply to an individual. And Allah, Glory be to Him and Exalted is He, knows best, and His knowledge, glorified be His majesty, is most complete, and His ruling, honored be His state, is most perfect.

Problem No. 398: From Delhi, Farash Khana, Madrasa Nu'maniya Islamiya, asked by Muhammad Ibrahim al-Ahmadiabadi (may the Guide forgive him), 7 Sha'ban 1339 AH. What do the scholars of the religion say about how prayer should be performed on a train? A person asked whether prayer on a moving train and ship is permissible or not. Is the answer written by Maulana Kifayatullah Sahib on page 5 of 'Ta'lim al-Islam No. 4', quoted below, correct or not? And do ships, boats, and trains fall under the same ruling or are they different? I seek a detailed discussion as the Muslims today are in dire need of all these issues. The answer of the mentioned Maulana is this:

Answer: Prayer on a moving train and ship is permissible. If one can stand and there is no fear of dizziness or falling, it is necessary to stand and pray. If one cannot stand,

then one may pray while sitting. If during the prayer the train or ship turns and the person's face is no longer towards the Qibla, they must immediately turn towards the Qibla, otherwise, the prayer will not be valid. This is the verbatim quote. Also, please state whether the ruling for obligatory (fard) and optional (nafl) prayers is the same or is there a difference? Explain and you will be rewarded.

The Answer: Obligatory (fard) and mandatory (wajib) prayers, such as Witr, vows (nadhr), and those annexed to them like the Sunnah of Fajr, cannot be performed on a moving train if the train does not stop and...

---

1. 'Umdat al-Qari Sharh al-Bukhari, Book of Prayer Between Pillars etc., printed by Idarat al-Tiba'ah al-Muniriyyah, Beirut, 2/284. Page 136 of 736

फ़तावा रज़विया छठा खंड

उमदतुल क़ारी में है:

[बॉक्स बायां]: 1۔ اذکان منفردا لاباس فی الصلاۃ بین الساریتین اذا لم یکن في جماعة [बॉक्स दायां]: जब अकेले नमाज़ पढ़ रहा हो तो दो खंभों के बीच नमाज़ पढ़ने में कोई हर्ज नहीं है, बशर्ते कि वह जमाअत में न हो। (त)

इस बयान से स्पष्ट है कि ज़ैद और उम्र दोनों की बातों में दो-दो गलतियाँ हैं। ज़ैद ने वहां नमाज़ को नाजायज़ बताया; यह ज्यादती है, नाजायज़ नहीं है, हाँ इमाम के लिए मकरूह (नापसंद) है। इसी तरह, एक अकेले नमाज़ पढ़ने वाले (मुनफ़रिद) को इस हुक्म में शामिल करना सही नहीं है; खुद हुज़ूर अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) जब काबा शरीफ़ में दाखिल हुए, तो आपने दो खंभों के बीच नमाज़ पढ़ी थी।

[बॉक्स बायां]: کما فی ثبت فی الصحاح عن ابن عمر عن بلال رضی اللہ تعالی عنهم۔ [बॉक्स दायां]: जैसा कि सहाह (सहीह हदीस की किताबों) में हज़रत इब्न उमर ने हज़रत बिलाल (रज़ियल्लाहु अन्हुम) से रिवायत किया है। (त)

उम्र का यह मानना कि इमाम का दरवाज़े (दर) में खड़ा होना बिना कराहत (नापसंदगी) के जायज़ है, सही नहीं है। इसी तरह, अकेले नमाज़ पढ़ने वाले (मुनफ़रिद) का मेहराब में खड़ा होना मकरूह समझना भी गलत है, क्योंकि कराहत की जो वजहें उलेमा ने लिखी हैं—यानी इमाम और जमाअत के बीच स्थान के अंतर का संदेह, या स्थिति का भ्रम, या अहले किताब की नकल—इनमें से कोई भी कारण अकेले नमाज़ पढ़ने वाले के लिए लागू नहीं होता। और अल्लाह, महिमा उसकी और वह सबसे ऊपर है, सबसे बेहतर जानता है, और उसका ज्ञान, उसकी महिमा की जय हो, सबसे पूर्ण है, और उसका फैसला, उसकी स्थिति सम्मानित हो, सबसे सही है।

मसला नंबर ३९८: दिल्ली, फ़राश ख़ाना, मदरसा नोमानिया इस्लामिया से, सायल: मुहम्मद इब्राहिम अल-अहमदाबादी (अल्लाह उनकी मग़फ़िरत करे), ७ शाबान १३३९ हिजरी। दीन के उलेमा इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि रेल में नमाज़ किस तरह अदा की जाएगी? एक शख्स ने सवाल किया कि चलती रेल और जहाज़ पर नमाज़ जायज़ है या नहीं? मौलवी किफ़ायतुल्लाह साहब ने 'तालीमुल इस्लाम नंबर ४' के सफ़ा ५ पर जो जवाब लिखा है (नीचे उद्धृत), क्या वह सही है या नहीं? और क्या जहाज़, नाव और रेल का हुक्म एक ही है या अलग-अलग? मैं इस पर विस्तार से चर्चा चाहता हूँ

क्योंकि आजकल के मुसलमानों को इन सभी मसलों की सख्त ज़रूरत है। मौलवी साहब का जवाब यह है:

जवाब: चलती रेल और जहाज़ पर नमाज़ जायज़ है। अगर खड़े होकर पढ़ सकें और चक्कर आने या गिरने का डर न हो, तो खड़े होकर पढ़ना ज़रूरी है। और अगर खड़े होकर न पढ़ सकें तो बैठकर पढ़ लें। और अगर नमाज़ के दौरान रेल या जहाज़ के मुड़ने से नमाज़ी का चेहरा क़िबला की तरफ़ न रहे, तो फ़ौरन क़िबला की तरफ़ मुड़ जाना चाहिए, वर्ना नमाज़ नहीं होगी। (शब्दशः)। और यह भी बताया जाए कि फ़र्ज़ और नफ़्ल सबका हुक्म एक ही है या कोई फ़र्क है? बयान फ़रमाएं, सवाब मिलेगा।

अल-जवाब: फ़र्ज़ और वाजिब जैसे वित्र, नज़्र और उनसे जुड़े हुए जैसे फज्र की सुन्नत, चलती रेल में नहीं हो सकते अगर रेल न रुके और...

---

1. उमदतुल क़ारी शरह अल-बुखारी, बाब: खंभों के बीच नमाज़ आदि, मुद्रित: इदारतुल तिबाअतुल मुनारिया, बेरुत, २/२८४। पेज १३६/७३६

فتاوی رضویہ جلد ششم

عمدۃ القاری میں ہے:

[باکس]: اذکان منفردا لاباس فی الصلاۃ بین الساریتین اذا لم یکن في جماعة 1۔ [باکس]: جب تنہا نماز ادا کر رہا ہو تو دو ستونوں کے درمیان نماز ادا کرنے میں حرج نہیں جبکہ وہ جماعت میں نہ ہو۔ (ت)

اس بیان سے واضح ہو کہ زید و عمر دونوں کے کلام میں دو دو غلطیاں ہیں زید نے در میں نماز ناجائز بتائی یہ زیادتی ہے، ناجائز نہیں، ہاں امام کو مکروہ ہے۔ یو نہی منفرد کو اس حکم میں شریک کرنا ٹھیک نہیں، خود حضور اکرم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم جب کعبہ معظمہ تشریف لے گئے، دو ستونوں کے درمیان نماز پڑھی۔

[باکس]: کما فی ثبت فی الصحاح عن ابن عمر عن بلال رضی اللہ تعالی عنھم۔ [باکس]: جیسا کہ صحاح میں حضرت ابن عمر نے حضرت بلال رضی اللہ تعالیٰ عنہم سے روایت کیا ہے۔(ت)

عمر و کا امام کو در میں کھڑا ہونا بلا کراہت جائز ماننا صحیح نہیں، یو نہی منفرد کا محراب میں قیام مکروہ جاننا کہ یہاں جو وجوہ کراہت علما نے لکھے ہیں یعنی شبہ اختلاف مکان امام و جماعت یا اشتباہ حال یا تشبہ اہل کتاب ان میں سے کوئی وجہ منفرد کے لئے متحقق نہیں واللہ سبحنہ و تعالٰی اعلم وعلمہ جل مجدہ اتم وحکمہ عزشانہ احکم۔

مسئلہ نمبر ۳۹۸: از دہلی فراش خانہ مدرسہ نعمانیہ اسلامیہ مسئولہ محمد ابراہیم الاحمد آبادی غفر لہ الہادی ۷ شعبان ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ریل پر نماز کس طرح ادا کی جائے گی ایک شخص نے سوال کیا کہ چلتی ریل اور جہاز پر نماز جائز ہے یا نہیں، مولوی

کفایت اللہ صاحب نے تعلیم اسلام نمبر ۴ کے صفحہ ۵ پر جو جواب منقولہ ذیل لکھا ہے صحیح ہے یا نہیں؟ اور جہاز یا کشتی اور ریل کا ایک ہی حکم ہے یا غیر غیر؟ میں اس میں تفصیلی بحث چاہتا ہوں آجکل اس کے جملہ مسائل کی اہل اسلام کو سخت ضرورت ہے، جواب مولوی صاحب موصوف کا یہ ہے۔

ج۔ چلتی ریل اور جہاز پر نماز جائز ہے اگر کھڑے ہو کر پڑھ سکے چکر کھانے یا گرنے کا ڈر نہ ہو تو کھڑے ہو کر پڑھنا ضروری ہے اور کھڑے ہو کر نہ پڑھ سکے تو بیٹھ کر پڑھ لے اور اگر درمیان نماز میں ریل یا جہاز گھوم جانے سے نمازی کا منہ قبلہ کی طرف نہ رہے تو فوراً قبلہ کی طرف پھر جانا چاہئے ورنہ نماز نہ ہوگی بلفظہ، اور یہ بھی فرمایا جاوے کہ فرض نفل سب کا حکم ایک ہی ہے یا فرق ہے؟ بینوا توجروا۔

الجواب: فرض اور واجب جیسے وتر و نذر اور ملحق بہ یعنی سنت فجر چلتی ریل میں نہیں ہو سکتے اگر ریل نہ ٹھہرے اور

---

1 عمدة القاری شرح البخاری باب الصلوة بین السواری الخ مطبوعہ ادارة الطباعة المنیریہ بیروت

Fatawa Razawiyya Volume Six

If one sees the time for prayer expiring, they should perform it and subsequently repeat it upon attaining stability (on land). The established research is that absolute stability, even if through intermediaries, on the ground or on something following the ground that is continuously connected to it, is a condition for the validity of these prayers except in cases of inability. Therefore, praying on a riding beast without a valid excuse is not permissible even if it is stationary, because the beast is not attached to the ground. Consequently, it is not permissible on a wagon whose yoke is placed upon bulls while the wagon is stationary, as total stability on the ground has not been achieved, since a part of it is on what is not attached to the ground. Thus, if it is possible to disembark from a moving boat to the land, praying on the boat is not permissible. In fact, upon investigation, even if the boat is stationary at the shore but is on water and has not reached the land, and one can disembark to the shore, prayer in the boat will not be valid; its stability is on the water, and water is not continuously connected to the ground. When prayers are not valid in states of stability unless stability is on the ground and that too totally, then how can they be valid in a moving state when there is no inherent stability at all? This is contrary to a moving ship from which disembarking is not possible, for even if it is stopped, stability will be on the water and not on the ground, hence traveling and stationary states are equal. However, if a train is stopped, it will rest on the ground and become like a platform. It is stopped for the English for eating etc. but not for prayer, so this became an obstruction from the side of people, and the rule in such a state of obstruction is that one should pray and repeat it after the removal of the obstacle.

It is stated in Durr al-Mukhtar:

Arabic Text	**Urdu Translation**
If someone prays on a beast in a compartment of a litter (howdah) while being able to disembark by himself, the prayer is not valid if it is stationary, unless the poles of the litter are on the ground by placing wood underneath it. As for the prayer on a wagon, if the end of the wagon is on the beast and it is moving or not moving, then it is a prayer on a beast;	If someone performed prayer in a litter on a raised bed while being able to disembark, the prayer would not be valid. However, in this case, the prayer would be valid when the poles of the litter are on the ground in such a way that there is a wooden cart underneath it. As for the matter of prayer on a wagon (e.g., a bullock cart pulled by animals), if

Arabic Text

it is permissible in the case of the excuse mentioned in Tayammum, not otherwise. And if the end of the wagon is not on the beast, it is permissible if stationary due to their reasoning that it is like a couch. All of this is concerning the Fard (obligatory), and Wajib (mandatory) of all types, and the Sunnah of Fajr, on the condition of keeping it towards the Qibla if possible, and if not, then as much as possible so that its direction does not change due to its movement for place and safety.

Urdu Translation

a part of the wagon is on the quadruped, whether it is moving or not, it will be considered as prayer on an animal. In that case, the prayer will be performed due to the excuse mentioned in Tayammum; not in cases other than that. And if no part of the wagon is on the quadruped, then the prayer will be valid if the bullock cart is stationary because the jurists have declared it to be like a platform. This entire discussion is regarding Fard, all types of Wajib, and the Sunnahs of Fajr provided that...

फ़तावा रज़विया जिल्द छठा

यदि कोई नमाज़ का समय निकलता देखे, तो वह उसे पढ़ ले और बाद में स्थिरता (ज़मीन पर) होने पर उसे दोहराए। शोध यह है कि पूरी तरह स्थिरता, चाहे मध्यस्थों के माध्यम से ही क्यों न हो, ज़मीन पर या ज़मीन के अनुयायी पर जो ज़मीन से निरंतर जुड़ा हो, इन नमाज़ों की वैधता के लिए शर्त है, सिवाय मजबूरी के। इसलिए, बिना किसी कारण के जानवर पर नमाज़ जायज़ नहीं है, भले ही वह खड़ा हो, क्योंकि जानवर ज़मीन का अनुयायी नहीं है। अतः उस गाड़ी पर, जिसका जुआ बैलों पर रखा हो और गाड़ी खड़ी हो, नमाज़ जायज़ नहीं है क्योंकि पूरी तरह ज़मीन पर स्थिरता नहीं हुई, एक हिस्सा उस चीज़ पर है जो ज़मीन की अनुयायी नहीं है। इसलिए चलती नाव से यदि ज़मीन पर उतरना संभव हो, तो नाव में नमाज़ पढ़ना जायज़ नहीं है, बल्कि शोध के अनुसार भले ही नाव किनारे पर खड़ी हो लेकिन पानी पर हो और ज़मीन तक न पहुँची हो, और किनारे पर उतरना संभव हो, तो नाव में नमाज़ नहीं होगी। इसकी स्थिरता पानी पर है और पानी ज़मीन से निरंतर जुड़ा हुआ नहीं है। जब स्थिरता की स्थितियों में नमाज़ तब तक जायज़ नहीं होती जब तक स्थिरता ज़मीन पर न हो और वह भी पूरी तरह, तो चलने की स्थिति में कैसे जायज़ हो सकती है जब स्थिरता ही नहीं है? यह उस चलती नाव (जहाज़) के विपरीत है जिससे उतरना संभव न हो, क्योंकि यदि उसे रोकें भी तो स्थिरता पानी पर होगी न कि ज़मीन पर, इसलिए यात्रा और ठहराव बराबर हैं। लेकिन यदि रेलगाड़ी रोक ली जाए तो वह ज़मीन ही पर ठहरेगी और तख्त की तरह हो जाएगी। इसे अंग्रेज़ों के खाने आदि के लिए रोका जाता है और नमाज़ के लिए नहीं, तो यह बंदों की ओर से रुकावट हुई और ऐसी रुकावट की स्थिति में हुक्म वही है कि नमाज़ पढ़ ले और रुकावट हटने के बाद उसे दोहराए।

दुर्र-ए-मुख्तार में है:

अरबी पाठ

यदि कोई व्यक्ति जानवर पर रखे हौदे के एक हिस्से में नमाज़ पढ़े जबकि वह स्वयं उतरने में सक्षम हो, तो नमाज़ जायज़ नहीं है यदि वह खड़ा हो, सिवाय इसके कि हौदे के डंडे ज़मीन पर हों, जैसे कि उसके नीचे लकड़ी लगा दी गई हो। रहा सवाल गाड़ी पर नमाज़ का, तो यदि गाड़ी का एक

उर्दू अनुवाद

यदि किसी ने खड़े चारपाई पर कजावे (हौदे) में नमाज़ अदा की जबकि वह उतरने पर सक्षम था तो नमाज़ न होगी, अलबत्ता इस सूरत में नमाज़ हो जाएगी जब कजावे की लकड़ियाँ ज़मीन पर हों इस तरह कि उसके नीचे लकड़ी की गाड़ी हो। रहा मामला गाड़ी (मसलन बैलगाड़ी जिसे

अरबी पाठ

सिरा जानवर पर है और वह चल रही है या नहीं, तो वह जानवर पर नमाज़ मानी जाएगी; यह तयम्मुम में वर्णित मजबूरी की स्थिति में जायज़ है, अन्यथा नहीं। और यदि गाड़ी का सिरा जानवर पर नहीं है, तो खड़े होने की स्थिति में नमाज़ जायज़ है क्योंकि फ़ुक़हा ने इसे तख्त के समान माना है। यह सब फ़रायज़, वाजिबात के सभी प्रकारों और फ़ज़्र की सुन्नतों के बारे में है, इस शर्त के साथ कि यथासंभव उसे किबला की ओर किया जाए, अन्यथा यथाशक्ति, ताकि उसकी चाल के कारण दिशा न बदले...

उर्दू अनुवाद

जानवर खींचते हैं) पर नमाज़ का, तो अगर गाड़ी का एक हिस्सा चौपाए के ऊपर है चाहे वह चलती है या नहीं तो यह चौपाए पर नमाज़ समझी जाएगी, तो तयम्मुम में बयान की गई मजबूरी की वजह से नमाज़ अदा हो जाएगी, इसके अलावा में नहीं। और अगर गाड़ी का कोई हिस्सा चौपाए पर नहीं तो नमाज़ हो जाएगी अगर बैलगाड़ी खड़ी हो क्योंकि फ़ुक़हा ने इसे तख्त की मिसाल करार दिया है। यह तमाम गुफ़्तगू फ़रायज़, वाजिबात की तमाम अनवा (प्रकार) और फ़ज़्र की सुन्नतों में है बशर्ते कि...

وقت نکلتا دیکھے، پڑھ لے پھر بعد میں استقرار اعادہ کرے، تحقیق یہ ہے کہ استقرار بالکلیہ ولو بالوسائط زمین یا تابع زمین پر کہ زمین سے متصل با اتصال قرار ہو، ان نمازوں میں شرط صحت ہے مگر بہ تعذر، ولہذا دابہ پر بلا عذر جائز نہیں اگرچہ کھڑا ہو کہ دابہ تابع زمین نہیں، ولہذا گاڑی پر جس کا جوا بیلوں پر رکھا ہے اور گاڑی ٹھہری ہوئی ہے جائز نہیں کہ بالکلیہ زمین پر استقرار نہ ہوا ایک حصہ غیر تابع زمین پر ہے ولہذا چلتی کشتی سے اگر زمین پر اترنا میسر ہو کشتی میں پڑھنا جائز نہیں بلکہ عند التحقیق اگرچہ کشتی کنارے پر ٹھہری ہو مگر پانی پر ہو زمین تک نہ پہنچی ہو اور کنارے پر اتر سکتا ہے کشتی میں نماز نہ ہوگی اس کا استقرار پانی پر ہے اور پانی زمین سے متصل با اتصال قرار نہیں جب استقرار کی حالتوں میں نمازیں جائز نہیں ہوتیں جب تک استقرار زمین پر اور وہ بھی بالکلیہ نہ ہو تو چلنے کی حالت میں کیسے جائز ہو سکتی ہیں کہ نفس استقرار ہی نہیں ، بخلاف کشتی رواں جس سے نزول میسر نہ ہو کہ اسے اگر روکیں گے بھی تو استقرار پانی پر ہوگا نہ کہ زمین پر ، لہذا سیر و وقوف برابر ، لیکن اگر ریل روک لی جائے تو زمین ہی پر ٹھہرے گی اور مثل تخت ہو جائے گی ، انگریزوں کے کھانے وغیرہ کے لئے روکی جاتی ہے اور نماز کے لئے نہیں تو منع من جہتہ العباد ہوا اور ایسے منع کی حالت میں حکم وہی ہے کہ نماز پڑھ لے اور بعد زوال مانع اعادہ کرے۔

دُرّ مختار میں ہے:

| لوصلی علی دابۃ فی شق محمل وھو یقدر علی النزول بنفسہ لا تجوز الصلاۃ علیھا اذا کانت واقفۃ الا ان تکون عیدان المحمل علی الارض بان رکز تحتہ خشبۃ واما الصلوۃ علی العجلۃ ان کان طرف

العجلة على الدابة وهی تسیر ولا تسیر فهی صلاة علی الدابة فتجوز فی حالة العذر المذکور فی التیمم لا فی غیرها وان لم یکن طرف العجلة علی الدابة جاز لو واقفة لتعلیلهم بانها کالسریر هذا کله فی الفرض والواجب بانواعه وسنة الفجر بشرط ایقافها للقبلة ان امکنه والا فبقدر الامکان لئلا یختلف بسیرها لامکان وامانی | اگر کسی نے کھڑے چار پائی پر کجاوے میں نماز ادا کی حالانکہ وہ اترنے پر قادر تھا تو نماز نہ ہوگی، البتہ اس صورت میں نماز ہوجائے گی جب کجاوے کی لکڑیاں زمین پر ہوں بایں طور کہ اس کے نیچے لکڑی کی گاڑی ہو۔ رہا معاملہ گاڑی (مثلاً بیل گاڑی جس کو جانور کھینچتے ہیں) پر نماز کا تو اگر گاڑی کا ایک حصہ چوپائے کے اوپر ہے خواہ وہ چلتی ہے یا نہیں تو یہ چوپائے پر نماز سمجھی جائے گی تو تیمم میں بیان کردہ عذر کی وجہ سے نماز ادا ہوجائے گی، اس کے علاوہ میں نہیں۔ اور اگر گاڑی کا کوئی حصہ چارپائے پر نہیں تو نماز ہوجائے گی اگر بیل گاڑی کھڑی ہو کیونکہ فقہائے اسے تخت کی مثل قرار دیا ہے۔ یہ تمام گفتگو فرائض، واجبات کی تمام انواع اور فجر کی سنتوں میں ہے بشرطیکہ |

Fatawa Razviya, Volume VI

Nafal (voluntary prayer) is permissible on a palanquin or cart unconditionally. (Urdu side explanation): The ride should be stopped facing the Qibla, and if that is not possible, it is a condition to make it stand facing the Qibla as much as possible so that the location does not change due to its movement. Otherwise, reading voluntary prayers on palanquins and bullock carts is absolutely permissible. (T)

In Durr-al-Mukhtar itself it is stated:

Summary of the Arabic text: "In conclusion, both maintaining the same place and facing the Qibla are conditions in prayers other than the voluntary ones when possible; they are not waived except due to an excuse. Thus, if it is possible to stop it facing the Qibla, one must do so. If it is possible to stop it but not to face the Qibla, then there is no dispute that stopping it is mandatory because of the reason mentioned by the commentator (i.e., to maintain unity of place)." (Abridged)

Urdu translation: "The gist is that as far as possible, in prayers other than voluntary ones, unity of location and facing the Qibla are both conditions; thus, they will not be waived without an excuse. So, if one can stop the ride facing the Qibla, one should. As for the situation where one can stop it but not face the Qibla, then stopping it is necessary, as the commentator mentioned the reason (i.e., so that unity of location is achieved throughout the prayer). (Abridged). (T)"

In the same source it is stated:

Summary of the Arabic text: "Obligatory (Fard) and mandatory (Wajib) prayers of all types are not valid on an animal except out of necessity. In such cases, one performs them by gestures, provided the animal is stopped facing the Qibla if possible. If the animal is moving, prayer on it is not valid if one is able to stop it. Otherwise, if there is fear of an enemy, one prays as best as one can, as mentioned in Al-Imdad etc. I say: it is proven that the hindrance consists of two things: first, the prayer being on an animal, even via a cart whose end is on an animal; second, the movement and the change of location. Do you not see that they made stopping mandatory and invalidated..."

Urdu translation: "All types of Fard and Wajib cannot be performed on a quadruped without necessity. Yes, in times of necessity and excuse, perform prayer on it with gestures, provided that as far as possible the animal is made to stand facing the Qibla. When one is able to stop the animal, then in such a case prayer on a moving

animal (beast) is not permissible. However, if stopping is not possible, for example, there is fear of an enemy, then perform the prayer in whatever way possible. It is similarly stated in Al-Imdad etc. I say, it is established that the hindrance consists of two things: the first thing is performing prayer on top of an animal, even if by means of a bullock cart whose..."

---

1. Durr-al-Mukhtar, Chapter of Witr and Nafal, published by Mujtabai Delhi, 1/98
2. Radd-al-Muhtar, Chapter of Witr and Nafal, published by Mujtabai Delhi, 1/724
3. Chapter of Witr and Nafal, published by Mujtabai Delhi, 1/70 Page 138 of 736

फ़तावा-ए-रज़विया, जिल्द 6

नफ़्ल नमाज़ पालकी या गाड़ी पर बिना किसी शर्त के जायज़ है। (उर्दू पक्ष की व्याख्या): सवारी को क़िबला की तरफ खड़ा किया गया हो, और अगर ऐसा मुमकिन न हो तो जितना मुमकिन हो क़िबला की तरफ खड़ा करना शर्त है ताकि इसके चलने से जगह न बदल जाए। बाकी नवाफ़िल पालकी और बैलगाड़ी में पढ़ना मुतलक़न जायज़ है। (त)

दुर्रे मुख़्तार में ही है:

अरबी पाठ का सारांश: "निष्कर्ष यह है कि जहाँ तक मुमकिन हो, नवाफ़िल के अलावा नमाज़ में जगह का एक होना और क़िबला का रुख करना, दोनों शर्तें हैं। उज़्र (मजबूरी) के बिना ये शर्त ख़त्म नहीं होगी। इसलिए अगर सवारी को क़िबला की तरफ खड़ा किया जा सके तो करे। रही यह बात कि अगर खड़ा कर सकता है लेकिन क़िबला रुख खड़ा नहीं कर सकता, तो खड़ा करना लाज़िम है जैसा कि शारह (व्याख्याकार) ने इसकी वजह बताई है (यानी ताकि पूरी नमाज़ में जगह की एकता बनी रहे)।" (संक्षिप्त)

उर्दू अनुवाद: "हासिल यह है कि जहाँ तक मुमकिन हो नवाफ़िल के अलावा नमाज़ में इत्तेहाद-ए-मकान और इस्तक़बाल-ए-क़िबला दोनों शर्त हैं, तो शर्त-ए-उज़्र के बिना साक़ित न होगी। पस अगर सवारी को क़िबला रुख़ खड़ा कर सके तो करे, बाकी रहा यह कि अगर खड़ा कर सकता है मगर क़िबला रुख़ खड़ा नहीं कर सकता तो खड़ा करना लाज़िम है जैसा कि शारह ने इसकी इल्लत ज़िक्र की है (यानी ताकि इत्तेहाद-ए-मकान सब नमाज़ में हासिल रहे)। (मुलख़्ख़सन)। (त)"

उसी में है:

अरबी पाठ का सारांश: "फर्ज़ और वाजिब के तमाम प्रकार बिना ज़रूरत के चौपाये पर अदा नहीं किए जा सकते। हाँ, अगर ज़रूरत और मजबूरी के वक्त उस पर इशारे से नमाज़ अदा करे, बशर्ते कि मुमकिन हद तक जानवर को क़िबला की तरफ खड़ा करे। जब जानवर को खड़ा करने पर क़ादिर (सक्षम) हो तो ऐसी सूरत में चलते हुए जानवर पर नमाज़ जायज़ नहीं। अलबत्ता, खड़ा करना मुमकिन न हो, मिसाल के तौर पर उसे दुश्मन का खौफ है, तो जिस तरह मुमकिन हो नमाज़ अदा करे। इमदाद वगैरह में इसी तरह है। मैं कहता हूँ यह साबित हुआ कि दो चीज़ें रुकावट हैं, पहली चीज़ नमाज़ का जानवर के ऊपर पढ़ना है, चाहे वो बैलगाड़ी के ज़रिए हो जिसका..."

उर्दू अनुवाद: "फ़र्ज़ और वाजिबात की तमाम अनवा (प्रकार) को बेग़ैर ज़रूरत के चारपाये पर अदा नहीं किया जा सकता, हाँ अगर ज़रूरत व उज़्र के वक़्त इस पर इशारे से नमाज़ अदा करे बशर्ते कि इम्कानी हद तक दाबा (जानवर) को क़िबला रुख़ खड़ा करे, जब दाबा खड़ा करने पर क़ादिर हो तो ऐसी सूरत में चलते हुए दाबा पर नमाज़ जायज़ नहीं, अलबत्ता खड़ा करना मुमकिन न हो मसलन उसे दुश्मन का ख़ौफ़ है तो जिस तरह मुमकिन हो नमाज़ अदा करे। इमदाद वग़ैरह में इसी तरह है, मैं कहता हूँ यह साबित हुआ कि मानेअ (रुकावट) दो चीज़ें हैं, पहली चीज़ नमाज़ का जानवर के ऊपर पढ़ना अगरचे बवास्ता बैलगाड़ी के जिस..."

---

1. दुर्रे मुख़्तार, बाबुल वित्र वल नवाफ़िल, मतबुआ मुज्तबाई दिल्ली, 1/98
2. रद-उल-मुहतार, बाबुल वित्र वल नवाफ़िल, मतबुआ मुज्तबाई दिल्ली, 1/724
3. बाबुल वित्र वल नवाफ़िल, मतबुआ मुज्तबाई दिल्ली, 1/70 पृष्ठ 138 का 736

النفل فتجوز علی المحمل والعجلة مطلقاً ۱۔ قبلہ رُخ کھڑی کی ہو، اور اگر ایسا ممکن نہ ہو تو بقدر الامکان قبلہ رُخ کھڑا کرنا شرط ہے تا کہ اسکے چلنے سے مکان میں تبدیلی نہ ہو جائے باقی نوافل کجاوے اور بیل گاڑی میں پڑھنا مطلقاً جائز ہیں۔ (ت)

خود ردالمحتار میں ہے:

الحاصل ان کلاً من اتحاد المکان واستقبال القبلة شرط فی صلاة غیر النافلة عند الامکان لا یسقط الا بعذر فلو امکنه ایقافها مستقبلاً فعل بقی لو امکنه الایقاف دون الاستقبال فلا کلام فی لزومه لما ذکره الشارح من العلة ۲ (ملخصاً) حاصل یہ ہے کہ جہاں تک ممکن ہو نوافل کے علاوہ نماز میں اتحادِ مکان اور استقبال قبلہ دونوں شرط ہیں تو شرطِ عذر کے بغیر ساقط نہ ہوگی ، پس اگر سواری کو قبلہ رُخ کھڑا کر سکے تو کرے باقی رہا یہ کہ اگر کھڑا کرسکتا ہے مگر قبلہ رخ کھڑا نہیں کرسکتا تو کھڑا کرنا لازم ہے جیسا کہ شارح نے اسکی علت ذکر کی ہے (یعنی تاکہ اتحادِ مکان سب نماز میں حاصل رہے) (ملخصاً)۔ (ت)

اُسی میں ہے:

الفرض والواجب بانواعه لا یصح علی الدابة الا لضرورة ، فیومي علیها بشرط ایقافها جهة القبلة ان امکنه ، واذا کانت تسیر لا تجوز الصلاة علیها اذا قدر علی ایقافها والابان کان خوفه من عدو یصلی کیف قدر کما فی الامداد وغیره اهـ ۳ اقول فثبت ان المانع شیئان الاول کون الصلاة علی دابة ولو بواسطة عجلة طرفها علی دابة الثانی السیر واختلاف المکان الا تری انهم اوجبوا الایقاف وابطلو فرض اور واجبات کی تمام انواع کو بغیر ضرورت کے چار پائے پر ادا نہیں کیا جاسکتا ہاں اگر ضرورت

و عذر کے وقت اس پر اشارے سے نماز ادا کرے بشرطیکہ امکانی حد تک دابہ کو قبلہ رُخ کھڑا کرے جب دابہ کھڑا کرنے پر قادر ہو تو ایسی صورت میں چلتے ہوئے دابہ (جانور) پر نماز جائز نہیں، البتہ کھڑا کرنا ممکن نہ ہو مثلاً اسے دشمن کا خوف ہے تو جس طرح ممکن ہو نماز ادا کرے۔ امداد وغیرہ میں اسی طرح ہے اھ میں کہتا ہوں یہ ثابت ہوا کہ مانع دو چیزیں ہیں، پہلی چیز نماز کا جانور کے اوپر پڑھنا اگرچہ بوسطِ بیل گاڑی کے جس

---

۱ درمختار، باب الوتر والنوافل، مطبوعہ مجتبائی دہلی ، ۱/ ۹۸ ۲ ردالمحتار باب الوتر والنوافل مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱/ ۷۲۴ ۳ باب الوتر والنوافل، مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱/ ۷۰ Page 138 of 736

Fatawa Razawiyya Volume VI

[Arabic Text]: ...by moving safely without fear. If the only impediment was the first one, then there would be an excuse allowing prayer on an animal, and it would have been mandatory for it to be permissible without differentiating between movement and standing still. However, they made a distinction, which clarifies that movement itself invalidates [the prayer] except with an excuse that prevents stopping. So, if the entire carriage is on the ground and an animal pulls it with a rope, here only the first impediment is absent, not the second. Therefore, invalidity is necessary except with an excuse. No regard should be given to what was intended to be derived from a concept that was not customary in that time's usage; so understand and remain firm.

[Urdu Commentary]: ...one side of which is on the animal. The second thing is the animal's movement, which leads to a change of location. Have you not noticed that jurists have made it mandatory to stop the animal and declared the prayer invalid in a state of movement, except for one who fears an enemy, etc.? Thus, if there is no impediment besides the first one, and an excuse is present that makes prayer on an animal permissible, then it would be necessary to accept the validity of prayer regardless of the difference between moving and standing. But since the jurists distinguished between them, it became clear that movement itself is a prayer-nullifier, unless stopping is impossible. Merely having an excuse that prevents dismounting is not enough; rather, the excuse that prevents stopping is what counts. Now, if a bullock cart is entirely on the ground and an animal is pulling it by a rope, then the first impediment (praying on a four-legged animal) is not present here, but the second impediment (change of place) is present. Therefore, in this situation, the prayer becomes invalid without a valid excuse. So, the conceptual inference made by the commentator will not be considered because the customs of that era do not accept such a concept. Understand this and remain firm. (T)

Also in the same [book] from Ghunyah: [Arabic Text]: This is based on the fact that a change of place is an invalidator unless it is for its [the prayer's] rectification. (1) [Urdu Translation]: This is based on the fact that a change of place is a nullifier (of prayer) when it is not for its rectification. (T)

In the same [volume] on page 794, with reference to Bahr al-Ra'iq from Fatawa Zahiriyyah: [Arabic Text]: If the animal pulled him so much that it moved him from his place of prostration, it is invalidated. (2) [Urdu Translation]: If the animal pulled it so much that the place of his prostration changed, then the prayer will be invalid. (T)

1 Radd al-Muhtar, Chapter on what invalidates prayer, etc., printed by Mujtabai, Delhi, 1/421 2 Chapter on what invalidates prayer, etc., printed by Mujtabai, Delhi, 1/422

[अरबी पाठ]: ...सुरक्षित रूप से बिना किसी डर के चलने से। यदि केवल पहली रुकावट होती, तो जानवर पर नमाज़ पढ़ने की अनुमति देने वाला एक बहाना मिल जाता, और बिना चलने और खड़े रहने में अंतर किए इसके जायज़ होने को मानना अनिवार्य होता। लेकिन उन्होंने अंतर किया है, जिससे स्पष्ट होता है कि चलना स्वयं नमाज़ को अमान्य करने वाला है, सिवाय उस बहाने के जो रोकने से रोकता है। अतः यदि पूरी गाड़ी ज़मीन पर हो और कोई जानवर उसे रस्सी से खींच रहा हो, तो यहाँ केवल पहली रुकावट नहीं है, दूसरी है। इसलिए, बिना किसी बहाने के अमान्यता अनिवार्य है। उस अवधारणा से जो निकालने का इरादा था, उस पर कोई ध्यान नहीं दिया जाना चाहिए जो उस समय के रिवाज में नहीं थी; अतः इसे समझें और दृढ़ रहें।

[उर्दू टीका]: ...जिसका एक हिस्सा जानवर पर हो। दूसरी बात जानवर का चलना है जो स्थान परिवर्तन का कारण बनता है। क्या आपने गौर नहीं किया कि फ़ुक़हा (धर्मशास्त्रियों) ने जानवर को खड़ा करना अनिवार्य किया है और चलने की स्थिति में नमाज़ को अमान्य करार दिया है, सिवाय उसके जिसे दुश्मन आदि का डर हो? अतः यदि पहली चीज़ के अलावा कोई रुकावट नहीं है और ऐसा कोई बहाना मौजूद है जो जानवर पर नमाज़ को मुबाह (अनुमेय) बना दे, तो चलने और खड़े होने के अंतर से ऊपर उठकर नमाज़ के जायज़ होने को मानना लाज़िम होता। लेकिन फ़ुक़हा ने उनके बीच अंतर किया, तो साफ़ हो गया कि चलना स्वयं नमाज़ को अमान्य करने वाला है, बशर्ते कि खड़ा करना मुमकिन न हो। सिर्फ इतना बहाना काफी नहीं है जो उतरने से रोके, बल्कि वह बहाना जो खड़ा करने से रोके, विश्वसनीय है। अब अगर बैलगाड़ी पूरी तरह ज़मीन पर हो और जानवर उसे रस्सी के ज़रिए खींच रहा हो, तो यहाँ पहली रुकावट (नमाज़ का जानवर पर होना) मौजूद नहीं है, अलबत्ता दूसरी रुकावट (जगह की तब्दीली) मौजूद है। लिहाज़ा इस सूरत में बिना उज़्र (बहाने) के नमाज़ फ़ासिद (अमान्य) हो गई। अतः इसे नहीं देखा जाएगा कि जो व्याख्याकार ने अर्थगत रूप से अनुमान लगाया है क्योंकि उस दौर की आदत इस अवधारणा को स्वीकार नहीं करती, इसे समझ लें और इस पर कायम रहें। (त)

इसी में 'गुन्या' से है: [अरबी पाठ]: यह इस आधार पर है कि स्थान परिवर्तन अमान्य करने वाला है जब तक कि यह उसके(नमाज़ के) सुधार के लिए न हो। (1) [उर्दू अनुवाद]: यह इस बिना पर है कि जगह का अलग होना (नमाज़ को) बातिल करने वाला है जबकि यह इसके सुधार के लिए न हो। (त)

इसी 794 में 'बहर-उर-राईक' के हवाले से 'फ़तावा ज़हीरिया' से है: [अरबी पाठ]: यदि जानवर ने उसे इतना खींचा कि उसे उसके सजदे के स्थान से हटा दिया, तो वह अमान्य हो जाती है। (2) [उर्दू अनुवाद]: अगर जानवर ने उसे इतना खींचा कि उसके सजदे की जगह बदल गई तो नमाज़ फ़ासिद होगी। (त)

1 रद-उल-मुहतार, अध्याय: जो नमाज़ को फ़ासिद करता है, आदि, मुजतबाई दिल्ली द्वारा प्रकाशित, 1/421 2 अध्याय: जो नमाज़ को फ़ासिद करता है, आदि, मुजतबाई दिल्ली द्वारा प्रकाशित, 1/422

[عربی متن]: بالسیر الامن یخاف ، فلولم یکن المانع الا الاول فقد وجد عذر یبیح الصلوۃ علی الدابۃ لکان واجباً ان تجوز من دون فرق بین سیرو وقوف لکنھم فرقو افتبین ان السیر بنفسہ مفسد الا بعذر یمنع الایقاف ، فان کانت العجلۃ کلھا علی الارض وجرتھا دابۃ بحبل فھھنا انما فقد المانع الاول دون الثانی فوجب الفساد الابعدر فلا نظر الی ما ارادش استنباطہ من مفھوم لیس علی عادۃ ذلك الزمان بمفھوم فافھم و تثبت۔

جس کی ایک طرف چوپائے پر ہو، دوسری چیز چوپائے کا چلنا مکان کا مختلف ہونا، کیا آپ نے ملاحظہ نہیں کیا کہ فقہانے چوپائے کے کھڑا کرنے کو لازم قرار دیا ہے اور چلنے کی حالت میں اس پر نماز کو باطل قرار دیا ہے سوائے اس کے جسے دشمن وغیرہ کا خوف ہو، پس پہلی چیز کے علاوہ کوئی مانع نہیں تو پھر ایسا عذر موجود ہے جو چوپائے پر نماز کو مباح بنادے تو اب چلنے اور کھڑے ہونے کے فرق سے بالاتر ہو کر نماز کے جواز کو ماننا لازم ہوگا لیکن فقہانے ان کے درمیان فرق کیا تو واضح گیا کہ چلنا بذات خود مفسد نماز ہے مگر اس صورت میں جب کھڑا کرنا ممکن نہ ہو، محض اتنا عذر کافی نہیں جو نزول سے مانع ہو بلکہ وہ عذر جو کھڑا کرنے سے مانع ہو ، معتبر ہے، اب اگر بیل گاڑی کلی طور پر زمین پر ہو اور جانور اسے رسی کے ذریعے لے جا رہا ہے تو اب یہاں پہلا مانع (نماز کا چار پائے پر ہونا) موجود نہیں البتہ دوسرا مانع (جگہ کی تبدیلی) موجود ہے لہذا اس صورت میں عذر کے بغیر نماز فاسد ہو گئی پس اسے نہیں دیکھا جائے گا کہ جو شارح نے مفہوماً استنباط کر لیا ہے کیونکہ اس دور کی عادت مفہوم کو قبول نہیں کرتا، اسے سمجھ لے اور اس پر قائم رہ۔ (ت)

نیز اسی میں غنیہ سے ہے۔ ھذا بناء علی ان اختلاف المکان مبطل مالم یکن لاصلاحھا ۱۔ یہ اس بنا پر ہے کہ جگہ کا مختلف ہونا (نماز کو) باطل کرنے والا ہے جبکہ یہ اس کی اصلاح کے لئے نہ ہو (ت) اسی ۷۹۴ میں بحوالہ بحر الرائق فتاوی ظہیر یہ سے ہے: ان جذبتہ الدابۃ حتی ازالتہ عن موضع سجودہ تفسد ۲۔ اگر جانور نے اسے اتنا کھینچا کہ اس کے سجدہ کی جگہ بدل گئی تو نماز فاسد ہوگی۔ (ت)

۱ رد المحتار باب ما یفسد الصلوۃ الخ مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱/ ۴۲۱ ۲ باب ما یفسد الصلوۃ الخ مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱/ ۴۲۲

Fatawa Rizvia Volume 6

In the same [book] it is stated:

[Arabic Text]: The apparent meaning in Al-Hidayah and others is that standing in prayer is absolutely permissible, whether it is stable on the ground or not. However, Al-Idah explicitly prohibits it in the second case [when not stable] if it is possible to disembark, likening it to a riding animal. This was mentioned in Al-Nahr. Al-Bahr states that Al-Muhit and Al-Bada'i have chosen this [view]. Al-Imdad also attributes it to Majma' al-Riwayat from Al-Musaffa. Nur al-Idah asserts this firmly. Therefore, it is appropriate that prayer on a moving ship should not be valid when disembarking onto land is possible. People are neglectful of this matter. 1. Sharh al-Munyah. (T)

[Urdu Translation]: It is apparent from Hidayah and other sources that standing in a boat to pray is absolutely permissible, i.e., whether it is stationary on the ground or not. It is stated in Idah that if it is not stationary on the ground, then the prayer will not be valid when it is possible to disembark, as its ruling will be like that of a riding animal (quadruped). It is in Nahr... Al-Bahr says that Al-Muhit and Al-Bada'i have declared this as the chosen view. And in Imdad too, it is stated through the reference of Majma' al-Riwayat from Musaffa. And Nur al-Idah has firm conviction in this. On this basis, prayer on a moving boat should not be permissible when it is possible to disembark on dry land. People are neglectful of this matter. Sharh al-Munyah. (T)

In Fath al-Qadir it is stated:

[Arabic Text]: In Al-Idah, if the ship is anchored at the shore and is stable on the ground, and one prays while standing, it is permissible because when it is stable on the ground, its ruling is the same as that of the ground. But if it is tied and one is able to disembark, the prayer in it is not valid because when it is not stable, it is like a riding animal. This is unlike when it is stable, for then it is like a bed [or platform]. 2.

[Urdu Translation]: It is in Idah that if the boat is standing at the riverbank and is stationary on the ground, and the worshipper offers prayer standing, it is permissible because in the case of being stationary, its ruling is like that of the ground. If the boat is tied and it is possible to get out of it, then prayer will not be permissible in it because since it is not stable, it is like a quadruped. This is contrary to when it is stationary, because in that case, it is like a wooden platform. (T)

In Al-Muhit of Imam Sarakhsi then in Fatawa Hindiyya it is stated:

[Arabic Text]: If one prays in it [the ship], and if it is firmly tied to the shore and stable on the ground, and he prays standing, it is sufficient for him, and if not...

[Urdu Translation]: If the boat is tied firmly and is stationary on the ground, then in such a case if someone offers prayer standing, it is permissible.

1. Radd al-Muhtar, Chapter of the Prayer of the Sick, Printed by Mujtabai Delhi, 1/512
2. Fath al-Qadir, Chapter of the Prayer of the Sick, Printed by Nooriyah Rizvia Sukkur, 1/462

फ़तावा रिज़विया, छठा खंड

इसी में है:

[अरबी पाठ]: अल-हिदाया और अन्य ग्रंथों के ज़ाहिरी शब्दों से यही स्पष्ट होता है कि नाव में खड़े होकर नमाज़ अदा करना मुतलक़न (बिना शर्त) जाइज़ है, यानी चाहे वह ज़मीन पर टिकी हुई हो या न हो। लेकिन 'अल-ईज़ाह' में साफ़ तौर पर कहा गया है कि जब वह ज़मीन पर टिकी हुई न हो, तो नमाज़ नहीं होगी, बशर्ते कि उससे उतरना मुमकिन हो, क्योंकि तब इसका हुक्म सवारी के जानवर (दाब्बा) की तरह होगा। 'नहर' में ऐसा ही है। 'बहर' में है कि 'मुहीत' और 'बदाइ' ने इसी को मुख़्तार (पसंदीदा) माना है। 'इमदाद' में भी इसे 'मजमा-उर-रिवायात' के हवाले से 'मुसफ़्फ़ा' से उद्धृत किया गया है। 'नूरुल-ईज़ाह' में इसी पर दृढ़ता व्यक्त की गई है। इसी आधार पर चलती नाव पर नमाज़ जाइज़ नहीं होनी चाहिए जब सूखी ज़मीन पर उतरना संभव हो। लोग इस मसले से ग़ाफ़िल (अनजान) हैं। 1. शरहुल-मुनियाह। (त)

[उर्दू अनुवाद]: हिदाया वग़ैरह से बज़ाहिर यही है कि कश्ती में खड़े होकर मुतलक़न नमाज़ जाइज़ है यानी ख़्वाह वह ज़मीन पर मुस्तक़र हो या न हो। ईज़ाह में तसरीह है कि जब ज़मीन पर मुस्तक़र न हो तो नमाज़ नहीं होगी जबकि उससे उतरना मुमकिन हो कि उसका हुक्म दाब्बा (चारपाया) की तरह होगा, नहर... बहर में है कि मुहीत और बदाइ ने इसे मुख़्तार क़रार दिया है। और इमदाद में भी है कि इसे मजमा-उर-रिवायात में मुसफ़्फ़ी के हवाले से बयान किया गया है। और नूरुल-ईज़ाह में इसी पर जज़्म है। इसी बिना पर चलती कश्ती पर नमाज़ जाइज़ नहीं होनी चाहिए जबकि ख़ुश्की पर उतरना मुमकिन है। इस मसला से लोग ग़ाफ़िल हैं। शरहुल-मुनियाह। (त)

फ़तह-उल-क़दीर में है:

[अरबी पाठ]: अल-ईज़ाह में है कि अगर नाव दरिया के किनारे खड़ी हो और ज़मीन पर टिकी हुई हो, और नमाज़ी ने खड़े होकर नमाज़ अदा की, तो जाइज़ है क्योंकि टिके होने की स्थिति में उसका हुक्म ज़मीन जैसा ही है। अगर नाव बँधी हुई हो और उससे निकलना मुमकिन हो, तो उसमें नमाज़ जाइज़ नहीं होगी क्योंकि जब वह मुस्तक़िल (स्थिर) नहीं है, तो वह चौपाये की तरह है। इसके विपरीत जब वह मुस्तक़र (टिकी हुई) हो, तो उस स्थिति में वह तख़्त की तरह है। 2.

[उर्दू अनुवाद]: ईज़ाह में है अगर कश्ती दरिया के किनारे खड़ी हो और ज़मीन पर मुस्तक़र हो और नमाज़ी ने नमाज़ खड़े होकर अदा की तो जाइज़ है क्योंकि इस्तक़रार की सूरत में उसका हुक्म ज़मीन

वाला ही है अगर कश्ती बंधी हुई हो, और उससे निकलना मुमकिन हो तो उसमें नमाज़ जाइज़ नहीं होगी क्योंकि जब मुस्तक़िल नहीं तो वह चारपाए की तरह है इन्तहा। बखिलाफ़ इसके जब मुस्तक़र हो क्योंकि इस सूरत में वह तख़्ता की तरह है (त)

मुहीत इमाम सरख़सी फिर फ़तावा हिंदीया में है:

[अरबी पाठ]: अगर नाव मज़बूती से बँधी हो और ज़मीन पर मुस्तक़र (स्थिर) हो, और वह खड़ा होकर नमाज़ पढ़े, तो यह उसके लिए पर्याप्त है, और यदि नहीं...

[उर्दू अनुवाद]: अगर कश्ती मज़बूत बांधी हुई हो और ज़मीन पर मुस्तक़र है तो ऐसी सूरत में अगर किसी ने खड़े होकर नमाज़ अदा की तो जाइज़।

1. रद-उल-मुहतार, मरीज़ की नमाज़ का अध्याय, मुजतबाई प्रिंटिंग प्रेस दिल्ली, 1/512
2. फ़तह-उल-क़दीर, मरीज़ की नमाज़ का अध्याय, नूरिय्या रिज़विया प्रिंटिंग प्रेस सक्कर, 1/462

पृष्ठ 140 का 736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

اُسی میں ہے:

ظاہر ما فی الہدایۃ و غیرہا الجواز قائماً مطلقاً ای استقرت علی الارض اولاو صرح فی الایضاح بمنعہ فی الثانی حیث امکنہ الخروج الحاقاً لہا بالدابۃ نہرو اختارہ فی المحیط و البدائع بحر و عزاہ فی الامداد ایضاً الی مجمع الروایات عن المصفی وجزم بہ فی نور الایضاح و علی ینبغی ان لا تجوز الصلاۃ فیہا سائرۃ مع امکان الخروج الے البر و ہذہ المسألۃ الناس عنہا غافلون 1۔ شرح المنیۃ۔ (ت) | ہدایہ وغیرہ سے بظاہر یہی ہے کہ کشتی میں کھڑے ہو کر مطلقاً نماز جائز ہے یعنی خواہ وہ زمین پر مستقر ہو یا نہ ہو۔ ایضاح میں تصریح ہے کہ جب زمین پر مستقر نہ ہو تو نماز نہیں ہوگی جبکہ اس سے اترنا ممکن ہو کہ اس کا حکم دابہ (چارپایہ) کی طرح ہوگا، نہر۔ بحر میں ہے کہ محیط اور بدائع نے اسے مختار قرار دیا ہے۔ اور امداد میں بھی ہے کہ اسے مجمع الروایات میں مصفی کے حوالے سے بیان کیا گیا ہے۔ اور نور الایضاح میں اسی پر جزم ہے۔ اسی بنا پر چلتی کشتی پر نماز جائز نہیں ہونی چاہئے جبکہ خشکی پر اترنا ممکن ہے۔ اس مسئلہ سے لوگ غافل ہیں شرح المنیۃ۔ (ت)

فتح القدیر میں ہے:

فی الایضاح فان کانت موقوفۃ فی الشط وہی علی قرار الارض فصلی قائماً جاز لانہا اذا استقرت علی الارض فحکمہا حکم الارض فان کانت مربوطۃ و یمکنہ الخروج لم تجز الصلوۃ فیہا لا نہا اذالم تستقرفہی کالدابۃ انتہی بخلاف ما اذا استقرت فانہا حینئذ کالسریر 2۔ | ایضاح میں ہے اگر کشتی دریا کے کنارے کھڑی ہو اور زمین پر مستقر ہو اور نمازی نے نماز کھڑے ہو کر ادا کی تو جائز ہے کیونکہ استقرار کی صورت میں اسکا حکم زمین والا ہی ہے اگر کشتی بندھی ہوئی ہو، اور اس سے

نکلنا ممکن ہو تو اس میں نماز جائز نہیں ہوگی کیونکہ جب مستقل نہیں تو وہ چارپائے کی طرح ہے انتہی۔ بخلاف اس کے جب مستقر ہو کیونکہ اس صورت میں وہ تختہ کی طرح ہے (ت)

محیط امام سرخسی پھر فتاوٰی ہندیہ میں ہے۔

لوصلی فیہا فان کانت مشدودۃ علی الجد مستقرۃ علی الارض فصلی قائما اجزاہ وان لم | اگر کشتی مضبوط باندھی ہوئی ہو اور زمین پر مستقر ہے تو ایسی صورت میں اگر کسی نے کھڑے ہو کر نماز ادا کی تو جائز

1 ردالمحتار باب صلوۃ المریض مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱/ ۵۱۲ 2 فتح القدیر، باب صلوۃ المریض، مطبوعہ نوریہ رضویہ سکھر، ۱/ ۴۶۲

Fatawa Razawiyya, Volume 6

[Arabic Text]: If it is not stable and it is possible to get out of it, then prayer in it is not permissible. I say: the absolute statements in Al-Hidayah must be interpreted based on these explicit and restricted texts. There are many similar examples, as a large group of scholars has explicitly stated. And Allah knows best.

[Urdu Explanation]: ...the prayer became valid, and if it (the ship) is not stationary and it is possible to exit from it, then the prayer will not be valid. I say: it is obligatory to apply the general rulings of Al-Hidayah to these clear and specific texts, and there are many such examples as stated by the majority. And Allah Almighty knows best. (T)

Question Number 399: 24 Rabi' al-Awwal 1338 AH What do the scholars of religion say regarding this matter: the prayers that were offered while sitting due to necessity and disability, such as inside a ship during the Hajj journey when it was in a state of severe storm and remained in a state of great storm for three consecutive days. In such a state, standing was extremely difficult and impossible, and there was also fear for life. So, is it obligatory and necessary to repeat all those prayers offered in such a state when one is in a state of stability and residence, or not? Also, those prayers which were offered sitting on a camel in a litter (shagdaf) etc., while the caravan was moving, because there was no one to help the elderly person get off or on, and in case of getting off, there was a risk of being left behind the caravan, leading to fear for life and property. Therefore, in these cases, should the prayers offered out of compulsion while sitting on a camel or on a ship during a storm be repeated when in a state of residence and peace, or not?

Answer: There is no need to repeat them. And Allah Almighty knows best.

1. Fatawa Hindiyya, and related discussions on Prayer on an Animal and Ship, printed by Noorani Kutub Khana Peshawar 1/143. Page 141 of 736

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

[अरबी पाठ]: यदि वह स्थिर नहीं है और उससे बाहर निकलना संभव है, तो उसमें नमाज़ जायज़ नहीं है। मैं कहता हूँ: अल-हिदाया के सामान्य कथनों को इन स्पष्ट और सीमित ग्रंथों के आधार पर समझना अनिवार्य है। इसके कई उदाहरण मिलते हैं, जैसा कि विद्वानों के एक बड़े समूह ने स्पष्ट किया है। और अल्लाह बेहतर जानता है।

[उर्दू स्पष्टीकरण]: ...हो गई और अगर मुस्तक़िर (स्थिर) न हो और उससे निकलना भी मुमकिन हो तो अब इसमें नमाज़ सही न होगी। मैं कहता हूँ कि हिदाया के इतलाक़ (सामान्य नियमों) को इन स्पष्ट मुक़ैयद (सीमित) ग्रंथों पर आधारित करना वाजिब है और इसकी बहुत सी मिसालें मिलती हैं जैसा कि जम-ए-ग़फ़ीर (बहुमत) ने इसकी तसरीह (स्पष्टीकरण) की है। वल्लाहु तआला आलम (त)

मसला नंबर 399: 24 रबी उल अव्वल 1338 हिजरी धर्म के विद्वान इस मामले में क्या फ़रमाते हैं कि जो नमाज़ें मजबूरी और लाचारी की स्थिति में बैठकर पढ़ी गईं, जैसे हज के सफ़र में जहाज़ के अंदर जब वह भीषण तूफ़ान की स्थिति में था और तीन दिनों तक लगातार महान तूफ़ान रहा। ऐसी स्थिति में खड़े होना अत्यंत कठिन और असंभव था, और साथ ही जान का डर भी था। तो ऐसी स्थिति में जितनी भी नमाज़ें पढ़ी गईं, क्या उनका निवास और शांति की स्थिति में दोहराना वाजिब और ज़रूरी है या नहीं? इसके अलावा, वे नमाज़ें जो ऊंट पर कजावे (शक़दफ़) आदि में काफ़िले के चलने की स्थिति में बैठकर पढ़ी गईं, क्योंकि वृद्ध व्यक्ति को उतारने-चढ़ाने वाला कोई नहीं था और उतरने की सूरत में काफ़िले से पीछे रह जाने की आशंका थी जिससे जान-माल का ख़तरा होता। अतः इन स्थितियों में जो नमाज़ें ऊंट की सवारी पर और तूफ़ान की स्थिति में जहाज़ पर बैठकर मजबूरी में पढ़ी गईं, क्या उन सबका निवास और तसल्ली की स्थिति में दोहराना ज़रूरी है या नहीं?

उत्तर: उन्हें दोहराने की आवश्यकता नहीं है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

1. फ़तावा हिन्दिया, और जानवर और जहाज़ पर नमाज़ से संबंधित चर्चा, नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर द्वारा मुद्रित 1/143। पृष्ठ 141 का 736

تکن مستقرۃ ویمکنہ الخروج عنھا لم تجز الصلاۃ فیھا اھ اقول واطلاق الھدایۃ واجب الحمل علی ھذہ النصوص الصریحۃ المقیدۃ وکم لہ من نظیر کما صرح بہ الجم الغفیر ۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

ہوگئی اور اگر مستقر نہ ہو اور اس سے نکلنا بھی ممکن ہو تو اب اس میں نماز صحیح نہ ہوگی اھ اقول ہدایہ کے اطلاق کو ان صریح مقید نصوص پر محمول کرنا واجب ہے اور اس کی بہت سی مثالیں ملتی ہیں جیسا کہ جم غفیر نے اس کی تصریح کی ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم (ت)

مسئلہ نمبر ۳۹۹ : ۲۴ ربیع الاول ۱۳۳۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ جو نمازیں حالتِ مجبوری و معذوری میں بیٹھ کر پڑھی گئیں جیسے سفرِ حج میں جہاز کے اندر کہ سخت حالتِ طغیانی میں تھا اور تین دن تک برابر طغیانیِ عظیم میں رہا ایسی حالت میں قیام نہایت دشوار اور غیر ممکن تھا اور نیز خوفِ جان تھا پس ایسی حالت میں جتنی نمازیں پڑھی گئی ہیں اُن کا اعادہ حالتِ قرار و اقامت میں واجب و لازم و ضروری ہے یا نہیں؟ نیز وہ نمازیں کہ اونٹ پر شقدف وغیرہ میں قافلہ کے چلنے کی حالت میں بیٹھ کر پڑھی گئی ہیں کیونکہ بڑھا آدمی کو اتارنے چڑھانے والا نہ تھا اور اترنے کی صورت میں قافلہ سے پیچھے رہ جانے کی اندیشہ تھا جس سے خوفِ جان و مال ہوتا ہے پس ان صورتوں میں جو نمازیں اونٹ کی سواری پر اور حالتِ طغیانی میں جہاز پر بیٹھ کر مجبوراً پڑھی گئیں اُن سب کا اعادہ بصورتِ اقامت واطمینان کرنا چاہئے یا نہیں؟

الجواب: ان کا اعادہ نہیں ، واللہ تعالٰی اعلم۔

Volume Six Fatawa Ridawiyya

Chapter on the Description of Prayer (Description of the Method of Prayer)

Problem 400: Sent from Khairabad by Sheikh Hussain Bakhsh Sahib Ridawi Qadiri, 29 Rajab 1305 AH.

[Left Column - Persian/Formal Urdu]: What do the scholars of the noble Shari'ah and the presiding authorities of the refined abode say regarding this matter: that according to the subtle Hanafi school, men tie [their hands] as per the command of Hadith, and women tie them above the navel. Is this practice of women tying their hands during prayer in accordance with the Prophetic Shari'ah, peace and blessings of Allah be upon him, or not? The consensus of the noble scholars and...

[Right Column - Urdu]: What do the scholars of Shari'ah and heads of the spiritual abode say about this issue mentioned by the Hanafi scholars, that men should tie their hands below the navel and women above the navel? Is women tying their hands in this manner in accordance with the Prophetic Shari'ah (peace be upon him) or not? Or [what is the opinion of] the noble scholars or the grand Muftis...

Page 143 of 736

छठा खंड फ़तावा रज़विया

नमाज़ के गुणों का अध्याय (नमाज़ के तरीके का बयान)

मसला 400: खैरआबाद से शेख हुसैन बख्श साहब रज़वी कादरी द्वारा प्रेषित, 29 रजब 1305 हिजरी।

[बायां कॉलम - फ़ारसी/औपचारिक उर्दू]: शरीयत-ए-शरीफ़ के विद्वान और दार-ए-लतीफ़ के सदर नशीन हाकिम इस मामले में क्या फरमाते हैं कि मजहब-ए-हनफिया लतीफ़ा के मुताबिक मर्द हदीस के हुक्म से [हाथ] बांधते हैं और औरतें नाफ के ऊपर बांधती हैं। क्या नमाज़ के दौरान औरतों का इस तरह हाथ बांधना शरीयत-ए-नबवी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के मुवाफिक है या नहीं? उलमा-ए-किराम का इत्तेफाक और...

[दायां कॉलम - उर्दू]: उलमा-ए-शरीयत और दार-ए-रूहानियत के सरबराह इस मसले में क्या फरमाते हैं जो उलमा-ए-अहनाफ ने बताया है कि मर्द नाफ के नीचे और ख्वातीन नाफ के ऊपर हाथ बांधें, ख्वातीन का इस तरह हाथ बांधना मुवाफिक-ए-शरह-ए-नबवी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) है या नहीं? या उलमा-ए-किराम या मुफ्तियान-ए-इज़ाम का...

पृष्ठ 143/736

جلد ششم فتاویٰ رضویہ

باب صِفَۃِ الصَّلٰوۃِ (طریقہ نماز کا بیان)

مسئلہ ۴۰۰: از خیر آباد مرسلہ شیخ حسین بخش صاحب رضوی قادری ۲۹ رجب ۱۳۰۵ھ

[بائیں کالم میں - فارسی/قدیم اردو]: چہ فرمایند عالمان شرع شریف و حاکمان صدر نشین دار لطیف دریں امر کہ بمذہب حنفیہ لطیفہ مردماں بحکم حدیث می بندند و زناں بالائے ناف می بندند آیا ایں عمل دست بندی زنان حین نماز موافق شرع نبوی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم است یانہ اتفاق علمائے کرام و

[دائیں کالم میں - اردو]: علماء شریعت اور دارِ روحانیت کے سربراہ اس مسئلہ میں کیا فرماتے جو علماء احناف نے بتایا ہے کہ مرد ناف کے نیچے اور خواتین ناف کے اوپر ہاتھ باندھے، خواتین کا اس طرح ہاتھ باندھنا موافق شرعِ نبوی صلی اللہ علیہ وسلم ہے یا نہیں؟ یا علماء کرام یا مفتیانِ عظام کا

صفحہ 143 از 736

Fatawa Razawiyya (Volume 6)

Question: To the noble Muftis: Is this matter as stated? Is it established from the Hadiths of the Prophet (peace and blessings be upon him), or is it based on the consensus of the Hanafi Imams? Whatever the case may be, please affix your stamp and signature on this request for a fatwa with references to the Quran and Sunnah, and may you earn reward from Allah Almighty. Provide a correct answer with references to books. (T)

Answer: The ruling according to the noble Hanafi scholars (may Allah encompass them with general grace and honor) is that women should fold their hands on their chest during prayer. This matter is established by the consensus of the Imams. A vast majority of scholars in their writings have explicitly stated this without any narration of disagreement. Accordingly, Allama Muhammad ibn Muhammad ibn Muhammad, famously known as Ibn Amir al-Hajj al-Halabi (may Allah Almighty have mercy on him), stated in the commentary of Munyah: 'The third point regarding the place of folding hands: our companions stated its place is below the navel for men and on the chest for women.' (Summary). And he also stated: 'A woman should place both her hands on her chest as stated by the vast majority.' Consequently, Allama Ibrahim bin Muhammad bin Ibrahim Halabi (may Allah Almighty have mercy on him) in Ghunyah stated that this matter is agreed upon. And if no Hadith is found in agreement with this, then its...

---

1. Hilyat al-Mahalli Sharh Munyat al-Musalli
2. Hilyat al-Mahalli Sharh Munyat al-Musalli

Page 144 of 736

फ़तावा रज़विया (खंड छह)

प्रश्न: महान मुफ़्ती साहिबान से निवेदन है: क्या यह मसला इसी तरह है? क्या यह रसूल-ए-अनाम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की हदीसों से साबित है या अइम्मा-ए-अहनाफ़ के इत्तेफ़ाक़ (सहमति) पर आधारित है? जो भी हो, इस इस्तफ़्ता (फ़तवे के अनुरोध) पर किताब-ओ-सुन्नत के हवाले से अपनी मुहर और दस्तखत करें और अल्लाह तआला से अजर-ओ-सवाब पाएँ। किताब के हवाले से सही जवाब दें। (त)

जवाब: हनफ़ी उलमा (अल्लाह तआला उन पर अपना आम लुत्फ़-ओ-करम फ़रमाए) के नज़दीक हुक्म यह है कि महिलाएँ नमाज़ में सीने पर हाथ बाँधें। इस मसले पर हमारे अइम्मा का इत्तेफ़ाक़ है। उलमा की एक बड़ी जमात ने अपनी किताबों में बिना किसी इख़्तिलाफ़ (मतभेद) के इसे बयान किया है। चुनाँचे अल्लामा मुहम्मद बिन मुहम्मद बिन मुहम्मद, जो इब्न अमीर अल-हज अल-हलबी (रहमतुल्लाह अलैहि) के नाम से मशहूर हैं, ने 'मुनया' की शरह (व्याख्या) में फ़रमाया: 'हाथ रखने के स्थान के बारे में तीसरा स्थान यह है कि हमारे उलमा ने फ़रमाया कि पुरुष नाफ़ के नीचे और महिला सीने पर हाथ बाँधे।' (सारांश)। और यह भी फ़रमाया कि महिला अपने दोनों हाथ सीने पर रखे जैसा कि बड़ी जमात (जम-ए-ग़फ़ीर) ने तसराह (स्पष्ट) किया है। और अल्लामा इब्राहिम बिन मुहम्मद बिन इब्राहिम हलबी (रहमतुल्लाह अलैहि) ने 'ग़ुनिया' में इस मसले पर उलमा के इत्तेफ़ाक़ की तसरीह की है। और अगर कोई हदीस इसके मुवाफ़िक़ (अनुकूल) नहीं मिलती तो उसकी...

---

1. हिल्या-तुल-मूहल्ली शरह मुनया-तुल-मुसल्ली
2. हिल्या-तुल-मूहल्ली शरह मुनया-तुल-मुसल्ली

पेज 144 / 736

فتاوٰی رضویہ (جلد ششم)

مفتیانِ عظام است اگر از احادیث رسول انام علیہ الصلوۃ والسلام ثابت است یا باتفاقِ امامانِ حنفیانِ راجع است۔ براہِ استفتا مُہر و دستخط بحوالہ کتاب الجواب الصواب (ت)

اتفاق ہے یہ مسئلہ اسی طرح ہے؟ اگر احادیث رسولِ انام صلی اللہ تعالٰی علیہ وآلہ وسلم سے ثابت ہے یا ائمہ احناف کے اتفاق کی بنا پر مسئلہ اسی طرح ہے جو بھی ہو اس استفتاء پر کتاب وسنت کے حوالے سے اپنی مہر و دستخط ثبت کرتے ہیں اور اللہ تعالٰی سے اجر و ثواب پائیں کتاب کے حوالے سے درست جواب دیں۔ (ت)

الجواہ: زنان را نزد حنفیہ کرام عمہم اللہ باللطف والاکرام حکم آنست کہ دست در نماز بر سینہ بندند و ایں مسئلہ باتفاقِ ائمہ مانا ثابت است جم غفیر از علماء در تصانیف خود بلا روبے حکایت خلاف تنصیص کردہ اند علامہ محمد ابن محمد ابن محمد الشہیر بابن امیر الحاج الحلبی رحمۃ اللہ تعالٰی در شرح منیہ فرمود: الموضع الثالث فی محل الوضع فقال اصحابنا محلہ تحت السرۃ فی حق الرجل والصدر فی حق المراۃ اھ ملخصاً و نیز فرمود: المراۃ تضعھما علی صدرھا کما قال الجم الغفیر - لاجرم علامہ ابراہیم بن محمد بن ابراہیم حلبی رحمۃ اللہ تعالٰی در غنیہ ایں مسئلہ را متفق علیھا گفت و حدیث اگر بمواقف معلوم نیست۔

علماء احناف (اللہ تعالٰی ان پر لطف و کرم عام فرمائے) کے نزدیک حکم یہ ہے کہ خواتین نماز میں سینے پر ہاتھ باندھیں، اس مسئلہ پر ہمارے ائمہ کا اتفاق ہے۔ علماء کا جم غفیر نے یہ بات اپنی اپنی کتب میں بغیر اختلاف نقل کی ہے، چنانچہ علامہ محمد بن محمد بن محمد المعروف ابن امیر الحاج حلبی رحمۃ اللہ تعالٰی نے منیہ کی شرح میں فرمایا: تیسرا مقام ہاتھ رکھنے کے بارے میں

ہمارے علماء نے فرمایا کہ مرد ناف کے نیچے اور عورت سینہ پر ہاتھ باندھے اھ ملخصاً۔ اور یہ بھی فرمایا کہ عورت اپنے دونوں ہاتھ سینہ پر رکھے جیسا کہ جم غفیر نے تصریح کی ہے اور علامہ ابراہیم بن محمد بن ابراہیم حلبی رحمۃ اللہ تعالیٰ نے غنیہ میں اس مسئلہ پر اتفاقِ علما کی تصریح کی ہے اور اگر کوئی حدیث اس کے موافق نہیں ملتی تو اس کی

---

1 حلیۃ المحلی شرح منیۃ المصلی 2 حلیۃ المحلی شرح منیۃ المصلی

Fatawa Ridawiyyah Volume 6

(Left Column) ...there is no report against it, and whoever makes a claim must provide proof. This is why the researcher al-Halabi stated in al-Hilyah: "Then, we only said that a woman should place her right hand over her left hand on her chest because it is more covering for her. Therefore, it is better in her case, as it is known that in her case, it is better to choose whatever is more covering among the permissible actions, from which there is no legal prohibition, especially during prayer." This is what appears upon initial consideration. And I say: Success is from Allah. It occurs to me that this issue can be proven with a Hadith of good chain (jayyid al-isnad). Its explanation is that regarding the placement of hands by the Master of the Universe (may Allah bless him and grant him peace), two forms have been reported. One is tying them below the navel, and concerning this, numerous Hadiths have been narrated. The most prominent among them is what Abu Bakr bin Abi Shaybah narrated in his Musannaf, saying: Waki' narrated to us from Musa bin 'Umayr, from 'Alqamah bin Wa'il bin Hujr, from his father (may Allah be pleased with him), who said: "I saw the Messenger of Allah (may Allah bless him and grant him peace) place his right hand over his left hand in prayer below the navel." (2) Imam 'Allamah Qasim bin Qutlubugha (may Allah have mercy on him), in the Takhrij of the Hadiths of Ikhtiyar Sharh al-Mukhtar, says: Its chain is good (jayyid) and all its narrators are trustworthy (thiqat). (3) The second form is placing them on the chest, and regarding this, Ibn Khuzaymah...

(Right Column) ...is not reported in opposition either. However, if anyone makes a claim, they should present evidence. This is why Muhaqqiq Halabi stated in Hilyah: "What we said about a woman tying her right hand over her left hand on her chest is because it provides more covering (satar) for her. Therefore, it is preferable for her because it is known that for a woman, among all permissible matters, it is better to choose the one that provides the most covering, especially during prayer, where one should be more careful. This is what appeared at first glance." I say: (I say) with the success granted by Allah, I present a Hadith with a good chain (jayyid al-isnad) on this issue. Its explanation is that two ways of folding hands have been reported from the Prophet (may Allah bless him and grant him peace). One way is below the navel, and there are several Hadiths reported about this. The most important report is the one mentioned by Abu Bakr bin Abi Shaybah in his Musannaf, stating that Waki' informed us from Musa bin 'Umayr, from 'Alqamah bin Wa'il bin Hujr, from his respected father (may Allah be pleased with him), who narrated: "During prayer, I saw the Prophet

(may Allah bless him and grant him peace) fold his right hand over his left hand below the navel." Imam 'Allamah Qasim bin Qutlubugha Hanafi (may Allah have mercy on him), while verifying the Hadiths of Ikhtiyar Sharh al-Mukhtar, states that its chain is good and all narrators are trustworthy. The second way is folding hands on the chest; about this...

(Footnotes) 1. Hilyat al-Mahalli Sharh Munyat al-Musalli 2. Musannaf Ibn Abi Shaybah, 'Placing the right over the left', from the Book of Prayer, published by Idarat al-Qur'an wal-'Ulum al-Islamiyyah, Karachi, 1/390. 3. Takhrij Ahadith Sharh al-Mukhtar by Qasim bin Qutlubugha.

फ़तावा रज़विया जिल्द 6

(बायाँ कॉलम) ...विरोध में भी वर्णित नहीं है, और जो कोई दावा करता है उसे प्रमाण प्रस्तुत करना चाहिए। इसीलिए मुहक्क़िक़ हलबी ने 'हिलिया' में कहा: "फिर, हमने केवल यह कहा कि एक महिला अपना दाहिना हाथ अपने बाएं हाथ पर अपने सीने पर रखे क्योंकि यह उसके लिए अधिक पर्दा (सतर) है। इसलिए, यह उसके मामले में बेहतर है, जैसा कि ज्ञात है कि उसके मामले में, उन सभी जायज़ चीज़ों में से उसे चुनना बेहतर है जो सबसे अधिक पर्दा प्रदान करती हैं, जिनसे कोई शरीयत निषेध नहीं है, विशेष रूप से नमाज़ के दौरान।" यह वह है जो पहली नज़र में सामने आया है। और मैं कहता हूँ: सफलता अल्लाह की ओर से है। मुझे लगता है कि इस मसले को एक 'जायद अल-इसनाद' (अच्छी चेन वाली) हदीस से साबित किया जा सकता है। इसका विवरण यह है कि नबी ए करीम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से हाथ बाँधने के दो रूप वर्णित हैं। एक नाभि के नीचे बाँधना है, और इसके बारे में कई हदीसें वर्णित हैं। उनमें सबसे प्रमुख वह है जिसे अबू बक्र बिन अबी शैबा ने अपने 'मुसन्निफ़' में रिवायत किया है, कि हमें वक़ी' ने मूसा बिन उमैर से, अलक़मा बिन वाइल बिन हुज्र से, उनके पिता (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत की, जिन्होंने कहा: "मैंने नमाज़ के दौरान अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) को दाहिने हाथ को बाएं हाथ पर नाभि के नीचे बाँधते हुए देखा।" (2) इमाम अल्लामा क़ासिम बिन क़ुतलुबग़ा (रहमहुल्लाह) 'इख्तियार शरह अल-मुख़्तार' की हदीसों की तखरीज करते हुए कहते हैं: इसकी सनद 'जायद' है और इसके सभी रावी 'सिका' (भरोसेमंद) हैं। (3) दूसरा रूप सीने पर हाथ रखना है, और इस बारे में इब्न खुज़ैमा...

(दायाँ कॉलम) ...विरोध में भी वर्णित नहीं है। लेकिन अगर कोई दावा करता है, तो उसे प्रमाण पेश करना चाहिए। इसीलिए मुहक्क़िक़ हलबी ने 'हिलिया' में फ़रमाया: हमने जो यह कहा कि औरत अपना दायाँ हाथ बाएं हाथ पर अपने सीने पर बाँधे, यह इसलिए कि औरत के लिए इसमें ज़्यादा सतर (पर्दा) है। लिहाज़ा यह उसके हक़ में बेहतर है क्योंकि यह बात मालूम है कि औरत के हक़ में जितने भी काम जायज़ हैं, उनमें से उसी को अपनाना बेहतर है जो सबसे ज़्यादा सतर का कारण हो, ख़ास तौर पर नमाज़ की हालत में ज़्यादा ख्याल रखना चाहिए। यह तो वह है जो ज़ाहिरी नज़र में आया है। अक़ूलु (मैं कहता हूँ): अल्लाह की तौफ़ीक़ से कि इस मसले पर एक हदीस 'जायद अल-इसनाद' पेश करूँ। इसकी व्याख्या इस तरह है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से हाथ बाँधने की दो सूरतें रिवायत की गई हैं। एक सूरत नाभि के नीचे की है और इस बारे में कई हदीसें आई हैं। सबसे अहम रिवायत वह है जिसे अबू बक्र बिन अबी शैबा ने अपने 'मुसन्निफ़' में ज़िक्र किया कि हमें वक़ी' ने मूसा

बिन उमैर से, अलक़मा बिन वाइल बिन हुज्र ने अपने वालिद-ए-गिरामी रज़ियल्लाहु अन्हु से हदीस बयान की कि मैंने नमाज़ के दौरान नबी अकरम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को दाएँ हाथ को बाएँ हाथ पर नाभि के नीचे बाँधे देखा है। इमाम अल्लामा क़ासिम बिन क़ुतलुबग़ा हनफ़ी रहमतुल्लाहि अलैहि 'इख्तियार शरह अल-मुख़्तार' की हदीसों की तहक़ीक़ करते हुए फ़रमाते हैं कि इसकी सनद जायद है और तमाम रावी सिका हैं। दूसरी सूरत सीने पर हाथ बाँधने की है, इस बारे में...

(फ़ुटनोट्स) 1. हिलियतुल महल्ली शरह मुनियतुल मुसल्ली। 2. मुसन्निफ़ इब्न अबी शैबा, 'दाएँ हाथ को बाएँ पर रखना', किताबुस सालात से, इदारातुल क़ुरान वल उलूमल इस्लामिया कराची द्वारा प्रकाशित, 1/390। 3. तखरीज अहादीस शरह अल-मुख़्तार, कासिम बिन कुतलुबग़ा द्वारा।

पेज 145/736

فتاوی رضویه جلد ششم

(بایاں کالم) بمخالف ہم وارد نیست ومن ادعی فعلیه البیان ولہذا محقق حلبی در حلیہ فرمود: ثم انما قلنا ان المرأة تضع یمناہا علی یسر ہا علی صدرہا لانہ استر لہا فیکون ذلک فی حقہا اولی لما عرف من ان الاولی اختیار ماھو استرلہا من الامور الجائزة کل منہا لھا من غیر منع شرعی عنہ وخصوصاً فی الصلوة' ایں است آنچہ درباری النظر رونما ید وانما۔اقول: وباللہ التوفیق میر سد کہ ایں مسئلہ را بحدیث جید الاسناد رنگ اثبات و بیم تقریرش آنچناں کہ در محل وضع از سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم دو صورت مروی است یکے زیر ناف بستن ودر وے احادیث عدیدہ وارد است اجلھا ماروی ابوبکر بن ابی شیبة فی مصنفه قال حدثنا وکیع عن موسی بن عمیر عن علقمة بن وائل بن حجر عن ابیه رضی اللہ عنہ قال رأیت رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیه وسلم وضع یمینہ علی شمالہ فی صلاة تحت السرہ - ۲ امام علامہ قاسم بن قطلوبغا رحمہ اللہ تعالیٰ در تخریج احادیث اختیار شرح مختار فرماید سندہ جید ورواتہ کلھم ثقات ۳ دوم بر سینہ نہادن و دریں باب ابن خزیمہ را

(دایاں کالم) مخالفت میں بھی وارد نہیں مگر اگر کوئی دعویٰ کرتا ہے تو دلیل پیش کرے ، اسی لیے محقق حلبی نے حلیہ میں فرمایا : ہم نے جو یہ کہا کہ عورت اپنا دایاں ہاتھ بائیں ہاتھ پر اپنے سینے پر باندھے یہ اس لیے کہ عورت کے لئے اس میں زیادہ ستر ہے لہذا یہ اس کے حق میں اولیٰ ہے کیونکہ یہ بات معلوم ہے کہ عورت کے حق میں جتنے بھی امور جائز ہیں ان میں سے اسی کو اختیار کرنا بہتر ہے جو سب سے زیادہ ستر کا سبب ہو خصوصاً حالت نماز میں زیادہ خیال رکھنا چاہئے، یہ تو وہ ہے جو بظاہر نظر میں آیا ہے اقول: (میں کہتا ہوں) اللہ کی توفیق سے کہ اس مسئلہ پر ایک حدیث جید الاسناد پیش کروں اس کی تقریر یوں ہے کہ حضور صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم سے ہاتھ باندھنے کی دو صورتیں مروی ہیں ایک صورت زیر ناف کی ہے اور اس بارے میں

متعدد احادیث وار د ہیں سب سے اہم روایت وہ ہے جسے ابوبکر بن ابی شیبہ نے اپنے مصنّف میں ذکر کیا کہ ہمیں وکیع نے موسی بن عمیر سے علقمہ بن وائل بن حجر نے اپنے والد گرامی رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے حدیث بیان کی ہے کہ میں نے دوران نماز نبی اکرم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کو دائیں ہاتھ کو بائیں ہاتھ پر ناف کے نیچے باندھے دیکھا ہے۔ امام علامہ قاسم بن قطلوبغا حنفی رحمہ اللہ تعالیٰ اختیار شرح مختار کی احادیث کی تخریج کرتے ہوئے فرماتے ہیں کہ اس کی سند جید اور تمام راوی ثقہ ہیں۔ دوسری صورت سینے پر ہاتھ باندھنے کی ہے اس بارے میں

(حواشی) 1 حلیة المحلی شرح منیة المصلی 2 مصنف ابن ابی شیبہ وضع الیمین علی الشمال من کتاب الصلوة مطبوعہ ادارة القرآن والعلوم الاسلامیہ کراچی ۳۹۰/۱ 3 تخریج احادیث شرح مختار للقاسم بن قطلوبغا

Fatawa Ridawiyyah Volume 6

There is a Hadith in his Sahih also from Wa'il bin Hujr (may Allah be pleased with him): He said, "I prayed with the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him), and he placed his right hand over his left hand on his chest."[1] Since the chronology is unknown and both narrations are established and acceptable, it inevitably becomes necessary to prefer one. When we look closely, the basis of this matter, rather all actions of prayer, is based on reverence (ta'zim). And what is accustomed and known at the time of reverence is to tie the hands below the navel. Therefore, Imam Muhaqqiq 'ala al-Itlaq [Ibn al-Humam] says in Al-Fath: "Therefore, it is based on the accustomed way of placing them when intending reverence during standing, and what is accustomed as witnessed is below the navel."[2] Thus, regarding men, the narration of Ibn Abi Shaybah is more preferable. And in the matter of women, the pure Shariah has the utmost regard for concealment and veiling, and therefore it is said: "The best of the men's rows are the first ones and the worst are the last ones, and the best of the women's rows are the last ones and the worst are the first ones."[3] Recorded by the authors of the Sunan except Bukhari, on the authority of Abu Hurayrah, and by At-Tabarani in Al-Kabir on the authority of Abu Umamah and Ibn Abbas (may Allah be pleased with them). And they said: "A woman's prayer in her house is better than her prayer in her courtyard, and her prayer in her inner room is better than her prayer in her house."[4] Recorded by Abu Dawood from Ibn Mas'ud and Al-Hakim from...

[Explanation from the Urdu column:] Ibn Khuzaymah in his Sahih has narrated from Hazrat Wa'il bin Hujr (may Allah be pleased with him) that "I had the honor of praying in the company of the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him), so he placed his right hand on the left and tied his hands on the chest." Since it is not known which narration came first and which came later, and both narrations are proven and acceptable, one must inevitably be preferred over the other. When we look at this act of prayer, or rather all acts of prayer, they all appear to be based on reverence. And the recognized and well-known method of reverence is to tie the hands below the navel. Therefore, Imam Muhaqqiq ala al-Itlaq has said in Al-Fath: In standing, the matter of tying hands with the intention of reverence should be left to the well-known method, and tying hands below the navel during standing out of reverence is what is well-known. Therefore, regarding men, the narration of Ibn Abi Shaybah is preferred. And since the demand of the pure Shariah regarding women's matters is perfect concealment and veiling, the jurists have said that the first row for

men is better and the last is less preferable, while the last row for women is better and the first row is less preferable. This Hadith is in all the books of Sihah Sitta except Sahih Bukhari.

---

[1] Sahih Ibn Khuzaymah, Chapter on placing the right hand over the left in prayer, published by Al-Maktab al-Islami, Beirut, 1/243. [2] Fath al-Qadir, Chapter on the description of prayer, Nooriya Rizwiya, Sukkur, 1/249. [3] Sunan Abi Dawud, Chapter on the row of women and remaining behind the first row, published by Aftab Alam Press, Lahore, 1/99. [4] Ibid, Book of Prayer, Chapter on strictness in that, 1/84.

फ़तावा रज़विया जिल्द 6

हज़रत वाइल बिन हुज्र (रज़ियल्लाहु अन्हु) से उनकी सहीह में हदीस है: उन्होंने कहा, "मैंने अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के साथ नमाज़ पढ़ी, तो उन्होंने अपना दायां हाथ अपने बाएं हाथ पर अपने सीने पर रखा।"[1] चूँकि इसका समय अज्ञात है और दोनों रिवायतें साबित और मकबूल हैं, इसलिए लाज़मी तौर पर प्राथमिकता (तरजीह) की ज़रूरत है। जब हम गौर से देखते हैं, तो इस मामले की बुनियाद, बल्कि नमाज़ के तमाम कार्य (अफ़आल) सम्मान (ताज़ीम) पर आधारित हैं। और सम्मान प्रकट करने का प्रचलित और ज्ञात तरीका नाभि के नीचे हाथ बाँधना है। इसीलिए इमाम मोहक़्क़िक़ अला अल-इतलाक़ 'फतह' में फ़रमाते हैं: "लिहाज़ा, क़याम के दौरान सम्मान का इरादा करते हुए हाथ रखने के मामले को प्रचलित (मारूफ़) तरीके पर छोड़ दिया जाए, और जैसा कि देखा गया है प्रचलित तरीका नाभि के नीचे है।"[2] अतः, पुरुषों के मामले में इब्न अबी शैबा की रिवायत अधिक मान्य है। और महिलाओं के मामले में शरीअते मुताहरा का पूर्ण ध्यान पर्दे और हिजाब पर है, और इसीलिए फ़रमाया गया: "पुरुषों की सफ़ों में सबसे बेहतर पहली और सबसे बुरी आख़िरी है, और महिलाओं की सफ़ों में सबसे बेहतर आख़िरी और सबसे बुरी पहली है।"[3] इसे बुखारी के अलावा अन्य सुनन ग्रंथों में अबू हुरैरा से, और तबरानी ने 'अल-कबीर' में अबू उमामा और इब्न अब्बास (रज़ियल्लाहु अन्हुम) से रिवायत किया है। और उन्होंने फ़रमाया: "एक महिला की अपने घर के अंदर नमाज़ उसके आँगन की नमाज़ से बेहतर है, और उसकी कोठरी की नमाज़ उसके घर की नमाज़ से बेहतर है।"[4] इसे अबू दाऊद ने इब्न मसऊद से और हाकिम ने... से रिवायत किया।

[उर्दू कॉलम से व्याख्या:] इब्न खुज़ैमा अपनी सहीह में हज़रत वाइल बिन हुज्र (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) से ही रिवायत लाए हैं कि "मैंने नबी अकरम (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) के साथ नमाज़ पढ़ने का गौरव प्राप्त किया तो आप ने अपना दायां हाथ बाएं पर रखकर सीने पर हाथ बांधे।" चूँकि यह ज्ञात नहीं है कि कौन सी रिवायत पहले की है और कौन सी बाद की, और दोनों रिवायतें प्रमाणित व मान्य हैं, तो अनिवार्य रूप से दोनों में से किसी एक को प्राथमिकता दी जाएगी। जब हम नमाज़ के इस कार्य, बल्कि नमाज़ के सभी कार्यों पर नज़र डालते हैं, तो वे सभी सम्मान पर आधारित नज़र आते हैं और सम्मान का सुप्रसिद्ध तरीका नाभि के नीचे हाथ बांधना है। इसलिए इमाम मोहक़्क़िक़ अला अल-इतलाक़ ने 'फतह' में फ़रमाया है: खड़े होने के दौरान सम्मान के इरादे से हाथ बांधने के मामले को प्रचलित तरीके पर छोड़ दिया जाए और सम्मानपूर्वक नाभि के नीचे हाथ बांधना ही प्रचलित है। अतः पुरुषों के लिए इब्न अबी शैबा की रिवायत मान्य है। और चूँकि महिलाओं के

मामले में शरीअते मुताहरा की माँग पूर्ण पर्दे की है, इसलिए न्यायविदों (फ़ुक़्हा) ने फ़रमाया कि पुरुषों की पहली सफ़ श्रेष्ठ है और आख़िरी कम श्रेष्ठ, जबकि महिलाओं की आख़िरी सफ़ श्रेष्ठ है और पहली कम श्रेष्ठ। यह हदीस बुखारी को छोड़कर सिहाह सत्ता की सभी पुस्तकों में है।

---

[1] सहीह इब्न खुज़ैमा, नमाज़ में बाएं पर दायां हाथ रखने का अध्याय, अल-मकतब अल-इस्लामी बेरूत, 1/243। [2] फतहुल क़दीर, नमाज़ के गुणों का अध्याय, नूरिया रज़विया सुक्कुर, 1/249। [3] सुनन इब्न दाऊद, महिलाओं की सफ़ और पहली सफ़ से पीछे रहने का अध्याय, आफ़ताब आलम प्रेस लाहौर, 1/99। [4] वही, किताबुस सालाह, इस विषय में सख्ती का अध्याय, 1/84।

فتاوی رضویہ جلد ششم

حدیث است در صحیح خودش ہم از وائل ابن حجر رضی اللہ عنہ : قال صلیت مع رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فوضع یدہ الیمینی علی یدہ الیسری علی صدرہ ۱ واز انجا کہ تاریخ مجہول است و ہر دور روایت ثابت و مقبول ناچار کار بترجیح افتاد چوں نیک نگریم بنائے ایں امر بلکہ تمام افعال صلاۃ بر تعظیم است و معہود و معلوم عند التعظیم دست زیر ناف بستن است ، ولہذا امام محقق علی الاطلاق در فتح فرماید : فیحال علی المعہود من وضعھا حال قصد التعظیم فی القیام والمعہود فی الشاہد منہ تحت السرہ ۲ پس درباره مرداں روایت ابن ابی شیبہ راجح تر آمد و در امر زنان شرع مطہر را کمال نظر بر ستر و حجاب است و لہذا فرمودند : خیر صفوف الرجال اولھا وشرھا آخرھا و خیر صفوف النساء آخرھا و شرھا اولھا ۳ اخرجہ السنہ الا البخاری عن ابی ھریرہ والطبرانی فی الکبیر عن ابی امامۃ وعن ابن عباس رضی اللہ تعالیٰ عنہم وفرمودند صلاۃ المرأۃ فی بیتھا افضل من صلاتھا فی حجرتھا وصلاتھا فی مخدعھا افضل من صلاتھا فی بیتھا ۴ اخرجہ ابو داؤد عن ابن مسعود والحاکم عن

ابن خزیمہ اپنے صحیح میں حضرت وائل بن حجر رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے ہی روایت لائے ہیں کہ میں نے نبی اکرم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی معیت میں نماز پڑھنے کا شرف پایا تو آپ نے اپنا دایاں ہاتھ بائیں پر رکھ کر سینے پر ہاتھ باندھیں چونکہ اس کی تاریخ (ترتیب) کا علم نہیں کہ کون سی روایت پہلے کی ہے اور کون سی بعد کی ، اور دونوں روایات ثابت و مقبول ہیں تو لاجرم دونوں میں سے کسی ایک کو ترجیح ہوگی جب ہم نماز کے اس فعل بلکہ نماز کے تمام افعال پر نظر ڈالتے ہیں تو وہ تمام کے تمام تعظیم پر مبنی نظر آتے ہیں اور مسلم و معروف تعظیم کا طریقہ ناف کے نیچے ہاتھ باندھنا ہے لہذا امام محقق علی الاطلاق نے فتح میں فرمایا ہے : قیام میں بقصد

تعظیم ہاتھ باندھنے کا معاملہ معروف طریقے پر چھوڑا جائے اور قیام میں تعظیماً ناف کے نیچے ہاتھ باندھنا ہی معروف ہے ۔ لہذا مردوں کے بارے ابن ابی شیبہ کی روایت راجح ہے اور چونکہ خواتین کے معاملہ میں شرع مطہر کا مطالبہ کمال ستر حجاب ہے ، اس لئے فقہاء نے فرمایا مردوں کی پہلی صف افضل اور آخری غیر افضل اور خواتین کی آخری صف افضل اور پہلی غیر افضل یہ حدیث صحاح ستہ کی تمام کتابوں میں ہے سوائے بخاری کے ۔

---

۱ صحیح ابن خزیمہ باب وضع الیمین علی الشمال فی الصلوۃ مطبوعہ المکتب الاسلامی بیروت ۱ / ۲۴۳ ۲ فتح القدیر باب صفت الصلوۃ نوریہ رضویہ سکھر ۱ / ۲۴۹ ۳ سنن ابن داؤد باب صف النساء والتاخر عن الصف الاول مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور ۱ / ۹۹ ۴ ایضاً کتاب الصلوۃ باب التشدید فی ذالک ۱ / ۸۴

Fatawa Razawiyya Volume 6

It is narrated from Hazrat Abu Huraira, and Tabarani in 'Al-Mu'jam al-Kabir' has narrated from Hazrat Abu Umama and Hazrat Abdullah bin Abbas (may Allah be pleased with them). It was also stated that a woman's prayer in a room is superior to her prayer in the courtyard of the house, and in a small inner room, it is even more superior. Abu Dawood narrated it from Hazrat Ibn Masood, and Hakim narrated it from Hazrat Umm Salama (may Allah be pleased with her) with a sound (Sahih) chain. The command of Hazrat Abdullah bin Masood (may Allah be pleased with him) is: 'Keep them behind as Allah has kept them behind.' This was recorded by Imam Abd al-Razzaq in the 'Musannaf' and by Tabarani in 'Al-Mu'jam' with the same chain. Furthermore, women are commanded to stay close to the ground during prostration (Sajda), whereas for men, it is Sunnah to do the opposite. Abu Dawood narrated in 'Al-Marasil' from Yazid bin Habib that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) passed by two women who were praying and said: 'When you prostrate, keep some of your body close to the ground, because in prostration, a woman is not like a man.' This narration is reported through two connected chains. Al-Bayhaqi said: 'This is the better of the two [chains].' Especially for women, the recommended posture for sitting (Tawarruk) is to sit flat on the ground.

Narrated from Umm Salama (may Allah be pleased with her) with a sound chain, and Abdullah bin Masood (may Allah be pleased with him) said: 'Keep them behind as Allah has kept them behind.' This was recorded by Abd al-Razzaq in 'Al-Musannaf' and through his chain by Tabarani in 'Al-Mu'jam'. Women were commanded that during prostration, they should cling to the ground, while the Sunnah for men is the opposite. Abu Dawood in 'Al-Marasil' narrates from Yazid bin Habib that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) passed by two women praying and said: 'When you prostrate, gather some of your flesh towards the earth, for a woman in this is not like a man.'[2] It is reported as a connected narration through two ways; Al-Bayhaqi said it is the better of the two. Their Sunnah is Tawarruk; narrated by Imam Abu Hanifa from Nafi from Abu Umar (may Allah be pleased with them). On this subject, Ali (may Allah ennoble his face) said: 'When a woman prays, she should compress herself.' Al-Jawhari said: 'She gathers herself when sitting and when prostrating.'[3] If they wish to pray in congregation, their Imam should stand in their middle. Imam Muhammad said in 'Al-Athar': Abu Hanifa informed us from Hammad bin Abi Sulayman from Ibrahim al-Nakha'i that Aisha

(may Allah be pleased with her) used to lead women in prayer during the month of Ramadan.

1. Al-Musannaf by Abd al-Razzaq, Chapter: Women attending congregational prayer, published by Al-Maktab al-Islami Beirut, 3/129.
2. Kitab al-Marasil by Abu Dawood, Chapter: What has been narrated regarding one who sleeps during prayer, published by Al-Matba'at al-Ilmiyah Lahore, p. 55.
3. Al-Sihah, Chapter Ra, Section Kha, published by Dar al-Ilm lil-Malayin Beirut, 3/874.

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

हज़रत अबू हुरैरा से रिवायत है और तबरानी ने 'अल-मुअजम अल-कबीर' में हज़रत अबू उमामा और हज़रत अब्दुल्ला बिन अब्बास (रज़ियल्लाहु अन्हुम) से रिवायत किया है, यह भी फ़रमाया कि औरत की नमाज़ कमरे में घर के सहन में नमाज़ पढ़ने से अफ़ज़ल है और ख़ास छोटे कमरे में इससे भी अफ़ज़ल है। इसे अबू दाऊद ने हज़रत इब्न मसूद से और हाकिम ने हज़रत उम्मे सलमा (रज़ियल्लाहु अन्हा) से सहीह सनद के साथ रिवायत किया। हज़रत अब्दुल्ला बिन मसूद (रज़ियल्लाहु अन्हु) का फ़रमान है: 'उन्हें वैसे ही पीछे रखो जैसे अल्लाह ने उन्हें पीछे रखा है।' इसे इमाम अब्द अल-रज़्ज़ाक ने 'मुसन्निफ़' में और इसी सनद से तबरानी ने 'मुअजम' में ज़िक्र किया है। इसके अलावा महिलाओं के लिए हुक्म है कि सज्दे के वक़्त ज़मीन से चिपक जाएँ जबकि पुरुषों के लिए इसके विपरीत करना सुन्नत है। अबू दाऊद ने 'अल-मरासील' में यज़ीद बिन हबीब से रिवायत किया कि रसूल अल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) दो महिलाओं के पास से गुज़रे जो नमाज़ अदा कर रही थीं, फ़रमाया: 'जब तुम सज्दा करो तो अपने जिस्म का कुछ हिस्सा ज़मीन से मिलाओ क्योंकि सज्दे की हालत में औरत मर्द की तरह नहीं है।' यह रिवायत दो सनदों से मुत्तसिल मरवी है। बैहक़ी फ़रमाते हैं कि यह सनद दोनों से बेहतर है। ख़ासकर औरतों के लिए तौरुक (क़ैदा की हालत में ज़मीन से चिपक कर बैठना) सुन्नत है।

उम्मे सलमा (रज़ियल्लाहु अन्हा) से एक नेक सनद के साथ और अब्दुल्ला बिन मसूद (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने फ़रमाया: 'उन्हें वैसे ही पीछे रखो जैसे अल्लाह ने उन्हें पीछे रखा है।' इसे अब्द अल-रज़्ज़ाक ने 'अल-मुसन्निफ़' में और उनके माध्यम से तबरानी ने 'अल-मुअजम' में उद्धृत किया है। औरतों को हुक्म दिया गया कि सज्दे में ज़मीन के साथ सिमट जाएँ जबकि मर्दों के लिए सुन्नत इसके विपरीत है। अबू दाऊद ने 'अल-मरासील' में यज़ीद बिन हबीब से रिवायत की कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) दो नमाज़ पढ़ती महिलाओं के पास से गुज़रे और फ़रमाया: 'जब तुम सज्दा करो तो अपने शरीर का कुछ हिस्सा ज़मीन से मिलाओ, क्योंकि इस मामले में महिला पुरुष के समान नहीं है।'[2] यह दो तरीकों से जुड़ी हुई रिवायत के रूप में वर्णित है; बैहक़ी ने कहा कि यह उन दोनों में से बेहतर है। उनकी सुन्नत तौरुक (बैठने का विशेष तरीका) है; इसे इमाम अबू हनीफ़ा ने नाफ़े से, उन्होंने अबू उमर (रज़ियल्लाहु अन्हुम) से रिवायत किया है। इस विषय में अली (करम अल्लाह वजहु) ने फ़रमाया: 'जब महिला नमाज़ पढ़े तो उसे सिमट जाना चाहिए।' अल-जौहरी ने कहा: 'बैठते और सज्दा करते समय वह सिमट जाती है।'[3] यदि वे जमात से नमाज़ पढ़ना चाहें, तो उनकी इमाम उनके

बीच में खड़ी हो। इमाम मुहम्मद ने 'अल-आसार' में फ़रमाया: अबू हनीफ़ा ने हमें हम्माद बिन अबी सुलेमान से, उन्होंने इब्राहिम अल-नख़ई से सूचित किया कि आयशा (रज़ियल्लाहु अन्हा) रमज़ान के महीने में महिलाओं की इमामत करती थीं।

1. अल-मुसन्निफ़ ले-अब्दुल रज़्ज़ाक, अध्याय: महिलाओं का जमात में शामिल होना, प्रकाशित अल-मकतब अल-इस्लामी बेरुत, 129/3
2. किताब अल-मरासील ले-अबी दाऊद, अध्याय: जो नमाज़ में सो जाए, प्रकाशित अल-मतबा अल-इल्मिया लाहौर, पृ. 55
3. अल-सिहाह, अध्याय रा, खंड ख़ा, प्रकाशित दार अल-इल्म लिल-मलयीन बेरुत, 874/3

فتاوی رضویہ جلد ششم

ام سلمة رضی اللہ تعالی عنها بسند صالح وعبد اللہ بن مسعود فرموده رضی اللہ تعالی عنه اخروهن من حیث اخرهن اللہ اخرجه عبدالرزاق في المصنف و من طریقه الطبرانی فع المعجم وزنان را حکم شد کہ در سجدہ ہم بر زمین چسپد بماند آنکہ سنت در مردان خلاف آنست ابوداؤد فی المراسیل عن یزید بن حبیب ان رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیه وسلم مر علی امرأتین تصلیان فقال اذا سجد تما فضما بعض اللحم الی بعض الارض فان المرأة لیست في ذالك کرجل[2] ویروی موصولا بوجهین قال البهقی هو احسن منهما وسنت مرایشان را تورك شد رواه الامام ابو حنیفة عن نافع عن ابی عمر رضی اللہ تعالی عنهما و في الباب علی کرم اللہ تعالی وجهه قال اذا صلت المرأة فلتحتفر قال الجوهري تتضام اذا جلست واذا سجدت[3] واگر جماعت خواهند امام آنها میاں آنہا ایستد، قال الامام محمد في الآثار اخبرنا ابو حنیفة عن حماد بن ابی سلیمن عن ابراهیم النخعی ان عائشة رضی اللہ تعالی عنها کانت تؤم النساء في الشهر رمضان

حضرت ابوہریرہ سے مروی ہے اور طبرانی نے 'المعجم الکبیر' میں حضرت ابوامامہ اور حضرت عبداللہ بن عباس رضی اللہ عنہم سے روایت کیا ہے، یہ بھی فرمایا عورت کی نماز کمرے میں گھر کے صحن میں نماز پڑھنے سے افضل اور خاص چھوٹے کمرے میں اس سے بھی افضل ہے۔ اسے ابو داؤد نے حضرت ابن مسعود سے حاکم نے حضرت ام سلمہ رضی اللہ عنہ سے سند صالح سے روایت کیا۔ حضرت عبداللہ بن مسعود رضی اللہ عنہ کا فرمان ہے انہیں اسی طرح پیچھے رکھو جیسے انہیں اللہ نے پیچھے رکھا ہے، اسے امام عبدالرزاق نے مصنف میں اور اسی سند سے طبرانی نے معجم میں ذکر کیا ہے نیز خواتین کے لئے حکم ہے کہ بوقت سجدہ زمین کے ساتھ چمٹ جائیں حالانکہ مردوں کے لئے اس کے خلاف کرنا سنت ہے ابو داؤد نے المراسیل میں یزید

بن حبیب سے روایت کیا کہ رسول اللہ صلی اللہ اللہ تعالیٰ علیہ وسلم دو خواتین کے پاس سے گزرے جو نماز ادا کر رہی تھیں فرمایا جب تم سجدہ کرو تو اپنے جسم کا کچھ حصہ زمین کے ساتھ ملاؤ کیونکہ سجدہ کی حالت میں عورت مرد کی طرح نہیں، اور یہ روایت دو سندوں سے متصل مروی ہے۔ بیہقی فرماتے ہیں یہ سند دونوں سے احسن ہے، خاص کر عورتوں کے لئے تورک (حالت قعدہ میں زمین کے ساتھ چمٹ کر بیٹھنا)

1 المصنف لعبد الرزاق باب شہود النساء الجماعة مطبوعہ المکتب الاسلامی بیروت ۱۲۹/۳ 2 کتاب المراسیل لابی داؤد باب ما جاء فی من نام علی الصلوة مطبوعہ المطبعة العلمیة لاہور ص ۵۵ 3 الصحاح باب الراء فصل الخائ مطبوعہ دار العلم للملایین بیروت ۸۷۴/۳

Fatawa Rizvia Volume 6

...led them [the women] standing in their midst[1] - reported by Abdur Razzaq in 'Al-Musannaf' and Ad-Daraqutni, then Al-Bayhaqi in their 'Sunan'. The wording after Abdur Razzaq is from Raytah al-Hanafiyyah that Aisha (may Allah be pleased with her) led them and stood in their midst in an obligatory prayer.[2] And regarding this chapter, narrations are from Umm Salamah and Ibn Abbas (may Allah be pleased with them), and a Marfu' (elevated) Hadith is narrated regarding this, although it is not strong. In summary, women are commanded to be concealed, and the basis of their actions is placed upon concealment. At-Tirmidhi narrates with a good (Hasan) chain from Ibn Mas'ud (may Allah be pleased with him) from the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him): "Woman is Awrah (that which should be concealed)."[3] And there is no doubt that for them, folding hands on the chest is more concealing and closer to modesty than placing them below the navel. Moreover, veneration (ta'zim) for them also lies in concealment and veiling, as there is no veneration except with etiquette, and etiquette is through modesty, and modesty is through concealment. Therefore, regarding women, the Hadith of Ibn Khuzaymah is more preponderant. It is established that both issues are supported by sound Hadiths, and expert scholars have acted upon both Hadiths with preference. May Allah Almighty's mercy be upon them all. A similar case is the issue of sitting (Qa'ud), which is narrated from the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) in both ways. Male scholars follow the practice of 'Nasb' (erecting) of the right foot and 'Julus' (sitting) on the left...

(Right Column text): ...is Sunnah. Imam Abu Hanifah narrated it from Nafi', who narrated it from Ibn Umar (may Allah be pleased with them). Regarding this issue, it is narrated from Ali (may Allah honor his face) that when a woman prays, she should sit on her buttocks upon her thighs. Al-Jawhari explained its meaning as: sticking close to the ground during prostration (Sajdah). If women wish to perform congregational prayer, their female imam should stand in their midst. Imam Muhammad stated in 'Kitab al-Athar': Imam Abu Hanifah narrated to us from Hammad bin Abi Sufyan, from Ibrahim Nakha'i, that Aisha (may Allah be pleased with her) used to lead the women's congregation in the month of Ramadan and would stand in the middle. Imam Abdur Razzaq narrated this in 'Al-Musannaf', and Ad-Daraqutni and Al-Bayhaqi in their 'Sunan'. The words of Abdur Razzaq are: Raytah al-Hanafiyyah narrates that Aisha (may Allah be pleased with them) used to lead women in prayer, and during obligatory prayers, she would stand in their midst. This is also

narrated from Umm Salamah and Ibn Abbas (may Allah be pleased with them), which is not unlike this. In short, women are 'Masturah' (concealed beings) and all their actions are based on hijab [concealment]...

1. Kitab al-Athar by al-Shaybani, Chapter: A woman leading women, etc., published by Idarat al-Qur'an wal-Ulum al-Islamiyyah, Karachi, p. 44.
2. Al-Musannaf by Abdur Razzaq, Chapter: A woman leading women, etc., published by Al-Maktab al-Islami, Beirut, 3/141.
3. Jami' at-Tirmidhi, Chapters on Suckling (Radha'), published by Amin Company, Delhi, 1/140.

फतावा रिज़विया खंड छठा

...उनके[महिलाओं के] बीच खड़े होकर उनकी इमामत की[1] - इसे अब्दुर रज्ज़ाक ने 'अल-मुसन्नफ़' में और अद-दारकुतनी, फिर अल-बैहक़ी ने अपनी 'सुनन' में रिवायत किया है। अब्दुर रज्ज़ाक के बाद के शब्द रैता अल-हनफ़िया से हैं कि आयशा (रज़ियल्लाहु अन्हा) ने उनकी इमामत की और एक फ़र्ज़ नमाज़ में उनके बीच खड़ी हुईं।[2] और इस अध्याय में उम्मे सलमा और इब्न अब्बास (रज़ियल्लाहु अन्हुम) से भी रिवायतें हैं, और इस बारे में एक मरफ़ू हदीस भी रिवायत की गई है, हालांकि वह मज़बूत नहीं है। संक्षेप में, महिलाओं को पर्दे में रहने का आदेश है और उनके कार्यों का आधार पर्दे (सतर) पर रखा गया है। अत-तिर्मिज़ी ने इब्न मसऊद (रज़ियल्लाहु अन्हु) से एक अच्छी (हसन) सनद के साथ नबी (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) से रिवायत किया: "स्त्री औरह (छपाने योग्य) है।"[3] और इसमें कोई संदेह नहीं है कि उनके लिए सीने पर हाथ बांधना नाभि के नीचे हाथ रखने की तुलना में अधिक पर्दा और हया के करीब है। इसके अलावा, उनके लिए ताज़ीम (सम्मान) भी पर्दे और हिजाब में है, क्योंकि बिना अदब के कोई ताज़ीम नहीं होती, और अदब हया से है, और हया पर्दे से है। इसलिए, महिलाओं के संबंध में इब्न खुज़ैमा की हदीस अधिक वरीय है। यह सिद्ध हो गया है कि दोनों मसले मज़बूत हदीसों पर आधारित हैं, और विशेषज्ञ विद्वानों ने दोनों हदीसों पर तरजीह के साथ अमल किया है। उन सभी पर अल्लाह तआला की रहमत हो। इसी तरह का एक मसला बैठने (क़ऊद) का है, जो नबी (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) से दोनों तरह से वर्णित है। पुरुष विद्वान दाहिने पैर को खड़ा करने और बाएं पर बैठने का पालन करते हैं...

(दायाँ कॉलम): ...सुन्नत है। इमाम अबू हनीफ़ा ने इसे नाफ़े से, उन्होंने इब्न उमर (रज़ियल्लाहु अन्हुम) से रिवायत किया है। इस मसले में हज़रत अली (कर्रमल्लाहु वज्हहु) से यह रिवायत है कि जब महिला नमाज़ पढ़े तो वह अपनी जांघों पर नितंबों के बल बैठे। अल-जौहरी ने इसका अर्थ यह किया है कि सजदे की स्थिति में ज़मीन से चिपक कर बैठे। यदि महिलाएं जमाअत (सामूहिक नमाज़) करना चाहें, तो उनकी इमाम महिला उनके बीच में खड़ी हो। इमाम मुहम्मद ने 'किताब अल-आसार' में कहा: इमाम अबू हनीफ़ा ने हमें हम्माद बिन अबी सुफ़यान से, उन्होंने इब्राहिम नख़ई से हदीस सुनाई कि सैयदा आयशा (रज़ियल्लाहु अन्हा) रमज़ान के महीने में महिलाओं की जमाअत करवाती थीं और बीच में खड़ी होती थीं। इमाम अब्दुर रज्ज़ाक ने मुसन्नफ़ में और अद-दारकुतनी व बैहक़ी ने सुनन में यह रिवायत की है। अब्दुर रज्ज़ाक के शब्द हैं: रैता हनफ़िया बयान करती हैं कि सैयदा आयशा (रज़ियल्लाहु अन्हा) महिलाओं की इमामत करवाती थीं तो फ़रायज़ (अनिवार्य नमाज़ों) में उनके बीच

खड़ी होती थीं। इस बारे में हज़रत उम्मे सलमा और हज़रत इब्न अब्बास (रज़ियल्लाहु अन्हुम) से भी रिवायत है जो इसके विपरीत नहीं है। कुल मिलाकर महिलाएं'मस्तूर' (छिपी हुई) होती हैं और उनके सभी कार्यों का आधार हिजाब पर है...

1. किताब अल-आसार लि-शैबानी, अध्याय: महिलाओं का महिलाओं की इमामत करना आदि, मुद्रित: इदारातुल कुरान वल उलूम अल इस्लामिया कराची, पृष्ठ 44।
2. अल-मुसन्नफ़ लि-अब्दुर रज्ज़ाक, अध्याय: महिलाओं का महिलाओं की इमामत करना आदि, मुद्रित: अल मकतब अल इस्लामी बेरूत, 3/141।
3. जामिअ अत-तिर्मिज़ी, रज़ा' के अध्याय, मुद्रित: अमीन कंपनी दिल्ली, 1/140।

पृष्ठ 148 का 736

فتوم وسطاً[1] عبدالرزاق فی المصنف والدار قطنی ثم البیھقی فی سننھما واللفظ بعد الرزاق عن ریطة الحنفیة ان عائشة رضی اللہ عنھا امتھن وقامت بینھن فی صلاۃ مکتوبة[2] وفی الباب عن ام سلمة وابن عباس رضی اللہ عنھم و یروی فیه حدیث مرفوع لیس بذلك بالجملہ زنان رو عوتے مستورہ داشتہ اند و بنائے کار آنہا برستر نہادہ الترمذی بسند حسن عن ابن مسعود رضی اللہ تعالی عن النبی صلی اللہ تعالی علیه وسلم المرأة عورة[3] و شک نیست کہ در حق آنہا دست بر سینہ بستن استر و اقرب بحیاست از دست زیر ناف نہادن و تعظیم نیز در اینا ہم بتستر و احتجاب باشد اذ لا تعظیم الا بالادب ولادب بالحیاء ولاحیاء الا بالتستر پس در باب زناں حدیث ابن خزیمہ ارجح بر آمد و ثابت شد کہ ہر دو مسئلہ بحدیث جید استناد دارد و اصحاب ماہر دو جا بحدیث و ترجیحے عمل فرمودہ اندر رحمتہ اللہ تعالیٰ علیہم اجمعین نظیر ش مسئلہ قعود است کہ بہر دو وجد از نبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم منقول است و علمائے مدر مرداں نصب یمنی و جلوس علی یسری ...

سنت ہے ، اس کو امام ابو حنیفہ نے نافع سے انہوں نے حضرت ابن عمر رضی اللہ عنہم سے روایت کیا ہے اس مسئلہ میں حضرت علی کرم اللہ وجہہ سے یہ مروی ہے کہ جب عورت نماز پڑھے تو وہ رانوں پر سرین کے بل بیٹھے۔ جوہری نے اسکا معنی یہ کیا ہے کہ سجدہ کی حالت میں زمین سے چمٹ کر بیٹھے، اگر خواتین جماعت کروانا چاہیں تو ان کی امام خاتون ان کے درمیان کھڑی ہو جائے۔ امام محمد نے کتاب الآثار میں کہا امام ابو حنیفہ نے حماد بن ابی سفیان سے انہوں نے ابراہیم نخعی سے ہمیں حدیث بیان کی کہ سیدہ عائشہ رضی اللہ عنہا رمضان کے مہینے میں عورتوں کی جماعت کرواتیں تو وسط میں کھڑی ہوتیں، امام عبدالرزاق نے مصنف میں اور دار قطنی و بہقی نے سنن میں یہ روایت کی، الفاظ عبدالرزاق کے ہیں کہ ریطہ حنفیہ بیان کرتی ہیں

کہ سیدہ عائشہ رضی اللہ عنہما خواتین کی امامت کرواتیں تو فرائض کی نماز میں ان کے درمیان کھڑی ہوتیں، اس بارے میں حضرت ام سلمہ اور حضرت ابن عباس رضی اللہ عنہم سے بھی مروی ہے جو اس کی طرح نہیں ہے بالجملہ خواتین عورت مستورہ کی مالک ہوتی ہیں اور ان کے تمام افعال کی بناء پر وہ حجاب پر...

[1] کتاب الآثار للشیبانی باب المراۃ تومّ النساء الخ مطبوعہ ادارۃ القرآن والعلوم الاسلامیہ کراچی ص ۴۴ [2] المصنف لعبد الرزاق باب المراۃ تومّ النساء الخ مطبوعہ المکتب الاسلامی بیروت ۳/۱۴۱ [3] جامع الترمذی ابواب الرضاع مطبوعہ امین کمپنی دہلی ۱/۱۴۰

Fatawa Razawiya Volume Six

[Left Column - Persian/Arabic text]: They adopted [this] because it is more difficult, and the best of deeds are the most difficult ones. Regarding women, they opted for Tawarruk (a specific sitting posture) because it is more concealing and easier, and their matters are based on concealment and ease. This is contrary to the Shafi'i school and those who agree with them, who say that hands should be tied on the abdomen, not on the chest, as in Al-Minhaj, Al-Mizan, and others. No Hadith is ever found on this matter. Even their own Imams (may Allah have mercy on them), in Al-Khulasa, Minhaj of the Imam, and Bulugh al-Maram, did not bring any Hadith supporting their school except the Hadith of Ibn Khuzaymah. I, a humble person, am surprised by their reasoning, as it has no relevance to their school, for there is a clear difference between 'Taht-as-Sadr' (below the chest) and 'Ala-as-Sadr' (on the chest). We have detailed this elsewhere, and what we have mentioned is sufficient for one who looks deeply. And Allah, Glorified and Exalted, knows best.

[Right Column - Urdu text]: ...has been placed. Tirmidhi narrated with a good (hasan) chain from Hadrat Abdullah bin Mas'ud (may Allah be pleased with him) that the Holy Prophet (may Allah's peace and blessings be upon him) said: "A woman is entirely to be concealed and veiled." And there is no doubt that for women, tying hands on the chest is more conducive to veiling and modesty than tying them below the navel. The respect shown by women is in the form of veiling and concealment, because respect is not achieved without etiquette, and etiquette is not achieved without modesty. Therefore, in the case of women, the Hadith of Ibn Khuzaymah proved more predominant. It is established that in both issues, such a Hadith exists whose chain is excellent (jayyid), and expert scholars of Hadith have acted upon the Hadith and preference in both places, may Allah have mercy on them all. An example of this is the issue of sitting (qu'ud), for which both methods are narrated from the Holy Prophet (may Allah's peace and blessings be upon him). Our scholars have chosen for men to keep the right foot upright and sit on the left, because this is more demanding, and the best action is the one involving more hardship. For women, they favored the opinion of Tawarruk because it offers more concealment and ease, and women's affairs are based on concealment and ease. This is contrary to the Shafi'is and their supporters, according to whom a woman should tie her hands on her abdomen and not on her chest, as stated in Minhaj, Mizan, etc., where it is mentioned that no Hadith was found in this regard. Their own Imams (may Allah's mercy be upon them), in Al-Khulasa, Imam Nawawi's Minhaj, and Bulugh al-Maram,

did not mention any Hadith in support of their school except the Hadith of Ibn Khuzaymah. I, the humble one, am surprised at their reasoning, how can this Hadith be an evidence for their school! Because there is a clear difference between Taht-as-Sadr (below the chest) and Ala-as-Sadr (above/on the chest). We have discussed this in detail elsewhere. This aforementioned discussion of ours is sufficient for anyone who possesses depth of vision. And Allah, Glorified and Exalted, knows best. (T)

Problem No. 701: What do the scholars of religion say regarding the matter of pointing with the index finger during Tashahhud (At-Tahiyyat)? Is it proven by our jurists or not? Explain and be rewarded.

फ़तावा रज़विया, जिल्द छठा

[बायां कॉलम - फ़ारसी/अरबी पाठ]: उन्होंने इसे अपनाया क्योंकि यह अधिक कठिन है, और सबसे अच्छे कार्य वे हैं जो सबसे कठिन हैं। महिलाओं के मामले में, उन्होंने तवर्रुक (बैठने का एक विशेष तरीका) को चुना क्योंकि यह अधिक पर्दे वाला और आसान है, और उनके मामले पर्दे और आसानी पर आधारित हैं। यह शाफ़ई स्कूल और उनके साथ सहमत होने वालों के विपरीत है, जो कहते हैं कि हाथ पेट पर बांधने चाहिए, न कि सीने पर, जैसा कि अल-मिन्हाज, अल-मीज़ान और अन्य में है। इस मामले में कभी कोई हदीस नहीं मिली। यहाँ तक कि उनके अपने इमामों (अल्लाह उन पर रहम करे) ने अल-खुलासा, इमाम की मिन्हाज और बुलुग अल-मराम में इब्न खुज़ैमा की हदीस के अलावा अपने स्कूल का समर्थन करने वाली कोई हदीस पेश नहीं की। मैं, एक तुच्छ व्यक्ति, उनके तर्क पर हैरान हूँ, क्योंकि इसका उनके स्कूल से कोई संबंध नहीं है, क्योंकि 'तहतुस-सद्र' (सीने के नीचे) और 'अलुस-सद्र' (सीने के ऊपर) के बीच स्पष्ट अंतर है। हमने कहीं और इसका विस्तार से वर्णन किया है, और जो हमने उल्लेख किया है वह गहराई से देखने वाले के लिए पर्याप्त है। और अल्लाह, महिमामय और उच्च, बेहतर जानता है।

[दायां कॉलम - उर्दू पाठ]: ...रखी गई है। तिर्मिज़ी ने सनद हसन के साथ हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसूद (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया कि नबी अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "औरत पूरी की पूरी पर्दे और हिजाब की चीज़ है।" और इसमें कोई शक नहीं कि औरतों के हक़ में सीने पर हाथ बांधना, नाभि के नीचे बांधने से ज़्यादा हिजाब और हया की सूरत में है। और महिलाओं का सम्मान पर्दे और हिजाब के रूप में है, क्योंकि सम्मान अदब के बिना और अदब हया के बिना प्राप्त नहीं होता। इसलिए महिलाओं के हक़ में इब्न खुज़ैमा की हदीस अधिक प्रधान साबित हुई। यह स्थापित हो चुका है कि दोनों मुद्दों में ऐसी हदीस मौजूद है जिसकी सनद बेहतरीन है, और हदीस के विशेषज्ञ विद्वानों ने दोनों स्थानों पर हदीस और प्राथमिकता पर ही अमल किया है, अल्लाह उन सब पर रहम करे। इसका एक उदाहरण बैठने (कुऊद) का मामला है, जिसके लिए नबी अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से दोनों तरीके वर्णित हैं। हमारे विद्वानों ने पुरुषों के लिए दाहिने पैर को सीधा रखने और बाएं पर बैठने का चुनाव किया है, क्योंकि यह अधिक कठिन है, और सबसे अच्छा कार्य वही है जिसमें अधिक कठिनाई हो। महिलाओं के लिए, उन्होंने तवर्रुक की राय को प्राथमिकता दी क्योंकि यह अधिक पर्दा और आसानी प्रदान करता है, और महिलाओं के मामले पर्दे और आसानी पर आधारित हैं। यह शाफ़ई और उनके समर्थकों के विपरीत है, जिनके अनुसार एक महिला को

अपने हाथ पेट पर बांधने चाहिए न कि अपने सीने पर, जैसा कि मिन्हाज, मीज़ान आदि में कहा गया है, जहाँ उल्लेख है कि इस संबंध में कोई हदीस नहीं मिली। उनके अपने इमामों (अल्लाह उन पर रहम करे) ने अल-खुलासा, इमाम नववी की मिन्हाज और बुलुग अल-मराम में इब्न खुज़ैमा की हदीस के अलावा अपने स्कूल के समर्थन में किसी हदीस का उल्लेख नहीं किया। मैं, तुच्छ व्यक्ति, उनके तर्क पर चकित हूँ कि यह हदीस उनके स्कूल के लिए सबूत कैसे हो सकती है! क्योंकि तहतुस-सद्र (सीने के नीचे) और अलुस-सद्र (सीने के ऊपर/पर) में स्पष्ट अंतर है। हमने अन्यत्र इस पर विस्तार से चर्चा की है। हमारी यह पूर्वोक्त चर्चा उस किसी भी व्यक्ति के लिए पर्याप्त है जिसके पास दृष्टि की गहराई है। और अल्लाह, महिमामय और उच्च, बेहतर जानता है। (त)

मसला नंबर 701: धर्म के विद्वान तशहहुद (अत्तहियात) के दौरान तर्जनी उंगली से इशारा करने के मामले में क्या कहते हैं? क्या यह हमारे न्यायविदों द्वारा सिद्ध है या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

पृष्ठ 149/736

[بایاں کالم - فارسی/عربی متن]: اختیار کردند لانه اشق و افضل الاعمال اشقها ودرناں بتورک رفتند لانه استر والیسر و مبنی امرهن علی الستر والیسر بخلاف مسلك شافعیة ومن وافقهمکه دست برشکم بستن است نه برسینه کما فی المنهاج والمیزان وغیرهما کہ ہر گز دریں باب حدیثی یافتہ نمی شود خود ائمہ ایشاں رحمۃ اللہ تعالیٰ علیہم در خلاصہ و منہاج امام وبلوغ المرام حدیثی موید مذہب خود شاں نیا وردند جز حیث ابن خزیمہ و من فقیر مجم از استدلال ایشاں بانچہ مساسے ندارد وبمذہب ایشاں کہ در تحت الصدور علی الصدر فرقے ہست کہ پیداست وقد فصلنا الکلام فی محل اخروفي ماذکرنا کفایة لمن امعن النظر واللہ سبحانه وتعالی اعلم۔

[دایاں کالم - اردو متن]: رکھی گئی ہے۔ ترمذی نے سند حسن کے ساتھ حضرت عبد اللہ بن مسعود رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا کہ نبی اکرم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا: عورت تمام کی تمام قابلِ ستر و حجاب ہے۔ اور اس میں کوئی شک نہیں کہ عورتوں کے حق میں سینے پر ہاتھ باندھنا، زیر ناف باندھنے سے زیادہ حجاب اور حیا کی صورت میں ہے۔ اور خواتین کا تعظیم کرنا ستر و حجاب کی صورت میں ہے کیونکہ تعظیم ادب کے بغیر اور ادب حیا کے بغیر حاصل نہیں ہوتا لہٰذا خواتین کے حق میں حدیث ابن خزیمہ زیادہ راجح ثابت ہوئی اور ثابت ہو گیا کہ دونوں مسائل میں ایسی حدیث موجود ہے جس کی سند جید ہے اور ماہر علماء حدیث نے دونوں مقامات پر حدیث و ترجیح پر ہی عمل فرمایا ہے رحمۃ اللہ علیہم اجمعین۔ اس کی ایک نظیر مسئلہ قعود ہے کہ اس کے دونوں طریقے نبی اکرم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم سے منقول ہیں ہمارے علماء نے مردوں کے لئے دایاں پاؤں کھڑا کرنا اور بائیں پر بیٹھنے کو اختیار کیا ہے کیونکہ یہ شاق ہے اور بہتر عمل وہی ہوتا ہے جس میں مشقت ہو اور خواتین کے لئے تورک کا قول کیا کیونکہ اس میں زیادہ

ستر اور آسانی ہے اور خواتین کا معاملہ ستر اور آسانی پر مبنی ہے۔ بخلاف شوافع اور ان کے موافقین کے کہ ان کے ہاں عورت شکم پر ہاتھ باندھے نہ کہ سینہ پر جیسا کہ منہاج، میزان وغیرہما میں ہے کہ اس بارے میں کوئی حدیث نہیں ملی، خود ان کے ائمہ رحمہم اللہ تعالیٰ نے خلاصہ، امام نووی کی منہاج اور بلوغ المرام میں اپنے مذہب کی تائید میں سوائے حدیث ابن خزیمہ کے کوئی حدیث ذکر نہیں کی مجھ فقیر کو ان کے استدلال پر تعجب ہے کہ یہ حدیث ان کے مذہب کی دلیل کیسے بن سکتی ہے ! کیونکہ تحت الصدر (سینے کے نیچے) اور علی الصدر (سینے کے اوپر) میں نمایاں فرق ہے، ہم نے دوسرے مقام پر اس پر تفصیلی گفتگو کی ہے، ہماری یہ مذکورہ گفتگو ہر اس شخص کے لئے کافی ہے جو دقتِ نظر رکھتا ہے واللہ سبحانہ و تعالیٰ اعلم۔(ت)

مسئلہ نمبر ۷۰۱۔ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ انگشتِ شہادت سے التحیات میں اشارہ کیسا ہے اور ہمارے فقہا سے ثابت ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

Fatawa Razawiyya, Volume 6

The Answer:

Muslim recorded in his Sahih on the authority of our master Abdullah bin Umar (may Allah be pleased with both of them), who said: When he (the Messenger of Allah, peace and blessings of Allah be upon him) sat during prayer, he would place his right palm on his right thigh, close all his fingers, and point with the finger adjacent to the thumb [the index finger].[1] That is, the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) placed his right hand on his right thigh during Tashahhud, closed all the fingers, and pointed with the finger next to the thumb. And Ibn al-Sakan recorded in his Sahih on his [Ibn Umar's] authority that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Pointing with the finger is harder on Satan than iron."[2] That is, the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said that pointing with the finger is more severe against Satan than a sharp-edged weapon. Also from him [Ibn Umar] from the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him), who said: "It is a terror for Satan."[3] That is, the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said it strikes fear into the heart of Satan. And Abu Dawood, al-Bayhaqi, and others recorded from our master Wa'il bin Hujr (may Allah be pleased with him) that the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him), while sitting for Tashahhud, closed the pinky and ring fingers, then formed a ring with the middle finger and thumb, and pointed with the index finger.[4] That is, the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) in his Tashahhud sitting closed the small finger and the one next to it, then formed a circle with the middle finger and thumb, and pointed with the index finger. And Ibn Hibban recorded a similar meaning in his Sahih. (Ibn Hibban also mentioned a similar hadith in his Sahih. - Editor) And many hadiths and traditions are reported on this topic. It is also the correct and relied-upon position of our researchers. Its authentication was quoted in 'al-Saghir' from 'Multaqit' and 'Sharh al-Hidayah', and upon this relied the great erudite researchers like Mawlana Kamal al-Din Muhammad bin al-Humam, Allama Ibn Amir al-Hajj al-Halabi, the virtuous Bansiwi Baqi, Mulla Khusraw, Allama Shurunbulali, the virtuous Ibrahim Tarabulusi, and other prominent scholars. The author of 'Durr al-Mukhtar', the meticulous scholar Ala al-Din Haskafi, the most illustrious scholar Sayyid Ahmad Tahtawi, the virtuous Ibn Abidin Shami, and other great figures followed them. Allama Badr al-Din Ayni quoted its desirability from 'Tuhfa', and the author of 'al-Muhit' and...

1. Sahih Muslim, Chapter: Description of Sitting in Prayer, etc., printed by Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/216.
2. Musnad Ahmad bin Hanbal, from the Musnad of Abdullah ibn Umar, printed by Dar al-Fikr, Beirut, 2/119.
3. Al-Sunan al-Kubra by al-Bayhaqi, Chapter: Those who narrated that he pointed, etc., printed by Dar Sadr, Beirut, 2/132.
4. Al-Sunan al-Kubra by al-Bayhaqi, Chapter: What was narrated regarding forming a ring with the middle finger and thumb, printed by Dar Sadr, Beirut, 2/131.

फ़तावा रज़विया, जिल्द 6

उत्तर:

मुस्लिम ने अपनी सहीह में हमारे आका हज़रत अब्दुल्ला बिन उमर (अल्लाह उन दोनों से राज़ी हो) से रिवायत की है, उन्होंने कहा: जब वह (अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) नमाज़ में बैठते, तो अपना दायाँ हाथ अपनी दाईं जांघ पर रखते, अपनी सभी उंगलियाँ बंद कर लेते और अंगूठे के पास वाली उंगली से इशारा करते।[1] यानी अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने तशहुद में अपना दायाँ हाथ दाईं जांघ पर रखा और सभी उंगलियां बंद करके अंगूठे के पास वाली उंगली से इशारा फ़रमाया। और इब्न अल-सकन ने अपनी सहीह में उनसे रिवायत की कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "उंगली से इशारा करना शैतान पर लोहे से भी ज़्यादा सख्त है।"[2] यानी अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया कि उंगली से इशारा करना शैतान पर धारदार हथियार से ज़्यादा सख्त है। उन्हीं से नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से रिवायत है, आपने फ़रमाया: "यह शैतान के लिए डराने वाली चीज़ है।"[3] यानी अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया कि वह शैतान के दिल में खौफ़ डालने वाला है। और अबू दाऊद, अल-बैहक़ी और अन्य ने हमारे आका वक़ैल बिन हुज्र (अल्लाह उनसे राज़ी हो) से रिवायत की है कि नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने तशहुद की बैठक में छोटी उंगली और उसके साथ वाली उंगली को बंद किया, फिर बीच की उंगली और अंगूठे के साथ छल्ला बनाया और शहादत की उंगली से इशारा फ़रमाया।[4] यानी नबी अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने अपने जलसा-ए-तशहुद में छोटी उंगली और उसके बराबर वाली को बंद किया फिर बीच की उंगली को अंगूठे के साथ हलका (छल्ला) बनाया और अंगुश्त-ए-शहादत से इशारा फ़रमाया। और इसी अर्थ में इब्न हिब्बान ने अपनी सहीह में रिवायत की है। (इब्न हिब्बान ने भी अपनी सहीह में इसी तरह की हदीस ज़िक्र की है। - सं.) और इस बारे में हदीसें और आसार कसरत से आए हैं, हमारे मुहक्क़िक़ीन का भी यही सहीह और मोतमिद (भरोसेमंद) मज़हब है। 'सग़ीरी' में 'मुल्तक़ित' और 'शरह हिदाया' से इसकी तसहीह (पुष्टि) नक़ल की गई और इसी पर अल्लामा फ़हामा मुहक्क़िक़ अलल इतलाक मौलाना कमालुद्दीन मुहम्मद बिन अल-हुमाम और अल्लामा इब्न अमीर अल-हाज हलबी और फ़ाज़िल बनसियो बाक़ी और मुल्ला खुसरो और अल्लामा शुरुनबुलाली और फ़ाज़िल इब्राहिम ताराबुलुसी वगैरह बड़े उलमा ने एतमाद फ़रमाया और उन्हीं का साहिब-ए-दुर्रे मुख्तार, फ़ाज़िल मुदक़्क़िक़ अलाउद्दीन हसक़फ़ी और फ़ाज़िल अजल सैय्यद अहमद तहतावी और फ़ाज़िल इब्न आबिदीन शामी

और अन्य बड़े उलमा ने इत्तेबा (अनुसरण) किया। अल्लामा बदरुद्दीन ऐनी ने 'तुहफ़ा' से इसका मुस्तहब होना नक़ल फ़रमाया और साहिब-ए-मुहीत और...

---

1. सहीह मुस्लिम, बाब: नमाज़ में बैठने का तरीका, आदि, मुद्रित क़दीमी कुतुब खाना, कराची, 1/216।
2. मुसनद अहमद बिन हंबल, मुसनद अब्दुल्ला इब्न उमर से, मुद्रित दारुल फ़िक्र, बेरूत, 2/119।
3. अल-सुनन अल-कुबरा, अल-बैहक़ी द्वारा, बाब: जिन्होंने रिवायत की कि उन्होंने इशारा किया, आदि, मुद्रित दार सादिर, बेरूत, 2/132।
4. अल-सुनन अल-कुबरा, अल-बैहक़ी द्वारा, बाब: जो बीच की उंगली और अंगूठे से छल्ला बनाने के बारे में रिवायत है, मुद्रित दार सादिर, बेरूत, 2/131।

فتاویٰ رضویہ، جلد ششم

الجواب:

اخرج مسلم في صحیحه عن سیدنا عبد اللہ بن عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہما قال فیه کان اذا جلس في الصلوة وضع (یرید رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم) کفه الیمنی علی فخذه الیمنی و قبض اصابعه کلها واشار باصبعه التي تلي الابهام ۔۱۔ یعنی رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے تشہد میں اپنا دہنا ہاتھ دہنی ران پر رکھا اور سب انگلیاں بند کرکے انگوٹھے کے پاس انگلی سے اشارہ فرمایا۔ و اخرج ابن السکن في صحیحه عنہ رضی اللہ تعالیٰ عنه قال قال رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم الاشارة بالاصبع اشد علی الشیطان من الحدید ۔۲۔ یعنی فرمایا رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے انگلی سے اشارہ کرنا شیطان پر دھار دار ہتھیار سے زیادہ سخت ہے۔ وعنہ رضی اللہ تعالیٰ عنه ایضاً عن النبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم قال هي مذعرة للشیطان ۔۳۔ یعنی رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا وہ شیطان کے دل میں خوف ڈالنے والا ہے۔ و اخرج ابوداؤد والبیهقی وغیرهما عن سیدنا وائل بن حجر رضی اللہ عنہ ان النبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم عقد فی جلوس التشهد الخنصر والبنصر ثم حلق الوسطی بالابهام و اشار بالسبابة ۔۴۔ یعنی نبی اکرم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے اپنے جلسہ تشہد میں چھوٹی انگلی اور اُس کی برابر والی کو بند کیا پھر بیچ کی انگلی کو انگوٹھے کے ساتھ حلقہ بنایا اور انگشتِ شہادت سے اشارہ فرمایا۔ وبمعناہ اخرج ابن حبان فی صحیحہ (ابن حبان نے بھی اپنی صحیح میں اسی طرح کی حدیث ذکر کی ہے۔ت) اور اس باب میں احادیث و آثار بکثرت وارد، ہمارے محققین کا بھی مذہبِ صحیح و معتمد علیہ ہے صغیری میں ملتقط وشرح ہدایہ سے اس کی تصحیح نقل کی اور اسی پر علامہ فہامہ محقق علی الاطلاق مولانا کمال الدین محمد بن الهمام و علامہ ابن امیر الحاج حلبی و فاضل بنسیو باقی و ملا خسرو و علامہ

شرنبلالی و فاضل ابراہیم طرابلسی وغیرہ ہم اکابر نے اعتماد فرمایا اور انھیں کا صاحب درمختار، فاضل مدقق علاء الدین حصکفی و فاضل اجل سید احمد طحطاوی و فاضل ابن عابدین شامی و غیر ہم اجلہ نے اتباع کیا، علامہ بدرالدین عینی نے تحفہ سے اس کا استحباب نقل فرمایا اور صاحبِ محیط و...

---

۱ صحیح مسلم باب صفۃ الجلوس فی صلوۃ الخ مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۲۱۶ ۲ مسند احمد بن حنبل از مسند عبد اللہ ابن عمر مطبوعہ دارالفکر بیروت ۲/ ۱۱۹ ۳ السنن الکبریٰ للبیہقی باب من روی انہ اشار بالخ مطبوعہ دار صادر بیروت ۲/ ۱۳۲ ۴ السنن الکبریٰ للبیہقی باب ماروی فی تحلیق الوسطی بالابہام مطبوعہ دار صادر بیروت ۲/ ۱۳۱

Fatawa Razawiyya - Volume Six

Mulla Quhistani called it a Sunnah. In 'Ad-Durr al-Mukhtar' it is stated:

[Arabic Section]: "However, the reliable [opinion] is what the commentators have authenticated, especially the later ones like al-Kamal, al-Halabi, al-Bahnasi, al-Baqani, the grandfather Shaykh al-Islam, and others; that he (the worshipper) should gesture, due to the action of the Prophet (peace and blessings be upon him). They attributed this to Muhammad and to the Imam (Abu Hanifa). In fact, in the text of 'Durr al-Bihar' and its commentary 'Ghurar al-Adhkar', it says: The fatwa according to us is that he should gesture... etc. And in 'ash-Shurunbulaliyya' from 'al-Burhan', it is stated that the correct [opinion] is that he should gesture... etc. By using the word 'correct' (as-Sahih), he cautions against the statement that he should not gesture, as that is contrary to both reasoning (dirayah) and transmission (riwayah)... etc. And in 'al-'Ayni' from 'at-Tuhfa': The most correct [opinion] is that it is recommended (mustahabb). And in 'al-Muhit': it is a Sunnah. End of excerpt (1)."

[Urdu Explanation]: But the reliable opinion is the one authenticated by the commentators, especially later scholars like Kamal, Halabi, Bahnasi, Baqani, and Shaykh al-Islam al-Jadd etc., who declared gesturing to be correct because it was the practice of the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him). They attributed this view to Imam Muhammad and the Imam (Abu Hanifa). Moreover, it is mentioned in the text of 'Durr al-Bihar' and its commentary 'Ghurar al-Adhkar' that gesturing is the verdict-given (mufta bihi) opinion according to us etc. It is narrated in 'Shurunbulaliyya' from 'Burhan' that the correct view is for the worshipper to gesture etc. By using the word 'correct', attention is drawn to the fact that the opinion 'not to gesture' is wrong, because it is against both reasoning and transmission. It is stated in 'Ayni' with reference to 'Tuhfa' that gesturing is recommended (mustahabb), and in 'Muhit' that it is a Sunnah. End of excerpt. (T)

And on this issue, narrations have been received from all three of our Imams. Whoever presumed a lack of narration or a narration of non-performance from Imam-e-A'zam Abu Hanifa (may Allah have mercy on him), it was based purely on ignorance or human error. Imam Muhammad (may Allah have mercy on him), in his book 'Al-Mashyakha', narrates a Hadith from the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) regarding gesturing and states: "So we do what the Prophet (peace be upon him) did and we act according to what he performed, and that is the opinion of Abu Hanifa and our opinion" (2). 'Allama al-Halabi mentioned

this in 'al-Hilya' from 'al-Bada'i'. That is, we do as the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) did and act upon what was the action of the Prophet, and that is the school (madhhab) of Imam Abu Hanifa and ours. 'Allama Halabi has quoted this in 'al-Hilya' from 'al-Bada'i'.

And it is narrated from him (Imam Abu Hanifa) - may Allah have mercy on him - that he then said: "This is my opinion and the opinion of Abu Hanifa" (3). The 'Allama quoted this from 'adh-Dhakhira'.

---

1 Ad-Durr al-Mukhtar, Bab Sifat al-Salat, Mujtabai Press, Delhi, 1/77 2 Bada'i al-Sana'i, Fasl fi Sunan al-Salat, published by H.M. Saeed Company, 1/212 Note: Since 'Kitab al-Mashyakha' was not available, the reference has been quoted from 'Bada'i al-Sana'i'. 3 Hilyat al-Mahalli Sharh Munyat al-Musalli

फतावा रज़विया - जिल्द छठा

मुल्ला कुहिस्तानी ने इसे सुन्नत कहा है। 'अद-दुर्र अल-मुख्तार' में है:

[अरबी खंड]: "लेकिन विश्वसनीय (राय) वही है जिसे व्याख्याकारों ने सही ठहराया है, विशेष रूप से बाद के विद्वानों जैसे अल-कमल, अल-हलबी, अल-बहनसी, अल-बाकानी, दादा शेख-उल-इस्लाम और अन्य लोगों ने; कि नमाज़ी को इशारा करना चाहिए, क्योंकि यह नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का अमल है। उन्होंने इस राय को इमाम मुहम्मद और इमाम (अबू हनीफा) की ओर संबद्ध किया है। बल्कि, 'दुर्र अल-बिहार' के मूल पाठ और उसकी व्याख्या 'ग़ुरर अल-अज़कार' में है: हमारे यहाँ मुफ्ता-बिही (जिस पर फतवा दिया जाए) राय यही है कि वह इशारा करे... इत्यादि। और 'शुरुनबुललिया' में 'बुरहान' के हवाले से है कि सही यही है कि नमाज़ी इशारा करे.. इत्यादि। 'सही' शब्द का प्रयोग करके उन्होंने उस कथन से सावधान किया है कि इशारा न किया जाए, क्योंकि वह अक्ल (दिरायत) और रिवायत दोनों के खिलाफ है... इत्यादि। और 'ऐनी' में 'तुहफ़ा' के हवाले से है: सबसे सही राय यह है कि यह मुस्तहब (पसंदीदा) है। और 'मुहीत' में है कि यह सुन्नत है। उद्धरण समाप्त (1)।"

[उर्दू स्पष्टीकरण]: लेकिन विश्वसनीय वही है जिसे व्याख्याकारों ने सही कहा है, विशेष रूप से बाद के उलेमा जैसे कमाल, हलबी, बहनसी, बाकानी और शेख-उल-इस्लाम अल-जद्द वगैरह ने इशारा करने को सही करार दिया क्योंकि यह नबी अकरम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का अमल है और उन्होंने इस कौल (कथन) की निस्बत इमाम मुहम्मद और इमाम साहब की तरफ की है, बल्कि मतन 'दुर्र अल-बिहार' और उसकी शरह 'ग़ुरर अल-अज़कार' में है कि इशारा करना हमारे नज़दीक मुफ्ता-बिही कौल है इत्यादि। और 'शुरुनबुललिया' में 'बुरहान' से मनकूल है कि सही यही है कि नमाज़ी इशारा करे इत्यादि। लफ्ज़ 'सही' कह कर मुतवज्जह किया है कि वह कौल कि इशारा न किया जाए गलत है क्योंकि वह दिरायत व रिवायत दोनों के खिलाफ है। और 'ऐनी' में 'तुहफ़ा' के हवाले से है कि इशारा करना मुस्तहब है, और 'मुहीत' में है कि सुन्नत है। (त)

और इस मसले में हमारे तीनों अइम्मा-ए-किराम से रिवायतें मौजूद हैं। जिसने इमाम-ए-आज़म अबू हनीफा (रहमतुल्लाह अलैह) से इस बारे में रिवायत की कमी या न करने की रिवायत का गुमान किया, वह महज़ नावाकिफियत या मानवीय भूल पर आधारित था। इमाम मुहम्मद (रहमतुल्लाह अलैह) अपनी किताब 'अल-मशयाखा' में इशारे के बारे में रसूल-ए-अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि

वसल्लम) से एक हदीस रिवायत करके फरमाते हैं: "तो हम वही करते हैं जो नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने किया और हम उसी पर अमल करते हैं जो हुज़ूर का फेल (कार्य) था और वही इमाम अबू हनीफा और हमारा मज़हब है" (2)। अल्लामा हलबी ने इसे 'हिलिया' में 'बदाइ' के हवाले से ज़िक्र किया है। यानी पस हम करते हैं जो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने किया और अमल करते हैं उस पर जो हुज़ूर का फेल था और वह मज़हब है इमाम अबू हनीफा का और हमारा। इसे अल्लामा हलबी ने 'हिलिया' में 'बदाइ' से नकल फरमाया है।

और उनसे (इमाम अबू हनीफा से) मरवी है - अल्लाह उन पर रहम फरमाए - फिर उन्होंने कहा: "यह मेरा कौल है और अबू हनीफा का कौल है" (3)। अल्लामा ने इसे 'अज़-ज़खीरा' से नकल किया।

---

1 दुर्र अल-मुख्तार, बाब सिफत अल-सलात, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, 1/77 2 बदाइ अल-सनाइ, फस्ल फी सुनन अल-सलात, मुद्रित एच.एम. सईद कंपनी, 1/212 नोट: किताब 'अल-मशयाखा' उपलब्ध न होने के कारण 'बदाइ अल-सनाइ' से हवाला नकल किया गया है। 3 हिलयत अल-महल्ली शरह मुनियत अल-मुसल्ली

पृष्ठ 151/736

فتاوٰی رضویہ - جلد ششم

ملاّ قہستانی نے سنّت کہا ففی الدرالمختار (در مختار میں ہے۔ت):

لکن المعتمد ما صححه الشراح ولا سیما المتأخرون کالکما ل والحلبی والبهنسی والباقی وشیخ الاسلام الجد وغیرهم انه یشیر لفعله علیه الصلوة والسلام ونسبوه لمحمد ولامام بل في متن درر البحار وشرحه غرر الاذکار المفتی به عندنا انه یشیر الخ وفي الشرنبلالیة عن البرهان الصحیح انه یشیر الخ واحترز بالصحیح عما قیل لا یشیر لانه خلاف الدرایة والروایة الخ وفی العینی عن التحفة الاصح انها مستجبة وفی المحیط سنة انتهی ملتقطا 1۔

لیکن معتمد وہی ہے جسے شارحین نے صحیح کیا خصوصاً متاخرین علماء کمال، حلبی، بہنسی، باقانی اور شیخ الاسلام الجد وغیرہم نے اشارہ کرنے کو صحیح قرار دیا کیونکہ نبی اکرم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کا عمل ہے اور انھوں نے اس قول کی نسبت امام محمد اور امام صاحب کی طرف کی ہے، بلکہ متن درر البحار اور اسکی شرح غرر الاذکار میں ہے کہ اشارہ کرنا ہمارے نزدیک مفتی بہ قول ہے الخ اور شرنبلالیہ میں برہان سے منقول ہے کہ صحیح یہی ہے کہ نمازی اشارہ کرے الخ لفظ صحیح کہہ کر متوجہ کیا ہے کہ وہ قول کہ اشارہ نہ کیا جائے کیونکہ وہ درایت و روایت دونوں کے خلاف ہے اور عینی میں تحفہ کے حوالے سے ہے کہ اشارہ کرنا مستحب ہے، اور محیط میں ہے کہ سنت ہے انتہی ملتقطا۔(ت)

اور اس مسئلہ میں ہمارے تینوں ائمہ کرام سے روایتیں وارد جس نے امام اعظم ابو حنیفہ رحمۃ اللہ علیہ سے اس میں عدم روایت یا روایت عدم کا زعم کیا محض ناواقفی یا خطائے بشری پر مبنی تھا امام محمد رحمۃ اللہ تعالٰی کتاب المشیخہ میں درباره اشارہ ایک حدیث رسول اکرم صلی اللہ تعالٰی

علیہ وسلم سے روایت کر کے فرماتے ہیں : فنفعل ما فعل النبی صلی اللہ علیہ وسلم ونصنع ما صنعه وهو قول ابی حنیفہ و قولنا 2- ذکرہ العلامة الحلبی فی الحلیة عن البدائع یعنی پس ہم کرتے ہیں جو رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے کیا اور عمل کرتے ہیں اس پر جو حضور کا فعل تھا اور وہ مذہب ہے امام ابو حنیفہ کا اور ہمارا۔ اس کو علامہ حلبی نے حلیہ میں بدائع سے نقل فرمایا ہے۔

ویروی عنہ رحمۃ اللہ تعالیٰ ثم قال ہذا قولی و قول ابی حنیفہ 3- اثرہ العلامة عن الذخیرہ

---

1 در مختار باب صفۃ الصلوۃ مطبعہ مجتبائی دہلی 1/ 77 2 بدائع الصنائع فصل فی سنن الصلوۃ مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی 1/ 212 نوٹ: کتاب المشیخہ دستیاب نہ ہونے کی وجہ سے بدائع الصنائع سے حوالہ نقل کیا ہے۔ 3 حلیۃ المحلی شرح منیۃ المصلی

Fatawa Ridawiyya Volume Six

And Sharh al-Zahidi, the author of al-Qunyah, and it is narrated from him, then Imam Muhammad said: "Pointing is my view and the view of Imam Abu Hanifa (may Allah have mercy on him)." Allama Halbi narrated this from az-Zakhira and Sharh al-Zahidi, the author of al-Qunyah. It is mentioned in Kabiri and Radd al-Muhtar, narrated from Imam Abu Yusuf (may Allah have mercy on him), until Shami clarified in this footnote:

It is narrated from our three Imams. [1] (This is narrated from our three Imams. -T)

And in the same source:

This is what the later scholars relied upon because it is proven from the Prophet (may Allah Almighty grant him peace and blessings) through authentic hadiths. The correctness of its narration from our three Imams is established. Therefore, it was said in Al-Fath that the first (meaning not pointing) is contrary to [legal] reasoning and narration. In Al-Quhistani, it is mentioned from all our companions that it is Sunnah. So, one should join the tips of the thumb and middle finger of the right hand to form a circle and point with the index finger. [2]

The later scholars relied on this because it is proven from the Holy Prophet (may Allah Almighty grant him peace and blessings) through authentic hadiths, and its narration from our three Imams is correct. That is why it was said in Al-Fath that the first (meaning not to point) is contrary to narration; according to all of our Hanafis, this is a Sunnah. Therefore, join the tips of the thumb and middle finger of the right hand to make a circle and point with the index finger. (T)

It is in Kabiri:

Closing the fingers while pointing, as narrated from Muhammad regarding the method of pointing, and from many scholars (that) one should not point at all. This is contrary to [legal] reasoning and narration. From Muhammad, it is narrated that what he mentioned regarding the method of pointing is his view and the view of Imam Abu Hanifa

Close the fingers at the time of pointing. This is narrated from Imam Muhammad regarding the method of pointing, and it is the view of many scholars that pointing should not be done at all; this is contrary to reasoning and narration. It is narrated from Imam Muhammad that some mention was made regarding the method of pointing; this is his and Imam Abu

(may Allah Almighty have mercy on him), in summary. [3]

Hanifa's (may Allah Almighty have mercy on him) view, in summary. (T)

[1] Radd al-Muhtar, Chapter: Description of Prayer, printed Mujtabai Delhi 1/342 [2] Radd al-Muhtar, Chapter: Description of Prayer, printed Mujtabai Delhi 1/342 [3] Ghunyat al-Mustamli Sharh Munyat al-Musalli, Description of Prayer, printed Suhail Academy Lahore, p. 328

फतावा रज़विया छठा खंड

और शरह अल-ज़ाहीदी, अल-कुन्या के लेखक, और उन्हीं से रिवायत है, फिर इमाम मुहम्मद ने फरमाया: "इशारा करना मेरा कौल है और इमाम अबू हनीफा (रहमतुल्लाह अलैह) का भी।" अल्लामा हलीबी ने इसे 'ज़खीरा' और अल-कुन्या के लेखक 'शरह अल-ज़ाहीदी' से नकल किया है। यह 'कबीरी' और 'रद्द अल-मुह्तार' में इमाम अबू यूसुफ (रहमतुल्लाह अलैह) से रिवायत किया गया है, यहाँ तक कि शामी ने इस हाशिये में स्पष्ट किया है:

यह हमारे तीनों इमामों से मंकूल (रिवायत) है। [1] (यह हमारे तीनों इमामों से मंकूल है। -त)
और इसी में है:

बाद के विद्वानों (मुताखिरीन) ने इसी पर भरोसा किया है क्योंकि यह नबी-ए-करीम (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) से सही हदीसों के ज़रिए साबित है। हमारे तीनों इमामों से इसका रिवायत होना सही है। इसीलिए 'अल-फतह' में कहा गया कि पहला (यानी इशारा न करना) समझ और रिवायत के खिलाफ है। कुहिस्तानी में हमारे तमाम साथियों से रिवायत है कि यह सुन्नत है। अतः दाहिने हाथ के अंगूठे और बीच की उंगली के पोरों को मिलाकर घेरा बनाए और तर्जनी (शहादत की उंगली) से इशारा करे। [2]

इसी पर मुताखिरीन ने भरोसा किया क्योंकि नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से सही हदीसों के साथ साबित है और हमारे तीनों इमामों से इसका मंकूल होना सही है, इसीलिए 'फतह' में कहा गया कि पहला (यानी इशारा न करना) रिवायत के खिलाफ है, हमारे तमाम अहनाफ के नज़दीक यह सुन्नत है लिहाज़ा दाहिने हाथ के अंगूठे और दरमियानी उंगली के सिरों को मिला कर हल्का बना कर सबाबा (तर्जनी) से इशारा करे (त)

'कबीरी' में है:

इशारा करते समय उंगलियाँ बंद कर ले, इशारे के तरीके में इमाम मुहम्मद से यही रिवायत है, और कई उस्तादों का कहना है कि इशारा बिल्कुल न किया जाए, यह समझ और रिवायत के खिलाफ है। इमाम मुहम्मद से रिवायत है कि उन्होंने इशारे के तरीके में जो ज़िक्र किया है,

इशारा के वक्त उंगलियां बंद कर ले, तरीका-ए-इशारा में इमाम मुहम्मद से यही मरवी (रिवायत) है और मुताअद्दद (अनेक) मशाईख का कौल है कि इशारा अस्लन (मूल रूप से) न किया जाए, यह दरायत व रिवायत के खिलाफ है। इमाम मुहम्मद से मंकूल है कि कैफियत-ए-इशारा में कुछ ज़िक्र

वह उनका और इमाम अबू हनीफा (रहमतुल्लाह अलैह) का कौल है, संक्षेप में। [3]

किया है, यह उनका और इमाम अबू हनीफा रहमतुल्लाह तआला का कौल है, मुलख़्ख़सन (संक्षेप में)। (त)

[1] रद्द अल-मुह्तार, बाब: सिफत-उस-सलात, मुतबूआ मुजतबाई देहली 1/342 [2] रद्द अल-मुह्तार, बाब: सिफत-उस-सलात, मुतबूआ मुजतबाई देहली 1/342 [3] गुनियातुल मुस्तमली शरह मुनियतुल मुसल्ली, सिफत-उस-सलात, मुतबूआ सुहैल एकेडमी लाहौर, पृष्ठ 328

فتاوی رضویہ جلد ششم

وشرح الزاہدی صاحب القنیہ اور انہی سے مروی ہے پھر امام محمد نے فرمایا اشارہ کرنا میرا قول ہے اور قول ابی حنیفہ رحمۃ اللہ کا۔ علامہ حلبی نے ذخیرہ اور شرح الزاہدی صاحب قنیہ سے اسے نقل کیا۔ وہ مذکورہ اور کبیری اور ردالمحتار میں اسے امام ابو یوسف رحمۃ اللہ سے روایت کیا یہاں تک کہ شامی نے اس حاشیہ میں تصریح کی:

ھو منقول عن ائمتنا الثلثۃ- [1] (یہ ہمارے تینوں ائمہ سے منقول ہے۔ ت)

اور اسی میں ہے:

ھذا ما اعتمدہ المتأخرون لثبوتہ عن النبی صلی اللہ تعالی علیہ وسلم بالاحادیث الصحیحۃ والصحۃ نقلہ عن ائمتنا الثلثۃ فلذا قال فی الفتح ان الاول (یعنی عدم الاشارۃ) خلاف الدرایۃ والروایۃ ، وفیہ عن القھستانی وعن اصحابنا جمیعا انہ سنۃ فیحلق ابھام الیمنی ووسطاھا ملصقاراسھا براسھا و یشیر بالسبابۃ [2]۔

اسی پر متاخرین نے اعتماد کیا کیونکہ نبیا کرم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم سے احادیث صحیحہ کے ساتھ ثابت ہے اور ہمارے تینوں ائمہ سے اس کا منقول ہونا صحیح ہے اسی لئے فتح میں کہا پہلا (یعنی اشارہ نہ کرنا) روایت سے ہے کہ ہمارے تمام احناف کے نزدیک یہ سنت ہے لہٰذا دائیں ہاتھ کے انگوٹھے اور درمیان انگلی کے سروں کو ملاکے حلقہ بنا کر سبابہ سے اشارہ کرے (ت)

کبیری میں ہے:

قبض الاصابع عند الاشارۃ المروی عن محمد فی کیفیۃ الاشارۃ وعن کثیر من

اشارہ کے وقت انگلیاں بند کرلے، طریقہ اشارہ میں امام محمد سے یہی مروی ہے اور متعدد مشائخ کا قول

المشائخ (انہ) لا یشیر اصلا وھو خلاف الدریۃ والروایۃ فعن محمد ان ما ذکرہ فی کیفیۃ الاشارۃ ھو قولہ وقولہ ابی حنیفۃ رحمۃ اللہ تعالی ملخصاً [3]۔

ہے کہ اشارہ اصلاً نہ کیا جائے یہ درایہ و روایت کے خلاف ہے۔ امام محمد سے منقول ہے کہ کیفیتِ اشارہ میں کچھ ذکر کیا ہے یہ ان کا اور امام ابو حنیفہ رحمۃ اللہ تعالیٰ کا قول ہے ملخصاً (ت)

[1] ردالمحتار، باب صفۃ الصلوۃ، مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱/ ۳۴۲ [2] ردالمحتار، باب صفۃ الصلوۃ، مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱/ ۳۴۲ [3] غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی، صفتہ الصلوۃ، مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۳۲۸

Fatawa Razawiya Volume Six

And similarly, the absolute researcher (Muhaqqiq 'al-al-Itlaq) stated in 'Fath al-Qadir': "In summary, there is no doubt in the excellence of the aforementioned pointing (ishara). The traditions (hadiths) of the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) and the sayings of our venerable mujtahids support it. After this, if the books of later scholars such as Tanwir al-Absar, Walwalajiyyah, Tajnis, Khulasa, Bazzaziyyah, Waqi'at, 'Umdat al-Mufti, Munyat al-Mufti, Tabyin al-Kubra, Mudmarat, Hindiyyah, and other general fatawa mention a preference or authentication for the absence of pointing, it cannot be relied upon. The scholars did not pay attention to these sayings and deemed them contrary to reason and tradition, as you have heard repeatedly. And all praise is due to Allah, night and day, openly and secretly. And Allah Almighty knows best."

Question Number 202: Muharram-ul-Haram 1311 AH

What do the scholars of religion say regarding whether the Holy Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) performed Raf' al-Yadayn (raising hands in prayer) or not, and until when? Is it established that he always did it? Should Muslims do it or not? Please provide a complete answer and oblige. Only.

Answer:

It is never established from any Hadith of the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) that he always practiced Raf' al-Yadayn. Rather, the contrary is established from the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him). Nor is its duration mentioned in the Hadiths. Yes, Hadiths have been narrated concerning both its performance and its omission. In Sunan Abi Dawud, Sunan Nasa'i, Jami' Tirmidhi, etc., with a chain of narration whose narrators are of Sahih and Muslim, through 'Asim bin Kulayb from Abdur Rahman bin al-Aswad from Alqamah, it is narrated from Hazrat Abdullah bin Mas'ud (may Allah be pleased with him):

"Shall I not inform you of the prayer of the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him)? He said: Then he stood up and raised his hands the first time, then he did not repeat it." (1)

Meaning, he said: "Shall I not inform you how the Radiant Presence (peace and blessings of Allah be upon him) used to pray?" Saying this, he stood up for prayer

and only raised his hands at the time of Takbir-e-Tahrimah (the opening Takbir), then he did not raise them again. (T)

Tirmidhi said:

"The Hadith of Ibn Mas'ud (may Allah be pleased with him) is a Hasan (good) Hadith, and it is the view held by more than one of..."

Meaning, the Hadith of Ibn Mas'ud (may Allah be pleased with him) is a Hasan Hadith, and this was the school of thought of numerous scholars, including...

---

1. Sunan an-Nasa'i, Chapter on Raising Hands for Ruku etc., printed by Maktaba Salafiyyah Lahore 1/123; Jami' at-Tirmidhi, Chapter on Raising Hands at Ruku, printed by Amin Company Karachi 1/35.

और इसी तरह मुहक़्क़िक़ अलल इतलाक ने फ़तहुल क़दीर में फ़रमाया। कुल मिलाकर, ज़िक्र किए गए इशारे (इशारा) की खूबी में कोई शक नहीं है, अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की हदीसें और हमारे मुजतहिदीन के कौल इसी के पक्ष में हैं। इसके बाद अगर बाद के उलेमा की किताबें जैसे तनवीरुल अबसार, वलवालजीय्या, तजनीस, खुलासा, बज़्ज़ीय्या, वाक़ियात, उम्दतुल मुफ्ती, मुनियतुल मुफ्ती, तबयीनुल कुबरा, मुज़मरात, हिन्दिया और अन्य आम फतावा में इशारे के न होने को तरजीह या सही करार दिया गया हो, तो उस पर भरोसा नहीं किया जा सकता। उलेमा ने इन कौलों पर ध्यान नहीं दिया और इन्हें अक्ल और रिवायत के खिलाफ करार दिया, जैसा कि आपने बार-बार सुना है। और तमाम तारीफें अल्लाह के लिए हैं, रात और दिन, ज़ाहिरी और बातिनी तौर पर। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 202: मुहर्रम-उल-हराम 1311 हिजरी

दीन के उलेमा इस बारे में क्या कहते हैं कि हुज़ूर रसूल-ए-मक़बूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने रफ़ा यदैन (नमाज़ में हाथ उठाना) किया या नहीं और कब तक किया? क्या यह बात साबित है कि आपने हमेशा किया? मुसलमानों को करना चाहिए या नहीं? मुकम्मल इरशाद फ़रमा कर शुक्रगुज़ार करें, फ़क़त।

जवाब:

रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की किसी भी हदीस से यह हरगिज़ साबित नहीं है कि आपने हमेशा रफ़ा यदैन फ़रमाया, बल्कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से इसके खिलाफ साबित है। न ही हदीसों में इसकी मुद्दत का ज़िक्र है। हाँ, इसे करने और न करने दोनों के बारे में हदीसें आई हैं। सुनन अबी दाऊद, सुनन नसाई, जामि तिर्मिज़ी वगैरह में ऐसी सनद के साथ जिसके रावी सहीह और मुस्लिम के हैं, आसिम बिन कुलैब के ज़रिए अब्दुर रहमान बिन अल-अस्वद से, उन्होंने अलक़मा से, हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसूद (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया:

"क्या मैं तुम्हें अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की नमाज़ के बारे में न बताऊँ? उन्होंने कहा: फिर वह खड़े हुए और पहली बार अपने हाथ उठाए, फिर दोबारा नहीं उठाए।" (1)

यानी उन्होंने फ़रमाया: "क्या मैं तुम्हें खबर न दूँ कि हुज़ूर पुर नूर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) किस तरह नमाज़ पढ़ते थे?" यह कहकर नमाज़ के लिए खड़े हुए तो सिर्फ तकबीर-ए-तहरीमा के वक़्त हाथ उठाए, फिर नहीं उठाए। (त)

तिर्मिज़ी ने कहा:

"इब्ने मसूद (रज़ियल्लाहु अन्हु) की हदीस हदीस-ए-हसन है, और यही कई उलेमा का मज़हब था, जिनमें से..."

यानी इब्ने मसूद (रज़ियल्लाहु अन्हु) की हदीस हसन है और यही कई उलेमा का मज़हब था, जिनमें से...

---

1. सुनन अन-नसाई, रुकू के लिए हाथ उठाने का बाब आदि, मकतबा सलफिया लाहौर 1/123; जामि अत-तिर्मिज़ी, रुकू के वक़्त हाथ उठाने का बाब, अमीन कंपनी कराची 1/35।

पेज 153/736

اور اسی طرح محقق علی الاطلاق نے فتح القدیر میں فرمایا۔ بالجملہ اشارہ مذکورہ کی خوبی میں کچھ شک نہیں، احادیث رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم اور اقوال ہمارے مجتہدین کرام کے اسی کو مفید، بعد اس کے اگر کتب متاخرین مثل تنویر الابصار و ولوا لجیہیہ تجنیس و خلاصہ و بزازیہ و واقعات و عمدۃ المفتی و منیتی المفتٰی و تبیین کبرٰی و مضمرات و ہندیہ و غیرہاعامہ فتاوٰی میں عدمِ اشارہ کی ترجیح تصحیح منقول ہو تو قابلِ اعتماد نہیں ہو سکتی علماء نے ان اقوال پر التفات نہ فرمایا اور خلافِ عقل و نقل ٹھہرایا کما سمعت مراراً ، والحمدللہ لیلاً ونہاراً وجہراً واسراراً وللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ نمبر ۲۰۲ : محرم الحرام ۱۳۱۱ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس بارے میں کہ رفع یدین حضرت رسول مقبول صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے کیا یا نہیں اور کب تک کیا؟ یہ بات ثابت ہے کہ ہمیشہ آپ نے کیا؟ مسلمانوں کو کرنا چاہئے یا نہیں؟ مکمل ارشاد فرما کر مشکور و ممنون فرمائیے، فقط

الجواب:

رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم سے ہر گز کسی حدیث میں ثابت نہیں کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے ہمیشہ رفع یدین فرمایا بلکہ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم سے اس کا خلاف ثابت ہے۔ نہ احادیث میں اسکی مدت مذکور۔ ہاں حدیثیں اس کے فعل و ترک دونوں میں وارد ہیں، سنن ابی داؤد و سنن نسائی و جامع ترمذی و غیرہا میں ایسی سند سے جس کے رجال صحیح و

مسلم ہیں بطریق عاصم بن کلیب عن عبدالرحمن بن الاسود عن علقمہ، حضرت عبداللہ بن مسعود رضی اللہ تعالٰی عنہ سے مروی:

قُلْ اَلَا اَخْبِرُکُمْ بِصَلَاۃِ رَسُوْلِ اللہِ صَلَّی اللہُ تَعَالٰی عَلَیْہِ وَسَلَّمَ قَالَ فَقَامَ فَرَفَعَ یَدَیْہِ اَوَّلَ مَرَّۃٍ ثُمَّ لَمْ یَعُدْ ۱۔

یعنی انہوں نے فرمایا کیا میں تمہیں خبر نہ دوں کہ حضور پُر نور صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نماز کس طرح پڑھتے تھے، یہ کہہ کر نماز کو کھڑے ہوئے تو صرف تکبیرِ تحریمہ کے وقت ہاتھ اٹھائے پھر نہ اٹھائے(ت)

ترمذی نے کہا:

حدیث ابن مسعود رضی اللہ تعالٰی عنہ حدیث حسن و بہ یقول غیر واحد من

یعنی حدیث ابن مسعود رضی اللہ تعالٰی عنہ کی حدیث حسن ہے اور یہی مذہب تھا متعدد علماء منجملہ

---

۱ سنن النسائی باب رفع الیدین للرکوع الخ مطبوعہ مکتبہ سلفیہ لاہور ۱/ ۱۲۳، جامع الترمذی باب رفع الیدین عند الرکوع مطبوعہ امین کمپنی کراچی ۱/ ۳۵

Fatawa Razawiyya - Volume Six

[Top Box Left Side - Arabic]: The people of knowledge among the Companions of the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) and the Successors (Tabi'in), and it is the opinion of Sufyan and the people of Kufa (1). [Top Box Right Side - Urdu]: This is the position of the Companions of the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him), the Noble Successors, Imam Sufyan, and the scholars of Kufa (may Allah be pleased with them). (T)

It is stated in Musnad al-Imam al-A'immah Malik al-Azimmah Imam-e-A'zam (may Allah be pleased with him):

[Middle Box Left Side - Arabic]: Hammad narrated to us from Ibrahim, from Alqamah and Al-Aswad, from Abdullah bin Mas'ud (may Allah be pleased with him) that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) used to not raise his hands except at the opening of the prayer and would not repeat it for any of that (2). [Middle Box Right Side - Urdu]: Hammad narrated to us from Ibrahim, from Alqamah and Al-Aswad, from Abdullah bin Mas'ud (may Allah be pleased with him) that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) would perform Raf' al-Yadayn (raising hands) only at the beginning of prayer and then would not raise his hands at any other place.

Imam Abu Ja'far al-Tahawi (may Allah have mercy on him) states in Sharh Ma'ani al-Athar:

[Bottom Box Left Side - Arabic]: Abu Bakra narrated to us, he said: Sufyan narrated to us from al-Mughirah, he said: I said to Ibrahim regarding the hadith of Wa'il that he saw the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) raising his hands when he opened the prayer, when he bowed (Ruku), and when he raised his head from bowing. He said: If Wa'il saw him doing that once, then Abdullah saw him fifty times not doing that (3). [Bottom Box Right Side - Urdu]: Abu Bakra narrated a hadith to us, saying: Mawsil narrated a hadith to us, saying: Sufyan narrated a hadith to us from Mughira, and Mughira says: I asked Imam Ibrahim Nakha'i about the hadith of Wa'il (may Allah be pleased with him) that he saw the Radiant Presence (peace and blessings of Allah be upon him) performing Raf' al-Yadayn while starting prayer, going into bowing (Ruku), and raising his head from Ruku. Ibrahim said: If Wa'il saw the Holy Presence (peace and blessings of Allah be upon him) performing Raf' al-Yadayn once, then Abdullah (bin Mas'ud) saw the Holy Presence (peace and blessings of Allah be upon him) fifty times that the Messenger did not perform Raf' al-Yadayn.

It is in Sahih Muslim Sharif, the Holy Presence (peace and blessings of Allah be upon him) said:

[Footnotes]: 1. Jami' al-Tirmidhi, Chapter of Raising Hands at Ruku, published by Amin Company, Karachi, 1/511 2. Musnad al-Imam al-A'zam, Meeting of al-Awza'i and Abu Hanifa, published by Nur Muhammad Kutub Khana, Karachi, p. 50 3. Sharh Ma'ani al-Athar, Chapter of Takbir at Ruku, published by H.M. Saeed, 1/152

फ़तावा रज़विया - छठा खंड

[ऊपरी बॉक्स - बायाँ भाग - अरबी]: पैगंबर (उन पर अल्लाह की शांति और आशीर्वाद हो) के साथियों और उनके उत्तराधिकारियों के बीच ज्ञान के लोग, और यह सुफ़ियान और कूफ़ा के लोगों का कहना है (1)। [ऊपरी बॉक्स - दायाँ भाग - उर्दू]: अल्लाह के रसूल (उन पर अल्लाह की शांति और आशीर्वाद हो) के साथियों, कुलीन उत्तराधिकारियों (ताबईन), इमाम सुफ़ियान और कूफ़ा के विद्वानों (अल्लाह उन सभी से प्रसन्न हो) का यही मत है। (T)

मुसनद इमाम-उल-आइम्मा मालिकुल अज़िम्मा इमाम-ए-आज़म (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) में है:

[मध्य बॉक्स - बायाँ भाग - अरबी]: हमाद ने हमें इब्राहिम से, उन्होंने अलक़माह और अल-अस्वद से, उन्होंने अब्दुल्ला बिन मसूद (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) से रिवायत की कि अल्लाह के रसूल (उन पर अल्लाह की शांति और आशीर्वाद हो) केवल नमाज़ शुरू करते समय अपने हाथ उठाते थे और फिर ऐसा दोबारा नहीं करते थे (2)। [मध्य बॉक्स - दायाँ भाग - उर्दू]: हमाद ने हमें इब्राहिम से, उन्होंने अलक़माह और असवद से, उन्होंने अब्दुल्ला बिन मसूद (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) से बयान किया कि अल्लाह के रसूल (उन पर अल्लाह की शांति और आशीर्वाद हो) केवल नमाज़ की शुरुआत में रफ़-ए-यदैन (हाथ उठाना) करते थे, फिर किसी और जगह हाथ नहीं उठाते थे।

इमाम अबू जाफ़र तहावी (अल्लाह उन पर रहमत करे) 'शरह मआनी अल-आसार' में फ़रमाते हैं:

[निचला बॉक्स - बायाँ भाग - अरबी]: अबू बकरा ने हमें हदीस सुनाई, उन्होंने कहा: सुफ़ियान ने हमें मुग़ीरा से रिवायत की, उन्होंने कहा: मैंने इब्राहिम से वाइल की हदीस के बारे में पूछा कि उन्होंने नबी (उन पर अल्लाह की शांति और आशीर्वाद हो) को नमाज़ शुरू करते समय, रुकू में जाते समय और रुकू से सिर उठाते समय हाथ उठाते देखा। उन्होंने कहा: यदि वाइल ने उन्हें एक बार ऐसा करते देखा, तो अब्दुल्ला ने उन्हें पचास बार ऐसा न करते देखा (3)। [निचला बॉक्स - दायाँ भाग - उर्दू]: अबू बकरा ने हमें हदीस सुनाई, कहा: मूसल ने हमें हदीस सुनाई, कहा: सुफ़ियान ने हमें मुग़ीरा से हदीस सुनाई, और मुग़ीरा कहते हैं कि मैंने इमाम इब्राहिम नख़ई से हज़रत वाइल (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) की हदीस के बारे में पूछा कि उन्होंने हुज़ूर पुरनूर (उन पर अल्लाह की शांति और आशीर्वाद हो) को देखा कि हुज़ूर ने नमाज़ शुरू करते और रुकू में जाते और रुकू से सिर उठाते समय रफ़-ए-यदैन फ़रमाया। इब्राहिम ने फ़रमाया: अगर वाइल ने हुज़ूर अकदस (उन पर अल्लाह की शांति और

आशीर्वाद हो) को एक बार रफ़-ए-यदैन करते देखा, तो अब्दुल्ला (बिन मसूद) ने हुज़ूर अकदस को पचास बार देखा कि हुज़ूर ने रफ़-ए-यदैन नहीं किया।

सहीह मुस्लिम शरीफ़ में है, हुज़ूर अकदस (उन पर अल्लाह की शांति और आशीर्वाद हो) ने फ़रमाया:

[पादलेख]: 1. जामी अल-तिर्मिज़ी, रुकू के समय हाथ उठाने का अध्याय, अमीन कंपनी, कराची द्वारा प्रकाशित, 1/511 2. मुसनद इमाम-ए-आज़म, अल-औज़ई और अबू हनीफ़ा की मुलाकात, नूर मुहम्मद कुतुब ख़ाना, कराची द्वारा प्रकाशित, पृ. 50 3. शरह़ मआनी अल-आसार, रुकू के समय तकबीर का अध्याय, एच.एम. सईद द्वारा प्रकाशित, 1/152

[اوپری خانہ - بائیں جانب - عربی]: اهل العلم من اصحاب النبي صلى الله تعالى عليه وسلم والتابعين وهو قول سفيان واهل الكوفه 1 _ [اوپری خانہ - دائیں جانب - اردو]: اصحابِ رسول اللہ صلی اللہ علیہ وسلم و تابعینِ کرام و امام سفیان و علمائے کوفہ رضی اللہ تعالٰی عنہم کا(ت)

مسند امام الائمہ مالک الازمہ امامِ اعظم رضی اللہ عنہ میں ہے:

[درمیانی خانہ - بائیں جانب - عربی]: حدثنا حماد عن ابراهيم عن علقمه والاسود عن عبد الله بن مسعود رضى الله تعالىٰ عنه ان رسول الله صلى الله تعالى عليه وسلم كان لا يرفع يديه الا عند افتتاح الصلوة ولا يعود لشيئ من ذلك 2 _ [درمیانی خانہ - دائیں جانب - اردو]: ہمیں حماد نے ابراہیم سے علقمہ واسود سے عبداللہ بن مسعود رضی اللہ تعالٰی عنہ سے بیان کیا کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم صرف نماز کے شروع میں رفع یدین فرماتے پھر کسی جگہ ہاتھ نہ اٹھاتے۔

امام ابو جعفر طحاوی رحمہ اللہ تعالٰی شرح معانی الاثار میں فرماتے ہیں:

[نچلا خانہ - بائیں جانب - عربی]: حدثنا ابى بكرة قال ثنا قال سفيان عن المغيرة قال قلت لابراهيم حديث وائل انه رأى النبي صلى الله تعالى عليه وسلم يرفع يديه اذا افتتح الصلاة واذا ركع واذا رفع رأسه من الركوع فقال ان كان وائل رأه مرة يفعل ذلك فقد رأه عبدالله خمسين مرة لا يفعل ذلك 3 _ [نچلا خانہ - دائیں جانب - اردو]: ابوبکرہ نے ہمیں حدیث بیان کی کہا ہمیں موسل نے حدیث بیان کی کہا ہمیں سفیان نے حدیث بیان کی ہے مغیرہ سے اور مغیرہ کہتے ہیں کہ میں نے امام ابراہیم نخعی سے حدیثِ وائل رضی اللہ تعالٰی عنہ کی نسبت دریافت کیا کہ انہوں نے حضور پُر نور صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کو دیکھا کہ حضور نے نماز شروع کرتے اور رکوع میں جاتے اور رکوع

سے سر اٹھاتے وقت رفع یدین فرمایا ابراہیم نے فرمایا وائل نے اگر ایک بار حضور اقدس صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کو رفع یدین کرتے دیکھا تو عبداللہ رضی اللہ تعالیٰ نے حضور اقدس صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کو پچاس بار دیکھا کہ حضور نے رفع یدین نہ کیا۔

صحیح مسلم شریف میں ہے حضور اقدس صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا:

[حواشی]: 1 جامع الترمذی باب رفع الیدین عند الرکوع مطبوعہ امین کمپنی کراچی ۱/۵۱۱ 2 مسند الامام اعظم اجتماع الاوزاعی وابی حنیفہ مطبوعہ نور محمد کتب خانہ کراچی ص ۵۰ 3 شرح معانی الاثار باب التکبیر عند الرکوع مطبوعہ ایچ ایم سعید ۱/۱۵۲

Fatawa Rizvia Volume 6

Arabic: مَا لِي أَرَاكُمْ رَافِعِي أَيْدِيكُمْ كَأَنَّهَا أَذْنَابُ خَيْلٍ شُمْسٍ اسْكُنُوا فِي الصَّلَاةِ. Urdu: What has happened that I see you raising your hands (Raf-ul-Yadain) as if your hands are the tails of playful horses? Remain composed in prayer.

The agreed-upon rule of principles is that consideration is given to the generality of the word, not to the specificity of the reason. And the present evidence is prioritized. Our noble Imams (may Allah be pleased with them all) acted upon the Hadiths of omission [of raising hands]. The Hanafis should follow them, and the Shafi'is and others should follow their own Imams (may Allah have mercy on them). There is no place for dispute. However, those gentlemen who consider the following of Imams of religion as 'shirk' (polytheism) and 'haram' (forbidden), and despite not having the capability to understand the speech of learned followers, claim for themselves the rank of 'Ijtihad' (independent reasoning) and wantonly wish to divide the word of Muslims and incite strife among believers, rather they consider it as a means of their fame and renown; Muslims should stay far away from their path. Granted that the Hadiths of raising hands are preferred, yet after all, 'Raf-ul-Yadain' is not obligatory according to anyone. At most, it would be considered a recommended act, which if done is good, and if not done, there is no harm. But to incite strife among Muslims, to create two groups, and to take the case of prayer to the British government is perhaps among their important obligations. Allah Almighty says:

Arabic: وَالْفِتْنَةُ أَشَدُّ مِنَ الْقَتْلِ ۖ Urdu: Strife (fitna) is worse than slaughter.

Many of these gentlemen themselves must be committing hundreds of major sins, which they do not abandon, yet creating such commotions over not performing 'Raf-ul-Yadain' seems pleasing to them (not at all). May Allah Subhanu wa Ta'ala grant guidance, Ameen. And Allah Subhanu wa Ta'ala knows best.

Problem No. 203: From Ujjain, house of Mir Khadim Ali Sahib, Assistant, sent by Haji Yaqub Ali Khan Sahib, 29 Jumada al-Akhira 1312 AH. What do the scholars of religion say on this matter: that Shafi'is keep their feet spread apart in prayer with a gap of one hand? I saw this in the Kaaba. What is the reason for this? And in the Hanafi school, they place one foot at a distance of four fingers from the other. How should it be done? Explain and be rewarded.

Answer: A distance of only four fingers should be kept. This is the etiquette (adab) and this is the Sunnah, and this is from our Imam-e-Azam [Imam Abu Hanifa], may Allah be pleased with him.

1 Sahih Muslim, Chapter on the Command for Tranquility in Prayer, printed by Asah al-Matabi Karachi, 1/181. 2 Al-Quran 2:191.

फ़तावा रज़विया जिल्द शशम (भाग 6)

अरबी: مَا لِي أَرَاكُمْ رَافِعِي أَيْدِيكُمْ كَأَنَّهَا أَذْنَابُ خَيْلٍ شُمْسٍ اسْكُنُوا فِي الصَّلَاةِ. उर्दू: क्या हुआ कि मैं तुम्हें रफ़-ए-यदैन (हाथ उठाना) करते देखता हूँ गोया तुम्हारे हाथ चंचल घोड़ों की दुमें हैं? नमाज़ में सुकून से रहो।

सिद्धांतों का सर्वसम्मत नियम यह है कि शब्द की व्यापकता का विचार किया जाता है, न कि कारण की विशिष्टता का। और वर्तमान स्पष्ट प्रमाण सर्वोपरि है। हमारे सम्मानित इमामों (अल्लाह उन सभी से प्रसन्न हो) ने हाथ न उठाने वाली हदीसों पर अमल किया। हनफियों को उनका अनुसरण करना चाहिए, और शाफ़ई आदि को अपने इमामों (अल्लाह उन पर दया करे) का अनुसरण करना चाहिए। इसमें विवाद की कोई जगह नहीं है। हाँ, वे सज्जन जो दीन के इमामों के अनुसरण को 'शिर्क और 'हराम' मानते हैं, और इसके बावजूद कि मुक़ल्लिद (अनुकरण करने वाले) विद्वानों की बात समझने की योग्यता नसीब नहीं है, अपने लिए 'इजतिहाद' का पद मांगते हैं और जानबूझकर मुसलमानों की एकता को बांटना और मोमिनों के बीच फ़ितना पैदा करना चाहते हैं, बल्कि इसी को अपनी प्रसिद्धि और शोहरत का ज़रिया समझते हैं; मुसलमानों को उनके रास्ते से बहुत दूर रहना चाहिए। माना कि रफ़ (हाथ उठाने) की हदीसें ही तरजीह (प्राथमिकता) रखती हों, फिर भी आख़िर रफ़-ए-यदैन किसी के नज़दीक वाजिब (अनिवार्य) नहीं है। अधिक से अधिक अगर ठहरेगा तो एक मुस्तहब (पसंदीदा) कार्य ठहरेगा कि किया तो अच्छा, न किया तो कोई बुराई नहीं। मगर मुसलमानों में फ़ितना उठाना, दो गिरोह कर देना, नमाज़ के मामले को अंग्रेज़ी सरकार तक पहुँचाना शायद महत्वपूर्ण वाजिबात में से होगा। अल्लाह अज़्ज़-व-जल्ल फरमाता है:

अरबी: وَالْفِتْنَةُ أَشَدُّ مِنَ الْقَتْلِ ۖ उर्दू: फ़ितना (उपद्रव) हत्या से भी अधिक गंभीर है।

इन साहबों में ख़ुद बहुत से लोग सैकड़ों गुनाह-ए-कबीरा (बड़े पाप) करते होंगे, उन्हें नहीं छोड़ते, और रफ़-ए-यदैन न करने पर ऐसी उथल-पुथल करना कुछ भला मालूम होता होगा (हरगिज़ नहीं)। अल्लाह सुब्हानहू व तआला हिदायत फरमाए, आमीन। वल्लाहु सुब्हानहू व तआला आलम।

मसाला नंबर 203: उज्जैन, मकान मीर ख़ादिम अली साहब असिस्टेंट, द्वारा हाजी याकूब अली खान साहब, 29 जमादि-उल-उखरा 1312 हिजरी। दीन के विद्वान इस मामले में क्या फरमाते हैं कि शाफ़ई नमाज़ में एक हाथ के अंतर से पैर फैलाकर रखते हैं, यह मैंने काबा में देखा, इसका क्या

कारण है? और हनफी मज़हब में एक पैर से दूसरे पैर के बीच चार उंगलियों का फासला रखते हैं, किस तरह करना चाहिए? बयान करें और पुण्य पायें।

उत्तर: चार ही उंगलियों का फासला रखना चाहिए, यही अदब (शिष्टाचार) है और यही सुन्नत है और यही हमारे इमाम-ए-आज़म [इमाम अबू हनीफ़ा] रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से (रिवायत है)...

1 सहीह मुस्लिम, नमाज़ में सुकून के आदेश का अध्याय, कराची, 1/181. 2 अल-क़ुरआन 2:191.

فتاوی رضویہ جلد ششم

عربی: مَا لِي أَرَاكُمْ رَافِعِي أَيْدِيكُمْ كَأَنَّهَا أَذْنَابُ خَيْلٍ شُمْسٍ اسْكُنُوا فِي الصَّلَاةِ۔ اردو: کیا ہوا کہ میں تمہیں رفع یدین کرتے دیکھتا ہوں گویا تمہارے ہاتھ چنچل گھوڑوں کی ٹمیں ہیں قرار سے رہو نماز میں۔

اصول کا قاعدہ متفق علیہا ہے کہ اعتبار عموم لفظ کا ہے نہ خصوص سبب کا۔ اور حاشر بلج پر مقدم ہے۔ ہمارے ائمہ کرام رضوان اللہ تعالیٰ علیہم اجمعین نے احادیث ترک پر عمل فرمایا حنفیہ کو ان کی تقلید چاہئے، شافعیہ وغیرہ ہم اپنے ائمہ رحمہم اللہ تعالیٰ کی پیروی کریں کوئی محل نزاع نہیں، ہاں وہ حضرات تقلید ائمہ دین کو شرک و حرام جانتے اور با آنکہ علمائے مقلدین کا کلام سمجھنے کی لیاقت نصیب اعداء اپنے لئے منصب اجتہاد مانتے اور خواہی نخواہی تفریق کلمہ مسلمین و اثارت فتنہ بین المومنین کرنا چاہتے بلکہ اسی کو اپنا ذریعہ شہرت و ناموری سمجھتے ہیں اُن کے راستے سے مسلمانوں کو بہت دور رہنا چاہئے۔ مانا کہ احادیث رفع ہی مرجح ہوں تاہم آخر رفع یدین کسی کے نزدیک واجب نہیں، غایت درجہ اگر ٹھہرے گا تو ایک امر مستحب ٹھہرے گا کہ کیا تو اچھا، نہ کیا تو کچھ برائی نہیں، مگر مسلمانوں میں فتنہ اُٹھانا دو گروہ کر دینا، نماز کے مقدمے انگریزی گورنمنٹ تک پہنچانا شاید اہم واجبات سے ہوگا۔ اللہ عزوجل فرماتا ہے:

عربی: وَالْفِتْنَةُ أَشَدُّ مِنَ الْقَتْلِ ؕ اردو: فتنہ قتل سے بھی سخت تر ہے۔

خود ان صاحبان میں بہت لوگ صد ہاگناہ کبیرہ کرتے ہوں گے انہیں نہ چھوڑنا، اور رفع یدین نہ کرنے پر ایسی شورشیں کرنا کچھ بھلا معلوم ہوتا ہوگا (ہرگز نہیں) اللہ سبحانہ وتعالیٰ ہدایت فرمائے آمین ، واللہ سبحانہ و تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۲۰۳ : از اُجین مکان میر خادم علی صاحب اسٹنٹ مرسلحا جی یعقوب علی خان صاحب ۲۹ جمادی الاخری ۱۳۱۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ شافعیہ ایک ہاتھ کے فرق سے نماز میں پاؤں کشادہ رکھتے ہیں، یہ میں نے کعبتہ اللہ میں دیکھا، اس کی کیا وجہ ہے؟ اور مذہب حنفیہ میں چار انگشت کے فاصلے پر ایک پاؤں سے دوسرا پاؤں رکھتے ہیں کس طرح کرنا چاہئے؟ بینوا توجروا۔

الجواب: چار ہی انگل کا فاصلہ رکھنا چاہئے یہی ادب اور یہی سنت ہے اور یہی ہمارے امام اعظم رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے

1 صحیح مسلم باب الامر بالسکون فی الصلوۃ الخ مطبوعہ اصح المطابع کراچی ۱۸۱/۱ 2 القرآن ۱۹۱/۲

Fatawa Razawiyya Volume 6 It is narrated:

Arabic

It is stated in Radd al-Muhtar: It is appropriate that the distance between the two feet should be equal to the width of four fingers of the hand, because this is closer to humility (khushu'). This is narrated from Abu Nasr al-Dabbusi, that he used to do so. As in al-Kubra.

I say: Rather, in Nur al-Idah and its commentary Maraqi al-Falah by Imam al-Shurunbulali, it is stated that during the standing position (qiyam), it is sunnah to keep both feet apart by the distance of four fingers, as it is closer to humility. Imam al-Tahtawi stated in his gloss (Hashiya) that Imam Abu Hanifa stated this explicitly in Kitab al-Athar and did not mention any difference of opinion regarding it.

Urdu

In Radd al-Muhtar, it is stated that there should be a distance of four fingers of the hand between both feet, as this is closer to humility. The same is narrated from Abu Nasr al-Dabbusi, that he used to do this. (As in al-Kubra).

I say: Rather, in Nur al-Idah and its commentary Maraqi al-Falah by Imam al-Shurunbulali, it is stated that it is a Sunnah to keep the feet four fingers apart while standing, because this is closer to humility. Syed Tahtawi stated in his commentary that Imam Sahab (Abu Hanifa) has given a clear instruction on this in Kitab-ul-Athar, and no difference of opinion has been recorded therein. (T)

Imam Allama Jamaluddin Yusuf Ardabili Shafi'i also explicitly stated in Kitab al-Anwar, which is among the most reliable works of the Shafi'i school, that keeping a distance of four fingers is recommended (mustahabb);

Arabic

Where he said: It is disliked (makruh) to join the feet together, and it is recommended to keep them apart by the distance of four fingers.

Urdu

It is disliked to keep the feet together; it is recommended to keep a distance of four fingers between them. (T)

However, Syed Allama Sheikh Zakariya Ansari Shafi'i (may Allah sanctify his soul) wrote in the commentary of Rawd al-Talib that the distance should be a handspan (shibr). In the gloss of al-Kumthari on al-Anwar, it is stated:

Arabic

His statement "the distance of four fingers" perhaps means spread apart, because in the commentary of al-Rawd it is the distance of a handspan.

Urdu

His statement "the distance of four fingers" might mean they are spread out, because in Sharh Rawd it says the distance should be one handspan. (T)

1. Radd al-Muhtar, Chapter on the Description of Prayer, printed Mujtabai Delhi, 1/299
2. Maraqi al-Falah and Hashiya Maraqi, Chapter on the Description of the Sunnahs of Prayer, printed Nur Muhammad Karkhana Tijarat, Aram Bagh, Karachi, p. 123
3. Maraqi al-Falah and Hashiya Maraqi, Chapter on the Description of the Sunnahs of Prayer, printed Nur Muhammad Karkhana Tijarat, Aram Bagh, Karachi, p. 123
4. Al-Anwar li-A'mal al-Abrar by Yusuf, Kitab al-Salat, Al-Matba'a al-Jamaliyya Egypt, 1/61
5. Hashiya al-Kumthari on al-Anwar, Kitab al-Salat, Al-Matba'a al-Jamaliyya Egypt

फ़तावा रज़विया जिल्द 6 नक़्ल किया गया है:

अरबी

रद अल-मुह्तार में कहा गया है: दोनों पैरों के बीच हाथ की चार उंगलियों के बराबर दूरी होनी चाहिए क्योंकि यह ख़ुशू (विनम्रता) के अधिक निकट है। अबू नस्र अल-दब्बूसी से इसी तरह वर्णित है कि वे ऐसा ही करते थे। जैसा कि अल-कुबरा में है।

मैं कहता हूँ: बल्कि नूर अल-ईदाह और उसकी व्याख्या मराक़ी अल-फ़लाह में अल्लामा शरुन्बुलाली के अनुसार, क़ियाम (खड़े होने) की स्थिति में दोनों पैरों को चार उंगलियों की दूरी पर रखना सुन्नत है क्योंकि यह ख़ुशू के अधिक निकट है। सैय्यद तहतावी ने इसके हाशिये में फ़रमाया कि इमाम साहब ने किताब अल-असार में इस पर नस्व (स्पष्ट निर्देश) की है, और इसमें कोई मतभेद व्यक्त नहीं किया गया है।

उर्दू

रद-अल-मुह्तार में है कि दोनों क़दमों के दरम्यान हाथ की चार उंगलियों की मिक़दार फ़ासला होना चाहिए क्योंकि यह ख़ुशू के ज़्यादा क़रीब है। अबू नस्र दब्बूसी से इसी तरह मनक़ूल है कि वह यही करते थे (कज़ा-फ़िल-कुबरा)।

क़ौल: (मैं कहता हूँ) बल्कि नूर-उल-ईज़ाह और उसकी शरह मराक़ी-उल-फ़लाह लिल्लअल्लामा-अश-शरुन्बुलाली में है कि हालत-ए-क़ियाम में दोनों क़दमों को चार उंगलियों के फ़ासले पर खुला रखना सुन्नत है क्योंकि यह ख़ुशू के ज़्यादा क़रीब है। सैय्यद तहतावी ने इसके हाशिए में फ़रमाया कि किताब-उल-असार में इमाम साहब ने इस पर नस्व की है, और इसमें इख़्तिलाफ़ बयान नहीं किया गया। (त)

इमाम अल्लामा जमालुद्दीन यूसुफ़ अर्दबेली शाफ़ई ने भी किताबुल अनवार में, जो शाफ़ई मज़हब की सबसे विश्वसनीय किताबों में से है, इसी चार उंगलियों की दूरी के मुस्तहब (पसंदीदा) होने का उल्लेख किया है;

अरबी

जहाँ उन्होंने कहा: पैरों को आपस में मिलाना मकरूह है और उनके बीच चार उंगलियों के बराबर दूरी रखना मुस्तहब है।

उर्दू

क़दमों को मिला कर रखना मकरूह है, उनके दरम्यान चार उंगलियों की मिक़दार फ़ासला रखना मुस्तहब है। (त)

हाँ, सैय्यद अल्लामा शेख ज़करिया अंसारी शाफ़ई (अल्लाह उन पर रहम करे) ने शरह रौज़ अत-तालिब में एक बालिश्त (हथेली की लंबाई) के बराबर दूरी का उल्लेख किया है। अनवार के हाशिये अल-कुमसरी में लिखा है:

अरबी	उर्दू
उनका कथन "चार उंगलियों की मिक़दार" शायद फैली हुई उंगलियों से मुराद हो, क्योंकि शरह रौज़ में है कि फ़ासला एक बालिश्त होना चाहिए।	उनका क़ौल "चार उंगलियों की मिक़दार" शायद मुतफ़र्रिक़ (फैली हुई) तौर पर मुराद हों क्योंकि शरह रौज़ में है कि फ़ासला एक बालिश्त होना चाहिए। (त)

1. रद-अल-मुह्तार, बाब सिफ़त-उस-सलात, मतबुआ मुज्तबाई दिल्ली, 1/299
2. मराक़ी-उल-फ़लाह व हाशिए मराक़ी, फ़स्ल फ़ी बयान सुनन-उस-सलात, मतबुआ नूर मोहम्मद कारख़ाना तिजारत, आराम बाग़ कराची, पृ. 123
3. मराक़ी-उल-फ़लाह व हाशिए मराक़ी, फ़स्ल फ़ी बयान सुनन-उस-सलात, मतबुआ नूर मोहम्मद कारख़ाना तिजारत, आराम बाग़ कराची, पृ. 123
4. अल-अनवारुल आमाल-उल-अबरार लि-यूसुफ़, किताब-उस-सलात, अल-मतबअ अल-जमालिया मिस्र, 1/61
5. हाशिया अल-कुमसरी अलल अनवार, किताब-उस-सलात, अल-मतबअ अल-जमालिया मिस्र

فتاوی رضویہ جلد ششم منقول ہے۔

قال في رد المحتار ينبغی ان يكون بينهما مقدار اربع اصابع اليد لا نه اقرب الی الخشوع هكذا روی عن ابي نصر الدبوسی انه كان يفعله كذا فی الكبری۔ اھ

ردالمحتار میں ہے کہ دونوں قدموں کے درمیان ہاتھ کی چار انگلیوں کی مقدار فاصلہ ہونا چاہئے کیونکہ یہ خشوع کے زیادہ قریب ہے۔ ابونصر دبوسی سے اسی طرح منقول ہے کہ وہ یہی کرتے تھے کذافی الکبری اھ

اقول: بل في نورالايضاح و شرحه مراقی الفلاح للعلامة الشرنبلا لی يسن تفريج القدمين فی القيام قدر اربع اصابع لانه اقرب الی الخشوع۔ اھ قال السيد الطحطاوی فی حاشية نص عليه في كتاب الاثر عن الامام ولم يحك فيه خلافا اھ۔

قول: (میں کہتا ہوں) بلکہ نورالایضاح اور اسکی شرح مراقی الفلاح للعلامۃ الشرنبلالی میں ہے کہ حالتِ قیام میں دونوں قدموں کو چار انگلیوں کے فاصلہ پر کھلا رکھنا سنت ہے کیونکہ یہ خشوع کے زیادہ قریب ہے اھ سید طحطاوی نے اسکے حاشیہ میں فرمایا کہ کتاب الاثر میں امام صاحب نے اس پر نص کی ہے، اور اس میں اختلاف بیان نہیں کیا اھ (ت)

امام علامہ جمال الدین یوسف ارد بیلی شافعی نے بھی کتاب الانوار میں کہ اجل معتمدات مذہب شافعی سے ہے اسی چار انگل فصل کے مستحب ہونے کی تصریح فرمائی؛

حيث قال يكره الصاق القدمين ويستحب التفريق بينهما بقدر اربع اصابع ۔

قدموں کو ملا کر رکھنا مکروہ ہے ان کے درمیان چار انگلیوں کی مقدار فاصلہ رکھنا مستحب ہے۔ (ت)

ہاں سید علامہ شیخ زکریا انصاری شافعی قدس سرہ نے شرح روض الطالب میں بالشت بھر کا فاصلہ تحریر فرمایا۔ حاشیہ الکمثری علی الانوار میں ہے:

قولہ بقدر اربع اصابع لعلھا متفرقۃ لان فی شرح الروض بقدر شبر ۔

اس کا قول "چار انگلیوں کی مقدار" شاید متفرق طور پر مراد ہوں کیونکہ شرح روض میں ہے کہ فاصلہ ایک بالشت ہونا چاہئے۔ (ت)

1. ردالمحتار باب صفۃ الصلوۃ مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱/۲۹۹
2. مراقی الفلاح و حاشیہ مراقی فصل فی بیان سنن الصلوۃ مطبوعہ نور محمد کارخانہ تجارت آرم باغ کراچی ص ۱۲۳
3. مراقی الفلاح و حاشیہ مراقی فصل فی بیان سنن الصلوۃ مطبوعہ نور محمد کارخانہ تجارت آرم باغ کراچی ص ۱۲۳
4. الانوار العمل الابرار لیوسف الکتاب الصلوۃ المطبعۃ الجمالیۃ مصر ۱/۶۱
5. حاشیہ الکمثری علی الانوار الصلوۃ المطبعۃ الجمالیۃ مصر

Fatawa Razawiyyah Volume 6

However, the difference of one hand has neither been seen in any book of any school of thought nor is it acceptable in any way, as it is fundamentally contrary to the manner and way of etiquette and humility. Those Shafi'is who have done this likely did so due to some excuse or perhaps out of ignorance, as not every inhabitant of Makkah the Great is a scholar; what matters are the statements and actions of the scholars. And Allah Almighty knows best.

Question No. 404: What do the scholars of the religion say about this issue: if one performs Nafl prayer sitting, how should the Ruku (bowing) be performed? That is, should the buttocks be raised or not? In case of contradiction, is the prayer Makruh Tahrimi (prohibitively disliked), Tanzihi (mildly disliked), or invalid? Explain and be rewarded.

The Answer: The obligatory amount in Ruku is just to bow the head and give a slight curve to the back. However, if one prays sitting, the perfect level and moderate method is that the forehead bows down to be opposite the knees. For this amount, there is no need to raise the buttocks; thus, whatever exceeds the moderate amount will be considered futile and improper.

In Al-Hashiya ash-Shamiya, in Hashiyatul-Fattal from Al-Burjandi: If a person is praying sitting, it is appropriate for their forehead to be parallel to their knees so that Ruku is achieved. (Ends) I say: perhaps this is interpreted as the complete (perfect) Ruku, otherwise you have known that it is achieved by the basic lowering of the head, i.e., along with the bending of the back. Reflect. (Ends)

It is in Hashiya-e-Shamiya, with reference to Burjandi in Hashiya-e-Qattal, that if someone is performing prayer sitting, they should bow their forehead level with their knees so that Ruku is achieved. (Ends) I say: perhaps this is interpreted as the complete Ruku because you have already known that Ruku is performed just by bowing the head, i.e., along with bowing the back a little. Reflect. (Ends)

And if such an act is done in prayer, it will be at least disliked (Makruh Tanzihi).

And in Ad-Durr al-Mukhtar: It is disliked to abandon any Sunnah. (Ends) Selected. And Allah Almighty knows best.

In Ad-Durr al-Mukhtar, it is stated that abandoning every Sunnah is disliked. (Ends) Selected. And Allah Almighty knows best. (T)

Question No. 405: Sent by Mahmood Hussain, 5 Muharram 1308 AH. What do the scholars of the religion say about this issue: a person cannot perform prayer standing due to the excuse of illness...

---

1. Radd al-Muhtar, Chapter on the Description of Prayer, printed by H.M. Saeed Company, Karachi, 1/477.
2. Ad-Durr al-Mukhtar, Chapter on What Nullifies Prayer and What is Disliked in it, printed by Mujtabai, Delhi, 1/93.

मगर एक हाथ का फ़र्क़ न किसी मज़हब की किताब में नज़र से गुज़रा न किसी तरह क़ाबिले-क़ुबूल हो सकता है कि शुरू से ही अदब और ख़ुशू-ओ-ख़ुज़ू (विनम्रता) के तौर-तरीक़े से अलग है। जिन शाफ़ईयों ने ऐसा किया ग़ालिबन कोई उज़्र (बहाना/मजबूरी) होगा या शायद नावाक़िफ़ी की बिना पर, क्योंकि मक्का मुअज़्ज़मा का हर रहने वाला तो आलिम नहीं है; एतबार उलमा के अक़वाल और अफ़आल का है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 404: उलमा-ए-दीन इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि अगर नफ़्ल नमाज़ बैठकर अदा की जाए तो रुकू किस तरह अदा करें? यानी क्या कूल्हे (सुरिन) उठाने चाहिए या नहीं? इसके विपरीत स्थिति में नमाज़ मकरूह-ए-तहरीमी होगी या तन्ज़ीही या फ़ासिद (अमान्य)? बयान फ़रमाएं सवाब पायें।

अल-जवाब: रुकू में वाजिब मिक़दार तो बस इतनी ही है कि सर झुकाए और पीठ में थोड़ा सा ख़म (झुकाव) दे, मगर बैठकर नमाज़ पढ़े तो इसका दर्जा-ए-कमाल और एतदाल (संतुलन) का तरीक़ा यह है कि पेशानी (माथा) झुककर घुटनों के सामने आ जाए। इस मिक़दार के लिए कूल्हे उठाने की ज़रूरत नहीं है, लिहाज़ा एतदाल की मिक़दार से जो भी ज़्यादा होगा, वह बेकार और अनुचित में शामिल हो जाएगा।

अल-हाशिया अश-शामिया में, हाशिया अल-फ़त्ताल में अल-बुरजन्दी के हवाले से: "अगर कोई बैठकर नमाज़ पढ़ रहा हो, तो मुनासिब है कि उसकी पेशानी उसके घुटनों के सामने हो ताकि रुकू हासिल हो जाए।" (समाप्त) मैं कहता हूँ: शायद यह मुकम्मल रुकू पर आधारित है, वरना आप जान चुके हैं कि रुकू सर झुकाने के मूल कार्य से ही अदा हो जाता है, यानी पीठ झुकाने के साथ। इस पर ग़ौर करें। (समाप्त)

हाशिया शामिया में है, बुरजन्दी के हवाले से हाशिया क़त्ताल में है: "अगर कोई बैठकर नमाज़ अदा करता हो तो अपनी पेशानी को घुटनों के बराबर झुकाए ताकि रुकू हासिल हो जाए।" (समाप्त) मैं कहता हूँ: शायद यह तमाम (पूर्ण) रुकू पर आधारित हो क्योंकि आप जान चुके हैं कि रुकू सिर्फ़ सर को झुका देने से, यानी साथ में पीठ को कुछ झुकाने से अदा हो जाता है। ग़ौर करें। (समाप्त)

और नमाज़ में जो ऐसा काम किया जाएगा, वह कम से कम नापसंद और मकरूह-ए-तन्ज़ीही होगा।

और अल-दुर्र अल-मुख़्तार में है: "हर सुन्नत को छोड़ना मकरूह है।" (समाप्त) मुख़्तसर। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

दुर्र-ए-मुख़्तार में है कि हर सुन्नत का छोड़ना मकरूह है। (समाप्त) मुख़्तसर। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला नंबर 405: प्रेषक: महमूद हुसैन, 5 मुहर्रम 1308 हिजरी उलमा-ए-दीन इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि एक शख़्स बीमारी की वजह से नमाज़ खड़ी होकर नहीं पढ़ सकता...

---

1. रद अल-मुहतार, नमाज़ के गुणों का अध्याय, एच.एम. सईद कंपनी, कराची द्वारा प्रकाशित, 1/477।
2. दुर्र-ए-मुख़्तार, नमाज़ को बिगाड़ने वाली और उसमें नापसंद चीज़ों का अध्याय, मुजतबाई, दिल्ली द्वारा प्रकाशित, 1/93।

مگر ایک ہاتھ کا فرق نہ کسی مذہب کی کتاب میں نظر سے گزرا نہ کسی طرح قابلِ قبول ہوسکتا ہے کہ بدایۃً طرز و روش ادب و خشوع سے جُدا ہے ، جن شافعیہ نے ایسا کیا غالباً کوئی عذر ہوگا یا شاید ناواقفی کی بنا پر کہ مکہ معظمہ کا ہر متنفس تو عالم نہیں اعتبار اقوال وافعالِ علماء کا ہے، واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۴۰۴: کیا فرماتے ہیں علماءِ دین اس مسئلہ میں کہ نفل نماز بیٹھ کر ادا کرے تو رکوع کس طرح ادا کریں یعنی سرین اٹھائیں یا نہیں؟ در صورتِ مخالف نماز مکروہِ تحریمی یا تنزیہی یا فاسد؟ بینوا توجروا۔

الجواب: رکوع میں قدرِ واجب تو اسی قدر ہے کہ سر جھکائے اور پیٹھ کو قدرے خم دے مگر بیٹھ کر نماز پڑھے تو اسکا درجہ کمال و طریقہ اعتدال یہ ہے کہ پیشانی جھک کر گھٹنوں کے مقابل آجائے اس قدر کے لئے سرین اٹھانے کی حاجت نہیں تو قدرِ اعتدال سے جس قدر زائد ہوگا وہ عبث و بیجا میں داخل ہو جائے گا۔

فی الحاشیة الشامیة فی حاشیة الفتال عن البرجندی و لو کان یصلی قاعدا ینبغی ان یحاذی جبہتہ قدام رکبتیہ لیحصل الرکوع اہ قلت ولعلہ محمول علی تمام الرکوع والا فقد علمت حصولہ باصل طأطأة الرأس ای مع انحناء الظہر تامّل انتہی۔

حاشیہ شامیہ میں ہے، برجندی کے حوالے سے حاشیہ فتال میں ہے اگر کوئی بیٹھ کر نماز ادا کرتا ہو تو اپنی پیشانی کو گھٹنوں کے برابر جھکائے تاکہ رکوع حاصل ہو جائے اھ قلت شاید یہ تمام رکوع پر محمول ہو کیونکہ آپ جان چکے ہیں کہ رکوع سر کو صرف جھکا دینے سے یعنی ساتھ کچھ پیٹھ کو جھکانے سے ادا ہو جاتا ہے، غور کروانتہی۔

اور نماز میں جو ایسا فعل کیا جائے گا لااقل ناپسند مکروہِ تنزیہی ہوگا۔

و فی الدرالمختار و یکرہ ترک کل سنۃ انتہی ملتقیطاً۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

درمختار میں ہے کہ ہر سنت کا ترک مکروہ ہے انتہی ملتقطاً۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔ (ت)

مسئلہ نمبر ۴۰۵: مرسلہ محمود حسین ۵ محرم ۱۳۰۸ھ کیا فرماتے ہیں علماءِ دین اس مسئلہ میں ایک شخص نماز کھڑے ہو کر بوجہ عذر بیماری کے نہیں پڑھ سکتا

---

1 ردالمحتار باب صفۃ الصلوۃ مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱/۴۷۷ 2 درمختار باب مایفسد الصلوۃ و مایکراہ المطبوعہ مجتبائی دہلی ۱/۹۳

Fatawa Ridawiyya Volume 6

Question: However, if he has enough strength to recite the Takbir Tahrimah while standing and can perform the rest of the prayer sitting with Ruku and Sujud, is it necessary for him in this case to recite the Takbir Tahrimah while standing and then sit down, or can he start and perform the prayer entirely while sitting? In the second case, will his prayer be valid or not? Clarify and you will be rewarded.

Answer: In the described case, it is undoubtedly obligatory for him to recite the Takbir Tahrimah while standing; when he no longer has the strength, he should sit. This is the correct view; in fact, no contrary opinion is reported from the Imams (may Allah be pleased with them all). It is mentioned in Tanwir al-Absar and Durr al-Mukhtar:

Arabic Quote	Urdu Translation
In qadara 'ala ba'dil qiyami walau muttaki'an 'ala 'asan au ha'itin qama luzuman bi qadri ma yaqdiru walau qadara ayatan au takbiratan 'alal mazhabi liannal ba'da mu'tabarun bil kull.	If the person praying is able to stand, even if it is by means of a staff or a wall, it is obligatory for him to stand according to his strength, whether it be for the duration of one verse or a Takbir. This is the preferred view because the part is credited along with the whole. (T)

In Tabyin al-Haqa'iq Sharh Kanz al-Daqaiq by Allama al-Zayla'i it is mentioned:

Arabic Quote	Urdu Translation
Wa lau qadara 'ala ba'dil qiyami duna tamamihi bi an kana qadara 'alat takbiri qa'iman au 'alat takbiri wa ba'dil qira'ati fa innahu yu'maru bil qiyami wa ya'ti bima qadara 'alayhi thumma yaq'udu iza 'ajaza.	If he is able to perform some standing but not all of it, for example, he is able to say the Takbir standing or the Takbir and some recitation, then he will be commanded to stand and perform according to his strength, then when he becomes unable, he should sit. (T)

In Khaniyah it is mentioned:

Arabic Quote	Urdu Translation
Wa lau qadara 'ala an yukabbira qa'iman wa la yaqdiru 'ala akthara min zalika yukabbiru qa'iman thumma yaq'ud.	If he is able to say only the Takbir standing and is not able to do more than that, he should say the Takbir standing and then sit down. (T)

Footnotes: 1. Durr al-Mukhtar Sharh Tanwir al-Absar, Chapter of the Prayer of the Sick, Published by Mujtabai Delhi, 1/104. 2. Tabyin al-Haqa'iq, Chapter of the Prayer of the Sick, Amiriya Kubra Press Egypt, 1/200. 3. Fatawa Qazi Khan, Chapter of the Prayer of the Sick, Naval Kishore Press Lucknow, 1/82.

सवाल: लेकिन उसे इतनी शक्ति है कि तकबीर-ए-तहरीमा खड़े होकर बांध ले और बाकी बैठ कर रुकू और सुजूद के साथ अदा कर सकता है, तो इस स्थिति में क्या उसके लिए ज़रूरी है कि तकबीर-ए-तहरीमा खड़े होकर ही कहे और फिर बैठ जाए या शुरू से ही बैठ कर नमाज़ शुरू करे और अदा कर ले, दूसरी स्थिति में उसकी नमाज़ अदा हो जाएगी या नहीं? बयान फरमाएं आपको सवाब मिलेगा।

जवाब: सवाल की गई स्थिति में बेशक उस पर लाज़िम है कि तकबीर-ए-तहरीमा खड़े होकर बांधे, जब शक्ति न रहे तो बैठ जाए। यही सही है, बल्कि इमामों (अल्लाह उन सब से राजी हो) से इसके विपरीत कुछ भी उल्लेखित नहीं है। तनवीरुल अबसार और दुर्रे मुख्तार में है:

अरबी उद्धरण

यदि वह क़ियाम (खड़े होने) के कुछ हिस्से पर सक्षम है, चाहे वह लाठी या दीवार के सहारे हो, तो वह अपनी क्षमता के अनुसार क़ियाम करेगा, भले ही वह एक आयत या तकबीर की मात्रा के बराबर हो, सही मत (मज़हब) के अनुसार, क्योंकि हिस्से को पूरे के साथ माना जाता है।

उर्दू अनुवाद

अगर नमाज़ी क़ियाम पर सक्षम हो, चाहे वह लाठी या दीवार के ज़रिए हो, तो उस पर अपनी शक्ति के अनुसार क़ियाम करना लाज़िम है, चाहे वह एक आयत या तकबीर की मात्रा के बराबर हो। सही मज़हब यही है क्योंकि हिस्से को पूरे के साथ गिना जाता है। (त)

अल्लामा ज़यलई की 'तबीयनुल हक़ाइक शरह कंज़ुल दक़ाइक' में है:

अरबी उद्धरण

और यदि वह क़ियाम के कुछ हिस्से पर सक्षम है लेकिन पूरे पर नहीं, जैसे कि वह खड़े होकर तकबीर कहने या तकबीर और कुछ क़िरात (पाठ) पर सक्षम है, तो उसे खड़े होने का आदेश दिया जाएगा और वह उतनी देर खड़ा रहेगा जितनी उसकी क्षमता है, फिर जब वह असमर्थ हो जाए तो बैठ जाए।

उर्दू अनुवाद

अगर कुछ क़ियाम पर सक्षम हो, पूरे पर न हो, जैसे खड़े होकर तकबीर कहने या तकबीर और कुछ क़िरात पर सक्षम हो, तो उसे क़ियाम का हुक्म दिया जाएगा और वह अपनी शक्ति के अनुसार क़ियाम के साथ उसे पूरा करे, फिर जब वह असमर्थ हो जाए तो बैठ जाए। (त)

खनियाह में है:

अरबी उद्धरण	उर्दू अनुवाद
और यदि वह खड़े होकर तकबीर कहने पर सक्षम है और उससे अधिक पर सक्षम नहीं है, तो वह खड़े होकर तकबीर कहे और फिर बैठ जाए।	अगर खड़े होकर सिर्फ तकबीर कहने पर सक्षम है, उससे ज़्यादा पर सक्षम नहीं है, तो खड़े होकर तकबीर कहे फिर बैठ जाए। (त)

पाद-टिप्पणियाँ: 1. दुर्रे मुख्तार शरह तनवीरुल अबसार, बीमार की नमाज़ का अध्याय, मुजतबाई दिल्ली द्वारा प्रकाशित, 1/104. 2. तबीयनुल हक़ाइक, बीमार की नमाज़ का अध्याय, मताब-ए-अमीरिया कुबरा मिस्र, 1/200. 3. फ़तावा काज़ी खान, बीमार की नमाज़ का अध्याय, मताब-ए-नवल किशोर लखनऊ, 1/82.

पृष्ठ 158 का 736

لیکن اس قدر طاقت اس کو ہے کہ تکبیر تحریمہ کھڑے ہی ہو کر باندھ لے اور باقی بیٹھ کر رکوع و سجود کے ساتھ ادا کر سکتا ہے تو اس صورت میں آیا اس کو ضروری ہے کہ تکبیر تحریمہ کھڑے ہی ہو کر کہے اور پھر بیٹھ جائے یا سرے سے بیٹھ کر نماز شروع کرے اور ادا کرلے، دوسری شق میں نماز اس کی ادا ہو جائے گی یا نہیں؟ بینواتوجروا۔

الجواب: صورتِ مستفسرہ میں بیشک اُس پر لازم کہ تکبیر تحریمہ کھڑے ہو کر باندھے جب قدرت نہ رہے بیٹھ جائے۔ یہی صحیح ہے، بلکہ ائمہ رضوان اللہ تعالٰی اجمعین سے اس کا خلاف اصلاً منقول نہیں۔ تنویر الابصار و درمختار میں ہے:

| ان قدر علی بعض القیام ولو متکأ علی عصا او حائط قام لزوما بقدر ما یقدر ولو قدر ایۃ او تکبیرۃ علی المذھب لان البعض معتبر بالکل۔ | اگر نمازی قیام پر قادر ہوا اگر چہ وہ عصا یا دیوار کے ذریعے ہو تو اس پر حسب طاقت قیام کرنا لازم ہے خواہ وہ ایک آیت یا تکبیر کی مقدار ہو۔ مختار مذہب یہی ہے کیونکہ بعض کا کل کے ساتھ اعتبار کیا جاتا ہے۔ (ت) |

تبیین الحقائق شرح کنز الدقائق للعلامۃ الزیلعی میں ہے :

| ولو قدر علی بعض القیام دون تمامہ بان کان قدر علی التکبیر قائما او علی التکبیر وبعض القراءۃ فانہ یؤمر بالقیام و یأتي بما قدر علیہ ثم یقعد اذا عجز۔ | اگر کچھ قیام پر قادر ہو تمام پر نہ ہو، مثلاً کھڑے ہو کر تکبیر یا تکبیر اور کچھ قرأت پر قادر ہو تو اسے قیام کا حکم دیا جائے اور وہ حسب طاقت قیام کے ساتھ بجا لائے ، پھر جب عاجز آئے تو بیٹھ جائے۔ (ت) |

خانیہ میں ہے:

| ولو قدر علی ان یکبر قائما ولا یقدر علی اکثر من ذلك یکبر قائما ثم یقعد۔ | اگر کھڑے ہو کر صرف تکبیر کہنے پر قادر ہے اس سے زیادہ پر قادر نہیں تو کھڑے ہو کر تکبیر کہے پھر بیٹھ جائے۔ (ت) |

1 دُرِ مختار شرح تنویر الابصار باب صلوۃ المریض مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱/۱۰۴ 2 تبیین الحقائق باب صلوۃ المریض مطبعۃ امیریۃ کبریٰ مصر ۱/۲۰۰ 3 فتاویٰ قاضی خان باب صلوۃ المریض مطبعہ نولکشور لکھنو ۱/۸۲

Fatawa-e-Razvia Volume Six

In Ghunyat al-Mustamli Sharh al-Munyah by Allama Ibrahim Halabi, it is stated:

[Arabic]: "If one is able to perform some standing but not all of it, then that amount of standing is obligatory upon him. Even if he is only able to stand for the duration of Takbir al-Tahrimah, he must say Takbir al-Tahrimah while standing and then sit down."[1] | [Urdu]: If one is capable of standing for a portion but not the entire duration, then standing for that portion is obligatory for him. Even if a person is only capable of standing for the duration of Takbir al-Tahrimah, he should stand, say the Takbir al-Tahrimah, and then sit. (T)

It is mentioned in Khulasah etc.:

[Arabic]: "Siraj al-A'immah al-Halwani said this is the correct position of the school."[2] | [Urdu]: Siraj al-A'immah Halwani stated that this indeed is the correct legal position. (T)

In Bahr al-Ra'iq and then Hashiyat al-Tahtawi 'ala al-Durr it is stated:

[Arabic]: "No contradiction has been reported from our companions (jurists of the school)."[3] | [Urdu]: Nothing contrary to this has been reported from our companions. (T)

Then, if one goes against this—meaning if, despite having the ability, one ties the Tahrimah while sitting—the prayer will not be valid.

[Arabic]: "Because of the statement in Ghunyah 'it is obligatory upon him' and the statement in al-Durr 'obligatory' along with the statement of Allama Shurunbulali 'I expressed it with obligation because it is stronger, since its omission causes the omission of validity etc.' Because the researcher al-Ala'i and others said that the part is considered as the whole." | [Urdu]: Because in Ghunyah it is "obligatory upon him". In Durr it says: "it is obligatory" and Allama Shurunbulali's explicit mention is with "obligation (al-luzum)", he says "I have expressed it with 'al-luzum' because it is stronger since by its missing, the validity itself is lost etc." and the researcher Ala'i said that the part is considered along with the whole. (T)

The poor one (the author), may Allah forgive him, and may Allah Almighty inspire him with the realization of the truth—scholars explicitly state that standing is a condition for Tahrimah. If one sits, or rather bends so much that the hands reach the knees, and ties the Tahrimah, it will not be valid at all. And Tahrimah is a condition for

prayer; without it, the prayer is void. So when one could stand for Tahrimah but did not, the condition of Tahrimah was lost, thus Tahrimah was not valid, and hence the prayer was not performed. "Idha faat al-shart faat al-mashrut" (When the condition is lost, the conditioned thing is automatically lost. T). In Dur al-Mukhtar, from the commentary on al-Wahbaniyah by Allama Hasan bin Ammar, it is stated:

1. Ghunyat al-Mustamli Sharh Munyat al-Musalli, Second [chapter on] Standing, published by Suhail Academy Lahore, p. 262.
2. Khulasat al-Fatawa, Twenty-first [chapter] on the prayer of the sick, published by Maktabah Habibiyah Quetta, 1/194.
3. Hashiyat al-Tahtawi 'ala al-Dur al-Mukhtar, chapter on the prayer of the sick, published by al-Ma'rifah Beirut, 1/318.

फ़तावा-ए-रज़विया खंड छठा

अल्लामा इब्राहीम हलबी की 'ग़ुनियतुल मुस्तमली शरह मुनियतुल मुसल्ली' में है:

[अरबी]: "यदि कोई कुछ खड़े होने पर सक्षम है, पूरा नहीं, तो उस पर उस मात्रा में खड़े होना अनिवार्य है। यहाँ तक कि यदि वह केवल तकबीर-ए-तहरीमा की अवधि के लिए खड़े होने में सक्षम है, तो उसे खड़े होकर तकबीर-ए-तहरीमा कहनी चाहिए और फिर बैठ जाना चाहिए।"[1] | [उर्दू]: अगर कुछ कयाम (खड़े होने) पर कादिर है तमाम पर नहीं तो उस पर उस मिक़दार कयाम लाज़िम है हत्ता कि अगर कोई सिर्फ़ तकबीर तहरीमा के मिक़दार पर कादिर हो तो खड़ा हो कर तकबीर तहरीमा कहे फिर बैठ जाए। (त)

'खुलासा' आदि में है:

[अरबी]: "सिराज अल-अइम्मा अल-हलवानी ने कहा कि यही सही मज़हब (विचारधारा) है।"[2] | [उर्दू]: सिराजुल अइम्मा हलवानी ने फरमाया कि यही सही मज़हब है। (त)

'बहरुल रैक़' फिर 'हाशिया तहतावी अलद-दुर' में है:

[अरबी]: "हमारे साथियों (फकीहों) से इसके विपरीत कोई बात नहीं मिली है।"[3] | [उर्दू]: हमारे असहाब से इसके खिलाफ मरवी (वर्णित) नहीं। (त)

फिर अगर इसका खिलाफ किया यानी बावजूद कुदरत तहरीमा भी बैठ कर बांधी नमाज़ न हुई।

[अरबी]: "क्योंकि ग़ुनियह का कहना है कि 'यह उस पर वाजिब है' और अल-दुर का कहना है 'अनिवार्य' अल्लामा शूरूनबुलली के कथन के साथ 'मैंने इसे अनिवार्यता (लज़ूम) के साथ व्यक्त किया है क्योंकि यह अधिक प्रबल है, क्योंकि इसकी कमी से वैधता खत्म हो जाती है आदि' जैसा कि शोधकर्ता अल-अलाई और अन्य ने कहा कि अंश को पूर्ण के साथ माना जाता है।" | [उर्दू]: क्योंकि ग़ुनियह में इस पर लाज़िम है। दर में है: लाज़िम है और अल्लामा शूरूनबुलली की तसरीह (स्पष्टीकरण) "बिल-लज़ूम" के साथ है, वो कहते हैं मैं ने "बिल-लज़ूम" से ताबीर (अभिव्यक्त) इस लिए किया है कि ये अक़वा (प्रबल) है क्योंकि इस के फ़ौत होने से जवाज़ (वैधता) ही फ़ौत हो जाता है वग़ैरह और मुहक़्क़िक़ अलाई ने कहा कि बाज़ (अंश) का कल (पूर्ण) के साथ एतबार किया जाता है। (त)

फ़कीर (लेखक), अल्लाह उसे क्षमा करे, और अल्लाह तआला उसे सत्य की प्राप्ति की प्रेरणा दे— विद्वान स्पष्ट रूप से कहते हैं कि तहरीमा के लिए कयाम (खड़ा होना) शर्त है। अगर बैठ कर बल्कि इतना झुक जाए कि हाथ घुटनों तक पहुँचें और तहरीमा बाँध ले, तो वह कदापि सही नहीं होगी। और तहरीमा नमाज़ की शर्त है, इसके बिना नमाज़ अमान्य है। तो जब तहरीमा के लिए खड़ा हो सकता था और नहीं किया, तो तहरीमा की शर्त समाप्त हो गई, तो तहरीमा सही नहीं हुई, और नमाज़ अदा नहीं हुई। "इज़ा फातश-शर्त फातल-मशरुत" (जब शर्त समाप्त हो गई, तो मशरुत यानी जिस पर शर्त लगी थी वह स्वतः समाप्त हो जाएगा। त)। 'दुर्रे मुख्तार' में अल्लामा हसन बिन अम्मार की 'शरह अल-वहबानिया' से है:

1. ग़ुनियतुल मुस्तमली शरह मुनियतुल मुसल्ली, दूसरा कयाम, मुद्रित सुहैल अकादमी लाहौर, पृ. 262
2. खुलासातुल फ़तावा, इक्कीसवाँ नमाज़-ए-मरीज़, मुद्रित मकतबा हबीबिया क्वेटा, 1/194
3. हाशिया अत-तहतावी अला अद-दुर अल-मुख्तार, बाब सलातुल मरीज़, मुद्रित अल-मआरिफ़ा बेरूत, 1/318

पृष्ठ १५९/७३६

فتاوی رضویہ جلد ششم

غنیہ شرح المنیہ للعلامہ ابراہیم حلبی میں ہے :

لو قدر علی بعض القیام لا کله لزمه ذلك القدر حتی لو کان لا یقدر الا علی قدر التحریمة لزمه ان یتحرم قائماً ثم یقعد1 | اگر کچھ قیام پر قادر ہے تمام پر نہیں تو اس پر اس کی مقدار قیام لازم ہے حتی کہ اگر کوئی صرف تکبیر تحریمہ کے مقدار پر قادر ہو تو کھڑا ہو کر تکبیر تحریمہ کہے پھر بیٹھ جائے۔ (ت)

خلاصہ وغیرہ میں ہے :

قال سراج الائمة الحلوانی هو المذهب الصحیح2 | سراج الائمہ حلوانی نے فرمایا کہ یہی صحیح مذہب ہے۔ (ت)

بحر الرائق پھر حاشیہ طحطاویہ علی الدر میں ہے :

لا یروی عن اصحابنا خلافه3 | ہمارے اصحاب سے اس کے خلاف مروی نہیں۔ (ت)

پھر اگر اس کا خلاف کیا یعنی با وجود قدرت تحریمہ بھی بیٹھ کر باندھی نماز نہ ہوئی۔

لقول الغنیة لزمه و قول الدر لزوماً مع قول العلامة الشرنبلالی عبرت باللزوم لکونه اقوی لان هذا یفوت الجواز بفو ته الخ لقول المحقق العلائی و غیره ان البعض معتبر بالکل۔ | کیونکہ غنیہ میں اس پر لازم ہے۔ در میں ہے : لازم ہے اور علامہ شرنبلالی کی تصریح "باللزوم" کے ساتھ ہے، وہ کہتے ہیں میں نے "باللزوم" سے تعبیر اس لئے کیا ہے کہ یہ اقوی ہے کیونکہ اس کے فوت ہونے

سے جواز ہی فوت ہو جاتا ہے الخ اور محقق علائی نے کہا کہ بعض کا کل کے ساتھ اعتبار کیا جاتا ہے۔ (ت)

فقیر غفر اللہ لہ کو اللہ تعالٰی تحقیق حق القا کرے علما تصریح فرماتے ہیں کہ تحریمہ کے لیے قیام شرط ہے اگر بیٹھ کر بلکہ اتنا جھکا ہے کہ ہاتھ گھٹنوں تک پہنچیں تحریمہ باندھے ہرگز صحیح نہ ہوگی اور تحریمہ شرط نماز ہے کہ بے اس کے نماز باطل ، تو جبکہ تحریمہ کے لئے قیام کر سکتا اور نہ کیا شرط تحریمہ فوت ہوئی تو تحریمہ صحیح نہ ہوئی تو نماز ادا نہ ہوئی اضافات الشرط فات المشروط (جب شرط فوت ہو گئی تو مشروط از خود فوت ہو جائے گا۔ ت) درمختار میں شرح الوہبانیہ للعلامہ حسن بن عمار سے ہے :

1 غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی الثانی القیام ، مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ، ص ۲۶۲ 2 خلاصۃ الفتاوٰی الحادی والعشرون فی صلوۃ المریض مطبوعہ مکتبہ حبیبیہ کوئٹہ ۱ / ۱۹۴ 3 حاشیہ الطحطاوی علی الدر المختار باب صلوۃ المریض مطبوعہ المعرفۃ بیروت ۱ / ۳۱۸

Fatawa Razawiyya Volume Six Conditions for Takbeer-e-Tahreema gathered: refined Beautified for all times, glowing: entry into the time and belief of its entry: covering, purity, and the refined standing[1]. There are some conditions for Takbeer-e-Tahreema which I have been blessed to gather, even though those conditions are well-decorated and shine throughout time. (They are) the entry of the obligatory time, the purity of the body, place, and clothes, and the refined standing. (T)

In Rad al-Muhtar, it is stated: The refined [standing] is that his hands do not reach his knees as mentioned before. So, if he catches the Imam in Ruku' and says Takbeer while bowing, his Tahreema is not valid. End[2] The refined standing is that his hands cannot reach his knees as already mentioned. If a worshiper finds the Imam in Ruku' and joins by saying Takbeer-e-Tahreema while bowing down, then his Tahreema is not valid. End (T)

In Sharh al-Tanwir by al-Allai, it is stated: Among its obligations without which it is not valid is saying the Tahreema while standing[3]. Among those obligations without which prayer cannot be performed is saying Takbeer-e-Tahreema while standing. (T)

In the Hashiya of Allama Ibn Abidin, it is stated: His saying "while standing" is one of its twenty conditions...[4] His saying "Qa'iman" (while standing) is one of these twenty (20) conditions which are being mentioned. (T)

Nowadays, many seemingly healthy people, due to a slight internal illness or old age, perform the obligatory (Fard) prayer sitting down from the start. However, among them, there are many who, if they put in the effort, could perform the entire Fard prayer standing. By doing so, neither would their illness increase nor would any new illness occur, nor would they be in danger of falling, nor would they experience severe dizziness or any other extreme pain. There is only a degree of hardship and discomfort, to avoid which they clearly lose their prayers. We have observed that the same people who, under the pretext of weakness and illness, prayed the Fard sitting down, stood talking for so long that in that time they could have performed ten or twelve Rak'ahs. In such a condition, sitting is absolutely not [permissible]...

[1] Dur al-Mukhtar, Chapter: Description of Prayer, published by Mujtabai Delhi, 1/71 [2] Rad al-Muhtar, Chapter: Description of Prayer, published by Mustafa al-Babi Egypt, 1/334 [3] Dur al-Mukhtar, Chapter: Description of Prayer, published by Mujtabai Delhi, 1/70 [4] Rad al-Muhtar, Chapter: Description of Prayer, published by Mustafa al-Babi Egypt, 1/326 Page 160 of 736

फ़तावा रज़विया खण्ड छह तकबीर-ए-तहरीमा के लिए एकत्रित शर्तें: परिष्कृत समय भर सुशोभित और चमकती: समय का प्रवेश और उसके प्रवेश का विश्वास: पर्दा (सतर), पवित्रता, और परिष्कृत खड़ा होना (क़ियाम-ए-मुहर्रर)[1]। तकबीर-ए-तहरीमा के लिए कुछ शर्तें हैं जिन्हें मैं इकट्ठा करने में सफल रहा, हालांकि वे शर्तें अच्छी तरह से सुसज्जित हैं और समय भर चमकती रहती हैं। (वे ये हैं) फ़र्ज़ के समय का प्रवेश, शरीर, स्थान और कपड़ों की पवित्रता, और परिष्कृत खड़ा होना। (त)

रद्द अल-मुह्तार में है: परिष्कृत खड़ा होना वह है कि उसके हाथ उसके घुटनों तक न पहुँचें जैसा कि पहले बताया जा चुका है। इसलिए, यदि वह इमाम को रुकू में पाए और झुककर तकबीर कहे, तो उसकी तहरीमा मान्य नहीं है। समाप्त[2] परिष्कृत खड़ा होना यह है कि उसके हाथ घुटनों तक न पहुँच सकें जैसा कि गुज़र चुका। यदि नमाज़ी ने इमाम को रुकू में पाया और झुककर तकबीर-ए-तहरीमा कहकर शामिल हुआ, तो उसकी तहरीमा सही नहीं है। समाप्त (त)

शरह अल-तन्वीर अल-अलाई में है: इसके उन फ़र्ज़ों में से, जिनके बिना यह मान्य नहीं है, खड़े होकर तहरीमा कहना है[3]। उन फ़र्ज़ों में से जिनके बिना नमाज़ नहीं हो सकती, एक खड़े होकर तकबीर-ए-तहरीमा कहना भी है। (त)

अल्लामा इब्न आबिदीन के हाशिया में है: उनका कहना "खड़े होकर" इसकी बीस शर्तों में से एक है...[4] उनका कहना "क़ाइमन" (खड़े होकर) उन बीस (२०) शर्तों में से एक है जिनका ज़िक्र आ रहा है। (त)

आजकल बहुत से स्वस्थ दिखने वाले लोग, ज़रा सी आंतरिक बीमारी या वृद्धावस्था के कारण सिरे से बैठकर फ़र्ज़ पढ़ते हैं, हालांकि उनमें से बहुत से ऐसे हैं कि यदि वे हिम्मत करें तो पूरे फ़र्ज़ खड़े होकर अदा कर सकते हैं। और ऐसा करने से न उनकी बीमारी बढ़ेगी, न कोई नई बीमारी होगी, न गिरने की स्थिति होगी, न ही चक्कर आना या कोई अन्य तीव्र दर्द होगा। केवल एक प्रकार की कठिनाई और परेशानी है, जिससे बचने के लिए वे स्पष्ट रूप से अपनी नमाज़ें गँवा देते हैं। हमने देखा है कि वही लोग जिन्होंने कमज़ोरी और बीमारी के बहाने फ़र्ज़ बैठकर पढ़े, वे ही बातों में इतनी देर खड़े रहे कि उतने समय में दस-बारह रकअत अदा कर लेते। ऐसी स्थिति में बैठकर नमाज़ पढ़ना हरगिज़ [जायज़] नहीं...

[1] दुर्रे मुख्तार, अध्याय: नमाज़ का वर्णन, मुज्तबाई दिल्ली, 1/71 द्वारा प्रकाशित [2] रद्द अल-मुह्तार, अध्याय: नमाज़ का वर्णन, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 1/334 द्वारा प्रकाशित [3] दुर्रे मुख्तार, अध्याय:

नमाज़ का वर्णन, मुज्तबाई दिल्ली, 1/70 द्वारा प्रकाशित [4] रद्द अल-मुह्तार, अध्याय: नमाज़ का वर्णन, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 1/326 द्वारा प्रकाशित पृष्ठ 160 / 736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم شروط لتحریم حظیت بجمعھا :: مھذبۃ حسنا مدی الدھر تزھو :: دخول لوقت واعتقاد دخولہ :: وستر طھر والقیام المحرر[1] :: تکبیر تحریمہ کے لئے کچھ شرطیں ہیں میں ان کو اکٹھا کرنے سے بہرہ ور ہوا، حالانکہ وہ شرطیں خوب آراستہ و زمانہ بھر چمکتی ہیں (وہ یہ ہیں) وقت فرض کا داخل ہونا اور بدن مکان اور کپڑے کے طہارت اور قیام محرر۔ (ت)

ردا لمحتار میں ہے: المحرر بأن لا تنال یداہ رکبتیۃ کما مر فلو ادرك الامام راکعاً فکبر منحنیاً لم تصح تحریمتہ اہ[2] قیام محرر یہ ہے کہ اس کے ہاتھ گھٹنوں تک نہ پہنچ سکیں جیسا کہ گزر چکا، اگر نمازی نے امام کو رکوع میں پایا اور جھک کر تکبیر تحریمہ کہہ کر شامل ہوا تو اس کی تحریمہ صحیح نہیں ہے اہ (ت)

شرح التنویر للعلائی میں ہے: من فرائضھا التی لا تصح بدونھا التحریمۃ قائما[3] ان فرائض میں سے جن کے بغیر نماز نہیں ہو سکتی ایک کھڑے ہو کر تکبیر تحریمہ کہنا بھی ہے (ت)

حاشیہ علامہ ابن عابدین میں ہے قولہ قائما احد اشروطھا العشرین الآیتہ[4] اس کا قول "قائماً" یہ ان بیس ۲۰ شروط میں سے ایک ہے جن کا ذکر آرہا ہے۔ (ت)

آج کل بہت جتال جثام ذرا سی باطنی مرض یا کبر سن میں سرے سے بیٹھ کر فرض پڑھتے ہیں حالانکہ اوگاں میں بہت ایسے ہیں کہ ہمت کریں تو پورے فرض کھڑے ہو کر ادا کر سکتے ہیں اور اس ادا سے نہ ان کا مرض بڑھے نہ کوئی نیا مرض لاحق ہونے گر پڑنے کی حالت ہو ، نہ دوران سر وغیرہ کوئی سخت الم شدید ہو صرف ایک گونہ مشقت و تکلیف ہے جس سے بچنے کو صراحتہً نمازیں کھوتے ہیں ہم نے مشاہدہ کیا ہے وہی لوگ جنہوں نے بحلیہ ضعف و مرض فرض

بیٹھ کر پڑھے اور وہی باتوں میں اتنی دیر کھڑے رہے کہ اتنی دیر میں دس بارہ رکعت ادا کر لیتے ایسی حالت میں ہر گز قعود کی...

[1] دُر مختار باب صفة الصلوٰة مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱/۷۱ [2] ردالمحتار باب صفة الصلوٰة مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/۳۳۴ [3] دُر مختار ، باب صفة الصلوٰة مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱/۷۰ [4] ردالمحتار باب صفة الصلوٰة مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/۳۲۶ Page 160 of 736

It is not permitted; rather, it is obligatory to perform the entire obligatory standing (Qiyam). It is stated in *Kafi Sharh al-Wafi*:

"If some kind of hardship arises, it is not permissible to abandon the standing (Qiyam)." 1 | If even a slight hardship occurs, abandoning Qiyam will not be permissible. (T)

Secondly, granted that through their previous experience, or through the information from a skilled, upright Muslim physician whose inward state is unknown but whose outward state is not sinful, or through a correct observation of their own apparent condition that is not based on laziness or seeking ease, it is known with predominant probability that standing will cause a new illness or worsen and prolong an existing severe illness. However, this would happen during a long standing. If they certainly have the strength to stand for a short while, then it was obligatory for them to perform as much Qiyam as they had strength for. Even if they could only say "Allahu Akbar" while standing, they should have performed that much in Qiyam. When the state of predominant probability (of harm) arises, they could then sit. This sitting from the beginning made their prayer invalid.

Thirdly, it also happens that a person does not have the strength to stand even for the duration of the Takbir on their own, but is capable of all or part of the Qiyam by leaning on a staff, or on a person, or a wall, or a cushion. Then it is obligatory on them to perform as much Qiyam as possible through that support or cushion, whether it be for the whole duration or part of it; otherwise, according to the correct school of thought, their prayer will not be valid. *Faqad marra minal Durri wa lau muttaki'an 'ala 'asan au ha'it* 2. (It was mentioned from *Al-Durr*: even if he can stand with the support of a staff or wall, T). It is stated in *Tabyin al-Haqa'iq*:

"If he is capable of Qiyam while leaning (Halwani said), the correct view is that he should pray standing while leaning, and nothing else will suffice. Similarly, if he is able to rely on a staff or on a servant of his, then he should stand and lean." 3 | If he can perform Qiyam with support (Halwani said), then the correct view is that he should pray while standing with support; anything other than that will not suffice. Similarly, if he can stand with the support of a staff or a servant, he should perform Qiyam and pray with support. (T)

All these issues should be well understood. The complete detail and research of this matter are in our Fatawa, information of which is extremely necessary and important because nowadays, due to ignorance, not only the unlearned but even some claimants of knowledge go against these rulings and needlessly lose their prayers, explicitly committing sin and becoming abandoners of prayer. And with Allah is protection, and there is no power nor might except with Allah, the Most High, the Most Great. And Allah, Glorified and Exalted is He, knows best, and His knowledge, glorified be His Majesty, is most complete and most wise.

---

1 *Kafi Sharh al-Wafi* 2 *Durr-e-Mukhtar*, Chapter on Prayer of the Sick, Mujtabai Press, Delhi, 1/102. 3 *Tabyin al-Haqa'iq*, Chapter on Prayer of the Sick, Matba'a Amiriyya Kubra, Egypt, 1/200.

अनुमति नहीं है बल्कि फ़र्ज़ है कि पूरे फ़र्ज़ क़याम (खड़े होने) के साथ अदा करें। 'काफ़ी शरह वाफ़ी' में है:

"यदि किसी प्रकार की कठिनाई महसूस हो, तो खड़े होने (क़याम) को छोड़ना जायज़ नहीं है।" 1 | यदि मामूली कठिनाई भी हो, तो क़याम छोड़ना जायज़ नहीं होगा। (त)

दूसरा, माना कि उन्हें अपने पिछले अनुभव से, चाहे किसी कुशल, न्यायप्रिय मुसलमान चिकित्सक (जिसकी गुप्त स्थिति अज्ञात हो पर बाह्य रूप से पापी न हो) की जानकारी से, या अपनी प्रत्यक्ष स्थिति के सही अवलोकन से (जो आलस्य या आराम तलबी पर आधारित न हो), प्रबल संभावना (ज़न-ए-ग़ालिब) के साथ यह ज्ञात है कि खड़े होने से कोई नई बीमारी होगी या मौजूद बीमारी गंभीर और लंबी हो जाएगी। लेकिन यह बात लंबे समय तक खड़े रहने के मामले में होगी। यदि वे निश्चित रूप से थोड़ी देर खड़े होने की शक्ति रखते हैं, तो उन पर फ़र्ज़ था कि जितना खड़े होने की शक्ति थी उतना अदा करते। यहाँ तक कि अगर वे केवल खड़े होकर 'अल्लाहु अकबर' कह सकते थे, तो उन्हें उतना ही क़याम में अदा करना चाहिए था। जब प्रबल संभावना (नुकसान की) की स्थिति पैदा होती, तो वे बैठ जाते। शुरू से ही बैठकर पढ़ना उनकी नमाज़ को अमान्य (मफ़्सद) बना देता है।

तीसरा, ऐसा भी होता है कि व्यक्ति स्वयं तकबीर की अवधि तक भी खड़े होने की शक्ति नहीं रखता, लेकिन लाठी के सहारे या किसी व्यक्ति, दीवार या तकिए के सहारे पूरे या आंशिक क़याम पर सक्षम है। तो उस पर फ़र्ज़ है कि वह उस सहारे या तकिए के माध्यम से जितना संभव हो उतना क़याम करे, चाहे पूरा हो या कुछ हिस्सा; अन्यथा सही मत के अनुसार उसकी नमाज़ नहीं होगी। 'अल-दुर्र' से गुज़रा है: "चाहे लाठी या दीवार का सहारा लेकर।" 2 (दुर्र के हवाले से गुज़रा: चाहे वह लाठी या दीवार के सहारे खड़ा हो सके, त)। 'तबयीन अल-हक़ाएक़' में है:

"यदि वह सहारा लेकर खड़े होने में सक्षम है (हलवानी ने कहा), तो सही यही है कि वह सहारा लेकर खड़े होकर नमाज़ पढ़े, और इसके अलावा कुछ भी पर्याप्त नहीं होगा। इसी तरह, यदि वह लाठी या अपने सेवक पर भरोसा करने में सक्षम है, तो वह खड़ा हो और सहारा ले।" 3 | अगर सहारे से क़याम कर सकता हो (हलवानी ने कहा), तो सही यही है कि सहारे से खड़े होकर नमाज़ अदा करे, इसके अलावा पर्याप्त नहीं होगा। और इसी तरह अगर लाठी या सेवक के सहारे खड़ा हो सकता है, तो क़याम करे और सहारे से नमाज़ अदा करे। (त)

इन सभी मसलों को अच्छी तरह समझ लिया जाए। इस मसले का पूर्ण विवरण और शोध हमारे फ़तावा में है, जिसकी जानकारी अत्यंत आवश्यक और महत्वपूर्ण है क्योंकि आजकल अज्ञानता के कारण न केवल अनपढ़ बल्कि ज्ञान का दावा करने वाले कुछ लोग भी इन हुक्मों के खिलाफ़ काम करके व्यर्थ में अपनी नमाज़ें खोते हैं और स्पष्ट रूप से पाप के अपराधी और नमाज़ छोड़ने वाले बनते हैं। और अल्लाह ही से बचाव है, और अल्लाह, जो सबसे ऊंचा और महान है, के अलावा कोई शक्ति या सामर्थ्य नहीं है। और अल्लाह सुब्हानहू व तआला बेहतर जानता है, और उसका ज्ञान, उसकी महिमा महान हो, सबसे पूर्ण और सबसे बुद्धिमत्तापूर्ण है।

---

1 काफ़ी शरह वाफ़ी 2 दुर्रे मुख्तार, बाब सलातुल मरीज़, मुज्तबाई प्रेस, दिल्ली, 1/102. 3 तबयीन अल-हक़ाएक़, बाब सलातुल मरीज़, मतबा अमिरिया कुबरा, मिस्र, 1/200.

पृष्ठ 161 का 736

اجازت نہیں بلکہ فرض ہے کہ پورے فرض قیام سے ادا کریں۔ کافی شرح وافی میں ہے:

ان لحقه نوع مشقة لم یجز ترك القیام 1 | اگر ادنیٰ مشقت لاحق ہو تو ترکِ قیام جائز نہ ہو گا۔ (ت)

ثانیاً مانا کہ انھیں اپنے تجربہ سابقہ خواہ کسی طبیب مسلمان حاذق عادل مستور الحال غیر ظاہر الفسق کے اخبار خواہ اپنے ظاہر حال کے نظرِ صحیح سے جو کم ہمتی و آرام طلبی پر مبنی نہ ہو بظنِ غالب معلوم ہے کہ قیام سے کوئی مرض جدید یا مرض موجود شدید و مدید ہو گا مگر یہ بات طول قیام میں ہو گی تھوڑی دیر کھڑے ہونے کی یقیناً طاقت رکھتے ہیں تو ان پر فرض تھا کہ جتنے قیام کی طاقت تھی اتنا ادا کرتے یہاں تک کہ اگر صرف اللہ اکبر کھڑے ہو کر کہہ سکتے تھے تو اتنا ہی قیام میں ادا کرتے جب وہ غلبہ ظن کی حالت پیش آتی تو بیٹھ جاتے یہ ابتدا سے بیٹھ کر پڑھنا بھی ان کی نماز کا مفسد ہوا۔

ثالثاً ایسا بھی ہوتا ہے کہ آدمی اپنے آپ بقدر تکبیر بھی کھڑے ہونے کی قوت نہیں رکھتا مگر عصا کے سہارے سے یا کسی آدمی خواہ دیوار یا تکیہ لگا کر کُل یا بعض قیام پر قادر ہے تو اس پر فرض ہے کہ جتنا قیام اس سہارے یا تکیہ کے ذریعے سے کر سکے بجا لائے، کُل تو کُل یا بعض تو بعض ورنہ صحیح مذہب میں اس کی نماز نہ ہوگی۔ فقد مر من الدر ولو متکأ علی عصا او حائط 2 ۔ (در کے حوالے سے گزرا اگرچہ عصا یا دیوار کے سہارے سے کھڑا ہو سکے ، ت) تبیین الحقائق میں ہے :

لو قدر علی القیام متکأ (قال الحلوانی) الصحیح انه یصلی قائما متکأ ولا یجزیه غیر ذلك وكذلك لو قدر ان یعتمد علی عصا اوعلی خادم له فانه یقوم ویتكئ 3 | اگر سہارے سے قیام کر سکتا ہو (حلوانی

نے کہا) تو صحیح یہی ہے کہ سہارے سے کھڑے ہو کر نماز ادا کرے اس کے علاوہ کفایت نہ کریگی اور اسی طرح اگر عصا یا خادم کے سہارے سے کھڑا ہو سکتا ہے تو قیام کرے اور سہارے سے نماز ادا کرے۔ (ت)

یہ سب مسائل خوب سمجھ لئے جائیں باقی اس مسئلہ کی تفصیل تام و تحقیق ہمارے فتاوٰی میں ہے جس پر اطلاع نہایت ضرور و اہم کہ آجکل ناواقفی سے جاہل تو جاہل بعض مدعیان علم بھی ان احکام کا خلاف کر کے ناحق اپنی نمازیں کھوتے اور صراحتہً مرتکب گناہ و تارکِ صلوٰۃ ہوتے ہیں۔ وباللہ العصمۃ ولا حول ولا قوۃ الا باللہ العلی العظیم۔ واللہ سبحنہ وتعالٰی اعلم وعملہ جل مجدہ اتم واحکم۔

---

1 کافی شرح وافی 2 دُر مختار باب صلوۃ المریض مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱ / ۱۰۲ 3 تبیین الحقائق باب صلوۃ المریض مطبوعہ مطبعہ امیر یہ کبری مصر ۱ / ۲۰۰

Fatawa Ridawiyya Volume 6

Issue No. 406: 11 Muharram-ul-Haram 1313 AH

What do the scholars of religion say regarding this matter: should "Bismillah Sharif" be recited before the Surah that is recited after "Alhamdulillah" (Surah Al-Fatiha) or not? Some people say it is impermissible because joining a Surah (Damm-e-Surah) is obligatory, and by reciting Bismillah Sharif, the joining didn't happen, rather a separation occurred. What is the status of this saying of theirs?

Answer: Our researcher scholars (may Allah Almighty have mercy on them all) are giving clear clarifications in reliable books that reciting Bismillah Sharif at the beginning of a Surah is also recommended (Mustahabb) and good (Mustahsan) absolutely, whether it is a silent prayer (Sirri) or a loud prayer (Jahri). And they clearly state that far from being impermissible, none of the Imams of our school (may Allah Almighty be pleased with them) are even proponents of its dislike (Karahat), rather all the noble Imams by consensus consider it very good. The difference is only regarding it being a Sunnah: just as Bismillah Sharif is undoubtedly a Sunnah at the beginning of Al-Fatiha, is it also a Sunnah or recommended (Mustahabb) at the beginning of a Surah? According to Imam Muhammad, it is a Sunnah in silent prayers; this has been authenticated in 'Muheet', 'Mudmarat', 'Ataba', 'Mustasfa', etc. The position of the Imam (Abu Hanifa) is the negation of it being a Sunnah, and the Fatwa is on this. The words of the texts "La Ya'ti" and "La Yusimmi" (he should not bring and should not recite Bismillah - T) mean this. In any case, all our Imams agree on its goodness and excellence. Then after this, what scope is there for Zaid and Amr (laymen) to give their own opinions and exercise ijtihad against the consensus of the noble Imams? And that argument also holds some weight, that one who has read a few letters of jurisprudence or has kept the company of a scholar, knows well that the obligation of joining a Surah (Damm-e-Surah) does not mean that only a specific Surah must be joined, to the extent that after Al-Fatiha, reciting a Ruku from the middle of a Surah would be considered impermissible or a cause for leaving an obligation (Tark-e-Wajib), as joining a Surah in the literal sense does not apply to that either. Rather, it means joining some verses of the Great Quran, whether it is a complete Surah or not. Bismillah Sharif itself is a verse of the Great Quran, so joining it is joining the Great Quran itself, not something else. For those who do not even consider this much, how is it appropriate for them to voice opinions on the rulings of Sharia? Now listen to the clarifications of the noble scholars. In 'Durr-ul-Mukhtar' it is stated:

(It is not) Sunnah to recite (between Al-Fatiha and the Surah absolutely), even if it is a silent prayer.	**(It is not) a Sunnah to recite Bismillah (between Al-Fatiha and the Surah absolutely) even if it's a silent prayer, and it is not disliked by consensus. (T)**

And it is not disliked by consensus (1).

In 'Radd-ul-Muhtar' it is stated:

It is clarified in 'Ad-Dakhirah' and 'Al-Mujtaba' that if one recites Bismillah...	**'Ad-Dakhirah' and 'Al-Mujtaba' clarify that between Al-Fatiha and...**

1. Durr-ul-Mukhtar, Chapter 'Sifat-us-Salah', published by Mujtabai, Delhi, 1/57.

फतावा रज़विया जिल्द छठी

मसला नंबर ४०६: ११ मुहर्रम-उल-हराम १३१३ हिजरी

दीन के विद्वान इस मसले में क्या फरमाते हैं कि अल्हम्दुलिल्लाह के बाद जो सूरत पढ़ी जाए उस पर भी बिस्मिल्लाह शरीफ पढ़नी चाहिए या नहीं? कुछ लोग कहते हैं कि यह नाजायज़ है क्योंकि ज़म्म-ए-सूरत (सूरत मिलाना) वाजिब है और बिस्मिल्लाह शरीफ पढ़ने से ज़म्म नहीं हुआ बल्कि फासला हो गया, उनका यह कहना कैसा है?

उत्तर: हमारे शोधकर्ता विद्वान (अल्लाह तआला उन सब पर रहम फरमाए) विश्वसनीय किताबों में स्पष्ट रूप से फरमा रहे हैं कि सूरत की शुरुआत में भी बिस्मिल्लाह शरीफ पढ़ना मुतलकन (बिल्कुल) मुस्तहब और मुस्तहसन (बेहतर) है, चाहे नमाज़ सिर्री (खामोश) हो या जहरी (आवाज़ वाली)। और साफ तौर पर फरमाते हैं कि इसका नाजायज़ होना तो दूर, हमारे मज़हब के किसी भी इमाम (रज़िअल्लाहु तआला अन्हुम) ने इसे मकरूह भी नहीं कहा है, बल्कि तमाम इमामों ने इत्तेफाक से इसे बहुत बेहतर माना है। मतभेद केवल सुन्नत होने में है कि जिस तरह सूरह फातिहा की शुरुआत में बिस्मिल्लाह शरीफ बिना किसी शक के सुन्नत है, क्या वैसे ही सूरत की शुरुआत में भी सुन्नत है या मुस्तहब। इमाम मुहम्मद के नज़दीक सिर्री नमाज़ में सुन्नत है, 'मुहीत', 'मुदमरात', 'अताबा', 'मुस्तसफी' वगैरह में इसी की तसहीह (पुष्टि) की गई है। और इमाम का मज़हब सुन्नत न होने का है और इसी पर फतवा है, और ग्रंथों के शब्द "ला यातीं" और "ला युसम्मी" (न लाए और बिस्मिल्लाह न पढ़े। त) से मुराद यही है। बहरहाल इसकी खूबी और अच्छाई पर हमारे सभी इमामों का इत्तेफाक है। फिर इसके बाद ज़ैद और अम्र (आम लोगों) के लिए अपनी राय देने और इमामों के इत्तेफाक के खिलाफ इज्तिहाद करने की क्या गुंजाइश है? और वह बात भी कुछ ठिकाने की हो, जिसने फिक्ह के कुछ अक्षर पढ़े हों या किसी आलिम की सोहबत पाई हो, वह अच्छी तरह जानता है कि ज़म्म-ए-सूरत जो वाजिब है, उसका यह मतलब नहीं कि कोई खास सूरत ही मिलानी वाजिब है, यहाँ तक कि फातिहा के बाद सूरत के बीच से किसी रुकू का पढ़ना नाजायज़ और वाजिब छोड़ने (तर्कए-वाजिब) का कारण बने, क्योंकि मशहूर मायने में सूरत का मिलाना उस पर भी सादिक नहीं आता। बल्कि इससे मुराद कुरआन अज़ीम की कुछ आयतें मिलाना है, चाहे वह सूरत हो या न हो। बिस्मिल्लाह शरीफ खुद कुरआन अज़ीम की एक आयत है, तो उसका मिलाना कुरआन अज़ीम ही का मिलाना हुआ न कि किसी गैर का। जो साहब इतना भी ख्याल न फरमाएं उनके लिए शरीयत के अहकाम में रायज़नी करना कहाँ मुनासिब है? अब विद्वानों की स्पष्टीकरण सुनिए, 'दुर्र-ए-मुख्तार' में है:

(नहीं है) सुन्नत (फातिहा और सूरत के बीच मुतलकन) चाहे नमाज़ सिर्री हो

(नहीं है) बिस्मिल्लाह पढ़ना सुन्नत (फातिहा और सूरत के बीच मुतलकन) अगरचे नमाज़ सिर्री हो, और न मकरूह है बिल-इत्तेफाक। (त)

और बिल-इत्तेफाक मकरूह नहीं है (१)।

'रद-उल-मुहतार' में है:

ज़ख़ीरा और मुज्तबी में इस बात की वज़ाहत है कि अगर उसने बिस्मिल्लाह पढ़ी...

ज़ख़ीरा और मुज्तबी में इस बात की वज़ाहत है कि फातिहा और...

१ दुर्र-ए-मुख्तार, बाब सिफ़त-उस-सलात, मुतबूआ मुज्तबाई दिल्ली १/५७

पृष्ठ १६२/७३६

فتاوی رضویہ جلد ششم

مسئلہ نمبر ۴۰۶ : ۱۱ محرم الحرام ۱۳۱۳ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ الحمد للہ کے بعد جو سورۃ پڑھی جائے اس پر بھی بسم اللہ شریف پڑھنی چاہیئے یا نہیں؟ بعض لوگ کہتے ہیں یہ ناجائز ہے اس لئے کہ ضم سورت واجب ہے اور بسم اللہ شریف پڑھنے سے ضم نہ ہوا فصل ہوگیا، یہ قول ان کا کیسا ہے؟

الجواب: ہمارے علمائے محققین رحمہم اللہ تعالی علیہم اجمعین کتب معتمدہ میں روشن تصریحیں فرمارہے ہیں کہ ابتدائے سورت پر بھی بسم اللہ شریف پڑھنی چاہئے مطلقاً مستحب و مستحسن ہے، خواہ نماز سریہ ہو یا جہریہ۔ اور صاف ارشاد فرماتے ہیں کہ اس کا ناجائز ہونا درکنار ہمارے ائمہ مذہب رضی اللہ تعالی عنہم میں کوئی اس کی کراہت کا بھی قائل نہیں بلکہ سب ائمہ کرام بالاتفاق اسے خوب بہتر جانتے ہیں اختلاف صرف سنیت میں ہے کہ جس طرح سرفاتحہ پر بسم اللہ شریف بلا شبہ سنت ہے یونہی سرِ سورت پر بھی سنت ہے یا مستحب۔ امام محمد کے نزدیک سریہ میں سنت ہے، محیط و مضمرات و عتابہ و مستصفی و غیرہا میں اسی کی تصحیح فرمائی اور مذہب امام، نفی استنان ہے اور اس پر فتوی اور یہی کلمات متون "لایاتی" و "لایمسی" (نہ لائے اور بسم اللہ پڑھے۔ت) سے مراد بہر حال اس کی خوبی و محسن پر ہمارے سب ائمہ کا اتفاق ہے پھر اس کے بعد زید وعمرو کو اپنی رائے لگانے اور اتفاق ائمہ کرام کے خلاف اجتہاد کرنے کی گنجائش، اور وہ بات بھی کچھ ٹھکانے کی ہو جس نے چند حروف فقہ کے پڑھے یا کسی عالم کی صحبت پائی وہ خوب جانتا ہے کہ ضم سورت جو واجب ہے اس کے یہ معنی نہیں کہ خاص سورت ہی ملانی واجب ہے یہاں تک کہ بعد فاتحہ وسط سورت سے کسی رکوع کا پڑھنا ناجائز و موجب ترک واجب ٹھہرے کہ سورت بمعنی معروف کا ملانا اس پر بھی صادق نہیں بلکہ اس سے مراد قرآن

عظیم کی بعض آیات ملانا ہے کہ خواہ سورت ہو یا نہ ہو بسم اللہ شریف خود ایک آیت قرآن عظیم ہے تو اس کا ملانا قرآن عظیم ہی کا ملانا ہوا نہ کسی غیر کا، جو صاحب اتنا بھی خیال نہ فرمائیں انھیں احکام شریعت میں رائے زنی کیا مناسب ہے، اب تصریحات علمائے کرام سنئے، درمختار میں ہے:

(لا) تسن (بین الفاتحة والسورة مطلقا) ولو سرّية ولا تکرہ اتفاقا ۱۔

(نہیں ہے) بسم اللہ پڑھنا سنت (فاتحہ اور سورت کے درمیان مطلقاً) اگرچہ نماز سری ہو، اور نہ مکروہ ہے اتفاقاً۔ (ت)

ردالمحتار میں ہے:

صرح فی الذخیرة والمجتبی بانہ ان سمی

ذخیرہ اور مجتبی میں اس بات کی تصریح ہے کہ فاتحہ اور

۱ در مختار باب صفة الصلوٰة مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱/۵۷

Fatawa Rizvia Volume 6

Between Surah Al-Fatihah and the surah being recited, whether silently or loudly, it is considered good (Hasan) according to Imam Abu Hanifa. The researcher Ibn al-Humam and his student Al-Halabi preferred this view, and the reason given was the doubt regarding whether Bismillah is part of every surah as mentioned in 'Al-Bahr'. (Thus, it is better to recite it. - Translator)

In 'Tahtawi' it is mentioned: His statement: "It is not disliked by consensus, rather there is no disagreement that if one recites Bismillah, it would be good." - 'An-Nahr' (T)

Imam Ibn Amir al-Haj narrated in 'Al-Hilya' from 'Al-Dhakhira' from Al-Mu'alla from Abu Yusuf from Abu Hanifa (may Allah Almighty be pleased with them all): "If he recites it (Bismillah) with every surah, then it is good (Hasan)." (T)

In 'Al-Bahr al-Ra'iq' it is mentioned: Reciting Bismillah between Al-Fatihah and the surah is not absolutely Sunnah according to the Two Sheikhs (Imam Abu Hanifa and Imam Abu Yusuf). Imam Muhammad says it is Sunnah if recited silently, but not if recited loudly. In 'Al-Bada'i', the view of the Two Sheikhs was corrected, but this disagreement is about it being a Sunnah; its not being disliked is agreed upon. Therefore, it is explicitly stated in 'Al-Dhakhira' and...

---

1. Ad-Durr al-Mukhtar, Chapter: Description of Prayer, published by Matba' al-Mujtabai, Egypt, 1/362.
2. Hashiyat at-Tahtawi 'ala al-Durr al-Mukhtar, Chapter: Description of Prayer, published by Dar al-Ma'rifah, Beirut, 1/219.
3. Hilyat al-Mahalli Sharh Munyat al-Musalli.

फ़तावा रज़विया जिल्द 6

सूरह फ़ातिहा और उसके साथ मिलाई जाने वाली सूरह के दरमियान बिस्मिल्लाह आहिस्ता या बुलंद आवाज़ में पढ़ना इमाम अबू हनीफ़ा के नज़दीक हसन (बेहतर) है। मुहक़्क़िक़ इब्न अल-हुमाम और उनके शागिर्द अल-हलबी ने इसी को तरजीह दी है और इसकी वजह यह बयान की कि बिस्मिल्लाह के हर सूरह का हिस्सा होने में इख़्तिलाफ़ का शुबा है। 'अल-बहर' (इसलिए पढ़ लेना ही बेहतर है। - तर्जुमा)

'तहतवी' में है: उनका क़ौल कि "बिना किसी इख़्तिलाफ़ के यह मकरूह नहीं है, बल्कि अगर बिस्मिल्लाह पढ़ी जाए तो इसके हसन होने में कोई इख़्तिलाफ़ नहीं।" - 'अन-नहर' (त)

इमाम इब्न अमीर अल-हाज ने 'अल-हिल्या' में 'अल-ज़खीरा' के हवाले से अल-मुअल्ला से, उन्होंने अबू यूसुफ़ से और उन्होंने इमाम अबू हनीफ़ा (रज़ियल्लाहु तआला अन्हुम) से रिवायत किया: "अगर नमाज़ी हर सूरह के साथ बिस्मिल्लाह पढ़ता है तो यह हसन (अच्छा) है।" (त)

'अल-बहर अर-राइक़' में है: शैख़ैन (इमाम अबू हनीफ़ा और इमाम अबू यूसुफ़) के नज़दीक सूरह फ़ातिहा और सूरह के दरमियान बिस्मिल्लाह पढ़ना मुतलक़न सुन्नत नहीं है। इमाम मुहम्मद फ़रमाते हैं कि सिरी नमाज़ में सुन्नत है लेकिन जहरी नमाज़ में सुन्नत नहीं। 'अल-बदाइ' में शैख़ैन के क़ौल को सही क़रार दिया गया है, लेकिन यह इख़्तिलाफ़ सुन्नत होने के बारे में है; इसे पढ़ने के मकरूह न होने पर सब मुत्तफ़िक़ (सहमत) हैं। इसी लिए 'अल-ज़खीरा' में वजाहत की गई है कि...

---

1. अद-दुर्र अल-मुख्तार, बाब: सिफ़त अस-सलाह, मतबुआ मतबा अल-मुज्तबाई, मिस्र 1/362।
2. हाशिया अत-तहतवी अल-दुर्र अल-मुख्तार, बाब: सिफ़त अस-सलाह, मतबुआ दार अल-मआरिफ़ा, बैरुत 1/219।
3. हिल्या अल-महल्ली शरह मुन्या अल-मुसल्ली।

فتاوی رضویہ جلد ششم

بین الفاتحہ والسورۃ المقروئۃ سرا اوجھرا کان حسنا عند ابی حنیفۃ ورجحہ المحقق ابن الھمام وتلمیذہ الحلبي الشبھۃ الاختلاف فی کونھا آیۃ من کل سورۃ بحر- اس سے ملائی جانے والی سورت کے درمیان بسم اللہ آہستہ یا بلند پڑھنا امام ابو حنیفہ کے نزدیک حسن ہے۔ امام ابن الہمام اور ان کے شاگرد حلبی نے اسی کو ترجیح دی ہے اور اس کی وجہ یہ بیان کی کہ بسم اللہ کے ہر سورت کا جزء ہونے میں اختلاف کا شبہ ہے۔ بحر (اس لئے پڑھ لینا ہی بہتر ہے۔ت)

طحطاوی میں ہے: قولہ ولا تکرہ اتفاقا بل لا خلاف فی انہ لو سمی لکان حسنا نہر - اس کا قول کہ "بالاتفاق مکروہ نہیں بلکہ اگر بسم اللہ پڑھی تو اس کے حسن ہونے کے بارے میں کوئی اختلاف نہیں، نہر-(ت)

امام ابن امیر الحاج نے حلیہ میں عن الذخیرۃ عن المعلی عن ابی یوسف عن ابی حنیفہ رضی اللہ تعالی عنہ (ذخیرہ سے معلی سے ابویوسف سے امام ابوحنیفہ رضی اللہ تعالیٰ عنہم ست) روایت فرمایا: انہ اذا قرأھا مع کل سورۃ فحسن- اگر نمازی ہر سورت کے ساتھ بسم اللہ پڑھتا ہے تو یہ حسن ہے۔ (ت)

بحر الرائق میں ہے: لا تسن التسمیۃ بین الفاتحہ والسورۃ مطلقا عندھما وقال محمد تسن اذا خافت لا ان جھر وصحح فی البدائع قولھما والخلاف فی الاستنان اماعدم الکرھۃ فمتفق علیہ لھذا صرح فی الذخیرۃ و شیخین کے ہاں فاتحہ اور سورت کے درمیان بسم اللہ پڑھنا مطلقاً سنت نہیں۔ امام محمد کہتے ہیں کہ سری نماز میں سنت ہے مگر جہری میں سنت نہیں، بدائع میں شیخین کے قول کو صحیح کہا گیا لیکن یہ اختلاف سنت ہونے میں ہے، پڑھ لینا مکروہ نہیں اس پر اتفاق ہے، اسی لئے ذخیرہ

1 در مختار باب صفة الصلوٰة مطبوعہ مطبع المجتبائی مصر ۳۶۲/۱ 2 حاشية الطحطاوی على الدر المختار باب صفة الصلوٰة مطبوعہ دار المعرفة بيروت ۲۱۹/۱ 3 حلية المحلى شرح منيہ المصلى

Fatawa Razawiyya, Volume 6

[Arabic Column]: والمجتبى الى اخر مامر- [Urdu Column]: And in Al-Mujtaba, there is clarification of it which has already been mentioned. (T)

Allama Hasan Shurunbulali states in Ghunyah Dhawi al-Ahkam: [Arabic Column]: المراد نفي سنية الاتيان بها بعد الفاتحه و هذا عندهما وقال محمد يسن الاتيان بها في السرية بعد الفاتحه ايضاً للسيرة واتفقوا على عدم كرهة الاتيان بها بل ان سمى بين الفاتحه والسورة كان حسناً سواء كانت الصلاة جهرة جهرية او سرية۔ [Urdu Column]: This refers to the negation of the Sunnah of reciting Bismillah after Al-Fatiha, and this is according to the two Sheikhs (Imam Abu Hanifa and Imam Abu Yusuf). Imam Muhammad's opinion is that in silent (Sirri) prayers, it is also Sunnah to recite Bismillah for the Surah after Al-Fatiha, but there is consensus that it is not disliked (Makruh) if someone recites it; rather, if one recites Bismillah between Al-Fatiha and the Surah, it is good (Hasan), whether the prayer is loud (Jahri) or silent (Sirri). (T)

It is in Maraqi al-Falah: [Arabic Column]: لا كراهة فيها ان فعلها اتفاقاً للسورة سواء جهرا وخافت بالسورة۔ [Urdu Column]: By consensus, it is not disliked to recite Bismillah before the Surah, whether the Surah is recited loudly or silently. (T)

In Rahmaniyyah and Birjandi etc., from Al-Muhit: [Arabic Column]: ذكر الفقيه ابو جعفر عن ابي حنيفة رضي الله تعالى عنه انه اذا قرأها مع كل سورة فحسن وهو قول محمد رحمه الله تعالىٰ، واللہ تعالىٰ اعلم۔ [Urdu Column]: Faqih Abu Ja'far narrates from Imam Abu Hanifa (may Allah be pleased with him) that when Bismillah is recited with every Surah, it is good (Hasan), and this is also the opinion of Imam Muhammad (may Allah have mercy on him). And Allah knows best. (T)

Problem No. 740: From Etawah, near Munsifi Court, sent by Maulvi Muhammad Habib Ali Sahib Alawi, 9 Ramadan al-Mubarak 1317 AH. Praising and sending blessings upon the Prophet, sincerely, may Allah increase your glory. Peace be upon you and the mercy of Allah and His blessings. On this side, I have been honored by studying the noble booklets of your presence such as Hayat-ul-Mawat, Wishah-ul-Jid, Al-Numi-ul-Hajir, Izalat-ul-Ar, etc. Thank you.

1. Al-Bahr al-Ra'iq, Fasl: Wa Idha Arada al-Dukhul etc., published by H.M. Saeed Company Karachi, 1/312.
2. Ghunyah Dhawi al-Ahkam, Hashiyah Durar al-Hukkam, Bab Sifat al-Salah, published by Matba' Ahmad Kamil al-Ka'inah in Sa'adat Beirut, 1/29.

3. Maraqi al-Falah with Hashiyah al-Tahtawi, Fasl fi Kaifiyyat Tarkib Af'al al-Salah, published by Noor Muhammad Tejarat Kutub Karachi, p. 154.
4. Sharh al-Niqayah lil-Birjandi, Kitab al-Salah, published by Nawal Kishore Balsur and Lucknow, 1/104.

फ़तावा रज़विया, खंड 6

[अरबी कॉलम]: والمجتبى الى اخر مامر- [उर्दू कॉलम]: और मुजतबा में इसका स्पष्टीकरण है जिसका उल्लेख पहले ही किया जा चुका है। (त)

अल्लामा हसन शुरुनबुलाली 'ग़ुनया ज़वी अल-अहकाम' में फरमाते हैं: [अरबी कॉलम]: المراد نفي سنية الاتيان بها بعد الفاتحه و هذا عندهما وقال محمد يسن الاتيان بها في السرية بعد الفاتحه ايضاً للسيرة واتفقوا على عدم كرهة الاتيان بها بل ان سمى بين الفاتحه والسورة كان حسناً سواء كانت الصلاة جهرة جهرية او سرية۔ [उर्दू कॉलम]: इसका अर्थ फातिहा के बाद बिस्मिल्लाह पढ़ने की सुन्नत होने का निषेध है और यह शैखैन (इमाम अबू हनीफा और इमाम अबू यूसुफ) के अनुसार है। इमाम मुहम्मद का कथन है कि गुप्त (सिरी) नमाज़ में फातिहा के बाद सूरह के लिए बिस्मिल्लाह पढ़ना भी सुन्नत है, लेकिन यदि कोई पढ़ लेता है तो इसके मकरूह (नापसंद) न होने पर सबका इत्तेफाक है, बल्कि फातिहा और सूरह के बीच अगर कोई पढ़ लेता है तो यह हसन (बेहतर) है चाहे नमाज़ जही (सस्वर) हो या सिरी (मौन)। (त)

'मराक़ी अल-फ़लाह' में है: [अरबी कॉलम]: لا كراهة فيها ان فعلها اتفاقاً للسورة سواء جهرا وخافت بالسورة۔ [उर्दू कॉलम]: सूरह से पहले बिस्मिल्लाह पढ़ लेना सर्वसम्मति से मकरूह नहीं है चाहे सूरह ऊँची आवाज़ में पढ़ी जाए या धीमी आवाज़ में। (त)

'रहमानिया' और 'बिरजंदी' आदि में 'अल-मुहीत' से उद्धृत है: [अरबी कॉलम]: ذكر الفقيه ابو جعفر عن ابي حنيفة رضي الله تعالى عنه انه اذا قرأها مع كل سورة فحسن وهو قول محمد رحمه الله تعالىٰ، واللہ تعالىٰ اعلم۔ [उर्दू कॉलम]: फ़क़ीह अबू जाफ़र इमाम अबू हनीफ़ा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत करते हैं कि जब हर सूरह के साथ बिस्मिल्लाह पढ़ी जाती है तो यह हसन है और यही इमाम मुहम्मद का भी कथन है। और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है। (त)

मसला नंबर 740: इटावा से, कचहरी मुंसिफ़ी के पास, प्रेषक मौलवी मुहम्मद हबीब अली साहब अलवी, 9 रमज़ान अल-मुबारक 1317 हिजरी। अल्लाह की प्रशंसा और दुरूद के साथ, निष्ठापूर्वक, अल्लाह आपके गौरव को बढ़ाए। आप पर सलामती हो और अल्लाह की रहमत और उसकी बरकतें

हों। इस ओर आपकी महामहिम की श्रेष्ठ पुस्तिकाओं जैसे 'हयातुल मवात', 'विशाहुल जीद', 'अन-नुमी अल-हाजिर', 'इज़ालतुल आर' आदि के अध्ययन से लाभान्वित होने का सौभाग्य मिला। धन्यवाद।

1. अल-बहर अर-राइक़, फ़स्ल: 'व इज़ा अराद अद-दुखूल' आदि, एच.एम. सईद कंपनी कराची द्वारा प्रकाशित, 1/312
2. ग़ुनया ज़वी अल-अहकाम, हाशिया दुरर अल-हुक्काम, बाब सिफ़त अस-सलाह, मतबा अहमद कामिल अल-काइना, सआदत बेरूत द्वारा प्रकाशित, 1/29
3. मराक़ी अल-फ़लाह मा हाशिया अत-तहातावी, फ़स्ल फ़ी कैफ़ियत तरकीब अफ़आल अस-सलाह, नूर मुहम्मद तिज़ारत कुतुब कराची द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 154
4. शरह अन-निक़ाया लिल-बिरजंदी, किताब अस-सलाह, नवल किशोर बालसुर और लखनऊ द्वारा प्रकाशित, 1/104

पृष्ठ 164/736

والجتبی الی اخر مامر- اور مجتبٰی میں اس کی تصریح ہے جس کا ذکر ہو چکا ہے۔ (ت)

علامہ حسن شرنبلالی غنیۃ ذوی الاحکام میں فرماتے ہیں: المراد نفی سنیۃ الاتیان بها بعد الفاتحه و هذا عندهما وقال محمد یسن الاتیان بها في السریة بعد الفاتحه ایضاً للسیرة واتفقوا علی عدم کرهة الاتیان بها بل ان سمی بین الفاتحه والسورة کان حسناً سواء کانت الصلاة جهرة جهریة او سریة۔ اس سے مراد فاتحہ کے بعد بسم اللہ پڑھنے کی سنیت کی نفی ہے اور یہ شیخین کے نزدیک ہے۔ امام محمد کا قول یہ ہے کہ نماز سری میں فاتحہ کے بعد سورت کے لئے بسم اللہ پڑھنا بھی سنت ہے لیکن اگر کوئی پڑھ لیتا ہے تو اس کے مکروہ نہ ہونے پر سب کا اتفاق ہے، بلکہ فاتحہ اور سورت کے درمیان اگر پڑھ لیتا ہے تو یہ حسن ہے خواہ نماز جہری ہو یا سری۔ (ت)

مراقی الفلاح میں ہے: لا کراهة فیها ان فعلها اتفاقاً للسورة سواء جهرا وخافت بالسورة۔ سورت سے پہلے بسم اللہ پڑھ لینا بالاتفاق مکروہ نہیں خواہ سورت جہراً پڑھے یا سراً۔ (ت)

رحمانیہ وبرجندی وغیرہما میں محیط سے ہے: ذکر الفقیه ابو جعفر عن ابی حنیفہ رضی اللہ تعالی عنہ انه اذا قرأها مع کل سورة فحسن وهو قول محمد رحمه اللہ تعالیٰ، واللہ تعالیٰ اعلم۔ فقیہ ابو جعفر امام ابو حنیفہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کرتے ہیں کہ جب ہر سورت کے ساتھ بسم اللہ پڑھتا ہے تو یہ حسن ہے اور یہی امام محمد کا قول ہے، واللہ تعالیٰ اعلم۔ (ت)

مسئلہ نمبر ۷۴۰: از اٹھاوہ متصل کچہری منصفیمر سلہ مولوی محمد حبیب علی صاحب علوی ۹ رمضان المبارک ۱۳۱۷ھ حامداً ومصلیاً مخلص نوزاد کم اللہ مجد کم۔ السلام علیکم ورحمۃ اللہ

وبرکاتہ۔ اس طرف جو رسائل شریفہ آنجناب مشلحیات الموات وشاح الجید، النمی الحاجر، ازالۃ العار و غیر ہا کے مطالعہ سے شرف اندوزی حاصل ہوئی۔ شکریہ

1۔ البحر الرائق فضل واذا اراد الدخول الخ مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۳۱۲/۱ 2۔ غنیۃ ذوی الاحکام حاشیہ درر الحکام باب صفۃ الصلوۃ مطبوعہ مطبع احمد کامل الکائنہ در سعادت بیروت ۲۹/۱ 3۔ مراقی الفلاح مع حاشیہ الطحطاوی فصل فی کیفیۃ ترکیب افعال الصلوۃ مطبوعہ نور محمد تجارت کتب کراچی ص ۱۵۴ 4۔ شرح النقایۃ للبر جندی، کتاب الصلوۃ مطبوعہ نولکشور بالسور و لکھنؤ، ۱۰۴/۱

Fatawa Razawiyyah Volume Six

Reference to it cannot be penned. Truly, your manner of research in such matters is unique from others and superior in all aspects. You have conveyed the research of zira'iya issues to higher ranks. May Allah reward you with the best reward. This request's presentation is currently for the purpose that in 'Durr-e-Mukhtar', at the time of bowing (ruku'), the joining of the ankles (ilsaq-e-ka'bayn) is written as a sunnah. Shami has testified to its sunnah in no writing, nor has he given much opposition or attention to it. The author of 'Miftah al-Salat' has derived it from the narrations of 'Zahir al-Riwayah', having written on his own margin with the research of 'ilsaq' meaning proximity (qurb) or connection (ittisal). The points sought are only the following: (1) Where is the sunnah-act of joining ankles in ruku' proven? Which Hadith is the evidence for the statement of the author of 'Durr-e-Mukhtar', and to what extent is it actionable and reliable? The author of 'Miftah al-Salat' has stated the explanation of this issue in sum. Other reliable texts of the Hanafi school of thought do not mention this sunnah of ruku'; why did some jurists tolerate it? The text of 'Fatawa-e-Shami' and 'Durr-e-Mukhtar' is recorded in the following two places, and the text of 'Miftah al-Salat' remains on the following page: 'Ghayat al-Awtar' translation of 'Durr-e-Mukhtar' page 230, 219. Sunnahs of prayer and the method of performing prayer and saying Takbir of bowing, and similarly rising from it such that one stands upright, and reciting Tasbih three times in it, and joining his ankles, and keeping his calves upright. (Miftah al-Salat page 94):

[Table Content]

Column 1 (Source Text Summary): Mujtaba, which is a composition of Imam Zahidi, has stated joining the ankles while keeping the fingers towards the Qibla among the sunnahs of bowing. However, in authentic Hadith and books of 'Zahir al-Riwayah', it is not apparent. Apparently, the meaning is the inclination of one ankle towards the other, as the author of 'Qamus' has stated for the meaning of 'lusoq'. This is because if joining occurs during ruku', it would necessitate 'harakat-e-kathirah' (excessive movement), while the facing of fingers towards Qibla would not remain, and the sunnah of standing (qiyam) would be lost, as a gap of four fingers between both feet is sunnah. The saying of grammarians supports 'amala' (inclination), where the particle 'ba' is for 'ilsaq' meaning proximity. In Hadith as well, 'ilsaq al-ka'b' occurs in the meaning of proximity and parallelism. Thus...

Column 2 (Explanation): Parallelism of ankle to ankle can also be intended, as the research of this issue is mentioned in detail in the margins of 'Bahr al-Ra'iq' by the scribe. And Allah knows best. In Imam Zahidi's book 'Mujtaba', in the discussion of the sunnahs of bowing (ruku'), joining the ankles and turning the toes towards the Qibla is described as a sunnah. However, this is not narrated in authentic Hadiths or the books of 'Zahir al-Riwayah'. At most, it is found that one ankle should lean towards the other, as the author of 'Qamus' explained for 'lusoq'. Otherwise, in the case of actual connection (joining) during ruku', excessive movement would be required, besides the fact that the toes would not remain facing the Qibla, and the sunnah would not be established because a distance of four fingers between the feet during standing is the sunnah. Here...

इसका हवाला कलमबंद नहीं किया जा सकता। वास्तव में, ऐसे मामलों में शोध का आपका तरीका दूसरों से अलग और हर लिहाज़ से श्रेष्ठ है। आपने ज़िरा'इया मुद्दों के शोध को उच्च स्तर तक पहुँचाया है। अल्लाह आपको बेहतरीन बदला दे। वर्तमान में इस अर्ज़ी की आवश्यकता इसलिए है क्योंकि 'दुर्रे मुख्तार' में रुकू(झुकने) के समय टखनों को मिलाने (इलसाक़-ए-काबैन) को सुन्नत के रूप में लिखा गया है। शामी ने किसी भी लेखन में इसकी सुन्नत होने का प्रमाण नहीं दिया है, और न ही इस पर अधिक विरोध या ध्यान दिया है। 'मिफ़्ताह अल-सलात' के लेखक ने 'ज़ाहिर अल-रिवाया' की हदीसों से इसे निकाला है, अपनी हाशिया (मार्जिन) पर शोध के साथ इलसाक़ का अर्थ निकटता (कुर्ब) या जुड़ाव (इत्तिसाल) लिखा है। मांगी गई बातें केवल निम्नलिखित हैं: (१) रुकू में टखनों को मिलाने की सुन्नत कहाँ सिद्ध है? 'दुर्रे मुख्तार' के लेखक के कथन के लिए कौन सी हदीस प्रमाण है, और वह किस सीमा तक अमल करने योग्य और विश्वसनीय है? 'मिफ़्ताह अल-सलात' के लेखक ने इस मसले का बयान संक्षेप में किया है। हनफ़ी संप्रदाय के अन्य विश्वसनीय ग्रंथों में रुकू की इस सुन्नत का उल्लेख नहीं है; कुछ न्यायविदों ने इसे क्यों स्वीकार किया? 'फ़तावा-ए-शामी' और 'दुर्रे मुख्तार' का पाठ नीचे दिए गए दो स्थानों पर दर्ज है, और 'मिफ़्ताह अल-सलात' का शेष भाग अगले पृष्ठ पर है: 'ग़ायत अल-औतार' अनुवाद 'दुर्रे मुख्तार' पृष्ठ २३०, २१९। नमाज़ की सुन्नतें और नमाज़ अदा करने का तरीका और रुकू की तकबीर, और उसी तरह उससे सीधा खड़ा होना, उसमें तीन बार तस्बीह पढ़ना, टखनों को मिलाना और पिंडलियों को सीधा रखना। (त) मिफ़्ताह अल-सलात पृष्ठ ९४:

[तालिका सामग्री]

स्तंभ १ (स्रोत पाठ सारांश): मुजतबा, जो इमाम ज़ाहिदी की रचना है, में रुकू की सुन्नतों में उंगलियों को क़िबला की ओर रखते हुए टखनों को मिलाने को सुन्नत बताया गया है। लेकिन सही हदीस और 'ज़ाहिर अल-रिवाया' की किताबों में यह स्पष्ट नहीं होता। ज़ाहिर तौर पर मतलब एक टखने का दूसरे टखने की तरफ झुकाव है, जैसा कि 'क़ामूस' के लेखक ने लुसूक़ का अर्थ बताया है। क्योंकि अगर रुकू के समय इलसाक़ (मिलाना) हो तो हरकत-ए-कसीरा (अत्यधिक गति) आवश्यक हो जाएगी, जबकि उंगलियों का रुख क़िबला की तरफ नहीं रहेगा और कियाम (खड़े होने) की सुन्नत खत्म हो जाएगी कि खड़े होने की स्थिति में दोनों पैरों के बीच चार उंगलियों का फासला सुन्नत है। व्याकरणविदों का कहना 'अमाला' (झुकाव) का समर्थन करता है, 'बा' इलसाक़ के लिए है जिसका

अर्थ निकटता है। हदीस में भी 'इलसाक़ अल-का'ब' निकटता और समानांतर होने के अर्थ में आया है। अतः..

स्तंभ २ (व्याख्या): टखने से टखने की समानता का इरादा भी किया जा सकता है जैसा कि इस मसले का शोध 'बहर अल-रैक' के हाशिए में विस्तार से वर्णित है। और अल्लाह बेहतर जानता है। इमाम ज़ाहिदी की किताब 'मुजतबा' में रुकू की सुन्नतों की चर्चा में टखनों को मिलाना और पैरों की उंगलियों को क़िबला की ओर करना सुन्नत बताया गया है लेकिन सही हदीस और 'ज़ाहिर अल-रिवाया' की किताबों में यह वर्णित नहीं है। ज्यादा से ज्यादा इतना मिलता है कि एक टखने का दूसरे टखने की तरफ झुकाव हो, जैसा कि 'क़ामूस' के लेखक ने इसका अर्थ लुसूक़ बताया है वरना रुकू में मिलाप (इत्तिसाल) की सूरत में हरकत-ए-कसीरा (अत्यधिक गति) आवश्यक हो जाएगी जबकि उसके साथ उंगलियों का रुख क़िबला की तरफ नहीं रहेगा, और सुन्नत कायम नहीं होगी कि कियाम (खड़े होने) की स्थिति में दोनों कदमों के बीच चार उंगलियों की मात्रा का फासला सुन्नत है, यहाँ...

पृष्ठ १६५ / ७३६

فتاوی رضویہ جلد ششم

اس کا حوالہ قلم نہیں ہوسکتا ہے واقعی آپ کا طرز ایسے مسائل میں تحقیق کا اوروں سے نرالا ہے اور بہمہ وجوہ سب سے اعلی ہے آپ نے پایہ تحقیق مسائل نزاعیہ میں مراتب عالیہ کو پہنچادیا ہے جزا کم اللہ خیرا الجزا۔ اس عریضہ کی تسطیر کی بالفعل یہ ضرورت درپیش ہے کہ وقت رکوع در مختار میں الصاق کعبین کو مسنون دو مقام پر تحریر کیا ہے شامی نے ثبوت مسنونیت میں کوئی حدیث تحریر نہیں کی بلکہ کچھ زیادہ تعرض اور لحاظ نہیں فرمایا، صاحب مفتاح الصلوۃ نے احادیث اور ظاہر الروایۃ میں وارد ہونا تحریر کرکے الصاق کو بمعنی قرب و اتصال تصریح کرکے زیادہ تحقیق کا حوالہ اپنے حواشی پر لکھ دیا، دریافت طلب امر صرف امور ذیل ہیں: (۱) مسنونیت الصاق کعبین فی الرکوع کہاں ثابت ہے، کون حدیث دلیل قول صاحب در مختار ہے اور وہ کہاں تک قابل عمل اور اعتماد ہے، صاحب مفتاح الصلوۃ کا بیان بنسبت اس مسئلہ کے بجمعہ صحیح ہے یا کیا۔ دیگر متون معتمدہ فقہ مذہب حنفی میں اس سنت رکوع کا بیان کیوں نہیں درج ہوا ہے تساہل بعض فقہا نے کیوں گوارا فرمایا۔ عبارت فتاوی در مختار ہر دو مقام سے اور عبارت مفتاح الصلوۃ بقیہ صفحہ ذیل میں درج ہے، غایۃ الاوطار ترجمہ در مختار صفحہ ۲۳۰، ۲۱۹ سنن نماز و طریق ادائے نماز وتکبیر الرکوع وکذا الرفع منہ بحیث یستوی قائما و التسبیح فیہ ثلاثاوالصاق کعبیہ و ینصب ساقیہ (تکبیر رکوع اور اسی طرح رکوع سے سیدھا کھڑا ہونا، اس میں تین دفعہ تسبیح پڑھنا، ٹخنوں کا متصل ہونا اور پنڈلیوں کو کھڑا کرنا۔ (ت) مفتاح الصلوۃ صفحہ ۹۴ :

[جدول کا مواد]

پہلا کالم: مجتبٰی کہ تصنیف امام زاہدی است از مسنونات رکوع الصاق کعبین باستقلال انگشتان بسوئے قبلہ مسنون گفتہ است لیکن در حدیث صحیح و در کتب ظاہر الروایۃ ظاہر نمی شود ظاہر

مراد امالہ کعب بسوئے کعب دیگر باشد چنانکہ صاحب قاموس معنی لصوق گفتہ است زیرا کہ اگر الصاق در وقت رکوع کند حرکت کثیر لازم مے آید با آنکہ استقبال انگشتان نمی ماند وسنت قیام مے رود کہ فرجہ چہار انگشت مسنون است و مؤید امالہ قول نحویین است الباء للالصاقی یعنی القرب و در حدیث نیز الصاق الکعب بمعنی القرب والمقابلہ واقع است پس

دوسرا کالم: مقابلہ کعب بکعب نیز ارادہ می تواں نمود چنانچہ تحقیق این مسئلہ در حواشی بحر الرائق کاتب بتفصیل مذکور نمودہ ۔ واللہ اعلم۔ امام زاہدی کی کتاب مجتبٰی میں سنن رکوع کی بحث میں ٹخنوں کو متصل کرنا اور پاؤں کی انگلیوں کو قبلہ رخ کرنا سنت بیان کیا گیا ہے لیکن حدیث صحیح اور کتب ظاہر الروایۃ میں یہ وارد نہیں ہے زیادہ سے زیادہ اتنا ملتا کہ ایک ٹخنے کا دوسرا ٹخنے کی طرف میلان ہو، جیسا کہ صاحب قاموس نے اس کا معنی لصوق بیان کیا ہے ورنہ رکوع میں اتصال کی صورت میں حرکت کثیرہ لازم آئے گی با آنکہ اس کے ساتھ انگلیوں کا رخ قبلہ کی طرف نہیں رہے گا، اور سنت قائم نہ ہوگی کہ حالت قیام میں دونوں قدموں کے درمیان چار انگلیوں کی مقدار کا فاصلہ سنت ہے، یہاں

Fatawa Razawiya, Volume Six

Alignment of ankle to ankle can also be intended as the research on this issue in the margins of Bahr al-Ra'iq has been mentioned in detail by the scribe. And Allah knows best.

The view of grammarians on the meaning of 'ilsaq' (joining) also supports the inclination that they say 'bil-ilsaq' is for proximity. In the Hadith as well, the meaning of 'ilsaq al-ka'b' (joining of the ankles) has occurred as proximity and face-to-face alignment. Therefore, here, one ankle being opposite to the other can be intended. Accordingly, the writer has mentioned the detail and research of this issue in the margins of al-Bahr al-Ra'iq. And Allah knows best. (T)

The Answer:

My respected and honorable brother Ikram Allah Ta'ala, peace, mercy, and blessings of Allah be upon you. The Seal of Verifiers, Allamah Ala'uddin al-Haskafi, author of Durr al-Mukhtar (may Allah Ta'ala exalt his station), is not unique in this matter. Scholars before him stated this clearly, and later narrators and observers provided explanations and clarifications. Allamah Ibrahim al-Halabi states in Ghunya Sharh Munya: "The Sunnah in Ruku (bowing) is also to join the ankles and face the toes toward the Qibla." Joining the ankles in Ruku and having the toes face the Qibla is also Sunnah. (T) It is mentioned in Sharh Niqayah by the learned Ash-Shams al-Quhistani:

It is appropriate to add: separating the upper arms from the body, joining the ankles, and facing the toes, for it is Sunnah as stated in al-Zahidi.	**Here, it is appropriate to add that keeping the arms away from the belly, joining the ankles, and facing the toes towards the Qibla is Sunnah, as mentioned in Zahidi. (T)**

Exactly in the same way, Allamah Sayyid Abu al-Mas'ud al-Azhari has quoted from Allamah Sayyid Hamawi in Fath Allah al-Mubin. Allamah Bahr al-Fiqh Zayn al-Fuqaha in Bahr al-Ra'iq quotes from Sharh Quduri:

And the Sunnah in Ruku is joining the ankles and facing the toes towards the Qibla.	**Joining the ankles in Ruku and having the toes face the Qibla is Sunnah. (T)**

It is mentioned in Tahtawi on Maraqi al-Falah:

1. Ghunyat al-Mustamli Sharh Munyat al-Musalli, Sifat-us-Salat, published by Suhail Academy Lahore, p. 315.
2. Jami' ar-Rumuz, Section: Sifat-us-Salat, published by Maktaba Islamia, Gumbad Qamus, Iran, 1/152.
3. Al-Bahr ar-Ra'iq, Section: When he intends to enter, published by H.M. Saeed Company, Karachi, 1/315.

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

टखने से टखना मिलाना भी अभिप्रेत हो सकता है, जैसा कि इस मसले का विस्तृत शोध लेखक द्वारा बहरुल रैक के हाशिए में उल्लेख किया गया है। और अल्लाह बेहतर जानता है।

'इल्साक़' के अर्थ पर वैयाकरणों का विचार भी इस ओर झुकाव का समर्थन करता है कि वे कहते हैं 'बिल-इल्साक़' निकटता के लिए है। हदीस में भी 'इल्साक़ अल-काब' (टखनों को मिलाने) का अर्थ निकटता और आमने-सामने होना पाया गया है। इसलिए, यहाँ एक टखने का दूसरे के सामने होना मुराद लिया जा सकता है। तदनुसार, लेखक ने इस मसले का विवरण और शोध अल-बहरुल रैक के हाशिए में वर्णित किया है। और अल्लाह बेहतर जानता है। (त)

उत्तर:

मेरे सम्मानित भाई इकराम अल्लाह तआला, आप पर अल्लाह की शांति, दया और बरकत हो। अन्वेषकों की मुहर, अल्लामा अलाउद्दीन हसकफी, दुर्रे मुख्तार के लेखक (अल्लाह उनके पद को उच्च करे), इस मामले में अकेले नहीं हैं। उनसे पहले के विद्वानों ने इसे स्पष्ट किया है और बाद के वर्णनकर्ताओं और शोधकर्ताओं ने इसकी व्याख्या और स्पष्टीकरण दिया है। अल्लामा इब्राहिम हलबी गुनिया शर्ह मुन्या में फ़रमाते हैं: "रुकू में सुन्नत यह भी है कि टखनों को मिलाया जाए और उंगलियों को क़िबला की ओर रखा जाए।" रुकू में टखनों का जुड़ा होना और उंगलियों का रुख़ क़िबला की ओर होना भी सुन्नत है। (त) अल्लामा शम्स अल-कुहिस्तानी की शर्ह नक़ाया में है:

यह जोड़ना उचित है: अपनी भुजाओं को शरीर से अलग रखना, टखनों को मिलाना और उंगलियों को सामने रखना, क्योंकि यह सुन्नत है जैसा कि अल-ज़ाहिदी में है।

यहाँ यह बात जोड़ना उचित है कि बाजू को पेट से अलग रखना और टखनों को मिलाना और पैरों की उंगलियों का रुख़ क़िबला की ओर होना सुन्नत है, जैसा कि ज़ाहिदी में है। (त)

ठीक इसी तरह, अल्लामा सैयद अबू अल-मसूद अज़हरी ने फ़तह अल्लाह अल-मुबीन में अल्लामा सैयद हमवी से उद्धृत किया है। अल्लामा बहरुल फिक़्ह ज़ैन अल-फ़ुक़हा ने बहरुल रैक में शर्ह क़ुदूरी से उद्धृत किया है:

और रुकू में सुन्नत टखनों को मिलाना और उंगलियों को क़िबला की ओर रखना है।

रुकू में टखनों का जुड़ा होना और उंगलियों का क़िबला की ओर होना सुन्नत है। (त)

तहतावी अल मराक़िल फ़लाह में है:

1. गुनियातुल मुस्तमली शर्ह मुनियातुल मुसल्ली, सिफ़ातुस सालात, सुहैल अकादमी लाहौर द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 315।
2. जामेउर रुमुज़, अध्याय: सिफ़ातुस सालात, मकतबा इस्लामिया गुंबद क़ामूस ईरान द्वारा प्रकाशित, 1/152।
3. अल-बहरुल रैक, अध्याय: जब वह प्रवेश करने का इरादा करे, एच.एम. सईद कंपनी कराची द्वारा प्रकाशित, 1/315।

पृष्ठ 166 का 736

فتاوی رضویہ، جلد ششم

مقابلہ کعب بکعب نیز ارادہ می تواں نمود چنانکہ تحقیق ایں مسئلہ در حواشی بحر الرائق کاتب بتفصیل مذکور نمودہ۔ واللہ اعلم۔

الصاق کے معنی امالہ پر نحویوں کا قول بھی تائید کرتا ہے کہ وہ کہتے ہیں بالصاق یعنی قرب کے لئے ہے، اور حدیث میں بھی الصاق الکعب کا معنی قرب اور مقابلہ واقع ہوا ہے، لہذا یہاں کعب کا کعب کے مقابل ہونا مراد لیا جاسکتا ہے۔ چنانچہ اس مسئلہ کی تفصیل و تحقیق راقم نے البحر الرائق کی حواشی میں ذکر کی ہے۔ واللہ اعلم (ت)

الجواب:

مکرمی کرم فرمایا اکرام اللہ تعالیٰ السلام علیکم ورحمۃ اللہ وبرکاتہ۔ خاتم المدققین علامہ علاؤ الدین حصکفی صاحب درمختار اعلی اللہ تعالیٰ مقامہ اس مسئلہ میں منفرد نہیں ان سے بھی پہلے علماء نے اس کی تصریح اور ان کے بعد ناقلین و ناظرین نے تقریر و توضیح فرمائی۔ علامہ ابراہیم حلبی غنیہ شرح منیہ میں فرماتے ہیں: السنۃ ایضا فی الرکوع الصاق الکعبین و استقبال الاصابع القبلۃ۔ رکوع میں ٹخنوں کا اتصال اور انگلیوں کا قبلہ رُخ ہونا بھی سنّت ہے۔ (ت) شرح نقایہ للعلاّمۃ الشمس القھستانی میں ہے:

ینبغی ان یزاد مجافیاً عضدیہ ملصقا یہاں اس بات کا اضافہ کرنا مناسب ہے کہ بازو پیٹ سے جدا کعبیہ مستقبلا اصابعہ فانھا سنۃ کما اور ٹخنے متصل اور پاؤں کی انگلیوں کا قبلہ رُخ ہونا سنت فی الزاہدی ہے جیسا کہ زاہدی میں ہے (ت)

بعینہ اسی طرح علامہ سید ابوالمسعود ازہری نے فتح اللہ المبین میں علامہ سید خموی سے نقل کیا علامہ بحر الفقہ زین الفقہاء بحر الرائق میں شرح قدوری سے نقل فرماتے ہیں:

والسنة فی الرکوع الصاق الکعبین و استقبال الاصابع للقبلة

رکوع میں ٹخنوں کا متصل ہونا اور انگلیوں کا قبلہ رُخ ہونا سنّت ہے۔ (ت)

طحطاوی علی مراقی الفلاح میں ہے:

1. غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی صفیۃ الصلوۃ مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۳۱۵
2. جامع الرموز ، فصل صفیۃ الصلوۃ مطبوعہ مکتبہ اسلامیہ گنبد قاموس ایران ۱/۱۵۲
3. البحر الرائق فصل واذا اراد الدخول مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱/۳۱۵

Fatawa Razawiyya Volume 6

- It is Sunnah during Ruku' (bowing) to keep the elbows away from the sides, for the ankles to be touching, and for the toes to face the Qiblah. Thus it is mentioned in Al-Quhistani from Al-Zahidi. (T)

In Tahtawi 'ala al-Durr, it is stated: - Touching the ankles together during the state of Ruku' should be done if it is easy; otherwise, it should be done however it is easy, according to Zahir al-Riwayah. (T)

In Radd al-Muhtar, it is stated: - Touching the ankles together is for when there is no excuse (valid reason not to). (T)

Issues are not confined to Zahir al-Riwayah; nor does a lack of mention in Zahir al-Riwayah or in concise primary texts (Mutun) mean they don't exist. Usually, the transmission of Zahir is concise. If one does not rely on trusted commentaries (Shuruh), only a very small part of the religion would remain. Investigation will show that let alone some obligations (Wajibat), fundamentals (Fara'idh), invalidators (Mufsidat), and deficiencies (Nawaqis), many are not found in general primary texts. As for the proof, it lies with the Mujtahid; our not finding it is not proof of its non-existence. For us, the jurisprudential texts (Nusus Fiqhiyya) are sufficient, and texts are taken literally as far as possible. And as long as a physical meeting occurs, it is not just being opposite or leaning (not merely facing or tilting). I, the poor one, did not find any trace of this meaning in Al-Qamus.

- Even if this meaning is in Al-Qamus, it would be a metaphorical (Majazi) meaning. Scholars have written about the flaws of Al-Qamus; for example, Al-Zurqani in several places in Sharh al-Mawahib and other noble scholars in their books have clarified that the author of Al-Qamus mentions metaphorical meanings of words, which creates an illusion of them being literal. This is because the purpose of linguistic books is to explain the literal meanings for which the words were coined. (T)
- Hashiyat al-Tahtawi 'ala Maraqi al-Falah, Chapter on Sunan of Prayer, published by Nur Muhammad Tijarat Kutub Karachi, p. 145.
- Hashiyat al-Tahtawi 'ala al-Durr al-Mukhtar, Chapter on the Description of Prayer, published by Dar al-Ma'rifah Beirut, 1/313.

- Radd al-Muhtar, Chapter on the Description of Prayer, published by Mustafa al-Babi Egypt, 1/252.

फ़तावा रज़विया छठा खंड

- रुकू में कोहनियों का बगलों से दूर रहना, टखनों का आपस में मिलना और पैरों की उंगलियों का किबला की ओर होना सुन्नत है। कहिस्तानी में ज़ाहिदी के हवाले से इसी तरह है। (त)

तहत़ावी अलद-दुर्र में है: - रुकू की स्थिति में यदि आसानी हो तो टखनों को मिला लिया जाए, अन्यथा जिस तरह आसानी हो वैसे कर लिया जाए, ज़ाहिर अल-रिवायत के आधार पर। (त)

रद्द अल-मुह्तार में है: - टखनों को मिलाना उस समय है जब कोई उज़्र (बहाना/बाधा) न हो। (त)

मसायल (मसले) केवल ज़ाहिर अल-रिवायत तक ही सीमित नहीं हैं; ज़ाहिर अल-रिवायत या संक्षिप्त ग्रंथों (मतून) में उल्लेख न होना उनके अभाव का प्रमाण नहीं है। आमतौर पर ज़ाहिर का विवरण संक्षिप्त होता है। यदि विश्वसनीय व्याख्याओं (शराह) पर भरोसा न किया जाए, तो धर्म का केवल एक छोटा हिस्सा ही हाथ में रह जाएगा। शोध से पता चलेगा कि कुछ अनिवार्यताओं (वाजिबात), फ़राइज़, नमाज़ को बिगाड़ने वाली चीज़ों और कमियों की बात तो दूर, सामान्य ग्रंथों में वे भी नहीं मिलते। जहाँ तक प्रमाण का सवाल है, वह मुज्तहिद के पास है; हमारा न पाना उनके न होने का प्रमाण नहीं है। हमारे लिए फ़िक़्ही ग्रंथ (नसूस) ही पर्याप्त हैं, और ग्रंथों को यथासंभव उनके शाब्दिक अर्थों में लिया जाता है। और जब तक शारीरिक मिलाप होता है, यह केवल आमने-सामने होना या झुकाव (महज़ मुक़ाबला या झुकाव) नहीं है। मुझ फ़क़ीर ने शब्दकोश (क़ामूस) में इस अर्थ का कोई संकेत नहीं पाया।

- और अगर यह अर्थ क़ामूस में है भी, तो यह लाक्षणिक (मज़ाज़ी) अर्थ होगा। विद्वानों ने क़ामूस की कमियाँ लिखी हैं; उदाहरण के लिए, ज़रक़ानी ने शरह अल-मवाहिब में कई जगहों पर और अन्य विद्वानों ने अपनी पुस्तकों में स्पष्ट किया है कि क़ामूस के लेखक शब्दों के लाक्षणिक अर्थ भी लिखते हैं, जिससे उनके वास्तविक (हक़ीक़ी) होने का भ्रम होता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि भाषा की पुस्तकों का उद्देश्य उन शब्दों के वास्तविक अर्थों को स्पष्ट करना है जिनके लिए वे बनाए गए थे। (त)
- हाशिया अल-तहत़ावी अली मराक़ी अल-फ़लाह, नमाज़ की सुन्नतों का अध्याय, नूर मुहम्मद तिजारत कुतुब कराची, पृष्ठ 145।

- हाशिया अल-तहत़ावी अली अल-दुर्र अल-मुख्तार, नमाज़ की पद्धति का अध्याय, दार अल-मआरिफ़ा बेरूत, 1/313।
- रद्द अल-मुह्तार, नमाज़ की पद्धति का अध्याय, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 1/252।

पृष्ठ 167/736

فتاوی رضویہ جلد ششم

وسن ابعاد مرفقيه عن جنبيه والصاق كعبيه فيه واستقبال اصابعه القبلة ای اصابع رجليه كذا في القهستاني عن الزاهدي[1]۔ رکوع میں کہنیوں کا پہلوؤں سے دُور ہونا اور ٹخنوں کا متصل ہونا اور پاؤں کی انگلیوں کا قبلہ رُخ ہونا سنت ہے۔ قہستانی میں زاہدی کے حوالے سے اسی طرح ہے۔ (ت)

طحطاوی علی الدر میں ہے: والصاق كعبيه حالة الركوع هذا ان تيسر له ولا كيف تيسر له على الظاهر[2]۔ حالتِ رکوع میں اگر آسانی ہو تو ٹخنوں کو ملا لیا جائے ورنہ جس طرح آسانی ہو ویسے کر لیا جائے ظاہر الروایۃ پر۔ (ت)

ردالمحتار میں ہے: والصاق كعبيه ای حيث لا عذر[3]۔ ٹخنوں کو ملانا اس وقت ہے جب کوئی عذر نہ ہو۔ (ت)

مسائل ظاہر الروایۃ میں محصور نہیں نہ ظاہر الروایۃ خواہ متون میں عدمِ ذکرِ ذکرِ عدمِ متونِ مختصرات ہیں اور غالباً نقلِ ظاہر پر مقتصر زیادت۔ شرح معتمدین اگر مسلم نہ ہوں تو مذہب کا ایک حصہ قلیلہ ہاتھ میں رہ جائے تتبع بتائے گا کہ نن در کنار بعض واجبات و فرائض و مفسدات و نواقص تک عامہ متون میں نہیں، رہی دلیل وہ مجتہد کے پاس ہے، نہ ہمارا عدم وجدان وجدان عدم ، ہمارے لئے نصوص فقہیہ بس ہیں اور نصوص حتی الامکان ظاہر پر محمول ، اور جب تک حیت بنے ہے ، نہ مجردِ محاذات یا امالہ (محض مقابل یا مائل ہونا نہیں) قاموس میں فقیر نے اس معنی کا نشان نہ پایا۔

ان كان فهو من المجاز وقد عدوا من عيوب القاموس كما ذكره العلامة الزرقاني في عدة مواضع من شرح المواهب وغيره في غيره انه يذكر المعانى المجازية ای فيوهم الوضع لهالان كان موضوع كتب

اللغة بیان المنی الموضوع لہ اللفظ اور اگر یہ معنی قاموس میں ہے تو یہ معنی مجازی ہوگا۔ اہل علم نے قاموس کے عیوب تحریر کئے ہیں مثلاً زرقانی نے شرح المواہب میں متعدد جگہ پر اور دیگر علمائے کرام نے اپنی کتب میں تصریح کی ہے کہ صاحب قاموس الفاظ کے مجازی معنے ذکر کرتے ہیں جس سے انکا حقیقی ہونے کا وہم ہوتا ہے کیونکہ ان لغت کی کتب کا موضوع الفاظ کے ان معانی کا بیان کرنا جس کے لیے ان کی وضع ہے۔ (ت)۔

1 حاشیۃ الطحطاوی علی مراقی الفلاح فصل فی بیان سنن الصلوۃ مطبوعہ نور محمد تجارت کتب کراچی ص ۱۴۵ 2 حاشیۃ الطحطاوی علی الدر المختار باب صفۃ الصلوۃ مطبوعہ دار المعرفۃ بیروت ۱/ ۳۱۳ 3 رد المحتار باب صفۃ الصلوۃ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/ ۲۵۲

Fatawa Ridawiyyah Volume 6 In the Arabic language, the use of the letter 'ba' (ب) is not exclusively for literal attachment. Just as in 'Wamsahu bi-ru'usikum' it holds its literal meaning, similarly in 'Marrat bi-Zaydin,' it is mandatory to interpret the 'ba' of attachment in the sense of general metaphor for proximity. Likewise is the Sahih Hadith of Nu'man bin Bashir (may Allah be pleased with them both):

رأيت الرجل منا يلزق كعبه بكعب صاحبه - 1	I saw that one of us would stand in the row joining his ankle with another's ankle. (T)

And the Sahih Hadith of Anas bin Malik (may Allah be pleased with them both):

كان احد نايلزق منكبه بمنكب صاحبه وقدمه بقدمه - 2	Every one of us joined his shoulder to the other's shoulder [and] his foot to the other's foot. (T)

Regarding ankles and feet, it is not possible to proceed with the literal meaning because the Sunnah in standing is the proximity of the feet. Even the author of Miftah (may Allah have mercy on him) admits that 'the gap of four fingers is the Sunnah' (A gap of four fingers is Sunnah. T). If someone asks for the authority of this renewal, they will find a narration from the Imam in Kitab al-Athar or the saying of Imam Aqta; it is not specifically from Sahih Hadith or Zahir al-Riwayah and the explicit texts of manuals. In any case, such a separation where Zaid's ankle is here and Amr's is there, while joined with Bakr's ankle, is clearly against proper etiquette and is detestable. Therefore, due to the evidence for standing, metaphorical interpretation can by no means be an undocumented document. There is no place for taking just alignment here; scholars state this specifically as the Sunnah of Ruku. Alignment is not specific to it; when should it be that one is forward or backward in standing or prostration? And there is no evidence at all for it meaning tilting. To consider 'ilsaq' (joining) as necessitating 'Harakat-e-Kathirah' (excessive movement) is very strange. Even if, hypothetically, complete separation in standing was Sunnah, joining would not be 'Kathirah'. Scholars explicitly state that walking the distance of one row is 'Harakat-e-Qalilah' (minor movement), let alone just joining the feet being 'Kathirah'. This is very strange (Hadha 'Ajibun Jiddan). It is stated in Durr al-Mukhtar:

هل مشى مستقبل القبلة تفسد ، ان قدر صف ثم وقف قدر ركن ثم مشى ووقف كذلك و هكذا لا تفسد وان كثر مالم يختلف المكان الخ - 3	If the person praying walked facing the Qiblah, will the prayer be invalidated or not? If he walked the distance of a row, then stood for the duration of a pillar, then walked and stood for the duration of a pillar, the prayer will not be invalidated even though this action...

1 Sahih al-Bukhari, Chapter on Joining Shoulder to Shoulder etc., printed at Asah al-Matabi' Qadimi Kutub Khana Karachi 1/100 2 Sahih al-Bukhari, Chapter on Joining Shoulder to Shoulder etc., printed at Asah al-Matabi' Qadimi Kutub Khana Karachi 1/100 3 Durr al-Mukhtar, Chapter on what invalidates prayer etc., printed at Mujtabai Delhi 1/90

फ़तावा रज़विया, खंड 6 अरबी भाषा में अक्षर 'बा' (ب) का प्रयोग केवल वास्तविक जुड़ाव के स्थानों के लिए ही विशिष्ट नहीं है। जिस प्रकार 'वामसहु बिरुऊसिकुम' में यह अपनी वास्तविकता पर है, उसी तरह 'मरर्तु बि-ज़ैदिन' में 'बा' (الباء للالصاق) को निकटता के सामान्य रूपक अर्थ में लेना अनिवार्य है। इसी तरह नुमान बिन बशीर (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) की सही हदीस में है:

رأيت الرجل منا يلزق كعبه بكعب صاحبه - 1	मैंने देखा कि हम में से कोई व्यक्ति अपने टखने को दूसरे के टखने के साथ मिलाकर सफ़ में खड़ा होता है। (त)

और अनस बिन मालिक (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) की सही हदीस:

كان احد نايلزق منكبه بمنكب صاحبه وقدمه بقدمه - 2	हम में से हर एक अपने कंधे को दूसरे के कंधे से [तथा] अपने कदम को दूसरे के कदम से मिलाता था। (त)

टखनों और पैरों के बारे में शाब्दिक अर्थ पर चलना संभव नहीं है क्योंकि क़ियाम (खड़े होने) में सुन्नत पैरों का करीब होना है। स्वयं 'मिफ़्ताह' के लेखक (रहमतुल्लाह अलैह) स्वीकार करते हैं कि 'चार उंगलियों का फासला सुन्नत है' (चार उंगल का फासला सुन्नत है। त)। हालांकि अगर इस नवीनीकरण का प्रमाण भी पूछा जाए, तो 'किताबुल आसार' में इमाम से रिवायत मिलेगी या इमाम अक्ता का कथन; विशेष रूप से सही हदीस या ज़ाहिरुल रिवायत और ग्रंथों के स्पष्टीकरण से ऐसा नहीं मिलता। बहरहाल, ऐसा फैलाव कि ज़ैद का टखना इधर हो और अम्र का उधर बक्र के टखने से मिला हो, स्पष्ट रूप से अदब के खिलाफ और घृणित है। इसलिए क़ियाम की दलील के कारण रूपक पर आधारित व्याख्या बिना सबूत के दस्तावेज़ नहीं हो सकती। यहाँ केवल संरेखण (महाज़ात) का अर्थ लेने का कोई अवसर नहीं है; विद्वान इसे विशेष रूप से रुकू की सुन्नत बताते हैं। संरेखण इसके लिए विशिष्ट नहीं है; क़ियाम या सजदे में कब होना चाहिए कि एक आगे हो या पीछे? और इसके झुकाव (अमालह) के अर्थ में होने का भी कोई प्रमाण नहीं है। जुड़ाव (इल्साक) को 'हरकत-ए-कसीरा' (अत्यधिक गति) का कारण मानना बहुत ही आश्चर्यजनक है। मान लीजिए अगर क़ियाम में पूर्ण पृथक्करण सुन्नत होता, तब भी जुड़ाव 'कसीरा' नहीं होता। विद्वान स्पष्ट करते हैं कि एक सफ़ की दूरी तक चलना भी 'हरकत-ए-क़लीला' (अल्प गति) है, न कि केवल पैरों को मिलाना 'कसीरा' हो। यह अत्यंत ही विचित्र है। 'दुर्रे मुख्तार' में है:

مشى مستقبل القبلة هل تفسد ، ان قدر صف ثم وقف قدر ركن ثم مشى	नमाज़ी अगर क़िब्ला रुख चला तो नमाज़ फासिद होगी या नहीं? अगर वह सफ़ की मात्रा चला, फिर एक रुक्न

ووقف كذلك و هكذا لا تفسد وان كثر مالم يختلف المكان الخ - 3

की मात्रा तक रुका रहा, फिर चला और इसी तरह रुका रहा, तो नमाज़ फासिद नहीं होगी चाहे यह क्रिया...

1 सही बुखारी, बाब इल्ज़ाक़ुल मंकिब बिल मंकिब आदि, मुद्रित असहुत तबा' क़दीमी कुतुब खाना कराची 1/100 2 सही बुखारी, बाब इल्ज़ाक़ुल मंकिब बिल मंकिब आदि, मुद्रित असहुत तबा' क़दीमी कुतुब खाना कराची 1/100 3 दुर्रे मुख्तार, बाब युफ्सिदुस सलात आदि, मुद्रित मुजतबाई दिल्ली 1/90

فتاوی رضویہ جلد ششم زبان عرب میں استعمال "ب" مواضع الصاق حقیقی سے مختص نہیں وہ جس طرح وامسحوا برؤسکم میں اپنی حقیقت پر ہے یونہی "مررت بزید" میں تو الباء للالصاق کا بطریق عموم مجاز معنی قرب پر حمل واجب، یوں ہی حدیث صحیح نعمان بن بشیر رضی اللہ تعالیٰ عنہما:

رأیت الرجل منا یلزق کعبه بکعب صاحبه - 1 میں نے دیکھا کہ ہم سے کوئی شخص اپنے ٹخنے کو دوسرے کے ٹخنے کے ساتھ ملا کر صف میں کھڑا ہوتا ہے۔ (ت)

وحدیث صحیح انس بن مالک رضی اللہ تعالیٰ عنہما:

کان احد نایلزق منکبه بمنکب صاحبه وقدمه بقدمه - 2 ہم میں سے ہر ایک اپنے کندھے کو دوسرے کے کندھے سے اوپر اپنے قدم کو دوسرے کے قدم سے ملاتا تھا۔ (ت)

میں درباره کعاب واقدام اراده معنی حقیقی پر اقدام نہیں ہو سکتا کہ قیام میں سنّت تقریب قدمین ہے، خود صاحب مفتاح رحمہ الفتاح کو مسلم کہ فرجہ چہار انگشت مسنون است (چار انگل کا فاصلہ مسنون ہے۔ ت) اگر چہ اس تجدید کی بھی سند پوچھے تو کتاب الاثر میں امام سے روایت ملے گی یا امام اقطع کا قول، نہ بالخصوص حدیث صحیح یا ظاہر الروایۃ و متون کی تصریح بہر حال ایسی تفرج کہ زید کا کعب اِدھر عمرو اَدھر بکر کے کعب سے ملصق ہو صراحۃً شانِ ادب کے بھی خلاف و شنیع ہے تو قیام کی دلیل کے باعث مجاز پر حمل ہرگز تجویز بے دلیل کے دستاویز نہیں ہو سکتا یہاں مجرد محاذات مراد لینے کا تو کوئی محل نہیں یہ علما سے خاص سنتِ رکوع بتاتے ہیں اور محاذات ہر گز اس سے خاص نہیں ، قیام خواہ سجود میں کب چاہئے کہ ایک آگے یا پیچھے ہو اور امالہ مراد ہونے پر بھی اصلاً کوئی دلیل نہیں ، الصاق کو مستلزم حرکتِ کثیرہ ماننا سخت

عجب ہے بالفرض اگر قیام میں تفرجِ تام مسنون ہوتی جب بھی الصاق میں کثیرہ نہ تھی۔ علماء تصریح فرماتے ہیں کہ ایک صف کی قدر چلنا بھی حرکتِ قلیلہ ہے نہ کہ صرف قدمین کا ملالینا کثیرہ ہو ھذا عجیب جدا (یہ نہایت ہی عجیب ہے۔ت) در مختار میں ہے :

مشی مستقبل القبلة هل تفسد ، ان قدر صف نمازی اگر قبلہ رخ چلا تو نماز فاسد ہو گی یا نہیں، اگر ثم وقف قدر ركن ثم مشى ووقف كذلك و وہ صف کی مقدار چلا پھر رکن کی مقدار کھڑا رہا اور هكذا لا تفسد وان كثر مالم يختلف المكان پھر چلا اور رکن کی مقدار کھڑا رہا نماز فاسد نہ ہو گی الخ - 3 اگرچہ یہ عمل۔

1 صحیح البخاری باب الزاق المنکب بالمنکب الخ مطبوعہ اصح المطابع قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/۱۰۰ 2 صحیح البخاری باب الزاق المنکب بالمنکب الخ مطبوعہ اصح المطابع قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/۱۰۰ 3 درمختار باب یفسد الصلوۃ الخ مطبوعہ مجتبائی دھلی ۱ / ۹۰

Fatawa Razawiyyah Volume Six “And its complete detail and investigation is in Radd al-Muhtar.” Repeat it many times as long as the location does not change, etc. and the complete detail and investigation of this issue is in Radd al-Muhtar. (T) And if by 'kathir' (much), 'kathira fiqhiyya' (legal frequency) is not meant, then there is absolutely no 'kathira lughawiya' (lexical frequency) there either; and even if it were, then inferring the negation of its 'sunnah' status from it would be like instances where attaining the Sunnah requires a slight movement (harakat qalila), even if it is 'kathira' lexically by comparison. Thus, an objection to this act based on the necessity of movement depends on the explicit Sunnah declared by the jurists being invalidated and declared a futile act outside the actions of prayer. If you look at the reality of the matter, here there is no need to move the feet from their positions, nor does any difference arise in the orientation of the toes, nor is the gap (furja) of four fingers lost. It is not sunnah or desired at all that feet be placed against their natural creation; their surface is certainly not level by choice. So, a gap of four fingers everywhere from toes to heels is inconceivable; rather, the intent is definitely that in placing the feet, a gap of this much be kept and the feet left in their natural state, not that they be moved right and left to achieve the same gap in the heels too. The creation of the feet is such that the 'sadur' (toes) have more separation and the 'aqab' (heels) have less. However much gap you keep in the toes, and let the feet remain in their natural position, the gap in the heels will surely be less than that, and it will be even less in the high and protruding ankles (kabayin). Thus, while the soles remain fixed in their place, with a slight inclination of the ankles, the ankles will meet without difficulty. Experience of at least thirty-two (32) times every day is a witness to this. Finally, see the explicit statements of the aforementioned scholars that they are writing the 'sunnah' status of joining the ankles along with the orientation of the toes. If there were a contradiction in them, why would they state the contradictory things as sunnah together? Yes, for someone who has an excuse like extreme obesity, etc., such that he cannot keep even a four-finger gap at the toes but is forced into a significant increase, for example, a handspan's distance, then he will certainly not be able to join the ankles until he moves the toes right and left and the heels inward. Now, movement will undoubtedly be found, and the orientation of the toes will also not remain. Probably this specific case would be what the author of 'Miftah' had in mind. Such a person is neither capable of this sunnah of standing, i.e., a four-finger gap, nor do we say that joining ankles is sunnah for him. You have heard the statement of Allama Tahtawi that 'this is when it is easy' (T). Allama Shami's observation has passed, i.e., 'where there is no excuse' (T). The answer to this much

discourse, by the grace of Allah Almighty, came to mind at the first glance; as for consulting their 'Hashiya Bahr' in future meetings, by the help of Allah Almighty, it is hoped that after this explanation there is no room for objection. And guidance is from Allah, and Allah Subhanahu wa Ta'ala knows best. Problem No. 408: From Gondh, Awadh, Madrasa Islamia, sent by Hafiz Abdul Aziz Sahib, teacher at the said Madrasa. 13 Jumada al-Akhira 1318 AH. Some followers (muqallideen) and non-followers (ghair muqallideen) generally stay for a long time in 'qawmah' (standing after bowing) and 'jalsah' (sitting between prostrations); how is this? Page 169 of 736

फ़तावा रज़विय्या छठा भाग “और इसका पूरा विवरण और शोध रद-अल-मुह्तार में है।” कई बार करें जब तक जगह न बदले, आदि और इस मसले का पूरा विवरण और शोध रद-अल-मुह्तार में है। (त) और अगर 'कसीरा' से 'कसीरा फ़िक़हिया' (कानूनी बार-बार होना) मुराद न ली जाए, तो वहां हरगिज़ 'कसीरा लुग़विया' (शाब्दिक बार-बार होना) भी नहीं है और होती भी तो सुन्नत होने के निषेध पर इससे दलील देना उन स्रोतों की तरह होगा कि सुन्नत प्राप्त करने के लिए थोड़ी हरकत (हरकते क़लीला) निश्चित रूप से वांछित है, भले ही वह शाब्दिक रूप से 'कसीरा' (बहुत) हो। तो इस कार्य पर हरकत की अनिवार्यता के कारण आपत्ति इस पर निर्भर है कि फ़ुक़हा (न्यायविदों) द्वारा स्पष्ट की गई सुन्नत अमान्य होकर एक व्यर्थ कार्य और नमाज़ के कार्यों से बाहर करार दी जाए। और अगर असल हक़ीक़त पर नज़र डालें, तो यहाँ न तो क़दमों को उनके स्थान से हिलाने की ज़रूरत होती है, न उंगलियों के रुख़ में फ़र्क़ आता है, और न ही चार उंगलियों का फ़ासला (फ़रजा) हाथ से जाता है। यह हरगिज़ सुन्नत या वांछित नहीं है कि पैरों को उनकी प्राकृतिक बनावट के ख़िलाफ़ रखा जाए; उनकी सतह निश्चित रूप से अपनी इच्छा से समतल नहीं होती। तो पंजों से लेकर एड़ियों तक हर जगह चार उंगलियों का फ़ासला होना अकल्पनीय है, बल्कि निश्चित रूप से उद्देश्य यह है कि क़दम रखते समय इतना फ़ासला रखा जाए और पैरों को उनकी प्राकृतिक अवस्था पर छोड़ दिया जाए, न कि यह कि एड़ियों में भी इतना फ़ासला हासिल करने के लिए उन्हें दाएं-बाएं हटाया जाए। पैरों की बनावट इस तरह है कि 'सदूर' यानी पंजों में फ़ासला ज़्यादा है और 'अक़ाब' यानी एड़ियों में कम है। जितना फ़ासला पंजों में रखेंगे और पैरों को प्राकृतिक स्थिति पर रहने देंगे, तो एड़ियों में निश्चित रूप से उससे फ़ासला कम होगा और ऊंचे और निकले हुए टखनों (कअ़बैन) में और भी कम होगा। तो दोनों तलवे अपने स्थान पर जमे रहने के साथ ही, टखनों के थोड़े से झुकाव के साथ टखने बिना किसी कठिनाई के मिल जाएंगे। हर दिन कम से कम बत्तीस ३२ बार का अनुभव इसका गवाह है। अंत में उक्त विद्वानों के स्पष्ट उल्लेख देखें कि वे टखनों को मिलाने और उनके साथ ही उंगलियों को क़िबला रुख़ रखने की सुन्नत लिख रहे हैं। यदि उनमें कोई विरोधाभास होता, तो वे दो विरोधाभासी बातों को एक साथ सुन्नत क्यों बताते? हाँ, जिसे अत्यधिक मोटापे आदि जैसी कोई मजबूरी हो कि वह पंजों में ही चार उंगलियों का फ़ासला न रख सके बल्कि काफी अधिक दूरी रखने पर मजबूर हो, उदाहरण के लिए एक बालिश्त (बिते) भर का फ़ासला, तो वह निश्चित रूप से टखने नहीं मिला सकेगा जब तक कि पंजों को दाएं-बाएं और एड़ियों को अंदर की ओर न हिलाए। और अब निश्चित रूप से हरकत भी पाई जाएगी और उंगलियों का क़िबला रुख़ होना भी नहीं रहेगा। संभवतः मिफ़्ताह के लेखक के मन में यही विशेष स्थिति होगी। ऐसा व्यक्ति न तो खड़े होने की इस सुन्नत यानी चार उंगलियों के फ़ासले पर

सक्षम है, न ही हम उसके लिए टखनों को मिलाना सुन्नत कहते हैं। अल्लामा तहतावी का कथन सुन चुके कि 'यह आसानी के समय है' (त)। अल्लामा शामी का उल्लेख गुज़रा कि 'यानी जहाँ कोई मजबूरी न हो' (त)। इतने कलाम (बात) का उत्तर तो अल्लाह तआला की तौफ़ीक़ से पहली नज़र में ही ज़हन में आ गया, बाकी उनकी 'हाशिया बहर' को अगली मुलाक़ातों में देखना रहा, लेकिन अल्लाह तआला की मदद से उम्मीद है कि इस बयान के बाद किसी आपत्ति की गुंजाइश नहीं है। अल्लाह ही तौफ़ीक़ देने वाला है और अल्लाह सुब्हानहू व तआला सबसे बेहतर जानता है। मसला नंबर 408: गोंडा, अवध, मदरसा इस्लामिया से, भेजा गया हाफ़िज़ अब्दुल अज़ीज़ साहब, शिक्षक मदरसा उक्त द्वारा। 13 जमादी अल-उख़रा 1318 हिजरी। कुछ मुक़ल्लिदीन और ग़ैर-मुक़ल्लिदीन आम तौर पर क़ौमा और जलसा में देर तक ठहरते हैं, यह कैसा है? पेज 169 of 736

فتاوی رضویہ جلد ششم وتمام تفصیلہ و تحقیقہ في ردالمحتار۔ کثیر مرتبہ کرے جب تک جگہ تبدیل نہ ہو الخ اور اس مسئلہ کی تمام تفصیل و تحقیق ردالمحتار میں ہے (ت) اور اگر کثیرہ سے کثیرہ فقہیہ مراد نہ لیجئے تو وہاں ہر گز کثیرہ لغویہ بھی نہیں اور ہوتی بھی تو نفی سنیت پر اس سے استدلال از قبیل مصادر ہوگا کہ تحصیل سنت کے لئے حرکت قلیلہ قطعاً مطلوب، اگر چہ بالاضافت لغیۃ کثیرہ ہو، تو اس فعل پر بوجوہ لزوم حرکت اعتراض اس پر موقوف کہ سنیت مصرحہ فقہا باطل ہو کر فعل عبث و خارج عن افعال الصلوۃ قرار پائے اور حقیقت امر پر نظر کیجئے تو نہ یہاں اقدام کو ان کے مواضع سے تحریک کی ضرورت ہوتی ہے نہ انگلیوں کے استقبال میں فرق آتا ہے نہ فرجہ چار انگشت ہاتھ سے جاتا ہے یہ تو ہر گز نہ مسنون نہ مطلوب کہ پاؤں اپنی وضع خلق کے خلاف رکھے جائیں اور ان کی سطح طوعاً ہر گز ہموار نہیں تو پنجوں سے ایڑیوں تک ہر جگہ چار انگشت کا فرجہ ہونا غیر منصور بلکہ قطعاً مقصود یہ ہے کہ صدور اقدام میں اتنا فرجہ رکھے اور پاؤں کو اپنے حال فطری پر چھوڑے نہ یہ کہ ایڑیوں میں بھی اس قدر فرجہ حاصل کرنے کے لئے انہیں دہنے بائیں ہٹائے، پاؤں کی تخلیق اس طرح واقع ہوئی ہے کہ صدور یعنی پنجوں میں فصل زائد اور اعقاب یعنی ایڑیوں میں کم ہے، جتنا فصل پنجوں میں رکھئے اور پاؤں وضع فطری پر رہنے دیجئے تو ایڑیوں میں یقیناً اس سے فصل کم ہوگا اور کعبین میں بلند و برآمدہ میں اور بھی کم ہوگا تو دونوں تلوے بجائے خود جمے رہنے کے ساتھ ایک خفیف امالہ کعبین میں ٹخنے بلا تکلف مل جائیں گے جس پر کم از کم ہر روز بتیس ۳۲ بار کا تجربہ شاہد ہے کہ آخر تصریحات مذکورہ علما دیکھئے کہ الصاق کعبین اور ان کے ساتھ ہی استقبال اصابع کی سنیت لکھ رہے ہیں ان میں تنافی ہوتی تو کیا متنافیین کو معاً مسنون بتاتے، ہاں جسے فربہی مفرط وغیرہ کوئی عذر ایسا ہو کہ سرے سے پنجوں ہی میں چار انگل فصل نہ رکھ سکے بلکہ معتد بہ زیادت پر

مجبور ہو مثلاً بالشت بھر کا فاصلہ تو وہ بیشک کعبین نہ ملا سکے گا جب تک پنجوں کو دہنے بائیں اور ایڑیوں کو اندر کی جانب حرکت نہ دے اور اب بے شک تحریک بھی پائی جائے گی اور استقبال اصابع بھی نہ رہے گا غالباً یہی صورۃ خاصہ اس وقت صاحب مفتاح کے خیال مبارک میں ہوگی، ایسا شخص نہ اس سنت قیام یعنی فرجہ چار انگشت پر قادر نہ ہم اس کے لئے الصاق کعبین مسنون کہیں۔ علامہ طحطاوی کا ارشاد سن چکے کہ ہذا ان تیسر (یہ آسانی کے وقت ہے۔ت) علامہ شامی کا افادہ گزرا کہ ای حیث لا عذر (یعنی جہاں عذر نہ ہو۔ ت) اس قدر کلام کا جواب تو یہ بتوفیقہ تعالیٰ بنگاہ اولیں معاً حاضر خاطر ہوا باقی ان کا حاشیہ بحر اگلے میلے دیکھنا رہا مگر بعونہ تعالیٰ امید یہ ہے کہ اس بیان کے بعد کسی اعتراض کی گنجائش نہیں وباللہ توفیق و اللہ سبحانہ و تعالٰی اعلم۔ مسئلہ نمبر ۴۰۸: از گونڈہ ملک اودھ مدرسہ اسلامیہ مرسلہ حافظ عبدالعزیز صاحب مدرس مدرسہ مذکورہ۔۱۳ جمادی الاخریٰ ۱۳۱۸ھ بعض مقلدین و غیر مقلدین عموماً قومہ و جلسہ میں دیر تک ٹھہرتے ہیں، یہ کیسا ہے؟ Page 169 of 736

Fatawa Razawiyya, Volume 6

The Answer: Long supplications (adhkar) during qawmah (standing after bowing) and jalsah (sitting between prostrations) are considered applicable to supererogatory (nafl) prayers. Therefore, our Imams do not consider them sunnah in obligatory (fard) prayers. There is no doubt that excessive lengthening in obligatory prayers is contrary to the Sunnah, and it is strictly forbidden for an Imam, especially if it is burdensome for any of the followers (muqtadis). However, if an individual praying alone adds some narrated words, there is no harm. Similarly, for an Imam if the followers are limited in number and all are agreeable. As for the follower, he must follow the Imam; if the Imam says it, he says it; otherwise, not.

Arabic Text	Urdu Translation
In Al-Durr al-Mukhtar: The person praying should sit calmly in the jalsah between the two prostrations. There is no sunnah supplication between them. Similarly, after rising from bowing (ruku), there is no sunnah prayer in qawmah. Likewise, one should not recite anything other than the tasbih during bowing and prostration, according to the [Hanafi] school. Whatever has been narrated is applicable to nafl (voluntary) prayers.[1]	In Al-Durr al-Mukhtar, it is stated that the prayer should sit calmly in the session between the two prostrations; no remembrance between the two prostrations is Sunnah. Similarly, there is no Sunnah prayer in the Qawmah after standing up from bowing. Likewise, in bowing and prostration, one should not pray anything other than the tasbih; this is the correct school of thought, and what is mentioned in the narrations is based on voluntary prayers (T).

The codifier of the school, our master Imam Muhammad (may Allah have mercy on him), states in Al-Jami' al-Saghir:

Arabic Text	Urdu Translation
Imam Abu Yusuf said: I asked Imam Abu Hanifa about a person who raises his head from bowing in an obligatory prayer and says 'Allahumma aghfir li' (O Allah, forgive me). He replied: He should say 'Rabbana laka al-hamd' (Our Lord, to Thee belongs all praise) and then remain	Imam Abu Yusuf states that I asked Imam Abu Hanifa about a person who, in obligatory prayers, after raising his head after bowing, says: 'Allahumma aghfir li' (O Allah, forgive me). You said: He should only say 'Rabbana laka al-hamd' (O our Lord! All praise be to You) and then remain silent, and similarly, remain silent

Arabic Text	Urdu Translation
silent. Similarly, between the two prostrations, he should remain silent.[2]	in the session between the two prostrations (T).

In Al-Hilyah, under the statement of the text "and do not increase upon this" (T), it is said:

Arabic Text	Urdu Translation
If by "increase" is meant the supplications narrated in the Sunnah, then this applies to the role of leadership (imamate) when there is a fear of causing hardship [to followers].	If the increase refers to the remembrances mentioned in the Sunnah, then this will be about the right of imamate while the followers are a burden.

---

[1] Al-Durr al-Mukhtar, Chapter on the Description of Prayer, published by Mujtabai, Delhi, 1/76. [2] Al-Jami' al-Saghir by Imam Muhammad bin al-Hasan al-Shaybani, Chapter on Takbir of Ruku and Sujud, published by Yusufi Press, Lucknow, pp. 11-12.

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

उत्तर: क़ौमा (रुकू के बाद खड़े होना) और जलसा (दो सजदों के बीच बैठना) के लंबे अज़कार (प्रार्थनाएँ) नफ़्ल नमाज़ों पर आधारित हैं। इसलिए, हमारे इमाम उन्हें फ़र्ज़ नमाज़ों में सुन्नत नहीं मानते। इसमें कोई संदेह नहीं है कि फ़र्ज़ नमाज़ों में बहुत ज़्यादा लंबा करना सुन्नत के खिलाफ है, और इमाम के लिए तो यह पूरी तरह से मना है, खासकर जब मुक्तदियों (पीछे नमाज़ पढ़ने वालों) में से किसी पर भी भारी पड़े। हाँ, अगर अकेला व्यक्ति कुछ रिवायती शब्द बढ़ाता है, तो कोई हर्ज नहीं। इसी तरह इमाम के लिए भी जब मुक्तदी सीमित हों और सभी सहमत हों। रहा मुक्तदी, तो वह इमाम का अनुसरण करेगा; अगर इमाम कहे तो कहे, वरना नहीं।

अरबी पाठ

दुर्र-ए-मुख्तार में है: नमाज़ी दो सजदों के बीच जलसा में इत्मीनान से बैठे। दो सजदों के बीच कोई ज़िक्र सुन्नत नहीं है। इसी तरह रुकू से खड़े होने के बाद क़ौमा में कोई दुआ सुन्नत नहीं है। इसी तरह रुकू और सुजूद (सजदों) में तस्बीह के अलावा कोई दुआ न करे। सही मज़हब यही है और जो रिवायतें आई हैं वे नफ़्ल नमाज़ों पर आधारित हैं।[1]

उर्दू अनुवाद

दुर्र-ए-मुख्तार में है कि नमाज़ी दो सजदों के बीच जलसा में इत्मीनान से बैठे; दो सजदों के बीच कोई ज़िक्र सुन्नत नहीं है। इसी तरह रुकू से खड़े होने के बाद कौमा में कोई दुआ सुन्नत नहीं है। इसी तरह रुकू और सुजूद में तस्बीह के अलावा कोई दुआ न करे, सही मज़हब यही है और जो रिवायतों में आया है वह नवाफिल पर आधारित है (त)।

मज़हब को संकलित करने वाले हमारे सरदार इमाम मुहम्मद (अल्लाह उन पर रहम करे) 'जामे सगीर' में फरमाते हैं:

अरबी पाठ

इमाम अबू यूसुफ़ बयान करते हैं कि मैंने इमाम अबू हनीफ़ा से उस व्यक्ति के बारे में पूछा जो फ़र्ज़ नमाज़ में रुकू के बाद सिर उठाने पर कहता है 'अल्लाहुम्मग़फ़िर ली' (ऐ अल्लाह मुझे माफ कर दे)। आपने फरमाया: वह सिर्फ'रब्बना लकल हम्द' (ऐ हमारे रब! तेरे लिए ही सारी

उर्दू अनुवाद

इमाम अबू यूसुफ़ बयान करते हैं कि मैंने इमाम अबू हनीफ़ा से उस शख्स के बारे में पूछा जो फ़र्ज़ों में रुकू के बाद सिर उठाने के बाद यह कहता है 'अल्लाहुम्मग़फ़िर ली' (ऐ अल्लाह मुझे माफ़ फ़रमा)। आपने फ़रमाया: वह सिर्फ़'रब्बना लकल हम्द' (ऐ हमारे रब! तेरे लिए ही सारी

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद
प्रशंसा है) कहे और फिर खामोश हो जाए। इसी तरह दो सजदों के बीच जलसा में भी खामोश रहे।[2]	तारीफ़ है) कहे फिर ख़ामोश हो जाए और इसी तरह दोनों सजदों के दरमियान जलसा में भी ख़ामोश रहे (त)।

'हिलिया' में पाठ के इस कथन "और इस पर इज़ाफ़ा (वृद्धि) न करे" (त) के तहत फरमाया:

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद
अगर इज़ाफ़ा से मुराद वे अज़कार हैं जो सुन्नत में आए हैं, तो यह इमामत के बारे में होगा जब [मुक्तदियों पर] बोझ पड़ने का डर हो।	अगर ज़्यादती से मुराद अज़कार हैं जो सुन्नत में आए हैं तो यह इमामत के बारे में होगा जबकि मुक्तदी बोझ।

---

[1] दुर्र-ए-मुख्तार, नमाज़ के वर्णन का अध्याय, मुजतबाई प्रेस दिल्ली द्वारा प्रकाशित, 1/76. [2] अल-जामे अस-सगीर, इमाम मुहम्मद बिन अल-हसन अल-शैबानी, रुकू और सुजूद की तकबीर का अध्याय, यूसुफी प्रेस लखनऊ द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 11, 12.

الجواب: قومہ و جلسہ کے اذکارِ طویلہ نوافل پر محمول ہیں ولہذا ہمارے ائمہ فرائض میں انھیں مسنون نہیں جانتے اور شک نہیں کہ فرائض میں تطویلِ فاحش خلافِ سنت ہے اور امام کے لئے تو قطعاً ممنوع جبکہ مقتدیوں میں کسی پر بھی گراں ہو، ہاں منفرد بعض کلماتِ ماثورہ بڑھائے تو حرج بھی نہیں، یونہی امام بھی جبکہ مقتدی محصور اور سب راضی ہوں، رہا مقتدی وہ آپ ہی اتباعِ امام کرے گا، اگر امام کہے، کہے ورنہ نہیں۔

عربی متن	اردو ترجمہ
وفی الدرالمختار یجلس بین السجدتین مطمئناً ولیس بینھما ذکر مسنون وکذا لیس بعد رفعه من الرکوع دعاء وکذا لا یأتی فی رکوعه وسجوده بغیر التسبیح علی المذھب وما ورد محمول علی النفل[1] -	در مختار میں ہے نمازی دو سجدوں کے درمیان جلسہ میں اطمینان سے بیٹھے ، دو سجدوں کے درمیان کوئی ذکر سنت نہیں۔ اسی طرح رکوع سے کھڑے ہونے کے بعد قومہ میں کوئی دعا مسنون نہیں۔ اسی طرح رکوع و سجود میں تسبیح کے علاوہ کوئی دعا نہ کرے ، صحیح مذہب یہی ہے اور جو روایات میں آیا ہے وہ نوافل پر محمول ہے (ت)

محرّر مذہب سیدنا امام محمد رحمہ اللہ تعالٰی جامع صغیر میں فرماتے ہیں:

عربی متن	اردو ترجمہ
قال ابو یوسف سالت ابا حنیفة عن الرجل یرفع راسه من الرکوع فی الفریضة ویقول اللھم	امام ابو یوسف بیان کرتے ہیں کہ میں نے امام ابو حنیفہ سے اس شخص کے بارے میں پوچھا جو فرائض میں رکوع کے بعد سر اٹھانے کے بعد یہ کہتا ہے اللھم اغفر لی (اے اللہ مجھے معاف

عربی متن	اردو ترجمہ
اغفر لی قال یقول ربنا لك الحمد و یسکت (کذلك) بین السجدتین یسکت[2] -	فرما) آپ نے فرمایا : وہ صرف ربنا لک الحمد (اے رب ہمارے ! تیرے لئے حمد ہے) کہے پھر خاموش ہو جائے اور اسی طرح دونوں سجدوں کے درمیان جلسہ میں بھی خاموش رہے (ت)

حلیہ میں زیر قول متن ولا یزید علی ھذا (اس پر اضافہ نہ کرے۔ت) فرمایا۔

عربی متن	اردو ترجمہ
ان ارادالزیادۃ ما ورد فی السنۃ فینبغی ان یکون ھذا فی حق الامامۃ اذا خاف التثقیل	اگر زیادتی سے مراد اذکار ہیں جو سنت میں وارد ہیں تو یہ حق امامت کے بارے میں ہوگا جبکہ مقتدی بوجھ

---

[1] در مختار باب صفۃ الصلوۃ مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱/۷۶ [2] الجامع الصغیر امام محمد بن الحسن الشیبانی باب فی تکبیر الرکوع والسجود مطبوعہ مطبع یوسفی لکھنؤ ص ۱۱،۱۲

Fatawa Razawiya Volume 6

[Regarding the congregation] if the Imam does not do it, or if it is an individual (munfarid) or an Imam whose followers do not find it burdensome, or if it is a follower whose Imam has done it, then they are not prohibited from increasing these remembrances (adhkar). Especially for an individual performing voluntary prayers (nawafil). Whoever claims otherwise must provide proof. (T)

In the same book, two pages later:

Our scholars have clarified that the Hadith narrated from Hazrat Sayyiduna Ali (may Allah be pleased with him) is to be interpreted as referring to voluntary prayers. Furthermore, if it is established in obligatory prayers, it is for when a person is praying alone or when an Imam has a specific small congregation that does not find it burdensome, as clarified by the Shafi'is. There is no harm in adhering to it, etc. And Allah Almighty knows best. (T)

Question Number 409: From Madrasah Misbah-ul-Tehzeeb, asked by Maulvi Muhammad Sultan Sahib Bengali, 3 Jumada al-Ula 1320 AH. What do the scholars of religion and muftis of the firm Shariah say about this matter: are both prostrations (sujood) in prayer obligatory (fard), or is one fard and the other necessary (wajib)? If this is a matter of disagreement, which opinion is strong and preferred, and what is its proof? And what is the proof for the other being weak and non-preferred? Please explain with reliable evidence referring to books. Clarify and be rewarded by the Most Glorious.

The Answer: By the consensus (ijma') of the Ummah, both prostrations are fard. There is no disagreement among any scholar on this for one to be called strong or preferred. One who denies this denies the consensus of the Ummah. Two days ago, a student asked me this question, and I (the humble servant) replied:

1. Hilyat al-Mahalli Sharh Munyat al-Musalli.
2. Hilyat al-Mahalli Sharh Munyat al-Musalli.

फ़तावा रज़विया जिल्द छठा

[मण्डली के संबंध में] यदि इमाम ऐसा नहीं करता है, या यदि वह अकेला व्यक्ति (मुनफ़रिद) है या ऐसा इमाम जिसके अनुयायी इसे बोझ महसूस नहीं करते हैं, या यदि वह एक अनुयायी है जिसका इमाम इसे कर चुका है, तो उन्हें इन अज़कार (स्मरणों) को बढ़ाने से मना नहीं किया गया है। विशेष रूप से उस व्यक्ति के लिए जो नफ़्ल (स्वैच्छिक) नमाज़ पढ़ रहा है। जो कोई इसके विपरीत दावा करता है, उसे प्रमाण देना चाहिए। (त)

इसी में दो पृष्ठ बाद है:

हमारे उलेमाओं ने स्पष्ट किया है कि हज़रत सय्यिदुना अली (रज़ियल्लाहु अन्हु) से वर्णित हदीस को नफ़्ल नमाज़ों पर लागू किया जाएगा। इसके अतिरिक्त, यदि यह फ़र्ज़ (अनिवार्य) नमाज़ों में साबित है, तो यह उस समय के लिए है जब कोई अकेले नमाज़ पढ़ रहा हो या जब इमाम के साथ ऐसे अनुयायी हों जो इसे बोझ न समझें, जैसा कि शाफ़ईयों ने स्पष्ट किया है। और इसके पालन में कोई हर्ज नहीं है, इत्यादि। और अल्लाह सुब्हानहू व तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला नंबर 409: मदरसा मिस्बाह-उल-तहज़ीब से, मौलवी मुहम्मद सुल्तान साहब बंगाली द्वारा पूछा गया, 3 जमादी अल-उला 1320 हिजरी। धर्म के विद्वान और सुदृढ़ शरीयत के मुफ़्ती इस मसले के बारे में क्या कहते हैं कि नमाज़ में दोनों सजदे फ़र्ज़ हैं या एक फ़र्ज़ और दूसरा वाजिब है? यदि यह विवादित मसला है, तो कौन सा मत प्रबल और बेहतर है और इसका प्रमाण क्या है? और दूसरे के कमज़ोर होने का प्रमाण क्या है? कृपया विश्वसनीय प्रमाणों और किताबों के हवाले से स्पष्ट करें। स्पष्ट करें और महान (अल्लाह) से प्रतिफल प्राप्त करें।

उत्तर: उम्मत की सर्वसम्मति (इजमा) से दोनों सजदे फ़र्ज़ हैं। वास्तव में इसमें किसी भी विद्वान का कोई मतभेद नहीं है कि किसी एक को प्रबल या बेहतर बताया जाए। इसका इनकार करने वाला उम्मत की सर्वसम्मति का इनकार करने वाला है। दो दिन पहले एक छात्र ने मुकम्मल फ़कीर (मुझ) से यह मसला पूछा था, तो मैंने अर्ज़ किया:

1. हिलियत अल-महल्ली शरह मुनियत अल-मुसल्ली।
2. हिलियत अल-महल्ली शरह मुनियत अल-मुसल्ली।

पृष्ठ 171/736

علی القوم وفی حق المقتدی اذا لم یفعل الامام ذلك اما المنفرد او الامام اذا کان لا یثقل علی القوم اتیانه بذلك او المقتدی اذا کان امامه قد اتی به فلیسوا بممنوعین من زیادتهم به علی ذلك ولا سیما المنفرد فی النوافل ومن ادعی ذلك فعلیه البیان ۱۔ محسوس کریں اور مقتدی کے حق میں اس وقت ہے جب امام یہ نہ پڑھ رہا ہو، رہا معاملہ منفرد یا وہ امام جس کے مقتدی اس کے پڑھنے کو بوجھ محسوس نہ کریں یا وہ مقتدی جس کا امام پڑھ رہا ہو تو ایسی صورت میں ان کے لئے ان اذکار کا اضافہ ممنوع نہیں، خصوصاً وہ منفرد جو نوافل پڑھ رہا ہو اور جو اس کا مدعی ہو وہ اس پر دلیل لائے۔ (ت)

اسی میں دو ورق بعد ہے: صرح مشائخنا یحمل ما فی حدیث علی رضی اللہ تعالی عنه علی النوافل علی انه ثبت فی المکتوبة فلیکن فی حالة الانفراد وفی حالة کونه اماما والماموم محصورون لا یثقلون بذلك کما نصت علیه الشافعیة ولا ضیر فی التزامه ۲ الخ واللہ سبحانہ وتعالی اعلم۔ ہمارے مشائخ نے اس بات کی تصریح کی ہے کہ حضرت سیدنا علی رضی اللہ تعالٰی عنہ سے مروی حدیث کو نوافل پر محمول کیا جائے گا علاوہ ازیں فرائض میں یہ ثابت ہے تو اس وقت جب نمازی تنہا فرائض ادا کر رہا ہو یا امامت کی حالت میں اس وقت جب مقتدی محصور ہوں جو بوجھ محسوس نہ کریں جیسا کہ شافعیہ نے تصریح کی ہے اور اس کے التزام میں کوئی نقصان نہیں الخ واللہ سبحانہ وتعالی اعلم (ت)

مسئلہ نمبر ۴۰۹: از مدرسہ مصباح التہذیب مسئولہ مولوی محمد سلطان صاحب بنگالی ۳ جمادی الاولی ۱۳۲۰ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین اندریں مسئلہ کہ نماز میں دونوں سجدے فرض ہیں یا ایک فرض اور دوسرا واجب؟ اگر یہ مسئلہ اختلافی ہے تو قول قوی اور راجح کون ہے اور اس کی دلیل کیا ہے اور دوسرے کے مرجوح و ضعیف ہونے کی کیا دلیل ہے؟ مع

دلائل معتبرہ بحوالہ کتب بیان فرمایا جائے بینوا توجروا عند الجلیل الجواب: باجماعِ امت دونوں سجدے فرض ہیں، اصلاً اس میں کسی عالم کا خلاف نہیں کہ قوی و راجح بتایا جائے، اس کا منکر اجماع امت کا منکر ہے، دو روز ہوئے ایک طالب علم نے فقیر سے یہ مسئلہ پوچھا تھا فقیر نے عرض کی

۱ حلیۃ المحلی شرح منیۃ المصلی ۲ حلیۃ المحلی شرح منیۃ المصلی

Fatawa Razawiyya, Volume 6

Both are obligatory (fard). It was heard last night that among the teachers of Madrasa Tahzib-o-Isha'at al-Uloom, Maulana Muhammad Usman Sahab Vilayati says so, but all others are in opposition, calling the first prostration (sajda) fard and the second wajib (necessary). They cite the text of Sharh-ul-Wiqayah and Hidayah as authority. Moreover, a new Maulana named Mahmood, who is a graduate of Deobandi education, considers the words of this humble servant (the author) to be entirely without proof. This humble servant (may Allah forgive him), without exaggeration, can present proofs from the words of two hundred noble scholars which would prove how much those who oppose this issue are negligent of jurisprudence (fiqh). However, the issue is extremely clear, and lengthening the discourse would cause weariness; therefore, I suffice with only ten explicit texts:

First Text: In Bahr-ur-Ra'iq, in the commentary of the statement of Kanz-ud-Daqaiq "Its obligations are Tahrimah, Qiyam, Qira'at, Ruku', and Sujud"[1]- (The obligations of prayer are Takbir Tahrimah, standing, recitation, bowing, and prostration. - T), it is said:

(According to the words of Allah Almighty) 'Bow down and prostrate yourselves' and due to consensus (ijma') on their being obligatory and being pillars. What is meant by prostration is the two prostrations. Their basis is established by the Book (Quran), the Sunnah, and consensus.[2]

Its proof is the noble command of Allah Almighty: "Bow down and prostrate yourselves" (Ruku' karo aur sajda karo - T). Furthermore, there is a consensus on both being obligatory and being pillars, and by 'sujud' both prostrations are meant. The origin of prostration is established by the Book, Sunnah, and consensus, and its performance twice in every rak'ah is established by Sunnah and consensus. (T)

Second Text: Imam Muhammad bin Muhammad bin Amir al-Hajj states in the commentary of Halbiya:

And the fifth is prostration. I.e., and the fifth obligation among the six obligations that comprise the prayer is prostration. It would have been better to say 'the two prostrations in every rak'ah'. Then the basis of prostration is established by the Book, Sunnah, and consensus, and its being twice in every rak'ah is established by Sunnah and consensus. There is no disagreement about both of them being pillars of the prayer.[3]

Text: The fifth obligation is prostration. Commentary: i.e., among the six obligations on which prayer is based, the fifth obligation is prostration. It was better to say (the two prostrations in each rak'ah), meaning two prostrations in every rak'ah are obligatory. Then the basis of prostration is established by the Book, Sunnah, and consensus, and its being twice in every rak'ah is established by Sunnah and consensus. And there is no disagreement in both of them being pillars of prayer. (T)

---

[1] Kanz-ud-Daqaiq, Chapter: Description of Prayer, published by H.M. Saeed Company Karachi, p. 30 [2] Al-Bahr-ur-Ra'iq, Chapter: Description of Prayer, published by H.M. Saeed Company Karachi, 1/293 [3] Hilyat-ul-Muhalla Sharh Munyat-ul-Musalli

फ़तावा रज़विया, खंड 6

दोनों फ़र्ज़ हैं। कल रात सुना गया कि मदरसा तहज़ीब-ओ-इशाअतुल उलूम के शिक्षकों में से मौलवी मुहम्मद उस्मान साहब विलायती तो ऐसा ही बताते हैं, लेकिन बाकी सब इसके खिलाफ हैं। वे पहले सजदे को फ़र्ज़ और दूसरे को वाजिब कहते हैं और इसके प्रमाण के रूप में शरह विकाया और हिदाया के पाठ का हवाला देते हैं। इसके अलावा, महमूद नाम के एक नए मौलवी साहब, जो देवबंदी शिक्षा के स्नातक हैं, इस फ़क़ीर (लेखक) के कथन को पूरी तरह निराधार मानते हैं। यह फ़क़ीर (अल्लाह उसे क्षमा करे), बिना किसी अतिशयोक्ति के विद्वानों के दो सौ कथनों से इसके प्रमाण प्रस्तुत कर सकता है, जिससे यह सिद्ध हो जाएगा कि इस मुद्दे का विरोध करने वाले न्यायशास्त्र (फ़िक़्ह) से कितने अनभिज्ञ हैं। लेकिन यह मुद्दा अत्यंत स्पष्ट है और विस्तार से बात करना अरुचि पैदा कर सकता है, इसलिए मैं केवल दस स्पष्ट प्रमाणों (नसूस) पर संतोष करता हूँ:

पहला प्रमाण: बहर-उर-रैक़ में कंज़-उद-दक़ाक़ के इस कथन की व्याख्या में: "नमाज़ के फ़र्ज़ तहरीमा, क़ियाम, क़िरात, रुकू और सुजूद हैं।"[1] (नमाज़ के फ़र्ज़ तकबीर-ए-तहरीमा, क़ियाम, क़िरात, रुकू और सजदा हैं - टी) में कहा गया है:

(अल्लाह तआला के इस कथन के कारण) 'रुकू करो और सजदा करो' और उनके फ़र्ज़ और रुक्न (स्तंभ) होने पर सर्वसम्मति (इज्मा) के कारण। और 'सुजूद' से तात्पर्य दोनों सजदे हैं। इनका मूल किताब (क़ुरआन), सुन्नत और इज्मा से सिद्ध है।[2]

इसका प्रमाण अल्लाह तआला का महान आदेश है: "रुकू करो और सजदा करो" (टी)। साथ ही इन दोनों के फ़र्ज़ और रुक्न होने पर इज्मा है और 'सुजूद' से दोनों सजदे मुराद हैं। सजदे का मूल किताब, सुन्नत और इज्मा से सिद्ध है और हर रकात में इसका दो बार होना सुन्नत और इज्मा से सिद्ध है। (टी)

दूसरा प्रमाण: इमाम मुहम्मद बिन मुहम्मद इब्न अमीर अल-हज्ज हलबिया शरह में फ़रमाते हैं:

और पाँचवाँ सजदा है। यानी उन छह फ़र्ज़ों में से, जिनसे नमाज़ बनी है, पाँचवाँ फ़र्ज़ सजदा है। (हर रकात में दो सजदे) कहना बेहतर था, यानी हर रकात में दो सजदे फ़र्ज़ हैं। फिर सजदे का मूल किताब, सुन्नत और इज्मा से सिद्ध है और हर रकात में इसका दो बार होना सुन्नत और इज्मा से सिद्ध है, और इन दोनों के नमाज़ के रुक्न होने में कोई मतभेद नहीं है।[3]

मूल पाठ: पाँचवाँ फ़र्ज़ सजदा है। व्याख्या: यानी नमाज़ जिन छह फ़र्ज़ों पर आधारित है, उनमें से पाँचवाँ फ़र्ज़ सजदा है और 'हर रकात में दो सजदे' कहना बेहतर था, यानी हर रकात में दो सजदे फ़र्ज़ हैं। फिर सजदे का मूल किताब, सुन्नत और इज्मा से सिद्ध है और हर रकात में इसका दो बार होना सुन्नत और इज्मा से सिद्ध है, और इन दोनों के नमाज़ के रुक्न होने में कोई मतभेद नहीं है। (टी)

---

[1] कंज़-उद-दक़ाक़, अध्याय: नमाज़ का वर्णन, एच.एम. सईद कंपनी कराची द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 30 [2] अल-बहर-उर-रैक़, अध्याय: नमाज़ का वर्णन, एच.एम. सईद कंपनी कराची द्वारा प्रकाशित, 1/293 [3] हियत-उल-मुहल्ला शरह मुन्यत-उल-मुसल्ली

دونوں فرض ہیں، رات مسموع ہوا کہ مدرسین مدرسہ تہذیب و اشاعت العلوم سے مولوی محمد عثمان صاحب ولایتی تو ایسا ہی بتاتے ہیں باقی سب خلاف پر ہیں سجدہ اولٰی کو فرض اور ثانیہ کو واجب کہتے ہیں اس کی سند شرح وقایہ وہدایہ کی عبارت بتاتے ہیں بلکہ ایک نئے مولوی صاحب محمود نام کہ دیوبندی تعلیم کے فاضل ہیں فقیر کے قول کو محض بے دلیل، فقیر غفرلہ اللہ بلا مبالغہ دو سو ۲۰۰ کلمات علماء کرام سے اس کی سندیں پیش کر سکتا ہے جن سے ثابت ہو کہ مخالفین مسئلہ کو فقہ سے کس قدر غفلت ہے مگر مسئلہ نہایت وضوح سے واضح ہے اور اطالت موجب ملامت لہذا صرف دس نصوص صریحہ پر قناعت:

نص اول: بحر الرائق میں کنز الدقائق کے قول فرضھا التحریمۃ والقیام والقراءۃ والرکوع والسجود 1- (نماز کے فرائض تکبیر تحریمہ، قیام، قرات، رکوع اور سجود ہیں۔ ت) کی شرح میں فرمایا:

(لقولہ تعالٰی) ارْكَعُوْا وَاسْجُدُوْا وللاجماع علی فرضیتھا ورکنیتھما والمراد من السجود السجدتان فاصلہ ثابت بالکتاب والسنۃ و الاجماع 2-

اس کی دلیل اللہ تعالٰی کا ارشاد گرامی ہے: ارکعوا واسجدوا (رکوع کرو اور سجدہ کرو۔ ت) نیز ان دونوں کے فرض اور رکن ہونے پر اجماع ہے اور سجود سے دونوں سجدے مراد ہیں اور سجدہ کی اصل کتاب و سنت اور اجماع سے ثابت ہے اور سجدہ کا ہر رکعت میں دو دفعہ ہونا سنت اور اجماع سے ثابت ہے۔(ت)

نص ثانی: امام محمد محمد ابن امیر الحاج حلیہ شرح میں فرماتے ہیں:

و الخامسة السجدة ش ای والفریضة الخامسة من الفرائض الست المشتمل علی فریضتها الصلاة ، السجدة والاولی السجدتان فی کل رکعۃ ثم اصل السجدة ثابت بالکتاب و السنة و الاجماع وکونہ مثنی في کل رکعة بالسنة والاجماع ولا خلاف فی کونهما من ارکان صلاة 3-

متن، پانچواں فرض سجدہ ہے، شرح، یعنی وہ چھ فرائض جن پر نماز مشتمل ہے ان میں پانچواں فرض سجدہ ہے اور (السجدتان فی کل رکعۃ) کہنا بہتر تھا یعنی ہر رکعت میں دو سجدے فرض ہیں پھر سجدہ کی اصل کتاب، سنت اور اجماع سے ثابت ہے اور اس کا ہر رکعت میں دو دفعہ ہونا سنت اور اجماع سے ثابت ہے اور ان دونوں کے رکن نماز ہونے میں کوئی اختلاف نہیں۔(ت)

---

1 کنز الدقائق باب صفة الصلوٰة مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ص ۳۰ 2 البحر الرائق باب صفة الصلوٰة مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱/ ۲۹۳ 3 حلیة المحلی شرح منیة المصلی

Fatawa Razawiya, Volume VI

Also, it is stated here clearly that by consensus, both prostrations (sajdas) are essential pillars (rukn) in the obligation of prayer.

Third Text: In the book 'Mabsut' by Imam Shaykh al-Islam, and then in 'Hilyah', the wisdom behind the obligation of two prostrations was explained:

Arabic Text	Urdu Translation
This is based on what is narrated in reports that when Allah the Almighty took a covenant from the descendants of Adam (peace be upon him), as Allah says in the verse: "And [mention] when your Lord took from the children of Adam - from their loins - their descendants..." (Al-A'raf: 172). He commanded them to prostrate as a confirmation of what He said. So all Muslims fell into prostration, while the disbelievers remained standing and deprived. When the Muslims raised their heads from prostration and saw that the disbelievers had not prostrated, they prostrated again in gratitude because Allah the Almighty had granted them the success of the first prostration. Thus, two prostrations became obligatory for this reason, while bowing (ruku) remained once. 1	This is based on what is in the narrations that when Allah Almighty took a covenant from the descendants of Adam (peace be upon him) which Allah mentioned in this verse: 'And remember when, O Beloved! your Lord brought forth from the children of Adam, from their loins, their descendants...' (The Verse), He commanded them to prostrate as a confirmation. So at Allah's command, all Muslims fell prostrate, but the disbelievers remained standing and were deprived. When the Muslims raised their heads from prostration and saw that the disbelievers had not prostrated, they fell prostrate again while offering thanks to Allah Almighty that Allah Almighty had given them the guidance for the first prostration. Therefore, two prostrations became obligatory and mandatory in prayer, and bowing remained only once. (T)

Fourth Text: In 'Maraqi al-Falah' it was: "Prostration is made obligatory" 2 (Sajdah farz kiya gaya hai. -T). Allama al-Tahtawi said in the marginalia: "What is meant by it is the genus, i.e., the two prostrations" 3. (Murad is se jins-e-sajdah yani do sajdah hain. -T)

Fifth Text: In 'Durar al-Hukkam Sharh Ghurar al-Ahkam' by Allama Mulla Khusru, it says:

Arabic Text	Urdu Translation
If it is said: the obligation of bowing and prostrating is established by the saying of Allah the Almighty: "O you who have believed, bow and prostrate" and a command does not necessitate repetition.	If this question is asked, that the obligation of bowing and prostration is proven by this command of Allah Almighty: 'Arka'u wa-sjudu' (Bow and prostrate).

---

1 Hilyat al-Mahalli Sharh Munyat al-Musalli 2 Maraqi al-Falah with Hashiya al-Tahtawi, Chapter on Conditions of Prayer, printed by Nur Muhammad Tijarat Kutub, Karachi, p. 125 3 Hashiya al-Tahtawi on Maraqi al-Falah, Chapter on Conditions of Prayer, printed by Nur Muhammad Tijarat Kutub, Karachi, p. 125

यहाँ यह भी स्पष्ट किया गया है कि नमाज़ के फ़र्ज़ होने में सर्वसम्मति (इजमा) से दोनों सजदे नमाज़ के रुकन (स्तंभ) हैं।

तीसरा पाठ: इमाम शैखुल इस्लाम की किताब 'मबसूत' में और फिर 'हिलया' में दोनों सजदों के फ़र्ज़ होने की हिकमत (बुद्धिमत्ता) बयान की गई:

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद
यह उन रिवायतों पर आधारित है कि जब अल्लाह तआला ने आदम (अलैहिस्सलाम) की औलाद से वादा लिया जिसका ज़िक्र अल्लाह ने इस आयत में किया है: "और याद करो जब तुम्हारे रब ने बनी आदम की पीठों से उनकी संतान निकाली और उनसे गवाही ली...", तो उन्हें तस्दीक़ (पुष्टि) के तौर पर सजदे का हुक्म दिया। अल्लाह के हुक्म पर तमाम मुसलमान सजदा-रेज़ हो गए लेकिन काफ़िर खड़े रह गए और महरूम रहे। जब मुसलमानों ने सजदे से सिर उठाया और देखा कि काफ़िरों ने सजदा नहीं किया है, तो उन्होंने अल्लाह तआला का शुक्र अदा करते हुए फिर से सजदा किया कि अल्लाह तआला ने उन्हें पहले सजदे की तौफ़ीक़ दी। इसलिए नमाज़ में दो सजदे फ़र्ज़ और लाज़िम हो गए और रुकूअ एक ही रहा। 1	यह इस बिना पर है जो रिवायतों में है कि अल्लाह तआला ने जब औलाद-ए-आदम अलैहिस्सलाम से अहद लिया जिसका ज़िक्र अल्लाह ने इस आयत में किया है: 'और याद करो उस वक़्त को जब ऐ हबीब! आप के रब ने बनी आदम से उनकी पुश्तों में उनकी औलाद से अहद लिया' (अल-आयत), तो उन्हें बतौर तस्दीक़ सजदे का हुक्म दिया। तो अल्लाह के हुक्म पर तमाम मुसलमान सजदा-रेज़ हो गए लेकिन काफ़िर खड़े महरूम रह गए। जब मुसलमानों ने सजदे से सर उठाया और देखा कि काफ़िरों ने सजदा नहीं किया तो वो दोबारा अल्लाह तआला का शुक्र अदा करते हुए सजदा-रेज़ हो गए कि अल्लाह तआला ने उन्हें सजदा-ए-अव्वल की तौफ़ीक़ दी, लिहाज़ा नमाज़ में दो सजदे फ़र्ज़ व लाज़िम हो गए और रुकूअ एक ही रहा। (त)

चौथा पाठ: 'मराक़ी अल-फ़लाह' में था: "सजदा फ़र्ज़ किया गया है" 2 (सजदा फ़र्ज़ किया गया है। -त)। अल्लामा तहतावी ने हाशिए में फ़रमाया: "इससे मुराद उसकी जिन्स (जाति) है, यानी दो सजदे" 3। (मुराद इस से जिन्स-ए-सजदा यानी दो सजदे हैं। -त)

पाँचवाँ पाठ: अल्लामा मुल्ला खुसरो की 'दुररुल हुक्काम शरह ग़ुररुल अहकाम' में है:

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद
अगर यह कहा जाए कि रुकूअ और सजदे की फ़र्ज़ियत अल्लाह तआला के इस फ़रमान से साबित है: "ऐ ईमान वालो! रुकूअ करो और सजदा करो" और हुक्म पुनरावृत्ति (दोहराने) को अनिवार्य नहीं करता।	अगर यह सवाल हो कि रुकूअ व सजदे की फ़र्ज़ियत अल्लाह तआला के इस फ़रमान से साबित है 'इरकाऊ वसजुदू' (रुकूअ करो और सजदा करो)।

---

1 हिलयतुल महल्ली शरह मुनियतुल मुसल्ली 2 मराक़ी अल-फ़लाह मा हाशियतुत तहतावी, बाब शरुतुल सलात, मतबुआ नूर मोहम्मद तिजारत कुतुब, कराची, पृ. 125 3 हाशियतुत तहतावी अला मराक़ी अल-फ़लाह, बाब शरुतुल सलात, मतबुआ नूर मोहम्मद तिजारत कुतुब, कराची, पृ. 125

فتاوی رضویہ جلد ششم

ایضاً یہاں تصریح ہے کہ فرضیت میں کنار دونوں سجدے بالا جماع رکن نماز ہیں۔ نص ثالث: مبسوط امام شیخ الاسلام پھر حلیۃ میں دونوں سجدے فرض ہونے کی حکمت بیان فرمائی:

عربی متن	اردو ترجمہ
هذا ماروى في الاخبار ان الله تعالىٰ لما اخذ الميثاق من ذرية أدم عليه الصلاة والسلام حيث قال عزوجل واذ اخذ ربك من بنى أدم من ظهورهم ذريتهم الآية امرهم بالسجود تصديقاً لما قال فسجد المسلمون كلهم وبقى الكفار فلما رفع المسلمون رؤسهم ورأو الكفار لم يسجدوا فسجدوا ثانيا شكرا لما وفقهم الله تعالىٰ على السجود الاول فصار المفروض سجدتين لهذا والركوع مرة -1 (ت)	یہ اس بنا پر ہے جو روایات میں ہے کہ اللہ تعالیٰ نے جب اولادِ آدم علیہ الصلوۃ والسلام سے عہد لیا جس کا ذکر اللہ نے اس آیت میں کیا ہے: اور یاد کرو اس وقت کو جب اے حبیب! آپ کے رب نے بنی آدم سے ان کی پشتوں میں ان کی اولاد سے عہد لیا الآیۃ، تو انہیں بطور تصدیق سجدے کا حکم دیا تو اللہ کے حکم پر تمام مسلمان سجدہ ریز ہوگئے لیکن کافر کھڑے محروم رہ گئے۔ جب مسلمانوں نے سجدے سے سر اٹھایا اور دیکھا کہ کفار نے سجدہ نہیں کیا تو وہ دوبارہ اللہ تعالیٰ کا شکر ادا کرتے ہوئے سجدہ ریز ہو گئے کہ اللہ تعالیٰ نے انہیں سجدہ اول کی توفیق دی، لہذا نماز میں دو ۲ سجدے فرض ولازم ہوگئے اور رکوع ایک ہی رہا۔

نص رابع: مراقی الفلاح میں تھا: یفترض السجود 2 (سجدہ فرض کیا گیا ہے۔ ت) علامہ طحطاوی نے حاشیہ میں فرمایا: المراد منہ الجنس ای السجدتان 3۔ (مراد اس سے جنس سجدہ یعنی دو سجدے ہیں۔ت) نص خامس: درر الحکام شرح غرر الاحکام للعلامہ مولیٰ خسرو میں ہے:

عربی متن	اردو ترجمہ
فأن قيل فرضية الركوع والسجود ثبتت بقوله تعالىٰ ارْكَعُوا وَاسْجُدُوا والامر لا يوجب التكرار	اگر یہ سوال ہو کہ رکوع و سجود کی فرضیت اللہ تعالیٰ کے اس فرمان سے ثابت ہے ارکعوا واسجدوا (رکوع کرو اور سجدہ کرو)

---

1 حلیۃ المحلی شرح منیۃ المصلی 2 مراقی الفلاح مع حاشیۃ الطحطاوی باب شروط الصلوۃ مطبوعہ نور محمد تجارت کتب کراچی ص ۱۲۵ 3 حاشیۃ الطحطاوی علی مراقی الفلاح باب شروط الصلوۃ مطبوعہ نور محمد تجارت کتب کراچی ص ۱۲۵

Fatawa Ridawiyya, Volume Six

And therefore, the repetition of bowing (Ruku) is not mandatory. So, by what means was the obligation of repeating the prostration (Sujud) established? (And why is it repeated?) We say it has been established that the verse regarding prayer is concise (mujmal), and the explanation of a concise text can be through the action of the Messenger (peace and blessings of Allah be upon him) and sometimes through his word. The obligation of its repetition is established by his action, transmitted from him through mass-narrations (tawatur), for everyone who reported the prayer of the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) reported the repetition of his prostration (1).

This is a command, and a command does not necessitate repetition. This is why repetition is not established in bowing (Ruku). Then from what is the repetition of prostration (Sujud) established? When repetition is established, we will say in response that it is also established that the prayer verse is concise (mujmal), and the explanation of a concise text is sometimes through the action of the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) and sometimes through his speech. The obligation of repeating prostration is established through his continuous action (mutawatir) because whoever reported the prayer of the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) certainly stated that the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) performed two prostrations in every unit (rak'at). (T)

Sixth Text: In 'Niqayah' it was: | | | | :--- | :--- | | Its obligations are Tahrimah (Takbir) (until the saying) and Sujud (2). | The obligation of prayer is Takbir-e-Tahrimah (further ahead it is said) and prostration too. (T) |

In 'Jami-ul-Rumooz': | | | | :--- | :--- | | Meaning two prostrations, for the generic noun indicates number, etc. (3) | Meaning two prostrations because the generic noun denotes number, etc. (T) |

Seventh Text: In the same section of 'Wajibat' (Necessary Acts): | | | | :--- | :--- | | (And observing the order) between the pillars of each rak'at (unit), so it became mandatory that prostration should be after bowing, and the second prostration after the first (4). | (And observing the order) between the pillars of each unit, hence it is established that the prostration will be after bowing and the second prostration will be after the first. (T) |

From here too, it is evident that both prostrations are pillars (essential parts).

1 Durr al-Hukkam Sharh Ghurar al-Ahkam, Chapter on the Description of Prayer, printed by Ahmad Kamil al-Kaina in Sa'adat, Egypt, 1/73 2 Mukhtasar al-Wiqayah fi Masa'il al-Hidayah, Book of Prayer, Noor Muhammad Factory, Market Karachi, p. 13, 14 3 Jami-ul-Rumooz, Book of Prayer, Noor Muhammad Factory, Market Karachi, 1/120 4 Jami-ul-Rumooz, Book of Prayer, Noor Muhammad Factory, Market Karachi, 1/142

और इसी लिए रुकू(झुकने) की पुनरावृत्ति अनिवार्य नहीं है। तो, सजदे (साष्टांग प्रणाम) की पुनरावृत्ति की अनिवार्यता किस माध्यम से स्थापित हुई? (और इसे क्यों दोहराया जाता है?) हम कहते हैं कि यह स्थापित हो चुका है कि नमाज़ से संबंधित आयत संक्षिप्त (मुजमल) है, और संक्षिप्त का स्पष्टीकरण अल्लाह के रसूल (उन पर अल्लाह की शांति और कृपा हो) के कार्य के माध्यम से हो सकता है और कभी उनके वचन के माध्यम से। इसके दोहराव की अनिवार्यता उनके कार्य से स्थापित होती है, जो उनसे निरंतर प्रसारण (तवातुर) के माध्यम से सूचित की गई है, क्योंकि जिस किसी ने भी अल्लाह के रसूल (उन पर अल्लाह की शांति और कृपा हो) की नमाज़ की सूचना दी, उसने उनके सजदे की पुनरावृत्ति की भी सूचना दी। (1)

यह एक आदेश है, और आदेश पुनरावृत्ति की मांग नहीं करता है। यही कारण है कि रुकू में पुनरावृत्ति स्थापित नहीं है, तो सजदे की पुनरावृत्ति किससे स्थापित है? जब पुनरावृत्ति स्थापित हो गई तो हम उत्तर में कहेंगे कि यह भी स्थापित है कि नमाज़ वाली आयत संक्षिप्त (मुजमल) है और संक्षिप्त का वर्णन कभी हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के कार्य से होता है कभी वचन से। सजदे की पुनरावृत्ति की फर्ज़ियत (अनिवार्यता) मुतवातिर (निरंतर) तौर पर आपके अमल से साबित है क्योंकि जिसने भी हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की नमाज़ को नक़्ल (वर्णित) किया है उसने यह ज़रूर बयान किया है कि हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) हर रकअत में दो सजदे फ़रमाते थे। (त)

छठा पाठ: 'निक़ाया' में था: | | | | :--- | :--- | | इसके फ़राइज़ (अनिवार्य भाग) तहरीमा (तकबीर) (आगे कहा गया) और सुजूद (सजदे) हैं। (2) | नमाज़ का फ़र्ज़ तकबीर-ए-तहरीमा है (आगे चलकर कहा) और सजदा भी। (त) |

'जामि-उल-रुमूज़' में है: | | | | :--- | :--- | | यानी दो सजदे, क्योंकि जिंस (जाति) का नाम संख्या को दर्शाता है, आदि। (3) | यानी दो सजदे क्योंकि इस्म-ए-जिंस (जातिवाचक संज्ञा) संख्या पर दलालत (संकेत) करता है आदि। (त) |

सातवां पाठ: इसी के'वाजिबात' में है: | | | | :--- | :--- | | (और तरतीब का पालन) हर रकअत के अरकान (स्तम्भों) के बीच, तो यह अनिवार्य हो गया कि सजदा रुकू के बाद हो और दूसरा सजदा

पहले के बाद। (4) | (और तरतीब की रियायत) हर रकअत के अरकान के दरमियान (बीच), पस इससे साबित हुआ कि सजदा रुकू के बाद होगा और दूसरा सजदा पहले के बाद होगा। (त) |

यहाँ से भी ज़ाहिर है कि दोनों सजदे रुकन (अनिवार्य अंग) हैं।

1 दुररुल हुक्काम शरह गुररुल अहकाम, बाब सिफतुल सलात, मतबुआ अहमद कामिल अल-काइना, सहादत मिस्र, 1/73 2 मुख़्तसरुल विक़ाया फी मसाइलिल हिदाया, किताबुल सलात, नूर मुहम्मद कारख़ाना बाज़ार कराची, पृ. 13, 14 3 जामिउल रुमूज़, किताबुल सलात, नूर मुहम्मद कारख़ाना बाज़ार कराची, 1/120 4 जामिउल रुमूज़, किताबुल सलात, नूर मुहम्मद कारख़ाना बाज़ार कराची, 1/142

पृष्ठ 174/736

ولذا لم یجب تکرار الرکوع فبماذا ثبت فرضیة تکرار السجود (ولماذا تکرر) قلنا قد تقرران آیة الصلاة مجملة وبیان المجمل قد یکون بفعل الرسول صلی اللہ تعالی علیه وسلم وقد یکون بقوله وفرضیة تکراره تثبت بفعله المنقول عنه تواترا اذکل من نقل صلاة الرسول صلی اللہ تعالی علیه وسلم نقل تکرار سجوده 1 ۔

یہ امر ہے اور امر تکرار کا تقاضا نہیں کرتا۔ یہی وجہ ہے کہ رکوع میں تکرار ثابت نہیں تو تکرار سجود کس سے ثابت ہے، جب تکرار ثابت ہو گیا تو ہم جواباً کہیں گے کہ یہ بھی ثابت ہے کہ نماز والی آیت مجمل ہے اور مجمل کا بیان کبھی حضور صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے عمل سے ہوتا ہے کبھی قول سے، تکرار سجود کی فرضیت متواتراً آپ کے عمل سے ثابت ہے کیونکہ جس نے بھی حضور صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی نماز کو نقل کیا ہے اس نے یہ ضرور بیان کیا ہے کہ حضور صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم ہر رکعت میں دو سجدے فرماتے تھے۔(ت)

نص سادس: نقایہ میں تھا: | | | | :--- | :--- | | فرضها التحریمة (الی قوله) والسجود 2 ۔ | نماز کا فرض تکبیر تحریمہ ہے (آگے چل کر کہا) اور سجدہ بھی۔(ت) |

جامع الرموز میں ہے: | | | | :--- | :--- | | ای سجدتان فان اسم الجنس یدل علی العدد 3 الخ | یعنی دو سجدے کیونکہ اسم جنس عدد پر دلالت کرتا ہے الخ(ت) |

نص سابع: اسی کے واجبات میں ہے: | | | | :--- | :--- | | (ورعایة الترتیب) بین ارکان کل رکعة فوجب ان یکون السجود بعد الرکوع والسجدة الثانیة بعد الاولیٰ 4 ۔ | (اور رعایت ترتیب) ہر

رکعت کے ارکان کے درمیان پس اس سے ثابت ہوا کہ سجدہ رکوع کے بعد ہوگا اور دوسرا سجدہ پہلے کے بعد ہوگا۔(ت) |

یہاں سے بھی ظاہر کہ دونوں سجدے رکن ہیں۔

1 درر الحکام شرح غرر الاحکام باب صفۃ الصلوۃ مطبوعہ احمد کامل الکائنہ در سعادت مصر ۱/ ۷۳ 2 مختصر الوقایۃ فی مسائل الھدایۃ کتاب الصلوۃ نور محمد کارخانہ بازار کراچی ص ۱۳، ۱۴ 3 جامع الرموز کتاب الصلوۃ نور محمد کارخانہ بازار کراچی ۱/ ۱۲۰ 4 جامع الرموز کتاب الصلوۃ نور محمد کارخانہ بازار کراچی ۱/ ۱۴۲

Fatawa Rizvia, Volume 6

Eighth text: In 'Fath-ul-Allah al-Mu'in' by Allama Al-Sayyid Abi al-Sa'ud al-Azhari, it is stated:

"The two prostrations (as they are) are obligatory in every rak'ah."[1] | Because there are two prostrations in every rak'ah, both prostrations are obligatory. (T)

Ninth text: Allama Shurunbulali states in his text 'Nur al-Idah' and its commentary:

"(And) it is obligatory (returning to prostration) the second, because the second prostration, like the first, is obligatory by the consensus of the Ummah."[2] | And it is obligatory (returning to the prostration), meaning to the second prostration, because the second prostration is obligatory just like the first one, and there is consensus of the Ummah on this.

Tenth text: In 'Mujtaba Sharh Quduri' and then in 'Hindiya', it is stated:

"The second prostration is (obligatory) like the first by the consensus of the Ummah."[3] | There is consensus of the Ummah that the second prostration is obligatory like the first. (T)

Attributing this false claim and useless delusion to 'Hidaya' is completely wrong and baseless. Understanding this meaning from 'Sharh al-Wiqaya' arose from a lack of contemplation and poor understanding. The passage by Imam Sadr al-Shariah is as follows:

"In Al-Hidaya, observing the sequence is obligatory in those actions which are prescribed repeatedly. The marginalia of Al-Hidaya, citing Al-Mabsut, mentions the prostration, for example. If a person stands for the second (rak'ah) after performing only one prostration and before performing the other, he should make up for it, and his standing will be valid because he only omitted the obligation (i.e., the sequence)."[4] | It is mentioned in 'Hidaya' that observing the sequence is obligatory in those actions where repetition is prescribed. In the marginalia of 'Hidaya', quoting 'Mabsut', it is mentioned, for example, regarding prostration: if a prayer performer stands up for the second rak'ah after only one prostration and has not performed the second one, he should perform that prostration as qada (compensation), and his standing will be considered valid because the prayer performer has only left an obligation (i.e., the sequence). (T)

A person with poor understanding thought that in "he only left the obligation" (he has left only the wajib. T), by 'wajib' it meant...

---

[1] Fath-ul-Allah al-Mu'in, Chapter on the Description of Prayer, published by H.M. Saeed Company, Karachi, 1/169. [2] Maraqi al-Falah with Hashiyah al-Tahtawi, Chapter on Conditions of Prayer, published by Noor Muhammad Tejarat Kutub, Karachi, p. 127. [3] Fatawa Hindiya, First Section on Obligations, published by Noorani Kutub Khana, Peshawar, 1/70. [4] Sharh al-Wiqaya, Chapter on the Description of Prayer, published by Al-Maktaba al-Rashidiyya, Delhi, 1/161.

फ़तावा रज़विया, खंड 6

आठवां पाठ: अल्लामा अस-सैयद अबी अल-सऊद अल-अज़हरी की 'फतह-उल-अल्लाह अल-मुईन' में है:

"दो सजदे (चूंकि वे) हर रकात में फ़र्ज़ हैं।"[1] | क्योंकि हर रकात में दो सजदे होते हैं, दोनों सजदे फ़र्ज़ हैं। (त)

नौवां पाठ: अल्लामा शुरुनबुलाली अपने पाठ 'नूर अल-इदाह' और उसकी व्याख्या में फरमाते हैं:

"और (लौटना) दूसरे सजदे की ओर फ़र्ज़ है क्योंकि दूसरा सजदा पहले की तरह ही उम्मत की आम सहमति (इज्मा) से फ़र्ज़ है।"[2] | और फ़र्ज़ है (सजदे की ओर लौटना) यानी दूसरे सजदे की ओर क्योंकि दूसरा सजदा पहले की तरह ही फ़र्ज़ है और इस पर उम्मत की आम सहमति है।

दसवां पाठ: 'मुजतबा शरह कुदूरी' फिर 'हिन्दिया' में है:

"दूसरा सजदा उम्मत की आम सहमति से पहले की तरह (फ़र्ज़) है।"[3] | इस पर उम्मत की आम सहमति है कि दूसरा सजदा पहले की तरह फ़र्ज़ है। (त)

इस गलत धारणा और बेकार के भ्रम को 'हिदाया' की ओर जोड़ना पूरी तरह से गलत और निराधार है। 'शरह वकाया' से यह अर्थ समझना विचार की कमी और गलत समझ से पैदा हुआ है। इमाम सदर अल-शरिया का वाक्यांश इस प्रकार है:

"हिदाया में है कि उन कार्यों में क्रम का पालन करना अनिवार्य (वाजिब) है जो दोहराए जाने के लिए निर्धारित हैं। हिदाया के हाशिये में अल-मबसूत के हवाले से उल्लेख किया गया है, जैसे सजदा। यदि कोई व्यक्ति एक सजदा करने के बाद और दूसरा करने से पहले दूसरी (रकात) के लिए खड़ा हो जाता है, तो उसे उसकी कज़ा करनी चाहिए और उसका खड़ा होना मान्य होगा क्योंकि उसने केवल अनिवार्य (यानी क्रम) को छोड़ा है।"[4] | 'हिदाया' में है कि उन कार्यों में क्रम का पालन करना वाजिब है जिनमें दोहराव जायज़ है, और 'हिदाया' के हाशिये में 'मबसूत' के हवाले से उल्लेख है, उदाहरण के लिए सजदा, यदि नमाज़ी दूसरी रकात के लिए केवल एक सजदे के बाद खड़ा हो गया और दूसरा सजदा नहीं किया, तो उस सजदे की कज़ा करे और उसका कयाम मान्य होगा क्योंकि नमाज़ी ने केवल वाजिब (यानी क्रम) को छोड़ा है। (त)

कम समझ वाले ने यह समझा कि "उसने केवल वाजिब ही छोड़ा है" (उसने केवल वाजिब को ही छोड़ा है। त) में वाजिब से...

---

[1] फतह-उल-अल्लाह अल-मुईन, बाब सिफत अस-सलात, प्रकाशित एच.एम. सईद कंपनी, कराची, 1/169। [2] मराक़ी अल-फ़लाह हाशियह अत-तहतावी के साथ, बाब शरुत अस-सलात, प्रकाशित नूर मुहम्मद तिजारत कुतुब, कराची, पृ. 127। [3] फ़तावा हिन्दीया, फ़स्ल अव्वल फ़ी फ़राएज़, प्रकाशित नूरानी कुतुब खाना, पेशावर, 1/70। [4] शरह अल-वकाया, बाब सिफ़त अस-सलात, प्रकाशित अल-मकतबा अल-रशीदिया, दिल्ली, 1/161।

पृष्ठ 175 / 736

فتاوٰی رضویہ، جلد ششم

نص ثامن: فتح اللہ المعین للعلامۃ السید ابی السعود الازہری میں ہے:

السجدتان (لانھما) فرضان فی کل رکعۃ - 1 | کیونکہ دو سجدے ہر رکعت میں دونوں سجدے فرض ہیں۔ (ت)

نص تاسع: علامہ شرنبلانی اپنے متن نور الایضاح اور اسکی شرح میں فرماتے ہیں:

(و) یفترض (العود الی السجود) الثانی لان السجود الثانی کالاول فرض باجماع الامۃ - 2 | (اور) فرض ہے (لوٹنا سجدہ کی طرف) یعنی دوسرے سجدے کی طرف کیونکہ دوسرا سجدہ پہلے کی طرح ہی فرض ہے اور اس پر امت کا اجماع ہے۔

نص عاشر: مجتبیٰ شرح قدوری پھر ہندیہ میں ہے:

السجود الثانی (فرض) کالاول باجماع الامۃ - 3 | اس پر اجماع امت ہے کہ دوسرا سجدہ پہلے کی طرح فرض ہے۔ (ت)

ہدایہ کی طرف اس زعمِ باطل و وہمِ عاطل کی نسبت تو محض غلط و بے منشا ہے شرح وقایہ سے یہ مطلب سمجھنا عدمِ تدبر و سوءِ فہم سے پیدا ہوا امام صدر الشریعہ کی عبارت یہ ہے:

فی الھدایۃ و مراعاۃ الترتیب فیما شرع مکررا من الافعال ، وذکر حواشی الھدایۃ نقلا عن المبسوط کالسجدۃ فانہ لو قام الی الثانیۃ بعد ما سجد سجدۃ واحدۃ قبل ان یسجد الاخری یقضیھا و یکون القیام معتبرا لانہ لم یترك الا الواجب - 4 | ہدایہ میں ہے ان افعال میں رعایتِ ترتیب واجب ہے جن میں تکرار مشروع ہوا ہے ، اور حواشی ہدایہ میں مبسوط کے حوالے سے مذکور ہے مثلاً سجدہ پس

اگر نمازی دوسری رکعت کی طرف صرف ایک سجدہ کے بعد کھڑا ہوا اور دوسرا سجدہ نہیں کیا تو اس سجدہ کی قضا کرے اور اس کا قیام معتبر ہوگا کیونکہ نمازی نے صرف واجب (یعنی ترتیب) کو چھوڑا ہے (ت)

قلت فہم نے یہ سمجھا کہ لم یترک الا الواجب (اس نے واجب ہی ترک کیا ہے۔ ت) میں واجب سے

---

1 فتح اللہ المعین باب صفۃ الصلوۃ مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی 1 / 169 2 مراقی الفلاح مع حاشیۃ الطحطاوی باب شروط الصلوۃ مطبوعہ نور محمد تجارت کتب کراچی ص 127 3 فتاوی ہندیۃ الفصل الاول فی فرائض مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور 1 / 70 4 شرح الوقایۃ باب صفۃ الصلوۃ مطبوعہ المکتبۃ الرشیدیہ دھلی 1 / 161

Fatawa Rizvia, Volume 6

It refers to the second prostration, even though this is clearly flawed. He said about the second prostration, 'He should make it up' (T: He should perform the qada of that second prostration). Further, he said, 'And the standing will be considered' (T: His standing is valid). When the second prostration is meant, although he has already performed its qada, then how was it 'omitted'? It was 'delayed'. Every common person knows the difference between 'omitting' and 'delaying'. Omitting an obligatory act (fard) invalidates the prayer, while delaying it necessitates a prostration of forgetfulness (sajdah sahw). Rather, by 'wajib' (obligatory), the sequence is meant, because due to the delay of the second prostration and the precedence of the standing, the sequence was omitted. This is clear from the context of the speech itself, that the discussion here is about the obligatory sequence. At the beginning, among the list of obligations, he said: 'And observing the sequence in those acts that are repeated'. After the mentioned text, he said:

Arabic Text	Urdu Translation
I say: His statement 'in those acts that are repeated' is not a restriction that necessitates the negation of the ruling from others, for observing the sequence in pillars that are not repeated in a single rak'ah, like Ruku' (bowing) and the like, is also obligatory. (1)	I say his words 'in what is repeated' (those actions which are repeated) is not such a restriction that excludes others, because observing the sequence is also obligatory in those actions which are not multiple in one rak'ah, for example, Ruku' etc. (T)

At the end of this entire discourse, he derived a branch: 'So it is known that observing the sequence is absolutely obligatory'. (2) (T: Thus it became clear that observing the sequence is absolutely obligatory). Other scholars have clarified the meaning well, stating that the sequence itself has been called obligatory, not the second prostration. Allama Akmal al-Din Babarti states in the commentary of Hidayah:

Arabic Text	Urdu Translation
(Observing the sequence in what is legislated as repeated) i.e., in a single rak'ah like the second prostration of the first rak'ah; if he forgets it and stands up and completes his prayer, then remembers, he must perform	(Observing the sequence in repeated actions is absolutely obligatory) i.e., in a single rak'ah, for example, the second prostration of the first rak'ah, if one leaves it by mistake and stands up for the second rak'ah and after completing the prayer remembers the

Arabic Text	Urdu Translation
the omitted prostration and then perform the prostration of forgetfulness for omitting the sequence. (3)	omitted prostration, then it is mandatory for him to first perform the omitted prostration and then do sajdah sahw because the sequence was not maintained. (T)

It is in 'Hilyah':

Arabic Text	Urdu Translation
If he omitted the second prostration of the first rak'ah	If one forgets and leaves the second prostration of the first rak'ah and starts the second...

(1) Sharh al-Wiqayah, Bab Sifat al-Salah, published by Al-Maktabah al-Rashidiyyah, Delhi, 1/161 (2) Sharh al-Wiqayah, Bab Sifat al-Salah, published by Al-Maktabah al-Rashidiyyah, Delhi, 1/162 (3) Al-Inayah with Fath al-Qadir, Bab Sifat al-Salah, published by Nuriyyah Razawiyyah, Sukkur, 1/241

फतावा रज़विया, छठा खंड

दूसरे सज्दे से मुराद है हालांकि यह स्पष्ट रूप से गलत है। दूसरे सज्दे के बारे में उन्होंने कहा 'यक़दीहा' (T: वह उस दूसरे सज्दे की कज़ा करे)। आगे कहा 'व-यकूनुल क़ियामु मुअतबरन' (T: उसका क़ियाम मोतबर है)। जब दूसरे सज्दे से मुराद हो, हालांकि वह उसकी कज़ा कर चुका है, तो फिर सज्दा छोड़ा हुआ (मतरूक) कब हुआ? वह तो विलंबित (मोअख़र) हुआ। छोड़ने और विलंब करने के बीच जो अंतर है वह हर आम आदमी पर स्पष्ट है। फ़र्ज़ का छोड़ना नमाज़ को बातिल (अमान्य) कर देता है और विलंब करना सज्दा-ए-सहव को आवश्यक बना देता है। बल्कि यहाँ वाजिब से मुराद तरतीब (क्रम) है कि दूसरे सज्दे में देरी और क़ियाम की जल्दबाज़ी के कारण तरतीब छूट गई। यह खुद कलाम के संदर्भ से स्पष्ट है कि यहाँ चर्चा वाजिब तरतीब के बारे में है। शुरुआत में वाजिब कार्यों की सूची में कहा गया था: "और उन कार्यों में तरतीब का पालन करना जो दोहराए जाते हैं"। उक्त कलाम के बाद फरमाया:

अरबी पाठ	**उर्दू अनुवाद**
मैं कहता हूँ: उनका कथन 'उन कार्यों में जो दोहराए जाते हैं' कोई ऐसी पाबंदी नहीं है जो दूसरों से इस हुक्म को हटा दे, क्योंकि उन अरकान (स्तंभों) में भी तरतीब का पालन करना वाजिब है जो एक रकात में दोहराए नहीं जाते जैसे रुकू आदि। (1)	मैं कहता हूँ उनका कहना 'फीमा तक़र्रर' (वे कार्य जिनमें दोहराव है) यह ऐसी शर्त नहीं है जो दूसरों का निषेध करे क्योंकि तरतीब का पालन उन कार्यों में भी वाजिब है जो एक रकात में अनेक नहीं होते जैसे रुकू आदि। (T)

अंत में इस पूरे कलाम पर निष्कर्ष निकालते हुए फरमाया: 'तो मालूम हुआ कि तरतीब का पालन करना पूर्णतः वाजिब है'। (2) (T: अतः स्पष्ट हो गया कि तरतीब का पालन करना पूर्णतः वाजिब है)। अन्य विद्वानों ने अर्थ को अच्छी तरह स्पष्ट कर दिया है कि तरतीब को ही वाजिब कहा गया है न कि दूसरे सज्दे को। अल्लामा अकमल उद्दीन बाबर्ती 'शरह हिदाया' में फरमाते हैं:

अरबी पाठ	**उर्दू अनुवाद**
(उन कार्यों में तरतीब का पालन करना जो दोहराए जाने के लिए शरीयत में रखे गए हैं) यानी एक ही रकात में जैसे पहली रकात का दूसरा सज्दा; यदि वह उसे भूलवश छोड़ दे	(दोहराए जाने वाले कार्यों में तरतीब का पालन करना पूर्णतः वाजिब है) यानी एक रकात में जैसे पहली रकात का दूसरा सज्दा, जिसे उसने भूलकर छोड़ दिया और दूसरी रकात की तरफ खड़ा हो

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद
और खड़ा हो जाए और अपनी नमाज़ पूरी कर ले, फिर याद आए तो उस पर अनिवार्य है कि छोड़ा हुआ सज्दा करे और फिर तरतीब छोड़ने के कारण सज्दा-ए-सहव करे। (3)	गया और नमाज़ पूरी करने के बाद छोड़ा हुआ सज्दा याद आया, तो उस पर वाजिब है कि पहले वह मतरूका (छोड़ा हुआ) सज्दा करे फिर सज्दा-ए-सहव करे क्योंकि तरतीब बाकी न रही। (T)

'हिलिया' में है:

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद
अगर पहली रकात का दूसरा सज्दा छोड़ दिया	अगर भूल कर पहली रकात का दूसरा सज्दा छोड़ कर दूसरी...

(1) शरह अल-विकाया, बाब सिफत अल-सलाह, प्रकाशित अल-मकतबाह अल-रशीदिया, दिल्ली 1/161 (2) शरह अल-विकाया, बाब सिफत अल-सलाह, प्रकाशित अल-मकतबाह अल-रशीदिया, दिल्ली 1/162 (3) अल-इनाया मअ फ़तह अल-क़दीर, बाब सिफत अल-सलाह, प्रकाशित नूरिइया रज़विया, सुक्कुर 1/241

سجدہ ثانیہ مراد ہے حالانکہ یہ واضح الفساد ہے سجدہ ثانیہ کو تو فرما دیا یقضیھا (اس سجدہ ثانیہ کی قضا کرے۔ ت) آگے فرمایا ویکون القیام معتبرا (اس کا قیام معتبر ہے۔ ت) جب سجدہ ثانیہ مراد ہو حالانکہ اس کی تو قضا کر چکا پھر سجدہ متروک کب ہوا مؤخر ہوا، ترک و تاخیر میں جو فرق ہے ہر عامی پر روشن ہے ترک فرض مبطلِ صلاۃ ہے اور تاخیر موجبِ سجودِ سہو، بلکہ واجب سے مراد ترتیب ہے کہ بوجہ تاخیر سجدہ ثانیہ و تقدیم قیام ترتیب متروک ہوئی یہ خود نفسِ کلام سے واضح ہے کہ یہاں گفتگو واجب ترتیب میں ہے ابتداء میں بشمارِ واجبات فرمایا تھا "ورعایۃ الترتیب فیما تکرر" کلامِ مذکور کے بعد فرمایا:

عربی متن	**اردو ترجمہ**
اقول قولہ "فیما تکرر" لیس قیدا یوجب نفی الحکم عما عداہ فان مراعاۃ الترتیب في الارکان التي لا یتکرر في رکعۃ واحدۃ کالرکوع و نحوہ واجبۃ ایضا (1)	میں کہتا ہوں اس کا قول فیما تکرر (وہ افعال جن میں تکرار ہے) یہ ایسی قید نہیں جو دوسروں کی نفی کرے کیونکہ رعایت ترتیب ان افعال میں بھی واجب ہے جو ایک رکعت میں متعدد نہیں ہوتے مثلاً رکوع وغیرہ (ت)

اخیر میں اس تمام کلام پر تفریع فرمائی فعلم ان رعایۃ الترتیب واجبۃ مطلقاً (2) (پس واضح ہو گیا کہ رعایت ترتیب مطلقاً واجب ہے۔ ت) دیگر علمائے کرام نے مراد کو خوب واضح کر دیا کہ ترتیب ہی کو واجب کہا گیا نہ کہ سجدہ ثانیہ کو علامہ اکمل الدین بابرتی شرح ہدایہ میں فرماتے ہیں:

عربی متن **اردو ترجمہ**

(مراعاة الترتيب فيما شرع مكررا) (متکرر افعال میں رعایت ترتیب مطلقاً واجب ہے) یعنی یعنی فی الرکعة الواحدة کالسجدة الثانیة رکعتِ واحدہ میں مثلاً پہلی رکعت کا دوسرا سجدہ، جس نے من الرکعة الاولی فان ترکها ساهیا وقام اسے بھول کر چھوڑ دیا اور دوسری رکعت کی طرف کھڑا واتم صلاته ثم تذکر فان علیه ان یسجد ہو گیا اور نماز پوری کرنے کے بعد متروکہ سجدہ یاد آیا تو السجدة المتروکة ویسجد للسهو لترك اس پر لازم ہے کہ پہلے متروکہ سجدہ کرے پھر سجدہ سہو الترتیب (3)۔ کرے کیونکہ ترتیب باقی نہ رہی۔ (ت)

حلیہ میں ہے:

عربی متن **اردو ترجمہ**

لو ترك السجدة الثانية من الركعة الاولى اگر بھول کر پہلی رکعت کا دوسرا سجدہ چھوڑ کر دوسری

1. شرح الوقاية باب صفت الصلوة مطبوعہ المکتبۃ الرشیدیہ دہلی 1/ 161
2. شرح الوقاية باب صفت الصلوة مطبوعہ المکتبۃ الرشیدیہ دہلی 1/ 162
3. العنایۃ مع فتح القدیر باب صفت الصلوة مطبوعہ نوریہ رضویہ سکھر 1/ 241

Fatawa Ridawiyya, Volume Six

If one inadvertently stood up for the second rak'ah and then remembered it at the end of their prayer, the prayer will not be invalidated. Instead, they should perform the omitted prostration (sajdah) and then perform the prostration for forgetfulness (sajdah sahw) due to omitting the sequence. This is because omitting an essential (wajib) act inadvertently necessitates sajdah sahw by consensus. (T)

In Al-Jawhara etc., it is stated: If one inadvertently left out the second prostration of the first rak'ah and stood up and completed the entire prayer, and then remembered the omitted prostration at the end, it is mandatory for them to perform the omitted prostration first and then perform sajdah sahw, because the sequence was omitted in those actions which were legislated to be repeated. (T)

Fath al-Qadir and Ghuniya Sharh Munya, Bahr al-Ra'iq and Hashiya al-Shibli 'ala Tabyin al-Haqa'iq and other many books state: These are the words of al-Ghunya in brief: Know that the prescribed obligatory (fard) acts in prayer are of four types. One type is what is unique in the entire prayer, such as the sitting (qa'dah), or unique in each rak'ah, such as standing (qiyam) and bowing (ruku'). Some are multiple in the entire prayer, such as the prostrations (sujud). In any case, the sequence is a condition between what is unique in the entire prayer and all other three types mentioned. So much so that if after the sitting (qa'dah), before the salutation (salam) or after it - provided one has not yet performed any act contrary to prayer - one remembers an omitted rak'ah or a missed prayer prostration or a prostration of recitation (sajdah tilawah), they should perform it and repeat the sitting and perform sajdah sahw. And the sequence between...

Footnotes: 1. Hilya al-Mahalli Sharh Munya al-Musalli 2. Al-Jawhara an-Nayira, Chapter: Description of Prayer, printed by Maktaba Imdadia Multan, 1/59 3. Ghunya al-Mustamli Sharh Munya al-Musalli, Obligations of Prayer, Suhail Academy Lahore, p. 297 Page 177 of 736

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

यदि कोई भूलवश दूसरी रक़अत के लिए खड़ा हो गया और फिर अपनी नमाज़ के अंत में उसे याद आया, तो उसकी नमाज़ अमान्य नहीं होगी। इसके बजाय, उन्हें छूटा हुआ सजदा करना चाहिए और फिर अनुक्रम छोड़ने के कारण सहव का सजदा (सजदा सहव) करना चाहिए। ऐसा इसलिए है क्योंकि एक अनिवार्य (वाजिब) कार्य को अनजाने में छोड़ना सर्वसम्मति से सजदा सहव को आवश्यक बनाता है। (त)

अल-जौहरा आदि में उल्लेख है: यदि कोई पहली रक़अत का दूसरा सजदा भूलवश छोड़ दे और खड़ा हो जाए और पूरी नमाज़ पढ़ ले, और फिर अंत में छूटा हुआ सजदा याद आए, तो उनके लिए पहले छूटा हुआ सजदा करना और फिर सजदा सहव करना अनिवार्य है, क्योंकि उन कार्यों में अनुक्रम छूट गया था जिन्हें दोहराने का विधान था। (त)

फ़तह अल-क़दीर और ग़ुनिया शरह मुन्या, बह्र अल-रैक और हाशिया अल-शिबली अली तब्यीन अल-हक़ाइक और अन्य कई पुस्तकों में उल्लेख है: ये संक्षेप में अल-ग़ुनिया के शब्द हैं: जान लें कि नमाज़ में निर्धारित अनिवार्य (फ़र्ज़) कार्य चार प्रकार के होते हैं। एक प्रकार वह है जो पूरी नमाज़ में एक ही बार होता है, जैसे बैठना (क़ादा), या प्रत्येक रक़अत में एक बार, जैसे खड़ा होना (क़ियाम) और झुकना (रुकू। कुछ पूरी नमाज़ में कई बार होते हैं, जैसे सजदे (सुजूद)। किसी भी स्थिति में, पूरी नमाज़ में जो एक बार होता है और अन्य तीनों प्रकारों के बीच अनुक्रम एक शर्त है। यहाँ तक कि यदि बैठने (क़ादा) के बाद, सलाम से पहले या उसके बाद - बशर्ते कि अभी तक नमाज़ के विपरीत कोई कार्य न किया गया हो - किसी को छूटी हुई रक़अत या छूटा हुआ नमाज़ का सजदा या तिलावत का सजदा याद आ जाए, तो उन्हें इसे करना चाहिए और फिर से बैठना चाहिए और सजदा सहव करना चाहिए। और इनके बीच का अनुक्रम...

पादलेख: 1. हिल्या अल-महल्ली शरह मुन्या अल-मुसल्ली 2. अल-जौहरा अन-नय्यारा, अध्याय: नमाज़ का विवरण, मकतबा इमदादिया मुल्तान द्वारा मुद्रित, 1/59 3. ग़ुनिया अल-मुस्तमली शरह मुन्या अल-मुसल्ली, नमाज़ के वाजिब कार्य, सुहैल अकादमी लाहौर, पृष्ठ 297 पृष्ठ 177 का 736

سھو اوقام الی الرکعة الثانیة ثم تذکرھا في اخر صلاته لم تسد صلاته بل یسجد المتروکة ثم یسجد للسھو لترك الترتیب لان ترك الواجب الاصلی ساھیاً یوجب سجود السھو بالاتفاق۔ رکعت کا قیام کیا پھر آخر نماز میں (متروکہ سجدہ) یاد آگیا تو اس کی نماز فاسد نہ ہوگی بلکہ پہلے چھوڑا ہوا سجدہ کرے پھر ترک ترتیب کی وجہ سے سجدہ سہو کرے کیونکہ واجب اصل کو بھول کر چھوڑنے سے بالاتفاق سجدہ سہو لازم آتا ہے۔ (ت)

جوہرہ وغیرہ میں ہے: لو ترك السجدة الثانیة من الرکعة الاولی ساھیا وقام وصلی تمام صلاته ثم تذکرھا فعلیه ان یسجد المتروکة ویجسد للسھو لترك الترتیب فیما شرع مکررا۔ اگر پہلی رکعت کا دوسرا سجدہ بھول کر چھوڑ دیا اور دوسری رکعت کے لئے کھڑا ہوگیا آخر میں نماز پوری کرنے پر متروکہ سجدہ یاد آیا تو اس پر لازم ہے پہلے متروکہ سجدہ ادا کرے پھر سجدہ سہو کرے کیونکہ ان افعال میں ترتیب متروک ہوگئی جو مکرر مشروع ہوئے تھے (ت)

فتح القدیر وغنیہ شرح منیہ وبحر الرائق وحاشیہ الشبلی علی تبیین الحقائق وغیرہ کتب کثیرہ میں ہے: وھذا لفظ الغنیة مختصرا، اعلم ان المشروع فرضا في الصلاة اربعة انواع مایتحد في کل الصلاة کالقعدة او في کل رکعة کالقیام و الرکوع وما یتعدد في کلھا کالرکعات اوفی کل رکعة کالسجود فالترتیب شرط بین ما یتحد في کل الصلاة وبین جمیع ما سواه من الثلثة الاخری حتی لوتذکر بعد القعدة قبل السلام او بعده قبل ان یأتی بمناف رکعة او سجدة صلبیة او سجدة تلاوة فعلھا واعاد القعدة وسجد للسھو والترتیب بین یہ اختصاراً غنیہ کے الفاظ ہیں نماز میں مشروع فرائض چار انواع کے ہیں ایک وہ جو پوری نماز میں ایک ہو مثلاً قعدہ، یا پوری رکعت میں ایک جیسے قیام ور کوع۔ اور کچھ وہ ہیں جو پوری نماز میں متعدد ہوں جیسے سجود، بہر حال وہ فرض جو پوری نماز میں ایک ہو اور

اس کے ماسوا مذکورہ تینوں انواع کے درمیان ترتیب شرط ہے حتیٰ کہ قعدہ کے بعد سلام سے پہلے یا بعد بشرطیکہ ابھی اس نے نماز کے منافی کوئی عمل نہ کیا ہو کسی کو متروکہ رکعت یا چھوڑا ہوا سجدہ نماز یا سجدہ تلاوت یاد آگیا تو پہلے

حلیۃ المحلی شرح منیۃ المصلی الجوھرۃ النیرۃ باب صفۃ الصلوۃ مطبوعہ مکتبہ امدادیہ ملتان ۱/۵۹

غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی واجبات الصلوۃ سہیل اکیڈمی لاھور ص ۲۹۷ Page 177 of 736

Fatawa Razawiyya - Volume Six

Arabic Text: What is repeated in every rak'ah, like prostration, and what follows it, is obligatory. So much so that if one forgets a prostration from a rak'ah and then remembers it in what follows it—be it standing, bowing, or prostration—he must perform it. He does not need to repeat what he performed before its fulfillment from among the actions that occur after its rak'ah, such as standing, bowing, or prostration. Rather, he is only required to perform the prostration of forgetfulness (Sajdah Sahw). However, there is a difference of opinion regarding the necessity of repeating the action in which he remembered the omission. For instance, if he remembers while bowing or prostrating that he did not prostrate in the previous rak'ah, he should perform it. But should he repeat the bowing or prostration in which he remembered? In Al-Hidayah, it is stated that repeating it is not obligatory but recommended, arguing that the order is not mandatory between actions that are repeated. In Fatawa Qadi Khan, it is stated that he must repeat it, and if he does not, his prayer is invalidated. The reasoning given is that by returning to what preceded it among the pillars (Arkan), that pillar is abandoned because before rising from it, it accepts being abandoned. This is unlike remembering the forgotten prostration after rising from bowing; since bowing was completed by rising, it no longer accepts being abandoned.

Urdu Translation of the above: He should perform it, then return to sitting and do Sajdah Sahw (this way the prayer will be valid). In the entire rak'ah, actions that are repeated, for example, prostrations, and the actions following them, must follow a specific order. So much so that if someone missed a prostration of a rak'ah and later remembered it while standing, bowing, or prostrating, he should make up for that prostration. He does not need to repeat whatever standing, bowing, or prostration he performed after the rak'ah containing that prostration before making it up. Instead, just performing Sajdah Sahw at the end is sufficient. However, if he remembered the missed prostration while in another act, and made up the prostration there, then whether that bowing or prostration needs to be repeated or not is a matter of disagreement. In Al-Hidayah, it is mentioned that repeating that pillar is not obligatory but preferable; they explained the reason being that sequence is not mandatory in actions that repeat. And in Fatawa Qadi Khan, it is stated that repeating that pillar is necessary; if not repeated, the prayer will become invalid. They explained the reason that by leaving this pillar and returning to what was before it, that pillar (which was in the middle) was missed and not completed, because before

finishing a pillar and rising, it is not considered complete. This is contrary to when one remembers the missed prostration after rising from bowing and then performs it; in that case, repeating the bowing is not necessary because the bowing was completed upon rising from it, so there is no longer a possibility of the bowing being missed. (T)

Now, in these passages, besides that benefit, there are two additional benefits: first, calling the prostration a repeated obligatory act, which shows that both prostrations are obligatory. Second, the reasoning that when a prostration was forgotten in the first rak'ah and, for example, remembered during the bowing of the second rak'ah, then immediately its...

1 Ghunyat al-Mustamli Sharh Munyat al-Musalli, Wajibat al-Salah, published by Suhail Academy Lahore, p. 297. Page 178 of 736

फ़तावा रज़विया - जिल्द छठा

अरबी पाठ: प्रत्येक रकात में जो दोहराया जाता है, जैसे कि सजदा, और उसके बाद जो आता है, वह अनिवार्य है। यहाँ तक कि यदि कोई रकात का एक सजदा भूल जाए और फिर उसके बाद की स्थिति —चाहे वह खड़े होना हो, रुकू हो या सजदा—में उसे याद आए, तो उसे वह सजदा करना होगा। उसे उस रकात के बाद वाले कार्यों, जैसे खड़े होना, रुकू या सजदा, जिन्हें उसने सजदे की कज़ा से पहले कर लिया है, दोहराने की आवश्यकता नहीं है। बल्कि, उसे केवल सजदा-ए-सह्व (भूल का सजदा) करने की आवश्यकता है। हालाँकि, इस बात पर मतभेद है कि क्या उस कार्य को दोहराना अनिवार्य है जिसमें उसे अपनी भूल याद आई। उदाहरण के लिए, यदि उसे रुकू या सजदा करते समय याद आए कि उसने पिछली रकात में सजदा नहीं किया था, तो उसे वह सजदा करना चाहिए। लेकिन क्या उसे वह रुकू या सजदा दोहराना होगा जिसमें उसे याद आया? 'अल-हिदाया' में कहा गया है कि उसे दोहराना अनिवार्य नहीं बल्कि अनुशंसित (मुस्तहब) है, यह तर्क देते हुए कि दोहराए जाने वाले कार्यों के बीच क्रम अनिवार्य नहीं है। और 'फ़तावा काज़ी ख़ान' में कहा गया है कि उसे दोहराना आवश्यक है, और यदि नहीं दोहराया गया, तो उसकी नमाज़ अमान्य हो जाएगी। इसका कारण यह बताया गया है कि अरकान (स्तंभों) में से पिछले की ओर लौटने से वह रुक्न (जो बीच में था) छूट गया और पूरा नहीं हुआ, क्योंकि रुक्न से उठने से पहले वह अधूरा ही रहता है। इसके विपरीत, यदि रुकू से उठने के बाद छूटा हुआ सजदा याद आए और वह उसे कर ले, तो रुकू को दोहराना आवश्यक नहीं है क्योंकि रुकू से उठने पर वह पूरा हो गया था, इसलिए अब रुकू के छूटने की कोई संभावना नहीं रही।

उपरोक्त का उर्दू अनुवाद (हिंदी में): उसे पूरा करे, फिर बैठने की स्थिति (क़ादा) में लौटे और सजदा-ए-सह्व करे (इस तरह नमाज़ हो जाएगी)। पूरी रकात में जो दोहराए जाने वाले कार्य हैं, जैसे सजदों में, और उनके बाद वाले कार्यों में क्रम अनिवार्य है। यहाँ तक कि अगर किसी ने एक रकात का सजदा छोड़ दिया और बाद में खड़े होने, रुकू या सजदा में याद आया, तो उस सजदे की कज़ा करे। उसकी कज़ा से पहले उस सजदे वाली रकात के बाद जो कुछ खड़े होना, रुकू या सजदा कर लिया है, उसे दोहराने की ज़रूरत नहीं है, बल्कि अंत में सिर्फ़ सजदा-ए-सह्व करना ही काफ़ी है। लेकिन अगर छूटा हुआ सजदा याद आया और वहाँ उसने वह सजदा कज़ा कर लिया, तो क्या वह रुकू या सजदा दोहराना पड़ेगा या नहीं, इसमें मतभेद है। तो हिदाया में है कि उस रुक्न को दोहराना वाजिब नहीं है बल्कि मुस्तहब है, उन्होंने वजह यह बयान की कि दोहराने वाले कार्यों में क्रम फ़र्ज़ नहीं है। और

फ़तावा काज़ी ख़ान में है कि उस रुक्न को दोहराना ज़रूरी है, अगर नहीं दोहराया तो नमाज़ फ़ासिद (अमान्य) हो जाएगी। उन्होंने वजह यह बयान की कि इस रुक्न को छोड़कर मा-क़ब्ल (पहले वाले) की तरफ़ लौटने से वह रुक्न (जो दरमियान में था) छूट गया और मुकम्मल न हुआ, क्योंकि रुक्न मुकम्मल करके उठने से पहले वह मुकम्मल नहीं होता। इसके विपरीत, जब रुक्न मुकम्मल करके उठने के बाद छूटा हुआ सजदा याद आए और कज़ा करे, तो रुकू को दोहराना ज़रूरी नहीं क्योंकि रुकू से उठने पर रुकू मुकम्मल हो गया, तो अब रुकू के छूटने की संभावना न रही। (त)

अब इन इबारतों में उस फ़ायदे के अलावा दो फ़ायदे और हैं: एक सजदे को 'फ़र्ज़ मुकर्रर' कहना, जिससे पता चला कि दोनों सजदे फ़र्ज़ हैं। दूसरा तर्क यह कि जब पहली रकात में एक सजदा भूल गया और मिसाल के तौर पर दूसरी के रुकू में याद आया कि फ़ौरन उसकी...

1 ग़ुनियत अल-मुस्तमली शरह मुनियत अल-मुसल्ली, वाजिबात अस-सलाह, प्रकाशित सुहैल एकेडमी लाहौर, पृष्ठ 297। पेज 178 / 736

جلد ششم فتاوی رضویہ ما يتكرر في كل ركعة كالسجود وبين مابعده واجب حتى لو ترك سجدة من ركعة ثم تذكرها فيما بعدها من قيام او ركوع اوسجود فانہ يقضيها ولا يقضي ما فعله قبل قضائها مما هو بعد ركعتها من قيام او ركوع اوسجود بل يلزمه سجود السهو فحسب لكن اختلف في لزوم قضاء ما تذكر قضائها فيه كمالو تذ كرهو راكع او ساجد انه لم يسجد فی الركعة التی قبلها فانه يسجدها وهل يعيد الركوع او السجود المتذكر فيه ففی الهداية انه لا يحب اعادته بل تستحسب معللا بأن الترتيب ليس بفرض بين ما يتكرر من الافعال وفی فتاوی قاضی خان انه يعيده ولو لم يعده فسدت صلاته معللا بانه ارتفض بالعود الی ما قبله من الاركان لانه قبل الرفع منه يقبل الرفض بخلاف مالو تذكر السجدة بعد ما رفع من الركوع لانه بعد ماتم بالرفع لا يقبل الرفض - 1 اسے بجالائے پھر قعدہ لوٹائے اور سجدہ سہو کرے (اس طرح نماز ہو جائے گی) اور پوری رکعت میں جو متکرر افعال ہیں مثلاً سجود میں، اور ان کے بعد والے افعال میں ترتیب لازم ہے حتیٰ کہ اگر کسی نے ایک رکعت کا سجدہ ترک کر دیا اور بعد میں قیام، رکوع یا سجدہ میں یاد آیا تو سجدہ کو قضا کرے اسکی قضا سے پہلے اس سجدہ والی رکعت کے بعد جو کچھ قیام، رکوع یا سجدہ کر لیا ہے اس کا اعادہ نہ کرے بلکہ آخر میں صرف سجدہ سہو کرے کافی ہے لیکن چھوٹا ہوا سجدہ یاد آیا تو وہاں اس نے وہ سجدہ قضا کر لیا تو کیا یہ رکوع یا سجدہ قضا کرنا پڑے گا یا نہیں اس میں اختلاف ہے، تو ہدایہ میں ہے کہ اس رکن کا اعادہ واجب نہیں ہے بلکہ مستحب ہے انہوں نے وجہ یہ بیان کی کہ تکرار والے افعال میں ترتیب فرض نہیں ہے۔ اور فتاوی قاضی خان میں ہے کہ اس رکن کا اعادہ ضروری ہے، اگر اعادہ نہ کیا نماز فاسد ہو جائے گی۔ انہوں نے وجہ یہ بیان کی ہے کہ اس رکن کو چھوڑ کر ماقبل کی طرف لوٹنے سے وہ رکن (درمیان میں چھوٹ گیا اور مکمل نہ ہوا) کیونکہ رکن مکمل کرکے اٹھنے سے پہلے وہ مکمل نہیں ہوتا۔ بخلاف جبکہ رکن کو مکمل کرکے اٹھنے کے بعد چھوٹا ہوا

سجدہ یاد آئے اور قضا کرے تو رکوع کا اعادہ ضروری نہیں کیونکہ رکوع سے اٹھنے پر رکوع مکمل ہو گیا تو اب رکوع کے چھوٹنے کا احتمال نہ رہا۔ (ت)

اب ان عبارات میں اُس فائدے کے علاوہ دو فائدہ زائدہ ہیں ایک سجدہ کو فرض مکرر کہنا، معلوم ہوا کہ دونوں سجدے فرض ہیں، دوم تعلیل کہ جب پہلی رکعت میں ایک سجدہ بھول گیا اور مثلاً دوسری کے رکوع میں یاد آیا کہ معاً اس کی

1 غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی واجبات الصلوۃ مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۲۹۷ Page 178 of 736

Fatawa-e-Razvia Volume 6

If he performed it, then he should repeat that bowing (ruku) because returning to a previous pillar makes this ruku as if it never happened, i.e., null and void. It became known that the second prostration (sajdah) is not only obligatory (farz) but is a pillar (rukn). The reason given in "Hidayah" for considering the repetition of this ruku as merely recommended (mustahab), which is the preferred view, is that for a farz which is repeated in one unit of prayer (rak'at), i.e., sajdah, the sequence between it and subsequent farz acts such as standing (qiyam), ruku, and sujud in the next rak'at is not farz but only mandatory (wajib), such that its omission can be compensated for by the prostration of forgetfulness (sajdah-e-sahw). In short, the matter is as clear as the sun. A sincere request to the sacred teachers: denying a definitive obligation (farz-e-qat'i) and the consensus of the community (ijma-e-ummat) is no small matter. Therefore, if they deem it appropriate, they should renew their declaration of faith (Kalima), Islam, and marriage. Caution for the future. And success is only through Allah, the Mighty, the Forgiver. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 410: Sent by Mazhar Hussain, Imam of the Mosque at Gol Bazaar, District Bilaspur, C.P. Shop of Sheikh Sulaiman Umar Sahib, General Merchant, 27 Muharram 1330 AH.

Zaid, while in ruku and sajdah during prayer, only joins his ankles together. Amr says that this act belongs to the Wahhabis, it is forbidden (haram), and must be abandoned. Should Hanafi people consider this act permissible, or disliked to the point of prohibition (makruh-e-tahrimi)?

The Answer: God forbid! This is neither an act of the Wahhabis, nor is it forbidden or must be abandoned. Rather, joining the ankles in ruku is written as a Sunnah in Ghunyah Sharh Munyah, Jami' al-Rumuz, Mujtaba Sharh Quduri, Durr-e-Mukhtar, Hashiya Hamwi, Fathullah al-Mu'in, and Tahtawi 'ala Maraqi al-Falah, and 'ala Durr-e-Mukhtar etc. And we have mentioned all their texts and proofs in our fatwas. (T) In Durr-e-Mukhtar, it says:

[Arabic Quote]: "Its sunnahs are the Takbir of bowing (ruku), saying the glorification (tasbih) therein three times, and joining his ankles." The sunnahs of prayer are: Takbir of ruku, saying tasbih three times in it, and joining the ankles together. (T)

In the description of prayer (Sifat-us-Salah) of the same book, it says: [Arabic Quote]: "He should keep his fingers spread out, and it is sunnah to join his ankles." He should keep his fingers spread, and joining the ankles is sunnah. (T)

And for sajdah, joining the ankles was stated as sunnah by Allama Sayyid Abu Masood al-Azhari in Hawashi Kanz. He said in Sunan: "Joining the ankles in prostration is a sunnah." (Joining the ankles in sujud is sunnah. T)

Footnotes: 1. Durr-e-Mukhtar, Chapter: Description of Prayer, published by Mujtabai Delhi, 1/73. 2. Durr-e-Mukhtar, Chapter: Description of Prayer, published by Mujtabai Delhi, 1/75. 3. Fathullah al-Mubeen, Discussion on Sunnahs of Prayer, published by H.M. Saeed Company Karachi, 1/177.

फ़तावा रज़विया जिल्द शशम

क़ज़ा कर ली तो उस रुकू का फिर इयादा करे कि रुक्न-ए-साबिक़ की तरफ़ औद करने से ये रुकू कान लम् यकुन यानी कल-अदम हो गया। मालूम हुआ कि सज्दह-ए-सानिया सिर्फ़ फ़र्ज़ ही नहीं बल्कि रुक्न है और हिदाया में जो इस रुकू का इयादा सिर्फ़ मुस्तहब जाना और यही राजह है इसकी वजह ये फ़रमाई कि जो फ़र्ज़ एक रकअत में मुकर्रर है यानी सज्दह उसमें और उसके बाअद फ़राइज़ मसलन क़याम व रुकू व सुजूद रकअत आयिंदा में तरतीब फ़र्ज़ नहीं सिर्फ़ वाजिब है कि इसके तर्क की तलाफ़ी बसज्दह-ए-सहव हासिल, ग़रज़ मसला आफ़ताब की तरह रौशन है मुक़द्दस मुदर्रिसीन से बनज़रे-खैर-ख़्वाही गुज़ारिश कि फ़र्ज़-ए-क़तई व इज्मा-ए-उम्मत का इंकार सहल नहीं लिहाज़ा अगर मुनासिब जानें कलिमा व इस्लाम व निकाह की तजदीद फ़रमालें आइंदा एहतियात व मा-तौफ़ीक़ी इल्ला बिल्लाहिल अज़ीज़िल ग़फ़्फ़ार। वल्लाहु तआला आलम।

मसला नंबर ४१०: मुरसला मज़हर हुसैन इमाम मस्जिद गोल बाज़ार ज़िला बिलासपुर। सी-पी- दुकान शैख़ सुलैमान उमर साहब जनरल मर्चेंट २७ मुहर्रम १३३० हि.

ज़ैद नमाज़ में सिर्फ़ बहालत-ए-रुकू व सुजूद इल्साक़-ए-कअबीन (टखनों को मिलाना) करता है अम्र कहता है कि फ़ेल वहाबियों का है हराम है और वाजिब-उत-तर्क है हनफ़ी लोग इस फ़ेल को जायज़ समझें या मकरूह-ए-तहरीमी?

अल-जवाब: हाशा लिल्लाह न ये फ़ेल वहाबिया का है न हराम न वाजिब-उत-तर्क बल्कि रुकू में इल्साक़-ए-कअबीन ग़ुनया शरह मुनया व जामे-उर-रुमूज़ व मुज्तबा शरह क़ुदूरी व दुर्रे मुख़्तार व हाशियह हमवी व फ़तह-उल्लाह अल-मुईन व तहतावी अला मराक़िल फ़लाह व अला दुर्रे मुख़्तार वग़ैरहुमा में सुन्नत लिखा। वक़द ज़करना नुसुसहा जमीअन फ़ी फ़तावा ना (हमने इन सब की इबारात व नुसूस को अपने फ़तावा में ज़िक्र किया है। त) दुर्रे मुख़्तार में है।

सुननहा तकबीरुर रुकू वत्तस्बीह फ़ीहि सलाःसा व इल्साक़ कअबैहि- 1 नमाज़ की सुन्नतें रुकू की तकबीर, उसमें तीन मर्तबा तस्बीह और टखनों का मुत्तसिल करना है। (त)

इसी की सिफ़त-उस-सलात में है: युफ़र्रिजु अःसाबियहु व युःसन्नु अन युलःसिक़ कअबैहि 2- उंगलियाँ कुशादा रखे, और टखनों को मिलाना सुन्नत है। (त)

और सज्दह में इल्साक़-ए-कअबीन को अल्लामा सय्यद अबू मसूद अल-अज़हरी ने हवाशी कंज़ में सुन्नत बताया। सुनन में फ़रमाया: इल्साक़ु कअबैहि फ़िस सुजूद सुन्नह 3। (सुजूद में टखनों को मिलाना सुन्नत है। त)

पाद-टिप्पणी: 1 दुर्रे मुख़्तार बाब सिफ़त-उस-सलात मतबुआ मुज्तबाई देहली १/७३ 2 दुर्रे मुख़्तार बाब सिफ़त-उस-सलात मतबुआ मुज्तबाई देहली १/७५ 3 फ़तह-उल्लाह अल-मुबीन मबहस सुनन अस-सलात मतबुआ एच एम सईद कंपनी कराची १/१७७

पेज 179/736

قضا کر لی تو اس رکوع کا پھر اعادہ کرے کہ رکن سابق کی طرف عود کرنے سے یہ رکوع کان لم یکن یعنی کالعدم ہوگیا۔ معلوم ہوا کہ سجدہ ثانیہ صرف فرض ہی نہیں بلکہ رکن ہے اور ہدایہ میں جو اس رکوع کا اعادہ صرف مستحب جانا اور یہی راجح ہے اس کی وجہ یہ فرمائی کہ جو فرض ایک رکعت میں مکرر ہے یعنی سجدہ اُس میں اور اسکے بعد فرائض مثلاً قیام ورکوع وسجود رکعت آئندہ میں ترتیب فرض نہیں صرف واجب ہے کہ اس کے ترک کی تلافی بسجدہ سہو حاصل ، غرض مسئلہ آفتاب کی طرح روشن ہے مقدس مدرسین سے بنظر خیر خواہی گزارش کہ فرض قطعی واجماع امت کا انکار سہل نہیں لہذا اگر مناسب جانیں کلمہ واسلام و نکاح کی تجدید فرمالیں آئندہ احتیاط و ماالتوفیق الا باللہ العزیز الغفار۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۴۱۰: مرسلہ مظہر حسین امام مسجد گول بازار ضلع بلارسپور۔ سی- پی- دکان شیخ سلیمان عمر صاحب جنرل مرچنٹ ۲۷ محرم ۱۳۳۰ھ

زید نماز میں صرف بحالت رکوع و سجود الصاق کعبین کرتا ہے عمرو کہتا ہے کہ فعل وہابیوں کا ہے حرام ہے اور واجب الترک ہے حنفی لوگ اس فعل کو جائز سمجھیں یا مکروہ تحریمی؟

الجواب: حاشا اللہ نہ یہ فعل وہابیہ کا ہے نہ حرام نہ واجب الترک بلکہ رکوع میں الصاق کعبین غنیۃ شرح منیہ و جامع الرموز و مجتبٰی شرح قدوری و در مختار و حاشیہ حموی و فتح اللہ المعین و طحطاوی علی مراقی الفلاح و علی در مختار وغیرہما میں سنت لکھا۔ وقد ذکرنا نصوصھا جمیعاً فی فتاو نا (ہم نے ان سب کی عبارات و نصوص کو اپنے فتاوٰی میں ذکر کیا ہے۔ ت) در مختار میں ہے۔

سننها تکبیر الرکوع والتسبیح فیه ثلاثاً والصاق کعبیه- 1 نماز کی سنتیں تکبیر رکوع اس میں تین مرتبہ تسبیح اور ٹخنوں کا متصل کرنا ہے۔ (ت)

اسی کی صفۃ الصلاۃ میں ہے: یفرج اصابعه ویسن ان یلصق کعبیه 2- انگلیاں کشادہ رکھے ، اور ٹخنوں کو ملانا سنت ہے۔ (ت)

اور سجدہ میں الصاق کعبین کو علامہ سید ابو مسعود الازہری نے حواشی کنز میں سنت بتایا۔ سنن میں فرمایا: الصاق کعبیه في السجود سنة 3۔ (سجود میں ٹخنوں کو ملانا سنت ہے۔ ت)

حواشی: 1 در مختار باب صفۃ الصلوۃ مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱ / ۷۳ 2 در مختار باب صفۃ الصلوۃ مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱ / ۷۵ 3 فتح اللہ المبین مبحث سنن الصلاۃ مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱ / ۱۷۷

صفحہ 179 از 736

Fatawa Razvia - Volume 6

In 'Sifat-us-Salat' (Description of Prayer), it is stated:

Arabic	English Translation
كما يسن الصاق الكعبين فى الركوع فكذا فى السجود ايضا - 1	Just as it is Sunnah to join the ankles in bowing (Ruku'), it is likewise Sunnah in prostration (Sujood) as well. (T)

Indeed, regarding prostration, this is only their statement, although Allama Tahtawi followed them and the reference to Sharh Alai occurred inadvertently. In that, only the matter regarding bowing (Ruku') is mentioned, and the justification provided by Allama Shami for this is a point of discussion. In Tahtawi ala al-Durr, it is mentioned:

Arabic	English Translation
قوله يسن ان يلصق الخ اى فى الركوع والسجود ابوالسعود - 2	His statement "It is Sunnah to join..." etc. i.e., joining is Sunnah in bowing and prostration, Abu al-Sa'ud. (T)

In Radd al-Muhtar it is stated:

Arabic	English Translation
قال السيد ابو السعود وكذا فى السجود (ايضا) وسبق فى السنن ايضا اه والذى سبق هو قوله الصاق كعبيه فى السجود سنة. در اه ولا يخفى ان هذا سبق نظر فان شارحنا لم يذكر ذلك لا فى الدر المختار ولا فى الدر المنتقى ولم اره لغيره ايضا فافهم، نعم ربما يفهم ذلك من انه اذ كان السنة فى الركوع الصاق الكعبين ولم يذكروا تفريجهما بعده فالاصل بقاء وهما ملصقين فى حالة السجود ايضا تامل 3 اه ما فى الشامى ورأيتنى كتبت عليه ما نصه تاملنا فلم نجده وافياً فان (اقول) الحركة الانتقالية	Sayyid Abu al-Sa'ud said: And likewise in prostration (also), and it has already been mentioned in the Sunnah part as well. The words of the previous statement are that joining the ankles in prostration is Sunnah. End quote from Durr. It should be clear that in this statement of his (which has passed before), there is an error of oversight because our commentator did not mention it in Durr al-Mukhtar nor in al-Durr al-Muntaqa, and I have not seen it in the text of anyone else either, so understand. Yes, sometimes it is understood from this that since joining the ankles is Sunnah in bowing (Ruku') and they did not mention separating them after it, the default principle is that the ankles remain joined in the state of prostration as well. Contemplate. End of the marginal note of Shami. And I remember that I too have written...

1. Fath al-Mu'in, Section: 'And when he intends to enter the prayer' etc., published by H.M. Saeed Company, Karachi, 1/189.
2. Hashiyat al-Tahtawi 'ala al-Durr al-Mukhtar, Section: 'And when he intends to enter the prayer' etc., Dar al-Ma'rifah, Beirut, 1/220.
3. Radd al-Muhtar, Chapter: Description of Prayer, published by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/364.

फ़तावा रज़विया - छठा खंड

'सिफ़त-उस-सलात' (नमाज़ का विवरण) में फ़रमाया:

अरबी	हिंदी अनुवाद
जैसे रुकू में टखनों को मिलाना सुन्नत है, उसी तरह सज्दे में भी सुन्नत है। (त)	كما يسن الصاق الكعبين فى الركوع فكذا فى السجود ايضا - 1

हाँ, सज्दे के बारे में यह केवल उन्हीं का बयान है, हालाँकि अल्लामा तहतावी ने उनका अनुसरण किया और शरह अलाई का हवाला गलती से हो गया। उसमें केवल रुकू के बारे में ज़िक्र है और अल्लामा शामी ने जो इसकी तौजीह (व्याख्या) फ़रमाई वह विचारणीय है। तहतावी अलल-दुर्र में है:

अरबी	हिंदी अनुवाद
उनका कथन "यसन्नु अन यल्सिक़" आदि, अर्थात मिलाना सुन्नत है रुकू और सज्दे में, अबू अल-सऊद। (त)	قوله يسن ان يلصق الخ اى فى الركوع والسجود ابوالسعود - 2

रद्दुल मुहतार में है:

अरबी	हिंदी अनुवाद
सैय्यद अबू अल-सऊद कहते हैं, इसी तरह सज्दे में भी, और सुन्नत के विवरण में भी गुज़र चुका है। और गुज़रे हुए कथन के शब्द ये हैं कि सज्दे में टखनों को मिलाना सुन्नत है। स्पष्ट रहे कि उनके इस कथन में (जो पीछे गुज़र चुका है) दृष्टि की चूक है क्योंकि हमारे व्याख्याकार ने इसे न दुर्रे मुख़्तार में ज़िक्र किया और न ही दुर्रे मुंतक़ा में, और न ही मैंने इसे किसी अन्य की इबारत में देखा है, अतः इसे समझें। हाँ, कभी-कभी इससे यह अर्थ निकलता है कि जब रुकू में टखनों का मिलाना सुन्नत है और उसके बाद उन्हें अलग रखने का ज़िक्र नहीं किया गया, तो मूल यही है कि सज्दे की स्थिति में भी टखने मिले ही रहें। गौर से समझ लें।	قال السيد ابو السعود وكذا فى السجود وسبق فى السنن ايضا اه والذى (ايضا) سبق هو قوله الصاق كعبيه فى السجود سنة۔ در اه ولا يخفى ان هذا سبق نظر فان شارحنا لم يذكر ذلك لا فى الدر المختار ولا فى الدر المنتقى ولم اره لغيره ايضا فافهم، نعم ربما يفهم ذلك من انه اذ كان السنة فى الركوع الصاق الكعبين ولم يذكروا تفريجهما بعده فالاصل بقاء وهما ملصقين فى حالة السجود ايضا تامل 3 اه ما فى الشامى ورأيتنى كتبت عليه ما نصه (اقول)

अरबी	हिंदी अनुवाद
अल्लामा शामी का हाशिया समाप्त। और मुझे याद पड़ता है कि मैंने भी शामी पर...	تاملنا فلم نجده وافياً فان الحركة الانتقالية

1. फ़तह अल-मुईन, अध्याय: 'और जब वह नमाज़ में प्रवेश करने का इरादा करे' आदि, मुद्रित एच.एम. सईद कंपनी, कराची, 1/189.
2. हाशियत अल-तहतावी अलल दुर्र अल-मुख़्तार, अध्याय: 'और जब वह नमाज़ में प्रवेश करने का इरादा करे' आदि, दार अल-मआरिफ़ा, बेरूत, 1/220.
3. रद्दुल मुहतार, अध्याय: सिफ़त-उस-सलात, मुद्रित मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 1/364.

فتاوٰی رضویہ جلد ششم صفة الصلاة میں فرمایا:

| کما یسن الصاق الکعبین فی الرکوع فکذا فی السجود ایضا- 1 | جیسا کہ رکوع میں ٹخنوں کا ملانا سنت ہے اسی طرح سجدہ میں بھی سنت ہے۔ (ت) |

ہاں درباره سجود یہ صرف انھیں کا بیان ہے اگرچہ علامہ طحطاوی نے ان کا اتباع کیا اور شرح علائی کا حوالہ سہواً واقع ہوا اس میں صرف درباره رکوع مذکور ہے اور علامہ شامی نے جو اس کی توجیہ فرمائی محل کلام ہے۔ طحطاوی علی الدر میں ہے:

| قوله یسن ان یلصق الخ ای فی الرکوع والسجود ابوالسعود- 2 | اس کا قول "یسن ان یلصق" الخ (الصاق سنت ہے یعنی رکوع اور سجدہ میں، ابوالسعود۔ (ت) |

رد المحتار میں ہے:

| قال السید ابو السعود وکذا فی السجود (ایضا) وسبق فی السنن ایضا اه والذی سبق هو قوله الصاق کعبیه فی السجود سنة۔ در اه ولا یخفی ان هذا سبق نظر فان شارحنا لم یذکر ذلك لا فی الدر المختار ولا فی الدر المنتقی ولم اره لغیره ایضا فافهم، نعم ربما یفهم ذلك من انه اذ کان السنة فی الرکوع الصاق الکعبین ولم یذکروا تفریجهما بعده فالاصل بقاء وهما ملصقین فی حالة السجود ایضا تامل 3 اه ما فی الشامی ورأیتنی کتبت علیه ما نصه (اقول) تاملنا فلم نجده وافیاً فان الحرکة الانتقالیة | سید ابوالسعود کہتے ہیں اسی طرح سجود میں بھی، اور بیان سنن میں بھی گزر چکا ہے اور گزرے ہوئے قول کے الفاظ یہ ہیں کہ سجدہ میں الصاق کعبین سنت ہے دراہ واضح رہے کہ ان کے اس قول (جو پیچھے گزر چکا ہے) میں نظر کی خطا ہے کیونکہ ہمارے شارح نے اسے نہ در مختار میں ذکر کیا اور نہ ہی در منتقی میں، اور میں نے کسی غیر کی عبارت میں بھی یہ نہیں دیکھا اسے سمجھو،

ہاں اکثر اوقات اس سے یہ مفہوم ہوتا ہے کہ جب رکوع میں ٹخنوں کا ملانا سنت ہے اور اس کے بعد ان کا کشادہ رکھنا انہوں نے بیان نہیں کیا تو اصل یہی ہے کہ حالت سجود میں بھی ٹخنے متصل ہی رہیں، غور سے سمجھ لو اھ شامی کا حاشیہ ختم۔ اور مجھے یاد پڑتا ہے کہ میں نے بھی شامی

|

---

1 فتح المعین فصل و اذا اراد الدخول فی الصلوۃ الخ مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱/ ۱۸۹ 2 حاشیۃ الطحطاوی علی الدر المختار فصل و اذا اراد الدخول فی الصلوۃ الخ دار المعرفۃ بیروت ۱/ ۲۲۰ 3 رد المحتار باب صفۃ الصلوۃ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/ ۳۶۴

Fatawa Rizvia, Volume 6

[Arabic Passage]: ...towards prostration (Sajdah), if nature was left for widening except that care is taken for joining with specific intent. Such things do not need explanation; rather, mentioning it only in bowing (Ruku') is a proof that it is sought only there, otherwise it would have been mentioned in prostration too. So know this, for the matter is clear.[1]

[Urdu Explanation]: Something is written on it, the words of which are: (I say) We pondered, but we could not find this issue as though it never existed, because if the movement of transition towards prostration is natural and inherent, then in that case there will be widening, but in that case when special care is taken for joining, and there is no need for the explanation of such issues; rather, its mention only in bowing is proof that it is required only in it, otherwise its mention would have been made in prostration as well, know it because the matter is clear. (T)

And some later scholars have also discussed its Sunnah status regarding Ruku':

[Arabic Passage]: He has a treatise on this with me, and the most that can be said here is that general books of the school (Madhhab) are devoid of it. It was only Zahidi who explained it, and the rest followed him. I have explained in my book "Kafil al-Faqih al-Fahim" that strangeness is not removed by a multitude of narrators when their source is only one, especially someone like Zahidi.

[Urdu Explanation]: Regarding this issue, I have a treatise with me. The most that can be said is that general books of the school are empty of it; only Zahidi explained it and the remaining jurists followed him. And I have stated in my book "Kafil al-Faqih al-Fahim" that strangeness does not end due to a multitude of narrators when the reference point of all of them is one, especially a person like Zahidi. (T)

Anyway, calling it forbidden (Haraam) and an act of Wahhabis is ignorance, and Allah Almighty knows best.

Issue No. 211: Questioned from Najibabad, district Bijnor, 7 Dhu al-Hijjah 1329 AH. Is reciting 'Subhanaka Allahumma' in prayer Fard (obligatory) or Wajib (mandatory)? If a follower (Muqtadi) had not finished reciting 'Subhanak' and the Imam started the recitation (Qira'at), should he leave it incomplete and be silent, or should he finish it immediately and then be silent? A Wahhabi preacher stated this issue regarding 'Subhanaka Allahumma' to someone: that if the Imam has started the recitation and someone joins the congregation now, he should recite 'Subhanaka Allahumma' in

such a way that wherever the Imam pauses even slightly for the purpose of breathing, at that time he should speak one word and recite 'Subhanaka Allahumma'. For example, when he stops for the first time, say 'Subhanaka Allahumma' immediately, then when he pauses a second time, say 'wa bihamdika', then when he takes a breath for the third time, he should say 'wa tabaraka ismuka'. In short, it should be finished this way. This can be done in every prayer, but in Maghrib, whether one joins in the first Rak'ah or the second, 'Subhanaka Allahumma' in the third Rak'ah, and Isha...

[1] Jadd al-Mumtar, Kitab al-Salat, Al-Majma' al-Islami, Mubarakpur, India, 1/223.

फ़तावा रज़विया, जिल्द शश्म (छठा)

[अरबी खंड]: ...सजदे की ओर, यदि स्वभाव को चौड़ा छोड़ दिया जाए, सिवाय इसके कि विशेष इरादे के साथ जोड़ने का ध्यान रखा जाए। ऐसी बातों को स्पष्ट करने की आवश्यकता नहीं है; बल्कि केवल रुकूअ में इसका उल्लेख होना इस बात का प्रमाण है कि यह केवल वहीं अपेक्षित है, अन्यथा इसका उल्लेख सजदे में भी किया गया होता। अतः इसे जान लो, क्योंकि मामला स्पष्ट है।[1]

[उर्दू व्याख्या]: इस पर कुछ लिखा है जिसके शब्द ये हैं: (मैं कहता हूँ) हमने विचार किया लेकिन हम इस मसले को जैसा था वैसा नहीं पा सके क्योंकि यदि सजदे की ओर संक्रमण की गति स्वाभाविक और कुदरती हो तो उस स्थिति में फैलाव होगा, लेकिन उस स्थिति में जब जुड़ने का विशेष ध्यान रखा जाए, और इस तरह के मसलों को स्पष्ट करने की आवश्यकता नहीं है; बल्कि केवल रुकूअ में इसका उल्लेख होना इस बात का प्रमाण है कि केवल उसी में इसकी माँग है, अन्यथा इसका उल्लेख सजदे में भी किया गया होता। इसे जान लो, क्योंकि मामला स्पष्ट है। (त)

और कुछ बाद के विद्वानों ने रुकूअ के बारे में सुन्नत होने के संबंध में भी चर्चा की है:

[अरबी खंड]: इस पर उनका एक लेख मेरे पास है, और यहाँ जो सबसे अधिक कहा जा सकता है वह यह है कि मज़हब (सम्प्रदाय) की सामान्य किताबें इससे खाली हैं। इसे केवल ज़ाहिदी ने स्पष्ट किया था और बाकियों ने उनका अनुसरण किया। मैंने अपनी पुस्तक "कफ़ील अल-फ़क़ीह अल-फ़ाहिम" में स्पष्ट किया है कि वर्णनकर्ताओं की अधिकता से अजनबियत दूर नहीं होती जब उन सभी का स्रोत केवल एक हो, विशेष रूप से ज़ाहिदी जैसा कोई व्यक्ति।

[उर्दू व्याख्या]: इस मसले के बारे में मेरे पास एक लेख है। अधिक से अधिक जो कहा जा सकता है वह यह है कि मज़हब की सामान्य किताबें इससे खाली हैं; केवल ज़ाहिदी ने इसे बयान किया और बाकी फ़ुक़हा (न्यायशास्त्रियों) ने उनका अनुसरण किया। और मैंने अपनी किताब "कफ़ील अल-फ़क़ीह अल-फ़ाहिम" में यह बयान किया है कि वर्णनकर्ताओं की अधिकता की वजह से अजनबियत खत्म नहीं हो जाती जबकि उन सब का मरजा (स्रोत) एक हो, विशेष रूप से ज़ाहिदी जैसा आदमी। (त)

बहरहाल, इसे हराम और वहाबियों का कृत्य कहना नादानी है, और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है।

मसला नंबर २११: मुस्तौलिह (पूछने वाला) नजीबाबाद, जिला बिजनौर, ७ ज़ुल हिज्जा १३२९ हिजरी। नमाज़ में 'सुब्हानकल्लाहुम्मा' पढ़ना फ़र्ज़ है या वाजिब? यदि मुक्तदी 'सुब्हानक' खत्म नहीं कर पाया था कि इमाम ने क़िरात (कुरान पाठ) शुरू कर दी, तो क्या उसे अधूरा छोड़कर चुप हो जाना चाहिए या तुरंत खत्म करके चुप होना चाहिए? एक वहाबी उपदेशक ने 'सुब्हानकल्लाहुम्मा' के बारे में एक व्यक्ति से यह मसला बयान किया कि यदि इमाम ने क़िरात शुरू कर दी हो और अब कोई व्यक्ति जमात में शामिल हो, तो उसे चाहिए कि 'सुब्हानकल्लाहुम्मा' इस तरह पढ़े कि जहाँ-जहाँ इमाम सांस लेने के उद्देश्य से थोड़ा भी रुके, उस समय एक-एक शब्द बोलकर 'सुब्हानकल्लाहुम्मा' पढ़ लिया जाए। उदाहरण के लिए, जब पहली बार रुके तो तुरंत कहे 'सुब्हानकल्लाहुम्मा', फिर जब दूसरी बार ठहरे तो कहे 'व बिहम्दिका', फिर जब तीसरी बार सांस ले तो कहना चाहिए 'व तबारकस्मुका', सारांश यह कि इसी तरह इसे पूरा कर लिया जाए। ऐसा हर नमाज़ में कर सकते हैं, लेकिन मग्रिब में चाहे पहली रकात में शामिल हो या दूसरी में, 'सुब्हानकल्लाहुम्मा' तीसरी रकात में, और ईशा...

[1] जद अल-मुम्तार, किताब अस-सलात, अल-मजमा अल-इस्लामी, मुबारकपुर, भारत, १/२२३।

पृष्ठ १८१ का ७३६

الی السجود ان خلی فیھا الطبع بالتفریج الا ان یحافظ علی الالصاق بالقصد الخاص ومثل ھذا لایحتاج الی البیان بل الاختصار علی ذکرہ فی الرکوع دلیل علی انہ لایطلب الا فیہ والاذکرہ فی السجود ایضا فاعرفہ فان الامر واضح۔1

پر کچھ لکھا ہے جس کے الفاظ یہ ہیں (اقول) ہم نے تامل کیا مگر ہم کان لم یکن اس مسئلہ کو نہ پاسکے کیونکہ حرکت انتقال سجدہ کی طرف اگر طبعاً و فطرتاً ہو تو اس صورت میں کشادگی ہو گی مگر اس صورت میں جب اتصال کا خصوصی اہتمام کیا جائے اور اس طرح کے مسائل کے بیان کی احتیاج نہیں بلکہ صرف رکوع میں اس کا تذکرہ ہونا دلیل ہے کہ صرف اسی میں اس کا مطالبہ ہے ورنہ اس کا تذکرہ سجدہ میں بھی کیا جاتا ، اسے جان لے کیونکہ معاملہ واضح ہے (ت)

اور بعض متاخرین علما نے درباره رکوع بھی سنیت میں کلام کیا :

ولہ فی ذلک رسالۃ عندی واقصی ما یقال ھنا ان عامۃ کتب المذھب خالیۃ عنہ وانما انہ بینہ الزاھدی والباقون انما تبعوہ وقد بینت فی کتابی "کفل الفقیہ الفاھم" ان الغرابۃ لاتندفع بکثرۃ الناقلین اذالم یکن مرجعھم الا واحدا لاسیما مثل الزاھدی۔

اس مسئلہ سے متعلق میرے پاس ایک رسالہ ہے ، زیادہ سے زیادہ جو کہا جاسکتا ہے وہ یہ ہے کہ عامہ کتب مذہب اس سے خالی ہیں صرف زاہدی نے اسے بیان کیا اور باقی فقہاء نے ان کی اتباع کی ہے اور میں نے اپنی کتاب "کفل الفقیہ الفاھم" میں یہ بیان کیا ہے کہ کثرت ناقلین کی وجہ سے غرابت ختم نہیں ہو جاتی جبکہ ان سب کا مرجع ایک ہو خصوصاً زاہدی جیسا آدمی (ت)

بہر حال اسے حرام و فعلِ وہابیہ کہنا نادانی ہے ، واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۲۱۱: مسئولہ از نجیب آباد ضلع بجنور ۷ ذی الحجہ ۱۳۲۹ھ نماز میں سبحانک اللھم پڑھنا فرض یا واجب ، مقتدی سبحان ختم نہ کرنے پایا تھا کہ امام نے قرات شروع کر دی اس کو ناتمام چھوڑ کر خاموش ہو جانا پڑے یا فوراً ختم کر کے خاموش ہو جانا چاہئے ، ایک وہابی واعظ نے سبحانک اللھم کے بارے میں ایک شخص سے یہ مسئلہ بیان کیا کہ اگر امام نے قرات شروع کر دی ہو اور اب کوئی شخص اگر جماعت میں شامل ہو تو اس کو چاہئے کہ سبحانک اللھم اس طرح پڑھے کہ جہاں جہاں امام سانس لینے کی غرض سے ذرا بھی رکے اس وقت ایک ایک کلمہ بول کر کے سبحانک اللھم پڑھ لیا جائے مثلاً جب اول مرتبہ رکا تو فوراً کہے سبحنک اللھم پھر جب دوسری مرتبہ ٹھہرا تو کہے و بحمدک پھر جب تیسری بار سانس لے تو کہنا چاہئے و تبارک اسمک غرض اسی طرح ختم کر لیا جائے ایسا ہر نماز میں کر سکتے ہیں مگر مغرب میں خواہ پہلی رکعت میں شامل ہو یا دوسری میں سبحانک اللھم تیسری رکعت میں اور عشاء

1 جد الممتار کتاب الصلوۃ المجمع الاسلامی مبارک پور ہند ۱/ ۲۲۳

Fatawa Razawiyya, Volume 6 Can it be recited in the third or fourth rak'at, even if one joined in the second rak'at? Is this method correct? Does the prayer count without 'Subhanaka Allahumma'?

Answer: 'Subhanaka Allahumma' can only be recited as long as the Imam has not started the loud recitation (qira'at). Once the loud recitation has begun, staying silent and listening becomes obligatory (fard). What that Wahabi said—to complete it by saying one or two words during the Imam's pauses—is a weak and unchosen view. And as for the exception he made, that this can be done in every prayer except Maghrib, it is purely false and his own invention. In the weak narration that mentions this method, it is mentioned for Maghrib as well. According to the correct school of thought (madhhab), this is not permitted; there is no such allowance in Fajr, Maghrib, or Isha. His claim that one who joins in the second rak'at can recite 'Subhanaka' in the third or fourth rak'at is also completely wrong. The place for 'Subhanaka Allahumma' is at the beginning of the prayer. When one joined in the second rak'at, how can the third or fourth rak'at be considered the beginning of the prayer for him to recite it then? However, for the rak'at that was missed, when he stands up to perform it after the Imam's salam, he should recite it at its beginning, as that is his first rak'at. Reciting 'Subhanaka' is Sunnah; the prayer is valid without it, but abandoning a Sunnah without necessity is not allowed, and making a habit of it leads to sin. One who, for example, joined in the first rak'at of a loud prayer and couldn't recite 'Subhanaka' because the recitation had already started, bears no blame, as he abandoned it to fulfill the obligation of silence by Sharia's command. And Allah the Almighty knows best.

Problem No. 412: From village Mansoorpur, near Shishgarh post office, Tehsil Baheri, District Bareilly. Sent by Muhammad Shah Khan, 29 Muharram al-Haram 1332 AH. What do the scholars of religion and jurists of the firm Sharia say on this matter: should "Allahumma-ghfirli warhamni wahdini" (O Allah! Forgive me, have mercy on me, and guide me) be recited between the two prostrations (sujud) by the Imam, the follower (muqtadi), or both, or should the Imam and follower perform both prostrations without reciting it?

Answer: Reciting "Allahummagh-firli" is recommended (mustahabb) for the Imam, the follower, and the individual performer (munfarid). However, a very long supplication (dua) is disliked (makruh) for all, though there is no harm for an individual performer in voluntary (nawafil) prayers. And Allah the Almighty knows best.

Problem No. 413: From Amritsar, Police Office. Sent by Abdul Aziz Head Constable, 27 Safar al-Muzaffar 1332 AH. After Salam alayk, my humble submission to your presence is about the Durood Sharif that is recited in prayer...

फ़तावा रजविया, जिल्द 6 क्या इसे तीसरी या चौथी रकात में भी पढ़ा जा सकता है, भले ही कोई दूसरी रकात में शामिल हुआ हो? क्या यह तरीका सही है? क्या 'सुभानका अल्लाहुम्मा' के बिना नमाज़ हो जाती है?

उत्तर: 'सुभानका अल्लाहुम्मा' केवल उसी समय तक पढ़ा जा सकता है जब तक इमाम ने ज़ोर से किरअत (क़ुरआन का पाठ) शुरू न की हो। जब ज़हरी किरअत (ज़ोर से पाठ) शुरू हो जाए, तो खामोश रहना और सुनना फ़र्ज़ है। उस वहाबी ने जो बताया कि इमाम के रुकने के स्थानों पर एक-एक, दो-दो शब्द कहकर इसे पूरा करे, वह विचार कमज़ोर (ज़ईफ़) और अमान्य (ग़ैर मुख़्तार) है। और उसने जो अपवाद किया कि ऐसा हर नमाज़ में किया जा सकता है सिवाय मग़रिब के, यह सरासर बातिल और उसकी अपनी ईजाद है। जिस कमज़ोर रिवायत में यह तरीका बताया गया है, उसमें मग़रिब में भी ऐसा ही है। सही मज़हब (विचारधारा) में इसकी अनुमति नहीं है; फ़ज्र, मग़रिब और इशा किसी में भी ऐसा नहीं है। और उसका यह कहना भी पूरी तरह ग़लत है कि जो दूसरी रकात में शामिल हुआ वह तीसरी या चौथी रकात में 'सुभानका' पढ़ सकता है। 'सुभानका अल्लाहुम्मा' का स्थान नमाज़ की शुरुआत है। जब वह दूसरी रकात में मिला, तो तीसरी या चौथी उसके लिए नमाज़ की शुरुआत कब है कि वह उसमें पढ़े? हाँ, जो एक रकात रह गई, इमाम के सलाम के बाद जब वह उसे पढ़ने के लिए खड़ा हो, तो उसकी शुरुआत में पढ़े क्योंकि वह उसकी पहली रकात है। 'सुभानका' पढ़ना सुन्नत है; इसके बिना नमाज़ हो जाती है, लेकिन बिना ज़रूरत सुन्नत छोड़ना जायज़ नहीं है और इसे आदत बनाने वाला गुनहगार होगा। और जो, उदाहरण के लिए, ज़हरी नमाज़ की पहली रकात में मिला और किरअत शुरू हो जाने के कारण 'सुभानका' न पढ़ सका, उस पर कोई दोष नहीं है क्योंकि उसने शरई हुक्म के तहत ख़ामोश रहने के फ़र्ज़ को पूरा करने के लिए इसे छोड़ा। वल्लाहु तआला आलम (और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है)।

मसला नंबर 412: ग्राम मंसूरपुर, डाकखाने के पास, कस्बा शीशगढ़, तहसील बहेड़ी, ज़िला बरेली। प्रेषक: मुहम्मद शाह खान, 29 मुहर्रम अल-हराम 1332 हिजरी। दीन के विद्वान और सुदृढ़ शरीयत के मुफ़्ती इस विषय में क्या फ़रमाते हैं कि दो सज्दों के बीच में "अल्लाहुम्मा-ग़फ़िर ली वरहम्नी वहदिनी" (ऐ अल्लाह! मुझे क्षमा कर दे, मुझ पर रहम फ़रमा और मुझे हिदायत दे) इमाम को पढ़ना चाहिए या मुक्तदी (पीछे नमाज़ पढ़ने वाले) को या दोनों को, या इमाम और मुक्तदी बिना इसे पढ़े दोनों सज्दे अदा करें?

उत्तर: "अल्लाहुम्मा-ग़फ़िर ली" कहना इमाम, मुक्तदी और अकेले नमाज़ पढ़ने वाले (मुन्फ़रिद) सबके लिए मुस्तहब (पसंदीदा) है। और बहुत लंबी दुआ सबके लिए मकरूह (नापसंद) है, हाँ मुन्फ़रिद के लिए नवाफ़िल (ऐच्छिक नमाज़ों) में कोई हर्ज नहीं। वल्लाहु तआला आलम।

मसला नंबर 413: अमृतसर, पुलिस कार्यालय से। प्रेषक: अब्दुल अज़ीज़, हेड कांस्टेबल, 27 सफ़र अल-मुज़फ़्फ़र 1332 हिजरी। सलाम अलैका के बाद, हुज़ूर की खिदमत में मेरी अर्ज़ यह है कि मुझे दुरूद शरीफ़ जो नमाज़ में पढ़ा जाता है...

فتاویٰ رضویہ جلد ششم میں تیسری یا چوتھی رکعت میں بھی پڑھ سکتے ہیں خواہ دوسری ہی رکعت میں شامل ہوں، کیا یہ طریقہ ٹھیک ہے؟ بغیر سبحانک اللہم کے نماز ہو جاتی ہے یا نہیں؟

الجواب: سبحانک اللّٰہم اسی وقت پڑھ سکتے ہیں کہ امام قرأت با آواز شروع نہ کرلے جب قرأت جہری شروع کر دی اب خاموش رہنا اور سننا فرض ہے، وہ جو وہابی نے بتایا کہ امام کی ٹھہرنے کی جگہ ایک ایک دو دو لفظ کہہ کر پورا کرے ضعیف و غیر مختار، اور جیسے استثناء کیا کہ ایسا ہر نماز میں کرسکتے ہیں مگر مغرب میں نہیں یہ محض باطل اور اسکی اپنی ایجاد ہے جس روایت ضعیفہ میں یہ طریقہ ہے اس میں مغرب میں بھی ایسا ہی ہے اور مذہب صحیح میں کہ اس کی اجازت نہیں فجر و مغرب و عشاء کسی میں ایسا نہیں اور اس کا یہ کہنا بھی محض غلط ہے کہ جو دوسری رکعت میں شامل ہوا وہ تیسری یا چوتھی رکعت میں سبحانک پڑھ سکتا ہے ، سبحانک اللّٰہم کی جگہ ابتدائے نماز ہے جب دوسری میں ملا تو تیسری یا چوتھی ابتدائے نماز کب ہے کہ اس میں پڑھے کہ اس میں سبحانک پڑھے، ہاں وہ جو ایک رکعت رہ گئی، بعد سلام امام جب اسے پڑھنے کے کھڑا ہو اس کی ابتداء میں پڑھے کہ یہ اس کی پہلی رکعت ہے سبحانک پڑھنا سنت ہے بغیر اس کے نماز ہو جاتی ہے مگر بلا ضرورت ترک سنت کی اجازت نہیں اور عادت ڈالنے سے گناہگار ہوگا اور جو مثلاً پہلی رکعت جہریہ میں ملا اور قرأت شروع ہو جانے کے باعث سبحانک نہ پڑھ سکا اس پر کوئی الزام نہیں کہ اس نے یہ ترک ادائے فرض خاموشی کے لئے بحکم شرع کیا۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۴۱۲: از موضوع منصور پور متصل ڈاکخانہ قصبہ شیش گڑھ تحصیل بہیڑی ضلع بریلی مرسلہ محمد شاہ خان ۲۹ محرم الحرام ۱۳۳۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین اس باب میں کہ دونوں سجدوں کے درمیان میں اَللّٰہُمَّ اغْفِرْ لِیْ وَارْحَمْنِیْ وَاھْدِنِیْ (اے اللہ! مجھے

بخش دے مجھ پر رحم فرما اور مجھے ہدایت فرمات) پڑھنا چاہیئے امام کو یا مقتدی کو یا دونوں کو یا امام و مقتدی بلا اس کے پڑھے دونوں سجدے ادا کریں۔

الجواب: اللّٰہُمَّ اغْفِرْ لِیْ کہنا امام و مقتدی و منفرد سب کو مستحب ہے اور زیادہ طویل دعا سب کو مکروہ ہاں منفرد کو نوافل میں مضائقہ نہیں۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۴۱۳: از امر تسر دفتر پولیس مرسلہ عبدالعزیز ہیڈ کانسٹیبل ۲۷ صفر المظفر ۱۳۳۲ھ بعد سلام علیک حضور کی خدمت میں میری عرض یہ ہے کہ مجھے درود شریف جو نماز میں پڑھا جاتا ہے

Grant me permission for this or any other Durood Sharif which is superior to all Duroods. I have a great passion for reciting Durood Sharif, Kalima Sharif, or Istighfar. May God reward you. Generally, I recite while walking on the path and in other places like markets. Am I allowed to recite Durood Sharif everywhere in general? Please write your kind opinion. I want to maintain a constant practice (wazifa), whether of Ayat Karima or something else, so that the love of God and His Messenger is fully attained. Please do inform me as soon as possible, and write regarding Durood Sharif, Kalima Sharif, and Istighfar. God willing, your written instructions will be acted upon.

Answer: The most superior of all Duroods is the one prescribed in the most superior of all actions, i.e., Prayer (Salah). It is also permissible to recite Durood Sharif while walking. Stop where there is impurity. It is better to fix a specific time and quantity; recite it daily with ablution (Wudu), sitting on both knees respectfully, facing Medina Tayyiba, and the quantity should not be less than a hundred times. Reciting more as much as one can sustain is better. Besides this, keep reciting Durood in every state - while standing, sitting, walking, with or without Wudu. It is better for this not to be restricted to one specific formula but to offer it in various formulas from time to time so that heart's presence is maintained. Abundance in reciting Durood Sharif, Kalima Tayyiba, and Istighfar is very much loved and sought after. Kalima Tayyiba is called the most superior Dhikr, and there is no barrier for it to reach Allah Almighty. Regarding Istighfar, it is said that glad tidings are for the one who finds abundant Istighfar in his book of deeds. About spending all one's time in Durood Sharif, it is said that if one does so, Allah will fulfill all your tasks and forgive your sins. And Allah knows best.

Issue Number 412 to 417: From Kanpur, Rohtak District, Mohalla Seeman, sent by Bhure Khan, 12 Jumada al-Ula 1336 AH. (1) Should a follower (muqtadi) recite Surah Fatiha behind the Imam or not? (2) Is it correct to say "Ameen" loudly or not? (3) Is it correct to pray eight cycles (rak'ats) of Taraweeh instead of twenty? (4) Is it correct to pray one cycle of Witr instead of three?

Answer: (1) It is absolutely not permissible for the follower to recite the Holy Quran. Allah Almighty says: "And when the Quran is recited, listen to it attentively and remain silent."

मुझे इस या किसी अन्य दरूद शरीफ की इजाजत दें जो सभी दरूदों में श्रेष्ठ हो। मुझे दरूद शरीफ या कलमा शरीफ या इस्तिगफार पढ़ने का बहुत शौक है। खुदा हुज़ूर को इसका अज्र (पुण्य) देगा। आमतौर पर मैं रास्ते पर चलते हुए और अन्य बाज़ार आदि जगहों पर भी पढ़ता हूँ। क्या मुझे सामान्य रूप से हर जगह दरूद शरीफ पढ़ने की इजाजत है या नहीं? हुज़ूर अपनी कृपापूर्ण राय लिखकर सूचित करें। मैं हर समय वज़ीफ़ा (जाप) करना चाहता हूँ, चाहे वह आयत करीमा हो या कोई और, ताकि खुदा और उसके रसूल का पूर्ण प्रेम प्राप्त हो सके। कृपया करके मुझे जल्द से जल्द सूचित करें और दरूद शरीफ, कलमा शरीफ और इस्तिगफार के बारे में ज़रूर लिखें। इंशा अल्लाह हुज़ूर की लिखी हुई बातों पर अमल किया जाएगा।

उत्तर: सभी दरूदों में सबसे श्रेष्ठ दरूद वह है जो सभी कर्मों में श्रेष्ठ, यानी नमाज़ में निर्धारित किया गया है। राह चलते हुए भी दरूद शरीफ पढ़ने की अनुमति है। जहाँ अशुद्धि (नजासत) हो वहाँ रुक जाएँ। बेहतर यह है कि एक समय और एक संख्या निश्चित कर लें; उसे प्रतिदिन वज़ू के साथ, अदब से दोनो घुटनों के बल बैठकर मदीना तैयबा की ओर मुँह करके पढ़ा करें, जिसकी संख्या सौ से कम न हो। जितना अधिक हो सके उतना बेहतर है। इसके अलावा उठते-बैठते, चलते-फिरते, वज़ू के साथ या बिना वज़ू, हर हाल में दरूद जारी रखें। इसके लिए बेहतर यह है कि किसी एक विशेष शब्द (सीग़ा) के पाबंद न हों, बल्कि समय-समय पर अलग-अलग सीग़ों से पढ़ते रहें ताकि दिल की एकाग्रता बनी रहे। दरूद शरीफ, कलमा तैयबा और इस्तिगफार की अधिकता अत्यंत प्रिय और वांछनीय है। कलमा तैयबा को सर्वश्रेष्ठ ज़िक्र कहा गया है और यह कि अल्लाह तक पहुँचने में इसके लिए कोई बाधा नहीं है। इस्तिगफार के लिए कहा गया है कि उस व्यक्ति के लिए खुशी है जो अपने कर्मपत्र में इस्तिगफार की अधिकता पाता है। अपना पूरा समय दरूद शरीफ में बिताने के बारे में कहा गया है कि यदि कोई ऐसा करेगा, तो अल्लाह तुम्हारे सारे काम बना देगा और तुम्हारे पाप क्षमा कर देगा। और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है।

मसला नंबर 412 से 417: कानपुर ज़िला रोहतक मोहल्ला सीमन से, प्रेषक भूरे खान 12 जमादी अल-उला 1336 हिजरी। (1) इमाम के पीछे मुक़्तदी (नमाज़ पढ़ने वाला) सूरह फातिहा पढ़े या न पढ़े? (2) आमीन ऊँची आवाज़ में कहना सही है या नहीं? (3) बीस रकात तरावीह के बजाय आठ रकात पढ़ना सही है? (4) तीन वित्र के बजाय एक वित्र पढ़ना सही है या नहीं?

उत्तर: (1) मुक़्तदी के लिए कुरान मजीद पढ़ना बिल्कुल भी जायज़ नहीं है। अल्लाह तआला फरमाता है: "और जब कुरान पढ़ा जाए तो उसे ध्यान से सुनो और खामोश रहो।"

पृष्ठ 183 का 736

فتاویٰ رضویہ جلد ششم

اس کی یا کسی دوسرے درود شریف کی جو سب درودوں سے افضل ہو اجازت فرمائیں مجھے درود شریف یا کلمہ شریف یا استغفار پڑھنے کا نہایت شوق ہے خدا حضور کو اجر دے گا عام طور پر راستہ چلتا ہوں و دیگر بازار وغیرہ جگہ میں بھی پڑھتا ہوں مجھے عام طور پر درود شریف ہر جگہ پڑھنے کی اجازت ہے یا نہیں، حضور رائے مہربانی تحریر فرمائیں میں ہر وقت وظیفہ رکھنا چاہتا ہوں یا آیت کریمہ کا یا کوئی دوسرا، یہ اس لئے کہ محبت خدا ورسول کی پورے طور پر حاصل ہو جائے ، جناب مہربانی کر کے ضرور بالضرور جلد مجھے آگاہ کر دیں، درود شریف یا کلمہ شریف اور استغفار کی نسبت ضرور بالضرور تحریر فرمائیں، ان شاء اللہ تعالی تحریر حضور پر عملدرآمد ہوگا۔

الجواب: سب درودوں سے افضل درود وہ ہے جو سب اعمال سے افضل یعنی نماز میں مقرر کیا گیا ہے درود شریف راہ چلتے بھی پڑھنے کی اجازت ہے جہاں نجاست پڑی ہو وہاں رک جائے بہتر یہ ہے ایک وقت معین کر کے ایک عدد مقرر کرلے اُس قدر باوضو دو زانو ادب کے ساتھ مدینہ طیبہ کی طرف منہ کر کے روزانہ عرض کیا کرے جس کی مقدار سو بار سے کم نہ ہو زیادہ جس قدر نبھاسکے بہتر ہے، علاوہ اس اٹھتے بیٹھتے، چلتے پھرتے باوضو بے وضو ہر حال میں درود جاری رکھے، اور اس کے لئے بہتر یہ ہے کہ ایک صیغہ خاص کا پابند نہ ہو بلکہ وقتاً فوقتاً مختلف صیغوں سے عرض کرتا رہے تاکہ حضورِ قلب میں فرق نہ ہو ، درود شریف اور کلمہ طیبہ اور استغفار ان سب کی کثرت نہایت محبوب و مطلوب ہے ، کلمہ طیبہ کو افضل الذکر فرمایا اور یہ کہ اللہ عزوجل تک اُس کے پہنچنے میں روک نہیں اور استغفار کے لئے فرمایا شادمانی ہے اُسے جو اپنے نامہ اعمال میں استغفار بکثرت پائے اور اپنے تمام اوقات کو درود شریف میں صرف

کردینے کو فرمایا کہ ایسا کرے گا تو اللہ تیرے سب کام بنادے گا اور تیرے گناہ معاف فرمادے گا۔ واللہ تعالی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۴۱۲ تا ۴۱۷: از کانپور ضلع روہتک محلہ سیمان مرسلہ بھورے خان ۱۲ جمادی الاولی ۱۳۳۶ھ (۱) امام کے پیچھے مقتدی سورہ فاتحہ پڑھے یا نہ پڑھے ؟ (۲) آمین بالآواز بلند کہنا درست ہے یا نہیں (۳) بجائے بیس رکعت تراویح کے آٹھ رکعت پڑھے تو درست ہے ؟ (۴) بجائے تین وتر کے ایک وتر پڑھنا درست ہے یا نہیں ؟

الجواب: (۱) مقتدی کو قرآن مجید پڑھنا مطلقاً جائز نہیں ، اللہ عزوجل فرماتا ہے : إِذَا قُرِئَ الْقُرْآنُ فَاسْتَمِعُوا لَهُ وَ أَنصِتُوا اور جب قرآن پڑھا جائے تو اسے غور سے سنو اور خاموش رہو۔

"...that you may receive mercy." (1)

Keep quiet so that mercy may be shown to you. (T)

The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said:

"The Imam is only appointed to be followed. So when he says Takbir, you say Takbir; and when he recites, keep quiet." (2)

The Imam is made so that he should be followed. When he says Takbir Tahrimah, you say Takbir; when he recites, remain silent. (T)

Abdullah bin Mas'ud (may Allah be pleased with him) said:

"I wish that there were fire in the mouth of the one who recites behind the Imam."

Abdullah bin Abbas (may Allah be pleased with them both) said:

"If I had the power, I would cut the tongue of the one (reciting behind the Imam)." And Allah knows best.

(2) Saying 'Ameen' loudly in prayer is disliked (Makruh) and contrary to the Sunnah. Allah Almighty says:

"Call upon your Lord in humility and in secret." (3)

Call your Lord with humility and submissiveness, softly and quietly. (T)

The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said:

"And when he (the Imam) says 'Wa la-dhaalleen', then say 'Ameen', for the Imam is saying it." (4)

When the Imam says 'Wa la-dhaalleen', you say 'Ameen' because the Imam is saying it. (T)

[Logo: I.T. Majlis of Dawat-e-Islami]

---

(1) Al-Quran 7:204 (2) Musannaf ibn Abi Shaybah regarding the Imam praying while sitting, published by Idara-tul-Quran wal-Uloom-ul-Islamia Karachi, 2/326. (3) Al-Quran 7:55 (4) Sunan Nasai, Chapter: The Imam saying Ameen aloud, published by

Al-Maktaba-tus-Salafiyya Lahore, 1/113. **Note:** The words of the Hadith in Sunan Nasai are narrated on the authority of Abu Huraira as follows: "When the Imam says 'Ghairil maghdubi 'alaihim wala-dhaalleen', say 'Ameen', for the angels say 'Ameen' and the Imam says 'Ameen'." And in Fath al-Bari, volume 2, Beirut edition, page 219, it is narrated as: "When the Imam says 'Wa la-dhaalleen', say 'Ameen', for the angels say 'Ameen' and the Imam says 'Ameen'." - Al-Hadith. Nazir Ahmed Saeedi. Page 184 of 736

फ़तावा रज़विया **जिल्द छटी**

"...ताकि तुम पर रहम किया जाए।" (1)

खामोश रहो ताकि तुम पर रहम किया जाए। (त)

नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम फरमाते हैं:

"इमाम इसलिए बनाया जाता है कि उसकी इत्तेबा की जाए। तो जब वह तकबीर कहे तो तुम तकबीर कहो, और जब वह क़िरात करे तो खामोश रहो।" (2)

इमाम इसलिए बनाया गया है कि उसकी पैरवी की जाए। जब वह तकबीर तहरीमा कहे, तो तुम भी तकबीर कहो; जब वह क़िरात करे, तो खामोश रहो। (त)

अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु फरमाते हैं:

"मेरी तमन्ना है कि जो इमाम के पीछे पढ़े, उसके मुँह में आग हो।"

अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हुमा फरमाते हैं:

"अगर मैं कुदरत पाता तो उसकी (इमाम के पीछे पढ़ने वाले की) ज़बान काट देता।" वल्लाह तआला आलम।

(२) नमाज़ में ज़ोर से 'आमीन' कहना मकरूह और सुन्नत के खिलाफ है। अल्लाह अज़्वजल फरमाता है:

"अपने रब को गिड़गिड़ा कर और आहिस्ता पुकारो।" (3)

अपने रब को आज़िज़ी और तवाज़ो के साथ आहिस्ता-आहिस्ता पुकारो। (त)

नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम फरमाते हैं:

"और जब (इमाम) 'व लद-दाल्लीन' कहे, तो तुम 'आमीन' कहो, क्योंकि इमाम उसे कह रहा है।" (4)

जब इमाम 'व लद-दाल्लीन' कहे, तो तुम 'आमीन' कहो क्योंकि इमाम उसे कह रहा है। (त)

[Logo: I.T. Majlis of Dawat-e-Islami]

(1) अल-क़ुरआन 7/204 (2) मुसन्नफ़ इब्न अबी शैबा, इमाम के बैठकर नमाज़ पढ़ने के बारे में, मतबुआ इदारतुल क़ुरआन वल उलूमुल इस्लामिया कराची, 2/326 (3) अल-क़ुरआन 7/55 (4) सुनन नसाई, बाब: इमाम का ज़ोर से आमीन कहना, मतबुआ अल-मकतबा अस-सलफ़िया लाहौर, 1/113 **नोट:** हदीस शरीफ के अलफ़ाज़ सुनन नसाई में अबू हुरैरा के हवाले से यूँ ज़िक्र हैं: "जब इमाम कहे 'ग़ैरिल मग़दूबी अलैहिम व लद-दाल्लीन' तो तुम आमीन कहो, क्योंकि फ़रिश्ते आमीन कहते हैं और इमाम आमीन कहता है।" और फ़तह-उल-बारी जिल्द दोम मतबुआ बेरुत सफ़ा 219 में यूँ ज़िक्र हैं: "जब इमाम 'व लद-दाल्लीन' कहे तो तुम आमीन कहो, क्योंकि फ़रिश्ते आमीन कहते हैं और इमाम आमीन कहता है।" - अल-हदीस। नज़ीर अहमद सईदी। पेज 184 ऑफ 736

لَعَلَّکُمْ تُرْحَمُوْنَ (1) خاموش رہو تاکہ تم پر رحم کیا جائے ۔ (ت)

نبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں :

انما جعل الامام لیؤتم بہ فاذا کبر فکبروا اذا قرأ فانصتوا (2) امام اس لئے بنایا جاتا ہے کہ اس کی اتباع کی جائے جب تکبیر تحریمہ کہے تم تکبیر کہو جب قرات کرے خاموش رہو۔ (ت)

عبداللہ بن مسعود رضی اللہ تعالٰی عنہ فرماتے ہیں :

"مجھے تمنا ہے کہ جو امام کے پیچھے پڑھے اس کے منہ میں آگ ہو"۔

عبداللہ بن عباس رضی اللہ تعالٰی عنہما فرماتے ہیں :

"قدرت پاتا تو اسکی (امام کے پیچھے پڑھنے والے کی) زبان کاٹ دیتا" واللہ تعالٰی اعلم

(۲) آمین با آواز بلند کہنا نماز میں مکروہ و خلاف سنت ہے، اللہ عزوجل فرماتا ہے :

اُدْعُوا رَبَّكُمْ تَضَرُّعًا وَخُفْيَةً (3)۔ تم اپنے رب کو عاجزی اور تواضع سے آہستہ آہستہ پکارو۔ (ت)

نبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں :

واذا قال ولا الضالین فقولوا آمین فان الامام جب امام ولا الضالین کہے تو تم آمین کہو کیونکہ امام یقولھا (4)۔ اسے کہہ رہا ہے۔ (ت)

[لوگو: آئی ٹی مجلس دعوت اسلامی]

---

(1) القرآن ۷ / ۲۰۴ (2) مصنف ابن ابی شیبہ فی الامام یصلی جالسا مطبوعہ ادارۃ القرآن والعلوم الاسلامیہ کراچی ۲ / ۳۲۶ (3) القرآن ۷ / ۵۵ (4) سنن نسائی جہر الامام بآمین مطبوعہ المکتبہ السلفیۃ لاہور ۱ / ۱۱۳ **نوٹ :** حدیث شریف کے الفاظ سنن نسائی میں ابوہریرہ کے حوالہ سے یوں منقول ہیں : اذ قال الامام غیر المغضوب علیھم ولا الضالین فقولوا آمین فان الملئکۃ تقول آمین وان الامام یقول آمین۔ اور فتح الباری جلد دوم مطبوعہ بیروت صفحہ ۲۱۹ میں یوں منقول ہیں : اذ قال الامام ولا الضالین فقولوا آمین فان الملئکۃ تقول آمین وان الامام یقول آمین۔ الحدیث۔ نذیر احمد سعیدی۔

Fatawa Razawiyya Volume Six (3) Twenty rak'ahs of Tarawih are Sunnat-e-Mu'akkadah (emphasized Sunnah); abandoning an emphasized Sunnah is evil. The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) says: "Hold fast to my Sunnah and the Sunnah of the Rightly Guided Caliphs; cling to it with your molar teeth." [1] It is mandatory for you to follow my Sunnah and the Sunnah of my Rightly Guided Caliphs; hold onto it firmly with your molars. (T) In another Hadith it is mentioned: "Verily, many things will be introduced after me, and among them, the most beloved to me are those that Umar introduces." [2] - And Allah knows best. After me, many things will be created; among them, I like most those which Umar will create. (T) (4) One rak'ah of Witr, even if intended as a voluntary (Nafl) prayer, is absolute falsehood. The final action of the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) was three rak'ahs of Witr: "Verily, the latter [action] is what is taken, and that was the last action of the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him)." Actions are performed based on the deeds of your later life, and this was the final practice of the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him). (T) Keep in mind that those who oppose these matters here are the non-muqallids (Ghair-Muqallids) and Wahhabis. Due to numerous reasons and their misguidance, Takfir (declaring them disbelievers) is necessary, the details of which are partially in our treatise 'Al-Kawkabat al-Shahabiyya'. They are not even Muslims; what right do they have to interfere in such subsidiary matters? They will be questioned on fundamental principles. Whether a follower recites Surah Al-Fatiha or not, whether 'Amin' is said loudly or softly, whether Tarawih is eight rak'ahs or twenty, whether Witr is one or three—all of this depends on the prayer being valid in the first place. How can the prayer of one whose Islam is not correct be valid? Whether they act one way or the other in these matters, their prayer is void. Then what is the use of meaningless and futile arguments! A Muslim must remain cautious; it is not permissible to meet them, nor to listen to them, nor to sit with them. Allah Almighty says:

I.T. Majlis of DawateIslami

[1] Sunan Abi Dawud, Chapter on Adhering to the Sunnah, printed by Aftab Press Lahore 2/279 [2] Kanz al-Ummal fi Sunan al-Aqwal wal-Af'al, Virtues of Farooq al-A'zam (may Allah be pleased with him), Maktabah al-Turath al-Islami, Mu'assasat al-Risalah Beirut 12/587 Note: The wording of the Hadith in Kanz al-Ummal is quoted as follows: Indeed, the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "New things will happen after me, so the most beloved of them to me is that

you adhere to what Umar (may Allah be pleased with him) introduces." Nazir Ahmad Sa'idi Page 185 of 736

फ़तवा-ए-रिज़विया जिल्द छठी (३) तरावीह की बीस रकअत सुन्नत-ए-मुअक्कदा हैं; सुन्नत-ए-मुअक्कदा को छोड़ना बुरा है। नबी सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं: "तुम पर मेरी और मेरे खुलफ़ा-ए-राशिदीन की सुन्नत लाज़िम है, इसे अपनी दाढ़ों के साथ मज़बूती से थाम लो।" [१] इसका अर्थ है: तुम पर मेरी और मेरे खुलफ़ा-ए-राशिदीन की सुन्नत लाज़िम है, इसे अपनी दाढ़ों के साथ मज़बूती से थाम लो। (त) दूसरी हदीस में है: "मेरे बाद बहुत सी चीज़ें ईजाद होंगी, उनमें से मुझे वो सबसे ज़्यादा पसंद हैं जो उमर ईजाद करेंगे।" [२] - वल्लाहु तआला आलम (अल्लाह बेहतर जानता है)। मेरे बाद बहुत सी चीज़ें पैदा होंगी, उनमें से मुझे वे सबसे अधिक पसंद हैं जो उमर पैदा करेंगे। (त) (४) वित्र की एक रकअत, चाहे वह नफ़्ल के तौर पर ही क्यों न हो, सरासर बातिल (झूठ) है। हुज़ूर अक़दस सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम का आख़िरी अमल तीन रकअत वित्र है: "बेशक आख़िरी अमल ही लिया जाता है, और यही रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का आख़िरी अमल था।" आपकी आख़िरी उम्र के आमाल पर अमल किया जाता है और आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का आख़िरी अमल यही है। (त) इतना याद रहे कि यहाँ इन मसाइल में मुख़ालिफ़त करने वाले ग़ैर-मुक़ल्लिद वहाबी हैं, जिन पर उनके गुमराह होने के कारण कई वजहों से कुफ़्र लाज़िम है, जिसका थोड़ा विवरण हमारे रिसाले 'अल-कौकबतुल शहाबिया' में है। वे मुसलमान ही नहीं हैं, तो उन्हें ऐसे उप-मसाइल (फ़ुरूई मसाइल) में दख़ल देने का क्या हक़ है? उनसे तो बुनियादी उसूलों पर पकड़ की जाएगी। मुक्तदी (पीछे नमाज़ पढ़ने वाला) फ़ातिहा पढ़े या न पढ़े, 'आमीन' ज़ोर से कहे या धीरे, तरावीह आठ रकअत हों या बीस, वित्र एक हो या तीन—ये सब इस बात पर निर्भर हैं कि नमाज़ सही हो। जिसका इस्लाम सही नहीं, उसकी नमाज़ कैसे सही हो सकती है? वह इन मसाइल में इस तरफ़ अमल करे तो उसकी नमाज़ बातिल, उस तरफ़ अमल करे तो बातिल, फिर इस बेकार की बहस का क्या फ़ायदा! और मुसलमान को होशियार रहना चाहिए कि न उनसे मिलना जायज़ है, न उनकी बात सुननी जायज़ है, न उनके पास बैठना जायज़ है। अल्लाह अज़्ज़-व-जल्ल फ़रमाता है:

[१] सुनन अबू दाऊद, बाब फ़ी लुज़ूमिस सुन्नत, आफ़ताब प्रेस लाहौर २/२७९ [२] कन्ज़ुल उम्माल फ़ी सुननिल अक़वाल वल अफ़आल, फ़ज़ाइल-ए-फ़ारूक़-ए-आज़म रज़ियल्लाहु तआला अन्हु, मकतबतुत तुराथिल इस्लामी, मुअस्ससतुर रिसाला बेरूत १२/५८७ नोट: कन्ज़ुल उम्माल में हदीस के शब्द इस प्रकार उद्धृत हैं: बेशक रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया: "मेरे बाद नई

चीज़ें पैदा होंगी, तो उनमें मुझे यह सबसे ज़्यादा पसंद है कि तुम उस पर क़ायम रहो जो उमर (रज़ियल्लाहु अन्हु) पैदा करें।" नज़ीर अहमद सईदी पृष्ठ १८५/७३६

فتاوٰی رضویہ جلد ششم (۳) تراویح بیس رکعت سنت مؤکدہ ہیں سنت مؤکدہ کا ترک بد ہے۔ نبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں: علیکم بسنتی و سنة الخلفاء الراشدین عضوا علیها بالنواجذ ۱- تم پر میری اور میرے خلفاء راشدین کی سنت لازم ہے اسے اپنی داڑھوں کے ساتھ مضبوطی سے تھام لو: (ت) دوسری حدیث میں ہے: انه سیحدث بعدی اشیاء وان من احبها الی لما احدث عمر ۲ - واللہ تعالٰی اعلم - میرے بعد بہت سی اشیاء ایجاد ہوں گی ان میں سے مجھے وہ سب سے زیادہ پسند ہیں جو عمر ایجاد کریں گے۔ (ت) (۴) ایک رکعت وتر خواہ نفل باطل محض ہے۔ حضور اقدس صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کا آخری فعل تین رکعت وتر ہے: وانما یؤخذ بالاخر فهو الاخر من فعل رسول اللہ صلی اللہ علیه وسلم - آپ کے آخری عمر کے اعمال پر عمل کیا جاتا ہے اور آپ صلی اللہ علیہ وسلم کا آخری عمل یہی ہے (ت) اتنا یاد رہے کہ یہاں ان مسائل میں مخالفت کرنے والے غیر مقلدین وہابیہ ہیں جن پر بوجوہ کثیرہ ان کے ضلالہ کے سبب کفر لازم، جس کی قدرے تفصیل ہمارے رسالہ الکوکبۃ الشہابیۃ میں ہے وہ کہ مسلمان ہی نہیں اٹھیں ایسے فروعی مسائل میں نیا دخل دینے کا کیا حق، ان سے تو اصول پر گرفت کی جائے گی کہ مقتدی فاتحہ پڑھے نہ پڑھے آمین جہر سے کہے یا آہستہ، تراویح آٹھ رکعت ہوں یا بیس، وتر ایک ہو یا تین یہ تو سب اس پر موقوف ہیں کہ نماز بھی صحیح ہو جس کا اسلام صحیح نہیں اس کی نماز کیسے صحیح ہوسکتی ہے وہ ان مسائل میں اس طرف عمل کرے تو اُس کی نماز باطل، اُس طرف عمل کرے تو باطل، پھر لایعنی فضول زق زق سے کیا فائدہ ! اور مسلمان کو ہوشیار رہنا چاہئے کہ نہ ان سے ملنا جائز، نہ اُن کی بات سننی جائز، نہ اس کے پاس بیٹھنا جائز۔ اللہ عزوجل فرماتا ہے:

I.T. Majlis of DawateIslami

۱ سنن ابی داؤد باب فی لزوم السنۃ مطبوعہ آفتاب پریس لاہور ۲ / ۲۷۹ ۲ کنز العمال فی سنن الاقوال والافعال، فضائل فاروق اعظم رضی اللہ تعالی، مکتبہ التراث الاسلامی مؤسسۃ الرسالۃ بیروت ۱۲ / ۵۸۷ نوٹ: حدیث کے الفاظ کنز العمال میں یوں منقول ہیں: ان رسول اللہ صلی اللہ علیہ وسلم قال سیحدث بعدی اشیاء فأحبها الی ان تلزموا ما احدث عمر رضی اللہ عنہ۔ نذیر احمد سعیدی

Fatawa-e-Razvia Volume 6

"And if Satan causes you to forget, then after the remembrance, do not sit with the wrongdoing people." [1] And if Satan should ever make you forget, then do not sit with the wrongdoers after remembering. (T)

The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) says: "Beware of them and keep them away from you, so that they do not mislead you or put you into trial." [2] Stay strictly away from them so that they do not mislead you or put you into trial.

Problem No. 418: From Narsinghgarh Central India via Sehore, correspondence from Mirza Ahmad Baig alias Mian Muhammad Sahib, Advocate, 8 Sha'ban 1337 AH. In the name of Allah, the Most Gracious, the Most Merciful. Praising Him, sending blessings and peace. Accept thousands of respectful greetings! How is your health? Praise be to Allah for His favor, the writer is well and prays for your well-being. Seeing the increasing atheistic influence of English education in Narsinghgarh, I and the Muslims here have started an Islamic madrasa. Currently, a teacher has been hired on a salary of twenty rupees per month. When many people applied, I completely rejected applications related to Deoband. A gentleman, Maulvi Shafa'at Rasul, son of Maulvi Inayat Rasul, who calls himself your student and disciple, was appointed here only because of his association with you. However, it is surprising that he cannot read the Holy Quran correctly on some points and told me that he heard you do not point with the index finger (ishara bi-sababah) in At-Tahiyyat. I said yes, I do not point. He said that Maulvi Ahmad Raza Khan Sahib (may his shadow be prolonged) does point. I said I cannot believe it because a detailed discussion on this is present in 'Al-Kawkabat al-Shahabiyya' with reference to the books of Imam Rabbani. Furthermore, when I was in your presence in 1899, you granted me two booklets, and I showed that booklet to Maulvi Shafa'at Rasul. Qazi Riazuddin, who is a resident of Marehra Sharif, said it is very surprising if Maulvi Ahmad Raza Khan Sahib (may his shadow be prolonged) points with his finger. Therefore, I request your honorable presence to clarify what your practice is in this regard. Please benefit me by replying. In this regard, I have seen the late Maulvi Abdul Hayy's booklet 'Nafa' al-Mufti wal-Masail' and other books like Mishkat Sharif and Hidaya, but I am a follower (muqallid) and my chosen position is that upon which there is consensus and agreement of the majority of the Ummah.

[1] Al-Quran 6/68 [2] Sahih Muslim, Chapter on the prohibition of narrating from the weak, etc., printed at Noor Muhammad Asah al-Matabi', Karachi 1/10

"और यदि शैतान आपको भुला दे, तो याद आने के बाद ज़ालिम लोगों के साथ न बैठें।" [1] और जब कभी शैतान तुझे भुला दे, तो याद आने पर ज़ालिमों के पास मत बैठ। (त)

नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं: "तुम उनसे बचो और उन्हें अपने से दूर रखो, ताकि वे तुम्हें गुमराह न करें और न ही फ़ितने (आज़माइश) में डालें।" [2] तुम उनसे सख़्त बचो कि न वो तुम्हें गुमराह करें और न ही फ़ितने में डालें।

मसला नंबर 418: नरसिंहगढ़ मध्य भारत से सिहोर के ज़रिए मिर्ज़ा अहमद बेग उर्फ मियाँ मुहम्मद साहब, वकील, 8 शाबान 1337 हिजरी। बिस्मिल्लाह हिर्रहमान निर्रहीम, हम्द-ओ-सलात और सलाम के बाद। हज़ारों सम्मानपूर्ण अभिवादन स्वीकार हों! मिज़ाज कैसा है? अल्लाह के एहसान से लेखक कुशल मंगल है और आपके स्वास्थ्य के लिए प्रार्थना करता है। नरसिंहगढ़ में अंग्रेज़ी शिक्षा के नास्तिक प्रभाव को बढ़ते देख कर मैंने और यहाँ के मुसलमानों ने एक इस्लामी मदरसा शुरू किया है। वर्तमान में बीस रुपये मासिक वेतन पर एक शिक्षक को रखा गया है। जब बहुत से लोगों के आवेदन आए थे, तो मैंने देवबंद से संबंधित आवेदनों को पूरी तरह से अस्वीकार कर दिया। एक साहब मौलवी शफ़ाअत रसूल, पुत्र मौलवी इनायत रसूल, जो स्वयं को आपका शिष्य और मुरीद कहते हैं, केवल आपसे संबंध रखने के कारण यहाँ नियुक्त किए गए हैं। लेकिन आश्चर्य की बात है कि वे कुरान शरीफ़ के कुछ हिस्सों को सही से नहीं पढ़ सकते और मुझसे कहने लगे कि मैंने सुना है आप अत्तहियात में कलमे की उंगली से इशारा नहीं करते। मैंने कहा हाँ, मैं इशारा नहीं करता। उन्होंने कहा कि मौलवी अहमद रज़ा खान साहब (उनका साया बना रहे) तो इशारा करते हैं। मैंने कहा मुझे विश्वास नहीं हो सकता क्योंकि 'अल-कौकबतुल शहाबिया' में इमाम रब्बानी की किताबों के हवाले से इस पर विस्तृत चर्चा मौजूद है। इसके अलावा, जब मैं 1899 में आपकी सेवा में उपस्थित हुआ था, तो आपने मुझे 2 पुस्तिकाएं प्रदान की थीं और मैंने वह पुस्तिका मौलवी शफ़ाअत रसूल को दिखाई। मारहरा शरीफ़ के निवासी काज़ी रियाज़ुद्दीन कहने लगे कि यह बड़े आश्चर्य की बात है अगर मौलवी अहमद रज़ा खान साहब उंगली से इशारा करते हों। इसलिए मैं आपकी सेवा में विनती करता हूँ कि इस बारे में आपका क्या अमल (कार्य) है। कृपया उत्तर देकर लाभान्वित करें। मैंने इस विषय में मरहूम मौलवी अब्दुल हई की पुस्तिका 'नफ़ाउल मुफ़्ती वल मसाइल' और मिशकात शरीफ़ व

हिदाया जैसी अन्य किताबें देखी हैं, लेकिन मैं एक मुक़ल्लिद (अनुयायी) हूँ और मेरा चुना हुआ पक्ष वही है जिस पर उम्मत के बहुमत का इजमा (सहमति) और इत्तिफ़ाक़ है।

[1] अल-कुरान 6/68 [2] सहीह मुस्लिम, कमज़ोरों से रिवायत करने की मनाही का अध्याय, आदि, नूर मुहम्मद असहुल मताबे', कराची 1/10 द्वारा मुद्रित

فتاوی رضویہ جلد ششم

وَ اِمَّا یُنْسِیَنَّكَ الشَّیْطٰنُ فَلَا تَقْعُدْ بَعْدَ الذِّكْرٰى مَعَ الْقَوْمِ الظّٰلِمِیْنَ 1 اور جب کہیں تجھے شیطان بھلادے تو یاد آئے پر ظالموں کے پاس مت بیٹھ۔ (ت)

نبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں: ایاکم و ایاہم لا یضلونکم ولا یفتنونکم 2 تم ان سے سخت بچو کہ نہ وہ تمہیں گمراہ کریں نہ ہی فتنہ میں ڈالیں۔

مسئلہ نمبر ۴۱۸: از نرسنگڑھ سنٹرل انڈیا براہ سیہوار مراسلہ میر زاحمد بیگ عرف میاں محمد صاحب وکیل ۸ شعبان ۱۳۳۷ھ بسم اللہ الرحمن الرحیم، حامداً و مصلیاً و مسلما- ہدیہ تسلیم بالوف التعظیم قبول ہو ! مزاج عالی ! الحمد للہ علی احسانہ راقم بخیریت دعا گوئے عافیت مزاج سامی نرسنگڑھ میں انگریزی تعلیم کے ملحدانہ اثر کو بڑھتا ہوا دیکھ کر نیاز مند نے اور یہاں کے مسلمانوں نے ایک مدرسہ اسلامی جاری کیا ہے فی الحال بیس روپے ماہوار کا ایک مدرس نوکر رکھا ہے جس وقت بہت سے لوگوں کی درخواست آئی تھی میں نے دیوبند کے متعلق درخواست بالکل نامنظور کی، ایک صاحب مولوی شفاعت رسول خلف مولوی عنایت رسول جو خود کو جناب کا شاگرد اور مرید کہتے ہیں صرف جناب سے نسبت رکھنے کے سبب یہاں مقرر کئے گئے ہیں مگر حیرت ہے ان کی بعض باتوں پر قرآن شریف بالکل صحیح نہیں پڑھ سکتے اور مجھ سے فرمانے لگے کہ میں نے سنا آپ اشارہ بہ سبابہ التحیات میں نہیں کرتے، میں نے کہا ہاں اشارہ نہیں کرتا ہوں، فرمانے لگے کہ مولوی احمد رضا خان صاحب مدظلہ العالی تو اشارہ کرتے ہیں، میں نے کہا مجھ کو یقین نہیں آسکتا کیونکہ الکوبۃ الشہابیۃ میں اس کی مفصل بحث بحوالہ کتب امام ربانی موجود ہے چنانچہ جناب والا مجھ کو جب میں ۱۸۹۹ء میں حاضر خدمت ہوا تھا ۲ رسالے عطا فرمائے تھے اور میں نے وہ رسالہ مولوی شفاعت رسول کو دکھایا قاضی ریاض الدین جو

مارہرہ شریف کے رہنے والے ہیں کہنے لگے بڑی حیرت کی بات ہے اگر مولوی احمد رضا خان صاحب مدظلہ العالی انگلی سے اشارہ کرتے ہوں چنانچہ جناب والا کی خدمت اقدس میں مکلف ہوں کہ اس باب میں جناب والا کا کیا معمول ہے بواپسی مستفید فرمائیں میں نے اس باب میں مولوی عبدالحہ مرحوم کا رسالہ نفع المفتی والمسائل اور دیگر کتب مشکوٰۃ شریف و ہدایہ سب کو دیکھا ہے لیکن میں تو مقلد ہوں اور جمہور امت کا جس پر اجماع واتفاق ہے وہی میرا مسئلہ مختار ہے

1 القرآن ۶/ ۶۸ 2 صحیح مسلم باب النہی عن الروایۃ عن الضعفاء الخ مطبوعہ نور محمد اصح المطابع کراچی ۱/ ۱۰

Fatawa Razawiyya, Volume Six

By your excellency's statement, it will be further strengthened and this astonishment, which is like the meeting of opposites, will be removed—that your excellency should write such in books and act contrary to it.

The Answer: Peace be upon you and the mercy of Allah and His blessings. Signaling (pointing with the index finger during Tashahhud) is certainly a Sunnah. The author of the madhhab, our master Imam Muhammad (may Allah Almighty have mercy on him), said:

"The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) did it, so we do as the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) did, and this is the view of Abu Hanifa and our companions."

Imam Malik al-Ulama in 'Bada'i' and the Absolute Investigative Imam in 'Fath al-Qadir' and other great Imams have researched this. This humble servant (the author), and his ancestors, teachers, and noble shaykhs (may their secrets be sanctified) have all acted upon this. Regarding the Marehrawi gentleman, if not many, you must have seen Hazrat Shah Abul Hasan Nuri Mian Sahib (may his secret be sanctified). In 'Kawkaba al-Shihabiyya', the discussion is not about the issue of signaling, but rather about the fact that Ismail Dehlvi, God forbid, even labeled Hazrat Sheikh Mujaddid a polytheist based on the reasons he wrote there. Ismail says that the one who holds those views is a polytheist; what does that have to do with contradiction? Maulvi Shafa'at Rasul is the son of a pure, late, and forgiven friend of mine; he was initiated (bai'at) here and studied in my school, although he did not study under me nor did I hear his recitation of the Holy Quran. It is possible that, just as most scholars and reciters recite incorrectly today, he too is affected by this widespread calamity. And Allah is sufficient for us and He is the best Disposer of affairs. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 219: From the city of Delhi, Paharganj, Gharib Shah Mosque, sent by Sayyid Muhammad Abdul Karim Sahib, 9 Sha'ban 1337 AH. What do the scholars of the religion say about this matter: An Imam, while in prayer, finishes saying "Sami' Allahu liman hamidah" after rising from Ruku' only when he is close to the prostration (sajdah), and joins it with "Allahu Akbar". However, I have seen other Imams finish "Sami' Allahu liman hamidah" while standing (Qiyam) and say "Allahu Akbar" while going into prostration. Now, for the Imam who finishes "Sami' Allahu liman hamidah" close to the ground/sajdah, where should the followers (muqtadis)

say "Rabbana lakal Hamd"? Should they remain standing or go into prostration with the Imam and say it there? If they do so, then...

---

1 Bada'i al-Sana'i, Chapter on the Sunnahs of Prayer, published by H.M. Saeed Company Karachi, 1/212. Page 187 of 736

फ़तावा रज़विया, जिल्द छठी

हुज़ूर के फ़रमान से और मज़बूती हो जाएगी और यह ताज्जुब जो दो विरोधी बातों के मेल (اجتماع نقیضین) जैसा है, दूर हो जाएगा कि हुज़ूर किताबों में ऐसा लिखें और अमल इसके ख़िलाफ़ हो।

जवाब: वअलैकुम अस्सलाम व रहमतुल्लाहि व बरकातुहू। (तशहुद में) इशारा करना यक़ीनन सुन्नत है। मज़हब के मुहर्रिर हमारे आका इमाम मुहम्मद (रहमतुल्लाहि तआला अलैहि) ने फ़रमाया:

"रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) ने इशारा फ़रमाया, तो हम भी वैसे ही इशारा करते हैं जैसे रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) ने किया, और यही इमाम-ए-आज़म अबू हनीफ़ा और हमारे साथियों का विचार है।"

इमाम मलिक अल-उलमा ने 'बदाइ' में और इमाम मुहक़्क़िक़ अली अल-इतलाक़ ने 'फ़तह अल-क़दीर' और अन्य बड़े इमामों ने इसकी तहक़ीक़ फ़रमाई है। यह फ़क़ीर और फ़क़ीर के पूर्वज, उस्ताद और बुज़ुर्ग (अल्लाह उनके रहस्यों को पवित्र रखे) सब इस पर अमल करते रहे हैं। मारहरा के साहब के बारे में, अगर ज़्यादा नहीं तो हज़रत शाह अबुल हसन नूरी मियां साहब (अल्लाह उनके रहस्य को पवित्र रखे) को ज़रूर देखा होगा। 'कौकबा शिहाबिया' में इशारा के मसले पर बहस नहीं है, बल्कि इस बात पर है कि इस्माइल देहलवी ने, माज़ल्लाह, हज़रत शेख मुजद्दिद को भी मुशरिक ठहरा दिया है, उन वजहों से जो उसने वहां लिखी हैं। इस्माइल कहता है कि उनका मानने वाला मुशरिक है, इसका विरोधाभास से क्या लेना-देना। मौलवी शफ़ाअत रसूल मेरे एक मुख़लिस दोस्त (मरहूम व मग्फ़ूर) के साहबज़ादे हैं, उनकी यहाँ बैअत भी है और मेरे मदरसे में पढ़े हैं, हालाँकि मुझसे नहीं पढ़ा और न ही मैंने उनकी क़ुरान मजीद की क़िरात सुनी। मुमकिन है कि जैसे आजकल अक्सर उलेमा और हुफ़्फ़ाज़ ग़लत पढ़ते हैं, उन पर भी इसी आलमगीर बला का असर हो। और अल्लाह हमारे लिए काफ़ी है और वह बेहतरीन कार्यसाधक है। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला नम्बर 219: दिल्ली शहर, पहाड़गंज, ग़रीब शाह मस्जिद से, प्रेषक सय्यद मुहम्मद अब्दुल करीम साहब, 9 शाबान 1337 हिजरी। इस मसले में दीन के उलेमा क्या फ़रमाते हैं: एक पेश इमाम साहब नमाज़ की हालत में जब रुकू से फ़ारिग होकर 'समिअल्लाहु लिमन हमिदह' को सजदे के क़रीब जाकर ख़त्म करते हैं और उससे जोड़कर 'अल्लाहु अकबर' कहते हैं, जबकि दूसरे इमामों को देखा है कि वे 'समिअल्लाहु लिमन हमिदह' को क़ियाम (खड़े होने की स्थिति) में ख़त्म करते हैं और

वहाँ से 'अल्लाहु अकबर' कहते हुए सजदा करते हैं। अब जो इमाम मस्जिद (फ़र्श) के क़रीब 'समिअल्लाहु लिमन हमिदह' को ख़त्म करता है, तो मुक़्तदी 'रब्बना लकल हम्द' कहाँ कहें? खड़े रहें या इमाम के साथ सजदे में जाकर कहें? अगर इसी तरह करेंगे तो...

---

1 बदाइ-उस-सनाइ, नमाज़ की सुन्नतों का बयान, एच.एम. सईद कंपनी कराची द्वारा प्रकाशित, 1/212। पृष्ठ 187/736

جناب والا کے ارشاد سے اور مضبوطی ہو جائے گی اور یہ تعجب جو اجتماعِ نقیضین کے قبیل سے ہے رفع ہو جائے گا کہ جناب والا کتابوں میں ایسا لکھیں اور عمل اسکے خلاف ہو۔

الجواب: وعلیکم السلام ورحمۃ اللہ وبرکاتہ۔ اشارہ ضرور سنّت ہے۔ محرر مذہب سیدنا امام محمد رحمۃ اللہ تعالیٰ نے فرمایا: صنعه رسول الله صلى الله تعالىٰ عليه وسلم فنصنع كما صنعه رسول الله صلى الله تعالىٰ عليه وسلم وهو قول ابي حنيفة واصحابنا۔ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے اشارہ فرمایا تو ہم بھی اشارہ کرتے ہیں جس طرح رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے کیا اور یہی مذہب امام اعظم ابو حنیفہ اور ہمارے اصحاب کا ہے۔

امام ملک العلماء نے بدائع اور امام محقق علی الاطلاق نے فتح القدیر اور دیگر ائمہ کبار نے اس کی تحقیق فرمائی۔ فقیر اور فقیر کے آباء واساتذہ و مشائخ کرام قدست اسرارہم سب اس پر عامل رہے، مارہروی صاحب نے زیاہ نہیں تو حضرت شاہ ابوالحسن نوری میاں صاحب قدس سرہ کو ضرور دیکھا ہوگا۔ کوکبہ شہابیہ میں مسئلہ اشارہ کی بحث نہیں بلکہ اس بات کی اسمعیل دہلوی نے معاذاللہ حضرت شیخ مجدّد کو بھی مشرک ٹھہرا دیا ہے جو وجوہ انھوں نے یہاں لکھے اسماعیل کہتا ہے کہ ان کا قائل مشرک ہے اس کو تناقض سے کیا علاقہ، مولوی شفاعت رسول میرے ایک خالص دوست مرحوم و مغفور کے صاحبزادے ہیں ان کو یہاں بیعت بھی ہے میرے مدرسہ میں پڑھا ہے اگرچہ مجھ سے نہ پڑھا نہ میں نے ان کا قرآن مجید سنا، ممکن کہ جس طرح آجکل اکثر علماء و حفاظ غلط پڑھتے ہیں اُن پر بھی اسی عالمگیر بلا کا اثر ہو وحسبنا اللہ و نعم الوکیل واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۲۱۹: از شہر دہلی پہاڑ گنج مسجد غریب شاہ مرسلہ سید محمد عبدالکریم صاحب ۹ شعبان ۱۳۳۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں ایک پیش امام صاحب نماز کی حالت میں جب رکوع سے فارغ ہو کر سمع اللہ لمن حمدہ کو سجدہ کے قریب جا کر ختم کرکے ب وصل اللہ اکبر کہتا ہے اور جگہ جو اماموں کو دیکھا ہے وہ سمع اللہ لمن حمدہ کو قیام میں ختم کرتے ہیں اور وہاں سے اللہ اکبر کہتے ہوئے سجدہ کرتے ہیں۔ اب جو امام مسجد کے قریب سمع اللہ لمن حمدہ کو ختم کرتا ہے تو مقتدی ربنا لک الحمد کہاں پر کہیں، کھڑے رہیں یا امام کے ساتھ سجدے میں جا کر کہیں، اگر اسی طرح کریں گے توان

---

1 بدائع الصنائع فصل فی سنن الصلوۃ مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱/ ۲۱۲ Page 187 of 736

Fatawa Razawiyya, Volume 6 Ignorant people will develop a habit, and now the question is whether there will be any harm to the prayer?

Answer: The Sunnah is to say the 'Seen' of 'Sami' Allahu liman hamidah' as one begins to raise the head from Ruku, and the 'ha' of 'hamidah' should end as one stands upright. Similarly, for every Takbeer of transition, the rule is that with the start of moving from one action to another, the Alif of 'Allahu Akbar' should begin and it should end with the completion of the action. The mentioned Imam who does it in this way performs two acts contrary to the Sunnah: ending the 'Sami' Allahu liman hamidah' while going into prostration (Sajdah), and not starting the Takbeer for Sajdah at the beginning of bowing down for Sajdah. For these reasons, the prayer becomes disliked (Makruh) due to two dislikes. He should be explained not to act against the Sunnah. If he does not comply and a better Imam who is Sunni, sound in belief, correct in recitation, and sound in purity is available, then he should be replaced. Followers (Muqtadi) should not follow him in acts contrary to the Sunnah; instead, while raising the head from Ruku, they should start the Alif of 'Allahumma Rabbana lakal Hamd' (or those who only say 'Rabbana lakal Hamd' should start the 'ra' of 'Rabbana') and end the 'dal' of 'Hamd' upon standing upright. Then, while going into Sajdah, start the Alif of 'Allahu Akbar' and prolong the 'Lam' of 'Allah'. When the head is near the ground, finish the 'ha' of 'Allah' and finish the 'ra' of 'Akbar' exactly upon reaching the ground. The prolonging of 'Lam' is because if 'Lam' is not prolonged while covering this distance, 'Akbar' will finish before reaching Sajdah, which is against the Sunnah. Alternatively, if one prolongs the Alif or 'ba' of 'Akbar' to complete the distance, the prayer will become invalid (fasid). Or if one prolongs the 'ra', it is wrong and against the Sunnah. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 420: From village Maimondi Buzurg, asked by Syed Amir Alam Hasan Sahib, 26 Shaban 1337 AH. What do the scholars of religion and jurists of the clear Sharia say about this matter: Zaid says that for a person performing obligatory prayer in congregation, it is mandatory that as long as the Imam does not supplicate (Dua) after the Salaam, the follower should also not supplicate, no matter how urgent the task, whether it is Fajr, Zuhr, Asr, Maghrib, or Isha prayer. If the follower gets up after supplicating before the Imam, he will become a sinner and will have exited the obedience of the Imam. Amr says that once the Imam has performed the Salaam, the follower has exited the obedience of the Imam. Now it is the follower's choice whether to wait for the Imam's supplication or not; if he waits, it is better, otherwise, leaving will not make him a sinner nor distant from the Imam's obedience. Now, it is

requested of the scholars of religion to provide a full proof of whose statement is established, Zaid's or Amr's. Also, provide proof whether reciting Fatiha over food is correct or not, and whether prayer behind a non-conformist (Ghair Muqallid) or a graduate of the Deoband school is valid or not? Clarify and you shall be rewarded.

फ़तावा रज़विया, छठा खंड अज्ञानियों को आदत पड़ जाएगी, और अब सवाल यह है कि क्या नमाज़ में कोई नुकसान नहीं होगा?

उत्तर: सुन्नत यह है कि 'समिअल्लाहु लिमन हमिदह' का 'सीन' रुकूअ से सिर उठाने के साथ कहा जाए और 'हमिदह' की 'हा' सीधा खड़े होने के साथ खत्म हो। इसी तरह हर तकबीर-ए-इंतिक़ाल (एक स्थिति से दूसरी में जाने की तकबीर) में हुक्म है कि एक क्रिया से दूसरी क्रिया की ओर जाने की शुरुआत के साथ 'अल्लाहु अकबर' का अलिफ़ शुरू हो और क्रिया के खत्म होने के साथ खत्म हो। उक्त इमाम जो इस तरह करता है, वह दो बातें सुन्नत के खिलाफ करता है: 'समिअल्लाहु लिमन हमिदह' को सजदे में जाते समय खत्म करना और सजदे में जाने की तकबीर को झुकने की शुरुआत से शुरू न करना। इन वजहों से नमाज़ दो कराहतों के कारण मकरूह होती है। उसे समझाया जाए कि सुन्नत के खिलाफ न करे। अगर वह न माने और उससे बेहतर इमाम — जो सुन्नी, सही अक़ीदे वाला, सही क़िरात (पाठ) करने वाला और पाकीज़गी वाला हो — मिल सके तो उसे बदल दिया जाए। मुक़्तदी (पीछे नमाज़ पढ़ने वाले) सुन्नत के खिलाफ कामों में उसका अनुसरण न करें; बल्कि रुकूअ से सिर उठाने के साथ 'अल्लाहुम्मा रब्बना लकल हम्द' का अलिफ़ (और जो सिर्फ'रब्बना लकल हम्द' पढ़ते हैं, वे 'रब्बना' की 'रा') शुरू करें और सीधा खड़े होने के साथ 'हम्द' की 'दाल' खत्म करें। फिर सजदे में जाते समय 'अल्लाहु अकबर' का अलिफ़ शुरू करें और 'अल्लाह' के'लाम' को लंबा करें। जब सिर जमीन के करीब पहुंचे तो 'अल्लाह' की 'हा' और जमीन पर पहुँचते ही 'अकबर' की 'रा' खत्म करें। 'लाम' को लंबा करना इसलिए है क्योंकि इस रास्ते को तय करने में अगर 'लाम' को लंबा न किया गया, तो सजदे में पहुँचने से पहले ही 'अकबर' खत्म हो जाएगा, जो सुन्नत के खिलाफ है। या फिर दूरी पूरी करने के लिए 'अकबर' का अलिफ़ या 'बा' लंबा करेंगे, जिससे नमाज़ फासिद (अमान्य) हो जाती है। या फिर 'रा' को लंबा करेंगे, जो गलत और सुन्नत के खिलाफ है। वल्लाहु तआला आलम (और अल्लाह बेहतर जानता है)।

मसला नंबर 420: ग्राम मैमुंडी बुज़ुर्ग से, प्रेषक सैयद अमीर आलम हसन साहब, 26 शाबान 1337 हिजरी। धर्म के विद्वान और शरीयत के मुफ्ती इस मसले में क्या फरमाते हैं कि ज़ैद कहता है कि जो व्यक्ति जमात के साथ फ़र्ज़ नमाज़ अदा करे, तो उस पर लाज़िम (अनिवार्य) है कि जब तक इमाम सलाम के बाद दुआ न माँगे, तब तक मुक़्तदी भी दुआ न माँगे, चाहे कितना ही ज़रूरी काम क्यों न हो, चाहे वह फज्र, ज़ुहर, अस्र, मग़रिब या ईशा की नमाज़ हो। अगर इमाम से पहले दुआ माँगकर मुक़्तदी उठ जाएगा, तो वह गुनहगार होगा और इमाम की आज्ञाकारिता से बाहर हो जाएगा। अमर

कहता है कि अगर इमाम ने सलाम फेर दिया, तो मुक़्तदी इमाम की आज्ञाकारिता से बाहर हो गया। अब मुक़्तदी को अख्तियार (विकल्प) है कि इमाम की दुआ का इंतज़ार करे या न करे; अगर इंतज़ार किया तो बेहतर है, वर्ना चले जाने से न वह गुनहगार होगा और न ही इमाम की ताबेदारी से दूर। अब धर्म के विद्वानों की सेवा में निवेदन है कि इसका पूर्ण प्रमाण दिया जाए कि ज़ैद का कथन सिद्ध है या अमर का। साथ ही इसका भी प्रमाण दिया जाए कि खाने पर फातिहा पढ़ना सही है या नहीं, और ग़ैर-मुक़ल्लिद या देवबंद मदरसे के शिक्षित व्यक्ति के पीछे नमाज़ सही है या नहीं? स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिलेगा।

पृष्ठ 188 का 736

فتاوی رضویہ جلد ششم جاہلوں کو عادت پڑ جائے گی، اور اب سوال یہ ہے کہ نماز میں کوئی نقصان نہیں ہوگا؟

الجواب: سنّت یہ ہے کہ سمع اللہ لمن حمدہ کا سین رکوع سے سر اٹھانے کے ساتھ کہیں اور حمدہ کی "ہ" سیدھا ہونے کے ساتھ ختم، اسی طرح ہر تکبیر انتقال میں حکم ہے کہ ایک فعل سے دوسرے فعل کو جانے کی ابتداء کے ساتھ اللہ اکبر کا الف شروع ہو اور ختم کے ساتھ ختم ہو، امام مذکور جو اس طرح کرتا ہے دو باتیں خلاف سنت کرتا ہے۔ سمع اللہ لمن حمدہ کا سجدہ کو جاتے ہوئے ختم کرنا اور سجدہ کو جانے کی تکبیر سجدہ کو جھکنے کی ابتداء سے شروع نہ کرنا، ان وجوہ سے نماز دو کراہتوں سے مکروہ ہوتی ہے، اسے سمجھایا جائے کہ خلاف سنّت نہ کر۔ اگر نہ مانے اور اس سے بہتر امام سُنی صحیح العقیدہ صحیح القراءۃ صحیح الطہارۃ مل سکے تو اس کو بدل دیا جائے مقتدی خلاف سنّت میں اسکی پیروی نہ کریں بلکہ رکوع سے سر اٹھانے کے ساتھ اللھم ربنا لک الحمد کا الف اور جو صرف ربنا لک الحمد پڑھتا ہو وہ ربنا کی ر شروع کریں اور سیدھے ہو جانے کے ساتھ حمدہ کی دال ختم ہو جائے تو پھر سجدہ کو جانے کے ساتھ اللہ اکبر کا الف شروع کریں اور اللہ کے لام کو بڑھائیں جب سر رکھنے کے قریب پہنچیں تو اللہ کی ہ اور عین سرزمین پر پہنچتے وقت اکبر کی ر ختم کریں۔ لام کو بڑھانا اس لئے کہ یہ راستہ طے کرنے میں اگر لام کو نہ بڑھایا تو اکبر سجدے میں پہنچنے سے ختم ہو جائے گا اور یہ خلاف سنت ہے یا راستہ پورا کرنے کو اکبر کا الف یاب بڑھائیں گے اور اس سے نماز فاسد ہوتی ہے۔ یا ر بڑھائیں گے اور یہ غلط و خلافِ سنت واللہ تعالی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۴۲۰: از موضع میمونڈی بزرگ مسئولہ سید امیر عالم حسن صاحب ۲۶ شعبان ۱۳۳۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین اس مسئلہ میں کہ زید کہتا ہے کہ نماز فریضہ

بجماعت جو شخص ادا کرلے تو اس پر لازم ہے کہ جب تک امام بعد سلام دُعانہ مانگے تب تک مقتدی بھی دُعا نہ مانگے اگرچہ کیسا ہی ضروری کام خواہ نماز فجر ہو یا ظہر ہو یا عصر ہو یا مغرب یا عشاء، اگر امام سے پہلے دُعا مانگ کر مقتدی اٹھ جائے گا تو وہ گناہگار ہوجائے گا اور امام کی اطاعت سے نکل جائیگا۔ عمرو کہتا ہے کہ اگر امام نے سلام پھیر دیا تو مقتدی امام کی اطاعت سے نکل گیا اب مقتدی کو اختیار ہے کہ انتظارِ دُعائے امام کرے یا نہ کرے اگر انتظار کیا تو فبہا ورنہ چلے آنے سے گناہگار نہ ہوگا اور نہ اطاعت امام سے دور۔ اب علمائے دین کی خدمت میں عرض ہے کہ اسکا بپور ا ثبوت کیوں نہ دیا جائے کہ زید کا قول ثابت ہے یا عمرو کا، اور اس کا بھی ثبوت دیا جائے کہ کھانے پر فاتحہ پڑھنا درست ہے یا نہیں اور غیر مقلد وہ پڑا و تعلیم یافتہ مدرسہ دیوبند کے پیچھے نماز درست ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

Fatawa Rizvia Volume 6

Answer: Amr's statement is correct. Yes, there is a blessing in praying with the congregation; waiting for it is better. However, if there is a pressing need, one can leave; there is no harm. Otherwise, going against the Muslim congregation is not desirable. Reciting Fatihah over food is permissible; books have been written on this. Whoever says it is incorrect should show if Allah and His Messenger forbade it, or if you are forbidding it. If Allah and His Messenger forbade it, then show the evidence. And if you are forbidding it, then you are not the Lawgiver, go bang your head. Non-conformists (Ghair-Muqallid), Wahabis, and Deobandis are all outside Islam, and praying behind them is absolutely invalid. Details on this are in "Husam al-Haramayn," "An-Nahy al-Akeed," and others. (And the details of this matter are in Husam al-Haramayn and An-Nahy al-Akeed etc. - Trans). Allah knows best.

Question 421: What do the scholars of religion and the jurists of the clear Shari'ah say regarding this matter: Zaid says that women should fold their hands on their chest during the intention of prayer, and during the sitting (Qa'da) for Tashahhud, they should sit with both feet spread out and keep the ankles covered. Some say the ankles should not be covered. Now, the scholars should explain whether it is permissible for women to fold their hands on their chest and sit with feet spread during Tashahhud. Some say women should pray like men: just as men sit in Qa'da with one foot spread, fold their hands below the navel, and keep their ankles exposed, so should women. That is, the same rules that apply to men's prayer apply to women's. We hope for a complete proof with references from books, verses, and hadiths on how and by what rule women should pray.

Answer: Zaid's statement is correct. It is mentioned like this in all the books. The statement of those "some" is completely false. A woman's ankles are part of her 'awrah (nakedness), and exposing them is not permissible. And Allah Almighty knows best.

Question 422: From Golra, District Rawalpindi, residence of Hazrat Pir Sahib, sent by Hameedullah Sahib, known as Pir Numan Mullah, 12 Safar 1338 AH. What is your practice regarding the raising of the index finger (Raf' al-Sabbabah)?

Answer: The practice of this humble one, and my noble ancestors, great masters, and eminent teachers (may their secrets be sanctified) has always been, in following the mutawatir (widely transmitted) hadiths and the instructions of numerous books, to raise the index finger (Raf' al-Sabbabah), and I consider it a Sunnah. Detailed

discussion is in "Bada'i" of Imam Malik al-Ulama and "Fath al-Qadir" of the absolute researcher Imam (Ibn al-Humam), and other words of expert commentators and in the fatwas of this humble one. And Allah knows best.

Page 189 of 736

जवाब: अम्र का कहना सही है। हाँ, जमात (समूह) के साथ दुआ में बरकत है, इसके लिए इंतज़ार करना बेहतर है। और अगर कोई ज़रूरी काम हो तो जा सकते हैं, कोई हर्ज नहीं। वरना मुसलमानों की जमात के ख़िलाफ़ बात पसंदीदा नहीं है। खाने पर फ़ातिहा पढ़ना सही है, इस पर किताबें लिखी जा चुकी हैं। जो इसे ग़लत कहे, वह बताए कि अल्लाह और उसके रसूल ने इसे मना किया है या तुम मना कर रहे हो? अगर अल्लाह और उसके रसूल ने मना किया है तो दिखाओ। और अगर तुम मना कर रहे हो तो तुम शरीअत बनाने वाले नहीं हो, अपना सिर पीटो। ग़ैर-मुक़ल्लिद, वहाबी और देवबंदी सब इस्लाम से बाहर हैं और उनके पीछे नमाज़ बिल्कुल बातिल (अमान्य) है। इसकी तफ़सील (विवरण) 'हुसामुल हरमैन' और 'अन-नह्युल अकीद' वग़ैरह में है। (और इस मसले का विवरण हुसामुल हरमैन और अन-नह्युल अकीद वग़ैरह में है। - अनुवादक) वल्लाहु सुब्हानहू व तआला आलम।

मसला नंबर ४२१: दीन के विद्वान और शरीअत के मुफ्ती इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि ज़ैद कहता है कि औरतों को नमाज़ की नियत में हाथ सीने पर बाँधने चाहिए और क़ादा अत-तहियात के समय दोनों पाँव बिछाकर बैठना चाहिए और टखनों को भी ढका रखना चाहिए, जबकि कुछ कहते हैं कि टखनों को ढका न जाए। अब दीन के विद्वान फ़रमाएँ कि औरतों का नमाज़ की नियत में सीने पर हाथ बाँधना और क़ादा अत-तहियात में पाँव बिछाकर बैठना जायज़ है या नहीं? कुछ कहते हैं कि मर्दों की तरह औरतों को भी नमाज़ पढ़नी चाहिए, जिस तरह मर्द एक पाँव बिछाकर क़ादा में बैठते हैं और नाभि के नीचे हाथ बाँधते हैं और पाँव के टखने खुले रखते हैं, उसी तरह औरतों को भी करना चाहिए, यानी जो क़ायदा मर्दों की नमाज़ का है, वही औरतों का है। अब आपसे उम्मीद है कि इसका पूरा सुबूत किताबों के हवाले, आयत और हदीस के साथ दिया जाए कि औरतों को किस तरह और किस क़ायदे से नमाज़ पढ़नी चाहिए।

जवाब: ज़ैद का कहना सही है, सभी किताबों में इसी तरह है। उन "कुछ" लोगों की बात पूरी तरह ग़लत है। औरत के टखने सतर (परदा) हैं, उनका खुलना जायज़ नहीं। वल्लाहु तआला आलम।

मसला नंबर ४२२: गोलड़ा, ज़िला रावलपिंडी, हज़रत पीर साहब का मकान, प्रेषक हमीदुल्लाह साहब, पीर अल-मअरुफ़ बह नोमान मुल्ला, १२ सफ़र १३३८ हिजरी। रफ़-ए-सब्बाबा (शहादत की उँगली उठाने) के बारे में आपका क्या अमल है?

जवाब: मुझ फ़क़ीर और फ़क़ीर के पूर्वजों, महान मशायख़ और आदरणीय उस्तादों (अल्लाह उनके राज़ पाक करे) का हमेशा से यह मामूल रहा है कि वे मुतवातिर हदीसों और अनेक किताबों के निर्देशों का पालन करते हुए रफ़-ए-सब्बाबा करते आए हैं और मैं इसे सुन्नत मानता हूँ। इसकी तफ़सीली चर्चा 'बदाइ' इमाम मलिकुल उलेमा और 'फ़तहुल क़दीर' इमाम मुहक़्क़िक़ अली अल-इतलाक़ और अन्य मुहक़्क़िक़ व्याख्याकारों के शब्दों में और इस फ़क़ीर के फ़तावा में है। वल्लाहु आलम।

पृष्ठ १८९ / ७३६

الجواب: عمرو کا قول صحیح ہے ہاں جماعت کے ساتھ دعا میں برکت ہے اس کیلئے انتظار بہتر ہے اور اگر کوئی ضرورت جلدی کی ہو تو جاسکتا ہے کوئی حرج نہیں ورنہ مسلمانوں کی جماعت کے خلاف بات پسندیدہ نہیں، کھانے پر فاتحہ پڑھنا درست ہے اس میں کتابیں تصنیف ہو چکی ہیں، جو نا درست کہے وہ بتائے کہ اللہ و رسول نے اسے منع فرمایا یا تم منع کرتے ہو اگر اللہ ورسول نے منع فرمایا تو بتاؤ اور اگر تم منع کرتے ہو تو تم شارع نہیں اپنا سر کھاؤ۔ غیر مقلد وہابی دیوبندی سب اسلام سے خارج ہیں اور ان کے پیچھے نماز باطل محض و التفصیل في حسام الحرمین و النھی الاکید و غیرھما (اور اس مسئلہ کی تفصیل حسام الحرمین اور النہی الاکید وغیرہ میں ہے۔ ت) واللہ سبحنہ و تعالی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۴۲۱: کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین اس مسئلہ میں کہ زید کہتا ہے کہ عورتوں کو نیت نماز میں ہاتھ سینہ پر باندھنا چاہئے اور بوقت قعدہ التحیات میں دونوں پاؤں بچھا کر بیٹھنا چاہئے اور پاؤں کی گرہ بھی ڈھکی رکھنا چاہئے اور بعض کہتے ہیں کہ گرہ نہ ڈھکی جائے۔ اب علماء دین فرمائیں کہ عورتوں کو نیت نماز میں سینہ پر ہاتھ باندھنا اور قعدہ التحیات میں پاؤں بچھا کر بیٹھنا جائز ہے یا نہیں، بعض کہتے ہیں کہ مردوں کی طرح عورتوں کو بھی نماز پڑھنا چاہئے جس طرح مرد ایک پاؤں بچھا کر قعدہ میں بیٹھتے ہیں اور زیر ناف ہاتھ باندھتے ہیں اور پاؤں کی گرہیں کھلی رکھتے ہیں اسی طرح عورتوں کو بھی چاہئے یعنی جو قاعدہ مردوں کی نماز کا ہے وہی عورتوں کا ہے۔ اب حضور سے امید وار ہیں کہ اس کا پورا پورا ثبوت حوالہ کتب و آیت و حدیث کے کیوں نہ دیا جائے کہ عورتوں کو کس طرح اور کس قاعدے سے نماز پڑھنا چاہئے۔

الجواب: زید کا قول صحیح ہے سب کتابوں میں اس طرح ہے ان بعض کا قول محض باطل ہے اور عورت کے گٹے ستر عورت ہیں ان کا کھلنا جائز نہیں۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۴۲۲: از گولڑہ ضلع راولپنڈی مکان حضرت پیر صاحب مرسلہ حمید اللہ صاحب، پیر المعروف بہ نعمان ملا ۱۲ صفر ۱۳۳۸ھ رفع سبابہ کے بارے میں جناب کا کیا عمل ہے؟

الجواب: فقیر اور فقیر کے آبائے کرام و مشائخ عظام و اساتذہ اعلام قدست اسرار ہم کا ہمیشہ معمول باتباع احادیث متواترہ و ارشادات کتب متکاثرہ رفع سبابہ رہا اور اسے سنت جانتا ہے تفصیل کلام بدائع امام ملک العلماء و فتح القدیر امام محقق علی الاطلاق و غیر ہما کلمات شراح محققین و فتاوی فقیر میں ہے واللہ

Fatawa Razawiyya Volume 6 Allah knows best.

Question No. 423: From Bareilly, Madrasa Manzar-ul-Islam, submitted by Maulana Abdullah Sahib Bengali, 14 Safar 1338 AH. What do the scholars of religion say regarding the issue of whether it is correct or not to face any one of the four directions after prayer to make supplication (dua)? And for India, is any one of these four directions specific?

The Answer: The direction of the Qibla is superior everywhere. However, for the Imam, it is disliked (Makruh) to remain facing the Qibla after the Salaam. He should turn to the right or left, or face the followers if no one is praying in front of him. Allah Almighty knows best.

Question No. 424: From Landi Kotal Fort Post Office, Peshawar District, through Subedar Major Sher Jan, Khyber Rifles, submitted by Adkhan Shinwari, 24 Safar 1338 AH. To the honorable Maulana, may his excellence endure, Peace be upon you and the mercy of Allah. Is pointing the finger during Attahiyyat (Tashahhud) forbidden or permissible? Please write to me whether pointing the finger in prayer is permissible or not, and in what manner it is permissible?

The Answer: Pointing the finger during Attahiyyat is a Sunnah. When reaching "Ash-hadu," close the pinky and the finger next to it, and form a circle with the thumb and middle finger. Raise the index finger at "La" and drop it and open the hand at "Illa." The consolidator of the school, our leader Imam Muhammad (may Allah be pleased with him), says: "The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) did it, so we do as the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) did. And this is the view of Abu Hanifa and our companions." This pointing was done by the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him), so we will do it in the same way the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) did. This is the school of thought of Imam Abu Hanifa and our companions, may Allah be pleased with them all. Allah Almighty knows best.

Question No. 425, 426: Submitted by Syed Ahmed Hussain Sahib from Syedpur Post Office, Wazirganj Badaun, dated 9 Jumada al-Akhira 1338 AH. What do you say about these issues:

1 Bada'i al-Sana'i, Section on the Sunan of Prayer, published by H.M. Saeed Company, Karachi, 1/21. Page 190 of 736

फ़तावा रज़विया जिल्द शश्म (छठा भाग) अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसाला नंबर 423: बरेली, मदरसा मंज़र-ए-इस्लाम से, मौलवी अब्दुल्ला साहब बंगाली द्वारा पूछा गया, 14 सफ़र 1338 हिजरी। दीन के विद्वान इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि नमाज़ के बाद चारों दिशाओं में से किसी एक दिशा की ओर मुँह करके दुआ करना सही है या नहीं? और भारत के लिए इन चार दिशाओं में से कोई दिशा विशिष्ट है या नहीं?

अल-जवाब (उत्तर): क़िबला की दिशा हर जगह श्रेष्ठ है। लेकिन इमाम के लिए सलाम के बाद क़िबला की ओर मुँह किए रहना मकरूह (नापसंद) है। उसे दाएँ या बाएँ मुड़ जाना चाहिए या मुक़्तदियों (पीछे नमाज़ पढ़ने वालों) की तरफ़ मुँह कर लेना चाहिए, बशर्ते कि सामने कोई नमाज़ न पढ़ रहा हो। अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसाला नंबर 424: क़िला लंडी कोतल पोस्ट ऑफ़िस, ज़िला पेशावर, सूबेदार मेजर शेर जान, ख़ैबर राइफल्स के माध्यम से अदखान शिनवारी द्वारा भेजा गया, 24 सफ़र 1338 हिजरी। जनाव मौलवी साहब की सेवा में, अस्सलामु अलैकुम व रहमतुल्लाह। अत्तहियात (तशह्हुद) में उँगली से इशारा करना मना है या जायज़? आप कृपा करके मुझे लिखकर बताएँ कि नमाज़ में उँगली का इशारा करना जायज़ है या नहीं और किस तरीक़े से जायज़ है?

अल-जवाब (उत्तर): अत्तहियात में उँगली का इशारा सुन्नत है। जब "अशहदु" पर पहुँचे, तो छोटी उँगली और उसके पास वाली उँगली को मोड़ लें, और अँगूठे तथा बीच की उँगली का छल्ला (सर्किल) बना लें। "ला" पर शहादत की उँगली उठाएँ और "इल्ला" पर गिराकर हाथ खोल दें। मज़हब के संकलनकर्ता हमारे आक़ा इमाम मुहम्मद (रज़ियल्लाहु अन्हु) फ़रमाते हैं: "इसे अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने किया, तो हम भी वैसा ही करेंगे जैसा अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने किया। और यही इमाम अबू हनीफ़ा और हमारे साथियों का विचार है।" यह इशारा अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने किया था, इसलिए हम भी वैसा ही करेंगे जैसा अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने किया था। यही इमाम अबू हनीफ़ा और हमारे साथियों का मज़हब है, अल्लाह उन सब से राज़ी हो। अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसाला नंबर 425, 426: सैयद अहमद हुसैन साहब द्वारा, सैयदपुर पोस्ट ऑफ़िस वज़ीरगंज बदायूँ से, दिनांक 9 जमादी-उल-उख़रा 1338 हिजरी। आप इन मसलों में क्या फ़रमाते हैं:

1 बदाइ-उस-सनाइ, नमाज़ की सुन्नतों का अध्याय, एच.एम. सईद कंपनी कराची द्वारा प्रकाशित, 1/21। पेज 190 / 736

فتاوی رضویہ جلد ششم تعالیٰ اعلم مسئلہ نمبر ۴۲۳: از بریلی مدرسہ منظر الاسلام مسئولہ مولوی عبداللہ صاحب بنگالی ۱۴ صفر ۱۳۳۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ نماز کے بعد چاروں جہات میں کسی ایک جہت کو متوجہ ہو کر دعا کرنا درست ہے یا نہیں؟ اور ہندوستان کے لئے ان چار جہتوں میں سے کوئی جہت مخصوص ہے یا نہیں؟

الجواب: جہت قبلہ ہر جگہ افضل ہے مگر امام کے لئے کہ بعد سلام اسے قبلہ رور ہنا مکروہ ہے دینے یا بائیں پھر جائے یا مقتدیوں کی طرف منہ کرلے اگر سامنے کوئی نماز نہ پڑھتا ہو۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۴۲۴: از قلعہ لنڈی کوتل ڈاکخانہ خاص ضلع پشاور بمعرفت شیر جان صوبیدار میجر خیبر رائفل مرسلہ ادخان شنواری ۲۴ صفر ۱۳۳۸ھ بخدمت جناب مولوی صاحب دام اقبالہ، السلام علیکم ورحمتہ اللہ التحیات میں انگلی کا اشارہ کرنا منع ہے یا جائز، آپ مہربانی فرما کر بندے کو تحریر کریں کہ نماز میں انگلی کا اشارہ کرنا جائز ہے یا نہیں اور کس کس طریقہ پر جائز ہے؟

الجواب: التحیات میں انگلی کا اشارہ سنّت ہے جب اشہد پر پہنچے چھنگلیا اور اس کے برابر کی انگلی کی گرہ باندھے اور انگوٹھے اور بیچ کی انگلی کا حلقہ بنائے اور "لا" پر کلمے کی انگلی اٹھائے اور "الا" پر گرا کر ہاتھ کھول دے محرر مذہب سیدنا امام محمد رضی اللہ تعالیٰ عنہ فرماتے ہیں: صنعہ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فنصنع کما صنع رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم وھو قول ابی حنیفۃ واصحابنا۔ یہ اشارہ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے کیا تو ہم کریں گے جس طرح رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے کیا اور یہی مذہب امام ابو حنیفہ اور ہمارے اصحاب کا ہے رضی اللہ تعالیٰ عنہم اجمعین، واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۴۲۵، ۴۲۶: مرسلہ سید احمد حسین صاحب از مقام سید پور ڈاکخانہ وزیر گنج بدایوں بتاریخ ۹ جمادی الاخری ۱۳۳۸ھ آپ ان مسئلوں میں کیا فرماتے ہیں:

1 بدائع الصنائع فصل فی سنن الصلوۃ مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱ / ۲۱ Page 190 of 736

Fatawa Razawiyya Volume Six

(1) How should one make the intention (Niyyah) for the Fard (obligatory) prayer of Jumu'ah (Friday prayer), and what should be recited in the two rak'ahs after the Jumu'ah prayer? Please write the full details of the prayer. (2) And during the prayer, should 'Bismillah' be recited before every 'Alhamdu' Sharif (Surah Al-Fatiha) and before 'Qul Huwallah' Sharif (Surah Al-Ikhlas)? Will reciting Bismillah before 'Alhamdu' Sharif be sufficient, or should it also be recited before 'Qul Huwallah' as well?

The Answer: It is sufficient to intend "today's Fard Jumu'ah" and one may also say "two rak'ahs". Some people also add "for the purpose of discharging the Dhuhr prayer," there is no harm in this, nor is it a necessity. After the Fard of Jumu'ah, pray six rak'ahs of Sunnah prayer—first four then two—and in them, make the intention for Sunnah after Jumu'ah, and in the first four, for Sunnah before Jumu'ah. After praying these Sunnahs, pray two or as many Nafl (voluntary prayers) as desired; common people do not need more than this. (2) It is Sunnah to recite Tasmia (Bismillah) at the beginning of Surah Al-Fatiha. Afterwards, if one joins a Surah or verses from the beginning of a Surah, it is Mustahabb (recommended) to recite Tasmia before them; it is good if recited, and no harm if not. And Allah Almighty knows best.

Issue Number 42: From the city, Gali Malanan, Mahalla Zakhira, asked by Sayyid Mushtaq Ali Sahib, 5 Dhu al-Hijjah 1338 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: We, the collective people of Islam of Mahalla Zakhira, residents of Bareilly Gali Malanan, have selected the following individuals and made them members for the warning and admonition of those who abandon prayer (Salat). After hearing the excuses of these gentlemen who abandon prayer, what kind of action should be taken according to the Pure Shariah? Names of the honorable members: Hadi Hussain, Sheikh Mukhtar Ahmed, Qurb Muhammad, Mahbub Hasan, Mushtaq Ali, Sayyid Hussain, Inayat Hussain, Sayyid Azhar Ali. There is a thumb impression under each person's name.

The Answer: Advise them gently. Repeatedly recount the severe warnings mentioned in the Great Quran and Ahadith for abandoning prayer, abandoning the congregation, and abandoning the mosque. Those who have faith in their hearts will surely benefit. Allah Almighty says: "And remind, for indeed, the reminder benefits the believers." [1] Remind them of Allah's words and commands, for indeed reminding them will benefit the believers. And those who do not comply in any way,

if anyone has influence over them, use that influence. If they still do not desist, then completely cut off greeting (Salam), conversation, and social interaction with them.

---

1. Al-Quran 51/55 Page 191 of 736

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

(1) जुमे के फ़र्ज़ की नियत किस तरह करनी चाहिए और जुमे की नमाज़ के बाद दो रकअत में क्या-क्या पढ़ना चाहिए? नमाज़ की पूरी तफ़सील लिखें। (2) और नमाज़ के दौरान हर 'अलहम्दु' शरीफ़ से पहले और 'कुल हुवल्लाहु' शरीफ़ से पहले बिस्मिल्लाह शरीफ़ पढ़नी चाहिए? क्या 'अलहम्दु' शरीफ़ से पहले बिस्मिल्लाह काफ़ी होगी या 'कुल हुवल्लाहु' से पहले भी पढ़नी चाहिए?

अल-जवाब: इतनी नियत काफ़ी है कि "आज के फ़र्ज़ जुमे" और चाहे तो "दो रकअत" भी कहे। कुछ लोग यह भी बढ़ाते हैं कि "ज़ुहर को साक़ित करने के वास्ते", इसमें भी कोई हर्ज नहीं और न ही हाजत। जुमे के फ़र्ज़ के बाद छह रकअत सुन्नत नमाज़ पढ़ें, पहले चार फिर दो, और उनमें जुमे के बाद की सुन्नत की नियत करें और पहली चार में जुमे से पहले की। बाद की सुन्नतें पढ़ कर दो या जितने चाहें नफ़्ल पढ़ें, आम लोगों के लिए इससे ज़्यादा की हाजत नहीं। (2) सूरह फ़ातिहा की इब्तिदा में तो तस्मिया (बिस्मिल्लाह) पढ़ना सुन्नत है और बाद में अगर सूरह या सूरह की शुरूआती आयतें मिलाए तो उनसे पहले तस्मिया पढ़ना मुस्तहब है, पढ़े तो अच्छा है न पढ़े तो कोई हर्ज नहीं। वल्लाहु तआला आलम।

मसला नम्बर 42: शहर गली मलानन, मोहल्ला ज़ख़ीरा से मुस्तौलिह सैय्यद मुश्ताक़ अली साहब, 5 ज़िल हिज्जा 1338 हिजरी। दीन के उलेमा इस मसले में क्या फ़र्माते हैं कि: हम तमाम अहल-ए-इस्लाम मोहल्ला ज़ख़ीरा, साकिनान-ए-बरेली गली मलानन ने नमाज़ छोड़ने वालों की तौबीह व ताकीद (चेतावनी और ज़ोर देने) के लिए दर्ज़-ए-ज़ैल अहाब (व्यक्तियों) को मुन्तख़ब किया और मेम्बर बनाया है। इन हज़रात को नमाज़ छोड़ने वालों के साथ उनके उज़्र (बहाने) सुनने के बाद शर-ए-मुतह्र के मुताबिक किस तरह की कार्रवाई अमल में लानी चाहिए? मेम्बरान के मुबारक नाम: हादी हुसैन, शेख़ मुख़्तार अहमद, क़ुर्ब मोहम्मद, महबूब हसन, मुश्ताक़ अली, सैय्यद हुसैन, इनायत हुसैन, सैय्यद अज़हर अली। हर शख़्स के नाम के नीचे अंगूठे का निशान है।

अल-जवाब: नर्मी से समझाएं। नमाज़ छोड़ने, जमात छोड़ने और मस्जिद छोड़ने पर क़ुरआन-ए-अज़ीम और अहादीस में जो सख़्त वईदें (चेतावनियाँ) आई हैं, उन्हें बार-बार सुनाएं। जिनके दिलों में ईमान है, उन्हें ज़रूर नफ़ा (फ़ायदा) पहुँचेगा। अल्लाह अज़्ज़ वजल् फ़र्माता है: "और समझाओ कि समझाना मुसलमानों को फ़ायदा देता है।" [1] अल्लाह के कलाम और अहकाम याद दिलाओ कि बेशक उनका याद दिलाना ईमान वालों को नफ़ा देगा। और जो किसी तरह न मानें, उन पर अगर

किसी का दबाव है तो उसके ज़रिए दबाव डालें, और अगर फिर भी बाज़ न आएँ तो उनसे सलाम व कलाम, मेल-जोल एक लख़्त (पूरी तरह) तर्क कर दें।

---

1. अल-क़ुरआन 51/55 पृष्ठ 191/736

فتاوی رضویہ جلد ششم

(۱) جمعہ کے فرض کی نیت کس طرح کرنا چاہئے اور بعد نمازِ جمعہ دو رکعت کے کیا کیا پڑھنا چاہئے کل مفصل نماز لکھنا۔ (۲) اور درمیانِ نماز میں ہر الحمد شریف سے پہلے اور قل ہو اللہ شریف سے پہلے بسم اللہ شریف پڑھنا چاہئے؟ الحمد شریف سے پہلے بسم اللہ کافی ہوگی یا قل ہو اللہ سے پہلے بھی پڑھنا چاہئے؟

الجواب: اتنی نیت کافی ہے کہ آج کے فرض جمعہ اور چاہے دو رکعت بھی کہے اور بعضے یہ بھی بڑھاتے ہیں کہ واسطے ساقط کرنے ظہر کے، اس میں بھی کوئی حرج نہ حاجت ، فرضِ جمعہ کے بعد چھ رکعت نماز سنت پڑھیں، چا پھر دو ، اور ان میں سنت بعدِ جمعہ کی نیت کریں اور پہلی چار میں قبلِ جمعہ کی۔ بعد کی سنتیں پڑھ کر ۲ یا جتنے چاہیں نفل پڑھیں، ان سے زائد عام لوگوں کی حاجت نہیں۔ (۲) سورہ فاتحہ کی ابتداء میں تو تسمیہ پڑھنا سنت ہے اور بعد کو اگر سورت یا شروع سورت کی آیتیں ملائے تو ان سے پہلے تسمیہ پڑھنا مستحب ہے پڑھے تو اچھا نہ پڑھے تو حرج نہیں۔ واللہ تعالی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۴۲: از شہر گلی ملاناں محلہ ذخیرہ مسئولہ سید مشتاق علی صاحب ۵ ذی الحجہ ۱۳۳۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ہم جملہ اہل اسلام محلہ ذخیرہ ساکنان بریلی گلی ملاناں نے تارکانِ صلاۃ کی تہدید و تاکید کے لئے اصحاب ذیل کو منتخب کیا اور ممبر بنایا ہے اس حضرات کو تارکان صلاۃ کے ساتھ ان کے عذرات تو پورا کرنے کے بعد کسی قسم کی کارروائی ازروئے شرع مطہر عمل میں لانا چاہئے۔ اسمائے گرامی ممبران ہادی حسین ، شیخ مختار احمد ، قرب محمد ، محبوب حسن ، مشتاق علی ، سید حسین ، عنایت حسین ، سید اظہر علی ہر شخص کے نام کے نیچے انگوٹھے کا نشان ہے۔

الجواب: بہ نرمی سمجھائیں ترکِ نماز و ترکِ جماعت و ترکِ مسجد پر قرآنِ عظیم و احادیث میں جو سخت وعیدیں ہیں بار بار سنائیں جن کے دلوں میں ایمان ہے انھیں ضرور نفع پہنچے گا اللہ عزوجل فرماتا ہے۔ وَ ذَكِّرْ فَاِنَّ الذِّكْرٰى تَنْفَعُ الْمُؤْمِنِيْنَ ۝ اور سمجھاؤ کہ سمجھانا مسلمانوں کو فائدہ دیتا ہے (ت) [1] اللہ کے کلام و احکام یاد دلاؤ کہ بیشک ان کا یاد دلانا ایمان والوں کو نفع دے گا۔ اور جو کسی طرح نہ مانیں اس پر اگر کسی کا دباؤ ہے اس کے ذریعے سے دباؤ ڈالیں اور یوں بھی باز نہ آئے تو اسے سلام وکلام ، میل جول یک لخت ترک کر دیں۔

---

1. القرآن ۵۱/۵۵ صفحہ ۱۹۱ از ۷۳۶

Fatawa Rizvia, Volume 6

"And if Satan causes you to forget, then do not sit after the reminder with the wrongdoing people." 1 (Translation) And whenever Satan makes you forget, do not sit with the unjust people after remembering. (T) And Allah Almighty knows best.

Issue number 448: From Faizabad, Mohalla Koki Ali Baig, submitted by Sayyid Abdullah Sahab, Sub-Inspector, 13 Muharram 1331 AH. What do the scholars of religion and jurists of the clear Sharia say regarding this issue: Zaid does not recite with his tongue in his five daily prayers and other optional prayers like Tahajjud etc., but performs all his prayers by pressing his tongue to his palate and with mental focus. He performs the Quran, books, and Durood Sharif etc. all in his thoughts, claiming that the Quran was revealed to the heart of the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him), therefore, thinking it in the heart is superior and earns more reward than verbal recitation. Zaid makes his tongue completely idle and useless by pressing it against the palate. Zaid says these matters belong to people of spiritual taste and purified souls. Outward-looking people cannot understand these matters. Now, it is required to know whether Zaid's prayer performed in the aforementioned manner is correct and of a high degree or not. If it is of a high degree, why shouldn't we also pray in the same way to deserve a great reward? And if Zaid's prayer is not correct in this way, what should Zaid do about the prayers he has already performed? If Zaid also leads the prayer, will the prayer behind Zaid be valid or not in such a situation, and should one pray behind Zaid in the future or not? And what should those followers who have already prayed behind Zaid do about their prayers? Is it obligatory to repeat them?

The Answer: Zaid has slandered the Sharia, slandered the Sufis, and ruined all his prayers. Not a single one of his prayers was valid, nor were the prayers of others behind him. It is obligatory for him to make up for (perform Qaza) all such prayers he has prayed, and it is also obligatory for those who prayed behind him to make up for their prayers. The Great Quran was indeed revealed to the blessed heart of the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him), but it was for recitation. Allah Almighty says:

"And [it is] a Qur'an which We have separated [by intervals] that you might recite it to the people over a prolonged period." 2 We have revealed this Quran in stages so that you may recite it to the people slowly.

1 Quran 6/68 2 Quran 17/106 Page 192 of 736

फतवा रज़विया, छठा खंड

"और अगर कभी शैतान तुझे भुला दे, तो याद आने पर ज़ालिमों के पास मत बैठ।" 1 (अनुवाद) और जब कभी तुझे शैतान भुला दे तो याद आने पर ज़ालिमों के पास न बैठ। (त) और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला नंबर 448: फ़ैज़ाबाद, मोहल्ला कोकी अली बेग से, प्रस्तुतकर्ता सैयद अब्दुल्ला साहब, सब इंस्पेक्टर, 13 मुहर्रम 1331 हिजरी। धर्म के विद्वान और शरीअत के मुफ़्ती इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि ज़ैद अपनी पाँच वक़्त की नमाज़ों और तहज्जुद आदि अन्य नफ़्ल नमाज़ों में ज़बान से क़िरअत (पाठ) नहीं करता, बल्कि अपनी पूरी नमाज़ ज़बान को तालू से लगाकर दिल के ख्याल के साथ अदा करता है। वह क़ुरआन शरीफ़, किताबें और दुरूद शरीफ़ आदि सब ध्यान से ही अदा करता है। उसका कहना है कि क़ुरआन शरीफ़ हुज़ूर सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम के दिल पर उतारा गया था, इसलिए ज़बानी पढ़ने के मुक़ाबले में दिल में ख़्याल करना अधिक श्रेष्ठ और अधिक सवाब (पुण्य) का कारण है। ज़ैद अपनी ज़बान को तालू से लगाकर बिल्कुल बेकार और निष्क्रिय कर देता है। ज़ैद का कहना है कि ये मसले अहल-ए-ज़ौक़ (रूहानी रुचि वाले) और सूफ़ियों के हैं। ज़ाहिरबीन (बाहरी चीज़ों को देखने वाले) इन मसलों को नहीं समझ सकते। अब यह जानना ज़रूरी है कि ज़ैद की नमाज़ ऊपर बताए गए तरीके से सही और उच्च दर्जे की हुई या नहीं? अगर उच्च दर्जे की हुई है, तो हम लोग भी उसी तरीके से नमाज़ क्यों न पढ़ें ताकि बड़े सवाब के हकदार बनें? और अगर ज़ैद की नमाज़ इस तरीके से सही नहीं हुई, तो ज़ैद को अपनी उन नमाज़ों के बारे में क्या करना चाहिए जो वह पढ़ चुका है? अगर ज़ैद इमामत (नमाज़ का नेतृत्व) भी करता है, तो क्या ऐसी स्थिति में ज़ैद के पीछे नमाज़ होगी या नहीं और भविष्य में ज़ैद के पीछे नमाज़ पढ़नी चाहिए या नहीं? और जो मुक़्तदी (पीछे नमाज़ पढ़ने वाले) ज़ैद के पीछे नमाज़ पढ़ चुके हैं, उन्हें अपनी नमाज़ों के बारे में क्या करना चाहिए? क्या उन्हें नमाज़ दोहराना ज़रूरी है?

जवाब: ज़ैद ने शरीअत पर तोहमत लगाई, सूफ़ियों पर तोहमत लगाई और अपनी सभी नमाज़ें बर्बाद कर दीं। उसकी एक भी नमाज़ सही नहीं हुई और न ही उसके पीछे दूसरों की नमाज़ हुई। उस पर अनिवार्य (फ़र्ज़) है कि उसने जितनी भी ऐसी नमाज़ें पढ़ी हैं, उन सबकी क़ज़ा करे और जिन लोगों ने उसके पीछे नमाज़ पढ़ी है, उन पर भी अनिवार्य है कि वे अपनी नमाज़ों की क़ज़ा करें। महान क़ुरआन बेशक हुज़ूर सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम के मुबारक दिल पर उतरा, लेकिन पढ़ने के लिए। अल्लाह तआला फ़रमाता है:

"और हमने क़ुरआन को थोड़ा-थोड़ा करके उतारा ताकि तुम उसे लोगों को ठहर-ठहर कर सुनाओ।"
2 इस क़ुरआन को थोड़ा-थोड़ा करके उतारा ताकि तुम लोगों के सामने ठहर-ठहर कर पढ़ो।

1 अल-क़ुरआन 6/68 2 अल-क़ुरआन 17/106 पेज 192/736

وَ اِمَّا یُنْسِیَنَّكَ الشَّیْطٰنُ فَلَا تَقْعُدْ بَعْدَ الذِّكْرٰى مَعَ الْقَوْمِ الظّٰلِمِیْنَ ۝ ۱ اور جب کبھی تجھے شیطان بھلا دے تو یاد آئے پر ظالموں کے پاس نہ بیٹھ۔ (ت) واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ نمبر ۴۴۸: از فیض آباد محلہ کو کی علی بیگ مسئولہ سید عبد اللہ صاحب سب انسپکٹر ۱۳ محرم ۱۳۳۱ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ زید اپنی پنج وقتی نماز و دیگر نوافل مثل تہجد وغیرہ میں زبان سے قرات نہیں کرتا بلکہ اپنی کل نمازوں میں زبان تالو سے لگا کر دلی خیال کے ساتھ ادا کرتا ہے۔ قرآن شریف و کتاب و درود شریف وغیرہ سب دھیان سے ادا کرتا ہے کہتا ہے کہ قرآن شریف حضور صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کے قلب پر القا ہوا تھا بایں وجہ بمقابلہ زبانی پڑھنے کے دل میں خیال کرنا زیادہ افضل و موجبِ مزیدِ ثواب ہے زید اپنی زبان کو تالو سے لگا کر بالکل معطل اور بیکار کر دیتا ہے، زید کہتا ہے کہ یہ مسائل اہل ذوق اور اصفیاء کرام کے ہیں۔ ظاہر بین ان مسائل کو نہیں سمجھ سکتے۔ اب دریافت طلب یہ امر ہے کہ اس طریقہ مذکور بالا پر زید کی نماز صحیح اور اعلی درجے کی ہوئی یا نہیں، اگر اعلی درجے کی ہوئی ہے تو ہم لوگ بھی اسی طریقہ سے کیوں نہ پڑھیں کہ مستحقِ ثواب عظیم کے ہوں۔ اور اگر زید کی نماز اس طریقہ مذکورہ پر صحیح نہیں ہوئی ہے تو زید کو اپنی ان نمازوں کی بابت جن کو وہ ادا کر چکا ہے کیا کرنا چاہئے، زید اگر امامت بھی کرتا ہے بس ایسی حالت میں زید کے پیچھے نماز ہوگی یا نہیں اور آئندہ زید کے پیچھے نماز پڑھنا چاہئے یا نہیں، اور جو مقتدی زید کے پیچھے نماز پڑھ چکے ہیں ان کو اپنی نمازوں کی بابت کیا کرنا چاہئے؟ کیا لوٹانا واجب ہے؟

الجواب: زید نے شریعت پر افترا کیا، صوفیہ کرام پر افترا کیا، اپنی نمازیں سب برباد کیں، اس کی ایک نماز بھی نہیں ہوئی نہ اس کے پیچھے دوسروں کی ہوئی، اس پر فرض ہے کہ جتنی نمازیں

ایسی پڑھی ہوں سب کی قضا کرے اور جتنی نمازیں اوروں نے اس کے پیچھے پڑھی ہیں ان پر بھی فرض ہے کہ اُن کی قضا کریں۔ قرآن عظیم، حضور اقدس صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کے ضرور قلب مبارک پر نازل ہوا مگر پڑھنے کیلئے۔ قال اللہ تعالٰی

وَقُرْاٰنًا فَرَقْنٰهُ لِتَقْرَاَهٗ عَلَى النَّاسِ عَلٰى مُكْثٍ ۲ اس قرآن کو تھوڑا تھوڑا کرکے اتارا کہ تم لوگوں پر ٹھہر ٹھہر کر پڑھو۔

۱ القرآن ۶/ ۶۸ ۲ القرآن ۱۷/ ۱۰۶ صفحہ ۱۹۲ از ۷۳۶

Fatawa Razawiya, Volume 6

Reciting the Quran in prayer is obligatory. Allah the Almighty says:

- [Quran 73:20]: "So recite what is easy [for you] of the Quran." | Recite as much of the Quran in prayer as is easy.

Its holy name itself is "Quran". "Quran" is derived from 'qira'at' (recitation), and recitation means to read and make others read with the tongue. To imagine in the heart is not called reading. It is forbidden to recite the Quran in a state of ritual impurity (janabat), but imagination is not prohibited. To oppose the consensus of Muslims regarding the recitation of the Holy Quran in prayer is to invite thoughts of Hell. Allah the Almighty says:

- [Quran 4:115]: "And whoever opposes the Messenger after guidance has become clear to him and follows other than the way of the believers - We will give him what he has taken and drive him into Hell, and evil it is as a destination." | Anyone who opposes the Holy Prophet (peace and blessings be upon him) after guidance has become clear and follows a path other than that of the believers, We shall turn him to what he has turned to and cast him into Hell; and it is an evil destination. (T)

Issue No. 429: From the city, Mohalla Mulukpur, questioned by Shafiq Ahmad Khan Sahib, 26 Muharram ul Haram 1339 AH.

Question: What do the scholars of religion say regarding this matter: what should a follower (muqtadi) recite in the sitting (qa'dah) of the last rak'ah?

The Answer:

Attahiyat, Durood, and Dua if he joined the prayer from the beginning. If he joined after some rak'ahs, then in the final sitting with the imam, he should recite Attahiyat slowly and with such deliberation (tarteel) that his Attahiyat concludes at the time the imam performs the salam. If he finishes reciting Attahiyat and the imam hasn't performed the salam yet, he should keep repeating the two Testimonies (Kalima Shahadat) until the imam performs the salam. And Allah Almighty knows best.

Issue No. 430: From Dhoraji, Kathiawar, Madrasah Sarmaya-e-Fakhr-e-Alam, sent by Maulana Maulvi Ghulam Jilani Sahib, 7 Safar 1339 AH.

In the name of Allah, the Most Gracious, the Most Merciful

The Inquiry

What do the scholars of religion say regarding this matter: Zaid says that if obligatory or voluntary prayers are offered while sitting, one should not lift the buttocks from the feet during prostration (sujud), otherwise the prayer will be invalidated. Accordingly, Tahawi, Ayni, Hidaya, Jawahir Nafeesa, Kanz-ul-Ibad, Inaya, and Kifaya have mentioned this. Explain and be rewarded.

---

1. Al-Quran 73/20
2. Al-Quran 4/115

फ़तावा रज़विया, जिल्द 6

नमाज़ में क़ुरआन का पढ़ना फ़र्ज़ है। अल्लाह तआला फ़रमाता है:

- [क़ुरआन 73:20]: "तो क़ुरआन में से उतना पढ़ो जितना आसान हो।" | नमाज़ में क़ुरआन पढ़ो जितना आसान हो।

इसका पाक नाम ही क़ुरआन है। क़ुरआन 'क़िरात' से है और क़िरात का मतलब ज़बान से पढ़ना और पढ़ाना होगा, दिल में तसव्वुर (कल्पना) करने को पढ़ना नहीं कहते। हालत-ए-जनाबत (अशुद्धि की अवस्था) में क़ुरआन पढ़ना हराम है और तसव्वुर मना नहीं है। नमाज़ में कलाम-ए-मजीद की क़िरात पर मुसलमानों की इज्मा (سہمتی) के ख़िलाफ़ जाना जहन्नम का विचार है। अल्लाह तआला फ़रमाता है:

- [क़ुरआन 4:115]: "और जो शख़्स हिदायत के वाज़ेह (स्पष्ट) हो जाने के बाद रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की मुख़ालफ़त करता है और मोमिनों की राह के अलावा राह पर चलता है, हम उसे उसी राह पर फेर देंगे जिस पर वो चला और उसे जहन्नम में डाल देंगे, और वो बहुत बुरा ठिकाना है।" | जो शख़्स हिदायत के वाज़ेह हो जाने के बाद रसूल अकरम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम की मुख़ालफ़त करता है और मोमिनों की राह के अलावा राह पर चलता है, हम फेर देंगे उसे उस राह पर जिस पर वो चला और उसे जहन्नम में डाल देंगे और वो बहुत बुरी जगह है। (त)

मसला नंबर 429: शहर महल्ला मलूकपुर से, साइल (पूछने वाले) शफ़ीक़ अहमद ख़ां साहब, 26 मुहर्रमुल हराम 1339 हिजरी।

सवाल: उलमा-ए-दीन इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि मुक़्तदी को आख़िरी रकअत के क़ायदे में क्या पढ़ना चाहिए?

अल-जवाब:

अत्तहिय्यात, दरूद और दुआ, अगर उसे शुरू से नमाज़ मिली हो। और अगर वो किसी रकअत के बाद शामिल हुआ तो इमाम के साथ क़ादा-ए-अख़ीरा (आख़िरी बैठक) में अत्तहिय्यात ठहर-ठहर कर इस क़दर तरतील (लय) के साथ पढ़े कि उसकी अत्तहिय्यात इमाम के सलाम के समय ख़त्म हो। और

अगर वो अत्तहिय्यात पढ़ चुका और इमाम ने अभी सलाम नहीं फेरा, तो पिछले दोनों कलमा-ए-शहादत बार-बार पढ़ता रहे जब तक कि इमाम सलाम न फेर दे। वल्लाहु तआला आलम (और अल्लाह तआला बेहतर जानता है)।

मसला नंबर 430: धोराजी काठियावाड़, मदरसा सरमाया-ए-फ़ख़्र-ए-आलम से, मुरसिला (भेजने वाले) मौलाना मौलवी ग़ुलाम जिलानी साहब, 7 सफ़र 1339 हिजरी।

बिस्मिल्लाह हिर्रहमान निर्रहीम

अल-इस्तिफ़ता (पूछताछ)

उलमा-ए-दीन इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि ज़ैद कहता है कि अगर फ़र्ज़ या नफ़्ल नमाज़ बैठकर पढ़ी जाए तो सज्दे में पैरों से सुरीन (कूल्हे) को न उठाए वर्ना नमाज़ टूट जाएगी। चुनांचे तहावी, ऐनी, हिदाया, जवाहर-ए-नफ़ीसा, कंज़ुल इबाद, इनाया और किफ़ाया ने इसका ज़िक्र किया है। बयान फ़रमाएं सवाब पाएं।

---

1. अल-क़ुरआन 73/20
2. अल-क़ुरआन 4/115

पेज 193/736

فتاوٰی رضویہ ، جلد ششم

نماز میں قرآن کا پڑھنا فرض ہے قال اللہ تعالٰی:

- فَاقْرَءُوْا مَاتَیَسَّرَ مِنَ الْقُرْاٰنِ ط 1 - | نماز میں قرآن پڑھو جتنا آسان ہو۔

اس کا نام پاک ہی قرآن ہے قرآن قرأت سے ہے اور قرأت پڑھنا اور پڑھانا ہوگا مگر زبان سے، دل میں تصور کرنے کو پڑھنا نہیں کہتے حالتِ جنابت میں قرآن پڑھنا حرام ہے اور تصور منع نہیں۔ نماز میں قرأتِ کلام مجید پر اجماع مسلمین کا خلاف جہنم کا خیال ہے۔ قال اللہ تعالٰی:

- وَ مَنْ یُّشَاقِقِ الرَّسُوْلَ مِنْۢ بَعْدِ مَا تَبَیَّنَ لَہُ الْہُدٰی وَ یَتَّبِعْ غَیْرَ سَبِیْلِ الْمُؤْمِنِیْنَ نُوَلِّہٖ مَا تَوَلّٰی وَ نُصْلِہٖ جَہَنَّمَ ؕ وَ سَآءَتْ مَصِیْرًا ﴿۱۱۵﴾ 2 - | جو شخص ہدایت کے واضح ہو جانے کے بعد رسول اکرم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کی مخالفت کرتا ہے اور مومنین کی راہ کے علاوہ راہ پر چلتا ہے ہم پھیر دیں گے اسے اس راہ پر جس پر وہ چلا اور اسے جہنم میں ڈال دیں گے اور وہ بہت بری جگہ ہے۔ (ت)

مسئلہ نمبر ۴۲۹: از شہر محلہ ملوکپور مسئولہ شفیق احمد خاں صاحب ۲۶ محرم الحرام ۱۳۳۹ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ مقتدی کو آخری رکعت کے قعدہ میں کیا پڑھنا چاہیے۔

الجواب:

التحیات، درود، دعا اگر اسے اول سے نماز ملی ہو اور اگر کسی رکعت کے پڑھنے کے بعد شامل ہوا تو امام کے ساتھ قعدہ اخیرہ میں التحیات ٹھہر ٹھہر کر اس قدر ترتیل کے ساتھ پڑھے کہ اس کی

التحیات امام کے سلام وقت ختم ہو، اور اگر یہ التحیات پڑھ چکا اور امام نے ابھی سلام نہ پھیرا تو پچھلے دونوں کلمہ شہادت بار بار پڑھتا رہے یہاں تک کہ امام سلام پھیر دے، واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۴۳۰: از دھورا جی کاٹھیاواڑ مدرسہ سرمایہ فخر عالم مرسلہ مولینا مولوی غلام گیلانی صاحب ۷ صفر ۱۳۳۹ھ

بسم اللہ الرحمن الرحیم

الاستفتاء

کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید کہتا ہے کہ اگر نماز فرض یا نفل بیٹھ کر پڑھے جائیں تو سجدے میں پاؤں سے سُرین کو نہ اٹھائے ورنہ نماز ٹوٹ جائے گی، چنانچہ طحاوی و عینی و ہدایہ و جواہر نفیسہ و کنز العباد و عنایہ و کفایہ نے اس کو ذکر کیا ہے بینوا توجروا۔

---

1 القرآن ۷۳ / ۲۰ 2 القرآن ۴ / ۱۱۵

The Answer: And He is the Giver of success to what is right, and to Him is the return and the final destination. In Tahawi, Ayni, Hidaya, Kifaya, and Inaya, this matter is not mentioned at all; it is a false fame. It is necessary for the narrator to verify the transmission. Jawahir Nafeesah and Kanz al-Ibad are both weak books; the former is also obscure, and its author seems very less knowledgeable. Indeed, looking at it reveals the full situation; it contains very weak, unresearched, and incorrect issues. In one place, it has gathered conflicting preferences of "permitted" and "not permitted" without any reason. This is a small booklet in Arabic explaining matters related to the washing, shrouding, burial, and grave of a funeral. Regarding the second book, its author is Ali bin Luqma Ghouri, and it is called weak. Allama Mulla Ali Qari and Jamaluddin Murshidi in Mufid al-Mufti, page 194, and Allama Shami have also called it weak. In the marginalia or commentaries of some books, this text appears as follows:

من صلى قاعد افسجد لا يرفع اليتيه وان رفع اليتيه فسدت صلاته فكذا رجليه كذا في المحيط الجلبي والاصل ان المريض او غيره اذا صلى قاعدا لا يرفع اليتيه كما لا يرفع رجليه في السجود واذا رفع رجله واحدة او اليتيه واحدة لا تفسد كذا في چلپی ابن الملك والمختار ان يقعد كما يقعد في حالة التشهد وهو الذي اختاره فقيه ابوالليث و شمس الائمة السرخسی و قال ابو يوسف رحمه الله اذا حان وقت الركوع والسجود ويقعد كما يقعد في التشهد كذا في العيني شرح الهداية ص ١١٦هـ

A person who prays sitting should not raise their buttocks during prostration. If they raise their buttocks, their prayer will be invalidated; the same rule applies to both feet. It is mentioned this way in Muhit Chalabi. The fundamental principle is that when a sick person or anyone else prays sitting, they should not raise their buttocks, just as they do not raise their feet in prostration. If someone raises one foot and one buttock, the prayer will not be invalidated. It is mentioned this way in Chalabi Ibn al-Malik. The chosen view is to sit exactly as one sits during Tashahhud. This was chosen by Faqih Abu Layth and Shams al-A'immah Sarakhsi. Imam Abu Yusuf (may Allah have mercy on him) stated that when bowing and prostrating, one should sit in the manner one sits during Tashahhud. It is mentioned this way in Ayni Sharh-e-Hidaya, page 116. (Trans.)

However, in Ayni and Chalabi, there is no trace of this text. There are several "Muhit" works, and it is unknown which "Muhit" is being referred to; the book itself is not

available to be checked. It appears that these texts are fabricated; in the books mentioned, there isn't even a hint of them. Furthermore, even if this text were found in a reliable book, it has no connection to this meaning because the reasoning given in the first text is "because the buttocks in the sitting person's prayer..." (etc. Trans.)

उत्तर: और वही सही मार्ग के लिए सफलता देने वाला है, और उसी की ओर लौटना और ठिकाना है। तहावी और ऐनी, हिदाया और किफ़ाया और इनाया में तो यह मसला बिल्कुल नहीं है, यह ग़लत मशहूर है। नकल करने वाले पर नकल की पुष्टि करना ज़रूरी है। 'जवाहिर नफ़ीसा' और 'कन्ज़ अल-इबाद' दोनों कमज़ोर किताबें हैं और पहली तो गुमनाम भी है और इसका लेखक बहुत ही कम जानकार लगता है, जैसा कि इसे देखने से पूरी स्थिति स्पष्ट हो जाती है। इसमें बहुत कमज़ोर, शोध के विपरीत और ग़लत मसले हैं। एक ही जगह बिना किसी कारण के"जायज़" और "नाजायज़" की तरजीह को इकट्ठा कर दिया गया है। यह अरबी भाषा में एक छोटी सी पुस्तिका है जिसमें जनाज़े के ग़ुस्ल, कफ़न, दफ़न और कब्र आदि से संबंधित मसले बताए गए हैं। दूसरी किताब के लेखक अली बिन लुक़्मा ग़ौरी हैं और इसे कमज़ोर कहा गया है। अल्लामा मुल्ला अली क़ारी ने और जमालुद्दीन मुर्शिदी ने 'मुफ़ीद अल-मुफ़्ती' पृष्ठ 194 पर और अल्लामा शामी ने भी इसे कमज़ोर कहा है। कुछ किताबों के हाशिये या टीकाओं पर यह इबारत इस तरह है:

जो बैठकर नमाज़ पढ़े और सजदा करे, वह अपने नितंबों (buttocks) को न उठाए। यदि उसने नितंबों को उठाया तो उसकी नमाज़ फ़ासिद (अमान्य) हो जाएगी। यही नियम उसके पैरों के लिए भी है। ऐसा 'अल-मुहीत अल-चलबी' में है। सिद्धांत यह है कि बीमार या अन्य लोग जब बैठकर नमाज़ पढ़ें, तो वे अपने नितंबों को न उठाएं जैसे वे सजदे में अपने पैर नहीं उठाते। यदि उसने एक पैर या एक नितंब उठाया, तो नमाज़ फ़ासिद नहीं होगी। ऐसा 'चलबी इब्न अल-मलिक' में है। पसंदीदा मत यह है कि वह उसी तरह बैठे जैसे तशहुद (Tashahhud) की स्थिति में बैठा जाता है, और यही वह है जिसे फ़कीह अबू लैथ और शम्स अल-अइम्मा अल-सरखसी ने चुना है। इमाम अबू यूसुफ (रहमतुल्लाह अलैहि) ने कहा: जब रुकू और सजदे का समय आए, तो वह उसी तरह बैठे जैसे तशहुद में बैठा जाता है। ऐसा 'ऐनी शरह अल-हिदाया' पृष्ठ 116 में है।

जो व्यक्ति बैठकर नमाज़ अदा करे वह सजदे के समय सुरीन (नितंब) न उठाए। अगर उसने सुरीन को उठाया तो उसकी नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी। इसी तरह दोनों पैरों का नियम है। 'मुहीत चलबी' में इसी तरह है। असल बात यह है कि बीमार आदि जब बैठकर नमाज़ पढ़े तो वह सुरीन न उठाए जैसा कि सजदे में पैर नहीं उठाता। और जब किसी ने एक पैर और एक सुरीन उठाया तो नमाज़ फ़ासिद न होगी। 'चलबी इब्न अल-मलिक' में इसी तरह है। और मुख्तार (पसंदीदा) यह है कि उसी तरह बैठ जाए जिस तरह तशहुद में बैठता है। इसे फ़कीह अबू लैथ और शम्स अल-अइम्मा सरखसी ने अपनाया है। इमाम अबू यूसुफ (रहमतुल्लाह अलैहि) ने फ़रमाया कि जब रुकू और सुजूद के समय झुके तो उस तरह बैठे जिस तरह तशहुद में बैठा जाता है। 'ऐनी शरह हिदाया' पृष्ठ 116 में इसी तरह है। (अनु.)

हालाँकि 'ऐनी' और 'चलबी' में इस इबारत का पता भी नहीं है। और 'मुहीत' कई हैं, पता नहीं कौन सी 'मुहीत' है, वह खुद मौजूद नहीं है जिसे देखा जाए। मालूम हुआ कि ये इबारतें बनावटी हैं, जिन किताबों का ज़िक्र करते हैं उनमें इनका निशान तक नहीं है। इसके अलावा, अगर यह इबारत किसी विश्वसनीय किताब में मिल भी जाए, तो इस अर्थ से इसका कोई सरोकार नहीं है क्योंकि पहली इबारत में जो दलील दी गई है "क्योंकि बैठने वाले की नमाज़ में उसके सुरीन..." (आदि। अनु.)

पृष्ठ 736 में से 194

الجواب: وھو الموفق للصواب والیہ المرجع والمأب طحاوی و عینی، ہدایہ و کفایہ وعنایہ میں تو یہ مسئلہ بالکل نہیں غلط مشہور ہے ناقل پر تصحیح نقل ضروری ہے۔ جواہر نفیسہ، و کنز العباد دونوں ضعیف کتابیں ہیں اور اول غیر مشہور بھی ہے اور اس کا مصنف بہت ہی کم علم ہوا ہے چنانچہ اس کے دیکھنے سے پورا حال اس کا معلوم ہوتا ہے اس میں بڑے ضعیف و خلاف تحقیق و غلط مسائل ہیں ایک ہی جگہ میں بلا وجہ ترجیح "یجوز" و "لا یجوز" کو جمع کیا ہوا ہے یہ چھوٹا سا رسالہ ہے عربی زبان میں جنازہ کے غسل و کفن دفن قبر وغیرہ کے متعلق مسائل بیان کئے ہیں، اور دوسری کا مصنف علی بن لقمہ غوری ہے اس کو ضعیف کہا ہے۔ علامہ ملا علی قاری نے و جمال الدین مرشدی نے مفید المفتی صفحہ ۱۹۴ اور علامہ شامی نے بھی اس کو ضعیف کہا ہے۔ بعض کتابوں کے بیاض یا وقایہ پر یہ عبارت اس طور پر ہے:

من صلى قاعد افسجد لا يرفع اليتيه وان رفع اليتيه فسدت صلاته فكذا رجليه كذا في المحيط الجلبي والاصل ان المريض او غيره اذا صلى قاعدا لا يرفع اليتيه كما لا يرفع رجليه في السجود واذا رفع رجله واحدة او اليتيه واحدة لا تفسد كذا في چلپی ابن الملك والمختار ان يقعد كما يقعد في حالة التشهد وهو الذي اختاره فقيه ابوالليث و شمس الائمة السرخسی و قال ابو يوسف رحمه الله اذا حان وقت الركوع والسجود ويقعد كما يقعد في التشهد كذا في العيني شرح الهداية ص ١١٦ھ

جو شخص بیٹھ کر نماز ادا کرے وہ سجدہ کے وقت سرین نہ اٹھائے اگر اس نے سرین کو اٹھایا تو اس کی نماز فاسد ہو جائیگی، اسی طرح دونوں پاؤں کا حکم ہے محیط چلپی میں اسی طرح ہے اصل یہ ہے کہ مریض وغیرہ جب بیٹھ کر نماز پڑھے تو وہ سرین نہ اٹھائے جیسا کہ سجدہ میں پاؤں نہیں اٹھاتا اور جب کسی نے ایک پاؤں اور ایک سرین اٹھایا تو نماز فاسد نہ ہوگی، چلپی ابن الملك میں اسی طرح ہے، اور مختار یہ ہے کہ اسی طرح بیٹھ جائے جس طرح تشہد میں بیٹھتا ہے۔ اسے فقیہ ابو لیث و شمس الائمہ سرخسی نے اختیار کیا ہے، امام ابو یوسف رحمہ اللہ نے فرمایا جب رکوع و سجود کے وقت جھکے تو اس طرح بیٹھے جس طرح تشہد میں بیٹھا جاتا ہے۔ عینی شرح ہدایہ صفحہ ۱۱۶ میں اسی طرح ہے اھ (ت)

حالانکہ عینی و چلپی میں اس عبارت کا پتا بھی نہیں اور محیط متعدد ہیں معلوم نہیں کون سی محیط ہے وہ خود موجود نہیں جو دیکھی جائے۔ معلوم ہوا کہ یہ عبارتیں مصنوعی ہیں جن کتابوں کا ذکر کرتے ہیں ان میں ان کا نشان تک نہیں۔ ایضاً یہ عبارت اگر کسی معتبر کتاب میں مل بھی جائے تو اس مطلب سے اس کو مساس بھی نہیں کیونکہ عبارت اولیٰ میں جو دلیل بیان کی ہے لان الیتیہ فی صلوۃ القاعد الخ (قاعد کی نماز میں اسکے سرین الخ۔ت)

It does not apply to the aforementioned claim. If this were a description of the state of prostration (Sajda), then instead of "wa idha rafa'a qadamaihi fi salat al-qa'im" (when the one standing in prayer lifts both feet - T), it would have been "rafa' qadamaihi fi al-sujud" (lifting both feet in the state of prostration - T). Otherwise, the restriction "fi salat al-qa'im" would imply that lifting both feet during prostration in the prayer of one who is sitting is not a nullifier of prayer, while it is for one who is standing. However, the general application of evidences that nullify prayer makes no such distinction. This leads to the strong suspicion that in this text, the word "fasajada" (then he prostrated) is a mistake by the narrator or the scribe. Thus, when this word is considered an error, the meaning of this passage becomes that in the state of "presumptive standing" (qiyam hukmi), one should not lift the buttocks; otherwise, it would be as if someone lifts both feet during "actual standing" (qiyam haqiqi), which nullifies the prayer. Therefore, based on this explanation, this text supports the questioner's point. And in the second passage, the restriction of being "in prostration" is not mentioned along with "la yarfa'u alyataih" (he should not lift his buttocks - T), hence it would also mean the same, that "la yarfa'u alyataih fi al-qiyam al-hukmi" (he should not lift his buttocks in presumptive standing - T). As for what is mentioned later regarding prostration along with the comparison, it is possible that it only relates to "la yarfa'u rijlaih" (he should not lift his legs - T), and the comparison was merely regarding the nullification. Even if this possibility is not certain, it is detrimental to the claimant because "when a possibility arises, the argument fails" (because when possibility comes in, reasoning becomes invalid - T).

Furthermore, the description of the form of men's prostration mentioned generally in the well-known and commonly circulated texts, commentaries, and fatwas among scholars is contrary to this. According to the principle of "Rasm al-Mufti", they take precedence. The absence of this matter in so many books indicates that this issue is either non-existent or unreliable. It is stated in Shami, Volume 1, Page 152:

Arabic	**Urdu Translation**
عدم الذكر يشعر باختيار عدمه اهـ	Not mentioning it clarifies that it is not preferred. (T)

It is in the same volume, page 171:

Arabic	Urdu Translation
عدم الذكر كذكر العدم۔	Not mentioning is like mentioning the absence [of something]. (T)

Similarly, the practice of the predecessors (Salaf) was not found on this. Therefore, even if it were correct, it would not be acted upon. It is stated in Shami, Volume 1, Page 308 (small print):

Arabic	Urdu Translation
هذا يعلم ولا يعمل عليه لما فيه من مخالفة السلف۔	This should be known, but not acted upon, because it involves opposing the predecessors. (T)

वह उपरोक्त दावे पर लागू नहीं होता है। यदि यह सजदे (साष्टांग प्रणाम) की स्थिति का वर्णन होता, तो दलील में "व इज़ा रफ़अ़ क़दमैहि फ़ी सलातिल क़ाएम" (जब खड़े होकर नमाज़ पढ़ने वाले ने अपने दोनों पैर उठाए।—त) के बजाय "रफ़अ़ क़दमैहि फ़िस्सुजूद" (सजदे की स्थिति में दोनों पैर उठाना।—त) होता, अन्यथा "फ़ी सलातिल क़ाएम" (खड़े होकर नमाज़ पढ़ने में) की शर्त से यह आवश्यक होगा कि बैठे हुए नमाज़ पढ़ने वाले का सजदे में दोनों पैरों को उठाना नमाज़ को अमान्य न करे और खड़े होकर पढ़ने वाले में करे, जबकि नमाज़ को अमान्य करने वाले प्रमाणों का सामान्य प्रयोग अंतर नहीं करता है। इससे यह प्रबल संभावना होती है कि इस इबारत (लेख) में शब्द "फ़सजदा" (तो उसने सजदा किया) वर्णनकर्ता या लेखक की गलती है। अत; जब इस शब्द को गलत माना जाए, तो इस इबारत का अर्थ यह होता है कि "क़ियाम हुक्मी" (काल्पनिक रूप से खड़े होने) की स्थिति में नितंबों को न उठाए, अन्यथा वह वैसा ही होगा जैसे "क़ियाम हक़ीक़ी" (वास्तविक खड़े होने) में कोई व्यक्ति दोनों पैरों को उठाए, जो नमाज़ को अमान्य करता है। अतः इस स्पष्टीकरण के अनुसार, यह इबारत प्रश्नकर्ता के पक्ष में है। और दूसरी इबारत में "ला यरफ़अु अलियतैहि" (नितंबों को न उठाए।—त) के साथ सजदे की शर्त का उल्लेख भी नहीं है, इसलिए इससे भी वही अर्थ होगा कि "ला यरफ़अु अलियतैहि फ़िल क़ियामुल हुक्मी" (काल्पनिक खड़े होने में नितंबों को न उठाए।—त)। और आगे जो तुलना के साथ सजदे में उल्लेख है, उसकी संभावना है कि वह केवल "ला यरफ़अु रिज्लैहि" (अपने पैरों को न उठाए।—त) से संबंधित हो और तुलना केवल नमाज़ के अमान्य होने में हो। भले ही यह संभावना निश्चित न हो, फिर भी यह तर्क देने वाले के लिए हानिकारक है क्योंकि "जब संभावना उत्पन्न होती है, तो तर्क अमान्य हो जाता है" (क्योंकि जब संभावना आ गई तो दलील बेकार हो गई।—त)।

इसके अतिरिक्त, विद्वानों के बीच प्रचलित प्रसिद्ध ग्रंथों, व्याख्याओं और फ़तवों में पुरुषों के सजदे की जो सामान्य विधि लिखी गई है, वह इसके विपरीत है और "रस्मुल मुफ़्ती" के नियम के अनुसार वे प्रमुख हैं। इतनी सारी पुस्तकों का इस विषय से खाली होना इसी ओर संकेत करता है कि यह मसला अस्तित्वहीन है या अविश्वसनीय है। शामी जिल्द अव्वल सफ़हा 152 में है:

अरबी	**उर्दू अनुवाद**
عدم الذكر يشعر باختيار عدمه اهـ	ज़िक्र न करना स्पष्ट कर रहा है कि वह पसंदीदा नहीं है। (त)

उसी जिल्द के सफ़हा 171 में है:

अरबी	उर्दू अनुवाद
عدم الذكر كذكر العدم۔	ज़िक्र न करना, न होने के ज़िक्र की तरह है। (त)

इसी तरह पूर्वजों (सलफ़) का अमल (कार्य) इस पर नहीं पाया गया, इसलिए भले ही यह सही भी हो, इस पर अमल नहीं होगा। शामी जिल्द अव्वल सफ़हा 308 (छोटा संस्करण) में है:

अरबी	उर्दू अनुवाद
هذا يعلم ولا يعمل عليه لما فيه من مخالفة السلف۔	यह जान लिया जाए और इस पर अमल नहीं किया जाएगा क्योंकि इसमें पूर्वजों (सलफ़) का विरोध है। (त)

पृष्ठ 195/736

فتاوی رضویہ جلد ششم

وہ دعویٰ مذکور پر منطبق نہیں ہوتی اگر یہ حالت سجدہ کا بیان ہوتا تو دلیل میں بجائے واذا رفع قدمیه في صلاة القائم (جب قائم نے نماز میں دونوں قدم اٹھائے۔ت) کے رفع قدمیہ فی السجود (دونوں قدم حالت سجدہ میں اٹھائے۔ت) ہوتا ورنہ قید فی صلاۃ القائم سے لازم آتا ہے کہ صلاۃ قاعد میں رفع قدمین فی السجود مفسدِ صلاۃ نہ ہو اور صلاۃ قائم میں ہو حالانکہ اطلاق دلائل مبطل تفاوت ہے اس سے غالب ظن یہ ہوتا ہے کہ اس عبارت میں لفظ فسجد ناقل یا کاتب کی غلطی ہے، پس جبکہ اس لفظ کو غلط مانا جائے تو اس عبارت کا مطلب یہ ہوتا ہے کہ حالتِ قیام حکمی میں رفع الیتین نہ کرے ورنہ وہ ایسا ہو گا جیسے قیام حقیقی میں کوئی شخص رفع قدمین کرے کہ وہ مفسد صلاۃ ہے۔ پس اس تقریر پر یہ عبارت سائل کے مطلب سے ہے اور عبارت ثانیہ میں لا یرفع الیتیه (سرین کو نہ اٹھائے۔ت) کے ساتھ قید فی السجدہ کی بھی مذکور نہیں لہذا اس سے بھی وہی مراد ہوگی کہ لا یرفع الیتیه في القیام الحکمی (قیام حکمی میں سرین نہ اٹھائے۔ت) اور آگے جو مشبہ بہ کے ساتھ فی السجدۃ مذکور ہے سو وہ محتمل ہے کہ صرف لا یرفع رجلیه (پاؤں نہ اٹھائے۔ت) کے ساتھ متعلق ہو اور تشبیہ محض فساد میں ہوا اگر یہ احتمال متعین بھی نہ ہو تا ہم مستدل کو مضر ہے لانه اذا جاء الاحتمال بطل الاستدلال (کیونکہ جب احتمال آگیا تو استدلال باطل ہو گیا۔ت)

ایضاً متون و شروح و فتاوٰی مشہور متداولہ بین ایدی العلماء میں جو مطلقاً سجدہ رجال کی ہیئت لکھی وہ اس کے خلاف ہے اور بقاعدہ رسم المفتی وہ مقدم ہیں۔ اس قدر کتب کا خالی ہونا اسی پر مشعر ہے کہ یہ مسئلہ عدم الوجود ہے یا غیر معتبر ہے۔ شامی جلد اول ص ۱۵۲ میں ہے:

عربی عبارت	اردو ترجمہ

عدم الذکر یشعر باختیار عدمہ اھ عدم ذکر واضح کر رہا ہے کہ وہ مختار نہیں اھ (ت)

اُسی جلد ص ۱۷۱ میں ہے:

عربی عبارت	اردو ترجمہ

عدم الذکر کذکر العدم۔ عدم ذکر ، ذکر عدم کی مانند ہے۔ (ت)

ایضاً سلف کا عمل اس پر نہیں پایا گیا لہذا اگرچہ صحیح بھی ہو اس پر عمل نہ ہو گا۔ شامی جلد اوّل ص ۳۰۸ طبع خورد میں ہے:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
ھذا یعلم ولا یعمل علیہ لما فیہ من مخالفۃ السلف۔	یہ معلوم کر لیا جائے اور اس پر عمل نہیں کیا جائے گا کیونکہ اس میں سلف کی مخالفت ہے۔ (ت)

Fatawa Razawiya, Volume 6

Similarly, in "Jawahir Nafisa" and some other books, it is stated that unknown and unreliable books and those whose references are incorrect—and it is evident that the science of jurisprudence (Fiqh) is not derived from such obscure and unknown marginalia and fatwas—it is in the same volume of Shami:

[Arabic Box Left]: The science of Fiqh is not narrated from unknown marginalia even if a reliable person says it is the writing of a trustworthy person. [Urdu Box Right]: Issues of Fiqh are not narrated from unknown marginalia, even if some reliable person says that it is the writing of a trustworthy person. —End of citation (T)

Contrary to Istishab (presumption of continuity), narrating from unknown marginalia is correct:

[Arabic Box Left]: Because it is to support keeping something in its original state, so what repels (the change) suffices, even if what removes (the established state) does not suffice. Verily, removal is easier than repulsion. So understand, remain firm, and do not be cowardly. [Urdu Box Right]: Because it is for supporting the maintenance of a thing in its original state, so the repeller will suffice even if the remover does not suffice because removal is easier than repulsion. So ponder, be firm, and do not become cowardly. —End of citation (T)

Similarly, this statement is for a specific case and is not reliable; it is in Shami, volume one, page 515. "Specifying the statement benefits (the fact) that it is contrary to the relied-upon (position)." —End of citation (Specifying the statement is beneficial to the fact that it is against the relied-upon position. —End of citation T)

Similarly, prostrating in this manner entails the abandonment of several Sunnahs, so it is weak from the viewpoint of evidence as well, even if there is practice and fatwa upon it, not just by one jurist and Imam, but many Imams. In the same Shami, volume one, page 114: "The one that is preferred due to the strength of evidence is the most preferred, even if it is explicitly stated that the fatwa is on something else." —End of citation (The statement which gains preference due to the strength of evidence is the most preferred, even if there is explicit mention that the fatwa is on its opposite. —End of citation T) On page 816 it is:

[Arabic Box Left]: It is not for a Mufti to issue a fatwa based on a weak (position), and the weakness is not removed by the fatwas of many Imams of Khwarizm. [Urdu Box Right]: It is not correct for a Mufti to issue a fatwa on a weak (position), and the

weakness cannot be removed by the fatwas of most of the Imams of Khwarizm. — End of citation (T)

Similarly, there is a possibility in this that this matter might be an innovation (Bid'ah) when the ruling fluctuates between Sunnah and Bid'ah.

---

1. Radd al-Muhtar, Chapter on Eids, printed by Mustafa al-Babi Egypt, 1/214
2. Radd al-Muhtar, Chapter on Eids, printed by Mustafa al-Babi Egypt, 1/214
3. Radd al-Muhtar, Chapter on Eids, printed by Mustafa al-Babi Egypt, 1/212

फ़तावा रज़विया, खंड 6

इसी प्रकार, "जवाहर नफ़ीसा" और कुछ अन्य पुस्तकों में यह बताया गया है कि अज्ञात और अविश्वसनीय पुस्तकें और वे जिनके संदर्भ गलत हैं—और यह स्पष्ट है कि न्यायशास्त्र (फ़िक्ह) का ज्ञान ऐसे अस्पष्ट और अज्ञात हाशिये और फ़तवों से नहीं लिया जाता—उसी शामी के इसी खंड में है:

[अरबी बॉक्स बायां]: न्यायशास्त्र को अज्ञात हाशिये से उद्धृत नहीं किया जाता है, भले ही कोई विश्वसनीय व्यक्ति कहे कि यह एक भरोसेमंद व्यक्ति का लेखन है। [उर्दू बॉक्स दायां]: फ़िक्ह के मामले अज्ञात हाशिये से उद्धृत नहीं किए जाते, भले ही कोई विश्वसनीय व्यक्ति कहे कि यह एक भरोसेमंद व्यक्ति का लेखन है। —समाप्त (त)

इस्तिशहाब (निरंतरता का अनुमान) के विपरीत, अज्ञात हाशिये से उद्धृत करना सही है:

[अरबी बॉक्स बायां]: क्योंकि यह किसी वस्तु को उसकी मूल स्थिति में रखने का समर्थन करने के लिए है, इसलिए जो रोकता है वह पर्याप्त होगा, भले ही वह जो हटाता है पर्याप्त न हो। वास्तव में, हटाना रोकने से आसान है। तो समझें, अडिग रहें और कायर न बनें। [उर्दू बॉक्स दायां]: क्योंकि यह किसी चीज़ को उसकी मूल स्थिति में बनाए रखने के समर्थन के लिए होता है, तो रोकने वाला पर्याप्त होगा भले ही हटाने वाला पर्याप्त न हो क्योंकि हटाना रोकने से आसान है, इसलिए विचार करें, अडिग रहें और कायर न बनें। —समाप्त (त)

इसी तरह, यह कथन एक विशिष्ट मामले के लिए है और यह विश्वसनीय नहीं है; यह शामी के पहले खंड के पृष्ठ 515 में है। "कथन को विशिष्ट करना यह लाभ देता है कि यह विश्वसनीय (मत) के विरुद्ध है।" —समाप्त (कथन को विशिष्ट करना इस बात के लिए लाभकारी है कि यह विश्वसनीय के खिलाफ है। —समाप्त त)

इसी तरह, इस तरह सजदा करने से कई सुन्नतों का त्याग आवश्यक हो जाता है, इसलिए प्रमाण की दृष्टि से भी यह कमजोर है, भले ही इस पर अमल और फ़तवा हो, न केवल एक फ़क़ीह और इमाम बल्कि कई इमामों का। उसी शामी के पहले खंड के पृष्ठ 114 में: "प्रमाण की शक्ति के कारण जिसे वरीयता दी जाती है वह सबसे अधिक वरीयता प्राप्त है, भले ही यह स्पष्ट रूप से कहा गया हो कि फ़तवा किसी और चीज़ पर है।" —समाप्त (जो कथन प्रमाण की शक्ति के आधार पर वरीयता प्राप्त करता है, वही सबसे अधिक वरीयता प्राप्त होता है, भले ही इस बात का स्पष्ट उल्लेख हो कि फ़तवा इसके विपरीत पर है। —समाप्त त) पृष्ठ 816 में है:

[अरबी बॉक्स बायां]: एक मुफ़्ती के लिए कमज़ोर (मत) के आधार पर फ़तवा जारी करना सही नहीं है, और ख्वारिज्म के कई इमामों के फ़तवों से कमज़ोरी दूर नहीं होती है। [उर्दू बॉक्स दायां]: मुफ़्ती के लिए कमज़ोर पर फ़तवा जारी करना सही नहीं है और ख्वारिज्म के अधिकांश इमामों के फ़तवे से कमज़ोरी खत्म नहीं हो सकती। —समाप्त (त)

इसी तरह, इसमें संभावना है कि यह मामला एक नवाचार (बिदअत) हो सकता है जब नियम सुन्नत और बिदअत के बीच झूलता हो।

---

1. रद अल-मुह्तार, ईद का अध्याय, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र द्वारा मुद्रित, 1/214
2. रद अल-मुह्तार, ईद का अध्याय, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र द्वारा मुद्रित, 1/214
3. रद अल-मुह्तार, ईद का अध्याय, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र द्वारा मुद्रित, 1/212

فتاوٰی رضویہ، جلد ششم

ایضاً جواہر نفیسہ اور دوسری بعض کتابوں میں جو یہ مسئلہ بتایا جاتا ہے کہ کتب غیر معتبرہ مجہولہ ہیں اور جو معتبرہ ہیں ان کا حوالہ غلط ہے اور ظاہر ہے کہ علم فقہ کا ایسے غیر مشہور و مجہول حواشی و فتاوٰی سے نہیں لیا جاتا اُسی شامی اسی جلد میں ہے:

[عربی باکس]: الفقہ لا ینقل من الھوامش المجھولۃ و ان قال معتمدانہ بخط ثقۃ اھ [اردو باکس]: مسائل فقہ حواشی مجہولہ سے نقل نہیں کئے جاتے اگرچہ کوئی معتمد یہ کہے کہ یہ ثقہ کی تحریر ہے۔ اھ (ت)

بر خلاف استصحاب کے وہ نقل کرنا حواشی مجہولہ سے بھی درست ہے،

[عربی باکس]: لانہ لتأُیید ابقاء ماکان علی ماکان فیکفی المدفع و ان لم یکف المرفع فان الرفع اسھل من الدفع فافھم و تثبت و لا تھبت۔ [اردو باکس]: کیونکہ یہ کسی شے کو اپنی اصلی حالت پر باقی رکھنے کی تائید کے لئے ہوتا ہے تو دافع کو کفایت کرے گا اگرچہ رافع کو کفایت نہ کرے کیونکہ رفع دفع سے اسہل ہے تو غور کر ثابت قدم رہ اور بزدل نہ بن۔ (ت)

ایضاً یہ قول مخصص کا ہے اور یہ معتبر نہیں شامی جلد اول ص ۵۱۵ میں ہے۔ تخصیص القول یفید انہ خلاف المعتمد اھ (تخصیص قول مفید ہے اس بات کے کہ یہ معتمد کے خلاف ہے اھ ت)

ایضاً اس طرح سجدہ کرنے سے متعدد سنتوں کا ترک لازم ہوتا ہے پس من حیث الدلیل بھی ضعیف ہے اگرچہ اس پر عمل و فتوٰی بھی ہو نہ ایک فقیہ و امام بلکہ بہت اماموں کا اُسی شامی جلد اول ص ۱۱۴ میں المرجح بقوۃ الدلیل ھو الارجح و ان صرح بان الفتوٰی علی غیرہ اھ (جو قول قوت دلیل

کی بنا پر ترجیح پائے وہ ہی ارجح ہوتا ہے اگرچہ اس بات پر تصریح ہو کہ فتویٰ اس کے غیر پر ہے اھـ ت) ص ۸۱۶ میں ہے:

[عربی باکس]: لیس للمفتی الافتاء بالضعیف و لا ینتفی الضعف بافتاء کثیر من ائمۃ خوارزم ۳۔ [اردو باکس]: مفتی کے لئے ضعیف پر فتویٰ جاری کرنا درست نہیں اور اکثر ائمہ خوارزم کے افتاء سے ضعف ختم نہیں ہو سکتا۔ (ت)

ایضاً اس میں احتمال ہے کہ یہ امر بدعت ہو اذا تردد الحکم بین سنۃ و بدعۃ

---

1. ردالمحتار باب العیدین مطبوعہ مصطفیٰ البابی مصر ۱/ ۲۱۴
2. ردالمحتار باب العیدین مطبوعہ مصطفیٰ البابی مصر ۱/ ۲۱۴
3. ردالمحتار باب العیدین مطبوعہ مصطفیٰ البابی مصر ۱/ ۲۱۲

Fatawa Razawiya Volume 6

Abandoning it is better - (When there is hesitation as to whether a command is Sunnah or an innovation (bid'ah), then abandoning it is better. [T]) Shami Volume 1, p. 370; Bahr al-Ra'iq Volume 2, p. 178, states:

What fluctuates between innovation and obligation is performed, but what fluctuates between Sunnah and innovation is not performed.[2]	**When there is hesitation between a thing being an innovation or obligatory, then that thing will be acted upon; and when there is hesitation between it being Sunnah or between something being Sunnah and obligatory, then it will not be acted upon. Ah (T)**

And it is clear that prostrating in this manner is unreliable. Thus, even if this issue were correct, since it would be impossible for the common people, they would become sinners, and there is great hardship in this. Shami Volume 3, p. 239, states:

There is great hardship in it because it entails deeming the Ummah as sinners.[3] Ah	**There is great hardship in this because it necessitates the Ummah becoming sinners. Ah (T)**

The most gentle and appropriate thing for the people is to raise the buttocks in prostration so that the prostration is performed with ease. Shami Volume 5, p. 346, states:

And it is more gentle for the people of this time so that they do not fall into transgression and disobedience.[4] Ah	**This is easier for the people of this era so that they do not fall into transgression and disobedience (sin). Ah (T)**

In the same place, it is stated:

But the generality of the texts is in accordance with the generality of the evidences, and because it is more gentle for the people of this time.[5] Ah	**The absolute statement of the texts will have priority due to its correspondence with the absolute statement of the evidences, and also because it is extremely easy for people. Ah (T)**

This issue is not found at all in the reliable books of Fiqh (jurisprudence). The narrator has cited it from books of Sufism and litanies (awrad) because *Kanz al-Ibad* is a book

of litanies and invocations, and the place and chapter for legal obligations are the books of Fiqh, and this is a jurisprudential rule.

---

[1] Radd al-Muhtar, Chapter on 'When a ruling fluctuates between Sunnah and Innovation etc.', printed by Mustafa al-Babi Egypt, 1/475. [2] Bahr al-Ra'iq, End of the Chapter of the Eids, printed by HM Saeed Company Karachi, 2/165. [3] Radd al-Muhtar, Book of Prescribed Punishments (Hudud), Chapter on 'Regarding one who has intercourse with a woman presented to him', printed by Mustafa al-Babi Egypt, 3/170. [4] Radd al-Muhtar, Book of Prohibition and Permission, Section on Clothing, printed by Mustafa al-Babi Egypt, 5/249. [5] Radd al-Muhtar, Book of Prohibition and Permission, Section on Clothing, printed by Mustafa al-Babi Egypt, 5/249.

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

उसे छोड़ देना बेहतर है- (जब किसी हुक्म के सुन्नत और बिदअत होने में शंका हो, तो उसका छोड़ना बेहतर होता है। त) शामी जिल्द अव्वल पेज 370, बहरुल राइक जिल्द दोम पेज 178 में है:

जो चीज़ बिदअत और वाजिब के बीच दुविधा में हो उसे किया जाएगा, और जो सुन्नत और बिदअत के बीच हो उसे नहीं किया जाएगा।[2]	**जब किसी चीज़ के बिदअत और वाजिब होने में संदेह हो तो उस चीज़ पर अमल किया जाएगा और जब सुन्नत या जिस चीज़ के सुन्नत और वाजिब होने में संदेह हो तो फिर अमल नहीं किया जाएगा। अह् (त)**

और ज़ाहिर है कि इस तरह से सजदा करना अमान्य है। तो अगर यह मसला सही होने के आधार पर, जबकि लोगों से न हो सकेगा, लोग गुनहगार होंगे और इसमें भारी कठिनाई (हरज) है। शामी जिल्द सुम पेज 239 में है:

इसमें बड़ी कठिनाई है क्योंकि इससे उम्मत को गुनहगार ठहराना लाज़िम आता है।[3] अह्	**इसमें बड़ी कठिनाई है क्योंकि इससे उम्मत का गुनहगार होना ज़रूरी आता है। अह् (त)**

लोगों के लिए यही सबसे आसान और उपयुक्त है कि सजदे में कूल्हों को ऊंचा करें ताकि सजदा आसानी से अदा हो जाए। शामी जिल्द पंजुम पेज 346 में है:

और यह इस ज़माने के लोगों के लिए अधिक आसान है ताकि वे उल्लंघन और अवज्ञा में न पड़ें।[4] अह्	**यही ज़माने वालों के लिए आसान है ताकि वे उल्लंघन और अवज्ञा (नाफरमानी) में न पड़ें। अह् (त)**

इसी जगह पर है:

लेकिन मूल ग्रंथों की व्यापकता साक्ष्यों की व्यापकता के अनुरूप है और इसलिए कि यह इस ज़माने के लोगों के लिए अधिक आसान है।[5] अह्	**मूल ग्रंथों की व्यापकता को साक्ष्यों की व्यापकता के साथ समानता की वजह से प्राथमिकता हासिल होगी और इसलिए भी कि लोगों के लिए यह बहुत ही आसान है। अह् (त)**

फ़िक़्ह की विश्वसनीय किताबों में यह मसला बिल्कुल नहीं है और सूफ़ीवाद व वज़ीफ़ों की किताबों में से वर्णनकर्ता ने उद्धृत किया है क्योंकि 'कंज़ुल इबाद' वज़ीफ़ों और दुआओं की किताब है और कानूनी ज़िम्मेदारियों का स्थान और अध्याय फ़िक़्ह की किताबें हैं और यह एक फ़िक़्ह का नियम है।

[1] रद-उल-मुहतार, मतलब: जब हुक्म सुन्नत और बिदअत के बीच हो आदि, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 1/475 [2] बहरुल राइक, ईदैन के अध्याय के अंत में, एच एम सईद कंपनी कराची, 2/165 [3] रद-उल-मुहतार, किताबुल हुदूद, उस व्यक्ति के बारे में जिसने उस महिला से संभोग किया जो उसे पेश की गई, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 3/170 [4] रद-उल-मुहतार, किताबुल हज़्र वल इबाहत, कपड़ों के अध्याय में, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 5/249 [5] रद-उल-मुहतार, किताबुल हज़्र वल इबाहत, कपड़ों के अध्याय में, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 5/249

पेज 197/736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

کان ترکہ اولی[1]- (جب کسی حکم کے سنّت اور بدعت ہونے میں تردّد ہو تو اس کا ترک اولٰی ہوتا ہے ت) شامی جلد اول ص ۳۷۰، بحر الرائق جلد دوم ص ۱۷۸ میں ہے:

ما تردد بین بدعة وواجب یؤتی به اوبین سنة و بدعة فلا یؤتی به۔ [2]

جب کسی چیز کے بدعت اور واجب ہونے میں تردد ہو تو اس چیز پر عمل کیا جائے گا اور جب سنت یا جس چیز کے سنت و واجب ہونے میں تردد ہو تو پھر عمل نہیں کیا جائے گا اھ (ت)

اور ظاہر کہ اس طور پر سجدہ کرنا غیر معتبر ہے پس اگر یہ مسئلہ درست ہونے کی تقدیر پر جبکہ لوگوں سے نہ ہو سکے گا لوگ گناہگار ہوں گے اور اس میں حرج عظیم ہے۔ شامی جلد ثالث ص ۲۳۹ میں ہے:

فیه حرج عظیم لانه یلزم منه تأثیم الامة [3] اھ

اس میں حرج عظیم ہے کیونکہ اس سے امت کا گناہگار ہونا لازم آتا ہے اھ (ت)

لوگوں کے ساتھ یہی ارفق و اوفق ہے کہ سجدہ میں سرین کو بلند کریں تاکہ سجدہ آسانی سے ادا ہو جائے۔ شامی جلد پنجم ص ۳۴۶ میں ہے:

وھو ارفق بأھل ھذا الزمان لئلا یقع في الفسق والعصیان [4] اھ

یہی اہل زمانہ کے لئے آسان ہے تاکہ وہ فسق اور عصیان (نافرمانی) میں واقع نہ ہوں اھ (ت)

اسی جگہ میں ہے:

لکن اطلاق المتون موافق لاطلاق الادلۃ ولکونہ ارفق بأھل ھذا الزمان [5] اھ

متون کے اطلاق کو دلائل کے اطلاق کے ساتھ موافقت کی وجہ سے تقدیم حاصل ہوگی اور اس لئے بھی لوگوں کے لئے یہ نہایت ہی آسان ہے اھ (ت)

فقہ کی معتبر کتابوں میں یہ مسئلہ بالکل نہیں ہے اور تصوف و اوراد کی کتابوں میں سے ناقل نے نقل کیا ہے کیونکہ کنز العباد اوراد و وظائف کی کتاب ہے اور تکلیفہ کا محل و باب کتب فقہ ہیں اور یہ قاعدہ فقہیہ ہے۔

---

1 ردالمحتار مطلب اذ تردد الحکم بین سنۃ وبدعۃ الخ مطبوعہ مصطفیٰ البابی مصر ۱ / ۴۷۵ 2 بحر الرائق آخر باب العیدین مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۲/ ۱۶۵ 3 ردالمحتار کتاب الحدود مطلب فیمن وطئ من زفت الیہ مطبوعہ مصطفیٰ البابی مصر ۳/ ۱۷۰ 4 ردالمحتار کتاب الحظر والاباحۃ فصل فی اللبس مطبوعہ مصطفیٰ البابی مصر ۵/ ۲۴۹ 5 ردالمحتار کتاب الحظر والاباحۃ فصل فی اللبس مطبوعہ مصطفیٰ البابی مصر ۵/ ۲۴۹

Fatawa Razawiyya Volume Six

That a rule mentioned in its relevant chapter is more worthy of practice than one mentioned in an irrelevant chapter. It is stated in Shami, Volume 3:

[Arabic Box: The issue mentioned in its appropriate chapter is more worthy than that mentioned in a different chapter. (1)] [Urdu Box: A matter mentioned in its specific chapter and section is more worthy of implementation than one mentioned outside of its related chapter. (T)]

For issues of jurisprudence, three books of Kanz al-Ibad are unconventional sources:

[Arabic Box: Al-Hamwi said: What is found in unconventional sources and rare books may be suspected to be weak. (2) p. 31] [Urdu Box: Imam Hamwi says that whatever is in unconventional places and strange books, there arises a doubt that it might be weak. (T)]

The discourse of the Imams also demands that hands should not be raised (Raf'al Yadain) during prostration. It is stated in Abu al-Sa'ud's commentary on Mulla Miskeen's Al-Kanz:

[Arabic Box: Whatever the discourse of the Imams necessitates, it is taken without hesitation. (3) p. 322] [Urdu Box: Whatever the speech of the Imams requires, it shall be acted upon without hesitation. (T)]

This issue is not the saying of a jurist; even if it were, it would be abandoned according to the requirements of the Imams' discourse. In Al-Maslak al-Mutaqassit, it is stated:

[Arabic Box: The requirement of the discourse of the Imams of the school (Madhab) is more worthy of consideration than the speech of some Sheikhs. (4)] [Urdu Box: The requirement based on the words of the Imams of the school is superior to the words of some other scholars/Sheikhs. (T)]

This matter is not proven by any means, and as long as it cannot be proven, practice will be according to the original state, which is negation—meaning negation of the act. In the same Al-Maslak al-Mutaqassit, it says:

[Arabic Box: The original state is negation until proof is established. (5)] [Urdu Box: That which is not proven, its original state is negation (non-existence). (T)]

In short, this issue is incorrect; it cannot be among the etiquettes of prayer, nor can it be a form of remembrance (dhikr). It is mentioned in one or two baseless treatises. Even if it is admitted that it is mentioned in many places, a multitude of citations does not necessitate correctness. First, one...

---

1. Radd al-Muhtar, Kitab al-Wati' al-Ladhi Yujibu al-Hadd wa al-Ladhi Yujibu... Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 3/152.
2. Hashiya al-Hamwi ma'a al-Ashbah wa al-Naza'ir, Muqaddimah al-Kitab, published by Idara al-Quran, etc., Karachi, 1/16.
3. Fath al-Mu'in, Bab al-Salat al-Idayn, published by H.M. Saeed Company, Karachi, 2/322.
4. Al-Maslak al-Mutaqassit ma'a Irshad al-Sari, Fasl fi Tamattu' al-Makki, published by Dar al-Kitab al-Arabiya, Beirut, p. 190.
5. Al-Maslak al-Mutaqassit ma'a Irshad al-Sari, Fasl fi Rak'atai al-Tawaf, published by Dar al-Kitab al-Arabiya, Beirut, p. 110.

फ़तावा रज़विया जिल्द छठा

कि जो मसला अपने संबंधित अध्याय में वर्णित है, वह उस मसले से अधिक अमल के योग्य है जो किसी दूसरे अध्याय में वर्णित हो। शामी जिल्द ३ में है:

[अरबी बॉक्स: अल-मसअला अल-मज़कूरा फ़ी बाबिहि औला मिन अल-मज़कूरा फ़ी ग़ैरि बाबिहि। (१)] [उर्दू बॉक्स: अपने बाब (अध्याय) और फ़स्ल (अनुभाग) में वर्णित मसला उस मसले से अमल के लिए बेहतर है जो संबंधित बाब के अलावा कहीं और वर्णित हो। (त)]

फ़िक़्ह के मसाइल के लिए कंज़ुल इबाद की तीन किताबें 'ग़ैर मज़िन्ना' (असंभावित स्रोत) हैं:

[अरबी बॉक्स: क़ाला अल-हमवी मा फ़ी ग़ैरि अल-मज़िन्नाह वल-कुतुब अल-ग़रीबाह युतवह्हम अन यकूना ज़ईफ़ा। (२) पृ. ३१] [उर्दू बॉक्स: इमाम हमवी कहते हैं कि जो कुछ असंभावित स्थानों और दुर्लभ पुस्तकों में हो, उसके बारे में यह संदेह होता है कि वह कमज़ोर (ज़ईफ़) है। (त)]

इमामों का कलाम (वचन) भी यही माँग करता है कि सजदे में रफ़-अल-यदैन न किया जाए। अबुल सऊद ने मुल्ला मिस्कीन की 'अल-कन्ज़' पर अपनी हाशिया (टीका) में लिखा है:

[अरबी बॉक्स: मा यक़दीही कलाम अल-आइम्मा युख़जु बिला तवक़्क़ुफ़। (३) पृ. ३२२] [उर्दू बॉक्स: इमामों का कलाम जिसकी माँग करे, उस पर बिना किसी हिचकिचाहट के अमल किया जाएगा। (त)]

यह मसला किसी फ़क़ीह का कथन नहीं है; यदि होता भी, तो इमामों के कलाम की आवश्यकता के अनुसार इसे छोड़ दिया जाता। 'अल-मस्लक अल-मुतक़स्सित' में है:

[अरबी बॉक्स: मुक़्तदा कलाम आइम्मा अल-मज़हब औला बिल-इ'तिबार मिन कलाम बा'द अल-मशाइख़। (४)] [उर्दू बॉक्स: मज़हब के इमामों के कलाम की माँग कुछ अन्य उस्तादों (मशाइख़) के कलाम की तुलना में अधिक मान्य है। (त)]

यह मसला किसी भी तरह से साबित नहीं होता, और जब तक साबित न हो, अमल 'असल' (मूल स्थिति) पर ही होगा, और वह 'नफ़ी' (नकार) है, यानी अमल न करना। उसी 'अल-मस्लक अल-मुतक़स्सित' में है:

[अरबी बॉक्स: अल-अस्ल हुवा अल-नफ़ी हत्ता यतहक़्क़क़ अल-सुबूत। (५)] [उर्दू बॉक्स: जो चीज़ साबित न हो, उसकी मूल स्थिति नकार (नफ़ी) है। (त)]

संक्षेप में, यह मसला ग़लत है; यह न तो नमाज़ के शिष्टाचार में शामिल हो सकता है और न ही ज़िक्र में। इसका उल्लेख एक-दो निराधार रिसालों (पुस्तिकाओं) में मिलता है। अगर यह मान भी लिया जाए कि यह कई जगहों पर वर्णित है, तब भी संदर्भों की अधिकता इसकी शुद्धता के लिए अनिवार्य नहीं है। पहले एक...

---

1. रद्द अल-मुह्तार, बाब अल-वति अल-लज़ी युजीब अल-हद्द..., दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, ३/१५२।
2. हाशिया अल-हमवी म'अ अल-अश्बाह व अल-नज़ाइर, मुक़द्दिमा अल-किताब, इदारा अल-क़ुरान, कराची, १/१६।
3. फ़तह अल-मुईन, बाब अल-सलात अल-ईदैन, एच. एम. सईद कंपनी, कराची, २/३२२।
4. अल-मस्लक अल-मुतक़स्सित म'अ इर्शाद अल-सारी, फ़स्ल फ़ी तमत्तु' अल-मक्की, दार अल-किताब अल-अरबिया, बेरूत, पृ. १९०।
5. अल-मस्लक अल-मुतक़स्सित म'अ इर्शाद अल-सारी, फ़स्ल फ़ी रक'तइ अल-तवाफ़, दार अल-किताब अल-अरबिया, बेरूत, पृ. ११०।

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

کہ جو مسئلہ مذکورہو فی بابہ وہ اولٰی بالعمل ہوتا ہے اس سے جو کہ مذکور فی غیر بابہ ہو۔ شامی جلد ثالث میں ہے:

[عربی خانہ: المسئلہ المذکورۃ فی بابہ اولٰی من المذکورۃ فی غیر بابہ ۱ھ] [اردو خانہ: اپنے باب و فصل میں مذکورہ مسئلہ اس سے اولٰی بالعمل ہوتا ہے جو متعلقہ باب کے غیر میں مذکور ہوا (ت)]

مسائل فقہ کے لئے کنز العباد کی تین کتابیں غیر مظنہ ہیں:

[عربی خانہ: قال الحموی ما فی غیر المظنہ والکتب الغریبۃ یتوھم ان یکون ضعیفا ۲ ص ۳۱] [اردو خانہ: امام حموی کہتے ہیں جو غیر مظنہ اور کتب غریبہ میں ہو اس کے متعلق وہم ہوتا ہے کہ وہ ضعیف ہوا ھ (ت)]

کلام ائمہ بھی اسی کا مقتضی ہے کہ سجدہ میں رفع الیدین نہ کیا جائے ابوالسعود حاشیہ ملا مسکین علی الکنز میں ہے:

[عربی خانہ: ما یقضیہ کلام الائمۃ یوخذ بلا توقف ۳ ھ ص ۳۲۲] [اردو خانہ: کلام ائمہ جس کا تقاضا کرے اس پر بلا توقف عمل کیا جائے گا اھ (ت)]

یہ مسئلہ فقیہ کا قول نہیں اگر ہو بھی تو بمقتضائے کلام ائمہ متروک ہو جائے گا۔ المسلک المتقسط میں ہے:

[عربی خانہ: مقتضی کلام ائمۃ المذھب اولٰی بالاعتبار من کلام بعض المشائخ ۴۔] [اردو خانہ: ائمہ مذہب کے کلام کا مقتضی باعتبار بعض مشائخ کے کلام سے اولٰی ہوتا ہے (ت)]

یہ مسئلہ کسی صورت سے ثابت نہیں ہوتا اور جب تک ثابت نہ ہو سکے عمل اصل ہی پر ہوگا اور وہ نفی ہے یعنی نفی عمل، اسی مسلک المتقسط میں ہے:

[عربی خانہ: الاصل ھو النفی حتی یتحقق الثبوت ۵ اھ] [اردو خانہ: جو چیز ثابت نہ ہو اس کی اصل نفی ہے۔ اھ (ت)]

غرض یہ مسئلہ غلط ہے آدابِ نماز سے بھی نہیں ہو سکتا ہے اور ذکر بھی نہیں ہو سکتا ہے اس کا ایک آدھ رسالہ بے سر و پا میں ہے اگر تسلیم بھی کیا جائے کہ بہت سی جگہوں میں مذکور ہے تو بھی کثرت نقول مستلزم صحت کو نہیں پہلے ایک

---

1 رد المحتار باب الوطء الذی یوجب الحد والذی یوجبہ دار احیاء التراث العربی بیروت ۳/ ۱۵۲ 2 حاشیہ حموی مع الاشباہ والنظائر مقدمۃ الکتاب مطبوعہ ادارۃ القرآن الخ کراچی ۱/ ۱۶ 3 فتح المعین باب الصلوۃ العیدین مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۲/ ۳۲۲ 4 المسلک المتقسط مع ارشاد الساری فصل فی تمتع المکی مطبوعہ دار الکتاب العربیہ بیروت ص ۱۹۰ 5 المسلک المتقسط مع ارشاد الساری فصل فی رکعتی الطواف مطبوعہ دار الکتاب العربیہ بیروت ص ۱۱۰

Fatawa Razviya, Volume 6

A person may make a mistake, and later people, assuming it to be correct, continue to cite it. In Shami, Volume 4, Page 351, it is stated:

"It often happens that an author mentions something erroneous, and then others cite it without caution until the number of citers becomes large, even though in reality, the original source was a single mistaken person." (T)

And if the claimant, after great effort, proves that this is indeed the meaning and it is written in such and such books, then even accepting that, the answer is that this is the statement of a mistaken person, as mentioned in the 'Mutafarriq-ul-Hawashi' of 'Sharh-ul-Wiqaya':

[Arabic side:] The learned Imam, the research scholar Abu Ubaidullah, said: Regarding performing supererogatory prayers while sitting, there are three opinions: the opinion of the Rawafid, the opinion of the Ahl as-Sunnah wa'l-Jama'ah, and the opinion of the mistaken one. As for the opinion of the Rawafid, they say that when a person performs supererogatory prayers while sitting, their prayer is like the prayer of one standing, except that at the time of bowing (ruku) and prostration (sujud), they should raise their buttocks from the ground. Because they say their prayer is like the prayer of the one standing. The opinion of the mistaken one is that they should not raise their buttocks either in ruku or sujud because the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) did so. As for the opinion of the Ahl as-Sunnah wa'l-Jama'ah, they say not to raise the buttocks during ruku but to raise them during sujud. The mistaken person saw the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) from a distance and was not fully aware of the state of the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him), or perhaps the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) prayed in a state of illness by indication (ima), as is the case for ruku and sujud for one who prays by indication.

[Urdu side:] Learned and research scholar Abu Ubaidullah said that regarding performing supererogatory prayers while sitting, there are three opinions: the opinion of the Rawafid, the opinion of the Ahl as-Sunnah wa'l-Jama'ah, and the opinion of the one who erred. (Detail) The opinion of the Rawafid is that they say when a worshiper performs supererogatory prayers while sitting, it is like the prayer of one standing, except that at the time of ruku and sujud, they should raise their buttocks. And they also say that the degree of such a prayer is like a standing prayer. The opinion of the one who erred is that they say one should not raise the buttocks

at either time of ruku or sujud because the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) did so. The Ahl as-Sunnah wa'l-Jama'ah say that one should not raise the buttocks during ruku but should raise them during sujud. The one who erred saw the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) from a distance, therefore he could not become fully aware of the state of the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him), or there is also a possibility that the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) prayed in a state of illness by indications, as is the practice for ruku and sujud for one who prays by indication.

1. Radd al-Muhtar, Chapter on Miscellaneous Issues, published by Mustafa al-Babi, Egypt, 4/252.

फ़तावा-ए-रज़विया, जिल्द 6

किसी व्यक्ति से गलती हो जाती है और बाद के लोग उसे सही समझकर नकल करते चले जाते हैं। शामी, जिल्द 4, पृष्ठ 351 में है:

"अक्सर ऐसा होता है कि एक लेखक कोई गलत बात लिख देता है, और फिर लोग उसे बिना किसी चेतावनी के नकल करते रहते हैं, यहाँ तक कि नकल करने वालों की संख्या बहुत बढ़ जाती है, जबकि वास्तविकता में मूल रूप से वह एक ही व्यक्ति की गलती होती है।" (त)

और यदि दावा करने वाला बहुत मेहनत के बाद यह सिद्ध भी कर दे कि यही अर्थ है और फलां-फलां किताबों में ऐसा लिखा है, तो स्वीकार करने पर जवाब यह है कि यह एक गलती करने वाले का कथन है, जैसा कि 'शराह-उल-विकाया' के'मुतफ़र्रिक़-उल-हवाशी' में है:

[अरबी पक्ष:] विद्वान इमाम और शोधकर्ता अबू उबैदुल्लाह ने कहा: बैठकर नफ़ल नमाज़ पढ़ने के बारे में तीन मत हैं: रवाफ़िड़ का मत, अहले सुन्नत वल जमाअत का मत, और गलती करने वाले का मत। जहाँ तक रवाफ़िड़ के मत की बात है, वे कहते हैं कि जब कोई व्यक्ति बैठकर नफ़ल पढ़ता है, तो उसकी नमाज़ खड़े होकर पढ़ने वाले की नमाज़ की तरह ही है, सिवाय इसके कि रुकू और सजदे के समय वह अपने नितम्बों को ऊपर उठाए। क्योंकि वे कहते हैं कि उनकी नमाज़ खड़े व्यक्ति की नमाज़ की तरह है। गलती करने वाले का मत यह है कि वह रुकू और सजदे दोनों समय नितम्ब न उठाए क्योंकि पैगंबर (उन पर अल्लाह की शांति और कृपा हो) ने ऐसा ही किया था। अहले सुन्नत वल जमाअत कहते हैं कि रुकू की स्थिति में नितम्ब न उठाए लेकिन सजदे की स्थिति में उठाए। गलती करने वाले ने हुज़ूर (उन पर अल्लाह की शांति और कृपा हो) को दूर से देखा था, इसलिए वह पूरी तरह से आप (उन पर अल्लाह की शांति और कृपा हो) की स्थिति से अवगत नहीं हो सका, या यह संभावना भी है कि पैगंबर (उन पर अल्लाह की शांति और कृपा हो) ने बीमारी की स्थिति में इशारों से नमाज़ पढ़ी हो, जैसा कि इशारों से नमाज़ पढ़ने वाले के रुकू और सजदे का तरीका होता है।

[उर्दू पक्ष:] विद्वान शोधकर्ता अबू उबैदुल्लाह ने कहा कि बैठकर नफ़ल नमाज़ अदा करने के बारे में तीन मत हैं: रवाफ़िड़ का मत, अहले सुन्नत वल जमाअत का मत और गलती करने वाले का मत। (विवरण) रवाफ़िड़ का मत यह है कि वे कहते हैं जब नमाज़ी बैठकर नफ़ल अदा करे तो उसकी नमाज़ खड़े व्यक्ति की तरह ही है, सिवाय इसके कि रुकू और सजदे के समय वह अपने कूल्हे ऊपर उठाए। और वे यह भी कहते हैं कि उसकी नमाज़ (का दर्जा) खड़े होकर पढ़ने वाली नमाज़ की तरह

है। गलती करने वाले का मत यह है कि वह कहता है कि रुकू और सजदे दोनों समय कूल्हे न उठाए क्योंकि नबी-ए-करीम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने ऐसा ही किया है। अहले सुन्नत वल जमाअत कहते हैं कि रुकू की स्थिति में कूल्हे न उठाए लेकिन सजदे की स्थिति में उठाए। और गलती करने वाले ने हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) को दूर से देखा था, इसलिए वह पूरी तरह से आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की स्थिति से अवगत नहीं हो सका, या यह संभावना भी है कि नबी-ए-करीम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने बीमारी की स्थिति में इशारों से नमाज़ पढ़ी हो, जैसा कि इशारों से नमाज़ पढ़ने वाले के रुकू और सजदे का तरीका होता है।

1. रद्द अल-मुह्तार, विविध विषयों का अध्याय, मुस्तफा अल-बाबी प्रेस, मिस्र, 4/252।

جلد ششم فتاویٰ رضویہ شخص کو غلطی ہو جاتی ہے اور بعد کے لوگ اس کی غلطی بظن صحت نقل کرتے چلے جاتے ہیں۔ شامی جلد ۴ ص ۳۵۱ میں ہے :

قد یقع کثیراً ان مؤلفا یذکر شیئا خطا فینقلونہ بلا تنبیہ فلیکثر الناقلون واصلہ لواحد مخطئ اکثر ایسا واقع ہوا ہے کہ مؤلف سے کوئی غلطی ہو گئی تو لوگ اسے بلا تنبیہ نقل کرتے رہتے ہیں حتیٰ کہ اس کے ناقلین کثیر ہو جاتے ہیں حالانکہ اصل کے اعتبار سے ایک مخطی ہوتا ہے۔ (ت)

اور اگر مدعی اس امر کا بعد عرق ریزی کے ثابت بھی کر دے کہ یہ ہی مطلب ہے اور فلاں فلاں کتاب میں اس کو لکھا ہے تو بنا بر تسلیم یہ جواب ہے کہ یہ قول مخطی کا ہے جبکہ شرح وقایہ کے متفرق الحواشی میں ہے :

[عربی حصہ:] قال الشیخ الامام الفاضل المحقق ابو عبیداللہ فی صلاۃ النافلۃ قاعدا ثلثۃ اقوال ، قول الروافض ، وقول اھل السنۃ والجماعۃ ، وقول المخطی اما قول الروافض فھم یقولون ان المصلی اذاصلی النافلۃ قاعدا فصلاتہ کصلاۃ القائم الا اذا رکع وسجد یرفع الالیتین في الرکوع والسجود ولانھم قالواصلاتہ علی صلاۃ القائم واما قول المخطی فھو یقول لا یرفع الالیتین لا في الرکوع ولا في السجود لان نبي صلی اللہ تعالی علیہ وسلم فعل کذلك واما قول اھل السنۃ والجماعۃ فھو یقولون بعدم الرفع فی حال الرکوع و بالرفع فی حال السجود والمخطی رأی النبي صلی اللہ تعالی علیہ وسلم من بعید ولم یقف بحالہ علیہ الصلوۃ والسلام او لعلہ صلی في حالۃ المرض بالایماء کما ھو شان الرکوع والسجود للمومی في الصلاۃ وسجد

[اردو ترجمہ:] شیخ فاضل محقق ابو عبید اللہ نے کہا کہ بیٹھ کر نوافل ادا کرنے کے بارے میں تین اقوال ہیں، روافض کا قول، اہلسنت و جماعت کا قول اور خطا کرنے والے کا قول۔ (تفصیل) روافض

کا قول یہ ہے وہ کہتے ہیں نمازی جب نوافل بیٹھ کر ادا کرے تو اس کی نماز قائم کی طرح ہی ہے البتہ وہ رکوع و سجدہ کے وقت سرین بلند کرے۔ اور وہ یہ بھی کہتے ہیں کہ اس کی نماز (کادرجہ) قائم کی نماز کی طرح ہے۔ خطا کرنے والے کا قول یہ ہے کہ وہ کہتا ہے رکوع اور سجود دونوں وقت سرین نہ اٹھائے کیونکہ نبی اکرم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے ایسا ہی کیا ہے۔ اہلسنت و جماعت کہتے ہیں حالت رکوع میں سرین نہ اٹھائے لیکن حالت سجود میں اٹھائے، اور خطا کرنے والے نے حضور صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کو دور سے دیکھا لہذا وہ کامل طور پر آپ علیہ الصلوۃ والسلام کے حال سے آگاہ نہ ہو سکا یا یہ بھی امکان ہے کہ نبی اکرم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے بیماری کی حالت میں اشاروں سے نماز پڑھی ہو جیسا کہ اشارے سے نماز پڑھنے والے کے رکوع اور سجدے کا طریقہ ہوتا ہے۔

۱ ردالمحتار باب المتفرقات مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۴/ ۲۵۲

Fatawa Razvia Volume 6

[Table Header] [Arabic Text]: He lowered [himself] closer than ruku, closer to the earth, and did not raise his buttocks because in this prayer the worshipper does not need to raise them. So the observer thought that he (peace and blessings be upon him) prayed while sitting in a state of health and prostrated by placing his forehead on the ground and did not raise his buttocks, so he judged absolutely. Just as in the case of wiping over the turban, the observer made a mistake when the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) wiped his head and then placed the turban on his head, and he thought that wiping over the turban is permissible instead of wiping over the head, while he (peace and blessings be upon him) did not wipe over the turban. This was written by the sinful servant, the criminal, Qazi Ghulam Gilani, the Sunni, the Hanafi, the Naqshbandi, the Razvi. May Allah be for him and his masters. Amen, by the sanctity of the Trustworthy Prophet.

[Urdu Text]: In the state of illness, he offered prayer with gestures in such a way that the worshipper offering prayer with gestures performs bowing (ruku) and prostration (sujud). You bowed more than the ruku close to the ground for prostration and did not raise the rear part because in this state the worshipper does not need to raise the buttocks. So the observer assumed that you (peace and blessings be upon him) offered prayer sitting in a state of health and at the time of prostration placed the forehead on the ground and did not raise the rear part of the body, so he issued an absolute ruling. Just as in the case of wiping over the turban, a mistake was made by the observer that the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) wiped over his sacred head, then wiping over the turban instead of wiping over the head is permissible, whereas the Master of both worlds (peace and blessings of Allah be upon him) did not wipe over the turban. These words were written by a sinful servant Qazi Ghulam Gilani Sunni Hanafi Naqshbandi Razvi, may Allah for the sake of the Trustworthy Prophet be for him and his masters. (T)

[The Answer]: Praise be to Allah alone (All praise is for Allah who is alone and has no partner). The ruling researched by the learned [individual] (may he be safe, near, and responding) is correct and clear truth. The notion that raising the buttocks during sitting prostration invalidates the prayer is a false, rejected, and foul claim. The names of the reliable and trustworthy books mentioned by the claimant are sheer slander against them. The illusory evidence mentioned in the name of evidence is completely groundless. It is narrated in Sahih Bukhari, Sahih Muslim, Sunan Abi Dawood, Nasa'i, and Ibn Majah from Abdullah bin Abbas (may Allah be pleased with

them both) that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

[Arabic]: I have been commanded to prostrate on seven bones. [Urdu]: My Lord commanded me to prostrate on seven bones.

फ़तावा रज़विया जिल्द 6

[तालिका शीर्षक] [अरबी पाठ]: उन्होंने रुकू के करीब, ज़मीन के करीब झुककर नमाज़ अदा की और अपने कूल्हों को नहीं उठाया क्योंकि इस नमाज़ में नमाज़ी को उन्हें उठाने की ज़रूरत नहीं होती। तो देखने वाले ने गुमान कर लिया कि आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने तंदुरुस्ती की हालत में बैठकर नमाज़ पढ़ी और सज्दे के वक्त माथा ज़मीन पर रखा और कूल्हों को नहीं उठाया, तो उसने इसे एक सामान्य नियम बना लिया। जैसा कि इमामे (पगड़ी) पर मसह करने के मामले में हुआ, देखने वाले से गलती हुई कि नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने अपने सिर पर मसह किया और फिर सिर पर इमामा रख लिया, और उसने सोचा कि सिर के मसह के बजाय इमामे पर मसह करना जायज़ है, जबकि आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने इमामे पर मसह नहीं किया था। इसे गुनहगार बंदे क़ाज़ी ग़ुलाम जिलानी सुन्नी हनफ़ी नक़्शबंदी रज़वी ने लिखा है। अल्लाह उनके और उनके उस्तादों के लिए हो। आमीन, नबी-ए-अमीन के सदक़े में।

[उर्दू पाठ]: बीमारी की हालत में इस तरह इशारे के साथ नमाज़ अदा फ़रमाई हो जिस तरह इशारे से नमाज़ अदा करने वाला नमाज़ी रुकू और सुजूद अदा करता है। आपने सज्दे के लिए ज़मीन के करीब रुकू से ज़्यादा झुककर किया हो और पिछले हिस्से को न उठाया हो क्योंकि इस हालत में नमाज़ी को कूल्हों को उठाने की ज़रूरत ही नहीं होती। तो देखने वाले ने गुमान कर लिया कि आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने सेहत की हालत में बैठकर नमाज़ अदा फ़रमाई है और सज्दे के वक्त पेशानी ज़मीन पर रखी और जिस्म के पिछले हिस्से को न उठाया तो उसने मुतलक़न हुक्म जारी कर दिया। जैसा कि इमामे पर मसह के मामले में देखने वाले से ख़ता हुई कि नबी अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने सरे अक़दस पर मसह फ़रमाया फिर इमामे पर मसह सिर के मसह के बदले में जायज़ है हालाँकि आका-ए-दो जहाँ (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने इमामे पर मसह नहीं फ़रमाया था। ये अल्फाज़ एक गुनहगार बंदे क़ाज़ी ग़ुलाम जिलानी सुन्नी हनफ़ी नक़्शबंदी रज़वी ने लिखे हैं। अल्लाह तआला नबी अमीन के सदक़े इसका और इसके मशायख़ का हो जाए। (त)

[अल-जवाब]: अल्हम्दुलिल्लाह वह्दहु (तमाम तारीफ अल्लाह के लिए है जो अकेला है और उसका कोई शरीक नहीं)। फ़ाज़िल (सल्लमा-उल-क़रीबुल-मुजीब) ने जो हुक्म तहक़ीक़ फ़रमाया वही सही और हक़-ए-सरीह (स्पष्ट सत्य) है और बैठकर सज्दे में कूल्हों का उठाना नमाज़ को फासिद (खराब) करना एक बातिल, मरदूद और कबीह (बुरा) गुमान है। जिन मोतबर किताबों का दावेदार ने नाम

लिया, उन सब पर महज़ इफ़्तेरा (झूठ) है और जो वहमी दलील, दलील के नाम पर ज़िक्र की गई है वह सरासर बेबुनियाद है। सहीह बुख़ारी, सहीह मुस्लिम, सुनन अबी दाऊद, नसाई और इब्ने माजा में अब्दुल्ला बिन अब्बास (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

[अरबी]: मुझे सात हड्डियों पर सज्दा करने का हुक्म दिया गया है। [उर्दू]: मेरे रब ने मुझे हुक्म फ़रमाया कि सात हड्डियों (अंगों) पर सज्दा करूँ।

पृष्ठ 736 का 200

اخفض قریبًا من الرکوع قریبًا من الارض ولم یرفع الیتیه لان في هذه الصلاة لا یحتاج المصلي الی رفعهما فظن الرائي انه علیه الصلاة والسلام صلی في حالة الصحة قاعدا وسجد بوضع الجبهة علی الارض ولم یرفع الیتیه فحکم علی الاطلاق کما في مسح العمامة اخطأ الرائي حیث مسح النبي صلی الله تعالی علیه وسلم علی رأسه ثم وضع العمامة علی الرأس وظن ان مسح العمامة تجوز بدلا عن مسح الراس والحال انه علیه الصلاة والسلام لم یمسح علی العمامة هذا کتبه العبد المذنب الجانی القاضی غلام گیلانی السنی الحنفی النقشبندی الرضوی کان الله له ولمشائخه امین بحرمة النبي الامین الامین۔

حالتِ مرض میں اس طرح اشارہ کے ساتھ نماز ادا فرمائی ہو جس طرح اشارہ سے نماز ادا کرنے والا نمازی رکوع و سجود ادا کرتا ہے آپ نے سجدہ زمین کے قریب رکوع سے زیادہ جھک کر کیا ہو اور پچھلے حصے کو نہ اٹھایا ہو کیونکہ اس حالت میں نمازی سرینوں کو اٹھانے کا محتاج ہی نہیں ہوتا تو دیکھنے والے نے گمان کرلیا کہ آپ علیہ الصلوۃ والسلام نے حالتِ صحت میں بیٹھ کر نماز ادا فرمائی ہے اور سجدہ کے وقت پیشانی زمین پر رکھی اور جسم کے پچھلے حصے کو نہ اٹھایا تو اس نے مطلقاً حکم جاری کردیا جیسا کہ عمامہ پر مسح کے معاملے میں دیکھنے والے سے خطا ہوئی کہ نبی اکرم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے سرِ اقدس پر مسح فرمایا پھر عمامہ پر مسح سر کے مسح کے بدلہ میں جائز ہے حالانکہ آقائے دو جہاں صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے عمامہ پر مسح نہیں فرمایا تھا یہ الفاظ ایک گناہگار بندے قاضی غلام جیلانی سنی حنفی نقشبندی رضوی نے لکھے ہیں اللہ تعالٰی نبی امین کے صدقے اسکا اور اسکے مشائخ کا ہو جائے۔ (ت)

الجواب: الحمد للہ وحدہ (تمام تعریف اللہ کے لئے ہے جو وحدہ لا شریک ہے۔ت) فاضل سلمہ القریب المجیب نے جو حکم تحقیق فرمایا وہی صحیح و حق صریح ہے اور سجدہ قاعدہ میں رفع الیتین مفسد صلاۃ ہونا زعمِ باطل و مردود و قبیح ہے اور جن معتبر معتمد کتابوں کا مدعی نے نام لیا ان سب پر محض افتراء ہے اور جو وہمِ دلیل بنام دلیل ذکر کیا یکسر پادر ہوا ہے، صحیح بخاری و صحیح مسلم و سنن ابی داؤد و نسائی و ابن ماجہ میں عبداللہ بن عباس رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے روایت رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

امرت ان اسجد علی سبعۃ اعظم میرے رب نے مجھے حکم فرمایا کہ سات استخوانوں پر سجدہ (کروں)

Fatawa Ridawiyya, Volume 6

على الجبهة واليدين والركبتين واطراف القدمين[1]	**On the forehead, both hands, both knees, and the bottoms of both feet.**

Touching both buttocks together in these [positions] is an addition to the Sharia, and addition to the Sharia is forbidden (haram).

قال صلى الله تعالىٰ عليه وسلم من احدث فى امرنا هذا ماليس منه فهود [2] اخرجه البخارى ومسلم وابو داؤد وابن ماجة عن ام المؤمنين الصديقة رضى الله عنها۔	**The Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Whoever introduces an innovation into this affair of ours (the Sharia) which is not part of it, it is rejected." Bukhari, Muslim, Abu Dawood, and Ibn Majah narrated it from the Mother of the Believers, Sayyida Aisha Siddiqa (may Allah be pleased with her). (T)**

And even this addition, with the claim that it is 'fard' (obligatory) and that omitting it invalidates the prayer—to prove this, even isolated reports (Ahadith Ahad) would be insufficient, as has been established in its proper place and as is known from the practice of our Hanafi companions regarding Surah Al-Fatiha etc. (as its explanation has already been given in its place - T). Let alone that for which there is no trace in Hadith or Fiqh, for which there isn't even a suspicion of proof. Declaring a non-obligatory thing as obligatory in such a situation carries a very severe ruling. "Will you then not desist?"[3] (Quran). Firstly, what is the evidence for [using] the buttocks instead of the feet? And even if it were incorrectly assumed, it would be in 'qu'ood' (sitting), which in the sitting prayer takes the place of standing; and in the meaning of 'qu'ood', the joining of the buttocks is included, as in [the book] Badai' al-Sanai'. Prostration is neither standing nor sitting. The aforementioned joining [of buttocks] is neither part of its meaning nor its purpose. Rather, for men's prostration, explicit negation of this exists in mass-transmitted (mutawatir) verbal and practical Hadiths, and in the texts, commentaries, and legal edicts (fatawa). In this, the negation of the aforementioned joining, its dislike (karahat), and it being contrary to the Sunnah is also absolutely certain, let alone a claim of obligatoriness, which is the most repulsive falsehood and rejected. We ask Allah for forgiveness and safety. There is no power or might except with Allah, the Forgiving, the Loving. And Allah Almighty knows best.

Problem (Masla) No. 231: From Maulvi Abdullah, teacher at Madrasa Manzar-e-Islam, Saudagran locality, Bareilly. 9 Safar 1339 AH. Question: Where should the gaze be fixed while performing the Ruku (bowing)?

[1] Sahih al-Bukhari, Chapter on Prostration on the Nose, published by Qadeemi Kutub Khana, Karachi, 1/112 [2] Sahih al-Bukhari, Chapter on Reconciling on an Unjust Peace, it is Rejected, published by Qadeemi Kutub Khana, Karachi, 1/173 [3] Al-Quran 5/91

फतावा रज़विया, जिल्द शशुम (छठी)

على الجبهة واليدين والركبتين واطراف القدمين[1]	**पेशानी, दोनों हाथ, दोनों घुटने और दोनों पैरों के नीचे।**

इनमें दोनों चूतड़ों (नितंबों) को मिलाना शरीयत में ज़्यादती (बढ़ावा) है और शरीयत में ज़्यादती हराम है।

قال صلى الله تعالىٰ عليه وسلم من احدث فى امرنا هذا ماليس منه فهود [2] اخرجه البخارى ومسلم وابو داؤد وابن ماجة عن ام المؤمنين الصديقة رضى الله عنها۔	**नबी अकरम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फरमाया: जिस शख्स ने हमारे इस काम (दीन) में कोई ऐसी नई बात ईजाद की जो इसमें से नहीं है, तो वह रद्द है। बुखारी, मुस्लिम, अबू दाऊद और इब्न माजा ने इसे हज़रत उम्मुल मोमिनीन सैयदा आयशा सिद्दीका रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत किया है। (त)**

और यह ज़्यादती भी इस दावे के साथ कि यह फ़र्ज़ है, और इसका छोड़ना नमाज़ को बिगाड़ने वाला है, तो इसके प्रमाण के लिए 'अहादीस-ए-आहाद' भी नाकाफी होतीं, जैसा कि अपने स्थान पर तय हो चुका है और जैसा कि हमारे अहनाफ़ (हनफी विद्वानों) के तरीके से सूरह फातिहा वगैरह के बारे में मालूम हो चुका है (जैसा कि अपने मुकाम पर इसकी तफ़्सीर हो चुकी है - त)। न कि वह जिसका न हदीस में पता है न फिक़्ह में, जिस पर दलील तो दूर की बात, कोई संदेह तक नहीं है। ऐसी जगह गैर-फ़र्ज़ को फ़र्ज़ बताना बहुत सख्त हुक्म रखता है। "तो क्या तुम बाज़ नहीं आओगे?"[3] (कुरान)। पहले तो 'अल-यतैन' (नितंबों) के बजाय 'कदमैन' (पैरों) के होने पर क्या दलील है? और गलत तौर पर मान भी लिया जाए तो 'कुऊद' (बैठने) में, जो कि बैठने वाली नमाज़ में कयाम की जगह है, और कुऊद के अर्थ में 'इल्साक-ए-अल-यतैन' (नितंबों को मिलाना) शामिल है, जैसा कि बदाए (किताब) में है। सज्दा न कयाम है और न कुऊद। नितंबों का मिलाना न इसमें अर्थपूर्ण है और न ही उद्देश्य है। बल्कि पुरुषों के सज्दे में मुतवातिर हदीसों, सुन्नतों और फतावा में इसकी साफ़ तौर पर मनाही मौजूद है। इसमें उक्त मिलान से मनाही, कराहत और सुन्नत के खिलाफ होना भी पूरी तरह से साबित है, न कि फ़र्ज़ होने का दावा, जो कि सबसे बुरा झूठ और त्याज्य है। हम अल्लाह से क्षमा और कुशलता मांगते हैं। और अल्लाह के सिवा कोई ताक़त और कुव्वत नहीं, जो बहुत माफ़ करने वाला और मोहब्बत करने वाला है। और अल्लाह बेहतर जानता है।

मसला नंबर 231: मौलवी अब्दुल्लाह साहब, शिक्षक मदरसा मंज़र-ए-इस्लाम, मुहल्ला सौदागरान, बरेली। 9 सफ़र 1339 हिजरी। प्रश्न: रुकू करते समय नज़र किस जगह रखनी चाहिए?

---

[1] सही अल-बुखारी, अध्याय: नाक पर सज्दा करना, मुद्रित: कदीमी कुतुब खाना, कराची, 1/112 [2] सही अल-बुखारी, अध्याय: जब वे अन्यायपूर्ण शांति पर समझौता करें तो वह रद्द है, मुद्रित: कदीमी कुतुब खाना, कराची, 1/173 [3] अल-कुरान 5/91

पेज 201/736

علی الجبھۃ والیدین والرکبتین واطراف القدمین[1]

پیشانی اور دونوں ہاتھ اور دونوں زانو اور دونوں پاؤں کے نیچے۔

ان میں دونوں سرین ملانا زیادت فی الشرع ہے اور زیادت فی الشرع حرام،

قال صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم من احدث فی امرنا ھذا مالیس منہ فھود اخرجہ البخاری ومسلم وابو داؤد[2] وابن ماجۃ عن ام المؤمنین الصدیقۃ رضی اللہ عنھا۔

نبی اکرم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا جس شخص نے ہمارے اس امر (شرع) میں بدعت ایجاد کی جو شریعت سے نہ ہو تو وہ مردود ہے۔ بخاری و مسلم و ابوداؤد اور ابن ماجہ نے اسے حضرت ام المؤمنین سیدہ عائشہ صدیقہ رضی اللہ تعالٰی عنہا سے روایت کیا ہے۔ (ت)

اور زیادت بھی اس ادعا سے کہ فرض ہے اور اسکا ترک مفسد نماز اس کے ثبوت کو تو احادیث احادہ بھی ناکافی ہوتیں کما تقرر فی مقررہ وعلم من صنیع صحابنا رضی اللہ تعالی عنھم في سورۃ الفاتحہ و غیرھا (جیسا کہ اپنے مقام پر اسکی تقریر ہوچکی ہے اور سورہ فاتحہ وغیرہا سے متعلق ہمارے اصحاب احناف رضی اللہ تعالٰی عنہم کے طریقہ سے معلوم ہو چکا ہے - ت) نہ کہ وہ کہ جس کا پتہ نہ حدیث میں نہ فقہ میں جس پر دلیل در کنار شبہ تک نہیں ایسی جگہ غیر فرض کو فرض بتانا بہت سخت حکم رکھتا ہے فَھَلْ اَنْتُمْ مُّنْتَھُوْنَ[3] (کیا تم باز نہیں آؤ گے ۔ ت) اول تو الیتین کی بجائے قدمین ہونے پر کیا دلیل اور بفرض غلط ہو بھی تو قعود میں کہ صلاۃ القاعد میں بجائے قیام ہے اور مفہوم قعود میں الصاق الیتین داخل کما فی بدائع ملک العلماء (جیسا کہ بدائع ملک العلماء میں ہے۔ ت) سجود کہ نہ قیام ہے نہ قعود نہ الصاق مذکور اس سے مفہوم نہ اس میں مقصود

بلکہ سجدہ رجال میں احادیث متواترہ قولیہ و فعلیہ و نصوص متظافرہ متون و شروح و فتاوی فقہیہ میں صراحتاً اس کی نفی موجود اس میں الصاق مذکور سے نفی کراہت و مخالفت سنت بھی قطعاً مردود نہ کہ ادعائے فرضیت کہ اشنع باطل واضع مطرود ونسأل اللہ العفو والعافیۃ ولا حول ولا قوۃ الا باللہ الغفور الودود واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۲۳۱: از مولوی عبداللہ صاحب مدرس مدرسہ منظر الاسلام محلہ سوداگران بریلی ۹ صفر ۱۳۳۹ھ رکوع کرتے وقت نظر کس جگہ رکھنا چاہئے؟

---

[1] صحیح البخاری باب السجود علی الانف مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/۱۱۲ [2] صحیح البخاری باب اذا اصطلحوا علی صلح جور فھو مردود مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/۱۷۳ [3] القرآن ۵/۹۱

Fatawa Razawiyya Volume Six

The Answer: In Ruku (bowing), the gaze should be on the feet. And Allah Almighty knows best what is correct.

Problem No. 432: From Calcutta, Belgachia, Madrasa Azimia, questioned by Tasadduq Hussain Sahib, 10 Ramadan-ul-Mubarak 1339 AH. What do the scholars of religion say about kissing the hands with a loud sound while rubbing them over the face after supplicating following obligatory prayers? Explain and be rewarded.

The Answer: Supplicating after prayer is Sunnah, and supplicating with raised hands and wiping the hands over the face after supplication is also established from Sunnah, but kissing is not established anywhere. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 433: From Madrasa Manzar-e-Islam, Bareilly, questioned by Maulvi Abdullah Bihari, 3 Shawwal 1339 AH. What do the scholars of religion say: Is it permissible to say "Ameen" softly after Surah Al-Hamd (Fatiha) or not? Should the Imam say "Ameen" after reciting Surah Fatiha or not? And should the follower (muqtadi) also say it with the congregation or not? Is it permissible for an individual (munfarid) to say "Ameen" in the third and fourth rak'ah or not? If it is not permissible and it escapes the tongue, will Sajdah Sahw (prostration for forgetfulness) be required or not? Explain and be rewarded.

The Answer: It is Sunnah for both the Imam and the individual to say "Ameen" after "Walad-daalleen" in every rak'ah of the prayer. In audible prayers (jahri), the follower should also say it in every rak'ah. In inaudible prayers (sirri) or non-audible rak'ahs, if "Walad-daalleen" was said in such a low voice that it reached his own ears, then he should say "Ameen" at that time too, otherwise not. And Sajdah Sahw is never required because of saying "Ameen". And Allah Almighty knows best.

Problem No. 434: From the city, Mohalla Garhia, questioned by Maulvi Hashmat Ali Sahib Bareilly, 17 Dhu al-Hijjah 1339 AH. Highness, may your shadow endure. Assalamu Alaikum Wa Rahmatullahi Wa Barakatuh. If a person, in a stationary train facing the Qibla, performs prayer such that he stands and bows in the empty space between the two tracks of the train, and due to lack of space, rests his buttocks on one track and prostrates on the other track, with his feet remaining in that empty space; similarly, if he performs Jalsa (sitting between prostrations) and Qa'dah (final sitting) by sitting on the rear track and placing his feet forward, will the prayer be valid or not? Explain and be rewarded.

The Answer: Maulana, may Allah honor you, and peace be upon you, and the mercy of Allah and His blessings. Prostration will absolutely not be performed in this manner. The prayer will not be valid. Such a sitting (Qa'dah) is also purely against the Sunnah and there is no need for it. In Qa'dah, fold the feet and [sit] in that same empty space...

उत्तर: रुकू में निगाहें कदमों पर होनी चाहिए। और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

मसला नंबर 432: कलकत्ता, बेलगछिया, मदरसा अजीमिया से, मुस्तफि (पूछने वाले) तसद्दुक हुसैन साहब, 10 रमज़ान-उल-मुबारक 1339 हिजरी। धर्म के विद्वान क्या कहते हैं कि फर्ज नमाजों के बाद दुआ मांगकर हाथों को चेहरे पर मलते हुए जोर की आवाज के साथ चूमना कैसा है? बयान फरमाएं और सवाब पाएं।

उत्तर: नमाज के बाद दुआ मांगना सुन्नत है और हाथ उठाकर दुआ मांगना और दुआ के बाद चेहरे पर हाथ फेर लेना भी सुन्नत से साबित है, मगर चूमना कहीं साबित नहीं। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 433: मदरसा मंजर-ए-इस्लाम, बरेली से, मुस्तफि मौलवी अब्दुल्लाह बिहारी, 3 शव्वाल 1339 हिजरी। धर्म के विद्वान क्या कहते हैं कि अल-हम्द शरीफ (सूरह फातिहा) के बाद 'आमीन' धीरे से कहना जायज है या नहीं? इमाम सूरह फातिहा पढ़कर 'आमीन' कहे या नहीं? और जमात के साथ मुक्तदी भी कहे या नहीं? मुनफरिद (अकेला नमाज पढ़ने वाला) को तीसरी और चौथी रकात में 'आमीन' कहना जायज है या नहीं? अगर नहीं और जुबान से निकल जाए तो सजदा-ए-सहव (भूल की माफी का सजदा) होगा या नहीं? बयान फरमाएं और सवाब पाएं।

उत्तर: नमाज की हर रकात में इमाम और मुनफरिद को 'वलद-द्वाल्लीन' के बाद 'आमीन' कहना सुन्नत है। जहा़री (ऊंची आवाज वाली) नमाज में मुक्तदी भी हर रकात में कहे और गैर-जहा़री रकात या सिर्री (धीरे वाली) नमाज में 'वलद-द्वाल्लीन' ऐसी धीमी आवाज में कहा कि अपने कानों तक पहुंची तो उस वक्त भी यह 'आमीन' कहे वरना नहीं। और 'आमीन' कहने से सजदा-ए-सहव कभी नहीं होता। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 434: शहर, मोहल्ला गढ़िया से, मुस्तफि मौलवी हशमत अली साहब बरेली, 17 ज़िल-हिज्जा 1339 हिजरी। आली जाह दाम ज़िल्लुकुम। अस्सलामु अलैकुम व रहमतुल्लाहि व बरकातुह। अगर कोई व्यक्ति खड़ी हुई रेलगाड़ी में किबला की तरफ मुँह करके इस तरह नमाज पढ़े कि रेल की दोनों पटरियों के बीच की खाली जगह में खड़ा होकर रुकू करे और जगह की कमी के कारण एक पटरी पर कूल्हा रखकर दूसरी पटरी पर सजदा करे और पैर उसी खाली जगह में रहें; इसी तरह पीछे

की पटरी पर बैठकर और आगे पैर टिकाकर जलसा और कायदा करे तो नमाज सही होगी या नहीं? बयान फरमाएं और सवाब पाएं।

उत्तर: मौलाना अकरमकुमुल्लाह व अलैकुमुस्सलाम व रहमतुल्लाहि व बरकातुह। इस तरह सजदा हरगिज अदा नहीं होगा। नमाज नहीं होगी और ऐसा कायदा भी महज सुन्नत के खिलाफ है और इसकी जरूरत भी नहीं। कायदा में पैर समेटकर उसी खाली जगह में...

الجواب: رکوع میں قدموں پر نظر ہو۔ واللہ تعالیٰ اعلم بالصواب

مسئلہ نمبر ۴۳۲: از کلکتہ بلگچھیا مدرسہ عظیمیہ مسئولہ تصدق حسین صاحب ۱۰ رمضان المبارک ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین کہ فریضہ نمازوں کے بعد دُعا مانگ کر ہاتھوں کو منہ پر ملتے ہوئے زور کی آواز کے ساتھ چومنا کیسا ہے؟ بینوا توجروا۔

الجواب: نماز کے بعد دُعا مانگنا سنت ہے اور ہاتھ اٹھا کر دُعا مانگنا اور بعدِ دُعا منہ پر ہاتھ پھیر لینا یہ بھی سنت سے ثابت ہے مگر چومنا کہیں ثابت نہیں۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۴۳۳: از مدرسہ منظر الاسلام بریلی مسئولہ مولوی عبد اللہ بہاری ۳ شوال ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین کہ الحمد شریف کے بعد آمین آہستہ پڑھنا جائز ہے یا نہیں؟ امام سورہ فاتحہ پڑھ کر آمین کہے یا نہیں؟ اور جماعت کے ساتھ مقتدی بھی کہے یا نہیں؟ منفرد کو تیسری چوتھی رکعت میں آمین کہنا جائز ہے یا نہیں؟ اگر نہیں اور زبان سے نکل جائے تو سجدہ سہو ہو گا یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: نماز کی ہر رکعت میں امام و منفرد کو ولا الضالین کے بعد آمین کہنا سنت ہے۔ جہری نماز میں مقتدی بھی ہر رکعت میں کہیں اور غیر جہری رکعت یا سری نماز میں ولا الضالین ایسی خفی آواز میں کہا کہ اس کے کان تک پہنچی تو اس وقت بھی یہ آمین کہے ورنہ نہیں اور آمین سے سجدہ سہو کسی وقت نہیں۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۴۳۴: از شہر محلہ گڑھیا مسئولہ مولوی حشمت علی صاحب بریلوی ۱۷ ذی الحجہ ۱۳۳۹ھ عالی جاہ دام ظلکم۔ اسلام علیکم ورحمۃ اللہ و برکاتہ۔ اگر کوئی شخص ٹھہری ہوئی ریل

میں قبلہ رُخ ہو کر اس طرح نماز پڑھے کہ ریل کی دونوں پٹریوں کے درمیان جو جگہ خالی ہے اس میں کھڑا ہو کر رکوع کرے اور کوتاہی جگہ سے ایک پٹری پر سرین رکھ کر دوسری پٹری پر سجدہ کرے اور پاؤں اسی خالی جگہ میں قائم رہیں یونہی پیچھے کی پٹری پر بیٹھ کر اور آگے پاؤں ٹکا کر جلسہ قعدہ کرے تو نماز صحیح ہو گئی یا نہیں بینوا توجروا۔

الجواب: مولانا اکرمکم اللہ و علیکم السلام ورحمۃ اللہ وبرکاتہ۔ اس طرح سجدہ ہر گز ادا نہ ہو گا۔ نماز نہ ہو گی اور ایسا قعدہ بھی محض خلاف سنت اور اسکی ضرورت بھی نہیں۔ قعدہ میں پاؤں سمیٹ کر اسی خالی جگہ میں۔۔۔

Fatawa Rizwia Volume VI

...can sit and, for prostration, can bow the head slightly and place it under the front rail to perform it well. I have performed it many times this way. This used to happen when traveling in third class in the company of Maulana Abdul Qadir (may Allah have mercy on him). And Allah Almighty knows best.

Problem No. 435: Sent by Maulvi Syed Ghulam Imam Sahib Siswani, 3 Jumada al-Akhira 1308 AH.

To the honorable Maulvi Sahib, head of all people of grace and excellence, Muslim in honor and high status, may Allah preserve them forever on the prescribed path. Peace be upon you. After thousands of sincere prayers, praises that please the world, and humble greetings, I seek some confirmation. In your presence, after a Friday prayer, I mentioned the virtue of the turban (Imamah). You said it is so and recited some Arabic phrase as well. Therefore, I wish that if my memory is correct, you would kindly write it and send it to me. I would be extremely grateful and would add your noble favor as a fine supplement to my inherited collection. That is all.

The Answer: My dear sir, may Allah Almighty prolong your honor, and may His mercy and blessings be upon you. Regarding the virtue of praying with a turban, the narrated Hadiths, although weak (dha'if), are acceptable in matters of virtues. According to research, labeling them as fabricated (maudu') is a matter of debate.

First Hadith: Al-Tabarani narrated in 'Al-Kabir' from Abu al-Darda (may Allah be pleased with him) that the Messenger of Allah (may Allah bless him and grant him peace) said: "Indeed, Allah Almighty and His angels send blessings upon those wearing turbans on Friday." This means Allah Almighty and His angels send blessings on those who wear turbans on Friday.

[Boxed Text] (Arabic): Al-Hafiz al-Iraqi and al-Asqalani restricted themselves in their 'Takhrij' of the ahadith of 'al-Ihya' and 'al-Rafi'i' to classifying it as weak (dha'if). This was stated by al-Suyuti in 'al-La'ali', and he included the Hadith in his 'al-Jami' al-Saghir', adhering to the principle of not including any fabricated narration in it. (Urdu): The two guardian Hadith scholars, Iraqi and Asqalani, limited themselves to declaring it weak in 'Takhrij Ahadith Ihya Ulum al-Din' and 'Takhrij Ahadith al-Rafi'i al-Kabir'. This was stated by Al-Suyuti in 'Al-La'ali', and he included the Hadith in his 'Al-

Jami' al-Saghir', even though he committed in this book 'Al-Jami' al-Saghir' that no fabricated narration would be mentioned in it. (T)

1. Majma' al-Zawa'id, Chapter: Clothing for Friday, published by Dar al-Kitab 2/176; Al-Jami' al-Saghir with Fayd al-Qadir, Hadith 181, published by Dar al-Ma'rifah Beirut 2/270.

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

...बैठ सकता है और सजदे के लिए सिर थोड़ा झुकाकर सामने की रेलिंग के नीचे डालकर अच्छी तरह अदा कर सकता है। मैंने कई बार इस तरह अदा की है। जब मौलाना अब्दुल कादिर (रहमतुल्लाहि अलैहि) के साथ तीसरे दर्जे में सफर करना होता था, तब ऐसा होता था। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसाला नंबर 435: प्रेषित: मौलवी सैयद गुलाम इमाम साहब सिसवानी, 3 जमादी अल-आखिरा 1308 हिजरी।

आदरणीय मौलवी साहब, जो समस्त गुणी और पूर्ण लोगों के प्रमुख हैं, सम्मान और उच्चता में प्रतिष्ठित, अल्लाह उन्हें हमेशा सुन्नत के रास्ते पर बनाए रखे। अस्सलामु अलैकुम। हज़ारों दुआओं और दुनिया को खुश करने वाली प्रशंसा और निष्ठावान सलाम के बाद, आपसे कुछ पुष्टि चाहिए। एक जुमा की नमाज़ के बाद मैंने आपके सामने पगड़ी (अमामा) की फ़ज़ीलत का ज़िक्र किया था, तो आपने फ़रमाया था कि ऐसा ही है और कुछ अरबी जुमला भी पढ़ा था। इसलिए मैं चाहता हूँ कि अगर मेरी याददाश्त सही है, तो आप उसे लिखकर इनायत फ़रमाएं। मैं आपका बहुत शुक्रगुज़ार रहूँगा और आपकी इस कृपा को अपने विरासत में मिले संग्रह में एक अच्छा परिशिष्ट बनाऊँगा। बस।

उत्तर: मेरे प्रिय मित्र, अल्लाह तआला आपके सम्मान को दीर्घायु करे और उसकी रहमत और बरकतें आप पर हों। पगड़ी के साथ नमाज़ पढ़ने की फ़ज़ीलत में जो हदीसें वर्णित हैं, वे यद्यपि कमज़ोर (ज़ईफ़) हैं, लेकिन फ़ज़ीलत के मामलों में ज़ईफ़ हदीसें स्वीकार्य हैं। शोध के अनुसार, उन्हें गढ़ा हुआ (मौज़ू) कहना बहस का विषय है।

पहली हदीस: अल-तबरानी ने 'अल-कबीर' में अबू अल-दरदा (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) से रिवायत की है कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "बेशक अल्लाह अज़्ज़-व-जल्ल और उसके फरिश्ते जुमा के दिन पगड़ी बाँधने वालों पर दुरूद (रहमत) भेजते हैं।" यानी बेशक अल्लाह अज़्ज़-व-जल्ल और उसके फरिश्ते जुमा में अमामा बांधे हुओं पर दुरूद भेजते हैं।

[बॉक्स वाला पाठ] (अरबी): अल-हाफिज़ अल-इराकी और अल-असकलानी ने 'इह्या' और 'अल-राफी' की अहादीस के'तख़रीज' में इसे केवल ज़ईफ़ (कमज़ोर) बताने तक ही सीमित रखा है। यह बात सुयूती ने 'अल-लाअली' में बयान की है और इसे अपनी किताब 'अल-जामे अल-सगीर' में शामिल किया है, जबकि उन्होंने इसमें किसी भी गढ़ी हुई (मौज़ू) रिवायत को न लेने का नियम बनाया है।

(उर्दू): दो हाफ़िज़ मुहद्दिसीन इराकी और असकलानी ने 'तख़रीज अहादीस इह्या उलूम अल-दीन' और 'तख़रीज अहादीस अल-राफ़ी अल-कबीर' में इसे केवल ज़ईफ़ (कमज़ोर) बताने तक ही सीमित रखा है। यह बात सुयूती ने 'अल-लाअली' में बयान की है और अपनी किताब 'जामे सगीर' में इसे नक़ल किया है, जबकि उन्होंने इस किताब 'जामे सगीर' में इस बात का वादा कर रखा है कि इसमें कोई गढ़ी हुई (मौज़ू) रिवायत ज़िक्र नहीं की जाएगी। (त)

1. मजमा-उज़-ज़वाइद, बाबुल लिबास लिल-जुमुआ, मुद्रित दार अल-किताब 2/176; अल-जामे-उस-सगीर मय फ़ैज़-उल-क़दीर, हदीस 181, मुद्रित दार अल-मअरिफ़ा बेरुत 2/270।

بیٹھ سکتا ہے اور سجدہ کیلئے سر ذرا خم کرکے سامنے کی پٹڑی کے نیچے داخل کر کے بخوبی ادا کر سکتا ہے میں نے بارہا اس طرح ادا کی ہے۔ جب مولانا عبدالقادر رحمۃ اللہ تعالٰی کی ہمراہی میں تیسرے درجے میں سفر کرنا ہوتا تھا۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۴۳۵: مرسلہ مولوی سید غلام امام صاحب سیسوانی ۳ جمادی الاخرٰی ۱۳۰۸ھ

بخدمت مولوی صاحب سر جمیع اہل فضل و کمال مسلم الشرف والعلا ابقاھم اللہ دائم البقا علی الطریق المسنون ۔ السلام علیکم و بطریقے و مرادے ہزاروں دعاء ثنائے خلق عالم نوازہ و سلام مخلصانہ کے بعد کچھ تصدیق ہے آپ کے روبرو ایک جمعہ کی نماز کے بعد میں ذکر فضیلت عمامہ کا جو آپ سے کیا تو آپ نے فرمایا کہ ایسا ہی ہے اور کچھ عربی فقرہ بھی پڑھا تھا لہٰذا میں چاہتا ہوں کہ اگر میری یاد صحیح ہے تو اُس کو لکھ کر عنایت فرمائیں میں نہایت ممنونی موروثی کے ساتھ شکر عنایت عالی کو اچھا ضمیمہ کروں گا ۔ فقط

الجواب: جناب من ادام اللہ تعالٰی کرامتکم ورحمۃ اللہ و برکاتہ، فضل صلاۃ بالعمامہ میں احادیث مروی وہ اگرچہ ضعاف ہیں مگر درباره فضائلِ ضعاف مقبول اور عند التحقیق ان پر حکم بالوضع محل کلام ۔

حدیث اوّل: اخرج الطبرانی فی الکبیر عن ابی الدرداء رضی اللہ تعالٰی عنہ قال قال رسول اللہ تعالٰی علیہ وسلم ان اللہ عزوجل وملئکتہ یصلون علی اصحاب العمائم یوم الجمعۃ ۱ یعنی بیشک اللہ عزوجل اور اسکے فرشتے جمعہ میں عمامہ باندھے ہوؤں پر درود بھیجتے ہیں۔

[ٹیبل متن] اقتصر الحافظان العراقی والعسقلانی فی تخریجی احادیث الاحیاء والرافعی علی تضعیفہ قالہ السیوطی فی اللآلی واورد الحدیث فی جامعہ الصغیر ملتزماً ان لا یورد فیہ موضوعاً۔ دو حفاظ محدثین عراقی اور عسقلانی نے تخریج احادیث احیاء علوم الدین اور تخریج احادیث الرافعی الکبیر میں اس کی تضعیف پر اقتصار کیا ہے یہ بات سیوطی نے اللآلی میں بیان کی ہے اور اپنی کتاب جامع صغیر میں اسے نقل کیا ہے حالانکہ انہوں نے اس کتاب جامع صغیر میں اس بات کا التزام کر رکھا ہے کہ کوئی موضوع روایت اس میں ذکر نہ کی جائے گی۔ (ت)

۱ مجمع الزوائد باب اللباس للجمعۃ مطبوعہ دار الکتاب ۲ / ۱۷۶، الجامع الصغیر مع فیض القدیر حدیث ۱۸۱ مطبوعہ دار المعرفۃ بیروت ۲ / ۲۷۰

Volume Six Fatawa Razawiya Second Hadith: Ibn Asakir, Al-Daylami, and Ibn al-Najjar narrated from Ibn Umar (may Allah be pleased with them) that he said: I heard the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) say: A voluntary or obligatory prayer performed with a turban is equivalent to twenty-five prayers performed without a turban, and a Friday prayer with a turban is equivalent to seventy Friday prayers without a turban. (1) - meaning one prayer, whether voluntary or obligatory, with a turban is equal to twenty-five prayers without a turban, and one Friday prayer with a turban is equal to seventy Friday prayers without a turban.

(Arabic) There are unknown narrators in it. I say (the author): None of them is a liar or a fabricator, nor is anyone accused of it, nor is there anything in it that the Sharia rejects or that reason deems impossible. Imam Al-Suyuti has included it in 'Al-Jami' al-Saghir'.	**(Urdu) It contains unknown narrators. I say (the author): None of them is a liar or fabricator (someone who invents hadiths), nor is anyone accused of fabrication, nor is there anything in it that Sharia rejects or reason considers impossible. Imam Al-Suyuti has quoted it in Jami al-Saghir. (T)**

Third Hadith: Al-Daylami narrated from Anas (may Allah be pleased with him) that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: Prayer in a turban is equivalent to ten thousand rewards (2). - meaning prayer in a turban is equal to ten thousand virtues.

(Arabic) This is very weak; in it is Aban, who is abandoned. And Allah, Glory be to Him and Exalted is He, knows best.	**(Urdu) This is extremely weak because it contains Aban who is abandoned. (T)**

Problem No. 246: From Patna, sent by Abu al-Masakin Mawlawi Diya al-Din Sahib, 16 Dhu al-Hijjah 1320 AH. What do the scholars of religion and muftis of the firm Sharia say about this matter: after the Imam's greeting in the five daily prayers, should he turn right or left and pray, or only in Fajr and Asr?

The Answer: In no prayer should the Imam remain sitting facing the Qiblah; turning away is absolutely necessary, as stated in Al-Dhakhira.

---

1. Mirqat, citing Ibn Asakir, Chapter Two of the Book of Clothing, published by Maktaba Imdadia, Multan 8/250; Kanz al-Ummal, citing Ibn Asakir, branch on Turbans, published by Maktaba al-Turath al-Islami, Aleppo/Beirut 15/306.

2. Al-Firdaws bi-Ma'thur al-Khitab, Hadith 3805, published by Dar al-Kutub al-Ilmiyah, Beirut 2/406. Note: In the book from which the reference is given, the word "ta'dilu" is not present in the words of the hadith, and instead of "Alaaf" (thousands), it is "Alf" (thousand). The words of the hadith are: "Prayer in a turban is ten thousand rewards." - Nazir Ahmed Saidi.

जिल्द छठी फ़तावा रजविया दूसरी हदीस: इब्ने असाकिर, अल-दैलमी और इब्ने अल-नज्जार ने इब्ने उमर (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत किया कि उन्होंने कहा: मैंने अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) को यह कहते सुना: इमामे (पगड़ी) के साथ पढ़ी गई नफ़्ल या फ़र्ज़ नमाज़, बिना इमामे के पच्चीस नमाज़ों के बराबर है, और इमामे के साथ जुमे की नमाज़, बिना इमामे के सत्तर जुमे की नमाज़ों के बराबर है। (1) - यानी एक नमाज़ नफ़्ल हो या फ़र्ज़, इमामे के साथ पच्चीस नमाज़ों के बराबर है और एक जुमा इमामे के साथ सत्तर जुमों के बराबर है।

(अरबी) इसमें अज्ञात (मजहूल) रावी हैं। मैं कहता हूँ (लेखक): उनमें कोई भी झूठा, गढ़ने वाला (वज़्ज़ा) या संदिग्ध नहीं है, और न ही इसमें कुछ ऐसा है जिसे शरीयत खारिज करती हो या बुद्धि नामुमकिन मानती हो। इमाम सुयूती ने इसे 'अल-जामी अल-सगीर' में शामिल किया है।

(उर्दू) इसमें अज्ञात रावी हैं। मैं (लेखक) कहता हूँ कि इनमें से कोई भी कज़्ज़ाब (झूठा) और वज़्ज़ा (हदीस गढ़ने वाला) नहीं है और न ही कोई वज़्ज़ा का संदिग्ध है और न ही इसमें कोई ऐसी चीज़ है जिसे शरीयत रद्द करती हो या उसे अक्ल असंभव मानती हो। इमाम सुयूती ने इसे जामे सगीर में नक़ल किया है। (त)

तीसरी हदीस: अल-दैलमी ने अनस (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: इमामे में नमाज़ दस हज़ार नेकियों के बराबर है। (2) - यानी इमामे में नमाज़ दस हज़ार नेकियों के बराबर है।

(अरबी) यह बहुत कमज़ोर (ज़ईफ़) है; इसमें आबान मत़रूक है। और अल्लाह, सुब्हानहु व तआला बेहतर जानता है।

(उर्दू) यह बहुत ही ज़ईफ़ है क्योंकि इसमें आबान मत़रूक है। (त)

मसला नंबर 246: पटना से, भेजने वाले अबू अल-मसाकीन मौलवी ज़ियाउद्दीन साहब, 16 ज़िल-हिज्जा 1320 हिजरी। दीन के उलमा और मुफ़्तियान-ए-शरअ-ए-मतीन इस मसले के बारे में क्या फ़रमाते हैं कि पाँचों वक़्त की नमाज़ों में इमाम के सलाम के बाद, दाहिने या बाएँ मुड़कर दुआ माँगनी चाहिए या सिर्फ़ फ़ज्र और अस्र में?

अल-जवाब (उत्तर): किसी भी नमाज़ में इमाम को हरगिज़ नहीं चाहिए कि वह क़िबला की तरफ़ मुँह करके बैठा रहे; मुड़ना (इनसिराफ़) बिलकुल ज़रूरी है जैसा कि 'अल-ज़खीरा' में स्पष्ट किया गया है।

1. मिरक़ात, हवाले से इब्ने असाकिर, किताबुल लिबास का दूसरा अध्याय, मकतबा इमदादिया मुल्तान 8/250; कंजुल उम्माल, हवाले से इब्ने असाकिर, इमामे की शाखा, मकतबा अल-तुरास अल-इस्लामी अलेप्पो/बेरुत 15/306।
2. अल-फ़िरदौस बि-मासूर अल-खिताब, हदीस 3805, दार अल-कुतुब अल-इल्मिया बेरुत 2/406। नोट: जिस किताब से हवाला दिया गया है, उस किताब में हदीस के शब्दों में "तदलु" शब्द नहीं है और "अलाफ़" (हज़ारों) के बजाय "अल्फ़" (हज़ार) है। हदीस के शब्द इस प्रकार हैं: "अस्सलवातु फ़िल इमामति अशरत अल्फ़ हसनतिन"। - नज़ीर अहमद सईदी।

جلد ششم فتاوٰی رضویہ حدیث دوم: ابن عساکر والدیلمی وابن النجار عن ابن عمر رضی اللہ تعالٰی عنہما قال سمعت رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم یقول صلاۃ تطوع او فریضۃ بعمامۃ تعدل خمسا و عشرین صلاۃ بلا عمامۃ و جمعۃ بعمامۃ تعدل سبعین جمعۃ بلا عمامۃ 1 ۔ یعنی ایک نماز نفل ہو یا فرض عمامہ کے ساتھ پچیس نماز بے عمامہ کے برابر ہے اور ایک جمعہ عمامہ کے ساتھ ستر جمعہ بے عمامہ کے ہمسر۔

فیہ مجاھیل قلت ولیس فیھم کذاب ولا وضاع ولا متھم بہ ولا فیہ ما یردہ الشرع اور یحیلہ العقل وقد آوردہ السیوطی فی الجامع الصغیر۔

اس میں مجہول راوی ہیں قلت (میں کہتا ہوں) ان میں سے کوئی بھی کذاب اور وضاع (حدیث گھڑنے والا) نہیں اور نہ ہی کوئی متھم بالوضع ہے اور نہ اس میں کوئی ایسی چیز ہے جس کو شریعت رد کرتی ہو یا اسے عقل محال تصور کرتی ہو، اسے امام سیوطی نے جامع صغیر میں نقل کیا ہے۔ (ت)

حدیث سوم: الدیلمی عن انس رضی اللہ تعالٰی قال قال رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم الصلاۃ فی العمامۃ تعدل بعشرۃ آلاف حسنۃ 2 ۔ یعنی عمامہ میں نماز دس ہزار نیکیوں کے برابر ہے۔

ھذا ضعیف جدا فیہ ابان متروک واللہ سبحنہ وتعالٰی اعلم۔

یہ نہایت ہی ضعیف ہے کیونکہ اس میں ابان متروک ہے۔ ت

مسئلہ نمبر ۲۴۶: از پٹنہ مرسلہ ابوالمساکین مولوی ضیاء الدین صاحب ۱۶ ذی الحجہ ۱۳۲۰ھ کیا فرماتے ہیں علماء دین و مفتیان شرع متین اس مسئلہ میں کہ بعد سلام امام کو پنجوقتہ نماز میں داہنے بائیں پھر کے دعا مانگنا چاہئے یا صرف فجر و عصر میں۔

الجواب: کسی نماز میں امام کو ہرگز نہ چاہئے کہ وہ روبقبلہ بیٹھا رہے انصراف مطلقاً ضرور ہے صرح بہ فی الذخیرۃ

---

1 مرقات بحوالہ ابن عساکر الفصل الثانی من کتاب اللباس مطبوعہ مکتبہ امدادیہ ملتان ۸/ ۲۵۰ کنز العمال بحوالہ ابن عساکر فرع فی العمائم مطبوعہ مکتبہ التراث الاسلامی حلب بیروت ۱۵/ ۳۰۶ 2 الفردوس بماثور الخطاب حدیث ۳۸۰۵ مطبوعہ دارالکتب العلمیۃ بیروت ۲/ ۴۰۶ نوٹ: جس کتاب سے حوالہ دیا گیا ہے اس کتاب کے الفاظ حدیث میں "تعدل" کا لفظ نہیں ہے اور بجائے "الاف" کے "الف" ہے، الفاظ حدیث یوں ہیں: "الصلوۃ فی العمامۃ عشرۃ الف حسنۃ"۔ نذیر احمد سعیدی

Fatawa Rizvia, Volume 6

[This is detailed in Al-Zakhirah, Al-Hilyah, etc. (T)] However, the supplication (dua) after Dhuhr, Maghrib, and Isha should not be excessively long. When it is customary for the followers to remain bound to the Imam until the conclusion of the prayer, such an extension that becomes burdensome for any follower is strictly prohibited. The detailed investigation of this issue is in the fatwas of this poor servant (may Allah Almighty forgive him). And Allah Almighty knows best.

Issue No. 437: From Bareilly, Mohalla Zakhirah, sent by Sheikh Muhammad Hussain, Rabi-ul-Akhir 1318 AH.

Question: What do the scholars of religion and jurists of the clear Sharia say regarding this issue: Zaid says that just as it is obligatory (Fard) for every sane and adult Muslim man and woman to perform prayer (Salah), it is also obligatory to memorize the meaning of the prayer in one's own language. Furthermore, it is also obligatory to deeply understand the meaning of the Arabic words recited during prayer in one's heart. Therefore, if despite having the capacity, one is lazy in learning or teaching, or knows the meaning but is negligent at the time, what will be the fruit of such a person's prayer in this world and the hereafter? Explain, and you shall be rewarded.

The Answer: Neither of these two things is obligatory; even without them, the fruit of the fundamental obligation being fulfilled is achieved.

Arabic Text	**Urdu Translation (Provided in Text)**
In 'Al-Ashbah', it is stated: "Repeating the prayer for omitting humility is not considered [recommended]." (1) And in 'Al-Ghamz', quoting from 'Al-Multaqat', the saying of some ascetics: "He whose heart is not present in prayer, his prayer has no value," has no reality. (2) etc.	In 'Al-Ashbah', it is stated that repeating the prayer due to a lack of humility is not recommended. And in 'Al-Ghamz', quoting 'Al-Multaqat', it says that the statement of some ascetics—that the prayer of one whose heart is not present has no value—has no reality. (T)

Yes, the perfection of the prayer, its light, and its beauty depend on understanding, contemplation, and presence of heart. And Allah Almighty knows best.

Issue No. 438: From Ghazipur, Mohalla Mianpura, sent by Munshi Ali Bakhsh Sahib, Clerk in the Judge's Office, Ghazipur, 7 Dhu al-Qi'dah 1322 AH.

Question: What do the scholars of religion and jurists of the clear Sharia say regarding this issue: After all five daily obligatory prayers, is it mandatory (Wajib) or recommended (Mustahabb) for the Imam to turn towards the north or south for supplication? And if he does not turn after the three obligatory prayers other than Asr and Fajr, will he be a sinner or not?

The Answer: Remaining seated facing the Qibla after the Salaam is disliked (Makruh) during prayer. He has the choice between north and south, but when... [text ends]

1. Al-Ashbah wal-Naza'ir, Kitab al-Salah, published by Idarat al-Qur'an wal-Ulum al-Islamiyyah, Karachi, 1/212.
2. Ghamz Uyun al-Basa'ir with Al-Ashbah wal-Naza'ir, Kitab al-Salah, published by Idarat al-Qur'an wal-Ulum al-Islamiyyah, Karachi, 1/212.

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

[अल-ज़खीरा, अल-हिल्या आदि में इस पर स्पष्टीकरण है (त)]। हालाँकि, ज़ुहर, मग़रिब और इशा के बाद दुआ में ज़्यादा लंबी नहीं होनी चाहिए। जब मुक्तदियों का यह दस्तूर हो कि वे दुआ खत्म होने तक इमाम के साथ जुड़े रहते हैं, तो इतनी लंबी दुआ जो किसी मुक्तदी पर भारी पड़े, पूरी तरह मना है। इस मसले की तहक़ीक़ फ़क़ीर के फ़तावा में है (अल्लाह तआला उसे माफ़ करे)। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला नंबर 437: बरेली, मोहल्ला ज़खीरा से, शेख मोहम्मद हुसैन द्वारा भेजा गया, रबी-उल-आख़िर 1318 हिजरी।

प्रश्न: इस मसले में दीन के उलेमा और शरीयत के मुफ़्ती क्या कहते हैं: ज़ैद कहता है कि जैसे हर अक़्लमंद और बालिग़ मुसलमान मर्द और औरत पर नमाज़ पढ़ना फ़र्ज़ है, वैसे ही अपनी ज़बान में नमाज़ का मतलब याद कर लेना भी फ़र्ज़ है। फिर नमाज़ के वक्त जो अरबी लफ़्ज़ ज़बान से पढ़े जाएँ, उनका मतलब दिल में ग़ौर से समझ लेना भी फ़र्ज़ है। लिहाज़ा, ताक़त होने के बावजूद सीखने-सिखाने में सुस्ती करे या मतलब जानता हो और वक्त पर लापरवाही करे, तो ऐसे शख़्स की नमाज़ का फल दुनिया और आख़िरत में क्या होगा? बयान करें, सवाब पाएँ।

जवाब: इन दोनों बातों में से कुछ भी फ़र्ज़ नहीं है। इनके बिना भी बुनियादी फ़र्ज़ पूरा होने का फल हासिल हो जाता है।

अरबी पाठ

'अल-अश्बाह' में है: 'खुशू (एकाग्रता) न होने की वजह से नमाज़ दोबारा पढ़ना मुस्तहब नहीं है।' (1) और 'अल-ग़म्ज़' में 'मुल्तक़त' के हवाले से है कि कुछ ज़ाहिदों (तपस्वियों) के इस कौल की कोई हक़ीक़त नहीं है कि जिसका दिल नमाज़ में हाज़िर न हो, उसकी नमाज़ की कोई क़ीमत नहीं है। (2) आदि।

उर्दू अनुवाद (मूल पाठ में दिया गया)

'अल-अश्बाह' में है कि खुशू की कमी के कारण नमाज़ को दोहराना अनुशंसित नहीं है। और 'अल-ग़म्ज़' में 'मुल्तक़त' के हवाले से लिखा है कि कुछ तपस्वियों के इस कथन का कोई आधार नहीं है कि जिसकी नमाज़ में एकाग्रता नहीं, उसकी नमाज़ का कोई मूल्य नहीं। (त)

हाँ, नमाज़ का कमाल, नमाज़ का नूर और नमाज़ की खूबी समझ, सोच-विचार और हुज़ूर-ए-क़ल्ब (दिल की मौजूदगी) पर है। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला नंबर 438: ग़ाज़ीपुर, मोहल्ला मियांपुरा से, मुंशी अली बख्श साहब, क्लर्क जज कचहरी ग़ाज़ीपुर द्वारा भेजा गया, 7 ज़िल-क़ादा 1322 हिजरी।

प्रश्न: इस मसले में दीन के उलेमा और शरीयत के मुफ़्ती क्या कहते हैं कि पाँचों फ़र्ज़ नमाज़ों के बाद इमाम का दुआ के लिए उत्तर (शुमाल) या दक्षिण (जनूब) की तरफ मुड़ जाना वाजिब है या मुस्तहब? और अगर वह अस्र और फ़ज्र के अलावा बाकी तीन फ़र्ज़ नमाज़ों के बाद न मुड़े, तो क्या वह गुनहगार होगा या नहीं?

जवाब: सलाम के बाद क़िबले की तरफ मुँह करके बैठे रहना नमाज़ में मकरूह है। वह उत्तर या दक्षिण की तरफ मुड़ने के लिए स्वतंत्र है, लेकिन जब... [पाठ यहाँ समाप्त होता है]

1. अल-अश्बाह वल-नज़ायर, किताब अस-सलाह, इदारातुल क़ुरआन वल-उलूम अल-इस्लामिया, कराची 1/212 द्वारा प्रकाशित।
2. ग़म्ज़ उयूनुल बसायर म-अल-अश्बाह वल-नज़ायर, किताब अस-सलाह, इदारातुल क़ुरआन वल-उलूम अल-इस्लामिया, कराची 1/212 द्वारा प्रकाशित।

पृष्ठ 205 का 736

فتاوی رضویہ جلد ششم

والحلیہ وغیرہما(اس پر ذخیرہ اور حلیہ وغیرہ میں تصریح ہے۔ت) البتہ ظہر و مغرب و عشاء کے بعد دعا میں زیادہ اطالت نہ ہو اور جبکہ معمول مقتدیان ہے کہ تافراغِ دعا پابندِ امام رہتے ہیں ایسی تطویل کہ کسی مقتدی پر ثقیل ہو مطلقاً منع ہے وتحقیق المسألۃ فی فتاوی الفقیر غفر اللہ تعالی لہ۔ واللہ تعالی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۴۳۷: از بریلی محلہ ذخیرہ مرسلہ شیخ محمد حسین ربیع الآخر ۱۳۱۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرعِ متین اس مسئلہ میں زید کہتا ہے کہ ہر ایک مسلمان مرد و عورت عاقل و بالغ پر جیسے کہ نماز پڑھنا فرض ہے ویسے ہی نماز کے معنی اپنی زبان میں یاد کر لینا بھی فرض ہے پھر وقتِ نماز کے جو لفظ زبانِ عربی میں پڑھا جائے اُس کے معنی بغور دل میں سمجھ لینا بھی فرض ہے پس باوجودِ طاقت ہونے کے سیکھنے سکھانے میں سُستی کرے یا معنی جانتا ہے اور وقت پر بے غوری کرے ایسے شخص کی نماز کا پھل کیا ہوگا دنیا و آخرت میں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: ان دونوں باتوں میں کچھ فرض نہیں بغیر ان کے بھی سرے سے فرض اُتر جانے کا پھل حاصل ہے۔

عربی عبارت	**اردو ترجمہ**
في الاشباه لا تحسب اعادتها لترك الخشوع ۱ و فی الغمز عن الملتقط قول بعض الزهاد من لم يكن قلبه في الصلاة	اشباہ میں ہے ترکِ خشوع کی بنا پر نماز کا اعادہ مستحب نہیں، اور غمز میں ملتقی کے حوالے سے ہے کہ بعض زاہدوں کے اس قول کی کوئی حقیقت نہیں کہ جس کا دل

عربی عبارت **اردو ترجمہ**

(مع الصلوۃ) لا قیمۃ لصلاتہ لیس بشیئ نماز میں حاضر نہ ہو اس کی نماز کی کوئی قیمت نہیں ۲ الخ الخ (ت)

ہاں نماز کا کمال نماز کا نور نماز کی خوبی فہم و تدبّر و حضورِ قلب پر ہے۔ واللہ تعالی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۴۳۸: از غازی پور محلہ میاں پورہ مرسلہ منشی علی بخش صاحب محرر دفتر ججی غازی پور ۷ ذیقعد ۱۳۲۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرعِ متین اس مسئلہ میں کہ تمام فرائض پنجگانہ کے بعد امام کو شمال یا جنوب کی طرف پھر جانا دُعا کے واسطے واجب یا مستحب ہے یا نہیں اور سوائے عصر و فجر کے فرائضِ سہ گانہ کے بعد اگر نہ پھرے تو گنہگار ہوگا یا نہیں؟

الجواب: بعد سلام قبلہ رُو بیٹھا رہنا نماز میں مکروہ ہے وہ شمال و جنوب میں مختار ہے مگر جب کوئی

۱ الاشباہ والنظائر کتاب الصلوۃ مطبوعہ ادارۃ القرآن والعلوم الاسلامیہ کراچی ۱/ ۲۱۲ ۲ غمز عیون البصائر مع الاشباہ والنظائر کتاب الصلوۃ مطبوعہ ادارۃ القرآن والعلوم الاسلامیہ کراچی ۱/ ۲۱۲

Fatawa Rizvia - Volume VI

If a 'Masbuq' (one who joined the prayer late) is praying in line with the imam, even if in the last row, he should not turn his face towards the east, i.e., towards the followers (muqtadis). In any case, turning around is required. If he does not turn and remains facing the Qibla, he will be committing a 'Makruh' (disliked) act and abandoning a Sunnah. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 439: From Qazara Woh Nagla, Post Office Apchneera, District Agra, asked by Mr. Muhammad Sadiq Ali, Ramadan Sharif 1330 AH. Question: In many villages, after finishing the prayer, when people get up, they flip over the prayer mat (Musalla). Is there any proof for this in Sharia or not? Answer: Ibn Asakir narrated in 'Tareekh' from Jabir bin Abdullah (may Allah be pleased with them) that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

Arabic	Urdu Translation
الشياطين يستمتعون بثيابكم فاذانزع احدكم ثوبہ فليطوہ حتی ترجع اليها انفاسہا فان الشيطان لايلبس ثوبا مطويا۔	Devils use your clothes for their own purpose. So, after taking off a garment, fold it so that its breath (rest) is restored, as the devil does not wear folded clothes.

The words in Mu'jam al-Awsat of Tabarani are as follows:

Arabic	Urdu Translation
، اطووا ثيابكم ترجع اليها ارواحها فان الشيطان اذا وجد الثوب مطويا لم يلبسہ ، وان وجدہ منشورا لبسہ۔	Fold the clothes so that their life returns to them, because when the devil sees a folded cloth, he does not wear it, and if he finds it spread out, he wears it. (T)

Ibn Abi ad-Dunya narrated from Qais ibn Abi Hazim:

Arabic	Urdu Translation
قال ما من فراش يكون مفروشا لا ينام عليہ احد الا نام عليہ الشيطان۔	He said: Wherever a bedding is spread and no one is sleeping on it, the devil sleeps on it. (T)

From these Hadiths, its basis can be derived, and it is better to fold it completely. And Allah Almighty knows best.

---

1 Kanz al-Ummal, citing Ibn Asakir from Jabir, Part 3 on Clothing, Manshurat Maktabat al-Turath al-Islami, Aleppo, Beirut, 15/299. 2 Al-Mu'jam al-Awsat, Hadith No. 5698, Maktabat al-Ma'arif, Riyadh, 6/328. 3 Ibn Abi ad-Dunya

फतावा रिज़विया - छठा खंड

यदि एक 'मस्बूक' (देर से नमाज़ में शामिल होने वाला) इमाम के सामने वाली पंक्ति में नमाज़ पढ़ रहा हो, भले ही वह अंतिम पंक्ति में हो, तो उसे पूर्व की ओर यानी मुक्तदियों (अनुयायियों) की ओर मुँह नहीं करना चाहिए। किसी भी स्थिति में मुड़ना आवश्यक है। यदि वह नहीं मुड़ता और किबला की ओर मुँह करके बैठा रहता है, तो वह मकरूह (नापसंद) कार्य करने वाला और सुन्नत छोड़ने वाला होगा। और अल्लाह सर्वशक्तिमान बेहतर जानता है।

मसाला नंबर 439: काज़ारा वो नगला, डाकघर अपछनेरा, जिला आगरा से, श्री मोहम्मद सादिक अली साहब द्वारा पूछा गया, रमज़ान शरीफ 1330 हिजरी। प्रश्न: अक्सर गाँवों में नमाज़ पढ़कर जब उठते हैं, तो मुसल्ला (नमाज़ की चटाई) को पलट देते हैं, क्या शरीयत में इसका कोई प्रमाण है या नहीं? उत्तर: इब्न असाकिर ने 'तारीख' में जाबिर बिन अब्दुल्ला (अल्लाह उन दोनों से प्रसन्न हो) से रिवायत की है कि अल्लाह के रसूल (अल्लाह की शांति और आशीर्वाद उन पर हो) फ़रमाते हैं:

अरबी	उर्दू अनुवाद
الشياطين يستمتعون بثيابكم فاذانزع احدكم ثوبہ فليطوہ حتى ترجع اليها انفاسہا فان الشيطان لايلبس ثوبا مطويا۔	शैतान तुम्हारे कपड़ों को अपने इस्तेमाल में लाते हैं, तो कपड़ा उतारकर तह कर दिया करो ताकि उसका दम सीधा हो जाए, क्योंकि शैतान तह किए हुए कपड़े नहीं पहनता।

'मोजम अल-औसत' तबरानी के शब्द ये हैं:

अरबी	उर्दू अनुवाद
اطووا ثيابكم ترجع اليها ارواحها ، فان الشيطان اذا وجد الثوب مطويا لم يلبسہ ، وان وجدہ منشورا لبسہ۔	कपड़े लपेट दिया करो कि उनकी जान में जान आ जाए, क्योंकि शैतान जिस कपड़े को लिपटा हुआ देखता है उसे नहीं पहनता और जिसे फैला हुआ पाता है उसे पहनता है। (त)

इब्न अबी अदुनिया ने कैस इब्न अबी हाज़िम से रिवायत की:

अरबी	उर्दू अनुवाद
قال ما من فراش يكون مفروشا لا ينام عليہ احد الا نام عليہ الشيطان۔	फ़रमाया जहाँ कोई बिछौना बिछा हो जिस पर कोई सोता न हो, उस पर शैतान सोता है। (त)

इन हदीसों से इसका मूल निकल सकता है और उसे पूरी तरह लपेट देना बेहतर है। और अल्लाह सर्वशक्तिमान बेहतर जानता है।

---

1 कंज़ अल-उम्माल, इब्न असाकिर के हवाले से जाबिर से, भाग 3 कपड़ों के बारे में, मनशुरात मकतबत अल-तुराथ अल-इस्लामी, हलब, बेरूत, 15/299। 2 अल-मोजम अल-औसत, हदीस नंबर 5698, मकतबत अल-मआरिफ़, रियाद, 6/328। 3 इब्न अबी अदुनिया

مسبوق اس کے محاذات میں اگرچہ اخیر صف میں نماز پڑھ رہا ہو تو مشرق یعنی جانب مقتدیان منہ نہ کرے، بہر حال پھرنا مطلوب ہے اگر نہ پھرا اور قبلہ رو بیٹھا رہا تو مبتلائے کراہت وتارک سنت ہوگا۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ نمبر ۴۳۹: قازارہ وہ نگلہ ڈاکخانہ اپچھنیرہ ضلع آگرہ مسئولہ جناب محمد صادق علی صاحب رمضان شریف ۱۳۳۰ھ سوال: اکثر دیہات میں نماز پڑھ کر جب اٹھتے ہیں تو مصلّٰی کو الٹ دیتے ہیں اس کا شرعاً ثبوت ہے یا نہیں؟ الجواب: ابن عساکر نے تاریخ میں جابر بن عبداللہ رضی اللہ تعالٰی عنہما سے روایت کی ہے کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

عربی	اردو ترجمہ
الشیاطین یستمتعون بثیابکم فاذانزع احدکم ثوبہ فلیطوہ حتی ترجع الیھا انفاسہا فان الشیطان لایلبس ثوبا مطویا۔	شیطان تمہارے کپڑے اپنے استعمال میں لاتے ہیں تو کپڑا اتار کر تہہ کردیا کرو کہ اس کا دام راست ہو جائے کہ شیطان تہہ کئے کپڑے نہیں پہنتا۔

معجم اوسط طبرانی کے لفظ یہ ہیں:

عربی	اردو ترجمہ
اطووا ثیابکم ترجع الیھا ارواحھا ، فان الشیطان اذا وجد الثوب مطویا لم یلبسہ ، وان وجدہ منشورا لبسہ۔	کپڑے لپیٹ دیا کرو کہ ان کی جان میں جان آجائے اس لئے کہ شیطان جس کپڑے کو لپٹا ہوا دیکھتا ہے اسے نہیں پہنتا اور جسے پھیلا ہوا پاتا ہے اسے پہنتا ہے۔ (ت)

ابن ابی الدنیا نے قیس ابن ابی حازم سے روایت کی:

عربی **اردو ترجمہ**

قال ما من فراش یکون مفروشا لا ینام علیہ فرمایا جہاں کوئی بچھونا بچھا ہو جس پر کوئی سوتا نہ

احد الا نام علیہ الشیطان۔ ہو اس پر شیطان سوتا ہے۔ (ت)

ان احادیث سے اُس کی اصل نکل سکتی ہے اور پورا لپیٹ دینا بہتر ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

---

1 کنز العمال بحوالہ ابن عساکر عن جابر الباب الثالث فی اللباس منشورات مکتبۃ التراث الاسلامی حلب بیروت ۱۵/ ۲۹۹ 2 المعجم الاوسط حدیث نمبر ۵۶۹۸ مکتبۃ المعارف، الریاض ۶/ ۳۲۸ 3 ابن ابی الدنیا

Fatawa Rizvia, Volume 6

Issue No. 440: From Jarooda, District Meerut, submitted by Syed Sabir Jilani Sahib. What do the scholars of religion say on this issue: if there is no cloth under the feet and it is only under the knees and the place of prostration (sujud), is the prayer valid or not?

The Answer: The prayer will be valid. However, the opposite is better as taking care of the feet is more important than the forehead. Therefore, if one spreads an 'angrakha' (a traditional robe) or a long shirt to pray, they should place the collar towards the feet and perform prostration on the hem/tail, because the collar is further from the possibility of impurity (najasa) compared to the hem. 35 Shaban 1326 AH.

Issue No. 441: What do the scholars of religion and guides of the firm Sharia say on this issue: Since it is absolutely disliked (Makruh) for the Imam to face the Qibla while supplicating, what impact should this dislike have? Furthermore, in a case where there are more than 10 people and there is no one in the back rows to maintain alignment (muhadhat), the Imam should not turn his back to the followers. But in this case, if the followers have their backs to other followers, what is the answer? Also, what does "absolutely disliked" (Mutlaqan Makruh) mean? Please explain and be rewarded.

The Answer: The effect of dislike (Karahat) is disapproval. Its moderate level is 'asa'at' (wrongdoing), meaning one did something bad. The highest level is 'Karahat-e-Tahrim' (prohibitive dislike), the effect of which is becoming a sinner and deserving punishment. Generally, 'Mutlaq Makruh' (absolute dislike) implies 'Tahrim'. Sometimes it's also used in the specific sense of 'Karahat-e-Tanzihi' (mild dislike). For the followers, it is recommended (mustahabb) by Sharia to break the rows and not remain seated in the same formation as they were during prayer. However, not everyone is ordered to turn around and sit, as that would cause hardship. All followers were participants in the prayer in the same state. Any relative positioning among them wasn't specifically intended, desired, or necessary, but happened by chance. Those who arrived first found space in the first row, and those who arrived later occupied subsequent rows. If the later arrivals had come first, they would be in the first row, and those currently in the front would be in the back. Their sitting is like people sitting in a large gathering where they face each other's backs, but they are all in the same state without intentional priority or commitment of one over the other. This is contrary to the Imam, who is intentionally in front and faces his back towards

them, which is mandatory and fixed. Thus, he is commanded to deviate from this intentional turning of the back. And Allah the Almighty knows best.

फतावा रज़विया, जिल्द 6

मसला नंबर 440: जड़ौदा, जिला मेरठ से, सैयद साबिर जिलानी साहिब द्वारा प्रेषित। दीन के विद्वान इस मसले में क्या फरमाते हैं कि यदि पैरों के नीचे कपड़ा न हो और केवल घुटनों और सजदे की जगह हो, तो क्या नमाज़ हो सकती है या नहीं?

जवाब: नमाज़ हो जाएगी, और इसका विपरीत होना बेहतर है; पैरों की सावधानी माथे से अधिक है। इसलिए, यदि कोई 'अंगरखा' या 'कुर्ता' बिछाकर नमाज़ पढ़े, तो उसे चाहिए कि गिरेबान (कॉलर) की ओर पैर रखे और दामनों पर सजदा करे, क्योंकि दामन की तुलना में गिरेबान के अपवित्र (नजासत) होने की संभावना कम है। 35 शाबान 1326 हिजरी।

मसला नंबर 441: दीन के विद्वान और शरीअत-ए-मतीन के मार्गदर्शक इस मसले में क्या फरमाते हैं कि: चूंकि इमाम के लिए दुआ मांगते समय किबला की ओर मुंह करना बिल्कुल नापसंद (मक़रूह) है, तो इस नापसंदगी का क्या प्रभाव होना चाहिए? और जबकि 10 से अधिक लोग हों और मुक़्तदियों में से पिछली सफों में कोई नमाज़ में न हो (मुहाज़ात की शर्त के साथ), तो इमाम को मुक़्तदियों की तरफ पीठ नहीं करनी चाहिए। लेकिन इस स्थिति में अगर मुक़्तदियों की पीठ दूसरे मुक़्तदियों की ओर हो, तो उसका क्या जवाब है? और 'मुतलक़न मक़रूह' (पूर्णतः नापसंद) का क्या अर्थ है? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

जवाब: कराहत (नापसंदगी) का प्रभाव नापसंदगी है। इसका मध्यम स्तर 'असाअत' है यानी बुरा किया, और कराहत का उच्चतम स्तर 'तहरीम' (निषिद्ध) है जिसका प्रभाव गुनहगार और सजा का पात्र होना है। 'मुतलक़ मक़रूह' अक्सर 'तहरीम' का अर्थ देता है, और कभी-कभी विशेष अर्थ में 'कराहते तन्ज़ीही' (हल्की नापसंदगी) के लिए भी उपयोग होता है। मुक़्तदियों के लिए शरीअत के अनुसार इतना मुस्तहब (पसंदीदा) है कि वे सफें(कतारें) तोड़ दें और नमाज़ के बाद उसी व्यवस्था में न बैठे रहें जैसे नमाज़ के दौरान थे। फिर भी, सभी को मुड़कर बैठने का आदेश नहीं है क्योंकि इसमें कठिनाई है। सभी मुक़्तदी एक ही स्थिति में नमाज़ में शामिल हुए थे। उनमें से किसी का आगे या पीछे होना विशेष रूप से उद्देश्य, वांछित या आवश्यक नहीं था, बल्कि संयोगवश हुआ। जो पहले आया उसने पहली सफ में जगह पाई और जो बाद में आया उसने बाद की सफ में। यदि बाद वाले पहले आते तो वे पहली सफ में होते और जो अगली सफ में हैं वे बाद में आते तो बाद की सफ में होते। उनका बैठना वैसा ही है जैसे किसी बड़ी सभा में लोगों का बैठना जहाँ एक-दूसरे की तरफ

पीठ होती है, लेकिन वे सभी एक ही स्थिति में हैं, जानबूझकर एक-दूसरे पर प्राथमिकता के बिना। यह इमाम के विपरीत है जो जानबूझकर आगे होता है और उनके प्रति पीठ करता है, और यही अनिवार्य और निश्चित है। इसलिए, उसे इस जानबूझकर पीठ करने से हटने का आदेश दिया गया है। और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

पृष्ठ 207 / 736

فتاویٰ رضویہ، جلد ششم

مسئلہ نمبر ۴۴۰: از جڑودہ ضلع میرٹھ مرسلہ سید صابر جیلانی صاحب کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ اگر پیروں کے نیچے کپڑا نہ ہو اور صرف زانو اور سجدہ کی جگہ ہو تو نماز ہوسکتی ہے یا نہیں؟

الجواب: نماز ہو جائے گی اور بہتر اس کا عکس ہے پاؤں کی احتیاط پیشانی سے زیادہ ہے ولہٰذا اگر انگ رکھا یا کرتا بچھا کر نماز پڑھے تو چاہئے کہ گریبان کی جانب پاؤں رکھے اور دامنوں پر سجدہ کرے کہ گریبان بہ نسبت دامن احتمالِ نجاست سے دور ہے۔ ۳۵ شعبان ۱۳۲۶ھ

مسئلہ نمبر ۴۴۱: کیا فرماتے ہیں علمائے دین و ہادیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ امام کو قبلہ کی طرف دعا مانگنا مطلقاً مکروہ ہے تو اس کی کراہت کا کیا اثر پڑنا چاہئے اور درحالیکہ کہ ۱۰ دس آدمی سے زیادہ ہوں مقتدی میں سے اگر اخیر صفوں تک کوئی نماز میں نہ ہو بشرط محاذات، تو امام کو چاہئے کہ مقتدیوں کو پیٹھ نہ کرے لیکن اس صورت میں اگر مقتدیوں کی مقتدیوں کو پیٹھ ہو تو اس کا کیا جواب ہے اور ایضاً مطلقاً مکروہ کے کیا معنی ہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: کراہت کا اثر ناپسندی اور اس کا اوسط درجہ اساءت ہے یعنی برا کیا اور اعلیٰ درجہ کراہت تحریم اس کا اثر گنہگار و مستحق عذاب ہونا، مطلق مکروہ غالباً تحریم کا افادہ کرتا ہے اور بلکہ خاص معنی کراہت تنزیہ بھی مستعمل ہوتا ہے مقتدیوں کے لئے شرعاً اتنا مستحب ہے کہ نقضِ صفوف کریں اور نماز کے بعد اس انتظام پر نہ بیٹھے رہیں جیسے نماز میں تھے پھر بھی سب کو پھر کر بیٹھنے کا حکم نہیں کہ اس میں حرج ہے اور مقتدی سب ایک حالت پر شریک نماز ہوئے تھے ان میں سے کسی کا آگے پیچھے ہونا کوئی بالخصوص مقصود و مطلوب و لازم نہ تھا

بلکہ اتفاقی طور پر واقع ہوا جو پہلے پہنچ گیا اس نے پہلی صف میں جگہ پائی اور جو بعد میں پہنچے انھوں نے بعد کی صف میں، اگر یہ بعد والے پہلے پہنچتے تو یہی پہلی میں ہوتے اور وہ کہ اگلی صف میں ہیں بعد کو آتے تو بعد کی صف میں ہوتے، ان کا بیٹھنا ایسا ہے جیسا مجلس کثیر میں لوگوں کا بیٹھنا کہ ایک دوسرے کی طرف پیٹھ ہوتی ہے مگر وہ سب ایک حالت میں ہیں قصداً و التزاماً ان میں ایک دوسرے پر تقدم نہیں بخلاف امام کہ وہ بالقصد آگے ہوتا اور انہیں پیٹھ کرتا ہے اور یہی واجب و لازم اور متعین ہے تو اسے اس قصدی پشت کرنے سے انحراف کا حکم ہوا، واللہ تعالیٰ اعلم۔

Fatawa Razawiyya, Volume Six

Issue No. 242: From Pilibhit, sent by Maulana Maulvi Muhammad Wasi Ahmad Sahab Muhaddith Surti, 2nd Dhu al-Hijjah 1322 AH.

Hadith: "A voluntary or obligatory prayer performed with a turban is equivalent to twenty-five prayers without a turban, and a Friday prayer with a turban is equivalent to seventy Friday prayers without a turban." (Performing nafl or fard prayers with a turban is twenty-five times better than prayers without a turban, and Friday prayer with a turban is seventy times better than Friday prayer without a turban - t). Is this considered fabricated (mawdūʿ) or weak (ḍaʿīf) according to the Hadith scholars? And if a person, due to self-indulgence, considers this Hadith fabricated and refuses to accept the statements of authentic legal texts that indicate the reward for praying while wearing a turban—such as Alamgiriyah, Kanz, Fatawa Hujjah, and Adab al-Libas by Sheikh Muhaddith Dehlawi, Qunyah, etc.—and slanders the narrator of this Hadith, views them as a fabricator of traditions, and emphasizes to people that there is no need to wear a turban, intentionally makes them take it off, and does not consider wearing a turban a rewardable act despite the emphasis of Hadiths, would such a person be liable to Shariah condemnation or not? The following wording was found in Jami al-Rumuz:

[Boxed Text] (Arabic): And its text is: It is desirable to pray with a turban. In the Hadith: Prayer with a turban is better than seventy prayers without a turban, as in Al-Munyah.[2] (Urdu): Its text is: Prayer should be performed with a turban because it is in the Hadith that a prayer with a turban is seventy times better than a prayer without a turban. Similarly, it is in Al-Munyah.[2]

Please inform us about the status of this Hadith, and is this reference to Al-Munyah given by Jami al-Rumuz the common Munyat al-Musalli or some other Munyah? Clarify and be rewarded.

Answer: The turban (Imamah) is a continuously reported (mutawatir) Sunnah of the Radiant Prophet, Master of the Worlds, peace and blessings be upon him, the continuity of which has certainly reached the level of the essentials of religion. Therefore, the noble scholars have regarded the turban—even letting the end of it hang down (irsal al-'adhaba/shimla), which is its branch and a non-emphasized (ghayr mu'akkadah) Sunnah—to such an extent that it is stated in Mirqat:

[1] Mirqat al-Mafatih Sharh Mishkat al-Masabih, Section Two from the Book of Clothing, published by Maktaba Imdadia Multan, 8/250. [2] Jami al-Rumuz, Section on What Nullifies Prayer, published by Islamia Gunbad Qamus Iran, 1/193.

फ़तावा रज़विया, जिल्द शशुम (छठा भाग)

मसला नंबर 242: पीलीभीत से, जनाब मौलाना मौलवी मुहम्मद वसी अहमद साहब मुहद्दिस सूरती द्वारा प्रेषित, 2 ज़ुल-हिज्जा 1322 हिजरी।

हदीस: "पगड़ी (इमामा) के साथ नफ़्ल या फ़र्ज़ नमाज़ों का पढ़ना बिना पगड़ी की नमाज़ से पच्चीस गुना अफ़ज़ल है और पगड़ी के साथ जुमे की नमाज़ पढ़ना बिना पगड़ी के जुमे से सत्तर गुना अफ़ज़ल है।" (इमामा के साथ नफ़्ल या फ़र्ज़ नमाज़ों का पढ़ना बिना इमामा की नमाज़ से पच्चीस गुना बेहतर है और इमामा के साथ जुमा पढ़ना बिना इमामा के जुमा से सत्तर गुना बेहतर है - त)। मुहद्दिसों के नज़दीक यह मौज़ू (मनगढ़ंत) है या ज़ईफ़ (कमज़ोर)? और अगर कोई शख़्स अपने नफ़्स की पैरवी के सबब इस हदीस को मौज़ू समझे और मोतबर फ़िक़्ही किताबों की इबारतें जो इमामा बाँध कर नमाज़ पढ़ने के सवाब पर दलालत करती हैं, मसलन आलमगीरिया, कंज़, फ़तावा हुज्जत, आदाबुल लिबास लेखक शैख़ मुहद्दिस देहलवी, क़ुनिया वग़ैरह तस्लीम न करे और इस हदीस को बयान करने वाले पर लान-तान करे, उन्हें अहादीस गढ़ने वाला तसव्वुर करे, और लोगों को ताकीद करे कि इमामा बाँधने की कोई ज़रूरत नहीं है और क़स्दन (जानबूझकर) इमामा उतरवा दे, और अहादीस की ताकीद के बावजूद इमामा बाँधने को सवाब न जाने, तो क्या वह शख़्स शरीयत के लिहाज़ से इल्ज़ाम के क़ाबिल होगा या नहीं? जामिउर रूमूज़ में हदीस के ये अलफ़ाज़ मिले:

[बॉक्स टेक्स्ट] (अरबी): और इसकी इबारत है: पगड़ी के साथ नमाज़ पढ़ना बेहतर है। हदीस में है: पगड़ी के साथ नमाज़ बिना पगड़ी के सत्तर नमाज़ों से बेहतर है, जैसा कि अल-मुनया में है।[2] (उर्दू): इसकी इबारत यह है: इमामा के साथ नमाज़ अदा करनी चाहिए क्योंकि हदीस में है इमामा वाली नमाज़ बिना इमामा वाली नमाज़ से सत्तर गुना अफ़ज़ल है। इसी तरह मुनया में है।[2]

इस हदीस के हाल से आगाह फ़रमाएँ और यह मुनया का हवाला जो जामिउर रूमूज़ ने दिया है, यही मुनयतुल मुसल्ली मरूज़ (प्रचलित) है या और कोई मुनया है? बयान फ़रमाएँ, सवाब पाएँ।

जवाब: इमामा हुज़ूर पुरनूर सैयदे आलम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की सुन्नत-ए-मुतवातिरा है जिसका तवातुर यकीनन दीन की ज़रूरियात (अनिवार्यताओं) की सरहद तक पहुँचा है। लिहाज़ा उलेमा-ए-किराम ने इमामा तो इमामा, इरसाल-ए-अज़बा यानी शमला छोड़ना कि जो उसकी शाख़ (शाखा) और सुन्नत-ए-ग़ैर मुअक्कदा है, यहाँ तक कि मिरक़ात में फ़रमाया:

[1] मिरक़ातुल मफ़ातीह शरह मिश्कातुल मसाबीह, किताबुल लिबास का दूसरा अध्याय, मक्तबा इमदादिया मुल्तान द्वारा प्रकाशित, 8/250। [2] जामिउर रूमूज़, नमाज़ को फ़ासिद करने वाली चीज़ों का अध्याय, इस्लामिया गुंबद क़ामूस ईरान द्वारा प्रकाशित, 1/193।

पेज 208/736

فتاویٰ رضویہ جلد ششم

مسئلہ نمبر ۲۴۲: از پیلی بھیت مرسلہ جناب مولانا مولوی محمد وصی احمد صاحب محدث سورتی ۲ ذی الحجہ ۱۳۲۲ھ

حدیث صلاۃ تطوع او فریضۃ بعمامۃ تعدل خمسا وعشرین صلاۃ بلا عمامۃ وجمعۃ بعمامۃ تعدل سبعین جمعۃ بلا عمامۃ (عمامہ کے ساتھ نفل یا فرض نمازوں کا پڑھنا بغیر عمامہ کی نماز سے پچیس گنا افضل ہے اور عمامہ کے ساتھ جمعہ پڑھنا بغیر عمامہ کے جمعہ سے ستر گنا افضل ہے۔ت) محدثین کے نزدیک موضوع یا ضعیف ہے؟ اور اگر کوئی شخص بسبب نفس پروری کے اس حدیث کو موضوع سمجھے اور کتب معتبرہ فقہیہ کی عبارت جو عمامہ باندھ کر نماز پڑھنے کے ثواب پر دال ہیں مثلاً عالمگیریہ و کنز و فتاویٰ حجۃ وآداب اللباس مؤلفہ شیخ محدث دہلوی وقنیہ و غیرہا تسلیم نہ کرے اور اس حدیث کے بیان کرنے والے پر لعن طعن کرے اور مفتری علی الاحادیث تصور کرے اور لوگوں کو تاکید اس امر کی کرے کہ عمامہ باندھنے کی کوئی ضرورت نہیں ہے اور قصداً عمامہ اتروا ڈالے اور عمامہ باندھنے کو با وجود تاکیدِ احادیث ثواب نہ جانے تو وہ شخص قابل الزام شرعی ہو گا یا نہیں؟ جامع الرموز میں الفاظ کی حدیث ملی:

[Boxed Text] (Arabic): ونص عبارتہ تنبغی ان یصلی مع العمامۃ فی الحدیث الصلاۃ مع العمامۃ خیر من سبعین صلاۃ بغیر عمامۃ کما فی المنیہ۔[2] (Urdu): اس کی عبارت یہ ہے عمامہ کے ساتھ نماز ادا کرنی چاہئے کیونکہ حدیث میں ہے عمامہ والی نماز بغیر عمامہ والی نماز سے ستر گنا افضل ہے۔ اسی طرح منیہ میں ہے۔[2]

اس حدیث کے حال سے آگاہ فرمائیے اور یہ منیہ کا حوالہ جامع الرموز نے دیا ہے یہی منیۃ المصلی مروج ہے یا اور کوئی منیہ ہے؟ بینوا توجروا۔

الجواب: عمامہ حضور پُرنور سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی سنّتِ متواترہ ہے جس کا تواتر یقیناً سرحدِ ضروریاتِ دین تک پہنچا ہے ولہٰذا علمائے کرام نے عمامہ تو عمامہ ارسال عذبہ یعنی شملہ چھوڑنا کہ اُس کی فرع اور سنتِ غیرِ موکدہ ہے یہاں تک کہ مرقاۃ میں فرمایا:

[1] مرقاۃ المفاتیح شرح مشکوٰۃ المصابیح الفصل الثانی من الکتاب اللباس مطبوعہ مکتبہ امدادیہ ملتان ۸/ ۲۵۰ [2] جامع الرموز فصل ما یفسد الصلوٰۃ مطبوعہ اسلامیہ گنبد قاموس ایران ۱/ ۱۹۳

Fatawa Rizvia, Volume 6

[Arabic Box 1]: It is established in the books of history through authentic narrations that the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) would sometimes let the tail of his turban hang between his shoulders and sometimes tie it without a tail. Thus, it is known that performing each of these acts is Sunnah. ^1 [Urdu text right]: It is established in the books of history through authentic narrations that the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) would sometimes leave the tail of the turban between both shoulders and sometimes tie it without the tail. From this, it becomes clear that performing each of these matters is to act upon the Sunnah. (T)

Along with this, mocking it has been declared as disbelief, as stated by the noble jurists, and they ordered its abandonment in situations where common people mock it so that they do not fall into destruction due to evil speech (as noble jurists have explicitly stated and ordered its abandonment where the public mocks it so they do not fall into ruin by this evil talk). Thus, the turban is a constant, necessary Sunnah, to the extent that scholars have declared wearing only a cap to be the style of the polytheists, and have applied the Hadith of Rukana (may Allah be pleased with him) to this. Allama Ali Qari stated in the commentary of Mishkat:

[Arabic Box 2]: It has not been narrated that he (peace and blessings of Allah be upon him) wore a cap without a turban, so it is determined that this is the appearance of the polytheists. ^2 [Urdu text right]: That is, it has not been narrated at all that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) ever wore a cap without a turban; it is established that this is the fashion of the disbelievers. (T)

In the same context, after mentioning some Hadiths regarding the excellence of the turban:

[Arabic Box 3]: All of this indicates the absolute excellence of the turban. Yes, with a cap it is more excellent, so wearing it alone is contrary to the Sunnah, especially since it is the style of the disbelievers and likewise the innovators in some lands. ^3 [Urdu text right]: That is, from all these, the excellence of the turban is proved absolutely, even if it is without a cap; yes, it is more excellent with a cap, and a cap alone is against the Sunnah. And why shouldn't it be so, as it is the style of the disbelievers and the misguided people of some lands. (T)

How severe and great would its denial be, its being Sunnah is mass-transmitted (Mutawatir), and to belittle a mass-transmitted Sunnah is disbelief. It is in Wajiz al-Kurdari, then Nahr-ul-Faiq, then Radd-ul-Muhtar:

[Arabic Box 4]: If one does not consider the Sunnah as truth, he has committed disbelief, because... [Urdu text right]: If a person does not consider the Sunnah as right and true, then he...

---

1. Mirqat al-Mafatih Sharh Mishkat al-Masabih, Book of Clothing, Second Chapter, published by Maktaba Imdadia Multan, 8/250.
2. Mirqat al-Mafatih Sharh Mishkat al-Masabih, Book of Clothing, Second Chapter, published by Maktaba Imdadia Multan, 8/250.
3. Mirqat al-Mafatih Sharh Mishkat al-Masabih, Book of Clothing, Second Chapter, published by Maktaba Imdadia Multan, 8/250. Page 209 of 736

फ़तावा रज़विया, जिल्द छठी

[अरबी बॉक्स 1]: सीरत की किताबों में सहीह रिवायतों से साबित है कि नबी (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) कभी अपने अमामे (पगड़ी) का शमला दोनों कंधों के बीच छोड़ते थे और कभी बिना शमले के अमामा बांधते थे। अतः यह ज्ञात हुआ कि इन कार्यों में से प्रत्येक को करना सुन्नत है। ^1 [उर्दू पाठ दायां]: सीरत की किताबों में सहीह रिवायतों से साबित है कि नबी अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) कभी अमामे का शमला दोनों कंधों के दरमियान छोड़ते कभी बगैर शमले के बांधते। इससे यह वाज़ेह (स्पष्ट) हो जाता है कि इन उमूर में से हर एक को बजा लाना सुन्नत है। (त)

इसके साथ ही, इसके उपहास (मज़ाक उड़ाने) को कुफ़्र करार दिया गया है, जैसा कि आदरणीय फुक़हा (विधिवेत्ताओं) ने स्पष्ट किया है और वहां इसे छोड़ने का आदेश दिया है जहाँ आम लोग इसका मज़ाक उड़ाते हों ताकि वे अपनी बुरी बातों के कारण विनाश में न पड़ें (जैसा कि फुक़हा-ए-किराम ने इस पर स्पष्टीकरण दिया है और वहाँ इसके परित्याग का आदेश दिया है जहाँ जनता इसका मज़ाक उड़ाती हो ताकि वे इस बुरे कलाम से बर्बादी में न पड़ें)। तो अमामा जो कि एक निरंतर, अनिवार्य सुन्नत है, यहाँ तक कि विद्वानों ने केवल टोपी पहनने को बहुदेववादियों (मुशरिकों) की शैली घोषित किया है और रकाना (रज़ियल्लाहु अन्हु) की हदीस को इसी पर लागू किया है। अल्लामा अली क़ारी ने शरह मिश्कात में फ़रमाया है:

[अरबी बॉक्स 2]: यह रिवायत नहीं है कि उन्होंने (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) बिना अमामे के टोपी पहनी हो, अतः यह निर्धारित है कि यह मुशरिकों (बहुदेववादियों) का हुलिया है। ^2 [उर्दू पाठ दायां]: यानी असल में रिवायत ही नहीं हुआ कि रसूल अल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने कभी बग़ैर अमामे के टोपी पहनी हो, मुतय्यन (निश्चित) हुआ कि यह काफ़िरों की वज़अ (शैली) है। (त)

इसी में अमामे की फ़ज़ीलत (श्रेष्ठता) के बारे में कुछ हदीसों के उल्लेख के बाद है:

[अरबी बॉक्स 3]: यह सब पूर्ण रूप से अमामे की श्रेष्ठता को दर्शाता है। हाँ, टोपी के साथ यह अधिक श्रेष्ठ है, इसलिए इसे अकेले पहनना सुन्नत के विरुद्ध है, विशेष रूप से जब यह काफ़िरों और इसी तरह कुछ देशों के नवाचारियों (बिदअतियों) की शैली है। ^3 [उर्दू पाठ दायां]: यानी इन सब से अमामे की फ़ज़ीलत मुतलक़न (पूर्ण रूप से) साबित हुई अगरचे बे टोपी हो, हाँ टोपी के साथ अफ़ज़ल (बेहतर) है और खाली टोपी ख़िलाफ़-ए-सुन्नत है, और क्यों न हो कि काफ़िरों और बाज़ मुल्कों के बद-मज़हबों की वज़अ है। (त)

इसका इनकार किस हद तक गंभीर और बड़ा होगा, इसका सुन्नत होना मुतवातिर (निरंतर प्रमाणित) है, और मुतवातिर सुन्नत का अपमान करना कुफ़्र है। वजीज़ अल-करदरी, फिर नहर-उल-फ़ाइक़, फिर रद-दुल-मुह्तार में है:

[अरबी बॉक्स 4]: यदि कोई सुन्नत को सत्य नहीं मानता, तो वह काफ़िर हो गया क्योंकि... [उर्दू पाठ दायां]: अगर कोई शख़्स सुन्नत को हक़ और सच नहीं जानता तो वह...

---

1. मिरक़ातुल मफ़ातीह शरह मिश्कातुल मसाबीह, किताबुल लिबास, दूसरा अध्याय, मकतबा इमदादिया मुल्तान द्वारा प्रकाशित, 8/250।
2. मिरक़ातुल मफ़ातीह शरह मिश्कातुल मसाबीह, किताबुल लिबास, दूसरा अध्याय, मकतबा इमदादिया मुल्तान द्वारा प्रकाशित, 8/250।
3. मिरक़ातुल मफ़ातीह शरह मिश्कातुल मसाबीह, किताबुल लिबास, दूसरा अध्याय, मकतबा इमदादिया मुल्तान द्वारा प्रकाशित, 8/250। पृष्ठ 209/736

فتاوٰی رضویہ، جلد ششم

[عربی باکس 1]: قد ثبت فی السیر بروایات صحیحہ ان النبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کان یرخی علامتہ احیانا بین کتفیہ و احیانا یلبس العمامۃ من غیر علامۃ فعلم ان الاتیان بکل واحد من تلك الامور سنۃ ۸1- [اردو متن دائیں]: کتبِ سیر میں روایاتِ صحیحہ سے ثابت ہے کہ نبی اکرم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کبھی عمامہ کا شملہ دونوں کاندھوں کے درمیان چھوڑتے کبھی بغیر شملہ کے باندھتے۔ اس سے یہ واضح ہوجاتا ہے کہ ان امور میں سے ہر ایک کو بجالانا سنت ہے (ت)

اس کے ساتھ استہزا کو کفر ٹھہرایا کما نص علیہ الفقہاء الکرام وامروا بترکہ حیث یستھزئ بہ العوام کیلا یقعوا فی الھلاک بسوء الکلام (جیسا کہ فقہاء کرام نے اس پر تصریح کی ہے اور وہاں اس کے ترک کا حکم دیا جہاں عوام اس پر مذاق کرتے ہوں تاکہ وہ اس کلامِ بد سے ہلاکت میں نہ پڑیں۔ت) تو عمامہ کہ سنتِ لازمہ دائمہ یہاں تک کہ علماء نے خالی ٹوپی پہننے کو مشرکین کی وضع قرار دیا اور حدیث آتی رکانہ رضی اللہ تعالٰی عنہ کو اس پر حمل کیا۔ علامہ علی قاری نے شرح مشکوٰۃ میں فرمایا؛

[عربی باکس 2]: لم یرو انہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم لبس القلنسوۃ بغیر العمامۃ فیتعین ان یکون ھذا زی المشرکین ۸2- [اردو متن دائیں]: یعنی اصلاً مروی نہ ہوا کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے کبھی بغیر عمامہ کے ٹوپی پہنی ہو، متعین ہوا کہ یہ کافروں کی وضع ہے (ت)

اسی میں بعد ذکر بعض احادیث فضیلتِ عمامہ ہے:

[عربی باکس 3]: ھذا کلہ یدل علی فضلیۃ العمامۃ مطلقا نعم مع القلنسوۃ افضل فلبسھا وحدھا مخالف للسنۃ کیف وھی زی الکفرۃ وکذا المبتدعۃ فی بعض البلدان ۸3- [اردو متن دائیں]: یعنی ان سب سے

عمامہ کی فضیلت مطلقاً ثابت ہوئی اگرچہ بے ٹوپی ہو، ہاں ٹوپی کے ساتھ افضل ہے اور خالی ٹوپی خلافِ سنت ہے، اور کیونکر نہ ہو کہ کافروں اور بعض بلاد کے بد مذہبوں کی وضع ہے (ت)

اس کا انکار کس درجہ اشد و اکبر ہوگا اس کا سنت ہونا متواتر ہے اور سنتِ متواتر کا استخفاف کفر ہے۔ وجیز کردی پھر نہر الفائق پھر ردالمحتار میں ہے:

[عربی باکس 4]: لولم یر السنة حقا کفر لانه [اردو متن دائیں]: اگر کوئی شخص سنت کو حق و سچ نہیں جانتا تو اس

---

1 مرقاۃ المفاتیح شرح مشکوٰۃ المصابیح والفصل الثانی من کتاب اللباس مطبوعہ مکتبہ امدادیہ ملتان ۸/ ۲۵۰ 2 مرقاۃ المفاتیح شرح مشکوٰۃ المصابیح والفصل الثانی من کتاب اللباس مطبوعہ مکتبہ امدادیہ ملتان ۸/ ۲۵۰ 3 مرقاۃ المفاتیح شرح مشکوٰۃ المصابیح والفصل الثانی من کتاب اللباس مطبوعہ مکتبہ امدادیہ ملتان ۸/ ۲۵۰ صفحہ 209 از 736

Fatawa Ridawiyyah Volume 6

Istikhfaf (Mocking)[1]: ...committed disbelief because this is making light of it. (T)

Numerous Hadiths have been narrated regarding the excellence of the turban (Amama); some of them that are currently in view are mentioned here:

Hadith 1: It is narrated from Rukana (Allah be pleased with him) in Sunan Abi Dawud and Jami' al-Tirmidhi that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

“The difference between us and the polytheists is [wearing] turbans over caps.”[2] - The difference between us and the polytheists is the turbans over the caps. (T)

Allama Munawi writes under this Hadith in Taisir Sharh Jami' al-Saghir:

“The Muslims wear a cap and over it a turban. As for wearing a cap alone, it is the style of the polytheists. So, wearing a turban is a Sunnah.”[3] - Muslims wear caps and tie a turban over them. Wearing a cap alone is the style of disbelievers, so tying a turban is a Sunnah.

Bawardy narrated the same Hadith with these words, that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said:

“The turban over the cap is the distinction between us and the polytheists. For every fold that he wraps around his head, he will be given a light on the Day of Resurrection.”[4] - The turban over the cap is the difference between us and the polytheists. For every fold a Muslim wraps around his head, a light will be bestowed upon him on the Day of Judgment.

Hadith 2 & 3: Quda'i in Musnad al-Shihab narrates from the Commander of the Faithful, Mawla Ali (may Allah honor his face), and Daylami in Musnad al-Firdous narrates from Mawla Ali and Abdullah bin Abbas (may Allah be pleased with them) that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says: “Turbans are the crowns of the Arabs.”[5] - (Turbans are the crowns of the Arabs).

Hadith 4: It is in Musnad al-Firdous from Anas ibn Malik (may Allah be pleased with him) that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

---

1 Al-Fatawa al-Bazzaziyya with al-Fatawa al-Hindiyya, section on Sunnah from the Book of Prayer, published by Noorani Kutub Khana, Peshawar, 4/28 2 Sunan Abi Dawud, Chapter on Turbans, published by Aftab-e-Alam Press, Lahore, 2/208 3 At-

Taisir Sharh al-Jami' al-Saghir, under the Hadith 'Farqu ma baynana...', Maktaba al-Imam al-Shafi'i, Riyadh, 2/169 4 Kanz al-Ummal with reference to Bawardy from Rukana, section on Turbans, published by Manshurat Maktaba al-Turath al-Islami, Beirut, 15/305 5 Al-Firdous bi-Ma'thur al-Khitab, Hadith 4246, published by Dar al-Kutub al-Ilmiyya, Beirut, 3/87 Page 210 of 736

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

इस्तख़फ़ाफ़ (उपहास)[1]: ...ने कुफ़्र किया क्योंकि यह उसका उपहास है। (त)

अमामा (पगड़ी) की महिमा के बारे में कई हदीसें वर्णित हैं, उनमें से कुछ जो इस समय सामने हैं, उनका उल्लेख किया जा रहा है:

पहली हदीस: सुनन अबी दाऊद और जामी तिर्मिज़ी में रुकाना (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

"हमारे और मुशरिकों (बहुदेववादियों) के बीच अंतर टोपियों पर अमामा है।"[2] - हम में और मुशरिकों में अंतर टोपियों पर अमामा है। (त)

अल्लामा मनावी 'तयसीर शरह जामी सगीर' में इस हदीस के नीचे लिखते हैं:

"मुसलमान टोपी पहनते हैं और उसके ऊपर अमामा बाँधते हैं। जहाँ तक सिर्फ टोपी पहनने की बात है, तो वह मुशरिकों का तरीका है। इसलिए अमामा बाँधना सुन्नत है।"[3] - मुसलमान टोपियाँ पहनकर ऊपर से अमामा बाँधते हैं। अकेली टोपी काफ़िरों का तरीका है, तो अमामा बाँधना सुन्नत है।

यही हदीस बावर्दी ने इन शब्दों में रिवायत की कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया:

"टोपी पर अमामा हमारे और मुशरिकों के बीच का अंतर है। हर उस फेरे के बदले जो एक मुसलमान अपने सिर पर लपेटेगा, उसे क़ियामत के दिन एक नूर (प्रकाश) प्रदान किया जाएगा।"[4] - टोपी पर अमामा हमारा और मुशरिकों का अंतर है। हर लपेट जो मुसलमान अपने सिर पर देगा, उस पर क़ियामत के दिन एक नूर दिया जाएगा।

हदीस 2 और 3: क़ुज़ाई ने 'मुसनद शहाब' में अमीरुल मोमिनीन मौला अली (करमल्लाहु वजहुल करीम) से और दैलमी ने 'मुसनद अल-फ़िरदौस' में मौला अली और अब्दुल्ला बिन अब्बास (रज़ियल्लाहु अन्हुम) से रिवायत की है कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं: "अमामा अरबों के ताज हैं।"[5] - (अमामे अरब के ताज हैं)।

हदीस 4: मुसनद अल-फ़िरदौस में अनस इब्न मालिक (रज़ियल्लाहु अन्हु) से है कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

1 अल-फ़तावा अल-बज़्ज़ाज़िया मअ अल-फ़तावा अल-हिन्दिया, किताबुस सलात से सुनन का अध्याय, नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर, 4/28 2 सुनन अबी दाऊद, अमामा का अध्याय, आफ़ताब आलम प्रेस लाहौर, 2/208 3 अत-तयसीर शरह अल-जामी अस-सगीर, हदीस 'फ़र्क़ु मा बयनाना...' के तहत, मकतबा अल-इमाम अल-शाफ़ई रियाद, 2/169 4 कंज़ अल-उम्माल बा-हवाला बावर्दी अन रुकाना, अमामा पर उप-अध्याय, मन्शूरात मकतबा अल-तुराथ अल-इस्लामी बेरूत, 15/305 5 अल-फ़िरदौस बि-मअसूर अल-ख़िताब, हदीस 4246, दार अल-कुतुब अल-इल्मिया बेरूत, 3/87

جلد ششم - فتاوی رضویہ

استخفاف 1- نے کفر کیا کیونکہ یہ اسکا استخفاف ہے۔ (ت)

عمامہ کی فضیلت میں احادیث کثیرہ وارد ہیں بعض اُن سے کہ اس وقت پیش نظر ہیں مذکور ہوتی ہیں:

حدیث اول: سنن ابی داؤد و جامع ترمذی میں رکانہ رضی اللہ تعالٰی عنہ سے مروی ہے کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

فرق ما بیننا و بین المشرکین العمائم علی القلانس 2- ہم میں اور مشرکوں میں فرق ٹوپیوں پر عمامے ہیں۔ (ت)

علامہ مناوی تیسیر شرح جامع صغیر میں اس حدیث کے نیچے لکھتے ہیں:

فالمسلمون یلبسون القلنسوۃ وفوقھا العمامۃ اما لبس القلنسوۃ وحدھا فزی المشرکین فلبس العمامۃ سنۃ 3- مسلمان ٹوپیاں پہن کر اوپر سے عمامہ باندھتے ہیں تنہا ٹوپی کافروں کی وضع ہے تو عمامہ باندھنا سنت ہے۔

یہی حدیث باوردی نے ان لفظوں میں روایت کی کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا:

العمامۃ علی القلنسوۃ فصل ما بیننا وبین المشرکین یعطی یوم القیمۃ بکل کورۃ یدورھا علی راسہ نورا 4- ٹوپی پر عمامہ ہمارا اور مشرکین کا فرق ہے ہر پیچ کہ مسلمان اپنے سر پر دے گا اس پر روزِ قیامت ایک نور عطا کیا جائے گا۔

حدیث ۲ و ۳: قضاعی مسند شہاب میں امیر المومنین مولیٰ علی کرم اللہ وجہہ الکریم سے اور دیلمی مسند الفردوس میں مولیٰ علی و عبداللہ بن عباس رضی اللہ تعالیٰ عنہم سے راوی کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں: العمائم تیجان العرب 5- (عمامے عرب کے تاج ہیں)۔

حدیث ۴: مسند الفردوس میں انس ابن مالک رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے ہے رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

---

1 الفتاوی البزازیۃ مع الفتاوی الھندیۃ نوع فی السنن من کتاب الصلوٰۃ مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور ۴ / ۲۸ 2 سنن ابی داؤد باب العمائم مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور ۲ / ۲۰۸ 3 التیسیر شرح الجامع الصغیر تحت حدیث فرق مابیننا الخ مکتبہ الامام شافعی الریاض ۲/ ۱۶۹ 4 کنزالعمال بحوالہ باوردی عن رکانہ فرع فی العمائم مطبوعہ منشورات مکتبہ التراث الاسلامی بیروت ۱۵/ ۳۰۵ 5 الفردوس بمأثور الخطاب حدیث ۴۲۴۶ مطبوعہ دارالکتب العلمیۃ بیروت ۳/ ۸۷ Page 210 of 736

Fatawa Rizwia Volume 6

Arabic: The turbans are the crowns of the Arabs; when they put off their turbans, they put off their honor. (1) In another narration, "And Allah removes their honor." Urdu: Turbans are the crowns of Arabs; when they give up the turban, they will shed their honor. And in one narration, it is stated that Allah Almighty will remove their honor.

Hadith 5: Ibn Adi narrates from the Commander of the Faithful, Mawla Ali (may Allah honor his face), that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

Arabic: Enter the mosques bare-headed and with turbans, for turbans are the crowns of the Muslims. (2) Urdu: Come to the mosques bare-headed and wearing turbans because turbans are the crowns of Muslims.

Hadith 6: Tabarani in Mu'jam Kabir and Hakim in Mustadrak narrate from Hazrat Abdullah ibn Abbas (may Allah be pleased with him) that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

Arabic: Wear turbans, you will increase in forbearance. (3) - Al-Hakim classified it as Sahih. Urdu: Tie the turban, your forbearance (wisdom) will increase. (Hakim has declared it Sahih).

Hadith 7: Ibn Adi in al-Kamil and Bayhaqi in Shu'ab al-Iman narrate from Usama ibn Umayr (may Allah be pleased with him) that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

Arabic: Wear turbans, you will increase in forbearance, and turbans are the crowns of the Arabs. (4) Urdu: Tie the turban, dignity will increase, and turbans are the crowns of Arabs;

Arabic: Tabarani narrated its initial part and Al-Munawi pointed to its strength. Urdu: Tabarani narrated its initial part, Imam Munawi has stated its strength. (T)

Hadith 8: Daylami narrates from Imran ibn Husayn (may Allah be pleased with him) and his father Aslam Husayn that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

Arabic: Turbans are the dignity of the believer and the honor of the Arabs; so when... Urdu: Turbans are the dignity of the Muslim and the honor of the Arabs; so when...

Footnotes: 1. Al-Jami' al-Saghir with Fayd al-Qadir, referencing Musnad al-Firdaws from Ibn Abbas, printed by Dar al-Ma'rifah, Beirut, 4/392. 2. Al-Kamil fi Du'afa al-Rijal, various names beginning with Mim, Al-Maktabah al-Athariyyah, Sangla Hill, Sheikhupura, 6/2413. 3. Al-Mu'jam al-Kabir, chapter on what was narrated regarding wearing turbans, etc., printed by Al-Maktabah al-Faysaliyyah, Beirut, 1/192. 4. Shu'ab al-Iman, Hadith 6260, printed by Dar al-Kutub al-Ilmiyyah, Beirut, 5/176.

फ़तावा रज़विया जिल्द शशम (छठी)

अरबी: पगड़ियाँ अरबों के ताज हैं; जब वे पगड़ियाँ उतार देंगे, तो वे अपना सम्मान उतार देंगे। (1) एक रिवायत में है, "और अल्लाह उनका सम्मान छीन लेगा।" उर्दू: पगड़ियाँ अरबों के ताज हैं; जब वे पगड़ी छोड़ देंगे तो अपना सम्मान उतार देंगे। और एक रिवायत में है कि अल्लाह तआला उनका सम्मान छीन लेगा।

हदीस 5: इब्न अदी अमीरुल् मोमिनीन मौला अली (कर्रमल्लाहु वज्हहुल करीम) से रिवायत करते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं:

अरबी: मस्जिदों में नंगे सिर और पगड़ी बांधकर आओ, क्योंकि पगड़ियाँ मुसलमानों के ताज हैं। (2) उर्दू: मस्जिदों में नंगे सिर और पगड़ी बाँधकर हाज़िर हो, इसलिए कि पगड़ी मुसलमानों के ताज हैं।

हदीस 6: तबरानी मोअजम कबीर में और हाकिम मुस्तदरक में हज़रत अब्दुल्ला इब्न अब्बास (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) से रिवायत करते हैं, अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं:

अरबी: पगड़ी बाँधो, तुम्हारा धैर्य (हिल्म) बढ़ेगा। (3) - हाकिम ने इसे सहीह करार दिया है। उर्दू: पगड़ी बाँधो तुम्हारा हिल्म (धैर्य/बुद्धिमत्ता) बढ़ेगा। (हाकिम ने इसे सहीह करार दिया है)।

हदीस 7: इब्न अदी 'कामिल' और बैहक़ी 'शुअ़बुल ईमान' में ओसामा बिन उमैर (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) से रिवायत करते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं:

अरबी: पगड़ी बाँधो, तुम्हारा धैर्य बढ़ेगा और पगड़ियाँ अरबों के ताज हैं। (4) उर्दू: पगड़ी बाँधो वक़ार ज़्यादा होगा और पगड़ियाँ अरबों के ताज हैं;

अरबी: तबरानी ने इसका शुरुआती हिस्सा रिवायत किया और अल-मुनावी ने इसकी मज़बूती की तरफ इशारा किया। उर्दू: तबरानी ने इसका इब्तिदाई हिस्सा रिवायत किया, इमाम मुनावी ने इसका मज़बूत होना बयान किया है (त)।

हदीस 8: दैलमी इमरान बिन हुसैन (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) और उनके वालिद असलम हुसैन से रिवायत करते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं:

अरबी: पगड़ियाँ मोमिन का वक़ार और अरबों का सम्मान हैं; तो जब... उर्दू: पगड़ियाँ मुसलमान के वक़ार और अरबों का सम्मान हैं; तो जब...

पाद-टिप्पणियाँ (फ़ुटनोट्स): 1. अल-जामिउस् सग़ीर मअ फ़ैज़ुल क़दीर, ब-हवाला मुसनद फ़िरदौस अन इब्न अब्बास, मतबूआ दारुल मारिफ़ा, बेरूत, 4/392। 2. अल-कामिल फ़ी ज़ोअफ़ा इल-रिजाल, अस्माए शत्ती मिम्मन इब्तिदाउ अस्माएहिम मीम, अल-मकतबातुल असरिय्या, सांगला हिल, शेखूपुरा, 6/2413। 3. अल-मोअजमुल कबीर, बाब मा जाअ फ़ी लुबसिल अमायम अलख़, मतबूआ अल-मकतबातुल फ़ैसलिया, बेरूत, 1/192। 4. शुअ़बुल ईमान, हदीस 6260, मतबूआ दारुल कुतुबुल अरबीय्या, बेरूत, 5/176।

पृष्ठ 211/736

فتاوی رضویہ جلد ششم

العمائم تیجان العرب فاذا وضعوا العمائم وضعوا عزھم ۱ وفی لفظ وضع اللہ عزھم - عمامے عرب کے تاج ہیں جب عمامہ چھوڑ دیں تو اپنی عزت اتار دیں گے۔ اور ایک روایت میں ہے کہ اللہ تعالیٰ ان کی عزت اتار دے گا۔

حدیث ۵: ابن عدی امیر المومنین مولی علی کرم اللہ وجہہ الکریم سے راوی کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

ایتوا المساجد حسّرًا ومقنعین، فان العمائم تیجان المسلمین ۲- مسجدوں میں حاضر ہو سر برہنہ اور عمامے باندھے اس لئے کہ عمامہ مسلمانوں کے تاج ہیں۔

حدیث ۶: طبرانی معجم کبیر اور حاکم مستدرک میں حضرت عبداللہ ابن عباس رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے راوی، رسول اللہ صلی اللہ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

اعتموا تزدادوا حلمًا ۳- صححہ الحاکم۔ عمامہ باندھو تمہارا حلم بڑھے گا۔ (حاکم نے اسے صحیح قرار دیا ہے)

حدیث ۷: ابن عدی کامل و بیہقی شعب الایمان میں اسامہ بن عمیر رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے راوی کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

اعتموا تزدادوا حلمًا والعمائم تیجان العرب ۴- عمامہ باندھو وقار زیادہ ہو گا اور عمامے عرب کے تاج ہیں؛

وروی عنه الطبرانی صدره واشار المناوی الی تقویته۔ طبرانی نے اس کا ابتدائی حصہ روایت کیا، امام منادی نے اس کا قوی ہونا بیان کیا ہے (ت)

حدیث ۸: دیلمی عمران بن حصین رضی اللہ تعالیٰ عنہ و ان اسلم حصین فعنهما سے راوی کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

العمائم وقار المؤمن وعز العرب فاذا وضعت عمامے مسلمان کے وقار اور عرب کی عزت ہیں تو جب

1 الجامع الصغیر مع فیض القدیر بحوالہ مسند فردوس عن ابن عباس مطبوعہ دار المعرفۃ بیروت ۴/ ۳۹۲ 2 الکامل فی ضعفاء الرجال اسامی شتی ممن ابتداء اسامیهم میم المکتبۃ الاثریۃ سانگلہ ہل شیخوپورہ ۶/ ۲۴۱۳ 3 المعجم الکبیر باب ماجاء فی لبس العمائم الخ مطبوعہ المکتبۃ الفیصلیۃ بیروت ۱/ ۱۹۲ 4 شعب الایمان حدیث ۶۲۶۰ مطبوعہ دارالکتب العربیۃ بیروت ۵/ ۱۷۶

Fatawa-e-Razvia Volume Six

[Arabic]: Al-Arab 'ama'imuha wada'at 'izzaha[1]. [Urdu Translation]: The Arabs are their turbans; if they take them off, they take off their honor.

Hadith 9: Narrated by the same Rukana (may Allah be pleased with him) that the Messenger of Allah (may peace and blessings of Allah be upon him) said: [Arabic]: Lā tazālu ummatī 'alā al-fitrati mā labasū al-'amā'ima 'alā al-qalānisi[2]. [Urdu Translation]: My Ummah (community) will remain on the true religion (Fitra) as long as they wear turbans over caps.

Hadith 10: Abu Bakr ibn Abi Shaybah in 'Musannaf', Abu Dawood Tayalisi and Ibn Mani' in 'Masanid', and Bayhaqi in 'Sunan' narrate from the Commander of the Faithful, Maula Ali (may Allah be pleased with him), that the Messenger of Allah (may peace and blessings of Allah be upon him) said: [Arabic]: Inna Allāha amaddanī yawma Badri wa Hunayn bi-malā'ikatin ya'tammūna hādhihi al-'immah wa qāla inna al-'imāmah hājizatun bayna al-kufri wa al-īmān[3]. [Urdu Translation]: Indeed, Allah Almighty aided me on the days of Badr and Hunayn with angels who wore turbans in this manner. Verily, the turban is a distinction between disbelief and faith.

Hadith 11: Daylami in 'Musnad al-Firdaws' narrates from Abdullah Ali bin Adi (may Allah be pleased with him): [Arabic]: Hākadhā fa'tammū fa-inna al-'imāmah sīmā' al-Islām wa hiya hājizatun bayna al-muslimīna wa al-mushrikīn[4]. [Urdu Translation]: Tie turbans in this manner, for indeed the turban is the sign of Islam, and it is a distinction between Muslims and polytheists.

Hadith 12: Ibn Shadhan in his 'Mashyakha' narrates from Maula Ali (may Allah's face be honored) that the Messenger of Allah (may peace and blessings of Allah be upon him) pointed towards the turban and said: [Arabic]: Hākadhā takūnu tījan al-malā'ikah[5]. [Urdu Translation]: This is how the crowns of the angels are.

Hadith 13 & 14: Tabarani in 'Kabir' from Abdullah bin Umar and Bayhaqi in 'Shu'ab' from Ubadah bin Samit (may Allah be pleased with them) narrate that the Messenger of Allah (may peace and blessings of Allah be upon him) said: [Arabic]: 'Alaykum bi-al-'amā'im fa-innaha sīmā' al-malā'ikah wa arkhū lahā khalfa zuhūrikum[6]. [Urdu Translation]: Adopt the practice of wearing turbans, for they are the hallmark of angels, and let their ends hang behind your backs.

Footnotes: 1. Al-Firdaws bi-Ma'thur al-Khitab with reference to Ibn Abbas, Hadith 4747, published by Dar al-Kutub al-Arabiyyah Beirut, 3/88. 2. Al-Firdaws bi-Ma'thur al-

Khitab with reference to Ibn Abbas, Hadith 5697, published by Dar al-Kutub al-Arabiyyah Beirut, 5/93. 3. Al-Sunan al-Kubra by al-Bayhaqi, Chapter: Incitement to Archery, published by Dar Sadir Beirut, 10/12. 4. Kanz al-Ummal with reference to al-Daylami, Hadith 41911, published by Manshurat Maktabat al-Turath al-Islami Aleppo Beirut, 15/283. 5. Kanz al-Ummal with reference to Ibn Shadhan in his Mashyakha, Hadith 41913, published by Manshurat Maktabat al-Turath al-Islami Aleppo Beirut, 15/282. 6. Al-Mu'jam al-Kabir, Hadith 13418, published by al-Maktabat al-Faysaliyyah Beirut, 12/383.

फ़तावा रज़विया जिल्द छठा

[अरबी]: अल-अरब 'अमाइमुहा वदअत 'इज़्ज़हा[1]। [उर्दू अनुवाद]: अरब अपने इमामे (पगड़ी) उतार दें तो वे अपनी इज़्ज़त उतार देंगे।

हदीस 9: उन्हीं रुकाना रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं: [अरबी]: ला तज़ालु उम्मती 'अलल फ़ितरति मा लबसुअल अमाइमा 'अलल कलानिस[2]। [उर्दू अनुवाद]: मेरी उम्मत हमेशा दीन-ए-हक़ (फ़ितरत) पर रहेगी जब तक कि वे टोपियों पर इमामे बाँधेंगे।

हदीस 10: अबू बक्र इब्न अबी शैबा मुसन्निफ़ और अबू दाऊद तयालसी व इब्न मनीअ मसानिद और बैहक़ी सुनन में अमीरुल मोमिनीन मौला अली रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया: [अरबी]: इन्ना अल्लाहा अमद्दनी यौमा बद्रिन व हुननिन बि-मलइ'कतिन यअ'तम्मूना हाज़िहिल 'इम्मह व काला इन्नल 'इमामता हाजिज़तुन बैनल कुफ़्रि वल ईमान[3]। [उर्दू अनुवाद]: बेशक अल्लाह अज़्ज़वजल ने बद्र और हुनैन के दिन ऐसे फ़रिश्तों से मेरी मदद फ़रमाई जो इस शैली का इमामा बाँधते थे। बेशक इमामा कुफ़्र और ईमान के बीच फ़र्क़ करने वाला है।

हदीस 11: दैलमी मुसनद अल-फ़िरदौस में अब्दुल्लाह अली बिन अदी रज़ियल्लाहु अन्हु से फ़रमाते हैं: [अरबी]: हाकज़ा फ़अ'तम्मू फ़-इन्नल 'इमामता सीमा-उल इस्लामि व हिया हाजिज़तुन बैनल मुस्लिमीना वल मुशरिकीन[4]। [उर्दू अनुवाद]: इसी तरह इमामे बाँधो क्योंकि इमामा इस्लाम की निशानी है और वह मुसलमानों और मुशरिकों के बीच फ़र्क़ करने वाला है।

हदीस 12: इब्न शाज़ान अपनी मशयखत में मौला अली करमल्लाहु वज्हहुल करीम से रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने इमामे की तरफ़ इशारा करके फ़रमाया: [अरबी]: हाकज़ा तकूनु तीजानुल मलइ'कह[5]। [उर्दू अनुवाद]: फ़रिश्तों के ताज ऐसे होते हैं।

हदीस 13 और 14: तबरानी कबीर में अब्दुल्लाह बिन उमर और बैहक़ी शुअब में उबादा बिन सामित रज़ियल्लाहु अन्हुम से रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं: [अरबी]: अलैकुम बिल अमाइम फ़-इन्नहा सीमा-उल मलइ'कति व अरखू लहा खलफ़ा जुहूरिकुम[6]।

[उर्दू अनुवाद]: इमामे अपनाया करो क्योंकि वे फ़रिश्तों का प्रतीक हैं और उनके शिमले (छोर) अपनी पीठ के पीछे छोड़ो।

पाद-टिप्पणियाँ: 1. अल-फ़िरदौस बि-मासूर अल-खिताब, इब्न अब्बास के हवाले से, हदीस 4747, दार अल-कुतुब अल-अरबिया बेरूत द्वारा प्रकाशित, 3/88। 2. अल-फ़िरदौस बि-मासूर अल-खिताब, इब्न अब्बास के हवाले से, हदीस 5697, दार अल-कुतुब अल-अरबिया बेरूत द्वारा प्रकाशित, 5/93। 3. अल-सुनन अल-कुबरा अल-बैहक़ी द्वारा, अध्याय: तीरंदाजी के लिए प्रोत्साहन, दार सादिर बेरूत द्वारा प्रकाशित, 10/12। 4. कंज़ अल-उम्माल दैलमी के हवाले से, हदीस 41911, मन्शूरात मकतबत अल-तुराथ अल-इस्लामी अलेप्पो बेरूत द्वारा प्रकाशित, 15/283। 5. कंज़ अल-उम्माल इब्न शाज़ान की मशयखत के हवाले से, हदीस 41913, मन्शूरात मकतबत अल-तुराथ अल-इस्लामी अलेप्पो बेरूत द्वारा प्रकाशित, 15/282। 6. अल-मुअजम अल-कबीर, हदीस 13418, अल-मकतबत अल-फ़ैसलिया बेरूत द्वारा प्रकाशित, 12/383।

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

العرب عمائمها وضعت عزها[1] ۔ | عرب عمامے اتار دیں اپنی عزت اتار دیں گے۔

حدیث ۹: وہی رکانہ رضی اللہ تعالٰی عنہ سے راوی کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں: لاتزال امتی علی الفطرۃ مالبسوا العمائم علی القلانس[2] ۔ | میری امت ہمیشہ دینِ حق پر رہے گی جب تک وہ ٹوپیوں پر عمامے باندھیں۔

حدیث ۱۰: ابوبکر ابن ابی شیبہ مصنف اور ابوداؤد طیالسی و ابن منیع مسانید اور بیہقی سنن میں امیر المومنین مولٰی علی رضی اللہ تعالٰی عنہ سے راوی کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا: ان اللہ امدنی یوم بدر وحنین بملئکۃ یعتمون ھذہ العمۃ وقال ان العمامۃ حاجزۃ بین الکفر والایمان[3] ۔ | بیشک اللہ عزوجل نے بدر و حنین کے دن ایسے ملائکہ سے میری مدد فرمائی جو اس طرز کا عمامہ باندھتے ہیں بیشک عمامہ کفر و ایمان میں فارق ہے۔

حدیث ۱۱: دیلمی مسند الفردوس میں عبداللہ علی بن عدی رضی اللہ تعالٰی عنہ نے فرمایا: ھکذا فاعتموا فان العمامۃ سیماء الاسلام وھی حاجزۃ بین المسلمین والمشرکین[4] ۔ | اسی طرح عمامے باندھو کہ عمامہ اسلام کی نشانی ہے اور وہ مسلمانوں اور مشرکوں میں فارق ہے۔

حدیث ۱۲: ابن شاذان اپنی مشیخت میں مولٰی علی کرم اللہ وجہہ الکریم سے راوی کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے عمامہ کی طرف اشارہ کرکے فرمایا: ھکذا تکون تیجان الملئکۃ[5] ۔ | فرشتوں کے تاج ایسے ہوتے ہیں۔

حدیث ۱۳ و ۱۴: طبرانی کبیر میں عبداللہ بن عمر اور بیہقی شعب میں عبادہ بن صامت رضی اللہ تعالٰی عنہم سے راوی کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں: علیکم بالعمائم فانھا سیماء

الملئكة وارخوا لها خلف ظهوركم[6] ۔ | عمامے اختیار کرو کہ وہ فرشتوں کے شعار ہیں اور ان کے شملے اپنے پسِ پشت چھوڑو۔

1 الفردوس بماثور الخطاب بحوالہ عن ابن عباس حدیث ۷۴۷۷ مطبوعہ دار الکتب العربیہ بیروت ۳/ ۸۸ 2 الفردوس بماثور الخطاب بحوالہ عن ابن عباس حدیث ۵۶۹۷ مطبوعہ دار الکتب العربیہ بیروت ۵/ ۹۳ 3 السنن الکبری للبیہقی باب التحریض علی الرمی مطبوعہ دار صادر بیروت ۱۰/ ۱۲ 4 کنز العمال بحوالہ الدیلمی حدیث ۴۱۹۱۱ مطبوعہ منشورات مکتبۃ التراث الاسلامی حلب بیروت ۱۵/ ۲۸۳ 5 کنز العمال بحوالہ ابن شاذان فی مشیختہ حدیث ۴۱۹۱۳ مطبوعہ منشورات مکتبۃ التراث الاسلامی حلب بیروت ۱۵/ ۲۸۲ 6 المعجم الکبیر حدیث ۱۳۴۱۸ مطبوعہ المکتبۃ الفیصلیۃ بیروت ۱۲/ ۳۸۳

Volume Six Fatawa Rizvia Hadith 15: Abu Abdullah Muhammad bin Waddaah narrates from Khalid bin Ma’dan in 'Fazl Libas al-Ama'im' that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Indeed, Allah Almighty has honored this Ummah with turbans." (Al-Hadith[1]) Hadith 16: Al-Bayhaqi narrates in 'Shu’ab al-Iman' from him that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Wear turbans, distinguish yourselves from the nations before you [i.e., Jews and Christians], for they do not wear turbans." (Footnote 2) Hadith 17: In Al-Mu'jam al-Kabir of Al-Tabarani: Muhammad bin Abdullah al-Hadrami narrated to us, Al-Ala bin Amr al-Hanafi narrated to us, Ayub bin Mudrik narrated to us from Makhul from Abu al-Darda (may Allah be pleased with him) who said that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Indeed, Allah and His angels send blessings upon those who wear turbans on the day of Friday." (Footnote 3) Hadith 18: Al-Daylami narrates from Anas (may Allah be pleased with him) that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Prayer in a turban is equivalent to ten thousand rewards." (Abaan is a narrator in its chain. - Note) (Footnote 4) Hadith 19: Al-Ramahurmuzi narrates in 'Kitab al-Amthal' from Mu'adh (may Allah be pleased with him) that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him)...

1. Kanz al-Ummal fi Sunan al-Aqwal wal-Af’al, Hadith 41145, published by Manshurat Maktabat al-Turath al-Islami, Aleppo Beirut, 15/307.
2. Shu’ab al-Iman, Hadith 6261, published by Dar al-Kutub al-Ilmiyah, Beirut, 5/175.
3. Majma' al-Zawa'id with reference to Mu'jam al-Kabir, Chapter: Clothing for Friday, published by Dar al-Kutub al-Ilmiyah, Beirut, 2/176.
4. Al-Firdaws bi-Ma'thur al-Khitab, Hadith 3805, published by Dar al-Kutub al-Ilmiyah, Beirut, 2/406. Note: In the book from which the Hadith reference is given, the word "ta'dil" (equivalent to) is not present. - Nazir Ahmad Sa'idi. Page 213 of 736

जिल्द छठी फ़तावा रिज़विया हदीस 15: अबू अब्दुल्ला मुहम्मद बिन वज़ाह ने 'फ़ज़्ल लिबास अल-अमइम' में खालिद बिन मादान से मुरसलन रिवायत की है कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "बेशक अल्लाह अज़्ज़वजल ने इस उम्मत को इमामे (पगड़ी) से मुकर्रम (सम्मानित) फ़रमाया।" (अल-हदीस[1]) हदीस 16: बैहक़ी ने 'शुअब अल-ईमान' में उन्हीं से रिवायत की है कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "इमामा बांधो और पिछली उम्मतों यानी यहूद व नसारा की मुखालफ़त करो कि वे इमामा नहीं बांधते थे।" (पाद-टिप्पणी 2) हदीस 17: मुअजम कबीर तबरानी में है: मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह अल-हज़रमी ने हमसे बयान किया, अल-अला बिन अम्र अल-हनफ़ी ने हमसे बयान किया, अय्यूब बिन मुद्रिक से उन्होंने मख़ूल से और उन्होंने अबू दरदा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत की कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "बेशक अल्लाह तआला और उसके फ़रिश्ते जुमा के दिन इमामा पहनने वालों पर दुरूद (रहमत) भेजते हैं।" (पाद-टिप्पणी 3) हदीस 18: दैलमी ने अनस (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत की है कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "इमामे के साथ नमाज़ दस हज़ार नेकियां के बराबर है।" (इसकी सनद में अबान रावी है। - नोट) (पाद-टिप्पणी 4) हदीस 19: रामहुर्मुज़ी ने 'किताब अल-अमसाल' में मुआज़ (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत की है कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम)...

1. कंज़ अल-उम्माल फ़ी सुनन अल-अक़्वाल वल-अफ़आल, हदीस 41145, मुद्रित: मंशूरात मकतबत अल-तुराथ अल-इस्लामी, हलब बेरूत, 15/307।
2. शुअब अल-ईमान, हदीस 6261, मुद्रित: दार अल-कुतुब अल-इल्मिया, बेरूत, 5/175।
3. मजमा अल-ज़वाइद ब-हवाला मुअजम कबीर, बाब: जुमा के लिए लिबास, मुद्रित: दार अल-कुतुब अल-इल्मिया, बेरूत, 2/176।
4. अल-फ़िरदौस बि-मासूर अल-ख़िताब, हदीस 3805, मुद्रित: दार अल-कुतुब अल-इल्मिया, बेरूत, 2/406। नोट: जिस किताब से हदीस का हवाला दिया गया है उसमें "तअदिल" शब्द नहीं है। - नज़ीर अहमद सईदी। पृष्ठ 213/736

جلد ششم فتاوی رضویہ حدیث ۱۵: ابو عبداللہ محمد بن وضاح فضل لباس العمائم میں خالد بن معدان سے مرسلاً راوی کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں: ان اللہ تعالیٰ اکرم ھذہ الامۃ بالعصائب | بیشک اللہ عزوجل نے اس امت کو عماموں سے مکرم فرمایا، الحدیث[1]۔ | الحدیث حدیث ۱۶: بیہقی شعب الایمان میں انہی سے راوی کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں: اعتموا خالفوا الامم قبلکم [2]۔ | عمامہ باندھو اگلی امتوں یعنی یہود و نصاریٰ کی مخالفت کرو کہ وہ عمامہ نہیں باندھتے۔ حدیث ۱۷: معجم کبیر طبرانی میں ہے: حدثنا محمد بن عبداللہ الحضرمی حدثنا العلاء بن عمرو الحنفی حدثنا ایوب بن مدرک عن مکحول عن ابی الدرداء رضی اللہ تعالیٰ عنہ قال قال رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم ان اللہ عزوجل وملئکتہ یصلون علی اصحاب العمائم یوم الجمعۃ [3]۔ | بیان کیا محمد بن عبداللہ حضرمی نے، بیان کیا العلاء بن عمرو الحنفی نے، بیان کیا ایوب بن مدرک سے مکحول سے ابوالدرداء رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے کہ فرمایا رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے کہ بیشک اللہ تعالیٰ اور اسکے فرشتے درود بھیجتے ہیں جمعہ کے روز عمامہ والوں پر۔ حدیث ۱۸: دیلمی انس رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے راوی کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں: الصلاۃ فی العمامۃ تعدل بعشرالاف حسنۃ [4]۔ فیہ ابان۔ | عمامہ کے ساتھ نماز دس ہزار نیکی کے برابر ہے۔ (اس کی سند میں ابان راوی ہے۔ت) حدیث ۱۹: رامہرمزی کتاب الامثال میں معاذ رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے راوی کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم

1 کنز العمال فی سنن الاقوال والافعال حدیث ۴۱۱۴۵ مطبوعہ منشورات مکتبۃ التراث الاسلامی حلب بیروت ۱۵/ ۳۰۷ 2 شعب الایمان حدیث ۶۲۶۱ مطبوعہ دارالکتب العلمیۃ بیروت ۵/ ۱۷۵ 3 مجمع الزوائد بحوالہ معجم کبیر باب اللباس للجمعۃ مطبوعہ دارالکتب العلمیۃ بیروت ۲/ ۱۷۶ 4 الفردوس بماثور الخطاب حدیث ۳۸۰۵ مطبوعہ دارالکتب العلمیۃ بیروت ۲/ ۴۰۶ نوٹ: جس کتاب

سے حدیث کا حوالہ دیا گیا ہے اس میں "تعدل" کا لفظ نہیں ہے۔ نذیر احمد سعیدی Page 213 of 736

Fatawa Rizwia Volume 6 He (peace and blessings be upon him) says: "Turbans are the crowns of the Arabs, so wear turbans to increase your dignity. Whoever wears a turban receives a reward for every fold, and when they take it off (without necessity or intention to leave it), for every removal, a sin is removed, or when they take it off (out of necessity without intention to leave it but with intention to return), for every fold taken off, a sin is removed."[1]

Both interpretations are possible, and Allah Almighty knows best. The Hadith is extremely weak because it contains three narrators who are 'Matruk' (abandoned) and 'Mutaham' (accused): Amr bin al-Husain from Abu Alatha from Thuwair. (Allah Almighty knows best. This Hadith has a severe weakness as three of its narrators are abandoned and accused. They narrated from Abu Alatha and he from Thuwair.)

Hadith 20: Narrated in Musnad al-Firdous from Jabir bin Abdullah Ansari (may Allah be pleased with them), the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says: "Two rak'ahs with a turban are better than seventy rak'ahs without a turban."[2] Two cycles of prayer with a turban are superior to seventy cycles without a turban.

Regarding the Hadith mentioned in the question: Ibn Asakir narrated it in Tarikh Dimashq, Ibn al-Najjar in Tarikh Baghdad, and Daylami in Musnad al-Firdous through various routes from Abdullah bin Umar (may Allah be pleased with them): Ibn Asakir through Ahmad bin Muhammad al-Raqqi from Isa bin Yunus from Abbas bin Kathir (h) and Daylami through Hussain bin Ishaq al-Ajli from Ishaq bin Yaqub al-Qattan from Safin bin Ziyad al-Makhrami from Abbas bin Kathir al-Qurashi from Yazid bin... Ibn Asakir through Ahmad bin Muhammad from Isa bin Yunus from Abbas bin Kathir related the Hadith. (h) And Daylami through Hussain bin Ishaq al-Ajli from Ishaq bin Yaqub Qattan from Safin bin Ziyad al-Makhrami from Abbas bin Kathir al-Qurashi from Yazid bin Abi Habib from Maymun bin Mihran related the Hadith. He said: I visited Salim bin Abdullah bin Umar, and he dictated the Hadith to me, then turned to me...

---

[1] Kanz al-Ummal, referencing al-Ramahurmuzi in al-Amthal, Hadith 41146, published by Maktaba al-Islami, Aleppo, Beirut, 15/308. [2] Al-Firdous bi-Ma'thur al-Khitab, Hadith 3233, published by Dar al-Kutub al-Ilmiyah, Beirut, 2/265. Note: In the book from which the reference is quoted, the word "afdal" (superior) is used instead of "khair" (better). - Nazir Ahmad Saeedi.

फतावा रज़विया जिल्द 6 वह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं: "पगड़ियाँ अरबों के ताज हैं, इसलिए पगड़ी बांधो जिससे तुम्हारा सम्मान बढ़ेगा। जो पगड़ी बांधता है, उसे हर पेच (लपेट) पर एक नेकी मिलती है, और जब वह इसे उतारता है (बिना जरूरत या छोड़ने के इरादे से), तो हर उतारने पर एक गलती कम होती है, या जब वह इसे उतारता है (जरूरत पड़ने पर बिना छोड़ने के इरादे से बल्कि वापस पहनने के इरादे से), तो हर पेच उतारने पर एक गुनाह मिटता है।"[1]

दोनों व्याख्याएँ संभव हैं, और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है। यह हदीस अत्यंत कमजोर (ज़ईफ़) है क्योंकि इसमें तीन रावी (वर्णनकर्ता) 'मतरूक' (त्यागे हुए) और 'मुत्तहम' (आरोपित) हैं: अम्र बिन अल-हुसैन, अबू अलासा से, और वह सुवैर से। (अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है। इस हदीस में तीव्र श्रेणी का ज़ुफ़ (कमजोरी) है क्योंकि इसके तीन रावी मतरूक और मुत्तहम हैं। उन्होंने अबू अलासा से और उन्होंने सुवैर से रिवायत की है।)

हदीस 20: मुसनद अल-फिरदौस में जाबिर बिन अब्दुल्लाह अंसारी (रज़ियल्लाहु तआला अन्हुमा) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं: "पगड़ी के साथ दो रकअतें बिना पगड़ी की सत्तर रकअतों से बेहतर हैं।"[2] पगड़ी के साथ नमाज़ की दो रकअतें बिना पगड़ी की सत्तर रकअतों से अफ़ज़ल (श्रेष्ठ) हैं।

सवाल में ज़िक्र की गई हदीस के बारे में: इब्न असाकिर ने तारीख़ दमिश्क में, इब्न अल-नज्जार ने तारीख़ बगदाद में और दैलमी ने मुसनद अल-फिरदौस में अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ियल्लाहु तआला अन्हुमा) से मुख़्तलिफ़ सनदों के साथ इसे रिवायत किया है: इब्न असाकिर ने अहमद बिन मुहम्मद अल-रक्की के ज़रिए ईसा बिन यूनुस से और उन्होंने अब्बास बिन कसीर से हदीस बयान की, और दैलमी ने हुसैन बिन इसहाक अल-इजली के ज़रिए इसहाक बिन याकूब अल-क़त्तान से, उन्होंने सफीन बिन ज़ियाद अल-मखरमी से, उन्होंने अब्बास बिन कसीर अल-कुरैशी से, उन्होंने यज़ीद बिन... [अगले पृष्ठ पर जारी] इब्न असाकिर ने अहमद बिन मुहम्मद के माध्यम से ईसा बिन यूनुस से और उन्होंने अब्बास बिन कसीर से हदीस बयान की। (h) और दैलमी ने हुसैन बिन इसहाक अल-इजली के माध्यम से इसहाक बिन याकूब क़त्तान से, उन्होंने सफ़ीन बिन ज़ियाद अल-मखरमी से, उन्होंने अब्बास बिन कसीर अल-क़ुरैशी से, उन्होंने यज़ीद बिन अबी हबीब से और उन्होंने मैयून बिन मेहरान से हदीस बयान की। उन्होंने कहा: मैं सालिम बिन अब्दुल्लाह बिन उमर की ख़िदमत में हाज़िर हुआ तो उन्होंने हदीस इमला कराई (लिखवाई), फिर मेरी तरफ मुतवज्जह हुए...

1 कंज़ अल-उम्माल, अल-रामेहरमुज़ी की अल-अम्साल के हवाले से, हदीस 41146, मकतबा अल-इस्लामी, हलब, बैरूत, 15/308 द्वारा प्रकाशित। 2 अल-फिरदौस बि-मासूर अल-खिताब, हदीस 3233, दार अल-कुतुब अल-इल्मिया, बैरूत, 2/265 द्वारा प्रकाशित। नोट: जिस किताब से हवाला लिया गया है, उसमें शब्द 'खैर' की जगह 'अफ़ज़ल' है। - नज़ीर अहमद सईदी।

पृष्ठ 214 का 736

فتاوی رضویہ جلد ششم علیہ وسلم فرماتے ہیں: العمائم تیجان العرب فاعتموا تزدادوا حلما و من اعتم فله بكل كور حسنة فاذا حط فله بكل حطة حط خطيئة 1۔ عمامے عرب کے تاج ہیں تو عمامہ باندھو تمہارا وقار بڑھے گا اور جو عمامہ باندھے اس کے لئے ہر پیچ پر ایک نیکی اور جب (بلا ضرورت یا ترک کے قصد پر) اتارے تو ہر اتارنے پر ایک خطا ہے یا جب (بضرورت بلا قصد ترک بلکہ با ارادہ معاودت) اتارے تو ہر پیچ اتارنے پر ایک گناہ اترے۔

دونوں محتمل ہیں واللہ تعالیٰ اعلم والحدیث اشد ضعفافیه ثلثة متركون متهمون عمرو بن الحصين عن ابی علاثة عن ثوير (اللہ تعالیٰ ہی بہتر جانتا ہے۔ اس حدیث میں شدید قسم کا ضعف ہے کیونکہ اس کے تین راوی متروک و متہم ہیں انہوں نے ابو علاثہ سے اور انہوں نے ثویر سے روایت کیا ہے۔) حدیث ۲۰: مسند الفردوس میں جابر بن عبد اللہ انصاری رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے مروی رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں: رکعتان بعمامة خير من سبعين ركعة بلا عمامة عمامہ کے ساتھ دو رکعتیں بے عمامہ کی ستر رکعتوں سے افضل ہیں۔ 2

رہی حدیث مذکور سوال : اسے ابن عساکر نے تاریخ دمشق اور ابن النجار نے تاریخ بغداد اور دیلمی نے مسند الفردوس میں بطریق عدیدہ عبد اللہ بن عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے روایت کیا: ابن عساكر بطريق احمد بن محمد الرقی ثنا عيسى بن يونس حدثنا العباس بن كثير ح والديلمي بطريق الحسين بن اسحق بن يعقوب القطان حدثنا سفين بن زياد المخرمی حدثنا العباس بن كثير القرشی حدثنا یزید بن ابن عساکر نے بطریق احمد بن محمد از عیسی بن یونس از عباس بن کثیر حدیث بیان کی ح اور دیلمی نے بطریق حسین بن اسحق العجلی از اسحق بن یعقوب قطان از سفین بن زیاد المخرمی از عباس بن کثیر القرشی از یزید بن ابی حبیب از میمون بن مہران حدیث بیان کی کہا میں سالم بن عبد اللہ بن عمر کی خدمت میں حاضر ہوا تو انہوں نے حدیث املاء کرائی پھر میری طرف متوجہ

1 کنز العمال بحوالہ الرامہرمزی فی الامثال حدیث ۴۱۱۴۶ مطبوعہ مکتبہ الاسلامی حلب بیروت ۱۵/ ۳۰۸ 2 الفردوس بمأثور الخطاب حدیث ۳۲۳۳ مطبوعہ دارالکتب العلمیة بیروت ۲/ ۲۶۵ نوٹ: جس کتاب سے حوالہ نقل کیا گیا ہے اس میں لفظ "خیر" کی بجائے "افضل" ہے۔ نذیر احمد سعیدی

Fatawa Razawiyya - Volume Six

(Arabic Text Transliteration/Translation) From Abu Habib, from Maymun bin Mihran, he said: I entered upon Salim bin Abdullah bin Umar, may Allah be pleased with them, and he spoke to me for a while, then he turned to me and said: O Abu Ayyub! Shall I not inform you of a Hadith that you would love and carry from me and narrate? I said: Yes. He said: I entered upon Abdullah bin Umar bin Al-Khattab, may Allah be pleased with them both, while he was tying a turban. When he finished, he turned and said: Do you love the turban? I said: Yes. He said: Love it, you will be honored, and the devil will not see you without fleeing from you. Verily, I heard the Messenger of Allah, peace and blessings of Allah be upon him, saying: "A voluntary or obligatory prayer with a turban is equal to twenty-five prayers without a turban, and a Friday prayer with a turban is equal to seventy Friday prayers without a turban. O my son! Wear a turban, for the angels attend the Friday prayer wearing turbans and they send salutations upon the people of turbans until the sun sets."

(Urdu Text) ...and said, "O Abu Ayyub! Shall I not give you news of such a Hadith that you would like, so you may narrate it from me and explain it?" I submitted, "Why not!" Then Salim bin Abdullah bin Umar (may Allah be pleased with them) says, "I presented myself in the presence of my noble father Abdullah bin Umar (may Allah be pleased with them) while he was tying a turban. When he had finished tying it, he turned towards me and said, 'Do you love the turban?' I submitted, 'Why not!' He said, 'Love it, you will receive honor, and when the devil sees you, he will turn his back on you. I heard the Messenger of Allah (may Allah's peace and blessings be upon him) say that a voluntary prayer with a turban, or even an obligatory one, is equal to twenty-five prayers without a turban, and a Friday prayer with a turban is equal to seventy Fridays without a turban. Then Ibn Umar (may Allah be pleased with them) said: O son! Tie a turban, for the angels come wearing turbans on the day of Friday and they continue to send peace upon the wearers of turbans until the sun sets.'"

The truth is that this Hadith is not fabricated (mawdu'). In its chain of narration (sanad), there is no fabricator, nor anyone accused of fabrication, nor any liar, nor anyone accused of lying. Nor is there any opposition to reason or established narration in it. Necessarily, the great Imam, the Seal of the Hadith Masters, Jalal al-Milla wal-Din al-Suyuti, mentioned it in "Jami' al-Saghir," in the sermon of which he stated:

(Arabic:) "I left the husk and took the core, and I protected it from that which is narrated solely by a fabricator or a liar."

(Urdu:) I have left the skin in this book and taken the pure core, and protected it from every such Hadith which has been narrated solely by a fabricator or a liar.

---

1. Lisan al-Mizan, letter 'Ain', biography of Al-Abbas bin Kathir, published by Dairat al-Ma'arif al-Nizamia, Hyderabad Deccan, 3/244. Note: Since the books mentioned by Ala Hazrat were not found, the reference to this book is given. - Nazir Ahmed Saeedi.
2. Al-Jami' al-Saghir with Faydh al-Qadir in the book's sermon, published by Dar al-Ma'rifa Beirut, 1/20.

(अरबी पाठ का अनुवाद) अबू हबीब से, मैमुन बिन मिहरान से, उन्होंने कहा: मैं सालिम बिन अब्दुल्ला बिन उमर के पास गया, अल्लाह उन पर प्रसन्न हो, और उन्होंने मुझसे कुछ देर बात की, फिर उन्होंने मेरी ओर मुड़कर कहा: ऐ अबू अय्यूब! क्या मैं तुम्हें ऐसी हदीस न बताऊँ जिसे तुम पसंद करो और मुझसे ग्रहण करो और उसका वर्णन करो? मैंने कहा: हाँ। उन्होंने कहा: मैं अब्दुल्ला बिन उमर बिन अल-खत्ताब के पास गया, अल्लाह उन दोनों पर प्रसन्न हो, जब वह पगड़ी बाँध रहे थे। जब वह समाप्त कर चुके तो वह मुड़े और कहा: क्या तुम पगड़ी को पसंद करते हो? मैंने कहा: हाँ। उन्होंने कहा: इसे पसंद करो, तुम्हारा सम्मान होगा, और शैतान तुम्हें देखकर पीठ फेर लेगा। वास्तव में, मैंने अल्लाह के रसूल, अल्लाह की शांति और आशीर्वाद उन पर हो, को कहते सुना: "पगड़ी के साथ एक नफ़्ल या फ़र्ज़ नमाज़ बिना पगड़ी की पच्चीस नमाज़ों के बराबर है, और पगड़ी के साथ एक जुमे की नमाज़ बिना पगड़ी के सत्तर जुमों के बराबर है। ऐ मेरे बेटे! पगड़ी बाँधो, क्योंकि फ़रिश्ते जुमे के दिन पगड़ी बाँधकर आते हैं और सूरज डूबने तक पगड़ी वालों पर सलाम भेजते रहते हैं।"

(उर्दू पाठ का अनुवाद) ...कहा, "ऐ अबू अय्यूब! क्या मैं तुम्हें ऐसी हदीस की खबर न दूँ जो तुम्हें पसंद हो, और मेरी ओर से उसका वर्णन करे और उसे बयान करे?" मैंने अर्ज़ किया, "क्यों नहीं!" तो सालिम बिन अब्दुल्ला बिन उमर (अल्लाह उन पर प्रसन्न हो) फरमाते हैं, "मैं अपने वालिद माजिद अब्दुल्ला बिन उमर (अल्लाह उन दोनों पर प्रसन्न हो) की हुज़ूर हाज़िर हुआ और वह इमामा (पगड़ी) बाँध रहे थे। जब बाँध चुके तो मेरी तरफ ध्यान देकर फरमाया, 'तुम इमामे को पसंद करते हो?' मैंने अर्ज़ किया, 'क्यों नहीं!' फरमाया, 'इसे पसंद रखो, इज़्ज़त पाओगे और जब शैतान तुम्हें देखेगा, तो तुमसे पीठ फेर लेगा। मैंने रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) को फरमाते सुना कि इमामे के साथ एक नफ़्ल नमाज़, चाहे फ़र्ज़, बिना इमामे की पच्चीस नमाज़ों के बराबर है और इमामे के साथ एक जुमा, बिना इमामे के सत्तर जुमों के बराबर है। फिर इब्ने उमर (अल्लाह उन दोनों पर प्रसन्न हो) ने फरमाया: ऐ फरज़ंद! इमामा बाँधो कि फ़रिश्ते जुमे के दिन इमामा बाँधकर आते हैं और सूरज डूबने तक इमामे वालों पर सलाम भेजते रहते हैं।'"

हक यह है कि यह हदीस मौज़ू (गढ़ी हुई) नहीं है, इसकी सनद (प्रमाण की श्रृंखला) में न कोई वज़्ज़ा (गढ़ने वाला) है, न मुत्तहम बिल-वज़्अ (गढ़ने का आरोपी), न कोई कज़्ज़ाब (झूठा), न मुत्तहम बिल-किज़ब (झूठ का आरोपी), न इसमें अक्ल या नक्ल की मूलतः कोई खिलाफत है। अनिवार्य रूप से

इसे इमाम जलील, खातमुल हुफ़्फ़ाज़ जलालुल मिल्लत वद्दीन सुयुती ने जामिअ सगीर में ज़िक्र फरमाया, जिसके खुतबे (प्रस्तावना) में इरशाद किया:

(अरबी:) "मैंने छिलका छोड़ दिया और गूदा ले लिया, और इसे उस चीज़ से सुरक्षित रखा जिसे केवल एक वज़्ज़ा या कज़्ज़ाब ने बयान किया है।"

(उर्दू:) मैंने इस किताब में छिलका छोड़ कर खालिस मग़्ज़ (गूदा) लिया है और इसे हर ऐसी हदीस से बचाया है जिसे तन्हा किसी वज़्ज़ा या कज़्ज़ाब ने रिवायत किया है।

---

1. लिसानुल मीज़ान, हर्फुल ऐन, तर्जुमा अल-अब्बास बिन कसीर, मुद्रित दाइरतुल मआरिफ अल-निज़ामिया हैदराबाद दकन 3/244 नोट: जिन किताबों का आला हज़रत ने ज़िक्र किया है, वे न मिलने के कारण इस किताब का हवाला दिया गया है। - नज़ीर अहमद सईदी।
2. अल-जामिअुस सगीर मा फैज़ुल क़दीर, किताब के खुतबे में, मुद्रित दारुल मआरिफ़ा बेरूत 1/20

(عربی متن) ابي حبيب عن ميمون بن مہر ان قال دخلت على سالم بن عبدالله بن عمر رضى الله تعالى عنہم فحدثنى ملياً ثم التفت الى فقال يا ابا ايوب الا اخيرك بحديث تحبه وتحمله عنى وتحدث به فقلت بلى قال دخلت على عبدالله بن عمر بن الخطاب رضى الله تعالى عنهما وهو يتعمم فلما فرغ التفت فقال اتحب العمامة قلت بلى قال احبها تكرم ولا يراك الشيطان الاولى (هاربا انى) سمعت رسول الله صلى الله تعالى عليه وسلم يقول صلاة تطوع او فريضة بعمامة تعدل خمسا وعشرين صلاة بلا عمامة وجمعة بعمامة تعدل بسبعين جمعة بلا عمامة اى بنى اعتم فان الملئكة يشهدون يوم الجمعة معتمين فيسلمون على اهل العمائم حتى تغيب الشمس۔

(اردو متن) ہو کر فرمایا اے ابوالایوب! کیا تجھے ایسی حدیث نہ خبر نہ دوں جو تجھے پسند ہو، میری طرف سے روایت کرے اور اسے بیان کرے۔ میں نے عرض کیا کیوں نہیں __ تو سالم بن عبداللہ بن عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہم فرماتے ہیں میں اپنے والد ماجد عبداللہ بن عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہما کے حضور حاضر ہوا اور وہ عمامہ باندھ رہے تھے جب باندھ چکے میری طرف التفات کر کے فرمایا تم عمامہ کو دوست رکھتے ہو؟ میں نے عرض کی کیوں نہیں! فرمایا اسے دوست رکھو عزت پاؤ گے اور جب شیطان تمہیں دیکھے گا تم سے پیٹھ پھیر لے گا۔ میں نے رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کو فرماتے سنا کہ عمامہ کے ساتھ ایک نفل نماز خواہ فرض بے عمامہ کی پچیس نمازوں کے برابر ہے اور عمامہ کے ساتھ ایک جمعہ بے عمامہ کے ستر جمعوں کے برابر ہے۔ پھر ابن عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہما نے فرمایا : اے فرزند! عمامہ باندھ کہ فرشتے جمعہ کے دن عمامہ باندھے آتے ہیں اور سورج ڈوبنے تک عمامہ والوں پر سلام بھیجتے رہتے ہیں۔

حق یہ ہے کہ یہ حدیث موضوع نہیں اس کی سند میں نہ کوئی وضاع ہے نہ متہم بالوضع نہ کوئی کذاب نہ متہم بالکذب نہ اس میں عقل یا نقل کی اصلاً مخالفت لا جرم اسے امام جلیل خاتم الحفاظ جلال الملۃ والدین سیوطی نے جامع صغیر میں ذکر فرمایا جس کے خطبہ میں ارشاد کیا:

ترکت القشر، واخذت اللباب، وصنته عما تفرد بہ وضاع او کذاب۔

میں نے اس کتاب میں پوست چھوڑ کر خالص مغز لیا ہے اور اسے ہر ایسی حدیث سے بچایا جسے تنہا کسی وضاع یا کذاب نے روایت کیا ہے۔

---

1 لسان المیزان حرف العین ترجمہ العباس بن کثیر مطبوعہ دائرۃ المعارف النظامیہ حیدر آباد دکن ۳/ ۲۴۴ نوٹ: جن کتابوں کا اعلیٰحضرت نے ذکر کیا ہے وہ نہ ملنے کی وجہ سے اس کتاب کا حوالہ دیا ہے۔ نذیر احمد سعیدی۔ 2 الجامع الصغیر مع فیض القدیر در خطبہ کتاب مطبوعہ دار المعرفہ بیروت ۱/ ۲۰

Fatawa-e-Razawiyyah Volume 6

[Arabic Column] As for Ibn al-Najjar, he extracted it through the chain of Muhammad bin Mahdi al-Marwazi, who said: Abu Bishr bin Sayyar al-Raqqi informed us, saying: Al-Abbas bin Kathir al-Raqqi narrated to us from Yazid bin Abi Habib, who said: Mahdi bin Maymun said to me: I visited Salim bin Abdullah bin Umar (may Allah be pleased with them) while he was wearing a turban, and he said to me: "O Abu Ayyub! Shall I not narrate a Hadith to you that you would love, preserve, and narrate?" Then he mentioned a similar [Hadith] and said: "They (angels) continue to pray for the wearers of turbans until the sun sets."[1] Al-Hafiz said in Al-Lisan: "This Hadith is rejected (munkar), even fabricated (mawdu'). I did not see any mention of Al-Abbas bin Kathir in Al-Ghuraba by Ibn Yunus, nor in its supplement by Ibn al-Tahhan. As for Abu Bishr bin Sayyar, Abu Ahmad al-Hakim did not mention him in Al-Kuna. I do not know Muhammad bin Mahdi al-Marwazi, nor Mahdi bin Maymun, the narrator of this Hadith from Salim. He is not the Basri narrator included in the two Sahihs (Bukhari and Muslim); that one is nicknamed Abu Yahya. I do not know from whom the defect (afah) comes."[2] (End of Quote). I say: May Allah have mercy on Al-Hafiz. From where did he derive the fabrication, while it contains nothing that the intellect deems impossible, nor...

[Urdu Column] Ibn al-Najjar extracted it through this chain that Muhammad bin Mahdi Marwazi narrated: Abu Bishr bin Sayyar Raqqi informed us, saying: Abbas bin Kathir Raqqi narrated the Hadith to us on the authority of Yazid bin Abi Habib, saying: Mahdi bin Maymun told me that once I went to Salim bin Abdullah bin Umar (may Allah be pleased with them) while he was tying a turban. He said to me: "O Abu Ayyub! Should I not narrate a Hadith to you which you would cherish and, after attaining it, narrate?" Then he narrated a similar Hadith and said: "Angels send blessings upon those who wear turbans until sunset." Al-Hafiz stated in Al-Lisan that this Hadith is rejected (munkar), rather fabricated (mawdu'). I did not find any mention of Abbas bin Kathir in Ibn Yunus's Al-Ghuraba, nor in its footnote by Ibn al-Tahhan. Abu Ahmad Hakim did not mention Abu Bishr bin Sayyar in Al-Kuna. Neither do I know Muhammad bin Mahdi Marwazi nor Mahdi bin Maymun, the narrator of this Hadith from Salim. He is not that Basri narrator who is in Muslim and Bukhari; his kunya is Abu Yahya. Nor am I aware of where the defect lies. (T) I say: May Allah have mercy on Al-Hafiz. From where did he bring fabrication into this narration?

[Footnotes] [1] Lisan al-Mizan, letter 'Ain, biography of Al-Abbas bin Kathir, printed at Dairat al-Ma'arif al-Nizamiyyah, Hyderabad Deccan, 3/244. Note: This reference was

also mentioned from Lisan al-Mizan due to the unavailability of the original book. — Nazir Ahmad. [2] Lisan al-Mizan, letter 'Ain, biography of Abbas bin Kathir, printed at Dairat al-Ma'arif al-Nizamiyyah, Hyderabad Deccan, 3/244. Page 216 of 736

फ़तावा-ए-रज़विया जिल्द 6

[अरबी कॉलम] जहाँ तक इब्न अल-नज्जार का संबंध है, उन्होंने इसे मुहम्मद बिन महदी अल-मरवाज़ी के माध्यम से उद्धृत किया, जिन्होंने कहा: हमें अबू बिश्र बिन सय्यार अल-रक़्क़ी ने सूचित किया, उन्होंने कहा: अल-अब्बास बिन कसीर अल-रक़्क़ी ने हमें यज़ीद बिन अबी हबीब के हवाले से हदीस सुनाई, उन्होंने कहा: महदी बिन मय़मून ने मुझसे कहा: मैं सालिम बिन अब्दुल्ला बिन उमर (अल्लाह उन पर प्रसन्न हो) के पास गया जब वे पगड़ी पहने हुए थे, और उन्होंने मुझसे कहा: "ऐ अबू अय्यूब! क्या मैं तुम्हें ऐसी हदीस न सुनाऊँ जिसे तुम पसंद करो, सुरक्षित रखो और बयान करो?" फिर उन्होंने वैसी ही [हदीस] का ज़िक्र किया और कहा: "वे (फरिश्ते) पगड़ी पहनने वालों के लिए सूर्यास्त तक प्रार्थना करते रहते हैं।"[1] अल-हाफ़िज़ ने अल-लिसान में कहा: "यह हदीस मुनकर (अस्वीकृत), बल्कि मौज़ू (गढ़ी हुई) है। मैंने इब्न यूनुस की अल-गुरबा में और न ही इब्न अल-तहहान द्वारा इसके परिशिष्ट में अल-अब्बास बिन कसीर का कोई ज़िक्र देखा। जहाँ तक अबू बिश्र बिन सय्यार का सवाल है, अबू अहमद अल-हाकिम ने अल-कुना में उनका ज़िक्र नहीं किया। मैं न तो मुहम्मद बिन महदी अल-मरवाज़ी को जानता हूँ, और न ही सालिम से इस हदीस के रावी महदी बिन मय़मून को। वह वह बसरी रावी नहीं है जो सहीहैन (बुखारी और मुस्लिम) में शामिल है; उसकी कुनियत अबू यह्या है। मुझे नहीं पता कि दोष (आफ़त) कहाँ से आता है।"[2] (उद्धरण समाप्त)। मैं कहता हूँ: अल्लाह हाफ़िज़ पर रहम करे। उन्होंने इसमें मौज़ू (गढ़ा हुआ) होने की बात कहाँ से लाई, जबकि इसमें ऐसा कुछ भी नहीं है जिसे बुद्धि असंभव माने, और न ही...

[उर्दू कॉलम] इब्न-ए-नज्जार ने इसे इस सनद से निकाला है कि मुहम्मद बिन महदी मरवाज़ी बयान करते हैं: हमें अबू बिश्र बिन सय्यार रक़्क़ी ने ख़बर दी, वे कहते हैं: हमें अब्बास बिन कसीर रक़्क़ी ने यज़ीद बिन अबी हबीब के हवाले से हदीस बयान की, कहा: मुझे महदी बिन मय़मून ने बताया कि एक बार मैं सालिम बिन अब्दुल्ला बिन उमर (रज़ियल्लाहु तआला अन्हुम) के पास गया तो वे इमामा (पगड़ी) बाँध रहे थे। उन्होंने मुझसे फ़रमाया: "ऐ अबू अय्यूब! मैं तुझे एक हदीस न बयान करूँ जिसे तू महबूब रखे और हासिल करने के बाद उसे बयान करे?" फिर उन्होंने इसी तरह की हदीस बयान की और फ़रमाया: "फरिश्ते इमामा बाँधने वालों पर सूर्यास्त तक सलात (दुआ) भेजते हैं।" हाफ़िज़ ने लिसान में फ़रमाया: "यह हदीस मुनकर बल्कि मौज़ू है और मैंने अब्बास बिन कसीर का ज़िक्र इब्न यूनुस की गुरबा में और उसके हाशिया ल-इब्न तहान में नहीं पाया। अबू बिश्र बिन सय्यार का तज़किरा अबू अहमद हाकिम ने अल-कुना में नहीं किया। न ही मैं मुहम्मद बिन महदी मरवाज़ी और इस

हदीस के रावी महदी बिन मय़मून को जानता हूँ। वह वह बसरी भी नहीं जो मुस्लिम व बुख़ारी के रावी हैं; उनकी कुनियत अबू यह्या है। न ही मैं इसकी आफ़त से आगाह हूँ।" (त) अक़ूल (मैं कहता हूँ): हाफ़िज़ पर अल्लाह तआला रहम करे, इस रिवायत में 'वज़अ' (गढ़ने) को कहाँ से लाए हैं?

[पाद टिप्पणियाँ] [1] लिसान अल-मीज़ान, अक्षर 'ऐन', अल-अब्बास बिन कसीर की जीवनी, दायरा अल-मआरिफ अल-निज़ामिया, हैदराबाद दक्कन द्वारा मुद्रित, 3/244। नोट: मूल पुस्तक न मिलने के कारण यह संदर्भ भी लिसान अल-मीज़ान से उद्धृत किया गया है। —नज़ीर अहमद। [2] लिसान अल-मीज़ान, अक्षर 'ऐन', अब्बास बिन कसीर की जीवनी, दायरा अल-मआरिफ अल-निज़ामिया, हैदराबाद दक्कन द्वारा मुद्रित, 3/244। पृष्ठ 216/736

فتاوی رضویه جلد ششم

[Arabic Column] اما ابن النجار فاخرجہ من طریق محمد بن مهدی المروزی انبأنا ابوبشر بن سیار الرقی حدثنا العباس بن کثیر الرقی عن یزید بن ابی حبیب قال قال لی مهدی بن میمون دخلت علی سالم بن عبداللہ بن عمر رضی اللہ تعالٰی عنهم وهو یعتم فقال لی یا اباایوب الا احدثک بحدیث تحبہ وتحملہ وترویہ فذکر مثلہ وقال لایزالون یصلون علی اصحاب العمائم حتی تغیب الشمس 1 قال الحافظ فی اللسان هذا حدیث منکر بل موضوع ولم ارللعباس بن کثیر ذکرا فی الغرباء لابن یونس ولا فی ذیلہ لابن الطحان واما ابو بشر بن سیار فلم یذکرہ ابواحمد الحاکم فی الکنی وما عرفت محمد بن مهدی المروزی ولا مهدی بن میمون الراوی لهذا الحدیث من سالم ولیس هو البصری المخرج فی الصحیحین وذاک یکنی ابایحیٰی ولا ادری ممن الافة 2 اھ اقول: رحم اللہ الحافظ من این یأتیہ الوضع ولیس فیہ مایحیلہ عقل ولا

[Urdu Column] ابنِ نجار نے اسکی تخریج اس سند سے کی ہے کہ محمد بن مہدی مروزی بیان کرتے ہیں کہ ہمیں ابوبشر بن سیار رقی نے خبر دی وہ کہتے ہیں کہ ہمیں عباس بن کثیر رقی نے یزید بن ابی حبیب کے حوالے سے حدیث بیان کی کہا مجھے مہدی بن میمون نے بتایا کہ ایک دفعہ میں سالم بن عبداللہ بن عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہم کے پاس گیا تو وہ عمامہ باندھ رہے تھے انھوں نے مجھے فرمایا کہ اے ابوالایوب! میں تجھے ایک حدیث نہ بیان کروں جسے تو محبوب رکھے حاصل کرنے کے بعد اسے بیان کرے، پھر انھوں نے اسی طرح کی حدیث بیان کی اور فرمایا کہ فرشتے عمامہ باندھنے والوں پر غروب آفتاب تک صلوٰۃ بھیجتے ہیں حافظ نے لسان میں فرمایا یہ حدیث منکر بلکہ موضوع ہے اور میں نے عباس بن کثیر کا ذکر ابن یونس کی غرباء میں اور اس کے حاشیہ لابن طحان میں نہیں پایا اور ابوبشر بن سیار کا تذکرہ ابواحمد حاکم نے الکنی

میں نہیں کیا اور نہ ہی میں محمد بن مہدی مروزی اور اس حدیث کے راوی مہدی بن میمون کو جانتا ہوں اور یہ وہ بصری بھی نہیں جو مسلم و بخاری کے راوی ہیں ان کی کنیت ابویحیٰی ہے اور نہ میں اس کی آفت سے آگاہ ہوں۔ (ت) اقول: حافظ پر اللہ تعالیٰ رحم کرے اس روایت میں وضع کو کہاں سے لائے ہیں؟

[Footnotes] 1 لسان المیزان حرف العین ترجمہ العباس بن کثیرہ مطبوعہ دائرۃ المعارف النظامیہ حیدرآباد دکن ۳ / ۲۴۴ نوٹ: یہ حوالہ بھی اصل کتاب نہ ملنے کی وجہ سے لسان المیزان سے ذکر کیا گیا۔ نذیر احمد 2 لسان المیزان حرف العین ترجمہ عباس بن کثیر مطبوعہ دائرۃ المعارف النظامیہ حیدرآباد دکن ۳ / ۲۴۴ Page 216 of 736

Fatawa Razawiyya - Volume 6

(Arabic Text Column): ...Sharia, nor in its chain of narration is there a fabricator, a liar, or anyone suspect. The mere anonymity of a narrator does not dictate rejection such that it cannot be used as a basis for virtuous deeds, let alone being classified as fabricated. When Hafiz Abu al-Faraj ibn al-Jawzi cited the hadith of Qaza'ah ibn Suwayd from Asim ibn Mukhallad from Abu al-Ash'ath al-San'ani from Shaddad ibn Aws (may Allah be pleased with him) who said: The Messenger of Allah (may Allah send peace and blessings upon him) said, "Whoever composes a verse of poetry after the final Isha prayer, his prayer for that night will not be accepted," in his work 'Al-Mawdu'at' (The Fabrications), he criticized it because Asim is among the unknown (majhul) narrators. Imam Ahmad said regarding Qaza'ah that he is 'mudtarib al-hadith' (unreliable in narration). Ibn Hibban said he made many mistakes and had excessive delusions; thus, since these flaws increased in his narration, its evidentiary value is lost. End of quote. Hafiz himself said in 'Al-Qawl al-Musaddad' that there is nothing in this that dictates the classification of this hadith as fabricated, etc. And when Ibn al-Jawzi ruled on the hadith of Abu 'Aqal from Anas ibn Malik (may Allah be pleased with him) who said: The Messenger of Allah (may Allah send peace and blessings upon him) said, "One of the two brides/grooms will be raised from them on the Day of Resurrection..."

(Urdu Text Column): Although in this narration, there is no mention of anything that reason and Sharia would deem impossible, nor is there a fabricator, a liar, or anyone suspect in its chain of transmission. A decision cannot be made to abandon this hadith merely because a narrator is unknown (majhul), to the extent that it ceases to be valid for reasoning in virtuous deeds (fada'il), let alone it being fabricated (mawdu'). Hafiz Abu al-Faraj ibn al-Jawzi mentioned the hadith of Qaza'a bin Suwaid from 'Asim bin Mukhallad from Abu al-Ash'ath al-San'ani from Hadrat Shaddad bin Aws (may Allah be pleased with him) in 'Al-Mawdu'at' that the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said: Whoever recites a verse of poetry after the last 'Isha, his prayer for that night will not be accepted. And the reason (illa) given was that 'Asim is counted among the unknown (majhulun). Regarding Qaza'a, the saying of Imam Ahmad is that he is 'unreliable in hadith' (mudtarib al-hadith). Ibn Hibban said that he makes many mistakes and has excessive illusions; finally, he said when the defects in his narration became so numerous, the reasoning from his narration fell away. End of quote. And Hafiz himself said in 'Al-Qawl al-Musaddad' that here there is nothing that decides this hadith is fabricated.

Footnotes: 1. Kitab al-Mawdu'at by Abu al-Faraj, Hadith regarding reciting poetry after Isha, published by Dar al-Fikr Beirut, 1/261. 2. Kitab al-Mawdu'at by Abu al-Faraj, Hadith regarding reciting poetry after Isha, published by Dar al-Fikr Beirut, 1/261. 3. Al-Qawl al-Musaddad, the second hadith, mentioned the hadith of Shaddad bin Aws etc., published by Dairat al-Ma'arif al-Uthmaniyya, Hyderabad Deccan, p. 36.

फ़तावा रज़विया - खंड 6

(अरबी पाठ स्तंभ): ...शरीयत, और न ही इसके सनद (प्रसारण की श्रृंखला) में कोई गढ़ने वाला, झूठा या संदिग्ध व्यक्ति है। वर्णनकर्ता का केवल अज्ञात होना ही अस्वीकृति का कारण नहीं बनता कि उसे पुण्य कर्मों (फ़ज़ाइल) के लिए भी आधार न बनाया जा सके गढ़ी हुई (मौज़ूअ) होने की बात तो दूर की है। जब हाफ़िज़ अबू अल-फ़रज इब्न अल-जौज़ी ने 'अल-मौज़ूआत' (गढ़ी हुई हदीसों का संग्रह) में क़ज़अह बिन सुवैद से आसिम बिन मुख़ल्लद से अबू अल-अशअ़स अल-सनआनी से हज़रत शद्दाद बिन औस (रज़ियल्लाहु अन्हु) की हदीस उद्धृत की कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "जिसने अंतिम ईशा की नमाज़ के बाद कविता का एक पद रचा, उस रात उसकी नमाज़ स्वीकार नहीं की जाएगी," तो उन्होंने इसकी आलोचना की क्योंकि आसिम अज्ञात वर्णनकर्ताओं में से हैं। इमाम अहमद ने क़ज़अह के बारे में कहा कि वह 'मुज़्तरिब अल-हदीस' (हदीस में अविश्वसनीय) है। इब्न हिब्बान ने कहा कि उसने बहुत गलतियाँ कीं और उसे अत्यधिक भ्रम था; इस प्रकार, चूँकि उसके वर्णन में ये कमियाँ बढ़ गईं, इसलिए प्रमाण के रूप में इसका मूल्य समाप्त हो गया। अंत उद्धरण। स्वयं हाफ़िज़ [इब्न हजर] ने 'अल-क़ौल अल-मुसद्दद' में कहा कि इनमें से कोई भी चीज़ इस हदीस के गढ़ी हुई होने का निर्णय नहीं करती, आदि। और जब इब्न अल-जौज़ी ने अनस बिन मालिक (रज़ियल्लाहु अन्हु) से अबू अक़ाल की हदीस पर निर्णय दिया कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "दोनों दुल्हनों/दूल्हों में से एक को उनमें से कयामत के दिन उठाया जाएगा..."

(उर्दू पाठ स्तंभ): हालाँकि इस वर्णन में किसी ऐसी चीज़ का ज़िक्र नहीं है जिसे बुद्धि और शरीयत असंभव मानें, और न ही इसके सनद में कोई गढ़ने वाला, झूठा या संदिग्ध व्यक्ति है। केवल वर्णनकर्ता के अज्ञात (मजहूल) होने के कारण इस हदीस को छोड़ने का निर्णय नहीं लिया जा सकता, इस हद तक कि यह पुण्य कार्यों (फ़ज़ाइल) में दलील पकड़ने के लिए भी मान्य न रहे, गढ़ी हुई (मौज़ूअ) होना तो दूर की बात है। हाफ़िज़ अबू अल-फ़रज इब्न अल-जौज़ी ने 'अल-मौज़ूआत' में हज़रत शद्दाद बिन औस (रज़ियल्लाहु अन्हु) से क़ज़अह बिन सुवैद, आसिम बिन मुख़ल्लद के माध्यम से हदीस सुनाई कि पवित्र नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: जिसने आखिरी ईशा के बाद कविता का एक शेर पढ़ा, उसकी उस रात की नमाज़ स्वीकार नहीं की जाएगी। और कारण (इल्लत) यह बताया गया कि आसिम की गिनती अज्ञात लोगों (मजहूलून) में होती है। क़ज़अह के बारे में इमाम अहमद का कहना है कि वह 'हदीस में अविश्वसनीय' (मुज़्तरिब अल-हदीस) है। इब्न हिब्बान

ने कहा कि वह बहुत गलतियाँ करता है और उसे अत्यधिक भ्रम है; अंत में उन्होंने कहा कि जब उसके वर्णन में दोष इतने अधिक हो गए, तो उसके वर्णन से दलील पकड़ना साक़ित (समाप्त) हो गया। अंत उद्धरण। और स्वयं हाफ़िज़ ने 'अल-क़ौल अल-मुसद्दद' में कहा कि यहाँ ऐसा कुछ भी नहीं है जो यह तय करे कि यह हदीस गढ़ी हुई है।

पाद टिप्पणियाँ: 1. अबू अल-फ़रज द्वारा किताब अल-मौज़ूआत, ईशा के बाद कविता पढ़ने के संबंध में हदीस, दार अल-फ़िक्र बेरुत द्वारा प्रकाशित, 1/261। 2. अबू अल-फ़रज द्वारा किताब अल-मौज़ूआत, ईशा के बाद कविता पढ़ने के संबंध में हदीस, दार अल-फ़िक्र बेरुत द्वारा प्रकाशित, 1/261। 3. अल-क़ौल अल-मुसद्दद, दूसरी हदीस, शद्दाद बिन औस आदि की हदीस का उल्लेख है, दायरा अल-मआरिफ़ अल-उस्मानीया, हैदराबाद दक्कन द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 36।

فتاوی رضویہ جلد ششم

(عربی کالم): شرع ولا فی سندہ وضاع ولا کذاب ولا متہم ومجرد جھل الراوی لا یقضی بالسقوط حتی لا یصلح للتمسك بہ فی الفضائل فضلا عن الوضع، ولما اورد الحافظ ابو الفرج ابن الجوزی حدیث قزعۃ بن سوید عن عاصم بن مخلد عن ابی الاشعث الصنعانی عن شداد بن اوس رضی اللہ تعالی عنہ قال قال رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم من قرض بیت شعر بعد العشاء الاخرۃ لم تقبل لہ صلاۃ تلك اللیلۃ فی الموضوعات واعلہ بان عاصما فی عداد المجھولین و قزعۃ قال احمد مضطرب الحدیث و قال ابن حبان کان کثیر الخطا فاحش الوھم، فلما کثر ذلك فی روایتہ سقط الاحتجاج بخبرہ اھ قال الحافظ نفسہ فی القول المسدد لیس فی شیئ من ھذا ما یقضی علی ھذا الحدیث بالوضع الخ، ولما حکم ابن الجوزی علی حدیث ابی عقال عن انس ابن مالك رضی اللہ تعالی عنہ قال قال رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم احد العروسین یبعث منھما یوم القیامۃ

(اردو کالم): حالانکہ اس روایت میں ایسی کسی چیز کا بیان نہیں جسے عقل و شرع محال گردانے اور نہ ہی اس کی سند میں وضاع، کذاب اور متہم ہے محض راوی کے مجہول ہونے سے اس حدیث کو چھوڑنے کا فیصلہ نہیں کیا جاسکتا حتیٰ کہ فضائل میں قابل استدلال ہی نہ رہے چہ جائیکہ وہ موضوع ہو۔ حافظ ابن الفرج ابن الجوزی نے حدیث قزعہ بن سوید، عاصم بن مخلد سے انھوں نے ابواشعث صنعانی سے انھوں نے حضرت شداد بن اوس رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے موضوعات میں بیان کی ہے کہ نبی اکرم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا جس نے آخری عشاء کے بعد شعر کا ایک بیت پڑھا اس کی اس رات کی نماز قبول نہ ہوگی، اور علت یہ بیان کی کہ عاصم کا شمار مجہولین میں ہوتا ہے۔ قزعہ کے بارے میں امام احمد کا قول ہے کہ یہ مضطرب الحدیث ہے۔ ابن حبان نے کہا کہ یہ کثیر الخطا اور فاحش الوہم ہے، آخر میں فرمایا جب اس کی

روایت میں علتیں اس قدر کثیر ہو گئیں تو اس کی روایت سے استدلال ساقط ہو گیا اھ اور خود حافظ نے القول المسدد کہا یہاں پر کوئی ایسی چیز نہیں جو اس حدیث کے موضوع ہونے کا فیصلہ

حواشی: 1 کتاب الموضوعات لابی الفرج حدیث فی انشاد الشعر بعد العشاء مطبوعہ دار الفکر بیروت ۱ / ۲۶۱ 2 کتاب الموضوعات لابی الفرج حدیث فی انشاد الشعر بعد العشاء مطبوعہ دار الفکر بیروت ۱ / ۲۶۱ 3 القول المسدد الحدیث الثانی معالم یذکرہ حدیث شداد بن اوس الخ مطبوعہ دائرہ المعارف العثمانیہ حیدر آباد دکن ص ۳۶

(Left column - Arabic citation and commentary): "...seventy thousand without account, and fifty thousand from them will be raised as martyrs, as a delegation to Allah Almighty. In it are rows of martyrs, their severed heads in their hands, with blood gushing from their jugular veins. They say: 'Our Lord! Give us what You promised us through Your messengers, and do not disgrace us on the Day of Resurrection. Indeed, You do not break Your promise.' Then He says: 'My servants have spoken the truth; wash them in the River of Whiteness.' So they emerge from it pure and white, and roam in Paradise wherever they wish." The claim of its fabrication is supported by the fact that all its chains of transmission revolve around Abu Uqqal, whose name is Hilal bin Zaid bin Yassar. Ibn Hibban said: "He narrates fabricated things from Anas which Anas never narrated. It is not permissible to use him as evidence in any case." Al-Dhahabi said in 'Al-Mizan': "It is false." The Hafiz himself said about it: "It is regarding the virtues of deeds and encouragement for ribat (guarding frontiers) for the sake of Allah, and it contains nothing that Sharia or reason would deem impossible. Thus, ruling it as false merely because it is narrated by Abu Uqqal is not appropriate." The method of Imam Ahmad is well-known for being lenient in the narration of hadiths about virtues, as opposed to hadiths regarding legal rulings. If only I knew why such a stance is not taken regarding the hadith of the turban, even though it also pertains to virtues.

(Right column - Urdu explanation): ...doing etc. When Ibn Jawzi, in 'Al-Mawdu'at' (The Fabricated Narrations), declared this hadith of Abu Uqqal as fabricated—which is narrated from Hazrat Anas bin Malik (may Allah be pleased with him)—that the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Ashkelon is one of those fortunate cities from which seventy thousand individuals will be raised on the Day of Resurrection who will have no account. Among them, fifty thousand martyrs will be raised who will present themselves before their Lord in a delegation, lined up in rows. Their severed heads will be in their hands, and blood will be flowing from their jugular veins (the vein cut during slaughtering). They will request in the presence of Allah: 'O our Lord! Grant us what You promised us through Your messengers and save us from disgrace on the Day of Resurrection; undoubtedly, You do not go against Your promise.' Allah Almighty will say: 'My servants have spoken the truth; bathe them in the White River.' They will then emerge from that river pure, clear, and radiant. They will roam in Paradise as they wish and eat and drink." The argument given for this narration being fabricated is that the central point of all its chains of

transmission is Abu Uqqal, whose name is Hilal bin Zaid bin Yassar. Ibn Hibban stated that he [Abu Uqqal] narrates such reports from Hazrat Anas (may Allah be pleased with him)...

(Footnotes): 1. Kitab al-Mawdu'at by Ibn Jawzi, Chapter on the Virtue of Ashkelon, printed by Dar al-Fikr, Beirut, 2/53. 2. Kitab al-Mawdu'at by Ibn Jawzi, Chapter on the Virtue of Ashkelon, printed by Dar al-Fikr, Beirut, 2/54. 3. Mizan al-I'tidal, Entry No. 927, printed by Dar al-Ma'rifah, Beirut, 4/314. 4. Al-Qawl al-Musaddad, Answer to the Speech on the Eighth Hadith, printed by Da'irat al-Ma'arif al-Uthmaniyya, Hyderabad Deccan, India, p. 32.

(बायां स्तंभ - अरबी उद्धरण और टिप्पणी): "...बिना किसी हिसाब के सत्तर हजार, और उनमें से पचास हजार शहीदों को अल्लाह सर्वशक्तिमान के पास एक प्रतिनिधिमंडल के रूप में उठाया जाएगा। उसमें शहीदों की पंक्तियाँ होंगी, उनके कटे हुए सिर उनके हाथों में होंगे, उनकी गर्दन की नसों से खून बह रहा होगा। वे कहेंगे: 'हे हमारे रब! हमें वह प्रदान कर जिसका तूने अपने रसूलों के माध्यम से हमसे वादा किया था, और हमें कयामत के दिन अपमानित न करना। वास्तव में, तू वादे के खिलाफ नहीं जाता।' तब वह फरमाएगा: 'मेरे बंदों ने सच कहा; उन्हें सफेद नहर (नहर-ए-बैज़ा) में नहलाओ।' तो वे उससे शुद्ध और सफेद होकर निकलेंगे, और स्वर्ग में जहाँ चाहें घूमेंगे।" इसके मनगढ़ंत होने का दावा इस आधार पर है कि इसकी सभी सूत्र-परंपराएं(इसनाद) अबू अक्काल के इर्द-गिर्द घूमती हैं, जिनका नाम हिलाल बिन ज़ैद बिन यसार है। इब्न हिब्बान ने कहा: "वह अनस से ऐसी मनगढ़ंत बातें बयान करता है जो अनस ने कभी नहीं कहीं। किसी भी स्थिति में उसे प्रमाण के रूप में उपयोग करना अनुमत नहीं है।" अल-ज़हबी ने 'अल-मीज़ान' में कहा: "यह असत्य है।" हाफ़िज़ ने स्वयं इसके बारे में कहा: "यह नेक कार्यों के गुणों और अल्लाह की राह में सीमाओं की रक्षा (रिबात) के प्रोत्साहन के बारे में है, और इसमें ऐसा कुछ भी नहीं है जिसे शरिया या बुद्धि असंभव माने। अत; केवल अबू अक्काल की रिवायत होने के कारण इसे असत्य घोषित करना उचित नहीं है।" इमाम अहमद का तरीका पुण्य कार्यों (फज़ाइल) की हदीसों के वर्णन में उदारता बरतने के लिए जाना जाता है, कानूनी फैसलों (अहकाम) की हदीसों के विपरीत। काश मुझे पता होता कि पगड़ी (इमामा) की हदीस के बारे में ऐसा क्यों नहीं कहा जाता, जबकि वह भी गुणों के बारे में ही है।

(दायां स्तंभ - उर्दू व्याख्या): ...करती हो आदि। जब इब्न जौज़ी ने 'मौजुआत' (मनगढ़ंत हदीसों की किताब) में अबू अक्काल की इस हदीस को मनगढ़ंत घोषित किया—जो हज़रत अनस बिन मालिक (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) से वर्णित है—कि नबी-ए-करीम (अल्लाह उन पर कृपा और शांति बरसाए) ने फरमाया: "अश्कलोन उन खुशनसीब शहरों में से एक है जहाँ से कयामत के दिन सत्तर हजार ऐसे व्यक्ति उठाए जाएंगे जिनका कोई हिसाब नहीं होगा। उनमें से पचास हजार शहीदों को उठाया जाएगा जो एक प्रतिनिधिमंडल के रूप में अपने रब के सामने कतारबद्ध होकर उपस्थित होंगे। उनके कटे हुए सिर उनके हाथों में होंगे और उनकी 'वदज' (वह नस जो ज़बह करते समय काटी जाती है) से खून बह रहा होगा। वे अल्लाह की दरगाह में यह विनती करेंगे: 'ऐ हमारे रब! हमें वह प्रदान कर जिसका तूने अपने रसूलों के माध्यम से हमसे वादा किया था और हमें कयामत के दिन अपमान से

बचा; निःसंदेह तू वादे के खिलाफ नहीं जाता।' अल्लाह तआला फरमाएगा: 'मेरे बंदों ने सच कहा, इन्हें सफेद नहर में स्नान कराओ।' फिर वे उस नहर से साफ-सुथरे और चमकते हुए निकलेंगे और स्वर्ग में अपनी इच्छा के अनुसार घूमेंगे और खाएंगे-पिएंगे।" इस रिवायत के मनगढ़ंत होने पर यह तर्क दिया गया कि इसकी सभी कड़ियों का केंद्र अबू अक्काल है, जिसका नाम हिलाल बिन ज़ैद बिन यसार है। इब्न हिब्बान ने कहा कि यह हज़रत अनस (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) से ऐसी रिवायतें बयान करता है...

(पाद टिप्पणियाँ): 1. इब्न जौज़ी द्वारा 'किताब अल-मौजुआत', अश्कलोन के गुण पर अध्याय, दार अल-फ़िक्र, बेरूत, 2/53 में मुद्रित। 2. इब्न जौज़ी द्वारा 'किताब अल-मौजुआत', अश्कलोन के गुण पर अध्याय, दार अल-फ़िक्र, बेरूत, 2/54 में मुद्रित। 3. मीज़ान अल-एतिदाल, अनुवाद संख्या 927, दार अल-मआरिफ़, बेरूत, 4/314 में मुद्रित। 4. अल-क़ौल अल-मुसद्दद, आठवीं हदीस पर भाषण का उत्तर, दैरातुल मआरिफ अल-उस्मानिया, हैदराबाद दक्कन, भारत, पृष्ठ 32 में मुद्रित।

(دائیں کالم کی عبارت): کرتی ہو الخ جب ابن جوزی نے موضوعات میں اس حدیث ابی عقال کو موضوع قرار دیا جو کہ حضرت انس بن مالک رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے مروی ہے کہ نبی اکرم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا: عسقلان ان خوش نصیب شہروں میں سے ایک ہے جن سے روزِ قیامت ستر ہزار ایسے افراد اُٹھائے جائیں گے جن کا حساب نہیں ہوگا اور اس میں پچاس ہزار شہداء اُٹھائے جائیں گے جو وفد کی صورت میں صف بستہ اپنے رب کے ہاں حاضر ہونگے حالانکہ ان کے سر کٹے ہوئے ہاتھوں میں ان کی ودج (وہ رگ جسے بوقت ذبح کاٹا جاتا ہے) سے خون بہہ رہا ہوگا اور وہ اللہ کے حضور یہ عرض کریں گے : اے ہمارے رب ! ہمیں عطا فرما جس کا تُو نے اپنے رسولوں کے ذریعے ہم سے وعدہ کیا ہے اور ہمیں روزِ قیامت ذلت سے محفوظ فرما بلاشبہ تُو وعدے کے خلاف نہیں کرتا۔ اللہ تعالیٰ ارشاد فرمائے گا میرے بندوں نے سچ کہا ان کو سفید نہر میں غسل دو تو وہ اس نہر سے صاف شفاف اور چمکدار ہو کر نکلیں گے اور وہ جنت میں حسبِ خواہش چلے جائیں گے اور کھائیں گے پیئیں گے۔ اس روایت کے موضوع ہونے پر یہ دلیل دی کہ اس کی تمام اسناد کا مرکز ابو عقال ہے جس کا نام ہلال بن زید بن یسار ہے، ابن حبان نے کہا کہ یہ حضرت انس رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے ایسی روایات

(بائیں کالم کی عبارت): سبعون الفا لاحساب علیھم ، ویبعث منھا خمسون الفاشھداء وفودا الی اللہ عزوجل ، وبھا صفوف الشھداء رءوسھم مقطعۃ فی ایدیھم تثج او داجھم دما یقولون ربنا وآتنا ماوعدتنا علی رسلك ولا تخزنا یوم القیمۃ انك لاتخلف المیعاد فیقول صدق عبیدی اغسلوھم بنھرالبیضۃ، فیخرجون منھا نقیاً بیضا فیسرحون فی الجنۃ حیث شاء وا، بالوضع محتج بان جمیع طرقہ تدور علی ابی عقال واسمہ ہلال بن زید بن یسار قال ابن حبان یروی عن انس اشیاء موضوعۃ ماحدث بھا انس

قط لايجوز الاحتجاج به بحال اه وقال الذهبي في الميزان باطل قال الحافظ نفسه فيه وهو في فضائل الاعمال والتحريض على الرباط فى سبيل الله وليس فيه مايحييله الشرع ولا العقل فالحكم عليه بالبطلان بمجرد كونه من رواية ابى عقال لا يتجه و طريقة الامام احمد معروفة فى التسامح فى رواية احاديث الفضائل دون احاديث الاحكام اه فليت شعرى لم لايقال مثل هذا فى حديث العمامة مع انه ايضا فى فضائل

(حواشى): 1 كتاب الموضوعات لابن جوزى باب فى فضل عسقلان مطبوعہ دار الفكر بيروت ٢/ ٥٣ 2 كتاب الموضوعات لابن جوزى باب فى فضل عسقلان مطبوعہ دار الفكر بيروت ٢/ ٥٤ 3 ميزان الاعتدال ترجمہ نمبر ٩٢٧ مطبوعہ دار المعرفة بيروت ٤/ ٣١٤ 4 القول المسدد جواب الكلام على الحديث الثامن مطبوعہ دائرة المعارف العثمانيہ حيدرآباد دكن ہند ص ٣٢

Fatawa Razawiyya Volume 6

[Right Column] ...narrates a fabricated matter that Hazrat Anas (Allah be pleased with him) did not state at all. Therefore, it cannot be used as an argument in any way. End (ah). And Imam Dhahabi said in 'Al-Mizan' that this is void (Batil). And Hafiz Ibn Hajar himself said regarding this narration that this narration relates to the virtues of deeds (Fadhail al-A'mal); in it, encouragement and desire for Jihad in the path of Allah are given. It contains nothing that reason or Sharia would deem impossible. Therefore, declaring it void merely because its narrator is Abu Uqqal is not worthy of being an argument. And Imam Ahmad, although not in the Hadiths of rulings (Ahkam), takes a lenient approach in the Hadiths of virtues (Fadhail); this method of his is well-known. End (ah). This is beyond my understanding—why was this same statement not made regarding the Hadith about the turban? Even though this Hadith also relates to the virtues of deeds and encourages etiquette in the Divine Court. It contains nothing that Sharia or reason would deem impossible; rather, it does not have any narrator who has been declared a narrator of fabrications like Abu Uqqal. So, how can the ruling of it being void or even fabricated (merely because some narrators are among those whom Hafiz Ibn Hajar does not know or so-and-so did not mention them) be correct? Furthermore, in my view, among some narrators of Ibn Najjar...

[Left Column] ...the deeds and the encouragement of etiquette in the presence of Allah. There is nothing in it that Sharia or reason forbids, nor is there anyone in it accused of narrating fabrications like Abu Uqqal. So how can the ruling of it being void or fabricated be directed towards it merely because some of its narrations are from those whom the Hafiz did not know or so-and-so and so-and-so did not mention them? Moreover, Mahdi bin Maymun, in my view, is a delusion from some of the narrators of Ibn Najjar because Isa bin Yunus according to Abu Nuaym and Sufyan bin Ziyad according to Ad-Daylami only narrate it from Al-Abbas, from Yazid, from Maymun bin Mihran, as previously mentioned. And Maymun is Abu Ayyub al-Jazari al-Raqqi, a trustworthy jurist, one of the men of Muslim and the four [Sunan books], as Al-Hafiz stated in 'Al-Taqrib'. Unquestionably, this statement of Al-Hafiz did not prevent the seal of the Hafizes, Al-Suyuti, from including it among those things he promised to keep free from fabrications. As for the statement of his student, Al-Hafiz Al-Sakhawi: "The Hadith: 'A prayer with a ring is equal to seventy prayers without a ring' is fabricated as our Sheikh said, and likewise what Ad-Daylami narrated from the Hadith of Ibn Umar as Marfu' (elevated) with the wording 'A prayer with a

turban...' the mentioned Hadith, and from the Hadith of Anas as Marfu' 'Prayer in a turban equals ten thousand good deeds'" End (ah). He did not mention the reason for it.

---

1 Al-Maqasid al-Hasanah under the letter 'Saad', published by Dar al-Kutub Beirut, p. 263.

फ़तावा रज़विया जिल्द 6

[दायां कॉलम] ...ऐसी मौज़ू (मनगढ़ंत) बात नक़ल करता है जिसे हज़रत अनस (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) ने बिल्कुल बयान नहीं किया, लिहाज़ा किसी भी सूरत में इससे इस्तिदलाल (तर्क) नहीं किया जा सकता। (अंत)। और इमाम ज़हबी ने 'मीज़ान' में कहा कि यह बातिल है। और खुद हाफ़िज़ इब्ने हजर ने इस रिवायत के बारे में कहा कि यह रिवायत 'फ़ज़ाइल-ए-आमाल' से संबंधित है; इसमें अल्लाह की राह में जिहाद की तरग़ीब (प्रोत्साहन) और शौक़ दिलाया गया है। इसमें ऐसी कोई बात नहीं है जिसे अक्ल और शरीअत मुहाल (असंभव) क़रार देती हो, लिहाज़ा महज़ इसलिए इसे बातिल क़रार देना कि इसका रावी अबू उक़ाल है, क़ाबिले-हुज्जत (प्रमाण योग्य) नहीं है। और इमाम अहमद अहकाम की हदीसों में तो नहीं, लेकिन फ़ज़ाइल की हदीसों में तसामुह (उदारता) से काम लेते हैं, उनका यह तरीक़ा मारूफ़ (प्रसिद्ध) है। (अंत)। मेरी समझ से बाहर है कि यही बात इमामा (पगड़ी) वाली हदीस में क्यों नहीं की गई, हालांकि यह हदीस भी फ़ज़ाइल-ए-आमाल से संबंधित है और इससे बारगाहे-इलाही के अदब पर शौक़ दिलाया गया है। और इसमें कोई भी ऐसी बात नहीं है जिसे शरीअत और अक्ल मुहाल क़रार देती हो, बल्कि इसमें कोई रावी भी ऐसा नहीं है जिसे अबू उक़ाल की तरह मौज़ूआत का रावी क़रार दिया गया हो। तो इस रिवायत पर बुतलान (अमान्यता) बल्कि मौज़ू होने का हुक्म (महज़ इस बिना पर कि बाज़ रिवायतों का ऐसे रावियों से होना जिन्हें हाफ़िज़ इब्ने हजर नहीं जानते या फ़लां-फ़लां ने उनका ज़िक्र नहीं किया) कैसे दुरुस्त हो सकता है? इसके अलावा, मेरे नज़दीक इब्ने नज्जार के बाज़ रावियों में से...

[बायां कॉलम] ...आमाल और अल्लाह की हुज़ूरी में अदब सीखने की तरग़ीब पर। इसमें ऐसा कुछ भी नहीं है जिसे शरीअत या अक्ल मुबाह क़रार न दे, और न ही इसमें कोई ऐसा है जिस पर अबू उक़ाल की तरह मौज़ूआत (मनगढ़ंत बातों) की रिवायत का आरोप हो। तो फिर महज़ इसलिए इस पर बुतलान या वज़अ (गढ़ने) का हुक्म कैसे लगाया जा सकता है कि इसके बाज़ रावी वो हैं जिन्हें हाफ़िज़ नहीं जानते या फ़लां और फ़लां ने उनका ज़िक्र नहीं किया? इसके अलावा, महदी बिन मैमून, मेरे नज़दीक इब्ने नज्जार के बाज़ रावियों की ओर से एक वहम (भ्रम) है क्योंकि अबू नुऐम के यहाँ ईसा बिन यूनुस और दैलमी के यहाँ सुफ़यान बिन ज़ियाद इसे केवल अब्बास से, यज़ीद से, मैमून बिन मेहरान से रिवायत करते हैं जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है। और मैमून अबू अय्यूब अल-जज़ारी अल-रक़्क़ी हैं, जो मोतबर (भरोसेमंद) और फ़क़ीह हैं, मुस्लिम और चार (सुनन) के रावियों में से हैं जैसा कि हाफ़िज़ ने 'तक़रीब' में कहा है। निस्संदेह, हाफ़िज़ के इस कथन ने ख़ातिमुल् हुफ़्फ़ाज़ अल-

सुयूती को इसे उन चीज़ों में शामिल करने से नहीं रोका जिसे उन्होंने मौज़ूआत से पाक रखने का वादा किया था। जहाँ तक उनके शागिर्द हाफ़िज़ अल-सख़ावी के इस क़ौल का सवाल है: "अंगूठी के साथ नमाज़, बिना अंगूठी के सत्तर नमाज़ों के बराबर है वाली हदीस मौज़ू है जैसा कि हमारे शैख़ ने कहा, और इसी तरह जो दैलमी ने इब्ने उमर की हदीस से 'मर्फ़ू के रूप में रिवायत किया कि 'पगड़ी के साथ नमाज़...' वाली हदीस, और अनस की हदीस से 'मर्फ़ू के रूप में 'पगड़ी में नमाज़ दस हज़ार नेकियों के बराबर है'" (अंत)। उन्होंने इसका कारण बयान नहीं किया।

---

1 अल-मक़ासिद अल-हसना, हर्फ़ साद के तहत, मतबूआ दारुल कुतुब बेरूत, पृ. 263।

فتاوی رضویہ جلد ششم

[دا بایاں کالم] موضوع نقل کرتا ہے جو حضرت انس رضی اللہ تعالیٰ عنہ نے بالکل بیان نہیں کیں لہذا کسی صورت میں بھی اس سے استدلال نہیں کیا جاسکتا اھ اور امام ذہبی نے میزان میں کہا یہ باطل ہے اور خود حافظ ابن حجر نے اس روایت کے بارے میں کہا یہ روایت فضائل اعمال سے متعلق ہے اس میں اللہ کی راہ میں جہاد کی ترغیب اور شوق دلایا گیا ہے۔ اس میں ایسی کوئی بات نہیں جسے عقل و شرع محال قرار دیتی ہو لہذا محض اس لئے اس باطل قرار دینا کہ اس کا راوی ابو عقال ہے قابلِ حجت نہیں۔ اور امام احمد احادیث احکام میں تو نہیں لیکن احادیث فضائل میں تسامح سے کام لیتے ہیں ان کا یہ طریقہ معروف ہے اھ میری سمجھ سے باہر ہے یہی قول عمامہ والی حدیث میں کیوں نہیں کیا گیا حالانکہ یہ حدیث بھی فضائل اعمال سے متعلق ہے اور اس سے بارگاہ الہی کے ادب پر شوق دلایا گیا ہے اور اس میں کوئی بھی ایسی بات نہیں جسے شرع و عقل محال قرار دیتی ہو بلکہ اس میں کوئی راوی بھی ایسا نہیں جسے ابوعقال کی طرح موضوعات کا راوی قرار دیا گیا ہو، تو اس روایت پر بطلان بلکہ موضوع ہونے کا حکم (محض اس بنا پر کہ بعض روایات کا ایسے راویوں سے ہونا جن کو حافظ ابن حجر نہیں جانتے یا فلاں فلاں نے ان کا ذکر نہیں کیا) کیسے درست ہوسکتا ہے، علاوہ ازیں میرے نزدیک ابن نجار کے بعض رواۃ میں سے

[بایاں کالم] الاعمال والتحریض علی التأدب في حضرة الله ولیس فیه ما یحله الشرع ولا العقل بل ولا فیه احد رمی بروایة الموضوعات کابی عقال فکیف یتجه الحکم علیه بالبطلان بل الوضع بمجرد کون بعض روایة ممن لم یعرفهم الحافظ اولم یذکرهم فلان وفلان، علا ان مهدی بن میمون عندي وهم من بعض رواة ابن النجار لان عیسی بن یونس عند ابي نعیم و سفین بن زیاد عند الدیلمي انما یرویانه عن

العباس عن يزيد عن ميمون بن مهران كما تقدم و ميمون هو ابو ايوب الجزري الرقى ثقة فقيه من رجال مسلم والاربعة كما قاله الحافظ في التقريب لاجرم لم يمنع كلام الحافظ هذا خاتم الحافظ السيوطى عن ايراده فيما وعد بتنزيهه عن الموضوع اما قول تلميذه الحافظ السخاوي حديث صلوة بخاتم تعدل سبعين صلوة بغير خاتم هو موضوع كما قال شيخنا وكذا ما رواه الديلمي عن حديث ابن عمر مرفوعاً بلفظ صلوة بعمامة الحديث المذكور ومن حديث انس مرفوعاً الصلوة في العمامة تعدل بعشرة الاف حسنة ١ اه فلم يذكر وجهه

---

١ المقاصد الحسنہ تحت حرف الصاد المهملہ مطبوعہ دار الکتب بیروت ص ٢٦٣

"He merely followed his teacher, and you have already known what is in it. Similarly, the Hadith of Anas only contains Aban, who is abandoned (matruk). Leaving a narrator does not necessitate the fabrication of a Hadith, as I have explained in 'Al-Hād al-Kāf fī Ḥukm al-Ḍiʿāf'. And Allah Almighty knows best."

There was a misconception regarding Mahdi bin Maimun, because according to Abu Nu'aym, Isa bin Yunus, and according to Daylami, Sufyan bin Ziyad, both narrated from Abbas, from Yazid, from Maimun bin Mihran, as previously mentioned. By Maimun, he means Abu Ayyub al-Jazari al-Raqqi, who is extremely reliable and a jurist, and is among the narrators of Muslim and the four Sunans, as al-Hafiz (Ibn Hajar) mentioned in 'Taqrib'. Undoubtedly, this discussion of al-Hafiz Ibn Hajar did not prevent al-Suyuti, the seal of the Hadith masters, from quoting this narration in 'Al-Jami' al-Saghir' (concerning which he promised not to include fabricated narrations). The statement of his illustrious student, Hafiz Sakhawi, that the Hadith "Prayer with a ring is equal to seventy prayers without a ring" is fabricated, as our respected teacher said. Similarly, the Hadith narrated by Daylami from the Hadith of Ibn Umar as 'Marfu' (elevated) regarding 'Prayer with a turban' with the same aforementioned words, and the words of the Marfu' Hadith from Anas are: "Prayer in a turban is equal to ten thousand virtues." End of quote. He did not explain the reason for its fabrication; he merely followed his teacher, although you are now aware of the point of contention. Similarly, in the Hadith of Anas, only the narrator Aban is abandoned (matruk), and a narrator being abandoned cannot dictate a decision that a Hadith is fabricated. I have discussed this in detail in 'Al-Hād al-Kāf fī Ḥukm al-Ḍiʿāf'. And Allah Almighty knows best. (T)

If an ignorant person calls a Hadith fabricated solely out of personal whim, he deserves discretionary punishment (ta'zir). Refusing to accept reliable books of jurisprudence is ignorance and misguidance. Applying a curse upon the narrator of this Hadith is a severe calamity for himself, for according to authentic Hadiths, a curse directed at someone undeserving returns to the one who uttered it, and we seek refuge with Allah. Forcing Muslims to remove their turbans intentionally and not considering it a source of reward is close to reaching the level of denying the necessities of religion and belittling an established, continuous Sunnah. It is obligatory for such a person to repent from these actions, recite the Kalima of Islam anew, and renew his marriage with his wife. The Hadith mentioned in 'Jami' al-Rumuz' is close to the aforementioned one, and if the transmission is not intended as a strict

definition, then it is a transmission of its meaning. This is not 'Munyah al-Musalli', but rather 'Munyat al-Fuqaha' by Fakhr al-Din Badi' ibn Abi Mansur al-Iraqi, the teacher of Zahidi, of which 'Qunyah' is a summary. And Allah, Glory be to Him and the Exalted, knows best.

Problem Number 434: From Kasganj, Nathu Ram Street, Chaura Man, sent by Muhammad Mustafa, 26 Shaban 1337 AH. A worker, a noble and virtuous person, following the Master of the Prophets, the possessor of Kauthar and Salsabil. Assalamu Alaikum wa Rahmatullahi wa Barakatuh. It is submitted for your service that prior to this, a petition regarding obtaining a fatwa on the following issue was sent. From the response...

"उसने केवल अपने शिक्षक का अनुसरण किया, और आप जान चुके हैं कि इसमें क्या है। इसी तरह, अनस की हदीस में केवल अबान है, जो परित्यक्त (मतरूक) है। एक रावी (वर्णनकर्ता) को छोड़ देना हदीस के गढ़े हुए (मौज़ूं) होने का फैसला नहीं देता, जैसा कि मैंने 'अल-हाद अल-काफ़ फ़ी हुक्म अल-दिआफ़' में स्पष्ट किया है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।"

मेहदी बिन मैमून के बारे में एक भ्रम हुआ है, क्योंकि अबू नुऐम के अनुसार ईसा बिन यूनुस और दैलमी के अनुसार सुफ़यान बिन ज़ियाद दोनों ने अब्बास से, उन्होंने यज़ीद से, उन्होंने मैमून बिन मेहरान से रिवायत (वर्णन) की है जैसा कि पहले बताया जा चुका है। मैमून से तात्पर्य अबू अय्यूब अल-जज़री अल-रक़्क़ी है जो अत्यंत विश्वसनीय और फ़क़ीह (विधिवेत्ता) हैं और मुस्लिम और चारों सुनन के रावी हैं, जैसा कि हाफ़िज़ (इब्न हजर) ने 'तक़रीब' में कहा है। निस्संदेह, हाफ़िज़ इब्न हजर की इस चर्चा ने खातमुल हाफ़िज़ अल-सुयुती को इस रिवायत को 'अल-जामी अल-सगीर' (जिसके बारे में उन्होंने वादा किया था कि वे इसमें मौजूं रिवायतें शामिल नहीं करेंगे) में उद्धृत करने से नहीं रोका। उनके होनहार शिष्य हाफ़िज़ सखावी का कथन कि हदीस "अंगूठी के साथ नमाज़ बिना अंगूठी वाली सत्तर नमाज़ों के बराबर है" मौजूं है, जैसा कि हमारे आदरणीय उस्ताद ने फ़रमाया। इसी तरह, वह हदीस जिसे दैलमी ने हज़रत इब्न उमर की हदीस से मरफ़ूअ (उच्च) के रूप में 'सलात बिअमामा' (पगड़ी के साथ नमाज़) के शब्दों के साथ उल्लेख किया है, और हज़रत अनस से मरफ़ूअ हदीस के शब्द ये हैं: "पगड़ी में नमाज़ दस हज़ार नेकियों के बराबर है"। उन्होंने इसके मौजूं होने का कारण स्पष्ट नहीं किया; उन्होंने केवल अपने शेख (गुरु) के अनुसरण में ऐसा कह दिया है, हालाँकि आप इसके विवादित होने से अवगत हो चुके हैं। इसी तरह, अनस की हदीस में केवल अबान रावी मतरूक है, और एक रावी का मतरूक होना हदीस के मौजूं होने का फ़ैसला नहीं दे सकता। यह विस्तृत चर्चा मैंने 'अल-हाद अल-काफ़ फ़ी हुक्म अल-दिआफ़' में की है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

यदि कोई अज्ञानी व्यक्ति हदीस को केवल अपनी इच्छा के अनुसार मौजूं (गढ़ा हुआ) कहे, तो वह ताज़ीर (दंड) का पात्र है। विश्वसनीय फ़िक़्ह की पुस्तकों को न मानना अज्ञानता और पथभ्रष्टता है। इस हदीस को बयान करने वाले पर लानत (धिक्कार) भेजना स्वयं उसके लिए एक बड़ी आफ़त है, क्योंकि सही हदीसों के अनुसार, जो लानत किसी अयोग्य पर भेजी जाती है, वह भेजने वाले पर ही लौट आती है, और हम अल्लाह तआला की शरण चाहते हैं। मुसलमानों की पगड़ी जानबूझकर

उतरवाना और उसे सवाब (पुण्य) न समझना, दीन की अनिवार्यताओं के इनकार और सुन्नत-ए-क़तईया-मुतवातिरा के अपमान की सीमा तक पहुँचने के करीब है। ऐसे व्यक्ति पर अनिवार्य है कि वह अपने इन कार्यों से तौबा (पश्चाताप) करे, नए सिरे से इस्लाम का कलमा पढ़े और अपनी पत्नी के साथ निकाह का नवीनीकरण (तजदीद-ए-निकाह) करे। हदीस जो 'जामिउर रुमुज़' में है, वह उपर्युक्त हदीस के निकट है, और यदि प्रसार (तअदिया) का उद्देश्य सख्ती (तहदीद) न हो, तो यह उसके अर्थ का ही वर्णन है। यह 'मुनिया अल-मुसल्ली' नहीं है, बल्कि फ़ख़रुद्दीन बदीअ इब्न अबी मंसूर अल-इराक़ी, जो ज़ाहिदी के उस्ताद थे, उनकी 'मुनिया अल-फ़ुक़्हा' है, जिसका सारांश 'क़ुनिया' है। और अल्लाह सुब्हानहू व तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर ४३४: कासगंज, मोहल्ला नत्थू राम गली, चौरा मन से प्रेषित मुहम्मद मुस्तफ़ा, २६ शाबान १३३७ हिजरी। नबी के अनुयायी, कौसर और सलसबील के मालिक के दास। अस्सलामु अलैकुम व रहमतुल्लाही व बरकातुह। सेवा में निवेदन है कि इससे पहले इस मसले के बारे में फ़तवा प्राप्त करने के लिए एक प्रार्थना पत्र भेजा गया था, जिसके उत्तर में...

وانما تبع شیخه وقد علمت مافیه وکذا حدیث انس انما فیه ابان متروك متروك وترك الراوی لایقضی بوضع الحدیث کما بینته فی الهاد الکاف فی حکم الضعاف واللہ تعالی اعلم۔

مہدی بن میمون کے بارے میں وہم ہوا ہے ، کیونکہ ابونعیم کے نزدیک عیسی بن یونس اور دیلمی کے نزدیک سفیان بن زیاد دونوں نے عباس سے انھوں نے یزید سے انھوں نے میمون بن مہران سے روایت کیا ہے جیسا کہ گزر چکا اور میمون سے مراد ابوایوب جزری الرقی ہے جو نہایت ثقہ اور فقیہ ہے اور مسلم اور چاروں سنن کے رواۃ میں سے ہے جیسا کہ حافظ نے یہ بات تقریب میں کہی ہے، بلاشبہ حافظ ابن حجر کی یہ گفتگو خاتم الحافظ سیوطی کی اس روایت کو الجامع الصغیر (جس کے بارے میں انھوں نے وعدہ کیا تھا کہ اس میں موضوع روایت ذکر نہیں کروں گا) میں نقل کرنے سے مانع نہیں رہا ان کے شاگرد رشید حافظ سخاوی کا قول کہ حدیث "انگوٹھی کے ساتھ نماز ستر دوسری بغیر انگوٹھی والی نمازوں کے برابر ہے"۔ یہ موضوع ہے جیسا کہ ہمارے استاد محترم نے فرمایا، اور اسی طرح وہ حدیث جس کو دیلمی نے حضرت ابن عمر کی حدیث سے مرفوعاً صلوۃ بعمامہ حدیث مذکور کے الفاظ کے ساتھ ذکر کیا ہے، اور حضرت انس سے مرفوعاً حدیث کے الفاظ یہ ہیں: "عمامہ میں نماز دس ہزار نیکیوں کے برابر ہے" اھ تو انہوں نے اسکے موضوع ہونے کی وجہ بیان نہیں کی صرف اپنے شیخ کے اتباع میں ایسا کہہ دیا ہے حالانکہ آپ اس کے محل نظر ہونے پر آگاہ ہو چکے۔ اسی طرح حدیث انس میں صرف ابان راوی متروک ہے اور ایک راوی کا متروک ہونا حدیث کے موضوع ہونے کا فیصلہ نہیں دے سکتا۔ یہ تفصیلی گفتگو میں نے "الہاد الکاف فی حکم الضعاف" میں کی ہے واللہ تعالی اعلم۔ (ت)

جاہل اگر حدیث کو محض ہوائے نفس موضوع کہے واجب التعزیر ہے اور کتب معتمدہ فقہیہ کو نہ ماننا جہالت وضلالت اور اس حدیث کے بیان کرنے والے پر لعنت کا اطلاق خود اس کے لئے سخت آفت کہ بحکم احادیث صحیحہ جو لعنت غیر مستحق پر کی جاتی ہے کرنے والے پر پلٹ آتی ہے والعیاذ باللہ تعالیٰ اور مسلمانوں کے عمامے قصدًا اتروا دینا اور اسے ثواب نہ جاننا قریب ہے کہ ضروریات دین کے انکار اور سنت قطعیہ متواترہ کے استخفاف کی حد تک پہنچے ایسے شخص پر فرض ہے کہ اپنی ان حرکات سے توبہ کرے اور از سر نو کلمہ اسلام پڑھے اور اپنی عورت کے ساتھ تجدیدِ نکاح کرے، حدیث کہ جامع الرموز میں ہے، وہ حدیث بستم مند کور کے قریب قریب ہے اور تعدیہ بقصد تحدید نہ ہو تو اسی کی نقل با معنیٰ۔ یہ منیہ منیہ المصلی نہیں بلکہ فخر الدین بدیع ابن ابی منصور عراقی استاذ زاہدی کی منیۃ الفقہا جس کی تلخیص قنیہ ہے واللہ سبحنہ وتعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۴۳۴: از کاسگنج محلہ نتھو رام گلی چورا من مرسلہ محمد مصطفیٰ ۲۶ شعبان ۱۳۳۷ھ عامل نیل فاضل جلیل بمتابعتہ سید الانبیاء صاحب الکوثر والسلسبیل، السلام علیکم ورحمۃ اللہ وبرکاتہ۔ معروض خدمت ہے کہ قبل اسکے ایک عریضہ درباره حصول فتوی مسئلہ ذیل روانہ کیا تھا جواب سے

Fatawa Razawiya Volume Six

I have not been honored (with a reply), I am sorrowful, I hope you will not hesitate to manifest the truth, and pray at the court of God for my steadfastness and a good end. Question: Is it permissible to perform any prayer, whether optional (Nawafil) or obligatory (Fara'id), while wearing clean shoes (those whose purity is certain, like new ones)? It would be excellent if you could provide references from detailed books of jurisprudence and Hadith.

The Answer: My dear! And upon you be peace and the mercy of Allah and His blessings. Before this, a similar question came from Kanj (place name) sent by Abadullah Khan and was answered. Now the answer to this question is that if the shoe is completely unused, intended only to be worn inside the mosque, and the toe is not so hard as to prevent the pads of the fingers from touching the ground during prostration, then there is no harm in praying with them; in fact, it is better. This was the Sunnah of the Commander of the Faithful, Mawla Ali (may Allah Almighty ennoble his face), that he would keep two pairs of shoes: one he would wear on the way, and upon reaching the edge of the mosque, he would take them off and wear the unused ones. If the shoes are used (outside), then entering the mosque with them is disrespectful, and they should be removed during prayer even outside the mosque. Furthermore, if the toe is so hard that it prevents the pad of any finger from touching the ground, then the prayer will not be valid, as we have researched in our Fatawa. (As we have researched in our Fatawa). And Allah Almighty knows best.

Problem No. 444: From Ram Nagar, District Nainital, Inayatullah Khan, Deputy Postmaster, 26 Dhu al-Qi'dah 1312 AH. Respected Qibla and Ka'ba of the two worlds, may your shadow endure! When the Kalima Tayyibah is recited as a litany (wird), should the Darood (salutations) be recited every time the noble name of the Holy Prophet (Sal'am - peace and blessings of Allah be upon him) appears in the Kalima, or just once when the gathering concludes? State the ruling and be rewarded.

The Answer: Before answering the specific problem, understand a very important issue. In the question, instead of writing "Sallallahu Ta'ala Alayhi Wa Sallam" with the noble name of the Holy Prophet, "(Sal'am)" was written. This ignorance is common among those in a hurry nowadays. Some write "Sal'am", some "Am", some "S". All of these are nonsensical, disliked (Makruh), highly undesirable, and a cause for severe deprivation. One must strictly avoid this. Even if the noble name of the Holy Prophet (Sallallahu Ta'ala Alayhi Wa Sallam) appears a thousand times in a writing, "Sallallahu

Ta'ala Alayhi Wa Sallam" should be written in full every single time. Under no circumstances should "Sal'am" etc. be used. Scholars have strictly forbidden this, to the extent that some books contain very severe rulings. Allama Tahtawi states in the Hashiya of Durr-e-Mukhtar:

"And it is disliked to use symbols for prayers (Salat) and pleasure (Taradhi) in writing; rather, all of it should be written in full." In some places, writing (S) etc. instead of "Sallallahu Ta'ala Alayhi Wa Sallam" and (Rd) instead of "Radiyallahu Ta'ala Anhu" is disliked; instead, it should be written in its complete form.

सम्मानित नहीं हुआ, दुखी हूँ, आशा है कि सत्य को प्रकट करने में आप संकोच नहीं करेंगे, और ईश्वर के दरबार में मेरी स्थिरता और अच्छे अंत के लिए प्रार्थना करेंगे। मसला: क्या साफ जूते (जिनकी पवित्रता का पूरा विश्वास हो, जैसे नए) पहनकर कोई भी नमाज़, चाहे वह नफिल हो या फ़र्ज़, अदा करना जायज़ है या नहीं? यदि आप न्यायशास्त्र (फ़िक़्ह) और हदीस की विस्तृत पुस्तकों का संदर्भ दें तो बहुत अच्छा होगा।

उत्तर: मेरे प्रिय! आप पर भी शांति और अल्लाह की दया और उसकी कृपा हो। इससे पहले कंज से यह प्रश्न दूसरे रूप में मर्सल इबादुल्लाह खान का आया था और उसका उत्तर दिया गया था। अब इस प्रश्न का उत्तर यह है कि यदि जूता बिल्कुल अप्रयुक्त है, जो केवल मस्जिद के अंदर पहनने के लिए हो, और उसका अगला हिस्सा (पंजा) इतना सख्त न हो कि सजदे में उंगलियों का सिरा जमीन पर टिकने न दे, तो इससे नमाज़ पढ़ने में कोई हर्ज नहीं है बल्कि यह बेहतर है। और यही अमीरुल मोमिनीन मौला अली (अल्लाह तआला उनके चेहरे को गौरवान्वित करे) की सुन्नत है कि वह दो जोड़ी जूते रखते थे, एक रास्ते में पहनते थे और जब मस्जिद के किनारे पहुँचते तो उसे उतार कर अप्रयुक्त वाले पहन लेते थे। और अगर जूते बाहर इस्तेमाल किए हुए हों तो उन्हें पहनकर मस्जिद में जाना असभ्यता है और मस्जिद के बाहर भी नमाज़ के दौरान उन्हें उतार देना चाहिए। और अगर पंजा इतना सख्त है कि वह किसी उंगली के सिरे को जमीन पर नहीं टिकने देगा, तो नमाज़ नहीं होगी जैसा कि हमने अपने फ़तावा में शोध किया है। (जैसा कि हमने अपने फ़तावा में शोध किया है)। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला नंबर 444: रामनगर, ज़िला नैनीताल से इनायतुल्लाह खान, डिप्टी पोस्टमास्टर, 26 ज़िल-क़ादा 1312 हिजरी। किबला-ओ-काबा दारैन और आपकी छत्रछाया बनी रहे! जब कलिमा तय्यिबा का ज़िक्र (विर्द) किया जाए, तो उसमें कलिमा पर जब हुज़ूर अकदस (सल्लम) सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम का पवित्र नाम आए तो क्या हर बार दुरूद पढ़ना चाहिए या एक बार जब महफ़िल समाप्त हो? बयान करें और पुण्य कमाएं।

उत्तर: मसले के जवाब से पहले एक बहुत महत्वपूर्ण विषय जान लें। सवाल में हुज़ूर अकदस के पवित्र नाम के साथ "सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम" के बजाय "(सल्लम)" लिखा गया है। यह अज्ञानता आजकल जल्दबाजी करने वालों में बहुत प्रचलित है। कोई "सल्लम" लिखता है, कोई "अम", कोई

"स"। ये सब बेतुका, मकरूह, अत्यंत नापसंद और गंभीर अभाव का कारण हैं। इससे पूरी तरह बचना चाहिए। यदि किसी लेख में हुज़ूर अकदस सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम का पवित्र नाम हज़ार बार आए, तो हर जगह पूरा "सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम" लिखा जाना चाहिए। हरगिज़ कहीं "सल्लम" आदि न हो। विद्वानों ने इसकी सख्त मनाही की है, यहाँ तक कि कुछ पुस्तकों में तो अत्यंत कठोर हुक्म लिखे गए हैं। अल्लामा तहतावी हाशिय-ए-दुर्रे मुख्तार में फरमाते हैं:

"लिखने में दुरूद (सलात) और रज़ा (तराज़ी) के लिए प्रतीकों का उपयोग करना मकरूह है; बल्कि यह सब पूर्ण रूप से लिखा जाना चाहिए।" कुछ स्थानों पर "सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम" की जगह (स) आदि और "रज़ियल्लाहु तआला अन्हु" की जगह (रज़) लिखना मकरूह है, बल्कि इसे पूर्ण रूप से

مشرف نہیں ہوا مغموم ہوں امید کرتا ہوں کہ امر حق ظاہر کرنے میں توقف نہ فرمائیے گا اور بندہ کے استقامت و حسن خاتمہ کی واسطے بدرگاہ خدا ہو جیے گا۔ مسئلہ: پاک (جس کی طہارت میں قطع یقین حاصل ہوجائے جیسے نیا) جوتا پہن کر کوئی سی نماز نوافل یا فرائض ادا کرنا جائز ہے یا نہیں؟ فقہ وحدیث کے مطولات کا حوالہ دیں تو بہت خوب ہے۔ الجواب: جناب من! وعلیک السلام ورحمتہ اللہ وبرکاتہ۔ اس سے پہلے کہ کانج سے یہ سوال بصورت دیگر مرسل عباد اللہ خان کا آیا اور جواب دیا گیا اب اس سوال کا جواب یہ ہے کہ اگر جوتا بالکل غیر استعمالی ہو کہ صرف مسجد کے اندر پہنا جائے اور پنجہ اتنا سخت نہ ہو کہ سجدہ میں انگلیوں کا پیٹ زمین پر نہ بچھنے دے تو اس سے نماز میں کچھ حرج نہیں بلکہ بہتر ہے، اور یہی امیر المومنین مولیٰ علی کرم اللہ تعالیٰ وجہہ کی سنت ہے کہ دو جوتے رکھتے ایک راہ میں پہنتے اور جب کنارہ مسجد پر آتے اُسے اتار کر غیر استعمالی کو پہن لیتے اور اگر استعمالی ہو تو اسے پہن کر مسجد میں جانا بے ادبی ہے اور غیر مسجد میں بھی نماز میں اتار دیا جائے اور اور اگر پنجہ اتنا سخت ہے کہ کسی انگلی کا پیٹ زمین پر نہ بچھنے دے گا تو نماز نہ ہو گی کما حققناہ فی فتاونا (جیسا کہ اس کی تحقیق ہم نے اپنے فتاویٰ میں کی ہے۔ت) واللہ تعالیٰ اعلم۔ مسئلہ نمبر ۴۴۴: از رام نگر ضلع بینی تال عنایت اللہ خان ڈپٹی پوسٹ ماسٹر ۲۶ ذیقعد ۱۳۱۲ھ قبلہ و کعبہ دارین و دام ظلکم! کلمہ طیبہ شریف جب ورد کر کے پڑھا جائے تو اس میں کلمہ پر جب نام نامی حضور اقدس (صلعم) صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کا آوے درود پڑھنا چاہئے یا ایک مرتبہ جبکہ جلسہ ختم کرے؟ بینوا توجروا۔ الجواب: جواب مسئلہ سے پہلے ایک بہت ضروری مسئلہ معلوم کیجئے سوال میں نامِ پاک حضور اقدس صلی اللہ علیہ وسلم کے ساتھ بجائے صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم (صلعم) لکھا ہے۔ یہ جہالت آج کل بہت جلد بازوں

میں رائج ہے۔ کوئی صلعم لکھتا ہے کوئی عم کوئی ص، اور یہ سب بیہودہ و مکروہ و سخت ناپسند و موجب محرومی شدید ہے اس سے بہت سخت احتراز چاہئے اگر تحریر میں ہزار جگہ نام پاک حضور اقدس صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم آئے ہر جگہ پورا صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم لکھا جائے ہرگز ہرگز کہیں صلعم وغیرہ نہ ہو علماء نے اس سے سخت ممانعت فرمائی ہے یہاں تک کہ بعض کتابوں میں تو بہت اشد حکم لکھ دیا ہے۔ علامہ طحطاوی حاشیہ درمختار میں فرماتے ہیں: ویکرہ الرمز بالصلوٰۃ والترضی بالکتابۃ بل یکتب ذلك كله بكماله وفی بعض المواضع صلی اللہ تعالی علیہ وسلم کی جگہ (ص) وغیرہ اور رضی اللہ تعالیٰ عنہ کی جگہ (رض) لکھنا مکروہ ہے بلکہ اسے کامل طور پر

Fatawa Razawiya, Volume Six

Section 1 (From at-Tatar Khaniya): It is written in some places in at-Tatar Khaniya that whoever writes blessings and salutations upon a Prophet using abbreviations like 'Hamza' (ء) and 'Meem' (م) has committed blasphemy (Kufr), because this act is a disrespectful reduction, and reduction in the honor of Prophets (peace be upon them) is undoubtedly blasphemy. If this statement is accurately narrated, then it would be restricted to the condition that the person does it intentionally. Otherwise, the apparent conclusion is that he is not a disbeliever. Furthermore, the necessity of blasphemy following an act is only established when it is accepted as the preferred legal opinion, and its place is where the necessity is stated and apparent. However, caution lies in avoiding ambiguity and doubt. (T)

Section 2 (Answer to the Question): Now, here is the answer to the issue: whenever the blessed name of the Radiant Presence, the Master of both worlds, may Allah the Exalted bless him and grant him peace, is mentioned or heard, it is mandatory (Wajib) to recite Durood Sharif every time. If one does not recite it, he will be a sinner and caught in severe warnings. Yes, there is a difference of opinion on whether it is mandatory every time if the pure name is mentioned or heard several times in the same gathering, or if once is sufficient for the whole gathering and every subsequent time is recommended (Mustahabb). Many scholars have favored the first opinion. According to them, if the 'Kalimah Sharif' is recited a thousand times in one gathering, Durood Sharif should also be recited every time. If left even once, one becomes a sinner. This opinion has been called preferred and most correct in al-Mujtaba, ad-Durr al-Mukhtar, and others.

Section 3 (From ad-Durr al-Mukhtar): It is mentioned in ad-Durr al-Mukhtar that there is a difference of opinion regarding whether it is mandatory for both the listener and the reciter to offer Durood and Salam every time the noble name of the Prophet, may Allah the Exalted bless him and grant him peace, is mentioned. According to the most correct school of thought, the preferred view is that Durood and Salam are mandatory every time, even if the gathering is the same. (Summary/T)

Section 4: Other scholars, for the sake of ease for the Ummah, adopted the second opinion. According to them, reciting Durood once in a gathering will suffice to fulfill the mandatory obligation. Omitting subsequent recitations in the same gathering will not make one a sinner, but one will certainly remain deprived of great reward

and immense grace. This second opinion was validated in al-Kafi, al-Qunya, and other texts.

Footnotes: 1. Hashiya at-Tahtawi on ad-Durr al-Mukhtar, Introduction of the book, published by Dar al-Ma'rifah, Beirut, 1/6. 2. ad-Durr al-Mukhtar, Section: 'When he intends to start...', published by Mujtabai, Delhi, 1/87.

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

अनुभाग 1 (तातार खानिया से): तातार खानिया में कुछ स्थानों पर लिखा है कि जिसने पैगंबर पर दुरूद और सलाम लिखते समय 'हमज़ा' (ﷺ) और 'मीम' (म) जैसे संक्षिप्त रूपों का उपयोग किया, उसने कुफ़्र (ईशनिंदा) किया, क्योंकि यह कार्य अनादरपूर्ण कमी (तख़फ़ीफ़) है, और नबियों (अलैहिमुस्सलाम) के सम्मान में कमी करना निसंदेह कुफ़्र है। यदि यह कथन सही ढंग से वर्णित है, तो यह इस शर्त के साथ सीमित होगा कि ऐसा करने वाला जानबूझकर ऐसा करे। अन्यथा, ज़ाहिर यही है कि वह काफ़िर नहीं है। इसके अतिरिक्त, किसी कार्य से कुफ़्र की अनिवार्यता तभी सिद्ध होती है जब उसे पसंदीदा मत (मज़हब-ए-मुख़्तार) के रूप में स्वीकार किया जाए, और इसका स्थान वहीं होता है जहाँ अनिवार्यता स्पष्ट और ज़ाहिर हो। हालाँकि, सावधानी इसी में है कि भ्रम और संदेह से बचा जाए। (त)

अनुभाग 2 (मसले का उत्तर): अब मसले का उत्तर लें: हुज़ूर पुरनूर, दोनों जहाँ के मालिक (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) का पावन नाम जितनी बार भी लिया या सुना जाए, हर बार दुरूद शरीफ़ पढ़ना वाजिब है। यदि कोई नहीं पढ़ेगा, तो वह गुनहगार होगा और कठोर चेतावनियों में फंस जाएगा। हाँ, इसमें मतभेद है कि यदि एक ही सभा में कई बार पावन नाम लिया या सुना गया, तो क्या हर बार वाजिब है या एक बार पर्याप्त है और हर बार मुस्तहब (प्रशंसनीय) है? बहुत से विद्वान पहले मत की ओर गए हैं। उनके अनुसार, यदि एक सभा में हज़ार बार कलिमा शरीफ़ पढ़ा जाए, तो हर बार दुरूद शरीफ़ भी पढ़ा जाना चाहिए। यदि एक बार भी छोड़ा गया, तो वह गुनहगार हुआ। अल-मुज्तबा, अद-दुर्र अल-मुख़्तार और अन्य ग्रंथों में इस मत को पसंदीदा और सबसे सही कहा गया है।

अनुभाग 3 (अद-दुर्र अल-मुख़्तार से): अद-दुर्र अल-मुख़्तार में है कि इस बारे में मतभेद है कि जब भी हुज़ूर (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) का पावन नाम लिया जाए, तो सुनने वाले और कहने वाले दोनों पर हर बार दुरूद व सलाम भेजना वाजिब है या नहीं। सबसे सही मत के अनुसार, पसंदीदा राय यही है कि हर बार दुरूद व सलाम वाजिब है, भले ही सभा एक ही हो। (सारांश/त)

अनुभाग 4: अन्य विद्वानों ने उम्मत की आसानी को देखते हुए दूसरा मत अपनाया है। उनके अनुसार, एक सभा में एक बार दुरूद पढ़ना वाजिब को पूरा करने के लिए पर्याप्त होगा। सभा में अधिक बार छोड़ने से कोई गुनहगार नहीं होगा, लेकिन वह निश्चित रूप से महान पुण्य और अपार कृपा से वंचित रहेगा। अल-काफ़ी, अल-कुन्या और अन्य ग्रंथों में इसी मत की पुष्टि की गई है।

पादलेख: 1. हाशिया अत-तहतावी अला अद-दुर्र अल-मुख़्तार, पुस्तक की प्रस्तावना, दार अल-मआरिफ़ा, बेरूत द्वारा प्रकाशित, 1/6। 2. अद-दुर्र अल-मुख़्तार, अध्याय: 'जब वह शुरू करने का इरादा करे...', मुज्तबाई दिल्ली द्वारा प्रकाशित, 1/87।

पृष्ठ 222/736

فتاوی رضویہ جلد ششم

من التتارخانية من كتب عليه السلام بالهمزة والميم يكفر لانه تخفيف و تخفيف الانبياء كفر بلا شك ولعله ان صح النقل فهو مقيد بقصد والا فالظاهر انه ليس بكفر و كون لازم الكفر كفرا بعد تسليم كونه مذهباً مختارا محله اذ كان اللزوم بينا نعم الاحتياط في الاحتزاز عن الايهام والشبهة۔ لکھا پڑھا جائے

تاتارخانیہ میں بعض جگہ پر ہے جس نے درود و سلام ہمزہ (ء) اور میم (م) کے ساتھ لکھا اس نے کفر کیا کیونکہ یہ عمل تخفیف ہے اور انبیاء علیہم السلام کی بارگاہ میں یہ عمل بلا شبہ کفر ہے۔ اگر یہ قول صحت کے ساتھ منقول ہو تو یہ مقید ہوگا اس بات کے ساتھ کہ ایسا کرنے والا قصداً ایسا کرے، ورنہ ظاہر یہ ہے کہ وہ کافر نہیں باقی لزوم کفر سے کفر اس وقت ثابت ہوگا جب اسے مذہب مختار تسلیم کیا جائے اور اس کا محل وہ ہوتا ہے جہاں لزوم بیان شدہ اور ظاہر ہو البتہ احتیاط اس میں ہے کہ ایہام اور شبہ سے احتراز کیا جائے۔(ت)

اب جواب مسئلہ لیجئے نامِ پاک حضور پرنور سید دو عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم جتنے بار لئے یا سنے ہر بار درود شریف پڑھنا واجب ہے اگر نہ پڑھے گا گنہگار ہوگا اور سخت وعیدوں میں گرفتار، ہاں اس میں اختلاف ہے کہ اگر ایک ہی جلسہ میں چند بار نامِ پاک لیا یا سنا تو ہر بار واجب ہے یا ایک بار کافی اور ہر بار مستحب ہے، بہت علما قول اول کی طرف گئے ہیں ان کے نزدیک ایک جلسہ میں ہزار بار کلمہ شریف پڑھے تو ہر بار درود شریف بھی پڑھتا جائے اگر ایک بار بھی چھوڑا گنہگار ہوا مجتبیٰ و در مختار و غیر ہما میں اس قول کو مختار و اصح کہا۔

في الدرالمختار اختلف في وجوبها على السامع والذاكر كلما ذكر صلى الله تعالىٰ عليه وسلم و المختار تكرار الوجوب كلما ذكر و لو اتحد المجلس فى الاصح اه بتلخيص۔ دُرمختار میں ہے کہ اس بارے

میں اختلاف ہے کہ جب بھی حضور صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کا اسمِ گرامی ذکر کیا جائے تو سامع اور ذاکر دونوں پر ہر بار درود و سلام عرض کرنا واجب ہے یا نہیں اصح مذہب پر مختار قول یہی ہے کہ ہر بار درود و سلام واجب ہے اگرچہ مجلس ایک ہی ہو اھ خلاصۃً(ت)

دیگر علما نے بنظرِ آسانی امت قولِ دوم اختیار کیا ان کے نزدیک ایک جلسہ میں ایک بار درود ادائے واجب کے لئے کفایت کرے گا زیادہ کے ترک سے گنہگار نہ ہوگا مگر ثوابِ عظیم و فضلِ جسیم سے بیشک محروم رہا، کافی و قنیہ و غیر ہما میں اسی قول کی تصحیح کی۔

1 حاشیۃ الطحطاوی علی الدرالمختار مقدمۃ الکتاب مطبوعۃ دارالمعرفۃ بیروت ۱/ ۶ 2 درمختار فصل واذا اراد الشروع الخ مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱/ ۸۷

Fatawa Razawiyya Volume 6

In Radd al-Muhtar: Az-Zahidi in Al-Mujtaba has authenticated it, but in Al-Kafi, it is authenticated that sending blessings upon the Prophet (Durood) is obligatory only once per gathering, similar to the command for the Prostration of Recitation (Sajdah Tilawat), so that difficulty and hardship are avoided. However, repeating the blessings in a single gathering is recommended (Mustahab) and meritorious (Mandub), unlike the Prostration of Recitation. In Al-Qunyah, it is stated that reciting it once per gathering is sufficient, just like the ruling for the Prostration of Recitation, and this is the basis for the Fatwa (legal ruling). Ibn al-Humam in Zad al-Faqir has firmly adopted this view. (Summarized)

Anyway, it is appropriate to say 'Sallallahu 'alayhi wa sallam' every time his name is mentioned, as doing something that by consensus brings great mercies and blessings, and whose omission certainly leads to deprivation of great grace and, according to a strong school of thought, is a sin and disobedience, is not something a wise person would abandon. And success is from Allah.

Issue No. 425: 6 Jumada al-Ula 1320 AH What do the scholars of religion say regarding this matter: A person recites litanies (Wazifa) but does not pray (Salah). Is this permissible or impermissible? Explain and you shall be rewarded.

The Answer: Whoever recites litanies but does not perform the obligatory prayers is a sinner (Fasiq), a transgressor (Fajir), and a committer of major sins (Kaba'ir). His litany will be flung back in his face. It is about such people that the Hadith states: 'How many a reciter recites the Quran while the Quran curses him' - And we seek refuge with Allah Almighty.

[1] Radd al-Muhtar, Chapter on 'When one intends to start...' etc., published by Mustafa Al-Babi, Egypt, 1/381. [2] Al-Madkhal by Al-'Abdari, Discussion on 'Gathering the Quran' etc., published by Dar al-Kitab al-'Arabi, Beirut, 1/85. Page 223 of 736

फ़तावा रज़विया जिल्द 6

रद्द अल-मुह्तार में है: अज़-ज़ाहीदी ने अल-मुजतबा में इसे सही करार दिया है, लेकिन अल-काफ़ी में हर सभा में एक ही बार दरूद की अनिवार्यता (वजुब) को सही कहा गया है जैसा कि सजदा तिलावत का हुक्म है ताकि कठिनाई और तंगी पैदा न हो। अलबत्ता, एक ही सभा में बार-बार दरूद पढ़ना मुस्तहब (पसंदीदा) और मंदूब है, सजदा तिलावत के विपरीत। कूनिया में है कि एक सभा में एक ही बार दरूद पढ़ना काफी है जैसा कि सजदा तिलावत का हुक्म है और इसी पर फतवा है। इब्न अल-हुमाम ने ज़ाद अल-फ़कीर में इसी बात पर ज़ोर दिया है। (संक्षेपित)

बहरहाल, उचित यही है कि हर बार 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' कहा जाए क्योंकि ऐसी चीज़ जिसके करने में सर्वसम्मति से बड़ी-बड़ी रहमतें और बरकतें हैं, और जिसके न करने में निस्संदेह महान कृपा से वंचित होना है और एक मज़बूत विचारधारा के अनुसार यह पाप और अवज्ञा है, एक बुद्धिमान व्यक्ति का काम नहीं है कि वह उसे त्याग दे। और अल्लाह ही तौफीक देने वाला है।

मसला नंबर 425: 6 जमादी अल-उला 1320 हिजरी दीन के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं कि एक व्यक्ति वज़ीफ़ा पढ़ता है लेकिन नमाज़ नहीं पढ़ता, क्या यह जायज़ है या नाजायज़? बयान करें, आपको पुण्य मिलेगा।

जवाब: जो वज़ीफ़ा पढ़े और नमाज़ न पढ़े वह फासिक (पापी), फाजिर (दुराचारी) और कबाएर (बड़े पापों) का अपराधी है, उसका वज़ीफ़ा उसके मुंह पर मार दिया जाएगा। ऐसे ही लोगों के बारे में हदीस में फ़रमाया गया: 'कितने ही कुरान पढ़ने वाले ऐसे हैं कि वे कुरान पढ़ते हैं और कुरान उन पर लानत करता है' - और हम अल्लाह तआला की पनाह मांगते हैं।

[1] रद्द अल-मुह्तार, अध्याय 'जब कोई शुरू करना चाहे...' इत्यादि, मुस्तफा अल-बाबी, मिस्र द्वारा प्रकाशित, 1/381। [2] अल-मदखल अल-अब्दारी, 'कुरान को इकट्ठा करने पर चर्चा' इत्यादि, दार अल-किताब अल-अरबी, बेरूत द्वारा प्रकाशित, 1/85। पृष्ठ 223 का 736

فتاوی رضویہ جلد ششم

فی ردالمحتار صححه الزاهدی فی المجتبی لکن صحح فی الکافي وجوب الصلوة مرة فی کل مجلس کسجود التلاوة للحرج الا انه یندب تکرار الصلوة فی المجلس الواحد بخلاف السجود وفی القنیة قیل یکفی المجلس مرة کسجدة التلاوة و به یفتی وقد جزم بهذا القول المحقق ابن الهمام فی زادالفقیر اهـ ملتقطا۔

ردالمحتار میں ہے کہ اسے زاہدی نے المجتبی میں صحیح قرار دیا ہے لیکن کافی میں ہر مجلس میں ایک ہی دفعہ درود کے وجوب کو صحیح کہا ہے جیسا کہ سجدہ تلاوت کا حکم ہے تاکہ مشکل اور تنگی لازم نہ آئے، البتہ مجلس واحد میں تکرارِ درود مستحب و مندوب ہے بخلاف سجدہ تلاوت کے۔ قنیہ میں ہے ایک مجلس میں ایک ہی دفعہ درود پڑھنا کافی ہے جیسا کہ سجدہ تلاوت کا حکم ہے اور اسی پر فتوٰی ہے۔ ابن ہمام نے زاد الفقیر میں اسی قول پر جزم کیا ہے اھ ملتقطاً (ت)

بہر حال مناسب یہی ہے کہ ہر بار صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کہتا جائے کہ ایسی چیز جس کے کرنے میں بالاتفاق بڑی بڑی رحمتیں برکتیں اور نہ کرنے میں بلا شبہ بڑے فضل سے محرومی اور ایک مذہب قوی پر گناہ و معصیت عاقل کا کام نہیں کہ اسے ترک کرے وباللہ التوفیق۔

مسئلہ نمبر ۴۲۵: ۶ جمادی الاولی ۱۳۲۰ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ایک شخص وظیفہ پڑھتا ہے اور نماز نہیں پڑھتا یہ جائز ہے یا ناجائز؟ بینوا توجروا۔

الجواب: جو وظیفہ پڑھے اور نماز نہ پڑھے فاسق وفاجر مرتکبِ کبائر ہے اُس کا وظیفہ اس کے منہ پر مارا جائے گا، ایسوں ہی کو حدیث میں فرمایا:

کم من قارئ یقرآن والقرآن یلعنه[2]- والعیاذ باللہ تعالٰی۔ بہتیرے قرآن پڑھتے ہیں اور قرآن انھیں لعنت کرتا ہے۔

[1] ردالمحتار فصل واذا ارادالشروع الخ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/ ۳۸۱ [2] المدخل للعبدری الکلام علی جمع القرآن الخ مطبوعہ دارالکتاب العربیہ بیروت ۱/ ۸۵ Page 223 of 736

Fatawa Razawiyya, Volume 6 Issue No. 246: From the country of Bengal, 19 Muharram al-Haram 1311 AH In the name of Allah, the Most Gracious, the Most Merciful. We praise Him and send blessings upon His Noble Messenger.

[Question] (Persian Text): What do the scholars of religion and jurists of the clear Shari'ah say regarding this matter? In the region of Bengal, a new group has emerged who are called 'Jahadu'. They are a branch of the non-conformists (Ghair Muqallidin), but they have exceeded them in several matters. One is that they say supplicating after prayer is not correct, rather they label it as an innovation (Bid'ah). This group does not accept the science of jurisprudence (Fiqh) and its principles (Usul), etc.; instead, they speak ill of them and use foul language. They claim that the Leader of the Universe (peace and blessings of Allah be upon him) never supplicated. Therefore, if proofs for the extraction of issues from the Holy Qur'an and the Sahih Sittah (six authentic books of Hadith) are provided, it would be very beneficial. Peace be upon you. (Urdu Text): What is the opinion of the scholars of religion and the jurists of the clear Shari'ah regarding this? A new group has emerged in the region of Bengal who are called 'Jahadu'. They are a branch of the non-conformists, but in some matters, they have gone further than them. One is their claim that it is not correct to supplicate after prayer, rather it is an innovation. They do not accept the science of jurisprudence and principles of jurisprudence, etc.; instead, they speak ill of them. They say that the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) never supplicated. If arguments regarding the derivation of this issue from the Holy Qur'an and Sahih Sittah are provided, it would be excellent. Peace be upon you.

The Answer: In the name of Allah, the Most Gracious, the Most Merciful. (Persian Text): Praise be to You, O Allah! O Great One! Send blessings upon Your Noble Prophet, his honorable family and companions, and the mujtahids of His established religion. Amen. Praise be to Allah, the chain of discourse is long, and if the pen turns to detail by divine grace, it would truly require a whole book. Necessarily, one verse and seven ahadith with their chains of narration will be presented. The verse of Allah the Exalted says: "So when you are free [from prayer], labor [in supplication], and to your Lord turn your attention." [Quran 94:7-8]. The most correct opinion in the interpretation of this noble verse is the statement of the Sultan of Commentators, the cousin of the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him)... (Urdu Text): O Allah! All praise is for You, O Great One! Send blessings upon Your Noble Prophet, and also upon his honorable family, companions, and the mujtahids of the established religion. Amen. Praise be to Allah, if a detailed discussion were held on

this, by the grace and mercy of Allah, it would be a very long talk. However, in this regard, one verse and seven ahadith with their chains of narration will be mentioned here. The command of Allah Almighty is: "So when you are free from prayer, then labor in supplication, to your [Lord]..."

1. Al-Quran 94/8 Page 224 of 736

फ़तावा रज़विया, खंड 6 मसला नंबर 246: बंगाल देश से, 19 मुहर्रम अल-हराम 1311 हिजरी बिस्मिल्लाह हिर्रहमान निर्रहीम। हम उसकी स्तुति करते हैं और उसके सम्मानित रसूल पर दरूद भेजते हैं।

[प्रश्न] (फ़ारसी पाठ): धर्म के विद्वान और शरीयत के मुफ़्ती इस मामले में क्या राय देते हैं कि बंगाल देश में एक नया समूह पैदा हुआ है जिन्हें 'जहादु' कहा जाता है। ये गैर-मुक़ल्लिदीन (अहले हदीस) की ही एक शाखा है लेकिन वे कई मामलों में उनसे आगे निकल गए हैं। एक यह कि वे कहते हैं कि नमाज़ के बाद दुआ करना सही नहीं है, बल्कि इसे बिदअत करार देते हैं। यह समूह फ़िक़्ह और उसूल आदि के ज्ञान को स्वीकार नहीं करता, बल्कि उन्हें गाली देते हैं और अपशब्द कहते हैं। वे कहते हैं कि हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने कभी दुआ नहीं की। अतः यदि कुरान शरीफ़ और सहाह सित्तह से इस मसले के समाधान पर दलीलें दी जाएं तो बहुत अच्छा होगा। वसलाम। (उर्दू पाठ): धर्म के विद्वान और शरीयत के मुफ़्ती इस बारे में क्या राय देते हैं कि बंगाल के क्षेत्र में एक नया समूह पैदा हुआ है जिन्हें 'जहादु' कहा जाता है। ये गैर-मुक़ल्लिदीन की ही एक शाखा है लेकिन कुछ मामलों में उनसे आगे बढ़ गए हैं। एक यह कि वे कहते हैं कि नमाज़ के बाद दुआ करना सही नहीं है बल्कि बिदअत है। वे फ़िक़्ह और उसूल-ए-फ़िक़्ह आदि के ज्ञान को स्वीकार नहीं करते बल्कि उसे बुरा-भला कहते हैं और कहते हैं कि हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने कभी दुआ नहीं की। यदि कुरान शरीफ़ और सहाह सित्तह के हवाले से इस मसले के समाधान पर दलीलें प्रदान की जाएं तो बहुत अच्छा होगा। वसलाम।

उत्तर: बिस्मिल्लाह हिर्रहमान निर्रहीम (फ़ारसी पाठ): ऐ अल्लाह! तेरी ही प्रशंसा है, ऐ महान! अपने सम्मानित नबी पर, उनके सम्मानित परिवार और साथियों पर और उनके स्थापित धर्म के मुजतहिदीन पर रहमतें भेज, आमीन। अल्लाह का शुक्र है, चर्चा का सिलसिला लंबा है और यदि ईश्वरीय कृपा से कलम विस्तार में जाए तो सचमुच एक पूरी किताब तैयार करनी होगी। लाज़मी तौर पर एक आयत और सात हदीसें प्रमाण के साथ प्रस्तुत की जाएंगी। अल्लाह तआला का फ़रमान है: "तो जब तुम (नमाज़ से) फ़ारिग हो, तो (दुआ में) मेहनत करो, और अपने ही रब की तरफ़ लौ लगाओ" (कुरान 94:7-8)। इस आयत की व्याख्या में सबसे सही राय सुल्तानुल मुफ़स्सिरीन, हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के चचेरे भाई की है... (उर्दू पाठ): ऐ अल्लाह! तेरी ही प्रशंसा है, ऐ महान! अपने सम्मानित नबी पर रहमतें नाज़िल फ़रमा, उनके सम्मानित परिवार और साथियों पर और स्थापित धर्म के मुजतहिदीन पर भी, आमीन। अल्हम्दुलिल्लाह, अगर इस पर विस्तृत चर्चा की जाए तो अल्लाह

तआला के फ़ज़ल और करम से बात बहुत लंबी होगी। बहरहाल इस सिलसिले में यहाँ एक आयत और सात हदीसें सनद (प्रमाण) के साथ ज़िक्र की जाएंगी। अल्लाह तआला का इरशाद है: "तो जब तुम नमाज़ से फ़ारिग हो तो दुआ में मेहनत करो अपने ही..."

1. अल-कुरान 94/8 पेज 224 / 736

فتاوی رضویہ جلد ششم مسئلہ نمبر ۲۴۶: از ملک بنگالہ ۱۹ محرم الحرام ۱۳۱۱ھ بسم اللہ الرحمن الرحیم نحمدہ ونصلی علی رسولہ الکریم

چہ می فرمایند علمائے دین و مفتیانِ شرع متین اندریں مسئلہ کہ در ملک بنگالہ یک گروہ نو پیدا شدہ کہ آں را جہاں دومی گویند و ایشاں یک شاخ غیر مقلدین اند لیکن ازاں طائفہ در چند امور زائد اند یکے اینکہ می گویند کہ بعد نماز مناجات خواستین درست نیست بلکہ نسبت بدعتش می کنند علم فقہ و اصول وغیرہ ایں قوم تسلیم نمی کنند بلکہ دشنام می دہند و فحش ناسزا می گویند و می گویند کہ سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم گاہے دعانہ کردہ پس اگر ایشاں از قرآن شریف و صحاح ستہ استخراج مسائل کردہ فرستند نہایت خوب خواھد شد والسلام۔

علمائے دین و مفتیانِ شرع متین کی اس بارے میں کیا رائے ہے کہ بنگالہ کے علاقے میں ایک نیا گروہ پیدا ہوا ہے جنھیں جہادو کہا جاتا ہے یہ غیر مقلدین کی ایک شاخ ہی ہے لیکن چند امور میں ان سے آگے بڑھ گئے ایک یہ کہتے ہیں کہ نماز کے بعد دعا کرنا درست نہیں بلکہ بدعت ہے، یہ علم فقہ اور اصولِ فقہ وغیرہ کو تسلیم نہیں کرتے بلکہ اسے برا بھلا کہتے ہیں اور یہ کہتے ہیں کہ حضور صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے کبھی دعا نہیں کی اگر قرآن شریف اور صحاح ستہ کے حوالے سے اس مسئلہ کے استخراج پر دلائل فراہم فرمائیں تو بہت خوب ہوگا۔ والسلام

الجواب: بسم اللہ الرحمن الرحیم حمدالک اللھم یا عظیم صل علی نبیک الکریم وآلہ وصحبہ اولی التکریم و مجتھدی دینہ القویم امین الحمد للہ سلسلہ سخن دراست و در فیض الٰہی باز خامہ اگر بتفصیل گراید ہماناں نامہ گرد آوردن باید لاجرم ایک آیت و ہفت حدیث بسند و می نماید آیہ قال اللہ

عزوجل فَإِذَا فَرَغْتَ فَانْصَبْ ۙ وَ إِلٰى رَبِّكَ فَارْغَبْ- قول اصح در تفسیر آیہ کریمہ قول سلطان المفسرین بن عم صلی اللہ علیہ

اے اللہ! حمد تیری ہے، اے عظیم! اپنے کریم نبی پر رحمتیں نازل فرما ان کی صاحبِ شرف آل و اصحاب اور دینِ قویم کے مجتہدین پر بھی ،آمین۔ الحمد للہ اگر اس پر تفصیلی گفتگو کی جائے تو اللہ تعالیٰ کے فضل و کرم سے بات بڑی طویل ہوگی، بہر حال اس سلسلہ میں یہاں ایک آیت اور سات احادیث مع سند ذکر کی جائیں گی آیہ اللہ تعالیٰ کا ارشاد ہے: پس جب تم نماز سے فارغ ہو تو دعا میں محنت کرو اپنے ہی

Fatawa Razawiya, Volume 6

(Right Column) ...Abdullah bin Abbas (may Allah be pleased with both of them) said: [Turning towards the Lord with desire]. In the interpretation of this noble verse, the prevailing view is that of the cousin of the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him), Hazrat Abdullah bin Abbas (may Allah be pleased with both of them), that 'faraagh' means being free from prayer and 'nasab' means exertion in supplication. That is, when you finish your prayer, strive hard in supplication and turn towards the Divine court with weeping and humility. It is also mentioned in the sermon of Jalalayn that the completion of the commentary of Jalal al-Din al-Mahalli follows his method, which is to rely on the preferred and prevailing opinions and to omit the mention of opinions that are not preferred. - Summary ends. Allama Zurqani stated in the commentary of Mawahib that this is correct because Jalal al-Din limited himself to it and he adhered to mentioning the preferred and prevailing opinion. (t)

First Hadith: Muslim, Abu Dawud, Tirmidhi, Nasai, Ibn Majah, Ahmad, Darimi, Bazzar, Tabarani, and Ibn al-Sunni. All of them narrated from Hazrat Thawban (may Allah be pleased with him), the servant of the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him), that when the Master of the Messengers (peace and blessings of Allah be upon them all) turned his noble face after prayer (said Salam), he would seek forgiveness from Allah Almighty three times and say:

(Left Column) ...and he (the Prophet) said: Abdullah bin Abbas (may Allah be pleased with both of them) says that being free from prayer is 'faraagh' and 'nasab' is exertion in supplication. That is, when you are free from prayer, strive and exert yourself in prayer and incline towards your Lord with weeping and humility. As in Tafsir al-Jalalayn: "So when you have finished (the prayer), strive hard in supplication. And to your Lord turn your attention." All this is in his sermon. This is in the completion of Imam Jalal al-Din al-Mahalli, following his style of relying on the most preferred opinions and avoiding lengthening by mentioning unsatisfactory opinions. 2 - Summary ends. Allama Zurqani says in the commentary of Mawahib al-Laduniyyah: This is correct because Al-Jalal limited himself to it, and he adhered to limiting himself to the most preferred opinions. 3

First Hadith: Muslim, Abu Dawud, Tirmidhi, Nasai, Ibn Majah, Ahmad, Darimi, Bazzar, Tabarani, and Ibn al-Sunni. All of them narrated from Thawban (may Allah be pleased with him), the slave of the Master of the Universe (peace and blessings of Allah be upon him), who said: When the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be

upon him) finished his prayer, he sought forgiveness three times and said: "O Allah, You are Peace, blessed are You..."

Footnotes: 1. Tafsir al-Jalalayn under the mentioned verse of Surah Al-Inshirah, Mujtabai Press, Delhi, Part 2, p. 500. 2. Tafsir al-Jalalayn, Book's Sermon, Mujtabai Press, Delhi, Part 1, p. 2. 3. Sharh al-Mawahib al-Laduniyyah by al-Zurqani, Second Objective, Kunya of the Prophet (SAW), Dar al-Ma'rifah, Beirut, 3/171.

फ़तावा रज़विया, जिल्द शशम (छठी)

(दायाँ कॉलम) ...अब्दुल्लाह बिन अब्बास (अल्लाह उन दोनों से राज़ी हो) का कहना है कि: रब की तरफ रगबत (रुझान) करो। इस आयते करीमा की तफ़सीर में राइज (प्रचलित) क़ौल हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के चचेरे भाई हज़रत अब्दुल्ला बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हुमा का है कि फ़राग (फ़ुरसत) नमाज़ से फ़ारिग होना है और नसब दुआ में कोशिश करना है। यानी जब तुम नमाज़ से फ़ारिग हो जाओ तो दुआ में खूब मेहनत करो और बारगाहे खुदावंदी में आह ओ ज़ारी के साथ रगबत करो। जलालेन के ख़ुत्बे में यह भी है कि जलालुद्दीन महल्ली की तफ़सीर का तक्मीला उन्हीं के तरीक़े पर है और उनका तरीक़ा यह है कि वह मुख्तार और राइज (पसंदीदा) अक़वाल पर एतमाद करते हैं और ऐसे अक़वाल का ज़िक्र जो मुख्तार न हों, तर्क करते हैं अह् तलखीसन। अल्लामा ज़रक़ानी ने शरह मवाहिब में फ़रमाया कि यही सही है क्योंकि इस पर जलालुद्दीन ने इक्तिसार किया और उन्होंने मुख्तार और राइज क़ौल के ज़िक्र का इल्तिज़ाम कर रखा है। (त)

पहली हदीस: मुस्लिम, अबू दाऊद, तिर्मिज़ी, नसाई, इब्न माजा, अहमद, दारमी, बज़्ज़ार, तबरानी और इब्न अल-सुन्नी। इन सबने हज़रत सौबान रज़ियल्लाहु अन्हु, जो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के ख़ादिम थे, से रिवायत किया है कि जब हुज़ूर स्यद उल मुरसलीन सलावत उल्लाहि व सलामुहु अलैहिम अजमईन नमाज़ से रुख़े अनवर फेरते (सलाम फेरते) तो तीन दफ़ा अल्लाह तआला से इस्तिगफ़ार करते और यह...

(बायाँ कॉलम) ...वस्लम अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हुमा से मरवी है कि नमाज़ से फ़रागत फ़राग है और दुआ में नसब (कोशिश) करना है, यानी जब तुम नमाज़ से फ़ारिग हो जाओ तो दुआ में मेहनत और मशक्कत करो और अपने परवरदिगार की तरफ रोने और गिड़गिड़ाने के साथ झुक जाओ। तफ़सीर जलालेन में है: 'जब आप नमाज़ से फ़ारिग हों तो दुआ में मशक्कत करें। और अपने रब की तरफ रगबत करें।' यह सब उनके ख़ुत्बे में है। यह इमाम जलालुद्दीन महल्ली की तक्मीला में है, उन्हीं के तरीक़े पर कि वह सबसे ज़्यादा पसंदीदा अक़वाल पर भरोसा करते हैं और नापसंद अक़वाल का ज़िक्र करके तवालत (विस्तार) छोड़ देते हैं। 2- अह् मुलख़्ख़सन। अल्लामा ज़रक़ानी शरह मवाहिब अल-लदुन्निया में फ़रमाते हैं: यही सही है क्योंकि जलालुद्दीन ने इसी पर इक्तिसार किया और उन्होंने सबसे ज़्यादा राइज अक़वाल पर इक्तिसार करने का इल्तिज़ाम किया है। 3

हदीस अव्वल: मुस्लिम, अबू दाऊद और तिर्मिज़ी और नसाई और इब्न माजा और अहमद और दारमी और बज़्ज़ार और तबरानी और इब्न अल-सुन्नी सबने सौबान रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत की है जो सय्यदे आलम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के आज़ाद कर्दा ग़ुलाम थे, कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम जब अपनी नमाज़ से फ़ारिग होते तो तीन बार इस्तिग़फ़ार करते और फ़रमाते: ऐ अल्लाह! तू ही सलामती (शांति) है, तू बरकत वाला है...

फ़ुटनोट्स: 1. तफ़सीर जलालेन ज़ेरे आयते मज़कूर सूरह अल-इनशिराह, मतबुआ मतबा मुज्तबाई दिल्ली, हिस्सा दोयम, सफ़ा 500। 2. तफ़सीर जलालेन ख़ुत्बा किताब, मतबुआ मतबा मुज्तबाई दिल्ली, हिस्सा अव्वल, सफ़ा 2। 3. शरह अल-मवाहिब अल-लदुन्निया लि-ज़रक़ानी, अल-मक़्सद अल-सानी कुन्या सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम, दारुल माआरिफ़ा बैरूत, 3/171।

सफ़ा 225 का 736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

(دایاں کالم) رب کی طرف رغبت کرو۔ اس آیۃ کریمہ کی تفسیر میں رائج قول حضور صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کے چچازاد حضرت عبد اللہ بن عباس رضی اللہ تعالٰی عنہما کا ہے کہ فراغ فراغ نماز و نصب نصب در دعا ست یعنی جب تم نماز سے فارغ ہو جاؤ تو دعا میں خوب محنت کرو اور بارگاہ خداوندی میں آہ و زاری کے ساتھ رغبت کرو۔ جلالین کے خطبہ میں یہ بھی ہے کہ جلال الدین محلی کی تفسیر کا تکملہ انہی کے طریقہ پر ہے اور ان کا طریقہ یہ ہے کہ وہ مختار و رائج پر اعتماد کرتے ہیں اور ایسے اقوال کا ذکر جو مختار نہ ہوں، ترک کرتے ہیں اھ تلخیصاً۔ علامہ زرقانی نے شرح مواہب میں فرمایا یہی صحیح ہے کیونکہ اس پر جلال الدین نے اقتصار کیا اور انہوں نے مختار و رائج قول کے ذکر کا التزام کر رکھا ہے۔ (ت) پہلی حدیث : مسلم ، ابوداؤد ، ترمذی ، نسائی ، ابن ماجہ ، احمد ، دارمی ، بزار ، طبرانی اور ابن السنی ان تمام نے حضرت ثوبان رضی اللہ تعالٰی عنہ خادم رسول صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم سے روایت کیا ہے کہ جب حضور سید المرسلین صلوات اللہ وسلامہ علیہم اجمعین نماز سے رُخ انور پھیرتے (سلام کہتے) تو تین دفعہ اللہ تعالٰی سے استغفار کرتے اور یہ

(بایاں کالم) وسلم عبد اللہ بن عباس رضی اللہ تعالٰی عنہماست کہ فراغ فراغ از نماز و نصب نصب در دعا ست یعنی چوں از نماز فارغ شوی در دعا جہد و مشقت نما و بسوئے پروردگار خود بزاری و تضرع گرا فی تفسیر الجلالین فاذا فرغت من الصلوۃ فانصب اتعب في الدعاء وَإِلى رَبِّكَ فَارْغَبْ ہمہ در خطبہ اوست ھذا في تکملۃ الامام جلال الدین المحلی علی نمطہ من الاعتماد علی ارجح الاقوال و ترك التطویل بذکر الاقوال غیر مرضیۃ 2۔ اھ ملخصاً ۔ علامہ زرقانی در شرح مواہب لدنیہ فرماید ھو الصحیح فقد اقتصر علیہ الجلال وقد التزم الاقتصار علی ارجح الاقوال 3۔ حدیث اول: مسلم ، ابوداؤد

و ترمذی و نسائی و ابن ماجہ و احمد و دارمی و بزار و طبرانی و ابن السنی بر ہمہ از ثوبان رضی اللہ تعالیٰ عنہ مولائے اقدس سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم روایت کنند قال کان رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم اذا انصرف من صلاتہ استغفر ثلاثا و قال اللھم انت السلام تبارکت

حواشی: 1 تفسیر جلالین زیر آیۃ المذکور سورہ الم نشرح مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی حصہ دوم ص ۵۰۰ 2 تفسیر جلالین خطبہ کتاب مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی حصہ اول ص ۲ 3 شرح المواہب اللدنیہ للزرقانی المقصد الثانی کنیۃ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم دار المعرفۃ بیروت ۳/ ۱۷۱

Fatawa Razawiya, Volume 6

"O Owner of Majesty and Honor" (1). That is, when the Leader of the Prophets (peace and blessings of Allah be upon them all) finished the prayer and performed the salutation, he would seek forgiveness from the Truth, the Glorified and Exalted, three times and recite this supplication: "O Allah, You are Peace (meaning no defect or deficiency can ever touch Your Majestic Being) and from You is peace (meaning the safety of us servants from all calamities and afflictions is by Your power, will, kindness, and mercy). Blessing and greatness belong to You, O Owner of Majesty and Bestower of Greatness, O Lord." Is this Hadith not famous and widely practiced in the authentic (Sahih) collections? Or is the request for forgiveness and the plea for safety not a supplication? Indeed, ignorance is a calamity that is not easy to cure, and when it becomes compound (ignorance of one's own ignorance), it has no cure. We seek refuge in Allah, the Blessed and Exalted. (T)

Second, third, and fourth Hadith: Narrated by Bukhari (2), Muslim (3), Abu Dawud, Nasa'i, (5) Abu Bakr ibn al-Sunni, and (6) Abu al-Qasim al-Tabarani from Mughira ibn Shu'ba (may Allah be pleased with him); and by Bazzar and Tabarani from Abdullah ibn Abbas (may Allah be pleased with them both); and also Bazzar narrated from Jabir ibn Abdullah al-Ansari (may Allah be pleased with them both). This is the Hadith of Mughira and the wording is according to Nasa'i. He said: Mu'awiya wrote to Mughira ibn Shu'ba, "Inform me of something you heard from the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him)." He (Mughira) said that the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him), upon finishing the prayer, would say: "There is no god..."

---

1. Jami' al-Tirmidhi, Chapter: What to say after salutation, published by Amin Company, Delhi, 1/40
2. Sahih Muslim, Chapter: The desirability of remembrance after prayer etc., published by Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/218 Page 226 of 736

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

"हे महिमा और सम्मान के स्वामी" (1)। इसका अर्थ यह है कि जब रसूलो के सरदार (उन पर अल्लाह की शांति और आशीर्वाद हो) अपनी नमाज़ पूरी करके सलाम फेरते, तो वे तीन बार हक सुब्हानहु व ता'आला से क्षमा माँगते और यह दुआ करते: "हे अल्लाह, तू शांति है (अर्थात तेरी महिमापूर्ण सत्ता की ओर कोई दोष या कमी नहीं पहुँच सकती) और तेरी ओर से ही शांति है (अर्थात हम बंदों की तमाम आफ़तों और बलाओं से सलामती तेरी कुदरत, इरादे और मेहरबानी व रहमत से है)। बरकत और अज़मत तेरे ही लिए है, हे बुज़ुर्गी के मालिक और बुज़ुर्गी अता करने वाले परवरदिगार।" क्या यह हदीस सहीह किताबों में मशहूर और प्रचलित नहीं है? या मग़फिरत (क्षमा) की तलब और सलामती का सवाल दुआ नहीं होता? वास्तव में, जहालत (अज्ञानता) एक मुसीबत है जिसे ठीक करना आसान नहीं है, और जब यह जटिल (स्वयं की अज्ञानता से अनभिज्ञ होना) हो जाए, तो इसका कोई इलाज नहीं है। हम अल्लाह की शरण मांगते हैं, वह बरकत वाला और सर्वोच्च है। (त)

दूसरी, तीसरी और चौथी हदीस: बुखारी (2), मुस्लिम (3), अबू दाऊद, नसाई, (5) अबू बक्र इब्न अल-सुन्नी और (6) अबुल कासिम तबरानी ने हज़रत मुग़ीरा बिन शो'बा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से; और बज़्ज़ार व तबरानी ने हज़रत अब्दुल्ला बिन अब्बास (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से; तथा बज़्ज़ार ने हज़रत जाबिर बिन अब्दुल्ला अंसारी (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से भी रिवायत की है। यह मुग़ीरा की हदीस है और इसके शब्द नसाई के हैं कि जब हज़रत अमीर मुआविया ने मुग़ीरा बिन शो'बा को लिखा कि मुझे ऐसी कोई चीज़ बताएँ जो आपने अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) से सुनी हो, तो उन्होंने बताया कि नबी अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) जब नमाज़ पूरी करते थे, तो फ़रमाते थे: "अल्लाह के सिवा कोई..."

---

1. जामे' अत-तिर्मिज़ी, अध्याय: सलाम के बाद क्या कहा जाए, अमीन कंपनी, दिल्ली द्वारा प्रकाशित, 1/40
2. सहीह मुस्लिम, अध्याय: नमाज़ के बाद ज़िक्र की मुस्तहबियत आदि, कदीमी कुतुब खाना, कराची द्वारा प्रकाशित, 1/218 पृष्ठ 226 का 736

یا ذاالجلال والاکرام ۱ یعنی چوں سید المرسلین صلوات اللہ و سلامہ علیہم اجمعین از نماز برگشتند و سلام دادے سہ بار از حق سبحانہ، و تعالٰی مغفرت خواستے وایں دعا گفتے خدایا توئی سلام (کہ پیچ عیب و نقصے راگرد سراپردہ عزوجلال تو باز نیست) و از تست سلام (کہ سلامت ما بندگان از ہمہ آفات و بلیات ہمیں بقدرت و ارادت و لطف رحمت تست). برکت و عظمت مراتست اے صاحب بزرگی و بزرگی دے ہے یارب مگر ایں حدیث در صحاح مشہور و متداول نیست یا از خطاطب مغفرت و سوال سلامت دعا نباشد آرے جہل بلایست نہ سہل وچوں مرکب شود دوائے ندارد والعیاذ باللہ تبارک وتعالٰی۔

دعا کرتے اللھم انت السلام ومنک السلام تبارکت یا ذاالجلال والاکرام اے اللہ ! تو سلام ہے (یعنی تیری ذات جل مجدہ کی طرف کوئی عیب یا نقص راہ نہیں پا سکتا) اور تیری طرف سے سلام (کہ ہم بندوں کی تمام مصیبتوں اور بلیات سے سلامتی تیری قدرت، ارادے، مہربانی اور کرم سے ہے) برکت و عظمت تیرے ہی لئے ہے اے صاحب بزرگی اور بزرگی عطا فرمانے والے یارب۔ کیا یہ حدیث صحاح میں مشہور و متداول نہیں یا مغفرت کی طلب اور سلامتی کا سوال دعا نہیں ہوتا۔ جہالت ایسی مرض ہے کہ اس کا علاج آسان نہیں اور جب یہ مرکب ہو جائے تو اس کا کوئی علاج ہی نہیں والعیاذ باللہ تبرک و تعالٰی۔ (ت)

حدیث دوم و سوم و چہارم: بخاری ۲، مسلم ۳، ابو داؤد، نسائی، ۵ ابوبکر ابن السنی، اور ۶ ابوالقاسم طبرانی از مغیرہ ابن شعبہ رضی اللہ تعالٰی عنہ وبزار وطبرانی از عبداللہ بن عباس رضی اللہ تعالٰی عنہما نیز بزار از جابر بن عبداللہ انصاری رضی اللہ تعالٰی عنہما روایت کنند و ہذا حدیث المغیرۃ

واللفظ للنسائی قال کتب معویۃ الی مغیرۃ بن شعبۃ اخبرنی بشیئ سمعتہ من رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فقال کان رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم اذاقضی الصلوۃ قال لا الہ

حدیث دوسری، تیسری اور چوتھی : بخاری، مسلم ، ابو داؤد، نسائی، اور ابوالقاسم طبرانی نے حضرت مغیرہ بن شعبہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے اور بزار و طبرانی نے حضرت عبداللہ بن عباس رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے نیز بزار نے حضرت جابر بن عبداللہ انصاری رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے بھی روایت کیا ہے یہ حدیث مغیرہ کی اور الفاظ نسائی کے ہیں کہ جب حضرت امیر معاویہ نے مغیرہ بن شعبہ کو لکھا کہ مجھے اس بات سے آگاہ کرو جو تم نے رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم سے سنی ہو، انھوں نے فرمایا کہ نبی اکرم صلی اللہ تعالیٰ

---

۱ جامع الترمذی باب مایقول اذا سلم مطبوعہ امین کمپنی دہلی ۱ / ۴۰ ۲ صحیح مسلم باب استحباب الذکر بعد الصلاۃ الخ مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱ / ۲۱۸ صفحہ 226 از 736

Fatawa Rizvia Volume 6

(Right Column): ...it was the blessed practice of the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) that upon completing the prayer, he would recite: "There is no god but Allah, alone, without partner; to Him belongs sovereignty and to Him belongs praise, and He is powerful over all things. O Allah, none can withhold what You give, and none can give what You withhold; and the wealth of the wealthy will not benefit them against You." (Translation: There is no deity worthy of worship except Allah, He is alone and unique, He has no partner. Kingdom, sovereignty and praise are for Him alone, and He is capable of everything. O Allah! What You bestow, no one can stop, and what You withhold, no one can give. No one's luck and wealth can benefit them against Your wrath and punishment). "O Allah, none can withhold..." If these words are not a prayer, then what are they? In fact, "Lillahil Hamd" (Praise be to Allah) itself is the best prayer. Tirmidhi, Nasai, Ibn Hibban, and Al-Hakim narrated, the former as good (hasan) and the latter as authentic (sahih), from Hazrat Jabir bin Abdullah (may Allah be pleased with them both) that the Master of the Universe (peace and blessings of Allah be upon him) said: "The most excellent remembrance is 'There is no god but Allah', and the most excellent prayer is to say 'Praise be to Allah'." (T) Fifth Hadith: It is narrated in Sunan an-Nasa'i from 'Ata bin Marwan on the authority of his father that Hazrat Ka'b al-Ahbar swore an oath in front of Abu Marwan...

(Left Column): "There is no god but Allah... (Arabic prayer text)..." Meaning, Amir Mu'awiyah (may Allah be pleased with him) wrote to Mughira bin Shu'bah (may Allah be pleased with him), "Inform me of something (you heard from the Prophet)." Mughira said, "When the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) would finish prayer, he would say such: 'No one is worthy of worship except the One and Peerless God; sovereignty is truly His and praise is truly His, and He is powerful over whatever He wills. O God! There is no one who can prevent what You give, and there is no one who can give what You prevent. And the owner of fortune and wealth cannot be benefited by that fortune and wealth against Your wrath and punishment.'" "O Allah, none can withhold what You give..." if this is not a prayer, what else is it? Rather, "Praise be to Him" is the best prayer. Tirmidhi, Nasai, Ibn Hibban, and Al-Hakim have brought from Jabir bin Abdullah (may Allah be pleased with them both) with first being 'hasan' and latter being 'sahih' that the Master of the World (peace be upon him) said: "The best dhikr is 'La ilaha illallah' and the best dua is 'Alhamdulillah'." 2. Saying 'La ilaha illallah' is the best remembrance and

'Alhamdulillah' is the best prayer. Fifth Hadith: In Sunan an-Nasa'i, it is narrated from Ata ibn Abi Marwan from his father that Ka'b swore by Allah who split the sea for Moses: "We find in the Torah that..."

(Footnotes): 1. Sunan an-Nasa'i, Chapter: Another type of speech upon completion of prayer, published by Maktaba Salafiya, Lahore, 1/157. 2. Jami' at-Tirmidhi, Chapter: What has been narrated regarding a Muslim's prayer being answered, published by Amin Company, Delhi, 2/174.

फ़तावा रिज़विया जिल्द शश्म (छठा)

(दायां स्तंभ): ...हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का यह मामूल-ए-मुबारक था कि जब नमाज़ से फ़ारिग होते तो यह पढ़ते: ला इलाहा इल्लल्लाह वहदहु ला शरीका लहू लहुल मुल्कु वलहुल हम्दु वहुवा अला कुल्लि शैइन क़दीर. अल्लाहुम्मा ला मानिया लिमा आतैता वला मुतिया लिमा मनअ्ता वला यनफ़उ ज़ल जद्दि मिन्कल जद्दु (अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं, वह तन्हा और यकता है, उसका कोई शरीक नहीं। मुल्क और बादशाही और हम्द उसी के लिए है और वह हर चीज़ पर क़ादिर है। ऐ अल्लाह! जो तू अता करे उसे कोई रोक नहीं सकता, जिसे तू रोक ले उसे कोई दे नहीं सकता। किसी का बख़्त (नसीब) और दौलत तेरे क़हर व ग़ज़ब से उसे नफ़ा नहीं दे सकता)। "अल्लाहुम्मा ला मानिया लिमा आतैता..." यह कलिमात दुआ नहीं तो क्या हैं? बल्कि "ललहिल हम्द" ख़ुद बेहतरीन दुआ है। तिर्मिज़ी, नसाई, इब्न हिब्बान और हाकिम ने अव्वल ने 'हसन' और आख़िरी ने 'सहीह' के तौर पर हज़रत जाबिर बिन अब्दुल्लाह (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत किया कि सैयदे आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: सबसे अफ़ज़ल ज़िक्र 'ला इलाहा इल्लल्लाह' है और सबसे अफ़ज़ल दुआ 'अल्हम्दुलिल्लाह' कहना है। (त) पांचवीं हदीस: सुनन नसाई में अता बिन मरवान से उनके वालिदे गिरामी के हवाले से मरवी है कि हज़रत का'ब अहबार ने अबू मरवान के सामने क़सम उठाई...

(बायां स्तंभ): ला इलाहा इल्लल्लाह... (अरबी दुआ पाठ)... यानी अमीर मुआविया (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने मुग़ीरा बिन शो'बा (रज़ियल्लाहु अन्हु) को लिखा कि मुझे किसी ऐसी चीज़ की जानकारी दें (जो आपने नबी से सुनी हो)। मुग़ीरा ने कहा कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) जब नमाज़ ख़त्म फ़रमाते तो इस तरह फ़रमाते: कोई इबादत के लायक़ नहीं सिवाए यकता और बे-मिसल ख़ुदा के, बादशाही हक़ीक़त में उसी की है और तारीफ़ हक़ीक़त में उसी की है, और वह जो चाहे उस पर क़ादिर है। ऐ ख़ुदा! जिसे तू दे उसे कोई रोकने वाला नहीं और जिसे तू रोक ले उसे कोई देने वाला नहीं। और बख़्त व दौलत वाले को उसकी दौलत तेरे अज़ाब से नफ़ा नहीं पहुँचा सकती। "अल्लाहुम्मा ला मानिया लिमा आतैता..." अगर यह दुआ नहीं है तो और क्या है? बल्कि "लहुल हम्द" ख़ुद बेहतरीन दुआ है। तिर्मिज़ी और नसाई और इब्न हिब्बान और हाकिम ने अव्वल ने 'हसन' और आख़िरी ने 'सहीह' के साथ जाबिर बिन अब्दुल्लाह (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत किया कि सैयदे आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: अफ़ज़ल ज़िक्र 'ला इलाहा इल्लल्लाह' है और अफ़ज़ल दुआ 'अल्हम्दुलिल्लाह' है। 2. 'ला इलाहा इल्लल्लाह' कहना बेहतरीन ज़िक्र है और

'अल्हम्दुलिल्लाह' कहना बेहतरीन दुआ है। पांचवीं हदीस: सुनन नसाई में अता इब्न अबी मरवान से उनके वालिद से मरवी है कि का'ब ने उस अल्लाह की क़सम खाई जिसने मूसा के लिए दरिया चीर दिया था: "हम तौरात में पाते हैं कि..."

(फुटनोट्स): 1. सुनन नसाई, बाब: नमाज़ पूरी होने पर पढ़े जाने वाले दीगर कलिमात, मक्तबा सल्फ़िया लाहौर, 1/157. 2. जामि' अत-तिर्मिज़ी, बाब: मुसलमान की दुआ क़बूल होने का ज़िक्र, अमीन कंपनी दिल्ली, 2/174.

(دایاں کالم): علیہ وسلم کا یہ معمولِ مبارک تھا کہ جب نماز سے فارغ ہوتے تو یہ پڑھتے لا الہ الا اللہ وحدہ لا شریک لہ لہ الملک و لہ الحمد وھو علی کل شئ قدیر اللھم لا مانع لما اعطیت ولا معطی لما منعت ولا ینفع ذا الجد منک الجد (اللہ کے سوا کوئی معبود نہیں وہ تنہا و یکتا ہے اسکا کوئی شریک نہیں ملک و بادشاہی اور حمد اسی کے لئے ہے اور وہ ہر شئی پر قادر ہے اے اللہ! جو تو عطا کرے اسے کوئی روک نہیں سکتا، جسے تو روک لے اسے کوئی دے نہیں سکتا کسی کا بخت و دولت تیرے قہر و غضب سے اسے نفع نہیں دے سکتا اللھم لا مانع لما اعطیت الخ یہ کلمات دُعا نہیں تو کیا ہیں؟ بلکہ لہ الحمد خود بہترین دعا ہے۔ ترمذی ، نسائی، ابن حبان اور حاکم نے اول بطور تحسین اور آخری بطور تصحیح حضرت جابر بن عبداللہ رضی اللہ تعالٰی عنہما سے روایت کیا کہ سیّدِ عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا سب سے افضل ذکر لا الہ الا اللہ ہے اور سب سے افضل دُعا الحمد للہ کہنا ہے۔ (ت) پانچویں حدیث: سنن نسائی میں عطاء بن مروان سے ان کے والد گرامی کے حوالے سے مروی ہے کہ حضرت کعب احبار نے ابومروان کے سامنے قسم اُٹھائی

(بایاں کالم): لا الہ الا اللہ وحدہ لا شریک لہ لہ الملک ولہ الحمد وھو علی کل شیئ قدیر اللھم لا مانع لما اعطیت ولا معطی لما منعت ولا ینفع ذاالجد منک الجد 1۔ یعنی امیر معاویہ رضی اللہ تعالٰی عنہ مر مغیرہ بن شعبہ رضی اللہ تعالٰی عنہ را نوشت کہ مہرا آگہی دہ بچیزے باشی مغیرہ گفت رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم چوں نماز ختم نمو دے چناں فرمودے ہیچکس سزائے پرستش نیست جز خدائے یکتائے بے ہمتا، مراد راست پادشاہی و مراد راست ستائش واو بر ہر چہ کہ خواھد تو اناست خدایا ہیچ بازدارندہ نیست چیزے را کہ تو دہی و ہیچ دہندہ نیست چیزے را کہ تو بازداری و سود نہد خداوند بخت ودولت را از قہر و عذاب تو آں بخت و دولتش، اللھم لا مانع لما اعطیت الخ اگر دعا

نیست آخر چیست بلکہ لہ الحمد خود بہترین دعاست ترمذی و نسائی و ابن حبان و حاکم اول بتحسین و آخر بتصحیح از جابر بن عبد اللہ رضی اللہ تعالیٰ عنہما آور دند کہ سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرموده افضل ذکر لا الہ الا اللہ و افضل الدعاء الحمد للہ 2۔ بہترین ذکر لا الہ الا اللہ و بہترین دعا الحمد للہ گفتن ست۔ حدیث پنجم: در سنن نسائی از عطاء ابن ابی مروان از پدرش مروی ست ان کعباً حلف باللہ الذی فلق البحر لموسی انا لنجد في التوراة ان

(حاشیہ): 1 سنن نسائی نوع آخر من القول عند انقضاء الصلوٰة مطبوعہ مکتبہ سلفیہ لاہور ۱ / ۱۵۷

2 جامع الترمذی باب ماجاء ان دعوة المسلم مستجابة مطبوعہ امین کمپنی دہلی ۲ / ۱۷۴

Fatawa Razawiya Volume Six Prophet David (Dawud), peace and blessings of Allah be upon him, when finishing his prayer, used to say: "O Allah, rectify for me my religion which You have made a protection for me, and rectify for me my world in which You have placed my livelihood. O Allah, I seek refuge in Your pleasure from Your wrath, and I seek refuge in Your forgiveness from Your punishment, and I seek refuge in You from You. There is no preventer for what You have given, and no giver for what You have prevented, and the wealth of a wealthy person does not benefit him against You." He said: And Ka'b narrated to me that Suhaib narrated to him that Muhammad, peace and blessings of Allah be upon him, used to say these (supplications) upon finishing his prayer. (1) That is, Ka'b! Narrating before Abu Marwan under oath, said: "By Allah who split the sea for Prophet Moses (Musa), peace be upon him, we indeed find in the Holy Torah that the Prophet of Allah, David, peace be upon him, when returning from prayer, would make this supplication: 'O my Lord, rectify my religion for me and make it my refuge, and rectify my world for me in which You have placed the means of my life. O Allah, I seek refuge in Your pleasure from Your anger, and I seek refuge (and here he said a word whose meaning is this) in Your pardon from Your severe punishment, and I seek refuge in Your essence from You. No one can stop Your giving, and no one can give what You have stopped, and the fortune of a fortunate person cannot benefit him against You.' Then Abu Marwan said: Ka'b narrated the Hadith to me that Suhaib (may Allah be pleased with him) informed him that the Noble Prophet, peace and blessings of Allah be upon him, also used to recite this supplication after finishing prayer. (T)"

1 Sunan an-Nasa'i, Another type of supplication upon finishing prayer, printed by Maktaba Salafiya 1/158 Page 228 of 736

फ़तावा रज़विया छठा खंड अल्लाह के नबी दाऊद (अलैहिस्सलाम) जब अपनी नमाज़ से फ़ारिग होते तो यह दुआ पढ़ते थे: "ऐ अल्लाह! मेरे दीन को मेरे लिए बेहतर बना जिसे तूने मेरे लिए हिफ़ाज़त (बचाव) का ज़रिया बनाया है, और मेरी दुनिया को मेरे लिए बेहतर बना जिसमें तूने मेरी रोज़ी रखी है। ऐ अल्लाह! मैं तेरी रज़ा के साथ तेरे ग़ुस्से से पनाह माँगता हूँ, और तेरी माफ़ी के ज़रिये तेरी पकड़ से पनाह माँगता हूँ, और मैं तुझसे तेरी ही पनाह माँगता हूँ। जिसे तू अता करे उसे कोई रोक नहीं सकता, और जिसे तू रोक दे उसे कोई दे नहीं सकता, और किसी मालदार की दौलत उसे तेरे मुक़ाबले में फ़ायदा नहीं दे सकती।" उन्होंने कहा: और काब ने मुझे बताया कि सुहैब ने उनसे रिवायत की कि मोहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) भी नमाज़ मुकम्मल करने के बाद ये दुआएँ पढ़ते थे। (1) यानी काब ने अबू मरवान के सामने क़सम खाकर कहा: "उस अल्लाह की क़सम जिसने हज़रत मूसा (अलैहिस्सलाम) के लिए समंदर को फाड़ दिया, यक़ीनन हमने तौरात-ए-मुक़द्दस में यह तहरीर पाई है कि अल्लाह के नबी हज़रत दाऊद (अलैहिस्सलाम) जब नमाज़ से फ़ारिग होते तो यह दुआ पढ़ते थे: 'ऐ मेरे परवरदिगार! मेरे दीन को मेरे लिए संवार दे और इसे मेरा ठिकाना बना दे, और मेरी दुनिया को मेरे लिए संवार दे जिसमें तूने मेरे जीवन का सामान रखा है। ऐ अल्लाह! मैं तेरी रज़ा के साथ तेरे ग़ज़ब से पनाह माँगता हूँ, और मैं (उस जगह जो लफ़्ज़ इस्तेमाल किया है उसका माना यह है) तेरी माफ़ी के साथ तेरी सख़्त पकड़ से पनाह माँगता हूँ, और मैं तेरी ज़ात के ज़रिये तुझसे पनाह माँगता हूँ। तेरी अता को कोई रोक नहीं सकता और जिसे तू रोक दे उसे कोई दे नहीं सकता, और किसी ख़ुशनसीब की नसीबी तेरे सामने उसे नफ़ा नहीं दे सकती।' फिर अबू मरवान ने कहा कि काब ने मुझे हदीस सुनाई कि सुहैब (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने उन्हें ख़बर दी कि नबी-ए-अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) भी नमाज़ से फ़ारिग होने के बाद यह दुआ पढ़ा करते थे। (त)"

1 सुनन अन-नसाई, नमाज़ से फ़ारिग होने के समय पढ़ी जाने वाली एक और दुआ, मकतबा सलफ़िया 1/158 पेज 228 / 736

فتاوی رضویه جلد ششم دائود نبی الله صلی الله تعالی علیه وسلم کان اذا انصرف من صلاته قال اللهم اصلح لی دینی الذی جعلته لی عصمة واصلح لی دنیای التی جعلت فیها معاشی اللهم انی اعوذ برضاك من سخطك واعوذبعنی بعفوك من نقمتك واعوذبك منك لا مانع لما اعطیت ولا معطی لما منعت ولا ینفع ذا الجد منك الجد قال وحدثنی کعب ان صهیباً حدثه ان محمداً صلی الله تعالی علیه وسلم کان یقولهن عند انصرافه من صلوته۱ یعنی کعب ! اخبار پیش ابی مروان بحلف گفت که سوگند بخدا ئیکه دریا را بهر موسیٰ علیہ الصلوٰۃ و السلام شگافت ہر آئینہ ما بتوریت مقدس می یابیم که دائود نبی الله علیہ الصلوٰۃ و السلام چوں از نماز برگشتی ایں دعا کردی الہی بیا را بہر من دین مرا اوراہ پناہ من کردہ و بیا را بهر من دنیائے مرا که در و سامان زندگی من نهاده خدا یا پناه می برم بخوشنودی تو از خشم تو و پناه می برم (و اینجاه کلمه گفت که معنیش چنین باشد به درگزر شتن تو از سخت گرفتن تو و پناه می برم بتواز تو هیچ باز راننده نیست داده تراونه دهنده باز داشته و سود نکند بختور را از تو بخت او ابو مروان گوید کعب بمن حدیث گفت کہ صہیب رضی الله تعالیٰ عنہ اور اتحدیث کر دو خبر داد کہ محمد صلی الله تعالیٰ علیہ و سلم نیز ایں دعا بر گشتن از نماز می کرد۔

اس الله کی قسم جس نے حضرت موسیٰ علیہ السلام کے لئے سمندر کو پھاڑ دیا کہ یقیناً ہم نے تورات مقدس میں یہ تحریر پائی ہے کہ الله کے نبی حضرت داؤد علیہ الصلوٰۃ والسلام جب نماز سے فارغ ہوتے تو یہ دعا پڑھتے تھے۔ اللهم اصلح لی دینی الذی جعلتہ لی عصمة واصلح لی دنیای التی جعلت فیها معاشی اللهم انی اعوذ برضاک من سخطک و اعوذ یعنی بعفوک من نقمتک و اعوذبک منک لمانع لما اعطیت ولا معطی لما منعت ولا ینفع ذاالجد منك الجد (اے الله! میرے دین کو میرے لئے بہتر بنا جس تونے میرے لئے محافظ بنایا ہے اور میرے لئے اس دنیا کو بہتر فرما جس کو تونے میری معاش کا ذریعہ بنایا ہے ، اے الله! میں تیری رضا کے ساتھ تیرے غضب سے پناہ

مانگتا ہوں اور میں (اس جگہ جو کلمہ کہا ہے اس کا معنی یہ بنتا ہے) اے اللہ! تیری معافی کے ساتھ تیری سخت گرفت سے پناہ مانگتا ہوں، اور میں تیری ذات کے ساتھ تجھ سے پناہ مانگتا ہوں، تیری عطا کو کوئی روک نہیں سکتا اور جسے تو روکے اسے کوئی عطا نہیں کر سکتا اور کسی بختاور کو اسکا بخت تجھ سے نفع نہیں دے سکتا اور پھر حضرت ابو مروان نے کہا کعب نے مجھے حدیث بیان کہ صہیب نے ان کو خبر دی کہ نبی اکرم صلی اللہ علیہ وسلم بھی نماز سے فارغ ہونے کے بعد یہ دعا پڑھا کرتے تھے۔ (ت)

1 سنن النسائی نوع آخر من الدعاء عند الانصراف من الصلوۃ مطبوعہ مکتبہ سلفیہ ۱/ ۱۵۸ Page of 736 228

Fatawa Razawiyya (Volume 6)

Sixth Hadith: It is narrated in Sahih Muslim from Bara bin Azib (may Allah be pleased with them) that he said: "When we prayed behind the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him), we loved to be on his right side so that he would turn his face towards us [after the prayer]." He said: I heard him say: "O Lord, save me from Your punishment on the day You resurrect Your servants (or: gather Your servants)." [1] We were such that when we performed prayer behind the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him), we loved to be on his right side so that after the salutation his blessed face would turn towards us. Then I heard him (peace and blessings of Allah be upon him) say: "O my Sustainer! Protect me from Your punishment on the day You raise or gather Your servants." Urdu translation: It is narrated in Sahih Muslim from Hazrat Bara bin Azib (may Allah be pleased with them) that whenever we used to pray behind the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him), we preferred to stand on his right side so that after the salutation he (peace and blessings of Allah be upon him) would turn his radiant face towards us. He said, I then heard the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) say these words: "Rabbi qini 'adhabaka yawma tab'athu aw tajma'u 'ibadak" (O my Lord! Protect me from the punishment of that day when You will raise or gather all Your servants). (T)

Seventh Hadith: Bazzar in Musnad, Tabarani in Mu'jam al-Awsat, Ibn al-Sunni in the book 'Amal al-Yawm wa-al-Layla, and Khatib al-Baghdadi in History from Anas (may Allah be pleased with him) narrate: "The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him), when he prayed and finished his prayer, would wipe his head with his right hand and say: In the name of Allah besides whom there is no god, the Most Gracious, the Most Merciful. O Allah, remove from me anxiety and sorrow." [2] When the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) finished the prayer, he would rub his right hand on his blessed head and make this supplication. Urdu translation: Bazzar in Musnad, Tabarani in Mu'jam al-Awsat, Ibn al-Sunni in the book 'Amal al-Yawm wa-al-Layla, and Khatib al-Baghdadi in History have narrated from Hazrat Anas (may Allah be pleased with him) that when the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) finished the prayer, he would wipe his right hand over his head and recite: "Bismillah-illadhi la ilaha illa huwa al-Rahman al-Rahim. Allahumma adhib 'anni al-hamma wa-al-huzn" (In the name of Allah, besides whom there is no deity, He is the Gracious and Merciful. O Allah! Remove from me anxiety and sorrow).

Footnotes: 1. Al-Sahih li-Muslim, chapter on the permissibility of turning away from prayer to the right and left, published by Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/247. 2. Tarikh Baghdad by al-Khatib, chapter 'Kaf' regarding names starting with 'Kathir', Hadith 2953, Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, 12/280.

फ़तावा रज़विया (खंड 6)

छठी हदीस: सहीह मुस्लिम में बर्रा बिन आज़िब (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत है, उन्होंने कहा: "जब हम अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के पीछे नमाज़ पढ़ते थे, तो हमें उनके दाहिने ओर रहना पसंद था ताकि वे (नमाज़ के बाद) अपना चेहरा हमारी तरफ़ फेरें।" उन्होंने कहा: मैंने उन्हें कहते सुना: "हे रब, मुझे अपने अज़ाब (दंड) से उस दिन बचा जब तू अपने बंदों को दोबारा जीवित करेगा (या: इकट्ठा करेगा)।" [1] हम ऐसे थे कि जब नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के पीछे नमाज़ अदा करते थे, तो हमें उनके दाहिने ओर होना प्रिय था ताकि सलाम के बाद उनका मुबारक चेहरा हमारी ओर मुड़े। फिर मैंने उन्हें (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) कहते सुना: "ऐ मेरे परवरदिगार! मुझे अपने अज़ाब से बचा उस दिन जब तू अपने बंदों को उठाएगा या इकट्ठा करेगा।" उर्दू अनुवाद: सहीह मुस्लिम में हज़रत बर्रा बिन आज़िब (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से वर्णित है कि जब भी हम नबी अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के पीछे नमाज़ पढ़ते थे, तो हमें आपके दाहिनी ओर खड़ा होना अधिक प्रिय होता था ताकि आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) सलाम के बाद अपना नूरानी चेहरा हमारी तरफ़ फेरें। उन्होंने कहा, फिर मैंने आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) को ये शब्द कहते सुना: "रब्बि क़िनी अज़ाबका यौमा तअ'सु औ तज्म'उ इबादक" (ऐ मेरे रब! मुझे उस दिन के अज़ाब से सुरक्षित रख जिस दिन तू अपने तमाम बंदों को उठाएगा या इकट्ठा करेगा)। (त)

सातवीं हदीस: बज़ार ने मुसनद में, तबरानी ने मुअजम अल-औसत में, इब्न अल-सुन्नी ने किताब 'अमल अल-यौम वल-लैला' में, और ख़तीब अल-बग़दादी ने तारीख़ में अनस (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत की है: "नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) जब नमाज़ पढ़ते और अपनी नमाज़ पूरी करते, तो अपने दाहिने हाथ से अपने सिर को पोंछते और कहते: अल्लाह के नाम से जिसके सिवा कोई माबूद नहीं, वह अत्यंत दयालु, परम कृपालु है। ऐ अल्लाह, मुझसे चिंता और शोक दूर कर दे।" [2] जब नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) नमाज़ से फ़ारिग़ होते, तो अपना दाहिना हाथ अपने मुबारक सिर पर फेरते और यह दुआ करते। उर्दू अनुवाद: बज़ार ने मुसनद में, तबरानी ने मुअजम अल-औसत में, इब्न अल-सुन्नी ने किताब 'अमल अल-यौम वल-लैला' में, और ख़तीब बग़दादी ने तारीख़ में हज़रत अनस (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया कि नबी अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) जब नमाज़ से फ़ारिग़ होते तो अपना दायां हाथ अपने सिर पर फेरते और पढ़ते: "बिस्मिल्लाहिल्लज़ी ला इलाहा इल्ला हुवर-रहमानुर-रहीम। अल्लाहुम्मा अज़हिब अन्नी अल-हम्मा वल-हुज़न" (अल्लाह के नाम से

जिसके सिवा कोई माबूद नहीं, वह रहमान और रहीम है। ऐ अल्लाह! मुझसे ग़म और दुःख दूर कर दे)।

फुटनोट्स: 1. अल-सहीह लि-मुस्लिम, नमाज़ से दाएँ और बाएँ मुड़ने की अनुमति का अध्याय, कदीमी कुतुब ख़ाना, कराची द्वारा प्रकाशित, 1/247। 2. तारीख़ बग़दाद लिल-ख़तीब, नाम 'कसीर' के बारे में अध्याय 'कफ़', हदीस 2953, दार अल-किताब अल-अरबी, बेरूत, 12/280।

فتاوٰی رضویہ (جلد ششم)

حدیث ششم: در صحیح مسلم از براء بن عازب رضی اللہ تعالٰی عنہما روایت است گفت کنا اذا صلینا خلف رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم ، احببنا ان نکون عن یمینہ یقبل علینا بوجھہ قال فسمعتہ یقول رب قنی عذابک یوم تبعث او تجمع عبادک۱۔ بودیم کہ چون پس نبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نماز می گزاردیم دوست می داشتیم کہ از دست راست او باشیم تاپس از سلام دادن روئے مبارک بسوئے ما کند پس شنیدم اور اکہ مے گفت صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم اے پروردگار من نگاہدار مرا از عذاب خودت روزیکہ برانگیزی یافرمود گرد آری بندگان خودرا۔

چھٹی حدیث : صحیح مسلم میں حضرت براء بن عازب رضی اللہ تعالٰی عنہما سے مروی ہے کہ جب ہم نبی اکرم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کے پیچھے نماز پڑھتے تو ہمیں آپ کے دائیں طرف کھڑا ہونا زیادہ محبوب ہوتا تھا تاکہ آپ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم سلام کے بعد چہرہ انور ہماری طرف پھیریں، کہا پھر میں نے آپ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کو یہ کلمات کہتے ہوئے سنا رب قنی عذابک یوم تبعث او تجمع عبادک (اے میرے رب! مجھے اپنے اس دن کے عذاب سے محفوظ فرما جس دن تو اپنے تمام بندوں کو اٹھائے گا یا جمع کرے گا۔) (ت)

حدیث ہفتم: بزار نے مسند ، طبرانی نے معجم اوسط ، ابن السنی کتاب عمل الیوم واللیلۃ و خطیب بغدادی نے تاریخ از انس رضی اللہ تعالٰی عنہ روایت دارند کان النبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم اذا صلی وفرغ من صلوتہ مسح بیمینہ علی رأسہ وقال بسم اللہ الذی لا الہ الا ھو الرحمن الرحیم اللھم اذھب عنی الھم والحزن ۲۔ نبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم چوں از نماز فارغ شدے دست راست بر سر مبارک خودش سودے وایں دعا نمودے۔

ساتویں حدیث: بزار نے مسند، طبرانی نے معجم اوسط، ابن السنی کتاب عمل الیوم واللیلہ و خطیب بغدادی نے تاریخ میں حضرت انس رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا کہ نبی اکرم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم جب نماز سے فارغ ہوتے تو اپنا دایاں ہاتھ اپنے سر پر پھیرتے اور پڑھتے بسم اللہ الذی لا الہ الا ھو الرحمن الرحیم اللھم اذھب عنی الھم والحزن (اللہ کے نام سے جس کے علاوہ کوئی معبود نہیں وہ رحمن و رحیم ہے اے اللہ مجھ سے غم و حزن دُور فرمادے۔)۔

۱ الصحیح لمسلم باب جواز الانصراف من الصلوۃ عن الیمین والشمال مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۲۴۷ ۲ تاریخ بغداد للخطیب باب الکاف عن اسمہ کثیر حدیث ۲۹۵۳ دار الکتاب العربیہ بیروت ۱۲/ ۲۸۰

Fatawa Rizvia Volume Six

In the name of God, besides Whom no one is worthy of worship, the Beneficent, the Merciful. O God, remove distress and sorrow from me.

Even more strange is that these wise ones are unaware of the words of the Imam of the time and the Mujtahid of the era and the master of the age, let alone being aware of Hadiths and arguments. Maulvi Abdul Hai Lucknawi not only wrote a fatwa regarding the proof of supplication (Dua) but also on the raising of hands for supplication after prayer. Their Imam, Mian Nazir Husain Dehlavi (in whose word they believe, although he does not consider the Imams of the divine religion of any account and insults Fiqh and the jurists), confirmed and supported Lucknawi in the fatwa. The responder [Lucknawi] provided one Hadith, and this person [Dehlavi] added another. The fatwa is as follows: What do the scholars of the religion say on the issue that raising hands in supplication after prayer, as is the practice of the Imams of this region, what is it like? Although the jurists have written it as commendable (mustahsan) and narrations exist regarding the general raising of hands in supplication, is there also a Hadith regarding this specific act (raising hands)? Please provide an answer and be rewarded; He is the giver of success for what is correct. A specific Hadith exists on this matter as well. Hafiz Abu Bakr Ahmad bin Muhammad bin Ishaq ibn as-Sunni wrote in his book 'Amal al-Yawm wal-Laylah': Ahmad bin al-Hasan narrated to me, Abu Yaqub Ishaq bin Khalid bin Yazid al-Balasi narrated to him, Abdul Aziz bin Abdul Rahman al-Qurashi narrated to him from Khasif, from Anas, from the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him), that he said: "There is no servant who spreads his hands after every prayer and says: O Allah, my God and the God of Ibrahim, Ishaq, and Yaqub, and the God of Jibra'il, Mika'il, and Israfil (peace be upon them), I ask You to answer..."

फ़तावा रिज़विया खंड छठा

उस ईश्वर के नाम पर जिसके सिवा कोई भी पूजने के योग्य नहीं है, जो अत्यंत दयालु और कृपावान है। हे ईश्वर, मुझसे संकट और दुख को दूर कर दे।

इससे भी अधिक विचित्र बात यह है कि इन बुद्धिमानों को अपने समय के इमाम और युग के मुजतहिद और काल के स्वामी की बात की भी खबर नहीं है, हदीसों और तर्कों से अवगत होना तो दूर की बात है। मौलवी अब्दुल हई लखनवी ने न केवल दुआ के प्रमाण पर, बल्कि नमाज़ के बाद दुआ के लिए हाथ उठाने पर भी फतवा जारी किया। उनके इमाम मियां नज़ीर हुसैन देहलवी (जिनकी बात पर वे विश्वास करते हैं, हालांकि वह ईश्वरीय धर्म के इमामों को कुछ नहीं समझते और फ़िक़ह और फकीहों को अपशब्द कहते हैं) ने फतवे में लखनवी की पुष्टि और समर्थन किया। उत्तर देने वाले [लखनवी] ने एक हदीस दी थी, और इस व्यक्ति [देहलवी] ने एक और हदीस जोड़ दी। फतवा इस प्रकार है: इस मसले पर दीन के विद्वान क्या कहते हैं कि नमाज़ के बाद दुआ के लिए हाथ उठाना, जैसा कि इस क्षेत्र के इमामों का दस्तूर है, कैसा है? यद्यपि फकीहों ने इसे मुस्तहसन (सराहनीय) लिखा है और दुआ में सामान्य रूप से हाथ उठाने के बारे में रिवायतें मौजूद हैं, क्या इस विशेष क्रिया (हाथ उठाना) के बारे में भी कोई हदीस है? उत्तर दें और पुण्य प्राप्त करें; वही सही बात की तौफीक देने वाला है। इस बारे में एक विशेष हदीस भी मौजूद है। हाफ़िज़ अबू बक्र अहमद बिन मुहम्मद बिन इसहाक इब्न अस-सुन्नी ने अपनी पुस्तक 'अमल अल-यौम वल-लैला' में लिखा है: अहमद बिन अल-हसन ने मुझे बताया, अबू याकूब इसहाक बिन खालिद बिन यज़ीद अल-बालसी ने उन्हें बताया, अब्दुल अज़ीज़ बिन अब्दुल रहमान अल-कुरशी ने खसीफ से, उन्होंने हज़रत अनस (रज़ियल्लाहु अन्हु) से वर्णन किया कि पैगंबर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया: जो कोई व्यक्ति भी हर नमाज़ के बाद दुआ के लिए हाथ फैलाए और कहे: ऐ अल्लाह, मेरे माबूद! ऐ इब्राहिम, इसहाक और याकूब के माबूद, और जिब्राइल, मिकाइल और इसराफिल (उन पर शांति हो) के माबूद, मैं तुझसे प्रार्थना करता हूँ कि तू स्वीकार करे...

पृष्ठ ७३६ का २३०

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

بنام خدائیکہ جزاو ہیچکس سزائے پرستیدن نیست بخشا ئندہ مہربان خدایا پریشانی و غم از من دور کن،

طرفہ تر آنکہ ایں ہو شمندان راز قول امام وقت و مجتہد العصر و صاحب الزمان خود شاں خبرے نیست تا بدرک احادیث وادراک دلائل چہ رسد مولوی عبدالحی صاحب لکھنوی نہ ہمیں در ثبوت دعا بلکہ در اثبات رفع یدین از برائے دعا بعد از نماز فتوائے نوشت امام ایناں میاں نذیر حسین دہلوی کہ بر قولش ایمان آوردہ ائمہ دین خدا را بجوئے نشمرند وفقہ و فقہار ادشنام دہند تصدیق و تائید او کرد ہے مجیب لکھنوی اور دہ بود حدیثے دگرایں کس افزود ، فتوٰی اینست۔ چہ می فرمایند علمائے دین اندریں مسئلہ کہ رفع یدین در دُعا بعد نماز چنانکہ معمول ائمہ دیار است ہر چند فقہا مستحسن می نویسند و احادیث در مطلق رفع یدین در دعا نیز وارد، دریں خصوص ہم حدیثے واردست یانہ بینوا توجروا ھو المصوب دریں خصوص نیز حدیثے واردست حافظ ابوبکر احمد بن محمد بن اسحق ابن السنی در کتاب عمل الیوم واللیلہ مے نویسند، حدثنی احمد بن الحسن حدثنا ابو یعقوب اسحاق بن خالد بن یزید البالسي حدثنا عبدالعزیز بن عبدالرحمن القرشي عن خصیف عن انس عن النبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم ، انہ قال مأ من عبد بسط کفیہ في دبر کل صلوۃ ثم یقول اللھم الھي والہ ابراھیم و اسحق و یعقوب والہ جبرئیل و میکائیل و اسرافیل علیہم السلام اسئلك ان تستجیب

اور طرفہ تر یہ کہ ان عقلمندوں کو اپنے امام وقت اپنے دور اور زمانے کے مجتہد کی خبر تک نہیں چہ جائیکہ یہ احادیث اور دلائل سے آگاہ ہو سکیں مولوی عبد الحی لکھنوی نے صرف ثبوت دعا ہی نہیں بلکہ نماز کے بعد ہاتھ اٹھا کر دعا کرنے پر فتوٰی جاری کیا ان کے امام میاں نذیر

حسین دہلوی (جن کے قول پر ایمان رکھتے ہیں حالانکہ وہ دین الہی کے ائمہ کو کسی شمار میں نہیں لاتا ، فقہ اور فقہا کو گالیاں دیتا ہے) انھوں نے فتویٰ میں مجیب لکھنوی کی حدیث لاکر لکھنوی کی تائید و تصدیق کی ہے دوسری حدیث کا اس نے خود اضافہ کیا ہے ، وہ فتویٰ یہ ہے کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ نماز کے بعد دعا کے لئے ہاتھ اٹھانا جس کا اس علاقے کے ائمہ میں معمول ہے کیسا ہے؟ اگرچہ فقہا نے اسے مستحسن لکھا اور مطلق ہاتھ اٹھانے اور دعا میں روایات موجود ہیں کیا اس عملِ خاص (رفع یدین) پر بھی کوئی حدیث ہے؟ جواب عنایت کرو اجر پاؤ گے، وہی صواب کی توفیق دینے والا ہے - خاص اس بارے میں بھی حدیث موجود ہے۔ حافظ ابوبکر احمد بن محمد بن اسحق ابن السنی نے اپنی کتاب عمل الیوم واللیلۃ میں لکھا ہے مجھے احمد بن حسن نے انھیں ابویعقوب اسحاق بن خالد بن یزید البالسی نے انھیں عبدالعزیز بن عبدالرحمن القرشی نے خصیف سے انھوں نے حضرت انس رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے بیان کیا کہ نبی اکرم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا جس شخص نے بھی ہر نماز کے بعد دعا کیلئے ہاتھ پھیلائے اور عرض کیا اے اللہ میرے معبود ! اے ابراہیم ، اسحٰق ،

Fatawa Razawiyya, Volume Six

Call upon Me, for I am distressed; protect me in my religion, for I am afflicted; reach me with Your mercy, for I am a sinner; and guard me from poverty, for I am destitute. It is indeed a right upon Allah, the Almighty and Majestic, that He does not return the hands [of such a person] empty. And Allah the Almighty knows best.

[Abul Hasanat Muhammad Abdul Hai]

And [O] God of Jacob! O God of Gabriel, Michael, and Raphael (peace be upon them)! My plea is that You accept my prayer, for I am distressed. Protect me in my religion, for I am in trial. Grace me with Your mercy, for I am a sinner. Remove poverty from me, for I am needy. Thus, Allah the Almighty has taken it upon His mercy that He will not return his hands empty. And Allah the Almighty knows best.

The summary of this eighth Hadith is that the Messenger of Mercy (peace and blessings of Allah be upon him) taught a prayer to his community: whoever raises both hands after every prayer and makes this supplication, it is a right upon Allah, the Mighty and Sublime, that He does not return his hands in disappointment. Then see the confirmation from the leader of the group himself...

[Abul Hasanat Muhammad Abdul Hai]

Eighth Hadith: The gist of the eighth Hadith is that the Messenger of Mercy (peace and blessings of Allah be upon him) practically taught the community to pray and said, "Whoever prays after the prayer with hands [raised] in this manner, Allah the Almighty and Majestic has taken it upon His mercy that He will not return him disappointed." Then, if one were to look at the confirmation of their own leader, the matter would become clear. They say this answer is correct and is supported by this narration:

"The answer is correct and it is supported by what Abu Bakr bin Abi Shaybah narrated in Al-Musannaf from Al-Aswad Al-Amiri from his father, who said: 'I performed the dawn prayer with the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him). When he completed the salutation, he turned away, raised his hands, and supplicated.'" (The hadith continues). Thus, raising hands in supplication after obligatory prayers is established from the Master of Prophets and the Model for the Pious (peace and blessings of Allah be upon him), as is not hidden from the intelligent scholars.

[Syed Muhammad Nazir Hussain]

But this ninth Hadith: that Abu Bakr bin Abi Shaybah in...

---

1. Kitab 'Amal al-Yawm wa-al-Laylah, Chapter: What is said after prayers, printed by Dairat al-Ma'arif al-Uthmaniyyah, Hyderabad Deccan, 1/48.
2. Musannaf Ibn Abi Shaybah, [Chapter on] He who preferred that when he gives salutation, he should stand up or turn away, etc., printed by Idara al-Quran wa al-Ulum al-Islamiyyah, Karachi, 1/302. Note: Much effort was made for this reference, but the reference found has only these words: "I prayed the dawn prayer with the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him), and when he gave the salutation, he turned away." The words "and raised his hands and supplicated" are not present here. — Nazir Ahmed Saeedi.

फतवा रज़विया, जिल्द छठा

मुझे पुकारो, क्योंकि मैं व्यथित हूँ; मुझे मेरे दीन में बचाओ, क्योंकि मैं परीक्षा में हूँ; अपनी दया से मुझ तक पहुँचो, क्योंकि मैं पापी हूँ; और मुझे दरिद्रता से बचाओ, क्योंकि मैं दीन हूँ। वास्तव में अल्लाह, सर्वशक्तिमान और प्रतापी पर यह अधिकार है कि वह [ऐसे व्यक्ति के] हाथों को खाली न लौटाए। और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है।

[अबुल हसनात मोहम्मद अब्दुल हई]

और याकूब के माबूद! ऐ जिब्राईल, मीकाईल और इसराफ़ील (अलैहिमुस्सलाम) के माबूद! मेरी अर्ज़ है कि मेरी दुआ क़ुबूल फ़रमा कि मैं परेशान हूँ, मेरी दीन में हिफ़ाज़त फ़रमा, मैं आज़माइश में हूँ। मुझे अपनी रहमत से नवाज़, मैं गुनहगार हूँ। मुझसे मेरी ग़रीबी को दूर फ़रमा, मैं मिस्कीन हूँ। तो अल्लाह तआला ने अपने ज़िम्मे करम लिया है कि उसके हाथ खाली नहीं लौटाएगा। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

इस आठवीं हदीस का सार यह है कि रहमत के रसूल (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) ने अपनी उम्मत को एक दुआ सिखाई है कि जो कोई हर नमाज़ के बाद अपने दोनों हाथ उठाकर यह दुआ करेगा, तो अल्लाह जल्ल व आला पर यह हक़ होगा कि वह उसके हाथों को निराशा में वापस न लौटाए। फिर खुद जमात के इमाम की पुष्टि देखें...

[अबुल हसनात मोहम्मद अब्दुल हई]

आठवीं हदीस: आठवीं हदीस का सार यह है कि हुज़ूर रहमते आलम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने उम्मत को व्यावहारिक रूप से दुआ की शिक्षा दी है और फरमाया, "जो व्यक्ति नमाज़ के बाद इस तरह हाथ उठाकर दुआ करेगा, अल्लाह तआला जल्ल व आला ने अपने ज़िम्मे करम लिया है कि उसे ना-उम्मीद नहीं लौटाएगा।" फिर अगर कोई अपने ही इमाम की पुष्टि देख ले, तो बात स्पष्ट हो जाएगी। वे कहते हैं कि यह उत्तर सही है और इस वर्णन द्वारा समर्थित है:

"उत्तर सही है और इसकी पुष्टि उस बात से होती है जो अबू बक्र बिन अबी शैबा ने अल-मुसन्निफ़ में अस्वद अल-आमिरी से उनके पिता के माध्यम से वर्णित की है, जिन्होंने कहा: 'मैंने अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) के साथ फज्र की नमाज़ पढ़ी। जब उन्होंने सलाम पूरा किया, तो वे मुड़े, अपने हाथ उठाए और दुआ की।'" (हदीस जारी है)। इस प्रकार, अनिवार्य नमाज़ों के बाद

दुआ में हाथ उठाना सैयदुल अंबिया और मुत्तकियों के आदर्श (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) से सिद्ध है, जैसा कि बुद्धिमान विद्वानों से छिपा नहीं है।

[सैयद मोहम्मद नज़ीर हुसैन]

लेकिन यह नौवीं हदीस: कि अबू बक्र बिन अबी शैबा ने...

---

1. किताब 'अमल अल-यौम वल-लैला', अध्याय: नमाज़ के बाद क्या कहा जाए, मुद्रित: दाइरतुल मआरिफ अल-उस्मानिया, हैदराबाद दक्कन, 1/48।
2. मुसन्निफ़ इब्न अबी शैबा, [अध्याय:] वह जो पसंद करता था कि जब वह सलाम फेरे तो खड़ा हो जाए या मुड़ जाए, आदि, मुद्रित: इदारा अल-कुरान व अल-उलूम अल-इस्लामिया, कराची, 1/302। नोट: इस संदर्भ के लिए बहुत प्रयास किया गया, लेकिन प्राप्त संदर्भ में केवल ये शब्द हैं: "मैंने अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) के साथ फज्र की नमाज़ पढ़ी, और जब उन्होंने सलाम किया, तो वे मुड़ गए।" यहाँ 'और अपने हाथ उठाए और दुआ की' शब्द मौजूद नहीं हैं। — नज़ीर अहमद सईदी।

فتاوٰی رضویہ ، جلد ششم

دعونی فانی مضطر، و تعصمني في دینی فانی مبتلی، و تنالی برحمتك فانی مذنب، وتتقی عن الفقر، فانی متمسکن، الا کان حقاً علی اللہ عزوجل ان لا یردیدیہ خائبتین واللہ تعالی اعلم

[ابو الحسنات محمد عبدالحئی]

اور یعقوب کے معبود! اے جبرائیل ، میکائیل اور اسرافیل (علیہم السلام) کے معبود! میری عرض ہے کہ میری دعا قبول فرما کہ پریشان ہوں میری دین میں حفاظت فرما میں ابتلاء میں ہوں مجھے اپنی رحمت سے نواز میں گنہگار ہوں مجھ سے میرے فقر کو دور فرما میں مسکین ہوں۔ تو اللہ تعالیٰ نے اپنے ذمہ کرم لیا ہے کہ اسکے ہاتھ خالی نہیں لوٹائیگا ، واللہ تعالیٰ اعلم۔

حاصل ایں حدیث کہ حدیث ہشتم : باشد آنست کہ حضور رحمت عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم امت را دعائے می آموزد کہ ہر کہ بعد ہر نماز ہر دو دست خود برداشتہ ایں دعا کند بر حضرت جل وعلا حق باشد دستہائے اور انو مید باز نہ گرداند باز تصدیق امام الطائفہ خود بینیدی سراءد

[ابو الحسنات محمد عبدالحئی]

آٹھویں حدیث: آٹھویں حدیث کا حاصل یہ ہے کہ حضور رحمت عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے امت کو عملاً دعا کی تعلیم دی ہے اور فرمایا "جو شخص اس طرح ہاتھ باندھ کر بعد نماز دعا کرے گا اللہ تعالیٰ جل و علا نے اپنے ذمہ کرم میں لیا ہے کہ اسے ناامید نہیں لوٹائے گا"۔ پھر اپنے امام کی تصدیق ہی دیکھ لیتے تو بات واضح ہو جاتی، وہ کہتے ہیں یہ جواب صحیح ہے اور اس کی تائید اس روایت سے ہوتی ہے_____

الجواب صحیح و یؤیده ماروا ابوبکر بن ابی شیبة فی المصنف عن الاسود العامري عن ابیه قال صلیت مع رسول الله صلی الله تعالی علیه وسلم الفجر فلما سلم انصرف ورفع یدیه ودعا الحدیث فثبت بعد الصلوة المفروضة رفع الیدین في الدعاء عن السید الانبیاء واسوة التقیاء صلی الله تعالیٰ علیہ وسلم کما لا یخفی عن العلماء الاذکیا

[سید محمد نذیر حسین]

لیکن ایں حدیث نہم : کہ ابو بکر بن ابی شیبہ در

---

1 کتاب عمل الیوم واللیلة باب ما یقول فی دبر الصلوة مطبوعہ دائرة المعارف العثمانیہ حیدر آباد دکن ۴۸/۱ 2 مصنف ابن ابی شیبہ من کان یستحب اذا سلم ان یقوم او ینحرف الخ مطبوعہ ادارة القرآن والعلوم الاسلامیہ کراچی ۳۰۲/۱ نوٹ: اس حوالے کے لئے بڑی کوشش کی ہے لیکن جو حوالہ ملا ہے اس کے الفاظ اتنے ہیں کہ صلیت مع رسول الله صلی الله تعالیٰ علیہ وسلم الفجر فلما سلم انحرف۔ یہاں پر "ورفع یدیہ ودعا" کے الفاظ نہیں۔ نذیر احمد سعیدی۔

Fatawa Razawiyya Volume 6

Musannif relates from Aswad Amiri, from his father (may Allah be pleased with him): "I prayed the Fajr prayer with the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him). When he finished the prayer and turned, he raised both his blessed hands and supplicated." Regarding this Hadith, their Imam says that raising hands in supplication after obligatory prayers is proven from the Prophet himself, the Leader of the Prophets and the Example for the Pious (peace and blessings of Allah be upon him), as is not hidden from the intelligent scholars—Sayyid Muhammad Nazir Husain. I say, what can be the cure for the sickness of your Mujtahids! All praise is for Allah, who is sufficient for the Ahl al-Sunnah in battle. I had promised seven Hadiths, which I have fulfilled, because the number seven is among the most excellent numbers. In connection with the mentioned Fatwa, two more Hadiths were mentioned. Now I wish to mention one more Hadith so that together with them, the count of "tilka 'asharatun kamilah" (that is a complete ten) is fulfilled. And success is from Allah. (T)

Tenth Hadith: Imam Ahmad in Musnad, Nasa'i in Mujtaba, Ibn Hibban in Sahih relate from Harith bin Muslim, and Abu Dawood in Sunan relates from his father Harith bin Muslim (may Allah be pleased with him)—and this is correct as Hafiz Munzhiri mentioned in Al-Targhib—that the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said to him: "When you have performed the Fajr prayer, then before speaking to any person, say seven times: 'O Allah, protect me from the Fire.' Indeed, if you die on that day, Allah will write for you protection from the Fire. And when you have performed the Maghrib prayer, then before speaking to any person, say: 'O Allah, protect me from the Fire...'"

फ़तावा रज़विया खंड 6

मुसन्निफ़ असवद अमीरी से, उनके पिता (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) से रिवायत करते हैं कि मैंने नबी-ए-करीम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के साथ फज्र की नमाज पढ़ी। जब उन्होंने सलाम फेरा और मुड़े, तो अपने दोनों पवित्र हाथ उठाए और दुआ की (अल-हदीस)। इस हदीस के बारे में उनके इमाम कहते हैं कि इससे फ़र्ज़ नमाज़ के बाद दुआ में हाथ उठाना खुद सैयदुल अंबिया, उसवतुल अत़किया (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से साबित है, जैसा कि बुद्धिमान विद्वानों पर छिपा नहीं है - सैयद मुहम्मद नज़ीर हुसैन। मैं कहता हूँ, मगर तुम्हारे मुजतहिदों की बीमारी का इलाज क्या हो सकता है! तमाम तारीफ अल्लाह के लिए है जो अहल-ए-सुन्नत को लड़ाई के लिए काफी है। मैंने सात हदीसों का वादा किया था जिसे मैंने पूरा कर दिया, क्योंकि सात की संख्या सबसे श्रेष्ठ संख्याओं में से है। और उक्त फतवे के संदर्भ में दो और हदीसों का उल्लेख आ गया, अब मैं चाहूँगा कि एक और हदीस का उल्लेख कर दूँ ताकि उस सात के साथ "तिल्का अ-शरतुन कामिलह" (वे पूरे दस हुए) की संख्या पूरी हो जाए। और सफलता अल्लाह की ओर से है। (त)

दसवीं हदीस: इमाम अहमद ने मसनद में, नसाई ने मुजतबा में, इब्न हिब्बान ने सहीह में हारिस बिन मुस्लिम से और अबू दाऊद ने सुनन में उनके पिता हारिस बिन मुस्लिम (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) से (और यही सही है जैसा कि हाफिज़ मुन्ज़िरी ने तरगीब में ज़िक्र किया है) रिवायत की है कि नबी-ए-करीम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने उनसे फरमाया: "जब तुम फज्र की नमाज अदा कर लो, तो लोगों से बातचीत करने से पहले सात बार यह दुआ पढ़ो: 'ऐ अल्लाह! मुझे आग से बचा।' बेशक, अगर तुम उस दिन मर गए, तो अल्लाह तुम्हारे लिए आग से सुरक्षा लिख देगा। और जब तुम मग़रिब की नमाज़ पढ़ लो, तो किसी से बात करने से पहले कहो: 'ऐ अल्लाह! मुझे आग से बचा...'"

पृष्ठ 232/736

مصنف از اسود عامری از پدر اورضی اللہ تعالٰی عنہ روایت کردہ است کہ من ماحضور پر نور سید عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نماز فجر گزاردم چوں سلام دادر برگشت و ہر دو دست پاک برداشتہ دعا فرمود امام ایناں گوید کہ پس خود از سید الانبیاء صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم بعد نماز فریضہ دست بہر دعا برداشتن بثبوت پیوست چنانکہ بر علمائے اذکیا پوشیدہ نیست، من میگویم مگر مجتہدین اغبیا شمار اور ماں چیست الحمدللہ کفی اللہ اہل السنۃ القتال ہفت حدیث را وعدہ کردم و بجا آور دیم کہ ہفت از افضل اعداد بود حالا بتقریب ذکر این فتوٰی در حدیث دیگر مذکور شد می خواہم کہ حدیث دگر خوانیم و عدد بہ تلک عشرہ کاملہ رسانیم و باللہ التوفیق۔

کہا، رُخ انور پھیرا، ہاتھ اٹھائے اور دعا کی (الحدیث) اس حدیث کے متعلق ان کا امام کہتا ہے کہ اس سے فرض نماز کے بعد دعا میں ہاتھ اٹھانا خود سید الانبیاء اسوہ الاتقیا صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم سے ثابت ہے جیسا کہ علماء اذکیا پر مخفی نہیں سید محمد نذیر حسین۔ میں کہتا ہوں مگر تمہارے مجتہدوں کی بیماری کا علاج کیا ہو سکتا ہے ! تمام تعریف اللہ تعالٰی کے لئے جو اہل سنت کو لڑائی کے لئے کافی ہے میں نے سات احادیث کا وعدہ کیا تھا جو میں نے پورا کردیا، اس لئے کہ سات کا عدد افضل اعداد میں سے ہے اور مذکورہ فتوٰی کے حوالے سے دو احادیث کا مزید ذکر آگیا اب میں چاہوں گا کہ ایک اور حدیث کا ذکر کردوں تاکہ اس ساتھ "تلك عشرة كاملة" کا عدد مکمل ہوجائے وباللہ التوفیق۔(ت)

حدیث دہم : امام احمد در مسند و نسائی در مجتبٰی و ابن حبان در صحیح از حارث بن مسلم و ابوداؤد در سنن از پدرش مسلم بن حارث رضی اللہ عنہ وھو الصواب کما افاد الحافظ المنذری في الترغیب روایت کنند سید عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم مرا و را فرمود اذا صلیت الصبح فقل قبل ان تتکلم

احدا من الناس، اللهم اجرنی من النار سبع مرات، فانك ان مت من یومك ذلك كتب الله لك جوارا من النار واذا صلیت المغرب فقل قبل ان تكلم احدا من الناس اللهم اجرنی من النار

دسویں حدیث : امام احمد نے مسند، نسائی نے مجتبیٰ، ابن حبان، صحیح میں حارث بن مسلم سے ابو داؤد نے سنن میں اس کے والد حارث بن مسلم رضی اللہ عنہ سے (اور یہی صواب ہے جیسا کہ حافظ منذری نے ترغیب میں ذکر کیا ہے) روایت کیا کہ نبی اکرم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے ان سے فرمایا "جب تم فجر کی نماز ادا کرلو تو لوگوں سے ہمکلام ہونے سے پہلے سات مرتبہ یہ دُعا پڑھو اللّٰھم اجرنی من النار (اے اللہ! مجھے دوزخ کی آگ سے آزاد فرما) اب اگر تو اس دن فوت ہو گیا تو اللہ تعالیٰ تجھے جہنم سے آزادی عطا فرمائے گا اور جب مغرب کی

Seven times, for if you die that night, Allah will write for you protection from the Fire[1]. After performing the morning prayer, before speaking to anyone, say this prayer seven times: "O Allah, grant me protection from hellfire." If you die on that day, Allah Almighty will write protection from Hell for you. Similarly, when you offer the evening prayer, do the same. If you die that night, it will be the same. "O Allah, protect us from the fire by Your mercy, O Mighty One, O Forgiver! And may the blessings and peace of Allah Almighty be upon His Chosen Prophet and his pure progeny and family. And Allah, Glory be to Him and Most High, knows best."

When you finish the prayer, before talking to people, recite this prayer seven times: "O Allah, protect me from the fire of Hell." If death comes to you that night, Allah Almighty will grant you freedom from Hell. "O Allah! Also grant us freedom from the punishment of Hell through Your mercy, O Mighty One, O Forgiver! And may the blessings and peace of Allah Almighty be upon His Chosen Prophet and his pure progeny and family. And Allah, Glory be to Him and Most High, knows best."

Issue No. 477: From Nadi Par Basti, Gwalior State, Gota Bawar Railway Post Office Nadi Mandkoor, sent by Syed Karamat Ali Sahib, scribe for Munshi Muhammad Amin Sahib, Railway Contractor, dated 4 Ramadan Al-Mubarak 1325 AH. To the presence of the eminent Maulana and our guide, Maulvi Ahmad Raza Khan Sahib, may his prosperity continue. Peace be upon you. It is submitted that due to some necessities, I am bothering you, requesting to be honored with a gracious answer from your elder's perspective. Is it correct to recite wazifa (incantations) or Durood Sharif loudly or not? There is some doubt in these matters and some evidence is also required, hence the need to inquire.

Al-Jawab (The Answer): My respected sir! Peace, mercy, and blessings of Allah be upon you. Durood Sharif or any wazifa should not be recited loudly when it causes distress to a person praying or a sleeping patient, or if there is a fear of ostentation (Riya). If no such prohibited condition exists or is suspected, then upon investigation, there is no harm, however, reciting it silently is better, as stated in the Hadith: "The best remembrance is the hidden one"[2] (As is in the noble Hadith that silent remembrance is better). And Allah, Glory be to Him and Most High, knows best.

Issue No. 478: From Meerut, office of Talismi Press, sent by Maulvi Muhammad Hussain Sahib, merchant of Talismi Press, 13 Ramadan 1338 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: that people around here, after the

salaam in Fajr and Asr, first recite tasbihat (praises) and then supplicate (dua), while over there, immediately after salaam, they supplicate. Which of these methods is Sunnah and what is the proof?

Al-Jawab (The Answer): Supplication (dua) after prayer is proven, and the Tasbih of Hazrat Batul Zahra (Fatima) (may Allah be pleased with her) has also been mentioned in authentic hadiths.

---

1. Sunan Abu Dawood, chapter 'What to say in the morning', published by Aftab Alam Press Lahore 2/733; Al-Targhib wa al-Tarhib fi Adhkar al-Kh, published by Mustafa al-Babi Egypt 1/302.
2. Musnad Ahmad bin Hanbal from Musnad Sa'd bin Abi Waqas, published by Dar al-Fikr Beirut 1/172-180-187.

फतावा-ए-रज़विया जिल्द शशुम (खंड 6)

सात बार, क्योंकि यदि आप उस रात मर जाते हैं, तो अल्लाह आपके लिए आग से सुरक्षा लिख देगा।[1] जब सुबह की नमाज़ अदा कर लें, तो किसी से बात करने से पहले सात बार यह दुआ करें: "हे अल्लाह, मुझे नर्क की आग से पनाह दे।" यदि आप उस दिन मर जाते हैं, तो अल्लाह सर्वशक्तिमान आपके लिए नर्क से पनाह लिख देगा। इसी तरह, जब आप शाम की नमाज़ अदा करें, तो वैसा ही करें। यदि आप उस रात मर जाते हैं, तो वैसा ही होगा। "हे अल्लाह! हमें भी अपनी दया से नर्क की सजा से आज़ाद फरमा, ऐ अज़ीज़ ऐ ग़फ़्फ़ार! और अल्लाह तआला की रहमतें और सलाम हो उनके चुने हुए नबी पर और उनकी पाक औलाद और घराने पर। और अल्लाह पाक बेहतर जानता है।"

नमाज़ पढ़ लो तो लोगों से बातचीत से पहले सात बार यह दुआ पढ़ लो: "اللھم اجرنی من النار" (ऐ अल्लाह! मुझे जहन्नुम की आग से बचा ले)। अगर उस रात तुझे मौत आ गई तो अल्लाह तआला तुझे जहन्नुम से आज़ादी अता फरमाएगा। "ऐ अल्लाह! हमें भी अपनी रहमत से जहन्नुम के अज़ाब से आज़ाद फरमा, या अज़ीज़ या ग़फ़्फ़ार! और अल्लाह तआला की रहमतें और सलाम हो उनके मुंतख़ब नबी पर और उनकी पाक औलाद और घराने पर। और अल्लाह सुब्हानहु व तआला बेहतर जानता है।"

मसला नंबर 477: नदी पार बस्ती इलाक़ा रियासत ग्वालियर, गोता बावर रेलवे डाकखाना नदी मंदकोर से मुर्सला सैयद करामत अली साहब, मुहर्रिर मुंशी मोहम्मद अमीन साहब ठेकेदार रेलवे, दिनांक 4 रमजान अल-मुबारक 1325 हिजरी। खिदमत-ए-फ़ैज़-ए-दर्जत मौलाना व मुर्शिदना मौलवी अहमद रज़ा खान साहब दाम इक़बालहु, अस्सलाम अलैकुम। अर्ज़ है कि कुछ ज़रूरतों की वजह से आपको तकलीफ़ दे रहा हूँ, दरख्वास्त है कि बुज़ुर्गाना तवज्जो से जवाब से नवाज़ा जाए। वज़ीफ़ा या दुरूद शरीफ़ बुलंद आवाज़ में पढ़ना दुरुस्त है या नहीं? इन मामलों में कुछ संदेह है और कुछ दलील की भी ज़रूरत है, इसलिए दरयाफ़्त करने की ज़रूरत हुई।

अल-जवाब: मुकर्रमी! अस्सलाम अलैकुम व रहमतुल्लाही व बरकातूह। दुरूद शरीफ़ चाहे कोई वज़ीफ़ा बुलंद आवाज़ से न पढ़ा जाए जब उसकी वजह से किसी नमाज़ी या सोते हुए मरीज़ को तकलीफ़ हो या दिखावे (रिया) का डर हो। और अगर कोई पाबंदी मौजूद या संदिग्ध न हो तो तहक़ीक़ के मुताबिक कोई हर्ज नहीं है, फिर भी चुपके से पढ़ना बेहतर है जैसा कि हदीस में है:

"बेहतरीन ज़िक्र वह है जो छुपा हुआ हो"[2] (जैसा कि हदीस शरीफ में है कि ज़िक्र-ए-ख़फ़ी बेहतर है)। और अल्लाह पाक बेहतर जानता है।

मसला नंबर 478: मेरठ दफ्तर तिलिस्मी प्रेस से मुर्सला मौलवी मोहम्मद हुसैन साहब ताजर तिलिस्मी प्रेस, 13 रमजान 1338 हिजरी। क्या फरमाते हैं उलमा-ए-दीन इस मसले में कि यहाँ के लोग सुबह और असर में सलाम के बाद पहले तस्बीहात पढ़कर दुआ मांगते हैं, और वहाँ सलाम के तुरंत बाद दुआ। इनमें से कौन सा तरीका सुन्नत है और इसका सबूत क्या है?

अल-जवाब: नमाज़ के बाद दुआ साबित है और हज़रत बतुल ज़हरा (रज़ियल्लाहु अन्हा) की तस्बीह भी सही हदीसों में आई है।

---

1. सुनन अबू दाऊद, अध्याय 'सुबह के समय क्या कहें', प्रकाशित आफ़ताब-ए-आलम प्रेस लाहौर 2/733; अल-तरग़ीब वल-तरहीब फ़ी अज़कार आदि, प्रकाशित मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र 1/302.
2. मुसनद अहमद बिन हंबल, मुसनद साद बिन अबी वक़्क़ास से, प्रकाशित दार अल-फ़िक्र बेरूत 1/172-180-187.

سبع مرات فانك ان مت لیلتك كتب الله لك جوارا من النار[1] چوں نماز بامداد ادا کنی پیش از آنکه با کسے سخن گوئی ہفت بار این دعا کن خدایا مرا از دوزخ پناہ دہ کہ اگر آں روز میری حق جل وعلا برائے تو پناہ از دوزخ نویسد وچوں نماز شام گزاری ہمچناں کن اگر آں شب میری ہمچناں شود اللھم اجرنا من النار برحمتك یا عزیز یا غفار وصلی اللہ تعالی علی نبیه المختار وآله الاطهار وبارك وسلم ۔ واللہ سبحنه وتعالی اعلم۔

نماز پڑھ لو تو لوگوں سے گفتگو سے پہلے سات دفعہ یہ دعا پڑھ لو اللھم اجرنی من النار (اے اللہ! مجھے جہنم کی آگ سے بچالے) اگر اس رات تجھے موت آگئی تو اللہ تعالیٰ تجھے جہنم سے آزادی عطا فرمائے گا۔ "اے اللہ! ہمیں بھی اپنی رحمت سے جہنم کے عذاب سے آزاد فرما یا عزیز یا غفار وصلی اللہ تعالیٰ علی نبیہ المختار وآلہ الاطہار وبارك وسلم ۔ واللہ سبحنہ وتعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۴۷۷: از ندی پار بستی علاقہ ریاست گوالیار گوتا باور ریلوے ڈاک خانہ ندی مند کور مرسلہ سید کرامت علی صاحب، محرر منشی محمد امین صاحب ٹھیکیدار ریلوے مذکور ۴ رمضان المبارک ۱۳۲۵ھ بخدمت فیض در جت مولینا و مرشد نا مولوی احمد رضا خاں صاحب دام اقبالہ، السلام علیک واضح رائے شریف ہو کہ بوجہ چند ضروریات کے آپ کو تکلیف دیتا ہوں کہ بنظر توجہ بزرگانہ جواب سے معزز فرمایا جاؤں۔ وظیفہ یا درود شریف بلند پڑھنا درست ہے یا نہیں ان معاملات میں کچھ شبہ ہے اور کچھ دلیل بھی ہوئی ہے لہذا دریافت کی ضرورت ہوئی۔

الجواب: مکرمی! السلام علیکم ورحمۃ اللہ وبرکاتہ۔ درود شریف خواہ کوئی وظیفہ بآواز نہ پڑھا جائے جبکہ اس کے باعث کسی نمازی یا سوتے مریض کی ایذا ہو یا ریا آنے کا اندیشہ اور اگر

کوئی محذور نہ موجود ہو نہ مظنون تو عند التحقیق کوئی حرج نہیں تاہم اخفا افضل ہے لما فی الحدیث خیر الذکر الخفی[2] (جیسا کہ حدیث شریف میں ہے کہ ذکر خفی بہتر ہے۔ت) واللہ سبحنہ وتعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۴۷۸: از میرٹھ دفتر طلسمی پریس مرسلہ مولوی محمد حسین صاحب تاجر طلسمی پریس ۱۳ رمضان ۱۳۳۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ادھر کے لوگ صبح اور عصر میں بعد سلام، اول تسبیحات پڑھ کر دعا مانگتے اور وہاں بعد سلام فوراً دعا، ان میں کون سا طریقہ سنت ہے اور کیا ثبوت ہے؟

الجواب: نماز کے بعد دعا ثابت ہے اور تسبیح حضرت بتول زہرا رضی اللہ تعالیٰ عنہا بھی صحیح حدیثوں میں آئی ہے۔

---

1 سنن ابو داؤد باب ما یقول اذا اصبح مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور ۲/۷۳۳، الترغیب والترہیب فی اذکار الخ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/۳۰۲ 2 مسند احمد بن حنبل از مسند سعد بن ابی وقاص مطبوعہ دار الفکر بیروت ۱/۱۷۲-۱۸۰-۱۸۷

Fatawa Razawiya, Volume 6

There are no Sunnah prayers after Fajr and Asr, providing an opportunity for long Dhikr. However, a custom has developed among Muslims, which is certainly commendable, to make supplication (Du'a) with the Imam after the Salaam. If the Imam delays the Du'a, people wait and then disperse after praying with him. In this state, if it is well-established that prioritizing Tasbeehs (invocations) would not be burdensome for any individual, there is no harm; otherwise, it is better for the Imam to finish with a brief Du'a so that anyone who wishes may stay for Tasbeehs. And Allah Almighty knows best.

Issue No. 449: From Ramu Chakma, Chittagong district, Madrasah Aziziyah, sent by Sayyid Mufiz-ur-Rahman, 10 Jumada al-Akhirah 1326 AH. Is it permissible to recite Durood Sharif loudly or not? On the second assumption, is it absolutely prohibited, or permissible but disliked (Makruh)? And is the dislike Karahat-e-Tahrimi (prohibitively disliked) or Tanzihi (slightly disliked)?

The Answer: Durood Sharif is Dhikr. Reciting Dhikr loudly is permissible as long as there is no ostentation (Riya), no nuisance to a person praying, a sick person, or one sleeping, and it does not go against any other Shari'ah-based interest. Similarly, reciting Durood Sharif loudly is permissible and commendable. The evidence for its permissibility is the consensus (Ijma') that the predecessors and successors, all Imams, scholars, and Muslims, recite it while reading Hadith and mentioning the holy name in the same voice they use for Hadith and speech, and this is 'loud' (Jahr). And Allah Almighty knows best.

Issue No. 450: From Bareilly, Muhalla Bihari Pur, Mr. Nawab Maulvi Sultan Ahmad Khan, 4 Safar-ul-Muzaffar 1330 AH. Is it correct to perform Munajat (supplication) after an obligatory (Fard) prayer that is followed by Sunnah prayers, or not? Should one perform Sunnah without Munajat or start Sunnah after a short Munajat? Provide evidence from Hadith or Fiqh books with the exact text, chapter reference, and name of the book. Explain, and you shall be rewarded.

The Answer: It is absolutely permissible and correct, but a long interval (Fasl-e-Taweel) is Makruh-e-Tanzihi (slightly disliked) and contrary to what is better. A short interval has no harm at all. It is mentioned in Durr-e-Mukhtar, in the chapter on the description of prayer:

Arabic Text	Urdu Translation
It is disliked to delay the Sunnah except for the duration of 'Allahumma Antas-Salam...' etc., and Halwani said: There is no harm in the interval.	Delaying the Sunnah prayers is disliked except for the duration of 'Allahumma Antas-Salam' etc. Halwani and others have said this.

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

फ़ज्र और अस्र के बाद सुन्नतें नहीं हैं, उनके बाद लंबे ज़िक्र का अवसर होता है। लेकिन मुसलमानों में यह प्रथा पड़ गई है और निश्चित रूप से सराहनीय है कि सलाम के बाद वे इमाम के साथ दुआ माँगते हैं। और अगर वह दुआ में देर करे तो वे इंतज़ार करते हैं, उसके साथ दुआ माँगने के बाद वे बिखर जाते हैं। इस स्थिति में, अगर यह अच्छी तरह से प्रमाणित हो जाए कि तस्बीहात को प्राथमिकता देना किसी भी व्यक्ति पर भारी नहीं पड़ेगा, तो कोई हर्ज नहीं है; अन्यथा यही बेहतर है कि इमाम संक्षिप्त दुआ माँग कर फारिग कर दे, फिर जिसका जी चाहे तस्बीहात में शामिल रहे। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 449: रामू चकमा कुँ ज़िला चटगाँव, मदरसा अज़ीज़िया से, प्रेषक: सैयद मफ़ीज़-उर-रहमान, 10 जमादी अल-आख़िरा 1326 हिजरी। दरूद शरीफ़ ज़ोर से (बिल-जहर) पढ़ना जायज़ है या नहीं? यदि नहीं, तो क्या यह पूरी तरह से नाजायज़ है, या नापसंदगी (कराहियत) के साथ जायज़ है? और क्या यह कराहियत-ए-तहरीमी है या तनज़ीही?

अल-जवाब: दरूद शरीफ़ ज़िक्र है। ज़ोर से ज़िक्र करना जायज़ है बशर्ते कि उसमें दिखावा (रिया) न हो, न ही किसी नमाज़ी, बीमार या सोये हुए व्यक्ति को तकलीफ हो, और न ही यह किसी अन्य शरई हित के खिलाफ हो। इसी तरह, दरूद शरीफ़ ज़ोर से पढ़ना जायज़ और मुस्तहब (सराहनीय) है। इसकी स्वीकार्यता का प्रमाण इज्मा (आम सहमति) है कि सल्फ़ और खलफ़ (पूर्वजों और बाद वालों), सभी इमामों, विद्वानों और मुसलमानों ने हदीस पढ़ने और पवित्र नाम के ज़िक्र के दौरान उसे उसी आवाज़ में कहा है जिस आवाज़ में वे हदीस और कलाम पढ़ रहे होते हैं, और यही 'जहर' (ज़ोर से बोलना) है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 450: बरेली, मोहल्ला बिहारी पुर से, जनाब नवाब मौलवी सुल्तान अहमद खान साहब, 4 सफ़र-उल-मुज़फ़्फ़र 1330 हिजरी। जिस फर्ज़ के बाद सुन्नत है, उस फर्ज़ के बाद मुनाजात (दुआ) करना सही है या नहीं? या बिना मुनाजात के सुन्नत अदा करे, या संक्षिप्त मुनाजात के बाद सुन्नत शुरू करे? हदीस या फिक्ह की किताब से इबारत, अध्याय के निशान और किताब के नाम के साथ प्रमाण होना चाहिए। स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिलेगा।

अल-जवाब: जायज़ और सही तो पूरी तरह से है, लेकिन लंबा अंतराल (फ़स्ल-ए-तवील) मकरूह-ए-तनज़ीही और बेहतर के खिलाफ है। और संक्षिप्त अंतराल में कोई हर्ज नहीं है। दुर्रे मुख्तार, नमाज़ के गुण के अध्याय (फ़स्ल सिफ़त-उस-सलात) में है:

अरबी पाठ

सुन्नत में देरी करना मकरूह है सिवाय 'अल्लाहुम्मा अन्तस-सलाम...' आदि की अवधि के, और हलवानी ने कहा: अंतराल में कोई हर्ज नहीं है।

उर्दू अनुवाद

सुन्नतों को टालना मकरूह है सिवाय 'अल्लाहुम्मा अन्तस-सलाम' आदि की मात्रा के। हलवानी और अन्य ने यही कहा है।

पृष्ठ 234 ऑफ़ 736

صبح اور عصر کے بعد سنتیں نہیں ان کے بعد ذکر طویل کا موقع ہے مگر مسلمانوں میں رسم یہ پڑ گئی ہے اور ضرور محمود ہے کہ بعد سلام امام کے ساتھ دعا مانگتے ہیں اور اگر وہ دعا میں دیر کرے منتظر رہتے ہیں، ان کے ساتھ دعا مانگنے کے بعد متفرق ہوتے ہیں اس حالت میں تسبیحات کی تقدیم اگر خوب تحقیق ثابت ہو کہ ان میں کسی ایک فرد پر بھی ثقیل نہ ہوگی تو کچھ حرج نہیں ورنہ یہی بہتر ہے کہ خفیف دعا مانگ کر فارغ کر دے پھر جس کے جی میں آئے تسبیحات میں شامل رہے۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ نمبر ۴۴۹: از رامو چکما کوں ضلع چٹاگانگ مدرسہ عزیزیہ مرسلہ سید مفیض الرحمٰن ۱۰ جمادی الاخر ی ۱۳۲۶ھ درود شریف بالجہر پڑھنا جائز ہے یا نہیں۔ بر تقدیر ثانی مطلقاً نا جائز ہے یا جواز مع الکراہت اور کراہت تحریمی ہے یا تنزیہی؟

الجواب: درود شریف ذکر ہے ذکر بالجہر جائز ہے جبکہ نہ ریاء ہو نہ کسی نمازی یا مریض یا سوتے کی ایذا نہ کسی اور مصلحت شرعیہ کا خلاف، یو نہی درود شریف جہرًا جائز و مستحب ہے جس کے جواز پر دلیل اجماع کہ قراتِ حدیث و ذکرِ نامِ اقدس میں سلفاً خلفاً تمام ائمہ و علماء و مسلمین صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم اُسی آواز سے کہتے ہیں جتنی آواز سے قراتِ حدیث و کلام کر رہے ہیں اور یہ جہر ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ نمبر ۴۵۰: از بریلی محلہ بہاری پور جناب نواب مولوی سلطان احمد خان صاحب ۴ صفر المظفر ۱۳۳۰ھ جس فرض کے بعد سنت ہے اس فرض کے بعد مناجات کرنا درست ہے یا نہیں؟ یا

بغیر مناجات کے سنت ادا کرے یا مختصر مناجات کے بعد سنت شروع کرے؟ دلیل حدیث یا فقہ کی کتاب سے مع عبارت ہونی چاہئے مع نشان باب و نام کتاب۔ بینوا توجروا۔

الجواب: جائز و درست تو مطلقاً ہے مگر فصلِ طویل مکروہِ تنزیہی و خلافِ اولیٰ ہے اور فصلِ قلیل میں اصلاً حرج نہیں ، دُرِ مختار فصل صفتہ الصلوۃ میں ہے:

عربي عبارت	اردو ترجمہ
يكره تأخير السنة الا بقدر اللهم انت السلام الخ و قال الحلوانى لا باس بالفصل	سنتوں کا مؤخر کرنا مکروہ ہے مگر اللهم انت اسلام الخ کی مقدار۔ حلواني نے کہا اور اور

Fatawa-e-Razvia Volume VI

| (Arabic) with litanies, and Al-Kamal chose it. Al-Halabi said: If the meaning of 'dislike' (karahah) is 'disliked but permissible' (tanzih), then the difference disappears. I say: In my memory, Halwani has applied it to short litanies. | (Urdu) There is no harm in the interval (pause) because of supplications; Kamal has considered this the preferred view. Halabi said that if by 'dislike' is meant 'tanzih', then the difference itself is resolved. I say I remember that Halwani applied this to short litanies. (T) |

In Fath al-Qadir it says: | (Arabic) The statement of Al-Halwani 'no harm etc.' and the well-known understanding of this phrase is that the opposite is better. Thus, its meaning is that it is better not to recite litanies before the Sunnah prayers, but if one does, there is no harm. This is summarized. Al-Shami cited it and then said, and his student followed him in Al-Hilyah and said: The 'dislike' in the statement of Al-Baqali should be understood as 'tanzih' (not reaching the level of prohibition) due to the lack of evidence for it being 'tahrim' (prohibited). Therefore, if one performs the Sunnah after litanies, they are considered performed, though not at the prescribed time. | (Urdu) Halwani's statement 'no harm etc.' (meaning no harm in an interval due to supplications), the well-known view regarding this phrase is that it is contrary to what is 'better' (khilaf-e-awla). In this case, the meaning would be that it is better not to recite (litanies) before the Sunnah; if someone did so, there is no harm, etc. in brief. Shami cited this and then stated that in 'Hilyah', his student followed him and said: Due to lack of evidence for 'prohibitive dislike' (makruh-e-tahrimi), the dislike in Baqali's statement should be understood as 'minor dislike' (karahat-e-tanzih). Even if a person performed Sunnahs after litanies, they would be considered performed, although not in the Sunnah (prescribed) time. (T) |

In Radd al-Muhtar it says: | (Arabic) Muslim and Al-Tirmidhi narrated from Aisha (may Allah be pleased with her): The Messenger of Allah (peace and blessings be upon him) did not sit (after the obligatory prayer) except for the duration of saying "O Allah, You are peace..." etc. He said: And Aisha's statement 'for the duration' does not imply that he was saying... | (Urdu) Muslim and Tirmidhi narrated from Mother of the Believers Aisha (may Allah be pleased with her) that the Noble Prophet (peace and blessings be upon him) would only sit (after obligatory prayer) for the duration of saying 'Allahumma Antas-Salam'. Shami said that Mother of the Believers Aisha's (may Allah be pleased with her) statement 'for the duration'... |

1 Durr al-Mukhtar, Chapter: Description of Prayer, published by Mujtabai Delhi 1/79 2 Fath al-Qadir, Chapter: Voluntary Prayers, published by Nooria Razvia Sukkur 1/382 3 Radd al-Muhtar, Chapter: Description of Prayer, published by Mustafa al-Babi Egypt 1/392

फ़तावा-ए-रज़विया जिल्द 6

| (अरबी) वज़ीफ़ों के साथ और अल-कमाल ने इसे चुना है। अल-हलबी ने कहा: यदि नापसंदगी (कराहियत) से तात्पर्य 'तन्ज़ीह' (मामूली नापसंदगी) है, तो मतभेद ही खत्म हो जाता है। मैं कहता हूँ: मुझे याद आता है कि हलवानी ने इसे कम वज़ीफ़ों पर लागू किया है। | (उर्दू) दुआओं की वजह से वक़्फ़े में कोई हर्ज नहीं, कमाल ने इसे मुख़्तार (पसंदीदा) करार दिया है। हलबी ने कहा कि अगर कराहत से मुराद तन्ज़ीही हो तो इख्तिलाफ़ ही ख़त्म हो जाता है। मैं कहता हूँ मुझे याद आता है कि हलवानी ने इसे औराद-ए-क़लीला (कम वज़ीफ़ों) पर महमूल किया है। (त) |

फ़तह-उल-क़दीर में है: | (अरबी) अल-हलवानी का कथन 'कोई हर्ज नहीं आदि' और इस इबारत में मशहूर बात यह है कि इसका उलट बेहतर है। अतः इसका अर्थ यह है कि बेहतर यह है कि सुन्नत से पहले वज़ीफ़े न पढ़े जाएँ लेकिन अगर किसी ने पढ़ लिए तो कोई हर्ज नहीं। यह संक्षिप्त है। अल-शामी ने इसे नक़ल किया फिर कहा, और उनके छात्र ने अल-हिलिया में उनका अनुसरण किया और कहा: अल-बक़ाली के कथन में कराहियत को 'तन्ज़ीही' पर महमूल किया जाएगा क्योंकि 'तहरीमी' (निषिद्ध) होने का कोई प्रमाण नहीं है, यहाँ तक कि अगर किसी ने वज़ीफ़ों के बाद सुन्नतें पढ़ीं तो वे अदा मानी जाएँगी लेकिन सुन्नत (मसनून) वक़्त में नहीं। | (उर्दू) हलवानी का कौल 'ला बास' आदि (दुआओं की वजह से वक़्फ़े में कोई हर्ज नहीं) इस इबारत में मशहूर है कि इसका ख़िलाफ़-ए-औला (बेहतर के विपरीत) है। इस सूरत में मा'नी यह होगा कि सुन्नत से पहले (औराद का) न पढ़ना औला है, अगर किसी ने ऐसा कर लिया तो उसमें हर्ज नहीं इख़्तिसारन। शामी ने इसको नक़ल करके इसके बाद फ़रमाया 'हिलिया' में उनके शागिर्द ने उनकी इत्तिबा की और कहा मकरूह-ए-तहरीमी पर दलील न होने की वजह से बक़ाली के कौल में कराहत को कराहत-ए-तन्ज़ीही पर महमूल किया जाएगा। हत्ता कि अगर किसी शख़्स ने औराद के बाद सुन्नतें अदा कीं तो वह अदा ही होगी अलबत्ता वक़्त-ए-मसनून में अदा नहीं हुईं। (त) |

रद-उल-मुहतार में है: | (अरबी) मुस्लिम और तिर्मिज़ी ने आयशा (रज़िअल्लाहु अन्हा) से रिवायत किया कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) केवल उतनी देर बैठते थे जितनी देर में "अल्लाहुम्मा अन्तास्सलामु..." आदि कहा जाता है। उन्होंने कहा: और आयशा का यह कथन 'उतनी मिक़दार में' यह साबित नहीं करता कि वह कह रहे थे... | (उर्दू) मुस्लिम और तिर्मिज़ी ने हज़रत आयशा रज़िअल्लाहु तआला अन्हा से रिवायत किया कि नबी अकरम सल्लल्लाहु तआला अलैहि

वसल्लम (नमाज़-ए-फ़र्ज़ के बाद) 'अल्लाहुम्मा अन्तास्सलामु' की मिक़दार ही बैठते थे। शामी ने कहा कि हज़रत आयशा रज़िअल्लाहु तआला अन्हा के कौल की 'ब-मिक़दार' से... |

---

1 दुर्रे मुख़्तार, बाब: सिफ़त-उस-सलात, मतबुआ मुज्तबाई दिल्ली, 1/79 2 फ़तह-उल-क़दीर, बाब: अन-नवाफ़िल, मतबुआ नूरिया रज़विया सुक्खर, 1/382 3 रद-उल-मुहतार, बाब: सिफ़त-उस-सलात, मतबुआ मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 1/392

| بالا وراد واختاره الكمال قال الحلبي ان اريد بالكراهة التنزيهية ارتفع الخلاف قلت وفی حفظي حمله علی القليلة | دعاؤں کی وجہ سے فصل (وقفہ) میں کوئی حرج نہیں کمال نے اسے مختار قرار دیا ہے۔ حلبی نے کہا کہ اگر کراہت سے مراد تنزیہی ہو تو اختلاف ہی ختم ہو جاتا ہے۔ میں کہتا ہوں مجھے یاد آتا ہے کہ حلوانی نے اسے اور اد قلیلہ پر محمول کیا ہے۔ (ت) |

فتح القدیر میں ہے: | قول الحلواني لا بأس الخ والمشهور في هذه العبارة كون خلافه اولی فكان معناها ان الاولی ان لا يقرأ ای الاوراد قبل السنة ولو فعل لا باس اه مختصرا نقله الشامي ثم قال وتبعه علی ذلك تلميذه في الحلية وقال فتحمل الكراهة في قول البقالي علی التنزيهية لعدم دليل التحريمية حتی لو صلاها بعد الاوراد تقع سنة مؤادة لكن لا في وقتها المسنون | حلوانی کا قول لا باس الخ (دعاؤں کی وجہ سے فصل (وقفہ) میں کوئی حرج نہیں) اس عبارت میں مشہور ہے کہ اس کا خلاف اولی ہے اس صورت میں معنی یہ ہوگا کہ سنّت سے پہلے (اوراد کا) نہ پڑھنا اولی ہے، اگر کسی نے ایسا کرلیا تو اس میں حرج نہیں اھ اختصاراً۔ شامی نے اس کو نقل کرکے اس کے بعد فرمایا حلیہ میں ان کے شاگرد نے ان کی اتباع کی اور کہا مکروہ تحریمی پر دلیل نہ ہونے کی وجہ سے بقالی کے قول میں کراہت کو کراہت تنزیہی پر محمول کیا جائے گا۔ حتی کہ اگر کسی شخص نے اور اد کے بعد سنّتیں ادا کیں تو وہ ادا ہی ہو گی البتہ وقت مسنون میں ادا نہیں ہوئیں (ت) |

رد المحتار میں ہے: | مسلم والترمذي عن عائشة رضی اللہ تعالی عنها كان رسول اللہ صلی اللہ علیه وسلم لا يقعد الا بمقدر ارما يقول اللهم انت السلام الخ قال وقول عائشة بمقدار لا يفيد انه كان يقول | مسلم اور ترمذی نے حضرت عائشہ رضی اللہ تعالٰی عنہا سے روایت کیا کہ نبی اکرم صلی اللہ

تعالیٰ علیہ وسلم (نماز فرض کے بعد) اللھم انت السلام کی مقدار ہی بیٹھتے تھے۔ شامی نے کہا کہ حضرت عائشہ رضی اللہ تعالیٰ عنہا کے قول کی بمقدار سے |

---

1 در مختار باب صفة الصلوٰة مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱/ ۷۹ 2 فتح القدیر باب النوافل مطبوعہ نوریہ رضویہ سکھر ۱/ ۳۸۲ 3 رد المحتار باب صفة الصلوٰة مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/ ۳۹۲

Fatawa Ridawiyya - Volume 6

(Right Column): It is not established that at that time precisely these words... roughly this prayer or any other similar prayer could have been recited. Therefore, this statement of theirs will not be contrary to the narration of Bukhari and Muslim that the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) used to recite this prayer after every obligatory prayer: 'La ilaha illallahu wahdahu la sharika lahu, lahul-mulku wa lahul-hamdu, wa huwa 'ala kulli shay'in qadir. Allahumma la mani'a lima a'taita, wa la mu'tiya lima mana'ta, wa la yanfa'u dhal-jaddi minkal-jadd.' (There is no god but Allah, alone, without partner. To Him belongs the kingdom and to Him is the praise, and He is over all things powerful. O Allah! None can withhold what You grant, and none can grant what You withhold, and the fortune of the fortunate cannot protect them against Your punishment.) The details are in 'Sharh al-Munyah' and similarly in 'Fath al-Qadir' in the chapter of Witr and Nawafil. (Summarized)

(Left Column): That precisely, but rather he would sit for as long as it takes him and similar words approximately, so it does not contradict what is in the two Sahihs that he (peace and blessings of Allah be upon him) used to say after every prescribed prayer: 'La ilaha illallahu wahdahu la sharika lahu, lahul-mulku wa lahul-hamdu, wa huwa 'ala kulli shay'in qadir. Allahumma la mani'a lima a'taita, wa la mu'tiya lima mana'ta, wa la yanfa'u dhal-jaddi minkal-jadd.' And its complete version is in Sharh al-Munyah and also in al-Fath in the chapter of Witr and optional prayers, summarized.

(Bottom Section - Right): It is mentioned in Ghunya: And similarly what Muslim and others narrated from Abdullah bin al-Zubayr (may Allah be pleased with them both) that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him), when he finished the prayer with Taslim, would say in his loudest voice: 'La ilaha illallahu wahdahu la sharika lahu, lahul-mulku wa lahul-hamdu, wa huwa 'ala kulli shay'in qadir, wa la hawla wa la quwwata illa billah, wa la na'budu illa iyyah, lahun-ni'matu wa lahul-fadlu wa lahu-th-thana'ul-hasan, la ilaha illallah...'

(Bottom Section - Left): Similarly, that hadith (i.e., the statement of Hazrat Aisha is not contrary to this hadith either) which Muslim and others have narrated from Hazrat Abdullah bin al-Zubayr (may Allah be pleased with them both) that when the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) finished the prayer with Taslim, he would say in a loud voice: There is no god but Allah, He is one, there is no partner for Him, His is the kingdom, His is the praise, and He has power over everything. There is no turning away from evil and no strength for good...

1. Radd al-Muhtar, Chapter: Description of Prayer, printed by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/391.

फ़तावा रज़विया - जिल्द 6

(दायां कॉलम): यह साबित नहीं होता कि उस समय बिल्कुल यही शब्द... लगभग यही दुआ या इसी तरह की कोई दूसरी दुआ पढ़ी जा सकती थी। इसलिए उनका यह कथन बुखारी और मुस्लिम के इस वर्णन के विपरीत नहीं होगा कि नबी अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) हर फ़र्ज़ नमाज़ के बाद यह दुआ पढ़ते थे: 'ला इलाहा इल्लल्लाहु वहदहु ला शरीका लहू, लहुल-मुल्कु व लहुल-हम्दु, व हुवा अला कुल्लि शय-इन कदीर। अल्लाहुम्मा ला मानिआ लिमा अतैता, व ला मुति-या लिमा मनअता, व ला यन्फ़उ ज़ल-जद्दी मिन्कल-जद्द।' (अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं, वह अकेला है, उसका कोई साझी नहीं, उसी का राज्य है, उसी की प्रशंसा है, और वह हर चीज़ पर सक्षम है। ऐ अल्लाह! जो तू दे उसे कोई रोक नहीं सकता, और जिसे तू रोक ले उसे कोई दे नहीं सकता, और किसी भाग्यशाली का भाग्य तेरे प्रकोप से उसे बचा नहीं सकता) इसका विवरण 'शरह अल-मुनिया' और इसी तरह 'फतह अल-कादिर' के वित्र और नवाफिल के अध्याय में है। (संक्षेप में)

(बायां कॉलम): बिल्कुल वही, बल्कि वह उतनी देर बैठते थे जितना उन्हें संभव होता था और लगभग उसी तरह के शब्द, इसलिए यह दोनों सहीह (बुखारी व मुस्लिम) में वर्णित बात के विपरीत नहीं है कि वह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) हर अनिवार्य नमाज़ के बाद कहते थे: 'ला इलाहा इल्लल्लाहु वहदहु ला शरीका लहू, लहुल-मुल्कु व लहुल-हम्दु, व हुवा अला कुल्लि शय-इन कदीर। अल्लाहुम्मा ला मानिआ लिमा अतैता, व ला मुति-या लिमा मनअता, व ला यन्फ़उ ज़ल-जद्दी मिन्कल-जद्द।' और इसका पूर्ण विवरण शरह अल-मुनिया में है और फ़तह में वित्र और नफ़्ल के अध्याय में भी, संक्षिप्त।

(निचला हिस्सा - दायां): गुन्या में है: और इसी तरह जो मुस्लिम और अन्य ने अब्दुल्लाह बिन अल-ज़ुबैर (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत किया है कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) जब नमाज़ से सलाम फेरते तो अपनी बुलंद आवाज़ में कहते: 'ला इलाहा इल्लल्लाहु वहदहु ला शरीका लहू, लहुल-मुल्कु व लहुल-हम्दु, व हुवा अला कुल्लि शय-इन कदीर, व ला हौला व ला कुव्वता इल्ला बिल्लाह, व ला ना'बुदु इल्ला इय्याह, लहुन-नि'मतु व लहुल-फ़ज़्लु व लहु-थ-थना-उल-हसन, ला इलाहा इल्लल्लाह...'

(निचला हिस्सा - बायां): इसी तरह वह हदीस (यानी हज़रत आयशा का कथन इस हदीस के भी विपरीत नहीं है) जिसे मुस्लिम और अन्य ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन अल-ज़ुबैर (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत किया है कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) जब नमाज़ से सलाम फेरते तो

बुलंद आवाज़ से कहते: अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं, वह एक है, उसका कोई साझी नहीं, सल्तनत उसी की है, प्रशंसा उसी के लिए है, और वह हर चीज़ पर सक्षम है, बुराई से फिरना और नेकी की ताक़त...

---

1. रद्द अल-मुह्तार, अध्याय: नमाज़ का वर्णन, मुस्तफ़ा अल-बाबी द्वारा मुद्रित, मिस्र, 1/391।

(دائیں کالم): یہ ثابت نہیں ہوتا کہ اس وقت میں بعینہ یہی کلمات جس میں تقریباً یہی دُعا یا اسی طرح کی کوئی دوسری دعا پڑھی جاسکتی تھی ۔ لہذا ان کا یہ قول بخاری و مسلم کی اس روایت کے منافی نہ ہوگا کہ نبی اکرم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم ہر فرض نماز کے بعد یہ دُعا پڑھتے : لا الہ الا اللہ وحدہ لا شریک لہ لہ الملك وله الحمد وهو على كل شيئ قدير اللهم لا مانع لما اعطيت ولا معطى لما منعت ولا ينفع ذا الجد منك الجد (اللہ کے سوا کوئی معبود نہیں وہ وحدہ لا شریک ہے، ملک اس کا، حمد اس کی، اور وہ ہر شے پر قادر ہے، اے اللہ ! تیری عطا میں کوئی رکاوٹ نہیں بن سکتا، جو تُو نہ دے وہ کوئی اور دے نہیں سکتا اور کسی کو اس کا بخت و دولت تیرے قہر و عذاب سے بچا نہیں سکتا) اس کی تفصیل شرح المنیہ اور اسی طرح فتح القدیر کے باب الوتر والنوافل میں ہے اہ اختصاراً(ت)

(بائیں کالم): ذلك بعينه بل كان يقعد بقدر مايسعه و نحوه من القول تقريبًا فلا ينافي في الصحيحين من انه صلى الله تعالٰى عليه وسلم كان يقول دبر كل مكتوبة لا اله الا الله وحده لا شريك له له الملك وله الحمد وهو على كل شيئ قدير اللهم لا مانع لما اعطيت ولا معطى لما منعت ولا ينفع ذا الجد منك الجد وتمامه في شرح المنية وكذا في الفتح من الوتر والنوافل اه مختصرا -

(نیچے دائیں): غنیہ میں ہے : وكذا ماروى مسلم و غيره عن عبدالله بن الزبير رضى الله تعالٰى عنهما كان رسول الله صلى الله تعالٰى عليه وسلم اذا سلم من صلوته قال بصوته الاعلى لا اله الا الله وحده لا شريك له له الملك وله الحمد وهو على كل شيئ قدير ولا حول ولا قوة الا بالله ولا نعبد الا اياه لہ النعمة وله الفضل وله الثناء الحسن لا اله الا الله

(نیچے بائیں): اسی طرح وہ حدیث (یعنی حضرت عائشہ کا قول اس حدیث کے بھی منافی نہیں) ہے جس کو مسلم وغیرہ نے حضرت عبداللہ بن الزبیر رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے روایت کیا ہے کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم جب نماز سے سلام پھیرتے تو بلند آواز سے کہتے : اللہ کے سوا کوئی معبود نہیں وہ یکتا ہے اسکا کوئی شریک نہیں سلطنت اسی کی، حمد اسی کے لئے ، اور وہ ہر شے پر قادر ہے ،، برائی سے پھیر نانیکی کی

---

1 ردالمحتار باب صفۃ الصلوۃ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/ ۳۹۱

Fatawa-e-Razvia - Volume Six

[Top Box Left Side - Arabic] ...mمن المقدار المذكور لان الكافرون ولو كره الدين له خلصين
حيث التقريب دون التحديد قد يسع كل واحد من نحو هذه الاذكار لعدم التفاوت الكثيرة بينهما الخ

[Top Box Right Side - Urdu Translation] ...Granting power is in the power and capability of Allah alone; we do not worship anyone but Him. Grace and blessing are for Him, beautiful praise is for Him; there is no god but Allah, we are sincere to Him in religion even if the disbelievers dislike it. Because the mentioned quantity is based on approximation rather than restriction, any of these adhkar (remembrances) can be read in this amount as there is not much difference between them etc. (T)

[Middle Box Left Side - Persian] Ashe'at al-Lam'at, commentary on Mishkat, Chapter of Remembrance after Prayer: It should be known that the precedence of a narration does not contradict its subsequent placement in another narration regarding certain prayers and adhkar occurring in the Hadiths, such as reciting ten times after Fajr and Maghrib prayers: 'There is no god but Allah, alone without partner, His is the kingdom, His is the praise, and He has power over all things.' (Briefly)

[Middle Box Right Side - Urdu Translation] It is necessary to know here that the precedence of a narration does not contradict its following placement because there are Hadiths regarding certain prayers and adhkar; one narration states that after Fajr and Maghrib prayers these words should be read ten times: There is no god but Allah, He is unique in His essence and attributes, He has no partner, the kingdom is His, the praise is His, and He has power over everything. (Briefly). (T)

From this it is evident that reciting Ayat-ul-Kursi or the Kalima of Tawhid ten times after the Fard of Maghrib is a short interval. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 451: From the old city, Mohalla Rohilla Tola, asked by Maulana Rahimullah, 19 Rajab al-Murajab 1336 AH. Zaid, after every congregational obligatory prayer, before asking for supplication (dua), recites the Kalima of Tawhid once every day, and after the supplication, the Kalima Tayyiba three times and the Kalima of Shahadat once in a loud voice with the intention of joining the congregation. Is this act of his permissible or not?

The Answer: It is permissible, but the congregants should be left to their own choice and not be forced. And Allah Almighty knows best.

1 Ghuniyat al-Mustamli, commentary on Munyat al-Musalli, Chapter on the Description of Prayer, published by Sohail Academy, Lahore, p. 344. 2 Ashe'at al-Lam'at, commentary on Mishkat, Chapter One of the Section on Remembrance after Prayer, published by Nooria Razvia, Sukkur, 1/418.

फ़तावा-ए-रज़विया - छठा खंड

[ऊपरी बॉक्स बाईं ओर - अरबी] ...मखलिसीना लहुद्दीन वलौ करिहल काफ़िरून लअन अल-मिक़्दार अल-मज़कूर मिन हैसुत तक़रीब दूनत तहदीद क़द यसऊ कुलु वाहिदिम मिन नह्वि हाज़िहिल अज़कार लि-अदमित तफ़ावतिल कसीरति बैनहुमा इलख

[ऊपरी बॉक्स दाईं ओर - उर्दू अनुवाद] ...शक्ति प्रदान करना केवल अल्लाह की शक्ति और क्षमता में है; हम उसके अलावा किसी की पूजा नहीं करते। अनुग्रह और आशीर्वाद उसी के लिए है, सुंदर प्रशंसा उसी की है; अल्लाह के अलावा कोई पूज्य नहीं है, हम उसी के लिए धर्म को शुद्ध करने वाले हैं, भले ही काफ़िर इसे नापसंद करें। क्योंकि वर्णित मात्रा अनुमानित है न कि प्रतिबंधात्मक, इसलिए इन अज़कार (स्मरणों) में से प्रत्येक को इस मात्रा में पढ़ा जा सकता है क्योंकि उनके बीच बहुत अधिक अंतर नहीं है आदि। (त)

[मध्य बॉक्स बाईं ओर - फ़ारसी] मिश्कात की व्याख्या अशअतुल लमआत में, प्रार्थना के बाद स्मरण के अध्याय में है: यह ज्ञात होना चाहिए कि किसी वर्णन की प्रधानता उसके बाद आने वाले वर्णन के विपरीत नहीं है, क्योंकि हदीसों में कुछ प्रार्थनाओं और अज़कार का उल्लेख है, जैसे फज्र और मग़रिब की नमाज़ के बाद दस बार यह पढ़ना: 'ला इलाहा इल्लल्लाहु वहदहु ला शरीका लहू लहुल मुल्कु व लहुल हम्दु वहुवा अला कुल्लि शैइन क़दीर'। (संक्षेप में)

[मध्य बॉक्स दाईं ओर - उर्दू अनुवाद] यहाँ यह जानना आवश्यक है कि एक वर्णन की प्रधानता दूसरे के बाद आने के विपरीत नहीं है क्योंकि कुछ प्रार्थनाओं और अज़कार के बारे में हदीसें मौजूद हैं; एक रिवायत में है कि फज्र और मग़रिब की नमाज़ के बाद ये शब्द दस बार पढ़े जाने चाहिए: अल्लाह के सिवा कोई पूज्य नहीं है, वह अपनी ज़ात और सिफ़ात में अद्वितीय है, उसका कोई साथी नहीं है, साम्राज्य उसी का है, प्रशंसा उसी की है, और वह हर चीज़ पर शक्ति रखता है। (संक्षेप में)। (त)

इससे स्पष्ट हुआ कि मग़रिब के फ़र्ज़ के बाद आयतुल कुर्सी या कलिमा-ए-तौहीद दस बार पढ़ना एक संक्षिप्त अंतराल है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

प्रश्न संख्या 451: पुराने शहर, मोहल्ला रोहिल्ला टोला से, मौलवी रहीमउल्लाह द्वारा पूछा गया, 19 रजब अल-मुरज्जब 1336 हिजरी। ज़ैद हर जमात वाली फर्ज़ नमाज़ के बाद, दुआ माँगने से पहले रोज़ाना एक बार कलिमा-ए-तौहीद पढ़ता है, और दुआ के बाद कलिमा तैयबा तीन बार और कलिमा

शहादत एक बार ज़ोर से जमात के साथ रहने की नीयत से पढ़ता है। क्या उसका यह कार्य जायज़ है या नहीं?

उत्तर: जायज़ है, लेकिन उपस्थित लोगों को उनकी खुशी पर छोड़ दिया जाना चाहिए और मजबूर नहीं किया जाना चाहिए। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

1 ग़ुनियत अल-मुस्तमली, मुनियत अल-मुसल्ली की व्याख्या, नमाज़ के विवरण पर अध्याय, सोहैल अकादमी, लाहौर द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 344। 2 अशअतुल लमआत, मिश्कात की व्याख्या, नमाज़ के बाद स्मरण के अध्याय का पहला खंड, नूरिया रज़विया, सुक्कुर द्वारा प्रकाशित, 1/418।

पृष्ठ 237/736

[اوپری باکس بائیں طرف - عربی] مخلصین له الدین ولو کره الکافرون لان المقدار المذکور من حیث التقریب دون التحدید قد یسع کل واحد من نحو هذه الاذکار لعدم التفاوت الکثیرة بینهما الخ

[اوپری باکس دائیں طرف - اردو ترجمہ] طاقت دینا یہ اللہ ہی کی طاقت و قدرت میں ہے ہم اس کے سوا کسی کی عبادت نہیں کرتے نعمت و فضل اسی کے لئے، ثناء جمیل اسی کی ہے، اللہ کے سوا کوئی معبود نہیں، خالص کرنے والے ہیں (اس کے لئے) دین کو اگرچہ کافر اسے ناپسند کریں کیونکہ مقدار مذکور تقربی اعتبار سے ہے نہ کہ تحدیدی اعتبار سے، اس مقدار میں ان اذکار میں سے ہر ایک پڑھا جاسکتا ہے کیونکہ ان کے درمیان زیادہ تفاوت نہیں الخ (ت)

[درمیانی باکس بائیں طرف - فارسی] اشعۃ اللمعات شرح مشکوٰۃ باب الذکر بعد الصلوٰۃ میں ہے: باید دانست کہ تقدیم روایت منافی نیست بعدیتے را کہ در باب بعض ادعیہ و اذکار در احادیث واقع شدہ است ، کہ بخواند بعد از نماز فجر و مغرب دہ بار لا الہ الا اللہ وحدہ لا شریك له له الملك وله الحمد وهو علی کل شیئی قدیر (مختصراً)

[درمیانی باکس دائیں طرف - اردو ترجمہ] یہاں اس بات کا جاننا ضروری ہے کہ تقدیم روایت بعدیت روایت کے منافی نہیں کیونکہ بعض دعاؤں اور اذکار کے بارے میں احادیث موجود ہیں ایک روایت میں ہے کہ نماز فجر اور مغرب کے بعد دس مرتبہ یہ کلمات پڑھے جائیں: اللہ کے سوا کوئی معبود نہیں وہ یکتا ہے ذات و صفات میں اسکا کوئی شریک نہیں، سلطنت اسی کی ہے، حمد اسی کی ہے اور وہ ہر شے پر قادر ہے۔ (مختصراً)۔ (ت)

یہاں سے ظاہر ہوا کہ آیۃ الکرسی یا فرض مغرب کے بعد دس بار کلمہ توحید پڑھنا فصل قلیل ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۴۵۱: از شہر کہنہ محلہ روہیلہ ٹولہ مسئولہ مولوی رحیم اللہ ۱۹ رجب المرجب ۱۳۳۶ھ زید بعد ہر نماز جماعت فریضہ قبل از مانگنے دُعا روز ایک مرتبہ کلمہ توحید روز بعد مانگنے دعا کلمہ طیبہ تین مرتبہ اور ایک مرتبہ کلمہ شہادت باآواز بلند بہ نیت مع حاضرین جماعت پڑھا کرتا ہے۔ یہ فعل اسکا جائز ہے یا نہیں ؟

الجواب: جائز ہے مگر حاضرین کو ان کی خوشی پر رکھا جائے مجبور نہ کیا جائے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

1 غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی باب صفۃ الصلوٰۃ مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۳۴۴ 2 اشعۃ اللمعات شرح مشکوٰۃ الفصل الاول من باب الذکر بعد الصلوٰۃ مطبوعہ نوریہ رضویہ سکھر ۱ / ۴۱۸

Fatawa Rizvia Volume 6

Chapter of Recitation (Description of Recitation)

Problem Number 252: From Bareilly, queried by Syed Ahmad Ali, resident of Nawada Shaikhan, 3 Safar 1337 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: Is it obligatory (Fard), necessary (Wajib), Sunnah, or recommended (Mustahabb) to recite the Holy Quran in sequential order, whether one is performing prayer (musalli) or not? And what is the ruling if an Imam recites Surahs out of order during prayer?

The Answer: Whether it is prayer or recitation in the established manner, maintaining the sequence is necessary (Wajib). If one reverses the order, they will be a sinner. Our master Hazrat Abdullah bin Mas'ud (may Allah be pleased with him) says that such a person does not fear that Allah Almighty might turn his heart upside down.

However, if outside of prayer, one recites a Surah and then decides to recite another Surah which precedes it in the Quranic order, there is no harm. For example, in Hadith, there is an instruction to recite four Surahs at night: Surah Ya-Sin, the recitation of which at night results in waking up forgiven in the morning; Surah Ad-Dukhan, about which it is stated that whoever recites it at night will wake up in a state where seventy thousand angels seek forgiveness for them; Surah Al-Waqi'ah, the recitation of which prevents poverty; and Surah Tabarak al-Ladhi (Al-Mulk), the recitation of which every night provides protection from the punishment of the grave.

While the order of these Surahs is as mentioned, if someone intends to recite these four Surahs separately for their specific benefits, as each is an independent act, they have the choice to recite whichever they want first and whichever they want last.

If an Imam recites Surahs out of order due to forgetfulness, there is no harm. If done intentionally, he is a sinner, though the prayer itself remains valid without defect. And Allah Almighty knows best, and His knowledge is most complete and most perfect.

Page 239 of 736

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

बाब अल-क़िराअत (क़िराअत का बयान)

मसाला नंबर 252: बरेली से, मुस्तफ़ा सैयद अहमद अली साकिन नवादा शैख़ान, 3 सफ़र 1337 हिजरी। क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन इस मसले में कि तिलावते कलामे मजीद मुसल्ली या ग़ैर मुसल्ली पर बतरतीब पढ़ना फ़र्ज़ है या वाजिब या सुन्नत या मुस्तहब? और इमाम नमाज़ में बे-तरतीब सूरह पढ़े तो उस पर क्या हुक्म है?

जवाब: नमाज़ हो या तिलावत तरीक़ेमअहूद पर हो, दोनों में लिहाज़े-तरतीब वाजिब है, अगर उल्टा (अक्स) करेगा तो गुनहगार होगा। सय्यदना हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसूद रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि ऐसा शख़्स ख़ौफ़ नहीं करता कि अल्लाह अज़्वजल उसका दिल उलट दे।

हाँ, अगर नमाज़ के बाहर एक सूरत पढ़ ली फिर ख़याल आया कि दूसरी सूरत पढ़ूँ, वह पढ़ ली और वह उससे ऊपर (पहले) की थी, तो इसमें हर्ज नहीं। या मसलन हदीस में रात के वक़्त चार सूरतें पढ़ने का इरशाद हुआ है। यासीन शरीफ़ कि जो रात में पढ़ेगा, सुबह बख़ैरشا हुआ उठेगा। सूरह दुखान शरीफ़ पढ़ने का इरशाद हुआ है कि जो इसे रात में पढ़ेगा, सुबह इस हालत में उठेगा कि सत्तर हज़ार फ़रिश्तेه उसके लिए इस्तिग़फ़ार करते होंगे। सूरह वाक़िआ शरीफ़ कि जो इसे रात में पढ़ेगा, मोहताजी उसके पास न आएगी। सूरह तबारकल्लज़ी शरीफ़ कि जो इसे हर रात पढ़ेगा, अज़ाबे-क़ब्र से महफ़ूज़ रहेगा।

इन सूरतों की तरतीब यही है, मगर इस ग़र्ज़ के लिए पढ़ने वाला चार सूरतें मुतफ़र्रिक़ पढ़ना चाहता है कि हर एक मुस्तक़िल जुदा अमल है, उसे इख़्तियार है कि जिसे चाहे पहले पढ़े, जिसे चाहे बाद में पढ़े।

इमाम ने सूरतें बे-तरतीबी से सहवन (भूलकर) पढ़ीं तो कुछ हर्ज नहीं, क़स्दन (जानबूझकर) पढ़ीं तो गुनहगार हुआ, नमाज़ में कुछ ख़लल नहीं। वल्लाहु तआला आलम व इल्मुहु अतम व अहकम।

पेज 239/736

فتاویٰ رضویہ جلد ششم

باب القراۃ (قرات کا بیان)

مسئلہ نمبر ۲۵۲: از بریلی مسئولہ سید احمد علی ساکن نوادہ شیخان ۳ صفر ۱۳۳۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ تلاوت کلام مجید مُصلّی یا غیر مُصلّی پر بالترتیب پڑھنا فرض ہے یا واجب یا سنّت یا مستحب؟ اور امام نماز میں بے ترتیب سورہ پڑھے تو اس پر کیا حکم ہے؟

الجواب: نماز ہو یا تلاوت بطریقِ معہود ہو دونوں میں لحاظِ ترتیب واجب ہے اگر عکس کرے گا گنہگار ہوگا۔ سیدنا حضرت عبداللہ بن مسعود رضی اللہ تعالیٰ عنہ فرماتے ہیں کہ ایسا شخص خوف نہیں کرتا کہ اللہ عزوجل اس کا دل الٹ دے۔

ہاں اگر خارجِ نماز بوجہ ایک سورت پڑھ لی پھر خیال آیا کہ دوسری سورت پڑھوں وہ پڑھ لی اور اس سے اوپر کی تھی تو اس میں حرج نہیں۔ یا مثلاً حدیث میں شب کے وقت چار سورتیں پڑھنے کا ارشاد ہوا ہے۔ یسین شریف کہ جو رات میں پڑھے گا صبح کو بخشا ہوا اٹھے گا۔ سورہ دخان شریف پڑھنے کا ارشاد ہوا ہے کہ جو اسے رات میں پڑھے گا صبح اس حالت میں اٹھے گا کہ ستر ہزار فرشتے اس کے لئے استغفار کرتے ہوں گے۔ سورہ واقعہ شریف کہ جو اسے رات پڑھے گا محتاجی اس کے پاس نہ آئے گی۔ سورہ تبارک الذی شریف کہ جو اسے ہر رات پڑھے گا عذاب قبر سے محفوظ رہے گا۔

ان سورتوں کی ترتیب یہی ہے مگر اس غرض کے لئے پڑھنے والا چار سورتیں متفرق پڑھنا چاہتا ہے کہ ہر ایک مستقل جدا عمل ہے اسے اختیار ہے کہ جس کو چاہے پہلے پڑھے جسے چاہے پیچھے پڑھے۔

امام نے سورتیں بے ترتیبی سے سہواً پڑھیں تو کچھ حرج نہیں، قصداً پڑھیں تو گنہگار ہوا، نماز میں کچھ خلل نہیں واللہ تعالیٰ اعلم وعلمہ اتم واحکم۔

صفحہ ۲۳۹ از ۷۳۶

Fatawa Razawiyya Volume Six Problem No. 453: What do the scholars of religion say regarding this matter: Is it permissible for a follower (muqtadi) to recite Surah Al-Fatihah or any other Surah behind the Imam or not? Clarify and be rewarded.

The Answer: The Hanafi school of thought regarding the follower's recitation is non-permissibility and prohibitive dislike (karahat tahrimiya). The narration of recommendation (istihbab) in silent prayers (salat-e-sirri) attributed to Imam Muhammad bin Hasan Shaybani (may Allah Almighty have mercy on him) is purely weak.

As elaborated by the Absolute Researcher (Al-Muhaqqiq al-ala al-itlaq), the self-learned jurist, our Master Kamal al-Milla wa al-Din Muhammad (may Allah Almighty have mercy on him), as stated in 'Ad-Durr al-Mukhtar'.

(Note: Just as the Absolute Researcher, the self-learned jurist our Master Kamal al-Milla wa al-Din Muhammad (Ibn al-Humam) [may Allah Almighty have mercy on him] has discussed this in detail. As stated in Ad-Durr al-Mukhtar. [T])

In Imam Muhammad's own works, non-permissibility is explicitly mentioned in various places in the reports (Aathaar). He states: "This is our chosen school and general hadiths and reports are based on this." He also said: "A group of Companions (may Allah Almighty be pleased with them all) consider the follower's recitation to be an invalidator of prayer, and there is caution in acting upon the stronger of the two proofs." Many reports are narrated in 'Muwatta' from which non-permissibility is proven. This was stated by Sheikh Maulana Abdul Haq Muhaddith Dehlawi (may his secret be sanctified) in 'Al-Lama'at'. (Translator's note: This point was mentioned by the Researcher Sheikh, Master Abdul Haq Dehlawi (may his secret be sanctified) in 'Ash'at al-Lama'at'). Despite all this, contrary to the Imam's clear statements, establishing their school as permitting or recommending recitation in silent prayers based on a rejected and weak narration, and considering its existence in Hanafi jurisprudence, is purely false and a futile delusion. Our mujtahid scholars unanimously advocate non-permissibility, and this is the school of the majority of the Companions and the Successors (Tabi'in), to the extent that the author of 'Hidaya', Imam Al-Burhan al-Milla wa al-Din Marghinani (may Allah have mercy on him), has claimed consensus (ijma') among the Companions (may Allah be pleased with them all). The hadiths and reports narrated in this chapter are beyond count; here, for fear of length, we restrict ourselves to mentioning some:

Hadith 1: It is narrated in Sahih Muslim Sharif from Sayyiduna Abu Musa Ash'ari (may Allah be pleased with him) that the Master of the Universe (peace and blessings of Allah be upon him) said: "When you pray, straighten your rows, then let one of you lead you. When he says 'Allahu Akbar', then you say 'Allahu Akbar', and when he recites, then remain silent."1 Meaning, when you [perform] prayer...

1 As-Sahih al-Muslim, Chapter on Tashahhud in Prayer, published by Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/174. Note: In Muslim, the final words of the hadith "and when he recites, then remain silent" are found in the hadith of Qatadah and Abu Huraira (may Allah be pleased with them both) at the same location. — Nazir Ahmad Sa'idi. Page 240 of 736

फ़तावा रज़विया जिल्द शश्म मसला नंबर 453: क्या फ़रमाते हैं उलमा-ए-दीन इस मसले में कि मुक्तदी को इमाम के पीछे किराअत सूरह फ़ातिहा या और किसी सूरत की जाइज़ है या नहीं। बय्यिनू तूजरू (बयान फ़रमाएं सवाब पाएं)।

अल-जवाब: मज़हब हनफ़िया दरबारा-ए-किराअत मुक्तदी अदम-ए-इबाहत व कराहत-ए-तहरीमिया है। नमाज़-ए-सिर्री (ख़ामोश नमाज़) में रिवायत-ए-इस्तिहबाब कि हज़रत इमाम मुहम्मद बिन हसन शैबानी रहमतुल्लाह तआला अलैह की तरफ़ निस्बत की गई महज़ ज़ईफ़ है।

कमा बस्त अल-मुहक़्क़िक अलल-इतलाक़ फ़क़ीह उन-नफ़्स मौलाना कमाल अल-मिल्लत वद-दीन मुहम्मद रहमतुल्लाह तआला कमा क़ालाहू फ़िद-दुर्रिल मुख़्तार।

जैसा कि मुहक़्क़िक अलल-इतलाक़ फ़क़ीह उन-नफ़्स मौलाना कमाल अल-मिल्लत वद-दीन मुहम्मद (इब्न-ए-हुमाम) रहमतुल्लाह तआला ने इस पर तफ़सीली गुफ़्तगू की है। जैसा कि दुर्रे मुख़्तार में बयान किया गया है। (त)

ख़ुद तसानीफ़-ए-इमाम मुहम्मद में जा-बजा अदम-ए-जवाज़ मुसर्रह आसार में फ़रमाते हैं यही मज़हब हमारा मुख़्तार और इसी पर आम्मा-ए-हदीस व अख़बार वारिद, और फ़रमाया एक जमाअत-ए-सहाबा रज़वानुल्लाहि तआला अलैहिम अजमईन किराअत-ए-मुक्तदी को मुफ़सिद-ए-नमाज़ कहती है और क़वी अद-दलीलैन पर अमल करने में एहतियात है। मुवत्त-अ में बहुत आसार रिवायत फ़रमाए जिनसे अदम-ए-जवाज़ साबित क़ालाहु अश्-शैख़ मौलाना अब्दुल हक़ अल-मुहद्दिस अद-देहल्वी क़ुद्दिसा सिर्रुहुल अज़ीज़ फ़िल-लमाआत (ये बात शैख़ मुहक़्क़िक हज़रत मौलाना अब्दुल हक़ देहल्वी क़ुद्दिसा सिर्रुहुल अज़ीज़ ने अशअतुल लमाआत में कही है। त) बा-ईं-हमा ख़िलाफ़-ए-तसरीहात-ए-इमाम एक रिवायत मरजूहा मजरूहा से नमाज़-ए-सिर्री में जवाज़ ख़्वाह इस्तिहबाब-ए-किराअत उनका मज़हब ठहराना और फ़िक़्ह-ए-हनफ़ी में इसका वुजूद समझना महज़ बातिल व वहम-ए-आतिल है। हमारे उलमा-ए-मुज्तहिदीन बिल-इत्तिफ़ाक़ अदम-ए-जवाज़ के क़ायल हैं और यही मज़हब जमहूर-ए-सहाबा व ताबेईन का है यहाँ तक कि साहिब-ए-हिदाया इमाम अल्लामा बुरहान अल-मिल्लत वद-दीन मरग़ीनानी रहमतुल्लाह तआला ने दावा-ए-इज्मा-ए-सहाबा किया है रज़ियल्लाहु तआला अन्हुम अजमईन। अहादीस व आसार कि इस बाब में वारिद बेहद व शुमार, यहाँ ख़ौफ़-ए-तवालत बयान बाज़ पर इक़्तिसार:

हदीस 1: सहीह मुस्लिम शरीफ़ में सैय्यदना अबू मूसा अश्अरी रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से मरवी सरवर-ए-आलम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं: "इज़ा सल्लयतुम फ़-अक़ीमू सुफ़ूफ़कुम सुम्मा लियऊम्मकुम अहदुकुम फ़-इज़ा कब्बरा फ़-कब्बिरू व-इज़ा क़र-अ फ़-अनसितू" 1 यानी जब तुम नमाज़...

1 अस्सहीह अल-मुस्लिम बाब अत-तशहुद फ़िस-सलाह मतबुआ क़दीमी कुतुब ख़ाना कराची 1 / 174 नोट: मुस्लिम में हदीस के आख़री अल्फ़ाज़ "व-इज़ा क़र-अ फ़-अनसितू" इसी जगह पर क़तादा और अबू हुरैा रज़ियल्लाहु तआला अन्हुमा की हदीस में हैं। नज़ीर अहमद सईदी। पेज 240 / 736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم مسئلہ نمبر ۴۵۳: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ مقتدی کو امام کے پیچھے قرأت سورہ فاتحہ یا اور کسی سورت کی جائز ہے یا نہیں۔ بینوا توجروا۔

الجواب: مذہب حنفیہ درباره قرأت مقتدی عدم اباحت و کراہت تحریمیہ ہے۔ نماز سری میں روایتِ استحباب کہ حضرت امام محمد بن حسن شیبانی رحمۃ اللہ تعالٰی علیہ کی طرف نسبت کی گئی محض ضعیف

کما بسط المحقق علی الاطلاق فقیہ النفس مولنا کمال الملۃ والدین محمد رحمہ اللہ تعالٰی کما قالہ فی الدرالمختار۔

جیسا کہ محقق علی الاطلاق فقیہ النفس مولنا کمال الملۃ والدین محمد (ابن ہمام) رحمہ اللہ تعالٰی نے اس پر تفصیلی گفتگو کی ہے۔ جیسا کہ دُرِ مختار میں بیان کیا گیا ہے۔(ت)

خود تصانیف امام محمد میں جا بجا عدم جواز مصرح آثار میں فرماتے ہیں یہی مذہب ہمارا مختار اور اسی پر عامہ حدیث و اخبار وارد، اور فرمایا ایک جماعت صحابہ رضوان اللہ تعالٰی علیہم اجمعین قرأت مقتدی کو مفسد نماز کہتی ہے اور قوی الدلیلین پر عمل کرنے میں احتیاط ہے۔ موطا میں بہت آثار روایت فرمائے جن سے عدم جواز ثابت قالہ الشیخ مولانا عبدالحق المحدث الدہلوی قدس اللہ سرہ العزیز فی اللمعات (یہ بات شیخ محقق حضرت مولانا عبدالحق دہلوی قدس اللہ تعالٰی سرہ نے اشعۃ اللمعات میں کہی ہے۔ت) بایں ہمہ خلاف تصریحات امام ایک روایت مرجوحہ مجروحہ سے نماز سری میں جواز خواہ استحباب قرأت اُن کا مذہب ٹھہرانا اور فقہ حنفی میں اس کا وجود سمجھنا محض باطل و وہم عاطل۔ ہمارے علمائے مجتہدین بالاتفاق عدم جواز کے قائل ہیں اور یہی مذہب جمہور صحابہ و تابعین کا ہے حتٰی کہ صاحبِ ہدایہ امام علامہ برہان الملۃ والدین

مرغینانی رحمۃ اللہ تعالیٰ نے دعویٰ اجماعِ صحابہ کیا ہے رضی اللہ تعالیٰ عنہم اجمعین۔ احادیث و آثار کہ اس باب میں وارد بیحد و شمار، یہاں خوف طوالت بیان بعض پر اقتصار:

حدیث ۱: صحیح مسلم شریف میں سیدنا ابو موسیٰ اشعری رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے مروی سرورِ عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں: اذ صلّیتم فاقیموا صفوفکم ثم لیؤمکم احدکم فاذا کبّر فکبّروا واذا قرأ فانصتوا۱۔ یعنی جب تم نماز

1 الصحیح المسلم باب التشھد فی الصلوٰۃ مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱ / ۱۷۴ نوٹ: مسلم میں حدیث کے آخری الفاظ "واذا قرأ فانصتوا" اسی جگہ پر قتادہ اور ابوہریرہ رضی اللہ تعالیٰ عنہما کی حدیث میں ہیں۔ نذیر احمد سعیدی

Fatawa Razawiya, Volume 6

...pray, straighten your rows, then let one of you lead the prayer; when he says the Takbir, you also say the Takbir, and when he recites, remain silent.

Hadith 2: Abu Dawood and Nasa'i relate in their respective Sunans from Sayyiduna Abu Hurairah (may Allah be pleased with him) that the Master of the Universe (peace and blessings of Allah be upon him) said: "The Imam is appointed only to be followed; so when he says the Takbir, you say it too, and when he recites, remain silent." This is the wording of Nasa'i. That is, the Imam is there to be followed; so when he says the Takbir, you should also say it, and when he recites, remain silent. These are the words of Nasa'i. Imam Muslim bin Hajjaj Nishapuri (may Allah have mercy on him) says regarding this Hadith in his Sahih that it is authentic according to him.

Hadith 3: Tirmidhi in his Jami' narrates from Sayyiduna Jabir bin Abdullah Ansari (may Allah be pleased with them): "Whoever prays a Rak'ah without reciting the Mother of the Quran (Surah Al-Fatihah), his prayer is not valid, except if he is behind an Imam." Thus it was narrated by Malik in his Muwatta as a Mauquf tradition (In the same way, Imam Malik narrated this Hadith in Muwatta as a Mauquf tradition. - Editor). And Imam Abu Ja'far Ahmad bin Salamah Tahawi (may Allah have mercy on him) narrated it in Ma'ani al-Athar and established it as the words of the Master of Messengers (peace and blessings of Allah be upon him), and Allah knows best. Hafiz Abu Isa Tirmidhi says this Hadith is Hasan Sahih. Sayyiduna Imam al-A'immah, Malik al-Azimah, Siraj al-Ummah, Kashif al-Ghummah, Imam-e-Azam Abu Hanifah Nu'man bin Thabit Kufi (may Allah be pleased with him and his followers with excellence) narrates:

Hadith 4: Abul Hasan Musa bin Abi Aisha narrated to us from Abdullah bin Shaddad bin al-Had from Jabir bin Abdullah (may Allah be pleased with them) from the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) that he said: "Whoever prays behind an Imam, the recitation of the Imam is his recitation." That is, the noble Master of the Messengers (peace and blessings of Allah be upon him) states that for the person who prays behind an Imam, the Imam's recitation is considered their own. I (the humble author) say this Hadith is Sahih; its narrators are all narrators of the Sihah Sittah (the six authentic books). And Muhammad narrated it thus.

Footnotes: 1. Sunan an-Nasa'i, Interpretation of the statement of Allah Almighty "When the Quran is recited...", Hadith 923, printed at Maktaba al-Salafiyya Lahore,

1/112. 2. Jami' at-Tirmidhi, Chapter on what was said about leaving the recitation behind the Imam when he recites loudly, printed at Amin Company Delhi, 1/42. 3. Musnad al-Imam al-A'zam, Kifayat Qira'at al-Imam lil-Ma'mum, printed at Noor Muhammad Karkhana-e-Tijarat Karachi, p. 61.

...पढ़ो, अपनी सफ़ें सीधी करो फिर तुम में कोई इमामत करे, वह तकबीर कहे तो तुम भी तकबीर कहो और जब वह क़िरात करे तो तुम चुप रहो।

हदीस २: अबू दाऊद और नसाई अपनी-अपनी सुनन में सैयदुना अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत करते हैं कि सरवर-ए-आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं: "इमाम तो इसलिए है कि उसकी पैरवी की जाए, पस जब वह तकबीर कहे तो तुम भी कहो और जब वह क़िरात करे तो ख़ामोश रहो।" ये नसाई के अल्फ़ाज़ हैं। यानी इमाम तो इसलिए है कि उसकी पैरवी की जाए, पस जब वह तकबीर कहे तो तुम भी कहो और जब वह क़िरात करे तो ख़ामोश रहो। ये नसाई के अल्फ़ाज़ हैं। इमाम मुस्लिम बिन हज्जाज निशापुरी (रहमतुल्लाह अलैहि) अपनी सहीह में इस हदीस की निस्बत फ़रमाते हैं कि मेरे नज़दीक यह सहीह है।

हदीस ३: तिर्मिज़ी अपनी जामे में सैयदुना जाबिर बिन अब्दुल्लाह अंसारी (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रावी हैं: "जिसने कोई रकअत बिना सूरह फ़ातिहा के पढ़ी, उसकी नमाज़ नहीं हुई, सिवाय इसके कि वह इमाम के पीछे हो।" इसी तरह इमाम मालिक ने इसे मुवट्टा में मौक़ूफ़न रिवायत किया है। और इमाम अबू जाफ़र अहमद बिन सलामा तहावी (रहमतुल्लाह अलैहि) ने 'मआनी अल-आसार' में इसे रिवायत किया और इसे सैयदुल मुर्सलीन (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के इरशादात से क़रार दिया, वल्लाहु तआला आलम। हाफ़िज़ अबू ईसा तिर्मिज़ी फ़रमाते हैं यह हदीस हसन सहीह है। सैयदुना इमामुल अइम्मा, मालिकुल अज़िमा, सिराजुल उम्माह, काशिफ़ुल ग़ुम्माह इमाम-ए-आज़म अबू हनीफ़ा नोमान बिन साबित कूफ़ी (रज़ियल्लाहु अन्हु व अन मुक़ल्लिदिहि बि-एहसान) रिवायत फ़रमाते हैं:

हदीस ४: अबुल हसन मूसा बिन अबी आइशा ने हमसे रिवायत की अब्दुल्लाह बिन शद्दाद बिन अल-हाद से, उन्होंने जाबिर बिन अब्दुल्लाह (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से, उन्होंने नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से कि आप ने फ़रमाया: "जो शख़्स इमाम के पीछे नमाज़ पढ़े, तो इमाम की क़िरात ही उसकी क़िरात है।" यानी हुज़ूर अक़दस सैयदुल मुर्सलीन (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) इरशाद फ़रमाते हैं कि जो शख़्स इमाम के पीछे नमाज़ पढ़े तो इमाम का पढ़ना उसका पढ़ना है। फ़क़ीर कहता है यह हदीस सहीह है, इसके तमाम रावी सिहाह सित्ता के रावी हैं। और मुहम्मद ने इसे इसी तरह रिवायत किया है।

पाद-टिप्पणी: १. सुनन अन-नसाई, अल्लाह तआला के क़ौल 'और जब क़ुरआन पढ़ा जाए...' की तावील, हदीस ९२३, मक्तबा अस-सलफ़िया लाहौर १/११२। २. जामे अत-तिर्मिज़ी, इमाम के पीछे क़िरात छोड़ देने का बयान जब वह बुलंद आवाज़ से पढ़े, अमीन कंपनी दिल्ली १/४२। ३. मुसनद अल-इमाम अल-आज़म, किफ़ायत क़िरात अल-इमाम लिल-मामूम, नूर मुहम्मद कारख़ाना-ए-तिजारत कराची, पृ. ६१।

पृष्ठ ७३६ का २४१

پڑھو اپنی صفیں سیدھی کرو پھر تم میں کوئی امامت کرے وہ تکبیر کہے تم بھی تکبیر کہو اور جب وہ قرات کرے تم چپ رہو۔

حدیث ۲: ابوداؤد و نسائی اپنی اپنی سنن میں سیدنا ابوہریرہ رضی اللہ عنہ سے روایت کرتے ہیں سرور عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں: انما الامام لیؤتم بہ فاذا کبر فکبر وا واذا قرأ فانصتوا۱ ہذا اللفظ النسائی۔ یعنی امام تو اس لئے ہے کہ اس کی پیروی کی جائے پس جب وہ تکبیر کہے تو تم بھی کہو اور جب قرات کرے خاموش رہو۔ یہ نسائی کے الفاظ ہیں۔ امام مسلم بن حجاج نیشاپوری رحمہ اللہ تعالٰی اپنی صحیح میں اس حدیث کی نسبت فرماتے ہیں کہ میرے نزدیک صحیح ہے۔

حدیث ۳: ترمذی اپنی جامع میں سیدنا جابر بن عبداللہ انصاری رضی اللہ تعالٰی عنہما سے راوی: من صلی رکعۃ لم یقرء فیھا بام القران فلم یصل الا ان یکون وراء الامام۲۔ یعنی جو کوئی رکعت بے سورہ فاتحہ کے پڑھی اس کی نماز نہ ہوئی مگر جب امام کے پیچھے ہو۔ ھکذا رواہ مالک فی مؤطا ہ موقوفاً (اسی طرح اس حدیث کو امام مالک نے مؤطا میں موقوفاً روایت کیا ہے۔ت) اور امام ابو جعفر احمد بن سلامہ طحاوی رحمۃ اللہ علیہ نے معانی الآثار میں اسے روایت کیا اور ارشادات سید مرسلین صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم سے قرار دیا، واللہ تعالٰی اعلم۔ حافظ ابو عیسٰی ترمذی فرماتے ہیں یہ حدیث حسن صحیح ہے۔ سیدنا امام الائمہ مالک الازمہ سراج الامہ کاشف الغمہ امام اعظم ابو حنیفہ نعمان بن ثابت کو فی رضی اللہ تعالٰی عنہ وعن مقلدیہ باحسان روایت فرماتے ہیں:

حدیث ۴: حدثنا ابوالحسن موسی بن ابی عائشة عن عبدالله بن شداد بن الهاد عن جابر بن عبدالله رضی الله تعالی عنهما عن النبی صلی الله تعالی علیه وسلم انه قال من صلی خلف الامام فان قرآة الامام له قرأة۳۔ یعنی حضور اقدس سید المرسلین صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم ارشاد فرماتے ہیں جو شخص امام کے پیچھے نماز پڑھے تو امام کا پڑھنا اس کا پڑھنا ہے۔ فقیر کہتا ہے یہ حدیث صحیح ہے رجال اس کے سب رجال صحاح ستہ ہیں۔ ورواہ محمد هکذا

حواشی: 1 سنن النسائی تاویل قولہ عز وجل واذا قرئ القرآن الخ حدیث ۹۲۳ مطبوعہ مکتبہ السلفیہ لاہور ۱/ ۱۱۲ 2 جامع الترمذی باب ماجاء فی ترک القرآة خلف الامام اذا جہر بالقرآة مطبوعہ امین کمپنی دہلی ۱/ ۴۲ 3 مسند الامام الاعظم کفایۃ قراۃ الامام للماموم مطبوعہ نور محمد کارخانہ تجارت کراچی ص ۶۱

Marfu'an from another path (Imam Muhammad has narrated it as Marfu' through another chain. - T). The summary of the Hadith is that there is no need for the follower (Muqtadi) to recite; the Imam's recitation is sufficient. This is how it was narrated concisely by Muhammad (may Allah Ta'ala have mercy on him), and the Imam narrated it another time comprehensively.

Hadith 5: He (Allah's peace and blessings be upon him) led the people in prayer, and a man recited behind him. When he finished the prayer, he asked three times, "Which of you recited behind me?" A man replied, "I did, O Messenger of Allah (peace and blessings be upon him)." He (peace and blessings be upon him) said, "Whoever prays behind an Imam, the Imam's recitation is his recitation."[1] - The summary of the content is that the Master of the Universe (peace and blessings be upon him) led the people in prayer; someone recited behind him. After completing the prayer, the Noble Master (peace and blessings be upon him) asked, "Who recited behind me?" Out of awe for the Prophet, the people remained silent until the same question was repeated three times. Finally, a person submitted, "O Messenger of Allah (peace and blessings be upon him), I did." It was stated that for whoever is behind an Imam, the Imam's recitation is sufficient for him.

Hadith 6: Abu Hanifa (may Allah Ta'ala be pleased with him) also narrated from Hammad bin Ibrahim that Abdullah bin Mas'ud (may Allah Ta'ala be pleased with him) did not recite behind the Imam, neither in the first two rak'ats nor in others.[2] - This means Sayyiduna Abdullah bin Mas'ud (may Allah be pleased with him) did not perform recitation behind the Imam, neither in the first two units nor in others.

The humble author (Faqir) says: Abdullah bin Mas'ud (may Allah be pleased with him), who is among the most eminent companions and early believers, used to be alongside the blessed presence of the Messenger (peace and blessings be upon him) in residence and travel, and entering the prophetic presence without permission was permissible for him. Some companions say, "The manner and way of the Master of Prophets (upon him be salutations and praise) that we found in the conduct and bearing of Ibn Mas'ud, we found in no one else." Even the Noble Master of the first and the last (peace and blessings be upon him) himself says:

---

[1] Musnad al-Imam al-A'zam, Kifaya Qira'at al-Imam lil-Ma'mum, published by Noor Muhammad Karkhana Tijarat Kutub Karachi, p. 61. [2] Al-Muwatta by Imam

Muhammad, Chapter on Recitation in Prayer behind the Imam, published by Aftab Alam Press Lahore, p. 100. Note: I did not find the Hadith of Abdullah bin Mas'ud in Musnad Imam Azam, so I have quoted it from Muwatta Imam Muhammad, which appears in the text. The words are: "Indeed, Abdullah bin Mas'ud used not to recite behind the Imam in what he recites loudly and in what he recites quietly, neither in the first two nor in the last two. And when he prayed alone, he recited in the first two with Surah al-Fatiha and a Surah, and did not recite anything in the last two." - Nazir Ahmad Saeedi.

मर्फ़ूअन दूसरे तरीक़े से (इमाम मोहम्मद ने इसे दूसरी सनद से मर्फ़ूअन रिवायत किया है। - त) हदीस का हासिल यह है कि मुक्तदी को पढ़ने की कोई ज़रूरत नहीं, इमाम का पढ़ना काफ़ी है। हिकज़ा रवा इंदा मोहम्मद रहमतुल्लाही तआला मुख़्तसरन व रवाहुल इमाम तारतुल उख़रा मुस्तौअ़बन।

हदीस ५: (अल्लाह तआला के रसूल सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने) लोगों को नमाज़ पढ़ाई, तो एक शख़्स ने उनके पीछे किराअत की। जब नमाज़ पूरी हो गई तो फ़रमाया, "तुम में से किसने मेरे पीछे पढ़ा?" तीन बार यही फ़रमाया। तो एक शख़्स ने अर्ज़ किया, "या रसूल अल्लाह! मैंने।" हुज़ूर सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया, "जो शख़्स इमाम के पीछे हो, तो इमाम की किराअत उसकी किराअत है।" १- खुलासा-ए-मजमून यह है कि सरवर-ए-आलम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने लोगों को नमाज़ पढ़ाई, एक शख़्स ने हुज़ूर के पीछे किराअत की। सैय्यद-ए-अकरम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने नमाज़ से फ़ारिग होकर इरशाद फ़रमाया, "किसने मेरे पीछे पढ़ा?" लोग हुज़ूर के ख़ौफ़ (अदब) की वजह से ख़ामोश रहे, यहाँ तक कि तीन बार यही इस्तफ़सार फ़रमाया। आख़िर एक शख़्स ने अर्ज़ की, "या रसूल अल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम! मैंने।" इरशाद हुआ कि जो इमाम के पीछे हो, उसके लिए इमाम का पढ़ना काफ़ी है।

हदीस ६: अबू हनीफ़ा रज़ियल्लाहु तआला अन्हु ने हम्माद बिन इब्राहीम से रिवायत किया कि अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु तआला अन्हु ने इमाम के पीछे किराअत नहीं की, न पहली दो रक़अतों में और न उनके अलावा में। २- यानी सैय्यदुना अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु ने इमाम के पीछे किराअत नहीं की, न पहली दो रक़अतों में और न उनके अलावा में।

फ़क़ीर कहता है: अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु तआला अन्हु, जो अफ़ाज़िल-ए-सहाबा और मोमिनीन-ए-साबिक़ीन में से हैं, हज़र और सफ़र में हुज़ूर रिसालत मआब सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम की हमराह-ए-रकाब रहते और बारगाह-ए-नुबुव्वत में बिना इजाज़त जाना उनके लिए जायज़ था। बाज़ सहाबा फ़रमाते हैं, "हमने सरवर-ए-अंबिया अलैहिस्सलाम की जो राह-ओ-रविश और चाल-ढाल इब्ने मसऊद में पाई, वैसी किसी और में नहीं पाई।" ख़ुद हुज़ूर अकरम अव्वलीन व आख़िरीन सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम इरशाद फ़रमाते हैं:

---

१ मुस्नद अल-इमाम अल-आज़म, किफ़ाया किराअत अल-इमाम लिल-मामूम, मक़बुआ नूर मोहम्मद कारख़ाना तिजारत-ए-कुतुब कराची, पृ. ६१। २ अल-मुवत्ता इमाम मोहम्मद, बाब अल-किराअत

फ़िस-सलाह ख़ल्फ़ अल-इमाम, मक़बुआ आफ़ताब-ए-आलम प्रेस लाहौर, पृ. १००। नोट: मुझे अब्दुल्लाह बिन मसऊद की हदीस मुस्नद इमाम आज़म से नहीं मिली, इसलिए मुवत्ता इमाम मोहम्मद से नक़ल की है जो मतन में आ रही है। अल्फ़ाज़ ये हैं: "बेशक अब्दुल्लाह बिन मसऊद इमाम के पीछे न उन रक़अतों में पढ़ते थे जिनमें बुलंद आवाज़ से पढ़ा जाता है और न उन में जिनमें धीरे पढ़ा जाता है, न पहली दो में और न आख़िरी दो में। और जब अकेले नमाज़ पढ़ते, तो पहली दो में सूरह फ़ातिहा और कोई सूरह पढ़ते और आख़िरी दो में कुछ नहीं पढ़ते थे।" - नज़ीर अहमद सईदी।

पृष्ठ ७३६ का २४२

فتاوی رضویہ جلد ششم

مرفوعاً من طریق اخر (اس کو امام محمد نے مرفوعاً دوسری سند سے روایت کیا ہے۔ ت) حاصل حدیث یہ ہے کہ مقتدی کو پڑھنے کی کچھ ضرورت نہیں امام کا پڑھنا کفایت کرتا ہے۔ ھکذا روی عند محمد رحمہ اللہ تعالی مختصراً ورواہ الامام تارۃ اخری مستوعباً۔

حدیث ۵: قال صلی اللہ تعالی علیہ وسلم بالناس فقرأ رجل خلفہ فلما قضی الصلوۃ قال ایکم قرأ خلفی ثلث مرات فقال رجل انا یا رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم قال صلی اللہ تعالی علیہ وسلم من صلی خلف الامام فان قراءۃ الامام لہ قرأۃ ۱- خلاصہ مضمون یہ ہے کہ سرور عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے لوگوں کو نماز پڑھائی ایک شخص نے حضور کے پیچھے قرات کی سید اکرم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے نماز سے فارغ ہو کر ارشاد فرمایا کس نے میرے پیچھے پڑھا، لوگ بسبب خوف حضور کے خاموش ہو رہے، یہاں تک کہ تین بار تکرار یہی استفسار فرمایا، آخر ایک شخص نے عرض کی یا رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم ! میں نے۔ ارشاد ہوا کہ جو امام کے پیچھے ہو اس کے لئے امام کا پڑھنا کافی ہے۔

حدیث ۶: ابو حنیفۃ رضی اللہ تعالی عنہ ایضا عن حماد بن ابراھیم ان عبداللہ بن مسعود رضی اللہ تعالی عنہ لم یقرأ خلف الامام لا فی الرکعتین الاولین ولا فی غیرھما ۲ یعنی سیدنا عبداللہ بن مسعود رضی اللہ عنہ نے امام کے پیچھے قرات نہ کی نہ پہلی دو رکعتوں میں نہ ان کے غیر میں۔

فقیر کہتا ہے عبداللہ بن مسعود رضی اللہ تعالی عنہ جو افاضل صحابہ و مؤمنین سابقین سے ہیں حضر و سفر میں ہمراہ رکاب سعادت انتساب حضور رسالت مآب صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم رہتے اور بارگاہ نبوت میں بے اذن لئے جانا ان کے لئے جائز تھا بعض صحابہ فرماتے ہیں ہم نے راہ و

روش سرور انبیاء علیہ التحیۃ والثناء سے جو چال ڈھال ابن مسعود کو ملتی پائی کسی کی نہ پائی، خود حضور اکرم الاولین والآخرین صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم ارشاد فرماتے ہیں:

---

۱ مسند الامام الاعظم کفایۃ قراۃ الامام للماموم مطبوعہ نور محمد کارخانہ تجارت کتب کراچی ص ۲۶۱ ۲ الموطا للامام محمد باب القراۃ في الصلوۃ خلف الامام مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور ص ۱۰۰ نوٹ: مجھے عبد اللہ بن مسعود کی حدیث مسند امام اعظم سے نہیں ملی اس لئے موطا امام محمد سے نقل کی ہے جو متن میں آ رہی ہے الفاظ یہ ہیں:- ان عبد اللہ بن مسعود کان لایقرأ خلف الامام فیما یجھر فیہ وفیما یخافت فیہ الاولیین ولا فی الاخریین واذا صلی وحدہ قرا فی الاولیین بفاتحۃ الکتاب وسورۃ ولم یقرأ فی الاخریین شیئا ۔ نذیر احمد سعیدی۔

“I have approved for my Ummah what Ibn Umm 'Abd (Abdullah bin Mas'ud) approved for them, and I have disliked for my Ummah what Ibn Umm 'Abd disliked for them.”[1]

As if his opinion is the exalted opinion of the Holy Prophet (peace be upon him). It is known that when Hazrat Ibn Mas'ud (may Allah be pleased with him) was a follower (muqtadi) in prayer, he would not recite Surah Al-Fatiha or anything else, and this was the practice of all his disciples.

Hadith 7: Muhammad reported in his Muwatta from Sufyan, from Mansur bin Al-Mu'tamir, and Al-Thawri said 'Mansur narrated to us', and this is the wording of Ibn 'Uyaynah from Mansur bin Al-Mu'tamir, from Abu Wa'il, who said: Abdullah bin Mas'ud (may Allah be pleased with him) was asked about recitation behind the Imam. He said, "Remain silent, for in prayer there is enough occupation (to keep one engaged). The Imam will suffice you for that.”[2]

Summary: When Hazrat Ibn Mas'ud (may Allah be pleased with him) was asked about the follower's recitation, he said: "Stay silent as there is occupation in prayer," meaning abstain from futile actions. Soon, the Imam will suffice you for this task. That is, irrational talk is not permissible in prayer, and when the Imam's recitation itself becomes his recitation, then the follower's own recitation is mere absurdity and unseemly. The author says: This Hadith is of the highest degree in 'Sahah' (authentic collections). All its narrators are great Imams and men of the 'Sihah Sittah' (Six Authentic Books of Hadith).

Hadith 8: As for the Hadith of the Imam from Ibn Mas'ud, its chain was linked by our Muhammad, Muhammad bin Aban bin Salih al-Qurashi, from Hammad, from Ibrahim al-Nakha'i, from Alqamah bin Qays, that Abdullah bin Mas'ud used not to recite behind the Imam in what is recited aloud and in what is recited silently, neither in the first two rak'ahs nor in the last two. And when he prayed alone, he recited in the first two Surah Al-Fatiha and another Surah, and did not recite anything in the last two.[3]

Gist: When Hazrat Ibn Mas'ud (may Allah be pleased with him) was a follower, he would not recite anything in prayer, whether audible or silent, neither in the initial rak'ahs nor in the subsequent ones. Yes, when praying alone, he would recite 'Alhamdu' (Al-Fatiha) and a Surah only in the first two rak'ahs.

Athar 1: Abu Hanifa narrated from Hammad from Ibrahim that he said: Alqamah did not recite a single letter behind the Imam, neither in the prayers where recitation is

aloud nor in those where it is not aloud, nor did he recite the Umm al-Kitab (Surah Al-Fatiha) or anything else in the last two rak'ahs behind the Imam.

Footnotes: 1. Majma' al-Zawa'id, Chapter: On what has been reported regarding Abdullah bin Mas'ud, published by Dar al-Kitab, Beirut, 9/290. 2. Muwatta Imam Muhammad, Chapter: Recitation in Prayer behind the Imam, published by Aftab-e-Alam Press, Lahore, p. 100. 3. Muwatta Imam Muhammad, Chapter: Recitation in Prayer behind the Imam, published by Aftab-e-Alam Press, Lahore, p. 100.

“मैंने अपनी उम्मत के लिए वह पसंद किया जो इब्ने उम्म अब्द (अब्दुल्लाह बिन मसूद) ने उनके लिए पसंद किया, और मैंने अपनी उम्मत के लिए वह नापसंद किया जो इब्ने उम्म अब्द ने उनके लिए नापसंद किया।”[1]

मानो उनकी राय हुज़ूर पाक (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की ही मुक़द्दस राय है। यह ज्ञात है कि जब हज़रत इब्ने मसूद (रज़ियल्लाहु अन्हु) मुक़्तदी (नमाज़ में इमाम के पीछे चलने वाले) होते थे, तो वह सूरह फ़ातिहा वगैरह कुछ भी नहीं पढ़ते थे, और उनके सभी शिष्यों का भी यही तरीक़ा था।

हदीस 7: मुहम्मद ने अपनी मुअत्ता में सुफ़यान से, उन्होंने मंसूर बिन अल-मुतामिर से रिवायत किया, और अल-सौरी ने कहा कि 'मंसूर ने हमें बताया', और यह इब्ने उयैना के शब्द हैं मंसूर बिन अल-मुतामिर से, अबू वाइल से, जिन्होंने कहा: हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसूद (रज़ियल्लाहु अन्हु) से इमाम के पीछे किराअत (पढ़ने) के बारे में पूछा गया। उन्होंने कहा, "ख़ामोश रहो, क्योंकि नमाज़ में मशग़ूलियत (व्यस्तता) है। इमाम तुम्हारे लिए काफ़ी होगा।”[2]

सारांश: हज़रत इब्ने मसूद (रज़ियल्लाहु अन्हु) से मुक़्तदी की किराअत के बारे में सवाल किया गया, तो उन्होंने फ़रमाया: "ख़ामोश रहो कि नमाज़ में मशग़ूलियत है," यानी बेकार की बातों से दूर रहो। जल्द ही इमाम तुम्हारे इस काम के लिए काफ़ी हो जाएगा। यानी नमाज़ में बेमायनी बातें जायज़ नहीं हैं, और जब इमाम की किराअत ही उसकी किराअत ठहरती है, तो फिर मुक़्तदी का खुद किराअत करना महज़ फ़ुज़ूल और अशोभनीय है। लेखक कहते हैं: यह हदीस 'सिहाह' (प्रामाणिक संग्रहों) में उच्च दर्जे की है। इसके सभी रावी (वर्णनकर्ता) बड़े इमाम और सिहाह सित्तह (हदीस की छह प्रमुख पुस्तकें) के पुरुष हैं।

हदीस 8: इमाम की हदीस जो इब्ने मसूद से है, उसे हमारे मुहम्मद, मुहम्मद बिन अबान बिन सालिह अल-कुरैशी ने हम्माद से, उन्होंने इब्राहिम अल-नखई से, उन्होंने अल्कामा बिन क़ैस से जोड़ा है कि अब्दुल्लाह बिन मसूद इमाम के पीछे न तो उन नमाज़ों में पढ़ते थे जिनमें किराअत ऊँची आवाज़ में होती है और न ही उन नमाज़ों में जिनमें धीमी आवाज़ में होती है, न पहली दो रकतों में और न ही बाद की दो रकतों में। और जब वह अकेले नमाज़ पढ़ते थे, तो पहली दो रकतों में सूरह फ़ातिहा और एक सूरह पढ़ते थे, और बाद की दो रकतों में कुछ भी नहीं पढ़ते थे।[3]

निष्कर्ष: हज़रत इब्ने मसूद (रज़ियल्लाहु अन्हु) जब मुक़्तदी होते थे, तो नमाज़ में चाहे जह्री (ऊँची आवाज़ वाली) हो या सिर्री (धीमी आवाज़ वाली), कुछ नहीं पढ़ते थे, न पहली रकतों में और न ही पिछली रकतों में। हाँ, जब अकेले होते थे, तो सिर्फ़ पहली रकतों में सूरह अल-हम्द (फ़ातिहा) और सूरह पढ़ते थे।

असर 1: अबू हनीफ़ा ने हम्माद से, उन्होंने इब्राहिम से रिवायत किया कि उन्होंने कहा: अल्कामा ने इमाम के पीछे एक अक्षर भी नहीं पढ़ा, न उन नमाज़ों में जिनमें किराअत ऊँची आवाज़ में होती है और न ही उनमें जिनमें धीमी आवाज़ में होती है, और न ही उन्होंने इमाम के पीछे पिछली दो रकतों में सूरह फ़ातिहा या कुछ और पढ़ा।

फुटनोट्स: 1. मज्मउज़ ज़वाइद, बाबू मा जाआ फ़ी अब्दुल्लाह बिन मसूद, मुद्रित दारुल किताब बेरूत 9/290। 2. मुअत्ता इमाम मुहम्मद, बाबू अल-किराअत फ़िस सलात खलफ़ल इमाम, मुद्रित आफ़ताब-ए-आलम प्रेस लाहौर पृ. 100। 3. मुअत्ता इमाम मुहम्मद, बाबू अल-किराअत फ़िस सलात खलफ़ल इमाम, मुद्रित आफ़ताब-ए-आलम प्रेस लाहौर पृ. 100।

पृष्ठ 243 का 736

رضیت لا متی ما رضی لھا ابن ام عبد و کرھت | میں نے اپنی امت کے لئے وہ پسند کیا جو عبداللہ بن مسعود اس لامتی ما کرہ لھا ابن ام عبد[1] ۔ | کے لئے پسند کرے اور میں نے اپنی امت کے لئے ناپسند کیا جو اُس کے لئے عبداللہ بن مسعود ناپسند کرے۔

گویا ان کی رائے حضور والا کی رائے اقدس ہے اور معلوم ہے کہ جناب ابن مسعود رضی اللہ تعالیٰ عنہ جب مقتدی ہوتے فاتحہ وغیرہ کچھ نہیں پڑھتے تھے اور ان کے سب شاگردوں کا یہی وتیرہ تھا۔

حدیث ۷: محمد فی مؤطاہ من طریق سفیانعن عن منصور بن المعتمر وقال الثوری نا منصور وھذا لفظ ابن عینیة عن منصور بن المعتمر عن ابی وائل قال سئل عبداللہ بن مسعود رضی اللہ تعالیٰ عنہ عن القرأة خلف الامام قال انصت فان فی الصلوة لشغلا سیکفیك ذلك الامام[2]۔ خلاصہ یہ کہ سیدنا ابن مسعود رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے درباره قرأت مقتدی سوال ہوا، فرمایا خاموش رہ کہ نماز میں مشغولی ہے یعنی بیکار باتوں سے باز رہنا عنقریب تجھے امام اس کام کی کفایت کر دے گا یعنی نماز میں تجھے لایعقل باتیں روا نہیں، اور جب امام کی قرأت بعینہ اُس کی قرأت ٹھہرتی ہے تو پھر مقتدی کا خود قرأت کرنا محض لغو نا شائستہ ہے۔ فقیر کہتا ہے یہ حدیث اعلیٰ درجہ صحاح میں ہے اس کے سب رواۃ ائمہ کبار و رجال صحاح ستہ ہیں۔

حدیث ۸: واما حدیث الامام عن ابن مسعود فوصلہ محمدنا محمد بن ابان بن صالح القرشی عن حماد عن ابراہیم النخعی عن علقمة بن قیس ان عبداللہ بن مسعود کان لا یقرأ خلف الامام فیما یجھر وفیما یخافت فیه في الاولیین ولا في الاخریین و اذا صلی وحدہ قرأ فی الاولیین بفاتحة الکتاب وسورة و لم

يقرأ في الاخريين شيئا[3]۔ حاصل یہ کہ حضرت ابن مسعود رضی اللہ تعالیٰ عنہ جب مقتدی ہوتے تو نماز میں جہر یہ ہو یا سریہ کچھ نہ پڑھتے تھے نہ پہلی رکعتوں میں نہ پچھلی میں۔ ہاں جب تنہا ہوتے تو صرف پہلیوں میں الحمد وسورت پڑھتے۔

اثر ۱: ابو حنیفة عن حماد عن ابراهیم انه قال لم یقرأ علقمة خلف الامام حرفاً لا فیما یجهر فیه القرأة ولا فیما لا یجهر فیه ولا قرأ فی الاخرین بام الکتاب ولا غیرها خلف الامام

[1] مجمع الزوائد باب ما جاء فی عبداللہ بن مسعود مطبوعہ دار الکتاب بیروت ۹/ ۲۹۰ [2] مؤطا امام محمد باب القرأة فی الصلوة خلف الامام مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور ص ۱۰۰ [3] مؤطا امام محمد باب القرأة فی الصلوة خلف الامام مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور ص ۱۰۰

Fatawa Ridawiyya Volume 6

...and nor all the companions of Abdullah (1) - meaning Alqama bin Qais, who was among the senior Tabi'un, the great Mujtahids, and the most knowledgeable students of Sayyiduna Ibn Mas'ud, they would not recite a single letter behind the Imam, whether the recitation was loud or silent, nor would they recite Surah al-Fatiha or anything else in the latter rak'ahs when behind an Imam. No one among the companions of Hazrat Abdullah bin Mas'ud (may Allah be pleased with them all) ever recited behind him.

Athar 2: Muhammad narrated in al-Muwatta: Bakir bin 'Amir told us, Ibrahim al-Nakha'i narrated to us from Alqama bin Qais that he said: 'I would rather bite on a burning coal than recite behind an Imam.' (2) Meaning Hazrat Alqama bin Qais says that taking a spark of fire in my mouth is dearer to me than reciting behind an Imam.

Athar 3: Muhammad also narrated: Isra'il from Yunus told us, Mansur narrated to us from Ibrahim that he said: 'Indeed, the first person who recited behind an Imam was a suspect (accused) man.' (3) Ibrahim bin Suwayd al-Nakha'i, who was among the leaders of the Tabi'un and the Imams of the firm religion, and whose narration and jurisprudence are as clear as the midday sun, said: The first person who recited behind an Imam was a suspicious man. In essence, reciting behind the Imam is an innovation (bid'ah) introduced by an unreliable person. The humble author [the Faqir] says the narrators of this hadith are the narrators of Sahih Muslim.

Hadith 9: Imam Malik narrates in his Muwatta and Imam Ahmad bin Hanbal (may Allah have mercy on them) in his Musnad: "And this is the narration of Malik from Nafi' that Abdullah bin Umar (may Allah be pleased with them both) was asked whether anyone should recite behind the Imam. He said: 'When one of you prays behind an Imam, the Imam's recitation is sufficient for him. And when he prays alone, let him recite.' He said: And Abdullah bin Umar (may Allah be pleased with them both) would not recite behind the Imam." (4) That is, when our leader and the son of our leader, Abdullah, the son of the Commander of the Faithful Umar Farooq-e-Azam (may Allah be pleased with them both), was asked about a follower's recitation, he would say: When any of you prays behind an Imam, the Imam's recitation is enough for him, and when he prays alone, let him recite. Nafi' says that

Abdullah bin Umar (may Allah be pleased with them both) himself would not recite behind the Imam. The humble author [the Faqir] says...

1. Kitab al-Athar, Imam Muhammad, Chapter: Recitation behind the Imam and prompting him, Idara al-Qur'an wa al-'Ulum al-Islamiyya, Karachi, p. 16.
2. Muwatta Imam Muhammad, Chapter: Recitation in prayer behind the Imam, published by Aftab-e-Alam Press, Lahore, p. 100.
3. Muwatta Imam Muhammad, Chapter: Recitation in prayer behind the Imam, published by Aftab-e-Alam Press, Lahore, p. 100.
4. Muwatta Imam Malik, Chapter: Abandoning recitation behind the Imam, published by Mir Muhammad Kutub Khana, Karachi, p. 86.

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

...और अब्दुल्ला के सभी साथी नहीं (१) - यानी अल्कामा बिन क़ैस, जो वरिष्ठ ताबिईन, महान मुज्तहिदीन और सैयदुना इब्न मसूद के सबसे जानकार छात्रों में से थे, वे इमाम के पीछे एक अक्षर भी नहीं पढ़ते थे, चाहे क़िरात (पाठ) ज़ोर से हो या धीरे, और न ही इमाम के पीछे होने पर पिछली रकतों में सूरह फातिहा या कुछ और पढ़ते थे। हज़रत अब्दुल्ला बिन मसूद (रज़ियल्लाहु अन्हुम अजमईन) के साथियों में से किसी ने भी उनके पीछे क़िरात नहीं की।

असर २: मुहम्मद [इमाम मुहम्मद] ने मुवत्ता में रिवायत की: हमें बकिर बिन आमिर ने बताया, हमें इब्राहिम अल-नखई ने अल्कामा बिन क़ैस से बताया कि उन्होंने कहा: 'मुझे जलते हुए कोयले पर काटना इमाम के पीछे पढ़ने से ज़्यादा पसंद है।' (२) यानी हज़रत अल्कामा बिन क़ैस फरमाते हैं कि इमाम के पीछे क़िरात करने की तुलना में आग की चिंगारी को मुँह में लेना मुझे ज़्यादा प्यारा है।

असर ३: मुहम्मद ने यह भी रिवायत की: इसराइल ने हमें यूनुस से बताया, मंसूर ने हमें इब्राहिम से बताया कि उन्होंने कहा: 'निश्चित रूप से इमाम के पीछे पढ़ने वाला पहला व्यक्ति एक संदिग्ध (आरोपी) आदमी था।' (३) इब्राहिम बिन सुवैद अल-नखई, जो ताबिईन के प्रमुखों और दीन-ए-मतीन के इमामों में से हैं, और जिनका हदीस वर्णन और फिक़्ह दोपहर के सूरज की तरह स्पष्ट है, ने कहा: सबसे पहले जिस व्यक्ति ने इमाम के पीछे पढ़ा, वह एक संदिग्ध व्यक्ति था। संक्षेप में, इमाम के पीछे क़िरात करना एक नवाचार (बिदअत) है जिसे एक अविश्वसनीय व्यक्ति ने शुरू किया था। फ़क़ीर (लेखक) कहता है कि इस हदीस के रावी सहीह मुस्लिम के रावी हैं।

हदीस ९: इमाम मलिक अपनी मुवत्ता में और इमाम अहमद बिन हंबल (रहमतुल्लाहि अलैहि) अपनी मसनद में रिवायत करते हैं: "और यह मलिक का नाफ़े से वर्णन है कि अब्दुल्ला बिन उमर (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से पूछा गया कि क्या कोई इमाम के पीछे क़िरात करे। उन्होंने कहा: 'जब तुम में से कोई इमाम के पीछे नमाज़ पढ़े, तो उसके लिए इमाम की क़िरात पर्याप्त है। और जब वह अकेला नमाज़ पढ़े, तो उसे क़िरात करनी चाहिए।' उन्होंने कहा: और अब्दुल्ला बिन उमर (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) इमाम के पीछे क़िरात नहीं करते थे।" (४) यानी हमारे सरदार और हमारे सरदार के पुत्र अब्दुल्ला, अमीरुल मोमिनीन उमर फ़ारूक़-ए-आज़म के बेटे (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से जब मुक़्तदी की क़िरात के बारे में सवाल किया जाता, तो वे फरमाते: जब तुम में से कोई इमाम के पीछे नमाज़ पढ़े, तो उसे इमाम की क़िरात काफ़ी है, और जब वह अकेला पढ़े, तो क़िरात करे। नाफ़े

कहते हैं कि अब्दुल्ला बिन उमर (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) खुद इमाम के पीछे क़िरात नहीं करते थे। फ़क़ीर कहता है...

1. किताब अल-आसार, इमाम मुहम्मद, अध्याय: इमाम के पीछे क़िरात और उसे याद दिलाना, इदारा अल-क़ुरआन वल-उलूम अल-इस्लामिया, कराची, पृ. १६।
2. मुवत्ता इमाम मुहम्मद, अध्याय: इमाम के पीछे नमाज़ में क़िरात, आफ़ताब-ए-आलम प्रेस, लाहौर द्वारा प्रकाशित, पृ. १००।
3. मुवत्ता इमाम मुहम्मद, अध्याय: इमाम के पीछे नमाज़ में क़िरात, आफ़ताब-ए-आलम प्रेस, लाहौर द्वारा प्रकाशित, पृ. १००।
4. मुवत्ता इमाम मलिक, अध्याय: इमाम के पीछे क़िरात छोड़ना, मीर मुहम्मद कुतुब खाना, कराची द्वारा प्रकाशित, पृ. ८६।

पृष्ठ २४४ / ७३६

فتاوی رضویہ جلد ششم

ولا اصحاب عبداللہ جمیعا ۱- یعنی علقمہ بن قیس کہ کبار تابعین واعاظم مجتہدین اور افقہ تلامذہ سید نا بن مسعود ہیں امام کے پیچھے ایک حرف نہ پڑھتے چاہے جہر کی قرأت ہو چاہے آہستہ کی اور نہ پچھلی رکعتوں میں فاتحہ پڑھتے اور نہ اور کچھ جب امام کے پیچھے ہوتے اور نہ کسی نے حضرت کے اصحاب عبد اللہ بن مسعود سے قرأت کی رضی اللہ تعالیٰ عنہم اجمعین۔

اثر ۲: محمد فی الموطا اخبرنا بکیر بن عامر مرثنا ابراہیم النخعی عن علقمة بن قیس قال لان اعض علی جمرة احب الی من ان اقرأ خلف الامام ۲- یعنی حضرت علقمہ بن قیس فرماتے ہیں البتہ آگ کی چنگاری منہ میں لینا مجھے اس سے زیادہ پیاری ہے کہ میں امام کے پیچھے قرأت کروں۔

اثر ۳: محمد ایضاً اخبرنا اسرائیل من یونس ثنا منصور عن ابراہیم قال ان اول من قرأ خلف الامام رجل اتھم ۳۔ یعنی ابراہیم بن سوید النخعی نے کہ رؤسائے تابعین و ائمہ دین متین سے ہیں تحدیث و فقاہت ان کی آفتاب نیمروز ہے فرمایا پہلے جس شخص نے امام کے پیچھے پڑھا وہ ایک مرد متہم تھا۔ حاصل یہ کہ امام کے پیچھے قرأت ایک بدعت ہے جو ایک بے اعتبار آدمی نے احداث کی۔ فقیر کہتا ہے رجال اس حدیث کے رجال صحیح مسلم ہیں۔

حدیث ۹: امام مالک اپنی مؤطا میں اور امام احمد بن حنبل رحمہم اللہ تعالیٰ اپنی مسند میں روایت کرتے ہیں: وھذا سباق مالك عن نافع ان عبداللہ بن عمر رضی اللہ تعالی عنھما کان اذا سئل ھل یقرأ احد خلف الامام قال اذا صلی احدکم خلف امام فحسبہ قرأة الامام واذا صلی وحدہ فلیقرأ قال وکان عبداللہ بن عمر رضی اللہ تعالی عنھما لا یقرأ خلف الامام ۴۔ یعنی سید نا و ابن سید نا عبد اللہ بن امیر المؤمنین عمر فاروق اعظم رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے جب درباره قرأت مقتدی سوال ہوتا فرماتے

جب کوئی تم میں امام کے پیچھے نماز پڑھے تو اسے قرأت امام کافی ہے اور جب اکیلا پڑھے تو قرأت کرے۔ نافع کہتے ہیں عبد اللہ بن عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہما خود امام کے پیچھے قرأت نہ کرتے فقیر کہتا ہے۔

۱ کتاب الآثار امام محمد باب القراءۃ خلف الامام و تلقینہ ادارۃ القرآن والعلوم الاسلامیہ کراچی ص ۱۶ ۲ موطا امام محمد باب القراءۃ فی الصلوۃ خلف الامام مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور ص ۱۰۰ ۳ موطا امام محمد باب القراءۃ فی الصلوۃ خلف الامام مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور ص ۱۰۰ ۴ موطا امام مالک ترک القراءۃ خلف الامام مطبوعہ میر محمد کتب خانہ کراچی ص ۸۶

Fatawa Razawiyya Volume Six

...that this Hadith is of the highest degree of authenticity (Sahih al-Isnad), such that many Hadith scholars have called 'Malik from Nafi' from Ibn Umar' as the soundest of chains.

Hadith 10: Muhammad informed us, 'Ubaydullah ibn Umar ibn Hafs ibn Asim ibn Umar ibn al-Khattab (may Allah be pleased with him) narrated from Nafi' from Ibn Umar (may Allah be pleased with him) that he said: "Whoever prays behind an Imam, the recitation of the Imam is sufficient for him."[1] That is, Hazrat Abdullah bin Umar (may Allah be pleased with both of them) says that for a follower (muqtadi), the Imam's recitation is enough. The humble author says: This chain of narration is also like the previous one, and its narrators are also the narrators of the Sahih Sittah (six authentic books), rather some Hadith scholars have preferred the narrations of Nafi' from Ubaydullah bin Umar over Imam Malik.

Hadith 11: Muhammad informed us, Abdur Rahman bin Abdullah al-Mas'udi informed me, Anas bin Sirin narrated from Ibn Umar (may Allah be pleased with both of them) that he was asked about reciting behind the Imam. He said: "The recitation of the Imam suffices you."[2] That is, when Syedna Ibn Umar (may Allah be pleased with both of them) was inquired about recitation behind the Imam, he said: The Imam's recitation is enough for you.

Hadith 12: Imam Abu Ja'far Ahmad bin Muhammad Tahawi (may Allah have mercy on him) narrates in Ma'ani al-Athar: Ibn Wahb narrated to us, who carried the chain of narration from Zaid bin Thabit (may Allah be pleased with him) that he heard him saying: "The one following an Imam should not recite anything in any prayer."[3] That is, Syedna Zaid bin Thabit Ansari (may Allah be pleased with him) says a follower should not recite behind the Imam in any prayer, whether it is a loud (jahri) prayer or a silent (sirri) one.

Hadith 13: Muhammad informed us, Dawud bin Qays narrated from Umar bin Muhammad bin Zaid from Musa bin Saeed bin Zaid bin Thabit al-Ansari, who narrates from his grandfather that he said: "Whoever recites behind the Imam, there is no prayer for him."[4] That is, Hazrat Zaid bin Thabit Ansari (may Allah be pleased with him) says the prayer of a person who recites behind the Imam is invalidated. The humble author says: This Hadith is 'Hasan' (fair), and Al-Daraqutni narrated it as 'Marfu' (attributed to the Prophet) via the path of Tawus.

Hadith 14: Al-Hafiz bin Ali bin Umar ad-Daraqutni, from Abu Hatim bin Hibban, narrated to me Ibrahim bin Sa'd from Ahmad bin Ali bin Sulayman ad-Duri from Abdur Rahman al-Makhzumi...

---

[1] Muwatta al-Imam Muhammad, Chapter on Recitation in Prayer behind the Imam, printed by Aftab-e-Alam Press, Lahore, p. 97 [2] Muwatta al-Imam Muhammad, Chapter on Recitation in Prayer behind the Imam, printed by Aftab-e-Alam Press, Lahore, p. 98 [3] Sharh Ma'ani al-Athar, Chapter on Recitation behind the Imam, printed by H.M. Saeed Company, Karachi, 1/151 [4] Muwatta al-Imam Muhammad, Chapter on Recitation in Prayer behind the Imam, printed by Aftab-e-Alam Press, Lahore, p. 102

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

...कि यह हदीस अत्यंत उच्च कोटि की सहीह-उल-इसनाद है, यहाँ तक कि 'मालिक अन नाफ़े अन इब्ने उमर' को कई मुहद्दिसों ने सबसे सहीह सनद कहा है।

हदीस 10: मुहम्मद ने हमें बताया, उबैदुल्ला बिन उमर बिन हफ़्स बिन आसिम बिन उमर बिन अल-ख़त्ताब (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने नाफ़े से, उन्होंने इब्ने उमर (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत की कि उन्होंने कहा: "जो व्यक्ति इमाम के पीछे नमाज़ पढ़े, तो इमाम की किरत उसके लिए काफी है।"[1] यानी हज़रत अब्दुल्ला बिन उमर (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) फ़रमाते हैं कि मुक़्तदी के लिए इमाम का पढ़ना काफी है। फ़क़ीर (लेखक) कहता है कि यह सनद भी पिछली सनद की तरह है और इसके रावी भी सहाह सित्ता के रावी हैं, बल्कि कुछ हदीस के विद्वानों ने नाफ़े अन उबैदुल्ला बिन उमर की रिवायतों को इमाम मालिक पर वरीयता दी है।

हदीस 11: मुहम्मद ने हमें बताया, अब्दुर रहमान बिन अब्दुल्ला अल-मसूदी ने मुझे बताया, अनस बिन सीरीन ने इब्ने उमर (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत की कि उनसे इमाम के पीछे किरत के बारे में पूछा गया। उन्होंने कहा: "इमाम की किरत तुम्हारे लिए काफी है।"[2] यानी सैयदना इब्ने उमर (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से इमाम के पीछे किरत के बारे में सवाल हुआ तो फ़रमाया: तुम्हें इमाम का पढ़ना काफी है।

हदीस 12: इमाम अबू जाफ़र अहमद बिन मुहम्मद तहावी (रहमहुल्लाह) 'मआनी अल-आसार' में रिवायत करते हैं: इब्न वहाब ने हमसे हदीस बयान की और जैद बिन साबित (रज़ियल्लाहु अन्हु) तक सनद पेश की कि उन्होंने उन्हें कहते हुए सुना: "मुक़्तदी इमाम के पीछे किसी भी नमाज़ में कुछ न पढ़े।"[3] यानी सैयदना जैद बिन साबित अंसारी (रज़ियल्लाहु अन्हु) फ़रमाते हैं कि मुक़्तदी इमाम के पीछे किसी भी नमाज़ में किरत न करे, चाहे वह ज़हरी नमाज़ हो या सिर्री।

हदीस 13: मुहम्मद ने हमें बताया, दाऊद बिन क़ैस ने उमर बिन मुहम्मद बिन ज़ैद से, उन्होंने मूसा बिन सईद बिन ज़ैद बिन साबित अल-अंसारी से, वह अपने दादा से रिवायत करते हैं कि उन्होंने कहा: "जिसने इमाम के पीछे किरत की, उसकी कोई नमाज़ नहीं।"[4] यानी हज़रत ज़ैद बिन साबित अंसारी (रज़ियल्लाहु अन्हु) फ़रमाते हैं कि जो व्यक्ति इमाम के पीछे पढ़े उसकी नमाज़ जाती रही। फ़क़ीर कहता है कि यह हदीस हसन है और दारक़ुत्नी ने ताऊस के माध्यम से इसे 'मरफ़ूअ' रिवायत किया है।

हदीस 14: अल-हाफ़िज़ बिन अली बिन उमर अल-दारक़ुत्नी, अबू हातिम बिन हिब्बान से, उन्होंने इब्राहिम बिन साद से, उन्होंने अहमद बिन अली बिन सुलेमान अद-दूरी से, उन्होंने अब्दुर रहमान अल-मख़ज़ूमी से...

---

1 मुवत्ता अल-इमाम मुहम्मद, बाबुल किरत फ़िस सलात खलफ़ल इमाम, आफ़ताब आलम प्रेस, लाहौर, पृष्ठ 97 2 मुवत्ता अल-इमाम मुहम्मद, बाबुल किरत फ़िस सलात खलफ़ल इमाम, आफ़ताब आलम प्रेस, लाहौर, पृष्ठ 98 3 शरह मआनी अल-आसार, बाबुल किरत खलफ़ल इमाम, एच.एम. सईद कंपनी कराची, 1/151 4 मुवत्ता अल-इमाम मुहम्मद, बाबुल किरत फ़िस सलात खलफ़ल इमाम, आफ़ताब आलम प्रेस, लाहौर, पृष्ठ 102

کہ یہ حدیث غایت درجہ کی صحیح الاسناد ہے حتی کہ مالک بن نافع عن ابن عمر کو بہت محدثین نے صحیح ترین اسانید کہا۔

حدیث ۱۰ : محمد اخبرنا عبید اللہ بن عمر بن حفص بن عاصم بن عمر بن الخطاب رضی اللہ تعالیٰ عنہ عن نافع عن ابن عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہ قال من صلی خلف الامام کفتہ قرائتہ ۱ ۔ یعنی حضرت عبد اللہ بن عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہما فرماتے ہیں مقتدی کو امام کا پڑھنا کافی ہے۔ فقیر کہتا ہے یہ سند بھی مثل سابق کے ہے اور اس کے رجال بھی رجال صحاح ستہ ہیں، بلکہ بعض علماء حدیث نے روایات نافع عن عبید اللہ بن عمر کو امام مالک پر ترجیح دی۔

حدیث ۱۱ : محمد اخبرنا عبدالرحمن بن عبداللہ المسعودي اخبرني انس بن سیرین عن ابن عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہما انہ سئل عن القرأۃ خلف الامام قال تکفیك قرأۃ الامام۔ ۲ یعنی سیدنا ابن عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے درباره قرات خلف الامام استفسار ہوا فرمایا تجھے امام کا پڑھنا بس کرتا ہے۔

حدیث ۱۲ : امام ابو جعفر احمد بن محمد طحاوی رحمۃ اللہ علیہ معانی الآثار میں روایت کرتے ہیں : حدثنا ابن وھب فساق باسناده عن زید بن ثابت رضی اللہ تعالیٰ عنہ سمعہ یقول لا یقرأ المؤتم خلف الامام في شیئ من صلاۃ ۳ یعنی سیدنا زید بن ثابت انصاری رضی اللہ تعالیٰ عنہ فرماتے ہیں مقتدی امام کے پیچھے کسی نماز میں قرات نہ کرے یعنی نماز جہر ہو یا سریہ:

حدیث ۱۳ : محمد اخبرنا داؤد بن قیس ثنا عمر بن محمد بن زید عن موسی بن سعید بن زید بن ثابت الانصاری یحدثہ عن جدہ قال من قرأ خلف الامام فلا صلاۃ لہ ۴۔ یعنی حضرت زید بن ثابت انصاری

رضی اللہ تعالیٰ عنہ فرماتے ہیں جو شخص امام کے پیچھے پڑھے اس کی نماز جاتی رہی۔ فقیر کہتا ہے یہ حدیث حسن ہے اور دار قطنی نے بطریق طاؤس اسے مرفوعاً روایت کیا۔

حدیث ۱۴ : الحافظ بن علی بن عمر الدار قطنی عن ابی حاتم بن حبان ثنی ابراہیم بن سعد عن احمد بن علی بن سلیمان الدوری عن عبدالرحمن المخزومی

---

۱ مؤطا الامام محمد باب القراءۃ فی الصلوۃ خلف الامام مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور ص ۹۷ ۲ مؤطا الامام محمد باب القراءۃ فی الصلوۃ خلف الامام مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور ص ۹۸ ۳ شرح معانی الآثار باب القراءۃ خلف الامام مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱/ ۱۵۱) ۴ مؤطا الامام محمد باب القراءۃ فی الصلوۃ خلف الامام مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور ص ۱۰۲

Fatawa Ridawiyya, Volume 6

On the authority of Sufyan ibn Uyaynah, from Ibn Tawus, from his father, from Zayd, from Thabit, from the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him), who said: "Whoever recites behind the Imam has no prayer." (1) This means the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says: The prayer of one who recites behind the Imam is not valid.

Hadith 15: Muhammad also informed us, Dawood ibn Qais al-Farra al-Madani informed me, some of the children of Sa'd ibn Abi Waqqas mentioned to him that Sa'd (may Allah be pleased with him) said: "I wish that the one who recites behind the Imam had a burning coal in his mouth." (2) This means it is narrated from Sayyiduna Sa'd ibn Abi Waqqas (may Allah be pleased with him) — who is among the most eminent companions, the ten given glad tidings of Paradise, and those close to the Divine court — that he said: "I desire that there be a burning coal in the mouth of the one who recites behind the Imam."

Hadith 16: Muhammad also informed us, Dawood ibn Qais al-Farra narrated to us Muhammad ibn Ajlan that Umar ibn al-Khattab (may Allah be pleased with him) said: "I wish there was a stone in the mouth of the one who recites behind the Imam." (3) This means the Commander of the Faithful, Farooq al-Azam (may Allah be pleased with him), said: "I wish that the person who recites behind the Imam had a stone in his mouth."

The humble servant [the author] says: The narrators of this Hadith meet the criteria of Sahih Muslim. In summary, from these authentic and reliable Hadiths, the Hanafi school of thought is established, praise be to Allah. Now remains the arguments used by the Shafi'is, the best of which, and what should be considered the basis of their school, is a Hadith from the Sahihayn (Bukhari and Muslim), namely: "There is no prayer except with the opening of the Book [Surah Al-Fatiha]." (4) No prayer is complete without Al-Fatiha. The response to this Hadith is of several kinds; here it is sufficient that this Hadith is neither beneficial to you nor harmful to us. We ourselves admit that no prayer consisting of bowing and prostration is complete without Al-Fatiha, whether it be for the Imam or the follower. However, regarding the follower (muqtadi), the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) himself said that the Imam's recitation is sufficient for him, and the Imam's reading is exactly like his own reading, as passed previously. So, where did you derive, contrary to the

instruction of the Noble Messenger, that as long as the follower does not recite himself, his prayer will remain 'without Al-Fatiha' and will become void?

Second proof: A Hadith from Muslim: "Whoever performs a prayer in which he does not recite the Mother of the Quran [Al-Fatiha], it is deficient [incomplete]."

1. Nasb al-Rayah, citing 'Ilal Mutanahiyah via Daraqutni, Kitab al-Salat, Maktabah Islamiyyah Riyadh 2/19; Kanz al-Ummal, Chapter Five, Recitation of the Follower, printed by Maktabah al-Turath al-Islami Beirut 8/286.
2. Muwatta of Imam Muhammad, Chapter on Recitation in Prayer behind the Imam, printed by Aftab Alam Press Lahore, p. 101.
3. Muwatta of Imam Muhammad, Chapter on Recitation in Prayer behind the Imam, printed by Aftab Alam Press Lahore, p. 102.
4. Ittihaf al-Sadah al-Muttaqin al-Qurra, printed by Dar al-Fikr Beirut 3/27-28. Note: The words "There is no prayer for one who does not recite the Opening of the Book" are found in Bukhari Volume 1, p. 104 and Muslim Volume 1, p. 169.

सुफ़ियान इब्न उययना से, इब्न ताऊस से, उनके पिता से, ज़ैद से, साबित से, अल्लाह के रसूल (उन पर अल्लाह की शांति और कृपा हो) से रिवायत है कि उन्होंने कहा: "जो इमाम के पीछे पढ़ता है, उसकी कोई नमाज़ नहीं है।" (1) यानी अल्लाह के रसूल (उन पर अल्लाह की शांति और कृपा हो) फ़रमाते हैं: इमाम के पीछे पढ़ने वाले की नमाज़ नहीं होती।

हदीस 15: मुहम्मद ने हमें यह भी बताया, दाऊद इब्न क़ैस अल-फ़र्रा अल-मदनी ने मुझे बताया, साद इब्न अबी वक़्क़ास के कुछ बच्चों ने उन्हें बताया कि साद (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) ने कहा: "मैं चाहता हूँ कि जो इमाम के पीछे पढ़ता है, उसके मुँह में एक दहकता हुआ अंगारा हो।" (2) यानी सैय्यदुना साद इब्न अबी वक़्क़ास (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) से - जो श्रेष्ठतम सहाबा, अशरा मुबश्शरा और दरबार के करीबियों में से हैं - रिवायत है कि उन्होंने फ़रमाया: मेरा जी चाहता है कि इमाम के पीछे पढ़ने वाले के मुँह में अंगारा हो।

हदीस 16: मुहम्मद ने हमें यह भी बताया, दाऊद इब्न क़ैस अल-फ़र्रा ने हमें मुहम्मद इब्न अजलान से बताया कि उमर इब्न अल-खत्ताब (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) ने कहा: "काश! इमाम के पीछे पढ़ने वाले के मुँह में पत्थर होता।" (3) यानी अमीरुल मोमिनीन फ़ारूक़-ए-आज़म (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) ने फ़रमाया: काश जो व्यक्ति इमाम के पीछे क़िरात करे, उसके मुँह में पत्थर हो।

फ़कीर (लेखक) कहता है: इस हदीस के रावी सहीह मुस्लिम की शर्त पर हैं। कुल मिलाकर इन सहीह और विश्वसनीय हदीसों से हनफ़ी मज़हब अल्हम्दुलिल्लाह साबित हो गया। अब रहे शाफ़ईयों के तर्क, उनमें सबसे उम्दा दलील जिसे उनके मज़हब का आधार कहना चाहिए, सहीहैन की हदीस है, यानी: "किताब की फ़ातिहा (सूरह फ़ातिहा) के बिना कोई नमाज़ नहीं होती।" (4) फ़ातिहा के बिना कोई नमाज़ नहीं है। इस हदीस का जवाब कई तरह से है; यहाँ इतना ही काफी है कि यह हदीस न तुम्हारे लिए फायदेमंद है और न हमारे लिए हानिकारक। हम खुद मानते हैं कि रुकू और सजदे वाली कोई भी नमाज़ फ़ातिहा के बिना मुकम्मल नहीं होती, चाहे वह इमाम की हो या मुक्तदी की। लेकिन मुक्तदी के हक में खुद अल्लाह के रसूल (उन पर अल्लाह की शांति और कृपा हो) ने फ़रमाया कि उसके लिए इमाम की क़िरात काफी है और इमाम का पढ़ना बिल्कुल उसका अपना पढ़ना है, जैसा कि पहले गुज़र चुका है। तो, हुज़ूर के इरशाद के खिलाफ तुमने यह कहाँ से निकाल लिया कि मुक्तदी जब तक खुद नहीं पढ़ेगा, उसकी नमाज़ फ़ातिहा के बिना रहेगी और फासिद (रद्द) हो जाएगी?

दूसरी दलील: मुस्लिम की हदीस: "जिसने ऐसी नमाज़ पढ़ी जिसमें उसने उम्मुल कुरान (फ़ातिहा) नहीं पढ़ी, तो वह अधूरी है।"

1. नसब अल-रायाह, 'इलल मुतनाहिया' के हवाले से दारकुतनी के माध्यम से, किताब अल-सलात, मकतबा इस्लामिया रियाद 2/19; कnzुल उम्माल, अध्याय पांच, मुक्तदी की क़िरात, मकतबा अल-तुराथ अल-इस्लामी बेरूत 8/286 द्वारा मुद्रित।
2. मुअत्ता इमाम मुहम्मद, इमाम के पीछे नमाज़ में क़िरात का अध्याय, आफ़ताब आलम प्रेस लाहौर द्वारा मुद्रित, पृष्ठ 101।
3. मुअत्ता इमाम मुहम्मद, इमाम के पीछे नमाज़ में क़िरात का अध्याय, आफ़ताब आलम प्रेस लाहौर द्वारा मुद्रित, पृष्ठ 102।
4. इत्तिहाफ़ अल-सादाह अल-मुत्तक़ीन अल-कुर्रा, दार अल-फ़िक्र बेरूत द्वारा मुद्रित 3/27-28। नोट: "उसकी कोई नमाज़ नहीं जिसने किताब की फ़ातिहा नहीं पढ़ी" शब्द बुखारी खंड 1, पृष्ठ 104 और मुस्लिम खंड 1, पृष्ठ 169 पर उपलब्ध हैं।

عن سفیان بن عیینہ عن ابن طاؤس عن ابیہ عن زید عن ثابت عن رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم قال من قرأ خلف الامام فلا صلوۃ لہ 1۔ یعنی رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں: امام کے پیچھے پڑھنے والے کی نماز نہیں ہوتی۔

حدیث ۱۵: محمد ایضا اخبرنا داؤد بن قیس الفراء المدنی اخبرنی بعض ولد سعد بن ابی وقاص انہ ذکر لہ ان سعدا رضی اللہ تعالٰی عنہ قال وددت ان الذی یقرأ خلف الامام فی فیہ جمرۃ 2۔ یعنی سیدنا سعد بن ابی وقاص رضی اللہ تعالٰی عنہ سے کہ افاضلِ صحابہ و عشرہ مبشرہ و مقربانِ بارگاہ سے ہیں منقول ہے انھوں نے فرمایا میرا جی چاہتا ہے کہ امام کے پیچھے پڑھنے والے کے منہ میں انگارہ ہو۔

حدیث ۱۶: محمد ایضا اخبرنا داؤد بن قیس الفراء ثنا محمد بن عجلان ان عمر بن الخطاب رضی اللہ تعالٰی عنہ قال لیت فی فم الذی یقرأ خلف الامام حجرا 3۔ یعنی حضرت امیر المومنین فاروقِ اعظم رضی اللہ تعالٰی عنہ نے فرمایا کاش جو شخص امام کے پیچھے قرأت کرے اسکے منہ میں پتھر ہو۔

فقیر کہتا ہے رجال اس حدیث کے بر شرط صحیح مسلم ہیں۔ الحاصل ان احادیث صحیحہ و معتبرہ سے مذہبِ حنفیہ بحمد اللہ ثابت ہوگیا اب باقی رہے تمسکات شافعیہ اُن میں عمدہ ترین دلائل جسے اُن کا مدارِ مذہب کہنا چاہئے حدیث صحیحین ہے یعنی لا صلوۃ الا بفاتحۃ الکتاب 4 کوئی نماز نہیں ہوتی بے فاتحہ کے۔ جواب اس حدیث سے چند طور پر ہے یہاں اسی قدر کافی کہ یہ حدیث تمھارے مفید نہ ہمارے مضر، ہم خود مانتے ہیں کہ کوئی نماز ذاتِ رکوع سجود بے فاتحہ کے تمام نہیں امام کی ہو خواہ ماموم کی مگر مقتدی کے حق میں خود رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا

کہ اُس کے لئے امام کی قرأت کافی اور امام کا پڑھنا بعینہ اس کا پڑھنا ہے۔ کما مر سابقا (جیسا کہ پیچھے گزر چکا ت) پس خلافِ ارشادِ حضور والا تم نے کہاں سے نکال لیا کہ مقتدی جب تک خود نہ پڑھے گا نماز اس کی بے فاتحہ رہے گی اور فاسد ہو جائے گی۔

دوسری دلیل: حدیث مسلم من صلی صلاۃ لم یقرأ فیہا بام القرآن فہی خداج

1 نصب الراية بحواله علل متناهية من طريق دارقطني كتاب الصلوة مكتبه اسلاميه رياض ٢ / ١٩، كنز العمال الباب الخامس قراة الماموم مطبوعه مكتبه التراث اسلامی بیروت ٨ / ٢٨٦ 2 مؤطا للامام محمد باب القرأة في الصلوة خلف الامام مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور ص ١٠١ 3 مؤطا للامام محمد باب القرأة في الصلوة خلف الامام مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور ص ١٠٢ 4 اتحاف السادة المتقين القراء مطبوعہ دار الفكر بيروت ٣ / ٢٨ - ٢٧ ف: بخاری جلد ١ ص ١٠٤ اور مسلم ج ١ ص ١٦٩ پر لا صلوة لمن لم يقرأ بفاتحة الكتاب کے الفاظ ہیں۔

Fatawa Razawiyya Volume Six

"It is defective, it is defective." [1] - The summary is that whoever performs any prayer without reciting Surah al-Fatihah, it is incomplete, incomplete, incomplete. The answer to this is also exactly the same as the first; the deficiency of prayer without Fatihah is accepted, and the recitation of the Imam is sufficient for the follower. In short, even if there were millions of such Hadiths, they would be useful only if, according to our view, the follower's prayer remained without the Umm al-Kitab (Surah al-Fatihah), and that is prohibited (T). And at the end of the Hadith is the statement of Hazrat Sayyiduna Abu Hurairah (may Allah be pleased with him): "Recite it within yourself, O Persian" [2] (Recite it in your heart, O Persian. -T). Shafi'is also rely on this. By the grace of Allah, this humble servant has a lengthy and excellent response to this, which cannot be mentioned here.

Third Argument: Hadith of Ubadah bin Samit (may Allah be pleased with him): "Do not do so except with the Umm al-Quran" [3]. Do not recite anything behind the Imam except al-Fatihah.

Firstly, this Hadith is weak. How can it stand against the authentic Hadiths that we have quoted from Muslim, Tirmidhi, Nasai, Muwatta Imam Malik, and Muwatta Imam Muhammad, etc., which are authentic and reliable? Imam Ahmad bin Hanbal and other preservers [of Hadith] have declared it weak. Critics like Yahya bin Ma'in, regarding whom the praised Imam said that a Hadith not recognized by Yahya is not a Hadith at all, state that the exception of Fatihah is not preserved.

Secondly, the Shafi'is themselves do not act upon this Hadith for two reasons: one is that it contains a prohibition against [reciting] anything beyond the Fatihah, while according to them, it is permissible for the follower to also join a Surah [after Fatihah]. Imam al-Nawawi has explicitly stated this in the Commentary of Sahih Muslim. Secondly, the aforementioned Hadith, as narrated by Abu Dawood, loudly announces that it is permissible for the follower to recite Fatihah audibly, and this is prohibited by consensus, as explicitly stated by Imam al-Nawawi in the Commentary of Sahih Muslim (Sheikh Abdul Haq Muhaddith Dehlavi has also clarified this in 'Lama'at' and quoted Imam al-Nawawi's words).

---

1. Sahih Muslim, Chapter on the Obligation of Reciting al-Fatihah, etc., published by Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/169-170.

2. Sahih Muslim, Chapter on the Obligation of Reciting al-Fatihah, etc., published by Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/169.
3. Musnad Ahmad bin Hanbal, Hadith of Ubadah bin Samit, published by Dar al-Fikr, Beirut, 5/322; Sunan al-Daraqutni, Chapter on the Obligation of Reciting Umm al-Kitab, etc., published by Nashr al-Sunnah, Multan, 1/318.

"वह त्रुटिपूर्ण है, वह त्रुटिपूर्ण है।" [1] - सारांश यह है कि जिसने बिना फ़ातिहा पढ़े कोई नमाज़ पढ़ी, वह त्रुटिपूर्ण है, त्रुटिपूर्ण है, त्रुटिपूर्ण है। इसका उत्तर भी बिल्कुल पहले वाले जैसा ही है: बिना फ़ातिहा के नमाज़ की कमी स्वीकार्य है, और इमाम की क़िरात मुक़्तदी (अनुयायी) के लिए पर्याप्त है। संक्षेप में, यदि ऐसी लाखों हदीसें भी हों, तो वे आपके काम तब आएंगी जब हमारे अनुसार मुक़्तदी की नमाज़ बिना उम्मुल किताब (सूरह फ़ातिहा) के रह जाए, और यह निषिद्ध है (टी)। और हदीस के अंत में हज़रत सय्यिदुना अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) का कथन है: "इसे अपने मन में पढ़ो, ऐ फ़ारसी" [2] (अपने दिल में पढ़ो, ऐ फ़ारसी। -टी), जिससे शाफ़ई भी प्रमाण लेते हैं। अल्लाह के अनुग्रह से, इस विनम्र सेवक के पास इसका एक विस्तृत और सुंदर उत्तर है, जिसके उल्लेख के लिए यहाँ स्थान नहीं है।

तीसरा तर्क उबादा बिन सामित (रज़ियल्लाहु अन्हु) की हदीस: "उम्मुल क़ुरआन (फ़ातिहा) के अलावा ऐसा न करो" [3]। इमाम के पीछे फ़ातिहा के अलावा और कुछ न पढ़ो।

पहली बात तो यह है कि यह हदीस ज़ईफ़ (कमज़ोर) है। यह उन सही हदीसों के मुक़ाबले कैसे टिक सकती है जिन्हें हमने मुस्लिम, तिर्मिज़ी, नसाई, मुवत्ता इमाम मालिक और मुवत्ता इमाम मोहम्मद आदि सही और विश्वसनीय किताबों से उद्धृत किया है? इमाम अहमद बिन हंबल और अन्य हाफ़िज़ों ने इसे ज़ईफ़ करार दिया है। याह्या बिन मईन जैसे आलोचक, जिनके बारे में प्रशंसित इमाम ने कहा कि जिस हदीस को याह्या न पहचानें वह हदीस ही नहीं है, कहते हैं कि फ़ातिहा का अपवाद सुरक्षित नहीं है।

दूसरी बात यह कि स्वयं शाफ़ई इस हदीस पर दो कारणों से अमल नहीं करते: एक यह कि इसमें फ़ातिहा के अलावा कुछ भी पढ़ने की मनाही है, जबकि उनके अनुसार मुक़्तदी के लिए [फ़ातिहा के बाद] कोई और सूरह मिलाना भी जायज़ है। इमाम नववी ने शरह सही मुस्लिम में इसकी स्पष्ट व्याख्या की है। दूसरा यह कि उक्त हदीस, जिस तरह से अबू दाऊद ने रिवायत की है, ऊँची आवाज़ में मुनादी करती है कि मुक़्तदी के लिए ज़ोर से फ़ातिहा पढ़ना जायज़ है, और यह बात सर्वसम्मति (इज्मा) से निषिद्ध है, जैसा कि इमाम नववी ने शरह सही मुस्लिम में स्पष्ट किया है (शेख़ अब्दुल हक़ मुहद्दिस देहलवी ने 'लमाआत' में इस बात की स्पष्टता की है और इमाम नववी का कलाम उद्धृत किया है)।

1. सहीह मुस्लिम, बाब वुजूब किराअतुल फ़ातिहा अलख, मुद्रित क़दीमी कुतुब ख़ाना, कराची, 1/169-170।
2. सहीह मुस्लिम, बाब वुजूब किराअतुल फ़ातिहा अलख, मुद्रित क़दीमी कुतुब ख़ाना, कराची, 1/169।
3. मुसनद अहमद बिन हंबल, हदीस उबादा बिन सामित, मुद्रित दारुल फ़िक्र, बेरूत, 5/322; सुनन अल-दाराकुतनी, बाब वुजूब किराअत उम्मुल किताब अलख, मुद्रित नश्र अस-सुन्नाह, मुल्तान, 1/318।

فتاویٰ رضویہ جلد ششم

"ھی خداج ھی خداج" 1۔ حاصل یہ کہ جس نے کوئی نماز بے فاتحہ پڑھی وہ ناقص ہے ناقص ہے ناقص ہے۔ اس کا جواب بھی بعینہ مثل اول کے ہے نماز بے فاتحہ کا نقصان مسلم اور قرات امام قراتِ ماموم سے مغنی خلاصہ یہ کہ اس قسم کی احادیث اگر چہ لاکھوں ہوں تمھیں اس وقت بکار آمد ہوں گی جب ہمارے طور پر نماز مقتدی بے ام الکتاب رہتی ہو وھو ممنوع (اور یہ ممنوع ہے۔ ت) اور آخر حدیث میں قول حضرت سیدنا ابوہریرہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ اقرأ بھا في نفسك یا فارسی 2 (اپنے دل میں پڑھ اے فارسی۔ت) کہ شافعیہ اس سے بھی استناد کرتے ہیں فقیر بتوفیق الٰہی اس سے ایک جواب حسن طویل الذیل رکھتا ہے جس کے ذکر کی یہاں گنجائش نہیں۔

تیسری دلیل: حدیث عبادہ بن صامت رضی اللہ تعالیٰ عنہ لا تفعلوا الا بام القرآن 3 امام کے پیچھے اور کچھ نہ پڑھو سوائے فاتحہ کے۔

اولاً یہ حدیث ضعیف ہے ان صحیح حدیثوں کی جو ہم نے مسلم اور ترمذی ونسائی وموطائے امام مالک و موطائے امام محمد وغیرہما صحاح و معتبرات سے نقل کیں کب مقاومت کرسکتی ہے، امام احمد بن حنبل وغیرہ حفاظ نے اس کی تضعیف کی، یحییٰ بن معین جیسے ناقدین جس کی نسبت امام مدوح نے فرمایا جس حدیث کو یحییٰ نہ پہچانے حدیث ہی نہیں فرماتے ہیں استثنائے فاتحہ غیر محفوظ ہے۔

ثانیاً خود شافعیہ اس حدیث پر دو وجہ سے عمل نہیں کرتے: ایک یہ کہ اس میں ماورائے فاتحہ سے نہی ہے اور ان کے نزدیک مقتدی کو ضم سورت بھی جائز ہے۔ صرح بہ الامام النووی فی شرح صحیح مسلم (امام نووی نے شرح صحیح مسلم میں اس کی تصریح کی ہے) دوسرے یہ کہ

حدیث مذکور جس طریق سے ابو داؤد نے روایت کی بآواز بلند منادی کہ مقتدی کو جسراً فاتحہ پڑھنا روا اور یہ امر بالاجماع ممنوع صرح بہ الامام النووی فی شرح صحیح مسلم (شیخ عبدالحق محدث دہلوی نے لمعات میں اس بات کی تصریح کی ہے اور امام نووی کا کلام)

---

1 الصحیح لمسلم باب وجوب قراۃ الفاتحہ الخ مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۱۶۹-۱۷۰ 2 الصحیح لمسلم باب وجوب قراۃ الفاتحہ الخ مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۱۶۹ 3 مسند احمد بن حنبل حدیث عبادہ بن صامت مطبوعہ دارالفکر بیروت ۵/ ۳۲۲، سنن الدار قطنی باب وجوب قراۃ ام الکتاب الخ مطبوعہ نشر السنۃ ملتان ۱/ ۳۱۸

Fatawa Razawiyya Volume 6 ...gives benefit in the commentary as well. (T) So, how can they protest against us with something that is abandoned according to them? In short, our refined religion is, by the grace of Allah, established with sufficient proofs and ample evidence, and the opponents do not have any decisive proof that could, God forbid, invalidate or weaken it. However, in this fitna-ridden age, some unrestrained ignorant people who have made their own whims their leader and to disrupt the order of Islam, create doubts and delusions regarding the following (taqlid) of the noble Imams. The apparatus on which they oppose the Mujtahid Imams, especially the Imam of Imams, Hazrat Imam-e-Azam (may Allah be pleased with him and his followers), and the meager capital on which they claim ijtihad and understanding of jurisprudence (fiqh) is known to fair-minded intellectuals. Their real aim is to mislead the common people who are unfortunately unaware of the Quran and Hadith. Whatever these crude claimants said, they accepted, even though in the eyes of the elite, these things are a cause of humiliation and disgrace. May Allah (Glory be to Him and Exalted is He) grant safety from the whispers of Satan. Ameen. This and the knowledge is with the Giver of sciences, the Knower of every hidden secret. (Accept it, and true knowledge is with the One Who grants all sciences and is aware of all hidden secrets. T)

Problem No. 452: What do the scholars of religion say regarding a Hafiz who recites the Holy Quran in prayer in such a way that he neither pays attention to correct declension (i'rab) nor pauses at the necessary stops, and recites the past tense first-person plural forms in a way that listeners suspect they are third-person feminine plural forms, and in many places letters and words are also missed. Is there any hope of reward in listening to it or none at all? And is the prayer valid behind him or not? Will this excuse be acceptable for leaving the congregation, or is it necessary to go to another mosque for the congregation, or should he just perform the obligatory prayer with the congregation and the rest at home? (Explain and get rewarded. T)

The Answer: Regarding errors in declension (i'rab), i.e., vowels, stops, doubling of letters (tashdid), lightening (takhfif), shortening (qasr), and lengthening (madd), the verdict (fatwa) of the later scholars (muta'akhireen), may Allah have mercy on them all, is that generally, the prayer is not invalidated by them.

| In Al-Durr al-Mukhtar: A slip of the reader if in declension does not invalidate (prayer), even if the meaning changes. It is so decreed. - Bazzaziyya | In Durr al-Mukhtar it is stated: If the error of the one reciting is in declension (vowels), the

prayer will not be void even if the meaning changes. The fatwa is upon this. - Bazzaziyya (T) |

1 Durr al-Mukhtar, Chapter on things that invalidate prayer, printed at Mujtabai Delhi, 1/90.

फ़तावा रज़विया जिल्द शशुम (छठा खंड) ...शरह (व्याख्या) में भी इसका फ़ायदा देता है। (त) पस जो ख़ुद उनके नज़दीक मतरूक (परित्यक्त) हैं, हम पर उस से किस तरह एहतेजाज (विरोध) करते हैं। बल्कि हमारा मज़हब मुहज्ज़ब ब-हम्दुलिल्लाह हुजज काफ़िया व दलाइल वाफ़िया से साबित है, और मुख़ालिफ़ीन के पास कोई दलील क़ाते (निर्णायक प्रमाण) ऐसी नहीं कि उसे मआज़ अल्लाह बातिल या मुज़महिल कर सके। मगर इस ज़माना-ए-पुरफ़ितन के बाज़ जुह्हाल बे-लगाम जिन्होंने हवा-ए-नफ़्स को अपना इमाम बनाया और इंतिज़ाम-ए-इस्लाम को दरहम-बरहम करने के लिए तक़लीद-ए-अइम्मा-ए-किराम में ख़दशात व औहाम पैदा करते हैं। जिस साज़-ओ-सामान पर अइम्मा-ए-मुज्तहिदीन ख़ुसूसन इमामुल अइम्मा हज़रत इमाम-ए-आज़म रज़ियल्लाहु तआला अन्हु व अन मुक़ल्लिदीहि की मुख़ालफ़त और जिस बज़ाअत-ए-मुज़जात पर इद्दआ-ए-इज्तिहाद व फ़क़ाहत है, उक़ला-ए-मुनसिफ़ीन का मालूम असल मक़सूद उनका अग़वा-ए-अवाम है कि वो बेचारे क़ुरान व हदीस से ना-वाकिफ़ हैं। जो इन मुद्दईयान-ए-ख़ाम कार ने कह दिया उन्होंने मान लिया अगरचे ख़वास की नज़र में ये बातें मूजिब-ए-ज़िल्लत व बाइस-ए-फ़ज़ीहत हों, अल्लाह सुब्हानहु व तआला वसाविस-ए-शैतान से अमान बख़्शे आमीन। हाज़ा वल इल्मु इंदा वाहबिल उलूम अल-आलिम बि-कुल्लि सिर्रिम मक्क्तूम (इसे क़बूल फ़रमा और हक़ीक़ी इल्म उस ज़ात के पास है जो तमाम उलूम अता फ़रमाने वाला और तमाम मख़्फी राज़ों से वाकिफ़ है। त)

मसला नंबर 452: क्या फ़रमाते हैं उलमा-ए-दीन इस मसले में जो हाफ़िज़ नमाज़ में इस तरह क़ुरान मजीद पढ़ता हो कि न तो सही एराब का ध्यान रखता है और न औक़ाफ़-ए-लाज़मा पर वक़्फ़ करता है और माज़ी जमा मुतक्लिम के सीग़े ऐसे अदा करता है कि सामईन को जमा मुअन्नस ग़ायब का शुबा होता है और अक्सर जगह हुर्फ़ व कलमात भी फ़रोगुज़ाश्त (छूट) हो जाते हैं, तो उसके सुनने में कुछ सवाब की उम्मीद है या बिल्कुल नहीं? और नमाज़ उसके पीछे दुरुस्त है या नहीं? और ये उज़्र (बहाना) तर्कए-जमाअत के लिए मक़बूल होगा या नहीं या दूसरी मस्जिद में जमाअत के लिए जाना ज़रूरी है या सिर्फ़ फ़र्ज़ जमाअत से अदा करे बाक़ी नमाज़ मकान पर पढ़े। (बयान करो और अज्र पाओ। त)

अल-जवाब: ख़ताई अल-एराब यानी हरकत, सुकून, तशदीद, तख़फ़ीफ़, क़स्र, मद की ग़लती में उलमा-ए-मुतअख़िरीन रहिमहुमुल्लाहु अलैहिम अजमईन का फ़तवा तो ये है कि अलल-इतलाक़ (सामान्यतः) इस से नमाज़ नहीं जाती।

| फ़िल दुर्रिल मुख़्तार व ज़ल्लतुल क़ारी लौ फ़ी एराबिन ला तुफ़्सिद व इन ग़ैयरल मआना बिही युफ़्ता। बज़ाज़िया 1 | दुर्रे मुख़्तार में है कि क़िराअत करने वाले की ग़लती अगर एराब में हो तो नमाज़ फ़ासिद नहीं होगी अगरचे उस से माना बदल जाए। इसी पर फ़तवा है। बज़ाज़िया। (त) |

1 दुर्रे मुख़्तार बाब मा युफ़्सिदुस सलात मतबुआ मुज्तबाई देहली 1/ 90

فتاویٰ رضویہ جلد ششم شرح میں بھی اسکا فائدہ دیتا ہے۔ت) پس جو خود ان کے نزدیک متروک ہم پر اس سے کس طرح احتجاج کرتے ہیں۔ بالجملہ ہمارا مذہب مہذب بحمد اللہ حجج کافیہ و دلائل وافیہ سے ثابت، اور مخالفین کے پاس کوئی دلیل قاطع ایسی نہیں کہ اسے معاذ اللہ باطل یا مضمحل کر سکے مگر اس زمانہ پرفتن کے بعض جہال بے لگام جنہوں نے ہوائے نفس کو اپنا امام بنایا اور انتظام اسلام کو درہم برہم کرنے کے لئے تقلید ائمہ کرام میں خدشات و اوہام پیدا کرتے ہیں جس ساز و سامان پر ائمہ مجتہدین خصوصاً امام الائمہ حضرت امام اعظم رضی اللہ تعالیٰ عنہ وعن مقلدیہ کی مخالفت اور جس بضاعت مزجات پر ادعائے اجتہاد و فقاہت ہے عقلائے منصفین کا معلوم اصل مقصود ان کا اغوائے عوام ہے کہ وہ بیچارے قرآن و حدیث سے ناواقف ہیں جو ان مدعیانِ خام کار نے کہہ دیا انہوں نے مان لیا اگرچہ خواص کی نظر میں یہ باتیں موجب ذلت و باعث فضیحت ہوں، اللہ سبحانہ و تعالیٰ وساوس شیطان سے امان بخشے امین ھذا والعلم عند واہب العلوم العالم بکل سر مکتوم (اسے قبول فرما اور حقیقی علم اس ذات کے پاس جو تمام علوم عطا فرمانے والا اور تمام مخفی رازوں سے واقف ہے۔ت)

مسئلہ نمبر ۴۵۲: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں جو حافظ نماز میں اس طرح قرآن مجید پڑھتا ہو کہ نہ تو صحیح اعراب کا دھیان رکھتا ہے اور نہ اوقاف لازمہ پر وقف کرتا ہے اور ماضی جمع متکلم کے صیغے ایسے ادا کرتا ہے کہ سامعین کو جمع مونث غائب کا شبہ ہوتا ہے اور اکثر جگہ حروف و کلمات بھی فروگذاشت ہو جاتے ہیں تو اس کے سننے میں کچھ ثواب کی امید یا بالکل نہیں اور نماز اس کے پیچھے درست ہے یا نہیں اور یہ عذر ترک جماعت کے لئے مقبول ہوگا یا نہیں یا دوسری مسجد میں جماعت کے لئے جانا ضروری ہے یا صرف فرض جماعت سے ادا کرے باقی نماز مکان پر پڑھے۔ (بیان کرو اور اجر پاؤ۔ت)

الجواب: خطائی الاعراب یعنی حرکت، سکون، تشدید، تخفیف، قصر، مد کی غلطی میں علمائے متاخرین رحمہم اللہ علیہم اجمعین کا فتوٰی تو یہ ہے کہ علی الاطلاق اس سے نماز نہیں جاتی۔

| فی الدر المختار وزلۃ القاری لو فی اعراب لا تفسد وان غیر المعنی بہ یفتی۔ بزازیہ 1 | در مختار میں ہے کہ قرات کرنے والے کی غلطی اگر اعراب میں ہو تو نماز فاسد نہیں ہوگی اگرچہ اس سے معنی بدل جائے اسی پر فتوٰی ہے بزازیہ۔(ت) |

1 در مختار باب مایفسد الصلوۃ مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱/ ۹۰

Fatawa Razawiyya Volume Six

It is stated in Radd al-Muhtar:

[Arabic Text]: It does not invalidate [the prayer] in all cases, and this is the issued ruling (fatwa). - Bazzaziyya and Khulasah. [Urdu Text]: In all these cases, the prayer will not be invalidated, and this is the ruling. - Bazzaziyya and Khulasah (T).

Although the early scholars and the Imams of the school of thought (may Allah be pleased with them) consider the prayer invalid in case of corruption of meaning, and this is stronger in terms of evidence, and acting upon it is more cautious and preferable.

[Arabic Text]: In the commentary of Munyat al-Kabir, it is stated: This is what the researchers have authenticated and derived branch rulings from. So act upon what you choose, but caution is better in every situation, especially regarding the matter of prayer, which is the first thing a servant will be held accountable for. (Summarized) [Urdu Text]: It is stated in Sharh Muniyah Kabir that researchers have declared this to be correct and have mentioned branches based on it. So act upon what you choose, and caution is better in every place regardless of the situation, especially in prayer, because it is the act about which the servant will be questioned first. (Summarized extracts)

And an error in stopping (waqf) or joining (wasl) is not something [that invalidates prayer], to the extent that if one did not stop at a mandatory stop but joined the verses, the prayer is not lost.

[Arabic Text]: In al-Alamgiriyya, it is stated: If one joins in a place where joining is not appropriate, such as if the reciter did not stop at the words of Allah Almighty, "Ashab al-Nar" (companions of the Fire), but joined it with the words, "alladhina yahmiluna al-'arsh" (those who carry the Throne), the prayer is not invalidated, though it is disliked. It is mentioned similarly in al-Khulasah. [Urdu Text]: In Fatawa Alamgiri, it is stated: If a reciter joined at a place where it was not a place to join, for instance, the reciter did not stop at Allah Almighty's command "Ashab-un-Nar" but joined it with "Alladhina yahmilun-al-Arsh", then the prayer will not be invalidated, although this act is bad. It is mentioned similarly in Khulasah. (T)

It is stated in Hilya:

[Arabic Text]: More than one of them, including the author of al-Dhakhira, have explicitly stated that the fatwa is for the non-invalidation in every case because observing the rules of stopping, joining, and beginning [is difficult]... [Urdu Text]: Many scholars, including the author of Dhakhira, have explicitly stated that the fatwa is for non-invalidation in every case because in observing stopping, joining, and starting...

1. Radd al-Muhtar, Chapter on what invalidates prayer, published by Mustafa al-Bani, 1/467
2. Ghunyat al-Mustamli Sharh Munyat al-Musalli, Fawa'id min Ziyyat al-Qari, published by Suhail Academy Lahore, p. 493
3. Fatawa Hindiyya, Chapter Five on Ziyyat al-Qari, published by Noorani Kutub Khana Peshawar, 1/81

फतावा रज़विया जिल्द छठा

रद्द अल-मुह्तार में है:

[अरबी पाठ]: यह सभी मामलों में अमान्य नहीं करता है, और इसी पर फतवा दिया गया है। - बज़ाज़िया और खुलासा। [उर्दू पाठ]: इन सभी स्थितियों में नमाज़ फासिद (अमान्य) नहीं होगी और इसी पर फतवा है। - बज़ाज़िया और खुलासा (त)।

यद्यपि पूर्व विद्वानों और स्वयं मज़हब के इमामों (अल्लाह उनसे खुश हो) ने अर्थ के भ्रष्टाचार की स्थिति में नमाज़ के फासिद होने को माना है और दलील के आधार पर यही अधिक प्रबल है, और इसी पर अमल करना अधिक सावधानीपूर्ण और उचित है।

[अरबी पाठ]: शरह मुनियत अल-कबीर में उल्लेख है: शोधकर्ताओं ने इसी को प्रमाणित किया है और इससे उप-नियम निकाले हैं। तो आप जो चाहें उस पर अमल करें, लेकिन सावधानी हर स्थिति में बेहतर है, विशेष रूप से नमाज़ के मामले में, जिसके बारे में बंदे से सबसे पहले पूछताछ की जाएगी। (संक्षेपित) [उर्दू पाठ]: शरह मुनिया कबीर में है कि इसी को शोधकर्ताओं ने सही करार दिया और इसी पर आधारित शाखाओं का उल्लेख किया। तो आप अपनी पसंद पर अमल करें और एहतियात (सावधानी) हर हाल में हर स्थान पर बेहतर है, विशेष रूप से नमाज़ में, क्योंकि यही वह कार्य है जिसके बारे में बंदे से सबसे पहले पूछताछ होगी। (संक्षेपित उद्धरण)

और रुकने (वक़्फ़) और जोड़ने (वस्ल) की त्रुटि कोई ऐसी चीज़ नहीं है, यहाँ तक कि यदि कोई अनिवार्य रुकने के स्थान पर न रुककर मिला दे, तो नमाज़ अमान्य नहीं होती।

[अरबी पाठ]: अल-आलमगीरिया में है: यदि कोई ऐसी जगह जोड़ता है जहाँ जोड़ना उचित नहीं है, जैसे कि यदि पाठक अल्लाह तआला के कथन "असहाब अल-नार" (आग वाले) पर नहीं रुकता है, बल्कि इसे "अल्लज़ीना यहमिलून अल-'अर्श" (जो अर्श उठाए हुए हैं) के साथ जोड़ देता है, तो नमाज़ फासिद नहीं होती, हालांकि यह अनुचित है। खुलासा में भी इसी प्रकार उल्लेख है। [उर्दू पाठ]: फतावा आलमगीरी में है: यदि पाठक ने वहाँ जोड़ा जहाँ जोड़ने का स्थान नहीं था, उदाहरण के लिए, पाठक अल्लाह तआला के आदेश "असहाब-उन-नार" पर नहीं रुका बल्कि उसे "अल्लज़ीना यहमिलून-अल-अर्श" के साथ जोड़ दिया, तो नमाज़ फासिद नहीं होगी, हालाँकि यह कार्य बुरा है। खुलासा में भी इसी तरह है। (त)

हिल्या में उल्लेख है:

[अरबी पाठ]: उनमें से एक से अधिक, जिनमें अल-ज़खीरा के लेखक भी शामिल हैं, ने स्पष्ट रूप से कहा है कि फतवा हर मामले में नमाज़ के अमान्य न होने पर है क्योंकि रुकने, जोड़ने और शुरू करने के नियमों का पालन करने में... [उर्दू पाठ]: कई विद्वान, जिनमें ज़खीरा के लेखक भी शामिल हैं, ने स्पष्ट रूप से कहा है कि फतवा हर हाल में फासिद न होने पर है क्योंकि रुकने, जोड़ने और शुरू करने के पालन में...

1. रद्द अल-मुह्तार, नमाज़ को अमान्य करने वाली चीज़ों का अध्याय, मुस्तफा अल-बानी द्वारा प्रकाशित, 1/467
2. गुनियात अल-मुस्तमली शरह मुनियत अल-मुसल्ली, फवाइद मिन ज़ियत अल-कारी, सुहैल अकादमी लाहौर द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 493
3. फतावा हिन्दिया, ज़ियत अल-कारी पर पाँचवाँ अध्याय, नूरानी कुतुब खाना पेशावर द्वारा प्रकाशित, 1/81

पृष्ठ 249 / 736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

ردالمحتار میں ہے:

لا تفسد في الكل و به يفتى- بزازيه و خلاصه[1] ان تمام صورتوں میں نماز فاسد نہ ہوگی اور اسی پر فتوٰی ہے - بزازیہ و خلاصہ (ت)

اگرچہ علمائے متقدمین و خود ائمہ مذہب رضی اللہ تعالٰی عنہم در صورتِ فسادِ معنی فسادِ نماز مانتے ہیں اور یہی من حیث الدلیل اقوٰی، اور اسی پر عمل احوط واحری۔

فی شرح منية الكبير هو الذى صححه المحققون و فرعوا عليه الفروع فاعمل بما تختار و الاحتياط اولى سيما في امر الصلوة التى هى اول ما يحاسب العبد عليها۔[2] (ملخصاً) شرح منیہ کبیر میں ہے کہ اسی کو محققین نے صحیح قرار دیا اور اسی فروع کو ذکر کیا پس تو اپنے مختار پر عمل کر اور احتیاط بہر صورت ہر مقام پر بہتر ہے خصوصاً نماز میں، کیونکہ یہی وہ عمل ہے جس کے بارے میں بندے سے سب سے پہلے پوچھ ہوگی (ملخصات)

اور وقف و وصل کی غلطی کوئی چیز نہیں یہاں تک کہ اگر وقف لازم پر نہ ٹھہرا بلکہ ملا دیا مگر نماز نہ گئی۔

في العالمگيرية ان وصل في غير موضع الوصل كما لولم يقف عند قوله اصحب النار بل وصل بقوله الذين يحملون العرش لا تفسد لكنه قبيح هكذا في الخلاصة[3]- فتاوٰی عالمگیری میں ہے اگر قاری نے وہاں وصل کیا جہاں وصل کا مقام نہ تھا جیسا کہ قاری نے وقف نہ کیا اللہ تعالٰی کے ارشاد "اصحاب النار" پر بلکہ "الذین یحملون العرش" کے ساتھ ملا دیا تو نماز فاسد نہ ہوگی البتہ یہ عمل بُرا ہے۔ خلاصہ میں اسی طرح ہے۔ (ت)

حلیہ میں ہے:

صرح غیر واحد منهم صاحب الذخیرة علی ان الفتوی علی عدم الفساد بکل حال لان فی مراعاة الوقف والوصل والابتداء متعدد علماء جس میں صاحبِ ذخیرہ بھی ہے نے اس بات کی تصریح فرمائی کہ ہر حال میں عدمِ فساد پر فتویٰ ہے کیونکہ وقف، وصل اور ابتداء کی

[1] ردالمحتار باب ما یفسد الصلوة مطبوعہ مصطفیٰ البانی ۱/ ۴۶۷ [2] غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی فوائد من زیۃ القاری مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۴۹۳ [3] فتاویٰ ہندیہ الفصل الخامس فی زیۃ القاری مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور ۱/ ۸۱

Putting people into hardship, especially the common folk [is forbidden] and hardship is removed shari'ah-wise.[1]

Enforcing strict adherence will inevitably lead to hardship for people, especially the commoners, and religiously, hardship is waived. (T)

Likewise, if the 'Alif' in the pronoun 'Na' is not audible, it is not an invalidator.

As clearly stated in 'Al-Qunyah', some Arabs make do with a 'Fatha' instead of 'Alif', a 'Kasra' instead of 'Ya', and a 'Damma' instead of 'Waw'; they say 'A'idh-u billah' instead of 'A'udhu billah'. I say: upon this is based what is stated in 'Al-Ghunyah' that omitting the 'Ya' from 'Ta'ala' in 'Ta'ala Jaddu Rabbina' does not, by consensus, invalidate [the prayer].[2]

Because it is explicitly stated in 'Qunyah' that some Arabs suffice with 'Fatha' in place of 'Alif', 'Kasra' in place of 'Ya', and 'Damma' in place of 'Waw'. It is inferred that in the saying of Allah the Almighty 'Jaddu Rabbina', omitting the 'Ya' of 'Ta'ala' will not, by consensus, invalidate the prayer.

Similarly, the omission of letters and words does not always cause invalidation, but only when it changes the meaning, as is the rule of the predecessor Imams (may Allah the Almighty have mercy on them). (As is the established principle of the predecessor Imams, may Allah the Almighty have mercy on them. T)

In short, if the aforementioned Hafiz does not commit those mistakes that invalidate the prayer, then prayer behind him is correct, and this excuse for abandoning the congregation is unacceptable. If invalidating mistakes are made, then indeed that prayer is no prayer at all. There is no room for reward there; rather, God forbid, there is a fear of the opposite. Nor do the residents of the neighborhood need to go to another mosque, for this very mosque, which has a right over them, is still in need of prayer and congregation. The non-existence of an invalid prayer is religiously the same. Therefore, if possible, re-establish the congregation there; otherwise, you should pray alone in that mosque so that the right of the mosque is fulfilled.

As stated in 'Al-Fatawa al-Khaniyyah', and in it is also [mentioned]: [Regarding] a Muezzin in a mosque where no one else comes to his mosque, they said: He should call the Adhan, the Iqamah, and pray alone, and that is more beloved than if he prays [in another mosque].

As 'Fatawa Khaniyah' has stated, and it also contains this: that a Muezzin of such a mosque where no other worshiper comes, the Muezzin should call the Adhan, say the Takbeer, and perform the prayer alone. And this for him [is better than] another...

---

[1] Hilyah [2] Qunyah, Chapter on Omitting and Adding Letters, Published by Al-Hamaandiyah, p. 63 Page 250 of 736

लोगों को कठिनाई में डालना, विशेष रूप से आम लोगों के लिए [वर्जित है] और शरिया की दृष्टि से कठिनाई हटा दी गई है।[1]

नियम के पालन को अनिवार्य करने से लोगों पर, विशेष रूप से आम लोगों पर, तंगी आएगी और शरई तौर पर तंगी समाप्त कर दी गई है। (त)

इसी तरह, यदि सर्वनाम 'ना' में 'अलिफ़' सुनाई न दे, तो यह अमान्य करने वाला नहीं है।

जैसा कि 'अल-कुन्या' में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि कुछ अरब 'अलिफ़' के स्थान पर 'फ़तह', 'या' के स्थान पर 'कसरा' और 'वाव' के स्थान पर 'दम्मा' से काम चला लेते हैं; वे 'अऊज़ु बिल्लाह' के स्थान पर 'अइज़ु बिल्लाह' कहते हैं। मैं कहता हूँ: इसी पर आधारित है जो 'अल-ग़ुनिया' में स्पष्ट किया गया है कि 'तआला जद्दु रब्बिना' में 'तआला' की 'या' को हटा देने से, सर्वसम्मति से, [नमाज़] अमान्य नहीं होती है।[2]

क्योंकि 'कुन्या' में यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि कुछ अरब 'अलिफ़' के स्थान पर 'फ़तह', 'या' के स्थान पर 'कसरा' और 'वाव' के स्थान पर 'दम्मा' पर संतोष करते हैं। यह निष्कर्ष निकलता है कि अल्लाह तआला के कथन 'जद्दु रब्बिना' में 'तआला' की 'या' को हटा देने से, सर्वसम्मति से नमाज़ अमान्य नहीं होगी।

इसी तरह, अक्षरों और शब्दों का छूट जाना हमेशा अमान्यता का कारण नहीं बनता है, बल्कि केवल तभी होता है जब यह अर्थ बदल देता है, जैसा कि पूर्ववर्ती इमामों (अल्लाह तआला उन पर दया करे) का नियम है। (जैसा कि पूर्ववर्ती इमामों, अल्लाह तआला उन पर दया करे, का स्थापित सिद्धांत है। त)

संक्षेप में, यदि उपर्युक्त हाफ़िज़ वे गलतियाँ नहीं करते हैं जो नमाज़ को अमान्य करती हैं, तो उनके पीछे नमाज़ सही है, और जमात छोड़ने के लिए यह बहाना अस्वीकार्य है। यदि अमान्य करने वाली गलतियाँ की जाती हैं, तो वास्तव में वह नमाज़ नमाज़ ही नहीं है। वहाँ सवाब की कोई गुंजाइश नहीं है; बल्कि, खुदा न करे, इसके विपरीत होने का डर है। न ही मोहल्ले के निवासियों को दूसरी मस्जिद में जाने की आवश्यकता है, क्योंकि यही मस्जिद, जिसका उन पर अधिकार है, अभी भी नमाज़ और जमात की मोहताज है। अमान्य नमाज़ का न होना धार्मिक रूप से एक समान है। इसलिए, यदि संभव

हो, तो वहाँ फिर से जमात स्थापित करें; अन्यथा, आपको उस मस्जिद में अकेले ही नमाज़ पढ़नी चाहिए ताकि मस्जिद का अधिकार पूरा हो।

जैसा कि 'अल-फ़तावा अल-ख़ानिया' में कहा गया है, और उसमें यह भी है: [एक ऐसी] मस्जिद में मुअज़्ज़िन के बारे में जहाँ उसकी मस्जिद में कोई और नहीं आता, उन्होंने कहा: उसे अज़ान देनी चाहिए, इक़ामत कहनी चाहिए और अकेले नमाज़ पढ़नी चाहिए, और यह इससे अधिक प्रिय है कि वह [दूसरी मस्जिद में] नमाज़ पढ़े।	**जैसा कि 'फ़तावा ख़ानिया' में बताया गया है, और इसमें यह भी शामिल है: कि ऐसी मस्जिद का मुअज़्ज़िन जहाँ कोई अन्य नमाज़ी नहीं आता है, मुअज़्ज़िन को अज़ान देनी चाहिए, तकबीर कहनी चाहिए और अकेले नमाज़ अदा करनी चाहिए। और यह उसके लिए दूसरी...**

---

[1] हिल्या [2] कुन्या, अक्षरों को हटाने और जोड़ने का अध्याय, अल-हमान्दिया द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 63

ایقاع الناس فی الحرج خصوصاً فی حق العوام و الحرج مدفوع شرعاً[1] ۔ رعایت لازم کرنے سے لوگوں پر خصوصاً عوام پر تنگی لازم آئے گی اور شرعاً تنگی مرفوع ہے۔ **(ت)**

یوں ہی ضمیر "نا" میں الف مسموع نہ ہو نا مفسد نہیں۔

لما صرح به القنية ان من العرب يكتفى عن الالف بالفتحة و الياء بالكسرة والواو بالضمة تقول اعذ بالله مكان اعوذ بالله ، قلت وعليه يخرج ماصرح به فی الغنية ان حذف الياء من تعالى في تعالى جد ربنا لا تفسد اتفاقاً ۔[2] کیونکہ قنیہ میں تصریح ہے کہ بعض عرب الف کے عوض فتحہ، یاء کے عوض کسرہ اور واؤ کے عوض ضمہ پر اکتفاء کرتے ہیں مستفاد ہے کہ اللہ تعالٰی کے ارشاد تعالٰی جد ربنا میں تعالٰی کی یا حذف کرنے سے بالاتفاق نماز فاسد نہ ہوگی۔

اسی طرح حروف و کلمات کا فروگزاشت ہو جانا بھی دولتاً موجبِ فساد نہیں ہوتا بلکہ اسی وقت کہ تغییر کا معنی کرلے کما ھو ضابطۃ الائمۃ المتقدمین رحمہم اللہ تعالٰی (جیسا کہ ائمہ متقدمین رحمہم اللہ تعالٰی کا مسلمہ ضابطہ ہے۔ ت) بالجملہ اگر حافظ مذکور سے وہ خطائیں جو مفسد نماز ہیں واقع نہیں ہوتیں تو نماز اسکے پیچھے درست، اور ترک جماعت کے لئے یہ عذر نامسموع، اور اگر خطایائے مفسدہ صادر ہوتے ہیں تو بے شک وہ نماز نماز ہی نہیں۔ نہ وہاں ثواب کی گنجائش بلکہ عیاذاً باللہ عکس کا خوف ہے، نہ اہل محلہ کو دوسری مسجد میں جانے کی حاجت کہ یہی مسجد جوان پر حق رکھتی ہے ہنوز محتاج نماز و جماعت ہے۔ نماز فاسد کا تو عدم وجود شرعاً یکساں، پس اگر ممکن ہو تو دوبارہ جماعت وہیں قائم کرے ورنہ آپ ہی مسجد میں تنہا پڑھ لے کہ حق مسجد ادا ہو،

كما افاده فی الفتاوی الخانیة وفیها جیسا کہ فتاویٰ خانیہ میں اس کا افادہ کیا اور اس میں یہ

ایضاً مؤذن بمسجد لا یحضر مسجده بھی ہے کہ کسی ایسی مسجد کا موذن جہاں کوئی اور

احد قالوا یوذ ن هو یقیم ویصلی وحده نمازی نہیں آتا تو موذن اذان دے، تکبیر کہے اور تنہا نماز

وذاك احب من ان یصلی ادا کرے۔ اور یہ اس کے لئے دوسری

---

[1] حلیۃ [2] قنیہ باب فی حذف الحرف والزیادۃ مطبعہ مشتہرہ بالہماندیۃ ص ۶۳ Page 250 of 736

Fatawa Rizwia | Volume 6 In another mosque. 1 | It is better to perform prayer in a mosque. (T) And if the situation is such that the aforementioned Hafiz recites the Quran correctly in obligatory prayers and corruptive mistakes only occur in Tarawih due to haste and carelessness, then one should follow him in obligatory prayers. The same ruling applies to Tarawih. Otherwise, if the obligatory prayers are corrupted, following him is not correct as is evident. (T) And Allah Almighty knows best. Problem No. 255: 7 Rabi al-Akhir 1307 AH What do the scholars of religion say regarding this matter: if an Imam or an individual recites some portion loudly in the third or fourth rak'ah, will the prostration of forgetfulness (Sajdah Sahw) be obligatory or not? Explain and you shall be rewarded. The Answer: If an Imam accidentally recites enough of the Great Quran to fulfill the obligatory recitation (which according to our Imam Azam, may Allah be pleased with him, is one verse) loudly in those rak'ahs where silent recitation is obligatory—such as all rak'ahs of Zuhr and Asr, the last two of Isha, and the third of Maghrib—then undoubtedly Sajdah Sahw will be obligatory. If he did not perform the prostration without a valid Sharia excuse, or if he recited that much loudly intentionally, then repeating the prayer is obligatory. If less than that amount, for example, one or two words are uttered loudly, then there is no harm according to the predominant views. It is stated in Radd al-Muhtar: "Reciting silently is obligatory for the Imam and the individual in prayers where silent recitation is required, which are: Zuhr and Asr, the third rak'ah of Maghrib, the last two rak'ahs of Isha, Salat al-Kusoof, and Salat al-Istisqa. As in Al-Bahr 2... etc." Reciting silently (Israr) is obligatory for both the Imam and the individual in silent prayers, which are the prayers of Zuhr, Asr, the third rak'ah of Maghrib, the last two rak'ahs of Isha, Salat al-Kusoof, and Salat al-Istisqa. As mentioned in Al-Bahr... etc. (T) It is stated in Durr al-Mukhtar: "Two prostrations are obligatory for omitting a mandatory act forgetfully, such as reciting loudly in a prayer where silence is required and vice versa. The most correct view is to quantify it by the amount with which the prayer is valid." Two prostrations become necessary for omitting a mandatory act forgetfully, for example, reciting loudly in a silent prayer or its opposite, and the most correct view is that in both cases, the recitation is that much [as makes the prayer valid]. 1 Fatawa Qazi Khan, Chapter on the Mosque, printed by Munshi Naval Kishore, Lucknow, 1/32 2 Radd al-Muhtar, Chapter on the Description of Prayer, printed by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/346 Page 251 of 736

फ़तावा रिज़विया | खंड ६ दूसरी मस्जिद में। 1 | मस्जिद में नमाज़ अदा करना बेहतर है। (त) और अगर स्थिति ऐसी हो कि उल्लेखित हाफिज़ अनिवार्य नमाजों में कुरान मजीद सही पढ़ता है और भ्रष्ट करने वाली गलतियां केवल तरावीह में जल्दबाजी और लापरवाही के कारण होती हैं, तो अनिवार्य नमाजों में उसका अनुसरण करना चाहिए। तरावीह में भी यही नियम है। अन्यथा, अनिवार्य नमाजों के भ्रष्टाचार की स्थिति में, उसका अनुसरण करना सही नहीं है जैसा कि स्पष्ट है। (त) और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। मसला नंबर २५५: ७ रबी अल-आखिर १३०७ हिजरी दीन के विद्वान इस मसले में क्या कहते हैं कि यदि इमाम या अकेले नमाज़ पढ़ने वाला तीसरी या चौथी रकात में कुछ किरात (पाठ) ज़ोर से कर दे, तो सजदा सहव (भूल-चूक का सजदा) वाजिब होगा या नहीं? स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिलेगा। उत्तर: यदि इमाम उन रकातों में जिनमें धीमे स्वर में पढ़ना अनिवार्य है, जैसे ज़ुहर और असर की सभी रकात, ईशा की पिछली दो और मग़रिब की तीसरी, इतना महान कुरान भूलवश ऊँची आवाज़ में पढ़ जाए जिससे अनिवार्य पाठ पूरा हो जाए (और हमारे इमाम आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु के मज़हब में यह एक आयत है), तो निस्संदेह सजदा सहव वाजिब होगा। यदि बिना किसी शरीयत के बहाने के सजदा नहीं किया या जानबूझकर इतना ऊँची आवाज़ में पढ़ा, तो नमाज़ को दोहराना वाजिब है। और यदि उस मात्रा से कम, उदाहरण के लिए एक या दो शब्द ऊँची आवाज़ में निकल जाएँ तो प्रमुख मतों में कोई हर्ज नहीं है। रद अल-मुह्तार में है: "इमाम और व्यक्तिगत नमाज़ पढ़ने वाले पर उन नमाजों में शांत पाठ करना अनिवार्य है जिनमें शांत रहना आवश्यक है, और वे हैं: ज़ुहर और असर की नमाज़, मग़रिब की तीसरी रकात, ईशा की अंतिम दो, सलात अल-कुसूफ और सलात अल-इस्तिस्का। जैसा कि अल-बहर २ में है... आदि।" शांत नमाजों में इमाम और व्यक्तिगत नमाज़ी दोनों पर इस्रार (शांत पाठ) वाजिब है, और वे ज़ुहर, असर की नमाज़, मग़रिब की तीसरी रकात, ईशा की आखिरी दो रकात, कुसूफ और इस्तिस्का की नमाज़ हैं। जैसा कि अल-बहर में है... आदि (त) दुर-ए-मुख्तार में है: "भूलवश वाजिब छोड़ देने पर दो सजदे वाजिब होते हैं, जैसे जहाँ शांत रहना हो वहाँ ज़ोर से पाठ करना और इसके विपरीत। सबसे सही यह है कि इसका निर्धारण उस मात्रा से किया जाए जिससे नमाज़ जायज़ हो जाए।" भूलवश वाजिब छोड़ देने से दो सजदे अनिवार्य हो जाते हैं, उदाहरण के लिए शांत नमाज़ में ज़ोर से पाठ करना या इसके विपरीत, और सबसे सही यही है कि दोनों स्थितियों में पाठ की उतनी मात्रा [जिससे नमाज़ मान्य हो]। १. फ़तावा काज़ी खान, मस्जिद का अध्याय, मुंशी नवल किशोर, लखनऊ द्वारा मुद्रित, १/३२ २. रद अल-मुह्तार, नमाज़ के विवरण का अध्याय, मुस्तफा अल-बाबी, मिस्र द्वारा मुद्रित, १/३४६ पृष्ठ २५१ का ७३६

فتاوٰی رضویہ | جلد ششم فی مسجد آخر۔ 1 | مسجد میں نماز ادا کرنے سے بہتر ہے۔ (ت) اور اگر یہ صورت ہو کہ حافظ مذکور فرضوں میں قرآن مجید صحیح پڑھتا ہے اور خطائے مفسدہ صرف تراویح میں بوجہ عجلت و بے احتیاطی واقع ہوتی ہیں تو فرض میں اس کی اقتداء کرے تراویح میں بھی یہی حکم ہے ورنہ درصورت فساد فرضوں میں بھی اقتداء درست نہیں کما لا یخفی (جیسا کہ ظاہر ہے۔ ت) واللہ تعالٰی اعلم۔ مسئلہ نمبر ۲۵۵: ۷ ربیع الآخر ۱۳۰۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ اگر امام یا منفرد تیسری یا چوتھی رکعت میں کچھ قرآت جہر سے پڑھ جائے تو سجدہ سہو واجب ہوگا یا نہیں؟ بینوا توجروا۔ الجواب: اگر امام اُن رکعتوں میں جن میں آہستہ پڑھنا واجب ہے جیسے ظہر و عصر کی سب رکعات اور عشاء کی پچھلی دو اور مغرب کی تیسری اتنا قرآن عظیم جس سے فرض قرات ادا ہوسکے (اور وہ ہمارے امام اعظم رضی اللہ تعالٰی عنہ کے مذہب میں ایک آیت ہے) بھول کر با آواز پڑھ جائیگا تو بلاشبہ سجدہ سہو واجب ہوگا، اگر بلا عذر شرعی سجدہ نہ کیا یا اس قدر قصداً بآواز پڑھا تو نماز کا پھیرنا واجب ہے، اور اگر اس مقدار سے کم مثلاً ایک آدھ کلمہ بآواز بلند نکل جائے تو مذاہب راجح میں کچھ حرج نہیں۔ ردالمحتار میں ہے۔ الاسرار یجب علی الامام والمنفرد فیما یسرفیه وهو صلوة الظهر والعصر و الثالثة من المغرب و الاخریان من العشاء و صلاة الکسوف والاستسقاء کما فی البحر 2۔ الخ سری نمازوں میں امام منفرد دونوں پر اسرار (سرّاً قرات) واجب ہے اور نماز ظہر، عصر، مغرب کی تیسری رکعت، عشاء کی آخری دو رکعت، نماز کسوف اور نماز استسقاء ہیں۔ جیسا کہ بحر میں ہے الخ (ت) درِ مختار میں ہے: تجب سجدتان بترك واجب سهوا کالجهر فیما یخافت فیه وعکسه والاصح تقدیره بقدرما تجوز به الصلوة سہوًا ترک واجب سے دو سجدے لازم آتے ہیں مثلاً سری نماز میں جہراً قرات کرلے یا اسکا عکس، اور اصح یہی ہے کہ دونوں صورتوں میں اتنی قرات [جس سے نماز جائز ہو جائے]۔ 1

فتاوىٰ قاضی خان فصل فی المسجد مطبوعہ منشی نولکشور لکھنؤ ۱/ ۳۲ 2 ردالمحتار باب صفۃ الصلوۃ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/ ۳۴۶ Page 251 of 736

Fatawa Razawiyya Volume VI

- [Quoting] In both chapters, summarized: Prostration will become necessary by which the prayer is completed. Summarized. (T)
- It is in Ghunyah: The correct [view] according to Zahir al-Riwayah is that the estimation is what is sufficient for prayer without distinction, because a small amount of audible recitation in a place of silent recitation is excused, etc. - According to the correct Zahir al-Riwayah, it is that amount with which prayer becomes valid without any distinction, because a small audible recitation in place of silent recitation is forgiven, etc. (T)
- It is in Hashiyah Shami: It is declared correct in al-Hidayah, al-Fath, al-Tabyin, and al-Munyah, etc., and its full discussion is therein. - It has been declared correct in Hidayah, Fath, Tabyin, and Munyah, etc., and there is a detailed discussion in it. (T)
- It is in Tanwir al-Absar: The obligation of recitation is one verse according to the [chosen] school. - (According to the chosen school, the recitation of one verse is obligatory. T)
- It is in Bahr al-Ra'iq and Alamgiri: Prostration is not required for intentional acts; rather, repetition is necessary as a compensation for its deficiency. - For intentional acts (omission of a duty), the prostration of forgetfulness is not obligatory because repeating the prayer is necessary to compensate for its deficiency. (T)
- This ruling applies to the Imam, and for an individual praying alone, it is more cautious to avoid this act intentionally, and if it occurs forgetfully, he should perform the prostration.
- And that is because the scholars have differed regarding it with a strong difference; among them are those who do not make silent recitation obligatory for an individual in silent prayers, just as it is not obligatory [to recite audibly] in audible prayers by consensus. - And this is because there is a strong disagreement among the scholars regarding it; some do not consider silent recitation obligatory for an individual in silent prayers, just as in audible prayers, audible recitation is by consensus.

1. Durr al-Mukhtar, Chapter of Prostrations of Forgetfulness, Mujtabai Press Delhi 1/102
2. Ghunyah al-Mustamli Sharh Munyah al-Musalli, Section on Prostrations of Forgetfulness, Suhail Academy Lahore p. 458
3. Radd al-Muhtar, Chapter of Prostrations of Forgetfulness, Mustafa al-Babi Egypt 1/548
4. Durr al-Mukhtar, Section on Imam's Recitation, Mujtabai Press Delhi 1/80
5. Fatawa Hindiyah, Chapter Two on Prostrations of Forgetfulness, Noorani Kutub Khana Peshawar 1/126

फतावा रजविया खंड छठा

- दोनों अध्यायों में, संक्षेप में: इससे सजदा अनिवार्य हो जाएगा जिससे नमाज़ पूरी हो जाती है। संक्षेप में-(त)
- गनिया में है: ज़ाहिर अल-रिवया के अनुसार सही वह मात्रा है जिसके साथ बिना किसी पृथक्करण के नमाज़ जायज़ हो जाए क्योंकि सिर की जगह थोड़ा ज़हर (ऊंची आवाज़) माफ है आदि। - सही ज़ाहिर अल-रिवया में है वह इतनी मात्रा है कि उसके साथ नमाज़ बिना किसी मतभेद के जायज़ हो जाए क्योंकि सिर (मौन) की जगह थोड़ा ज़हर (मुखर) माफ है आदि (त)
- हाशिया शामी में है: इसे हिदाया, फतह, तबीईन और मुनिया आदि में सही कहा गया है और इसकी पूर्ण चर्चा उसमें है। - इसे हिदाया, फतह, तबीईन और मुनिया में सही कहा गया है आदि और इसमें विस्तृत चर्चा है। (त)
- तनवीर अल-अबसार में है: पसंदीदा मज़हब के अनुसार एक आयत का पाठ फर्ज़ है। - (पसंदीदा मज़हब के अनुसार एक आयत का पाठ फर्ज़ है। त)
- बहर अल-राईक़ और आलमगीरी में है: जानबूझकर किए गए कार्यों के लिए सजदा आवश्यक नहीं है, बल्कि कमी की भरपाई के लिए नमाज़ दोहराना आवश्यक है। - जानबूझकर (वाजिब छोड़ने से) सजदा सहू वाजिब नहीं है क्योंकि इसकी कमी को पूरा करने के लिए नमाज़ को दोहराना ज़रूरी है (त)
- यह हुक्म इमाम के लिए है और अकेले नमाज़ पढ़ने वाले के लिए भी ज़्यादा एहतियात इसी में है कि इस काम से जानबूझकर बचे और अगर भूल से हो जाए तो सजदा कर ले।
- और यह इसलिए है क्योंकि इसमें विद्वानों के बीच गहरा मतभेद है; उनमें से वे भी हैं जो अकेले नमाज़ पढ़ने वाले पर सिर्री नमाज़ में सिर्र (मौन) क़िरात को वाजिब नहीं मानते, जैसा कि जह्री नमाज़ में सर्वसम्मति से जह्र (मुखर पाठ)। - और यह इसलिए है क्योंकि इसमें विद्वानों का कड़ा मतभेद है, कुछ अकेले नमाज़ पढ़ने वाले पर सिर्री नमाज़ में सिर्र क़िरात को वाजिब नहीं मानते, जैसा कि जह्री नमाज़ में सर्वसम्मति से जह्र।

---

1. दुर्रे मुख्तार, बाब सुजूदुस सहू, मुजतबाई प्रेस दिल्ली 1/102

2. गनिय्यतुल मुस्तमली शरह मुनिय्यतुल मुसल्ली, बाब सुजूदुस सहू, सुहैल अकादमी लाहौर पृ. 458
3. रदुल मुहतार, बाब सुजूदुस सहू, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र 1/548
4. दुर्रे मुख्तार, फसल बि जह्रिल इमाम, मुजतबाई प्रेस दिल्ली 1/80
5. फतावा हिन्दिया, दूसरा अध्याय सुजूदुस सहू में, नूरानी कुतुब खाना पेशावर 1/126

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

- فِی الْفَصْلَیْنِ ۱ اھ مُلَخَّصًا | سے سجدہ لازم ہو جائے گا جس سے نماز ادا ہو جاتی ہو۔اھ ملخصا۔ (ت)

- غنیّہ میں ہے: الصحیح ظاھر الروایۃ وھوالتقدیر بما تجوز بہ الصلوۃ من غیر تفرقۃ لان القلیل من الجھر موضع المخافۃ عفواً ۲ الخ | صحیح ظاہر الروایہ میں ہے وہ اتنی مقدار ہے کہ اس کے ساتھ نماز بغیر کسی تفرقہ کے جائز ہو جائے کیونکہ سر کی جگہ جہر قلیل معاف ہے الخ(ت)

- حاشیہ شامی میں ہے: صححہ فی الھدایۃ والفتح والتبیین والمنیۃ ۳ الخ وتمامہ فیہ۔ | اس کو ہدایہ، فتح، تبیین اور منیہ میں صحیح کہا ہے الخ اور اس میں تفصیلی گفتگو ہے۔(ت)

- تنویر الابصار میں ہے: فرض القرأۃ آیۃ علی المذھب ۴ ۔ | (مذہب مختار کے مطابق ایک آیت کی قرأت فرض ہے۔ت)

- بحر الرائق و عالمگیری میں ہے: لا یجب السجود فی العمد و انما یجب الاعادۃ جبرا لنقصانہ ۵ ۔ | عمداً (ترک واجب سے) سجدہ سہو واجب نہیں کیونکہ اس کے نقصان کو پورا کرنے کے لئے نماز کا اعادہ ضروری ہے (ت)

- یہ حکم امام کا ہے اور منفرد کے لئے بھی زیادہ احتیاط اسی میں ہے کہ اس فعل سے عمداً بچے اور سہواً واقع ہو تو سجدہ کرلے۔

- وذلک لان العلماء اختلفوا فیہ اختلافا شدید افمنھم من لم یوجب علیہ الاسرار فیما یسر کما لا یجب علیہ | اور یہ اس لئے ہے کیونکہ اس میں علماء کا شدید اختلاف ہے بعض منفرد پر سری نماز میں سرّ قرأت کو واجب قرار نہیں دیتے جیسا کہ جہری نماز میں بالاتفاق جہراً

۱ دُر مختار باب سجود السهو مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱/ ۱۰۲ ۲ غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل باب فی سجود السهو مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۴۵۸ ۳ رد المحتار باب سجود السهو مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/ ۵۴۸ ۴ دُر مختار فصل بمجهر الامام مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱/ ۸۰ ۵ فتاویٰ ہندیہ الباب الثانی فی سجود السهو مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور ۱/ ۱۲۶

Fatawa Razvia - Volume Six

[Table Header] [Left Column - Arabic Text] Audibility in what is agreed to be audible, and this was followed in 'Al-Hidayah', 'Al-Muhit', 'At-Tatarkhaniyah' and others. It is explicitly stated in 'An-Nihayah', 'Al-Kifayah', 'Al-'Inayah', 'Mi'raj ad-Dirayah' and other commentaries of 'Al-Hidayah', 'Adh-Dhakhirah', and 'Jami' ar-Rumuz Sharh an-Nuqayah', and in many other books whose enumeration would be lengthy, that this is the apparent transmission (Zahir ar-Riwayah). Contrary to this is the 'Nawadir' transmission. Some of them have placed it among silent prayers like the Imam, 'Al-Minah', and 'Multaqa al-Abhur', except for 'Al-Bahr'. This is also alluded to in 'Kanz ad-Daqaiq' and 'Nur al-Idah'. It is declared correct in 'Al-Badai', 'At-Tabyin', 'Al-Fath', 'Ad-Durar', and 'Al-Hindiyah'. In 'Al-Bahr' and 'Ad-Durr', it is stated that this is indeed the school of thought (madhab). All of this becomes clear by referring part of it to 'Radd al-Muhtar' and the other part to what we have cited from other books. Therefore, the most cautious position is what we have stated. And Allah Almighty knows best.

[Right Column - Urdu Translation/Explanation] Recitation is not mandatory, and this is mentioned in 'Hidayah', 'Muhit', 'Tatarkhaniyah', etc. The commentaries of 'Hidayah' like 'Nihayah', 'Kifayah', 'Inayah', 'Mi'raj ad-Dirayah', etc., along with 'Dhakhirah' and 'Jami' ar-Rumuz Sharh an-Nuqayah' and other books which are numerous, call it 'Zahir ar-Riwayah'. Some have equated the individual praying a silent prayer to an Imam; this is firmly stated in 'Hilyah', 'Munyah', 'Bahr', 'Nahr', 'Minah', and 'Multaqa al-Abhur'. 'Kanz ad-Daqaiq' and 'Nur al-Idah' also allude to this. It has been declared correct in 'Badai', 'Tabyin', 'Fath', 'Durar', and 'Hindiyah'. It is written in 'Bahr' and 'Durr' that this is the madhab. A part of this aforementioned discussion is clear from 'Radd al-Muhtar', and the other part from other reliable books we have mentioned. Thus, the most cautious path is what we have described. And Allah Almighty knows best.

Mas'ala No. 456: Asked by Mirza Ghulam Qadir Baig Sahib, 2nd Jumada al-Ula 1307 AH.

Question: What do the scholars of religion say regarding this matter: A person appointed as the Imam of a central mosque leads the Muslim congregation in Friday and other prayers. In Surah Al-Fatihah, instead of 'Al-Hamdu', 'Ar-Rahman', and 'Ar-Rahim', he recites 'Al-Hamdu', 'Ar-Rahman', and 'Ar-Rahim' using the soft letter 'He' (ہ) instead of 'Ha' (ح). Is it permissible to appoint such a person as an Imam, and is the prayer behind him valid or not? Explain and may you be rewarded.

Answer: It is absolutely not permissible to make him an Imam, and prayer behind him is invalid, if that person is actually capable of pronouncing 'Ha' (ح) but, despite that, due to his negligence or indifference, recites 'He' (ه) in the aforementioned words.

फ़तावा रज़विया - छठा खंड

[तालिका हेडर] [बायाँ कॉलम - अरबी पाठ] उन मामलों में सस्वर पाठ (जोर से पढ़ना) जहाँ सस्वर पाठ पर सहमति है, और यही 'अल-हिदाया', 'अल-मुहीत', 'अत-ततारखानिया' और अन्य में अपनाया गया है। 'अन-निहाया', 'अल-किफ़ाया', 'अल-इनाया', 'मेराज अद-दिराया' और 'अल-हिदाया' की अन्य व्याख्याओं, 'अज़-ज़ख़ीरा' और 'जामे अर-रुमुज़ शरह अन-नुक़ाया' और कई अन्य पुस्तकों में, जिनकी गणना लंबी होगी, यह उल्लेख है कि यह 'ज़ाहिर अर-रिवाया' है। इसके विपरीत 'नवादिर' रिवायत है। उनमें से कुछ ने इसे चुपचाप नमाज़ पढ़ने वाले इमाम, 'अल-मिनह' और 'मुल्तका अल-अब्हुर' के समान माना है, सिवाय 'अल-बहर' के। 'कन्ज़ अद-दक़ायक़' और 'नूर अल-इदाह' में भी इसी ओर इशारा किया गया है। 'अल-बदाई', 'अत-तबीन', 'अल-फ़तह', 'अद-दुरार' और 'अल-हिंदिया' में इसे ही सही माना गया है। 'अल-बहर' और 'अद-दुर्र में कहा गया है कि यही पंथ (मज़हब) है। इस चर्चा का कुछ हिस्सा 'रद्द अल-मुह्तार' के संदर्भ से स्पष्ट है, और दूसरा हिस्सा उन अन्य विश्वसनीय पुस्तकों से है जिनका हमने उल्लेख किया है। अत; सबसे सुरक्षित स्थिति वही है जो हमने बताई है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

[दायाँ कॉलम - उर्दू अनुवाद/व्याख्या] क़िरात (पाठ) अनिवार्य नहीं है, और यही 'हिदाया', 'मुहीत', 'ततारखानिया' आदि में है। 'हिदाया' की व्याख्याएँ जैसे 'निहाया', 'किफ़ाया', 'इनाया', 'मेराज अद-दिराया' आदि, 'ज़ख़ीरा' और 'जामे अर-रुमुज़ शरह नुक़ाया' और अन्य पुस्तकें जिनकी गिनती लंबी है, इसे 'ज़ाहिर अर-रिवाया' कहती हैं। कुछ ने चुपचाप नमाज़ पढ़ने वाले व्यक्ति को इमाम के समान माना है; 'हिल्या', 'मुन्या', 'बहर', 'नहर', 'मिनह' और 'मुल्तका अल-अब्हुर' में इसी पर ज़ोर दिया गया है। 'कन्ज़ अद-दक़ायक़' और 'नूर अल-इदाह' में भी इसी ओर इशारा है। 'बदाई', 'तबीन', 'फ़तह', 'दुरार' और 'हिंदिया' में इसी को सही माना गया है। 'बहर' और 'दुर्र में है कि मज़हब यही है। इस चर्चा का कुछ हिस्सा 'रद्द अल-मुह्तार' से स्पष्ट है और दूसरा हिस्सा अन्य विश्वसनीय किताबों से जिनका हमने ज़िक्र किया है। अतः'अहवत' (अधिक सावधानीपूर्ण) वही है जो हमने बयान किया। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसअला नंबर 456: मिर्ज़ा गुलाम क़ादिर बेग साहब द्वारा सवाल, 2 जुमादा अल-उला 1307 हिजरी।

सवाल: इस मसअले में दीन के उलेमा क्या कहते हैं: एक व्यक्ति जिसे लोगों ने जामा मस्जिद का इमाम नियुक्त किया है, वह जुमा और जमात में मुसलमानों के समूह का नेतृत्व करता है। वह सूरह

फ़ातिहा में 'अल-हम्दु', 'अर-रहमान' और 'अर-रहीम' के बजाय 'हा' (ح) की जगह 'हे' (ه) के साथ 'अल-हम्दु', 'अर-रहमान' और 'अर-रहीम' पढ़ता है। क्या ऐसे व्यक्ति को इमाम बनाना जायज़ है और उसके पीछे नमाज़ सही होगी या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य के पात्र बनें।

जवाब: उसे इमाम बनाना बिल्कुल भी जायज़ नहीं है और उसके पीछे नमाज़ अमान्य है, यदि वह व्यक्ति वास्तव में 'हा' (ح) के उच्चारण पर सक्षम है लेकिन इसके बावजूद अपनी लापरवाही या बेध्यानी से उक्त शब्दों में 'हे' (ه) पढ़ता है।

[بائیں کالم میں عربی عبارت] الجهر فيما يجهر بالاتفاق وعليه مشى فى الهداية والمحيط والتتارخانية وغيرها ونص فى النهاية والكفاية والعناية ومعراج الدراية وغيرها من شروح الهداية والذخيرة وجامع الرموز شرح النقاية وفى كتب اخر يطول عدها انه هو ظاهر الرواية وان خلافه رواية النوادر منهم من جعله فيما يسر كالامام والمنح والملتقى الا بحر واليه اشار في كنز الدقائق ونور الايضاح وصححه في البدائع والتبيين والفتح والدرر والهندية وقال في البحر والدر انه المذهب يظهر كل ذلك بالمراجعة للبعض الى رد المحتار ولبعض اخر الى ماسبينا من الاسفار فكان الاحوط ماقلنا والله تعالى اعلم۔

[دائیں کالم میں اردو ترجمہ/وضاحت] قرأت لازم نہیں، اور یہی ہدایہ، محیط اور تاتار خانیہ وغیرہ میں ہے۔ ہدایہ کی شروح نہایہ، کفایہ، عنایہ اور معراج الدرایۃ وغیرہ اور ذخیرہ اور جامع الرموز شرح النقایہ اور دیگر کتب جن کا شمار طویل ہے میں اسے ظاہر الروایۃ کہا ہے اور بعض نے سری نماز میں منفرد کو امام کی طرح قرار دیا ہے حلیہ، منیہ، بحر، نہر، منح اور ملتقی الابحر میں اسی پر جزم ہے، کنز الدقائق اور نور الایضاح میں بھی اسی طرف اشارہ ہے۔ بدائع، تبیین، فتح، درر، اور ہندیہ میں اسی کو صحیح قرار دیا گیا ہے۔ بحر اور در میں ہے کہ مذہب یہی ہے۔ اس مذکورہ گفتگو کا بعض حصہ ردالمحتار سے واضح ہے اور دوسرا حصہ دیگر معتبر کتب سے جن کا نام ہم نے ذکر کیا ہے پس احوط وہی ہے جو ہم نے بیان کیا واللہ تعالٰی اعلم (ت)

مسئلہ نمبر ۴۵۶: مسئولہ جناب مرزا غلام قادر بیگ صاحب دوم جمادی الاولی ۱۳۰۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ایک شخص جسے لوگوں نے مسجد جامع کا امام معین کیا جمعہ و جماعات میں گروہ مسلمین کی امامت کرتا ہے اور سورہ فاتحہ شریف میں بجائے الحمد والرحمن

والرحیم کے الھمد والربمن والرہیم بہ ہائے ہوز پڑھتا ہے، ایسے شخص کو امام بنانا جائز ہے یا نہیں اور اس کے پیچھے نماز درست ہوگی یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: اسے امام بنانا ہر گز جائز نہیں اور نماز اس کے پیچھے نادرست ہے کہ اگر وہ شخص ح کے ادا پر بالفعل قادر ہے اور باوجود اس کے اپنی بے خیالی یا بے پروائی سے کلمات مذکورہ میں ہ پڑھتا ہے۔

صفحہ 253 از 736

Then his own prayer is corrupt and void; how can it be valid for others behind him? And if he is not currently capable of pronouncing 'Ha' (ح) and does not strive with all his might to learn, then his own prayer is entirely wasted, and the prayer of everyone behind him is void. If he tried for an insufficient period and then gave up, even then, whether he prayed or not is the same; and because of him, everyone's prayer is lost. Even if he keeps striving to the utmost but 'Ha' (ح) still cannot be pronounced, his ruling is like that of an illiterate ('Ummi'). If he can find a prayer led by someone who recites correctly but does not follow and prays alone instead, then his prayer is void. Furthermore, becoming an Imam is a secondary level. It is evident that if, hypothetically, no correct reciter is found in general congregations, in Friday (Jumu'ah) prayers, certainly all kinds of servants of God are present. Then, his leading them instead of following them becomes a nullifier of his own prayer; and when his prayer is gone, everyone's is gone.

In short, it is proven that neither this person's own prayer is valid nor the prayer of anyone behind him. Therefore, making him an Imam is prohibited (Haram), and he takes the burden of the prayers of all those Muslims upon himself. Seeking refuge in Allah Almighty! However, if it is such that there is at least a minimal hope that this person will continuously and tirelessly strive day and night for the correction of the letter, and despite the persistence of actual hope, he does not give up out of mere frustration with the long duration, and apart from the obligatory Al-Hamd Sharif, he does not recite any verse or Surah from the beginning to the end of the prayer which contains 'Ha' (ح) and whose recitation would invalidate the prayer. Instead, let him choose two Surahs of the Holy Quran that do not contain 'Ha' (ح), such as Surah Al-Kafirun and Surah An-Nas. And in the words of Thana, Tasbeehat of Ruku and Sujud, Tashahhud, Durood, etc., where such 'Ha' (ح) occurs, let him replace them with their near synonyms. For example, instead of 'Subhanaka Allahumma wa bihamdika', use 'Uqaddisuka Allahumma muthniyan 'alayka', and so on. And if he finds no correct reciter to follow, and the entire congregation consists of people who pronounce 'Ha' as 'Ha' (ھ), then indeed, as long as he continues to strive, his prayer will be correct, and the prayer of all those like him behind him will also be correct. But the day he gives up the effort out of exhaustion, or prays alone despite having access to a correct reciter, or leads the prayer, on that very day his prayer is void, and the prayer of everyone behind him is void. And since it is known that these conditions are not met, the ruling remains that in Jumu'ah or otherwise, neither is his prayer correct nor

is the prayer of anyone behind him correct. What has been mentioned here is the correct view, the preferred view, the chosen view, and the fatwa is based on it; this is what is practiced and relied upon. And Allah is the Guide to the path of rectitude. It is stated in Durr al-Mukhtar:

It is not valid for a non-Althagh to follow an Althagh [in prayer], and it has been clarified. | Following a non-stammerer behind a stammerer is not correct (etc.)

तो उसकी अपनी नमाज़ भ्रष्ट और शून्य है, दूसरों की उसके पीछे कैसे हो सकती है? और यदि वह वर्तमान में 'ह' (ح) बोलने में सक्षम नहीं है और सीखने के लिए अपनी पूरी शक्ति से प्रयास नहीं करता है, तो उसकी अपनी नमाज़ पूरी तरह व्यर्थ है, और उसके पीछे हर किसी की नमाज़ शून्य है। यदि उसने एक अपर्याप्त समय तक प्रयास किया और फिर छोड़ दिया, तब भी उसकी नमाज़ पढ़ी और न पढ़ी एक समान है; और उसके कारण सबकी नमाज़ चली गई। और यदि वह अपनी पूरी क्षमता से निरंतर प्रयास करता रहता है, लेकिन फिर भी 'ह' (ح) नहीं निकल पाता, तो उसका नियम एक अनपढ़ ('उम्मी') के समान है। यदि उसे सही पाठ करने वाले के पीछे नमाज़ मिल सकती है और वह उसका अनुसरण नहीं करता बल्कि अकेला पढ़ता है, तो भी उसकी नमाज़ शून्य है। फिर इमाम बनना तो दूसरा स्तर है। यह स्पष्ट है कि यदि मान लीजिए सामान्य जमातों में कोई सही पढ़ने वाला न मिले, तो जुमा (शुक्रवार) की नमाज़ में तो निश्चित रूप से हर तरह के खुदा के बंदे मौजूद होते हैं। फिर उसका उनका अनुसरण करने के बजाय स्वयं इमाम बनना उसकी अपनी नमाज़ को अमान्य करने वाला हुआ; और जब उसकी गई, तो सबकी गई।

कुल मिलाकर यह सिद्ध हुआ कि न तो उस व्यक्ति की अपनी नमाज़ होती है और न ही उसके पीछे किसी और की। इसलिए उसे इमाम बनाना हराम (प्रतिबंधित) है, और वह उन सभी मुसलमानों की नमाज़ का बोझ अपने सर लेता है। अल्लाह की पनाह! हाँ, यदि ऐसा हो कि कम से कम इतनी आशा हो कि यह व्यक्ति हमेशा दिन-रात अक्षरों के सुधार के लिए कड़ा प्रयास करता रहेगा, और वास्तविक आशा बनी रहने के बावजूद केवल लंबे समय से घबराकर प्रयास नहीं छोड़ेगा, और अनिवार्य अल-हम्द शरीफ के अलावा नमाज़ की शुरुआत से अंत तक कोई भी आयत या सूरा ऐसी न पढ़े जिसमें 'ह' (ح) आता हो और जिसे पढ़ने से नमाज़ जाती हो। बल्कि कुरान मजीद की ऐसी दो सूरतें चुनें जिनमें 'ह' (ح) न हो, जैसे सूरा काफिरून और सूरा नास। और सना, रुकू और सुजूद की तस्बीहात, तशहुद, दरूद आदि के शब्दों में जहाँ ऐसी 'ह' (ح) आई हो, उन्हें उनके करीबी पर्यायवाची शब्दों से बदल दे। उदाहरण के लिए, 'सुब्हानकल्लाहुम्मा व बिहम्दिका' के स्थान पर 'उक़द्दिसुकल्लाहुम्मा मुथ्नियन अलैका' कहे, और इसी तरह। और यदि उसे कोई सही पाठ करने वाला ऐसा न मिले जिसका वह अनुसरण कर सके और पूरी जमात के सभी लोग इसी तरह 'ह' (ح) को 'ह' (ہ) पढ़ने वाले हों, तो निश्चित रूप से जब तक वह प्रयास करता रहेगा, उसकी नमाज़ भी सही होगी और उसके जैसे सभी लोगों की उसके पीछे नमाज़ भी सही होगी। और जिस दिन उसने तंग आकर प्रयास छोड़

दिया, या सही पाठ करने वाले का अनुसरण उपलब्ध होते हुए भी अकेले नमाज़ पढ़ी या इमामत की, उसी दिन उसकी नमाज़ भी शून्य होगी और उसके पीछे सबकी शून्य होगी। और जब यह ज्ञात है कि ये शर्तें पूरी नहीं हो रही हैं, तो नियम वही है कि जुमा हो या गैर-जुमा, किसी में भी न उसकी नमाज़ सही है और न उसके पीछे किसी की सही है। जो कुछ यहाँ उल्लेख किया गया है, वही सही है, वही प्रबल है, वही चुनिंदा है, और इसी पर फतवा है; इसी पर अमल और भरोसा है। और अल्लाह ही सीधे मार्ग की ओर मार्गदर्शन करने वाला है। दुर्रे मुख्तार में है:

एक गैर-अलथग (जिसकी जुबान न लड़खड़ाती हो) का एक अलथग (लड़खड़ाती जुबान वाले) के पीछे नमाज़ पढ़ना वैध नहीं है, और इसे स्पष्ट कर दिया गया है। | गैर-तूतले का तूतले के पीछे नमाज़ पढ़ना सही नहीं है (इत्यादि)

تو خود اس کی نماز فاسد و باطل، اوروں کی اس کے پیچھے کیا ہو سکے، اور اگر بالفعل ح پر قادر نہیں اور سیکھنے پر جان لڑا کر کوشش نہ کی تو بھی خود اس کی نماز محض اکارت، اور اس کے پیچھے ہر شخص کی باطل، اور اگر ایک ناکافی زمانہ تک کوشش کر چکا پھر چھوڑ دی جب بھی خود اس کی نماز پڑھی بے پڑھی سب ایک سی، اور اس کے صدقے میں سب کی گئی اور برابر حد درجہ کی کوشش کئے جاتا ہے مگر کسی طرح ح نہیں نکلتی تو اس کا حکم مثل اُمّی کے ہے کہ اگر کسی صحیح پڑھنے والے کے پیچھے نماز مل سکے اور اقتداء نہ کرے بلکہ تنہا پڑھے تو بھی اسکی نماز باطل، پھر امام ہونا تو دوسرا درجہ ہے اور یہ ظاہر ہے کہ اگر بالفرض عام جماعتوں میں کوئی درست خواں نہ ملے تو جمعہ میں تو قطعاً ہر طرح کے بندگانِ خدا موجود ہوتے ہیں پھر اس کا ان کی اقتداء کرنا اور آپ امام ہونا خود اس کی نماز کا مبطل ہوا، اور جب اس کی گئی سب کی گئی۔

بہر حال ثابت ہوا کہ نہ اس شخص کی اپنی نماز ہوتی ہے نہ اسکے پیچھے کسی اور کی تو اسے کو امام بنانا حرام ہے، اور ان سب مسلمانوں کی نماز کا وبال اپنے سر لیتا ہے والعیاذ باللہ تعالیٰ البتہ اگر ایسا ہو کہ تا حد ادنیٰ امید کہ یہ شخص ہمیشہ برابر رات دن تصحیح حرف میں کوششِ بلیغ کئے جائے اور باوصف بقائے امید واقعی محض طولِ مدت سے گھبرا کر نہ چھوڑے اور واجب الحمد شریف کے سوا اوّل نماز سے آخر تک کوئی آیت یا سورۃ یاد کرو وغیرہ اصلاً ایسی چیز نام کو نہ پڑھے جس میں ح آتی ہو اور اسے پڑھنے سے نماز جاتی ہو بلکہ قرآن مجید کی دو سورتیں اختیار کرے جن میں ح نہیں جیسے سورہ کافرون وسورۃ ناس اور ثناء اور تسبیحاتِ رکوع و سجود و تشہد و درود و غیرہ کے کلمات میں جن میں ایسی ح آئی اُن کے مرادفاتِ مقاربات سے بدل لے

مثلاً بجائے سبحنک اللھم وبحمدک اقدسک اللھم مثنیا علیک وعلی ھذا القیاس اور اسے کوئی شخص صحیح خواں ایسا نہ ملے جس کی اقتداء کرے اور جماعت بھر کے سب لوگ اسی طرح ح کو ھ پڑھنے والے ہوں تو البتہ جب کوشش کرتا رہے گا اس کی بھی صحیح ہوگی اور ان سب اس کے مانندوں کی بھی اسکے پیچھے صحیح ہوگی اور جس دن باوصف تنگ آکر کوشش چھوڑی یا صحیح القراءۃ کی اقتداء ملتے ہوئے تنہا پڑھی یا امامت کی اُسی دن اس کی بھی باطل، اور اسکے پیچھے سب کی باطل، اور جبکہ معلوم ہے کہ یہ شرائط متحقق نہیں تو حکم وہی ہے کہ جمعہ و غیر جمعہ کسی میں نہ اس کی نماز درست نہ اسکے پیچھے کسی کی درست۔ یہ جو کچھ مذکور ہوا یہی صحیح ہے یہی راجح ہے یہی مختار ہے یہی مفتی بہ ہے اسی پر عمل اسی پر اعتماد۔ واللہ الھادی الی سبیل الرشاد۔ دُرِّ مختار میں ہے:

لا یصح اقتداء غیر الالثغ بہ وحرر | غیر توتلے کی اقتداء تو تلے کے پیچھے درست نہیں (الخ اس

Fatawa Rizvia Volume 6

[Arabic Text Section] Al-Halabi and Ibn al-Shihnah state that after consistently putting in his best effort, he is like an 'ummi' (unlettered person). Thus, if he leads others like himself, it is valid, but his prayer is not valid if he could have followed someone who recites correctly, or if he abandoned effort, or if he could have recited the mandatory amount without lisping. This is the correct and chosen ruling regarding one who lisps (Al-Althagh), and similarly for one who is unable to pronounce any of the letters. [1] Summarized from Al-Multaqat.

[Urdu Translation Section] (Refers to a person from whose tongue one letter comes out in place of another) Al-Halabi and Ibn al-Shihnah have written that after final and persistent effort, the ruling for a person who lisps is like that of an 'ummi' (unlettered person). Therefore, he can be the Imam for people like himself (meaning he should not lead anyone other than those who lisp like him). If it is possible to follow someone with correct pronunciation, or if he abandoned effort, or if he is able to recite the mandatory amount without lisping, in these cases his prayer will not be valid. This is the chosen and correct ruling regarding one who lisps, and the same ruling applies to a person who cannot pronounce any letter from the alphabet, meaning he is not capable of correct pronunciation. Summarized.

In the Fatawa of the researcher, Allama Abu Abdullah Muhammad bin Abdullah Ghazzi Timurtashi, it is stated: [Arabic Text Section] The preferred and fatwa-issued opinion is the invalidity of a lisping person leading someone other than themselves. [2]

[Urdu Translation Section] The preferred and fatwa-issued opinion is that it is not permissible for a lisping person to lead others (non-lispers). (T)

In Radd al-Muhtar, it is stated: [Arabic Text Section] He who cannot pronounce one of the letters, such as 'al-Rahman al-Rahim' instead of 'Ar-Rahman Ar-Rahim', 'al-Shaytan al-Rajim' instead of 'Ash-Shaytan Ar-Rajim', 'al-Alamin' instead of 'al-Alamin', 'Iyyaka Nabud' instead of 'Iyyaka Na'bud', 'Nasta'in' instead of 'Nasta'in', 'al-Surat' instead of 'al-Sirat', 'An'amt' instead of 'An'amta'—all of these are ruled like one who has put in effort consistently; otherwise, the prayer is not valid with him. [3] Summarized.

[Urdu Translation Section] Any person who is not capable of the correct pronunciation of any letter from the alphabet, for example, reciting 'al-Rahman al-Rahim' instead of 'Ar-Rahman Ar-Rahim', 'al-Shitan' instead of 'Ash-Shaytan', 'al-Almin' instead of 'al-Alamin', 'Iyyaka Nabud' instead of 'Iyyaka Na'bud', 'Nasta'in' instead of 'Nasta'in', 'al-Surat' instead of 'al-Sirat', 'An'amt' instead of 'An'amta'—in all these cases, if someone does so despite always trying for correct pronunciation, then the prayer will be valid, otherwise, the prayer will not be correct. Summarized. (T)

Footnotes: 1. Durr-e-Mukhtar, Chapter on Leadership, published by Mujtabai Delhi, 1/85. 2. Radd al-Muhtar, citing Fatawa Imam Ghazzi, Section on Lisping, published by Mustafa al-Babi Egypt, 1/430. 3. Radd al-Muhtar, citing Fatawa Imam Ghazzi, Section on Lisping, published by Mustafa al-Babi Egypt, 1/431.

फ़तावा रज़विया जिल्द 6

[अरबी पाठ अनुभाग] अल-हलबी और इब्न अल-शिहना कहते हैं कि हमेशा अपना पूरा प्रयास करने के बाद, वह एक 'उम्मी' (अक्षरहीन व्यक्ति) की तरह है। इसलिए, यदि वह अपने जैसे लोगों का नेतृत्व (इमामत) करता है, तो यह वैध है, लेकिन उसकी नमाज़ वैध नहीं है यदि वह किसी ऐसे व्यक्ति के पीछे नमाज़ पढ़ सकता था जो सही ढंग से पाठ करता है, या यदि उसने प्रयास छोड़ दिया, या यदि वह अनिवार्य मात्रा में बिना हकलाहट के पाठ कर सकता था। हकलाने वाले (अल-अल्थग) के संबंध में यही सही और चुना हुआ नियम है, और इसी तरह उस व्यक्ति के लिए भी जो किसी भी अक्षर का उच्चारण करने में असमर्थ है। [1] अल-मुल्तक़त से संक्षिप्त।

[उर्दू अनुवाद अनुभाग] (उस व्यक्ति को कहते हैं जिसकी जुबान से एक अक्षर की जगह दूसरा निकलता हो) हलबी और इब्न-ए-शहना ने लिखा है कि हमेशा की अंतिम कोशिश के बाद हकलाने वाले का हुक्म 'उम्मी' की तरह है, पस वह अपने जैसों का इमाम बन सकता है (यानी अपने जैसे हकलाने वाले के सिवा दूसरे की इमामत न करे)। जब अच्छी और सही अदायगी वाले की इख्तिदा मुमकिन हो या उसने मेहनत छोड़ दी हो या फर्ज की मिकदार बिना हकलाहट के पढ़ सकता हो, तो इन सूरतों में उसकी नमाज़ सही नहीं होगी। हकलाने वाले के मुताल्लिक यही मुख्तार और सही हुक्म है और इसी तरह उस शख्स का भी यही हुक्म है जो हुरूफ-ए-तहाज्जी में से कोई हर्फ न बोल सके यानी सही तलफ्फुज पर कादिर न हो। संक्षेप।

अनुसंधानकर्ता, अल्लामा अबू अब्दुल्ला मुहम्मद बिन अब्दुल्ला ग़ज़ी तिमुरताशी के फ़तावा में कहा गया है: [अरबी पाठ अनुभाग] हकलाने वाले व्यक्ति द्वारा किसी अन्य व्यक्ति का नेतृत्व करना अमान्य है, यही प्रचलित और फ़तवा दिया गया मत है। [2]

[उर्दू अनुवाद अनुभाग] रुआइज और मुफ्ती-बेह कौल यही है कि हकलाने वाले की इमामत दूसरों के लिए जायज नहीं है। (त)

रद्द अल-मुह्तार में कहा गया है: [अरबी पाठ अनुभाग] वह व्यक्ति जो किसी अक्षर का उच्चारण करने में असमर्थ है, जैसे 'अर-रहमान अर-रहीम' की जगह 'अल-रहमान अल-रहीम', 'अश-शैतान अर-रजीम' की जगह 'अल-शैतान अल-रजीम', 'अल-आलमीन' की जगह 'अल-आलमीन', 'इय्याका नअबुद' की जगह 'इय्याका नाबद', 'नस्तईन' की जगह 'नस्तईन', 'अस-सिरात' की जगह 'अल-

सुरात', 'अनअमता' की जगह 'अनअमत'—इन सभी का हुक्म उस व्यक्ति जैसा है जिसने हमेशा प्रयास किया है; अन्यथा, उसके साथ नमाज़ वैध नहीं होगी। [3] संक्षेप।

[उर्दू अनुवाद अनुभाग] जो व्यक्ति हुरूफ-ए-तहाज्जी में से किसी हर्फ के सही तलफ्फुज पर कादिर न हो, मिसाल के तौर पर 'अर-रहमान अर-रहीम' की जगह 'अल-रहमान अल-रहीम', 'अश-शैतान' की जगह 'अल-शईतान', 'अल-आलमीन' की जगह 'अल-अलमीन', 'इय्याका नअबुद' की जगह 'इय्याका नाबद', 'नस्तईन' की जगह 'नस्तईन', 'अस-सिरात' की जगह 'अल-सुरात', 'अनअमता' की जगह 'अनअमत' पढ़ता है, इन तमाम सूरतों में अगर कोई हमेशा सही अदायगी की कोशिश के बावजूद ऐसा करता है तो नमाज़ सही होगी वर्ना नमाज़ सही नहीं होगी। संक्षेप। (त)

फुटनोट: 1. दुर्र-ए-मुख्तार, बाबुल इमामत, मुजतबाई दिल्ली द्वारा प्रकाशित, 1/85. 2. रद्द अल-मुह्तार, फ़तावा इमाम ग़ज़ी के हवाले से, हकलाहट पर अनुभाग, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र द्वारा प्रकाशित, 1/430. 3. रद्द अल-मुह्तार, फ़तावा इमाम ग़ज़ी के हवाले से, हकलाहट पर अनुभाग, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र द्वारा प्रकाशित, 1/431.

فتاوٰی رضویہ - جلد ششم

[عربی عبارت] الحلبی و ابن الشحنة انه بعد بذل جهده دائما حتما کالامی فلو یؤم الامثله ولا تصح صلوته اذا امکنه الاقتداء بمن یحسنه او ترك جهده او وجد قدر الفرض مما لا لثغ فیه هذا هو الصحیح المختار فی حکم الالثغ وکذا من لا یقدر علی التلفظ بحرف من الحروف ۱ اه ملتقطاً

[اردو ترجمہ] (شخص کو کہتے ہیں جس کی زبان سے ایک حرف کی جگہ دوسرا نکلے) حلبی اور ابن شحنہ نے لکھا ہے کہ ہمیشہ کی حتمی کوشش کے بعد تو تلے کا حکم امی کی طرح ہے پس وہ اپنے ہم مثل کا امام بن سکتا ہے (یعنی اپنے جیسے تو تلے کے سوا دوسرے کی امامت نہ کرے) جب اچھی درست ادائیگی والے کی اقتداء ممکن ہو یا اس نے محنت ترک کردی یا فرض کی مقدار بغیر تو تلے پن کے پڑھ سکتا ہے ان صورتوں میں اسکی نماز درست نہ ہو گی تو تلے کے متعلق یہی مختار اور صحیح حکم ہے اور اسی طرح اس شخص کا بھی یہی حکم ہے جو حروف تہجی میں سے کوئی حرف نہ بول سکے یعنی صحیح تلفظ پر قادر نہ ہو اہ ملخصاً۔

فتاوٰی محقق علامہ ابو عبداللہ محمد بن عبد اللہ غزی تمرتاشی میں ہے: [عربی عبارت] الراجح المفتی به عدم صحة امامة الالثغ لغیره ۲ -

[اردو ترجمہ] رائج اور مفتی بہ قول یہی ہے کہ توتلے کی امامت غیر کے لئے جائز نہیں۔(ت)

ردالمحتار میں ہے: [عربی عبارت] من لا یقدر علی التلفظ بحرف من الحروف کالرهمن الرحیم والشیتان الرجیم والألمین وایاك نابد و ایاك نستئین السرات، ا نأمت فکل ذلك حکمه مأمر من بذل الجهد دائما والا فلا تصح الصلوٰة به ۳ ملخصاً۔

[اردو ترجمہ] جو شخص حروف تہجی میں سے کسی حرف کے صحیح تلفظ پر قادر نہ ہو مثلاً الرحمن الرحیم کی جگہ الرھمن الرحیم، الشیطان کی جگہ الشیتان، العالمین کی جگہ الألمین، ایاك نعبد کی جگہ ایاك نابد، نستعین کی جگہ نستئین، الصراط کی جگہ السرات، انعمت کی جگہ انأمت پڑھتا ہے، ان تمام صورتوں میں اگر کوئی ہمیشہ درست ادائیگی کی کوشش کے باوجود ایسا کرتا ہے تو نماز درست ہو گی ورنہ نماز درست نہ ہو گی۔ ملخصاً (ت)

حواشی: ۱ دُر مختار باب الامامۃ مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱/ ۸۵ ۲ ردالمحتار بحوالہ فتاوٰی امام غزی مطلب فی اللثغ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱ / ۴۳۰ ۳ ردالمحتار بحوالہ فتاوٰی امام غزی مطلب فی اللثغ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱ / ۴۳۱

Fatawa Razawiya, Volume Six

In the marginal notes of Tahtawi, under the phrase "badhlu juhdihi da'iman" (continually exerting his effort), it is written:

Arabic Quote	Urdu Translation
His statement 'continually' means during the hours of the night and the edges of the day, as was previously cited from al-Quhistani[1].	Their statement 'continually' means that he should exert full effort during the parts of the night and the edges of the day, as passed down from Quhistani. (T)

In Radd al-Muhtar, it states:

Arabic Quote	Urdu Translation
His statement 'continually' means in the hours of the night and the edges of the day; so as long as he is in the process of correction and learning and is unable to [correct it], his prayer is valid. And if he abandons his effort, his prayer is invalid, as in al-Muhit and others. It is stated in al-Dhakhira: And this is problematic to me because what is innate, the servant cannot change. End. And its completion is in Sharh al-Munya[2].	By their statement 'continually', it is meant that he should exert full effort in correction during the edges of the night and day. Therefore, if despite continuous full effort in correction and learning, he still lacks the ability, his prayer is valid. But if he abandons the effort altogether, his prayer will be invalid, as mentioned in al-Muhit etc. In al-Dhakhira, it is said: "This is difficult/ problematic in my view, because whatever is natural and innate, a servant is not capable of changing it." A detailed discussion on this is in Sharh al-Munya. (T)

In Ghunyah, it states:

Arabic Quote	Urdu Translation
The author of al-Muhit said the chosen opinion for fatwa is that if he abandoned his effort in some part of his life, it is not permissible for him to abandon it in the rest of his life, and if he abandons it, his prayer is invalid. The author of al-Dhakhira said: This is problematic to me, etc. And it is mentioned in Fatawa al-	The author of al-Muhit has said that this is the chosen opinion for fatwa: if he has abandoned this effort in some part of his life, there is no room for abandonment in the remaining part of his life. If he abandons it, his prayer will be invalid. The author of al-Dhakhira said: "In my view, this is very difficult/problematic, etc."

Arabic Quote	Urdu Translation
Hujjah what agrees with al-Muhit, for he said in the answer to Fatawa al-Husamiya: As long as they are in the process of correction and learning at night...	Whatever is in Fatawa Hujjah is in accordance with al-Muhit, because they said in response to Fatawa Husamiya that...

1. Hashiya at-Tahtawi 'ala ad-Durr al-Mukhtar, Book of Imamate, printed by Dar al-Ma'rifah Beirut, 1/251.
2. Radd al-Muhtar, Discussion on the Lisp (al-Athagh), printed by Mustafa al-Babi Egypt, 1/431.

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

'हाशिया तहतावी' में 'बज़्लु जुहदीही दाइमन्' (निरंतर प्रयास करना) के तहत लिखा है:

अरबी उद्धरण	उर्दू अनुवाद
उनके कथन 'दाइमन्' का अर्थ है रात के घंटों और दिन के सिरों में, जैसा कि कोहिस्तानी से पहले उद्धृत किया गया है[1]।	उनके कथन 'दाइमन्' का अर्थ यह है कि वह रात के हिस्सों और दिन के सिरों में भरपूर प्रयास करे जैसा कि कोहिस्तानी के हवाले से गुज़रा। (त)

'रद्दुल मुह्तार' में है:

अरबी उद्धरण	उर्दू अनुवाद
उनके कथन 'दाइमन्' का अर्थ रात के घंटों और दिन के सिरों में है; जब तक वह सुधार और सीखने की प्रक्रिया में है और उस पर सक्षम नहीं होता, तो उसकी नमाज़ जायज़ है। और यदि वह अपना प्रयास छोड़ देता है, तो उसकी नमाज़ फ़ासिद (अमान्य) है, जैसा कि 'मुहीत' आदि में है। 'ज़ख़ीरा' में कहा गया है: और यह मेरे निकट कठिन है क्योंकि जो प्रकृति/सृष्टि में है, बंदा उसे बदलने पर सक्षम नहीं है। समाप्त। और इसकी पूर्णता 'शरह अल-मुन्या' में है[2]।	उनके कथन 'दाइमन्' से मुराद यह है कि रात और दिन के सिरों में सुधार (तसहीह) की भरपूर कोशिश करे, फिर अगर वह हमेशा सुधार और सीखने में भरपूर कोशिश के बावजूद इस पर कुदरत (क्षमता) न रखे तो उसकी नमाज़ दुरुस्त है, और अगर वह कोशिश ही तर्क(त्याग) कर दे तो उसकी नमाज़ फ़ासिद होगी जैसा कि 'मुहीत' वगैरह में है, 'ज़ख़ीरा' में कहा गया कि यह मेरे नज़दीक मुश्किल है क्योंकि जो चीज़ फ़ितरी और ख़ल्की (प्राकृतिक) हो बंदा उसकी तब्दीली पर क़ादिर नहीं हो सकता और इस पर तफ़सीली (विस्तृत) गुफ़्तगू 'शरह मुन्या' में है (त)

'गुनिया' में है:

अरबी उद्धरण	उर्दू अनुवाद
'साहिब अल-मुहीत' ने कहा कि फ़तवे के लिए पसंदीदा राय यह है कि यदि उसने अपने जीवन के किसी हिस्से में प्रयास छोड़ दिया, तो उसके लिए जीवन के शेष भाग में इसे छोड़ना जायज़ नहीं है,	'साहिब-ए-मुहीत' ने कहा है कि यह मुख़्तार लिल-फ़तवा (फ़तवे के लिए चुना हुआ) है और अगर उसने उम्र के बाज़ (कुछ) हिस्सों में यह कोशिश तर्क कर दी हो तो बाक़ी उम्र में तर्क

अरबी उद्धरण

और यदि वह इसे छोड़ देता है तो उसकी नमाज़ फ़ासिद है। 'साहिब अल-ज़ख़ीरा' ने कहा: यह मेरे निकट मुश्किल है, इत्यादि। और 'फ़तावा अल-हुज्जाह' में वह उल्लेख किया गया है जो 'मुहीत' के अनुकूल है, क्योंकि उन्होंने 'फ़तावा अल-हुसामिया' के जवाब में कहा कि जब तक वे रात में सुधार और सीखने की प्रक्रिया में हैं...

उर्दू अनुवाद

की गुंजाइश नहीं, अगर तर्क करेगा तो नमाज़ फ़ासिद होगी, 'साहिब-ए-ज़ख़ीरा' ने कहा कि मेरे नज़दीक यह बहुत मुश्किल है इत्यादि। 'फ़तावा हुज्जत' में जो कुछ है वह 'मुहीत' के मुवाफ़िक़ (अनुकूल) है क्योंकि उन्होंने 'फ़तावा हुसामिया' के जवाब पर कहा है कि...

---

1. हाशिया अत-तहतावी अलद-दुर्र अल-मुख़्तार, बाबू अल-इमामाह, मुद्रित दारुल मारिफ़ह बेरूत, 1/251.
2. रद्दुल मुह्तार, मतलब फ़िल-असग़, मुद्रित मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 1/431.

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

حاشیہ طحطاوی میں زیرِ قولہ "بذل جہدہ دائماً" ہے۔

عربی عبارت	اردو ترجمہ
قولہ دائماً ای آناء اللیل واطراف النہار کما مر عن القہستانی[1]۔	ان کے قول "دائماً" کا مطلب یہ ہے کہ وہ رات کے حصوں اور دن کے اطراف میں بھر پور کوشش کرے جیسا کہ قہستانی کے حوالے سے گزرا۔(ت)

ردالمحتار میں ہے:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
قولہ دائماً ای فی آناء اللیل واطراف النہار فمادام فی التصحیح والتعلم ولم یقدر علیہ فصلاتہ جائزۃ و ان ترک جہدہ فصلاتہ فاسدۃ کما فی المحیط وغیرہ قال فی الذخیرۃ وانہ مشکل عندی لان ما کان خلقۃ فالعبرد لا یقدر علی تغییرہ اہ وتمامہ فی شرح المنیۃ[2]۔	ان کے قول "دائماً" سے مراد یہ ہے کہ رات اور دن کے اطراف میں تصحیح کی بھر پور کوشش کرے، پس اگر وہ ہمیشہ تصحیح و تعلم میں بھر پور کوشش کے باوجود اس پر قدرت نہ رکھے تو اس کی نماز درست، اور اگر وہ کوشش ہی ترک کردے تو اس کی نماز فاسد ہو گی جیسا کہ محیط وغیرہ میں ہے، ذخیرہ میں کہا یہ میرے نزدیک مشکل ہے کیونکہ جو چیز فطری اور خلقی ہو بندہ اس کی تبدیلی پر قادر نہیں ہوسکتا اور اس پر تفصیلی گفتگو شرح منیہ میں ہے (ت)

غنیہ میں ہے:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
قال صاحب المحيط المختار للفتوى انه ان ترك جهده فى بعض عمره لايسعه ان يترك فى باقى عمره ولو ترك تفسد صلوته قال صاحب الذخيرة انه مشكل عندى الخ وذكر فى فتاوى الحجة مايوافق المحيط فانه قال على جواب الفتاوى الحسامية ماداموا فى التصحيح والتعلم بالليل	صاحب المحیط نے کہا ہے یہ مختار للفتویٰ ہے اور اگر اس نے عمر کے بعض حصے میں یہ کوشش ترک کر دی ہو تو باقی عمر میں ترک کی گنجائش نہیں اگر ترک کرے گا تو نماز فاسد ہوگی، صاحب الذخیرہ نے کہا میرے نزدیک یہ بہت مشکل ہے الخ فتاویٰ حجۃ میں جو کچھ ہے وہ محیط کے موافق ہے کیونکہ انہوں نے فتاویٰ حسامیہ کے جواب پر کہا ہے کہ

---

1 حاشیہ الطحطاوی علی الدر المختار باب الامامة مطبوعہ دار المعرفة بیروت ۱/ ۲۵۱ 2 رد المحتار مطلب فی الاثغ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/ ۴۳۱

Fatawa Razawiyya, Volume Six

[Arabic] "...and the day, their prayer was valid. And if they abandon the effort, it is invalidated. Ah." [Urdu] When they are striving day and night for its correction and learning, then their prayer will be correct, and when they abandon the effort, the prayer will become invalid. Ah, in Fatawa Qazi Khan it is also in the same meaning. In short, a permanent effort is obligatory for the lisper, and this is what is relied upon. Ah, summarized. (T)

It is in Khulasa: [Arabic] "If he strives throughout the hours of night and day in its correction and he is not able to do that, then his prayer is permitted. And if he leaves his effort, his prayer is invalidated unless he spends his life in its correction, and it is not permissible for him to leave his effort in the rest of his life. 3" [Urdu] It is in correction: when he continues to strive day and night but he is unable to gain proficiency, then his prayer is correct. If he leaves the effort, then the prayer will be invalid. Yes, if he spends a portion of his life in correction and proficiency is not achieved, then there is no room to leave the effort of correction in the rest of his life. (T)

Similarly in Fath al-Qadir, Chapter of Recitation, and close to it in Maraqi al-Falah, and in Hilya: [Arabic] "Except that this second part, as the author of Ad-Dhakhira said, is problematic because what was innate, the servant is not able to change it. I say, and likewise when it is for an accidental reason that is not customarily removable. And when it is such, the fatwa does not rely on the requirement of this condition, and hence he mentioned..." [Urdu] However, this second situation as the author of Dhakhira said is difficult because a man cannot be capable of changing a natural and innate thing. I say, such is the ruling when it is due to such an ailment whose removal cannot be done customarily. And when there is such a situation, then in the fatwa of this...

Footnotes: 1 Ghunyat al-Mustamli Sharh Munyat al-Musalli, Chapter on Error of the Reciter, printed by Suhail Academy Lahore, p. 482. 2 Ghunyat al-Mustamli Sharh Munyat al-Musalli, Chapter on Error of the Reciter, printed by Suhail Academy Lahore, p. 483. 3 Khulasat al-Fatawa, Chapter Twelve on Error of the Reciter, printed by Maktaba Habibiya Quetta, p. 110. Page 257 of 736

फ़तावा रज़विया, खंड छह

[अरबी] "...और दिन, उनकी नमाज़ जायज़ हुई, और यदि उन्होंने कोशिश छोड़ दी, तो वह अमान्य हो गई। अह।" [उर्दू] जब वे दिन-रात इसके सुधार और सीखने में प्रयासरत रहें, तो उनकी नमाज़ सही होगी, और जब कोशिश छोड़ देंगे तो नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी। अह, फ़तावा क़ाज़ी ख़ान में भी इसी अर्थ में है। संक्षेप में, हकलाने वाले (तूतले) पर निरंतर प्रयास अनिवार्य है और इसी पर भरोसा है। अह, संक्षेप में। (त)

खुलासा में है: [अरबी] "यदि वह रात और दिन के समय इसके सुधार में प्रयास करता है और वह ऐसा करने में सक्षम नहीं है, तो उसकी नमाज़ जायज़ है। और यदि वह अपना प्रयास छोड़ देता है, तो उसकी नमाज़ अमान्य है, जब तक कि वह अपना जीवन इसके सुधार में न लगा दे, और उसके लिए अपने शेष जीवन में अपना प्रयास छोड़ना अनुमन्य नहीं है। ३" [उर्दू] सुधार में है: जब दिन-रात कोशिश करता रहा मगर वह सामर्थ्य प्राप्त न कर पाया तो उसकी नमाज़ सही है। अगर उसने कोशिश छोड़ दी तो नमाज़ फ़ासिद होगी। हाँ, अगर उम्र का कुछ हिस्सा सुधार में खर्च करे और सामर्थ्य प्राप्त न हो, तो शेष जीवन में सुधार की कोशिश छोड़ने की गुंजाइश नहीं है। (त)

इसी प्रकार फ़तह अल-क़दीर, क़िरात (पाठ) के अध्याय में और इसी के करीब मराक़ी अल-फ़लाह में, और हिलिया में है: [अरबी] "सिवाय इसके कि यह दूसरा हिस्सा, जैसा कि अज़-ज़खीरा के लेखक ने कहा, कठिन है क्योंकि जो प्राकृतिक था, बंदा उसे बदलने में सक्षम नहीं है। मैं कहता हूँ, और इसी तरह जब यह किसी ऐसी आकस्मिक स्थिति के कारण हो जिसे आमतौर पर दूर नहीं किया जा सकता है। और जब ऐसा हो, तो फ़तवे में इस शर्त की आवश्यकता पर भरोसा नहीं किया जाता है, और इसीलिए उन्होंने उल्लेख किया..." [उर्दू] अलबत्ता यह दूसरी सूरत वैसी है जैसा कि ज़खीरा के लेखक ने कहा, मुश्किल है क्योंकि प्राकृतिक और जन्मजात चीज़ को बदलने पर बंदा सक्षम नहीं हो सकता। मैं कहता हूँ, ऐसा ही हुक्म है उस समय जब किसी ऐसी बीमारी की वजह से हो जिसका निवारण आमतौर पर न हो सके और जब इस तरह की सूरत हो तो फ़तवे में इस...

पाद-टिप्पणियाँ: 1 ग़ुनियतुल मुस्तमली शरह मुनियतुल मुसल्ली, क़ारी की गलती का अध्याय, सुहैल अकादमी लाहौर द्वारा मुद्रित, पृ. 482। 2 ग़ुनियतुल मुस्तमली शरह मुनियतुल मुसल्ली, क़ारी की गलती का अध्याय, सुहैल अकादमी लाहौर द्वारा मुद्रित, पृ. 483। 3 ख़ुलासतुल फ़तावा, बारहवाँ अध्याय, क़ारी की गलती पर, मकतबा हबीबिया क्वेटा द्वारा मुद्रित, पृ. 110। पृष्ठ 257 / 736

والنهار جازت صلوتهم واذا ترکوا الجهد فسدت اھ، جب وہ دن رات اس کی تصحیح اور سیکھنے میں کوشاں رہیں تو ان کی نماز درست ہوگی، اور جب کوشش ترک کردیں گے تو نماز فاسد ہو جائے گی۔ اھ، وبمعناه في فتاوی قاضي خان فالحاصل ان اللثغ یجب علیهم الجهد دائماً هذا هوالذی علیه الاعتماد اھ ملخصاً، فتاوٰی قاضی خان میں بھی اسی معنی میں ہے الغرض توتلے پر دائمی کوشش لازم ہے اور اسی پر اعتماد ہے اھ ملخصا۔ (ت)

خلاصہ میں ہے: ان کان یجتهد أناء اللیل والنهار في تصحیحه ولا یقدر علی ذلك فصلاته جائزة وان ترك جهده فصلاته فاسدة الا ان یجعل العمر فی تصحیحه ولا یسعه ان یترك جهده فی باقی عمره 3۔ تصحیح میں ہے جب دن رات کوشش کرتا رہا مگر وہ قدرت حاصل نہ کر پایا تو اس کی نماز درست ہے اگر اس نے کوشش ترک کردی تو نماز فاسد ہوگی۔ ہاں اگر عمر کا کچھ حصہ تصحیح میں صرف کرے اور درست کی قدرت حاصل نہ ہو تو باقی عمر میں تصحیح کی کوشش ترک کرنے کی گنجائش نہیں (ت)

اسی طرح فتح القدیر فصل القراءت اور اسی کے قریب مراقی الفلاح میں ہے، حلیہ میں ہے: الا ان هذا الشق الثانی کما قال صاحب الذخیرة مشکل لان ماکان خلقة فالعبد لایقدر علی تغییره قلت وکذا اذاکان لعارض لیس ممایزول عادة واذاکان کذلك لا یعول فی الفتوی علی مقتضی هذا الشرط ومن ثمه ذکر البتہ یہ دوسری صورت جیسا کہ صاحب ذخیرہ نے کہا مشکل ہے کیونکہ فطری اور خلقی شے کے تبدیل کرنے پر بندہ قادر نہیں ہوسکتا۔ میں کہتا ہوں ایسا ہی حکم ہے اس وقت جب کسی ایسے عارضہ کی وجہ سے ہو جس کا ازالہ عادتاً نہ ہو پائے اور جب اس طرح کی صورت ہو تو فتوی میں اس

حواشی: 1 غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل فی زلۃ القاری مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۴۸۲ 2 غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل فی زلۃ القاری مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۴۸۳ 3 خلاصۃ الفتاویٰ الفصل الثانی عشر فی زلۃ القاری مطبوعہ مکتبہ حبیبیہ کوئٹہ ص ۱۱۰ صفحہ 257 از 736

Fatawa Rizvia Volume 6

In Khazanat al-Akmal, in the context of citing Fatawa Abi al-Layth: If a person says 'Alhamdulillah' or 'Qul Huwallahu Ahad' (in place of other recitation), it is permissible if they are unable to recite anything else or if there is a stutter/impediment in their tongue. The jurist (Faqih Abu al-Layth) said: If there was no impediment in the tongue but it happened involuntarily, the prayer is not invalidated. (End quote). Thus, they did not mention this condition, although later scholars mentioned it on the authority of Ibrahim bin Yusuf and Husayn bin Muti'.

The condition of a requirement is not considered. This is why it is quoted from Fatawa Abu al-Layth in Khazana al-Akmal that if a person praying recites Alhamdulillah or Qul Huwallahu Ahad, it is permissible provided they are not capable of anything else or there is an obstruction (stutter) in their tongue. The jurist (Abu al-Layth) said if there was no obstruction (stutter) in the tongue but this thing flowed from it automatically, then the prayer will not be invalidated. (End). So they did not mention this condition, although those after them mentioned it with reference to Ibrahim bin Yusuf and Husayn bin Muti'. (T)

In the same [book] it is stated: You have just learned that it is not appropriate to require striving for someone in whom it is innate (natural) or due to an ailment that does not usually go away. 2 You have just read that it is not appropriate to set the condition of effort for that person in whom that thing is innate (natural) or due to such a condition that usually does not go away. (T)

In Tahtawi's marginalia on Maraqi al-Falah it is stated: The words of Ibn Amir al-Hajj signify that there is a difference of opinion regarding this condition, and most scholars did not mention it because it contains great difficulty. 3 (End). I say, and I recall writing a marginal note on his marginalia on Al-Maraqi, the text of which is: I say, many things that are innate change with exertion, and many things that are not expected come through effort and relief. Perhaps the decisive word... It is known from the words of Ibn Amir al-Hajj that there is a difference of opinion in this condition and most scholars have not mentioned it because there is a great difficulty in it. (End). I say, I remember that I have written a marginal note on Tahtawi's marginalia on Maraqi al-Falah, the text is: I say sometimes it happens that what is innate and natural...

1 Hilyat al-Mahalli Sharh Munyat al-Musalli 2 Hilyat al-Mahalli Sharh Munyat al-Musalli 3 Hashiyat al-Tahtawi 'ala Maraqi al-Falah, Chapter of Imamate, published by Nur Muhammad Kutub Khana Karachi, p. 158 Page 258 of 736

फ़तावा रिज़विया जिल्द शशुम

खज़ानतुल अकमल में फ़तावा अबी अल-लैथ से उद्धरण के संदर्भ में: यदि किसी व्यक्ति ने 'अल्हम्दुलिल्लाह' या 'कुल हुवल्लाहु अहद' (अन्य पाठ के स्थान पर) कहा, तो यह जायज़ है यदि वह इसके अलावा कुछ और पढ़ने में असमर्थ हो या उसकी ज़बान में कोई रुकावट (हकलाहट) हो। फ़क़ीह (अबू अल-लैथ) ने कहा: यदि ज़बान में रुकावट नहीं थी लेकिन यह बात अपने आप उसकी ज़बान से निकल गई, तो नमाज़ फ़ासिद (अमान्य) नहीं होगी। (समाप्त)। अतः उन्होंने इस शर्त का ज़िक्र नहीं किया, हालाँकि बाद के विद्वानों ने इब्राहिम बिन यूसुफ़ और हुसैन बिन मुतीअ के हवाले से इसका ज़िक्र किया है।

शर्त के तक़ाज़े का एतबार नहीं किया जाता। यही कारण है कि खज़ाना-ए-अकमल में फ़तावा अबुल लैथ से नक़ल करते हुए कहा गया है कि अगर नमाज़ी ने अल्हम्दुलिल्लाह या कुल हुवल्लाहु अहद पढ़ लिया तो जायज़ है बशर्ते वह इसके अलावा किसी और चीज़ पर क़ादिर न हो या उसकी ज़बान में रुकावट (लुक़नत) हो। फ़क़ीह (अबुल लैथ) ने कहा अगर ज़बान में रुकावट (लुक़नत) न थी लेकिन उसकी ज़बान पर यह चीज़ ख़ुद-ब-ख़ुद जारी हो गई तो नमाज़ फ़ासिद नहीं होगी। (इन्तिहा)। पस उन्होंने यह शर्त ज़िक्र नहीं की हालाँकि उनके बाद वालों ने इब्राहिम बिन यूसुफ़ और हुसैन बिन मुतीअ के हवाले से ज़िक्र की है। (त)

इसी में है: अभी आपने जाना कि उस व्यक्ति के लिए कोशिश की शर्त रखना उचित नहीं है जिसमें वह बात पैदाइशी (प्राकृतिक) हो या किसी ऐसी बीमारी की वजह से हो जो आम तौर पर ठीक नहीं होती। 2 अभी आपने पढ़ा कि उस शख़्स के लिए कोशिश करने की शर्त लगाना मुनासिब नहीं जिसमें वह चीज़ खिल्क़तन (फ़ितरतन) हो या ऐसे आरज़े की वजह से जो आदतन ज़ायल नहीं होता। (त)

मराक़िल फ़लाह पर तहावी के हाशिये में है: इब्न अमीर अल-हज के कलाम से संकेत मिलता है कि इस शर्त में मतभेद है, और अधिकांश ने इसका उल्लेख नहीं किया क्योंकि इसमें बहुत बड़ी कठिनाई है। 3 (अह)। मैं कहता हूँ, और मुझे याद आ रहा है कि मैंने अल-मराक़ी पर उनके हाशिये पर एक हाशिया लिखा था, जिसका पाठ है: मैं कहता हूँ, कई बार जो चीज़ पैदाइशी होती है वह मेहनत से बदल जाती है, और कई बार जो अपेक्षित नहीं होता वह कोशिश और राहत से आ जाता है। शायद फ़ैसलाकुन बात... इब्न अमीर अल-हज के कलाम से पता चलता है कि इस शर्त में इख़्तिलाफ़ है और अक्सर उलमा ने इसका ज़िक्र नहीं किया क्योंकि इसमें हरज-ए-अज़ीम है। (अह)। मैं कहता हूँ मुझे

याद आ रहा है कि मराक़िल फ़लाह पर तहावी के हाशिये पर मैंने हाशिया लिखा है इबारत यह है: मैं कहता हूँ बाज़ दफ़ा ऐसा होता है कि जो चीज़ खिल्क़तन व फ़ितरतन हो उसे...

1 हिल्यतुल महल्ली शरह मुनियतुल मुसल्ली 2 हिल्यतुल महल्ली शरह मुनियतुल मुसल्ली 3 हाशियतुल तहावी अला मराक़िल फ़लाह, बाबुल इमामत, नूर मोहम्मद कुतुब खाना कराची द्वारा प्रकाशित, पृ. 158 पृष्ठ 258/736

فی خزانۃ الاکمل فی سیاق النقل عن فتاوی ابی اللیث لو قال الحمدللہ او کل ہو اللہ احد جاز اذا لم یقدر علی غیر ذلک او بلسانہ عقلۃ قال الفقیہ فان لم تکن بلسانہ عقلۃ ولکن جری علی لسانہ ذلک لا تفسد انتہی فلم یذکر ھذا الشرط وان کان بعد ذلک ذکرہ عن ابراہیم بن یوسف والحسین بن مطیع۔1

شرط کے مقتضی کا اعتبار نہیں کیا جاتا۔ یہی وجہ ہے کہ خزانہ الاکمل میں فتاوٰی ابواللیث سے نقل کرتے ہوئے کہا اگر نمازی نے الحمدللہ یا کل ھواللہ احد پڑھ لیا تو جائز ہے بشرطیکہ وہ اس کے غیر پر قادر نہ ہو یا اس کی زبان میں رکاوٹ (لکنت) ہو فقیہ (ابواللیث) نے کہا اگر زبان میں رکاوٹ (لکنت) نہ تھی لیکن اس کی زبان پر یہ چیز از خود جاری ہو گئی تو نماز فاسد نہیں ہو گی انتہی پس انھوں نے یہ شرط ذکر نہیں کی اگرچہ اس کے بعد والوں نے ابراہیم بن یوسف اور حسین بن مطیع کے حوالے سے ذکر کی ہے (ت)

اسی میں ہے: قد عرفت انفا انہ لا ینبغی اشتراط الاجتہاد فی ذلک لمن ہو فیہ خلقۃ او لعارض لیس مما یزول عادۃ 2 ابھی آپ نے پڑھا کہ اس شخص کے لئے کوشش کرنے کی شرط لگانا مناسب نہیں جس میں وہ چیز خلقتہً (فطرۃً) ہو یا ایسے عارضہ کی وجہ سے جو عادۃً زائل نہیں ہوتا۔ (ت)

طحطاوی حاشیہ مراقی الفلاح میں ہے: کلام ابن امیر الحاج یفید ان ھذا الشرط فیہ خلاف والاکثر لم یذکروہ لان فیہ حرجاً عظیما 3 اھ اقول ورأیتنی کتبت علی ھامش حاشیتہ علی المراقی مأنصہ اقول رب ماکان خلقۃ یتبدل بالتکلف ورب مالا یتوقع یاتی الجہد فیہ بالفرج۔ ولعل القول الفصل ابن امیر الحاج کے کلام سے پتا چلتا ہے کہ اس شرط میں اختلاف ہے اور اکثر علماء نے اس کا ذکر نہیں کیا کیونکہ اس میں حرج عظیم ہے اھ میں کہتا ہوں مجھے یاد آرہا ہے کہ مراقی الفلاح پر طحطاوی

کے حاشیہ پر میں نے حاشیہ لکھا ہے عبارت یہ ہے میں کہتا ہوں بعض دفعہ ایسا ہوتا ہے کہ جو چیز خلقۃً و فطرۃً ہواسے

1 حلیۃ المحلی شرح منیۃ المصلی 2 حلیۃ المحلی شرح منیۃ المصلی 3 حاشیہ الطحطاوی علی مراقی الفلاح باب الامامۃ مطبوعہ نور محمد کتب خانہ کراچی ص ۱۵۸ Page 258 of 736

Fatawa Razawiyya, Volume 6

Effort is mandatory as long as there is hope of learning, even if that hope is faint. However, if despair of learning becomes certain, then to say there is no room for leaving the effort would be an excess. Allah does not burden any soul beyond its capacity, and in this, there is regard for both sides. The fact that constant effort is not mandatory also supports this. In Al-Hilya, citing Khazanat al-Akmal, it is mentioned regarding reading 'Za' (ظ) instead of 'Daad' (ض) or vice versa: Qazi Muhsin stated that the better view is that if done intentionally, the prayer is void, whether the person is a scholar or ignorant. But if it happened spontaneously on the tongue, or if the person cannot distinguish between the two letters and thought they pronounced the word correctly as it should be, then their prayer is valid. This is the opinion of Muhammad bin Muqatil, and Sheikh Ismail al-Zahid used to give fatwa based on this, because the tongues of Kurds, the people of Sawad (Iraq), and Turks are not compliant in articulating the origin of these letters, and there is great hardship in that. It appears that this is a summary of all fatwas. In short, they were excused due to their incapacity, and continuous effort was not made mandatory for them. If you search diligently, you will find many evidences for this. Allah loves ease and accepts excuses, and He, the Exalted, knows best. (T)

1. Hilyat al-Mahalli Sharh Munyat al-Musalli. Page 259 of 736

फ़तावा रज़विया, खंड 6

जब तक सीखने की आशा हो, प्रयास अनिवार्य है, भले ही वह आशा बहुत कम हो। हालाँकि, यदि सीखने की निराशा निश्चित हो जाए, तो यह कहना कि प्रयास छोड़ने की कोई गुंजाइश नहीं है, ज्यादती होगी। अल्लाह किसी भी आत्मा पर उसकी क्षमता से अधिक बोझ नहीं डालता, और इसमें दोनों पक्षों का सम्मान है। निरंतर प्रयास का अनिवार्य न होना भी इस बात का समर्थन करता है। 'अल-हिलिया' में 'ख़ज़ानत अल-अकमल' के हवाले से 'ज़ा' (ظ) के स्थान पर 'दाद' (ض) या इसके विपरीत पढ़ने के संबंध में उल्लेख है: काजी मुहसिन ने कहा कि बेहतर दृष्टिकोण यह है कि यदि जानबूझकर किया गया है, तो प्रार्थना अमान्य है, चाहे वह व्यक्ति विद्वान हो या अज्ञानी। लेकिन अगर यह स्वाभाविक रूप से जुबान से निकल गया, या यदि व्यक्ति दोनों अक्षरों के बीच अंतर नहीं कर सकता और सोचता है कि उसने शब्द का सही उच्चारण किया है जैसा कि होना चाहिए, तो उसकी प्रार्थना मान्य है। यह मुहम्मद बिन मुकातिल की राय है, और शेख इस्माइल अल-ज़ाहिद इसी आधार पर फतवा दिया करते थे, क्योंकि कुर्द, सवाद (इराक) के लोग और तुर्कों की जुबानें इन अक्षरों के उच्चारण स्थान (मखराज) के अनुकूल नहीं होतीं, और इसमें बड़ी कठिनाई है। ऐसा प्रतीत होता है कि यह सभी फतवों का सारांश है। संक्षेप में, उन्हें उनकी अक्षमता के कारण क्षमा कर दिया गया था, और उन पर निरंतर प्रयास अनिवार्य नहीं किया गया था। यदि आप लगन से खोजेंगे, तो आपको इसके बहुत से प्रमाण मिलेंगे। अल्लाह सुगमता को पसंद करता है और क्षमा स्वीकार करता है, और वह सर्वोच्च, सबसे अच्छी तरह जानता है। (त)

1. हिलियत अल-महल्ली शरह मुनियत अल-मुसल्ली। पृष्ठ 259 का 736

ایجاب الجهد ماکان یرجی التعلم ولو رجاءً ضعیفاً، فاذا أیس تحقیقاً لا تبر ما وسعه الترك لا یکلف الله نفساً إلا وسعها وفیه رعایة الجانبین ویؤید عدم خزانة الاکمل اذا قرأ مکان الظاء ضاداً او مکان الضاد ظاءً فقال القاضی المحسن الاحسن یقال ان تعمد ذلك تبطل صلوته عالماً کان او جاهلاً وان جری علی لسانه اولم یکن یمیز بین الحرفین فظن انه ادی الکلمة کما هی جازت صلاته وهو قول محمد بن مقاتل و به کان یفتی الشیخ اسمعیل الزاهد لان السنة الاکراد و اهل السواد والاتراك غیر طائعة فی مخارج هذه الحروف وفي ذلك حرج عظیم والظاهر ان هذا مجمل مافي جمیع الفتاوی اھ باختصار ،فقد عذرهم بعجزهم ولم یلزمهم ادامة جهد لئن تتبعت فعساك تجد شواهده بوفر وکثر والله یحب الیسر ویقبل العذر وهو سبحنه وتعالی اعلم۔

تھکا بدلا جاسکتا ہے اور بعض غیر متوقع چیزوں کو آسانی سے بجا لایا جا سکتا ہے شاید قول فیصل یہ ہو کہ اس وقت تک کوشش واجب ہے جب تعلم کے ذریعے تبدیلی کی امید ہو اگر چہ ضعیف سی امید ہی سہی، اور جب یقیناً نا امیدی ہو جائے تو اب ترک کی گنجائش کا نہ ہونا زیادتی ہے، اللہ تعالیٰ کسی ذات کو اس کی طاقت سے بڑھ کر تکلیف نہیں دیتا، اور اس میں جانبین کی رعایت ہے اور دائمی طور پر کوشش کا واجب نہ ہونا بھی اس کی تائید کرتا ہے۔ حلیہ میں خزانہ الاکمل کے حوالے سے ہے کہ ظاء کی جگہ ضاد یا ضاد کی جگہ ظاء پڑھا تو قاضی محسن نے کہا کہ احسن یہ ہے کہ اگر ایسا عمداً کیا تو کہا جائے نماز باطل ہو گئی خواہ وہ شخص عالم ہو یا جاہل، اور اگر زبان پر از خود جاری ہو گیا یا وہ ان دونوں حروف کے درمیان امتیاز نہیں کر سکتا کہ وہ سمجھ رہا ہے کہ کلمہ اسی طرح ادا ہو گیا جس طرح ہونا چاہئے تھا تو اسکی نماز درست ہوگی، اور یہی محمد بن مقاتل کا قول ہے، اور اسی پر شیخ اسماعیل الزاہد نے فتویٰ جاری کیا،

کیونکہ کرد، اہل سواد (عراق) اور ترک کے لوگوں کی زبانیں ان حروف کے مخارج کی صحیح ادائیگی نہیں کر سکتیں، اور اس میں حرج عظیم ہے اور ظاہر یہ ہے یہ تمام فتاوٰی کے بیان کا اجمال ہے اہ مختصراً پس ان کو عجز کے پیش نظر معذور گردانا اور ان پر دائمی کوشش لازم نہیں کی، اگر آپ محنت سے تلاش کریں گے تو بہت سے اسکے شواہد آپ کو مل جائیں گے۔ اللہ تعالٰی آسانی کو پسند کرتا ہے اور عذر قبول فرماتا ہے، اور وہ پاک ذات ہی سب سے زیادہ جاننے والی ہے۔ (ت)

Fatawa Ridawiyya Volume Six

It is stated in *Sagheeri*: If one recites 'Al-Hamdu Lillah' (Praise be to Allah) with the letter 'Ha' (ھ) instead of 'Ha' (ح), the ruling in this matter is like the ruling on an *althagh* (one who lisps or mispronounces certain letters), as will be mentioned shortly. [Summary] Urdu side: If someone recites 'Al-Hamdu Lillah' by saying 'Ha' instead of 'Ha', then his ruling is like the ruling for a person with a lisp, as will appear shortly. [Summary] (T)

Then he stated: The chosen ruling regarding him is that it is mandatory for him to always exert effort in correcting his tongue, and he is not excused for neglecting it, even if his tongue does not articulate properly. If he cannot find a verse that does not contain the letter he cannot pronounce correctly, his prayer with it is valid, but he cannot lead others in prayer. In relation to those who can pronounce it correctly, he is like an *ummi* (illiterate) regarding what he is unable to do. If it is possible for him to follow someone who pronounces it correctly, his individual prayer is not valid. If he finds a portion [of the Quran] sufficient for prayer that does not contain the letter he cannot pronounce, his prayer with the recitation of that letter is not valid, because the validity of his prayer with the pronunciation of that letter is a necessity, and it ceases when the necessity no longer exists. This is the correct position regarding the ruling for an *althagh* and those like him who were mentioned previously.

Urdu side: The chosen view is that it is necessary for him to always strive to correct his tongue, and he will not be considered excused for abandoning this effort, even if the flow of his tongue is not correct and he cannot pronounce it properly. So now his prayer will be correct with that verse, however, he should not lead others. Thus, he will be like an unlettered person in relation to someone who performs the correct pronunciation in that verse which he is unable to do. And when it is possible for the said person to follow someone who can pronounce correctly, then his solitary prayer will not be valid. And if he is capable of [reciting] a verse that does not have the mentioned letter, then due to reciting the verse with that letter, the prayer will not be valid because correct pronunciation of that letter was necessary for the prayer; when that requirement is absent, the prayer itself will not exist. This is the ruling for a person with a lisp and those like him, and this is the correct view. (T)

It is stated in *Al-Walwaljiyyah*: If it is possible for him to take from the Quran... | If for a person with a lisp, from other parts of the Holy Quran...

---

1 *Sagheeri Sharh Munyat al-Musalli*, Chapter on the Error of the Reciter, printed by Mujtabai, Delhi, p. 249. 2 *Sagheeri Sharh Munyat al-Musalli*, Chapter on the Error of the Reciter, printed by Mujtabai, Delhi, p. 250. Page 260 of 736

फ़तावा रज़विया खंड छठा

सगीरी में है: यदि कोई 'अल-हम्दु लिल्लाह' में 'हा' (ح) के स्थान पर 'हा' (ہ) पढ़ता है, तो इस मामले में वही नियम लागू होगा जो 'अलतग' (जिसकी ज़बान में हकलाहट या उच्चारण दोष हो) पर लागू होता है, जैसा कि जल्द ही बताया जाएगा। [संक्षेप] उर्दू पक्ष: यदि कोई 'हा' की जगह 'हा' कहते हुए 'अल-हम्दु लिल्लाह' पढ़े तो उसका हुक्म तोतले के हुक्म की तरह है जैसा कि अनक़रीब आएगा। [संक्षेप] (त)

फिर फ़रमाया: उनके मामले में पसंदीदा हुक्म यह है कि उन पर अपनी ज़बान सुधारने के लिए हमेशा कोशिश करना ज़रूरी है, और इसे छोड़ने पर उन्हें माज़ूर (लाचार) नहीं समझा जाएगा, भले ही उनकी ज़बान सही न चलती हो। यदि उन्हें कोई ऐसी आयत न मिले जिसमें वह अक्षर न हो जिसे वे सही से नहीं बोल पाते, तो उस आयत के साथ उनकी नमाज़ सही होगी, लेकिन वे दूसरों की इमामत (नेतृत्व) नहीं कर सकते। जो लोग सही उच्चारण कर सकते हैं उनके हक़ में वे उस आयत के मामले में 'उम्मी' (अनपढ़) की तरह होंगे जिससे वे असमर्थ हैं। और जब उक्त व्यक्ति के लिए किसी ऐसे व्यक्ति के पीछे नमाज़ पढ़ना संभव हो जो सही उच्चारण कर सकता हो, तो उनकी अकेले नमाज़ नहीं होगी। और यदि उन्हें नमाज़ के लिए पर्याप्त ऐसी आयत मिल जाए जिसमें वह अक्षर न हो जिसका उच्चारण करने में वे असमर्थ हैं, तो उस अक्षर वाली आयत पढ़ने के कारण नमाज़ नहीं होगी क्योंकि उस अक्षर का सही पढ़ना नमाज़ के लिए ज़रूरी था; जब वह आवश्यकता ही समाप्त हो गई तो नमाज़ का वजूद भी नहीं रहेगा। तोतले और उसके जैसे व्यक्ति के लिए यही हुक्म है और यही सही है।

उर्दू पक्ष: मुख़्तार यही है कि उस पर तसहीह-ए-ज़बान (ज़बान सुधारने) के लिए हमेशा कोशिश करना ज़रूरी है और उसके तर्क(छोड़ने) पर माज़ूर नहीं समझा जाएगा अगरचे उसकी ज़बान का इजरा दुरुस्त न हो जिसको वह अच्छी तरह अदा नहीं कर सकता तो अब उसकी नमाज़ उस आयत से दुरुस्त होगी अलबत्ता वह ग़ैर की इमामत न करवाए, पस वह सही अदायगी करने वाले के हक़ में उम्मी की तरह होगा उस आयत में जिससे आजिज़ है, और जब मज़कूरा शख़्स को ऐसे आदमी की इक़्तिदा मुमकिन हो जो सही अदा कर सकता है, तो उसकी तन्हा नमाज़ न होगी, और अगर वह ऐसी आयत पर क़ादिर है जिसमें मज़कूरा हर्फ़ नहीं तो उस हर्फ़ वाली आयत पढ़ने की वजह से नमाज़ न

होगी क्योंकि उस हर्फ़ का दुरुस्त पढ़ना नमाज़ के लिए ज़रूरी था जब वह तक़ाज़ा माद्दूम है तो नमाज़ का वजूद भी न होगा। तोतले और उस जैसे शख़्स के लिए यही हुक्म है और यही सही है। (त)

वलवालजिया में है: यदि उसके लिए कुरान से लेना मुमकिन हो... | यदि तोतले के लिए कुरान मजीद के अन्य स्थानों से...

---

1 सगीरी शरह मुनियतुल मुसल्ली, फ़सल फ़ी ज़ल्लतुल क़ारी, मतबुआ मुज्तबाई दिल्ली, पृ. 249 2 सगीरी शरह मुनियतुल मुसल्ली, फ़सल फ़ी ज़ल्लतुल क़ारी, मतबुआ मुज्तबाई दिल्ली, पृ. 250 पृष्ठ 736 में से 260

فتاوی رضویہ جلد ششم

صغیری میں ہے: لو قرأ الحمد لله بالهاء مكان الحاء الحكم فيه كالحكم فی الالثغ علی ما یاتی قریباً اه ملخصاً اگر کوئی حاء کی جگہ هاء کہتے ہوئے الحمد لله پڑھے تو اس کا حکم تو تلے کے حکم کی طرح ہے جیسا کہ عنقریب آئے گا اھ ملخصاً (ت)

پھر فرمایا: المختار في حكمه يجب عليه بذل الجهد دائماً في تصحيح لسانه ولا يعذر في تركه وان كان لا ينطق لسانه فان لم يجد آية ليس فيها ذلك الحرف الذی لا يحسنه تجوز صلاته به ولا يؤم غيره فهو بمنزلة الامی في حق من يحسن ما عجز هو عنه واذا امكنه اقتداؤه بمن يحسنه لا تجوز صلاته منفردا وان وجد قدراً ما تجوز به الصلاة مما ليس فيه ذلك الحرف الذی عجز عنه لا تجوز صلاته مع قرأة ذلك الحرف لان جواز صلاته مع التلفظ بذلك الحرف ضروری فينعدم بانعدام الضرورة هذا هو الصحيح في حكم الالثغ ومن بمعناه ممن تقدم آنفاً - مختار یہی ہے کہ اس پر تصحیح زبان کے لئے ہمیشہ کوشش کرنا ضروری ہے اور اس کے ترک پر معذور نہیں سمجھا جائے گا اگرچہ اس کی زبان کا اجراء درست نہ ہو جس کو وہ اچھی طرح ادا نہیں کر سکتا تو اب اس کی نماز اس آیت سے درست ہوگی البتہ وہ غیر کی امامت نہ کروائے، پس وہ صحیح ادائیگی کرنے والے کے حق میں امّی کی طرح ہوگا اس آیت میں جس سے عاجز ہے، اور جب مذکورہ شخص کو ایسے آدمی کی اقتدا ممکن ہو جو صحیح ادا کر سکتا ہے، تو اس کی تنہا نماز نہ ہوگی، اور اگر وہ ایسی آیت پر قادر ہے جس میں مذکورہ حرف نہیں تو اس حرف والی آیت پڑھنے کی وجہ سے نماز نہ ہوگی کیونکہ اس حرف کا درست پڑھنا نماز کے لئے ضروری تھا جب وہ تقاضا معدوم ہے تو نماز کا وجود بھی نہ ہوگا۔ تو تلے اور اس جیسے شخص کے لئے یہی حکم ہے اور یہی صحیح ہے۔ (ت)

ولوالجیہ میں ہے: ان کان یمکنه ان یتخذ من القرآن | اگر تو تلے کے لئے قرآن مجید کے دیگر مقامات سے

---

1 صغیری شرح منیة المصلی فصل فی زلة القاری مطبوعہ مجتبائی دہلی ص ۲۴۹ 2 صغیری شرح منیة المصلی فصل فی زلة القاری مطبوعہ مجتبائی دہلی ص ۲۵۰ Page 260 of 736

Fatawa Razawiyya Volume 6

[Arabic Box]: If it is possible to recite verses that do not contain those letters, then one should recite them, except for the Opening of the Book (Surah Al-Fatihah), for its recitation in prayer cannot be abandoned. [End of citation]. I say: There is no basis for the exception of Al-Fatihah except for the difference regarding its status as a fundamental pillar (rukn). Thus, it appears to me that this should be restricted in the obligatory prayers to the first two units (rak'ahs), such that if it is recited in the last two units, the prayer would be invalidated. And Allah Almighty knows best.

[Urdu Translation of the Box]: If it is possible to recite verses that do not contain such letters, one should recite them except for Al-Fatihah, because its recitation in prayer cannot be omitted. [End of citation]. I say: The exception of Al-Fatihah here is because there is a difference of opinion regarding its status as a fundamental pillar. Thus, it has become clear to me that it is necessary to restrict this to the first two rak'ahs of the obligatory prayer, such that if it is recited in the last two rak'ahs, the prayer will become invalid. And Allah Almighty knows best.

Footnote 1: Al-Walwaljiyyah

Problem No. 457: From Sehram, sent by Maulvi Muhammad Noor Sahab Wilayati, 1309 AH.

Summary of the fatwa sent by the aforementioned Maulvi Sahab which came to this humble person for verification: It should not be hidden from the experts of Sharia that the phonetic similarity of the letter 'Zad' (ض) with 'Za' (ظ) is proven from all books of Tafsir, Fiqh, Sarf (Morphology), and Tajwid. Unlike the letter 'Dal' (د), there are seven attributes of difference between 'Zad' and 'Dal'. The general rule of all books of Fiqh is that if a distinction between two letters is easily possible, their interchange invalidates the prayer. If the distinction between two letters is difficult, then the opinion of the majority is that the prayer is not invalidated. This is the moderate and preferred view of the later scholars (muta'akhirin). The view of the earlier scholars (mutaqaddimin) is that reciting 'Za' instead of 'Zad' also invalidates the prayer. Therefore, reciting 'Dalin' instead of the word 'Wala-d-dallin' invalidates the prayer according to everyone, while reciting it as 'Za' is not invalidating according to most, and the fatwa is based on this. In summary, a person who cannot articulate 'Zad' from its correct point of articulation (makhraj) should recite it as 'Za'. This is the truth and the correct way; hence Muslims should quickly start acting upon this. And Allah knows best the truth. In reality, according to the chosen path of the majority,

whether one recites 'Zad' as 'Za' or 'Dal', the prayer will not be invalidated. And Allah knows best.

Abul Hasanat Muhammad Abdul Hayy Lucknawi

The Answer: O Allah, guide to the truth and correctness. In the name of Allah, the Most Gracious, the Most Merciful.

That level of Tajwid through which letters are distinguished from each other and avoidance of confusion and substitution is achieved, is among the individual obligations (wajibat 'ayniyyah) and the most important religious matters. It is incumbent upon a person to make full effort in correcting the points of articulation (makharij) and to pronounce every letter accurately from its makhraj.

फतावा रज़विया खंड 6

[अरबी बॉक्स]: यदि उन आयतों को पढ़ना संभव हो जिनमें वे अक्षर न हों, तो वह उन्हें पढ़ ले, सिवाए सूरह अल-फातिहा के, क्योंकि प्रार्थना (नमाज़) में इसके पाठ को छोड़ा नहीं जा सकता। [समाप्त]। मैं कहता हूँ: यहाँ फातिहा का अपवाद इसलिए है क्योंकि इसके आधारभूत स्तंभ (रुकनियत) होने में मतभेद है। अतः मुझ पर यह स्पष्ट हो गया कि इसे अनिवार्य नमाज़ों की शुरुआती दो रकातों के साथ सीमित करना आवश्यक है, यहाँ तक कि यदि कोई इसे अंतिम दो रकातों में पढ़ेगा तो नमाज़ अमान्य (फासिद) हो जाएगी। और अल्लाह सर्वशक्तिमान बेहतर जानता है।

[बॉक्स का उर्दू अनुवाद]: यदि ऐसी आयतों का पढ़ना संभव हो जिनमें ऐसे अक्षर नहीं हैं तो वह उन्हें पढ़ ले सिवाए फातिहा के, क्योंकि इसकी क़िरात (पाठ) नमाज़ में छोड़ी नहीं जा सकती। [समाप्त]। मैं कहता हूँ कि यहाँ फातिहा का अपवाद इसलिए है क्योंकि इसकी रुकनियत में मतभेद है, अतः मुझ पर यह बात स्पष्ट हुई कि इसे फ़र्ज़ नमाज़ की शुरुआती दो रकातों के साथ सीमित करना ज़रूरी है, यहाँ तक कि यदि अंतिम दो रकातों में पढ़ेगा तो नमाज़ फासिद (अमान्य) हो जाएगी। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

पाद-टिप्पणी 1: अल-वलवाल्जिया

मसला (प्रश्न) संख्या 457: सेहराम से, मौलवी मोहम्मद नूर साहब विलायती द्वारा प्रेषित, 1309 हिजरी।

उक्त मौलवी साहब द्वारा भेजे गए फतवे का सारांश, जो इस विनम्र सेवक के पास सत्यापन के लिए आया है: शरीयत के विशेषज्ञों से यह छिपा नहीं रहना चाहिए कि 'ज़ाद' (ض) की 'ज़ा' (ظ) के साथ ध्वन्यात्मक समानता तफ़सीर, फ़िक़्ह, सरफ़ और तजवीद की सभी पुस्तकों से सिद्ध है। 'दाल' (د) के विपरीत, 'ज़ाद' और 'दाल' के बीच सात गुणों का अंतर है। फ़िक़्ह की सभी पुस्तकों का सामान्य नियम यह है कि जिन दो अक्षरों के बीच अंतर आसानी से संभव हो, उनके आपस में बदल जाने से नमाज़ अमान्य हो जाती है। और यदि दो अक्षरों के बीच अंतर करना कठिन हो, तो अधिकांश का मत यह है कि नमाज़ अमान्य नहीं होती, और बाद के विद्वानों (मुताअक्खीरीन) का संतुलित और पसंदीदा मत यही है। प्राचीन विद्वानों (मुतक़द्दिमीन) का मत यह है कि 'ज़ाद' की जगह 'ज़ा' पढ़ने से भी नमाज़ अमान्य हो जाती है। अतः शब्द 'व-ल-द-दॉल्लीन' की जगह 'दाल्लीन' पढ़ने से सभी के अनुसार नमाज़ अमान्य हो जाती है, और 'ज़ा' पढ़ने से अधिकांश के अनुसार अमान्य नहीं होती, और इसी पर

फतवा है। निष्कर्ष यह है कि जिस व्यक्ति से 'ज़ाद' का मख़राज (उच्चारण स्थान) न निकल पाए, वह 'ज़ा' पढ़े। यही सत्य और सही तरीका है, अतः मुसलमानों को चाहिए कि वे जल्दी ही इस पर अमल करें। और अल्लाह सच्चाई को सबसे बेहतर जानता है। वास्तव में, बहुमत के पसंदीदा मत के अनुसार, 'ज़ाद' को 'ज़ा' या 'दाल' पढ़ने से नमाज़ अमान्य नहीं होगी। और अल्लाह बेहतर जानता है।

अबुल हसनात मोहम्मद अब्दुल हई लखनवी

उत्तर: ऐ अल्लाह, सत्य और शुद्धता का मार्गदर्शन दे। अल्लाह के नाम से, जो अत्यंत दयालु और कृपाण है।

इतनी तजवीद, जिसके कारण अक्षरों में भेद स्पष्ट हो जाए और अक्षरों के आपस में मिल जाने या बदल जाने से बचाव हो, व्यक्तिगत अनिवार्यताओं (वाजिबात ऐनिया) और सबसे महत्वपूर्ण धार्मिक कार्यों में से है। व्यक्ति पर उच्चारण स्थानों (मख़ारिज) को शुद्ध करने का पूर्ण प्रयास करना और प्रत्येक अक्षर को उसके मख़राज से सही तरीके से अदा करना अनिवार्य है।

पृष्ठ 261 / 736

فتاوی رضویہ جلد ششم

[عربی متن]: آیات لیس فیها تلك الحروف یتخذ الـا فاتحة الکتاب فانه لا یدع قرأتها فی الصلوة [1]^ انتهی اقول ولا منشأ لاستثناء الفاتحه الا الاختلاف فی رکنیتها فیترأی لی تقیید ذلك فی المکتوبات بالأولیین حتی لو قرأ فی الاخیریین فسدت واللہ تعالی اعلم۔

[اردو ترجمہ]: آیات کا پڑھنا ممکن ہو جن میں ایسے حروف نہیں تو وہ انھیں پڑھ لے ماسوا فاتحہ کے، کیونکہ اس کی قرأت نماز میں ترک نہیں کی جاسکتی انتھی۔ میں کہتا ہوں یہاں فاتحہ کا استثناء اس لئے ہے کہ اس کی رکنیت میں اختلاف ہے پس مجھ پر یہ بات واضح ہوئی کہ اسے فرض کی ابتدائی دو رکعتوں کے ساتھ مقید کرنا ضروری ہے حتی کہ اگر آخری دو رکعتوں میں پڑھے گا تو نماز فاسد ہوجائے گی۔ واللہ تعالی اعلم۔

حاشیہ نمبر 1: ولو الجیه

مسئلہ نمبر ۴۵۷: از سہرام مرسلہ مولوی محمد نور صاحب ولایتی ۱۳۰۹ھ خلاصہ فتوی مرسلہ مولوی صاحب مذکور کہ بہر تصدیق نزد فقیر آمدہ۔ ماہرین شریعت پر پوشیدہ نہ رہے کہ ضاد کا مشتبہ الصوت ہونا ساتھ ظائے معجمہ کے جملہ کتب تفسیر و فقہ و صرف و تجوید سے ثابت ہے کہ بخلاف دال کے ضاد اور دال میں سات صفتوں کا فرق ہے اور قاعدہ کلیہ جملہ کتب فقہیہ کا یہ ہے کہ جن دونوں حرفوں میں فرق بآسانی ممکن ہے اُس کے بدل جانے سے نماز فاسد ہوتی ہے اور اگر فرق دو حروف میں مشکل ہے تو اکثر کا مذہب یہ ہے نماز فاسد نہیں ہوتی اور یہی مذہب متاخرین کا معتدل و پسندیدہ ہے اور مذہب متقدمین کا یہ ہے کہ ضاد کے ظاء پڑھنے سے بھی نماز فاسد ہوتی ہے پس لفظ ولا الضالین کی جگہ دالین پڑھنے سے سب کے نزدیک نماز فاسد ہوتی ہے

اور ظاء پڑھنے سے اکثر کے نزدیک فاسد نہیں ہوتی، اور اسی پر فتوی ہے، حاصل یہ کہ جس شخص سے مخرج ضاد کا نہ آوے وہ ظاء پڑھے ھذا ھو الحق والصواب تو مسلمانوں کو چاہئے کہ بہت جلد اس کے عامل ہوجائیں واللہ اعلم بالصواب فی الواقع بمذہب مختار جمہور ضاد کی ظاء پڑھے یا دال نماز فاسد نہ ہوگی واللہ اعلم ۔ ابوالحسنات محمد عبدالحی لکھنوی

الجواب: اللھم ھدایۃ الحق والصواب بسم اللہ الرحمن الرحیم اس قدر تجوید جس کے باعث حروف کو حرف سے امتیاز اور تلبیس و تبدیل سے احتراز حاصل ہو واجبات عینیہ واہم مہمات دینیہ سے ہے آدمی پر تصحیح مخارج میں سعی تام اور ہر حرف میں اُس کے مخرج سے ٹھیک ادا کرنے کا۔

Fatawa Razawiyya Volume VI

It is mandatory to intend and ensure that the Quran is recited according to how Allah Almighty revealed it. One should not, God forbid, be negligent or indifferent, as is the practice of many common people today, and even many, if not most, of the elite. This humble servant has himself heard some 'Maulvis' reciting "Qul Huwal Lahu Ahad" [with incorrect pronunciation], whereas Allah, the Unique (Al-Ahad), never said 'Ahad' [incorrectly], nor did the Trustworthy Messenger of Revelation (Gabriel, peace be upon him) convey 'Ahad' [incorrectly], nor did the Master of the Quran (peace and blessings be upon him) teach 'Ahad' [incorrectly]. Then how can it be called the Quran? To Allah we belong and to Him we shall return. Far be it that the fatwas of later scholars serve as an excuse for negligence; who would consider it permissible to persist and continue in incorrect recitation of the Quran due to laziness, despite having the ability to learn and teach? It is stated in Al-Itqan al-Sharif:

[Arabic Box:] Among the important matters is the Tajweed of the Quran, which is giving the letters their due rights and returning each letter to its origin and point of articulation. There is no doubt that just as the Ummah is obligated to understand the meanings of the Quran and establish its limits, they are also obligated to correct its words and pronounce its letters according to the manner received from the leading scholars of recitation (Qurra) whose chain of transmission connects to the Prophet's presence. Scholars have considered recitation without Tajweed as 'Lahn' (grammatical/vocal error).[1]

[Urdu Translation Box:] Among the important things is also learning the Tajweed of the Quran. Tajweed is giving the letters their rights and returning them to their origin and point of articulation. There is no doubt that just as the Muslim Ummah considers understanding the meanings of the Quran and establishing its boundaries as worship, they similarly consider the correction of its words and the pronunciation of its letters according to the quality narrated from the Imams of recitation as worship. The chain of recitation of these scholars reaches the Prophet (peace and blessings be upon him). Scholars have declared reciting the Quran without Tajweed as incorrect recitation. (T)

In Ahsan al-Fatawa, Fatawa Bazzaziyah, etc., it is stated: "Reciting incorrectly (Lahn) is prohibited (Haraam) without any disagreement (unanimously)."[2]

Therefore, the leaders of religion clearly state that if a person mispronounces a letter, it is mandatory (Wajib) for him to strive in its correction and learning. In fact, many

scholars have not set any limit for this effort and have commanded that one should always strive day and night throughout their life; one will never be excused for abandoning this effort. Allama Ibrahim Halabi states in 'Ghunyah':

[Arabic Box:] It is mandatory for him to always exert effort in correcting his tongue and he is not excused.

[Urdu Translation Box:] It is necessary to always strive for the correction of an incorrect word; one is not excused in case of abandonment.

[1] Al-Itqan fi 'Ulum al-Qur'an, Part 2, Concerning Important Matters: Tajweed of the Quran, published by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/100. [2] Fatawa Bazzaziyah on the margin of al-Fatawa al-Hindiyyah, Part 2, Concerning Worship, from the Book of Disliked Acts, published by Nurani Kutub Khana, Peshawar, 6/353.

फतावा रज़विया जिल्द छठी

यह इरादा और प्रयास आवश्यक है कि क़ुरआन को अल्लाह तआला द्वारा उतारे गए तरीके के अनुसार ही पढ़ा जाए, न कि (अल्लाह न करे) ढिलाई और बेपरवाही बरती जाए, जैसा कि आजकल के आम लोग, बल्कि यहाँ के बहुत से, यहाँ तक कि अधिकांश विशिष्ट लोग (ख़्वास) ने अपना तरीका बना लिया है। इस फ़कीर ने स्वयं कुछ मौलवी साहबों को "कुल हुवल्लाहु अहद" पढ़ते सुना है [गलत उच्चारण के साथ], जबकि अल्लाह तआला ने कभी 'अहद' [गलत तरीके से] नहीं फरमाया, न ही वह्य के अमीन (जिब्रईल अलैहिस्सलाम) ने 'अहद' पहुँचाया, और न ही साहिबे क़ुरआन (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने 'अहद' पढ़ाया। फिर उसे क़ुरआन कैसे कहा जाए? हम अल्लाह के हैं और उसी की ओर लौटने वाले हैं। बाद के विद्वानों (मुताख़िरीन) के फतवे को लापरवाही का बहाना न बनाया जाए; सीखने-सिखाने की क्षमता होने के बावजूद उसे न करना और सुस्ती के कारण क़ुरआन के गलत पाठ पर अड़े रहना और उसे जारी रखना कौन जायज़ कहेगा? 'इतकान शरीफ' में है:

[अरबी बॉक्स:] महत्वपूर्ण चीज़ों में से क़ुरआन की तजवीद है, जो अक्षरों को उनके अधिकार देना और हर अक्षर को उसके मूल और उच्चारण स्थल (मख़रज) की ओर लौटाना है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि जिस तरह उम्मा क़ुरआन के अर्थों को समझने और उसकी सीमाओं को स्थापित करने के लिए बाध्य है, उसी तरह वह उसके शब्दों के सुधार और उसके अक्षरों के उस गुण के अनुसार उच्चारण करने के लिए भी बाध्य है जो इमामों (कुर्रा) से प्राप्त हुआ है, जिनका सिलसिला नबी की बारगाह से जुड़ा है। विद्वानों ने तजवीद के बिना पढ़ने को 'लहन' (त्रुटिपूर्ण पाठ) माना है।[1]

[उर्दू अनुवाद बॉक्स:] महत्वपूर्ण चीज़ों में से क़ुरआन की तजवीद सीखना भी है। तजवीद अक्षरों को उनके अधिकार देना और उन्हें उनके मूल और उच्चारण स्थल (मख़रज) की ओर लौटाना है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि जिस तरह मुस्लिम उम्मा क़ुरआन के अर्थों को समझने और उसकी सीमाओं को स्थापित करने को इबादत मानती है, उसी तरह उसके शब्दों के सुधार और उसके अक्षरों के उस गुण के अनुसार उच्चारण करने को भी इबादत मानती है जो इमामों (कुर्रा) से वर्णित है। इन कुर्रा की किरअत (पाठ) का सिलसिला नबी अकरम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम तक पहुँचता है, और विद्वानों ने तजवीद के बिना क़ुरआन पढ़ने को गलत पढ़ना करार दिया है। (त)

'अहसन अल-फतावा', 'फतावा बज़ाज़िया' आदि में है: "गलत पढ़ना (लहन) बिना किसी मतभेद के (सर्वसम्मति से) हराम है।"[2]

इसलिए दीन के इमाम स्पष्ट रूप से फरमाते हैं कि यदि किसी व्यक्ति से कोई अक्षर गलत उच्चारित होता हो, तो उसे सुधारने और सीखने में कोशिश करना उस पर वाजिब है। बल्कि बहुत से विद्वानों ने इस कोशिश की कोई सीमा तय नहीं की है और आदेश दिया है कि जीवन भर रात-दिन हमेशा प्रयास किया जाए; इसके त्याग में वह कभी भी क्षमा योग्य नहीं होगा। अल्लामा इब्राहिम हलबी 'ग़ुनिया' में फरमाते हैं:

[अरबी बॉक्स:] अपनी ज़बान को सही करने के लिए हमेशा कोशिश करना उस पर लाज़िम है और वह माज़ूर (क्षम्य) नहीं है।

[उर्दू अनुवाद बॉक्स:] गलत शब्द के सुधार के लिए हमेशा प्रयासरत रहना ज़रूरी है; त्याग की स्थिति में माज़ूर नहीं।

[1] अल-इतकान फी उलूम अल-क़ुरआन, भाग 2, महत्वपूर्ण मामलों में से: क़ुरआन की तजवीद, मुस्तफा अल-बाबी, मिस्र द्वारा प्रकाशित, 1/100. [2] फतावा बज़ाज़िया, हाशिय्या अल-फतावा अल-हिंदिया पर, भाग 2, इबादात, किताबुल कराहियत से, नूरानी कुतुब खाना, पेशावर द्वारा प्रकाशित, 6/353.

पृष्ठ 262/736

قصد واہتمام لازم کہ قرآن مطابق ما انزل اللہ تعالٰی پڑھے ، نہ معاذ اللہ مداہنت وبے پروائی کہ آجکل کے عوام بلکہ یہاں کے کثیر بلکہ اکثر خواص نے اپنا شعار کر لیا ، فقیر نے بگوش خود بعض مولوی صاحبوں کو پڑھتے سنا قل ھو اللہ احد حالانکہ نہ ہرگز اللہ الاحد نے احد فرمایا نہ امین وحی علیہ الصلوٰۃ والسلام نے احد پہنچایا نہ صاحب قرآن صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے احد پڑھایا ، پھر اسے قرآن کیونکر کہا جائے فانا للہ وانا الیہ راجعون حاشا فتوٰی متاخرین پروانہ بے پروائی نہیں ، باوصف قدرت تعلیم تعلم نہ کرنا اور براہ سہل انگاری غلط خوانی قرآن پر مصر ومتمادی رہنا کون جائز رکھے گا ، اتقان شریف میں ہے۔

[عربی باکس:] من المھمات تجوید القرآن وھو اعطاء الحروف حقوقھا و رد الحرف الی مخرجہ واصلہ و لاشك ان الامۃ کما ھم متعبدون بفھم معانی القرآن واقامۃ حدودہ ھم متعبدون بتصحیح الفاظہ واقامۃ حروفہ علی الصفۃ المتلقاۃ عن ائمۃ القرأۃ المتصلۃ بالحضرۃ النبویۃ وقد عد العلماء القرأۃ بغیر تجوید لحناً - 1

[اردو ترجمہ باکس:] اہم چیزوں میں سے تجوید قرآن سیکھنا بھی ہے اور تجوید حروف کو ان کے حقوق دینا اور ان کو ان کے اصل اور مخرج کی طرف لوٹانا ہے، اور اس میں کوئی شک نہیں جس طرح امت مسلمہ معانی قرآن کے فہم اور اسکی حدود کے قیام کو عبادت جانتے ہیں اسی طرح اس کے الفاظ کی تصحیح اور اسکے حروف کی اس صفت جو ائمہ قراء سے منقول ہے پر ادائیگی کو بھی عبادت جانتے ہیں اور ان قراء کی قرات کا سلسلہ نبی اکرم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم تک پہنچتا ہے، اور علماء نے تجوید کے بغیر قرآن پڑھنے کو غلط پڑھنا قرار دیا ہے (ت)

اس احسن الفتاویٰ فتاویٰ بزازیہ وغیرہا میں ہے : ان اللحن حرام بلا خلاف غلط پڑھنا بالاجماع حرام ہے-2

ولہٰذا ائمہ دین تصریح فرماتے ہیں کہ آدمی سے اگر کوئی حرف غلط ہوتا ہو تو اس کی تصحیح وتعلم میں اس پر کوشش واجب بلکہ بہت علماء نے اس سعی کی کوئی حد مقرر نہ کی اور حکم دیا کہ عمر بھر روز و شب ہمیشہ جہد کئے جائے کبھی اس کے ترک میں معذور نہ ہوگا۔ علامہ ابراہیم حلبی غنیہ میں فرماتے ہیں:

[عربی باکس:] یجب علیه بذل الجهد دائماً فی تصحیح لسانه ولا یعذر

[اردو ترجمہ باکس:] غلط لفظ کی تصحیح کے لئے ہمیشہ کوشاں رہنا ضروری ہے ترک کی صورت میں معذور نہیں

1 الاتقان فی علوم القرآن الفصل الثانی من المهمات تجوید القرآن مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱ / ۱۰۰ 2 فتاویٰ بزازیہ علی حاشیہ الفتاوی الہندیہ الثانی فی العبادات من کتاب الکراہیتہ مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور ۶ / ۳۵۳

"In leaving it..." (1) — It will be understood (i.e., neglecting effort in this regard is not acceptable). (T)

It is stated in Qahistani, Tahtawi, etc.: His words "permanently" (dā’iman), i.e., at times of night and ends of the day (2) — Permanently means parts of the night and ends of the day. (T)

Similarly, it is mentioned in many other books. So how can it be permissible that one puts aside all effort and strive, not even intending the original revealed letter of the Qur'an, but practically leaving it abandoned and forsaken, and establishing another letter in its place from one's own side? This humble servant says, may Allah Almighty forgive him, after the throne of investigation has been firmly established, that the Qur'an is the name for both its arrangement and meaning, rather it is the name for the arrangement from the perspective of its guidance towards the meaning. And 'arrangement' is the name of letters in this known order, and letters are distinct from each other. A change in a part definitively necessitates a change in the whole, because a composition of one set of distinct elements is certainly different from a composition of another set of distinct elements. I do not know how much difference can be acknowledged between such intentional change and the distortion (tahrif) of the Word of Allah. Consequently, eminent Imams like Abu Bakr Muhammad bin al-Fadl al-Fadhli, Imam Burhan al-Din Mahmud bin al-Sadr al-Sa'id, and other noble scholars have even ruled that whoever intentionally recites 'Za' (ظ) instead of 'Dad' (ض) in the Great Qur'an is a disbeliever.

I say: There is no need for the exception of (wa mā huwa 'ala l-ghaybi bi-danīn [and he is not a withholder of the unseen]). Because here, it is not specifically the place for 'Dad' (ض) alone, but rather the place for both together, because the word has been read with both in the Qur'an. Thus, it is like 'sirāt' (صراط) and 'sirāt' (سراط), 'bastatan' (بسطة) and 'bastatan' (بصطة), 'yabsutu' (يبسط) and 'yabsutu' (يبصط), 'musaytir' (مصيطر) and 'musaytir' (مسطر), and other similar examples. This is contrary to 'dāllīn' (ضالين) and 'zāllīn' (ظالين), and 'sijjīl' (سجيل) and 'sijjīl' (صجيل), for that would be an alteration. (T)

1. Ghunyat al-Mustamli Sharh Munyat al-Musalli, Chapter on the Reciter's Errors, published by Suhail Academy Lahore, p. 283. Note: The text of Ghunya that I found is as follows: "Effort is permanently obligatory upon them, and their

prayer is valid as long as they persist in the effort." And shortly before this are these words: "It is necessary for him to strive and he is not excused in that etc." However, the exact same words are present in Saghiriy Sharh Munyat al-Musalli, published in Delhi, on page 250 of the text. — Nazir Ahmad Sa'idi.

2. Hashiyat al-Tahtawi 'ala al-Durr al-Mukhtar, Chapter on Leadership (Imamah), published by Dar al-Ma'rifah Beirut, 1/251.

छठा खंड फ़तावा रज़विया

"इसे छोड़ने में..." (१) — समझा जाएगा (यानी इसमें प्रयास को छोड़ना स्वीकार्य नहीं है)। (त)

कहस्तानी, तहतावी आदि में है: उनके शब्द "हमेशा" (दाइमन), यानी रात के कुछ हिस्से और दिन के किनारे (२) — "हमेशा" से रात के कुछ हिस्से और दिन के किनारे मुराद हैं। (त)

इसी तरह और बहुत सी किताबों में है, तो कैसे जायज़ हो सकता है कि कोशिश और प्रयास को ताक पर रख दिया जाए, कुरान के मूल नाज़िल शुदा हर्फ़ का इरादा ही न किया जाए, बल्कि व्यावहारिक रूप से उसे छोड़ दिया जाए और उसकी जगह अपनी तरफ़ से दूसरा हर्फ़ कायम कर दिया जाए। यह फ़कीर कहता है, अल्लाह तआला उसे माफ़ करे, तहकीक के अर्श के मुस्तकर हो जाने के बाद कि कुरान नज़्म (व्यवस्था) और मानी (अर्थ) दोनों का नाम है, बल्कि हिदायत की दृष्टि से नज़्म का नाम है। और नज़्म इन मशहूर हुरूफ की तरतीब का नाम है, और हुरूफ एक दूसरे से अलग होते हैं। किसी हिस्से का बदलना यकीनन पूरे के बदलने का कारण बनता है, क्योंकि अलग तत्वों से बनी एक चीज़ यकीनन दूसरे अलग तत्वों से बनी चीज़ से अलग होती है। मैं नहीं जानता कि इस जानबूझकर किए गए बदलाव और अल्लाह के कलाम की तहरीफ़ (हेरफेर) में कितना अंतर माना जाएगा। नतीजतन, इमाम अबूबक्र मुहम्मद बिन अल-फ़ज़्ल फ़ज़ली, इमाम बुरहानुद्दीन महमूद बिन अस-सरद अस-सईद और अन्य महान विद्वानों ने तो यहाँ तक हुक्म दिया है कि जो महान कुरान में जानबूझकर 'ज़ाद' (ض) की जगह 'ज़ो' (ظ) पढ़े, वह काफ़िर है।

मैं कहता हूँ: (व मा हुवा अलल ग़ैबी बि-ज़नीन) के अपवाद की ज़रूरत नहीं है। क्योंकि यहाँ केवल 'ज़ाद' (ض) का मकाम नहीं है, बल्कि दोनों का मकाम है क्योंकि कुरान में यह शब्द दोनों किरातों के साथ पढ़ा गया है। इसलिए, यह 'सिरात' (صراط) और 'सिरात' (سراط), 'बस्ततन' (بسطة) और 'बस्ततन' (بصطة), 'यबसुतु' (يبسط) और 'यबसुतु' (يبصط), 'मुसैतिर' (مصيطر) और 'मुसैतिर' (مسطر), और इनके जैसे अन्य शब्दों की तरह है। इसके विपरीत 'ज़ाल्लीन' (ضالين) की जगह 'ज़ाल्लीन' (ظالين) और 'सिज्जील' (سجيل) की जगह 'सिज्जील' (صجيل) है क्योंकि यहाँ तब्दीली (बदलाव) है। (त)

1. ग़ुनियतुल मुस्तमली शरह मुनियतुल मुसल्ली, कारी की गलती से संबंधित अध्याय, सुहैल एकेडमी लाहौर द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ २८३। नोट: ग़ुनिया का जो पाठ मुझे मिला है वह इस प्रकार है: "उन पर हमेशा कोशिश करना अनिवार्य है, और उनकी नमाज़ तब तक जायज़ है

जब तक वे कोशिश करते रहें।" और इससे कुछ पहले ये शब्द हैं: "चाहिए कि वह कोशिश करे और उसे इसमें माफ़ नहीं किया जाएगा आदि।" हालाँकि, बिल्कुल यही शब्द दिल्ली से प्रकाशित सग़ीरी शरह मुनियतुल मुसल्ली के मूल पाठ के पृष्ठ २५० पर मौजूद हैं। — नज़ीर अहमद सईदी।

2. हाशिया अत-तह़तावी अलल दुर्रिल मुख्तार, इमामत का अध्याय, दारुल मारिफ़ा बेरूत द्वारा प्रकाशित १/२५१।

पृष्ठ २६३/७३६

فی ترکہ ۱ - سمجھا جائے گا (یعنی اس میں جہد کو ترک کرنا قابلِ قبول نہیں) (ت)

قہستانی وطحطاوی و غیرہما میں ہے : قولہ دائماً ای آناء اللیل و اطراف النھار ۲ - دائما سے رات کا کچھ حصہ اور دن کے اطراف مراد ہیں۔ (ت)

اسی طرح اور کتب کثیرہ میں ہے، تو کیونکر جائز کہ جہد و سعی بالائے طاق سرے سے حرفِ منزل فی القرآن کا قصد ہی نہ کریں بلکہ عملاً اسے متروک و مہجور، اور اپنی طرف سے دوسرا حرف اس کی جگہ قائم کردیں۔ فقیر کہتا ہے غفر اللہ تعالٰی بعد اسکے کہ عرش تحقیق مستقر ہو چکا کہ قرآن اسم نظم و معنیٰ جمیعاً بلکہ اسم نظم من حیث الارشاد الی المعنیٰ ہے اور نظم نام حروفِ عالی ہذا الترتیب المعروف اور حروف باہم مباین اور تبدیل جز قطعاً مستلزم تبدیلِ کل کہ مؤلف من مباین یقینا غیر مؤلف من مباین آخر ہے۔ میں نہیں جانتا کہ اس تبدیلِ عمدی اور تحریفِ کلام اللہ میں کتنا تفاوت مانا جائے گا۔ لاجرم امام اجل ابوبکر محمد بن الفضل فضلی و امام برہان الدین محمود بن الصدر السعید و غیر ہما اجلہ کرام نے تو یہاں تک حکم دیا ہے کہ جو قرآنِ عظیم میں عمداً ض کی جگہ ظ پڑھے کافر ہے۔

اقول: ولا حاجة الی استثناء (وما ھو علی الغیب بضنین) فان ھھنا لیس مقام الضاد خاصة بل مقامھما جمیعاً لان اللفظ قرئ بھما فی القرآن ،فکان مثل صراط وسراط وبسطة وبصطة ویبسط ویبصط ومصیطر ومسیطر الی اشباہ ذلک بخلاف ضالین وظالین وسجیل وصجیل فانہ تبدیل۔ میں کہتا ہوں "وما ھو علی الغیب بضنین" کے استثناء کی حاجت نہیں ہے کیونکہ اس مقام پر ضاد کی جگہ ظ کو رکھنا نہیں ہو سکتا کیونکہ یہ مقام ضاد کے ساتھ ہی مخصوص نہیں بلکہ دونوں کا مقام ہے کیونکہ

قرآن میں یہ لفظ دونوں قرأتوں کے ساتھ پڑھا گیا ہے۔ یہ ان الفاظ کی طرح ہے۔ صراط اور سراط، بسطۃ اور بصطۃ، یبسط اور یبصط، مصیطراور مسیطر، اور ان کی طرح کے دوسرے الفاظ بخلاف ضالین کی جگہ ظالین اور سجیل کی جگہ صجیل کے کیونکہ یہاں تبدیلی ہے۔ (ت)

۱ غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل فی زلۃ القاری مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۲۸۳ نوٹ: غنیہ کی عبارت جو مجھے ملی ہے وہ اس طرح ہے: یجب علیہم الجھد دائماً وصلو تھم جائزۃ مادا موا علی الجھد۔ اور اس سے کچھ قبل یہ الفاظ ہیں: ینبغی ان یجتھد ولا یعذر فی ذلک الخ۔ البتہ صغیری شرح منیۃ المصلی مطبوعہ دہلی بعینہ یہی الفاظ متن ص ۲۵۰ پر موجود ہیں۔ نذیر احمد سعیدی ۲ حاشیۃ الطحطاوی علی الدر المختار باب الامامۃ مطبوعہ دار المعرفۃ بیروت ۱ / ۲۵۱

Fatawa Ridawiyya, Volume 6

It is stated in al-Muhit: Imam al-Fadli was asked about someone who recites 'Zha' (ظ) instead of 'Daad' (ض) or vice versa. He said: "Leading the prayer (Imamate) of such a person is not permissible, and if he does it intentionally, he becomes an infidel (kafir)." - 1 Imam Fadli was asked what the ruling is for a person who reads 'Zha' instead of 'Daad' or vice versa. He replied that the leadership of such a person is not permissible, and if he does it intentionally, he becomes a disbeliever. (T)

It is stated in Minah al-Rawd: "There is no dispute that doing so intentionally is disbelief (kufr)." - 2 (Doing so intentionally is disbelief; there is no disagreement on this, etc. - T)

Therefore, it is absolutely necessary to intend to pronounce each specific letter exactly as it was revealed by Allah, and it should be emitted from its proper place of articulation (makhraj). However, if due to the difficulty of a letter or a deficiency of the tongue it is mispronounced—as in the case of 'Daad', which is among the most difficult letters—then acting upon the fatwa of some later scholars (muta'akhkhirin) for the ease of the Ummah and ruling the prayer valid is not blameworthy. Rather, it is desirable, as ease and simplicity are sought and favored by the Lawgiver (peace be upon him).

Allah, the Glorified and Exalted, says: "Allah intends ease for you and does not intend hardship for you." - 3

And the Messenger of Allah (peace and blessings be upon him) said: "Make things easy and do not make them difficult; give good tidings and do not repel (people)." - 4

Allah, the Glorified and Exalted, states that He intends ease for you and He does not intend hardship for you. And the Noble Prophet (peace and blessings be upon him) said: "Create ease, do not create difficulty and hardship, give glad tidings, and do not spread hatred."

Related by Imams Ahmad and the two Sheikhs (Bukhari and Muslim) from Anas bin Malik (may Allah be pleased with him). This hadith was recorded by Imam Ahmad, Imam al-Bukhari, and Imam Muslim on the authority of Hazrat Anas bin Malik (may Allah be pleased with him). (T)

In such a situation, according to justice, commonality of attributes or similarity of sounds cannot be restricted to anyone.

Footnotes: 1. Minah al-Rawd Sharh Fiqh al-Akbar by Mulla Ali Qari, Section on Recitation and Prayer, printed by Mustafa al-Babi, Egypt, p. 167. 2. Minah al-Rawd Sharh Fiqh al-Akbar by Mulla Ali Qari, Section on Recitation and Prayer, printed by Mustafa al-Babi, Egypt, p. 167. 3. Al-Quran 2/185. 4. Sahih al-Bukhari, Chapter on the Prophet's saying (peace be upon him) 'Make things easy and do not make them difficult', etc., printed by Asah al-Matabi' Qadeemi Kutub Khana, Karachi, 1/904.

फतावा रज़विया, जिल्द 6

मुहीत में है: इमाम अल-फ़ज़ली से उस व्यक्ति के बारे में पूछा गया जो 'ज़ा' (ظ) की जगह 'दाद' (ض) पढ़ता है या इसके विपरीत। उन्होंने कहा: "ऐसे व्यक्ति की इमामत जायज़ नहीं है, और अगर वह ऐसा जानबूझकर करे तो काफ़िर हो जाएगा।" - 1 इमाम फ़ज़ली से सवाल किया गया कि उस व्यक्ति का क्या हुक्म है जिसने 'दाद' की जगह 'ज़ा' या इसके विपरीत पढ़ा? उन्होंने (जवाब में) फ़रमाया: ऐसे व्यक्ति की इमामत जायज़ नहीं है, और अगर ऐसा जानबूझकर करे तो काफ़िर होगा। (त)

मिनह अल-रौद में है: "ऐसा जानबूझकर करना कुफ़्र है, इसमें किसी को कोई संदेह नहीं है।" - 2 (ऐसा जानबूझकर करना कुफ़्र है, इसमें किसी को कोई विवाद नहीं है। - त)

इसलिए यह निश्चित रूप से आवश्यक है कि प्रत्येक अक्षर में अल्लाह की ओर से अवतरित विशेष अक्षर की अदायगी का ही इरादा करें, और उसे उसके उचित उच्चारण स्थान (मखराज) से निकालना चाहिए। फिर, यदि अक्षर की कठिनाई या जीभ की अक्षमता के कारण वह गलत उच्चारित होता है—जैसे 'दाद' के मामले में, जो अक्षरों में सबसे कठिन है—तो बाद के कुछ विद्वानों (मुताखिरीन) के फ़तवे पर अमल करते हुए उम्मत के लिए सुगमता के आधार पर नमाज़ के सही होने का निर्णय देना बुरा नहीं है, बल्कि यह वांछनीय है। क्योंकि शरीयत देने वाले (अलैहिस्सलाम) के निकट आसानी और सुगमता ही वांछित और प्रिय है।

अल्लाह सुब्हानहु व तआला ने फ़रमाया: "अल्लाह तुम्हारे लिए आसानी चाहता है और तुम्हारे लिए कठिनाई नहीं चाहता।" - 3

और अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने फ़रमाया: "आसानी पैदा करो और कठिनाई पैदा न करो, और खुशखबरी सुनाओ और नफरत न फैलाओ।" - 4

अल्लाह सुब्हानहु व तआला का फ़रमान है कि अल्लाह तुम्हारे साथ आसानी का इरादा करता है और वह तुम्हारे साथ तंगी का इरादा नहीं करता। और नबी अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) का इरशाद-ए-गिरामी है कि आसानी पैदा करो, मुश्किल व तंगी पैदा न करो, खुशखबरी सुनाओ, नफरत न फैलाओ।

इमाम अहमद और शैखैन (बुखारी और मुस्लिम) ने इसे अनस बिन मालिक (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है। इमाम अहमद, बुखारी और मुस्लिम ने इस हदीस को हज़रत अनस बिन मालिक (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है। (त)

ऐसी स्थिति में, न्याय के अनुसार, गुणों की समानता या ध्वनियों के भ्रम को किसी के लिए विशिष्ट नहीं किया जा सकता।

पाद-टिप्पणियाँ (Footnotes): 1. मिनह अल-रौद शरह फिकह अल-अकबर, मुल्ला अली क़ारी, कुरआन के पाठ और नमाज़ से संबंधित अध्याय, मुस्तफा अल-बाबी प्रेस, मिस्र, पृ. 167. 2. मिनह अल-रौद शरह फिकह अल-अकबर, मुल्ला अली क़ारी, कुरआन के पाठ और नमाज़ से संबंधित अध्याय, मुस्तफा अल-बाबी प्रेस, मिस्र, पृ. 167. 3. अल-कुरआन 2/185 4. सहीह अल-बुखारी, नबी (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) के कथन 'आसानी करो और तंगी न करो' वाला अध्याय, अस्साह अल-मताबे' क़दीमी कुतुब खाना, कराची, 1/904।

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

محیط میں ہے: سئل الامام الفضلی عمن یقرأ الظاء المعجمة مکان الضاد المعجمة او علی العکس فقال لا تجوز امامته ولو تعمد یکفر - 1 امام فضلی سے سوال کیا گیا کہ اس شخص کا کیا حکم ہے جس نے ضاد کی جگہ ظاء یا اس کے بالعکس پڑھا تو انہوں نے (جواب میں) فرمایا ایسے شخص کی امامت جائز نہیں، اور اگر ایسا عمداً کرے تو کافر ہوگا۔ (ت)

منح الروض میں ہے: کون تعمده کفر الا کلام فیه 2 (ایسا عمداً کرنا کفر ہے اس میں کسی کو کلام نہیں الخ۔ت)

پس جزماً لازم کہ ہر حرف میں خاص حرف منزل من عند اللہ ہی کی ادا کا قصد کریں اسی کے مخرج سے اسے نکالنا چاہئیں پھر بوجہ عسر حرف و قصور لسان اگر غلط ادا ہو تو مثل ض میں کہ اعسر الحروف ہے۔ تیسیر علیٰ الامۃ فتوٰی بعض متاخرین پر عمل کرکے صحت نماز کا حکم دینا معیوب نہیں بلکہ محبوب ہے کہ شارع علیہ السلام کو یسر و آسانی مطلوب و مرغوب ہے۔

قال المولی سبحانہ وتعالی یُرِیدُ اللَّهُ بِكُمُ الْيُسْرَ وَلَا يُرِيدُ بِكُمُ الْعُسْرَ 3

وقال رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم یسروا ولا تعسروا وبشروا ولا تنفروا 4

اللہ سبحانہ وتعالی کا ارشاد ہے اللہ تمہارے ساتھ آسانی کا ارادہ کرتا ہے اور وہ تمہارے ساتھ تنگی کا ارادہ نہیں کرتا اور نبی اکرم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کا ارشاد گرامی ہے کہ آسانی پیدا کرو، مشکل و تنگی پیدا نہ کرو، خوشخبری دو، نفرت نہ پھیلاؤ۔

اخرجہ الائمة احمد و الشیخان عن انس بن مالك رضی اللہ تعالی عنہ۔ اس حدیث کو امام احمد، امام بخاری اور مسلم نے حضرت انس بن مالک رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا ہے۔ (ت)

پھر ایسی حالت میں عند الانصاف اشتراک صفات خواہ اشتباہ اصوات کسی کی تخصیص نہیں ہو سکتی۔

حواشی: 1 منح الروض شرح فقہ اکبر لملا علی قاری فصل فی القرایۃ والصلوۃ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ص ۱۶۷ 2 منح الروض شرح فقہ اکبر لملا علی قاری فصل فی القرایۃ والصلوۃ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ص ۱۶۷ 3 القرآن ۲/ ۱۸۵ 4 صحیح البخاری باب قول النبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم یسروا ولا تعسروا الخ مطبوعہ اصح المطابع قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۹۰۴

Fatawa-e-Razvia Volume Six

That which is contrary to intent is not voluntary, and that which is not voluntary is not subject to a ruling. And if you rule based on an intentional choice of one of the errors from your side, then this is intentional error (ta'ammud-e-ghalat), which is definitely prohibited. Therefore, Allama Shami (may his secret be sanctified) has quoted the text of 'Tatar Khaniya':

(Arabic)

When there is no union or proximity of articulation points between two letters, except where there is general public difficulty (balwa-e-amma), such as [pronouncing] 'dhaal' in place of 'daad', pure 'zaa' in place of 'dhaal', and 'zaa' in place of 'daad'. According to some scholars, the prayer is not invalidated. End (T).

(Urdu)

When there is no union of articulation points (makhraj) or proximity of makhraj between two letters, except in the case where there is general public difficulty, for example, reading 'dhaal' in place of 'daad', 'zaa' in place of 'dhaal', and 'zaa' in place of 'daad', then according to some scholars, the prayer will not be invalidated. End (T).

Having quoted this, he stated:

(Arabic)

I say: Based on this, there should be no invalidation in substituting 'thaa' with 'seen' and 'qaaf' with 'hamza', as is the language of the common people of our time. They do not distinguish between them, and it is very difficult for them, similar to [distinguishing] 'dhaal' and 'zaa', especially according to the opinion of Qazi Abu Asim and the opinion of al-Saffar. This is all the opinion of the later scholars (muta'akhkhirin). You have learned that this is more expansive, while the opinion of the earlier scholars (mutaqaddimin) is more cautious (ahwat). It is stated in Sharh al-Munyah, which is what the researchers (muhaqqiqin) have authenticated and derived rulings upon. So,

(Urdu)

I say: Based on this, there should be no invalidation in these cases when someone reads 'seen' instead of 'thaa' or 'hamza' instead of 'qaaf', as is the speech of the common people of our era. They do not distinguish between them, and this is extremely difficult for them, just as it is difficult to distinguish between 'dhaal' and 'zaa', especially according to the opinion of Qazi Abu Asim and Saffar. And all this is the opinion of the later scholars, and you have known that there is sufficient breadth in this, while the opinion of the earlier scholars is more cautious. In Sharh Munyah, it is stated that the

(Arabic)	(Urdu)
act upon what you choose, but caution is better, especially in the matter of prayer, which is the first thing for which a servant will be held accountable.	researchers have declared this correct and based their derivations on it. So, act upon what is chosen, but caution is foremost, especially in matters of prayer because the servant will be questioned about this first. (T)

From this refined research, it became clear that neither intentional 'zhad' is permissible nor 'dwad', as it is neither 'zha' nor an emphatic 'dal'. After intending 'daad' and aiming for the correct letter and using the specific articulation point, whatever is uttered incorrectly, the third [ruling] is a fatwa of validity for the prayer due to hardship (ta'assur).

---

[1] Radd al-Muhtar, Matters regarding the mistakes of the reciter, printed by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/468.

फ़तावा-ए-रज़विया जिल्द शशम

जो इरादे के विपरीत है वह ऐच्छिक नहीं है, और जो ऐच्छिक नहीं उस पर हुक्म लागू नहीं होता। और यदि अपनी ओर से किसी एक गलती को जानबूझकर करने का हुक्म दिया जाए, तो यह वही 'तअम्मुद-ए-ग़लत' (जानबूझकर की गई गलती) है जो निश्चित रूप से वर्जित है। इसीलिए अल्लामा शामी (क़ुद्दसा सिर्रहु) ने 'ततार खानिया' की इबारत नकल की है:

(अरबी)

जब दो अक्षरों के बीच मख्रज (उच्चारण स्थान) की एकता या निकटता न हो, सिवाय उस स्थिति के जब आम लोगों के लिए कठिनाई (बलवा-ए-आमा) हो, जैसे 'ज़ाल' की जगह 'ज़ाद', शुद्ध 'ज़ा' की जगह 'ज़ाल' और 'ज़ा' की जगह 'ज़ाद' पढ़ना। कुछ उलेमा के नज़दीक नमाज़ फ़ासिद (अमान्य) नहीं होगी। अंत (त)।

(उर्दू)

जब दो अक्षरों के बीच मख्रज का मिलन या मख्रज की निकटता न हो, मगर उस सूरत में जब आम लोगों के लिए मुश्किल हो, मसलन 'ज़ाल' को 'ज़ाद' की जगह, और 'ज़ा' को 'ज़ाल' की जगह और 'ज़ा' को 'ज़ाद' की जगह पढ़ा, तो कुछ उलेमा के नज़दीक नमाज़ फ़ासिद नहीं होगी। अंत (त)।

इसे नक़ल करके फ़रमाया:

(अरबी)

मैं कहता हूँ: इसके अनुसार इन स्थितियों में फ़साद नहीं होना चाहिए जब कोई व्यक्ति 'सा' की जगह 'सीन' और 'क़ाफ़' की जगह 'हमज़ा' पढ़े, जैसा कि हमारे ज़माने के आम लोगों की भाषा है। वे उनके बीच कोई अंतर नहीं करते और यह उनके लिए बहुत कठिन है, जैसे 'ज़ाल' और 'ज़ा' के बीच अंतर करना, विशेष रूप से काज़ी अबू आसिम और सफ़ार के कथन पर। यह सब बाद के विद्वानों (मुताअख़्ख़िरीन) का कथन है। आप जान चुके हैं कि इसमें काफी विस्तार है, जबकि पहले के विद्वानों (मुतक़द्दिमीन) का कथन अधिक सावधानीपूर्ण

(उर्दू)

मैं कहता हूँ इसके मुताबिक़ इन सूरतों में फ़साद नहीं होना चाहिए जबकि कोई शख़्स 'सा' की जगह 'सीन', 'क़ाफ़' की जगह 'हमज़ा' पढ़े जैसा कि हमारे दौर के अवाम की ज़बान है वह उनके दरमियान कोई इम्तियाज़ नहीं करते और यह उन पर निहायत दुश्वार है जैसा कि 'ज़ाल' और 'ज़ा' में फ़र्क़ करना ख़ुसूसन क़ाज़ी अबू आसिम और सफ़ार के क़ौल पर, और यह तमाम मुताअख़्ख़िरीन का क़ौल है और आप जान चुके कि इसमें काफ़ी वुसअत है और मुतक़द्दिमीन का क़ौल अहवत है, शरह

(अरबी)

(अहवत) है। शरह अल-मुन्या में कहा गया है कि इसी को शोधकर्ताओं (मुहक़्क़िक़ीन) ने सही माना है और इसी पर उन्होंने निष्कर्ष निकाले हैं। तो जिस पर आप चाहें अमल करें, लेकिन सावधानी बेहतर है, विशेष रूप से नमाज़ के मामले में क्योंकि बंदे से सबसे पहले इसी के बारे में सवाल होगा।

(उर्दू)

मुन्या में फ़रमाया इसी को मुहक़्क़िक़ीन ने सही कहा और इसी पर उन्होंने तफ़रीअ बिठाई पस मुख़्तार पर अमल करो, और एहतियात अवली है ख़ुसूसन नमाज़ के मामलात में क्योंकि बंदे से इसी के बारे में सब से पहले सवाल होगा (त)

इस बारीक शोध से स्पष्ट हुआ कि न तो जानबूझकर 'ज़ाद' बोलना जायज़ है और न ही 'द्वाद', क्योंकि वह न तो 'ज़ा' है और न ही भारी 'दाल'। 'ज़ाद' का इरादा करने और सही अक्षर की इच्छा रखने और निश्चित मख़्रज का उपयोग करने के बाद, ग़लती से जो कुछ भी अदा हो, तीसरा [हुक्म] कठिनाई (तअस्सुरु) के कारण नमाज़ की वैधता का फ़तवा है।

---

[1] रद अल-मुह्तार, मत्तलब मसाइल ज़ल्लातुल क़ारी, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र द्वारा मुद्रित, 1/468

کہ جو خلافِ قصد ہے اختیاری نہیں اور جو اختیاری نہیں اس پر حکم جاری نہیں اور اگر اپنی طرف سے خاص ارادہِ احدِ الاغلاط کا حکم دیجئے تو یہ وہی تعمدِ غلط ہے کہ یقیناً ممنوع و لہٰذا علامہ شامی قدس سرہ السامی نے عبارتِ تاتار خانیہ :

| اذالم یکن بین الحرفین اتحاد المخرج ولا قربہ الا ان فیہ بلوی العامۃ کالذال مکان الضاد والزاء المحض مکان الذال والظاء مکان الضاد ولا تفسد عند بعض المشائخ اھ | جب دو حرفوں کے درمیان اتحاد مخرج اور قرب مخرج نہ ہو مگر اس صورت میں جب عموم بلوی ہو مثلاً ذال ضاد کی جگہ اور زاذال کی جگہ اور ظاء ضاد کی جگہ پڑھا تو بعض مشائخ کے نزدیک نماز فاسد نہ ہوگی۔ اھ (ت) |

نقل کر کے فرمایا:

| قلت فینبغي علی ھذا عدم الفساد في ابدال الثاء سینا والقاف ھمزۃ کما ھو لغۃ عوام زماننا فانھم لا یمیزون بینھما ویصعب علیھم جدا کالذال مع الزاء ولا سیما علی قول القاضي ابي عاصم وقول الصفار وھذا کلہ قول المتأخرین و قد علمت انہ اوسع وان قول المتقدمین احوط قال في شرح المنیۃ وھو الذي صححہ المحققون وفرعوا علیہ فاعمل بما تختار والاحتیاط اولی سیما في امر الصلوۃ التي ھي اول ما یحاسب العبد علیھا۔ | میں کہتا ہوں اس کے مطابق ان صورتوں میں فساد نہیں ہونا چاہئے جبکہ کوئی شخص ثاء کی سین، قاف کی جگہ ہمزہ پڑھے جیسا کہ ہمارے دور کے عوام کی زبان ہے وہ ان کے درمیان کوئی امتیاز نہیں کرتے اور یہ ان پر نہایت دشوار ہے جیسا کہ ذال اور زا میں فرق کرنا خصوصاً قاضی ابو عاصم اور صفار کے قول پر، اور یہ تمام متاخرین کا قول ہے اور آپ جان

چکے کہ اس میں کافی وسعت ہے اور متقدمین کا قول احوط ہے، شرح منیہ میں فرمایا اسی کو محققین نے صحیح کہا اور اسی پر انہوں نے تفریع بٹھائی پس مختار پر عمل کرو، اور احتیاط اولٰی ہے خصوصاً نماز کے معاملات میں کیونکہ بندے سے اسی کے بارے میں سب سے پہلے سوال ہوگا(ت) |

اس تحقیقِ انیق سے ظاہر ہوا کہ تعمد نہ ظاد کا جائز نہ ڈواد کا کہ نہ وہ ظا ہے نہ دالِ مفخم اور بعدِ قصدِ ض و ارادہ حرف صحیح و استعمالِ مخرجِ معین براہِ غلط جو کچھ ادا ہو تیسرا صحتِ نماز پر فتوٰی لتعسر

---

1 رد المحتار مطلب مسائل زلة القاری مطبوعہ مصطفیٰ البابی مصر ۱ / ۴۶۸

Fatawa Razawiyya Volume 6

...and widespread occurrence, this is my opinion. So reflect on it yourself to see what you think. (t) It is stated in Al-Hindiyya, Al-Hilya, and Khazanat al-Akmal:

'If it [the word/recitation] occurred involuntarily on the tongue or if one does not know the distinction, the prayer is not invalidated. This is the chosen opinion.'

If it occurred involuntarily on the tongue or there is no awareness of distinction, the prayer will not be invalidated; this is the chosen opinion. (t)

In Wajiz al-Kardari, it is written:

'This is the most moderate of opinions and it is the chosen one.'[2] And Allah, Glorified and Exalted be He, knows best, and His knowledge is most perfect and firm; His Majesty is the most High and stable. (t)

This is the most moderate opinion and it is the chosen one. (t) And Allah, Glorified and Exalted be He, knows best; His knowledge is most perfect, and His sovereignty is most supreme and established. (t)

Issue No. 258: Sent by Nawab Maulvi Syed Sultan Ahmad Khan Sahib, may Allah Almighty preserve him, from Bareilly, 3rd Ramadan-ul-Mubarak 1310 AH.

What do the noble scholars say in this matter regarding the ruling on prayer, whether it is obligatory (fard) or voluntary (nafl), when the same Surah is repeated in every Rak'ah?

What is the opinion of the noble scholars on the following issues of prayer: whether the prayer is fard or nafl, how is it to repeat a single Surah in every Rak'ah?

The Answer:

Without necessity, it is Makruh Tanzihi (mildly disliked) in obligatory prayers. Therefore, one should not intentionally recite Surah An-Nas in the first Rak'ah so as not to fall into the need for repetition. However, if it was recited by mistake or intentionally, then in the second Rak'ah also, the same [Surah] must be read, for reciting in reverse order is more severe than repetition. Contrary to one who is finishing the Great Quran, who should recite until Surah An-Nas in the first Rak'ah and in the second from...

Without necessity, it is Makruh Tanzihi in obligatory prayers. Therefore, Surah An-Nas should not be intentionally recited in the first Rak'ah so that the need for repetition

does not arise. If it has been recited by mistake or intentionally, then in the second Rak'ah, the same Surah, i.e., Surah An-Nas, should be recited again, because reading by changing the order is even more severe than repetition. Contrary to...

[1] Fatawa al-Hindiyya, Chapter Five on the Error of the Reciter, Noorani Kutub Khana Peshawar, 1/79. [2] Fatawa Bazzaziyya on the margin of Fatawa al-Hindiyya, the twelfth on the Error of the Reciter, Noorani Kutub Khana Peshawar, 4/42.

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

...और व्यापक प्रचलन है, यह मेरी राय है। पस आप स्वयं इस पर विचार करें कि आपकी राय क्या है। (त) हिन्दिया, हुलिया और ख़ज़ाना अल-अकमल में है:

'यदि वह [शब्द/पाठ] जीभ पर अनायास आ गया हो या यदि किसी को भेद का ज्ञान न हो, तो प्रार्थना अमान्य नहीं होती है। यही चुना हुआ मत है।'

यदि वह जीभ पर स्वयं ही जारी हो गया या भेद का ज्ञान नहीं है, तो नमाज़ अमान्य (फ़ासिद) नहीं होगी; यही मुख़्तार (चुना हुआ मत) है। (त)

वजीज़ करदरी में है:

'यह सभी मतों में सबसे संतुलित है और यही मुख़्तार है।'[2] और अल्लाह सुब्हानहू व तआला सबसे बेहतर जानने वाला है, उसका ज्ञान सबसे पूर्ण और सुदृढ़ है; उसकी संप्रभुता सबसे ऊँची और स्थापित है। (त)

यह सबसे संतुलित मत है और यही मुख़्तार है। (त) और अल्लाह सुब्हानहू व तआला बेहतर जानने वाला है, उसका ज्ञान सबसे पूर्ण है और उसकी हाकिमियत की शान सबसे आला और मज़बूत है। (त)

मसला नंबर 258: प्रेषक नवाब मौलवी सैयद सुल्तान अहमद ख़ान साहब (अल्लाह उनकी रक्षा करे), बरेली से, 3 रमज़ान-उल-मुबारक 1310 हिजरी।

विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं कि नमाज़ का क्या हुक्म है, चाहे वह फ़र्ज़ हो या नफ़्ल, जिसमें हर रकात में एक ही सूरत दोहराई जाए?

नमाज़ के दर्ज मसलों में विद्वानों की क्या राय है, चाहे नमाज़ फ़र्ज़ हो या नफ़्ल, कि हर रकात में एक सूरत का तकरार (दोहराना) करना कैसा है?

अल-जवाब (उत्तर):

बिना आवश्यकता के फ़र्ज़ नमाज़ों में यह मकरूह-ए-तन्ज़ीही है। इसलिए पहली रकात में सूरह अन-नास जानबूझकर नहीं पढ़नी चाहिए ताकि दोहराने की ज़रूरत न पड़े। लेकिन यदि भूल से या जानबूझकर पढ़ ली गई है, तो दूसरी रकात में भी वही [सूरत] पढ़नी चाहिए, क्योंकि उल्टे क्रम में

पढ़ना दोहराने से भी अधिक गंभीर है। इसके विपरीत वह जो कुरान-ए-अज़ीम को ख़त्म कर रहा हो, उसे पहली रकात में सूरह अन-नास तक पढ़ना चाहिए और दूसरी रकात में...

बिना आवश्यकता फ़राइज़ (फ़र्ज़ नमाज़ों) में मकरूह-ए-तन्ज़ीही है, इसलिए पहली रकात में सूरह अन-नास जानबूझकर नहीं पढ़नी चाहिए ताकि दोहराने की ज़रूरत न पड़ जाए। अगर भूल से या जानबूझकर पढ़ चुका है, तो अब दूसरी रकात में वही सूरत यानी सूरह अन-नास दोबारा पढ़े, क्योंकि तरतीब (क्रम) बदलकर पढ़ना दोहराने से भी सख़्त है। इसके विपरीत...

[1] फ़तावा अल-हिन्दिया, अध्याय पाँच, क़ारी (पाठक) की त्रुटि पर, नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर, 1/79.
[2] फ़तावा बज़ज़िया, फ़तावा अल-हिन्दिया के हाशिये पर, बारहवाँ, क़ारी की त्रुटि पर, नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर, 4/42.

فتاوی رضویہ جلد ششم

المرٰمی وتکثر البلوی ھذا ماعندی فلتنظر نفس ماذا تری (کیونکہ ادائیگی مشکل اور استعمال زیادہ ہے یہ میری رائے ہے پس تمہاری رائے اس میں کیا ہے اس پر خود غور و خوض کروت) ہندیہ وحلیہ وخزانہ الاکمل میں ہے:

ان جری علی لسانہ او لا یعرف التمییز لاتفسد ھو المختار[1]۔ اگر زبان پر ازخود جاری ہو گیا یا امتیاز کی معرفت نہیں تو نماز فاسد نہ ہوگی یہی مختار ہے۔(ت)

وجیز کردری میں ہے:

ھو اعدل الاقاویل و ھو المختار[2]۔ واللہ سبحانہ و تعالی اعلم وعلمہ اتم و احکم عز شانہ احکم۔ یہ سب سے معتدل قول ہے اور یہی مختار ہے۔(ت) اور اللہ سبحانہ تعالیٰ سب سے بہتر جاننے والا ہے اس کا علم سب سے کامل اور اسکی شانِ حاکمیت سب سے اعلیٰ و مستحکم ہے(ت)

مسئلہ نمبر ۲۵۸: مرسلہ جناب نواب مولوی سید سلطان احمد خان صاحب سلمہ اللہ تعالیٰ از بریلی ۳ رمضان المبارک ۱۳۱۰ھ

چہ می فرمایند علمائے کرام دریں مسئلہ کہ در صورت ذیل حکم نماز چیست عام ازانکہ فرض بود یا نفل کہ در ہر رکعت ہماں سورت تکرار کردن۔ درج مسائل نماز میں علماء کرام کی کیا رائے ہے خواہ نماز فرض ہو یا نفل کہ ہر رکعت میں ایک سورت کا تکرار کرنا کیسا ہے؟

الجواب:

بے ضرورت در فرائض مکروہ تنزیہی است پس نشاید در اولی قرآت ناس را تعمد کردن تا حاجت بتکرار نیفتند اما اگر خواند بسہو یا عمد ناچار در ثانیہ تیر ہموں باید خواند کہ قرآت معکوسہ سخت تر از تکرار است۔ بخلاف ختم کنندہ قرآن عظیم کہ اورا باید در رکعت اولی تا ناس خواندن و در ثانیہ

از بغیر ضرورت فرائض میں مکروہِ تنزیہی ہے، پس پہلی رکعت میں سورۃ الناس عمداً نہیں پڑھنی چاہئے تاکہ تکرار کی ضرورت نہ پڑ جائے اگر سہواً یا عمداً پڑھ چکا تو اب دوسری رکعت میں وہی سورت یعنی سورۃ الناس دوبارہ پڑھے، کیونکہ ترتیب بدل کر پڑھنا تکرار سے بھی سخت ہے۔ بخلاف

1 فتاوی ہندیہ الفصل الخامس فی زلۃ القاری نورانی کتب خانہ پشاور ۱ / ۷۹ 2 فتاوی بزازیہ علی ہامش الفتاوی الہندیہ الثانی عشر فی زلۃ القاری نورانی کتب خانہ پشاور ۴ / ۴۲

Fatawa-e-Razvia Volume 6

[Continuation of previous answer] (Left column - Persian): Alif Lam Meem to Muflihoon due to the Hadith of 'Al-Haal al-Murtahal', as mentioned in An-Nahr and Radd al-Muhtar. I say: What is meant here is that at the time of completing the Holy Quran, this is not a reversal or inversion, but rather starting anew, as the words 'Haal' and 'Murtahal' also prove this. Understand this, and Allah Almighty knows best.

(Right column - Urdu): Regarding the method of completing the Quran, it is permissible and correct to recite up to Surah An-Nas in the first rak'at and from Alif Lam Meem to Muflihoon in the second rak'at. This is because it is stated in the Hadith Sharif that a person asked, "O Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him)! What is the most beloved deed to Allah?" The Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said, "The one who alights at a station and then departs (meaning the person who finishes the Quran and immediately starts again, and continues to do so)," as mentioned in An-Nahr and Radd al-Muhtar. I say that this means that in the case of completing the Quran, this is not a change in sequence or order, but rather starting the Quran anew, as the words 'Haal' and 'Murtahal' also serve as proof for this. Understand this, and Allah Almighty knows best. (T)

Question Number 459: Reading multiple surahs in one rak'at (How is it to recite multiple surahs in one rak'at? (T))

The Answer: (Left column - Persian): One should not recite more than one surah in a rak'at of obligatory prayers, but if one does, it is not disliked (makruh) provided the surahs are consecutive. If someone combines non-consecutive surahs in one rak'at, it is disliked, as stated in Ghunyah then Radd al-Muhtar. I say: In the case of leadership (Imamate), there is another condition, which is that it should not be burdensome for the followers; otherwise, it will be prohibitively disliked (makruh tahrimi). And Allah Almighty knows best.

(Right column - Urdu): The Answer: In one rak'at of obligatory prayers, more than one surah should not be recited. If someone does recite more than one, it is not disliked as long as those surahs are consecutive. If someone combines disconnected/non-consecutive surahs in a single rak'at, then it is disliked. As mentioned in Ghunyah and then in Radd al-Muhtar, I say that in the case of being an Imam, there is another condition: that the follower does not feel it as a burden, otherwise it will be prohibitively disliked (makruh tahrimi). And Allah Almighty knows best. (T)

Question Number 460: Skipping a surah while reciting (How is it to skip one surah and recite the next? T)

The Answer: (Left column - Persian): If the skipped surah is long such that its recitation in the second rak'at would necessarily make the second rak'at longer than the first, then after having skipped it...

(Right column - Urdu): The Answer: If the skipped surah is so long that its recitation would make the second rak'at longer than the first rak'at, then...

---

1 Al-Jami' at-Tirmidhi, Chapters of Recitation, printed by Aftab-e-Alam Press, Lahore, 2/118

फ़तावा रज़विया, जिल्द 6

[पिछले उत्तर का शेष भाग] (बायाँ कॉलम - फारसी): 'अलिफ़ लाम मीम' से 'मुफ़लिहून' तक, 'अल-ह़ाल अल-मुरतहल' की ह़दीस के कारण, जैसा कि 'अन-नह़र' और 'रद्दुल मुह़तार' में है। मैं कहता हूँ: इसका अर्थ यह है कि कुरआन मजीद को खत्म करने के समय, यह कोई उल्टा क्रम या उलट-फेर नहीं है, बल्कि नए सिरे से शुरू करना है, जैसा कि शब्द 'ह़ाल' और 'मुरतहल' भी इस पर प्रमाण हैं। इसे समझें और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

(दायाँ कॉलम - उर्दू): कुरआन खत्म करने की सूरत में, पहली रकअत में सूरह अन-नास तक और दूसरी रकअत में 'अलिफ़ लाम मीम' से 'मुफ़लिहून' तक पढ़ना जायज़ और सही है। क्योंकि ह़दीस शरीफ़ में है: एक व्यक्ति ने अर्ज़ किया, "या रसूलल्लाह (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम)! अल्लाह तआला के यहाँ सबसे प्रिय कार्य क्या है?" हुज़ूर अकदस (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "मंज़िल में उतरने वाला और कूच करने वाला (अर्थात् वह व्यक्ति जो कुरआन शरीफ़ खत्म करे और तुरंत फिर शुरू कर दे और इसी तरह करता रहे)," जैसा कि 'नह़र' और 'रद्दुल मुह़तार' में है। मैं कहता हूँ कि इससे तात्पर्य यह है कि कुरआन खत्म करने की स्थिति में यह क्रम बदलना नहीं है, बल्कि कुरआन को नए सिरे से शुरू करना है, जैसा कि शब्द 'ह़ाल' और 'मुरतहल' भी इसी का प्रमाण हैं। इसे समझें और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला नंबर 459: एक रकअत में कई सूरह पढ़ना (एक रकअत में एक से अधिक सूरहें पढ़ना कैसा है? (त))

जवाब: (बायाँ कॉलम - फारसी): फ़र्ज़ नमाज़ों की एक रकअत में एक से अधिक सूरह नहीं पढ़नी चाहिए, लेकिन अगर कोई पढ़ता है तो वह मकरूह नहीं है बशर्ते कि सूरहें मुतसिल (लगातार) हों। यदि कोई एक रकअत में अलग-अलग (गैर-मुतसिल) सूरहें जमा करता है, तो यह मकरूह है, जैसा कि 'गुन्या' और फिर 'रद्दुल मुह़तार' में है। मैं कहता हूँ: इमामत की स्थिति में एक और शर्त है, और वह यह कि मुक्तदियों पर बोझ न हो; अन्यथा यह मकरूह-ए-तहरीमी होगा। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

(दायाँ कॉलम - उर्दू): जवाब: फ़र्ज़ नमाज़ों की एक रकअत में एक से अधिक सूरह नहीं पढ़नी चाहिए। यदि कोई पढ़ता है, तो इसमें कोई कराहत (बुराई) नहीं है बशर्ते कि वे सूरहें एक-दूसरे से जुड़ी (लगातार) हों। यदि कोई एक रकअत में अलग-अलग सूरहें जमा करता है, तो यह मकरूह है। जैसा

कि 'गुन्या' और फिर 'रद्दुल मुहतार' में है, मैं कहता हूँ कि इमाम होने की स्थिति में एक और शर्त यह भी है कि मुक्तदी उसे बोझ महसूस न करे, वर्ना मकरूह-ए-तहरीमी होगा। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला नंबर 460: एक सूरह छोड़कर पढ़ना (एक सूरह छोड़कर पढ़ना कैसा है? त)

जवाब: (बायाँ कॉलम - फारसी): यदि छोड़ी गई सूरह इतनी लंबी है कि उसे दूसरी रकअत में पढ़ने की स्थिति में दूसरी रकअत पहली रकअत से लंबी हो जाएगी, तो उसे छोड़ने के बाद...

(दायाँ कॉलम - उर्दू): जवाब: यदि छोड़ी गई सूरह इतनी लंबी है कि उसके पाठ से दूसरी रकअत पहली रकअत से लंबी हो जाएगी, तो...

---

1 अल-जामी अत-तिर्मिज़ी, अबवाबुल किराअत, मुद्रित आफताब-ए-आलम प्रेस, लाहौर, 2/118

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

[پچھلے جواب کا بقیہ حصہ] (بائیں کالم): الم تا مفلحون لحدیث الحال المرتحل ۱ کذا فی النھر وردالمحتار اقول: وانچہ مراد اینست کہ بحالت ختم قرآن مجید این خود نکس و عکس نیست بلکہ از سر گرفتن باشد چنانکہ لفظ حال و مرتحل نیز برآں دلیل است فافھم واللہ تعالٰی اعلم۔

(دائیں کالم): ختم قرآن کی صورت کے کہ اس میں پہلی رکعت میں سورۃ الناس تک پڑھنا اور دوسری رکعت میں الم تا مفلحون پڑھنا جائز اور درست ہے۔ کیونکہ حدیث شریف میں ہے: ایک شخص نے عرض کیا یا رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم! اللہ تعالی کے ہاں پسندیدہ عمل کیا ہے؟ حضور اقدس صلی اللہ تعالی علیہ نے فرمایا: منزل میں اترنے والا اور کوچ کرنیوالا (یعنی جو شخص قرآن شریف ختم کرے فوراً شروع کرے اور یوں ہی کرتا رہے) جیسا کہ نہر اور ردالمحتار میں ہے۔ میں کہتا ہوں اس سے مراد یہ ہے کہ ختم قرآن کی صورت میں یہ عکس اور ترتیب کا بدلنا نہیں بلکہ قرآن کو نئے سرے سے شروع کرنا ہے جیسا کہ لفظ حال و مرتحل بھی اسی پر دلیل ہے فافھم واللہ تعالی اعلم (ت)

مسئلہ نمبر ۴۵۹: در یک رکعت چند سورت خواندن (ایک رکعت میں متعدد سورتیں پڑھنا کیسا ہے؟۔ (ت)

الجواب: (بائیں کالم): دورکعتی زیادہ بر یک سورت خواندن در فرائض نباید اما اگر کند مکروہ نباشد بشرط اتصال سور و اگر سور متفرقہ در رکعتے جمع کند مکروہ باشد کما في الغنیۃ ثم ردالمحتار اقول و بحالت امامت شرطے دیگر نیز است و آں عدم تثقیل بر مقتدی ورنہ کراہت تحریمی است۔ واللہ تعالٰی اعلم

(دائیں کالم): الجواب: فرائض کی ایک رکعت میں ایک سے زائد سورتیں نہیں پڑھنی چاہئیں اگر کوئی پڑھ لیتا ہے تو کراہت نہیں بشرطیکہ وہ سورتیں متصل ہوں، اگر کوئی متفرق سورتیں کسی ایک رکعت میں جمع کرتا ہے تو اس میں کراہت ہے۔ جیسا کہ غنیہ میں اور پھر ردالمحتار میں ہے میں کہتا ہوں امام ہونے کی صورت میں ایک اور شرط بھی ہے وہ یہ کہ مقتدی اسے بوجھ محسوس نہ کرے ورنہ کراہت تحریمی ہوگی واللہ تعالی اعلم۔ (ت)

مسئلہ نمبر ۴۶۰: یک سورت فرو گذاشتہ خواندن (ایک سورت چھوڑ کر پڑھنا کیسا ہے؟ ت)

الجواب: (بائیں کالم): سورت متروکہ اگر مدید است کہ بر تقدیر قراتش در ثانیہ اطالت ثانیہ براولی لازم آید پس ازاں گزشتہ

(دائیں کالم): الجواب: اگر متروکہ سورت اتنی لمبی ہے کہ اس کی قرات سے دوسری رکعت پہلی رکعت سے طویل ہو جائے گی تو

---

1 الجامع الترمذی ابواب القراۃ مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور ۲/ ۱۱۸

Fatawa Razawiya (Volume Six)

Reciting the third Surah (skipping one in between) is harmless. For instance, reciting Surah At-Tin in the first rak'at and Surah Al-Qadr in the second. Otherwise, in obligatory prayers, it is disliked (Makruh). For example, reading Surah An-Nasr and then Surah Al-Ikhlas (skipping Al-Lahab). However, if there are two Surahs in between, there is no issue, such as Surah An-Nasr and Surah Al-Falaq. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 461: Reciting one Surah or one verse multiple times in one rak'at (How is it to repeat a Surah or a verse in a single rak'at? - Translator)

Answer: When repeating one Surah in two rak'ats or reciting two Surahs in one rak'at is inappropriate in obligatory (Fard) prayers, then repeating one Surah within a single rak'at would be even more inappropriate. Similarly, repeating a specific verse might cause the second rak'at to be longer than the first, and all these matters are contrary to the transmitted practices regarding obligatory prayers. However, there is no reason to declare it prohibitively disliked (Makruh Tahrimi), except for repeating the whole or most of Surah Al-Fatiha before reciting a Surah in the first two rak'ats, because that is Makruh Tahrimi. I say: the reason for this is that joining a Surah was mandatory (Wajib), and in the case of repetition, it is missed. Thus, if a person does this intentionally, they must repeat the prayer; if done unintentionally, they must perform Sajdah Sahw (prostration for forgetfulness). This is contrary to repeating Surah Al-Fatiha in the last two rak'ats. I say: because joining a Surah is not mandatory in them, or after joining a Surah in the first two rak'ats, because...

एक सूरह को छोड़कर तीसरी सूरह पढ़ने में कोई हर्ज नहीं है, जैसे पहली रकात में सूरह अत-तीन और दूसरी में सूरह अल-क़द्र। अन्यथा अनिवार्य नमाज़ों (फ़र्ज़) में यह मकरूह (नापसंद) है, जैसे सूरह अन-नस्र और सूरह अल-इखलास पढ़ना। लेकिन अगर बीच में दो सूरह का अंतर हो, तो कोई हर्ज नहीं, जैसे सूरह अन-नस्र और सूरह अल-फ़लक़। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 461: एक रकात में एक सूरह या एक रकात में एक आयत को कई बार पढ़ना (एक रकात में किसी सूरह या आयत को दोहराव के साथ पढ़ने का क्या हुक्म है? - अनुवादक)

जवाब: जब फ़र्ज़ नमाज़ों की दो रकातों में एक सूरह को दोहराना या एक रकात में दो सूरह पढ़ना मुनासिब नहीं है, तो एक ही रकात में एक सूरह को दोहराना और भी अधिक अनुचित होगा। इसी तरह, किसी विशेष आयत को दोहराने से दूसरी रकात पहली रकात से लंबी हो सकती है, और ये सभी बातें फ़र्ज़ नमाज़ों के बारे में वर्णित परंपराओं के विरुद्ध हैं। हालाँकि, इसे मकरूह तहरीमी (निषिद्ध के करीब नापसंद) घोषित करने का कोई कारण नहीं है, सिवाय पहली दो रकातों में सूरह पढ़ने से पहले पूरी सूरह अल-फ़ातिहा या उसके अधिकांश हिस्से को दोहराने के, क्योंकि यह मकरूह तहरीमी है। मैं कहता हूँ: इसका कारण यह है कि सूरह मिलाना वाजिब (अनिवार्य) था, और दोहराने की स्थिति में वह छूट जाता है। अत; यदि किसी व्यक्ति ने जानबूझकर ऐसा किया तो उसे नमाज़ दोहरानी होगी, और यदि भूलवश किया तो सजदा सहव (भूल का सजदा) करना होगा। यह आखिरी दो रकातों में सूरह अल-फ़ातिहा दोहराने के विपरीत है। मैं कहता हूँ: क्योंकि उनमें सूरह मिलाना वाजिब नहीं है, या पहली दो रकातों में सूरह मिलाने के बाद, क्योंकि...

سورت ثالثہ خواندن باکے ندارد چنانچہ در اولٰی والتین و در ثانیہ قدر ورنہ در فرائض مکروہ چنانچہ نصر و اخلاص و اگر دو سورت درمیان باشد مضائقہ نے بچو نصر و فلق ۔ واللہ تعالٰی اعلم ایسی سورت کو ترک کرکے تیسری سورت پڑھنے میں کوئی حرج نہیں مثلاً پہلی رکعت میں سورہ والتین اور دوسری رکعت میں سورہ قدر پڑھے اور اگر ایسی صورت نہیں تو فرائض میں ایسا کرنا مکروہ ہے جیسا کہ سورہ نصر اور سورہ اخلاص کا پڑھنا اور اگر درمیان میں دو سورتیں ہوں تو پھر کوئی مضائقہ نہیں مثلاً سورہ نصر اور سورہ فلق۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۴۶۱: در یک رکعت یک سورت یا یک رکعت یک آیت چند بار خواندن (ایک رکعت میں کسی سورت یا آیت کا تکرار کے ساتھ پڑھنا کیسا ہے؟۔ ت)

الجواب: چوں تکرار یک سورت در دو رکعت و دو سورت در یک رکعت ہر دو در فرائض نا شائستہ بود تکرار یک سورت در یک رکعت اولٰی نا شائستگی باشد و ہمچناں تکرار آیت خلاصہ موجب اطالت ثانیہ بر اولٰی باشد و کل ذلک خلاف الماثور المتوارث فی الفرائض فاما کراہت تحریم را وجہ نیست جز در فاتحہ کہ در رکعتین اولین پیش از قرآت سورۃ اعادہ کل یا اکثر او کند اقول: بتفویت واجب الضم پس اگر عامد است اعادہ کند و اگر ساہی است سجدہ سہو۔ بخلاف تکرار فاتحہ در اخریین اقول لعدم الضم فیہما یا بعد سورت در اولین اقول لحصول الضم من قبل ولا یجب الرکوع اثر السورۃ بل کلما تلا من القرآن کان لہ ان یتلوہ اقول: و از صورت تثقیل بر مقتدی غافل نباید بود کہ ہمچو سور زائد بر قدر مسنون است پس اگر گرانی آرد مطلقاً نا جائز و مکروہ تحریمی باشد و این حکم عام است مر فریضہ و نافلہ ہمہ را پس ہر جاز

الجواب: جب فرائض کی دو رکعتوں میں ایک سورت کا تکرار یا ایک رکعت میں دو سورتوں کا مناسب نہیں تو ایک رکعت میں ایک سورت کا تکرار بطریق اولیٰ مناسب نہ ہوگا، اسی طرح کسی مخصوص آیت کا تکرار دوسری رکعت کے پہلی رکعت سے طویل ہونے کی وجہ بن سکتا ہے، اور یہ تمام باتیں فرائض کے بارے میں منقول ماثور کے خلاف ہیں لیکن اس کو مکروہ تحریمی قرار دینے کی کوئی وجہ نہیں ماسوائے پہلی دو رکعات میں قرأت سورت سے پہلے کل سورہ فاتحہ یا اکثر کا اعادہ کرنا کیونکہ یہ مکروہ تحریمی ہے۔ میں کہتا ہوں اس کی وجہ یہ ہے کہ سورت ملانا واجب تھا، اعادہ کی صورت میں وہ فوت ہو جاتا ہے، پس اگر کسی شخص نے عمداً ایسا کیا تو اعادہ نماز کرے اور اگر سہواً کیا تو سجدہ سہو ہوگا۔ بخلاف آخری دو رکعت میں سورہ فاتحہ کے تکرار کے۔ میں کہتا ہوں کیونکہ ان میں ضم سورت واجب نہیں یا ضم سورت کے بعد پہلی دو رکعات میں، کیونکہ

Fatawa Razawiyya Volume 6

The exceptional cases of permissibility should be understood. And Allah (the Exalted) knows best. Adding a surah (Wajib) has already been accomplished, and bowing (Ruku) immediately after the surah is not mandatory. Rather, the worshiper can continue reciting as long as they wish. I say that one should not be oblivious to the situation of causing a burden on the followers (muqtadis). For instance, if a worshiper feels burdened by recitation exceeding the sunnah amount, then such a situation is absolutely impermissible and prohibitively disliked (makruh tahrimi). This ruling applies everywhere, whether the prayer is obligatory (fard) or voluntary (nafl). However, the case of permissibility everywhere should be understood as an exception. And Allah (the Exalted) knows best.

Problem No. 462: What is the ruling on reciting separate verses from a long surah in different rak'ahs? For example, reciting Ayat al-Kursi in the first rak'ah and "Amman ar-Rasul" (end of Baqarah) in the second.

Answer: Reciting like this in two rak'ahs is permissible and not disliked, provided that the gap between the two recited parts is not less than two verses. However, it is better not to do this without necessity, as it might suggest a disregard for some verses—refuge is sought with Allah. If the gap is only one verse, or if one does this within a single rak'ah without necessity, it is disliked, even if the gap is multiple verses. I say: I believe that voluntary prayers (nawafil) do not differ from obligatory prayers (fara'id) in this regard because it is mentioned in Fath al-Qadir: The Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said to Hazrat Bilal (may Allah be pleased with him), "When you begin a surah, complete it." He said this when he heard him moving from one surah to another during Tahajjud prayer, as...

---

1 Fath al-Qadir, Chapter on Imamate, printed by Nooria Razawiyya 1/992. Page 269 of 736

अनुमति की अपवादात्मक स्थितियों को समझना चाहिए। और अल्लाह (अति उच्च) बेहतर जानता है। सूरह मिलाना (वाजिब) पहले ही पूरा हो चुका है, और सूरह के तुरंत बाद रुकू करना अनिवार्य नहीं है। बल्कि, जब तक नमाज़ी तिलावत करना चाहे, कर सकता है। मैं कहता हूँ कि मुक्तदियों पर बोझ होने की स्थिति से गाफ़िल नहीं होना चाहिए। उदाहरण के तौर पर, यदि नमाज़ी सुन्नत मात्रा से अधिक क़िरात (पाठ) पर बोझ महसूस करता है, तो ऐसी स्थिति पूरी तरह से नाजायज़ और मकरूह-ए-तहरीमी (कड़ाई से नापसंद) है। यह नियम हर जगह लागू होगा चाहे नमाज़ फ़र्ज़ हो या नफ़्ल। हालाँकि, हर जगह अनुमति की स्थिति को अपवाद समझना चाहिए। और अल्लाह बेहतर जानता है।

मसला नंबर 462: एक लंबी सूरह से अलग-अलग आयतें विभिन्न रकातों में पढ़ना कैसा है? उदाहरण के तौर पर पहली रकात में आयत अल-कुर्सी और दूसरी में आमन अर-रसूल।

उत्तर: दो रकातों में इस तरह क़िरात करना बिना किसी नापसंदगी (कराहियत) के जायज़ है, बशर्ते कि दोनों पढ़ी गई आयतों के बीच दो आयतों से कम का फासला न हो। लेकिन बेहतर यही है कि बिना ज़रूरत ऐसा न किया जाए क्योंकि इससे कुछ आयतों को नज़रअंदाज़ करने का भ्रम हो सकता है, अल्लाह की पनाह। यदि यह फासला केवल एक आयत का हो, या कोई एक ही रकात में बिना ज़रूरत ऐसा करे, तो यह मकरूह है, भले ही फासला कई आयतों का क्यों न हो। मैं कहता हूँ: मैं समझता हूँ कि इस मामले में नवाफ़िल (स्वैच्छिक नमाज़), फ़राइज़ (अनिवार्य नमाज़) से अलग नहीं हैं क्योंकि फ़तह अल-क़दीर में है: नबी अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने हज़रत बिलाल (रज़ियल्लाहु अन्हु) से फरमाया, "जब तुम कोई सूरह शुरू करो तो उसे पूरा करो।" आपने यह उस समय फरमाया जब उन्हें तहज्जुद में एक सूरह से दूसरी सूरह की तरफ जाते हुए सुना, जैसा कि...

---

1 फ़तह अल-क़दीर, इमामत का अध्याय, नूरिया रज़विया द्वारा मुद्रित 1/992। पृष्ठ 269/736

فتاوی رضویہ جلد ششم

صورتِ جواز مستثنیٰ بایدش فہمید۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ ضمِ سورت (واجب) پہلے حاصل ہو چکا اور سورت کے بعد رکوع فوراً واجب نہیں ہوتا بلکہ جب تک نمازی تلاوت کرنا چاہے کر سکتا ہے۔ میں کہتا ہوں مقتدی پر بوجھ ہونے کی صورت سے غافل نہیں ہونا چاہئے کیونکہ مثلاً قدرِ مسنون قرات سے زائد پر اگر نمازی بوجھ محسوس کرتا ہے تو ایسی صورت مطلقاً ناجائز اور مکروہِ تحریمی ہے اور یہ حکم ہر مقام پر ہوگا خواہ نماز فرض ہو یا نفل، البتہ ہر جا صورتِ جواز کو مستثنیٰ سمجھ لینا چاہئے۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۴۶۲: از یک سورۃ طویلہ آیات متفرقہ در رکعات خواندن مثلاً در اولٰی آیت الکرسی و در ثانیہ امن الرسول طویل سورت سے مختلف رکعات میں متفرق آیات پڑھنا کیسا ہے ؟ مثلاً پہلی رکعت میں آیت الکرسی اور دوسری میں امن الرسول۔

الجواب: این چنیں قرات در دو رکعت جائز است و کراہت ندارد بشرط آنکہ میان ہر دو موضع فصلِ کم از دو آیت نباشد فاما بہتر آنست کہ بے ضرورت ایں ہم نکند لانه یوهم الاعراض عن البعض والعیاذ باللہ تعالٰی واگر ہمیں فصل یک آیت است یا در رکعت واحدہ بے ضرورت ارتکاب ایں معنی کرد مکروہ است اگر چہ فصلِ چندیں آیات باشد اقول : وگمان دارم کہ نفل دریں باب مخالفِ فرض نباشد لما ذکر فی فتح القدیر من قوله صلی الله تعالی علیه وسلم لبلال رضی الله تعالی عنه اذا ابتدأت بسورة فا تمها علی نحوها قاله حین سبعه ینتقل في التهجد من سورة الی سورة ۱ کما رواه ابوداؤدوغیرہ فقولہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم هذا کما کان نهیاً عن

یہ قرات دور کعت میں بلا کراہت جائز ہے بشرطیکہ دونوں قرات کے درمیان دو آیات سے کم مقدار نہ ہو اور بہتر یہ ہے کہ بغیر ضرورت ایسا بھی نہ کرے کیونکہ بعض آیات سے اعراض کا وہم ہوگا العیاذ باللہ تعالیٰ، اگر یہ فاصلہ ایک آیت کی مقدار ہو یا ایک ہی رکعت میں بغیر ضرورت کے ایسا کرے تو مکروہ ہے اگرچہ فاصلہ متعدد آیات کا ہو۔ اقول (میں کہتا ہوں) میں یہ سمجھتا ہوں اس معاملہ میں نوافل ، فرائض کے مخالف نہیں کیونکہ فتح القدیر میں ہے: نبی اکرم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے حضرت بلال رضی اللہ تعالیٰ عنہ کو ارشاد فرمایا جب تُو کوئی سورۃ شروع کرے تو اسے مکمل کر، آپ نے یہ اس وقت فرمایا جب انہیں تہجد میں ایک سورت سے دوسری سورت کی طرف منتقل ہوتے ہوئے سنا، جیسا کہ

---

1 فتح القدیر باب الامامت مطبوعہ نوریہ رضویہ ۱/ ۹۹۲ Page 269 of 736

Fatawa Ridawiyya, Volume Sixth.

Moving from one Surah to another Surah likewise benefits from the prohibition of moving from one verse to another as well, by priority (a fortiori), but I have some discussion on this which will follow soon. And Allah Almighty knows best.

Abu Dawood and others have narrated it. Thus, just as this noble saying of the Holy Prophet (peace be upon him) indicates prohibition from moving from one Surah to another, it also indicates prohibition from moving from one verse to another by way of priority. But I have some discussion on this, which is coming shortly. And Allah Almighty knows best (T).

Issue No. 464: Reading Surahs in reverse order (How is it to read Surahs backwards? - T)

The Answer: Doing so intentionally is prohibited and forbidden. There is a severe warning against it in the Hadith. If it happens by mistake, for instance, if one recited Surah An-Nasr in the first Rak'ah and intended to recite Surah Al-Falaq in the second, but instead of "Qul A'udhu," the tongue started reciting "Qul ya ayyuhal kafirun," then in such a case, one should complete Surah Al-Kafirun and should not leave it to go to another, because leaving it without necessity is Makruh (disliked). Thus, this would be a transition from non-dislike to dislike. It is as you know. Now, the discussion remains whether doing this in Nafl (optional prayers) is also Makruh or not; rather, it is correct. In Durr al-Mukhtar, following Khulasa, it mentions this and other similar things which are Makruh in Fard (obligatory) prayers and says: "However, none of these things are Makruh in Nafl prayers." But the Imam al-Muhaqqiq, expressing it generally, said: "I have an objection to this general rule." Allama Halabi, the commentator, also raised an objection to this rule in the aforementioned issue and said: "When reciting in reverse order is Makruh and forbidden outside of prayer, why would it not be Makruh in Nafl prayers?" I say: (Author's note: which is good and apparent. And what Allama al-Tahtawi answered and Allama al-Shami confirmed, in summary, the safest path is avoidance. And Allah Almighty knows best, and His knowledge, glorified be His majesty, is most complete and wise).

फ़तावा रज़विया, छठा खंड।

एक सूरा से दूसरी सूरा में जाना इसी तरह है; एक आयत से दूसरी आयत में जाने की मनाही भी प्राथमिकता (औचित्य) के आधार पर इससे लाभ उठाती है। हालाँकि, इस पर मेरी कुछ चर्चा है जो जल्द ही आएगी। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

अबू दाऊद और अन्य ने इसे रिवायत किया है। अत; अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का यह पाक फरमान जिस तरह एक सूरा से दूसरी सूरा की तरफ मुंतकिल होने (बदलने) की मनाही पर दलालत करता है, उसी तरह एक आयत से दूसरी आयत की तरफ जाने की मनाही पर भी प्राथमिकता के तौर पर दलालत करता है, लेकिन इस पर मेरा कुछ कलाम (चर्चा) है जो जल्द ही आ रहा है, और अल्लाह तआला बेहतर जानता है (त)।

मसला नंबर 464: सूरह को उल्टे क्रम में पढ़ना (उल्टी सूरह पढ़ना कैसा है? - त)

जवाब: जानबूझकर ऐसा करना मना और नाजायज है। हदीस में इस पर सख्त चेतावनी दी गई है। अगर यह गलती से हो जाए, जैसे कि पहली रकात में सूरह अन-नस्र पढ़ी और दूसरी में सूरह अल-फलक पढ़ने का इरादा था, लेकिन "कुल अऊज़ु" की जगह ज़ुबान पर "कुल या अय्युहल काफ़िरून" जारी हो गया, तो ऐसी सूरत में सूरह काफिरून पूरी कर ले, उसे छोड़कर दूसरी तरफ न जाए, क्योंकि बिना ज़रूरत के छोड़ना मकरूह (नापसंद) है। अत; यह गैर-मकरूह से मकरूह की तरफ रुजूअ (मुड़ना) होगा। यह वैसा ही है जैसा आप जानते हैं। अब चर्चा यह रह गई कि क्या नफ़्ल (स्वैच्छिक नमाज़) में भी ऐसा करना मकरूह है या नहीं; बल्कि यह सही है। दुर्र-ए-मुख्तार में 'खुलासा' की पैरवी करते हुए इसका और ऐसी ही अन्य चीज़ों का ज़िक्र किया गया है जो फ़राइज़ (अनिवार्य नमाज़) में मकरूह हैं और कहा गया है: "बहरहाल, इनमें से कोई भी चीज़ नफ़्ल में मकरूह नहीं है।" लेकिन इमाम मुहक्क़िक ने इसे स्पष्ट रूप से व्यक्त करते हुए कहा: "मुझे इस सामान्य नियम पर आपत्ति है।" अल्लामा हलीबी मुअशी ने भी उपरोक्त मसले में इसी नियम पर आपत्ति जताई और कहा: "जब उल्टी क़िरअत (पढ़ना) नमाज़ से बाहर मकरूह और मना है, तो नफ़्ल नमाज़ में मकरूह क्यों नहीं होगी?" मैं कहता हूँ: (लेखक की टिप्पणी: और यह ज़ाहिर तौर पर बेहतर है। और अल्लामा तहतावी ने जो जवाब दिया और अल्लामा शामी ने जिसकी पुष्टि की, सारांश यह है कि एहतियात (बचाव) ही बेहतर है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है, और उसका इल्म सबसे मुकम्मल और हिकमत वाला है)।

فتاوی رضویہ، جلد ششم۔

الانتفال من سورۃ الٰی سورۃ کذلک افادالنھی عن الانتفال من ایۃ الٰی اخری ایضا بالا ولی و لکن لی فیہ کلام سیاتی واللہ تعالٰی اعلم۔ ابوداؤد وغیرہ نے اسکو روایت کیا ہے، توآپ صلی اللہ علیہ وسلم کا یہ ارشاد گرامی جس طرح ایک سورت سے دوسری سورت کی طرف منتقل ہونے سے منع پر دال ہے اسی طرح ایک آیت سے دوسری آیت کی طرف انتقال کے منع ہونے پر بھی بطریق اولٰی دال ہے، لیکن اس میں مجھے کلام ہے جو عنقریب آرہا ہے واللہ تعالیٰ اعلم (ت)

مسئلہ نمبر ۴۶۴: سورۃ معکوس خواندن (الٹی سورت پڑھنا کیسا ہے؟۔ ت)

الجواب: بالقصد ناجائز و ممنوع است در حدیث براں تہدید شدید فرمودہ اند (ارادۃً ایسا کرنا ممنوع و ناجائز ہے حدیث میں اس پر سخت وعید ہے)۔ واگر سہوا باشد چنانکہ در اولیٰ نصر خواندہ در ثانیہ قصد فلق داشت کہ بجائے قل اعوذ کلمہ قل یابر زبان رفت انگاہ ہمیں سورت کا فرون باتمام رساند ونکند این را گزاشتہ بسورت دیگر گزشتن بے ضرورت مکروہ است (اگر یہ سہواً ہوا جیسا کہ پہلی رکعت میں سورہ نصر پڑھی دوسری میں سورہ فلق پڑھنے کا قصد تھا مگر قل اعوذ کی جگہ زبان پر قل یا ایھا الکافرون جاری ہو گیا، ایسی صورت میں سورہ کافرون مکمل کرلے، اسے چھوڑ کر دوسری طرف نہ جائے، کیونکہ بغیر ضرورت کے ترک مکروہ ہے)۔ پس این رجوع باشد از عدم کراہت بکراہت (پس یہ عدم کراہت سے کراہت کی طرف رجوع ہو گا)۔ وہو کما تریٰ سخن گفتنی ماند از آنکہ این معنی در نقل ہم مکروہ باشد یا خیر در مختار بتبعیت خلاصہ ایں را و چیزی چند از جنس ایں را کہ در فرائض کراہت داشت ذکر کردہ میگوید ولا یکرہ فی النفل شیعی من ذلک (اور وہ اسی طرح ہے جس طرح تم جانتے ہو اب اس معاملہ میں گفتگو رہ گئی کہ کیا نفل میں بھی کرنا مکروہ ہے یا مکروہ نہیں بلکہ یہ درست ہے اور دُرِّ مختار میں خلاصہ کی اتباع کرتے ہوئے اسے

اس کے علاوہ اسی طرح کی چیزیں جو فرائض میں مکروہ ہیں ذکر کرکے فرمایا البتہ ان میں سے کوئی شے بھی نوافل میں مکروہ نہیں)۔ اما امام محقق حیث اطلق فرمود عندی فی ھذہ الکلیۃ نظر (لیکن امام محقق علی الاطلاق نے اظہار کرتے ہوئے کہا مجھے اس کلیہ پر اعتراض ہے)۔ علامہ حلبی محشی در ہم در مسئلہ دائرہ بریں کلیہ معترض آمد کہ قرات منکوس بیرون نماز مکروہ و ممنوع است در نفل چناں مکروہ نباشد (علامہ حلبی محشی نے بھی مذکورہ مسئلہ میں اسی کلیہ پر اعتراض کیا، اور کہا کہ الٹی قرات نماز سے باہر جب مکروہ و ممنوع ہے تو نوافل میں کیوں نہ مکروہ ہوگی)۔ اقول: وہو حسن ظاہر وماجاب عنہ العلامۃ الطحطاوی واقرہ للعلامۃ الشامی وبالجملۃ فالاحوط الاحتراز واللہ تعالٰی اعلم وعلمہ جل مجدہ اتم واحکم۔ (میں کہتا ہوں: اور یہ ظاہر و حسن ہے، اور جو علامہ طحطاوی نے جواب دیا اور علامہ شامی نے اس کی توثیق کی، خلاصہ کلام یہ ہے کہ احتیاط ہی بچنے میں ہے اور اللہ تعالیٰ بہتر جانتا ہے اور اس کا علم سب سے کامل اور مستحکم ہے)۔

Fatawa Razawiyya Volume 6

This is better. And Allama Tahtawi did not provide a reply on their behalf. And Allama Shami maintained it as established. In short, avoiding recitation in this manner is better. And Allah Almighty knows best, and His knowledge is the most glorious, most perfect, and most decisive. (T)

Problem No. 464: Regarding increasing or decreasing the recitation in Rak'ahs (How is the increase or decrease of recitation in Rak'ahs? - T)

The Answer:

[Table Content] (Left Column - Arabic/Persian): Prolonging the second rak'ah over the first in obligatory prayers (Fara'id) is disliked (Makruh) by consensus, and in voluntary prayers (Nawafil) according to the soundest opinion. Conversely, it is not disliked in voluntary prayers. In the dawn prayer (Subh), it is also permissible by consensus and absolutely; however much it is prolonged, there is no harm. Prolonging it by one-third is recommended (Mustahabb), and some say up to half. More than that, while permissible, is contrary to what is better (Khilaf al-Awla). In obligatory prayers other than Fajr, there is a difference of opinion. According to Imam Muhammad, in every case, prolonging the first rak'ah is better. The Shaikhain (RA) leaned towards equality, and the fatwa differs. It seems appropriate that the view of the Shaikhain is weightier because the speech of the Imam is the Imam of speech. And Allah Almighty knows best.

(Right Column - Urdu): It is disliked (Makruh) by consensus to make the second rak'ah of obligatory prayers longer than the first, and according to the most correct opinion, it is also disliked in voluntary prayers. Conversely, reciting less in the first is not disliked in voluntary prayers. In the Fajr prayer (the first rak'ah), it is also permissible by consensus and absolutely, meaning however long it is made, there is no harm. A duration of one-third is recommended, and some also give the opinion of up to half. To make it longer than that, despite being permissible, is against what is preferable. There is a difference in other obligatory prayers besides Fajr. According to Imam Muhammad, it is preferable to lengthen the first rak'ah in every place. The Shaikhain (may Allah be pleased with them both) have gone towards equality and the fatwa is also different, but the view of the Shaikhain seems more appropriate to be dominant because the speech of the Imam is the Imam of speech. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 465: Adding Divine Names after a Surah (What is the ruling on joining Divine Names with a Surah? - T)

The Answer:

[Table Content] (Left Column - Arabic): It is disliked in obligatory prayers, just like asking and seeking refuge during verses of promise and threat. This is also the case in voluntary prayers due to changing the order of prayer and what has been narrated and established, as in the prayer [of Tasbih]. It was said in Radd al-Muhtar: The criticism of its recommended status on the grounds that it involves changing the order of prayer only applies to the weakness of the hadith. When it rises to the degree of...

(Right Column - Urdu): It is disliked in obligatory prayers. Similarly, asking for mercy and seeking refuge from punishment during verses of encouragement and warning is also disliked. This is also disliked in voluntary prayers because such an action changes the system of prayer. Regarding the practices mentioned in the hadiths, such as in Salat ut-Tasbih, it is said in Radd al-Muhtar regarding it...

यही बेहतर है। और अल्लामा तहतावी ने उनकी तरफ़ से इसका जवाब नहीं दिया। और अल्लामा शामी ने इसे साबित रखा। संक्षेप में इस तरह के क़िरात (कुरान पाठ) से बचना ही बेहतर है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है, और उसका ज्ञान सबसे महान, पूर्ण और निर्णायक है। (त)

मसला नंबर 464: रकतों में क़िरात की कमी या अधिकता के बारे में (रकतों में क़िरात की कमी-बेशी कैसी है? - त)

अल-जवाब:

[तालिका सामग्री] (बायाँ कॉलम - अरबी/फारसी): फ़र्ज़ नमाज़ों में दूसरी रकत को पहली पर लंबा करना सर्वसम्मति से मकरूह (नापसंद) है, और नफ़्ल नमाज़ों में भी सही मत के अनुसार ऐसा ही है। इसके विपरीत, नफ़्ल नमाज़ों में कोई मकरूहियत नहीं है। फ़ज्र की नमाज़ में भी सर्वसम्मति और पूर्ण रूप से जायज़ है; जितना भी लंबा किया जाए कोई हर्ज नहीं। एक तिहाई मात्रा मुस्तहब (पसंदीदा) है, और कुछ लोग आधा होने का मत भी देते हैं। इससे अधिक लंबा करना, जायज़ होने के बावजूद, ख़िलाफ़-ए-औला (बेहतर के विरुद्ध) है। फ़ज्र के अलावा अन्य फ़र्ज़ नमाज़ों में मतभेद है। इमाम मुहम्मद के अनुसार, हर स्थान पर पहली रकत को लंबा करना बेहतर है। शैख़ैन (इमाम अबू हनीफ़ा और इमाम अबू यूसुफ़) ने बराबरी का समर्थन किया है और फ़तवा भी अलग-अलग है। शैख़ैन का मत प्रबल होना उचित लगता है क्योंकि इमाम का कथन ही कथनों का इमाम है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

(दायाँ कॉलम - उर्दू): फ़र्ज़ नमाज़ों की दूसरी रकत को पहली पर लंबा करना सर्वसम्मति से मकरूह है, और सबसे सही मत के अनुसार नफ़्ल नमाज़ों में भी मकरूह है। इसके विपरीत क़िरात करना नफ़्ल नमाज़ों में मकरूह नहीं है। फ़ज्र की नमाज़ (की पहली रकत) में भी सर्वसम्मति और पूर्ण रूप से जायज़ है, यानी जैसे भी लंबा किया जाए कोई हर्ज नहीं। एक तिहाई मात्रा मुस्तहब है, और कुछ आधा मात्रा तक का मत भी देते हैं। इससे अधिक लंबा करना जायज़ होने के बावजूद बेहतर के ख़िलाफ़ है। फ़ज्र के अलावा अन्य फ़र्ज़ नमाज़ों में मतभेद है। इमाम मुहम्मद के नज़दीक हर स्थान पर पहली रकत को लंबा करना बेहतर है। शैख़ैन रज़ियल्लाहु अन्हुमा बराबरी की ओर गए हैं और फ़तवा भी अलग-अलग है, लेकिन शैख़ैन का मत प्रबल होना उचित लगता है क्योंकि इमाम का कलाम (कथन) ही कलामों का इमाम है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 465: सूरह के साथ अल्लाह के नामों को मिलाना (सूरह के साथ अल्लाह के नामों को मिलाना कैसा है? - त)

अल-जवाब:

[तालिका सामग्री] (बायाँ कॉलम - अरबी): फ़र्ज़ नमाज़ों में यह मकरूह है, जैसे प्रोत्साहन और चेतावनी वाली आयतों के दौरान सवाल करना और पनाह माँगना। नफ़्ल नमाज़ों में भी नमाज़ के क्रम में बदलाव के कारण और जो कुछ रिवायतों में साबित है, जैसे नमाज़-ए-तस्बीह में। रद अल-मुह्तार में कहा गया है: इसके पसंदीदा होने पर यह आक्षेप कि इसमें नमाज़ का क्रम बदलता है, केवल हदीस की कमज़ोरी की स्थिति में ही लागू होता है। जब यह उस दर्जे तक पहुँच जाए...

(दायाँ कॉलम - उर्दू): फ़र्ज़ नमाज़ों में मकरूह है। इसी तरह तरग़ीब (प्रोत्साहन) और तरहीब (चेतावनी) की आयतों में रहमत का सवाल करना और अज़ाब से पनाह माँगना भी मकरूह है और यह नफ़्ल नमाज़ों में भी मकरूह है क्योंकि ऐसे कार्य से नमाज़ के क्रम में बदलाव आ जाता है। और जो प्रथाओं के बारे में हदीसों में आया है, जैसे नमाज़-ए-तस्बीह में है, रद अल-मुह्तार में इसके बारे में कहा गया है...

یہ ہی بہتر ہے۔ اور علامہ طحطاوی نے ان کی طرف سے اسکا جواب نہیں دیا۔ اور علامہ شامی نے اسے ثابت رکھا الغرض اس طرح قرات سے احتراز ہی بہتر ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم وعلمہ اجل مجدہ اتم واحکم۔ت)

مسئلہ نمبر ۴۶۴: کمی و بیشی در قرات رکعات کردن (رکعتوں میں قرات کی کمی بیشی کیسی ہے؟۔ت)

الجواب:

[جدول کا مواد] (بایاں کالم - فارسی/عربی): اطالت ثانیہ براولے در فرائض مکروہ است بالاتفاق ودر نوافل علی الاصح و عکس آن رادر نوافل کراہتے نیستودر صبح نیز جائز است بالاتفاق والاطلاق یعنی ہر چہ تطویل کند پاک نباشد و بقدر ثلث خود مستحب است و بعضے تا نصف گویند و زیادہ بر آں با وصف جواز خلاف اولٰی است ودر غیر فجر از فرائض اختلاف است نزد امام محمد ہمہ جا اطالت اولٰی باید و شیخین رضی اللہ تعالٰی عنہما بہ تسویہ رفتہ اند و فتوٰی مختلف است باید کہ ارجح واوجہ قول شیخین باشد فان کلام الامام امام الکلام۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

(دایاں کالم - اردو): فرائض کی دوسری رکعت کو پہلی پر لمبا کرنا بالاتفاق مکروہ ہے اور اصح قول کے مطابق نوافل میں بھی مکروہ ہے اس کے برعکس قرات کرنا نوافل میں کراہت نہیں رکھتا، اور نماز فجر (کی رکعت اولٰی) میں بھی بالاتفاق اور بالاطلاق جائز ہے یعنی جس طرح بھی طویل کرے کوئی حرج نہیں، تہائی کی مقدار مستحب ہے اور بعض نصف مقدار تک کا قول بھی کرتے ہیں اور اس سے زیادہ لمبا کرنا جائز ہونے کے باوجود خلاف اولٰی ہے۔ فرائض فجر کے علاوہ

دیگر نمازوں میں اختلاف ہے۔ امام محمد کے نزدیک ہر مقام پر پہلی رکعت کا لمبا کرنا اولیٰ ہے شیخین رضی اللہ تعالیٰ عنہما برابری کی طرف گئے ہیں اور فتویٰ بھی مختلف ہے لیکن شیخین کا قول راجح ہونا مناسب لگتا ہے کیونکہ کلام امام ، امام کلام ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۴۶۵: پس سورت اسمائے الٰہی ضم کرد (سورت کے ساتھ اسمائے الٰہی کا ملانا کیسا ہے؟ت)

الجواب:

[جدول کا مواد] (بایاں کالم - عربی): در فرائض مکروہ ست ہمچو سوال و استعاذہ نزد آیات ترغیب و ترھیب و در نوافل نیز لتغییر نظم الصلوۃ وانچہ وارد دو ثابت باشد کما في صلوۃ و قال فی رد المحتار و الطعن في ندبھا بان فیھا تغییر النظم الصلوۃ انما یتأتی علی ضعف حدیثھا فاذا ارتقی الی درجۃ

(دایاں کالم - اردو): فرائض میں مکروہ ہے اسی طرح آیات ترغیب و ترھیب میں رحمت کا سوال اور عذاب سے پناہ مانگنا بھی مکروہ ہے اور یہ نوافل میں بھی مکروہ ہے کیونکہ ایسے عمل سے نظم نماز میں تبدیلی آجاتی ہے اور جو معمولات کے بارے میں احادیث میں وارد ہے جیسا کہ نماز تسبیح میں ہے رد المحتار میں کہا اس کے

Fatawa Razawiyya - Volume VI

'Al-Hasanu asbathaa wa in kana fiha dhalika' 1 [The goodness is established even if it contains that] Ah, and Allah the Almighty knows best.

The objection against it being recommended (mustahabb), that it would cause a change in the order of prayer, could only be valid if the Hadith concerning it were weak. Therefore, once the Hadith has reached the status of 'Hasan' (good), its establishment is proven even if it involves those practices (which are mentioned in that prayer). Ah, and Allah the Almighty knows best.

Problem No. 466: 28 Rabi al-Akhir 1311 AH What do the scholars of religion and jurists of the firm Shariah say about this matter: Zaid has been appointed as Imam by the trustee and the local residents who come to the mosque to pray. Zaid pronounces the letters from their points of articulation (makharij). Now, a few people say: "You do not recite 'Dad' (ض) correctly; instead, you recite it similar to 'Zha' (ظ)." Zaid says: "I recite from the points of articulation, and you people are producing a 'Dal' (د) sound by touching the tongue to the teeth, whereas I am touching the edge of the tongue to the molars, which is the 'Dad'." Also, another person sometimes leads the prayer and he pronounces 'Dad' from the point of articulation of 'Dal' (د). In this case, behind whom will the prayer be valid? Please clarify plainly based on the Word of Allah and the Hadith of the Messenger of Allah; clarify and be rewarded.

The Answer: 'Zad' and 'Duwad' are purely incorrect. Its point of articulation is neither by touching the tongue to the teeth nor by touching the tip of the tongue to the molars. Rather, its point of articulation is the side of the tongue touching the upper molars on that side, being pronounced with extension (istitalah), and the tongue rising to touch the palate, being pronounced with firmness and strength. It is necessary to learn its point of articulation like all other letters. A person who learns the point of articulation and uses it to the best of their ability, without intending to recite 'Zha' (ظ) or 'Dal' (د), but rather fulfilling the right of the letter as revealed by Allah Almighty—whatever then comes out easily, a fatwa for the validity of the prayer will be given. And Allah the Almighty knows best.

Problem No. 467: What do the scholars of religion say regarding this matter: if a person recites 'Dad' resembling 'Zha' in prayer, will their prayer be valid or not? And what is the ruling regarding that person? Clarify and be rewarded.

The Answer: O Allah, guide us to the truth and correctness. This letter is the most difficult letter, and its pronunciation is extremely difficult, especially for non-Arabs (Ajam) as it is not a letter of their language.

1. Radd al-Muhtar, Discussion on Salat al-Tasbih, Printed by Mustafa al-Babi 1/508. Page 272 of 736

फ़तावा रज़विया - छठा खंड

'अल-हसनु अस्बतहा वा इन काना फीहा ज़ालिका' 1 [अच्छाई स्थापित है भले ही इसमें वह हो] अह, और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मुस्तहब (पसंदीदा) होने पर यह आपत्ति कि यह नमाज़ के क्रम में बदलाव का कारण बनेगा, केवल तब हो सकती है जब इसकी हदीस ज़ईफ़ (कमज़ोर) हो। अतः, जब इसकी हदीस 'हसन' (उत्तम) के दर्जे तक पहुँच गई, तो इसका प्रमाण स्थापित हो गया, भले ही इसमें वे कार्य शामिल हों (जो उस नमाज़ में वर्णित हैं)। अह, और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला नंबर 466: 28 रबी-उल-आखिर 1311 हिजरी दीन के विद्वान और शरीयत के मुफ्ती इस मामले में क्या कहते हैं: ज़ैद को मस्जिद के मुतवल्ली और मोहल्ले के लोगों ने इमाम नियुक्त किया है। ज़ैद अक्षरों को उनके सही उच्चारण स्थलों (मखारिज) से अदा करता है। अब कुछ लोग कहते हैं कि: "तुम 'ज़ाद' (ض) नहीं पढ़ते, बल्कि 'ज़ाद' को 'ज़ॉ' (ظ) के समान पढ़ते हो।" ज़ैद कहता है: "मैं मखारिज से अदा करता हूँ और तुम लोग जीभ को दाँतों से लगाकर 'द' (د) निकालते हो, जबकि मैं दाढ़ से जीभ का किनारा लगाकर निकालता हूँ, वही 'ज़ाद' है।" साथ ही, एक व्यक्ति कभी-कभी नमाज़ पढ़ा देता है जो 'ज़ाद' को 'द' (د) के उच्चारण स्थल से अदा करता है। ऐसी स्थिति में किसके पीछे नमाज़ जायज़ होगी? अल्लाह के कलाम और रसूलुल्लाह की हदीस की रोशनी में स्पष्ट रूप से बयान करें; स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: 'ज़ाद' और 'दुवाद' पूरी तरह से गलत हैं। इसका उच्चारण स्थल न तो जीभ को दाँतों से लगाने से है और न ही जीभ की नोक को दाढ़ से लगाने से। बल्कि इसका उच्चारण स्थल जीभ के एक तरफ के किनारे का उसी तरफ की ऊपरी दाढ़ों से मिलना और फैलाव (इस्तिताला) के साथ अदा होना है, और जीभ का ऊपर उठकर तालु से मिलना और उच्चारण में सख्ती व शक्ति होना है। इसका मख़रज सीखना अन्य सभी अक्षरों की तरह अनिवार्य है। जो व्यक्ति मख़रज सीख ले और अपनी क्षमता के अनुसार उसका उपयोग करे, और 'ज़ॉ' या 'द' का इरादा न करे बल्कि उसी अक्षर का हक अदा करे जो अल्लाह की ओर से उतरा है, फिर आसानी के कारण जो कुछ भी निकले, उस पर नमाज़ के सही होने का फतवा दिया जाएगा। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला नंबर 467: दीन के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं कि यदि कोई व्यक्ति नमाज़ में 'ज़ाद' को 'ज़ॉ' जैसा पढ़ता है, तो क्या उसकी नमाज़ सही होगी या नहीं? और उस व्यक्ति के लिए क्या हुक्म है? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: ऐ अल्लाह, सत्य और सही मार्ग की ओर मार्गदर्शन कर। यह अक्षर सबसे कठिन अक्षरों में से है और इसका उच्चारण विशेष रूप से अज़म (गैर-अरब) लोगों के लिए बहुत कठिन है क्योंकि यह उनकी भाषा का अक्षर नहीं है।

1. रद्द अल-मुह्तार, सलात अल-तस्बीह के बारे में चर्चा, मुस्तफा अल-बाबी द्वारा मुद्रित 1/508। पेज 272/736

الحسن أثبتها وان كان فيها ذلك 1 اه واللہ تعالیٰ اعلم

مستحب ہونے پر یہ اعتراض کہ نظمِ نماز میں تبدیلی کا باعث بنیں گے تب ہو سکتا ہے جب اس کی حدیث ضعیف ہو، پس جب اس کی حدیث درجہ حسن پر فائز ہو چکی تو اس کا اثبات ہو گیا اگرچہ اس میں وہ معمولات ہوں (جو اس نماز میں مذکور ہیں) اھ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۴۶۶: ۲۸ ربیع الآخر ۱۳۱۱ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرعِ متین اس مسئلہ میں کہ زید کو متولی صاحب اور اہل محلہ نے جو نماز پڑھنے مسجد میں آتے ہیں امام کیا اور زید حرفوں کو مخارج سے ادا کرتا ہے اب اس میں چند آدمی یہ کہتے ہیں کہ تم ضاد نہیں پڑھتے بلکہ ضاد کو مشابہ ظاء کے پڑھتے ہو، اور زید کہتا ہے کہ میں مخارج سے ادا کرتا ہوں اور تم لوگ زبان کو دانتوں سے لگا کر نکالتے ہوئے "د" ہے اور میں داڑھ سے زبان کی نوک لگا کر نکالتا ہوں وہ "ضاد" ہے اور ایک شخص کبھی نماز پڑھا دیتا ہے وہ ضاد کو مخارج "د" سے ادا کرتا ہے آیا ان میں کس کے پیچھے نماز جائز ہوگی صاف صاف فرمائیے کلام اللہ وحدیثِ رسول اللہ سے بینوا توجروا۔

الجواب: ظاد اور دُواد محض غلط ہیں اس کا مخرج بھی نہ زبان کو دانتوں سے لگا کر ہے نہ زبان کی نوک داڑھ سے لگا کر بلکہ اس کا مخرج زبان کی ایک طرف کی کروٹ اُسی طرف کی بالائی داڑھوں سے مل کر درازی کے ساتھ ادا ہونا اور زبان اوپر کو اٹھ کر تالو سے ملنا اور ادا میں سختی و قوت ہونا ہے اس کا مخرج سیکھنا مثل تمام حرفوں کے ضروری ہے، جو شخص مخرج سیکھ لے اور اپنی قدرت تک اس کا استعمال کرے اور ظا یا د کا قصد نہ کرے بلکہ اسی حرف کا

حق جو عز و جل کی طرف سے اترا ہے پھر جو کچھ نکلے بوجہ آسانی صحتِ نماز پر فتویٰ دیا جائے گا۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۴۶۷: کیا فرماتے علمائے دین اس مسئلہ میں کہ اگر کوئی شخص نماز میں ضاد کو مشتبہ بظاء پڑھے تو اس کی نماز صحیح ہوگی یا نہیں؟ اور اس شخص کا کیا حکم ہے؟ بینوا توجروا۔

الجواب: اللہم ھدایۃ الحق والصواب یہ حرف دشوار ترین حرف ہے اور اس کی ادا خصوصاً عجم پر کہ ان کی زبان کا حرف نہیں، سخت مشکل،

1 رد المحتار مطلب فی صلاۃ التسبیح مطبوعہ مصطفیٰ البابی ۵۰۸/۱ Page 272 of 736

Fatawa Razawiya - Volume 6 It is mandatory for Muslims to learn to pronounce it from its correct point of articulation (makhraj) and to strive to ensure it is pronounced correctly. One should not intentionally aim for 'Zhad' or 'Dwad'; both are purely incorrect. When a person has put in effort according to their capacity and strength and intended to pronounce the correct letter, but something else comes out, there is no accountability for them. "Allah does not burden a soul beyond its capacity"[1]— (Allah Almighty does not hold any soul responsible beyond its strength. T). Especially distinguishing this letter from 'Zha' (ظ) is extremely difficult. In such a case, there is no room for these harsh rulings; takfir (declaring someone a disbeliever) is a grave matter. "One is not expelled from Islam except by denying what brought them into it" (T). And according to the majority of later scholars, there is no ruling for the invalidation of prayer either.

[Table Content] Arabic Text: In Radd al-Muhtar: If the mistake consists of substituting one letter for another, and if they can be distinguished without difficulty, like 'Saad' (ص) with 'Taa' (ط), then all agree it invalidates [the prayer]. If it cannot be done except with difficulty, like 'Zha' (ظ) with 'Daad' (ض), then most are of the opinion that it does not invalidate due to 'Umum al-Balwa' (common occurrence of the difficulty)[2]. Summarized. And in Al-Durr al-Mukhtar: Except letters whose distinction is difficult like 'Daad' and 'Zha', then according to most it does not invalidate[3]. Urdu Translation: It is in Radd al-Muhtar: If one errs by changing one letter for another, and if a distinction between those two is possible without hardship, as between 'Saad' and 'Taa', then all agree that the prayer will be invalidated. And if there is hardship in distinguishing, for example, 'Zha' and 'Daad', then the opinion of most scholars is that in view of common occurrence, the prayer will not be invalidated. Summarized. And in Durr al-Mukhtar: But letters in which distinction is difficult, such as 'Daad' and 'Zha', then according to most, the prayer will not be invalidated. (T)

And even the earlier Imams do not give an absolute ruling of invalidation. It is strange that people of today fight aimlessly over these matters and declare each other disbelievers, whereas they have no concern for the trials and new sects that are emerging in the principles of faith and core beliefs. And the irony is that those ignorant people who cannot even pronounce simple letters correctly are dying over 'Zhad' and 'Dwad'. May Allah grant us, the people of Islam, the guidance for good. Yes, if a malicious person intentionally changes the Word of Allah and the revelation sent down by Allah, whether this letter or any letter, then he will surely deserve the ruling of disbelief due to his vile intention. In this, 'Zhad' and 'Dwad'...

1 Al-Quran 2/286 2 Radd al-Muhtar, Matlab Masa'il Zallat al-Qari, Mustafa al-Babi Egypt, 1/466 3 Durr al-Mukhtar, Chapter on Things that Invalidate Prayer, etc., Mujtabai Delhi, 91/1 Page 273 of 736

फ़तावा रज़विया - छठा खंड मुसलमानों के लिए यह आवश्यक है कि वे इसके सही मखराज (उच्चारण स्थान) से अदा करना सीखें और कोशिश करें कि यह ठीक से अदा हो। अपनी ओर से न 'ज़ाद' का इरादा करें न 'दवाद' का; दोनों पूरी तरह से गलत हैं। जब उसने अपनी सामर्थ्य और शक्ति के अनुसार प्रयास किया और सही अक्षर उच्चारित करने का इरादा किया, फिर भी कुछ और निकल गया, तो उस पर कोई पकड़ नहीं है। "अल्लाह किसी जान (नफ़्स) को उसकी ताकत से बढ़कर ज़िम्मेदार नहीं ठहराता"[1]— (अल्लाह तआला किसी जी-नफ्स को उसकी ताकत से बढ़कर मुकल्लफ नहीं ठहराता। त)। विशेष रूप से इस अक्षर को 'ज़ा' (ظ) से अलग करना बहुत कठिन है। ऐसी स्थिति में इन कठोर आदेशों की कोई गुंजाइश नहीं है; तक्फीर (काफ़िर कहना) एक बहुत बड़ा मामला है। "इंसान को इस्लाम से बाहर नहीं किया जाता सिवाय उस चीज़ का इनकार करने के जिसने उसे इसमें दाखिल किया था" (त)। और अधिकांश परवर्ती विद्वानों के अनुसार, नमाज़ के फ़ासिद (अमान्य) होने का भी हुक्म नहीं है।

[तालिका सामग्री] अरबी पाठ: रद-उल-मुहतार में है कि यदि एक अक्षर को दूसरे अक्षर से बदलकर गलती की जाए, और यदि उन दोनों के बीच बिना कठिनाई के अंतर संभव हो जैसे 'साद' (ص) और 'ता' (ط) के बीच, तो सभी का इस पर इत्तेफाक है कि नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी। और यदि अंतर करने में कठिनाई हो, जैसे 'ज़ा' (ظ) और 'ज़ाद' (ض), तो अधिकांश विद्वानों की राय यही है कि आम तौर पर होने वाली कठिनाई (उमूम बलवा) के कारण नमाज़ फ़ासिद नहीं होगी[2]। सारांश। और दुर्रे मुख़्तार में है कि जिन अक्षरों में अंतर करना कठिन हो जैसे 'ज़ाद' और 'ज़ा', तो अधिकांश के अनुसार नमाज़ फ़ासिद नहीं होगी[3]। उर्दू अनुवाद: रद-उल-मुहतार में है: अगर एक हर्फ़ को दूसरे हर्फ़ से बदल कर ख़ता करे तो उन दो के दर्मियान बगैर मशक़्क़त के इम्तियाज़ मुमकिन हो जैसा साद और ता के दर्मियान तो सब का इत्तेफाक है कि नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी। और अगर इम्तियाज़ करने में मशक़्क़त हो मथलन ज़ा और ज़ाद, तो अक्सर उलमा की राय यही है कि उमूम बलवा के पेशे नज़र नमाज़ फ़ासिद न होगी। सारांश। और दुर्रे मुख़्तार में है: मगर जिन हुरूफ में इम्तियाज़ मुश्किल हो जैसे ज़ाद और ज़ा तो अक्सर के नज़दीक नमाज़ फ़ासिद न होगी। (त)

और पहले के इमाम भी मुतलक तौर पर फ़ासिद होने का हुक्म नहीं देते। यह ताज्जुब की बात है कि आज के ज़माने के लोग इन बातों पर बेवजह झगड़ते हैं और एक-दूसरे को काफ़िर करार देते हैं, जबकि वे ईमान के सिद्धांतों और बुनियादी अक़ीदों में पैदा होने वाले नए फ़ितनों और समूहों की परवाह नहीं करते। और लुत्फ यह है कि वे जाहिल जिनसे आसान हर्फ़ भी ठीक से अदा नहीं होते,

'ज़ाद' और 'दवाद' पर कटे मरते हैं। अल्लाह तआला हमें अहले इस्लाम को नेक तौफीक अता फरमाए। हाँ, अगर कोई मुआनद बद-बातिन जानबूझकर अल्लाह के कलाम और अल्लाह की तरफ से उतरी हुई वह्य (प्रकाशना) को बदलने के इरादे से इस हर्फ़ या किसी भी हर्फ़ को बदलेगा, तो वह यकीनन अपने इस बुरे इरादे के सबब कुफ़्र के हुक्म का मुस्तहिक होगा। इसमें ज़ाद और दवाद...

---

1 अल-क़ुरान २/२८६ 2 रद-उल-मुहतार, मतलब मसाइल ज़ल्लत-उल-क़ारी, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र, १/४६६ 3 दुर्रे मुख़्तार, बाब मा युफ़्सिदुस-सलाह आदि, मुज्तबाई दिल्ली, ९१/१ पृष्ठ २७३ / ७३६

فتاوی رضویہ - جلد ششم مسلمانوں پر لازم کہ اُس کا مخرج صحیح سے ادا کرنا سیکھیں اور کوشش کریں کہ ٹھیک ادا ہو اپنی طرف سے نہ ظاد کا قصد کریں نہ دواد کا دونوں محض غلط ہیں اور جب اس نے حسبِ وسع و طاقت جہد کیا اور حرفِ صحیح ادا کرنے کا قصد کیا پھر کچھ نکلے اس پر مواخذہ نہیں "لاَ یُکَلِّفُ اللّٰہُ نَفْسًا إِلاَّ وُسْعَھَا"1۔ (اللہ تعالٰی کسی ذی نفس کو اس کی طاقت سے بڑھ کر مکلف نہیں ٹھہراتا۔ ت) خصوصاً ظاء سے اس حرف کا جدا کرنا تو سخت مشکل ہے پھر ایسی جگہ ان سخت حکموں کی گنجائش نہیں تکفیر ایک امرِ عظیم ہے۔ لا یخرج الانسان من الاسلام الاجود ما ادخلہ فیہ (انسان کو اسلام سے خارج نہیں کرتی مگر جب اس چیز کا انکار کرے جو اسے دین میں داخل کرتی ہے (ت)۔ اور جمہور متاخرین کے نزدیک فسادِ نماز کا بھی حکم نہیں۔

[Table Column 1: Arabic Text] فی ردالمحتار ان کان الخطأ بابدال حرف بحرف فان امکن الفصل بینھما بلا کلفۃ کالصاد مع الطاء فاتفقوا علی انہ مفسد و ان لم یکن الا بمشقۃ کالظاء مع الضاد فاکثرھم علی عدم الفساد لعموم البلوی 2۔ اہ ملخصا۔ وفي الدر المختار الامایشق تمیزہ کالضاد والظاء فاکثرھم لم یفسدھا 3۔ [Table Column 2: Urdu Translation] ردالمحتار میں ہے اگر ایک حرف کو دوسرے حرف سے بدل کر خطا کرے تو ان دو کے درمیان بغیر مشقت کے امتیاز ممکن ہو جیسا صاد اور طاء کے درمیان تو سب کا اتفاق ہے کہ نماز فاسد ہو جائے گی اور اگر امتیاز کرنے میں مشقت ہو مثلاً ظاء اور ضاد، تو اکثر علماء کی رائے یہی ہے عموم بلوی کے پیشِ نظر نماز فاسد نہ ہوگی اھ ملخصا۔ اور در مختار میں ہے مگر جن حروف میں امتیاز مشکل ہو جیسے ضاد اور ظاء تو اکثر کے نزدیک نماز فاسد نہ ہوگی۔ (ت)

اور ائمہ متقدمین بھی علی الاطلاق حکم فساد نہیں دیتے عجب کی بات ہے کہ ابنائے زمانہ ان باتوں میں بے طور جھگڑتے اور ایک دوسرے کی تکفیر کرتے ہیں حالانکہ اصولِ ایمان و امہاتِ عقائد

میں جو فتنے جو طوائف جدیدہ مل رہے ہیں ان سے کام نہیں رکھتے اور لطف یہ ہے کہ وہ جہال جن سے سہل حرف بھی ٹھیک ادا نہیں ہوتے ضاد اور دواد پر کٹے مرتے ہیں۔ اللہ تعالیٰ ہم اہل اسلام کو نیک توفیق عطا فرمائے۔ ہاں اگر کوئی معاند بد باطن بقصد تغییر کلام اللہ و تبدیل وحی منزل من اللہ اس حرف خواہ کسی حرف کو بدلے گا تو وہ بے شک اپنے اس قصدِ خبیث کے سبب حکم کفر کا مستحق ہوگا۔ اس میں ظاد و دواد

---

1 القرآن ۲/۲۸۶ 2 ردالمحتار مطلب مسائل زلۃ القاری مصطفی البابی مصر ۱/۴۶۶ 3 دُرِّ مختار ، باب مفسد الصلوٰۃ الخ ، مجتبائی دہلی، ۹۱/۱ Page 273 of 736

Fatawa Razawiyya Volume Six ... and all six 'sin' are equal. And this is the interpretation of the 'tamad' mentioned in the speech of Imam al-Fadli (may Allah the Almighty have mercy on him). (The interpretation of 'tamad' mentioned in the speech of Imam al-Fadli is this - Translator). And Allah Almighty knows best.

Case Number 468: 16 Jumada al-Ula 1313 AH What do the scholars of religion say in this matter: The Imam was reciting 'Laqad sadaqallahu rasulahu' in the Maghrib prayer. When he read up to 'fil Injeel', a verse from Para 22 became confusing. After that, he recited 'Innama yuridu Allahu liyudhhiba...'. Then when he remembered, he left it and started from the original place and finished the prayer, and did not perform Sajdah al-Sahw (prostration of forgetfulness). In this case, is the prayer valid or not? Explain and be rewarded.

Answer: The prayer is valid and there was no need for Sajdah al-Sahw, provided he did not spend time thinking equal to the duration of performing a pillar (rukn) of prayer. Yes, if he forgot and remained silent for so long while thinking that a pillar of prayer could have been performed, then Sajdah al-Sahw became necessary, as it is in Durr-e-Mukhtar and others. (As it is in Durr-e-Mukhtar etc. - Translator). If he did not do it, the prayer is still valid but deficient; it is mandatory to repeat it. And Allah Almighty knows best.

Case Number 469: 6 Shaban al-Muazzam 1313 AH What do the scholars of religion say in this matter: Zaid says that when the Imam stands in prayer and starts recitation, if at that time he coughs to clear his throat due to an excuse, i.e., recitation being blocked, then the prayer will be valid. Amr says no, in any state, whether with an excuse or without an excuse, if he coughs three times consecutively, the prayer will be void. Who is right in this matter? Explain and be rewarded.

Answer: In the mentioned situation, no defect at all occurred in the prayer. Coughing or clearing the throat when it is due to an excuse or for a correct purpose, such as clearing the throat or alerting the Imam of an error, is never a breaker of prayer according to the correct school of thought.

[Table Content] In Durr al-Mukhtar regarding things that invalidate prayer: (And coughing without an excuse). However, if it is due to an excuse, for example, it happened naturally, then it is not (invalidating) or without (a correct purpose), so if it is for improvement (it is okay). In Durr-e-Mukhtar etc., in the chapter on things that invalidate prayer, it is written: (and coughing without an excuse). Yes, if it is based on

an excuse, for example, if it happened naturally, then it is not invalidating (or) if it is without (a correct purpose).

1 Durr-e-Mukhtar, Chapter on Sajdah al-Sahw, printed by Mujtabai Delhi, 1/102 Page 274 of 736

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी ... और सभी छह 'सीन' बराबर हैं। और इमाम अल-फ़ज़ली (अल्लाह उन पर रहम करे) के कलाम में ज़िक्र किया गया 'तमद' का मतलब यही है। (इमाम अल-फ़ज़ली के कलाम में ज़िक्र 'तमद' का यही मतलब है। - टी) और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 468: 16 जमादी उल-ऊला 1313 हिजरी दीन के विद्वान इस मसले में क्या कहते हैं कि इमाम मग़रिब की नमाज़ में 'लक़द सदक़ल्लाहु रसूलाहु' पढ़ रहा था, जब 'फ़िल इंजील' तक पढ़ लिया, तो पारा 22 की एक आयत में उलझ गया। उसके बाद 'इन्नमा युरीदुल्लाहु लियुज़हिबा' वाली आयत पढ़ी। फिर जब याद आया तो उसे छोड़कर मूल स्थान से शुरू किया और नमाज़ पूरी की, और सजदा-ए-सह्व नहीं किया। इस स्थिति में नमाज़ हुई या नहीं? बयान करें और पुण्य पायें।

जवाब: नमाज़ हो गई और सजदा-ए-सह्व की भी ज़रूरत नहीं थी, बशर्ते कि वह किसी अरकान (नमाज़ का हिस्सा) को अदा करने के बराबर समय तक सोचता न रहा हो। हाँ, अगर वह भूल गया और सोचने में इतनी देर खामोश रहा जिसमें नमाज़ का कोई रुक्न अदा किया जा सकता हो, तो सजदा-ए-सह्व वाजिब हो गया, जैसा कि दुर्रे मुख़्तार वगैरह में है। (जैसा कि दुर्रे मुख़्तार वगैरह में है। - टी) अगर नहीं किया तो नमाज़ तब भी हो गई मगर अधूरी (नाक़िस) रही; उसे दोहराना वाजिब है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 469: 6 शाबान अल-मुअज़्ज़म 1313 हिजरी दीन के विद्वान इस मसले में क्या कहते हैं कि ज़ैद कहता है कि जब इमाम नमाज़ में खड़ा होकर क़िरात (क़ुरआन का पाठ) शुरू करे, अगर उस समय किसी मज़बूरी (यानी आवाज़ रुकने के कारण) गला साफ़ करने के लिए खाँसे, तो नमाज़ जायज़ होगी। अम्र कहता है कि नहीं, चाहे किसी भी स्थिति में हो, मज़बूरी हो या बिना मज़बूरी, अगर लगातार तीन बार खाँसे तो नमाज़ बातिल (अमान्य) हो जाएगी। इस मसले में कौन सही है? बयान करें और पुण्य पायें।

जवाब: ऊपर बताई गई स्थिति में नमाज़ में बिल्कुल कोई ख़लल (बाधा) नहीं आया। खाँसना या खंखारना जबकि किसी मज़बूरी या सही मक़सद के लिए हो, जैसे गला साफ़ करना या इमाम को भूल पर सचेत करना, तो सही मज़हब के अनुसार यह नमाज़ को ख़राब करने वाला बिल्कुल नहीं है।

[तालिका सामग्री] दुर्रे मुख़्तार में नमाज़ तोड़ने वाली चीज़ों के बारे में है: (और बिना मज़बूरी के खाँसना)। लेकिन अगर यह किसी मज़बूरी के कारण हो, जैसे कि स्वाभाविक रूप से ऐसा हुआ, तो यह (नमाज़ को तोड़ने वाला) नहीं है, या (बिना सही मक़सद के हो)। अतः अगर यह बेहतरी के लिए

हो तो (ठीक है)। दुर्रे मुख़्तार वगैरह के नमाज़ के मफ़्सिदात (तोड़ने वाली चीज़ों) के अध्याय में है: (और बिना मज़बूरी के खाँसना)। हाँ, अगर मज़बूरी की बिना पर हो, जैसे कि स्वाभाविक रूप से ऐसा हुआ तो फ़ासिद (अमान्य) नहीं है, या बिना (सही मक़सद के हो)।

1 दुर्रे मुख़्तार, बाब सुजूद-उस-सह्व, मुजतबाई दिल्ली द्वारा प्रकाशित, 1/102 पेज 274 का 736

فتاوی رضویہ جلد ششم و سین سادس سب برابر ہیں و ہذا ھو محمل التمد المذکور فی کلام الامام الفضلی رحمتہ اللہ تعالیٰ علیہ (امام فضلی رحمتہ اللہ تعالیٰ علیہ کے کلام میں مذکور تمد کا محمل یہی ہے ۔ت) واللہ تعالی اعلم

مسئلہ نمبر ۴۶۸: ۱۶ جمادی الاولی ۱۳۱۳ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ امام مغرب میں لقد صدق اللہ رسولہ پڑھ رہا تھا جب فی الانجیل تک پڑھ لیا آیت پارہ ۲۲ متشابہ لگا اس کے بعد یہ آیت انما یرید اللہ لیذہب تک پڑھی پھر جب یاد آیا اسے چھوڑ کر مقام اصل سے شروع کیا اور نماز ختم کی اور سجدہ سہو نہ کیا اس صورت میں نماز ہوئی یا نہیں۔ بینوا توجروا۔

الجواب : نماز ہو گئی اور سجدہ سہو کی بھی حاجت نہ تھی اگر بقدرا دائے رکن سوچتا نہ رہا ہو ، ہاں اگر بھولا اور سوچنے میں اتنی دیر خاموش رہا جس میں کوئی رکن نماز کا ادا ہو سکتا ہے تو سجدہ سہو لازم آیا کما فی الدر المختار وغیر ہا (جیسا کہ دُر مختار وغیرہ میں ہے ۔ت) اگر نہ کیا تو نماز جب بھی ہو گئی مگر ناقص ہوئی پھیرنا واجب ہے واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۴۶۹: ۶ شعبان المعظم ۱۳۱۳ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید کہتا ہے کہ امام جب نماز میں کھڑا ہو کر قرات شروع کرے اگر اس وقت بعذر یعنی قرات بند ہونے کی وجہ گلا صاف کرنے کے لئے کھانسا تو نماز جائز ہو جائے گی۔ عمرو کہتا ہے نہیں کہ نہیں خواہ کسی حالت میں ہو یا عذر یا بلا عذر اگر پے در پے تین مرتبہ کھانسا تو نماز باطل ہو جائے گی، اس مسئلہ میں کون حق پر ہے۔ بینوا توجروا۔

الجواب: صورت مذکورہ میں نماز میں اصلاً کوئی خلل نہ آیا کھانسنا کھنکارنا جبکہ بعذر یا کسی غرض صحیح کے لئے ہو جیسے گلا صاف کرنا یا امام کو سہو پر متنبہ کرنا تو مذہب صحیح میں ہرگز مفسد نماز نہیں۔

[ٹیبل کا مواد] فی الدرالمختار فی المفسدات (والتنحنح بلا عذر) اما به بان نشأ من طبعه فلا (او) بلا (غرض صحیح) فلو لتحسین در مختار وغیرہ کے باب نماز کے مفسدات میں ہے (اور بغیر عذر کے کھانسنا) ہاں اگر عذر کی بنا پر ہو مثلاً طبعاً ایسا ہوا تو فاسد نہیں (یا) بغیر (غرض صحیح کے ہو)

1 دُر مختار باب سجود السہو مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱ / ۱۰۲ Page 274 of 736

Fatawa Razawiyya Volume Six

"His voice, or so that the Imam may be guided, or to inform that he is in prayer, then according to the correct opinion, there is no corruption." - And Allah Almighty knows best. So if he coughed to beautify his voice, or to guide the Imam, or to inform that he is in prayer, then the correct view is that the prayer will not be invalidated. - And Allah Almighty knows best (T).

Issue No. 73: Sent by Mr. Hafiz Maulvi Amirullah Sahib, 23 Sha'ban 1315 AH. In 'Baizawi', 'bi-dhanin' (بضنين) is mentioned in the recitation, and the commentator points out the articulation point (makhraj) of 'Dhad' (ض) and 'Zha' (ظ) from it. Should the two recitations not be made one? Regarding the footnotes or commentaries on this, tell us: which scholar says they are similar in sound despite having different articulation points but being identical in 'Istila' (elevation) and 'Itbaq' (closure)? What is the reality of this case? Can 'Zhuwad' or 'Duwad' be correct just by accepting them as similar in sound? What clear ruling have the jurists given regarding 'mufakhkham' (emphasized) 'Duwad' and 'Zhuwad' and 'Duwad' being liked (mustahab)? Explain and be rewarded. The Answer: It is certain that 'Dhad' (ض) and 'Zha' (ظ) have similar sounds to the extent that distinguishing them is difficult. However, it's not the 'Zha' that common people utter; it's the 'Dhal mufakhkham' (emphasized 'Dhal'). When 'Dhad' is pronounced correctly from its articulation point while observing 'Istila' and 'Itbaq' of the tongue, it will definitely be similar in sound to 'Dhad', so much so that if 'istitalah' (elongation) occurs, it becomes 'Dhad'. Neither 'Zhuwad' nor 'Duwad' is preferred or even permissible; they are simply incorrect. Similarly, 'Duwad' and correct 'Zhuwad' are also not right. All noble jurists give one ruling: if the meaning is corrupted, the prayer is invalidated, such as 'maghtub' (مغطوب) and 'ma'dhub' (معذوب), and if the meaning remains correct, the prayer is valid, such as 'Dhallin' (ظالين) and 'Dwallin' (دوالين), as mentioned in 'Al-Ghunya' and other books. And Allah Almighty knows best.

Issue No. 74: From Cuttack city, Odisha district, Bakhshi Bazar, sent by Sheikh Tahir Muhammad Usman, 25 Ramadan al-Mubarak 1315 AH. What do the scholars of religion and the firm Sharia say on this matter: is the Imamate (leading prayer) of an Honorary Magistrate permissible or not? And is the Imamate of one who does not recite with 'Tarteel' (slow, measured rhythmic tones) permissible or impermissible? Also, let the limit of 'Tarteel' be known. Explain and be rewarded. The Answer: There are three levels of 'Tarteel'; in each higher level, the subsequent level is included and

considered. Level One: That one should recite the Great Quran slowly and deliberately, so that if the listener wishes, they can count every word separately.

1. Durr al-Mukhtar, Chapter on what invalidates Prayer, published by Mujtabai Delhi, 1/89
2. Ghunyat al-Mustamli Sharh Munyat al-Musalli, Section on Errors of the Reciter, published by Suhail Academy Lahore, p. 747 Page 275 of 736

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

"उसकी आवाज़, या ताकि इमाम का मार्गदर्शन हो, या यह सूचित करने के लिए कि वह नमाज़ में है, तो सही राय के अनुसार, कोई बिगाड़ नहीं है।" - और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। तो अगर उसने आवाज़ को संवारने के लिए, या इमाम का मार्गदर्शन करने के लिए, या यह सूचित करने के लिए खाँसा कि वह नमाज़ में है, तो सही यही है कि नमाज़ फ़ासिद (अमान्य) नहीं होगी। - और अल्लाह तआला बेहतर जानता है (त)।

मसाला नंबर ७३: प्रेषित जनाब हाफ़िज़ मौलवी अमीर उल्लाह साहब २३ शाबान १३१५ हिजरी। बैज़ावी में 'बि-ज़नीन' (بضنين) की क़िरात बताई गई है और हाशिया लेखक 'ज़ाद' (ض) और 'ज़ा' (ظ) के मखरज (उच्चारण स्थान) का इससे संकेत देता है। क्या दोनों क़िरातें एक नहीं की जानी चाहिए? इसके बारे में जो हाशिये या शरह (व्याख्या) हों, उनमें से यह बात बताई जाए कि अलग-अलग मखरज होने के बावजूद और इस्तिला और इत्बाक़ में एक होने के कारण कौन-कौन इसे मुश्तब-उल-सौत (समान ध्वनि वाला) कहता है? और इस मामले का क्या हाल है? क्या सिर्फ मुश्तब-उल-सौत मान लेने से 'ज़वाद' या 'दवाद' सही हो सकता है? फ़क़ीहों ने मुफ़क्ख़म (भारी) 'दवाद' और 'ज़वाद' और 'दवाद' को मुस्तहब (पसंदीदा) होने का क्या स्पष्ट हुक्म बताया है? स्पष्ट करें और पुण्य पाएँ। जवाब: 'ज़ाद' (ض) और 'ज़ा' (ظ) का किसी हद तक समान ध्वनि वाला होना निश्चित है, यहाँ तक कि अंतर करना कठिन है। लेकिन यह वह 'ज़ा' नहीं जो आम लोग निकालते हैं, यह 'ज़ाल मुफ़क्ख़म' (भारी 'ज़ाल') है। जब 'ज़ाद' अपने मखरज से सही तरीके से ज़बान के इस्तिला और इत्बाक़ का पालन करते हुए अदा की जाएगी, तो वह ज़रूर ध्वनि में 'ज़ाद' के समान होगी, यहाँ तक कि अगर इस्तिताला (खिंचाव) हो जाए तो 'ज़ाद' बन जाए। न तो 'ज़वाद' मुस्तहसन (अच्छा) है और न ही मुस्तबह, बल्कि सिर्फ़ ग़लत है। इसी तरह 'दवाद' और सही 'ज़वाद' भी नहीं। तमाम मोहतरम फ़क़ीह एक ही हुक्म देते हैं कि अर्थ बिगड़ने की स्थिति में नमाज़ फ़ासिद हो जाती है जैसे 'मग़्तूब' और 'मअज़ूब', और अर्थ सही रहने की स्थिति में नमाज़ सही होती है जैसे 'ज़ालिन' और 'दुआलिन', जैसा कि 'अल-ग़ुनिया' वगैरह में है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसाला नंबर ७४: कटक शहर, उड़ीसा ज़िला, बख्शी बाज़ार से प्रेषित शेख ताहिर मुहम्मद उस्मान, २५ रमज़ान अल-मुबारक १३१५ हिजरी। धर्म के विद्वान और सुदृढ़ शरीयत इस मामले में क्या कहते हैं कि मानद मजिस्ट्रेट (Honorary Magistrate) की इमामत जायज़ है या नहीं? और जो तरतील (लयबद्ध और स्पष्ट पाठ) से न पढ़े, उसकी इमामत जायज़ है या नाजायज़? और तरतील की सीमा भी

मालूम हो। स्पष्ट करें और पुण्य पाएँ। जवाब: तरतील की तीन सीमाएँ(स्तर) हैं, हर उच्च स्तर में उसके बाद वाला स्तर शामिल और ध्यान में रखा गया है। पहला स्तर: यह कि क़ुरान-ए-अज़ीम को रुक-रुक कर और धीरे-धीरे पढ़े ताकि सुनने वाला चाहे तो हर शब्द को अलग-अलग गिन सके।

1. दुर्रे मुख़्तार, बाब मा युफ़्सिदुस सलाह, मुज्तबाई दिल्ली द्वारा प्रकाशित, १/८९
2. ग़ुनियातुल मुस्तमली शरह मुनियतुल मुसल्ली, फ़स्ल फ़ी ज़ल्लतिल क़ारी, सुहैल अकादमी लाहौर द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ ७४७ पेज २७५/७३६

صوتہ اولیھتدی امامہ او الاعلامہ انہ فی الصلاۃ | پس اگر تحسین آواز یا امام کی رہنمائی یا اس اطلاع کے لئے فلا فساد علی الصحیح - واللہ تعالیٰ اعلم | کھانسا کہ وہ نماز میں ہے تو صحیح یہی ہے کہ نماز فاسد نہ ہوگی -واللہ تعالیٰ اعلم (ت)

مسئلہ نمبر ۷۳: مرسلہ جناب حافظ مولوی امیر اللہ صاحب ۲۳ شعبان ۱۳۱۵ھ بیضاوی میں قرات بضنین کو بتایا اور ضاد کا مخرج اور ظاء کا اس سے محشی اشارہ بتاتا ہے قراتین واحد نہ کی جائیں اس کے متعلق جو جو حاشیے یا شرح ہوں ان میں سے یہ بات بتائی جائے کہ کوئی باوجود مخرجین جدا ہونے کے اور استعلا و اطباق میں ایک ہونے کو مشتبہ الصوت کون کون بتاتا ہے اور اس قضیہ کا کیا حال ہے صرف مشتبہ الصوت مان لینے سے ظو ادیا دواد صحیح ہو سکتا ہے فقہا نے دواد مفخم اور ظو ادو دواد مستحبین کا صریح حکم کیا بتایا ہے؟ بینوا توجروا الجواب: ض و ظ قدر مشتبہ الصوت ہونا یقینی ہے یہاں تک کہ تمیز دشوار مگر نہ یہ ظ جو عامہ عوام نکالتے ہیں یہ ذ مفخم جب اپنے مخرج سے صحیح طور پر برعایت استعلاء و اطباق لسان ادا کی جائے گی ضرور مشابہ الصوت بض ہو گی یہاں تک کہ اگر استطالہ واقع ہو ض ہو جائے ذو اد نہ مستحسن نہ مستبہ جن بلکہ محض غلط اسی طرح دواد اور صحیح ظواد بھی نہیں فقہا ئے کرام سب کا ایک حکم دیتے ہیں کہ بحالت فساد معنی نماز فاسد جیسے مغطوب اور معذوب اور بحالت صحت معنی صحیح جیسے ظالین دوالین ۲ کما فی الغنیہ و غیرھا (جیسا کہ غنیہ وغیرہ میں ہے) واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۷۴: از شہر کٹک ضلع اڈیسہ بخشی بازار مرسلہ شیخ طاہر محمد عثمان ۲۵ رمضان المبارک ۱۳۱۵ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و شرع متین اس مسئلہ میں کہ آنزیری مجسٹریٹ کی امامت جائز ہے یا نہیں، اور جو ترتیل سے نہ پڑھے اس کی امامت جائز یا نا جائز اور نیز ترتیل

کی حد معلوم ہو۔ بینوا توجروا۔ الجواب: ترتیل کی تین حدیں ہیں ہر حد اعلیٰ میں اسکے بعد کی حد ماخوذ و ملحوظ ہے۔ حد اول: یہ کہ قرآن عظیم ٹھہر ٹھہر کر باہستگی تلاوت کرے کہ سامع چاہے تو ہر کلمے کو جدا جدا گن سکے

1 در مختار، باب مایفسد الصلوۃ، مطبوعہ مجتبائی دہلی، ۸۹/۱ 2 غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل فی زلۃ القاری مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۷۴۷ Page 275 of 736

Fatawa Razawiyyah - Volume 6

As Allah the Almighty has commanded: "And We have recited it [to you] with a measured recitation."[1] That is, We revealed it bit by bit according to the needs of the servants as they arose. Similarly, this decree of Allah the Almighty: "And [it is] a Qur'an which We have divided [into parts] that you might recite it to the people over a prolonged period. And We have sent it down progressively."[2] (T)

The words should be uttered with 'tafkhim' (fullness/heaviness). The rights of letters regarding their attributes such as 'shiddah' (intensity), 'jahr' (voicing), and similar qualities should be fulfilled. Attention should be paid to 'izhaar' (clarity), 'ikhfa' (concealment), 'tafkhim' (velarization), and 'tarqeeq' (thinness), etc., which are embellishments of recitation. This is 'masnoon' (Sunnah). Neglecting this is 'makruh' (disliked) and undesirable. Greater care for this should be taken in 'Fara'idh' (obligatory prayers) and 'Wajibat' (mandatory duties), then in 'Tarawih', and more so in 'Tarawih' than in absolute 'Nafl' (voluntary prayers). It is stated in 'Jalalayn': "Recite the Quran with deliberation and distinctness in its recitation."[3] (Tartil of the Quran means reciting the Quran slowly and deliberately. T) It is stated in 'Kamalayn': "That is, take your time and recite with composure without haste, such that the listener is able to count its verses and words."[4] (T)

In 'Itqan' by Imam Suyuti, it is quoted from 'Burhan' by Imam Zarkashi: "The perfection of tartil is the 'tafkhim' of words and making the letters distinct, and that one letter is not merged into another. Some have said this is the minimum level of tartil."[5] (T)

In the same source: "Tartil in the recitation of the Quran is Sunnah, as Allah the Almighty..."

Footnotes: 1. Al-Quran 32/25 [sic, likely 25/32] 2. Al-Quran 106/17 [sic, likely 17/106] 3. Tafsir Jalalayn, under the verse 'wa rattil al-Quran...', published by Mujtabai, Delhi, 2/76 4. Kamalayn on the margin of Jalalayn, under the mentioned verse, published by Mujtabai, Delhi, 2/76 5. Al-Itqan fi Ulum al-Quran, Type 35 regarding the etiquette of its recitation, etc., published by Mujtabai, Delhi, 1/106 Page 276 of 736

फ़तावा रज़विया - जिल्द छठी

जैसा कि अल्लाह तआला का इरशाद है: "और हमने उसे थोड़ा-थोड़ा करके सुनाया।"[1] यानि हमने इसे बंदों की ज़रूरत के मुताबिक थोड़ा-थोड़ा नाज़िल फ़रमाया है। इसी तरह अल्लाह तआला का यह फ़रमान है: "हमने क़ुरआन को थोड़ा-थोड़ा करके नाज़िल फ़रमाया ताकि आप लोगों पर ठहर-ठहर कर पढ़ें और हमने इसे धीरे-धीरे (तदरीजन) नाज़िल फ़रमाया।"[2] (त)

अल्फाज़ 'तफ़ख़ीम' (भारी आवाज़) के साथ अदा हों, हुरूफ को उनके सिफ़ात जैसे शिद्दत, जह्र और उनके जैसे अन्य हुक़ूक पूरे दिए जाएँ। इज़हार, इख़फ़ा, तफ़ख़ीम और तन्क़ीक़ वगैरह खूबियों का लिहाज़ रखा जाए। यह मसनून (सुन्नत) है और इसका तर्क मकरूह और नापसंद है। फ़राइज़ और वाजिबात में इसका एहतिमाम तरावीह से ज़्यादा और तरावीह में नफ़्ल-ए-मुतलक़ से ज़्यादा होना चाहिए। जलालैन में है: "क़ुरआन की तिलावत में ठहर-ठहर कर पढ़ें।"[3] (रत्ल-उल-क़ुरआन का अर्थ क़ुरआन की ठहर-ठहर कर तिलावत करना है। त) कमालैन में है: "यानी क़ुरआन मजीद को इस तरह आहिस्ता और ठहर कर पढ़ो कि सुनने वाला उसकी आयात और अल्फ़ाज़ गिन सके।"[4] (त)

इमाम सुयूती की 'इतक़ान' में इमाम ज़रकशी की 'बुरहान' के हवाले से है: "तर्तील की कामिल हालत अल्फ़ाज़ में तफ़ख़ीम (अक्षर को भर कर पढ़ना) और हुरूफ को जुदा-जुदा करके पढ़ना है, एक हर्फ़ को दूसरे हर्फ़ से न मिलाया जाए। कुछ ने कहा कि यह तर्तील का कम दर्जा है।"[5] (त)

उसी में है: "क़ुरआन की क़िरात में तर्तील सुन्नत है जैसा कि अल्लाह तआला ने..."

पाद-टिप्पणियाँ: 1. अल-क़ुरआन 32/25 2. अल-क़ुरआन 106/17 3. तफ़्सीर जलालैन, आयत 'रत्तिल अल-क़ुरआन...' के तहत, मुतब-ए-मुजतबाई, दिल्ली, 2/76 4. कमालैन हाशिए पर जलालैन, उल्लेखित आयत के तहत, मुतब-ए-मुजतबाई, दिल्ली, 2/76 5. अल-इतक़ान फ़ी उलूम अल-क़ुरआन, अध्याय 35 तिलावत के आदाब के बारे में, मुतब-ए-मुजतबाई, दिल्ली, 1/106 पृष्ठ 276 (कुल 736 में से)

فتاوی رضویہ - جلد ششم

کما قال اللہ تعالیٰ "وَرَتَّلْنَاهُ تَرْتِيْلًا"[1] ای انزلناہ نجماً نجماً علی حسب ماتجددت الیہ حاجات العباد و مثلہ قولہ تعالیٰ وَقُرْاٰنًا فَرَقْنٰهُ لِتَقْرَاَهٗ عَلَى النَّاسِ عَلٰى مُكْثٍ وَّ نَزَّلْنٰهُ تَنْزِيْلًا[2]۔ جیسا کہ اللہ تعالیٰ کا ارشاد ہے ورتلناہ ترتیلا یعنی ہم نے اسے بندوں کی ضرورت کے مطابق تھوڑا تھوڑا نازل فرمایا ہے، اسی طرح اللہ تعالیٰ کا یہ فرمان ہے ہم نے قرآن کو تھوڑا تھوڑا کر کے نازل فرمایا تاکہ آپ لوگوں پر پڑھیں ٹھہر ٹھہر کر اور ہم نے اسے تدریجاً نازل فرمایا۔ (ت)

الفاظ بہ تفخیم ادا ہوں حروف کو ان کی صفات شدت و جہر و امثالہا کے حقوق پورے دئے جائیں اظہار و اخفاء و تفخیم و ترقیق وغیرہا محسنات کا لحاظ رکھا جائے یہ مسنون ہے اور اسکا ترک مکروہ و ناپسند اور اسکا اہتمام فرائض و واجبات میں تراویح اور تراویح میں نفل مطلق سے زیادہ جلالین میں ہے: رتل القران تثبت فی تلاوتہ[3] (رتل القرآن کا معنی قرآن کی ٹھہر ٹھہر کر تلاوت کرنا ہے۔ ت) کمالین میں ہے: ای تأن واقرأ علی تؤدۃ من غیر تعجل بحیث یتمکن السامع من عد آیاتہ وکلماتہ[4]۔ یعنی قرآن مجید کو اس طرح آہستہ اور ٹھہر کر پڑھو کہ سننے والا اس کی آیات اور الفاظ گن سکے۔ (ت)

اتقان امام سیوطی میں برہان امام زرکشی سے ہے: کمال الترتیل تفخیم الالفاظ والابانۃ عن حروفہ وان لایدغم حرف في حرف وقیل ھذا اقلہ[5]۔ کمال ترتیل یہ ہے الفاظ میں تفخیم (حرف کو پُر کر کے پڑھنا) اور حروف کو جدا جدا کر کے پڑھا جائے، ایک حرف کو دوسرے حرف سے نہ ملایا جائے۔ بعض نے کہا یہ ترتیل کا کم درجہ ہے۔ (ت)

اسی میں ہے: یسن الترتیل فی قراۃ القران قال اللہ تعالیٰ قرات قرآن میں ترتیل سنت ہے جیسا کہ اللہ تعالیٰ کا

---

1 القرآن ۳۲/۲۵ 2 القرآن ۱۰۶/۱۷ 3 تفسیر جلالین زیر آیتہ ورتل القرآن الخ مطبوعہ مجتبائی دہلی ۷۶/۲ 4 کمالین علی حاشیہ جلالین زیر آیتہ مذکورہ مطبوعہ مجتبائی دہلی ۷۶/۲ 5 الاتقان فی علوم القرآن، النوع الخامس والثلثون فی آداب تلاوتہ الخ مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱۰۶/۱ Page 276 of 736

Fatawa Ridawiyyah - Volume Six

'And recite the Quran with measured recitation.' [Quran 73:4]. Abu Dawood and others narrated from Umm Salama (may Allah be pleased with her) that she described the recitation of the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) as a clear recitation, letter by letter. (1)

Translation: It is commanded to recite the Quran with proper Tarteel (measured recitation). Abu Dawood has narrated from Umm Salama (may Allah be pleased with her) regarding the quality of the Holy Prophet's (peace and blessings of Allah be upon him) recitation, that he would recite in such a way that the recitation was clear and each letter was distinctly understood, etc. (T)

It is stated in the Hadith: 'Do not scatter it like the scattering of dry dates, and do not rush through it like the rushing of poetry. Stop at its wonders and move your hearts with it. Let not the concern of any of you be the end of the Surah.' (2)

Translation: That is, do not shake out the Quran like dry dates (just as dry dates fall off quickly when branches are shaken) and do not cut through it like grass as poetry is recited. Continue to pause at the wonders and move your hearts through reflection upon it, and it should not be that once you start a Surah, your only concern is to finish it quickly.

This was narrated by Imam Abu Bakr al-Ajurri in 'Kitab Hamlat al-Quran'. Through his route, al-Baghawi in 'al-Ma'alim' narrated it from Ibn Mas'ud as his statement. Al-Daylami narrated the same from Ibn Abbas (may Allah be pleased with him). Al-Askari in 'al-Mawa'iz' narrated from the Commander of the Faithful Ali (may Allah honor his face) that the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) was asked about Allah's command 'And recite the Quran with measured recitation', so he explained it with the aforementioned words. (T)

Footnotes: 1. Al-Itqan fi Ulum al-Quran, Type 35, regarding the Etiquettes of Recitation, etc., Published by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/106. 2. Al-Itqan fi Ulum al-Quran, referencing al-Ajurri in Hamlat al-Quran, regarding the Etiquettes of Recitation, etc., Published by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/106.

फ़तावा रिज़विया - छठा खंड

'और क़ुरआन को ठहर-ठहर कर (तरतील के साथ) पढ़ो।' [क़ुरआन 73:4]। अबू दाऊद और अन्य लोगों ने हज़रत उम्मे सलमा (रज़ियल्लाहु अन्हा) से रिवायत की है कि उन्होंने नबी अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के क़िरात (पाठ) का वर्णन एक स्पष्ट पाठ के रूप में किया, अक्षर-दर-अक्षर। (1)

अनुवाद: निर्देश है कि क़ुरआन को अच्छी तरतील के साथ पढ़ो, और अबू दाऊद ने हज़रत उम्मे सलमा (रज़ियल्लाहु अन्हा) के हवाले से नबी अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की क़िरात की सिफ़त (विशेषता) के बारे में यूँ बयान किया है कि आप इस तरह तिलावत फ़रमाते कि क़िरात मुफ़स्सर (स्पष्ट) होती और एक-एक हर्फ़ जुदा-जुदा मालूम होता था इत्यादि। (त)

हदीस में है: 'इसे सूखे खजूरों के बिखरने की तरह मत बिखेरो और न ही इसे कविता की तरह जल्दी-जल्दी पढ़ो। इसके चमत्कारों पर रुको और इसके माध्यम से अपने दिलों को हिलाओ। तुम में से किसी की चिंता सूरा का अंत नहीं होनी चाहिए।' (2)

अनुवाद: यानी क़ुरआन को सूखे छुआरे की तरह न झाड़ो (जिस तरह डालियाँ हिलाने से खुश्क खजूरें जल्द-जल्द झड़ पड़ती हैं और शेर (कविता) की तरह घास न काटो। अजूबों (चमत्कारों) के पास ठहरते जाओ और अपने दिलों को इससे तदब्बुर (चिंतन) से जुंबिश (हलचल) दो और यह न हो कि सूरत शुरू की तो अब ध्यान इसी में लगा है कहीं जल्द से ख़त्म करें।

इसे इमाम अबूबक्र आजरी ने 'किताब हमलातुल क़ुरआन' में नक़ल किया है, और इमाम बग़वी ने मआलिम में इसे हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसूद का क़ौल और दैलमी ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया। अस्करी ने अल-मवाइज़ में हज़रत अमीरुल मोमिनीन अली (करमल्लाहु तआला वज्हहुल करीम) के हवाले से बयान किया कि नबी अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से अल्लाह तआला के इरशाद-ए-गिरामी 'व रत्तिलिल क़ुरआना तरतीला' के बारे में पूछा गया तो आप ने मज़कूरा (उपरोक्त) शब्दों में तशरीह (व्याख्या) फ़रमाई। (त)

फ़ुटनोट्स: 1. अल-इतक़ान फ़ी उलूम अल-क़ुरआन, प्रकार 35, तिलावत के आदाब आदि, मुस्तफ़ा अल-बाबी प्रेस, मिस्र 1/106। 2. अल-इतक़ान फ़ी उलूम अल-क़ुरआन, अल-आजरी के हवाले से हमलातुल क़ुरआन में, तिलावत के आदाब आदि, मुस्तफ़ा अल-बाबी प्रेस, मिस्र 1/106।

وَرَتِّلِ الْقُرْآنَ تَرْتِیلًا ن۱ وروی ابو داؤد وغیرہ عن ام سلمہ رضی اللہ تعالٰی عنہا نعتت قرأۃ النبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم قرأۃ مفسرۃ حرفاً حرفاً ۱-

ارشاد ہے قرآن کو خوب ترتیل کے ساتھ پڑھو، اور ابو داؤد نے حضرت ام سلمہ رضی اللہ تعالٰی عنہا کے حوالے سے نبی اکرم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کی قراءۃ کی صفت کے بارے میں یوں بیان کیا ہے کہ آپ اس طرح تلاوت فرماتے کہ قرأت مفسر ہوتی اور ایک ایک حرف جدا جدا معلوم ہوتا تھا الخ (ت)

حدیث میں ہے: لا تنثروہ نثر الدقل ولا تھذوہ ھذا الشعر قفوا عند عجائبہ وحرکوہ بہ القلوب ولا یکون ھم احدکم آخر السورۃ ۲-

یعنی قرآن کو سوکھے چھوہاروں کی طرح نہ جھاڑو (جس طرح ڈالیاں ہلانے سے خشک کھجوریں جلد جلد جھڑ پڑتی ہیں اور شعر کی طرح گھاس نہ کاٹو، عجائب کے پاس ٹھہرتے جاؤ اور اپنے دلوں کو اس سے تدبر سے جنبش دو اور یہ نہ ہو کہ سورت شروع کی تو اب دھیان اسی میں لگا ہے کہیں جلد سے ختم کریں۔

رواہ ابو بکر الآجری في کتاب حملہ القرآن وعن طریقہ البغوی في المعالم عن ابن مسعود رضی اللہ تعالٰی عنہ من قولہ والدیلمی مثلہ عن ابن عباس رضی اللہ تعالٰی عنہ والعسکری في المواعظ من حدیث امیر المؤمنین علی کرم اللہ تعالٰی وجھہ انہ سئل النبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم عن قولہ وَرَتِّلِ الْقُرْآنَ تَرْتِیلًا ن۱ قال فذکرہ -

اسے امام ابوبکر آجری نے "کتاب حملۃ القرآن" میں نقل کیا ہے، اور امام بغوی نے معالم میں اسے حضرت عبداللہ بن مسعود کا قول اور دیلمی نے حضرت عبداللہ بن عباس رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا عسکری نے المواعظ میں حضرت امیر المؤمنین علی کرم اللہ تعالیٰ وجہہ الکریم کے حوالے سے بیان کیا کہ نبی اکرم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم سے اللہ تعالیٰ کے ارشاد گرامی ورتل القرآن ترتیلا کے بارے میں پوچھا گیا تو آپ نے مذکورہ الفاظ میں تشریح فرمائی (ت)

حواشی: 1 الاتقان فی علوم القرآن النوع الخامس والثلاثون فی آداب تلاوتہ الخ مطبوعہ مصطفیٰ البابی مصر ۱۰۶/۱ 2 الاتقان فی علوم القرآن بحوالہ الاجری في حملہ القرآن فی آداب تلاوتہ الخ مطبوعہ مصطفیٰ البابی مصر ۱۰۶/۱

Fatawa Razawiya Volume 6 In Durr al-Mukhtar, it is stated: "Recite in the obligatory (fard) prayers with tartil (slowly and clearly), letter by letter; in the Tarawih prayer, in between; and in the nightly voluntary (nafl) prayers, one may speed up, provided it is recited in a manner that is understood." In the obligatory prayer, recite in such a way that each separate letter is understood; in Tarawih, in a moderate manner; and in the nightly voluntary prayers, one can read as fast as it can be understood. (T)1 In its description of Tarawih, it is stated: "And one should avoid rapid, indistinct recitation (hadramah)." (And avoid rapid recitation. T)2 Second: The requirements of madd (prolongation), waqf (pausing), and wasl (joining) must be fulfilled at their respective places. Care should be paid to the standing posture. For the aforementioned letters preceded by nun or meem, no nasalization (ghunnah) should occur after them. "Innan Kunnan" should not be read as "Iwan Kun" or "Attan Kattan". Bā and Jīm with sukūn followed by "ta" should be pronounced strongly so they do not sound like "pa" or "cha", whereas in haste "abtar" and "tajtanibu" are read as "aptar" and "tajtapu". The kasra (i-vowel) of the mutbaqa letters should not incline towards dhamma (u-vowel). Where there is a combination of Sād and Tā, such as in "Sirāt" and "Qāti'ah", for example in "yastatī'ūna" or "lā tuti'", the letter tā (ت) is often pronounced similarly to Tā (ط) by the heedless. In fact, some produce a sound similar to Tā (ط) in "utuvvun" as well, due to the tafkhīm (heavy pronunciation) of the 'ayn and the dhamma on the tā. In short, no letter or vowel movement should misplacedly take on the character of another, no letter should be omitted, no foreign sound should be introduced, nor should a limited sound be extended, nor a long one shortened. Among such foreign additions is the 'alif' that some ignorant people insert in "wastabaqatā", "da'awallāh", "wa qāla alhamdulillāh", or "dhāqā ash-shajarah" based on the analogy of "kultā al-jannatayn" or "qīla udkhulun-nār", whereas this is purely corrupt and a void addition. Madd Muttasil (connected prolongation) is obligatory (wajib) by consensus. Omitting Madd Munfassil (detached prolongation) is permissible, hence its name was kept as 'Madd Jā'iz'. Where a 'madda' letter is followed by a necessary sukūn (sukūn lāzim), such as in "dāllīn" or "alif-lām-mīm", there too prolongation is obligatory by consensus. Where there is an incidental sukūn (sukūn 'ārid), such as in "al-ālamīn", "ar-rahīm", "al-ibād", "yūqinūn" in the state of waqf, or "qāla allahumma" in the state of idghām (assimilation), both prolongation (madd) and shortening (qasr) are permissible. This level of tartil is fard and wajib, and omitting it is sinful, although it does not invalidate the obligatory prayers unless the omission is of a nature that corrupts the prayer. It is stated in Madārik at-Tanzīl: "And recite the Qur'an with tartil." Meaning: Recite it slowly and deliberately. This is its

meaning. 1. Durr al-Mukhtar, Book of Al-Ayah, Chapter on Imam's Loud Recitation, printed by Majtabai Press Delhi, 1/80. 2. Durr al-Mukhtar, Book of Al-Witr and An-Nawafil, printed by Majtabai Press Delhi, 1/99. Page 278 of 736

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी दुर्रे मुख़्तार में है: युक़रउ फ़िल-फ़र्ज़ि बित-तरतीलि हर्फ़न हर्फ़न व फ़ित-तरावही बैन बैन व फ़िन-नफ़्लि लैलन लहू अन युसरिअ बअदा अन युक़रअ कमा युफ़्हमु। फ़र्ज़ नमाज़ में इस तरह तिलावत करे कि हर अक्षर अलग-अलग समझ आए, तरावीह में मध्यम तरीके से और रात के नफ़ल में इतनी तेज़ पढ़ सकता है जिसे वह समझ सके। (त)1 उस के तरावीह के बयान में है: व युज्तनबु हज़्मतुल-क़िरात। (और जल्दी-जल्दी क़िरात करने से परहेज़ करे। त)2 दूसरा: मद (खींचना), वक़्फ़ (रुकना) और वस्ल (जोड़ना) की ज़रूरतों को उनके सही स्थानों पर अदा किया जाना चाहिए। खड़े रहने की स्थिति का ध्यान रखना ज़रूरी है। जिन अक्षरों से पहले 'नुन' या 'मीम' हो, उनके बाद 'गुन्ना' (नाक से आवाज़) न निकले। 'इन्ना कुन्ना' को 'इवान कुन' या 'अत्तां कत्तां' न पढ़ा जाए। 'बा' और 'जीम' साकिन के बाद अगर 'त' हो, तो उन्हें मज़बूती से अदा किया जाए ताकि वे 'प' या 'च' की आवाज़ न दें, जैसा कि जल्दीबाज़ी में 'अब्तर' और 'तज्तनिबू' को 'अप्तर' और 'तज्तपू' पढ़ दिया जाता है। मुतबक़ा अक्षरों का ज़ेर (कसरह), पेश (ज़म्मा) की तरफ झुका हुआ न हो। जहाँ 'साद् (ص) और 'त' (ط) का मेल हो जैसे 'सिरात' और 'क़ातिआ' में, उदाहरण के तौर पर "यस्ततीऊन" या "ला तुतिअ" में, बेख़याली करने वालों से अक्षर 'त' (ت) भी 'त' (ط) के समान अदा होता है। यहाँ तक कि कुछ लोग "उतुव्विन" में भी 'ऐन' की भारी आवाज़ और 'त' पर पेश होने के कारण 'त' की आवाज़ 'त' (ط) के समान पैदा हो जाती है। संक्षेप में, कोई भी अक्षर या हरकत बेमौक़ा दूसरे का अंदाज़ न ले। न कोई अक्षर छूटे, न कोई बाहरी आवाज़ पैदा हो, न किसी महदूद को मद्द के साथ पढ़ा जाए और न ही किसी मद्द वाले को महदूद किया जाए। बाहरी आवाज़ जोड़ने का उदाहरण वह 'अलिफ़' है जिसे कुछ अज्ञानी लोग "वस्तबक़ता", "दअवल्लाह", "व क़ाला अल्हम्दुलिल्लाह" या "ज़ाक़ा अश-शजरह" के आधार पर "कुलता अल-जन्नतैन" या "क़ीला उदखुलुन-नार" में निकाल देते हैं, जबकि यह सरासर फ़ासिद (ग़लत) और बातिल वृद्धि है। मद मुत्तसिल वाजिब और इज़्माई (सर्वसम्मत) है। मद मुनफ़सिल को छोड़ना जायज़ है, इसीलिए इसका नाम 'मद जायज़' रखा गया है। जहाँ हर्फ़ए-मद्दा के बाद सुकूँए-लाज़िम हो जैसे "दाल्लीन", "अलिफ़ लाम मीम", वहाँ भी आम सहमति से मद वाजिब है। जहाँ सुकूँए-आरिज़ हो जैसे "अल-आलमीन", "अर-रहीम", "अल-इबाद", "युक़िनून" वक़्फ़ की स्थिति में, या "क़ाला अल्लाहुम्मा" इद्ग़ाम की स्थिति में, वहाँ मद और क़स्र दोनों जायज़ हैं। इतनी तरतील फ़र्ज़ और वाजिब है और इसे छोड़ना गुनाह है, लेकिन फ़र्ज़ नमाज़ों से बाहर इसे छोड़ना नमाज़ को बिगाड़ने वाला नहीं होता। मदारिक-अत-तन्ज़ील में है: व रत्तिलिल-क़ुरआना तरतीला। ऐ क़रअ अला तूदा। कुरान को धीरे-धीरे ठहर कर पढ़ो, इसका अर्थ यह है। 1 दुर्रे मुख़्तार,

बाबुल-आयत, फ़स्ल व युजसरुल इमाम, मुतबूआ मतबअ मुज्तबाई दिल्ली, 80/1 2 दुर्रे मुख़्तार, बाबुल-वित्र वन-नवाफ़िल, मुतबूआ मुज्तबाई दिल्ली, 99/1 पेज 278 / 736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم دُرِّ مختار میں ہے: یقرأ في الفرض بالترتیل حرفاً حرفاً وفي التراویح بین بین وفي النفل لیلا له ان یسرع بعد ان یقرأ کما یفهم۔ فرض نماز میں اس طرح تلاوت کرے کہ جدا جدا ہر حرف سمجھ آئے، تراویح میں متوسط طریقے پر اور رات کے نوافل میں اتنی تیز پڑھ سکتا ہے جسے وہ سمجھ سکے۔ (ت)1 اُس کے بیان تراویح میں ہے: ویجتنب هذرمة القرآة۔ (اور جلدی جلدی قرآت سے اجتناب کرے۔ت)2 دوم : مد و وقف و وصل کے ضروریات اپنے اپنے مواقع پر ادا ہوں کھڑے کھڑے کا لحاظ ہے حروف مذکورہ جن کے قبل نون یا میم ہو ان کے بعد غنہ نہ نکلے اناً کُنّاً کوان کن یا اتاں کتاں نہ پڑھا جائے باوجیم ساکنین جن کے بعد "ت" ہو بشدت ادا کئے جائیں کہ پ اور چ کی آواز نہ دیں جہاں جلدی میں ابتر اور تجتنبوا کو اپتر اور تجتپوا پڑھتے ہیں حروف مطبقہ کا کسرہ ضمہ کی طرف مائل نہ ہونے پائے۔ جہاں جب صراط وقاطعہ میں ص وط کے اجتماع میں مثلاً "یستطیعون" "لا تطع" بے خیالی کرنے والوں سے حرف تا بھی مشابہ طاء ادا ہوتا ہے بلکہ بعض سے "عتو" میں بھی بوجہ تفخیم عین وضمہ تا آواز مشابہ طا پیدا ہوتی ہے بالجملہ کوئی حرف و حرکت بے محل دوسرے کی شانِ اخذ نہ کرے نہ کوئی حرف چھوٹ جائے نہ کوئی اجنبی پیدا ہو نہ محدود و مقصود ہو نہ ممدود اسی زیادتِ اجنبی کے قبیل سے ہے وہ الف جو بعض جہال "واستبقات" "دعوا الله" "وقال الحمدلله" "ذاقا الشجرة" کے قیاس پر "کلتا الجنتین" "قیل ادخلو النار" میں نکالتے ہیں حالانکہ یہ محض فاسد اور زیادت باطل وکاسد وواجب واجماعی مد متصل ہے منفصل کا ترک جائز و لہٰذا اس کا نام ہی مد جائز رکھا گیا اور جس حرف مدہ کے بعد سکون لازم ہو جیسے ضآلّین ، الٓم وہاں بھی مد بالا جماع واجب اور جس کے بعد سکون عارض ہو جیسے العالمین ، الرحیم ، العباد ، یوقنون بحالت وقف یا قآل اللّٰھُمَّ بحالت ادغام وہاں مد و قصر دونوں جائز، اس قدر ترتیل فرض و واجب ہے اور اس کا ترک گنہگار، مگر فرائض نماز سے نہیں ترک مفسدِ

صلاۃ ہو۔ مدارک التنزیل میں ہے : وَ رَتِّلِ الْقُرْاٰنَ تَرْتِیْلًاۚ ای قرأ علی تؤدۃ قرآن کو آہستہ آہستہ ٹھہر کر پڑھو، اس کا معنی یہ ہے۔ 1 در مختار باب الاية فصل ویجسر الامام مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ، ۱/۸۰ 2 در مختار باب الوتر والنوافل مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱/۹۹ Page 278 of 736

Fatawa Ridawiyya, Volume Six

- (Arabic): "With clarification of letters, observance of pauses, and full pronunciation of vowels. 'Tartila' (reciting in slow, rhythmic tones) is an emphasis on the obligation of the command, and it is indispensable for the reciter." (Urdu): Reciting with composure, keeping letters distinct, observing pauses, and taking special care in the pronunciation of all vowels. The word "Tartila" emphasizes this matter, indicating that it is absolutely essential for the reciter. (T)

It is stated in Radd al-Muhtar: - (Arabic): "One should lengthen the shortest prolongation (madd) mentioned by the reciters; otherwise, it is prohibited for violating the 'Tartil' commanded by Sharia." (Urdu): It should be read by lengthening it slightly; this is the opinion of the reciters. Otherwise, it would be a violation of the commanded Tartil, and this is sharia-wise forbidden. (T)

Sayyiduna Abdullah bin Mas'ood (may Allah be pleased with him) was teaching the Great Quran to a person. That person recited "Innamas sadaqatu lil-fuqara" without prolongation (madd). He said: "The Messenger of Allah (may Allah's peace and blessings be upon him) did not teach me like this." The person asked, "How did he teach you?" He replied: "Innamas sadaqatu lil-fuqara'a" (with prolongation). He demonstrated it with madd. Reported by Sa'id bin Mansur in his Sunan and al-Tabarani in al-Mu'jam al-Kabir with a sound chain of narration. (Reported by Sa'id bin Mansur in his Sunan and Al-Tabarani in Al-Mu'jam al-Kabir with a sahih chain. -T) It is stated in 'al-Itqan':

- (Arabic): "All reciters have agreed upon the two types of prolongation: 'Madd Muttasil' and that which is followed by a necessary sukoon (Madd Lazim), even if they differed in their measures. They differed in the other two types, which are 'Madd Munfasil' and that which is followed by an incidental sukoon (Madd 'Arid), and in shortening them (Qasr)." (Urdu): All reciters agree on both types of madd: 'Madd Muttasil' and 'Sukun Lazim', although they have differed in their duration. In the last two types of madd, namely 'Madd Munfasil' and 'Sukun 'Arid', and in shortening them, there is also a difference of opinion. (T)

1- Tafsir Madarik al-Tanzil, known as Tafsir of Surah al-Muzzammil, under the verse 'Wa Rattil al-Qur'an', Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, 4/303. 2- Radd al-Muhtar, Chapter

on Recitation, Mustafa al-Babi Press, 1/400. 3- Al-Itqan fi Ulum al-Qur'an, Type 32, etc., 1/96. 4- Al-Itqan fi Ulum al-Qur'an, citing Sunan Sa'id bin Mansur, 1/97.

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

- (अरबी): "अक्षरों के स्पष्टीकरण, विरामों (वक़्फ़) के पालन और स्वरों (हरकात) के पूर्ण उच्चारण के साथ। 'तरतीला' (लयबद्ध पाठ) इस आदेश की अनिवार्यता पर ज़ोर देता है और यह पाठक के लिए अपरिहार्य है।" (उर्दू): इत्मीनान के साथ अक्षरों को अलग-अलग पढ़ना, विराम (वक़्फ़) की रक्षा करना और सभी स्वरों की अदायगी का विशेष ध्यान रखना। "तरतीला" शब्द इस मसले में ताकीद (ज़ोर) पैदा कर रहा है कि यह बात तिलावत करने वाले के लिए अत्यंत आवश्यक है। (त)

रद अल-मुह्तार में है: - (अरबी): "पाठकों (क़ुर्रा) द्वारा बताए गए सबसे छोटे 'मद्द' (दीर्घ स्वर) को खींचना चाहिए; अन्यथा, शरीयत द्वारा आदेशित 'तरतील' का उल्लंघन करने के कारण यह हराम है।" (उर्दू): इसे थोड़ा लंबा करके पढ़ा जाए, क़ुर्रा का यही कहना है अन्यथा आदेशित तरतील का उल्लंघन होगा और यह शरीयत की दृष्टि से हराम है। (त)

सैयदुना अब्दुल्लाह बिन मसूद (रज़ियल्लाहु अन्हु) एक व्यक्ति को क़ुरान-ए-अज़ीम पढ़ा रहे थे। उस व्यक्ति ने "इन्नमस सदकातु लिल-फ़ुक़रा" को बिना 'मद्द' (खींचे) पढ़ा। उन्होंने फ़रमाया: "रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने मुझे इस तरह नहीं पढ़ाया।" उसने पूछा: "आपको कैसे पढ़ाया?" फ़रमाया: "इन्नमस सदकातु लिल-फ़ुक़रा-आ" (मद्द के साथ)। उन्होंने मद्द के साथ पढ़कर बताया। इसे सईद बिन मंसूर ने अपनी सुनन में और तबरानी ने अल-मुअजम अल-कबीर में सही सनद के साथ रिवायत किया है। 'अल-इतक़ान' में है:

- (अरबी): "सभी पाठकों (क़ुर्रा) ने दो प्रकार के'मद्द' पर सहमति व्यक्त की है: 'मद्द मुत्तसिल' और वह जिसके बाद आवश्यक सुकूँ(मद्द लाज़िम) हो, भले ही वे उनकी मात्रा (अवधि) में भिन्न हों। उन्होंने अन्य दो प्रकारों में मतभेद किया है, जो 'मद्द मुनफ़सिल' और वह है जिसके बाद आकस्मिक सुकूँ(मद्द आरिज़) हो, और उन्हें छोटा करने (क़स्र) में भी।" (उर्दू): तमाम क़ुर्रा 'मद्द मुत्तसिल' की दोनों क़िस्मों 'मद्द मुत्तसिल' और 'साकिन लाज़िम' पर सहमत हैं, हालांकि उनकी मात्रा में उन्होंने मतभेद किया है। मद्द की अंतिम दो प्रकारों 'मद्द मुनफ़सिल' और 'साकिन आरिज़' में और उनके क़स्र (छोटा करने) में भी मतभेद है। (त)

1- तफ़्सीर मदारिक अल-तंज़ील, सूरह मुज़म्मिल की आयत 'व रत्तिल अल-क़ुरान' के अंतर्गत, दार अल-किताब अल-अरबी, बेरुत, 4/303। 2- रद अल-मुह्तार, पाठ का अध्याय, मुस्तफ़ा अल-बाबी प्रेस, 1/400। 3- अल-इतक़ान फ़ी उलूम अल-क़ुरान, प्रकार 32 आदि, 1/96। 4- अल-इतक़ान फ़ी उलूम अल-क़ुरान, सुनन सईद बिन मंसूर के हवाले से, 1/97।

فتاوٰی رضویہ ، جلد ششم

بتبیین الحرف و حفظ الوقوف واشباع الحرکات ترتیلا ھو تأکید في ایجاب الامر بہ وانہ لا بد منہ للقاری ۱؎ | کہ اطمینان کے ساتھ حروف جدا جدا، وقف کی حفاظت اور تمام حرکات کی ادائیگی کا خاص خیال رکھنا "ترتیلا" اس مسئلہ میں تاکید پیدا کر رہا ہے کہ یہ بات تلاوت کرنے والے کے لئے نہایت ہی ضروری ہے۔ (ت)

رد المحتار میں ہے :

یمد اقل مد قال بہ القراء والا حرم لترك الترتیل المامور بہ شرعاً ۲؎ | اسے تھوڑا لمبا کر کے پڑھا جائے قراء کا یہی قول ہے ورنہ مامور بہ ترتیل کی خلاف ورزی ہوگی اور یہ شرعاً حرام ہے ط (ت)

سیدنا عبد اللہ بن مسعود رضی اللہ تعالٰی عنہ ایک شخص کو قرآن عظیم پڑھا رہے تھے اس نے انما الصدقات للفقراء کو بغیر مد کے پڑھا، فرمایا: ما ھکذا اقرأنیھا رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم (مجھے رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے یوں نہ پڑھایا) عرض کی : آپ کو کیا پڑھایا؟ فرمایا : اِنَّمَا الصَّدَقٰتُ لِلْفُقَرَاء ۳؎ مد کے ساتھ ادا کر کے بتایا رواہ سعید بن منصور فی سننہ و الطبرانی فی الکبیر بسند صحیح (اسے سعید بن منصور نے اپنی سنن اور طبرانی نے المعجم الکبیر میں صحیح سند کے ساتھ روایت کیا ہے۔ ت) اتقان میں ہے:

قد اجمع القراء علی مد نوعی المتصل و ذي الساکن اللازم و ان اختلفوا ف مقدارہ واختلفوا في النوعین الاخریین و ھما المنفصل و ذو الساکن العارض و في قصرھما ۴؎ | تمام قراء مد متصل کی دونوں انواع مد متصل اور ساکن لازم پر متفق ہیں اگرچہ ان کی مقدار میں انھوں نے اختلاف کیا ہے مد

کی آخری دو انواع میں اور ومد منفصل اور ساکن عارض میں اور ان دونوں کی قصر میں بھی اختلاف ہے۔ (ت)

1 تفسیر مدارک التنزیل المعروف بتفسیر سورۃ مزمل زیر آیت ورتل القرآن الخ دارالکتاب العربیہ بیروت ، ۳۰۳/۴ 2 ردالمحتار فصل فی القراءۃ مطبوعہ مصطفیٰ البابی، ۴۰۰/۱ 3 الاتقان فی علوم القرآن النوع الثانی والثلاثون الخ ۱/ ۹۶ 4 الاتقان فی علوم القرآن بحوالہ سنن سعید بن سعید ابن منصور ۱/ ۹۷

Fatawa Rizvia | Volume 6 It is stated in Hindiya: If a person stops at a place where it is not appropriate to stop (waqf) or starts from a place where it is not appropriate to start (ibtida), then if it does not change the meaning severely—for example, if a reader recites "Indeed, those who believe and do righteous deeds" (Inna-alladhina amanu wa 'amilu as-salihat) and stops, then starts with "those are the best of creatures" (ula'ika hum khayru al-bariyyah)—there is consensus among our scholars that the prayer is not invalidated. This is stated in al-Muhit. Similarly, if someone connects (wasl) in a place not meant for connecting, such as not stopping at Allah's words "companions of the fire" (ashab an-nar) but connecting it with "those who carry the Throne" (alladhina yahmiluna al-'arsh), the prayer is not invalidated, but it is disliked (qabih). This is stated in al-Khulasa. If the meaning is severely changed—for example, if someone recites "I bear witness that Allah—indeed He—there is no deity" (ashhadu Allahu annahu la ilaha) and stops, then says "except Him" (illa huwa)—the prayer is not invalidated according to most of our scholars. According to some, the prayer becomes invalid, but the fatwa is that the prayer is not invalidated in any case. This is stated in al-Muhit. (T) A person who goes against this type of measured recitation should not be made an imam, though the prayer will be valid albeit with dislike. It is stated in 'Alamgiri: "He who stops at places not meant for stopping and does not stop at the proper stopping places, it is not appropriate for him to lead the prayer. Similarly, someone who clears his throat frequently while reciting [should not lead]." (T) 1 Fatawa Hindiyya, Chapter Five on the Mistakes of the Reciter, printed by Noorani Kutub Khana Peshawar 1/81 2 Fatawa Hindiyya, Chapter Three on Describing who is Fit to be an Imam for Others, printed by Noorani Kutub Khana Peshawar 1/86 Page 280 of 736

फ़तावा रज़विया | खंड 6 हिन्दिया में उल्लेख है: यदि कोई व्यक्ति ऐसी जगह रुकता है जहाँ रुकना (वक़्फ़) उचित नहीं है या ऐसी जगह से शुरू करता है जहाँ से शुरू (इब्तिदा) करना उचित नहीं है, तो यदि इससे अर्थ में कोई गंभीर परिवर्तन नहीं होता—उदाहरण के लिए, यदि कोई पढ़ने वाला "इन्ना-ल्लज़ीना आमनू व 'अमिलुस-सालिहात" (निस्संदेह, जो लोग ईमान लाए और जिन्होंने अच्छे कर्म किए) पढ़कर रुक गया और फिर "उलाइका हुम खैरुल-बरिय्यह" (वही लोग सृष्टि में सबसे उत्तम हैं) से शुरू किया—तो हमारे विद्वानों के बीच इस पर सहमति है कि नमाज़ अमान्य नहीं होगी। अल-मुहीत में ऐसा ही है। इसी तरह, यदि कोई ऐसी जगह जोड़ (वस्ल) देता है जहाँ नहीं जोड़ना चाहिए था, जैसे कि अल्लाह के शब्द "असहाबुन-नार" (आग वाले) पर न रुककर उसे "अल्लज़ीना यहमिलूनल-अर्शा" (जो अर्श को उठाते हैं) के साथ मिला दिया, तो नमाज़ अमान्य नहीं होगी, लेकिन ऐसा करना बहुत नापसंद (क़बीह) है। अल-खुलासा में ऐसा ही है। और यदि अर्थ में कोई गंभीर परिवर्तन हो जाता है—उदाहरण के लिए, यदि किसी ने "अशहदुल्लाहु अन्नहू ला इलाहा" (मैं गवाही देता हूँ कि अल्लाह, वास्तव में वह, कोई ईश्वर नहीं है) पर रुककर पढ़ा और फिर "इल्ला हुवा" (सिवाय उसके) कहा—तो हमारे अधिकांश विद्वानों के अनुसार नमाज़ अमान्य नहीं होगी। कुछ के अनुसार नमाज़ अमान्य हो जाएगी, लेकिन फ़तवा इसी पर है कि किसी भी स्थिति में नमाज़ अमान्य नहीं होगी। अल-मुहीत में ऐसा ही है। (त) जो व्यक्ति इस प्रकार के क़िरात (पठन) के नियमों का उल्लंघन करता है, उसे इमाम नहीं बनाया जाना चाहिए, हालाँकि नमाज़ हो जाएगी, भले ही वह मकरूह (नापसंद) हो। आलमगीरी में है: "जो व्यक्ति रुकने के स्थानों पर नहीं रुकता और जहाँ नहीं रुकना चाहिए वहाँ रुकता है, उसे इमाम नहीं बनाया जाना चाहिए। इसी तरह उसे भी इमाम नहीं बनाया जाना चाहिए जो क़िरात के दौरान बहुत ज़्यादा गला साफ़ करता (खाँसता) हो।" (त) 1. फ़तावा हिन्दिया, ज़ल्लतुल-क़ारी पर पाँचवां अध्याय, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 1/81 2. फ़तावा हिन्दिया, इमाम बनने की योग्यता पर तीसरा अध्याय, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 1/86 पृष्ठ 280 of 736

فتاوٰی رضویہ | جلد ششم ہندیہ میں ہے : اذا وقف فی غیر موضع الوقف او ابتدأ فی غیر موضع الابتداء ان لم یتغیر بہ المعنی تغیرا فاحشا نحو ان یقرأ ان الذین امنو او علموا الصلحت ووقف ثم ابتدأ بقولہ اولئک ھم خیر البریۃ لاتفد بالاجماع بین علمائنا ھکذا فی المحیط ، وکذا ان وصل فی غیر موضع الوصل کما لو لم یقف عند قولہ اصحاب النار بل وصل بقولہ الذین یحملون العرش لا تفسد لکنہ قبیح ھکذا فی الخلاصۃ وان تغیر بہ المعنی تغیرا فاحشا نحو ان یقرأ اشھد اللہ انہ لا الہ ووقف ثم قال الا ھو لا تفسد صلاتہ عند عامۃ علمائنا وعند البعض تفسد صلاتہ والفتوٰی علی عدم الفساد بکل حال ھکذا فی المحیط جب کسی نے غیر وقف کی جگہ وقف کیا یا مقامِ ابتدا کے غیر سے ابتدا کی تو اگر معنی میں فحش تبدیلی نہیں، مثلاً پڑھنے والے نے "اِنَّ الَّذِیْنَ اٰمَنُوْا وَ عَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ" پڑھ کر وقف کیا پھر "اُولٰٓئِکَ ھُمْ خَیْرُ الْبَرِیَّۃِ" سے ابتدا کی تو ہمارے علماء کا اتفاق ہے کہ نماز فاسد نہ ہوگی، محیط میں اسی طرح ہے، اسی طرح اگر وصل کی جگہ کے علاوہ میں وصل کر لیا جیسا کہ اللہ تعالٰی کے قول "اَصْحٰبُ النَّارِ" پر وقف نہ کیا بلکہ اسے "الَّذِیْنَ یَحْمِلُوْنَ الْعَرْشَ" کے ساتھ ملا لیا نماز فاسد نہ ہوئی لیکن ایسا کرنا سخت ناپسند ہے۔ خلاصہ میں اسی طرح ہے، اور اگر معنی میں فحش تبدیلی ہو مثلاً کسی نے "اَشْھَدَ اللہُ اَنَّہٗ لَا اِلٰہَ" پر کر کے پڑھا "اِلَّا ھُوَ" تو ہمارے اکثر علماء کے نزدیک نماز فاسد نہ ہوگی بعض کے ہاں فاسد ہو جائے گی اور فتوٰی اسی پر ہے کہ ہر صورت میں نماز فاسد نہ ہوگی محیط میں اسی طرح ہے۔ (ت) جو شخص اس قسم ترتیل کی مخالفت کرے اس کی امامت نہ چاہئے مگر نماز ہو جائے گی اگرچہ بکراہت عالمگیر یہ میں ہے : من یقف فی غیر مواضعہ ولا یقف فی مواضعہ لا ینبغی لہ ان یؤم وکذا من یتنحنح عند القراءۃ کثیرا جو شخص مقاماتِ وقف میں وقف نہیں کرتا بلکہ مقاماتِ وقف کے غیر میں وقف کرتا ہے تو اسے امام نہ بنایا جائے اسی طرح اس کو امام نہ بنایا جائے جو اکثر کھانستا رہتا ہو۔ (ت) 1 فتاوٰی ہندیہ ، الفصل الخامس فی زلۃ

القاری مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور ۱/۸۱ 2 فتاویٰ ہندیہ الفصل الثالث فی بیان من یصلح اماما لغیرہ مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور ۱/۸۶ Page 280 of 736

Fatawa-e-Razvia - Volume Six

Third: To correctly distinguish between letters and movements (vowels) such as 'Ayn (ع), Tā (ت), Ṭā (ط), Thā (ث), Sīn (س), Ṣād (ص), Ḥā (ح), Hā (ہ), Dhāl (ذ), Zā (ز), Ẓā (ظ), etc. In short, avoiding any deficiency, addition, or substitution that corrupts the meaning is also obligatory. In detail, it is also among the obligations of prayer, as its abandonment invalidates the prayer. For a person who is capable but neglects it due to absent-mindedness, indifference, or haste, or who could learn if they tried but chooses not to, according to our noble Imams of the school (Madhhab), may Allah be pleased with them, there is no dispute that his prayer is void, his leadership (Imamate) is void, and the prayers of those behind him are invalid. The leniencies granted by later scholars in view of ease (Taysir) actually pertain to cases of slips and unintentional errors, where one knows the correct way and is capable of reading correctly, but the tongue accidentally slips into a wrong pronunciation. It is not, God forbid, a decree for negligence, permission for incorrect recitation, or abandonment of learning and effort, a situation that has spread like a global epidemic among the general public and even most of the elites today. Even if it were not so, those are the prayers of the general public, not for appointing those who recite incorrectly as Imams. The same scholars who write about leniencies explicitly state the invalidity of the Imamate in such cases. And for those who are simply incapable despite their constant efforts and hard work, such as unrefined villagers who pronounce Qāf (ق) as Kāf (ک) or Dhāl (ذ) as Jīm (ج), according to the correct school, the prayer of a correct reciter cannot be valid behind them either. The details of this grand issue, which today not only the general public but even many scholars and Shaikhs are heedless of, are found in the Fatawa of this humble servant (may Allah forgive him), and it is stated in 'Durr-e-Mukhtar':

It is not valid for a non-Lisper (Althagh) to follow a Lisper (Althagh) according to the most correct opinion, as mentioned in Al-Bahr from Al-Mujtaba. Al-Halabi and Ibn al-Shuhnah have determined that after exerting his utmost effort continuously and necessarily, he is like an 'Ummi' (unlettered person), so he cannot lead those like him. His prayer is not valid if it is possible for him to follow someone who

And following a Lisper (tōtlā) by a non-Lisper is not correct according to the most correct opinion, as narrated in Al-Bahr al-Raiq from Mujtaba. ('Althagh', on the pattern of 'Af'al', refers to a person from whose tongue one letter comes out in place of another, for example, saying 'L' instead of 'R'). Halabi and Ibn al-Shuhnah have refined the issue, stating that a person with a lisp should always

recites well, or if he abandoned effort, or if he finds an amount of obligatory recitation in which there is no lisp. This is the correct and chosen opinion regarding the ruling of a Lisper, and similarly for one who is unable to pronounce one of the letters from the alphabet.[1]

strive for the correctness of letters; after that, he is like an 'Ummi', meaning he can lead his equals in prayer. His prayer will not be valid if it is possible for him to follow a correct reciter, or if he has stopped making an effort, or if for the duration of the obligatory recitation, he...

[1] Durr-e-Mukhtar, Chapter on Imamate, printed by Mujtabai Delhi, 1/85

तीसरा: जो अक्षरों और हरकतों (स्वरों) की शुद्धि में ऐन (ع), ता (ت), ता (ط), सा (ث), सीन (س), साद (ص), हा (ح), हा (ہ), ज़ाल (ذ), ज़ा (ز), ज़ा (ظ) आदि के बीच अंतर करे। संक्षेप में, हर उस कमी, अधिकता और परिवर्तन से बचना जो अर्थ को बिगाड़ दे, यह भी फ़र्ज़ है। विस्तार से यह नमाज़ के फ़राएज़ (अनिवार्य कर्तव्यों) में से भी है, क्योंकि इसका त्याग नमाज़ को बिगाड़ देता है। जो व्यक्ति सक्षम है और बेध्यानी, लापरवाही या जल्दबाजी के कारण इसे छोड़ देता है, या यदि वह सीखे तो सीख सकता है लेकिन नहीं सीखता, तो हमारे मज़हब के प्रतिष्ठित इमामों (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) के अनुसार उसकी नमाज़ बातिल (अमान्य) है और उसकी इमामत के बातिल होने और उसके पीछे दूसरों की नमाज़ के फासिद (खराब) होने में तो कोई बहस ही नहीं है। उत्तरकालीन विद्वानों ने आसानी (तयसीर) के नज़रिये से जो ढील दी है, वे वास्तव में फिसलने और गलती के मामलों से संबंधित हैं, जहाँ व्यक्ति सही जानता है और सही पढ़ सकता है, लेकिन ज़ुबान से गलती से गलत अदा हो गया। यह, खुदा न करे, लापरवाही का फतवा, गलत पढ़ने की अनुमति, या सीखने और कोशिश को छोड़ने के लिए नहीं है, जो कि आज के समय के आम लोगों बल्कि अधिकांश विशिष्ट लोगों में भी एक महामारी की तरह फैला हुआ है। और अगर ऐसा न भी हो, तो वे आम लोगों की नमाज़ें हैं, न कि गलत पढ़ने वालों को इमाम बनाने के लिए। वही विद्वान जो ढील के बारे में लिखते हैं, इमामत के बातिल होने को स्पष्ट रूप से बयान करते हैं। और जो सक्षम ही नहीं हैं, कोशिश करते हैं, मेहनत करते हैं, लेकिन अक्षर नहीं निकलते जैसे कच्ची ज़ुबान वाले देहाती जो क़ाफ़ (ق) को काफ़ (ک) और ज़ाल (ذ) को जीम (ج) पढ़ते हैं, तो सही मज़हब में उनके पीछे सही पढ़ने वाले की नमाज़ नहीं हो सकती। इस महान मसले (विषय) का विवरण, जिससे आज न केवल आम लोग बल्कि कई विद्वान और मशायख भी गाफिल (अनजान) हैं, इस फकीर (अल्लाह उसे क्षमा करे) के फतावा में है और 'दुर्रे मुख्तार' में है:

एक गैर-हकलाने वाले (अलथग) का हकलाने वाले (अलथग) के पीछे नमाज़ पढ़ना सबसे सही राय के अनुसार मान्य नहीं है, जैसा कि 'अल-बहर' में 'अल-मुजतबा' से उद्धृत है। अल-हलबी और इब्न अल-शुहना ने यह तय किया है कि निरंतर और अनिवार्य रूप से अपना पूरा प्रयास करने के बाद, वह एक और गैर-तौतले (हकलाने वाले) का तौतले के पीछे नमाज़ पढ़ना सबसे सही कथन के अनुसार सही नहीं है जैसा कि 'अल-बहर अल-रैक' में 'मुजतबा' से उद्धृत है। ('अलथग' अफ़अल के वज़्न पर उस व्यक्ति को कहते हैं जिसकी ज़ुबान से एक अक्षर की जगह दूसरा

'उम्मी' (अनपढ़) की तरह है, इसलिए वह अपने जैसे लोगों की इमामत नहीं कर सकता। उसकी नमाज़ मान्य नहीं है यदि उसके लिए किसी ऐसे व्यक्ति के पीछे नमाज़ पढ़ना संभव हो जो अच्छी तरह से पढ़ता हो, या उसने प्रयास छोड़ दिया हो, या उसे अनिवार्य किराअत की उतनी मात्रा मिल जाए जिसमें हकलाहट न हो। हकलाने वाले के हुक्म में यही सही और चुना हुआ मत है, और इसी तरह उस व्यक्ति के लिए भी जो वर्णमाला के किसी अक्षर का उच्चारण करने में असमर्थ हो।[1]

निकले, जैसे 'र' की जगह 'ल' बोले)। हलबी और इब्न-ए-शुहना ने स्पष्ट किया है कि हकलाहट वाला व्यक्ति हमेशा अक्षरों की शुद्धता के लिए प्रयासरत रहे, उसके बाद वह उम्मी की तरह है यानी वह अपने जैसे लोगों का इमाम बन सकता है और उसकी नमाज़ सही नहीं होगी जब उसे सही पढ़ने वाले का अनुसरण संभव हो या उसने कोशिश छोड़ दी हो या अनिवार्य किराअत की मात्रा के अनुसार वह...

[1] दुर्रे मुख्तार, इमामत का अध्याय, मुजतबाई दिल्ली द्वारा मुद्रित, 1/85

سوم: جو حروف و حرکات کی تصحیح اع، ت، ط، ث، س، ص، ح، ہ، ذ، ز، ظ وغیرہا میں تمیز کرے غرض ہر نقص و زیادت و تبدیل سے کہ مفسد معنی ہو احتراز یہ بھی فرض ہے اور علی التفصیل فرائض نماز سے بھی ہے کہ اسکا ترک مفسد نماز ہے جو شخص قادر ہے اور بے خیالی یا بے پروائی یا جلدی کے باعث اسے چھوڑتا ہے یا سیکھے تو آ جائے مگر نہیں سیکھتا ہمارے ائمہ کرام مذہب رضی اللہ تعالٰی عنہم کے نزدیک اس کی نماز باطل اور اس کی امامت کے بطلان اور اسکے پیچھے اوروں کی نماز فاسد ہونے میں تو کلام ہی نہیں علمائے متاخرین نے بنظر تیسر جو توسعیں کیں وہ عندالتحقیق صورت لغزش و خطا سے متعلق ہیں کہ صحیح جانتا ہے اور صحیح پڑھ سکتا ہے مگر زبان سے بہک کر غلط ادا ہو گیا نہ کہ معاذ اللہ فتوی بے پروائی و اجازت غلط خوانی و ترک تعلم و کوشش ، جیسا کہ عوام زمانہ بلکہ اکثر خواص میں بھی وبائے عالمگیر کی طرح پھیلا ہوا ہے اور نہ بھی سہی تو وہ عوام کی نمازیں ہیں نہ کہ غلط خوانوں کو امام بنانے کے لئے وہی علماء جو توسعیات لکھتے ہیں بطلان امامت کی تصریح فرماتے ہیں اور جو قادر ہی نہیں کوشش کرتا ہے محنت کرتا ہے مگر نہیں نکلتا جیسے کچی زبان والے گنوار کہ قاف کو کاف، ذال کو جیم پڑھیں۔ صحیح مذہب میں صحیح خواں کی نماز ان کے پیچھے بھی نہیں ہو سکتی تفصیل اس مسئلہ جلیلہ کی جس سے آج کل نہ صرف عوام بلکہ بہت علماء و مشائخ تک غافل ہیں ۔ فقیر غفر اللہ تعالٰی لہ کے فتاوٰی میں ہے درمختار میں ہے:

لا یصح اقتداء غیر الالثغ به ای بالالثغ اور غیر توتلے کی اقتداء توتلے کے پیچھے اصح قول کے

علی الاصح کما فی البحر عن المجتبی مطابق درست نہیں ہے جیسا کہ البحر الرائق میں مجتبٰی

وحرر الحلبي وابن الشحنة انه بعد بذل سے منقول ہے (الثغ بروزن افعل اس شخص کو کہتے ہیں

جهده دائما حتماً كالامی فلا يؤم الامثلة ولا تصح صلاته اذا امكنه الاقتداء بمن يحسنه او ترك جهده او وجد قدر الفرض مما لا لثغ به فيه هذا هو الصحيح المختار فی حكم الالثغ وكذا من لا يقدر على التلفظ بحرف من الحروف من[1]۔

جس کی زبان سے ایک حرف کی جگہ دوسرا نکلے مثلاً "ر" کی جگہ "ل" بولے) حلبی اور ابن شحنہ نے تنقیح کی ہے کہ توتلا پن رکھنے والا شخص ہمیشہ صحت حروف کے لئے کوشاں رہے، اس کے بعد وہ اُمّی کی طرح ہے یعنی وہ اپنے ہم مثل کا امام بن سکتا ہے اور اس کی نماز صحیح نہ ہوگی جب اسے صحیح پڑھنے والے اقتدا ممکن ہو یا اس نے کوشش ترک کردی ہو یا بقدر فرض قرات کی وہ

[1] دُر مختار، باب الامامة، مطبوعہ مجتبائی دہلی، ۸۵/۱

Fatawa Ridawiyyah Volume 6

...memorize verses in which there is no stammering. This is the correct and chosen opinion regarding a person with a stammer. The same ruling applies to a person who is unable to correctly pronounce any of the letters of the alphabet. (T) And it is not permissible to make a person an Imam who judges contrary to the pure Sharia. Allah Almighty says: "And whoever does not judge by what Allah has revealed - then it is those who are the defiantly disobedient (Fasiqun)." 1 (Allah Almighty has said that those who do not judge among people according to the teachings of Allah Almighty, they are the transgressors. T) It is in Ghunyah 2: If they put forward a transgressor (Fasiq), they are sinning. (If people make a transgressor their Imam, they will all be sinners. T) And prayer behind him is severely disliked (Makruh).

(Arabic Text)

As verified by Muhaqqiq al-Halabi in al-Ghunyah and Allamah al-Shurunbulali in al-Maraqi and others besides them. We have explained it in more than one place in our Fatwas, and it is the conclusion of the discourse, so upon it should be the reliance. And Allah, Glory be to Him and the Exalted, knows best, and His ruling, may His Majesty be glorified, is most complete and most wise.

(Urdu Text)

As verified by Muhaqqiq al-Halabi in al-Ghunyah and Allamah al-Shurunbulali in al-Maraqi, and others besides these two have researched it in their respective books. We have mentioned it in several places in our Fatwas, and this is its summary, and it should be relied upon. And Allah, Glory be to Him and the Exalted, knows best, and His ruling, may His Majesty be glorified, is most complete and most wise. (T)

1 Al-Quran 5:47 2 Ghunyat al-Mustamli Sharh Munyat al-Musalli, Chapter on Imamate etc., Published by Suhail Academy Lahore, p. 513 Page 282 of 736

फतावा रज़विया जिल्द 6

...आयतें याद कर लें जिनमें हकलाना न हो, हकलाने वाले व्यक्ति के बारे में यही सही और मुख्तार (चुना हुआ) कौल है। इसी तरह का हुक्म उस व्यक्ति के लिए है जो वर्णमाला के किसी अक्षर का सही उच्चारण करने की क्षमता नहीं रखता। (त) और जो व्यक्ति शरीयत-ए-मुतहरा के खिलाफ फैसला करे उसे इमाम बनाना जायज़ नहीं है। अल्लाह तआला ने फरमाया: "और जो अल्लाह के उतारे हुए हुक्म के मुताबिक फैसला न करें, वही लोग फासिक (गुनहगार) हैं।" 1 (अल्लाह तआला ने फरमाया कि जो लोग लोगों के बीच अल्लाह तआला की शिक्षाओं के अनुसार फैसला नहीं करते, वे लोग फासिक हैं। त) गुनिया में है: 2 "अगर उन्होंने किसी फासिक को आगे बढ़ाया (इमाम बनाया), तो वे गुनहगार होंगे।" (अगर लोगों ने किसी फासिक को अपना इमाम बनाया, तो वे सब गुनहगार होंगे। त) और उसके पीछे नमाज़ पढ़ना सख्त मकरूह है।

(अरबी पाठ)

जैसा कि मुहक़्क़िक़ अल-हलबी ने 'अल-गुनिया' में और अल्लामा अल-शुरुनबुलाली ने 'अल-मराक़ी' में और उनके अलावा अन्य लोगों ने इसकी पुष्टि की है। हमने अपने फतवों में एक से अधिक स्थानों पर इसका वर्णन किया है और यही निष्कर्ष का सारांश है, अतः इसी पर भरोसा किया जाना चाहिए। और अल्लाह, जो पवित्र और सर्वोच्च है, सबसे बेहतर जानता है, और उसका फैसला, जिसकी महिमा बुलंद है, सबसे पूर्ण और सबसे बुद्धिमानी भरा है।

(उर्दू पाठ)

जैसा कि मुहक़्क़िक़ हलबी ने 'गुनिया' में और अल्लामा शूरुनबुलाली ने 'मराक़ी' में इसकी तहक़ीक़ की है और इन दोनों के अलावा दूसरों ने अपनी-अपनी किताबों में तहक़ीक़ की है। हमने अपने फतावा में कई जगहों पर इसे बयान किया है और यही इसका खुलासा है और इसी पर एतमाद (भरोसा) होना चाहिए। और अल्लाह सुब्हानहु व तआला बेहतर जानता है और उसका हुक्म जल्ला मजदहु सबसे मुकम्मल और हिकमत वाला है। (त)

1 अल-कुरआन 5/47 2 गुन्यातुल मुस्तमली शरह मुनयातुल मुसल्ली, इमामत का बाब आदि, सुहैल एकेडमी लाहौर द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 513 पेज 282 of 736

آیتیں حاصل کرلے جن میں توتلا پن نہ ہو، توتلا پن رکھنے والے شخص کے بارے میں یہی صحیح و مختار قول ہے، اسی طرح حکم ہے اس شخص کا جو حروفِ تہجی میں سے کسی حرف پر صحیح تلفظ کی قدرت نہ رکھتا ہو۔(ت) اور جو شخص خلافِ شریعتِ مطہرہ کے فیصلہ کرے اُسے امام بنانا جائز نہیں قال اللہ تعالٰی وَمَنْ لَّمْ یَحْکُمْ بِمَا اَنْزَلَ اللّٰہُ فَاُولٰٓئِکَ ھُمُ الْفٰسِقُوْنَ ﴿۱﴾ (اللہ تعالٰی نے فرمایا جو لوگوں کے درمیان اللہ تعالٰی کی تعلیمات کے مطابق فیصلہ نہیں کرتے وہ لوگ فاسق ہیں۔ت) غنیہ میں ہے: 2 لو قدموا فاسقًا یاثمون (اگر فاسق کو لوگوں نے امام بنایا تو وہ تمام گنہگار ہوں گے۔ت) اور اس کے پیچھے نماز سخت مکروہ

(عربی متن)	(اردو ترجمہ)
کما حققه المحقق الحلبي في الغنية والعلامة الشرنبلالي في المراقي وفی غیرهما فقد بینا في غیر موضع من فتاونا وهو فضیة الذیل فعلیه فلیکن التعویل واللہ سبحنه وتعالی اعلم وحکمه جل مجده اتم واحکم	جیسا کہ محقق حلبی نے غنیہ اور علامہ شرنبلالی نے مراقی میں اس کی تحقیق کی اور ان دونوں کے غیر نے اپنی اپنی کتابوں میں تحقیق کی ہے ہم نے اپنے فتاوٰی میں متعدد جگہ پر اسے بیان کیا ہے اور یہی اس کا خلاصہ ہے اور اسی پر اعتماد ہونا چاہئے واللہ سبحنہ و تعالٰی اعلم و حکمُہ جل مجدہ اتم و احکم (ت)

1 القرآن ۵/۴۷ 2 غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل فی الامامۃ الخ مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۵۱۳

Fatawa Rizvia, Volume 6

Treatise: Ni'm az-Zad li-Rawm ad-Dad (The Best Method for Reciting the Letter 'Dad')

In the name of Allah, the Most Gracious, the Most Merciful. Problem No. 462 to 467: From Rampur State, Kunda neighborhood, adjacent to Mian Gaman Mosque, sent by Maulvi Muhammad Yahya Sahib on 24th Shawwal 1315 AH.

[Column 1 - Original Persian/Urdu Text]: What do the scholars of religion and the jurists of the firm Sharia say about this matter? There is a dispute among several individuals regarding the recitation of "Ghayr al-Maghdubi 'alayhim wala-d-Dallin". Most treatises and fatwas differ on this issue. Some argue for the substitution of 'Dad' based on common tradition (inheritance among people) as evidence, while others consider changing it to 'Za' (ظ) or 'Zay' (ز) due to similarity in appearance as their evidence. The late Qari Abdul Rahman Panipati has recorded the summary of his research in his treatises and fatwas in this manner: that reciting 'Dal' or another letter instead of 'Dad' is purely erroneous. It is mandatory for every person to pronounce every letter, especially 'Dad', from its proper articulation point (makhraj) along with all its attributes. In this time of commotion and clamor...

[Column 2 - Urdu Translation/Explanation]: What do the scholars of the firm Sharia say about this matter? There is a difference of opinion among some people regarding the recitation of "Ghayr al-Maghdubi 'alayhim wala-d-Dallin". Most treatises and fatwas on this subject are varied. Some people, citing 'inheritance among people' (common practice) as evidence, suggest reciting 'Dad' with a 'Dal' sound, while others are in favor of changing it to 'Za' (ظ) and 'Zay' (ز) and present the similarity in sound as evidence. The late Qari Abdul Rahman Panipati stated that in treatises and fatwas, the summary of the research is explained as follows: that reading 'Dal' or any other letter in place of 'Dad' is absolutely incorrect. Any letter...

Page 283 of 736

फतावा रज़विया, छठा खंड

रिसाला: नेअम अज़-ज़ाद ली-रौम अद-दाद (दाद पढ़ने का बेहतरीन तरीका)

बिस्मिल्लाह हिर्रहमान निर्रहीम मसला संख्या 462 से 467: रामपुर रियासत, मोहल्ला कुंडा, मस्जिद मियां गामा के पास से, मौलवी मोहम्मद यह्या साहब द्वारा प्रेषित, 24 शव्वाल 1315 हिजरी।

[कॉलम 1 - मूल फ़ारसी/उर्दू पाठ]: दीन के विद्वान और शरीयत के मुफ्ती इस विषय में क्या कहते हैं कि "ग़ैरिल मग़ज़ूबि अलैहिम वलद-द्वाल्लीन" के पाठ में कई व्यक्तियों के बीच विवाद है और इस विषय में अधिकांश पुस्तकें और फतवे अलग-अलग हैं। कुछ लोग 'दाद' को लोगों के बीच आम चलन (विरासत) के आधार पर 'दाल' में बदलने का तर्क देते हैं, और कुछ इसके स्वरूप में समानता के कारण इसे 'ज़ो' (ظ) और 'ज़े' (ज़) में बदलने का तर्क देते हैं। मरहूम कारी अब्दुल रहमान पानीपती ने अपने शोध का सार अपने ग्रंथों और फतवों में इस तरह लिखा है: 'दाद' के स्थान पर 'दाल' या कोई अन्य अक्षर पढ़ना पूरी तरह से गलत है। प्रत्येक अक्षर, विशेष रूप से 'दाद' को उसके गुणों के साथ उसके उचित उच्चारण स्थान (मखरज) से उच्चारित करना प्रत्येक व्यक्ति के लिए अनिवार्य है। इस शोर-शराबे और कोलाहल के समय में...

[कॉलम 2 - उर्दू अनुवाद/व्याख्या]: शरीयत के विद्वान इस बारे में क्या कहते हैं कि "ग़ैरिल मग़ज़ूबि अलैहिम वलद-द्वाल्लीन" के पाठ में कुछ लोगों का मतभेद है। इस विषय में अधिकांश पुस्तकें और फतवे भिन्न हैं। कुछ लोग 'लोगों के बीच विरासत' (आम चलन) को प्रमाण मानते हुए 'दाद' को 'दाल' के साथ पढ़ने के लिए कहते हैं, जबकि कुछ इसे 'ज़ो' (ظ) और 'ज़े' (ज़) के साथ बदलने के पक्षधर हैं और ध्वनि में समानता को प्रमाण के रूप में प्रस्तुत करते हैं। मरहूम कारी अब्दुल रहमान पानीपती ने कहा कि ग्रंथों और फतवों में इस शोध का सार इस प्रकार बताया गया है कि 'दाद' की जगह 'दाल' या कोई अन्य अक्षर पढ़ना बिल्कुल गलत है। कोई भी अक्षर...

पृष्ठ 283 का 736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

رسالہ نعم الزاد لِرَوم الضاد (ضاد پڑھنے کا بہترین طریقہ)

بسم اللہ الرحمٰن الرحیم مسئلہ نمبر ۴۶۲ تا ۴۶۷ : از ریاست رام پور محلہ کنڈہ متصل مسجد میاں گاماں مرسلہ مولوی محمد یحییٰ صاحب ۲۴ شوال ۱۳۱۵ھ

[کالم 1]: چہ می فرمایند علمائے دین و مفتیان شرع متین دریں باب کہ در قراء ت غیر المغضوب علیہم ولاالضآلّین در چند اشخاص نزاع مے مانند واکثر رسائل و فتاوی دریں باب مختلف ہستند بعضے خواندن ضاد را ابدال توارث بین الناس دلیل مے آرند و بعضے برائے تبدیل ظا و زاتشابہ صورت رادلیل مے گردانند و قاری عبدالرحمن مرحوم پانی پتی در رسائل و فتاوی خلاصہ تحقیق بدیں نہج رقم کردہ اند کہ بجائے ضاد دال یا حرف خواندن محض غلط است ہر حرف خصوصاً ضاد از مخرج خود مع صفاتش ادا کردن برہمہ شخص واجب است دریں ہنگام شور و شغب

[کالم 2]: علمائے شرع متین اس بارے میں کیا فرماتے ہیں کہ غیر المغضوب علیہم ولا الضالین کے پڑھنے میں کچھ لوگوں کا اختلاف ہے اکثر رسائل و فتاوے اس بارے میں مختلف ہیں بعض لوگ توارث بین الناس (معمول) کو دلیل بناتے ہوئے ضاد کو دال کے ساتھ پڑھنے کا کہتے ہیں اور بعض اسے ظا اور زا کے ساتھ تبدیلی کے قائل ہیں اور آواز میں مشابہ ہونے کی دلیل پیش کرتے ہیں قاری عبدالرحمان مرحوم پانی پتی نے کہا کہ رسائل اور فتاوی میں اس بارے میں خلاصہ تحقیق یوں بیان کیا گیا ہے کہ ضاد کی جگہ دال یا کوئی

...and reading the letter is absolutely wrong; it is obligatory for every individual to pronounce every letter, especially the letter 'Zad' (ض), from its specific point of articulation (makhraj) along with its inherent attributes. There is significant disagreement and debate regarding this matter; some prominent and common people cite 'Sharh Kabir' as their basis for pronouncing it as 'Dal' (د). In this regard, confusion is arising in several matters. Experts of Sharia should remove them with their answer so that truth is established and falsehood is nullified. May Allah Almighty reward you in both worlds. The specific points causing doubt and confusion regarding the pronunciation of 'Zad' similar to an unpointed 'Dal' or a pointed 'Za' (ظ) are presented to the scholars for clarification. (They are as follows:)

First: In the books of Jurisprudence (Fiqh), within the section on the ruling of recitation in prayer, a chapter titled "Zalla-tul-Qari" (The Reciter's Slip) has been established. Is the ruling on its issues specific only to that situation where another letter is unintentionally and involuntarily uttered by the reciter suddenly? Or is the ruling general, applicable even if the reciter and reader intentionally and deliberately read one letter in place of another? If the general ruling (option) is accepted, then since the ruling for intentional recitation is also recorded therein, why was this chapter titled "Zalla-tul-Qari"? This is despite the fact that the word 'Zalla' is synonymous with a 'slip', in which intention and volition are absent. By making the inheritance of this practice among people an absolute proof, what would be the justification for the correctness of such a statement?

Second: In the case of generality, will it be sufficient to rely only on the unity or proximity of articulation points and phonetic similarity for general and easy pronunciation, or must the preservation of meaning also be considered? And if a change in meaning leads to the corruption of the ruling and invalidation of the prayer, then in such a case, for a person who replaces 'Zad' with 'Dal'...

फतावा रज़विया | खंड छठा

...और अक्षर [किसी विशेष तरीके से] पढ़ना बिल्कुल गलत है; प्रत्येक व्यक्ति के लिए यह अनिवार्य है कि वह प्रत्येक अक्षर, विशेष रूप से 'ज़ाद' (ض), को उसके विशिष्ट उच्चारण स्थान (मखरज) से उसके निहित गुणों के साथ अदा करे। इस मामले में बड़ा मतभेद और कोलाहल है; कुछ विशिष्ट और सामान्य लोग 'शरह कबीर' से इसे 'दाल' (د) के रूप में पढ़ने का आधार बताते हैं। इस संबंध में कई मामलों में भ्रम उत्पन्न हो रहा है। शरीयत के विशेषज्ञों को अपने उत्तर से उन्हें दूर करना चाहिए ताकि सत्य स्थापित हो और असत्य का खंडन हो। अल्लाह सर्वशक्तिमान आपको दोनों लोकों में प्रतिफल प्रदान करे। 'ज़ाद' को बिना बिंदी वाले 'दाल' या बिंदी वाले 'ज़ा' (ظ) के समान उच्चारण करने के संबंध में संदेह और भ्रम पैदा करने वाले विशिष्ट बिंदु विद्वानों के स्पष्टीकरण के लिए प्रस्तुत हैं। (वे इस प्रकार हैं:)

पहला: न्यायशास्त्र (फ़िक़्ह) की पुस्तकों में, नमाज़ में क़िरात के नियम के तहत "ज़ल्लतुल क़ारी" (क़ारी की फिसलन) का जो अध्याय स्थापित किया गया है, क्या उसके मुद्दों का नियम केवल उसी स्थिति के लिए विशिष्ट है जब क़ारी की ज़ुबान से अनजाने और अनपेक्षित रूप से एक अक्षर की जगह दूसरा अक्षर अचानक निकल जाए? या नियम सामान्य है, चाहे क़ारी और पाठ करने वाला जानबूझकर और इरादतन किसी अक्षर की जगह दूसरा अक्षर पढ़ ले? यदि सामान्य नियम स्वीकार किया जाता है, तो चूँकि इसमें इरादतन पाठ करने का नियम भी दर्ज है, तो इस अध्याय का शीर्षक "ज़ल्लतुल क़ारी" क्यों रखा गया? जबकि 'ज़ल्ला' शब्द 'फिसलन' का पर्यायवाची है, जिसमें इरादा और इच्छा लुप्त होती है। लोगों के बीच इस व्यवहार की निरंतरता (तवारुस) को पूर्ण प्रमाण मानकर, उसके कथन की शुद्धता का क्या स्पष्टीकरण होगा?

दूसरा: व्यापकता के मामले में, क्या केवल उच्चारण स्थान की एकता या निकटता और समानता की स्थिति में सामान्य और आसान अदायगी पर संतोष कर लिया जाएगा या अर्थ का भी ध्यान रखना आवश्यक है? और अर्थ बदलने और हुक्म के बिगड़ने की स्थिति में नमाज़ अमान्य हो जाएगी। इस स्थिति में जो व्यक्ति 'ज़ाद' को 'दाल' से बदल देता है...

पृष्ठ 284/736

...اور حرف پڑھنا محض غلط ہے، ہر حرف خصوصاً ضاد کو اپنے مخرج سے اس کی صفات کے ساتھ ادا کرنا ہر شخص پر لازم ہے، اس معاملہ میں بڑا اختلاف اور شور ہے بعض خواص اور عوام اسے دال پڑھنے پر شرح کبیر سے سند ذکر کرتے ہیں، اس معاملہ میں چند امور سے خلجان واقع ہو رہا ہے ماہرین شریعت اپنے جواب سے انہیں رفع کریں تاکہ حق ثابت ہو اور باطل کا بطلان ہو جائے ، اللہ تعالیٰ دارین میں تجھے اجر سے نوازے، ضاد کو دال یا ظا پڑھنے کی صورت میں جن امور میں اشتباہ و خلجان واقع ہو رہا ہے وہ علماء سے دریافت طلب ہیں۔ (وہ یہ ہیں)

اول: کتب فقہ میں نماز کی قراء ت کے ضمن میں "زلۃ القاری" (قاری کا پھسلنا) کی جو فصل قائم کی گئی ہے اس کے مسائل کا حکم صرف اسی صورت کے ساتھ مخصوص ہے جب قاری سے بلا قصد وارادہ ایک حرف کی جگہ دوسرا حرف اچانک زبان پر جاری ہو جائے، یا حکم عام ہے خواہ قاری اور تلاوت کرنے والا عمداً اور قصداً کسی حرف کی جگہ دوسرا حرف پڑھ لے؟ اگر عموم حکم والی (شق) تسلیم کر لی جائے تو جب اس میں قصداً قراء ت کا حکم بھی تحریر ہوا ہے تو پھر اس فصل کا عنوان زلۃ القاری کیوں رکھا گیا؟ حالانکہ لفظ زلۃ لغزش سے معرب ہے جس میں قصد و ارادہ مفقود ہوتا ہے۔ لوگوں کے مابین اس توارث کو مطلقاً دلیل بنا کر اس کے قول کی صحت کی توجیہ کیا ہوگی۔

دوم: عموم کی صورت میں صرف اتحاد مخرج یا قرب مخرج اور تشابہ کی صورت میں عام و آسان ادائیگی پر اکتفا کر لیا جائے گا یا معنی کا بھی خیال رکھنا ضروری ہے اور بصورت تبدیل معنی و فساد حکم فساد نماز کا ہو گا؟ اس صورت میں جو شخص ضاد کو دال سے...

Fatawa Razawiyya - Volume Six

[Left Column] ...makes the general practice of people an argument for reciting differently; how will the correctness of his statement be justified? Third: As the author of Ghunyah al-Mustamli, a commentary on Munyah, in the chapter 'Zallah al-Qari' (Reciter's slip), regarding the ruling on changing one letter for another, has based the ruling on the correctness or corruption of the meaning. In instances where a correct meaning is formed through the substitution, the ruling for the validity of prayer is recorded, and where a corruption of meaning occurs due to the substitution, the ruling for the invalidity of prayer is given. This same ruling will also apply to changing 'Dhad' (ض) to 'Dal' (د). Wherever changing 'Dhad' to 'Dal' results in a corruption of meaning, will the ruling for the invalidity of prayer be given or not? If the first possibility is accepted, then how can changing 'Dhad' to 'Dal' and reciting it generally and absolutely as 'Dal' be valid? And if it is the second possibility, then what is its specificator and what evidence necessitates this specification? Fourth: One who, from the text of Sharh Kabir, "wa la-dallin with Dha (ظ) or Dal (د) does not invalidate [prayer], etc.", has drawn a general analogy for reading 'Dal' instead of 'Dhad' without considering the divergence and distance in meaning—will that analogy be false or not? Because in this noble verse "hal nadullukum 'ala rajul..." (Shall we guide you to a man...), the author of Sharh Kabir has established proximity in meaning through the change and ruled the prayer valid. It is possible that in another place, changing 'Dhad' to 'Dal' causes corruption in meaning; then the meaning would become "they were destroyed". Or in "akwabun mawdu'ah" (cups set in place), which means vessels arranged in order, if it is read as "mawdu'ah" [with 'Dal'], its meaning would become "separated/removed," which signifies their disconnection, and so on in many instances.

[Right Column] Third: Just as the author of Ghunyah al-Mustamli, in the chapter 'Zallah al-Qari' of Sharh Munyah, has placed the basis of replacing one letter with another on the correctness or corruption of the meaning. Thus, in cases where despite the change of letter, the meaning remains correct, the ruling for the validity of prayer will be given. And where the change of letter causes the meaning to become corrupt, the ruling for the invalidity of prayer will be issued. When 'Dhad' is read as 'Dal', the same ruling will apply. Wherever corruption of meaning is necessitated by reading 'Dhad' as 'Dal', will the ruling for the invalidity of prayer be issued or not? If the first part is accepted, then how will changing 'Dhad' to 'Dal' and reciting it with the sound of 'Dal' be valid generally and absolutely? And if it is the

second part, then who is its specificator and what necessitates this specification? Fourth: Regarding the person who, based on the text of Sharh Kabir "wa la-dallin with Dha (ظ) or Dal (د) does not invalidate [prayer], etc.", has drawn a general analogy for reading 'Dal' instead of 'Dhad' without regard for the conflict or distance in meaning —is that analogy invalid or not? Because in the noble verse "hal nadullukum 'ala rajul..." (Shall we guide you to a man...), the author of Sharh Kabir has established proximity of meaning from the change and ruled the prayer as valid. However, it is possible that in another context, replacing 'Dhad' with 'Dal' leads to corruption of meaning, and its meaning would then be that they were ruined. Or in "akwabun mawdu'ah", where the meaning is vessels that have been set in order, if it were read as "mawdu'ah" [with Dal], whose...

फ़तावा रज़विया - खंड छठा

[बायाँ कॉलम] ...बदलकर पढ़ने पर पूर्णतः लोगों के चलन को दलील बनाता है, उसके कथन की सत्यता का औचित्य कैसे सिद्ध होगा? तीसरा: जैसा कि 'ग़ुनियातुल मुस्तमली' (शर्ह मुन्याह) के लेखक ने 'ज़ल्लतुल क़ारी' के अध्याय में एक अक्षर को दूसरे अक्षर से बदलने के नियम में अर्थ की शुद्धता या अशुद्धता को आधार बनाया है। जहाँ बदलाव के बावजूद अर्थ सही रहता है, वहाँ नमाज़ की शुद्धता का आदेश लिखा है, और जहाँ बदलाव के कारण अर्थ भ्रष्ट हो जाता है, वहाँ नमाज़ के भ्रष्ट (फ़ासिद) होने का आदेश दिया है। यही नियम 'ज़ाद' (ض) को 'दाल' (د) में बदलने पर भी लागू होगा। जहाँ 'ज़ाद' को 'दाल' पढ़ने से अर्थ भ्रष्ट होना आवश्यक हो, क्या वहाँ नमाज़ के भ्रष्ट होने का आदेश दिया जाएगा या नहीं? यदि पहली स्थिति स्वीकार्य है, तो फिर 'ज़ाद' को 'दाल' से बदलकर सामान्यतः और पूर्णतः'दाल' की आवाज़ में पढ़ना कैसे सही होगा? और यदि दूसरी स्थिति है, तो इसका विशिष्टीकरण (Mukhassis) क्या है और इस विशिष्टीकरण का कारण कौन सा प्रमाण है? चौथा: जिस किसी ने 'शर्ह कबीर' के इस कथन से कि "वला-दल्लीन को ज़ा (ظ) या दाल (د) के साथ पढ़ने से नमाज़ भ्रष्ट नहीं होती आदि" अर्थ के विरोध और दूरी पर ध्यान दिए बिना 'ज़ाद' के स्थान पर 'दाल' पढ़ने को सामान्य रूप से अनुकरण (क़यास) किया है, क्या वह अनुकरण अमान्य होगा या नहीं? क्योंकि पवित्र आयत "हल नदुल्लुकुम अला रजुल..." आदि में 'शर्ह कबीर' के लेखक ने बदलाव से अर्थ की निकटता सिद्ध की है और नमाज़ की शुद्धता का आदेश दिया है। यह संभव है कि किसी अन्य स्थान पर 'ज़ाद' को 'दाल' से बदलने से अर्थ का भ्रष्ट होना आवश्यक हो जाए और उसका अर्थ यह हो जाए कि "वे नष्ट हो गए", या "अकवाबुन मौदूअह" (अक्काबु मवज़ूअह) में जिसका अर्थ है वे बर्तन जो क्रम से रखे गए हों, यदि इसे "मौदूअह" (दाल के साथ) पढ़ा जाए जिसका अर्थ अलग किया हुआ होगा...

[दायाँ कॉलम] तीसरा: जिस प्रकार 'ग़ुनियातुल मुस्तमली' के लेखक ने 'शर्ह मुन्याह' के अध्याय 'ज़ल्लतुल क़ारी' में एक अक्षर को दूसरे अक्षर से बदलने की स्थिति में अर्थ की शुद्धता और अशुद्धता को आधार माना है, तो जिस स्थिति में अक्षर बदलने के बावजूद अर्थ सही रहेगा, नमाज़ की शुद्धता का आदेश दिया जाएगा। और जहाँ अक्षर बदलने के कारण अर्थ भ्रष्ट हो जाएगा, वहाँ नमाज़ के भ्रष्ट होने का आदेश लागू होगा। जब 'ज़ाद' को 'दाल' पढ़ा जाए, तो फिर यही नियम लागू होगा। जहाँ 'ज़ाद' को 'दाल' पढ़ने से अर्थ भ्रष्ट होना अनिवार्य हो जाए, वहाँ नमाज़ के भ्रष्ट होने का आदेश जारी होगा या नहीं? यदि पहला भाग स्वीकार्य है, तो 'ज़ाद' को 'दाल' से बदलकर सामान्यतः और पूर्णतः 'दाल' की आवाज़ में पढ़ना कैसे संभव होगा? और यदि दूसरा भाग है, तो इसका विशिष्टीकरण करने

वाला और उस विशिष्टीकरण का कारण कौन है? चौथा: जिस व्यक्ति ने 'शर्ह कबीर' के कथन "वला-दल्लीन को ज़ा (ظ) या दाल (د) के साथ पढ़ने से नमाज़ भ्रष्ट नहीं होती आदि" से 'ज़ाद' के स्थान पर 'दाल' पढ़ने का, अर्थ की विपरीतता और दूरी का विचार किए बिना सामान्य रूप से अनुमान लगाया है, वह अनुमान त्रुटिपूर्ण (फ़ासिद) है या नहीं? क्योंकि पवित्र आयत "हल नदुल्लुकुम अला रजुल..." आदि में 'शर्ह कबीर' के लेखक ने परिवर्तन से अर्थ की निकटता सिद्ध की है और नमाज़ के सही होने का आदेश दिया है। संभव है कि दूसरे स्थान पर 'ज़ाद' को 'दाल' से बदलने से अर्थ का दोषपूर्ण होना अनिवार्य हो जाए और उसका अर्थ यह हो जाए कि वे तबाह हो गए, या "अकवाबुन मवज़ूअह" में जिसका अर्थ है वे बर्तन जो तरतीब (क्रम) से रखे गए हों, अगर इसे "मौदूअह" पढ़ा जाए जिसका...

पेज 285/736

(بایاں کالم) بدل کر پڑھنے پر مطلقاً لوگوں کے معمول کو دلیل بناتا ہے اس کے قول کی صحت کی توجیہ کیسے ہوگی؟ سوم: چنانچہ صاحب غنیہ مستملی شرح منیہ در فصل زلۃ قاری بمقام حکم ابدال حرفے بحرفے مدار بر صحت و فساد معنی داشتہ بصور تیکہ معنی صحیح از بدل می شود حکم صحت نماز نگاشتہ و جائیکہ از بدل فساد معنی شدہ حکم فساد نماز دادہ ہمیں حکم در ابدال ضاد بدال مہملہ ہم جاری خواہد ماند و بہر جاکہ ضاد بدال مہملہ فساد معنی لازم است حکم فساد نماز دادہ خواہد شد یا نہ اگر شق اول مسلم است پس ابدال ضاد بدال مہملہ وبصورت دال خواندن عموماً ومطلقاً چگونہ صحیح خواہد شد و اگر شق ثانی است مخصص آں و موجب تخصیص کدام دلیل است۔

چہارم : کسیکہ از عبارت شرح کبیر و لا الضالین بالظاء المعجمۃ اوالدال المہملہ لا تفسد الخ خواندن دال بجائے ضاد بدون لحاظ تخالف و تباعد معنی علی العموم قیاس کردہ قیاس فاسد خواہد شد یا نہ زیرا کہ دریں آیہ کریمہ ھل ندلکم علی رجل ۔۔۔ الخ صاحب شرح کبیر از بدل قرب معنی ثابت کردہ و حکم صحت نماز دادہ و ممکن است کہ بدی گر مقام از ابدال ضاد بدال فساد معنی شود معنی آں خواہد شد تباہ شوند یا در "اکواب موضوعہ " کہ بمعنی بی ترتیب چیدہ شدہ است ہر گاہ، مودوعہ خواند شود معنی آں پدور کردہ شدہ خواہد شد کہ مشعر پر انقطاع آں ست علی ہذا بسیارے۔

(دایاں کالم) سوم: جس طرح صاحب غنیہ مستملی نے شرح منیہ کی فصل زلۃ القاری میں ایک حرف کو دوسرے حرف سے بدلنے کی صورت میں مدار معنی کی صحت و فساد پر رکھا ہے تو جس صورت میں تبدیلی حرف کے باوجود معنی درست ہوگا نماز کی صحت کا حکم دیا جائے گا اور جہاں تبدیلی حرف کی وجہ سے معنی فاسد ہوگا وہاں نماز کے فاسد ہونے کا حکم جاری ہوگا اور جب ضاد کو دال پڑھا جائے تو پھر بھی یہی حکم جاری ہوگا جہاں ضاد کو دال پڑھنے سے

فساد معنی لازم آئے وہاں نماز کے فساد کا حکم جاری ہو گا یا نہیں؟ اگر شق اول مسلم ہے تو ضاد کو دال سے بدل کر دال کی آواز میں پڑھنا عموماً و مطلقاً کیسے ہوگا اور اگر دوسری شق ہے تو اس کا مخصص اور موجب تخصیص کون ہے۔ چہارم: جس شخص نے شرح کبیر کی عبارت ولا الضالین بالظاء المعجمہ اوالدال المہملہ لا تفسد الخ۔ سے ضاد کی جگہ دال پڑھنا بغیر لحاظ مخالفت تباعد معنی علی العموم قیاس کیا ہے وہ قیاس فاسد ہے یا نہیں؟ کیونکہ آیت کریمہ ھل ندلکم علی رجل ... الخ میں صاحب شرح کبیر نے تبدیلی سے قرب معنی ثابت کیا ہے اور صحت نماز کا حکم دیا ہے اور ممکن ہے کہ دوسرے مقام ضاد کو دال سے بدلنے سے فسادِ معنی لازم آئے اور اس کا معنی یہ ہوگا کہ وہ تباہ ہوگئے، یا "اکواب موضوعہ" میں کہ اس کا معنی ہے وہ برتن جو ترتیب سے رکھے گئے ہوں، اگر اسے "مودوعۃ" پڑھا جائے جس کا

Fatawa Razawiyya Volume 6

[Right Column - Urdu Translation] The meaning would then be 'dismissed/allowed', a meaning that indicates its severance. Similarly, there are many Quranic verses whose state is not hidden from any observant and informed person. Therefore, in this case, a ruling of the invalidity of the prayer will certainly be given. When the ruling on the validity or invalidity of prayer, due to replacing the letter 'Daad' (ض) with 'Zha' (ظ) or 'Dal' (د), depends on the resulting change in meaning according to the author of 'Sharh al-Kabir', then based on the principle of widespread difficulty (Umum-e-Balwa), there is a ruling of non-invalidity for the common people because they cannot distinguish between correct pronunciation and change of meaning. Likewise, for the specialists (Khawas) who can distinguish every kind of difference, will this ruling apply to them or not?

Fifth: When it is mentioned in Imam Jazri's 'Tamheed', Sheikh al-Islam Zakariya Ansari's commentary on the 'Muqaddimah' of Jazri, and Mulla Ali Qari's commentary, that people's tongues vary in the pronunciation of 'Daad'—some pronounce it as 'Zha', some as 'Dal', some as 'Thal', and some give it a hint of 'Za'—and all these individuals are counted among the Arab reciters (Qurra), how can the claim of a continuous tradition (Tawarruth) of pronouncing 'Daad' as a plain 'Dal' be accepted? Explain and be rewarded.

[Left Column - Persian Source] There are verses whose status will not remain hidden from a careful observer. Therefore, in that case, the ruling of the invalidity of prayer will inevitably be given. And whenever the basis for the ruling on the validity and invalidity of prayer in the case of substituting 'Daad' with 'Zha' or 'Dal' depends on the change in meaning, as per the writing of the author of 'Sharh al-Kabir', then how can the aforementioned analogy based on widespread difficulty for the common people—who do not distinguish correct pronunciation from a change in meaning—be specifically applied to the non-invalidity of prayer for the specialists, who possess every kind of distinction? Will it be applicable or not?

Fifth: Whenever it is proven from the text of Jazri's 'Tamheed', the commentary of Sheikh al-Islam Zakariya Ansari on the 'Muqaddimah' of Jazri, and also from the commentary of Mulla Ali Qari, that the tongues of people are different in the performance of 'Daad'—some read it as 'Zha'—and all these individuals are numbered among the Arab reciters, then in this case, how will the claim of a

continuous tradition of performing 'Daad' with the sound of 'Dal' be acceptable? Explain and be rewarded.

Answer: In the name of Allah, the Most Gracious, the Most Merciful.

[Lower Left - Arabic] All praise is for Allah who revealed to His Prophet 'Sad' [the Quran]. Blessings and peace be upon the one who spoke 'Daad' most eloquently, and upon his family and companions who followed him, becoming provisions for the journey to the hereafter. May Allah Almighty bless him and grant him peace.

[Lower Right - Urdu Translation] All praise is for Allah who revealed 'Sad' (the glorious Quran in clear Arabic) to His Prophet. And blessings and peace be upon that personality who pronounced 'Daad' with an eloquent tongue (performed the recitation of the Quran most excellently) and upon your family and...

फ़तावा रज़विया, खंड 6

[दायां कॉलम - उर्दू अनुवाद] अर्थ यह होगा 'अनुमति प्राप्त', यह वह अर्थ है जो इसके विच्छेद की ओर संकेत करता है। इसी प्रकार, कुरान की कई आयतें हैं जिनकी स्थिति किसी भी अध्ययनकर्ता और जानकार व्यक्ति से छिपी नहीं है। इसलिए, इस स्थिति में निश्चित रूप से नमाज़ के अमान्य (फ़साद) होने का हुक्म दिया जाएगा। जब 'दाद' (ض) को 'ज़ा' (ظ) या 'दाल' (د) से बदलकर पढ़ने में नमाज़ की वैधता या अवैधता का हुक्म 'शराह अल-कबीर' के लेखक के अनुसार अर्थ के परिवर्तन पर निर्भर है, तो फिर व्यापक कठिनाई (उमूम-ए-बलवा) के आधार पर आम लोगों के लिए नमाज़ के अमान्य न होने का कथन है क्योंकि वे सही उच्चारण और अर्थ परिवर्तन के बीच अंतर नहीं कर सकते। इसी प्रकार, जो विद्वान (ख़वास) हर प्रकार का अंतर कर सकते हैं, क्या उन पर भी यह नियम लागू होगा या नहीं?

पांचवां: जब इमाम ज़ज़री की 'तमहीद', शेखुल इस्लाम ज़करिया अंसारी की 'मुक़द्दमा-ए-ज़ज़री' की व्याख्या और मुल्ला अली क़ारी की व्याख्या में यह है कि 'दाद' के उच्चारण में लोगों की ज़बानें अलग-अलग हैं—कुछ इसे 'ज़ा' पढ़ते हैं, कुछ 'दाल', कुछ 'ज़ाल' और कुछ इसमें 'ज़ा' की हल्की ध्वनि मिलाकर पढ़ते हैं—और ये सभी लोग अरब क़ारियों (पाठकों) में गिने जाते हैं, तो ऐसी स्थिति में 'दाद' को 'दाल महमला' पढ़ने की निरंतर परंपरा (तवारुथ) के दावे को कैसे स्वीकार किया जा सकता है? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

[बायां कॉलम - फारसी स्रोत] ऐसी आयतें हैं जिनकी स्थिति एक सावधान पर्यवेक्षक से छिपी नहीं रहेगी। अतः उस स्थिति में अनिवार्य रूप से नमाज़ के अमान्य होने का हुक्म दिया जाएगा। और जब भी 'दाद' को 'ज़ा' या 'दाल' से बदलने की स्थिति में नमाज़ की वैधता और अवैधता का आधार 'शराह अल-कबीर' के लेखक के लेखन के अनुसार अर्थ में बदलाव पर निर्भर करता है, तो आम लोगों के लिए व्यापक कठिनाई के आधार पर नमाज़ के अमान्य न होने का उपर्युक्त अनुमान—जो सही उच्चारण और अर्थ परिवर्तन में कोई अंतर नहीं समझते—विद्वानों के लिए कैसे लागू होगा जो हर प्रकार का अंतर समझते हैं? क्या यह लागू होगा या नहीं?

पांचवां: जब भी ज़ज़री की 'तमहीद', शेखुल इस्लाम ज़करिया अंसारी की 'मुक़द्दमा-ए-ज़ज़री' की व्याख्या और मुल्ला अली क़ारी की व्याख्या से यह सिद्ध है कि 'दाद' के उच्चारण में लोगों की ज़बानें भिन्न हैं—कुछ इसे 'ज़ा' पढ़ते हैं—और ये सभी व्यक्ति अरब क़ारियों में गिने जाते हैं, तो इस स्थिति में

'दाद' को 'दाल' की ध्वनि के साथ पढ़ने की निरंतर परंपरा के दावे को कैसे स्वीकार किया जाएगा? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: अल्लाह के नाम से, जो अत्यंत दयालु और कृपाशील है।

[नीचे बाईं ओर - अरबी] सारी प्रशंसा अल्लाह के लिए है जिसने अपने नबी पर 'साद' (कुरान) अवतरित किया। उस पर आशीर्वाद और शांति हो जिसने 'दाद' का उच्चारण सबसे सुरीले ढंग से किया, और उसके परिवार और साथियों पर जिन्होंने उसका अनुसरण किया और परलोक की यात्रा के लिए पाथेय बने। अल्लाह सर्वशक्तिमान उन पर कृपा और शांति बरसाए।

[नीचे दाईं ओर - उर्दू अनुवाद] सारी प्रशंसा अल्लाह के लिए है जिसने अपने नबी पर 'साद' (स्पष्ट अरबी भाषा में महान कुरान) अवतरित किया। और उस महान व्यक्तित्व पर आशीर्वाद और शांति हो जिसने 'दाद' को धाराप्रवाह भाषा में उच्चारित किया (कुरान का पाठ सबसे उत्तम तरीके से किया) और आपके परिवार और...

[دایاں کالم - اردو] معنی یہ بنے گا رخصت کیا ہوا، یہ معنی وہ ہے جو اس کے انقطاع کی طرف مشعر ہے علیٰ ہذا القیاس بہت سی آیات قرآنی ہیں جن کا حال ہر صاحبِ مطالعہ اور باخبر شخص سے مخفی نہیں ہیں، پس اس صورت میں یقیناً نماز کے فساد کا حکم ہی دیا جائے گا، جب ضاد کو ظا اور دال سے بدل کر پڑھنے میں نماز کی صحت و فساد کے حکم کا مدار خود صاحب شرح کبیر کی تحریر کے مطابق صحت معنی و فساد معنی کی تبدیلی پر ہے، تو پھر عمومِ بلویٰ کی بنیاد پر عوام کے حق میں عدمِ فسادِ نماز کا قول جس کی وجہ یہ ہے کہ صحتِ لفظ اور تبدیلی معنیٰ کا فرق عوام نہیں کرسکتے اسی طرح خواص جو ہر قسم کا فرق کرسکتے ہیں تو کیا ان پر بھی یہ حکم جاری ہو گا یا نہ؟ پنجم : جب امام جزری کی تمہید عبارت ، شیخ الاسلام زکریا انصاری کی شرح مقدمہ جزری اور شرح ملّا علی قاری میں ہے کہ لوگوں کی زبانیں ضاد کی ادائیگی میں مختلف ہیں بعض ظا، بعض دال، بعض ذال اور بعض اسے زا کی بو دے کر پڑھتے ہیں اور یہ تمام حضرات قراءِ عرب میں شمار ہوتے ہیں اس صورت میں ضاد کو دال مہملہ پڑھنے پر توارث کا دعویٰ کیسے تسلیم کیا جاسکتا ہے؟ بینوا توجروا۔

[بایاں کالم - فارسی] آیات ہستند کہ حالش بر متقنّش خبیر پوشیدہ نخواہد ماند پس دراں صورت لامحالہ حکم فسادِ نمازدادہ خواہد شد و ہر گاہ مدار حکم صحت و فسادِ نماز بصورت ابدال ضاد وبظاء ودال خود حسب تحریر صاحب شرح کبیر بر صحت وفسادِ معنی بدل شدہ چگونہ قیاس مذکور بسبیل عمومِ بلویٰ بمخصوص عدم فسادِ صلوۃ چنا نکہ در حقِ عوام است کہ بیچ امتیاز در صحتِ لفظ وفرقِ معنی نمی دارند ہمنیاں در حقِ خواص کہ امتیاز ہر گونہ دارند جاری خواہد شد یانہ۔ پنجم : ہر گاہ از عبادت تمہید جزری و شرح شیخ الاسلام زکریا انصاری بر مقدمہ جزری و ہم از شرح ملا

علی قاری بر آں ثابت است کہ السنہ ناس در ادائے ضاد مختلف است بعضے ظائے معجمہ می خوانند وایں ہمہ حضرات از قراءِ عرب معدودند دریں صورت دعویٰ توارث ادائے ضاد بصوت دال چگونہ قابل تسلیم خواہد شد۔ بینوا توجروا۔

الجواب: بسم اللہ الرحمن الرحیم الحمد للہ الذی انزل علی نبیہ ص والصلوٰۃ والسلام علی افصح من نطق بضّ وعلی اٰلہ وصحبہ الذین اقتدوہ وھم لسفر الآخرۃ زاد ، صلی اللہ تعالٰی وبارک وسلم علیہ و تمام حمد اللہ کے لئے جس نے اپنے نبی پر ص (قرآن عظیم روشن عربی زبان میں) نازل کیا اور صلوٰۃ و السلام اس ذات پر جس نے ض کو فصیح زبان سے ادا کیا (قرآن کی تلاوت سب سے اعلیٰ فرمائی) اور آپ کی آل و

[Right Column - Modern Urdu Version] ...upon the companions who followed you while they were the provisions for the journey to the hereafter. May Allah, the Exalted, send and increase mercies, blessings, and peace upon you and upon all of them. Allah the Almighty revealed the Great Quran in clear Arabic to His Arabic Qurayshi Prophet (peace and blessings of Allah be upon him). For its recitation, listening, and for the benefit and advantage of His servants, Allah the Almighty granted His noble, eternal attribute by clothing it in letters and sounds. The Noble Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) conveyed the Holy Quran to the companions exactly as it was revealed. The companions to the successors (Tabi'in), the successors to the successors of the successors (Tabi' al-Tabi'in), and similarly in every era and every layer, every letter, movement, attribute, and form of it has been transmitted to us at the highest level of mass-transmission (tawatur). Beyond this, the concept of tawatur cannot even be imagined. Praise be to Allah, Who is of lofty greatness. Regarding this, the words of Allah the Almighty are: "Verily, We have sent down the Dhikr (the Quran), and We will surely be its guardians." [1] Praise be to Allah, regarding any word from the noble words of the Quran, there can never be any kind of doubt that perhaps "Ash-Shukr" was revealed instead of "Al-Hamd". Similarly, thanks to Allah, there is no doubt or hesitation regarding any letter of the Quran, like perhaps instead of "Alif Lam" for definition, "Meem" was revealed. Just as we have certain conviction that Alif, Ain, Qaaf...

[Left Column - Original Scholarly Urdu Version] ...upon them. And the Truth (Allah), Exalted and Blessed, sent the Great Quran in clear Arabic upon the Arabic Qurayshi Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) for the recitation, audition, seeking of grace, and benefit of the servants. He manifested His noble and eternal attribute in the mantle of letters and sounds. The Master of the World (peace and blessings of Allah be upon him) conveyed it to the noble companions exactly as it was revealed to him. And the companions [passed it] to the successors, and the successors followed suit, and thus generation after generation and class by class, every single letter, vowel, attribute, and form reached us through the furthest reaches of mass-transmission (tawatur), beyond which no higher form is conceivable. Praise be to Allah, the High, the Glorious. And that is [according to] the word of the Most High: "Verily, We have sent down the Dhikr (the Quran), and We will surely be its guardians." [1] So, by the grace of Allah, just as there is absolutely no room for doubt regarding any word of its noble words that perhaps "Ash-Shukr" was revealed instead

of "Al-Hamd", likewise there is no room for hesitation that perhaps instead of the defining "Lam", it was the defining "Meem". Therefore, just as we know with categorical certainty that 'Alif' (ا), 'Ain' (ع), and 'Qaaf' (ق) are distinct in the Arabic language—[for instance] in the Great Quran 'Illa' (الا), 'Ala' (علا), and 'Fala' (فلا) have different meanings—on that same basis, I recognize with certain conviction that 'Dad' (ض), 'Za' (ظ), and 'Zal' (ذ) are also three distinct letters in the Arabic tongue. And in the Noble Criterion (Quran), 'Dalla' (ضل), 'Zalla' (ظل), and 'Dhalla' (ذل) have differing meanings. Thus, reading 'Dad' as 'Za' or 'Zal' remains exactly like someone reading 'Alif' as 'Ain' or 'Fe'...

---

1 Al-Quran 15/9 Page 287 of 736

[दायां स्तंभ - आधुनिक उर्दू संस्करण] ...उन साथियों पर जिन्होंने आपका अनुसरण किया जब वे परलोक की यात्रा के लिए सामग्री थे। अल्लाह जल जलालाहु आप पर और उन सभी पर रहमतें, बरकतें और शांति नाज़िल फरमाए और उनमें वृद्धि करे। अल्लाह अज़्ज़-व-जल्ल ने महान कुरान को स्पष्ट अरबी भाषा में अपने अरबी कुरैशी नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) पर नाज़िल फरमाया। इसके पाठ (तिलावत), श्रवण (समाअत) और बंदों के लाभ और उपयोग के लिए अल्लाह तआला ने अपने महान शाश्वत गुण को अक्षरों और ध्वनियों का रूप देकर अपने बंदों को प्रदान किया। नबी अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने सहाबा तक कुरान पाक को उसी तरह पहुँचा दिया जिस तरह वह नाज़िल हुआ था। सहाबा ने ताबेईन तक, ताबेईन ने तब-ए-ताबेईन तक, और इसी तरह हर युग और हर वर्ग में इसका हर अक्षर, हर हरकत, गुण और स्वरूप तवातुर (निरंतरता) के उच्चतम स्तर के साथ हम तक पहुँचा है। इससे बढ़कर तवातुर की कल्पना भी नहीं की जा सकती। अल्लाह के लिए प्रशंसा है जो महान महानता वाला है। इसी के बारे में अल्लाह तआला का पवित्र कथन है: "निस्संदेह हमने ही इस ज़िक्र (कुरान) को उतारा है और हम ही इसके संरक्षक हैं।" [1] अल्हम्दुलिल्लाह, कुरान मजीद के शब्दों में से किसी एक शब्द के बारे में भी कभी किसी प्रकार का संदेह नहीं किया जा सकता कि शायद 'अल-हम्द' की जगह 'अश-शुक्र' नाज़िल हुआ था। इसी तरह अल्लाह तआला का शुक्र है कि कुरान के किसी अक्षर के बारे में कोई संदेह या हिचकिचाहट नहीं है कि शायद 'अलिफ़ लाम' की जगह परिभाषा के लिए 'मीम' नाज़िल हुआ था। जिस तरह हमें पूर्ण विश्वास है कि अलिफ, ऐन, क़ाफ़...

[बायां स्तंभ - मूल विद्वतापूर्ण उर्दू संस्करण] ...उन पर, और हक़ जल-व-अला और तबारक ने वृद्धि की। महान कुरान को स्पष्ट अरबी भाषा में अरबी कुरैशी नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) पर बंदों की तिलावत, समाअत, इस्तेफ़ाज़ा और लाभ के लिए भेजा। उस करीम और कदीम सिफ़त को हर्फ़ और आवाज़ के लिबास में ज़ाहिर फरमाया। सैय्यद-ए-आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने सहाबा-ए-किराम तक वैसे ही पहुँचाया जैसा उन पर नाज़िल हुआ था। और सहाबा ने ताबेईन को, और ताबेईन ने उनके पदचिह्नों पर चलते हुए, इसी तरह पीढ़ी दर पीढ़ी और वर्ग दर वर्ग, हर-हर हर्फ़ हरकत, सिफ़त और हैयत तवातुर की उस अंतिम सीमा पर पहुँची है जिसके ऊपर कुछ सोचा नहीं जा सकता। और प्रशंसा अल्लाह के लिए है जो उच्च और महान है। और वही अल्लाह तआला का फरमान है: "निस्संदेह हमने ही इस ज़िक्र को उतारा है और हम ही इसके रक्षक हैं।" [1] तो अल्लाह

के शुक्र से, जिस तरह इसके महान शब्दों में से किसी शब्द में बिल्कुल संदेह की गुंजाइश नहीं है कि शायद 'अल-हम्द' की जगह 'अश-शुक्र' नाज़िल हुआ हो, वैसे ही इसमें भी कोई संदेह नहीं है कि शायद मारिफ़ा (परिभाषा) के'लाम' की जगह 'मीम' रहा हो। फिर जिस तरह हम पक्के यकीन के साथ जानते हैं कि अरबी भाषा में 'अलिफ' (ا), 'ऐन' (ع) और 'काफ' (ق) अलग-अलग हैं—जैसे कुरान-ए-अज़ीम में 'इल्ला' (الا), 'अला' (علا) और 'फ़ला' (فلا) अलग-अलग अर्थों में आते हैं—उसी तरह मैं पूर्ण निश्चय के साथ जानता हूँ कि 'दाद' (ض), 'ज़ा' (ظ) और 'ज़ाल' (ذ) भी अरबी भाषा के तीन अलग-अलग अक्षर हैं। और फ़ुरकान-ए-करीम में 'दल्ल' (ضل), 'ज़ल्ल' (ظل) और 'ज़ल्ल' (ذل) के अर्थ अलग-अलग हैं। अतः'दाद' को 'ज़ा' या 'ज़ाल' पढ़ना ठीक वैसा ही होगा जैसे कोई 'अलिफ' को 'ऐन' या 'फ़े पढ़ दे...

---

1 अल-कुरान 9/15 पृष्ठ 287 / 736

[دایاں کالم] اصحاب پر جنہوں نے آپ کی اقتداء کی جبکہ وہ سفر آخرت کے لئے سامان ہیں۔ اللہ جل جلالہ، رحمتیں، برکتیں اور سلامتی آپ پر اور ان سب پر نازل فرمائے اور زیادہ کرے، قرآن عظیم روشن عربی زبان میں اللہ عزوجل نے اپنے عربی قریشی نبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم پر نازل فرمایا اور اسکی تلاوت و سماعت اور اس سے استفاضہ و نفع کے لئے اللہ تعالیٰ نے اپنی صفت کریمہ قدیمہ کو حروف و تجلی اصوات کا لباس پہنا کر اپنے بندوں کو عنایت فرمایا نبی اکرم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے صحابہ تک قرآن پاک کو اسی طرح پہنچادیا جس طرح وہ نازل ہوا تھا۔ صحابہ نے تابعین تک تابعین تبع تابعین تک، اور اسی طرح ہر دور اور ہر طبقہ میں اس کا حرف ہر حرکت صفت اور ہیئت تواتر کے اعلی درجہ کے ساتھ ہم تک منقول ہے اس سے بڑھ کر تواتر کا تصور بھی نہیں ہوسکتا، حمد ہے اللہ کے لئے جو بلند بزرگی والا ہے اسی سے متعلق اللہ تعالیٰ کا ارشاد گرامی ہے: "بلا شبہ ہم نے اس ذکر کو نازل کیا ہے اور ہم ہی اسکے محافظ ہیں۔" [1] الحمد للہ قرآن مجید کے کلمات میں سے کسی ایک کلمہ کے بارے میں بھی ہرگز کسی قسم کا وہم نہیں کیا جاسکتا کہ شاید الحمد کی جگہ الشکر نازل ہوا تھا، اسی طرح اللہ تعالیٰ کا شکر ہے کہ قرآن کے کسی حرف کے بارے میں کوئی شک و تردد نہیں کہ شاید الف لام کی جگہ تعریف کے لئے میم نازل ہوا تھا ، جس طرح ہمیں قطعی یقین ہے کہ ا، ع، ق

[بایاں کالم] علیہم وزاد حق جل وعلا و تبارک قرآن عظیم بلسان عربی مبین بر نبی عربی قریشی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرستاد برائے تلاوت و استماع و استفاضہ وا نتقاع عباد آں صفت کریمہ قدیمہ خود را بکِسوَتِ حروف و اصوات تجلی داد سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کما انزل الیہ بصحابہ کرام رسانید و صحابہ بتابعین و تابعین بہ تبع و ہمچناں قرناً بقرناً وطبقۃً ببطقۃً ہر ہر حرف و

حرکت و صفت و ہیئت بر اقصی غایات تواتر کہ موفوق آں متصور نیست بما رسید والحمد للہ العلی المجید وذلک قولہ تعالیٰ اِنَّا نَحْنُ نَزَّلْنَا الذِّكْرَ وَ اِنَّا لَهٗ لَحٰفِظُوْنَ﴿۹﴾ بس بحمداللہ چنانچہ در ہیچ کلمہ از کلمات کریمہ اش اصلاً محل توہم نیست کہ شاید بجائے الحمد الشکر نازل شدہ باشد ہمچناں بجائے تردد نیست کہ شاید بمحمل لام تعریف میم تعریف بودہ باشد پس بنحویکہ بیقین قاطع میدانیم کہ ا و ع و ق در زبان عربی جداگانہ است در قرآن عظیم الا و علا و فلا بر معانی مختلف برہماں وجہ بیقین جازم می شناسم کہ ض و ظ و ذ نیز لسان عرب سہ حرف متباین است و در فرقان کریم و ضل و ظل و ذل بمبدلولات مخالفہ پس ض را ظ یا ذ خواندن بعینہ بمان ماند کہ کسے "ا" را ع یا ف خواند ادعائے دعائے توارث درادائے بجائے

---

1 القرآن ۹/۱۵ صفحہ 287 از 736

Fatawa Razvia Volume Six

(Left Column) Pronouncing 'Daad' (ض) harshly is entirely wrong and erroneous. If 'tawaruth' (inherited practice) refers to the intent of reliable scholars of Quranic recitation, then it is inherently false and rejected; and if it refers to the common people of India, then what benefit is there in it? Pauses (saktahs) in Surah Al-Fatiha have been prevalent among the commoners for hundreds of years, and to justify them, they have concocted seven names of Satan: Dalil, Harb, Kayo, Kana', Kanas, Ta'li, Ba'li. Others have added two more names, Mumma and Misra. According to their false claim, I see that their intensity in preserving these pauses is greater and more excessive than their preservation of the consensus-based obligations of Tajweed. Anyone who does not observe these pauses, these ignorant fools consider them unaware and heedless of the Tajweed of the Quran. Observe how among them, the 'Ma'ruf' (known good) has become 'Munkar' (denied/unknown) and the 'Munkar' has become 'Ma'ruf'. These false inventions have no reality other than what is said: 'These are but names which you have named.' Scholars have condemned these false pauses and clarified their falsehood. Allama Ibrahim Halabi states in 'Ghunyat al-Mustamli', it is mentioned in 'Fatawa al-Hujjah': 'When the worshiper reaches "Iyyaka Na'budu wa Iyyaka Nasta'een" in Al-Fatiha, it is not appropriate for him to stop at the word "Iyyaka" and then say "Na'budu".'

(Right Column) In the Arabic language, 'Daad' (ض) and 'Zaa' (ظ) are distinct letters, and in the Quran, 'Ala' (الا), 'Ula' (علا), and 'Fala' (فلا) have different meanings. Similarly, we are absolutely certain that 'Daad' (ض), 'Zaa' (ظ), and 'Zaal' (ذ) are mutually distinct letters in the Arabic language, and in the Great Quran (Furqan-e-Azeem), the meanings of 'Dhal' (ضل), 'Zhal' (ظل), and 'Dhal' (ذل) are different and distinct. Therefore, pronouncing 'Daad' (ض) exactly as 'Zaa' (ظ) or 'Zaal' (ذ) is like someone pronouncing 'Alif' (l) as 'Ain' (ع) or 'Fa' (ف). As for the claim of a traditional inheritance that 'Daad' (ض) is pronounced as 'Daal' (د), it is severely incorrect because if this inheritance refers to the practice of reliable Quranic reciters, then it is inherently false and rejected. If it refers to the inheritance of the common people of India, then how can the objective be achieved through it? The state of the common people is such that for hundreds of years, seven pauses have been prevalent in Surah Al-Fatiha, and the ignorant, in their justification, name seven devils: Dal, Harb, Kayo, Kana', Kanas, Ta'li, Ba'li. Some add two more names, Mumma and Misra. According to their false assumption, they found it appropriate. According to their wrong notion, they preserve these seven pauses more than the consensus-based obligations of Tajweed.

And whoever does not observe them, these fools consider him ignorant and heedless of Quranic Tajweed. Look closely at how, among the common people, 'Ma'ruf' has become 'Munkar' and 'Munkar' has become 'Ma'ruf'. There is no reality to these false superstitions beyond being their self-made names and concepts. People of knowledge have severely condemned these false pauses and clarified their falsehood. Allama Ibrahim Halabi states in 'Ghunyat al-Mustamli', it is mentioned in 'Fatawa al-Hujjah'.

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

(बायाँ कॉलम) 'दाद' (ض) का कठोर उच्चारण पूरी तरह से गलत और त्रुटिपूर्ण है। यदि 'तवारुस' (वंशानुगत प्रथा) से विश्वसनीय कुरान पाठकों (क़ुर्रा) का उद्देश्य मुराद हो, तो यह स्वयं ही निराधार और अस्वीकृत है; और यदि भारत के आम लोगों का उत्तराधिकार मुराद है, तो इससे क्या लाभ? सैकड़ों वर्षों से आम लोगों में सूरह फ़ातिहा के सख्ते (विराम) प्रचलित हैं और उन्हें सही ठहराने के लिए उन्होंने शैतान के सात नाम गढ़े हैं: दलील, हर्ब, कयो, कनअ, कनस, ताली, बाली। अन्य लोगों ने दो और नाम, मुम्मा और मिसरा जोड़ दिए हैं। उनके गलत दावे के अनुसार, मैं देखता हूँ कि इन विरामों को संरक्षित करने की उनकी तीव्रता तजवीद की सर्वसम्मत अनिवार्यताओं के संरक्षण से भी अधिक है। जो कोई भी इन विरामों का पालन नहीं करता है, ये अज्ञानी मूर्ख उन्हें कुरान की तजवीद से अनजान और बेखबर मानते हैं। देखें कि उनके बीच 'मारूफ' (ज्ञात अच्छाई) कैसे 'मुनकर' (बुराई) बन गया है और 'मुनकर' 'मारूफ' बन गया है। इन झूठे आविष्कारों की कोई वास्तविकता नहीं है, सिवाय इसके जो कहा गया है: 'ये केवल वे नाम हैं जो आपने रखे हैं।' विद्वानों ने इन झूठे विरामों की निंदा की है और उनके गलत होने को स्पष्ट किया है। अल्लामा इब्राहिम हलबी 'ग़ुनियातुल मुस्तमली' में कहते हैं, 'फ़तावा अल-हुज्जह' में उल्लेख किया गया है: 'जब नमाज़ी अल-फ़ातिहा में "इय्याका ना'बुदु व इय्याका नस्तईन" पर पहुँचे, तो उसके लिए "इय्याका" शब्द पर रुकना और फिर "ना'बुदु" कहना उचित नहीं है।'

(दायाँ कॉलम) अरबी भाषा में 'दाद' (ض) और 'ज़ा' (ظ) अलग-अलग अक्षर हैं, और कुरान में 'इला' (الا), 'उला' (علا), और 'फ़ला' (فلا) के अलग-अलग अर्थ हैं। इसी तरह, हम पूरी तरह से आश्वस्त हैं कि अरबी भाषा में 'दाद' (ض), 'ज़ा' (ظ), और 'ज़ाल' (ذ) परस्पर भिन्न अक्षर हैं, और महान कुरान (फ़ुरक़ान-ए-अज़ीम) में 'दल' (ضل), 'ज़ल' (ظل), और 'ज़ल' (ذل) के अर्थ अलग और भिन्न हैं। इसलिए, 'दाद' (ض) का उच्चारण बिल्कुल 'ज़ा' (ظ) या 'ज़ाल' (ذ) की तरह करना वैसा ही है जैसे कोई 'अलिफ़' (ا) का उच्चारण 'ऐन' (ع) या 'फ़ा' (ف) के रूप में करे। जहाँ तक इस पारंपरिक विरासत के दावे का सवाल है कि 'दाद' (ض) का उच्चारण 'दाल' (د) के रूप में किया जाता है, यह अत्यधिक गलत है क्योंकि यदि यह विरासत विश्वसनीय कुरान पाठकों के अभ्यास को संदर्भित करती है, तो यह स्वाभाविक रूप से झूठी और अस्वीकृत है। यदि यह भारत के आम लोगों की विरासत को संदर्भित करता है, तो इसके माध्यम से उद्देश्य कैसे प्राप्त किया जा सकता है? आम लोगों की स्थिति यह है कि सैकड़ों वर्षों से सूरह फ़ातिहा में सात विराम प्रचलित हैं, और अज्ञानी, अपने औचित्य में

सात शैतानों के नाम लेते हैं: दल, हर्ब, कयो, कनअ, कनस, ताली, बाली। कुछ दो और नाम जोड़ते हैं, मुम्मा और मिसरा। अपनी गलत धारणा के अनुसार, उन्होंने इसे उचित पाया। अपनी गलत धारणा के अनुसार, वे इन सात विरामों को तजवीद की सर्वसम्मत अनिवार्यताओं से अधिक सुरक्षित रखते हैं। और जो कोई उनका पालन नहीं करता है, ये मूर्ख उसे कुरान की तजवीद से अनभिज्ञ और बेखबर मानते हैं। करीब से देखें कि कैसे आम लोगों के बीच 'मारूफ' 'मुनकर' बन गया है और 'मुनकर' 'मारूफ' बन गया है। इन झूठे अंधविश्वासों की वास्तविकता उनके स्वयं के बनाए नामों और अवधारणाओं के अलावा कुछ नहीं है। ज्ञानियों ने इन झूठे विरामों की कड़ी निंदा की है और उनके झूठ को स्पष्ट किया है। अल्लामा इब्राहिम हलबी 'गुनियातुल मुस्तमली' में कहते हैं, यह 'फ़तावा अल-हुज्जह' में वर्णित है।

पृष्ठ 288 का 736

فتاوی رضویہ جلد ششم

(بایاں کالم) ض سخت است بس غلط و پُر بمیزہ۔ توارث اگر در علمائے معتمدین قرائت مقصود، خود باطل و مردود و اگر در عوام ہند مراد، ازیں چہ کشاد سکتات سورۃ فاتحہ از صد ہا سال در عامیاں رائج است وجملہ برائے توجیہ آنہا ہفت نام شیطان دروئے تراشیدہ اند دلل ھرب کیوکنع کنس تعلی بعلی بعض دیگر فرمودند مما ومصرا، وکذلك كان ينبغي على مزعومهم شدت تحفظ ایشاں بریں سکتات بیشتر و فزود تراز تحفظ بر واجبات اجماعیہ تجوید مے بینم، و ہر کہ مراعات آنہاں نکند ایں ناداں او را از تجوید قرآن جاہل و غافل دانند فانظر كيف صار فيهم المعروف منكراً والمنكر معروفاً۔ ایں اختراعاتِ باطلہ را حقیقت بیش ازاں نیست کہ ان ھی الا اسماء سمیتموھا۔ علماء ایں سکتات باطلہ را تقبیح کردہ اند و بطلان آنہا تصریح، علامہ ابراہیم حلبی در غنیۃ المستملی فرماید قال فی فتاوی الحجۃ، المصلی اذا بلغ فی الفاتحۃ ایاك نعبد و ایاك نستعین لا ینبغی ان یقف علی قولہ ایاك ثم یقول نعبد

(دایاں کالم) عربی زبان میں ض اور ظ الگ الگ حروف ہیں اور قرآن میں الا، علا اور فلا کے الگ الگ مختلف معنی ہیں، اسی طرح ہم اس پر بھی حتمی یقین رکھتے ہیں کہ ض، ظ اور ذ زبان عرب میں آپس میں متبائن حروف ہیں اور فرقان عظیم میں ضل، ظل اور ذل کے معانی مختلف اور متبائن ہیں پس ض کو بعینہ ظ یا ذ پڑھنا اسی طرح ہے جیسے کوئی الف کو عین یا فا پڑھا کرے باقی اس توارث کا دعویٰ کہ ض کی جگہ دال ہے سخت غلط ہے کیونکہ اس توارث سے مراد قابلِ اعتماد قراء کا مقصود ہو تو یہ از خود باطل و مردود عوام ہند کا توارث ہے تو اس سے مقصد کیسے حاصل ہو سکتا ہے! عوام کا حال تو یہ ہے کہ صد ہا سال سے سورہ فاتحہ میں سات سکتنے رائج ہیں اور جاہل ان کی توجیہ میں سات یاطین کا نام لیتے ہیں دل، حرب، کیو، کنع کنس، تعلی، بعلی، اور بعض ان دو ناموں مما اور مصرا کا اضافہ کرتے ہیں انکے زعم پر انہیں یونہی مناسب

نظر آیا اپنے غلط زعم کے مطابق ان سات سکتات کا تحفظ تجوید کے اجماعی واجبات سے بڑھ کر کرتے ہیں، اور جوان کی پابندی نہیں کرتا یہ بے وقوف اسے تجوید قرآن سے جاہل اور غافل قرار دیتے ہیں آپ غور سے دیکھیں کیسے عوام کے ہاں معروف منکر اور منکر معروف بن چکا ہے۔

ان خرافاتِ باطلہ کی کوئی حقیقت اس سے زیادہ نہیں کہ یہ ان کے خود ساختہ نام اور تصورات ہیں، اہلِ علم نے ان باطل سکتوں کی سخت تقبیح کی ہے اور ان کے باطل ہونے کی تصریح کی ہے علامہ ابراہیم حلبی غنیۃ المستملی میں فرماتے ہیں فتاوی الحجہ میں ہے۔

صفحہ 288 از 736

Fatawa Razawiya - Volume Six

“Indeed, it is better and more correct to connect ‘Iyyaka na'budu wa iyyaka nasta'in’ (You alone we worship and You alone we ask for help). Ended. No consideration is to be given to those ignorant self-proclaimed jurists who make pauses (saktah) without any proof or knowledge.” - Ended.

Allama Ali al-Qari (may Allah have mercy on him), in his book ‘Minhat al-Fikriyyah’, after quoting from ‘Fatawa al-Hujjah’, says: “I say: What is famous among some ignorant people that there are names of Satan in such structures and compositions in Surah al-Fatihah, this is a blatant error and an ugly attribution. Furthermore, their pausing on the ‘dal’ of ‘Al-Hamdu’ and the ‘kaf’ of ‘Iyyaka’ and similar instances is an obvious mistake.” Allama Muhammad ibn Umar ibn Khalid al-Qurashi al-Hanafi wrote a dedicated treatise refuting this false notion, as mentioned in ‘Kashf al-Zunun’ in the section of treatises. I (the humble servant), in the early years of my life, even before becoming aware of these statements, used to refute these invalid pauses and knew the source of their invention. If the potential strangeness of the discourse were not a hindrance, I would have certainly put it in writing. Scholars have explained the various ways people pronounce the letter 'Dad' (ض)...

---

1 Ghunyat al-Mustamli Sharh Munyat al-Musalli, Chapter on the Errors of the Reciter, published by Suhail Academy, Lahore, p. 281. 2 Minah al-Fikriyyah Sharh al-Muqaddimah al-Jazariyyah, Explanation of Pausing at the Verse Endings, Sunnah edition, published by Mustafa al-Babi, Egypt, p. 63.

फ़तावा रज़विया - छठा खंड

“निश्चित रूप से यह बेहतर और अधिक सही है कि ‘इय्याका ना'बुदु व इय्याका नस्तईन’ (हम तेरी ही इबादत करते हैं और तुझी से मदद चाहते हैं) को मिलाकर पढ़ा जाए। समाप्त। उन अज्ञानी स्वयंभू न्यायविदों का कोई महत्व नहीं है जो बिना किसी प्रमाण या ज्ञान के रुकते (सकता) हैं।” - समाप्त।

अल्लामा अली अल-क़ारी (अल्लाह उन पर दया करे), अपनी पुस्तक ‘मिन्हात अल-फ़िक्रिया’ में ‘फ़तावा अल-हुज्जाह’ का उद्धरण देने के बाद कहते हैं: “मैं कहता हूँ: कुछ अज्ञानी लोगों की जुबान पर यह जो प्रसिद्ध है कि सूरह अल-फातिहा में इस प्रकार की संरचनाओं और बनावटों में शैतान के नाम हैं, यह बात पूरी तरह से गलत है और इसका आरोप भद्दा है। इसके अलावा, उनका ‘अल-हम्दु’ के’दाल’ और ‘इय्याका’ के’काफ़’ और इसी तरह के अन्य अक्षरों पर रुकना एक स्पष्ट गलती है।” अल्लामा मुहम्मद इब्न उमर इब्न खालिद अल-कुरशी अल-हनफ़ी ने इस झूठे विचार के खंडन में एक अलग शोध पत्र लिखा है, जैसा कि ‘कश्फ अल-ज़ुनून’ में शोध पत्रों के खंड में उल्लेख किया गया है। मैंने (फक़ीर ने) अपने शुरुआती दौर में, इन कथनों की जानकारी न होने के बावजूद, इन गलत विरामो का खंडन किया था और उनके आविष्कार के स्रोत को जानता था। यदि भाषण की संभावित विचित्रता रुकावट न होती, तो मैं इसे लिखित रूप में अवश्य लाता। विद्वानों ने 'दाद' (ض) के उच्चारण में लोगों के विभिन्न तरीकों का वर्णन किया है...

---

1 गुन्यात अल-मुस्तमली शरह मुन्यात अल-मुसल्ली, पाठक की गलतियों पर अध्याय, सुहेल अकादमी, लाहौर द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 281। 2 मिनह अल-फ़िक्रिया शरह अल-मुकद्दिमा अल-जज़रिया, आयत के अंत में रुकने का विवरण, सुन्नत संस्करण, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 63।

पृष्ठ २८९/७३६

فتاوی رضویه - جلد ششم

وانما الاولی والاصح ان یصل ایاك نعبد وایاك نستعین انتهی فلا اعتبار بمن یفعل ذلك السکت من الجهال المتفقهین بغیر علم اه ۱ کہ جب نمازی فاتحہ میں ایاک نعبد وایاک نستعین پر پہنچے تو یہ نہ کرے کہ ایاک پر رک جائے پھر نعبد کہے بلکہ اولیٰ اور اصح یہی ہے کہ ایاک نعبد وایاک نستعین کو متصل پڑھے انتہیٰ اگر بعض جاہل ان پڑھ لوگ بغیر کسی دلیل کے سکتہ کرتے ہیں تو ان کا ہر گز اعتبار نہیں کیا جائے گا اھ علامه علی قاری علیہ رحمۃ الباری در منحۃ الفکریہ بعد ایراد عبارت فتاوی الحجہ می فرمایند اقول: وما اشتهر علی لسان بعض الجهلة من القرآن فی سورة الفاتحة للشیطان کذا من الاسماء فی مثل هذه التراکیب من البناء فخطاء فاحش و اطلاق قبیح ثم سکتهم عن نحو دال الحمد وکاف ایاک وامثالها غلط صریح علامہ علی قاری علیہ الرحمۃ الباری منحۃ الفکریہ میں فتاویٰ الحجہ کی عبارت ذکر کرنے کے بعد کہتے ہیں میں کہتا ہوں بعض جاہل لوگوں کی زبان پر یہ جو مشہور ہے کہ قرآن کی سورۃ فاتحہ میں اس ترکیب سے شیطان کے نام ہیں، یہ بات صراحۃً غلط ہے اور اسکا قبیح پر اطلاق ہے، اور پھر ان کے سکتوں سے مراد الحمد کی "د" اور ایاک کی "کاف" ہے اور ان کی مثل دوسرے مقامات ہیں جو نہایت ہی غلط اور باطل ہیں علامہ محمد بن عمر بن خالد قرشی حنفی در رد این مزعوم رسالہ مستقلہ نوشت کما ذکرہ کشف الظنون فی ذکر الرسائل۔ علامہ محمد بن عمر بن خالد قرشی حنفی اس باطل خیال کے رد میں ایک مستقل رسالہ لکھا جس کا ذکر صاحب کشف الظنون نے رسائل میں کیا ہے۔ فقیر نے اپنے ابتدائی دور میں علماء کے مذکورہ ارشادات پر اطلاع نہ ہونے کے باوجود ان سکتوں کا رد کیا اور ان خرافات کے منشاء سے بھی آگاہی حاصل ہے اگر غرابت سخن مانع نہ ہوتی تو میں اسے احاطہ تحریر میں ضرور لاتا۔ علماء نے ضاد کی ادائیگی میں لوگوں کی مختلف...

1 غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل فی زلۃ القاری مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۲۸۱ 2 منح الفکریہ شرح المقدمۃ الجزریہ بیان الوقف علی رؤس الآیۃ سنۃ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ص ۶۳

Fatawa Rizvia Volume 6

Far be it that the meaning is that this method of delivery belongs to the Arab reciters. Rather, the intent is only to point out the errors and mistakes of the general public in the articulation of this letter, to warn against its invalidity, and to encourage avoidance of it. The statement of Mulla Ali al-Qari in the commentary on 'Muqaddimah al-Jazariyyah' under the author's statement, "And the letter Dād (ض), by means of its elongation (istitala) and its point of articulation (makhraj), is distinguished from the letter Zā (ظ), and all of them appear in: az-za'n (departure), az-zill (shade), az-zuhr (back), 'azm al-hifz (great preservation)... ayqiz (awaken), unzur (look), 'azm (great), zuhr (back), al-lafz (the word)..." is as follows:

The letter Dād is unique in its elongation (istitala) until it connects with the point of articulation of the letter Lām (ل), due to the strength of its vocal resonance (jahr), closure (itbaq), and elevation (isti'la). Among all letters, none is as difficult for the tongue to articulate as it is. People's tongues vary in its articulation: some pronounce it as Zā (ظ), some as an undotted Dāl (د) or a dotted Dhāl (ذ), some as an undotted Tā (ط) like the Egyptians, some give it the scent of a Dhāl (ذ), and some approximate it to the dotted Zā (ظ). However, since distinguishing it from Zā (ظ) is more difficult compared to other letters, the author (matn) explicitly mentioned distinguishing it, and then specified the instances where the letter Zā (ظ) appears phonetically in the Holy Quran, etc. This rigor is to ensure that scholars remain committed to preserving the distinction of letters, as highlighted by Imam al-Nazim (may Allah Almighty have mercy on him) when he listed the Quranic words.

---

1 Minah al-Fikriyyah Sharh al-Muqaddimah al-Jazariyyah, Chapter on Merging Homogenous Letters, printed by Mustafa al-Babi, Egypt, p. 38. Page 290 of 736

इसका यह मतलब कतई नहीं है कि अदायगी का यह तरीका अरब पाठकों (क़ुर्रा) का है। बल्कि, इसका उद्देश्य केवल इस अक्षर के उच्चारण में आम लोगों की गलतियों और त्रुटियों की ओर इशारा करना है, और इसकी अमान्यता पर चेतावनी देना और इससे बचने के लिए सचेत करना है। मुल्ला अली अल-कारी का बयान 'मुकद्दिमा अल-जज़रिया' की व्याख्या में लेखक के इस कथन के तहत है, "और दाद (ض) अपनी लंबाई (इस्तिताला) और उच्चारण स्थल (मखरज) के द्वारा जा (ظ) से अलग पहचाना जाता है, और ये सब इसमें आते हैं: अज़-ज़न (प्रस्थान), अज़-जिल (छाया), अज़-जुह्र (पीठ), अज़्म अल-हिफ़्ज़ (महान संरक्षण)... अय़क़िज़ (जगाना), उनज़ुर (देखना), अज़्म (महान), जुह्र (पीठ), अल-लफ़्ज़ (शब्द)..." इस प्रकार है:

दाद (ض) अपनी लंबाई (इस्तिताला) में अद्वितीय है यहाँ तक कि यह लाम (ل) के उच्चारण स्थल से जुड़ जाता है, क्योंकि इसमें स्वर गूंज (जह्र), बंदिश (इतबाक़) और ऊंचाई (इस्तिअला) की शक्ति पाई जाती है। कोई भी अन्य अक्षर जुबान के लिए इसके जैसा कठिन नहीं है। इसके उच्चारण में लोगों की जुबानें भिन्न हैं: कुछ इसे जा (ظ) के रूप में उच्चारित करते हैं, कुछ बिना नुक्ते वाले दाल (د) या नुक्ते वाले जाल (ذ) के रूप में, कुछ बिना नुक्ते वाले ता (ط) के रूप में जैसे मिस्र के लोग, कुछ इसमें जाल (ذ) की गंध देते हैं, और कुछ इसे नुक्ते वाले जा (ظ) के करीब पढ़ते हैं। चूँकि जा (ظ) से इसका अंतर अन्य अक्षरों की तुलना में कठिन है, इसलिए लेखक (मातन) ने स्पष्ट रूप से इसे अलग करने की बात की, और फिर उन स्थानों का वर्णन किया जहाँ पवित्र कुरान में जा (ظ) शब्द का उच्चारण में प्रयोग हुआ है, आदि। यह सख्ती विद्वानों के लिए अक्षरों के अंतर के संरक्षण पर कायम रहने के लिए है, जैसा कि इमाम नाज़िम (अल्लाह उन पर रहम करे) ने कुरान के शब्दों को दर्ज किया है।

---

1 मिनह अल-फ़िक्रिया शरह अल-मुक़द्दिमा अल-जज़रिया, मतलब इग़दाम अल-मुतजानिसीन, मुस्तफ़ा अल-बाबी द्वारा मुद्रित, मिस्र, पृष्ठ 38। पृष्ठ 290 / 736

حاشا مراد نہ آنست کہ این طریق ادا قراء عرب است بلکہ مقصود بیان غلط و خطائے عوام در ادائے ایں حرف و تنبیہ بر بطلان و تحذیر از آن ست، عبارت مولانا قاری در شرح مقدمہ جزریہ زیر قول ماتن، والضاد باستطالة و مخرج میز من الظاء وکلہا تجي:: فی الظعن ظل ظہرعظم الحفظ :: ایقظ وأنظر عظم ظہر اللفظ چنان ست قد انفرد الضاد بالاستطالة حتی تتصل بمخرج اللام لما فیه من قوة الجهر والاطباق والاستعلاء ولیس فی الحروف مایعسر علی اللسان مثله وألسنة الناس فیه مختلفة فمنهم من یخرجه ظاء ومنهم من یخرجه دالا مهملة او معجمة ومنهم من یخرجه طاء مهملة کالمصریین ومنهم من یشمه ذالا ومنهم من یشیر بها بالظاء المعجمة لکن لماکان تمییزه عن الظاء مشکلا بالنسبة الی غیره امر الناظم بتمییزه عنه نطقا ثم بین ما جاء في القرآن بالظاء لفظا الخ این شدت تحفظ علما است بر تمییز حروف و آنچنانکہ امام ناظم رحمۃ اللہ تعالیٰ کلمات قرآنیہ وارده بظائے معجمہ را ضبط زبانوں کا جو تذکرہ کیا ہے اس سے مراد یہ ہر گز نہیں ہے کہ قراء عرب کی ادائیگی کا یہ طریقہ ہے بلکہ اس سے مقصود صرف اسی حرف کی ادائیگی کے بارے میں عوام کی خطا اور غلطی کی نشان دہی کرنا ہے اور اس کے بطلان پر تنبیہ اور اس سے پر ہیز پر متوجہ کرنا ہے عبارت ملا علی قاری شرح مقدمہ جزریہ میں ماتن کے اس قول "ضاد میں استطالہ ہے اور اس کا مخرج ظا سے الگ ہے اور ظا ان تمام میں ہے: ظعن، ظل، ظہر، عظم الحفظ :: ایقظ، انظر، عظم، ظہر اللفظ :: کے تحت یوں ہے کہ ضاد استطالہ میں منفرد ہے حتی کہ وہ لام کے مخرج کے ساتھ متصل ہے کیونکہ اس میں قوت جہر، اطباق اور استعلاء پایا جاتا ہے اور حروف میں کوئی حرف ایسا نہیں جس کی ادائیگی ضاد کی طرح مشکل ہو اس کی ادائیگی میں لوگوں کی زبان مختلف ہے بعض اسے ظا اور بعض دال یا ذال کے مخرج سے اور بعض طا کے مخرج سے پڑھتے ہیں جیسے

مصری لوگ، اور بعض اسے ذال کی بو دیتے ہیں بعض ظا سے ملا کر پڑھ دیتے ہیں لیکن چونکہ اس کا امتیاز دیگر حروف کی بنسبت ظا سے مشکل ہے اس لئے ناظم (ماتن) نے صراحتًا اس سے ممتاز کرنے کی بات کی، پھر وہ مقامات بیان کئے جہاں قرآن مجید میں ظاء لفظاً استعمال ہوا ہے الخ یہ شدت حروف کے امتیاز کے تحفظ پر علماء کے کار بند ہونے کے لئے ہے اور وہ جو امام ناظم رحمہ اللہ تعالیٰ نے کلمات قرآنی ذکر کردئے

---

1 منح الفکریہ شرح المقدمۃ الجزریۃ مطلب ادغام المتجانسین مطبوعہ مصطفی البابی مصر ص ۳۸

Fatawa-e-Razvia, Volume 6

...stated so that it may be known that these are the specific words in the Great Quran that contain the letter 'Za' (ظ), and everything else is with 'Dad' (ض). Similarly, the learned man of letters Al-Hariri, in 'Maqamat al-Halabiyya', clearly recorded the general Arabic vocabulary and intended purpose where he said: "O you who ask about 'Dad' and 'Za' :: so that words do not confuse you :: Indeed, memorizing the instances of 'Za' will suffice you, so listen to them as an attentive person listens."[1] A group has altered and changed the articulation points (makharij) of these letters, and in that is great difficulty (haraj). It appears that this is the summary of all fatwas. Then it was further stated: "In 'Al-Khizana' it is also mentioned that if someone recites 'wa-lad-dallin' with 'Za' (ظ), his prayer is invalidated. Most Imams hold this view, among them Abu Muti', Muhammad bin Muqatil, Muhammad bin Salam, and Abdullah bin al-Azhari. Following this analogy, they said that in the entire Quran, if 'Za' is recited instead of 'Dad', the prayer is invalidated, except in the word of Allah Almighty: 'wa ma huwa 'alal-ghaibi bi-danin' (and he is not stingy with the unseen), where both 'Za' and 'Dad' are valid recitations (qira'at)."[2] See how clear these texts are, showing that this change is due to the jumbled speech of Kurds, Turks, the peasants of Kufa, and other commoners and non-Arabs. That is why...

---

1. Maqamat al-Hariri, Maqamah 46 (Al-Mu'ama al-Halabiyya), published by Mustafa al-Babi, p. 393.
2. Al-Khizana.

फतावा रज़विया, खंड 6

...यह बताते हुए ताकि यह ज्ञात हो सके कि महान कुरआन में यही शब्द हैं जिनमें 'ज़ा' (ظ) है, और इनके अलावा सब 'दाद' (धुआद - ض) के साथ हैं। इसी प्रकार विद्वान साहित्यकार अल-हरीरी ने 'मक़ामत-ए-हल़बिया' में अरबी के सामान्य शब्दों और उनके अभिप्राय को स्पष्ट रूप से दर्ज किया है, जहाँ उन्होंने कहा: "ओ 'दाद' और 'ज़ा' के बारे में पूछने वाले :: ताकि शब्द तुम्हें भ्रमित न करें :: वास्तव में, 'ज़ा' के स्थानों को याद रखना तुम्हें काफी होगा, इसलिए उन्हें वैसे ही सुनो जैसे एक जागरूक व्यक्ति सुनता है।"[1] एक समूह ने इन अक्षरों के उच्चारण स्थानों (मखारिज) में परिवर्तन और बदलाव किया है, और इसमें बड़ा कष्ट (हरज) है। और स्पष्ट यह है कि सभी फतवों का सारांश यही है। फिर फरमाया: " 'अल-ख़िज़ाना' में भी है कि यदि किसी ने 'व़-ल़द-द़ाल्लीन' को 'ज़ा' के साथ पढ़ा, तो उसकी नमाज़ अमान्य हो जाएगी। अधिकांश इमाम इसी विचार के हैं, उनमें अबू मुती, मुहम्मद बिन मुक़ातिल, मुहम्मद बिन सलाम और अब्दुल्ला बिन अल-अज़हरी भी शामिल हैं। इसी पर आधारित करते हुए उन्होंने कहा कि पूरे कुरआन में यदि 'दाद' के स्थान पर 'ज़ा' पढ़ा गया, तो नमाज़ अमान्य हो जाएगी, सिवाय अल्लाह के इस कथन के 'व़ मा हुव़ अल़ल-ग़ैबि बि-ज़नीन' (और वह परोक्ष पर कंजूस नहीं है), क्योंकि इसमें 'ज़ा' और 'दाद' दोनों के साथ दो क़िराअतें (पठन शैलियाँ) आई हैं।"[2] देखिए कितने स्पष्ट प्रमाण हैं कि यह बदलाव कुर्द, तुर्क कूफ़ा के किसानों और अन्य आम और गैर-अरबी लोगों की भाषाओं के आपस में मिल जाने के कारण है। यही कारण है कि...

---

1. मक़ामत-ए-हरीरी, मक़ाम 46 (अल-मुआमा अल-हल़बिया), मुस्तफा अल-बाबी द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 393।
2. अल-ख़िज़ाना।

पृष्ठ 291 / 736

فتاویٰ رضویہ، جلد ششم

فرمودہ تابدانند کہ این حرف بقرآن عظیم درہمیں مواد است وآنچہ غیراینست ہمہ بضاد است، ہمچنان فاضل ادیب حریری در مقامہ حلبیہ عامہ لغات عرب واراده بظاہر مضبوط نمود جائیکہ فرمود۔ ایھا السائلی عن الضّاد والظّاء :: لکیلا تضلّہ الالفاظ :: انّ حفظ الظّاء آت یغنیک فاسمعھا استماع امرئٍ لہ استیقاظ [1] غیر طائفۃ فی مخارج ھذہ الحروف وفی ذلک حرج عظیم والظاہر ان ھذا مجمل مانی جمیع الفتاوی باز فرمود۔ ثم فی الخزانۃ ایضالو قرء ولاالضآلّین بالظّاء فسدت صلوتہ وعلیہ اکثر الائمۃ منھم ابو مطیع ومحمد بن مقاتل ومحمد بن سلام وعبداللہ بن الازھری وعلی ھذا القیاس فی جمیع القرآن ولو قرأ بالظّاء مکان الضّاد تفسد صلاتہ الا فی قولہ تعالیٰ وماھو علی الغیب بضنین بالظّاء والضّاد فھما قرأتان [2]۔ بیں چہ قدر نصوص روشن است کہ ایں تبدیلی از کج مج زبانی ہائے گردیاں و ترکیاں و دہقانیان کوفہ و غیر ہم عوام و اعجام است ولذا

ترجمہ: ہیں جن میں ظاء ہے تاکہ ہر کوئی جان لے کہ قرآن کریم میں ظاء کے ساتھ یہی کلمات ہیں اور ان کے علاوہ میں ضاد ہے اسی طرح فاضل ادیب حریری نے مقامہ حلبیہ میں ظاء کے الفاظ عربی ذکر کرتے ہوئے کہا جس جگہ کہا اے ضاد اور ظاء کے بارے میں پوچھنے والے تاکہ الفاظ میں خلط ملط نہ ہو، اگر تو ظاء کے تمام مقامات محفوظ کرے تو بے نیاز ہو جائیگا پس اب تو انھیں غور سے سن جس طرح ایک بیدار آدمی سنتا ہے۔ ایک گروہ نے ان حروف کے مخارج میں تغیر و تبدل کیا ہے اور اس میں حرج عظیم ہے اور ظاہر یہ ہے کہ تمام فتاوی کا اجمال یہی ہے، پھر فرمایا کہ خزانہ میں بھی ہے اگر ولاالضالین میں ظاء پڑھی تو نماز فاسد ہو جائے گی اکثر ائمہ اسی پر ہیں ان میں ابو مطیع، محمد بن مقاتل، محمد بن سلام، عبد اللہ بن الازہری بھی ہیں اسی پر قیاس کرتے ہوئے کہا کہ تمام قرآن میں ضاد کی جگہ اگر ظاء پڑھی تو نماز فاسد ہو جائے گی البتہ

اللہ تعالیٰ کا قول وما ھو علی الغیب بضنین مستثنی ہے کیونکہ اس میں ظاء اور ضاد دونوں کے ساتھ دو قرآتیں آئی ہیں آپ نے دیکھا کس قدر واضح تصریحات ہیں کہ یہ تبدیلی کرد، ترک اور کوفہ کے بادیہ نشین وغیرہ عام اور عجمی لوگوں کی زبانیں گڈ مڈ ہونے کی وجہ سے ہے، یہی وجہ ہے کہ

---

1 مقامات حریری مقامہ سادسہ واربعون الموامہ الحلبیہ مطبوعہ مصطفی البابی ص ۳۹۳ 2 خزانہ

Fatawa Razawiya, Volume 6

Most later scholars who opted for ease in difficult situations have also considered this concession permissible for the general public. Then look at the ruling of the majority of Imams; they ruled that prayer is invalidated when such a substitution leads to a corruption of meaning. This is the school of thought of the three Imams: our master Imam al-A'zam, Imam Abu Yusuf, and Imam Muhammad (may Allah be pleased with them all), despite their difference regarding whether a similar word exists in the Quran or not, as detailed excellently in 'al-Ghunyah'. May Allah reward him with a great reward.

In 'Khaniyah', 'Khulasah', 'Bazzaziyah', 'Ghunyah', 'Hilyah', 'Khizanat al-Muftin', and other reliable books of the school, many specific cases are mentioned where such a change leads to a ruling of invalidation of prayer. Whoever desires detail should refer to them, as quoting all of them would be too lengthy. Even Allama Ali Qari states in the commentary of 'al-Jazariyah': (And if they meet) meaning 'Daad' (ض) and 'Zhaa' (ظ) (the clarification) i.e., the clarification of each of them is mandatory, and assimilation (idgham) is not permissible due to the distance of their points of articulation (makharij). Al-Yamani said: If one recites with assimilation, the prayer is invalidated. The son of the author and following him, Al-Rumi, said: One should avoid not distinguishing between them, because if one substitutes 'Daad' with 'Zhaa' or vice versa, his prayer is voided due to the corruption of meaning. Al-Misri said: If one substitutes 'Daad' with 'Zhaa' in Al-Fatihah, the recitation of that word would not be correct. Then the words of Ibn al-Humam and Munyah mentioned...

---

1. Al-Minah al-Fikriyyah Sharh al-Muqaddimah al-Jazariyyah, Chapter of Warnings, printed by Mustafa al-Babi, Egypt, p. 43. Page 292 of 736

फतावा रज़विया, जिल्द छठा

अधिकांश बाद के विद्वान जो कठिनाई के स्थान पर आसानी की ओर गए हैं, उन्होंने भी इस छूट को आम जनता के हक में जायज़ रखा है। फिर जमहूर इमामों का हुक्म देखें, उन्होंने इस बदलाव पर अर्थ बिगड़ने के समय नमाज़ खराब होने का हुक्म दिया है। और यही इमामों के तीन महान इमामों, हमारे आका इमाम आज़म, इमाम अबू यूसुफ और इमाम मुहम्मद (अल्लाह उन सभी से प्रसन्न हो) का मज़हब है, इस मतभेद के साथ कि इसका जैसा कुरान मजीद में है या नहीं, इसका पूरा और बेहतरीन विवरण 'अल-गुनिया' में है। अल्लाह उन्हें इसका बेहतरीन बदला दे।

'खालिया', 'खुलसा', 'बज़ाज़िया', 'गुनिया', 'हिलिया', 'खज़ानतुल मुफ़्ती' और अन्य विश्वसनीय किताबों में इस बदलाव की अनेक शाखाएँ हैं जिनमें नमाज़ खराब होने का हुक्म दिया गया है। जो व्यक्ति विस्तार चाहता है वह उनकी ओर रुजू करे क्योंकि उन सभी को उद्धृत करना बहुत लंबा हो जाएगा। स्वयं अल्लामा अली क़ारी 'शरह जज़रिया' में फ़रमाते हैं: (और यदि वे दोनों मिलें) यानी 'द्वाद' (ض) और 'ज़ा' (ظ) (स्पष्टीकरण) यानी उनमें से प्रत्येक का स्पष्ट उच्चारण आवश्यक है और उनके मखरज (उच्चारण स्थान) की दूरी के कारण 'इद्गाम' (मिलाना) जायज़ नहीं है। यमनी ने कहा कि अगर किसी ने इद्गाम के साथ पढ़ा तो नमाज़ फासिद (खराब) हो जाएगी। ग्रंथकार के पुत्र और उनके पीछे चलने वाले रूमी ने कहा कि इन दोनों के बीच अंतर न करने से बचना चाहिए, क्योंकि अगर 'द्वाद' को 'ज़ा' से बदला गया या इसके विपरीत किया गया तो अर्थ बिगड़ने के कारण नमाज़ बातिल (शून्य) हो जाएगी। और मिस्री ने कहा कि अगर किसी ने सूरह फातिहा में 'द्वाद' को 'ज़ा' से बदलकर पढ़ा तो उस शब्द का पाठ सही नहीं होगा। फिर इब्न अल-हुमाम और मुनिया का उल्लेख किया गया...

---

1. अल-मिनह अल-फ़िक्रिया शरह अल-मुक़द्दमा अल-जज़रिया, चेतावनी का अध्याय, मुस्तफा अल-बाबी द्वारा मुद्रित, मिस्र, पृष्ठ 43. पृष्ठ 292 / 736

اکثر علمائے متاخرین جو مشقت کے مقام پر آسانی کی طرف گئے ہیں انھوں نے بھی اس رخصت کو عوام کے حق میں جائز رکھا ہے پھر جمہور ائمہ کا حکم دیکھو انھوں نے اس تبدیلی پر فساد معنی کے وقت فساد نماز کا حکم دیا ہے اور یہی مذہب ائمہ ثلاثہ سیدنا امام اعظم، امام ابو یوسف اور امام محمد رضی اللہ تعالیٰ علیہم اجمعین کا ہے اس اختلاف کے ساتھ کہ اس کی مثل قرآن مجید میں ہے یا نہیں اس کی پوری اور عمدہ تفصیل غنیہ میں ہے پس اللہ تعالیٰ انھیں جزائے خیر عطا فرمائے۔

خانیہ، خلاصہ، بزاز یہ، غنیہ، حلیہ، خزانہ المفتین اور دیگر کتب معتمدہ مذہب میں ایسی تبدیلی کہ متعدد جزئیات کا ذکر کر کے نماز کے فساد کا حکم بیان کیا گیا جو شخص تفصیل چاہتا ہے ان کی طرف رجوع کرے کیونکہ ان تمام کے نقل کرنے میں طوالت کا خدشہ ہے خود علامہ علی قاری شرح جزریہ میں فرماتے ہیں (اور اگر یہ دونوں اکٹھے ہوں) یعنی ضاد اور ظاء تو ہر ایک کا امتیاز ضروری ہے، ان کے بعد مخرج کی وجہ سے ادغام جائز نہیں، یمنی نے کہا کہ اگر کسی نے مدغم کر کے پڑھا تو نماز فاسد ہو جائے گی۔ ابن مصنف اور ان کی اتباع میں رومی نے کہا ان دونوں کے عدم امتیاز سے احتراز چاہئے، کیونکہ اگر ضاد کو ظاء سے بدلا یا اس کا عکس کیا تو فساد معنی کی وجہ سے نماز باطل ہو جائے گی، اور مصری نے کہا اگر کسی نے فاتحہ میں ضاد کو ظاء سے بدل کر پڑھا تو اس کلمہ کی قراءت درست نہ ہوگی، پھر ابن الہمام اور منیہ کی مذکورہ

1 المنح الفكريہ شرح المقدمة الجزريۃ، باب التحذيرات، مطبوعہ مصطفیٰ البابی مصر ص ۴۳

صفحہ 292 از 736

Fatawa Razawiyya, Volume Sixth

It is narrated that the commentator said: This is the meaning of what is mentioned in Fatawa al-Hujjah, that for scholars and jurists, the fatwa is to repeat the prayer, but for common people, the fatwa is for its validity. I say: This is an excellent distinction in this chapter, and Allah Almighty knows best what is correct.

In Fatawa Qadi Khan, it is stated: If someone recites 'Ghayr al-Maghdub' by substituting 'Zha' (ظ) or 'Dal' (د), their prayer is invalidated. However, in 'wa la al-Dallin', if they substitute with 'Zha' or 'Dal', it is not invalidated. But if they substitute with 'Zal' (ذ), it is invalidated. (Summary).

In the commentary of Imam Shaykh al-Islam Zakariyya al-Ansari, it is mentioned: (And if they meet), meaning the 'Dad' (ض) and 'Zha' (ظ), it is mandatory for the reciter to pronounce them distinctly from each other so they do not get mixed up, otherwise their prayer will be void. SubhanAllah! If this method of recitation were the way of Arab reciters, where would there be room for a ruling of invalidation? Rather, assimilation (idgham) would certainly be permissible and the prayer would absolutely be correct by consensus, just as in the verse 'wa ma huwa 'ala al-ghaybi bi-danin'. The same ruling applies to the noble words of Allah Almighty: 'Indeed, you and what you worship besides Allah are the firewood (hasab) of Hell.' Here, whether it is recited as Hasab (حصب), Hadhab (حضب), Hatab (حطب), or Hazhab (حظب) with Sad, Dad, Ta, or Zha, the prayer is absolutely valid because the recitation of this word is established with all four of these distinct letters, as mentioned in Al-Minah al-Fikriyyah and others. (T)

Footnotes: 1. Al-Minah al-Fikriyyah Sharh al-Muqaddimah al-Jazariyyah, Chapter of Warnings, published by Mustafa al-Babi, Egypt, p. 43. 2. Sharh al-Muqaddimah al-Jazariyyah, Abu Zakariyya al-Ansari with Al-Minah al-Fikriyyah, Chapter of Warnings, published by Mustafa al-Babi, Egypt, p. 44.

Page 293 of 736

फतावा रज़विया, खंड छठा

यह वर्णित है कि टीकाकार ने कहा: फतावा अल-हुज्जा में जो उल्लेखित है उसका अर्थ यही है कि विद्वानों और न्यायविदों के मामले में नमाज़ दोहराने का फतवा दिया जाएगा और आम लोगों के मामले में वैधता का। मैं कहता हूँ: इस विषय में यह विवरण अत्यंत श्रेष्ठ है, और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

और फतावा काज़ी खान में है: यदि किसी ने 'गैरिल मग़ज़ूब' में 'ज़ॉ' (ظ) या 'दाल' (د) से बदल कर पढ़ा तो नमाज़ फासिद (अमान्य) होगी, और 'वलद-द़ाल्लीन' में 'ज़ॉ' या 'दाल' से बदल कर पढ़ा तो नमाज़ फासिद नहीं होगी, और अगर 'ज़ाल' (ذ) से बदल कर पढ़ा तो नमाज़ फासिद हो जाएगी। (संक्षेप में)।

इमाम शेखुल इस्लाम ज़करिया अंसारी की व्याख्या में है: (और अगर ये दोनों मिलें) यानी 'द़ाद' (ض) और 'ज़ॉ' (ظ), तो पढ़ने वाले के लिए दोनों को अलग-अलग करके पढ़ना ज़रूरी है ताकि वे एक-दूसरे के साथ मिल न जाएं वरना उसकी नमाज़ बातिल (शून्य) हो जाएगी। सुभान अल्लाह! अगर अरब के पाठकों के पढ़ने का तरीका यही होता, तो अमान्य होने के आदेश की यहाँ क्या गुंजाइश थी? बल्कि इद्गाम (मेल) निश्चित रूप से जायज़ होता और नमाज़ पूर्णतः सर्वसम्मति से सही होती, जैसा कि आयत 'वा मा हुआ अलल ग़ैबी बिज़नीन' में है। यही हुक्म अल्लाह तआला के इस पाक फरमान में भी है: 'निश्चय ही तुम और जिन्हें तुम अल्लाह के सिवा पूजते हो, जहन्नम का ईंधन (हसब) हो।' यहाँ 'हसब', 'हज़ब', 'हतब', 'हज़ब'—साद, द़ाद, ता और ज़ॉ के साथ जिस तरह भी पढ़ लिया जाए, नमाज़ बिल्कुल सही होगी क्योंकि इस शब्द का पाठ इन चारों अक्षरों के साथ प्रमाणित है जैसा कि 'अल-मिनह अल-फ़िक्रिया' आदि में है। (त)

पाद-टिप्पणियाँ: 1. अल-मिनह अल-फ़िक्रिया शरह अल-मुक़द्दमा अल-जज़रिया, चेतावनी अध्याय, मुस्तफा अल-बाबी प्रेस, मिस्र, पृ. 43। 2. शरह अल-मुक़द्दमा अल-जज़रिया, अबू ज़करिया अंसारी के साथ अल-मिनह अल-फ़िक्रिया, मुस्तफा अल-बाबी प्रेस, मिस्र, पृ. 44।

पृष्ठ 736 का 293

فتاوی رضویه ، جلد ششم

آورده گفت قال الشارح وهذا معنی ما ذکر في فتاوی الحجة انه یفتی في حق الفقهاء باعادة الصلاة وفي حق العوام بالجواز اقول وهذا تفصیل حسن فی هذا الباب والله تعالیٰ اعلم بالصواب۔ گفتگو کے بعد کہا شارح نے کہا فتاوٰی حجہ میں جو کچھ مذکور ہے اس کا خلاصہ یہی ہے کہ علماء و فقہاء کے حق میں نماز کے لوٹانے کا فتوی دیا جائے گا اور عوام کے حق میں جواز کا، میں کہتا ہوں اس معاملہ میں یہی تفصیل احسن ہے، واللہ اعلم بالصواب۔ وفی فتاوٰی قاضیخان ان قرأ غیر المغضوب بالظاء او بالدال تفسد صلاتہ ولا الضالین بالظاء المعجمۃ او الدال المہملۃ لا تفسد ولو بالذال المعجمۃ تفسد (ملخصاً)۔ اور فتاوی قاضی خان میں ہے اگر کسی نے غیر المغضوب میں ظاء یا دال سے بدل کر پڑھا تو نماز فاسد ہوگی اور ولاالضالین میں ظاء یا دال سے بدل کر پڑھا تو نماز فاسد نہ ہوگی اور اگر ذال سے بدل کر پڑھا تو نماز فاسد ہو جائے گی۔ در شرح امام شیخ الاسلام زکریا انصاری است (وان تلاقیا) ای الضاد والظاء فقل (البیان) لاحدهما من الاخر لازم للقاری لئلا یختلط احدهما بالاخر فتبطل صلاته سبحن اللہ اگر ایں نہج ادا قرائے عرب را بودے حکم فساد درا چہ گنجائش بود بلکہ قطعاً ادغام روا بود و نماز مطلقاً اجماعاً صحیح ماندے چنانکہ در ماهو علی الغیب بضنین و ہمچنیں در قول او تعالیٰ اِنَّكُمْ وَمَا تَعْبُدُوْنَ مِنْ دُوْنِ اللهِ حَصَبُ جَهَنَّمَ ، حصب وحضب وحطب وحظب لصاد وضاد وطاء وظاء ہر چہ خواند نماز قطعاً صحیح است کہ ایں کلمہ بہر چار حروف منبطقہ در قراءت آمدہ است کما في المنح الفکریة وغیرها۔ امام شیخ الاسلام زکریا انصاری کی شرح میں ہے (اور اگر یہ دونوں متصل ہوں) یعنی ضاد اور ظاء تو قاری کے لئے دونوں کو الگ الگ کرکے پڑھنا ضروری ہے تاکہ ایک دوسرے کے ساتھ مختلط نہ ہو جائیں ورنہ اس کی نماز باطل ہو جائے گی سبحان اللہ اگر اس کی ادائیگی کا یہ طریقہ قراء عرب کا ہوتا تو فساد کے حکم کی یہاں کیا

گنجائش تھی بلکہ ادغام یقیناً جائز اور نماز مطلقاً بالا تفاق درست ہوتی جیسا کہ ماھو علی الغیب بضنین میں ہے یہی حکم اللہ تعالیٰ کے اس ارشادِ گرامی میں ہے۔ اِنَّكُمْ وَمَا تَعْبُدُوْنَ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ حَصَبُ جَهَنَّمَ ۔ یہاں حصب، حضب، حطب، حظب صاد، ضاد، طاء اور ظاء کے ساتھ جس طرح بھی پڑھ لیا جائے نماز درست ہو گی کیونکہ اس کلمہ کی ان چاروں حروف کے ساتھ قراءت ثابت ہے جیسا کہ منح الفکریہ وغیرہ میں ہے۔ (ت)

حواشی: 1 المنح الفکریة شرح المقدمة الجزریة باب التحذیرات مطبوعہ مصطفی البابی مصر ص ۴۳

2 شرح المقدمة الجزریة ابوزکریا الانصاری مع المنح الفکریه باب التحذیرات مطبوعہ مصطفی البابی مصر ص ۴۴

Fatawa-e-Razvia Volume 6

I say: By the grace and guidance of Allah, through our research, the weakness of what some grammarians—specifically Ibn al-A'rabi al-Kufi—claimed has become clear to you. He asserted that it is permissible in the speech of Arabs to substitute the letter 'Dad' (ض) for 'Za' (ظ), so that whoever uses one in place of the other is not considered mistaken. He would cite the following verse: "I complain to Allah about a friend whose love I cherish, Three habits of his are galling to me—with a 'Dad' (ض)." He says: "This is how I heard it from the eloquent ones of the Arabs."

Ibn Khallikan narrated this in 'Wafayat al-A'yan.' This is because if his claim were correct, the masters of jurisprudence—who are experts in all the arts of Arabic and other religious sciences—would not have ruled that prayer is invalidated in phrases like 'ghayr al-maghdubi' and similar instances where the meaning is corrupted. Nor would they have distinguished between 'Danin' (ضنين) and 'Zanin' (ظنين). How can this [claim] compare to what has been passed down from 'al-Hilya' via 'al-Khizana' from the Imams, stating that throughout the Quran, such substitution invalidates the prayer, except for 'Danin.' Those who allowed it did so merely to facilitate the common people, not because it is actually correct in eloquent speech. As for the poetic verse, it holds no proof for him, for it might be...

---

1 Wafayat al-A'yan, Biography of Muhammad bin Ziyad Ibn al-A'rabi 633, published by Dar al-Thaqafah, Beirut, 2/470. Page 294 of 736

फतावा-ए-रज़विया जिल्द 6

मैं कहता हूँ: अल्लाह की तौफीक और इनायत से, हमारे इस शोध से आपके सामने व्याकरणविद् इब्न अल-अराबी अल-कूफ़ी के उस दावे की कमज़ोरी स्पष्ट हो गई है, जिसमें उन्होंने कहा था कि अरबों की भाषा में 'दाद' (ض) और 'ज़ा' (ظ) को एक-दूसरे के स्थान पर बदलना जायज़ है, और जो कोई एक की जगह दूसरे को रख दे, वह गलती पर नहीं माना जाएगा। वह यह शेर पढ़ते थे: "अल्लाह के पास ही मेरी शिकायत है अपने अज़ीज़ दोस्त की उन तीन आदतों के बारे में जो मुझे नापसंद हैं— दाद (ض) के साथ।" वह कहते हैं: "मैंने अरब के विद्वानों से इसे इसी तरह सुना है।"

इब्न खल्लिकान ने इसे 'वफ़यात अल-अयान' में उद्धृत किया है। इसका कारण यह है कि यदि उनका दावा सही होता, तो फ़िक़्ह के वे इमाम, जो धार्मिक विज्ञान और अरबी कला के विशेषज्ञ हैं, 'ग़ैर-इल-मग़दूबी' और इसी तरह के अन्य शब्दों में नमाज़ के अमान्य होने का हुक्म न देते जहाँ अर्थ बदल जाता है। न ही वे 'ज़नीन' और 'ज़नीन' के बीच फ़र्क करते। इमामों के हवाले से 'अल-हिलिया' और 'अल-ख़ज़ाना' के माध्यम से जो बात आई है, उसके सामने इस दावे की क्या हैसियत? वहाँ स्पष्ट है कि 'ज़नीन' के अलावा पूरे कुरान में (अर्थ बिगड़ने की सूरत में) नमाज़ अमान्य हो जाएगी। जिन लोगों ने इसकी अनुमति दी, उन्होंने केवल आम लोगों की सुगमता को ध्यान में रखा, इसलिए नहीं कि यह मानक अरबी में वास्तव में सही है। जहाँ तक उस शेर का सवाल है, उसमें उनके लिए कोई प्रमाण नहीं है, क्योंकि हो सकता है...

---

1 वफ़यात अल-अयान, जीवनी मुहम्मद बिन ज़ियाद इब्न अल-अराबी 633, मुद्रित दार अल-थकाफ़ा बेरुत 2/470 पेज 294 का 736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

اقول: وباللہ التوفیق بتحقیقنا ھذا ظھر لك انخساف ما زعم بعض النحاۃ وھو ابن الاعرابی الکوفی حیث کان یقول جائز فی کلام العرب ان یعاقبوا بین الضاد والظاء، فلا یخطئ من یجعل ھذہ فی موضع ھذہ، وینشد "الی اللہ اشکو من خلیل اودہ ثلث خلال کلھا لی غائظ بالضاد"۔ ویقول : ھکذا سمعتہ من فصحاء العرب[1]۔

اقول: (میں کہتا ہوں) اللہ تعالٰی کی توفیق و عنایت سے جو ہم نے تحقیق کی ہے اس سے ایک نحوی ابن الاعرابی کوفی کے اس قول کی کمزوری بھی واضح ہو جاتی ہے جو اس نے کہا تھا کہ ضاد اور ظاء کو ایک دوسرے کی جگہ کلام عرب میں پڑھا جا سکتا ہے تو جو ایک کی جگہ دوسرے کو پڑھ دے اسے خطاوار نہیں کہا جائے گا اور اس نے یہ شعر پڑھا: اللہ کے ہاں یہی میری شکایت ہے اپنے محبوب دوست کی تین عادتوں کی، جو مجھے ناپسند ہیں۔ (اس شعر میں غائط ضاد کے ساتھ ہے) اور یونہی میں نے فصحاء عرب سے سنا ہے، اسے ابن خلکان نے وفیات الاعیان میں نقل کیا ہے اور یہ اس لئے ہے کہ اگر ان کا قول درست ہوتا تو یہ تمام ائمہ فقہ جو علوم دینیہ اور فنون عربیہ کے ماہر ہیں غیر المغضوب اور اس جیسے دیگر الفاظ جن میں فساد معنی لازم آتا ہے سے نماز فاسد ہونے کا حکم جاری نہ کرتے اور ضنین اور ظنین اور مذکورہ لفظ کے درمیان فرق نہ کرتے، یہ اس میں سے کہا ہے حلیہ سے خزانہ سے ائمہ کے حوالے سے گزرا کہ ضنین کے علاوہ تمام قرآن میں (جب فساد معنی ہو) تو نماز فاسد ہو جائے گی، اور جن لوگوں نے اسے جائز قرار دیا تھا انہوں نے عوام پر آسانی کی خاطر ایسا کیا یہ نہیں کہ ایسا کرنا فی الواقع فصیح کلام میں صحیح ہے، رہا معاملہ شعر کا وہ اس سلسلہ

1 وفيات الاعيان ترجمہ محمد بن زياد ابن الاعرابى ۶۳۳ مطبوعہ دار الثقافۃ بيروت ۲/ ۴۷۰ Page 294 of 736

Fatawa Razawiyyah, Volume 6

(Left Column - Arabic Original) From "Ghadhahu" when he diminishes it. Al-Aswad bin Yafar said: "Do you not see that I have perished, and what has reached my sight and my limbs has diminished me." It is stated in 'Taj al-Arus' that it means: "He diminished me after my completeness." And here is Ibn al-Arabi who himself recited: "If a nose-ring had bitten his nose, his disposition would have surely softened and diminished." He explained it saying: "It scarred his nose until he became humiliated." Ibn Sayyidah said regarding that verse: "In my opinion, it is possible for 'Gha'id' to not be a substitute [for 'Gha'iz'], but rather from 'Ghadha', i.e., he diminished it. Its meaning then would be that he diminishes me and oppresses me." 1 It was also quoted in 'Taj [al-Arus]'. Based on this, our scholars ruled that there is no invalidation [of prayer] if one recites 'li-yaghizha bihim al-kuffar' with 'Dad' instead of 'Za' 2 as in 'al-Khaniyah'. It is said in 'al-Ghunyah': "Because its meaning remains appropriate, i.e., to diminish the disbelievers by them." 3 Similarly, it was said regarding the word of the Most High: "Say, die in your rage..." 4

(Right Column - Urdu Translation/Explication) ...I cannot be a proof for them, so sometimes it comes from 'Ghadha', and at that time its meaning is deficiency. Accordingly, Aswad bin Yafar said: "Do you not see that I have perished and the ailments of my eyes and limbs have made me deficient?" In 'Taj al-Arus' it is stated: "Its meaning is that he made me deficient after I reached perfection." And this Ibn al-Arabi himself recited this verse: "If Jariri bit his nose, surely his nose bone would become soft and deficient." And while explaining it, he said that he scarred his nose until he became humiliated. And Ibn Sayyidah said regarding this (first) verse that in it, "Gha'id" is not a change from Gha, Za, Ta, but it is from 'Ghadh' which means deficiency. Therefore, now the meaning will be: "He made me deficient." 'Taj al-Arus' has also quoted this. And on this basis, our scholars stated that if someone recited 'li-yaghizha bihim al-kuffar' with 'Dad' instead of 'Za', the prayer would not be invalidated, as mentioned in 'Khaniyah'. It is in 'Ghunyah' that its meaning remains appropriate, i.e., may there be deficiency and distress in the disbelievers through them. And similarly is the noble saying of Allah the Almighty: "Say: Die..."

(Footnotes) 1. Taj al-Arus, Chapter on 'Ain' from the section on 'Dad', published by Ihya al-Turath al-Arabi, 64-65/5. 2. Fatawa Qadhi Khan, Section on Errors in Quranic Recitation, published by Nawalkishore Lucknow, 28/1. 3. Ghunyat al-Mustamli Sharh Munyat al-Musalli, Section on the Reciter's Slip, published by Suhail Academy Lahore,

p. 487. 4. Fatawa Qadhi Khan, Section on Error in Quranic Recitation, published by Lucknow, 29/1.

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

(बायां स्तंभ - मूल अरबी) "गाधहु" से जब उसने उसे कम किया। अल-अस्वद बिन यफ़र ने कहा: "क्या तुम नहीं देखते कि मैं नष्ट हो गया हूँ, और जो कुछ मेरी दृष्टि और मेरे अंगों तक पहुँचा है, उसने मुझे कम कर दिया है।" 'ताज अल-अरूस' में कहा गया है कि इसका अर्थ है: "उसने पूर्णता के बाद मुझे कम कर दिया।" और यह इब्न अल-अरबी हैं जिन्होंने स्वयं पढ़ा: "यदि नकेल ने उसकी नाक को काट लिया होता, तो उसका स्वभाव निश्चित रूप से नरम और कम हो गया होता।" उन्होंने इसकी व्याख्या करते हुए कहा: "इसने उसकी नाक पर निशान छोड़ दिया यहाँ तक कि वह अपमानित हो गया।" इब्न सय्यदा ने उस पद के बारे में कहा: "मेरी राय में, यह संभव है कि 'गाइद' एक विकल्प [गाइज़ के लिए] न हो, बल्कि 'गाध' से हो, अर्थात उसने उसे कम कर दिया। तब इसका अर्थ होगा कि वह मुझे कम करता है और मुझ पर अत्याचार करता है।" 1 इसे 'ताज [अल-अरूस]' में भी उद्धृत किया गया था। इसी के आधार पर हमारे विद्वानों ने निर्णय दिया कि यदि कोई 'ली-यागीज़ा बिहिम अल-कुफ़्फ़ार' में 'ज़ा' के स्थान पर 'दाद' पढ़ता है, तो [नमाज़] अमान्य नहीं होती 2 जैसा कि 'अल-खानिया' में है। 'अल-गुन्या' में कहा गया है: "क्योंकि इसका अर्थ उपयुक्त रहता है, अर्थात उनके द्वारा काफ़िरों को कम करना।" 3 इसी प्रकार अल्लाह तआला के इस वचन के बारे में कहा गया: "कहो, अपने क्रोध में मर जाओ..." 4

(दायां स्तंभ - उर्दू अनुवाद/व्याख्या) ...मैं उनके लिए प्रमाण नहीं बन सकता, तो कभी-कभी यह 'गाधा' से आता है, और उस समय इसका अर्थ कमी होता है। तदनुसार, असवद बिन यफ़र ने कहा: "क्या तुम नहीं देखते कि मैं नष्ट हो चुका हूँ और मेरी आँखों और अंगों की बीमारियों ने मुझे दोषपूर्ण बना दिया है?" 'ताज अल-अरूस' में है: "इसका अर्थ यह है कि उसने पूर्णता तक पहुँचने के बाद मुझे दोषपूर्ण बना दिया।" और इस इब्न अल-अरबी ने स्वयं यह पद पढ़ा: "यदि जरीरी ने उसकी नाक काट दी होती, तो निश्चित रूप से उसकी नाक की हड्डी नरम और दोषपूर्ण हो जाती।" और इसकी व्याख्या करते हुए उन्होंने कहा कि उसने उसकी नाक को दागदार कर दिया यहाँ तक कि वह अपमानित हो गया। और इब्न सय्यदा ने इस (पहले) पद के बारे में कहा कि इसमें "गाइद", गा, ज़ा, ता से नहीं बदला है, बल्कि यह 'गाध' से है जिसका अर्थ कमी है। इसलिए अब अर्थ यह होगा: "उसने मुझे दोषपूर्ण बना दिया।" 'ताज अल-अरूस' ने भी इसे उद्धृत किया है। और इसी आधार पर हमारे विद्वानों ने फरमाया कि यदि किसी ने 'ली-यागीज़ा बिहिम अल-कुफ़्फ़ार' में 'ज़ा' की जगह 'दाद' पढ़ा, तो नमाज़ फासिद (अमान्य) नहीं होगी, जैसा कि 'खानिया' में है। 'गुन्या' में है कि इसका अर्थ उपयुक्त ही रहता है यानी

उनके कारण काफ़िरों में कमी और बेचैनी हो। और इसी प्रकार अल्लाह तआला का पवित्र कथन है: "कहो, मर जाओ..."

(पादलेख) 1. ताज अल-अरूस, फ़स्ल अल-ऐन, बाब अद-दाद से, मुद्रित: इह्या अत-तुराथ अल-अरबी, 64-65/5। 2. फ़तावा क़ाज़ी खान, फ़स्ल फ़ी क़िराअत अल-क़ुरान ख़ताय, मुद्रित: नवलकिशोर लखनऊ, 28/1। 3. गुन्यात अल-मुस्तमली शरह मुन्यात अल-मुसल्ली, फ़स्ल फ़ी ज़ल्लत अल-क़ारी, मुद्रित: सुहैल अकादमी लाहौर, पृ. 487। 4. फ़तावा क़ाज़ी खान, फ़स्ल फ़ी क़िराअत अल-क़ुरान ख़ता, मुद्रित: लखनऊ, 29/1।

فتاوی رضویہ جلد ششم

(Column 1 - Arabic) من غاضه اذا نقصه قال الاسود بن یعفر: اما ترینی قد فنیٹ وغاضنی ما نیل من بصری ومن اجلادی قال فی تاج العروس معناه نقصنی بعد تمامی وهذا ابن الاعرابی قد انشد بنفسہ ولو قد عض معطسہ جریری لقد لانت عریکتہ وغاضا وفسرہ فقال اثرنی انفہ حتی یذل وقد قال ابن سیدہ فی ذلک البیت یجوز عندی ان یکون غائض غیر بدل ولکنہ من غاضہ ای نقصہ ویکون معناہ حینئذ انہ ینقصنی ویتهضمنی 1 نقلها فی التاج ایضاً وعن هذا حکم علماؤنا بعدم الفساد فیما لو قرأ لیغیظ بهم الکفار بالضاد مکان الظاء 2 کما فی الخانیۃ، قال فی الغنیۃ لان معناہ مناسب ای لینقص بهم الکفار 3 اھ وکذا قال فی قولہ تعالٰی قُلْ مُوْتُوْا بِغَیْظِکُمْ 4 و

(Column 2 - Urdu)

میں ان کی حجت نہیں بن سکتا تو کبھی یہ غاضہ سے آتا ہے اس

وقت اس کا معنی نقص ہوتا ہے چنانچہ اسود بن یعفر نے کہا کیا تو

دیکھتی نہیں کہ میں فنا ہو چکا ہوں اور میری آنکھوں اور اعضاء

کے عوارض نے مجھے ناقص کر دیا ہے۔ تاج العروس میں ہے

اس کا معنی یہ ہے اس نے مجھے کمال تک پہنچنے کے بعد ناقص کر دیا، اور اس ابن

اعرابی نے خود یہ شعر کہا: اگر جریری نے اس کی ناک کو کاٹا ہے تو ضرور اس کی ناک

ہڈی نرم اور ناقص ہوگی۔ اور اسکی شرح کرتے ہوئے کہا کہ اس نے اس کی ناک کو داغدار

کر دیا حتی کہ وہ ذلیل ہو گیا۔ اور ابن سیدہ نے اس (پہلے) شعر کے متعلق کہا کہ اس میں

"غائض" غا، ظ، ط سے نہیں بدلا بلکہ وہ غاض سے ہے جس کا معنی نقص ہے، لہذا اب

معنی یوں ہوگا اس نے مجھے ناقص کردیا، اس کو تاج العروس نے بھی نقل کیا ہے، اور

اسی بناء پر ہمارے علماء نے فرمایا کہ اگر کسی نے لیغیظ بھم الکفار میں ظاء کی جگہ ضاد پڑھا تو نماز فاسد نہ ہوگی، جیسا کہ خانیہ میں ہے۔ غنیہ میں ہے کہ اس کا معنی مناسب ہی رہتا ہے یعنی ان سے کافروں میں نقص واضطراب ہو اھ اور اسی طرح اللہ تعالیٰ کے ارشاد گرامی۔ قُلْ مُوْتُوْا

(Footnotes) 1 تاج العروس فصل العین من باب الضاد مطبوعہ احیاء التراث العربی ۶۴-۶۵/۵ 2 فتاوی قاضی خان فصل فی قراءۃ القرآن خطای مطبوعہ نولکشور لکھنؤ ۲۸/۱ 3 غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل فی زلۃ القاری مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۴۸۷ 4 فتاوی قاضی خان فصل فی قراءۃ القرآن خطاء مطبوعہ لکھنؤ ۲۹/۱

In summary, jurisprudence (Fiqh) is not derived from the opinion of a grammarian that contradicts the explicit statements of the Imams. Rather, fairness, according to the one whom Allah has enlightened with insight, lies in prioritizing their statements over the opinions of grammarians even in the Arabic sciences. For indeed, Ijtihad (independent legal reasoning) is only achievable by one who is qualified for it, and whose heart is infused with divine light. Understand this well, for it is a precious and important research.

Indeed, we do not deny that in the Arabic language, there is no absolute interchangeability (Mu'aqaba) between the letters 'Dad' (ض) and 'Za' (ظ). Many words have been recorded with both letters. For example, 'Ad-ul-Harb-wa-z-zaman' and 'Azh-ul-Zaman' (both mean that war bit and caused pain); 'Tamazu' and 'Tamazu' refer to fighting each other and unleashing the tongue against one another; 'Fada fulan' and 'Faza' mean so-and-so died; 'Bazza al-darib awtarahu' and 'Badda' mean the musician moving the strings to play them. 'Taqriz' and 'Taqriz' mean to praise. 'Baid' and 'Baiz' mean ant eggs. 'Bazar' and 'Bazar' refer to female anatomy, and so forth, among the words listed by Ibn Malik in his book 'Al-I'tidad fi Ma'rifat al-Za' wa al-Dad'. However, this does not imply that substitution is permissible everywhere, just as there is interchangeability between 'Lam' and 'Ra' in certain instances. It is stated in 'Majma' Bihar al-Anwar' that this Hadith mentions that the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) disliked women wearing perfume and resembling men...

संक्षेप में, धर्मशास्त्र (फ़िक़्ह) किसी ऐसे व्याकरणविद् के कथन से नहीं लिया जाता जो इमामों के स्पष्ट उल्लेखों के विपरीत हो। बल्कि, जिस किसी को अल्लाह ने अंतर्दृष्टि के प्रकाश से नवाज़ा है, उसके लिए निष्पक्षता यही है कि वह अरबी विज्ञान में भी उनके कथनों को वैयाकरणों के कथनों पर प्राथमिकता दे। क्योंकि वास्तव में, इज्तिहाद (स्वतंत्र कानूनी शोध) केवल वही कर सकता है जो इसके लिए योग्य हो और जिसका हृदय ईश्वरीय प्रकाश से भरा हो। इसे अच्छी तरह से समझ लें, क्योंकि यह एक अत्यंत महत्वपूर्ण और मूल्यवान शोध है।

निश्चित रूप से, हमें इस बात से कोई इनकार नहीं है कि अरबी भाषा में 'दाद' (ض) और 'ज़ा' (ظ) के बीच पूर्ण विनिमेयता (मुआक़बा) नहीं रही है। कई शब्द दोनों अक्षरों के साथ दर्ज हैं। उदाहरण के लिए, 'अद-उल-हर्ब-व-ज़-ज़मान' और 'अज़-उल-ज़मान' (दोनों का अर्थ है कि युद्ध ने काटा और कष्ट पहुँचाया); 'तमाज़ु' और 'तमाज़ु' का अर्थ है आपस में लड़ना और एक-दूसरे के विरुद्ध वाणी का प्रयोग करना; 'फ़ादा फ़ुलाँ' और 'फ़ाज़ा' का अर्थ है अमुक व्यक्ति की मृत्यु होना; 'बज़्ज़ा अल-दारिब अवतारहु' और 'बद्दा' का अर्थ है संगीतकार द्वारा तार बजाने के लिए उन्हें हिलाना। 'तक़रीज़' और 'तक़रीज़' का अर्थ प्रशंसा करना है। 'बैद' और 'बैज़' का अर्थ चींटी के अंडे हैं। 'बज़र' और 'बज़र' स्त्री शरीर रचना के संदर्भ में, और इसी प्रकार अन्य शब्द जिन्हें इब्न मालिक ने अपनी पुस्तक 'अल-इत्तिदाद फ़ी मारिफ़त अल-ज़ा वा अल-दाद' में सूचीबद्ध किया है। हालाँकि, इसका अर्थ यह नहीं है कि प्रतिस्थापन हर जगह स्वीकार्य है, जैसे कि कुछ स्थानों पर 'लाम' और 'रा' के बीच विनिमेयता होती है। 'मजमा बिहार अल-अनवार' में इस हदीस के बारे में उल्लेख है कि पैगंबर (उन पर अल्लाह की शांति और कृपा हो) ने महिलाओं द्वारा इत्र लगाने और पुरुषों के समान दिखने को नापसंद किया...

بالجملہ فالفقه لا يؤخذ من قول نحوی خالف نصوص الائمة بل الانصاف عند من نور الله بصيرته تقديم قولهم على اقوال النحاة في العربية ايضا فان الاجتهاد لا يتاتى الا لمتصلح منها مقذوف في قلبه نور الالهی فاعرف ذلك فأنه نفيس مهم آرے مارا انکار نیست کہ در کلام عرب معاقبہ میاں ض و ظ اصلاً نیامدہ کلمات عدیدہ بہر دو حرف وارد شدہ چوں عض الحرب والزمان و عظ الزمان جنگ گزید و گز و رسانید و تماضوا و تماظوا با ہم بجنگ افتاد ند و بریک دگر زبان گفتن کشادند و فاض فلاں و فاظ مرد و بظ الضارب اوتارہ و بض چنگ زن او تار را برائے زدن جنبانید و مہیا نمود و تقریظ و تقریض مدح کردن و بیض و بیظ خایہ مور و بنظر و بنظر خروسہ الی غیر ذلك مما عداه ابن مالك في كتاب الاعتضاد في معرفة الظاء والضاد اما ایں معنی مستلزم آں نباشد کہ ہر جا ابدال روا بود چنانکہ میان لام و را جا ہا معاقبہ است ، در مجمع بحار الانوار آورد فيه كان يكره تعطر النساء تشبهن بالرجال اراد عطرا يظهر ريحه كما يظهر عطر الرجل وقيل اراد تعطل

"يُعِظُكُمْ" میں کہا، بالجملہ دین و فقہ کا مسئلہ نحوی کے ایسے قول سے نہیں لیا جا سکتا جو ائمہ کی تصریحات کے خلاف ہو، بلکہ ہر شخص جسے اللہ نے نورِ بصیرت سے نوازا ہے وہ ائمہ کے اقوال کو فنون عربیہ میں بھی نحاۃ کے اقوال پر مقدم رکھے گا کیونکہ اجتہاد وہ کر سکتا ہے جس میں اسکی کامل صلاحیت ہو اور اسکا دل نورِ الہی سے پُر ہو اسے اچھی طرح محفوظ کرلو کیونکہ یہ نہایت ہی اہم اور قیمتی تحقیق ہے، البتہ ہمیں اس بات سے ہرگز انکار نہیں کہ کلام عرب میں ضاد اور ظاء ایک دوسرے کی جگہ آہی نہیں سکتے بہت سے کلمات ان دونوں حروف کے ساتھ وارد ہیں مثلاً عض الحرب والزمان و عظ الزمان (دونوں کا معنی یہ ہے کہ جنگ نے کاٹا اور تکلیف پہنچائی) تماضوا اور تماظوا آپس میں جنگ وغیرہ کرنا اور ایک دوسرے پر زبان کھولنا

"فاض فلاں" اور "فاظ" فلاں فوت ہوا، بظ الضارب اوتارہ اور بض صاحب موسیقی کا تار کو بجانے کے لئے حرکت دینا۔ تقریظ اور تقریض تعریف کرنا۔ بیض اور بیظ مور کا انڈا۔ بنظر وبض عورت اور شرمگاہ الی غیر ذلک یہ وہ ہیں جنھیں ابن مالک نے "کتاب الاعتضاد فی معرفۃ الظاء والضاد" میں شمار کیا ہے۔ لیکن یہ اس بات کو مستلزم نہیں کہ ابدال ہر جگہ جائز ہوگا مثلاً لام اور را کئی مقام پر ایک دوسرے کی جگہ آتے ہیں ۔ مجمع بحار الانوار میں ہے کہ اس حدیث میں ہے کہ آپ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم خواتین کو خوشبو لگانے اور مردوں کے ساتھ مشابہت کرنے کو

Fatawa Rizvia - Volume 6

[Right Column - Urdu Translation/Commentary]: ...disliked it. Here, 'Itr' (perfume) refers to that fragrance which is murky, of the kind that men use. Some have said that 'L' is in place of 'R' with 'L', meaning 'Ta'attul al-Nisa' with 'L' refers to a woman being without jewelry and henna, as 'L' and 'R' are used interchangeably (although this is permissible). However, it is not permissible in certain places to read one in place of the other at will. Scholars have explicitly stated that reading 'Sarail' instead of 'Yawma tubla as-sarair' or reading 'Jibbar' instead of 'Jibal' in 'Yawma tarjuful ardu wal-jibal' will invalidate the prayer, as mentioned in Al-Khaniya, Al-Munia, etc. Furthermore, all this discourse I have provided is specific to the letter 'Zha' (ظ). It is possible that some ignorant person, slave girl, or villager among the Arabs might utter 'Dal', 'Ta', 'Zal', or 'Za' in place of 'Zad' (ض) because our discussion pertains to pure Arabs, not to those who have mixed with non-Arabs and whose language has become corrupted. For example, they say 'Gangari' instead of 'Raj'at Qumqari' and 'Tal-t'ashar' instead of 'Thalatha 'Ashar', and they read 'Khuz Kaza' as 'Khud Kada Khud Kada' with a kasra on the Kaf and a Dal. Besides these other purposeless and meaningless variations, I have met nomadic and Yemeni people who say 'Hichami' for 'Hakaza'...

[Left Column - Arabic/Persian Source]: Al-Nisa' bil-Laam (the women with 'L'), which refers to those without jewelry or henna. 'L' and 'R' alternate. It is absolutely not permissible to read one in place of the other wherever one wishes; scholars have specified that reading 'Sarail' for 'Yawma tubla as-sarair' or 'Jibbar' instead of 'Jibal' in 'Yawma tarjuful ardu wal-jibal' invalidates the prayer, as in Al-Khaniya, Al-Munia and others. Again, this entire statement we have made is concerning the letter 'Zha' (ظ) specifically. Far be it that an ignorant person, a servant, or a peasant among the Arabs should use 'Dal', 'Ta' (plain), 'Zal' or 'Za' instead of 'Zad' (ض). My speech is regarding pure Arabs, not those who have intermingled with non-Arabs and whose language has become mixed and confused. They call 'Raj'at Qumqari' as 'Gangari' and 'Thalatha 'Ashar' as 'Tal-t'ashar', and they read 'Khuz Kaza' as 'Khud Kada' with a kasra on Kaf and a plain Dal, among other meaningless changes. I met some Arabs from the outskirts of Yemen who said 'Hichami' for 'Hakaza', and 'Minch' with a Persian 'Jim' for 'Minki' when addressing a female, and I saw others who pronounced 'Jim' like a Persian 'Kaf', calling 'Masjid' as 'Masgada' and 'Jamal' as 'Gamal'. Al-Radi said: The 'Ba' which is like 'Fa', Al-Sayrafi said: It is frequent in the language of non-Arabs and I think...

Footnotes: 1. Mentioned under the word 'Itr' in 'Majma' Bihar al-Anwar', published by Matba' Aali Munshi Nawal Kishore Lucknow, 2/39. 2. 'Fatawa Qazi Khan', Section on mistakes in Quranic Recitation, published by Nawal Kishore Lucknow, 1/68.

[दायां कॉलम - उर्दू अनुवाद/व्याख्या]: ...नापसंद फरमाते थे। यहाँ इत्र से वह खुशबू मुराद है जो उस तरह मुकद्दर (धुंधली) हो जो मर्द लगाते हैं। कुछ ने कहा कि लाम के साथ रा की जगह लाम है यानी 'तअत्तुलुन निसा' लाम के साथ, जिसका अर्थ औरत का बगैर ज़ेवर और मेहंदी के होना मुराद है क्योंकि लाम और रा एक दूसरे की जगह मुस्तअमल (इस्तेमाल) होते हैं (यह अगरचे जायज़ है)। मगर यह बाज़ मक़ाम पर जायज़ नहीं होता कि जहाँ चाहें एक को दूसरे की जगह पढ़ लें। उलमा ने तसरीह (स्पष्ट) की है कि 'यौमा तुबलस सराइर' की जगह 'सराइल' या 'यौमा तरजुफुल अरज़ु वल जिबाल' की जगह 'जिबाल' की जगह 'जिब्बार' पढ़ने से नमाज़ फ़ासिद (अमान्य) हो जाएगी, जैसा कि ख़ानिया और मुनिया वग़ैरह में है। फिर यह तमाम गुफ़्तगू जो मैंने की है यह सिर्फ'ज़ौ' (ظ) मोअजमा के लिए ख़ास है। हो सकता है कोई जाहिल, लौंडी या देहाती अरब 'ज़ाद' (ض) की जगह दाल, ता, ज़ाल या ज़ा अपनी ज़बान पर जारी कर दे क्योंकि हमारी गुफ़्तगू अरब-ए-ख़ालिस में है न कि उस क़ौम में जो अजम (ग़ैर-अरब) के साथ मिली हो और उसकी ज़बान ख़लत-मलत हो गई हो। मसलन 'रजअत कुम़क़री' की जगह 'रजअत गंगरी' और 'सलासा अशर' की जगह 'तलतअशर', 'ख़ुज़ कज़ा' को 'ख़ुद कदा ख़ुद कदा' काफ़ के कसरा और दाल के साथ पढ़ते हैं। इनके अलावा अन्य बेमक़सद व लायअनी (निरर्थक) परिवर्तनों या ऐसे बदवी और यमनी लोगों से मिला हूँ जो 'हाकज़ा' को 'हचामी' कहते हैं...

[बायां कॉलम - अरबी/फ़ारसी स्रोत]: अन-निसा बिल-लाम, यानी वे स्त्रियां जो गहनों और मेहंदी से रहित हों। लाम और रा एक-दूसरे के स्थान पर आते हैं। यह कतई जायज़ नहीं है कि जहाँ चाहें एक को दूसरे की जगह पढ़ लें; विद्वानों ने स्पष्ट किया है कि 'यौमा तुबलस सराइर' के लिए 'सराइल' या 'यौमा तरजुफुल अरज़ु वल जिबाल' में 'जिबाल' की जगह 'जिब्बार' पढ़ने से नमाज़ फ़ासिद हो जाती है, जैसा कि ख़ानिया, मुनिया और अन्यों में है। फिर, हमने जो यह पूरी बात कही है, वह विशेष रूप से 'ज़ौ' (ظ) अक्षर के बारे में है। ईश्वर न करे कि कोई अज्ञानी, सेवक या देहाती अरब 'ज़ाद' (ض) के स्थान पर 'दाल', 'ता' (सादा), 'ज़ाल' या 'ज़ा' का प्रयोग करे। मेरी बात शुद्ध अरबों के बारे में है, न कि उन लोगों के बारे में जो ग़ैर-अरबों के साथ मिल गए हैं और जिनकी भाषा मिश्रित और भ्रमित हो गई है। वे 'रजअत कुम़क़री' को 'गंगरी' और 'सलासा अशर' को 'तलतअशर' कहते हैं, और वे काफ़ पर कसरा और एक सादे दाल के साथ 'ख़ुज़ कज़ा' को 'ख़ुद कदा' पढ़ते हैं। मैंने यमन के बाहरी इलाकों के कुछ अरबों से मुलाकात की जो 'हाकज़ा' को 'हचामी' कहते थे, और एक महिला को संबोधित

करते समय 'मिन्की' के लिए फ़ारसी 'जीम' के साथ 'मिन्च' कहते थे, और मैंने कुछ अन्यों को देखा जिन्होंने 'जीम' का उच्चारण फ़ारसी 'काफ़' की तरह किया, 'मस्जिद' को 'मसगदा' और 'जमाल' को 'गमाल' कहते थे। अल-रज़ी ने कहा: 'बा' जो 'फ़ा' की तरह है, अल-सैराफ़ी ने कहा: यह ग़ैर-अरबों की भाषा में बहुत अधिक है और मेरा मानना है...

पादलेख: 1. 'मजमा बिहारुल अनवार' में शब्द 'इत्र' के अंतर्गत उल्लेखित, मतबूआ मतबा आली मुंशी नवल किशोर लखनऊ, 2/39। 2. 'फ़तावा क़ाज़ी ख़ान', कुरआन पाठ में गलतियों का अध्याय, मतबूआ नवल किशोर लखनऊ, 1/68।

पेज 297/736

(دایاں کالم): ناپسند فرماتے تھے۔ یہاں عطر سے وہ خوشبو مراد ہے جو اس طرح مکدر ہو جو مرد لگاتے ہیں۔ بعض نے کہا کہ لام کے ساتھ را کی جگہ لام ہے یعنی تعطّل النساء لام کے ساتھ یعنی عورت کا بغیر زیور اور مہندی کے ہونا مراد ہے کہ لام اور را ایک دوسرے کی جگہ مستعمل ہوتے ہیں (یہ اگرچہ جائز ہے) مگر یہ بعض مقام پر جائز نہیں ہوتا کہ جہاں چاہیں ایک کو دوسرے کی جگہ پڑھ لیں۔ علما نے تصریح کی ہے کہ یوم تبلی السرائر کی جگہ سرائل یا یوم ترجف الارض والجبال کی جگہ جبال کی جگہ جبار پڑھنے سے نماز فاسد ہو جائے گی، جیسا کہ خانیہ اور منیہ وغیرہ میں ہے پھر یہ تمام گفتگو جو میں نے کی ہے یہ صرف ظاء معجمہ کے لئے خاص ہے ہو سکتا ہے کوئی جاہل، لونڈی یا دیہاتی از عرب ضاد کی جگہ دال، طا، ذال یا زا اپنی زبان پر جاری کر دے کیونکہ ہماری گفتگو عرب خالص میں ہے نہ کہ اس قوم میں جو عجم کے ساتھ ملی ہو اور اس کی زبان خلط ملط ہو گئی ہو مثلاً رجعت قمقری کی جگہ رجعت گنگری اور ثلثہ عشر کی جگہ تلتعشر ، خذ کذا کو خد کدا خد کدا اکاف کے کسرہ اور دال کے ساتھ پڑھتے ہیں ان کے علاوہ دیگر بے مقصد ولا یعنی تغیرات یا ایسے بدوی اور یمنی لوگوں سے ملا ہوں جو ہکذا کو ہچامی

(بایاں کالم): النساء باللام وھی من لا حلی علیھا ولا خضاب واللام والراء یتعاقبان 'وز نہار جائز نبود کہ ہر جا خواہند یکی بجائی دیگری خوانند، علماء تصریح فرمودہ اند کہ یوم تبلی السرائر سرائل یادریوم ترجف الارض والجبال بجائے جبال جبار خواند نماز فاسد شو ۲ کما فی الخانیۃ والمنیۃ وغیرھما باز ایں جملہ کہ گفتہ آمدیم در خصوص ظائے معجمہ است وحاشا کہ جاہلے و کنیزے و دہقانے از عرب بجائے ض، دیا ط مملتین یا ذیا ز معجمتین بر زباں راند سخن من در عرب خالص است نہ در قومے کہ با عجم مخالط شدہ و در زبان نیز خالط و مالط شدند رجعت قمقری را گنگری

گویند و ثلثۃ عشر راتلتعشر و خذ کذار اخذ کذا بکسر کاف و دال مہملہ الی غیر ذلک من التغیرات المہملۃ و بعضے از اعراب و اطراف یمن ملاقی شدم کہ ہکذا را ہچامی گفتند و منک خطاب بانشی را منچ بجیم فارسی و بعضے دیگر دیدم کہ جیم را کاف فارسی مسجد را مسگدا و جمال را گمال می گفتند قال الرضی الباء التی کالفاء قال السیر فی ھی کثیرۃ فی لغۃ العجم واظن

حواشی: 1 مجمع بحار الانوار لفظ عطر کے تحت مذکور ہے مطبوعہ مطبع عالی منشی نولکشور لکھنو ۲/ ۳۹ 2 فتاویٰ قاضی خان فصل فی قراءۃ القرآن خطائی مطبوعہ نولکشور لکھنو ۱/ ۶۸

Fatwa-e-Razvia Volume 6

"The Arabs took this from the non-Arabs due to their intermingling with them, by replacing the dotted 'Za' with a pure 'Zaad' or giving it a hint of 'Zaad' in the speech of scholars; its narration from ignorant commoners is also not remembered. However, some common people of the time, having heard the similarity of form, want to pronounce 'Zaa' instead of 'Zaad'. And some others, while trying to preserve it but unable to do so, produce something between 'Zaad' and 'Zaa'. These are the best among them on the path. We ask Allah to grant us the truth in every matter through research."

In short, the clear truth is that all these letters are distinct from each other, and each has a separate point of articulation (makhraj). Replacing 'Zaad' with any other letter is rejected and impermissible. This is a letter that Allah, the Exalted, created unique, and did not make any other letter its close peer. This is why Sibawayh said, and he said it well, "If there were no 'Itbaq' (closure) in 'Saad', it would become 'Seen', and in 'Zaa' if..."

...they used to read; they address a female as 'mink' instead of 'minch'. I have also seen other people who pronounce 'Jeem' like 'Gaaf', for example, saying 'Masgad' instead of 'Masjid', and 'Gamal' instead of 'Jamal'. Radi said that the 'Baa' which is like 'Faa', Sirafi says this dialect is widely used among non-Arabs, and my guess is that Arabs took this from non-Arabs due to intermingling. Then, regarding the reading of pure 'Zaad' or with a hint of it instead of 'Zaad', what ignorant people have narrated from the speech of scholars is also not preserved. However, it has been heard from some common people of the time that they want to read 'Zaa' instead of 'Zaad'. And some others, not having the strength for proper pronunciation but still striving, read between 'Zaad' and 'Zaa'. These people are on a better and middle path. We pray to Allah Almighty that He grants us the fortune to follow the investigated truth in every matter. (Ameen)

In short: The clear truth is that all letters are distinct from each other and their points of articulation are different. Therefore, reading 'Zaad' by changing it with any letter is rejected and impermissible. Allah Almighty has created this letter (Zaad) so distinct that no letter can be considered close to it. That is why Sibawayh said, and said it well, "If there were no 'Itbaq' in 'Saad', it would become 'Seen', if not in 'Zaa' then..."

---

1 Sharh Shafiya lil-Radi, Sifat al-Huroof, published by Dar al-Kutub al-Ilmiyyah, Beirut, 3/256. Page 298 of 736

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

"अरबों ने इसे गैर-अरबों से उनके साथ मेलजोल के कारण लिया, विद्वानों के कलाम में बिंदी वाले 'ज़' (ز) के स्थान पर शुद्ध 'ज़ाद' (ض) या 'ज़ाद' के स्पर्श के साथ उच्चारण करना; आम जाहिलों से इसका वर्णन भी याद नहीं है। अलबत्ता, ज़माने के कुछ आम लोग जिन्होंने रूप की समानता सुनी है, वे 'ज़ाद' के स्थान पर 'ज़ा' (ظ) पढ़ना चाहते हैं। और कुछ अन्य जो हिफाज़त करना चाहते हैं लेकिन कर नहीं पाते, 'ज़ाद' और 'ज़ा' के बीच का कुछ उच्चारण करते हैं। ये लोग उनमें सबसे अच्छे और मध्यम मार्ग पर हैं। हम अल्लाह से प्रार्थना करते हैं कि वह हमें हर मामले में शोध के साथ सच्चाई प्रदान करे।"

कुल मिलाकर, स्पष्ट सत्य यही है कि ये सभी अक्षर एक-दूसरे से भिन्न हैं और प्रत्येक का उच्चारण स्थान (मखराज) अलग है। 'ज़ाद' को किसी भी अन्य अक्षर के साथ बदलकर पढ़ना अस्वीकार्य और नाजायज है। यह एक ऐसा अक्षर है जिसे अल्लाह ने अद्वितीय बनाया है और किसी भी अन्य अक्षर को इसका करीबी नहीं बनाया। इसीलिए सिबवई ने कहा, और बहुत खूब कहा, "यदि 'साद' (ص) में 'इतबाक' (मुंह बंद करना) न होता, तो वह 'सीन' (س) बन जाता, और 'ज़ा' (ظ) में..."

...पढ़ते थे; वे महिला को संबोधित करते हुए 'मिन्क' के स्थान पर 'मिन्च' कहते हैं। मैंने कुछ अन्य लोगों को भी देखा है जो 'जीम' (ج) को 'गाफ' (گ) की तरह बोलते हैं, जैसे 'मस्जिद' को 'मसगद' और 'जमाल' को 'गमाल' बोलते हैं। रज़ी ने कहा कि वह 'बा' (ب) जो 'फ़ा' (फ) की तरह है, सीरफ़ी कहता है कि यह बोली गैर-अरबों में बहुत प्रचलित है, और मेरा अनुमान है कि अरबों ने इसे मेलजोल के कारण गैर-अरबों से लिया है। फिर 'ज़ाद' के स्थान पर शुद्ध 'ज़ाद' या उसके स्पर्श के साथ पढ़ने के बारे में अज्ञानी लोगों ने विद्वानों के कलाम से जो कुछ उद्धृत किया है, वह भी सुरक्षित नहीं है। अलबत्ता, ज़माने के कुछ आम लोगों से स्वर की समानता सुनी गई है कि वे 'ज़ाद' की जगह 'ज़ा' पढ़ना चाहते हैं। और कुछ अन्य लोग सही उच्चारण की शक्ति न रखते हुए भी प्रयास करते हैं और 'ज़ाद' और 'ज़ा' के बीच का उच्चारण करते हैं। ये लोग बेहतर और मध्यम मार्ग पर हैं। हम अल्लाह तआला से दुआ करते हैं कि वह हमें हर मामले में शोधपूर्ण सत्य पर चलने का सौभाग्य प्रदान करे। (आमीन)

संक्षेप में: स्पष्ट सत्य यही है कि सभी अक्षर आपस में भिन्न हैं और उनके उच्चारण स्थान अलग-अलग हैं। इसलिए 'ज़ाद' को किसी भी अक्षर से बदलकर पढ़ना अस्वीकार्य और नाजायज है। अल्लाह

तआला ने इस अक्षर (ज़ाद) को इतना अलग बनाया है कि कोई भी अक्षर इसके करीब नहीं माना जा सकता। इसीलिए सिबवई ने कहा, और बहुत खूब कहा, "अगर 'साद' में इतबाक न हो तो वह सीन बन जाए, और अगर 'ज़ा' में न हो तो..."

---

1 शरह शाफ़िया लिल-रज़ी, सिफ़ात अल-हुरूफ, मबुआ दार अल-कुतुब अल-इल्मिय्या, बेरूत, 256/3 पृष्ठ 298/736

فتاوی رضویہ جلد ششم

ان العرب انما اخذوا ذلك من العجم لمخالطتهم اياهم باز اخراج ز معجم بجائے ض خالصاً یا اشتماماً در کلام علماء نقلش از عوام جاہلاں نیز بیاد نیست البتہ بعض عامیاں زماں کہ تشابہ صورت شنیدہ اند بجائے ض ظ بر اور دن مے خواہند و بعض دیگر کہ تحفظ کنند و نتواں چیزے بین الضاد والظاء برمی آرند واولئك امثلهم طريقاً نسأل الله ان يرزقنا الحق في كل باب تحقيقاً۔

بالجملہ حق واضح ہمیں است کہ این ہمہ حروف باہم متبائن است و بر ہمہ مخرج جدا و ابدال ضبا ہر حرفیکہ باشد مردود و ناروا ایں حرفے است کہ حق جل و علا او را تنہا آفرید و بیچ حرفے را قرنیش نگر دانید و لہذا سیبویہ گفت و در صفت لو لا الاطباق فی الصاد لکان سینا وفی الظاء

پڑھتے تھے مونث کو خطاب کرتے ہیں منک کہ جگہ منچ پڑھتے ہیں، بعض دیگر ایسے لوگ بھی میں نے دیکھے کہ جیم کو گاف کے ساتھ مثلاً مسگد، جمال کو گمال بولتے ہیں۔ رضی نے کہا وہ باء جو فاء کی طرح ہے سیرفی کہتا ہے یہ لغت عجم میں کثرت کے ساتھ مستعمل ہے اور میرا گمان ہے کہ عرب نے عجم سے اختلاط کی وجہ سے یہ اخذ کیا ہے پھر ضاد کی جگہ خالصاً یا اشتماماً پڑھنے کے بارے میں جاہل لوگوں نے علماء کے کلام سے جو کچھ نقل کیا ہے وہ بھی محفوظ نہیں البتہ جن بعض عوام زمان سے تشابہ صوت سنا گیا ہے کہ وہ ض کی جگہ ظاء پڑھنا چاہتے ہیں اور بعض دوسرے لوگ ادائیگی کی طاقت نہ رکھتے ہوئے بھی کوشاں رہتے ہیں ضاد اور ظا کے درمیان پڑھتے ہیں یہ لوگ بہتر اور اوسط راہ پر ہیں، ہم اللہ تعالیٰ سے دعا کرتے ہیں کہ وہ ہمیں ہر معاملہ تحقیقی حق پر چلنا نصیب کرے (آمین)

بالجملہ : حق واضح یہی ہے کہ تمام حروف آپس میں متبائن اور ان کے مخارج الگ الگ ہیں لہذا ضاد کسی بھی حرف کے ساتھ بدل کر پڑھنا مردود اور ناجائز ہے۔ اس حرف (ضاد) کو اللہ تعالیٰ نے اتنا جدا پیدا کیا ہے کہ کوئی حرف بھی اسکا قریبی نہیں گردانا جاسکتا اسی لئے سیبویہ نے کہا اور خوب کہا اگر صاد میں اطباق نہ ہو تو سین بن جائے ، اگر ظاء میں نہ ہو تو

---

1 شرح شافیہ للرضی صفات الحروف مطبوعہ دار الکتب العلمیہ بیروت ۲۵۶/۳ Page 298 of 736

Fatawa-e-Razviya - Volume 6

[Left Column] "If it were 'Dhaal' and if it were in 'Taa' it would be 'Daal', then 'Daad' would be excluded from speech because no other letter shares its place of articulation." [Ref 1] This was quoted by Al-Radi and was also quoted from Qari Pani Pati.

Author's Note (Aqool): My research is that among the attributes of letters, some are essential attributes such that their absence necessitates the loss of the letter's identity. For example, 'Itbaaq' (closedness) in 'Taa' and 'Infitah' (openness) in 'Taa' are strictly mandatory to observe. Some are not like that; if they are not performed, the essence of the letter remains intact, such as 'Tahau' in 'Hamzah' and 'Tafashshi' in 'Sheen'. This is as stated in 'Al-Minh': the spreading of the sound during its articulation until it connects with the letters at the tip of the tongue, including the articulation point of the 'Zhaa' with a stroke, even though its actual articulation point is from the edge of the tongue parallel to its center [Ref 2]. Therefore, observing the attributes of letters is not mandatory in every instance; rather, some attributes must be abandoned, like the attribute of 'Takreer' (repetition) in a lightened 'Raa' (Ra-e-Mukhaffafa) absolutely, and in a doubled 'Raa' (Ra-e-Mushaddad) more than once. The meaning of this attribute in 'Raa' is that it is capable of repetition, not that repetition is mandatory. This insight came to my mind by the grace of Allah Almighty, and its detailed explanation...

[Right Column] ...it would become 'Dhaal'. If it were not in 'Taa', it would become 'Daal', and 'Daad' would be removed from speech because there is no alternative letter for it. Al-Radi quoted this, and what he quoted from Qari Pani Pati. Regarding this, I say the researched point is that among the attributes of letters, some are essential attributes whose absence leads to the absence of the letter's essence. For instance, 'Itbaaq' in 'Taa' and 'Infitah' in 'Taa'. Adhering to these is extremely necessary. However, some letters are not like that, meaning if they are not pronounced with those attributes, their essence is not lost. For example, 'Tahau' in 'Hamzah' and 'Tafashshi' in 'Sheen'. This is same as what is in 'Al-Minh' that at the time of its articulation, the sound should spread such that it connects with the letters at the tip of the tongue. Among such letters is the point of articulation for 'Zhaa', although its original point of articulation is from the edge of the tongue parallel to its center. Thus, adhering to the attributes of letters is not necessary everywhere; rather, some attributes are such that their avoidance is necessary, such as 'Takreer' in 'Ra-e-Mukhaffafa' absolutely, and in 'Ra-e-Mushaddad' more than once. That is, the

presence of this attribute in 'Raa' means that 'Raa' is capable of repetition, not that repetition is required. This meaning came to my mind with the guidance of Allah Almighty, and its clarification...

[Footnotes] 1. Sharh Shafi'ah lil-Radi, Sifat al-Huroof, published by Dar al-Kutub al-Ilmiyah, Beirut, 3/262. 2. Al-Minh al-Fikriyah, Section explaining the whispered letters etc., published by Mustafa al-Babi, Egypt, p. 19.

फतावा-ए-रज़विया - जिल्द 6

[बायां कॉलम] "अगर यह 'धाल' (ذ) होता और यदि यह 'ता' (ط) में होता तो यह 'दाल' (د) होता, फिर 'दाद' (ض) भाषा से बाहर हो जाता क्योंकि इसके अलावा कोई भी अक्षर इसके उच्चारण स्थान से नहीं निकलता है।" [संदर्भ 1] इसे अल-राज़ी ने उद्धृत किया है और जिसे उन्होंने कारी पानी पति से उद्धृत किया था।

लेखक का नोट (अकूल): मेरा शोध यह है कि अक्षरों के गुणों के बीच, कुछ अनिवार्य गुण ऐसे होते हैं जिनकी अनुपस्थिति से अक्षर की मूल पहचान ही समाप्त हो जाती है। उदाहरण के लिए, 'ता' (ط) में 'इतबाक' और 'ता' (ت) में 'इनफिताह' का पालन करना अनिवार्य है। कुछ ऐसे नहीं हैं; यदि उन्हें नहीं अपनाया जाता है, तो अक्षर का सार नष्ट नहीं होता है, जैसे 'हम्ज़ा' में 'तहौ' और 'शीन' में 'तफश्शी'। यह 'अल-मिन्ह' में वर्णित है: इसके उच्चारण के दौरान ध्वनि का फैलना जब तक कि यह जीभ की नोक के अक्षरों से न जुड़ जाए, जिसमें 'ज़ा' (ظ) का उच्चारण स्थान भी शामिल है, जबकि इसका वास्तविक उच्चारण स्थान इसके केंद्र के समानांतर जीभ के किनारे से है [संदर्भ 2]। इसलिए, अक्षरों के गुणों का पालन करना हर मामले में अनिवार्य नहीं है; बल्कि, अक्षरों के कुछ गुण ऐसे होते हैं जिन्हें छोड़ना अनिवार्य है, जैसे कि हल्की 'रा' (रा-ए-मुखफ्फफा) में 'तकरीर' (दोहराव) का पूर्ण रूप से त्याग, और भारी 'रा' (रा-ए-मुशद्दद) में एक से अधिक बार दोहराव का त्याग। 'रा' में इस गुण का अर्थ यह है कि इसमें दोहराव की क्षमता है, न कि यह कि दोहराव अनिवार्य है। यह अंतर्दृष्टि अल्लाह सर्वशक्तिमान की कृपा से मेरे मन में आई, और इसका स्पष्टीकरण...

[दायां कॉलम] ...वह 'धाल' बन जाए। यदि यह 'ता' में न हो, तो वह 'दाल' बन जाए, और 'दाद' भाषा से ही बाहर हो जाए क्योंकि इसके लिए कोई वैकल्पिक अक्षर नहीं है। राजी ने इसे उद्धृत किया और जिसे उन्होंने कारी पानी पति से उद्धृत किया है। इसके बारे में मैं कहता हूँ कि खोजी गई बात यह है कि अक्षरों के गुणों में कुछ ऐसे आवश्यक गुण हैं जिनके अभाव में अक्षरों के अस्तित्व का अभाव हो जाता है। उदाहरण के लिए, 'ता' में 'इतबाक' और 'ता' में 'इनफिताह'। इनका पालन करना अत्यंत आवश्यक है। और कुछ अक्षर ऐसे नहीं हैं, अर्थात यदि उन्हें उन गुणों के साथ उच्चारित नहीं किया जाता है, तो उनका सार समाप्त नहीं होता है। उदाहरण के लिए, हम्ज़ा में 'तहौ' और शीन में 'तफश्शी'। यह वही है जो 'अल-मिन्ह' में है कि इसके उच्चारण के समय ध्वनि इस प्रकार फैलनी चाहिए कि यह जीभ की नोक के अक्षरों के साथ जुड़ जाए। ऐसे अक्षरों में 'ज़ा' का उच्चारण स्थान भी है, हालांकि इसका मूल उच्चारण स्थान इसके समानांतर केंद्र और जीभ के किनारे से है। इस प्रकार,

अक्षरों के गुणों का पालन करना हर जगह आवश्यक नहीं है; बल्कि अक्षरों के कुछ गुण ऐसे हैं जिनका परित्याग आवश्यक है, जैसे कि 'रा-ए-मुखफ्फफा' में 'तकरीर' पूर्ण रूप से, और 'रा-ए-मुशद्दद' में एक से अधिक बार। अर्थात, 'रा' में इस गुण की उपस्थिति का अर्थ यह है कि 'रा' दोहराव के योग्य है, न कि इसमें दोहराव अनिवार्य है। यह अर्थ अल्लाह सर्वशक्तिमान के मार्गदर्शन से मेरे मन में आया, और इसका स्पष्टीकरण...

[पाद टिप्पणियाँ] 1. शरह शाफिया लिल-राज़ी, सिफ़त अल-हुरूफ, दार अल-कुतुब अल-इल्मिया, बेरुत द्वारा प्रकाशित, 3/262. 2. अल-मिन्ह अल-फिक्रिया, फुसफुसाए गए अक्षरों आदि की व्याख्या करने वाला खंड, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 19.

पृष्ठ 299/736

[بائیں کالم] كان ذالا وفي الطاء كان دالاو لخرجت الضاد من الكلام لانه ليس شيئ من الحروف من موضعها غيرها ١ نقله الرضي وآنکہ از قاری پانی پتی نقل کردند۔ اقول: تحقیق آنست کہ در صفاتِ حروف بعضے صفاتِ لازمہ است کہ فقدانش مستلزم فقدانِ ذات باشد چنانچہ اطباق در ط وانفتاح در ت او قطعاً واجب المراعاة ست و بعضے نہ چنانست اگر بجا نیارند ذاتِ حرف در ہم نخورد چوں تہوع در ہمزہ وتفشی در ش وھو كما في المنح انتشار الصوت عند خروجها حتى تتصل بحروف طرف اللسان منها مخرج الظاء المشالة والحال ان مخرجها حافة اللسان من محاذات وسطه ٢۔ پس مراعاتِ صفات مطلقاً واجب نیست بلکہ از صفاتِ حروف آنست کہ ترکش واجب است و آن صفتِ تکریر در رائے مخفف مطلقاً و در مشدد بیش از یکبار معنی ایں صفات در را آنست کہ قابلِ تکرار است نہ آنکہ تکرارش باید بایں معنی بتوفیق اللہ تعالیٰ بخاطرم خطور کردہ بود کہ تصریخش در کلامِ مولنا

[دائیں کالم] وہ ذال بن جائے اگر طاء میں نہ ہو تو وہ دال بن جائے اور ضاد کلام سے ہی خارج ہو جائے کیونکہ اس کے متبادل کوئی حرف ہی نہیں اھ اسے رضی نے نقل کیا اور جو انہوں نے قاری پانی پتی سے نقل کیا ہے۔ اس کے بارے میں کہتا ہوں تحقیقی بات یہ ہے کہ حروف کی صفات میں بعض ایسی صفاتِ لازمہ ہیں جن کے فقدان سے حروف کی ذات کا فقدان لازم آتا ہے مثلاً "طاء" میں اطباق اور "تاء" میں انفتاح اس کی رعایت نہایت ضروری ہے اور بعض حروف ایسے نہیں یعنی اگر انھیں ان صفات سے ادا نہ کیا جائے تو ان کی ذات ختم نہیں، مثلاً ہمزہ میں تہوع اور شین میں تفشی، یہ وہی ہے جو المنح میں ہے کہ اس کے خروج کے وقت آواز اس طرح انتشار یہاں تک ہو کہ حروف کے ساتھ طرفِ لسان متصل ہو جائے، ایسے حروف میں ظاء کا

مخرج بھی ہے حالانکہ اس کا اصل مخرج اس کے محاذاتِ وسط سے اور حافہ زبان ہے۔ پس صفاتِ حروف کی رعایت ہر جگہ لازم نہیں بلکہ بعض حروف کی صفات ایسی ہیں جن کا ترک ضروری ہے اور وہ رائے مخففہ میں مطلقاً اور راء مثقلہ میں ایک بار سے زائد تکرار ہے یعنی را میں اس صفت کی موجودگی کا معنی یہ ہے کہ را قابلِ تکرار ہے یہ نہیں کہ اس میں تکرار ضروری ہے، یہ معنی اللہ تعالیٰ کی توفیق سے میرے ذہن میں آیا اور اس کی تصریح

[فٹ نوٹس] 1 شرح شافیہ للرضی صفات الحروف مطبوعہ دار الکتب العلمیہ بیروت ۲۶۲/۳ 2 المنح الفکریہ مطلب بیان الحروف المہموسہ الخ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ص ۱۹

Fatawa Razawiyya Volume Six

Ali Qari revealed his stance where he said under the text's statement 'and the Raa is made with repetition' (Wal-Raau bi-takreerin ju'ila): The meaning of the scholars' statement 'the Raa has repetition' is that the Raa is capable of accepting repetition because the tip of the tongue vibrates during its pronunciation. This is like calling a person who is not laughing a 'laughing human,' meaning they are capable of laughter. The word 'made' (ju'ila) points to this. Repetition (takreer) in its proper form must be known to guard against it, just as one learns about magic to avoid its harm and to know how to repel it and lift its effect. Al-Ja'bari said: The way of safety is for the speaker to press the back of the tongue firmly against the upper palate once. Whenever it vibrates, a 'Raa' is produced with each vibration. Makki said: It is necessary in recitation to conceal the repetition. He said it is obligatory for the reciter to conceal its repetition, and if they manifest it, they would be making multiple letters out of a doubled (mushaddad) letter, and two letters out of a lightened (mukhaffaf) one. End (with some abbreviation). The obligation of pronouncing each letter from its point of articulation (makhraj) is based on the accepted principle that all letters are equal in standing; there is no special characteristic for the letter 'Daad' in this regard. Rather, it can be said that since performing 'Sadiq' (correct pronunciation) is more difficult...

In this discourse of Maulana Ali Qari, it became clear what he wrote under the author's statement "and the Raa is made with repetition," that the meaning of the Quranic reciters' statement "there is repetition in Raa" is that Raa accepts repetition because at the time of its pronunciation, the side of the tongue moves. Just as a non-laughing person is called a "laughing human" because they are capable of laughter, the word "made" points in this direction. And its repetition is a mistake; therefore, for its pronunciation, knowledge of how to avoid it is necessary so that a mistake can be avoided. Just as the knowledge of magic is acquired so that its harm can be avoided, and knowledge of defense against it is obtained so it can be removed. Ja'bari said the method of safety is that the pronouncer should press the upper part of their tongue firmly against the high part of the palate once. Now when it moves, every time a 'Raa' will be produced. Makki said that in recitation, concealing the repetition is necessary, and he said it is mandatory for the reciter to conceal its repetition, and when they manifest it, they will produce many letters in a doubled letter and two letters in a lightened one. End, end. This passage is with some abbreviation. The obligation of pronouncing every letter from its origin in this way is based on the meaning that it is

accepted that all letters are equal in standing; there is no specific characteristic of 'Daad' in this, rather this...

1. Al-Minah al-Fikriyyah Sharh al-Muqaddimah al-Jazariyyah, Section: Explanation of whispered letters etc., printed by Mustafa al-Babi, Egypt, p. 18. Page 300 of 736

फ़तावा रज़विया जिल्द शश्म (खंड छह)

अली क़ारी ने वहाँ अपना रुख़ साफ़ किया जहाँ उन्होंने मूल पाठ के कथन "व-र्राउ बितकरीरिन जुइला" (और रा को तक़रार के साथ बनाया गया) के तहत कहा: क़ुर्रा (क़ारी लोगों) के कथन "रा में तक़रार (पुनरावृत्ति) है" का अर्थ यह है कि रा तक़रार को स्वीकार करने की क्षमता रखता है क्योंकि इसके उच्चारण के समय ज़बान का सिरा कंपन करता है। यह वैसा ही है जैसे किसी न हँसने वाले व्यक्ति को 'इंसान ज़ाहिक' (हँसने वाला मनुष्य) कहा जाए, जिसका अर्थ है कि वह हँसने के योग्य है। शब्द 'जुइला' इसी ओर संकेत करता है। तक़रार को इसके सही रूप में जानना इसलिए ज़रूरी है ताकि उससे बचा जा सके, जैसे कि जादू का ज्ञान इसलिए प्राप्त किया जाता है ताकि उसके नुकसान से बचा जा सके और उससे बचाव के तरीके जानकर उसे दूर किया जा सके। जा'बरी ने कहा: सलामती का तरीका यह है कि उच्चारण करने वाला अपनी ज़बान के पिछले हिस्से को तालु के ऊपरी हिस्से से एक बार मज़बूती से सटाए। जब भी वह कंपन करेगा, हर बार एक 'रा' उत्पन्न होगा। मक्की ने कहा: क़िरात (पाठ) में तक़रार को छिपाना (इख़फ़ा) आवश्यक है। उन्होंने कहा कि क़ारी के लिए यह अनिवार्य है कि वह इसके तक़रार को छिपाए, और यदि वह इसे प्रकट करता है, तो वह एक मुशद्दद (द्वित्व) अक्षर से कई अक्षर बना देगा, और एक मुखफ़्फ़फ़ (हल्के) अक्षर से दो अक्षर बना देगा। इति (कुछ संक्षेप के साथ)। हर अक्षर को उसके मख़रज (निकास स्थान) से अदा करने की अनिवार्यता इस सिद्धांत पर आधारित है कि सभी अक्षर समान स्तर के माने जाते हैं; इसमें अक्षर 'ज़ाद' (ض) की कोई विशेष विशेषता नहीं है, बल्कि यह कहा जा सकता है कि चूंकि 'सादिक' का उच्चारण अधिक कठिन है...

मौलाना अली क़ारी के इस कलाम में यह बात स्पष्ट हुई जो उन्होंने मातन (लेखक) के कथन "व-र्राउ बितकरीरिन जुइला" के तहत की है कि क़ुर्रा के कथन "रा में तक़रार है" का अर्थ यह है कि रा तक़रार को क़बूल करता है क्योंकि इसके उच्चारण के समय ज़बान का सिरा हरकत करता है। जैसे कि गैर-ज़ाहिक को इंसान ज़ाहिक कहा जाए कि वह हँसने के क़ाबिल है, इस 'जुइला' में इसी ओर इशारा है और इसका तक़रार ग़लत है। अतः इसके सही उच्चारण के लिए इससे बचने की समझ ज़रूरी है ताकि ग़लती से बचा जा सके। जैसे जादू का इल्म इसलिए हासिल किया जाए ताकि उसके नुक़सान से बचा जाए और उससे बचाव की मारिफ़त (पहचान) हो जाए और उसे हटाया जा सके। जा'बरी ने कहा सलामती का तरीक़ा यह है कि तलफ़्फ़ुज़ करने वाला अपनी ज़बान के ऊपर वाले हिस्से को तालु के बुलंद हिस्से के साथ एक दफ़ा मज़बूत तरीक़े से मिलाए। अब जब वह हरकत

करेगी तो हर दफ़ा 'रा' पैदा होगा। मक्की ने कहा है कि क़िरात में इख़फ़ा-ए-तक़रार ज़रूरी है और फ़रमाया क़ारी पर लाज़िम है कि वह इसके तक़रार में इख़फ़ा करे और जब इज़हार (प्रकट) करेगा तो हर्फ़ए-मुशद्दद में कई हर्फ़ पैदा करेगा और मुख़फ़्फ़फ़ में दो हर्फ़ से करेगा। यहाँ बात समाप्त हुई। यह इबारत कुछ इख़्तिसार (संक्षेप) के साथ है। हर हर्फ़ को उसके मख़रज से इस तरह अदा करने का वजूब (अनिवार्यता) इस मानी पर है कि तमाम हुरूफ का मुतसावी-उल-अक़दाम (एक समान) होना मुसल्लम (स्वीकृत) है। इसमें ज़ाद ही की कोई खुसूसियत (विशेषता) नहीं बल्कि यह...

1. अल-मिनह अल-फ़िक्रिया शरह अल-मुक़द्दमा अल-जज़रिया, मतलब: बयान अल-हुरूफ अल-महमुसा आदि, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र द्वारा मुद्रित, पृष्ठ 18। पृष्ठ 300 का 736

علی قاری چہرہ کشود حیث قال تحت قول المتن والراء بتکریر جعل، معنی قولھم ان الرا مکرر ھو ان الراء لہ قبول التکرار لارتعاد طرف اللسان بہ عند التلفظ کقولھم لغیر الضاحك انسان ضاحك یعنی انہ قابل للضحك وفی جعل اشارۃ الی ذلك ، وتکریرہ الحسن فیجب معرفۃ التحفظ عنہ للتحفظ بہ کمعرفۃ السحر لیتجنب عن تضررہ ولیعرف وجہ رفعہ قال الجعبری وطریقۃ السلامۃ انہ یلصق اللافظ ظھر لسانہ باعلی خنکہ لصقا محکما مرۃ واحدۃ ومتی ارتعد حدث من کل مرۃ راء وقال مکی لابد في القرأۃ من اخفاء التکریر وقال واجب علی القارئ ان یخفی تکریرہ ومتی اظھر فقد جعل من الحرف المشدد حروفا ومن الحرف المشدد حروفا ومن المخفف حرفین اھـ ببعض اختصار و در وجوب ادا از مخرج بر معنی کہ مسلم است جملہ حروف متساویہ الاقدام است ہیچ خصوصیت ضاد را نیست بلکہ تواں گفت کہ چوں ادائے صادق در واعسر

مولانا علی قاری کے اس کلام میں ظاہر ہوئی جو انہوں نے ماتن کے قول "والراء بتکریر جعل" کے تحت کی ہے کہ قراء کے قول "را میں تکرار ہے" کا معنی یہ ہے کہ را تکرار کو قبول کرتا ہے کیونکہ اس کے تلفظ کے وقت طرفِ زبان حرکت کرتی ہے جیسا کہ غیر ضاحک کو انسان ضاحک کہا جائے کہ وہ ضحک کے قابل ہے، اس جعل میں اسی طرف اشارہ ہے اور اس کا تکرار غلط ہے، پس اس کے ساتھ تلفظ کے لئے اس سے بچنے کی معرفت ضروری ہے تاکہ غلطی سے بچا جاسکے، جیسا کہ جادو کا علم اس لئے حاصل کیا جائے تاکہ اس کے نقصان سے بچا جائے اور اس سے دفاع کی معرفت ہو جائے اور اس کو اٹھایا جاسکے جعبر ی نے کہا سلامتی کا طریقہ یہ ہے کہ تلفظ کرنے والا اپنی زبان کے اوپر والے حصے کو تالو کے بلند حصے کے ساتھ ایک دفعہ مضبوط طریقہ سے ملائے اب جب وہ حرکت کرے گی تو ہر دفعہ را پیدا ہو گا مکی نے کہا

ہے قرات میں اخفاء تکرار ضروری ہے اور فرمایا قاری پر لازم ہے کہ اس کے تکرار میں اخفاء کرے اور جب اظہار کرے گا تو حرف مشدد میں کئی حروف پیدا کرے گا اور مخفف میں دو حروف سے کرے اھ اھ یہ عبارت کچھ اختصار کے ساتھ ہے ہر حرف کو اس کے مخرج سے اس طرح ادا کرنے کا وجوب اس معنی پر ہے کہ تمام حروف کا متساوی الاقدام ہونا مسلم ہے اس میں ضاد ہی کی کوئی خصوصیت نہیں بلکہ یہ

1 المنح الفکریہ شرح المقدمۃ الجزریۃ مطلب بیان الحروف المہموسہ الخ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ص ۱۸ Page 300 of 736

Fatawa Rizvia, Volume 6

(Left Column) Among the letters, its obligatory ruling, due to the incidental hardship in it compared to other letters, is with mitigation. For indeed, "hardship attracts ease," and "whenever a matter becomes constricted, it expands." "Allah does not burden a soul beyond its capacity" (1). "And He has not placed upon you any hardship in religion" (2). "Allah intends for you ease and does not intend for you hardship" (3). And praise be to Allah, Lord of the worlds. Yes, the specificity of the letter 'Daad' (ض) is due to its intended difficulty and the intense need for diligence in its preservation and alertness in its performance.

(Right Column) It can be said that since its correct pronunciation is more difficult compared to other letters, then in view of this hardship, there will be ease in its obligatory ruling relative to other letters, because hardship brings ease. There is room for accommodation in every difficult matter. Allah Almighty does not burden any soul beyond its capacity. Allah Almighty has not placed any constriction upon you in matters of religion. Allah Almighty intends ease for you and does not intend hardship for you. And all praise is for Allah Almighty, Who is the Lord of all the worlds. However, due to the difficulty in the letter 'Daad' (ض), there should be great care and caution in its performance, and it should be pronounced with full mindfulness. (T)

(Footnotes) 1. Al-Quran 2/286 2. Al-Quran 22/78 3. Al-Quran 2/185

Page 301 of 736

फ़तावा रज़विया, जिल्द छठी

(बायां कॉलम) अक्षरों में से एक, इसके उच्चारण में अन्य अक्षरों की तुलना में होने वाली आकस्मिक कठिनाई के कारण, इसका अनिवार्य नियम सुगमता वाला है। क्योंकि वास्तव में 'कठिनाई सुगमता लाती है' और 'जब भी कोई मामला संकुचित होता है, तो वह विस्तृत हो जाता है'। "अल्लाह किसी जीव पर उसकी सामर्थ्य से अधिक बोझ नहीं डालता" (1)। "और उसने धर्म के मामले में तुम पर कोई तंगी नहीं रखी" (2)। "अल्लाह तुम्हारे लिए आसानी चाहता है और तुम्हारे लिए कठिनाई नहीं चाहता" (3)। और समस्त प्रशंसा अल्लाह के लिए है, जो संसारों का पालनहार है। हाँ, अक्षर 'दाद' (ض) की विशेषता उसकी कठिनाई और इसके सही उच्चारण के लिए सावधानी, सतर्कता और सुरक्षा की तीव्र आवश्यकता के कारण है।

(दायां कॉलम) यह कहा जा सकता है कि जब इसका सही उच्चारण अन्य अक्षरों की तुलना में अधिक कठिन है, तो इस कठिनाई को देखते हुए अन्य अक्षरों की तुलना में इसके अनिवार्य आदेश में सुगमता होगी क्योंकि कठिनाई सुगमता लाती है। हर कठिन मामले में गुंजाइश होती है। अल्लाह तआला किसी जीव को उसकी शक्ति से अधिक कष्ट का आदेश नहीं देता। अल्लाह तआला ने धर्म के मामले में तुम पर कोई तंगी नहीं रखी। अल्लाह तआला तुम्हारे लिए आसानी चाहता है और तंगी नहीं चाहता। और समस्त गुण अल्लाह तआला के लिए हैं जो समस्त संसारों का पालनहार है। हाँ, 'दाद' (ض) में तंगी के कारण इसके उच्चारण के लिए बहुत सावधानी और सुरक्षा होनी चाहिए और उच्चारण में होश से काम लिया जाना चाहिए। (त)

(पादलेख) 1. अल-कुरान 2/286 2. अल-कुरान 22/78 3. अल-कुरान 2/185

पेज 301 / 736

(بایاں کالم) از جملہ حروف است حکم وجوبِ بعارض مشقت دروے بنسبت سائر حروف درد بتخفیف است فان المشقة تجلب التیسیر و ماضاق امر الاتسع و لَا یُکَلِّفُ اللّٰہُ نَفْسًا اِلَّا وُسْعَھَا 1 وَمَا جَعَلَ عَلَیْکُمْ فِي الدِّیْنِ مِنْ حَرَجٍ 2 یُرِیْدُ اللّٰہُ بِکُمُ الْیُسْرَ وَ لَا یُرِیْدُ بِکُمُ الْعُسْرَ 3 والحمد للہ رب العلمین آرے خصوصیت ض بوجہ عسر مراد و شدت احتیاج باہتمام درآں تحفظ وتیقظ درادائے آنست۔

(دایاں کالم) کہا جاسکتا ہے کہ جب اس کی صحیح ادائیگی دیگر حروف کی نسبت زیادہ مشکل ہے تو اس مشقت کے پیش نظر دیگر حروف کے اعتبار سے اس کے حکم وجوبی میں تخفیف ہوگی کیونکہ مشقت آسانی لاتی ہے۔ ہر مشکل معاملہ میں گنجائش ہے، اللہ تعالٰی کسی نفس کو اس کی طاقت سے بڑھ کر حکم تکلیف نہیں دیتا، اللہ تعالٰی نے تم پر دین کے معاملے میں تنگی نہیں رکھی اللہ تعالٰی تم پر آسانی کا ارادہ رکھتا ہے اور تنگی کا ارادہ نہیں فرماتا، اور تمام خوبی اللہ تعالٰی کے لئے جو تمام جہانوں کا رب ہے، ہاں ضاد میں تنگی کی وجہ سے اس کی ادائیگی کے لئے خوب اہتمام اور تحفظ ہونا چاہئے اور ادائیگی میں ہوش سے کام لیا جائے۔ (ت)

(حواشی) 1 القرآن ۲/۲۸۶ 2 القرآن ۲۲/۷۸ 3 القرآن ۲/۱۸۵

Fatawa Razawiyya, Volume 6

Al-Jaam ad-Dhad 'an Sunan ad-Dhad 1317 AH (Putting a bridle on the mouths of those who hinder the ways of Dhad)

Question Number 77: From Darbhanga, Ismail Ganj Mohalla, Laheriasarai Post Office, sent by Maulvi Muhammad Yasin Sahib, 10 Jumada al-Ukhra 1317 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter that in these parts of Bengal etc., some people have emerged who intentionally recite the letter 'Dhad' (ض) as 'Zha' (ظ) or 'Dhal' (ذ) or even 'Za' (ز) and command others to do so? They declare prayers absolutely invalid and void when this letter is pronounced in the way common people in India do, which has a hint of the letter 'Dal' (د). To support their claims, they present six "fatwas" from the people of Nadwa and other contemporary Indians. The summary and conclusion of these fatwas is the ruling that the prayer becomes invalid if 'Dhad' (ض) is recited similar to 'Dal' (د). They base this on these two reasons: Firstly: In Fatawa Qazi Khan:

Arabic	**Urdu Translation/Explanation**
Even if 'ad-Dalleen' is recited with 'Zha' (ظ) or 'Dhal' (ذ), the prayer is not invalidated.	If 'ad-Dalleen' is recited as 'az-Zalleen' (الظآلين) or 'ad-Dhalleen' (الذآلين), the prayer will not be invalidated.
And if 'ad-Dalleen' is recited with 'Dal' (د), it is invalidated[1]-	If it is recited with 'Dal' (د) in 'Dalleen', the prayer will become invalid. (T)

[1] Fatawa Qazi Khan, Chapter on reciting Quran incorrectly, etc., published by Naval Kishore, Lucknow, 1/29.

फ़तावा रज़विया, खंड 6

अल-जाम अद-द़ाद अन सुनन अद-द़ाद 1317 हिजरी (द़ाद के तरीकों से रोकने वालों के मुँह में लगाम देना)

मसाला नंबर 77: दरभंगा, मोहल्ला इस्माइल गंज, डाकखाना लहरियासराय से, प्रेषक मौलवी मोहम्मद यासीन साहब, 10 जमाद-उल-उखरा 1317 हिजरी। धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं कि बंगाल आदि के इन क्षेत्रों में कुछ ऐसे लोग पैदा हुए हैं जो जानबूझकर 'द़ाद' (ض) को 'ज़ा' (ظ) या 'ज़ाल' (ذ) बल्कि 'ज़ा' (ز) पढ़ते हैं और दूसरों को भी ऐसा करने का आदेश देते हैं। और भारत के आम लोगों में जिस तरह से यह अक्षर बोला जाता है, जिससे 'दाल' (د) की ध्वनि पैदा होती है, वे उससे नमाज़ को पूरी तरह से फ़ासिद (अमान्य) और बातिल (शून्य) बताते हैं। अपने दावों के प्रमाण में वे नदवा आदि के समकालीन भारतीय लोगों के छह "फतवे" दिखाते हैं, जिनका निष्कर्ष नमाज़ में 'द़ाद' को 'दाल' के समान पढ़ने पर फ़ासिद होने का हुक्म है, और वे इन दो कारणों पर आधारित हैं: पहला: फ़तावा क़ाज़ी खान में:

अरबी	**उर्दू अनुवाद/व्याख्या**
भले ही 'अद़-द़ाल्लीन' को 'ज़ा' (ظ) या 'ज़ाल' (ذ) के साथ पढ़ा जाए, नमाज़ फ़ासिद नहीं होती।	यदि 'अद़-द़ाल्लीन' को 'अज़-ज़ाल्लीन' (الظآلين) या 'अद़-द़ाल्लीन' (الذآلين) पढ़ा जाए, तो नमाज़ फ़ासिद नहीं होगी।
और यदि 'अद़-द़ाल्लीन' को 'दाल' (د) के साथ पढ़ा जाए तो फ़ासिद हो जाती है[1]-	यदि 'द़ाल्लीन' में 'दाल' के साथ पढ़ा गया तो नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी। (त)

[1] फ़तावा क़ाज़ी खान, क़ुरान के गलत पाठ का अध्याय आदि, नवल किशोर लखनऊ द्वारा प्रकाशित, 1/29।

पृष्ठ 303/736

فتاوٰی رضویہ، جلد ششم

الجام الضاد عن سنن الضاد ۱۳۱۷ھ (ضاد کے طریقوں سے روکنے والے منہ میں لگام دینا)

مسئلہ نمبر ۷۷: از در بھنگہ محلہ اسمعیل گنج ڈاک خانہ لہریا سرائے مرسلہ مولوی محمد یسین صاحب ۱۰ جمادی الاخری ۱۳۱۷ھ کیا فرماتے ہیں علماء دین اس مسئلہ میں کہ ان اطراف بنگالہ وغیرہ میں کچھ لوگ ایسے پیدا ہوئے ہیں کہ ض معجمہ کو قصداً ظ یا ذ بلکہ ز معجمات پڑھتے ہیں اور اسی کا دوسروں کو امر کرتے ہیں اور عام عوام ہندوستان میں جس طرح یہ حرف ادا کیا جاتا ہے جس سے بوئے دال مہملہ پیدا ہوتی ہے اس سے نماز مطلقاً فاسد و باطل بتاتے ہیں اور اپنے دعووں کی سند میں اہل ندوہ وغیرہ ہندیان زمانہ کے چھ "فتوے دکھاتے ہیں جن کا خلاصہ کلام و محصل مرام نماز میں ض کو مشابہ د مہملہ پڑھنے پر حکم فساد اور اس پر ان دو وجہ سے استناد ہے: اولاً: فی فتاوٰی قاضی خان :

عربی عبارت	اردو تشریح
ولو قرأ الضآلین بالظاء وبالذال لاتفسد صلاتہ	اگر الضآلین کو الظآلین یا الذآلین پڑھا جائے تو نماز فاسد نہ ہوگی

ولو قرأ الدالین بالدال تفسد۱- اگر دآلین میں دال کے ساتھ پڑھا تو فاسد ہو جائے گی۔(ت)

---

1 فتاوٰی قاضی خان فصل فی قراۃ القرآن خطاء الخ مطبوعہ نولکشور لکھنو ۱/ ۲۹

Fatawa Razawiyya Volume VI Secondly: 'Daad' (ض) is similar to 'Zha' (ظ), not to 'Dal' (د). There is a difference in characteristics between 'Daad' and 'Dal'. Since 'Daad' and 'Dal' are phonetically distinct, separating them is possible without difficulty. The text of Fatawa Nadwa is as follows: In such a case, prayer will be invalidated, for 'Daad' and 'Dal' are two letters with different meanings between which distinction is possible without hardship. Regarding such a situation, jurists write of the invalidation of prayer. Shami says: "If a letter is mentioned in place of another and the meaning changes, if distinction between them is possible without hardship, it [prayer] is invalidated. If it is not possible except with hardship, like 'Zha' with 'Daad', most of them [scholars] said it is not invalidated." 1 - (Summarized) When another letter is spoken in place of a letter and the meaning changes, if distinction between them without hardship is not possible, as is the case with 'Zha' and 'Daad', then most scholars have said that the prayer will not be invalidated. (T)

The gist of five fatwas is only this much, and in one—the fifth one—there is an additional statement that reciting 'Zhaallin' is also wrong. However, because there is phonetic similarity and distinction is difficult, according to most jurists, the prayer is not invalidated. But intentionality (deliberate mispronunciation) is a spoiler here too; this is the chosen school of thought as mentioned in Al-Bazzaziyya. What is the status of these fatwas, and are they in agreement with and supportive of these people or not? And those people who intend to say 'Daad' (ض) and read it thinking it is 'Daad', but due to lack of ability it is not pronounced clearly and sounds similar to 'Dal' to the listener—will their prayer be valid or not? And what is the ruling for the prayer of one who intentionally pronounces 'Daad' as 'Za' (ز)? And the ruling of invalidation at the time of changing a letter and variation in meaning—is it specific only to 'Daad', 'Dal', and 'Zha', or is it general to the rest of the letters like (Alif, 'Ayn, Ta, Tha, Sin, Tha, Sad, Ha, Ha)? If it is general, why is this dispute today only about this [particular] letter? Let the answer be brief, as the common people do not read lengthy explanations. Explain and you shall be rewarded.

The Answer: O Allah, [grant] guidance to truth and correctness. In the name of Allah, the Most Gracious, the Most Merciful. Praise be to Allah, Who has purified the path of guidance from the distortion of every hinderer (Saadd), and promised punishment for whoever opposes and contradicts (Haadda wa Daadda). And blessings and peace be upon the Kind and Generous, upon the master of the servants, the master of goals, and upon his noble family and glorious companions, as long as the letter

'Saad' (ص) remains without dots and 'Daad' (ض) is dotted. For the discovery of correctness and clarification of the answer, here are a few summarized sentences...

1. Radd al-Muhtar, Chapter on issues of the reciter's slip (Zallat al-Qari), printed by Mustafa al-Babi Egypt 1/468. Page 304 of 736

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी दूसरा: 'दाद' (ض) 'ज़ा' (ظ) के समान है, न कि 'दाल' (د) के। 'दाद' और 'दाल' के गुणों में अंतर है। जब 'दाद' और 'दाल' ध्वन्यात्मक रूप से भिन्न हैं, तो उनमें बिना कठिनाई के अंतर करना संभव है। फ़तवा नदवा की इबारत इस प्रकार है: ऐसी स्थिति में नमाज़ फासिद (अमान्य) हो जाएगी, क्योंकि 'दाद' और 'दाल' अर्थ में भिन्न दो अक्षर हैं जिनके बीच बिना कठिनाई के अंतर करना संभव है और ऐसी स्थिति में फ़ुक़हा (विधिवेत्ता) नमाज़ के फासिद होने की बात लिखते हैं। शामी कहते हैं: "यदि एक अक्षर के स्थान पर दूसरा अक्षर बोला जाए और अर्थ बदल जाए, यदि उनके बीच बिना कठिनाई के अंतर करना संभव हो तो नमाज़ फासिद हो जाती है। और यदि बिना कठिनाई के संभव न हो, जैसे 'ज़ा' और 'दाद' का मामला है, तो उनमें से अधिकांश (विद्वानों) ने कहा कि नमाज़ फासिद नहीं होगी।" 1 - (संक्षेपित) जब किसी अक्षर के स्थान पर दूसरा अक्षर बोला जाए और अर्थ बदल जाए, यदि उनके बीच बिना कठिनाई के अंतर करना संभव न हो जैसा कि 'ज़ा' और 'दाद' का मामला है, तो अधिकांश विद्वानों ने कहा है कि नमाज़ फासिद नहीं होगी। (त)

पाँच फ़तवों का सार केवल इतना ही है, और एक यानी पाँचवें में इतना और बयान है कि 'ज़ाल्लीन' (ظآلّين) पढ़ना भी गलत है, लेकिन चूंकि उनमें ध्वन्यात्मक समानता है और अंतर करना कठिन है, इसलिए अधिकांश फ़ुक़हा के अनुसार नमाज़ फासिद नहीं होती। लेकिन जानबूझकर की गई गलती यहाँ भी फासिद करने वाली है; यही पसंदीदा मज़हब (विचारधारा) है जैसा कि 'बज़ाज़िया' में है। इन फ़तवों की क्या स्थिति है, और क्या वे इन लोगों के अनुकूल और समर्थक हैं या नहीं? और जो लोग 'दाद' (ض) का ही इरादा करें और 'दाद' समझकर पढ़ें लेकिन अपनी अक्षमता के कारण साफ तौर पर अदा न हो पाए और सुनने में 'दाल' के समान लगे, तो उनकी नमाज़ होगी या नहीं? और जो जानबूझकर 'दाद' को 'ज़' (ز) पढ़े उसकी नमाज़ का क्या हुक्म है? और अक्षर बदलने और अर्थ में भिन्नता के समय फासिद होने का जो हुक्म है, क्या वह केवल 'दाद', 'दाल' और 'ज़ा' तक ही सीमित है या बाकी अक्षरों जैसे (अ, अ़, त, त़, स, थ, स़, ह़, ह) के लिए भी सामान्य है? यदि सामान्य है, तो आज यह विवाद केवल इसी अक्षर में क्यों है? जवाब संक्षिप्त हो क्योंकि आम लोग विस्तृत विवरण नहीं पढ़ते। बयान करें, पुण्य के पात्र बनें।

उत्तर: ऐ अल्लाह, सत्य और सही मार्ग की ओर मार्गदर्शन दे। अल्लाह के नाम से जो अत्यंत दयालु और कृपाशील है। सब प्रशंसा अल्लाह के लिए है जिसने हिदायत के रास्ते को हर रोकने वाले (साद)ّ की विकृति से पवित्र रखा, और विरोध और विमुखता (हाद्द व दाद्द) करने वाले के लिए दंड का वादा किया। और कृपा और शांति उदार और दयालु पर हो, बंदों के स्वामी पर, उद्देश्यों के स्वामी पर, और

उनके महान परिवार और शानदार साथियों पर, जब तक कि अक्षर 'साद' (ص) बिना बिंदु के और 'दाद' (ض) बिंदु वाला रहे। सत्य की खोज और उत्तर के स्पष्टीकरण के लिए कुछ संक्षिप्त वाक्य...

1. रद-उल-मुहतार, मतलब मसाइल ज़ल्लत-उल-क़ारी, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र द्वारा मुद्रित 1/468. पृष्ठ 304 of 736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم ثانیا: ضاد مشابہ ظا کے ، نہ دال کے ، میان ضاد و دال کے صفتوں کا فرق ہے جب ضاد و دال میں صوتاً تغایر ہے تو فصل اُن میں بلا مشقت ممکن۔ فتوٰی ندوہ کی عبارت یوں ہے: ایسی صورت میں نماز فاسد ہو جائے گی کہ ضاد ودال دو حرف متغایر المعنی ہیں جن میں امتیاز بلا مشقت ممکن اور ایسی صورت میں فقہاء فسادِ نماز کو لکھتے ہیں شامی کہتے ہیں: اذا ذکر حرفاً مکان حرف وغیر المعنی ان امکن الفصل بینھما بلا مشقۃ تفسد والایمکن الا بمشقۃ کالظاء مع الضاد قال اکثرھم لا تفسد ۱۔ (ملخصاً) جب کسی حرف کی جگہ دوسرا بولا جائے اور معنی بدل جائے اگر ان کے درمیان امتیاز بغیر مشقت ممکن نہ ہو جیسا کہ ظا اور ضاد کا معاملہ ہے، تو اکثر علماء نے کہا ہے کہ نماز فاسد نہ ہوگی۔ (ت)

پانچ فتووں کا حاصل تو صرف اسقدر ہے اور ایک یعنی پانچویں میں اتنا بیان اور ہے کہ ظآلّین پڑھنا بھی غلط ہے لیکن چونکہ ان میں تشابہ صوتی ہے اور امتیاز متعسر اکثر فقہاء کے نزدیک نماز فاسد نہیں ہوتی لیکن تعمد یہاں بھی مفسد ہے، یہی مذہب مختار ہے کما فی البزازیۃ (جیسا کہ بزازیہ میں ہے۔ ت) ان فتووں کا کیا حال ہے اور یہ ان لوگوں کے موافق و موید ہیں یا نہیں، اور جو لوگ ض ہی کا قصد کریں اور ض سمجھ کر پڑھیں مگر بوجہ عدم قدرت صاف ادا نہ ہو اور سننے میں دال سے مشابہ ہو تو ان کی نماز ہو گی یا نہیں؟ اور جو قصداً ض کو ز پڑھے اُس کی نماز کا کیا حکم ہے؟ اور ہنگامِ تغیر حرف و تفاوت معنی میں جو حکم فساد ہے وہ صرف ض و دو ظ ہی خاص ہے یا باقی حروف مثل (ا، ع، ت، ط، س، ث، ص، ح، ہ) کو بھی عام ہے اگر عام ہے تو آج کل یہ جھگڑا اسی حرف میں کیوں ہے جواب مختصر ہو کہ عوام مطول کو نہیں پڑھتے۔ بینوا توجروا۔

الجواب: اللھم ھدایۃ الحق والصواب بسم اللہ الرحمٰن الرحیم الحمد للہ الذی نزہ سبیل الرشاد عن تحریف کل صاّد ، وعد بالعذاب من حاّد وضاّد والصلوۃ والسلام علی الکریم الجواد علی مولی العباد مولی المراد وآلہ الاسیاد وصحبہ الامجاد ما اھملت الصاد واعجمت الضاد، کشف صواب وایضاح جواب کو چند مجمل جملے

۱ ردالمحتار، مطلب مسائل زلۃ القاری، مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/ ۴۶۸ Page 304 of 736

Fatawa Razviyya, Volume 6

Notes: First: The letters ض (Zaad), ظ (Zaa), ذ (Zaal), and ز (Zay) are all distinct and separate letters. Deliberately substituting one for another while reciting the Quran, whether inside or outside of prayer, is strictly forbidden (Haram) and a major sin. It is an act of fabrication against Allah and a distortion of the Holy Book. The humble author [Imam Ahmad Raza Khan] has established overwhelming and manifest proofs on this in his treatise "Ni'mal Zaad li Luzum al-Daad." So much so that the eminent Imam Abu Bakr Muhammad bin al-Fazl al-Fazli, Imam Burhan al-Din Mahmud Sahib (author of al-Dhakhira), and others, including Allama Ali Qari al-Makki (may Allah have mercy on them), explicitly state that one who intentionally reads 'Zaa' (ظ) in place of 'Zaad' (ض) is a disbeliever (Kafir). It is stated in Al-Muhit al-Burhani:

[Arabic]: "Imam al-Fazli was asked about one who recites the letter 'Zaa' (ظ) in place of the letter 'Zaad' (ض) or vice versa. He replied: His leading of the prayer (imamate) is not permissible, and if he does it intentionally, he becomes a disbeliever." (Summary)

[Urdu Translation]: Imam al-Fazli was asked about a person who recited 'Zaa' in place of 'Zaad' or vice versa, and he replied that his leading the prayer is not valid, and if he did it intentionally, then it is disbelief (kufr). (T)

In "Minah al-Rawd al-Azhar," it is stated: "As for the act of doing so intentionally being disbelief (kufr), there is no debate about it." (Doing so intentionally is disbelief, there is no doubt about this - T).

In "Alamgiri" (Fatawa al-Hindiyya), reading 'Zay' (ز) intentionally in place of 'Zaad' (ض) is described as disbelief:

[Arabic]: "It is stated: He was asked about one who recites the letter 'Zay' (ز) in place of 'Zaad' (ض) and recites 'Ashab al-Jannah' (people of Paradise) in place of 'Ashab al-Nar' (people of Hell). He replied: His imamate is not permissible, and if he does so intentionally, he will be declared a disbeliever. (Ah). In the Indian manuscript, it says 'Zaad al-Mu'jamah' (ض), and in the Egyptian one, it says 'Saad' (ص). Both are possible, and the ruling is one and will not change."

[Urdu Translation]: The text is: The question was asked: What is the ruling if someone recites 'Zay' (ز) instead of 'Zaad' (ض) and 'Ashab al-Jannah' instead of 'Ashab al-Nar'? He replied: His leading the prayer is not valid, and if he did so intentionally, he will be declared a disbeliever (Kafir). (Ah). In the Indian edition of this Fatawa, it is 'Zaad' (ض)

and in the Egyptian one, it is 'Saad' (ص); both are possibilities, but the ruling is the same and there will be no difference in it. (T)

The ruling regarding this newly arisen sect is evident from here.

Footnotes: 1 Minah al-Rawd al-Azhar Sharh Fiqh al-Akbar, with reference to al-Muhit, Chapter on Recitation and Prayer, printed by Qayumi Press, Kanpur, p. 205. 2 Minah al-Rawd al-Azhar Sharh Fiqh al-Akbar, Chapter on Recitation and Prayer, printed by Qayumi Press, Kanpur, p. 205. 3 Fatawa Hindiyya, Chapter 9 regarding the Rulings on Apostates, printed by Noorani Kutub Khana, Peshawar, 2/281.

फ़तावा रज़विया, जिल्द 6

ध्यातव्य है: पहला: ض (ज़ाद), ظ (ज़ा), ذ (ज़ाल) और ز (ज़ै) सभी अलग-अलग और भिन्न अक्षर हैं। कुरान की तिलावत में, चाहे नमाज़ के भीतर हो या बाहर, जानबूझकर एक की जगह दूसरे को पढ़ना कतई हराम और एक बड़ा गुनाह है। यह अल्लाह पर इफ़्तिरा (झूठ गढ़ना) और पवित्र पुस्तक में तहरीफ़ (बदलाव) है। फ़कीर (इमाम अहमद रज़ा खान) ने अपने रिसाले "नेअमुल ज़ाद ली लुज़ुम अल-दाद" में इस पर प्रबल और स्पष्ट प्रमाण स्थापित किए हैं। यहाँ तक कि इमाम अजल अबू बकर मुहम्मद बिन अल-फ़ज़ल फ़ज़ली, इमाम बुरहानुद्दीन महमूद साहब (ज़खीरा आदि के लेखक) और अल्लामा अली क़ारी मक्की (अल्लाह उन पर रहम करे) स्पष्ट रूप से फ़रमाते हैं कि जो जानबूझकर 'ज़ाद' (ض) की जगह 'ज़ा' (ظ) पढ़े, वह काफ़िर है। मुहीत-ए-बुरहानी में है:

[अरबी]: "इमाम अल-फ़ज़ली से उस व्यक्ति के बारे में पूछा गया जिसने 'ज़ाद' (ض) की जगह 'ज़ा' (ظ) पढ़ा या 'ज़ा' की जगह 'ज़ाद' पढ़ा। उन्होंने फ़रमाया: उसकी इमामत जायज़ नहीं है और अगर उसने जानबूझकर ऐसा किया तो यह कुफ़्र है।" (संक्षेप में)

[उर्दू अनुवाद]: इमाम फ़ज़ली से उस व्यक्ति के बारे में सवाल किया गया जिसने ज़ाद की जगह ज़ा या ज़ा की जगह ज़ाद पढ़ा तो फ़रमाया उसकी इमामत जायज़ नहीं और अगर उसने जानबूझकर ऐसा किया तो यह कुफ़्र है। (त)

'मिनाह अल-रौज़ अल-अज़हर' में है: "जहाँ तक जानबूझकर ऐसा करने के कुफ़्र होने की बात है, तो इसमें कोई बहस नहीं है।" (जानबूझकर ऐसा करना कुफ़्र है, इसमें कोई शक नहीं है - त)।

'आलमगीरी' (फ़तावा हिन्दिया) में 'ज़ाद' (ض) की जगह जानबूझकर 'ज़ै' (ز) पढ़ने को कुफ़्र लिखा गया है:

[अरबी]: "इबारत यह है: सवाल यह किया गया कि अगर कोई 'ज़ाद' (ض) की जगह 'ज़ै' (ز) और 'असहाब-उन-नार' (दोज़ख वाले) की जगह 'असहाब-उल-जन्नत' (जन्नत वाले) पढ़े तो क्या हुक्म है? फ़रमाया: उसकी इमामत जायज़ नहीं है और अगर उसने ऐसा जानबूझकर किया तो उसे काफ़िर करार दिया जाएगा। (अह)। इस फ़तावा के हिंदुस्तानी नुस्ख़े में 'ज़ाद' (ض) और मिस्री नुस्ख़े में 'साद' (ص) है और इन दोनों की संभावना है, हुक्म एक ही होगा और इसमें कोई अंतर नहीं आएगा।"

[उर्दू अनुवाद]: इबारत यह है सवाल यह किया गया कि कोई ज़ाद की जगह ज़ा और असहाब-उन-नार की जगह असहाब-उल-जन्नत पढ़े तो क्या हुक्म है? फ़रमाया उसकी इमामत जायज़ नहीं और अगर उसने ऐसा जानबूझकर किया तो उसे काफ़िर करार दिया जाएगा। अह् इस फ़तावा के हिंदुस्तानी नुस्ख़े में ज़ाद और मिस्री में साद है और इन दोनों का एहतमाल है हुक्म एक ही होगा इसमें कोई फर्क नहीं आएगा। (त)

इस नए पैदा हुए गिरोह का हुक्म तो यहीं से ज़ाहिर हो गया।

पाद-टिप्पणियाँ: 1 मिनाह अल-रौज़ अल-अज़हर शरह फ़िक़्ह अल-अकबर, अल-मुहीत के हवाले से, क़िराअत और नमाज़ का अध्याय, मत्तबा क़य्यूमी कानपुर द्वारा मुद्रित, पृ. 205 2 मिनाह अल-रौज़ अल-अज़हर शरह फ़िक़्ह अल-अकबर, क़िराअत और नमाज़ का अध्याय, मत्तबा क़य्यूमी कानपुर द्वारा मुद्रित, पृ. 205 3 फ़तावा हिन्दिया, धर्मत्यागियों के नियमों पर अध्याय 9, नूरानी कुतुब खाना पेशावर द्वारा मुद्रित, 2/281

पृष्ठ 305/736

ملحوظ ہیں: اول: ض ظ ذ ز معجمات سب حروف متبائنہ متغائرہ ہیں ان میں کسی دوسرے سے تلاوت قرآن میں قصداً بدلنا اس کی جگہ اسے پڑھنا نماز میں خواہ بیرون نماز حرام قطعی و گناہ عظیم، افتراء علی اللہ و تحریف کتاب کریم ہے۔ فقیر نے اپنے رسالہ نعم الزاد لزوم الضاد اس پر دلائل قاہرہ باہرہ قائم کئے ہیں یہاں تک کہ امام اجل ابوبکر محمد بن الفضل فضلی و امام برہان الدین محمود صاحب ذخیرہ وغیرہ و علامہ علی قاری مکی رحم اللہ تعالی تصریح فرماتے ہیں کہ جو قصداً ض کی جگہ ظ پڑھے کافر ہے، محیط برہانی میں ہے:

سئل الامام الفضلی عمن یقرأ الظاء المعجمہ مکان الضاد المعجمۃ او علی العکس فقال لایجوز امامۃ و لو تعمد یکفر۔ (ملخصا) | امام فضلی سے اس شخص کے بارے میں سوال کیا گیا جس نے ضاد کی جگہ ظا یا ظا کی جگہ ضاد پڑھا تو فرمایا اس کی امامت جائز نہیں اور اگر اس نے قصداً ایسا کیا تو یہ کفر ہے۔ (ت)

منح الروض الازہر میں ہے: اما کون تعمدہ کفر فلا کلام فیہ ۲ (عمداً ایسا کرنا کفر ہے اس میں کوئی شک نہیں۔ ت) عالمگیری میں ض کی جگہ ز عمداً پڑھنے کو کفر لکھا:

حیث قال سئل عمن یقرأ الزاء مقام الضاد وقرأ اصحاب الجنۃ مقام اصحب النار قال لایجوز امامتہ ولو تعمد یکفر آہ فی النسخۃ الھندیۃ الضاد المعجمۃ وفی المصریۃ الصاد وکلا ھما محتمل والحکم واحد لا یتبدل۔ | عبارت یہ ہے سوال یہ کیا گیا کہ کوئی ضاد کی جگہ زا اور اصحاب النار کی جگہ اصحب الجنتہ پڑھے تو کیا حکم ہے؟ فرمایا اس کی امامت جائز نہیں اور اگر اس نے ایسا عمداً کیا تو اسے

کافر قرار دیا جائے گا اھ اس فتاوٰی کے ہندوستانی نسخہ میں ضاد اور مصری میں صاد ہے اور ان دونوں کا احتمال ہے حکم ایک ہی ہوگا اس میں کوئی فرق نہیں آئے گا۔ (ت)

اس طائفہ حادثہ کا حکم تو یہیں سے ظاہر ہو گیا۔

1 منح الروض الازہر شرح فقہ اکبر، بحوالہ محیط فصل فی القراءۃ والصلوٰۃ مطبوعہ مطبع قیومی کانپور ص ۲۰۵ 2 منح الروض الازہر شرح فقہ اکبر فصل فی القراءۃ والصلوٰۃ مطبوعہ مطبع قیومی کانپور ص ۲۰۵ 3 فتاوٰی ہندیہ الباب التاسع فی احکام المرتدین مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور

Fatawa Razawiyya Volume 6

Second: A ruling of absolute invalidation of prayer due to an unintentional change by the reciter, even if similar or identical, is incorrect and flawed. If it is mentioned in the text of Imam Qazi Khan, it is only regarding one word and not based on the difference of sound and ease of distinction. The absolute ruling, which is the original school of thought of the Hanafis, i.e., the refined school of Imam Muhammad (may Allah be pleased with him), which the majority of researchers have verified and relied upon, makes it clear that the basis of action is solely on whether the meaning is corrected or corrupted. Therefore, where reading 'dal' (د) instead of 'dad' (ض) does not spoil the meaning, the prayer will not be invalidated at all.

Arabic	Urdu
Example of 'afeedu' (give benefit) and including the meaning of 'mann' (bestowal) and 'inaam' (favor) in the words of Allah Almighty 'afeedu alaina min al-ma' (pour some water upon us). Similarly, reading 'akwab-un maudu'ah' instead of 'maudu'ah' or 'radiyah mardiyah' instead of 'radiyah mardiyah', as we have explained in 'Ni'am az-Zad'.	As in the noble saying of Allah Almighty 'afiḍū 'alaynā min al-mā'', reading 'afīḍū' instead of 'afīdū' contains the meanings of favor, kindness, and bounty. And reading 'akwāb mawdū'ah' instead of 'mawdū'ah' and 'rādiyah mardiyah' instead of 'rādiyah mardiyah', which we have discussed in detail in 'Ni'am az-Zad'. (T)

Would these later scholars, who consider the ease and difficulty of distinction for the sake of the common people's convenience, give an absolute ruling of invalidation in cases of easy distinction, even if the meaning is not considered? Did this make the original school easier, or did it increase the severity and burden? Their ruling is definitely intended for cases where the meaning is spoiled and where distinction between those letters is easy. If observers had looked at the words of the scholars, they would have found clear texts on this matter. The eminent Imam Qazi Khan states in his Fatawa:

Arabic	Urdu
If he makes a mistake by reciting one letter instead of another letter in a word, and the meaning does not change—such as reciting 'innal-muslimoon' instead of 'innal-muslimeen', 'innal-zalimoon' and the like—	When a mistake occurs by reciting one letter instead of another in a word, but no change in meaning occurs, for example 'innal-muslimoon' and 'innal-zalimoon' and other similar places, the prayer will

Arabic	Urdu
his prayer is not invalidated because it does not change the meaning. If he recites one letter instead of another and the meaning changes, then if distinction between the two letters was possible without difficulty—like 'ta' (ط) and 'sad' (ص), such as reciting 'al-talihat' instead of 'al-salihat'—his prayer is invalidated according to all. But if it was not possible...	not be invalidated because the meaning does not change. And if the meaning changes by reading one letter instead of another, and if a distinction between the two letters was possible without hardship, like 'ta' (ط) and 'sad' (ص), i.e., reading 'talihat' instead of 'salihat', then according to all, his prayer will be invalidated, and if...

दूसरा: पाठक (क़ारी) द्वारा अनजाने में किए गए बदलाव पर, भले ही वह समान या एक ही क्यों न हो, नमाज़ के पूर्णतः अमान्य (फ़ासिद) होने का निर्णय ग़लत और दोषपूर्ण है। यदि इमाम क़ाज़ी ख़ाँ के कथनों में इसका उल्लेख है, तो वह केवल एक शब्द के संबंध में है, न कि आवाज़ के अंतर और पहचान की सुगमता के आधार पर। पूर्ण आदेश, जो हनफ़ी संप्रदाय का मूल पंथ है, यानी इमाम मुहम्मद (रज़ियल्लाहु अन्हु) का सुसंस्कृत पंथ, जिसकी अधिकांश शोधकर्ताओं ने पुष्टि की है और उस पर भरोसा किया है, स्वयं स्पष्ट और प्रकट है कि आधार केवल अर्थ के सुधार या बिगाड़ पर है। इसलिए, जहाँ 'ज़ाद' (ض) के स्थान पर 'दाल' (د) पढ़ लेने से अर्थ नहीं बिगड़ता, वहाँ नमाज़ कभी अमान्य नहीं होगी।

अरबी

जैसे 'अफ़िदू' (फ़ायदा पहुँचाना) और अल्लाह तआला के पाक कलाम 'अफ़ीज़ू अलैया मिनल मा' (हम पर पानी उंडेल दो) में 'अफ़ीज़ू' की जगह 'अफ़िदू' पढ़ना, जो अहसान और इनाम के अर्थ को भी समाहित करता है। इसी तरह 'अकवाबुन मौज़ूअह' के स्थान पर 'अकवाबुन मौदूअह' और 'राज़ियह मरज़ियह' के स्थान पर 'रादियह मरदियह' पढ़ना, जैसा कि हमने 'निअम अज़-ज़ाद' में स्पष्ट किया है।

उर्दू

जैसा कि अल्लाह तआला के इरशाद-ए-ग्रामी 'अफ़ीज़ू अलैना मिनल मा' में अफ़ीज़ू की जगह अफ़िदू पढ़ना, एहसान और इनाम के अर्थ पर आधारित है और अकवाब मौज़ूअह की जगह अकवाब मौदूअह और राज़िया मरज़िया की जगह रादिया मरदिया पढ़ना, जिस पर हम 'निअम अज़-ज़ाद' में विस्तार से चर्चा कर चुके हैं। (त)

क्या ये बाद के विद्वान (उलमा-ए-मुताख़िरीन), जो आम लोगों की आसानी के लिए पहचान की सुगमता और कठिनाई का ध्यान रखते हैं, आसान पहचान की स्थिति में पूर्णतः अमान्य होने का आदेश देंगे, भले ही अर्थ मान्य न हों? क्या यह मूल पंथ से आसानी हुई या और अधिक कठोरता और बोझ? उनका आदेश निश्चित रूप से उस स्थिति के लिए है जहाँ अर्थ बिगड़ जाए और उन अक्षरों में पहचान आसान हो। यदि देखने वाले विद्वानों के शब्दों पर ध्यान देते, तो इस मामले में स्पष्ट प्रमाण (नुसूस) मिलते। महान इमाम क़ाज़ी ख़ाँ अपने इन फ़तावा में फरमाते हैं:

अरबी

जब ग़लती से एक शब्द में एक अक्षर के स्थान पर दूसरा अक्षर पढ़ दिया जाए, लेकिन अर्थ में बदलाव न आए, जैसे 'इन्नल-मुस्लिमून' या 'इन्नल-ज़ालिमून' और इसी तरह के अन्य स्थान, तो नमाज़ अमान्य नहीं होगी क्योंकि इससे अर्थ नहीं बदलता। और यदि एक अक्षर के स्थान पर दूसरा अक्षर पढ़ने से अर्थ बदल जाए, तो यदि उन दोनों अक्षरों के बीच बिना किसी कठिनाई के अंतर करना संभव था—जैसे 'ता' *(ط)* और 'साद' *(ص)*, यानी 'सालिहात' की जगह 'तालिहात' पढ़ा—तो सभी के अनुसार उसकी नमाज़ अमान्य हो जाएगी। और यदि संभव न हो...

पेज 306 का 736

उर्दू

जब एक अक्षर की जगह दूसरा अक्षर एक ही शब्द में गलती से पढ़ दिया जाए, लेकिन अर्थ में कोई बदलाव न हो, जैसे 'इन्नल-मुस्लिमून' और 'इन्नल-ज़ालिमून' और अन्य स्थानों पर, तो नमाज़ अमान्य नहीं होगी क्योंकि इससे अर्थ नहीं बदलता। और यदि एक अक्षर की जगह दूसरे अक्षर को पढ़ने से अर्थ बदल जाए, और यदि दोनों अक्षरों के बीच बिना किसी कठिनाई के भेद करना संभव था, जैसे 'ता' (ط) और 'साद' (ص), यानी 'सालिहात' की जगह 'तालिहात' पढ़ा, तो सभी के अनुसार उसकी नमाज़ अमान्य हो जाएगी, और यदि...

دوم: قاری سے بے قصد تبدیلی اگر چہ مشابہ بلکہ عین دب ہو تو اس پر مطلقاً فساد نماز کا حکم غلط و فاسد ہے، عبارت امام قاضی میں اگر ذکر ہے تو صرف ایک لفظ کا نہ کہ بر بنائے تباین صوت و سہولت تمیز، حکم مطلق ، حنفیہ کرام کا اصل مذہب یعنی مذہب مہذب امام محمد رضی اللہ عنہ کہ جماہیر محققین نے اُسی کی تصحیح کی اُس پر اعتماد فرمایا، خود واضح و آشکار کہ اس میں صرف اصلاح و فساد معنی پر بنائے کار تو جہاں ض کی جگہ د پڑھ جانے سے معنی نہ بگڑیں فساد ہرگز نہ ہوگا

عربی	اردو
مثل افید وابتضمین معنی المن والانعام فی قولہ تعالٰی افیضوا علینا من الماء و مثل اکواب مودوعۃ موضوعۃ ورادیۃ مردیۃ مکان راضیۃ مرضیۃ کما بیناہ في نعم الزاد۔	جیسا کہ اللہ تعالٰی کے ارشادِ گرامی افیضوا علینا من الماء میں افیضوا کی جگہ افید و اجواحسان وانعام کے معنی پر مشتمل ہے اور اکواب موضوعہ کی جگہ اکواب مودوعہ اور راضیۃ مرضیۃ کی جگہ رادیۃ مردیتہ پڑھنا جس پر تفصیلی گفتگو ہم نعم الزاد میں کر چکے ہیں۔ (ت)

یہ علمائے متاخرین کہ عوام کی ہر آسانی کے لئے عسر و یسر تمیز کا لحاظ رکھتے ہیں کیا آسانی تمیز کی حالت میں مطلقاً حکم فساد دیں گے اگر چہ معنی معتبر نہ ہوں یہ اصل مذہب سے آسانی ہوئی یا اور شدت و گرانی نہیں، ان کا حکم قطعاً اس صورت میں مقصود جہاں معنی بگڑیں اور ان حرفوں میں تمیز آسان ہو، دیکھنے والے اگر کلمات علما پر نظر رکھتے اس امر کے نصوص واضح ملتے ، یہی امام اجل قاضی خان اپنے اس فتاوٰی میں فرماتے ہیں:

عربی

اذا اخطأ بذكر حرف مكان حرف كلمة ولم يتغير المعنى بان قرأ ان المسلمون ان الظالمون وما اشبه ذلك لم تفسد صلوته لانه لانه لا يغير المعنى، وان ذكر حرفا مكان حرف وغير المعنى فان امكن الفصل بين الحرفين من غير مشقة كالطاء مع الصاد فقرأ الطالحت مكان الصلحت تفسد صلوته عند الكل، وان كان لا يمكن

اردو

جب خطا ایک حرف کی جگہ دوسرا حرف ایک کلمہ میں پڑھ دیا لیکن معنی میں تبدیلی واقع نہ ہوئی مثلاً ان المسلمون اور ان الظالمون اسی کی طرح دیگر مقامات، تو نماز فاسد نہ ہوگی کیونکہ اس سے معنی متغیر نہیں ہوتا اور اگر ایک حرف کی جگہ دوسرا حرف پڑھنے سے معنی میں تبدیلی آجائے تو اگر دونوں حروف کے درمیان بغیر مشقت کے امتیاز ممکن تھا جیسے طاء اور صاد یعنی صالحات کی جگہ طالحات پڑھا تو تمام کے نزدیک اس کی نماز فاسد ہو جائیگی اور اگر

Arabic: The distinction between two letters except with difficulty, most of them said his prayer is not invalidated. (Briefly ended)[1]	**Urdu: If it were not possible to distinguish between the two letters without difficulty, then the opinion of most scholars is that the prayer will not be invalidated. (Briefly ended) (T)**

Similarly, it is mentioned in Fatawa Hindiyya from Fatawa Khaniya, and Ibn al-Amir al-Hajj states in Hilya Sharh Munya:

Arabic: In al-Khaniya and al-Khulasa: If the meaning does not change, it is absolutely permissible. If the meaning changes, and if distinguishing between the two letters is not difficult, it is invalidated according to all. But if it is difficult, then according to most, it is not invalidated.[2]	**Urdu: In Khaniya and Khulasa, it is stated: if there is no change in meaning, the prayer is permissible (absolutely) in every case. If there is a change in meaning, and if distinguishing between these two letters is not difficult, then according to all, the prayer is invalid. If there is difficulty in distinguishing, then according to most, it will not be invalid. (T)**

Thirdly: Regardless of whether the difference between 'dal' and its similar letter was in the claim or in the evidence. And regardless of whether the text in 'Khulasa' has the plain 'dal' (muhmala), it is clearly against the claimant; if it is the dotted 'dal' (mu'jama), then 'muhmala' is not mentioned at all. So the evidence for the claim is clearly unrelated. We need to discuss the statement of Qadi Khan, which the Nadwa Fatwa also relied upon. In that statement, only the names of 'dal' and 'zal' are written; he did not restrict them with the attributes of plain (muhmala) or dotted (mu'jama). Changes in dots, especially in copies (of books), are not new. However, the expert scholar Allama Ibrahim Halabi in 'Ghunyah Sharh Munyah' and the expert scholar Maulana Ali Qari Makki in 'Minah al-Fikriyyah Muqaddimah Jazariyyah' have quoted this same statement of Qadi Khan with the explicit mention of being plain or dotted. It is explicitly mentioned therein that if one reads 'Dalin' with a plain 'dal' instead of 'Dallin', the prayer will not be nullified, but if one reads 'Zalin' with a dotted 'zal', it will be nullified. The former stated:

Arabic: This is a section concerning the substitution of one of these three letters - I mean Dad, Za, and Zal - with another. We will soon mention what was stated in Fatawa Qadi Khan regarding this. If one recites 'wa la al-Dallin' with the dotted 'Za' or the plain 'Dal', it is not invalidated because of the existence of their sounds.

Urdu: The detail of this is that substituting these three letters, i.e., Dad, Za, and Zal, with another letter - we will soon mention what has been stated in Fatawa Qadi Khan in this regard. If one recites 'Zallin' with dots (ijaman) or 'Dalin' without dots (ihmalan) instead of 'Dallin', the prayer will not be invalid because their...

1. Fatawa Qadi Khan, Section on error in Quranic recitation, etc., Printed Naval Kishore, Lucknow, 1/68.
2. Hilyat al-Mahalli Sharh Munyat al-Musalli.

अरबी: दो अक्षरों के बीच कठिनाई के बिना भेद करना, अधिकांश ने कहा कि उसकी नमाज़ अमान्य नहीं होती। (संक्षेप में)[1]

उर्दू: दोनों अक्षरों के बीच कठिनाई के बिना अंतर संभव न था तो अधिकांश विद्वानों का यही मत है कि नमाज़ अमान्य (फासिद) न होगी। (संक्षेप में) (त)

इसी तरह फतावा हिंदिया में फतावा खानिया से उद्धृत, इब्न अमीर अल-हाज हिल्या शरह मुनिया में फरमाते हैं:

अरबी: खानिया और खुलासा में: यदि अर्थ नहीं बदलता है, तो यह बिल्कुल जायज़ है। यदि अर्थ बदल जाता है, और यदि दो अक्षरों के बीच अंतर करना कठिन नहीं है, तो सभी के अनुसार यह अमान्य है। लेकिन अगर कठिन है, तो अधिकांश के अनुसार, यह अमान्य नहीं है।[2]

उर्दू: खानिया और खुलासा में है, यदि अर्थ में परिवर्तन नहीं आया तो नमाज़ (पूर्णत) हर हाल में जायज़ है, और यदि अर्थ में परिवर्तन आ जाए तो अब इन दोनों अक्षरों के बीच अंतर मुश्किल नहीं तो सभी के निकट नमाज़ अमान्य है, और यदि अंतर करने में कठिनाई है तो अधिकांश के निकट अमान्य न होगी। (त)

तीसरा: इस बात को छोड़ते हुए कि 'दाल' और उसके समान अक्षर में अंतर दावे में यह था और प्रमाण में वह। और इस बात को छोड़ते हुए कि यदि 'खुलासा' के पाठ में 'दाल मुहमाला' (बिना बिंदु वाली) है तो यह दावेदार के बिल्कुल विपरीत है, और यदि 'मु'जमा' (बिंदु वाली) है तो 'मुहमाला' का उल्लेख ही नहीं है, अतः दावे का प्रमाण स्पष्ट रूप से असंबद्ध है। हमें काज़ी खान के उस कथन पर चर्चा करनी है जिसका नदवा के फतवे ने भी सहारा लिया है। उस कथन में केवल 'दाल' और 'ज़ाल' के नाम लिखे हैं; उन्होंने उन्हें 'मुहमाला' और 'मु'जमा' के गुणों के साथ सीमित नहीं किया। बिंदुओं का परिवर्तन, विशेष रूप से प्रतियों में, कोई नई बात नहीं है। लेकिन अल्लामा मोहक्क़िक इब्राहिम हलबी ने 'गुनिया शरह मुनिया' में और अल्लामा मोहक्क़िक मौलाना अली क़ारी मक्की ने 'मिनह अल-फ़िक्रया मुक़द्दमा जज़रिय्या' में काज़ी खान के इसी कथन को स्पष्ट रूप से 'मुहमाला' और 'मु'जमा' के उल्लेख के साथ उद्धृत किया है, जिसमें स्पष्ट रूप से वर्णित है कि यदि कोई 'ज़ालिन' की जगह 'दालिन' (बिना बिंदु वाली दाल से) पढ़े तो नमाज़ व्यर्थ नहीं होगी, और 'ज़ालिन' (बिंदु वाली ज़ाल से) पढ़े तो व्यर्थ हो जाएगी। पहले ने कहा है:

अरबी: यह इन तीन अक्षरों - मेरा मतलब दाद, ज़ा और ज़ाल - को दूसरे अक्षर से बदलने का एक अनुभाग है। हम जल्द ही इसके बारे में फतावा काज़ी खान में जो कहा गया है उसका उल्लेख करेंगे। यदि कोई 'व ला अज़-ज़ालिन' को बिंदु वाली 'ज़ा' या बिना बिंदु वाली 'दाल' के साथ पढ़ता है, तो उनके शब्दों के अस्तित्व के कारण यह अमान्य नहीं है।

उर्दू: इसका विवरण यह है कि इन तीन अक्षरों यानी दाद, ज़ा और ज़ाल को किसी दूसरे अक्षर से बदलकर पढ़ना, इस सिलसिले में फतावा काज़ी खान में जो कुछ बयान हुआ उसका हम शीघ्र ही ज़िक्र करते हैं। यदि 'ज़ालिन' की जगह 'ज़ालिन' (बिंदु सहित) या 'दालिन' (बिना बिंदु के) पढ़ा तो नमाज़ अमान्य न होगी क्योंकि उनके..

1. फतावा काज़ी खान, कुरान पाठ में त्रुटि का अनुभाग आदि, मुद्रित नवल किशोर, लखनऊ 1/68
2. हिल्या अल-महल्ली शरह मुनिया अल-मुसल्ली

पृष्ठ 736 का 307

الفصل بین الحرفین الا بمشقۃ قال اکثرھم لا تفسد صلوتہ ۱ اھ

دونوں حرفوں کے درمیان مشقت کے بغیر امتیاز ممکن نہ تھا تو اکثر علماء کا قول یہی ہے کہ نماز فاسد نہ ہوگی اھ مختصرا اختصارا۔ (ت)

اسی طرح فتاوٰی ہندیہ میں فتاوٰی خانیہ سے منقول، ابن امیر الحاج حلیہ شرح منیہ میں فرماتے ہیں:

فی الخانیۃ والخلاصۃ انہ ان لم یتغیر المعنی جاز مطلقاً وان تغیر المعنی فان لم یشق التمییز بین الحرفین فسدت عند الکل وان شق فاکثرہم لاتفد ۲۔

خانیہ اور خلاصہ میں ہے اگر معنی میں تبدیلی نہیں آئی تو نماز (مطلقاً) ہر حال میں جائز، اور اگر معنی میں تبدیلی آجائے تو اب ان دونوں حروف کے درمیان امتیاز مشکل نہیں تو تمام کے نزدیک نماز فاسد، اور اگر امتیاز میں مشقت ہے تو اکثر کے نزدیک فاسد نہ ہوگی۔ (ت)

سوم: قطع نظر اس سے کہ دال و مشابہ دال میں فرق بدیہی دعوٰی میں یہ تھا اور سند میں وہ۔ اور قطع نظر اس سے عبارتِ خلاصہ میں اگر دال مہملہ ہے تو مستدل کے صریح خلاف، اور معجمہ ہے تو مہملہ کا ذکر اصلاً نہیں، تو سندِ دعوٰی سے بے علاقہ صاف، ہمیں عبارتِ قاضی خاں سے بحث کرنی ہے جس سے فتوٰی ندوہ نے بھی استناد کیا اس عبارت میں دال و ذال کے صرف اسماء لکھے ہیں انھیں صفتِ مہملہ و معجمہ سے مقید نہ فرمایا اور نقول خصوصاً مطالع میں نقاط کا تغیر کوئی نئی بات نہیں مگر علامہ محقق ابرا ہیم حلبی نے غنیہ شرح منیہ اور علامہ محقق مولانا علی قاری مکی نے منح فکریہ مقدمہ جزریہ میں یہی عبارت قاضی خاں بتصریح اہمال واعجام نقل

فرمائی جس میں صراحۃً مذکور کہ ضالین کی جگہ دالین بہ دالِ مہملہ پڑھے تو نماز نہ جائیگی اور ذالین بہ ذالِ معجمہ پڑھے تو جاتی رہے گی، اول نے فرمایا ہے:

هذا فصل وهو ابدال احد هذه الاحرف الثلثۃ اعنی الضاد والظاء والذال من غیره فلنور دماذکره فی فتاوی قاضی خان من هذه القبیل قرأ ولا الضالین بالظاء المعجمۃ والدال المهملۃ لا تفسد لوجود لفظهما

اس کی تفصیل یہ ہے کہ ان تین حروف یعنی ضاد، ظاء اور ذال کو کسی دوسرے حرف سے تبدیل کر کے پڑھنا اس سلسلہ میں فتاویٰ قاضی خاں میں جو کچھ بیان ہوا اس کا عنقریب ہم تذکرہ کرتے ہیں اگر ضالین کی جگہ ظالین اعجاماً یا دالین اہمالاً پڑھا تو نماز فاسد نہ ہوگی کیونکہ ان

1. فتاویٰ قاضی خاں فصل فی قراۃ القرآن خطاء الخ مطبوعہ نولکشور لکھنؤ ۱/ ۶۸
2. حلیۃ المحلی شرح منیۃ المصلی

[Arabic]: In the Qur'an, the meaning is close; however, if one recites with 'Dhal' (ذ), the prayer becomes invalid due to the distance in its meaning. (Extracted). [Urdu Explanation]: Both exist in the Qur'an and the meanings are also close. If one recites 'Dhalayn' with 'Dhal', the prayer will be invalidated because there is a distance in its meaning. Summarized (T).

The second [authority] said: [Arabic]: In Fatawa Qazi Khan, if one recites 'Ghayr al-Maghdub' with 'Za' (ظ) or 'Dal' (د), it is not invalidated, but with 'Dhal' (ذ), it is invalidated. [Urdu Explanation]: It is stated in Fatawa Qazi Khan that if someone recited 'Ghayr al-Maghdub' with 'Za' or 'Dal', the prayer would become invalid, and if 'Wa la-Dalleen' was recited with 'Za' or 'Dal', the prayer would not become invalid. (T).

Now, those who rely on this should see that the statements of Qazi Khan, as cited by these two elders, are clearly opposite and contrary to what was intended. Let the Darul Ifta of Nadwa show its level of knowledge; otherwise, for profound research and brilliant clarification, by the grace of Allah Almighty, the humble servant's treatise 'Ni'm az-Zad' is available.

Fourth: The difficulty in distinguishing between 'Daad' (ض) and 'Za' (ظ) is fundamentally of no use to this newly emerged group. According to a group of later scholars, it is a way of ease during slips and errors, not—God forbid—a license for intentional alteration of the Word of Allah. One who intentionally recites 'Maghzub', 'Maghdhub', or 'Maghzub' in place of 'Maghdub', his prayer is undoubtedly invalid, and the reciter is a sinner and corrupter. So, all these fatwas are useless and unsupportive in his case. Imam Tahtawi states in the Hashiya of Maraqi al-Falah:

[Arabic]: The point of disagreement is in error and forgetfulness. As for intentionality, the prayer is invalidated by consensus if it is in a part of recitation that can invalidate prayer. However, if it occurs in praise (Thana), it is not invalidated even if intentional. Stated by Ibn Ameer al-Hajj. [Urdu Explanation]: The point of disagreement is in the case of error and forgetfulness. As for the matter of intentionality, in that case, the prayer will be invalidated by consensus, provided it occurs in such recitation through which prayer can be invalidated. And if such a matter occurs in praise (Thana), the prayer will not be invalidated even if intentional. Ibn Ameer al-Hajj has stated it in this manner. (T).

1. Ghunyat al-Mustamli Sharh Munyat al-Musalli, Chapter on Reciter's Errors, published by Suhail Academy Lahore, p. 784.
2. Al-Minah al-Fikriyyah Sharh Muqaddimah Jazariyyah, Chapter on Takhdhirat, published by Tijarat al-Kutub Bombay, p. 43.
3. Hashiyat al-Tahtawi 'ala al-Maraqi, Chapter on What Invalidates Prayer, published by Nur Muhammad Kutub Khana, p. 186.

[अरबी]: कुरान में अर्थ निकट हैं; हालांकि, यदि कोई 'धाल' (ذ) के साथ पढ़ता है, तो अर्थ में दूरी के कारण नमाज़ अमान्य हो जाती है। (संकलित)। [उर्दू स्पष्टीकरण]: दोनों कुरान में मौजूद हैं और अर्थ भी करीब ही हैं। अगर 'धालैन' को 'धाल' के साथ पढ़ा तो नमाज़ फासिद (अमान्य) होगी क्योंकि इसके अर्थ में दूरी है। संक्षेप में (त)।

दूसरे [प्राधिकारी] ने कहा: [अरबी]: फतावा क़ाज़ी खान में है, यदि कोई 'ग़ैर अल-मग़ज़ूब' को 'ज़ॉ' (ظ) या 'दाल' (د) के साथ पढ़ता है, तो नमाज़ अमान्य नहीं होती, लेकिन 'धाल' (ذ) के साथ अमान्य हो जाती है। [उर्दू स्पष्टीकरण]: फतावा क़ाज़ी खान में है कि अगर किसी ने 'ग़ैर अल-मग़ज़ूब' को 'ज़ॉ' या 'दाल' के साथ पढ़ा तो नमाज़ फासिद हो जाएगी, और 'व लाद-द़ाल्लीन' को 'ज़ॉ' या 'दाल' के साथ पढ़ा तो नमाज़ फासिद नहीं होगी। (त)।

अब इससे प्रमाण लेने वाले देखें कि काज़ी ख़ान की इबारतें (वाक्य) इन दोनों बुजुर्गों के उद्धरण पर उनके स्पष्ट विरोध और विपरीत अर्थ में हैं। नदवा का दारुल इफ्ता अपनी विद्वता दिखाए, अन्यथा गहन शोध और स्पष्ट व्याख्या के लिए, ईश्वर की कृपा से, मुझ विनम्र सेवक का लेख 'निअम अज़-ज़ाद' उपलब्ध है।

चौथा: 'द़ाद' (ض) और 'ज़ॉ' (ظ) में अंतर करने की कठिनाई इस नए समूह के लिए मौलिक रूप से उपयोगी नहीं है। बाद के विद्वानों के एक समूह के अनुसार, यह चूक और त्रुटि के समय आसानी का एक मार्ग है, न कि—ईश्वर न करे—अल्लाह के वचन को जानबूझकर बदलने का आधार। जो जानबूझकर 'मग़ज़ूब' की जगह 'मग़ज़ूब' (अन्य अक्षरों के साथ) पढ़ता है, उसकी नमाज़ निस्संदेह फासिद है और वह पढ़ने वाला पापी और भ्रष्ट करने वाला है। तो ये सभी फतवे उसके पक्ष में बेकार और असमर्थित हैं। अल्लामा तहतावी हाशिया मराक़ी अल-फलाह में फ़रमाते हैं:

[अरबी]: असहमति का विषय त्रुटि और विस्मृति में है। जहाँ तक जानबूझकर करने का सवाल है, तो सर्वसम्मति से नमाज़ अमान्य हो जाती है यदि वह ऐसी तिलावत में हो जिससे नमाज़ अमान्य हो सकती है। लेकिन अगर ऐसा मामला 'थना' (प्रशंसा) में हो, तो नमाज़ फासिद नहीं होगी चाहे वह जानबूझकर ही क्यों न हो। इब्न अमीर अल-हज द्वारा वर्णित। [उर्दू स्पष्टीकरण]: मतभेद का विषय त्रुटि और विस्मृति की स्थिति में है, जहाँ तक जानबूझकर किए गए काम का सवाल है, तो उस स्थिति में सर्वसम्मति से नमाज़ फासिद होगी बशर्ते कि वह ऐसी किरात (पाठ) में हो जिससे नमाज़ फासिद

हो सकती है। और अगर ऐसा मामला 'थना' में हुआ तो नमाज़ फासिद नहीं होगी चाहे जानबूझकर किया गया हो। इब्न अमीर अल-हज ने इसे इसी तरह वर्णित किया है। (त)।

---

1. ग़ुनियत अल-मुस्तमली शरह मुनियत अल-मुसल्ली, ज़लतुल क़ारी के अहकाम का अध्याय, सुहैल एकेडमी लाहौर द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 784।
2. अल-मिन्ह अल-फिक़रिया शरह मुक़द्दमा जज़रिया, तख़दीरात का अध्याय, तिज़ारत अल-कुतुब बंबई द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 43।
3. हाशिया अत-तहतावी अली अल-मराक़ी, नमाज़ को फासिद करने वाली चीज़ों का अध्याय, नूर मुहम्मद कुतुब खाना द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 186।

पृष्ठ 308/736

فِي الْقُرْآنِ وَقَرُبَ الْمَعْنَی وَلَوْ قَرَأَ بِالذَّالِ الْمُعْجَمَةِ تَفْسُدُ لِبُعْدِ مَعْنَاهُ مُلْتَقِطًا۔ دونوں کا وجود قرآن میں ہے اور معنی بھی قریب ہی ہے اور اگر ذالین ذال کے ساتھ پڑھا تو نماز فاسد ہوگی کیونکہ اس کے معنی میں بعد ہے ملخصاً (ت)

ثانی نے فرمایا: فِي فَتَاوٰی قَاضِی خَان اِن قَرَا غَيْر الْمَغْضُوب بِالظَّاء اَوْ بِالدَّال الْمُهْمَلَةِ لَا تَفْسُدُ وَلَوْ بِالذَّالِ الْمُعْجَمَةِ تَفْسُد۔ فتاوٰی قاضی خان میں ہے اگر کسی نے غیرالمغضوب کو ظاء یا دال کے ساتھ پڑھا تو نماز فاسد ہو جائے گی اور ولا الضالین کو ظاء یا دال کے ساتھ پڑھا تو نماز فاسد نہ ہو جائے گی۔ (ت)

اب اس سے استناد کرنے والے دیکھیں کہ عبارات قاضی خان ان دونوں اکابر کی نقل پر ان کے صریح مخالف و عکس مراد ہے، ندوے کا دارالافتاء اپنا مبلغ علم دکھائے ورنہ تحقیق بالغ و تنقیح بازغ کے لئے بحمد اللہ تعالٰی فقیر کا رسالہ نعم الزاد ہے۔ چہارم: ض و ظ میں دشواری تمیز اس طائفہ حادثہ کا اصلاً مفید نہیں وہ ایک گروہ متاخرین کے نزدیک ہنگام لغزش، وخطا سبیل آسانی ہے نہ کہ معاذاللہ قصداً تبدیل کلام اللہ کی دستاویز جو بالقصد مغضوب کی جگہ مغظوب، مغذوب، مغزوب پڑھے اُس کی نماز بلاشبہ فاسد اور وہ پڑھنے والے مغضوب و مفسد، تو یہ سب فتوٰی اس کے حق میں بیکار و نامؤید۔ علامہ طحطاوی حاشیہ مراقی الفلاح میں فرماتے ہیں۔

مَحَلُّ الِاخْتِلَافِ فِی الْخَطَأ وَالنِّسْيَانِ اَمَّا فِی الْعَمْدِ فَتَفْسُدُ بِه مُطْلَقًا بِالِاتِّفَاقِ اِذَا كَانَ مِمَّا يُفْسِدُ الصَّلٰوةَ اَمَّا اِذْكَانَ ثَنَاءً فَلَا يَفْسُدُ وَلَوْ تَعَمَّد ذٰلِکَ اِفَادَه اِبْنِ اَمِيرِالْحَاجّ۔ محل اختلاف خطاء و نسیان کی صورت میں ہے، رہا عمداً کا معاملہ تو اس صورت میں مطلقاً بالاتفاق نماز فاسد ہوگی بشرطیکہ وہ ایسی قرات

میں ہو جس سے نماز فاسد ہو سکتی ہو اور اگر ایسا معاملہ ثناء میں ہوا تو نماز فاسد نہ ہوگی اگرچہ عمداً ہوا بن امیر الحاج نے اس طرح بیان کیا ہے۔ (ت)

---

1 غنیة المستملی شرح منیة المصلی فصل فی احکام زلۃ القاری مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۷۸۴ 2 المنح الفکریہ شرح مقدمہ جزریہ باب التخدیرات مطبوعہ تجارت الکتب بمبئی ص ۴۳ 3 حاشیہ الطحطاوی علی المراقی باب مایفسد الصلوۃ مطبوعہ نور محمد کتب خانہ ص ۱۸۶

Fatawa Rizwia (Volume Six)

It is stated in 'Hilya':

[Arabic Text]: "Then, what we shall mention regarding the difference between the earlier and later scholars in this matter, based on what is in 'al-Khaniyah', it should be applied to cases where it was not intentional; so take note of it."[1]

[Urdu Explanation]: Then the difference between the earlier and later scholars in this issue, which will be mentioned with reference to 'Khaniyah', applies only to the situation where it was not intentional. So, pay attention to this (T).

The text of the fifth fatwa mentioned in the question explicitly mentions the ruling of corruption (of prayer) due to intentional pronunciation of 'Za' (ظ). To consider it beneficial [for the opposite view] is far from reason and understanding. There are many texts on this specific subsidiary issue; it is quoted in 'Hilya' from 'Khazanat al-Fatawa' and others:

[Arabic Text]: "If one reads 'ghayr al-maghdubi' with the letter 'Za' (ظ) and 'al-Dallin' with 'Dhal' (ذ) or 'Dad' (ض), some scholars said the prayer is not invalidated. They include Abu al-Qasim al-Saffar, Muhammad ibn Salama, and many sheikhs who gave fatwa on this due to common widespread usage ('umum al-balwa), as common people do not know the articulation points of letters. However, Imam Abu al-Hasan and Qadi Imam Abu Asim said: if he did it intentionally, the prayer is invalidated, but if it slipped from his tongue or he is among those who cannot distinguish between the two letters, it is not invalidated, and this is the chosen view."[2]

[Urdu Translation]: If someone reads 'ghayr al-maghdubi' with the letter 'Za' (ظ), and 'al-Dallin' with 'Dhal' (ذ) or 'Dad' (ض), the scholars' opinion is that the prayer will not be invalidated. Their names are Abu al-Qasim al-Saffar, Muhammad bin Salama, and several sheikhs have given fatwa on this due to common usage because the public is not aware of the articulation points of letters. And Imam Abu al-Hasan and Qadi Imam Abu Asim said that if this is done intentionally, the prayer will be invalidated, and if it happened unintentionally on the tongue or he is not one who can distinguish between the two letters, then the prayer will not be invalidated, and this is the chosen view (T).

In the same source, from 'Khazanat al-Akmal':

[Arabic Text]: "If someone reads 'Dad' (ض) in place of 'Za' (ظ) or 'Za' (ظ) in place of 'Dad' (ض), Qadi al-Muhsin said: 'The better view is to say that if he did it intentionally, his prayer is void, whether he was knowledgeable or ignorant. However, if it was a mistake and he intended the correct pronunciation..."

[Urdu Translation]: When someone reads 'Dad' in place of 'Za' or 'Za' in place of 'Dad', Qadi Muhsin said: 'The better view is that if he did it intentionally, it should be said that the prayer is void, whether he is a scholar or ignorant. But if it happened by mistake, i.e., intending to read correctly..."

---

[1] Hilyat al-Mahalli Sharh Munyat al-Musalli [2] Hilyat al-Mahalli Sharh Munyat al-Musalli

फ़तावा रिज़विया (खंड छह)

'हिलया' में है:

[अरबी इबारत]: "फिर इस मसले में मुतक़द्दिमीन (पूर्ववर्तियों) और मुताख़िरीन (बाद वालों) का जो मतभेद 'खानिया' के हवाले से बयान करेंगे, उसका स्थान उसी स्थिति में है जो जानबूझकर न हो, तो इस पर ध्यान दें।"[1]

[उर्दू व्याख्या]: फिर इस मसले में पूर्ववर्तियों और बाद वालों का जो मतभेद खानिया के हवाले से बयान करेंगे, उसका महल व मक़ाम उसी सूरत में है जो इरादतन न हो, तो इस पर तवज्जो करो (त)।

पांचवें फ़तवे की इबारत सवाल में ज़िक्र है, उसमें तो साफ़ तौर पर 'ज़ा' (ظ) के जानबूझकर इस्तेमाल पर फ़साद (नमाज़ के टूटने) का हुक्म लिखा है। फिर इसे उपयोगी समझना अक़्ल और समझ से कितना दूर है। इस विशेष मसले की इबारतें कसरत से हैं, 'हिलया' में 'खज़ानतुल फ़तावा' आदि से मंकूल (उद्धृत) है:

[अरबी इबारत]: "अगर 'ग़ैरिल मग़ज़ूब' को 'ज़ा' (ظ) के साथ और 'अज़-ज़ाल्लीन' को 'ज़ाल' (ذ) या 'ज़ाद' (ض) के साथ पढ़ा, तो कुछ का कहना है कि नमाज़ फ़ासिद (खराब) नहीं होगी। वे अबुल क़ासिम अस्-सफ़्फ़ार, मुहम्मद बिन सलमा और कई मशायख़ हैं जिन्होंने 'उमूम-ए-बलवा' (आम प्रचलन) की वजह से इसी पर फ़तवा दिया है, क्योंकि आम लोग अक्षरों के उच्चारण स्थानों (मख़ारिज) से अवगत नहीं होते। और इमाम अबुल हसन और क़ाज़ी इमाम अबू आसिम ने कहा कि अगर जानबूझकर ऐसा किया तो नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी, और अगर ज़ुबान पर खुद-ब-खुद जारी हो गया या वह उन लोगों में से है जो दो अक्षरों के बीच अंतर नहीं कर सकते, तो नमाज़ फ़ासिद नहीं होगी और यही पसंदीदा मत (मुख़्तार) है।"[2]

[उर्दू अनुवाद]: अगर 'ग़ैरिल मग़ज़ूब' को 'ज़ा' (ظ) के साथ और 'الضالین' को 'ज़ाल' या 'ज़ाद' के साथ पढ़ा तो उलमा की राय यह है कि नमाज़ फ़ासिद न होगी। उनके नाम ये हैं: अबुल क़ासिम अस्-सफ़्फ़ार, मुहम्मद बिन सलमा और मुतअद्दिद मशायख़ ने उमूम-ए-बलवा की वजह से इसी पर फ़तवा दिया है क्योंकि अवाम मख़ारिज-ए-हुरूफ़ से आगाह नहीं होते। और इमाम अबुल हसन और क़ाज़ी इमाम अबू आसिम ने कहा कि अगर ऐसा जानबूझकर किया तो नमाज़ फ़ासिद होगी और अगर ज़ुबान पर अज़खुद जारी हो गया या वह दोनों हुरूफ़ में इम्तियाज़ करने वाला नहीं तो नमाज़ फ़ासिद न होगी और यही मुख़्तार है (त)।

उसी में 'खज़ानतुल अकमल' से है:

[अरबी इबारत]: "जब किसी ने 'ज़ा' (ظ) की जगह 'ज़ाद' (ض) या 'ज़ाद' की जगह 'ज़ा' पढ़ा, तो क़ाज़ी मोहसिन ने कहा: बेहतर यह कहना है कि अगर उसने जानबूझकर ऐसा किया तो उसकी नमाज़ बातिल (अमान्य) है, चाहे वह विद्वान हो या अज्ञानी। लेकिन अगर ग़लती से ऐसा हुआ, यानी सही पढ़ने का इरादा था..."

[उर्दू अनुवाद]: जब किसी ने 'ज़ा' (ظ) की जगह 'ज़ाद' (ض) या 'ज़ाद' की जगह 'ज़ा' पढ़ा तो क़ाज़ी मोहसिन ने कहा: अहसन यह है कि अगर उसने अमदन (जानबूझकर) ऐसा किया तो कहा जाए कि नमाज़ बातिल है ख्वाह वह आलिम हो या जाहिल, लेकिन अगर ख़तन (ग़लती से) ऐसा हुआ यानी दुरुस्त पढ़ने..."

---

[1] हिलयतुल महल्ली शरह मुनियतुल मुसल्ली [2] हिलयतुल महल्ली शरह मुनियतुल मुसल्ली

पृष्ठ 309/736

فتاوی رضویہ (جلد ششم)

حلیہ میں ہے:

[عربی عبارت]: ثم ما سنذکر من الخلاف من المتقدمین والمتاخرین فی ھذا علی ما فی الخانیة ینبغی ان یکون محلہ ما اذا لم یتعمد فتنبہ لہ۔[1]

[اردو تشریح]: پھر اس مسئلہ میں متقدمین و متاخرین کا جو اختلاف خانیہ کے حوالے سے بیان کریں گے اس کا محل و مقام اسی صورت میں ہے جو عمداً نہ ہو، تو اس پر توجہ کرو (ت)

پانچویں فتوی کی عبارت سوال میں مذکور ، اس میں تو صراحتہً تعمد ظ پر حکم فساد مسطور، پھر اسے مفید سمجھنا کس قدر عقل و فہم سے دور، اس خاص جزئیہ کی عبارتیں بکثرت ہیں، حلیہ میں خزانہ الفتاوی وغیرہ سے منقول :

[عربی عبارت]: غیر المغضوب بالظاء والضالین بالذال او بالضاد قال بعضھم لا تفسد، ھم ابوالقاسم الصفار و محمد بن سلمة وکثیر من المشایخ افتوا بہ لعموم البلوی فأن العوام لا یعرفون مخارج الحروف وقال الامام ابوالحسن والقاضی الامام ابو عاصم ان تعمد ذلك تفسد وان جری علی لسانہ او لم یکن ممن یمیز بین الحرفین لا تفسد وھو المختار[2]۔

[اردو ترجمہ]: اگر غیر المغضوب کو ظاء کے ساتھ، الضالین کو ذال یا ضاد کے ساتھ پڑھا تو علماء کی رائے یہ ہے کہ نماز فاسد نہ ہوگی ان کے اسماء یہ ہیں ابوالقاسم الصفار، محمد بن سلمہ اور متعدد مشائخ نے عمومِ بلوی کی وجہ سے اسی پر فتویٰ دیا ہے کیونکہ عوام مخارج حروف سے آگاہ نہیں ہوتے اور امام ابوالمحسن اور قاضی امام ابو عاصم نے کہا اگر ایسا عمداً کیا تو نماز

فاسد ہوگی اور اگر زبان پر ازخود جاری ہو گیا تو دونوں حروف میں امتیاز کرنے والا نہیں تو نماز فاسد نہ ہوگی اور یہی مختار ہے (ت)

اسی میں خزانہ الاکمل سے ہے:

[عربی عبارت]: اذا قرأ مكان الظاء ضاداً او مكان الضاد ظاء فقال القاضي المحسن الاحسن ان يقال ان تعمد ذلك تبطل صلاته عالما كان او جاهلا اما لو كان مخطئا اراد الصواب

[اردو ترجمہ]: جب کسی نے ظاء کی جگہ ضاد یا ضاد کی جگہ ظاء پڑھا تو قاضی محسن نے کہا احسن یہ ہے کہ اگر اس نے عمداً ایسا کیا تو کہا جائے کہ نماز باطل ہے خواہ وہ عالم ہو یا جاہل، لیکن اگر خطاءً ایسا ہوا یعنی درست پڑھنے

---

[1] حلیۃ المحلی شرح منیۃ المصلی [2] حلیۃ المحلی شرح منیۃ المصلی

Fatawa Razawiyya, Volume 6

[Arabic]: So it occurred on his tongue or he was not among those who could distinguish between the two letters, so he thought he pronounced the word as it is but erred; his prayer is valid. This is the opinion of Muhammad bin Muqatil, and Sheikh Ismail al-Zahid used to give fatwa upon this. This is more excellent because the languages of Kurds, inhabitants of Sawad, and Turks are not obedient in pronunciations, and it is apparent that this is the summary of what is in all fatwas. 1- [Urdu]: ...he intended but it came out on the tongue on its own or he is one who cannot distinguish between the two letters and he thought he pronounced the word correctly but in reality it was wrong, then his prayer will be valid. This is the opinion of Muhammad bin Muqatil and Sheikh Ismail al-Zahid gave fatwa on this and this is more excellent because the languages of Kurds, Iraqis and Turks are not capable of correct pronunciation of these letters and there is great difficulty in it, and it is apparent that the summary of the discussion in all fatwas is also this. (T)

[Arabic]: I say: The indication towards absolute invalidity is in the case of intention, as that is the focus of all their views. Otherwise, the absolute ruling of non-invalidity in case of error cannot be applied to what is in all fatwas, for some of them differentiate based on difficulty of distinction and some differentiate based on proximity of articulation. [Urdu]: I say, this reference towards absolute invalidity is in the case of intention because this is the focus of all their opinions, otherwise in the case of error, the ruling of non-invalidity will be absolute and their speech cannot be carried on this, because some among them differentiate based on difficulty of distinction and some on the basis of proximity of articulation. (T)

In Munyah it is:

[Arabic]: As for when one recites 'Zha' instead of 'Dhal', or 'Zha' instead of 'Dhad', or vice-versa, then his prayer is invalidated, and most of the Imams are on this. It is narrated from Muhammad bin Salama (may Allah the Exalted have mercy on him) that it is not invalidated because non-Arabs cannot distinguish between these letters. Qadhi Imam al-Shahid al-Muhsin used to say the best in this is to say if it occurred on the tongue on its own. [Urdu]: When someone recited 'Zha' instead of 'Dhal' or 'Zha' instead of 'Dhad' or the opposite, then his prayer will become invalid, and most Imams are on this. It is narrated from Muhammad bin Salama (may Allah the Exalted have mercy on him) that the prayer will not be invalid because non-Arab people

cannot distinguish between these letters, and Qazi Imam al-Shahid al-Muhsin used to say that the best is to say that if it occurred on the tongue on its own in this way.

1 Hilyah al-Mahalli Sharh Munyah al-Musalli Page 310 of 736

फ़तावा रज़विया, जिल्द छठी

[अरबी]: तो यह उसकी ज़बान पर जारी हो गया या वह उन लोगों में से नहीं था जो दो हर्फ़ों के बीच अंतर कर सकें, तो उसने सोचा कि उसने शब्द को वैसा ही अदा किया है जैसा वह है लेकिन वह गलत हो गया; उसकी नमाज़ जायज़ है। यह मुहम्मद बिन मुक़ातिल का कौल है, और शेख इस्माईल अल-ज़ाहिद इसी पर फ़तवा दिया करते थे। यह अधिक उत्तम है क्योंकि कुर्द, सवाद (इराक़) के निवासियों और तुर्कों की ज़बानें उच्चारण स्थलों (मख़ारिज) में आज्ञाकारी नहीं हैं, और ज़ाहिर यह है कि तमाम फ़तावा में जो कुछ है उसका सारांश यही है। 1- [उर्दू]: ...का इरादा था मगर ज़बान पर ख़ुद-ब-ख़ुद जारी हो गया या वह उन दोनों हर्फ़ों में अंतर न करने वाला हो और उसका गुमान यही हो कि उसने कलिमा सही अदा किया है लेकिन वास्तव में गलत था तो उसकी नमाज़ हो जाएगी। यही मुहम्मद बिन मुक़ातिल का कौल है और शेख इस्माईल अल-ज़ाहिद ने इसी पर फ़तवा दिया है और यही अहसन (बेहतर) है क्योंकि कुर्द, इराकी और तुर्की लोगों की ज़बानें इन हर्फ़ों की सही अदायगी पर क़ादिर नहीं और इसमें बहुत तंगी है, और ज़ाहिर यही है कि तमाम फ़तावा जात की गुफ़्तगू का इजमाल (सारांश) भी यही है। (त)

[अरबी]: मैं कहता हूँ: मुतलक़न फ़साद (नमाज़ टूटने) की ओर जो संकेत है वह जानबूझकर करने की सूरत में है क्योंकि उन सभी की नज़रों का मरकज़ यही है। अन्यथा गलती की सूरत में अदम-ए-फ़साद (नमाज़ न टूटने) का इतलाक़ होगा और उस पर उनके कलाम को महमूल नहीं किया जा सकता क्योंकि उनमें से कुछ फ़र्क करने की कठिनाई के कारण और कुछ मख़रज (उच्चारण स्थान) की समीपता के आधार पर फ़र्क करते हैं। [उर्दू]: मैं कहता हूँ यह जो मुतलक़न फ़साद की तरफ़ इशारा है यह क़सद (इरादे) की सूरत में है क्योंकि इन तमाम की आरा (विचारों) की मतमह यही है वर्ना खता की सूरत में अदम-ए-फ़साद का इतलाक़ होगा और इस पर उनके कलाम को महमूल नहीं किया जा सकता क्योंकि बाज़ उनमें से उसर-ए-इम्तियाज़ (पहचान की मुश्किल) के साथ और बाज़ कुर्ब-ए-मख़रज की बिना पर फ़र्क करते हैं। (त)

मुन्या में है:

[अरबी]: लेकिन जब उसने 'ज़ाल' की जगह 'ज़ा' पढ़ा या 'ज़ाद' की जगह 'ज़ा' पढ़ा या इसके विपरीत, तो उसकी नमाज़ फ़ासिद (अमान्य) हो जाएगी, और अधिकांश इमाम इसी पर हैं। मुहम्मद बिन सलमा (अल्लाह तआला उन पर रहम करे) से रिवायत है कि यह फ़ासिद नहीं होगी क्योंकि अजमी

(गैर-अरब) लोग इन हर्फ़ों के बीच अंतर नहीं कर सकते। क़ाजी इमाम अल-शहीद अल-मुहसिन फ़रमाया करते थे कि इसमें अहसन यह है कि यह कहा जाए कि अगर ज़बान पर इस तरह ख़ुद-ब-ख़ुद जारी हो गया। [उर्दू]: जब किसी ने 'ज़ाल' की जगह 'ज़ा' या 'ज़ाद' की जगह 'ज़ा' या इसका अक्स किया तो उसकी नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी, और अक्सर अइम्मा इसी पर हैं मुहम्मद बिन सलमा रहमतुल्लाहि तआला अलैहि से मरवी है कि नमाज़ फ़ासिद न होगी क्योंकि अजमी लोग इन हर्फ़ों में इम्तियाज़ नहीं कर सकते, और क़ाजी इमाम अल-शहीद अल-मुहसिन फ़रमाया करते थे कि अहसन यह है कि यह कहा जाए कि अगर ज़बान पर इस तरह अज़ ख़ुद जारी हो गया।

1 हिल्या अल-महल्ली शरह मुन्या अल-मुसल्ली पृष्ठ ३१० (७३६ में से)

فجری ھذا علی لسانہ اولم یکن ممن یمیز بین الحرفین فظن انہ ادی الکلمۃ کما ھي فغلط جازت صلوتہ وھو قول محمد بن مقاتل وبہ کان یفتی الشیخ اسمعیل الزاھد وھو احسن لان السنۃ الاکراد واھل السواد والاتراك غیر طائعۃ فی مخارج والظاھر ان ھذا مجمل ما في جمیع الفتاوی ۱۸-

کا ارادہ تھا مگر زبان پر از خود جاری ہو گیا یا وہ دونوں حرفوں میں امتیاز نہ کرنے والا ہو اور اس کا گمان یہی ہو کہ اس نے کلمہ صحیح ادا کیا ہے لیکن درحقیقت غلط تھا تو اس کی نماز ہو جائیگی۔ یہی محمد بن مقاتل کا قول ہے اور شیخ اسمعیل الزاہد نے اسی پر فتوٰی دیا ہے اور یہی احسن ہے کیونکہ کرد، عراقی اور ترکی لوگوں کی زبانیں ان حروف کی صحیح ادائیگی پر قادر نہیں اور اس میں بہت تنگی ہے، اور ظاہر یہی ہے کہ تمام فتاوٰی جات کی گفتگو کا اجمال بھی یہی ہے۔ (ت)

اقول: انما یشیر الی اطلاق الفساد في العمد انہ مطمح انظارھم جمیعاً والا فأطلاق عدمہ في الخطاء لا یمکن ان یحمل علیہ ما فی جمیع الفتاوی فان منھم من یفصل بعسر الفصل ومنھم من یفرق بقرب مخرج۔

میں کہتا ہوں یہ جو مطلقاً فساد کی طرف اشارہ ہے یہ قصد کی صورت میں ہے کیونکہ ان تمام کی آراء کی مطمح یہی ہے ورنہ خطا کی صورت میں عدم فساد کا اطلاق ہوگا اور اس پر ان کے کلام کو محمول نہیں کیا جاسکتا کیونکہ بعض ان میں سے عسر امتیاز کے ساتھ اور بعض قرب مخرج کی بناء پر فرق کرتے ہیں۔ (ت)

منیہ میں ہے:

اما اذا قرأ مكان الذال ظاء او مكان الضاد ظاء او على القلب فتفسد صلوته وعيله اكثر الائمة وروى عن محمد بن سلمة رحمة الله تعالى انها لا تفسد لان العجم لا يميزون بين هذه الحروف وكان القاضى الامام الشهيد المحسن يقول الاحسن فيه ان يقول ان جرى

جب کسی نے ذال کی جگہ ظاء یا ضاد کی جگہ ظاء یا اس کا عکس کیا تو اسکی نماز فاسد ہو جائیگی، اور اکثر ائمہ اسی پر ہیں محمد بن سلمہ رحمتہ اللہ تعالیٰ علیہ سے مروی ہے کہ نماز فاسد نہ ہوگی کیونکہ عجمی لوگ ان حروف میں امتیاز نہیں کر سکتے، اور قاضی امام الشہید المحسن فرمایا کرتے تھے کہ احسن یہ ہے کہ یہ کہا جائے کہ اگر زبان پر اس طرح از خود جاری ہو گیا۔

^1 حلیہ المحلی شرح منیۃ المصلی Page 310 of 736

Fatawa Razvia Volume 6

[Row 1] Arabic: ...on his tongue, and he was not one who could distinguish [between sounds], and in his belief he had uttered the word correctly, the prayer is not invalidated. Similarly, it is narrated from Muhammad bin Muqatil and Sheikh al-Imam Ismail al-Zahid. -1- Urdu: And he was not capable of distinguishing, and his belief was that he had pronounced the word correctly, then the prayer will not be invalidated. Similar is narrated from Muhammad bin Muqatil and Sheikh Ismail al-Zahid. (T)

[Section Heading] In Bazzaziya, regarding "maghdub," "daalin," and "zaalin" again:

[Row 2] Arabic: Qadi Abul Hasan and Qadi Abu Asim said that if it was done intentionally, it [the prayer] is invalidated, but if it flowed from the tongue [unintentionally] or he did not know the distinction, it is not invalidated. This is the most balanced of sayings and is the preferred one (mukhtar). -2- Urdu: Qadi Abul Hasan and Qadi Abu Asim said that if this was done intentionally, the prayer would be invalidated, and if it occurred on the tongue spontaneously or he could not distinguish, the prayer would not be invalidated. This is the most moderate among all sayings and is the preferred one. (T)

[Section Heading] Similarly, it is cited in Al-Hindia from it.

[Row 3] Arabic: I say: It is apparent that these choices return to the aspect of permissibility in case of error. As for invalidation in case of intent, there should be consensus on it, as previously mentioned from Al-Hilya and the explicit statement from Al-Tahtawi. This is the meaning of Al-Akmal’s inference that it is the summary of what is in all fatwas. How could it be otherwise, when they considered intentionality as apostasy? What is the point of the prayer remaining then? This is very clear. Urdu: I say: (I say) It appears that among all differences, the preferred sayings lead towards the aspect of permissibility only in the case when such a matter occurs by mistake. As for the matter of intentionality, there is consensus on the invalidation of prayer in that case, as previously stated as a benefit with reference to Hilya. And the explicit mention from Tahtawi has passed, and Al-Akmal's saying as an inference that "it is the gist of fatwa collections" also means the same. And how could it not be so, while they have ruled intentionality to be apostasy? What meaning is there for the prayer to remain! And this is very clear. (T)

[Footnotes] 1. Munyat al-Musalli, Chapter on Reciter's Error, printed by Maktaba Qadriya Jamia Nizamia Razvia Lahore, p. 441. 2. Fatawa Bazzaziya on the margin of

Fatawa Hindia, Chapter on Reciter's Error, printed by Noorani Kutub Khana Peshawar, 2/42.

फ़तावा रज़विया जिल्द शशम (छठी)

[पंक्ति 1] अरबी: ...उसकी ज़ुबान पर, और वह [ध्वनियों के बीच] अंतर करने वाला नहीं था, और उसके विश्वास में उसने शब्द को सही ढंग से उच्चारित किया था, तो नमाज़ फासिद (अमान्य) नहीं होगी। इसी तरह मुहम्मद बिन मुक़ातिल और शेख़ अल-इमाम इस्माइल अल-ज़ाहिद से भी रिवायत है। -1- उर्दू: और वह अंतर करने वाला नहीं था और उसका गुमान (विश्वास) यही था कि उसने इस कलमे को सही तौर पर अदा किया है तो नमाज़ फासिद नहीं होगी, मुहम्मद बिन मुक़ातिल और शेख़ इस्माइल अल-ज़ाहिद से भी इसी तरह मरवी (वर्णित) है। (त)

[अनुभाग शीर्षक] बज़ाज़िया में दोबारा 'मग़ज़ूब', 'ज़ालीन' और 'ज़ालिन' के बारे में है:

[पंक्ति 2] अरबी: क़ाज़ी अबुल हसन और क़ाज़ी अबू आसिम ने कहा कि अगर यह जानबूझकर (अमदन) किया गया तो नमाज़ फासिद हो जाएगी, और अगर यह ज़ुबान पर खुद-ब-खुद हो गया या वह अंतर नहीं कर सकता था तो नमाज़ फासिद नहीं होगी। यह सभी कथनों में सबसे संतुलित है और यही मुख़्तार (पसंदीदा) है। -2- उर्दू: क़ाज़ी अबुल हसन और क़ाज़ी अबू आसिम ने कहा कि अगर ऐसा अमदन (जानबूझकर) किया गया तो नमाज़ फासिद हो जाएगी और अगर ज़ुबान पर अज़खुद (स्वयं) इस तरह हो गया या वह अंतर न कर सकता था तो नमाज़ फासिद न होगी और यह तमाम अक़वाल (कथनों) में मोतदिल (संतुलित) है और यही मुख़्तार है। (त)

[अनुभाग शीर्षक] इसी तरह हिंदिया में इससे मनक़ूल (उद्धृत) है।

[पंक्ति 3] अरबी: अक़ूल (मैं कहता हूँ): ज़ाहिर यह है कि ये तमाम विकल्प ख़ता (ग़लती) की सूरत में जवाज़ (अनुमति) के पहलू की ओर लौटते हैं। जहाँ तक अमदन (जानबूझकर) करने पर फासिद होने की बात है, तो उस पर इत्तिफ़ाक़ (सहमति) होनी चाहिए जैसा कि पहले 'हिलिया' के हवाले से बताया गया और 'तहतवी' से इसकी सराहत (स्पष्टता) गुज़री। यही अल-अकमल के इस्तिज़हार (निष्कर्ष) का अर्थ है कि यह तमाम फ़तवों का मजमल (सारांश) है। और ऐसा क्यों न हो, जब उन्होंने अमदन ऐसा करने पर इर्तिदाद (धर्मत्याग) का हुक्म लगाया है, तो नमाज़ के बाक़ी रहने का क्या अर्थ! यह निहायत ही वाज़ेह (स्पष्ट) है। उर्दू: अक़ूल: (मैं कहता हूँ) ज़ाहिर यह है कि तमाम इख़्तिलाफ़ात (मतभेदों) में मुख़्तार अक़वाल जवाज़ की तरफ़ इसी सूरत में राजेअ (संबंधित) होते हैं जब ऐसा मामला ख़ताअन (ग़लती से) वाक़े हो। रहा मामला अमदन का तो इस सूरत में फ़सादे-नमाज़ (नमाज़ के बिगड़ने) पर इत्तिफ़ाक़ है जैसा कि हिलिया के हवाले से अफ़ादा के तौर पर गुज़रा। और तहतवी की सराहत

गुज़री, और अकमल का बतौर-ए-इस्तिज़हार कहना कि "फ़तावा जात का इजमाल यही है।" का मानी भी यही और यह कैसे न हो हालाँकि उन्होंने अमदन ऐसा करने से इर्तिदाद का हुक्म लगाया तो नमाज़ के बाक़ी रहने का क्या मानी! और यह निहायत ही वाज़ेह है। (त)

[फ़ुटनोट्स] 1. मुनियतुल मुसल्ली, फ़स्ल फ़ी ज़ल्लतुल क़ारी, मक़तबा क़ादिरिया जामिया निज़ामिया रज़विया लाहौर, पृ. 441 2. फ़तावा बज़ाज़िया अला हाशियत फ़तावा हिंदिया, फ़स्ल फ़ी ज़ल्लतुल क़ारी, नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर, 2/42

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

[پہلی سطر] Arabic: علی لسانه ولم یکن مميزا وفي زعمه انه ادی الکلمة علی وجهها لا تفسد وکذا روي عن محمد بن محمد بن مقاتل والشیخ الامام اسماعیل الزاهد -1- Urdu: اور وہ امتیاز کرنے والا نہ تھا اور اس کا گمان یہی تھا اس کلمہ کو صحیح طور پر ادا کیا ہے تو نماز فاسد نہ ہوگی، محمد بن مقاتل اور شیخ اسمعیل الزاہد سے بھی اسی طرح مروی ہے۔ (ت)

[عنوان] بزازیہ میں دوبارہ مغضوب ذالین وظالین ہے:

[دوسری سطر] Arabic: قال القاضی ابوالحسن والقاضی ابو عاصم ان تعمد فسد وان جری علی لسانہ اوکان لا یعرف التمییز لایفسد وهو اعدل الاقاویل وهو المختار -2- Urdu: قاضی ابوالحسن اور قاضی ابوعاصم نے کہا کہ اگر ایسا عمداً کیا تو نماز فاسد ہو جائے گی اور اگر زبان پر ازخود اس طرح ہو گیا یا وہ امتیاز نہ کر سکتا تھا تو نماز فاسد نہ ہوگی اور یہ تمام اقوال میں معتدل ہے اور یہی مختار ہے۔ (ت)

[عنوان] اسی طرح ہندیہ میں اس سے منقول۔

[تیسری سطر] Arabic: اقول: والظاهر ان هذه الاختیارات ترجع الی شق الجواز عند الخطأ اما الفساد عند العمد فینبغی الاتفاق علیه کما تقدم ما یفیده عن الحلیة والتصریح به عن الطحطاوی وهومعنی استظهار الاکمل انه مجمل ما في جمیع الفتاوی کیف واذا جعلوا التعمد من الردة فما بقاء الصلوة هذا واضح جدا۔ Urdu: اقول: (میں کہتا ہوں) ظاہر یہ ہے کہ تمام اختلافات میں مختار اقوال جواز کی طرف اسی صورت میں راجع ہوتے ہیں جب ایسا معاملہ خطأً واقع ہو۔ رہا معاملہ عمداً کا تو اس صورت میں فساد نماز پر اتفاق ہے جیسا کہ حلیہ کے حوالے سے افادہ کے طور پر گزرا۔ اور

طحطاوی کی تصریح گزری، اور اکمل کا بطور استظہار کہنا کہ فتاوٰی جات کا اجمال یہی ہے۔ "کا معنی بھی یہی اور یہ کیسے نہ ہو حالانکہ انہوں نے عمداً ایسا کرنے سے ارتداد کا حکم لگایا تو نماز کے باقی رہنے کا کیا معنی ! اور یہ نہایت ہی واضح ہے۔ (ت)

[حواشی] 1 منیۃ المصلی فصل فی زلۃ القاری مطبوعہ مکتبہ قادریہ جامع نظامیہ رضویہ لاہور ص ۴۴۱ 2 فتاوٰی بزازیہ علی حاشیۃ فتاوٰی ہندیہ فصل فی زلۃ القاری مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور ۴۲ /۲

Volume 6 Fatawa Razawiya

Fifth: Mentioning the difference in attributes between 'Daad' (ض) and 'Daal' (د) is futile and completely irrelevant to the place of discussion. It is known that the predecessors did not focus at all on similarity or lack thereof, and later scholars considered the closeness of the exit point (makhraj) or the difficulty of differentiation. They also do not discuss attributes; attributes do not necessarily lead to easy differentiation, nor does their overlap dictate difficulty. There is no difference between 'Taa' (ط) and 'Daal' (د) except for 'Itbaaq' (closure of the tongue), and the difference for easy differentiation is clear. There are several opposing attributes between 'Taa' (ط) and 'Taa' (ت), and the difficulty of separation is stated by prominent scholars. 'Taa' (ط) is voiced (majhura), elevated (mustaliya), closed (mutbaqa), and echoed (qalqalah), while 'Taa' (ت) is voiceless (mahmusa), lowered (mustafila), open (munfatiha), and non-echoed. It is mentioned in Khaniya, Khulasa, Hilya, Hindia, and Radd al-Muhtar etc.:

If it is not possible to distinguish between two letters except with difficulty, such as 'Taa' (ط) with 'Taa' (ت)... etc.	**If it is not possible to distinguish between two letters without difficulty, such as 'Taa' and 'Taa'. etc (T)**

In the commentary of Jazariya:

Al-Rummani and others said that if it were not for 'Itbaaq', the 'Taa' (ط) would have become 'Daal' (د), because there is no difference between them except for 'Itbaaq'.	**Al-Rummani and others said that if there were no 'Itbaaq', 'Taa' would become 'Daal', because there is no difference between them except for 'Itbaaq'. (T)**

Sixth: The statement of Nadwi's fatwa that 'Daad' (ض) and 'Daal' (د) are two letters with different meanings is strange. Words have different meanings; if the named letter itself is intended, where is the meaning for them? Please tell me, what is the meaning of the single letter 'Daad'? And if the names (of letters) are intended, i.e., 'Daad' and 'Daal', then they are not just two letters nor is there any debate about them. Perhaps he wanted to say but could not, that 'ض' and 'د' are two distinct letters, their change in a word necessitates a change in meaning. Even if this intended meaning is implied, firstly, its general application is forbidden. Secondly, in every change, the change leading to corruption (of meaning) is refuted. See how much difference in meaning there is between 'Daalin' (those who go astray) and

'Daalin' (those who point/guide), yet researcher Halabi did not accept it as a change (corrupting prayer). "This is self-evident and needs no explanation." (T)

Seventh: The difference in sound between two letters does not necessarily mean easy differentiation for everyone. How different are the sounds of 'Haa' (ح) and 'Khaa' (خ), yet for Turks, distinguishing between them is extremely difficult. It is in Ghunyah:

Muhammad bin al-Fadl mentioned in his fatwas that the Turks cannot pronounce 'Haa' (ح) except with difficulty... etc.	**Muhammad bin Fadl wrote in his fatwas that for Turkish people, it is not possible to pronounce 'Haa' without difficulty etc (T)**

1. Radd al-Muhtar, topic of issues of errors in recitation, published by Mustafa al-Babi, 1/266.
2. Al-Minah al-Fikriyya, commentary on al-Muqaddimah al-Jazariyya, topic of explanation that teeth are of four types, published by Tijarat al-Kutub Hamli Mahalla Bombay, p. 15.
3. Ghunyat al-Mustamli, commentary on Munyat al-Musalli, section on the rules of errors in recitation, published by Suhail Academy Lahore, pp. 81-82.

खंड 6 फ़तावा रज़विया

पाँचवां: 'दाद' (ض) और 'दाल' (د) के बीच गुणों के अंतर का उल्लेख व्यर्थ और चर्चा के विषय से पूरी तरह बाहर है। यह ज्ञात है कि पूर्ववर्तियों ने समानता या इसके अभाव पर बिल्कुल ध्यान नहीं दिया, और बाद के विद्वानों ने निकास बिंदु (मख़रज) की निकटता या भेद करने की कठिनाई पर विचार किया। वे गुणों पर भी चर्चा नहीं करते; गुण आवश्यक रूप से आसान भेद की ओर नहीं ले जाते, और न ही उनकी समानता कठिनाई पैदा करती है। 'ता' (ط) और 'दाल' (د) के बीच 'इतबाक' (जीभ का तालू से मिलना) के अलावा कोई अंतर नहीं है, और आसान भेद के लिए अंतर स्पष्ट है। 'ता' (ط) और 'ता' (ت) के बीच कई विरोधी गुण हैं, और अलग करने की कठिनाई प्रमुख विद्वानों द्वारा बताई गई है। 'ता' (ط) गूंजने वाला (मजहूरा), ऊंचा (मुस्तालिया), बंद (मुतबाका), और प्रतिध्वनि वाला (कलकला) है, जबकि 'ता' (ت) बिना गूंज वाला (महमूसा), नीचा (मुस्तफिला), खुला (मुनफतिहा), और बिना प्रतिध्वनि वाला है। ख़ानिया, ख़ुलासा, हिल्या, हिन्दिया और रद्द अल-मुह्तार आदि में है:

यदि कठिनाई के बिना दो अक्षरों के बीच अंतर करना संभव न हो, जैसे 'ता' (ط) और 'ता' (ت)... इत्यादि।

अगर दो अक्षरों के बीच मशक्कत (कठिनाई) के बिना भेद मुमकिन न हो जैसे 'ता' (ط) और 'ता' (ت) आदि (त)

जज़रिया की व्याख्या में है:

अल-रुमानी और अन्य ने कहा कि यदि 'इतबाक' न होता, तो 'ता' (ط), 'दाल' (د) बन जाता, क्योंकि 'इतबाक' के अलावा उनके बीच कोई अंतर नहीं है।

रुमानी आदि ने कहा कि अगर इतबाक न हो तो 'ता' (ط) 'दाल' (د) हो जाएगी क्योंकि इतबाक के अलावा उन दोनों के बीच कोई अंतर ही नहीं है। (त)

छठा: नदवी के फ़तवे का यह कथन कि 'दाद' (ض) और 'दाल' (د) दो अलग-अलग अर्थों वाले अक्षर हैं, अजीब है। शब्दों के अलग-अलग अर्थ होते हैं; यदि स्वयं अक्षर का नाम अभिप्रेत है, तो उनके लिए अर्थ कहाँ है? कृपया बताएं कि अकेले 'दाद' अक्षर का क्या अर्थ है? और यदि नाम (अक्षरों के) अभिप्रेत हैं, यानी 'दाद' और 'दाल', तो वे न केवल दो अक्षर हैं और न ही उनमें कोई बहस है। शायद वे कहना चाहते थे लेकिन कह नहीं पाए, कि 'ض' और 'د' दो अलग-अलग अक्षर हैं, किसी शब्द में उनका परिवर्तन अर्थ के परिवर्तन की ओर ले जाता है। यदि यह अभिप्रेत अर्थ आंतरिक (निहित) भी हो, तो सबसे पहले, इसका सामान्य उपयोग वर्जित है। दूसरा, हर परिवर्तन में, भ्रष्टाचार (अर्थ के) की

ओर ले जाने वाला परिवर्तन खारिज कर दिया जाता है। देखें कि 'दालिन' (भटकने वाले) और 'दालिन' (राह दिखाने वाले) के बीच अर्थ में कितना अंतर है, फिर भी शोधकर्ता हलबी ने इसे नमाज खराब करने वाला परिवर्तन नहीं माना। "यह स्वतः स्पष्ट है और स्पष्टीकरण की आवश्यकता नहीं है।" (त)

सातवां: दो अक्षरों के बीच ध्वनि का अंतर होने का मतलब यह नहीं है कि सभी के लिए भेद करना आसान है। 'हा' (ح) और 'खा' (خ) की आवाज़ें कितनी अलग हैं, फिर भी तुर्कों के लिए उनके बीच भेद करना अत्यंत कठिन है। गुनिया में है:

मुहम्मद बिन अल-फ़ज़ल ने अपने फ़तवे में उल्लेख किया है कि तुर्क'हा' (ح) का उच्चारण कठिनाई के बिना नहीं कर सकते... इत्यादि।	**मुहम्मद बिन फ़ज़ल ने अपने फ़तावा में लिखा कि तुर्क लोगों के लिए 'हा' (ح) की अदायगी मशक्कत के बिना मुमकिन नहीं आदि (त)**

1. रद्द अल-मुह्तार, पाठ में गलतियों के मुद्दों का विषय, मुस्तफा अल-बाबी द्वारा प्रकाशित, 1/266।
2. अल-मिनह अल-फ़िक्रिया, अल-मुक़द्दिमा अल-जज़रिया की व्याख्या, दांतों के चार प्रकार होने के विषय पर, तिज़ारत अल-कुतुब हमली मोहल्ला बॉम्बे द्वारा प्रकाशित, पृ. 15।
3. गुन्यात अल-मुस्तमली, मुन्यात अल-मुसल्ली की व्याख्या, पाठ में गलतियों के नियमों पर अनुभाग, सुहैल अकादमी लाहौर द्वारा प्रकाशित, पृ. 81-82।

پنجم : ضاد و دال میں فرق صفات کا ذکر لغو و فضول اور محل بحث سے یکسر معزول ، متقدمین کا مسلک معلوم ہے کہ ان کے یہاں تشابہ و عدم تشابہ پر اصلاً نظر نہیں اور متاخرین قرب مخرج یا عصر تمیز پر لحاظ کرتے ہیں صفات سے انہیں بھی بحث نہیں ، نہ صفات خواہی نہ خواہی آسانی تمیز کو مستلزم ، نہ ان کا تشارک دشواری پر حاکم ط مہملہ دال مہملہ سے سوائے اطباق کے کچھ فرق نہیں اور فرق تمیز کی آسانی مبین اور تائے مثناۃ سے متعدد صفات میں تباین تام اور دشواری فصل منصوص اعلام ، ط مجہورہ و مستعلیہ مطبقہ قلقلہ ہے اور ت مہموسہ مستفلہ منفتحہ بے قلقلہ خانیہ و خلاصہ و حلیہ و ہندیہ و ردالمحتار وغیرہا میں ہے :

ان کان لا یمکن الفصل بین الحرفین الا بمشقۃ کَالطَّاءِ مَعَ التَّاءِ الخ

اگر دو حرفوں کے درمیان مشقت کے بغیر امتیاز ممکن نہ ہو جیسے طاء اور ت ، الخ (ت)

شرح جزریہ میں ہے :

قال الرمانی وغیرہ لولا الاطباق لصارت الطاء دالا لانہ لیس بینھما فرق الا الاطباق ۔

رمانی وغیرہ نے کہا کہ اگر اطباق نہ ہو تو طاء دال ہو جائے گی اس لئے کہ اطباق کے علاوہ ان دونوں کے درمیان کوئی فرق ہی نہیں۔ (ت)

ششم : فتویٰ ندوی کا قول کہ ضاد و دال دو حروف متغایر المعنی عجیب، الفاظ متغایر المعنی ہیں اگر مسمّٰی مراد تو ان کے لئے معنی کہاں ، بھلا بتائیے تو کہ مجرد حرف ض کے کیا معنی ہوئے ، اور اگر اسماء مقصود یعنی حدود و دال تو نہ دو حرف نہ ان میں مقال ، شاید یہ کہنا چاہا اور کہنا نہ آیا کہ ض و د دو حرف جداگانہ ہیں، کسی کلمے میں ان کا تغیر معنی کے لئے مستلزم تغایر ، یہ

معنی فی البطن اگر مقصود بھی ہوں تو اولاً اطلاق ممنوع ، ثانیاً ہر تغیر میں تغیر بحر فساد مدفوع ، دیکھو ضالین و دالین میں کس قدر تغایر معنی ہے مگر محقق حلبی نے تغیر نہ مانا و ھٰذا ببداھتہ غنی عن ابانۃ (یہ بات بدیہی ہونے کی وجہ سے محتاج بیان نہیں ۔ ت)

ہفتم : دونوں حرفوں میں تغایر صوت ہر گز سب کے لئے سہولت تمیز کو مستلزم نہیں ح ، خ کی آوازیں کتنی جدا ہیں مگر ترک کو ان میں تمیز سخت دشوار ۔ غنیہ میں ہے :

ذکر محمد بن الفضل فی فتاواہ ان الترک لا یمکنہ اقامۃ الحاء الا بمشقۃ الخ ۔

محمد بن فضل نے اپنے فتاوٰی میں تحریر کیا کہ ترک لوگوں کے لئے حاء کی ادائیگی مشقت کے بغیر ممکن نہیں الخ (ت)

1 ردالمحتار مطلب مسائل زلۃ القاری مطبوعہ مصطفی البابی ۱/۲۶۶ 2 المنح الفکریہ شرح المقدمۃ الجزریہ مطلب بیان ان الاسنان علی اربعۃ اقسام مطبوعہ تجارت الکتب حاملی محلہ بمبئی ص ۱۵ 3 غنیہ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل فی احکام زلۃ القاری مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۸۱-۸۲

Fatawa Razawiyya Volume VI The difference between the sounds of Hamza (ء) and Qaf (ق) is even greater than these, but Allama Shami states that for the common people of our time, distinguishing between them is extremely difficult. In Radd al-Muhtar, it is stated:

[Box Content] (Arabic side): In Al-Tatar Khaniyah, when there is no unity of articulation (makhraj) between two letters, nor closeness, but it is a matter of common difficulty (balwa al-ammah), such as [pronouncing] Dal in place of Sad, or Za in place of Dad, it does not invalidate [prayer] according to some scholars. I say: based on this, it should not be invalidating to replace Qaf with Hamza as is the dialect of the commoners of our time, for they do not distinguish between them, and it is very difficult for them, just like Dal with Za. All this is the opinion of the later scholars (muta'akhirun). (Summarized)

(Urdu side): It is in Tatar Khaniya that when there is no unity of articulation between two letters, nor proximity of articulation, but there is a common necessity in that situation, for example, reading Dal instead of Sad or Za instead of Dad, then according to some scholars the prayer will not be invalid. I say that based on this, there should be no invalidity in changing Qaf with Hamza, as is the language of the common people of our time, because they cannot distinguish between them, just as it is extremely arduous and difficult for them to differentiate between Dal and Za. This is all based on the saying of the later scholars. (Summarized) (T) [End of Box Content]

From these passages, it is clear that in the difficulty of distinguishing, the condition of every nation is considered. Proximity of articulation or similarity etc. is not necessarily required. Thus, if the common people of India are not capable of distinguishing between Dad (ض) and Dal (د), then they are in the same difficulty of separation as Dad (ض), Za (ظ), Ta (ت), and Ta (ط) are counted. Now, the quoted passage of Shami, the fatwa of Nadwa, and all such passages will be completely foreign to the discussion, rather they will be clearly contrary to the intention of those citing them. And the ruling of permissibility will be given for 'Dallin' according to the later scholars, and for those who recite it with deliberate distortion, the ruling of invalidity of prayer is agreed upon by both the early and later scholars.

Eighth: Up to this point, the talk was about the understandings of the people of the age, but dear brother, it is one thing to understand the translation of "min", "ala", "fi"

in an Arabic sentence, and quite another to reach the objectives, intentions, and purposes of the eminent scholars.

This fortune is not by the strength of the arm, Until the Bestowing God grants it.

The "difficulty" which the Fatwa of Nadwa relied upon for support is not related to this discussion of the question at all. That saying of the scholars...

---

1 Radd al-Muhtar, chapter on mistakes of the reciter (Zallat-ul-Qari), printed Mustafa al-Babi Egypt, 1/468. Page 313 of 736

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी इनसे अधिक हमज़ा और क़ाफ़ की आवाज़ों का भेद है मगर अल्लामा शामी फ़रमाते हैं कि हमारे ज़माने के आम लोगों के लिए उनमें फ़र्क़ करना निहायत मुश्किल है। रद्द-दुल-मुह्तार में है:

[बॉक्स सामग्री] (अरबी पक्ष): अल-तातार ख़ानिया में है कि जब दो हर्फ़ों के बीच न मख़रज की एकता हो और न ही निकटता, लेकिन इसमें आम लोगों की मजबूरी (बल्वा-ए-आम्मा) हो, जैसे साद की जगह दाल या ज़ाद की जगह ज़ा पढ़ना, तो कुछ मशाइख़ के नज़दीक नमाज़ फ़ासिद नहीं होती। मैं कहता हूँ: इस आधार पर क़ाफ़ को हमज़ा से बदलने में भी फ़ासाद नहीं होना चाहिए जैसा कि हमारे दौर के आम लोगों की ज़बान है, क्योंकि वे इन दोनों में फ़र्क़ नहीं कर पाते और उनके लिए यह बहुत मुश्किल है जैसे दाल और ज़ा का मामला। यह सब मुतअख़िरीन (बाद के विद्वानों) का क़ौल है। (संक्षेप में)

(उर्दू पक्ष): तातार ख़ानिया में है जब दो हर्फ़ों के दरमियान इत्तेहादे मख़रज न हो और न ही कुर्बे मख़रज हो मगर इस सूरत में ज़रूरत-ए-आम हो मसलन साद की जगह दाल या ज़ाद की जगह ज़ा पढ़ा तो बाज़ मशाइख़ के नज़दीक नमाज़ फ़ासिद न होगी। मैं कहता हूँ इस बिना पर क़ाफ़ को हमज़ा के साथ बदलने में जैसा कि हमारे ज़माने के अवाम की ज़बान है भी फ़सादे नहीं होना चाहिए क्योंकि वह इन दोनों के दरमियान इम्तियाज़ नहीं कर सकते जैसे दाल और ज़ा के दरमियान फ़र्क़ करना उन पर निहायत ही दुश्वार व मुश्किल है, यह तमाम मुतअख़िरीन के क़ौल पर है। (संक्षेप में) (त) [बॉक्स समाप्त]

इन इबारतों से वाज़ेह हुआ कि दुश्वारी-ए-तमीज़ में हर क़ौम के लिए उसका हाल मोतबर है। कुर्बे मख़रज या तशाबेह वग़ैरह कुछ ज़रूरी नहीं, तो अवाम-ए-हिन्द अगर ज़ाद और दाल में तमीज़ पर क़ादिर नहीं तो वह उनके लिए इसी मशक़्क़त-ए-फ़स्ल में हैं जिसमें ज़ाद, ज़ा, ते, और तो का शुमार हुआ। अब इबारत-ए-शामी मन्क़ूला, फ़तवा-ए-नदवा और इसके मिसल तमाम इबारतें बहस से महज़ बेगाना बल्कि इस्तेनाद करने वालों के सरीह ख़िलाफ़-ए-मुराद होंगी और दालीन पर बतोर-ए-मुतअख़िरीन हुक्म-ए-जवाज़ दिया जाएगा और क़स्दन मअतूब पढ़ने वाले पर बिल-इत्तेफ़ाक़ मुतक़द्दिमीन व मुतअख़िरीन हुक्म-ए-बुतलान-ए-नमाज़।

आठवाँ: यहाँ तक मदारिक़-ए-अबना-ए-अस्र पर कलाम था मगर जान-ए-बिरादर अरबी इबारत में 'मिन्', 'अला', 'फ़ी' का तर्जुमा समझ लेना और बात है और मक़ासिद व मुराद व मराम-ए-उलेमा-ए-अलाम तक रसाई और।

ईं सआदत बज़ोर-ए-बाज़ू नीस्त, ता न बख़्शद ख़ुदा-ए-बख़्शन्दा।

मशक़्क़त जिससे फ़तवा-ए-नदवा ने इस्तेनाद किया इस बहस-ए-सवाल से अस्लन मुतअल्लिक़ ही नहीं, उलेमा का वह क़ौल सूरत...

---

1 रद्दुल-मुह्तार, मतलब मसायल-ए-ज़ल्लतुल क़ारी, मतबुआ मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 468/1 पेज 313/736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم ان سے زیادہ ہمزہ و ق کی آوازوں کا تباین ہے مگر علامہ شامی فرماتے ہیں ہمارے زمانے کے عوام پر ان میں تمیز کمال مشکل ہے۔ ردالمحتار میں ہے:

فی التتار خانیة اذالم یکن بین الحرفین اتحاد المخرج ولا قربہ الا انہ فیہ بلوی العامة کالدال مکان الصاد والظاء مکان الضاد لا تفسد عند بعض المشائخ اہ قلت فینبغی علی ھذا عدم الفساد فی ابدال القاف ہمزة کما ھو لغة عوام زماننا فانہم لا یمیزون بینہما و یصعب علیہم جدا کالدال مع الزاء وھذا کلّہ قول المتأخرین اہ باختصار |

تتار خانیہ میں ہے جب دو حرفوں کے درمیان اتحاد مخرج نہ ہو اور نہ ہی قرب مخرج ہو مگر اس صورت میں ضرورت عامہ ہو مثلاً صاد کی جگہ دال یا ضاد کی جگہ ظاء پڑھا تو بعض مشائخ کے نزدیک نماز فاسد نہ ہو گی اھ میں کہتا ہوں اس بناء پر قاف کو ہمزہ کے ساتھ بدلنے میں جیسا کہ ہمارے زمانے کے عوام کی زبان ہے بھی فاسد نہیں ہونا چاہئے کیونکہ وہ ان دونوں کے درمیان امتیاز نہیں کر سکتے جیسے دال اور زاء کے درمیان

فرق کرنا ان پر نہایت ہی دشوار و مشکل ہے، یہ تمام متاخرین کے قول پر ہے اھ باختصار (ت)

ان عبارات سے واضح ہوا کہ دشواری تمیز میں ہر قوم کے لئے اس کا حال معتبر ہے۔ قرب مخرج یا تشابہ وغیرہ کچھ ضرور نہیں، تو عوام ہند اگر ض و د میں تمیز پر قادر نہیں تو وہ ان کے لئے اسی مشقت فصل میں ہیں جس میں ض و ظ وت، ط کا شمار ہوا اب عبارت شامی منقولہ، فتوی ندوہ اور اس کے مثل تمام عبارات بحث سے محض بیگانہ بلکہ استناد کرنے والوں کے صریح خلاف مراد ہوں گی اور دالین پر بطور متاخرین حکم جواز دیا جائے گا اور قصداً معطوب پڑھنے والے پر باتفاق متقدمین و متاخرین حکم بطلان نماز۔

ہشتم: یہاں تک مدارک ابنائے عصر پر کلام تھا مگر جانِ برادر عربی عبارت میں "مِنْ"، "عَلٰی"، "فِی" کا ترجمہ سمجھ لینا اور بات ہے اور مقاصد و مراد و مرام علمائے اعلام تک رسائی اور۔

ایں سعادت بزور بازو نیست تا نہ بخشد خدائے بخشندہ

مشقت جس سے فتوی ندوہ نے استناد کیا اس بحث سوال سے اصلاً متعلق ہی نہیں علماء کا وہ قول صورت

---

1 رد المحتار، مطلب مسائل زلة القاری، مطبوعہ مصطفی البابی مصر، ۱/۴۶۸ Page 313 of 736

Fatawa Razawiyya Volume 6

In error and slip, it happens that despite having the ability, one letter is replaced by another due to a slip of the tongue. Here, it is clearly a case of inability, as those who recite "Dalleen" (with Dal) instead of "Zalleen" (with Daad) or similar pronunciations are absolutely incapable of pronouncing the "Daad," just as the text from Khizaniyatul Akmal and Hulyah mentioned:

"Indeed, the tongues of Kurds, Iraqis (people of Sawad), and Turks are not submissive to the points of articulation (makharij) of these letters."[1] | The tongues of Kurds, Iraqis, and Turks are not capable of pronouncing these letters. (T)

The text from Fatawa Imam Qazi Khan and others was mentioned above, stating this in the saying "If one mistakenly mentions one letter in place of another."[2] (Meaning, if one letter mistakenly slips from the tongue instead of another. T). Now listen to the most exalted and brilliant statement of the Muhaqqiq Alal Itlaq (the Absolute Researcher), who says in Fath:

As for letters, if one letter is placed in place of another, it is either due to an error or an inability. In the first case, if it does not change the meaning, the prayer (salah) is not invalidated. If it does change the meaning, it is invalidated. Therefore, the criterion for non-invalidation is the absence of a change in meaning. The summary of this is: if the distinction (between letters) is possible without hardship, the prayer is invalidated (if not distinguished). If it involves hardship, it is said that it is invalidated, but most say it is not. This is according to the opinion of these scholars (mashaikh). Furthermore, their derivative rulings (furoo') are not well-regulated. Thus, in Al-Khulasah, something was introduced that apparently seems contradictory to the reflective person. Therefore, the opinion of the predecessors (mutaqaddimeen) is preferable. The second case is when it is due to inability, such as saying "Al-Hamdulillah" and "Ar-Rahman Ar-Rahim" with "Haa" instead of "Haa," or "Audhu" with an unpointed letter, or "As-Samad" with "Seen." If one strives day and night to correct it but is unable, then their prayer is valid. However, if they abandon the effort, it is invalid, and no... | As for the matter of letters, when one letter is put in place of another, it will be either an error or an inability. In the first case, if the meaning does not change, the prayer will not be invalidated. If the meaning has changed, then the prayer will be invalidated. So, the criterion for the non-invalidation of prayer is the lack of change in meaning. The essence of this speech is that if distinguishing between letters is possible without difficulty, the prayer will be invalidated. And if

there is difficulty in it, some said the prayer will be invalidated, but according to most, it will not be invalidated. This is according to the opinion of those scholars. Then, all their branches and details are not regulated. So, in the summary, such a thing has been introduced which is apparently contradictory to a person of thought and reflection. Therefore, the opinion of the predecessors is primary, and the second case...

[1] Hulyat al-Muhalla Sharh Munyat al-Musalli [2] Fatawa Qazi Khan, Section on reciting the Quran mistakenly, etc., published by Naval Kishore Lucknow, 68/1

फ़तावा रज़विया जिल्द 6

खता और ज़ल्लत (भूल) में यह है कि ज़बान के फिसलने से, क्षमता होने के बावजूद, एक हर्फ की जगह दूसरा हर्फ निकल जाए। यहाँ साफ़ तौर पर बेबसी की सूरत है क्योंकि 'ज़ॉल्लीन' की जगह 'दाल्लीन' या उसके जैसा पढ़ने वाले 'ज़ॉड' (ض) अदा करने पर बिल्कुल सक्षम नहीं हैं, जैसा कि ख़िज़ानियतुल अकमल और हुल्या की इबारत गुज़री कि:

"बेशक कुर्दों, इराक़ियों और तुर्कों की ज़बानें इन हर्फों के मखराज (उच्चारण स्थान) पर काबू नहीं रखतीं।"[1] | कुर्द, इराक़ी और तुर्क लोगों की ज़बानें इन हर्फों की अदायगी पर सक्षम नहीं हैं। (त)

फ़तावा इमाम क़ाज़ी खाँ वगैरह की इबारत ऊपर गुज़री कि इस क़ौल को "जब गलती से एक हर्फ की जगह दूसरा हर्फ़ ज़िक्र किया जाए"[2] (यानी अगर एक हर्फ़ की जगह दूसरा हर्फ़ गलती से ज़बान से निकल जाए। त) में ज़िक्र फ़रमाया। अब मुहक़्क़िक़ अलल इतलाक का बुलंद तरीन इरशाद सुनिए, जो 'फ़त्ह' में फ़रमाते हैं:

रहा हर्फों का मामला, तो जब एक हर्फ को किसी दूसरे हर्फ की जगह रख दिया जाए, तो यह या तो खता होगी या बेबसी (अज्ज़)। पहली सूरत में, अगर अर्थ नहीं बदला तो नमाज़ फासिद (अमान्य) नहीं होगी, और अगर अर्थ बदल गया हो तो नमाज़ फासिद हो जाएगी। पस, नमाज़ के फासिद न होने में अर्थ के न बदलने का एतबार है। इस कलाम का हासिल यह है कि अगर हर्फों में अंतर करना बिना मशक़्क़त (कठिनाई) के मुमकिन हो तो नमाज़ फासिद होगी, और अगर उसमें मशक़्क़त हो तो कुछ ने कहा नमाज़ फासिद होगी लेकिन अक्सर के नज़दीक फासिद न होगी। यह उन मशाईख की राय के मुताबिक़ है। फिर उनकी तमाम शाखें (फ़ुरआत) और विवरण व्यवस्थित नहीं हैं। पस, 'खुलासा' में ऐसी चीज़ को लाया गया है जो ज़ाहिर तौर पर गौर-ओ-फ़िक्र करने वालों के नज़दीक विरोधाभासी है। पस, मुतक़द्दिमीन (पूर्ववर्तियों) का क़ौल ही बेहतर है। और दूसरी सूरत अज्ज़ (बेबसी) की है, जैसे 'अल-हम्दुलिल्लाह' और 'अर-रहमान अर-रहीम' में 'हा' (ह) की जगह 'हा' (ح) न पढ़ पाना, 'अऊज़ु' में बे-नुक्ते वाला हर्फ पढ़ना, या 'अस्-समद' को 'सीन' से पढ़ना। अगर वह रात-दिन इसे ठीक करने की कोशिश करता है लेकिन सक्षम नहीं है, तो उसकी नमाज़ जायज़ है। और अगर उसने कोशिश छोड़ दी तो नमाज़ फासिद है और न... | रहा हर्फों का मामला, तो जब एक हर्फ को किसी दूसरे हर्फ की जगह रख दिया जाए, तो यह खता होगी या अज्ज़। पहली सूरत में अगर मानी नहीं बदला तो नमाज़ फासिद नहीं होगी और अगर मानी बदल गया हो तो नमाज़ फासिद हो जाएगी। पस, नमाज़ के

अदम-ए-फ़साद (अमान्य न होने) में मानी के तब्दील न होने का एतबार है। इस कलाम का हासिल यह है कि अगर हर्फों में इम्तियाज़ (अंतर) बगैर मशक़्क़त के मुमकिन हो तो नमाज़ फासिद होगी। और अगर इसमें मशक़्क़त हो तो बाज़ ने कहा नमाज़ फासिद होगी लेकिन अक्सर के नज़दीक फासिद न होगी। यह उन मशाईख की राय के मुताबिक़ है। फिर उनकी तमाम फ़ुरआत-ओ-जुज़इयात मुनज़बत (व्यवस्थित) नहीं। पस, 'खुलासा' में ऐसी चीज़ को वारिद किया गया है जो बज़ाहिर साहिब-ए-गौर-ओ-फ़िक्र के यहाँ मुनाफ़ी (विरोधी) है। पस, मुतक़द्दिमीन का क़ौल अवला (बेहतर) है और दूसरी सूरत...

1. हुलियतुल मुहल्ला शरह मुनियतुल मुसल्ली
2. फ़तावा क़ाज़ी खाँ, फ़स्ल फ़ी क़िरातुल क़ुरआन खताअन्, नवल किशोर लखनऊ द्वारा प्रकाशित, 68/1

पृष्ठ 314 का 736

خطا و زلّت میں ہے کہ لغزشِ زبان سے باوجودِ قدرت ایک حرف کی جگہ دوسرا نکل جائے اور یہاں صاف صورتِ عجز ہے کہ یہ ظالین یا اس کے مشابہ دالین پڑھنے والے ہرگز ادائے "ض" پر قادر نہیں جس طرح خزانۃ الکمل و حلیہ کی عبارت گزری کہ

ان السنة الاكراد واهل السواد والاتراك غير طائعة فی مخارج هذه الحروف۔[1] | کرد، عراقی، ترک لوگوں کی زبانیں ان حروف کی ادائیگی پر قادر نہیں۔ (ت)

فتاوی امام قاضی خاں وغیرہ کی عبارت اوپر گزری کہ اس قول کو اذا اخطأ بذکر حرف مکان حرف۔[2] (یعنی اگر ایک حرف کی جگہ دوسرا حرف خطأً زبان سے نکل گیا۔ ت) میں ذکر فرمایا اب محقق علی الاطلاق کا ارشاد اجل و اجلی سنیئے، فتح میں فرماتے ہیں:

اما الحروف فاذاوضع حرفا مكان غيره فاما خطأً واما عجزاً فالاول ان لم يغير المعنى لاتفسد وان غير فسدت فالعبرة في عدم الفساد عدم تغير المعنى، وحاصل هذا ان كان الفصل بلا مشقة تفسد وان كان بمشقة قيل تفسد واكثرهم لا تفسد هذا على رأى هولاء المشائخ ، ثم لم تنضبط فروعهم فاورد في الخلاصة ما ظاهره التنافي للمتأمل فالاولى قول المتقدمين والثانى وهو الاقامة عجزاً كالحمدلله الرحمن الرحيم بالهاء اعوذ بالمهملة الصمد بالسين ان كان يجهد الليل و النهار فی تصحيحه ولا يقدر فصلوته جائزة ولو ترك جهده ففاسدة ولا | رہا معاملہ حروف کا، تو جب ایک حرف کو کسی دوسرے حرف کی جگہ رکھ دیا جائے تو یہ خطاء ہوگا یا عجز، پہلی صورت میں اگر معنی نہیں بدلا تو نماز فاسد نہیں ہوگی اور اگر معنی بدل گیا ہو تو نماز فاسد ہو جائے گی، پس نماز کے عدمِ فساد میں معنی کے تبدیل نہ ہونے کا اعتبار ہے اس کلام کا حاصل یہ ہے کہ اگر حروف میں امتیاز بغیر مشقت

کے ممکن ہو تو نماز فاسد ہوگی، اور اگر اس میں مشقت ہو تو بعض نے کہا نماز فاسد ہوگی لیکن اکثر کے نزدیک فاسد نہ ہوگی یہ ان مشائخ کی رائے کے مطابق ہے، پھر ان کی تمام فروعات و جزئیات کو منضبط نہیں۔ پس خلاصہ میں ایسی چیز کو وارد کیا گیا ہے جو بظاہر صاحب غور و فکر کے ہاں منافی ہے، پس متقدمین کا قول اولیٰ ہے اور دوسری صورت

1. حلیۃ المحلی شرح منیۃ المصلی
2. فتاوی قاضی خان فصل فی قرأۃ القرآن خطأً الخ مطبوعہ نولکشور لکھنؤ، ۶۸/۱

Fatawa Rizvia, Volume 6

"He is permitted to leave it for the rest of his life." (Summarized from 'A'). If this action is due to inability, for example, reciting "Alhamdulillah" or "Ar-Rahman Ar-Rahim" with a "ha" [instead of 'Ha'], "A'udhu" with a "dal" [instead of 'dhal'], or "As-Samad" with a "seen" [instead of 'sad'], then in this case if he exerted effort day and night for correction but was unable to, his prayer will be valid. If he abandoned the effort, then the prayer will be void, and there is no room to abandon the effort for the rest of his life. (Summarized - T).

See how error (khata) and inability ('ajz) were clearly stated as two opposing situations, and that distinction of 'hardship' (mashaqqat) was only mentioned in the case of error. In the case of inability, this distinction was not named at all. Rather, by giving examples like 'seen' and 'sad', or 'dal' and 'dhal', it was clearly shown that the ruling is the same for both similar-sounding and non-similar-sounding letters. Thus, in the state of inability, whether 'Maghdub' is pronounced 'Ma'dhub' or even 'Maghlub' or 'Maghmub', a single ruling applies to all definitively, and the distinction between one letter or two letters is void.

Ninth: Even if we admit that there was no consideration for the intention of the new group regarding 'za' (ظ), nor for the 'dal' (د) of the common people, nor for the distinctions between inability and error in the sayings of scholars; and that following some later scholars, the sacred guidance of the original Imams of the school (Madhhab), may Allah be pleased with them, and the correct and chosen view of the majority of researchers was not liked—all this is accepted. However, the later scholars did not have only one saying regarding the distinction of hardship. There were multiple sayings. Among them, the saying of Imam Qazi Abu Asim, Imam Muhammad ibn Muqatil, Imam Ismail Zahid, and other great elders was very strong, upon which Imam Zahid gave a fatwa. Imam Muhsin and the author of 'Khazanat al-Akmal' called it the best. In 'Khazanat al-Fatawa', 'Hilya', etc., it was called 'the chosen one' (mukhtar). In 'Wajiz al-Kardari', 'Hindiyyah', etc., it was called 'the most balanced of sayings' (i'tidal al-aqawil). All these statements came under the fourth point, meaning if by mistake one letter came out of the tongue instead of another, or one doesn't know the distinction, the prayer is not void. In this saying, there was no distinction of hardship etc., the ruling is only on error or lack of distinction. Based on this, it was necessary that 'za' (ظ) and 'dal' (د) be treated the same, and in the case of non-intentionality, a fatwa for the validity of prayer should be given. What legal insight made it necessary that only the saying of later scholars should be taken? Why

was this glorious saying not taken, even though its great strength is remarkable? Then, the benefit for which the sayings of the early Imams were deviated from—namely, ease for the common people—is even more complete and increased in this saying. Yes, if the intention is only that the 'venerable brothers' among the Wahhabis, non-conformists (Ghair Muqallidin), and Nadwis find correctness in their prayers, while the prayers of the common Ahl-e-Sunnat are ruined, then for that reason if the saying of distinction was chosen, then so be it.

Tenth: Rather, there was another strong saying here which Imam Abul Qasim Saffar, Imam Muhammad Salamah, and other great Imams chose, and many masters (Mashaykh) gave fatwa on it: that the focus is on 'commonality of affliction' (umoom al-balwa). Where there is a common trial, a fatwa of validity will be given. It was in 'Shami' right here:

1. Fath al-Qadir Sharh al-Hidayah, Chapter on Recitation, printed by Nuriyyah Razawiyyah, Sukkur, 1/281. Page 315 of 736

फ़तावा रज़विया, जिल्द 6

"उसे शेष जीवन के लिए इसे छोड़ने की अनुमति है।" (संक्षेप में)। कि यह कार्य अक्षमता (अज्र) के कारण हो, उदाहरण के लिए "अल्हम्दुलिल्लाह", "अर-रहमान अर-रहीम" में 'हा' के साथ, "अऊज़ु" में 'दाल' के साथ और "अस-समद" में 'सीन' के साथ पढ़ता है, तो इस स्थिति में यदि उसने सुधार के लिए दिन-रात मेहनत की और समर्थ न हो सका, तो उसकी नमाज़ सही होगी। और यदि मेहनत छोड़ दी, तो नमाज़ फासिद (अमान्य) होगी और शेष जीवन में मेहनत छोड़ने की कोई गुंजाइश नहीं है। (संक्षेप में - त)

देखो, गलती (खता) और अक्षमता (अज्र) को स्पष्ट रूप से दो विपरीत स्थितियाँ करार दिया गया और वह मशक्कत (कठिनाई) का अंतर केवल गलती की स्थिति में उल्लेख किया गया, अक्षमता की स्थिति में इस अंतर का नाम तक नहीं लिया गया। बल्कि 'स' और 'श', 'द' और 'ज़' के उदाहरणों से समान ध्वनि वाले और असमान ध्वनि वाले दोनों का एक ही हुक्म होना स्पष्ट रूप से ज़ाहिर कर दिया। तो अक्षमता की स्थिति में 'मग्ज़ूब' को 'मअज़ूब' या मान लीजिए 'मगलूब' या 'मगमूब' पढ़ना, सभी पर निश्चित रूप से एक ही हुक्म लागू होता है और एक अक्षर या दो अक्षर का अंतर बेबुनियाद है।

नवां: मान लिया कि न नई जमात की 'ज़' (ظ) के इरादे पर नज़र हुई, न आम लोगों की 'द' (د) पर, न विद्वानों के कथनों में अक्षमता और गलती आदि के अंतर पर। और कुछ बाद के विद्वानों (मुतअखिरीन) के अनुसरण में पंथ (मज़हब) के मूल इमामों, रज़ियल्लाहु अन्हुम, का पवित्र मार्गदर्शन और बहुमत शोधकर्ताओं (मुहक्किकीन) का सही और पसंदीदा विचार भी पसंद नहीं आया। यह सब स्वीकार्य है, लेकिन बाद के विद्वानों का केवल एक ही कथन 'मशक्कत' का अंतर नहीं था, बल्कि अनेक कथन थे। उनमें से इमाम काज़ी अबू आसिम, इमाम मुहम्मद इब्न मुक़ातिल, इमाम इस्माइल ज़ाहिद और अन्य महान बुजुर्गों का कथन बहुत मज़बूत था जिस पर इमाम ज़ाहिद ने फतवा दिया। इमाम मोहसिन और 'ख़ज़ाना-तुल-अकमल' के लेखक ने इसे सर्वोत्तम कहा। 'ख़ज़ाना-तुल-फतावा' और 'हुलिया' आदि में इसे चुना हुआ (मुख्तार) बताया गया। 'वजीज़ करदरी' और 'हिंदिया' आदि में इसे 'कथनों का संतुलन' (इतदाल अल-अकावील) कहा गया। ये सभी बातें चौथे बिंदु के अंतर्गत आईं, यानी अगर गलती से ज़बान से एक अक्षर की जगह दूसरा निकल गया या कोई अंतर नहीं जानता, तो नमाज़ फासिद नहीं होती। इस कथन में मशक्कत आदि का कोई अंतर नहीं था, केवल गलती या अंतर न कर पाने पर हुक्म है। इस आधार पर यह अनिवार्य था कि 'ज़' (ظ) और 'द' (ض) का एक ही हाल हो और जानबूझकर न करने की स्थिति में नमाज़ के सही होने का फतवा दिया जाए। किस

कानूनी सूझबूझ (फिक्ही नज़र) ने यह अनिवार्य किया कि केवल बाद के विद्वानों का कथन ही लेना था? तो यह महान कथन क्यों नहीं लिया गया, जबकि इसकी महान शक्ति का अपना ही स्तर है? फिर, जिस लाभ के लिए पूर्ववर्ती इमामों के कथनों से हटा गया—यानी आम लोगों के लिए आसानी—वह इस कथन में और भी अधिक पूर्ण और बढ़कर है। हाँ, अगर मक़सद ही यह हो कि वहाबी, गैर-मुक़ल्लिद, नदवी 'आदरणीय भाइयों' की नमाज़ें सही हो जाएं और आम अहले सुन्नत की नमाज़ें बर्बाद हो जाएं तो उस वजह से अगर अंतर का कथन अपनाया गया, तो अपनाया गया।

दसवां: बल्कि यहाँ एक और मज़बूत कथन था जिसे इमाम अबुल क़ासिम सफ़्फ़ार और इमाम मुहम्मद सलमा और अन्य महान इमामों ने अपनाया और कई मशायख (गुरुओं) ने उस पर फतवा दिया कि नज़र 'उमूम-ए-बलवा' (आम परेशानी) पर है। जहाँ आम मुसीबत हो, वहाँ सही होने का फतवा देंगे। 'शामी' में भी यहीं था:

1 फ़तह अल-क़दीर शरह हिदाया, नमाज़ में कुरआन पढ़ने का अध्याय, मुद्रित नूरैया रिज़विया सख्खर 1/281 पृष्ठ 315 / 736

جلد ششم فتاویٰ رضویہ

یسعه ان یترك في باقی عمره اه مختصراً۔ کہ یہ عمل عجزاً ہو مثلاً الحمدللہ ، الرحمن الرحیم میں "ھا" کے ساتھ، اعوذ میں دال کے ساتھ اور الصمد میں سین کے ساتھ پڑھتا ہے، اس صورت میں اگر اس نے تصحیح کے لئے شب و روز محنت کی اور قادر نہ ہوسکا تو اسکی نماز درست ہوگی اور جد و جہد ترک کردی تو نماز فاسد ہوگی اور اس کے لئے باقی عمر میں جد و جہد ترک کرنے کی گنجائش نہیں۔ اہ اختصاراً (ت)

دیکھو خطاء و عجز کو صاف دو صورتیں متقابل قرار دیا اور وہ فرق مشقت کا قول صرف صورت خطاء میں ذکر کیا صورت عجز میں اس تفرقے کا اصلاً نام نہ لیا بلکہ س و ص ود و ذ کی مثالوں سے صرف متشابہ الصوت و غیر متشابہ دونوں کا یکساں حکم ہونا صراحتہً ظاہر فرما دیا تو بحالت عجز مغضوب معذوب بلکہ بالفرض مغلوب مغموب سب کو قطعاً ایک حکم شامل اور حرف و دو حرف کا فرق باطل۔

نہم : مانا کہ نہ ظاء طائفہ جدیدہ کی قصدیت پر نظر ہوئی نہ دال عوام پر نہ اقوالِ علماء میں فرق عجز و خطاء وغیرہ پر اور باتباعِ بعض علمائے متاخرین ارشادِ اقدس اصل ائمہ مذہب رضی اللہ تعالٰی عنہم مصحح و مختار جمہور محققین بھی پسند نہ آیا، یہ سب مسلم مگر متاخرین کا صرف ایک ہی قول تفرقہ مشقت نہ تھا متعدد اقوال تھے ازانجلہ امام قاضی ابو عاصم و امام محمد ابن مقاتل و امام اسمعیل زاہد و غیر ہم اکابر اماجد کا قول بہت قوت تھا جس پر امام زاہد نے فتویٰ دیا، امام محسن و صاحب خزانہ الاکمل نے احسن کہا، خزانہ الفتاویٰ و حلیہ و غیر ہما میں مختار بتایا، وجیز کردری و ہندیہ و غیر ہما میں اعتدال الاقاویل فرمایا کہ یہ سب عبارات زیرِ امر چہارم گزریں یعنی

اگر خطاء ایک حرف کی جگہ دوسرا زبان سے نکل گیا یا تمیز نہیں جانتا تو نماز فاسد نہیں، اس قول میں مشقت وغیرہ کا کچھ تفرقہ نہ تھا صرف خطاء یا عدم تمیز پر حکم ہے اس تقدیر پر واجب تھا کہ ظ و د کا ایک حال ہو اور بحال عدمِ تعمد صحتِ نماز پر فتویٰ دیا جائے کون سی فقہی نظر موجب ہوئی کہ قولِ متاخرین ہی لینا تھا تو یہ قولِ جلیل نہ لیا جائے حالانکہ اس کی قوتِ جلیلہ ، شانے دارد، پھر جس مصلحت کے لئے قولِ ائمہ متقدمین سے عدول ہوا یعنی عوام پر آسانی، وہ بھی اسی میں اتم و ازید، ہاں اگر منظور ہی یہ ہو کہ وہابیہ غیر مقلدین ندوی کے برادرانِ معظمین کی نماز میں درستی پائیں اور عوام اہل سنت کی نمازیں برباد ہو جائیں، اس لئے وہ قولِ تفرقہ اختیار کیا تو اختیار ہے۔

دہم : بلکہ یہاں ایک اور قول باقوت تھا جسے امام ابوالقاسم صفار و امام محمد سلمہ و غیر ہما اجلہ ائمہ نے اختیار فرمایا اور بہت مشائخ نے اُس پر فتویٰ دیا کہ نظر عموم بلویٰ پر ہے جہاں ابتلائے عام ہو صحت پر فتویٰ دیں گے اسی شامی میں یہیں تھا:

---

1 فتح القدیر شرح ہدایہ فصل فی القراۃ مطبوعہ نوریہ رضویہ سکھر ۱/ ۲۸۱ Page 315 of 736

Fatawa Razawiya, Volume Six

In Tatar Khaniya, it is narrated from Al-Hawi that Al-Saffar used to say: An error in letters does not invalidate the prayer because it is a common affliction for the general public, as they cannot articulate the letters correctly except with great difficulty. In the same [book], it says: When there is no unity of articulation points (makhraj) or proximity between two letters, but it is a common affliction, then according to some scholars, the prayer is not invalidated. Briefly stated, and the full text has passed earlier. (T)

In Hilya, it is stated: Some [scholars] said that it does not invalidate [the prayer] for them; among them are Abu al-Qasim al-Saffar, Muhammad bin Salama, and many scholars who gave fatwa (religious decree) based on this due to the commonality of the affliction, as the general public does not know the articulation points of the letters. (T)

On this statement, the opposite would have been clearly intended. Here, a specific lowly group of Wahhabis pronounce 'zaa' (ظ), and common involvement in [pronouncing] it similar to 'daal' (د) was quoted by the questioner from these same fatwas, stating that it has become a widespread calamity in this age that 'daad' (ض) is recited in the form of 'daal' (د). Now, it was mandatory that the prayers of those 'Zai' (pronouncers of ظ) - the brothers of the Nadwis - be invalidated, and the prayer of the general public [who pronounce 'daad' like 'daal'] be correct. Praise be to Allah, these are ten complete [points], and there remain hidden things in corners; had the questioner not advised brevity, we would have brought them forth. (Praise be to Allah Almighty, these are ten complete proofs. Some proofs still remain in the corners of obscurity. If the questioner had not asked to write concisely, we would have mentioned them as well. - T). Thus far, the conditions of these fatwas have become clear, and also that they are not beneficial at all to this newly emerged sect. In the matters asked, only the answer remains as to why this conflict specifically concerns this letter; [it is because of] ignorance, and for the common people of the Ahl-e-Sunnat, knowing [the articulation of] 'daad' (ض) is the most difficult task.

1. Radd al-Muhtar, Chapter on mistakes of the reciter, published by Mustafa al-Babi Egypt, 1/648.
2. Hilyat al-Mahalli Munyat al-Musalli.

फतावा रज़विया, जिल्द छठी

ततार खानिया में हावी से नक़्ल है कि इमाम सफ़्फ़ार कहा करते थे कि अक्षरों में अगर गलती हो जाए तो नमाज़ फ़ासिद (अमान्य) नहीं होती क्योंकि इसमें आम जनता को कड़ी मुश्किल है, क्योंकि वे बिना मशक़्क़त के उन अक्षरों को अदा नहीं कर सकते। उसी में है कि जब दो अक्षरों के बीच मख्रज (उच्चारण स्थान) की एकता या निकटता न हो, लेकिन उसमें 'उमूमे बलवा' (आम समस्या) हो, तो कुछ विद्वानों के अनुसार नमाज़ फ़ासिद नहीं होगी। संक्षेप में, और पूरी इबारत पीछे आ चुकी है। (त)

हिलिया में है: कुछ विद्वानों ने कहा है कि उनसे नमाज़ फ़ासिद नहीं होगी; उनमें शैख़ अबुल क़ासिम अल-सफ़्फ़ार और मुहम्मद बिन सलमा हैं, और कई विद्वानों ने आम ज़रूरतों के आधार पर इसी पर फतवा दिया है क्योंकि आम लोग अक्षरों के मख्रज (उच्चारण स्थान) से वाकिफ नहीं होते। (त)

इस कौल (कथन) पर तो साफ़ तौर पर विपरीत अर्थ अभिप्रेत होता। यहाँ 'ज़ा' (ظ) एक विशिष्ट नीच गुट वहाबी पढ़ते हैं, और 'ज़ाद' (ض) को 'दाल' (د) के समान पढ़ने की आम समस्या खुद उन्हीं फतवों से सवाल करने वाले ने नक़्ल की कि इस ज़माने में यह एक आम मुसीबत बन गई है कि 'ज़ाद' (ض) को 'दाल' (د) के रूप में पढ़ते हैं। अब तो लाज़िम था कि उन 'ज़ाइयों' (ज़ पढ़ने वालों) - नदवियों के भाइयों - की नमाज़ फ़ासिद ठहराते और आम जनता की नमाज़ सही होती। अल्हम्दुलिल्लाह, ये दस मुकम्मल दलीलें हैं, और अभी कुछ राज़ कोनों में दबे रह गए हैं; अगर पूछने वाले ने संक्षेप में लिखने को न कहा होता तो हम उनका भी ज़िक्र कर देते। (तमाम तारीफ़ अल्लाह तआला के लिए है, ये दस मुकम्मल दलीलें हैं। अभी कुछ दलीलें गुमनामी के कोनों में रह गई हैं। अगर सवाल करने वाले ने संक्षेप में लिखने को न कहा होता तो हम उनका भी ज़िक्र कर देते। - त)। यहाँ तक इन फतवों की हालतें ज़ाहिर हो गईं और यह भी कि वे उस नए उत्पन्न गुट के लिए बिल्कुल भी फायदेमंद नहीं हैं। पूछे गए मामलों में सिर्फ इसका जवाब रहा कि यह विवाद विशेष रूप से इसी अक्षर में क्यों है; अज्ञानता और अहल-ए-सुन्नत की आम जनता के लिए 'ज़ाद' (ض) का इल्म (उच्चारण) सबसे कठिन काम है।

1. रद्द अल-मुह्तार, मत्तलब मसाइल ज़ल्लतुल क़ारी, मुद्रित मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 1/648.
2. हिलियतुल महल्ली मुनियतुल मुसल्ली।

पृष्ठ 316 का 736

وفی التاتار خانیة عن الحاوی حکی عن الصفار انه کان یقول الخطاء اذا دخل فی الحروف لایفسد لان فیه بلوی عامة الناس لانهم لایقیمون الحروف الابمشقة اه وفیها اذالم یکن بین الحرفین اتحاد المخرج ولاقربه الاان فیه بلوی العامة لا تفسد عند بعض المشائخ۱۸ 1 اه مختصرا وقد مر تمامه ۔ تاتار خانیہ میں حاوی سے منقول ہے کہ امام صفار کہا کرتے تھے کہ حروف میں خطا ہو جائے تو نماز فاسد نہیں ہوتی کیونکہ اس میں عوام الناس کو شدید ضرورت ہے کیونکہ وہ مشقت کے بغیر ان حروف کو ادا نہیں کر سکتے اھ، اسی میں ہے جب دو حرفوں کے درمیان اتحاد مخرج اور قرب مخرج نہ ہو البتہ اس میں عموم بلوی ہو تو بعض مشائخ کے ہاں نماز فاسد نہ ہوگی اھ اختصارا اور تمام عبارت پیچھے گزر چکی ہے۔ (ت)

حلیہ میں ہے: قال بعضهم لاتفسد منهم ابوالقاسم الصفار ومحمد بن وسلمة وکثیر من المشائخ افتوا به لعموم البلوی فان العوام لا یعرفون مخارج الحروف۱۸ 2 ۔ بعض علماء نے کہا کہ نماز فاسد نہیں ہوگی ، انہی میں شیخ ابوالقاسم الصفار اور محمد بن سلمہ ہیں، اور کثیر مشائخ نے ضروریات عامہ کی بنا پر اسی پر فتوٰی دیا ہے کیونکہ عوام مخارج حروف سے واقفیت نہیں رکھتے۔ (ت)

اس قول پر تو صراحةً عکس مراد ہوتا تھا۔ یہاں ظ خاص طائفہ ذلیلہ وہابیہ پڑھتے ہیں اور دیا مشابہ د میں عام ابتلا خود انہیں فتووں سے سائل نے نقل کیا کہ ایک بلا عام اس زمانے میں یہ ہو گئی ہے کہ ض کو بصورت د پڑھتے ہیں اب تو لازم تھا کہ ان ظائیوں ندویوں کے بھائیوں کی نماز فاسد کرتے اور عامہ عوام کی نماز صحیح الحمدللہ تلک عشرة کاملة وقد بقی خبایا في زوایا لو لا ان السائل اوصی بالاجمال لاتینابها (تمام تعریف اللہ تعالٰی کے لئے ہے یہ دس ۱۰ کامل دلائل مکمل ہیں، ابھی کچھ دلائل خفا کے گوشے میں رہ گئے ہیں اگر سائل نے اجمالاً لکھنے کا نہ کہا ہوتا تو

ہم ان کا بھی تذکرہ کر دیتے۔ ت) یہاں تک ان فتووں کی حالتیں ظاہر ہو گئیں اور یہ بھی کہ وہ اس طائفہ حادثہ کو مفید اصلاً نہیں، امور مسئولہ میں صرف اس کا جواب رہا کہ یہ نزاع خاص اس حرف میں کیوں ہے جہل اور عوام اہلسنت کے جسلا کا علم ض کا دشوار ترین

1 ردالمحتار، مطلب مسائل زلۃ القاری، مطبوعہ مصطفی البابی مصر، ۱/۶۴۸ 2 حلیۃ المحلی منیۃ المصلی

Fatawa Rizvia Volume 6

If letters cannot be pronounced clearly, then those scholars and these ignorant people are equal, but the difference is that our common people, God forbid, did not intend to alter the word of Allah or distort the letters sent down by Allah. They want to recite the letter exactly as Allah Almighty sent it down; they intend that, have that intention, and in their own estimation, they believe that this letter, to the extent we can pronounce it, has this sound. However, where do the Wahhabi scholars have the strength to bear the taunts of helplessness and ignorance, to remain in the struggle of difficulties and hardships? There, the very foundation of religion is comfort-seeking. Eight rak'ahs for Tarawih, one rak'ah for Witr - by chance they found the sayings of others, otherwise the real objective is just personal comfort. If it feels cold, perform Tayammum; if there is no ejaculation during intercourse, do not take a bath; if there is no news of the wife for a year or two, marry her off; consider three divorces in one sitting without Halala; interest is permissible in everything except six things; only one or two things like blood and carrion are impure, the rest of the things, even wine, are pure. Fearlessly, for the sake of necessity, from adultery to one's own foster daughter, niece, step-maternal aunt, all are halal; in fact, the same thought even for one's own paternal aunt.

The height of comfort-seeking is this: in Wudu, it's difficult to remove the turban from the head, so just wipe (Masah) over it. Allah Almighty said 'and wipe your heads' (Wamsahu bi-ru'usikum), you understand it as 'with your turbans'. That other difficulty is that the command for washing was given for the hands, and in washing them, washing the sleeves is more difficult as the wrists get wet and the cloth also gets wet, otherwise what was the difficulty for them to make 'Asteenikum' (your sleeves) instead of 'Aydiyakum' (your hands). Here was a saying of a non-muqallid gentleman: 'O friends, you have imposed difficulties on yourselves in Tahajjud; as for us, in winter when our eyes open, we strike our hands on the pillow, wipe our faces, and pray two rak'ahs while sitting on the bed and snuggling in the quilt.' Muslims understood the meaning of the noble verse 'if you do not find water' (lam tajidu ma'an), meaning when the pitcher placed on the bed is not found, then strike your hands on the pillow even if there is no dust or dirt, and the pillow-owner has no illness or ailment, 'and there is no power nor strength except with Allah, the One, the Subduer.' Thus, while that is intentional distortion and this is a misreading due to helplessness, ignorance, or error, the former is more deserving of rejection, and it is

clear and evident that the common people are more knowledgeable than their scholars. This is the gist; beyond this, excess and negligence must be avoided.

This is the answer to the matters questioned, and in this specific issue, the truth of investigation worthy of acceptance and the essence of the scrutiny of the great scholars is that Allah, Mighty and Majestic, Blessed and Exalted, sent down the Great Quran and has made us worship Him through both its words and its meanings. It is an obligation upon every Muslim to recite it exactly as it was sent down. By changing the sound of a letter, in countless places, words become meaningless or the meaning changes significantly, so much so that, God forbid, a difference between disbelief (kufr) and Islam is created. The meanings that existed with the correct sound were faith, and those produced by changing it, if believed in, are explicit disbelief; then how can that be the word of Allah, God forbid? Nowadays, the common people here, in fact many, rather most of the elite, have made negligence and indifference their habit in this grave matter. This humble one has with his own ears heard Maulvi-sahibs, preachers, teachers, and muftis reciting 'Qul huwallahu ahad' (Say: He is Allah, One) as 'ahad' (with a soft 'h'), whereas Allah never said 'ahad' (that way), nor did the Trustee of Revelation (Gabriel), peace and blessings be upon him, deliver it as 'ahad', nor did the Master of the Quran, peace and blessings of Allah be upon him, recite it as 'ahad'. Then how did this become the Quran? The meaning of 'ahad' is One, the Alone.

अक्षरों का स्पष्ट उच्चारण न हो पाने में वे विद्वान और ये अज्ञानी बराबर हैं, लेकिन अंतर यह है कि हमारे आम लोगों ने, अल्लाह न करे, अल्लाह के कलाम में बदलाव या अल्लाह की ओर से उतारे गए अक्षरों को बदलने का इरादा नहीं किया। वे यही चाहते हैं कि जो अक्षर यहाँ अल्लाह अज़्ज़वजल ने उतारा है, उसी को पढ़ें, उसी का इरादा करें, उसी की नीयत रखें और अपने गुमान में यही समझें कि यह अक्षर जहाँ तक हमसे अदा हो सकता है, इसकी यही आवाज़ है। लेकिन वहाबी विद्वानों को कहाँ इतनी हिम्मत कि वे लाचारी और अज्ञानता के ताने सहें, कठिनाइयों और मुश्किलों की कशमकश में रहें; वहां तो मज़हब की बुनियाद ही आराम-परस्ती पर है। तरावीह की आठ, वित्र की एक रकात में संयोग से उन्हें दूसरों के कौल मिल गए, वरना असल मक़सद तो नफ्स का आराम ही है। सर्दी लगती है तो तयम्मुम कर लो, संभोग में स्खलन न हो तो ग़ुस्ल न करो, साल-दो साल औरत की ख़बर न आए तो औरत का निकाह कर दो, एक ही मजलिस में तीन तलाक़ों को बिना हलाला के समझो, छह चीज़ों के अलावा सब में सूद (ब्याज) जायज़, ख़ून और मुर्दार आदि दो-एक चीज़ें नापाक, बाक़ी तमाम चीज़ें यहाँ तक कि शराब भी पाक। निडर होकर ज़रूरत के नाम पर व्यभिचार से लेकर अपनी रज़ाई बेटी, भतीजी, सौतेली खाला सब हलाल, बल्कि सगी फूफी के लिए भी यही ख्याल।

आराम-परस्ती की इंतहा यह कि वज़ू में सिर से पगड़ी उतारना मुश्किल है तो ऊपर से ही मसह कर लो। अल्लाह सुब्हानहू व तआला ने 'वम्सहू बिरुऊसिकुम' फ़रमाया, तुम 'बेअमामतिकुम' समझो। वह तो वह मुश्किल यह है कि हाथों के लिए धोने का हुक्म आया और उनके धोने से आस्तीन धोना और भी मुश्किल कि कलाई भी भीगे और कपड़ा भी तर हो, वरना उनके लिए 'अयदीकुम' की जगह 'आस्तीनीकुम' बना लेना क्या मुश्किल था। यहाँ एक गैर-मुक़ल्लिद साहब का कौल था: 'साथियो, तुमने तहज्जुद में अपने ऊपर कठिनाइयाँ डाल ली हैं; हमारी तो सर्दियों में जब आँख खुली, तकिए पर हाथ मारकर चेहरे पर फेर लिए और चारपाई पर बैठे-बैठे दो रकातें पढ़ लीं और लिहाफ़ में दुबक रहे।' मुसलमानों ने करीमा आयत 'लम तजीदू माअन' के मायने समझे, यानी जब चारपाई पर रखा हुआ घड़ा न मिले तो तकिए पर हाथ मार लो, चाहे नाम को भी मिट्टी या धूल न हो, न तकिए वाले को कोई बीमारी या तकलीफ हो, 'व ला हौला व ला कुव्वता इल्ला बिल्लाहिल वाहिदिल कहार'। इस प्रकार, जहाँ वह जानबूझकर किया गया बदलाव है और यह लाचारी या अज्ञानता या ग़लती के कारण अशुद्ध पढ़ना है, तो वही अस्वीकार करने के अधिक योग्य है, और आम लोगों का उनके विद्वानों से अधिक जानकार होना स्पष्ट है। असल बात इतनी है, आगे अति और कमी से बचना ज़रूरी है।

यह पूछे गए मामलों का जवाब है, और इस विशेष मसले में स्वीकार करने योग्य शोध की सच्चाई और बड़े विद्वानों की छानबीन का सार यह है कि अल्लाह अज़्ज़वजल व तबारक व तआला ने महान क़ुरआन उतारा और हमें अल्हम्दुलिल्लाह इसके शब्द और अर्थ दोनों का पाबंद बनाया। हर मुसलमान पर यह हक है कि वह इसे वैसा ही अदा करे जैसा यह उतरा है। अक्षर की आवाज़ बदलने से अनगिनत जगहों पर शब्द निरर्थक हो जाते हैं या अर्थ कुछ से कुछ हो जाता है, यहाँ तक कि अल्लाह न करे कुफ्र और इस्लाम का फर्क पैदा हो जाता है। सही आवाज़ से जो अर्थ थे वे ईमान थे और बदलने पर जो पैदा हुए उनका मानना स्पष्ट कुफ्र है, तो अल्लाह न करे वह अल्लाह का कलाम कैसे हुआ? आजकल यहाँ आम लोग ही नहीं, बल्कि बहुत से, बल्कि अधिकांश खास लोगों ने इस गंभीर मामले में लापरवाही और बेरुखी को अपना तरीका बना लिया है। इस फ़क़ीर ने अपने कानों से मौलवी साहबों, उपदेशकों, शिक्षकों और मुफ्ती साहबों को विशेष सभाओं में खुलेआम पढ़ते सुना है 'कुल हुवल्लाहु अहद' को 'अहद' (गलत उच्चारण), जबकि अल्लाह ने कभी 'अहद' नहीं फ़रमाया, न ही वही के अमीन (अलैहिस्सलाम) ने 'अहद' पहुँचाया, न ही क़ुरआन के मालिक (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने 'अहद' पढ़ाया। फिर यह क़ुरआन कैसे हुआ? 'अहद' के मायने हैं एक, अकेला।

पृष्ठ 317 / 736

حروف ہو نا تو ظاہر ادا نہ ہو سکنے میں وہ علما اور یہ جھلا برابر مگر فرق یہ ہے کہ ہمارے عوام نے معاذ اللہ کلام اللہ و تحریف حرف منزل من اللہ کا قصد نہ کیا، وہ یہی چاہتے ہیں کہ جو حرف یہاں اللہ عزوجل نے اتارا ہے اسی کو پڑھیں اسی کا ارادہ کرتے اسی کی نیت رکھتے اور اپنے زعم میں یہی سمجھتے کہ یہ حرف جہاں تک ہم سے ادا ہو سکتا ہے اس کی یہی آواز ہے۔ مگر علمائے وہابیہ کو کہاں تاب کہ عجز و جہل کے طعنے سمجھیں، دقتوں دشواریوں کی کشاکش میں رہیں وہاں تو مذہب کی بنا ہی آرام پروری ہے۔ تراویح کی آٹھ، وتر کی ایک رکعت میں قسمت سے انھیں اوروں کے قول مل گئے ورنہ اصل مقصود ہی آرام نفس ہے۔ جاڑا لگتا ہے تیمم کر لو، جماع میں انزال نہ ہو غسل نہ کرو، سال دو سال عورت کی خبر نہ آئے عورت کا نکاح کر دو، تین طلاقیں ایک جلسہ میں کہیں بے حلالہ سمجھو، چھ چیز کے سوا سب میں سود روا، خون و مردار وغیرہ دو ایک چیزیں ناپاک، باقی تمام اشیاء حتی کہ شراب بھی طاہر۔ بے باک رفع ضرورت کو زنا سے خود اپنی بیٹی رضاعی، بھتیجی، سوتیلی خالہ سب حلال بلکہ سگی پھوپھی کے لئے بھی یہی خیال۔

انتہائے آرام طلبی یہ کہ وضو میں سر سے عمامہ دشوار اوپر ہی سے مسح کر لو، مولی سبحنہ تعالی نے 'وَامْسَحُوْا بِرُءُوْسِكُمْ' فرمایا تم 'بعمامتکم' سمجھو، وہ تو وہ مشکل یہ ہے کہ ہاتھوں کے لئے حکم غسل آیا اور ان کے دھونے سے آستین دھونا دشوار تر کہ پہنچے بھی بھیگے اور کپڑا بھی تر، ورنہ انہیں 'ایڈیکم' کی جگہ آستینکم بنالینا کیا دشوار تھا، یہاں ایک غیر مقلد صاحب کا قول تھا صاحبو تم نے تہجد میں آپ دشواریاں لگالی ہیں ہماری تو جاڑے میں جب آنکھ کھلی تکیے پر ہاتھ مار کر منہ پر پھیر لئے اور چارپائی پر بیٹھے بیٹھے دو رکعتیں پڑھیں اور لحاف میں دبک

رہے۔ مسلمانوں کریمہ 'لم تجد واماء' کے معنی سمجھے یعنی جب چارپائی پر رکھا ہوا گھڑا نہ ملے تو تکیہ پر ہاتھ مار لو اگر چہ نام کو مٹی نہ غبار، نہ تکیہ دار کو مرض نہ آزار، ولا حول ولا قوۃ الا باللہ الواحد القہار۔ یوں بھی جبکہ وہ قصدی تحریف ہے اور یہ عجز یا جہل یا خطا کی تصحیف، تو وہی احق بالا نکار ہے اور عوام کا ان کے علماء سے اعلم ہونا واضح آشکار، اصل اس قدر ہے، آگے افراط و تفریط واجب الحذر۔

یہ جواب امور مسئولہ ہے اور اس مسئلہ خاص میں حق تحقیق حقیق بالقبول و عطر تنقیح اکابر فحول یہ ہے کہ مولی عزوجل و تبارک و تعالی نے قرآن عظیم اتارا اور ہمیں بحمد اللہ اس کے نظم و معنی دونوں سے متعبد کیا ہر مسلمان پر حق ہے کہ اسے جیسا اترا ویسا ہی ادا کرے، حرف کی آواز بدلنے میں بیشمار جگہ الفاظ مہمل رہتے یا معنی کچھ سے کچھ ہو جاتے ہیں یہاں تک کہ معاذ اللہ کفر و اسلام کا فرق ہو جاتا، آواز صحیح سے جو معنی تھے ایمان تھے اور بدلنے پر جو پیدا ہوئے ان کا اعتقاد صریح کفر تو معاذ اللہ وہ کلام اللہ کیونکر ہوا، آجکل یہاں عوام بلکہ کثیر بلکہ اکثر خواص نے اس امر خطیر میں مداہنت و بے پروائی اپنا شعار کرلی فقیر نے بگوش خود مولوی صاحبوں، اصحاب وعظ و درس وفتوی کو خاص پنچایت میں برملا پڑھتے سنا 'قل ھو اللہ احد' حالانکہ ہرگز اللہ نے احد فرمایا نہ امین وحی علیہ الصلوۃ والتسلیم نے احد پہنچایا نہ صاحب قرآن صلی اللہ تعالی علیہ وسلم نے احد پڑھایا پھر یہ قرآن کیونکر ہوا، احد کے معنی ایک اکیلا۔

Vol. 6 Fatawa Razawiyya

Unique and free from partners and peers. The meaning of 'Ahad' is (God forbid) cowardly and weak. In al-Qamus, 'al-Ahid' is defined as cowardly, and Taj al-Arus adds 'weak'. (1) (In al-Qamus it is 'al-Ahid' (cowardly); in Taj al-Arus, the addition of 'weak' is made. - Compiler)

"Behold the difference between the paths, from where to where!" (There is a vast difference between them; how can they be compared?)

Indeed, such a degree of Tajwid (correct pronunciation) that each letter is distinct and one avoids alteration and confusion is mandatory for every Muslim. Paying attention to the correct points of articulation (makharij) and the protection of letter sounds is an absolute religious duty. The ruling (fatwa) of the later scholars is not (God forbid) a license for negligence, to treat the Quran like a game and recite whatever one pleases contrary to what Allah has revealed. Despite having the ability to learn, not learning and considering this important matter trivial, remaining persistent in incorrect recitation of the Quran—who would declare this permissible? You have heard an example of this carelessness: to believe Allah is 'Ahad' (The One) is the essence of Islam, while (God forbid) saying 'Ahid' is an explicit insult. Granted you did not intend to insult, but what then? Have you escaped disbelief? Does the heinousness of the speech disappear? Suppose you intend to praise, but the words uttered are explicit condemnation. Have the later scholars declared this lawful? Never, by Allah, God forbid! It is mentioned in a Sahih Hadith that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said:

[Arabic]: When any of you feels drowsy while praying, let him lie down until sleep goes away from him. For if one of you prays while drowsy, he does not know, perhaps he intends to seek forgiveness but instead curses himself. (2) Narrated by Malik, Bukhari, Muslim, Abu Dawood, Tirmidhi, and Ibn Majah from the Mother of the Believers Siddiqa, may Allah be pleased with her.

[Urdu/Translation]: When any of you feels drowsy during prayer, he should sleep until the drowsiness goes away, because if he recites while drowsy, who knows, he might intend to pray for forgiveness but instead a curse for himself comes out. This is narrated by Imam Malik, Bukhari, Muslim, Abu Dawood, Tirmidhi, and Ibn Majah from Hazrat Mother of the Believers Siddiqa (Aisha), may Allah be pleased with her.

When prayer was forbidden while drowsy because of the possibility that a bad prayer might be uttered against oneself even if the intention was for prayer, then how can it be tolerated to repeatedly utter words of severe insolence against Allah Almighty while awake, not just possibly but from experience, even if the intention is praise? It is stated in the noble Al-Itqan:

Among the important matters is the Tajwid of the Quran, which is giving... | Tajwid of the Quran is among the important matters; it is giving the letters [their rights].

1. Taj al-Arus Sharh al-Qamus, Section 'Ha' from the chapter 'Dal', published by Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 12/524.
2. Muwatta Imam Malik, 'What has come regarding the night prayer', published by Mir Muhammad Kutub Khana, Karachi, p. 100; Sahih al-Bukhari, 'Chapter of Wudu from sleep', published by Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/44.

साझेदार और समकक्ष से मुक्त, अद्वितीय और 'अहद' का अर्थ (ईश्वर न करे) डरपोक और कमज़ोर है। अल-क़ामूस में 'अल-अहिद' का अर्थ डरपोक है, और ताज अल-अरूस में 'कमज़ोर' शब्द जोड़ा गया है। (1) (क़ामूस में अल-अहिद डरपोक है, ताज अल-अरूस में कमज़ोर का इज़ाफ़ा किया गया है।)

"देखें इन रास्तों में कितना अंतर है, कहाँ से कहाँ तक!" (इनमें बड़ा अंतर है, यह कहाँ और वह कहाँ)

निश्चित रूप से, तजवीद (सही उच्चारण) का वह स्तर जिससे प्रत्येक अक्षर विशिष्ट हो जाए और बदलाव व भ्रम से बचा जा सके हर मुसलमान पर अनिवार्य है। अक्षरों के निकलने के स्थान (मख़ारिज) की शुद्धि और अक्षरों की सुरक्षा का ध्यान रखना एक अनिवार्य धार्मिक कर्तव्य है। बाद के विद्वानों का फतवा (ईश्वर न करे) लापरवाही का परवाना नहीं है कि कुरान को खेल बना लिया जाए और अल्लाह द्वारा उतारे गए के विरुद्ध जो जी में आए पढ़ लिया जाए। सीखने की शक्ति होने के बावजूद न सीखना और इस महत्वपूर्ण मामले को हल्का समझना, कुरान को गलत पढ़ने पर अड़े रहना—इसे कौन जायज़ कहेगा? आपने इस लापरवाही का एक उदाहरण सुना है: अल्लाह को 'अहद' मानना इस्लाम का सार है, जबकि (ईश्वर न करे) 'अहिद' कहना स्पष्ट अपमान है। माना कि आपका इरादा अपमान का नहीं है, फिर भी इससे क्या हुआ? क्या आप कुफ़्र (अधर्म) से बच गए? क्या बात की घिनौनी प्रकृति समाप्त हो जाएगी? मान लीजिए आप प्रशंसा का इरादा करते हैं लेकिन शब्द ऐसे निकलते हैं जो स्पष्ट निंदा हों। क्या बाद के विद्वानों ने इसे हलाल बताया है? कदापि नहीं, अल्लाह की कसम, ईश्वर न करे! एक सही हदीस में है कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया:

[अरबी]: जब तुममें से किसी को नमाज़ में उंघाई आए तो उसे सो जाना चाहिए यहाँ तक कि उसकी नींद चली जाए। क्योंकि जब तुममें से कोई उंघते हुए नमाज़ पढ़ता है, तो उसे नहीं पता होता, शायद वह क्षमा माँगना चाहे लेकिन स्वयं को कोस बैठे। (2) इसे मालिक, बुखारी, मुस्लिम, अबू दाऊद, तिर्मिज़ी और इब्न माजाह ने मोमिनों की माँ सिद्दीका रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत किया है।

[अनुवाद]: जब तुममें से किसी को नमाज़ में उंघाई आए तो सो जाए यहाँ तक कि नींद चली जाए, क्योंकि उंघते हुए पढ़ेगा तो क्या पता शायद अपने लिए माफ़ी की दुआ करने चले और दुआ के

बजाय बददुआ निकल जाए। इसे इमाम मालिक, बुखारी, मुस्लिम, अबू दाऊद, तिर्मिज़ी और इब्न माजाह ने हज़रत उम्मुल मोमिनीन सिद्दीका रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत किया है।

जब उंघते हुए नमाज़ से मना किया गया क्योंकि संभावना है कि शायद अपने लिए बददुआ निकल जाए, भले ही इरादा दुआ का हो, तो जागते हुए खुद अल्लाह अज़्ज़वजल की शान में अत्यंत गुस्ताखी का शब्द न केवल संभावना के तौर पर बल्कि अनुभव के आधार पर बार-बार मुँह से निकालना, कैसे सहन किया जा सकता है, भले ही इरादा प्रशंसा का हो? अल-इतक़ान शरीफ़ में है:

महत्वपूर्ण कार्यों में से कुरान की तजवीद है जो कि अक्षरों को... | कुरान की तजवीद महत्वपूर्ण कार्यों में से है, वह अक्षरों को [उनका अधिकार] देना है।

1. ताज अल-अरूस शरह अल-क़ामूस, अनुभाग 'हा', अध्याय 'दाल', मुद्रित दार इहया अल-तुरात अल-अरबी, बेरूत, 12/524।
2. मुवट्टा इमाम मालिक, 'रात की नमाज़ के बारे में जो आया है', मुद्रित मीर मोहम्मद कुतुब खाना, कराची, पृ. 100; सहीह अल-बुखारी, 'नींद से वज़ू का अध्याय', मुद्रित क़दीमी कुतुब खाना, कराची, 1/44।

جلد ششم فتاوی رضویه

شریک و نظیر سے پاک نرالا اور احد کے معنی معاذاللہ بزدل کمزور فی القاموس الاھد الجبان زادفی تاج العروس الضعیف 1 (قاموس میں ہے الاھد بزدل، تاج العروس میں کمزور کا اضافہ کیا ہے ت)

بین تفاوت رہ از کجاست بکجا (ان میں بڑا فرق ہے یہ کہاں اور وہ کہاں)

لا جرم اس قدر تجوید کہ ہر حرف سے ممتاز اور تبدیل و تلبیس سے احتراز ہو ہر مسلمان پر لازم ہے تصحیح مخارج و وقایۂ حروف کا اہتمام فرض متحتم ، علمائے متأخرین کا فتوٰی معاذاللہ پروانہ بے پروائی نہیں کہ قرآن کو کھیل بنائے اور خلاف ما انزل اللہ جو جی میں آئے پڑھ لینا مناسب، باوصف قدرت تعلم، تعلم نہ کرنا اور اس امر اہم کو ہلکا سمجھنا غلط خوانی قرآن پر جے رہنا کون جائز کہے گا، اس سہل انگاری کی ایک نظیر سن چکے، اللہ کو احد ماننا عین اسلام اور معاذاللہ اھد کہنا صریح دشنام، مانا کہ تمھیں قصد دشنام نہیں پھر اس سے کیا ہوا کفر سے بچ گئے بات کی شناعت کیا جاتی رہے گی، تعریف کیجئے اور اسی کا قصد ہو مگر لفظ وہ نکلیں جو صریح ذم ہوں کیا علمائے متأخرین اسے حلال بتا گئے ہیں؟ کلا ، واللہ ، حاشاللہ صحیح حدیث میں ہے رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

اذا نعس احدکم وھو یصلی فلیر قد حتی یذھب عنه النوم فان احدکم اذا صلی وھو ناعس لا یدری لعله یذھب لیستغفر فیسب نفسه 2 رواہ مالك و البخاری ومسلم وابو داؤد والترمذی وابن ماجة عن ام المؤمنین الصدیقة رضي اللہ تعالی عنھا - | جب تم میں کسی کو نماز میں اونگھ آئے تو سو جائے یہاں تک کہ نیند چلی جائے کہ اونگھتے میں پڑھے گا تو کیا معلوم شاید اپنے لئے دعائے مغفرت

کرنے چلے اور بجائے دعا بددعا نکلے اسے امام مالک، بخاری، مسلم، ابوداؤد، ترمذی اور ابن ماجہ نے حضرت ام المومنین صدیقہ رضی اللہ تعالیٰ عنہا سے روایت کیا ہے۔

جب اونگھتے میں نماز سے منع کیا کہ احتمال ہے شاید اپنے لئے دعائے بد نکل جائے اگر چہ قصدِ دعا ہے تو خود جاگتے میں خود اللہ عزوجل کی شان میں سخت گستاخی کا کلمہ نہ فقط احتمالاً بلکہ تجربۃً بارہا منہ سے نکالنا کیونکہ گوارا ہوسکے اگر چہ قصدِ ثنا ہے۔ اتقان شریف میں ہے:

من المهمات تجويد القرآن وهو اعطاء | تجوید قرآن اہم امور میں سے ہے وہ حروف کو

1 تاج العروس شرح قاموس فصل الهاء من باب الدال مطبوعہ دار احیاء التراث العربی بیروت ۵۲۴/۱۲ 2 موطا الامام مالک ماجاء فی صلوۃ اللیل مطبوعہ میر محمد کتب خانہ کراچی ص ۱۰۰، صحیح البخاری باب الوضوء من النوم مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/۴۴

Fatawa Rizvia, Volume Six

[Table Section] Arabic Text: Al-Huroof huquqaha wa radd al-harf ila makhrajihi wa aslihi... wa la shakku annal-ummata kama hum muta'abbiduna bi-fahmi ma'anil-qur'ani wa iqamati hududihi hum muta'abbiduna bi-tashihi alfazihi wa iqamati hurufihi 'alas-sifatil-mutalaqqati min a'immatil-qira'ati al-muttasilati bil-hadratin-nabawiyyati wa qad 'addal-ulama'ul-qira'ata bi-ghayri tajweedin lahnan. Mulakkhasan.

Urdu Translation/Explanation: To give them their rights and return each letter to its point of articulation and origin; undoubtedly, the Muslim Ummah is bound to understand the meanings of the Quran and implement the Quranic limits, just as it is bound to correct the words of the Quran and pronounce them with the same quality and method as the Imams of recitation did, whose chain of narration is connected to the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him). And scholars have termed reading the Quran without Tajweed as 'Lahn'. Summary (T).

[Main Text Body] Look at how explicit the statement is that noble scholars consider recitation without Tajweed as Lahn. And in Ahsan al-Fatawa and Fatawa Bazzaziyah, it is stated: 'Indeed, Lahn is forbidden without dispute.' Lahn is forbidden according to everyone. Therefore, the leaders of religion explicitly state that if a person mispronounces a letter, it is obligatory for him to strive for its correction and learning. If he does not strive, they will not consider him excused and the prayer will not be valid. In fact, the majority of scholars have not set any limit for this effort and have commanded that he should always struggle day and night throughout his life; he will never be excused for abandoning it. This is the saying of Imam Ibrahim ibn Yusuf and Imam Hussain bin Mutay. In Al-Muhit, this was called Mukhtar al-Fatwa. Khania, Khulasah, Fath al-Qadeer, Maraqi al-Falah, Fatawa al-Hujjah, Jami al-Rumuz, Durr al-Mukhtar, Radd al-Muhtar, etc., have also affirmed this. Allama Ibn al-Shuhnah stated this as 'Muharrar'. Allama Ibrahim Halabi in Ghuniyah termed it 'Mu'tamad'. Although Imam Burhan Mahmood in Dhakhirah termed it difficult, Imam ibn al-Hajj relied upon it. Allama Tahtawi in Hashiyah Maraqi al-Falah leaned towards this, as we have explained all of this in our Fatawa (As all this has been described in our Fatawas. T). So how is it permissible that effort and striving are set aside and one does not even intend for the original letter revealed in the Quran, but rather intentionally leaves it abandoned and forgotten and replaces it with another letter from one's own side? This is something that neither Sharia nor religion permits, and refuge is sought with Allah, Lord of the worlds (Sharia and religion absolutely do not allow it; refuge of

Allah Almighty, who is the sustainer of all the worlds. T). The humble servant says—may Allah Almighty forgive him—after the throne of research has been established, that the Quran is both words and meanings collectively, rather the words are indicative...

[Footnotes] 1 Al-Itqan fi Ulum al-Quran, second chapter on important matters, Tajweed al-Quran, published by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/100. 2 Fatawa Hindiyya, referencing Bazzaziyah, fourth chapter on prayer, tashih and recitation of the Quran, etc., published by Noorani Kutub Khana Peshawar, 5/31.

फ़तावा रिज़विया, छठा खंड

[तालिका अनुभाग] अरबी पाठ: अल-हुरूफ हुकूकहा वा रद अल-हर्फ इला मखरजिही वा अश्लिही... वा ला शक्का अन्नल-उम्मता कमा हुम मुतअब्बिदूना बि-फ़हमी मआनील-कुरआनी वा इकामती हुदूदिही हुम मुतअब्बिदूना बि-तस्हीही अल्फ़ाज़िही वा इकामती हुरूफ़िही 'अला-सिफ़ातिल-मुतलक्काती मिन अइम्मतिल-क़िरा'अति अल-मुत्तसिलती बिल-हदरतिन-नबविय्यती वा क़द 'अद्दल-उलमाउल-क़िरा'अता बि-ग़ैरी तजवीदिन लहनन। मुलख्खसन।

उर्दू अनुवाद/व्याख्या: उनके अधिकार देना और हर अक्षर को उसके उच्चारण स्थान और मूल की ओर लौटाना है; निस्संदेह, मुस्लिम उम्मत जिस प्रकार कुरान के अर्थों को समझने और कुरानी सीमाओं को लागू करने के लिए बाध्य है, उसी प्रकार वह कुरान के शब्दों को सही करने और उन्हें उसी तरीके और विशेषता के साथ अदा करने के लिए भी बाध्य है जैसा कि क़िरात के इमामों ने किया, जिनकी सनद (परंपरा) का सिलसिला पैगंबर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) तक जुड़ा हुआ है। और विद्वानों ने बिना तजवीद के कुरान पढ़ने को 'लहन' (गलती) करार दिया है। सारांश (त)।

[मुख्य पाठ] देखें कितनी स्पष्ट व्याख्या है कि विद्वान बिना तजवीद के क़िरात को 'लहन' बताते हैं। और 'अहसनुल फ़तावा' और 'फ़तावा बज़्ज़ाज़िया' में कहा गया है: 'निस्संदेह लहन बिना किसी विवाद के हराम है।' लहन सभी के अनुसार हराम है। इसलिए, धर्म के इमाम स्पष्ट रूप से कहते हैं कि यदि किसी व्यक्ति से कोई अक्षर गलत उच्चारित होता है, तो उसे सुधारने और सीखने का प्रयास करना उस पर वाजिब (अनिवार्य) है। यदि वह प्रयास नहीं करेगा, तो उसे क्षमा योग्य नहीं माना जाएगा और नमाज़ नहीं होगी। बल्कि अधिकांश विद्वानों ने इस प्रयास की कोई सीमा निर्धारित नहीं की है और आदेश दिया है कि वह जीवन भर रात-दिन निरंतर प्रयास करता रहे; इसे छोड़ने में उसे कभी क्षमा नहीं किया जाएगा। यही इमाम इब्राहिम इब्न यूसुफ और इमाम हुसैन बिन मुती का कथन है। 'अल-मुहीत' में इसी को 'मुख्तारुल फ़तवा' कहा गया है। 'खानिया', 'खुलासा', 'फ़तह अल-क़दीर', 'मराक़िल फ़लाह', 'फ़तावा अल-हुज्जाह', 'जामे अर-रुमूज़', 'दुर्रे मुख्तार', 'रद्दुल मुह्तार' आदि में इसी पर जोर दिया गया है। अल्लामा इब्न अल-शुहना ने इसे 'मुहर्रर' बताया है। अल्लामा इब्राहिम हलबी ने 'गुनिया' में इसी पर भरोसा किया। हालांकि इमाम बुरहान महमूद ने 'ज़खीरा' में इसे कठिन बताया, लेकिन इमाम इब्न अल-हाज ने इसी पर भरोसा किया। अल्लामा तहतावी ने 'हाशिया मराक़िल फ़लाह' में इसी ओर झुकाव दिखाया है, जैसा कि हमने अपने फ़तावा में विस्तार से बताया है (जैसा कि यह सब हमारे फ़तावा में वर्णित है। त)। तो यह कैसे जायज़ हो सकता है कि प्रयास और कोशिश

को ताक पर रख दिया जाए और कुरान में नाजिल (अवतरित) हुए मूल अक्षर का इरादा ही न किया जाए, बल्कि जानबूझकर उसे छोड़ दिया जाए और उसकी जगह अपनी तरफ से दूसरा अक्षर रख दिया जाए? यह ऐसी चीज़ है जिसकी शरीयत और दीन इजाज़त नहीं देते। और अल्लाह रब्बुल आलमीन की पनाह (शरीयत और दीन इसकी हरगिज़ इजाज़त नहीं देते; अल्लाह तआला की पनाह जो तमाम जहानों का पालने वाला है। त)। फकीर कहता है - अल्लाह तआला उसे क्षमा करे - कि शोध के बाद यह साबित हो चुका है कि कुरान शब्द और अर्थ दोनों का नाम है, बल्कि शब्द ही अर्थ के सूचक हैं...

[फुटनोट] 1 अल-इतकान फ़ी उलूम अल-कुरान, महत्वपूर्ण मामलों पर दूसरा अध्याय, तजवीद अल-कुरान, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र द्वारा प्रकाशित 1/100। 2 फ़तावा हिंदिया, बज़्ज़ाज़िया के संदर्भ में, नमाज़ पर चौथा अध्याय, तस्हीह और कुरान की क़िरात आदि, नूरानी कुतुब खाना पेशावर द्वारा प्रकाशित 5/31।

पृष्ठ 319/736

فتاوی رضویہ، جلد ششم

[جدول کا حصہ] عربی متن: الحروف حقوقہا ورد الحرف الی مخرجہ واصلہ۔۔۔ ولا شك ان الامة كما هم متعبدون بفہم معانی القرآن واقامة حدوده هم متعبدون بتصحیح الفاظہ واقامة حروفہ علی الصفة المتلقاة من ائمة القراءة المتصلة بالحضرة النبویة وقد عد العلماء القراءة بغیر تجوید لحناً۔ ملخصاً۔

اردو ترجمہ و تشریح: انکے حقوق دینا اور ہر حرف کو اسکے مخرج اور اصل کی طرف لوٹانا ہے، بلا شبہ امت مسلمہ جس طرح معانی قرآن کے فہم اور حدودِ قرآنی کے نفاذ میں پابند ہے اسی طرح وہ قرآن کے الفاظ کی تصحیح اور انہیں اسی طریقہ وصف پر ادا کرنے کی بھی پابند ہے جس طرح ان کو قرآت کے ائمہ نے ادا کیا جس کا سلسلہ سند نبی اکرم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم تک متصل ہے اور علماء نے بغیر تجوید کے قرآن پڑھنے کو لحن قرار دیا ہے ملخصاً (ت)

[عبارت] دیکھو کیسی تصریح ہے کہ علمائے کرام قرات بے تجوید کو لحن بتاتے ہیں اور احسن الفتاویٰ فتاویٰ بزازیہ میں فرمایا: ان اللحن حرام بلا خلاف لحن سب کے نزدیک حرام ہے۔ ولہٰذا ائمہ دین تصریح فرماتے ہیں کہ آدمی سے کوئی حرف غلط ادا ہوتا ہے تو اس کی تصحیح و تعلم میں اُس پر کوشش واجب، اگر کوشش نہ کرے گا معذور نہ رکھیں گے اور نماز نہ ہوگی، بلکہ جمہور علماء نے اس سعی کی کوئی حد مقرر نہ کی اور حکم دیا کہ تاعمر شبانہ روز ہمیشہ جہد کئے جائے کبھی اس کے ترک میں معذور نہ ہوگا ، یہی قول امام ابراہیم ابن یوسف و امام حسین بن مطیع کا ہے محیط میں اسی کو مختار الفتویٰ فرمایا، خانیہ و خلاصہ وفتح القدیر و مراقی الفلاح وفتاویٰ الحجۃ و جامع الرموز و در مختار و ردالمحتار وغیرہا میں اسی پر جزم کیا، علامہ ابن الشحنہ نے اسی کو محرر بتایا، علامہ ابراہیم حلبی نے غنیہ میں اسی کو معتمد فرمایا، اگرچہ امام برہان محمود نے ذخیرہ میں اس کو مشکل بتایا، امام بن الحاج نے اسی پر تعویل کی ، علامہ طحطاوی نے حاشیہ

مراقی الفلاح میں اسی طرف میل کیا کما بینا کل ذلك في فتاؤنا (جیسا کہ یہ سارے کا سارا ہمارے فتاویٰ میں بیان کیا گیا ہے۔ت) تو کیونکر جائز کہ جہد و سعی بالائے طاق سرے سے حرف منزل من القرآن کا قصد ہی نہ کریں بلکہ عمدا اسے متروک و مہجور اور اپنی طرف سے دوسرا حرف اس کی جگہ قائم کر دیں ھذا مما لایبیحہ شرع ولا دین والعیاذ باللہ رب العالمین (شریعت اور دین اس کی ہرگز اجازت نہیں دیتے اللہ تعالیٰ کی پناہ جو تمام جہانوں کا پالنے والا ہے۔ت) فقیر کہتا ہے غفر اللہ تعالی لہ بعد اس کے عرش تحقیق مستقر ہو چکا کہ قرآن نظم و معنی جمیعا بلکہ نظم دال

[حواشی] 1 الاتقان فی علوم القرآن الفصل الثانی من المھمات تجوید القرآن مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱ / ۱۰۰ 2 فتاوی ہندیہ بحوالہ بزازیہ الباب الرابع فی الصلوۃ والتسجیح و قراءۃ القرآن الخ مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور ۵ / ۳۱

Volume Six - Fatawa Rizvia

...is the name given to the meaning, and the order of these letters is well-known and mutually distinct. Changing a part necessitates changing the whole; for that which is composed of distinct parts is different from that which is composed of other distinct parts (A set of distinct letters is different from another set of distinct letters. - T). I do not know what difference can be considered between this intentional change and the distortion (tahrif) of the Word of Allah. This is the intent behind the ruling of Imam Fazli, Imam Mahmood, Allama Qari, and others, that whoever intentionally replaces 'daad' (ض) with 'zaa' (ظ) in the Holy Quran is a disbeliever.

[Table Header] I say: There is no need for an exception in "And he is not a withholder of the unseen" (81:24), for here, it is not a matter of placing 'zaa' in the place of 'daad'. This is because it is not exclusively the place of 'daad', but rather the place of both of them interchangeably, as the Quranic recitation is established with both letters. Thus, it is like 'siraat' and 'siraat' (with 'saad' and 'seen'), 'bastatan' and 'bastatan' (with 'seen' and 'saad'), 'yabsutu' and 'yabsutu' (with 'seen' and 'saad'), 'musaitir' and 'musaitir' and similar examples. This is unlike 'maghdoob' and 'maghzoob', and unlike 'sijjeel' and 'sajjeel', for that would be an alteration.

I say: My opinion is that there is no need to make an exception for "wa ma huwa 'alal ghaibi bidhaneen" because it is not necessary here to put 'zaa' in the place of 'daad'. This is because it is not just the place of 'daad', but rather the place of both, one after another, since the Quranic recitation is established with both letters. Just like 'siraat' and 'siraat', 'bastatan' and 'basatatan', 'yabsutu' and 'yabsutu', 'musaitir' and 'musaitir' and other similar words. Unlike 'maghdoob' and 'maghzoob', and unlike 'sijjeel' and 'sajjeel' because here it is an alteration. (T)

Therefore, it is definitely necessary to intend the specific letter revealed by Allah in every letter and to utter it from its correct point of articulation (makhraj). The makhraj of 'daad' (ض) is the right or left edge of the tongue such that most of the side of the tongue, from the throat to near the tip, is closely adjacent to the side of the upper molars that are opposite the middle of the tongue, extending towards the premolars until it reaches the beginning of the makhraj of 'laam' (ل). The side of the tongue stays connected to the molars, while the rest of the tongue moves upwards towards the palate during this action. The teeth or the tip of the tongue have no part in it. It is among those strong letters that demand strong reliance on their makhraj during articulation. Whatever breath comes out of the chest in their sound, they color

it all in their quality so that no part of the breath seems to move separately with them. Until their sound ends, the breath remains stopped. Such letters are called 'Majhoorah' (vocalized), and their opposite are 'Mahmoosah' (aspirated), the collective phrase for which is 'Fahath-thu Shakhsun Sakat' (فحثه شخص سكت) or 'Satash-hathuka Khas-fuhu' (ستشحثك خصفه). For example, if you say the letter 'tha' (ث) repeatedly as 'th-th', a silent part of the sound will be perceived separately along with the 'th'. The breath did not stop. In 'Majhoorah', it is not like this; rather all the breath that...

खंड छठा - फतावा रिज़विया

...अर्थ का नाम है और इन अक्षरों का क्रम प्रसिद्ध और परस्पर भिन्न है, और एक भाग का परिवर्तन संपूर्ण के परिवर्तन को आवश्यक बनाता है। क्योंकि जो भिन्न भागों से बना है, वह दूसरे भिन्न भागों से बने समूह से भिन्न होता है (भिन्न अक्षरों का एक समूह दूसरे भिन्न अक्षरों के समूह से भिन्न होता है - त)। मैं नहीं जानता कि इस जानबूझकर किए गए परिवर्तन और अल्लाह के कलाम (वाणी) के विरूपण (तहरीफ़) में क्या अंतर माना जाएगा। इमाम फ़ज़ली, इमाम महमूद, अल्लामा क़ारी आदि के उस आदेश का यही मंतव्य है कि जो कुरान मजीद में जानबूझकर 'ज़ाद' (ض) को 'ज़ा' (ظ) से बदल दे, वह काफ़िर है।

[तालिका शीर्षक] मैं कहता हूँ: 'व मा हुवा अलल गैबी बिज़नीन' (و ما هو على الغيب بضنين) में किसी अपवाद की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि यहाँ 'ज़ा' (ظ) को 'ज़ाद' (ض) के स्थान पर रखना नहीं है। क्योंकि यह स्थान विशेष रूप से केवल उसका नहीं है, बल्कि यह दोनों का ही स्थान है क्योंकि कुरान में दोनों के साथ क़िरात (पाठ) सिद्ध है। अतः यह 'सिरात' और 'सिरात', 'बस्ततन' और 'बस्ततन', 'यब्सुतु' और 'यब्सुतु', 'मुसैतिर' और 'मुसैतिर' तथा इसके समान उदाहरणों की तरह है। इसके विपरीत 'मग़दूब' और 'मग़ज़ूब', और 'सज्जील' और 'सज्जील' के, क्योंकि यह एक परिवर्तन है।

मैं कहता हूँ: मेरी राय यह है कि 'व मा हुवा अलल गैबी बिज़नीन' को अपवाद बनाने की आवश्यकता ही नहीं है, क्योंकि यहाँ 'ज़ा' को 'ज़ाद' के स्थान पर रखना अनिवार्य नहीं आता। क्योंकि यह केवल 'ज़ाद' का ही स्थान नहीं है, बल्कि बारी-बारी से दोनों का स्थान है क्योंकि इन दोनों अक्षरों के साथ कुरानी क़िरात सिद्ध है। जैसे 'सिरात' और 'सिरात', 'बस्ततन' और 'बस्ततन', 'यब्सुतु' और 'यब्सुतु', 'मुसैतिर' और 'मुसैतिर' और इनके समान अन्य शब्द। 'मग़दूब' और 'मग़ज़ूब' के विपरीत, और 'सज्जील' और 'सज्जील' के विपरीत क्योंकि यहाँ यह परिवर्तन है। (त)

अतः यह निश्चित रूप से आवश्यक है कि प्रत्येक अक्षर में अल्लाह द्वारा अवतरित विशिष्ट अक्षर का ही इरादा करें और उसी के मख़्रज (उच्चारण स्थान) से उसे निकालें। 'ज़ाद' (ض) का मख़्रज जीभ की दाहिनी या बाईं करवट है, इस प्रकार कि जीभ का अधिकांश किनारा गले से लेकर नोक के पास तक ऊपरी दाढ़ों के उस हिस्से की ओर जो जीभ के मध्य के समानांतर हैं, करीब से सटा हुआ होकर कचैलों (दाँतों) की ओर बढ़ता है, यहाँ तक कि 'लाम' (ل) के मख़्रज की शुरुआत तक पहुँच जाए। जीभ का किनारा दाढ़ों से जुड़ा रहता है, बाकी जीभ इस क्रिया में ऊपर की ओर झुककर तालू के

समीप हो जाती है। दाँतों या जीभ की नोक का इसमें कोई हिस्सा नहीं है। वह उन शक्तिशाली अक्षरों में से है जो उच्चारण के समय अपने मख़्रज पर प्रबल निर्भरता माँगते हैं। उनकी ध्वनि में सीने से जो भी श्वास निकलती है, वे उसे अपने गुण में रंग लेते हैं ताकि श्वास का कोई हिस्सा उनके साथ अलग चलता हुआ प्रतीत न हो। जब तक उनकी ध्वनि समाप्त न हो जाए, श्वास रुकी रहेगी। ऐसे अक्षरों को 'मजहूरा' (Majhoorah) कहते हैं, और उनके विपरीत 'मह्मूसा' (Mahmoosah) हैं, जिनका संक्षिप्त रूप 'फ़हथ-थु शख्सुन सकत' (فحثه شخص سكت) या 'सतश-हथुका खसफुहू' (ستشحثك خصفه) है। उदाहरण के लिए, यदि 'था' (ث) को दोहराकर बोलें 'थ्-थ्', तो ध्वनि 'थ' के साथ एक मौन अंश अलग से महसूस होगा। श्वास रुकी नहीं। 'मजहूरा' में ऐसा नहीं है, बल्कि समस्त श्वास जो...

علیٰ المعنیٰ کا نام ہے اور نظم یہ حروف بہ ترتیب معروف اور باہم متبائِن اور تبدیل جز مستلزم تبدیل کل فان المؤلف من مباین مباین للمؤلف من مباین اخر (ایک مبائن حروف کا مجموعہ دوسرے مبائن حروف کے مجموعے کے مباین ہوتا ہے۔ت) میں نہیں جانتا کہ اس تبدیل قصدی و تحریف کلام اللہ میں کیا تفاوت مانا جائے گا۔ یہی منشا ہے امام فضلی و امام محمود و علامہ قاری وغیرہ ہم کے اس حکم کا جو قرآن مجید میں ض عمدًا ظ سے بدلے کافر ہے۔

[جدول] اقول: ولا حاجة الی استثناء وما هو علی الغیب بضنین، فان ههنا لیس اقامة الظاء مقام الضاد لان المکان لیس مکانها خاصة بل مکانهما جمیعا علی التوارد حیث قرئ بهما في القرآن فکان مثل صراط وسراط وبسطة وبصطة ویبسط ویبصط ومصیطر ومسیطر الی اشباه ذلك بخلاف مغضوب مغظوب وبخلاف سجیل وصجیل فانه تبدیل۔

اقول: میری رائے یہ ہے کہ "وما هو علی الغیب بضنین" کو مستثنیٰ کرنے کی ضرورت ہی نہیں کیونکہ یہاں ظاء کو ضاد کی جگہ رکھنا لازم نہیں آتا کیونکہ یہ صرف ضاد ہی کا مقام نہیں بلکہ یکے بعد دیگرے دونوں کی جگہ ہے کیونکہ ان دونوں حروف کے ساتھ قرأت قرآنی ثابت ہے جیسے صراط اور سراط، بسطۃ اور بصطۃ، یبسط اور یبصط، مصیطراور مسیطر اور ان کے ہم مثل دیگر الفاظ، بخلاف مغضوب اور مغظوب کے اور بخلاف سجیل اور صجیل کے کیونکہ یہاں تبدیلی ہے۔(ت)

پس جزمًا لازم کہ ہر حرف میں خاص حرف منزل من اللہ ہی کا قصد کریں اور اسی کے مخرج سے اسے نکالنا چاہئے۔ مخرج ضاد زبان کی دہنی یا بائیں کروٹ ہے یوں کہ اکثر پہلوئے زبان حلق

سے نوک کے قریب تک اسی جانب کی ان بالائی داڑھوں کے طرف جو وسط زبان کے محاذی ہیں قریب ملاصق ہوتا ہوا کچیلوں کی طرف دراز ہو یہاں تک کہ شروع مخرج لام تک بڑھے زبان کی کروٹ داڑھوں سے متصل ہوتی باقی زبان اس حرکت میں اوپر کو میل کر کے تالو سے نزدیکی پائے دانتوں یا زبان کی نوک کا اس میں کچھ حصہ نہیں وہ ان قوی حرفوں میں ہے جو ادا ہوتے وقت اپنے مخرج پر اعتماد قوی مانگتے ہیں جس قدر سانس ان کی آواز میں سینے سے باہر آتی ہے سب کو اپنی کیفیت میں رنگ لیتے ہیں کہ کوئی پارہ سانس کا ان کے ساتھ جدا چلتا معلوم نہیں ہوتا جب تک ان کی آواز ختم نہ ہولے سانس بند رہے گی ایسے حرفوں کو مجہورہ کہتے ہیں اور ان کے خلاف کو مہموسہ جن کا جامع فَحَثَّهُ شَخْصٌ سَكَتَ ہے یا سَتَشْحَثُكَ خَصْفُهٗ مثلاً ثائے مثلثہ کو مکرر کرکے بولے ثث تو آواز ث کے ساتھ ایک حصہ ساکن کا جدا معلوم ہو گا نفس بند نہ ہوا مجہورہ میں ایسا نہیں بلکہ تمام سانس جو

Fatawa Razawiyya, Volume 6

At the start of pronunciation, the breath that is present fills them, and until its pronunciation ends, no other sound emerges, such as z, z, z, z, z. Similarly ḍ, ḍ, ḍ. This matter is essential for the strength of reliance: that strong reliance on any part of the mouth or throat, even without sound, is a restrainer of breath, as is not hidden. When the letter emerges from this place in this manner, it will be ḍād (ض) and not anything else. The difference that occurs is due to the omission of one of these things; for example, the tongue touched the front teeth, or the tip of the tongue was used such that it leaned towards the beginning of the exit point of 'lam'. The middle side of the tongue moved towards the molars in a contrary manner, whereas leaning towards them was required; or the tongue was not raised towards the palate, or one intended to raise it but the difficulty and strangeness of the letter came in the way so that the tongue was suppressed; the closure (itbaq) did not occur as it should, just as in a fight, an inexperienced person's hand, despite the intention, flinches and lands weakly; or there was weakness in reliance; or the elongation (istitala) did not reach the exit point of 'lam'. This statement is for a person to keep in mind the divine revelation to write and act upon, which, if Allah wills, will be very helpful in the correctness of performance. And success is from Allah. Now after this, even if one knows its exit point and method of use, those who perform it with similarity can avoid errors by keeping this final discourse in mind. And if a person correctly observes all the qualities we have stated above until the end, then surely the letter that will now emerge will be pure, correct, and eloquent ḍād. Even if an ignorant listener, due to his lack of familiarity, perceives it as something else, as long as one does not fall short in applying it to the best of their ability, then whatever is performed, we will give a fatwa of the validity of the prayer, for the difficulty has been established, the excuse has become clear, and difficulty leads to ease.

Arabic Text	**Urdu Translation**
Allah Almighty said: "Allah does not task a soul except [with] what it can bear." (1)	The noble saying of Allah Almighty is: Allah does not put a burden on any soul except according to its capacity.
Allah Almighty [said]: "Allah intends for you ease and does not intend for you hardship." (2)	The second command is: Allah wants ease for you and does not want difficulty for you.

Arabic Text

And Allah Almighty said: "He has not placed upon you in the religion any difficulty." (3)

And the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Make things easy and do not make them difficult, give good tidings and do not repel [people]." (4) Narrated by the two Sheikhs from Anas (may Allah be pleased with him).

Urdu Translation

In a third place, He said: He has not kept any constraint for you in the religion.

The noble saying of the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) is: Create ease, do not put into difficulty, create love, do not cause hatred. Bukhari and Muslim have narrated it from Hazrat Anas (may Allah be pleased with him). (T)

1. Al-Quran 2/286
2. Al-Quran 2/185
3. Al-Quran 22/78
4. Sahih Bukhari, Chapter: The saying of the Prophet (PBUH) 'Make things easy and do not make them difficult', and published by Qadimi Kutub Khana Karachi 2/904

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

उच्चारण की शुरुआत में मौजूद हवा उनसे भर जाती है और जब तक उसका उच्चारण समाप्त न हो, दूसरी आवाज़ नहीं आती जैसे ज़्, ज़्, ज़्, ज़्, ज़्। इसी तरह द्, द्, द्। यह बात ऐतमाद (निश्चय) की शक्ति के लिए आवश्यक है कि मुँह या गले के किसी भी हिस्से पर मजबूत ऐतमाद, यहाँ तक कि बिना आवाज़ के भी, सांस को रोकने वाला होता है, जैसा कि स्पष्ट है। जब इस स्थान से इस तरह से अक्षर निकलेगा तो वह 'दुआद' (ض) ही होगा, कुछ और नहीं। जो अंतर आता है उसका कारण इनमें से किसी बात का रह जाना है; उदाहरण के लिए, ज़बान अगले दांतों से लगी या ज़बान की नोक का उपयोग किया गया कि वह 'लाम' के मख़रज (निकास स्थान) की शुरुआत की ओर झुक गई। ज़बान के बगल का मध्य हिस्सा दाढ़ों की तरफ विपरीत दिशा में चला गया, जबकि उनकी ओर झुकाव आवश्यक था; या ज़बान तालू की तरफ नहीं उठाई गई, या उठाना चाहा लेकिन अक्षर की कठिनाई और अपरिचितता आड़े आ गई कि ज़बान दब गई; 'इत्बाक़' (मुंह बंद होना) वैसा नहीं हुआ जैसा होना चाहिए था, जैसे लड़ाई में एक अनुभवहीन व्यक्ति का हाथ इरादे के बावजूद झिझक कर हल्का पड़ता है; या ऐतमाद में कमजोरी रही; या 'लाम' के मख़रज तक 'इस्तिताला' (खिंचाव) नहीं हुआ। यह बयान इसलिए है कि आदमी केवल अल्लाह की ओर से मिली हिदायत का ख्याल करके लिखने और अमल में रखने के लिए है, जो इंशा अल्लाह ताला सही अदायगी में बहुत मददगार होगा। और कामयाबी अल्लाह की तौफीक से है। अब इसके बाद, अगर कोई इसका मख़रज और इस्तेमाल का तरीका जान ले, तो अदायगी करने वाले समानता देते हुए इस अंतिम चर्चा का ख्याल करके बच सकते हैं। और अगर आदमी अंत तक उन सभी गुणों का पालन ठीक से कर ले जो हमने ऊपर बताए हैं, तो निश्चित रूप से अब जो अक्षर निकलेगा वह खालिस, सही और फसीह 'दुआद' होगा। भले ही कोई अनजाना सुनने वाला अपनी अनभिज्ञता के कारण उसे कुछ और समझे, और जब तक अपनी क्षमता भर इसे बरतने में कमी न करे, तो अब जो कुछ भी अदा होगा, हम नमाज़ के सही होने का फतवा देंगे, क्योंकि कठिनाई सिद्ध हो चुकी है और उज़्र (कारण) स्पष्ट हो चुका है, और कठिनाई आसानी की ओर है।

अरबी पाठ

अल्लाह ताला ने फरमाया: "अल्लाह किसी जान पर उसकी ताकत से ज़्यादा बोझ नहीं डालता।" (1)

उर्दू अनुवाद

अल्लाह ताला का इर्शाद-ए-गिरामी है: अल्लाह ताला किसी जान पर बोझ नहीं डालता मगर उसकी ताक़त भर।

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद
अल्लाह ताला [ने फरमाया]: "अल्लाह तुम्हारे लिए आसानी चाहता है और तुम्हारे लिए कठिनाई नहीं चाहता।" (2)	दूसरा फरमान है: अल्लाह ताला तुम पर आसानी चाहता है और तुम पर दुश्वारी नहीं चाहता।
और अल्लाह ताला ने फरमाया: "उसने तुम पर दीन में कोई तंगी नहीं रखी।" (3)	तीसरे स्थान पर फरमाया: उसने तुम पर दीन में कोई तंगी नहीं रखी।
और नबी-ए-अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया: "आसानी पैदा करो और मुश्किल में न डालो, खुशखबरी सुनाओ और नफ़रत न दिलाओ।" (4) इसे बुखारी और मुस्लिम ने हज़रत अनस (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है।	नबी-ए-अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का इर्शाद-ए-गिरामी है: आसानी पैदा करो, मुश्किल में न डालो, मोहब्बतें पैदा करो, नफ़रत न दिलाओ। इसे बुखारी व मुस्लिम ने हज़रत अनस रज़ियल्लाहु ताला अन्हु से रिवायत किया है। (त)

1. अल-क़ुरान २/२८६
2. अल-क़ुरान २/१८५
3. अल-क़ुरान २२/७८
4. सही बुखारी, बाब: नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का इर्शाद 'आसानी पैदा करो और मुश्किल में न डालो', मतबुआ कदीमी कुतुब खाना कराची २/९०४

पेज ३२१ ऑफ़ ७३६

شروع تلفظ کے وقت موجود ہوا اُنھیں کی آواز سے بھر جاتی ہے اور جب تک اُس کا تلفظ ختم ہو دوسری نہیں آتی جیسے ز ز ظ ظ ظ یونہی ضضض یہ امر قوتِ اعتماد کو لازم ہے کہ دہن یا حلق کے کسی حصے پر اعتماد قوی بے آواز بھی حابسِ دم ہے کمالا یخفی جب اس جگہ سے اس طور پر حرف نکلے گا تو وہ ض ہی ہوگا نہ اس کا غیر۔ فرق جو پڑتا ہے اُس کا منشا اُنھیں سے کسی بات کا رہ جانا ہے مثلاً زبان اگلے دانتوں کو لگی یا زبان کی نوک سے کام لیا کہ وہ آغازِ مخرجِ لام کی طرف جھکی۔ پہلوئے زبان کا وسط داڑھوں کی جانب خلاف کو چلا حالانکہ اُن کی طرف میل درکار تھا یا زبان تالو کی طرف نہ اُٹھائی یا اُٹھانا چاہی مگر حرف کی دشواری و غرابت آڑے آئی کہ زبان دب گئی کما ینبغی اطباق نہ ہوا جس طرح لڑائی میں نا تجربہ کار کا ہاتھ با وصف قصد جھجک کر اوچھا پڑتا ہے یا اعتماد میں ضعف رہا یا مخرجِ لام تک استطالہ نہ ہوا یہ بیان د کہ آدمی صرف منزل من اللہ ہی کا خیال کر کے پر لکھنے اور عمل میں رکھنے کا ہے کہ ان شاء اللہ تعالٰی صحت ادا میں بہت مددگار ہے وباللہ التوفیق۔ اب بعد اس کے اسکا مخرج و طریقہ استعمال جان بھی لے ادا کرنے والے مشابہت دے تو اس تقریر آخری کا خیال کر کے بچ سکتے ہیں اور اگر آدمی تاآخر جو کچھ ہم نے محررہ صفات مین بیان کیا اُس سب کے مراعات ٹھیک طور پر ہو جائے تو یقیناً اب جو حروف نکلے گا وہ خالص صحیح و فصیح ض ہوگا اگرچہ نا واقف سننے والا اپنی ناشنائی کے باعث اسے کچھ سمجھے یا کچھ نہ سمجھے اور بقدر قدرت اُس کے برتنے میں کمی نہ کرے تو اب جو کچھ بھی ادا ہوگا صحتِ نماز کا فتوٰی دیں گے کہ عسر متحقق ہو لیا اور عذر واضح ہو چکا اور عسر جانبِ یسر ہے۔

عربی متن	اردو ترجمہ
قَالَ اللّٰہُ تَعَالٰی لَایُکَلِّفُ اللّٰہُ نَفْسًا اِلَّا وُسْعَھَا (1)	اللہ تعالٰی کا ارشاد گرامی ہے اللہ تعالیٰ کسی جان پر بوجھ نہیں ڈالتا مگر اس کی طاقت بھر۔
اللہ تعالٰی یُرِیْدُ اللّٰہُ بِکُمُ الْیُسْرَ وَ لَا یُرِیْدُ بِکُمُ الْعُسْرَ (2)	دوسرا فرمان ہے اللہ تعالیٰ تم پر آسانی چاہتا ہے اور تم پر دشواری نہیں چاہتا۔
وَقَالَ اللّٰہُ تَعَالٰی مَا جَعَلَ عَلَیْکُمْ فِی الدِّیْنِ مِنْ حَرَجٍ (3)	تیسرے مقام پر فرمایا اس نے تم پر دین میں کوئی تنگی نہیں رکھی۔
وقال صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم یسروا ولا تعسروا بشروا ولا تنفروا (4) رواہ الشیخان عن انس رضی اللہ تعالٰی عنہ۔	نبی اکرم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کا ارشاد گرامی ہے آسانی پیدا کرو، مشکل میں نہ ڈالو، محبتیں پیدا کرو ، نفرت نہ دلاؤ۔ اسے بخاری و مسلم نے حضرت انس رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا ہے (ت)

1 القرآن ۲/۲۸۶ 2 القرآن ۲/۱۸۵ 3 القرآن ۲۲/۷۸ 4 صحیح بخاری باب قول النبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم یسروا ولا تعسروا والمطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۲/۹۰۴

Fatawa Razawiyah, Volume 6

Then, in such a state, according to fairness, neither the sharing of attributes nor the confusion of sounds can be made specific to anyone, because it is out of helplessness, not choice. And no ruling applies to the involuntary, as we have already presented regarding the Turks pronouncing 'Haa' (ح) as 'Khaa' (خ) and the common people of the era of Allama Shami pronouncing 'Qaaf' (ق) as 'Hamza' (ء) (as we explained earlier that the Turkish people make 'Haa' into 'Khaa' and the people of Allama Shami's time make 'Q' into 'Hamza'. - T). It has become clear that this new group that has intentionally decided to recite 'Daad' (ض) as 'Zha' (ظ), their prayer—by the consensus of the early imams and the agreement of the mentioned statements of the later scholars—never even reaches 'wa-la-d-daalleen'. In the very first unit (rak'ah), they recite 'maghzoob' as 'maghzoob' (with a different sound) and the prayer is gone; now continue doing meaningless actions. Similarly, if an ignorant person does not intend the revealed letter 'Daad' but intentionally decides to recite it as 'Dal' (د) or any other letter, his prayer will also not proceed beyond 'maghzoob'. Learning the articulation point (makhraj), the method of delivery, and having the correct intention to the extent of one's ability is obligatory for every person. Then whatever was performed, the fatwa governs based on the ease of correctness.

[Boxed Text] Arabic: We ask Allah for the easing of every difficulty; indeed, He is its Master and is powerful over it. May Allah Almighty's blessings be upon the Bringer of Glad Tidings and the Warner, and upon his family and companions. Urdu: We ask Allah Almighty that He makes every difficulty easy, for He is the Master and He is powerful over it. May the blessings of Allah descend upon that sacred being who is the Bringer of Glad Tidings and the Warner, and upon his family and companions too. (T)

In short, intentionally reciting either 'Zha' (ظ) or 'Dal' (د) is forbidden. Those who intend to recite 'Zha' or 'Dal' instead of 'Daad', their prayer will never reach the completion of Surah Fatiha. It will undoubtedly become invalid and void as soon as they say 'ma'toob' and 'ma'zoob'. And for one who intends the revealed letter itself and wants to deliver it, but if a mistake occurs in such a place where the meaning does not change, the prayer will not be invalid. And if the meaning changes, then it is not free from two situations: either the person was capable of delivering the letter and it slipped from the tongue due to error, ignorance, or forgetfulness, then according to our school of thought of Sayyiduna Imam-e-Azam (may Allah Almighty have mercy on him) and the editor of the school of thought Sayyiduna Imam

Muhammad (may Allah be pleased with him), the prayer is absolutely invalid. And if this changed word is not in the Holy Quran, then even Imam Abu Yusuf (may Allah Almighty have mercy on him) agrees, and there is a consensus of the early imams that the prayer is void, and the statements of later scholars are numerous and conflicting.

Problem No. 78: From Delirganj, Pargana Jahanabad, District Pilibhit, sent by Khalifa Ilahi Bakhsh, 18 Rajab 1317 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: that most ignorant people deny the rules of Tajweed and consider them unjustified.

The Answer: Tajweed, by the definitive text of the Quran and the continuous reports (akhbar mutawatir) of the Master of Mankind and Jinn—upon him and his family be the best of blessings and peace—and the consensus of all companions, followers (tabi'in), and all the noble imams (may lasting pleasure be upon them), is a right and an obligation, and is the knowledge of the religion of Allah's Sharia. Allah said...

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

फिर ऐसी स्थिति में, निष्पक्षता के अनुसार, न तो गुणों की साझेदारी और न ही ध्वनियों का भ्रम किसी के लिए विशिष्ट किया जा सकता है, क्योंकि यह विवशता के कारण है, न कि इच्छा के। और अनैच्छिक क्रिया पर कोई नियम लागू नहीं होता, जैसा कि हमने पहले पेश किया है कि तुर्कों द्वारा 'हा' (ح) को 'खा' (خ) बनाना और अल्लामा शामी के युग के आम लोगों द्वारा 'क़ाफ़' (ق) को 'हम्ज़ा' (ء) बनाना (जैसा कि हमने पहले बताया कि तुर्क लोग 'हा' को 'खा' और अल्लामा शामी के समय के लोग 'क़' को 'हम्ज़ा' बना देते हैं। - टी)। यह स्पष्ट हो गया कि यह नया समूह जिसने जानबूझकर 'दाद' (ض) को 'ज़ा' (ظ) पढ़ना तय कर लिया है, उनकी नमाज़—प्रारंभिक इमामों की सहमति और बाद के विद्वानों के उल्लेखित कथनों के समझौते के अनुसार—कभी 'वला अद्दाल्लीन' तक भी नहीं पहुँच पाती। पहली ही रक़अत में 'मग़ज़ूब' को 'मग़ज़ूब' (अलग ध्वनि के साथ) पढ़ा और नमाज़ विदा हुई; अब अर्थहीन क्रियाएँ करते रहें। इसी तरह यदि कोई अज्ञानी व्यक्ति अवतरित अक्षर 'दाद' का इरादा न करे बल्कि जानबूझकर उसे 'दाल' (د) या कोई और अक्षर पढ़ना तय कर ले, तो उसकी नमाज़ भी 'मग़ज़ूब' से आगे नहीं बढ़ेगी। मखरज (उच्चारण स्थान), अदायगी का तरीका सीखना और अपनी क्षमता के अनुसार सही इरादा रखना हर व्यक्ति पर अनिवार्य है। फिर जो कुछ अदा हुआ, उस पर शुद्धि की सुगमता के आधार पर फतवा हाकिम होगा।

[बक्से में लिखा पाठ] अरबी: हम अल्लाह से हर मुश्किल को आसान करने की प्रार्थना करते हैं; निस्संदेह, वह इसका स्वामी है और इस पर सक्षम है। अल्लाह तआला की रहमतें बशीर और नज़ीर (खुशखबरी देने वाले और डराने वाले) पर और उनके परिजनों और साथियों पर हों। उर्दू: हम अल्लाह तआला से सवाल करते हैं कि वह हर मुश्किल को आसान फरमा दे क्योंकि वही मालिक है और उस पर वह कादिर (सक्षम) है। अल्लाह की रहमतें नाज़िल हों उस पवित्र हस्ती पर जो बशीर व नज़ीर है, और आपकी आल (संतान) और असहाब (साथियों) पर भी। (टी)

संक्षेप में, जानबूझकर 'ज़ा' या 'दाल' दोनों हराम हैं। जो यह इरादा करता है कि मैं 'दाद' की जगह 'ज़ा' या 'दाल' पढ़ूँगा, उनकी नमाज़ कभी पूरी फ़ातिहा तक भी नहीं पहुँचेगी। 'मअतूब' और 'मअज़ूब' कहते ही निस्संदेह नमाज़ फासिद (विफल) और बातिल (शून्य) हो जाएगी। और जो अक्षर के अवतरण का ही इरादा रखता है और उसी को अदा करना चाहता है, फिर अगर ऐसी जगह गलती हो जाए जिससे अर्थ न बदले तो नमाज़ फासिद नहीं होगी। और अगर अर्थ बदल गए तो वह दो स्थितियों से खाली नहीं: या तो यह व्यक्ति अक्षर अदा करने में सक्षम था और ज़बान फिसलने, अज्ञानता या

भूलवश ज़बान से निकल गया, तो हमारे मज़हब के प्रमुख सैयदुना इमाम-ए-आज़म (अल्लाह उन पर रहमत करे) और मज़हब के संपादक सैयदुना इमाम मुहम्मद (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) के अनुसार नमाज़ पूर्णतः फासिद है। और अगर यह बदला हुआ शब्द कुरआन मजीद में नहीं है, तो इमाम अबू यूसुफ (अल्लाह उन पर रहमत करे) की भी सहमति है और प्रारंभिक इमामों का इज्मा (एकमत) है कि नमाज़ बातिल है, और बाद के विद्वानों के कथन बहुत अधिक और परस्पर विरोधी हैं।

मसला नंबर 78: दलेरगंज, परगना जहानाबाद, जिला पीलीभीत से, प्रेषक खलीफा इलाही बख्श, 18 रजब 1317 हिजरी। दीन के विद्वान इस मसले में क्या फरमाते हैं कि अधिकांश अज्ञानी लोग तजवीद के नियमों से इनकार करते हैं और उन्हें अनुचित मानते हैं।

जवाब: तजवीद, कुरआन के स्पष्ट प्रमाणों और मानव और जिन्न के सरदार (उन पर और उनकी संतान पर सर्वश्रेष्ठ दरूद और सलाम हो) की लगातार रिपोर्टों (अखबार मुतवातिर) से, और सभी साथियों, ताबेईन और सभी प्रतिष्ठित इमामों (उन पर निरंतर प्रसन्नता हो) की सहमति से, सत्य और अनिवार्य है और अल्लाह की शरीयत के दीन का इल्म (ज्ञान) है। अल्लाह ने फरमाया...

पृष्ठ 322/736

پھر ایسی حالت میں عند الانصاف اشتراک صفات خواہ اشتباہ اصوات کسی کی تخصیص نہیں ہو سکتی کہ براہِ عجز ہے اختیاری نہیں۔ اور غیر اختیاری پر حکم جاری نہیں کما قد منا فی جعل الاتراک الحاء خاءً وعوام عصر العلامہ الشامی القاف حمزۃ (جیسا کہ ہم نے پیچھے بیان کیا کہ ترک لوگ حاء کو خاء اور علامہ شامی کے زمانہ کے لوگ ق کو ہمزہ بنا دیتے ہیں۔ ت) واضح ہوا کہ یہ طائفہ جدیدہ جس نے قصداً ضاد پڑھنا ٹھہرا لیا ان کی نماز باجماع ائمہ متقدمین و اتفاق اقوال مذکورہ متأخرین کبھی ولا الضالین تک نہیں پہنچنے پاتی، پہلی ہی رکعت میں مغضوب کی مغظوب پڑھا اور نماز رخصت ہوئی اب افعال بے معنی کئے جاؤ۔ اسی طرح اگر کوئی جاہل حرف منزل ض کا قصد نہ کرے بلکہ عمداً اس کو دال خواہ کوئی حرف پڑھنا ٹھہرا لے اس کی نماز بھی مغضوب سے آگے نہ چلے گی تعلم مخرج طریق ادا و قصد صحیح بقدر قدرت ہر شخص پر لازم پھر جو کچھ ادا ہوا فتوی تیسیر صحت پر حاکم۔

[Boxed Text] نسأل اللہ تیسیر کل عسیر انہ ولیہ وعلیہ قدیر وصلی اللہ تعالی علی البشیر والنذیر وآلہ وصحبہ۔ ہم اللہ تعالٰی سے سوال کرتے ہیں وہ ہر مشکل کو آسان فرمادے کیونکہ وہی مالک ہے اور اس پر وہ قادر ہے، اللہ کی رحمتیں نازل ہوں اس ذاتِ اقدس پر جو بشیر و نذیر ہے آپ کی آل اور اصحاب پر بھی۔ (ت)

بالجملہ عمداً ظا یا دال دونوں حرام، جو قصد کرے کہ بجائے ض ظ یا د پڑھ لوں گا ان کی نماز کبھی تمام فاتحہ تک بھی نہ پہنچے گی معتوب و معظوب کہتے ہی بلا شبہ فاسد و باطل ہو جائے گی اور جو حروف منزل ہی کا قصد رکھتا اور اسی کو ادا کرنا چاہتا ہے پھر اگر ایسی جگہ غلطی پڑے جس سے معنیٰ نہ بدلے تو نماز فاسد نہ ہوگی اور اگر معنی بدل گئے تو دو حال سے خالی

نہیں یا تو یہ شخص ادائے حرف پر قادر تھا براہ لغزشِ زبان یا جسلاً یا سہواً زبان سے نکل گیا تو ہمارے مذہب سیدنا امام اعظم رحمۃ اللہ تعالیٰ و محرر مذہب سیدنا امام محمد رضی اللہ تعالیٰ عنہ کے نزدیک نماز مطلقاً فاسد، اور اگر یہ بدلا ہوا کلمہ قرآن مجید میں نہیں تو امام ابو یوسف رحمۃ اللہ تعالیٰ علیہ کا بھی اتفاق ہو کر اجماع ائمہ متقدمین کہ نماز باطل ہے اور متاخرین کے اقوال کثیرہ و مضطرب ہیں۔ مسئلہ نمبر ۷۸ : از دلیر گنج پرگنہ جہاں آباد ضلع پیلی بھیت مرسلہ خلیفہ الٰہی بخش ۱۸ رجب ۱۳۱۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ اکثر جہلا تو قواعد تجوید سے انکار ہے اور ناحق جانتے ہیں۔ الجواب: تجوید بنص قطعی قرآن و اخبار متواترہ سید الانس والجان علیہ و علی آلہ افضل الصلوۃ والسلام و اجماع تمام صحابہ و تابعین و سائر ائمہ کرام علیہم الرضوان المستدام حق و واجب اور علمِ دین شرع الٰہی ہے قال اللہ

Highness says: "And recite the Quran with measured recitation." (The command of Allah is to recite the Quran slowly and clearly. - T). To call this absolutely unjust is a word of disbelief (Kufr), seek refuge in Allah Almighty. Yes, whoever denies a rule due to their own ignorance, it is their ignorance; they should be informed and cautioned. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 379: From Bareilly, Muhalla Zakhira, sent by Mohabbat Hussain, 1st Rabi-ul-Awwal 1318 AH. What do the scholars of religion and the muftis of the firm Sharia say on this matter: that most of those who pray do not know the meaning of the prayer, nor do they know the meaning of the Kalima Sharif (the creed). Therefore, knowing the meaning of the Kalima Sharif and acting upon the prayer is very necessary. So if the people of Arabia and those who know Arabic recite in Arabic, and the rest of the people of other languages recite the prayer by translating the Arabic into their own respective languages, would the prayer be valid and correct or not? That is, should English speakers pray the five daily prayers in English, Nagari speakers in Nagari, and Urdu speakers in Urdu? Clarify and be rewarded. (State it and get rewarded. - T)

The Answer: Misguidance does not come by announcing itself; the first gate of misguidance is when the value of following the path of the believers leaves a person's heart. They consider the entire blessed Ummah foolish and hold their own separate opinion. During the holy time of the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah Almighty be upon him), these very non-Arabs (Ajamis) were honored with Islam. There were Hazrat Bilal the Abyssinian, Hazrat Suhayb the Roman, Hazrat Salman the Persian, and Abu Hurairah, etc., may Allah Almighty be pleased with them all. And in the era of the noble Companions (may Allah Almighty be pleased with them), when thousands of non-Arab lands were conquered and millions of non-Arabs embraced Islam, was it ever commanded? That you people should pray in your own language. Now, after thirteen hundred years, this "wisdom" has occurred to some ignorant Indians. Observing this much is enough to understand that this is not an inspiration from the Merciful (Rahman) but rather a whisper from Satan. Reciting the Quran is obligatory (Fard), and it is specifically in Arabic. It will not be fulfilled in a non-Arabic language, and the prayer will be incorrect, and beyond that, there is sinfulness. Yes, for one who is completely helpless, the matter of compulsion is separate. And Allah, the Glorified and Supreme, knows best.

Problem No. 380: What do the scholars of religion say on this matter: that Zaid's habit is always to recite one or half a Ruku' in the Maghrib prayer with recitation, or Surah Ad-Duha, or Al-Hakum (At-Takathur), or Ash-Shams while leading the prayer. Some followers (Muqtadis) dislike this, and some dislike this method due to its length. In such a case, should the Imam act according to his habit or follow the followers? And these Surahs are not too long at such a time. One day in the Maghrib prayer, Zaid [recited] 3 Ruku' of the 16th Para...

---

1. Al-Quran 73/5 [likely 73/4] Page 323 of 736

फ़तावा रज़विया जिल्द शशुम (छठा खंड)

तआला फ़रमाता है: "और कुरान को खूब ठहर-ठहर कर पढ़ो।" (अल्लाह तआला का फ़रमान है और कुरान को खूब ठहर-ठहर कर पढ़ो। त) इसे मुतलक़न (पूरी तरह) नाहक बताना कुफ़्र का कलमा है, अल्लाह तआला की पनाह। हाँ, जो अपनी नावाकिफी (अज्ञानता) से किसी कायदे का इनकार करे, वह उसका जहल (मूर्खता) है, उसे आगाह और मुतन्बा (सतर्क) करना चाहिए। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर ३७९: अज़ बरेली, मोहल्ला ज़खीरा, मुर्सला (प्रेषक) मुहब्बत हुसैन, १ रबी-उल-अव्वल १३१८ हिजरी। क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन और मुफ़्तियान-ए-शरअ-ए-मतीन इस मसले में कि अक्सर नमाज़ी नमाज़ के मायने नहीं जानते और न ही कलमा शरीफ़ के मायने जानते हैं। लिहाज़ा कलमा शरीफ़ का मायना जानना और नमाज़ पर अमल करना बहुत ज़रूरी है। तो क्या अगर अहल-ए-अरब और अरबी जानने वाले अरबी में पढ़ें और बाक़ी अहल-ए-ज़बान अपनी-अपनी ज़बान में अरबी का तर्जुमा करके पढ़ें तो नमाज़ दुरुस्त और सही है या नहीं? यानी अंग्रेज़ी पढ़ने वाले अंग्रेज़ी में और नागरी वाले नागरी में और उर्दू वाले उर्दू में पंजगाना (पाँच वक्त की) नमाज़ पढ़ें? बेय्यिनू तूजरू (बयान करो और सवाब पाओ। त)

अल-जवाब: गुमराही कह कर नहीं आती, गुमराही का पहला फाटक यही है कि आदमी के दिल से इत्तेबा-ए-सबील-ए-मोमिनीन (मोमिनों के रास्ते की पैरवी) की कद्र निकल जाए। तमाम उम्मत-ए-मरहूमा को बेवकूफ समझे और अपनी राय अलग रखे। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम के ज़माना-ए-अकदस में यही अजमी (गैर-अरबी) लोग मुशर्रफ़-बा-इस्लाम (इस्लाम में शामिल) हुए। हज़रत बिलाल हब्शी थे, हज़रत सुहैब रूमी, हज़रत सलमान फ़ारसी और अबू हुरैरा वगैरा रज़ियल्लाहु तआला अन्हुम अजमईन। और सहाबा किराम रज़ियल्लाहु तआला अन्हुम के ज़माने में जब हज़ारों बिलाद-ए-अजम (अजमी शहर) फ़तह हुए, लाखों अजमी मुशर्रफ़-बा-इस्लाम हुए, क्या कभी भी हुक्म फ़रमाया? कि तुम लोग अपनी ज़बान में नमाज़ पढ़ा करो। अब तेरह सौ बरस के बाद यह 'मसलहत' कुछ हिन्दी बे-इल्मों को सूझी। इस कद्र मुलाहिज़ा इतना समझने को काफी है कि यह इल्हाम-ए-रहमान नहीं बल्कि वसवसा-ए-शैतान है। क़िरात-ए-कुरान फ़र्ज़ है और वह ख़ास अरबी है। गैर-अरबी में अदा न होगी और नमाज़ नादुरुस्त होगी और इसके अलावा गुनहगारी है। हाँ, जो महज़ आजिज़ (अक्षम) हो तो मजबूरी की बात जुदा है। वल्लाह सुब्हानहू तआला आलम।

मसला नंबर ३८०: क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन इस मसले में कि ज़ैद की आदत हमेशा मग़रिब की नमाज़ में बा-क़िरात एक या निस्फ़ (आधा) रुकू या सूरह अज़-जुहा या अलहाकुमुत-तकाथुर या अश्-शम्स हालत-ए-इमामत में पढ़ने की है। बाज़ मुक़्तदी (पीछे नमाज़ पढ़ने वाले) इसे नापसंद करते हैं और बाज़ इस तरीके को तवालत (लम्बाई) की वजह से नापसंद करते हैं। ऐसी सूरत में इमाम अपनी आदत के मुवाफ़िक़ करे या मुक़्तदियों की ताबेदारी इख्तियार करे? और ये सूरतें ऐसे वक्त में कुछ ज़्यादा तो नहीं हैं। एक रोज़ मग़रिब की नमाज़ में ज़ैद ने १६वें पारे का ३ रुकू..

---

1. अल-कुरान ७३/५ पेज ३२३ ऑफ़ ७३६

فتاوی رضویہ جلد ششم

تعالٰی وَرَتِّلِ الْقُرْاٰنَ تَرْتِیْلًا (اللہ تعالیٰ کا فرمان ہے اور قرآن کو خوب ٹھہر ٹھہر کر پڑھو۔ ت) اسے مطلقاً ناحق بتانا کلمہ کفر ہے والعیاذ باللہ تعالیٰ۔ ہاں جو اپنی ناواقفی سے کسی قاعدے پر انکار کرے وہ اسکا جہل ہے اسے آگاہ و متنبہ کرنا چاہئے۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۳۷۹: از بریلی محلہ ذخیرہ مرسلہ محبت حسین یکم ربیع الاول ۱۳۱۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین اس مسئلہ میں کہ اکثر نمازی معنی نماز کے نہیں جانتے ہیں اور نہ کلمہ شریف کے معنی جانتے ہیں پس جاننا معنی کلمہ شریف اور نماز کے اوپر عمل کرنا بہت ضروری ہے پس اگر اہل عرب اور عربی جاننے والے عربی میں پڑھیں اور باقی اہل زبان اپنی اپنی زبان میں عربی کا ترجمہ کرکے پڑھیں تو نماز درست اور صحیح ہے یا نہیں یعنی انگریزی خواں انگریزی میں اور ناگری والے ناگری میں اور اردو والے اردو میں پنجگانہ نماز پڑھیں؟ بینوا توجروا (بیان کرو اور اجر پاؤ۔ ت)

الجواب: گمراہی کہہ کر نہیں آتی، گمراہی کا پہلا پھاٹک یہی ہے کہ آدمی کے دل سے اتباع سبیل مومنین کی قدر نکل جائے تمام امت مرحومہ کو بیوقوف جانے اور اپنی رائے الگ جانے رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے زمانہ اقدس میں یہی عجمی لوگ مشرف باسلام ہوئے حضرت بلال حبشی تھے۔ حضرت صہیب رومی، حضرت سلمان فارسی و ابو ہریرہ و غیرہم رضی اللہ تعالیٰ عنہم جمیعا اور صحابہ کرام رضی اللہ تعالیٰ عنہم کے زمانہ میں جو ہزاروں بلاد عجم فتح ہوئے لاکھوں عجمی مشرف باسلام ہوئے کبھی بھی حکم فرمایا؟ کہ تم لوگ اپنی زبان میں نماز پڑھا کرو، اب تیرہ سو برس کے بعد یہ مصلحت بعض ہندی بے علموں کو سوجھی اس قدر کا ملاحظہ اتنا سمجھنے کو کافی ہے کہ الہام رحمٰن نہیں بلکہ وسوسہ شیطان ہے، قرأت قرآن فرض ہے اور وہ

خاص عربی ہے غیر عربی میں ادا نہ ہوگی اور نماز نادرست ہوگی اور اس کے ماورا میں گنہگاری ہے ، ہاں جو عاجز محض ہو تو مجبوری کی بات جدا ہے واللہ سبحنہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۳۸۰: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید کی عادت ہمیشہ نماز مغرب میں با قرآت ایک یا نصف رکوع یا سورہ والضحٰی یا الھکم یا والشمس حالت امامت میں پڑھنے کی ہے بعض مقتدی اس کو ناپسند کرتے ہیں اور بعض اس طریقہ کو ناپسند بوجہ طوالت ، ایسی صورت میں امام اپنی عادت کے موافق کرے یا مقتدیوں کی تابعداری اختیار کرے اور یہ سورتیں ایسے وقت میں کچھ زیادہ تو نہیں، ایک روز نماز مغرب میں زید نے ۱۶ پارہ کا ۳ رکوع

Fatawa Razawiyya, Volume 6

Question: An Imam recited "Afahasiba alladhina kafaru" [in the first rak'ah] and in the second rak'ah he recited the last ruku of the 29th juz, "Innal muttaqina fi zilalin". Upon reading more than this, the followers (muqtadis) became extremely disgruntled. A Maulana stated that such an Imam is a sinner; reciting such a long ruku should not be done in such a situation and at such a time, as it is prohibited. Is the complaint of these weak-spirited followers legally (Shari'ah-wise) valid or not? And what blame or sin, according to Shari'ah, is on the Imam? In a congregation of a hundred people, if two followers who are ill due to old age complain excessively and think ill of the Imam, are they also sinners for blaming him or not?

Answer:

There are three narrations from our Imams regarding prayers offered while not traveling:

First: In Fajr and Zuhr, complete two surahs from the 'Tiwal-e-Mufassal' (long detailed surahs), one surah in each rak'ah. In Asr and Isha, from the 'Awsat-e-Mufassal' (medium detailed surahs) and in Maghrib, from the 'Qisar-e-Mufassal' (short detailed surahs). 'Mufassal' refers to the part of the Holy Quran from Surah Al-Hujurat to the end. It has three parts: 'Tiwal' from Al-Hujurat to Al-Buruj, 'Awsat' from Al-Buruj to Lam-yakun (Al-Bayyinah), and 'Qisar' from Lam-yakun to An-Nas.

Second: In Fajr and Zuhr, besides Surah Al-Fatihah, the total recitation for both rak'ahs should be forty to fifty verses, and in another narration, sixty to a hundred verses. For Asr and Isha, the total for both rak'ahs should be fifteen to twenty verses, and for Maghrib, a total of ten verses.

Third: Do not fix anything; recite as required by the time and the condition of the followers and the Imam. For example, if time is short for Fajr prayer, or if someone among the followers is ill such that reciting according to the Sunnah length would be burdensome for them, or if someone is old, weak, frail, or has a need such that a delay would hinder their work and there's fear of loss, then the Imam should shorten it as much as he deems necessary. The Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) himself, upon hearing the cry of a child during Fajr prayer, out of mercy thinking that the child's mother is present in the congregation and while the child would be restless the mother's heart would be uneasy due to the long recitation, led the prayer with only Surah Al-Falaq and Surah An-Nas (may Allah bless him and his

family and companions and grant them peace). And if he sees that there is ample time and no one among the followers is ill or has such concerns, then recitation according to the Sunnah length [is preferred]. Among these narrations, the first and third are chosen and followed. And I say there is no conflict between them; rather, the third one restricts the first, as is evident. Thus, the conclusion of the reliable school of thought is that when space [for length] is seen to be less due to time or illness, weakness, and the needs of the followers, then [recite] according to the available space.

फ़तावा रज़विया, जिल्द 6

प्रश्न: इमाम ने (पहली रकअत में) "अफ़हसिबल्लज़ीना कफ़रू" और दूसरी रकअत में 29वें पारे का आख़िरी रुकूअ "इन्नल मुत्तक़ीना फ़ी ज़िलालिन" पढ़ा। इससे ज़्यादा पढ़ने पर मुक़्तदी (पीछे नमाज़ पढ़ने वाले) बहुत नाराज़ हुए। एक मौलवी साहब ने फ़रमाया कि ऐसा इमाम गुनहगार होता है; ऐसी स्थिति और ऐसे समय में इतना बड़ा रुकूअ नहीं पढ़ना चाहिए, यह मना है। क्या इन कमज़ोर दिल मुक़्तदियों की शिकायत शरई तौर पर जायज़ है या नहीं? और इमाम साहब पर शरई तौर पर क्या इल्ज़ाम और गुनाह है? सौ लोगों की जमाअत में अगर दो मुक़्तदी बुढ़ापे की बीमारी की वजह से ज़्यादा शिकायत करें और इमाम को बुरा समझें, तो क्या वे भी इल्ज़ाम लगाने के कारण गुनहगार हैं या नहीं?

उत्तर:

मुक़ीम (यात्रा न करने वाले) की नमाज़ के बारे में हमारे इमामों से तीन रिवायतें हैं:

पहली: फ़ज्र और ज़ुहर में 'तिवाल-ए-मुफ़स्सल' (लंबी सूरतों) से दो पूरी सूरतें पढ़ें, हर रकअत में एक सूरत। असर और ईशा में 'औसात-ए-मुफ़स्सल' (मध्यम सूरतों) से दो सूरतें। और मग़रिब में 'क़िसार-ए-मुफ़स्सल' (छोटी सूरतों) से। 'मुफ़स्सल' क़ुरआन करीम के उस हिस्से को कहते हैं जो सूरह हुजुरात से आख़िर तक है। इसके तीन हिस्से हैं: सूरह हुजुरात से बुरूज तक 'तिवाल', बुरूज से लम-यकुन (अल-बय्यिनाह) तक 'औसात', और लम-यकुन से नास तक 'क़िसार'।

दूसरी: फ़ज्र और ज़ुहर में सूरह फ़ातिहा के अलावा दोनों रकअत की कुल क़िरात चालीस से पचास आयतें हैं, और एक रिवायत में साठ से सौ तक। असर और ईशा की दोनों रकअत की कुल क़िरात पंद्रह-बीस आयतें, और मग़रिब में कुल दस आयतें।

तीसरी: कुछ तय न रखें, जहाँ वक़्त, मुक़्तदियों और इमाम की हालत का तक़ाज़ा हो वैसा पढ़ें। उदाहरण के लिए, फ़ज्र की नमाज़ में अगर वक़्त कम हो या मुक़्तदियों में कोई बीमार हो जिस पर सुन्नत के मुताबिक़ लंबी क़िरात भारी पड़े, या कोई बूढ़ा कमज़ोर हो, या कोई ज़रूरतमंद हो जिसका देर होने से काम रुक जाए और नुक़सान का डर हो, तो जहाँ तक कम करने की ज़रूरत समझे, कम करे। स्वयं नबी-ए-करीम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़ज्र की नमाज़ में एक बच्चे के रोने की आवाज़ सुनकर इस रहमत के ख़्याल से कि उसकी माँ जमाअत में मौजूद है, लंबी क़िरात की जगह सिर्फ सूरह फ़लक़ और सूरह नास से नमाज़ पढ़ा दी (सल्लल्लाहु अलैहि व आलिहि व असहाबिहि व

बारिक व सल्लम अजमईन)। और अगर देखें कि वक़्त में गुंजाइश है और मुक़्तदियों में न कोई बीमार है और न कोई वैसी बात है, तो सुन्नत के मुताबिक़ क़िरात करें। इन रिवायतों में पहली और तीसरी रिवायत ही मख़्तार (चुनी हुई) और मामूल-बह (अमल में लाने वाली) है। और मैं कहता हूँ कि इन दोनों रिवायतों में कोई विरोध नहीं है, बल्कि तीसरी पहली को महदूद (सीमित) कर रही है जैसा कि साफ़ ज़ाहिर है। तो मज़हब का निचोड़ यह तय पाया कि जब वक़्त या बीमारी, कमज़ोरी और मुक़्तदियों की ज़रूरत की वजह से गुंजाइश कम देखें, तो गुंजाइश के मुताबिक़ [पढ़ें] ।

पृष्ठ 324/736

فتاویٰ رضویہ، جلد ششم

سوال: "أَفَحَسِبَ الَّذِينَ كَفَرُوْا" اور دوسری رکعت میں ۲۹ پارہ کا آخری رکوع "ان المتقین فی ظلل" پڑھا اس سے زیادہ پڑھنے پر مقتدی نہایت شاکی ہوئے، اور ایک مولوی صاحب نے فرمایا کہ یہ امام گنہگار ہوتے ہیں اتنا بڑا رکوع پڑھنے سے ایسی صورت اور ایسے وقت میں نہیں چاہئے منع آیا ہے، پست ہمت مقتدیوں کی شکایت شرعاً جائز ہے یا نہیں؟ اور امام صاحب پر شرعاً کیا الزام اور گناہ ہے؟ سو آدمی کی جماعت میں دو مقتدی علیل پیرانہ سالی کی وجہ سے زیادہ شکایت اور امام کو بُرا جانیں وہ بھی الزام دینے سے گنہگار ہیں یا نہیں؟

الجواب:

نمازِ حضر یعنی غیرِ سفر میں ہمارے ائمہ سے تین روایتیں ہیں:

اوّل: فجر و ظہر میں طوالِ مفصل سے دو سورتیں پوری پڑھے ہر رکعت میں ایک سورت اور عصر و عشاء میں اوساطِ مفصل سے دو سورتیں اور مغرب میں قصارِ مفصل سے۔ مفصل قرآن کریم کے اس حصہ کو کہتے ہیں جو سورہ حجرات سے اخیر تک ہے اس کے تین حصے ہیں حجرات سے بروج تک طوال، بروج سے لم یکن تک اوساط، لم یکن سے ناس تک قصار۔

دوم: فجر و ظہر میں سورہ فاتحہ کے علاوہ دونوں رکعت کی مجموعِ قرات چالیس پچاس آیت ہے اور ایک روایت میں ساٹھ آیت سے سو تک۔ اور عصر و عشاء کی دونوں رکعت کا مجموعہ پندرہ بیس آیت، اور مغرب میں مجموعہ دس آیتیں۔

سوم: کچھ مقرر نہ رکھے جہاں وقت و مقتدیان و امام کی حالت کا مقتضی ہو ویسا پڑھے، مثلاً نمازِ فجر میں اگر وقت تنگ ہو یا مقتدیوں میں کوئی شخص بیمار ہے کہ بقدرِ سنّت پڑھنا اس پر گراں

گزرے گا یا بوڑھا ضعیف ناتواں یا کسی ضرورت والا ہے کہ دیر لگانے میں اس کا کام حرج ہوتا ہے اُسے نقصان پہنچنے کا اندیشہ ہوگا تو جہاں تک تخفیف کی حاجت سمجھے تخفیف کرے، خود حضورِ اقدس صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے نمازِ فجر میں ایک بچے کے رونے کی آواز سن کر اس خیال رحمت سے کہ اُس کی ماں جماعت میں حاضر ہے طولِ قرات سے اُدھر بچہ پھڑکے گا ادھر ماں کا دل بیچین ہوگا صرف قل اعوذ برب الفلق اور قل اعوذ برب الناس سے نماز پڑھا دی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وآلہ واصحابہ وبارک وسلم اجمعین، اور اگر دیکھے کہ وقت میں وسعت ہے اور نہ کوئی مقتدیوں میں بیمار نہ ویسا کلام تو بقدرِ سنّت قرات ان روایات میں پہلی اور تیسری روایت مختار و معمول بہ ہے وانا اقول لاخلاف بینھما وانما الثالثۃ تقیید الاولی کما لا یخفی (میری رائے میں ان دونوں روایات کے درمیان کوئی تعارض نہیں تیسری پہلی کو مقید کر رہی ہے جیسا کہ واضح ہے۔ت) تو حاصلِ مذہب معتمد یہ قرار پایا کہ جب گنجائش بوجہ وقت خواہ بیماری و ضعف و حاجت مقتدیان کم دیکھے تو قدرِ گنجائش

Fatawa Rizvia, Volume 6

One should act upon this, otherwise, keep the calculations of long, medium, and short (Surahs) in mind. For limited capacity, it is not necessary for many followers (Muqtadis) to be weak or in need of work; rather, even if only one such person is present, it is sufficient. To the point that if there is a congregation of a thousand people for the Fajr prayer and there is plenty of time, and 999 people heartily desire that the Imam recite long Surahs, but one person is sick, weak, elderly, or in need of work such that lengthening the prayer would be a burden and cause him distress, then it is forbidden (haram) for the Imam to lengthen it. Instead, he should lead the prayer considering that one person among the thousand. Just as the Chosen One ﷺ led the Fajr prayer with the Mu'awwidhatayn (the last two Surahs) solely for the sake of a woman and her child ﷺ. And he expressed severe displeasure with Mu'adh ibn Jabal (Allah be pleased with him) for lengthening the prayer, to the extent that his blessed face turned red with intense majesty and he said:

Are you one who puts people into trial, O Mu'adh? Are you one who puts people into trial, O Mu'adh? Are you one who puts people into trial, O Mu'adh? As found in the authentic collections (Sahah) and others. And in al-Hidayah, it is narrated as a marfu' Hadith: The Messenger of Allah ﷺ said: "Whoever leads a people in prayer should lead them according to the weakest among them, for among them are the sick, the elderly, and those with needs."

Are you one who puts people into trial, are you one who puts people into trial, are you one who puts people into trial, O Mu'adh! As it is in Sahah etc. In Hidayah, it is narrated from the Noble Prophet ﷺ that whoever becomes the Imam of a group, he should lead the prayer considering their weak ones, because among them will be the sick, the elderly, and those with needs (T).

From this explanation, it is clear that for an Imam to recite Surah Ash-Shams or Ad-Duha in Maghrib, or to recite 'Afahasiballadhina kafarū' in the first Rak'ah and 'Inna lil-muttaqina' in the second, is contrary to the Sunnah and distinct from all three cases. These are not from the short Mufassal Surahs, nor are they only ten verses in both Rak'ahs, nor was it such that it did not weigh heavily on the followers. In such a situation, the followers' complaint is justified, and it is certainly mandatory for the Imam to comply. Yes, reciting 'Alhakumut-Takathur' in one Rak'ah and 'Al-Qari'ah' in the one before it, or 'Al-Asr' in the second, is according to the Sunnah. Here, a complaint from the followers is foolishness, except in a case where a sick or weak

elderly person cannot even bear that much, then there is a command for even more shortening there.

In Fath al-Qadir, it is said: "We have discussed that lengthening (the prayer) is..."

In Fath al-Qadir, it is said: "We have discussed that the recitation..."

1. Sahih Bukhari, Chapter: When the Imam lengthens, etc. Printed by Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/97-98, 2/902.
2. Al-Hidayah, Chapter: Leadership (Imamate), Printed by Al-Maktabah al-Arabiyyah, Karachi, 1/101.

फ़तावा रज़विया, खंड 6

इस पर अमल करें, अन्यथा लंबे, मध्यम और छोटे (सूरतों) के हिसाब का ध्यान रखें। सीमित गुंजाइश के लिए, बहुत सारे मुक्तदियों (नमाज़ियों) का कमज़ोर होना या काम की ज़रूरत में होना ज़रूरी नहीं है, बल्कि सिर्फ़ एक का ऐसा होना काफ़ी है। यहाँ तक कि अगर एक हज़ार लोगों की जमात है और फज्र की नमाज़ है और काफ़ी वक़्त है, और 999 लोग दिल से चाहते हैं कि इमाम बड़ी-बड़ी सूरतें पढ़े, लेकिन एक व्यक्ति बीमार या कमज़ोर बूढ़ा है या किसी काम की ज़रूरत में है कि उस पर लंबी नमाज़ बोझ होगी और उसे तकलीफ़ होगी, तो इमाम के लिए हराम है कि वह नमाज़ को लंबा करे। बल्कि उन हज़ार में से उस एक का ध्यान रखते हुए नमाज़ पढ़ाए। जिस तरह मुस्तफ़ा ﷺ ने सिर्फ़ उस औरत और उसके बच्चे के ख़्याल से फज्र की नमाज़ मुअव्वज़तैन (आख़िरी दो सूरतें) से पढ़ा दी ﷺ। और हज़रत मुआज़ इब्ने जबल (रज़ियल्लाहु अन्हु) पर लंबी नमाज़ पढ़ाने पर बहुत सख़्त नाराज़गी ज़ाहिर की, यहाँ तक कि आपका मुबारक चेहरा जलाल की तीव्रता से लाल हो गया और फ़रमाया:

क्या तुम लोगों को फ़ित्ने में डालने वाले हो, ऐ मुआज़? क्या तुम लोगों को फ़ित्ने में डालने वाले हो, ऐ मुआज़? क्या तुम लोगों को फ़ित्ने में डालने वाले हो, ऐ मुआज़? जैसा कि सहीह संकलनों (सहाह) आदि में है। और हिदाया में मरफ़ूअ है कि रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया: "जो व्यक्ति किसी क़ौम का इमाम बने, वह उन्हें उनके सबसे कमज़ोर व्यक्ति के हिसाब से नमाज़ पढ़ाए, क्योंकि उनमें बीमार, बूढ़े और ज़रूरतमंद भी होते हैं।"

क्या तुम लोगों को फ़ित्ने में डालने वाले हो, क्या तुम लोगों को फ़ित्ने में डालने वाले हो, क्या तुम लोगों को फ़ित्ने में डालने वाले हो, ऐ मुआज़! जैसा कि सहाह आदि में है। हिदाया में नबी अकरम ﷺ से रिवायत है कि जो व्यक्ति किसी क़ौम का इमाम बने, वह उन्हें उनके कमज़ोरों के लिहाज़ से नमाज़ पढ़ाए क्योंकि उनमें बीमार, बूढ़े और ज़रूरतमंद भी होंगे (त)।

इस बयान से साफ़ हुआ कि इमाम का मग़रिब में सूरह 'अश-शम्स' या 'अद-दुहा' पढ़ना, या पहली रकत में 'अफ़-हसिबल्लज़ीना कफ़रू' और दूसरी में 'इन्ना लिल-मुत्तक़ीना' पढ़ना सुन्नत के ख़िलाफ़ है और तीनों से अलग है। न तो ये 'क़िसार मुफ़स्सल' (छोटी सूरतें) में से हैं, न ही दोनों रकतों में सिर्फ़ दस आयतें हैं, और न ही ऐसा है कि मुक्तदियों पर बोझ न पड़ा हो। ऐसी स्थिति में मुक्तदियों की शिकायत जायज़ है और इमाम पर (उनकी बात मानना) लाज़िम है। हाँ, एक रकत में 'अलहाकुमुत-तकाथुर' और उससे पहले वाली में 'अल-क़ारिया' या दूसरी में 'अल-अस्र' पढ़ना सुन्नत के मुताबिक़

है। यहाँ मुक्तदियों की शिकायत बेवकूफी है। लेकिन इस हालत में भी कि अगर कोई बीमार या कमज़ोर बूढ़ा इतना भी बर्दाश्त नहीं कर सकता, तो वहाँ इससे भी कमी (तख़फ़ीफ़) का हुक्म है।

फ़तह अल-क़दीर में है: "हमने इस पर बहस की है कि लंबी नमाज़ पढ़ाना वह है..."	**फ़तह अल-क़दीर में है: "हमने इस पर बहस की है कि जो क़िरात है..."**

1. सहीह बुख़ारी, अध्याय: जब इमाम लंबा करे, आदि। पुरानी कुतुब खाना, कराची द्वारा प्रकाशित, 1/97-98, 2/902।
2. अल-हिदाया, अध्याय: इमामत, अल-मकतबा अल-अरबिय्या, कराची द्वारा प्रकाशित, 1/101।

पृष्ठ 325/736

پر عمل کرے ورنہ وہی طول و اوساط و قصار کا حساب ملحوظ رکھے اور قلت گنجائش کے لئے زیادہ مقتدیوں کا ناتواں یا کام کا ضرورت مند ہونا درکار نہیں بلکہ صرف ایک کا ایسا ہونا کافی ہے یہاں تک کہ اگر ہزار آدمی کی جماعت ہے اور صبح کی نماز ہے اور خوب وسیع وقت ہے اور جماعت میں ۹۹۹ آدمی دل سے چاہتے ہیں کہ امام بڑی بڑی سورتیں پڑھے مگر ایک شخص بیمار یا ضعیف بوڑھا یا کسی کام کا ضرورت مند ہے کہ اس پر تطویل بار ہوگی اسے تکلیف پہنچے گی تو امام کو حرام ہے کہ تطویل کرے بلکہ ہزار میں سے اس ایک کے لحاظ سے نماز پڑھائے جس طرح مصطفٰی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے صرف اس عورت اور اسکے بچے کے خیال سے نمازِ فجر معوذتین سے پڑھا دی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم، اور معاذ ابن جبل رضی اللہ تعالٰی عنہ پر تطویل میں سخت ناراضی فرمائی یہاں تک کہ رخسارہ مبارک شدتِ جلال سے سرخ ہوگئے اور فرمایا:

افتان انت یا معاذ افتان انت یا معاذ افتان انت یا معاذ کما في الصحاح وغیرھا وفی الھدایۃ مرفوعا لقولہ علیہ الصلوۃ والسلام من ام قوما فلیصل بھم صلوۃ اضعفھم فان فیھم المریض والکبیر وذا الحاجۃ -

کیا تو لوگوں کو فتنہ میں ڈالنے والا ہے، کیا تو لوگوں کو فتنہ میں ڈالنے والا ہے کیا تو لوگوں کو فتنہ میں ڈالنے والا ہے اے معاذ ! جیسا کہ صحاح وغیرہا میں ہے ہدایہ میں نبی اکرم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم سے مروی ہے کہ جو شخص کسی قوم کا امام بنے وہ انھیں ان کے ضعیف کے اعتبار سے نماز پڑھائے کیونکہ ان میں مریض، بوڑھے اور صاحب حاجت بھی ہوں گے (ت)

اس بیان سے واضح ہوا کہ امام کا مغرب میں سورہ والشمس یا والضحیٰ یا اول میں افحسب الذین کفروا دوسری میں ان للمتقین یہ دونوں رکوع پڑھنا خلاف سنت اور تینوں سے الگ ہوا کہ نہ یہ قصار مفصل سے ہے نہ دونوں رکعت میں صرف دس آیت نہ یہی کہ مقتدیوں پر گراں نہ گزرا ایسی حالت میں مقتدیوں کی شکایت بر محل ہے اور امام پر ضرور لازم ہے ہاں الہکم التکاثر ایک رکعت میں اور اس سے پہلی میں القارعۃ یا دوسری میں والعصر پڑھنا مطابق سنت ہے یہاں مقتدیوں کی شکایت حماقت ہے مگر اس حال میں کہ کوئی بیمار یا بوڑھا ناتواں اس قدر کا تحمل نہ رکھتا ہو تو وہاں اس سے بھی تخفیف کا حکم ہے

فی فتح القدیر قد بحثنا ان التطویل ھو فتح القدیر میں ہے ہم نے اس پر بحث کی ہے کہ قرآۃ

1 صحیح بخاری باب اذا طول الامام الخ مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/۹۸-۹۷ ، ۲/۹۰۲ 2 الہدایہ باب الامامۃ مطبوعہ المکتبۃ العربیہ کراچی ۱/۱۰۱

Fatawa Razawiyya Volume VI

[Top Box Text] Arabic: The addition to the Sunnah recitation; for he (peace and blessings of Allah be upon him) forbade it, and his recitation was the Sunnah one. Thus, what he forbade must be something other than what was his habit, except out of necessity. (End). The rest of the matters we mentioned are well-known in 'Al-Durr al-Mukhtar', 'Radd al-Muhtar', and other common books, so there is no need to cite the texts. Urdu Translation: It refers to the length and addition that exceeds the Sunnah recitation, because you (peace and blessings of Allah be upon him) forbade such addition and your recitation was the Sunnah recitation itself. Therefore, what you prohibited was other than this Sunnah practice, except at the time of necessity. (End). And other issues that we have mentioned are well-known in Durr-e-Mukhtar, Radd-ul-Muhtar, and other common books; therefore, there is no need to mention all the texts. (T) And Allah Subhanu wa Ta'ala knows best.

Problem No. 481: 27 Shawwal 1318 AH What do the scholars of religion say regarding this issue: Zaid, after 'Alhamdulillah' (Surah Fatiha) and three or more verses in prayer, said 'The Messenger of Allah said', then performed Ruku' or recited more from the Holy Quran. In this case, is the prayer valid or not? And is a prostration of forgetfulness (Sajda Sahw) required? Explain and be rewarded.

Answer: If by using these words he intended to answer someone's talk, for example, if someone asked 'How is such-and-such Hadith?' and he said 'The Messenger of Allah said', and then immediately remembered the prayer and became silent; or if initially he intended to address someone, for example, seeing someone doing a forbidden act and wanting to recite a prohibiting Hadith to them, and with the intention of addressing them he said 'The Messenger of Allah said', then remembered and said nothing further—in these two cases, the prayer will definitely be invalidated.

[Bottom Box Text] Arabic: Just as they (the jurists) have specified regarding words that are purely remembrance (dhikr) and praise (thana), like 'La ilaha illAllah', 'La hawla wa la quwwata illa billah', 'Inna ilaihi raji'un', etc., that if the intention behind them is to answer or address, then how about words that are not purely dhikr and thana? Urdu Translation: Just as the jurists have specified regarding these words which are purely remembrance and praise; for example, 'La ilaha illAllah', 'La hawla wa la quwwata illa billah', and 'Inna lillahi wa inna ilaihi raji'un', and other words—when the intention behind them is to answer someone or address someone, (the

prayer is invalidated). So what would be the state of those words which are not purely dhikr and thana? (T)

Footnote: 1. Fath al-Qadir Sharh al-Hidaya, Chapter on Imamate, printed by Nooriya Razawiyya, Sukkur, 1/305. Page 326 of 736

[ऊपरी बॉक्स पाठ] अरबी: सुन्नत किरअत (पाठ) पर ज़्यादती; क्योंकि आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने इससे मना फ़रमाया है और आपकी किरअत सुन्नत किरअत ही थी। लिहाज़ा जिससे आपने रोका वह उस सुन्नत के अलावा ही थी, सिवाय ज़रूरत के। (अह)। बाक़ी जो मसाइल हमने ज़िक्र किए वह 'दुर्रे मुख्तार', 'रद्दुल मुहतार' और अन्य प्रचलित किताबों में प्रसिद्ध हैं, इसलिए तमाम इबारतों के ज़िक्र की ज़रूरत नहीं। उर्दू अनुवाद: इसमें वह लंबाई और ज़्यादती मुराद है जो सुन्नत किरअत पर हो, क्योंकि आपने (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ऐसी ही ज़्यादती से मना फ़रमाया है और आपकी किरअत सुन्नत किरअत ही थी, लिहाज़ा जिससे आपने रोका वह इस सुन्नत के अलावा हुई मगर ज़रूरत के समय। (अह)। और अन्य मसाइल जो हमने ज़िक्र किए हैं, वे दुर्रे मुख्तार, रद-उल-मुहतार और अन्य प्रचलित पुस्तकों में प्रसिद्ध हैं, इसलिए सभी इबारतों का उल्लेख करने की आवश्यकता नहीं है। (त) और अल्लाह सुब्हानहु व तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 481: 27 शव्वाल 1318 हिजरी दीन के उलेमा इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि ज़ैद ने नमाज़ में सूरह फ़ातिहा और तीन या उससे ज़्यादा आयतों के बाद कहा 'क़ाल रसूलुल्लाह' (अल्लाह के रसूल ने फ़रमाया), फिर रुकू कर दिया या क़ुरआन मजीद की तिलावत की, तो इस सूरत में नमाज़ हुई या नहीं? और सजदा-ए-सह्व की ज़रूरत है या नहीं? बयान फ़रमाएं सवाब पाएं।

जवाब: अगर इस लफ़्ज़ से उसने किसी शख़्स की बात का जवाब देने का इरादा किया, मिसाल के तौर पर किसी ने पूछा कि फलां हदीस किस तरह है, उसने कहा 'क़ाल रसूलुल्लाह' और फ़ौरन नमाज़ का ख्याल आ गया और खामोश हो गया; या शुरू ही में किसी से मुख़ातिब होने (संबोधन) का इरादा किया, जैसे किसी को कोई मना किया हुआ काम करते देखा और उसे मनाही वाली हदीस सुनाना चाही, और उसे संबोधित करने की नियत से कहा 'क़ाल रसूलुल्लाह' फिर याद आ गया और आगे नहीं कहा—तो इन दो सूरतों में नमाज़ ज़रूर फ़ासिद (टूट) हो जाएगी।

[निचला बॉक्स पाठ] अरबी: जैसा कि उन्होंने (फ़ुक़हा ने) उन शब्दों के बारे में स्पष्ट किया है जो विशुद्ध रूप से ज़िक्र (स्मरण) और सना (प्रशंसा) हैं, जैसे 'ला इलाहा इल्लल्लाह', 'ला हौला व ला कुव्वता इल्ला बिल्लाह', 'इन्ना इलैहि राजिऊन' आदि, कि यदि उनके पीछे का इरादा जवाब देना या संबोधित करना है, तो उन शब्दों के बारे में क्या जो विशुद्ध रूप से ज़िक्र और सना नहीं हैं? उर्दू अनुवाद: जैसे कि फ़ुक़हा ने इन शब्दों के बारे में स्पष्ट किया है जो केवल ज़िक्र और सना ही हैं;

उदाहरण के लिए, 'ला इलाहा इल्लल्लाह', 'ला हौला व ला कुव्वता इल्ला बिल्लाह' और 'इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन' और अन्य शब्द—जब उनसे मक़सद किसी का जवाब देना या किसी को संबोधित करना हो (तो नमाज़ टूट जाती है)। तो उन शब्दों का क्या हाल होगा जो केवल ज़िक्र और सना नहीं हैं? (त)

पाद टिप्पणी: 1. फ़त्हुल क़दीर शरह हिदाया, बाबुल इमामत, मतबुआ नूरिया रज़विया सक्खर, 1/305. पृष्ठ 736 का 326

فتاوی رضویہ جلد ششم

[اوپری باکس کا متن] عربی: الزيادة على القرأة المسنونة فانه صلى الله تعالى عليه وسلم نهى عنه وكانت قرأته هي المسنونة فلا بد من كون مانهى عنه غير ما كان دأبه الا لضرورة اھ وباقی ما ذکرنا من المسائل معرفة في الدر المختار ورد المحتار وغيرهما من الكتب المتداولة فلا حاجة بأيراد العبارات۔ اردو: میں طوالت وہ زیادتی ہے جو قرات مسنونہ پر ہو ، کیونکہ آپ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے ایسی ہی زیادتی سے منع فرمایا ہے اور آپ کی قرات قرات مسنونہ ہی تھی لہذا جس سے آپ نے روکا وہ اس مسنونہ کے علاوہ ہوئی مگر ضرورت کے وقت اھ اور دیگر مسائل جو ہم نے ذکر کئے وہ درمختار ، ردالمحتار اور دیگر متداول کتب میں معروف ہیں اس لئے تمام عبارات کے تذکرے کی ضرورت نہیں (ت) واللہ سبحانہ وتعالی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۴۸۱: ۲۷ شوال ۱۳۱۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید نے نماز میں بعد الحمد للہ اور تین یا زائد آیتوں کے کہا قال رسول اللہ پھر رکوع کر دیا یا قرآن مجید اور تلاوت کی تو اس صورت میں نماز ہوئی یا نہیں؟ اور سجدہ سہو حاجت ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: اگر اس لفظ سے اُس نے کسی شخص کی بات کا جواب دینے کا قصد کیا مثلاً کسی نے پوچھا فلاں حدیث کس طرح ہے اُس نے کہا قال رسول اللہ اور معاً نماز کا خیال آگیا خاموش ہو رہا یا ابتداءً کسی سے خطاب کا ارادہ کیا مثلاً کسی کو کوئی فعل ممنوع کرتے دیکھا اسے حدیث ممانعت سنانی چاہی اس کے خطاب کی نیت سے کہا قال رسول اللہ پھر یاد آگیا آگے نہ کہا تو ان دو صورتوں میں ضرور نماز فاسد ہو جائیگی۔

[نچلے باکس کا متن] عربی: کما نصوا علیه فیما هو ذکر و ثنا محض کلا اله الا الله و لا حول ولا قوة الا بالله و انا الیه راجعون و غیر ذلك اذا قصد به الجواب او الخطاب فکیف ما لیس کذلک۔ اردو: جیسے کہ فقہاء نے ان الفاظ کے بارے میں تصریح کی ہے جو کہ فقط ذکر و ثناء ہی ہیں مثلاً لا الہ الا اللہ ، لا حول ولا قوۃ الا باللہ اور انا للہ و انا الیہ راجعون اور دیگر کلمات جب ان سے مقصد کسی کا جواب یا کسی کو خطاب ہو تو ان کلمات کا کیا حال ہو گا جو محض ذکر و ثناء نہیں (ت)

فٹ نوٹ: 1 فتح القدیر شرح ہدایہ باب الامامۃ مطبوعہ نوریہ رضویہ سکھر ۱/۳۰۵ صفحہ 326 از 736

Fatawa Razvia Volume Six

And if these situations were not present, then its specific details are not currently in view, and the apparent words of the noble scholars are that if this person was accustomed to reciting Hadith and according to that habit, "Qala Rasulullah" (the Messenger of Allah said) came out of his tongue, then the prayer would be invalidated, as it is from his own speech and is not praise or supplication, but rather giving news. (T) And if it was not so, then the prayer would not be invalidated because this sentence is a part of a noble verse: "But the Messenger of Allah said to them, '[It is] the she-camel of Allah and [let her have] her drink'" [Quran 91:13]. (T) It is stated in Bahr-ur-Raiq, Durr-e-Mukhtar, and others:

If the word "Na'am" (yes) occurs on his tongue; if this person is accustomed to frequently bringing the word "Na'am" in his speech, then his prayer is invalidated. And if mentioning this word is not his habit, then the prayer will not be invalidated because this word is present in the Holy Quran, therefore it will be considered as part of the Quran instead of [regular] speech. (T)	**If the word 'Na'am' flows upon his tongue; if this man is accustomed to [saying] 'Na'am' in his speech, his prayer is invalidated, and if it is not a habit for him, it is not invalidated because this word is in the Quran, so it is made a part of it.[2]**

And there is no need for prostration of forgetfulness (Sajdah Sahw) in any condition except if the last situation is found in which the prayer is permissible, and due to forgetfulness, he remained silent thinking for as long as a pillar of prayer could be performed; then because of this lapse, Sajdah Sahw will become necessary, as in At-Tanwir. (It is similarly stated in At-Tanwir. T) And Allah Almighty knows best.

Problem No. 482 to 487: 10 Jumada al-Ula 1319 AH What do the scholars of religion say regarding these matters: 1. Is it permissible or not to read while omitting the 'Alif' of 'Allah'? 2. Is it Sunnah or not to pronounce the 'Lam' of 'Allah' with full voice (thickly)? 3. Is it permissible or not to read the 'Alif' of 'Allah' in Takbirs with some elongation? 4. Doubt occurred in the first sitting (Qa'da-e-Ula) but there was no certainty, and he performed Sajdah Sahw; is the prayer valid or not? 5. In a prayer where no forgetfulness occurred, but Sajdah Sahw was performed, is the prayer valid or not? 6. Should one pray with hands together or separately? Explain, may you be rewarded.

[1] Al-Quran 91/13 [2] Al-Bahr-ur-Raiq, Chapter: What invalidates prayer etc., printed by HM Saeed Company, Karachi, 8/2.

और अगर ये स्थितियाँ नहीं थीं, तो इसका विवरण इस समय नज़र में नहीं है, और विद्वानों के स्पष्ट शब्दों से यह प्रतीत होता है कि यदि यह व्यक्ति हदीस पढ़ने का आदी था और उसी आदत के अनुसार उसकी ज़ुबान से 'क़ाल रसूलुल्लाह' (अल्लाह के रसूल ने कहा) निकला, तो नमाज़ अमान्य हो जाएगी क्योंकि यह उसकी अपनी बातचीत है और यह प्रशंसा या प्रार्थना नहीं है बल्कि समाचार देना है। (त) और यदि ऐसा नहीं था, तो नमाज़ अमान्य नहीं होगी क्योंकि यह वाक्य एक पवित्र आयत का हिस्सा है: "परन्तु अल्लाह के रसूल ने उनसे कहा, '[यह] अल्लाह की ऊंटनी है और [इसे] पीने दो'" [क़ुरान 91:13]। (त) बहर-उल-राईक़ और दुर-ए-मुख़्तार आदि में है:

यदि उसकी ज़ुबान पर 'नअम' (हाँ) शब्द आ जाए; यदि यह व्यक्ति अपनी बातचीत में 'नअम' शब्द का अक्सर उपयोग करने का आदी है, तो उसकी नमाज़ अमान्य हो जाएगी। और यदि इस शब्द का उल्लेख करना उसकी आदत नहीं है, तो नमाज़ अमान्य नहीं होगी क्योंकि यह शब्द पवित्र क़ुरान में मौजूद है, इसलिए इसे बातचीत के बजाय क़ुरान का हिस्सा माना जाएगा। (त)

यदि 'नअम' शब्द उसकी ज़ुबान पर सहज आ जाए; यदि यह व्यक्ति अपनी बातचीत में 'नअम' का आदी है, तो उसकी नमाज़ अमान्य हो जाती है, और यदि यह उसके लिए आदत नहीं है, तो वह अमान्य नहीं होती है क्योंकि यह शब्द क़ुरान में है, इसलिए इसे उसका हिस्सा बना दिया जाता है।[2]

और किसी भी स्थिति में सजदा-ए-सहव (भूल की माफ़ी का सजदा) की आवश्यकता नहीं है, सिवाय इसके कि अंतिम स्थिति पाई जाए जिसमें नमाज़ जायज़ हो, और भूलवश वह इतनी देर तक चुप रहकर कुछ सोचता रहा जितनी देर में नमाज़ का एक अरकान (स्तंभ) पूरा किया जा सकता हो; तो इस देरी के कारण सजदा-ए-सहव अनिवार्य हो जाएगा, जैसा कि अत-तनवीर में है। (तनवीर में भी ऐसा ही है। त) और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है।

मसला नंबर 482 से 487: 10 जमादी-उल-उला 1319 हिजरी धर्म के विद्वान इन मामलों में क्या कहते हैं: 1. 'अल्लाह' के अलिफ़ को हटाकर पढ़ना जायज़ है या नहीं? 2. 'अल्लाह' के लाम को मोटा (पुर) पढ़ना सुन्नत है या नहीं? 3. तकबीरों में 'अल्लाह' के अलिफ़ को थोड़ा खींचकर पढ़ना जायज़ है या नहीं? 4. पहले क़ायदे (कअदा-ए-उला) में संदेह हुआ लेकिन कोई निश्चितता नहीं थी, और उसने सजदा-ए-सहव कर लिया; क्या नमाज़ जायज़ है या नहीं? 5. जिस नमाज़ में कोई भूल नहीं हुई और

सजदा-ए-सहव किया गया, क्या वह नमाज़ जायज़ है या नहीं? 6. हाथ जोड़कर दुआ करनी चाहिए या अलग-अलग करके? स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिले।

---

[1] अल-क़ुरान 91/13 [2] अल-बहर-उल-राईक़, अध्याय: जो नमाज़ को अमान्य करता है आदि, एचएम सईद कंपनी, कराची द्वारा मुद्रित, 8/2।

اور اگر یہ صورتیں نہ تھیں تو اس کا جزئیہ اس وقت نظر میں نہیں اور ظاہر کلام علمائے کرام سے یہ ہے کہ اگر یہ شخص حدیث خوانی کا عادی تھا اُس عادت کے مطابق زبان سے قال رسول اللہ نکلا تو نماز فاسد ہوگئی لا نہ من کلامہ و لیس ثناء او دعاء بل اخبار (کیونکہ یہ اس کا اپنا کلام ہے ثناء اور دعا نہیں بلکہ خبر دینا ہے۔ ت) اور اگر ایسا نہ تھا تو نماز فاسد نہ ہوگی کہ یہ جملہ آیت کریمہ کا ٹکڑا ہے قَالَ لَهُمْ رَسُولُ اللّٰهِ نَاقَةَ اللّٰهِ وَسُقْيٰهَا 1 (اللہ تعالٰی کا ارشاد مبارک ہے تو ان سے اللہ کے رسول نے فرمایا اللہ تعالٰی کے ناقہ اور اس کی پینے کی باری سے بچو۔ ت) بحر الرائق و در مختار وغیرہما میں ہے:

اگر کسی زبان پر لفظ نعم جاری ہو گیا تو اگر وہ آدمی ایسا ہے جو اپنے کلام میں لفظ نعم کو اکثر لاتا رہتا ہے تو نماز فاسد ہوگی، اور اگر اس کلمہ کو ذکر کرنا اس کی عادت نہیں تو نماز فاسد نہ ہوگی، کیونکہ یہ کلمہ قرآن پاک میں موجود ہے لہٰذا اسے کلام کی بجائے قرآن پاک کا حصہ ہی سمجھا جائے گا۔(ت)

لو جری علی لسانہ نعم ان کان ھذا الرجل یعتاد فی کلامہ نعم تفسد صلوتہ و ان لم یکن عادۃ لہ لا تفسد لان ھذہ الکلمۃ فی القرآن فتجعل منہ 2

اور سجدہ سہو کی کسی حالت میں حاجت نہیں مگر یہ کہ صورت اخیرہ پائی گئی ہو جس میں جواز نماز ہے اور بوجہ سہو اتنی دیر تک چپکا کچھ سوچتا رہا ہو جس قدر دیر میں ایک رکن ادا ہو سکے تو اس سقوط کے باعث سجدہ سہو لازم آئے گا کما فی التنویر (تنویر میں اسی طرح ہی ہے۔ ت) واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ نمبر ۴۸۲ تا ۴۸۷: ۱۰ جمادی الاولیٰ ۱۳۱۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین ان مسائل میں: ۱۔ اللہ کے الف کو حذف کر کے پڑھے تو جائز ہے یا نہیں؟ ۲۔ الف کے لام کو پُر کرنا سُنت ہے یا نہیں؟ ۳۔ الف اللہ کو تکبیرات میں کچھ دراز کر کے پڑھنا جائز ہے یا نہیں؟ ۴۔ قعدہ اولیٰ میں شک ہوا مگر یقین نہیں اور سجدہ سہو کیا تو نماز جائز یا نہیں؟ ۵۔ جس نماز میں سہو نہ ہوا اور سجدہ سہو کیا تو نماز جائز ہے یا نہیں؟ ۶۔ ہاتھ ملا کر دُعا چاہئیے یا علیحدہ علیحدہ کرے۔ بینوا توجروا۔

---

1 القرآن ۱۳/۹۱ 2 البحرالرائق باب یفسد الصلوۃ الخ مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۸/۲

Fatawa Ridawiyya Volume Six

The Answer: (1) Prayer is permissible, but if done intentionally, it is forbidden and a sin. (2) Yes, it is a continuous Sunnah when it is preceded by a Fatha or Damma. (3) Lengthening it slightly is recommended; it is called 'Madd-e-Ta'zeem' (Madd of Glorification). Lengthening it excessively such that it constitutes a gross departure from moderation is disliked (Makruh). And if, God forbid, it is done as a musical tune such that extra letters are produced, like 'Aa-Allah-tu', then it invalidates the prayer. (4) It is permissible. (5) Prostration of forgetfulness (Sajdah Sahw) without necessity is an addition to the prayer and is prohibited, but the prayer will be valid. However, if this is an Imam and a follower who joined late (Masbuq), i.e., he did not catch some Rakat, joins in this unnecessary prostration, his prayer will be invalidated because he followed the Imam in a position where he should have been praying alone. (T) (6) There should be some distance between both hands.

In Dur-re-Mukhtar: "He should spread his hands opposite his chest towards the sky because the sky is the Qiblah for supplication, and there should be a gap between them." In Radd al-Muhtar: "Even if it is a small gap." Qunyah (T). And Allah the Exalted knows best.

Issue No. 488: From Old City, Baans Bareilly, Kankar Tola, 7 Shawwal 1319 AH. Zaid prays a four-rakat prayer in this manner: in the first rakat after Surah Al-Fatiha he recites Surah Yasin, in the second Surah Ad-Dukhan, in the third Surah Tanzil, and in the fourth Surah Al-Mulk. Will praying in this manner be against the order or not? And which Surah is meant by 'Tanzil'? Explain and be rewarded.

The Answer: This prayer in this specific sequence has been mentioned in a Hadith for the memorization of the Quran. It is narrated by Hadrat Abdullah bin Abbas (may Allah be pleased with them) in Jami' Tirmidhi that 'Surah Tanzil' refers to Surah Alif Lam Mim Tanzil as-Sajdah.

Footnotes: 1. Dur-re-Mukhtar, Section: When he intends to start prayer, etc., published by Mujtabai, Delhi, 1/71. 2. Radd al-Muhtar, Section explaining the composition of prayer, published by Mustafa al-Babi, Egypt, 3/451.

जवाब: (१) नमाज़ जायज़ है मगर जानबूझकर करना हराम और गुनाह है। (२) हाँ, यह सुन्नत-ए-मुतवारिसा है जबकि इससे पहले फत्हा या ज़म्मा हो। (३) थोड़ा लंबा करना मुस्तहब है, इसे 'मद-ए-ताज़ीम' कहते हैं। और बहुत ज़्यादा लंबा करना कि एतिदाल की हद से बाहर निकल जाए, मकरूह है। और अगर मआज़ अल्लाह, गाने के अंदाज़ में हो जिससे ज़्यादा अक्षर पैदा हों जैसे 'आ-अल्लाहु-तू', तो यह नमाज़ को फासिद (खराब) कर देता है। (४) जायज़ है। (५) बिना ज़रूरत के सजदा सहव नमाज़ में ज़्यादती है और मना है, मगर नमाज़ हो जाएगी। हाँ, अगर यह इमाम है और जो मुक़्तदी मस्बूक था, यानी जिसने कुछ रकअतें नहीं पाई थीं, वह अगर इस बिना ज़रूरत के सजदे में शामिल हुआ तो उसकी नमाज़ बातिल हो जाएगी क्योंकि उसने अकेलेपन के मक़ाम पर इक़्तिदा की। (त) (६) दोनों हाथों के बीच कुछ फ़ासला हो।

'दुर्रे मुख़्तार' में है: वह अपने दोनों हाथ अपने सीने के बराबर आसमान की तरफ फैलाए क्योंकि आसमान दुआ का क़िब्ला है और उनके बीच फ़ासला हो। 'रद्दुल मुहतार' में है: चाहे थोड़ा फ़ासला ही हो। क़ुनिया (त)। और अल्लाह सुब्हानहु व तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर ४८८: मोहल्ला शहर कुहना, बांस बरेली, कांकरटोला, ७ शव्वाल १३१९ हिजरी। ज़ैद चार रकअत वाली नमाज़ इस तरह पढ़ता है: पहली रकअत में सूरह फ़ातिहा के बाद सूरह यासीन शरीफ़, दूसरी में सूरह दुखान शरीफ़, तीसरी में सूरह तंज़ील, चौथी में सूरह मुल्क। क्या इस तरह नमाज़ पढ़ना तरतीब के खिलाफ होगा या नहीं? और तंज़ील से कौन सी सूरह मुराद है? बयान फरमाएं और सवाब पाएं।

जवाब: यह नमाज़ इसी तरतीब से हदीस में क़ुरआन हिफ़्ज़ करने के लिए बयान की गई है। जामे तिर्मिज़ी शरीफ़ में हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु तआला अन्हुमा से मरवी है कि 'सूरह तंज़ील' सूरह अलिफ़ लाम मीम तंज़ील अस-सजदा है।

फुटनोट्स: 1. दुर्रे मुख़्तार, फ़स्ल: जब वह नमाज़ शुरू करने का इरादा करे, आदि, मतबुआ मुज्तबाई, दिल्ली, १/७१। 2. रद्दुल मुहतार, फ़स्ल: नमाज़ की तर्किब के बयान में, मतबुआ मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, ३/४५१।

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

الجواب: (۱) نماز جائز مگر قصداً کرے تو حرام و گناہ۔ (۲) ہاں سنّت متوارثہ ہے جبکہ اس سے پہلے فتحہ یا ضمہ ہو۔ (۳) تھوڑا دراز کرنا تو مستحب ہے اسے مدِ تعظیم کہتے ہیں اور زیادہ دراز کرنا کہ حدِ اعتدال سے خروج فاحش ہو مکروہ اور اگر معاذ اللہ تان کے طور پر ہو کہ کچھ حروف زوائد پیدا ہوں مثل آلتو مفسد نماز ہے۔ (۴) جائز ہے (۵) بے حاجت سجدہ سہو نماز میں زیادت اور ممنوع ہے مگر نماز ہو جائے گی۔ ہاں اگر یہ امام ہے تو جو مقتدی مسبوق تھا یعنی بعض رکعات اس نے نہیں پائی تھیں وہ اگر اس سجدہ بے حاجت میں اسکا شریک ہوا تو اس کی نماز جاتی رہے گی لانّہ اقتدی فی محل الانفراد (کیونکہ اس نے محلِ انفراد میں اس کی اقتدا کی۔ ت) (۶) دونوں ہاتھوں میں کچھ فاصلہ ہو،

في الدرالمختار یبسط یدیه حذاء صدره نحو السماء لانها قبلة الدعاء ویکون بینهما فرجة 1 في ردالمحتار ای وان قلت قنیة 2 واللہ سبحنہ و تعالٰی اعلم۔ دُرّ مختار میں ہے وہ اپنے دونوں ہاتھ اپنے سینہ کے برابر آسمان کی طرف پھیلائے کیونکہ آسمان دعا کا قبلہ ہے اور ان کے درمیان فاصلہ ہو۔ ردالمحتار میں ہے اگرچہ تھوڑا فاصلہ ہی ہو ، قنیہ (ت)

مسئلہ نمبر ۴۸۸: از شہر کہنہ بانس بریلی کانکرٹولہ ۷ شوال ۱۳۱۹ھ نماز چار رکعت میں زید اس طرح پڑھتا ہے اول رکعت میں بعد سورہ فاتحہ سورہ یٰس شریف، دوسری میں سورہ دخان شریف، تیسری میں سورہ تنزیل، چوتھی میں سورہ ملک، اس طرح سے یہ نماز پڑھنا خلافِ ترتیب ہوگا یا نہیں اور تنزیل سے کون سی سورہ مراد ہے؟ بینواتو جروا۔

الجواب: یہ نماز اسی ترتیب سے حدیث میں حفظِ قرآن کے لئے ارشاد ہوئی ہے، جامع ترمذی شریف میں حضرت عبداللہ بن عباس رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے مروی ہے سورہ تنزیل سورہ الم تنزیل السجدۃ ہے۔

1 در مختار فصل وادارا دشروع في الصلوة الخ مطبوعہ مجتبائی دہلی ۷۱/۱ 2 ردالمحتار فصل فی بیان تالیف الصلوة مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۴۵۱/۳

Volume Six Fatawa Razawiyya

The complete name has appeared in the Tirmidhi narration. There is no violation of order in this at all, because every pair (shaf'a) of Nawafil (supererogatory prayers) is a separate prayer. There is no doubt that in the order of the Great Quran, Surah Yasin is before Ha Mim ad-Dukhan, and Tanzil as-Sajdah is before Surah al-Mulk. Thus, the order was maintained within each pair. Even if, considering all four, Tanzil as-Sajdah comes first, then Yasin, then Dukhan, and then Mulk, this is not against the order because each pair is a separate prayer. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 489: 2 Ramadan-ul-Mubarak 1330 AH What do the scholars of the religion say about this issue: if a person in prayer, in Surah Fatiha, recites the words 'nastaeen' and 'mustaqeem' as 'nasa'een' and 'masqeem' without the 'ta', will his prayer be void, disliked, or not? Please answer; it will be a cause of reward.

The Answer: The prayer will be valid due to idgham (merging/incorporation), but it is disliked. Due to innovation, there is no minor idgham in al-Fatiha, as stated in Ghaith an-Naf' (because he invented this himself; there is no idgham in Fatiha, as explicitly mentioned in Ghaith an-Naf'). And Allah Almighty knows best.

Problem No. 490: 20 Rabi-ul-Awwal Sharif 1312 AH What do the scholars of religion and the clear Shariah say about these matters: is it obligatory to recite one verse from Surah Fatiha in prayer, or is it obligatory to recite one verse from another Surah besides it? For example, Zaid offered prayer and forgot after reciting only 'Alhamdulillah rabbil alameen', performed bowing (ruku) and prostration (sujud), did Sajda-e-Sahw (prostration for forgetfulness), and said Salam. In this state, was Zaid's prayer valid or not? And also, the second scenario is that the Imam led the prayer and he forgot the first Tashahhud, and the follower (muqtadi) said 'At-tahiyyatu lillah' twice before the Imam stood up, but the Imam stood up, recited aloud, and after reciting only Surah Fatiha, performed bowing and Sajda-e-Sahw. In this case, was there any deficiency in the follower's prayer? And also in the case where the Imam forgot the recitation and the follower prompted him, but the Imam did not accept it, was there any deficiency in the follower's prayer? And if the congregational prayer for Zuhr is ongoing, should one join it, and when is it best to pray the remaining four units (rak'ahs) of Sunnah? Should one pray two first or all four? Explain and be rewarded.

The Answer: Reciting one verse of the Holy Quran, whether it be from Surah Fatiha or any other Surah, is obligatory (fard). There is no specific requirement for Fatiha nor

for any other specific Surah. He who forgot after reciting only 'Alhamdulillah rabbil alameen' and performed bowing, the obligation (fard) of the prayer will be fulfilled.

तिर्मिज़ी की रिवायत में यही पूरा नाम आया है। इसमें तरतीब (क्रम) के विरुद्ध कुछ भी नहीं है क्योंकि नफ़्ल का हर शफ़अ (दो रकात) एक अलग नमाज़ है। इसमें कोई संदेह नहीं कि कुरान-ए-अज़ीम की तरतीब में सूरह यासीन, हामिम अद-दुखान से पहले है और तनज़ील अस-सजदा सूरह मुल्क से पहले है। अतः प्रत्येक शफ़अ में तरतीब का पालन किया गया। यदि चारों के लिहाज़ से सबसे पहले तनज़ील अस-सजदा हो, फिर यासीन, फिर दुखान और फिर मुल्क, तो यह तरतीब के खिलाफ नहीं है क्योंकि प्रत्येक शफ़अ एक अलग नमाज़ है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर ४८९: २ रमज़ान अल मुबारक १३३० हिजरी दीन के विद्वान इस मसले में क्या कहते हैं कि यदि कोई व्यक्ति नमाज़ में सूरह फ़ातिहा में 'नस्तईन' और 'मुस्तक़ीम' शब्दों की जगह 'नसईन' और 'मुसक़ीम' बिना 'ता' के पढ़े, तो क्या उसकी नमाज़ बातिल (अमान्य) होगी या मकरूह (नापसंद) या नहीं? उत्तर दें, सवाब का कारण होगा।

उत्तर: नमाज़ हो जाएगी इद्ग़ाम (मिलाने) के कारण, लेकिन मकरूह है। इबादत में अपनी ओर से नई चीज़ (एहदास) शामिल करने के कारण फ़ातिहा में कोई छोटा इद्ग़ाम नहीं है जैसा कि ग़ैथ अन-नफ़अ में स्पष्ट किया गया है (क्योंकि उसने यह स्वयं बनाया है; फ़ातिहा में इद्ग़ाम नहीं है जैसा कि ग़ैथ अन-नफ़अ में स्पष्ट रूप से उल्लेखित है)। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर ४९०: २० रबी-उल-अव्वल शरीफ़ १३१२ हिजरी दीन के विद्वान और स्पष्ट शरीअत इन मसलों में क्या कहते हैं कि सूरह फ़ातिहा से एक आयत की तिलावत करना नमाज़ में फ़र्ज़ है या उसके अलावा दूसरी सूरह में से एक आयत पढ़ना फ़र्ज़ है? उदाहरण के लिए, ज़ैद ने नमाज़ पढ़ी और केवल 'अल्हम्दुलिल्लाहि रब्बिल आलमीन' पढ़कर भूल गया और रुकू व सुजूद किया और सजदा-ए-सह्व किया और सलाम फेरा। इस स्थिति में ज़ैद की नमाज़ हुई या नहीं? और दूसरी स्थिति यह है कि इमाम साहब ने नमाज़ पढ़ाई और वह पहला तशह्हुद करना भूल गए और मुक्तदी (अनुयायी) ने इमाम के खड़े होने से पहले दो बार 'अत-तहिय्यातु लिल्लाह' कहा, लेकिन इमाम साहब खड़े हो गए और ज़ोर से क़िरात (पाठ) की और केवल सूरह फ़ातिहा पढ़कर रुकू किया और सजदा-ए-सह्व किया। इस स्थिति में मुक्तदी की नमाज़ में कोई कमी आई या नहीं? और इस स्थिति में कि इमाम साहब क़िरात भूल गए और मुक्तदी ने लुक़्मा दिया (याद दिलाया) और इमाम साहब ने नहीं लिया, तो क्या मुक्तदी की नमाज़ में कोई कमी आई? और ज़ुहर के समय यदि जमात (सामूहिक

नमाज़) हो रही हो तो उसमें शामिल हो जाना चाहिए, और चार रकात सुन्नत जो रह गई हैं, उनका पढ़ना किस समय बेहतर है? पहले दो पढ़ें या चारों? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: पवित्र कुरान की एक आयत, चाहे वह सूरह फ़ातिहा से हो या किसी भी सूरह से, पढ़ना फ़र्ज़ है। न तो फ़ातिहा के लिए कोई विशेष शर्त है और न ही किसी अन्य सूरह के लिए। जो व्यक्ति केवल 'अल्हम्दुलिल्लाहि रब्बिल आलमीन' पढ़कर भूल गया और रुकू कर दिया, उसकी नमाज़ का फ़र्ज़ अदा हो जाएगा।

पृष्ठ ३२९ / ७३६

روایت ترمذی میں یہی پورا نام آیا ہے اس میں خلافِ ترتیب اصلاً نہیں کہ نفل کا ہر شفع نماز جداگانہ ہے اور شک نہیں کہ ترتیب قرآن عظیم سورہ یسین شریف حم الدخان سے مقدم ہے اور تنزیل السجدہ سورہ ملک سے ، تو رعایت ترتیب ہر شفع میں ہو گئی اگر چاروں کے لحاظ سے سب سے پہلے تنزیل السجدہ ہے پھر یس پھر دخان پھر ملک یہ مخالف ترتیب نہیں کہ ہر شفع صلاۃ علیحدہ ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۴۸۹: ۲ رمضان المبارک ۱۳۳۰ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ اگر کوئی شخص نماز میں سورہ فاتحہ میں لفظ نستعین اور مستقیم کی جگہ نسعین اور مسقیم بدون تاء کے پڑھے تو اس کی نماز باطل ہو گی یا مکروہ یا نہیں؟ جواب دیجئے موجب ثواب ہے۔

الجواب: نماز ہو جائے گی لاجل الادغام (ادغام کی وجہ سے۔ت) مگر کراہت ہے۔ لاجل الاحداث فلا ادغام صغیرا فی الفاتحہ کما نص علیہ فی غیث النفع (کیونکہ اس نے یہ خود ایجاد کیا ہے فاتحہ میں ادغام نہیں ہے جیسا کہ غیث النفع میں اس پر تصریح موجود ہے۔ت) واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۴۹۰: ۲۰ ربیع الاول شریف ۱۳۱۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و شرع متین ان مسائل میں کہ سورہ فاتحہ سے ایک آیت کا تلاوت کرنا نماز میں فرض ہے یا اس کے ماسوا دوسری سورت میں سے ایک آیت پڑھنا فرض ہے مثلاً زید نے نماز پڑھی اور فقط الحمدللہ رب العالمین پڑھ کر بھول گیا اور رکوع و سجود کیا اور سجدہ سہو کیا سلام پھیرا اس حالت میں نماز زید کی ہوئی یا نہیں؟ اور نیز دوسری صورت یہ ہے کہ امام صاحب نے نماز پڑھائی اور وہ تشہد کرنا اول کا بھول گئے اور مقتدی نے دو مرتبہ کھڑے ہونے امام سے پیشتر کہا التحیات للہ مگر امام صاحب

کھڑے ہو گئے اور قرات بالجہر پڑھی اور فقط سورہ فاتحہ پڑھ کر رکوع کیا اور سجدہ سہو کیا اس صورت میں مقتدی کی نماز میں کوئی نقصان آیا یا نہیں؟ اور نیز اس صورت میں کہ امام صاحب قرات بھول گئے اور مقتدی نے لقمہ دیا اور امام صاحب نے نہیں لیا تو نماز مقتدی میں کوئی نقصان آیا یا نہیں؟ اور وقت ظہر میں اگر جماعت ہو رہی ہو تو شریک ہو جاوے اور چار رکعت سنت جو رہیں ان کا پڑھنا کس وقت اولیٰ ہے آیا دو پہلے پڑھے یا چار؟ بینوا توجروا۔

الجواب: قرآن مجید کی ایک آیت سورہ فاتحہ سے ہو خواہ کسی سورت سے پڑھنا فرض ہے نہ خاص فاتحہ کی تخصیص ہے نہ کسی سورت کی، جو فقط الحمد للہ رب العالمین پڑھ کر بھول گیا اور رکوع کر دیا نماز کا فرض ساقط ہو جائیگا

Vol. 6 - Fatawa Rizvia However, it became deficient because a 'Wajib' (obligation) was omitted. Reading Surah Al-Fatiha completely is one Wajib, and besides it, reading one long verse or three short verses from any other Surah is another Wajib. If 'Alhamdulillah' (Al-Fatiha) was forgotten, and one was prevented from performing the first Wajib, one was not unable to perform the second Wajib. By contenting oneself with only one verse and going into Ruku (bowing), an intentional omission of a Wajib occurred.

[Table Content] Arabic Text: On what is apparent, the sequence of the Surah after Al-Fatiha is the third Wajib, just as not separating them with something extraneous is the fourth Wajib. Therefore, dropping the obligation of the Surah due to inability to recite Fatiha does not seem apparent in what is observed. And Allah Almighty knows best. Urdu Text: As is clear, the sequence in Fatiha and the Surah is the third Wajib, just as avoiding separation between them with something extraneous is the fourth Wajib. Thus, apparently, being unable to recite Fatiha cannot be a cause for dropping the obligation of the Surah. And Allah Almighty knows best. (T)

And an intentional omission of a Wajib cannot be rectified by Sajdah Sahw (prostration for forgetfulness); hence, it is mandatory to repeat the prayer. However, if one forgot such that neither the rest of Fatiha was remembered nor any verses from the Holy Quran, and perforce performed Ruku, and Fatiha and verses did not come to mind until going into prostration, then Sajdah Sahw is sufficient. But if they come to mind before going into prostration, whether in Ruku or in Qawmah after Ruku, it is mandatory to complete the recitation and repeat the Ruku. If the recitation is not completed, then it will again be an intentional omission of a Wajib and the prayer must be repeated. And if the recitation is completed after Ruku but the Ruku is not repeated, the prayer itself is lost because a 'Fard' (mandatory act) was omitted.

[Table Content] Arabic Text: And that is because the Ruku is nullified by returning to recitation because it is a Fard, and whatever is recited, even if it is the entire Great Quran, only one Fard will be fulfilled, as they (jurists) have explicitly stated. Urdu Text: This is because the Ruku ended due to returning towards recitation because recitation is Fard, and however much recitation is done, even if it is the recitation of the entire Holy Quran, only one Fard will be fulfilled, as the jurists have explicitly stated. (T)

(3) When the Imam forgot the first sitting (Qa'da) and was about to stand up but was not yet standing straight, there is no harm in the follower (Muqtadi) indicating it; in

fact, one should. Yes, if the Imam has completely stood up after omitting the first sitting, then it is not permissible to indicate it. If a follower indicates it then, his prayer will be lost. And if the Imam acts upon his indication, everyone's prayer will be lost because it is prohibited (Haraam) to return for the first sitting after standing up completely. So now, the follower's indication is merely improper, rather it is calling towards something forbidden and is unnecessary speech, which invalidates the prayer.

खंड 6 - फतावा रज़विया लेकिन यह अपूर्ण हो गया क्योंकि एक 'वाजिब' (अनिवार्य कार्य) छूट गया। सूरह अल-फातिहा को पूर्ण रूप से पढ़ना एक वाजिब है, और इसके अलावा किसी अन्य सूरह से एक लंबी आयत या तीन छोटी आयतें पढ़ना दूसरा वाजिब है। यदि 'अल्हम्दुलिल्लाह' (फातिहा) भूल गए थे, और पहले वाजिब को करने से रोका गया था, तो दूसरे वाजिब को करने में असमर्थ नहीं थे। केवल एक आयत पर संतोष करके रुकू(झुकना) कर देने में जानबूझकर वाजिब का त्याग हुआ।

[तालिका सामग्री] अरबी पाठ: जैसा कि स्पष्ट है, अल-फातिहा के बाद सूरह का क्रम तीसरा वाजिब है, जैसे कि उनके बीच किसी बाहरी वस्तु के साथ अलगाव न करना चौथा वाजिब है। इसलिए, फातिहा पढ़ने में असमर्थता के कारण सूरह की अनिवार्यता को समाप्त करना स्पष्ट प्रतीत नहीं होता। और अल्लाह सर्वशक्तिमान बेहतर जानता है। उर्दू पाठ: जैसा कि स्पष्ट है, फातिहा और सूरह में क्रम तीसरा वाजिब है, जिस प्रकार उनके बीच बाहरी चीज़ के साथ अलगाव न करना चौथा वाजिब है। अतः स्पष्ट रूप से, फातिहा पढ़ने में असमर्थ होना सूरह की अनिवार्यता को समाप्त करने का कारण नहीं बन सकता। और अल्लाह सर्वशक्तिमान बेहतर जानता है। (त)

और जानबूझकर छोड़े गए वाजिब को सजदा सहव (भूल के लिए किया जाने वाला सजदा) द्वारा सुधारा नहीं जा सकता, इसलिए नमाज़ दोबारा पढ़ना अनिवार्य है। हाँ, यदि कोई इस प्रकार भूल गया कि न तो शेष फातिहा याद आई और न ही पवित्र कुरान से कहीं की आयतें, और विवश होकर रुकू कर दिया और सजदे में जाने तक फातिहा और आयतें याद नहीं आईं, तो अब सजदा सहव पर्याप्त है। और यदि सजदे में जाने से पहले, चाहे रुकू में या रुकू के बाद कौमा में याद आ जाएं तो अनिवार्य है कि पाठ (किरात) पूरा किया जाए और रुकू को दोबारा किया जाए। यदि पाठ पूरा नहीं किया गया, तो यह फिर से जानबूझकर वाजिब का त्याग होगा और नमाज़ दोबारा पढ़नी पड़ेगी। और यदि रुकू के बाद पाठ पूरा कर लिया और रुकू दोबारा नहीं किया, तो नमाज़ ही जाती रही क्योंकि 'फर्ज' (अनिवार्य कृत्य) छूट गया।

[तालिका सामग्री] अरबी पाठ: और वह इसलिए है क्योंकि रुकू पाठ की ओर लौटने से निरस्त हो जाता है क्योंकि यह एक फर्ज है, और जो कुछ भी पढ़ा जाए, चाहे वह पूरा महान कुरान ही क्यों न हो, केवल एक ही फर्ज पूरा होगा, जैसा कि उन्होंने (फुकहा ने) स्पष्ट रूप से कहा है। उर्दू पाठ: इसलिए कि पाठ की ओर लौटने के कारण रुकू खत्म हो गया क्योंकि पाठ फर्ज है और पाठ जितना भी किया जाए, चाहे पूरे कुरान पाक का पाठ हो, उससे एक ही फर्ज अदा होगा जैसा कि इस पर फुकहा ने स्पष्ट किया है। (त)

(3) जब इमाम पहला कायदा (बैठना) भूलकर उठने लगा और अभी सीधा खड़ा नहीं हुआ था, तो मुक्तदी (पीछे नमाज़ पढ़ने वाले) के बताने में कोई हर्ज नहीं है, बल्कि बताना ही चाहिए। हाँ, यदि पहला कायदा छोड़कर इमाम पूरा खड़ा हो जाए, तो उसके बाद बताना जायज़ नहीं है। यदि मुक्तदी बताएगा तो उसकी नमाज़ जाती रहेगी। और यदि इमाम उसके बताने पर अमल करेगा तो सबकी नमाज़ चली जाएगी क्योंकि पूरा खड़ा हो जाने के बाद पहले कायदे के लिए लौटना हराम है। तो अब मुक्तदी का बताना केवल अनुचित ही नहीं बल्कि हराम की ओर बुलाना और बिना ज़रूरत की बातचीत है, जो नमाज़ को बिगाड़ने वाली है।

पृष्ठ 330/736

جلد ششم - فتاوی رضویہ مگر ناقص ہوئی کہ واجب ترک ہوا الحمد شریف تمام و کمال پڑھنا ایک واجب ہے اور اس کے سوا کسی دوسری سورت سے ایک آیت بڑی یا تین آیتیں چھوٹی پڑھنا واجب ہے، اگر الحمد للہ بھولاتھا اور واجب اول کے ادا کرنے سے باز رکھا گیا تو واجب دوم کے ادا سے عاجز نہ تھا فقط ایک ہی آیت پر قناعت کر کے رکوع کر دینے میں قصداً ترک واجب ہوا،

[جدول کا مواد] عربی عبارت: علی ماھو الظاھر وترتیب السورۃ علی الفاتحۃ واجب ثالث کمان ترك الفصل بینھما باجنبی واجب رابع فاسقاط وجوب السورۃ للعجز عن الفاتحۃ لا یظھر فیما یظھر واللہ تعالی اعلم۔ اردو عبارت: جیسا کہ واضح ہے فاتحہ اور سورت میں ترتیب تیسرا واجب جس طرح ان کے درمیان اجنبی کے ساتھ ترک فصل چوتھا واجب ہے پس بظاہر فاتحہ سے عاجز آنا وجوب سورت کے اسقاط کا سبب نہیں بن سکتا ، واللہ تعالیٰ اعلم (ت)

اور جو واجب قصداً چھوڑا جائے سجدہ سہو اس کی اصلاح نہیں کر سکتا تو واجب ہے کہ نماز دوبارہ پڑھے، ہاں اگر ایسا بھولا کہ نہ بقیہ فاتحہ یاد آتا ہے نہ قرآن عظیم سے کہیں کی آیتیں اور ناچار رکوع کر دیا اور سجدے میں جانے تک فاتحہ وآیات یاد نہ آئیں تو اب سجدہ سہو کافی ہے اور اگر سجدہ کو جانے سے پہلے رکوع میں خواہ قومہ بعد الرکوع میں یاد آجائیں تو واجب ہے کہ قرات پوری کرے اور رکوع کا پھر اعادہ کرے اگر قرات پوری نہ کی تو اب پھر قصداً ترک واجب ہو گا اور نماز کا اعادہ کرنا پڑے گا اور اگر قرات بعد الرکوع پوری کر لی اور رکوع دوبارہ نہ کیا تو نماز ہی جاتی رہی کہ فرض ترک ہوا۔

[جدول کا مواد] عربی عبارت: وذلك لان الرکوع یرتفض بالعود الی القرأۃ لانھا فریضۃ وکل ما یقرأ ولو القرآن العظیم کلہ فانما یقع فرضا کما نصوا علیہ۔ اردو عبارت: اس لئے کہ قرات کی طرف لوٹنے کی وجہ سے رکوع ختم ہو گیا کیونکہ قرات فرض ہے اور قرات جتنی بھی کی جائے خواہ

تمام قرآن پاک کی قرات ہو اس سے ایک ہی فرض ادا ہو گا جیسا کہ اس پر فقہاء نے تصریح کی ہے۔ (ت)

(۳) جبکہ امام پہلا قعدہ بھول کر اٹھنے کو ہوا اور ابھی سیدھا نہ کھڑا ہوا تھا تو مقتدی کے بتانے میں کوئی ہرج نہیں بلکہ بتانا ہی چاہئے، ہاں اگر پہلا قعدہ چھوڑ کر امام پورا کھڑا ہو جائے تو اس کے بعد بتانا جائز نہیں اگر مقتدی بتائے گا تو اس کی نماز جاتی رہے گی اور اگر امام اس کے بتانے پر عمل کرے گا تو سب کی جائیگی کہ پورا کھڑا ہو جانے کے بعد قعدہ اولی کے لئے لوٹنا حرام ہے تو اب مقتدی کا بتانا محض بیجا بلکہ حرام کی طرف بلانا اور بلا ضرورت کلام ، ہوا وہ مفسد نماز

Fatawa Rizwia Volume Six

In recitation, giving a correct prompt (luqmah) is absolutely permissible, whether the prayer is obligatory (fard) or optional (nafl), and whether the Imam has recited more than three verses or less. In this situation, giving a prompt does not cause any harm to the follower's (muqtadi's) prayer. Yes, if the mistake made by the Imam altered the meaning and invalidated the prayer, and the follower prompted him but he did not accept it and continued reciting incorrectly, then the Imam's prayer is invalidated, and consequently, the prayers of all the followers are also invalidated. If the mistake did not invalidate the prayer, everyone's prayer remains valid even if the Imam persisted in the mistake and did not take the prompt. If the Imam recited correctly but the follower was mistaken and gave an incorrect prompt, then that follower's prayer is invalidated in any case. Furthermore, if the Imam did not accept the incorrect prompt, his prayer and those of the other followers remain valid, but if he did accept it, everyone's prayer is invalidated. If the initial Sunnahs of Zuhr prayer were not performed, there are two opinions among scholars, and both are strong: one is that one should first perform the two Sunnahs after the Fard and then the four initial Sunnahs; the other is the reverse, that after the Fard, one should perform the four initial Sunnahs first and then the two. The first opinion is stronger because it aligns with the explicit text of the Hadith (li-mutaabaqati nass-il-hadith as-sarih). And Allah, the Glorified and Exalted, knows best.

Problem No. 491: 4 Shawwal 1321 AH What do the scholars of religion say regarding the issue of whether reciting long chapters (Tiwal-e-Mufassal) in Fajr and Isha prayers is Sunnah or not? And if it is at a time when it is early and long chapters can be easily recited, yet the Imam recites short ones like 'Alam tara' etc., causing followers to be deprived of the full congregational reward, would this congregation be against the Sunnah and disliked (makruh) due to such opposition? Please explain and be rewarded.

The Answer: The Great Quran from Surah al-Hujurat to the end is called 'Mufassal'. It consists of three parts: 'Tiwal-e-Mufassal' from Hujurat to al-Burooj, 'Awsat-e-Mufassal' from al-Burooj to Lam Yakun (al-Bayyinah), and 'Qisar-e-Mufassal' from Lam Yakun to an-Nas. The Sunnah is that in Fajr and Zuhr, one complete surah from Tiwal-e-Mufassal should be recited in each raka'ah; in Asr and Isha, one complete surah from Awsat-e-Mufassal in each raka'ah; and in Maghrib, one complete surah from Qisar-e-Mufassal in each raka'ah. If time is short or if there is a sick person, an elderly person, or someone with an urgent need participating in the congregation

who would face distress and hardship with long recitation, then it is mandatory to take them into consideration. Recite only as much as allows the prayer to be completed before the time becomes disliked and so as not to cause distress to the follower. Even if in the morning (Fajr) one recites 'Inna A'taina' and 'Qul Huwallahu Ahad', this is considered Sunnah under such circumstances. However, when these two conditions (short time/hardship) are absent, abandoning the mentioned method and reciting short chapters (Qisar-e-Mufassal) in Fajr or Isha is harmful, against the Sunnah, and disliked, though the prayer will be valid. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 492: 21 Rabi al-Akhir 1323 AH What do the scholars of religion and jurists of the clear Shari'ah say regarding the issue of how loud one should say the word 'Ameen' behind the Imam? If fellow worshippers who are in the second or third row hear it, is there any harm or not?

फ़तावा रज़विया जिल्द शशम (छठी)

क़िरात में सही लुक़्मा (सुधार) देना मुतलक़न (पूरी तरह) जाइज़ है, चाहे नमाज़ फ़र्ज़ हो या नफ़्ल, चाहे इमाम तीन आयतों से ज़्यादा पढ़ चुका हो या कम। तो ऐसी सूरत में लुक़्मा देने से मुक़्तदी की नमाज़ में कोई नुक़सान नहीं होता। हाँ, अगर वह ग़लती जो इमाम ने की वह म'अनी बदलने वाली और नमाज़ को फासिद (खराब) करने वाली थी और मुक़्तदी ने बताया और उसने नहीं लिया और उसी तरह ग़लत पढ़ कर आगे चल दिया, तो इमाम की नमाज़ जाती रही और उसके सबब से सब मुक़्तदियों की भी गई। और अगर ग़लती मुफ़्सिदे नमाज़ (नमाज़ तोड़ने वाली) न थी तो सबकी नमाज़ हो गई चाहे इमाम ग़लती पर क़ायम रहा और लुक़्मा न लिया। और अगर इमाम ने सही पढ़ा और मुक़्तदी को धोखा हुआ कि उसने ग़लत बताया तो उस मुक़्तदी की नमाज़ हर तरह जाती रही। फिर अगर इमाम ने (वह ग़लत लुक़्मा) न लिया तो इमाम और दीगर मुक़्तदियों की नमाज़ सही रही और अगर ले लिया तो सबकी गई। ज़ुहर की पहली सुन्नतें न पढ़ी हों तो उलमा के दोनों क़ौल (विचार) हैं और दोनों ताक़तवर हैं: एक यह कि फ़र्ज़ के बाद की दो सुन्नतें पहले पढ़े फिर वे चार सुन्नतें पढ़े, दूसरे इसका उल्टा कि फ़र्ज़ के बाद पहले चार पहली पढ़े फिर दो, और पहला क़ौल ज़्यादा मज़बूत है क्योंकि वह हदीस के स्पष्ट शब्दों के मुताबिक़ है। वल्लाहु सुब्हानहू व तआला आलम (और अल्लाह पाक सबसे बेहतर जानता है)।

मसला नंबर 491: 4 शव्वाल 1321 हिजरी उलमा-ए-दीन इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि क्या नमाज़े फ़ज्र और इशा में 'तिवाल-ए-मुफ़स्सल' (लंबी सूरतें) पढ़ना सुन्नत है या नहीं? और अगर ऐसा वक़्त हो कि इब्तिदाई वक़्त हो और लंबी सूरतें आसानी से पढ़ी जा सकेंगी और इमाम 'अलम तरा' वग़ैरह से पढ़ा दे और मुक़्तदी जमाअत (की पूर्णता) से महरूम रहें, तो क्या यह जमाअत सुन्नत के खिलाफ़ और मुख़ालफ़त की वजह से मकरूह होगी या नहीं? बय्यान फरमाएँ सवाब पाएँ।

जवाब: क़ुरआन-ए-अज़ीम सूरह हुजुरात से आख़िर तक 'मुफ़स्सल' कहलाता है। इसके तीन हिस्से हैं: हुजुरात से बुरूज तक 'तिवाल-ए-मुफ़स्सल', बुरूज से लम् यकुन तक 'औसात-ए-मुफ़स्सल', लम् यकुन से नास तक 'क़िसार-ए-मुफ़स्सल'। सुन्नत यह है कि फ़ज्र और ज़ुहर में हर रकअत में एक पूरी सूरत 'तिवाल-ए-मुफ़स्सल' से पढ़ी जाए, और अस्र व इशा में हर रकअत में एक मुकम्मल सूरत 'औसात-ए-मुफ़स्सल' से, और मग़रिब की हर रकअत में एक सूरत कामिला 'क़िसार-ए-मुफ़स्सल' से। अगर वक़्त तंग हो या जमाअत में कोई बीमार या बूढ़ा या किसी शदीद ज़रूरत वाला शरीक हो जिस पर इतनी देर में ईज़ा (तकलीफ़) और हर्ज होगा, तो उसका लिहाज़ करना लाज़िम है। जितना वक़्त

मकरूह न होने पाए और उस मुक़्तदी को तकलीफ़ न हो उतना ही पढ़ें, चाहे सुबह में 'इन्ना आतैना' और 'कुल हुवल्लाहु अहद' हों, यही सुन्नत है। और जब ये दोनों बातें (वक़्त की कमी/मजबूरी) न हों तो इस तरीके को छोड़ना और सुबह या इशा में 'क़िसार-ए-मुफ़स्सल' पढ़ना नुक़सानदेह, खिलाफ़-ए-सुन्नत और मकरूह है, मगर नमाज़ हो जाएगी। वल्लाहु तआला आलम।

मसला नंबर 492: 21 रबी-उल-आख़िर 1323 हिजरी उलमा-ए-दीन और मुफ़्तियाने शरअ मतीन इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि इमाम के पीछे लफ्ज़ 'आमीन' को कितनी आवाज़ से कहे? अगर बराबर वाले नमाज़ी जो उससे दूसरे या तीसरे दर्जे पर हैं सुन लें, तो कोई हर्ज है या नहीं?

पृष्ठ 331 का 736

ہے قرات میں صحیح لقمہ دینا مطلقاً جائز ہے نماز فرض ہو خواہ نفل امام تین آیات سے زائد پڑھ چکا ہو خواہ کم تو اس صورت میں لقمہ دینے سے مقتدی کی نماز میں کچھ نقصان نہیں، ہاں اگر وہ غلطی کہ امام نے کی مغیر معنی مفسد نماز تھی اور مقتدی نے بتایا اور اس نے نہ لیا اُسی طرح غلط پڑھ کر آگے چل دیا تو امام کی نماز جاتی رہی اور اس کے سبب سے سب مقتدیوں کی بھی گئی اور اگر غلطی مفسد نماز نہ تھی تو سب کی نماز ہو گئی اگرچہ امام غلطی پر قائم رہا اور لقمہ نہ لیا اور امام نے صحیح پڑھا مقتدی کو دھوکا ہوا کہ اس نے غلط بتایا تو اس مقتدی کی نماز ہر طرح جاتی رہی پھر اگر امام نے نہ لیا تو امام اور دیگر مقتدیوں کی نماز صحیح رہی اور اگر لے لیا تو سب کی گئی۔ ظہر کی پہلی سنتیں نہ پڑھی ہوں تو علماء کے دونوں قول ہیں اور دونوں باقوت ہیں ایک یہ کہ فرض کے دو سنتیں پہلے پڑھے پھر وہ چار سنتیں پڑھے دوسرے اس کا عکس کہ فرض کے بعد پہلے چار پہلی پڑھے پھر دو، اور پہلا قول زیادہ قوی ہے لمطابقۃ لنص الحدیث الصریح (کیونکہ وہ حدیث صریح کے الفاظ کے مطابق ہے-ت) واللہ سبحنہ وتعالی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۴۹۱: ۴ شوال ۱۳۲۱ ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ نماز فجر وعشاء میں سورہ طوال پڑھنا مسنون ہے یا نہیں؟ اور اگر ایسے وقت کہ ابتدائی وقت ہو اور طولی بآسانی پڑھی جائے گی اور الم تر وغیرہ سے پڑھا دے اور مقتدی جماعت سے محروم رہیں تو جماعت خلاف سنت اور مخالفت سے جماعت مکروہ ہو گی یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: قرآن عظیم سورہ حجرات سے آخر تک مفصل کہلاتا ہے اس کے تین حصے ہیں حجرات سے بروج تک طوال مفصل، بروج سے لم یکن تک اوساط مفصل، لم یکن سے ناس تک قصار

مفصل۔ سنت یہ ہے کہ فجر و ظہر میں ہر رکعت میں ایک پوری سورت طوال مفصل سے پڑھی جائے اور عصر و عشاء میں ہر رکعت میں ایک کامل سورت اوساط مفصل سے اور مغرب کے ہر رکعت میں ایک سورت کاملہ قصار مفصل سے۔ اگر وقت تنگ ہو یا جماعت میں کوئی مریض یا بوڑھا یا کسی شدید ضرورت والا شریک جس پر اتنی دیر میں ایذا و تکلیف وحرج ہوگا تو اس کا لحاظ کرنا لازم ہے جس قدر میں وقت مکروہ نہ ہونے پائے اور اس مقتدی کو تکلیف نہ ہو اسی قدر پڑھیں اگرچہ صبح میں انا اعطینا و قل ھو اللہ احد ہوں یہی سنت ہے اور جب یہ دونوں باتیں نہ ہوں تو اس طریقہ مذکورہ کا ترک کرنا صبح یا عشاء میں قصار مفصل پڑھنا ضرر و خلاف سنت و مکروہ ہے مگر نماز ہو جائے گی واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۴۹۲: ۲۱ ربیع الاخر ۱۳۲۳ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ امام کے پیچھے لفظ آمین کو کس قدر آواز سے کہے اگر برابر والے نمازی جو اس سے دوسرے یا تیسرے درجے پر ہیں سنیں تو کوئی حرج ہے یا نہیں؟

Fatawa Rizvia Volume 6 (2) Except for the word 'Amen', at what volume should other recitations be made? (3) If the smell of hookah or tobacco from the mouth of someone smoking is felt by another person in prayer, is there any problem? Please explain and be rewarded. Answer: (1-2) Everyone should say 'Amen' softly, whether it be the Imam, the follower (muqtadi), or one praying alone; this is the Sunnah. And the follower should recite everything softly: whether it's 'Amen', 'Takbir', 'Tasbeeh', 'At-Tahiyyat', 'Durood', 'Subhanaka Allahumma', etc. And 'reciting softly' means that it should be at a volume capable of reaching one's own ears, even if one doesn't hear it because they are deaf or there is noise at that time. If no sound is produced at all and only the tongue moves, then that will not be considered 'reciting' and whatever was Fard (obligatory), Wajib (necessary), Sunnah, or Mustahabb (recommended) will not be fulfilled. If a Fard is not fulfilled, then the prayer itself is invalid; for omitting a Wajib, one becomes a sinner and repeating the prayer remains Wajib; for omitting a Sunnah, there is reprimand and the prayer becomes Makruh (disliked); and for omitting a Mustahabb, one is deprived of reward. Furthermore, a sound that is capable of reaching one's own ears will likely reach the person sitting next to them as well; there is no harm in this. Such a sound should be produced as if whispering a secret into someone's ear; it is necessary that the person sitting right next to them also hears it, but it will still be called reciting softly. Allah Almighty knows best. (3) It is Makruh to pray while having a bad odor in the mouth, and it is Haraam (forbidden) to enter the mosque in such a state until the mouth is cleaned. Causing distress to another person praying is Haraam, and even if there is no other person praying, the angels are distressed by the bad odor. It is in the Hadith: "Indeed, the angels are offended by what offends the children of Adam." Allah | Because angels suffer from everything that the children Almighty knows best | of Adam suffer from. (t) Problem No. 495: Al-Hamd Shareef (Surah Al-Fatiha) is part of the Quran; why was it made Wajib in prayer? And why was joining a Surah made Fard? If a person praying forgets Al-Hamd, then Sajda-e-Sahw (prostration of forgetfulness) becomes Wajib upon them, but if they forget to recite subsequent verses, the prayer is invalidated and Sajda-e-Sahw is not prescribed in its place; what is the reason for this? Also, Al-Hamd was deemed Wajib, but a follower behind an Imam does not recite Al-Hamd, and since not reciting Al-Hamd necessitates Sajda-e-Sahw, how then is the follower's prayer valid without performing Sajda-e-Sahw? Please explain and be rewarded.

1 Sahih Muslim, Chapter: Prohibition of eating garlic and onions, etc., Qadimi Kutub Khana, As-sah al-Matabi' Karachi, 1/209. Page 332 of 736

फ़तावा रिज़विया जिल्द छठी (२) 'आमीन' शब्द के अलावा और कुछ पढ़ना हो तो कितनी आवाज़ से पढ़ना चाहिए? (३) हुक्का या तम्बाकू पीने वाले के मुँह की गंध नमाज़ में दूसरे नमाज़ी को महसूस हो तो क्या कोई बुराई है? बयान फ़रमाएं पुण्य मिलेगा। उत्तर: (१-२) आमीन सभी को धीरे से कहना चाहिए, चाहे वह इमाम हो, मुक्तदी (अनुयायी) हो या अकेले नमाज़ पढ़ने वाला; यही सुन्नत है। और मुक्तदी को सब कुछ धीरे ही पढ़ना चाहिए: चाहे वह आमीन हो, तकबीर हो, तस्बीह हो, अत-तय्यियात और दरूद हो, या 'सुब्हानकल्लाहुम्मा' आदि। और 'धीरे पढ़ने' का अर्थ यह है कि आवाज़ अपने कान तक पहुँचने के योग्य हो, भले ही वह व्यक्ति खुद बहरा होने के कारण या उस समय शोर-शराबे के कारण न सुन सके। और अगर आवाज़ बिल्कुल भी पैदा न हुई और केवल जीभ हिली, तो वह पढ़ना, 'पढ़ना' नहीं कहलाएगा और जो कुछ फ़र्ज़, वाजिब, सुन्नत या मुस्तहब था, वह अदा नहीं होगा। यदि फ़र्ज़ अदा न हुआ तो नमाज़ ही नहीं हुई; वाजिब छोड़ने पर वह गुनहगार हुआ और नमाज़ दोबारा पढ़ना वाजिब रहा; सुन्नत छोड़ने पर डांट-फटकार है और नमाज़ मकरूह (नापसंद) है; और मुस्तहब छोड़ने पर सवाब (पुण्य) से वंचित रहेगा। फिर जो आवाज़ अपने कान तक पहुँचने के योग्य होगी, वह संभवतः पास वाले को भी सुनाई देगी; इसमें कोई हर्ज नहीं है। ऐसी आवाज़ आनी चाहिए जैसे किसी के कान में मुँह रखकर राज़ की बात कहते हैं; यह आवश्यक है कि जो सटा हुआ बैठा हो वह भी उसे सुने, फिर भी इसे धीरे कहना ही कहेंगे। अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है। (३) मुँह में बदबू होने की स्थिति में नमाज़ मकरूह है और ऐसी स्थिति में मस्जिद में जाना हराम है जब तक कि मुँह साफ़ न कर ले। दूसरे नमाज़ी को तकलीफ़ पहुँचाना हराम है, और अगर दूसरा नमाज़ी न भी हो, तो बदबू से फरिश्तों (मलैका) को तकलीफ़ पहुँचती है। हदीस में है: "बेशक, फरिश्ते उन चीज़ों से तकलीफ़ पाते हैं जिनसे आदम की औलाद (इंसान) तकलीफ़ पाती है।" अल्लाह | क्योंकि फरिश्ते हर उस चीज़ से तकलीफ पाते हैं जिससे बनी तआला सबसे बेहतर जानता है | आदम तकलीफ पाते हैं। (त) मसला नंबर ४९५: अल-हम्द शरीफ़ (सूरह फातिहा) क़ुरआन शरीफ़ से है; नमाज़ में इसे वाजिब क्यों किया गया? और सूरह मिलाना क्यों फ़र्ज़ रखा गया? और यदि नमाज़ी अल-हम्द भूल जाए तो उस पर सज्दा-ए-सह्व वाजिब होता है, और यदि आयतें पढ़ना भूल जाए तो नमाज़ जाती रहती है, उसके बदले सज्दा-ए-सह्व नहीं रखा गया, इसका क्या कारण है? और अल-हम्द वाजिब ठहरी और मुक्तदी इमाम के पीछे अल-हम्द नहीं पढ़ता है, और चूँकि अल-हम्द न पढ़ने से सज्दा-ए-सह्व अनिवार्य होता है, तो फिर उस मुक्तदी की नमाज़ बिना सज्दा-ए-सह्व किए कैसे सही हो जाती है? बयान फ़रमाएं पुण्य मिलेगा।

1 सहीह मुस्लिम, बाब: लहसुन और प्याज आदि खाने की मनाही, क़दीमी कुतुब ख़ाना, अस-सह अल-मत़ाबी कराची, १/२०९। पेज ३३२ का ७३६

فتاوی رضویہ جلد ششم (۲) سوائے لفظ آمین کے اور کچھ پڑھے تو کس قدر آواز سے پڑھنا چاہئے؟ (۳) حقہ، تمباکو پینے والے کے منہ کی بو نماز میں دوسرے نمازی کو معلوم ہوئی تو کوئی قباحت تو نہیں؟ بینوا توجروا۔ الجواب: (۱-۲) آمین سب کو آہستہ کہنا چاہئے امام ہو خواہ مقتدی خواہ اکیلا یہی سنت ہے، اور مقتدی کو سب کچھ آہستہ ہی پڑھنا چاہئے آمین ہو خواہ تکبیر، خواہ تسبیح ہو خواہ التحیات و درود، خواہ سبحنك اللھم وغیرہ۔ اور آہستہ پڑھنے کے یہ معنی ہیں کہ اپنے کان تک آواز آنے کے قابل ہو اگر چہ بوجہ اس کے یہ خود بہرا ہے یا اس وقت کوئی غل و شور ہورہا ہے کان تک نہ آئے اور اگر آواز اصلاً پیدا نہ ہوئی تو صرف زبان ہلی تو وہ پڑھنا پڑھنا نہ ہوگا اور فرض و واجب و سنت و مستحب جو کچھ تھا وہ ادا نہ ہوگا فرض ادا نہ ہوا تو نماز ہی نہ ہوئی اور واجب کے ترک میں گنہگار ہوا اور نماز پھیرنا واجب رہا اور سنت کے ترک میں عتاب ہے اور نماز مکروہ اور مستحب کے ترک میں ثواب سے محرومی پھر جو آواز اپنے کان تک آنے کے قابل ہوگی وہ غالب یہی ہے کہ برابر والے کو بھی پہنچے گی اس میں حرج نہیں ایسی آواز آنی چاہئے جیسے راز کی بات کسی کے کان میں منہ رکھ کر کہتے ہیں ضرور ہے کہ اس سے ملا ہوا جو بیٹھا ہو وہ بھی سنے مگر اسے آہستہ ہی کہیں گے، واللہ تعالٰی اعلم۔ (۳) منہ میں بدبو ہونے کی حالت میں نماز مکروہ اور ایسی حالت میں مسجد میں جانا حرام ہے جب تک منہ صاف نہ کرلے، اور دوسرے نمازی کو ایذا پہنچی حرام ہے اور دوسرا نمازی نہ بھی ہو تو بدبو سے ملائکہ کو ایذا پہنچتی ہے، حدیث میں ہے: ان الملئکۃ تتاذی بمایتاذی بہ بنو آدم۔ واللہ | کیونکہ ملائکہ ہر اس شے سے اذیت پاتے ہیں جس سے بنی تعالٰی اعلم | آدم اذیت پاتے ہیں۔ (ت) مسئلہ نمبر ۴۹۵: الحمد شریف قرآن شریف سے ہے نماز میں کیوں واجب کی گئی؟ اور سورت کا ملانا کیوں فرض رکھا گیا؟ اور اگر مصلی الحمد بھول جائے تو اس پر سجدہ سہو واجب ہوتا ہے اور

آیتیں پڑھنا بھول جائے تو نماز جاتی رہتی ہے اُس کے بدلے سجدہ سہو نہیں رکھا گیا اس کی کیا وجہ ہے اور الحمد واجب ٹھہری اور مقتدی پیچھے امام کے الحمد نہیں پڑھتا ہے اور الحمد کے نہ پڑھنے سے سجدہ سہو لازم آتا ہے تو اس مقتدی کی نماز بغیر سجدہ سہو کئے ہوئے کیونکر صحیح ہو جاتی ہے؟ بینوا توجروا

1 صحیح مسلم باب نہی من اکل ثوماً وبصلاً الخ قدیمی کتب خانہ اصح المطابع کراچی ۱/ ۲۰۹

Volume 6 Fatawa Rizvia The Answer: Adding a Surah is not obligatory (Fard), nor does the prayer become invalid by its omission. Like Surah Al-Fatiha, it is also mandatory (Wajib), and its omission can be rectified by performing the prostration of forgetfulness (Sajda Sahw) if it happened inadvertently. This is the same case as Surah Al-Fatiha. Thus, the questioner is mistaken in their understanding, leading to their query about a difference. The absolute obligation (Fard) is only to recite a single verse, whether from Al-Fatiha or any other Surah. **"So recite as much of the Qur'an as is easy [for you]."[1]** - This is the command of Allah Almighty. (T) The necessity (Wujub) of reciting Surah Al-Fatiha and joining another Surah in the first two units (rak'ahs) of obligatory (Fard) prayers is established through the constant practice of the Master of the Universe (peace and blessings of Allah be upon him) and some solitary reports (Hadith Ahad). According to our Imams, this necessity applies only to the Imam and the individual performer (Munfarid), not the follower (Muqtadi). Therefore, there is no reason for the follower to perform the prostration of forgetfulness (Sajda Sahw), whether the omission was intentional or accidental. Even if ten mandatory acts were omitted by a follower, Sajda Sahw would not be required of them. Allah Almighty knows best. **Problem No. 496: 26 Safar 1317 AH** If an Imam recited one verse in the Friday prayer (Jumu'ah) and due to forgetfulness, read it a second time and then transitioned to other verses, what is the ruling? Is the prayer severely disliked (Makruh Tahrimi), slightly disliked (Tanzihi), or permissible without dislike? Is Sajda Sahw mandatory or not? Explain and you shall be rewarded. **The Answer:** Since it happened out of compulsion due to forgetfulness, there is no dislike. If the Imam did not remain silent for the duration of a pillar (rukn) while trying to recall the verse, then even Sajda Sahw is not required; otherwise, it becomes mandatory. As stated in *Al-Durr al-Mukhtar*[2] (as mentioned in Durr al-Mukhtar. T). Allah Almighty knows best. **Problem No. 497:** What do the scholars of religion say about skipping a Surah like Al-Layl in between while praying? Even if it was by mistake, for example, reciting Ash-Shams in the first rak'ah and Ad-Duha in the second rak'ah. **The Answer:** In obligatory prayers, intentionally skipping a short Surah in between is disliked (Makruh). Accidentally, there is no dislike at all. Al-Layl is more than five verses long, and Ash-Shams is also long; in such cases, there is no dislike. **"In Al-Durr al-Mukhtar: It is disliked to separate with a short Surah."[3]** - It is written in Durr al-Mukhtar that separating with a short Surah (skipping it) is disliked. Ends.

---

[1] Al-Qur'an 73/20 [2] Al-Durr al-Mukhtar, Chapter on Prostration of Forgetfulness, Mujtabai Press, Delhi, 1/102 [3] Al-Durr al-Mukhtar, Section on Imam Reciting Aloud, Mujtabai Press, Delhi, 1/81 Page 333 of 736

खण्ड 6 फ़तावा रज़विया उत्तर: सूरह मिलाना फ़र्ज़ नहीं है, और न ही इसके छोड़ने से नमाज़ जाती है। यह भी सूरह फ़ातिहा की तरह वाजिब ही है और इसके छोड़ने की भरपाई भी 'सजदा सहव' से हो जाती है यदि यह भूलवश हुआ हो। फ़ातिहा का भी यही हाल है। अतः प्रश्नकर्ता को यह मसला ही गलत मालूम है जिसके आधार पर वे अंतर पूछ रहे हैं। फ़र्ज़ केवल एक आयत का पाठ करना है, चाहे वह सूरह फ़ातिहा से हो या किसी और सूरह से। **"तो क़ुरआन में से उतना पढ़ो जितना आसान हो।"[1]** - यह अल्लाह तआला का फ़रमान है। (त) सूरह फ़ातिहा और फ़र्ज़ नमाज़ों की पहली दो रकतों में सूरह मिलाने की अनिवार्यता (वजुब), सैय्यɔ-ए-आलम (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) की नियमितता और कुछ 'अहादीस-ए-आहाद' के क़ौली प्रमाणों से सिद्ध है। हमारे इमामों के अनुसार यह वजुब केवल इमाम और अकेले नमाज़ पढ़ने वाले (मुनफ़रिद) पर है, मुक्तदी (अनुयायी) पर नहीं। अतः मुक्तदी के लिए सजदा सहव की कोई वजह नहीं है, चाहे उसने जानबूझकर छोड़ा हो या भूलवश। मुक्तदी पर सजदा सहव लाज़िम नहीं आएगा चाहे दस वाजिब भी छूट जाएँ। अल्लाह तआला बेहतर जानता है। **मसला नंबर 496: 26 सफ़र 1317 हिजरी** जुमा की नमाज़ में इमाम ने भूल के कारण एक आयत पढ़ी और उसे दूसरी बार पढ़कर अन्य आयतों की ओर स्थानांतरित हो गए। ऐसी स्थिति में नमाज़ मकरूह-ए-तहरीमी है या तन्ज़ीही, या बिना किसी नापसंदगी के जायज़ है? सजदा सहव लाज़िम है या नहीं? स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिलेगा। **उत्तर:** चूंकि यह भूलवश मजबूरी में हुआ था, इसलिए कोई कराहत (नापसंदगी) नहीं है। और यदि आयत याद करने में एक रुक्न (नमाज़ के एक भाग) के बराबर समय तक चुप नहीं रहे, तो सजदा सहव भी नहीं होगा, अन्यथा सजदा लाज़िम है। जैसा कि 'दुर्र-ए-मुख़्तार'[2] में है। अल्लाह तआला बेहतर जानता है। **मसला नंबर 497:** उलेमा-ए-दीन क्या फ़रमाते हैं कि नमाज़ में जैसे सूरह 'अल-लैल' को बीच में छोड़ देना, चाहे वह भूलवश ही हो, कैसा है? उदाहरण के लिए पहली रकत में 'अश-शम्स' और दूसरी रकत में 'अज़-जुहा' पढ़ना। **उत्तर:** फ़र्ज़ नमाज़ों में जानबूझकर बीच में एक छोटी सूरह छोड़ देना मकरूह है, और भूलवश इसमें बिलकुल कोई कराहत नहीं है। 'अल-लैल' और 'अश-शम्स' में पाँच आयतों से अधिक का अंतर है, ऐसी स्थिति में कराहत नहीं है। **"दुर्र-ए-मुख़्तार में है: छोटी सूरह के साथ फासला करना (बीच में छोड़ना) मकरूह है।"[3]** - दुर्र-ए-मुख़्तार में लिखा है कि छोटी सूरह का फासला मकरूह है। इति।

---

[1] अल-क़ुरआन 73/20 [2] दुर्र-ए-मुख़्तार, बाबू सुजूद-ए-सहव, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, 1/102 [3] दुर्र-ए-मुख़्तार, फ़सल वयजहरुल इमाम, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, 1/81 पृष्ठ 736 में से 333

جلد ششم فتاوی رضویہ الجواب: سورۃ ملانا بھی فرض نہیں، نہ اس کے ترک سے نماز جائے وہ بھی مثل فاتحہ واجب ہی ہے اور اس کے ترک کی بھی سجدہ سہو سے اصلاح ہو جاتی ہے جبکہ بھول کر ہو، یہی حال فاتحہ کا ہے، تو یہ مسئلہ ہی سائل کو غلط معلوم ہے جس کی بنا پر طالب فرق ہے، فرض صرف ایک آیت کی تلاوت ہے سورہ فاتحہ سے ہو یا کسی سورت سے۔ **فَاقْرَءُوا مَا تَیَسَّرَ مِنَ الْقُرْآنِ** ۱ - اللہ تعالیٰ کا فرمان ہے جو آسان ہو وہ پڑھو۔ (ت) سورہ فاتحہ اور فرضوں کی پہلے دو رکعتوں میں ضم سورت کا وجوب سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی مواظبت اور بعض احادیث احاد قولیہ سے ثابت ہوا یہ وجوب ہمارے ائمہ کے نزدیک صرف امام و منفرد پر ہے مقتدی پر نہیں تو لزوم سجدہ کی کوئی وجہ نہیں نہ ترک قصدی میں نہ سہو مقتدی سے اس پر سجدہ لازم آئے گا اگرچہ دس واجب ترک ہوں، واللہ تعالیٰ اعلم۔ **مسئلہ نمبر ۴۹۶:** ۲۶ صفر ۱۳۱۷ھ امام نے جمعہ میں ایک آیت پڑھی بسبب بھول جانے کے اس کو دوسری بار پڑھ کر دوسری آیتوں کی طرف منتقل کیا ایسی صورت میں نماز مکروہ تحریمی یا تنزیہی یا جائز بلا کراہت یا سجدہ لازم ہے یا نہیں؟ بینواتوجروا **الجواب:** جبکہ بمجبوری سہو تھا کچھ کراہت نہیں اور اگر آیت کے یاد کرنے میں بقدر رکن ساکت نہ رہا تو سجدہ سہو بھی نہیں ورنہ سجدہ لازم ہے۔ کما فی الدرالمختار ۲ (جیسا کہ دُر مختار میں ہے۔ ت) واللہ تعالیٰ اعلم **مسئلہ نمبر ۴۹۷:** کیا فرماتے ہیں علمائے دین کہ نماز میں مثل سورہ والیل کے درمیان چھوڑ کر پڑھنا اگرچہ سہواً ہو کیسا ہے مثلاً رکعت اولیٰ میں والشمس اور رکعت ثانیہ والضحٰی پڑھے۔ **الجواب:** فرضوں میں قصداً چھوٹی سورت بیچ میں چھوڑ دینا مکروہ ہے اور سہواً اصلاً کراہت نہیں والیل والشمس سے پانچ آیت زائد ہے ایسی صورت میں کراہت نہیں۔ **فی الدرالمختار یکرہ الفصل بسورۃ قصیرۃ ۳ اھ۔** در مختار میں ہے کہ چھوٹی سورت کے ساتھ فاصلہ (چھوڑ دینا) مکروہ ہے اھ

۱ القرآن ۷۳ / ۲۰ ۲ در مختار باب السجود سہو مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱ / ۱۰۲ ۳ در مختار فصل ویجهر الامام مطبوعہ مجتبائی دہلی ۸۱/۱ صفحہ 333 از 736

Fatawa Rizvia, Volume 6

In Rad al-Muhtar, if the omitted Surah is so long that it necessitates the second rak'ah being much longer than the first, then it is not disliked (makruh). In Ad-Durr, lengthening the second rak'ah over the first by the amount of three verses is consensually disliked (makruh tanzihi) if the verses of both rak'ahs are nearly equal in length and shortness. If the verses are not similar, then the number of letters and words will be considered. Al-Halabi considered the excessive length, not the count of verses. And in Al-Bahr al-Ra'iq, those Surahs are mentioned as exceptions about which a Hadith has been narrated (meaning there is no dislike in reciting them). And in voluntary (nafl) prayers, the preference is given to the absence of dislike absolutely (meaning whether a Hadith is narrated about it or not). If the increase in the second rak'ah is less than three verses, it is not disliked because the Master of both worlds (peace and blessings of Allah be upon him) led the Fajr prayer with the Mu'awwidhatayn. And Allah the Exalted knows best. (T)

Question 498: What is the wisdom behind two rak'ahs of obligatory (fard) prayers being empty and two rak'ahs being filled (with recitation), while in Sunnah and Nafl prayers, recitation is mandatory in all four rak'ahs? And Allah the Exalted knows best.

Answer: Recitation of the Holy Quran is necessary in only two rak'ahs of prayer. Each two-rak'ah unit of Sunnah and Nafl is a separate prayer; therefore, recitation becomes mandatory in each two-rak'ah unit, making all four filled. And Allah the Exalted knows best.

Question 499: Zaid prayed at the start of the time, and after finishing the Sunnah of Maghrib, he prayed two rak'ahs of Nafl in congregation loudly (bi'l-jahr) with one and a quarter parts (juz/parah) of the Quran. Then immediately after that, the time for Isha prayer arrived. Are these two Nafl rak'ahs, prayed in congregation with loud recitation between Maghrib and Isha, permissible or not?

Answer: If there were only two or at most three followers (muqtadis) in this Nafl congregation, and for any of them such a long recitation...

1. Rad al-Muhtar, Section: The Imam Recites Aloud, printed by Mustafa al-Babi Egypt, 1/404.
2. Durr al-Mukhtar, Section: The Imam Recites Aloud, printed by Mujtabai Delhi, 1/80.

फ़तावा रिज़विया, जिल्द 6

रद अल-मुहतार में है कि यदि छोड़ी जाने वाली सूरत इतनी बड़ी है कि उससे दूसरी रकअत का पहली रकअत से बहुत लंबा होना लाज़िम आता हो, तो फिर वह मकरूह नहीं है। 'अद-दुर्र में दूसरी रकअत को पहली पर तीन आयतों की मात्रा के बराबर लंबा करना सर्वसम्मति से मकरूह तंज़ीही है, यदि दोनों रकअतों की आयतें लंबाई और छोटाई में लगभग बराबर हों। यदि आयतें एक जैसी न हों, तो अक्षरों और शब्दों का विचार किया जाएगा। और हलबी ने अत्यधिक लंबाई का विचार किया है न कि आयतों की संख्या का। और 'अल-बह्र-उर-रायिक' में उन सूरतों को अपवाद माना गया है जिनके बारे में हदीस वर्णित है (यानी उन्हें पढ़ने में कोई कराहत नहीं है)। और नफ़्ल नमाज़ों में निरपेक्ष रूप से कराहत न होने को प्राथमिकता दी गई है (यानी चाहे उनके बारे में हदीस वर्णित हो या न हो)। यदि दूसरी रकअत की वृद्धि तीन आयतों से कम हो, तो वह मकरूह नहीं है, क्योंकि दो जहाँ के मालिक (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने 'मुअविज़तैन' के साथ फज्र की नमाज़ पढ़ाई है। और अल्लाह सुब्हानहु व तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला नम्बर 498: इसमें क्या हिकमत (तर्क) है कि फ़र्ज़ नमाज़ों की दो रकअतें खाली और दो रकअतें भरी हुई (किरात के साथ) पढ़ी जाती हैं, जबकि सुन्नत और नफ़्ल नमाज़ों में किरात लाज़िम होने के कारण चारों भरी हुई होती हैं? वल्लाहु तआला आलम।

अल-जवाब: नमाज़ में केवल दो ही रकअत में क़ुरआन मजीद की तिलावत ज़रूरी है। सुन्नत और नफ़्ल की हर दो रकअत एक अलग नमाज़ है, इसलिए हर दो रकअत में क़िरात लाज़िम होने की वजह से चारों भरी हुई हो गईं। वल्लाहु तआला आलम।

मसला नम्बर 499: ज़ैद ने नमाज़ के शुरूआती वक़्त में नमाज़ पढ़ी और मग्रिब की सुन्नतें पूरी करने के बाद दो रकअत नफ़्ल जमाअत के साथ बुलंद आवाज़ (जहर) में सवा पारे के साथ पढ़ी, फिर उसके तुरंत बाद इशा की नमाज़ का समय आ गया। मग्रिब और इशा के बीच जमाअत और बुलंद आवाज़ के साथ पढ़ी गई ये दो नफ़्ल रकअतें जायज़ हैं या नहीं?

अल-जवाब: यदि इस नफ़्ल जमाअत में केवल दो या अधिक से अधिक तीन मुक़्तदी (पीछे नमाज़ पढ़ने वाले) थे और उनमें से किसी पर इतनी लम्बी क़िरात...

1. रद अल-मुहतार, फ़स्ल: इमाम का बुलंद आवाज़ में क़िरात करना, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 1/404.
2. दुर्रे मुख्तार, फ़स्ल: इमाम का बुलंद आवाज़ में क़िरात करना, मुजतबाई दिल्ली, 1/80.

पेज 334 / 736

فی ردالمحتار اما بسورۃ طویلۃ بحیث یلزم منہ اطالۃ الرکعۃ الثانیۃ فلا یکرہ شرح المنیۃ 1 الخ ۔ فی الدر اطالۃ الثانیۃ علی الاولی یکرہ تنزیھا اجماعاً ان بثلث آیات ان تقاربت طولا وقصرا والا اعتبر الحروف الکلمات واعتبر الحلبي فحش الطول لاعدد الایات، واستثنی فی البحر ما وردت بہ سنۃ واستظھر فی النفل عدم الکراھۃ مطلقا وان باقل لا یکرہ لانہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم صلی بالمعوذتین 2 واللہ سبحنہ وتعالٰی اعلم۔

رد المحتار میں ہے کہ اگر وہ چھوڑی جانے والی سورت اتنی بڑی ہے کہ اس سے دوسری رکعت کا پہلی رکعت سے نہایت ہی طویل ہونا لازم آتا ہو تو پھر مکروہ نہیں شرح المنیتہ الخ۔ در مختار میں دوسری رکعت کو پہلی پر تین آیتوں کی مقدار لمبا کرنا بالاجماع مکروہ تنزیہی ہے اگر دونوں رکعتوں کی آیتیں بڑی اور چھوٹی ہونے میں قریب قریب ہوں اگر آیتیں ایک سی نہ ہوں تو حروف اور کلمات کا اعتبار ہوگا۔ اور حلبی نے فحش طول کا اعتبار کیا ہے نہ کہ آیتوں کے شمار کا۔ اور بحرالرائق میں ان سورتوں کو مستثنیٰ کہا ہے جن کے متعلق حدیث وارد ہے (یعنی ان کے پڑھنے میں کراہت نہیں ہے) اور نفلوں میں مطلقاً (یعنی اس کے متعلق حدیث وارد ہو یا نہ ہو) عدم کراہت کو ترجیح ہے اگر دوسری رکعت کی زیادتی تین آیات سے کم ہو تو مکروہ نہیں، کیونکہ سرکار دو عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے معوذتین سے فجر کی نماز پڑھائی ہے واللہ سبحانہ وتعالٰی اعلم (ت)

مسئلہ نمبر ۴۹۸ : اس میں کیا حکمت ہے کہ فرضوں کی دو کعت خالی اور دور کعت بھری پڑھی جاتی ہیں اور سنت اور نفلوں میں قرأت لازم ہو کر چاروں بھری ہو گئیں۔ واللہ تعالٰی اعلم

الجواب: نماز میں صرف دو ہی رکعت میں تلاوتِ قرآن مجید ضرور ہے سنت و نفل کی ہر دور کعت نمازِ جداگانہ ہے لہذا ہر دور کعت میں قرات لازم ہو کر چاروں بھری ہو گئیں۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۴۹۹ : زید نے اول وقت نماز پڑھی اور بعد فراغ سنن مغرب سے دور کعت نفل جماعت سے بالجہر سوا پارے سے پڑھے پھر اُس کے متصل نمازِ عشاء کا وقت آیا یہ دونوں نفل جو مابین عشاء و مغرب با جماعت جہر سے پڑھے گئے جائز ہیں یا نہیں؟

الجواب: اگر اس جماعت نفل میں صرف دو یا زیادہ سے زیادہ تین مقتدی تھے اور ان میں کسی پر اتنی قرات

1. رد المحتار، فصل ویجهر الامام مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/ ۴۰۴
2. در مختار فصل ویجهر الامام مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱/ ۸۰

Fatawa Razawiyya, Volume 6

If it was not long, burdensome, or painful, then this congregation and recitation would have been permissible without prohibition or dislike; otherwise, it is disliked and forbidden. It is in *Bahr al-Ra'iq*:

قال شمس الائمة الحلوانى ان كان سوى الامام ثلاثة لا يكره بالاتفاق وفى الاربع اختلف المشائخ والاصح انه يكره اهـ هكذا في شرح المنية 1-	**Shams al-A'imma al-Halwani states that in a supererogatory (Nafl) congregation, if there are three people besides the Imam, there is no dislike by consensus. Regarding four, the scholars differ; the more correct view is that it is disliked. This is also stated in Sharh al-Munyah. (T)**

In the same book, it is stated:

والظاهر انها فى تطويل الصلوة كراهة تحريم للامر بالتخفيف وهو للجواب الا لصارف ولادخال الضرر على الغير 2 اهـ والله تعالىٰ اعلم-	**The apparent view is that lengthening the prayer is prohibitively disliked (Makruh Tahrimi), because the command for brevity has been narrated, which is for mandatory compliance unless there's a diverting factor, and because it causes harm to others. And Allah knows best. (T)**

Issue 500: From Banaras, Thana Bahlolpura, Muhalla Ihata Rohilla, sent by Abdul Rahman Rafugar, 28 Muharram 1332 AH. A request to your presence is, what is recited at the end of [Surah] 'Idha Ja'a' at the words 'Innahu kana tawwaba' as Maulvi Amjad Ali Sahib used to recite; please write a little about it. That's all.

The Answer:

The recommended (Mustahab) way is that if a Divine Name appears at the end of a Surah, such as 'Innahu kana tawwaba' in Surah 'Idha Ja'a', one should not stop (waqf) there. Instead, one should drop the initial 'hamza-e-wasl' of 'Allahu Akbar' (the Takbir for bowing/Ruku) and join the last letter of the Surah with the 'L' of 'Allah'. For example, in 'Idha Ja'a', [recite] 'Tawwaban illahu Akbar'. This should start while in the standing position (Qiyam) and continue while bowing for Ruku, joining with both 'L's, in such a way that 'Akbar' is completed before the Ruku posture is fully reached. Similarly, in Surah 'At-Tin', give a 'fatha' (zabar) to the 'N' of 'Ahkam al-Hakimin' and join it with the 'L' of 'Allahu Akbar'. Where there is no Divine Name at the end of a Surah, and no word resembling a Divine Name, it is equal whether one joins or stops. For example, in 'Alam Nashrah', [recite] 'farghab-illahu Akbar'. However, where a

word is inappropriate for the Divine Name, such as 'huwal abtar' at the end of Surah 'Al-Kawthar', a separation (stopping) is required; joining should not be done. And Allah Almighty knows best.

---

1. Al-Bahr al-Ra'iq, Chapter on Imamate, published by H.M. Saeed Company, Karachi, 1/345
2. Al-Bahr al-Ra'iq, Chapter on Imamate, published by H.M. Saeed Company, Karachi, 1/351

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

यदि यह लंबा, भारी या कष्टदायक नहीं था, तो यह जमात और क़िरात बिना किसी रोक या नापसंदगी के जायज़ होती; अन्यथा यह मकरूह और निषिद्ध है। 'बह़र अल-राइक़' में है:

قال شمس الائمة الحلوانی ان کان سوی الامام ثلاثة لا یکره بالاتفاق وفی الاربع اختلف المشائخ والاصح انه یکره اهـ هکذا في شرح المنیة 1-

इमाम शम्स अल-अइम्मा हलवानी फ़रमाते हैं कि नफ़्ल जमात में यदि इमाम के अलावा तीन व्यक्ति हों, तो सर्वसम्मति से कोई नापसंदगी (कराहियत) नहीं है। चार के बारे में विद्वानों में मतभेद है; सही बात यह है कि यह मकरूह है। 'शह़ अल-मुनया' में भी ऐसा ही है। (त)

उसी में है:

والظاهر انها فی تطویل الصلوة کراهة تحریم للامر بالتخفیف وهو للجواب الا لصارف ولادخال الضرر علی الغیر 2 اهـ والله تعالیٰ اعلم-

प्रत्यक्ष यही है कि नमाज़ में लंबा करना मकरूह तहरीमी है क्योंकि संक्षेप (तख़फ़ीफ़) के लिए आदेश आया है, जो अनिवार्य है जब तक कि कोई मोड़ने वाला कारक न हो, और इसलिए कि इससे दूसरों को नुक़सान पहुँचता है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला नंबर 500: वाराणसी, थाना बहलोलपुरा, मोहल्ला अहाता रोहिला से अब्दुल रहमान रफ़ूगर द्वारा भेजा गया, 28 मुहर्रम 1332 हिजरी। हज़रत की सेवा में निवेदन है कि सूरह 'इज़ा जा-अ' के अंत में 'इन्नहू काना तव्वाबा' के पास जो मौलाना अमजद अली साहब पढ़ा करते थे, वह थोड़ा लिख दीजिए, बस।

उत्तर:

मुस्तह़ब (पसंदीदा) तरीका यह है कि यदि सूरह के अंत में अल्लाह का नाम हो जैसे सूरह 'इज़ा जा-अ' में 'इन्नहू काना तव्वाबा', तो वहां रुकना (वक़्फ़) नहीं चाहिए, बल्कि रुकू की तकबीर 'अल्लाहु अकबर' के हमज़ा-ए-वस्ल को गिराकर सूरह के आख़िरी अक्षर को अल्लाह के'ल' से मिला देना चाहिए। जैसे 'इज़ा जा-अ' में 'तव्वाबा-निल्लाहु अकबर'। यह क़ियाम की स्थिति में शुरू हो और रुकू

के लिए झुकते समय दोनों 'ल' से मिलता हुआ इस तरह हो कि रुकू पूरा होने से पहले 'अकबर' समाप्त हो जाए। इसी तरह सूरह 'अत-तीन' में 'अह़कमुल ह़ाकिमीन' के'न' पर ज़बर (फ़तह़) देकर 'अल्लाहु अकबर' के'ल' में मिला दें। जिस सूरह के अंत में अल्लाह का नाम न हो और कोई शब्द अल्लाह के नाम के उपयुक्त भी न हो, वहां समान है, चाहे मिलाए या रुके जैसे 'अलम नशराह' में 'फ़रग़ाबिल्लाहु अकबर'। और जहाँ कोई शब्द अल्लाह के नाम के लिए अनुपयुक्त हो, जैसे सूरह 'अल-कौसर' के अंत में 'हुवल अबतर', वहाँ वक़्फ़ (रुकना) ही चाहिए, मिलाना नहीं चाहिए। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

---

1. अल-बह़र अल-राइक़, इमामत का अध्याय, एच.एम. सईद कंपनी कराची द्वारा प्रकाशित 1/345
2. अल-बह़र अल-राइक़, इमामत का अध्याय, एच.एम. सईद कंपनी कराची द्वारा प्रकाशित 1/351

طویل گراں تکلیف دہ نہ تھی تو یہ جماعت و قرات جائز بلا منع و کراہت ہوئی ورنہ مکروہ و ممنوع، بحر الرائق میں ہے :

قال شمس الائمة الحلوانی ان کان سوی امام شمس الائمہ حلوانی فرماتے ہیں جماعت نفل میں اگر الامام ثلاثة لا یکره بالاتفاق وفی الاربع امام کے علاوہ تین افراد ہوں تو بالاتفاق کراہت نہیں، چار اختلف المشائخ والاصح انه یکره اهـ میں مشائخ کا اختلاف ہے، اصح یہی ہے کہ مکروہ ہے هکذا في شرح المنیة 1- اہـ شرح المنیہ میں اسی طرح ہے۔ (ت)

اُسی میں ہے:

والظاهر انها فی تطویل الصلوة کراهة ظاہر یہی ہے کہ نماز میں طوالت مکروہ تحریمی ہے تحریم للامر بالتخفیف وهو للجواب الا کیونکہ تخفیف کے لئے امر وارد ہے جو سوائے لصارف ولادخال الضرر علی الغیر 2 اهـ صارف کے اور اس لئے کہ یہاں غیر کو نقصان ہوتا واللہ تعالٰی اعلم- ہے اہـ واللہ تعالٰی اعلم (ت)

مسئلہ نمبر ۵۰۰: از بنارس تھانہ بہلو لپورہ محلہ احاطہ روہیلہ مرسلہ عبدالرحمن رفوگر ۲۸ محرم ۱۳۳۲ھ حضرت کی خدمت میں یہ عرض ہے کہ اذا جاء کے آخر میں جو پڑھا کرتے ہیں انہ کان توابا کے پاس پڑھا کرتے تھے مولینا امجد علی صاحب تو وہ ذرا سا لکھ دیجئے گا، فقط

الجواب:

مستحب طریقہ یہ ہے کہ آخر سورہ میں اگر نام الٰہی جیسے سورہ اذا جاء میں انہ کان توابا تو اس پر وقف نہ کرے بلکہ رکوع کی تکبیر اللہ اکبر کا ہمزہ وصل گرا کر اس سورہ کا آخری حرف لام

اللہ سے ملادے جیسے اذا جاء میں توابا نِ اللہ اکبر، ب قیام کی حالت میں اور دونوں لام سے ملتا ہوا رکوع کے لئے جھکنے کی حالت میں اس طرح کہ رکوع پورا نہ ہونے تک اکبر کی ختم ہوجائے یونہی سورہ والتین میں احکم الحاکمین کے ن کو زبر دے کر اللہ اکبر کے ل میں ملادے، اور جس سورہ کے آخر میں نام الٰہی نہ ہو اور کوئی لفظ نام الٰہی کے مناسب بھی نہ ہو وہاں یکساں ہے چاہے وصل کرے یا وقف، جیسے الم نشرح میں فارغب اللہ اکبر اور جہاں کوئی لفظ اسم الٰہی کے نامناسب ہو جیسے سورہ کوثر کے آخر میں ھو الابتر وہاں فصل ہی چاہئے وصل نہ چاہئے۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

---

1. البحر الرائق باب الامامۃ مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱/ ۳۴۵
2. البحر الرائق، باب الامامۃ، مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱/ ۳۵۱

Fatawa Razawiyyah, Volume 6

Question 501: What do the scholars of religion say regarding this matter: How much before sunrise should the Fajr (morning) prayer be offered, and how many verses should be recited? And if some error occurs in the prayer, should the same number of verses previously recited be repeated, or fewer? Explain and be rewarded. Answer: In the morning prayer, if there is sufficient time and no excuse, forty to sixty verses should be recited. It should be finished so much before sunrise that if an error appears in the prayer, it can be repeated with forty verses before sunrise. Ten minutes are sufficient for this. If little time remains and an error appears, then recite as many verses as time permits, even if it is Surah Al-Kawthar and Surah Al-Ikhlas. And Allah Almighty knows best.

Question 502: What do the scholars of religion say regarding this matter: Zaid led the prayer and recited "Wal-'Asr, innal-insana lafi khusr, illa", paused at "illa", and then completed from "illalladhina amanu" to the end. Is the prayer valid or not? Also, how is the 'Sakta' (pause) in "wa qila man (sakta) raq" and "wa dhanna annahul firaq"? And how is it to not perform idgham (merging) of the 'noon' of the word 'man' into the 'ra' of 'raq'? Answer: The prayer is valid. Pausing at every verse is permissible, even if it is an incomplete sentence (Ayat Laa). In our recitation, i.e., according to the recitation of Imam Hafs, there is a 'Sakta' on the 'noon' so that it doesn't sound like a single word through merging, like "miraq" on the pattern of "buraq". All other reciters perform merging. Thus, both ways exist, but one should not skip merging in front of common people so they don't object. And Allah Almighty knows best.

Question 503: From Village Ghorni, Post Office Krishangarh, District India, 6 Jamadi-ul-Ula 1336 AH. ض را مشابہ صوت ظ معجمہ باید خواند یا مماثل صوت دال مہملہ، وہر کہ دال محض خواند نمازش روا بود یا نہ و دریں ملک را تقریباً ہمہ خواص و عوام مشابہ دال می خوانند و خوانندہ ض مشابہ ظ از بس قلیل بینوا توجروا۔ Should the letter 'Dad' (ض) be recited with a sound similar to 'Zha' (ظ) or similar to the sound of 'Dal' (د)? And if someone recites it as pure 'Dal', will their prayer be valid or not? In our country, almost all the elite and common people recite it similar to 'Dal', and those who recite it similar to 'Zha' are very few. Explain and be rewarded. (Urdu Translation of the above Persian text): Should 'Dad' be recited with a sound similar to 'Zha' or the sound of 'Dal'? And if someone recites it as pure 'Dal', will their prayer be valid or not? In our country, almost all elite and commoners recite it similar to 'Dal'; very few people recite it similar to 'Zha'. Give an answer and get rewarded. (T) Answer: The Creator, Almighty,

has made the sound of this letter distinct from all other letters... | Allah Almighty has made the pronunciation and sound of this letter distinct from others...

फतावा रज़विया, खंड 6

प्रश्न 501: धर्म के विद्वान इस विषय में क्या कहते हैं: फज्र की नमाज़ सूर्योदय से कितनी देर पहले होनी चाहिए और कितनी आयतें पढ़नी चाहिए? और यदि नमाज़ में कोई त्रुटि हो जाए, तो क्या पहले पढ़ी गई आयतों जितनी ही आयतें पढ़नी चाहिए या कम? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें। उत्तर: फज्र की नमाज़ में, यदि समय हो और कोई बाधा न हो, तो चालीस से साठ आयतें पढ़नी चाहिए। इसे सूर्योदय से इतना पहले समाप्त कर देना चाहिए कि यदि नमाज़ में कोई खराबी दिखाई दे, तो सूर्योदय से पहले चालीस आयतों के साथ उसे दोहराया जा सके। इसके लिए दस मिनट पर्याप्त हैं। यदि समय कम रह गया हो और कोई त्रुटि हो जाए, तो समय की उपलब्धता के अनुसार आयतें पढ़ें, चाहे वह सूरह कौसर और इखलास ही क्यों न हो। और अल्लाह सर्वशक्तिमान बेहतर जानता है।

प्रश्न 502: धर्म के विद्वान इस विषय में क्या कहते हैं: ज़ैद ने नमाज़ पढ़ाई और "वल-'अस्र, इन् नल-इंसाना लफ़ी ख़ुस्र, इल्ला" पढ़ा, "इल्ला" पर रुके और फिर "इल्लल्लज़ीना आमनू" से अंत तक पूरा किया। क्या नमाज़ सही है या नहीं? साथ ही, "व क़ीला मन (सकता) राक़" और "व ज़न्ना अन्नहुल फ़िराक़" में 'सकता' (विराम) कैसा है? और शब्द 'मन' के'नून' को 'राक़' के'रा' में इद्घाम (मिलाना) न करना कैसा है? उत्तर: नमाज़ हो गई। हर आयत पर रुकना जायज़ है, भले ही वह अधूरी आयत (आयत ला) ही क्यों न हो। हमारे, यानी इमाम हफ़्स के पाठ (क़िरात) में, 'नून' पर सकता है ताकि इद्घाम के कारण यह "मिर्राक़" (बुराक़ के वज़न पर) एक ही शब्द जैसा न लगे। अन्य सभी कारी इद्घाम करते हैं। अतः दोनों तरीके मौजूद हैं, लेकिन आम लोगों के सामने इद्घाम न छोड़ें ताकि वे आपत्ति न करें। और अल्लाह सर्वशक्तिमान बेहतर जानता है।

प्रश्न 503: ग्राम घोरनी, डाकखाना कृष्णगढ़, जिला भारत से, 6 जमादी-उल-उला 1336 हिजरी। ض را مشابہ صوت ظ معجمہ باید خواند یا مماثل صوت دال مہملہ، وبر کہ دال محض خواند نمازش روا بود یا نہ و دریں ملک را تقریباً ہمہ خواص و عوام مشابہ دال می خوانند و خواننده ض مشابہ ظ از بس قلیل بینوا توجروا۔ 'ज़ाद' (ض) को 'ज़ॉ' (ظ) की आवाज़ के समान पढ़ना चाहिए या 'दाल' (د) के समान? और जो व्यक्ति इसे पूरी तरह से 'दाल' के रूप में पढ़ता है, क्या उसकी नमाज़ जायज़ होगी या नहीं? इस देश में लगभग सभी विशिष्ट और सामान्य लोग इसे 'दाल' के समान पढ़ते हैं, और 'ज़ाद' को 'ज़ॉ' के समान पढ़ने वाले बहुत कम हैं। स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें। (उर्दू अनुवाद): 'ज़ाद' को 'ज़ॉ' की आवाज़ या 'दाल' की आवाज़ के समान पढ़ना चाहिए? और जो इसे शुद्ध 'दाल' पढ़े, उसकी नमाज़ सही होगी या नहीं? हमारे देश में लगभग सभी विशिष्ट और

सामान्य लोग इसे 'दाल' के समान पढ़ते हैं, 'ज़ॉ' के समान बहुत कम लोग पढ़ते हैं। उत्तर देकर पुण्य प्राप्त करें। (त) उत्तर: अल्लाह सर्वशक्तिमान ने इस अक्षर की आवाज़ को अन्य सभी अक्षरों से अलग बनाया है... | अल्लाह सर्वशक्तिमान ने इस अक्षर के उच्चारण और आवाज़ को दूसरों से अलग बनाया है...

पृष्ठ 336 का 736

فتاویٰ رضویہ، جلد ششم

مسئلہ نمبر ۵۰۱: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ صبح کی نماز طلوع آفتاب سے کس قدر پہلے ہونا چاہئے اور کتنی آیتیں پڑھنا چاہئے اور اگر کوئی خرابی نماز میں ہو جائے تو کیا اسی آیت کو جو کہ پہلے پڑھی گئی اس کی مقدار پڑھنا چاہئے یا کم، بینوا توجروا۔ الجواب: نماز صبح میں بحال گنجائش وقت و عدم عذر چالیس سے ساٹھ تک آیت پڑھنا چاہئے اور طلوع آفتاب سے اتنے پہلے ختم ہو جانا چاہئے کہ اگر نماز میں کوئی خرابی ظاہر ہو تو چالیس آیتوں سے قبل طلوع اعادہ ہو سکے اور اس کے لئے دس منٹ کافی ہیں اور اگر وقت کم رہ گیا اور خرابی ظاہر ہوئی تو بقدر گنجائش وقت آیات پڑھے اگرچہ سورہ کوثر و اخلاص ہو، واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۵۰۲: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید نے نماز پڑھائی والعصر ان الانسان لفی خسر الا الذین میں الا پڑھ کر وقف کیا پھر الا الذین امنو سے آخر تک ختم کیا نماز درست ہے یا نہیں و قیل من (سکتہ) راق وظن انہ الفراق میں سکتہ کیسا ہے اور لفظ من کے نون کو راق کی را میں ادغام نہ کرنا کیسا ہے؟ الجواب: نماز ہو گئی ہر آیت پر وقف جائز ہے اگر چہ آیت لا ہو ہماری یعنی امام حفص کی قرات میں نون پر سکتہ ہے کہ ادغام سے کلمہ واحدہ نہ مفہوم ہو۔ مراق بروزن براق اور تمام باقی قرا ادغام کرتے ہیں، تو دونوں ہیں مگر یہاں عوام کے سامنے ادغام نہ کرے کہ وہ معترض نہ ہوں۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۵۰۳: از موضع گھورنی ڈاکخانہ کرشن گڑھ ضلع انڈیا، ۶ جمادی الاولی ۱۳۳۶ھ ض را مشابہ صوت ظ معجمہ باید خواند یا مماثل صوت دال مہملہ، وہر کہ دال محض خواند نمازش روا بود یا نہ و دریں ملک را تقریباً ہمہ خواص و عوام مشابہ دال می خوانند و خواننده ض مشابہ ظ از بس قلیل بینوا توجروا۔ ض کو ظاء معجمہ کی آواز یا دال مہملہ کی آواز کے مشابہ پڑھنا چاہئے اور

جو اسے محض دال پڑھے اس کی نماز درست ہوگی یا نہ؟ ہمارے ملک میں تقریباً تمام خواص و عوام اسے دال سے مشابہ پڑھتے ہیں ظاء کے مشابہ بہت قلیل لوگ پڑھتے ہیں جواب دے کر اجر پاؤ۔ (ت) الجواب: صوت ایں حرف را خالق عزوجل از ہمہ حروف جدا | اللہ تعالیٰ نے اس حرف کی ادائیگی اور آواز کو دوسرے

Fatawa Rizvia - Volume 6

[Left Column - Original Persian Text] He has created it distinctly; in reality, no letter is similar to it. The absolute obligation is to learn its point of articulation and its method of pronunciation, and to intend the letter as revealed by Allah. One should not recite it as 'Za' (ظ) or 'Dal' (د) of one's own accord, for both are different from it. One should exert great effort day and night until one succeeds. 'Allah does not burden any soul beyond its capacity.' (1) However, if one is unable to recite correctly, one cannot lead the prayer of those who can. It is stated in Fatawa Khairiyyah that the leadership of a lisping person for a clear speaker is invalid according to the preferred and correct view. (2) It is obligatory for such a person to find a correct reciter to follow in prayer; they should not pray alone, so that in following, they are relieved of the requirement of recitation. For one who did not learn the articulation point or did not strive for its correctness, if 'Za' or 'Dal' is uttered from their tongue, the prayer becomes invalid if the meaning is corrupted, otherwise not. If both result in the corruption of meaning, as in 'Ma'toob' and 'Maghdoob', then the prayer is invalid in both cases. This also applies when the intention is the letter revealed by Allah, but the tongue does not cooperate and 'Za' or 'Dal' is uttered instead, as is the recent case among the common people of India and Bengal. If one intentionally places another letter instead, the ruling becomes even stricter because it changes the Word of Allah. As some non-conformists have explicitly stated that 'Daad' cannot be pronounced. In this case, the great Imam Abu Bakr Muhammad bin al-Fazl (may Allah have mercy on him) has issued a ruling of disbelief, as mentioned in Minah ar-Rawd al-Azhar. We have a brief yet comprehensive treatise on this matter called 'Al-Jam' al-Saad 'an Sunan al-Daad', where this is detailed.

[Right Column - Urdu Translation] He has created it distinctly from all other letters; in reality, no one is similar to it. Therefore, it is an absolute obligation that its articulation point (makhraj) be learned (known), the method of its pronunciation be memorized, and that letter be intended which is revealed by Allah. From one's own side, it should neither be read as 'Za' nor as 'Dal', because both these are contrary to it. Whatever can be read after day and night of toil and effort will be correct because Allah the Almighty does not place a burden on any soul except according to its strength. If one is not capable of correct delivery of the letter, then it is not correct for him to lead the prayer. It is in Fatawa Khairiyyah that the leadership of a lisper over a clear speaker is invalid in the preferred and correct school of thought, and it is obligatory for such a person to perform prayer under the leadership of someone

correct, if leadership is possible; he should not pray alone because in the case of following, he will become independent of recitation. And that person who did not learn the articulation point of 'Daad' or did not strive for its correctness, if instead of 'Daad' from his tongue 'Za' or 'Dal' is delivered, with which there will be corruption of meaning, the prayer from it will also be invalid. And that with which there will be no corruption of meaning, the prayer from it will be done. And if in both cases there is corruption of meaning, for example, 'Maghzoob' and 'Maghdoob', then in both cases the prayer will be invalid. All this is at the time when from it...

[Footnotes] 1. Al-Quran 2/286 2. Fatawa Khairiyyah, Kitab al-Salat, printed by Dar al-Ma'rifah, Beirut, 10/1

फ़तावा रिज़विया - जिल्द छठी

[बायाँ कॉलम - मूल फ़ारसी पाठ] उसे (अल्लाह ने) विशिष्ट रूप से बनाया है; वास्तव में, कोई भी अक्षर इसके समान नहीं है। पूर्ण दायित्व यह है कि इसके उच्चारण स्थान (मख़रज) और इसकी अदायगी के तरीके को सीखा जाए, और अल्लाह द्वारा अवतरित अक्षर का इरादा किया जाए। अपनी मर्ज़ी से इसे न 'ज़' (ظ) पढ़ा जाए और न 'द' (द), क्योंकि दोनों इससे भिन्न हैं। दिन-रात भरपूर प्रयास करना चाहिए जब तक कि जो कुछ भी संभव हो वह जायज़ न हो जाए। 'अल्लाह किसी भी जान पर उसकी क्षमता से अधिक बोझ नहीं डालता।' (1) हालाँकि, यदि कोई सही उच्चारण करने में सक्षम नहीं है, तो वह सही बोलने वालों का नेतृत्व (इमामत) नहीं कर सकता। फ़तावा ख़ैरिया में उल्लेख है कि एक तुतले व्यक्ति का स्पष्ट बोलने वाले का नेतृत्व करना सही मत के अनुसार अमान्य (फ़ासिद) है। (2) उनके लिए अनिवार्य है कि वे प्रार्थना में अनुसरण करने के लिए एक सही पढ़ने वाले को खोजें; उन्हें अकेले प्रार्थना नहीं करनी चाहिए, ताकि इक़्तिदा (अनुसरण) में वे क़िरात (पाठ) की आवश्यकता से मुक्त हो सकें। जिसने मख़रज नहीं सीखा या शुद्धता के लिए प्रयास नहीं किया, यदि उसकी ज़बान से 'ज़' या 'द' निकलता है, तो अर्थ बिगड़ने पर नमाज़ अमान्य हो जाएगी, अन्यथा नहीं। यदि दोनों के साथ अर्थ बिगड़ता है, जैसे 'मअतूब' और 'मग्दूब', तो दोनों स्थितियों में नमाज़ अमान्य है। यह तब भी लागू होता है जब इरादा अल्लाह द्वारा अवतरित अक्षर का हो, लेकिन ज़बान साथ न दे, जिसके परिणामस्वरूप 'ज़' या 'द' निकले, जैसा कि हाल ही में भारत और बंगाल के आम लोगों के बीच मामला है। यदि कोई जानबूझकर इसके बजाय दूसरा अक्षर रखता है, तो फैसला और भी सख्त हो जाता है क्योंकि यह अल्लाह के कलाम (वाणी) को बदल देता है। जैसा कि कुछ गैर-मुक़ल्लिदीन ने स्पष्ट रूप से कहा है कि 'ज़ाद' (ض) का उच्चारण नहीं किया जा सकता। इस मामले में, महान इमाम अबू बक्र मुहम्मद बिन अल-फ़ज़ल (अल्लाह उन पर रहम करे) ने कुफ़्र (अविश्वास) का फैसला दिया है, जैसा कि मिनह अर-रौद अल-अज़हर में उल्लेख है। इस विषय पर हमारा एक संक्षिप्त और व्यापक शोध पत्र है जिसे 'अल-जाम अल-साद अन सुनन अल-दाद' कहा जाता है, जहाँ इसका विवरण दिया गया है।

[दायाँ कॉलम - उर्दू अनुवाद] तमाम अक्षरों से अलग पैदा फ़रमाया है; हकीकी तौर पर कोई भी इसके मुशाबेह (समान) नहीं। इसलिए फ़र्ज़-ए-क़तई (अनिवार्य कर्तव्य) यह है कि इसका मख़रज सीखा (जाना) जाए, इसकी अदायगी का तरीक़ा याद किया जाए और उस हर्फ़(अक्षर) का इरादा किया जाए जो अल्लाह की तरफ़ سے نا ज़िल (अवतरित) है। अपनी तरफ़ से न इसे 'ज़' (ظ) पढ़ा

जाए और न ही 'द' (द), क्योंकि ये दोनों इसके मुख़ालिफ़ (विपरीत) हैं। शबाना-रोज़ (दिन-रात) की मेहनत व कोशिश के बाद जो पढ़ा जा सके वह दुरुस्त होगा क्योंकि अल्लाह तआला किसी जान पर बोझ नहीं डालता मगर उसकी ताक़त भर। अगर हर्फ़ की सही अदायगी पर क़ादिर (सक्षम) न हुआ तो उसको इमामत कराना दुरुस्त नहीं। फ़तावा ख़ैरिया में है कि तुतले का फ़सीह (स्पष्ट बोलने वाला) की इमामत करना राजह (पसंदीदा) और सही मज़हब में फ़ासिद (अमान्य) है और ऐसे शख़्स पर फ़र्ज़ है कि वह किसी सही की इक़्तिदा (अनुसरण) में नमाज़ अदा करे; अगर इक़्तिदा मुमकिन हो तो तन्हा न पढ़े क्योंकि इक़्तिदा की सूरत में वह क़िरात से बे-नियाज़ (मुक्त) हो जाएगा। और वह शख़्स जिसने 'ज़' (ض) का मख़रज न सीखा या उसकी सेहत (शुद्धता) के लिए कोशिश न की हो, अगर उसकी ज़बान से 'ज़ाद' की जगह 'ज़' या 'द' अदा हो जिससे फ़साद-ए-मानी (अर्थ का बिगड़ना) होगा, उससे नमाज़ भी फ़ासिऽ होगी। और जिससे फ़साद-ए-मानी न होगा तो उससे नमाज़ हो जाएगी। और अगर दोनों सूरतों में फ़साद-ए-मानी हो मसलन 'मग़्ज़ूब' और 'मग़्दूब', तो दोनों सूरतों में नमाज़ फ़ासिद होगी। यह तमाम उस वक़्त है जब उससे...

[पाद-टिप्पणियाँ] 1. अल-क़ुरआन 2/286 2. फ़तावा ख़ैरिया, किताब अस-सलात, मतबुआ दार अल-मआरिफ़ा बैरूत, 10/1

[بایاں کالم - اصل فارسی متن] آفریدہ است حقیقۃً ہیچ حرف مشابہ باو نیست فرض قطعی آنست کہ مخرجش آموز و طرز ادایش یادگیر دو قصد حرف منزل من اللہ کند واز پیش خویش نہ ظا خواند نہ دال کہ ہر دو مباین اوست و شبانہ روز سعی موفور بجائے آورد تا آنکہ می کوشد چہ بر آید روا باشد لَا یُکَلِّفُ اللّٰہُ نَفْسًا اِلَّا وُسْعَھَا۱ فاما اگر بر صحیح قادر نہ شود امامت صحیح نتواں کرد در فتاویٰ خیریہ است امانۃ الثغ با تفتصح فاسدہ فی الراجح اصحیح ۲ و براد فرض باشد کہ تا پس صحیح خواند نماز تواں یافت تہنا نہ گزارد کہ در اقتدا از قرأت بے نیاز باشد و آنکہ مخرج نیا موخت یا در صحیح او سعی نہ کرد اگر از زبانش ظا یا دال ادا شود ہر چہ بفساد معنی شود نماز فاسد شود ورنہ نے واگر بہر دو فساد نعنی رونماید چنانکہ معطوب و مغدوب بہر دو فاسد شود ایں ہم آنگاہ ہست کہ قصد حرف منزل من اللہ کند و زبان یاوری نہ دہد ظا یا دال ادا شود چنانکہ صورت اخیر ہ در عوام ہند و بنگالہ است و اگر بالقصد بجائے او حرفے دیگر نشاندن خواہد حکم او سخت تر شود زیرا کہ تبدیل کلام اللہ میکند چنانکہ بعض نامقلدان تصریح کردہ اند کہ ضاد نتواں خواند امام اجل ابو بکر محمد بن الفضل رحمۃ اللہ تعالیٰ علیہ دریں صورت حکم کفر فرمودہ است کما فی منح الروض الازہر ومار دریں مسئلہ رسالہ ایست مختصرہ جامعہ الجام الصاد عن سنن الضاد آنجا ایں را رنگ تفصیل

[دایاں کالم - اردو ترجمہ] تمام حروف سے جدا پیدا فرمایا ہے حقیقی طور پر کوئی بھی اس کے مشابہ نہیں اس لئے فرض قطعی یہ ہے کہ اس کا مخرج سیکھا (جانا) جائے، اس کی ادائیگی کا طریقہ یاد کیا جائے اور اس حرف کا ارادہ کیا جائے جو اللہ کی طرف سے نازل ہے، اپنی طرف سے نہ اسے ظا پڑھا جائے اور نہ ہی دال، کیونکہ یہ دونوں اس کے مخالف ہیں شبانہ روز کی محنت و کوشش کے بعد جو پڑھا جا سکے وہ درست ہوگا کیونکہ اللہ تعالیٰ کسی جان پر بوجھ نہیں

ڈالتا مگر اس کی طاقت بھر۔ اگر حرف کی صحیح ادائیگی پر قادر نہ ہوا تو اس کو امامت کرانا درست نہیں، فتاویٰ خیریہ میں ہے کہ توتلے کا فصیح کی امامت کرنا راجح اور صحیح مذہب میں فاسد ہے اور ایسے شخص پر فرض ہے کہ وہ کسی صحیح کی اقتداء میں نماز ادا کرے اگر اقتداء ممکن ہو تنہا نہ پڑھے کیونکہ اقتداء کی صورت میں وہ قرات سے بے نیاز ہو جائے گا، اور وہ شخص جس نے ض کا مخرج نہ سیکھا یا اس کی صحت کے لئے کوشش نہ کی ہو اگر اس کی زبان سے ضاد کی جگہ ظا یا دال ادا ہو جس کے ساتھ فساد معنی ہوگا اس سے نماز بھی فاسد ہوگی اور جس کے ساتھ فساد معنی نہ ہوگا تو اس سے نماز ہو جائیگی اور اگر دونوں صورتوں میں فساد معنی ہو مثلاً مغضوب اور مغدوب تو دونوں صورتوں میں نماز فاسد ہوگی۔ یہ تمام اس وقت ہے جب اس سے

[حواشی] 1 القرآن ۲۸۶/۲ 2 فتاویٰ خیریہ کتاب الصلوۃ مطبوعہ دار المعرفۃ بیروت ۱۰/۱

Fatawa Rizwia Volume 6 ...given by us, and with Allah is the success, and Allah Almighty knows best. [If] it was intentionally the same letter revealed by Allah Almighty, but the tongue did not cooperate and 'Za' or 'Daal' was pronounced, as is the case with common people of India and Bengal, then in the last scenario it is like that. And if someone intentionally reads another letter in its place, the ruling will be most severe because this is changing the Word of Allah Almighty, as some non-conformists (Ghair Muqallidin) have specified that if 'Zad' cannot be pronounced, then 'Za' should be read. Imam Abu Bakr Muhammad bin Fadl (mercy of Allah Almighty be upon him) has issued a ruling of infidelity (kufr) in the mentioned case, as found in 'Mankh al-Rad al-Azhar'. We have written a brief but comprehensive treatise on this subject named 'Al-Jami' al-Saad 'an Sunan al-Dhad'. The details of this issue are well-explained there. And with Allah is the success, and Allah Almighty knows best. (T)

Problem No. 504: From Radhanpur, Gujarat, near Ahmedabad, sent by Hakim Muhammad Mian Sahib, 17 Jumada al-Ula 1336 AH. Many people gather in the mosque after the Friday Adhan and recite Surah Kahf loudly. There are also people who don't recite, i.e., illiterate worshippers who don't know how to read the Quran; they listen to Surah Kahf with interest. Some worshippers who arrive late are praying Nawafil while listening. Those praying Nawafil say, 'Don't recite Surah Kahf loudly, it disturbs our Nawafil.' Is the reward for praying Nawafil greater or for reciting Surah Kahf? After finishing Surah Kahf, all worshippers pray Sunnahs. The mentioned Maulvi says, 'Never recite loudly, it disturbs Nawafil prayers.' Should Surah Kahf be recited loudly or not, or should the Nawafil prayers be abandoned?

The Answer: In an authentic Hadith, it is prohibited to recite the Holy Quran aloud in a place where people are praying. And the Great Quran has commanded: 'When the Quran is recited, listen to it attentively and be silent' [1]. Therefore, reciting loudly in such a place is prohibited, and for two or more people to recite aloud is even more severely prohibited as it goes against the command of the Quran and is a disrespect to the Great Quran. These people should recite quietly, and those praying Nawafil cannot be stopped from their prayer. Nafl prayer is superior to recommended (mustahabb) recitation because it includes recitation as well as bowing and prostration. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 505: From Khanoora post office, District Hoshiarpur, sent by Amjad Ali Khan Sahib, via Maulvi Shafi Ahmad Sahib, student of Madrasa Ahle Sunnat, 12 Jumada al-Akhira 1336 AH. Zaid says that knowing the articulation points (Makharij)

of letters and pronouncing letters from them is obligatory; however, if despite effort...

---

1. Al-Quran 7/204 Page 338 of 736

फ़तावा रज़विया जिल्द छठा ...हमने दिया है, और अल्लाह ही तौफीक देने वाला है और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। यदि इरादतन वही हर्फ हो जो अल्लाह तआला की ओर से नाज़िल किया गया है, लेकिन ज़बान ने साथ नहीं दिया और 'ज़ा' या 'दाल' अदा हो गया, जैसा कि हिन्द और बंगाल के आम लोगों का मामला है, तो आखिरी सूरत में ऐसा ही है। और अगर जानबूझकर उसकी जगह कोई दूसरा हर्फ पढ़ा, तो उसका हुक्म बहुत सख़्त होगा क्योंकि यह अल्लाह तआला के कलाम में तब्दीली करना है, जैसा कि कुछ गैर-मुक़ल्लिदीन ने साफ़ कहा है कि अगर 'ज़ाद' न पढ़ा जा सके तो 'ज़ा' पढ़े। इमाम अबू बक्र मुहम्मद बिन फ़ज़ल (रहमतुल्लाह अलैह) ने ज़िक्र की गई सूरत में कुफ्र का हुक्म जारी फ़रमाया है, जैसा कि 'मंख अर-राज़ अल-अज़हर' में मौजूद है। हमने इस विषय पर एक संक्षिप्त लेकिन व्यापक शोध पत्र लिखा है जिसका नाम 'अल-जामिउस्साद अन सुननिल्ज़ाद' रखा है। इस मसले की तफ़सील वहाँ अच्छी तरह दी गई है। और अल्लाह ही तौफीक देने वाला है और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला नम्बर ५०४: राधनपुर, गुजरात, अहमदाबाद के पास से, मुर्सला (भेजने वाले) हकीम मुहम्मद मियाँ साहब, १७ जमादी अल-ऊला १३३६ हिजरी। जुमा की अज़ान के बाद बहुत से लोग मस्जिद में जमा होकर सूरह कहफ़ ऊँची आवाज़ से पढ़ते हैं। और जो लोग नहीं पढ़ते, यानी अनपढ़ नमाज़ी भी होते हैं जिन्हें कलाम मजीद पढ़ना नहीं आता, वे शौक़ से सूरह कहफ़ सुनते हैं। और कुछ नमाज़ी जो देर से आते हैं, वे नफ़्ल पढ़कर सुनते हैं। नफ़्ल पढ़ने वाले कहते हैं कि सूरह कहफ़ ऊँची आवाज़ से मत पढ़ो, हमारे नफ़्ल में ख़लल पड़ता है। नफ़्ल का सवाब ज़्यादा है या सूरह कहफ़ पढ़ने का? सूरह कहफ़ ख़त्म होने के बाद तमाम नमाज़ी सुन्नतें पढ़ते हैं। मौलवी साहब फ़रमाते हैं कि ज़ोर से हरगिज़ मत पढ़ो, नफ़्ल नमाज़ में ख़लल पड़ता है। क्या सूरह कहफ़ बुलंद आवाज़ में पढ़ें या नहीं, या नफ़्ल नमाज़ छोड़ दें?

अल-जवाब: सहीह हदीस में कुरान मजीद को ऐसी जगह ऊँची आवाज़ में पढ़ने से मना फ़रमाया गया है जहाँ लोग नमाज़ पढ़ रहे हों। और कुरान अज़ीम ने हुक्म फ़रमाया है कि 'जब कुरान पढ़ा जाए तो कान लगाकर सुनो और चुप रहो' [1]। तो ऐसी जगह ज़ोर (जह्र) से पढ़ना मना है, और दो या ज़्यादा आवाज़ों का आवाज़ के साथ पढ़ना और भी सख़्त मना है क्योंकि यह कुरान के हुक्म के ख़िलाफ़ और कुरान अज़ीम की बेअदबी है। इन लोगों को चाहिए कि धीरे पढ़ें, और नफ़्ल पढ़ने वालों को नफ़्ल से नहीं रोका जा सकता। नफ़्ल नमाज़ मुस्तहब तिलावत से अफ़ज़ल है क्योंकि उसमें तिलावत भी है और रुकूसजूद भी। वल्लाह तआला अअ़लम।

मसला नम्बर ५०५: खनूड़ा डाकखाना ख़ास, ज़िला होशियारपुर से, मुर्सला अमजद अली खान साहब, मारफ़त मौलवी शफ़ी अहमद साहब, मुतअ़ल्लिम (छात्र) मदरसा अहले सुन्नत, १२ जमादी अल-आख़िरा १३३६ हिजरी। ज़ैद कहता है कि हर्फ़ों के मख़ारिज (निकलने की जगह) जानना और उनसे हर्फ़ निकालना फ़र्ज़ है, हाँ कोशिश के बावजूद अगर...

---

1. अल-कुरान ७/२०४ पेज ३३८ का ७३६

فتاویٰ رضویہ جلد ششم دادہ ایم وباللہ التوفیق واللہ تعالیٰ اعلم۔ قصداً اسی حرف کا ہو جو اللہ تعالیٰ کی طرف سے نازل کردہ ہے مگر زبان معاون نہ بنی اور ظا یا دال ادا ہوگیا جیسے کہ عوام اہلِ ہند و بنگالہ کا معاملہ آخری صورت میں اسی طرح ہے اور اگر قصداً اس کی جگہ کوئی دوسرا حرف پڑھا تو اس کا حکم شدید ترین ہوگا کیونکہ یہ تو اللہ تعالیٰ کے کلام میں تبدیلی کرنا ہے جیسا کہ بعض غیر مقلدین نے تصریح کی کہ ضاد کو نہ پڑھا جاسکے تو ظاء پڑھے۔ امام ابوبکر محمد بن فضل رحمۃ اللہ تعالیٰ علیہ نے مذکورہ صورت میں کفر کا حکم جاری فرمایا ہے جیسا کہ منخ الراض الازہر میں موجود ہے، ہم نے اس موضوع پر ایک مختصر مگر جامع رسالہ لکھا ہے جس کا نام الجامع الصاد عن سنن الضاد رکھا ہے۔ اس مسئلہ کی تفصیل وہاں خوب کی ہے وباللہ التوفیق واللہ تعالیٰ اعلم (ت)

مسئلہ نمبر ۵۰۴: از رادھن پور گجرات قریب احمد آباد مرسلہ حکیم محمد میاں صاحب ۱۷ جمادی الاولیٰ ۱۳۳۶ھ جمعہ کی اذان کے بعد بہت آدمی مسجد میں جمع ہو کر سورہ کہف پڑھتے ہیں بلند آواز سے اور بغیر پڑھے جو لوگ ہیں یعنی ان پڑھ نمازی بھی ہوتے ہیں جن کو کلام مجید پڑھنا ہی نہیں آتا وہ نمازی سورہ کہف شوق سے سنتے ہیں اور بعض نمازی جو دیر سے آتے وہ نفل پڑھ کر سنتے ہیں نفل پڑھنے والے کہتے ہیں سورہ کہف بلند آواز سے مت پڑھو ہمارے نفل میں خرابی آتی ہے نفل کا ثواب زیادہ ہے یا سورہ کہف پڑھنے کا، بعد ختم سورہ کہف کے تمام نمازی سنتیں پڑھتے ہیں مولوی مذکور فرماتے ہیں زور سے ہرگز مت پڑھو نفل نماز میں خرابی آتی ہے آیا سورہ کہف کو بلند آواز پڑھیں یا نہیں یا نفل نماز چھوڑ دیں؟

الجواب: حدیث صحیح میں قرآن مجید با آواز ایسی جگہ پڑھنے سے جہاں لوگ نماز پڑھ رہے ہوں ممانعت فرمائی ہے اور قرآن عظیم نے حکم فرمایا ہے کہ قرآن پڑھا جائے کان لگا کر سنو اور

چپ رہو ۱، تو ایسی جگہ جہر سے پڑھنا ممنوع اور دو یا زیادہ آدمیوں کا با آواز پڑھنا اور شدید ممنوع کہ مخالف حکم قرآن اور قرآن عظیم کی بے حرمتی ہے ان لوگوں کو چاہئے کہ آہستہ پڑھیں اور نفل پڑھنے والے نفل سے نہیں روکے جاسکتے نفل نماز مستحب تلاوت سے افضل ہے کہ اُس میں تلاوت بھی ہے رکوع سجود بھی۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۵۰۵: از کھنوڑہ ڈاکخانہ خاص ضلع ہوشیار پور مرسلہ امجد علی خان صاحب معرفت مولوی شفیع احمد صاحب متعلم مدرسہ اہلسنت ۱۲ جمادی الاخریٰ ۱۳۳۶ھ زید کہتا ہے کہ مخارج حروف معلوم کرنا اور ان سے حروف نکالنا فرض ہے ہاں باوجود کوشش کے اگر

---

1 القرآن ۲۰۴/۷ Page 338 of 736

Volume Six Fatawa Razawiyya If what is necessary to be performed is not performed, he will be excused to that extent. And if the articulation points (makharij) are not known at all, or if they are known but not utilized, the prayer will definitely not be valid. If this were correct, then most Muslims who abandon obligations or commit a forbidden act would have their liability dropped or the act made permissible. Likewise, most Muslims do not pray at all, and of those who do, most are not regular in it; ninety-nine (99) out of a hundred or close to that do not refrain from backbiting. So, is Zaid's statement correct or not? The Answer: All of Zaid's aforementioned statements are correct except for these words: "if the makharij are not known, then the prayer will not be valid." It is not necessary to know the articulation points; it is necessary to pronounce the letters correctly. There are many who recite correctly by hearing and repeating, but if they are asked, they cannot describe the makharij. Every illiterate Urdu speaker pronounces the letters of his language correctly but cannot explain the makharij. And Allah Almighty knows best. Problem No. 506: From Bareilly, sent by Hazrat Muhammad Mian Sahab (may his high shadow last). Please state whether such proficiency (tajweed) in the Holy Quran that a letter remains distinct from others is an individual obligation (Fard-e-Ayn). Is it mentioned in the books of jurisprudence? If so, in which book and at what place? In your view, which book contains an explicit clarification on this matter? And if any Hadith regarding this is currently in mind, please state it. The Answer: It is explicitly stated in all books that replacing one letter with another, if done intentionally, is a nullifier of prayer according to the correct and reliable school of thought. If done by mistake, according to the Imams of our school, it nullifies prayer when it corrupts the meaning, or according to Imam Abu Yusuf, when that word is not in the Holy Quran. Avoiding this is impossible without learning the distinction of letters, and avoiding the corruption of prayer is an individual obligation. Allah Almighty says: "And do not invalidate your deeds." (1) It is stated in the introduction of Imam Jazari:

Arabic Text

It is an obligatory duty upon them, before starting (recitation), first to know the articulation points of the letters and their attributes, so that they may speak with the most eloquent of dialects.[2] - And Allah Almighty knows best.

Urdu Translation

Before starting in the Holy Quran, it is absolutely necessary for the reciters of the Quran first to know the articulation points and attributes (intrinsic and accidental) of the letters, so that the reciters of the Quran can pronounce (i.e., read) the Holy Quran with the most correct dialects. (T)

1. Al-Quran 47/33
2. Muqaddimah Jazariyyah, Khutba-ul-Kitab, printed by Saeediyya Kutub Khana, Qissa Khwani Bazaar, Peshawar, p. 4 Page 339 of 736

जिल्द छठा फ़तावा रज़विया यदि जो अदा किया जाना चाहिए वह अदा न हो, तो वह उस सीमा तक विवश समझा जाएगा। और यदि उच्चारण स्थान (मखरीज) ज्ञात ही नहीं हैं, या ज्ञात हैं पर निकाले नहीं जाते, तो नमाज़ बिल्कुल नहीं होगी। यदि यह सही होता, तो अधिकांश मुसलमान जो फर्ज़ छोड़ देते हैं या किसी हराम कार्य के अपराधी होते हैं, उनका वह कृत्य समाप्त या हलाल नहीं हो जाता। वैसे तो अधिकांश मुसलमान नमाज़ ही नहीं पढ़ते, और जो पढ़ते हैं उनमें से अधिकांश नियमितता नहीं बरतते; सौ में से निन्यानबे (99) या उसके करीब गीबत (चुगली) से परहेज नहीं करते। तो क्या ज़ैद का कथन सही है या नहीं? उत्तर: ज़ैद के उपर्युक्त सभी कथन सही हैं, सिवाय इन शब्दों के कि "यदि मखरीज ज्ञात न हों तो नमाज़ सही नहीं होगी।" मखरीज का ज्ञात होना अनिवार्य नहीं है; अक्षरों का सही उच्चारण होना अनिवार्य है। बहुत से ऐसे हैं जो सुन-सुनकर सही पढ़ते हैं, यदि उनसे पूछा जाए तो वे मखरीज नहीं बता सकते। उर्दू बोलने वाला हर अनपढ़ व्यक्ति अपनी भाषा के अक्षर ठीक से उच्चारित करता है पर मखरीज नहीं बता सकता। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। मसला नंबर 506: बरेली से प्रेषित, हज़रत मुहम्मद मियाँ साहब (मद ज़िल्लहुल आली) द्वारा। कृपया यह बताएं कि कुरान करीम की इतनी तजवीद कि एक अक्षर दूसरे से अलग पहचाना जा सके क्या फर्ज़-ए-ऐन है? क्या यह फिकह (इस्लामी न्यायशास्त्र) की किताबों में वर्णित है? यदि है तो किस किताब में और किस स्थान पर? आपकी दृष्टि में इस बारे में स्पष्ट स्पष्टीकरण किस पुस्तक में है? और यदि इस संबंध में इस समय कोई हदीस ध्यान में हो तो कृपया उसे बताएं। उत्तर: सभी पुस्तकों में स्पष्ट रूप से वर्णित है कि एक अक्षर की जगह दूसरे का उपयोग, यदि जानबूझकर हो तो सही और विश्वसनीय मत के अनुसार, और यदि गलती से हो तो हमारे इमामों के अनुसार नमाज़ को बिगाड़ने वाला (मुफ़्सिद) है जब अर्थ भ्रष्ट हो जाए, या इमाम अबू यूसुफ के अनुसार जब वह शब्द कुरान करीम में न हो। अक्षरों के बीच भेद करना सीखे बिना इससे बचना असंभव है, और नमाज़ की खराबी से बचना फर्ज़-ए-ऐन है। अल्लाह तआला का फरमान है: "और अपने कर्मों को व्यर्थ न करो।" (1) इमाम जज़री की भूमिका (मुकदमा) में है:

अरबी पाठ	हिंदी अनुवाद
निश्चित रूप से उन पर अनिवार्य है कि वे (पाठ) शुरू करने से पहले अक्षरों के उच्चारण स्थानों और उनके गुणों को जानें,	कुरान पाक शुरू करने से पहले, कुरान के पाठकों के लिए अक्षरों के मखरीज और सिफ़ात (अस्थायी और स्थायी) का जानना नितांत आवश्यक है, ताकि कुरान

अरबी पाठ	हिंदी अनुवाद
ताकि वे सबसे शुद्ध बोलियों में बोल सकें।[2] - और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।	के पाठक सबसे शुद्ध बोलियों के साथ कुरान पाक का उच्चारण कर सकें(अर्थात पढ़ सकें)। (त)

1. अल-कुरान 47/33
2. मुकदमा जज़रीया, खुतबा-उल-किताब, मुद्रित सईदिया कुतुब खाना, किस्सा ख्वानी बाज़ार, पेशावर, पृष्ठ 4 पृष्ठ 736 में से 339

جلد ششم فتاویٰ رضویہ ماینبغی ادانہ ہوئے تو اس قدر میں معذور رہے گا اور اگر مخارج ہی نہیں معلوم یا معلوم ہیں نکالتا نہیں تو نماز ہرگز نہ ہوگی اگر صحیح ہے تو اکثر مسلمان فرض کو چھوڑ دیں یا کسی حرام کے مرتکب ہوں تو اس فعل سے ساقط یا حلال نہ ہو جائے گا یوں تو اکثر مسلمان نماز ہی نہیں پڑھتے اور جو پڑھتے ہیں ان میں اکثر مواظبت نہیں کرتے سو میں ننانوے ۹۹ یا اس کے قریب غیبت سے پر ہیز نہیں کرتے تو قول زید صحیح ہے یا نہیں؟ الجواب: زید کے اقوال مذکورہ سب صحیح ہیں سوائے اتنے لفظ کے کہ اگر مخارج معلوم نہیں تو نماز صحیح نہ ہوگی مخارج معلوم ہونا ضرور نہیں حروف صحیح ادا ہونا ضرور ہے بہتیرے ہیں کہ سن سن کر صحیح پڑھتے ہیں اگر ان سے پوچھا جائے تو مخارج بتا نہیں سکتے اردو زبان والا ہر جاہل اپنی زبان کے حروف ٹھیک ادا کرتا ہے اور مخارج نہیں بتا سکتا۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔ مسئلہ نمبر ۵۰۶: از بریلی مرسلہ حضرت محمد میاں صاحب مد ظلہ العالی یہ ارشاد فرمائیں کہ قرآن کریم کی اس قدر تجوید کہ حرف اپنے غیر سے ممتاز رہے فرض عین ہے کتب فقہ میں مذکور ہے اگر ہے تو کس کتاب میں کس جگہ؟ جناب کی نظر میں اس بارہ میں صرح تصریح کس کتاب میں ہے؟ اور اگر کوئی حدیث اس بارہ میں اس وقت پیش نظر ہو تو اس کا ارشاد ہو۔ الجواب: تمام کتابوں میں تصریح ہے کہ ایک حرف کی جگہ دوسرے سے تبدیل اگر عمداً ہو تو مذہب صحیح و معتمد میں اور خطا ہو تو ہمارے ائمہ مذہب کے نزدیک مفسد نماز ہے جبکہ مفسد معنی ہو یا امام ابویوسف کے نزدیک جبکہ وہ کلمہ قرآن کریم میں نہ ہو اور اس سے بچنا بے تعلم تمیز حروف ناممکن اور فساد نماز سے بچنا فرض عین ہے۔ قال اللہ تعالیٰ وَلَا تُبْطِلُوْا اَعْمَالَکُمْ ۱ (اللہ تعالیٰ کا فرمان ہے تم اپنے اعمال باطل نہ کرو۔ ت) مقدمہ امام جزری میں ہے:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
اذ واجب علیہم محتم قبل الشروع اولا ان یعلموا مخارج الحروف والصفات، لینطقوا بافصح اللغات[2]- واللہ تعالٰی اعلم۔	قرآن پاک میں شروع ہونے سے پہلے اولا قاریان قرآن پر حروف کے مخارج و صفات (ذاتیہ و عرضیہ) کا جاننا قطعاً ضروری ہے تاکہ قاریان قرآن صحیح ترین لغات کے ساتھ قرآن پاک کا نطق کرسکیں (یعنی پڑھ سکیں۔ (ت)

1 القرآن ۳۳/۴۷ 2 مقدمہ جزریہ خطبہ الکتاب مطبوعہ سعیدیہ کتب خانہ قصہ خوانی بازار پشاور

Fatawa Rizvia Volume 6

Question 507: From Mahra Mutahhara, District Etah, Dargah Sharif, sent by Sahibzada Hazrat Syed Shah Muhammad Mian Sahib (may his blessings endure). In the noble letter regarding Tajweed (rules of Quranic recitation), your excellency has stated that if one or two letters are substituted by another due to inability, then according to the correct and relied-upon school of thought, it invalidates the prayer when it changes the meaning, as per Imam Abu Yusuf etc. I have some hesitation regarding this, as the prayer of an 'Althagh' (one with a speech impediment/difficulty pronouncing certain letters) is valid as long as they do not fall short in their effort and attempt to pronounce the letters correctly. After this effort, your excellency did not mention any further change—whether it alters the meaning or not—in your corrective treatise 'Mabahith-e-Imamat'.

Answer: The prayer of an Althagh is only valid when they continue to strive for correct pronunciation. Even this is impossible without proper education; and this education is Tajweed itself. Thus, its obligation is definitively proven. If one does not learn the correct pronunciation, or learns it but does not strive to execute it, then the prayer will certainly be void. Therefore, both knowledge and action are obligatory. And Allah Almighty knows best.

Question 508: From Arda Nakah Post Office Achnera, District Agra. Pronouncing the letter 'Dhad' (ض) like 'Duwad' (i.e., like the letter 'Dal'), is this correct or wrong? If it is wrong, is the prayer invalidated or not? And most people cannot distinguish between 'Dhad' (ض) and 'Za' (ظ) due to their similarity; is their prayer valid or not?

Answer: This letter is neither 'Dal' nor 'Za'. There are three scenarios: (1) Intentionally changing the letter revealed by Allah: This is not the case with those who say 'Duwad', as they believe they are pronouncing 'Dhad'; they do not intentionally substitute it with an emphasized 'Dal'. However, this is the case with some 'Za' proponents. Some of them have explicitly written to recite 'Za' (ظ) instead of 'Dhad' (ض) and urged all Muslims to follow this. This is strictly forbidden (Haram-e-Qat'i) and an extremely heinous major sin. In fact, according to the explicit statements of great imams like Abu Bakr al-Fadhli and others, it is disbelief (Kufr), as mentioned in 'Minah al-Rawd al-Azhar', 'Al-Fatawa al-Alamgiriyyah', and other books. Their prayer is always invalid as soon as they recite 'Maghdub' (مغضوب) for the first time. (2) Accidental substitution: meaning one is capable of pronouncing 'Dhad' (ض) and intends to do so, but the tongue slips and 'Dal' or 'Za' is pronounced. There are many

and conflicting opinions from later scholars (Muta'akhireen) on this. The position of our Imam (Imam-e-Azam, may Allah be pleased with him) is that if it alters the meaning, the prayer is invalidated; otherwise, it is valid. (3) Substitution due to inability: meaning one intends to recite 'Dhad' (ض) but is unable to pronounce it correctly and instead 'Dal' or 'Za' is pronounced. And in India...

फतावा रज़विया, खंड 6

प्रश्न 507: माहरा मुतहरा, जिला एटा, दरगाह शरीफ से, साहिबज़ादा हज़रत सैयद शाह मुहम्मद मियां साहब (दामत बरकातुहुम) द्वारा प्रेषित। तजवीद (कुरान पाठ के नियम) के संबंध में आपके सम्मानित पत्र में आपका कथन है: "यदि विवशता के कारण एक या दो अक्षर दूसरे से बदल जाएं तो सही और विश्वसनीय मत के अनुसार, यह नमाज़ को बिगाड़ने वाला (मफसिद) है जब यह अर्थ बदल दे, जैसा कि इमाम अबू यूसुफ आदि का मत है।" मुझे इसमें कुछ हिचकिचाहट है कि 'अलथग' (जिसकी ज़ुबान में हकलाहट या अक्षरों के उच्चारण में कठिनाई हो) की नमाज़ सही है जब तक कि वह अपनी कोशिश और अक्षरों को सही निकालने में कोताही (लापरवाही) न करे। इस कोशिश के बाद, अर्थ बदलने वाला या न बदलने वाला कोई भी परिवर्तन स्वयं आपकी अपनी सुधारात्मक पुस्तिका 'मबाहीसे इमामत' में अधिक वर्णित नहीं किया गया।

उत्तर: अलथग की नमाज़ तभी सही है जब वह अक्षरों को सुधारने की कोशिश करता रहे। यह भी बिना सही शिक्षा के असंभव है, और यही शिक्षा तजवीद है। अतः इसकी अनिवार्यता (फ़र्ज़ियत) निश्चित रूप से सिद्ध है। यदि कोई सही उच्चारण न सीखे, या सीखे और उसे अदा करने की कोशिश न करे, तो नमाज़ अवश्य बातिल (अमान्य) होगी। अतः ज्ञान और कर्म दोनों अनिवार्य (फ़र्ज़) हुए। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

प्रश्न 508: अरदा नकाह डाकखाना अचनेरा, जिला आगरा से। अक्षर 'ज़ाद' (ض) को 'दवाद' यानी 'दाल' की तरह पढ़ना, क्या यह सही है या गलत? यदि गलत है, तो क्या नमाज़ फासिद (अमान्य) हो जाती है या नहीं? और अधिकांश लोग समानता के कारण 'ज़ाद' (ض) और 'ज़ा' (ظ) में अंतर नहीं कर पाते, क्या उनकी नमाज़ सही होती है या नहीं?

उत्तर: यह अक्षर न तो 'द' है और न 'ज़'। इसकी तीन स्थितियाँ हैं: (1) जानबूझकर अल्लाह द्वारा अवतरित अक्षर को बदलना: यह 'दवाद' कहने वालों में नहीं है, क्योंकि वे अपने विचार में 'ज़ाद' ही पढ़ते हैं, न कि वे जानबूझकर उसकी जगह एक भारी 'दाल' स्थापित करते हैं। हालाँकि, 'ज़ा' (ظ) वालों में ऐसा है। उनके कुछ लोगों ने स्पष्ट रूप से लिखा है कि 'ज़ाद' की जगह 'ज़ा' पढ़ो और सभी मुसलमान इस पर अमल करें। यह पूर्णतः हराम है और अत्यंत घोर पाप है, बल्कि इमाम अबु बक्र फ़ज़ली आदि बड़े इमामों के स्पष्ट कथन के अनुसार यह कुफ्र है, जैसा कि 'मिनहुर्रौज़ुल अज़हर', 'फ़तावा आलमगीरी' और अन्य पुस्तकों में है। उनकी नमाज़ पहली ही बार 'मग्ज़ूब' (مغضوب) पढ़ते

ही हमेशा के लिए बातिल है। (2) गलती से बदल जाना: यानी 'ज़ाद' अदा करने में सक्षम है, उसी का इरादा किया और ज़ुबान फिसल कर 'दाल' या 'ज़ा' अदा हो गई। इसमें बाद के विद्वानों (मुताखरीन) के बहुत और विरोधाभासी कथन हैं। हमारे इमाम (इमाम-ए-आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु) का मत यह है कि यदि अर्थ बिगड़ जाए तो नमाज़ फासिद है, अन्यथा सही। (3) विवशता (अक्षमता) के कारण बदल जाना: यानी इरादा तो 'ज़ाद' का करता है मगर अदा नहीं कर पाता और 'दाल' या 'ज़ा' अदा होती है, और हिन्दुस्तान...

فتاویٰ رضویہ جلد ششم

مسئلہ نمبر ۵۰۷: از ماہرہ مطہرہ ضلع ایٹہ درگاہ شریف مرسلہ صاحبزادہ حضرت سید شاہ محمد میاں صاحب دامت برکاتہم والا نامہ میں متعلق تجوید ارشاد جناب ہے دو ایک حرف کہ دوسرے سے تبدیل اگر عجزاً ہو تو مذہب صحیح و معتمد میں مفسدِ نماز ہے جبکہ مفسدِ معنی ہو یا امام ابی یوسف کے الخ مجھے اس میں تامل ہے کہ الثغ کی نماز صحیح ہے جبکہ وہ اپنی سعی و کوشش اور صحیح حروف نکالنے میں کوتاہی نہ کرتا ہو اس کوشش کے بعد کوئی تغییر مفسد معنی یا غیر مفسد معنی کی خود جناب نے بھی اپنے اصلاح رسالہ مباحث امامت میں نہیں زائد فرمائی۔

الجواب: الثغ کی نماز جبھی تو صحیح ہے کہ وہ تصحیح حرف میں کوشش کئے جائے یہ بھی بے تعلیم صحیح ناممکن، یہی تعلیم تجوید ہے تو اس کی فرضیت قطعاً ثابت، اگر صحیح کونہ سیکھے یا سیکھے اور اس کے ادا کرنے کی کوشش نہ کرے تو نماز ضرور باطل ہوگی تو علم و عمل دونوں فرض ہوئے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۵۰۸: ازاردہ نکہ ڈاکخانہ اچنیزہ ضلع آگرہ حرف ضاد کو بصورت دواد یعنی دال پر پڑھتے ہیں یہ صحیح ہے یا غلط؟ اگر غلط ہے تو نماز فاسد ہوتی ہے یا نہیں؟ اور اکثر لوگ ض اور ظ میں بسبب ہونے مشابہت کے فرق نہیں کر سکتے ان کی نماز درست ہوتی ہے یا نہیں؟

الجواب: یہ حرف نہ دہے نہ ظ صورتیں تین ہیں: (۱) قصداً حرف منزل من اللہ کی تبدیل کرے یہ دواد والوں میں نہیں وہ اپنے نزدیک ضاد ہی پڑھتے ہیں نہ یہ کہ اس سے ہٹ کر دال مفخم اُس کی جگہ بالقصد قائم کرتے ہیں البتہ ظا والوں میں ایسا ہے ان کے بعض نے تصریحاً لکھ دیا کہ ض کی جگہ ظ پڑھو اور سب مسلمانوں اس پر عمل پیرا ہو جاؤ یہ حرامِ قطعی ہے اور اشد اخبث کبیرہ

بلکہ امام اجل ابوبکر فضلی وغیرہ اکابر ائمہ کی تصریح سے کفر ہے کما فی منح الروض الازھر والفتاوی عالمگیریة وغیرھما (جیسا کہ منح الروض الازہر ، فتاویٰ عالمگیری اور دیگر کتب میں ہے۔ت) ان کی نماز پہلی ہی بار مغضوب پڑھتے ہی ہمیشہ باطل ہے۔ (۲) خطاً تبدیل ہو یعنی ادائے ض پر قادر ہے اُسی کا قصد کیا اور زبان بہک کر دال یا ظ ادا ہوئی اس میں متاخرین کے اقوال کثیرہ و مضطرب ہیں اور ہمارے امام مذہب رضی اللہ تعالیٰ عنہ کا یہ مذہب ہے اگر فساد معنی ہو تو نماز فاسد ورنہ صحیح۔ (۳) یہ کہ عجزاً تبدیل یعنی قصد تو ض کا کرتا ہے مگر ادا نہیں کر سکتا و یا ظ ادا ہوتی ہے اور ہندوستان

Fatawa Razawiyya, Volume 6

Among those who pronounce 'Dwaad' (instead of the correct 'Daad'), it is an individual obligation (fard al-ayn) upon them to learn the proper articulation point (makhraj) and method of pronouncing 'Daad' (ض), and they should strive day and night to correct it to the utmost degree. As long as they are striving, their prayer will be deemed valid, provided they are not capable of following a correct reciter. Otherwise, their own prayer is invalid (batil) and the prayer of those following them is also invalid. This same ruling applies to those who make mistakes without intentionally changing the meaning. This is a summary of the ruling, and detailed discussion is in our treatise 'Al-Jaam al-Saad an Sunan al-Daad'. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 509: From Jaroda, District Meerut, sent by Syed Sabir Jilani Sahib. Is it better to recite Surah Tabat (Al-Lahab) in prayer?

Answer: Seeking Allah's forgiveness, there is absolutely no harm in reciting Surah Tabat.

Problem No. 510: From Bareilly city, Sudgaran neighborhood, Manzar-ul-Islam Madrasa, Maulvi Muhammad Afzal Sahib, 6th Jamadi al-Akhira 1337 AH.

What do the scholars of religion say regarding this matter that in "lima yatafajjaru minhu al-anhar", it was read as "lamma" (with shadda)? Is the prayer valid without dislike (karahat) or not? What is the opinion of the scholars of religion in this matter that a person read "lamma" with a shadda in "lima yatafajjaru minhu al-anhar"? Will the prayer be valid without dislike or not?

Answer: The prayer is valid. In the case of an oversight or slip, there is no dislike. Deleting the response (jaza) to denote greatness of status is common. Allah Almighty said: "When they had both submitted and he put him down upon his forehead," (103) "And We called to him, 'O Abraham...'" He did not mention the response (jaza). Similarly, here it can be interpreted that: "And indeed, from them is that which something amazing happens... when the rivers burst forth from it." In short... The prayer will be valid. In the case of forgetting or a slip, there is no dislike. Due to the greatness of its status, omitting the response (jaza) is well-known and famous. The command of Allah Almighty is: "When they had both submitted and he put him down upon his forehead," (103) "And We called to him, 'O Abraham...'" Here, He did not

mention the response (jaza). Similarly, in the mentioned place, it can be interpreted that...

1. Al-Quran 37/103 Page 341 of 736

फतावा रज़विया, खंड 6

'द्वाद' (ض के स्थान पर) का उच्चारण करने वालों में से अक्सर ऐसे हैं जिन पर यह व्यक्तिगत अनिवार्य (फ़र्ज़-ए-ऐन) है कि वे 'द्वाद' का सही उच्चारण स्थल (मखरज) और अदायगी का तरीका सीखें और रात-दिन इसकी शुद्धि में अत्यधिक प्रयास करें। जब तक वे प्रयासरत रहेंगे, उनकी नमाज़ सही मानी जाएगी, बशर्ते कि वे सही उच्चारण करने वाले के पीछे इक़्तेदा (अनुसरण) करने में असमर्थ हों। उनकी अपनी नमाज़ भी शून्य (बातिल) है और उनके पीछे दूसरों की भी बातिल, यही आदेश गलतियाँ करने वालों का है जब तक वे जानबूझकर परिवर्तन न करें। यह आदेश का सारांश है और विवरण हमारे शोध प्रबंध 'अल-जाम अल-साद अन सुनन अल-दाद' में है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर ५०९: जड़ौदा, जिला मेरठ से, सैयद साबिर जिलानी साहिब द्वारा भेजा गया। क्या नमाज़ में सूरह तब्बत (अल-लहब) पढ़ना बेहतर है?

उत्तर: अल्लाह से क्षमा मांगते हुए, सूरह तब्बत पढ़ने में मूल रूप से कोई हर्ज नहीं है।

मसला नंबर ५१०: बरेली शहर, सूदाग्रान मोहल्ला, मदरसा मंज़र-उल-इस्लाम से, मौलवी मोहम्मद अफ़ज़ल साहिब, ६ जमादि-उल-आख़िरा १३३७ हिजरी।

इस मामले में धर्म के विद्वानों की क्या राय है कि 'लिमा यतफ़ज्जरु मिन्हुल अनहार' में 'लम्मा' (ल पर तश्दीद के साथ) पढ़ा गया, तो नमाज़ बिना किसी नापसंदगी (कराहियत) के सही होगी या नहीं? इस मामले में धर्म के विद्वानों की क्या राय है कि एक व्यक्ति ने 'लिमा यतफ़ज्जरु मिन्हुल अनहार' में 'लम्मा' (तश्दीद के साथ) पढ़ा, तो नमाज़ बिना कराहियत के सही होगी या नहीं?

उत्तर: नमाज़ सही होगी। भूल और फिसल जाने की स्थिति में कोई नापसंदगी नहीं है। इसकी महिमा को दर्शाने के लिए जज़ा (प्रतिफल) का विलोप प्रचलित है। अल्लाह तआला का इरशाद है: 'जब उन दोनों ने (हुक्म) मान लिया और उसने उसे माथे के बल लिटा दिया,' (१०३) 'और हमने उसे आवाज़ दी ऐ इब्राहीम!' यहाँ जज़ा का ज़िक्र नहीं फ़रमाया, इसी तरह यहाँ यह तावील (व्याख्या) हो सकती है कि: 'और बेशक उनमें से वह है जिससे कोई अद्भुत बात होती है जब उससे नदियाँ फूट पड़ती हैं'। संक्षेप में... नमाज़ सही होगी। भूल और फिसल जाने की स्थिति में कराहियत नहीं है। इसकी अज़मत-ए-शान (महिमा) के कारण जज़ा का हज़फ़ (विलोप) मशहूर और ज्ञात है। अल्लाह तआला का इरशाद है: 'जब उन दोनों ने (हुक्म) मान लिया और उसने उसे माथे के बल लिटा दिया,' (१०३) 'और

हमने उसे आवाज़ दी ऐ इब्राहीम!' यहाँ जज़ा का ज़िक्र नहीं फ़रमाया, इसी तरह उक्त स्थान पर भी यह तावील हो सकती है कि...

1. अल-कुरआन ३७/१०३ पृष्ठ ३४१/७३६

میں اکثر دُواد والے ایسے ہی ہیں ان پر فرض عین ہے کہ ض کا مخرج اور اسکا طریقہ ادا سیکھیں اور شبانہ روز حد درجے کی کوشش اس کی تصحیح میں کریں جب تک کوشاں رہیں گے ان کی نماز صحیح کہی جائے گی، جبکہ صحیح خواں کے پیچھے اقتداء پر قادر نہ ہوں ان کی اپنی بھی باطل اور ان کے پیچھے اوروں کی بھی باطل، یہی حکم خطائیوں کا ہے جبکہ قصداً تبدیل نہ کرتے ہوں یہ خلاصہ حکم ہے اور تفصیل ہمارے رسالہ "الجام الصاد عن سنن الضاد" میں ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۵۰۹: از جڑودہ ضلع میرٹھ مرسلہ سید صابر جیلانی صاحب کیا سورہ تبت کا نماز میں پڑھنا بہتر ہے؟

الجواب: سورہ تبت کے پڑھنے میں استغفر اللہ اصلاً کوئی حرج نہیں۔

مسئلہ نمبر ۵۱۰: از شہر بریلی محلہ سود گران مدرسہ منظر الاسلام مولوی محمد افضل صاحب ۶ جمادی الاخرٰی ۱۳۳۷ھ

چہ می فرمایند علمائے دین دریں مسئلہ کہ در لمّآ یتفجر منہ الانہر خواندہ شد لمّآ نماز شد بغیر کراہت یا نہ؟ اس مسئلہ میں علمائے دین کی کیا رائے ہے کہ ایک شخص نے لمّآ یَتَفَجَّرُ مِنْهُ الْاَنْهٰرُ میں لَمّا شد کے ساتھ پڑھا نماز بغیر کراہت کے درست ہوگی یا نہیں؟

الجواب: نماز درست باشد وبحال سہو وزلت کراہت نیست وحذف جزا برائے دلالت برعظمت شانش شائع است قال اللہ تعالٰی فَلَمَّا اَسْلَمُوْا وَتَلَّهٗ لِلْجَبِيْنِ ۱۰۳ وَنَادَيْنٰهُ اَنْ يّٰاِبْرٰهِيْمُ جزا ذکر نفر مود، ہمچناں ایں جا تاویل شود کہ وان منہا ما یکون منہ شیئ عجیب لمّآ یتفجر منہ الانہر بالجملہ نماز درست ہوگی،

بھول اور پھسل جانے کی صورت میں کراہت نہیں، اس کی عظمتِ شان کے پیش نظر جزا کا حذف مشہور ومعروف ہے، اللہ تعالیٰ کا ارشاد ہے فَلَمَّا اَسْلَمُوْا وَتَلَّهٗ لِلْجَبِيْنِ ۱۰۳ وَنَادَيْنٰهُ اَنْ يّٰٓاِبْرٰهِيْمُ یہاں جزا کو ذکر نہیں فرمایا اسی طرح مذکورہ مقام میں تاویل ہو سکتی ہے کہ

1 القرآن ۳۷/ ۱۰۳ صفحہ 341 از 736

Fatawa Rizwia, Volume 6

In this case, there is no corruption of meaning. Allah Almighty knows best. Among them are some from which something strange occurs, that when they burst, rivers flow from them. In short, in this case, there is no corruption of meaning. Allah Almighty knows best. (T)

Question 511: From Allahabad, Old Nakhas Muhalla, at the house of Dhoom Shah Sahib, sent by Muhammad Nazim Azad Haqqani Muzaffarpuri, currently residing in Allahabad, 11th Ramadan al-Mubarak 1337 AH. What do the scholars of religion and the clear Shariah say regarding this issue: in a Friday prayer, the Imam had already recited more than three verses after Surah Al-Hamd and then stopped. A follower (Muqtadi) from behind gave him a prompt (Luqmah). Instead of taking the prompt, the Imam himself repeated the Surah; skipping the verse he had stopped at, he completed the Surah. Afterwards, he performed Ruku, Sujud, etc. Later, the Imam told the follower who gave the prompt, "Your prayer has become void." Now the question is, in this situation, should the follower have given the prompt or not? Is it permissible to give a prompt in such a situation? And in the described situation, is the follower's prayer valid or not?

The Answer: The prayer of both the follower and the Imam is valid. A follower can give a prompt even if the Imam has already recited a hundred verses; this is the correct view. On whatever premise the Imam considered the follower's prayer void, how did his own remain valid? If that premise were correct, the Imam's prayer would also be void because giving a prompt is speech, and it was allowed by Shariah. If there was no Shariah permission after three verses, then the follower's prayer was gone, and when the Imam remembered because of his prompt, he recited the verse having received instruction from outside the prayer, and restarting the Surah cannot nullify this reminder. So, the Imam's own prayer would be gone, and because of him, everyone's. As for the claim that only the follower's prayer became void while the Imam's and the congregation's remained, this is purely false. The correct view is that everyone's prayer is valid. It is stated in Durr-ul-Mukhtar:

[Table section] Opening for his Imam (giving a prompt) does not invalidate prayer absolutely for the prompter and the taker in every state, unless the follower precedes him (the Imam) without a benefit, then opening with it invalidates everyone's prayer.[1] | A follower giving a prompt to his Imam does not invalidate the prayer absolutely in every state. "Absolutely" means neither the prompter's prayer breaks nor the taker's.

"In every state" means it is the same whether the Imam has already recited enough for the prayer to be valid or has not yet recited that much.

[1] Durr-ul-Mukhtar, Chapter on what invalidates prayer, etc., printed by Mujtabai Delhi, 1/90.

फ़तावा रज़विया, जिल्द 6

इस स्थिति में अर्थ का कोई बिगाड़ (फ़साद) नहीं है। अल्लाह तआला बेहतर जानता है। उनमें कुछ ऐसे हैं जिनसे कुछ अजीब चीज़ निकलती है कि जब वे फटते हैं, तो उनसे नदियाँ बहती हैं। संक्षेप में, इस स्थिति में अर्थ का कोई बिगाड़ नहीं है। अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला नंबर 511: इलाहाबाद, मोहल्ला नखास कोहना, मकान धूम शाह साहब से, प्रेषक मुहम्मद नाज़िम आज़ाद हक्कानी मुज़फ़्फ़रपुरी, वर्तमान निवासी इलाहाबाद, 11 रमज़ानुल मुबारक 1337 हिजरी। दीन के विद्वान और स्पष्ट शरीयत इस मसले में क्या कहते हैं: जुमा की नमाज़ में इमाम 'अल-हम्द' (सूरत फ़ातिहा) के बाद तीन आयतों से ज़्यादा पढ़ चुका हो और क़िरात से रुक गया हो, पीछे से किसी मुक़्तदी (नमाज़ी) ने लुक़्मा (सुझाव) दिया, इमाम ने लुक़्मा लेने के बजाय खुद सूरत को दोबारा पढ़ा; जिस आयत पर रुका था उसे छोड़कर सूरत पूरी की। इसके बाद रुकू और सुजूद वगैरह किए। बाद में इमाम ने लुक़्मा देने वाले मुक़्तदी से कहा कि तुम्हारी नमाज़ बातिल (अमान्य) हो गई। अब सवाल यह है कि इस स्थिति में मुक़्तदी को लुक़्मा देना चाहिए था या नहीं? और क्या ऐसी स्थिति में लुक़्मा देना जायज़ है? और वर्णित स्थिति में मुक़्तदी की नमाज़ हुई या नहीं?

जवाब: मुक़्तदी और इमाम दोनों की नमाज़ हो गई। मुक़्तदी लुक़्मा दे सकता है चाहे इमाम सौ आयतें पढ़ चुका हो, यही सही है। इमाम ने जिस सोच पर मुक़्तदी की नमाज़ बातिल मानी, उसकी खुद की कैसे हो गई? अगर वह सोच सही होती, तो इमाम की भी बातिल होती क्योंकि लुक़्मा देना कलाम (बातचीत) है और उसे शरीयत की अनुमति से रखा गया है। अगर तीन आयतों के बाद शरीयत की अनुमति नहीं थी, तो मुक़्तदी की नमाज़ गई, और उसके लुक़्मा देने से इमाम को याद आ गया तो उसने नमाज़ के बाहर से शिक्षा पाकर आयत पढ़ी, और सूरत को शुरू से फिर से पढ़ना इस याद दिलाने को बातिल नहीं कर सकता, तो इमाम की अपनी भी गई और उसके कारण सबकी गई। रहा यह कहना कि सिर्फ उस मुक़्तदी की नमाज़ बातिल हुई और इमाम व जमात की हो गई, यह पूरी तरह गलत है। सही यह है कि सबकी हो गई। दुर्रे मुख़्तार में है:

[तालिका अनुभाग] फ़तहुहू अला इमामिही फ़इन्नहू ला युफ़सिदु मुतलक़न लिलफ़ातिहि व आक़िज़िन बिकुल्लि हालिन इल्ला इज़ा सबक़हु अल-मुअतमु मिन गैरि मसलाह, फ़फ़तहा बिही तुफ़सिदु सलातुल कुल्लि[1]। | मुक़्तदी का अपने इमाम को लुक़्मा देना नमाज़ के लिए मुतलक़न (पूर्ण रूप से) हर हाल में फ़ासिद (अमान्य) नहीं होता। 'मुतलक़न' का मतलब यह है कि न लुक़्मा देने वाले की

नमाज़ टूटती है और न लेने वाले की। और 'हर हाल में' का मतलब यह है कि बराबर है इमाम इतना पढ़ चुका हो जिससे नमाज़ सही होती है या न पढ़ चुका हो।

[1] दुर्रे मुख़्तार, नमाज़ को फ़ासिद करने वाली चीज़ों का अध्याय, मुजतबाई प्रेस दिल्ली, 1/90।

دریں صورت فساد معنی نیست۔ واللہ تعالٰی اعلم ان میں بعض وہ ہیں جس سے شیئی عجیب صادر ہوتی ہے کہ جب وہ پھٹتے ہیں تو اس سے نہریں جاری ہوتی ہیں، الغرض اس صورت میں فساد معنی نہیں۔ واللہ تعالٰی اعلم (ت)

مسئلہ نمبر ۵۱۱: از الہ آباد محلہ نخاس کہنہ بر مکان دھوم شاہ صاحب مرسلہ محمد ناظم آزاد حقانی مظفر پوری مقیم حال الہ آباد ۱۱ رمضان المبارک ۱۳۳۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و شرع متین اس مسئلہ میں کہ نماز جمعہ میں امام الحمد کی تین آیتوں سے زیادہ پڑھ چکا ہو اور قرات سے رک گیا ہو پیچھے سے کسی مقتدی نے لقمہ دیا اس نے بجائے لقمہ لینے کے خود سورت کو اعادہ کیا، جس آیت پر رکا تھا اس آیت کو نکال کر سورت کو پورا کیا بعد ازاں رکوع و سجود وغیرہ کیا بعد میں لقمہ دینے والے مقتدی سے امام نے کہا کہ تمہاری نماز باطل ہو گئی اب سوال یہ ہے کہ اس صورت میں مقتدی کو لقمہ دینا چاہیے یا نہیں؟ اور ایسی صورت میں لقمہ دینا جائز ہے یا نہیں؟ اور صورت مسئولہ میں مقتدی کی نماز ہوگئی یا نہیں؟

الجواب: مقتدی و امام سب کی نماز ہو گئی مقتدی لقمہ دے سکتا ہے اگر چہ امام سو آیتیں پڑھ چکا ہو یہی صحیح ہے، امام نے جس خیال پر نماز مقتدی باطل مانی امام کی خود کب ہوئی، اگر وہ خیال صحیح ہو تو امام کی بھی باطل ہوئی کہ لقمہ دینا کلام ہے اور وہ باجازت شرع رکھا گیا، اگر تین آیتوں کے بعد اجازت شرع نہ تھی تو مقتدی کی نماز گئی اور اس کے لقمہ دینے سے امام کو یاد آگیا تو اس نے خارج از نماز سے تعلیم پاکر آیت پڑھی اور شروع سورت سے اعادہ کرنا اس یاد دہانی کو باطل نہیں کرسکتا تو امام کی اپنی بھی گئی اور اس کے سبب سے سب کی گئی۔ رہا یہ کہ

صرف اس مقتدی کی نماز باطل ہوئی امام و جماعت کی ہوگئی یہ محض باطل ہے اور صحیح وہ ہے کہ سب کی ہو گئی۔ در مختار میں ہے:

[جدول] فتحه على امامہ فانہ لا یفسد مطلقاً لفاتح وأخذ بکل حال الا اذا سبعہ الموتم من غیر مصل ففتح بہ تفسد صلاۃ الکل [1]۔ | مقتدی کا اپنے امام کو لقمہ دینا نماز کے لئے مطلقاً ہر حال میں فاسد نماز نہیں ہوتا، مطلقاً کا مطلب یہ ہے کہ نہ لقمہ دینے والے کی نماز ٹوٹتی ہے اور نہ لینے والے کی اور ہر حال میں اسکا مطلب یہ ہے کہ برابر ہے امام اس قدر پڑھ چکا ہو جس سے نماز درست ہوتی ہے یا نہ پڑھ چکا ہو۔

[1] در مختار باب مایفسد الصلوۃ الخ مطبوعہ مجتبائی دہلی ۹۰/۱

However, in this case, the prayer of all will be invalidated if a follower hears [the correction] from a non-worshipper and gives a cue to his Imam, and the Imam accepts it. (T) In Rad-ul-Muhtar, it is stated:

Arabic Text	Urdu Translation
His words "in any case" mean whether the Imam has recited what is sufficient for prayer or not, whether he moved to another verse or not, whether the opening (cue) was repeated or not; this is the most correct view according to Nahr. His words "except when the follower hears it, etc." - it is stated in Al-Bahr from Al-Qunyah that it is necessary for everyone's prayer to be invalidated because, in this case, the prompting originated from a person outside the prayer; and this was upheld in Nahr. And Allah Knows Best.	The author's phrase "in any case" means whether the Imam had recited enough for the prayer to be valid or not, whether he had moved to another verse or not, whether the cue was given repeatedly or not; the most correct view is [found in] Nahr. His statement "except when the follower hears it, etc." is found in Al-Qunyah, stating that the invalidation of everyone's prayer is necessary because, in this situation, the prompting was found to be from a person outside the prayer, and this was confirmed in Nahr. And Allah Almighty knows best. (T)

Question No. 512: From Seoni district, Chhapra, Qazi circle, near Hanafi mosque. Sent by: Zahoor-ul-Hasan, student. What do the scholars of religion say regarding this matter: Some people say that reciting with Tajweed is obligatory because reciting the Quran correctly is obligatory, and correct recitation cannot be achieved without Tajweed; therefore, Tajweed is also obligatory. Please state who is in the right? Only Mohammad Zahoor-ul-Hasan, student.

The Answer: Undoubtedly, that much Tajweed which ensures the correct pronunciation of letters and avoids incorrect reading is Fard-e-Ayn (an individual obligation). It is stated in Zaziya etc. that "Incorrect pronunciation is Haram without disagreement." (T). He who calls it an innovation (Bid'ah), if he is ignorant, he should be made to understand; and if he says it knowingly, then it is disbelief (Kufr) to call an obligation an innovation. And Allah Almighty knows best.

Question No. 513: A person who is a Hafiz but not a Qari, and makes mistakes in vowel marks (I'rab), meaning reading Zair as Zabar, like reading a Zair under the 'Ghayn' of "Ghayr-il-Maghdub", and reading a Zair under the 'Kaaf' of "Iyyaka". Can

the prayer be Makruh Tahrimi (prohibitively disliked) or not? Do the meanings change or not? He also trims his beard. And an arrogant person who, when standing on the letter 'Haa' with a vertical 'Zair' in 'Rabbi-hi', reads it as 'Rabbeh' or 'Rabbih' when a stop occurs at the end of the verse.

The Answer: In "Iyyaka Na'budu wa Iyyaka Nasta'een", if one reads the Kaaf with a Zair, the meaning will be corrupted and the prayer [will be invalidated]...

---

1. Rad al-Muhtar, Chapter on what invalidates prayer etc., printed by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/460
2. Fatawa Hindiyya, referencing Bazzaziya, Chapter Four on Prayer, Glorification, and Quranic Recitation etc., printed by Noorani Kutub Khana, Peshawar, 1/317

फ़तावा रज़विया जिल्द शष्ठ (६)

अलबत्ता इस सूरत में तमाम की नमाज़ फ़ासिद (अमान्य) हो जाएगी जब मुक़्तदी ने किसी ग़ैर-नमाज़ी से सुना और अपने इमाम को लुक़्मा (सुझाव) दे दिया और इमाम ने ले लिया। (त) रद-उल-मुह्तार में है:

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद
उनके शब्द "बिकल हाल" (हर हाल में) का अर्थ है चाहे इमाम ने उतनी क़िरात कर ली हो जिससे नमाज़ हो जाती है या नहीं, चाहे वह दूसरी आयत की ओर स्थानांतरित हो गया हो या नहीं, चाहे लुक़्मा बार-बार दिया गया हो या नहीं; 'नहर' के अनुसार यही सबसे सही दृष्टिकोण है। उनके शब्द "इल्ला इज़ा समिअहु अल-मुअतम..." - अल-बहर में अल-क़ुनिया से उल्लेखित है कि सभी की नमाज़ अमान्य होना आवश्यक है क्योंकि इस मामले में निर्देश नमाज़ से बाहर के व्यक्ति से प्राप्त हुआ था; और इसे 'नहर' में पुख्ता किया गया है। और अल्लाह बेहतर जानता है।	लेखक के शब्द "बिकल हाल" से अभिप्राय है कि चाहे इमाम ने उतनी क़िरात कर ली हो जिससे नमाज़ हो जाती है या न की हो, वह किसी दूसरी आयत की तरफ मुंतक़िल (स्थानांतरित) हो गया हो या न, ख़्वाह लुक़्मा बार-बार दिया गया हो या न, असह (सबसे सही) यही है 'नहर'। उसका कौल 'इल्ला इज़ा समिअतुल मुअतम' अल-क़ुनिया में है कि तमाम की नमाज़ बातिल हो जाना ज़रूरी है क्योंकि इस सूरत में ख़ारिज नमाज़ शख़्स से तलक़ीन पाई गई, और उसे 'नहर' में साबित रखा गया, वल्लाह तआला आलम। (त)

मसला नंबर ५१२: ज़िला सिवनी, छपड़ा, हलक़ा क़ाज़ी, मस्जिद हनफ़िया के करीब। प्रेषक: ज़हूरुल हसन, विद्यार्थी। क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन इस मसले में कि कुछ लोग कहते हैं कि तजवीद से पढ़ना फ़र्ज़ है क्योंकि क़ुरान का सही तौर से पढ़ना फ़र्ज़ है, और सही पढ़ना बिना तजवीद के आ ही नहीं सकता, तो इस वजह से तजवीद भी फ़र्ज़ है। बताइए कि कौन हक़ पर है? फ़क़त मुहम्मद ज़हूरुल हसन, विद्यार्थी।

अल-जवाब: बेशक उतनी तजवीद जिससे हर्फ़(अक्षर) की तस्हीह (शुद्ध उच्चारण) हो और ग़लत ख़्वानी (ग़लत पढ़ने) से बचा जाए, फ़र्ज़-ए-ऐन है। ज़ाज़िया वग़ैरह में है "अल-लहन हरामुन बिला ख़िलाफ़" (बिना किसी मतभेद के ग़लत उच्चारण हराम है। त)। जो इसे बिदअत (नवाचार) कहता है,

अगर वह जाहिल है तो उसे समझा दिया जाए, और जानबूझकर कहता है तो यह कुफ़्र है, फ़र्ज़ को बिदअत कहना। वल्लाह तआला आलम।

मसला नंबर ५१३: जो शख़्स हाफ़िज़ हो क़ारी न हो और एराब (मात्राओं) में ग़लती करता हो यानी 'ज़ेर' को 'ज़बर' जैसे "ग़ैरिल मग़ुदूब" के'ग़ैन' पर ज़ेर पढ़ता हो और "इय्याका" के'काफ़' पर ज़ेर पढ़ता हो, क्या नमाज़ मकरूह तहरीमी हो सकती है या नहीं और मानी (अर्थ) बदलते हैं या नहीं? और दाढ़ी भी कतरवाता है। और मग़रूर व मुतकब्बिर (अहंकारी) जो जिस 'हा' पर खड़ा 'ज़ेर' 'रबि-हि', उसे आयत पर वक़्फ़ आने पर वक़्फ़ के वक़्त 'रब्बहु' या 'रब्बिह' पढ़े।

अल-जवाब: "इय्याका नाबुदु व इय्याका नस्तईन" में अगर काफ़ को ज़ेर पढ़ेगा तो मानी फ़ासिद (दूषित) होंगे और नमाज़...

---

1. रद-उल-मुह्तार, बाब मा युफ़सिद-उस-सलाह आदि, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र द्वारा प्रकाशित १/ ४६०
2. फ़तावा हिंदीया, बहवाला बज़ाज़िया, अध्याय चार नमाज़, तस्बीह और क़ुरान पाठ आदि के बारे में, नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर द्वारा प्रकाशित १/ ३१७ पृष्ठ ३४३/७३६

البتہ اس صورت میں تمام کی نماز فاسد ہو جائے گی جب مقتدی نے کسی غیر نمازی سے سنا اور اپنے امام کو لقمہ دے دیا اور امام نے لے لیا۔ (ت) ردالمحتار میں ہے:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
قولہ بکل حال ای سواء قرأ الامام ماتجوز بہ الصلاۃ ام لا انتقل الی آیۃ اخری ام لا تکرر الفتح ام لا ھو الاصح نھر، قولہ الا اذا سمعہ المؤتم الخ فی البحر عن القنیۃ یجب ان تبطل صلاۃ الکل لان التلقین من خارج اھ واقرہ فی النھر واللہ تعالٰی اعلم۔	مصنف کے قول "بکل حال" سے مراد یہ ہے کہ خواہ امام نے اتنی قرات کر لی ہو جس سے نماز ہو جاتی ہے یا نہ کی ہو، وہ کسی دوسری آیت کی طرف منتقل ہو گیا ہو یا نہ، خواہ لقمہ بار بار دیا گیا ہو یا نہ، اصح یہی ہے نہر۔ اس کا قول الا اذا سمعتہ المؤتم الخ قنیہ میں ہے کہ تمام کی نماز باطل ہو جانا ضروری ہے کیونکہ اس صورت میں خارج نماز شخص سے تلقین پائی گئی، اور اسے نہر میں ثابت رکھا گیا، واللہ تعالٰی اعلم (ت)

مسئلہ نمبر ۵۱۲: از ضلع سیونی چھپرہ حلقہ قاضی قریب مسجد حنفیہ مرسلہ ظہور الحسن طالب علم کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ بعض لوگ کہتے ہیں کہ تجوید سے پڑھنا فرض ہے کیونکہ قرآن کا صحیح طور سے پڑھنا فرض ہے، تو صحیح پڑھنا بغیر تجوید کے آ ہی نہیں سکتا تو اس وجہ سے تجوید بھی فرض ہے بتائیے کہ کون حق پر ہے؟ فقط محمد ظہور الحسن طالب علم

الجواب: بلاشبہ اتنی تجوید جس سے تصحیح حرف ہو اور غلط خوانی سے بچے فرض عین ہے، زاز یہ وغیرہ میں ہے اللحن حرام بلا خلاف (لحن بلاخلاف حرام ہے۔ ت) جو اسے بدعت کہتا ہے اگر جاہل ہے اسے سمجھا دیا جائے، اور دانستہ کہتا ہے تو کفر ہے فرض کو بدعت کہتا ہے واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۵۱۳: جو شخص حافظ ہو قاری نہ ہو اعراب میں غلطی کرتا ہو یعنی زیر کا زبر جے سے غیر المغضوب کے غین پر زیر پڑھتا ہو اور ایاک کے کاف پر زیر پڑھتا ہو نماز مکروہ تحریمی ہو سکتی ہے یا نہیں اور معنی بدلتے ہیں یا نہیں اور داڑھی بھی کترواتا ہے۔ اور مغرور و متکبر جو جس ہوا پر کھڑا زیر ربہ اس کو آیت پر وقف آجانے پر وقف کے وقت ربہ پڑھے یا ربّہ۔

الجواب: ایّاک نعبد و ایّاک نستعین میں اگر کاف کو زیر پڑھے گا معنی فاسد ہوں گے اور نماز

---

1. رد المحتار باب مایفسد الصلوۃ الخ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/ ۴۶۰
2. فتاوی ہندیہ بحوالہ بزازیۃ الباب الرابع فی الصلوۃ والتسبیح وقراۃ القرآن الخ مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور ۱/ ۳۱۷ صفحہ ۳۴۳ از ۷۳۶

Fatawa Razviya, Volume Six

...false. Some people pronounce the 'gh' in 'Ghair-il-Maghdoob' with a 'kasra' (short 'i' sound), but rather a hint of 'kasra' arises due to the inability to pronounce it correctly, and this does not invalidate the prayer. Making a person who trims their beard an Imam is a sin, and praying behind them is 'Makruh Tahrimi' (prohibitively disliked), and an arrogant, conceited person is even worse when they are famously known for overt pride. In a state of pause (waqf), it will be read as 'Rabbah', and 'Rabbih' is nothing. And the Sunnah in 'Rabbih' is that it shouldn't be a pure 'kasra', but a slight hint of it should arise, not that its difference can be known by hearing the tongue, it cannot come into writing. And Allah Almighty knows best.

Issue No. 512-515: From the city, asked by Ehsan Ali, student of Madrasah Manzar-e-Islam, 5 Shawwal 1337 AH. What do the scholars of religion and jurists of the firm Sharia say on this issue: In the second Para, 9th Ruku, the third verse, i.e., 'Kanan-nasu ummatan wahidah', should it be read by pronouncing the 'tanween' or with a pause (waqf), i.e., 'Wahidatan' or 'Wahidah'? (2) Can one recite one long verse in the first Rak'ah and two, three, or four short verses in the second Rak'ah or not? For example, reciting the aforementioned verse in the full first Rak'ah, and in the second Rak'ah two verses from 'Am hasibtum an tadkhulul jannah' up to 'Wa ma taf'alu min khairin fa-innallaha bihi 'alim'. Is it permissible or not? Explain and you shall be rewarded.

The Answer: Both ways are permissible. There is a pause mark (waqf) here, but connecting (wasl) is better. (2) Indeed, it is permissible without any dislike. This particular situation with these specific verses written in the Surah is perfectly balanced as these two verses are almost equal to that one verse. And Allah Almighty knows best.

Issue No. 516: From the city of Bareilly, Madrasah Manzar-e-Islam, Maulvi Ehsan Ali Sahib, 11 Shawwal 1337 AH. What do the scholars of religion say on this issue: what is the minimum length of a verse by which prayer is valid?

The Answer: That verse which is not less than six letters. Many have also added the condition that it should not be just a single word. Therefore, according to them, 'Mudhammatan', although it is a complete verse and has more than six letters, is not sufficient for the validity of prayer. This has been called the most correct view in Munyah, Zahiriyyah, Siraj al-Wahhaj, Fath al-Qadir, Bahr al-Ra'iq, Durr al-Mukhtar, etc. However, the great Imam Isijani and Imam Malik al-Ulama Abu Bakr Mas'ud Kashani

stated that according to our Imam-e-A'zam (Imam Abu Hanifa) may Allah be pleased with him, prayer is valid even with just 'Mudhammatan', and no disagreement was mentioned at all. It is stated in Durr al-Mukhtar:

"The minimum is six letters even if estimated like 'Lam Yalid'" | This verse should have at least six letters even if it...

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

...बातिल है। 'ग़ैर-इल-मग़ज़ूब' के'ग़' को लोग ज़ेर (इकार) के साथ पढ़ते हैं, बल्कि सही अदायगी न हो पाने के कारण कसरा (इकार) की सी आवाज़ पैदा होती है और यह नमाज़ को बिगाड़ने वाली चीज़ नहीं है। दाढ़ी कटवाने वाले को इमाम बनाना गुनाह है और उसके पीछे नमाज़ मकरूह-ए-तहरीमी है, और एक अहंकारी और अभिमानी व्यक्ति उससे भी बदतर है जब वह सार्वजनिक रूप से अपने अहंकार के लिए प्रसिद्ध और विख्यात हो। वक़्फ़ (विराम) की स्थिति में 'रब्बह' पढ़ा जाएगा और 'रब्बिह' कुछ नहीं है। और 'रब्बिह' में सुन्नत यह है कि केवल कसरा न हो बल्कि हल्की सी बू पैदा हो, न कि इसका अंतर सुनने से पता चल सके यह लिखने में नहीं आ सकता। अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

मसाला नंबर 512-515: शहर से, प्रश्नकर्ता अहसान अली, छात्र मदरसा मंज़र-ए-इस्लाम, 5 शव्वाल 1337 हिजरी। धर्म के विद्वान और सुदृढ़ शरीयत के मुफ़्ती इस मसले में क्या कहते हैं: दूसरे पारे के नौवें रुकूअ की तीसरी आयत यानी 'कानान्नासु उम्मताऊं वाहिदतन' को तनवीन प्रकट करके पढ़ना चाहिए या वक़्फ़ के साथ यानी 'वाहिदतन' या 'वाहिदह'? (2) क्या पहली रकात में एक लंबी आयत और दूसरी रकात में दो, तीन या चार छोटी आयतें पढ़ सकते हैं या नहीं? जैसे कि पहली रकात में पूरी उक्त आयत पढ़ी और दूसरी रकात में 'अम हसिबतुम अन तदख़ुलुल जन्नत' से 'व मा तफ़'अलू मिन ख़ैरिं फ़-इन्नल्लाहा बिही अलीम' तक दो आयतें, तो क्या यह जायज़ है या नहीं? स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिलेगा।

अल-जवाब: दोनों सूरतें जायज़ हैं, यहाँ वक़्फ़ (ठहराव) का चिह्न है लेकिन वस्ल (मिलाकर पढ़ना) बेहतर है। (2) बेशक, यह बिना किसी कराहत (नापसंदगी) के जायज़ है। और यह विशेष स्थिति उन विशेष आयतों के बारे में जो सूरत में लिखी गई हैं, बिल्कुल न्यायसंगत है कि ये दो आयतें उस एक आयत के लगभग बराबर हैं। अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

मसाला नंबर 516: बरेली शहर से, मदरसा मंज़र-ए-इस्लाम, मौलवी अहसान अली साहिब, 11 शव्वाल 1337 हिजरी। धर्म के विद्वान इस मसले में क्या कहते हैं कि आयत की वह मात्रा कितनी है जिससे नमाज़ जायज़ हो जाए?

अल-जवाब: वह आयत जो छह अक्षरों से कम न हो, और कई विद्वानों ने इसके साथ यह शर्त भी लगाई है कि वह सिर्फ एक शब्द न हो। तो उनके नज़दीक 'मुद-हाम्मतन', हालाँकि यह पूरी आयत है

और छह अक्षरों से अधिक है, नमाज़ के जायज़ होने के लिए पर्याप्त नहीं है। मुनिया, ज़हीरिया, सिराजुल वह्हाज, फ़तह-उल-क़दीर, बहरुर रईक़ और दुर्रे मुख्तार आदि में इसे ही सबसे सही कहा गया है। जबकि महान इमाम इसिजानी और इमाम मलिकुल उलमा अबू बक्र मसूद काशानी ने फ़रमाया कि हमारे इमाम-ए-आज़म रज़ियल्लाहु तआला अन्हु के नज़दीक सिर्फ'मुद-हाम्मतन' से भी नमाज़ जायज़ है और इसमें कोई असहमति नहीं जताई। दुर्रे मुख्तार में है:

"न्यूनतम छह अक्षर हैं चाहे वे अनुमानित हों जैसे 'लम यलिद'" | इस आयत के कम से कम छह अक्षर हों चाहे वह...

باطل، غیر المغضوب کے غ کو لوگ زیر پڑھتے بلکہ صحیح ادا پر قادر نہ ہونے کے سبب بُوئے کسرہ پیدا ہوتی ہے اور یہ مفسدِ نماز نہیں۔ داڑھی کتروانے والے کو امام بنانا گناہ ہے اور اس کے پیچھے نماز مکروہِ تحریمی، اور مغرور متکبر اس سے بھی بدتر جبکہ وہ علی الاعلان تکبر سے معروف و مشہور ہو۔ وقف کی حالت میں رَبَّہ پڑھا جائے گا اور رَبِّہ کوئی چیز نہیں، اور رَبِّہ میں سنت یہ ہے کہ محض کسرہ نہ ہو بلکہ خفیف بُوئے پیدا ہو نہ یہ کہ بالکل ہی اس کا فرق ادا زبان سے سُن کر معلوم ہو سکتا ہے تحریر میں آنے کا نہیں۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۵۱۲-۵۱۵: از شہر مسئولہ احسان علی طالب علم مدرسہ منظر الاسلام ۵ شوال ۱۳۳۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرعِ متین اس مسئلہ میں کہ پارہ دوم ۹واں رکوع تیسری آیت یعنی کَانَ النَّاسُ اُمَّۃً وَّاحِدَۃً کو باظہار تنوین پڑھنا چاہئے یا وقف کے ساتھ یعنی واحدۃً یا واحدہ (۲) اول رکعت میں ایک بڑی آیت اور دوسری رکعت میں دو تین چار چھوٹی آیتیں پڑھ سکتے ہیں یا نہیں جیسے آیت مذکور کو پوری اول رکعت میں پڑھا اور دوسری میں اَمْ حَسِبْتُمْ اَنْ تَدْخُلُوا الْجَنَّۃَ سے دو آیتیں وَمَا تَفْعَلُوْا مِنْ خَیْرٍ فَاِنَّ اللہَ بِہٖ عَلِیْمٌ تک، تو جائز ہے یا نہیں۔ بینوا توجروا الجواب: دونوں صورتیں جائز ہیں یہاں علامت وقف ہے اوت وصل اولیٰ ہے۔ (۲) بے شک جائز بلا کراہت ہے اور یہ صورتِ خاصہ ان خاص آیتوں سے کہ سورۃ میں لکھی عین عدل ہے کہ یہ دو آیتیں اُس آیت کے تقریباً بالکل مساوی ہیں واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۵۱۶: از شہر بریلی مدرسہ منظر الاسلام مولوی احسان علی صاحب ۱۱ شوال ۱۳۳۷ھ کیا فرماتی ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ آیت مایجوز بہ صلوٰۃ کتنی مقدار ہے؟ الجواب: وہ آیت کہ چھ حرف سے کم نہ ہو اور بہت نے اُس کے ساتھ یہ بھی شرط لگائی کہ صرف ایک کلمہ کی نہ

ہو تو ان کے نزدیک مُدْھَامَّتٰنِ اگر چہ پوری آیت اور چھ حرف سے زائد ہے جوازِ نماز کو کافی نہیں، اسی کو منیہ وظہیریہ وسراج وہاج وفتح القدیر وبحر الرائق و در مختار وغیرہا میں اصح کہا اور امام اجل اسیجانی و امام مالک العلماء ابو بکر مسعود کا شانی نے فرمایا کہ ہمارے امام اعظم رضی اللہ تعالیٰ عنہ کے نزدیک صرف مُدْھَامَّتٰنِ سے بھی نماز جائز ہے اور اس میں اصلاً کُچھ خلاف نہ فرمایا دُرِّ مختار میں ہے:

اقلھا ستۃ احرف ولو تقدیر اکلم یلد | اس آیت کے کم از کم چھ حروف ہوں اگر چہ وہ

Fatawa Razawiyya - Volume 6

- Unless it is a single word, the most correct view is the lack of validity. (1) [Translation]: Not just literally, but implicitly, for example, "Lam Yalid" (which was originally "Lam Yulad"). However, in the case where the verse consists of only one word, the most correct view is the invalidity of the prayer. (T)

In Hindiyya it is stated: - The most correct view is that it is not permissible, as stated in Sharh al-Majma' by Ibn Malik, and similarly in al-Zahiriyya, al-Siraj al-Wahhaj, and Fath al-Qadir. (2) [Translation]: The most correct view is that prayer is not valid with this. It is stated similarly in Sharh Majma' al-Bahrayn by Ibn Malik. It is also mentioned in al-Zahiriyya, al-Siraj al-Wahhaj, and Fath al-Qadir likewise. (T)

In Fath al-Qadir it is stated: - If the word is a noun or a particle, such as "Mudhaammatan", "Saad", "Qaaf", "Noon", as these are verses according to some reciters, there is disagreement regarding his statement. The most correct view is that it is not permissible because he is called a counter, not a reciter. (3) [Translation]: If that verse consists of a single word, whether it be a noun or a letter, for example, "Mudhaammatan", "Saad", "Qaaf", "Noon". Because these are verses according to some reciters (Qaris), there is disagreement on this based on their view. And the most correct view is that this is not sufficient for the validity of prayer because such a person is not called a reciter but a counter. (T)

In Bahr al-Raiq, after mentioning it, he said: - Thus it was mentioned by the commentators, and it is accepted regarding "Saad" and "Noon" and the like. As for "Mudhaammatan", al-Isbijabi and the author of al-Badai' mentioned that it is permissible according to the opinion of Abu Hanifa without mentioning a disagreement among the scholars. (4) [Translation]: The commentators have described it this way. This matter is accepted regarding "Saad" etc., but concerning "Mudhaammatan", Isbijabi and the author of Badai' said that according to the statement of Imam Abu Hanifa, this is sufficient for the validity of prayer, and they did not mention any disagreement among the scholars (Mashaikh). (T)

In Badai' it is stated: - In Zahir al-Riwaya, the minimum mandatory amount of recitation is... [Translation]: According to Zahir al-Riwaya, the minimum amount of mandatory recitation is...

Footnotes: 1. Durr al-Mukhtar, Section: Wa Yajburul Imam, published by Mujtabai Delhi, 1/80. 2. Fatawa Hindiyya, Chapter 4 on the Description of Prayer, published by

Noorani Kutub Khana Peshawar, 1/69. 3. Fath al-Qadir Sharh al-Hidayah, Section on Recitation, published by Nooriya Razawiya Sukkur, 1/289. 4. Al-Bahr al-Raiq Sharh Kanz al-Daqaiq, Section: When one intends to enter prayer, published by HM Saeed Company Karachi, 1/338. Page 345 of 736

फ़तावा रज़विया - जिल्द छठा

- सिवाय इसके कि वह एक शब्द हो, तो सबसे सही मत वैधता की कमी है। (1) [अनुवाद]: शब्दशः नहीं बल्कि अनुमानित रूप से, उदाहरण के लिए "लम यलिद" (जो मूल रूप से "लम यूलद" था)। लेकिन उस स्थिति में जब वह आयत केवल एक शब्द पर आधारित हो, तो सबसे सही मत नमाज़ की अमान्यता है। (त)

हिन्दिया में है: - सबसे सही यह है कि यह जायज़ नहीं है, जैसा कि इब्न मलिक द्वारा शरह अल-मजमा में बताया गया है, और इसी तरह अल-ज़हीरिय्या, अल-सिराज अल-वहाज और फ़तह अल-क़दीर में भी है। (2) [अनुवाद]: सबसे सही यही है कि इससे नमाज़ जायज़ नहीं है। शरह मजमा इब्न मलिक में इसी तरह है। ज़हीरिय्या, अल-सिराज अल-वहाज और फ़तह अल-क़दीर में भी ऐसा ही है। (त)

फ़तह अल-क़दीर में है: - यदि वह शब्द संज्ञा या अव्यय हो जैसे "मुदहाम्तान", "साद", "क़ाफ़", "नून", क्योंकि ये कुछ पाठकों के अनुसार आयतें हैं, तो उनके कथन पर इसमें मतभेद है। और सबसे सही यह है कि यह जायज़ नहीं है क्योंकि उसे गणना करने वाला कहा जाता है, पाठक नहीं। (3) [अनुवाद]: यदि वह आयत एक शब्द पर आधारित है चाहे वह संज्ञा हो या अक्षर, उदाहरण के लिए "मुदहाम्तान", "साद", "क़ाफ़", "नून"। क्योंकि ये कुछ पाठकों (क़ारी) के नज़दीक आयतें हैं, उनके कथन पर इसमें मतभेद है। और सबसे सही यही है कि यह नमाज़ की वैधता के लिए पर्याप्त नहीं है क्योंकि ऐसे व्यक्ति को पाठक नहीं कहा जाता बल्कि गिनने वाला कहा जाता है। (त)

बहर अल-राईक़ में इसे उल्लेख करके फ़रमाया: - इसी तरह टीकाकारों ने इसका उल्लेख किया है और यह "साद" और "नून" आदि में मान्य है। जहाँ तक "मुदहाम्तान" का प्रश्न है, अल-इस्बीजाबी और बदाइ' के लेखक ने उल्लेख किया है कि यह इमाम अबू हनीफ़ा के कथन के अनुसार जायज़ है, विद्वानों के बीच किसी मतभेद के उल्लेख के बिना। (4) [अनुवाद]: टीकाकारों ने इसे इसी तरह बयान किया है और यह बात "साद" आदि में तो मान्य है, मगर "मुदहाम्तान" के बारे में इस्बीजाबी और साहिबे-बदाइ' ने कहा कि इमाम अबू हनीफ़ा के कथन के अनुसार यह नमाज़ के लिए पर्याप्त है और उन्होंने विद्वानों (मशाइख़) के बीच किसी मतभेद का उल्लेख नहीं किया। (त)

बदाइ' में है: - ज़ाहिर अल-रिवाया में, अनिवार्य पाठ की न्यूनतम मात्रा... [अनुवाद]: ज़ाहिर अल-रिवाया के मुताबिक़ फ़र्ज़ क़िरात की मात्रा कम से कम...

पादलेख: 1. दुर्रे मुख्तार, फ़स्ल: व यजबुरुल इमाम, मुतबूआ मुजतबाई दिल्ली, 80/1 2. फ़तावा हिन्दिया, बाब चार, नमाज़ के वर्णन में, मुतबूआ नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर, 69/1 3. फ़तह अल-क़दीर शरह अल-हिदाया, फ़स्ल: क़िरात के बारे में, मुतबूआ नूरिया रज़विया सुक्कुर, 289/1 4. अल-बहर अल-राईक़ शरह कंज़ अल-दक़ाइक़, फ़स्ल: जब नमाज़ में प्रवेश का इरादा हो, मुतबूआ एच एम सईद कंपनी कराची, 338/1 पेज 345 of 736

فتاوٰی رضویہ - جلد ششم

الا اذا کانت کلمة فالاصح عدم الصحة 1 ۔ لفظاً نہ ہوں بلکہ تقدیراً ہوں مثلاً لم یلد (کہ اصل میں لم یولد تھا) مگر اس صورت میں کہ جب وہ آیت صرف ایک کلمہ پر مشتمل ہو تو اصح عدم صحتِ نماز ہے (ت)

ہندیہ میں ہے: الاصح انه لا یجوز کذا فی شرح المجمع لابن ملك، وهکذا في الظهیریة والسراج الوهاج وفتح القدیر 2 ۔ اصح یہی ہے کہ اس سے نماز جائز نہیں شرح مجمع لابن ملک میں اسی طرح ہے۔ ظہیر یہ، السراج الوہاج اور فتح القدیر میں بھی یوں ہی ہے۔ (ت)

فتح القدیر میں ہے: لو کانت کلمة اسمًا او حرفًا نحو مدهامتان ص ق ن فان هذه آیات عند بعض القراء اختلف فیه علی قوله والاصح انه لا یجوز لانه یسمی عاداً لا قارئاً 3 ۔ اگر وہ آیت ایک کلمہ پر مشتمل ہے خواہ اسم ہو یا حرف مثلاً مدھامتان ، ص، ق، ن کیونکہ یہ بعض قراء کے نزدیک آیات ہیں ان کے قول پر اس میں اختلاف ہے اور اصح یہی ہے کہ یہ جوازِ نماز کے لئے کافی نہیں کیونکہ ایسے شخص کو قاری نہیں کہا جاتا بلکہ شمار کرنے والا کہا جاتا ہے۔ (ت)

بحر الرائق میں اسے ذکر کر کے فرمایا: کذا ذکره الشارحون وهو مسلم فی ص ونحو اما فی مدها متان فذکر الاسبیجابی وصاحب البدائع انه یجوز علی قول ابی حنیفة من غیر ذکر خلاف بین المشایخ 4 ۔ شارحین نے اسے یوں ہی بیان کیا ہے اور یہ بات ص وغیرہ میں تو مسلم مگر مدھامتن کے بارے میں اسپیجابی اور صاحب بدائع نے کہا کہ امام ابو حنیفہ کے قول کے مطابق یہ جوازِ نماز کے لئے کافی ہے اور انہوں نے مشائخ کے درمیان کسی اختلاف کا ذکر نہیں کیا۔ (ت)

بدائع میں ہے: فی ظاهر الروایة قدر ادنی المفروض ظاہر الروایہ کے مطابق فرض قراۃ کی مقدار کم از کم

حواشی: 1 در مختار فصل و یجبر الامام مطبوعہ مجتبائی دہلی ۸۰/۱ 2 فتاویٰ ہندیہ الباب الرابع فی صفۃ الصلوۃ مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور ۶۹/۱ 3 فتح القدیر شرح الہدایہ ، فصل فی القراۃ ، مطبوعہ نوریہ رضویہ سکھر، ۲۸۹/۱ 4 البحر الرائق شرح کنز الدقائق فصل واذا اراد الدخول فی الصلوۃ مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۳۳۸/۱ Page 345 of 736

Fatawa Razviya, Volume 6

[Arabic Box:] ...with a complete verse, whether it is long or short. Like the word of Allah Almighty: 'Mudhammatan'. And what Abu Hanifa said is more logical. [Footnote 1]

[Urdu Box:] It is a complete verse, whether it is long or short. Just as the word of Allah Almighty is 'Mudhammatan', and what Imam Abu Hanifa (may Allah Almighty have mercy on him) has stated is more logical and based on reasoning. (T)

I say: This is more apparent, but since a group is giving preference to it, caution lies in avoidance, especially in a situation where there would be no need for it, except like Fajr when the time remaining is less than the obligatory amount. In such a time, further consideration is needed because, by consensus, according to our Imam, it is sufficient for the performance of the obligatory prayer. Reciting 'Mudhammatan' will be completed quickly as it also has extra letters and one 'madd muttasil' (connected elongation), the omission of which is forbidden. Yes, regarding the person who only remembers this, there will be discussion about it, and repeating (the prayer) is safer. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 517: Submitted by Ihsan Ali Muzaffarpuri, student of Madrasa Manzar-ul-Islam Bareilly, dated 3 Dhu al-Hijjah 1337 AH. What do the scholars of religion and jurists of the firm Shariah say about this matter: How is pausing, performing bowing (ruku), or stopping at a verse marked with (ط)? What is the flaw if ruku is performed on a verse that has (لا)? For example, one is reciting from above and performs ruku at 'Summun bukmun umyun fahum la yarji'oon'. Is it permissible or is there some harm?

The Answer: Stopping at every verse is absolutely permissible without any dislike (karahat), rather it is narrated from the Sunnah. As for ruku, if the meaning is complete, as in the aforementioned verse where after it another independent parable is mentioned, then there is no harm at all. If the meaning is incomplete without the following verse, then it should not be done, especially in examples like 'fawailul lil-musalleen' (so woe to those who pray...) it is extremely repulsive, and in 'thumma radadnahu asfala safileen' (...then We returned him to the lowest of the low) it is less repulsive. In any case, the prayer will be valid.

Problem No. 518: From Mania Wala, Post Office Qasimpur Garhi, District Bijnor, sent by Syed Kifayat Ali Sahib, 5 Rabi al-Awwal 1338 AH. What do the scholars of religion

say in this matter that an Imam recited 'Qul a'udhu birabbin-nas' in the first rak'ah (unit) and 'Qul a'udhu birabbil-falaq' in the second rak'ah, and performed prostration of forgetfulness (sajdah sahw) at the end. Explain the ruling of this matter. State it and be rewarded.

---

1 - Bada'i al-Sana'i, Chapter on the Pillars of Prayer, printed by H.M. Saeed Company Karachi, 1/118

फ़तावा रज़विया, जिल्द छठा

[अरबी बॉक्स:] ...एक पूर्ण आयत के साथ, चाहे वह लंबी हो या छोटी। जैसे अल्लाह तआला का फ़रमान: 'मुदहाम्मतन'। और जो अबू हनीफ़ा ने कहा है वह अधिक तर्कसंगत है। [पाद टिप्पणी १]

[उर्दू बॉक्स:] एक पूर्ण आयत है, चाहे वह आयत लंबी हो या छोटी। जैसे अल्लाह तआला का इरशाद है 'मुदहाम्मतन' और इमाम अबू हनीफ़ा (रहमतुल्लाहि तआला अलैहि) ने जो कुछ फ़रमाया है वही अधिक तर्कसंगत (क़रीन-ए-क़यास) है। (त)

अक़ूल (मैं कहता हूँ): सबसे स्पष्ट यही है, लेकिन चूंकि एक समूह इसे प्राथमिकता दे रहा है, इसलिए इससे बचना ही एहतियात (सावधानी) है, विशेष रूप से उस स्थिति में जब इसकी आवश्यकता न हो, सिवाय फ़ज्र जैसी स्थिति के जब समय वाजिब मात्रा से कम रह गया हो। ऐसे समय में फिर विचार करें कि सर्वसम्मति (बिल-इजमाअ) से हमारे इमाम के निकट फ़र्ज़ की अदायगी के लिए यह पर्याप्त है। 'मुदहाम्मतन' से (नमाज़) जल्दी अदा हो जाएगी क्योंकि इसमें अक्षर भी अधिक हैं और एक 'मद मुत्तसिल' है जिसका छोड़ना हराम है। हाँ, जिसे केवल यही याद हो, उसके बारे में चर्चा होगी और दोहराना (एआदा) अधिक सुरक्षित है। वल्लाहु तआला।

मसअला नम्बर ५१७: मुस्तफ़्सी (पूछने वाले) एहसान अली मुज़फ़्फ़रपुरी, तालिब-ए-इल्म (छात्र), मदरसा मंज़र-उल-इस्लाम बरेली, दिनांक ३ ज़िल-हिज्जा १३३७ हिजरी। क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन और मुफ़्तियान-ए-शरअ-ए-मतीन इस मसअले में कि आयत (ط) पर ठहरना या रुकूअ या वक़्फ़ करना कैसा है? क्या कोई बुराई है अगर जिस आयत पर (ﷺ) है उस पर रुकूअ कर दिया जाए, क्या यह जायज़ है या नहीं? उदाहरण के लिए, ऊपर से पढ़ते हुए आए और 'सुम्मम बुक्मुन उम्-युन फ़हुम ला यर्जीऊन' पर रुकूअ कर दिया, क्या यह जायज़ है या इसमें कुछ हर्ज भी है?

अल-जवाब: हर आयत पर वक़्फ़ करना बिना किसी कराहत (नापसंदगी) के मुतलक़न (पूर्ण रूप से) जायज़ है, बल्कि सुन्नत से वर्णित है। रही बात रुकूअ की, तो अगर अर्थ पूरा हो गया हो, जैसे कि उपरोक्त आयत में इसके बाद दूसरा स्वतंत्र उदाहरण दिया गया है, तो इसमें बिल्कुल कोई हर्ज नहीं है। यदि अर्थ आने वाली आयत के बिना अधूरा है, तो ऐसा नहीं करना चाहिए, विशेष रूप से 'फ़वैलुल-लिल-मुसल्लीन' (ﷺ) जैसे उदाहरणों में यह अत्यंत घृणित (क़बीह) है, और 'सुम्मा रददनाहु असफ़ला साफ़िलीन' (ﷺ) में यह उससे कम घृणित है। नमाज़ बहरहाल हो जाएगी।

मसअला नम्बर ५१८: अज़ मानिया वाला, डाकख़ाना क़ासिमपुर गढ़ी, जिला बिजनौर, प्रेषक सैय्यद किफ़ायत अली साहिब, ५ रबी-उल-अव्वल शरीफ़ १३३८ हिजरी। क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन इस मसअले में कि इमाम ने पहली रकअत में 'कुल अऊज़ु बिरब्बिन नास' पढ़ी और दूसरी रकअत में 'कुल अऊज़ु बिरब्बिल फ़लक़' पढ़ी, और अंत में सजदा-ए-सहव किया। इस मसअले का हुक्म बयान फ़रमाएँ। बयान करें और सवाब पाएँ(बैनू तूजरू)।

---

१ - बदाइ-उस-सनाइ, नमाज़ के अरकान का अध्याय, एच.एम. सईद कंपनी कराची द्वारा मुद्रित, १/११८

पृष्ठ ३४६/७३६

فتاوٰی رضویہ، جلد ششم

[Arabic Box:] بِالْآیَۃِ التَّامَّۃِ طَوِیْلَۃً کَانَتْ اَوْ قَصِیْرَۃً کَقَوْلِہٖ تَعَالٰی مُدْھَآمَّتٰنِ وَمَا قَالَہُ اَبُوْ حَنِیْفَۃَ اَقِیْسُ - ۱

[Urdu Box:] ایک مکمل آیت ہے وہ آیت لمبی ہو یا چھوٹی۔ جیسے اللہ تعالٰی کا ارشاد ہے مدھامتن اور امام ابو حنیفہ رحمۃ اللہ تعالٰی نے جو کچھ فرمایا ہے وہی زیادہ قرین قیاس ہے۔ (ت)

اقول: اظہر یہی ہے مگر جبکہ ایک جماعت اسے ترجیح دے رہی ہے تو احتراز ہی میں احتیاط ہے خصوصاً اس حالت میں کہ اس کی ضرورت نہ ہوگی مگر مثل فجر میں جبکہ وقت قدر واجب سے کم رہا ہو ایسے وقت ثم نظر کہ بالاجماع ہمارے امام کے نزدیک ادائے فرض کو کافی ہے مدھامتن سے جلد ادا ہو جائے گا کہ اس میں حرف بھی زائد ہیں اور ایک مد متصل ہے جس کا ترک حرام ہے، ہاں جسے یہی یاد ہو اس کے بارے میں وہ کلام ہوگا اور احوط اعادہ ۔ واللہ تعالٰی۔

مسئلہ نمبر ۵۱۷: مسئولہ احسان علی مظفر پوری طالب علم مدرسہ منظر الاسلام بریلی بتاریخ ۳ ذی الحجہ ۱۳۳۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین اس مسئلہ میں کہ آیت (ط) پر ٹھہرنا یا رکوع یا وقف کرنا کیسا ہے؟ کیا قباحت ہے اگر جس آیت پر (لا) ہے اس پر رکوع کر دیا تو جائز ہے یا نہیں، مثلاً اوپر سے پڑھتا آیا اور صم بکم عمی فہم لا یرجعون پر رکوع کر دیا تو جائز ہے یا کچھ حرج بھی ہے؟

الجواب: ہر آیت پر وقف مطلقاً بلا کراہت جائز بلکہ سنت سے مروی ہے ، رہا رکوع اگر معنی تمام ہو گئے جیسے آیت مذکورہ میں اس کے بعد دوسری مستقل تمثیل ارشاد ہے جب تو اصلاً حرج

نہیں ، اگر معنی بے آیت آئندہ کے ناتمام ہیں تو نہ چاہئے خصوصاً امثال فَوَيْلٌ لِّلْمُصَلِّينَ لَا میں نہایت قبیح ہے اور ثُمَّ رَدَدْنٰهُ اَسْفَلَ سٰفِلِيْنَ لَا میں قبیح اس سے کم ہے نماز بہر حال ہو جائے گی۔

مسئلہ نمبر ۵۱۸: از مانیا والا ڈاکخانہ قاسم پور گڑھی ضلع بجنور مرسلہ سید کفایت علی صاحب ۵ ربیع الاول شریف ۱۳۳۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ امام نے پہلی رکعت میں قل اعوذ برب الناس پڑھی دوسری رکعت میں قل اعوذ برب الفلق پڑھی اور آخر میں سجدہ سہو کیا اس مسئلہ کا حکم بیان فرمائیے۔ بینوا توجروا

---

۱ - بدائع الصنائع فصل فی ارکان الصلوٰۃ مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱/۱۱۸

Answer: If this was done unintentionally, there is no harm in the prayer and Sajdah Sahw (prostrating for forgetfulness) was not required. If done intentionally, one is sinful; the prayer is valid but Sajdah Sahw was still not required; one should repent. If Surah Al-Nas was recited in the first unit (Rak'at), it was necessary to recite Surah Al-Nas in the second unit as well, because reciting the same Surah in both units of a Fard (obligatory) prayer is better avoided (khilaf-e-awla), and reversing the order of the Surahs is forbidden (haram). And Allah Almighty knows best.

Problem No. 519: From Bikaner, Marwar, Mahawatan neighborhood, sent by Qazi Tameezuddin Sahib, 9 Rabi-ul-Awwal 1338 AH. I heard from a teacher that if less than three verses (ayahs) of a subject are recited in prayer, meaning two verses, the prayer will not be valid; if read by mistake, the prayer should be repeated. An Imam recited one Ruku (section) in the first Rak'at, and in the second Rak'at, he recited: "And indeed, those who disbelieve would almost make you slip with their eyes when they hear the message, and they say, 'Indeed, he is mad.'" (68:51-52). I have written what was recited in the second Rak'at; these are only two verses. Is the prayer valid or does it need to be repeated? Please explain and be rewarded.

Answer: Reciting one verse in prayer is obligatory (Fard), for example: "Alhamdu lillahi Rabbil 'Alamin." Without this, the prayer will not be valid. Reciting the full Surah Al-Fatihah followed by three short verses or one verse equal to three short verses is mandatory (Wajib). If there is a deficiency in this, the prayer will be valid in the sense that the obligation (Fard) is fulfilled, but it will be Makruh Tahrimi (highly disliked). If it's a mistake, Sajdah Sahw becomes mandatory. If intentional, repeating the prayer becomes mandatory, and without an excuse, the person will also be sinful. For example, there are three verses: "Then he looked. Then he frowned and scowled. Then he turned back and was arrogant." (Quran 74:21-23). Or these: "The Most Merciful. Taught the Quran. Created man." (Quran 55:1-3). It is evident that those two verses starting with "Wa in yakadu-lladhina kafaru," in fact, even the first of those verses alone, is longer than these three short verses. Therefore, the prayer was performed along with the mandatory (Wajib) acts, and there is no need to repeat it. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 520: 24 Rabi-ul-Awwal 1338 AH. What do the scholars of religion say regarding these matters:

1. Quran 74 / 21, 22, 23
2. Quran 55 / 1 to 3

उत्तर: यदि अनजाने में ऐसा किया गया तो नमाज़ में कोई हर्ज नहीं और सजदा सह्व की आवश्यकता नहीं थी। यदि जानबूझकर ऐसा किया गया तो वह गुनहगार होगा, नमाज़ हो गई लेकिन सजदा सह्व की अभी भी आवश्यकता नहीं थी; उसे तौबा करनी चाहिए। यदि पहली रकात में सूरह नास पढ़ी थी, तो दूसरी रकात में भी सूरह नास ही पढ़नी आवश्यक थी क्योंकि फ़र्ज़ की दोनों रकातों में एक ही सूरत पढ़ना बेहतर नहीं है (ख़िलाफ़-ए-औला) और सूरतों का क्रम उलटना हराम है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 519: बीकानेर, मारवाड़, मोहल्ला महावतान से, क़ाज़ी तमीज़ुद्दीन साहब द्वारा प्रेषित, 9 रबी-उल-अव्वल शरीफ़ 1338 हिजरी। मैंने एक उस्ताद की ज़ुबानी सुना है कि नमाज़ में तीन आयत से कम विषय पढ़ा जाएगा यानी दो आयत पढ़ी जाएंगी तो नमाज़ नहीं होगी; अगर ग़लती से पढ़ी गई तो नमाज़ दोहरानी चाहिए। एक इमाम ने पहली रकात में एक रुकू पढ़ा और दूसरी रकात में पढ़ा: "और बेशक काफ़िर जब क़ुरआन सुनते हैं तो अपनी तेज़ निगाहों से आपको डगमगा देना चाहते हैं और कहते हैं कि ये तो दीवाना है।" तो क़िबला-ओ-काबा, दूसरी रकात में जो पढ़ा गया वह मैंने लिखा है, ये केवल दो आयत हैं। क्या नमाज़ सही हो गई या दोहरानी पड़ेगी? बयान फरमाएं और सवाब पाएं।

उत्तर: नमाज़ में एक आयत पढ़ना फ़र्ज़ है, जैसे: "अल्हम्दु लिल्लाहि रब्बिल आलमीन"। इसके बिना नमाज़ नहीं होगी। पूरी सूरह फ़ातिहा और उसके बाद तीन छोटी आयतें या तीन छोटी आयतों के बराबर एक आयत पढ़ना वाजिब है। यदि इसमें कोई कमी होगी तो नमाज़ तो हो जाएगी यानी फ़र्ज़ अदा हो जाएगा, लेकिन वह मकरूह तहरीमी होगी। यदि भूल से हुआ तो सजदा सह्व वाजिब होगा और जानबूझकर किया गया तो नमाज़ दोहराना वाजिब होगा, और बिना किसी मज़बूरी के करने पर गुनाहगार भी होगा। उदाहरण के लिए, तीन आयतें हैं: "फिर उसने देखा। फिर माथे पर बल डाला और मुँह बिगाड़ा। फिर पीठ फेरी और तकब्बुर किया।" (क़ुरआन 74:21-23)। या ये: "रहमान। जिसने क़ुरआन सिखाया। जिसने इंसान को पैदा किया।" (क़ुरआन 55:1-3)। ज़ाहिर है कि वे दो आयतें "व इन यकादुल्लज़ीना कफ़रू" बल्कि उसकी पहली ही आयत इन तीन छोटी आयतों से बड़ी है, तो नमाज़ वाजिब के साथ अदा हो गई, दोहराने की ज़रूरत नहीं है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 520: 24 रबी-उल-अव्वल शरीफ़ 1338 हिजरी। इन मसलों के बारे में उलेमा-ए-दीन क्या फ़रमाते हैं:

---

1. क़ुरआन 74 / 21, 22, 23
2. क़ुरआन 55 / 1-3

पेज 347 ऑफ़ 736

الجواب: اگر بھول کر ایسا کیا نماز میں حرج نہیں اور سجدہ سہو نہ چاہئے تھا اور قصداً ایسا کیا تو گنہگار ہوگا نماز ہو گئی سجدہ سہو اب بھی نہ چاہئے تھا توبہ کرے، پہلی میں اگر سورہ ناس پڑھی تھی تو اُسے لازم تھا کہ دوسری میں بھی سورہ ناس ہی پڑھتا کہ فرض کی دونوں رکعتوں میں ایک ہی سورت پڑھنا خلاف اولیٰ ہے اور ترتیب الٹا کر پڑھنا حرام۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۵۱۹: از بیکانیر مارواڑ محلہ مہاوتان مرسلہ قاضی تمیز الدین صاحب ۹ ربیع الاول شریف ۱۳۳۸ھ میں نے ایک معلم صاحب کی زبانی سنا ہے کہ نماز میں تین آیت شریف سے کم مضمون پڑھا جائے گا یعنی دو آیت شریف پڑھی جائے گی تو نماز نہیں ہو گی اگر غلطی سے پڑھی گئی تو نماز دہرانا چاہئے۔ ایک امام نے پہلی رکعت میں ایک رکوع پڑھا دوسری رکعت میں وَإِنْ يَكَادُ الَّذِينَ كَفَرُوا لَيُزْلِقُونَكَ بِأَبْصَارِهِمْ لَمَّا سَمِعُوا الذِّكْرَ وَيَقُولُونَ إِنَّهُ لَمَجْنُونٌ (ن) تو قبلہ و کعبہ یہ دوسری رکعت میں جو پڑھا گیا وہ میں نے لکھا ہے یہ صرف دو آیت شریف ہیں آیا نماز صحیح ہو گئی یا نہیں یا دہرانا پڑے گی۔ بینواتوجروا

الجواب: نماز میں ایک آیت پڑھنا فرض ہے مثلاً الحمد للہ رب العلمین اس کے ترک سے نماز نہ ہوگی اور پوری سورہ فاتحہ اور اس کے بعد تین آیتیں چھوٹی چھوٹی یا ایک آیت تین چھوٹی آیتوں کے برابر ہو پڑھنا واجب ہے، اگر اس میں کمی کرے گا نماز تو ہو جائے گی یعنی فرض ادا ہو جائے گا مگر وہ تحریمی ہوگی، بھول کر ہے تو سجدہ سہو واجب ہوگا اور قصداً ہے تو نماز پھیرنی واجب ہوگی ، اور بلا عذر ہے تو گناہگار بھی ہوگا مثلاً تین آیتیں ہیں ثُمَّ نَظَرَ لا ثُمَّ عَبَسَ وَبَسَرَ لا ثُمَّ اَدْبَرَ وَاسْتَكْبَرَ ۱ یا یہ اَلرَّحْمٰنُ لا عَلَّمَ الْقُرْآنَ لا خَلَقَ الْاِنْسَانَ ۲ ظاہر ہے کہ وہ دو آیتیں وان

یکاد الذین کفروا بلکہ اس میں کی پہلی ہی آیت ان تین چھوٹی آیتوں سے بڑی ہے تو نماز مع واجب ادا ہو گئی دہرانے کی حاجت نہیں واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۵۲۰: ۲۴ ربیع الاول شریف ۱۳۳۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین ان مسائل میں :

---

۱ القرآن ۷۴ / ۲۱، ۲۲، ۲۳ ۲ القرآن ۵۵ / ۱

Fatawa Razvia Volume 6 (1) If the Imam makes a mistake in recitation after having already read more than one long verse or three short verses, and despite this, a follower (muqtadi) gives him a hint (luqma) and corrects him, will there be any invalidation or defect in the prayer for the Imam to accept the hint or for the follower to give it? (2) If the Imam gets confused (due to similar verses) and repeats or goes back to one or two previous verses, will such repetition cause any defect in the prayer? And if it does, can the defect be remedied by performing Sajda Sahw (prostration of forgetfulness) or not?

Al-Jawab (The Answer): Correcting someone in prayer will not cause any invalidation, even if they have read a thousand verses. Repetition also causes no defect. However, if he stands silent for the duration of saying "SubhanAllah" three times, then Sajda Sahw becomes necessary. Allah Almighty knows best.

Masala No. 522: From Ram Pur state, Dukan Mohalla Kundah, sent by Muhammad Asad-ul-Haq, 13 Ramadan 1338 AH. Question: What do the scholars of religion say regarding this matter: in "Qul huwallahu ahad," there is a tanwin (double vowel) on the letter 'dal'. If it is read by giving it a kasra (short vowel 'i') and joining it with the following word during prayer, is the prayer valid or not? And is there any sin? Is it mandatory, permissible, or forbidden? Al-Jawab: Giving the nun of tanwin a kasra and merging it into the 'lam' of the next word is permissible; there is no harm in it. It causes no defect in the prayer, and stopping (waqf) here is also permissible, as is joining (wasl). Allah Almighty knows best.

Masala No. 523: From Sarai Chhabila, District Bulandshahr, sent by Rahatullah, Imam of the Jamia Mosque, 19 Ramadan 1338 AH. Question: What do the scholars of religion say regarding this matter: if during recitation, the Imam reads "wa kaana..." instead of "mimma qaalu wa kaana indallahi wajeeha," will the prayer be valid or not? He first read "mimma qaalu" then thought it was "kaanu". Al-Jawab: The prayer is valid in any case; there is no invalidation. Allah Almighty knows best.

Masala No. 522: What do the scholars of religion say regarding this matter: here in Rajkot, they recite Surah Ar-Rahman and complete it within 20 rak'ahs of Taraweeh. In the first rak'ah they read four verses and in the second two verses. Does this invalidate the prayer or not? Al-Jawab: In the sixteenth rak'ah, these two verses will occur: "Fabi ayyi ala-i rabbikuma tukadhdhiban" (۞) "Dhawatā afnān" (۞). It is better to join another verse with them because they together only contain twenty-seven letters, and in Radd-ul-Muhtar...

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी (1) यदि इमाम क़िरात (कुरान पाठ) में गलती कर दे और वह पहले ही एक बड़ी आयत या तीन छोटी आयतों से अधिक पढ़ चुका हो, इसके बावजूद कोई मुक़्तदी इमाम को लुक़्मा दे और बता दे, तो क्या इमाम के लुक़्मा लेने या मुक़्तदी के लुक़्मा देने से नमाज़ में कोई बिगाड़ या नुक़सान होगा? (2) यदि इमाम को मुशाबा (समानता के कारण भ्रम) हो जाए और वह पिछली एक-दो आयतों को दोहराए, तो क्या इस स्थिति में दोहराने से नमाज़ में कोई खलल आएगा? और यदि आएगा, तो क्या सजदा सहव करने से उस नुक़सान की भरपाई हो जाएगी या नहीं?

अल-जवाब (उत्तर): नमाज़ में किसी के सही बताने से कोई बिगाड़ नहीं आता, चाहे उसने हज़ार आयतें ही क्यों न पढ़ ली हों। दोहराने से कोई नुक़सान नहीं होता, हाँ यदि वह तीन बार "सुब्हानअल्लाह" कहने की अवधि तक चुप खड़ा रहा, तो सजदा सहव वाजिब हो जाता है। अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसाला नंबर 522: रामपुर रियासत, डकन मुहल्ला कुंडा से, प्रेषक मुहम्मद असदुल हक़ साहब, 13 रमज़ान 1338 हिजरी। प्रश्न: दीन के उलेमा इस बारे में क्या फरमाते हैं कि "कुल हुवल्लाहु अहद" में 'दाल' पर तनवीन है, क्या इसे कसरा देकर अगले शब्द से जोड़कर नमाज़ में पढ़ना जायज़ है या नहीं? और क्या इसमें कोई गुनाह है? यह ज़रूरी है, जायज़ है या मना है? अल-जवाब: तनवीन के नून को कसरा देकर 'लाम' में मिलाकर पढ़ना जायज़ है, इसमें कोई हर्ज नहीं। इससे नमाज़ में कोई खलल नहीं पड़ता, और यहाँ वक़्फ़ (रुकना) भी जायज़ है जो वस्ल (जोड़ने) की अनुमति देता है। अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसाला नंबर 523: सराय छबीला, जिला बुलंदशहर से, प्रेषक राहतुल्लाह, इमाम जामा मस्जिद, 19 रमज़ान 1338 हिजरी। प्रश्न: दीन के उलेमा इस बारे में क्या फरमाते हैं कि यदि इमाम क़िरात में "मिम्मा क़ालू व काना इन्दल्लाहि वजीहा" की जगह "व काना" आदि पढ़ जाए, तो क्या नमाज़ सही होगी? पहले "मिम्मा क़ालू" पढ़ा फिर ख्याल आया कि "कानू" है। अल-जवाब: नमाज़ हर तरह से हो गई, कोई बिगाड़ नहीं। अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसाला नंबर 522: दीन के उलेमा इस बारे में क्या फरमाते हैं कि यहाँ राजकोट में अर-रहमान पढ़ते हैं और 20 रकात तरावीह सूरह अर-रहमान में खत्म करते हैं। पहली रकात में चार आयतें और दूसरी में दो आयतें पढ़ते हैं, तो क्या इससे नमाज़ फासिद (अमान्य) होती है या नहीं? अल-जवाब: सोलहवीं रकात में ये दो आयतें आएँगी: "फबि अय्यि आलाइ रब्बिकुमा तुकज़्ज़िबान" (۞) "ज़वाता अफ़नान"

(ी)। बेहतर यह है कि उनके साथ एक और आयत मिलाई जाए क्योंकि इनमें केवल सत्ताईस अक्षर हैं और रद्दुल मुहतार में...

पृष्ठ 348 का 736

فتاوی رضویہ جلد ششم (۱) امام کو قرات میں مغالطہ لگا اور امام ایک آیت کلاں یا ایک چھوٹی تین آیت سے زیادہ پڑھ چکا ہے باوجود اس کے کوئی مقتدی امام کو لقمہ دے اور بتا دے تو امام کو لقمہ لینے یا مقتدی کو لقمہ دینے میں کوئی نماز میں فساد یا نقصان نہ آوے گا؟ (۲) امام کو مشابہ لگا اور اوپر کی دو ایک آیت کو لوٹایا اور دہرایا تو اس صورت میں دہرانے سے نماز میں کچھ خلل تو نہ آئے گا؟ اور آئے گا تو کیا سجدہ سہو کرنے سے جبر نقصان ہو جائیگا یا نہیں؟

الجواب: کسی کے نماز میں صحیح بتانے سے کچھ فساد نہ آئے گا اگر چہ ہزار آیتیں پڑھ چکا ہو دہرانے سے کچھ نقصان نہیں، ہاں اگر تین بار سبحان اللہ کہنے کی قدر چپکا کھڑا رہا تو سجدہ سہو آتا واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۵۲۲: از ریاست رام پور ڈکان ملا حمید محلہ کنڈہ مرسلہ محمد اسد الحق صاحب ۱۳ رمضان ۱۳۳۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ قل ھو اللہ احد میں دال پر تنوین ہے اس کو کسرہ دے کر مابعد سے وصل کر کے نماز میں پڑھے، ہو گئی یا نہیں؟ اور گناہ تو نہیں؟ ضروری ہے یا جائز یا منع؟ الجواب: نون تنوین کو کسرہ دے کر لام میں ملا کر پڑھنا جائز ہے کوئی حرج نہیں، نہ اس سے نماز میں کوئی خلل، اور یہاں وقف بھی جائز ہے جو وصل کی اجازت دیتا ہے۔ و ھو اللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۵۲۳: از سرائے چھبیلہ ضلع بلند شہر مرسلہ راحت اللہ امام مسجد جامع ۱۹ رمضان ۱۳۳۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ امام قرات میں مما قالوا وکان عند اللہ و جیہاً کی جگہ و کان الخ پڑھ جائے تو نماز درست ہوگی یا نہیں مگر اول مما قالوا پڑھا پھر خیال ہو کہ کانوا ہے۔ الجواب: کہ نماز ہر طرح ہو گئی کہ فساد نہیں۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۵۲۲: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ یہاں راجکوٹ میں الرحمن پڑھتے ہیں اور ۲۰ رکعت تراویح سورہ الرحمن میں ختم کرتے ہیں پہلی رکعت میں چار آیت اور دوسری میں دو آیت تو اس سے نماز فاسد ہوتی ہے یا نہیں؟ الجواب: یو سولھویں رکعت میں یہ دونوں آیتیں واقع ہوں گی فَبِاَیِّ اٰلَآءِ رَبِّکُمَا تُکَذِّبٰنِ ۝ ذَوَاتَآ اَفْنَانٍ ۝ بہتر یہ ہے کہ ان کے ساتھ ایک آیت اور ملائے جائے کہ ان میں صرف ستائیس حروف ہیں اور ردالمحتار میں

Fatawa Razawiyya Volume VI ...at least thirty letters are required, and though there is discussion on this as mentioned in the marginalia of Radd al-Muhtar, additionally these verses were separate words. (T) And Allah Almighty knows best.

Problem 525: From Nowshera, Tehsil Jampur, District Dera Ghazi Khan, sent by Abdul Ghafoor Sahib, 12 Muharram 1339 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: why is recitation not performed loudly in Zuhr and Asr prayers, whereas it is performed loudly in Maghrib, Isha, and Fajr prayers? Please inform us about the reason and secrets behind this.

The Answer: These are commands; a servant must obey the command, it's not necessary to search for the wisdom. Two reasons are given for this. One is apparent: the disbelievers used to speak nonsense upon hearing the Great Quran. Zuhr and Asr were the times when they were awake, so the recitation was made silent so they wouldn't hear and talk nonsense. At the times of Fajr and Isha, they would be asleep, and at Maghrib, they would be busy eating, therefore the recitation was made loud. However, this reason is not very strong. The second reason, which is correct and strong spiritually, is what we have mentioned in our treatise 'Anhar al-Anwar'. And Allah Almighty knows best.

Problem 526: From Shahr Kuhna, Muhalla Kakar Tola, asked by Nanhe Khan Sahib, 15 Muharram 1339 AH. How much recitation is obligatory (Fard), necessary (Wajib), Sunnah, and to what extent is it recommended (Mustahabb)?

The Answer: Reciting one verse is Fard. Reciting Al-Hamd (Surah Al-Fatiha) and then immediately following it with one long verse or three short verses is Wajib. In Fajr and Zuhr, it is Sunnah to recite two surahs from 'Hujurat' to 'Burooj' across both rak'ahs. In Asr and Isha, from 'Burooj' to 'Lam Yakun'. In Maghrib, from 'Lam Yakun' to 'Naas', or an equivalent amount from elsewhere. If there is a sick or weak person in the congregation such that a long recitation would cause hardship, then considering their condition is Wajib. In voluntary (Nafl) prayers, lengthening the recitation to the extent it is not burdensome for oneself is Mustahabb. And Allah Almighty knows best.

Problem 527: From Shahr Muhalla Mulukpur, asked by Shafiq Ahmad Khan Sahib, 26 Muharram al-Haram 1339 AH. What do the scholars of religion and jurists of the firm Shariah say about this: how many times and at which points should 'Bismillahir Rahmanir Rahim' be recited in every prayer?

The Answer: Reciting 'Bismillahir Rahmanir Rahim' at the beginning of Surah Al-Fatiha is Sunnah, and after that if someone...

फतावा रज़विया जिल्द शशुम (छठा) ...कम से कम तीस अक्षरों की आवश्यकता बताई गई है, और यद्यपि इसमें चर्चा है जैसा कि हमने रद अल-मुह्तार के हाशिए में लिखा है, इसके अलावा इन आयतों में शब्द अलग-अलग थे। (त) और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसाला संख्या 525: नौशेरा, तहसील जामपुर, जिला डेरा गाजी खान से, प्रेषक अब्दुल गफूर साहब, 12 मुहर्रम 1339 हिजरी। धर्म के विद्वान इस विषय में क्या कहते हैं: ज़ुहर और अस्र की नमाज़ में क़िरात (कुरान पाठ) ज़ोर से क्यों नहीं की जाती, जबकि मग़रिब, ईशा और फज्र की नमाज़ में ज़ोर से की जाती है? इसके कारण और रहस्यों से अवगत कराएं।

अल-जवाब: ये आदेश हैं, बंदे को आदेश मानना चाहिए, हिकमत (तर्क) की तलाश ज़रूरी नहीं। इसके दो कारण बताए जाते हैं। एक ज़ाहिरी है कि काफ़िर अज़मत वाले क़ुरआन को सुनकर बेहुदा बातें किया करते थे। ज़ुहर और अस्र दोनों उनके जागने के समय थे, इसलिए उनमें क़िरात छिपी (धीमी) रखी गई ताकि वे सुनकर कुछ बकवास न करें। फज्र और ईशा के समय वे सो रहे होते थे और मग़रिब के समय खाने में व्यस्त होते थे, इसलिए उनमें क़िरात ज़ोर से की गई। लेकिन यह कारण उतना मज़बूत नहीं है। दूसरा कारण सही और मज़बूत रूहानी (आध्यात्मिक) है जिसे हमने अपने शोध-पत्र 'अन्हारुल अनवार' में वर्णित किया है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसाला संख्या 526: शहर कुहना, मोहल्ला ककड़ टोला से, पूछने वाले नन्हे खान साहब, 15 मुहर्रम 1339 हिजरी। क़िरात कितनी फर्ज़ है और वाजिब, सुन्नत और मुस्तहब कहाँ तक है?

अल-जवाब: क़िरात में एक आयत फर्ज़ है। अल-हम्द (सूरह फातिहा) और उसके तुरंत बाद एक बड़ी आयत या तीन छोटी आयतें पढ़ना वाजिब है। फज्र और ज़ुहर में दोनों रकतों में 'हुजुरात' से लेकर 'बरूज' तक दो सूरतें पढ़ना सुन्नत है। अस्र और ईशा में 'बरूज' से 'लम यकुन' तक। और मग़रिब में 'लम यकुन' से 'नास' तक, या अन्य स्थान से उतनी ही मात्रा में। यदि जमात (समूह) में कोई बीमार या कमज़ोर व्यक्ति हो जिसे लंबे पाठ से कष्ट होगा, तो उसकी स्थिति का ध्यान रखना वाजिब है। नफ़ल नमाज़ों में जितनी लंबाई अपने ऊपर भारी न हो, वह मुस्तहब है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसाला संख्या 527: शहर मोहल्ला मलूकपुर से, पूछने वाले शफीक अहमद खान साहब, 26 मुहर्रम उल हराम 1339 हिजरी। धर्म के विद्वान और शरीयत के मुफ़्ती इस विषय में क्या कहते हैं कि हर नमाज़ में कितनी बार और किन स्थानों पर 'बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम' पढ़ना चाहिए?

अल-जवाब: सूरह फातिहा की शुरुआत में 'बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम' सुन्नत है और उसके बाद यदि कोई...

पृष्ठ 349/736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم کم از کم تیس حرف درکار بتائے وان کان فیہ کلام بیناہ علی ھامشہ مع ان المروات فیھما ثلثون (اگرچہ اس میں کلام ہے جیسے ہم نے حاشیہ ردالمختار میں تحریر کیا گیا ہے علاوہ ازیں ان آیات میں مفردات تھیں ۔ ہیں۔ت) واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ نمبر ۵۲۵: از نوشہرہ تحصیل جامپور ضلع ڈیرہ غازی خاں مرسلہ عبد الغفور صاحب ۱۲ محرم ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ نمازِ ظہر و عصر میں جو قرأت با جہر نہیں پڑھی جاتی باقی شام اور عشاء و فجر کی نماز میں بالجہر پڑھی جاتی ہے اس کی وجہ اور رموزات سے مطلع فرمائیے؟

الجواب: یہ احکام ہیں بندے کو حکم ماننا چاہئے حکمت کی تلاش ضرور نہیں۔ اس کے دو سبب بتائے جاتے ہیں ایک ظاہری کہ کفار قرآنِ عظیم سُن کر بیہودہ بکا کرتے تھے ظہر و عصر دونوں ان کی بیداری کے تھے اس لئے ان میں قرأت خفی ہوئی کہ وہ سُن کر کچھ بکیں نہیں، فجر و عشاء کے وقت وہ سوئے ہوتے تھے اور مغرب کے وقت کھانے میں مشغول، لہذا ان میں قرأت بالجہر ہوئی، مگر یہ سبب چنداں قوی نہیں۔ دوسرا سبب صحیح و قوی باطنی وہ ہے جو ہم نے اپنے رسالہ انہار الانوار میں ذکر کیا۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۵۲۶: از شہر کہنہ محلہ کا کٹڑ ٹولہ مسئولہ ننھے خاں صاحب ۱۵ محرم ۱۳۳۹ھ قرأت کتنی فرض ہے اور واجب اور سُنّت اور مستحب کہاں تک؟

الجواب: قرأت ایک آیت فرض ہے اور الحمد اور اس کے بعد اُس کے متصل ایک بڑی آیت یا تین آیتیں چھوٹی پڑھنا واجب، اور فجر و ظہر میں حجرات سے بروج تک دونوں رکعتوں میں دو سورتیں، اور عصر و عشاء میں بروج سے لم یکن تک، اور مغرب میں لم یکن سے ناس تک سُنّت،

یا ان کی مقدار دوسرے مقام سے، اور جماعت میں کوئی مریض یا ضعیف وغیرہ ایسا ہو کہ طویل سے مشقت ہوگی تو اسکے حالت کی رعایت واجب اور نوافل میں جس قدر تطویل اپنے اوپر شاق نہ ہو مستحب ہے، واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۵۲۷: از شہر محلہ ملوکپور مسئولہ شفیق احمد خان صاحب ۲۶ محرم الحرام ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ ہر نماز میں کتنی مرتبہ اور کس کس مقام پر بسم اللہ الرحمن الرحیم پڑھنا چاہئے؟

الجواب: سورہ فاتحہ کے شروع میں بسم اللہ الرحمن الرحیم سُنّت ہے اور اس کے بعد اگر کوئی

Fatawa-e-Razvia Volume Sixth If one recites from the beginning of a Surah, it is recommended (Mustahab) to say Bismillah. If some verses are recited from elsewhere, saying it is not recommended. It is not permissible to recite Bismillah in Ruku, Sujood, or Qa'ood, as it is a Quranic verse, and reciting any verse during prayer outside of Qiyam is prohibited. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 528: From the city, Mohalla Saudagaran, asked by a student of Madrasa Manzar-ul-Islam, Maulvi Ehsan Ali (late), 18 Safar 1329 AH. What do the scholars of religion say regarding this issue: in the first rak'ah, a Ruku or Surah was recited; in the second rak'ah, if a preceding Surah or Ruku is recited unintentionally (by mistake), should one continue reciting it or leave it and recite a subsequent Surah or Ruku? If the prayer is completed after reciting it, is it valid or not? Explain and be rewarded.

The Answer: Whichever Surah has even one word unintentionally uttered, it becomes necessary to recite that same one, whether it is preceding or repeated. Yes, intentionally changing the order is a sin, although the prayer will still be valid. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 529: From Tehsil Atrauli, District Aligarh, asked by Muhammad Husain, Judicial Clerk, 16 Jumada al-Ula 1339 AH. In the name of Allah, the Most Gracious, the Most Merciful. We praise Him and send blessings upon His Noble Messenger. A problem is under discussion and a verbal debate is taking place among us. That is, the Imam, during Maghrib prayer, recited Surah ad-Dahr in the first rak'ah, and recited this much and then forgot, then performed Ruku: "And there will be circulated among them vessels of silver and cups having been [as if] of glass. Crystal-clear glasses [made] of silver; they have determined its measure precisely." [Surah Al-Insan 76:15-16]. On the second verse, there is the letter 'La' (a stop mark). According to Imam Azam (Abu Hanifa), may Allah have mercy on him, will the prayer be valid with this amount of recitation or not?

The Answer: The prayer was completed naturally without any dislike (karahat). The mandatory amount of three verses is fulfilled, and these are fifteen verses. In fact, such a lengthy recitation in Maghrib was not appropriate, as the command in it is to recite 'Qisar Mufassal' i.e., from Surah 'Lam Yakun' (Al-Bayyinah) to the end, one Surah in each rak'ah. This exceeded that. It is mentioned in Tanweer and Durr-e-Mukhtar:

(Arabic)

It is Sunnah for the Imam and the individual in a state of residence to recite 'Tiwal Mufassal' in Fajr and Zuhr, 'Awsat Mufassal' in Asr and Isha, and 'Qisar Mufassal' in Maghrib, i.e., in every [rak'ah].

Page 350 of 736

(Urdu)

(In the case of being a resident, for both Imam and individual) It is Sunnah to recite 'Tiwal Mufassal' in Fajr and Zuhr prayers, 'Awsat Mufassal' in Asr and Isha, and 'Qisar Mufassal' in Maghrib prayer, i.e., in every rak'ah.

फ़तावा-ए-रज़विया जिल्द छठी यदि कोई सूरह की शुरुआत से पढ़ता है, तो बिस्मिल्लाह कहना मुस्तहब है। और यदि कहीं और से कुछ आयतें पढ़ी जाती हैं, तो इसे कहना मुस्तहब नहीं है। और क़ियाम के अलावा रुकू सुजूद और क़ौद में बिस्मिल्लाह पढ़ना जायज़ नहीं है क्योंकि यह एक क़ुरआनी आयत है और नमाज़ में क़ियाम के अलावा किसी भी जगह कोई आयत पढ़ना मना है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 528: शहर मोहल्ला सौदागरान से, मदरसा मंज़र-उल-इस्लाम के एक छात्र मौलवी एहसान अली (स्वर्गीय) द्वारा पूछा गया, 18 सफ़र 1329 हिजरी। दीन के विद्वान इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि पहली रक़अत में एक रुकू या सूरह पढ़ी गई, दूसरी रक़अत में अगर उससे पहले की कोई सूरह या रुकू ज़बान पर सहवन (गलती से) जारी हो जाए, तो उसे पढ़े या उसे छोड़कर बाद वाली सूरह या रुकू पढ़े? अगर पढ़कर नमाज़ पूरी कर ली तो हुई या नहीं? बयान फ़रमाएं, सवाब मिलेगा।

अल-जवाब (उत्तर): ज़बान से सहवन (अनजाने में) जिस सूरह का एक शब्द भी निकल गया, उसी को पढ़ना ज़रूरी हो गया, चाहे वह पहले वाली हो या दोबारा वाली। हाँ, जानबूझकर तरतीब (क्रम) बदलना गुनाह है, हालाँकि नमाज़ फिर भी हो जाएगी। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 529: तहसील अतरौली, जिला अलीगढ़ से, मुहम्मद हुसैन, जुडिशियल क्लर्क द्वारा पूछा गया, 16 जमादी-उल-अव्वल 1339 हिजरी। बिस्मिल्लाह-ि्र-रहमान-ि्र-रहीम, हम उसकी प्रशंसा करते हैं और उसके सम्मानित रसूल पर दरूद भेजते हैं। एक मसले पर बहस चल रही है और हमारे बीच ज़बानी चर्चा हो रही है। वह यह कि इमाम ने नमाज़-ए-मग़रिब के वक़्त पहली रक़अत में सूरह दहर की क़िरात की और इस कदर पढ़ा और सहव (भूल) हो गया, फिर रुकू कर दिया: "और उनके पास चाँदी के बर्तन और जाम गर्दिश करेंगे जो शीशे के होंगे। (वे शीशे भी) चाँदी के होंगे, जिसे पिलाने वालों ने ठीक अंदाज़े पर रखा होगा।" (सूरह अद-दहर 76:15-16)। दूसरी आयत पर हर्फ़'ला' (रुकने का निशान) मौजूद है। इमाम आज़म साहब रहमतुल्लाहि अलैहि के यहाँ इस कदर क़िरात पढ़ने से नमाज़ होगी या नहीं?

अल-जवाब (उत्तर): नमाज़ बिना किसी झिझक और कराहत के हो गई। तीन आयतों की वाजिब मिकदार (मात्रा) अदा हो जाती है और ये तो पंद्रह आयतें हो गईं। बल्कि मग़रिब में इतनी ततवील (लंबा करना) मुनासिब भी न थी क्योंकि इसमें 'क़िसारे मुफ़स्सल' यानी सूरह 'लम यकुन' (अल-

बय्यिनाह) से अंत तक, हर रक़अत में एक सूरह पढ़ने का हुक्म है। यह उससे ज़्यादा हो गया। तनवीर और दुर्रे मुख़्तार में है:

(अरबी)	(उर्दू)
मुक़ीम होने की स्थिति में इमाम और मुनफ़रिद दोनों के लिए नमाज़-ए-फज्र और ज़ुहर की नमाज़ में 'ति़वाले मुफ़स्सल', अस्र और इशा में 'औसाते मुफ़स्सल' और नमाज़-ए-मग़रिब में 'क़िसारे मुफ़स्सल' पढ़ना मसनून है।	(मुक़ीम होने की स्थिति में इमाम और मुनफ़रिद दोनों के लिए) नमाज़-ए-फज्र और ज़ुहर की नमाज़ में 'ति़वाले मुफ़स्सल' और अस्र व इशा की नमाज़ में 'औसाते मुफ़स्सल' और नमाज़-ए-मग़रिब में 'क़िसारे मुफ़स्सल' पढ़ना मसनून है यानी हर रक़अत में।

فتاویٰ رضویہ جلد ششم سورت اوّل سے پڑھے تو اس پر بسم اللہ کہنا مستحب ہے اور کچھ آیتیں کہیں اور سے پڑھے تو اس پر کہنا مستحب نہیں، اور قیام کے سوا رکوع و سجود و قعود کسی جگہ بسم اللہ پڑھنا جائز نہیں کہ وہ آیہِ قرآنی ہے اور نماز میں قیام کے سوا کسی جگہ کوئی آیت پڑھنی ممنوع ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۵۲۸: از شہر محلہ سوداگران مسئولہ مولوی احسان علی مرحوم کا طالب علم مدرسہ منظر الاسلام ۱۸ صفر ۱۳۲۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ اوّل رکعت میں ایک رکوع یا سورہ پڑھی دوسری رکعت میں اگر اس سے مقدم کی سورہ یا رکوع زبان پر سہواً جاری ہو جائے تو اس کو پڑھے یا مؤخر کی سورہ یا رکوع پڑھے اس کو چھوڑ کر، اگر پڑھ کر نماز تمام کرلی تو ہوئی یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: زبان سے سہواً جس سورہ کا ایک کلمہ نکل گیا اسی کا پڑھنا لازم ہو گیا خواہ مقدم ہو خواہ مکرر، ہاں قصداً تبدیل ترتیب گناہ ہے اگر چہ نماز جب بھی ہو جائے گی۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۵۲۹: از تحصیل اترولی ضلع علی گڑھ مسئولہ محمد حسین محرر جوڈیشل ۱۶ جمادی الاولی ۱۳۳۹ھ بسم اللہ الرحمن الرحیم ، نحمدہ و نصلی علی رسولہ الکریم۔ ایک مسئلہ پر بحث درپیش ہے اور آپس میں مباحثہ لفظی ہو رہا ہے وہ یہ کہ امام نے بوقت نماز مغرب رکعت اوّل میں سورہ دھر قراءت کی اور اس قدر پڑھا اور سہوہو گیا پھر رکوع کر دیا وَيُطَافُ عَلَيْهِمْ بِآنِيَةٍ مِّن فِضَّةٍ وَأَكْوَابٍ كَانَتْ قَوَارِيراً قَوَارِيراً مِن فِضَّةٍ قدَّرُوهَا تَقْدِيراً ثانی آیت پر حرف لا موجود ہے امام اعظم صاحب رحمۃ اللہ علیہ کے یہاں اس قدر قراءت پڑھنے سے نماز ہوگی یا نہیں؟

الجواب: نماز بے تکلف بلا کراہت ہوگئی، تین آیات کی قدر واجب ادا ہو جاتا ہے اور یہ تو پندرہ آیتیں ہو گئیں بلکہ مغرب میں اتنی تطویل مناسب بھی نہ تھی کہ اس میں قصار مفصل یعنی لم یکن سے آخر تک ہر رکعت میں ایک سورت پڑھنے کا حکم ہے یہ اس سے زائد ہو گیا، تنویر و درمختار میں ہے:

(عربی)	(اردو)
يسن في الحضر الامام ومنفرد طوال المفصل في الفجر والظهر واوساطه في العصر والعشاء و قصاره في المغرب اى في كل	(مقیم ہونے کی صورت میں امام و منفرد دونوں کی) نماز فجر اور ظہر کی نماز میں طوال مفصل اور عصر و عشاء میں اوساط مفصل اور نماز مغرب میں قصار مفصل پڑھنا مسنون ہے یعنی ہر رکعت میں

صفحہ 350 کا 736

Fatawa Razawiyya, Volume Six

Rak'at Surah 1 - Recite one Surah from among those mentioned. (T)

In Durr-e-Mukhtar, it is stated: From Al-Hujurat to the end of Al-Buruj, and from there to the end [of Al-Mufassal], it is not... its middle part and the remainder are short. And Allah Almighty knows best. From Al-Hujurat to the end of Al-Buruj are Tiwal Mufassal, and the remaining part of the surahs is called Qisar Mufassal. And Allah Almighty knows best.

Issue No. 530: From Mohalla Saudagaran, Madrasa Manzar-e-Islam, 17 Jumada al-Thani 1339 AH. What do the scholars of religion say regarding this problem: that the Imam made a mistake after three verses such that the meaning was corrupted, whereas in Surah Yusuf, four verses later, he read "Ra'aytuhum" instead of "Unbi'tuhum". In this state, was the prayer valid or not?

Answer: If the corruption of meaning occurs even after a thousand verses, the prayer will be invalidated, but here, reading the 'ta' with a 'kasra' (i-sound) in "Ra'aytuhum" is not an invalidator of prayer. And Allah Almighty knows best.

Issue No. 531: From Hebrug, questioned by Muhammad Ali, 6 Rajab al-Murajjab, Thursday, 1336 AH. Qibla and Ka'ba, Honorable Maulvi Sahib, may your shadows endure, peace be upon you. After performing etiquette, it is submitted to your service that during Zuhr and Asr prayers, should a follower (muqtadi) recite as usual behind the Imam or is silence obligatory? (2) In performing the obligatory (fard) rak'ahs of Maghrib and Isha prayers, is silence necessary for the follower in all four rak'ahs, or in the first two and not in the last two? Explain and be rewarded.

Answer: It is absolutely not permissible for a follower to recite in any rak'at of any prayer at all; he must remain absolutely silent. He should only recite 'Subhanaka Allahumma' (Sana) when joining, as long as the Imam has not started the audible recitation. In Durr-e-Mukhtar it is stated: "The follower does not recite at all, not even Al-Fatiha..." The follower should absolutely not recite, neither in audible prayer nor [in silent prayer].

1 Durr-e-Mukhtar, Chapter: 'The Imam recites audibly', printed at Matba' Mujtabai, Delhi, 1/89. 2 Durr-e-Mukhtar, Chapter: 'The Imam recites audibly', printed at Matba' Mujtabai, Delhi, 1/89.

फतावा रज़विया, जिल्द शशुम (छठा खंड)

रकअत सूरह 1 - उल्लिखित सूरतों में से एक सूरत पढ़े। (त)

दुर्रे मुख्तार में है: हुजुरात से आखिर बुरूज तक, और वहां से आखिर तक... इसके मध्यम और शेष वाले कसार (छोटे) हैं। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। हुजुरात से आखिर बुरूज तक तिवाल मुफ़स्सल हैं और सूरतों का बाकी हिस्सा कसार मुफ़स्सल कहलाता है। वल्लाहु तआला आलम।

मसाला नंबर 530: मोहल्ला सौदागरान, मदरसा मंज़र-ए-इस्लाम से, 17 जमादी अल-थानी 1339 हिजरी। धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं कि इमाम ने तीन आयतों के बाद गलती की जिससे अर्थ बिगड़ गया, जबकि सूरह यूसुफ शरीफ में चार आयतों के बाद "उम्बई'तुहुम" (أُنبِئَنَّهُمْ) की जगह "रअईतुहुम" (رَأَيْتُهُمْ) पढ़ दिया। इस स्थिति में नमाज़ हुई या नहीं?

जवाब: यदि अर्थ का बिगाड़ एक हज़ार आयतों के बाद भी हो, तो नमाज़ जाती रहेगी, लेकिन यहाँ "रअईतुहुम" में 'त' के नीचे ज़ेर (इ-ध्वनि) पढ़ना नमाज़ को अमान्य करने वाला नहीं है। वल्लाहु तआला आलम।

मसाला नंबर 531: हेब्रुग से, मुहम्मद अली द्वारा पूछा गया, 6 रजब अल-मुरज्जब, गुरुवार, 1336 हिजरी। क़िबला व काबा जनाब मौलवी साहब, आपका साया सलामत रहे, अस्सलामु अलैकुम। अदब पेश करने के बाद गुज़ारिश है कि ज़ुहर और अस्र की नमाज़ के समय इमाम के पीछे मुक़्तदी (अनुयायी) को सामान्य रूप से पढ़ना चाहिए या चुप रहना वाजिब (अनिवार्य) है? (2) मग़रिब और इशा की फर्ज़ नमाज़ों की अदायगी में मुक़्तदी को चारों रकातों में खामोश रहना ज़रूरी है या पहली दो में और आख़िरी दो में नहीं? बयान करें, सवाब पाएं।

जवाब: मुक़्तदी को किसी भी नमाज़ की किसी भी रकात में क़िरात (कुरान पाठ) करना बिल्कुल जायज़ नहीं है, वह बिल्कुल खामोश खड़ा रहे। केवल शामिल होते समय 'सुब्हानका अल्लाहुम्मा' (सना) पढ़े, बशर्ते इमाम ने ज़ोर से क़िरात शुरू न की हो। दुर्रे मुख्तार में है: "मुक़्तदी बिल्कुल न पढ़े, न ही अल-फ़ातिहा..." मुक़्तदी बिल्कुल क़िरात न करे, न ज़हरी (ज़ोर की) नमाज़ में और न [सिरी (चुपके की) नमाज़ में]...

1 दुर्रे मुख्तार, अध्याय: 'इमाम ज़ोर से पढ़े', मुतबअ मुजतबाई, दिल्ली, 1/89 में मुद्रित। 2 दुर्रे मुख्तार, अध्याय: 'इमाम ज़ोर से पढ़े', मुतबअ मुजतबाई, दिल्ली, 1/89 में मुद्रित।

فتاوٰی رضویہ، جلد ششم

رکعۃ سورۃ ۱ - ایک سورۃ ان سورتوں میں سے جو مذکور ہوئے پڑھے (ت)

دُرِ مختار میں ہے: من الحجرات الی آخری البروج ومنھا الی آخر لم یکن اوساطہ وباقیہ قصار ۲ واللہ تعالی اعلم۔ حجرات سے آخر بروج تک طوال مفصل اور سورتوں کا بقیہ حصہ قصار مفصل کہلاتا ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۵۳۰: از محلہ سوداگران مدرسہ منظر اسلام ۱۷ جمادی الثانی ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ امام کو تین آیتوں کے بعد غلطی ہوئی معنی بگڑ گیا جبکہ سورہ یوسف شریف میں چار آیت بعد "أُنبِئَتُهُمْ" کی جگہ "رَأَيْتُهُمْ" پڑھا اس حالت میں نماز ہوگئی یا نہیں؟

الجواب: فسادِ معنی اگر ہزار آیت کے بعد ہو نماز جاتی رہے گی، مگر یہاں "رَأَيْتُهُمْ" میں ت کا زیر پڑھنا مفسدِ نماز نہیں واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۵۳۱: از ہبروگ مسئولہ محمد علی ۶ رجب المرجب پنجشنبہ ۱۳۳۶ھ قبلہ و کعبہ جناب مولوی صاحب دام اظلالکم، السلام علیکم بعد ادائے آداب دست بستہ تسلیمات گذارش خدمت میں یہ ہے کہ نمازِ ظہر و عصر کے وقت امام کے پیچھے مقتدی کو حسبِ معمول پڑھنا چاہئے یا سکوت واجب ہے؟ (۲) نمازِ مغرب و عشاء کے فرضوں کی ادائیگی میں مقتدی کو چاروں رکعتوں میں سکوت لازم ہے یا اول کی دو میں اور آخری دو میں نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: مطلقاً کسی نماز کی کسی رکعت میں مقتدی کو قرأت اصلاً جائز نہیں قطعاً خاموش کھڑا رہے، صرف سبحنك اللھم شامل ہوتے وقت پڑھے جبکہ امام نے قرأت بجہر شروع نہ کی ہو۔ دُرِ

مختار میں ہے: المؤتم لا يقرأ مطلقاً ولا الفاتحة في مقتدی مطلقاً قرأت نہ کرے نہ جہری نماز میں نہ [سری نماز میں]...

1 دُرِ مختار فصل و يجهر الامام مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱ / ۸۹ 2 دُرِ مختار فصل و يجهر الامام مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱ / ۸۹

Fatawa Rizvia Volume 6

"As-Sirriyyah ittifaqan bal yastami'u idha jahara wa yansitu idha asarra"[1] — And Allah Almighty knows best.
In silent prayers, and even in non-silent prayers, there is a consensus on not reciting Surah Fatiha (meaning the three Imams agree on this); rather, when the Imam recites aloud, one should listen, and when the Imam recites silently, the follower should remain quiet. And Allah Almighty knows best. (T)

Problem No. 533, 534: From Hazara District, Buldhana Station Baswa, related to Malkapur, questioned by Sirajuddin on 13 Ramadan 1339 AH.
What do the scholars of religion say about:
(1) What is the ruling in Sharia regarding reciting fragments of Quranic verses in prayer?
(2) In Surah Yaseen, is it correct to recite "Salamun Qaulan" in place of "Salamun Qawlan" or to end the verse at "Salam"?

The Answer:
(1) The questioner has not written clearly what is meant by 'making fragments'. If the verse is long and cannot be read in one breath, one will stop out of necessity where the breath breaks, proceeding by stopping at appropriate places. However, stopping at inappropriate places without necessity is against the Sunnah. And Allah Almighty knows best.
(2) Both are correct and both are permissible. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 535: From Jaipur, Peron Ajmeri Darwaza, house of Abdul Wahid Khan, questioned by Hamid Hussain Farooqi on 14 Ramadan 1339 AH.
What do the scholars of religion say regarding Zaid's opinion that common people stretch the 'Ra' of 'Allahu Akbar' in the Takbir of transition in prayer so much that it causes deficiency in the prayer. How is it to pronounce 'Ra' of 'Allahu Akbar' such that common people feel a 'Dal' instead of stopping?

The Answer:
Pronouncing 'Ra' as 'Dal' in 'Akbar' invalidates the prayer because it corrupts the meaning. And the claim that he reads 'Ra' but all listeners hear 'Dal' is very far-fetched. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 536: From the city of Mombasa, East Africa District, shop of Haji Qasim & Sons, questioned by Haji Abdullah Haji Yaqub on 26 Ramadan 1339 AH.

What do the scholars of religion say about this issue: that if one recited Surah Kafirun in the first rak'ah, and in the second...

Footnote: 1 *Durr-e-Mukhtar*, Chapter on Reciting Aloud by Imam, printed by Mujtabai Delhi, 1/81.

फ़तावा रज़विया जिल्द छठा

"السرية اتفاقا بل يستمع اذا جهر وينصت اذا اسر" [1] — वल्लाह तआला आलम।
सिरी (चुपचाप) नमाज़ में, और न ही सिरी नमाज़ में फातिहा बिल-इत्तेफ़ाक़ (यानी इस पर अइम्मा सलासा का इत्तेफ़ाक़ है) बल्कि जब इमाम ज़हरन (ज़ोर से) पढ़े तो सुनने और जब इमाम सिरन (चुपचाप) पढ़े तो मुक्तदी चुप रहे। वल्लाह तआला आलम। (त)

मसला नंबर 533, 534: अज़ हज़ारा ज़िला बुलढाणा स्टेशन बसवा मुतअल्लिक मलकापुर मसूला सिराजुद्दीन 13 रमज़ान 1339 हिजरी।
क्या फ़रमाते हैं उलमा-ए-दीन कि:
(1) आयते क़ुरआन शरीफ़ के टुकड़े टुकड़े करके नमाज़ में पढ़ने के मुतअल्लिक शरअ शरीफ़ में क्या हुक्म है?
(2) सूरह यासीन शरीफ़ में "सलमुन क़ौलन" की जगह "सलाम क़ौलन" पढ़ना या सलाम पर आयत करना सही किस तरह पर है?

अल-जवाब:
(1) साइल (पूछने वाले) ने साफ़ बात न लिखी कि टुकड़े करने से क्या मुराद है, अगर आयत बड़ी है और एक सांस में नहीं पढ़ सकता तो जहाँ सांस टूट जाए मजबूरी में वक़्फ़ (रुकना) करेगा, मौका ब-मौका ठहरता हुआ चला जाएगा, हाँ बिला ज़रूरत बे-मौका ठहरना ख़िलाफ़े सुन्नत है, वल्लाह तआला आलम।
(2) दोनों सही और दोनों जायज़ हैं। वल्लाह तआला आलम।

मसला नंबर 535: अज़ जयपुर पेरों अजमेरी दरवाज़ा मकान अब्दुल वाहिद ख़ान मसूला हामिद हुसैन फ़ारूक़ी 14 रमज़ान 1339 हिजरी।
क्या फ़रमाते हैं उलमा-ए-दीन कि ज़ैद का ख़याल है कि आम लोग तकबीरे इंतिक़ाले नमाज़ में 'अल्लाहु अकबर' की 'रा' को इस क़दर खींचते हैं कि उस की वजह से नमाज़ में नुक़सान वाक़े होता है 'अल्लाहु अकबर' की 'रा' को इस तरह ख़ारिज करना कि आम लोग बजाय रुके'दाल' महसूस करें कैसा है?

अल-जवाब:

अकबर में 'र' को 'द' पढ़ना मुफ़सिदे नमाज़ (नमाज़ तोड़ने वाला) है कि फ़सादे मानी है, और ये बात कि वो 'र' पढ़ता और सब सुनने वाले 'द' सुनते हैं बहुत बईद (अजीब) है। वल्लाह तआला आलम।

मसला नंबर 536: अज़ शहर मम्बासा ज़िला मशरिक़ी अफ़्रीक़ा दुकान हाजी क़ासिम एंड संज़ मसूला हाजी अब्दुल्ला हाजी याक़ूब 26 रमज़ान 1339 हिजरी।

क्या फ़रमाते हैं उलमा-ए-दीन इस मसले में कि अव्वल रकअत में सूरह काफ़िरून पढ़ी दूसरी में...

फुटनोट: 1 दुर्रे मुख़्तार, फ़स्ल व युजहिरुल इमाम मतबूआ मुज्तबाई देहली 1/81

السریة اتفاقاً بل یستمع اذا جھر وینصت اذا اسر ۱۔ واللہ تعالٰی اعلم سری نماز میں، اور نہ ہی سری نماز میں فاتحہ بالاتفاق (یعنی اس پر ائمہ ثلاثہ کا اتفاق ہے) بلکہ جب امام جہراً پڑھے تو سننے اور جب امام سراً پڑھے تو مقتدی چپ رہے۔ واللہ تعالٰی اعلم (ت)

مسئلہ نمبر ۵۳۳، ۵۳۴: از ہزا ر ضلع بلڈانہ اسٹیشن بسوہ متعلق ملکہ پور مسئولہ سراج الدین ۱۳ رمضان ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین کہ: (۱) آیت قرآن شریف کے ٹکڑے ٹکڑے کر کے نماز میں پڑھنے کے متعلق شرع شریف میں کیا حکم ہے؟ (۲) سورہ یسین شریف میں سلم قول کی جگہ سلام قولا پڑھنا یا سلام پر آیت کرنا صحیح کس طرح پر ہے؟

الجواب: (۱) سائل نے صاف بات نہ لکھی کہ ٹکڑے کرنے سے کیا مراد ہے، اگر آیت بڑی ہے اور ایک سانس میں نہیں پڑھ سکتا تو جہاں سانس ٹوٹ جائے مجبورا وقف کرے گا موقع موقع پر ٹھہرتا ہوا چلا جائے گا، ہاں بلا ضرورت بے موقع ٹھہرنا خلاف سنت ہے، واللہ تعالٰی اعلم۔ (۲) دونوں صحیح اور دونوں جائز ہیں۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ نمبر ۵۳۵: از جے پور پیرون اجمیر ی دروازہ مکان عبدالواحد خاں مسئولہ حامد حسین فاروقی ۱۴ رمضان ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین کہ زید کا خیال ہے کہ عام لوگ تکبیر انتقال نماز میں اللہ اکبر کی را کو اس قدر کھینچتے ہیں کہ اس کی وجہ سے نماز میں نقصان واقع ہوتا ہے اللہ اکبر کی را کو اس طرح خارج کرنا کہ عام لوگ بجائے رکے دال محسوس کریں کیسا ہے؟

الجواب: اکبر میں ر کو دپڑھنا مفسد نماز ہے کہ فساد معنی ہے، اور یہ بات کہ وہ ر پڑھتا اور سب سننے والے دسنتے ہیں بہت بعید ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ نمبر ۵۳۶: از شہر ممباسہ ضلع مشرقی افریقہ دکان حاجی قاسم اینڈ سنز مسئولہ حاجی عبداللہ حاجی یعقوب ۲۶ رمضان ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ اول رکعت میں سورہ کفرون پڑھی دوسری میں

---

1 درمختار، فصل و یجھر الامام مطبوعہ مجتبائی دہلی ۸۱/۱

Fatawa Razawiyya Volume 6

Q: One verse of Surah Al-Kawthar was recited, then it was left and Surah Al-Ikhlas was recited. Is doing so permissible or not? And will any defect occur in the prayer or not? Explain and you will be rewarded.

The Answer: The prayer is valid, but doing so was impermissible. Once a word of a Surah comes out of the tongue, it becomes necessary (lazim) to complete that same Surah, whether it was before or after. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 537: From Mandawara, Kathiawar, sent by Master Ismail Sahib, 2 Shawwal 1339 AH. Is reciting the Holy Quran in prayer in this manner - 'Alam Tara' in the first [rak'ah], 'Qul Huwallahu Ahad' in the second, 'Li'ilaafi' in the third, and again 'Qul Huwallahu Ahad' in the fourth - Makruh Tanzihi (disliked) or not, although one could have read 'Li'ilaafi' and then followed the sequence?

The Answer: It is not Makruh in Nafl (voluntary) prayers, as every two rak'ahs of it are a separate prayer. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 538: From Dhamipur, District Bedari, sent by Mustaqeem Khan, 24 Ramadan-ul-Mubarak 1312 AH. What do the scholars of religion say in this matter: if a Hafiz is reciting the Holy Quran correctly in Tarawih in a mosque, and suddenly another Hafiz comes behind him to mislead him, is doing so and creating mischief in prayer permissible or impermissible? Explain and you will be rewarded.

The Answer: If in reality he intentionally pointed out a mistake wrongly to deceive and spoil the prayer, then he has committed a great sin and deserves severe punishment according to Sharia. Such people who come to the mosque, create mischief, make illegitimate noise, and are ready for criminal conduct without cause, as stated by the questioner, are malicious (muzi). Regarding a malicious person, the ruling is that he should not be allowed to enter the mosque, as explicitly stated by Allama Badr al-Din al-Ayni in 'Umdat al-Qari Sharh Sahih al-Bukhari', and from him in 'al-Durr al-Mukhtar', etc. (As Allama Badr al-Din al-Ayni has clarified in 'Umdat al-Qari Sharh Sahih al-Bukhari' and it is also mentioned in 'Durr al-Mukhtar', etc., with reference to it.) And Allah Almighty knows best.

Problem No. 539: In the name of Allah, the Most Gracious, the Most Merciful.

What do the connoisseurs of Quranic nuances and the subtle experts of the knowledge of the Beloved of the Most Merciful say in this chapter, that the Imam in

the recitation of prayer... [Table: Knowledgeable and wise people aware of Quranic points and the exalted sayings of the Beloved of God in this regard]

फ़तावा रज़विया छठा खंड

प्रश्न: सूरह कौसर की एक आयत पढ़ी फिर उसे छोड़कर सूरह इखलास पढ़ी, ऐसा करना जायज़ है या नहीं? और नमाज़ में कुछ ख़लल (कमी) होगा या नहीं? बयान करें और पुण्य पायें।

अल-जवाब: नमाज़ तो हो गई मगर ऐसा करना ना-जायज़ था, जिस सूरह का एक शब्द ज़बान से निकल जाए उसी का पढ़ना लाज़िम (अनिवार्य) हो जाता है चाहे वह पहले हो या बाद की। वल्लाहु तआला आलम।

मसला नंबर 537: मांडवारा, काठियावाड़ से प्रेषक मास्टर इस्माइल साहब, 2 शव्वाल 1339 हिजरी। नमाज़ में कुरान शरीफ इस तरह पढ़ना कि पहली (रकअत) में 'अलम तरा', दूसरी में 'कुल हुवल्लाहु अहद', तीसरी में 'लि-ईलाफि', चौथी में फिर 'कुल हुवल्लाहु अहद' क्या मकरूहे तन्ज़ीही (नापसंदीदा) है या नहीं, जबकि वह 'लि-ईलाफि' और फिर तरतीब (क्रम) के साथ भी पढ़ सकता था?

अल-जवाब: नफ़्ल (स्वैच्छिक) नमाज़ों में यह मकरूह नहीं है क्योंकि इसकी हर दो रकअत नमाज़ अलग होती है। वल्लाहु तआला आलम।

मसला नंबर 538: धमीपुर, जिला बेदरी से प्रेषक मुस्तक़ीम खान, 24 रमज़ानुल मुबारक 1312 हिजरी। धर्म के विद्वान इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि अगर कोई हाफ़िज़ मस्जिद में तरावीह में कलामे मजीद (कुरान) सही पढ़ रहा हो और अचानक उसके पीछे दूसरा कोई हाफ़िज़ उसे बहकाने आ जाए, तो ऐसा करना और नमाज़ में आकर फ़साद डालना जायज़ है या ना-जायज़? बयान करें और पुण्य पायें।

अल-जवाब: अगर वास्तव में उसने धोखा देने और नमाज़ ख़राब करने के लिए जानबूझकर ग़लत बताया तो वह बहुत बड़े गुनाह में मुब्तला हुआ और शरीयत के अनुसार कड़ी सज़ा का हक़दार है। ऐसे लोग जो मस्जिद में आकर फ़साद डालें और ना-जायज़ शोर मचाएं और बिना किसी कारण के लड़ाई-झगड़े पर आमादा हों, जैसा कि पूछने वाले ने बयान किया है, वे मुज़ी (पीड़ा देने वाले) हैं। और मुज़ी के बारे में हुक्म है कि उसे मस्जिद में न आने दिया जाए, जैसा कि अल्लामा बदरुद्दीन ऐनी ने 'उमदतुल क़ारी शरह सहीह बुख़ारी' में साफ़ तौर पर लिखा है और उनसे 'दुर्रे मुख़्तार' आदि में भी (जैसा कि अल्लामा बदरुद्दीन ऐनी ने 'उमदतुल क़ारी शरह सहीह बुख़ारी' में स्पष्ट किया है और उनके हवाले से 'दुर्रे मुख़्तार' आदि में भी उल्लेख है)। वल्लाहु तआला आलम।

मसला नंबर 539: बिस्मिल्लाह हिर्रहमान निर्रहीम

क़ुरानी बारीकियों के पारखी और हबीबे रहमानी के इल्म के सूक्ष्म जानकार इस बारे में क्या फरमाते हैं कि इमाम नमाज़ की किरात में... [तालिका: क़ुरानी बिंदुओं और खुदा के महबूब के ऊंचे वचनों से अवगत और जानकार विद्वान इस बारे में]

पेज 353 of 736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

کوثر کی ایک آیت پڑھی پھر اس کو چھوڑ کر اخلاص پڑھی، ایسا کرنا جائز ہے یا نہیں؟ اور نماز میں کچھ خلل واقع ہو گا یا نہیں بینوا تو جروا

الجواب: نماز تو ہو گئی مگر ایسا کرنا نا جائز تھا، جس سورت کا ایک لفظ زبان سے نکل جائے اُسی کا پڑھنا لازم ہو جاتا ہے خواہ وہ قبل ہو یا بعد کی۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ نمبر ۵۳۷: از مانڈوارہ کاٹھیاواڑ مرسلہ ماسٹر اسمعیل صاحب ۲ شوال ۱۳۳۹ھ نماز میں قرآن شریف اس طرح پڑھنا کہ اول میں الم ترا، دوسری میں قل ھو اللہ، تیسری میں لا یلف، چوتھی میں پھر قل ھو اللہ مکروہ تنزیہی ہے یا نہیں حالانکہ لایلف اور پھر ترتیب وار بھی پڑھ سکتا ہے۔

الجواب: نوافل میں مکروہ نہیں کہ اس کی ہر دورکعت نماز علیحدہ ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ نمبر ۵۳۸: از دھمی پور ضلع بیڑری مرسلہ مستقیم خان ۲۴ رمضان المبارک ۱۳۱۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ اگر کوئی حافظ مسجد میں تراویح میں کلام مجید صحیح پڑھتا ہو اور اچانک اس کے پیچھے دوسرا کوئی حافظ اس کو بہکانے آجائے تو ایسا کرنا اور نماز میں آکر فساد ڈالنا جائز ہے یا نا جائز؟ بینوا تو جروا۔

الجواب: اگر فی الواقع اس نے دھوکا دینے اور نماز خراب کرنے کے لئے قصداً غلط بتایا تو سخت گناہ عظیم میں مبتلا ہوا اور شرعاً سخت سزا کا مستحق ہے، ایسے لوگ مسجد میں آکر فساد ڈالیں اور ناجائز غل مچائیں اور بلاوجہ فوجداری پر آمادہ ہوں جیسا کہ سائل نے بیان کیا موذی ہیں اور موذی کی نسبت حکم ہے کہ اسے مسجد میں نہ آنے دیا جائے جیسا نص علیہ العلامۃ البدر العینی فی عمدۃ القاری شرح صحیح البخاری و عنہ فی الدر المختار وغیرہ (جیسا کہ علامہ بدر الدین عینی

نے عمدة القاری شرح صحیح البخاری میں تصریح کی ہے اور اس کے حوالے سے درمختار وغیرہ میں بھی مذکور ہے۔ت) واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ نمبر ۵۳۹: بسم اللہ الرحمن الرحیم

چہ می فرمایند جوہر شناسان نکات فرقانی و دقیقہ رسان علم حبیب رحمانی اندریں باب کہ امام در قرأتِ نماز | قرآنی نکات اور حبیب خدا کے ارشادات عالیہ سے آگاہ وواقف اہل علم ودانش اس بارے میں

Fatawa Rizvia, Volume 6

Question: What do the scholars say: If an Imam, while reciting in Maghrib, Isha, Fajr, Jumu'ah, or Eid prayers, forgets after reciting three verses or more than three verses, and a follower (Muqtadi) gives him a prompt (Luqmah) and the Imam accepts it, will the prayer of the Imam and the follower be valid or not? Explain and you will be rewarded.

Answer: It is correct absolutely in every prayer and in every situation, even if it is after three verses. This is the correct opinion. It is stated in 'Al-Durr al-Mukhtar': Prompting one's Imam does not invalidate the prayer at all, for the prompter or the receiver in any case... etc. In 'Radd al-Muhtar': i.e., whether the Imam has recited the amount sufficient for the validity of the prayer or not, whether he moved to another verse or not, whether it was repeated or not; this is the most correct view according to 'Nahr'. And Allah Subhanah wa Ta'ala knows best.

The prayer is valid absolutely in every prayer and every situation. Even if the prompt occurs after three verses, it is correct, and this is the valid opinion. It is mentioned in 'Durr al-Mukhtar' that giving a prompt to the Imam does not invalidate the prayer for the one giving it nor for the one receiving it in any situation... etc. In 'Radd al-Muhtar', it is stated: whether the Imam had already recited enough for the prayer to be valid or not; whether the Imam had moved to another verse or not; whether the prompt occurred multiple times or not; the most correct view is that mentioned in 'Nahr'. And Allah Subhanah wa Ta'ala knows best.

Problem No. 540: What do the scholars of religion say regarding this matter: If Zaid recites "Inna shani'aka" as "Inna shani'aka ya ablah", "Kaulah" or "lahum" as "kaulahum" with lengthening (Ishba) of the Fatha on 'Maghfirah', or "Alhamdulillah" as "Alhamdu-lailah" with lengthening of the Kasra, or "Qul" as "Qaul" with lengthening of the Damma, whether done intentionally or unintentionally, does it invalidate the prayer or not? Explain and you will be rewarded.

Answer: Doing so intentionally is a great sin, but if done unintentionally, it is forgiven, and it does not invalidate the prayer in any case. Because lengthening (Ishba') is a recorded dialect of the Arabs, similar to sufficing with a short vowel instead of a long vowel (Maddah), as stated in 'Al-Ghunyah' and other books. (Because Ishba' is a well-known dialect of the Arabs, just as sometimes only a short vowel is used instead of a long vowel. This is specified in 'Ghunyah' and other books.) And Allah Ta'ala knows best.

Footnotes: 1. Durr al-Mukhtar, Chapter on what invalidates prayer and what is disliked in it, published by Mujtabai Press, Delhi, 1/90. 2. Radd al-Muhtar, Chapter on what invalidates prayer and what is disliked in it, published by Mustafa al-Babi Press, Egypt, 1/460.

फ़तावा रज़विया, जिल्द 6

मसाला: उलेमा क्या फ़रमाते हैं कि अगर इमाम मग़रिब, इशा, फ़ज्र, जुमा और ईदैन की नमाज़ों में क़िरात करते हुए तीन आयतों या तीन आयतों से ज़्यादा पढ़कर भूल गया, और नमाज़ के दौरान मक़्तदी ने उसे लुक़्मा (इशारा) दिया और इमाम ने उस लुक़्मे को स्वीकार कर लिया, तो इमाम और मुक़्तदी की नमाज़ सही होगी या नहीं? बयान फ़रमाएं, सवाब मिलेगा।

जवाब: यह मुतलक़न हर नमाज़ में और हर हाल में सही है, चाहे तीन आयतों के बाद ही क्यों न हो। यही सही क़ौल है। 'अद-दुरुल मुख़्तार' में है: अपने इमाम को लुक़्मा देना हर हाल में नमाज़ को फासिद (ख़राब) नहीं करता... आदि। 'रद्दुल मुहतार' में है: यानी चाहे इमाम ने उतनी क़िरात कर ली हो जिससे नमाज़ हो जाती है या नहीं, चाहे वह दूसरी आयत की तरफ मुंतक़िल (चला गया) हो चुका हो या नहीं, चाहे लुक़्मा बार-बार हुआ हो या नहीं; 'नहर' के अनुसार यही सबसे सही राय है। और अल्लाह सुब्हानहू व तआला सबसे बेहतर जानता है।

नमाज़ मुतलक़न सही है, हर नमाज़ में और हर हाल में। लुक़्मा चाहे तीन आयतों के बाद हो, सही है और सही क़ौल यही है। 'दुर्रे मुख़्तार' में है कि इमाम को लुक़्मा देने से नमाज़ फासिद नहीं होती, न लुक़्मा देने वाले की और न लेने वाले की हर हाल में... आदि। 'रद्दुल मुहतार' में है कि चाहे इमाम ने इतनी क़िरात कर ली हो जिससे नमाज़ हो जाती है या न की हो, इमाम किसी और आयत की तरफ मुंतक़िल हो चुका हो या न हुआ हो, लुक़्मा बार-बार हो या न हो, सबसे सही यही है 'नहर'। और अल्लाह सुब्हानहू व तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसाला नंबर 540: उलेमा-ए-दीन क्या फ़रमाते हैं इस मसले में कि ज़ैद का 'इन्ना शानिअका' को 'इन्ना शानिअका या अब्लह', 'कौ-ला' या 'लहुम' को 'कौ-लाहुम' मग़फ़िरह फ़त्हा के इश्बा (खींचने) के साथ, या 'अल-हम्दुलिल्लाह' को 'अल-हम्दु-लैलाह' कसरा के इश्बा के साथ, या 'क़ुल' को 'क़ौल' ज़म्मा के इश्बा के साथ जानबूझकर या अनजाने में पढ़ना नमाज़ को फासिद करता है या नहीं? बयान फ़रमाएं, सवाब मिलेगा।

जवाब: जानबूझकर करना अज़ीम गुनाह है और अनजाने में माफ़ है, और नमाज़ किसी भी हाल में फासिद नहीं होती क्योंकि इश्बा अरबों की एक प्रसिद्ध भाषा (लहजा) है, जैसे मद (Madd) की जगह हरकत पर इक्तिफ़ा (बस) किया जाता है, जैसा कि 'ग़ुनिया' और अन्य किताबों में साफ़ लिखा है।

(क्योंकि इश्बा अरब की मारूफ़ लुगत है जैसा कि मद की जगह हरकत पर इक्तिफ़ा किया जाता है, ग़ुनिया और दीगर कुतुब में इस पर तसरीह है।) और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

फुटनोट्स: 1. दुर्रे मुख़्तार, बाब मा युफ़्सिदुस सलात व मा युक़रहु फ़ीहा, मतबुआ मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 1/90। 2. रद्दुल मुहतार, बाब मा युफ़्सिदुस सलात व मा युक़रहु फ़ीहा, मतबुआ मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 1/460।

पेज 354 ऑफ़ 736

فتاویٰ رضویہ ، جلد ششم

مغرب و خفتن و فجر و جمعہ و عیدین در میان قرآت سہ آیۃ یا زائد از سہ آیۃ سہو کرد و مقتدی او رامیان نماز مذکورہ بالا لقمہ داد و مقتدی خود گرفت نماز امام و مقتدی درست شد یانہ ۔ بینوا تو جروا

کیا فرماتے ہیں کہ امام نماز مغرب، عشاء، فجر، جمعہ اور عیدین میں قرآت کرتے ہوئے تین آیات سے زائد پڑھ کر بھول گیا ایسی صورت میں مقتدی نے لقمہ دیا اور امام نے اس کا لقمہ قبول کر لیا تو امام اور مقتدی کی نماز درست ہوگی یا نہیں؟ بینوا تو جروا۔

الجواب: صحیح است مطلقاً در ہر نماز و بہر حال اگرچہ بعد سہ آیت باشد ہمیں است قول صحیح الدر المختار فتحہ علی امامہ لایفسد مطلقاً بفاتح وآخذ بکل حال الخ فی ردالمحتار ای سواء قرأ الامام قدر مایجوز بہ الصلوۃ ام لا انتقل الی آیۃ اخری ام لا تکرر ام لا ھو الاصح نہر[2] واللہ سبحنہ تعالیٰ اعلم۔

نماز مطلقاً درست ہے ہر نماز میں ہر حال میں رضی اللہ عنہ لقمہ اگرچہ وہ تین آیات کے بعد ہو درست اور صحیح قول یہی ہے۔ در مختار میں ہے امام کو لقمہ دینے سے نماز فاسد نہیں ہوتی نہ لقمہ دینے والے کی اور نہ لینے والے کی ہر حال میں الخ ردالمحتار میں ہے خواہ امام نے اتنی قرآت کر لی ہو جس سے نماز ہو جاتی ہے یا نہ کی ہو امام کسی اور آیت کی طرف منتقل ہو چکا ہو یا نہ ہوا ہو، لقمہ بار بار ہو یا نہ ہو، اصح یہی ہے نہر۔ واللہ سبحانہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۵۴۰: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید کا انا شانئک یابلہ، کولاہ یا لھم کولاھم مغفرۃ باشباع فتحہ یا الحمد للہ الحمد لیلہ باشباع کسرہ یا قل کو قول باشباع ضمہ پڑھنا عمداً یا سہواً مفسد صلوٰۃ ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: عمداً گناہ عظیم ہے اور سہواً معاف اور فسادِ نماز کسی حالت میں نہیں لان الاشباع لغة مرقوم من العرب کالاکتفاء عن المدة بالحرکة کما نص علیه في الغنیة و غیرھما (کیونکہ اشباع عرب کی معروف لغت ہے جیسا کہ مدہ کی جگہ حرکت پر اکتفا کیا جاتا ہے غنیہ اور دیگر کتب میں اس پر تصریح ہے۔ت) واللہ تعالیٰ اعلم۔

1 در مختار باب مایفسد الصلوۃ ومایکرہ فیھا مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱ / ۹۰ 2 ردالمحتار باب مایفسد الصلوۃ ومایکرہ فیھا مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱ / ۴۶۰

Fatawa Razawiyya Volume Six Case Number 521: Asked by Ahmad Shah Sahib from Village Nagariya Sadaat, District Bareilly, 1st Dhu al-Hijjah 1329 AH. If an Imam is leading the prayer and somehow leaves out one or two words in a Surah, will that prayer be valid or not? Clarify and you will be rewarded. The Answer: If the meaning does not change due to their omission, then it is valid; otherwise, not. Then, if this is Surah al-Fatiha, then omitting any word in it will absolutely make the prostration of forgetfulness (Sajda-e-Sahw) mandatory if it was done inadvertently, otherwise repetition (I'ada) is required. And in any other Surah, if a word or words were omitted and the meaning was not corrupted, and an amount equal to three verses has been recited, then there is no harm in this omission. And Allah Almighty knows best. Case Number 522: Asked by Maulvi Abdul Jalil Sahib, resident of Bengal, 15 Safar 1332 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: Zaid led the two units (Rak'at) of the Fajr obligatory prayer; after reciting Surah Al-Hamd (Fatiha), while joining another Surah, he repeated a word three times due to it being doubtful. Now, is his prayer valid according to Sharia or not? If, according to some people, it is repeated, and new people join in following him (Iqtida), will the prayer of the later ones be valid or not? The Answer: Repeating a word does not cause corruption in prayer. Those new people who join in the repetition, their prayer will not be valid because they are performing an obligatory prayer behind someone performing a voluntary (nafl) prayer (as the Imam's original obligation was already fulfilled). And Allah Almighty knows best. Case Number 523, 524, 552: From South Africa, Transvaal, Krugersdorp, Box No. 33, sent by M.M. Dawood Ahmed Musa Ji Salooji, 12 Ramadan 1326 AH. Firstly, I describe the current situation of the country of Transvaal so that it may facilitate the answer below. Here there is a government of non-believers and the inhabitants here are also non-believers. Yes, some people are Shafi'i Muslims, the rest are Muslim traders from India, etc., but the total number of Muslims compared to non-believers is very low. I do not mention the villages, but in the cities of this country, the approximate number would be as follows: in some places 10-20, in some places 30, 40, in some places 80, 100. Except for one city, according to my opinion, there would not be a gathering of 400-500 anywhere. The state of mosques is such that in some places a house is taken on rent and Jumu'ah and Eid prayers are performed in it, and in some places there is a mosque but due to scarcity, it also does not fill up. However, in one place there are three mosques and the Muslim congregation is large, approximately not less than five hundred (500). Jumu'ah and Eid prayers are performed everywhere. On the occasion of Eid, Muslims from villages participate in the prayer and increase the number. To my knowledge, there has never

been an Islamic government here and no Sharia order has ever been issued by the authorities here, but they do not prohibit Jumu'ah and Eid prayers. The place for which this is being written is also a city and has one mosque. Number of Muslims

फतावा रज़विया जिल्द शशम (छठा) मसला नंबर 521: मस्ऊला अहमद शाह साहब अज़ मौज़ा नगरिया सादात ज़िला बरेली, 1 ज़िल हिज्जा 1329 हिजरी अगर इमाम नमाज़ पढ़ाता हो और वो किसी सूरत में दरम्यान के दो एक लफ्ज़ छोड़ गया हो तो वो नमाज़ सही होगी या नहीं? बय्यिनू तूजरू (बयान फरमाएं सवाब पायें) अल-जवाब: अगर उनके तर्क(छोड़ने) से मानी न बिगड़े तो सही हो गई वरना नहीं, फिर अगर ये सूरह फातिहा है तो इसमें मुतलकन किसी लफ्ज़ के तर्क से सजदा सह्व वाजिब होगा जबकि सह्वन (भूलवश) हुआ हो वरना इआदा (दोबारा पढ़ना)। और और किसी सूरत से अगर लफ्ज़ या अल्फाज़ मतरूक हुए और मानी फासिद न हुए और तीन आयत की कद्र पढ़ लिया गया तो इस छूट जाने में कुछ हर्ज नहीं। वल्लाहु तआला आलम (और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है) मसला नंबर 522: मस्ऊला मौलवी अब्दुल जलील साहब मुतवत्तिन बंगाल, 15 सफर 1332 हिजरी क्या फ़रमाते हैं उलम-ए-दीन इस मसले में कि ज़ैद ने दो रकात फज्र की फर्ज़ पढ़ाई बाद अल-हम्द शरीफ के ज़म-ए-सूरत में किसी लफ्ज़ को तीन मर्तबा तकरार किया बवजह मुश्तबह होने के अब इसकी नमाज़ शरअन दुरुस्त है या नहीं? अगर इसका बक़ौल शख़्स इआदा किया जाए, अगर लोग आकर इक़्तिदा करें बाद वालों की नमाज़ दुरुस्त है या नहीं? अल-जवाब: लफ्ज़ के तकरार से नमाज़ में फसाद नहीं आता। इआदा में जो नए लोग मिलेंगे उनकी नमाज़ न होगी क्यूंकि वो नफ़्ल पढ़ने वाले के पीछे फर्ज़ अदा कर रहा है। वल्लाहु तआला आलम मसला नंबर 523, 524, 552: अज़ जुनूबी अफ़्रीक़ा ट्रांसवाल मुकाम क्रूगर्सडार्प बॉक्स नंबर 33 मुर्सला एम. एम. दाऊद अहमद मूसा जी सालूजी, 12 रमज़ान 1326 हिजरी अव्वलन तहरीर हाल मुल्क ट्रांसवाल करता हूँ कि इसके ज़ैल के जवाब में सहूलत हो। यहाँ पर हुकूमत कुफ़्फ़ार है और यहाँ के बाशिंदे भी कुफ़्फ़ार हैं, हाँ कुछ लोग मुसलमान शाफई मज़हब भी हैं बाकी मुसलमान इंडिया के ताजिर वग़ैरह हैं मगर मजमुआ मुसलमान कुफ़्फ़ार की निस्बत बहुत कम हैं, गाँव का तो मैं ज़िक्र नहीं करता मगर इस मुल्क के शहरों में तखमीनन मक़सद ज़ैल तादाद होगी: किसी जगह दस बीस 20, किसी जगह तीस 30 चालीस 40 किसी जगह अस्सी 80 सौ 100। सिवाए एक शहर के मेरे ख्याल के मुवाफ़िक कहीं चार सौ 400 पाँच सौ 500 का मजमा न होगा। मसाजिद का ये हाल है कि कहीं तो किराये में मकान लिया हुआ है और उसमें नमाज़ जुमा व ईद अदा की जाती है और किसी जगह मस्जिद है मगर बवजह किल्लत वो भी नहीं भरती। अलबत्ता एक जगह तीन मस्जिदें हैं और मुसलमानों की जमाअत बड़ी है तखमीनन पाँच सौ 500 से कम न होगी। नमाज़ जुमा व ईद सब जगह अदा की जाती है। ईद के मौके पर गाँव के मुसलमानान वो शरीक नमाज़ होकर तादाद बढ़ा देते हैं। मेरे इल्म में यहाँ कभी इस्लामी हुकूमत नहीं हुई और हुक्काम की तरफ से कोई हुक्म शरई यहाँ जारी नहीं, मगर नमाज़ जुमा व ईद

को मना नहीं करते। जिस जगह के लिए ये तहरीर की जाती है वो भी शहर है और एक मस्जिद भी है। तादाद मुसलमानान

सफ़हा 355 अज़ 736

فتاوی رضویہ جلد ششم مسئلہ نمبر ۵۲۱: مسئولہ احمد شاہ صاحب از موضع نگر یا سادات ضلع بریلی یکم ذی الحجہ ۱۳۲۹ھ اگر امام نماز پڑھاتا ہو اور وہ کسی صورت میں درمیان کے دو ایک لفظ چھوڑ گیا ہو تو وہ نماز صحیح ہوگی یا نہیں؟ بینوا توجروا الجواب: اگر ان کے ترک سے معنی نہ بگڑے تو صحیح ہو گئی ورنہ نہیں، پھر اگر یہ سورۃ فاتحہ ہے تو اس میں مطلقاً کسی لفظ کے ترک سے سجدہ سہو واجب ہوگا جبکہ سہواً ہوا ہو ورنہ اعادہ۔ اور اور کسی صورت سے اگر لفظ یا الفاظ متروک ہوئے اور معنی فاسد نہ ہوئے اور تین آیت کی قدر پڑھ لیا گیا تو اس چھوٹ جانے میں کچھ حرج نہیں واللہ تعالی اعلم مسئلہ نمبر ۵۲۲: مسئولہ مولوی عبدالجلیل صاحب متوطن بنگال ۱۵ صفر ۱۳۳۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید نے دو رکعت فجر کی فرض پڑھائی بعد الحمد شریف کے ضم سورت میں کسی لفظ کو تین مرتبہ تکرار کیا بوجہ مشتبہ ہونے کے، اب اس کی نماز شرعاً درست ہے یا نہیں؟ اگر اس کا بقول شخصے اعادہ کیا جائے اگر لوگ آکر اقتدا کریں بعد والوں کی نماز درست ہے یا نہیں؟ الجواب: لفظ کے تکرار سے نماز میں فساد نہیں آتا اعادہ میں جو نئے لوگ ملیں گے ان کی نماز نہ ہوگی لانہم مفترضون خلف متنفل (کیونکہ وہ نفل پڑھنے والے کے پیچھے فرض ادا کر رہا ہے۔ت) واللہ تعالی اعلم مسئلہ نمبر ۵۲۳، ۵۲۴، ۵۵۲: از جنوبی افریقہ ٹرنسوال مقام کرو گرس ڈروپ بکس نمبر ۳۳ مرسلہ ایم ایم داؤد احمد موسیٰ جی سالوجی ۱۲ رمضان ۱۳۲۶ھ اولاً تحریر حال ملک ٹرنسوال کرتا ہوں کہ اسکہ ذیل کے جواب میں سہولت ہو یہاں پر حکومت کفار ہے اور یہاں کے باشندے بھی کفار ہیں، ہاں کچھ لوگ مسلمان شافعی المذہب بھی ہیں باقی مسلمان انڈیا کے تاجر وغیرہ ہیں مگر مجموعہ مسلمان کفار کی نسبت بہت کم ہیں، گاؤں کا تو میں ذکر نہیں کرتا مگر اس ملک کے شہروں میں تخمیناً مقصد ذیل تعداد ہوگی کسی جگہ دس بیس ۲۰ کسی جگہ تیں ۳۰ چالیس ۴۰ کسی جگہ اسی ۸۰ سو ۱۰۰ سوائے

ایک شہر کے میرے خیال کے موافق کہیں چار سو ۴۰۰ پانچ سو ۵۰۰ کا مجمع نہ ہوگا، مساجد کا یہ حال ہے کہ کہیں تو کرایہ میں مکان لیا ہوا ہے اور اس میں نماز جمعہ و عید ادا کی جاتی ہے اور کسی جگہ مسجد ہے مگر بوجہ قلت وہ بھی نہیں بھرتی البتہ ایک جگہ تین مسجدیں ہیں اور مسلمانوں کی جماعت بڑی ہے تخمیناً پانچ سو ۵۰۰ سے کم نہ ہوگی نماز جمعہ و عید سب جگہ ادا کی جاتی ہے عید کے موقع پر گاؤں کے مسلمانان وہ شریک نماز ہو کر تعداد بڑھا دیتے ہیں میرے علم میں یہاں کبھی اسلامی حکومت نہیں ہوئی اور حکام کی طرف سے کوئی حکم شرعی یہاں جاری نہیں مگر نماز جمعہ و عید کو منع نہیں کرتے جس جگہ کے لئے یہ تحریر کی جاتی ہے وہ بھی شہر ہے اور ایک مسجد بھی ہے تعداد مسلمانان

Fatawa Razawiyyah, Volume 6

There are not more than sixty or seventy [people], the mosque cannot fill up, but on the occasion of Eid, villagers join and the mosque becomes full. (1) Is a city (shahr) a condition for the performance of Friday (Jumu'ah) prayer or not? (2) What is called a city? Is the definition of 'Akbar Masajid' (the largest mosques) a narration of the school of thought (Madhab) or not? (3) When the power to execute penal limits (hudud) is a condition and not practically necessary at the moment, how can it be correct to adopt the aforementioned definition and abandon the apparent position of the school due to slackness? (4) Due to the disagreement among Hanafi scholars, precautionary Zuhr (Zuhr-e-Ihtiyati) was proposed. However, where the investigation of conditions is not according to the Hanafi school but is according to other schools, how is it not permissible there? The reason for avoiding disagreement (khuruj-e-ikhtilaf) exists in both places, meaning should Friday prayer and precautionary Zuhr also be performed there? (5) Can an argument for the impermissibility of Friday prayer in 'Dar al-Harb' (Abode of War) be drawn from "Every place where there is such a leader and a judge, etc." (translated)? (6) According to the mentioned quality, where is Friday prayer permissible and where is it not? (7) Should those in places where it is impermissible be forbidden or not, and what is the ruling regarding their Zuhr? (8) What is the ruling for Friday prayer where the king is not a Muslim, and why is Friday prayer permissible under a government of disbelievers? (9) Is this country 'Dar al-Harb' or not? (10) What is the definition of 'Dar al-Harb', and in what way does 'Dar al-Harb' become 'Dar al-Islam' (Abode of Islam) and 'Dar al-Islam' become 'Dar al-Harb'? (11) Where the conditions for Friday prayer are not found, what is the ruling for the Eid prayer? If it is not permissible, what is the harm in praying it? If it is not obligatory according to one's own school, it is obligatory according to another school such as that of [Imam] Shafi'i (may Allah Almighty have mercy on him), and it would lead to avoiding disagreement. (12) Our place is considered a city and there is one mosque; the resident congregants cannot fill it. What is the ruling for Friday prayer here? Explain so that you may be rewarded.

The Answer: By the agreement and consensus (Ijma) of our Imams (may Allah Almighty be pleased with them), a city is a condition for Friday prayer. The correct definition of a city in the Hanafi school is what the Imam of the school himself, Sayyiduna Imam-e-A'zam (may Allah Almighty be pleased with him), stated: a settlement in which there are multiple neighborhoods and permanent markets, and it is a district or pargana with associated villages, and there is an empowered ruler in

it who can secure justice for the oppressed from the oppressor through his power and his own or another's knowledge.

फ़तावा रज़विया, जिल्द 6

साठ-सत्तर से ज़्यादा नहीं, मस्जिद नहीं भर सकती मगर ईद के मौके पर गाँव वाले शरीक होते हैं और मस्जिद भर जाती है। (1) जुमे की अदायगी के लिए शहर शर्त है या नहीं? (2) शहर किसे कहते हैं? क्या 'अकबर मसाजिद' की परिभाषा मज़हब की रिवायत है या नहीं? (3) जब दंड विधान (हुदूद) को लागू करने की शक्ति शर्त है और वर्तमान में व्यावहारिक रूप से आवश्यक नहीं है, तो सुस्ती के कारण उक्त परिभाषा को अपनाना और ज़ाहिर-ए-मज़हब (स्पष्ट विचारधारा) को छोड़ना कैसे सही हो सकता है? (4) हनफ़ी विद्वानों के मतभेद के कारण एहतियाती जुहर (सावधानीपूर्ण दोपहर की नमाज़) का प्रस्ताव दिया गया था। लेकिन जहाँ हनफ़ी मज़हब के अनुसार शर्तों की पुष्टि न हो और अन्य मज़हबों के अनुसार हो, वहाँ कैसे जायज़ नहीं? मतभेद से बाहर निकलने (खुरूज-ए-इख्तिलाफ़) का कारण दोनों जगह मौजूद है, यानी क्या वहाँ भी जुमा और एहतियाती जुहर पढ़ लेनी चाहिए? (5) क्या "हर वह स्थान जहाँ कोई ऐसा अमीर और काज़ी हो आदि" (अनुवादित) से 'दारुल हर्ब' में जुमा के जायज़ न होने पर दलील दी जा सकती है? (6) उल्लेखित स्थिति के अनुसार जुमा कहाँ जायज़ है और कहाँ नहीं? (7) जहाँ यह नाजायज़ है, उन्हें मना किया जाए या नहीं, और उनकी जुहर का क्या हुक्म है? (8) जहाँ का राजा मुसलमान न हो वहाँ जुमा का क्या हुक्म है, और काफ़िरों की हुकूमत में जुमा क्यों जायज़ है? (9) यह देश 'दारुल हर्ब' है या नहीं? (10) 'दारुल हर्ब' की परिभाषा क्या है और किस प्रकार से 'दारुल हर्ब' 'दारुल इस्लाम' बनता है और 'दारुल इस्लाम' 'दारुल हर्ब' बनता है? (11) जहाँ जुमा की शर्तें न पाई जाएँ वहाँ ईद की नमाज़ का क्या हुक्म है? यदि जायज़ नहीं है, तो इसे पढ़ने में क्या बुराई है? यदि यह अपने मज़हब के अनुसार वाजिब नहीं है, तो अन्य मज़हब जैसे शाफ़ई (रहमतुल्लाह अलैहि) के अनुसार तो वाजिब है, और इससे मतभेद से बाहर निकलना हो जाएगा? (12) हमारा स्थान शहर माना जाता है और वहाँ एक मस्जिद है; निवासी नमाज़ी उसे भर नहीं सकते। यहाँ जुमा का क्या हुक्म है? स्पष्ट करें ताकि आप पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: जुमे के लिए हमारे इमामों (रज़ियल्लाहु अन्हुम) के इत्तेफ़ाक़ और इज्मा (सर्वसम्मति) से शहर शर्त है। हनफ़ी मज़हब में शहर की सही परिभाषा वह है जो स्वयं इमाम-ए-आज़म (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने इरशाद फ़रमाई: वह आबादी जिसमें अनेक मोहल्ले और स्थायी बाज़ार हों, और वह ज़िला या परगना हो जिसके साथ गाँव जुड़े हों, और उसमें कोई ऐसा अधिकार संपन्न शासक हो जो अपनी शक्ति और अपने या दूसरे के ज्ञान के माध्यम से मज़लूम को ज़ालिम से इंसाफ़ दिला सके।

पृष्ठ 356/736

ساٹھ ستر سے زیادہ نہیں مسجد نہیں بھر سکتی مگر عید کے موقع پر گاؤں والے شریک ہوتے ہیں اور مسجد بھر جاتی ہے۔ (۱) جمعہ کی ادا کے لئے شہر شرط ہے یا نہیں؟ (۲) شہر کس کو کہتے ہیں اکبر مساجد کی تعریف روایت مذہب ہے یا نہیں؟ (۳) جب قدرت اجرائی حدود شرط ہے اور بالفعل ضرور نہیں تو توانی کی وجہ سے تعریف مذکور کو اختیار کرنا اور ظاہر مذہب کو ترک کرنا کیونکر صحیح ہوسکتا ہے؟ (۴) علمائے حنفیہ کے اختلاف کی وجہ سے احتیاطی ظہر تجویز ہوئی مگر جہاں حنفی مذہب کے موافق تحقیق شروط نہ ہو اور دیگر مذاہب کے موافق ہو وہاں کیونکر جائز نہیں۔ خروج اختلاف کی علت دونوں جگہ موجود ہے یعنی وہاں بھی جمعہ اور احتیاطی ظہر پڑھ لینا چاہئے؟ (۵) کل موضع لہ امیر و قاض الخ (ہر وہ مقام جہاں کوئی ایسا امیر اور قاضی ہو الخ۔ ت) سے استدلال عدم جواز جمعہ دار حرب پر ہو سکتا ہے یا نہیں؟ (۶) کیفیت مذکور کی رو سے کہاں جمعہ جائز ہے اور کہاں نہیں؟ (۷) جہاں ناجائز ہے انھیں منع کیا جائے یا نہیں، اور ان کی ظہر کا کیا حکم ہے؟ (۸) جہاں بادشاہ مسلمان نہ ہو وہاں جمعہ کا کیا حکم ہے اور حکومت کفار میں جمعہ کیوں جائز ہے؟ (۹) یہ ملک دار حرب ہے یا نہیں؟ (۱۰) دار حرب کی کیا تعریف اور کس طور سے دار حرب دار اسلام بنتا ہے اور دار اسلام دار حرب بنتا ہے؟ (۱۱) جہاں شروط جمعہ نہ پائے جائیں وہاں عید کی نماز کا کیا حکم، اگر جائز نہیں تو پڑھ لینے سے کیا خرابی ہے اگر اپنے مذہب کے طور پر واجب نہیں تو دوسرے مذہب مثل شافعی رحمہ اللہ تعالیٰ علیہ کے تو واجب ہے اور خروج عن الاختلاف ہو جائے گا؟ (۱۲) ہماری جگہ شہر گنا جاتا ہے اور ایک مسجد ہے مصلی باشندے اسے بھر نہیں سکتے، یہاں جمعہ کا کیا حکم ہے بینوا توجروا۔

الجواب: جمعہ کے لئے ہمارے ائمہ رضی اللہ تعالیٰ عنہم کے اتفاق و اجماع سے شہر شرط ہے شہر کی صحیح تعریف مذہب حنفی میں یہ ہے جو خود امام مذہب سیدنا امام اعظم رضی اللہ تعالیٰ عنہ نے ارشاد فرمائی، وہ آبادی جس میں متعدد محلے اور دوامی بازار ہوں اور وہ ضلع یا پر گنہ ہو اُس کے متعلق دیہات ہوں اور اس میں کوئی حاکم با اختیار ایسا ہو کہ اپنی شوکت اور اپنے یا دوسرے کے علم کے ذریعہ سے مظلوم کا انصاف ظالم سے لے سکے۔

Fatawa Razawiya Volume Six

Imam Ala-ud-Din Samarqandi in 'Tuhfat al-Fuqaha' and Imam Malik al-Ulama Abu Bakr Masood in 'Bada'i al-Sana'i' clarified the same. It is stated in 'Ghunya Sharh Munya':

Arabic	Urdu Translation
It is clarified in 'Tuhfat al-Fuqaha' from Abu Hanifa (may Allah be pleased with him) that a large city refers to a settlement containing streets and markets, having surrounding villages (rasatiq), and having an authoritative person who, through his dignity and knowledge or the knowledge of others, can provide justice to the oppressed from the oppressor, and people turn to him in case of incidents. This is the most correct view.	It is clarified in 'Tuhfat al-Fuqaha' regarding Imam Abu Hanifa (may Allah be pleased with him) that a large city refers to a settlement with neighborhoods and markets, and some surrounding villages. There should be an authoritative person who, through his dignity and knowledge or by utilizing the knowledge of others, can grant justice to the oppressed from the oppressor, and people can turn to him in case of mishaps. This is the most correct view. (T)

In reliable and grand books, various narrations from the 'Zahir al-Riwaya' (the standard Hanafi legal school) essentially mean the same. For example, in 'Hidaya' and the text of 'Kanz', it is said:

Arabic	Urdu Translation
Every place that has an emir (leader) and a judge who can implement rulings and carry out legal punishments (hudud).	Every place where there is such an emir or judge who can enforce rulings and implement legal punishments. (T)

In this, there is no mention of streets, markets, and surrounding villages. In the forthcoming passage of 'Ghiyathiya', instead of 'streets', 'groups' (jama'at) are mentioned, and surrounding villages are not. In another quote of the same from the Fatawa, surrounding villages are mentioned while omitting streets and markets, as:

Arabic	Urdu Translation
In 'Al-Fatawa al-Wasliya', Friday prayer in a village without a congregational mosque is permissible if the village is large and has surrounding villages and	It is in the Fatawa: If someone offers Friday prayer in a village without a congregational mosque, and the village is large enough to have some surrounding villages and a ruler

Arabic	Urdu Translation
a ruler or governor is present, regardless of whether they have built a mosque or not. If it is otherwise, then it is not permissible. This is the statement of Abu al-Qasim.	or governor is also present there, then the Friday prayer will be correct whether they build a mosque or not. And if it is contrary to this, Friday prayer will not be correct. This is [the view of] Sheikh Abu al-Qasim al-Saffar.

1. Ghunya al-Mustamli Sharh Munya al-Musalli, Chapter on Friday Prayer, published by H.M. Sohail Academy, Lahore, p. 550.
2. Kanz al-Daqaiq, Chapter on Friday Prayer, published by H.M. Saeed Company, Karachi, p. 47.

फतावा रज़विया जिल्द छठा

इमाम अलाउद्दीन समरकंदी ने 'तुहफत अल-फ़ुक़हा' में और इमाम मलिक अल-उलेमा अबू बक्र मसूद ने 'बदाए' में इसी की तशरीह (व्याख्या) फरमाई। 'ग़ुनिया शरह मुनिया' में है:

अरबी	उर्दू अनुवाद
'तुहफत अल-फ़ुक़हा' में अबू हनीफा (रज़ियल्लाहु अन्हु) के हवाले से ज़िक्र है कि बड़े शहर से मुराद वह बस्ती है जिसमें गलियाँ और बाज़ार हों और उससे मुल्हक़ देहात (रसातीक़) हों, और वहाँ कोई ऐसा हाकिम हो जो अपनी शान और इल्म या दूसरे के इल्म के ज़रिए मज़लूम को ज़ालिम से इंसाफ दिला सके और लोग हादसों की सूरत में उसकी तरफ रुजू करें। यही सबसे सही (असह) कौल है।	'तुहफत अल-फ़ुक़हा' में इमाम अबू हनीफा (रज़ियल्लाहु अन्हु) के हवाले से तशरीह है कि बड़े शहर से मुराद वह आबादी है जिसमें महल्ले और बाज़ार हों, उससे मुल्हक़ कुछ देहात हों, वहाँ कोई ऐसा बा-अख़्तियार शख़्स हो जो अपनी हशमत (शान) और इल्म या दूसरे के इल्म के ज़रिए मज़लूम को ज़ालिम से इंसाफ दिला सके और लोग हादसों की सूरत में उसकी तरफ रुजू करें और यही असह (सबसे सही) है। (त)

मोतबर और बड़ी किताबों में ज़ाहिर अल-रिवाया यानी हनफ़ी मज़हब से अलग-अलग अल्फ़ाज़ में जितनी नक्लें (उद्धरण) हैं उन सब का मक्सद यही है, मिसाल के तौर पर 'हिदाया' और 'कंज' के मतन (मूल पाठ) में फरमाया:

अरबी	उर्दू अनुवाद
हर वह मुकाम जहाँ कोई अमीर और काज़ी हो जो अहकाम नाफ़िज़ (लागू) कर सके और हुदूद (कानूनी सज़ा) जारी कर सके।	हर वह मुकाम जहाँ कोई ऐसा अमीर या काज़ी हो जो अहकाम नाफ़िज़ कर सके और हुदूद का इजरा (क्रियान्वयन) कर सके। (त)

इसमें गलियों, बाज़ारों और देहातों का ज़िक्र नहीं है, और 'ग़ियासिया' की आने वाली इबारत में गलियों के बजाय जमाअतों का ज़िक्र है और देहातों का ज़िक्र नहीं। इसी की दूसरी इबारत में फतावा से देहातों का ज़िक्र फरमाया लेकिन गलियों और बाज़ारों को छोड़ दिया, जैसा कि:

अरबी	उर्दू अनुवाद
'अल-फतावा अल-वसलिया' में है कि बग़ैर जामा मस्जिद के किसी बस्ती में जुमा जायज़ है, बशर्ते कि वह बस्ती बड़ी हो, उसके कुछ देहात हों और वहाँ कोई हाकिम मौजूद हो, चाहे उन्होंने मस्जिद तामीर की हो या नहीं। और अगर इसके खिलाफ हो तो जुमा जायज़ नहीं। यह शेख अबू अल-कासिम का कौल है।	फतावा में है: अगर किसी ने क़रिया (बस्ती) में बग़ैर जामा मस्जिद के जुमा पढ़ा और क़रिया इतना बड़ा हो जिसके कुछ देहात हों और उसमें कोई हाकिम व वाली भी मौजूद हो तो नमाज़े जुमा दुरुस्त होगी, ख़्वाह वह मस्जिद बनाएँ या न बनाएँ। और अगर इसके खिलाफ हो तो जुमा दुरुस्त न होगा। यह शेख अबू अल-कासिम अ़ल-सफ़्फ़ार का कौल है।

---

1. ग़ुनिया अल-मुस्तमली शरह मुनिया अल-मुसल्ली, जुमे की नमाज़ का अध्याय, एच.एम. सोहेल एकेडमी, लाहौर, पृष्ठ 550।
2. कंज अल-दक़ाएक, जुमे की नमाज़ का अध्याय, एच.एम. सईद कंपनी, कराची, पृष्ठ 47।

पृष्ठ 357 का 736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

امام علاء الدین سمرقندی نے تحفۃ الفقہاء اور امام مالک العلماء ابوبکر مسعود نے بدائع میں اسی کی تصریح فرمائی۔ غنیہ شرح منیہ میں ہے:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
صرح في تحفة الفقهاء عن ابي حنيفة رضی اللہ تعالی عنه انه بلدة كبيرة فيها سكك واسواق ولها رساتيق وفيها والٍ يقدر على انصاف المظلوم من الظالم بحشمة وعلمه او علم غيره يرجع الناس اليه فيما يقع من الحوادث و هذا هو الاصح۔ 1	تحفۃ الفقہاء میں امام ابو حنیفہ رضی اللہ تعالٰی عنہ کے حوالے سے تصریح ہے کہ بڑے شہر سے مراد وہ آبادی ہے جس میں محلے اور بازار ہوں، اس کے متعلق کچھ دیہات ہوں، وہاں کوئی ایسا بااختیار شخص ہو جو اپنی حشمت اور علم یا دوسرے کے علم کے ذریعے مظلوم کو ظالم سے انصاف دلا سکے اور لوگ حادثات کی صورت میں اس کی طرف رجوع کریں اور یہی اصح ہے۔ (ت)

کتب جلیلہ معتمدہ میں ظاہر الروایۃ یعنی مذہب مہذب حنفی سے بالالفاظ مختلفہ جتنی نقول ہیں سب کا مآل یہی ہے مثلاً ہدایہ و متن کنز میں فرمایا:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
هو كل موضع له امير وقاضٍ ينفذا الاحكام ويقيم الحدود۔ 2	ہر وہ مقام جہاں کوئی ایسا امیر یا قاضی ہو جو احکام نافذ کر سکے اور حدود کا اجرا کر سکے۔ (ت)

اس میں سکک و اسواق و رساتیق کا ذکر نہیں اور عبارت آتیہ غیاثیہ میں بجائے سلک جماعات ہیں اور رساتیق مذکور نہیں، اسی کی دوسری عبارت میں فتاویٰ سے رساتیق کا ذکر فرمایا سلک واسواق کو ترک کیا کہ

عربی عبارت	اردو ترجمہ
في الفتاوى الوصلى الجمعة فى قرية بغير مسجد جامع والقرية كبيرة لها قرى وفيها وال وحاكم جازت الجمعة بنوا المسجد اولم يبنوه وان كان بخلاف ذلك لايجوز وهذا قول ابى القاسم	فتاویٰ میں ہے اگر کسی نے قریہ میں بغیر جامع مسجد کے جمعہ پڑھا اور قریہ اتنا بڑا ہو جس کے کچھ دیہات ہوں اور اس میں کوئی حاکم و والی بھی موجود ہو تو نماز جمعہ درست ہوگی خواہ وہ مسجد بنائیں یا نہ بنائیں، اور اگر اس کے خلاف ہو تو جمعہ درست نہ ہوگا یہ شیخ ابوالقاسم الصفار

---

1 غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل فی صلوۃ الجمعۃ مطبوعہ ایچ ایم سہیل اکیڈمی لاہور ص ۵۵۰ 2 کنز الدقائق باب صلوۃ الجمعۃ مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ، ص ۴۷

Fatawa Rizvia, Volume 6

...according to the saying of Al-Saghar (1) and this is the closest of sayings to the truth. | It is according to the saying [of Al-Saghar] and among all the sayings, this opinion is closer to the truth. (T)

And the summary is one: that usually a governor (wali) and a judge (qazi) are in such a place where there is a large population, and having multiple neighborhoods and markets is necessary for it. Appointing a new ruler in every village is neither customary nor feasible; rather, the surrounding villages are placed under the jurisdiction of the ruler of a large population center. It must be a district (zila) or at least a sub-district (pargana). It is stated in Ghuniyah:

[Arabic] The author of Al-Hidayah omitted the mention of streets and rural areas based on what is common, for generally, a ruler and a judge who have the power to implement rulings and establish legal punishments (hudud) only exist in a city of such nature. Thus, the conclusion is that the most correct definition of a city is what is mentioned in 'Al-Tuhfa', as it applies to Makkah and Madinah, and these two are the primary examples in considering what constitutes a city. (2) | The author of Al-Hidayah omitted the mention of neighborhoods and markets because it is most common that such rulers and judges who can implement rulings and establish legal punishments are found in a large city. The result is that the definition of a city mentioned in 'Al-Tuhfa' is more correct because it holds true for Makkah and Madinah, and in being cities, these two are the primary examples. (T)

Furthermore, it is clear that in these books, by 'implementation' and 'establishment', 'power/capacity' is intended, such that a ruler's failure to follow the law does not remove a city from being a city. Therefore, Allama Muhaqqiq Ibrahim Halabi said earlier in Ghuniyah:

[Arabic] The correct definition is what the author of Al-Hidayah chose: that it is a place which has a ruler and a judge who implement rulings and establish legal punishments. What is meant is the capacity to establish punishments, as explicitly stated in 'Tuhfat al-Fuqaha' on the authority of Imam Abu Hanifa, may Allah be pleased with him. (3) | The correct definition is what the author of Al-Hidayah chose, which is that there should be such a city in which there is a ruler and a judge who implement rulings and establish punishments. And by this is meant the power to establish punishments, as narrated in 'Tuhfat al-Fuqaha' on the authority of Imam Abu Hanifa, may Allah be pleased with him. (T)

Imam Akmal said in Inayah: "The meaning of 'ruler' is a governor who is capable of providing justice to the oppressed from the oppressor." (4). (By 'Amir'...

1. Fatawa Ghiyathiya, Chapter on Friday Prayer and its conditions, published by Maktabah Islamiyah, Quetta, p. 39.
2. Ghuniyat al-Mustamli Sharh Munyat al-Musalli, Section on Friday Prayer, published by Suhail Academy, Lahore, p. 551.
3. Ghuniyat al-Mustamli Sharh Munyat al-Musalli, Section on Friday Prayer, published by Suhail Academy, Lahore, p. 550.
4. Al-Inayah with Fath al-Qadir, Chapter on Friday Prayer, published by Maktabah Nuriya Razviya, Sukkur, 2/24.

फ़तावा रज़विया, जिल्द 6

[अरबी] अल-सगर (१) और यह कथनों में सत्य के सबसे निकट है। | [के] कथन के अनुसार है और सभी कथनों में से यह राय सत्य के अधिक निकट है। (त)

और सारांश एक ही है कि सामान्यतः एक राज्यपाल (वाली) और एक न्यायाधीश (काजी) ऐसी जगह पर होते हैं जहाँ आबादी बहुत अधिक हो, और जिसके लिए कई मोहल्लों और बाजारों का होना अनिवार्य है। हर गाँव में एक नया शासक नियुक्त करना न तो प्रथा है और न ही संभव है; बल्कि आसपास के गाँवों को बड़ी आबादी वाले क्षेत्र के शासक के अधीन कर दिया जाता है। इसे एक जिला (ज़िला) या कम से कम एक उप-ज़िला (परगना) होना आवश्यक है। 'गुनिया' में है:

[अरबी] अल-हिदाया के लेखक ने गलियों और ग्रामीण क्षेत्रों के उल्लेख को इस आधार पर छोड़ दिया कि क्या सामान्य है, क्योंकि आमतौर पर, एक शासक और एक न्यायाधीश जिसके पास फैसलों को लागू करने और कानूनी दंड (हुदूद) स्थापित करने की शक्ति होती है, वे केवल ऐसे ही शहर में होते हैं। इस प्रकार, निष्कर्ष यह है कि शहर की सबसे सही परिभाषा वह है जो 'अल-तुहफा' में बताई गई है, क्योंकि यह मक्का और मदीना पर लागू होती है, और शहर होने के विचार में ये दोनों मूल उदाहरण हैं। (२) | हिदाया के लेखक ने मोहल्लों और बाज़ारों का ज़िक्र इसलिए छोड़ दिया क्योंकि अधिकांशतः ऐसा ही होता है कि ऐसे शासक और काजी जो आदेशों को लागू कर सकें और दंड स्थापित कर सकें वे बड़े शहरों में ही होते हैं। निष्कर्ष यह है कि 'तुहफा' में दी गई शहर की परिभाषा अधिक सही है क्योंकि वह मक्का और मदीना पर खरी उतरती है और शहर होने के मामले में ये दोनों ही मूल उदाहरण हैं। (त)

इसके अलावा, यह स्पष्ट है कि इन पुस्तकों में 'लागू करने' और 'स्थापित करने' से तात्पर्य 'शक्ति/क्षमता' से है, कि शासक का कानून के विरुद्ध कार्य करना किसी शहर को शहर होने की श्रेणी से बाहर नहीं करता है। इसलिए अल्लामा मुहक्किक इब्राहिम हलबी ने 'गुनिया' में इससे पहले कहा है:

[अरबी] सही परिभाषा वह है जिसे अल-हिदाया के लेखक ने चुना है: कि यह वह स्थान है जिसमें एक शासक और एक न्यायाधीश होता है जो निर्णयों को लागू करता है और कानूनी दंड स्थापित करता है। इसका तात्पर्य दंड स्थापित करने की क्षमता से है, जैसा कि 'तुहफट अल-फुकहा' में इमाम अबू हनीफा (रज़ियल्लाहु अन्हु) के हवाले से स्पष्ट रूप से कहा गया है। (३) | सही परिभाषा वह है जिसे हिदाया के लेखक ने चुना है, वह यह कि ऐसा शहर हो जिसमें शासक और काजी हों जो आदेशों को

लागू करें और दंड स्थापित करें। और इससे तात्पर्य दंड स्थापित करने की शक्ति से है, जैसा कि 'तुहफट अल-फुकहा' में इमाम अबू हनीफा (रज़ियल्लाहु अन्हु) के हवाले से वर्णित है। (त)

इमाम अकमल ने 'इनाया' में कहा: "शासक (अमीर) से तात्पर्य वह राज्यपाल है जो अत्याचारी से पीड़ित को न्याय दिलाने में सक्षम हो।" (४)। (अमीर से...

1. फ़तावा गियासिया, जुमे की नमाज़ का अध्याय और उसकी शर्तें, मकतबा इस्लामिया, क्वेटा, पृ. ३९
2. गुनियात अल-मुस्तमली शरह मुनियत अल-मुसल्ली, जुमे की नमाज़ का अनुभाग, सुहैल अकादमी, लाहौर, पृ. ५५१
3. गुनियात अल-मुस्तमली शरह मुनियत अल-मुसल्ली, जुमे की नमाज़ का अनुभाग, सुहैल अकादमी, लाहौर, पृ. ५५·
4. अल-इनाया मअ फ़तह अल-क़दीर, जुमे की नमाज़ का अध्याय, मकतबा नूरिया रज़वि, सुक्कुर, २/२१

الصغار ۱ و ہذا اقرب الاقاویل الی الصواب۔ | کے قول کے مطابق ہے اور تمام اقوال میں سے یہ رائے صواب کے زیادہ قریب ہے۔ (ت)

اور محصل ایک ہے کہ عادتاً والی و قاضی ایسی جگہ ہوتے ہیں جس میں آبادی کثیر ہو اور اسے تعدد محلہ و وجود اسواق لازم اور ہر گاؤں میں نیا حاکم مقرر کرنا نہ معہود ہے نہ میسر بلکہ گرد و پیش کے دیہات آبادی کبیر کے حاکم کے متعلق کر دئے جاتے ہیں اسے ضلع یا کم از کم پرگنہ ہونا لازم، غنیہ میں ہے:

صاحب الهداية ترك ذكر السكك والرساتيق بناء على الغالب اذ الغالب ان الامير والقاضي شانه القدرة على تنفيذ الاحكام واقامة الحدود لا يكون الا في بلد كذلك فالحاصل ان اصح الحدود ما ذكره في التحفة لصدقة على مكة والمدينة وانهما الاصل في اعتبار المصرية ۲۔ | صاحبِ ہدایہ نے محلوں اور بازاروں کا ذکر اس لئے ترک کیا کہ غالب یہی ہے کہ ایسے حاکم اور قاضی جو احکام کا نفاذ اور حدود کا قیام کر سکتے ہیں وہ ایسے شہر میں ہی ہوتے ہیں جو بڑا ہو، حاصل یہ ہے کہ تحفہ میں بیان کردہ شہر کی تعریف اصح ہے کیونکہ وہ مکہ اور مدینہ پر صادق آتی ہے اور شہر ہونے میں یہ دونوں اصل ہیں۔ (ت)

پھر ظاہر ہے کہ ان کتب میں تنفیذ و اقامت سے قدرت مراد ہے کہ حاکم کا خلافِ حکم کرنا شہر کو شہر ہونے سے خارج نہیں کرتا و لہذا علامہ محقق ابراہیم حلبی نے اسی سے پہلے غنیہ میں فرمایا:

الحد الصحیح ما اختارہ صاحب الھدایۃ انہ الذی لہ امیر وقاض ینفذ الاحکام ویقیم الحدود والمراد القدرۃ علی اقامۃ الحدود ما صرح بہ في تحفۃ الفقھاء عن ابي حنیفۃ رضي اللہ تعالی عنہ ۳۔ | صحیح تعریف وہ ہے جسے صاحب ہدایہ نے اختیار کیا ہے وہ یہ ہے کہ ایسا شہر ہو جس میں حاکم اور قاضی ہو جو احکام کا نفاذ اور حدود کا قیام کرے اور اس سے مراد قیام حدود پر قدرت ہے جیسا کہ تحفۃ الفقہاء میں امام ابوحنیفہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ کے حوالے سے منقول ہے (ت)

امام اکمل نے عنایہ میں فرمایا: المراد بالامیر والٍ یقدر علی انصاف المظلوم من الظالم ۴۔ (امیر سے مراد وہ والی ہے جو ظالم سے مظلوم کو انصاف دلانے پر قادر ہو)

۱ فتاوٰی غیاثیہ، باب الجمعۃ و شرائطھا ، مطبوعہ مکتبہ اسلامیہ کوئٹہ ص ۳۹ ۲ غنیہ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل فی صلوٰۃ الجمعۃ مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۵۵۱ ۳ غنیہ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل فی صلوٰۃ الجمعۃ مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۵۵۰ ۴ العنایہ مع فتح القدیر، باب صلوٰۃ الجمعۃ، مطبوعہ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر، ۲۴/۲

Fatawa Razawiyya Volume 6

Such a ruler is meant who is capable of delivering justice to the oppressed from the oppressor. (T) Similarly, in Durr al-Mukhtar, it is expressed with the word 'yaqdir' (he is able), and its clarification has already passed from the explicit text of the Imam of the school. Therefore, Imam Shams al-A'imma al-Sarakhsi expressed it in Al-Mabsut as follows:

The apparent view of the school (according to us) is that there should be a Sultan and a Judge in it for the establishment of legal penalties (hudud) and the execution of rulings. 1	(In the definition of a Misr Jami') According to us, based on the apparent view of the school, it is necessary to have a ruler or a judge there for the establishment of legal penalties and the execution of rulings. (T)

Then, in Al-Hidayah and others, the words 'Amir and Qadi' are used, and in Al-Mabsut, 'Sultan and Qadi'. Usually, the ruler of a city is someone else, and he appoints the judge, and the purpose is the adjudication of cases. Therefore, the Imam of the school restricted mention to the 'wali' (ruler), and by that, he meant the Sultan based on the evidence of this Hadith: 'Four things are the responsibility of the rulers, among them is Friday (prayer).' 2 (T) In Jawahir al-Khilati and others, the 'deputy of the ruler' was also added, stating: 'In it (the city), there should be a ruler or his deputy who is capable of giving justice to the oppressed...' up to the point: '...and this is the most correct view.' 3 (T) And Allama Qasim in Tashih al-Quduri, then Allama Haskafi in Durr al-Muntaqa, then Allama Shami in Radd al-Muhtar said: 'The judge is sufficient in place of the ruler.' 4 (T) Here, the condition of a Mufti along with the judge was not made because in those times, judges were none other than scholars. In Radd al-Muhtar, it says:

He did not mention the Mufti, being satisfied with mentioning the Judge, because in the first era, the judiciary was the duty of the mujtahid imams. 5	He sufficed with mentioning the judge and did not mention the Mufti because in the early era, the judiciary (rendering judgements) was the responsibility of the mujtahid imams themselves. (T)

And some added the condition of a Mufti. It is in Jami' al-Rumuz:

The apparent view of the school is that which contains a congregation of people.

The apparent view of the school is that a city is where there are some neighborhoods.

1. Al-Mabsut al-Sarakhsi, Book of Friday Prayer, published by Dar al-Ma'rifah, Beirut, 2/23.
2. Al-Mabsut al-Sarakhsi, Book of Friday Prayer, published by Dar al-Ma'rifah, Beirut, 2/25.
3. Jawahir al-Ikhlati, Chapter on Friday Prayer, unpublished manuscript, p. 24.
4. Radd al-Muhtar, Book of Friday Prayer, published by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/590.
5. Radd al-Muhtar, Book of Friday Prayer, published by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/590.

फतावा रज़विया जिल्द छठी

ऐसा शासक मुराद है जो जालिम से मज़लूम को इंसाफ दिलाने पर कादिर (सक्षम) हो। त) इसी तरह 'दुर्र-ए-मुख्तार' में 'यक्दिर' शब्द से व्यक्त किया गया और खुद इमाम के मज़हब के स्पष्ट कथन से इसकी व्याख्या गुजरी। इसलिए इमाम शम्सुल अइम्मा सरख्सी ने 'मबसूत' में इस तरह व्यक्त किया:

ज़ाहिरुल मज़हब (हमारे यहाँ) यह है कि उसमें एक सुल्तान और एक काज़ी (न्यायाधीश) होना चाहिए ताकि हुदूद (दंड) स्थापित किए जा सकें और अहकाम (आदेश) लागू किए जा सकें। 1	(मिस्र-ए-जामे की परिभाषा में) हमारे यहाँ ज़ाहिर-ए-मज़हब के अनुसार वहां हुदूद कायम करने और अहकाम लागू करने के लिए किसी शासक या काज़ी का होना ज़रूरी है। (त)

फिर हिदाया वगैरह में 'अमीर और काज़ी' और मबसूत में 'सुल्तान और काज़ी' शब्द हैं कि आमतौर पर शहर का शासक और होता है और वह काज़ी नियुक्त करता है और उद्देश्य मुकदमों का फैसला करना है। इसलिए मज़हब के इमाम ने केवल 'वाली' (शासक) के ज़िक्र पर इक्तिसा (संक्षेप) किया और सुल्तान से वही मुराद है, इस हदीस के प्रमाण पर कि: 'चार चीज़ें हुक्मरानों की ज़िम्मेदारी हैं, उनमें से एक जुम्मा (की नमाज़) है।' 2 (त) 'जवाहरुल अख्लाती' वगैरह में 'नायब वाली' (शासक का प्रतिनिधि) भी जोड़ा गया कि: 'उसमें शासक या उसका ऐसा प्रतिनिधि हो जो मज़लूम को इंसाफ दिलाने पर सक्षम हो...' यहाँ तक कि कहा: 'और यही सबसे सही (असह) बात है।' 3 (त) और अल्लामा कासिम ने 'तसहीहुल कुदूरी', फिर अल्लामा हसकफी ने 'दुर्रे मुंतका' और फिर अल्लामा शामी ने 'रद्दुल मुह्तार' में कहा: 'अमीर की जगह काज़ी ही काफी है।' 4 (त) यहाँ काज़ी के साथ मुफ्ती की शर्त नहीं लगाई गई क्योंकि उन ज़मानों में काज़ी आलिमों के अलावा और कोई नहीं होते थे। 'रद्दुल मुह्तार' में है:

उन्होंने मुफ्ती का ज़िक्र नहीं किया, काज़ी के ज़िक्र पर ही संतोष किया, क्योंकि आरंभिक दौर में कज़ा (न्याय देना) मुज्तहिद इमामों का ही कार्य था। 5	काज़ी के ज़िक्र पर इक्तिफा (संतोष) करते हुए मुफ्ती का ज़िक्र नहीं किया क्योंकि शुरुआती दौर में कज़ा (फैसला करना) मुज्तहिद अइम्मा की ही ज़िम्मेदारी होती थी। (त)

और कुछ ने मुफ्ती की शर्त का इज़ाफ़ा (विस्तार) किया। 'जामे-उर-रुमूज़' में है:

ज़ाहिरुल मज़हब यह है कि वह (शहर) है जिसमें लोगों का जमावड़ा हो।

ज़ाहिर-ए-मज़हब यह है कि शहर वह है जहाँ कुछ मोहल्ले हों।

1. मबसूत सरख्सी, बाब सलातुल जुम्मा, मुद्रित दारुल मारिफा, बेरूत, 2/23
2. मबसूत सरख्सी, बाब सलातुल जुम्मा, मुद्रित दारुल मारिफा, बेरूत, 2/25
3. जवाहरुल अख्लाती, फसल फी सलातुल जुम्मा, अमुद्रित पांडुलिपि, पृ. 24
4. रद्दुल मुह्तार, बाबुल जुम्मा, मुद्रित मुस्तफा अल-बाबी, मिस्र, 1/590
5. रद्दुल मुह्तार, बाबुल जुम्मा, मुद्रित मुस्तफा अल-बाबी, मिस्र, 1/590

فتاوی رضویہ جلد ششم

ایسا والی مراد ہے جو ظالم سے مظلوم کو انصاف دلانے پر قادر ہو۔ ت) اسی طرح درمختار میں بلفظ یقدر تعبیر کیا اور خود نصِ امام مذہب سے اس کی تصریح گزری۔ لہذا امام شمس الائمہ سرخسی نے مبسوط میں یوں تعبیر فرمایا:

ظاہر المذھب (عندنا) ان یکون فیہ سلطان وقاضٍ لاقامۃ الحدود وتنفیذ الاحکام - 1 (مصر جامع کی تعریف میں) ہمارے ہاں ظاہر مذہب کے مطابق وہاں اقامتِ حدود اور احکام کے نفاذ کے لئے کسی حاکم یا قاضی کا ہونا ضروری ہے (ت)

پھر ہدایہ وغیرہ ہمیں امیر وقاض اور مبسوط میں سلطان و قاضد و لفظ ہیں کہ عادۃً والی شہر اور ہوتا ہے اور وہ قاضی مقرر کرتا ہے اور مقصود فیصلہ مقدمات ہے و لہذا امام مذہب نے ذکر والی پر اقتصاد فرمایا اور وہی سلطان سے مراد اس پر اس حدیث سے استناد اربع الی الولاۃ منھا الجمعۃ - 2 (چار چیزیں حکمرانوں کی ذمی داری ہے ان میں سے ایک جمعہ ہے۔ ت) جواہر الخلاطی وغیرہ میں نائب والی بھی اضافہ فرمایا کہ وفیھا وال اونا ئبہ یقدر علی انصاف المظلوم الی قولہ وھو الاصح - 3 (وہاں والی یا اس کا ایسا نائب ہو جو مظلوم کو انصاف دلانے پر قادر ہو، آگے چل کر فرمایا اور یہی اصح ہے۔ ت) اور علامہ قاسم نے تصحیح القدوری پھر علامہ حصکفی میں در منتقی پھر علامہ شامی نے ردالمختار میں کہا: یکتفی بالقاضي عنالامیر - 4 (امیر کی جگہ قاضی ہی کافی ہے۔ ت) یہاں قاضی کے ساتھ مفتی کی شرط نہ کی کہ ان زمانوں میں قاضی نہ ہوتے مگر علماء - ردالمختار میں ہے:

لم یذکر المفتی اکتفاء بذکر القاضی لان القضاء فی الصدر الاول کان وظیفة المجتهدین - 5

ذکر قاضی پر اکتفا کرتے ہوئے مفتی کا ذکر نہیں کیا کیونکہ صدر اول میں قضاء (فیصلہ کرنا) ائمہ مجتہدین کی ہی ذمہ داری ہوتی تھی - ت)

اور بعض نے شرطِ مفتی اضافہ کی۔ جامع الرموز میں ہے۔

ظاہر المذهب ان ما فیہ جماعة الناس ظاہر مذہب یہ ہے کہ شہر وہ جہاں کچھ محلے

1 مبسوط سرخسی باب صلاة الجمعة مطبوعہ دار المعرفة بیروت ۲۳/۲ 2 مبسوط سرخسی باب صلاة الجمعة مطبوعہ دار المعرفة بیروت ۲۵/۲ 3 جواهر الاخلاطی فصل فی صلاة الجمعة غیر مطبوعہ نسخہ ص ۲۴ 4 ردالمختار ، باب الجمعة ، مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۵۹۰/۱ 5 ردالمختار ، باب الجمعة ، مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۵۹۰/۱

Fatawa Razawiya Volume 6

[Box 1] "A central mosque, markets, a mufti, a ruler, or a judge who establishes legal punishments (Hudud) and enforces rulings. A similar statement is in 'Al-Mudmarat,' which notes that this is the most correct view. (T)" - 1 Translation: A central mosque, markets, a mufti, a ruler, or such a judge who can establish punishments and enforce rulings. The words of 'Al-Mudmarat' also support this, and it states therein that this is most correct. (T)

The senior scholars have provided this justification: if the ruler is not a scholar, then the presence of a scholar is also necessary. This is mentioned in 'Ghiyathiyah.'

[Box 2] "Shams al-A'imma al-Sarakhsi states that the apparent position of the school is that a 'Misr al-Jami' (central city) is one with neighborhoods, commercial markets, and a ruler or judge who establishes punishments and enforces rulings—meaning they have the power to do so. And if the judge or the ruler is not a mufti themselves, then the presence of some mufti there is also essential. (T)" - 2 Translation: Shams al-A'imma al-Sarakhsi says that the apparent view of the school is that a central city will be one that contains several neighborhoods, commercial markets, a sultan or a judge who establishes punishments and enforces rulings, meaning he has the power to establish and enforce them. And if the judge or sultan is not a mufti himself, then the presence of some mufti there is also necessary (T).

Imam Tahir Bukhari said:

[Box 3] "Imam al-Sarakhsi said that in the apparent view according to us, there must be a sultan and a judge for the establishment of punishments and enforcement of rulings, and it is stipulated that a mufti be present if the judge or the governor is not a mufti themselves. (T)" - 3 Translation: Imam Sarakhsi said that in the apparent view according to us, it is that for the establishment of punishments and enforcement of rulings, a judge or a sultan is necessary, and if the judge or the governor is not a mufti himself, then Imam Sarakhsi has made the presence of a mufti a condition (T).

The Imam of the school (Abu Hanifa) himself indicated this by saying 'due to his knowledge or the knowledge of another' (whether that judge is a scholar himself or a scholar is his assistant. T). It is said in 'Al-Fath':

[Box 4] "When the judge himself issues fatwas and establishes punishments, then the need for multiple people is eliminated. (T)" - 4 Translation: When the judge himself

issues fatwas and establishes punishments, then a separate mufti is not needed there. (T)

1 Jami al-Rumuz, Chapter of Friday Prayer, published by Maktabah Islamiyah, Gonbad Qamus Iran 1/262 2 Fatawa Ghiyathiyah, Chapter of Friday and its conditions, published by Maktabah Islamiyah Quetta p. 38 3 Khulasa al-Fatawa, Chapter 23 on Friday Prayer, published by Maktabah Habibiyah Quetta 1/207 4 Fath al-Qadir, Chapter of Friday Prayer, published by Maktabah Nooria Razawiya Sukkur 25/2

फतावा रज़विया छठा खंड

[बॉक्स 1] "एक जामा मस्जिद, बाज़ार, एक मुफ़्ती, सुल्तान या न्यायाधीश जो दंड (हुदूद) स्थापित कर सके और आदेश लागू कर सके। 'अल-मुज़मरात' में भी कुछ ऐसा ही है और उसमें है कि यही सबसे सही (असह) है। (त)" - 1 अनुवाद: जामा मस्जिद, बाज़ार, मुफ़्ती, हाकिम या ऐसा न्यायाधीश हो जो हुदूद कायम कर सके और आदेश लागू कर सके। 'मुज़मरात' के शब्द भी इसका समर्थन करते हैं और उसमें है कि यही सबसे सही है। (त)

बुजुर्गों ने इसकी यह दलील दी है कि यदि शासक विद्वान न हो, तो विद्वान का होना भी आवश्यक है। यह 'ग़ियासिया' में है।

[बॉक्स 2] "शम्स अल-आइम्मा अल-सरखसी फरमाते हैं कि मज़हब का ज़ाहिर दृष्टिकोण यह है कि 'मिस्र-ए-जामा' (केंद्रीय शहर) वह होगा जिसमें कुछ मोहल्ले हों और व्यापारिक बाज़ार हों, सुल्तान या न्यायाधीश हो जो हुदूद कायम करे और आदेश लागू करे—अर्थात उसमें उनके कायम करने और लागू करने की शक्ति हो। और यदि न्यायाधीश या सुल्तान स्वयं मुफ़्ती न हों, तो वहाँ किसी न किसी मुफ़्ती का होना भी ज़रूरी है। (त)" - 2 अनुवाद: शम्स अल-आइम्मा सरखसी फरमाते हैं कि ज़ाहिर मज़हब यह है कि जामा शहर वह होगा जिसमें कुछ मुहल्ले हों और बाज़ार-ए-तिजारत, सुल्तान या काज़ी जो हुदूद कायम करे और अहकाम लागू करे यानी उसमें उनके कयाम और निफाज़ की ताकत हो और अगर काज़ी या सुल्तान खुद मुफ़्ती न हों तो वहाँ किसी न किसी मुफ़्ती का होना भी ज़रूरी है (त)।

इमाम ताहिर बुखारी ने फरमाया:

[बॉक्स 3] "इमाम सरखसी ने फरमाया कि हमारे यहाँ ज़ाहिर मज़हब में यही है कि वहाँ हुदूद कायम करने और आदेशों के कार्यान्वयन के लिए न्यायाधीश या सुल्तान का होना आवश्यक है, और शर्त है कि एक मुफ़्ती हो यदि न्यायाधीश या वली स्वयं मुफ़्ती न हों। (त)" - 3 अनुवाद: इमाम सरखसी ने फरमाया, कि ज़ाहिर मज़हब में हमारे यहाँ यही है कि वहाँ इक़ामत-ए-हुदूद और तनफीज़-ए-अहकाम के लिए काज़ी या सुल्तान का होना ज़रूरी है और जब काज़ी या वाली खुद मुफ़्ती न हो तो वहाँ इमाम सरखसी ने मुफ़्ती का होना शर्त करार दिया है (त)।

मज़हब के इमाम ने स्वयं ही इस ओर इशारा फरमाया था कि 'लिल्मीही इल्म गैरिही' (वह न्यायाधीश स्वयं विद्वान हो या कोई विद्वान उसका सहायक हो। त)। 'फ़तह' में फरमाया:

[बॉक्स 4] "जब न्यायाधीश स्वयं फ़तवा देता हो और दंड स्थापित करता हो, तो वहाँ संख्या की बहुलता की आवश्यकता नहीं रहती [अर्थात अलग मुफ़्ती की आवश्यकता नहीं है]। (त)" - 4 अनुवाद: जब काज़ी खुद फ़तवा देता हो और हुदूद लागू करता हो तो वहाँ अलग मुफ़्ती का होना ज़रूरी नहीं। (त)

1 जामे अल-रुमुज़, फ़स्ल नमाज़-ए-जुमा, मुद्रित मकतबा-ए-इस्लामिया, गुम्बद क़ामूस ईरान 1/262 2 फ़तावा ग़ियासिया, बाब जुमा और उसकी शर्तें, मुद्रित मकतबा-ए-इस्लामिया, क्वेटा पृ. 38 3 खुलासा अल-फ़तावा, फ़स्ल 23 नमाज़-ए-जुमा के बारे में, मुद्रित मकतबा-ए-हबीबिया, क्वेटा 1/207 4 फ़तह अल-क़दीर, बाब नमाज़-ए-जुमा, मुद्रित मकतबा-ए-नूरिया रज़विया, सुक्कुर 25/2

पृष्ठ 360/736

فتاوی رضویہ جلد ششم

[BOX 1] وجامع واسواق ومفت وسلطان اوقاض یقیم الحدود وینفذ الاحکام و قریب منه ما في المضمرات وفیه انه الاصح- 1 جامع مسجد، بازار، مفتی، حاکم یا ایسا قاضی ہو جو حدود کا قیام اور احکام کا نفاذ کرسکے۔ مضمرات کے الفاظ بھی اس کی تائید کرتے ہیں اور اسی میں ہے کہ یہی اصح ہے۔ (ت)

اکابر نے اس کی یہ توجیہ فرمائی کہ حاکم عالم نہ ہو تو عالم کا ہونا بھی لازم۔ غیاثیہ میں ہے۔

[BOX 2] قال الشمس الائمة السرخسی ظاہر المذهب ان المصر الجامع مافیه جماعت الناس واسواق التجارات وسلطان اوقاض یقیم الحدود وینفذ الاحکام ای یقدر علی ذلك و یکون فیه مفت ان لم یکن القاضی او السلطان بنفسه مفتیاً۔ 2 شمس الائمہ سرخسی فرماتے ہیں کہ ظاہر مذہب یہ ہے کہ جامع شہر وہ ہوگا جس میں کچھ محلے ہوں اور بازار تجارت، سلطان یا قاضی جو حدود کو قائم اور احکام کو نافذ کرے یعنی اس میں ان کے قیام اور نفاذ کی قدرت ہو اور اگر قاضی یا سلطان خود مفتی نہ ہوں تو وہاں کسی نہ کسی مفتی کا ہونا بھی ضروری ہے (ت)

امام طاہر بخاری نے فرمایا:

[BOX 3] قال امام السرخسی فی ظاہر المذهب عندنا ان یکون فیه سلطان وقاض لاقامة الحدود وتنفیذ الاحکام ویشترط المفتی اذالم یکن القاضی اوالولی مفتیا۔ 3 امام سرخسی نے فرمایا، کہ ظاہر مذہب میں ہمارے ہاں یہی ہے کہ وہاں اقامت حدود اور تنفیذ احکام کے لئے قاضی یا سلطان کا ہونا ضروری ہے اور جب قاضی یا والی خود مفتی نہ ہو تو وہاں امام سرخسی نے مفتی کا ہونا شرط قرار دیا ہے (ت)

امام مذہب نے اس طرف خود ہی اشارہ فرمایا تھا کہ لعلمہ علم غیرہ (وہ قاضی خود عالم ہو یا عالم اس کا معاون ہو۔ ت) فتح میں فرمایا:

[BOX 4] اذ کان القاضي یفتی ویقیم الحدود اغنی عن التعدد۔ 4 جب قاضی خود فتوی دیتا ہوا اور حدود نافذ کرتا ہو تو وہاں الگ مفتی کا ہونا ضروری نہیں۔ (ت)

1 جامع الرموز فصل صلوٰۃ الجمعۃ مطبوعہ مکتبہ اسلامیہ گنبد قاموس ایران ۱/ ۲۶۲ 2 فتاوٰی غیاثیہ باب الجمعۃ وشرائطہا مطبوعہ مکتبہ اسلامیہ کوئٹہ ص ۳۸ 3 خلاصۃ الفتاوٰی الفصل الثالث والعشرون فی صلوٰۃ الجمعۃ مطبوعہ مکتبہ حبیبیہ کوئٹہ ۱/ ۲۰۷ 4 فتح القدیر، باب الصلوٰۃ الجمعۃ، مطبوعہ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۲/۲۵

Fatawa Rizvia Volume 6

In short, the expressions are different but the purpose is one. From all these expressions and hundreds like them, and from the clear text (Nass) of the Imam of the Madhhab himself, just as the condition of being a city (Misr) for Friday prayer is evident, similarly, the rulings and boundaries of a Mufti in his words and their detailed explanations mentioned in the books of the Madhhab make it clear that a "city" definitely means an Islamic city. It does not mean, for example, a city of idol-worshippers where the king is an idol-worshipper and the population of ten lakhs (one million) are all idol-worshippers, and four or five Muslims go there for trade and intend to stay for fifteen or twenty days, that it would become obligatory for them to establish Friday prayer there, provided the king does not prevent it. There is absolutely no proof for this from the pure Shari'ah. General statements are categorically and by consensus specific, and the definitions in Zahir al-Riwayah (manifest narrations) and the core of the Madhhab are certainly specific to an Islamic city. In fact, that weak, rare, non-preferred, and abandoned narration which says, "the largest of its mosques cannot accommodate its inhabitants" (i.e., the largest mosque of that place is insufficient for the residents there), is considered by researchers to have no basis for validity at all. And with the excuse of weakness in the limits, the path to its adoption is blocked by that same divine will. Turning towards rare (Nawadir) narrations in the presence of Zahir al-Riwayah and the clear, corrected, and preferred text of Imam al-A'zam is prohibited and rejected for various reasons, as we have verified all of this in our Fatawa (as we have researched this in our fatwas). What could be a greater mistake than this, that according to it, even Makkah al-Mu'azzamah and Madinah al-Munawwarah would become villages, and in them, Friday prayer would be declared invalid and void from the holy era until today. It is stated in Majma' al-Anhur:

"They said: This definition is not correct according to the researchers." - Indeed, this definition is not correct according to the researchers. (T)

It is stated in Ghunyah:

"The detail in this is that Makkah and Madinah are two cities where Friday prayer has been established from the time of the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) until today. Therefore, any place that is like either of them is a city (Misr), and any definition that does not apply to either of them is not reliable. Even the definition chosen by a group of the later scholars (Muta'akhkhireen), which is: 'If its inhabitants

gathered in the largest of its mosques, it would not accommodate them,' is refuted by these two (Makkah and Madinah), because the mosque in each of them is sufficient for the people."

1 Majma' al-Anhur Sharh Multaqal Abhur, Chapter of Friday Prayer, published by Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 1/166.

संक्षेप में, अभिव्यक्तियाँ भिन्न हैं लेकिन उद्देश्य एक है। इन सभी अभिव्यक्तियों और उनके जैसे सैकड़ों उदाहरणों से, और स्वयं मज़हब के इमाम के स्पष्ट पाठ (नस्स) से, जिस तरह जुमा (शुक्रवार की नमाज़) के लिए शहर (मिस्र) होने की शर्त स्पष्ट है, उसी तरह मुफ्ती के शब्दों में उनके आदेशों और सीमाओं और मज़हब की किताबों में वर्णित उनके विवरणों से यह स्पष्ट है कि "शहर" से निश्चित रूप से एक इस्लामी शहर का अर्थ है। इसका मतलब यह नहीं है कि, उदाहरण के लिए, मूर्तिपूजकों का कोई शहर हो जहाँ राजा मूर्तिपूजक हो और दस लाख की आबादी सभी मूर्तिपूजक हो, और चार-पाँच मुसलमान वहां व्यापार के लिए जाएं और पंद्रह-बीस दिन ठहरने का इरादा करें, तो उन पर वहां जुमा कायम करना फर्ज़ हो जाएगा, बशर्ते वह राजा उन्हें न रोके। शरीअत-ए-मुतह्हरा से इसका कोई प्रमाण नहीं है। सामान्य कथन निश्चित रूप से और सर्वसम्मति से विशिष्ट हैं, और ज़ाहिर अल-रिवया और मज़हब की मूल परिभाषाएँ निश्चित रूप से इस्लामी शहर के लिए विशिष्ट हैं। बल्कि, वह कमज़ोर, दुर्लभ, गैर-पसंदीदा और त्याग दी गई रिवायत "कि वहां की सबसे बड़ी मस्जिद वहां के निवासियों के लिए अपर्याप्त हो" (अर्थात उस स्थान की सबसे बड़ी मस्जिद वहां रहने वाले लोगों के लिए काफी न हो), शोधकर्ताओं के अनुसार वैधता का कोई आधार नहीं रखती है। और सीमाओं में कमज़ोरी के बहाने, इसे अपनाने का रास्ता उसी ईश्वरीय इच्छा से अवरुद्ध है। ज़ाहिर अल-रिवया और इमाम-ए-आज़म के स्पष्ट, सही और वरीयता प्राप्त पाठ की उपस्थिति में दुर्लभ (नवादिर) रिवायतों की ओर मुड़ना कई कारणों से निषिद्ध और अस्वीकार्य है, जैसा कि हमने अपने फ़तावा में इस सब की पुष्टि की है (जैसा कि हमने अपने फतवों में इसकी शोध की है)। इससे बड़ी गलती क्या होगी कि इसके अनुसार मक्का मुअज़्ज़मा और मदीना तैयबा भी गाँव बन जाते हैं और उनमें पवित्र काल से आज तक जुमा को नाजायज़ और बातिल करार दिया जाता है। मजमा अल-अन्हुर में है:

"उन्होंने कहा: यह परिभाषा शोधकर्ताओं के निकट सही नहीं है।" - निस्संदेह यह परिभाषा शोधकर्ताओं के निकट सही नहीं है। (त)

गुन्या में है:

"इसमें विस्तार इस प्रकार है कि मक्का और मदीना दोनों ऐसे शहर हैं जिनमें हुज़ूर अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के ज़ाहिरी जीवन से लेकर आज तक जुमा अदा किया जाता रहा है। अतः जिस स्थान पर इस प्रकार की व्यवस्था होगी, वह शहर है और जो परिभाषा इन दोनों में से

किसी एक पर भी खरी नहीं उतरेगी, वह विश्वसनीय नहीं हो सकती। यहाँ तक कि मुतअख्खिरीन (बाद के विद्वानों) के एक समूह ने जो परिभाषा चुनी है कि 'वहाँ के लोग यदि अपनी सबसे बड़ी मस्जिद में जमा हों तो वह मस्जिद उन लोगों के लिए नाकाफी हो', तो यह परिभाषा इन दोनों (मक्का और मदीना) द्वारा खंडित हो जाती है, क्योंकि उन दोनों में से प्रत्येक की मस्जिद लोगों के लिए काफी है।"

1 मजमा अल-अन्हुर शरह मुल्तकल अबहुर, जुमा का अध्याय, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत द्वारा प्रकाशित, 1/166।

بالجملہ عبارات مختلف ہیں اور مقصود واحد ۔ ان تمام عبارات اور ان کے امثال صدہا اور خود نص صریح امام مذہب سے جس طرح جمعہ کے لئے اشتراط مصر ظاہر یونہی احکام و حدود مفتی کے الفاظ اور ان کی تفاریح مذکورہ کتب مذہب سے روشن کہ شہر سے یقینا اسلامی شہر مراد ہے نہ یہ کہ مثلاً بت پرستوں کا کوئی شہر ہو بادشاہ بت پرست اور دس لاکھ کی آبادی سب بت پرست ، چار پانچ مسلمان وہاں تاجرانہ جائیں اور پندرہ بیس دن ٹھہرنے کی نیت کریں اُن پر وہاں جمعہ قائم کرنا فرض ہو جائے گا جبکہ وہ بادشاہ مانع نہ آتا ہو ہر گز شرح مطہر سے اس کا کوئی ثبوت نہیں عمومات قطعاً اجماعاً مخصوص ہیں اور ظاہر الروایہ واصل مذہب کی تعریفات یقیناً اسلامی شہر سے خاص بلکہ وہ ضعیف روایت نادرہ مرجوحہ مہجورہ ھالا یسع اکبر مساجدہ اھلہ (اس مقام کی سب سے بڑی مسجد وہاں مقیم لوگوں کے لئے ناکافی ہو۔ ت) کہ محققین کے نزدیک اصلاً وجہ صحت نہیں رکھتی اور بعذر توانی فی الحد ود اس کے اختیار کی راہ اُسی ارادہ قدرت سے مسدود اور ظاہر الروایہ و نص صریح امام اعظم مصح و مرجح کے ہوتے ہوئے روایت نوادر کی طرف رجوع بوجوہ ممنوع و مدفوع کما حققنا کل ذلك فی فتاؤنا (جیسا کہ ہم نے اپنے فتاویٰ میں اس کی تحقیق کردی ہے۔ ت) اس سے زیادہ اس کی غلطی کیا ہوگی کہ اس پر مکہ معظمہ و مدینہ طیبہ ہی گاؤں ہوجاتے ہیں اور اُن میں زمانہ اقدس سے آج تک جمعہ ناجائز و باطل قرار پاتا ہے، مجمع الانہر میں ہے :

قالوا ان ھذا الحد غیر صحیح عند المحققین۔۱ بلاشبہ یہ تعریف محققین کے نزدیک صحیح نہیں ہے۔ (ت)

غنیہ میں ہے :

الفضل فی ذلك ان مكة والمدينة مصران تقام بهما اس میں تفصیل یوں ہے کہ مکہ اور مدینہ دونوں شہر ایسے ہیں الجمعة من زمنه صلى الله عليه وسلم الى اليوم جن میں حضور اکرم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی ظاہری حیات فکل موضع كان مثل احدهما فهو مصر و كل تفسير لا سے لے کر آج تک جمعہ ادا کیا جاتا رہا ہے تو جس جگہ اس طرح یصدق علی احدهما فهو غير معتبر حتى الذي اختارہ کے انتظامات ہوں گے وہ شہر ہے اور جو تعریف ان میں سے جماعة من المتأخرين حتى الذي اختاره جماعة من کسی ایک پر صادق نہیں آئے گی وہ معتبر نہیں ہو سکتی حتی کہ المتأخرين وهو مالو اجتمع اهله فی اکبر مساجد متاخرین کی ایک جماعت نے جو اختیار کیا ہے شہر کی تعریف یہ لا يستعهم فانه منقوض بهما اذ مسجد کل ہے کہ وہاں کے لوگ سب سے بڑی مسجد میں اگر جمع ہوں تو منهما يسع وہ مسجد لوگوں کے لئے کافی

۱ مجمع الانہر شرح ملتقی الابحر باب الجمعۃ مطبوعہ دار احیاء التراث العربی بیروت ۱/۱۶۶

Fatawa Razawiyya Volume Sixth

- (Its) people and more [1] No, this is not correct because the mosques of both Makkah and Madinah are sufficient for the people there and for more other people. (T)

Ibn Shuja' al-Thalji narrated this from Imam Abu Yusuf (may Allah be pleased with him) himself. In Al-Hidayah, after explaining the 'Zahir al-Riwayah' (apparent narration) definition, it is stated:

This is according to Imam Abu Yusuf (may Allah have mercy on him). It is narrated from him that when all those people upon whom Friday prayer is obligatory gather in their largest mosque and it is insufficient for them. The first opinion was preferred by Imam al-Karkhi and it is the apparent view, and the second was preferred by Imam al-Thalji. (T) [2]

The words of Imam Abu Yusuf (may Allah have mercy on him) himself, which Imam Malik al-Ulama cited in 'Bada'i' and then Imam Ibn Amir al-Hajj cited in 'Hilya', are that he said:

When the people of a village gather and one mosque cannot accommodate them, a Jami (central) mosque should be built for them and someone should be appointed to lead them in the Friday prayer. (T) [3]

It is evident that the pronouns in 'built' (بنی) or 'appointed' (نصب) refer to the Sultan of Islam. The articulate Hadith on which our class of jurists, Imams, and scholars rely in this chapter of Friday prayer conditions is: "There must be an Imam for it, whether just or tyrannical." It is in the 'Mabsut' of Imam Sarakhsi:

Our evidence is what we have narrated from the Hadith of Jabir (may Allah be pleased with him): "...and he has an Imam, tyrannical or just." The Messenger of Allah (may Allah's peace and blessings be upon him) made it a condition... Our evidence is the narration transmitted from Hazrat Jabir (may Allah be pleased with him), that it is necessary for it to have an Imam, whether oppressive or just, so the Holy Prophet (may Allah's peace and blessings be upon him)...

---

[1] Ghuniyat al-Mustamli Sharh Munyat al-Musalli, Chapter on Friday Prayer, published by Suhail Academy, Lahore, p. 550. [2] Al-Hidayah, Chapter on Friday Prayer, published by Al-Maktabah al-Arabiyyah, Karachi, 1/148. [3] Bada'i al-Sana'i, Chapter explaining the conditions of Friday Prayer, published by H.M. Saeed Company, Karachi, 1/259.

फ़तावा रज़विया जिल्द छठा

- (इसके) लोग और अधिक [1] नहीं, यह सही नहीं है क्योंकि मक्का और मदीना दोनों की मस्जिदें वहां के लोगों और अन्य अतिरिक्त लोगों के लिए पर्याप्त हैं। (त)

इसे इब्न शुजा अल-थल्जी ने स्वयं इमाम अबू यूसुफ (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है। अल-हिदाया में 'ज़ाहिर अल-रिवायत' की परिभाषा स्पष्ट करते हुए कहा गया है:

यह इमाम अबू यूसुफ (रहमतुल्लाह अलैहि) के अनुसार है। उन्हीं से रिवायत है कि जब वहां के वे लोग जिन पर जुमा फ़र्ज़ है, अपनी सबसे बड़ी मस्जिद में जमा हों और वह मस्जिद नाकाफ़ी हो। पहले मत को इमाम करखी ने पसंद किया और यही ज़ाहिर (स्पष्ट) है, और दूसरे को इमाम थल्जी ने पसंद किया। (त) [2]

स्वयं इमाम अबू यूसुफ (रहमतुल्लाह अलैहि) के शब्द जिन्हें इमाम मलिक अल-उलमा ने 'बदाइ' में और फिर इमाम इब्न अमीर अल-हाज ने 'हिल्या' में ज़िक्र किया है, वे ये हैं कि उन्होंने फ़रमाया:

जब किसी गाँव के लोग एक मस्जिद में जमा हों और वह उनके लिए नाकाफ़ी हो, तो उनके लिए जामा मस्जिद बनाई जाए और वहां किसी ऐसे व्यक्ति को नियुक्त किया जाए जो उन्हें जुमा पढ़ाए। (त) [3]

यह स्पष्ट है कि 'बनी' (بنی - बनाई गई) या 'नसब' (نصب - नियुक्त किया गया) के सर्वनाम सुल्तान-ए-इस्लाम की ओर हैं। इसी पर वह हदीस आधारित है जिससे हमारे इमामों और उलेमा के फ़िकही वर्ग ने जुमा की शर्तों के इस अध्याय में दलील दी है कि "उसके लिए एक इमाम हो, चाहे वह न्यायप्रिय हो या अत्याचारी।" इमाम सरख़सी की 'अल-मबस्तूत' में है:

हमारी दलील वह रिवायत है जो हज़रत जाबिर (रज़ियल्लाहु अन्हु) से म्रवी है: "...और उसके लिए इमाम हो, अत्याचारी या न्यायप्रिय।" अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने यह शर्त रखी है... हमारी दलील वह रिवायत है जो हज़रत जाबिर (रज़ियल्लाहु अन्हु) से म्रवी है कि इसके लिए इमाम का होना ज़रूरी है, चाहे ज़ालिम हो या आदिल, तो नबी अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम)...

[1] ग़ुनियत अल-मुस्तमली शरह मुनियत अल-मुसल्ली, फ़स्ल फ़ी सलातुल जुमा, मतबुआ सुहैल एकेडमी लाहौर, पृ. 550. [2] अल-हिदाया, बाब सलातुल जुमा, मतबुआ अल-मक्तबा अल-अरबिय्या कराची 1/148. [3] बदाइ अल-सनइ, फ़स्ल फ़ी बयान शराइत अल-जुमा, मतबुआ एच.एम. सईद कंपनी कराची 1/259.

فتاوی رضویہ جلد ششم

اھلہ وزیادۃ -1 نہ ہو، یہ درست نہیں کیونکہ مکہ اور مدینہ دونوں کی مساجد وہاں کے لوگوں اور مزید دوسرے لوگوں کے لئے کافی ہیں (ت)

اسے ابن شجاع ثلجی نے امام ابو یوسف رضی اللہ تعالٰی عنہ ہی سے روایت کیا، ہدایہ میں تعریف ظاہر الروایۃ بیان کرکے فرمایا:

ھذا عند ابی یوسف رحمہ اللہ تعالی وعنہ انھم اذا اجتمعوا فی اکبر مساجدھم لم یسعھم والاول اختیار الکرخی وھو الظاھر والثانی اختیار الثلجی -2 یہ امام ابو یوسف رحمہ اللہ تعالٰی کے نزدیک ہے اور انہی سے مروی ہے کہ جب وہاں کے وہ لوگ جن پر جمعہ فرض ہے سب سے بڑی مسجد میں جمع ہوں تو وہ مسجد ناکافی ہو، پہلے قول کو امام کرخی نے پسند فرمایا اور یہی ظاہر ہے اور دوسرے امام ثلجی نے پسند فرمایا۔ (ت)

خود امام ابو یوسف رحمۃ اللہ تعالٰی علیہ کے الفاظ کہ امام ملک العلماء نے بدائع پھر امام ابن امیر الحاج نے حلیہ میں ذکر کئے یہ ہیں کہ فرمایا:

اذا اجتمع فی قریۃ من لا یسعھم مسجد واحد بنیلھم جامعا ونصب لھم من یصلی بھم الجمعۃ -3 جب کسی قریہ کے لوگ ایک مسجد میں جمع ہوں اور وہ مسجد انکے لئے ناکافی ہو تو ان کے لئے جامع مسجد بنائی جائے اور وہاں کوئی ایسا شخص مقرر کیا جائے جو انہیں جمعہ پڑھائے۔ (ت)

بدیہی ہے کہ بنی او نصبی ضمیریں سلطانِ اسلام کی طرف ہیں اور اسی پر وہ حدیثِ ناطق جس سے طبقۂ فقہیہ ہمارے ائمہ وعلماء اسی باب شرائط جمعہ میں استدلال فرماتے رہے کہ لہ امام عادل او جائر (اس کے لئے امام عادل ہو یا ظالم ہو ت) مبسوط امام سرخسی میں ہے:

لنا ما روینا من حدیث جابر رضی اللہ تعالی عنہ ولہ امام جائر او عادل فقد شرط رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم ہماری دلیل وہ روایت ہے جو حضرت جابر رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے مروی ہے کہ اس کے لئے امام ظالم یا عادل کا ہونا ضروری ہے تو نبی اکرم صلی اللہ علیہ وسلم

---

1 غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل فی صلوۃ الجمعۃ مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۵۵۰ 2 الہدایۃ باب صلوۃ الجمعۃ مطبوعہ المکتبۃ العربیۃ کراچی ۱ / ۱۴۸ 3 بدائع الصنائع فصل فی بیان شرائط الجمعہ مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱ / ۲۵۹

Fatawa Razawiyya Volume VI

“The Imam -peace and blessings be upon him- made the threat [of punishment] for the one who abandons the Friday prayer conditional upon the presence of the Imam.” [1] (T)

In Fath al-Qadir, it is stated: “The Hadith is narrated by Ibn Majah and others, where the presence of the Imam was stipulated as a condition for the necessity of the Friday prayer, as is derived from the restriction of the sentence occurring as a circumstantial clause (*haal*).” [2] (T)

In short, it has become evident through various reasons that it is necessary for a place where Friday prayer is held to be an Islamic city. “And whoever claims otherwise, it is incumbent upon him to provide proof.” (T). The naming of a city is also customary based on its population or its sovereignty; for instance, a city in which no descendants of the Prophet (Syeds) reside, nor is there any rule by Syeds, cannot be called the 'City of Syeds'. Similarly, when the general population consists of non-believers and there is currently no Islamic government, nor has there ever been one, then although on this basis the rulers may grant Muslims refuge and permission for prayer etc., they may be called 'cities of peace/refuge', but they will not be called 'cities of Muslims'. Thus, when the general category is negated, let alone the specific one; therefore, they cannot be venues for Friday and Eid prayers. For the Eid prayers as well, the conditions are the same as for the Friday prayer, except for the sermon, as stated in *Tanwir al-Absar* and *Durr al-Mukhtar*, Chapter on Eid Prayers:

“The prayer of both [Eids] is obligatory upon those for whom the Friday prayer is obligatory, with its aforementioned conditions, except for the sermon.” [3] That is, it is obligatory for the same people upon whom the Friday prayer is obligatory. (T)

Yes, where it is not proven that there was never an Islamic state before, and it was once a free and sovereign city for Muslims, and in both cases, even if non-Muslims took power but did not stop the practices of Islam, it will remain an Islamic city and country as before, like all regions of India. There, as previously, the Friday prayer will remain an obligation (*fard*) and the Eid prayers will remain mandatory (*wajib*). However, for the establishment of the Friday and Eid prayers, it is necessary that the king or governor lead the prayer himself or appoint someone else as his deputy in these prayers to act as Imam, where such a situation is available.

[1] Al-Mabsut by Sarakhsi, Chapter on Friday Prayer, published by Dar al-Ma'rifah, Beirut, 2/25. [2] Fath al-Qadir, Chapter on Friday Prayer, published by Nooriya Rizviya, Sukkur, 1/417. [3] Durr al-Mukhtar, Chapter on Eid Prayers, published by Matba' Mujtabai, Delhi, 1/114.

फतावा रज़विया जिल्द शशम (छठा खंड)

“इमाम -उन पर शांति और आशीर्वाद हो- ने जुमा की नमाज़ छोड़ने वाले के लिए दी गई चेतावनी को इमाम की मौजूदगी के साथ शर्तबंद किया है।” [1] (त)

फत्ह अल-क़दीर में है: “हदीस को इब्न माजह और अन्य लोगों ने रिवायत किया है, जिसमें जुमा की अनिवार्यता के लिए इमाम का होना शर्त करार दिया गया है, जैसा कि 'हाल' के तौर पर आने वाले वाक्य की कैद से हासिल हो रहा है।” [2] (त)

संक्षेप में, विभिन्न कारणों से यह स्पष्ट हो गया कि जुमा की जगह होने के लिए इस्लामी शहर होना आवश्यक है। “और जो कोई इसके विपरीत दावा करता है, उस पर प्रमाण लाना अनिवार्य है।” (त) किसी शहर का नामकरण प्रथा के अनुसार आबादी के आधार पर या शासन के आधार पर होता है; उदाहरण के लिए, जिस शहर में न तो सैय्यद रहते हों और न ही वहाँ सैय्यदों का शासन हो, उसे 'सैय्यदों का शहर' नहीं कहा जा सकता। इसी प्रकार, जब सामान्य आबादी काफिरों की हो और न अब इस्लामी हुकूमत हो और न कभी रही हो, तो भले ही इसके आधार पर शासकों की ओर से मुसलमानों को पनाह और नमाज़ आदि की अनुमति हो, उन्हें 'अमन के शहर' तो कहा जा सकता है लेकिन 'मुसलमानों के शहर' नहीं कहलाएंगे। तो जब सामान्य (शहर) ही न रहा तो विशेष (जुमा का स्थान) कहाँ से होगा, इसलिए वे जुमा और ईदैन का स्थान नहीं हो सकते। ईदैन के लिए भी खुतबे के अलावा वही शर्तें हैं जो जुमा के लिए हैं, जैसा कि 'तन्वीर अल-अबसार' और 'दुर्रे मुख्तार', ईदैन के अध्याय में है:

“उन दोनों (ईद) की नमाज़ उन्हीं पर वाजिब है जिन पर जुमा वाजिब है, इसकी पूर्व शर्तों के साथ सिवाय खुतबे के।” [3] यानी उन्हीं लोगों पर वाजिब है जिन पर जुमा की नमाज़ वाजिब है। (त)

हाँ, जहाँ यह साबित न हो कि पहले कभी इस्लामी सल्तनत नहीं थी, और वह मुसलमानों का आज़ाद खुदमुख्तार शहर था, और दोनों स्थितियों में गैर-मुस्लिम के हावी होने पर भी उसने इस्लामी प्रतीकों को बंद नहीं किया, तो वह पहले की तरह इस्लामी शहर और मुल्क ही रहेगा जैसे पूरा हिन्दुस्तान। और वहाँ पहले की तरह जुमा फ़र्ज़ और ईदैन वाजिब रहेंगे। लेकिन जुमा और ईदैन कायम करने के लिए यह ज़रूरी है कि बादशाह या शासक खुद इमामत करे या दूसरे को इन नमाज़ों में अपना नायब (प्रतिनिधि) नियुक्त करके इमाम बनाए, जहाँ यह स्थिति उपलब्ध हो।

[1] मब्सूत सरख़सी, जुमा की नमाज़ का अध्याय, दार अल-मआरिफ़ बेरूत, 2/25। [2] फत्ह अल-क़दीर, जुमा की नमाज़ का अध्याय, नूरिया रज़विया सुक्कुर, 1/417। [3] दुर्रे मुख्तार, ईदैन का अध्याय, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 1/114।

فتاوی رضویہ جلد ششم

الامام لا لالحاقه الوعید بتارك الجمعة 1- علیہ وسلم نے تارکِ جمعہ پر وعید لاحق ہونے کو امام کے ساتھ مشروط فرمایا ہے۔ (ت)

فتح القدیر میں ہے: الحدیث رواہ ابن ماجة وغیرہ حیث شرط فی اس حدیث کو ابن ماجہ وغیرہ نے روایت کیا ہے اس میں جمعہ لزومها الامام کما یفیده قید الجملة الواقعة کے لزوم کے لئے امام کا ہونا شرط قرار دیا ہے جیسے کہ اس کا حالا 2- فائدہ بطور حال واقع ہونے والے جملہ کی قید سے حاصل ہو رہا ہے۔ (ت)

غرض بوجوہ ظاہر ہوا کہ محلیت جمعہ کو اسلامی شہر ہونا لازم و من ادعی خلافہ فعلیہ البیان (اور جو شخص اس کے خلاف کا مدعی ہے اس پر دلیل لانا ضروری ہے۔ ت) شہر کی نسبت عرفاً بھی باعتبار آبادی ہوتی ہے یا بلحاظ سلطنت، مثلاً جس شہر کا میں نہ سید آباد ہیں نہ ان میں سیدوں کی عملداری ہے، یہ تھی اسے سیدوں کا شہر نہیں کہہ سکتے، یونہی جبکہ وہاں عام آبادی کفار ہیں اور اسلامی سلطنت نہ اب ہے نہ کبھی تھی تو اگرچہ اس بنا پر حکام کی طرف سے مسلمانوں کو پناہ اور نماز وغیرہ کی اجازت ہے انہیں امان کے شہر کہیں مگر مسلمانوں کے شہر نہ کہلائیں گے تو اعم منتفی ہے چہ جائے اخص، لہذا محل جمعہ و عیدین نہیں ہو سکتے، عیدین کے لئے بھی سوائے خطبہ وہی شرائط ہیں جو جمعہ کے واسطے تنویر الابصار ودر مختار باب العیدین میں ہے:

تجب صلاتهما علی من تجب علیہ الجمعة عیدین کی نماز جمعہ کی سابقہ شرائط کے ساتھ سوائے خطبہ کے بشرائطها المقدمة سوی الخطبة 3- انہی لوگوں پر واجب ہے جن پر نماز جمعہ واجب ہے۔ (ت)

ہاں جہاں ثابت نہ ہو کہ پہلے کبھی اسلامی سلطنت تھی مسلمانوں کا آزاد خود مختار شہر تھا اور دونوں صورتوں میں غیر مسلم نے مسلط ہو کر شعائر اسلام بند نہ کئے وہ بدستور اسلامی شہر و ملک رہے گا جیسے تمام بلادِ ہندوستان، اور وہاں حسب سابق جمعہ فرض اور عیدین واجب رہیں گے لیکن جمعہ و عیدین کی اقامت کو یہ ضرور ہے کہ بادشاہ یا والی خود امامت فرمائے یا دوسرے کو ان نمازوں میں اپنا نائب ٹھہرا کر امام بنائے، جہاں یہ صورت میسر نہ رہے۔

1 مبسوط سرخسی باب صلوۃ الجمعۃ مطبوعہ دار المعرفۃ بیروت ۲۵/۲ 2 فتح القدیر، باب صلوۃ الجمعۃ، مطبوعہ نوریہ رضویہ سکھر، ۱/ ۴۱۷ 3 در مختار، باب العیدین، مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی، ۱/ ۱۱۴

Fatawa Rizwia Volume Six

There, if necessary, Muslims gather and designate someone as the imam for these three prayers to lead them, and the obligatory (fard/wajib) duty will be fulfilled. In the text of 'Kanz' it is stated: 1. "Shartu adā’ihā al-sulṭān wa nā’ibuhu" (The condition for its performance is the presence of the ruler or his deputy. - Translator). In 'Ghunyah' it is mentioned: "Al-sharṭ al-thānī kawn al-imām fīhā al-sulṭān aw man adina lahu al-sulṭān" (The second condition is that the imam of Friday prayer must be the ruler himself or someone authorized by the ruler. - Translator).

In 'Jami' al-Rumuz' it is stated: "Iqāmat al-jumu'ah ḥaqq al-khalīfa illā annahu lam yaqdir ‘alā dhalika fī kull al-amṣār fayuqīmu ghayrahu niyābatan" (Establishing Friday prayer is the right of the Caliph of the time. Since he cannot lead prayers in all cities, someone else must be appointed as his deputy by his command. - Translator).

In 'Durr al-Mukhtar' it is stated: "Wa naṣb al-‘āmmah al-khaṭīb ghayr mu‘tabar ma‘a wujūd man dhukir, ammā ma‘a ‘adamihim fayajūzu lil-ḍarūrah" (The appointment of a preacher by the general public is not valid in the presence of the aforementioned individuals [caliph and judge, i.e., ruler or judge]. However, in their absence, it is permissible by necessity for the common people to appoint a preacher. - Translator).

In 'Jami' al-Fusulayn' it is stated: "Kullu miṣr fīhi wālin min muslim min jihat al-kuffār tajūzu fīhi iqāmat al-jumu‘ wa al-a‘yād wa ammā fī bilād ‘alayhā wulāt kuffār fayajūzu lil-muslimīn iqāmat al-jumu‘ wa al-a‘yād" (In every city where a Muslim governor is appointed by non-believers, establishing Friday and Eid prayers is permissible. As for cities ruled by non-believers, the general body of Muslims can establish Friday and Eid prayers there. - Translator). (Summarized) In such places where there is doubt in the verification of certain conditions, precautionary units (rak'ats) have been kept, not based on contrary considerations.

1. Kanz al-Daqaiq, Chapter of Friday Prayer, published by H.M. Saeed Company Karachi, p. 48.
2. Ghunyat al-Mustamli Sharh Munyat al-Musalli, Section on Friday Prayer, published by Suhail Academy Lahore, p. 553.
3. Jami' al-Rumuz, Section on Friday Prayer, published by Maktaba Islamiya Gonbad Qamus Iran, 1/263.
4. Durr al-Mukhtar, Chapter on Friday, published by Matba' Mujtabai Delhi, 1/110.

5. Jami' al-Fusulayn, First Chapter on Judicature etc., published by Islami Kutub Khana Allama Binnori Town Karachi 1/14.

वहाँ ज़रूरत पड़ने पर मुसलमान इकट्ठे होकर जिसे इन तीन नमाज़ों का इमाम मुक़र्रर कर लेंगे, वह नमाज़ पढ़ाएगा और यह फ़र्ज़ व वाजिब अदा हो जाएगा। 'कन्ज़' के मूल पाठ में है: १. "शर्त-ए अदाएहा अल-सुल्तान व नायेबुहू" (जुमे की अदायगी के लिए हाकिम या उसके नायब का होना शर्त और ज़रूरी है। - त) 'ग़ुनिया' में है: "अश-शर्तु अल-सानी कौनु अल-इमाम फ़ीहा अल-सुल्तान औ मन अज़िन लहू अल-सुल्तान" (दूसरी शर्त यह है कि जुमे का इमाम ख़ुद सुल्तान हो या ऐसा शख़्स जिसे सुल्तान ने इजाज़त दी हो। - त)

'जामे अल-रुमूज़' में है: "इक़ामतु अल-जुमुअह हक़्क़ु अल-ख़लीफ़ा इल्ला अन्नहू लम यक़दिर अला ज़ालिका फ़ी कुल्ली अल-अमसार फ़युक़ीमु ग़ैराहू नियाबतन" (जुमे का क़याम वक़्त के ख़लीफ़ा की ज़िम्मेदारी है। चूंकि वह तमाम शहरों में इमामत पर समर्थ नहीं हो सकता, लिहाज़ा उसके हुक्म पर उसका कोई न कोई नायब होना चाहिए। - त)

'दुर्र-ए-मुख़्तार' में है: "व नसबु अल-आम्मह अल-ख़तीब ग़ैर मुअतबर मआ वुजूद मन ज़ुकिर, अम्मा मआ अदमिहिम फ़यजूज़ु लिद-दरूरह" (उक्त व्यक्तियों के रहते हुए आम जनता द्वारा ख़तीब मुक़र्रर करना मान्य नहीं है। हाँ, अगर उक्त व्यक्ति (ख़लीफ़ा व क़ाज़ी यानी सुल्तान या क़ाज़ी) न हों, तो ज़रूरत पड़ने पर आम जनता द्वारा ख़तीब मुक़र्रर कर लेना जायज़ होगा। - त)

'जामे अल-फ़ुसूलैन' में है: "कुल्लु मिस्रिन फ़ीही वालिन मिन मुस्लिमिन मिन जिहति अल-कुफ़्फ़ार तजूज़ु फ़ीही इक़ामतु अल-जुमुअ व अल-आयाद व अम्मा फ़ी बिलादिन अलैहा वुलातुन कुफ़्फ़ारुन फ़यजूज़ु लिल-मुस्लिमीन इक़ामतु अल-जुमुअ व अल-आयाद" (हर वह शहर जहाँ काफ़िरों की तरफ़ से मुसलमान गवर्नर मुक़र्रर हो, वहाँ जुमा और ईदैन क़ायम करना जायज़ है। रहा मामला उन शहरों का जहाँ काफ़िर हाकिम हों, तो वहाँ आम मुसलमान जुमा और ईद की नमाज़ें क़ायम कर सकते हैं। - त) (सारांश) ऐसी ही जगह जहाँ कुछ शर्तों की पुष्टि में संदेह हो, एहतियाती रकअतें रखी गई हैं, न कि विरोध के आधार पर।

1. कन्ज़ उद-दक़ायक़, बाब सलातुल जुमुआ, एच. एम. सईद कंपनी, कराची, पृ. ४८
2. ग़ुनियातुल मुस्तमली शरह मुनियतुल मुसल्ली, फ़स्ल फ़ी सलातुल जुमुआ, सुहैल एकेडमी लाहौर, पृ. ५५३
3. जामे अल-रुमूज़, फ़स्ल सलातुल जुमुआ, मकतबा इस्लामिया गुम्बद क़ामूस ईरान १/२६३

4. दुर्र-ए-मुख़्तार, बाबुल जुमुआ, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, १/११०
5. जामे अल-फ़ुसूलैन, अल-फ़स्ल अल-अव्वल फ़िल-क़ज़ा आदि, इस्लामी कुतुब ख़ाना अल्लामा बनूरी टाउन कराची १/१४

पृष्ठ ३६४/७३६

فتاوی رضویہ جلد ششم

وہاں بضرورت مسلمان جمع ہو کر جسے ان تین نمازوں کا امام مقرر کر لیں گے پڑھائے گا اور یہ فرض و واجب ادا ہو جائے گا، متن کنز میں ہے: شرط ادائھا السلطان و نائبہ 1 (جمعہ کیا ادائیگی کے لئے حاکم یا اس کے نائب کا ہونا شرط اور ضروری ہے۔ ت) غنیہ میں ہے: الشرط الثانی کون الامام فیھا السلطان اومن اذن لہ السلطان 2 - دوسری شرط یہ ہے کہ جمعہ کا امام خود سلطان یا ایسا شخص ہو جسے سلطان نے اجازت دی ہو۔ (ت)

جامع الرموز میں ہے: اقامۃ الجمعۃ حق الخلیفۃ الا انہ لم یقدر علی ذلک فی کل الامصار فیقیم غیرہ نیابۃ 3 - جمعہ کا قیام خلیفہ وقت کی ذمہ داری ہے چونکہ وہ تمام شہروں میں امامت پر قادر نہیں ہو سکتا لہذا اسکے حکم پر اسکا کوئی نہ کوئی نائب ہونا چاہئے۔ (ت)

در مختار میں ہے: ونصب العامۃ الخطیب غیر معتبر مع وجود من ذکر ، اما مع عدمھم فیجوز للضرورۃ 4 - اشخاص مذکورہ کے ہوتے ہوئے عوام کا خطیب مقرر کرنا معتبر نہیں ، ہاں اگر اشخاص مذکورہ (خلیفہ و قاضی یعنی سلطان یا قاضی) نہ ہوں تو ضرورتاً عوام کا خطیب مقرر کر لینا جائز ہوگا (ت)

جامع الفصولین میں ہے: کل مصرفیہ وال من مسلم من جھۃ الکفار تجوز فیہ اقامۃ الجمع والاعیاد وامافی بلاد علیھا ولاۃ کفار فیجوز للمسلمین اقامۃ الجمع والاعیاد 5 - ہر وہ شہر جہاں کافروں کی طرف سے مسلمان والی مقرر ہو وہاں جمعہ اور عیدین قائم کرنا جائز ، رہا معاملہ ان شہروں کا جہاں کافر حاکم ہوں تو وہاں عامۃ المسلمین جمعہ اور عیدین کی نمازیں قائم کر سکتے ہیں۔ (ت) (ملخصاً) ایسی ہی جگہ جہاں تحقیق بعض شرائط میں شبہ ہو احتیاطی رکعتیں رکھی ہیں نہ بربنائے مراعات خلاف

1 کنز الدقائق باب صلوٰۃ الجمعۃ مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ص ۴۸ 2 غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل فی صلوٰۃ الجمعۃ مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۵۵۳ 3 جامع الرموز، فصل صلوٰۃ الجمعۃ مطبوعہ مکتبہ اسلامیہ گنبد قاموس ایران ۱/ ۲۶۳ 4 در مختار، باب الجمعۃ، مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی، ۱/ ۱۱۰ 5 جامع الفصولین الفصل الاول فی القضاء الخ مطبوعہ اسلامی کتب خانہ علامہ بنوری ٹاؤن کراچی ۱/ ۱۴

Fatawa Ridawiyya, Volume 6

In Al-Madhhab al-Kafi, Al-Muhit, and Al-Alamgiriyah, it is stated:

[Arabic]: In every place where doubt arises regarding the validity of the Friday prayer due to doubt about it being a city (Misr) or otherwise, and the inhabitants perform the Friday prayer, it is appropriate for them to pray four rak'ats after the Friday prayer, etc. [Urdu Explanation]: In every place where doubt arises about the validity of the Friday prayer because of a doubt regarding the fulfillment of conditions like being a city or otherwise, and the people there perform the Friday prayer, the people there should perform four rak'ats after the Friday prayer (with the intention of Dhuhr prayer), etc. (T)

In Fath al-Qadir and Bahr al-Ra'iq, it is stated:

[Arabic]: Doubt has occurred in some villages of Egypt where there is no resident governor or judge, but rather a temporary judge called 'Qadi al-Nahiyah' is appointed for them. He is primarily the judge of the district who occasionally comes to the village, settles the accumulated matters, and then leaves. Similarly for the governor. Is it considered a city because it has a governor and a judge, or not because they do not reside there? When a person faces such confusion, he should pray four rak'ats after the Friday prayer, etc. [Urdu Explanation]: Doubt has arisen in some areas of Egypt where there is no permanent governor or judge, but rather a temporary judge for them, who is called "Qadi-e-Nahiyah," meaning he is originally the judge of the district who occasionally visits that village, decides the accumulated cases, and returns. The situation with the governor is similar. Will these be called a city? On the basis that they have a governor and a judge, or will they not be called a city? On the basis that both do not reside here. Therefore, when such a confusion arises for someone, they should perform four rak'ats (with the intention of Dhuhr) on Friday there, etc. (T)

In a city where multiple Friday prayers are held and the first one is unknown, those who gave the ruling for precautionary rak'ats did not do so merely to respect a difference of opinion as a recommended act, but rather because of the strength of the opposing view, due to which certain discharge of obligation is not achieved; according to them, precaution here is in this sense. It is stated in Al-Hilya:

[Arabic]: Sometimes doubt arises regarding the validity of the Friday prayer due to the absence of its conditions, and among those is... [Urdu Explanation]: Sometimes,

due to the absence of the conditions for the Friday prayer, doubt arises about the validity of the Friday prayer; among those cases is this situation...

1. Fatawa Hindiyyah, Chapter 16 on Friday Prayer, published by Noorani Kutub Khana, Peshawar, 1/145.
2. Fath al-Qadir, Chapter on Friday Prayer, published by Maktaba Nooria Ridawiyya, Sukkur, 2/25.

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

अल-मज़हब अल-काफ़ी, अल-मुहीत और अल-आलमगीरिया में उल्लेख है:

[अरबी]: हर उस स्थान पर जहाँ शहर होने या न होने के संदेह के कारण जुमा की नमाज़ के वैध होने में संदेह पैदा हो, और वहाँ के निवासी जुमा की नमाज़ पढ़ते हों, तो उनके लिए उचित है कि वे जुमा के बाद चार रकात (ज़ुहर की नीयत से) अदा करें, आदि। [उर्दू व्याख्या]: हर वह स्थान जहाँ शहर आदि किसी शर्त के होने में संदेह के आधार पर जुमा के जायज़ होने में संदेह हुआ और वहाँ के लोग जुमा की नमाज़ पढ़ते हों, तो वहाँ के लोगों को चाहिए कि वे जुमा के बाद चार रकात (ज़ुहर की नीयत से) अदा करें आदि (त)।

फ़तह अल-क़दीर और बहर अर-राइक़ में उल्लेख है:

[अरबी]: मिस्र के कुछ गाँवों में संदेह पैदा हुआ है जहाँ कोई स्थायी राज्यपाल या न्यायाधीश नहीं है, बल्कि उनके लिए एक अस्थायी न्यायाधीश नियुक्त है जिसे 'क़ाज़ी अल-नाहिया' कहा जाता है। वह मूलतः ज़िले का न्यायाधीश है जो समय-समय पर गाँव आता है, लंबित मामलों का निपटारा करता है और चला जाता है। राज्यपाल की स्थिति भी वैसी ही है। क्या इसे शहर माना जाएगा? इस आधार पर कि वहाँ राज्यपाल और न्यायाधीश है, या इसे शहर नहीं माना जाएगा क्योंकि वे वहाँ नहीं रहते? जब किसी व्यक्ति को ऐसा भ्रम हो, तो उसे जुमा के बाद चार रकात नमाज़ पढ़नी चाहिए, आदि। [उर्दू व्याख्या]: मिस्र के कुछ क्षेत्रों में संदेह पैदा हुआ है जहाँ राज्यपाल और क़ाज़ी स्थायी नहीं हैं, बल्कि उनके लिए एक अस्थायी क़ाज़ी है जिसे "क़ाज़ी-ए-नाहिया" कहा जाता है, यानी वह असल में ज़िले का क़ाज़ी है जो उस गाँव में कभी-कभी आता है और जमा हुए मामलों के फ़ैसले करके वापस चला जाता है, इसी तरह का राज्यपाल है। क्या उन्हें शहर कहा जाएगा? इस आधार पर कि उनका राज्यपाल और क़ाज़ी है या शहर नहीं कहा जाएगा? इस आधार पर कि वे दोनों यहाँ रहते नहीं, लिहाज़ा जब इस तरह का किसी इंसान पर भ्रम पैदा हो जाए तो उसे वहाँ जुमा के दिन चार रकात (ज़ुहर की नीयत से) अदा करनी चाहिए आदि (त)।

जिस शहर में कई जुमे की नमाज़ें होती हों और पहली नमाज़ अज्ञात हो, वहाँ जिन्होंने एहतियाती (सावधानी वाली) रकातों का हुक्म दिया, उन्होंने ऐसा केवल मतभेद का सम्मान करने के लिए या मुस्तहब के तौर पर नहीं किया, बल्कि इसलिए किया क्योंकि विरोधी मत इतना प्रबल है कि उससे

दायित्व की निश्चित पूर्ति नहीं होती। उनके अनुसार, यहाँ सावधानी इसी अर्थ में है। अल-हिल्या में उल्लेख है:

[अरबी]: कभी-कभी जुमा की शर्तों की कमी के कारण इसकी वैधता में संदेह उत्पन्न हो जाता है, और उनमें से एक... [उर्दू व्याख्या]: कभी-कभी जुमा की शर्तें पूरी न होने के कारण जुमा की वैधता (सेहत) में संदेह पैदा हो जाता है, उनमें से यह एक स्थिति है...

1. फ़तावा हिंदिया, जुमा की नमाज़ पर अध्याय 16, नूरानी कुतुब खाना, पेशावर, 1/145।
2. फ़तह अल-क़दीर, जुमा की नमाज़ पर अध्याय, मकतबा नूरिया रज़विया, सुक्कुर, 2/25।

पृष्ठ 365 / 736

فتاوی رضویہ، جلد ششم

فی المذہب کافی و محیط و عالمگیریہ میں ہے:

[عربی]: فی کل موضع وقع الشك فی جواز الجمعة لوقوع الشك فی المصر وغیرہ واقام اہلہ الجمعة ینبغی ان یصلوا بعد الجمعة اربع رکعات الخ۔ [اردو تشریح]: ہر وہ مقام جہاں شہر وغیرہ کسی شرط کے ہونے میں شک کی بناء پر جوازِ جمعہ میں شک ہوا اور وہاں کے لوگ نمازِ جمعہ پڑھتے ہوں تو وہاں کے لوگوں کو چاہئے کہ وہ جمعہ کے بعد چار رکعت (بنیتِ ظہر) ادا کریں الخ (ت)

فتح القدیر و بحر الرائق میں ہے:

[عربی]: قد وقع شك فی بعض قری مصر مما لیس فیھا وال وقاض نازلان بھابل لھا قاضی یسمی قاضی الناحیة وھو قاض یولی الکورة باصلھا فیاتی القریة احیانا فیفصل ما اجتمع فیھا من التعلقات وینصرف و وال کذلك ھل ھو مصر نظراً الی ان لھا والیاً وقاضیاً اولاً نظراً الی عدمھما بھا واذ ااشتبہ علی الانسان ذلك ینبغی ان یصلی اربعاً بعد الجمعة الخ۔ [اردو تشریح]: شک واقع ہوا ہے مصر کے بعض علاقوں میں جہاں والی اور قاضی مستقل نہیں بلکہ ان کے لئے ایک عارضی قاضی ہو جسے "قاضی ناحیہ" کہا جاتا ہے یعنی وہ بالاصل ضلع کا قاضی ہے جو اس قریہ میں کبھی کبھی آتا ہے اور جمع شدہ معاملات کے فیصلے کر کے واپس چلا جاتا ہے اسی طرح کا والی ہے کیا انہیں شہر کہا جائے گا؟ اس بنا پر کہ انکا والی اور قاضی ہے یا شہر نہیں کہا جائیگا؟ اس بنا پر کہ وہ دونوں یہاں رہتے نہیں لہذا جب اس طرح کا کسی انسان پر اشتباہ پیدا ہو جائے تو اسے وہاں جمعہ کے روز چار رکعت (بنیتِ ظہر) ادا کرنی چاہئیں الخ (ت)

شہر میں متعدد جمعے ہوں اور سابق نامعلوم تو اس میں احتیاطی رکعات کا حکم جنہوں نے دیا وہ بھی مجرد رعایت خلاف کے لئے نہیں کہ ایک امر مستحب ہے بلکہ شدّت قوت خلاف کے باعث جس کے سبب براءۃ عہدہ بالیقین نہیں ان کے نزدیک یہاں احتیاط اسی معنی پر ہے۔ حلیہ میں ہے:

[عربی]: قد یقع الشك فی صحة الجمعة بسبب فقد شروطها و من ذلك [اردو ترجمہ]: بعض اوقات شرائطِ جمعہ نہ پائے جانے کی وجہ سے صحتِ جمعہ میں شک واقع ہو جاتا ہے ان میں یہ صورت

1 فتاوی ہندیہ الباب السادس عشر فی صلوۃ الجمعہ مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور ۱/۱۴۵ 2 فتح القدیر باب صلوۃ الجمعہ مطبوعہ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۲/۲۵

Fatawa Razawiyya Volume Six

Arabic: [What happens] when Friday prayers are held in multiple places in the same city, and it is unknown which was first, or if simultaneity is known, based on the opinion that multiple congregations are not permissible—as was the case with the people of Marw—then one should do as they did. Al-Muhsin said: I commanded them to perform four rak'ahs after the Friday prayer as a mandatory precaution. - 1

Urdu: It is also the case that Friday prayer is held at multiple places in one city, and there is no awareness of the one that happened first, or the knowledge of simultaneity is there, but this is based on the opinion in which Friday prayer at multiple places is not permissible. The matter of the people of Marw is similar; therefore, a person should do as they did. Muhsin said that in such a case, performing four rak'ahs after Friday prayer is necessary for them as a precaution. (T)

In Ghunya: Arabic: As for the issue of the permissibility of multiple congregations versus its non-permissibility, the former (prohibition) is the precautionary view because there is strength in it. This is because Friday prayer is for gathering congregations, and in the time of the predecessors, it was only performed in one place in the city. The correctness of the fatwa allowing multiple congregations out of necessity does not prevent the Shar'i legitimacy of precaution for the sake of piety. - 2

Urdu: As for the issue of the permissibility of multiple congregations and its non-permissibility, there is precaution in the first opinion, as there is strength in it because 'Jumu'ah' (Friday prayer) is the name for gathering all congregations, and during the era of the predecessors, Friday prayer was performed in only one place in the city. The correctness of the fatwa on the permissibility of Friday prayer in multiple places for necessity does not prevent the fact that, in view of piety, performing four rak'ahs legally as a precaution would not be [considered] impermissible. (T)

In Minhat al-Khaliq: Arabic: It is based on that precaution—meaning discharge from the obligation with certainty—because of his clarification that the reason is the disagreement of scholars regarding its validity when held in multiple places, and in it lies a strong doubt. - 3

Urdu: It is based on the same precaution, meaning that the obligation is dropped from a person's responsibility with certainty, because their clarification is that its

cause is the difference among scholars regarding the permissibility of Friday prayer in multiple locations, and there is a strong ambiguity in it. (T)

Apparently, the Eid prayers are not mandatory at all in the school of Imam Shafi'i, neither in the city nor in the village, even though...

1. Hilyat al-Mahalli Sharh Munyat al-Musalli
2. Ghunyat al-Mustamli Sharh Munyat al-Musalli, Section on Friday Prayer, printed by Suhail Academy Lahore, p. 552
3. Minhat al-Khaliq with al-Bahr al-Ra'iq, Chapter on Friday Prayer, printed by H.M. Saeed Company Karachi, 134/2 Page 366 of 736

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

अरबी: [क्या हो] जब एक ही शहर में कई जगहों पर जुमे की नमाज़ अदा की जाए और यह मालूम न हो कि कौन सी पहले हुई या यह पता हो कि सब एक साथ हुईं, उस राय के अनुसार जिसमें एक से अधिक जगहों पर जुमे का जायज़ होना मान्य नहीं है—जैसा कि मर्व के लोगों का मामला था—तो व्यक्ति वैसा ही करे जैसा उन्होंने किया। अल-मुहसिन ने कहा: मैंने उन्हें जुमे के बाद अनिवार्य रूप से एहतियात के तौर पर चार रकात अदा करने का आदेश दिया। - 1

उर्दू: यह भी है कि एक शहर में कई जगहों पर जुमा होता है और सबसे पहले होने वाले के बारे में पता नहीं है या एक साथ होने का ज्ञान है, लेकिन यह उस राय पर आधारित है जिसमें कई जगहों पर जुमा जायज़ नहीं है। मर्व के लोगों का मामला भी इसी तरह का है, इसलिए व्यक्ति उन्हीं की तरह करे। मोहसिन ने फ़रमाया कि ऐसी स्थिति में जुमे के बाद चार रकात अदा करना उनके लिए एहतियातन ज़रूरी है। (त)

ग़ुनिया में है: अरबी: जहाँ तक कई जमातों के जायज़ होने या न होने का सवाल है, पहला (मनाही) एहतियात वाला है क्योंकि इसमें मज़बूती है। ऐसा इसलिए है क्योंकि जुमा सभी जमातों को इकट्ठा करने का नाम है, और पूर्वजों के समय में शहर में केवल एक ही स्थान पर जुमा अदा किया जाता था। ज़रूरत के कारण कई स्थानों पर जुमे के जायज़ होने पर फ़तवे का सही होना, तक़वा (परहेज़गारी) के लिए एहतियात की शरई वैधता को नहीं रोकता। - 2

उर्दू: जहाँ तक कई जमातों के जायज़ होने और न होने का मसला है, तो पहली राय में एहतियात है क्योंकि इसमें ताक़त है क्योंकि जुमा नाम है तमाम जमातों के जमा करने का, और पूर्वजों के ज़माने में शहर में सिर्फ़ एक ही जगह जुमा अदा किया जाता रहा है। ज़रूरत के लिए कई जगह जुमे के जायज़ होने पर फ़तवे का सही होना इस बात से मना नहीं करता कि तक़वा के मद्देनज़र शरीयत के अनुसार एहतियातन चार रकात का अदा करना जायज़ न हो। (त)

मिन्हात अल-ख़ालिक़ में है: अरबी: यह उसी एहतियात पर आधारित है—यानी यक़ीन के साथ ज़िम्मेदारी से बरी होना—क्योंकि उनका स्पष्टीकरण है कि इसका कारण कई स्थानों पर इसके जायज़ होने में विद्वानों का मतभेद है, और इसमें एक मज़बूत संदेह है। - 3

उर्दू: वह इसी एहतियात पर मबनी (आधारित) है यानी आदमी के ज़िम्मे से फ़रीज़ा (कर्तव्य) यक़ीनन साक़ित (ख़त्म) हो जाए क्योंकि उनकी तसरीह (स्पष्टीकरण) है कि इसकी इल्लत (कारण) मुतअद्दद

(अनेक) मक़ामात पर जवाज़-ए-जुमा (जुमे की अनुमति) में उलेमा का इख़्तिलाफ़ (मतभेद) है और इसमें इशतिबाह (संदेह) क़वी (मज़बूत) है। (त)

ज़ाहिर है कि इमाम शाफ़ई के मज़हब में ईद की नमाज़ सिरे से वाजिब ही नहीं है, न शहर में और न ही गाँव में, भले ही...

1. हलियत अल-महल्ली शरह मुनियत अल-मुसल्ली
2. ग़ुनियत अल-मुस्तमली शरह मुनियत अल-मुसल्ली, फ़स्ल फ़ी सलातुल जुमा, मतबुआ सुहैल एकेडमी लाहौर, पृष्ठ 552
3. मिन्हात अल-ख़ालिक़ मआ अल-बहर अर-राइक़, बाब सलातुल जुमा, मतबुआ एच.एम. सईद कंपनी कराची, 134/2 पृष्ठ 366 ऑफ़ 736

فتاوی رضویہ جلد ششم

ما اذا تعددت في المصر الواحد وجهل اسبق او علمت المعية على القول بعدم جواز التعدد وهی واقعة اهل مَرْو فيفعل ما فعلوه قال المحسن امرتهم باداء الاربع بعد الجمعة حتما احتياطاً - 1 بھی ہے کہ ایک شہر میں متعدد مقامات پر جمعہ ہوتا ہے اور سب سے پہلے ہونے والے سے آگاہی نہیں یا معیت کا علم ہے لیکن اس قول پر ہے جس میں متعدد مقامات پر جمعہ جائز نہیں اور اہل مرو کا معاملہ اسی طرح کا ہے پس آدمی انہی کی طرح کرے۔ محسن نے فرمایا کہ ایسی صورت میں جمعہ کے بعد چار رکعت کی ادائیگی انکے لئے احتیاطاً ضروری ہے۔ (ت)

غنیہ میں ہے : اما من حيث جواز التعدد وعدمه فالاول هو الاحتياط لان فيه قوى اذا الجمعة جامعة للجماعات ولم تكن في زمن السلف تصلى الا في موضع واحد من المصر وكون الصحيح جواز التعدد للضرورة للفتوى لا يمنع شرعية الاحتياط للتقوى ۔ ۲ رہا مسئلہ جواز تعداد اور عدم جواز تعدد کا تو پہلے قول میں احتیاط ہے کہ اس میں قوت ہے کیونکہ جمعہ نام ہے تمام جماعتوں کے جمع کرنے کا ، اور زمانہ اسلاف میں شہر میں فقط ایک ہی جگہ جمعہ ادا کیا جاتا رہا ہے ضرورت کے لئے متعدد جگہ جمعہ کے جواز پر فتوی کا صحیح ہونا اس بات سے مانع نہیں کہ تقوی کے پیش نظر شرعاً احتیاطا چار رکعت کا ادا کرنا جائز نہ ہو۔ (ت)

منحة الخالق میں ہے : هو مبنى على ان ذلك الاحتياط اى الخروج عن العهدة بيقين لتصريحه بان العلة اختلاف العلماء في جوازها اذا تعددت وفيه شبهة قوية ۔ ۳ وہ اسی احتیاط پر مبنی ہے یعنی آدمی کے ذمے سے فریضہ بالیقین ساقط ہو جائے کیونکہ ان کی تصریح ہے کہ اس کی علت متعدد مقامات پر جواز جمعہ میں علماء کا اختلاف ہے اور اس میں اشتباہ قوی ہے۔ (ت)

ظاہر ا عیدین کی نماز مذہب امام شافعی میں سرے سے واجب ہی نہیں نہ شہر نہ گاؤں میں اگرچہ

1 حلیة المحلی شرح منیة المصلی 2 غنیة المستملی شرح منیة المصلی فصل فی صلوة الجمعة مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۵۵۲ 3 منحة الخالق مع البحر الرائق باب صلاة الجمعة مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱۳۴/۲ Page 366 of 736

Fatawa Razawiya Volume 6

It may be Islamic, yes it is a Sunnah, and in their view, non-Islamic populations are not the place for Jumu'ah and Eid prayers. Regardless of everything, the consideration for differing opinions is only to the extent that one's own school of thought's 'Makruh' (disliked) act is not committed, let alone something purely invalid (fasid) and impermissible (najayiz). One sin is that Jumu'ah, which was not valid, was performed as Nafl (voluntary prayer) with congregation, and this is an innovation (Bid'ah). Furthermore, where Dhuhr is obligatory and congregation is mandatory, if they do not pray Dhuhr at all because of Jumu'ah, they are abandoners of an obligation. And if they pray individually or through precautionary rak'ahs, then by abandoning the congregation, they are abandoners of a mandatory act, which is a major sin (Kabirah) the first time and after repetition. It is stated in Durr-e-Mukhtar:

"It is recommended to act in a way that reconciles differing opinions, provided it does not lead to committing something disliked (Makruh) according to one's own school of thought."[1]

Explanation: Acting in a way that avoids disagreement is recommended, but the condition is that it should not necessitate doing something that is disliked in one's own madhhab (school of law). (T)

Nevertheless, our stance is that in such places, people should not be stopped from however they remember the name of Allah and His Messenger, nor should one participate oneself unless non-participation causes fitna (strife). Otherwise, participating with the intention of Nafl is possible as 'Akhtar Ahunahuma' (choosing the easier of the two options has been kept). It is stated in Dur-e-Mukhtar:

"Every prayer that is not permissible during sunrise is 'Makruh Tahrimi' (prohibitively disliked). However, common people should not be prevented from performing them because they might leave them entirely. Performing what is permissible according to some is better than leaving it altogether, as mentioned in Al-Qunya etc."[2]

Explanation: Every absolute prayer at sunrise and every impermissible act is 'Makruh Tahrimi'. However, common people should not be stopped from performing prayers at that time because they might quit praying altogether. According to some scholars, performing what is permissible is better than complete abandonment. This is as found in Qunya and others. (T)

In Radd al-Muhtar it is stated:

"The author of Al-Musaffa attributed this saying to Imam Hamid-ud-Din, from his teacher Imam Al-Mahbubi, and to Shams al-Aimmah al-Halwani. In Al-Qunya, it is attributed to Al-Halwani and An-Nasafi."[3]

Explanation: The author of Musaffa, while attributing this statement to Imam Hamid-ud-Din, said that he narrated it from his teacher Imam Mahbubi and also attributed it to Shams al-Aimmah Halwani. In Qunya, it is attributed to Halwani and Nasafi. (T)

---

1. Dur-e-Mukhtar, Kitab-ut-Taharah, printed by Mujtabai Delhi, 1/7
2. Dur-e-Mukhtar, Kitab-us-Salat, printed by Mujtabai Delhi, 1/61
3. Radd-al-Muhtar, Kitab-us-Salat, printed by Mustafa Al-Babi Egypt, 1/273

फ़तावा रज़विया जिल्द 6

इस्लामी हो, हाँ सुन्नत है, और उनके निकट गैर-इस्लामी आबादी भी जुमे और ईदैन का स्थान नहीं है। सब बातों को दरकिनार करते हुए, मतभेद का सम्मान केवल वहीं तक है कि अपने मज़हब का मकरूह (नापसंदीदा) काम करना लाज़िम न आए, न कि सरासर फ़ासिद (दूषित) और नाज़ायज़। एक गुनाह तो यह हुआ कि जुमा, जो सही नहीं था, जमात के साथ नफ़्ल (ऐच्छिक) के रूप में पढ़ा गया और यह बिदअत है। फिर जहाँ ज़ुहर फ़र्ज़ है और जमात वाजिब है, अगर जुमे के कारण वे ज़ुहर बिल्कुल न पढ़ें तो वे फ़र्ज़ छोड़ने वाले होंगे। और अगर वे अकेले-अकेले या एहतियाती रकअतों के माध्यम से पढ़ें, तो जमात छोड़ने के कारण वाजिब छोड़ने वाले होंगे, जो पहली बार और दोहराने के बाद गुनाह-ए-कबीरा (बड़ा पाप) है। 'दुर्र-ए-मुख़्तार' में है:

"मतभेद से बचने के लिए कार्य करना मुस्तहब (पसंदीदा) है, बशर्ते कि इससे अपने मज़हब के अनुसार किसी मकरूह कार्य का करना लाज़िम न आए।"[1]

व्याख्या: इस तरह कार्य करना कि मतभेद न रहे मुस्तहब है, लेकिन शर्त यह है कि वहाँ ऐसी चीज़ का करना आवश्यक न हो जाए जो उसके मज़हब में मकरूह हो। (त)

इन सबके बावजूद हमारा मज़हब यह है कि ऐसी जगह पर लोग जिस तरह भी अल्लाह और उसके रसूल का नाम लें, उन्हें रोका न जाए और न ही स्वयं शामिल हुआ जाए, जब तक कि शामिल न होने में कोई फ़ितना (कलह) न हो। अन्यथा नफ़्ल की नीयत से शामिल होना संभव है क्योंकि 'इख़्तार अह्वनुहुमा' (दो विकल्पों में से आसान को चुनना रखा गया है। त) 'दुर्र-ए-मुख़्तार' में है:

"सूर्योदय के समय हर वह नमाज़ जो जायज़ नहीं है, 'मकरूह-ए-तहरीमी' है। हालाँकि, आम लोगों को इसे करने से नहीं रोका जाना चाहिए क्योंकि वे इसे पूरी तरह से छोड़ सकते हैं। कुछ लोगों के अनुसार जायज़ कार्य को करना पूरी तरह से छोड़ देने से बेहतर है, जैसा कि अल-कुन्या आदि में है।"[2]

व्याख्या: सूर्योदय के समय पूर्ण नमाज़ और हर वह कार्य जो जायज़ नहीं है, 'मकरूह-ए-तहरीमी' है, लेकिन आम लोगों को उस समय नमाज़ अदा करने से नहीं रोका जाना चाहिए क्योंकि वे इसे पूरी तरह से छोड़ देंगे, और कुछ विद्वानों के अनुसार जायज़ अदायगी बिल्कुल छोड़ देने से बेहतर है। जैसा कि कुन्या आदि में है। (त)

रद्दुल मुहतार में है:

"मुसफ़्फ़ा के लेखक ने इस कथन को इमाम हमीद-उद-दीन की ओर उनके उस्ताद इमाम महबूबी के माध्यम से और शम्सुल अइम्मा हलवानी की ओर भी श्रेय दिया है। कुन्या में इसे हलवानी और नसफी की ओर श्रेय दिया गया है।"[3]

व्याख्या: साहिब-ए-मुसफ़्फ़ा ने इस कथन को इमाम हमीद-उद-दीन की ओर मन्सूब करते हुए कहा कि उन्होंने इसे अपने उस्ताद इमाम महबूबी के हवाले से बयान किया और शम्सुल अइम्मा हलवानी की ओर भी इसे मन्सूब किया है और कुन्या में इसे हलवानी और नसफी की ओर मन्सूब किया गया है। (त)

---

1. दुर्र-ए-मुख़्तार, किताब-तहारत, मुज्तबाई दिल्ली द्वारा मुद्रित, 1/7
2. दुर्र-ए-मुख़्तार, किताब-सलात, मुज्तबाई दिल्ली द्वारा मुद्रित, 1/61
3. रद्दुल मुहतार, किताब-सलात, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र द्वारा मुद्रित, 1/273

اسلامی ہو، ہاں سنت ہے، اور غیر اسلامی آبادی اُن کے نزدیک بھی محل جمعہ و عیدین نہیں، اور سب سے قطع نظر ہو تو رعایت خلاف وہاں تک ہے کہ اپنے مذہب کا مکروہ لازم نہ آئے نہ کہ فاسد و ناجائز محض۔ ایک گناہ تو یہ ہوا، پھر جمعہ کہ صحیح نہیں نفل بتداعی ہوئے اور یہ بدعت ہے، پھر جہاں ظہر فرض ہے اور جماعت واجب اگر جمعہ کے سبب ظہر اصلاً نہ پڑھیں تارک فرض ہوں، اور تنہا تنہا بلکہ بذریعہ رکعات احتیاطی پڑھیں تو ترک جماعت کے سبب تارک واجب کہ اول ہر بار اور ثانی بعد تکرار کبیرہ ہے۔ دُرّ مختار میں ہے:

یندب للمخرج عن الخلاف لکن بشرط عدم لزوم ارتکاب مکروہ مذھبہ[1]۔

اس طرح عمل کرنا خلاف نہ رہے مستحب ہے لیکن شرط یہ ہے کہ وہاں ایسی چیز کا ارتکاب لازم نہ آئے جو اسکے مذہب میں مکروہ ہو۔ (ت)

بایں ہمہ اپنا یہ مسلک ہے کہ ایسی جگہ عوام جس طرح بھی اللہ اور رسول کا نام لیں روکا نہ جائے نہ خود شرکت کی جائے اگر عدم شرکت میں فتنہ نہ ہو ورنہ بہ نیت نفل مشارکت ممکن کہ اختار اھونھما (دونوں میں سے آسان کا اختیار رکھا گیا ہے۔ ت) در مختار میں ہے:

کرہ تحریماً وکل مالایجوز مکروہ صلاۃ مع شروق الا العوام فلا یمنعون من فعلھا لانھم یترکونھا والاداء الجائز عند البعض اولی من الترک کما في القنیۃ وغیرھا[2]۔

یہ مکروہ تحریمیہ طلوع آفتاب کے وقت مطلق نماز اور ہر وہ عمل جو جائز نہیں وہ مکروہ ہے، مگر عوام لوگوں کو اس وقت نماز کی ادائیگی سے روکا نہ جائے کیونکہ وہ بالکل ہی ترک کر دیں

گے، اور اداء جائز بعض علماء کے نزدیک بالکل چھوڑ دینے سے بہتر ہے۔ جیسا کہ قنیہ وغیرہ میں ہے۔ (ت)

رد المحتار میں ہے:

وعزاہ صاحب المصفی الی الامام حمید الدین عن شیخہ الامام المحبوبی والی شمس الائمۃ الحلوانی وعزاہ في القنیۃ الی الحلواني والنسفي[3]۔

صاحب مصفیٰ نے اس قول کی نسبت امام حمید الدین کی طرف کرتے ہوئے کہا کہ انہوں نے اسے اپنے استاد امام محبوبی کے حوالے سے بیان کیا اور شمس الائمہ حلوانی کی طرف بھی اسے منسوب کیا ہے اور قنیہ میں اسے حلوانی اور نسفی کی طرف منسوب کیا ہے۔ (ت)

---

1 دُر مختار کتاب الطھارۃ مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱/۷ 2 دُر مختار کتاب الصلوۃ مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱/۶۱ 3 ردالمحتار کتاب الصلوۃ مطبوعہ مصطفیٰ البابی مصر ۱ / ۲۷۳

Fatawa-e-Razvia Volume 6 Also, it is stated in Durr-e-Mukhtar, Chapter on the Two Eids:

One should not recite Takbeers on the way to the Eidgah for Eid prayer, nor should one perform any voluntary (Nafl) prayers before it at all, and similarly not after it at the prayer place, as it is considered disliked (Makruh) according to the majority of scholars. This rule is for the elite (scholars and the pious). As for the common people, they should not be prevented from reciting Takbeer or performing voluntary prayers, because their inclination towards good deeds is very low. In Al-Bahr and its marginal notes, it is written by a reliable hand that Ali (may Allah be pleased with him) saw a man praying after the Eid prayer. It was said to him, "O Commander of the Faithful! Why do you not stop him?" He replied, "I fear that I may fall under the warning mentioned by Allah Almighty: 'Have you seen him who forbids a servant when he prays?'"[1] (T)

A land of war (Dar-ul-Harb) becomes a land of Islam (Dar-ul-Islam) through the establishment of Islamic government. Conversely, God forbid, for it to become a land of war, mere non-Muslim rule is not enough; rather, the condition is that the place must be contiguous with Dar-ul-Harb on some side, and no Muslim or protected non-Muslim subject (Dhimmi) remains there under the original safety, and the symbols of Islam are completely halted therein. God forbid! As long as any symbols of Islam remain, it will continue to be Dar-ul-Islam. It is stated in Tanwir:

A land of Islam does not become a land of war except by the implementation of polytheistic laws, by its contiguity to a land of war, and when no Muslim or protected subject remains there under the original safety. And a land of war becomes a land of Islam by the implementation of the laws of the people of Islam therein, even if original non-believers remain there and even if it is not contiguous with a land of Islam on any side.[2] (T)

[1] Durr-e-Mukhtar Sharh Tanwir-ul-Absar, Chapter of the Two Eids, printed at Mujtabai Press, Delhi, 1/113. [2] Durr-e-Mukhtar Sharh Tanwir-ul-Absar, Section on seeking safety for a non-believer, printed at Mujtabai Press, Delhi, 1/473.

फ़तावा-ए-रज़विया जिल्द ६ साथ ही दुर्रे मुख्तार, ईदों के अध्याय में है:

ईद की नमाज़ के लिए ईदगाह जाते समय रास्ते में तकबीरें न कहें और उससे पहले नफ़्ल न पढ़ें क्योंकि अधिकांश विद्वानों के निकट यह मकरूह है। यह मामला खास लोगों के लिए है, जहाँ तक आम लोगों का सवाल है, उन्हें न तो तकबीर कहने से रोका जाए और न ही नफ़्ल पढ़ने से क्योंकि भलाई में उनकी रुचि बहुत कम होती है। 'बहर' और उसके हाशिये में एक विश्वसनीय लेख में है कि हज़रत अली (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने एक व्यक्ति को ईद के बाद नमाज़ अदा करते देखा। आपसे कहा गया, "ऐ अमीरुल मोमिनीन! आप उसे मना क्यों नहीं करते?" आपने फ़रमाया: "मुझे डर लगता है कि कहीं मैं अल्लाह तआला द्वारा बताई गई उस चेतावनी के तहत न आ जाऊँ 'क्या आपने उसे देखा जो बंदे को नमाज़ से मना करता है?'"[1] (त)

दारुल हर्ब (युद्ध का घर) इस्लामी शासन से दारुल इस्लाम बन जाता है और अल्लाह की पनाह! इसके विपरीत होने के लिए केवल कुफ़्र की हुकूमत काफी नहीं है, बल्कि शर्त यह है कि वह स्थान किसी ओर से दारुल हर्ब से जुड़ा हो और वहाँ कोई मुसलमान या ज़िम्मी पहले वाली सुरक्षा (अमान) पर न रहे और वहाँ इस्लाम के प्रतीकों को पूरी तरह बंद कर दिया जाए। अल्लाह की पनाह! जब तक इस्लाम के प्रतीकों में से कुछ भी बाकी है, वह बदस्तूर दारुल इस्लाम रहेगा। 'तनवीर' में है:

दारुल इस्लाम उस समय दारुल हर्ब बनता है जब वहाँ शिर्क के नियम लागू हों, वह स्थान किसी ओर से दारुल हर्ब से जुड़ा हो और वहाँ कोई मुसलमान या ज़िम्मी पुरानी अमान पर न रहे। और दारुल हर्ब उस समय दारुल इस्लाम बनता है जब वहाँ इस्लाम के नियम लागू हों, भले ही वहाँ असली काफिर मौजूद हों और भले ही वह किसी ओर से दारुल इस्लाम के साथ जुड़ा न हो।[2] (त)

[1] दुर्रे मुख्तार शरह तनवीर-उल-अबसार, ईदों का अध्याय, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली द्वारा मुद्रित, 1/113
[2] दुर्रे मुख्तार शरह तनवीर-उल-अबसार, काफिर के लिए अमान मांगने का अनुभाग, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली द्वारा मुद्रित, 1/473

पृष्ठ 368/736

فتاوی رضویہ جلد ششم نیز در مختار باب العیدین میں ہے :

لا یکبر فی طریقھا ولا یتنفل قبلھا مطلقا وکذا بعدھا فی مصلاھا فانہ مکروہ عند العامۃ وھذا للخواص اما العوام فلا یمنعون من تکبیر ولا تنفل اصلالقلقۃ رغبتھم فی الخیرات بحرو فی ھامشہ بخط ثقۃ ان علیا رضی اللہ تعالٰی عنہ رأی رجلا یصلی بعد العید فقیل اما تمنعہ یا امیرالمومنین فقال اخاف ان ادخل تحت الوعید قال اللہ تعالٰی ارأیت الذی ینھی عبدا اذا صلی ^1۔

نمازِ عید کے لئے عیدگاہ کو جاتے ہوئے راستے میں تکبیرات نہ کہے اور اس سے پہلے نفل نہ پڑھے کیونکہ یہ اکثر علماء کے نزدیک مکروہ ہیں اور یہ معاملہ خواص کا ہے، رہا عوام کا معاملہ تو انھیں نہ تکبیر سے روکا جائے اور نہ ہی نفل پڑھنے سے کیونکہ بھلائی میں ان کی رغبت بہت کم ہوتی ہے بحر اور اس کے حاشیہ میں ثقہ تحریر میں ہے کہ حضرت علی رضی اللہ تعالٰی عنہ نے ایک شخص کو عید کے بعد نماز ادا کرتے ہوئے دیکھا آپ سے عرض کیا گیا اے امیر المومنین ! اسے آپ منع کیوں نہیں کرتے؟ آپ نے فرمایا : مجھے خوف آتا ہے کہ کہیں میں اللہ تعالیٰ کی بیان کردہ اس وعید کے تحت داخل نہ ہو جاؤں ارشادِ باری تعالیٰ ہے :۔ کیا آپ نے اس کو نہیں دیکھا جو بندے کو نماز سے منع کرتا ہے۔ (ت)

دارِ حرب حکومتِ اسلام سے دارالاسلام ہو جاتی ہے اور عیاذاً باللہ عکس کے لئے فقط حکومتِ کفر کافی نہیں بلکہ شرط ہے کہ وہ جگہ کسی طرف دار الحرب سے متصل ہو اور کوئی مسلم ذمی پہلے امان پر نہ رہے اور شعائرِ اسلام اُس سے بالکل بند کر دیئے جائیں والعیاذ باللہ تعالیٰ جب شعائرِ اسلام سے کچھ بھی باقی ہے بدستور دارالاسلام رہے گی۔ تنویر میں ہے :

لا تصیر دارالاسلام دار حرب الا باجراء احکام الشرک وباتصالھا بدار الحرب وبأن لایبقی فیھا مسلم او ذمی بالامان الاول ودار الحرب تصیر دارالاسلام باجراء احکام اھل الاسلام فیھا وان بقی فیھا کافر اصلی وان لم تتصل بدار الاسلام[1][2]۔

دارالاسلام اس وقت دارالحرب بنتا ہے جب وہاں احکامِ شرک جاری ہوں (یعنی معاذ اللہ وہاں شعائرِ اسلام بالکل ختم کر دیئے جائیں) اور وہ جگہ کسی طرف سے دارالحرب سے متصل ہو اور وہاں کوئی مسلمان اور ذمی پہلے امان پر نہ رہے اور دارالحرب اس وقت دارالاسلام بنتا ہے جب وہاں احکامِ اسلام جاری ہوں اگر چہ وہاں کافر اصلی موجود ہوں اور اگر چہ وہ کسی طرف سے دارالاسلام کے ساتھ متصل بھی نہ ہو۔ (ت)

[1] در مختار شرح تنویر الابصار باب العیدین مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۱۱۳ [2] در مختار شرح تنویر الابصار فصل فی استیمان الکافر مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۴۷۳

Fatawa Razawiya Volume Six

It is stated in Jami' al-Rumuz: There is no disagreement that a Land of War (Dar al-Harb) becomes a Land of Islam (Dar al-Islam) by the implementation of some Islamic rulings therein. However, for a Land of Islam—we seek refuge in Allah from it—to become a Land of War, there are certain conditions according to the Imam (Abu Hanifa). One of them is that the rulings of disbelief (kufr) are openly implemented; for example, the ruler decides according to the law of disbelief and people cannot refer to Muslim judges, as mentioned in al-Khayrah. The second condition is that the place is contiguous to the Land of War. The third is that the initial security is terminated. Shaykh al-Islam and Imam al-Sbijabi say that if even one ruling of Islam remains there, it will still be called the Land of Islam, as mentioned in al-Imadi etc. (T)

It is stated in Tahtawi 'ala al-Durr: Al-Ustrushani mentioned in his 'Fasul' from Abu al-Yasr that the Land of Islam does not become a Land of War as long as all that by which it became a Land of Islam is not invalidated; he mentioned this in the rulings concerning apostates. And al-Sbijabi mentioned in his 'Mabsut' that the Land of Islam is judged to be the Land of Islam, so this ruling remains with the presence of even one ruling therein, and it does not become a Land of War except after the disappearance of all signs (qara'in). Conversely, the Land of War becomes a Land of Islam with the disappearance of some signs, and that is such that...

[1] Jami' al-Rumuz, Kitab al-Jihad, printed by Maktaba Islamia, Gonbad-e Qabus, Iran, 2/556 Page 369 of 736

जामेउर रमूज़ में है: इसमें कोई मतभेद नहीं है कि इस्लाम के कुछ आदेशों के कार्यान्वयन से दारुल हर्ब (युद्ध का क्षेत्र) दारुल इस्लाम बन जाता है। लेकिन दारुल इस्लाम का—अल्लाह की पनाह—दारुल हर्ब बनने के लिए इमाम साहब (अबू हनीफ़ा) के यहाँ कुछ शर्तें हैं। उनमें से एक यह है कि कुफ़्र (अविश्वास) के आदेश खुले तौर पर लागू हों, उदाहरण के लिए शासक कुफ़्र के अनुसार निर्णय करे और लोग मुस्लिम न्यायधीशों (क़ाज़ियों) से संपर्क न कर सकें, जैसा कि 'खैराह' में है। दूसरी शर्त यह है कि वह स्थान दारुल हर्ब से सटा हुआ हो। तीसरी शर्त यह है कि प्रारंभिक सुरक्षा समाप्त हो जाए। शैखुल इस्लाम और इमाम अस्बिजाबी कहते हैं कि यदि वहां इस्लाम का एक भी आदेश शेष है, तो उसे दारुल इस्लाम ही कहा जाएगा, जैसा कि 'इमादी' आदि में है। (त)

तख़तावी अल-दुर्र में है: शैख़ उस्त्रुशनी ने अपनी 'फ़सूल' में शैख़ अबू अल-यसर से बयान किया है कि दारुल इस्लाम उस समय तक दारुल हर्ब नहीं बन सकता जब तक कि वे सभी आदेश अमान्य न हो जाएं जिनके कारण वह दारुल इस्लाम बना था; इसे उन्होंने धर्मत्यागी के आदेशों में उल्लेख किया है। और अस्बिजाबी ने अपनी 'मबसूत' में उल्लेख किया है कि दारुल इस्लाम को दारुल इस्लाम ही माना जाएगा, इसलिए यह आदेश उसमें एक भी इस्लामी आदेश की उपस्थिति तक बना रहेगा। वह दारुल हर्ब तभी बनेगा जब सभी साक्ष्य (क़राइन) और प्रतीक समाप्त हो जाएं। लेकिन दारुल हर्ब कुछ साक्ष्यों के हटने से दारुल इस्लाम बन जाता है, वह इस प्रकार है कि...

[1] जामेउर रमूज़, किताबुल जिहाद, मकतबा इस्लामिया, गुंबद काबूस, ईरान, 2/556 पृष्ठ 736 का 369

جامع الرموز میں ہے: لا خلاف ان دارالحرب یصیر دار الاسلام باجراء بعض احکام الاسلام فیھا و اما صیر ورتھا دارالحرب نعوذ باللہ منہ فعندہ بشروط احدھا اجراء احکام الکفر اشتھارا بان یحکم الحاکم بحکمھم ولا یرجعون الی قضاۃ المسلمین کما فی الخیرۃ والثانی الاتصال بدار الحرب والثالث زوال الامان الاول وقال شیخ الاسلام والامام السبیجابی ان الدار محکومۃ بدار الاسلام ببقاء حکم واحد فیھا کما فی العمادی وغیرہ ۱۔ اس میں کوئی اختلاف نہیں کہ بعض احکام اسلام کے اجراء سے دارالحرب دارالاسلام بن جاتا ہے لیکن دارالاسلام کا نعوذ باللہ دارالحرب بننے کے لئے امام صاحب کے ہاں کچھ شرائط ہیں، ان میں سے ایک یہ ہے کہ احکام کفر اعلانیہ جاری ہوں مثلاً حاکم کفر کے مطابق فیصلہ کرے اور لوگ مسلمان قاضیوں سے رجوع نہ کر سکیں جیسا کہ خیرہ میں ہے، دوسری یہ کہ وہ جگہ دارالحرب کے ساتھ متصل ہو، تیسری یہ کہ پہلی امان ختم ہو جائے، شیخ الاسلام اور امام اسپیجابی کہتے ہیں اگر وہاں ایک حکم بھی اسلام کا باقی ہے تو اسے دارالاسلام ہی کہا جائے گا جیسا کہ عمادی وغیرہ میں ہے۔ (ت)

طحطاوی علی الدر میں ہے: ذکر الاستروشنی فی فصولہ عن ابی الیسر ان دار الاسلام لا تصیر دار الحرب مالم یبطل جمیع مابہ صارت دار الاسلام، ذکرہ فی احکام المرتدین وذکر السبیجابی فی مبسوطہ ان دار الاسلام محکوم بکونھا دار الاسلام فیبقی ھذا الحکم ببقاء حکم واحد فیھا ولا تصیر دار حرب الا بعد زوال القرائن و دار الحرب تصیر دار الاسلام بزوال بعض القرائن وھوان شیخ استروشنی نے اپنی فصول میں شیخ ابوالیسر سے بیان کیا ہے کہ دارالاسلام اس وقت تک دارالحرب نہیں بن سکتا جب تک وہ تمام احکام باطل نہ ہوجائیں جن کی وجہ سے وہ دارالاسلام بنا تھا اس کو احکام مرتدین میں ذکر کیا ہے۔ اور اسپیجابی نے اپنی مبسوط میں ذکر کیا ہے کہ دارالاسلام اس

وقت تک دارالاسلام ہی رہے گا جب تک اس میں کوئی ایک حکم اسلام موجود ہو اور تمام قرائن اور شعائر کے زوال کے بعد ہی دارالحرب بنے گا لیکن دارالحرب بعض قرائن کے زوال سے دارالاسلام بن جاتا ہے وہ اس طرح کہ

[1] جامع الرموز کتاب الجہاد مطبوعہ مکتبہ اسلامیہ گنبد قاموس ایران ۵۵۶/۲ Page 369 of 736

Fatawa Razawiyya Volume 6

[Top Table] Arabic side: In which the rulings of the people of Islam are carried out. Al-Lamishi mentioned in his 'Waqi'at' that it becomes Dar al-Islam (the abode of Islam) through these three signs. It does not become Dar al-Harb (the abode of war) as long as any of them remain. Imam Nasir al-Din stated in 'Al-Manshur' that Dar al-Harb becomes Dar al-Islam by implementing the rulings of Islam. As long as a trace of Islam's connections remains, the side of Islam will be preferred. (1) End. Praise be to Allah, and Allah Almighty knows best. Urdu side: In which some Islamic rulings are implemented. Al-Lamishi mentioned in 'Waqi'at' that it becomes Dar al-Islam if these three signs are found. But it cannot become Dar al-Harb as long as even one of them exists there. Imam Nasir al-Din said in 'Al-Manshur' that it becomes Dar al-Islam by implementing Islamic rulings, and as long as any indicator of Islam is found, preference will be given to the side of Islam. End. All praise belongs to Allah, and Allah Almighty knows best. (T)

Problem No. 555: From Qila Chhabra, District Aligarh. Petitioner: Maqbool Ahmad Sahib, 4 Ramadan 1339 AH. What do the scholars of religion say about a case where a Hafiz recited "Hamiyyatan lil-Mu'minin" in prayer, made the 'Noon' silent (sakin), stopped his breath, and performed a full stop (waqf), thinking it was the end of a verse. He then insisted on his action. Another person said there is a 'La' (sign for no stopping) here, and joining (wasl) was necessary. The Hafiz did not pay attention and repeated the prayer. The Hafiz later said that repeating the prayer was not correct; although he mistakenly read it, there was no corruption in the meaning, so the prayer was valid. He clarified that "mistakenly" does not mean intentionally reciting the Quran incorrectly, as that would be a severe sin. The Hafiz said it would be a sin, but the prayer remains valid. Please state if repeating the prayer was correct or if the original prayer was valid. Provide the full reference from the book. Explain and be rewarded.

The Answer: Following the rules of stopping (waqf) and joining (wasl) is better, but not doing so causes no defect in the prayer at all, especially where the speech is complete. There is no harm even in intentional stopping. Repeating the prayer was purely meaningless. Yes, an intention of opposition would indeed be a sin, or in some cases even merit the harshest ruling, but such is not expected from a Muslim. It is stated in Alamgiriyyah:

[Bottom Table] Arabic: If one stops in a place not meant for stopping, or starts in a place not meant for starting, if... Urdu: When a stop was made at a place of stopping or started from where it wasn't the place of starting, if in meaning...

1 Hashiyah al-Tahtawi 'ala al-Durr al-Mukhtar, Section on seeking protection of a non-believer, printed by Dar al-Ma'rifah, Beirut, 2/261. Page 370 of 736

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

[ऊपरी तालिका] अरबी पक्ष: जिसमें अहले इस्लाम के आदेश लागू होते हैं। अल-लामिषी ने 'वाक़िआत' में उल्लेख किया है कि इन तीन प्रतीकों के माध्यम से वह दारुल इस्लाम बन जाता है। वह तब तक दारुल हर्ब नहीं बनता जब तक उनमें से कोई भी शेष रहे। इमाम नासिर अल-दीन ने 'मंशूर' में उल्लेख किया है कि इस्लामी आदेशों को लागू करने से दारुल हर्ब दारुल इस्लाम बन जाता है। जब तक इस्लाम का कोई भी संबंध बना रहता है, इस्लाम के पक्ष को ही प्राथमिकता दी जाएगी। (१) इति। अल्लाह की प्रशंसा है, और अल्लाह सर्वशक्तिमान बेहतर जानता है। उर्दू पक्ष: इसमें कुछ इस्लामी आदेशों का कार्यान्वयन होना चाहिए, और लामिषी ने वाक़िआत में उल्लेख किया है कि इन तीन संकेतों के पाए जाने पर वह दारुल इस्लाम बन जाता है, लेकिन वह तब तक दारुल हर्ब नहीं बन सकता जब तक उनमें से एक का अस्तित्व वहाँ शेष रहे। इमाम नासिर अल-दीन ने मंशूर में कहा है कि इस्लामी आदेशों के कार्यान्वयन से वह दारुल इस्लाम बन जाता है और जब तक इस्लाम के संकेतों में से कोई एक पाया जाए, तो इस्लाम के पक्ष को ही प्राथमिकता दी जाएगी। इति। और तमाम प्रशंसा अल्लाह तआला के लिए है, और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला नंबर 555: किला छबरा, ज़िला अलीगढ़ से, प्रार्थी: मक़बूल अहमद साहब, 4 रमज़ान 1339 हिजरी। धर्म के विद्वान क्या कहते हैं कि एक हाफ़िज़ साहब ने नमाज़ में "हम्मियतल-लिल-मुमिनीन" पढ़ा, 'न्यून' को साकिन पढ़ा और सांस तोड़ दी, पूरा वक़्फ़ (विराम) किया, यह सोचकर कि यहाँ आयत है। फिर अपनी बात पर अड़े रहे। दूसरे साहब ने कहा कि यहाँ 'ला' (नहीं रुकने का संकेत) है, वस्ल (मिलाना) ज़रूरी था। हाफ़िज़ साहब ने ध्यान नहीं दिया और नमाज़ फिर से पढ़ी। हाफ़िज़ साहब ने कहा कि नमाज़ को दोहराना सही नहीं था, हालाँकि उन्होंने जानबूझकर गलत पढ़ा लेकिन अर्थ में कोई बिगाड़ नहीं हुआ, इसलिए नमाज़ सही है। उन्होंने स्पष्ट किया कि "जानबूझकर" का मतलब यह नहीं है कि कुरान को जानकर गलत पढ़ो, यह तो बड़ा गुनाह होगा। हाफ़िज़ ने कहा गुनाह होगा लेकिन नमाज़ सही है। कृपया बताएँ कि दोहराना सही था या वही नमाज़ सही थी। जिस किताब से प्रमाण हो, उसका पूरा पता लिखें। स्पष्ट करें और पुण्य पाएँ।

उत्तर: वक़्फ़ (रुकने) और वस्ल (मिलाने) में नियमों का पालन करना बेहतर है, लेकिन ऐसा न करने से नमाज़ में बिल्कुल कोई कमी नहीं आती, विशेषकर ऐसी जगह जहाँ बात पूरी हो गई हो। जानबूझकर रुकने में भी कोई हर्ज नहीं है, नमाज़ को दोहराना बिल्कुल अर्थहीन था। हाँ, नियमों के

विरुद्ध चलने का इरादा निश्चित रूप से गुनाह होगा, और कुछ मामलों में सबसे कठोर आदेश का पात्र होगा, लेकिन एक मुसलमान से ऐसी उम्मीद नहीं की जाती। आलमगीरिया में है:

[निचली तालिका] अरबी: यदि कोई ऐसी जगह रुके जो रुकने की जगह नहीं थी, या ऐसी जगह से शुरू करे जो शुरुआत का स्थान नहीं था, यदि... उर्दू: जब ऐसी जगह वक़्फ़ (विराम) किया जो रुकने की जगह थी या वहाँ से शुरू किया जो शुरू करने का स्थान नहीं था, अगर अर्थ में...

1 हाशिया अल-तहतावी अली अल-दुर्र अल-मुख्तार, काफ़िर से अमान माँगने का खंड, दारुल माअरिफ़ा बेरुत द्वारा मुद्रित, 2/261। पृष्ठ 736 में से 370

فتاوی رضویہ جلد ششم

تجری فیھا احکام اھل الاسلام وذکر اللامشی فی واقعاتہ انھا صارت دار الاسلام بھذہ الاعلام الثلاثۃ فلا تصیر دار حرب مابقی شیئ منھا وذکر الامام ناصر الدین فی المنشور ان دار الحرب صارت دار الاسلام بأجراء احکام الاسلام فما بقیت علقۃ من علائق الاسلام یترجح جانب الاسلام ۱ انتھی واللہ الحمد واللہ تعالی اعلم۔

اس میں بعض احکامِ اسلامی کا اجرا ہوجائے، اور لامشی نے واقعات میں ذکر کیا ہے کہ ان تین علامات کے پائے جانے پر وہ دار الاسلام بن جاتا ہے لیکن وہ دار الحرب اس وقت تک نہیں بن سکتا جب تک ان میں سے ایک کا وجود وہاں باقی رہے اور امام ناصر الدین نے منشور میں کہا ہے کہ احکامِ اسلامی کے اجرا سے وہ دار الاسلام بن جاتا ہے اور جب تک قرائنِ اسلام میں سے کوئی ایک پایا جائے تو جانبِ اسلام کو ہی ترجیح ہوگی انتہی اور تمام تعریف اللہ تعالیٰ کے لئے ہے واللہ تعالیٰ اعلم۔ (ت)

مسئلہ نمبر ۵۵۵: از قلعہ چھبرہ ضلع علی گڑھ مسئولہ مقبول احمد صاحب ۴ رمضان ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین کہ ایک حافظ صاحب نے نماز میں پڑھا "حمّیۃ للمؤمنین" ولا یزید نون کو ساکن پڑھا اور سانس توڑ دی پورا وقف کیا یہ خیال تھا کہ یہاں آیت ہے پھر اپنے کہنے پر اصرار کیا، دوسرے صاحب نے کہا یہاں لای ہے وصل ضرور تھا حافظ صاحب نے خیال نہ کیا انھوں نے نماز کا اعادہ کیا حافظ صاحب نے کہا اعادہ درست نہیں گو عمداً غلط پڑھا لیکن معنی میں کچھ فساد نہیں ہوا نماز صحیح ہے انھوں نے کہا عمداً کا یہ مطلب نہیں ہے کہ قرآن کو جان کر غلط پڑھو یہ تو سخت گناہ ہوگا، حافظ نے کہا گناہ ہوگا لیکن نماز صحیح ہے ارشاد فرمائیے کہ اعادہ درست ہوا یا وہی نماز صحیح ہے جس کتاب سے سند ہو اُس کا پورا پتہ تحریر ہو۔ بینوا توجروا۔

الجواب: وقف و وصل میں اتباع بہتر ہے مگر اس کے نہ کرنے سے نماز میں اصلاً کچھ خلل نہیں آتا خصوصاً ایسی جگہ کہ کلام تام ہے قصداً وقف میں بھی حرج نہیں اعادہ محض بے معنی تھا ہاں قصدِ مخالفت البتہ گناہ بلکہ بعض صورتوں میں سب سے سخت تر حکم کا مستوجب ہوگا مگر وہ مسلمان سے متوقع نہیں، عالمگیریہ میں ہے:

اذ وقف فی غیر موضع الوقف او ابتداء فی غیر موضع الابتداء ان لم

جب ایسی جگہ وقف کی جگہ تھی یا وہاں سے شروع کیا جو شروع کا مقام نہ تھا، اگر معنی میں

1 حاشیہ الطحطاوی علی الدر المختار فصل فی استیمان الکافر مطبوعہ دارالمعرفہ بیروت ۲/۲۶۱

Fatawa Razawiyyah Volume 6

[Arabic text]: If the meaning changes drastically, for example, reading "Inna alladhina amanu wa 'amilu as-salihat" (Indeed, those who believe and do righteous deeds) and stopping, then starting with "ula'ika hum khayru al-bariyyah" (those are the best of creatures), it does not invalidate the prayer by consensus of our scholars. Thus it is mentioned in Al-Muhit. And Allah Almighty knows best.

[Urdu commentary]: If there isn't a heinous change, for example, stopping after reading "Inna alladhina amanu wa 'amilu as-salihat" and then starting from "ula'ika..." etc., our scholars agree that the prayer is not invalidated. It is stated similarly in Al-Muhit. (T) And Allah Almighty knows best.

Problem No. 556, 557: From Kagrala, District Budaun, sent by Yaseen Khan, 7th Dhu al-Hijjah 1336 AH. (1) Is there any harm in prayer by omitting a Surah in between? (2) The Imam read eight or ten verses, then omitted one or two verses he forgot, then started reciting again and read ten to twelve verses and went into Ruku. Was there any harm in the prayer?

The Answer: (1) Skipping a small Surah in the middle is disliked (Makruh), for example, skipping "Idha Ja'a" (An-Nasr) and reading "Qul Huwa Allahu Ahad" (Al-Ikhlas). If it's a long Surah, there is no harm, like reading "At-Tin" then skipping some and reading "Inna Anzalnahu" (Al-Qadr). And Allah Almighty knows best. (2) There is no harm in prayer because of this if it happened unintentionally (forgetfully). However, intentionally skipping a single verse in the middle is disliked (Makruh). And Allah Almighty knows best.

Problem No. 558: What do the scholars of religion and muftis of the firm Shariah say about this matter: Should a prompt (luqma) be given after three verses in an obligatory (fardh) prayer or not? And is it permissible to have two congregations (musallas) in one mosque for Tarawih prayer? Explain and you shall be rewarded.

The Answer: Wherever the Imam makes a mistake, it is permissible for the follower to give him a prompt (luqma), even if he has already recited a thousand verses. This is correct as stated in Rad al-Muhtar. Prompting one's Imam is not forbidden (Bahr). (Prompting one's own Imam is not prohibited, Bahr - T). In the same book, it is mentioned: [Arabic text]: Whether the Imam has recited the amount sufficient for the prayer to be valid or not, whether he moved to another verse or not, whether the

prompting is repeated or not, it is the most correct view (Nahr). [Urdu commentary]: Whether the Imam has recited enough for the prayer to be valid or not, whether he moved to another verse or not, whether the prompt was given repeatedly or just once, this is the most correct view (Nahr - T).

1. Fatawa Hindiyyah, Fifth Chapter on Mistakes of the Reciter, printed by Noorani Kutub Khana, Peshawar, 1/81.
2. Rad al-Muhtar, section on issues of Mistakes of the Reciter, printed by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/490.
3. Rad al-Muhtar, section on issues of Mistakes of the Reciter, printed by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/490.

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

[अरबी पाठ]: यदि अर्थ में भारी परिवर्तन होता है, उदाहरण के लिए "इन्ना अल्लज़ीना आमनू वा अमिलु अस-सालिहात" पढ़कर रुकना और फिर "उलाइका हुम खैरुल बरिय्याह" से शुरू करना, तो हमारे उलेमाओं की सहमति के अनुसार नमाज़ फासिद (अमान्य) नहीं होती। अल-मुहीत में ऐसा ही है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

[उर्दू टिप्पणी]: यदि कोई घृणित परिवर्तन नहीं हुआ, उदाहरण के लिए "इन्ना अल्लज़ीना आमनू..." पढ़कर रुक गए और फिर "उलाइका..." आदि से शुरू किया, तो हमारे उलेमाओं का इत्तेफाक (सहमति) है कि नमाज़ फासिद नहीं होगी। मुहीत में इसी तरह है। (त) और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसाला नंबर 556, 557: कगराला, जिला बदायूँ से, प्रेषक यासीन खान, 7 ज़ुल-हिज्जा 1336 हिजरी। (1) नमाज़ के बीच में एक सूरत छोड़ देने से नमाज़ में कोई हर्ज है या नहीं? (2) इमाम ने आठ-दस आयतें पढ़ीं, फिर एक या दो भूली हुई आयतें छोड़कर फिर से किरत (पाठ) शुरू की और दस-बारह आयतें पढ़कर रुकू किया, क्या नमाज़ में कोई हर्ज हुआ?

उत्तर: (1) बीच में छोटी सूरत छोड़ना मकरूह है, जैसे "इज़ा जा'अ" के बाद "कुल हुवल्लाह" पढ़ना। और अगर बड़ी सूरत हो तो कोई हर्ज नहीं, जैसे "वत-तीन" के बाद "इन्ना अन्ज़लनाहू" पढ़ना। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (2) इससे नमाज़ में कोई हर्ज नहीं है जब यह भूलवश हुआ हो। हालांकि, जानबूझकर बीच में एक आयत छोड़ देना मकरूह है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसाला नंबर 558: दीन के विद्वान और शरीअत के मुफ्ती इस मामले में क्या कहते हैं कि फर्ज़ नमाज़ में तीन आयतों के बाद लुक्मा (संकेत) देना चाहिए या नहीं? और क्या एक ही मस्जिद में तरावीह की नमाज़ के लिए दो मुसल्ले (जमात) जायज़ हैं? बयान फरमाएं, आपको सवाब मिलेगा।

उत्तर: इमाम जहाँ गलती करे, मुक्तदी (अनुगामी) के लिए जायज़ है कि उसे लुक्मा दे, चाहे वह हज़ार आयतें पढ़ चुका हो। यही सही है। रद अल-मुहतार में है: "अपने इमाम को लुक्मा देना मना नहीं है (बहर)।" (अपने इमाम को लुक्मा देना वर्जित नहीं है, बहर - त)। उसी में यह भी है: [अरबी पाठ]:

चाहे इमाम ने नमाज़ के वैध होने जितनी किरत कर ली हो या नहीं, चाहे वह दूसरी आयत पर चला गया हो या नहीं, चाहे लुक्मा बार-बार दिया गया हो या नहीं, यही सबसे सही विचार है (नहर)। [उर्दू टिप्पणी]: चाहे इमाम ने इतनी किरत कर ली हो जो नमाज़ के लिए काफी थी या न की हो, चाहे वह दूसरी आयत की तरफ मुंतकिल (स्थानांतरित) हो गया हो या न हुआ हो, लुक्मा बार-बार दिया गया हो या एक ही बार दिया गया हो, सही यही है (नहर - त)।

1. फ़तावा हिन्दिया, पांचवां अध्याय किरत की गलतियों पर, नूरानी कुतुब खाना, पेशावर, 1/81।
2. रद अल-मुह्तार, किरत की गलतियों के मसलों पर, मुस्तफा अल-बाबी, मिस्र, 1/490।
3. रद अल-मुह्तार, किरत की गलतियों के मसलों पर, मुस्तफा अल-बाबी, मिस्र, 1/490।

فتاوی رضویہ جلد ششم

یتغیر به المعنی تغیرا فاحشا نحوان یقرأ ان الذین امنوا | فحش تبدیلی نہیں آئی مثلاً ان الذین أمنو وعملوا الصلحت وعملوا الصلحت ووقف ثم ابتدأ بقوله اولئك هم خیر | پڑھ کر وقف کیا پھر اولئك الخ (سے ابتداء کی تو ہمارے علماء کا البریة لا تفسد بالاجماع بین علمائنا هکذا في المحیط | اتفاق ہے کہ نماز فاسد نہ ہوگی، محیط میں اسی طرح ہے۔(ت) واللہ تعالی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۵۵۶، ۵۵۷ : از کگرالہ ضلع بدایوں مرسلہ یسین خان ۷ ذی الحجہ ۱۳۳۶ھ (۱) درمیان میں ایک سورت ترک کرنے سے نماز میں کچھ حرج ہے یا نہیں؟ (۲) امام نے آٹھ دس آیتیں پڑھ کر ایک یاد دو آیتیں ترک کرکے پھر قرات شروع کی اور دس بارہ آیتیں پڑھ کر رکوع کیا نماز میں کچھ حرج ہوا؟

الجواب : (۱) چھوٹی سورت بیچ میں چھوڑنا مکروہ ہے جیسے اذا جاء کے بعد قل ھو اللہ اور بڑی سورت ہو تو حرج نہیں جیسے والتین کے بعد انا انزلنا۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔ (۲) اس سے نماز میں حرج نہیں جبکہ سہواً ہوا ہو اور قصداً و ایک آیت بیچ میں چھوڑ دینا مکروہ ہے، واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۵۵۸ : کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین اس مسئلہ میں کہ نماز فرض میں تین آیت کے بعد لقمہ دینا چاہئے یا نہیں؟ اور تراویح نماز ایک مسجد میں دو مصلے جائز ہے یا نہیں۔ بینوا توجروا

الجواب : امام جہاں غلطی کرے مقتدی کو جائز ہے کہ اسے لقمہ دے اگر چہ ہزار آیتیں پڑھ چکا ہو، یہی صحیح ہے، رد المحتار میں ہے : الفتح علی امامہ غیر منھی عنہ بحر (اپنے امام کو لقمہ دینا منع نہیں، بحر ۔ت) اسی میں ہے : سواء قرأ الامام قدر ما یجوز به الصلوة ام لا انتقل | خواہ امام

نے اتنی قرات کر لی ہو جو نماز کے لئے کافی تھی یا نہ کی الی أیة اخری ام لا تکرر الفتح ام لا ھو الاصح | ہو، خواہ وہ دوسری آیت کی طرف منتقل ہوگیا یا نہ ہوا ہو، لقمہ نہر - ۳ | بار بار دیا ہو یا ایک ہی بار دیا ہو اصح یہی ہے نہر ۔ (ت)

1 فتاوٰی ہندیہ الفصل الخامس فی زلۃ القاری مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور ۱/۸۱ 2 رد المحتار مطلب مسائل زلۃ القاری مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱ / ۴۹۰ 3 رد المحتار مطلب مسائل زلۃ القاری مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱ / ۴۹۰

Fatawa-e-Razvia Volume Six

Two or more congregations of Tarawih in one mosque at the same time, as long as the voice of one does not cause confusion for the other and they are at a distance from each other, just as it happens in Makkah Mukarramah in Masjid al-Haram Sharif, are permissible. And Allah Almighty knows best.

Ruling Number 559: What do the scholars of religion and the muftis of the firm Sharia say about this matter: that a person in prayer recited the end of Surah Al-Baqarah and instead of 'rabbana la tu'akhidhna', he recited 'rabbana wa la tu'akhidhna' i.e., added the letter 'waw' out of forgetfulness; was his prayer valid or not?

Answer: It was [valid] because it does not cause a deviation from the meaning (because there is no disruption in the meaning from it. T). And Allah Almighty knows best.

Ruling Number 560: The Imam recited 'ghayril maghdubi' and 'alayhim' was omitted out of forgetfulness. Was the prayer valid or invalid?

Answer: The prayer was valid, the obligation was fulfilled because the meaning remains sound; the omission of such links is very common, for instance, 'Maghfur' is used in the sense of 'Maghfur lah', as mentioned in 'Ta' (abbreviation). In fact, I have seen this in a Hadith narrated by Abu Bakr Siddiq (may Allah be pleased with him). (The meaning is correct because the omission of the preposition is well-known and frequent; similarly, the word 'Maghfur' is originally 'Maghfur lah', as found in 'Ta' and in a Hadith from Abu Bakr Siddiq (RA). T). However, since the obligation was to recite the entire Surah Fatiha, there was a shortcoming in its fulfillment. Therefore, 'Sajda Sahw' (prostration of forgetfulness) was necessary; if not performed, the prayer must be repeated. Allama Rahmati states in 'Radd al-Muhtar':

'By omitting something from it, be it a verse or less, even a single letter, one is not considered to have performed it in its entirety, which is the obligation.' (T) If some part of Al-Fatiha was missed, even less than a verse, even if it is one letter, then such a person cannot be declared to have recited the whole of Fatiha (which was obligatory). (T)

Ruling Number 561, 562: 16 Jumada al-Akhira 1338 AH What do the scholars of religion say about this word: if 'yar-zuqukum' is read as 'yu-riz-qukum', what kind of harm is it and what kind of sinner will he be? In the first Khutbah it is written 'yar-

zuqukum' and the Qari Sahib reads 'yu-riz-qukum' for this reason I have caught his mistake. If it is my fault, I will admit it. What is the Qari Sahib's mistake? The word 'Fatima-tuz-Zahra' has a prolongation (madd) of four Alifs.

1 Radd al-Muhtar, Chapter: Description of Prayer, published by Mustafa Al-Babi, 1/338.

तरावीह की दो या दो से अधिक जमातें एक ही मस्जिद में एक ही समय में, जब तक एक की आवाज़ से दूसरे को भ्रम न हो और वे एक-दूसरे से पर्याप्त दूरी पर हों, जैसा कि मक्का मुकर्रमा की मस्जिद अल-हरम शरीफ़ में होता है, जायज़ हैं। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला नंबर 559: दीन के विद्वान और शरीयत के मुफ़्ती इस मसले के बारे में क्या कहते हैं: कि एक व्यक्ति ने नमाज़ में सूरह बक़रह की आखिरी आयतें पढ़ीं और 'रब्बना ला तुआख़िज़ना' की जगह 'रब्बना व ला तुआख़िज़ना' पढ़ा, यानी भूलवश 'वाव' (waw) अक्षर बढ़ा दिया, तो उसकी नमाज़ हुई या नहीं?

उत्तर: हो गई, क्योंकि यह अर्थ में विचलन पैदा नहीं करता (क्योंकि इससे अर्थ में कोई ख़लल वाक़ेअ नहीं होता। त)। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला नंबर 560: इमाम ने 'ग़ैरिल मग़ज़ूबि' पढ़ा और भूलवश 'अलैहिम' छूट गया, तो नमाज़ सही हुई या फ़ासिद (ख़राब)?

उत्तर: नमाज़ सही हो गई, फ़र्ज़ अदा हो गया क्योंकि अर्थ की शुद्धता के लिए ऐसी चीज़ों का लोप (हज़्फ़) बहुत आम है, जैसे 'मग़फ़ूर' शब्द 'मग़फ़ूर लह' के अर्थ में उपयोग होता है, जैसा कि 'ता' (संकेत) में है। बल्कि मैंने सिद्दीक़-ए-अकबर (रज़ियल्लाहु अन्हु) की एक हदीस में भी ऐसा ही देखा है। (अर्थ सही होने की वजह से, क्योंकि सिला (preposition) का लोप प्रसिद्ध और बहुत है; इसी तरह शब्द 'मग़फ़ूर' असल में 'मग़फ़ूर लह' है जैसा कि 'ता' में है और उस हदीस में भी है जो हमारे आक़ा सिद्दीक़-ए-अकबर (रज़ियल्लाहु अन्हु) से मरवी है। त)। लेकिन चूँकि पूरी सूरह फ़ातिहा का पढ़ना वाजिब था, उसकी अदायगी में कमी हुई, इसलिए सज्दा-ए-सहव करना चाहिए था, अगर नहीं किया तो नमाज़ दोहराना ज़रूरी है। 'रद्दुल मुह्तार' में अल्लामा रह़मती फ़रमाते हैं:

'उसमें से कुछ छोड़ देने से, चाहे वह एक आयत हो या उससे कम, यहाँ तक कि एक अक्षर ही क्यों न हो, वह उसे पूर्ण रूप से पढ़ने वाला नहीं माना जाएगा, जो कि वाजिब है।' (त) सूरह फ़ातिहा में से कोई हिस्सा छूट गया, चाहे एक आयत से कम हो, भले ही एक अक्षर हो, तो ऐसे व्यक्ति को पूरी फ़ातिहा (जो वाजिब थी) पढ़ने वाला करार नहीं दिया जा सकता। (त)

मसला नंबर 561, 562: 16 जुमादल उख़रा 1338 हिजरी दीन के विद्वान इस शब्द के बारे में क्या कहते हैं: अगर 'यरज़ुक़ुकुम' को 'युरिज़-क़ुकुम' पढ़ा जाए तो क्या खराबी है और वह किस प्रकार का गुनहगार होगा? पहले खुतबे में 'यरज़ुक़ुकुम' लिखा है और क़ारी साहब 'युरिज़-क़ुकुम' पढ़ते हैं, इसी वजह से मैंने उनकी ग़लती पकड़ी है। इसमें अगर मेरी ग़लती हो तो मैं स्वीकार करूँऔर क़ारी साहब की ग़लती हो तो उन पर क्या है? 'फ़ातिमा-तुज़-ज़हरा' शब्द में चार अलिफ़ की खींच (मद्द) है।

1. रद्दुल मुह्तार, बाब: सिफ़तुस्सलाह, मुद्रित: मुस्तफ़ा अल-बाबी, 1/338.

पृष्ठ 372/736

فتاوی رضویہ جلد ششم

تراویح کی دو یا زائد جماعتیں ایک مسجد میں ایک وقت میں جبکہ ایک کی آواز سے دوسرے کو اشتباہ نہ ہو، دور دور فاصلے پر ہوں جیسی مکہ معظمہ مسجد الحرام شریف میں ہوتی ہیں جائز ہیں۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۵۵۹: کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین اس مسئلہ میں کہ ایک شخص نے نماز میں آخر سورہ بقرہ پڑھا اور بجائے ربنا لا تؤاخذنا، ربنا ولا تؤاخذنا یعنی باز دیاد حرف واؤ سہواً پڑھ گیا تو نماز اس کی ہوئی یا نہیں؟

الجواب: ہوئی لانہا لم تؤثر خلافا فی المعنی (کیونکہ اس سے معنی میں خلل واقع نہیں ہوتا۔ت) واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۵۶۰: امام نے غیر المغضوب پڑھا اور علیہم از راہ سہو چھوٹ گیا نماز صحیح ہوئی یا فاسد؟

الجواب: نماز صحیح ہوگئی فرض اتر گیا لصحۃ المعنی فان حذف امثال الصلات شائع کثیرا ومنہ المغفور بمعنی المغفور لہ کما فی ط بل رأیتہ فی حدیث عن ابی بکر الصدیق رضی اللہ تعالی عنہ (معنی درست ہونے کی وجہ سے، کیونکہ صلہ کا حذف مشہور و کثیر ہے، اسی طرح لفظ مغفور ہے اصلاً مغفور لہ ہے جیسا کہ ط میں ہے بلکہ میں نے اس حدیث میں بھی دیکھا ہے جو سیدنا ابوبکر صدیق رضی اللہ تعالی عنہ سے مروی ہے۔ت) مگر واجب کہ قرات سورہ فاتحہ بتما مہا تھی اس کی ادا میں قصور ہوا سجدہ سہو چاہئے تھا اگر نہ کیا تو اعادہ نماز چاہئے۔ ردالمختار میں علامہ رحمتی سے ہے: بترک شیئ منہا ایۃ او اقل ولو حرفا لایکون اتیا | فاتحہ سے کوئی آیت

چھوٹ گئی یا اس سے کم اگرچہ ایک حرف بِکُلِّہا الذی ھو الواجب ۔ ۱ | ہو تو ایسے شخص کو تمام فاتحہ (جو واجب تھی) کا پڑھنے والا قرار | نہیں دیا جاسکتا۔ (ت)

مسئلہ نمبر ۵۶۱، ۵۶۲: ۱۶ جمادی الاخری ۱۳۳۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس لفظ کے بارے میں اگر یرزقکم کو یرزقکم پڑھا جائے تو کیا خرابی اور کس قسم کا گناہگار ہوگا خطبہ اولیٰ میں لکھا ہے یرزقکم اور قاری صاحب پڑھتے ہیں یرزقکم اس لئے میں غلطی پکڑا ہوں اس میں اگر میرا قصور ہو تو میں تسلیم کروں اور قاری صاحب کی غلطی ہو تو ان پر کیا؟ لفظ فاطمۃ الزہراء مد چار الف ہے۔

---

۱ ردالمختار باب صفۃ الصلوۃ مطبوعہ مصطفی البابی ۱/۳۳۸

2023

Fatawa-e-Razvia Volume 6

Question: The Qari recited without 'madd' (elongation). Is this word an error? In its first word 'shada'id', he did not stretch four Alifs. What is the ruling on this?

The Answer: If in the sermon (khutba), he recited 'yarzu-kum' instead of 'yarzuqu-kum' without the doubling (tashdid) of the 'kaf', then he certainly recited incorrectly and the objection is valid. However, such an error in the khutba does not affect the prayer (salah); the prayer will be valid. And if he recited 'yarzu-kum' with the doubling of the 'kaf', then it's not even an error, similar to the word of Allah Almighty: "Did We not create you from a humble fluid?" (Quran 77:20). And Allah Almighty knows best. This is 'madd muttasil' (connected elongation), and 'muttasil' is obligatory; omitting it during recitation (tilawat) is forbidden (haram) as stated in 'Radd al-Muhtar'. (As clarified in Radd al-Muhtar. -Compiler). However, the rules for khutba are not like those for tilawat; it is a discourse that the Imam has with the followers. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 563: From Junagadh, Circle Madar al-Maham, sent by Maulana Amir-ud-Din, 20 Rajab 1316 AH. An Imam of a mosque recites the verse "Idha nudiya lissalati min yawmi-l-Jumu'ah" as "Jumu'u'ah" with a clear 'waw', and in "fi Laylat-il-Qadr" he recites "pi Laylat-il-Kihdar" clearly. Is the prayer valid or not? And should such a person be made an Imam or not? Explain, and may you be rewarded.

The Answer: This question consists of two issues: Issue 1: Satiation (ishba') of vowels such that letters are produced from them, e.g., 'alif' from 'fatha', 'waw' from 'damma', 'ya' from 'kasra'. There are differing narrations from later scholars (muta'akhkhirin) regarding this. Ain al-A'imma Karabisi and Jarallah Zamakhshari said that if 'wal-salawaat' is read instead of 'wal-salawati', the prayer will not be invalidated. Ain al-A'imma said there is no invalidation in reading 'nu'min' as 'nu'u'min'. Zamakhshari said reading 'hadayta' as 'haadayta' is not an invalidating factor, and Ain al-A'imma said if 'lam yalid' is read as 'lam yaalid', repeating the prayer is more cautious. They said if one performs 'ishba' in 'nashkuruka' or 'natrukuka' and reads 'nashkurooka', 'nakfurooka', 'natrooka', then repeat the prayer. It is stated in 'al-Qunya':

[Table Content] Arabic Text: 'Uk' and Jarallah: [Reciting] 'al-Salawaat' does not invalidate. 'Uk': And if one recited 'nasta'eenuka' or 'nu'u-min bika', it doesn't invalidate. Jarallah: If one recited 'fi man haadayta', it doesn't invalidate because it is satiation (ishba') of fatha. 'Uk': In [Surah] al-Ikhlas, [reciting] 'lam yaalid', then repetition is more cautious. And in... Urdu Translation: Ain al-A'imma Karabisi and

Jarallah Zamakhshari said that if someone recited 'wal-salawaat' instead of 'wal-salawati', then the prayer will not be invalidated. Ain al-A'imma said if someone recited 'nasta'eenuka' and 'nu'min bika', then the prayer will not be invalidated. Jarallah said if 'hadayta' was recited as 'haadayta', then in this, the prayer is [not] invalidated.

फ़तावा-ए-रज़विया, खंड 6

प्रश्न: क़ारी साहब ने बिना मद (elongation) के अदा किया, क्या यह शब्द ग़लत है? इसके पहले शब्द 'शदाइद' में उसने चार अलिफ़ के बराबर नहीं खींचा, इसमें क्या हुक्म है?

उत्तर: जवाब: अगर खुतबे में उसने 'यरज़ुकुम' की जगह 'यरज़ुकुम' बिना 'काफ़' की तशदीद के पढ़ा तो यक़ीनन ग़लत पढ़ा और टोकना सही है, लेकिन खुतबे में ऐसी ग़लती का असर नमाज़ पर नहीं पड़ता, नमाज़ हो जाएगी। और अगर 'यरज़ुकुम' काफ़ की तशदीद के साथ पढ़ा तो यह ग़लती भी नहीं है, जैसे अल्लाह तआला का फ़रमान है: "क्या हमने तुम्हें एक तुच्छ पानी से पैदा नहीं किया?" (क़ुरआन 77:20)। और अल्लाह बेहतर जानता है। यह 'मद मुत्तसिल' है और 'मुत्तसिल' वाजिब है, तिलावत में इसे छोड़ना हराम है जैसा कि 'रद-उल-मुह्तार' में स्पष्ट है। (जैसा कि रद-उल-मुह्तार में इसकी स्पष्ट व्याख्या है। -टीकाकार) मगर खुतबे का हुक्म तिलावत जैसा नहीं हो सकता, वह एक बातचीत है जो इमाम मुक्तदियों से करता है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 563: जूनागढ़, सर्कल मदार अल-महाम से, प्रेषक मौलवी अमीर-उद्दीन साहब, 20 रजब 1316 हिजरी। एक मस्जिद का इमाम आयत "इज़ा नूदिया लिस्सलाति मिन यौमिल जुमुअह" को "जुमुऊआ" साफ़ 'वाव' के साथ पढ़ता है और "फ़ी लैलत-इल-क़द्र" को "पी लैलत-इल-किहदर" साफ़ पढ़ता है, अब नमाज़ हुई या नहीं? और ऐसे व्यक्ति को इमाम बनाना चाहिए या नहीं? बयान फरमाएं, पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: जवाब: यह सवाल दो मसलों पर आधारित है: पहला मसला: हरकात का इशबाअ (खींचना) जिससे अक्षर पैदा हो जाएं, जैसे 'फ़त्हा' से 'अलिफ़', 'ज़म्मा' से 'वाव', 'कसरा' से 'या'। इसमें बाद के विद्वानों (मुतअक्खरीन) की विभिन्न रिवायतें हैं। ऐन अल-आइम्मा कराबीसी और जारुल्लाह ज़मख़्शरी ने कहा कि अगर 'वल-सलवाति' की जगह 'वल-सलवात' पढ़ा जाए तो नमाज़ फासिद (अमान्य) नहीं होगी। ऐन अल-आइम्मा ने कहा कि 'नुमिन' को 'नुऊमिन' पढ़ने में बिगाड़ नहीं। ज़मख़्शरी ने कहा कि 'हदयत' को 'हादयत' पढ़ना नमाज़ बिगाड़ने वाला नहीं, और ऐन अल-आइम्मा ने कहा कि अगर 'लम यलिद' को 'लम यालिद' पढ़ा तो नमाज़ दोहराना एहतियातन बेहतर है। उन्होंने कहा कि अगर 'नश्कुरुक' या 'नतरुक' में इशबाअ करके'नश्कुरूक', 'नकफ़ुरूक', 'नतरूक' पढ़ा तो नमाज़ दोहराए। 'कुन्या' में है:

[तालिका सामग्री] अरबी पाठ: 'अक' और जारुल्लाह: 'वल-सलवात' पढ़ना नमाज़ फासिद नहीं करता। 'अक': अगर किसी ने 'नस्तईनुक' या 'नुअमिन बिक' पढ़ा तो नमाज़ फासिद नहीं होगी। जारुल्लाह: अगर किसी ने 'फ़ी मन हादयत' पढ़ा तो नमाज़ फासिद नहीं होगी क्योंकि यह फ़त्हा का इशबाअ है। 'अक': सूरह इख़लास में 'लम यालिद' पढ़ने पर नमाज़ दोहराना बेहतर है। और... उर्दू अनुवाद: ऐन अल-आइम्मा कराबीसी और जारुल्लाह ज़मख़्शरी ने कहा कि अगर किसी ने 'वल-सलवाति' की जगह 'वल-सलवात' पढ़ा तो नमाज़ फासिद नहीं होगी। ऐन अल-आइम्मा ने कहा कि अगर किसी ने 'नस्तईनुक' और 'नुअमिन बिक' पढ़ा तो नमाज़ फासिद नहीं होगी। जारुल्लाह ने कहा कि अगर 'हदयत' को 'हादयत' पढ़ा तो इसमें नमाज़ फासिद [नहीं] होगी।

فتاوی رضویہ جلد ششم

قاری صاحب نے بے مد کے ادا کیا، کیا یہ لفظ خطا ہے؟ اس کے اول لفظ شدائد میں چار الف اس نے دراز نہیں کیا اس میں کیا ہے؟

الجواب: اگر خطبہ میں اس نے یرزقکم کی جگہ یرزکم بلا تشدید کاف پڑھا تو ضرور غلط پڑھا اور گرفت صحیح ہے مگر خطبہ میں ایسی غلطی کا اثر نماز پر نہیں پڑتا نماز ہو جائے گی اور یرزکم بہ تشدید کاف پڑھا تو غلطی بھی نہیں کقولہ تعالی أَلَمْ نَخْلُقكُّم مِّن مَّاءٍ مَّهِينٍ واللہ تعالی اعلم۔ یہ مد متصل ہے اور متصل واجب ہے تلاوت میں اس کا ترک حرام ہے کما نص علیہ فی ردالمحتار (جیسے کہ ردالمحتار میں اس پر تصریح ہے۔ ت) مگر خطبہ کا حکم تلاوت کا سا نہیں ہو سکتا وہ ایک بات چیت ہے کہ امام مقتدیوں سے کرتا ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۵۶۳ : از جوناگڑھ سر کل مدارالمہام مرسلہ مولوی امیر الدین صاحب ۲۰ رجب ۱۳۱۶ھ ایک مسجد کا امام آیہ اذا نودی للصلوٰۃ من یوم الجمعۃ کو جمعوعۃ مع الواؤ صاف پڑھتا ہے اور فی لیلۃ القدر کو پی لیلۃ الکھدر صاف پڑھتا ہے اب نماز ہوئی یا نہیں؟ اور ایسے شخص کو امام بنانا چاہئے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: یہ سوال دو مسئلوں پر مشتمل ہے: مسئلہ اولیٰ: اشباع حرکات کہ ان سے حروف پیدا ہو جائیں مثلاً فتحہ سے الف، ضمہ سے واؤ، کسرہ سے یاء۔ اس میں متاخرین سے روایات مختلف ہیں۔ عین الائمہ کرابیسی و جار اللہ زمخشری نے کہا اگر والصلوٰت کی جگہ والصلوات پڑھا نماز فاسد نہ ہو گی۔ عین الائمہ نے کہا نؤمن کو نوؤمین پڑھنے میں فساد نہیں۔ زمخشری نے کہا ھدیت کو ھادیت پڑھنا مفسد نہیں، اور انہیں عین الائمہ نے کہا لم یلد کو لم یالد پڑھا تو اعادہ نماز احوط ہے،

انہیں نے کہا اگر نشکرک یا نترك میں اشباع کرکے نشکروک، نکفروک، نتروک پڑھا نماز کا اعادہ کرے۔ قنیہ میں ہے:

[جدول] عك وجارالله والصلوات لاتفسد عك ولو قرأ نستعينك او ونؤمين بك لا تفسد جارالله لو قرأ في من هاديت لاتفسد لانه اشباع للفتحة عك في الاخلاص لم يالد فالا عادة احوط وفي | عين الائمہ

کرابیسی اور جارالله زمخشری نے کہا کہ اگر کسی نے والصلوات کی جگہ والصلوات پڑھا تو نماز فاسد نہ ہوگی، عین الائمہ نے کہا اگر کسی نے نستعينك اور نؤمين بك پڑھا تو نماز فاسد نہ ہوگی۔ جارالله نے کہا اگر هديت کو هاديت پڑھا تو اس میں نماز فاسد

صفحہ 736 کا 373

Fatawa Razawiyya Volume Six

His statement "Nashkuruka wa nakfuruka wa natruku wa yu'id"1. Ending summary. ...it will not be because there is ishba' (prolongation) of the fatha vowel in it. Ain-ul-Aimmah said if someone recited "Lam Yalid" in Surah Ikhlas [with ishba'], then repeating the prayer is more cautious (ahwat). And if someone recites "Nashkuruka, Nakfuruka and Natruku" [with ishba'], they should repeat it. Ending summary. (T)

And according to the detailed rulings of our early Imams (may Allah be pleased with them), if it is a place of ishba', such as places of pause (waqf), for example "Na'budu" instead of "Na'budu", (even if there is no pause there, like in "Allahu Akbar", "Allahu" with ishba' of 'ha' as changing between pause and connection is not inherently corruptive, as stated in Al-Hindiyyah, Al-Durr al-Mukhtar, etc. - T) or in words like 'fih', 'anh', 'minh', 'yudkhiluh', 'tashkuruh', 'wa antum', the ishba' of 'ha' is definitely not corruptive. Otherwise, if the meaning changes drastically due to ishba', such as "Rabbana" instead of "Rabbana", or in "Allahu Akbar" instead of the word of majesty "Allahu Akbar" it becomes "Akabar", or according to the more correct view, it becomes news or a meaningless word, like saying "Na'budu" instead of "Na'budu", or "Al-Hamdu" instead of "Al-Hamid" with a sakin (silent) meem, then it is corruption (of prayer); otherwise, it is not. It is stated in Khaniyah:

If he recited "Iyyaka Na'budu" and prolonged the damma of the Dal until it became a 'Waw', his prayer is not invalidated.2 If someone recited "Iyyaka Na'budu" in such a way that they prolonged the damma on the Dal until it became a 'Waw', then their prayer will not be invalidated. (T)

Wajiz-ul-Kardari states: If a letter is added that does not change the meaning, it does not invalidate [the prayer] according to the two [Imams Abu Hanifa and Muhammad], and from the second [Imam Abu Yusuf] there are two narrations. For example, if he recited "Wa anha 'anil munkar" with an added 'Ya' [making it 'wanhi'], or "Inna radduhu ilaika" with an added 'Waw', or "Rudduha 'alayya" with an added 'Waw', or "Ya'tadda hududuhu yudkhiluhu naran" by reading a 'Waw' after the 'ha' of 'yudkhiluh' or reading 'ya'tada' with a 'Ya', and if the meaning changes, then the prayer will be invalidated, etc.3 If a letter is added but the meaning does not change, then according to the Sahibayn (Imams Abu Yusuf and Muhammad), the prayer will not be invalidated. From the second (i.e., Imam Abu Yusuf), there are two narrations. For example, if someone recited "Wa anha 'anil munkar" as "Wanhi 'anil munkar"

with an extra 'Alif' [or 'Ya' in Arabic script], or in "Inna radduhu ilaika" with an extra 'Waw', or in "Rudduha 'alayya" with an extra 'Waw', or in "Ya'tadda hududuhu yudkhiluhu naran" reading a 'Waw' after the 'ha' of 'yudkhiluhu' or reading 'ya'taddi' with a 'Ya'—if the meaning changes, then the prayer will be invalidated, etc. (T)

1 Qunyah, Fatawa Qunyah, Chapter on Omission and Addition, Al-Maniyah Press, p. 63. 2 Fatawa Qazi Khan, Chapter on Errors in Quranic Recitation etc., Nawal Kishore Press, Lucknow, 1/68. 3 Fatawa Bazzaziyya with Al-Fatawa al-Hindiyyah, Chapter 12 on Reciter's Errors, Noorani Kutub Khana, Peshawar, 4/54.

फ़तावा रज़विया खंड छठा

उनका कथन "नशकुरुक व नकफुरुक व नतरुक व युइद"1। संक्षिप्त समापन। ...नहीं होगी क्योंकि इसमें हरकत फ़तह का इश्वबा (खिंचाव) है। ऐन-उल-आइम्मा ने कहा कि यदि किसी ने सूरह इखलास में "लम यलिद" पढ़ा तो नमाज़ दोहराना बेहतर (अहवत) है। और यदि कोई "नशकुरुक, नकफुरुक और नतरुक" पढ़े तो उसे दोहराना चाहिए। संक्षिप्त समापन। (त)

और हमारे पुराने इमामों (रज़ियल्लाहु अन्हुम) के मज़हब के फ़ैसले के अनुसार विस्तार यह है कि यदि वह इश्वबा का स्थान है, जैसे वक़्फ़ (रुकने) के स्थान, उदाहरण के लिए "नअबुदु" की जगह "नअबुदु", (भले ही वहाँ वक़्फ़ न हो जैसे "अल्लाहु अकबर" में 'हा' के इश्वबा के साथ "अल्लाहु", क्योंकि वक़्फ़ और वस्ल (जोड़ने) का परिवर्तन मूलतः बिगाड़ने वाला नहीं है, जैसा कि अल-हिन्दिया और अल-दुर्र अल-मुख्तार आदि में है - त) या 'फ़िहि', 'अन्हु', 'मिन्हु', 'युदख़िलुहु', 'तशकुरुहु', 'व अंतुम' में 'हा' का इश्वबा निश्चित रूप से नमाज़ को बिगाड़ने वाला नहीं है। अन्यथा यदि इश्वबा से अर्थ में भारी बदलाव आ जाए, जैसे "रब्बना" की जगह "राब्वना" या "अल्लाहु अकबर" में अल्लाह शब्द के बदले "आल्लाहु अकबर" या सही कथन के अनुसार समाचार या निरर्थक शब्द बन जाए, जैसे "नअबुदु" के बजाय "नाअबुदु" या "अल-हम्दु" की जगह "अल-हामिद" मीम के सुकून (मौन) के साथ, तो यह बिगाड़ है; अन्यथा नहीं। खानिया में है:

यदि उसने "इय्याका नअबुदु" पढ़ा और दाल के धम्मा को इतना खींचा कि वह 'वाओ' बन गया, तो उसकी नमाज़ ख़राब नहीं होगी।2 यदि किसी ने "इय्याका नअबुदु" को इस तरह पढ़ा कि दाल के धम्मा में खिंचाव (इश्वबा) किया यहाँ तक कि वह 'वाओ' हो गया, तो उसकी नमाज़ ख़राब नहीं होगी। (त)

वजीज़ करदरी में है: यदि उसने कोई ऐसा अक्षर बढ़ा दिया जिससे अर्थ नहीं बदलता, तो दोनों [इमामों] के अनुसार [नमाज़] ख़राब नहीं होगी, और दूसरे [इमाम अबू यूसुफ़] से दो विवरण हैं। जैसे कि यदि उसने "व अन्हा अनिल मुनकर" में 'या' बढ़ाकर पढ़ा, या "इन्ना रद्दुहु इलैका" में 'वाओ' बढ़ाकर पढ़ा, या "रुद्दुहा अलैय्या" में 'वाओ' बढ़ाकर पढ़ा, या "यतअद्दा हुदूदहु युदख़िलुहु नारन" में 'युदख़िलुहु' की 'हा' के बाद 'वाओ' पढ़ा या 'यतअद्दी' को 'या' के साथ पढ़ा; और यदि अर्थ बदल जाए तो नमाज़ ख़राब हो जाएगी, आदि।3 यदि किसी अक्षर की वृद्धि की गई लेकिन अर्थ नहीं बदला, तो साहिबैन (इमाम अबू यूसुफ़ और मुहम्मद) के निकट नमाज़ ख़राब नहीं होगी। और दूसरे (अर्थात

इमाम अबू यूसुफ़) से दो विवरण हैं। जैसा कि किसी ने "व अन्हा अनिल मुनकर" को "व अन्ही अनिल मुनकर" अलिफ़ [या या] की वृद्धि के साथ पढ़ा, या "इन्ना रद्दुहु इलैका" में 'वाओ' की वृद्धि के साथ, या "रुद्दुहा अलैय्या" में 'वाओ' की वृद्धि के साथ, या "यतअद्दा हुदूदहु युदख़िलुहु नारन" में 'युदख़िलुहु' की 'हा' के बाद 'वाओ' पढ़ा या 'यतअद्दी' को 'या' के साथ पढ़ा—तो यदि अर्थ बदल जाए तो नमाज़ ख़राब हो जाएगी, आदि। (त)

1.कुनिया, फ़तावा.कुनिया, विलोपन और वृद्धि का अध्याय, अल-मानिया प्रेस, पृ. 63। 2 फ़तावा क़ाज़ी ख़ान, क़ुरान पाठ में त्रुटियों का खंड आदि, नवल किशोर प्रेस, लखनऊ, 1/68। 3 फ़तावा बज़ज़िया साथ में अल-फ़तावा अल-हिन्दिया, पाठकों की चूक पर बारहवाँ खंड, नूरानी कुतुब ख़ाना, पेशावर, 4/54।

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

قولہ نشکرك ونکفرك ونترك ویعید1 انتھی مختصرا نہ ہو گی کیونکہ اس میں حرکت فتحہ کا اشباع ہے۔ عین الائمہ نے کہا اگر کسی نے سورہ اخلاص میں لم یلد پڑھا تو اعادہ نماز احوط ہے اور اگر کوئی نشکرک، نکفرک اور نتروک پڑھے تو وہ اعادہ کرے انتھی مختصراً (ت)

اور ہمارے ائمہ متقدمین رضی اللہ تعالٰی عنہم کے قضیہ مذہب پر تفصیل ہے اگر وہ محل محلِ اشباع ہے جیسے مقاماتِ وقف مثلاً نعبدُ کی جگہ نعبدٌ، (اگرچہ وہاں وقف نہ ہو جیسے اللہ اکبر میں اللہٌ، باشباع ہا کہ وقف ووصل کی تبدیلی اصلاً مفسد نہیں کما فی الہندیۃ والدرالمختار وغیرہما) جیسا کہ ہندیہ، دُر مختار اور دیگر کتب میں ہے۔ ت) یا فیہ، عنہ، منہ، یدخلہ، تشکروہ، وانتم میں اشباع ہا تو قطعاً مفسد نہیں ورنہ اگر اشباع سے معنٰی بتغیر فاحش متغیر ہو جائیں جیسے ربَّنا کی جگہ رابَّنا یا اللہ اکبر میں کلمہ جلالت کے عوض اللہ اکبر کی جگہ اکبَر یا قول اصح میں اخبار یا کلمہ مہمل ہو جائے جیسے بجائے نعبدُ ناعبود یا الحمد کی جگہ الحامد بسکون میم تو فساد ہے ورنہ نہیں، خانیہ میں ہے:

لو قرأ ایاك نعبد واشبع ضم الدال حتی یصیر واوالم تفسد صلاته 2۔ اگر کسی نے ایاک نعبد کو اس طرح پڑھا کہ ضمہ دال میں اشباع کیا حتٰی کہ وہ واؤ ہو گیا تو اس کی نماز فاسد نہ ہوگی۔ (ت)

وجیز کردری میں ہے: لوزاد حرفاً لا یغیر المعنی لاتفسد عندھما وعن الثاني روایتان کما لو قرأ وانھی عن المنکر بزیادۃ الیاء أو انارادوہ والیك بزیادۃ واو أو رودوھا علیّ بزیادۃ الواو أویتعد حدودہ یدخلہ ناراً وان غیر افسد الخ3۔ اگر کسی حرف کا اضافہ کردیا مگر معنٰی نہ بدلا تو صاحبین کے نزدیک نماز فاسد نہ ہوگی اور دوسرے (یعنی امام ابویوسف) سے دو روایتیں ہیں جیسا کہ کسی نے

وانھ عن المنکر کو وانھی عن المنکر الف کی زیادتی کے ساتھ یا انا رادوہ الیک میں واؤ کی زیادتی کے ساتھ یا رودھا علیٰ میں واؤ کی زیادتی کے ساتھ یا یتعد حدودہ یدخلہ ونارًا میں یدخلہ کی ہ کے بعد واؤ یتعدی کو یا پڑھا اور اگر معنی بدل جائے تو نماز فاسد ہو جائے گی الخ (ت)

1 قنیۃ، فتاویٰ قنیۃ باب فی الحذف والزیادۃ المطبعۃ المشتہرۃ بالمانیۃ ص ۶۳ 2 فتاویٰ قاضی خان فصل فی قراۃ القرآن خطاء الخ مطبوعہ نولکشور لکھنو ۱/۶۸ 3 فتاویٰ بزازیہ مع الفتاوی الہندیۃ الثانی عشر فی زلۃ القاری مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور ۴/۵۴

Fatawa Razvia - Volume 6

In Durr-e-Mukhtar, it is stated:

Saying 'Allahu Akbar' with omission (shortening) [is correct]; prolonging (mad) either of the two hamzahs [in Allah or Akbar] invalidates [the prayer]. Intentionally doing so is disbelief (kufr). Likewise, [prolonging] the 'ba' in 'Akbar' according to the most correct opinion.

(Translation/Explanation): One should say "Allahu Akbar" at the beginning, by shortening the hamzahs (meaning not reading them with a long stretch). This is because stretching either of the two hamzahs invalidates the prayer, and if done intentionally, it is disbelief. According to the most correct view, stretching the 'ba' in 'Akbar' also invalidates the prayer. (T)

In Radd al-Muhtar, it is stated:

"The matter of 'mad' (prolongation) in the word 'Allah' is such that if it is at the beginning, then the one starting the prayer will not be considered to have started it [correctly], and it invalidates the prayer if it occurs during it. If the prolongation is in the middle [of the word Allah], it is disliked (makruh). If it is at the end, it is a mistake but does not invalidate [the prayer]. As for the word 'Akbar', if the prolongation is at the beginning, it invalidates [the prayer]. If it is in the middle, it invalidates it. Sadr al-Shaheed says it remains valid. If it is at the end, it is said that it invalidates it; this is summarized from 'al-Hilyah'. I [the author] say: the prayer should also be invalidated by stretching the 'ha' [at the end of Allah], because in that case it becomes the plural of 'laah', as some Shafi'is have explicitly stated. Reflect deeply. This is a summary of the passage from Radd al-Muhtar."

(Translation/Explanation): The matter of 'mad' (prolongation) in the word 'Allah' is such that if it is at the beginning, the person will not be considered to have started the prayer, and it will invalidate the prayer if it occurs during it. If the 'mad' is in the middle of the word 'Allah', it is disliked (makruh). If it is at the end of the word 'Allah', it is a mistake but does not invalidate the prayer. If 'mad' occurs in the word 'Akbar' at the beginning, the prayer is invalidated; if it is in the middle, it will invalidate the prayer. Sadr al-Shaheed says the prayer will be valid, but if the 'mad' is at the end, it is said that it invalidates the prayer; this is summarized from 'al-Hilyah'. I say: the prayer should also be invalidated by stretching the 'ha', because in that case it becomes the plural of 'laah', as some Shafi'is have clearly stated. Reflect deeply. This is the

summary of the text from Radd al-Muhtar. I recall that I wrote this marginal note on the phrase 'it is said that it invalidates': I say: (concerning) the 'ra' of Akbar...

---

1 Durr-e-Mukhtar, Section: When one intends to start prayer, printed by Mujtabai, Delhi, 1/74 2 Radd al-Muhtar, Section: When one intends to start prayer, printed by Mustafa Al-Babi, Egypt, 1/354 Page 375 of 736

फ़तावा-ए-रज़विया - जिल्द छठी

दुर्र-ए-मुख्तार में है:

अल्लाहु अकबर कहते समय हमज़ाह को छोटा रखना चाहिए (हज़फ़ के साथ); दोनों हमज़ाहों में से किसी को भी खींचना (मद करना) नमाज़ को बातिल (अमान्य) कर देता है। जानबूझकर ऐसा करना कुफ्र (धर्मत्याग) है। इसी तरह, सबसे सही राय के अनुसार 'अकबर' के'बा' को खींचना भी नमाज़ को बिगाड़ देता है।

(व्याख्या): शुरू में अल्लाह अकबर कहे, हमज़ाहों को छोटा रखते हुए (यानी बढ़ाकर लंबा न पढ़े) क्योंकि दोनों हमज़ाहों में से किसी एक को लंबा करना नमाज़ को फासिद (खराब) कर देता है और अगर जानबूझकर लंबा करता है तो कुफ्र है, और सबसे सही कौल के मुताबिक 'अकबर' में 'बा' को खींचना भी नमाज़ को फासिद करता है। (त)

रद्दुल मुहतार में है:

"शब्द 'अल्लाह' में मद (खींचने) का मामला यह है कि अगर यह शुरू में हो, तो नमाज़ शुरू करने वाला [सही तरह से] शुरू करने वाला नहीं माना जाएगा और अगर यह नमाज़ के दौरान हो तो नमाज़ फासिद हो जाएगी। अगर मद 'अल्लाह' शब्द के बीच में हो, तो यह मकरूह (नापसंद) है। और अगर 'अल्लाह' के अंत में हो, तो यह एक गलती है लेकिन नमाज़ फासिद नहीं होती। 'अकबर' शब्द में, यदि मद शुरू में है तो नमाज़ फासिद हो जाती है। यदि यह बीच में है, तो यह उसे फासिद कर देगी। सद्र अल-शहीद कहते हैं कि नमाज़ सही होगी। यदि यह अंत में है, तो कहा गया है कि यह नमाज़ को फासिद कर देगी; यह 'अल-हिलिया' से संक्षिप्त है। मैं [लेखक] कहता हूँ: 'हा' (अल्लाह के अंत में) को खींचने से भी नमाज़ फासिद होनी चाहिए, क्योंकि उस स्थिति में यह 'लाह' का बहुवचन बन जाता है, जैसा कि कुछ शाफ़ई विद्वानों ने स्पष्ट किया है। इस पर अच्छी तरह विचार करें। यह 'रद्दुल मुहतार' के अंश का सारांश है।"

(व्याख्या): शब्द 'अल्लाह' में मद का मामला यह है कि अगर यह शुरू में हो, तो इससे नमाज़ शुरू करने वाला [सही तरह से] शुरू करने वाला नहीं होगा और वह नमाज़ को फासिद कर देगा अगर ऐसा नमाज़ के दौरान हो। और अगर मद शब्द 'अल्लाह' के बीच में हो तो मकरूह है और शब्द 'अल्लाह' के अंत में हो तो वह गलती है और नमाज़ को फासिद नहीं करता। अगर मद शब्द 'अकबर' में हो, अगर मद शुरुआत में हो तो नमाज़ फासिद, और अगर बीच में हो तो वह नमाज़ को

फासिद कर देगा। और सद्र अल-शहीद कहते हैं कि नमाज़ सही होगी अगर मद अंत में हो, तो कहा गया है कि नमाज़ फासिद कर देगा; यह 'अल-हिलिया' से संक्षिप्त है। मैं कहता हूँ 'हा' की मद से भी नमाज़ का फासिद होना चाहिए क्योंकि उस स्थिति में वह 'लाह' का बहुवचन बन जाता है जैसा कि इस पर कुछ शाफ़ई विद्वानों ने स्पष्ट किया है। अच्छी तरह विचार करें। यह रद्दुल मुहतार की इबारत का सारांश है। मुझे याद आ रहा है कि मैंने इसकी इबारत 'क़द कील युफ़सिदु' पर यह हाशिए में नोट लिखा है: मैं कहता हूँ: (अकबर की) 'रा' के बारे में...

---

1 दुर्र-ए-मुख्तार, फ़स्ल 'व इज़ा अराद अश्-शुरु' फ़िस्-सलात', मुज्तबाई प्रेस, दिल्ली, 1/74 2 रद्दुल मुहतार, फ़स्ल 'व इज़ा अराद अश्-शुरु' फ़िस्-सलात', मुस्तफ़ा अल-बाबी प्रेस, मिस्र, 1/354

فتاوٰی رضویہ - جلد ششم

درِ مختار میں ہے:

كبر بالحذف اذمد احد الهمزتين مفسدو تعمده كفر وكذا الباء في الاصح۔

شروع میں اللہ اکبر کہے، ہمزوں کو حذف کرنے کے ساتھ (یعنی بڑھا کر لمبا کر کے نہ پڑھے) کیونکہ دونوں ہمزوں میں سے کسی ایک کو لمبا کرنا نماز کو فاسد کر دیتا ہے اور اگر عمداً لمبا کرتا ہے تو کفر ہے، اور اصح قول کے مطابق اکبر میں باء کو کرنا بھی مفسد نماز ہے۔ (ت)

ردالمختار میں ہے:

المد في الله فان كان في اوله لم يصربه شارعا و افسد الصلوة لو في اثنائها وان في وسطه كره وفی اخره فهو خطأ ولا يفسد ايضاً والمد في اكبر في اوله مفسد في وسطه افسد وقال الصدر الشهيد يصح وفي أخر قد قيل يفسد كذا في الحليه ملخصاً اقول وينبغی الفساد بمدالهاء لانه يصير جمع لاه كما صرح به بعض الشافعية تأمل اه ما في ردالمحتار ملخصاً۔

لفظ اللہ میں مد کا معاملہ یوں ہے کہ اگر اول میں ہو تو اس سے نماز شروع کرنے والا نہ ہوگا اور وہ نماز کو فاسد کردے گا اگر ایسا دورانِ نماز ہو، اور اگر مد لفظ اللہ کے درمیان میں ہو تو مکروہ ہے اور لفظ اللہ کے آخر میں ہو تو وہ خطا ہے اور نماز کو بھی فاسد نہیں کرتا، اگر مد لفظ اکبر میں ہو اگر مد ابتداء میں ہو تو نماز فاسد، اور اگر وسط میں ہو تو وہ نماز کو فاسد کردے گا۔ اور صدر الشہید کہتے ہیں کہ نماز صحیح ہوگی اگر مد آخر میں ہو تو کہا گیا ہے کہ نماز فاسد کردے گا کذا فی الحلیۃ تلخیضاً، میں کہتا ہوں ہاء کی مد سے بھی فسادِ نماز ہونا چاہئے کیونکہ اس صورت میں وہ لاہ کی جمع ہو جاتا ہے جیسے کہ اس پر بعض شافعیہ نے تصریح کی ہے اچھی طرح غور

کرواھ یہ ردالمحتار کی عبارت کا خلاصہ ہے مجھے یاد آرہا ہے کہ میں نے اس کی عبارت قد قیل یفسد پر یہ حاشیہ لکھا ہے الفاظ یہ ہیں: اقول: (میں کہتا ہوں) اکبر کی راء کی

---

1 در مختار فصل و اذاراد الشروع فی الصلوۃ مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱/ ۷۴ 2 ردالمحتار فصل و اذاراد الشروع فی الصلوۃ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/ ۳۵۴ صفحہ 375 of 736

There is no apparent difference between lengthening (madd) the 'ra' of 'Akbar' and the 'ha' of 'Allah'. In al-Bahr, citing al-Mabsut, it states: If one lengthens the 'ha' of 'Allah', it is linguistically incorrect, and similarly if one lengthens the 'ra' [of Akbar].

I say: (I say) This is religiously supported by what is mentioned in ad-Durr al-Mukhtar regarding the nullifiers of prayer, citing al-Bazzaziyya: Reciting with melody (alhan) nullifies the prayer if it changes the meaning, otherwise it does not. I have written a marginal note on the word "reflect" (Ta'ammul), whose text is: This is contrary to what has been narrated according to us, as you have known. The utmost it could be is a hesitation between satiation (ishba'), which does not corrupt the meaning as we have previously presented from al-Khaniyyah, and the plural of 'al-lahi', which is a changer [of meaning]. However, a change is not established by mere possibility, as indicated by countless specific cases. Soon, the commentator (Muhashshi) will explicitly state in the section on nullifiers of prayer: In case of possibility, corruption [of prayer] is negated due to the lack of certainty of error. Thus, the correct view is what has been narrated.

In it is:

1 Jadd al-Mumtar, Section: When one intends to start, etc., Majma' al-Islami, Mubarakpur, 1/338. 2 Jadd al-Mumtar, Section: When one intends to start, etc., Majma' al-Islami, Mubarakpur, 1/338. 3 Radd al-Muhtar, Section: And when one intends to start the prayer, Mustafa al-Babi, Egypt, 1/468.

'अकबर' के'रा' और अल्लाह के नाम के'हा' को खींचने (मद) के बीच कोई स्पष्ट अंतर नहीं दिख रहा है। अल-बह्र में अल-मब्सूत के हवाले से उल्लेख है: यदि कोई अल्लाह के'हा' को खींचता है, तो यह भाषाई रूप से गलत है, और इसी तरह यदि कोई 'रा' को खींचता है।

मैं कहता हूँ: (मैं कहता हूँ) धार्मिक रूप से इसका समर्थन उस बात से भी होता है जो अल-बज़्ज़िया के हवाले से दुर्रे मुख़्तार में नमाज़ तोड़ने वाली चीज़ों के बारे में आ रही है कि लय (अल्हान) के साथ क़िरात करना नमाज़ को फासिद (खराब) कर देता है यदि अर्थ बदल जाए, अन्यथा नहीं। और मैंने उनके शब्द "तअम्मुल" (चिंतन करें) पर यह हाशिया लिखा है जिसके शब्द ये हैं: यह हमारे निकट रिवायत के खिलाफ है जैसा कि आप जान चुके हैं। इसमें अधिक से अधिक यह है कि यह 'इश्बा' (संतुष्टि) के बीच संदिग्ध हो जाता है, जो अर्थ को खराब नहीं करता जैसा कि हम पहले खानिया के हवाले से बयान कर चुके हैं, और 'अल्लाही' के बहुवचन के बीच जो अर्थ बदल देता है। लेकिन मात्र संभावना के साथ परिवर्तन सिद्ध नहीं होता जैसा कि इस पर अनगिनत उदाहरण प्रमाण हैं। और जल्द ही टीकाकार (मुहश्शी) आगे नमाज़ तोड़ने वाली चीज़ों में इस बात को स्पष्ट कर रहे हैं: संभावना के समय नमाज़ फासिद नहीं होगी क्योंकि गलती का यकीन नहीं है। अतः वही बेहतर है जो रिवायत किया गया है।

उसमें है:

1 जद्द अल-मुम्तार, अध्याय: जब कोई शुरू करने का इरादा करे आदि, मजमा अल-इस्लामी, मुबारकपुर, 1/338। 2 जद्द अल-मुम्तार, अध्याय: जब कोई शुरू करने का इरादा करे आदि, मजमा अल-इस्लामी, मुबारकपुर, 1/338। 3 रद अल-मुह्तार, अध्याय: और जब नमाज़ शुरू करने का इरादा करे, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 1/468।

पृष्ठ 376 का 736

مد اور اسم جلالت کی ہا میں مد کے درمیان کوئی فرق ظاہر نہیں ہو رہا۔ بحر میں مبسوط کے حوالے سے ہے اگر لفظ اللہ کی ہا میں مد کی تو یہ لغۃً غلط ہے ، اگر اکبر کی را میں مد کی تو اس کا معاملہ بھی یوں ہی ہے اھ

اقول : (میں کہتا ہوں) شرعی طور پر اس کی تائید اس سے بھی ہوتی ہے جو بزازیہ کے حوالے سے درمختار میں نماز کے مفسدات میں آرہا ہے کہ الحان کے ساتھ قرات نماز کو فاسد کردیتی ہے اگر معنی میں تبدیلی آجائے ورنہ نہیں اھ اور میں نے ان کے لفظ "تامل" پر یہ حاشیہ لکھا جس کے الفاظ یہ ہیں یہ ہمارے نزدیک خلاف منقول ہے جیسا کہ آپ جان چکے زیادہ سے زیادہ اس میں تردد پیدا ہوتا ہے درمیان اشباع کے، اور اشباع کی صورت میں معنی میں فساد پیدا نہیں ہوتا جیسا کہ ہم خانیہ کے حوالے سے بیان کر چکے ہیں اور درمیان لاھی کی جمع کے ، اور وہ مغیر المعنی ہے، مگر محض احتمال کے ساتھ تبدیلی ثابت نہیں ہوجاتی جیسا کہ اس پر بے شمار جزئیات دال ہیں اور عنقریب محشی آگے مفسداتِ نماز میں اس بات کی تصریح کر رہے ہیں، عبارت یہ ہے احتمال کے وقت فسادِ نماز نہ ہوگا کیونکہ غلطی کا یقین نہیں اھ پس بہتر وہی ہے جو منقول ہے۔

اُس میں ہے:

1 جد الممتار فصل اذ اراد الشروع الخ مجمع الاسلامی مبارک پور ۱/ ۳۳۸ 2 جد الممتار فصل اذ اراد الشروع الخ مجمع الاسلامی مبارک پور ۱/ ۳۳۸ 3 ردالمحتار فصل واذا اراد الشروع فی الصلوۃ مصطفی البابی مصر ۱/ ۴۶۸

Fatawa Razawiyya, Volume 6

His statement 'bil-alhaan' means with melodies, and its gist according to Fath is 'to create satiation (Ishba') in vowels while observing the melody.' The phrase 'if it changes the meaning' refers to situations like someone reciting 'Alhamdu lillahi rabbil 'alamin' and satiating the vowels so much that they add a 'waw' after 'dal', a 'ya' after 'lam' and 'ha', and an 'alif' after 'ra'. Similarly, a muballigh (one who conveys the voice) reciting 'Rabbana lakal Hamd' by adding an 'alif' after 'ra' (making it 'Raba'), because 'Raab' means the husband of the mother, as stated in Sahah and Qamus. (T)

I say (Aqool): Mentioning the arrival of 'waw' after 'dal' and 'ya' after 'ha' is out of place here, as you have learned that these are places of satiation, yet the meaning does not change. The commentator (Muhashshi), may Allah have mercy on him, followed his previous assumption regarding the satiation of the 'ha' of the Name of Majesty (Allah), and you have learned that this is contrary to the intended purpose. (T)

The chosen opinion of the researching scholars is the statement of the earlier Imams, as explained in Al-Ghaniyya (T). The apparent wording of the majority supports the second part, that its meaning is unknown. And Allah Almighty knows best.

Second Issue: Pronouncing letters with a twisted tongue; if it is in a place where corruption of meaning is not necessary, like 'la taqhar' instead of 'la taqhar,' then according to Imam Azam and Imam Muhammad, it is not absolutely corruptive. Otherwise, the reliable opinion of the school's Imams is absolute corruption. The corruption in pronouncing 'P', 'Ch', or 'G' is more evident, as these letters are not in the Word of Allah, nor even in the Arabic language. In Al-Qunya:

'I asked our teacher, Burhan al-Aimmah al-Mutarrizi, about a person who recited a word containing 'jeem' with a 'che' or 'p' during prayer...' I asked my teacher Burhan al-Aimmah al-Mutarrizi about the person who in prayer [pronounced] 'che' or 'p' in place of 'jeem'.

1 Radd al-Muhtar, Chapter on what nullifies prayer, etc., printed by Mustafa al-Babi, 1/468. Page 377 of 736

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

उनका कथन 'बिल-अलहान' का अर्थ धुनों के साथ है, और फ़तह के अनुसार इसका सार यह है कि 'धुन का ध्यान रखते हुए स्वरों में तृप्ति (इशबा) पैदा करना'। वाक्यांश 'यदि यह अर्थ बदल दे' का तात्पर्य यह है कि जैसे कोई 'अल्हम्दु लिल्लाहि रब्बिल आलमीन' पढ़ते समय स्वरों में इतनी तृप्ति कर दे कि 'दाल' के बाद 'वाव', 'लाम' और 'हा' के बाद 'या' और 'रा' के बाद 'अलिफ़' आ जाए। इसी तरह किसी मुबल्लिग (आवाज़ पहुँचाने वाले) ने 'रब्बना लकल हम्द' में 'रा' के बाद 'अलिफ़' बढ़ा दिया, क्योंकि 'राब' का अर्थ माँ का पति होता है, जैसा कि सहाह और क़ामूस में है। (त)

मैं कहता हूँ (अक़ूल): यहाँ 'दाल' के बाद 'वाव' और 'हा' के बाद 'या' का उल्लेख असंगत है, क्योंकि आप जान चुके हैं कि ये तृप्ति के स्थान हैं, फिर भी अर्थ नहीं बदलता। भाष्यकार (मुहश्शी), अल्लाह उन पर दया करे, अल्लाह के नाम (इस्मे जलालत) की 'हा' की तृप्ति के बारे में अपनी पिछली धारणा पर चले हैं, और आप जान चुके हैं कि यह उद्देश्य के विरुद्ध है। (त)

अनुसन्धानकर्ताओं की चुनी हुई राय पूर्ववर्ती इमामों का कथन है, जैसा कि अल-ग़निय्या में बताया गया है (त)। बहुमत के शब्दों से स्पष्ट है कि इसका अर्थ अज्ञात है। और अल्लाह सर्वशक्तिमान बेहतर जानता है।

दूसरा मसला: अक्षरों का टेढ़ी ज़बान से उच्चारण करना; यदि यह ऐसी जगह हो जहाँ अर्थ की खराबी अनिवार्य न हो, जैसे 'ला तक़हर' के बजाय 'ला तक़हर', तो इमाम आज़म और इमाम मुहम्मद के अनुसार यह पूर्णतः नमाज़ को खराब करने वाला नहीं है। अन्यथा, पंथ के विश्वसनीय इमामों की राय में यह पूर्णतः खराब है। 'प', 'च' या 'ग' बोलने में खराबी अधिक स्पष्ट है क्योंकि ये अक्षर न तो अल्लाह के कलाम में हैं और न ही अरबी भाषा में। कुन्या में:

'मैंने अपने उस्ताद बुरहानुल अइम्मा अल-मुतर्रिज़ी से उस व्यक्ति के बारे में पूछा जिसने नमाज़ के दौरान 'जीम' वाले शब्द को 'चे' या 'पे' के साथ पढ़ा...' मैंने अपने उस्ताद बुरहानुल अइम्मा अल-मुतर्रिज़ी से उस व्यक्ति के बारे में पूछा जो नमाज़ में 'जीम' की जगह 'च' या 'प' [पढ़ता है]...

1 रद्दुल मुहतार, नमाज़ को भंग करने वाले कार्यों का अध्याय, आदि, मुस्तफा अल-बाबी द्वारा मुद्रित, 1/468। पृष्ठ 377/736

فتاوی رضویہ جلد ششم

قولہ بالألحان أی بالنغمات وحاصلھا کما فی الفتح اشباع الحرکات لمراعات النغم. (قولہ ان غیر المعنی) کما لو قرا تالحمد للہ رب العلمین واشبع الحرکات حتی اتی بواو بعد الدال وبیاء بعد اللام والھاء وبألف بعد الراء ومثلہ قول المبلغ ربنا لك الحامد بالألف بعد الراء لان الراب ھو زوج الام کما فی الصحاح والقاموس ۱ اھـ اس کی عبارت بالحان سے مراد نغمات ہیں اور فتح کے مطابق اس کا حاصل یہ ہے "نغمہ کی رعایت کرتے ہوئے حرکات میں اشباع پیدا کرنا" اور اس کی عبارت "ان غیر المعنی" سے مراد یہ ہے جیسا کہ کسی نے الحمد للہ رب العالمین پڑھتے ہوئے حرکات میں اتنا اشباع کیا کہ دال کے بعد واو، لام اور ہا کے بعد یا اور را کے بعد الف بڑھا دیا اسی طرح کسی مبلغ (آواز پہنچانے والے) نے ربنا لك الحامد پڑھا یعنی را کے آگے الف بڑھا دیا کیوں کہ راب کا معنی ماں کے شوہر کے ہیں، جیسا کہ صحاح اور قاموس میں ہے اھ(ت)

اقول: ذکر اتیان الواو بعد الدال والیاء بعد الھاء وقع فی غیر موقعہ لما علمت انھما محل الاشباع، ولا یتغیر فیہ المعنی وانما مشی المحشی رحمۃ اللہ تعالی علی ماظن سابقا فی اشباع ھاء الجلالۃ وقد علمت انہ خلاف المقصود۔ اقول: (میں کہتا ہوں) یہاں دال کے بعد واؤ اور ہا کے بعد یا کا تذکرہ اس محل و مقام کے مناسب نہیں کیونکہ ان دونوں حرفوں میں اشباع ہے مگر معنی تبدیل نہیں ہوتا۔ محشی رحمہ اللہ تعالیٰ اپنے سابقہ گمان پر چلے ہیں جو انھیں اسم جلالت کی ہا کے بارے میں ہوا تھا اور آپ نے جان لیا کہ یہ خلافِ مقصود ہے (ت)

مختار محققین قول ائمہ متقدمین ہے کما بینہ فی الغنیہ (جیسا کہ غنیہ میں بیان کیا ہے ۔ت) اور ظاہر لفظ جمہور شق ثانی سے ہے کہ اس کے معنی معلوم نہیں واللہ تعالیٰ اعلم۔ مسئلہ ثانیہ: حروف کو کجی زبان سے ادا کرنا یہ اگر ایسی جگہ ہو کہ فساد معنی لازم نہ آئے جیسے لا تقھر کی جگہ لا

تقھر تو امام اعظم وامام محمد کے نزدیک مطلقاً مفسد نہیں ورنہ معتمد ائمہ مذہب، مطلقاً فساد ہے اور پ یاچ یاگ بولنے میں فساد اظہر کہ یہ حروف کلام اللہ تو کلام اللہ، کلام عرب ہی میں نہیں ۔

قنیہ میں:

سألت استاذنا برھان الائمة المطرزی عمن قرأفی صلاته کلمة فیھا جیم بالچیم میں نے اپنے استاذ برہان الائمہ المطرزي سے اس شخص کے بارے میں پوچھا جو نماز میں جیم کی جگہ چ یا

1 رد المحتار باب یفسد الصلوة الخ مطبوعہ مصطفی البابی ۱/۴۶۸ Page 377 of 736

Fatawa-e-Razvia Volume 6

[Arabic Quote]: Or [pronouncing] 'ba' (ب) as 'pa' (پ), does it invalidate [the prayer]? He pondered upon it for a long time, then his opinion settled that it is a corruptive mispronunciation (lahn-e-mufsid). I say: It should not be invalid according to what the later scholars have chosen, that if the articulation points (makhraj) are close, it is not a corruptive mispronunciation, etc. (Summarized)

[Urdu text explanation]: If one recites 'pa' instead of 'ba', will his prayer be void or not? After great deliberation, they expressed their firm opinion that this is a mispronunciation that invalidates prayer. I [the author] say that in this case, the prayer should not be void, just as the later scholars have adopted the view that when articulation points are close, mispronunciation does not invalidate [the prayer], etc. (Summarized from Talkhisat) (T)

This issue is about an 'althagh' (one with a speech impediment/lisp), and its detail and research are in our Fatawa, and the verdict (mufta-bihi) of the majority of Imams is that his leadership in prayer (imamat) is not valid and prayer behind him is void.

[Arabic Quote]: In al-Khayriyya: The leadership of an althagh over a fluent person is void according to the more correct and sound view. [Urdu text translation]: In Fatawa al-Khayriyya, it is stated that the leadership of an althagh (stammerer/lisper) over one who recites correctly is void according to the predominant and correct view (i.e., it is not correct). (T)

So, the prayer of a correct reciter behind someone who reads "pi laylatul kahdar" [instead of "bi laylatul qadr"] is null and void, and to appoint him as an Imam is forbidden (haram). This is the summary of the discussion; for details, there is another place for it. (T) And Allah, the Glorified and Exalted, knows best.

1. Quniyah, Fatawa Quniyah, Chapter: Zallat al-Qari, Al-Matba'ah al-Mushtaharah bi-l-Maandiyah, p. 62.
2. Fatawa Khayriyya, Book of Prayer, Printed in Beirut, 1/10.

फ़तावा-ए-रज़विया खंड 6

[अरबी उद्धरण]: क्या 'बा' (ب) की जगह 'पा' (پ) पढ़ने से नमाज़ फासिद (अमान्य) हो जाएगी? उन्होंने इस पर काफी सोच-विचार किया, फिर उनकी राय इस पर स्थिर हुई कि यह एक ऐसी गलती (लहन) है जो नमाज़ को अमान्य कर देती है। मैं कहता हूँ: बाद के विद्वानों द्वारा अपनाए गए मत के अनुसार नमाज़ अमान्य नहीं होनी चाहिए कि यदि उच्चारण स्थान (मखराज) करीब हों, तो गलती अमान्य करने वाली नहीं होती, इत्यादि। (संक्षेप में)

[उर्दू पाठ व्याख्या]: जो 'बा' की जगह 'पा' पढ़ता है, क्या उसकी नमाज़ फासिद होगी या नहीं? उन्होंने बड़े सोच-विचार के बाद अपनी पुख्ता राय व्यक्त की कि यह ऐसी गलती (लहन) है जो नमाज़ को फासिद (अमान्य) कर देती है। मैं कहता हूँ कि इस स्थिति में नमाज़ फासिद नहीं होनी चाहिए, जैसा कि बाद के विद्वानों (मुताखिरीन) ने इस आधार पर चुना है कि जब उच्चारण स्थान (मखराज) पास हों तो गलती फासिद नहीं होती, इत्यादि। (तल्ख़ीसात का सारांश) (त)

यह मसला 'अलसग' (althagh - वह व्यक्ति जिसे बोलने में कठिनाई हो या तुतलाहट हो) का है और इसका विवरण और शोध हमारे फ़तावा में मौजूद है। अधिकांश इमामों का मुफ़्ता-बिही (जिस पर फतवा दिया गया है) मत यही है कि उसकी इमामत सही नहीं है और उसके पीछे नमाज़ फासिद है।

[अरबी उद्धरण]: फ़तावा अल-खैरिया में: एक अलसग का शुद्ध उच्चारण करने वाले का इमाम होना, अधिक सही और पुख्ता मत के अनुसार फासिद (अमान्य) है। [उर्दू पाठ अनुवाद]: फ़तावा खैरिया में है कि अलसग (तुतलाने वाले) का सही पढ़ने वाले का इमाम होना, राजेह (प्रबल) और सही मत के अनुसार फासिद है, (अर्थात सही नहीं है)। (त)

तो "पी लैलातुल कहदर" पढ़ने वाले के पीछे सही पढ़ने वाले की नमाज़ बातिल (अमान्य) है और उसे इमाम बनाना हराम है। यह बात का सारांश है और विस्तार के लिए इसके अलावा स्थान है। (त) और अल्लाह सबसे बेहतर जानने वाला है।

1. कुनिया, फ़तावा कुनिया, बाब ज़ल्लत-उल-क़ारी, अल-मतबा अल-मुश्ताहरा बिल-मांदिया, पृष्ठ 62।
2. फ़तावा खैरिया, किताब-उस-सलात, बेरूत संस्करण, 1/10।

पृष्ठ 736 में से 378

او الباء پاء ھل تفسد فتأمل فیه کثیرا ثم تقرر رأیه علی انه لحن مفسد قلت ینبغی ان لا تفسد علی ما اختاره المتأخرون انه اذا تقارب المخرج لا یکون لحناً مفسداً الخ ملخصاً - باء کی جگہ پاء پڑھتا ہے کیا اس کی نماز فاسد ہوگی یا نہیں؟ انھوں نے بڑے غور و فکر کے بعد اپنی اس پختہ رائے کا اظہار کیا کہ یہ لحن ہے جو مفسد نماز ہے، میں کہتا ہوں اس صورت میں نماز فاسد نہیں ہونی چاہئے جیسا کہ متاخرین نے اس بنا پر سے اختیار کیا ہے کہ جب مخارج قریب ہوں تو لحن مفسد نہیں ہوتا الخ تلخیصات (ت)

یہ مسئلہ الثغ ہے اور اس کی تفصیل و تحقیق ہمارے فتاوٰی میں ہے اور عامہ ائمہ کا مفتی بہ یہی ہے اس کی امامت صحیح نہیں اور نماز اُس کے پیچھے فاسد ہے۔

فی الخیریة امامة الالثغ بالفصیح فاسدة فی الراجح الصحیح ۔ فتاوٰی خیریہ میں ہے کہ الثغ (توتلا) کا صحیح پڑھنے والے کا امام ہونا راجح اور صحیح قول کے مطابق فاسد ہے، (یعنی درست نہیں۔ (ت)

تو پی لیلة الکھدر پڑھنے والے کے پیچھے صحیح خواں کی نماز باطل ہے اور اسے امام کرنا حرام، ھذا جملة الکلام وللتفصیل غیر ذلک من المقام (یہ خلاصہ کلام ہے اور تفصیل کے لئے اس کے علاوہ مقام ہے۔ت) واللہ سبحنہ وتعالٰی اعلم۔

1 قنیہ فتاوٰی قنیہ باب زلة القاری المطبعة المشتہرة بالماندیہ ص ۶۲ 2 فتاوٰی خیریہ کتاب الصلوٰة مطبوعہ بیروت ۱/۱۰

Fatawa Razawiyya Volume 6

Chapter of Leadership (Imamat) (Explanation of Imamat)

Problem No. 564: If the Imam performs Raf' al-Yadayn (raising hands) and says 'Ameen' loudly, and all the followers (muqtadis) are of the Hanafi school of thought who do not practice loud 'Ameen' or Raf' al-Yadayn, and the followers seek refuge from his leadership, but he forcibly leads the prayer and says, "I will never abandon this act, even if no one prays behind me," and he also possesses knowledge. So, what is the ruling for such an Imam? Will the prayer behind him be valid or not? What does the noble Sharia rule?

Answer: In these lands, those who practice loud 'Ameen' and Raf' al-Yadayn are non-conformists (Ghair Muqallideen). Non-conformists are astray and irreligious, and praying behind them is impermissible, as we have verified in 'Al-Nahi al-Akeed an al-Salat Wara' Adi al-Taqlid' (We have conducted a full investigation on this in our treatise 'Al-Nahi al-Akeed an al-Salat Wara' Adi al-Taqlid'. - Translator's note) (which is coming up ahead). Even if, for the sake of argument, an orthodox Sunni of the Shafi'i school appeared, it would not be lawful for him to forcibly lead the prayer against the dislike of the entire congregation and the aversion of all followers. The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "The prayer of three persons does not rise even a span above their ears," meaning it is rejected and not raised towards acceptance by the Divine Presence. "One of them is he who leads a people while they dislike him..." (The second is a slave who flees from his master, the third is a woman who spends the night while her husband is angry with her).

Problem No. 565: A person is a Hafiz of the Quran, but he recites only half the Kalima 'La ilaha illallah' and, acting as a saint, he [gives] half... to men and women.

---

1 Al-Musannaf of Abd al-Razzaq, Chapter of the Runaway Slave from his Master, published by Al-Majlis al-Ilmi Beirut, 11/24.

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

बाब अल-इमामा (इमामत का बयान)

मसला नंबर 564: अगर इमाम रफ़अ यदैन करता है और ज़ोर से 'आमीन' कहता है, और सभी मुक़्तदी हनफ़ी मज़हब के हैं जो ज़ोर से 'आमीन' और रफ़अ यदैन नहीं करते, और मुक़्तदी उसकी इमामत से पनाह मांगते हैं, लेकिन वह ज़बरदस्ती नमाज़ पढ़ाता है और कहता है कि मैं इस अमल को हरगिज़ नहीं छोड़ूँगा, चाहे मेरे पीछे कोई नमाज़ न पढ़े, और वह इल्म भी रखता है। तो ऐसे इमाम के लिए क्या हुक्म है? उसके पीछे नमाज़ होगी या नहीं? शरीयत-ए-शरीफ़ क्या हुक्म देती है?

अल-जवाब: इन शहरों में ज़ोर से 'आमीन' कहने और रफ़अ यदैन करने वाले ग़ैर-मुक़ल्लिद हैं, और ग़ैर-मुक़ल्लिद गुमराह और बेदीन हैं और उनके पीछे नमाज़ नाज़ायज़ है, जैसा कि हमने 'अन-नहीं अल-अकीद अन अस्सलात वराअ अदी अत-तक़लीद' में तहक़ीक़ की है (इसकी पूरी तहक़ीक़ हमने अपने रिसाले 'अन-नहीं अल-अकीद अन अस्सलात वराअ अदी अत-तक़लीद' में की है। - त) (जो आगे आ रहा है)। और अगर मान लिया जाए कि कोई सुन्नी सहीह-उल-अक़ीदा शाफ़ई मज़हब वाला भी आ जाए, तो उसके लिए हरगिज़ जायज़ नहीं कि वह पूरी जमात की कराहत और सभी मुक़्तदियों की नफ़रत के बावजूद ज़बरदस्ती उनकी इमामत करे। रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं: तीन लोगों की नमाज़ उनके कानों से एक बालिश्त ऊपर नहीं उठती, यानी मरदूद (ठुकरा दी जाती) है, बारगाह-ए-इलाही में क़ुबूलियत के लिए बुलंद नहीं की जाती, उनमें से एक वह है जो लोगों की इमामत करे और वे उससे नाज़ारा हों... (दूसरा वह गुलाम है जो अपने आका से भाग जाए, तीसरी वह औरत है जो रात इस तरह गुज़ारे कि उसका शौहर उस पर नाराज़ रहे)।

मसला नंबर 565: एक शख़्स हाफ़िज़-ए-क़ुरआन है मगर आधा कलमा 'ला इलाहा इल्लल्लाह' पढ़ता है और ख़ुद वली बन कर औरतों और मर्दों को आधा...

---

1 अल-मुसन्निफ़ ले-अब्दुल रज़्ज़ाक़, बाब अल-आबिक़ मिन सय्यिदिही, मतबुआ अल-मजलिस अल-इल्मी बेरूत, 11/24।

فتاوی رضویہ جلد ششم

باب الامامۃ (امامت کا بیان)

مسئلہ نمبر ۵۶۴: اگر امام رفع یدین کرتا ہے اور آمین پکارتا ہے اور سب مقتدی حنفی المذہب ہیں کہ آمین بالجہر اور رفع یدین نہیں کرتے اور مقتدی اس کی امامت سے پناہ مانگتے ہیں مگر وہ نماز جبراً پڑھاتا ہے اور کہتا ہے کہ میں اس فعل کو ہرگز نہیں چھوڑوں گا خواہ میرے پیچھے کوئی نماز نہ پڑھے اور وہ علم بھی رکھتا ہے پس ایسے امام کے واسطے کیا حکم ہے اس کے پیچھے نماز ہوگی یا نہیں؟ کیا حکم شرع شریف دیتی ہے؟

الجواب: ان بلاد میں آمین بالجہر و رفع یدین والے غیر مقلدین ہیں اور غیر مقلدین گمراہ بددین اور ان کے پیچھے نماز ناجائز، کما حققنا فی النھی الاکید عن الصلوۃ وراء عدی التقلید (اس کی پوری تحقیق ہم نے اپنے رسالے النھی الاکید عن الصلوۃ وراء عدی التقلید میں کی ہے۔ت) (جو آگے آرہا ہے) اور اگر بالفرض کوئی سنی صحیح العقیدہ شافعی مذہب بھی آگیا ہو تو اسے ہرگز حلال نہیں کہ کراہت جمیع جماعت و نفرت جملہ مقتدیان کے ساتھ بالجبر اُن کی امامت کرے۔ رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم فرماتے ہیں تین شخصوں کی نماز ان کے کانوں سے بالشت بھر اوپر نہیں اٹھتی یعنی مردود ہے قبول بارگاہ کی طرف بلند نہیں کی جاتی واحد منھم من ام قوما وھم لہ کارھون ان میں ایک وہ ہے جو لوگوں کی امامت کرے اور وہ ناراض ہوں۔۔۔ (دوسرا غلام ہے جو اپنے آقا سے بھاگ جائے، تیسری وہ عورت ہے جو رات اس طرح گزارے کہ اس کا شوہر اس پر غضبناک رہے۔

مسئلہ نمبر ۵۶۵: ایک شخص حافظ قرآن ہے مگر آدھا کلمہ لا الہ الا اللہ پڑھتا ہے اور خود ولی بن کر عورتوں مردوں کو نصف

---

1 المصنف لعبد الرزاق باب الابق من سیدہ مطبوعہ المجلس العلمی بیروت ۲۴/۱۱

Fatawa Razawiya, Volume 6

Question: A person teaches the Kalima and 'Muhammadur Rasulullah' is apparently not heard from his tongue, and he also leads the prayer. Is the prayer of the Hanafi Ummah of Muhammad (peace be upon him) valid behind such a person or not?

The Answer: The Sufi masters have prescribed the noble dhikr of 'La ilaha illallah' for the purification of the heart because purification occurs through the application of heat, and this part of the Kalima Tayyiba is hot and majestic (Jalali), while the second part is noble, cool, and beautiful (Jamali). If on such an occasion he only teaches 'La ilaha illallah', there is no harm. However, if in reciting the Kalima Tayyiba himself, he considers 'La ilaha illallah' sufficient and avoids 'Muhammadur Rasulullah', then his leading the prayer is impermissible, as this is evidence of indifference towards the pure mention of Muhammadur Rasulullah (Sallallahu Ta'ala Alaihi Wasallam), God forbid. And if he truly refuses to say 'Muhammadur Rasulullah' or if this noble mention is disliked and unpleasant to him, then he is an explicit disbeliever (kafir) and deserving of eternal Hellfire; we seek refuge in Allah Almighty, and Allah Almighty knows best. 4 Jumada al-Ukhra 1312 AH

Issue No. 566: What do the scholars of religion say if an Imam leads the congregational prayer and says 'Allah' aloud but does not say 'Akbar' such that no follower hears it; is it permissible or impermissible?

The Answer: Saying the complete 'Allahu Akbar' aloud is Sunnah. The Sunnah was omitted, so a minor dislike (karahat-e-tanzeehi) occurred in the prayer, but the prayer is valid. And Allah Almighty knows best. 4 Ramadan al-Mubarak 1315 AH

Issue No. 567: From Ward, District Nainital, Post Office Kucha Mursala, Abdul Aziz Khan. What do the scholars of religion say regarding this matter: a person joined a four-unit prayer in the last rak'ah. Should that person perform the first sitting (qa'da-e-oola) in his second rak'ah (after the Imam's salam), or should he perform it in the second or third? And if he performed the first sitting in the third rak'ah, would the prostration of forgetfulness (sajda-e-sahw) be necessary for him or not? Please explain and be rewarded.

The Answer: In the most preferred opinion, he should perform the first sitting after praying just one rak'ah following the Imam's salam, then pray the next rak'ah without sitting, and perform the final sitting (qa'da-e-akheera) on the third (his fourth overall). It is stated in Durr-e-Mukhtar: "Yaqtadi awwala salatihi fi haqqi qira'atin wa aakhiraha

fi haqqi tashahhuddin famudriku rak'atin min ghayri fajrin ya'ti" A latecomer (masbooq) should read the beginning of his prayer in terms of recitation and the end in terms of tashahhud (meaning he should consider the missed prayer as the beginning for recitation and as the end for tashahhud).

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

प्रश्न: एक व्यक्ति कलिमा पढ़ाता है और 'मुहम्मदुर रसूलुल्लाह' ज़ाहिरी तौर पर उसकी ज़ुबान से नहीं सुना जाता और वह इमामत भी करता है। क्या ऐसे व्यक्ति के पीछे उम्मते मुहम्मदिया हनफ़िया (उन पर दरूद व सलाम हो) की नमाज़ सही है या नहीं?

उत्तर: सूफ़ी संतों ने दिल की सफाई के लिए 'ला इलाहा इल्लल्लाह' का ज़िक्र रखा है क्योंकि सफ़ाई गर्मी पहुँचाने से होती है, और कलिमा तैयबा का यह हिस्सा गर्म और जलाली (तेजस्वी) है, और दूसरा हिस्सा करीम (कृपालु), ठंडा और जमाली (सौम्य) है। अगर ऐसे ही अवसर पर वह केवल 'ला इलाहा इल्लल्लाह' की शिक्षा देता है, तो कोई हर्ज नहीं है। लेकिन अगर वह खुद कलिमा तैयबा पढ़ने में केवल 'ला इलाहा इल्लल्लाह' को काफी समझता है और 'मुहम्मदुर रसूलुल्लाह' से परहेज़ करता है, तो उसकी इमामत नाज़ायज़ है क्योंकि यह मुहम्मदुर रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) के पाक ज़िक्र से बेपरवाही का प्रमाण है, अल्लाह की पनाह। और अगर वास्तव में वह 'मुहम्मदुर रसूलुल्लाह' कहने से इनकार करता है या यह पवित्र ज़िक्र उसे नापसंद और नागवार है, तो वह स्पष्ट काफ़िर है और हमेशा के लिए नरक का हक़दार है, अल्लाह तआला की पनाह, और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। 4 जमादी-उल-उखरा 1312 हिजरी

मसला नंबर 566: धर्म के विद्वान क्या कहते हैं यदि इमाम जमाअत की नमाज़ पढ़ाए और 'अल्लाह' ज़ोर से कहे और 'अकबर' न कहे कि किसी मुक़्तदी को सुनाई न दे; क्या यह जायज़ है या नाज़ायज़?

उत्तर: पूरा 'अल्लाहु अकबर' ज़ोर से कहना सुन्नत है। सुन्नत छूट गई, नमाज़ में कराहत-ए-तन्ज़ीही आई लेकिन नमाज़ हो गई। अल्लाह तआला बेहतर जानता है। 4 रमज़ान-उल-मुबारक 1315 हिजरी

मसला नंबर 567: वॉर्ड, ज़िला नैनीताल, डाकखाना कुचा-मुरसला से अब्दुल अज़ीज़ खान। धर्म के विद्वान इस मसले में क्या कहते हैं कि एक व्यक्ति ने चार रकात वाली नमाज़ की आखिरी रकात पाई। वह व्यक्ति इमाम के सलाम के बाद अपनी दूसरी रकात में क़ादा-ए-ऊला (पहली बैठक) करेगा, या उसे दूसरी में करना चाहिए या तीसरी में? और अगर उसने तीसरी में क़ादा-ए-ऊला किया, तो क्या उस पर सजदा-ए-सहव आएगा या नहीं? बयान करें, आपको पुण्य मिलेगा।

उत्तर: अधिक विश्वसनीय मत यह है कि उसे इमाम के सलाम के बाद एक रकात पढ़कर क़ादा-ए-ऊला करना चाहिए, फिर दूसरी रकात बिना क़ादा के पढ़कर तीसरी पर क़ादा-ए-अख़ीरा (अंतिम बैठक) करना चाहिए। दुर्रे मुख़्तार में है: "यक्तदी अव्वला सलातिही फ़ी हक्कि किराअतिन व

आख़िरहा फ़ी हक्कि तशहुद्दिन फ़मुद्रिकु रकातिन मिन ग़ैरि फ़ज़्रिन याती" मसबूक (देर से आने वाला) किराअत के मामले में अपनी नमाज़ का पहला हिस्सा पढ़े और तशहुद के मामले में अपनी नमाज़ का आखिरी हिस्सा पढ़े (अर्थात छूटी हुई नमाज़ को किराअत के लिए शुरुआत की नमाज़ और तशहुद के लिए अंत की नमाज़ समझे)।

पृष्ठ 380/736

فتاوی رضویہ، جلد ششم

سوال: کلمہ پڑھاتا ہے اور محمد رسول اللہ بظاہر اس کی زبان سے نہیں سنا جاتا اور وہ امامت بھی کرتا ہے ایسے شخص کے پیچھے نماز امتِ محمدیہ حنفیہ علی صاحبہا الصلوۃ والسلام کی درست ہے یا نہیں ؟

الجواب: صوفیہ کرام نے تصفیہ قلب کے لئے ذکر شریف لا الہ الا اللہ رکھا ہے کہ تصفیہ حرارت پہنچانے سے ہوتا ہے اور کلمہ طیبہ کا یہ جز گرم وجلالی ہے اور دوسرا جز کریم سرد خنک جمالی ہے، اگر ایسے ہی موقع پر صرف لا الہ الا اللہ کی تلقین کرتا ہے تو کچھ حرج نہیں اور اگر خود کلمہ طیبہ پڑھنے میں صرف لا الہ الا اللہ کافی سمجھتا ہے اور محمد رسول اللہ سے احتراز کرتا ہے تو اس کی امامت ناجائز ہے کہ یہ ذکر پاک محمد رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم سے معاذ اللہ بے پرواہی پر دلیل ہے اور اگر واقعی اسے محمد رسول اللہ کہنے سے انکار ہے یا یہ ذکرِ کریم اُسے مکروہ و ناگوار ہے تو صریح کافر و مستوجبِ تخلید فی النار، والعیاذ باللہ تعالیٰ، واللہ تعالیٰ اعلم۔ ۴ جمادی الاخریٰ ۱۳۱۲ھ

مسئلہ نمبر ۵۶۶: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اگر امام نماز پڑھائے جماعت کی اور اللہ آواز سے کہے اور اکبر نہ کہے کہ کسی مقتدی کو نہ سنائی دے جائز ہے یا نا جائز؟

الجواب: اللہ اکبر پورا باآواز کہنا مسنون ہے سنت ترک ہوئی نماز میں کراہت تنزیہی آئی مگر نماز ہو گئی، واللہ تعالیٰ اعلم۔ ۴ رمضان المبارک ۱۳۱۵ھ

مسئلہ نمبر ۵۶۷: از ورڈ ضلع نینی تال ڈاک خانہ کچامرسلہ عبدالعزیز خان کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ایک شخص نے رباعی نماز سے ایک رکعت آخری پائی اور وہ شخص قعدہ

اولیٰ کے واسطے دوسری رکعت میں قعدہ کرے گا، یا اس کو چاہئے کہ دوسری میں قعدہ کرے یا تیسری میں اور اگر تیسری میں قعدہ اولیٰ کیا تو اُس پر سجدہ سہو آئے گا یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: قول ارجح میں اسے یہی چاہئے کہ سلامِ امام کے بعد ایک ہی رکعت پڑھ کر قعدہ اولیٰ کرے پھر دوسری بلا قعدہ پڑھ کر تیسری پر قعدہ اخیرہ کرے، درمختار میں ہے: یقتضی اول صلاتہ فی حق قرأۃ وآخرھا فی حق تشھد فمدرک رکعۃ من غیر فجر یاتی مسبوق قرات کے باب میں اپنی نماز کا اول اور تشہد کے باب میں اپنی نماز کا آخر پڑھے (یعنی فوت شدہ نماز کو قرات کے حق میں شروع نماز سمجھے اور تشہد کے حق میں)۔

صفحہ 380 از 736

Fatawa Razawiyyah Volume 6

[In two rak'ahs with Surah al-Fatihah and another Surah, and Tashahhud between them, and in the fourth rak'ah of a four-rak'ah prayer with Surah al-Fatihah only, and he should not sit before it[1].] | (In addition to Fajr prayer, a person who catches one rak'ah should recite both Surah al-Fatihah and another Surah in the two [missed] rak'ahs and sit for Tashahhud between them, and in the fourth rak'ah of a four-rak'ah prayer, recite only Surah al-Fatihah and not sit for Tashahhud before the fourth rak'ah. (T))

However, if the opposite is done—that is, after praying two rak'ahs, he sits, but does not perform the first sitting (Qa'dah), then performs the final sitting at the third rak'ah—the prayer will still be valid and Sajdah Sahw (prostration of forgetfulness) will not be necessary. It is stated in Radd al-Muhtar:

[It is mentioned in Sharh al-Munyah: "Even if he does not sit after the first [missed] rak'ah, it is permissible by preference (Istihsan), though not by analogy (Qiyas). And Sajdah Sahw is not required of him because it is, in one sense, the first rak'ah[2]."] | (It is mentioned in Sharh al-Munyah that if he does not sit for the Qa'dah at the first rak'ah, it is permissible by way of Istihsan, not by Qiyas. And since it is, in a way, the first rak'ah, Sajdah Sahw will not be mandatory on him. (T))

I say: (I say - T) This verdict is exactly the fatwa of our master Abdullah bin Mas'ud (may Allah be pleased with him), as mentioned by the recorder of the school (Muharrir al-Madhhab), Imam Muhammad (may Allah have mercy on him). (As Imam Muhammad, the recorder of the school, has mentioned. T) And Allah Almighty knows best.

Fatwa No. 568: 17 Jumadi al-Ula 1307 AH What do the scholars of the religion say about this issue: there is a blind man who is a Hafiz of the Quran and a Qari, and is well-acquainted with the rulings of fasting and prayer. He can also translate verses of the Holy Quran and knows many Hadiths. There is no one else of this caliber in the neighborhood. Is it correct to pray behind him or not?

The Answer: In every congregation, the person most deserving of leadership (imamate) is the one who knows the rulings of prayer and purification (taharat) best among them, even if he has less knowledge in other matters compared to others. However, the condition is that he must pronounce the letters correctly so that the prayer is not invalidated, and he must not be a transgressor (fasiq) or an innovator

(bad-madhhab). A person who combines these qualities is superior for imamate, even if...

[1] Durr-e-Mukhtar, Bab al-Ayah, published by Matba' Mujtabai Delhi, 1/86 [2] Radd al-Muhtar, Bab al-Ayah, published by Mustafa al-Babi Egypt, 1/441

फ़तावा रज़विया जिल्द 6

[दो रकतों में फ़ातिहा और सूरह के साथ और उनके बीच तशह्हुद के साथ, और चार रकतों वाली नमाज़ की चौथी रकत में सिर्फ़ फ़ातिहा के साथ और उससे पहले न बैठे[1]।] | (फ़ज्र की नमाज़ के अलावा, एक रकत पाने वाले को (बाकी) दो रकतों में फ़ातिहा और सूरह दोनों पढ़नी चाहिए और उनके बीच तशह्हुद में बैठना चाहिए, और चार रकतों वाली नमाज़ की चौथी रकत में सिर्फ़ फ़ातिहा पढ़े और चौथी रकत से पहले तशह्हुद के लिए न बैठे। (त))

लेकिन अगर इसके विपरीत किया जाए - यानी दो रकतें पढ़कर बैठा, पहली पर क़ादा (बैठना) नहीं किया और फिर तीसरी पर क़ादा-ए-अख़ीरा किया - तो इस तरह भी नमाज़ जायज़ होगी और सजदा-ए-सह्व लाज़िम नहीं आएगा। रद-उल-मुहतार में है:

[शरह अल-मुनय्या में कहा गया है: "अगर वह पहली (छूटी हुई) रकत पर नहीं बैठा, तो यह इस्तिहसानन (प्राथमिकता के आधार पर) जायज़ है, क़ियासन (तर्क के आधार पर) नहीं। और उस पर सजदा-ए-सह्व लाज़िम नहीं होगा क्योंकि यह एक लिहाज़ से पहली रकत है[2]।"] | (शरह अल-मुनय्या में है कि अगर वह पहली रकत पर क़ादा के लिए नहीं बैठा, तो यह इस्तिहसानन जायज़ है, क़ियासन नहीं। और चूंकि यह एक लिहाज़ से पहली रकत है, इसलिए उस पर सजदा-ए-सह्व लाज़िम नहीं होगा। (त))

अक़ूल: (मैं कहता हूँ - त) यह फ़ैसला ठीक वही फ़तवा है जो हमारे सरदार अब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ियल्लाहु अन्हु) का है, जैसा कि मज़हब के मुहर्रिर (लेखक) इमाम मुहम्मद (रहिमहल्लाहु तआला) ने ज़िक्र किया है। (जैसा कि मज़हब के मुहर्रिर इमाम मुहम्मद रहिमहल्लाहु तआला ने ज़िक्र किया है। त) और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 568: 17 जमादि-उल-ऊला 1307 हिजरी दीन के उलेमा इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि एक अंधा व्यक्ति है लेकिन हाफ़िज़-ए-क़ुरआन और क़ारी है, और रोज़े व नमाज़ के मसाइल से भी अच्छी तरह वाक़िफ़ है, और क़ुरआन मजीद की आयतों का तर्जुमा भी कर सकता है और बहुत सी हदीसें भी जानता है। इस योग्यता का कोई व्यक्ति उस मुहल्ले में नहीं है। उसके पीछे नमाज़ सही है या नहीं?

अल-जवाब: हर जमाअत में इमामत का सबसे ज़्यादा हक़दार वही है जो उन सब में नमाज़ और तहारत के मसाइल सबसे ज़्यादा जानता हो, चाहे दूसरे मसाइल में दूसरों के मुक़ाबले उसका इल्म

कम हो। लेकिन शर्त यह है कि वह हर्फ़ों को इतना सही अदा करे कि नमाज़ में फ़साद (ग़लती) न आए, और वह फ़ासिक़ या बद-मज़हब न हो। जो व्यक्ति इन सिफ़ात (गुणों) का जामे (समूह) हो, उसकी इमामत अफ़ज़ल (बेहतर) है, चाहे...

[1] दुर्र-ए-मुख़्तार, बाब अल-आया, मक़बुआ मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 1/86 [2] रद-उल-मुहतार, बाब अल-आया, मक़बुआ मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 1/441

पृष्ठ 381/736

فتاوی رضویہ جلد ششم

برکعتین بفاتحہ وسورہ وتشھد بینھما | حق میں امام کے ساتھ پڑھی ہوئی کو بھی ملائے) پس نماز فجر کے وبرابعۃ الرباعی بفاتحہ فقط ولا یقعد قبلھا1۔ | علاوہ ایک رکعت پانے والا دورکعت میں فاتحہ اور سورت دونوں پڑھے اور انکے درمیان تشہد بیٹھے اور چار رکعتوں والی نماز کی چوتھی رکعت میں صرف فاتحہ پڑھے اور چوتھی رکعت سے پہلے تشہد نہ بیٹھے۔ (ت)

مگر اس کا عکس بھی کیا کہ دو پڑھ کر بیٹھا پہلی پر قعدہ نہ کیا پھر تیسری پر قعدہ اخیر ہ کیا تو یوں بھی نماز جائز ہوگی سجدہ سہو لازم نہ آئے گا۔ ردالمحتار میں ہے:

قال فی شرح المنیۃ ولو لم یقعد جاز استحسانا | شرح المنیہ میں ہے کہ اگر وہ پہلی رکعت پر قعدہ نہ بیٹھا تو لاقیاسا ولم یلزمہ سجود السھو لکون الرکعۃ | استحساناً جائز ہے قیاساً نہیں اور چونکہ یہ من وجہ پہلی رکعت اولی من وجہ2۔ | ہے لہذا اس پر سجدہ سہو لازم نہ ہو گا۔ (ت)

اقول: (میں کہتا ہوں ۔ ت) یہ فیصلہ بعینہا فتوٰی سیدنا عبداللہ بن مسعود رضی اللہ تعالٰی عنہ ہے کما ذکرہ محرر المذہب محمد رحمہ اللہ تعالٰی (جیسا کہ محرر مذہب امام محمد رحمہ اللہ تعالٰی نے ذکر کیا ہے۔ ت) واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ نمبر ۵۶۸: ۱۷جمادی الاولی ۱۳۰۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ایک اندھا ہے لیکن حافظ قرآن اور قاری ہے اور مسائل روزہ و نماز سے بھی اچھی طرح واقف ہے اور نیز آیات قرآن مجید کا ترجمہ کر سکتا ہے اور بہت سی حدیثیں بھی جانتا ہے اور اس لیاقت کا کوئی شخص اس محلہ میں نہیں ہے اس کے پیچھے نماز درست ہے یا نہیں؟

الجواب: ہر جماعت میں سب سے زیادہ مستحق امامت وہی ہے جو ان سب سے زیادہ مسائل نماز و طہارت جانتا ہے اگر چہ اور مسائل میں بہ نسبت دوسروں کے علم کم ہو مگر شرط یہ ہے کہ حروف اتنے صحیح ادا کرے کہ نماز میں فساد نہ آنے پائے اور فاسق و بد مذہب نہ ہو، جو شخص ان صفات کا جامع ہو اس کی امامت افضل، اگرچہ

1 دُر مختار ، باب الأٰیۃ ، مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی، ۸۶/۱ 2 ردالمحتار باب الأٰیۃ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/ ۴۴۱

Fatawa Razawiyya, Volume 6

If one is blind, the dislike (karahat) for their blindness is removed due to their superior knowledge. Yes, the imamate (leadership in prayer) of a transgressor (fasiq) or an innovator (bid'ati) is disliked in any case, even if they possess more knowledge than all those present. Similarly, if someone mispronounces letters to such an extent that the prayer is invalidated, then their imamate is not permissible even if they are a scholar. It is mentioned in Durr-ul-Mukhtar:

Arabic Text	English Translation
The most deserving of imamate is the one most knowledgeable in the rulings of prayer alone, regarding its validity and invalidity, provided they avoid manifest obscenities. (Summary)[1]	The person most deserving of leading the prayer is the one who is most aware of the rulings of prayer, for example, its validity and invalidity, provided they avoid manifest sins. (Summary) (T)

It is mentioned in Al-Kafi:

Arabic Text	English Translation
The one most knowledgeable in the Sunnah is more deserving, unless there is a reproach against his religion.[2]	The person most acquainted with the Sunnah is best for imamate, but not in the case where there is an objection to his religious state. (T)

It is mentioned in Bahr al-Raiq:

Arabic Text	English Translation
The restriction on the dislike of a blind man's imamate in Al-Muhit and others is that he should not be the most virtuous of the people. If he is the most virtuous among them, then he is more deserving.[3]	In Al-Muhit etc., the correction regarding the dislike of a blind man's imamate is restricted to when he is not the most virtuous of the group; if he is the most virtuous, then it is better for him to be the imam. (T)

It is mentioned in Radd al-Muhtar:

Arabic Text	English Translation
As for the transgressor (fasiq), they have explained the reason for the dislike of putting him forward as imam by saying he	The jurists have explained the reason for the imamate of a transgressor being disliked: that he does not honor

Arabic Text	English Translation
does not care about his religious matters, and that putting him forward for imamate entails honoring him, whereas it is religiously obligatory for them to humiliate him. It is not hidden that if he is more knowledgeable than others, the reason (for dislike) does not disappear, for it is not safe for him to lead them in prayer...	or give importance to his religion. And it has been stated that putting him forward for imamate would be a form of honoring him, whereas legally people are commanded to humiliate him. It remains clear that when a transgressor is more knowledgeable than others...

Footnotes: 1. Durr-ul-Mukhtar, Chapter on Imamate, printed at Matba' Mujtabai, Delhi, 1/82. 2. Al-Kafi. 3. Bahr al-Raiq, Chapter on Imamate, printed by H.M. Saeed Company, Karachi, 1/348.

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

यदि कोई अंधा हो, तो उसके ज्ञान की अधिकता के कारण अंधेपन की नापसंदगी (कराहियत) समाप्त हो जाती है। हाँ, एक फासिक (गुहनाहगार) और पथभ्रष्ट (बिदअती) की इमामत हर हाल में मकरूह (नापसंद) है, भले ही वे उपस्थित सभी लोगों से अधिक ज्ञान रखते हों। इसी प्रकार, यदि कोई अक्षरों का उच्चारण इतना गलत करता है कि नमाज़ ही टूट जाए, तो उसकी इमामत जायज़ ही नहीं है, भले ही वह विद्वान क्यों न हो। 'दुर्र-ए-मुख्तार' में है:

अरबी पाठ	हिंदी अनुवाद
नमाज़ के नियमों के बारे में सबसे अधिक जानने वाला व्यक्ति इमामत का सबसे अधिक हकदार है, चाहे वह नमाज़ के सही होने या न होने से संबंधित हो, बशर्ते कि वह स्पष्ट पापों से बचता हो। (संक्षेप)[1]	इमामत के लिए सबसे योग्य वह व्यक्ति है जो केवल नमाज़ के नियमों, जैसे उसकी शुद्धता और अशुद्धता से संबंधित मसलों से सबसे अधिक परिचित हो, बशर्ते कि वह प्रत्यक्ष पापों से बचने वाला हो। (सारांश) (त)

'काफ़ी' में है:

अरबी पाठ	हिंदी अनुवाद
सुन्नत का सबसे अधिक ज्ञान रखने वाला सबसे श्रेष्ठ है, सिवाय इसके कि उसके दीन पर उँगली उठाई जाए।[2]	जो व्यक्ति सुन्नत से सबसे अधिक वाकिफ हो वह इमामत के लिए सबसे बेहतर होता है, मगर उस स्थिति में नहीं जब उसके दीन पर कोई आपत्ति हो। (त)

'बहर-उर-रायक' में है:

अरबी पाठ	हिंदी अनुवाद
'मुहीत' आदि ग्रंथों में अंधे व्यक्ति की इमामत की नापसंदगी को इस शर्त के साथ रखा गया है कि वह समूह में सबसे श्रेष्ठ न हो। यदि वह सबसे श्रेष्ठ है, तो वह सबसे अधिक हकदार है।[3]	मुहीत आदि में अंधे व्यक्ति की इमामत की नापसंदगी को इस बात से सीमित किया गया है कि जब वह समूह में सबसे श्रेष्ठ न हो; यदि वह श्रेष्ठ हो तो उसका इमाम बनना बेहतर है। (त)

'रद्द-उल-मुह्तार' में है:

अरबी पाठ	हिंदी अनुवाद
जहाँ तक फासिक (पापी) का सवाल है, तो उन्होंने उसकी इमामत की नापसंदगी का कारण यह बताया है कि वह अपने धार्मिक मामलों की परवाह नहीं करता, और उसे इमाम बनाना उसका सम्मान करना होगा, जबकि शरीयत में उसका अपमान करना अनिवार्य है। यह स्पष्ट है कि यदि वह दूसरों से अधिक ज्ञानी हो, तो भी यह कारण समाप्त नहीं होता, क्योंकि इस बात का भरोसा नहीं कि वह उन्हें नमाज़ पढ़ाए...	फासिक की इमामत के मकरूह होने का कारण फकीहों ने यह बताया है कि वह अपने दीन का सम्मान और उस पर ध्यान नहीं देता, और यह बताया गया है कि इमामत के लिए उसे आगे करने में उसका सम्मान होगा, जबकि शरीयत के अनुसार लोगों पर उसका अपमान करना अनिवार्य है। यह स्पष्ट है कि जब फासिक दूसरों से अधिक...

पाद-टिप्पणियाँ: 1. दुर्र-ए-मुख्तार, बाबुल इमामत, मुतबूआ मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 1/82 2. काफी 3. बहरुर रायक, बाबुल इमामत, मुतबूआ एच.एम. सईद कंपनी कराची, 1/348

فتاوی رضویہ جلد ششم

اندھا ہو کہ زیادت علم کے باعث کراہت نابینائی زائل ہو جاتی ہے، ہاں فاسق و بد مذہب کی امامت بہر حال مکروہ اگرچہ سب حاضرین سے زیادہ علم رکھتے ہوں۔ یوں ہی حرف ایسے غلط ادا کنے کہ نماز گئی تو امامت جائز ہی نہیں اگرچہ عالم ہی ہو۔ در مختار میں ہے:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
الاحق بالامامة الاعلم باحكام الصلوة فقط صحة و فسادا بشرط اجتنابه للفواحش الظاهرة اه ملخصا [1]	امامت نماز کے زیادہ لائق وہ شخص ہے جو فقط احکام نماز مثلاً صحت و فساد نماز سے متعلق مسائل سے زیادہ آگاہ ہو بشر طیکہ وہ ظاہری گناہوں سے بچنے والا ہو اھ تلخیصاً (ت)

کافی میں ہے:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
الاعلم بالسنة اولى الا ان ان يطعن عليه في دينه [2]	جو شخص سنت سے زیادہ واقف ہو وہ امامت کے لئے سب سے بہتر ہوتا ہے، مگر اس صورت میں نہیں جب اس کے دین پر اعتراض ہو۔ (ت)

بحر الرائق میں ہے:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
قید کراھة امامة الاعمی في المحیط وغیرہ بان لا یکون افضل القوم فان کان افضلھم فھو اولی [3]	محیط وغیرہ میں تصحیح امامت اعمی کی کراہت اس بات سے مقید کی ہے کہ جب وہ قوم سے افضل نہ ہو، اگر وہ افضل ہو تو اس کا امام بننا بہتر ہے (ت)

ردالمحتار میں ہے:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
اما الفاسق فقد عللوا کراھة تقدیمه بانه لا یھتم لامردینه، وبأن في تقدیمه للامامة تعظیمه وقد وجب علیھم اھانته شرعا ولا یخفی انه اذا کان اعلم من غیرہ لا تزول العلة فانه لا یؤمن ان یصلی بھم	فاسق کی امامت کے مکروہ ہونے کی فقہاء نے یہ علت بیان کی ہے کہ وہ اپنے دین کی تعظیم واہتمام نہیں کرتا اور یہ بیان کیا گیا ہے کہ امامت کے لئے اس کی تقدیم میں تعظیم ہوگی حالانکہ شرعاً لوگوں پر اسکی اہانت کا حکم ہے۔ واضح رہے کہ جب فاسق دوسروں سے زیادہ

حواشی: 1. در مختار، باب الامامة، مطبوعه مطبع مجتبائی دہلی، ۱/۸۲ 2. کافی 3. بحر الرائق باب الامامة مطبوعه ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱/۳۴۸

Fatawa Razawiya - Volume 6

[Arabic Passage]: The mosques were established and they have been designated for the position of the Imam. [End of Quote]. And in at-Tatarkhaniyah, it is disliked (makruh) for the Imam to stand in a place other than the mihrab (niche) unless there is a necessity. [End of Quote]. The implication is that if the Imam leaves the mihrab and stands elsewhere, even if he stands in the middle of the row, it is disliked because this practice is contrary to the practice of the Ummah. This applies to the regular (appointed) Imam, not others, nor to one praying alone. So, value this benefit. [End of Quote] (T)

[Urdu Explanation]: ...they exist and are designated for the Imam to stand. In at-Tatarkhaniyah, it is stated that it is disliked for the Imam to stand anywhere other than the mihrab without necessity. The demand of this is that if the Imam leaves the mihrab and stands in another place, even if he stands in the middle of the row, it will still be disliked because this act is against the Ummah, and this matter is concerning the appointed Imam. If the Imam is not appointed or is a solitary worshiper, then there is no such restriction. So, consider this benefit as precious. (T)

In the same [source] it is written: [Arabic Passage]: On the authority of al-Mi'raj, from al-Halwani, from Abu al-Layth: It is not disliked for the Imam to stand in the arch (niche) in case of necessity, such as if the mosque becomes crowded for the congregation. [End of Quote]. And Allah, the Glorified and Exalted, knows best.

[Urdu Explanation]: From al-Mi'raj, citing al-Halwani from Imam Abu al-Layth, they say that it is not disliked for the Imam to stand in the arch (niche) at the time of necessity; for example, if the mosque is narrow for the worshipers, then this can be done. And Allah, the Glorified and Exalted, knows best. (T)

Issue Number 570: From Pilibhit, Jame Mosque, sent by Maulvi Ehsan Sahib - 30 Rajab 1308 AH What do the scholars of religion say regarding this matter: a person who is neither a Hafiz of the Quran, nor knowledgeable of religious rulings, nor acquainted with the science of recitation, but is an ordinary Urdu reader and runs a book and shoe-selling shop in the market, wants to become the Imam of a mosque. However, two pious and cautious scholars are also present in the same mosque, and the mosque manager and the majority of the worshipers are not satisfied with this person's leadership (imamat). What is the ruling regarding such an Imam, and what is the instruction regarding following those scholars? Explain so you may be rewarded.

The Answer: In the stated situation, it is not permissible to make this person an Imam. If he leads the prayer, he will be a sinner. When people dislike his imamat because more knowledgeable people than him are present, then it is religiously prohibited for him to lead the prayer.

1 Radd al-Muhtar, Chapter on what invalidates prayer, printed by Mustafa al-Babi Egypt, 1/478 2 Radd al-Muhtar, Chapter on what invalidates prayer, printed by Mustafa al-Babi Egypt, 1/478

फतावा रज़विया - जिल्द 6

[अरबी अंश]: मस्जिदें बनाई गईं और वे इमाम के खड़े होने के स्थान के लिए निर्धारित की गईं। [समाप्त]। और अत्तातारखनिया में है कि बिना ज़रूरत के मेहराब के अलावा किसी और स्थान पर इमाम का खड़ा होना मकरूह (नापसंद) है। [समाप्त]। इसका अर्थ यह है कि यदि इमाम मेहराब छोड़कर किसी दूसरी जगह खड़ा होता है, भले ही वह सफ (पंक्ति) के मध्य में ही क्यों न हो, तब भी वह मकरूह होगा क्योंकि यह कार्य उम्मत के तरीके के खिलाफ है। और यह बात नियुक्त इमाम के बारे में है, यदि इमाम नियुक्त नहीं है या अकेला नमाज़ी है तो यह पाबंदी नहीं है। अतः इस लाभ को कीमती समझें। (त)

[उर्दू स्पष्टीकरण]: ...होते हैं और ये इमाम के खड़े होने के लिए तय होते हैं। और ततारखनिया में है कि इमाम का ज़रूरत के बिना मेहराब के अलावा किसी जगह खड़ा होना मकरूह है। इसका तकाज़ा यह है कि अगर इमाम मेहराब छोड़कर किसी दूसरी जगह खड़ा हो गया, अगरचे उसका कयाम सफ के मध्य में हो, तब भी वह मकरूह होगा क्योंकि यह अमल उम्मत के खिलाफ है, और यह बात मुकर्रर (नियत) इमाम के बारे में है, अगर इमाम मुकर्रर नहीं या तन्हा नमाज़ी है (तो फिर यह पाबंदी नहीं) अतः इस फायदे को कीमती जानो। (त)

इसी में है: [अरबी अंश]: अल-मेराज के हवाले से हलवानी से, उन्होंने अबू लैयस से: ज़रूरत के समय इमाम का ताक (मेहराब) में खड़ा होना मकरूह नहीं है, जैसे कि मस्जिद नमाज़ियों के लिए तंग हो जाए। [समाप्त]। और अल्लाह सुब्हानहू व तआला सबसे बेहतर जानता है।

[उर्दू स्पष्टीकरण]: मेराज से वह हलवानी से इमाम अबुल लैयस के हवाले से फरमाते हैं कि इमाम का ज़रूरत के वक्त ताक में खड़ा होना मकरूह नहीं है, मिसाल के तौर पर अगर मस्जिद नमाज़ियों के लिए तंग हो तो ऐसा किया जा सकता है। और अल्लाह सुब्हानहू व तआला सबसे बेहतर जानता है। (त)

मसला नंबर 570: पीलीभीत से, जामा मस्जिद, प्रेषित मौलवी एहसान साहब - 30 रजब 1308 हिजरी धर्म के विद्वान इस मसले में क्या फरमाते हैं कि एक व्यक्ति जो न हाफ़िज़-ए-क़ुरान है, न मसाइल (धार्मिक नियम) का ज्ञाता है, न किराअत (पढ़ने की कला) के इल्म से वाकिफ़ है, वह एक मामूली उर्दू जानने वाला है बल्कि बाज़ार में किताबों और जूतों की दुकान करने वाला है। वह एक मस्जिद का इमाम बनना चाहता है, जबकि उसी मस्जिद में दो परहेजगार और एहतियात बरतने वाले आलिम

(विद्वान) भी मौजूद हैं, और मस्जिद के प्रबंधक और ज़्यादातर नमाज़ी इस व्यक्ति की इमामत से खुश नहीं हैं। ऐसे इमाम के हक में क्या हुक्म है और उन आलिमों की पैरवी के बारे में क्या इरशाद है? स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिलेगा।

उत्तर: पूछी गई स्थिति में, उस व्यक्ति को इमाम बनाना जायज़ नहीं है। अगर वह इमामत करेगा तो गुनहगार होगा। जब लोग उसकी इमामत को इस वजह से नापसंद करते हैं कि उससे ज़्यादा इल्म (ज्ञान) वाले लोग मौजूद हैं, तो शरीयत की दृष्टि में उसके लिए इमामत करना वर्जित है।

1 रद्दुल मुहतार, अध्याय: नमाज़ को फासिद करने वाली चीजें, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र द्वारा मुद्रित, 1/478 2 रद्दुल मुहतार, अध्याय: नमाज़ को फासिद करने वाली चीजें, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र द्वारा मुद्रित, 1/478

पृष्ठ 384 का 736

مَا نُصِبَتِ الْمَسَاجِدُ وَهِيَ قَدْ عِيِّنَتْ لِمَقَامِ الْإِمَامِ اه وفي التاتارخانية ويكره ان يقوم فی غير المحراب الا لضرورة اه ومقتضاه ان الامام لو ترک المحراب وقام فی غيره يكره ولوكان قيامہ وسط الصف لانه خلاف عمل الامۃ وهو ظاهر فی الامام الراتب دون غيره والمنفرد فاغتنم ہذہ الفائدۃ ۱ اھ ہوتے ہیں اور یہ امام کے کھڑے ہونے کے لئے متعین ہوتے ہیں اھ اور تاتارخانیہ میں ہے امام کا ضرورت کے بغیر محراب کے علاوہ کسی جگہ کھڑا ہونا مکروہ ہے اھ اس کا تقاضا یہ ہے کہ اگر امام محراب چھوڑ کر کسی دوسری جگہ کھڑا ہو گیا اگر چہ اس کا قیام وسطِ صف میں ہو تب بھی وہ مکروہ ہوگا کیونکہ یہ عمل امت کے خلاف ہے، اور یہ بات مقرر امام کے بارے میں ہے، اگر امام مقرر نہیں یا تنہا نمازی ہے (تو پھر یہ پابندی نہیں) پس اس فائدہ کو قیمتی جان اھ (ت)

اُسی میں ہے: عن المعراج عن حلواني عن ابي الليث لا يكره قيام الامام فی الطاق عند الضرورۃ بان ضاق المسجد علی القوم ۲ اه والله سبحانہ وتعالی اعلم۔ معراج سے وہ حلوانی سے امام ابواللیث کے حوالے سے فرماتے ہیں کہ امام کا ضرورت کے وقت طاق میں کھڑا ہونا مکروہ نہیں ہے مثلاً اگر مسجد نمازیوں کے لئے تنگ ہو تو ایسا کیا جاسکتا ہے اھ واللہ سبحانہ وتعالی اعلم (ت)

مسئلہ نمبر ۵۷۰: از پیلی بھیت مسجد جامع مرسلہ مولوی احسان صاحب ۳۰ رجب ۱۳۰۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ایک شخص کو کہ نہ حافظِ قرآن ہے نہ مسائل دان نہ علم قرات سے واقف ایک معمولی اردو خواں بلکہ بازار میں کتب فروشی و نعلین فروشی کی دکان کرنے والا ہے ایک مسجد کا امام بننا چاہتا ہے حالانکہ دو عالم متقی و محتاط اسی مسجد میں اور بھی موجود ہیں اور مہتمم مسجد و اکثر نمازی اس شخص کی امامت سے راضی نہیں ایسے امام کے حق میں کیا حکم ہے اور ان علماء کی اقتداء کی نسبت کیا ارشاد ہے؟ بینوا توجروا

الجواب: صورتِ مسئولہ میں اس شخص کو امام بنانا جائز نہیں اگر امامت کرے گا گنہگار ہوگا جب لوگ اسکی امامت اس وجہ سے ناپسند رکھتے ہیں کہ اس سے زیادہ علم والے موجود ہیں تو اسے امامت کرنا شرعاً ممنوع ہے۔

۱ رد المحتار باب ما یفسد الصلوۃ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/ ۴۷۸ ۲ رد المحتار باب ما یفسد الصلوۃ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/ ۴۷۸

Fatawa Rizwiya Volume Six

It is in Durr-e-Mukhtar:

[Arabic Text]: If a person leads a people in prayer while they dislike him, and if this dislike is due to some flaw in him or because they are more deserving of leadership than the aforementioned imam, then it is macrooh-e-tahreemi (strictly disliked/ prohibited) for that person to be the imam. etc.

[Urdu Text]: If a person becomes the imam of a people although they dislike him, then if their dislike is due to some flaw within the imam or because those people are more deserving of the imamat compared to the mentioned imam, it is macrooh-e-tahreemi for this person to be the imam, etc. (T)

Therefore, the mentioned person should never lead the prayer. Instead, someone who is a Sunni with correct beliefs and not a transgressor (fasiq), who pronounces the letters correctly enough for the validity of the prayer, and who has the most knowledge of the rules of prayer among the congregants should be appointed as the imam, so that the right reaches the rightful person and the prayer of the followers is also performed with excellence and beauty.

- It is in the blessed Hadith:

[Arabic Text]: If it pleases you that your prayer be accepted, then your scholars should lead you. Narrated by al-Tabarani in Al-Kabir from Marthad al-Ghanawi (may Allah be pleased with him). And in this chapter, a Hadith has also been narrated from Abu 'Amr and Abu Umamah al-Bahili (may Allah be pleased with them).

[Urdu Text]: If you wish for your prayer to be accepted, then your scholars should lead your prayer. Al-Tabarani has narrated this in Al-Mu'jam al-Kabir from Hadrat Marthad al-Ghanawi (may Allah be pleased with him), and regarding this issue, a Hadith has also been narrated from Hadrat Abu 'Amr and Hadrat Abu Umamah al-Bahili (may Allah be pleased with them).

Does this person, whose leadership many worshippers are displeased with due to his ignorance, not fear those severe warnings that have been mentioned regarding such an imam? The luminous presence, the Master of the World (peace and blessings of Allah be upon him), says:

[Arabic Text]: There are three persons whose prayer Allah does not accept: one who leads a people while they dislike him. Narrated by Abu Dawud.

[Urdu Text]: There are three persons whose prayer Allah the Almighty does not accept: one who leads people while they dislike him.

Footnotes: 1. Durr-e-Mukhtar, Chapter of Imamat, printed at Mujtabai Press, Delhi, 1/83. 2. Majma' al-Zawa'id, Chapter of Imamat, printed at Dar al-Kitab, Beirut, 2/64; Al-Mu'jam al-Kabir with the chain of Marthad al-Ghanawi, printed at Al-Maktaba al-Faysaliyyah, Beirut, 3/328. Note: In Al-Mu'jam al-Kabir, instead of 'falyayummakum 'ulama'ukum' (let your scholars lead you), it is 'falyayummakum khiyarukum' (let the best among you lead you), and in Majma' al-Zawa'id it is 'falyayummakum 'ulama'ukum'. Therefore, the reference has been quoted from Majma' al-Zawa'id. (Nazir Ahmad Sa'id) 3. Sunan Abi Dawud, Chapter on a man leading a people who dislike him, printed at Aftab-e-Alam Press, Lahore, 1/88.

फ़तावा रज़विया छठा भाग

दुर्रे मुख़्तार में है:

[अरबी पाठ]: यदि कोई किसी कौम का इमाम बना जबकि वे लोग उसे बुरा जानते हैं, तो यदि उनकी नफरत इमाम के अंदर किसी खराबी के कारण है या इस कारण से कि वे लोग उक्त इमाम की तुलना में इमामत के अधिक हकदार हैं, तो उस व्यक्ति का इमाम होना मकरूह-ए-तहरीमी है। आदि।

[उर्दू पाठ]: अगर कोई किसी कौम का इमाम बना हालाँकि वे लोग उसको बुरा जानते हैं तो अगर उनकी नफरत इमाम के अंदर किसी ख़राबी की वजह से है या इस वजह से कि वे लोग बनस्बत इमाम मजकूर के इमामत के ज्यादा मुस्तहिक हैं तो उस शख़्स को इमाम होना मकरूह-ए-तहरीमी है ख़। (त)

अतः उक्त व्यक्ति कदापि इमामत न करे, बल्कि जो सुन्नी सही अकीदा वाला ग़ैर-फ़ासिक़ हो, जो नमाज़ की सेहत की सीमा तक हर्फों (अक्षरों) को सही अदा करता हो और वहाँ के नमाज़ियों में नमाज़ के मसलों का सबसे अधिक ज्ञान रखता हो, उसी को इमाम बनाया जाए ताकि हक़ हक़दार तक पहुंचे और मुक्तदियों की नमाज़ भी ख़ूबी और खुश-असलूबी के साथ अदा हो।

- हदीस शरीफ़ में है:

[अरबी पाठ]: यदि तुम अपनी नमाज़ का कबूल होना पसंद करते हो, तो चाहिए कि तुम्हारे उलेमा तुम्हारी इमामत करें। इसे तबरानी ने 'अल-मोअजमुल कबीर' में हज़रत मरशद ग़नवी (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) से रिवायत किया है। और इस मसले के बारे में हज़रत अबू अम्र और हज़रत अबू उमामा बाहिली (रज़ियल्लाहु तआला अन्हुम) से भी हदीस बयान की गई है।

[उर्दू पाठ]: अगर तुम्हें अपनी नमाज़ मक़बूल होना मंजूर है तो चाहिए कि तुम्हारे उलेमा तुम्हारी इमामत करें। इसको तबरानी ने अल-मोअजमुल कबीर में हज़रत मरशद ग़नवी रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत किया है और इस मसले के बारे में हज़रत अबू अम्र और हज़रत अबू उमामा बाहिली रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से भी हदीस बयान की गई है।

क्या यह व्यक्ति, जिसके अज्ञान (जहल) के कारण अधिकांश नमाज़ी उसकी इमामत से नाराज़ हैं, उन सख़्त चेतावनियों (वईदों) से नहीं डरता जो ऐसे इमाम के हक़ में आई हैं? हुज़ूर पुर-नूर सैयदे आलम (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं:

[अरबी पाठ]: तीन व्यक्ति ऐसे हैं जिनकी नमाज़ अल्लाह तआला क़ुबूल नहीं फरमाता: (उनमें से) एक वह जो लोगों की इमामत करे और वे उसे नापसंद करते हों। इसे अबू दाऊद ने रिवायत किया है।

[उर्दू पाठ]: तीन अश्ख़ास हैं जिनकी नमाज़ अल्लाह तआला क़ुबूल नहीं फरमाता एक वो जो लोगों की इमामत करे और वो उसे नापसंद रखते

पाद-टिप्पणी: 1. दुर्रे मुख़्तार, बाबुल इमामत, मतबुआ मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 1/83. 2. मज्मउज़ ज़वाइद, बाबुल इमामत, मतबुआ दारुल किताब बैरुत, 2/64; अल-मोअजमुल कबीर मसंद मरशद ग़नवी मतबुआ अल-मक्तबतुल फैसलिया बैरुत, 3/328. नोट: अल-मोअजमुल कबीर में 'फलयुमकुम उलेमाउकुम' के स्थान पर 'फलयुमकुम ख़ियारुकुम' (ताकि तुम्हारे बेहतरीन लोग इमामत करें) है, और मज्मउज़ ज़वाइद में 'फलयुमकुम उलेमाउकुम' है, इसलिए मज्मउज़ ज़वाइद से हवाला नक़ल किया गया है। (नज़ीर अहमद सईद) 3. सुनन अबी दाऊद, बाबुर रजुल यउमुल कौम हुम लहू कारिहून, मतबुआ आफ़ताबे आलम प्रेस लाहौर, 1/88.

فتاوی رضویہ جلد ششم

در مختار میں ہے:

لو ام قوما وھم لہ کارھون ان الکراھۃ لفساد فیہ اولانھم احق بالامامۃ منہ کرہ لہ ذلك تحریماً الخ | اگر کوئی کسی قوم کا امام بنا حالانکہ وہ لوگ اس کو برا جانتے ہیں تو اگر ان کی نفرت امام کے اندر کسی خرابی کی وجہ سے ہے یا اس وجہ سے کہ وہ لوگ بنسبت امام مذکور کے امامت کے زیادہ مستحق ہیں تو اس شخص کو امام ہونا مکروہِ تحریمی ہے الخ۔ (ت)

پس شخص مذکور ہرگز امامت نہ کرے بلکہ جو سنی صحیح العقیدہ غیر فاسق کہ حروف بقدر صحت نماز ٹھیک ادا کرتا اور وہاں کے نمازیوں میں سب سے زیادہ مسائل نماز کا علم رکھتا ہو اسی کو امام کیا جائے کہ حق صاحب حق کو پہنچے اور مقتدیوں کی نماز بھی خوبی و خوش اسلوبی پائے۔

• حدیث شریف میں ہے :

ان سرکم ان تقبل صلوتکم فلیؤمکم علماؤکم | اگر تمھیں اپنی نماز مقبول ہونا منظور ہے تو چاہئے کہ تمھارے علماء تمھاری امامت کریں۔ رواہ الطبراني في الکبیر عن مرثد الغنوي رضي اللہ تعالی عنہ وفی الباب عن ابي عمر وعن ابي امامۃ الباھلي رضي اللہ تعالی عنہ۔ | اس کو طبرانی نے المعجم الکبیر میں حضرت مرثد غنوی رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا ہے اور اس مسئلہ کے بارے میں حضرت ابو عمرو اور حضرت ابو امامہ الباہلی رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے بھی حدیث بیان کی گئی ہے۔

کیا یہ شخص جس کے جہل کے باعث اکثر نمازی اس کی امامت سے ناراض ہیں ان سخت وعیدوں سے خوف نہیں کرتا جو ایسے امام کے حق میں آئی ہیں۔ حضور پُر نور سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں :

ثلاثة لا یقبل اللہ منھم صلوۃ من تقدم قوما وھم لہ کارھون | تین اشخاص ہیں جن کی نماز اللہ تعالیٰ قبول نہیں فرماتا ایک وہ جو لوگوں کی امامت کرے اور وہ اسے ناپسند رکھتے لہ کارھون۔ [3]

اخرجہ ابوداؤد

[1] در مختار باب الامامة مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱ / ۸۳ [2] مجمع الزوائد باب الامامة مطبوعہ دار الکتاب بیروت ۲ / ۶۴، المعجم الکبیر مالسند مرثد لغنوی مطبوعہ المکتبة الفیصلیة بیروت ۳ / ۳۲۸ نوٹ : المعجم الکبیر میں فلیؤمکم علماء کم کی جگہ فلیؤمکم خیارکم ہے اور مجمع الزوائد فلیؤمکم علماء کم ہے اس لئے مجمع الزوائد سے حوالہ نقل کیا ہے (نذیر احمد سعید) [3] سنن ابی داؤد باب الرجل یؤم القوم ھم لہ کارھون مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور ۱ / ۸۸

Fatawa Razawiya, Volume 6

[Arabic Box Left]: And [narrated by] Ibn Majah from Abdullah bin Umar (may Allah be pleased with him). And in this chapter [there are narrations] from Ibn Abbas, Amr bin Harith, Junada bin Umayyah, and Abu Umamah al-Bahili (may Allah be pleased with them).

[Urdu Box Right]: ...it has been narrated by Abu Dawud and Ibn Majah from Hazrat Abdullah bin Umar (may Allah be pleased with him). And regarding this, hadiths are also narrated from Hazrat Ibn Abbas, Hazrat Amr bin Harith, Hazrat Junada bin Umayya, and Hazrat Abu Umama Bahili (may Allah be pleased with them).

In another hadith it is stated:

[Arabic Box Left]: Whoever leads a people in prayer while there is one among them who is a better reciter of the Book of Allah and more knowledgeable than him, will remain in abasement until the Day of Resurrection. - Reported by al-Uqayli from Ibn Umar (may Allah be pleased with him). And Allah knows best.

[Urdu Box Right]: Whoever leads a community in prayer while a person exists among them who is a better reciter of the Quran and more knowledgeable than him, he will remain in lowliness and disgrace until the Day of Judgment. Al-Uqayli has narrated this from Ibn Umar (may Allah be pleased with him).

Problem 571: 12 Rabi al-Awwal Sharif 1319 AH What do the scholars of religion say regarding this matter: Zaid is permanently appointed as the Imam in a mosque. A person superior to him in excellence arrived from another city. Some people wanted this virtuous person to lead the current prayer. They asked the regular Imam, "Do you give permission or not?" He refused, yet those few people stood the traveler up [to lead]. Are these people and the traveler liable for the grievance of the regular Imam or not? Please explain and be rewarded.

The Answer: If the regular Imam does not have any such flaw due to which making him Imam is Shariah-prohibited—such as incorrect recitation of the Quran to the extent of invalidating the prayer, religious deviancy like Wahhabism or Ghair-Muqallidiyat, or open sinning like drinking alcohol or adultery—then the imamate of that mosque is his right. In his presence, it is religiously undesirable and against the command of Hadith and Fiqh to make someone else the Imam without his permission, even if that other person possesses more knowledge and virtue. The Radiant Master of the World (peace and blessings of Allah be upon him) says:

[Arabic Box Left]: A man should not be led in prayer in his place of authority. - Narrated by Ahmad and Muslim from Abu Mas'ud (may Allah be pleased with him).

[Urdu Box Right]: In the presence of the mosque's Imam, no other person should lead the prayer. This hadith has been narrated by Imam Ahmad and Imam Muslim from Hazrat Abu Mas'ud (may Allah be pleased with him). (T)

1 Kitab al-Du'afa al-Kabir, Biography No. 1963, al-Haytham bin Uqba al-Kufi, published by Dar al-Kutub al-Ilmiyah, Beirut, 4/355. 2 Sahih Muslim, Chapter: Who is most entitled to the Imamate, published by Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/236.

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

[अरबी बॉक्स बायां]: और इब्ने माजह ने अब्दुल्ला इब्ने उमर (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) से [रिवायत की है]। और इस अध्याय में इब्ने अब्बास, अम्र इब्ने हारिस, जुनादा इब्ने उमय्या और अबू उमामा अल-बाहिली (रज़ियल्लाहु तआला अन्हुम) से भी रिवायतें हैं।

[उर्दू बॉक्स दायां]: ...इसे अबू दाऊद और इब्ने माजह ने हज़रत अब्दुल्ला बिन उमर (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) से रिवायत किया है। और इस बारे में हज़रत इब्ने अब्बास, हज़रत अम्र बिन हारिस, हज़रत जुनादा बिन उमय्या और हज़रत अबू उमामा बाहिली (रज़ियल्लाहु तआला अन्हुम) से भी हदीस मरुवी (वर्णित) है।

दूसरी हदीस में है:

[अरबी बॉक्स बायां]: जो किसी कौम की इमामत करे जबकि उनमें उनसे बेहतर अल्लाह की किताब का क़ारी और अधिक ज्ञानवान व्यक्ति मौजूद हो, तो वह कयामत के दिन तक पस्ती (गिरावट) में रहेगा। - इसे उक़ैली ने इब्ने उमर (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) से उद्धृत किया है। और अल्लाह बेहतर जानता है।

[उर्दू बॉक्स दायां]: जो किसी कौम की इमामत करे और उनमें वह व्यक्ति मौजूद हो जो उससे ज्यादा कुरआन का क़ारी और ज्ञानवान है, वह कयामत तक पस्ती और खुवारी (अपमान) में रहेगा। इसे उक़ैली ने इब्ने उमर (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) से नक़्ल किया है।

मसला ५७१: १२ रबी-उल-अव्वल शरीफ १३१९ हिजरी दीन के उलेमा इस मसले में क्या फरमाते हैं कि ज़ैद एक मस्जिद में हमेशा के लिए इमामत के वास्ते नियुक्त है और एक व्यक्ति उससे अफ़ज़ल (बेहतर) किसी शहर से आया। कुछ आदमियों ने चाहा कि यह व्यक्ति फ़ाज़िल (विद्वान) है, इस वक़्त की नमाज़ यही पढ़ाए। पुराने इमाम से पूछा कि आपकी इजाज़त है या नहीं? उसने इनकार किया, मगर चंद आदमियों ने उस मुसाफिर को खड़ा कर दिया। क्या ये लोग और मुसाफिर पुराने इमाम के मुआख़ज़ा (जवाबदेही/शिकायत) के पात्र हुए या नहीं? बयान फरमाएं, पुण्य प्राप्त करें।

अल-जवाब (उत्तर): अगर पुराने इमाम में कुरआन की गलत ख्वानी (पाठ) के कारण नमाज़ के बिगड़ने जैसा, बद-मज़हबी जैसे वहाबियत और ग़ैर-मक़ल्दियत, या खुले तौर पर गुनाह जैसे शराब पीना और व्यभिचार जैसा कोई ऐसा दोष न हो जिसके कारण उसे इमाम बनाना शरीयत के अनुसार

मना हो, तो उस मस्जिद की इमामत उसी का हक होती है। उसके होते हुए दूसरे को, चाहे वह उससे ज़्यादा इल्म और फज़्ल (ज्ञान और श्रेष्ठता) रखता हो, बिना उसकी इजाज़त के इमाम बनाना शरीयत के अनुसार नापसंदीदा और हदीस व फिक्ह के हुक्म के खिलाफ है। हुज़ूर-ए-पुर नूर सैयदुल आलम (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं:

[अरबी बॉक्स बायां]: आदमी की इमामत उसके अधिकार क्षेत्र (सुल्ताना) में न की जाए। - इसे अहमद और मुस्लिम ने अबू मसूद (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) से रिवायत किया है।

[उर्दू बॉक्स दायां]: मस्जिद के इमाम की मौजूदगी में कोई दूसरा शख्स इमामत न कराए। इस हदीस को इमाम अहमद और इमाम मुस्लिम ने हज़रत अबू मसूद (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) से रिवायत किया है। (त)

1. किताबुल ज़ुआफ़ा अल-कबीर, जीवनी संख्या १९६३, अल-हैसम बिन उक़बा अल-कूफ़ी, मुद्रित दारुल कुतुब अल-इल्मिया बेरुत ४/३५५
2. सहीह मुस्लिम, बाब: इमामत का सबसे अधिक हकदार कौन है, मुद्रित कदीमी कुतुब खाना कराची १/२३१ पेज ७३६ का ३८६

وابن ماجة عن عبداللہ ابن عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہ وفي الباب عن ابن عباس وعن عمرو ابن حارث وعن جنادة ابن امیة وعن ابی امامة الباھلی رضی اللہ تعالی عنہم۔ ہوں۔ اس کو ابوداؤد اور ابن ماجہ نے حضرت عبداللہ بن عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا ہے۔ اور اس بارے میں حضرت ابن عباس، حضرت عمرو بن حارث، حضرت جنادہ بن امیہ اور حضرت ابو امامہ باہلی رضی اللہ تعالیٰ عنہم سے بھی حدیث مروی ہے۔

دوسری حدیث میں ہے:

من ام قوما وفیہم اقرأ لکتاب اللہ منہ و اعلم ۔ لم یزل فی سفال الی یوم القیامة - اخرجہ العقیلی عن ابن عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہ ۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ جو کسی قوم کی امامت کرے اور اُن میں وہ شخص موجود ہو جو اس سے زیادہ قاریِ قرآن و ذی علم ہے وہ قیامت تک پستی و خواری میں رہے گا۔ اس کو عقیلی نے ابن عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے نقل کیا ہے۔

مسئلہ ۵۷۱: ۱۲ ربیع الاول شریف ۱۳۱۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید ایک مسجد میں ہمیشہ سے امامت کے واسطے معین ہے اور ایک شخص اس سے افضل کسی شہر سے آیا چند آدمیوں نے چاہا کہ یہ شخص فاضل ہے اس وقت کی نماز یہی پڑھائے، امام قدیم سے پوچھا کہ آپ کی اجازت ہے یا نہیں؟ اس نے انکار کیا، مگر چند آدمیوں نے اس مسافر کو کھڑا کر دیا یہ لوگ اور مسافر امام قدیم کے مؤاخذہ دار ہوئے یا نہیں۔ بینوا توجروا

الجواب: اگر امام قدیم مثل غلط خوانی قرآن، بحر افساد نماز بد مذہبی مثل وہابیت و غیر مقلدی یا فسق ظاہر مانند شراب نوشی و زنا کاری کوئی خلل ایسا نہ ہو جس کے باعث اُسے امام بنانا شرعاً

ممنوع ہو تو اس مسجد کی امامت اُسی کا حق ہوتی ہے اس کے ہوتے دوسرے کو اگرچہ اُس سے زیادہ علم و فضل رکھتا ہو بے اس کی اجازت کے امام بننا بنانا شرعاً ناپسندیدہ و خلاف حکمِ حدیث و فقہ ہے، حضورِ پُر نور سیدِ عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

لا یؤمن الرجل فی سلطانہ - رواہ احمد ومسلم عن ابی مسعود رضی اللہ تعالی عنہ۔ امامِ مسجد کی موجودگی میں کوئی دوسرا شخص امامت نہ کرائے۔ اس حدیث کو امام احمد اور امام مسلم نے حضرت ابو مسعود رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا ہے۔ (ت)

1 کتاب الضعفاء الکبیر ترجمہ نمبر ۱۹۶۳، الہیثم بن عقبہ کوفی مطبوعہ دار الکتب العلمیہ بیروت ۲۳۶/۱ 2 ۳۵۵/۴ صحیح مسلم باب من احق بالامامۃ مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی Page 386 of 736

Fatawa Razawiyya Volume Six

The second Hadith states:

"Whoever visits a people should not lead them in prayer; rather, one of them should lead the prayer." [1] (Reported by Ahmad, Abu Dawood, Tirmidhi, and Nasai from Malik bin al-Huwayrith, may Allah be pleased with him.) (T)

In Durr-e-Mukhtar, it is mentioned:

"The host and similarly the appointed (regular) Imam of the mosque are more entitled to lead the prayer than others, absolutely, etc." [2] (T)

In Radd-al-Muhtar, it is mentioned:

"Meaning, even if there is someone among those present who is more knowledgeable and a better reciter than him." [3] (T)

Therefore, in the inquired scenario, if there was no such defect in the regular Imam, then undoubtedly, despite his prohibition, the traveler becoming the Imam was an unjust interference in his right. He himself and the few people who made him Imam in such a state became entangled in dislike and opposition to the Sharia command. And Allah, the Glorified and Exalted, knows best.

Issue number 572: From Sitapur, Muhalla Tamas Ganj, sent by Huzoor Nur al-Arifeen Sahab (may his helping shade last long), 19 Rabi-ul-Awwal Sharif 1309 Hijri. I humbly request the learned scholars: For example, there is a boy whose age is thirteen or fourteen years; he has studied the Quran but never prays. Despite living right next to the mosque, he remains sitting there and intentionally does not pray the Friday prayer. He is an adolescent (non-adult) and takes a woman of his house to Hindu fairs, such as the Fair of Kanth and the Fair of Rona etc.

[1] Sunan Abu Dawood, Chapter on the Leadership of the Visitor, published by Aftab Alam Press Lahore, 1/88. [2] Durr-e-Mukhtar, Chapter on Leadership, published by Matba' Mujtabai Delhi, 1/83. [3] Radd-al-Muhtar, Chapter on Leadership, published by Mustafa al-Babi Egypt, 1/413.

फतावा रज़विया जिल्द छठी

दूसरी हदीस में है:

"जो व्यक्ति किसी कौम का मेहमान हो, वह उनकी इमामत न कराए, बल्कि उसी कौम में से कोई व्यक्ति उनका इमाम बने।" [1] इसे अहमद, अबू दाऊद, तिर्मिज़ी और नसाई ने हज़रत मालिक बिन हुवैरीथ रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है। (त)

दुर्रे मुख्तार में है:

"घर का मालिक और इसी तरह मस्जिद का मुक़र्रर (नियमित) इमाम दूसरों की तुलना में इमामत के लिए अधिक हक़दार है, मुतलकन (पूर्ण रूप से) आदि।" [2] (त)

रद्दुल मुख्तार में है:

"यानी चाहे उपस्थित लोगों में से कोई व्यक्ति उस घर वाले या मुक़र्रर इमाम से अधिक ज्ञानी (आलिम) और क़ारी (पाठक) ही क्यों न हो।" [3] (त)

अतः पूछी गई सूरत में, यदि उस पुराने इमाम में इस प्रकार की कोई कमी नहीं थी, तो निस्संदेह उसकी मनाही के बावजूद उस मुसाफ़िर (यात्री) का इमाम बनना उसके हक़ में नाजायज़ दखलंदाज़ी थी। वह स्वयं और वे कुछ लोग जिन्होंने ऐसी स्थिति में उसे इमाम बनाया, नापसंदगी और शरीयत के आदेश के उल्लंघन में पड़ गए। और अल्लाह सुब्हानहू व तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला नंबर 572: सीतापुर मोहल्ला तमस गंज से, प्रेषक हुज़ूर नूरुल आरिफ़ीन साहब (दाम ज़िल्लहुमुल मुईन), 19 रबी-उल-अव्वल शरीफ 1309 हिजरी। मैं विद्वानों की सेवा में निवेदन करता हूँ: उदाहरण के लिए, एक लड़का जिसकी आयु तेरह या चौदह वर्ष है; उसने कुरान शरीफ पढ़ा है लेकिन कभी नमाज़ नहीं पढ़ता। मस्जिद के बिल्कुल पास घर होने के बावजूद वह बैठा रहता है और जानबूझकर जुमे की नमाज़ नहीं पढ़ता। वह अभी बालिग़ (वयस्क) नहीं हुआ है और अपने घर की महिला को लेकर हिंदुओं के मेलों में जाता है, जैसे कि कंठ का मेला और रोना का मेला आदि।

[1] सुनन अबू दाऊद, बाबू इमामतुज़ ज़ाएर, मत्तबुआ आफ़ताबे आलम प्रेस लाहौर, 88/1 [2] दुर्रे मुख्तार, बाबू इमामत, मत्तबुआ मतबा मुजतबाई दिल्ली, 83/1 [3] रद्दुल मुख्तार, बाबू इमामत, मत्तबुआ मुस्तफा अल-बाबी मिस्र, 413/1

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

دوسری حدیث میں ہے :

مَن زَارَ قَوْماً فَلَا یَؤُمَّھُم وَلِیَؤُمَّھُم رَجُلٌ مِنھُم | جو شخص کسی قوم کا مہمان ہے وہ ان کی امامت نہ کروائے بلکہ اس قوم میں سے کوئی شخص ان کا امام بنے۔ اس کو احمد، ابو داؤد، ترمذی اور نسائی نے حضرت مالک بن حویرث رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا ہے۔ (ت) [1]

در مختار میں ہے :

صَاحِبُ الْبَیْتِ وَمِثْلُہ اِمَامُ الْمَسْجِدِ الرَّاتِبُ اَوْلٰی بِالْاِمَامَۃِ مِنْ غَیْرِہٖ مُطْلَقاً الخ | صاحب خانہ اور مقرر امام مسجد کا امامت کروانا دوسرے لوگوں سے مطلقاً بہتر ہے الخ (ت) [2]

ردالمحتار میں ہے :

ای وان کان غیرہ من الحاضرین من ھو اعلم واقرأ منہ -3 | یعنی اگرچہ حاضرین میں سے کوئی شخص اس گھر والے یا مقرر کردہ امام مسجد سے زیادہ عالم اور قاری ہو۔ (ت) [3]

پس صورت مستفسرہ میں اگر اس امام قدیم میں اس قسم کا کوئی خلل نہ تھا تو بلا شبہ باوصف اس کی ممانعت کے اس مسافر کا امام بننا ناحق اس کے حق میں دست اندازی کرنا ہوا اور یہ خود اور وہ چند آدمی جنہوں نے ایسی حالت میں اسے امام بنایا مبتلائے کراہت و مخالف حکم شریعت ہوئے۔ واللہ سبحانہ وتعالٰی اعلم

مسئلہ نمبر ۵۷۲: از سیتانپور محلہ تامس گنج مرسلہ حضور نور العارفین صاحب دام ظلہم المعین ۱۹ ربیع الاول شریف ۱۳۰۹ ہجری بخدمت علمائے متبحرین ملتمس ہوں مثلاً کوئی لڑکا عمر اس

کی تیرہ یا چودہ برس کی ہے اور وہ قرآن شریف پڑھا ہے لیکن کبھی نماز نہیں پڑھتا اور باوجود ہونے متصل مسجد مکان کے بیٹھا رہتا ہے اور نماز جمعہ کی قصداً نہیں پڑھتا اور نابالغ ہے اور اپنے گھر کی عورت کو لے کر میلہ ہنود میں جیسے کہ میلہ کنٹھہ اور میلہ رونا وغیرہ میں جاتا ہے

[1] سنن ابوداؤد باب امامتہ الزائر مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور ۸۸/۱ [2] در مختار ، باب الامامة ، مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ، ۸۳/۱ [3] ردالمحتار ، باب الامامة ، مطبوعہ مصطفیٰ البابی مصر ۱/ ۴۱۳

Fatawa Razawiyya Volume Six

Question: The women of that house wear Hindu attire and perform Hindu rituals. Is it valid to pray behind a man from that house? And if a boy from such a family leads the funeral prayer, is it valid or invalid? Please explain and be rewarded.

The Answer:

If in reality the women of his house worship other than God, meaning literal worship of another which is true polytheism (not just some ignorant customs or acts of ignorance that do not exceed the limit of sin and transgression, even if extremists label them as polytheism and worship of others), and he is aware of this true polytheism and is pleased with it, then he himself is a disbeliever and an apostate. For "approval of disbelief is disbelief" (T). On this premise, no prayer behind him is valid, whether he is an adult or a minor child, nor is the obligation of funeral prayer discharged by his leading it. For "disbelievers are not at all among the people of worship" (T). And if the actions of those women do not reach the level of disbelief, or they do but he is not pleased with them, then he is a Muslim. Thus, if he is indeed a minor, then the prayer of adults behind him is not valid, even if it is a funeral prayer. However, if he leads the funeral prayer, then apparently the communal obligation (Fard al-Kifaya) of the prayer will be fulfilled, even though the prayer of others behind him is not valid. His own prayer was performed, and that is sufficient for the discharge of the obligation, as congregation is not a condition in funeral prayer. Therefore, the obligation is discharged even if a woman leads it.

فی الدرالمختارلایصح اقتداء رجل بامرأة وخنثی وصبی مطلقاولوجنازة- 1	In al-Durr al-Mukhtar: It is not valid for a man to follow a woman, a hermaphrodite, or a child unconditionally, even for a funeral prayer. (T)

In its section on Funeral Prayers (Salat al-Jana'iz):

لوام بلا طهارة والقوم بها اعیدت و بعکسه لاکما لوامت امرأة ولؤ امة لسقوط فرضها بواحد - 2	If an imam leads the prayer without purity while the congregation has purity, the prayer must be repeated; but if it is the opposite, then no, just as if a woman leads the prayer, even if she is a slave girl, because the obligation is discharged by a single person. (T)

In Radd al-Muhtar it says:

---

1. Durr al-Mukhtar, Chapter on Imamate, printed at Mujtabai Press 1/84.

2. Durr al-Mukhtar, Chapter on Funeral Prayers, printed at Mujtabai Press 1/121.

फ़तावा रज़विया जिल्द छठा

प्रश्न: और उस घर की औरतें हिंदू वेशभूषा पहनती हैं और हिंदू रीति-रिवाजों की पूजा करती हैं, क्या उसके पीछे नमाज़ पढ़ना सही है? और अगर ऐसा लड़का जनाज़े की नमाज़ पढ़ाए तो क्या यह सही है या गलत? कृपया स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर:

अगर वास्तव में उसके यहाँ की औरतें अल्लाह के अलावा किसी और की पूजा करती हैं, यानी हकीकत में दूसरे की इबादत जो कि असली शिर्क(बहुदेववाद) है (सिर्फ कुछ जाहिलियत की रस्में या जाहिलियत के काम नहीं जो पाप और गुनाह की हद से आगे नहीं बढ़ते, भले ही कट्टरपंथी उन्हें शिर्क और दूसरों की पूजा कहें) और वह इस असली शिर्क से वाकिफ़ है और उस पर राज़ी है, तो वह खुद काफिर और मुर्तद (धर्मत्यागी) है। क्योंकि "कुफ्र पर रज़ामंदी भी कुफ्र है" (त)। इस आधार पर, उसके पीछे किसी भी नमाज़ का होना सही नहीं है, चाहे वह बालिग हो या नाबलिग बच्चा, और न ही उसके पढ़ाने से जनाज़े की नमाज़ का फर्ज़ अदा होगा। क्योंकि "काफिर हरगिज़ इबादत के अहल (योग्य) नहीं होते" (त)। और अगर उन औरतों के काम कुफ्र की हद तक नहीं हैं, या हैं लेकिन वह उन पर राज़ी नहीं है, तो वह मुसलमान है। फिर अगर वास्तव में वह नाबलिग है, तो उसके पीछे बालिगों की नमाज़ सही नहीं है, भले ही वह जनाज़े की नमाज़ ही क्यों न हो। हाँ, अगर वह जनाज़े में इमामत करेगा, तो ज़ाहिर है कि नमाज़े फर्ज़े किफ़ाया अदा हो जाएगी, भले ही दूसरों की नमाज़ उसके पीछे न हो। उसकी अपनी नमाज़ तो हो गई और फर्ज़ के साकित (समाप्त) होने के लिए इतना ही काफी है कि जनाज़े की नमाज़ में जमाअत शर्त नहीं है, इसीलिए इसमें औरत की इमामत से भी फर्ज़ साकित हो जाता है।

فی الدرالمختارلایصح اقتداء رجل بامرأة وخنثی وصبی مطلقاولوجنازة- 1	दुर्र-ए-मुख्तार में है कि किसी पुरुष का किसी महिला, उभयलिंगी (खुनसा) या बच्चे का अनुसरण करना बिल्कुल सही नहीं है, भले ही वह जनाज़े की नमाज़ ही क्यों न हो। (त)

उसी के जनाज़े की नमाज़ (सलात अल-जनाइज़) में है:

لوام بلا طهارة والقوم بها اعیدت و بعکسه لاکما	अगर इमाम ने बिना पवित्रता (तहारत) के नमाज़ पढ़ाई और जमाअत पवित्र थी, तो नमाज़ दोहराई जाएगी; लेकिन अगर इसके

لوامت امرأة ولؤ امة لسقوط فرضها بواحد - 2	विपरीत हो तो नहीं, जैसे कि किसी औरत ने इमामत की हो, चाहे वह दासी ही क्यों न हो, क्योंकि एक व्यक्ति से फर्ज़ साकित हो गया। (त)

रद्दुल मुहतार में है:

---

1. दुर्र-ए-मुख्तार, इमामत का अध्याय, मुज्तबाई प्रेस 1/84।
2. दुर्र-ए-मुख्तार, जनाज़े की नमाज़ का अध्याय, मुज्तबाई प्रेस 1/121।

पृष्ठ 388/736

فتاوی رضویہ جلد ششم

اور عورتیں اس گھر کی دھوبلا پوش ہیں اور پرستشِ رسمِ ہنود کی کرتی ہیں، اس کے پیچھے نماز پڑھنا درست ہے یا نہیں؟ اور اگر ایسا لڑکا نماز جنازہ پڑھائے تو درست ہے یا نادرست؟ بینوا توجروا۔

الجواب:

اگر فی الواقع اس کے یہاں کی عورت غیرِ خدا کو پوجتی ہیں یعنی حقیقۃً دوسرے کی عبادت کہ شرکِ حقیقی ہے (نہ صرف وہ بعض رسومِ جاہلیت یا افعالِ جہالت کہ حدِ فسق و گناہ سے متجاوز نہیں گو اہل تشدد انھیں بنام شرک و پرستشِ غیر تعبیر کریں) اور وہ اس شرکِ حقیقی پر مطلع اور اس پر راضی ہے تو خود کافر و مرتد ہے فان الرضا بالکفر کفر (کیونکہ کفر کے ساتھ رضامندی بھی کفر ہے۔ ت) اس تقدیر پر وہ بالغ ہو نابالغ کسی بچے کی بھی کوئی نماز اس کے پیچھے صحیح نہیں ہو سکتی نہ اس کے پڑھنے سے نماز جنازہ کا فرض ساقط ہو فان الکافر لیس من اھل العبادۃ اصلاً (کیونکہ کافر عبادت کا ہرگز اہل نہیں۔ ت) اور اگر ان عورت کے افعال حدِ کفر تک نہیں یا ہیں مگر یہ ان پر راضی نہیں تو مسلمان ہے پس اگر فی الواقع نا بالغ ہے تو بالغین کی نماز اس کے پیچھے صحیح نہیں اگرچہ نماز جنازہ ہی ہو، ہاں جنازہ میں امامت کرے گا تو ظاہراً نمازِ فرضِ کفایہ تھی ادا ہو جائے گی کہ گواوروں کی نماز اس کے پیچھے نہ ہو اس کی اپنی توبہ تو ہوگئی سقوطِ فرض کے لئے اسی قدر بس ہے کہ نماز جنازہ میں جماعت شرط نہیں، ولہذا اس میں عورت کی امامت سے بھی فرض ساقط ہو جاتا ہے۔

فی الدرالمختار لایصح اقتداء رجل بامرأة وخنثی وصبی مطلقاولوجنازة- 1

در مختار میں ہے کہ کسی مرد کا کسی عورت، خنثی یا بچے کی اقتداء کرنا صحیح نہیں، اگرچہ وہ نمازِ جنازہ ہی کیوں نہ ہو۔ (ت)

اُسی کے صلاۃ الجنائز میں ہے:

لوام بلا طھارۃ والقوم بھا اگر امام نے بغیر طہارت کے نماز پڑھائی اور قوم با طہارت تھی تو اعیدت و بعکسہ لاکما لوامت امرأۃ ولؤ امۃ لسقوط فرضھا بواحد - 2

نماز لوٹائی جائے گی اگر اس کے برعکس ہو تو نہیں جیسا کہ کسی عورت نے امامت کرائی خواہ وہ لونڈی ہی ہو کیونکہ شخص واحد سے فرض ساقط ہو گیا (ت)

ردالمختار میں ہے:

---

1 درمختار، باب الامامۃ مطبوعہ مطبع مجتبائی ۱/۸۴ 2 درمختار باب صلوۃ الجنائز مطبوعہ مطبع مجتبائی ۱/۱۲۱

Fatawa-e-Razviya, Volume 6

Imam al-Ustrushni stated in the book 'Ahkam al-Sighar': If a child washes the deceased, it is permissible (ah), meaning the obligation is waived. Thus, the waiving of the obligation of prayer over the deceased by a child's prayer is more prioritized because it is a supplication, and a child's supplication is closer to being answered than that of adults. (T)

In the same book: It is quoted in 'Ahkam' from 'Jami al-Fatawa' that the obligation is waived by his action (the child leading the prayer), just as responding to a child's greeting is correct. A complete investigation of this is in the Chapter of Imamate and the Chapter of Funerals. (T)

And if he is an adult, then every prayer, even the five obligatory ones, can be performed behind him, for beard and mustache are not conditions for the validity of leadership (Imamat); reached puberty is required. Puberty is possible for boys from the age of twelve through the appearance of signs such as nocturnal emission, etc. However, when he is a neglecter of prayer, leaves Friday prayers without a valid interpretation, abandons the mosque without a valid excuse, and is in the habit of going to Hindu festivals and taking his womenfolk there, he is a 'fasiq' (grave sinner) due to many reasons, as each of these acts is sufficient for 'fisq'. Therefore, praying behind him is disliked (Makruh), such that if it is performed, its repetition is required by Sharia.

As the jurists have clarified about the dislike of praying behind a sinner (fasiq), and every prayer performed with dislike must be repeated necessarily if it is 'Makruh Tahrimi' (prohibitively disliked) and preferably if it is 'Makruh Tanzihi' (slightly disliked). The researcher al-Halabi has chosen 'Makruh Tahrimi' for following a 'fasiq' as the preferred view, and this is what the evidence demands, especially when...

1. Radd al-Muhtar, Chapter of Funeral Prayer, published by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/641.
2. Radd al-Muhtar, Chapter of Funeral Prayer, published by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/641.

फतावा-ए-रज़विया, खंड 6

इमाम अल-उस्तरुशनी ने 'अहकाम अल-सिगार' पुस्तक में स्पष्ट किया है कि यदि कोई बच्चा किसी मृतक को स्नान कराता है, तो यह जायज़ है, अर्थात इससे दायित्व (वाजिब) समाप्त हो जाता है। अतः मृतक पर बच्चे की नमाज़ से नमाज़ का दायित्व और भी अधिक समाप्त हो जाएगा क्योंकि जनाज़ा की नमाज़ एक दुआ है, और वयस्कों की तुलना में बच्चे की दुआ जल्दी स्वीकार होती है। (त)

उसी में है: 'अहकाम' में 'जामे अल-फ़तावा' से उद्धृत है कि बच्चे के नमाज़े जनाज़ा पढ़ने से उसका दायित्व समाप्त हो जाता है, जैसे कि यदि कोई बच्चा इस्लाम का सलाम कहे तो उसके सलाम का जवाब देना सही है। इस बारे में पूरी जांच 'इमामत के अध्याय' और 'जनाज़ा के अध्याय' में है। (त)

और यदि वह वयस्क है, तो प्रत्येक नमाज़, यहाँ तक कि पाँचों फ़राइज़ (अनिवार्य नमाज़ें) भी उसके पीछे पढ़ी जा सकती हैं, क्योंकि दाढ़ी और मूंछ इमामत (नेतृत्व) की वैधता के लिए शर्त नहीं हैं; वयस्कता की आवश्यकता है। लड़कों में वयस्कता बारह (12) वर्ष की आयु से स्वप्नदोष आदि जैसे संकेतों की उपस्थिति के माध्यम से संभव है। लेकिन जब वह नमाज़ छोड़ने वाला हो, बिना किसी वैध व्याख्या के जुमा छोड़ने वाला हो, और बिना किसी वैध बहाने के मस्जिद छोड़ देता हो और हिंदू मेलों में जाने और अपनी महिलाओं को वहां ले जाने का आदि हो, तो वह कई कारणों से 'फ़ासिक़' (पापी) है, क्योंकि इनमें से प्रत्येक कार्य 'फ़िस्क़' के लिए पर्याप्त है। इसलिए उसके पीछे नमाज़ मकरूह (नापसंद) है, इतनी कि यदि पढ़ी जाए तो शरई तौर पर उसे दोहराना आवश्यक है।

जैसा कि फ़कीहों (विधिवक्ताओं) ने स्पष्ट किया है कि फ़ासिक़ के पीछे नमाज़ मकरूह है, और जो भी नमाज़ मकरूह के साथ अदा की जाए, उसे 'मकरूह-ए-तहरीमी' (अत्यधिक नापसंद) होने की स्थिति में दोहराना वाजिब (आवश्यक) है और 'मकरूह-ए-तंज़ीही' (थोड़ा नापसंद) होने की स्थिति में दोहराना मुस्तहब (पसंदीदा) है। मोहक़्क़िक़ हलबी ने फ़ासिक़ के पीछे नमाज़ पढ़ने को मकरूह-ए-तहरीमी होना पसंद किया है, और प्रमाण की यही माँग है, विशेष रूप से जब...

1. रद अल-मुह्तार, जनाज़ा की नमाज़ का अध्याय, मुस्तफा अल-बाबी द्वारा प्रकाशित, मिस्र, 1/641।
2. रद अल-मुह्तार, जनाज़ा की नमाज़ का अध्याय, मुस्तफा अल-बाबी द्वारा प्रकाशित, मिस्र, 1/641।

فتاوٰی رضویہ ، جلد ششم

قال الامام الاستروشنی فی کتاب احکام الصغار الصبی اذا غسل المیت جاز اھ ای یسقط بہ الوجوب فسقوط الوجوب بصلاتہ علی المیت اولی لانھا دعاء وھو اقرب للاجابۃ من المکلفین۔ امام استروشنی نے کتاب الاحکام الصغار میں تصریح کی ہے کہ بچہ اگر کسی میت کو غسل دے تو جائز اھ یعنی اس سے وجوب ساقط ہوجائے گا لہذا میت پر بچے کی نماز سے وجوب نماز بطریق اولٰی ساقط ہوجائے گا کیونکہ نمازِ جنازہ دُعا ہے اور بالغ لوگوں کی بہ نسبت بچے کی دُعا جلدی قبول ہوتی ہے۔ (ت)

اسی میں ہے: نقل الاحکام عن جامع الفتاوٰی ، سقوطھا بفعلہ کرد السلام اھ و تمام تحقیقہ فیہ من الامامۃ ومن الجنائز۔ لیکن احکام میں جامع الفتاوٰی سے منقول ہے کہ بچے کے نماز جنازہ پڑھانے سے اس کا سقوط ہوجاتا ہے جیسا کہ بچہ اگر اسلام کا جواب دے تو اس کے سلام کا جواب دینا درست ہے اھ اور اس بارے میں تمام تحقیق باب الامامت اور باب الجنائز میں ہے۔(ت)

اور اگر بالغ ہے تو ہر نماز یہاں تک کہ فرائضِ پنجگانہ بھی اس کے پیچھے ہو جائیں گے کہ داڑھی مونچھ شرط صحت امامت نہیں بلوغ درکار ہے اور وہ ظہورِ آثار مثل احتلام وغیرہ سے لڑکوں میں بارہ ۱۲ برس کی عمر سے ممکن لیکن جبکہ وہ تارک الصلوٰۃ اور بلا تاویل تارکِ جمعہ ہے اور بے عذر صحیح ترک مسجد اور ہنود کے میلوں میں جانے اور اپنی عورتوں کو لے جانے کا عادی ہے تو بوجوہ کثیر فاسق ہے کہ ان میں ہر امر فسق کے لئے کافی، تو اس کے پیچھے نماز مکروہ ہے کہ پڑھی جائے تو شرعاً اس کا اعادہ مطلوب۔

لما صرحوا به من كراهة الصلوة خلف الفاسق وان كل صلوة اديت مع كراهة فانها تعاد وجوبا لو تحريمية و ندبا لو تنزيهية وقد اختار المحقق الحلبى كراهة التحريم فى الفاسق وهو قضية الدليل لاسيما اذ كان جيسا کہ فقہانے اس بات کی تصریح کی ہے کہ فاسق کے پیچھے نماز مکروہ ہے، اور ہر وہ نماز جو کراہت کے ساتھ ادا کی جائے تو مکروہ تحریمی کی صورت میں اس کا لوٹانا واجب اور تنزیہی کی صورت میں لوٹانا مستحب ہے اور محقق حلبی نے اقتداء فاسق کے مکروہ تحریمی ہونے کو مختار قرار دیا ہے اور یہی دلیل کا تقاضا ہے خصوصاً جبکہ

1 ردالمختار باب صلوة الجنائز مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱ / ۶۴۱ 2 ردالمختار باب صلوة الجنائز مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱ / ۶۴۱

Fatawa Rizvia, Volume Six

...he is a cursed transgressor (fasiq). (T) And making him an Imam in the funeral prayer is even more detestable, as this prayer is for the purpose of supplication and intercession. Appointing a transgressor for intercession is foolishness. However, if he leads it, there is no dispute about the validity of the prayer and the fulfillment of the obligation, *kama la yakfa* (as is not hidden. T). And Allah Almighty knows best what is correct.

Problem No. 573: 27 Rabi al-Awwal Sharif 1309 AH What do the scholars of religion say regarding the issue where someone missed some rak'ahs with the Imam and performs his remaining rak'ahs after the Imam's salam? In this case, if someone follows him (takes him as Imam), will the prayer of the one following be valid or not? Clarify and be rewarded.

The Answer: No. In *Tanwir al-Absar*: "The *masbuq* (one who missed rak'ahs) is like an individual worshiper (*munfarid*) in what he completes, except in four [cases] where it is not permissible to follow him." (In *Tanwir al-Absar* it is stated: a *masbuq* is considered an individual worshiper in the prayer he completes, meaning he is individual in performing what he did not catch with the Imam, except in four issues where he is like a follower; the first issue is that it is not permissible to follow him. (T)) And Allah Almighty knows best.

Problem No. 574: 1st Jamadi al-Akhir 1309 AH What do the scholars of religion say regarding the ruling of praying behind an usurer (one who takes interest)? And should he be appointed as an Imam or not? Clarify and be rewarded.

The Answer: An usurer is a transgressor (*fasiq*), and prayer behind a transgressor is deficient and disliked (*makruh*). If it has been performed, it should be repeated, even if time has passed. Therefore, he should never be made an Imam. Wherever he leads the prayer, he should be removed if possible, and a pious, correctly-believing, and correctly-reciting Imam should be appointed. If one does not have the power [to remove him], they should go to another mosque for Friday prayers, and similarly for the five daily prayers, or perform their own second congregation here. It is stated in *Saghir*: "Prioritizing a transgressor is macro-prohibitive (*makruh tahrimi*)" (Prioritizing

a transgressor (i.e., for leadership) is macro-prohibitive. T). It is stated in *Maraqi al-Falah*:

1. Durr-e-Mukhtar Sharh Tanwir al-Absar, Chapter of Leadership, printed by Matba' Mujtabai Delhi, 1/86.
2. Saghir Sharh Munyat al-Musalli, Topics of Leadership, printed by Matba' Mujtabai Delhi, p. 262.

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

...वह शापित पापी (फ़ासिक़) है। (त) और जनाज़े की नमाज़ में उसे इमाम बनाना और भी अधिक बुरा है क्योंकि यह नमाज़ दुआ और शफ़ाअत (सिफारिश) के उद्देश्य से है। शफ़ाअत के लिए एक पापी को आगे करना मूर्खता है। हालाँकि, यदि वह पढ़ाता है, तो नमाज़ की वैधता और फ़र्ज़ की अदायगी में कोई विवाद नहीं है, कमा ला यखफ़ा (जैसा कि छिपा नहीं है। त)। और अल्लाह तआला ही सबसे बेहतर जानता है।

मसाला नंबर 573: 27 रबी-उल-अव्वल शरीफ़ 1309 हिजरी धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं कि जिसने इमाम के साथ कुछ रकात नहीं पायीं और इमाम के सलाम के बाद वह अपनी शेष रकात अदा करता है? इस स्थिति में यदि कोई उसकी इक़्तेदा (पीछे नमाज़ पढ़ना) करता है, तो इक़्तेदा करने वाले की नमाज़ सही होगी या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य पाएँ।

उत्तर: नहीं। तनवीरुल अबसार में है: "मसबूक़ (जिसकी रकात छूट गई हो) अपनी शेष नमाज़ पूरी करने में व्यक्तिगत नमाज़ी के समान है, सिवाय चार स्थितियों के जहाँ उसकी इक़्तेदा करना जायज़ नहीं है।" (तनवीरुल अबसार में लिखा है: मसबूक़ उस नमाज़ में व्यक्तिगत है जिसे वह पूरा करता है, यानी जो नमाज़ उसे इमाम के साथ नहीं मिली, उसे पढ़ने में वह व्यक्तिगत है, सिवाय चार मसलों के जिनमें वह मुक़्तदी (अनुयायी) की तरह है; पहला मसला यह है कि उसकी इक़्तेदा जायज़ नहीं है। (त)) और अल्लाह तआला ही सबसे बेहतर जानता है।

मसाला नंबर 574: 1 जमादि-उल-अख़ीर 1309 हिजरी धर्म के विद्वान इस मसले में क्या कहते हैं कि सूदखोर (ब्याज लेने वाला) के पीछे नमाज़ का क्या हुक्म है? और क्या उसे इमाम नियुक्त करना चाहिए या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य पाएँ।

उत्तर: सूदखोर फ़ासिक़ (पापी) है और फ़ासिक़ के पीछे नमाज़ अधूरी और मकरूह (नापसंद) है। यदि पढ़ ली गई हो, तो उसे दोहराया जाए चाहे समय बीत चुका हो। इसलिए उसे कभी इमाम न बनाया जाए। जहाँ वह इमामत करता हो, क्षमता होने पर उसे हटाकर एक परहेज़गार, सही अक़ीदे वाला और सही क़िरात करने वाला इमाम नियुक्त करें। यदि क्षमता न हो, तो जुमा के लिए दूसरी मस्जिद में जाएँ, इसी तरह पाँचों नमाज़ों के लिए, चाहे अपनी दूसरी जमात यहीं कर लें। सग़ीरी में है:

"फ़ासिक़ को आगे करना मकरूहे तहरीमी (निषिद्ध के करीब नापसंद) है" (फ़ासिक़ को आगे करना (यानी इमामत के लिए) मकरूहे तहरीमी है। त)। मराक़िल फ़लाह में है:

1. दुर्रे मुख़्तार शरह तनवीरुल अबसार, बाबुल इमामत, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 1/86।
2. सग़ीरी शरह मुनियतुल मुसल्ली, मुबाहिसुल इमामत, मतबा मुजतबाई दिल्ली, पृ. 262।

पृष्ठ 390 का 736

وہ فاسق ملعون ہو۔ (ت) اور نمازِ جنازہ میں اسے امام کرنا اور بھی زیادہ معیوب کہ یہ نماز بغرضِ دُعا و شفاعت ہے اور فاسق کو شفاعت کے لئے مقدم کرنا حماقت، تاہم اگر پڑھائے گا تو جوازِ نماز و سقوطِ فرض میں کلام نہیں کما لا یخفی (جیسا کہ مخفی نہیں ہے۔ ت) واللہ تعالٰی اعلم بالصواب۔

مسئلہ نمبر ۵۷۳: ۲۷ ربیع الاول شریف ۱۳۰۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ جس نے امام کے ساتھ کچھ رکعتیں نہ پائیں بعد سلام امام وہ اپنی رکعاتِ باقیہ ادا کرتا ہے اس صورت میں کسی نے اس کی اقتدا کی تو اس اقتدا کرنے والے کی نماز صحیح ہو گی یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: نہ۔ فی تنویر الابصار المسبوق منفرد فیما یقضیہ الا فی اربع لایحوز الاقتداء بہ 1 (تنویر الابصار میں ہے مسبوق منفرد ہے اس نماز میں کہ قضا کرتا ہے یعنی وہ نماز جو امام کے ساتھ نہیں ملی اس کے پڑھنے میں منفرد ہے مگر چار مسئلوں میں کہ وہ مثلِ مقتدی کے اول مسئلہ یہ ہے کہ اس کی اقتداء جائز نہیں (ت) واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ نمبر ۵۷۴: یکم جمادی الاخرٰی ۱۳۰۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ سود خور کے پیچھے نماز کا کیا حکم ہے؟ اور اسے امام مقرر کرنا چاہئے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: سود خور فاسق ہے اور فاسق کے پیچھے نماز ناقص و مکروہ اگر پڑھ لی تو پھیری جائے اگر چہ مدت گزر چکی ہو، ولہٰذا اسے ہرگز امام نہ کیا جائے جہاں امامت کرتا ہو بشرطِ قدرت معزول کر کے امام متقی صحیح العقیدہ صحیح القراۃ مقرر کریں، اگر قدرت نہ پائیں تو جمعہ کے لئے دوسری مسجد میں جائیں یونہی پنجگانہ میں خواہ اپنی دوسری جماعت یہیں کر لیں۔ صغیری

میں: یکرہ تقدیم الفاسق کراھۃ تحریم 2 (فاسق کی تقدیم (یعنی امامت) مکروہ تحریمی ہے۔ ت)

مراقی الفلاح میں ہے :

1 درمختار شرح تنویر الابصار باب الامامۃ مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱/۸۶ 2 صغیری شرح منیۃ المصلی مباحث الامامت مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ص ۲۶۲

صفحہ ۳۹۰ از ۷۳۶

Fatawa Razawiyya Volume Six

The leadership (Imamate) of a sinful scholar (fasiq 'alim) is disliked because he does not give importance to following the religion. Therefore, legally (shari'ah), it is mandatory to humiliate him; hence, it is not correct to honor him by putting him forward for Imamate. If it is difficult to prevent him, then such persons should go to another mosque for Friday prayers and others. (T)

It is in Tahtawiyyah: Al-Zayla'i followed this, and its implication is that the dislike (karahat) in a sinner being an Imam is prohibitive dislike (tahrimiyyah). (T)

It is stated in the marginalia of Durr al-Mukhtar: Putting him forward is honoring him, while legally (shari'ah), their humiliation was mandatory upon them. This indicates that putting him forward is a prohibitive dislike (karahat al-tahrim). - Abu Mas'ud (T)

It is in Kabiri: If two people are equal in knowledge and righteousness, but one of them is more proficient in recitation (ahsan qira'at), then if they put forward the latter, they have acted poorly but are not sinful. The poor action is due to abandoning the Sunnah, and the lack of sin is because they did not abandon an obligatory (wajib) act, as they put forward a righteous man. This is also mentioned in Fatawa al-Hujjah, and it contains an indication that if they had put forward a sinner, they would be sinful based on the fact that the dislike of putting him forward is a prohibitive dislike.

Footnotes: 1. Maraqi al-Falah with Marginalia of al-Tahtawi, section on clarifying who is more deserving of Imamate, printed by Asah al-Matabi' Karachi, p. 165. 2. Marginalia of al-Tahtawi on Maraqi al-Falah, section on clarifying who is more deserving of Imamate, printed by Asah al-Matabi' Karachi, p. 165. 3. Marginalia of al-Tahtawi on al-Durr al-Mukhtar, chapter on Imamate, printed by Dar al-Ma'rifah Beirut, 1/243.

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

एक गुनहगार विद्वान (फासिक आलिम) का इमामत करना नापसंद (मक़रूह) है क्योंकि वह धर्म का पालन करने को महत्व नहीं देता। इसलिए, शरियत के अनुसार उसका तिरस्कार करना अनिवार्य (वाजिब) है; अतः इमामत के लिए उसे आगे बढ़ाकर उसका सम्मान करना सही नहीं है। यदि उसे रोकना कठिन हो, तो ऐसे व्यक्तियों को जुमा और अन्य नमाज़ों के लिए दूसरी मस्जिद में चले जाना चाहिए। (त)

तहतवियाह में है: ज़ैलई ने इसी का अनुसरण किया और इसका तात्पर्य यह है कि फासिक के इमाम होने में 'कराहत-ए-तहरीमी' (कड़ी नापसंदगी) है। (त)

दुर्र अल-मुख़्तार के हाशिये (marginalia) में फ़रमाया: उसे आगे बढ़ाना उसका सम्मान करना है, जबकि शरियत के अनुसार उन पर उसका अपमान करना अनिवार्य था। यह बात इस पर संकेत करती है कि उसे आगे बढ़ाना 'कराहत-ए-तहरीमी' है। - अबू मसूद (त)

कबीरी में है: यदि दो व्यक्ति ज्ञान और सदाचार में समान हों, लेकिन उनमें से एक कुरान पाठ (तजवीद) में बेहतर हो, तो यदि वे दूसरे को इमाम बनाते हैं, तो उन्होंने बुरा किया लेकिन वे गुनहगार नहीं होंगे। बुरा कार्य सुन्नत को छोड़ने के कारण है, और पाप की कमी इसलिए है क्योंकि उन्होंने अनिवार्य (वाजिब) कार्य नहीं छोड़ा, क्योंकि उन्होंने एक नेक व्यक्ति को आगे बढ़ाया। फतावा अल-हुज्जाह में भी ऐसा ही है, और इसमें यह संकेत भी है कि यदि उन्होंने किसी पापी को आगे बढ़ाया होता, तो वे गुनहगार होते, इस आधार पर कि उसे आगे बढ़ाने की नापसंदगी 'कराहत-ए-तहरीमी' है।

पाद-टिप्पणियाँ: 1. मराकी अल-फलाह मअ हाशियह अत-तहतवी, इमामत के अधिक हकदार के बयान का खंड, असहा अल-मताबे कराची द्वारा मुद्रित, पृ. 165। 2. मराकी अल-फलाह पर हाशियह अत-तहतवी, इमामत के अधिक हकदार के बयान का खंड, असहा अल-मताबे कराची द्वारा मुद्रित, पृ. 165। 3. अद-दुर्र अल-मुख़्तार पर हाशियह अत-तहतवी, इमामत का अध्याय, दार अल-मारिफ़ाह बेरूत द्वारा मुद्रित, 1/243।

पृष्ठ 391 का 736

فتاوی رضویہ جلد ششم

کرہ امامة الفاسق العالم لعدم اهتمامه بالدین فتجب اهانته شرعا فلا یعظم بتقدیمه للامامة واذا تعذر منعه ینتقل عنه الی غیر مسجد للجمعة وغیرها. فاسق عالم کی امامت مکروہ ہے کیونکہ وہ دین کی اتباع کا اہتمام نہیں کرتا لہٰذا شرعاً اس کی تذلیل واجب ہے پس امامت کے لئے تقدیم کی صورت میں اس کی تعظیم درست نہیں جب اس کا روکنا دشوار ہو تو ایسے حضرات کو جمعہ وغیرہ کے لئے دوسری مسجد میں چلے جانا چاہئے۔(ت)

طحطاویہ میں ہے: تبع فیه الزیلعي ومفاده کون الکراهة في الفاسق تحریمیة. زیلعی نے اس میں اسی کا اتباع کیا اس کا مفاد یہ ہے کہ فاسق کے امام ہونے میں کراہتِ تحریمی ہے۔(ت)

حاشیہ در مختار میں فرمایا: فی تقدیمہ تعظیمہ وقد وجب علیهم اهانتہ شرعاً ومفاد هذا کراهة التحریم فی تقدیمہ اھ ابو مسعود۔ فاسق کی تقدیم میں اس کی تعظیم ہے حالانکہ شرعاً اس کی اہانت ان پر لازم ہے، یہ بات اس پر دال ہے کہ فاسق کی تقدیم مکروہ تحریمی ہے اھ ابو مسعود (ت)

کبیری میں ہے: لو استویا في العلم والصلاح واحد هما اقرأ فقد موا الاخراساؤا ولا یأثمون فالاساءة لترك السنة و عدم الاثم لعدم ترك الواجب لانهم قد موارجلا صالحاً کذا في فتاوی الحجة وفیه اشارة الی انهم لو قدموا فاسقاً یأثمون بناء علی ان کرهة تقدیمه کراهة اگر دو ۲ شخص علم وصلاح میں برابر ہوں مگر ایک صاحب تجوید ہو تو اگر دوسرے کو امام بنالیا تو وہ اساءت کے مرتکب ہوئے البتہ گناہگار نہ ہوں گے۔ اساءت ترک سنت کے سبب ہے اور عدم گناہ عدم ترک واجب کی وجہ سے ہے کیونکہ انہوں نے ایک صالح شخص کو امام بنایا، فتاویٰ حجہ میں اسی طرح ہے، اسی میں اس

طرف اشارہ بھی ہے کہ انہوں نے کسی فاسق کو مقدم کیا تو گناہگار ہوں گے اس بنا پر کہ اس کی تقدیم کی کراہت، کراہتِ تحریمی ہے۔

حواشی: 1. مراقی الفلاح مع حاشیہ الطحطاوی فصل فی بیان الاحق بالامامتہ مطبوعہ اصح المطابع کراچی ص ۱۶۵ 2. حاشیہ الطحطاوی علی المراقی الفلاح فصل فی بیان الاحق بالامامتہ مطبوعہ اصح المطابع کراچی ص ۱۶۵ 3. حاشیہ الطحطاوی علی الدر المختار باب الامامتہ مطبوعہ دار المعرفتہ بیروت، ۱ / ۲۴۳

Fatawa Razawiyya, Volume 6

(Arabic Text): "Prohibition due to his lack of concern for his religious matters and his laxity in fulfilling its requirements. Therefore, it is not improbable that he might omit some conditions of prayer or perform actions incompatible with it; rather, this is the prevailing likelihood given his transgression (fisq). For this reason, prayer behind him is absolutely invalid according to Malik and in one narration from Ahmad^1 etc. And Allah Almighty knows best."

(Urdu Translation of the above): If a transgressor (fasiq) is put forward as an Imam, the people will be sinners because making a fasiq the leader is macrooh-e-tahrimi (prohibitively disliked). This is because he does not care about religious matters and shows negligence in practicing religious essentials. Thus, it is not far-fetched that he might miss certain prayer requirements and act contrary to prayer. In fact, considering his sinfulness, the dominant assumption is this. This is why, according to Imam Malik and one narration of Imam Ahmad bin Hanbal (may Allah have mercy on them), prayer behind a fasiq is absolutely not permissible. etc. And Allah Almighty knows best. (T)

Problem No. 575: Submitted by Mirza Baqi Baig Sahab, Rampuri, 4 Safar 1306 AH. What do the scholars of religion say on this matter: how is it for an Imam to stand in a 'dur', i.e., between two columns? Explain and be rewarded. Answer: It is disliked (makrooh).

(Arabic Text): "In the section 'Disliked Acts of Prayer' in Radd al-Muhtar, citing Ma’arij al-Dirayah, Chapter on Leadership (Imamat): The most correct view narrated from Abu Hanifah is that he said, 'I dislike for the Imam to stand between two columns' (up to his statement) 'because it is contrary to the practice of the community (Ummah).' End quote^2."

(Urdu Translation): In "Radd al-Muhtar," regarding the disliked acts of prayer, with reference to the chapter on leadership in 'Ma’arij al-Dirayah', it is narrated as the most correct opinion from Imam Abu Hanifa that I consider it disliked for an Imam to stand between two pillars. (Further on he said) because this practice is against the practice of the Ummah. End quote. (T) And Allah subhanahu wa ta'ala knows best.

Problem No. 576: From Ujjain, Gwalior, sent by Maulvi Yaqub Ali Khan, 15 Jamadi al-Akhira 1309 AH. What do the scholars of religion and Muftis of the Ahl-e-Sunnat wa Jama'at say on this issue: Zaid is completely ignorant of the issues of jurisprudence

(fiqh) and has no mastery over Hadith and Tafsir. Despite these qualities, he states without Sharia evidence that a man who has intimacy with his wife...

Footnotes: 1. Ghunyat al-Mustamli, Sharh Munyat al-Musalli, Section on Imamat, published by Suhail Academy Lahore, p. 513. 2. Radd al-Muhtar, Topic: Disliked Acts of Prayer, Section on Imamat, published by Mustafa al-Babi Egypt, 1/781. Page 392 of 736

फ़तावा रज़विया, जिल्द 6

(अरबी पाठ): "धार्मिक मामलों में उसकी बेपरवाही और इसकी अनिवार्यताओं को पूरा करने में उसकी लापरवाही के कारण निषेध। इसलिए, यह असंभव नहीं है कि वह नमाज़ की कुछ शर्तों को छोड़ दे या इसके विपरीत कोई कार्य करे; बल्कि उसकी अवज्ञा (फ़िस्क) को देखते हुए यही प्रबल संभावना है। इसी कारण से, इमाम मालिक और इमाम अहमद की एक रिवायत के अनुसार उनके पीछे नमाज़ बिलकुल जायज़ नहीं है।^1 इत्यादि। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।"

(उपरोक्त का उर्दू अनुवाद): फ़ासिक़ (गुनाहगार) को इमाम बनाने पर लोग गुनहगार होंगे, क्योंकि फ़ासिक़ को आगे करना मकरूह-ए-तहरीमी (कठोरता से नापसंद) है। वह दीन के मामलों की परवाह नहीं करता और दीन के ज़रूरी कामों पर अमल करने में सुस्ती बरतता है। लिहाज़ा, यह दूर नहीं है कि वह नमाज़ की कुछ शर्तों को छोड़ दे और नमाज़ के उलट काम करे। बल्कि उसके फ़िस्क (गुनाह) को देखते हुए मज़बूत गुमान यही है। यही कारण है कि इमाम मालिक और एक रिवायत के अनुसार इमाम अहमद बिन हंबल (अल्लाह उन पर रहम करे) के नज़दीक फ़ासिक़ के पीछे नमाज़ कतई जायज़ नहीं है। आदि। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला नंबर 575: पेश कर्दा मिर्ज़ा बाक़ी बेग साहब रामपूरी, 4 सफ़र 1306 हिजरी। दीन के उलेमा इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि इमाम का 'दुर' यानी दो खंभों के बीच में खड़ा होना कैसा है? बयान फ़रमाएं, सवाब मिलेगा। अल-जवाब: मकरूह है।

(अरबी पाठ): "'रद्दुल मुहतार' में 'नमाज़ की नापसंद चीज़ें' (मक़रुहात-ए-सलात) के तहत 'मआरिजुद-दिरायत' के हवाले से 'बाबुल इमामत' (नेतृत्व का अध्याय) में है: इमाम अबू हनीफ़ा से सबसे सही रिवायत यही है कि उन्होंने फ़रमाया, 'मैं इमाम के लिए दो खंभों के बीच खड़ा होना नापसंद करता हूँ' (उनके बयान तक) 'क्योंकि यह उम्मत (समुदाय) के अमल के ख़िलाफ़ है।' समाप्त।^2"

(उर्दू अनुवाद): 'रद्दुल मुहतार' के मक़रुहात-ए-सलात में 'मआरिजुद-दारिया' के बाब-ए-इमामत के हवाले से है कि इमाम अबू हनीफ़ा से सही तौर पर यही रिवायत है कि मैं इमाम के दो खंभों के बीच खड़े होने को मकरूह जानता हूँ (आगे चलकर फ़रमाया) क्योंकि यह अमल उम्मत के ख़िलाफ़ है। समाप्त। (त) और अल्लाह सुब्हानहु व तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 576: उज्जैन, ग्वालियर से, भेजने वाले मौलवी याक़ूब अली खान, 15 जमादी-उल-उख़रा 1309 हिजरी। अहले सुन्नत व जमाअत के उलेमा-ए-दीन और मुफ़्ती क्या फ़रमाते हैं इस मसले में कि ज़ैद फ़िक़्ह (इस्लामी कानून) के मसलों से बिलकुल नावाक़िफ़ है और न ही हदीस और तफ़सीर पर उसे कोई उबूर (महारत) हासिल है। इन सिफ़तों के बावजूद, वह बिना किसी शरीअत की दलील के बयान करता है कि जो मर्द अपनी बीवी से कुर्बत (निकटता) करे...

फुटनोट्स: 1. गुनियुतुल मुस्तमली शरह मुनियतुल मुसल्ली, फ़स्ल फ़िल इमामत, मत्तबूआ सुहैल एकेडमी लाहौर, पृष्ठ 513। 2. रद्दुल मुहतार, मतलब मक़रुहात-ए-सलात, फ़स्ल फ़िल इमामत, मत्तबूआ मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 1/781। पेज 392 of 736

فتاوی رضویہ، جلد ششم

تحریم لعدم اعتنائه بأموردینه و تسا هله فی الایتان بلوازمه فلا یبعد منه الاخلال ببعض شروط الصلوة و فعل ما ینافیها بل هو الغالب بالنظر الی فسقه ولذا لم تجز الصلوة خلفه اصلا عند مالك و روایة عن احمد۱۸ الخ واللہ تعالی اعلم۔ فاسق کو مقدم کر دیا تو گناہگار ہوں گے اس بنا پر کہ فاسق کا مقدم کرنا مکروہ تحریمی ہے کیونکہ وہ امور دین کی پرواہ نہیں کرتا اور دین کے لوازمات پر عمل کرنے سے تساہل برتتا ہے لہذا اس سے بعید نہیں کہ وہ نماز کے بعض شرائط فوت کر دے اور نماز کے منافی عمل کرے بلکہ اس کے فسق کے پیش نظر غالب گمان یہی ہے، یہی وجہ ہے کہ امام مالک اور ایک روایت کے مطابق امام احمد بن حنبل رحمہما اللہ تعالیٰ کے نزدیک فاسق کے پیچھے نماز قطعاً جائز نہیں۔ الخ واللہ تعالیٰ اعلم (ت)

مسئلہ نمبر ۵۷۵: مسئولہ مرزا باقی بیگ صاحب رامپوری ۴ صفر ۱۳۰۶ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ امام کو ڈر میں یعنی دو ۲ ستونوں کے بیچ میں کھڑا ہونا کیسا ہے؟ بینوا توجروا۔ الجواب: مکروہ ہے۔

فی مکروهات الصلوة من ردالمختار عن معراج الدریة باب الامامة الاصح ماروی عن ابی حنیفه انه قال اکره للامام ان یقوم بین الساریتین (الی قوله) لانه بخلاف عمل الامة انتهی۲۸۔ ردالمختار کے مکروہات صلوٰۃ میں معراج الدار یہ کے باب الامامت کے حوالے سے ہے کہ امام ابو حنیفہ سے اصح طور پر یہی مروی ہے کہ امام کے دوستونوں کے درمیان کھڑے ہونے کو مکروہ جانتا ہوں (آگے چل کر فرمایا) کیونکہ یہ عمل امت کے خلاف ہے انتہیٰ (ت) واللہ سبحنہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۵۷۶: از اُجین گوالیار مرسلہ مولوی یعقوب علی خان ۱۵ جمادی الاخری ۱۳۰۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان سنّت و جماعت اس مسئلہ میں کہ زید مسائل فقہ سے محض ناواقف اور نہ عبورِ حدیث و تفسیر، با وجود ان اوصاف کے بلا دلائل شرعیہ بیان کرے کہ جو مرد اپنی بی بی سے قربت کرے

---

[1][8] غنیة المستملی شرح منیة المصلی فصل فی الامامة مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۵۱۳ [2][8]

ردالمختار، مطلب مکروہات الصلوة فصل فی الامامة مطبوعہ مصطفی البابی مصر، ۱/ ۷۸۱ Page 392 of 736

Fatawa Razawiyya Volume Six

And [Zaid says that] until one bathes [after intercourse], they are cursed. And he says that if someone locks the mosque door for protection after the Isha prayer, praying in that mosque is absolutely prohibited (haram), and that person should be stoned. He translates and interprets the Holy Quran and Hadiths without knowledge. He describes obligatory (fard) acts as Sunnah and mandatory (wajib) acts as recommended (mustahabb), providing false references to books. After the funeral prayer is over, he leads a second funeral prayer with five abrogated takbirs. He leads the prayer as an imam without knowledge of the rulings and pillars of prayer. Is prayer valid behind him or not? And what is the Shariah ruling regarding him, those who consider his impermissible actions permissible, and his supporters? Pronounce the command of Allah with references from the Book. (Allah's command with a book reference - T)

The Answer:

Zaid is ignorant, extremely daring, and bold.

Firstly: His absolute claim that one who has intimacy with his wife is cursed until he bathes is a severe slander against the pure Shariah, God forbid. The ruling is only that, as much as possible, haste in bathing is recommended and liked. If one does not bathe immediately, they should perform ablution (wudu), as angels avoid places where a person is in a state of ritual impurity (junub). However, one who does not hasten to bathe is not cursed at all, nor is he a sinner, as long as the delay does not cause the loss of prayer or the start of a prohibited (Makruh Tahrimi) time. The Lawgiver (Prophet), peace and blessings be upon him, himself sometimes delayed bathing until morning to teach permissibility, especially on certain nights of the blessed month of Ramadan. From this action of the Prophet (PBUH), two matters of ease and mercy became known to the Ummah: first, that while haste in bathing is better, it is not obligatory; one has the choice to delay it until prayer time. Second, being in a state of ritual impurity at dawn does not cause any harm or deficiency to the fast. Narrated from Ahmad, Bukhari, Muslim, and the Mothers of the Believers, Siddiqa (Aisha) and Umm Salama (may Allah be pleased with them):

Arabic	Urdu Translation
Inna an-Nabiyya salla Allahu ta'ala 'alayhi wa sallama kana yusbihu	The Noble Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) would (sometimes) wake up in a

Arabic	Urdu Translation
junuban min jima'in thumma yaghtasilu wa yasumu. Zada fi zawiyatin: fi Ramadan.	state of ritual impurity due to intercourse, then perform ghusl (bath) and keep the fast. One narration also includes "in Ramadan". (T)

1. Sahih Bukhari, Chapter: The faster waking up in a state of ritual impurity, printed by Qadimi Kutub Khana Karachi, 1/258; Sahih Muslim, Chapter: Validity of fasting for one upon whom dawn breaks [in a state of impurity], printed by Qadimi Kutub Khana Karachi, 1/354; Musnad Ahmad bin Hanbal, narrated from Aisha (may Allah be pleased with her), printed by Dar al-Fikr Beirut, 6/313.

और [ज़ैद कहता है कि] जब तक कोई स्नान न कर ले, वह शापित (लानत का पात्र) है। और वह कहता है कि जो व्यक्ति सुरक्षा के लिए ईशा की नमाज़ के बाद मस्जिद का दरवाज़ा बंद करता है, उस मस्जिद में नमाज़ पढ़ना पूरी तरह से हराम है, और उस व्यक्ति को पत्थर मार-मार कर मार देना चाहिए। वह हदीसों और तफ़सीर के ज्ञान के बिना पवित्र कुरान का अनुवाद और व्याख्या करता है। वह अनिवार्य (फ़र्ज़) कार्यों को सुन्नत और आवश्यक (वाजिब) कार्यों को अनुशंसित (मुस्तहब) बताता है, और किताबों के झूठे हवाले देता है। जनाज़े की नमाज़ पूरी होने के बाद, वह पाँच निरस्त (मंसूख़) तकबीरों के साथ दूसरी बार जनाज़े की नमाज़ पढ़ाता है। वह नमाज़ के नियमों और स्तंभों के ज्ञान के बिना इमाम के रूप में नमाज़ का नेतृत्व करता है। क्या उसके पीछे नमाज़ जायज़ है या नहीं? और उसके बारे में, जो उसके नाजायज़ कार्यों को जायज़ मानते हैं, और उसके समर्थकों के बारे में शरीयत का क्या हुक्म है? किताब के हवाले के साथ अल्लाह का हुक्म सुनाएँ। (अल्लाह का हुक्म किताब के संदर्भ के साथ - त)

अल-जवाब (उत्तर):

ज़ैद अज्ञानी, अत्यंत दुस्साहसी और निडर है।

पहला: उसका यह पूर्ण रूप से कहना कि जो अपनी पत्नी के साथ निकटता करता है वह स्नान करने तक शापित है, अल्लाह की पनाह, पवित्र शरीयत पर एक गंभीर आरोप है। नियम केवल इतना है कि जहाँ तक संभव हो, स्नान करने में शीघ्रता करना प्रशंसनीय और प्रिय है। यदि कोई तुरंत स्नान नहीं करता है, तो उसे वज़ू (आचमन) कर लेना चाहिए, क्योंकि फरिश्ते उन स्थानों से बचते हैं जहाँ कोई व्यक्ति अपवित्र (जुनुब) अवस्था में होता है। हालाँकि, जो स्नान करने में शीघ्रता नहीं करता है, वह शापित होना तो दूर, पापी भी नहीं है जब तक कि देरी नमाज़ छूटने या वर्जित (मकरूह-ए-तहरीमी) समय शुरू होने का कारण न बने। स्वयं शरीयत देने वाले (पैगंबर), उन पर शांति और आशीर्वाद हो, ने वैधता सिखाने के लिए कभी-कभी स्नान करने में सुबह तक की देरी की है, विशेष रूप से रमज़ान के धन्य महीने की कुछ रातों में। हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के इस कृत्य से उम्मत को सुगमता और दया के दो मसले ज्ञात हुए: पहला यह कि हालाँकि स्नान में शीघ्रता करना बेहतर है, लेकिन यह अनिवार्य नहीं है; व्यक्ति के पास नमाज़ के समय तक इसे टालने का विकल्प है। दूसरा, भोर के समय अपवित्र अवस्था में होने से रोज़े में कोई हानि या कमी नहीं आती है। अहमद, बुखारी, मुस्लिम और

उम्मुल मोमिनीन सिद्दीका (आयशा) और उम्मुल मोमिनीन उम्मे सलमा (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) से वर्णित है:

अरबी	उर्दू अनुवाद
इन्न नबी सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम कान युस्बेहु जुनबन मिन जिमाइन सुम्मा यगतसिलु व यसूमु। ज़ाद फ़ी ज़ाविया: फ़ी रमज़ान।	नबी अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) (कभी-कभी) संभोग के कारण अपवित्र (जुनुब) अवस्था में सुबह करते थे, फिर ग़ुस्ल (स्नान) करते और रोज़ा रखते थे। एक रिवायत में "रमज़ान में" भी जोड़ा गया है। (त)

1. सहीह बुखारी, अध्याय: रोज़ेदार का अपवित्र अवस्था में सुबह करना, कदीमी कुतुब खाना कराची, 1/258; सहीह मुस्लिम, अध्याय: भोर होने पर रोज़े की वैधता, कदीमी कुतुब खाना कराची, 1/354; मुसनद अहमद बिन हनबल, आयशा (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) से वर्णित, दार अल-फ़िक्र बेरूत, 6/313।

فتاوی رضویہ جلد ششم

اور جب تک نہ نہاوے مورد لعنت ہے اور کہے کہ جو شخص دروازہ مسجد کو بحفاظت مسجد بعد نماز عشاء مقفل کرے اُس مسجد میں نماز قطعی حرام ہے وہ آدمی سنگسار کیا جائے اور بغیر علم احادیث و تفسیر ترجمہ قرآن مجید کرے اور فرض کو سنت اور واجب کو مستحب بیان کرکے جھوٹے حوالے کتاب کے دے اور بعد ہونے نماز جنازہ بارہ دوم تکبیر پانچ منسوخہ سے نماز جنازہ پڑھاوے اور بلا وقفیت مسائل وارکان نماز پیش امامی کرے نماز اسکے پیچھے جائز ہے یا نہیں؟ اور جائز کو ناجائز کے کہے اُس کے حق ہیں اور اُس کے ممدومعاون کے حق میں شرعاً کیا حکم ہے؟ احکمو اللہ بحوالہ الکتاب (اللہ تعالیٰ کا حکم بیان کرو حوالہ کتاب کے ساتھ ت)

الجواب:

زید جاہل، سخت جری، بیباک ہے۔

اولاً: اس کا علی الاطلاق کہنا کہ جو اپنی بی بی سے قربت کرے جب تک نہ نہائے معاذ اللہ مورد لعنت ہے شریعت مطہرہ پر سخت افتراء ہے حکم صرف اس قدر ہے کہ مہما امکن (جتنا جلدی ممکن ہو ت) نہانے میں تعجیل مندوب و محبوب ہے اگر نہ نہائے تو وضو کررکھے کہ جہاں جنب ہوتا ہے وہاں فرشتے آنے سے احتراز کرتے ہیں مگر غسل میں تعجیل نہ کرنے والا معاذاللہ مورد لعنت ہونا در کنار سرے سے گناہگار بھی نہیں جب تک تاخیر باعث فوت نماز یادخول وقت کراہت تحریمی نہ ہو، خود صاحب شرع صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے تعلیم جواز کے لئے بعض اوقات بلکہ خاص شبہائے ماہ مبارک رمضان میں صبح تک تاخیر غسل فرمائی ہے کہ حضور پر نور صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے اس فعل سے امت کو دو مسئلہ تخفیف ورحمت معلوم ہوں ایک یہی

غسل میں تعجیل گو بہتر ہے پر واجب نہیں، نماز تک تاخیر کا اختیار رکھتا ہے دوسرے یہ کہ بحالت جنابت صبح کرنے سے روزے میں کوئی خلل یا نقص نہیں آتا۔ احمد وبخاری ومسلم وام المومنین صدیقہ وام المومنین ام سلمہ رضی اللہ تعالٰی عنہا سے راوی:

عربی	اردو ترجمہ
ان النبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کان یصبح جنبا من جماع ثم یغتسل ویصوم زاد فی زاویۃ فی رمضان۔	نبی اکرم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم (بعض اوقات) جماع کی وجہ سے جنبی حالت میں صبح کرتے پھر غسل کرتے اور روزہ رکھتے تھے، ایک روایت میں رمضان کا بھی اضافہ ہے۔ (ت)

1 صحیح بخاری باب الصائم یصبح جنبا مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۲۵۸، صحیح مسلم باب صحۃ صوم من طلع علیہ الفجر مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۳۵۴، مسند احمد بن حنبل مروی عن عائشہ رضی اللہ تعالٰی عنہا مطبوعہ دارالفکر بیروت ۶/ ۳۱۳

Fatawa Rizvia Volume VI Secondly and thirdly: In the matter of the mosque, two slanders were made against God and the Messenger: one, that prayer in this mosque is forbidden; second, that the man should be stoned. Due to the first slander, he became one of those about whom the Great Quran said: "And who is more unjust than he who prevents (men) from the mosques of Allah, that His name should be remembered therein, and strives to ruin them?" Who is more unjust than him who prevents God's mosques from the remembrance of God in them and strives for their desolation. (T) And due to the second, he became the one who gave a fatwa for the unjust killing of an innocent Muslim, while scholars clearly allow that for protection at the time of need during non-prayer times, it is permissible to close the mosque door. "It is disliked to close the door of the mosque except for fear for its property, and fatwa is given on this." In Durr al-Mukhtar - this is the correct view in Tabyin al-Haqa'iq and the issue is in al-Fath, al-Bahr, al-Nahr and other general books of the school of thought. To protect mosque items from theft, it is permissible to keep the mosque closed, otherwise keeping the mosque closed without need is Makruh (disliked). This is the fatwa. Durr al-Mukhtar (T) this is correct, Tabyin al-Haqa'iq. And this issue is mentioned similarly in Fath, Bahr, Nahr, and other famous books. (T) Yes, closing without need or outside the time of need, especially during prayer times, is prohibited and leads to sin, but not such that one becomes deserving of stoning. And look at this severe, gross ignorance that prayer in that mosque is forbidden. Glory be to Allah! He closed the door for a time or two, while this person cuts it off forever (by declaring prayer forbidden). If he was worthy of stoning, what punishment would this person deserve? Fourthly: Interfering in the translation of the Holy Quran without knowledge is a major sin; the Holy Quran itself says: "Or do you say about Allah what you do not know?" Or do you say regarding Allah what you do not know. (T) It is in the Hadith that the Master of the World (peace and blessings of Allah be upon him) says: "Whoever speaks about the Quran without knowledge, let him take his seat in the Hellfire." Whoever speaks about the Quran without knowledge, let him make his home in the fire. (T)

---

1. Al-Quran 2/114
2. Durr al-Mukhtar, Chapter: What invalidates prayer etc., printed at Matba' Mujtabai, Delhi, 1/93
3. Tabyin al-Haqa'iq, Section: Dislike of facing the Qibla etc., printed at al-Matba'at al-Kubra al-Amiriyya, Bulaq, Egypt, 1/168
4. Al-Quran 2/80 Page 394 of 736

फ़तावा रिज़विया छठा खंड दूसरा और तीसरा: मस्जिद के मामले में ईश्वर और रसूल पर दो झूठे इल्ज़ाम लगाए गए, एक यह कि इस मस्जिद में नमाज़ हराम है, दूसरा यह कि वह आदमी पत्थर मार-मार कर मार डालने (संगसार) के योग्य है। पहले इल्ज़ाम से वह उन लोगों में शामिल हो गया जिनके बारे में महान कुरान ने फ़रमाया: "और उस व्यक्ति से बड़ा अत्याचारी कौन होगा जो अल्लाह की मस्जिदों में उसका नाम लिए जाने से रोके और उन्हें वीरान करने की कोशिश करे?" उससे बड़ा ज़ालिम कौन जो ख़ुदा की मस्जिदों को उनमें याद-ए-इलाही होने से रोके और उनकी वीरानी में कोशिश करे। (त) और दूसरे से वह एक निर्दोष मुस्लिम की नाजायज़ हत्या का फ़तवा देने वाला बन गया, जबकि विद्वान स्पष्ट रूप से अनुमति देते हैं कि आवश्यकता के समय नमाज़ के समय के अलावा सुरक्षा के लिए मस्जिद का दरवाज़ा बंद करना जायज़ है। "मस्जिद का दरवाज़ा बंद करना नापसंद (मक़रूह) है सिवाय उसके सामान के डर के, इसी पर फ़तवा है।" दुर्रे मुख्तार में - यही सही है, तबयीनुल हक़ाएक़ में और यह मसला फ़तह, बह्र, नह्र और मज़हब की अन्य आम किताबों में भी है। मस्जिद के सामान को चोरी से सुरक्षित रखने के लिए मस्जिद को बंद रखना जायज़ है अन्यथा बिना ज़रूरत मस्जिद को बंद रखना मक़रूह है। इसी पर फ़तवा है। दुर्रे मुख्तार (त) यही सही है, तबयीनुल हक़ाएक़। और यह मसला फ़तह, बह्र, नह्र और अन्य प्रसिद्ध किताबों में इसी तरह वर्णित है। (त) हाँ, बिना आवश्यकता या आवश्यकता के समय के बिना, विशेष रूप से नमाज़ के समय में बंद करना वर्जित और गुनाह है, लेकिन ऐसा नहीं कि पत्थर मार-मार कर मार डालने के लायक हो जाए। और यह घोर अज्ञानता देखें कि उस मस्जिद में नमाज़ हराम है। सुब्हान अल्लाह! उसने तो एक-आध वक़्त दरवाज़ा बंद किया, यह हमेशा के लिए उसे काट देता है (नमाज़ हराम कह कर)। यदि वह संगसार के लायक था, तो यह किस सज़ा का हक़दार होगा। चौथा: बिना ज्ञान के पवित्र कुरान के अनुवाद में हस्तक्षेप करना गुनाह-ए-कबीरा (बड़ा पाप) है, स्वयं पवित्र कुरान फ़रमाता है: "या तुम अल्लाह के बारे में वह बात कहते हो जो तुम नहीं जानते?" या तुम अल्लाह के बारे में वह बात कहते हो जो तुम नहीं जानते। (त) हदीस में है कि सैयदे आलम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं: "जिसने कुरान के बारे में बिना ज्ञान के कुछ कहा, वह अपना ठिकाना जहन्नम की आग में बना ले।" जो बिना इल्म के कुरान में ज़बान खोले वह अपना घर आग में बनाए। (त)

---

1. अल-कुरान 2/114
2. दुर्रे मुख्तार बाब मा युफ़सिदुस सलात आदि, मुतबूआ मतबा मुज्तबाई दिल्ली 1/93

3. तबयीनुल हक़ाएक़ फ़स्ल करहा इस्तिक्बालुल क़िब्ला आदि, मुतबूआ अल-मतबअतुल कुबरा अल-अमीरिया बूलाक मिस्र 1/168
4. अल-कुरान 2/80 पृष्ठ 736 का 394

فتاوٰی رضویہ جلد ششم ثانیاً و ثالثاً: مسئلہ مسجد میں خدا اور رسول پر دو افتراء کئے ، ایک یہ کہ اس مسجد میں نماز حرام ، دوسرا یہ کہ وہ آدمی سنگسار کیا جائے۔ پہلے افتراء سے وہ اُن لوگوں میں داخل ہوا جنہیں قرآن عظیم نے فرمایا: وَمَنْ اَظْلَمُ مِمَّنْ مَّنَعَ مَسٰجِدَ اللّٰہِ اَنْ یُّذْکَرَ فِیْھَا اسْمُہٗ وَ سَعٰی فِیْ خَرَابِھَا ؕ اُس سے بڑھ کر ظالم کون جو خدا کی مسجدوں کو ان میں یادِ الٰہی ہونے سے روکے اور ان کی ویرانی میں کوشش کرے۔ (ت) اور دوسرے سے وہ بے گناہ مسلم کے ناحق قتل کا فتوٰی دینے والا ہوا ، علماء صاف اجازت دیتے ہیں کہ حاجت کے وقت غیر اوقاتِ نماز میں حفاظت کے لئے دروازہ مسجد بند کرنا جائز ہے۔ کرہ غلق الباب المسجد الّا لخوف علی متاعہ بہ یفتی فی در مختار - ھذا ھو الصحیح تبیین الحقائق والمسألۃ فی الفتح والبحر والنھر و غیرھا عامۃ کتب المذھب۔ مسجد کے سامان کو چوری سے محفوظ کرنے کے لئے مسجد کو بند رکھنا جائز ہے ورنہ بلا ضرورت مسجد کو بند رکھنا مکروہ ہے۔ اسی پر فتوٰی ہے۔ در مختار (ت) یہی صحیح ہے، تبیین الحقائق۔ اور یہ مسئلہ فتح، بحر، نہر اور دیگر مشہور کتب میں یونہی مذکور ہے۔ (ت) ہاں بے حاجت یا بغیر وقتِ حاجت خصوصاً اوقاتِ نماز میں بند کرنا ممنوع اور گناہگار مگر نہ ایسا کہ سنگسار کرنے کے قابل، اور یہ سخت جہالتِ فاحشہ دیکھئے کہ اُس مسجد میں نماز حرام۔ سبحن اللہ ! اُس نے تو ایک آدھ وقت دروازہ بند کیا یہ ہمیشہ کو تیغا کاٹ دیتا ہے وہ سنگسار کرنے کے قابل ہو ا یہ کس سزا کے لائق ہوگا۔ رابعاً: بے علم ترجمہ قرآن مجید میں دخل دینا گناہ کبیرہ ہے، خود قرآن مجید فرماتا ہے: اَمْ تَقُوْلُوْنَ عَلَی اللّٰہِ مَا لَا تَعْلَمُوْنَ ؕ یا تم اللہ کے بارے میں وہ بات کہتے ہو جو تم نہیں جانتے۔ (ت) حدیث میں ہے سیدِ عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں : من قال فی القرآن بغیر علم فلیتبوأ مقعدہ من النار۔ جو بغیر علم کے قرآن میں زبان کھولے وہ اپنا گھر آگ میں بنائے۔ (ت)

1 القرآن ۲/ ۱۱۴ 2 در مختار باب مایفسد الصلوۃ الخ مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۹۳ 3 تبیین الحقائق فصل کرہ استقبال القبلۃ بالفرج الخ مطبوعہ المطبعۃ الکبریٰ الامیریہ بولاق مصر ۱/ ۱۶۸ 4 القرآن ۲/ ۸۰ Page 394 of 736

Fatawa Rizwia Volume 6

[Let him take his place in] the Fire. It was narrated by al-Tirmidhi and authenticated by him on the authority of Ibn Abbas (may Allah be pleased with both of them). Let him make [his seat] in Hell. Imam Tirmidhi narrated this from Hazrat Abdullah bin Abbas (may Allah be pleased with them) and declared it authentic.

Fifthly, sixthly, seventhly: Intervening in Shariah matters without understanding and incorrectly stating whatever comes to mind—stating an obligatory (fard) act as Sunnah, a necessary (wajib) act as commendable (mustahabb), or an impermissible act as permissible—is also a great sin. In the Hadith, the Master of the Universe (peace and blessings of Allah be upon him) says: "The most daring of you in giving fatwa is the most daring of you toward the Fire." - Reported by Ad-Darimi from Ubaidullah bin Abi Ja'far as a Mursal Hadith. The one among you who is most bold in giving fatwas is the most daring toward the fire of Hell. This was mentioned by Darimi from Ubaidullah bin Abi Ja'far as a Mursal narration.

Eighthly, ninthly, tenthly: Giving false references from books is a lie and slander, especially against scholars and in religious matters. All these are severe sins; slandering scholars in religious issues, slandering the Shariah, and slandering the Shariah is slandering God.

Allah Almighty said: "And do not say about what your tongues assert of untruth, 'This is lawful and this is forbidden,' to invent falsehood about Allah. Indeed, those who invent falsehood about Allah will not succeed." - The Divine command is: And do not say what your tongues falsely describe, that this is lawful and this is forbidden, so that you forge a lie against Allah; surely those who forge a lie against Allah shall not prosper. (T)

And when the funeral prayer has been performed once, in the view of our scholars, its repetition is not permissible, unless someone from the common people led it without the permission of the rightful person, i.e., the guardian (wali) of the deceased, and the guardian did not participate. In such a case, the guardian has the choice to repeat it. However, those who have already prayed it should not join again, as its repetition is not prescribed [for them].

In "Ad-Durr al-Mukhtar": "If someone other than the guardian prays [the funeral prayer], from among those who do not have the right of precedence over the guardian, and the guardian did not follow him, he (the guardian) may repeat it, even

over his grave if he wishes, for the sake of his right, not to discharge the obligation." - It is stated in Durr-e-Mukhtar that if someone other than the guardian leads the funeral prayer, who did not have the right to precede the guardian, and the guardian did not follow him, then the guardian can repeat it even at the grave if he wishes. This repetition is for his [right]...

---

1. Jami' al-Tirmidhi, Chapter on what has been said regarding the one who interprets the Quran with his own opinion, printed by Kutub Khana Rashidiyah Amin Company Delhi 2/119.
2. Sunan al-Darimi, Chapter on Fatwa and the severity therein, printed by Nashr al-Sunnah Multan 1/53.
3. Al-Quran 16:116.

फ़तावा रिज़विया खंड 6

[वह अपना स्थान] आग [में बना ले]। इसे तिर्मिज़ी ने इब्ने अब्बास (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत किया और इसे सही माना। जहन्नम में (अपनी जगह) बना ले। इसे तिर्मिज़ी ने हज़रत अब्दुल्ला बिन अब्बास (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत करके सही करार दिया।

पाँचवाँ, छठा, सातवाँ: बिना समझे-बूझे शरीयत के मामलों में दखल देना और जो मुँह में आए गलत-सलत बता देना—फ़र्ज़ को सुन्नत, वाजिब को मुस्तहब, और नाजायज़ को जायज़ बताना भी एक बड़ा गुनाह है। हदीस शरीफ में हुज़ूर सय्यद-ए-आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं: "तुममें से जो फ़तवा देने में सबसे ज़्यादा निडर है, वह आग की ओर बढ़ने में सबसे ज़्यादा साहसी है।" - इसे दारमी ने उबैदुल्ला बिन अबी जाफ़र से मुरसलन (बिना सहाबी के ज़िक्र के) रिवायत किया है। तुममें से जो फ़तवा देने में जितना ज़्यादा बेबाक है, वह जहन्नम की आग पर उतना ही ज़्यादा साहसी है। इसे दारमी ने उबैदुल्ला बिन अबी जाफ़र से मुरसलन ज़िक्र किया है।

आठवाँ, नवाँ, दसवाँ: किताबों के झूठे हवाले देना झूठ और इफ़्तरा (आरोप) है, और वह भी उलमा पर और वह भी दीन के मामलों में, ये सब सख्त गुनाह हैं। मसाइल में उलमा पर आरोप लगाना, शरीयत पर आरोप लगाना है और शरीयत पर आरोप लगाना खुदा पर आरोप लगाना है।

अल्लाह तआला ने फ़रमाया: "और अपनी ज़बानों के बोले हुए झूठ के कारण यह न कहो कि यह हलाल है और यह हराम है, ताकि अल्लाह पर झूठ गढ़ो। बेशक जो अल्लाह पर झूठ गढ़ते हैं, वे कामयाब नहीं होंगे।" - ईश्वरीय आदेश है: और न कहो उसे जो तुम्हारी ज़बानें झूठ बयान करती हैं कि यह हलाल है और यह हराम है, ताकि अल्लाह तआला पर झूठ बाँधो, बेशक जो अल्लाह तआला पर झूठ बाँधते हैं उनका भला न होगा। (त)

और जब जनाज़े की नमाज़ एक बार हो चुकी हो, तो हमारे उलमा-ए-किराम के नज़दीक उसका दोहराना (इयादा) जायज़ नहीं है, सिवाय इसके कि हक़दार व्यक्ति यानी मैयत के वली (अभिभावक) की इजाज़त के बिना आम लोगों में से किसी ने पढ़ा दी हो और वली शरीक न हुआ हो। ऐसी स्थिति में वली को दोहराने का अधिकार है। फिर भी, जो पहले पढ़ चुके हैं, वे अब दोबारा शरीक न हों क्योंकि इसका दोहराना शरीयत में नहीं है।

'अद-दुरुल मुख्तार' में है: "अगर वली के अलावा किसी ऐसे व्यक्ति ने नमाज़ पढ़ा दी जिसे वली पर प्राथमिकता का अधिकार नहीं था, और वली ने उसका अनुसरण नहीं किया, तो वली चाहे तो कब्र पर

भी नमाज़ दोहरा सकता है, अपने हक़ के लिए, फ़र्ज़ की अदायगी के लिए नहीं।" - दुर्रे मुख्तार में है कि अगर नमाज़-ए-जनाज़ा वली के अलावा किसी ऐसे व्यक्ति ने पढ़ा दी जिसे वली पर मुकद्दम (प्राथमिकता) होने का हक नहीं था और वली ने उसकी पैरवी (मुताबियत) नहीं की, तो वली अगर चाहे तो कब्र पर भी दोहरा सकता है। यह दोहराना उसके..

---

1. जामी' अल-तिर्मिज़ी, कुरान की अपनी राय से व्याख्या करने वाले के बारे में अध्याय, मुद्रित कुतुब खाना रशीदिया अमीन कंपनी दिल्ली 2/119।
2. सुनन अल-दारमी, फतवा और उसमें सख्ती का अध्याय, मुद्रित नश्र अल-सुन्नत मुल्तान 1/53।
3. अल-कुरान 16:116।

النار - رواہ الترمذی وصححہ عن ابن عباس رضی اللہ تعالٰی عنہما۔ جہنم میں بنالے۔ اسے ترمذی نے حضرت عبداللہ بن عباس رضی اللہ تعالٰی عنہما سے روایت کرکے صحیح قرار دیا۔

خامساً، سادساً، سابعاً: بے سمجھے بوجھے مسائل شرعیہ میں مداخلت کرنا غلط سلط جو منہ پر آیا فرض کو سنت، واجب کو مستحب، ناجائز کو جائز بتا دینا بھی گناہ عظیم ہے۔ حدیث شریف میں ہے حضور سید عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں: اجرؤکم علی الفتیا اجرؤکم علی النار - اخرجہ الدارمی عن عبیداللہ بن ابی جعفر مرسلا۔ جو تم میں فتوٰی پر زیادہ بیباک ہے آتش دوزخ پر زیادہ جری ہے اس کو دارمی نے عبیداللہ بن ابی جعفر سے مرسلاً ذکر کیا ہے۔

ثامناً تاسعاً عاشراً کتابوں کے جھوٹے حوالے دینا کذب و افتراء اور وہ بھی علماء پر اور وہ بھی امور دین میں، یہ سب سخت گناہ ہیں ، مسائل میں علماء پر افتراء، شرع پر افتراء اور شرع پر افتراء خدا پر افتراء۔

قال اللہ تعالٰی وَلَا تَقُوْلُوا لِمَا تَصِفُ اَلْسِنَتُکُمُ الْکَذِبَ ھٰذَا حَلٰلٌ وَّھٰذَا حَرَامٌ لِّتَفْتَرُوْا عَلَی اللہِ الْکَذِبَ ط اِنَّ الَّذِیْنَ یَفْتَرُوْنَ عَلَی اللہِ الْکَذِبَ لَا یُفْلِحُوْنَ - ارشادِ ربانی ہے اور نہ کہو اسے جو تمہاری زبانیں جھوٹ بیان کرتی ہیں یہ حلال ہے اور یہ حرام ہے کہ اللہ تعالٰی پر جھوٹ باندھو، بے شک جو اللہ تعالٰی پر جھوٹ باندھتے ہیں ان کا بھلا نہ ہوگا۔ (ت)

اور جنازہ کی جب ایک بار ہو چکی تو ہمارے علمائے کرام کے نزدیک اس کا اعادہ جائز نہیں مگر یہ کہ صاحب حق یعنی ولی میت کے بے اذن دیئے عام لوگوں سے کسی نے پڑھادی اور ولی

شریک نہ ہوا تو اسے اعادہ کا اختیار ہے پھر بھی جو پہلے پڑھ چکے اب نہ ملیں کہ اس کی تکرار مشروع نہیں۔

فی الدر المختار فان صلی غیر الولی ممن لیس له حق التقدم علی الولی ولم یتابعه الولی اعاد ولو علی قبره ان شاء لاجل حقه لالاسقاط الفرض - درمختار میں ہے اگر نماز جنازہ ولی کے علاوہ کسی ایسے شخص نے پڑھادی جس کو ولی پر مقدم ہونے کا حق نہ تھا اور ولی نے اس کی متابعت نہ کی تو ولی اگر چاہے تو قبر پر بھی اعادہ کرسکتا ہے یہ اعادہ اس کے

---

1 جامع الترمذی باب ماجاء فی الذی یفسر القرآن برایہ مطبوعہ کتب خانہ رشیدیہ امین کمپنی دہلی ۱۱۹/۲ 2 سنن الدارمی باب الفتیا ومانیه من الشدة مطبوعہ نشر السنہ ملتان ۱/۵۳ 3 القرآن ۱۱۶/۱۶

Fatawa Razviya Volume 6

“Therefore, we said that one who has prayed [the funeral prayer] over him should not repeat it with the guardian, because repeating it is not prescribed. Whether the prayer was led by someone who has the right of precedence or someone who does not have the right of precedence, and the guardian followed him, it should not be repeated. If the guardian prayed by right, in that no one who precedes him was present, no one else prays after him.” Summary.

It is due to his right and not for the discharge of the obligation. For this reason, we say that whoever has already performed the funeral prayer should not repeat it with the guardian because repeating the funeral prayer is not prescribed. If the funeral prayer was led by someone who had the right of precedence over the guardian (e.g., a judge, his deputy, or the mosque Imam), or if it was led by someone who did not have the right of precedence over the guardian but the guardian participated, then the funeral prayer cannot be repeated. And if the guardian led the prayer according to his entitlement, such that there was no other person with the right of precedence present, then no one can perform the funeral prayer again after him. Summary (T).

And five Takbeers are abrogated according to our Imams, rather according to the four Imams, rather according to the majority of Imams. Instead, Imam Abu Umar Yusuf bin Abdul Barr al-Maliki said that a consensus has been reached on four. Therefore, our noble scholars say that if the Imam says the fifth Takbeer, the followers should not follow at all but remain standing silently; this is correct. In some narrations, it goes as far as saying that if he says the fifth Takbeer, they should say the Salaam so that the rejection of following the abrogated becomes very clear.

In 'al-Durr al-Mukhtar': "If the Imam says the fifth Takbeer, he is not followed because it is abrogated. The follower stays until he says Salaam with him when he says Salaam. This is the fatwa."[2]

It is in Durr al-Mukhtar: "If the Imam of a follower says the fifth Takbeer, he should not follow the Imam because this is abrogated. So the follower remains standing and says Salaam with the Imam; this is the fatwa." (T)

In Radd al-Muhtar: "It is narrated from the Imam that he [the follower] says Salaam immediately and does not wait, in order to realize the opposition."[3]

It is also narrated from Imam-e-Azam that the follower should say Salaam immediately and not wait for the Imam, so that open opposition [to the abrogated practice] occurs. (T)

Zaid's action is either the same ignorance and audacity or the affliction and disease of being a Ghair-Muqallid (one who does not follow a school of jurisprudence). In any case, his statements mentioned in the question...

[1] Durr al-Mukhtar, Chapter on Funeral Prayer, printed at Mujtabai Press, Delhi, 1/123.
[2] Durr al-Mukhtar, Chapter on Funeral Prayer, printed at Mujtabai Press, Delhi, 1/122.
[3] Radd al-Muhtar, Chapter on Funeral Prayer, printed by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/645.

फ़तावा रज़विया जिल्द 6

"इसलिए हमने कहा कि जिसने उस पर नमाज़ (जनाज़ा) पढ़ ली है, उसे वली के साथ दोबारा नहीं पढ़ना चाहिए क्योंकि इसका दोहराना शरीअत में जायज़ नहीं है। चाहे नमाज़ उसने पढ़ाई हो जिसे प्राथमिकता का अधिकार था या उसने जिसे प्राथमिकता का अधिकार नहीं था और वली ने उसका अनुसरण किया हो, तो दोबारा न पढ़ी जाए। और यदि वली ने अपने अधिकार से नमाज़ पढ़ाई, इस तरह कि कोई और प्राथमिकता वाला व्यक्ति मौजूद नहीं था, तो उसके बाद कोई और नमाज़ नहीं पढ़ेगा।" संक्षेप।

यह उसके अधिकार के कारण है न कि फ़र्ज़ की अदायगी के लिए। इसी कारण हम कहते हैं कि जिसने पहले जनाज़ा पढ़ लिया हो वह वली के साथ दोबारा न पढ़े क्योंकि जनाज़े का दोहराव शरीअत के विरुद्ध है। अगर जनाज़ा किसी ऐसे व्यक्ति ने पढ़ाया जिसे वली पर प्राथमिकता का अधिकार था (जैसे काज़ी, उसका नायब या मस्जिद का इमाम), या उस व्यक्ति ने पढ़ाया जिसे वली पर प्राथमिकता का अधिकार नहीं था लेकिन वली ने उसमें शिरकत कर ली, तो फिर जनाज़े का दोहराव नहीं किया जा सकता। और अगर वली ने अपने अधिकार के अनुसार जनाज़ा पढ़ाया, इस प्रकार कि वहां कोई और प्राथमिकता वाला व्यक्ति नहीं था, तो उसके बाद कोई भी दोबारा जनाज़ा नहीं पढ़ सकता। संक्षेप (T)

और पाँच तकबीरें तो हमारे इमामों, बल्कि चारों इमामों, बल्कि बहुमत इमामों के अनुसार मंसूख (निरस्त) हैं। इसके बजाय इमाम अबू उमर युसूफ बिन अब्दुल बर्र मालकी ने कहा कि चार पर इजमा (सहमति) हो गया है। इसलिए हमारे विद्वान कहते हैं कि यदि इमाम पाँचवीं तकबीर कहे तो मुक़्तदी (पीछे नमाज़ पढ़ने वाले) उसका साथ बिल्कुल न दें और चुपचाप खड़े रहें, यही सही है। और कुछ रिवायतों में तो यहाँ तक है कि अगर वह पाँचवीं तकबीर कहे तो वे सलाम फेर दें ताकि निरस्त का अनुसरण न करने का विरोध स्पष्ट हो जाए।

'अद-दुर्र अल-मुख़्तार' में है: "अगर इमाम पाँचवीं तकबीर कहे तो उसका अनुसरण नहीं किया जाएगा क्योंकि वह मंसूख (निरस्त) है। मुक़्तदी तब तक रुका रहेगा जब तक इमाम सलाम न फेर दे, फिर उसके साथ सलाम फेरे। इसी पर फ़तवा है।"[2]

'दुर्र अल-मुख़्तार' में है: "अगर मुक़्तदी के इमाम ने पाँचवीं तकबीर कही तो वह इमाम का अनुसरण न करे क्योंकि यह मंसूख है, इसलिए मुक़्तदी ठहरा रहे और इमाम के साथ सलाम फेरे, इसी पर फ़तवा है।" (T)

'रद अल-मुह्तार' में है: "इमाम से यह भी रिवायत है कि वह (मुक़्तदी) तुरंत सलाम फेर दे और इंतज़ार न करे ताकि विरोध स्पष्ट हो।"[3]

इमाम-ए-आज़म से यह भी वर्णित है कि मुक़्तदी तुरंत सलाम कह दे और इमाम का इंतज़ार न करे ताकि स्पष्ट विरोध हो जाए। (T)

ज़ैद की यह हरकत भी वही जहल (अज्ञानता) और जुर्रत है या ग़ैर-मुक़ल्लिद होने की आफत और बीमारी। बहरहाल उसके उपरोक्त प्रश्न के कथनों के अनुसार...

[1] दुर्र अल-मुख़्तार, जनाज़ा नमाज़ का अध्याय, मुज्तबाई प्रेस, दिल्ली, 1/123 द्वारा मुद्रित। [2] दुर्र अल-मुख़्तार, जनाज़ा नमाज़ का अध्याय, मुज्तबाई प्रेस, दिल्ली, 1/122 द्वारा मुद्रित। [3] रद अल-मुह्तार, जनाज़ा नमाज़ का अध्याय, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 1/645 द्वारा मुद्रित।

पेज 736 का 396

فتاوی رضویہ جلد ششم

ولذا قلنا لیس لمن صلی علیھا ان یعید مع الولی لان تکرارھا غیر مشروع وان صلی من لہ حق التقدم او من لیس لہ حق التقدم وتابعہ الولی لا یعید وان صلی الولی بحق بأن لم یحضر من یقدم علیہ لا یصلی غیرہ بعدہ اھ ملخصاً۔

اپنے حق کی وجہ سے ہے نہ کہ اسقاط فرض کے لئے۔ اسی وجہ سے ہم کہتے ہیں کہ جس نے پہلے جنازہ پڑھ لیا ہو وہ ولی کے ساتھ اعادہ نہ کرے کیونکہ جنازہ کا تکرار مشروع نہیں۔ اگر جنازہ کسی ایسے شخص نے پڑھایا جس کو ولی پر حق تقدم تھا (مثلاً قاضی یا نائب یا امام مسجد) یا اس شخص نے پڑھایا جس کو ولی پر حق تقدم نہ تھا مگر ولی نے شرکت کرلی تو پھر جنازہ کا اعادہ نہیں کیا جاسکتا اور اگر ولی نے اپنے استحقاق کے بموجب جنازہ پڑھایا بایں طور پر وہاں اور کوئی صاحب حق تقدم نہیں تھا تو اس کے بعد کوئی دوبارہ جنازہ نہیں پڑھ سکتا اھ ملخصاً (ت)

اور پانچ تکبیریں تو ہمارے ائمہ بلکہ ائمہ اربعہ بلکہ جمہور ائمہ کے نزدیک منسوخ ہیں بلکہ امام ابو عمر یوسف بن عبدالبر مالکی نے فرمایا چار پر اجماع منعقد ہو گیا و لہذا ہمارے علماء کرام فرماتے ہیں کہ امام پانچویں تکبیر کہے تو مقتدی ہرگز ساتھ نہ دیں خاموش کھڑے رہیں، یہی صحیح ہے، اور بعض روایات میں تو یہاں تک ہے کہ وہ تکبیر پنجم کہے تو یہ سلام پھیر دیں کہ اتباع منسوخ کا رد خوب واضح ہو جائے۔

في الدرالمختار لو کبر امام خامسا لم یتبع لانہ منسوخ فیمکث المؤتم حتی یسلم معہ اذا سلم بہ یفتی۔ 2

در مختار میں ہے اگر مقتدی کے امام نے پانچویں تکبیر کہی تو وہ امام کی اتباع نہ کرے کیونکہ یہ منسوخ ہے پس مقتدی ٹھہرا رہے اور امام کے ساتھ سلام پھیرے ، اسی پر فتوی ہے۔ (ت)

ردالمختار میں ہے :

و روی عن الامام انه یسلم للحال ولا ینتظر تحقیقا للمخالفه 3 ط

امام اعظم سے یہ بھی مروی ہے کہ مقتدی فی الفور سلام کہہ دے امام کا انتظار نہ کرے تاکہ کھلی مخالفت ہو جائے ط (ت)

زید کہ یہ حرکت بھی وہی جہل و جرات ہے یا غیر مقلدی کی آفت و علت۔ بہر حال اس کے اقوال مذکورہ سوال

1 در مختار ، باب صلوۃ الجنازۃ، مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ، ۱/۱۲۳ 2 در مختار باب صلوۃ الجنازۃ مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱/۱۲۲ 3 ردالمختار باب صلوۃ الجنازۃ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/۶۴۵

Fatawa-e-Razvia Volume Six A just witness [says] that he is transgressive and bold, and prayer behind a transgressor is disliked (Makruh), deficient, and flawed.

This is clarified in Al-Ghunya Sharh al-Munya and indicated in Fatawa al-Hujjah, and Radd al-Muhtar also inclines towards it. We have explained this in our treatise Al-Nahy al-Akid 'an al-Salat Wara' Adi al-Taqlid. (T)

Therefore, to the extent possible, never follow him in prayer, and repeat all the prayers that have been offered behind him. And those who are helpers and assistants in these matters are also partners in the sin.

Allah Almighty said: "...and do not cooperate in sin and aggression"[1] | Allah Almighty said: Do not help one another in sin and crossing the limits. And Allah Almighty knows best, and His knowledge is most complete and most perfect.

Problem Number 757: 18 Muharram al-Haram 1311 AH What do the scholars of religion and the jurists of the clear Shari'ah say regarding this matter: Zaid is a memorizer (Hafiz) of the Quran, but he works as a house-steward (bearer). Now he has repented from this job, but people still show dislike in praying behind him. Is their dislike justified or unjustified? Please state clearly from the Book of Allah and the Hadith of the Messenger of Allah, peace and blessings of Allah Almighty be upon him: explain and you will be rewarded.

The Answer: If they dislike him only because he had that job, even though he has now repented, then their dislike is unjustified. No sin remains after repentance. It is mentioned in the Hadith that the Holy Master of the World, peace and blessings of Allah Almighty be upon him, says:

"The one who repents from sin is like the one who has no sin."[2] | The one who repents from sin becomes like the person who has never committed a sin. (T)

And Allah, glorified and exalted, knows best, and His knowledge, may His glory be magnified, is most complete and most perfect.

[1] Al-Quran 5/2 [2] Sunan Ibn Majah, Chapter on mentioning Repentance, printed by Aftab-e-Alam Press Lahore, p. 323

फ़तावा-ए-रज़विया जिल्द शश्म (छठा भाग) आदिल गवाह [कहता है] कि वह फासिक (गुनाहगार) और बेबाक है और फासिक के पीछे नमाज़ मकरूह, नाकिस और खराब होती है।

अल-गुनिया शरह अल-मुनिया में इसकी सराहत (स्पष्टता) है और फतावा अल-हुज्जा में इसी की तरफ इशारा है, और रद्दुल मुहतार में भी इसी तरफ रुझान है। और हमने इसकी वज़ाहत अपने रिसाले 'अन-नह्युल अकीद अनिस सलाति वरा-अ अदीइत तक्लीद' में की है। (त)

लिहाज़ा जहाँ तक मुमकिन हो हरगिज़ उसकी इक़्तिदा न करें और जितनी नमाज़ें उसके पीछे पढ़ चुके हों, सब दोहराएँ। और जो इन कामों में उसके मददगार और मुआवीन (सहायक) हैं, वे भी इस गुनाह में शरीक हैं।

अल्लाह तआला ने फ़रमाया: 'और गुनाह और ज़्यादती के कामों में एक दूसरे की मदद न करो।'[1] | अल्लाह तआला ने फ़रमाया: गुनाह और हद से बढ़ने में एक दूसरे की मदद न करो। वल्लाहु तआला आलम व इल्मुहू अतम व अहकम।

मसला नम्बर 757: 18 मुहर्रम अल-हराम 1311 हिजरी क्या फ़रमाते हैं उलमा-ए-दीन और मुफ़्तियान-ए-शरअ-ए-मतीन इस मसले में कि ज़ैद हाफिज़-ए-कुरआन है मगर खानसामां (बेरा) गिरी की नौकरी करता है। अब उसने इस नौकरी से तौबा कर ली है और अब उसके पीछे लोग नमाज़ पढ़ने में कराहत (नापसंदगी) करते हैं, क्या कराहत करना उन लोगों का जायज़ है या बेजा है? साफ़ साफ़ अल्लाह की किताब और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम की हदीस से फ़रमाइए: बयान कीजिए, आप अज्र पाएंगे।

अल-जवाब: अगर सिर्फ इस वजह से कराहत करते हैं कि उसने वह नौकरी की थी, हालांकि अब उसने तौबा कर ली है, तो उनकी कराहत बेजा है। तौबा के बाद कोई गुनाह बाक़ी नहीं रहता। हदीस में है हुज़ूर सैयदे आलम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं:

'गुनाह से तौबा करने वाला उस शख्स की तरह है जिसने कोई गुनाह न किया हो।'[2] | गुनाह से तौबा करने वाला उस शख्स की तरह हो जाता है जिसने कोई गुनाह न किया हो। (त)

वल्लाहु सुब्हानहू व तआला आलम व इल्मुहू जल्ल मजदहु अतम व अहकम।

[1] अल-कुरआन 5/2 [2] सुनन इब्न माजा बाब ज़िक्रुत तौबा मतबुआ आफ़ताब आलम प्रेस लाहौर सफा 323

فتاوٰی رضویہ جلد ششم شاہد عدل کہ وہ فاسق و بیباک ہے اور فاسق کے پیچھے نماز مکروہ ناقص و خراب ہوتی ہے۔

صرح بہ فی الغنیۃ شرح المنیۃ والیہ اشار فی فتاوی الحجۃ وربما جنح الیہ فی ردالمحتار واوضحناہ فی رسالتنا النھی الاکید عن الصلوٰۃ وراء عدی التقلید۔ | غنیہ شرح منیہ میں اس پر تصریح ہے اور اسی کی طرف فتاوٰی الحجہ میں اشارہ ہے اور ردالمختار میں اسی کی طرف میلان ہے، اور ہم نے اس کی وضاحت اپنے رسالے النھی الاکید عن الصلوٰۃ وراء عدی التقلید میں کی ہے۔ (ت)

پس حتی الامکان ہرگز اس کی اقتداء نہ کریں اور جتنی نمازیں اس کے پیچھے پڑھ چکے ہوں سب پھیریں اور ان باتوں پر جو اس کے مدد و معاون ہیں وہ بھی گناہ میں اس کے شریک ہیں۔

قال اللہ تعالٰی وَلَا تَعَاوَنُوا عَلَی الْإِثْمِ وَالْعُدْوَانِ۔۱ | اللہ تعالٰی نے فرمایا گناہ اور حد سے بڑھنے میں ایک دوسرے کی مدد نہ کرو۔ واللہ تعالٰی اعلم وعلمہ اتم واحکم

مسئلہ نمبر ۷۵۷: ۱۸ محرم الحرام ۱۳۱۱ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ زید حافظِ قرآن ہے مگر نوکری خانساماں (بیرا) گیری کرتا ہے اب اس نوکری سے اس نے توبہ کی اور اب اس کے پیچھے لوگ نماز پڑھنے میں کراہت کرتے ہیں آیا کراہت کرنا ان لوگوں کا جا ہے یا بیجا ہے؟ صاف صاف کتاب اللہ و حدیث رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم سے فرمائیے: بینوا توجروا

الجواب: اگر صرف اس وجہ سے کراہت کرتے ہیں کہ اس نے وہ نوکری کی تھی اگرچہ اب توبہ کر لی تو اُن کی کراہت بیجا ہے کوئی گناہ بعد توبہ باقی نہیں رہتا۔ حدیث میں ہے حضور سید عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

التائب من الذنب کمن لا ذنب لہ-۲ | گناہ سے توبہ کرنے والا اس شخص کی طرح ہو جاتا ہے جس نے کوئی گناہ نہ کیا ہو۔ (ت)

واللہ سبحانہ وتعالٰی اعلم وعلمہ جل مجدہ اتم واحکم۔

۱ القرآن ۲/۵ ۲ سنن ابن ماجہ باب ذکر التوبہ مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور ص ۳۲۳

Fatawa Razawiyya Volume 6 Problem No. 578, 579: From Aligarh Seal Factory, sent by Hafiz Abdullah Sahib Contractor, 6 Jamadi al-Ula 1311 AH. What do the scholars of the religion say about this matter: A Maulana who writes that the followers (Muqallids) of the Hanafi school are the "progeny of Satan" and deniers of the Book and Sunnah, and is fully engaged in spreading non-conformity (Ghair-Muqallidiyat), being a harsh opponent of the Muqallids in disputed issues and a supporter and assistant of the non-Muqallids. He writes about Hanafi practices, such as saying 'Ameen' loudly (Ameen-bil-Jahr), as 'absurdities' in his writings, yet sometimes, for some worldly benefit, he presents himself as belonging to the Hanafi school. Is it permissible to follow such a person and pray behind him or not? And will such a person be called a Hanafi or not? Second, is it permissible for an Imam to remain an Imam if the Muslims of the city are displeased with him for legitimate Sharia reasons and do not pray behind him? Explain and be rewarded.

The Answer: O Allah, we seek refuge in You from the accursed Shaitan. The one who calls the noble Hanafis—the favorites of Allah the Almighty with grace and honor—the "progeny of Satan" and "deniers of the Book and Sunnah," it is evident that he is a misguided person himself. How can he be a Hanafi? Even if he calls himself a follower of the Hanafi school for some worldly benefit through despicable dissimulation (Taqiyya), his actions and words mentioned in the question clearly prove him to be a liar. The hypocrites also used to say with their tongues: "We bear witness that you are indeed the Messenger of Allah" (1). We bear witness that the Prophet is the Messenger of Allah. But the words and deeds of those cursed ones were completely contrary to this false admission. The great Quran threw their admission back in their faces: "And Allah knows that you are indeed His Messenger, and Allah bears witness that the hypocrites are indeed liars" (2). Allah knows well that you are indeed His Messenger, and Allah testifies that the hypocrites are liars.

It is not at all permissible to follow such a person or make him an Imam, as he is an innovator, misguided, and follows a bad religion. Legally, it is obligatory to humiliate those with bad religious beliefs, whereas appointing someone as an Imam is a great honor; therefore, it is necessary to avoid him. Allama Tahtawi quotes in the commentary of 'Durr al-Mukhtar': "Whoever deviates from the majority of the people of jurisprudence and knowledge and the Great Mass (Sawad-e-A'zam), he has deviated into that which will lead him into the Fire." That is, whoever separates

himself from the consensus of the people of knowledge, jurisprudence, and the Great Mass, he becomes isolated in something that will take him to Hell.

1. Quran 63/1
2. Quran 63/1 Page 398 of 736

फतावा रज़विया जिल्द छठी मसला नंबर ५७८, ५७९: अलीगढ़ मुहर कारखाने से, हाफिज अब्दुल्ला साहिब ठेकेदार द्वारा भेजा गया, ६ जमादी-उल-उला १३११ हिजरी। धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं: एक मौलवी जो हनफी मुक़ल्लिदीन (अनुयायियों) को "शैतान की संतति" और किताब और सुन्नत का मुनकिर (इनकार करने वाला) लिखता है, और गैर-मुक़ल्लिदियत के प्रचार में पूरी तरह व्यस्त है, विवादित मुद्दों में मुक़ल्लिदीन का कट्टर विरोधी और गैर-मुक़ल्लिदीन का समर्थक और सहायक है। वह हनफी मसलों, जैसे 'आमीन' ज़ोर से कहना (आमीन-बिल-जहर), को अपने लेखों में 'बेहूदा' लिखता है, फिर भी कभी-कभी किसी सांसारिक लाभ के लिए खुद को हनफी मज़हब का होने का दिखावा करता है। क्या ऐसे व्यक्ति का अनुसरण करना और उसके पीछे नमाज़ पढ़ना जायज़ है या नहीं? और क्या ऐसे व्यक्ति को हनफी कहा जाएगा या नहीं? दूसरा, क्या उस व्यक्ति का इमाम होना जायज़ है जिससे शहर के मुसलमान वैध शरीयत कारणों से नाराज़ हों और उसके पीछे नमाज़ न पढ़ें? बयान करें और पुण्य कमाएं।

उत्तर: ऐ अल्लाह, हम दुत्कारे हुए शैतान से तेरी पनाह मांगते हैं। वह जो महान हनफियों को—जो कृपा और सम्मान के साथ अल्लाह सर्वशक्तिमान के प्रिय हैं— "शैतान की संतति" और "किताब और सुन्नत का मुनकिर" कहता है, तो यह स्पष्ट है कि वह स्वयं पथभ्रष्ट है। वह हनफी कैसे हो सकता है? भले ही वह किसी सांसारिक स्वार्थ के लिए घृणित तकिया (दिखावे) के माध्यम से खुद को हनफी मज़हब का कहे, लेकिन सवाल में बताए गए उसके कार्य और शब्द स्पष्ट रूप से उसे झूठा सिद्ध करते हैं। मुनाफिक (पाखंडी) भी तो अपनी ज़बान से कहते थे: "हम गवाही देते हैं कि आप बेशक अल्लाह के रसूल हैं" (१)। हम गवाही देते हैं कि हुज़ूर अल्लाह के रसूल हैं। लेकिन उन लानतियों के बोल और व्यवहार इस झूठे इकरार के बिल्कुल खिलाफ थे, कुरान-ए-अज़ीम ने उनके इकरार को उनके मुँह पर मारा: "और अल्लाह जानता है कि आप बेशक उसके रसूल हैं और अल्लाह गवाही देता है कि मुनाफिक बेशक झूठे हैं" (२)। अल्लाह खूब जानता है कि तुम बेशक उसके रसूल हो और अल्लाह गवाही देता है कि मुनाफिक झूठे हैं।

ऐसे व्यक्ति का अनुसरण करना और उसे इमाम बनाना बिल्कुल भी जायज़ नहीं है क्योंकि वह बिदअती, गुमराह और बुरे मज़हब वाला है। शरीयत के अनुसार बुरे मज़हब वालों को अपमानित करना अनिवार्य है, जबकि इमाम बनाना बहुत बड़ा सम्मान है; इसलिए उससे बचना ज़रूरी है। अल्लामा तहतावी 'दुर्रे मुख्तार' के हाशिये में उद्धृत करते हैं: "जो कोई फिकह और इल्म वालों की बहुसंख्या और सवाद-ए-आज़म (महान बहुमत) से अलग हो गया, वह ऐसी चीज़ में अलग हुआ जो

उसे आग (जहन्नम) में ले जाएगी।" अर्थात् जो व्यक्ति अहल-ए-इल्म, फिकह और सवाद-ए-आज़म की सहमति से अलग हो जाए, वह ऐसी चीज़ में अकेला हो गया जो उसे नर्क में ले जाएगी।

1. अल-कुरान ६३/१
2. अल-कुरान ६३/१ पृष्ठ ३९८/७३६

فتاوی رضویہ جلد ششم مسئلہ نمبر ۵۷۸، ۵۷۹: از علی گڑھ کارخانہ مہر مرسلہ حافظ عبداللہ صاحب ٹھیکیدار ۶ جمادی الاولی ۱۳۱۱ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ کوئی مولوی مقلدین حنفیہ کو ذریت الشیطان اور کتاب و سنت کا منکر لکھے اور غیر مقلدی کی اشاعت میں ہمہ تن مصروف ہو اور مسائل خلافیہ مقلدین کا سخت مخالف اور غیر مقلدین کا حامی اور معاون ہو اور مسائل حنفیہ کو مثلاً آمین بالجہر کو اپنی تحریرات میں خرافات لکھے اور بعض اوقات کسی مصلحت دنیوی سے اپنے آپ کو حنفی المذہب ظاہر کرے ایسے شخص کی اقتداء اور اس کے پیچھے نماز پڑھنا جائز ہے یا نہیں؟ اور ایسے شخص کو حنفی کہا جائے گا یا نہیں؟ دوم جس امام سے شہر کے مسلمان بوجہ شرعی ناراض ہوں اور اس کے پیچھے نماز نہ پڑھیں تو اس حالت میں اُس کا امام ہونا جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: اللھم انا نعوذ بك من الشیطن الرجیم جو ذریت الشیطان کتاب وسنت کا منکر حنفیہ کرام خصم اللہ تعالیٰ باللطف والا کرام کا نام رکھتا ہے پر ظاہر ہے کہ وہ گمراہ خود کا ہے کو حنفی ہونے لگا اگرچہ کسی مصلحت دنیوی سے براہ تقیہ شنیعہ اپنے آپ کو حنفی المذہب کہے کہ اُس کے افعال واقوال مذکورہ سوال اُس کی صریح تکذیب پر دال، منافقین بھی تو زبان سے کہتے تھے: نَشْهَدُ إِنَّكَ لَرَسُولُ اللَّهِ ۱۔ ہم گواہی دیتے ہیں کہ حضور اللہ کے رسول ہیں۔ مگر ان ملاعنہ کے گفتار و کردار اس جھوٹے اقرار کے بالکل خلاف تھے، قرآن عظیم نے اُن کے اقرار کو ان کے منہ پر مارا: وَاللَّهُ يَعْلَمُ إِنَّكَ لَرَسُولُهُ وَاللَّهُ يَشْهَدُ إِنَّ الْمُنَافِقِينَ لَكَاذِبُونَ ۲۔ اللہ خوب جانتا ہے کہ تم بیشک اس کے رسول اور اللہ گواہی دیتا ہے کہ منافق جھوٹے ہیں۔

ایسے شخص کی اقتداء اور اُسے امام بنانا ہر گز روا نہیں کہ وہ مبتدع گمراہ بد مذہب ہے اور بد مذہب کی شرعاً توہین واجب اور امام کرنے میں عظیم تعظیم تو اُس سے احتراز لازم۔ علامہ

طحطاوی حاشیہ دُر مختار میں نقل فرماتے ہیں: من شذ عن جمهور اهل الفقہ والعلم والسواد الاعظم فقد شذ فیما یدخلہ فی النار یعنی جو شخص جمہور اہل علم وفقہ سوادِ اعظم سے جدا ہو جائے وہ ایسی چیز میں تنہا ہوا جو اسے دوزخ میں لے جائے گی۔

Fatwa Rizwiya Volume VI

O assembly of believers! It is incumbent upon you to follow the Saved Sect (Al-Firqat al-Najiyah) named Ahl al-Sunnah wa al-Jama'ah, for the help of Allah Almighty, His protection, and success lie in agreement with them, while His abandonment, wrath, and displeasure lie in opposition to them. This Saved Sect is now gathered into four schools: the Hanafis, the Malikis, the Shafi'is, and the Hanbalis, may Allah Almighty have mercy on them all. In this time, whoever is outside of these four is among the people of innovation (Bid'ah) and the Fire.

So O group of Muslims! It is mandatory for you to follow the saved sect of Ahl-e-Sunnat wa Jama'at, for Allah's help and His being a guardian and provider lie in agreement with Ahl-e-Sunnat, and abandoning it and being the object of His wrath and enmity lies in the opposition of Sunnis. This group that grants salvation is now gathered in four schools: Hanafi, Maliki, Shafi'i, and Hanbali; may Allah Almighty have mercy on them all. In this age, the one who is outside these four is an innovator and destined for Hell.

And the clear explanation of these people being innovators is written by us in our treatise "An-Nahy al-Akeed"; whoever desires details may refer to it. (T). And it is in the Hadith that the luminous presence, the Master of the World, peace and blessings of Allah be upon him, says:

"Whoever honors a person of innovation (Bid'ah) has indeed assisted in the destruction of Islam." Narrated by Ibn Asakir and Ibn Adi from the Mother of the Believers al-Siddiqah, and Abu Nu'aym in Al-Hilya, and Al-Hasan ibn Sufyan in his Musnad from Mu'adh ibn Jabal, and Al-Sanjari in Al-Ibanah from Ibn Umar, and similarly Ibn Adi from Ibn Abbas, and Al-Tabarani in Al-Kabir, and Abu Nu'aym in Al-Hilya from Abdullah ibn Busr (may Allah Almighty be pleased with them all) as a connected report (mawsulan), and Al-Bayhaqi in Al-Shu'ab from Ibrahim ibn Maysarah al-Makki,

Whoever honors an innovator has helped in demolishing the religion of Islam. Ibn Asakir and Ibn Adi narrated it from the Mother of the Believers, Hazrat Aisha Siddiqa (may Allah be pleased with her); and Abu Nu'aym in Hilya, and Hussain bin Sufyan in his chain of narration from Hazrat Mu'adh bin Jabal (may Allah be pleased with him); Sanjari in Abana from Hazrat Ibn Umar (may Allah be pleased with him); and similarly Ibn Adi from Hazrat Ibn Abbas; and Tabarani in Kabir, and Abu Nu'aym in Hilya narrated it as a connected report from Hazrat Abdullah bin Busr (may Allah be pleased with them); and Imam Bayhaqi

the trustworthy Successor (Tabi'i), as a disconnected report (mursalan).	in Shua'b al-Iman narrated it as a disconnected report from Ibrahim bin Maysara Makki, a trustworthy Tabi'i. (T)

[1] Hashiyat al-Tahtawi 'ala al-Durr al-Mukhtar, Kitab al-Dhaba'ih, printed by Dar al-Ma'rifah, Beirut, 4/153 [2] Shu'ab al-Iman, Hadith 9462, Dar al-Kutub al-Ilmiyyah, Beirut, 7/61

फतावा रज़विया जिल्द छठी

हे विश्वासियों की मंडली! तुम पर 'अहले सुन्नत व जमाअत' नामक 'नजात पाने वाले गिरोह' (अल-फिरक़त अल-नाज़ियाह) का अनुसरण करना अनिवार्य है, क्योंकि अल्लाह तआला की सहायता, उसका संरक्षण और सफलता उनके साथ सहमति में है, जबकि उसका परित्याग, क्रोध और अप्रसन्नता उनके विरोध में है। यह नजात पाने वाला गिरोह अब चार विचारधाराओं (मज़हबों) में एकत्रित हो गया है: हनफ़ी, मालिकी, शाफ़ई और हंबली, अल्लाह तआला उन सब पर दया करे। इस समय में, जो कोई भी इन चारों से बाहर है, वह नवाचार (बिदअत) करने वालों और आग (नर्क) वालों में से है।

तो ऐ मुसलमानों के समूह! तुम पर 'अहले सुन्नत व जमाअत' के नजात पाने वाले फिरक़े की पैरवी लाज़िम (अनिवार्य) है, क्योंकि अल्लाह की मदद और उसका संरक्षक और कार्यसाधक होना अहले सुन्नत की सहमति में है, और इसे छोड़ देना और उसका क्रोधित होना और दुश्मन बनाना सुन्नियों के विरोध में है। यह नजात दिलाने वाला गिरोह अब चार मज़हबों में सिमट गया है: हनफ़ी, मालिकी, शाफ़ई, हंबली; अल्लाह तआला इन सब पर रहमत फ़रमाए। इस ज़माने में इन चारों से बाहर होने वाला बिदअती और जहन्नमी है।

और इन लोगों के बिदअती होने का स्पष्ट विवरण हमने अपने रिसाले (लेख) "अन-नही अल-अकीद" में लिखा है; जो व्यक्ति विस्तार चाहता है वह उस रिसाले का अध्ययन करे। (त)। और हदीस में है कि हुज़ूर पुरनूर सैयदे आलम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं:

"जिसने किसी बिदअती (नवाचारी) का सम्मान किया, उसने वास्तव में इस्लाम को नष्ट करने में मदद की है।" इसे इब्न असाकिर और इब्न अदी ने उम्मुल मोमिनीन अ-सिद्दीका (आयशा) से, और अबू नुऐम ने 'हिलया' में, और अल-हसन इब्न सुफ़ियान ने अपनी 'मुसनद' में मुआज़ इब्न जबल से, और अल-संजरी ने 'अल-इबाना' में इब्न उमर से, और इसी तरह इब्न अदी ने इब्न अब्बास से, और अल-तबरानी ने 'अल-कबीर' में, और अबू नुऐम ने 'हिलया' में अब्दुल्लाह इब्न

जो किसी बिदअती की तौक़ीर (सम्मान) करे, उसने दीन-ए-इस्लाम को ढाने में मदद की। इसे इब्न असाकिर और इब्न अदी ने हज़रत उम्मुल मोमिनीन आयशा सिद्दीक़ा (रज़ियल्लाहु तआला अन्हा) से; और अबू नुऐम ने 'हिलया' में, हुसैन बिन सुफ़ियान ने अपनी सनद में हज़रत मुआज़ बिन जबल (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) से; संजरी ने 'अबाना' में हज़रत इब्न उमर (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) से; और इब्न अदी की तरह हज़रत इब्न अब्बास से; और तबरानी ने 'कबीर' में, अबू नुऐम ने 'हिलया' में

बुस्र (अल्लाह उन सब से प्रसन्न हो) से मुत्तसिल (निरंतर) रिवायत किया है, और अल-बैहक़ी ने 'अश-शुअब' में इब्राहिम इब्न मयसरा अल-मक्की, जो एक विश्वसनीय ताबिई हैं, से मुरसल (बिना निरंतरता के) रिवायत किया है।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन बुस्र (रज़ियल्लाहु तआला अन्हुम) से मुत्तसिलन (निरंतर श्रृंखला के साथ) रिवायत किया है; और इमाम बैहक़ी ने 'शुअबुल ईमान' में इब्राहिम बिन मयसरा मक्की ताबिई सिक़ाह से इसे मुरसलन रिवायत किया है। (त)

---

[1] हाशियत अत-तहावी अल-अद-दुर्रुल मुख्तार, किताबुज़ ज़बायह, प्रकाशित दारुल मआरिफ़ा, बेरूत, 4/153 [2] शुअबुल ईमान, हदीस 9462, दारुल कुतुब अल-इल्मिया, बेरूत, 7/61

النار فعليكم معاشر المؤمنين باتباع الفرقة الناجية المسماة باهل السنة والجماعة فان نصرة الله تعالى و حفظه وتوفيقه فى موافقتهم وخذلانه وسخطه ومقته في مخالفتهم وهذه الطائفة الناجية قد اجتمعت اليوم فى مذاهب اربعة وهم الحنفيون والمالكيون والشافعيون والحنبليون رحمهم الله تعالى ومن كان خارجا عن هذه الاربعة فى هذا الزمان فهو من اهل البدعة والنار[1]۔

تو اے گروہ مسلمین ! تم پر فرقہ ناجیہ اہلسنت و جماعت کی پیروی لازم ہے کہ خدا کی مدد اور اس کا حافظ و کارساز رہنا موافقت اہلسنت میں ہے اور اس کا چھوڑ دینا اور غضب فرمانا اور دشمن بنانا سنیوں کی مخالفت میں ہے اور یہ نجات دلانے والا گروہ اب چار مذاہب میں مجتمع ہے حنفی، مالکی، شافعی، حنبلی اللہ تعالیٰ ان سب پر رحمت فرمائے۔ اس زمانہ میں ان چار سے باہر ہونے والا بدعتی جہنمی ہے۔

اور ان لوگوں کے بدعتی ہونے کا روشن بیان ہم نے اپنے رسالہ النھی الاکید میں لکھا من شاء فلیرجع الیھا (جو شخص تفصیل چاہتا ہے وہ ہمارے اس رسالہ کا مطالعہ کرے۔ت) اور حدیث میں ہے حضور پر نور سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں :

من وقر صاحب بدعة فقد اعان على هدم الاسلام [2]- رواه ابن عساكر وابن عدى عن ام المؤمنين الصديقه و ابو نعيم في الحلية والحسن بن سفيان فى مسنده عن معاذ بن جبل والسنجري في الابانة عن

جو کسی بدعتی کی توقیر کرے اس نے دین اسلام کے ڈھانے میں مدد کی۔ اس کو ابن عساکر اور ابن عدی نے حضرت ام المؤمنین عائشہ صدیقہ رضی اللہ تعالیٰ عنہا سے اور ابو نعیم نے حلیہ میں، حسین بن سفیان نے اپنی سند میں حضرت معاذ بن جبل رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے ،

سنجری نے ابانہ میں حضرت ابن عمر رضی اللہ تعالیٰ

ابن عمر وكابن عدى عن ابن عباس والطبراني في الكبير وابو نعيم فى الحلية عن عبد الله بن بسر رضى الله تعالى عنهم موصولا والبيهقى فى الشعب عن ابراهيم بن مسيرة المكي التابعي الثقة مرسلا ۔

عنہ سے ، اور مثل ابن عدی کے حضرت ابن عباس سے ، اور طبرانی نے کبیر میں، ابو نعیم نے حلیہ میں حضرت عبد اللہ بن بسر رضی اللہ تعالیٰ عنہم سے متصلاً روایت کیا ہے اور امام بیہقی نے شعب الایمان میں ابراہیم بن میسرہ مکی تابعی ثقہ سے اسے مرسلاً روایت کیا ہے (ت)

---

[1] حاشية الطحطاوى على الدر المختار كتاب الذبائح مطبوعہ دار المعرفة بيروت ۴/۱۵۳ [2] شعب الايمان حديث ۹۴۶۲ دار الكتب العلمية بيروت ۷/۶۱

Fatawa Razawiyya - Volume 6 To appoint such a person as Imam is as if one is striving to demolish the religion of Islam (God forbid). It is narrated in Sunan Ibn Majah from Jabir bin Abdullah (may Allah be pleased with him) that the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said: "A wicked person (fajir) should never lead a believer in prayer, unless he is coerced by the power of his authority, fearing his sword or lash." (1)

In Saghiri Sharah Munyah it is stated: "Appointing a transgressor (fasiq) is prohibitively disliked (makruh tahrimi). According to Imam Malik (may Allah have mercy on him), it is not permissible at all. One narration from Imam Ahmad bin Hanbal is also similar to this. The ruling for an innovator (bid'ati) is the same." (2)

In Maraqi al-Falah it is stated: "Sharia mandates the humiliation of a fasiq, thus he should not be honored by being presented for Imamat. If it is impossible to prevent his leadership, one should move to another mosque for Friday and other prayers." (3)

In Hashiyah al-Tahtawi on al-Durr al-Mukhtar it is stated: "(The dislike regarding a fasiq is prohibitive, as mentioned previously.)" (4)

The Absolute Researcher states in Fath (al-Qadir): "Imam Muhammad has narrated from Imam Abu Hanifa and Imam Abu Yusuf (may Allah have mercy on them) that prayer behind people of desires (innovators) is not permissible." (5)

Footnotes: 1. Sunan Ibn Majah, Chapter: Obligation of Friday Prayer, Published by Aftab-e-Alam Press Lahore, p. 77. 2. Saghiri Sharah Munyat al-Musalli, Discussions on Imamat, Published by Matba' Mujtabai Delhi, p. 264. 3. Maraqi al-Falah Sharah Nur al-Idah with Hashiyah al-Tahtawi, Section: Who is most worthy of Imamat, Published by Noor Muhammad Tejarat Kutub Karachi, p. 165. 4. Hashiyah al-Tahtawi on Maraqi al-Falah, Section: Who is most worthy of Imamat, Published by Noor Muhammad Tejarat Kutub Karachi, p. 165. 5. Fath al-Qadir, Chapter: Imamat, Published by Matba' Nooriya Razawiyya Sukkur, 1/304.

फ़तावा रज़विया - जिल्द 6 ऐसे व्यक्ति को इमाम बनाना मानो इस्लाम धर्म को ढहाने में प्रयास करना है (अल्लाहुम्मा इयाज़ुन बिल्लाह)। सुनन इब्न माजा में जाबिर बिन अब्दुल्लाह (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत है कि हुज़ूर अकदस (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया: "कोई भी फाजिर (दुराचारी) किसी मोमिन की इमामत कभी न करे, सिवाय इसके कि वह उसे अपनी सत्ता के ज़ोर से मजबूर कर दे कि उसे उसकी तलवार या कोड़े का डर हो।" (1)

स़ग़ीरी शरह मुन्यह में है: "फ़ास़िक (पापी) को आगे करना मकरूह-ए-तहरीमी (सख्त नापसंद) है और इमाम मालिक (रहमतुल्लाहि अलैहि) के नज़दीक फ़ास़िक को आगे करना जायज़ ही नहीं है। इमाम अहमद बिन हंबल से भी एक रिवायत इसी तरह है। यही हुक्म बिदअती (नवाचारी) व्यक्ति का भी है।" (2)

मराक़िल फ़लाह में है: "शरअन फ़ास़िक का तिरस्कार लाज़िम है, इसलिए उसे इमामत के लिए आगे बढ़ाकर उसका सम्मान न किया जाए। यदि उसे रोकने में कठिनाई हो, तो जुमा और अन्य नमाज़ों के लिए किसी दूसरी मस्जिद की ओर चले जाना चाहिए।" (3)

हाशियतुल त़हत़ावी अलद-दुर्रिल मुख़्तार में है: "(फ़ास़िक की इमामत में कराहत-ए-तहरीमी है जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है।)" (4)

मुह़क्किक़ अल-इत़लाक़ फ़तहुल क़दीर में फ़रमाते हैं: "इमाम मुहम्मद ने इमाम अबू हनीफ़ा और इमाम अबू यूसुफ़ (रहमहुमुल्लाह) से नक़्ल किया है कि अहल-ए-बिदअत के पीछे नमाज़ जायज़ नहीं।" (5)

पाद-टिप्पणियाँ: 1. सुनन इब्न माजा, बाब: फर्ज़ अल-जुमुआ, आफ़ताब-ए-आलम प्रेस लाहौर, पृष्ठ 77. 2. स़ग़ीरी शरह मुन्यतुल मुसल्ली, मबाहिसुल इमामाह, मत़बअ मुज्त़बाई दिल्ली, पृष्ठ 264. 3. मराक़िल फ़लाह शरह नूरुल ईज़ाह मअ हाशियतुल त़हत़ावी, फ़स्ल: फ़ी बयानिल अहक़्क़ बिल इमामाह, नूर मुहम्मद तिजारत कुतुब कराची, पृष्ठ 165. 4. हाशियतुल त़हत़ावी अला मराक़िल फ़लाह, फ़स्ल: फ़ी बयानिल अहक़्क़ बिल इमामाह, नूर मुहम्मद तिजारत कुतुब कराची, पृष्ठ 165. 5. फ़तहुल क़दीर, बाबुल इमामाह, मत़बअ नूरिया रज़विया सुक्कुर, 1/304.

पृष्ठ 400 का 736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم تو ایسے شخص کو امام کرنا گویا دین اسلام ڈھانے میں سعی کرنا ہے العیاذ باللہ تعالٰی سنن ابن ماجہ میں جابر بن عبد اللہ رضی اللہ تعالٰی عنہ سے مروی حضور اقدس صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں : لا یؤمن فاجر مؤمناً الا ان یقھرہ بسلطانہ یخاف سیفہ او سوطہ -1 ہرگز کوئی فاجر کسی مومن کی امامت نہ کرے مگر یہ کہ وہ اسے اپنی سلطنت کے زور سے مجبور کردے کہ اس کی تلوار یا تازیانہ کا ڈر ہو۔ (ت)

صغیری شرح منیہ میں ہے: یکرہ تقدیم الفاسق کراھۃ تحریم وعند مالك لایجوز تقدیمہ وھوروایۃ عن احمد وکذا المبتدع -2 فاسق کی تقدیم مکروہ تحریمی ہے اور امام مالک رحمہ اللہ تعالٰی کے نزدیک فاسق کی تقدیم جائز ہی نہیں، امام احمد بن حنبل رحمہ اللہ سے بھی ایک روایت اسی طرح ہے، بدعتی شخص کا حکم بھی یہی ہے۔ (ت)

مراقی الفلاح میں ہے: فتجب اھانتہ شرعاً فلا یعظم بتقدیمہ للامامۃ واذا تعذر منعہ ینتقل عنہ الی غیر مسجدہ للجمعۃ وغیرھا -3 شرعاً فاسق کی اہانت لازم ہے پس امامت کے لئے مقدم کرکے اس کی تعظیم نہ کی جائے، اگر اس کی تقدیم سے روکنا دشوار ہو تو جمعہ اور دیگر نمازوں کے لئے کسی دوسری مسجد کی طرف چلا جانا چاہئے۔ (ت)

حاشیہ طحطاوی علی الدر المختار میں ہے: الکرھۃ في الفاسق تحریمۃ علی ماسبق -4 (امامتِ فاسق میں کراہت تحریمی ہے جیسا کہ پہلے گزر چکا ہے۔ ت)

محقق علی الاطلاق فتح میں فرماتے ہیں: روی محمد ابن ابی حنیفہ و ابی یوسف رحمھما اللہ تعالٰی ان الصلوٰۃ خلف اھل الاھواء لاتجوز -5 امام محمد نے امام ابو حنیفہ اور امام ابویوسف رحمہم اللہ تعالٰی سے نقل کیا ہے کہ اہل بدعت کے پیچھے نماز جائز نہیں۔ (ت)

1 سنن ابن ماجه باب فرض الجمعة مطبوعه آفتاب عالم پریس لاہور ص ۷۷ 2 صغیری شرح منیة المصلی مباحث الامامة مطبوعه مطبع مجتبائی دہلی ص ۲۶۴ 3 مراقی الفلاح شرح نور الایضاح مع حاشیة الطحطاوی فصل فی بیان الاحق بالا مامة مطبوعه نور محمد تجارت کتب کراچی ص ۱۶۵ 4 حاشیة الطحطاوی علی مراقی الفلاح فصل فی بیان الاحق بالامامة مطبوعه نور محمد تجارت کتب کراچی ص ۱۶۵ 5 فتح القدیر باب الامامة مطبوعه مطبع نوریہ رضویہ سکھر ۱ / ۳۰۴

Fatawa Ridawiyyah, Volume 6

In *Ghiyath al-Mufti*, then *Miftah al-Sa'adah*, and then in the commentary of *Fiqh al-Akbar*, it is narrated from our master Imam Abu Yusuf (may Allah be pleased with him): "Prayer behind an innovator is not permissible."[1] (Prayer behind an innovator is not valid. - T)

The humble servant (may Allah forgive him) has written a detailed treatise regarding the permissibility and prohibition of prayer behind these non-conformists (*Ghayr Muqallidin*), titled *An-Nahy al-Akid 'an al-Salat Wara' Adi al-Taqlid*. In it, I have investigated the aforementioned premises and provided proof through various compelling arguments for the prohibition of praying behind them.

Among these reasons is that, for the sake of personal ease, they have invented matters in issues of prayer, purification, etc., which are entirely contrary to the four schools of thought in general, and the refined Hanafi school in particular. They consider wiping over the turban sufficient instead of wiping over the head. They deem ablution valid with a lota full of water into which a tola of urine has fallen. Such issues and their likes are explicitly mentioned in their books. Furthermore, their boldness, negligence, lack of caution, and pursuit of ease in religion are well-known and evident. Their prejudice against the general group of the People of Truth, especially the Hanafis, is well-known and extreme, so it is not at all presumed that they would observe the Hanafi school by avoiding action on those specific issues. Rather, in the state of leading prayer, out of prejudice and enmity, it is presumed they would do the opposite. Then, the majority of the noble Imams state that following a Shafi'i-school imam is only valid when he observes the Hanafi school in points of difference and does not harbor hatred for the Hanafis. Otherwise, it is not permissible at all. Thus, how can prayer be valid behind these ill-intentioned people who are outside and estranged from the four schools, and are famous and well-known for their extreme aversion, hatred, and prejudice towards observing the Hanafi school? It is stated in *Fatawa 'Alamgiri*:

(Arabic Text)	**(Urdu Translation)**
Following a Shafi'i in prayer is only valid when the Imam avoids points of disagreement, such as performing ablution if impurity comes out from other than the two passages (e.g.,	Following a Shafi'i-school (Imam) is permissible only when he avoids points of difference; for example, if impurity comes out from other than the two passages, such as due to cutting a vein, he performs

(Arabic Text)

bloodletting), is not a fanatic, does not perform ablution with small quantities of stagnant water, washes the garment from semen or rubs it off if dry, and wipes a quarter of the head. Thus it is in *An-Nihayah* and *Al-Kifayah*. And he should not perform ablution with a small amount of water into which impurity has fallen. Similarly, it is in *Fatawa Qazi Khan*.[2] - Summary.

(Urdu Translation)

ablution; he is not a fanatic in his school; he is not one who performs ablution from standing small amounts of water; in case of semen stains, he washes the cloth or, if it has dried, scrapes it off; he wipes a quarter of the head; it is stated thus in *Nihayah* and *Kifayah*; and he does not consider ablution permissible with that small amount of water into which impurity has fallen. It is stated thus in *Fatawa Qazi Khan*. - Summary. (T)

[1] *Sharh al-Fiqh al-Akbar*, Preface, published by Mustafa al-Babi, Egypt, p. 5. [2] *Fatawa Hindiyyah*, Section Three on describing who is fit to lead others in prayer, published by Noorani Kutub Khana, Peshawar, 1/82. Page 401 of 736

फ़तावा रज़विया, जिल्द छठा

ग़ियासुल मुफ़्ती फिर मिफ़्ताहुस सादा फिर शरह फ़िक्ह अक्बर में सैयदुना इमाम अबू यूसुफ़ रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से है: ला तजूज़ु ख़ल्फ़ल मुबतदिअ [1] (बिदअती के पीछे नमाज़ जाइज़ नहीं। - त)

फ़क़ीर (अल्लाह उसे माफ़ करे) ने इन ग़ैर मुक़ल्लिद हज़रात के पीछे नमाज़ जाइज़ और ममनूअ होने के बाब में एक मुफ़स्सल रिसाला मुसम्मा बह "अन्नह्युल अकीद अनिस सलाति वराअ अदीइत तक्लीद" लिखा और उसमें मज़कूरा मुक़द्दमात की तहक़ीक़ की और मुतअद्दिद दलाइले क़ाहिरा से उनके पीछे नमाज़ ममनूअ होने का सुबूत दिया।

उनमें से एक बात यह है कि उन्होंने नमाज़ और पाकी वगैरह के मसाइल में नफ़्सानी राहत की खातिर ऐसी बातें ईजाद की हैं जो चारों मज़ाहिब के उमूमन और बिल-ख़ुसूस हनफ़ी मज़हब के बिलकुल ख़िलाफ़ हैं। वे सर के मसह के बदले पगड़ी का मसह काफ़ी मानते हैं, लोटे भर पानी में तोला भर पेशाब गिर जाए उससे वुज़ू जाइज़ ठहराते हैं। ये मसाइल और इसी तरह के अन्य मसाइल उनकी किताबों में स्पष्ट रूप से दर्ज हैं। फिर दीन में उनकी बेबाकी, लापरवाही, एहतियात की कमी और राहत-परस्ती मशहूर और सब पर ज़ाहिर है। अहल-ए-हक़ के आम गिरोह और बिल-ख़ुसूस हनफ़ी हज़रात के साथ उनका तअस्सुब (पक्षपात) इतना मशहूर है कि यह गुमान हरगिज़ नहीं किया जा सकता कि वे उन मसाइल पर अमल से बचकर हनफ़ी मज़हब की रियायत करेंगे। बल्कि इमामत की हालत में तअस्सुब और दुश्मनी की वजह से इसके बरअक्स (विपरीत) करना ही मुतसव्विर (संभावित) है। फिर जमहूर आइम्मा किराम इरशाद फ़रमाते हैं कि शाफ़ई मज़हब वाले की पैरवी भी उसी हालत में सही हो सकती है जब वह इख़्तिलाफ़ी मसाइल में हनफ़ी मज़हब की रियायत करता हो और हनफ़ियों से बुग़्ज़ (द्वेष) न रखता हो, वरना असल में जाइज़ नहीं। तो फिर ये बद-मज़हब जो चारों मज़ाहिब से बाहर और दूर हैं और हनफ़ी मज़हब की रियायत से सख्त नफ़रत, बुग़्ज़ और तअस्सुब के लिए मशहूर हैं, उनके पीछे नमाज़ कैसे जाइज़ हो सकती है। फ़तावा आलमगीरी में है:

(अरबी इबारत)	**(उर्दू तर्जुमा)**
शाफ़ई मज़हब वाले की पैरवी तभी सही है जब इमाम इख़्तिलाफ़ी जगहों से बचता हो, जैसे दो रास्तों (मल-मूत्र द्वार) के अलावा कहीं और से	शाफ़ई मज़हब के(इमाम) की पैरवी उस वक़्त जाइज़ है जब वह इख़्तिलाफ़ी बातों से बचता हो, मसलन दो रास्तों के अलावा कहीं और से नजासत

(अरबी इबारत)

नजासत निकलने पर वुज़ू करता हो जैसे फ़स्द (नस काटना), और वह हठधर्मी न हो, रुके हुए थोड़े पानी से वुज़ू न करने वाला हो, वीर्य (मनी) लगने की सूरत में कपड़ा धोता हो या सूख जाने पर उसे रगड़ देता हो, और सर के चौथाई हिस्से का मसह करता हो। निहाया और किफ़ाया में इसी तरह है। और उस थोड़े पानी से वुज़ू जाइज़ न समझता हो जिसमें नजासत गिर गई हो। फ़तावा क़ाज़ी खाँ में इसी तरह है।[2] - सारांश

(उर्दू तर्जुमा)

निकलने, जैसे नस काटने की वजह से वुज़ू करता हो, अपने मसलक में कट्टर न हो, ठहरे हुए थोड़े पानी से वुज़ू न करने वाला हो, वीर्य लगने की सूरत में कपड़ा धोता हो या सूख जाने की सूरत में उसे खुरच देता हो, सर के चौथाई हिस्से का मसह करता हो। निहाया और किफ़ाया में इसी तरह है और उस थोड़े पानी से वुज़ू जाइज़ न समझता हो जिसमें नजासत वाक़े हुई हो। फ़तावा क़ाज़ी खाँ में इसी तरह है। - सारांश (त)

[1] शरह अल-फ़िक्ह अल-अकबर, खुतबातुल किताब, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, पृ. 5. [2] फ़तावा हिन्दिया, तीसरा अध्याय, दूसरों के लिए इमाम बनने के योग्य लोगों के वर्णन में, नूरानी कुतुब खाना, पेशावर, 1/82. पृष्ठ 736 में से 401

غیاث المفتی پھر مفتاح السعادۃ پھر شرح فقہ اکبر میں سیدنا امام ابویوسف رضی اللہ تعالٰی عنہ سے ہے: لا تجوز خلف المبتدع [1] (بدعتی کے پیچھے نماز جائز نہیں۔ ت)

فقیر غفر اللہ تعالٰی نے ان حضرات غیر مقلدین کے پیچھے نماز جائز و ممنوع ہونے کے باب میں ایک مفصل رسالہ مسمّٰی بہ النھی الاکید عن الصلاۃ وراء عدی التقلید لکھا اور اس میں مقدمات مذکورہ کو اس وجہ پر تحقیق اور متعدد دلائل قاہرہ سے ان کے پیچھے نماز ممنوع ہونے کا ثبوت دیا۔

از انجملہ یہ کہ انھوں نے نماز وطہارت وغیرہا کے مسائل میں آرام نفس کی خاطر وہ باتیں ایجاد کی ہیں جو مذاہب اربعہ عموماً مذہب مہذب حنفی خصوصاً کے بالکل خلاف ہیں مسح سر کے عوض پگڑی کا مسح کافی مانتے ہیں، لوٹے بھر پانی میں تولہ بھر پیشاب پڑ جائے اُس سے وضو جائز ٹھہراتے ہیں کہ یہ مسائل اور ان کے امثال ان کی کتب میں منصوص ہیں، پھر دین میں ان کی بیباکی و سہل انگاری و بے احتیاطی و آرام جوئی مشہور و مشہود و عام گروہ اہل حق بالخصوص حضرات حنفیہ کے ساتھ ان کا تعصب معروف و معبود تو ہر گز مظنون نہیں کہ یہ رعایت مذہب حنفیہ اپنے ان مسائل پر عمل سے بچیں بلکہ بحالت امامت بنظر تعصب و عداوت اس کا خلاف ہی مظنون۔ پھر جمہور ائمہ کرام ارشاد فرماتے ہیں کہ شافعی المذہب کی اقتداء بھی اُسی حالت میں صحیح ہوسکتی ہے کہ مواضع خلاف میں مذہب حنفیہ کی رعایت کرتا ہو حنفیہ سے بغض نہ رکھتا ہو ورنہ اصلاً جائز نہیں تو یہ بد مذہب کہ چاروں مذہب سے خارج و مہجور اور رعایت مذہب

حنفیہ سے سخت نفور اور بغض و تعصب میں معروف و مشہور، ان کے پیچھے نماز کیونکر روا ہوسکتی ہے۔ فتاوٰی عالمگیری میں ہے:

(عربی عبارت)

الاقتداء بشافعی المذھب انما یصح اذا کان الامام یتحامی مواضع الخلاف بان یتوضأ من الخارج النجس من غیرالسبیلین کالفصد ولایکون متعصبابولا یتوضأ فی الماء الراکد القلیل وان یغسل ثوبه من المنی ویفرك الیابس منه ویمسح ربع راسه ھکذا فی النھایة والکفایة ولا یتوضأ بالماء القلیل الذی وقعت فیه النجاسة کذا فی فتاوی فتاوی قاضی خان [2] اھ ملخصا۔

(اردو ترجمہ)

شافعی المذہب (امام) کی اقتداء اس وقت جائز ہے جب وہ مواضع خلاف سے بچتا ہو مثلاً غیر سبیلین سے خارج نجاست مثلاً رگ کاٹنے کی وجہ سے وضو کرتا ہو، مسلک میں متعصب نہ ہو، کھڑے تھوڑے پانی سے وضو نہ کرنے والا ہو، منی لگنے کی صورت میں کپڑا دھوتا ہو یا خشک ہوجانے کی صورت میں اسے کھرچ دیتا ہو، سر کے چوتھائی حصے کا مسح کرتا ہو، نہایہ اور کفایہ میں اسی طرح ہے اور اس تھوڑے پانی سے وضو جائز نہ سمجھتا ہو جس میں نجاست واقع ہوئی ہو فتاوٰی قاضی خان میں اسی طرح ہے اھ ملخصاً (ت)

[1] شرح الفقہ الاکبر، خطبۃ الکتاب، مطبوعہ مصطفی البابی مصر، ص ۵ [2] فتاوٰی ہندیہ الفصل الثالث فی بیان من یصلح اماما لغیرہ مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور ۱/۸۲ Page 401 of 736

Fatawa Razawiyya, Volume 6

The same is mentioned in Jami' al-Rumuz, Majma' al-Anhar, Hashiya Tahtawi 'ala Maraqi al-Falah, etc. Details are in our aforementioned treatise. (T) And Allah, the Glorified and Exalted, is the Giver of success and knows best.

Answer to the second question: In the scenario questioned, it is not permissible for him to be an Imam. Whoever makes him an Imam will be a sinner. The radiant Presence, the Master of the World (peace and blessings of Allah the Almighty be upon him) says:

Three people whose prayers Allah does not accept: One who leads a people in prayer while they dislike him.[1] - Narrated by Abu Dawood and Ibn Majah from Ibn Umar; by Ibn Khuzaymah from Anas; and by Tirmidhi, who graded it as 'Hasan' (good), from Abu Umamah; and by Ibn Majah and Ibn Hibban from Ibn Abbas. In this regard, Tabarani also narrated in 'Al-Kabir' from Talhah al-Taymi (may Allah Almighty be pleased with them all). (T)

It is stated in 'Durr al-Mukhtar':

If someone leads a people while they dislike him—if the dislike is due to some corruption in him or because others are more worthy of leadership than him—then it is prohibited (Makruh Tahrimi) for him to do so.[2] (T)

And Allah Almighty knows best, and His knowledge, Glorified be His Majesty, is most complete and most perfect.

Footnotes: 1. Sunan Abi Dawood, Chapter: A man leading a people who dislike him, printed by Aftab Alam Press Lahore, 1/88. 2. Durr al-Mukhtar, Chapter on Imamate, printed by Mujtabai Press Delhi, 1/83.

फ़तावा रज़विया, जिल्द 6

इसी तरह जामि अल-रुमूज़, मजमा अल-अन्हार और हाशियह तहतावी 'अला मराकी अल-फ़लाह आदि में है। इसका विवरण हमारे उपर्युक्त ग्रंथ में है। (टी) और अल्लाह, जो महिमामय और सर्वोच्च है, सफलता प्रदान करने वाला है और सबसे अच्छा जानने वाला है।

दूसरे प्रश्न का उत्तर: प्रश्न की स्थिति में, उसके लिए इमाम होना हलाल (जायज़) नहीं है। जो उसे इमाम बनाएगा वह गुनहगार होगा। हुज़ूर-ए-पुर नूर सय्यद-ए-आलम (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

तीन व्यक्तियों की नमाज़ अल्लाह तआला स्वीकार नहीं फ़रमाता: एक वह जो किसी क़ौम की इमामत करे और वे उसे नापसंद करते हों।[1] - इसे अबू दाऊद और इब्न माजा ने हज़रत इब्न उमर (रज़ियल्लाहु अन्हु) से, इब्न ख़ुज़ैमा ने हज़रत अनस (रज़ियल्लाहु अन्हु) से और तिर्मिज़ी ने हज़रत अबू उमामा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत करके इसे 'हसन' (उत्तम) कहा है। इब्न माजा और इब्न हिब्बान ने हज़रत इब्न अब्बास (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है, और इस मसले में तबरानी ने 'अल-कबीर' में हज़रत तलहा अल-तैमी (रज़ियल्लाहु अन्हु) से भी रिवायत किया है। (टी)

दुर्र-ए-मुख्तार में है:

अगर किसी ने किसी क़ौम की इमामत की, हालांकि वह क़ौम उसे नापसंद करती हो—चाहे वह स्वयं उसमें किसी बुराई के कारण हो या इसलिए कि अन्य लोग इमामत के अधिक योग्य थे—तो इस स्थिति में उसका इमाम बनना मकरूह-ए-तहरीमी (कड़ाई से वर्जित) है।[2] (टी)

अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है, और उसका इल्म (ज्ञान), जिसकी महिमा सर्वोच्च है, सबसे पूर्ण और सबसे सटीक है।

पाद-टिप्पणियाँ: 1. सुनन अबी दाऊद, अध्याय: वह व्यक्ति जो उन लोगों की इमामत करे जो उसे नापसंद करते हैं, आफ़ताब आलम प्रेस लाहौर द्वारा मुद्रित, 1/88। 2. दुर्र-ए-मुख्तार, इमामत का अध्याय, मुजतबाई प्रेस दिल्ली द्वारा मुद्रित, 1/83।

पृष्ठ 736 में से 402

فتاوٰی رضویہ ، جلد ششم

اسی طرح جامع الرموز و مجمع الانہر وحاشیہ طحطاویہ علی مراقی الفلاح وغیرہ میں ہے، والتفصیل فی رسالتنا المذکورۃ (اس کی تفصیل ہمارے مذکورہ رسالے میں ہے۔ت) واللہ الموافق سبحنہ وتعالٰی اعلم۔ جواب سوال دوم: صورت مسئولہ میں اسے امام ہونا حلال نہیں، جو اسے امام بنائے گا گناہگار ہوگا۔ حضور پُر نور سید عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

ثلثۃ لا یقبل اللہ منھم صلوۃ من تقدم قوماً وھم لہ کارھون[1] - رواہ ابوداؤد وابن ماجۃ عن ابن عمر وابن خزیمۃ عن انس والترمذی وحسنہ عن ابی امامۃ وابن ماجۃ وابن حبان ابن عباس وفی الباب عن طلحۃ التیمی رضی اللہ تعالی عنھم عند الطبرانی فی الکبیر۔ تین شخصوں کی نماز اللہ تعالٰی قبول نہیں فرماتا ایک وہ جو کسی قوم کی امامت کرے اور وہ اسے ناپسند رکھتے ہوں۔ اس کو ابو داؤد اور ابن ماجہ نے حضرت ابن عمر رضی اللہ تعالٰی عنہ سے، ابن خزیمہ نے حضرت انس رضی اللہ تعالٰی عنہ اور ترمذی نے اسے حضرت ابو امامہ رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کر کے حسن کہا ہے۔ ابن ماجہ اور ابن حبان نے حضرت ابن عباس رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا ہے، اور اس مسئلہ میں طبرانی نے کبیر میں حضرت طلحہ التیمی رضی اللہ تعالٰی عنہ سے بھی روایت کیا ہے۔ (ت)

در مختار میں ہے:

لو امر قوماً وھم لہ کارھون ان الکرھۃ لفساد فیہ اولانھم احق بالامامۃ منہ کرہ لہ ذلك تحریماً[2] اگر کسی نے کسی قوم کی امامت کی حالانکہ وہ قوم اسے ناپسند کرتی ہو خود اس میں فساد کی وجہ

سے کراہت ہو یا اس لئے کہ دیگر لوگ فاسق سے زیادہ امامت کے اہل تھے اس صورت میں اس کا امام بننا مکروہِ تحریمی ہے۔ (ت)

واللہ تعالٰی اعلم وعلمہ جل مجدہ اتم واحکم۔

حواشی: 1 سنن ابی داؤد باب الرجل یؤم القوم وھم لہ کارھون مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور ۸۸/۱

2 در مختار باب الامامۃ مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۸۳/۱

Fatawa Razawiyyah Volume 6 Issue Number 580: From Budaun, Marohi neighborhood, sent by Sheikh Muhammad Hussain Sahib, 9 Jumada al-Akhira 1311 AH. What do the scholars of religion and jurists of the firm Shariah say about this matter: If a person who is a Hanafi follows the practice of Imam Shafi'i (may Allah have mercy on him) in wiping (Masah) [over the head during ablution], i.e., contents himself with wiping a few hanging strands of hair while wearing a turban, what is the status of his prayer and the prayer performed behind him?

Answer: In the queried situation, even if this person were truly a Shafi'i, his prayer behind Hanafis would not be considered void, let alone those liberal people who belong nowhere. In Al-Hindian: Following an imam of the Shafi'i school is only valid if the imam avoids points of contention, such as wiping a quarter of the head. This is stated in An-Nihayah and Al-Kifayah. Also, he should not perform ablution with a small amount of water in which impurity has fallen, as mentioned in Fatawa Qazi Khan, nor with used water (Ma-ul-Musta'mal), as mentioned in As-Sirajiyyah, abbreviated. (T)

As for his own prayer, according to our respected Imams (may Allah be pleased with them), it is clearly void, and we will undoubtedly issue the same ruling. For we only issue verdicts according to our school, even if the school of others is different, as stated in Al-Khulasa, Al-Ashbah, Ad-Durr al-Mukhtar, Radd al-Muhtar, and other authoritative books. (T)

However, it is not well-regarded in other schools either. Our leader Imam Malik (may Allah be pleased with him) would, like us, consider it void because, according to him, wiping the entire head is mandatory. Similarly, according to our leader Imam Ahmad (may Allah be pleased with him), the most apparent narration from him is the obligation of covering the whole head [in Masah]. As quoted by the most noble Imam, the Pole, my master Abdul Wahhab.

1. Fatawa Hindiyyah, The Third Section on Explaining Who is Fit to be an Imam for Others, printed at Nurani Kutub Khana Peshawar, 1/84. Page 403 of 736

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी मसला नंबर 580: बदायूँ, मरोही मोहल्ला, प्रेषक शेख मुहम्मद हुसैन साहब, 9 जुमादा अल-आखिरा 1311 हिजरी। दीन के विद्वान और शरीअत के मुफ्ती इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि: जो व्यक्ति हनफ़ी होते हुए मसह (वुज़ू में सिर पर हाथ फेरना) में इमाम शाफ़ई (रहमतुल्लाह अलैहि) के तरीके पर अमल करे, यानी पगड़ी बाँधे हुए होने की स्थिति में केवल कुछ लटकते बालों पर मसह करने पर बस करे, तो उसकी नमाज़ और उसके पीछे पढ़ी गई नमाज़ का क्या हुक्म है?

अल-जवाब (उत्तर): पूछी गई स्थिति में, अगर यह व्यक्ति वास्तव में शाफ़ई होता, तब भी हनफ़ियों के पीछे उसकी नमाज़ महज़ बातिल (अमान्य) न होती, फिर ऐसे आज़ाद लोगों की तो बात ही क्या जो किसी भी मज़हब के पाबंद नहीं हैं। अल-हिन्दिया में है: शाफ़ई मज़हब के इमाम के पीछे नमाज़ तभी सही है जब इमाम विवादित मामलों से बचता हो, जैसे सिर के चौथाई हिस्से का मसह करना। इसी तरह निहाया और किफ़ाया में है। और वह उस थोड़े पानी से वुज़ू न करता हो जिसमें गंदगी गिर गई हो, जैसा कि फ़तावा काज़ी खान में है, और न ही इस्तेमाल किए हुए पानी (मा-उल-मुस्तअमल) से वुज़ू करता हो, जैसा कि सिराजिया में है। (संक्षिप्त)

और जहाँ तक उसकी अपनी नमाज़ की बात है, हमारे इमामों (रज़ियल्लाहु अन्हुम) के अनुसार तो यह स्पष्ट है कि वह अमान्य है, और हम निस्संदेह यही हुक्म देंगे। क्योंकि हम अपने ही मज़हब के अनुसार फ़तवा देते हैं, चाहे दूसरों का मज़हब कुछ भी हो, जैसा कि खुलासा, अश्बाह, दुर्र-ए-मुख्तार और रद्द-उल-मुह्तार आदि प्रामाणिक किताबों में उल्लेखित है।

लेकिन अन्य मज़हबों में भी इसकी खैर नहीं है। हमारे सरदार इमाम मालिक (रज़ियल्लाहु अन्हु) तो हमारी ही तरह इसे बातिल (अमान्य) फ़रमाएंगे क्योंकि उनके यहाँ पूरे सिर का मसह फ़र्ज़ है। इसी तरह हमारे सरदार इमाम अहमद (रज़ियल्लाहु अन्हु) के यहाँ भी उनसे सबसे प्रसिद्ध रिवायत पूरे सिर के मसह की अनिवार्यता ही है। जैसा कि महान इमाम,.कुत्ब, मेरे आका अब्दुल वहाब ने उद्धृत किया है।

1. फ़तावा हिन्दिया, तीसरा खंड, दूसरों का इमाम बनने के योग्य लोगों के विवरण में, नूरानी कुतुब खाना पेशावर द्वारा मुद्रित, 1/84। पृष्ठ 403/736

فتاوی رضویہ جلد ششم مسئلہ نمبر ۵۸۰: از بدایوں مروہی محلہ مرسلہ شیخ محمد حسین صاحب ۹ جمادی الاخریٰ ۱۳۱۱ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ جو شخص حنفی ہو کر مسح میں امام شافعی رحمہ اللہ تعالیٰ کا طریقہ عمل میں لائے یعنی چند بال جھولے نے پر اکتفا کرے اُس وقت میں کہ پگڑی باندھے ہو تو اُس کی نماز اور اس کے پیچھے نماز کیسی ہے؟

الجواب: صورتِ مستفسرہ میں اگر یہ شخص واقعی شافعی ہوتا تاہم حنفیہ کے پیچھے محض باطل تھی نہ کہ ایسے آزاد لوگ کہ کن ہی میں نہیں۔ في الهندية الاقتداء بشافعي المذهب انما يصح اذاكان الامام يتحامى مواضع الخلاف بيان يمسح ربع راسه هكذا فى النهاية والكفاية ولا يتوضا بالماء القليل الذي وقعت فيه النجاسة كذا في فتاوى قاضي خان ولا بالماء المستعمل هكذا في السراجية اه ملخصا۱۔ ہندیہ میں ہے شافعی المذہب امام کی اقتدا تب جائز ہے کہ وہ مواضع خلاف سے بچنے والا ہو مثلاً چوتھائی سر کا مسح کرے، اسی طرح نہایہ اور کفایہ میں ہے، اور اس قلیل پانی سے وضو بھی نہ کرتا ہو جس میں نجاست واقع ہوئی ہے، فتاویٰ قاضی خان میں اسی طرح ہے، اور نہ ماء مستعمل سے وضو کرتا ہو سراجیہ میں یہی ہے اھ تلخیصاً (ت)

اور اس کی اپنی نماز بھی ہمارے ائمہ کرام رضی اللہ تعالیٰ عنہم کے طور پر تو ظاہر کہ محض باطل ہے اور ہم بلا شبہ یہی حکم دیں گے، فانا انما نفتی بمذهبنا وان كان مذهب غيرنا ماكان كما نص عليه فى الخلاصة والاشباه وفى الدر المختار وردالمحتار وغيرها من الاسفار۔ ہم تو اپنے مذہب کے مطابق ہی فتوی دیں گے اگرچہ غیر کا مذہب جیسا بھی ہو، یہی تصریح خلاصہ، اشباہ، در مختار اور ردالمحتار وغیرہ معتبر کتب میں ہے۔ (ت)

مگر یہاں اور مذاہب پر بھی خیر نہیں سیدنا امام مالک رضی اللہ تعالیٰ عنہ تو ہماری ہی طرح باطل ہی فرمائیں گے کہ ان کے یہاں پورے سر کا مسح فرض ہے، یونہی سیدنا امام احمد رضی اللہ تعالیٰ عنہ کو ان سے بھی اظہر الروایات فرضیت استعیاب ہے۔ کما نقلہ الامام المولی الاجل القطب سیدی عبدالوھاب

۱ فتاویٰ ہندیہ الفصل الثالث فی بیان من یصلح اماماً لغیر ہ مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور ۱/ ۸۴

Fatawa Ridawiyya, Volume 6

Al-Sha'rani (may Allah sanctify his secret) mentioned in Al-Mizan (as narrated by our master, the great Imam and Pole Abdul Wahhab al-Sha'rani, may Allah sanctify his secret, in Al-Mizan. - Translator). Regarding the school of thought (Madhhab) of our master Imam Shafi'i (may Allah be pleased with him), considering the prayer valid based on it is pure delusion. Even if there is agreement on this one issue, does his Madhhab consist of only one issue? There are hundreds of differing matters regarding purity and prayer, complete knowledge of which is the task of a profound scholar of that Madhhab, especially in these lands where there are neither scholars nor books of that Madhhab. Well, if one doesn't accept this, then tell us: how many are the nullifiers and obligations of Wudu and Ghusl, internal and external obligations and invalidators of prayer, in detail with all scenarios, branches, and refinement of old and new sayings, texts, aspects, corrections, and preferences of the Two Sheikhs and others among the greats of the Madhhab? And when one cannot say—and undoubtedly one will not be able to—how is it possible to observe something unknown? Then, from where did one gain the assurance that the prayer would be valid according to their Madhhab? No, indeed, due to the abundance of disagreements and the frequency of incidents occurring within those disagreements, it is normally presumed that a violation will occur somewhere, as is not hidden from an experienced person, and whoever is not convinced, let him try it (as is clear to every person of understanding, and if someone is not satisfied with this, let him experience it himself. - Translator). And when this happens—and why wouldn't it—one ends up being "deprived of this and left behind by that," neither here nor there, and the prayer is not valid according to any single Madhhab. It is stated in Al-Durr al-Mukhtar:

There is no harm in following (Taqleed) out of necessity, but on the condition that one adheres to everything that Imam has made obligatory for that action, as we have previously stated that a combined ruling (Talfiq) is void by consensus[1]. (Translation): There is no harm in following another Imam at the time of necessity. However, the condition is to commit to all those matters which that Imam has declared obligatory for that action, because we have already explained that a ruling mixed from two schools of thought is void by consensus. (Translator)

In short, the minimum result of this recklessness is that the prayer was knowingly invalidated according to three Madhhabs, and there is no news of its validity according to the fourth. To Allah we belong, and to Him we shall return. Those whom

the Lord Almighty grants success in goodness, they take care of other Madhhabs in every matter as long as it does not necessitate doing something disliked (Makruh) in their own Madhhab. For example, cautious Hanafis and Shafi'is will never omit wiping the whole head (Masah al-Kull), continuity (Wala), and rubbing (Dalk), because we also know them to be Sunnah, and according to Imam Malik (may Allah be pleased with him), without them, purity and prayer are void. So, is it a requirement of reason to abandon a Sunnah and turn one's face away from the prayer according to an Imam of the religion? There is no power or strength except with Allah, the High, the Great. Therefore, the scholars of the four schools of thought (may Allah have mercy on them) state clearly that avoiding disagreement is unanimously recommended (Mustahabb). But according to reckless people, abandoning the Sunnah of Mustafa (peace and blessings of Allah be upon him), opposing one's own Imam of Madhhab, invalidating prayers according to three rightful Madhhabs, and doubt and ignorance regarding the validity according to the fourth—all these calamities are easy and tied together.

[1]Al-Durr al-Mukhtar, Kitab al-Salat, printed by Matba' Mujtabai, Delhi, 1/62.

अल-शरानी (अल्लाह उनके रहस्य को पवित्र करे) ने अल-मीज़ान में उल्लेख किया है (जैसा कि हमारे सरदार महान इमाम और कुतुब अब्दुल वहाब शरानी, अल्लाह उनके रहस्य को पवित्र करे, ने मीज़ान में उद्धृत किया है। - अनुवादक)। जहाँ तक हमारे स्वामी इमाम शाफ़ई (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) के मज़हब का सवाल है, उस पर नमाज़ की शुद्धता मान लेना महज़ एक भ्रम है। अगर इस एक मसले में उनसे सहमति हो भी जाए, तो क्या उनके यहाँ सिर्फ एक ही मसला है? शुद्धता और नमाज़ के सैकड़ों विवादित मसले हैं, जिनकी पूर्ण जानकारी उसी मज़हब के गहरे विद्वान का काम है, विशेष रूप से इन देशों में जहाँ न तो उस मज़हब के विद्वान हैं और न ही किताबें। खैर, अगर कोई इसे नहीं मानता तो बताए कि शाफ़ई मज़हब में वुज़ू और ग़ुस्ल के तोड़ने वाली चीज़ें और फ़राएज़, नमाज़ के आंतरिक और बाहरी फ़राएज़ और नमाज़ को बिगाड़ने वाली चीज़ें, उनके विभिन्न रूपों, शाखाओं और पुराने और नए कथनों के स्पष्टीकरण, ग्रंथों, पहलुओं, सुधार और दो शेखों और मज़हब के अन्य बड़ों की पसंद और प्राथमिकताएं कितनी हैं? और जब वह नहीं बता सकता—और निस्संदेह नहीं बता सकेगा—तो अज्ञात चीज़ का पालन कैसे संभव है? फिर उसे कहाँ से आश्वासन मिला कि उनकी मज़हब पर नमाज़ सही होगी? नहीं, बिल्कुल नहीं, बल्कि मतभेदों की अधिकता और मतभेद वाले स्थानों पर घटनाओं की बहुतायत के कारण, आमतौर पर कहीं न कहीं उल्लंघन होने का अनुमान लगाया जाता है, जैसा कि किसी अनुभवी व्यक्ति से छिपा नहीं है, और जो संतुष्ट नहीं है, वह खुद अनुभव कर ले (जैसा कि हर समझदार व्यक्ति पर स्पष्ट है, और यदि कोई इससे संतुष्ट नहीं है, तो वह स्वयं अनुभव कर सकता है। - अनुवादक)। और जब ऐसा हुआ—और क्यों नहीं होगा—तो वह व्यक्ति न इधर का रहा न उधर का, एक मज़हब पर भी नमाज़ सही नहीं हुई। अल-दुर्रुल मुख्तार में है:

ज़रूरत के समय (दूसरे इमाम की) तकलीद करने में कोई हर्ज नहीं है, लेकिन इस शर्त पर कि वह उन सभी चीज़ों का पालन करे जिन्हें उस इमाम ने उस अमल के लिए अनिवार्य किया है, जैसा कि हमने पहले उल्लेख किया है कि दो मज़हबों के मेल से बना हुक्म (तलफ़ीक़) सर्वसम्मति से अमान्य है[1]। (अनुवाद): ज़रूरत के समय दूसरे इमाम की तकलीद में कोई हर्ज नहीं है, अलबत्ता यह शर्त है कि उन तमाम बातों का पालन किया जाए जिन्हें उस इमाम ने उस अमल के लिए वाजिब करार दिया है, क्योंकि हम पहले बयान कर चुके हैं कि वह हुक्म जो दो मज़हबों से मिला हुआ हो, वह सर्वसम्मति से बातिल (अमान्य) है। (अनुवादक)

संक्षेप में, इस निडरता का कम से कम परिणाम यह है कि तीन मज़हबों के अनुसार जानबूझकर नमाज़ बेकार कर ली गई और चौथे पर शुद्धता की कोई खबर नहीं। हम अल्लाह के हैं और हमें उसी की ओर लौटना है। मौला ताआला जिन्हें भलाई की तौफ़ीक़ अता फरमाता है, वे हर मामले में जहाँ तक अपने मज़हब का मकरूह (नापसंद) अनिवार्य न हो, बाकी मज़हबों का भी ख्याल रखते हैं। उदाहरण के लिए, एहतियात बरतने वाले हनफ़ी और शाफ़ई कभी भी पूरे सिर का मसह, निरंतरता और रगड़ने (दल्क) को नहीं छोड़ेंगे क्योंकि हम भी उन्हें सुन्नत जानते हैं और इमाम मलिक (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) के नज़दीक उनके बिना शुद्धता और नमाज़ ही बातिल है। तो क्या बुद्धि की मांग यह है कि सुन्नत को छोड़ दे और धर्म के एक इमाम के नज़दीक नमाज़ ही से मुंह मोड़ ले? अल्लाह के अलावा कोई ताकत या शक्ति नहीं है जो सर्वोच्च और महान है। इसलिए चारों मज़हबों के विद्वान (अल्लाह उन पर दया करे) स्पष्ट रूप से कहते हैं कि मतभेद से बाहर निकलना सर्वसम्मति से मुस्तहब (पसंदीदा) है। लेकिन निडर लोगों के नज़दीक मुस्तफ़ा (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की सुन्नत का त्याग, अपने मज़हब के इमाम का विरोध, तीन सच्चे मज़हबों पर नमाज़ों का बातिल होना, और चौथे पर शुद्धता का संदेह और अज्ञानता—ये सभी बलाएँ आसान हैं और आपस में जुड़ी हुई हैं।

[1]दुर्रुल मुख्तार किताबुस सलात, मतबा मुज्तबाई दिल्ली १/६२

الشعرانی قدس سرہ الربانی فی المیزان (جیسا اسے ہمارے سردار امام اجل والقطب عبد الوہاب شعرانی قدس سرہ الربانی نے میزان میں نقل کیا ہے۔ت) رہا مذہب سیدنا امام شافعی رضی اللہ تعالٰی عنہ اس پر صحت نماز سمجھ لینا نری ہوس ہی ہوس ہے ایک اس مسئلہ میں ان سے توافق سہی، پھر کیا ان کے یہاں ایک ہی مسئلہ ہے، صدہا مسائل طہارت و صلوٰۃ خلافیہ ہیں جن پر اطلاع تامہ اُسی مذہب کے عالم تبحر کا کام خصوصاً ان بلاد میں نہ اس مذہب کے علماء نہ کتب، بھلا یوں نہ مانے تو بتائے تو کہ مذہب شافعی میں نواقض و فرائض وضو و غسل و فرائض داخلی و خارجی و مفسداتِ نماز بتفصیلِ صور و شقوق و تنقیح اقوالِ قدیم و جدید و نصوص و وجوہ و تصحیح و ترجیح شیخین و غیر ہما کبرائے مذہب کس قدر ہیں اور جب نہیں بتا سکتا اور بے شک نہ بتا سکے گا تو مجہول شئی کی مراعات کیونکر ممکن، پھر کہاں سے اطمینان پایا کہ ان کے مذہب پر نماز صحیح ہی ہوگی، نہیں نہیں بلکہ بوجہ کثرتِ خلاف و تکثر حوادثِ موقعہ فی الاختلاف، عادۃً کہیں نہ کہیں وقوعِ مخالفت ہی مظنون کمالا یخفٰی علی المتدرب و من لم یقع فلیجرب (جیسا کہ ہر صاحبِ فہم پر واضح ہے اور اگر کوئی اس پر قناعت نہیں کرتا تو وہ خود تجربہ کرے۔ت) اور جب ایسا ہوا اور کیوں نہ ہوگا تو بیٹھے بٹھائے ازیں سورماندہ ازاں سومانده، نہ ادھر کے ہوئے نہ اُدھر کے ہوئے، ایک مذہب پر بھی نماز صحیح نہ ہوئی، در مختار میں ہے:

لا باس بالتقلید عندالضرورۃ لکن بشرط ان یلتزم جمیع مایوجبہ ذلک الامام لما قدمنا ان الحکم الملفق باطل بالاجماع[1]۔ (ترجمہ): ضرورت کے وقت دوسرے امام کی تقلید میں کوئی حرج نہیں البتہ یہ شرط ہے کہ ان تمام امور کا التزام جن کو اس امام نے اس عمل کے واسطے واجب قرار دیا ہے، کیونکہ ہم پہلے بیان کر چکے کہ وہ حکم جو دو مذہب سے مخلوط ہو وہ بالاجماع باطل ہے۔ (ت)

غرض لا اقل اس بیباکی کا اتنا حاصل کہ تین مذہب پر تو دانستہ نماز باطل کر لی چوتھے پر صحت کی خبر نہیں فاناللہ وانا الیہ راجعون۔ مولیٰ تعالیٰ جنہیں توفیقِ خیر رفیق فرماتا ہے وہ ہر امر میں جہاں تک اپنے مذہب کا مکروہ لازم نہ آئے بقیہ مذاہب کا بھی لحاظ رکھتے ہیں مثلاً محتاط حنفی و شافعی ہرگز مسحِ کل راس و ولا و دلک ترک نہ کریں گے کہ آخر مسنون تو ہم بھی جانتے ہیں اور امام مالک رضی اللہ تعالیٰ عنہ کے نزدیک ان کے بغیر طہارت و نماز ہی باطل، تو کیا مقتضائے عقل ہے کہ سنت چھوڑے اور ایک امام دین کے نزدیک نماز ہی سے منہ موڑے ولا حول ولا قوۃ الا باللہ العلی العظیم ولہذا علمائے مذاہب اربعہ رحمہم اللہ تعالیٰ تصریح فرماتے ہیں کہ خروج عن الخلاف بالاجماع مستحب مگر بیباک لوگوں کے نزدیک سنتِ مصطفیٰ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کا ترک، اپنے امام مذہب کی مخالفت تین مذاہب حقہ پر نمازوں کا بطلان، چوتھے پر صحت شک و جہالت، یہ سب بلائیں آسان ہیں اور بندھی

[1]در مختار کتاب الصلوۃ مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۶۲

Fatawa-e-Razvia, Volume 6 ...becoming slightly stiff in the middle of a wound turban is difficult. May Allah Almighty grant guidance. And Allah Subhanu wa Ta'ala knows best, and His knowledge, glorified be His majesty, is most complete and His command, exalted be His dignity, is most wise.

Issue No. 581: From the Old City, Bareilly, 1311 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter? Zaid has an extreme passion for the Quran and Hadith, but due to worries about livelihood, he is unable to pursue it. He declares that if God Almighty removes this worry of mine, I will never give up this passion all my life. Previously, from childhood, Zaid did not have a passion for music (raag) etc. But since he became a disciple (mureed) of a perfect elder, namely Maulana Fazlur Rahman Sahib, he has developed such a passion for music etc. that it is beyond description. That is, if a dancing girl is performing, he stands there, and he has such a passion for the sitar that when he is free from work at 9 PM, he plays the sitar until 2 AM, and on some days, throughout the night. If told to stop, he says, "Pray for me so that God Almighty grants me His love." And if asked, "Did Maulana Sahib command you to do these things?" he says, "No."

Poetry (Persian): Lest any heart be without the play of love, Whether it be real (divine) or metaphorical (worldly). (May God grant that no heart remains without love, whether it be real love or metaphorical love.)

And he knows the Holy Quran well, there is no doubt he knows it excellently; rather, compared to him, the people there recite incorrectly. Is prayer valid behind such a person or not? Give a ruling and be rewarded.

The Answer: Prayer behind such a person is undoubtedly valid.

[Arabic Box Text:] "As it has been established Juristically, Traditions-wise, and Theologically that the permission of prayer is behind every pious person and sinner." [Urdu Translation in Box:] Because it has been proven from the perspective of Fiqh, Hadith, and Kalam that prayer behind every righteous and sinful person is permissible. (T)

However, it is disliked (Makruh). Therefore, they should appoint another person as Imam who is free from such matters and, in addition to that, is a Sunni with correct beliefs and a reciter with correct pronunciation (Qirat). Yes, if it is true as stated that everyone there except this person is a wrong reciter, meaning in terms of letters...

1 Ghunyat-ul-Mustamli Sharh Munyat-ul-Musalli, Chapter on Imamate, and therein are discussions, printed by Suhail Academy Lahore, p. 512. Page 405 of 736

फ़तावा-ए-रज़विया, जिल्द छठी ...लिपटी हुई पगड़ी के बीच में ज़रा सख्त हो जाना दुश्वार। अल्लाह अज़्ज़वजल हिदायत बख्शे। और अल्लाह सुब्हानहु व तआला बेहतर जानता है, और उसका इल्म, उसकी महिमा महिमामंडित है, सबसे पूर्ण है और उसका आदेश, उसकी गरिमा उन्नत है, सबसे बुद्धिमान है।

मसला नंबर 581: पुराने शहर, बरेली, 1311 हिजरी। दीन के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं? जैद को कुरान और हदीस का बहुत शौक है, लेकिन आजीविका की चिंता के कारण वह ऐसा नहीं कर पाता है। वह स्वीकार करता है कि अगर खुदावंद-ए-करीम मेरी इस चिंता को दूर कर दे, तो मैं जीवन भर इस शौक को नहीं छोड़ूँगा। पहले बचपन से जैद को राग आदि का शौक नहीं था। लेकिन अब जब से वह एक पूर्ण बुजुर्ग, यानी मौलाना फजलुर रहमान साहब का मुरीद हुआ है, उसे राग आदि का इतना शौक हो गया है कि वह बयान से बाहर है। यानी अगर कोई वेश्या नाच रही हो, तो वह वहां खड़ा हो जाता है, और सितार का इतना शौक है कि रात 9 बजे काम से फुर्सत होने के बाद वह रात 2 बजे तक सितार बजाता है, और कुछ दिनों तो पूरी रात। अगर मना किया जाए तो वह कहता है, "मेरे लिए दुआ करो ताकि खुदावंद-ए-करीम मुझे अपनी मोहब्बत अता फरमाए।" और अगर पूछा जाए कि क्या मौलाना साहब ने तुम्हें इन चीजों का हुक्म दिया है? तो कहता है कि नहीं।

फ़ारसी कविता: कदापि कोई दिल प्रेम के खेल के बिना न रहे, चाहे वह हकीकी (ईश्वरीय) हो या मजाजी (सांसारिक)। (ईश्वर करे कि कोई दिल बिना प्रेम के न रहे, चाहे वह हकीकी प्रेम हो या मजाजी प्रेम।)

और वह कुरान मजीद अच्छी तरह जानता है, उसे बखूबी जानने में कोई शक नहीं है; बल्कि उसकी तुलना में वहां के लोग गलत पढ़ते हैं। क्या ऐसे व्यक्ति के पीछे नमाज सही है या नहीं? हुक्म दें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: ऐसे व्यक्ति के पीछे नमाज निस्संदेह सही है।

[अरबी बॉक्स टेक्स्ट:] "जैसा कि फ़िक़्ही, हदीसी और कलामी तौर पर यह साबित हो चुका है कि हर नेक और गुनहगार के पीछे नमाज़ जायज़ है।" [बॉक्स में उर्दू अनुवाद:] क्योंकि फ़िक़्ही, हदीसी और कलामी तौर पर साबित हो चुका है कि हर नेक और फाजिर (पापी) के पीछे नमाज जायज है। (त)

लेकिन इसमें कराहत (नापसंदगी) है। इसलिए उन्हें किसी दूसरे व्यक्ति को इमाम नियुक्त करना चाहिए जो इन बातों से मुक्त हो और इसके अलावा, वह सही अकीदे वाला सुन्नी हो और सही

क़िरअत (उच्चारण) करने वाला हो। हाँ, अगर यह बात सच है कि वहां उस व्यक्ति के अलावा सब गलत पढ़ने वाले हैं, यानी अक्षरों में...

---

1 गुन्यात-उल-मुस्तमली शरह मुन्यात-उल-मुसल्ली, इमामत का अध्याय, और उसमें चर्चाएं हैं, सुहैल अकादमी लाहौर द्वारा मुद्रित, पृ. 512। पृष्ठ 405 का 736

فتاوی رضویہ جلد ششم ہوئی پگڑی کے بیچ ذرا سخت ہو جانا دشوار۔ اللہ عزوجل ہدایت بخشے۔ واللہ سبحانہ تعالی اعلم وعلمہ جل مجدہ اتم وحکمہ عز شانہ احکم۔

مسئلہ نمبر ۵۸۱: از شہر کہنہ بریلی ۱۳۱۱ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید کو شوق قرآن و حدیث کا نہایت درجہ کا ہے مگر بسبب فکرِ معاش کے نہیں ہو سکتا ہے اور اقرار کرتا ہے کہ اگر خداوندِ کریم میری اس فکر کو دُور کر دے تو میں اس شوق کو عمر بھر نہیں چھوڑوں گا اور کبھی بچپن سے شوق راگ وغیرہ کا اس کو زید نہیں تھا اور اب جس وقت سے ایک بزرگِ کامل یعنی مولوی فضل الرحمن صاحب کا مرید ہوا ہے اس درجہ کا شوق راگ وغیرہ کا اُس کو ہو گیا کہ بیان سے باہر یعنی رنڈی اگر ناچتی ہو تو وہاں کھڑا ہو جاتا ہے اور ستار کا اس قدر شوق ہے کہ رات کے ۹ بجے فرصت ہوتی ہے فکر معاش سے تو اُس وقت سے لے کر ۲ بجے تک بلکہ بعض روز تمام رات ستار بجاتا ہے، اور اگر منع کرو تو کہتا ہے میرے واسطے دعا کرو تاکہ خداوند کریم مجھے اپنی محبت عنایت کرے، اور اگر دریافت کرو کہ جناب مولوی صاحب نے ان چیزوں کا حکم تم کو دیا ہے؟ تو کہتا ہے کہ نہیں۔

مبادا ہیچ دل بے عشق بازی اگر باشد حقیقی یا مجازی (خدا کرے کہ کوئی دل بغیر عشق کے نہ رہے خواہ عشق حقیقی ہو یا مجازی)

اور قرآن مجید اچھا جانتا ہے عمدہ جاننے میں شک نہیں بلکہ اس کے مقابلے میں اس جگہ پر لوگ غلط پڑھتے ہیں ایسے شخص کے پیچھے نماز صحیح ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: نماز اس شخص کے پیچھے بلا شبہ صحیح ہے۔

[عربی عبارت:] لما تقرر فقها وحدیثاً وکلاماً من جواز الصلوۃ خلف کل بر وفاجر ۔ [اردو ترجمہ:] کیونکہ فقہی، حدیثی اور کلامی طور پر ثابت ہو چکا ہے کہ ہر نیک اور فاجر کے پیچھے نماز جائز ہے (ت)

مگر کراہت رکھتی ہے لہٰذا دوسرے شخص کو جو ایسے امور سے خالی اور باوجود اس کے سُنّی صحیح العقیدہ و قاری صحیح القرات ہو امام مقرر کرلیں، ہاں اگر یہ بیان سچ ہے کہ وہاں اس شخص کے علاوہ سب غلط خواں ہیں یعنی حروف میں۔۔۔

---

1 غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل فی الامامۃ وفیہا مباحث مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص

Fatawa Razawiyyah, Volume 6

...do not distinguish and make mistakes in recitation that invalidate the prayer. As long as a Sunni with correct recitation is not available, follow that person (the one with minor issues), because correcting the prayer is more important than avoiding dislike (Karahah). (Since the rectification of prayer is more important than the removal of dislike. -Translator) And Allah Almighty knows best.

Repeated Question: Repeatedly, since the questioner wrote this question with his own hand, he hid some matters, which is that this person's beliefs are also not quite correct, meaning he holds beliefs of non-conformists (Ghayr Muqallid) etc. and is not a Sunni of correct belief. Please write the ruling on whether to offer prayer behind him or not. And what he wrote about people reading the Quran incorrectly, not all are such that they make so many mistakes that the prayer is not valid; yes, they are not complete reciters (Qari) as a Qari should be.

The Answer: Offering prayer behind someone with corrupt beliefs is 'Makruh Tahrimi' (prohibitively disliked), especially a non-conformist (Ghayr Muqallid) because their purity etc. cannot be relied upon in any matter. Thus, offering prayer behind them is purely impermissible, as we have established in our treatise *'An-Nahyu al-Akid 'an as-Salah Wara'a 'Ada' at-Taqlid'* (as we have researched in our treatise *'An-Nahyu al-Akid 'an as-Salah Wara'a 'Ada' at-Taqlid'*. -Translator). So if the situation is as described, it is a categorical obligation (Wajib-e-Qat'i) upon Muslims in that specific circumstance to remove that person from imamate and never ever waste their prayers behind him. And Allah Subhanu wa Ta'ala knows best.

Problem No. 586: From Mauza Bakka Habibi Wala, area Jagal, Police Station Haripur, Post Office Najibullah Khan, sent by Maulvi Sher Muhammad Sahib. 23 Ramadan al-Mubarak 1311 AH. What do the scholars of religion say regarding this issue: A person who is a Maulvi and Hafiz does not fast. Is it permissible to pray behind him or not?

The Answer: One who does not fast without a Sharia-compliant excuse is a transgressor (Fasiq), and prayer behind a transgressor is disliked (Makruh). So, if prayer can be found behind another pious person, one should not pray behind him, even for the Friday prayer. For he is on the path of moving [to another mosque][1] as established by the Master Researcher (Al-Mawla al-Muhaqqiq) where he stated unconditionally in *'al-Fath'* (because in such a situation, moving to another mosque is permissible, as the virtuous researcher described in *'al-Fath'*. -Translator). Otherwise, pray behind him, for it is better than praying alone[2] as in...

[1] *Fath al-Qadir*, Chapter of Imamate, printed by Maktaba Nooria Razawiyya Sukkur, 1/302. [2] *Radd al-Muhtar*, Chapter of Imamate, printed by Mustafa al-Babi Egypt, 1/413.

फतावा रज़विया, जिल्द 6

...विवेक नहीं रखते और क़िरात (कुरान पाठ) में ऐसी गलतियाँ करते हैं जिनसे नमाज़ फासिद (अमान्य) हो जाती है। जब तक कोई सुन्नी सही क़िरात वाला न मिले, इसी व्यक्ति का अनुसरण करें। क्योंकि नमाज़ की शुद्धि नापसंदगी (कराहियत) को दूर करने से अधिक महत्वपूर्ण है। (चूंकि नमाज़ को सही करना नापसंदगी दूर करने से अधिक महत्वपूर्ण है। -अनुवादक) और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

पुनरावृत्ति प्रश्न: पुनरावृत्ति प्रश्न: चूंकि प्रश्नकर्ता ने यह प्रश्न अपने हाथ से लिखा है, इसलिए कुछ बातें छुपाई गईं। वह यह कि इस व्यक्ति के विचार (अक़ीदा) भी सही नहीं हैं, यानी वह गैर-मुक़ल्लिद आदि के विचार रखता है और सही अक़ीदे वाला सुन्नी नहीं है। इसमें जो हुक्म हो वह तहरीर फ़रमाएं कि नमाज़ उसके पीछे पढ़ें या नहीं। और जो उसने लिखा है कि वहाँ लोग कुरान गलत पढ़ते हैं, तो सभी ऐसे नहीं हैं कि इतनी गलती करें कि नमाज़ ही न हो; हाँ, वे पूरी तरह से कारी (पाठक) नहीं हैं जैसा कि कारी होने का हक़ है।

उत्तर: भ्रष्ट अक़ीदे (फ़ासिक़-उल-अक़ीदा) वाले के पीछे नमाज़ पढ़ना 'मकरूह-ए-तहरीमी' (अत्यंत नापसंद) है, विशेष रूप से गैर-मुक़ल्लिद, क्योंकि उनकी शुद्धता (तहारत) आदि का कोई भरोसा नहीं है। तो उनके पीछे नमाज़ पढ़ना सरासर नाजायज़ है, जैसा कि हमने अपने शोध पत्र 'अन-नह्यु अल-अकीद अन अस-सलाह वरा'अ अदायत-तक़लीद' में सिद्ध किया है (जैसा कि इसकी जाँच हमने अपने शोध पत्र 'अन-नह्यु अल-अकीद अन अस-सलाह वरा'अ अदायत-तक़लीद' में की है। -अनुवादक)। अतः यदि स्थिति ऐसी है, तो उस विशेष क्षेत्र के मुसलमानों पर यह कतई अनिवार्य (वाजिब-ए-क़तई) है कि उस व्यक्ति को इमामत से हटा दें और उसके पीछे अपनी नमाज़ें हरगिज़ बर्बाद न करें। और अल्लाह सुब्हानहू व तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर ५८६: ग्राम बक्का हबीबी वाला, क्षेत्र जागल, थाना हरीपुर, डाकघर नजीब उल्लाह खान, प्रेषक मौलवी शेर मुहम्मद साहब। २३ रमज़ानुल मुबारक १३११ हिजरी। धर्म गुरु इस बारे में क्या फरमाते हैं कि एक व्यक्ति मौलवी और हाफ़िज़ होते हुए रोज़ा नहीं रखता, उसके पीछे नमाज़ पढ़ना जायज़ है या नहीं?

उत्तर: जो बिना किसी शरीयत के बहाने रोज़ा न रखे वह फ़ासिक़ है, और फ़ासिक़ के पीछे नमाज़ मकरूह है। अतः यदि किसी दूसरे परहेज़गार व्यक्ति के पीछे नमाज़ मिल सके तो उसके पीछे न

पढ़ें, यहाँ तक कि जुमा भी। क्योंकि उसे दूसरी जगह जाने का मार्ग उपलब्ध है (१), जैसा कि मौला मोहक़्क़िक़ (प्रमुख शोधकर्ता) ने फ़तह (अल-क़दीर) में स्पष्ट किया है (क्योंकि ऐसी स्थिति में दूसरी मस्जिद की ओर जाना जायज़ है, जैसा कि फाज़िल मोहक़्क़िक़ ने फ़तह में बयान किया है। -अनुवादक)। अन्यथा पढ़ लें, क्योंकि यह अकेले पढ़ने से बेहतर है (२), जैसा कि...

---

१ फतह अल-कदीर, इमामत का अध्याय, मुद्रित मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, १/३०२। २ रद अल-मुह्तार, इमामत का अध्याय, मुद्रित मुस्तफा अल-बाबी मिस्र, १/४१३।

تمیز نہیں رکھتے اور قرأت میں وہ غلطیاں کرتے ہیں جن سے نماز فاسد ہوتی ہے جب تک کوئی سنی صحیح القرات نہ ملے اسی شخص کی اقتداء کریں فان تصحیح الصلوۃ اھم من دفع الکراھۃ (کیونکہ نماز کی تصحیح دفع کراہت سے اہم ہے۔ت) واللہ تعالٰی اعلم۔

سوال مکرر: مکرریہ کہ چونکہ سائل نے یہ سوال اپنے ہاتھ سے لکھا ہے لہذا بعض امر پوشیدہ کیا وہ یہ کہ اس شخص کے عقائد بھی کچھ ٹھیک نہیں یعنی عقیدہ غیر مقلد و غیرہ کار کھتا ہے سنی صحیح العقیدہ نہیں ہے اس میں جو حکم ہو تحریر فرمائے کہ نماز اس کے پیچھے پڑھیں یا نہیں اور جو اس نے لکھا ہے وہاں لوگ قرآن غلط پڑھتے ہیں تو ایسے سب نہیں ہیں کہ اتنی غلطی کریں کہ نماز نہ ہو، ہاں قاری پورے طور سے نہیں جیسا کہ حق قاری ہونے کا ہے۔

الجواب: فاسق العقیدہ کے پیچھے نماز مکروہ تحریمی ہے خصوصاً غیر مقلد کہ ان کی طہارت وغیرہ کسی بات کا کچھ اعتبار نہیں تو ان کے پیچھے نماز محض ناجائز ہے کما حققناہ فی رسالتنا النھی الاکید عن الصلوۃ وراء عدی التقلید (جیسا کہ اس کی تحقیق ہم نے اپنے رسالہ 'النھی الاکید عن الصلوۃ وراء عدی التقلید' میں کی ہے۔ت) پس اگر حال یوں ہے تو صورتِ منتشرہ میں مسلمانوں پر واجبِ قطعی کہ اس شخص کو امامت سے معزول کریں اور اسکے پیچھے ہرگز ہرگز اپنی نمازیں برباد نہ کریں واللہ سبحانہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۵۸۶: از موضع بکہ حبیبی والا علاقہ جاگل تھانہ ہری پور ڈاکخانہ نجیب اللہ خان مرسلہ مولوی شیر محمد صاحب۔ ۲۳ رمضان المبارک ۱۳۱۱ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس

مسئلہ میں کہ ایک شخص مولوی حافظ ہو کر روزہ نہ رکھے اس کے پیچھے نماز پڑھنا جائز ہے یا نہیں۔؟

الجواب: جو بے عذر شرعی روزہ نہ رکھے فاسق اور فاسق کے پیچھے نماز مکروہ تو اگر دوسرے شخص متقی کے پیچھے نماز مل سکے تو اس کے پیچھے نہ پڑھے یہاں تک کہ جمعہ بھی۔ فانہ بسبیل من التحول ۱ کما افادہ المولٰی المحقق حیث اطلق فی الفتح (کیونکہ ایسی صورت میں دوسری مسجد کی طرف منتقل ہونا جائز ہے جیسا کہ فاضل محقق نے فتح میں بیان کیا ہے۔ت) ورنہ پڑھ لے، فانہ اولٰی من الانفراد ۲ کما فی

---

۱ فتح القدیر باب الامامۃ مطبوعہ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۱/۳۰۲ ۲ رد المحتار باب الامامۃ مطبوعہ مصطفیٰ البابی مصر ۱/۴۱۳

Fatawa Razawiya Volume 6

In accordance with the ruling of those who say that the dislike (karahat) is tanzihi (as following an Imam is better than praying alone, as stated in Radd al-Muhtar, so that the opinion of those who call it makruh tanzihi is acted upon. - T).

And after praying, repeat it because many scholars are of the opinion that the dislike is tahrimi (prohibitive), and this is what is established in Al-Ghunyah and others, and it is the most apparent view as we have explained in our Fatawa (because according to most scholars, there is tahrimi dislike in it as proven in Ghunyah etc., and this is the chosen view, we have written it in great detail in our Fatawa. - T). And Allah Almighty knows best.

Problem No. 583: From Calcutta, Dharamtala No. 6, sent by Mr. Mirza Ghulam Qadir Beg Sahib, 26 Safar 1313 AH.

What do the scholars of religion say on this matter: if the Imam follows the Shafi'i Madhhab and the follower is Hanafi, should the follower follow the Imam in matters not permissible for a Hanafi, such as saying 'Amin' aloud, raising hands (Raf' al-Yadayn), and raising hands for prayer during 'qawma'? Similarly, should a Shafi'i follower follow a Hanafi Imam in matters contrary to his own Madhhab? If he does follow, what is the status of his prayer? Explain and you shall be rewarded.

Answer: When a Hanafi follows someone of another Madhhab where such following is permissible, if the Imam commits an act that nullifies purity or prayer in our Madhhab—such as purifying with a small amount of impure or used water, wiping less than a quarter of the head, not performing ablution for bleeding from a vein, pus, wound, vomiting, or other impurities not from the two paths, praying in clothes contaminated with semen more than the size of a dirham, or if the Imam is 'sahib-e-tarteeb' (one who has missed fewer than six prayers) and starts the current prayer despite remembering a missed prayer and having enough time to pray it first, or repeating a mandatory prayer as an Imam after having performed it once—in such cases, it is not permissible for a Hanafi to follow him at all, and the prayer behind him is absolutely void.

As stated in the general books of the Madhhab, rather in Al-Ghunyah: "As for following one who differs in secondary matters like a Shafi'i, it is permissible as long as no act is known from him that nullifies the prayer according to the belief of the follower. There is consensus on its permissibility; disagreement only exists regarding

its dislike (karahat)." (As stated in the general books of the Madhhab, rather in Ghunyah: Following someone with a different school of thought in secondary matters, like a Shafi'i, will be permissible when no such act of his is known which would invalidate the prayer according to the follower's belief. There is a consensus on its permissibility, though there is a difference of opinion regarding its dislike.) - (T)

1. Ghunyat al-Mustamli Sharh Munyat al-Musalli, Chapter on Imamate, printed by Suhail Academy Lahore, p. 513.
2. Ghunyat al-Mustamli Sharh Munyat al-Musalli, Chapter on Imamate, printed by Suhail Academy Lahore, p. 516.

फ़तावा रज़विया जिल्द शशुम (छठी)

रद्दुल मुह्तार के अनुसार उन लोगों के कौल पर अमल करते हुए जो कहते हैं कि कराहत तंज़ीही है (क्योंकि इक्तदा (अनुसरण) अकेले नमाज़ पढ़ने से बेहतर है जैसा कि रद्दुल मुह्तार में है ताकि उस कौल पर अमल हो जाए जो इसे मकरूह-ए-तंज़ीही कहता है। - त)

और पढ़कर फिर दोहरा ले क्योंकि बहुत से उलेमा का मानना है कि कराहत तहरीमी (वर्जित) है, और यही वह बात है जिसे अल-ग़ुनिया और अन्य में सिद्ध किया गया है, और यही सबसे स्पष्ट विचार है जैसा कि हमने अपने फ़तावा में स्पष्ट किया है (क्योंकि अधिकांश विद्वानों के अनुसार इसमें कराहत-ए-तहरीमी है जैसा कि ग़ुनिया आदि में सिद्ध है और यही चुनिंदा मत है, हमने इसे अपने फ़तावा में विस्तार से लिखा है। - त)। और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है।

मसला नंबर 583: कलकत्ता, धरमतला नंबर 6 से, प्रेषक मिर्ज़ा गुलाम कादिर बेग साहब, 26 सफ़र 1313 हिजरी।

विद्वान इस मसले में क्या कहते हैं: यदि इमाम शाफ़ई मज़हब का हो और मुक्तदी (अनुसरणकर्ता) हनफ़ी हो, तो क्या वह उन बातों में इमाम का अनुसरण करे जो हनफ़ी के लिए जायज़ नहीं हैं, जैसे ज़ोर से 'आमीन' कहना, रफ़-अल-यदैन (हाथ उठाना) करना और 'क़ौमा' (रुकू के बाद खड़े होना) में हाथ उठाकर दुआ माँगना? इसी प्रकार, क्या शाफ़ई मुक्तदी को अपने मज़हब के खिलाफ बातों में हनफ़ी इमाम का अनुसरण करना चाहिए? और यदि वह अनुसरण करता है, तो उसकी नमाज़ का क्या होगा? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: जब कोई हनफ़ी दूसरे मज़हब वाले का अनुसरण करता है जहाँ उसका अनुसरण करना जायज़ हो, तो यदि इमाम किसी ऐसे कार्य का दोषी हो जो हमारे मज़हब में पवित्रता को भंग करने वाला या नमाज़ को बिगाड़ने वाला हो—जैसे थोड़े अपवित्र या उपयोग किए हुए पानी से शुद्धिकरण करना, सिर के चौथाई से कम भाग का मसह करना, नस से खून बहने, मवाद, घाव, उल्टी या अन्य अशुद्धियों (जो मल-मूत्र के मार्गों से न हों) पर वुज़ू न करना, दिरहम के आकार से अधिक वीर्य लगे कपड़ों में नमाज़ पढ़ना, या 'साहिबे तरतीब' (जिनकी कम से कम छह नमाज़ें कज़ा न हुई हों) होने के बावजूद कज़ा नमाज़ याद रहते हुए और समय होने पर भी वक्त की नमाज़ शुरू कर देना, या किसी फ़र्ज़ नमाज़ को एक बार पढ़कर फिर उसी नमाज़ में इमाम बन जाना—ऐसी स्थिति में हनफ़ी के लिए उसका अनुसरण करना बिल्कुल भी जायज़ नहीं है और उसके पीछे नमाज़ पूर्णतः अमान्य है।

जैसा कि मज़हब की सामान्य किताबों में स्पष्ट किया गया है, बल्कि अल-ग़ुनिया में है: "जहाँ तक शाफ़ई जैसे उप-शाखाओं में मतभेद रखने वाले का अनुसरण करने का प्रश्न है, तो यह तब तक जायज़ है जब तक उससे ऐसा कोई कार्य न देखा जाए जो मुक्तदी के विश्वास के अनुसार नमाज़ को अमान्य कर दे। इसकी वैधता पर आम सहमति है; मतभेद केवल इसकी कराहत (नापसंदगी) के बारे में है।" (जैसा कि इस पर मज़हब की सामान्य किताबों में स्पष्ट विवरण है, बल्कि ग़ुनिया में है: उप-शाखाओं (फ़ुरूआत) में विरोधी, उदाहरण के तौर पर शाफ़ई मसलक का अनुसरण उस समय जायज़ होगा जब उसके किसी ऐसे कार्य का ज्ञान न हो जो मुक्तदी के विश्वास में नमाज़ को बिगाड़ने वाला हो। इसकी वैधता पर इज्मा (सहमति) है, अलबत्ता कराहत में मतभेद है।) - (त)

1. ग़ुन्यतुल मुस्तमली शरह मुन्यतुल मुसल्ली, इमामत का अध्याय, सुहैल एकेडमी लाहौर, पृष्ठ 513
2. ग़ुन्यतुल मुस्तमली शरह मुन्यतुल मुसल्ली, इमामत का अध्याय, सुहैल एकेडमी लाहौर, पृष्ठ 516

पृष्ठ 407 (736 में से)

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

ردالمختار عملاً بقول من یقول ان الکراھۃ تنزیھیۃ (کیونکہ اقتداء تنہا نماز ادا کرنے سے اولٰی ہے جیسا کہ ردالمختار میں ہے تا کہ اس کے قول پر عمل ہو جائے جو اسے مکروہ تنزیہی کہتا ہے۔ ت)

اور پڑھ کر پھر پھیر لے لما ذھب الیہ کثیر من العلماء ان الکراھۃ تحریمیۃ ۱ وھو الذی حققہ في الغنیۃ وغیرھا وھو الاظھر کما بیناہ في فتاوٰنا (کیونکہ اکثر علماء کے نزدیک اس میں کراہت تحریمی ہے جیسا کہ غنیہ وغیرہ میں ثابت ہے اور یہی مختار ہے اسے ہم نے اپنے فتاوٰی میں بڑی تفصیل سے لکھا ہے۔ت) واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۵۸۳: از کلکتہ دھرم تلہ نمبر ۶ مرسلہ جناب مرزا غلام قادر بیگ صاحب ۲۶ صفر ۱۳۱۳ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ اگر امام شافعی المذہب ہو اور مقتدی حنفی تو ان امور میں جو حنفی کو جائز نہیں جیسے آمین بالجہر کہنا اور رفع یدین اور قومہ میں ہاتھ اٹھا کر دُعا مانگنا امام کی متابعت کرے یا نہ کرے؟ اور ایسے ہی مقتدی شافعی المذہب کو اپنے مذہب کے خلاف امور میں امام حنفی المذہب کی متابعت چاہئے یا نہیں؟ اور اگر متابعت کرے تو اس کی نماز کا کیا حال؟ بینوا توجروا۔

الجواب: حنفی جب دوسرے مذہب والے کی اقتداء کرے جہاں اس کی اقتداء جائز ہو کہ اگر امام کسی ایسے امر کا مرتکب ہو جو ہمارے مذہب میں ناقضِ طہارت یا مفسدِ نماز ہے جیسے آبِ قلیل متنجس یا مستعمل سے طہارت یا چوتھائی سر سے کم کا مسح یا خون فصد و ریم زخم و قے وغیرہ

ہا نجاسات غیر سبیلین پر وضو نہ کرنا یا قدِ درم سے زائد منی آلودہ کپڑے سے نماز پڑھنا یا صاحبِ ترتیب ہو کر باوصفِ یادِ فائزہ و وسعتِ بے قضائے فائزہ وقتی شروع کر دینا یا کوئی فرض ایک بار پڑھ کر پھر اسی نماز میں امام ہو جانا تو ایسی حالت میں تو حنفی کو سرے سے اُس کی اقتداء جائز ہی نہیں اور اسکے پیچھے نماز محض باطل،

كما نص عليه في عامة كتب المذهب بل في الغنية اما الاقتداء بالمخالف في الفروع كالشافعي فيجوز مالم يعلم منه ما يفسد الصلاة على اعتقاد المقتدى عليه الاجماع انما اختلف في الكرهة ۲ اھ جیسا کہ اس پر عامہ کتب مذہب میں تصریح ہے بلکہ غنیہ میں ہے فروعات میں مخالف مثلاً شافعی المسلک کی اقتداء اس وقت جائز ہوگی جب اس سے ایسے عمل کا علم نہ ہو جو اعتقادِ مقتدی میں مفسدِ نماز ہو جواز پر اجماع ہے البتہ کراہت میں اختلاف ہے اہ (ت)

۱ غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل فی الامامۃ مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۵۱۳ ۲ غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل فی الامامۃ مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۵۱۶

In short, when he is free from such matters and his leading of the prayer is correct, even then, one should not follow him in those things that have been certainly declared unlawful and illegitimate in one's own school of thought (Madhab). If one follows, then the prayer will be Makruh Tahrimi (prohibitively disliked) or Tanzihi (mildly disliked) to the extent of that illegitimacy, because following is in what is prescribed, not in what is unprescribed. It is mentioned in Radd al-Muhtar:

Following the Imam is not permissible if it is in an act of innovation (bid'ah), an abrogated action, or anything that has no relation to the prayer. (T)	**Following is not permissible if it is in an act of bid’ah (innovation), an abrogated action, and anything that has no connection with the prayer. (T)**

Then in Khaza'in al-Asrar, and then in Hashiyah Shami, it is stated: He (the Imam) is followed only in what is prescribed, not otherwise. (Following the Imam is permissible in what is prescribed but not permissible in what is unprescribed. T). In Majma' al-Anhur and Hashiyah Tahtawi, it is said: Whatever is prescribed, he is followed in it, and whatever is not prescribed, he is not (followed). (T). Similarly, following the Imam is not allowed in leaving a Sunnah; rather, it leads to bad practice and dislike. If he leaves it, the follower should perform it, provided that by doing so, he does not miss following the Imam in any obligatory (wajib) act. Therefore, scholars state that if the Imam omits raising the hands at the time of Takbir Tahrimah, or the Tasbih of Ruku' and Sujud, or the Takbir for transition, or the Dhikr of Qawmah (standing after Ruku'), the follower should not omit them.

As explicitly mentioned in Nazm al-Zandawisi, al-Khaniyyah, al-Khulasah, al-Bazzaziyyah, al-Hindiyyah, Khizanat al-Muftin, Fath al-Qadir, al-Ghunyah, al-Durr al-Mukhtar, Hashiyah al-Durr by Allama Shurunbulali and other books. The summary of the text from Bazzaziyyah is that there are nine things which, if the Imam omits, the follower should perform: raising the hands at the time of Takbir Tahrimah, the Takbir for Ruku' or Sujud, or the Tasbih in both of them, or the Tasmee' (saying Sami'allahu liman hamidah), etc. (T)

It is explicitly mentioned in Nazm Zandawisi, Khaniyyah, Khulasah, Bazzaziyyah, Hindiyyah, Khizanat al-Muftin, Fath al-Qadir, Ghuniyyah, Durr al-Mukhtar, and Hashiyah al-Durr by Allama Shurunbulali and other books. The summary of the Bazzaziyyah statement is that there are nine such things which if the Imam leaves, the follower should perform them: raising hands at the time of Takbir Tahrimah, Takbir for bowing (Ruku') or prostration (Sajdah), or glorification (Tasbeeh) in both of them, or saying 'Sami Allahu Liman Hamidah' (Tasmee'), etc. (T)

Footnotes: 1. Radd al-Muhtar, important point regarding following the Imam, published by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/348. 2. Radd al-Muhtar, important point regarding following the Imam, published by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/349. 3. Hashiyah al-Tahtawi on al-Durr al-Mukhtar, Chapter of Witr and Nawafil, published by Dar al-Ma'rifah, Beirut, 1/281. 4. Fatawa Bazzaziyyah with al-Fatawa al-Hindiyyah, type of the second (who) prayed Maghrib, published by Noorani Kutub Khana, Peshawar, 2/58.

फतावा रज़विया जिल्द छठी

संक्षेप में, जब वह ऐसे मामलों से मुक्त हो और उसका इमामत (प्रार्थना का नेतृत्व) सही हो, तब भी उन बातों में उसका पालन न करें जो अपने मज़हब (विचारधारा) में निश्चित रूप से अवैध और गैर-शरिया घोषित की जा चुकी हैं। यदि कोई पालन करता है, तो उस गैर-शरिया कार्य की मात्रा के अनुसार उसकी नमाज़ मकरूह-ए-तहरीमी (कड़ाई से नापसंद) या तंज़ीही (हल्की नापसंद) होगी, क्योंकि पालन केवल निर्धारित कार्यों में है, गैर-निर्धारित में नहीं। रद्द-उल-मुहतार में उल्लेख है:

इमाम का पालन बिदअत (नवाचार), निरस्त किए गए कार्य और ऐसे प्रत्येक कार्य में जायज़ नहीं है जिसका नमाज़ से कोई संबंध न हो। (त)

इमाम का पालन बिदअत, निरस्त कार्य और हर उस कार्य में जायज़ नहीं है जिसका संबंध नमाज़ से न हो। (त)

फिर ख़ज़ाइनुल असरार, और फिर हाशिया शामी में है: इमाम का पालन केवल निर्धारित कार्यों में जायज़ है, गैर-निर्धारित में नहीं। (त)। मज्मअ-उल-अनहुर और हाशिया तहतावी में है: जो कुछ निर्धारित है, उसमें उसका पालन किया जाए, और जो निर्धारित नहीं है, उसमें नहीं। (त)। इसी तरह सुन्नत छोड़ने में इमाम का अनुसरण नहीं किया जाएगा, बल्कि यह बुराई और नापसंदगी का कारण है। यदि वह छोड़ देता है, तो अनुयायी को उसे पूरा करना चाहिए, बशर्ते कि ऐसा करने से किसी अनिवार्य (वाजिब) कार्य में इमाम का पालन न छूटे। इसलिए विद्वान कहते हैं कि यदि इमाम तक़बीर-ए-तहरीमा के समय हाथ उठाना, या रुकू और सजदे की तस्बीह, या संक्रमण की तक़बीर, या क़ौमा (रुकू के बाद खड़े होना) का ज़िक्र छोड़ देता है, तो अनुयायी को उन्हें नहीं छोड़ना चाहिए।

जैसा कि नज़्म-ए-ज़न्दवीसी, खानिया, खुलासा, बज़ाज़िया, हिन्दिया, ख़ज़ानतुल मुफ़्तीन, फ़तह-उल-क़दीर, गुनिया, दुर्रे मुख़्तार और अल्लामा शुरुनबुलाली की हाशिया दुर्रे मुख़्तार और अन्य पुस्तकों में स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया है। बज़ाज़िया के पाठ का सारांश यह है कि नौ ऐसी चीज़ें हैं जिन्हें यदि इमाम छोड़ दे, तो अनुयायी उन्हें पूरा करे: तक़बीर-ए-तहरीमा के समय हाथ उठाना, रुकू या सजदे के लिए तक़बीर, या उन दोनों में तस्बीह या तस्मीअ (समिअल्लाहु लिमन हमिदह कहना) आदि। (त)

नज़्म ज़न्दवीसी, खानिया, खुलासा, बज़ाज़िया, हिन्दिया, ख़ज़ानतुल मुफ़्तीन, फ़तह-उल-क़दीर, गुनिया, दुर्रे मुख़्तार और हाशिया दुर्रे अल्लामा शुरुनबुलाली और अन्य पुस्तकों में इस पर स्पष्टता है। बज़ाज़िया इबारत का सारांश यह है कि नौ ऐसी चीज़ें हैं जिन्हें इमाम छोड़ दे तो मकतदी उन्हें पूरा करे, तक़बीर तहरीमा के मौक़े पर हाथों का उठाना, रुकू या सजदे के लिए तक़बीर या उन दोनों में तस्बीह या तस्मीअ (समिअल्लाहु लिमन हमिदह कहना) आदि। (त)

पादलेख (Footnotes): 1. रद्द-उल-मुहतार, इमाम के पालन की तहक़ीक़ में महत्वपूर्ण विषय, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 1/348 द्वारा प्रकाशित। 2. रद्द-उल-मुहतार, इमाम के पालन की तहक़ीक़ में महत्वपूर्ण विषय, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 1/349 द्वारा प्रकाशित। 3. दुर्रे मुख़्तार पर हाशिया अल-तहतावी, वित्र और नवाफ़िल का अध्याय, दार अल-मआरिफ़ा, बेरूत, 1/281 द्वारा प्रकाशित। 4. फ़तावा हिन्दिया के साथ फ़तावा बज़ाज़िया, दूसरे प्रकार की मग़रिब की नमाज़, नूरानी कुतुब खाना, पेशावर, 2/58 द्वारा प्रकाशित।

غرض جب وہ ایسے امور سے بری اور اس کی اقتدا صحیح ہو اس وقت بھی ان باتوں میں اس کی متابعت نہ کرے جو اپنے مذہب میں یقینا ناجائز و نامشروع قرار پا چکی ہیں اگر متابعت کرے گا تو اس کی نماز اس نامشروع کی مقدار کراہت پر مکروہ تحریمی یا تنزیہی ہوگی کہ پیروی مشروع میں ہے نہ غیر مشروع میں۔ ردالمحتار میں ہے:

تکون المتابعة غیر جائزة اذا کانت في فعل امام کی متابعت بدعت، عمل منسوخ اور ہر اس عمل بدعة او منسوخ او ما لا تعلق له بالصلوة - میں جائز نہیں جس کا تعلق نماز سے نہ ہو۔ (ت)

پھر خزائن الاسرار پھر حاشیہ شامی میں ہے: انما یتبعه في مشروع دون غیرہ (امام کی متابعت مشروع میں جائز لیکن غیر مشروع میں جائز نہیں۔ت) مجمع الانہر و حاشیہ طحطاویہ میں ہے: ما کان مشروعا یتابعه فیه و ما کان غیر مشروع لا (ہر مشروع عمل میں امام کی متابعت ہوگی مگر غیر مشروع میں نہیں۔ت) اسی طرح ترکِ سنت میں امام کی پیروی نہیں بلکہ موجب اساءت و کراہت ہے اگر وہ چھوڑے مقتدی بجالائے جبکہ اس کی بجا آوری سے کسی واجب فعل میں امام کی متابعت نہ چھوٹے ولہذا علماء فرماتے ہیں اگر امام وقتِ تحریمہ رفعِ یدین یا تسبیح رکوع و سجود یا تکبیرِ انتقال یا ذکرِ قومہ ترک کرے تو مقتدی نہ چھوڑے

كما نص عليه في نظم الزندويسى والخانية والخلاصة والبزازية والهندية وخزانة المفتين وفتح القدير والغنية والدر المختار وحاشيہ الدرر للعلامة شرنبلالي وغيرها وهذا نص البزازية ملخصاً: تسعة اشياء اذا ترك الامام اتى بها المأموم رفع اليدين في التحريمة وتكبيرة الركوع او السجود او التسبيح فيهما او التسميع الخ۔

نظم زندویسی، خانیہ، خلاصہ، بزازیہ، ہندیہ، خزانہ المفتین، فتح القدیر، غنیہ، درمختار اور حاشیہ در للعلامہ شرنبلالی اور دیگر کتب میں اس پر تصریح ہے۔ عبارت بزازیہ کا خلاصہ یہ ہے کہ نو ایسی اشیاء جن کو امام ترک کر دے تو مقتدی ان کو بجا لائے، تکبیر تحریمہ کے موقعہ پر ہاتھوں کا اٹھانا، رکوع یا سجدہ کے لئے تکبیر یا ان دونوں میں تسبیح یا تسمیع (سمع اللہ لمن حمدہ کہنا) الخ (ت)

حواشی: 1 رد المحتار مطلب مهم في تحقيق متابعة الامام مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱ / ۳۴۸ 2 رد المحتار مطلب مهم في تحقيق متابعة الامام مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱ / ۳۴۹ 3 حاشیہ الطحطاوی علی الدر المختار باب الوتر والنوافل مطبوعہ دار المعرفۃ بیروت ۱ / ۲۸۱ 4 فتاوی بزازیہ مع الفتاوی الہندیہ نوع من الثانی صلی المغرب مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور ۲ / ۵۸

Fatawa-e-Razawiyya, Volume 6

Similarly, regarding raising hands during the extra takbirs of the two Eids, it is mentioned in *Ad-Durr*: "One should raise their hands during the extra takbirs even if the Imam does not consider this act permissible, etc." (From *Durr-e-Mukhtar* - Translator). And if the Imam raises his head after saying only one tasbih in Ruku (bowing) or Sujud (prostration), the follower (Muqtadi) must also inevitably abandon the Sunnah of three tasbihs, otherwise, there would be a disruption in following the Imam in the standing position after Ruku (Qawmah) or the sitting position between prostrations (Jalsah).

This is the correct view as stated in *Al-Khaniyyah*, *Al-Khulasah*, *Al-Khazanah*, *Al-Wajiz*, *Al-Fath*, *Al-Bahr*, and other esteemed books. This arrangement of *Ad-Durr* is based on the necessity of following the Imam in the pillars (Arkan). If the Imam raises his head from Ruku or Sujud before the follower completes three tasbihs, following him becomes obligatory.

This is correct, as found in reliable books like *Khaniyyah*, *Khulasah*, *Khazanah*, *Wajiz*, *Fath*, *Bahr*, etc. The words in *Durr-e-Mukhtar* are: This issue is based on the necessity of following the Imam in the pillars of prayer. If the Imam raises his head from Ruku or Sujud before the follower's three tasbihs are completed, following the Imam is mandatory for the follower. (Translator)

It is mentioned in the commentary of *Munyah* by Allama Ibrahim Halabi and the marginalia of Sayyid Ibn Abidin:

The general principle is that following the Imam in Sunnahs is not obligatory, neither in action nor in omission. Likewise, the same rule applies to verbal obligations whose performance does not result in a contradiction of a physical obligation, such as the *Tashahhud* and *Takbir-e-Tashriq*. This is in contrast to the *Qunut* and the *Takbirs of the two Eids*, because performing them leads to a contradiction in action, i.e., staying in a standing position while the Imam is in Ruku... etc. (Summarized).

The principle is that just as following the Imam in Sunnahs is not obligatory in action, it is also not obligatory in omission. The same ruling applies to verbal obligations whose performance does not lead to a contradiction of a physical obligation, for example, *Tashahhud* and *Takbir-e-Tashriq*. This is unlike the *Du'a-e-Qunut* and *Takbirs of the two Eids*, because their performance necessitates a contradiction in action, meaning in such a case the Imam would be in Ruku while the

follower is still standing... etc. (Abridged translation). (Translator)

Once these principles are understood, the ruling for these three sub-issues can also be derived from them. Raising hands during Ruku etc., has been abrogated according to our eminent Imams (may Allah be pleased with them), and practicing something abrogated is unlawful; therefore, there is no following the Imam in that. Imam Malik al-Ulama Abu Bakr Mas'ud Kashani (may his secret be sanctified) states in *Bada'i*:

If one follows an Imam who raises his hands during Ruku, or who recites Qunut in the Fajr prayer, or who holds the view of five...	If someone follows an Imam who performs Raf' al-Yadayn (raising hands) at the time of Ruku, or recites Qunut in the Fajr prayer...

---

1. *Durr-e-Mukhtar*, Chapter of the Two Eids, published by Matba' Mujtabai Delhi, 1/116.
2. *Durr-e-Mukhtar*, Chapter on "When one intends to start," etc., published by Matba' Mujtabai Delhi, 5/1.
3. *Ghaniyat al-Mustamli Sharh Munyat al-Musalli*, Chapter on Imamate, published by Suhail Academy Lahore, p. 568.

फ़तावा-ए-रज़विया, खंड 6

इसी तरह ईदों की ज़ायद तकबीरों में हाथ उठाना, 'अद-दुर' में है: "ज़ायद तकबीरों में अपने हाथ बुलंद करे, चाहे इमाम इस अमल को जाइज़ न समझता हो, आदि।" (दुर-ए-मुख्तार से - अनुवादक)। और अगर इमाम रुकू या सुजूद में केवल एक तस्बीह कहकर सिर उठा ले, तो मुक़्तदी को भी विवश होकर तीन तस्बीह की सुन्नत को छोड़ना होगा, अन्यथा रुकू के बाद खड़े होने (क़ौमा) या सजदों के बीच बैठने (जलसा) में इमाम की पैरवी में बाधा आएगी।

यही सही है जैसा कि 'खानिया', 'ख़ुलासा', 'ख़ज़ाना', 'वजीज़', 'फ़तह', 'बहर' आदि प्रतिष्ठित पुस्तकों में है। 'अद-दुर' की यह व्यवस्था अरकान (नमाज़ के मुख्य स्तंभों) में इमाम की पैरवी की अनिवार्यता पर आधारित है। यदि इमाम मुक़्तदी की तीन तस्बीह पूरी होने से पहले रुकू या सुजूद से अपना सिर उठा ले, तो उसकी पैरवी करना मुक़्तदी के लिए अनिवार्य है।

यही सही है जैसा कि खानिया, ख़ुलासा, ख़ज़ाना, वजीज़, फ़तह, बहर आदि विश्वसनीय पुस्तकों में है। दुर-ए-मुख्तार के शब्द ये हैं: नमाज़ के अरकान में इमाम की पैरवी लाज़िम होने पर यह मसला आधारित है कि यदि इमाम ने मुक़्तदी की तीन तस्बीहात मुकम्मल होने से पहले अपना सिर रुकू व सुजूद से उठा लिया तो मुक़्तदी पर इमाम की पैरवी लाज़िम है। (त)

अल्लामा इब्राहिम हलबी की 'मुन्याह' की शरह और सैय्यद इब्न आबिदीन के हाशिये में है:

सिद्धांत यह है कि सुन्नतों में इमाम की पैरवी न तो करने में अनिवार्य है और न ही छोड़ने में। इसी तरह उस ज़बानी वाजिब का हुक्म है जिसे करने से किसी शारीरिक वाजिब का विरोध न हो, जैसे 'तशहुद' और 'तकबीर-ए-तशरीक'। इसके विपरीत 'क़ुनूत' और 'ईदों की तकबीरों' का हुक्म है, क्योंकि उन्हें करने से क्रिया में विरोध पैदा होता है, यानी इमाम रुकू में होगा और मुक़्तदी क़ियाम (खड़े रहने) की स्थिति में होगा... आदि (संक्षिप्त)।

असल यह है कि सुन्नतों में इमाम की पैरवी जिस तरह करने में लाज़िम नहीं, उसी तरह छोड़ने में भी लाज़िम नहीं। यही हुक्म उस वाज़िब-ए-क़ौली (मौखिक अनिवार्य) का है जिसके करने से किसी वाज़िब-ए-फ़ेअली (शारीरिक अनिवार्य) का विरोध न हो, उदाहरण के लिए तशहुद और तकबीर-ए-तशरीक। इसके विपरीत दुआ-ए-क़ुनूत और ईदों की तकबीरें हैं, क्योंकि उन्हें करने से क्रिया में विरोध आता है, यानी ऐसी स्थिति में इमाम रुकू में होगा और मुक़्तदी क़ियाम की हालत में होगा... आदि संक्षिप्त अनुवाद। (त)

जब ये सिद्धांत ज्ञात हो गए, तो इन तीनों उप-शाखाओं का हुक्म भी इन्हीं से निकल सकता है। हमारे प्रतिष्ठित इमामों (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) के अनुसार रुकू आदि में रफ़-अल-यदैन (हाथ उठाना) मंसूख़ (रद्द) हो चुका है और मंसूख़ पर अमल करना नाजायज़ है; इसलिए उसमें इमाम की पैरवी नहीं है। इमाम मुल्क अल-उलमा अबू बक्र मसूद काशानी (अल्लाह उनके रहस्य को पवित्र रखे) 'बदा'इ' में फ़रमाते हैं:

यदि कोई ऐसे इमाम की पैरवी करे जो रुकू के समय अपने हाथ उठाता है, या जो फज्र की नमाज़ में क़ुनूत पढ़ता है, या जो पाँच को मानता है...	यदि किसी ने ऐसे इमाम की इक्तिदा की जो रुकू के समय रफ़-अल-यदैन करता है या नमाज़-ए-फज्र में क़ुनूत पढ़ता है...

---

1. दुर-ए-मुख्तार, अध्याय: ईदों का बयान, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 1/116
2. दुर-ए-मुख्तार, फ़स्ल: "जब शुरू करने का इरादा करे" आदि, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 5/1
3. ग़नियतुल् मुस्तमली शरह मुन्यतुल मुसल्ली, फ़स्ल: इमामत का बयान, सुहैल अकादमी लाहौर, पृष्ठ 568

یوں ہی تکبیراتِ عیدین میں رفع یدین فی الدر یرفع فی الزوائد ان لم یرا مامه ذلک الخ (درمختار میں ہے تکبیراتِ زوائد میں اپنے ہاتھ بلند کرے خواہ امام اس عمل کو جائز نہ سمجھتا ہو الخ۔ت) اور اگر رکوع و سجود میں ایک ہی تسبیح کہہ کر سر اٹھائے تو مقتدی بھی ناچار سنت تثلیث ترک کرے ورنہ قومہ و جلسہ کی متابعت میں خلل آئے گا۔

هوالصحيح كما في الخانية والخلاصة والخزانة والوجيزوالفتح والبحر وغيرهامن الاسفار الغر وهذا نظم الدرانه مما يبتنى على لزوم المتابعة فى الاركان انه لو رفع الامام راسه من الركوع او السجود قبل ان يتم الماموم التسبيحات الثلث وجب متابعته۔ 2

یہی صحیح ہے جیسا کہ خانیہ، خلاصہ، خزانہ، وجیز، فتح، بحر وغیرہ معتبر کتابوں میں ہے، در مختار کے الفاظ یہ ہیں ارکانِ نماز میں امام کی پیروی لازم ہونے پر یہ مسئلہ مبنی ہے کہ اگر امام نے اپنا سر رکوع و سجود سے مقتدی کی تین تسبیحات مکمل ہونے سے پہلے اٹھا لیا تو مقتدی پر متابعتِ امام لازم ہے۔ (ت)

شرح منیہ علامہ ابراہیم حلبی و حاشیہ سید ابن عابدین میں ہے:

الاصل عدم وجوب المتابعة في السنن فعلا فكذا تركا وكذا الواجب القولى الذي لا يلزم من فعله المخالفة في واجب فعلى كالتشهد وتكبير التشريق بخلاف القنوت و تكبيرات العيدين اذ

اصل یہ ہے کہ سنن میں امام کی متابعت جس طرح فعلاً لازم نہیں اسی طرح ترکاً بھی لازم نہیں، یہی حکم اس واجب قولی کا ہے جس کے بجالانے سے کسی واجب فعلی کی مخالفت لازم نہ آئے مثلاً تشہد اور تکبیراتِ تشریق بخلاف دعا قنوت اور تکبیراتِ عیدین کے کیونکہ ان کے

یلزم من فعلها المخالفة فی الفعل و هو القیام مع رکوع الامام الخ 3 اھ ملخصا۔

بجالانے سے فعل میں مخالفت لازم آتی ہے، یعنی ایسی صورت میں امام رکوع میں ہوگا اور مقتدی حالتِ قیام میں ہو گا الخ اھ تلخیصاً۔ (ت)

جب یہ اصول معلوم ہوئے تو ان تینوں فروع کا حکم بھی انھیں سے نکل سکتا ہے رکوع وغیرہ میں رفع یدین ہمارے ائمہ کرام رضی اللہ تعالٰی عنہم کے نزدیک منسوخ ہو چکا ہے اور منسوخ پر عمل نامشروع، تو اس میں متابعت نہیں۔ امام ملک العلماء ابوبکر مسعود کاشانی قدس سرہ الربانی بدائع میں فرماتے ہیں:

لو اقتدی بمن یرفع یدیه عند الرکوع او بمن یقنت فی الفجر او بمن یری خمس

اگر کسی نے ایسے امام کی اقتداء کی جو رکوع کے وقت رفع یدین کرتا ہے یا نماز فجر میں قنوت پڑھتا ہے

---

1 درمختار، باب العیدین، مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی، ۱/ ۱۱۶ 2 درمختار، فصل واذا اراد الشروع الخ مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱/۵ 3 غنیة المستملی شرح منیة المصلی فصل فی الامامة مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۵۶۸

[Arabic Box 1]: Takbirs in Janazah prayer: He (the follower) should not follow him (the Imam) due to the certainty of his error appearing, because all of that is abrogated. This is quoted in 'Eid of Radd al-Muhtar. [Urdu Translation 1]: Or if he says five Takbirs of funeral prayer, then the follower should not follow him because his being on error is certain as all these are abrogated. This is quoted in the chapter of Eid in Radd al-Muhtar. (T)

Jalali, then Sharh al-Muqaddimah al-Kaydaniyyah by al-Quhistani, then in the Hashiyah of Shami it is stated:

[Arabic Box 2]: It is not permissible to follow in raising hands (Raf' al-Yadayn) during the Takbirs of Ruku'. [Urdu Translation 2]: Following the Imam's raising of hands at the time of Takbirs of Ruku' is not permissible. (T)

Raising hands and praying in Qawma is, according to the Shafi'is, always in the last rak'ah of Fajr prayer, and in Witr, only in the second half of the blessed month of Ramadan, as they recite the Qunoot prayer in them. According to our Imams, the Fajr Qunoot is either abrogated or an innovation; in any case, it is certainly non-prescribed. Therefore, following in it is prohibited. And when there is no following in the basic Qunoot, then following in raising hands, which is its branch, has no meaning. However, the basic Qawma and Ruku' are in themselves prescribed, so as long as he (the Imam) recites Qunoot in Fajr prayer, the follower should stand still with hands dropped. It is stated in Durr-e-Mukhtar:

[Arabic Box 3]: The follower should recite the Qunoot of Witr even if following a Shafi'i who recites Qunoot after Ruku', because this is a matter of ijtihad. But not in Fajr, because it is abrogated; rather, he should stand silently with hands dropped according to the most manifest (opinion). [Urdu Translation 3]: The follower should recite the Qunoot prayer in Witr even if he has started prayer behind a Shafi'i Imam who recites Qunoot after Ruku', because this is a matter of ijtihad. However, he should not recite Qunoot in Fajr because it is abrogated; rather, the follower, according to the preferred opinion, should stand silently with hands dropped. (T)

Allama Shurunbulali states in Noor al-Idah:

[Arabic Box 4]: If one follows someone who recites Qunoot in Fajr, he should stand with him during his Qunoot silently, according to the most manifest (opinion). [Urdu

Translation 4]: If someone follows an Imam who recites Qunoot in Fajr, then according to the preferred opinion, he should remain silent with him.

---

1. Bada'i' al-Sana'i', Chapter on the Amount of Eid Prayers, printed by H.M. Saeed Co., Karachi, 1/278.
2. Radd al-Muhtar, Topic: What is meant by Mujtahid fih, printed by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/368.
3. Durr-e-Mukhtar, Chapter on Witr and Nawafil, printed by Matba' Mujtabai, Delhi, 1/94.

[अरबी बॉक्स 1]: जनाज़ा की नमाज़ में तकबीरें: वह (मुक्तदी) उसका (इमाम का) अनुसरण न करे क्योंकि उसकी गलती स्पष्ट रूप से निश्चित है, क्योंकि यह सब मंसूख (रद्द) है। रद्द-अल-मुह्तार की 'ईद' में इसे उद्धृत किया गया है। [उर्दू अनुवाद 1]: या जनाज़ा की पांच तकबीरें कहता है तो मुक्तदी उसका अनुसरण न करे क्योंकि उसका गलती पर होना निश्चित है क्योंकि ये सभी मंसूख हैं, रद्द-अल-मुह्तार के'बाब-उल-ईद' में इसे उद्धृत किया गया है। (त)

जलाली, फिर शराह अल-मुक़द्दमा अल-कैदानिया लिल-क़ुहिस्तानी, फिर हाशिया शामी में है:

[अरबी बॉक्स 2]: रुकू की तकबीरों में रफ़ा यदैन (हाथ उठाने) में अनुसरण करना जायज़ नहीं है। [उर्दू अनुवाद 2]: रुकू की तकबीरों के अवसर पर इमाम के रफ़ा यदैन करने का अनुसरण करना जायज़ नहीं है। (त)

क़ौमा में हाथ उठाकर दुआ मांगना शाफ़ईयों के नज़दीक फ़ज्र की नमाज़ की आख़िरी रकात में हमेशा और वित्र की तीसरी रकात में सिर्फ रमज़ानुल मुबारक के आख़िरी आधे हिस्से में है कि वे उनमें दुआ-ए-क़ुनूत पढ़ते हैं। हमारे इमामों के नज़दीक फ़ज्र की क़ुनूत या तो मंसूख है या बिदअत, बहरहाल यक़ीनन नामशरूअ (गैर-निर्धारित) है। इसलिए इसमें पैरवी मना है, और जब मूल क़ुनूत में ही पैरवी नहीं है तो हाथ उठाने में जो कि इसकी शाखा है, अनुसरण का कोई मतलब नहीं है। मगर मूल क़ौमा और रुकू अपने आप में मशरूअ हैं, इसलिए जब तक इमाम फ़ज्र की नमाज़ में क़ुनूत पढ़े, मुक्तदी हाथ छोड़कर चुपचाप खड़ा रहे। दुर्रे मुख़्तार में है:

[अरबी बॉक्स 3]: मुक्तदी वित्र का क़ुनूत पढ़े चाहे वह शाफ़ई के पीछे हो जो रुकू के बाद क़ुनूत पढ़ता है, क्योंकि यह इज्तिहाद का विषय है। लेकिन फ़ज्र में नहीं क्योंकि वह मंसूख है, बल्कि सबसे ज़ाहिर (स्पष्ट) मत के अनुसार हाथ छोड़कर चुप खड़ा रहे। [उर्दू अनुवाद 3]: मुक्तदी वित्रों में दुआ-ए-क़ुनूत पढ़े अगरचे उसने ऐसे शाफ़ई मज़हब के इमाम की इक़्तिदा में नमाज़ शुरू की हो जो रुकू के बाद क़ुनूत पढ़ने वाला हो क्योंकि यह मामला इज्तिहादी है। अलबत्ता फ़ज्र में क़ुनूत न पढ़े क्योंकि वह मंसूख है, बल्कि वह मुक्तदी मुख़्तार (पसंदीदा) कौल के मुताबिक़ हाथ छोड़कर खामोश खड़ा रहे। (त)

अल्लामा शुरनबुलाली 'नूरुल ईज़ाह' में फरमाते हैं:

[अरबी बॉक्स 4]: यदि कोई ऐसे इमाम की इक़्तिदा करे जो फ़ज्र में क़ुनूत पढ़ता है, तो वह उसके क़ुनूत के दौरान सबसे ज़ाहिर मत के अनुसार चुपचाप उसके साथ खड़ा रहे। [उर्दू अनुवाद 4]: अगर किसी ने ऐसे इमाम की इक़्तिदा की जो फ़ज्र में क़ुनूत पढ़ता है तो मुख़्तार कौल के मुताबिक़ उसके साथ खामोश (खड़ा रहे)।

---

1. बदाए-उस-सनाए, ईदुल अज़हा की नमाज़ की मात्रा के बयान का अध्याय, एच.एम. सईद कंपनी, कराची द्वारा मुद्रित, 1/278।
2. रद्द-अल-मुह्तार, मुजतहिद फ़ीह का अर्थ, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र द्वारा मुद्रित, 1/368।
3. दुर्रे मुख़्तार, वित्र और नवाफ़िल का अध्याय, मतबा मुजतबाई, दिल्ली द्वारा मुद्रित, 1/94।

تکبیرات فی صلوۃ الجنازۃ لا یتابعہ لظھور خطیئہ بیقین لان ذلك کلہ منسوخ ۱ اھ نقلہ فی عید ردالمحتار۔ یا تکبیرات جنازہ پانچ کہتا ہے تو مقتدی اس کی اتباع نہ کرے کیونکہ اس کا غلطی پر ہونا یقینی ہے کیونکہ یہ تمام منسوخ ہیں اھ ردالمحتار کے باب العید میں اس کو نقل کیا ہے۔ (ت)

جلالی پھر شرح المقدمۃ الکیدانیہ للقھستانی پھر حاشیہ شامی میں ہے :

لا تجوز المتابعۃ فی رفع الیدین فی تکبیرات الرکوع۲۔ تکبیرات رکوع کے موقعہ پر امام کے رفع یدین کرنے کی اتباع جائز نہیں۔ (ت)

قومہ میں ہاتھ اٹھا کر دعا مانگنا شافعیہ کے نزدیک نمازِ فجر کی رکعتِ اخیرہ میں ہمیشہ وتر کی تیسری میں صرف نصف اخیر شہرِ رمضان المبارک میں ہے کہ وہ ان میں دعائے قنوت پڑھتے ہیں۔ قنوتِ فجر تو ہمارے ائمہ کے نزدیک منسوخ یا بدعت ، بہر حال یقینا نامشروع ہے۔ لہذا اس میں پیروی ممنوع ، اور جب اصل قنوت میں متابعت نہیں تو ہاتھ اٹھانے میں کہ اس کی فرع ہے اتباع کے کوئی معنی نہیں مگر اصل قومہ رکوع فی نفسہ مشروع ہے لہذا وہ جب تک نمازِ فجر میں قنوت پڑھے مقتدی ہاتھ چھوڑے چپکا کھڑا رہے۔ درِ مختار میں ہے :

یاتی المأموم بقنوت الوتر ولو بشافعی یقنت بعد الرکوع لانہ مجتھد فیہ لا الفجر لا نہ منسوخ بل یقف ساکتا علی الاظھر مرسلا یدیہ ۳۔ مقتدی وتروں میں دعائے قنوت پڑھے اگرچہ اس نے ایسے شافعی المذہب امام کی اقتدا میں نماز شروع کی ہو جو رکوع کے بعد قنوت پڑھنے والا ہو کیونکہ یہ معاملہ اجتہادی ہے البتہ فجر میں قنوت نہ پڑھے کیونکہ وہ منسوخ ہے، بلکہ وہ مقتدی مختار قول کے مطابق ہاتھ چھوڑے خاموش کھڑا رہے۔ (ت)

علامہ شرنبلالی نور الایضاح میں فرماتے ہیں :

اذا اقتدی بمن یقنت فی الفجر قام معه فی قنوته ساکتا علی الاظهر اگر کسی نے ایسے امام کی اقتدا کی جو فجر میں قنوت پڑھتا ہے تو مختار قول کے مطابق اس کے ساتھ خاموش (کھڑا رہے)۔

---

۱ بدائع الصنائع فصل فی بیان قدر صلوۃ العیدین مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱/ ۲۷۸ ۲ ردالمحتار، مطلب المراد بالمجتہد فیہ مطبوعہ مصطفی البابی مصر، ۱/ ۳۶۸ ۳ درمختار، باب الوتر والنوافل، مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی، ۱/ ۹۴

Fatawa Razawiyya Volume Six

Wa yursilu yadayhi fi janbihi[1] [He should stand and let his hands hang by his sides. (T)]

And in Witr prayer, if following a Shafi'i Imam remains valid (as they split Witr into two parts, saluting at the first Tashahhud and then praying the final rak'ah alone; if the Imam does this, the following is terminated before the Qunut, so neither is he an Imam nor is this person a follower, nor is his Witr correct because an intentional salam occurred in the middle of the prayer. It says in *Ad-Durr al-Mukhtar*: "Following a Shafi'i in it is correct if he does not separate it with a salam; otherwise, according to the more correct view, it is not." Summarized. In *Durr Mukhtar*, it is stated that following such a Shafi'i in Witr is correct who does not separate Witr with a salam (i.e., does not salute after two rak'ahs). If the Imam separates Witr by saluting after the duo [two rak'ahs], then according to the most correct opinion, following him is not valid. Summarized). When this is not the case and following continues, then although the Shafi'is recite Qunut in the standing position after bowing (qawmah), and in our school [Hanafi] its place is before bowing, our scholars in all texts, commentaries, and fatwas have commanded the follower to follow [the Imam] in Qunut here. The basis for this is that they do not consider it entirely illegitimate. The matter is explicitly mentioned with its proofs in *Al-Hidayah*, *Al-Kafi*, and other commentaries. (Passages related to this issue along with proofs are present in Hidayah, Kafi, and other commentaries. (T)). As for whether the follower in this state should follow the Imam or follow the school of the Imam, meaning whether he should fold his hands, leave them hanging, or raise them like in supplication; what should be done? A clear statement on this has not come across the humble view [of the author], nor was it found addressed in the available books. It appears apparent that he should fold his hands as in the standing position (qiyam), because when he is commanded to recite Qunut, then this standing becomes established and a place of dhikr, and folding hands in every such standing is narratively and legally a Sunnah, and rationally and conventionally an act of respect to the Divine Presence, and following the Imam does not mean abandoning the Sunnah.

وقد يؤيد ذلك اطلاقهم قاطبة سنية الوضع في حالة القنوت كما فى عامة الكتب المذهبية فيكون متنا ولا لهذا القنوت المخصوص ايضا۔	**This is supported by those statements of the jurists (fuqaha) which mention that folding hands during Qunut is a Sunnah, as it is in the general books of the school. So, that command will also include this specific Qunut. (T)**

[1] *Nur al-Idah*, Chapter on Witr, printed by Matba' 'Alimi Lahore, p. 38. [2] *Dur Mukhtar*, Chapter on Witr and Nawafil, printed by Mujtabai Delhi, 1/94

फतावा रज़विया जिल्द छठी

वा युरसिलु यदैही फी जनबिही[1] [वह खड़ा रहे और अपने हाथ पहलुओं की तरफ छोड़ दे। (त)]

और नमाज़-ए-वितर में अगर शाफई इमाम के पीछे इक्तिदा बाक़ी रहे (कि वो वितर के दो टुकड़े करते हैं, पहले तशह्हुद पर सलाम फेरा, आख़िरी रक़अत अकेली पढ़ते हैं। अगर इमाम ने ऐसा किया जब तो रक़अत क़ुनूत आने से पहले ही उसकी इक्तिदा ख़त्म हो गई, अब न वो इमाम न ये मुक्तदी, न उसके वितर सही कि उसकी वस्त-ए-नमाज़ (नमाज़ के बीच) में जान-बूझकर सलाम वाक़े हुआ। 'अद-दुर्रुल मुख़्तार' में है: "शाफई की इक्तिदा इसमें सही है अगर वह इसे सलाम के साथ जुदा न करे, वरना सबसे सही क़ौल के मुताबिक़ नहीं।" ख़ुलासा। 'दुर्रे मुख़्तार' में है कि वितर में हनफ़ी को उस शाफई की इक्तिदा दुरुस्त है जो वितर को सलाम के साथ जुदा न करे (यानी दो रक़अत पर सलाम न फेरे)। अगर इमाम ने वितर को दुगाना (दो रक़अत) के बाद सलाम फेर कर जुदा किया तो असह् क़ौल के मुताबिक़ उसकी इक्तिदा दुरुस्त नहीं है। ख़ुलासा।) जब ऐसा न हुआ और इक्तिदा क़ायम रहे, तो अगरचे शाफ़इया क़ुनूत क़ौमा (रुकू के बाद खड़े होने की हालत) में पढ़ते हैं और हमारे मज़हब में इसका मकाम रुकू से पहले है, मगर हमारे उलेमा ने तमाम मुतून, शूरूह और फ़तावा में मुक्तदी को हुक्म दिया कि यहाँ क़ुनूत में पैरवी करे, और इसकी वजह यही कि उसे बिलकुल ग़ैर-शराई नहीं ठहराते। यह मसला हिदाया, काफ़ी और दीगर शराहों में दलीलों के साथ बयान किया गया है। (इस मसले से मुताल्लिक़ इबारतें दलीलों के साथ हिदाया, काफ़ी और दीगर शराहों में मौजूद हैं। (त))। रहा यह कि मुक्तदी इस हालत में इमाम की पैरवी करे या अपने मज़हब के इमाम की पैरवी करे, यानी हाथ बाँधे या छोड़े या दुआ की तरह उठाए, क्या करना चाहिए, इसकी वज़ाहत फ़क़ीर (लेखक) की नज़रों से नहीं गुज़री, न ही अपने पास मौजूद किताबों में इसका ज़िक्र पाया। ज़ाहिर यह है कि क़ियाम (खड़े होने) की तरह हाथ बाँधेगा कि जब उसे क़ुनूत पढ़ने का हुक्म है तो यह क़ियाम साबित और ज़िक्र वाला हुआ, और ऐसे हर क़ियाम में हाथ बाँधना नक़लन व शरअन सुन्नत है और अक़्लन व उरफ़न बारगाह-ए-इलाही का अदब है, और इमाम की पैरवी में सुन्नत को छोड़ना नहीं है।

وقد يؤيد ذلك اطلاقهم قاطبة سنية الوضع في حالة القنوت كما فى عامة الكتب المذهبية فيكون متنا ولا لهذا القنوت المخصوص ايضا۔

इसकी ताईद फ़ुक़हा की उन इबारतों से होती है जिनमें है कि कुनूत के मौक़े पर हाथ बाँधना सुन्नत है जैसा कि मज़हब की आम किताबों में है, तो वो हुक्म इस मख़सूस कुनूत को भी शामिल होगा। (त)

[1] नूरुल ईज़ाह, बाबुल वितर, मतबुआ मतबा अलीमी लाहौर, पृ. 38 [2] दुर्रे मुख़्तार, बाबुल वितर वन-नवाफिल, मतबुआ मुज्तबाई दिल्ली, 1/94

فتاوی رضویہ جلد ششم

ویر سل یدیہ فی جنبیہ 1 [کھڑا رہے اور اپنے ہاتھ پہلوؤں کی طرف چھوڑ دے۔ (ت)]

اور نماز وتر میں اگر شافعی امام کے پیچھے اقتدا باقی رہے (کہ وہ وتر کے دو ٹکڑے کرتے ہیں پہلے تشہد پر سلام پھیرا اخیر رکعت اکیلی پڑھتے ہیں اگر امام نے ایسا کیا جب تو رکعت قنوت آنے سے پہلے ہی اس کی اقتدا قطع ہو گئی اب نہ وہ امام نہ یہ مقتدی، نہ اس کے وتر صحیح کہ اس کی وسط نماز میں عمداً سلام واقع ہوا فی الدر المختار صح الاقتداء فیه بشافعی لم یفصله بسلام لا ان فصله علی الاصح 2اھ ملخصا درمختار میں ہے وتر میں حنفی کو اس شافعی کی اقتداء درست ہے جو وتر کو سلام کے ساتھ جدا نہ کرے (یعنی دور کعت پر سلام نہ پھیرے) اگر امام نے وتر کو دوگانہ کے بعد سلام پھیر کر جدا کیا تو اصح قول کے مطابق اس کی اقتداء درست نہیں ہے اھ ملخصا) جب ایسا نہ ہوا اور اقتدا قائم رہے) تو اگرچہ شافعیہ قنوت قومہ میں پڑھتے ہیں اور ہمارے مذہب میں اس کا محل قبل رکوع، مگر ہمارے علماء نے تمام متون و شروح و فتاوٰی میں مقتدی کو حکم دیا کہ یہاں قنوت میں متابعت کرے ، اور اس کا منشاء وہی کہ اسے بالکل نامشروع نہیں ٹھہراتے والمسئلة منصوص علیها بدلیلها في الهدایة والکافی وسائر الشروح (اس مسئلہ سے متعلق عبارات بمع دلائل ہدایہ، کافی اور دیگر شروح میں موجود ہیں۔ت) رہا یہ کہ مقتدی اس حالت میں اتباع امام کرے یا اتباع مذہب امام یعنی ہاتھ باندھے یا چھوڑے یاد عا کی طرح اٹھائے، کیا کرنا چاہئے، اس کی تصریح نظر فقیر سے نہ گزری، نہ اپنے پاس کی کتب موجود میں اس سے تعرض پایا، ظاہر یہ ہے کہ مثل قیام ہاتھ باندھے گا کہ جب اسے قنوت پڑھنے کا حکم ہے تو یہ قیام ذی قرار و صاحبِ ذکر، مشروع ہوا اور ہر ایسے قیام میں ہاتھ باندھنا نقلاً و شرعاً سنّت اور عقلاً و عرفاً ادب حضرت اور ترک سنت میں امام کی پیروی نہیں۔

وقد يؤيد ذلك اطلاقهم قاطبة سنية الوضع في حالة القنوت كما فی عامة الكتب المذهبية فيكون متنا ولا لهذا القنوت المخصوص ايضا۔

اس کی تائید فقہا کی ان عبارات سے ہوتی ہے جن میں ہے کہ قنوت کے موقع پر ہاتھ باندھنا سنت ہے جیسا کہ عام کتب مذہب میں ہے تو وہ حکم اس مخصوص قنوت کو بھی شامل ہوگا۔ (ت)

1 نور الایضاح باب الوتر، مطبوعہ مطبع علیمی لاہور ص ۳۸ 2 در مختار باب الوتر و النوافل مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱/ ۹۴

Fatawa Razawiyya Volume 6

Rather, it is stated in Durr-e-Mukhtar: "That is, folding the hands is a Sunnah of the standing (qiyam) which has stability and in which a prescribed Dhikr (remembrance) occurs. So, it is practiced during the praise (thana) and in Qunut, but not in the standing between bowing (ruku) and prostration (sujud) or during the Takbirs of Eid, as long as the standing is not prolonged. If it is prolonged, then he should fold them. Sirajia, summarized (T)."

In the commentary (Hashiya) of Allama Tahtawi, it says: "Its literal meaning is general, i.e., every standing that is long. Based on this generality, one should fold hands between the ruku and sujud in Salat-ul-Tasbih because the standing here is long. (T)"

Likewise, there is a consensus among our Imams that reciting 'Ameen' silently is a Sunnah, and its performance does not conflict with any practical obligatory action of the Imam, so why should it be abandoned?

I say (Aqul): By the grace of the All-Knowing Master, the realization of the matter is that in Sunan (voluntary acts), following (itba') is only consequential. This is because the meaning of following someone else is that you have made yourself subordinate to them. This subordination is conceived through two things: one is in the performance of the act itself, meaning if they do it, you do it, and if they omit it, you omit it. The second is in its timing, such that you do it at the same time, not before or after it.

1. Durr-e-Mukhtar, chapter on starting prayer etc., printed at Matba' Mujtabai Lahore, 1/47.
2. Hashiyat-ul-Tahtawi 'ala al-Durr al-Mukhtar, chapter on starting prayer etc., printed at Dar al-Ma'rifah Beirut, 1/218. Page 412 of 736

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

बल्कि दुर्रे मुख्तार में है: "यानी हाथ बाँधना उस कयाम (खड़े होने) की सुन्नत है जिसमें ठहराव हो और कोई ज़िक्र मशरू (निर्धारित) हो (यानी जिसके पढ़ने का हुक्म हो चाहे वह ज़िक्र फ़र्ज़, वाजिब या सुन्नत हो)। चुनांचे सना और क़ुनूत के मौके पर हाथ बाँधे जाएँ रुकू और सुजूद के दरमियान (यानी क़ौमा में) और तकबीराते ईद के कयाम में हाथ न बाँधे जब तक कयाम तवील (लम्बा) न हो, अगर तवील हो तो बाँध ले, सिराजिया, सारांश (त)।"

हाशिया अल्लामा तहतावी में है: "ज़ाहिर है इसमें उमूम (व्यापकता) है यानी हर वह कयाम जो तवील हो, तो इसी उमूम की बिना पर नमाज़े तस्बीह के रुकू और सज्दों के दरमियान हाथ बाँध लेने चाहिए क्योंकि यहाँ कयाम तवील है। (त)"

इसी तरह हमारे आईमा का इजमा (आम सहमति) है कि आमीन में सुन्नत इख़फ़ा (धीरे से कहना) है और इस पर अमल करने में इमाम के किसी वाजिबे.फेअ्ली (क्रियात्मक कर्तव्य) की मुख़ालफ़त नहीं होती, तो इसे क्यों छोड़ा जाए?

अक़ूल: (मैं कहता हूँ) मालिकुल अल्लाम की अता से तहक़ीक़े मक़ाम यह है कि सुनन में तबअ़न इत्तिबा (अनुकरण) होती है। यह इसलिए कि किसी गैर की मुताबाअ़त (अनुसरण) करने का मानी यह है कि तूने अपनी ज़ात को उसके ताबेअ़ (अधीन) बना दिया है। और यह ताबेइयत दो चीज़ों की वजह से मुतसव्वर (परिकल्पित) होगी, एक यह कि शै (कार्य) को बजा लाना इस तरीके से कि अगर उसने किया तो तू भी करे, अगर उसने तर्क किया तो तू भी तर्क कर दे। दूसरी वक़्त में कि तू उसी वक़्त करे न उससे आगे हो और न उससे पहले।

1. दुर्रे मुख्तार, फ़स्ल नमाज़ शुरू करने का बयान आदि, मतबा मुजतबाई लाहौर, 1/47।
2. हाशियतुल तहतावी अलल दुर्रिल मुख्तार, फ़स्ल नमाज़ शुरू करने का बयान आदि, दारुल मा'रिफ़ा बैरूत, 1/218। पृष्ठ 412/736

بلکہ در مختار میں ہے : ھو ای الوضع سنة قیام له قرار فیه ذکر مسنون فیضح حالة الثناء وفی القنوت لا في قیام بین رکوع وسجود وتکبیرات العید مالم یطل القیام فیضع، سراجیة اھ ملخصا۔ وہ یعنی ہاتھ باندھنا اس قیام کی سنت ہے جس میں طول اور کوئی ذکر مشروع ہو (یعنی جس کے پڑھنے کا حکم ہو خواہ وہ ذکر فرض ، واجب یا سنت ہو) پس ثنا اور قنوت کے موقع پر ہاتھ باندھے جائیں، رکوع اور سجود کے درمیان (یعنی قومہ میں) اور تکبیراتِ عید کے قیام میں ہاتھ باندھے جب تک قیام کو طویل نہ کرے، اگر طویل کرے تو باندھ لے، سراجیہ اھ ملخصاً (ت)

حاشیہ علامہ طحطاوی میں ہے: ظاہرہ یعم ای قیام طال وعلیه فیضع فی قیام صلوة التسبیح الذی بین الرکوع والسجود۔ بظاہر اس میں عموم ہے یعنی ہر وہ قیام جو طویل ہو، تو اسی عموم کی بناء پر نمازِ تسبیح کے رکوع اور سجدوں کے درمیان ہاتھ باندھ لینے چاہیں کیونکہ یہاں قیام طویل ہے۔ (ت)

یوں ہی ہمارے ائمہ کا اجماع ہے کہ آمین میں سنّت اخفاء ہے اور اس کی بجا آوری میں امام سے کسی واجب فعلی میں مخالفت نہیں تو کیوں ترک کی جائے۔

اقول: وتحقیق المقام علی ما علمنی الملك العلام ان السنن لاحظ لها فی المتابعة الا بالتبع ذلك لان معنی متابعتك غیرك جعللك نفسك تابعاله والتبعیة انما تتصور بشیئین احدھما فی نفس اتیان شیئ بمعنی انه ان فعله فعلت وان ترکه ترکت والاخری وقته فلا تتقدم علیه ولا تسبقه اقول: (میں کہتا ہوں) مالک علام کی عطا سے تحقیق مقام یہ ہے کہ سنن میں تبعاً اتباع ہوتی ہے یہ اس لئے کہ تیرا غیر کی متابعت کرنے کا معنی یہ ہے کہ تُو نے اپنی ذات کو اس کے تابع بنادیا ہے، اور یہ تابعیت دو چیزوں کی

وجہ سے متصور ہوگی، ایک یہ کہ شے کو بجالانا اس طریقہ سے کہ اگر اس نے کیا تو تُو بھی کرے اگر اس نے ترک کیا تو تُو بھی ترک کردے دوسری وقت میں کہ تو اسی وقت کرے نہ اس آگے ہو اور نہ اس سے پہلے

1 در مختار فصل و اذاراد الشروع الخ مطبوعہ مطبع مجتبائی لاہور ۱ / ۴۷ 2 حاشیة الطحطاوی علی الدر المختار فصل واذاراد الشروع الخ مطبوعہ دار المعرفۃ بیروت ۱ / ۲۱۸ Page 412 of 736

Fatawa Rizvia Volume 6

...to him, even if your action is not dependent on his action, nor restricted by his precedence. Rather, you perform it even if he does not, and you hasten towards it even if he hasn't yet engaged in it. Thus, you are not following him in it; instead, you are independent within yourself, neither a follower nor being followed. This is very evident. And since you have known that the follower's performing of Sunnahs is not restricted by the Imam's performance, but rather he performs them even if the Imam omits them—as we have made you hear from the texts of the Imams—then a necessary consequence is the permissibility of preceding him in them along with it being recommended. This is because it is possible for the Imam to return to the action after omitting it. For example, if he [the Imam] bowed and lowered his head, joined his palms, or closed his fingers, or remained silent without glorifying [Tasbih], while the follower has performed all of that by the command of the Sharia. Then the Imam returned, leveled [his head], grasped his knees with his palms, separated his fingers, and performed Tasbih. In this case, although the follower's action came first, it is not improper; therefore, he is not to be blamed. Rather, it is recommended for him, and it is considered a reliable and counted act from him. Thus it is established that following [Mutaba'ah] has no place in Sunnahs and recommendations; rather, the follower is independent in them, not falling under the ruling of the Imam, nor does the Imam's control over himself extend to them, and his commitment that...

Page 413 of 736

फ़तावा रिज़विया खंड 6

...उसकी ओर, और यदि आपका कार्य उसके कार्य पर निर्भर न हो और न ही उसकी अग्रता (प्रिसिडेंस) के साथ प्रतिबंधित हो, बल्कि आप उसे करें चाहे उसने न किया हो, और आप उसकी ओर शीघ्रता करें चाहे वह अभी उसमें प्रवृत्त न हुआ हो। तो आप इसमें किसी भी अर्थ में अनुयायी नहीं हैं, बल्कि आप स्वयं में स्वतंत्र हैं, न अनुयायी और न ही अनुगामी। और यह बात अत्यंत स्पष्ट है। और चूँकि आप जान चुके हैं कि मुक्तदी (अनुयायी) का सुन्नतों को अदा करना इमाम के अदा करने के साथ प्रतिबंधित नहीं है, बल्कि वह उन्हें अदा करता है यदि इमाम उन्हें छोड़ दे—जैसा कि हमने आपको बहुत से इमामों के मूल ग्रंथों के संदर्भ में स्पष्ट किया है—तो इसका अनिवार्य परिणाम यह है कि मुक्तदी के लिए इमाम से पहले करना अनुशंसित (मुस्तहब) होने के साथ अनुमत है। क्योंकि यह संभव है कि इमाम किसी कार्य को छोड़ने के बाद पुनः उस पर लौट आए। जैसे कि यदि इमाम ने रुकू में अपना सिर नीचे कर लिया, अपनी दोनों हथेलियाँ बंद कर लीं, या उंगलियाँ मिलाकर रखीं या तस्बीह कहे बिना मौन रहा, जबकि मुक्तदी ने शरीयत के आदेशानुसार वह सब कुछ कर लिया। फिर इमाम लौटा और उसने सिर बराबर किया, हथेलियों से घुटने पकड़े, उंगलियों में अंतर किया और तस्बीह कही। तो यहाँ यद्यपि मुक्तदी ने पहले कार्य किया लेकिन यह अनुचित नहीं है; अतः उसे दोषी नहीं ठहराया जाएगा बल्कि यह उसके लिए मुस्तहब है और उसे इसका पुण्य मिलेगा। अतः इससे सिद्ध हो गया कि सुन्नतों और मुस्तहबात (अनुशंसित कार्यों) में मुताबाअत (अनुसरण) का कोई स्थान नहीं है, बल्कि मुक्तदी उनमें स्वतंत्र है और वह इमाम के आदेश के अधीन नहीं आता, और न ही उसका स्वयं पर प्रभुत्व उसे सम्मिलित करता है, और उसकी प्रतिबद्धता कि...

पृष्ठ ७३६ का ४१३

الیه وان لم یکن فعلك متوقفاً علی فعله ولا متقیداً بتقدمه بل تفعله وان لم یفعل وتبادر الیه وان لم یأخذ فیه بعد فما انت تابع له بل انت مستقل بنفسك غیر تابع ولا متابع وهذا ظاهر جدا واذ قد علمت ان اتیان المأموم بالسنن غیر متقید باتیان الامام بل یاتی بها ان ترکها کما اسمعناك علیه نصوص الائمة، ومن لازم ذلك جواز التقدم علیه مع الندب الیه لجواز ان یرجع الامام بعد الترك الی الفعل کما اذا رکع فصوب راسه وطبق اکفه اوضم اصابعه او بقی صامتا غیر مسبح والمأموم قد فعل کل ذلك بطلب الشرع ثم عاد الامام فسوی واخذ وفرج وسبح فقد تقدم فعل المأموم وهو فیه غیر ملوم بل الیه مندوب وهو منه معتمد محسوب فقد ثبت ان لا مدخل للمتابعة فی السنن والمستحبات بل المأموم مستبد فیها غیر داخل تحت حکم الامام ولم یتناوله تحکیمه ایاه علی ذاته ، والتزامه ان

اور تیرا ایسا فعل جو اس کے فعل پر موقوف نہ ہو اور نہ ہی اس کے تقدم کے ساتھ مقید ہو بلکہ آپ اسے کر سکتے ہیں اگر چہ امام اسے نہ کرے، اسی طرح آپ اسکی طرف بڑھ سکتے ہیں اگر چہ امام ابھی تک اس میں شروع نہیں ہوا۔ تو آپ اس میں کسی معنی میں بھی تابع نہیں بلکہ آپ کی اس میں مستقل حیثیت ہے نہ کہ تابع اور متابع کی، اور یہ بات نہایت ہی ظاہر ہے اور جب آپ یہ جان چکے کہ مقتدی کا سنن پر عمل امام کے بجالانے کے ساتھ مقید نہیں بلکہ امام کے ترک کی صورت میں مقتدی انھیں بجا لا سکتا ہے جیسا کہ ہم نے بہت سے ائمہ کے اقوال سے آپ پر واضح کیا ہے اس کا لازمی تقاضا یہ ہے کہ مقتدی کے لئے امام پر تقدم جائز جب مقتدی اس عمل کو مستحب بھی جانے کیونکہ ہوسکتا ہے کہ امام ترک کے بعد اسے بجا لائے مثلاً امام نے رکوع میں سر پست کر دیا، اپنی دونوں ہتھیلیاں بند کرلیں، یا انگلیاں متصل رکھیں یا تسبیح کہے بغیر خاموش رہا حالانکہ مقتدی ان تمام کو بجا لایا، کیونکہ شرعاً یہ تمام مطلوب تھیں پھر امام لوٹا اور اس نے

سر برابر کیا، ہتھیلیوں سے گھٹنے پکڑے، انگلیوں میں انفصال کیا اور تسبیح کہی تو یہاں اگرچہ مقتدی نے پہلے عمل کیا لیکن یہ غیر مناسب نہیں لہذا اسے ملامت نہ جائے بلکہ یہ اس کے لئے مستحب ہے اور اس پر اسے ثواب ملے گا ، پس اس سے ثابت ہوگیا کہ سنن اور مستحبات میں متابعت کا کوئی دخل نہیں، بلکہ مقتدی ان میں مستقل ہے اور وہ امام کے حکم کے تحت داخل نہیں اور نہ ہی اس کی تحکیم اس کی ذات،

Fatawa Razawiyya - Volume Six

(The follower) prays along with the (Imam's) prayer in matters where one is restricted from preceding him or acting independently without him. These matters essentially consist of nothing but physical obligatory acts (al-Wajibat al-Fi'liyya), as they are the primary subjects of following, as explicitly stated in 'Al-Ghunyah' and pointed out in 'Al-Mirqat' under the saying of the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him): 'The Imam is appointed only to be followed.' Thus, following is inherent in these (obligatory acts) and from them, it extends to others. If it extends, for example, to the obligation of omitting a sunnah because performing it would lead to disagreeing with the Imam in a physical obligatory act, then this omission is not for the sake of following the Imam in omitting the sunnah, but rather for conformity in the mentioned obligatory act. For instance, it is not permissible for a follower to perform the sunnahs of ruku (bowing) before the Imam bows, because they cannot be performed except during ruku, and there is no ruku for the follower before the Imam's ruku. Therefore, performing them before his ruku is prohibited, not because of the nature of the sunnahs themselves, as you have learned. This is the meaning of our statement: 'Following has no share in them except through dependency.' Since this has been clarified, praise be to Allah, it is evident that the follower performs the sunnahs according to his own school of thought (madhhab), not that of the Imam, because the one acting independently only does...

---

[1] Mirat al-Mafatih Sharh Mishkat, Book of what is incumbent upon the follower, etc. Published by Maktaba Imdadia, Multan, 3/94

(मुक्तदी) उन्हीं बातों में इमाम की नमाज़ के साथ नमाज़ पढ़ता है जिनमें उसे आगे बढ़ने या इमाम के बिना स्वतंत्र रूप से कार्य करने की मनाही है। ये मामले वास्तव में शारीरिक अनिवार्य कार्यों (वाजिबात-ए-फ़ेली) के अलावा और कुछ नहीं हैं, क्योंकि ये ही मुख्य रूप से अनुकरण (इक्तिदा) का विषय हैं, जैसा कि 'अल-ग़ुनिया' में स्पष्ट रूप से कहा गया है और 'अल-मिरक़ात' में पैगंबर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के इस कथन के तहत इशारा किया गया है: 'इमाम केवल इसलिए बनाया गया है ताकि उसका अनुसरण किया जाए।' इसलिए, इन अनिवार्य कार्यों में अनुकरण वास्तविक रूप से है और यहीं से यह अन्य कार्यों तक फैलता है। यदि यह फैलता है, जैसे किसी सुन्नत को छोड़ने की अनिवार्यता क्योंकि उसे पूरा करने से शारीरिक अनिवार्य कार्य में इमाम का विरोध होगा, तो यह सुन्नत छोड़ने में इमाम का अनुसरण करने के कारण नहीं है, बल्कि उल्लेखित अनिवार्य कार्य में समानता बनाए रखने के कारण है। उदाहरण के लिए, मुक्तदी के लिए इमाम के रुकू करने से पहले रुकू की सुन्नतें अदा करना जायज़ नहीं है, क्योंकि वे रुकू के अलावा कहीं और अदा नहीं की जा सकतीं, और इमाम के रुकू से पहले मुक्तदी के लिए रुकू की अनुमति नहीं है। इसलिए, उन्हें इमाम के रुकू से पहले करना मना है, न कि स्वयं सुन्नतों को करने की मनाही के कारण, जैसा कि आप जान चुके हैं। हमारे इस कथन का अर्थ यही है कि: 'सुन्नतों में इमाम का अनुसरण केवल गौण (ताबे) रूप में है।' चूँकि यह स्पष्ट हो गया है, अल्हम्दुलिल्लाह, तो यह भी स्पष्ट हो गया कि मुक्तदी सुन्नतों को अपने मज़हब के अनुसार अदा करेगा, न कि इमाम के मज़हब के अनुसार, क्योंकि स्वतंत्र रूप से कार्य करने वाला केवल...

---

[1] मिरात अल-मफ़ातीह शरह मिशकात, बाब जो इमाम पर वाजिब है आदि, मकतबा इमदादिया, मुल्तान, ३/९४ द्वारा प्रकाशित

يصلى بصلاته فيما هو محجور فيه عن التقدم عليه والاستبداد دونه وماهو حقيقة الا الواجبات الفعلية اذ هي موضوع الاقتداء اصالة كما نص عليه في الغنية واشار اليه في المرقاة تحت قوله صلى الله تعالى عليه وسلم انما جعل الامام ليؤتم به ففيها القدوة حقيقة ومنها يسرى الى غيرها وان سرى كوجوب ترك سنة يلزم من فعلها مخالفة الامام في واجب فعلى فليس ذلك للمتابعة في ترك السنة بل في الواجب المذكور كعدم جواز ان ياتي بسنن الركوع قبل ركوع الامام فانه لا يفعلها الا في الركوع ولا ركوع له قبل ركوعه فعن هذا امتنع تقديمها على ركوعه لا على فعلية السنن كما علمت وهذا معنى قولنا لا حظ لها من المتابعة الا بالتبع واذقد تبين هذا ولله الحمد ظهر ان المقتدي ياتى بالسنن على مذهب نفسه دون مذهب الامام فان المستبدا نما يعمل

پر جاری ہوگی، رہا یہ معاملہ کہ مقتدی نے امام کی نماز میں اقتدا کا التزام کیا تھا تو یہ ان امور میں ہوگا جن میں امام پر تقدم منع ہے اور جن میں مقتدی امام کے بغیر مستقل حیثیت نہیں رکھتا اور وہ امور حقیقتاً واجبات فعلیہ ہی ہیں کیونکہ اصالتاً یہی موضوعِ اقتدا ہیں جیسا کہ اس پر غنیہ میں تصریح ہے۔ مرقات میں حضور صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کے اس ارشاد گرامی "امام اس لئے بنایا جاتا ہے کہ اس کی اتباع کی جائے" کے تحت اسی طرف اشارہ کیا ہے تو ان واجبات میں اقتدا حقیقتاً ہے اور ان کے علاوہ میں ان کی وجہ سے ہے مثلاً اس سنت کا ترک واجب ہوگا جس کو بجالانے سے واجبِ فعلی میں امام کی مخالفت لازم آئے تو یہ ترکِ سنت میں متابعت کی بنا پر نہیں ہے بلکہ واجبِ مذکور میں مطابقت کی بنا پر ہے جیسا کہ مقتدی سننِ رکوع کو امام کے رکوع سے پہلے بجا نہیں لا سکتا کیونکہ وہ انھیں رکوع کے علاوہ ادا نہیں کرسکتا، اور امام کے رکوع سے پہلے مقتدی کو رکوع کی اجازت نہیں ہے تو اس وجہ سے ان سنن کا امام کے رکوع سے پہلے

بجالانا منع ہوگیا، نہ یہ کہ سنن کو بجالانا منع ہے جیسا کہ تُو جان چکا ہے ہمارے قول کہ "سنن میں اتباع امام تبعاً ہی ہے" کا معنی یہی ہے۔ الحمد للہ جب یہ چیز واضح ہوگئی تو یہ بھی واضح ہو گیا کہ مقتدی سنن کی بجا آوری اپنے مذہب کے مطابق کرے گا نہ کہ

---

[1] مرآۃ المفاتیح شرح مشکواۃ باب ما علی المامو م الخ مطبوعہ مکتبہ امدادیہ ملتان ۹۴/۳

Fatawa-e-Razviya, Volume 6

[Top Boxed Text] Arabic: Bi-ra'yi nafsihi hadha ayanbaghi al-tahqiq wallahu ta'ala waliyul taufiq atqin hadha fa-innaka la tajiduhu fi ghayri hadhal tahrir wa huwa 'ilmun 'azizun fi kalimin yasir. Urdu Translation: According to the Imam's school of thought, because one who holds an independent status acts according to his own opinion, this was indeed the right of research. Allah Almighty alone is the Master of success. Make it firm in your mind because you will not find such research anywhere except in this writing, and this is the most sublime knowledge in the easiest words. (T)

Therefore, in the two holy cities (Haramayn Tayyibayn) - may Allah increase them in honor and dignity - it is seen and observed that people of all four schools of thought (Madhhabs) pray behind one Imam. In these matters, everyone follows their own school: a Hanafi behind a Hanafi Imam folds his hands below the navel, to his right side a Shafi'i has his hands on his chest, and on his left a Maliki has his hands open at the sides. No one objects to another, and why should they? For, by the grace of Allah, we are four real brothers, children of one mother and father. Our father is Islam and our mother is the Sunnah of the master of mankind, peace and blessings be upon him and his family. Objection is only for those deviants who, God forbid, call the following (Taqlid) of the noble Imams (May Allah be pleased with them) polytheism (shirk) and forbidden (haram), and call the rightful, guided paths of the people of truth a 'crossroad'. "And those who have wronged are going to know to what [kind of] return they will be returned." (1) (T) There is no power or might except with Allah, the Most High, the Most Magnificent. May Allah send blessings upon our leader and master Muhammad, his family, his companions, and the scholars of his group altogether. As for what a Shafi'i should do in such a situation, this should be asked from the Shafi'i scholars. It is stated in 'Khulasa' and 'Durr al-Mukhtar':

[Bottom Boxed Text] Arabic: Wa law qila lil-Hanafi ma madhhab al-Imam al-Shafi'i fi kadha wajaba an yaqula qala Abu Hanifa kadha (2) Ah. Urdu: If a Hanafi is asked, "What is Imam Shafi'i's school regarding such and such a matter?" then it is obligatory to say that Imam Abu Hanifa's position is this. (Ah) Arabic: Aqulu: wa la shakka annar-rajula bi-madhhabahi adra wa amrul futya amrun wa adha fatruk ijtara. Urdu: Aqulu: (I say) There is no doubt that every person knows his own school of thought best, and the matter of issuing a fatwa is very severe and difficult, so leave audacity.

(1) Al-Quran 26/227 (2) Durr al-Mukhtar, Chapter on 'Iddah, printed by Mujtabai Delhi, 1/256

फ़तावा रज़विया, जिल्द 6

[ऊपरी बॉक्स का पाठ] अरबी: बिरइयी नफ़्सिही हाज़ा अयन्बग़िल तहक़ीक़ वल्लाहु तआला वलिय्युत तौफ़ीक़ अतक़िन हाज़ा फ़-इन्नका ला तजिदुहू फ़ी ग़ैरि हाज़ल तहरीर व हुवा 'इल्मुन 'अज़ीज़ुन फ़ी कलिमिन् यसीर। उर्दू अनुवाद: इमाम के संप्रदाय के अनुसार, क्योंकि स्वतंत्र दर्जा रखने वाला अपनी राय के अनुसार कार्य करता है, शोध का यही अधिकार था। अल्लाह तआला ही सफलता का स्वामी है, इसे मन में पक्का कर लें क्योंकि ऐसी शोध आपको इस लेखन के अलावा और कहीं नहीं मिलेगी, और यह आसान शब्दों में अत्यंत उच्च ज्ञान है। (त)

इसीलिए हरमैन तैयबैन (मक्का और मदीना) - अल्लाह उनके सम्मान और गरिमा में वृद्धि करे - में देखा और पाया जाता है कि चारों संप्रदायों (मज़ाहिब) के लोग एक ही इमाम के पीछे नमाज़ पढ़ते हैं। इन मामलों में हर कोई अपने संप्रदाय पर अमल करता है: हनफ़ी इमाम के पीछे हनफ़ी व्यक्ति नाभि के नीचे हाथ बाँधता है, उसके दाईं ओर शाफ़ई सीने पर हाथ रखता है, और बाईं ओर मालिकी ने हाथ खुले रखे होते हैं। कोई किसी पर आपत्ति नहीं करता, और क्यों हो? क्योंकि अल्लाह के शुक्र से हम चारों सगे भाई एक ही माता-पिता की संतान हैं। हमारा पिता इस्लाम है और हमारी माता मानव जाति के सरदार (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की सुन्नत है। आपत्ति तो उन गुमराहों पर है जो महान इमामों (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) के अनुसरण (तक़लीद) को, अल्लाह न करे, शिर्क और हराम कहते हैं और सत्य के लोगों के सच्चे, निर्देशित संप्रदायों को 'चौराहा' कहते हैं। "और ज़ुल्म करने वालों को जल्द ही पता चल जाएगा कि वे किस करवट पलटेंगे।" (१) (त) अल्लाह के सिवा न कोई शक्ति है और न ही सामर्थ्य, जो महान और श्रेष्ठ है। अल्लाह हमारे आका और मौला मुहम्मद, उनके परिवार, उनके साथियों और उनके समूह के विद्वानों पर अपनी कृपा और शांति भेजे। रही बात कि ऐसी स्थिति में शाफ़ई को क्या करना चाहिए, यह शाफ़ई विद्वानों से पूछा जाना चाहिए। 'ख़ुलासा' और 'दुर-ए-मुख़्तार' में लिखा है:

[निचला बॉक्स का पाठ] अरबी: व लौ क़ीला लिल-हनफ़ी मा मज़हबुल इमामुल शाफ़ई फ़ी कज़ा वजबा अन यक़ूला क़ाला अबू हनीफ़ा कज़ा (२) अह। उर्दू: यदि किसी हनफ़ी से पूछा जाए कि फलां मसले में इमाम शाफ़ई का क्या मत है, तो उत्तर में यह कहना वाजिब है कि इमाम अबू हनीफ़ा का रुख यह है। (अह) अरबी: अक़ूलु: व ला शक्का अन्नर-रजुला बि-मज़हबही अदरा व अम्रुल फ़ुतया अम्रुन व अज़ा फ़त्रुक इज्तरा। उर्दू: अक़ूलु: (मैं कहता हूँ) इसमें कोई संदेह नहीं है कि प्रत्येक व्यक्ति

अपने संप्रदाय को अच्छी तरह जानता है और फतवा जारी करने का मामला अत्यंत कठिन और जटिल है, अतः साहस (जुर्रत) छोड़ दें।

---

(१) अल-क़ुरआन २६/२२७ (२) दुर-ए-मुख़्तार, बाबुल इद्दत, मुजतबाई दिल्ली द्वारा मुद्रित, १/२५६

فتاوی رضویہ، جلد ششم

[اوپر والا خانہ] عربی: برائی نفسه هذا اینبغی التحقیق والله تعالی ولی التوفیق اتقن هذا فانك لاتجده فی غیرهذا التحریر وهو علم عزیز فی کلم یسیر۔ اردو: امام کے مذہب کے مطابق، کیونکہ مستقل حیثیت رکھنے والا اپنی رائے کے مطابق عمل کرتا ہے تحقیق کا حق یہی تھا، اللہ تعالیٰ ہی توفیق کا مالک ہے اسے اچھی طرح پختہ کرلو کیونکہ ایسی تحقیق اس تحریر کے علاوہ تمہیں کہیں نہیں ملے گی، اور یہ آسان ترین کلمات میں نہایت ہی اعلیٰ علم ہے۔ (ت)

ولہذا حرمین طیبین زاد ہما اللہ تعالیٰ شرفاً و تکریماً میں مرئی و مشاہد ہے کہ ایک امام کے پیچھے چاروں مذہب والے نماز پڑھتے ہیں اور ان امور میں سب اپنے مذہب پر عمل کرتے ہیں حنفی امام حنفی کے پیچھے زیر ناف ہاتھ باندھے ہے، اُس کے دہنے بازو پر شافعی سینے پر ہاتھ رکھے، بائیں بازو پر مالکی ہاتھ کھولے ہوئے ہے کوئی کسی پر انکار نہیں کرتا، اور کیوں ہو کہ بحمد اللہ ہم چاروں حقیقی بھائی ایک ماں باپ کی اولاد ہیں باپ ہمارا اسلام ماں ہماری سنّت سنیہ سید الانام علیہ و علیٰ آلہ افضل الصلوٰۃ والسلام، انکار تو ان گمراہوں پر ہے جو تقلید ائمہ کرام رضی اللہ تعالیٰ عنہم کو معاذ اللہ شرک و حرام بتاتے اور مذاہب حقہ راشدہ اہل حق کا نام چوراہا رکھتے ہیں۔ وَسَیَعْلَمُ الَّذِیْنَ ظَلَمُوْا اَیَّ مُنْقَلَبٍ یَّنْقَلِبُوْنَ (۱) (عنقریب ظالم جان لیں گے کہ وہ کس کروٹ پلٹا کھائیں گے۔ ت) ولا حول ولا قوۃ الا باللہ العلی العظیم صلی اللہ تعالیٰ علی سیدنا و مولانا محمد وآلہ وصحبہ وعلماء حزبہ اجمعین۔ رہا یہ کہ ایسی صورت میں شافعی کو کیا چاہئے، یہ علماء شافعیہ سے پوچھا جائے۔ خلاصہ و در مختار میں ہے:

[نیچے والا خانہ] عربی: ولو قیل للحنفی مامذهب الامام الشافعی فی کذا وجب ان یقول قال ابو حنیفة کذا (۲) اھ اردو: اگر کسی حنفی سے سوال کیا جائے کہ امام شافعی کا مسلک فلاں مسئلہ کے

بارے میں کیا ہے تو جواباً یہ کہنا واجب ہے کہ امام ابوحنیفہ کا موقف یہ ہے اھ عربی: اقول: ولا شك ان الرجل بمذهبه ادرى وامر الفتيا امر وأدهى فترك اجتراء اردو: اقول: (میں کہتا ہوں) اس میں کوئی شک نہیں کہ ہر آدمی اپنے مذہب کو خوب جانتا ہے اور فتویٰ جاری کرنے کا معاملہ نہایت ہی سخت اور دشوار

---

(۱) القرآن ۲۲۷/۲۶ (۲) در مختار باب العدة مطبوعہ مجتبائی دہلی ۲۵۶/۱

Fatawa Rizvia, Volume VI

[Arabic Box:] Based on the school of thought of others, it is more correct and preferred. Allah Almighty knows best, and His knowledge is most complete and most wise. [Urdu Box:] Therefore, abandoning the daring to follow another school of thought is more suitable and worthy. Allah Almighty knows best; His knowledge is most complete and most perfect. (T)

Issue No. 582: From the region of Assam, district Jorhat, post office Gatanga, place Sarai Bahi, sent by Sayyid Muhammad Safauddin, 10th Rabi-ul-Awwal 1312 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: Is it permissible to perform prayer behind a person with loss of sight or not? Clarify and you shall be rewarded.

The Answer: Undoubtedly it is permissible, but it is not preferable; it is 'Makruh Tanzihi' (disliked) when there is someone present among the congregation who has sound beliefs, is not a 'fasiq' (transgressor), recites the Holy Quran correctly, and possesses knowledge of the rules of prayer and purification greater than or equal to him. Otherwise, the blind person is preferable and better if, along with the aforementioned qualities, his knowledge exceeds that of the rest of those present. It is stated in Al-Hindiyyah:

[Table/Box Section] Left (Arabic Text): The most worthy of leadership (Imamat) is the one most knowledgeable about the rules of prayer; thus it is in Al-Mudmarat. This is the apparent view, as in Al-Bahr al-Raiq. This is when he knows enough of the recitation to fulfill the Sunnah of recitation, as in Al-Tabyin. And his religious integrity should not be impugned, as in Al-Kifayah, and similarly in Al-Nihayah. He should avoid manifest obscenities, even if another is more pious than him, as in Al-Muhit and similarly in Al-Zahidi. If he is well-versed in the science of prayer but has no share in other sciences, he is still more worthy, as in Al-Khulasah.

Right (Urdu Translation): The best person for leadership (Imamat) is the one who is most aware of the rules of prayer. This is stated in Al-Mudmarat, and Al-Mukhtar also says the same; it is similarly stated in Al-Bahr al-Raiq. This applies when he is acquainted with enough recitation that the Sunnah recitation is performed; it is similarly stated in Al-Tabyin. It is written in Al-Kifayah and Al-Nihayah that his religious integrity should not be questioned. Al-Muhit and Al-Zahidi state that he should be one who avoids manifest obscenities, even if someone else is more pious than him. In Al-Khulasah, it is mentioned that if he is an expert in matters of prayer but lacks knowledge in other sciences, he is still the most worthy. (T)

In the same work it is stated: [Arabic]: The leadership (Imamat) of a bedouin, a blind person, and a slave is permissible. [Urdu]: The leadership of a bedouin, a blind person, and a slave is permissible.

---

1. Fatawa Hindiyyah, Second Chapter on describing who is more worthy of leadership, printed at Noorani Kutub Khana, Peshawar, 1/83.

फतावा रज़विया, जिल्द छठा

[अरबी बॉक्स:] दूसरों के मत के आधार पर, यह अधिक सही और उचित है। अल्लाह तआला बेहतर जानता है, और उसका ज्ञान सबसे पूर्ण और सबसे हिकमत वाला है। [उर्दू बॉक्स:] इसलिए, दूसरे मत पर चलने का साहस छोड़ देना ही अधिक उपयुक्त और योग्य है। अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है; उसका ज्ञान सबसे पूर्ण और सबसे उत्तम है। (त)

मसला नंबर 582: मुल्क असम, ज़िला जोरहाट, डाकखाना गटिंगा, स्थान सराय बही से प्रेषित सैयद मोहम्मद सफ़ाउद्दीन, 10 रबी-उल-अव्वल 1312 हिजरी। धर्म के विद्वान इस मसले में क्या कहते हैं: क्या दृष्टिहीन व्यक्ति के पीछे नमाज़ पढ़ना जायज़ है या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: निस्संदेह यह जायज़ है, लेकिन यह बेहतर (अवली) नहीं है; यह 'मकरूह तन्ज़ीही' है जब मण्डली में कोई ऐसा व्यक्ति उपस्थित हो जिसका अकीदा (विश्वास) सही हो, जो फ़ासिक़ न हो, जो पवित्र क़ुरान का पाठ सही ढंग से करता हो, और जिसे नमाज़ और पाकीज़गी के नियमों का ज्ञान उस दृष्टिहीन व्यक्ति के बराबर या उससे अधिक हो। अन्यथा, वह दृष्टिहीन व्यक्ति ही बेहतर और श्रेष्ठ है यदि उपरोक्त गुणों के साथ-साथ उसका ज्ञान उपस्थित अन्य लोगों से अधिक हो। फ़तावा हिन्दिया में लिखा है:

[तालिका/बॉक्स अनुभाग] बायाँ (अरबी पाठ): इमामत (नेतृत्व) के लिए सबसे योग्य वह है जो नमाज़ के नियमों के बारे में सबसे अधिक जानता हो; जैसा कि अल-मुज़्मरात में है। और यही स्पष्ट दृष्टिकोण है जैसा कि अल-बह्र अर-राईक में है। यह तब है जब उसे इतनी क़िरात (पाठ) का ज्ञान हो जिससे सुन्नत क़िरात पूरी हो जाए, जैसा कि अल-तबीन में है। और उसके दीन (धर्म) पर कोई आक्षेप न हो, जैसा कि अल-किफ़ाया और अल-निहाया में है। वह प्रत्यक्ष बुराइयों से बचता हो, भले ही कोई दूसरा उससे अधिक परहेज़गार हो, जैसा कि अल-मुहीत और अल-ज़ाहिदी में है। यदि वह नमाज़ के विज्ञान में बहुत कुशल हो लेकिन अन्य विज्ञानों में उसे कोई ज्ञान न हो, तो भी वही अधिक योग्य है, जैसा कि अल-खुलासा में है।

दायाँ (उर्दू अनुवाद): इमामत के लिए सबसे बेहतर वह है जो नमाज़ के नियमों से सबसे ज़्यादा वाकिफ़ हो। मुज़्मरात में यही है, और मुख्तार भी यही कहता है; अल-बह्र अर-राईक में इसी तरह है। यह उस समय है जब वह इतनी क़िरात जानता हो जिससे सुन्नत क़िरात अदा हो जाए; तबीन में इसी तरह है। किफ़ाया और निहाया में है कि उसके दीन पर कोई सवाल न उठाया जाए। मुहीत और

ज़ाहिदी में है कि वह ज़ाहिरी बुराइयों से बचने वाला हो, चाहे कोई दूसरा उससे अधिक परहेज़गार ही क्यों न हो। खुलासा में है कि अगर वह नमाज़ के मसलों में बहुत माहिर हो लेकिन दूसरे इल्म (ज्ञान) में वाकिफियत न रखता हो, तो भी वही सबसे बेहतर है। (त)

उसी में है: [अरबी]: एक बददूँ (देहाती), दृष्टिहीन और गुलाम की इमामत जायज़ है। [उर्दू]: देहाती, दृष्टिहीन और गुलाम की इमामत जायज़ है।

---

1. फ़तावा हिन्दिया, दूसरा अध्याय, इस बयान में कि इमामत का अधिक हकदार कौन है, नूरानी कुतुब खाना, पेशावर, 1/83।

पृष्ठ 416/736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

[:Arabic Box] علی مذہب غیرہ احق واحری واللہ تعالٰی اعلم وعلمہ اتم واحکم۔ [:Urdu Box]

ہے، پس دیگر مذہب پر جرات کا ترک ہی زیادہ مناسب ولائق ہے، اللہ تعالٰی سب سے بہتر جانتا ہے اس کا علم اتم اور سب سے کامل ہے (ت)

مسئلہ نمبر ۵۸۲: از ملک آسام ضلع جو ہاٹ ڈاکخانہ گٹنگا مقام سرائے بہی مرسلہ سید محمد صفاء الدین صاحب ۱۰ ربیع الاول شریف ۱۳۱۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ عدیم البصر کے پیچھے نماز جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: بلا شبہ جائز ہے مگر اولٰی نہیں مکروہ تنزیہی ہے جبکہ حاضرین میں کوئی شخص صحیح العقیدہ غیر فاسق قرآن مجید صحیح پڑھنے والا اس سے زائد یا اس کے برابر مسائل نماز وطہارت کا علم رکھتا ہو ورنہ وہ عدیم البصر ہی اولٰی وافضل ہے جو باوصف صفات مذکورہ باقی حاضرین سے اسے علم میں زائد ہو۔ ہندیہ میں ہے:

[Table/Box Section] (Arabic Text) Left: الاولی بالامامۃ اعلمہم باحکام الصلوۃ ھکذا في المضمرات، وھو الظاھر ھکذا في البحر الرائق، ھذا اذا علم من القراءۃ قدر ما تقوم بہ سنۃ القراءۃ ھکذا في التبیین، و لم یطعن في دینہ کذا في الکفایۃ، وھکذا في النھایۃ، و یجتنب الفواحش الظاھرۃ وان کان غیرہ اورع منہ کذا في المحیط، و ھکذا في الزاھدی، وان کان متبحرًا فی علم الصلوۃ لکن لم لم یکن لہ حظ فی غیرہ من العلوم فھو اولی کذا فی الخلاصۃ۔

(Urdu Translation) Right: امامت کے لئے سب سے بہتر وہ ہے جو احکامِ نماز سے زیادہ آگاہ ہو۔ مضمرات میں یہی ہے، اور مختار بھی یہی ہے، بحر الرائق میں اسی طرح ہے۔ یہ اس

وقت ہے جب اتنی قرات سے واقف ہو جس سے قرأت مسنونہ ادا ہو جاتی ہو، تبیین میں اسی طرح ہے۔ کفایہ اور نہایہ میں ہے کہ اس کے دین پر طعن نہ ہو۔ محیط اور زاہدی میں ہے کہ وہ فواحش ظاہری سے بچنے والا ہو اگرچہ کوئی دوسرا اس سے زیادہ صاحب ورع ہو۔ خلاصہ میں ہے اگر وہ مسائل نماز کے بارے میں نہایت ہی ماہر ہو لیکن وہ دیگر علوم میں واقفیت نہ رکھتا ہو تو پھر وہی اولیٰ ہے (ت)

اسی میں ہے: [Arabic]: تجوز امامة الاعرابی والاعمی والعبد [Urdu]: اعرابی، نابینا اور غلام کی امامت جائز ہے

---

1 فتاویٰ ہندیہ الفصل الثانی فی بیان من ہو احق بالامامة مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور ۱ / ۸۳

Fatawa Razawiyya, Volume 6 "Except that it is disliked (Makruh)." [Summarized] (T) It is stated in Al-Bahr: "It is a mild dislike (Karahat-e-Tanzihiyya)." In Khaniyah: "Others besides them are better (awla)." (T) Hazrat Utban bin Malik Ansari (may Allah be pleased with him), with the permission of the Radiant Presence, the Leader of the Prophets (peace and blessings of Allah be upon him), used to lead his people in prayer. [Arabic]: In the two Sahihs (Bukhari and Muslim), and the wording is Muslim's, from Ibn Shihab that Mahmoud bin Al-Rabi' Al-Ansari narrated to him that Utban bin Malik, who was one of the companions of the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) among the Ansar who witnessed Badr, came to the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) and said: "O Messenger of Allah, my eyesight has failed me, and I lead my people in prayer..." [The hadith continues regarding his arrival (peace be upon him) at his house and his praying there so it could be taken as a place of prayer]. [Urdu]: It is in Bukhari and Muslim, and the words of Muslim are these: Ibn Shihab relates that it is narrated from Mahmoud bin Rabi' Al-Ansari that Hazrat Utban bin Malik, who was an Ansari and a Sahabi who participated in Badr, came to the noble presence of the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) and submitted: "O Messenger of Allah! My eyesight has failed me, even though I lead my people in prayer." (Until the end of the hadith). So you (peace and blessings be upon you) came to his house and performed prayer so that they could make that place their prayer area. (T) The Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) granted deputyship over Medina Tayyiba twice to Hazrat Ibn Umm Maktum (may Allah be pleased with him) when departing for journeys, so that he would lead the remaining people in prayer. [Arabic]: He attributed it in Al-Bahr to Sahih Ibn Hibban. I say: Ahmad and Abu Dawood narrated from Anas (may Allah be pleased with him) that the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) appointed Ibn Umm Maktum as his deputy over Medina twice to lead them in prayer. [Urdu]: In Al-Bahr, it is attributed to Sahih Ibn Hibban. I say, Imam Ahmad and Abu Dawood narrated from Hazrat Anas (may Allah be pleased with him) that the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) appointed Hazrat Ibn Umm Maktum (may Allah be pleased with him) as his deputy in Medina Tayyiba twice.

Footnotes: 1. Fatawa Hindiyya, Chapter Three regarding those who are fit to be Imam for others, printed by Noorani Kutub Khana Peshawar, 1/85. 2. Sahih Muslim, Chapter on the Concession for Lagging Behind etc., printed by Qadeemi Kutub Khana Karachi,

1/233. 3. Bahr-ur-Raiq, Chapter on Imamat, printed by H.M. Saeed Company Karachi, 1/348. Page 417 of 736

फतावा रज़विया, छठा खंड "हालाँकि यह मकरूह (नापसंद) है।" [संक्षिप्त] (त) 'अल-बहर' में है: "कराहत-ए-तन्ज़ीहिया (हल्की नापसंदगी) है।" 'खनिया' में है: "उनके अलावा अन्य लोग बेहतर (औला) हैं।" (त) हज़रत उ़त्बान बिन मालिक अंसारी (रज़ियल्लाहु अ़न्हु), हुज़ूर पुरनूर सैयदुल मुरसलीन (सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम) की अनुमति से अपनी कौम की इमामत करते थे। [अरबी]: बुखारी और मुस्लिम दोनों में है, और मुस्लिम के शब्द ये हैं: इब्न शिहाब से रिवायत है कि महमूद बिन रबी अ़ंसारी ने उन्हें बताया कि हज़रत उ़त्बान बिन मालिक जो रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम) के अ़ंसारी और बदरी सहाबी हैं, रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम) की ख़िदमत में हाज़िर हुए और अर्ज़ किया: "ऐ अल्लाह के रसूल! मेरी आँखों की रोशनी कमज़ोर हो गई है जबकि मैं अपनी कौम को नमाज़ पढ़ाता हूँ..." [हदीस उनके घर तशरीफ़ लाने और वहाँ नमाज़ पढ़ने के बारे में है ताकि उसे नमाज़ की जगह बनाया जा सके]। [उर्दू]: बुखारी और मुस्लिम में है और मुस्लिम के शब्द ये हैं: इब्न शिहाब बयान करते हैं कि महमूद बिन रबी अ़ंसारी से म्रवी है कि हज़रत उ़त्बान बिन मालिक जो अ़ंसारी और बदरी सहाबी रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम) हैं, वह रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम) की ख़िदमत-ए-अकदस में हाज़िर हुए और अर्ज़ किया: "या रसूल अल्लाह! मेरी आँखें जवाब दे गई हैं हालाँकि मैं अपनी कौम को नमाज़ पढ़ाता हूँ।" (हदीस के अंत तक)। तो आप (सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम) उनके घर तशरीफ़ लाए और नमाज़ अदा फरमाई ताकि वह उस जगह को अपनी नमाज़ की जगह बना लें। (त) हज़रत इब्न उम्मे मकतूम (रज़ियल्लाहु अ़न्हु) को हुज़ूर अकदस (सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम) ने सफ़र पर तशरीफ़ ले जाते समय दो बार मदीना तैयबा पर नियाबत (प्रतिनिधित्व) प्रदान की कि वह बाकी बचे लोगों की इमामत करते। [अरबी]: 'अल-बहर' में इसे 'सहीह इब्न हिब्बान' की ओर मनसूब किया गया है। मैं कहता हूँ: अहमद और अबू दाऊद ने अनस (रज़ियल्लाहु अ़न्हु) से रिवायत किया कि नबी (सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम) ने इब्न उम्मे मकतूम को दो बार मदीना पर अपना नायब नियुक्त किया ताकि वह उन्हें नमाज़ पढ़ाएँ। [उर्दू]: 'अल-बहर' में इसकी निसबत 'सहीह इब्न हिब्बान' की तरफ़ है। मैं कहता हूँ इमाम अहमद और अबू दाऊद ने हज़रत अनस (रज़ियल्लाहु अ़न्हु) से रिवायत किया कि नबी-ए-अकरम (सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम) ने हज़रत इब्न उम्मे मकतूम (रज़ियल्लाहु अ़न्हु) को दो मर्तबा मदीना तैयबा में अपना खलीफा मुकर्रर फरमाया।

पादलेख (फुटनोट्स): 1. फतावा हिन्दिया, फ़स्ल 3, उन लोगों के बयान में जो दूसरों के लिए इमाम बनने के योग्य हैं, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 1/85. 2. सहीह मुस्लिम, बाबुर-रुख़सा फ़ित-तख़ल्लुफ़

वग़ैरह, कदीमी कुतुब खाना कराची, 1/233. 3. बहरुर-रायिक, बाबुल्-इमामत, एच.एम. सईद कंपनी कराची, 1/348. पेज 417 ऑफ 736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم الا انها تکره ۱ اه ملخصاً۔ | البتہ مکروہ ہے اہ ملخصاً (ت) بحر میں ہے: کراہت تنزیہیہ۔ خانیہ میں ہے: غیرہم اولی (ان کے علاوہ اولی ہے ۔ت) حضرت عتبان بن مالک انصاری رضی اللہ تعالٰی عنہ باجازت حضور پر نور سید المرسلین صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم اپنی قوم کی امامت فرماتے، فی الصحیحین واللفظ لمسلم عن ابن شہاب ان محمود بن الربیع الانصاري حدثه ان عتبان بن مالك وهو من اصحاب رسول الله صلى الله تعالى عليه وسلم ممن شهد بدرا من الانصار انه اتى رسول الله صلى الله تعالى عليه وسلم فقال يارسول الله اني قد انكرت بصري وانا اصلى لقومي ۲ الحديث في اتيانه صلى الله تعالٰی علیہ وسلم الى بيته وصلاته فيه ليتخذه مصلى۔ | بخاری و مسلم میں ہے اور مسلم کے الفاظ یہ ہیں ابن شہاب بیان کرتے ہیں کہ محمود بن الربیع انصاری سے مروی ہے کہ حضرت عتبان بن مالک جو انصاری اور بدری صحابی رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم ہیں وہ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کی خدمت اقدس میں حاضر ہوئے عرض کیا یا رسول اللہ ! میری آنکھیں جواب دے گئی ہیں حالانکہ میں اپنی قوم کو نماز پڑھاتا ہوں الی آخر الحدیث تو آپ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم ان کے گھر تشریف لائے نماز ادا فرمائی تاکہ وہ اس جگہ کو اپنی نماز کی جگہ بنالیں۔ (ت) حضرت ابن ام مکتوم رضی اللہ تعالٰی عنہ کو حضور اقدس صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے سفر کو تشریف لیجاتے وقت دوبار مدینہ طیبہ پر نیابت عطا فرمائی کہ باقی ماندہ لوگوں کی امامت کرتے، عزاه في البحر الى صحيح ابن حبان ۳ قلت اخرج احمد وابو داؤد عن انس رضی اللہ تعالٰی عنہ ان النبي صلى الله تعالى عليه وسلم استخلف ابن ام مكتوم على المدينة مرتين يصلي بهم | بحر میں اس کی نسبت صحیح ابن حبان کی طرف ہے، میں کہتا ہوں امام احمد اور ابو داؤد نے حضرت انس رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا کہ نبی اکرم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے حضرت ابن ام مکتوم رضی اللہ تعالٰی عنہ کو دو مرتبہ مدینہ طیبہ میں اپنا خلیفہ مقرر فرمایا

۱ فتاویٰ ہندیہ، الفصل الثالث فی بیان من یصلح اماما لغیرہ ، مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور، ۸۵/۱

۲ صحیح مسلم ، باب الرخصۃ فی التخلف الخ، مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ، ۲۳۳/۱ ۳ بحر الرائق باب الامامۃ مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۳۴۸/۱ Page 417 of 736

"And he was blind." (1) | Although he was blind. (t) Scholars state that the reason for appointing them as Imam is that they were the most virtuous among those present. It is mentioned in Bahr-ur-Raiq: "The restriction on the dislike of a blind person's leadership in al-Muhit etc. is that they are not the most virtuous of the people. If they are the most virtuous, then they are more worthy. Based on this, the precedence of Ibn Umm Maktum is understood because at that time there remained no one among the righteous men for leadership in Medina more virtuous than him. Perhaps Itban bin Malik was also more virtuous than those he led in prayer. End quote." (2) | The condition for the dislike (karahat) of a blind person's leadership (Imamat) mentioned in al-Muhit etc. is that they are not the most virtuous of the people. If they are the most virtuous, then they are more worthy. Therefore, the precedence given to Ibn Umm Maktum (RA) is understood because at that time in Medina, there was no one more qualified for Imamat than him. It is possible that Itban bin Malik (RA) was also more virtuous than others.

"I say, and I have heard that he was among the Companions of Badr (may Allah be pleased with them). If there was no one among those he led in prayer who had witnessed Badr, then he was definitely the most virtuous of them. And Allah the Sublime knows best." | I say, you have heard that he was among the Sahaba of Badr (may Allah be pleased with them all). If none of his followers had participated in the Battle of Badr, then he was certainly more virtuous than them (t).

Mas'ala (Issue) No. 585, 588: From Shahjahanpur, Babuzai neighborhood, sent by Shah Fakhr Alam Sahib Qadri, 22nd Rabi-ul-Akhir Sharif 1312 AH What do the scholars of religion say regarding this: In a mosque, by order of the ruler (Zaid), who is a Hafiz-e-Quran and observant of Sharia, has been performing the service of Imamat since old times and receives his salary for it. But Bakr, who is an employee of another department, and despite not having any order for the dismissal of Zaid's Imamat, nor has Bakr received an order for Imamat from the ruler, and generally the followers (Muqtadis) are displeased with Bakr's leadership for the following reasons: (1) This, that Bakr sometimes watches the dancing of courtesans.

1 Musnad Ahmad bin Hanbal narrated from Musnad Anas bin Malik, printed by Dar al-Fikr Beirut, 3/192; Sunan Abu Dawud Chapter 'Imamat of the Blind', printed by

Aftab Alam Press Lahore 1/88 2 Bahr-ur-Raiq, Chapter 'Imamat', printed by HM Saeed Company Karachi, 1/348 Page 418 of 736

"हालांकि वे अंधे थे।" (1) | हालाँकि वे अंधे थे। (त) विद्वान फरमाते हैं कि उन्हें इमाम नियुक्त करने का यही कारण है कि उपस्थित लोगों में वे सबसे उत्तम (अफ़ज़ल) थे। बह्र-उर-राइक़ में उल्लेख है: "अल-मुहीत आदि में अंधे व्यक्ति की इमामत के मकरूह (नापसंद) होने के लिए यह शर्त लगाई गई है कि वह अंधा व्यक्ति उस कौम से अफ़ज़ल न हो। यदि वह दूसरों से अफ़ज़ल है तो वही बेहतर होगा। इसी आधार पर इब्न उम्म मकतूम की प्रधानता को समझा जाता है क्योंकि उस समय मदीना मुनव्वरा में इमामत के लिए उनसे बेहतर कोई धार्मिक पुरुष नहीं बचा था। संभवतः इतबान बिन मालिक भी उन लोगों से अफ़ज़ल थे जिनकी उन्होंने इमामत की। समाप्त (2)" | अल-मुहीत आदि में अंधे व्यक्ति की इमामत के मकरूह होने के लिए यह शर्त लगाई गई है कि वह अंधा उस कौम से अफ़ज़ल न हो, अगर वह दूसरों से अफ़ज़ल है तो वही बेहतर होगा, और हज़रत इब्न मकतूम रज़ियल्लाहु तआला अन्हु की तक़दीम (प्राथमिकता) को भी इसी बात पर आधारित माना जाता है कि उस समय मदीना मुनव्वरा में उनसे बढ़कर इमामत का पात्र कोई नहीं था, संभव है हज़रत इतबान बिन मालिक रज़ियल्लाहु तआला अन्हु भी दूसरे लोगों से अफ़ज़ल हों।

"मैं कहता हूँ, मैंने सुना है कि वे बदर के साथियों (रज़ियल्लाहु अन्हुम) में से थे। यदि उनके मुक़्तदियों (अनुयायियों) में कोई बदर का गवाह नहीं था, तो वे निश्चित रूप से उनमें सबसे अफ़ज़ल थे। और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है।" | मैं कहता हूँ (क़ुलत), आपने सुन लिया है कि वे असहाब-ए-बदर रज़ियल्लाहु तआला अन्हुम अजमईन में से थे, यदि उनके मुक़्तदियों में कोई भी असहाब-ए-बदर में से नहीं था, तो वे निश्चित रूप से उनसे अफ़ज़ल हुए (त)।

मसला नंबर 585, 588: शाहजहाँपुर, मोहल्ला बाबूज़ई से, प्रेषक शाह फख़्र आलम साहब कादरी, 22 रबी-उल-आखिर शरीफ 1312 हिजरी। धर्म के विद्वान इस विषय में क्या फरमाते हैं कि: एक मस्जिद में शासक के आदेशानुसार ज़ैद, जो हाफ़िज़-ए-कुरआन और शरीयत का पाबंद है, पुराने समय से इमामत की सेवा कर रहा है और उसका वेतन पाता है। लेकिन बक्र, जो दूसरे विभाग का कर्मचारी है, और बावजूद इसके कि ज़ैद की इमामत बर्खास्त करने का कोई आदेश उसके पास नहीं है, और न ही बक्र को शासक की ओर से इमामत का आदेश मिला है, फिर भी वह इमामत करता है। आम तौर पर मुक़्तदी निम्नलिखित कारणों से बक्र की इमामत से असंतुष्ट हैं: (1) यह कि बक्र कभी-कभी वेश्याओं का नृत्य देख लेता है।

1 मुसनद अहमद बिन हंबल, मुसनद अनस बिन मालिक से रिवायत, दार अल-फिक्र बेरूत द्वारा मुद्रित, 3/192; सुनन अबू दाऊद, अध्याय 'अंधे की इमामत', आफताब आलम प्रेस लाहौर द्वारा मुद्रित, 1/88 2 बह्र-उर-राइक़, अध्याय 'इमामत', एच.एम. सईद कंपनी कराची द्वारा मुद्रित, 1/348 पृष्ठ 736 में से 418

وھو اعمیٰ 1 - | حالانکہ وہ نابینا تھے۔ (ت) علماء فرماتے ہیں انھیں امام مقرر کرنے کی یہی وجہ ہے کہ حاضرین میں سب سے افضل یہی تھے۔ بحر الرائق میں ہے: قید کراھة امامة الاعمیٰ فی المحیط وغیرہ بان لایکون افضل القوم فان کان افضلھم فھو اولیٰ وعلیٰ ھذا یحمل تقدیم ابن ام مکتوم لانہ لم یبق من الرجال الصالحین للامامة فی المدینة احد افضل منہ حینئذ ولعل عتبان بن مالک کان افضل من کان یؤمہ ایضاً اھ 2 | محیط وغیرہ میں امامتِ اعمیٰ کے مکروہ ہونے کے لئے یہ قید لگائی گئی ہے کہ وہ اعمیٰ اس قوم سے افضل نہ ہو، اگر وہ دوسروں سے افضل ہے تو وہی بہتر ہوگا، اور حضرت ابن مکتوم رضی اللہ تعالیٰ عنہ کی تقدیم کو بھی اسی بات پر محمول کیا جاتا ہے کہ اس وقت مدینہ منورہ میں ان سے بڑھ کر امامت کا اہل کوئی نہیں تھا، ممکن ہے حضرت عتبان بن مالک رضی اللہ تعالیٰ عنہ بھی دوسرے لوگوں سے افضل ہوں۔

قلت وقد سمعت انہ کان من الاصحاب البدریین رضی اللہ تعالیٰ عنھم فان لم یکن فی من کان یؤمھم من شھد بدراکان افضلھم بالیقین۔ واللہ سبحنہ تعالیٰ اعلم۔ | قلت (میں کہتا ہوں) آپ نے سن لیا ہے کہ وہ اصحاب بدر رضی اللہ تعالیٰ عنہم اجمعین میں سے تھے اگر ان کے مقتدیوں میں کوئی بھی اصحاب بدر میں سے نہ تھا تو وہ بالیقین ان سے افضل ہوئے (ت)

مسئلہ نمبر ۵۸۸،۵۸۵: از شاہجہانپور محلہ بابوزئی مرسلہ شاہ فخر عالم صاحب قادری ۲۲ ربیع الآخر شریف ۱۳۱۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس باب میں کہ مسجد میں بحکم والی ملک (زید) جو حافظ قرآن و متشرع ہے قدیم سے خدمتِ امامت بجالاتا ہے اور اس کی تنخواہ پاتا ہے لیکن بکر جو دوسرے سرشتہ کا ملازم ہے اور اس کے پاس باوجودیکہ کوئی حکمِ فتح امامت کا زید کا نہیں

ہے اور نہ بکر کو حکمِ امامت کا والی ملک کے یہاں سے ملا اور عموماً مقتدیان بکر کی امامت سے بوجوہات ذیل ناراضمند ہیں: (۱) یہ کہ بکر بعض اوقات رقص طوائف دیکھ لیتا ہے۔

---

1 مسند احمد بن حنبل مروی از مسند انس بن مالک مطبوعہ دارالفکر بیروت ، ۱۹۲/۳، سنن ابوداؤد باب امامة الاعمیٰ مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور ۸۸/۱ 2 بحر الرائق، باب الامامة ، مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ، ۳۴۸/۱ Page 418 of 736

Volume 6 Fatawa Razawiyya (2) He participates in the fairs and gatherings of disbelievers and polytheists, and on the night of Diwali, when Hindus worship the idol of Lakshman and perform the worship of foul deities, he joins everyone in offering money for 'Muhurat'. Additionally, contrary to orders, he takes offerings from people over and above his fixed salary. (3) He calls the gathering of Mawlid of the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) and the standing (Qiyam) therein a "Bad Innovation" (Bid'at-e-Sayyi'ah). He calls those who organize and read at the gathering of 'Yazdaham' for Hazrat Ghaus al-Thaqalayn Mahbub-e-Subhani (Sheikh Abdul Qadir Jilani) as innovators and sinners, and considers the sweets of the Mawlid gathering as bad. (4) He considers insulting and backbiting honorable and noble people a matter of pride. Regarding the work of Maulana Abul Mansoor Dehlawi, who is considered an 'Imam of the time' and whose work has been seen by all scholars without objection, Bakr has issued a fatwa of disbelief (kufr). Consequently, the followers and others have developed a dislike for Bakr due to the aforementioned reasons. Therefore, is there any harm in not praying behind Bakr? Even though Bakr sees the followers leaving the congregation because of his leading, he still does not leave his position of leadership and does not allow the designated Imam (mentioned above) to lead, positioning himself first. In this case, what sin is Bakr committing? Please clarify and be rewarded.

The Answer: In the situation described, it is patently obvious that Bakr is a transgressor (fasiq), a profligate (fajir), a committer of major sins, an innovator (bid'ati), and one who is astray, frustrated, and a loser. If, Allah forbid, he offered money to Lakshman as an act of worship, then he is absolutely and certainly an apostate (murtad) and a disbeliever (kafir). There is no doubt that this cursed act is of the worst kind of transgression and profligacy, close to disbelief. In any case, there is no harm in not praying behind him; rather, there is harm and severe harm in following him (in prayer). Whoever appoints him as Imam will be a sinner. Muslims must never pray behind this transgressor and irreligious person. As far as possible, they should remove him from the position of leadership (imamat). If they do not have the power to do so, they should form their own separate congregation. And when the appointed Imam, namely Zaid, and the general mosque attendees are with him, then theirs will be the primary congregation (Jama'at-e-Ula), even if it takes place after (the other). In fact, since there is doubt about his (Bakr's) Islam, it is foremost permissible for them to establish their own congregation in the mosque at the same time he is leading. If they do so, the followers of that (Bakr's) congregation should immediately

break their intention and join them. If they do not do so, they will have to repeat their prayer. Similarly, all the prayers these people have offered behind him until today, whether knowingly or unknowingly, must be repeated. And if Muslims can neither remove him from leading nor establish their own congregation in that mosque before, with, or after him, then it is permissible for them not to pray in that mosque and instead join the congregation in another mosque. It is stated in Maraqi al-Falah: "The leading (imamat) of a learned transgressor is disliked because of his lack of concern for religion. Therefore, it is religiously obligatory to disgrace him, so he should not be honored." In leadership (imamat), it is necessary to humiliate him religiously.

छठा खंड फ़तावा रज़विया (२) वह काफ़िरों और मुशरिकों के मेलों-ठेलों में शरीक होता है और दिवाली की रात को, जब हिंदुओं में लक्ष्मण की मूर्ति होती है और घृणित देवताओं की पूजा की जाती है, वह भी सबके साथ मिलकर 'मुहूर्त' के लिए पैसे चढ़ाता है। इसके अलावा, वह आदेश के विरुद्ध लोगों से अपनी निर्धारित तनख्वाह के अतिरिक्त नज़राना भी लेता है। (३) वह नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की मीलाद की महफ़िल और उसमें खड़े होने (क़ियाम) को 'बिदअत-ए-सय्यिआ' (बुरी नवीनता) कहता है। वह हज़रत ग़ौस-उल-सक़लैन महबूब-ए-सुब्हानी (शेख अब्दुल कादिर जिलानी) की 'याज़दहुम' की महफ़िल करने और पढ़ने वालों को बिदअती और गुनहगार कहता है, और मीलाद की महफ़िल की मिठाई को बुरा समझता है। (४) वह शरीफ़ और नेक लोगों का अपमान करने और उनकी ग़ीबत (पीठ पीछे बुराई) करने को फ़ख्र समझता है। मौलाना अबुल मंसूर देहलवी के बारे में, जिन्हें वक़्त का इमाम कहा जाता है और जिनकी रचना को सभी विद्वानों ने देखा है और किसी ने कोई आपत्ति नहीं की है, बक्र ने कुफ़्र का फ़तवा दे दिया है। इस कारण, उपर्युक्त कारणों से मुक्तदियों और अन्य लोगों के दिलों में बक्र के प्रति घृणा पैदा हो गई है। तो क्या बक्र के पीछे नमाज़ न पढ़ने में कोई हर्ज है? हालाँकि बक्र देखता है कि उसकी इमामत के कारण मुक्तदी जमात छोड़ रहे हैं, फिर भी वह अपनी इमामत नहीं छोड़ता और जो नियुक्त इमाम (जिनका ऊपर ज़िक्र आया है) हैं, उन्हें इमामत करने का मौका नहीं देता और खुद पहले इमाम बन जाता है। तो बक्र किस गुनाह का अपराधी माना जाएगा? स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिलेगा।

अल-जवाब (उत्तर): पूछी गई स्थिति में, बक्र का फ़ासिक़, फ़ाजिर, बड़े गुनाहों का अपराधी, बिदअती, गुमराह, और घाटे में रहने वाला होना तो बिल्कुल साफ़ है। और अगर, खुदा न करे, उसने लक्ष्मण को पूजा के तौर पर पैसे चढ़ाए हैं, तो वह निश्चित रूप से मुरतद (धर्मत्यागी) और काफ़िर है। इस शापित कार्य के सबसे बुरे फ़िस्क़-ओ-फ़ुजूर और कुफ़्र के करीब होने में तो कोई बात ही नहीं है। बहरहाल, उसके पीछे नमाज़ न पढ़ने में कोई हर्ज नहीं है, बल्कि उसकी पैरवी करने में हर्ज और सख़्त हर्ज है। जो उसे इमाम बनाएगा, वह गुनहगार होगा। मुसलमान इस फ़ासिक़ और बेदीन के पीछे नमाज़ हरगिज़ न पढ़ें। जहाँ तक हो सके उसे इमामत से दूर करें। अगर शक्ति न हो तो अपनी अलग जमात बनाएँ। और जब मुक़र्रर इमाम यानी ज़ैद और मस्जिद के आम लोग उनके साथ हैं, तो पहली जमात (जमात-ए-ऊला) उन्हीं की होगी, चाहे वह पहले पढ़ ले। बल्कि, जबकि उसके इस्लाम में शक है, तो उन्हें दर्जा-ए-ऊला (सर्वोत्तम स्तर पर) जायज़ है कि जिस समय वह इमामत कर रहा हो, उसी समय मस्जिद में अपनी जमात कायम करें। और अगर वे ऐसा करें, तो उस (बक्र की) जमात

के मुक्तदियों को चाहिए कि तुरंत नियत तोड़कर इनमें शामिल हो जाएँ। अगर वे ऐसा नहीं करेंगे, तो उन्हें अपनी नमाज़ फिर से पढ़नी होगी। इसी तरह, आज तक जितनी नमाज़ें इन लोगों ने जानबूझकर या अनजाने में उसके पीछे पढ़ी हैं, वे सब लौटानी होंगी। और अगर मुसलमान न तो उसे इमामत से हटा सकते हैं और न ही उस मस्जिद में अपनी जमात उससे पहले, साथ या बाद में कर सकते हैं, तो उनके लिए जायज़ है कि उस मस्जिद में नमाज़ न पढ़ें और दूसरी मस्जिद में जाकर जमात में शामिल हों। 'मराक़ी अल-फ़लाह' में है: "विद्वान फ़ासिक़ की इमामत मकरूह (नापसंद) है क्योंकि वह दीन की परवाह नहीं करता। इसलिए शरीयत के अनुसार उसका तिरस्कार करना आवश्यक है, तो उसे सम्मान नहीं दिया जाएगा।" इमामत में उसका तिरस्कार करना धर्मतः आवश्यक है।

جلد ششم فتاویٰ رضویہ (۲) کفار و مشرکین کے میلوں ٹھیلوں اور دیوالی کی شب جو ہنود میں صورت لچھمن کی ہوتی ہے اور خباثت دیوتاؤں کی پوجا کی جاتی ہے شریک ہو کر بھی سب کے ساتھ مہورت کا روپیہ چڑھاتا ہے اور علاوہ تنخواہ اپنی مقررہ کے خلاف حکم لوگوں سے نذرانہ بھی لیتا ہے۔ (۳) محفل میلاد نبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کو اور قیام کو بدعت سیئہ بتلاتا ہے اور محفل یازدہم حضرت غوث الثقلین محبوب سبحانی کرنے اور پڑھنے والے بدعتی اور گنہگار کہتا ہے اور شیرنی محفل میلاد کو برا جانتا ہے۔ (۴) شرفاء و نجباء کی توہین اور غیبت کو فخر سمجھتا ہے اور مولوی ابو المنصور صاحب دہلوی کی نسبت جو امام وقت کہے جاتے ہیں ان کی تصنیف پر جو سب علماء دیکھ چکے ہیں اور کوئی حرفزن نہیں ہوا مگر بکر نے فتویٰ کفر دے دیا ہے پس مقتدیان وغیرہ کے دلوں میں جو بکر کی طرف سے بوجوہات بالا کراہت آگئی ہے اس واسطے بکر نماز نہ پڑھنے میں کوئی حرج تو نہیں ہے اور بکر اپنی امامت کے باعث مقتدیان وغیرہ کو تارک جماعت دیکھتا مگر پھر بھی اپنی امامت نہیں چھوڑتا اور اس کے امام حکمی کو جس کا ذکر اوپر آچکا امامت کرنے کا موقع نہیں آنے دیتا پہلے خود امام بن جاتا ہے تو بکر کس گناہ کا مرتکب کہا جائے گا، فقط، بینوا توجروا۔

الجواب: صورۃ مستفسرہ میں بکر کا فاسق فاجر مرتکب کبائر بدعتی گمراہ خائب و خاسر ہونا تو بداہتہً ظاہر اور اگر لچھمن کو روپیہ معاذ اللہ بطور عبادت بھینٹ چڑھایا ہے تو قطعاً یقیناً مرتد کافر اور اس فعل ملعون کے بدترین فسق و فجور قریب بکفر ہونے میں تو کلام ہی نہیں بہرحال اُس کے پیچھے نماز نہ پڑھنے میں کیا حرج ہوتا بلکہ اقتدا میں حرج اور سخت حرج ہے جو اسے امام کرے گا گنہگار ہوگا مسلمان اس فاسق بددین کے پیچھے نماز ہرگز نہ پڑھیں جہاں تک قدرت ہو اسے امامت سے دفع کریں قدرت نہ پائیں تو اپنی جماعت جدا کریں اور جبکہ امام معین یعنی زید

اور عامہ اہل مسجد انھیں کے ساتھ ہیں تو جماعت اولیٰ انھیں کی جماعت ہوگی اگرچہ وہ پہلے پڑھ جائے بلکہ جبکہ اس کے اسلام میں شک ہے تو انھیں درجہ اولیٰ جائز ہے وہ جس وقت امامت کر رہا ہو اُسی وقت مسجد میں یہ اپنی جماعت قائم کریں اور اگر یہ ایسا کریں تو اس جماعت کے مقتدیوں کو چاہئے فوراً نیت توڑ کر اس میں آملیں اگر ایسا نہ کریں گے تو انھیں اپنی نماز پھیرنی ہوگی یوں ہی آج تک جتنی نمازیں ان لوگوں نے دانستہ خواہ نادانستہ اس کے پیچھے پڑھی ہیں سب پھیریں، اور اگر مسلمان نہ اسے امامت سے دفع کرسکتے ہیں نہ اُس مسجد میں اپنی جماعت اس سے پہلے یا ساتھ یا بعد کرسکتے ہیں تو انھیں روا ہے کہ اس مسجد میں نماز نہ پڑھیں دوسری مسجد میں جا کر شریک جماعت ہوں۔ مراقی الفلاح میں ہے: کرہ امامۃ الفاسق العالم لعدم اہتمامہ بالدین | فاسق کی امامت مکروہ ہے کیونکہ وہ اہتمام دین نہیں کرتا پس فتجب اہانتہ شرعاً فلا یعظم | شرعاً اس کی اہانت ضروری ہے تو امامت میں

Fatawa Razawiya - Volume 6

By putting him forward for the leadership (Imamate)... and when it becomes impossible to prevent him from it, one should move away from him to a mosque other than that used for Friday prayers and the like. [1] Translation: He should not be honored by being appointed as the Imam, and when it is impossible to stop him from leading the prayer, then for Friday prayers, etc., a person should go to some other mosque. (T)

It is stated in al-Ghunyah: "In Fatawa al-Hujjah, there is an indication that if they put forward a sinner (fasiq) as Imam, they are all sinning." [2] Extracted summary. Translation: It is in Fatawa al-Hujjah, which indicates that if people appoint a sinner as their Imam, they will all be sinners. (T)

It is stated in Radd al-Muhtar: "The matter remains that if one was following an Imam whose leadership is disliked, then another person starts leading in whose leadership there is no dislike; should he break his prayer and follow the latter? At-Tahawi has preferred that if the first is a sinner (fasiq) [meaning not an opponent in jurisprudence], he should not break it, and if he is an opponent and there is doubt regarding his adherence to prayer rules, he should break it. I say: The more evident view is the opposite, because in the second case [of the opponent], the dislike is 'Tanzihi' [minor dislike], similar to the leadership of a blind person or a bedouin. This is unlike the sinner (fasiq), as it is highlighted in the commentary of 'al-Munyah' that the preferred view is that his leadership is 'Tahrimi' [prohibitively disliked], because jurists state that making him an Imam constitutes honoring him, whereas it is incumbent upon us to humiliate him. Furthermore, according to Imam Malik (RA) and in one narration from Imam Ahmed (RA), prayer behind a sinner is not valid at all." [3] I say [the author]: regarding the one...

Translation: The remaining issue is that if someone followed an Imam whose following was disliked, and then a person started a prayer in which there was no dislike, should they terminate their prayer and follow the second person? Al-Tahawi has preferred that if the first Imam is a sinner (i.e., not an opponent school follower), the prayer should not be terminated, and if he is an opponent and there is doubt in his following of ritual rules, it should be terminated. I say the chosen view is the opposite because in the second case (the opponent), the dislike is 'Tanzihi' (minor), just as in the leadership of a blind person or a bedouin. This is in contrast to the sinner, about whom it is mentioned in 'Sharh al-Munyah' that the preferred view is

that his leadership is 'Makruh Tahrimi' (strictly disliked), as jurists state that making him Imam is to honor him, whereas it is obligatory for us to despise him. Moreover, according to Imam Malik (Radi Allahu Anhu) and according to one report from Imam Ahmad (Radi Allahu Anhu), prayer behind a sinner is not permissible at all. I say (the author): regarding whom...

[1] Maraqi al-Falah with Hashiyah al-Tahawi, Chapter on the most deserving of Imamate, Published by Nur Muhammad Tijarat Kutub Karachi, p. 165. [2] Ghunyah al-Mustamli Sharh Munyah al-Musalli, Chapter on Imamate, Published by Suhail Academy Lahore, p. 513. [3] Radd al-Muhtar, Chapter on catching the obligatory prayer, Published by Mustafa al-Babi Egypt, 1/525.

फ़तावा रज़विया - खंड 6

नेतृत्व (इमामत) के लिए उन्हें आगे बढ़ाने के संबंध में... और जब उन्हें इससे रोकना कठिन हो, तो शुक्रवार की नमाज़ आदि के लिए किसी अन्य मस्जिद में चले जाना चाहिए। [1] अनुवाद: उसे इमाम बनाकर सम्मानित नहीं किया जाना चाहिए, और जब उसे नमाज़ पढ़ाने से रोकना असंभव हो, तो जुमा (शुक्रवार) आदि की नमाज़ के लिए व्यक्ति को किसी अन्य मस्जिद में चले जाना चाहिए। (त)

'गुन्या' में उल्लेख है: "फ़तावा अल-हुज्जा में संकेत है कि यदि लोगों ने किसी पापी (फ़ासिक़) को इमाम बनाया, तो वे सभी गुनहगार होंगे।" [2] सारांश। अनुवाद: यह फ़तावा अल-हुज्जा में है, जो संकेत देता है कि यदि लोग किसी पापी को अपना इमाम बनाते हैं, तो वे सभी गुनहगार होंगे। (त)

'रद अल-मुह्तार' में उल्लेख है: "शेष मामला यह है कि यदि कोई ऐसे इमाम का अनुसरण (इक्तिदा) कर रहा था जिसका अनुसरण मकरूह (अप्रिय) था, फिर किसी ऐसे व्यक्ति ने नमाज़ शुरू की जिसके नेतृत्व में कोई कराहत नहीं थी; तो क्या वह अपनी नमाज़ तोड़ दे और दूसरे का अनुसरण करे? अत्-तहावी ने इसे प्राथमिकता दी है कि यदि पहला पापी (फ़ासिक़) है [अर्थात न्यायशास्त्र में विरोधी नहीं], तो वह नमाज़ न तोड़े, और यदि वह विरोधी है और नमाज़ के नियमों के पालन में संदेह है, तो वह तोड़ दे। मैं कहता हूँ: अधिक स्पष्ट विचार इसके विपरीत है, क्योंकि दूसरी स्थिति [विरोधी की] में कराहत 'तन्ज़ीही' [मामूली अप्रिय] है, जैसे कि अंधे या देहाती की इमामत में। यह पापी (फ़ासिक़) के विपरीत है, जैसा कि 'शर्ह अल-मुन्या' की व्याख्या में उजागर किया गया है कि पसंदीदा विचार यह है कि उसका नेतृत्व 'तहरीमी' [सख्त मना] है, क्योंकि न्यायविदों का कहना है कि उसे इमाम बनाना उसका सम्मान करना है, जबकि हमारे लिए उसे अपमानित करना अनिवार्य है। इसके अलावा, इमाम मलिक (र.अ.) के अनुसार और इमाम अहमद (र.अ.) के एक वर्णन के अनुसार, पापी के पीछे नमाज़ बिल्कुल भी मान्य नहीं है।" [3] मैं कहता हूँ [लेखक]: जिसके बारे में...

अनुवाद: शेष विषय यह है कि यदि किसी ने उस व्यक्ति का अनुसरण किया जिसका अनुसरण मकरूह था, फिर एक ऐसे व्यक्ति ने नमाज़ शुरू की जिसमें कोई कराहत नहीं थी, तो क्या वह अपनी नमाज़ तोड़ दे और दूसरे का अनुसरण करे? तहावी ने इसे प्राथमिकता दी है कि यदि पहला पापी हो (अर्थात विरोधी न हो), तो नमाज़ न तोड़े, और यदि वह विरोधी हो और नमाज़ के पालन में संदेह हो, तो तोड़ दे। मैं कहता हूँ कि चुनी हुई राय इसके विपरीत है क्योंकि दूसरी स्थिति (विरोधी की) में कराहत 'तन्ज़ीही' है, जैसा कि अंधे और देहाती की इमामत में है। इसके विपरीत पापी के बारे

में 'शर्ह मुन्या' में है कि पसंदीदा मत यही है कि उसकी इमामत 'मकरूह तहरीमी' है, क्योंकि फ़ुक़हा (न्यायविद) कहते हैं कि उसे इमाम बनाने से उसका सम्मान होगा, जबकि हम पर उसका अपमान करना अनिवार्य है। बल्कि इमाम मलिक रज़ियल्लाहु अन्हु के अनुसार और इमाम अहमद रज़ियल्लाहु अन्हु के एक रिवायत (वर्णन) के अनुसार पापी के पीछे नमाज़ जायज़ ही नहीं है। मैं कहता हूँ: जिसके बारे में...

[1] मराक़ी अल-फ़लाह मय हाशियह अत्-तहावी, फ़स्ल फ़ी बयान अल-अहक़ बिल इमामत, नूर मोहम्मद तिजारत कुतुब कराची, पृ. 165. [2] ग़ुन्ियत अल-मुस्तम्ली शर्ह मुन्ियत अल-मुसल्ली, फ़स्ल फ़ी इमामत, सुहैल एकेडमी लाहौर, पृ. 513. [3] रद अल-मुह्तार, बाब इदरीक अल-फ़रीज़ह, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 1/525.

पृष्ठ 420/736

بتقدیمه للامامة واذا تعذر منه ینتقل عنه الی غیر مسجدة للجمعة وغیرها 1۔ مقدم کرکے اس کی تعظیم نہ کی جائے اور جب اسے امامت سے روکنا متعذر ہو تو جمعہ وغیرہ کے لئے آدمی کسی دوسری مسجد میں چلا جائے۔(ت)

غنیہ میں ہے: فی فتاوی الحجة اشارة الی انهم لو قدموا فاسقا یا ثمون 2 اه ملخصاً۔ فتاوٰی الحجہ میں ہے اس سے اشارہ ہے کہ لوگوں نے فاسق کو امام بنایا تو تمام گنہگار ہوں گے اھ ملخصاً (ت)

ردالمحتار میں ہے: بقی لو کان مقتدیا بمن یکره الاقتداء به ثم شرع من لا کراهة فیه هل یقطع ویقتدی به استظهر ان الاول لوفاسقا لا یقطع ولو مخالفاً وشك فی مراعاته یقطع اقول والاظهر العکس لان الثانی کراهته تنزیهیة کالاعمی والاعرابی بخلاف الفاسق فانه استظهر فی شرح المنیة انها تحریمیة لقولهم ان فی تقدیمه للامامة تعظیمه وقد وجب علینا اهانته بل عند مالك و روایة عن احمد لاتصح الصلوة خلفه 3 اه قلت والحکم فیما نحن فیه ابین واظهر علی کلا الاستظهارین کما لا یخفی من حال ذلك الافسق الاطغی۔ باقی رہا یہ معاملہ کہ اگر کسی نے اقتداء کی اس شخص کی جس کی اقتداء مکروہ تھی پھر ایسے شخص نے نماز شروع کی جس میں کراہت نہ تھی تو کیا نماز قطع کردے اور دوسرے کی اقتداء کرے؟ طحطاوی نے اس کو ترجیح دی ہے کہ اگر اول فاسق ہو (یعنی مخالف نہ ہو) تو نماز قطع نہ کرے اور اگر وہ مخالف ہو اور رعایت نماز میں شک ہو تو قطع کردے، میں کہتا ہوں مختار اس کا عکس ہے کیونکہ دوسری (یعنی مخالف کی) صورت میں کراہت تنزیہی ہے جیسا کہ نابینا اور اعرابی کی امامت میں ہے۔ بخلاف فاسق کے کہ اس کے بارے میں شرح منیہ میں ہے کہ مختار یہی ہے کہ اس کی امامت مکروہ تحریمی ہے کیونکہ فقہا کہتے ہیں کہ اس کو امام بنانے کی بنا پر اس کی تعظیم ہوگی حالانکہ ہم پر اس کی اہانت لازم ہے بلکہ امام مالک

رضی اللہ تعالیٰ عنہ کے نزدیک اور ایک روایت کے مطابق امام احمد رضی اللہ تعالیٰ عنہ کے نزدیک فاسق کے پیچھے نماز جائز ہی نہیں اھ قلت (میں کہتا ہوں) جس کے بارے

1 مراقی الفلاح مع حاشیہ الطحطاوی فصل فی بیان الاحق بالامامۃ مطبوعہ نور محمد تجارت کتب کراچی ص ۱۶۵ 2 غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل فی الامامۃ مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۵۱۳ 3 رد المحتار باب ادراک الفریضہ مطبوعہ مصطفیٰ البابی مصر ۱/۵۲۵

In this, we are discussing according to both chosen opinions, its ruling is very clear, as is evident from the state of this worst sinner and worst rebel. (T) It is mentioned in 'Durr-e-Mukhtar':

Every prayer performed with reprehensible prohibition (Karahat-e-Tehrimi) must be repeated. (T)

Bakr, just as due to his other aforementioned words and actions is a wrongdoer and sinner, and because of this offering is among the worst and most impure evil-doers, likewise in this leadership of prayer (imamat) without the consent of the followers, he is acting against Sharia and is a sinner. In the pure Hadith, the Master of the World (peace and blessings of Allah be upon him) says:

There are three persons whom Allah Almighty curses: one who stands to lead a people while they are displeased with him; second, a woman who spends the night while her husband is angry with her; third, a man who hears 'Hayya 'ala-s-Salah, Hayya 'ala-l-Falah' and does not attend the prayer. This was narrated by Al-Hakim in 'Al-Mustadrak'. (T)

Especially such imamat is even more severe where the position of a designated Imam is snatched without any Sharia reason and the leadership is forced upon people. The leaders of religion have counted this among the major sins. Ibn Hajar Makki states in 'Az-Zawajir 'an Iqtiraf al-Kaba'ir':

The eighty-sixth (86th) major sin is for a person to lead a people in prayer while they dislike him. Some of our imams have definitively categorized this as a major sin, perhaps in view of these Hadiths. However, this is strange because this act is 'makruh' (disliked). Yes, if those Hadiths are applied to the person who...

1. Durr-e-Mukhtar, Chapter on the Description of Prayer, printed at Mujtabai Press, Delhi, 1/71
2. Az-Zawajir 'an Iqtiraf al-Kaba'ir, with reference to Al-Mustadrak, the eighty-sixth major sin, Dar al-Fikr, Beirut, 1/239

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

इसमें हम दोनों मुख़्तार (चुनिंदा) अक़वाल (कथनों) के मुताबिक़ चर्चा कर रहे हैं, इसका हुक्म बहुत ही साफ़ है जैसा कि इस बदतर फ़ासिक़ और बदतर बाग़ी के हाल से ज़ाहिर है। (त) दुर्रे मुख़्तार में है:

हर वह नमाज़ जो कराहते तहरीमी के साथ अदा की जाए, उसका दोहराना वाजिब होता है। (त)

बक्र जैसा कि अपने अन्य ऊपर बताए गए शब्दों और कार्यों के कारण ग़लत और गुनहगार है और इस नज़र के कारण बदतर और नापाक अफ़राद में से है, वैसे ही इस इमामत में भी कि मकतदियों की मर्ज़ी के बिना है, वह शरीयत के ख़िलाफ़ और गुनहगार है। हदीस-ए-पाक में है हुज़ूर सैय्यदे आलम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं:

तीन शख़्स हैं जिन पर अल्लाह तआला की लानत है: एक वह जो लोगों की इमामत के लिए खड़ा हो जाए और वे उससे नाख़ुश हों, दूसरी वह औरत जो रात इस हाल में गुज़ारे कि उसका शौहर उससे नाराज़ हो, तीसरा वह शख़्स जो 'हय्या अलस-सलाह हय्या अलल-फ़लाह' सुने और नमाज़ में हाज़िर न हो। इसे हाकिम ने मुस्तदरक में रिवायत किया। (त)

ख़ास तौर पर ऐसी इमामत तो और भी सख़्त है कि बिना किसी शरई वजह के मुक़र्रर इमाम का पद छीन कर ज़बरदस्ती लोगों की इमामत करे, अइम्मा-ए-दीन ने इसे कबीरा गुनाहों में शुमार फ़रमाया है। इब्ने हजर मक्की 'ज़वाजर अन इक़्तिराफ़ अल-कबा'इर' में फ़रमाते हैं:

छियासीवाँ (86वां) कबीरा गुनाह यह है कि आदमी का उन लोगों की इमामत कराना जो उसे पसंद न करते हों, इस अमल को हमारे कुछ अइम्मा ने यक़ीनी तौर पर कबीरा गुनाहों में गिना है, शायद उन्होंने यह इन हदीसों की रोशनी में किया हो, लेकिन यह अजीब है क्योंकि यह अमल मकरूह है। अलबत्ता एक सूरत ऐसी है जब इन हदीसों को उस शख़्स पर लागू किया जाए जिसने...

1. दुर्रे मुख़्तार, बाब सिफ़तुल-सलाह, मुद्रित मुज्तबाई प्रेस, दिल्ली 1/71
2. अज़-ज़वाजर अन इक़्तिराफ़ अल-कबा'इर, मुस्तदरक के हवाले से, छियासीवाँ कबीरा गुनाह, दारुल-फ़िक्र बेरूत 1/239

पेज 736 में से 421

فتاوی رضویہ جلد ششم

میں ہم گفتگو کر رہے ہیں دونوں مختار اقوال کے مطابق اس کا حکم نہایت ہی واضح ہے جیسا کہ اس بد تر فاسق اور بدتر باغی کے حال سے آشکارا ہے۔ (ت) در مختار میں ہے:

کل صلوٰۃ ادیت مع کراھۃ التحریم تجب اعادتھا | ہر وہ نماز جو کراہتِ تحریمی کے ساتھ ادا کی جائے اس کا اعادہ واجب ہوتا ہے۔ (ت)

بکر جیسا کہ اپنے دیگر اقوال وافعال مذکورہ سوال کے باعث خاطی وبزہ کار اور اس بھینٹ کے سبب بدترین و ناپاک ترین اشرار، یوں ہی اس امامت میں بھی کہ بنا راضی مقتدیان ہے مخالف شرع و گنہگار ہے۔ حدیثِ پاک میں ہے حضور سید عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

ثلثہ لعنھم اللہ من تقدم قوماً وھم لہ کارھون و امرأۃ باتت وزوجھا علیھا ساخط ورجل سمع حی علی الصلاۃ حی علی الفلاح فلم یجب - رواہ الحاکم فی المستدرک۔ | تین شخص ہیں جن پر اللہ تعالٰی کی لعنت ہے ایک وہ کہ لوگوں کی امامت کو کھڑا ہو جائے اور وہ اس سے ناخوش ہوں، دوسری وہ عورت کہ رات گزارے اس حالت میں کہ اس کا شوہر اس سے ناراض ہے، تیسرا وہ شخص کہ حی علی الصلوٰۃ حی علی الفلاح سنے اور نماز کو حاضر نہ ہو۔ اسے حاکم نے مستدرک میں روایت کیا۔ (ت)

خصوصاً ایسی امامت تو اور بھی سخت ہے کہ بلا وجہ شرعی امام متعین کا منصب چھین کر جبراً لوگوں کی امامت کرے ائمہ دین نے اسے کبیرہ گناہوں میں شمار فرمایا، ابن حجر مکی زواجر عن اقتراف الکبائر میں فرماتے ہیں :

الكبيرة السادسة والثمانون امامة الانسان لقوم وهم له كارهون، عد هذا من الكبائر مع الجزم به وقع لبعض ائمتنا وكانه نظر الى ما في هذه الاحاديث وهو عجيب منه، فان ذلك مكروه نعم ان حملت تلك الاحاديث | چھیاسیواں ۸۶ کبیرہ گناہ یہ ہے کہ آدمی کا ان لوگوں کی امامت کروانا جواسے پسند نہ کرتے ہوں اس عمل کو ہمارے بعض ائمہ نے بالجزم کبائر میں شمار کیا ہے، شاید انہوں نے یہ ان احادیث کی روشنی میں کیا ہو لیکن یہ عجیب ہے کیونکہ یہ عمل مکروہ ہے البتہ ایک صورت ایسی ہے جب ان احادیث کو اس شخص پر محمول کیا جائے جس نے

1 در مختار باب صفۃ الصلوۃ مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ا/ ۷۱ 2 الزواجر عن اقتراف الکبائر بحوالہ مستدرک الکبیرہ السادسۃ والثمانون دارالفکر بیروت ۲۳۹/۱

Fatawa Rizvia, Volume 6

[Arabic Text Box]: On whoever transgresses against the position of an appointed Imam and leads prayers there by force against the owner and the followers, it can be said then that this is a major sin because usurping positions is more deserving of being a major sin than usurping wealth, about which it is stated that it is a major sin. Summary. And Allah Almighty knows best.

[Urdu Translation Box]: If someone commits excess against an appointed Imam and forcibly imposes his leadership over him and the followers, it can be said at that time that this act is a major sin because usurping positions is, by priority, a greater sin than usurping wealth, about which it is clearly stated to be a major sin. (T)

Issue No. 589: From Calcutta, Dharmatalla No. 6, sent by Mr. Mirza Ghulam Qadir Baig Sahib, 5 Jumada al-Ukhra 1312 AH.

What do the scholars of religion say on this issue regarding an Imam who is employed to lead prayers? Should he be followed or should the congregational prayer be abandoned? Clarify and be rewarded.

The Answer:

Absolutely, he must be followed; abandoning the congregational prayer on this excuse is not permissible at all. Among the earlier scholars, there was a dislike for praying behind an Imam who takes a wage for leading prayers because, according to them, taking a wage for the Imamate was impermissible. However, even that dislike was not such that abandoning the congregational prayer would be ordered. Now that the fatwa is on the permissibility of taking a wage, that dislike no longer exists. It is stated in Al-Tahtawi under the quote of Durr al-Mukhtar, "It is disliked behind one who leads for a wage," citing Al-Quhistani:

[Arabic Box]: This is based on the invalidity of hiring for acts of worship, which was the way of the earlier scholars. The fatwa is now on its permissibility for fear of the suspension of religious rituals. Halabi and Abu Sa'ud.

[Urdu Box]: This ruling is based on the fact that taking a wage for acts of worship is not permissible (void), and this was the way of the earlier scholars. Now the ruling upon which fatwa is given is that taking a wage is permissible; otherwise, there is a fear that Islamic rituals will become neglected. Halabi and Mas'ud. (T)

Similarly, it is in Radd al-Muhtar etc. And Allah Almighty knows best.

Issue No. 590: From Marehra Mutahhara, district Etah, sent by Syed Zahoor Haider Miyan Sahib, 11 Jumada al-Ukhra 1312 AH.

What do the scholars of religion say on this issue: Zaid remembers many rukus and surahs from which he leads prayers...

---

1 Az-Zawajir 'an Iqtiraf al-Kaba'ir, 86th major sin, printed by Dar al-Fikr, Beirut, 1/240 2 Hashiya at-Tahtawi, Chapter of Imamate, printed by Dar al-Fikr, Beirut, 1/244 Page 422 of 736

फ़तावा रज़विया, जिल्द छठी

[अरबी पाठ बॉक्स]: जिसने मुक़र्रर इमाम के पद का उल्लंघन किया और मालिक और मक़्तदियों पर ज़बरदस्ती अपनी इमामत थोप दी, तो उस समय यह कहा जा सकता है कि यह एक बड़ा गुनाह (कबीरा) है क्योंकि पदों को हड़पना धन हड़पने की तुलना में बड़े गुनाह होने का अधिक पात्र है, जिसके बारे में स्पष्ट कहा गया है कि वह कबीरा गुनाह है। सारांश। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

[उर्दू अनुवाद बॉक्स]: मुक़र्रर इमाम पर ज्यादती की और उस पर और मक़्तदियों पर ज़बरदस्ती अपनी इमामत को मुसल्लत किया, तो उस वक्त कहा जा सकता है कि यह अमल कबीरा गुनाह है क्योंकि मन्सबों का ग़सब करना बतरीक़े अवला (प्राथमिकता से) कबीरा है उस ग़सब से जो माल कहो जिसके कबीरा होने पर तसरीह (स्पष्टीकरण) मौजूद है। (त)

मसला नंबर 589: कलकत्ता, धर्मतल्ला नंबर 6 से, प्रेषक जनाब मिर्ज़ा गुलाम क़ादिर बेग साहब, 5 जमादी अल-उखरा 1312 हिजरी।

क्या फ़रमाते हैं उलमा-ए-दीन इस मसले में कि जो इमाम नमाज़ पढ़ाने पर नौकर है, उसकी इक़्तिदा की जाए या जमाअत तर्क की जाए? बयान करें और पुण्य पाएं।

अल-जवाब:

यक़ीनन इक़्तिदा की जानी चाहिए, इस उज़्र (बहाने) पर तर्कए-जमाअत हरगिज़ जायज़ नहीं। मुतक़द्दिमीन (पूर्वजों) के नज़दीक जो उजरत (वेतन) लेकर इमामत करने वाले के पीछे नमाज़ में कराहियत थी, वह इस बिना पर थी कि उनके नज़दीक इमामत पर उजरत लेना नाजायज़ था। वह भी ऐसी न थी जिसके बाइस (कारण) तर्कए-जमाअत का हुक्म दिया जाए। अब जबकि फ़तवा जवाज़-ए-उजरत पर है, तो वह कराहियत भी न रही। तहतावी में 'दुर्र-ए-मुख्तार' के कौल "उजरत लेने वाले के पीछे नमाज़ मकरूह है" (क़ुहिस्तानी से) के तहत फ़रमाया:

[अरबी बॉक्स]: यह इबादतों पर उजरत लेने के बातिल होने पर आधारित है और यह मुतक़द्दिमीन का तरीक़ा था। अब मुफ़्ता-बेह (जिस पर फ़तवा दिया गया है) कौल यह है कि उजरत लेना जायज़ है, वर्ना इस्लामी प्रतीकों (शआर-ए-इस्लाम) के मुअत्तल (निलंबित) होने का ख़ौफ़ है। हलबी और अबू सऊद।

[उर्दू बॉक्स]: यह हुक्म इस पर मबनी है कि इबादतों पर उजरत लेना जायज़ नहीं (बातिल है) और यह मुतक़द्दिमीन का तरीक़ा था। अब मुफ़्ता-बेह क़ौल यह है कि उजरत लेना जायज़ है वर्ना शआर-ए-इस्लामी के मुअत्तल होने का ख़ौफ़ है। हलबी व मसूद। (त)

इसी तरह रद-अल-मुह्तार वगैरह में है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 590: मारहरा मुतहरा, जिला एटा से, प्रेषक सैय्यद ज़हूर हैदर मियां साहब, 11 जमादी अल-उखरा 1312 हिजरी।

क्या फ़रमाते हैं उलमा-ए-दीन इस मसले में कि ज़ैद को बहुत रुकू और सूरतें याद हैं जिनसे वह नमाज़ पढ़ाता...

---

1 अज़-ज़वाज़िर अन इक़्तिराफ़ अल-कबा'इर, 86वां कबीरा गुनाह, मुद्रित दारुल फ़िक्र, बेरूत, 1/240 2 हाशिया अत-तहतावी, इमामत का अध्याय, मुद्रित दारुल फ़िक्र, बेरूत, 1/244 पेज 422 / 736

فتاوٰی رضویہ، جلد ششم

[Arabic Box]: علی من تعدی علی وظیفة امام راتب فصلی فیها قهرا علی صاحبها وعلی المأمومین امکن ان یقال حینئذ ان ذلك کبیرة لان غصب المناصب اولی بالکبیرة من غصب الاموال المصرح فیه بانه کبیرة اھ ملخصا۔ واللہ سبحٰنه وتعالٰی اعلم۔

[Urdu Box]: مقرر امام پر زیادتی کی اور اس پر مقتدیوں پر جبراً اپنی امامت کو مسلط کیا تو اس وقت کہا جاسکتا ہے کہ یہ عمل کبیرہ گناہ ہے کیونکہ مناصب کا غصب کرنا بطریق اولٰی کبیرہ ہے اس غصب سے جو مال کہو جس کے کبیرہ ہونے پر تصریح موجود ہے اھ ملخصاً (ت)

مسئلہ نمبر ۵۸۹: از کلکتہ دھرم تلا نمبر ۶ مرسلہ جناب مرزا غلام قادر بیگ صاحب ۵ جمادی الاخرٰی ۱۳۱۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ جو امام نماز پڑھانے پر نوکر ہے اس کی اقتداء کی جائے یا جماعت ترک کی جائے؟ بینوا توجروا

الجواب: قطعاً اقتداء کی جائے اس عذر پر ترکِ جماعت ہرگز جائز نہیں، متقدمین کے نزدیک جو اجرت لے کر امامت کرنے والے کے پیچھے نماز میں کراہت تھی اس بنا پر کہ اُن کے نزدیک امامت پر اُجرت لینا ناجائز تھا وہ بھی ایسی نہ تھی جس کے باعث ترکِ جماعت کا حکم دیا جائے ، اب کہ فتوٰی جوازِ اجرت پر ہے تو وہ کراہت بھی نہ رہی طحطاوی میں زیرِ قول در مختار تکرہ خلف من ام باجرة قہستانی (اس شخص کے پیچھے نماز مکروہ ہے جو اُجرت لے قہستانی۔ت) فرمایا:

[Arabic Box]: ھذا مبنی علی بطلان الاستئجار علی الطاعات وھی طریقة المتقدمین والمفتی به جوازہ خوف تعطیل الشعائر حلبي وابومسعود 2 ۔

[Urdu Box]: یہ حکم اس پر مبنی ہے کہ عبادات پر اجرت لینا جائز نہیں (باطل ہے) اور یہ متقدمین کا طریقہ تھا اب مفتی بہ قول یہ رہے کہ اُجرت لینا جائز ہے ورنہ شعائر اسلامی کے معطل ہونے کا خوف ہے حلبی و مسعود (ت)

اسی طرح ردالمحتار وغیرہا میں ہے واللہ تعالٰی اعلم مسئلہ نمبر ۵۹۰: از مارہرہ مطہر ضلع ایٹہ مرسلہ سید ظہور حیدر میاں صاحب ۱۱ جمادی الاخرٰی ۱۳۱۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید کو بہت رکوع اور سورتیں یاد ہیں جن سے وہ نماز پڑھاتا

---

1 الزواجر عن اقتراف الکبائر الکبیرۃ السادسۃ والثمانون مطبوعہ دارالفکر بیروت ۱/ ۲۴۰ 2 حاشیہ الطحطاوی باب الامامۃ مطبوعہ دارالفکر بیروت ۱/ ۲۴۴ Page 422 of 736

Fatawa Razawiya, Volume Six

...but he does not have much command over the elongations (madd), pauses (waqf), and spellings/enunciation (hijaa). Due to his forgetfulness, he is helpless. He recites to a Hafiz or Qari to correct himself, however, in long sections (ruku) or chapters (surah), due to memory deficiency or lack of knowledge of Arabic rules of recitation, he fails to observe the mentioned matters. Yes, if he contents himself with short sections or chapters, he may have some command, but then the command for reciting long or medium-length chapters in Fajr and Isha prayers, etc., would not be followed. Zaid also makes mistakes between the letters 'Seen' and 'Saad'. In this case, is Zaid's leadership in prayer (imamat) valid or disliked (makruh)? And will the prayer be disliked because of improper performance of recitation? What is the ruling if he restricts himself to short chapters (qisar) in every prayer? There is another person, Bakr, who observes all the rules of recitation according to the principles, but because of being public about some forbidden act like a Shariah-prohibited intoxication, he refuses to lead the prayer and wants to make Zaid—who is excused due to mistakes in Seen and Saad and non-observance of the mentioned matters—the leader (Imam), while he himself refuses. In such a situation, is his refusal to lead and making Zaid the Imam correct or not? And who between the two is more worthy of leadership? Please clarify and be rewarded.

The Answer: Before answering this problem, it is necessary to know a few matters: (1) A mistake in pausing (waqf), such as pausing where one should continue or continuing where one should pause. This does not fundamentally invalidate the prayer, even if one does not stop at a mandatory pause (waqf-e-lazim).

| (Arabic) As stated in al-Hindiyyah, al-Munyah, and its commentary by al-Allamah al-Halabi: Pausing at a place other than its designated one and starting from a place other than its designated one does not necessitate invalidation of the prayer according to the generality of our scholars (until he said after mentioning examples) the correct view is the absence of invalidation in all of that for what has preceded and because it is the arrangement of the Qur'an. [End of summary] | (Urdu Translation) As it is explicitly stated in Hindiyyah, Munyah, and its commentary Halabi that according to most of our scholars, pausing at a non-pause point and starting at a non-starting point does not invalidate the prayer. (After mentioning examples later on, it says) The correct view is that in all these cases there is no invalidation, in view of the evidence that has passed and because these are the order of the Qur'an. [End of summary] (T) |

(2) On letters where there is elongation (madd), such as in 'Jaa', 'Tanoo', 'Jaa', 'Ya Ayyuha', 'Qalu Inna', 'Fi Ayyam', 'Daabbah', 'Aameen' - not performing the elongation there is also not fundamentally invalidating,

| (Arabic) For that is among the enhancements of Tajwid (rules of recitation) and it has no role in the meaning, nor even in the word itself such that it changes. | (Urdu Translation) Because this is from the beauty of Tajwid, it has no role in the meaning nor even in the words because by its omission... |

1 Ghunyat al-Mustamli Sharh Munyat al-Musalli, Section on the Reciter's Slip, printed by Suhail Academy Lahore, p. 480 Page 423 of 736

फ़तावा रज़विया, जिल्द छठा

...मगर उसे मद्द (खींचने), ठहराव (वक़्फ़) और हिजा (हिज्जे/उच्चारण) पर उतना अधिकार नहीं है। अपनी भूलने की आदत के कारण वह विवश है। वह हाफ़िज़ या क़ारी को सुनाकर सुधार भी लेता है, फिर भी बड़े रुकूअ या सूरतों में याददाश्त की कमी या अरबी क़िरात (पाठ) के नियमों के ज्ञान के अभाव के कारण उक्त बातों का ध्यान नहीं रहता। हाँ, यदि वह छोटे रुकूअ या सूरतों पर संतोष करे तो कुछ हद तक अधिकार हो सकता है, लेकिन फिर सुबह (फ़ज्र) और ईशा आदि में जो लंबी या मध्यम सूरतों का आदेश है, उसका पालन नहीं होगा। ज़ैद 'सीन' और 'स्वाद' अक्षरों के उच्चारण में भी ग़लती करता है। इस स्थिति में ज़ैद की इमामत सही है या मकरूह? और पाठ सही ढंग से अदा न होने से क्या नमाज़ मकरूह होगी? और यदि वह हर नमाज़ में छोटी सूरतों (क़िसार) पर संतोष करे तो क्या हुक्म है? दूसरा व्यक्ति बक्र है जो क़िरात के सभी नियमों का पालन करता है, लेकिन अपने किसी नाजायज़ कार्य जैसे शरीयत द्वारा निषिद्ध नशे में खुलेआम शामिल होने के कारण इमामत से इनकार करता है और ज़ैद को, जो सीन-स्वाद की ग़लती और उक्त बातों का पालन न करने के कारण विवश है, इमाम बनाना चाहता है और स्वयं इनकार करता है। ऐसी स्थिति में उसका अपनी इमामत से इनकार और ज़ैद को इमाम बनाना सही है या नहीं? और इन दोनों में इमामत का अधिक पात्र कौन है? स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिलेगा।

जवाब: इस मसले में जवाब से पहले कुछ मसलों को जानना आवश्यक है: (१) वक़्फ़ (ठहराव) की ग़लती कि जहाँ रुकना हो वहाँ मिला दे, जहाँ मिलाना हो वहाँ रुक जाए। यह मूल रूप से नमाज़ को अमान्य (फ़ासिद) नहीं करता, चाहे वक़्फ़-ए-लाज़िम पर न ठहरे।

| (अरबी) जैसा कि अल-हिन्दिया, अल-मुनिया और अल्लामा अल-हलबी द्वारा उसकी व्याख्या में उल्लेख है: ग़लत जगह पर रुकना और ग़लत जगह से शुरू करना हमारे अधिकांश विद्वानों के अनुसार नमाज़ को अमान्य नहीं करता है (उदाहरणों के उल्लेख के बाद कहा गया है) तो सही बात यह है कि इन सभी में कोई अमान्यता नहीं है, उस प्रमाण के आधार पर जो पहले गुज़र चुका है और इसलिए कि यह क़ुरआन का क्रम है। [संक्षिप्त] | (उर्दू अनुवाद) जैसा कि हिन्दिया, मुनिया और उसकी व्याख्या हलबी में स्पष्ट है कि हमारे अधिकांश विद्वानों के निकट बिना वक़्फ़ की जगह वक़्फ़ करने और बिना शुरुआत की जगह से शुरू करने से नमाज़ फ़ासिद (अमान्य) नहीं होती (आगे चलकर उदाहरण ज़िक्र करने के बाद कहा) सही यह है कि इन तमाम सूरतों में फ़साद नहीं है, उस दलील के पेश-ए-नज़र जो गुज़र चुकी और इसलिए कि ये नज़्म-ए-क़ुरआन हैं। [संक्षिप्त] (त) |

(२) जिन अक्षरों पर मद्द है जैसे 'जा', 'तनू', 'जा', 'या अय्युहा', 'क़ालू इन्ना', 'फ़ि अय्याम', 'दाब्बा', 'आमीन' - वहाँ मद्द न करना भी मूल रूप से नमाज़ को अमान्य नहीं करता,

| (अरबी) क्योंकि यह तजवीद (शुद्ध उच्चारण के नियमों) की खूबियों में से है और इसका अर्थ पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता, बल्कि शब्द पर भी इस तरह कि वह बदल जाए। | (उर्दू अनुवाद) क्योंकि यह हुस्न-ए-तजवीद (तजवीद की सुंदरता) में से है, इसका अर्थ में बल्कि शब्दों में भी कोई दखल नहीं क्योंकि इसके छोड़ने से... |

1 ग़ुनियतुल मुस्तमली शरह मुनियतुल मुसल्ली, अध्याय क़ारी की चूक, सुहैल एकेडमी लाहौर द्वारा मुद्रित, पृष्ठ ४८० पृष्ठ ७३६ का ४२३

ہے مگر اسے کھرے پڑے مد و شد وقف و ہجاء پر چنداں خیال عبور نہیں اپنے نسیان کی وجہ سے مجبور ہے حافظ یا قاری کو سنا کر صاف بھی کرتا ہے تاہم بڑے رکوع یا سورت نقصان حافظہ یا کمی علم عربی قواعد قرات کے سبب امور مذکورہ کا خیال نہیں رہتا ہاں چھوٹے رکوعوں سورتوں پر اکتفا کرے تو کسی قدر عبور ہو سکتا ہے مگر صبح و عشاء وغیرہ میں جو طوال اوسط کا حکم ہے اس کی رعایت نہ ہوگی زید سین و صاد میں بھی غلطی کرتا ہے اس صورت میں زید کی امامت درست ہے یا مکروہ؟ اور کھڑا پڑا ادا نہ ہونے سے نماز تو مکروہ نہ ہوگی اور اگر ہر نماز میں قصار پر قناعت کرے تو کیا حکم ہے؟ دوسرا شخص بکر ہے جو تمام امور قرات حسب قواعد ملحوظ رکھتا ہے مگر بوجہ اپنے کسی فعل ناجائز مثل نشہ ممنوع شرعی میں معلن ہونے کے امامت سے انکار کرکے زید کو جو بوجہ غلطی سین و صاد و عدم رعایت امور مذکورہ معذور ہے امام کرنا چاہتا ہے اور خود انکار کرتا ہے ایسی صورت میں اس کا اپنی امامت سے انکار اور زید کو امام کرنا درست ہے یا نہیں اور ان دونوں میں لائق امامت کون ہے؟ بینوا توجروا

الجواب: اس مسئلہ میں جواب سے پہلے چند مسائل کا معلوم کرنا ضرور: (۱) وقف کی غلطی کہ وصل کی جگہ وقف، وقف کی جگہ وصل کرے۔ یہ اصلاً مفسد نماز نہیں اگرچہ وقف لازم پر نہ ٹھہرے

| كما نص عليه في الهندية وفى المنية وشرحها للعلامة الحلبى الوقف فى غير موضعه و الابتداء من غير موضعه لا يوجب فساد الصلوة عند عامة علمائنا (الى ان قال بعد ذكر الامثلة) فالصحيح عدم الفساد فى ذلك كله لماتقدم ولانه نظم القرآن اه ملخصاً | جیسا کہ ہندیہ، منیہ اور اس کی شرح حلبہ میں تصریح ہے کہ ہمارے اکثر علماء کے نزدیک غیر وقف کی جگہ وقف اور غیر شروع کی جگہ

شروع کرنے سے نماز فاسد نہیں ہوتی (آگے چل کر مثالیں ذکر کرنے کے بعد کہا) صحیح یہ ہے کہ ان تمام صورتوں میں فساد نہیں، اس دلیل کے پیش نظر جو گزر چکی اور اس لئے کہ یہ نظم قرآن ہیں اہ ملخصاً (ت) |

(۲) جن حروف پر مد ہے جیسے جآء، تنوء، جآء، یآ یھا، قالوا انا، فی ایام، دآبۃ، آمین (وہاں مد نہ کرنا بھی اصلاً مفسد نہیں،

| فان ذلك من محسنات التجوید ولادخل له فی المعنی بل فی اللفظ ایضا بحیث یتغیر | کیونکہ یہ حسن تجوید میں سے ہے اس کا معنی میں بلکہ الفاظ میں بھی کوئی دخل نہیں کیونکہ اس کے ترک سے |

1غنیة المستملي شرح منیة المصلي فصل زلة القاري مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۴۸۰ Page of 736 423

Fatawa Rizwiya Volume 6

...by leaving words, let alone the meaning. | No change occurs in the words, let alone a change in meaning. (T)

(3) On letters of prolongation (madd) or softness (leen) where there is no prolongation marked, for example, 'Qaala', 'Yaqoolu', 'Qeela', 'Qawlu Khair' - these also do not cause invalidation (of prayer) as long as they are not stretched beyond limits. Yes, if they exceed the limit, such as a melody being stretched like in singing, then it is absolutely invalidating, even if it occurs at a place of prolongation.

In al-Khaniyah: If one recites the Quran in prayer with melodies, if it changes the word, his prayer is invalidated as is well known. If that is in the letters of prolongation and softness, which are Ya, Alif, and Waw, it does not change the meaning unless it becomes excessive. (Fin.) In Radd al-Muhtar: "with melodies" means with musical tones, and its summary, as in al-Fath, is the saturation of the vowels (ishba' al-harakat) for the sake of observing the melody. | It is in al-Khaniyah: if the Quran is recited with melodies in prayer and a change occurs in the word, the prayer will be invalidated as is well known. So, if those melodies are in the letters of prolongation and softness which are Ya, Alif, and Waw, then there will be no change in meaning. However, it will occur in that case when it exceeds the limit. (Fin.) In Radd al-Muhtar, it is said: "bil-alhaan" meaning reciting with a melody and its result according to al-Fath is to saturate the vowels for the sake of observing the melody. (T)

(4) Reciting a standing (long vowel) as a lying (short vowel) is also not invalidating:

In al-Qunyah, according to [jurists abbreviated as] Q and H-M, if someone recites 'Ta'ala Jadduka' without the 'Ya', the prayer is not invalidated. And from Jar Allah the same is reported because the Arabs find the fat-hah (a-vowel) sufficient in place of the Alif, just as they find the kasrah (i-vowel) sufficient in place of the Ya. And if one recites 'A'udhu Billah' [as 'A'udhu' with a short u], his prayer is also not invalidated because of their finding the dammah (u-vowel) sufficient in place of the Waw. And [according to] K and Jar Allah, 'wal-Salawat' is not invalidated, and likewise if one recites 'wa Toori Sineen' omitting the Ya. | It is in al-Qunyah: according to Q and H-M, if someone reads 'Ta'ala Jadduka' without the 'Ya', the prayer will not be invalidated, and the same is reported from Jar Allah because the people of Arabia find the fat-hah sufficient in place of the Alif, just as they find the kasrah sufficient in place of the Ya. And if instead of 'A'udhu Billah', one reads 'A'udhu Billah' [with short u], even then the prayer will not be invalidated because the people of Arabia find the dammah

sufficient in place of the Waw. (T) According to 'Ain al-A'immah al-Karabisi and Jar Allah al-Zamakhshari, if someone reads 'wal-Salawat'...

1. Fatawa Qazi Khan, Section on error in Quranic recitation, printed at Naval Kishore Lucknow, 1/5
2. Radd al-Muhtar, Chapter on what invalidates prayer etc., printed at Mustafa al-Babi Egypt, 1/266
3. Qunyah, Fatawa Qunyah, Chapter on omission and addition of letters, printed at Al-Mushtahirah bil-Masanidiyah, p. 63

फ़तावा रज़विया जिल्द शशम (छठा)

...शब्दों को छोड़ने से, अर्थ की तो बात ही क्या। | शब्दों में कोई बदलाव नहीं आता, अर्थ में बदलाव आना तो दूर की बात है। (त)

(३) जिन हुरूफ़-ए-मद या लीन पर मद नहीं है जैसे 'क़ाल', 'यक़ूलु', 'क़ील', 'क़ौले ख़ैर'। इन पर भी नमाज़ फ़ासिद (अमान्य) नहीं होती जब तक कि वे हद से ज़्यादा न हों, हाँ, अगर हद से बढ़ जाएं जैसे गायन में लय खींची जाती है, तो यह पूरी तरह से फ़ासिद करने वाला है, भले ही वह मद की जगह ही क्यों न हो।

ख़ानिया में है: अगर नमाज़ में लय (अल्हान) के साथ कुरआन पढ़ा जाए, यदि वह शब्द बदल देता है, तो उसकी नमाज़ फ़ासिद हो जाती है जैसा कि ज्ञात है। यदि वह हुरूफ़-ए-मद और लीन में है, जो या, अलिफ़ और वाव हैं, तो अर्थ नहीं बदलता जब तक कि वह अत्यधिक न हो। समाप्त। रद-अल-मुहतार में है: "लय के साथ" यानी संगीतमय धुनों के साथ, और इसका सार, जैसा कि अल-फ़तह में है, लय के पालन के लिए स्वरों (हरकात) को संतृप्त (इश्बा) करना है। | ख़ानिया में है कि अगर नमाज़ में अल्हान के साथ कुरआन पढ़ा जाए और कलिमा (शब्द) में बदलाव आ जाए तो नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी जैसा कि प्रसिद्ध है। अतः यदि वह अल्हान हुरूफ़-ए-मद और लीन में हों जो कि या, अलिफ़ और वाव हैं, तो अर्थ में परिवर्तन नहीं होगा। अलबत्ता यह उस सूरत में होगा जब वह हद से बढ़ जाए। रद-अल-मुहतार में है: 'बिल्-अल्हान' यानी नग़मे (धुन) के साथ पढ़ना और इसका हासिल फ़तह के मुताबिक़ नग़मे की रियायत की ख़ातिर हरकात में इश्बा करना है। (त)

(४) 'खड़े' (दीर्घ स्वर) को 'पड़ा' (ह्रस्व स्वर) पढ़ना भी फ़ासिद करने वाला नहीं है:

अल-कुन्या में है: क़ाफ़ और हा-मीम के अनुसार, यदि कोई 'तआला जद्दुका' को 'या' के बिना पढ़ता है, तो वह फ़ासिद नहीं होती। और जार अल्लाह से भी यही वर्णित है क्योंकि अरब के लोग अलिफ़ के स्थान पर फ़तह (ज़बर) पर संतोष कर लेते हैं, जैसे वे 'या' के स्थान पर कसरा (ज़ेर) पर संतोष करते हैं। और यदि किसी ने 'अऊज़ु बिल्लाह' की जगह 'अउज़ु बिल्लाह' (ह्रस्व स्वर के साथ) पढ़ा, तो भी उसकी नमाज़ फ़ासिद नहीं होगी क्योंकि अरब के लोग वाव के स्थान पर दम्मा (पेश) पर संतोष कर लेते हैं। और काफ़ और जार अल्लाह के अनुसार, 'वस-सलावात' फ़ासिद नहीं है, और इसी तरह यदि कोई 'या' को हटाकर 'वतूरि सिनीन' पढ़ता है। | कुन्या में है कि क़ाफ़ और हा-मीम के यहाँ अगर किसी ने 'तआला जद्दुका' या के बग़ैर पढ़ा तो नमाज़ फ़ासिद न होगी और जार अल्लाह से भी यही

मनक़ूल है क्योंकि अहल-ए-अरब अलिफ़ की जगह फ़तह पर इक्तिफ़ा (संतोष) कर लेते हैं जैसा कि या की जगह कसरा पर इक्तिफ़ा करते हैं और अगर 'अऊज़ु बिल्लाह' की जगह 'अउज़ु बिल्लाह' पढ़ा तो भी नमाज़ फ़ासिद न होगी क्योंकि अहल-ए-अरब वाव की जगह ज़म्मा पर इक्तिफ़ा कर लेते हैं। (त) ऐनुल अइम्मा कराबीसी और जार अल्लाह ज़मख़्शरी के नज़दीक अगर किसी ने 'वस-सलावात' पढ़ा...

1. फ़तावा क़ाज़ी ख़ान, कुरआन पाठ में त्रुटि पर अनुभाग, नवल किशोर लखनऊ द्वारा मुद्रित, 1/5
2. रद-अल-मुहतार, नमाज़ को अमान्य करने वाली चीज़ों आदि पर अध्याय, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र द्वारा मुद्रित, 1/266
3. कुन्या, फ़तावा कुन्या, अक्षरों को हटाने और जोड़ने पर अध्याय, अल-मुश्ताहिरा बिल-मसानिदिया द्वारा मुद्रित, पृष्ठ 63

पृष्ठ 424 / 736

فتاوی رضویہ جلد ششم

بترکه اللفاظ فضلا عن المعنی۔ | الفاظ میں کوئی تبدیلی نہیں آتی چہ جائیکہ معنی میں تبدیلی آئے(ت)

(۳) جن حروف مد یا لین پر مد نہیں مثلاً قال یقول قیل قول خیر۔ ان پر بھی موجب فساد نہیں جبکہ حد سے زیادہ نہ ہوں ، ہاں حد سے متجاوز ہو جیسے گانے میں زمزمہ کھینچا جاتا ہے تو آپ ہی مطلقاً مفسد ہے اگرچہ مد ہی کی جگہ ہو،

في الخانية لو قرأ القرآن في صلاة بألحان ان غير الكلمة تفسد صلوته لما عرف فان كان ذلك في حروف المد واللين وهی الياء والالف والواو لا يغير المعنى الا اذا فحش اهـ في ردالمحتار قوله بالالحان ای بالنغمات وحاصلها كما في الفتح اشباع الحركات لمراعات النغم 2۔ | خانیہ میں ہے اگر نماز میں الحان کے ساتھ قرآن پڑھا اگر کلمہ میں تبدیلی آگئی تو نماز فاسد ہو جائے گی جیسا کہ معروف ہے پس اگر وہ الحان حروف مد اور لین میں ہو جو کہ یاء ، الف اور واؤ ہیں تو معنی میں تبدیلی نہیں ہوگی البتہ اس صورت میں آئے گی جب وہ حد سے متجاوز ہو اھ ردالمحتار میں ہے قولہ بالالحان یعنی نغمہ کے ساتھ پڑھنا اور اس کا حاصل فتح کے مطابق نغمہ کی رعایت کی خاطر حرکات میں اشباع کرنا ہے۔(ت)

(۴) کھڑے کو پڑا پڑھنا بھی مفسد نہیں:

في القنية قع حم قرأوتعال جدك بغيرياء لا تفسد وعن جار الله مثله لان العرب يكتفی بالفتحة عن الالف اكتفاء هم بالكسرة عن الياء ولوقرأ اعذبالله لاتفسدصلاته ايضا لا كتفائهم بالضمة عن الواو3۔ وك وجار الله والصلوات لا تفسد وكذا لو قرأ وطور سنين بحذف الياء | قنیہ میں ہے قع حم کے ہاں اگر کسی

نے تعالیٰ جدک یا کے بغیر پڑھا تو نماز فاسد نہ ہو گی اور جار اللہ سے بھی یہی منقول ہے کیونکہ اہل عرب الف کی جگہ فتحہ پر اکتفا کر لیتے ہیں جیسا کہ یاء کی جگہ کسرہ پر اکتفاء کرتے ہیں اور اگر اعوذ باللہ کی جگہ اعُذُ باللہ پڑھا تو بھی نماز فاسد نہ ہو گی کیونکہ اہل عرب واؤ کی جگہ ضمہ پر اکتفاء کر لیتے ہیں۔(ت) عین الائمہ کرابیسی اور جار اللہ زمخشری کے نزدیک اگر کسی نے والصلوات پڑھا

1 فتاوی قاضی خان، فصل فی قراۃ القرآن خطاء ، مطبوعہ نولکشور لکھنؤ، ۱/۵ 2 ردالمحتار باب مایفسد الصلوۃ الخ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/۲۶۶ 3 قنیہ فتاوی قنیہ باب فی حذف الحرف والزیادہ المطبوعہ لمشتہرہ بالمسانید یہ ص ۶۳

Fatawa-e-Razawiyya Volume 6

- "La tafsud 'ak" even if one recites "nastainuka" or "nu'minu bika" - [Recitation] does not invalidate [the prayer] (Ref: Al-Ghunyah). And in Al-Ghunyah, if the omission is by way of Tarkheem (elision) which is permissible in Arabic, such as reading "Ya Maalik" by omitting the 'Kaaf', then the prayer is not invalidated by consensus. Similarly, if the letter is not from the root letters of the word, like reciting Al-Waqi'ah without the 'Haa', and likewise if it is a root letter but the meaning does not change, such as reading "Ta'ala Jaddu Rabbina" by omitting the 'Ya' in 'Ta'ala' and reciting with only 'Laam', it does not invalidate by consensus. (End quote)
- And similarly, if someone recited "Wa Toori Sineena" by omitting the 'Ya', the prayer will not be invalidated according to Ain-ul-A'imma Karabeebi. And if "Nasta'inuka" or "Wa nu'minu bika" is recited, the prayer was not invalidated. In Al-Ghunyah, it says: if the omission is by way of Tarkheem which is permissible among the Arabs, for example, reciting "Ya Maalik" by omitting the 'Kaaf', then by consensus the prayer will not be invalidated. Similarly, when that letter is not among the root letters of the word, for example, reciting the word 'Al-Waqi'ah' without the 'Haa'; similarly, if that letter is among the root letters of the word but there is no change in meaning, for example, in "Ta'ala Jaddu Rabbina", reciting only with 'Laam' by omitting the 'Ya' of 'Ta'ala', then by consensus the prayer will not be invalidated. (T)

Although the prayer is not invalidated by these four things, it is certainly disliked (makruh), because after all, it is an incorrect recitation of the Great Quran. To the extent that scholars have stated: To abandon the 'Mad' (prolongation) is forbidden (haram). Therefore, reciting a standing vowel as a lying one would be forbidden to a greater degree, as it results in a reduction in the essence of the word. This is unlike 'Mad', which was an additional matter. In Durr-ul-Mukhtar, citing Al-Hujjah regarding voluntary prayers (nawafil) at night: one may recite as fast as can be understood. Our two masters, Al-Tahtawi and Al-Shami, say that by the statement "as it is understood", he means that at least the minimum amount of 'Mad' is necessary. Reciters have stated this; otherwise, this act would be forbidden because it involves abandoning the 'Tarteel' (deliberate recitation) commanded by Shariah. (T)

1. Quniyah, Fatawa Quniyah, Chapter on Omission and Addition of Letters, Al-Hamadiyya Press, p. 63.

2. Ghunyatul Mustamli Sharh Munyatul Musalli, Section on Errors of the Reciter, Sohail Academy Lahore, p. 285.
3. Durr-ul-Mukhtar, Section on Imam's Recitation, Mujtabai Delhi, 1/80.
4. Radd al-Muhtar, Section on Imam's Recitation, Mustafa al-Babi Egypt, 1/400.

फ़तावा रज़विया जिल्द 6

- "ला तफ़सुद अक" भले ही कोई "नस्त'ईनुका" या "नु'मिनु बिका" पढ़े - [तिलावत] फ़ासिद (अमान्य) नहीं करती (हवाला: अल-गुन्या)। और अल-गुन्या में है, यदि विलोपन 'तरख़ीम' (शब्द के अंत को छोटा करना) के माध्यम से है जो अरबी में जायज़ है, जैसे "या मालिक" को 'काफ़' हटाकर पढ़ना, तो सर्वसम्मति से नमाज़ फ़ासिद नहीं होगी। इसी तरह, यदि वह अक्षर शब्द के मूल अक्षरों में से नहीं है, जैसे अल-वाक़िआह को 'हा' के बिना पढ़ना, और इसी तरह यदि वह एक मूल अक्षर है लेकिन अर्थ नहीं बदलता है, जैसे 'तआला' में 'या' को छोड़कर केवल 'लाम' के साथ "तआला जद्दु रब्बिना" पढ़ना, तो सर्वसम्मति से फ़ासिद नहीं होता है। (उद्धरण समाप्त)
- और इसी तरह, यदि किसी ने "व तूरि सिनीन" में 'या' को हटाकर पढ़ा, तो ऐन-उल-आइम्मा कराबीबी के अनुसार नमाज़ फ़ासिद नहीं होगी। और यदि "नस्त'ईनुका" या "व नु'मिनु बिका" पढ़ा गया, तो नमाज़ फ़ासिद नहीं हुई। अल-गुन्या में है: यदि विलोपन 'तरख़ीम' के माध्यम से है जो अरबों के बीच जायज़ है, उदाहरण के लिए, "या मालिक" को 'काफ़' हटाकर पढ़ना, तो सर्वसम्मति से नमाज़ फ़ासिद नहीं होगी। इसी तरह, जब वह अक्षर शब्द के मूल अक्षरों में नहीं होता है, उदाहरण के लिए, 'अल-वाक़िआह' शब्द को 'हा' के बिना पढ़ना; इसी तरह, यदि वह अक्षर शब्द के मूल अक्षरों में से है लेकिन अर्थ में कोई बदलाव नहीं होता है, उदाहरण के लिए, "तआला जद्दु रब्बिना" में, 'तआला' के'या' को हटाकर केवल 'लाम' के साथ पढ़ना, तो सर्वसम्मति से नमाज़ फ़ासिद नहीं होगी। (त)

हालाँकि इन चारों चीज़ों से नमाज़ फ़ासिद नहीं होती है, लेकिन यह निश्चित रूप से मकरूह (नापसंद) है, क्योंकि आख़िरकार, यह महान कुरान का गलत पाठ है। यहाँ तक कि विद्वानों ने कहा है: 'मद' (प्रसार) को छोड़ना हराम है। इसलिए, एक खड़े स्वर को पड़े हुए स्वर के रूप में पढ़ना और भी अधिक हराम होगा, क्योंकि इसके परिणामस्वरूप शब्द के सार में कमी आती है। यह 'मद' के विपरीत है, जो एक अतिरिक्त मामला था। दुर्रे मुख़्तार में, रात में नफ़्ल नमाज़ों के संबंध में अल-हुज्जह का हवाला देते हुए: कोई इतना तेज़ पढ़ सकता है जितना कि समझा जा सके। हमारे दो उस्ताद, अल-तहतावी और अल-शामी कहते हैं कि "जैसा कि समझा जाता है" कथन से उनका

मतलब है कि कम से कम 'मद' की न्यूनतम मात्रा आवश्यक है। पाठकों ने यह कहा है; अन्यथा, यह कार्य हराम होगा क्योंकि इसमें शरीयत द्वारा आदेशित 'तरतील' (स्पष्ट पाठ) का त्याग शामिल है। (त)

1. कुनिया, फ़तावा कुनिया, अक्षरों को हटाने और जोड़ने का अध्याय, अल-हमदिया प्रेस, पृष्ठ 63।
2. गुन्यातुल मुस्तमली शरह मुन्यातुल मुसल्ली, पाठक की गलतियों के बयान का खंड, सोहेल अकादमी लाहौर, पृष्ठ 285।
3. दुर्रे मुख़्तार, खंड: इमाम का पाठ आदि, मुज्तबाई दिल्ली, 1/80।
4. रद अल-मुह्तार, खंड: इमाम का पाठ आदि, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 1/400।

पृष्ठ 736 का 425

فتاوی رضویہ جلد ششم

لا تفسد عك ولو قرء نَسْتَعِيْنُكُ اوْنُوْمِنُ بك لا تفسد اه وفی الغنیة اذا کان الحذف علی وجه الترخیم الجائز فی العربیة نحوان یقرأ یا مالك بحذف الکاف فلا تفسد اجماعاً وکذا اذالم یکن من اصول الکلمة کما اذا اقرأ الواقعة بغیر ها وکذا ان کان من الاصول و لم یتغیر المعنی کان یقرأ تعالی جد ربنا باللام مع حذف الیاء فی تعالی لا تفسد بالاتفاق اه

اور اسی طرح اگر کسی نے وطور سنین یاء کو حذف کرکے پڑھا تو نماز فاسد نہ ہوگی۔ عین الائمہ کرابیبی کے نزدیک اور اگر " نستعینک " یا " ونؤمن بک " پڑھا تو نماز فاسد نہ ہوئی اھ اور غنیہ میں ہے اگر حذف بطور ترخیم ہو جو اہل عرب کے ہاں جائز ہے مثلاً یا مالک کے کاف کو حذف کرکے پڑھا تو بالاتفاق نماز فاسد نہ ہوگی اسی طرح جب وہ حرف کلمہ کے اصلی حروف میں سے نہ ہو مثلاً لفظ الواقعہ کو ہاء کے بغیر پڑھا اسی طرح اگر وہ حرف کلمہ کے حروف اصلی میں سے ہو مگر معنی میں تبدیلی نہ آئے مثلاً تعالیٰ جد ربنا میں تعالیٰ کے یاء کو حذف کرکے صرف لام کے ساتھ پڑھا تو بالاتفاق نماز فاسد نہ ہوگی اھ (ت)

ان چاروں باتوں سے اگر چہ فساد نماز نہیں مگر کراہت ضرور ہے کہ آخر قرآن عظیم کا غلط پڑھنا ہے یہاں تک کہ علمائے کرام نے فرمایا : مد کا ترک حرام ہے۔ تو کھڑے کو پڑا پڑھنا بدرجہ اولیٰ حرام ہوگا اس میں تو جو ہر لفظ میں کمی ہو گئی۔ بخلاف مد کہ امر زائد تھا، في الدرعن الحجة في النفل لیلا، له ان یسرع بعد ان یقرأ ما یفهم اه قال السید ان العلامتان الطحطاوی والشامی قولہ کما یفهم ای بعد ان یمد اقل مد قال به القراء والاحرم لترك الترتیل المأمور به شرعاً۔ در مختار میں الحجہ کے حوالے سے ہے کہ رات کے وقت نوافل میں اتنا تیز پڑھ سکا ہے کہ پڑھا ہوا سمجھا جاسکے

اھ ہمارے دونوں سید طحطاوی اور شامی فرماتے ہیں اس کا قول کما یفھم سے مراد یہ ہے کہ وہ مد کی کم از کم مقدار ضروری ہے۔ یہ بات قراء نے بتائی ہے ورنہ یہ عمل حرام ہوگا کیونکہ اس میں اس کترتیل کا ترک لازم آتا ہے جس کا شرعی حکم ہے۔ (ت)

1 قنیہ ، فتاوی قنیہ باب فی حذف الحرف والزیادۃ مطبعۃ مشترکۃ بالہماندیۃ ص ۶۳ 2 غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل فی بیان احکام زلۃ القاری مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۲۸۵ 3 درمختار فصل و یجسر الامام الخ مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱/۸۰ 4 رد المحتار فصل و یجسر الامام الخ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/۴۰۰

Fatawa Razvia - Volume 6 Likewise, they (jurists) explicitly state that a person who does not observe the rules of pausing (waqf) and connecting (wasl) should not be an Imam.

[Arabic Box Section] In Al-Hindiya, quoting from Al-Muhit: He who pauses in places where it is not appropriate and does not pause in places where it is appropriate, it is not proper for him to lead prayer. — 1 [Urdu Translation] In Al-Hindiya, with reference to Al-Muhit, it is stated that a person who pauses at a non-pausing place and does not pause at a pausing place should not be an Imam. (T)

(6) If lengthening short vowels in recitation does not corrupt the meaning, such as reading *Utlu, Ud'u, Yurdih, Lam Yakhash, Wa Innahu La'atin Alaihi, La Tamsh, Ya Ibad* as *Utluu, Ud'uu, Yurdih (with long h), Lam Yakhsha, Wa Innahu La'ataas Alaihi, La Tamshi, Ya Ibaadu*, then the prayer will not be invalidated.

[Arabic Box Section] In Al-Ghunya: If a letter is added, provided it does not change the meaning, such as reading *wa-mur bil-ma'ruf wa-nha 'anil-munkar* with an added Alif in the word after the 'Ha', it does not invalidate [the prayer]. End of summary. — 2 [Urdu Translation] In Al-Ghunya, it is stated that if someone added such a letter which does not change the meaning, for example, reading an Alif after the 'Ha' in *wa-mur bil-ma'ruf wa-nha 'anil-munkar*, then the prayer will not be invalidated. End of summary. (T)

Otherwise, [the prayer is] invalidated.

[Double Column Section] [Left Column - Arabic] As we have previously mentioned from Al-Khaniyah and in Al-Durr, and among them—i.e., from the invalidating factors—is reciting with melodies (alhan) if it changes the meaning.[3] etc. In Radd al-Muhtar, his saying "if it changes the meaning" is as if one reads *Al-Hamdu lillahi Rabbil-'Alamin* and elongates the vowels until a *Waw* appears after the *Dal*, a *Ya* after the *Lam* and *Ha*, and an *Alif* after the *Ra*. Likewise is the saying of the announcer (mukabbir) *Rabbana lakal-Hamid* with an Alif after the *Ra*, because *Raab* means the mother's husband as in As-Sahah and Al-Qamus, and the wife's son is called *Rabib*. End. — 4

[Right Column - Urdu] As we have already stated with reference to Khaniyah, and in Durr-e-Mukhtar it is among the invalidators of prayer to recite with melodies provided the meaning changes etc. In Radd-ul-Muhtar, it is stated that examples of the author's saying "if it changes the meaning" are such that in *Al-Hamdu lillahi Rabbil-'Alamin*, if someone elongates the vowels in such a way that after the 'Dal' a

'Waw', after 'Lam' and 'Ha' a 'Ya', and after 'Ra' an 'Alif' is produced. Similarly is the saying of the Mukabbir *Rabbana lakal-Hamid*, i.e., reading an Alif after the 'Ra', because 'Raab' refers to the mother's husband as mentioned in Sahah and Qamus, and the wife's son is called 'Rabib'. End. (T)

[Footnotes] [1] Fatawa Hindiyyah, The Third Chapter: Regarding those who are fit to be an Imam for others, printed Noorani Kutub Khana Peshawar, 1/86. [2] Ghunya-tul-Mustamli Sharh Munya-tul-Musalli, Chapter on the rules of the reciter's slip, printed Suhail Academy Lahore, p. 284. [3] Durr-e-Mukhtar, Chapter on what invalidates prayer etc., printed Mujtabai Delhi, 1/90. [4] Radd-ul-Muhtar, Chapter on what invalidates prayer etc., printed Mustafa al-Babi Egypt, 1/466.

फ़तावा रज़विया - जिल्द 6 इसी प्रकार वे (फुकहा) स्पष्ट करते हैं कि जो व्यक्ति वक़्फ़ (रुकना) और वस्ल (मिलाना) के नियमों का पालन न करता हो उसे इमाम नहीं होना चाहिए।

[अरबी बॉक्स सेक्शन] अल-हिंदिया में अल-मुहीत के हवाले से: जो व्यक्ति ऐसी जगह रुकता है जहाँ नहीं रुकना चाहिए और ऐसी जगह नहीं रुकता जहाँ रुकना चाहिए, उसके लिए इमाम बनना उचित नहीं है। — 1 [उर्दू अनुवाद] हिंदिया में मुहीत के हवाले से है कि वह व्यक्ति जो ग़ैर-वक़्फ़ की जगह वक़्फ़ करे और वक़्फ़ की जगह वक़्फ़ न करे उसे इमाम नहीं होना चाहिए। (त)

(6) यदि छोटी मात्राओं को खींचकर पढ़ने से अर्थ न बिगड़े जैसे कि 'उतलु', 'उदउ', 'युर्दिह', 'लम यख्श', 'व इन्नहू लाआतिन अलैहि', 'ला तमशि', 'या इबाद' को 'उतलुउ', 'उदउउ', 'युर्दिह' (लंबी ह के साथ), 'लम यख्शा', 'व इन्नहू लाआतास अलैहि', 'ला तमशी', 'या इबादु' पढ़ना, तो नमाज़ फ़ासिद (अमान्य) न होगी।

[अरबी बॉक्स सेक्शन] अल-ग़ुनिया में: यदि किसी अक्षर को बढ़ाया गया, बशर्ते उससे अर्थ न बदले, जैसे कि 'वमुर बिल-मअरुफ़ वन्हा अनिल-मुन्कर' में 'हा' के बाद अलिफ़ को बढ़ाकर पढ़ा जाए, तो यह [नमाज़ को] फ़ासिद नहीं करता। सारांश समाप्त। — 2 [उर्दू अनुवाद] ग़ुनिया में है अगर किसी ने ऐसे हर्फ़(अक्षर) का इज़ाफ़ा किया जिससे मा'नी (अर्थ) में तब्दीली न आए मसलन 'वामुर बिल-मअरुफ़ वन्नही अनिल-मुन्कर' में 'हा' के बाद अलिफ़ पढ़ा तो नमाज़ फ़ासिद न होगी। (अह मुख़्तसरन)। (त)

अन्यथा, [नमाज़] फ़ासिद (अमान्य) है।

[डबल कॉलम सेक्शन] [बायाँ कॉलम - अरबी] जैसा कि हमने पहले अल-ख़ानिया और अल-दुर्र में ज़िक्र किया है, और उनमें से—यानी नमाज़ को अमान्य करने वाली चीज़ों में से—लय (धुनों) के साथ क़िराअत करना है यदि अर्थ बदल जाए[3] आदि। रद अल-मुह्तार में उनके कथन "यदि अर्थ बदल जाए" का उदाहरण यह है कि जैसे कोई 'अल-हम्दु लिल्लाहि रब्बिल-आलमीन' पढ़े और मात्राओं को इतना खींचे कि 'दाल' के बाद 'वाओ', 'लाम' और 'हा' के बाद 'या', और 'रा' के बाद 'अलिफ़' पैदा हो जाए। इसी प्रकार मुकब्बिर (घोषणा करने वाले) का कहना रब्बना लकल-हामिद है जिसमें 'रा' के बाद अलिफ़ है, क्योंकि 'राब' का अर्थ माँ का पति है जैसा कि अल-सिहाह और अल-क़ामूस में है, और पत्नी के बेटे को 'रबीब' कहा जाता है। समाप्त। — 4

[दायाँ कॉलम - उर्दू] जैसा कि हम पहले ख़ानिया के हवाले से बयान कर चुके हैं और दुर्र-ए-मुख़्तार में है कि नमाज़ को फ़ासिद करने वाली चीज़ों में क़िराअत बिल-अलहान (लयबद्ध पाठ) भी है बशर्ते कि मा'नी तब्दील हो जाए आदि। रद-उल-मुह्तार में है कि मान्न (लेखक) के क़ौल 'इन ग़ैर-अल-मा'नी' की मिसालें यूँ हैं कि 'अल-हम्दु लिल्लाहि रब्बिल-आलमीन' में अगर किसी ने हरकात (मात्राओं) में इश्बा' (खींचना) किया वह यूँ कि 'दाल' के बाद 'वाओ', 'लाम' और 'हा' के बाद 'या' और 'रा' के बाद 'अलिफ़' पैदा हो गया। इसी तरह है मुकब्बिर का क़ौल रब्बना लकल-हामिद, यानी 'रा' के बाद अलिफ़ पढ़ दिया क्योंकि 'राब' माँ के शौहर को कहा जाता है जैसा कि सिहाह और क़ामूस में है, और ज़ौजा (पत्नी) के बेटे को रबीब कहा जाता है। समाप्त। (त)

[पादलेख] 1. फ़तावा हिंदिया, तीसरा अध्याय: दूसरों के लिए इमाम बनने के योग्य व्यक्तियों के विवरण में, मुद्रित नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 1/86। 2. ग़ुनियत-उल-मुस्तमली शरह मुनियत-उल-मुसल्ली, पाठक की चूक के नियमों का अध्याय, मुद्रित सुहेल एकेडमी लाहौर, पृष्ठ 284। 3. दुर्र-ए-मुख़्तार, नमाज़ को अमान्य करने वाली चीज़ों का अध्याय आदि, मुद्रित मुजतबाई दिल्ली, 1/90। 4. रद-उल-मुह्तार, नमाज़ को अमान्य करने वाली चीज़ों का अध्याय आदि, मुद्रित मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 1/466।

فتاوی رضویہ - جلد ششم یوں ہی تصریح فرماتے ہیں کہ جو شخص وقف و وصل کی رعایت نہ رکھتا ہو اسے امام نہ ہونا چاہئے۔

[Arabic Box Section] فی الھندیہ عن المحیط من یقف فی غیر مواضعہ ولا یقف فی مواضعہ لا ینبغی لہ ان یؤم - 1 [Urdu Translation] ہندیہ میں محیط کے حوالے سے ہے کہ وہ شخص جو غیر وقف کی جگہ وقف کرے اور وقف کی جگہ وقف نہ کرے اسے امام نہیں ہونا چاہئے۔ (ت)

(۶) بڑے کو کھڑا پڑھنے سے اگر معنی فاسد نہ ہوں جیسے اتلُ ادعُ یُرضہ لم یخش وانہ لآتاتٍ علیہ لا تمش یعباد کو اتلو، ادعو، یرضہ لم یخشی وانہ لآتاس علیہ، لا تمشی یعبادو پڑھنا تو نماز فاسد نہ ہوگی۔

[Arabic Box Section] فی الغنیۃ ان زاد حرفاً ان لم یغیر المعنی بان قرأ وأمر بالمعروف وانھی عن المنکر بزیادۃ الالف فی اللفظ بعد الھاء لا تفسد اہ ملخصاً- 2 [Urdu Translation] غنیہ میں ہے اگر کسی نے ایسے حرف کا اضافہ کیا جس سے معنی میں تبدیلی نہ آئے مثلاً وامر بالمعروف والنہی عن المنکر میں ہا کے بعد الف پڑھا تو نماز فاسد نہ ہوگی اھ ملخصاً۔ (ت)

ورنہ فاسد،

[Left Column - Arabic] [Double Column Section] کما قدمنا عن الخانیۃ وفی الدرومنھا ای من المفسدات القراءۃ بالالحان ان غیر المعنی3 الخ فی ردالمحتار قولہ ان غیر المعنی کمالو قرأ الحمدللہ رب العلمین واشبع الحرکات حتی اتی بواو بعد الدال وبیاء بعد اللام والھاء وبالف بعد

الراء ومثله قول المبلغ ربنا لك الحامد بالف بعد الراء لان الراب هو زوج الام کمافی الصحاح والقاموس وابن الزوجة یسمی ربیب اھ - 4

[Right Column - Urdu] جیسا کہ ہم پہلے خانیہ کے حوالے سے بیان کر چکے ہیں اور درمختار میں ہے مفسداتِ نماز میں قراء ت بالالحان بھی ہے بشرطیکہ معنی تبدیل ہوجائے الخ ردالمحتار میں ہے کہ ماتن کے قول ان غیرالمعنی کی مثالیں یوں ہیں کہ الحمد للہ رب العلمین میں اگر کسی نے حرکات میں اشباع کیا وہ یوں کہ دال کے بعد واؤ، لام اور ہاء کے بعد یا اور راء کے بعد الف پیدا ہو گیا اسی طرح ہے مکبّر کا قول "ربّنا لک الحامد" یعنی راء کے بعد الف پڑھ دیا کیونکہ راب ماں کے شوہر کو کہا جاتا ہے جیسا کہ صحاح اور قاموس میں ہے، اور زوجہ کے بیٹے کو ربیب کہا جاتا ہے اھ (ت)

[Footnotes] 1 فتاوی ہندیہ الفصل الثالث فی بیان من یصلح اماما لغیرہ مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور ۱/۸۶ 2 غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل فی بیان احکام زلۃ القاری مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۲۸۴ 3 درمختار باب مایفسد الصلاۃ الخ مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱/۹۰ 4 ردالمحتار باب مایفسد الصلاۃ الخ مطبوعہ مصطفیٰ البابی مصر ۱/۴۶۶

Fatawa Rizwia, Volume 6

[Arabic Column Text Translation:] I say: This corresponds with the discourse of our predecessor companions and their unbreakable rule for researchers. Therefore, do not pay heed to any contrary particulars narrated from the later scholars. Indeed, regarding what was mentioned about 'Al-Raab', I have a reservation, for it is the analogical active participle form of 'Rububiyyah' (Lordship), even if it is utilized in another sense in common usage. Linguists do not mention analogical derivatives, nor are they dependent on audition (sama'), otherwise they would not be analogical. Analogy is not rejected except by a text indicating its abandonment. Necessarily, it is mentioned in Taj al-Arus that it is an active participle from 'rabba-hu yarubbu-hu', meaning he became a guarantor for his affair [1]. (End) The validity of prayer relies on the probability of a correct meaning, even if corrupt possibilities exist, as clarified by him and others. In Radd al-Muhtar, it is stated: "Upon probability, corruption is negated due to the lack of certainty regarding error." (End) In Al-Ghunya: The verification in this matter is that action is based on the possibility of a correct meaning and its absence, just as we established that it is their unbreakable rule [3]. (End) So understand.

[Urdu Column Text Translation:] I say: (I say) this discussion is in accordance with the discourse of our predecessor scholars and their firm rule chosen by the researchers. Therefore, do not pay attention to those details narrated from the later scholars that are contrary to this. However, regarding what was mentioned about the word 'Raab', I have a pause because, by analogy, this is the active participle form from Rububiyyah, although it is also used for another meaning. Linguists do not mention analogical derivatives at all, nor do they depend on audition; otherwise, they would not remain analogical. And analogy can only be rejected when there is a text for its abandonment. Inevitably, in Taj al-Arus, it is mentioned that 'Raab' is the active participle from 'rabbahu', the meaning of which is to be a guarantor of someone else's affair. (End) And the validity of prayer is considered on the probability of a correct meaning, even if there are corrupt probabilities there, as Shami and others have clarified. In Radd al-Muhtar, it is stated: at the time of probability, corruption is negated because the certainty of error does not remain. (End) In Ghunya, it is stated: the research in this matter is that it will be based in some way on the probability of a correct meaning and its absence, as we have described the rule of the jurists which is unbreakable. (End, you have understood)

[Bottom Text Translation:] (7) Similarly, reading a doubled (mushaddad) letter as light (mukhaffaf), or a light letter as doubled, results in the corruption of prayer if it causes a corruption of meaning, such as reading 'zallalna' with a lightened 'lam'.

Footnotes: 1. Taj al-Arus min Jawahir al-Qamus, Chapter of Ra, Section of Ba, printed by Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 1/262. 2. Radd al-Muhtar, Topic: Issues of the Reader's Error, printed by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/469. 3. Ghunya al-Mustamli Sharh Munya al-Musalli, regarding the rules of the Reader's Error, printed by Sohail Academy, Lahore, p. 484.

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

[अरबी कॉलम के पाठ का अनुवाद:] मैं कहता हूँ: यह हमारे पूर्ववर्ती साथियों के वचनों और शोधकर्ताओं के लिए उनके अटूट नियम के अनुरूप है। अतः बाद के विद्वानों से वर्णित कुछ गौण शाखाओं में इसके विरुद्ध पाए जाने वाले मतभेदों पर ध्यान न दें। हाँ, 'अल-राब' (الراب) के बारे में जो उल्लेख किया गया है, उसमें मुझे कुछ संकोच है, क्योंकि यह 'रुबूबियत' (प्रभुता) से कर्ता संज्ञा (इस्म अल-फ़ाएल) का रूपात्मक व्युत्पत्ति (क़ियास) है, भले ही इसका उपयोग किसी अन्य अर्थ में हो। भाषाविद रूपात्मक व्युत्पन्नियों का उल्लेख नहीं करते हैं, और न ही वे श्रवण (समा') पर निर्भर हैं, अन्यथा वे रूपात्मक नहीं रहते। और रूपात्मक व्युत्पत्ति को तब तक खारिज नहीं किया जा सकता जब तक कि उसके त्याग पर कोई स्पष्ट धार्मिक पाठ (नस्) न हो। निःसंदेह, ताज अल-अरुस में कहा गया है: यह 'रब्बा-हु यरूबु-हु' से कर्ता संज्ञा है, जिसका अर्थ है उसने उसके मामले की जिम्मेदारी ली। [१] (समाप्त) नमाज़ की वैधता एक सही अर्थ की संभावना पर निर्भर करती है, भले ही वहाँ भ्रष्ट संभावनाएँ हों, जैसा कि उनके और अन्यों द्वारा स्पष्ट किया गया है। रद अल-मुहतार में उल्लेख है: "संभावना की स्थिति में, त्रुटि की निश्चितता न होने के कारण भ्रष्टाचार (नमाज़ का बिगड़ना) नकार दिया जाता है।" (समाप्त) अल-ग़ुनिया में, इसमें शोध यह है: कार्य एक संभावित पहलू के माध्यम से अर्थ की वैधता और उसके अभाव पर आधारित है, जैसा कि हमने स्थापित किया है कि यह उनका अटूट नियम है। [३] (समाप्त) समझें।

[उर्दू कॉलम के पाठ का अनुवाद:] मैं कहता हूँ: (मैं कहता हूँ) यह चर्चा हमारे पूर्ववर्ती विद्वानों की वाणी और शोधकर्ताओं द्वारा चुने गए उनके पुख्ता नियम के अनुसार है। इसलिए, बाद के विद्वानों से इसके खिलाफ जो विवरण वर्णित हैं, आप उनकी ओर ध्यान न दें। अलबत्ता 'राब' शब्द के बारे में जो कुछ उल्लेख हुआ, उसमें मुझे कुछ संकोच है क्योंकि नियमतः यह 'रुबूबियत' से कर्ता संज्ञा का रूप है, हालांकि यह किसी अन्य अर्थ के लिए भी प्रयुक्त होता है। और भाषाविद रूपात्मक व्युत्पन्नियों का उल्लेख ही नहीं करते, और न ही वे श्रवण पर निर्भर होते हैं; अन्यथा वे नियमबद्ध ही न रहते। और नियम (क़ियास) को उस समय रद्द किया जा सकता है जब उसके छोड़ने पर कोई स्पष्ट पाठ (नस्) हो। अनिवार्य रूप से ताज अल-अरुस में है कि 'राब', 'रब्बा' से कर्ता संज्ञा है जिसका अर्थ दूसरे के मामले का कफील (ज़िम्मेदार) होना है। (समाप्त) और नमाज़ की वैधता का आधार सही अर्थ की संभावना पर होता है, चाहे वहाँ भ्रष्ट संभावनाएँ भी हों, जैसा कि इस पर शामी आदि ने स्पष्ट किया है। रद अल-मुहतार में है कि संभावना के समय भ्रष्टाचार दूर हो जाता है क्योंकि गलती का यकीन नहीं

रहता। (समाप्त) गुनिया में है कि इस मसले में शोध यह है कि कार्य सही अर्थ की संभावना और असंभावना पर आधारित होगा जैसा कि हमने फकीहों का वह नियम बयान किया है जो अटूट है। (समाप्त, आप समझ गए)

[नीचे का पाठ अनुवाद:] (७) इसी तरह, एक दोहरे अक्षर (मशद्दद) को हल्का (मुखफ्फफ) पढ़ना, या हल्के को मशद्दद पढ़ना, नमाज़ को बिगाड़ देता है यदि इससे अर्थ बिगड़ता है, जैसे 'ज़ललना' में 'लाम' को हल्का पढ़ना।

पाद-लेख: १. ताज अल-अरुस मिन जवाहिद अल-क़ामूस, अध्याय रा, खंड बा, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी द्वारा प्रकाशित, बेरूत, १/२६२। २. रद अल-मुहतार, 'ज़ल्लत अल-क़ारी' के मसलों का विषय, मुस्तफ़ा अल-बाबी द्वारा प्रकाशित, मिस्र, १/४६९। ३. गुनिया अल-मुस्तमली शरह मुन्या अल-मुसल्ली, 'ज़ल्लत अल-क़ारी' के नियमों के बारे में, सुहैल अकादमी द्वारा प्रकाशित, लाहौर, पृष्ठ ४८४।

فتاوی رضویہ - جلد ششم

[عربی متن:] اقول: هذا هو الموافق لكلام اصحابنا المتقدمين وقاعدتهم الغير المنخرمة للمحققين فلا عليك مما يوجد من خلاف ذلك في بعض الفروع المنقولة عن المتأخرين نعم ما ذكر في الراب فعندي فيه وقفة فأنه القياس في اسم فاعل الربوبية وان كان في الاستعمال بمعنى آخر واهل اللغة لا يذكرون المشتقات القياسية ولا هي موقوفة على السماع والا لم تكن قياسية والقياس لا يرد الا بالنص على هجر انه لا جرم قال في تاج العروس هو اسم فاعل من ربه يربه اي تكفل بأمره 1اھ وصحة الصلوة تعتمد على احتمال معنى صحيح ولو كان ثم احتمالات فاسدة كما نص عليه هو وغيره ففي رد المحتار عند الاحتمال ينتفي الفساد لعدم تيقن الخطأ اھ وفي الغنية التحقيق فيه العمل بصحة المعنى بوجه محتمل وعدمها كما قررنا انه قاعدتهم الغير المنخرمة اھ فافهم۔

[اردو متن:] اقول : (میں کہتا ہوں) یہ گفتگو ہمارے متقدمین علماء کے کلام اور محققین کے اختیار کردہ ان کے پختہ ضابطہ کے مطابق ہے لہذا متاخرین سے اس کے خلاف جو جزئیات منقول ہیں آپ ان کی طرف متوجہ نہ ہوں البتہ لفظ رابکے بارے میں جو کچھ ذکر ہوا اس میں مجھے توقف ہے کیونکہ قیاساً یہ ربوبیت سے اسم فاعل کا صیغہ ہے اگر چہ کسی دوسرے معنی کے لئے بھی مستعمل ہے اور اہل لغت مشتقات قیاسیہ کا ذکر کرتے ہی نہیں اور نہ ہی وہ سماع پر موقوف ہوتے ہیں ورنہ وہ قیاسی ہی نہ رہیں اور قیاس کو اس وقت رد کیا جاسکتا ہے جب اس کے ترک پر نص ہو۔ لاجرم تاج العروس میں ہے کہ راب ر بہ سے اسم فاعل ہے جس کے معنی دوسرے کے معاملے کا کفیل ہونے کے ہیں اھ اور صحت نماز کا اعتبار صحت معنی کے احتمال پر ہوتا ہے اگر چہ وہاں احتمالاتِ فاسدہ بھی ہوں، جیسا کہ اس پر شامی وغیرہ نے تصریح کی ہے۔ رد المحتار میں ہے احتمال کے وقت فساد متنفی ہو جاتا ہے کیونکہ خطا کا یقین نہیں رہتا اھ غنیہ میں ہے تحقیق اس

مسئلہ میں یہ ہے کہ کسی طور صحت معنی کے احتمال اور عدم احتمال پر ہوگا جیسا کہ ہم نے فقہا کا وہ ضابطہ بیان کیا ہے جو ٹوٹنے والا نہیں اھ فافھمت)

(۷) یونہی مشدد کو مخفف، مخفف کو مشدد پڑھنا فساد معنی میں فساد نماز ہے جیسے ظللنا بتخفیف لام

حواشی: 1۔ تاج العروس من جواھر القاموس فصل الراء من باب البای مطبوعہ دار احیاء التراث العربی بیروت ۲۶۲/۱ 2۔ ردالمحتار مطلب مسائل زلة القاری مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۴۶۹/۱ 3۔ غنیہ المستملی شرح منیة المصلی فی بیان احکام زلة القاری مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۴۸۴

Fatawa Razawiya Volume 6

'Iyyaka' with shadda (doubling) on the kaf, otherwise not; like 'ma wadda'aka' with a light dal, 'akbar' with a shadda on the ra.

[Left Column - Arabic Text] In Al-Ghunya: The principle regarding making a doubled (mushaddad) letter light is that if it does not change the meaning, such as reading 'wa qattalu taqtila', the prayer is not invalidated. If the meaning changes, such as by omitting the shadda in 'Rabb-il-falaq' and similar instances, the chosen view of the majority of scholars is that it invalidates [the prayer]. Thus it is stated in Al-Khulasa. This detail follows the opinion of the earlier scholars (Mutaqaddimin). It was previously mentioned that this is the more cautious approach. The ruling for doubling a light letter is the same as its opposite. Similarly, pronouncing a merged letter (mudgham) clearly or vice versa; all of these fall under one section. [Summary concluded].

I say: Similarly, in other books, the ruling of invalidation for lightening the word 'Rabb' is given. In my view, there is hesitation (tawaqquf) regarding this, as it is stated in Al-Qamus that it is sometimes lightened. This was narrated by Al-Saghani from Ibn Al-Anbari, and Al-Mufaddal recited the verse: 'Indeed, the nations have known that above Him there is no Lord (Rab) other than the One who grants fortunes and provides.' This is narrated in Lisan al-Arab and others as mentioned in At-Taj.

[Right Column - Urdu Translation/Explanation] In Ghunya, it is stated that the rule for reading a doubled word as light is that if reading it lightly does not change the meaning, for example 'qattalu taqtila' (if read without shadda, the prayer will not be invalidated). If the meaning changes, for example if the shadda is omitted in 'Rabb-il-falaq' etc., then according to the general scholars, the preferred view is that the prayer will be invalidated, as mentioned in Khulasa. This detail is according to the statement of the earlier scholars, and it has been mentioned before that this is more cautious. Reading a light letter with shadda or a doubled letter as light, both have the same ruling. Similarly, to pronounce a merged letter clearly or vice versa, all these cases have the same ruling. [Summary concluded (T)].

I say: (I say) Similarly in other books, the ruling of invalidation of prayer is given for reading 'Rabb' lightly. In my view, there is hesitation in this because it is mentioned in Qamus that sometimes it is lightened. Al-Saghani narrated it from Ibn Al-Anbari, and Mufaddal recited this verse: 'These nations have known that there is no Lord above

them except He who bestows sustenance and blessings.' According to Taj al-Arus, this verse is narrated in Lisan al-Arab etc. (T)

[Footnotes] 1. Ghunya al-Mustamli Sharh Munya al-Musalli, Chapter on explaining the rulings of the reciter's slip, published by Sohail Academy Lahore, p. 488. 2. Al-Qamus al-Muhit, Chapter 'Ra' from the section 'Ra', published by Mustafa al-Babi Egypt, 1/27. 3. Taj al-Arus min Jawahir al-Qamus, Chapter 'Ra' from the section 'Ba', published by Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut, 1/260.

फतावा रज़विया, जिल्द छठा

'इय्याका' में काफ़ पर तश्दीद के साथ, वरना नहीं; जैसे 'मा वद्द-अका' में दाल को हल्का पढ़ना और 'अकबर' में रा पर तश्दीद के साथ।

[बायाँ कॉलम - अरबी मूल] अल-ग़ुनिया में: मुशद्दद (तश्दीद वाले) अक्षर को मुखफ़्फ़फ़ (हल्का) पढ़ने का मूल सिद्धांत यह है कि यदि इससे अर्थ नहीं बदलता, जैसे 'वक़त्तलू तक़्तीला' पढ़ना, तो नमाज़ फ़ासिद नहीं होती। और यदि 'रब्ब-इल-फ़लक़' आदि में तश्दीद छोड़ने से अर्थ बदल जाता है, तो अधिकांश मशायिख का मत यह है कि इससे नमाज़ फ़ासिद हो जाती है। अल-ख़ुलासा में ऐसा ही है। यह विवरण मुतक़द्दिमीन (प्राचीन विद्वानों) के कथन के अनुसार है। पहले बताया जा चुका है कि यही अधिक सावधानी वाला पक्ष है। मुखफ़्फ़फ़ को मुशद्दद पढ़ने का नियम उसके विपरीत जैसा ही है। इसी तरह मुदग़ाम को ज़ाहिर करना और इसका उल्टा करना; इन सभी का एक ही नियम है। [संक्षेप में समाप्त]।

मैं कहता हूँ: इसी प्रकार अन्य पुस्तकों में 'रब' को हल्का पढ़ने पर फ़साद (अमान्यता) का नियम दिया गया है। मेरे विचार में इसमें तवक़्क़ुफ़ (हिचकिचाहट) है क्योंकि अल-क़ामूस में है कि कभी-कभी इसे हल्का किया जाता है। इसे सग़ानी ने इब्न अल-अंबारी से उद्धृत किया है, और अल-मुफ़ज़्ज़ल ने यह शेर पढ़ा: 'बेशक क़ौमों ने यह जान लिया है कि उनके ऊपर उस रब के सिवा कोई नहीं है जो किस्मत और रोज़ी देता है।' ताजुल उरूस के अनुसार इसे लिसानुल अरब आदि में उद्धृत किया गया है।

[दायाँ कॉलम - उर्दू अनुवाद/व्याख्या] ग़ुनिया में है कि मुशद्दद शब्द को मुखफ़्फ़फ़ पढ़ने का नियम यह है कि उसे मुखफ़्फ़फ़ पढ़ने से यदि अर्थ में परिवर्तन नहीं आता, उदाहरण के लिए 'क़त्तलू तक़्तीला' (तश्दीद के बिना पढ़ा तो नमाज़ फ़ासिद नहीं होगी)। यदि अर्थ बदल जाता है, जैसे 'रब्ब-इल-फ़लक़' आदि में तश्दीद को छोड़ दिया, तो आम मशायिख के यहाँ पसंदीदा यही है कि नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी, जैसा कि ख़ुलासा में है। और यह विवरण मुतक़द्दिमीन के कथन के अनुसार है और पहले गुज़र चुका कि इसी में अधिक सावधानी है। मुखफ़्फ़फ़ को तश्दीद के साथ पढ़ना या मुशद्दद को मुखफ़्फ़फ़ पढ़ना, दोनों का नियम एक जैसा है। इसी तरह मुदग़ाम को ज़ाहिर करना या उसका उल्टा हो, इन सभी स्थितियों का एक ही नियम है। [संक्षेप में समाप्त (त)]

मैं कहता हूँ: (मैं कहता हूँ) इसी तरह अन्य किताबों में 'रब' को मुखफ़्फ़फ़ पढ़ने पर नमाज़ के फ़ासिद होने का हुक्म दिया गया है। मेरे नज़दीक इसमें तवक़्क़ुफ़ है, क्योंकि क़ामूस में है कि इसमें कभी-कभी तक़्फ़ीफ़ (हल्कापन) की जाती है। इसे सग़ानी ने इब्न अल-अंबारी से नक़्ल किया है और मुफ़ज़्ज़ल ने यह शेर कहा है: 'इन क़ौमों ने यह जान रखा है कि उनसे ऊपर रब के सिवा कोई नहीं जो रिज़्क़ और नेमतें अता करे।' ताजुल उरूस के मुताबिक़ यह शेर लिसानुल अरब और अन्य में नक़्ल किया गया है। (त)

[पाद-टिप्पणियाँ] 1. ग़ुनिया अल-मुस्तमली शरह मुन्या अल-मुसल्ली, ज़लतुल क़ारी के हुक्मों का बयान, सोहेल अकादमी लाहौर, पृ. 488। 2. अल-क़ामूस अल-मुहीत, अध्याय 'रा', खंड 'रा', मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 1/27। 3. ताज अल-उरूस मिन जवाहिर अल-क़ामूस, अध्याय 'रा', खंड 'बा', दार इहया अल-तुराथ अल-अरबी बेरुत, 1/260।

पृष्ठ 428/736

فتاوی رضویہ جلد ششم

ایاک بتشدید کاف نہیں ورنہ نہیں جیسے ماودعک بتخفیف دال اکبر بتشدید راء،

[بایاں کالم - عربی عبارت] في الغنية تخفيف المشدد الاصل فيه انه ان كان لا يغير المعنى كأن قرأ وقتلوا تقتيلا لاتفسدوان غير بان ترك التشديد في رب الفلق ونحوه فاختيار عامة المشايخ انها تفسد كذا في الخلاصة وذلك التفصيل على قول المتقدمين وتقدم انه الاحوط وحكم تشديد المخفف كحكم عكسه وكذلك اظهار المدغم وعكسه فالجميع فصل واحد اه ملخصا- اقول: هكذا في كتب اخرى حكم الفساد بتخفيف الرب وعندى فيه وقفه فقد قال في القاموس قد يخفف اه ونقله الصاغانى عن ابن الانبارى وانشد المفصل ۔ وقد علم الاقوام ان ليس فوقه رب غير من يعطى الحظوظ ويرزق نقله في لسان العرب وغيرها كما في التاج۔

[دایاں کالم - اردو ترجمہ و تشریح] غنیہ میں ہے کہ جو لفظ مشدّد کو مخفف پڑھنے میں قاعدہ یہ ہے کہ اسکو مخفف پڑھنے سے اگر معنی میں تبدیلی نہیں آتی، مثلاً "قتلو تقتیلاً" (شد کے بغیر پڑھا تو نماز فاسد نہ ہوگی) اور اگر معنی بدل جاتا ہے مثلاً "رب الفلق" وغیرہ میں شد کو ترک کر دیا تو عام مشائخ کے ہاں مختار یہی ہے کہ نماز فاسد ہو گی کذا فی خلاصہ، اور یہ تفصیل متقدمین کے قول کے مطابق ہے اور پہلے گزر چکا کہ اسی میں زیادہ احتیاط ہے، مخفف کو شد کے ساتھ پڑھنا یا مشدد کو مخفف پڑھنا دونوں کا حکم ایک جیسا ہے۔ اسی طرح مدغم کا اظہار یا اسکا عکس ہو وان تمام صورتوں کا ایک ہی حکم ہے اھ ملخصاً (ت) اقول: (میں کہتا ہوں) اسی طرح دیگر کتب میں رب کے مخفف پڑھنے پر فساد نماز کا حکم دیا گیا ہے اور میرے نزدیک اس میں توقف ہے، کیونکہ قاموس میں ہے کہ اس میں کبھی کبھی تخفیف کی جاتی ہے اھ اسے صاغانی نے ابن الانباری سے نقل کیا ہے اور مفضل نے یہ شعر کہا ہے :۔ ان اقوام نے یہ جان رکھا ہے کہ ان سے

اوپر رب کے سوا کوئی نہیں جو رزق اور نعمتیں عطا کرے۔ تاج العروس کے مطابق یہ شعر لسان العرب میں وغیرہ میں منقول ہے۔ (ت)

[حواشی] 1- غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل فی بیان احکام زلۃ القاری مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۴۸۸ 2- القاموس المحیط فصل الراء من باب الراء مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/ ۲۷ 3- تاج العروس من جواہر القاموس فصل الراء من باب الباء مطبوعہ دار احیاء التراث العربی بیروت ۱/ ۲۶۰

Fatawa Razawiyya Volume 6

(8) In the mutual exchange of letters like Seen (س), Saad (ص), etc., the consideration is also on the corruption of meaning. In the absence of corruption, the prayer is not invalidated, especially when a specific word exists in both ways in the Arabic language, such as Siraat (صراط) and Siraat (سراط). Or when that change conforms to an Arabic rule, for example, in every word where after Seen (س) an unpointed Ta (ط), or a pointed Ghayn (غ), or Qaf (ق), or a pointed Kha (خ) occurs, it is correct to read that Seen as Saad. Some have not applied the restriction of 'before' and 'after', and have deemed the mutual exchange of Seen and Saad permissible from both sides even when accompanied by Ta (ت). Some said that in a word where after Saad (ص) there is an unpointed Ta (ط) or a pointed Ghayn (غ), or after Seen (س) there is Qaf (ق) or a pointed Kha (خ), there replacing each with the other is permissible, and even pointed Za (ز) is permissible. And where after Saad (ص) there is an unpointed Ta (ط), if the Saad is quiescent (Sakin), then Seen (س) or Za (ز) is allowed in its place, but if it is vocalized (Mutaharrik), then it is impermissible and invalidates the prayer. It is stated in Al-Qunya:

Mata Sa'altu Jarallah 'amman qara'a Wasatan aw Asbagha aw Saqara aw Musakhratin bil-Saadi makaanas-Seeni faqala la tafsudu li'anna kulla kalimatin waqa'a fiha ba'das-Seeni ta'un aw ghaynun aw qafun aw kha'un jaaza an yubdala-Seenu saadan. Ah.

When I asked Jarullah: If a person recites 'Wasatan' (وصطاً) for 'Wastan' (وسطاً), 'Asbagha' (اصبغ) for 'Asbagha' (اسبغ), 'Saqara' (صقر) for 'Saqar' (سقر), and 'Musakhrat' (مصخرات) for 'Musakhrat' (مسخرات), substituting 'Saad' for 'Seen', what is the ruling? He said: The prayer will not be invalidated because in every word where after 'Seen', 'Ta', 'Ghayn', 'Qaf', or 'Kha' occurs, it is permissible to change that 'Seen' to 'Saad'. (T)

Similarly, it is quoted from Al-Hilya:

Wa dabat-ul-huroofa faqala kullu kalimatin waqa'a fiha ba'das-Seeni ta'un muhmalatun aw ghaynun mu'jamatun aw qafun aw kha'un mu'jamatun jaaza an yubdala fiha-Seenu saadan.[2]

And regarding the rule for letters, it states: In every word where after 'Seen', an unpointed 'Ta', a pointed 'Ghayn', 'Qaf', or a pointed 'Kha' occurs, there it is permissible to change 'Seen' to 'Saad'. (T)

It is also in it:

Wa fil-Mubtaghi: Wa man qara'a makaanal-Saadi seenan yunzaru in kana saadan ba'daha ta'un kalsiraati wa ba'daha ghaynun kaqawlihi wa-asbagha aw seenan ba'daha qafun kaqawlihi...	In Al-Mubtaghi it is: Regarding the person who recited 'Seen' instead of 'Saad', it should be examined: if the 'Saad' is followed by an unpointed 'Ta', for example 'Siraat', or if it is followed by a pointed 'Ghayn', for example 'Wa-Asbagha', or if it is 'Seen' followed by 'Qaf', for example...

1. Qunya, Fatawa Quniyah, Chapter: Errors of the Reciter etc., Al-Mahandiyah Press, p. 61.
2. Hilyat-ul-Mahalli Sharh Munyat-ul-Musalli.

फ़तावा रज़विया जिल्द 6

(8) 'सीन' (س), 'साद' (ص) आदि अक्षरों के आपस में बदलने में भी अर्थ के बिगाड़ पर ही विचार किया जाता है। अर्थ न बिगड़ने की स्थिति में नमाज़ ख़राब नहीं होती, विशेषकर जब वह विशिष्ट शब्द अरबी भाषा में दोनों तरह से प्रचलित हो, जैसे 'सिरात' (صراط) और 'सिरात' (سراط)। या वह बदलाव अरबी के किसी नियम के अनुसार हो, जैसे हर वह शब्द जिसमें 'सीन' के बाद 'ता' (ط), 'ग़ैन' (غ), 'क़ाफ़' (ق), या 'ख़ा' (خ) आए, उस 'सीन' को 'साद' पढ़ना सही है। कुछ विद्वानों ने 'पहले' और 'बाद' का प्रतिबंध नहीं लगाया है और 'ता' (ت) की संगति में भी 'सीन' और 'साद' के आपसी बदलाव को दोनों तरफ़ से जायज़ बताया है। कुछ ने कहा कि जिस शब्द में 'साद' के बाद 'ता' (ط) या 'ग़ैन' (غ) हो, या 'सीन' के बाद 'क़ाफ़' या 'ख़ा' हो, वहाँ उनमें से प्रत्येक के स्थान पर दूसरे का और 'ज़ाय' (ز) का प्रयोग भी जायज़ है। और जहाँ 'साद' के बाद 'ता' (ط) हो, यदि 'साद' साकिन (मौन) है तो उसकी जगह 'सीन' या 'ज़ाय' जायज़ है, लेकिन यदि वह मुतहर्रिक (स्वरयुक्त) है तो नाजायज़ है और नमाज़ को अमान्य कर देता है। 'कुनिया' में है:

मता सअल्तु जारल्लाह अ़म्मन क़र-अ़ वस्तन औ अ़स्बग़न औ सक़रन औ मुसख़रातिन बिल्-सादि मकानास-सीनि फ़क़ा-ल ला तफ़्सुदु लि-अ़न्ना कुल्ला कलिमतिन वक़-अ़ फ़ीहा बअ़दस-सीनि ता-उन औ ग़ैनुन औ क़ाफ़ुन औ ख़ा-उन जा-ज़ अन युब्दलस-सीनु सादन। अह।

जारुल्लाह से जब मैंने पूछा कि यदि कोई व्यक्ति 'वस्तन' (وسطاً) को 'वस्तन' (وصطاً), 'असबग़ा' (اسبغ) को 'असबग़ा' (اصبغ), 'सक़रा' (سقر) को 'सक़रा' (صقر) और 'मुसख़रात' (مسخرات) को 'मुसख़रात' (مصخرات) पढ़ता है, यानी 'सीन' की जगह 'साद' पढ़ता है, तो उसका क्या हुक्म है? उन्होंने फ़रमाया: नमाज़ फ़ासिद (ख़राब) नहीं होगी क्योंकि हर वह शब्द जिसमें 'सीन' के बाद 'ता', 'ग़ैन', 'क़ाफ़' या 'ख़ा' आता है, उस 'सीन' को 'साद' से बदलना जायज़ है। (त)

इसी तरह 'हिल्या' में उससे उद्धृत किया गया है:

व दब़तल-हुरूफ़ा फ़क़ा-ल कुल्लु कलिमतिन वक़-अ़ फ़ीहा बअ़दस-सीनि ता-उन मुहमलतुन औ ग़ैनुन मुअ़्जमतुन औ क़ाफ़ुन

और अक्षरों के नियम के बारे में फ़रमाया: हर वह शब्द जिसमें 'सीन' के बाद 'ता' मुहमला (बिना नुक्ते वाली), 'ग़ैन' मुअ़्जमा (नुक्ते वाली), 'क़ाफ़',

औ ख़ा-उन मुअ्जमतुन जा-ज़ अन युब्द-ल फ़ीहास-सीनु सादन।[2]	या 'ख़ा' मुअ्जमा आए, वहाँ 'सीन' को 'साद' के साथ बदलना जायज़ है। (त)

उसी में है:

व फ़िल-मुब्तग़ी: व मन क़र-अ़ मकाऩल-सादि सीनन युन्ज़रू इन कान सादन बअ़दहा ता-उन कल्सिराति व बअ़दहा ग़ैनुन कक़ौलिही व-अ़स्बग़ औ सीनन बअ़दहा क़ाफ़ुन कक़ौलिही...	'अल-मुब्तग़ी' में है: वह व्यक्ति जिसने 'साद' की जगह 'सीन' पढ़ा, वहाँ गौर किया जाए: यदि 'साद' के बाद 'ता' मुहमला है, उदाहरण के लिए 'सिरात', या उसके बाद 'ग़ैन' मुअ्जमा है, जैसे 'वा-असबग़ा', या 'सीन' के बाद 'क़ाफ़' है जैसे...

1. कुनिया, फ़तावा कुनिया, बाब ज़ल्लतुल क़ारी आदि, महंदिया प्रेस, पृष्ठ 61।
2. हिल्यतुल महल्ली शरह मुन्यतुल मुसल्ली।

(۸) س ص و غیرہ ہماحروف کی باہم تبدیل میں بھی فساد معنی ہی پر لحاظ ہے، بحالت عدم فساد نماز فاسد نہیں خصوصاً جب خاص لفظ زبان عرب میں دونوں طرح ہو جیسے صراط و سراط وہ تبدیل کسی قاعدہ عرب کے موافق ہو جیسے وہ ہر کلمہ جس میں سین کے بعد ط مہملہ یا غین معجمہ یا ق یا خ معجمہ واقع ہو اس سین کو ص پڑھنا صحیح ہے بعض نے قبل و بعد کی قید نہیں لگائی اور ت کی معیت میں بھی سین اور صاد کی باہم تبدیل دونوں جانب سے جائز بتائی، بعض نے کہا جس کلمہ میں ص کے بعد ط مہملہ یا غ معجمہ یا سین کے بعد ق یا خ معجمہ ہو وہاں ان میں ہر ایک کے عوض دوسرا اور ز معجمہ بھی جائز، اور جس ص کے بعد ط مہملہ ہو اگر ص ساکن ہے تو اس کی جگہ س یا ز روا اور متحرک ہے تو ناجائز و مفسد نماز، قنیہ میں ہے:

متی سألت جار الله عمن قرأ وصطاً او اصبغ او صقر او مصخرات بالصاد مکان السین فقال لا تفسد لان کل کلمة وقع فیها بعد السین طاء اوغین اوقاف اوخاء جازان یبدل السین صاداً ۔ اھ

جار اللہ سے جب میں نے پوچھا کہ کوئی شخص وسطاً کو وصطاً ، اصبغ کو اصبغ، سقر کو صقر اور مسخرات کو مصخرات س کی جگہ ص پڑھتا ہے تو اسکا کیا حکم ہے؟ فرمایا نماز فاسد نہ ہوگی کیونکہ ہر وہ کلمہ جس میں سین کے بعد طاء، غین، قاف یا خا آ جائے تو اس سین کو صاد کے ساتھ بدلنا جائز ہے (ت)

اسی طرح حلیہ میں اُس سے نقل فرمایا:

وضبط الحروف فقال کل کلمة وقع فیها بعد السین طاء مهملة او غین معجمة اوقاف اور حروف کا ضابطہ اس کے متعلق فرمایا ہر وہ کلمہ جس میں سین کے بعد ط مہملہ یا غین معجمہ یا ق یا خ

اوخاء معجمة جاز ان یبدل فیها السین صاداً .[2]

معجمہ واقع ہو وہاں سین کو صاد کے ساتھ بدلنا جائز ہے۔ (ت)

اُسی میں ہے:

وفی المبتغی ومن قرأ مکان الصاد سیناً ینظر ان کان صاد بعدها طاء کالصراط و بعدها غین کقوله واصبغ او سین بعدها قاف کقوله

المبتغی میں ہے وہ شخص جس نے صاد کی جگہ سین پڑھا وہاں غور کیا جائے اگر صاد کی بعد طاء مہملہ ہے مثلاً صراط، یا اس کے بعد غین معجمہ ہو مثلاً واصبغ

1 قنیہ، فتاوٰی قنیة باب زلة القاری الخ مطبعة مشتہرة بالمہندیة ص ۶۱ 2 حلیہ المحلی شرح منیة المصلی

Fatawa Razawiyya, Volume 6

...or if in a word, the letter 'seen' (س) is followed by 'qaf' (ق) as in 'salqokum', or if it is followed by 'kha' (خ) as in 'yaskharun', then in such a case, reading 'sad' (ص) or 'za' (ز) in place of 'seen' (س) will be permissible. However, if 'dal' (د) follows 'sad', then if the 'sad' is silent (sakin), for example 'yasdur' (یصدر), it is permissible to read it as 'seen' or 'za'. But if the 'sad' is vocalized (mutaharrik) as in 'as-Samad' (الصمد), then reading it with 'seen' is not permissible. If someone reads it with 'seen', their prayer (Salah) will be invalidated. Many legal rulings are derived based on this principle. End. - 1

In Khaniya, it is written: From Abu Mansur al-Iraqi, he says: Every word that contains the letters 'ayn' (ع), 'ha' (ح), 'qaf' (ق), 'ta' (ط), or 'ta' (ت), and also contains a 'seen' (س) or 'sad' (ص), in such a case, if someone reads 'seen' in place of 'sad' or 'sad' in place of 'seen', it will be permissible. - 2 (T)

I say: (Ahmad Raza Khan says) This is how it is in 'Al-Khaniya' printed in Calcutta in 1835 AD, mentioning both 'ayn' (ع) and 'ha' (ح) without dots. Similarly, it is in 'Al-Ghuniyah' printed in Istanbul in 1295 AH, and likewise in 'Al-Bazzaziyah' printed in Egypt in 1310 AH. However, in 'Al-Khaniya' printed in Egypt in the mentioned year, it mentions 'kha' (خ) with a dot and 'ayn' (ع) without a dot. This is in accordance with what Allama Khafaji wrote in 'Inayat al-Qadhi Hashiya al-Baydawi' printed in Egypt in 1283 AH, under the divine words 'As-Sirat al-Mustaqim'. He says:

Footnotes: 1. Hilyat al-Mahalli Sharh Munyat al-Musalli. 2. Fatawa Qazi Khan, section on errors in Quran recitation, printed by Nawal Kishore, Lucknow, 1/28.

Page 430 of 736

फ़तावा रज़विया, जिल्द 6

...या किसी शब्द में 'स' (س) के बाद 'क़' (ق) हो जैसे 'सलक़ोकुम' (سلقوكم), या उसके बाद 'ख़ा' (خ) हो जैसे 'यसख़रून' (يسخرون), तो ऐसी स्थिति में 'स' की जगह 'सा' (ص) या 'ज़ा' (ز) पढ़ना जायज़ होगा। लेकिन अगर 'सा' के बाद 'दाल' (د) हो, तो यदि 'सा' साकिन (बिना स्वर का) हो जैसे 'यस्दुर' (يصدر), तो इसे 'सीन' या 'ज़ा' पढ़ना जायज़ है। और यदि 'सा' मुतहर्रिक (स्वर वाला) हो जैसे 'अस-समद' (الصمد), तो अब इसे 'सीन' पढ़ना जायज़ नहीं है। यदि किसी ने 'सीन' पढ़ा तो उसकी नमाज़ फ़ासिद (अमान्य) हो जाएगी। इसी नियम पर बहुत से मसलों का हल निकलता है। इति। - 1

ख़ानिया में है: अबू मंसूर इराक़ी कहते हैं कि हर वह शब्द जिसमें 'ऐन' (ع), 'हा' (ح), 'क़ाफ़' (ق), 'ता' (ط) या 'ता' (ت) हो और उसमें 'सीन' (س) या 'साद' (ص) हो, तो ऐसी स्थिति में यदि किसी ने 'साद' की जगह 'सीन' या 'सीन' की जगह 'साद' पढ़ा तो जायज़ होगा। - 2 (त)

अक़ूल: (मैं कहता हूँ) ख़ानिया जो कलकत्ता में 1835 ईस्वी में छपी थी, उसमें इसी तरह 'ऐन' और 'हा' दोनों का उल्लेख है। इसी तरह 'ग़ुनियाह' जो इस्तांबुल में 1295 हिजरी में छपी थी, उसमें भी ऐसा ही है, और 'बज़्ज़ाज़िया' जो मिस्र में 1310 हिजरी में छपी थी, उसमें भी यही शब्द हैं। मगर मिस्र में छपी ख़ानिया के उक्त वर्ष के संस्करण में 'ख़ा' और 'ऐन' का ज़िक्र है। और यह उसके अनुकूल है जो अल्लामा ख़फ़ाजी ने 'इनायतुल क़ाज़ी हाशिया बैज़ावी' में लिखा है जो मिस्र में 1283 हिजरी में छपी थी, अल्लाह तआला के इरशाद 'अस-सिरातल मुस्तक़ीम' के तहत। वह फ़रमाते हैं:

पाद-टिप्पणियाँ: 1. हिलियतुल महल्ली शरह मुनियतुल मुसल्ली। 2. फ़तावा क़ाज़ी ख़ान, कुरान की तिलावत में होने वाली गलतियों का अध्याय, नवल किशोर लखनऊ द्वारा प्रकाशित, 1/28।

पृष्ठ 430 का 736

سلقوکم او بعدھا خاکقولہ یسخرون یجوز مکان السین صادا او زاء واماالتی بعدھا دال ان کانت الصاد ساکنۃ کقولہ یصدر یجوز بالسین والزاء واما التی تکون متحرکۃ کقولہ الصمد لایجوز قرأتہ بالسین ولو قرأ بالسین تفسد صلاتہ وعلی ھذا یخرج کثیر من المسائل انتھی - 1 یا کسی کلمہ میں س کے بعد ق ہو جیسے سلقوکم، یا اس کے بعد خاء معجمہ ہو جیسے یسخرون، تو ایسی صورت میں س کی جگہ ص یا ز پڑھنا جائز ہوگا، لیکن اگر ص کے بعد د مہملہ ہو تو اگر صاد ساکن ہو مثلاً یصدر تو اسے سین یا زاء پڑھنا جائز، اور اگر صاد متحرک ہے جیسے الصمد تو اب اسے سین پڑھنا جائز نہیں، اگر کسی نے سین پڑھا تو اس کی نماز فاسد ہو جائے گی، اسی ضابطہ پر بہت سے مسائل کی تخریج ہوتی ہے انتہی

خانیہ میں ہے: عن ابی منصور العراقی کل کلمۃ فیھاعین اوحاء اوقاف اوطاء اوتاء وفیھا سین اوصاد فقرأ السین مکان الصاداو الصاد مکان السین جازاہ - 2 ابو منصور عراقی کہتے ہیں ہر وہ کلمہ جس میں عین، حاء، قاف، طاء یا تاء ہو اس کلمہ میں سین یا صاد ہو تو ایسی صورت میں اگر کسی نے صاد کی جگہ سین یا سین کی جگہ صاد پڑھا تو جائز ہوگاہ (ت)

اقول: ھکذا ھو فی الخانیۃ طابع کلکتۃ 1835 م المیلادیۃ باھمال العین والحاء جمیعا وکذا ھو فی الغنیۃ طابع استامبول 1295ھ الھجریۃ ومثلہ فی البزازیۃ طابع مصر 1310ھ وفی الخانیۃ طابع مصر من تلك السنۃ باعجام الخاء واھمال العین وھو الموافق لما فی عنایۃ القاضی حاشیۃ العلامۃ الخفاجی علی البیضاوی طبع مصر 1283ھ تحت قولہ اقول: (میں کہتا ہوں) خانیہ مطبوعہ کلکتہ ۱۸۳۵ عیسویہ میں یوں ہی عین مہملہ اور حاء مہملہ دونوں کا ذکر ہے، اسی طرح غنیہ مطبوعہ استنبول ۱۲۹۵ھ میں ہے، اور بزازیہ مطبوعہ مصر ۱۳۱۰ھ میں بھی اسی طرح کے الفاظ ہیں، مگر خانیہ مطبوعہ

مصر سن مذکورہ میں خاء معجمہ اور عین مہملہ کا ذکر ہے، اور یہ اس کے مطابق ہے جو علامہ خفاجی نے عنایۃ القاضی حاشیہ بیضاوی مطبوعہ مصر ۱۲۸۳ھ میں اللہ تعالی کے ارشاد گرامی الصراط المستقیم کے تحت لکھا ہے وہ فرماتے ہیں

حواشی: 1. حلیۃ المحلی شرح منیۃ المصلی 2. فتاوی قاضی خان فصل فی قرآۃ القرآن خطاء مطبوعہ نولکشور لکھنو، ۲۸/۱

Fatawa Ridawiyyah, Volume 6

[Arabic Box Left]: "...the straight path, as it is said that in the language of Quraysh, 'seen' is consistently replaced with 'saad' whenever it is followed by 'ayn', 'kha', or 'qaaf'. This is evident from what has been detailed from Al-Qunyah and Al-Hilyah regarding their diacritical marking (i'jam), so let it be investigated."

[Urdu Box Right]: "In this place, and rather in every place where 'ayn', 'kha' with a dot, or 'qaaf' follows it, reading 'seen' by changing it to 'saad' is the dialect of Quraysh, and it is in use. From what has been passed in detail with reference to 'Al-Qunyah' and 'Al-Hilyah', it is known that all are dotted letters; so preserve it well. (T)"

In the previous three issues, the ruling mentioned regarding the invalidation of prayer in the event of corruption of meaning was the school of thought of our Imam of the Madhhab and the early imams who followed them (may Allah be pleased with them), and that is the most precautionary and preferred view. The great researchers have explicitly stated this.

[Arabic Section]: "And it is known that whenever there is a difference [of opinion], it is mandatory to refer to the saying of the Imam, as stated in Al-Bahr, Ad-Durr, and their glosses and other noble books." [Urdu Section]: "And it is a known fact that when there is a difference of opinion, the fatwa will revert to the saying of the Imam, as clear clarification exists in Al-Bahr, Ad-Durr, and other blessed books. (T)"

In Ghunyah, it says: [Arabic Section]: "The priority is to adopt the saying of the predecessors (mutaqaddimin) due to the discipline of their principles, and because their saying is more precautionary, and most branches mentioned in the books of fatwas are based upon it." [Urdu Section]: "It is better that in case of disagreement, the saying of the predecessors be adopted because their rules are extremely solid and their sayings are very cautious, and most sub-branches of fatwa books are based on them. (T)"

In the same [book], it says: [Arabic Section]: "This is built upon the choice of the predecessors, and it is the chosen view." [Urdu Section]: "This is based on the preferred view of the predecessors and in reality, this is the chosen one. (T)"

In the same [book], it says: [Arabic Section]: "This is a summary of the rule of the predecessors, and it is what the researchers among the people of fatwa have authenticated." [Urdu Section]: "This is the summary of the rule of the predecessors,

and the expert jurists among the people of fatwa, for example, Qadi Khan and others, have declared it correct."

---

1. 'Inayat al-Qadi, Hashiyat al-Shihab 'ala al-Baydawi under 'al-Sirat al-Mustaqim', published by Dar Sadir, Beirut, 1/131.
2. Ghunyat al-Mustamli, Sharh Munyat al-Musalli, section on the rulings of the reader's slip, published by Sohail Academy, Lahore, p. 777.
3. Ghunyat al-Mustamli, Sharh Munyat al-Musalli, section on the rulings of the reader's slip, published by Sohail Academy, Lahore, p. 483.

फतावा रज़विया, जिल्द छठा

[अरबी बॉक्स]: "...सीधा रास्ता जैसा कि कुरैश की भाषा में कहा गया है कि 'सीन' को हर जगह 'साद' से बदल दिया जाता है जहाँ उसके बाद 'ऐन', 'ख़ा' या 'क़ाफ़' हो। अल-कुनिया और अल-हिल्या से जो विस्तारपूर्वक गुज़रा है, उससे ज़ाहिर होता है कि वे सभी बिंदु वाले अक्षर (मुअजमा) हैं, तो इसे स्पष्ट किया जाए।"

[उर्दू बॉक्स]: "इस स्थान पर बल्कि हर उस स्थान पर जहाँ उसके बाद ऐन, ख़ा मुअजमा या क़ाफ़ हो, वहाँ सीन को साद के साथ बदलकर पढ़ना लुत़-ए-कुरैश है और यह प्रचलित है। अह-कुनिया और हिल्या के हवाले से जो कुछ तफ़्सीलन गुज़रा उससे मालूम होता है कि सब मुअजमा (बिंदु वाले) हों, बस इसे अच्छी तरह महफ़ूज़ करो (त)।"

पिछले तीन मसलों में कि मानी बिगड़ने की सूरत में नमाज़ बिगड़ने का जो हुक्म ज़िक्र हुआ, वह हमारे इमाम साहब-ए-मज़हब और उनके मुत्तबे अइम्मा-ए-मुतक़द्दिमीन (रज़ियल्लाहु अन्हुम) का मज़हब था और वही ज़्यादा एहतियात वाला और मुख़्तार (पसंद किया हुआ) है। बड़े शोधकर्ताओं (मुहक़्क़िक़ीन) ने इसी की वज़ाहत फरमाई है।

[अरबी हिस्सा]: "और यह मालूम है कि जब भी मतभेद हो, तो इमाम के क़ौल की तरफ़ रुजू करना वाजिब है, जैसा कि अल-बहर, अद-दुर्र और उनके हाशिए वगैरह बुज़ुर्ग किताबों में बयान किया गया है।" [उर्दू हिस्सा]: "और यह बात मालूम है कि जब इख़्तिलाफ़ हो तो फ़तवा में क़ौल-ए-इमाम की तरफ़ रुजू किया जाएगा जैसा कि इस पर बहर, दुर्र और दीगर मुबारक कुतुब में तसरीह मौजूद है (त)।"

ग़ुनिया में है: [अरबी हिस्सा]: "बेहतर यह है कि इसमें मुतक़द्दिमीन के क़ौल को लिया जाए क्योंकि उनके क़ायदे मज़बूत हैं और उनका क़ौल ज़्यादा एहतियात वाला है और फ़तवा की किताबों में ज़िक्र किए गए अक्सर फुरूआत (शाखाएँ) इसी पर आधारित हैं।" [उर्दू हिस्सा]: "बेहतर यह है कि इख़्तिलाफ़ी सूरत में मुतक़द्दिमीन के क़ौल को लिया जाए क्योंकि उनके क़ायदे निहायत मज़बूत हैं और उनके अक़्वाल बहुत ही मोहतात होते हैं और कुतुब-ए-फ़तावा की अक्सर फुरूआत इसी पर मबनी हैं। (त)"

उसी में है: [अरबी हिस्सा]: "यह मुतक़द्दिमीन के मुख़्तार (पसंद किए हुए) क़ौल पर आधारित है और यही मुख़्तार है।" [उर्दू हिस्सा]: "यह मुतक़द्दिमीन के क़ौल-ए-मुख़्तार की बिना पर है और दरहक़ीक़त यही मुख़्तार है। (त)"

उसी में है: [अरबी हिस्सा]: "यह मुतक़द्दिमीन के क़ायदे का सारांश है और इसी को फ़तवा वालों में से मुहक़्क़िक़ीन ने सही करार दिया है।" [उर्दू हिस्सा]: "यह क़ायदा-ए-मुतक़द्दिमीन का ख़ुलासा है और इसी को अहल-ए-फ़तवा मुहक़्क़िक़ीन मथ़लन क़ाज़ी ख़ान वगैरह ने सही क़रार दिया।"

---

1. इनायतुल क़ाज़ी हाशियतुल शिहाब अलल बेज़ावी तह्तल सिरातुल मुस्तक़ीम, मतबुआ दार सादिर बैरुत, 1/131
2. ग़ुनीयतुल मुस्तमली शरह मुनियतुल मुसल्ली, फ़स्ल फ़ी बयान अहकाम ज़ल्तुल क़ारी, मतबुआ सुहैल एकेडमी लाहौर, सफ़ा 777
3. ग़ुनीयतुल मुस्तमली शरह मुनियतुल मुसल्ली, फ़स्ल फ़ी बयान अहकाम ज़ल्तुल क़ारी, मतबुआ सुहैल एकेडमी लाहौर, सफ़ा 483

सफ़ा 736 में से 431

فتاوٰی رضویہ، جلد ششم

[عربی حصہ]: تعالٰی الصراط المستقیم حیث قال لغة قریش ابدال السین صادا ھنا وفی کل موضع بعدھا عین اوخاء اوقاف باطراد اھ والظاھر مما عن القنیة والحلیة مفسرا اعجامھا جمیعا فلیحرر۔

[اردو حصہ]: کہ اس مقام پر بلکہ ہر وہ مقام جہاں اس کے عین ، خاء معجمہ یا قاف ہو وہاں سین کو صاد کے ساتھ بدل کر پڑھنا لغت قریش ہے اور یہ مستعمل ہے اھ قنیہ اور حلیہ کے حوالے سے جو کچھ تفصیلاً گزرا اس سے معلوم ہوتا ہے کہ سب معجمہ ہوں، پس اسے اچھی طرح محفوظ کرو(ت)۔

پچھلے تین مسائل میں کہ بحالتِ فسادِ معنی فسادِ نماز کا حکم مذکور ہمارے امام صاحب مذہب اور ان کے اتباع ائمہ متقدمین رضی اللہ تعالٰی عنہم کا مذہب تھا اور وہی احوط و مختار ہے اجلہ محققین نے اُسی کی تصریح فرمائی

[عربی حصہ]: ومعلوم ان الفتوی متی اختلف وجب الرجوع الی قول الامام کما نص علیہ فی البحر والدر وحواشیہ وغیرہا من اسفارالکرم۔ [اردو حصہ]: اور یہ بات معلوم ہے کہ جب اختلاف ہو تو فتوی میں قول امام کی طرف رجوع کیا جائے گا جیسا کہ اس پر بحر ، در اور دیگر مبارک کتب میں تصریح موجود ہے(ت)

غنیہ میں ہے : [عربی حصہ]: الاولی الاخذ فیہ بقول المتقدمین لانضباط قواعدھم وکون قولھم احوط واکثر الفروع المذکورة فی کتب الفتاوی منزلة علیہ۔ [اردو حصہ]: بہتر یہ ہے کہ اختلافی صورت میں متقدمین کے قول کو لیا جائے کیونکہ ان کے قواعد نہایت مضبوط ہیں اور انکے اقوال بہت ہی محتاط ہوتے ہیں اور کتب فتاوٰی کی اکثر فروعات اسی پر مبنی ہیں۔ (ت)

اُسی میں ہے: [عربی حصہ]: ھذا بناء علی مختار المتقدمین وھوالمختار۔ [اردو حصہ]: یہ متقدمین کے قولِ مختار کی بناء پر ہے اور در حقیقت یہی مختار ہے۔ (ت)

اُسی میں ہے : [عربی حصہ]: ھذا ملخص قاعدۃ المتقدمین وھو الذی صححہ المحققون من اھل الفتاوی۔ [اردو حصہ]: یہ قاعدہ متقدمین کا خلاصہ ہے اور اسی کو اہل فتویٰ محققین مثلاً قاضی خان وغیرہ نے صحیح قرار دیا

---

1. عنایۃ القاضی حاشیۃ الشھاب علی البیضاوی تحت الصراط المستقیم مطبوعہ دار صادر بیروت ۱/۱۳۱
2. غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل فی بیان احکام زلۃ القاری مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۷۷۷
3. غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل فی بیان احکام زلۃ القاری مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۴۸۳

Fatawa Rizwia Volume 6 Qazi Khan etc. and derived branches from it, so understand it well and you will be guided. (T) Although some of the later scholars have occasionally or often leaned towards the permissibility of prayer for ease in these three cases, and there are numerous branches (furu'), their own statements remain varied and unsettled. As is evident by referring to Al-Ghuniya and considering their statements quoted in the Fatawa along with the examination of the branches and their referral to the principles. (T) (9) The substitution of letters like 'seen' (س), 'saad' (ص) etc., which most of the common people are afflicted with today, if it is due to inability—meaning they want to learn but cannot pronounce them correctly, as is the case today with common people who haven't learned the rules of recitation and are neglectful of this obligatory duty—then in this situation, although there is a fatwa for their own prayer being valid as long as they strive to learn and do not recite such speech or verses in which those letters appear (except for Surah Al-Fatiha) while praying behind a correct reciter, they cannot lead the prayer for a correct reciter, nor will his prayer be valid behind them. This is the correct school of thought and the opinion of the majority of Imams, including the later scholars. It is stated in Fatawa Khayriyya: The preferred and fatwa-issued opinion is the invalidity of the imamate (leading of prayer) of an 'althagh' (stammerer/one who mispronounces letters) for someone who does not have a stammer. (T) It is stated in the same: The imamate of an 'althagh' for an eloquent person is invalid according to the preferred and correct opinion. (T) It is stated in the same: Most companions have rejected it when someone else who recites better and more correctly is available. (T)

1. Ghuniyatul Mustamli Sharh Muniyatul Musalli, Chapter on Recitation Errors, Published by Suhail Academy, Lahore, p. 493.
2. Fatawa Khayriyya, Book of Prayer, Published by Dar al-Ma'rifah, Beirut, 1/10.
3. Fatawa Khayriyya, Book of Prayer, Published by Dar al-Ma'rifah, Beirut, 1/10.
4. Fatawa Khayriyya, Book of Prayer, Published by Dar al-Ma'rifah, Beirut, 1/10.
   Page 432 of 736

फतावा रज़विया छठा खंड क़ाज़ी ख़ान आदि और इससे कई उप-शाखाओं (फ़ुरू) की व्याख्या की गई है, इसलिए इसे अच्छी तरह समझ लें तो आप मार्गदर्शन पाएंगे। (त) हालाँकि बाद के कुछ विद्वानों ने कभी-कभी या अक्सर इन तीन मामलों में आसानी के लिए नमाज़ की वैधता की ओर रुख किया है, और इसके कई उप-शाखाएं हैं, लेकिन उनके अपने बयान विविध और अस्थिर रहे हैं। जैसा कि अल-गुनिया का अध्ययन करने और फतावा में उद्धृत उनके बयानों पर विचार करने के साथ-साथ उप-शाखाओं की परीक्षा और उन्हें सिद्धांतों की ओर वापस ले जाने से स्पष्ट होता है। (त) (9) 'सीन' (س), 'साद' (ص) आदि जैसे अक्षरों का बदलना, जिससे आज अधिकांश आम लोग प्रभावित हैं, यदि यह अक्षमता के कारण है—अर्थात वे सीखना चाहते हैं लेकिन उन्हें सही ढंग से उच्चारित नहीं कर सकते, जैसा कि आज उन आम लोगों के साथ है जिन्होंने पाठ के नियम नहीं सीखे और इस अनिवार्य कर्तव्य की उपेक्षा कर रहे हैं—तो इस स्थिति में, हालाँकि उनकी अपनी नमाज़ के मान्य होने का फतवा है जब तक वे सीखने का प्रयास करते हैं और सूरह अल-फातिहा के अलावा ऐसी कोई बात या आयत नहीं पढ़ते जिसमें वे अक्षर आते हैं, और वे एक सही पाठ करने वाले के पीछे नमाज़ पढ़ते हैं, लेकिन वे एक सही पाठ करने वाले के लिए इमामत (नमाज़ का नेतृत्व) नहीं कर सकते, और न ही उनके पीछे उसकी नमाज़ मान्य होगी। यही सही पंथ है और बाद के विद्वानों सहित अधिकांश इमामों की राय है। फतावा खैरिया में लिखा है: वरीयता प्राप्त और फतवा दिया गया मत यही है कि अल-थग (तुतलाने वाला/अक्षरों का गलत उच्चारण करने वाला) की इमामत उस व्यक्ति के लिए मान्य नहीं है जो तुतलाता नहीं है। (त) उसी में है: वरीयता प्राप्त और सही मत के अनुसार एक स्पष्टवादी (फसीह) व्यक्ति के लिए अल-थग की इमामत अमान्य है। (त) उसी में है: अधिकांश साथियों ने इसे तब अस्वीकार कर दिया है जब कोई दूसरा व्यक्ति जो उससे बेहतर और सही पाठ करने वाला हो, उपलब्ध हो। (त)

1. गुनिय्यतुल मुस्तमली शरह मुनिय्यतुल मुसल्ली, किरात की गलतियों का अध्याय, सुहैल अकादमी, लाहौर, पृष्ठ 493।
2. फतावा खैरिया, किताबुस सलात, दारुल मारिफा, बेरूत, 1/10।
3. फतावा खैरिया, किताबुस सलात, दारुल मारिफा, बेरूत, 1/10।
4. फतावा खैरिया, किताबुस सलात, दारुल मारिफा, बेरूत, 1/10। पृष्ठ 736 का 432

فتاوی رضویہ جلد ششم قاضی خاں وغیرہ وفرعوا علیہ الفروع فافھم تر شد[1]۔ | اور اس پر کئی فروعات کی تخریج کی پس اچھی طرح سمجھ لو تو رہنمائی پاؤ گے۔ (ت) اگر چہ علمائے متاخرین ان تین میں بھی کہیں کہیں بعض کہیں اکثر بغرض آسانی جانب جواز نماز گئے اور بکثرت فروع ہیں ان کے اقوال خود مختلف و مضطرب رہے۔ کما یظھر بالرجوع الی الغنیۃ والنظر الی اقوالھم المنقولۃ فی الفتاوی مع سیر الفروع وردھا الی الاصول۔ | جیسا کہ غنیہ کے مطالعہ سے اور ان کے فتاوی میں منقول اقوال میں غور کرنے سے ظاہر ہوتا ہے باوجود اصول پر فروعات کے جاری اور رَد ہونے کے۔ (ت) (۹) س، ص وغیرہ ہما حروف کی تبدیل جس میں آج کل اکثر عوام مبتلا ہیں جب بطور عجز ہو یعنی سیکھنا چاہیں تو سہی ادا ہو سنہ نکال سکیں جیسا کہ یہاں آجکل عوام کا جنہوں نے قواعد اعداد نہ سیکھے اور اس فرض عین کے تارک رہے یہی حال ہے تو اس صورت میں اگر چہ ان کی اپنی نماز ہو جانے پر فتوی ہے جبکہ سیکھنے پر کوشش کئے جائیں اور جو حرف نہیں نکال سکتے اس سے خالی کوئی صورت یا آیت پاتے ہوئے سوائے فاتحہ ایسا کلام جس میں وہ حروف آئے ہیں نہ پڑھیں اور صحیح خوان کی اقتداملتہ ہوئے جدا نماز ادا نہ کریں مگر یہ حکم صرف اُن کی اپنی نماز ان شرطوں کے ساتھ جائز ہونے کے لئے صحیح خوان کی امامت نہیں کر سکتے نہ اُس کی نماز ان کے پیچھے ہوگی یہی مذہب صحیح ہے اور یہی قول جمہور ائمہ ہے جن میں متاخرین بھی شامل ہیں۔ فتاوی خیریہ میں ہے۔ الراجح المفتی بہ عدم صحۃ امامۃ الالثغ لغیرہ ممن لیس بہ لثغۃ[2]۔ | راجح اور مفتی بہ قول یہی ہے کہ الثغ (توتلے) کی امامت اس شخص کے لئے جائز نہیں جس میں توتلا پن نہ ہو۔ (ت) اسی میں ہے: امامۃ الالثغ للفصیح فاسدۃ فی الراجح الصحیح[3]۔ | الثغ (توتلے) کی امامت فصیح کے لئے راجح اور صحیح قول کے مطابق

فاسد ہے۔ (ت) اسی میں ہے: قد اباہ اکثر الاصحاب لما لغیرۃ من الصواب[4]۔ | اس کا اکثر علماء نے انکار کیا ہے جبکہ اس کا غیر اس سے بہتر و درست پڑھنے والا موجود ہو۔ (ت)

1 غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل فی بیان احکام زلۃ القاری مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۴۹۳ 2 فتاوی خیریہ کتاب الصلوۃ مطبوعہ دارالمعرفۃ بیروت ۱/ ۱۰ 3 فتاوی خیریہ کتاب الصلوۃ مطبوعہ دارالمعرفۃ بیروت ۱/ ۱۰ 4 فتاوی خیریہ کتاب الصلوۃ مطبوعہ دارالمعرفۃ بیروت ۱/ ۱۰

Fatawa Razawiyya Volume Six It is in Bazaziyyah: If it is possible for him to select verses that are free from those [difficult] letters, he should do so; otherwise, he should remain silent. If verses free from his lisp are found, and despite being capable of reciting them, he recites verses in which he lisps, it is not permissible. Based on the analogy of what we mentioned in the first issue: if he replaces one letter with another and is unable [to pronounce it correctly], the prayer is not invalidated, and this is what we hold. Likewise, [reciting] 'Al-Mustaqim' in place of 'Al-Mustaqimi', except that another person should not follow him in prayer. (T)

In Ghunyah, after citing passages from Muheet, Fatawa Hujjah, Fatawa Khaniyah etc., it is stated: In short, it is mandatory for those with a lisp to constantly strive for correct pronunciation of letters. As long as they keep striving, their prayers will be valid. However, they are like 'Ummi' (unlettered) for those who can pronounce the letters correctly, so a person with correct pronunciation should not follow them in prayer. Even if these people are able to follow a person with correct pronunciation but abandon it, their prayer will not be valid. Their own prayer with the recitation of those [difficult] letters will only be valid if they are unable to recite enough of the Quran for a valid prayer from portions that do not contain those letters. If they have the ability to recite such portions but still recite those difficult letters, their prayer will also be invalidated. This is the view upon which reliance is placed. (T)

1. Fatawa Bazaziyyah with Fatawa al-Hindiyyah, volume 12, Zubdat-ul-Qari, printed by Noorani Kutub Khana Peshawar, 4/24.
2. Ghunyat-ul-Mustamli Sharh Munyat-ul-Musalli, Section explaining rulings of Zubdat-ul-Qari, printed by Sohail Academy Lahore, p. 283.

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी बज़ज़िया में है: यदि उसके लिए संभव है कि वह ऐसी आयतें चुने जो उन [कठिन] अक्षरों से मुक्त हों, तो उसे ऐसा ही करना चाहिए, अन्यथा शांत रहे। और यदि वह ऐसी आयतें (जिनमें उसे हकलाहट नहीं होती) पाने के बावजूद उन आयतों को पढ़ता है जिनमें उसे हकलाहट होती है, तो यह जायज़ नहीं है। पहले मसले में हमने जो बयान किया उसी के आधार पर, यदि उसने एक अक्षर को दूसरे अक्षर से बदल दिया क्योंकि वह सही उच्चारण करने में असमर्थ था, तो नमाज़ फ़ासिद (अमान्य) नहीं होगी, इसी पर हमारा अमल है। इसी तरह वह जिसने 'मुस्तक़ीमी' की जगह 'मुस्तक़ीम' पढ़ा, लेकिन कोई दूसरा उसकी इक़्तेदा (अनुसरण) न करे। (त)

'ग़ुनिया' में 'मुहीत', 'फ़तावा हुज्जह', 'फ़तावा ख़ानिया' आदि के उद्धरण देते हुए कहा गया है: संक्षेप में, हकलाहट वाले व्यक्ति पर हमेशा अक्षरों के सही उच्चारण के लिए संघर्ष करना अनिवार्य है। जब तक ऐसे लोग संघर्ष करते रहेंगे, उनकी नमाज़ें सही होंगी। हालाँकि, वे उन लोगों के लिए जो अक्षरों का सही उच्चारण कर सकते हैं, 'उम्मी' (अनपढ़) के समान हैं, इसलिए सही उच्चारण करने वाले व्यक्ति को उनका अनुसरण नहीं करना चाहिए। यदि ये लोग सही पढ़ने वाले के पीछे नमाज़ पढ़ने में सक्षम होने के बावजूद इसे छोड़ देते हैं, तो उनकी नमाज़ नहीं होगी। उन अक्षरों के पाठ (क़िरात) के साथ उनकी अपनी नमाज़ तभी होगी जब वे क़ुरआन के उतने हिस्से को पढ़ने में असमर्थ हों जितना नमाज़ जायज़ होने के लिए पर्याप्त हो और उस हिस्से में वे अक्षर भी न हों। यदि इतनी क़िरात करने की क्षमता होने के बावजूद वे उन्हीं अक्षरों को पढ़ते हैं, तो भी उनकी नमाज़ फ़ासिद होगी। यही वह मत है जिस पर भरोसा किया जाता है। (त)

1. फ़तावा बज़ज़िया मअ फ़तावा अल-हिन्दिया, जिल्द 12, जुबदतुल क़ारी, नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर, 4/24
2. ग़ुनियतुल मुस्तमली शरह मुनियतुल मुसल्ली, जुबदतुल क़ारी के अहकाम का बयान, सुहेल एकेडमी लाहौर, पृष्ठ 283

पृष्ठ 433 का 736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم بزازیہ میں ہے: ان امکنه ان یتخذ آیات خالیة عن تلك الحروف فعل والا سکت وان وجد آیات خالیة عن لثغته ومع ذلك قرأ ما فیها لثغته لا یجوز وعلی قیاس ما ذکرنا فی المسئلة الاولی ان بدل حرفاً بحرف ولم یقدر لا یفسد وبه نأخذ وکذا المستقیم مکان المستقیم الا ان غیره لا یقتدی به۔ اگر اس کے لئے ممکن ہے تو ایسی آیات پڑھے جو ان حروف سے خالی ہوں ورنہ ساکت رہے اور اگر وہ ایسی آیات (جن میں اس کو توتلا پن نہیں ہوتا) پر قادر ہونے کے باوجود وہ آیات پڑھتا ہے جن میں توتلا پن ہوتا ہے تو یہ جائز نہیں، اور پہلے مسئلہ میں ہم نے جو کچھ بیان کیا اس پر قیاس کرتے ہوئے اگر اس نے ایک حرف کو کسی حرف کے ساتھ بدل دیا اور درست پڑھنے پر قادر نہ ہو تو فساد نماز نہیں آئے گا، اسی پر ہمارا عمل ہے، اسی طرح وہ جس نے مستقیمی کی جگہ مستقیم پڑھا، مگر کوئی دوسرا اس کی اقتداء نہ کرے۔ (ت)

غنیہ میں محیط، فتاوٰی حجہ، فتاوٰی خانیہ وغیرہا کی عبارات لکھ کر فرمایا: الحاصل ان اللثغ یجب علیهم الجهد دائماً وصلوتهم جائزة ماداموا علی الجهد، ولکنهم بمنزلة الامیین فی حق من یصح الحرف الذی عجزوا عنه لا یجوز اقتدائه بهم لا تجوز صلوتهم مع الاقتداء به مع قدرتهم وانما تجوز صلاتهم مع قرأة تلك الحروف اذا لم یقدروا علی قرأة ماتجوز به صلاة ممالیس فیه تلك الحروف و اما لو قدروا مع هذا قرأو تلك الحروف فصلوتهم فاسدة ایضاً هذا هو الذی علیه الاعتماد۔ الحاصل توتلا پن رکھنے والے پر ہمیشہ تصحیح حروف کی جدوجہد کرنا ضروری ہے اور جب تک ایسے لوگ جدوجہد کرتے رہیں گے ان کی نمازیں درست ہونگی اور حروف کو صحیح ادا کرنے والے کے حق میں امّی کی طرح ہیں لہذا صحیح ادا کرنے والے کو ان کی اقتداء نہیں کرنی چاہئے اور یہ لوگ صحیح پڑھنے والے کی اقتداء پر قادر ہونے کے باوجود اگر اقتداء ترک کریں تو ان کی نماز نہ ہوگی اور ان کی اپنی نماز ان حروف کی قرات کے ساتھ تبھی ہوگی جب یہ قرآن کے کسی اتنے حصے پر

قادر نہ ہوں جتنے میں نماز جائز ہو جائے اور اس حصے میں وہ حروف بھی نہ ہوں اور اگر اتنی قرات کی قدرت کے باوجود انہی حروف کو پڑھتے ہیں تو بھی ان کی نماز فاسد ہوگی یہ وہ ہے جس پر اعتماد ہے۔(ت)

1 فتاوٰی بزازیہ مع الفتاوٰی الہندیہ ، الثانی عشر زبدۃ القاری، مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور ۲۴/۴

2 غنیہ المستملی شرح منیہ المصلی فصل فی بیان احکام زبدۃ القاری مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۲۸۳

Fatawa Rizvia Volume Six (10) Although reading Tawal-e-Mufassal in Fajr and Zuhr, and Awsat in Asr and Isha is Sunnah, as specified in the texts (Mutoon). (T). However, it is not so necessary that it cannot be abandoned even for a valid reason. It is proven from a Sahih Hadith that hearing the cry of a child whose mother was in the congregation, the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) led the Fajr prayer with only the Mu'awwidhatayn (the last two Surahs). Scholars count the weariness of the people and the bad voice of the Imam among the excuses, meaning if the voice is unpleasant, one should be content with small Surahs so that it is not unpleasant for the followers. It is stated in Durr-e-Mukhtar:

[Table/Box Start] Left (Arabic): In Al-Badai', he chose not to fix a specific quantity, and that it varies according to the time, the people, and the Imam. [Footnote 1] Right (Urdu): In Badai', the lack of a fixed amount is preferred, and the state of recitation differs due to the time, Imam, and the congregation. (T) [Table/Box End]

In Radd al-Muhtar, it says:

[Table/Box Start] Left (Arabic): His saying "and the Imam" means in terms of the beauty or ugliness of his voice. [Footnote 2] Right (Urdu): The saying "and the Imam" means the Imam's voice being good or bad is intended. (T) [Table/Box End]

Therefore, protecting the Great Quran from one's own mistakes and protecting the prayer of the followers from corruption is the greatest excuse and a most important task. (11) Praying behind a Faasiq (sinner) is Makruh (disliked). In Bahr-ul-Raiq, Durr-e-Mukhtar, Ma'raj-ud-Dirayah, Mujtaba, etc., this dislike is considered Tanzihi (mildly disliked), while in Ghunyah, Fatawa Hujjah, Maraqi al-Falah, Fath-ul-Allah al-Mubin, etc., it is considered Tahrimi (prohibitively disliked), and this is also what the discourse of Imam Zayla'i implies.

[Table/Box Start] Left (Arabic): As we have explained in our treatise "An-Nahy al-Akid 'an as-Salat wara' 'Adi at-Taqlid" and our other writings. Right (Urdu): As we have detailed in our treatise "An-Nahy al-Akid 'an as-Salat wara' 'Adi at-Taqlid" and other writings. (T) [Table/Box End]

In Radd al-Muhtar, it says:

[Table/Box Start] Left (Arabic): He is like an innovator; his leading (prayer) is disliked in every situation. Rather, it is stated in Sharh al-Munyah that... Right (Urdu): A Faasiq is like an innovator; his leading prayer (imamate) is Makruh in every case, rather it is stated in Sharh al-Munyah that his... [Table/Box End]

1. Durr-e-Mukhtar, Chapter 'Vayajhar al-Imam', published by Mujtabai Delhi, 1/80.
2. Radd al-Muhtar, Chapter 'Vayajhar al-Imam', published by Mustafa al-Babi Egypt, 1/200.

फतावा रज़विया, खंड छह (10) हालाँकि फज्र और ज़ुहर में तवाल-ए-मुफस्सल और अस्र और ईशा में अवसात पढ़ना सुन्नत है, जैसा कि मतून (मूल पाठ) में स्पष्ट किया गया है। (त)। लेकिन यह इतना आवश्यक नहीं है कि किसी वैध कारण से भी इसे न छोड़ा जाए। सही हदीस से प्रमाणित है कि एक बच्चा जिसकी माँ जमात (नमाज़) में शामिल थी, उसके रोने की आवाज़ सुनकर हुज़ूर पुर नूर रहमत-ए-आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फज्र की नमाज़ केवल मुअव्विज़तैन (अंतिम दो सूरह) के साथ पढ़ाई। विद्वान यहाँ उज़्रों (कारणों) में लोगों की थकान और इमाम की आवाज़ की ख़राबी को भी गिनते हैं, यानी यदि आवाज़ अरुचिकर हो, तो छोटी सूरतों पर संतोष करना चाहिए ताकि मक़्तदियों (अनुयायियों) को बुरा न लगे। दुर्रे मुख्तार में है:

[बॉक्स/तालिका प्रारंभ] बाएँ(अरबी): अल-बदाइ' में, उन्होंने एक विशिष्ट मात्रा तय न करने को चुना, और यह कि यह समय, लोगों और इमाम के अनुसार बदलता रहता है। [पादलेख 1] दाएँ(उर्दू): बदाइ' में मात्रा निर्धारित न करने को पसंद किया गया है और यह समय, इमाम और कौम (जनता) के कारण किराअत (पाठ) की स्थिति अलग हो जाती है। (त) [बॉक्स/तालिका अंत]

रद्द-उल-मुहतार में है:

[बॉक्स/तालिका प्रारंभ] बाएँ(अरबी): उनका कहना "और इमाम" का अर्थ उसकी आवाज़ की सुंदरता या कुरूपता के संदर्भ में है। [पादलेख 2] दाएँ(उर्दू): 'और इमाम' का अर्थ इमाम की आवाज़ का अच्छा या बुरा होना मुराद (उद्देश्य) है। (त) [बॉक्स/तालिका अंत]

इसलिए कुरान-ए-अज़ीम को अपनी गलतियों से बचाना और अपने मक़्तदियों की नमाज़ को बिगड़ने (फ़साद) से सुरक्षित रखना तो सबसे बड़ा उज़्र और अत्यंत महत्वपूर्ण कार्य है। (11) फासिक़ (पापी) के पीछे नमाज़ पढ़ना मकरूह (नापसंद) है। बहर-उल-रैक़, दुर्रे मुख्तार, मेराज-उद-दिराया, मुजतबा आदि में इस मकरूह होने को तंज़ीही (हल्का नापसंद) माना गया है, जबकि गुनियाह, फ़तावा हुज्जह, मराक़ी अल-फ़लाह, फ़त-उल-अल्लाह अल-मुबीन आदि में इसे तहरीमी (कठोर नापसंद) ठहराया गया है, और इमाम ज़ैलाई के कलाम (वार्ता) का सार भी यही है।

[बॉक्स/तालिका प्रारंभ] बाएँ(अरबी): जैसा कि हमने अपने रिसाले "अन-नही अल-अकीद अन अस-सलात वरा अदि अत-तक्लीद" और अपने अन्य लेखों में स्पष्ट किया है। दाएँ(उर्दू): जैसा कि हमने इसकी व्याख्या अपने रिसाले 'अन-नही अल-अकीद अन अस-सलात वरा अदि अत-तक्लीद' और अन्य लेखों में की है। (त) [बॉक्स/तालिका अंत]

रद्द-उल-मुहतार में है:

[बॉक्स/तालिका प्रारंभ] बाएँ(अरबी): वह एक बिदअती (नवाचारी) की तरह है; उसका नेतृत्व (नमाज़ में) हर हाल में मकरूह है। बल्कि शरह अल-मुनिया में उल्लेख है कि... दाएँ(उर्दू): फासिक़ बिदअती की तरह है उसकी इमामत हर हाल में मकरूह है, बल्कि शरह अल-मुनिया में है कि उसकी... [बॉक्स/तालिका अंत]

---

1. दुर्रे मुख्तार, अध्याय 'वयजहर अल-इमाम', मुजतबाई दिल्ली द्वारा प्रकाशित, 1/80।
2. रद्द-उल-मुहतार, अध्याय 'वयजहर अल-इमाम', मुस्तफा अल-बाबी मिस्र द्वारा प्रकाशित, 1/200।

पृष्ठ 434 का 736

فتاوی رضویہ جلد ششم (۱۰) فجر و ظہر میں طوال مفصل، عصر و عشاء میں اوساط کا پڑھنا اگرچہ سنّت ہے کما نص علیہ فی المتون (جیسا کہ اس پر متون میں تصریح ہے۔ ت) مگر نہ ایسا ضروری عذر سے بھی ترک نہ کیا جائے۔ صحیح حدیث سے ثابت کہ ایک بچہ جس کی ماں شریک جماعت تھیں اس کے رونے کی آواز سن کر حضور پُر نور رحمت عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فجر کی نماز صرف معوذتین سے پڑھائی۔ علماء یہاں منجملہ اعذار ملال قوم و بد آواز ی امام تک شمار کرتے ہیں کہ کریہہ الصوت ہو تو چھوٹی سورتوں پر قناعت کرے تاکہ مقتدیوں کو ناگوار نہ ہو۔ درمختار میں ہے:

[Box Start] Left (Arabic): اختار فی البدائع عدم التقدیر وانہ یختلف بالوقت والقوم والامام^1 Right (Urdu): بدائع میں مقدار مقرر نہ کرنے کو پسند کیا ہے اور یہ وقت ، امام اور قوم کے باعث قرآت کا حال مختلف ہو جاتا ہے۔ (ت) [Box End]

ردالمحتار میں ہے:

[Box Start] Left (Arabic): قولہ والامام ای من حیث حسن صوتہ وقبحہ^2 Right (Urdu): قولہ والامام یعنی اس سے امام کی آواز کا اچھا یا برا ہونا مراد ہے۔ (ت) [Box End]

تو قرآن عظیم کو اپنے اغلاط اور اپنی مقتدیوں کی نماز کو فساد سے محفوظ رکھنا تو اعظم اعذار اور اہم کار ہے۔ (۱۱) فاسق کے پیچھے نماز مکروہ ہے بحر الرائق و درمختار و معراج الدرایہ و مجتبی وغیرہا میں اس کراہت کو تنزیہی اور غنیہ و فتاوی حجہ و مراقی الفلاح و فتح اللہ المبین وغیرہا میں تحریمی ٹھہرایا اور یہی کلام امام زیلعی کا مفاد،

[Box Start] Left (Arabic): کما بیناہ فی رسالتنا النھی الاکید عن الصلوۃ وراء عدی التقلید وغیرھا من تحریراتنا۔ Right (Urdu): جیسا کہ ہم نے اس کی تفصیل اپنے رسالہ النہی الاکید عن الصلوۃ وراء عدی التقلید اور دیگر تحریرات میں کی ہے۔ (ت) [Box End]

ردالمحتار میں ہے:

[Box Start] Left (Arabic): ھو کالمبتدع تکرہ امامتہ بکل حال بل مشی فی شرح المنیۃ علی ان Right (Urdu): فاسق بدعتی کی طرح ہے اس کی امامت ہر حال میں مکروہ ہے ، بلکہ شرح المنیہ میں ہے کہ اس [Box End]

---

1۸ درمختار فصل ویجہر الامام مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱/۸۰ 2۸ ردالمحتار فصل ویجہر الامام مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/۲۰۰

Fatawa Razawiya - Volume 6 "The dislike of putting him forward is a dislike of prohibition for what we have mentioned." 1 His precedence is macrooh-e-tahreemi (prohibitively disliked) based on the evidence we have mentioned. (T)

(12) Congregation is among the important obligations and the greatest symbols of Islam. Therefore, congregation should not be abandoned due to the impiety (fisq) of the Imam. For the performance of the congregation, one should pray behind him and repeat the prayer to remove the dislike.

In *Al-Fath* from *Al-Muhit*, in *Al-Bahr* from *Al-Fatawa*, and in *Ad-Dur* from *An-Nahr* from *Al-Muhit*: "praying behind a sinner (fasiq) or an innovator (mubtadi') gains the virtue of the congregation." 2 In *Radd al-Muhtar*, it is stated that this shows that praying behind them is better than praying alone, etc. Similar is in *Al-Bahr* from *As-Siraj* regarding the sinner, and in *Al-Fath*. The truth is the detail between that dislike being macrooh-e-tahreemi, in which case repetition is obligatory, or tanzeehi (lesser dislike), in which case repetition is recommended.

From *Muhit* in *Fath*, from *Fatawa* in *Bahr*, and in *Durr-e-Mukhtar* from *Nahr* with reference to *Muhit*, it is stated that by performing prayer following a sinner or an innovator, one gets the reward of congregation. In *Radd al-Muhtar*, it is said that the benefit obtained from this is that praying following them is better than praying alone, etc. And in *Bahr*, with reference to *Ma'iraj*, the same opinion is held regarding a sinner, and similarly in *Fath al-Qadeer*. The truth is that there is a detail in this: if it is macrooh-e-tahreemi, then repetition is mandatory, and if it is tanzeehi, then repetition is recommended. (T)

Moreover, when there is no one else capable of leadership (Imamat) except him, nor is a congregation available elsewhere, then there will be no dislike in praying behind him either.

In *Ad-Dur*: "This is if others are found; otherwise, there is no dislike." A discussion in *Al-Bahr*. 4 Al-Shami said: "You have already known that it is in accordance with what is narrated from *Al-Ikhtiyar* and others." 5

In *Durr-e-Mukhtar*, it is stated that this dislike is only when another Imam besides them is available; otherwise, there is no dislike. There is a similar discussion in *Bahr*. Imam Shami said that you have realized this is in accordance with what is narrated from *Al-Ikhtiyar* etc. (T)

When these issues became known, the ruling of the matter was revealed. Praying behind both Zaid and Bakr is at least macrooh for sure. Therefore, if a third person capable of Imamat is found who is free from dislike, follow him in prayer; and if there is no one else, then if...

1. Radd al-Muhtar, Chapter of Imamat, Printed by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/414
2. Durr-e-Mukhtar, Chapter of Imamat, Printed by Matba' Mujtabai, Delhi, 1/83
3. Radd al-Muhtar, Chapter of Imamat, Printed by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/415
4. Durr-e-Mukhtar, Chapter of Imamat, Printed by Mujtabai, Delhi, 1/83
5. Radd al-Muhtar, Chapter of Imamat, Printed by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/415

फ़तावा रज़विया - छठा खंड "उनकी अगुवाई नापसंद है, उस निषेध की वजह से जो हमने ज़िक्र किया है" 1 उनका आगे किया जाना मकरूह-ए-तहरीमी (कड़ी नापसंदगी) है उस दलील के आधार पर जो हमने ज़िक्र कर दी। (त)

(१२) जमात महत्वपूर्ण अनिवार्यताओं और इस्लाम के महान प्रतीकों में से है, अतः इमाम की अनैतिकता (फ़िस्क़) के कारण जमात नहीं छोड़नी चाहिए। जमात अदा करने के लिए उसके पीछे नमाज़ पढ़ लें और नापसंदगी (कराहियत) दूर करने के लिए उसे दोहरा लें।

'अल-फ़तह' में 'अल-मुहीत' से, 'अल-बहर' में 'अल-फ़तावा' से और 'अद-दुर' में 'अन-नहर' के माध्यम से 'अल-मुहीत' से है: "फ़ासिक़ (पापी) या मुब्तदी (नवाचारी) के पीछे नमाज़ पढ़ने से जमात का फ़ज़्ल (पुण्य) प्राप्त हो जाता है।" 2 'रद्दुल मुहतार' में स्पष्ट किया गया है कि इससे यह लाभ हुआ कि उनके पीछे नमाज़ पढ़ना अकेले पढ़ने से बेहतर है आदि। इसी तरह 'अल-बहर' में 'अस-सिराज' से फ़ासिक़ के बारे में और 'अल-फ़तह' में है। सच यह है कि इसमें विवरण है कि यदि वह कराहियत 'मकरूह-ए-तहरीमी' है तो दोहराना अनिवार्य (वाजिब) है, और यदि 'तनज़ीही' (हल्की नापसंदगी) है तो दोहराना मुस्तहब (पसंदीदा) है।

'फ़तह' में 'मुहीत' से, 'बहर' में 'फ़तावा' से और 'दुर्रे मुख़्तार' में 'नहर' के माध्यम से 'मुहीत' के हवाले से है कि फ़ासिक़ या मुब्तदी की इक़्तिदा (अनुसरण) में नमाज़ अदा करने से जमात का सवाब (पुण्य) मिल जाता है। 'रद्दुल मुहतार' में है कि इससे यह फ़ायदा हासिल हुआ कि उनकी इक़्तिदा में तनहा नमाज़ पढ़ने से बेहतर है आदि और 'बहर' में 'मेराज' के हवाले से फ़ासिक़ के बारे में यही राय है और 'फ़तह अल-क़दीर' में भी इसी तरह है। सच यह है कि इसमें विस्तार है: यदि मकरूह-ए-तहरीमी है तो दोहराना वाजिब है, और अगर तनज़ीही है तो दोहराना मुस्तहब है। (त)

बल्कि जब उसके सिवा न कोई इमामत के क़ाबिल हो न दूसरी जगह जमात मिले तो उसके पीछे कराहियत भी नहीं रहेगी।

'अद-दुर' में है: "यह तब है जब उनके अलावा कोई और मिले, अन्यथा कोई कराहियत नहीं है।" 'बहर' में एक चर्चा है। 4 इमाम शामी ने फ़रमाया कि आपने जान लिया कि यह 'अल-इख़्तियार' आदि से नक़ल (वर्णित) के अनुकूल है। 5

'दुर्रे मुख़्तार' में है कि यह कराहियत उस वक़्त है जब उनके अलावा कोई दूसरा इमाम मयस्सर (उपलब्ध) हो, वरना कोई कराहियत नहीं, 'बहर' में इसी तरह चर्चा है। इमाम शामी ने फ़रमाया कि आपने जान लिया कि यह 'इख़्तियार' आदि से मंक़ूल के मुवाफ़िक़ (अनुकूल) है। (त)

जब ये मसले मालूम हो गए तो मसले का हुक्म साफ़ हो गया। ज़ैद और बक्र दोनों के पीछे नमाज़ कम से कम मकरूह तो ज़रूर है, लिहाज़ा अगर कोई तीसरा इमामत के क़ाबिल कराहियत से मुक्त मिले तो उसकी इक़्तिदा करें, और अगर कोई न हो तो अगर...

1. रद्दुल मुहतार, बाबुल इमामा, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, १/४१४
2. दुर्रे मुख़्तार, बाबुल इमामा, मतबा मुजतबाई दिल्ली, १/८३
3. रद्दुल मुहतार, बाबुल इमामा, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, १/४१५
4. दुर्रे मुख़्तार, बाबुल इमामा, मतबा मुजतबाई दिल्ली, १/८३
5. रद्दुल मुहतार, बाबुल इमामा, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, १/४१५ पृष्ठ ७३६ का ४३५

فتاوٰی رضویہ - جلد ششم کراھة تقدیمه کراھة تحریم لما ذکرنا 1- کی تقدیم مکروہ تحریمی ہے اس دلیل کی بنا پر جو ہم نے ذکر کردی۔(ت)

(۱۲) جماعت اہم واجبات و اعظم شعائر اسلام سے ہے ، تو فسق امام کے سبب ترک جماعت نہ چاہئے ادائے جماعت کے لئے اس کے پیچھے پڑھ لیں اور دفع کراہت کے لئے اعادہ کرلیں۔

في الفتح عن المحیط وفی البحر عن الفتاوی وفي الدرعن النهر عن المحیط ، صلی خلف فاسق او مبتدع نال فضل الجماعة 2 اه فی ردالمحتار افاد ان الصلوة خلفها اولی من الانفراد 3 الخ ومثله في البحر عن السراج في الفاسق وفی الفتح . الحق التفصیل بین کون تلك الکراهة کراهة تحریم فتجب الاعادة او تنزیه فتستحب۔

فتح میں محیط سے، بحر میں فتاوی سے اور در مختار میں نہر سے محیط کے حوالے سے ہے فاسق یا بدعتی کی اقتدا میں نماز ادا کرنے سے جماعت کا ثواب مل جاتا ہے اھ ردالمختار میں ہے کہ اس سے یہ فائدہ حاصل ہوا کہ ان کی اقتدا میں تنہا نماز پڑھنے سے اولی ہے الخ اور بحر میں معراج کے حوالے سے فاسق کے بارے میں یہی رائے ہے اور فتح القدیر میں بھی اسی طرح ہے حق یہ ہے کہ اس میں تفصیل ہے اگر مکروہ تحریمی ہے تو اعادہ واجب، اور اگر تنزیہ ہے تو اعادہ مستحب ہے۔(ت)

بلکہ جب اس کے سوا نہ کوئی امامت کے قابل ہو نہ دوسری جگہ جماعت ملے تو اس کے پیچھے کراہت بھی نہ رہے گی

في الدرهذا ان وجد غیرهم والا فلا کراهة ، بحر بحثاً 4 اه قال الشامي قد علمت انه موافق للمنقول عن الاختیار وغیره 5 ۔

در مختار میں ہے کہ یہ کراہت اس وقت ہے جب ان کے علاوہ کوئی دوسرا امام ان سے میسر ہو ورنہ کوئی کراہت نہیں، بحر میں اسی طرح بحث ہے اھ امام شامی نے فرمایا کہ آپ نے جان لیا کہ یہ اختیار وغیرہ سے منقول کے موافق ہے۔(ت)

جب یہ مسائل معلوم ہو گئے تو حکم مسئلہ منکشف ہو گیا۔ زید و بکر دونوں کے پیچھے نماز کم سے کم مکروہ تو ضرور ہے، پس اگر کوئی تیسرا ا قابل امامت خالی از کراہت ملے تو اس کی اقتدا کریں، اور اگر کوئی نہ ہو تو اگر

1 ردالمحتار، باب الامامۃ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/ ۴۱۴ 2 در مختار باب الامامۃ مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۸۳ 3 ردالمحتار باب الامامۃ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/ ۴۱۵ 4 در مختار باب الامامۃ مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱/ ۸۳ 5 ردالمحتار باب الامامۃ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/ ۴۱۵ Page 435 of 736

Fatawa Razawiyya Volume 6 Small surahs which Zaid remembers clearly and correctly. If by sufficing on them, those flaws do not occur from Zaid, and he can also correctly pronounce letters like Seen and Saad etc., then it is obligatory, rather necessary, that he should always be content with those surahs and never recite anything else besides them which might reach the point of corruption, let alone dislikedness. And when those flaws are removed by this strategy, then in this case, keep Zaid as the leader (Imam) because restricting to small surahs in every prayer may be against the Sunnah but it is due to a strong excuse, and an excuse removes dislikedness. Contrary to Bakr, behind whom because of sinfulness (fisq) there is dislikedness, rather severe dislikedness. So, Zaid is more worthy of leadership. If Zaid does not remember any surah clearly and even in sufficing with short ones (Qisar) the same flaws occur though they are fewer, then he should never be made an Imam. Because when someone has the habit of pronouncing a heavy letter as light, a light one as heavy, doubled as single, single as doubled, 'seen' as 'saad', and 'saad' as 'seen', these things will surely occur even in places where according to the Imams of our school of thought (may Allah be pleased with them), the prayer would become completely void. It makes no sense to say that someone habitual in errors would only make mistakes where meanings don't change and wouldn't do so where meanings get corrupted. Error is not by one's intent or choice that he makes it where he wants and avoids it where he wants. Nor can an unlearned person understand where the meaning will be ruined and where not, especially when the change is between 'seen' and 'saad'. If it's based on incapacity, the incapacitated person will inevitably not recite correctly somewhere. In this scenario, prayer behind him is corrupt and void according to the original school of thought and the correction of verified Imams. And in the state of incapacity, according to the majority of Imams, he has no qualification at all for leading a correct reciter; rather, while a sinful person is present, his own prayer will not be valid because, despite having the power, he abandoned following him. This is contrary to Bakr, who although sinful, if he is a correct reciter, then prayer behind him is correct by the consensus of the companions. As for the dislikedness, its remedy is possible through repetition; rather, when no one else is capable of leadership, then even the dislikedness disappears, as excuse and necessity negate dislikedness. And for this reason, the best and most important thing is that Bakr should fear his Lord (Glorified and Exalted is He), have mercy on his state, and repent from sinfulness and disobedience to the Compelling King so that prayer behind him becomes beloved and appropriate at the time. If there is no fear of the Day of Judgment, then there should be a sense of honor about not getting the presidency in

this Islamic assembly. If a person goes to a gathering of worldly people, he will try that no action of his is such that people consider him unfit to be seated in a good place. And if in some assembly he is caught by the hand and removed from the president's seat, how much honor would be felt and how much regret would there be. So this is the presidency in the court of Allah (Exalted and Glorified). Why not bring honor into play here, so that the functionaries of the Sultanate's court do not catch him by the hand and remove him from the head seat? May Allah Almighty grant the companion of good success. Amen, and Allah Almighty knows best. Issue number 591: From Rampur state, Maulvi Imdad Hussain, brother of Maulana Irshad Hussain Sahib 1294 AH. What do the scholars of religion say on this issue: if an Imam abandons a recommended act (Mustahab), is its abandonment obligatory for the followers by the rule of following (mutaba'at)? The reasoning is that following is obligatory (Farz) while that act is recommended (Mustahab), and there is a universal rule that...

फ़तावा रज़विया जिल्द शशम छोटी-छोटी बाज़ सूरतें जो ज़ैद को ख़ूब साफ़ व सही याद हों। उन्हीं पर इक्तिफ़ा करने में ज़ैद से वो ख़राबियाँ वाक़े न होती हों, उन सीन व साद वग़ैरहुमा हुरूफ़ भी ठीक अदा कर लेता हो, तो वाजिब बल्कि लाज़िम है कि हमेशा उन्हीं सूरतों पर क़नाअत करे उनके सिवा और हरगिज़ हरगिज़ न पढ़े जिनमें कराहत दरकिनार नौबत ता-ब-फ़साद पहुँचे और जब इस तदबीर से वो ख़राबियाँ ज़ाइल हों तो इस तक़दीर पर ज़ैद ही की इमामत रखें कि हर नमाज़ में छोटी सूरतों पर इक्तिसार तर्कए-सुन्नत सही मगर ब-उज़्र-ए-क़वी है, और उज़्र दाफ़ेए-कराहत। ब-ख़िलाफ़ बक्र कि उसके पीछे ब-सबब-ए-फ़िस्क़ कराहत बल्कि सख़्त कराहत है, तो ज़ैद ही औला बिल-इमामत है। अगर कोई सूरत ज़ैद को साफ़ नहीं याद क़िसार पर इक्तिसार में भी वही ख़राबियाँ पेश आती हैं अगरचे कम हों तो उसे हरगिज़ इमाम न किया जाए, कि जब बड़े पर खड़ा, मुख़फ़्फ़फ़ को मुशद्दद, मुशद्दद को मुख़फ़्फ़फ़, स को स़, स़ को स पढ़ने की आदत है तो ये उमूर ऐसी जगह भी ज़रूर वाक़े होंगे जिनसे हमारे अइम्मा-ए-मज़हब रज़ियल्लाहु तआला अन्हुम के नज़दीक नमाज़ बिल्कुल बातिल हो जाएगी। इसके कोई मानी नहीं कि अग़लात का आदी वहीं ग़लती करे जहाँ मानी न बदलें और जहाँ फ़साद-ए-मानी होता वहाँ न करता हो, ग़लती अपने क़स्द व इख़्तियार की नहीं जहाँ चाही की जहाँ चाही न की न बे-इल्म आदमी ये समझ सकता है कि कहाँ मानी बिगड़ेंगे कहाँ नहीं, ख़ुसूसन जबकि स व स़ की तब्दीली। बर-बनाए इज्ज़ हो कि आजिज़ लाजरम कहीं ठीक न पढ़ेगा, इस तक़दीर पर उसके पीछे नमाज़ अस्ल मज़हब और तस़्हीह-ए-अइम्मा-ए-मुहक़्क़िक़ीन पर फ़ासिद व बातिल है, और ब-हालत-ए-इज्ज़ तो जमहूर अइम्मा के नज़दीक इमामत-ए-सही ख़्वाँ की इसमें अस्लन लियाक़त नहीं बल्कि फ़ासिक़ के होते हुए उसकी ख़ुद अपनी नमाज़ न होगी कि बा-वस्फ़-ए-क़ुदरत उसने उसकी इक्तिदा छोड़ दी, ब-ख़िलाफ़ बक्र कि अगरचे फ़ासिक़ सही मगर जबकि सही ख़्वाँ है तो उसके पीछे नमाज़ ब-इत्तिफ़ाक़-ए-अस़हाब सही है। रही कराहत उसका इलाज इआदा से मुमकिन बल्कि जब दूसरा कोई क़ाबिल-ए-इमामत नहीं तो कराहत भी नहीं कि उज़्र व ज़रूरत नाफ़ी-ए-कराहत हैं। और इसी सबब से अहसन व अहम ये कि बक्र अपने रब जल्ल व अला से डरे अपने हाल पर रहम करे फ़िस्क़ व ना-फ़रमानी-ए-बादशाह-ए-क़हहार से ताइब हो कि उसके पीछे नमाज़ बर-वक़्त महबूब व मुनासिब हुआ अगर रोज़-ए-क़यामत का अंदेशा नहीं तो इस मज्लिस-ए-इस्लामी में सदारत न मिलने की ग़ैरत चाहिए। आदमी अगर दुनिया वालों के किसी जलसा में जाए तो कोशिश करेगा कि कोई हरकत ऐसी न हो जो लोग अच्छी जगह बिठाने के क़ाबिल न समझें और अगर किसी मज्लिस में सदर की जगह से हाथ पकड़ कर उठा दिया जाए किस क़दर ग़ैरत आएगी नदामत होगी तो ये अल्लाह अज़्ज़वजल्ल के दरबार में सदर मक़ाम है। यहाँ क्यों न ग़ैरत को काम में

लाए कि कारकुनान-ए-बारगाह-ए-सुल्तानी सदर जगह से हाथ पकड़ कर उठा न दें, अल्लाह तआला तौफ़ीक़-ए-ख़ैर रफ़ीक़ अता फ़रमाए। आमीन वल्लाहु तआला आलम। मसला नंबर 591: अज़ रियासत रामपुर मौलवी इमदाद हुसैन बिरादर मौलाना इरशाद हुसैन साहब 1294 हि. क्या फ़रमाते हैं उलमा-ए-दीन इस मसला में कि अगर इमाम कोई मुस्तहब तर्क करे तो क्या मुक्तदियों पर उसका तर्क ब-हुक्म-ए-मुताबअत वाजिब होता है और दलील ये कि मुताबअत फ़र्ज़ है और वो फ़ेअल मुस्तहब, और क़ाइदा-ए-कुल्लिया है कि...

فتاوی رضویہ جلد ششم چھوٹی چھوٹی بعض سورتیں جو زید کو خوب صاف و صحیح یاد ہوں۔ انہیں پر اکتفا کرنے میں زید سے وہ خرابیاں واقع نہ ہوتی ہوں، ان سین و صاد وغیرہما حروف بھی ٹھیک ادا کر لیتا ہو، تو واجب بلکہ لازم ہے کہ ہمیشہ انھیں سورتوں پر قناعت کرے ان کے سوا اور ہرگز ہرگز نہ پڑھے جن میں کراہت در کنار نوبت تابہ فساد پہنچے اور جب اس تدبیر سے وہ خرابیاں زائل ہوں تو اس تقدیر پر زید ہی کی امامت رکھیں کہ ہر نماز میں چھوٹی سورتوں پر اقتصار ترک سنت سہی مگر بعذر قوی ہے، اور عذر دافع کراہت۔ بخلاف بکر کہ اس کے پیچھے بسبب فسق کراہت بلکہ سخت کراہت ہے، تو زید ہی اولیٰ بامامت ہے۔ اگر کوئی سورت زید کو صاف نہیں یاد قصار پر اقتصار میں بھی وہی خرابیاں پیش آتی ہیں اگرچہ کم ہوں تو اسے ہر گز امام نہ کیا جائے، کہ جب بڑے پر کھڑا، مخفف کو مشدد، مشدد کو مخفف، س کو ص، ص کو س پڑھنے کی عادت ہے تو یہ امور ایسی جگہ بھی ضرور واقع ہوں گے جن سے ہمارے ائمہ مذہب رضی اللہ تعالٰی عنہم کے نزدیک نماز بالکل باطل ہو جائے گی۔ اس کے کوئی معنی نہیں کہ اغلاط کا عادی وہیں غلطی کرے جہاں معنی نہ بدلیں اور جہاں فساد معنی ہوتا وہاں نہ کرتا ہو، غلطی اپنے قصد و اختیار کی نہیں جہاں چاہی کی جہاں چاہی نہ کی نہ بے علم آدمی یہ سمجھ سکتا ہے کہ کہاں معنی بگڑیں گے کہاں نہیں، خصوصاً جبکہ س و ص کی تبدیلی۔ بربنائے عجز ہو کہ عاجز لاجرم کہیں ٹھیک نہ پڑھے گا، اس تقدیر پر اس کے پیچھے نماز اصل مذہب اور تصحیح ائمہ محققین پر فاسد و باطل ہے، اور بحالت عجز تو جمہور ائمہ کے نزدیک امامت صحیح خواں کی اس میں اصلاً لیاقت نہیں بلکہ فاسق کے ہوتے ہوئے اس کی خود اپنی نماز نہ ہوگی کہ باوصف قدرت اس نے اس کی اقتدا چھوڑ دی، بخلاف بکر کہ اگرچہ فاسق سہی مگر جبکہ صحیح خواں ہے تو اس کے پیچھے نماز باتفاق اصحاب صحیح ہے۔ رہی کراہت اُس کا علاج اعادہ سے ممکن بلکہ

جب دوسرا کوئی قابل امامت نہیں تو کراہت بھی نہیں کہ عذر و ضرورت نافی کراہت ہیں۔ اور اسی سبب سے احسن واہم یہ کہ بکر اپنے رب جل وعلا سے ڈرے اپنے حال پر رحم کرے فسق و نافرمانی بادشاہ قہار سے تائب ہو کہ اس کے پیچھے نماز بر وقت محبوب و مناسب ہوا اگر روز قیامت کا اندیشہ نہیں تو اس مجلس اسلامی میں صدارت نہ ملنے کی غیرت چاہیے۔ آدمی اگر دنیا والوں کے کسی جلسہ میں جائے تو کوشش کرے گا کہ کوئی حرکت ایسی نہ ہو جو لوگ اچھی جگہ بٹھانے کے قابل نہ سمجھیں اور اگر کسی مجلس میں صدر کی جگہ سے ہاتھ پکڑ کر اٹھا دیا جائے کس قدر غیرت آئے گی ندامت ہوگی تو یہ اللہ عزوجل کے دربار میں صدر مقام ہے۔ یہاں کیوں نہ غیرت کو کام میں لائے کہ کارکنان بارگاہ سلطانی صدر جگہ سے ہاتھ پکڑ کر اٹھا نہ دیں، اللہ تعالیٰ توفیق خیر رفیق عطا فرمائے۔ آمین واللہ تعالیٰ اعلم مسئلہ نمبر ۵۹۱: از ریاست رامپور مولوی امداد حسین برادر مولانا ارشاد حسین صاحب ۱۲۹۴ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ اگر امام کوئی مستحب ترک کرے تو کیا مقتدیوں پر اس کا ترک بحکم متابعت واجب ہوتا ہے اور دلیل یہ کہ متابعت فرض ہے اور وہ فعل مستحب، اور قاعدہ کلیہ ہے کہ

Fatawa Razawiya, Volume 6

A recommended (Mustahab) act cannot obstruct an obligatory (Farz) one. Explain and be rewarded.

The Answer: Following the Imam in every action and omission is not absolutely obligatory or mandatory, let alone sunnah or recommended; rather, in some cases, it is contrary to what is better (Khilaf-e-Aula), and in some, it is purely impermissible.

[Table content] Arabic: In Radd al-Muhtar, it is stated: Following the Imam is not obligatory, but rather it is mandatory in the obligatory and mandatory physical acts, sunnah in the sunnah acts, and similarly in other than those when it conflicts with a sunnah. It is contrary to the better way when it conflicts with another mandatory act, or when it pertains to omitting something whose performance does not necessitate opposing the Imam in a mandatory physical act, such as raising the hands for the opening Takbir and its likes. It is impermissible if it is in an innovative act, a revoked act, or something that has no connection with prayer at all, etc. Urdu: It is in Radd al-Muhtar that following the Imam is not obligatory (Farz) but mandatory (Wajib) in obligatory and mandatory actions, Sunnah in Sunnahs, and similarly in others when a Sunnah is contradicted. Following becomes contrary to the better way (Khilaf-e-Aula) when it conflicts with another mandatory act, or in omitting something whose performance does not entail opposing the Imam in a mandatory action, for example, raising hands for Takbir-e-Tahrima and its likes. Following is impermissible in a bid'ah (innovation), a revoked act, or an action that has no connection with prayer at all, etc. (T)

Furthermore, if performing a recommended act omitted by the Imam does not result in opposing the Imam in a mandatory action, then performing it is better and more appropriate. That recommended act will not even lose its status of being recommended, let alone become forbidden or even mildly disliked due to not following. If the Imam does not observe the etiquette of where to look, should the follower also keep staring at the Qibla wall with wide eyes? If the Imam keeps a wide gap between his feet while standing, should the follower also stand with legs spread apart? If they do not do so, will they be considered abandoners of a mandatory act and sinners by the rule of following? No sane person would say so, let alone a scholar. (No sane person can say this, let alone a learned one. T). Things like wearing a turban, using a miswak, etc., fall into this category: "and other etiquettes and good deeds whose performance does not necessitate opposing the Imam in a mandatory

action". (Besides those etiquettes and good deeds whose fulfillment does not require opposing the Imam in a mandatory act. T). From here, the flaw in this argument becomes apparent, and this established rule of conflict between mandatory and obligatory and...

1 Radd al-Muhtar, important point regarding research on following the Imam, published by Mustafa al-Babi Egypt 1/348.

फतावा रज़विया, जिल्द छठी

मुस्तहब (पसंदीदा) काम फ़र्ज़ में रुकावट नहीं बन सकता। बयान करें, आपको सवाब मिलेगा।

जवाब: हर काम और छोड़ने में इमाम की पैरवी करना मुतलक़न फ़र्ज़ और वाजिब तो क्या, मसनून और मुस्तहब भी नहीं है, बल्कि कुछ सूरतों में खिलाफ़-ए-औला (बेहतर के ख़िलाफ़) और कुछ में महज़ नाज़ायज़ होती है।

[तालिका सामग्री] अरबी: रद्द-अल-मुह्तार में है: इमाम का अनुसरण फ़र्ज़ नहीं है बल्कि फ़राइज़ और क्रियात्मक वाजिबात में वाजिब है, सुन्नत में सुन्नत है, और इसी तरह इनके अलावा में जब सुन्नत के साथ टकराव हो। यह खिलाफ़-ए-औला है जब इसके साथ किसी दूसरे वाजिब का टकराव हो जाए, या यह ऐसी चीज़ के छोड़ने में हो जिसके करने से क्रियात्मक वाजिब में इमाम का विरोध आवश्यक न हो, जैसे तक़बीर-ए-तहरीमा के लिए हाथ उठाना और उसके जैसे अन्य कार्य। यह नाज़ायज़ है यदि यह किसी बिदअत वाले काम में हो, या मनसूख़ (रद्द) काम में हो, या ऐसी चीज़ में हो जिसका नमाज़ से बिल्कुल कोई संबंध न हो, इत्यादि। उर्दू: रद्द-अल-मुह्तार में है कि इमाम की पैरवी फ़र्ज़ नहीं है, बल्कि फ़राइज़ और वाजिबात-ए-फ़ेलिया (क्रियात्मक अनिवार्यताओं) में वाजिब, सुन्नत में सुन्नत, और इसी तरह इनके अलावा में सुन्नत के टकराव की स्थिति में है। पैरवी खिलाफ़-ए-औला है जब उसके साथ किसी दूसरे वाजिब का टकराव हो जाए, या ऐसी चीज़ के छोड़ने में जिससे इमाम की फ़ेल-ए-वाजिब में मुख़ालिफ़त लाज़िम न आए, जैसे तक़बीर-ए-तहरीमा के लिए हाथ उठाना और उसकी दूसरी मिसालें। और बिदअत, मनसूख़ (रद्द) या ऐसे काम में पैरवी नाज़ायज़ है जिसका नमाज़ से कोई संबंध न हो, इत्यादि। (त)

फिर अगर इमाम द्वारा छोड़े गए उस मुस्तहब काम को करने से किसी वाज़िब फ़ेल में इमाम की मुख़ालिफ़त लाज़िम न आए, तो उसका करना ही बेहतर और ज़्यादा मुनासिब होगा। और वह मुस्तहब अपने दर्जे से भी नहीं गिरेगा, कि पैरवी न करने की वजह से हराम या मकरूह हो जाए। क्या अगर इमाम नज़रों के अदब का ख़याल न रखे, तो मुक्तदी भी आँखें फाड़कर क़िबला की दीवार को देखते रहें? क्या अगर इमाम क़याम की हालत में पैरों में ज़्यादा फ़ासला रखे, तो मुक्तदी भी टांगें फैलाकर खड़े रहें? क्या अगर वे ऐसा न करें, तो पैरवी के हुक्म के तहत वाजिब छोड़ने वाले और गुनहगार होंगे? कोई अक़्लमंद ऐसा नहीं कह सकता, आलिम तो दूर की बात है। (कोई भी अक़्लमंद यह नहीं कह सकता, आलिम तो दूर की बात। त)। इसी श्रेणी में इमामा बाँधना, मिसवाक करना

वगैरह आता है: 'उसके अलावा आदाब और हसनात (अच्छाईयाँ) जिनके करने से फ़ेल-ए-वाजिब में इमाम की मुख़ालिफ़त लाज़िम नहीं आती।' (इसके अलावा उन आदाब और अच्छाइयों में जिनका पालन करने से अनिवार्य कार्य में इमाम का विरोध आवश्यक नहीं होता। त)। और यहीं से इस दलील की बुराई ज़ाहिर हो गई, और यह मुसल्लमा क़ायदा कि वाजिब और फ़र्ज़ का टकराव और...

1 रद्द-अल-मुह्तार, इमाम की पैरवी की तहक़ीक़ में अहम बिंदु, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र द्वारा प्रकाशित 1/348.

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

مستحب مزاحم فرض نہیں ہوسکتا۔ بینوا توجروا

الجواب: متابعت امام ہر فعل و ترک میں علی الاطلاق فرض و واجب کیا معنی مسنون اور مستحب بھی نہیں بلکہ بعض صورتیں خلاف اولٰی اور بعض میں محض ناجائز ہوتی ہے،

[جدول کا متن] عربی: فی ردالمحتار والمتابعة لیست فرضاً بل تکون واجبة في الفرائض والواجبات الفعلیة وتکون سنة في السنن وکذا في غیرها عند معارضة سنة وتکون خلاف الاولی اذا عارضها واجب اخر او کانت في ترك لا یلزم من فعله مخالفة الامام فی واجب فعلی کرفع الیدین للتحریمة ونظائره وتکون غیر جائزة اذا کانت فی فعل بدعة او منسوخ او مالا تعلق له بالصلاة اصلاً الخ اردو: ردالمحتار میں ہے متابعت امام فرض نہیں بلکہ فرائض اور واجبات فعلیہ میں واجب، سُنن میں سنت، اور اسی طرح ان کے علاوہ میں سنت کے معارضہ کی صورت میں اور متابعت خلاف اولٰی ہے جب اس کے ساتھ واجب آخر کا معارضہ ہو جائے، یا ایسی چیز کے ترک میں جس کے فعل سے واجب فعلی میں امام کی مخالفت لازم نہ آئے مثلاً تحریمہ کے لئے رفع یدین کرنا اور اس کی دیگر نظائر اور متابعت فعلِ بدعت، منسوخ یا ایسے عمل میں جس کا نماز سے کوئی تعلق نہ ہو ناجائز ہے الخ(ت)

پھر اگر اس مستحب متروک الامام کے فعل سے کسی واجب فعلی میں مخالفت امام لازم نہ آئے تو اس کا فعل ہی اولٰی اور انسب ہوگا ۔ اور وہ مستحب درجہ استحباب سے بھی نہ گرے گا، چہ جائیکہ بسبب ترک متابعت، حرام یا ہلکے درجے کا مکروہ ہی ہو جائے۔ کیا اگر امام ادبِ نظر کی مراعات نہ کرے تو مقتدی بھی آنکھیں پھاڑے دیوار قبلہ کو دیکھتے رہیں، کیا اگر امام بحالت قیام پاؤں میں

فصل زیادہ رکھے تو مقتدی بھی ٹانگیں چیرے کھڑے رہیں۔ کیا اگر ایسا نہ کریں تو بحکم متابعت تارک واجب و آثم و گنہگار ہوں گے لایقول بہ عاقل فضلا عن فاضل (اس کا قول کوئی عاقل نہیں کر سکتا چہ جائیکہ کوئی فاضل کرے۔ت) اسی قبیل سے ہے عمامہ باندھنا مسواک وغیرہ کرنا 'غیرذلک من الاداب والحسنات التی لایستلزم فعلہا مخالفة الامام فی واجب فعلی' (اس کے علاوہ آداب و حسنات جن کے بجالانے سے واجب فعلی میں امام کی مخالفت لازم نہیں آتی۔ت) اور یہیں سے ظاہر ہوگئی اس دلیل کی شناعت، اور یہ قاعدہ مسلمہ تعارض واجب و فرض و

1 رد المحتار مطلب مهم في تحقيق متابعة الامام مطبوعہ مصطفیٰ البابی مصر ۱/۳۴۸

Entirely foreign to the recommended matter under discussion and a clear deficiency of this universal principle is that narration of Nazm Zandwaysi, which Allama Ibn Ameer al-Hajj al-Halabi quoted in "Sharh Munyah":

Arabic	**Urdu Translation**
Where he said: There are nine things which, if the Imam does not perform them, the followers should not leave them: raising hands for Tahreem, and recitation of Thana (praise) provided the Imam is in Surah al-Fatihah, Takbir of Ruku and Sujud, Tasbih in both, Tasmee' (saying Sami' Allahu liman hamidah), recitation of Tashahhud, Salam, and Takbirat-e-Tashreeq. (Summarized)	His text is that there are nine such things that if the Imam does not do them, the people (followers) should not leave them: raising hands for Tahreem, reading Thana provided the Imam is in Fatihah, Takbir of Ruku, Takbir of Sujud, Tasbih in both of them, saying 'Sami' Allahu liman hamidah', recitation of Tashahhud, Salam and Takbirat-e-Tashreeq. (Summary) (T)

If following the Imam were obligatory in every action, then just as a recommended (mustahabb) act cannot interfere with an obligatory (fard) act, Sunnahs and even Wajibats (necessities) would also not have the capacity to interfere. So, how could the ruling of the Imams be correct that if the Imam does not perform these things, the follower should still not leave them? I say: "And induction (istiqra') prevents confinement and counting; additional [items] are not appropriate. And in other words:" (I say that tracking and searching are contrary to the nine parts, but the minimum number is not contrary to many, and the discussion in another way is like this. T) Is following the Imam intended only in the actions of the prayer, or is it also necessary in something that has no relation to the prayer? According to the second possibility, if the Imam scratches himself, the followers should also start scratching; if the Imam occasionally takes deep cold breaths, the followers should also start panting. And according to the first possibility, is leaving a recommended (mustahabb) act also counted among the actions of prayer in which following [the imam] is definitely intended?

Then I say: Rather, if careful consideration is given, then leave aside the negation of the universality of this necessity of following; the universality of negation itself is clear and evident.

Arabic

For what we mentioned that there is no following in what has no connection with the prayer, and leaving the recommended is likewise, and what is seen (i.e., of deficiency) by what if its performance necessitates opposing the Imam in a verbal obligatory act, then in that case following is mandatory.

Urdu Translation

Based on what we mentioned that there is no following in those things that have no connection with the prayer, and leaving the recommended is also the same. It has appeared to me that the objection is not correct with this scenario where by his action...

---

1 Ghunyat al-Mustamli Sharh Munyat al-Musalli, Chapter on Imamate, printed by Suhail Academy Lahore, p. 528. Note: I could not find Ibn Ameer al-Hajj's Sharh Munyah. - Nazir Ahmed Saeedi.

मुस्तहब माइहन फ़ीह से महज़ बेगाना और इस कुलिया दलील के सरीह नाक़िस, नज़्म ज़न्दवेसी की वह रिवायत है जिसे अल्लामा इब्न अमीर अल-हाज हलबली ने शरह मुनया में नक़ल फ़रमाया:

अरबी

जहाँ उन्होंने कहा: नौ चीज़ें ऐसी हैं जिन्हें यदि इमाम न करे, तो मुक्तदी उन्हें न छोड़ें: तहरीमा के लिए हाथ उठाना, और सना पढ़ना जब तक इमाम फ़ातिहा में हो, रुकू और सुजूद की तकबीर, दोनों में तस्बीह, तस्मीअ (समिअल्लाहु लिमन हमिदह कहना), तशह्हुद पढ़ना, सलाम और तकबीरात-ए-तशरीक़। (संक्षिप्त)

उर्दू अनुवाद

उनकी इबारत यह है कि नौ अशिया (चीज़ें) ऐसी हैं कि अगर इमाम उन्हें न करे तो क़ौम (मुक्तदी) तर्क न करे: तहरीमा के लिए रफ़ा-ए-यदैन (हाथ उठाना), सना का पढ़ना बशर्ते कि इमाम फ़ातिहा में हो, रुकू की तकबीर, सुजूद की तकबीर, इन दोनों में तस्बीह, समिअल्लाहु लिमन हमिदह कहना, तशह्हुद की किराअत, सलाम और तकबीरात-ए-तशरीक़। (संक्षिप्त) (त)

कि अगर हर फ़ेअल (काम) में मुताबअत-ए-इमाम फ़र्ज़ हो, तो जिस तरह मुस्तहब मज़ाहिम-ए-फ़र्ज़ नहीं हो सकता, सुनन भी बल्कि वाजिबात भी सलाहियत-ए-मज़ाहमत नहीं रखते, तो इन चीज़ों में अइम्मा का यह हुक्म कि अगर इमाम न करे तब भी मुक्तदी न छोड़ें क्योंकर सही होता? मैंने कहा: 'वल-इस्तिक़राउ यम्नउल हस्र वल-अद्दू ला यम्बग़ी अल-ज़ायद वलि-इबारातिन उख़रा' (मैं कहता हूँ कि ततब्बो और तलाश नौ हिस्सों के मुनाफ़ी है लेकिन अदद-ए-अक़ल्ल, कसरत के मुनाफ़ी नहीं और दूसरी तरह गुफ़्तगू यूँ है। त) मुताबअत-ए-इमाम सिर्फ़ अफ़आल-ए-नमाज़ में मन्ज़ूर है या जो बात नमाज़ से कुछ अलाक़ा नहीं रखती उसमें भी ज़रूरी है? बर तक़दीर-ए-सानी अगर इमाम खुजलाए तो मुक्तदियों में भी ख़ारिश मच जाए, अगर इमाम अयानां ठंडी सांसें ले तो मुक्तदियों को भी धोंकनी लग जाए। और बर तक़दीर-ए-अव्वल क्या तर्कए-मुस्तहब भी अफ़आल-ए-नमाज़ में मादूत है जिसमें मुताबअत हत्कन मक़सूद है।

'थुम्मा अक़ूलु' (फिर मैं कहता हूँ): बल्कि अगर नज़्र-ए-दक़ीक़ को रुख़सत-ए-तदक़ीक़ दी जाए तो इस लुज़ूम-ए-मुताबअत के सल्ब-ए-कुलियत दर किनार कुलियत-ए-सल्ब वाज़ेह और आशिकार है।

अरबी	उर्दू अनुवाद
जैसा कि हमने ज़िक्र किया कि उन चीज़ों में मुताबअत नहीं है जिनका नमाज़ से कोई ताल्लुक नहीं और मुस्तहब को छोड़ना भी वैसा ही है, और जो कमी नज़र आती है उसके साथ कि अगर उसका करना किसी वाजिबे फेअली में इमाम की मुख़ालिफ़त का सबब बने, तो उस सूरत में मुताबअत वाजिब है।	इस बिना पर जो हमने ज़िक्र किया कि इन चीज़ों में मुताबअत नहीं है जिनका नमाज़ से ताल्लुक नहीं और तर्कए-मुस्तहब भी इसी तरह है, मुझे यह ज़ाहिर हुआ है कि इस सूरत के साथ एतराज़ दुरुस्त नहीं कि जिसके फ़ेअल से...

---

1 ग़ुन्यतुल मुस्तमली शरह मुनय्यतुल मुसल्ली फ़स्ल फ़िल इमामत अल-आया मतबुआ सुहैल एकेडमी लाहौर पृ. 528 फ़: इब्न अमीर अल-हाज की शरह मुनया मुझे नहीं मिल सकी। - नज़ीर अहमद सईदी।

فتاوی رضویہ جلد ششم مستحب مائحن فیہ سے محض بیگانہ اور اس کلیہ دلیل کے صریح ناقص، نظم زند ویسی کی وہ روایت ہے جسے علامہ ابن امیر الحاج حلبی نے شرح منیہ میں نقل فرمایا:

عربی	اردو ترجمہ
حیث قال تسعة اشیاء اذا لم یفعلها الامام لا یترکها القوم رفع یدین في التحریمة والثناء مادام الامام في الفاتحة وتکبیر الرکوع والسجود والتسبیح فیهما والتسمیع وقرأة التشهد والسلام وتکبیرات التشریق اهـ (ملخصاً)	ان کی عبارت یہ ہے کہ نو اشیاء ایسی ہیں اگر امام انھیں نہ کرے تو قوم ترک نہ کرے تحریمہ کے لئے رفع یدین، ثناء کا پڑھنا بشرطیکہ امام فاتحہ میں ہو، رکوع کی تکبیر، سجود کی تکبیر، ان دونوں میں تسبیح، سمع اللہ لمن حمدہ کہنا، قرأة تشہد، سلام اور تکبیرات تشریق اھ ملخصا (ت)

کہ اگر ہر فعل میں متابعت امام فرض ہو، تو جس طرح مستحب مزاحم فرض نہیں ہو سکتا، سنن بھی بلکہ واجبات بھی صلاحیت مزاحمت نہیں رکھتے تو ان چیزوں میں ائمہ کا یہ حکم کہ اگر امام نہ کرے جب بھی مقتدی نہ چھوڑیں کیونکر صحیح ہوتا قلت والاستقراء یمنع الحصر والعدو لا ینبغی الزائد ولعبارة اخری (میں کہتا ہوں تتبع و تلاش نویں حصہ کے منافی ہے لیکن عدد اقل، کثر کے منافی نہیں اور دوسری طرح گفتگو یوں ہے۔ ت) متابعت امام صرف افعال نماز میں منظور ہے یا جو بات نماز سے کچھ علاقہ نہیں رکھتی اس میں بھی ضرور ہے۔ بر تقدیر ثانی اگر امام کھجلائے تو مقتدیوں میں بھی خارش مچ جائے، اگر امام احیاناً ٹھنڈی سانسیں لے تو مقتدیوں کو بھی دھونکنی لگ جائے۔ اور بر تقدیر اول کیا ترک مستحب بھی افعال نماز میں معدود ہے جس میں متابعت حتماً مقصود ہے۔ ثم اقول: بلکہ اگر نظر دقیق کور خصت تدقیق دی جائے تو اس لزوم متابعت کے سلب کلیت در کنار کلیت سلب واضح اور آشکار ہے۔

عربی	اردو ترجمہ
لما ذكرنا انه لا متابعة في مالا تعلق له بالصلوة وترك المستحب كذلك وما يتراء أى من النقص بما اذا استلزم فعله مخالفة الامام في واجب فعلى فانه ح يجب متابعة	اس بنا پر جو ہم نے ذکر کیا کہ ان چیزوں میں متابعت نہیں ہے جن کا نماز سے تعلق نہیں اور ترک مستحب بھی اسی طرح ہے مجھے یہ ظاہر ہوا ہے کہ اس صورت کے ساتھ اعتراض درست نہیں کہ جس کے فعل سے

1 غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل فی الامام الایۃ مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۵۲۸ ف:

ابن امیر الحاج کی شرح منیہ مجھے نہیں مل سکی۔ نذیر احمد سعیدی Page 438 of 736

Fatawa-e-Razvia Volume Six

[Top Table] Arabic Column: ...the Imam in leaving it, as stated by the scholars. It does not actually diminish because it is regarding doing that obligation (wajib), and doing it necessitated leaving this recommended act (mustahab). So the Imam left it intentionally or forgetfully, and the follower (muqtadi) does not leave it simply because the Imam left it, but because if he were to do it, he would miss what is more important and mandatory. Thus, our statement is correct: following [the Imam] in leaving a recommended act is not absolutely necessary, i.e., in itself. So understand this, for it is most fitting for it. And Allah, Glorified and Exalted, knows best. Urdu Column: Opposing the Imam in a mandatory act would arise, because in this case, following the Imam in leaving it would be mandatory, as scholars have clarified. Thus, this is not actually an objection at all, because this was a matter of following a mandatory act, and by performing it, this recommended act was left. So, if the Imam leaves a recommended act intentionally or forgetfully, the follower cannot leave it just because the Imam left it; rather, he will leave it because if he performs the recommended act, then what is more important and more mandatory will be missed. Thus, our statement "following the Imam in leaving a recommended act as a recommended act is not necessary" stands correct. Therefore, understand it well because this is what is appropriate for this context. And Allah, Glorified and Exalted, knows best. (T)

Problem No. 592: What do the scholars of religion say regarding this matter: Is it permissible to pray behind Wahhabis or not? And if the Imam of a mosque is of the Wahhabi sect, is it better to follow him or to leave that mosque and pray in another mosque? Please explain and be rewarded.

The Answer: In these lands, Wahhabis are those who are followers of Ismail Dehlvi and believers in his book "Taqwiyat-ul-Iman." These people, like the Shiites, Kharijites, Mu'tazilites, etc., hold a sect contrary to the Ahlus Sunnah wal Jama'ah. The time when a person's innovation (bid'ah) among them did not reach the limit of disbelief (kufr) was when the elders of the Wahhabis openly denied the essentials of religion, and all Wahhabis are in agreement with them in that, or at least are their supporters or consider them Muslims. All of these are clear disbelief. So now, there is no such person among the Wahhabis whose innovation falls short of disbelief, whether they are non-followers (ghair-muqallid) or apparently followers. We ask Allah for forgiveness and well-being. (T) Prayer behind them is strictly disliked (makruh

tahrimi), and when it reaches this extent, following them is fundamentally not valid. It is stated in Sharh Aqaid Nasafi:

[Bottom Table] Arabic Column: What has been narrated from some of the predecessors regarding the prohibition of praying behind an innovator is understood as... Urdu Column: What is narrated from some of the predecessors that prayer behind an innovator is forbidden, this is understood as being due to dislike (karahat) because he is a transgressor (fasiq).

फ़तावा-ए-रज़विया, छठा खंड

[ऊपरी तालिका] अरबी कॉलम: ...इमाम इसे छोड़ने में, जैसा कि विद्वानों ने स्पष्ट किया है। यह वास्तव में कम नहीं होता क्योंकि यह उस अनिवार्य (वाजिब) कार्य को करने के बारे में है, और उसे करने से इस अनुशंसित (मुस्तहब) कार्य को छोड़ना आवश्यक हो गया। तो इमाम ने इसे जानबूझकर या भूलवश छोड़ दिया, और अनुयायी (मुक़्तदी) इसे केवल इसलिए नहीं छोड़ता कि इमाम ने इसे छोड़ दिया है, बल्कि इसलिए कि यदि वह इसे करता है, तो वह उससे चूक जाएगा जो अधिक महत्वपूर्ण और अनिवार्य है। इस प्रकार, हमारा कथन सही है: अनुशंसित कार्य को छोड़ने में [इमाम का] अनुसरण करना पूर्ण रूप से आवश्यक नहीं है, अर्थात स्वयं में। अतः इसे समझें, क्योंकि यह इसके लिए सबसे उपयुक्त है। और अल्लाह, महिमामय और सर्वोच्च, सबसे अच्छा जानता है। उर्दू कॉलम: वाजिब कार्य में इमाम का विरोध करना अनिवार्य हो रहा होगा, क्योंकि इस स्थिति में इमाम का उसके त्याग में अनुसरण वाजिब होगा जैसा कि विद्वानों ने स्पष्ट किया है। अतः यह वास्तव में कोई आपत्ति ही नहीं है क्योंकि यह तो वाजिब कार्य के अनुसरण का मामला था और उसके निभाने से इस मुस्तहब (अनुशंसित कार्य) का त्याग हुआ। अतः इमाम यदि मुस्तहब को जानबूझकर या भूलवश छोड़ दे, तो मुक़्तदी केवल इसलिए नहीं छोड़ सकता कि इमाम ने छोड़ा है, बल्कि वह इसलिए छोड़ेगा कि यदि वह मुस्तहब को पूरा करता है, तो उससे जो अधिक महत्वपूर्ण और अधिक अनिवार्य है, वह छूट जाएगा। अतः हमारा कथन "मुस्तहब के मुस्तहब होने की हैसियत से उसके त्याग में इमाम का अनुसरण अनिवार्य नहीं है" सही ठहरा। अतः इसे अच्छी तरह समझ लें क्योंकि यही इस स्थान के योग्य है। और अल्लाह पाक और सर्वोच्च ही बेहतर जानता है। (त)

मसला नंबर 592: धर्म के विद्वान इस विषय में क्या कहते हैं: क्या वहाबियों के पीछे नमाज़ पढ़ना जायज़ है या नहीं? और यदि किसी मस्जिद का इमाम वहाबी पंथ का हो, तो उसकी पैरवी करना बेहतर है या उस मस्जिद को छोड़कर दूसरी मस्जिद में नमाज़ पढ़ना? स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिलेगा।

उत्तर: इन क्षेत्रों में वहाबी उन लोगों को कहा जाता है जो इस्माइल देहलवी के अनुयायी और उनकी पुस्तक "तक़वियतुल ईमान" के आस्तिक हैं। ये लोग शिया, ख़ारजी, मोतज़ला आदि की तरह सुन्नत और जमात के विरोधी पंथ के हैं। इनमें से जिस व्यक्ति का नवाचार (बिदअत) कुफ़्र (अविश्वास) की सीमा तक न हो, यह उस समय था जब वहाबियों के बड़ों ने खुले तौर पर धर्म की अनिवार्यताओं का खंडन किया था और सभी वहाबी उनमें उनके साथ हैं या कम से कम उनके समर्थक हैं या उन्हें

मुसलमान मानते हैं। और ये सभी स्पष्ट कुफ़्र हैं। तो अब वहाबियों में कोई ऐसा नहीं रहा जिसका नवाचार कुफ़्र से कम हो, चाहे वह गैर-मुक़ल्लिद हो या ज़ाहिरी तौर पर मुक़ल्लिद। हम अल्लाह ताला से माफ़ी और सलामती की दुआ करते हैं। (त) उनके पीछे नमाज़ मकरूहे तहरीमी (सख्ती से नापसंद) है, और जो इस सीमा तक पहुँच गई तो उसकी पैरवी मूल रूप से सही नहीं है। शरह अक़ाइद नसफ़ी में है:

[निचली तालिका] अरबी कॉलम: जो कुछ पूर्वजों से नवाचारी (बिदअती) के पीछे नमाज़ की मनाही के बारे में वर्णित है, उसका अर्थ यह है कि... उर्दू कॉलम: कुछ पूर्वजों से जो यह वर्णित है कि बिदअती के पीछे नमाज़ मना है, यह नापसंदगी (कराहियत) पर आधारित है क्योंकि वह पापी (फ़ासिक़) है।

पृष्ठ 736 में से 439

[بالائی جدول] عربی کالم: الامام فی ترکه کما صرح به العلماء فلیس ینقص في الحقیقة لانها انما هی فی فعل ذالك الواجب ولزم من اتیانه ترك هذا المستحب فالامام ترکه قصدا اوسهوا والمقتدی لا یترکه لمحض ان الامام ترکه بل لانه لو فعله فاته ما هو اهم والزم فصح قولنا لا یلزم المتابعة في ترك المستحب مطلقا ای من حیث هو هو فافهم فانه احری به واللہ سبحانه وتعالی اعلم۔ اردو کالم: واجب فعلی میں امام کی مخالفت لازم آرہی ہو کیونکہ اس صورت میں امام کی متابعت اس کے ترک میں واجب ہوگی جیسا کہ علماء نے تصریح کی ہے پس یہ حقیقۃً اعتراض ہی نہیں کیونکہ یہ تو فعل واجب کی متابعت کا معاملہ تھا اور اس کے بجا لانے سے اس مستحب کا ترک ہوا پس امام اگر مستحب کو قصداً یا سہواً ترک کردے تو مقتدی محض اس لئے ترک نہیں کرسکتا کہ امام نے ترک کیا ہے بلکہ وہ اس لئے ترک کرے گا کہ اگر وہ مستحب کو بجا لاتا ہے تو اس سے جواہم اور زیادہ لازم ہے وہ فوت ہو جائے گا، پس ہمارا قول "مستحب بحیثیت مستحب کے ترک میں امام کی متابعت لازم نہیں" صحیح ٹھہرا پس اسے اچھی طرح سمجھ لو کیونکہ یہی اس مقام کے لائق ہے۔ واللہ سبحنہ و تعالی اعلم۔ (ت)

مسئلہ نمبر ۵۹۲ : کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ وہابیہ کے پیچھے نماز پڑھنا جائز ہے یا نہیں؟ اور اگر کسی مسجد کا امام وہابی المذہب ہو تو اس کی اقتدا کرنا بہتر ہے یا اس مسجد کو چھوڑ کر دوسری مسجد میں نماز پڑھنا بینوا توجروا الجواب: ان دیار میں وہابی اُن لوگوں کو کہتے ہیں جواسمعیل دہلوی کے پیرو اور اس کی کتاب "تقویۃ الایمان" کے معتقد ہیں یہ لوگ مثل شیعہ خارجی معتزلہ وغیرہ ہم اہلسنت و جماعت کے مخالف مذہب ہیں ان میں سے جس شخص کی بدعت حد کفر تک نہ ہو یہ اُس وقت تھا جب کبرائے وہابیہ نے کھلے کھلے ضروریاتِ دین کا انکار

کیا اور تمام وہابیہ اُس میں اُن کے موافق یا کم از کم اُن کے حامی یا اُنھیں مسلمان جاننے والے ہیں اور یہ سب صریح کفر ہیں، تو اب وہابیہ میں کوئی ایسا نہ رہا جس کی بدعت کفر سے گری ہوئی ہو خواہ غیر مقلد ہو یا بظاہر مقلد نسأل اللہ العفو والعافیۃ (ہم اللہ تعالیٰ سے معافی اور عافیت کو سوال کرتے ہیں۔ ت) نماز اس کے پیچھے مکروہ تحریمی ہے اور جو اس حد تک پہنچ گئی تو اقتدا اس کی اصلاً صحیح نہیں۔ شرح عقائد نسفی میں ہے:

[زیریں جدول] عربی کالم: ما نقل عن بعض السلف من المنع عن الصلوٰۃ خلف المبتدع فمحمول اردو کالم: بعض اسلاف سے یہ جو منقول ہے کہ بدعتی کے پیچھے نماز منع ہے یہ کراہت پر محمول ہے کیونکہ فاسق

Fatawa Razawiyya Volume VI

[Regarding] the dislike [Karahah], there is no debate about the dislike of prayer behind a sinner (Fasiq) and an innovator (Mubtadi'). This applies when the sin and innovation do not reach the level of disbelief (Kufr). However, if it leads to that, then there is no question about the non-permissibility of praying behind him [1].

What is reported from some predecessors that praying behind an innovator is prohibited is understood as being disliked (Karahah), because there is no dispute that praying behind a sinner and an innovator is disliked. But this is only if his sin and innovation do not reach the boundary of disbelief. If they reach the boundary of disbelief, then there is no debate regarding the non-permissibility of praying behind them. (T)

And similarly, it is reported in Bahr al-Raiq from al-Muheet, al-Khulasa, and al-Mujtaba:

Where he said, and it was restricted in al-Muheet, al-Khulasa, al-Mujtaba, and others, with the condition that his innovation should not make him a disbeliever. If it makes him a disbeliever, then prayer behind him is not permissible [2].

Its words are that it is restricted in al-Muheet, al-Khulasa, al-Mujtaba, etc., with the condition that the innovation should not reach the limit of disbelief. If he has become a disbeliever because of it, then praying behind him is not permissible at all. (T)

And when the imam of a mosque follows the Wahhabi creed and there is no power to stop him or prevent him from leading the prayer, then one should leave that mosque and pray in another mosque where the imam is free from such filth. It is stated in Bahr al-Raiq:

The commentator and others mentioned that when it is difficult to prevent a sinner from leading, the Friday prayer (Jumu'ah) should be performed behind him, while for other prayers, one should move to another mosque. The reason given in al-Mi'raj is that for prayers other than Jumu'ah, another imam can be found. Thus, it is stated in Fath al-Qadir that it is disliked to follow him in Jumu'ah if it is established in multiple places in the city, according to the opinion of Imam Muhammad, which is the fatwa given. I say: If this is the ruling for those who are sinners in actions, then what do you think about those who are sinners in beliefs? And Allah [knows best] [3].

The commentator and others mentioned that when it is difficult to stop a sinner from leading, the Friday prayer may be performed behind him, and for other prayers, one should go to another mosque. The argument for this in al-Mi'raj is that an imam other than him can be available for prayers besides Jumu'ah. And in Fath al-Qadir, it is stated that on this basis, if Jumu'ah is held in several places in the city, then following him in Jumu'ah would also be disliked, and it is permissible to do so according to the opinion of Imam Muhammad, and the fatwa is based on this. I say (I...

1. Sharh Aqa'id al-Nasafiyya, Issue: "The sinner is not from the people of authority", published by Shirkat al-Islam Dar al-Isha'at, Qandahar, p. 115.
2. Bahr al-Raiq, Chapter on Imamat, published by H.M. Saeed Company, Karachi, 1/329.
3. Bahr al-Raiq, Chapter on Imamat, published by H.M. Saeed Company, Karachi, 1/329.

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

कराहत (नापसंदगी) के बारे में, एक फ़ासिक़ (पापी) और मुब्तदी (नवाचारी) के पीछे नमाज़ की कराहत में कोई बहस नहीं है। यह तब है जब पाप और बिदअत कुफ़्र (अविश्वास) की सीमा तक न पहुँचें। लेकिन अगर यह वहाँ तक ले जाए, तो उसके पीछे नमाज़ की नामंजूरी में कोई सवाल ही नहीं है [1]।

कुछ पूर्वजों से जो यह वर्णित है कि मुब्तदी के पीछे नमाज़ मना है, उसे कराहत पर आधारित समझा जाता है क्योंकि इसमें कोई विवाद नहीं है कि फ़ासिक़ और मुब्तदी के पीछे नमाज़ पढ़ना मकरूह है। लेकिन यह उसी स्थिति में है जब उसका फ़िस्क़ और बिदअत कुफ़्र की सीमा तक न पहुँचें। यदि वे कुफ़्र की सीमा तक पहुँच जाते हैं, तो उनके पीछे नमाज़ की नामंजूरी में कोई बहस नहीं है। (त)

इसी तरह 'बहर-उर-राइक़' में 'मुहीत', 'खुलासा' और 'मुज्तबा' से वर्णित है:

जहाँ उन्होंने कहा, और इसे 'मुहीत', 'खुलासा', 'मुज्तबा' और अन्य में इस शर्त के साथ सीमित किया गया है कि उसकी बिदअत उसे काफ़िर न बनाती हो। यदि वह उसे काफ़िर बनाती है, तो उसके पीछे नमाज़ जायज़ नहीं है [2]।

इसके शब्द हैं कि 'मुहीत', 'खुलासा' और 'मुज्तबा' आदि में इसे इस शर्त के साथ सीमित किया गया है कि बिदअत कुफ़्र की हद तक पहुँचाने वाली न हो। अगर इसकी वजह से वह काफ़िर हो गया है, तो उसके पीछे नमाज़ हरगिज़ जायज़ नहीं है। (त)

और जब मस्जिद का इमाम वहाबी विचारधारा का हो और उसे रोकने या इमामत से बाज़ रखने की ताक़त न हो, तो उस मस्जिद को छोड़ देना चाहिए और दूसरी मस्जिद में नमाज़ पढ़नी चाहिए जहाँ का इमाम ऐसी गंदगी से पाक हो। 'बहर-उर-राइक़' में है:

शारह (व्याख्याकार) और अन्य ने उल्लेख किया है कि जब एक फ़ासिक़ को इमामत से रोकना कठिन हो, तो जुमे की नमाज़ उसके पीछे पढ़ ली जाए, जबकि अन्य नमाज़ों के लिए दूसरी मस्जिद में चले जाना चाहिए। 'मेराज' में इसकी दलील यह दी गई है कि जुमे के अलावा अन्य नमाज़ों के लिए दूसरा इमाम मिल सकता है। अतः'फ़तह अल-क़दीर' में कहा गया है कि इस आधार पर यदि शहर में कई जगहों पर जुमे की नमाज़ होती है, तो जुमे में भी उसकी पैरवी करना मकरूह होगा, और इमाम मुहम्मद के मत के अनुसार ऐसा करना जायज़ है और इसी पर फ़तवा है। मैं कहता हूँ: यदि

कर्मों में फ़ासिक़ लोगों के लिए यह हुक्म है, तो अक़ीदे (विश्वासों) में फ़ासिक़ लोगों के बारे में आप क्या सोचते हैं? और अल्लाह [बेहतर जानता है] [3]।

शारह आदि ने उल्लेख किया है कि जब फ़ासिक़ को इमामत से रोकना दुश्वार हो, तो जुमे की नमाज़ उसकी इक़्तेदा (पैरवी) में पढ़ ली जाए और अन्य नमाज़ों के लिए किसी दूसरी मस्जिद में चले जाएँ। 'मेराज' में इसकी दलील यह बयान की गई है कि जुमे के अलावा दूसरा इमाम मयस्सर (उपलब्ध) हो सकता है, और 'फ़तह अल-क़दीर' में है कि इस बिना पर अगर शहर में जुमा कई जगहों पर होता हो तो जुमे में भी इक़्तेदा मकरूह होगी, और इमाम मुहम्मद के क़ौल के मुताबिक़ ऐसा करना जायज़ है और इसी पर फ़तवा है। मैं कहता हूँ (मैं...

1. शरह अक़ायद-ए-नफ़ी, मसला: "फ़ासिक़ विलायत के अहल में से नहीं है", प्रकाशक शिर्कत अल-इस्लाम दार अल-इशाअत, क़ंधार, पृ. 115।
2. बहर-उर-राइक़, बाब अल-इमामत, प्रकाशक एच.एम. सईद कंपनी, कराची, 1/329।
3. बहर-उर-राइक़, बाब अल-इमामत, प्रकाशक एच.एम. सईद कंपनी, कराची, 1/329।

فتاوی رضویہ جلد ششم

علی الکرھة اذلا کلام في کراھة الصلوة خلف الفاسق والمبتدع ھذا اذالم یؤد الفسق والبدعة الی حد الکفر اما اذا ادی الیه فلا کلام في عدم جواز الصلاة خلفه1۔

بعض اسلاف سے یہ جو منقول ہے کہ بدعتی کے پیچھے نماز منع ہے یہ کراہت پر محمول ہے کیونکہ فاسق اور بدعتی کے پیچھے نماز کے مکروہ ہونے میں کوئی کلام نہیں لیکن یہ اس صورت میں ہے کہ اس کا فسق اور بدعت حدِ کفر تک نہ پہنچے ہوں، اگر حدِ کفر تک پہنچ جائیں تو ان کے پیچھے نماز کا عدمِ جواز میں کوئی کلام نہیں۔ (ت)

اور اسی طرح بحر الرائق میں محیط اور خلاصہ اور مجتبی سے منقول ہے:

حیث قال وقیدہ فی المحیط والخلاصة والمجتبی وغیرھا بان لا تکون بدعتہ تکفرہ فان کانت تکفرہ فالصلاة خلفہ لاتجوز2۔

اس کے الفاظ ہیں کہ محیط، خلاصہ اور مجتبی وغیرہ میں اسے اس قید کے ساتھ مقید کیا ہے کہ وہ بدعت حدِ کفر تک نہ پہنچانے والی ہو اگر اس سے وہ کافر ہو گیا ہے تو اس کے پیچھے نماز ہرگز جائز نہیں۔ (ت)

اور جب امام مسجد وہابی المذہب ہو اسے منع کرنے اور امامت سے باز رکھنے پر قدرت حاصل نہ تو اُس مسجد کو چھوڑ چلا جائے اور دوسری مسجد کا امام ایسے خبیث سے پاک ہو نماز پڑھے۔ بحر الرائق میں ہے:

وذکر الشارح وغیرہ ان الفاسق اذا تعذر منه یصلی الجمعة خلفه وفی غیرھا ینتقل الی المسجد اخر وعلل له فی المعراج بان في غیر الجمعة یجد اماماً غیرہ فقال في فتح القدیر یکرہ الاقتداء به فی الجمعة

اذا تعددت اقامتها فی المصر علی قول محمد هو المفتی به قلت فاذاکان هذا حکم الفاسقین فی الاعمال فما ظنك بالفاسقین فی العقائد واللہ3

شارح وغیرہ نے ذکر کیا ہے کہ جب فاسق کو امامت سے روکنا دشوار ہو تو جمعہ کی نماز اس کی اقتداء میں پڑھ لی جائے اور دیگر نمازوں کے لئے کسی دوسری مسجد میں چلا جائے، معراج میں اس کی دلیل یہ بیان کی ہے کہ جمعہ کے علاوہ میں دوسرا امام میسر آسکتا ہے، اور فتح القدیر میں ہے اس بناء پر اگر جمعہ شہر میں متعدد جگہ ہوتا ہو تو جمعہ میں بھی اقتداء مکروہ ہوگی، اور امام محمد کے قول کے مطابق ایسا کرنا جائز ہے اور اسی پر فتوی ہے قلت (میں

1 شرح عقائد النسفیۃ مسئلہ ان الفاسق لیس من اہل الولایۃ مطبوعہ مطبع شرکت الاسلام دارالاشاعت قندھار ص ۱۱۵ 2 بحرالرائق باب الامامۃ مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱/ ۳۲۹ 3 بحرالرائق باب الامامۃ مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱/ ۳۲۹

Fatawa Razawiyya Volume VI

(I say) When this is the ruling for those who are sinners in actions, what would you think about those who are sinners in beliefs! And Allah Almighty knows best. (T)

Allah knows best

Problem Number 593: From Ash-har Kuhna, Bareilly, sent by Maulvi Ghulam Muhammad Sahib Punjabi, 8 Sha'ban al-Mu'azzam 1312 AH.

A funeral was present near a mosque at sunset. The funeral was of someone from the Ahl al-Sunnah wa al-Jama'ah. The situation was that the heirs of the deceased were completely ignorant, even regarding prayer. The Imam of that mosque leads the five daily prayers with emphasis, is engaged in teaching and learning from standard textbooks, is purely of the Sunnah and Jama'ah, and is a pure Hanafi. This Imam holds the belief that God is one, nothing like Him can be conceived, and all the Prophets (peace be upon them) are truthful. Especially, Prophet Muhammad (peace and blessings of Allah be upon him) is the greatest in greatness. After all the Prophets (peace be upon them), the greatest in greatness is Hazrat Abu Bakr Siddiq, then Hazrat Umar, then Hazrat Uthman, then Hazrat Ali (may Allah be pleased with them all). The miracles of the saints of Allah are also true. In summary, the way of the Ahl al-Sunnah wa al-Jama'ah is present in this Imam. There was another person present who had read textbook courses or not, Allah Almighty knows best the truth, but he is an Alawi and does not have teaching or learning from any book. This person's belief is that the greatness of Prophet Muhammad (peace and blessings of Allah be upon him) is greater than all people, but not greater than Hazrat Ali, Lady Fatima, and Hazrat Imam Hasan and Husayn (may Allah be pleased with them). Rather, he believes all these five (Panjtan) are equal in greatness, and the greatness of Hazrat Ali is more than all the Companions. That person does not offer the five daily prayers in congregation but only offers prayer in congregation on Fridays and considers making 'Ta'ziya' (replicas of shrines) as good. At the time of the funeral, both aforementioned Maulvis were present. Both were invited by the heirs of the deceased and both were ordered to lead the funeral prayer. Apart from the Imam, the other Maulvi became the Imam. At that time, the [mosque] Imam said, "I am the one worthy of leading the funeral prayer because the Sultan and Qazi are not present here." The same point is present in Sharah Wiqayah, Hidaya, and all books. The text of the mentioned issue is as follows:

"And the most deserving of the imamate is the Sultan, then the Qazi, then the Imam of the locality (Imam al-Hayy), then the guardian (Wali), according to the order in agnates (Asabat)."

The one most entitled to the imamate is the Sultan, then the judge, then the local imam, then the guardian, in the order found in agnates. (T)

And that Maulvi did not accept this ruling and became the Imam. The Imam of the locality did not pray behind him because he did not accept this recorded ruling and considering the aforementioned recorded beliefs, the Imam of the locality [did not pray] behind him.

फतावा रज़विया, छठा खंड

(मैं कहता हूँ) जब कर्मों में पाप (फ़िस्क़) रखने वालों के लिए यह नियम है, तो विश्वासों (अक़ाइद) में पाप रखने वालों के बारे में तुम्हारा क्या विचार होगा! और अल्लाह सर्वशक्तिमान बेहतर जानता है। (त)

अल्लाह बेहतर जानता है

समस्या संख्या 593: अज़-शहर कुहना, बरेली से मौलवी ग़ुलाम मुहम्मद साहब पंजाबी द्वारा भेजी गई, 8 शाबान अल-मुअज़्ज़म 1312 हिजरी।

सूर्यास्त के समय एक मस्जिद के पास एक जनाज़ा (शव) लाया गया। जनाज़ा अहले सुन्नत वल जमात के एक व्यक्ति का था। स्थिति यह थी कि मृतक के उत्तराधिकारी हर तरह से अज्ञानी थे, यहाँ तक कि नमाज़ से भी अनभिज्ञ थे। उस मस्जिद के इमाम पांचों समय की नमाज़ पाबंदी से पढ़ाते हैं और प्रचलित पाठ्यपुस्तकों के शिक्षण और अध्ययन में भी लगे हुए हैं, और पूरी तरह सुन्नी और जमाती हैं, शुद्ध हनफ़ी हैं। इस इमाम का यह विश्वास है कि ईश्वर एक है, उसके जैसा कुछ भी सोचा नहीं जा सकता, और सभी नबी (अलैहिमुस्सलाम) सच्चे हैं। विशेष रूप से हज़रत मुहम्मद रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) महानता में सबसे ऊँचे हैं। सभी नबियों (अलैहिमुस्सलाम) के बाद, महानता में सबसे ऊँचे हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ हैं, फिर हज़रत उमर हैं, फिर हज़रत उस्मान हैं, फिर हज़रत अली हैं (रज़ियल्लाहु अन्हुम)। अल्लाह के वलियों के चमत्कार भी सत्य हैं। सारांश यह है कि अहले सुन्नत वल जमात का जो तरीका है, वह उस इमाम में मौजूद है। एक और व्यक्ति भी वहाँ था, उसने पाठ्यपुस्तकें पढ़ी हैं या नहीं, अल्लाह बेहतर जानता है, लेकिन वह अलवी (शिया विचारधारा वाला) है और उसे किसी किताब से शिक्षा भी नहीं मिली है। उस व्यक्ति का विश्वास यह है कि हज़रत मुहम्मद रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की महानता सभी मनुष्यों से अधिक है, लेकिन हज़रत अली, बीवी फ़ातिमा, और हज़रत इमाम हसन और हुसैन (रज़ियल्लाहु अन्हुम) से अधिक नहीं है। बल्कि वह मानता है कि ये पाँचों (पंजतन) महानता में बराबर हैं, और हज़रत अली की महानता सभी सहाबा (साथियों) से अधिक है। वह व्यक्ति पांचों समय की नमाज़ जमात के साथ नहीं पढ़ता, बल्कि केवल जुमा के दिन जमात से पढ़ता है और ताज़िया बनाने को भी अच्छा कहता है। जनाज़ा के समय, दोनों ऊपर वर्णित मौलवी मौजूद थे। दोनों को मृतक के वारिसों ने बुलाया था और दोनों को जनाज़ा पढ़ाने का आदेश दिया गया था। इमाम के अलावा दूसरा मौलवी इमाम बन गया।

उस समय [मस्जिद के] इमाम ने कहा कि मैं जनाज़ा की इमामत के योग्य हूँ क्योंकि इस समय सुल्तान और काज़ी मौजूद नहीं हैं। यही बात शरह विक़ाया और हिदाया और सभी किताबों में मौजूद है। उक्त मसले का पाठ इस प्रकार है:

"इमामत का सबसे अधिक हकदार सुल्तान है, फिर काज़ी, फिर मुहल्ले का इमाम, फिर वली (अभिभावक), जैसा कि असबात (रक्त संबंधियों) के क्रम में है।"

इमामत का अधिक हकदार सुल्तान है, फिर काज़ी, फिर मुहल्ले का इमाम, फिर वली, उस क्रम से जो असबात में है। (त)

और उस मौलवी ने इस मसले को नहीं माना और इमाम बन गया। मुहल्ले के इमाम (इमामुल हय) ने उसके पीछे नमाज़ नहीं पढ़ी क्योंकि उसने इस लिखे हुए मसले को नहीं माना और ऊपर बताए गए विश्वासों के कारण इमामुल हय ने उसके पीछे [नमाज़ नहीं पढ़ी]।

पेज 441/736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

کہتا ہوں) جب اعمال میں فسق رکھنے والوں کا یہ حکم ہے تو عقائد میں فسق رکھنے والوں کے بارے میں تمہارا کیا خیال ہوگا! واللہ تعالٰی اعلم (ت)

تعالٰی اعلم

مسئلہ نمبر ۵۹۳: از اشہر کہنہ بریلی مرسلہ مولوی غلام محمد صاحب پنجابی ۸ شعبان المعظم ۱۳۱۲ھ

ایک جنازہ وقت غروب شمس کے پاس مسجد کے موجود ہو اور وہ جنازہ اہل سنت و الجماعت کا تھا حال یہ ہے کہ وارث میت من کل الوجوہ جاہل تھے حتٰی کہ نماز سے اور امام اس مسجد کا پانچوں وقت نماز تاکید پڑھاتا ہے اور کتب درسیہ متداولہ میں بھی تعلیم و تعلم رکھتا ہے اور خالص سنت و جماعت ہے خالص حنفی ہے اور اس امام کا یہ عقیدہ منعقد ہوا ہے خدا ایک ہے مثل اس کے متصور نہیں ہو سکتا ہے اور سب انبیاء علیہم السلام صادق ہیں خصوصاً حضرت محمد رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم بزرگی میں سب سے زیادہ اور بعد سب انبیاء علیہم السلام کے بزرگی میں سب سے زیادہ حضرت ابوبکر صدیق ہیں پھر حضرت عمر ہیں پھر حضرت عثمان ہیں پھر حضرت علی ہیں رضی اللہ تعالٰی عنہم، اور کرامت اولیاء اللہ کی بھی برحق ہے خلاصہ جو طریقہ اہلسنت و جماعت ہے وہ اُس امام میں موجود ہے اور ایک شخص اور ہے کتب درسیہ پڑھے ہے یا نہیں واللہ تعالٰی اعلم بالصواب مگر علوی ہے اور تعلیم و تعلم بھی کسی کتاب کا نہیں ہے اُس شخص کا عقیدہ یہ ہے کہ بزرگی حضرت محمد رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کی سب آدمی سے زیادہ ہے مگر حضرت علی اور بی بی فاطمہ اور حضرت امام حسن و حسین رضی اللہ تعالٰی عنہم

سے زیادہ نہیں ہے بلکہ یہ سب پانچ تن بزرگی میں برابر ہیں اور بزرگی حضرت علی کی سب اصحاب سے زیادہ ہے اور وہ شخص نماز پانچ وقت جماعت سے نہیں پڑھتا ہے بلکہ محض جمعہ کے دن جماعت سے پڑھتا ہے اور تعزیہ بنانے کو بھی اچھا کہتا ہے وقت جنازہ کے یہ دونوں مولوی مذکور موجود تھے اور دونوں ورثائے میت نے بلایا تھا اور دونوں حکم جنازہ پڑھانے کا کیا اور سوا امام کے دوسرا مولوی امام بن گیا اس وقت امام نے کہلا لائق امامت جنازہ کے میں ہوں چونکہ سلطان اور قاضی اس وقت میں نہیں ہیں اور یہی بات شرح وقایہ اور ہدایہ اور سب کتابوں میں موجود ہے عبارت مسئلہ مذکورہ کی یہ ہے:

والاحق بالإمامة السلطان ثم القاضی ثم امام الحی ثم الولی کما فی العصبات۔

امامت کا زیادہ حقدار سلطان ہے پھر قاضی پھر محلہ کا امام پھر ولی، اس ترتیب سے جو عصبات میں ہے۔ (ت)

اور وہ مولوی اس مسئلہ کو نہ مانا اور امام بنا اور امام الحی نے اس کے پیچھے نماز نہ پڑھی اس وجہ سے کہ اس نے اس مسئلہ محررہ کو نہ مانا اور بلحاظ عقائد مذکورہ محررہ کے امام الحی نے اس کے پیچھے [نماز نہ پڑھی]۔

Fatawa Razawiyya Volume 6

Question: Abandoned prayer. Was it appropriate for the first Maulana to lead the funeral prayer or the second Maulana? And was it appropriate for the first Maulana to abandon prayer behind such a person? In all prayers, meaning the five daily prayers, Friday prayer, and funeral prayer, which of these two is more deserving to be the Imam? Explain and be rewarded.

Answer: In reality, since in these lands Islamic rulers like the Sultan, Governors, and Judges are absent, and when they are absent, where are their deputies? And the guardians of the deceased, as stated by the questioner, were completely ignorant. In the described situation, the Imam of the mosque should have precedence over everyone, and making him the Imam was recommended and better.

[Table Header] Tanwir al-Absar and Radd al-Muhtar states: In the funeral prayer, the Sultan is given precedence (then his deputy as mentioned in Al-Fath), then the Judge (mentioned in Al-Fath, then the Governor's deputy, then the Judge's deputy, and similarly mentioned in Al-Imdad from Al-Zayla'i), then the Imam of the neighborhood (summarized). It is stated in Al-Durr that prioritizing the rulers is mandatory, while prioritizing the Imam of the neighborhood is merely recommended, provided he is better than the guardian (Wali), otherwise the guardian is more deserving, etc. (T)

[Arabic Column] يقدم فی الصلاة علیه السلطان (ثم نائبه کما فی الفتح) ثم القاضی (فی الفتح ثم خلیفة الوالي ثم خلیفة القاضی ومثله فی الامداد عن الزیلعی) ثم امام الحی ۱ اه ملتقطا وفی الدر تقدیم الولاة واجب وتقدیم امام الحی مندوب فقط بشرط ان یکون افضل من الولی والافالولی اولی ۲ الخ۔

[Urdu Column] تنویر الابصار اور ردالمختار میں ہے نمازِ جنازہ میں سلطان مقدم ہے (پھر اس کا نائب جیسا کہ فتح میں ہے) پھر قاضی (فتح میں ہے پھر والی کا نائب پھر قاضی کا نائب اور امداد میں زیلعی کے حوالے سے اسی طرح ہے) پھر محلہ کا امام اھ تلخیصاً۔ اور در میں ہے حکام کی تقدیم واجب اور محلہ کے امام کی تقدیم فقط مندوب ہے بشرطیکہ وہ ولی سے افضل ہو ورنہ ولی اولٰی ہوگا الخ (ت)

[Remaining text] The abandonment of the congregation by the other person was merely a sin, which after repetition became a major sin leading to wickedness (fisq). Approving the practice of Taziyah (mourning rituals) is an appreciation of Shia innovations. To consider the Leader of the Believers, our Master Ali (may Allah honor his face) superior to the Shaykhayn (Abu Bakr and Umar, may Allah be pleased with them) is heresy (Rafz) and bad religious belief. These reasons were enough to make

praying behind that person severely disliked (Makruh-e-Tahrimi). It is mentioned in Al-Khulasa, Fath al-Qadir, and Al-Hindiyya, etc.: "If someone favors Ali over those two, then he is an innovator." If someone considers Sayyiduna Ali (may Allah be pleased with him) superior to both the Caliphs, then he is an innovator. (T) It is mentioned in Arkan-e-Arba'a: "As for the Shia who favor Ali..." those Shia people who consider Hazrat Ali (may Allah be pleased with him) superior... [text ends abruptly].

[Footnotes] 1. Radd al-Muhtar, Chapter on Funeral Prayers, printed by Mustafa al-Babi Egypt, 1/649. Note: The text within the brackets is from Radd al-Muhtar and the text outside is from Tanwir al-Absar, which is present in the marginal notes of Radd al-Muhtar. 2. Durr al-Mukhtar, Chapter on Funeral Prayers, printed by Mujtabai Press, Delhi, 1/123. 3. Khulasat al-Fatawa, Chapter 15 regarding Imamate, etc., printed by Maktaba Habibiya, Quetta, 1/149.

फतावा रज़विय्या, छठा खंड

प्रश्न: उसने नमाज़ छोड़ दी। क्या पहले मौलाना को जनाज़े की नमाज़ का इमाम होना उचित था या दूसरे मौलाना को? और क्या पहले मौलाना का ऐसे व्यक्ति के पीछे नमाज़ छोड़ना उचित था या नहीं? पाँचों वक्त की नमाज़, जुमे की नमाज़ और जनाज़े की नमाज़, इन सभी में इन दोनों में से इमाम होने के लिए कौन अधिक योग्य है? विस्तार से बताएं और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: वास्तव में, चूँकि इन क्षेत्रों में इस्लामी शासक जैसे सुल्तान, गवर्नर और काज़ी अनुपस्थित हैं, और जब वे नहीं हैं, तो उनके प्रतिनिधि कहाँ होंगे? और मृतक के अभिभावक (वली), जैसा कि प्रश्नकर्ता ने बताया, पूरी तरह अनपढ़ थे। ऐसी स्थिति में, मस्जिद के इमाम को सभी पर प्राथमिकता दी जानी चाहिए थी और उन्हें इमाम बनाना ही मुस्तहब (पसंदीदा) और बेहतर था।

[तालिका शीर्षक] तनवीरुल अबसार और रद उल मुख्तार में है: जनाज़े की नमाज़ में सुल्तान सबसे आगे है (फिर उसका प्रतिनिधि जैसा कि फतह में है), फिर काज़ी (फतह में है फिर वली का प्रतिनिधि फिर काज़ी का प्रतिनिधि और इमदाद में ज़ैलई के हवाले से इसी तरह है), फिर मुहल्ले का इमाम (संक्षेप में)। 'दुर' में है कि शासकों को प्राथमिकता देना वाजिब (अनिवार्य) है और मुहल्ले के इमाम को प्राथमिकता देना केवल मुस्तहब है, बशर्ते कि वह वली से बेहतर हो, अन्यथा वली ही अधिक योग्य होगा, आदि। (त)

[अरबी कॉलम] يقدم فى الصلاة عليه السلطان (ثم نائبه كما فى الفتح) ثم القاضى (فى الفتح ثم خليفة الوالي ثم خليفة القاضى ومثله فى الامداد عن الزيلعى) ثم امام الحى ١ اه ملتقطا وفى الدر تقديم الولاة واجب وتقديم امام الحى مندوب فقط بشرط ان يكون افضل من الولى والافالولى اولى ٢ الخ۔

[उर्दू कॉलम] تنویر الابصار اور ردالمختار میں ہے نمازِ جنازہ میں سلطان مقدم ہے (پھر اس کا نائب جیسا کہ فتح میں ہے) پھر قاضی (فتح میں ہے پھر والی کا نائب پھر قاضی نائب اور امداد میں زیلعی کے حوالے سے اسی طرح ہے) پھر محلہ کا امام اھ تلخیصاً۔ اور در میں ہے حکام کی تقدیم واجب اور محلہ کے امام کی تقدیم فقط مندوب ہے بشرطیکہ وہ ولی سے افضل ہو ورنہ ولی اولیٰ ہوگا الخ (ت)

[शेष पाठ] दूसरे व्यक्ति का जमात छोड़ना केवल एक गुनाह था, जो बार-बार करने से गुनाह-ए-कबीरा (बड़ा पाप) और फिस्क (दुराचार) का कारण बना। ताज़ियादारी को सही मानना शिया बिदअत (नवाचार) की प्रशंसा है, और अमीरुल मोमिनीन सैय्यदना मौला अली (रज़ियल्लाहु अन्हु) को शैखैन (अबू बक्र और उमर, रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से श्रेष्ठ बताना रफ़्ज़ (धर्मद्रोह) और बुरा धार्मिक विश्वास है। ये कारण उस व्यक्ति के पीछे नमाज़ पढ़ने को सख्त मकरूह (नापसंद) बनाने के लिए पर्याप्त थे। 'खुलासा', 'फतह अल-कादिर' और 'हिंदिया' आदि में लिखा है: "यदि कोई अली को उन दोनों पर श्रेष्ठता देता है, तो वह बिदअती (नवाचारी) है।" यदि कोई व्यक्ति सैय्यदना अली (रज़ियल्लाहु अन्हु) को दोनों खलीफाओं पर श्रेष्ठता देता है, तो वह बिदअती है। 'अरकान-ए-अरबा' में है: "जहाँ तक उन शियाओं का सवाल है जो अली को श्रेष्ठ मानते हैं..." वे शिया लोग जो हज़रत अली (रज़ियल्लाहु अन्हु) को... [पाठ अधूरा है]।

[पादलेख] 1. रद उल मुख्तार, बाब सलातुल जनाइज़, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र द्वारा मुद्रित, 1/649। नोट: कोष्ठक के भीतर का पाठ रद उल मुख्तार का है और बाहर का तनवीरुल अबसार का है जो रद उल मुख्तार के हाशिये पर मौजूद है। 2. दुर्रे मुख्तार, बाब सलातुल जनाइज़, मुजतबाई प्रेस दिल्ली द्वारा मुद्रित, 1/123। 3. खुलासतुल फतावा, अध्याय 15 इमामत के संबंध में, आदि, मकतबा हबीबिया क्वेटा द्वारा मुद्रित, 1/149।

पृष्ठ 442/736

نماز ترک کی۔ آیا امام ہونا نماز جنازہ کا امام الحی مولوی کو لائق تھا یا دوسرے مولوی کو، اور نماز کا ترک کرنا امام الحی کا ایسے شخص کے پیچھے مناسب تھا یا نہ اور سب نماز یعنی پانچ وقتی اور جمعہ کی اور جنازہ کی ان سب نمازوں میں امام ہونا ان دونوں میں سے کون لائق ہے؟ بینوا توجروا۔

الجواب: فی الواقع جبکہ ان بلاد میں حکام اسلام سلطان والی و قاضی مفقود ہیں اور جب وہ نہیں تو ان کے نائب کہاں، اور اولیائے میت حسب تصریح سائل محض جاہل تھے تو صورتِ مستفسرہ میں امام مسجد کو سب پر تقدم اور اسی کو امام کرنا مستحب و بہتر تھا۔

تنویر الابصار اور ردالمختار میں ہے نمازِ جنازہ میں سلطان مقدم ہے (پھر اس کا نائب جیسا کہ فتح میں ہے) پھر قاضی (فتح میں ہے پھر والی کا نائب پھر قاضی کا نائب اور امداد میں زیلعی کے حوالے سے اسی طرح ہے) پھر محلہ کا امام اھ تلخیصاً۔ اور در میں ہے حکام کی تقدیم واجب اور محلہ کے امام کی تقدیم فقط مندوب ہے بشرطیکہ وہ ولی سے افضل ہو ورنہ ولی اولٰی ہوگا الخ (ت)

تنویر الابصار وردالمختار یقدم فی الصلاۃ علیہ السلطان (ثم نائبہ کما فی الفتح) ثم القاضی (فی الفتح ثم خلیفۃ الوالي ثم خلیفۃ القاضی ومثلہ فی الامداد عن الزیلعی) ثم امام الحی ۱ اھ ملتقطا وفی الدر تقدیم الولاۃ واجب وتقدیم اماالحی مندوب فقط بشرط ان یکون افضل من الولی والافالولی اولی ۲ الخ۔

شخص دیگر کا ترک جماعت تو صرف گناہ تھا کہ بعدِ اعادہ گناہ کبیرہ موجب فسق ہوا اور تعزیہ رائج بنانے کو اچھا جاننا بدعت شیعہ کی تحسین اور حضرت امیر المؤمنین سیدنا مولٰی علی کرم اللہ وجہہ الکریم کو حضرت شیخین رضی اللہ تعالٰی عنہما سے افضل بتانا رفض و بد مذہبی، یہی وجوہ

اس شخص کے پیچھے نماز کے سخت مکروہ ہونے کو کافی تھا۔ خلاصہ و فتح القدیر و ہندیہ وغیرہما میں ہے: ان فضل علیا علیہما فمبتدع ۳۔ اگر کوئی شخص سیدنا علی رضی اللہ تعالیٰ عنہ کو دونوں خلفاء پر فضیلت دیتا ہے تو وہ بدعتی ہے۔ ت) ارکانِ اربعہ میں ہے: اما الشیعۃ الذین یفضلون علیاً وہ شیعہ لوگ جو حضرت علی رضی اللہ تعالیٰ عنہ کو...

۱ ردالمحتار باب صلوۃ الجنائز مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/ ۶۴۹ نوٹ: ہلائین کے اندر والی عبارت ردالمحتار کی ہے اور باہر والی تنویر الابصار کی ہے جو حاشیہ ردالمحتار پر موجود ہے۔

۲ درمختار باب صلوۃ الجنائز مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۱۲۳ ۳ خلاصۃ الفتاوی الفصل الخامس عشر فی الامامۃ الخ مطبوعہ مکتبہ حبیبیہ کوئٹہ ۱/ ۱۴۹

Fatawa Ridawiyya - Volume 6

[Boxed Text] Arabic: على الشيخين ولايطعنون فيهما أصلا كالزيدية تجور خلفهم الصلوٰة لكن تكره كراهة شديدة. Urdu Translation within box: They give precedence to the two Sheikhs (Hazrat Abu Bakr and Hazrat Umar, may Allah be pleased with them) and do not slander or revile them at all, for example, the people of the Zaidiyyah sect. So, praying behind them is permissible but severely disliked. (T) 1. [End Box]

However, if the questioner's statement is true, then considering the Household of the Mantle (Aal-e-Aba), may Allah be pleased with them, as equals and peers to the Holy Prophet, may peace and blessings be upon him (Allah forbid!), is in itself clear disbelief (Kufr-e-Sarih). And the second clear disbelief is that it entails giving precedence to the Aal-e-Aba over the previous Prophets, peace be upon them. In such a scenario, what question of leadership (imamate) can there be? That person is absolutely and definitely not qualified for any prayer, worship, or good deed, because no good deed of disbelievers is accepted; in fact, the performance of worship by them is not rationally conceivable. In this situation, abandoning prayer behind him is not only appropriate but an absolute obligation. And Allah Almighty knows best.

Mas'ala Number 592: What do the scholars of the religion say about this matter: Zaid is ignorant of the matters of prayer and completely unaware of and non-practitioner of the points of articulation (makharij), attributes, and rules of recitation (qirat). He leads prayers in a large mosque. His creed is not Sunni; instead, he is busy in promoting a sect that practices Taqiya (dissimulation). In promoting their sect, he engages in all kinds of cunning and boldness, misleading the common people, even if it involves committing forbidden acts (haram). He praises and extols the scholars and prominent figures of that sect without hesitation, drawing and inclining the public towards them in every way. He participates in their religious consultations. No matter what someone from that sect says, even if it reaches the limits of disbelief, he considers it acceptable and certain, and strives with heart and soul for its promotion. He travels long distances to meet the scholars of that sect. If a Sunni scholar gives a sermon in the mosque, he becomes unhappy and often does not attend. His habit is to insult Sunni scholars, fabricate lies and slanders against them, and prevent people from following them. Gradually, hundreds and thousands of Sunnis have become aware of these conditions. Nevertheless, for the purpose of maintaining his imamate and the worldly benefits derived from it, and also with the intention of staying among Sunnis to gradually trap the common people and secretly spread his sect, he practices Taqiya to such an extent that he apparently participates in Sunni gatherings

and assemblies. In front of Sunnis, he openly curses the other sect and its scholars and leaders in the mosque with foul language. And when asked, "If you are not actually in that sect, why do you know its issues and why do you praise their description in front of the public and..."

---

1 Rasa'il al-Arkan, chapter on congregation, Maktaba Islamiyya Quetta, p. 99.

फ़तावा रज़विया - छठा खंड

[बॉक्स टेक्स्ट] अरबी: على الشيخين ولايطعنون فيهما أصلا كالزيدية تجور خلفهم الصلوٰة لكن تكره كراهة شديدة. बॉक्स के भीतर उर्दू अनुवाद: शेख़ैन (हज़रत अबू बक्र और हज़रत उमर रज़ियल्लाहु तआला अन्हुमा) पर फ़ज़ीलत देते हैं और उन पर हरगिज़ तअ्न-ओ-तशनीअ नहीं करते मसलन फ़िरक़ा ज़ैदिया के लोग, तो उनके पीछे नमाज़ जायज़ है लेकिन सख़्त मकरूह। (त) 1. [बॉक्स समाप्त]

मगर बयान साइल अगर सच्चा है तो हज़रात आले अबा रिज़वानुल्लाहि तआला अलैहिम को हुज़ूरे अक़दस सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम का माअज़ल्लाह हमसर व हम मर्तबा बताना तो ख़ुद कुफ़्रे सरीह और दूसरा कुफ़्रे सरीह यानी आले अबा को अंबियाए साबिक़ीन अलैहिमुस्सलातु वस्सलाम पर तफ़्ज़ील को मुस्तलज़म। इस तक़दीर पर तो इमामत कैसी, वो शख़्स अस्लन व क़तअन किसी नमाज़ में या इबादत या नेक काम की ख़ुद लियाक़त नहीं रखता कि कुफ़्फ़ार का कोई हसनह मक़बूल नहीं बल्कि हक़ीक़तन उनसे सुदूर इबादत माक़ूल नहीं। इस सूरत में उसके पीछे तर्के़ नमाज़ न सिर्फ़ मुनासिब बल्कि फ़र्ज़े क़तई है। वल्लाहु तआला आलम।

मसला नंबर 592: क्या फ़रमाते हैं उलेमाए दीन इस मसले में कि ज़ैद मसाइले नमाज़ से जाहिल और मख़ारिज व सिफ़ात व क़वाइदे क़िरात से महज़ नावाक़िफ़ और उस पर ग़ैर आमिल, एक बड़ी मस्जिद की इमामत करता है। अक़ीदा का भी सुन्नी नहीं है बल्कि उन लोगों की तरवीजे मज़हब में मस़रूफ़ रहता है जिनमें तक़िया है और उनके मज़हब की तरवीज में हर क़िस्म की चालाकी व बेबाकी और अवाम को मुग़ालता दही गो इरतिकाबे हराम हो, बेतकल्लुफ़ करता है और उस मज़हब के उलेमा व उमाइद की मदह व सताइश और अवाम को हर तरह उनकी तरफ़ मुतवज्जह और माइल करता है और उनके मज़हबी मशवरों में शरीक होता है। उस मज़हब वाले कैसी ही बात कह दें गो हद्दे कुफ़्र तक पहुँची हो उसको मक़बूल व मुस्लिम और उसकी तरवीज में बजान व दिल सा'ई और उस मज़हब के अहले इल्म के पास मसाफ़ते दूर व दराज़ क़तअ करके जाता है और अगर कोई सुन्नी आलिम मस्जिद में वाज़ कहे तो नाख़ुश होता है और अक्सर औक़ात शरीक नहीं होता और उलेमाए अहले सुन्नत की अहानत और उन पर इफ़्तरा व बोहतान और ख़ल्क़ को उनकी अक़ीदत से बाज़ रखना उसका शेवा है कि इन हालात से रफ़्ता रफ़्ता सदहा व हज़ारहा अहले सुन्नत वाक़िफ़ हो गए हैं। बा ईं हमह इस ग़रज़ से कि इमामत और जो मुनाफ़े दुनियाविया उससे हासिल होते हैं क़ायम

रहें और नीज़ इस ख़याल से कि सुन्नियों में मिल रह कर अवाम को बतदरीज दाम में लाए और अपने मज़हब को ख़ुफ़िया तौर पर फैलाए इस दर्जा तक़िया करता है कि सुन्नियों के मजमे व मजालिस में बज़ाहिर शरीक रहता है और सुन्नियों के सामने दूसरे मज़हब पर तबर्रा और उनके उलेमा व उमाइद को ख़ास मस्जिद में फ़हश गालियाँ बरमला देता है और जब कहा जाता है कि अगर तू फ़िल वाक़े उस मज़हब में नहीं तो उसके मसाइल तुझे क्यों मालूम हैं और उनके बयान की अवाम के सामने क्यों तारीफ़ और...

---

1 रसाईलुल अरकान, फ़सल फ़िल जमाअत, मक्तबा इस्लामिया क्वेटा, पृ. 99.

[Boxed Text] علی الشیخین ولایطعنون فیھما أصلا کالزیدیة تجور خلفھم الصلوٰۃ لکن تکرہ کراھة شدیدة شیخین (حضرت ابوبکر و حضرت عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہما) پر فضیلت دیتے ہیں اور ان پر ہرگز طعن و تشنیع نہیں کرتے مثلاً فرقہ زیدیہ کے لوگ، تو ان کے پیچھے نماز جائز ہے لیکن سخت مکروہ۔ (ت) 1- [End Box]

مگر بیان سائل اگر سچا ہے تو حضرات آل عبا رضوان اللہ تعالیٰ علیہم کو حضور اقدس صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کا معاذ اللہ ہمسر و ہم مرتبہ بتانا تو خود کفرِ صریح اور دوسرا کفرِ صریح یعنی آل عبا کو انبیاء سابقین علیہم الصلوٰۃ والسلام پر تفصیل کو مستلزم اس تقدیر پر تو امامت کیسی، وہ شخص اصلاً و قطعاً کسی نماز میں یا عبادت یا نیک کام کی خود لیاقت نہیں رکھتا کہ کفار کا کوئی حسنہ مقبول نہیں بلکہ حقیقۃً ان سے صدورِ عبادت معقول نہیں اس صورت میں اس کے پیچھے ترک نماز نہ صرف مناسب بلکہ فرض قطعی ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۵۹۲: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید مسائلِ نماز سے جاہل اور مخارج و صفات و قواعدِ قرات سے محض ناواقف اور اس پر غیر عامل، ایک بڑی مسجد کی امامت کرتا ہے عقیدہ کا بھی سنی نہیں ہے بلکہ ان لوگوں کی ترویج مذہب میں مصروف رہتا ہے جن میں تقیہ ہے اور ان کے مذہب کی ترویج میں ہر قسم کی چالاکی و بیباکی اور عوام کو مغالطہ دہی گو ارتکابِ حرام ہو، بے تکلف کرتا ہے اور اس مذہب کے علماء و عمائد کی مدح و ستائش اور عوام کو ہر طرح ان کی طرف متوجہ اور مائل کرتا ہے اور ان کے مذہبی مشوروں میں شریک ہوتا ہے اس مذہب والے کیسی ہی بات کہہ دیں گو حدِ کفر تک پہنچی ہو اس کو مقبول و مسلم اور اس کی ترویج میں بجان و دل ساعی اور اس مذہب کے اہل علم کے پاس مسافتِ دور و دراز قطع

کر کے جاتا ہے اور اگر کوئی سنی عالم مسجد میں وعظ کہے تو ناخوش ہوتا ہے اور اکثر اوقات شریک نہیں ہوتا اور علمائے اہلسنت کی اہانت اور ان پر افتراء و بہتان اور خلق کو ان کی عقیدت سے باز رکھنا اس کا شیوہ ہے کہ ان حالات سے رفتہ رفتہ صدہا و ہزارہا اہلسنت واقف ہوگئے ہیں بایں ہمہ اس غرض سے کہ امامت اور جو منافع دنیویہ اس سے حاصل ہوتے ہیں قائم رہیں اور نیز اس خیال سے کہ سنیوں میں ملارہ کر عوام کو بتدریج دام میں لائے اور اپنے مذہب کو خفیہ طور پر پھیلائے اس درجہ تقیہ کرتا ہے کہ سنیوں کے مجامع و مجالس میں بظاہر شریک رہتا ہے اور سنیوں کے سامنے دوسرے مذہب پر تبرّا اور ان کے علماء و عمائد کو خاص مسجد میں فحش گالیاں برملا دیتا ہے اور جب کہا جاتا ہے کہ اگر تو فی الواقع اس مذہب میں نہیں تو اس کے مسائل تجھے کیوں معلوم ہیں اور ان کے بیان کی عوام کے سامنے کیوں تعریف اور

---

۱ رسائل الارکان فصل فی الجماعت مکتبہ اسلامیہ کوئٹہ ص ۹۹

He attracts and inclines [people] towards them, saying, "I am only concerned with 'Allah said and the Messenger said' and not with their issues." It is as if, according to him, the Sunnite scholars who preach in the mosque speak against what 'Allah and the Messenger said,' and thus he does not listen to them. When requested to participate in their gatherings and support and strengthen the religion, he sometimes refuses. When he finds no choice but to refuse, he repents but continues the aforementioned actions as before. For example, he repented three times in one year and each time committed those very acts. The third point: After repenting, a Sunni preacher sat on the pulpit for the sermon after the Friday prayer; he stopped him from preaching and sat a cunning person of his sect to read a Masnavi (poem). The purpose of its composition was to mislead the common people, trap them in deception, and make them inclined towards his sect. It contains such cunning and trickery that the general public and the ignorant cannot understand it. However, the author of the Masnavi was already known by all of Ahl al-Sunnah to belong to an opposing sect. Therefore, removing the Sunni preacher and making that person sit and read his Masnavi caused resentment among the Ahl al-Sunnah. Those who were deceived by his outward appearance and repeated repentance had his true state revealed to them and stopped praying behind him. As more people become aware, they stop coming to this mosque for prayer. Day by day, the congregation decreases, and the mosque becomes desolate and ruined. Only those unaware of the actual circumstances and his cunningness and trickery come to pray behind him. Some individuals, having no concern for prayer or religion, persist in supporting his undue Imamate for certain carnal reasons, tolerating the ruin of Muslims' prayers and the mosque. Should this person be called a Sunni, or counted among another sect, or none at all? Despite all these matters, will his repentance be reliable? What is the ruling on praying behind such a person? Is it necessary for Muslims to suspend him from Imamate and appoint a Sunnite person of sound belief, knowledgeable in issues and rules of recitation, whose Imamate causes no discord, disagreement, decrease in congregation, or desolation of the mosque? And is it necessary for his supporters to desist from supporting him? State the ruling and be rewarded.

The Answer: A person who is ignorant of the rules of prayer poses a strong possibility of corruption and ruin in the prayer led by him, as many things will occur due to which the prayer will be invalidated or deficient. Because of ignorance, he will not be aware of them and will not be able to rectify them. Similarly, a person unaware of the

points of articulation (makharij), attributes of letters, and rules of Tajweed might make such changes in reciting the Quran that would, by consensus or according to one school of thought, cause the invalidation of the prayer. Making such a person an Imam without necessity for prayer, which is the pillar of Islam and the best of deeds, is a lack of caution.

वह उनकी ओर आकर्षित और उन्मुख करता है, तो कहता है कि मुझे तो 'अल्लाह ने कहा और रसूल ने कहा' से सरोकार है, न कि उनके मसलों से। जैसे उसके नज़दीक सुन्नी विद्वान जो मस्जिद में उपदेश देते हैं, उनका उपदेश 'अल्लाह और रसूल' के वचनों के विपरीत है, इसलिए वह उन्हें नहीं सुनता। और जब उनकी सभाओं में शामिल होने और धर्म के समर्थन और सुदृढ़ीकरण के लिए कहा जाता है, तो कभी मना कर देता है और जब मना करने के अलावा कोई चारा नहीं पाता, तो तौबा (प्रायश्चित) करता है लेकिन उक्त कार्यों को यथावत जारी रखता है। चुनांचे एक साल में तीन बार तौबा की और हर बार उन्हीं कार्यों का अपराधी रहा। तीसरी बात: तौबा के बाद एक सुन्नी उपदेशक जुमे की नमाज़ के बाद उपदेश के लिए मिंबर (मंच) पर बैठे थे, तो उन्हें उपदेश देने से रोका और अपने पंथ के एक धूर्त व्यक्ति को एक मसनवी पढ़ने के लिए बैठा दिया, जिसकी रचना का उद्देश्य जनता को भ्रमित करना और उन्हें धोखे के जाल में फंसाना और अपने पंथ की ओर आकर्षित करना है। इसमें वह धूर्तता और चालाकी है जिसकी वास्तविकता जनता और अज्ञानियों की समझ में नहीं आ सकती। लेकिन मसनवी के लेखक को सभी अहल-ए-सुन्नत पहले से ही अपने विरोधी पंथ का जानते थे। इसलिए सुन्नी उपदेशक को हटाकर उस व्यक्ति को बैठाना और उससे उसकी मसनवी पढ़वाना अहल-ए-सुन्नत की नाराज़गी का कारण बना। और जो लोग उसकी बाहरी बातों और बार-बार की तौबा के धोखे में थे, उन पर उसका हाल उजागर हो गया और उन्होंने उसके पीछे नमाज़ छोड़ दी। और जो कोई वाकिफ होता जाता है, वह इस मस्जिद में नमाज़ के लिए नहीं आता। दिन-प्रतिदिन जमात (नमाज़ियों की संख्या) में कमी और मस्जिद की वीरानी और बर्बादी होती जा रही है। हर वो लोग जो वास्तविक परिस्थितियों से अवगत हैं और उसकी चालाकियों और धूर्तता से वाकिफ नहीं हैं, उसके पीछे नमाज़ पढ़ने आते हैं। और कुछ लोग जिन्हें नमाज़ से कोई मतलब नहीं और न ही धर्म से सरोकार है, कुछ सांसारिक कारणों से मुसलमानों की नमाज़ और मस्जिद की बर्बादी को सहन करके उसके अनुचित समर्थन और इमामत पर बने रहने पर ज़ोर देते हैं। क्या इस व्यक्ति को सुन्नी कहा जाएगा या दूसरे पंथ में गिना जाएगा या किसी में नहीं? और इन सब बातों के बावजूद क्या उसकी तौबा का ऐतबार (भरोसा) होगा या नहीं? और ऐसे व्यक्ति के पीछे नमाज़ का क्या हुक्म है? और क्या मुसलमानों के लिए उसे इमामत से हटाकर किसी सही अकीदे वाले सुन्नी व्यक्ति को, जो मसलों और क़िरात (कुरान पाठ) के नियमों से अवगत हो और जिसकी इमामत से कोई फितना (अशांति), विवाद, जमात में कमी या मस्जिद की वीरानी न हो, उसकी जगह नियुक्त करना और

उसके समर्थकों के लिए समर्थन से बाज़ आना ज़रूरी है या नहीं? बयान फरमाएं, आपको अज्र (पुण्य) मिलेगा।

जवाब: जो व्यक्ति नमाज़ के मसलों से अनभिज्ञ हो, उसकी इमामत में नमाज़ के भ्रष्ट और खराब होने की प्रबल संभावना है, क्योंकि उससे अक्सर ऐसी बातें होंगी जिनसे नमाज़ फासिद (अमान्य) हो जाएगी या उसमें कमी आ जाएगी। और अज्ञानता के कारण वह उन पर अवगत नहीं हो पाएगा और उनका सुधार नहीं कर सकेगा। इसी तरह जो व्यक्ति अक्षरों के निकलने के स्थान (मखारिज), उनके गुणों और तजवीद के नियमों से अवगत न हो, तो ताज्जुब नहीं कि उसके पढ़ने में कुरान में ऐसा परिवर्तन हो जाए जो सर्वसम्मति से या किसी एक पंथ के अनुसार नमाज़ के फासिद होने का कारण हो। क्या बिना ज़रूरत ऐसे व्यक्ति को नमाज़ में इमाम बनाना, जो इस्लाम का स्तंभ और सर्वश्रेष्ठ कार्य है, लापरवाही नहीं है?

पृष्ठ ४४४ का ७३६

ان کی طرف راغب اور متوجہ کرتا ہے تو کہہ دیتا ہے مجھے تو قال اللہ وقال الرسول سے غرض ہے نہ اُن کے مسائل سے ، گویا اُس کے نزدیک سنّی علماء جو مسجد میں وعظ کہتے ہیں وعظ اُن کا قال اللہ وقال الرسول کے خلاف ہے جو اسے نہیں سنتا اور جب اُن کے مجامع میں شریک ہونے اور مذہب کی تائید و تقویت سے تعرض کیا جاتا ہے تو کبھی انکار کرتا ہے اور جب انکار سے چارہ نہیں پاتا تو توبہ کرتا مگر افعالِ مذکورہ بدستور رکھتا ہے چنانچہ ایک سال میں تین بار توبہ کی اور ہر بار انھیں افعال کا مرتکب رہا، تیسری بات توبہ کے بعد ایک سنّی واعظ کو بعدِ نمازِ جمعہ کے وعظ کے لئے منبر پر بیٹھ لئے تھے وعظ سے روکا اور مذہب کے ایک عیار کو ایک مثنوی پڑھنے کو بٹھا دیا جس کی تصنیف کا باعث عوام کو مغالطہ دہی اور انھیں دامِ فریب میں لینا اور اپنے مذہب کی طرف گرویدہ کرنا ہے اور اس میں وہ عیاری و چالاکی کی ہے جس کی حقیقت عوام اور ناواقفوں کی سمجھ میں نہ آسکتی مگر مصنفِ مثنوی کو سب اہلسنّت پہلے سے اپنا مخالف مذہب جانتے تھے لہذا واعظ سنّی کو اُٹھا کر اُس شخص کو بٹھانا اور وعظ سے روک کے اسی کی مثنوی پڑھوانا باعث برہمی اہلسنت کا ہوا اور جو لوگ اس کی ظاہری باتوں اور بار بار کی توبہ کے فریب میں تھے اُن پر حال اس کا منکشف ہو گیا اور نماز اس کے پیچھے چھوڑ دی اور جو واقف ہوتا جاتا ہے اس مسجد میں نماز کو نہیں آتا روز بروز جماعت میں کمی اور مسجد کی ویرانی اور خرابی ہوتی جاتی ہے ہر وہ لوگ کہ احوالِ واقعی سے آگاہ اور اس کی چالاکیوں اور عیاریوں سے واقف نہیں اس کے پیچھے نماز پڑھنے آتے ہیں اور بعض اشخاص جنہیں نماز سے کام نہ دین سے غرض بعض وجوہِ نفسانی سے مسلمانوں کی نماز اور مسجد کی خرابی گوارا کر کے اس کی حمایت بیجا اور امامت قائم رہنے پر اصرار کرتے ہیں آیا اس شخص کو سنّی کہا جائے

گا یا دوسرے مذہب میں شمار کیا جائے گا یا کسی میں نہیں، اور باوجود ان سب امورات کے اس کی توبہ کا اعتبار ہوگا یا نہیں ، اور ایسے شخص کے پیچھے نماز کا کیا حکم ہے اور مسلمانوں کو اُسے امامت سے موقوف کر کے کسی شخص سنّی صحیح العقیدہ واقف مسائل و قواعد قرات کو جس کی امامت پر کوئی فتنہ اور اختلاف اور جماعت کی کمی اور مسجد کی ویرانی نہ ہو اس کی جگہ مقرر کرنا اور اس کی حمایت کرنے والوں کو حمایت سے باز آنا ضرور ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: جو شخص مسائل نماز سے جاہل ہو اس کی امامت میں احتمال قوی نماز کے فساد و خرابی کا ہے کہ اس سے اکثر باتیں ایسی واقع ہوں گی جن سے نماز فاسد ہو جائے گی یا اس میں نقصان آئے گا۔ اور بسبب جہالت کے ان پر مطلع نہ ہوگا اور اُن کی اصلاح نہ کر سکے گا اسی طرح جو شخص مخارج و صفات و حروف و قواعد تجوید سے آگاہ نہ ہو عجب نہیں کہ اس کے پڑھنے میں قرآن میں ایسا تغیر واقع ہو جائے جو بالاتفاق یا ایک مذہب پر موجب فسادِ نماز کا ہو کیا بلا ضرورت ایسے شخص کو امام کرنا نماز میں کہ عماد اسلام وافضلِ اعمال ہے بے احتیاطی۔

Fatawa Razawiya Volume 6

And there is no compromise or negligence in the matters of Sharia, the Messenger of Allah, peace and blessings of Allah be upon him, says:

Arabic	Translation
If it pleases you that Allah accepts your prayer, then your best should lead you in prayer, for they are your ambassadors between you and your Lord. (Reported by Al-Hakim in Al-Mustadrak)	If you desire that God accepts your prayer, then the best among you should lead the prayer, as they are your ambassadors between you and your Lord. Al-Hakim has narrated this in Al-Mustadrak. (T)

Most of Zaid's actions mentioned in the question are acts of transgression and major sins. Due to disobedience and the displeasure of Allah and His Messenger, misleading God's creation, turning them away from the path of truth, insulting and belittling the scholars of Ahl-e-Sunnat, slandering and accusing them, and preventing God's creation from their devotion to those whom Allah and His Messenger commanded to respect—vulgarity itself is a major sin causing transgression and loss of witness credibility, especially when in a mosque where even permissible worldly talk consumes good deeds as fire consumes wood, as narrated in the Hadith from the Messenger of Allah, peace and blessings of Allah be upon him. (As reported from the Holy Prophet, peace and blessings of Allah be upon him. - T) Being unhappy with the sermons of scholars and preventing them from preaching is a great oppression; Allah, the Glorious and Most High, says:

Quranic Verse	Translation
"And who is more unjust than he who prevents (men) from the mosques of Allah, lest His name should be remembered in them and strives to ruin them?"	Who is more unjust than the one who prevents Allah's mosques from having His name mentioned in them and strives for their destruction?

Similarly, considering the sermon of scholars as undesirable and not listening to it or leaving from there; Allah the Almighty says:

Quranic Verse	Translation
"And who is more unjust than he who is reminded of the signs of his Lord but turns away from them and forgets what his hands have sent forward?"	And who is more unjust than the one who is advised by the signs of his Lord, but he turns away from them and forgets what his hands have sent forth?

1. Al-Mustadrak lil-Hakim, Kitab al-Maghazi wa al-Siyar etc., printed by Dar al-Fikr, Beirut, 3/222. Note: In Al-Mustadrak, instead of "In yaqbala Allahu salatakum", it is "In taqbala salatukum". - Nazir Ahmed Saeedi.
2. Ihya Ulum-id-Din, Fazilat al-Masjid etc., printed by Matba'at al-Mashhad al-Hasan, Cairo, 1/152. Note: After significant effort, this Hadith was found in Ihya Ulum-id-Din with these words: "Al-hadithu fil-masjidi ya'kulu al-hasanati kama ta'kulu al-bahaimu al-hashish" (Worldly talk in the mosque consumes good deeds just as animals consume grass). In this Hadith, fire and wood are not mentioned. Allah knows best. - Nazir Ahmed Saeedi.
3. Al-Quran 2/114.

और शरीयत के मामलों में कोई समझौता या ढिलाई नहीं है, अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

अरबी	अनुवाद
अगर तुम्हें यह पसंद आए कि अल्लाह तुम्हारी नमाज़ क़बूल करे, तो चाहिए कि तुम्हारे सबसे बेहतर लोग तुम्हारी इमामत करें क्योंकि वे तुम्हारे और तुम्हारे रब के बीच तुम्हारे सफ़ीर (प्रतिनिधि) हैं। (इसे हाकिम ने अल-मुस्तदरक में रिवायत किया है)	अगर तुम्हें खुशी हो कि ईश्वर तुम्हारी नमाज़ स्वीकार करे, तो चाहिए कि तुम्हारे श्रेष्ठ लोग इमामत करें क्योंकि वे तुम्हारे और तुम्हारे ईश्वर के बीच तुम्हारे दूत हैं। इसे हाकिम ने मुस्तदरक में वर्णित किया है। (त)

सवाल में ज़िक्र किए गए ज़ैद के अधिकांश कार्य अवज्ञा और बड़े गुनाह हैं। अल्लाह और उसके रसूल की नाफ़रमानी और नाराज़गी के कारण खुदा की मखलूक (सृष्टि) को गुमराह करना, हक़ की राह से फेरना, सुन्नी उलेमा का अपमान और तिरस्कार करना, उन पर तोहमत और इल्ज़ाम लगाना, और लोगों को उनकी अकीदत (श्रद्धा) से रोकना जिनका सम्मान करने का अल्लाह और उसके रसूल ने हुक्म दिया है—गाली-गलौज खुद एक बड़ा गुनाह है जो फ़िस्क (अवज्ञा) का कारण बनता है और गवाही की योग्यता को समाप्त करता है, विशेष रूप से जब मस्जिद में हो जहाँ दुनिया की जायज़ बातें भी नेकियों को वैसे ही खा जाती हैं जैसे आग लकड़ी को, जैसा कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से हदीस में वर्णित है। (जैसा कि हदीस में नबी अकरम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से वर्णित है। - त) उलेमा के उपदेशों से नाखुश होना और उन्हें उपदेश देने से रोकना महान अन्याय है; अल्लाह सुब्हानहु व तआला फ़रमाता है:

कुरान की आयत	अनुवाद
"और उससे बड़ा ज़ालिम कौन है जो अल्लाह की मस्जिदों को इस बात से रोके कि उनमें अल्लाह का नाम लिया जाए और उन्हें उजाड़ने की कोशिश करे?"	कौन अधिक अत्याचारी है उससे जो अल्लाह की मस्जिदों को इस बात से रोके कि उनमें उसका नाम ज़िक्र किया जाए और उनके वीरान होने में कोशिश करे।

इसी तरह उलेमा के उपदेश को नापसंद समझकर उसे न सुनना और वहाँ से चले जाना; अल्लाह तआला फ़रमाता है:

कुरान की आयत	अनुवाद
"और उससे बड़ा ज़ालिम कौन है जिसे उसके रब की आयतों से नसीहत की जाए और वह उनसे मुँह फेर ले और उन कामों को भूल जाए जो उसके हाथों ने पहले किए?"	और कौन अधिक अत्याचारी है उससे जिसे उसके रब की आयतों से नसीहत की गई, फिर उसने उनसे मुँह फेर लिया और भूल गया जो उसके हाथों ने आगे भेजा था।

---

1. मुस्तदरक लिल-हाकिम, किताब अल-मगाज़ी व अल-सियर आदि, मुद्रित दारुल फिक्र, बेरुत, 3/222। नोट: मुस्तदरक में "इन यक़बला अल्लाहु सलातकुम" की जगह "इन तक़बला सलातुकुम" है। - नज़ीर अहमद सईदी।
2. एहया उलूम-उद-दीन, फ़ज़ीलत अल-मस्जिद आदि, मुद्रित मतबअतुल मशहद अल-हसन, काहिरा, 1/152। नोट: एहया उलूम-उद-दीन में काफी प्रयास के बाद यह हदीस इन शब्दों के साथ मिली है: "अल-हदीसु फ़िल-मस्जिदि याकुलु अल-हसनाति कमा ताकुलु अल-बहाइमु अल-हशीश" (मस्जिद में दुनियावी बातें नेकियों को इस तरह खा जाती हैं जैसे जानवर घास-फूस खा जाते हैं)। इस हदीस में आग और लकड़ी का ज़िक्र नहीं है। अल्लाह बेहतर जानता है। - नज़ीर अहमद सईदी।
3. अल-कुरान 2/114

اور امر شرع میں مداہنت و سہل انگاری نہیں ، رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں :

عربی متن	اردو ترجمہ
ان سرکم ان یقبل اللہ صلاتکم فلیؤمکم خیارکم فانہم وفدکم فیما بینکم وبین ربکم ۱ رواہ الحاکم فی المستدرک۔	اگر تمہیں خوش آئے کہ خدا تمہاری نماز قبول کرے تو چاہئے کہ تمہارے بہتر امامت کریں کہ وہ تمہارے سفیر ہیں تمہارے اور تمہارے رب کے درمیان۔ اسے حاکم نے مستدرک میں روایت کیا۔ (ت)

زید کے اکثر افعالِ مذکورہ فی السوال فسق و گناہِ کبیرہ ہیں اور خدا اور رسول کی نافرمانی و ناراضی کے باعث خلقِ خدا کو گمراہ کرنا راہِ حق سے پھیرنا علمائے اہلسنت کی اہانت و تحقیر، ان کی افتراء و بہتان، خدا اور رسول جن کی تعظیم کا حکم دیں خلقِ خدا کو ان کی عقیدت سے باز رکھنا فحش گالیاں خود کبیرہ ہیں موجبِ فسقِ مسقطِ شہادت خصوصاً جبکہ مسجد میں ہوں جہاں دنیا کا مباح کلام بھی نیکیوں کو ایسا کھاتا ہے جیسے ۲ آگ لکڑی کو کما ورد فی الحدیث عن رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم (جیسا کہ حدیث میں نبی اکرم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم سے منقول ہے۔ ت) وعظِ علماء سے ناخوش ہونا اور انہیں وعظ سے منع کرنا ظلمِ عظیم ہے، حق سبحنہ و تعالٰی فرماتا ہے:

قرآنی آیت	اردو ترجمہ
وَمَنْ اَظْلَمُ مِمَّنْ مَّنَعَ مَسٰجِدَ اللّٰهِ اَنْ يُّذْكَرَ فِيْهَا اسْمُهٗ وَسَعٰى فِيْ خَرَابِهَاؕ ۳-	کون زیادہ ظالم ہے اس سے جو روکے خدا کی مسجدوں کو اس بات سے کہ ان میں ذکر کیا جائے اُس کا نام اور کوشش کرے اُن کے ویران ہونے میں۔

اسی طرح وعظِ علماء کو مکروہ سمجھ کر کہ نہ سننا اور وہاں چلا جانا، اللہ تعالٰی فرماتا ہے:

قرآنی آیت	اردو ترجمہ
وَمَنْ اَظْلَمُ مِمَّنْ ذُكِّرَ بِاٰيٰتِ رَبِّهٖ فَاَعْرَضَ عَنْهَا وَ نَسِيَ مَا قَدَّمَتْ يَدٰهُؕ اِنَّا جَعَلْنَا	اور کون زیادہ ستم گار ہے اس سے جو نصیحت کیا گیا اپنے رب کی آیتوں سے تو ان سے منہ پھیر لیا اور بھول گیا

---

۱ مستدرک للحاکم کتاب المغازی والسیرایا مطبوعہ دار الفکر بیروت ۲۲۲/۳ نوٹ: مستدرک میں ''ان یقبل اللہ صلوتکم'' کی جگہ ''ان تقبل صلوتکم'' ہے۔ نذیر احمد سعیدی ۲ احیاء علوم الدین فضیلۃ المسجد الخ مطبوعہ مطبعۃ المشد الحسن قاہرہ ۱۵۲/۱ نوٹ: احیاء علوم الدین سے کافی جد و جہد کے بعد یہ حدیث ان الفاظ کے ساتھ ملی ہے ''الحدیث فی المسجد یاکل لحسنات کما تأکل لبھائم الحشیش'' مسجد میں دنیاوی گفتگو نیکیوں کو اس طرح کھا جاتی ہے جس طرح جانور گھاس پھوس کھا جاتے ہیں)۔ اس حدیث میں آگ، لکڑی کا ذکر نہیں۔ واللہ تعالٰی اعلم نذیر احمد سعیدی۔ ۳ القرآن ۱۱۴ /۲

Fatawa Razawiyya, Volume 6

[Arabic Verse 18:57]: "...upon their hearts are coverings so they may not understand it, and in their ears is deafness." [Urdu Translation]: "What his hands sent forward. Indeed, We have placed coverings over their hearts from understanding it and a deafness in their ears."

Acting with cunning and cleverness towards Muslims, deceiving them, and leading them into delusion by committing such acts that cause people's prayers behind them to be ruined; then superficially repenting to appease them while continuing to commit those acts is 'fitna' (discord/mischief). This, in the sight of Allah, is more severe than unjust killing and a cause for the punishment of Hell.

[Arabic Verse 2:217]: "Allah the Almighty said: 'And discord is greater than killing.'" [Arabic Verse 85:10]: "And Allah the Almighty said: 'Indeed, those who have tortured the believing men and believing women and then have not repented will have the punishment of Hell, and they will have the punishment of the Burning Fire.'"

[Urdu Translation of Verses]: "The honorable saying of Allah the Almighty is: 'And discord is worse than killing.' And it is also the command of Allah the Almighty: 'Undoubtedly, those who put believing men and believing women into trial (fitna) and then do not repent, for them is the punishment of Hell and for them is the burning punishment.'" (T)

It is in a Hadith that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says: "When a transgressor (fasiq) is praised, the Throne of God trembles and the Holy and Exalted One turns His face away from him."

[Arabic Citation]: "Narrated by Ibn Abi ad-Dunya in 'Dhamm al-Ghibah', Abu Ya'la in his 'Musnad', al-Bayhaqi in 'Shu'ab al-Iman' on the authority of Anas bin Malik, and Ibn 'Adi in 'Al-Kamil' on the authority of Abu Hurairah (may Allah be pleased with them both)."

[Urdu Translation of Citation]: "Ibn Abi ad-Dunya has narrated it in the book 'Dhamm al-Ghibah', Abu Ya'la in 'Musnad', and al-Bayhaqi in 'Shu'ab al-Iman' from Hazrat Anas bin Malik (may Allah be pleased with him), and Ibn 'Adi in 'Al-Kamil' from Hazrat Abu Hurairah (may Allah be pleased with both of them)." (T)

When praising a transgressor is so disliked by God, then to what extent would praising the leaders of the people of innovation (bid'at) cause His displeasure? To

distance oneself from the love and devotion to the people of innovation is necessary; going near them is to promote them.

---

1. Al-Quran 18/57
2. Al-Quran 2/217
3. Al-Quran 85/10
4. Shu'ab al-Iman, Chapter on Guarding the Tongue, published by Dar al-Kutub al-Ilmiyyah, Beirut 4/230

फ़तवा रज़विया, खंड 6

[अरबी आयत 18:57]: "...उनके दिलों पर परदे हैं कि वे उसे न समझें, और उनके कानों में बोझ है।" [उर्दू अनुवाद]: "जो उसके हाथों ने आगे भेजा, बेशक हमने उनके दिलों पर उसे समझने से परदे कर दिए और उनके कानों में डाट (बोझ)।"

मुसलमानों के साथ चालाकी और मक्कारी करना, उन्हें धोखे और फरेब में डालना, ऐसे कार्य करना जिससे लोगों की नमाज़ उनके पीछे खराब हो, और फिर उन्हें शांत करने के लिए केवल दिखावे के लिए तौबा करना जबकि उन्हीं कार्यों में लिप्त रहना, यह 'फ़ितना' (अशांति/उपद्रव) है। अल्लाह के नज़दीक यह नाहक़ कत्ल (बेगुनाह की हत्या) से भी अधिक गंभीर है और जहन्नुम (नरक) की सज़ा का कारण है।

[अरबी आयत 2:217]: "अल्लाह तआला ने फ़रमाया: 'और फ़ितना कत्ल से बड़ा (पाप) है।'" [अरबी आयत 85:10]: "और अल्लाह तआला ने यह भी फ़रमाया: 'बेशक वे लोग जिन्होंने मोमिन पुरुषों और मोमिन महिलाओं को फ़ितने में डाला और फिर तौबा नहीं की, उनके लिए जहन्नुम का अज़ाब है और उनके लिए जलाने वाला अज़ाब है।'"

[आयतों का अनुवाद]: "अल्लाह तआला का महान कथन है: 'और फ़ितना कत्ल से बदतर है।' और अल्लाह तआला का यह भी आदेश है: 'निस्संदेह, जो लोग ईमान वाले पुरुषों और ईमान वाली महिलाओं को आज़माइश (फ़ितने) में डालते हैं और फिर तौबा नहीं करते, उनके लिए जहन्नुम का अज़ाब है और उनके लिए जलाने वाली सज़ा है।'" (त)

हदीस में है कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) फ़रमाते हैं: "जब किसी फ़ासिक़ (पापी) की प्रशंसा की जाती है, तो अल्लाह का अर्श कांप जाता है और अल्लाह सुब्हानहु व तआला उससे अपना रुख मोड़ लेता है।"

[अरबी संदर्भ]: "इसे इब्न अबी अद-दुनिया ने 'ज़म अल-गीबा' में, अबू याला ने अपनी 'मुसनद' में, अल-बैहक़ी ने 'शुअ़ब अल-ईमान' में अनस बिन मालिक से, और इब्न अदी ने 'अल-कामिल' में अबू हुरैरा (अल्लाह उन दोनों से प्रसन्न हो) से रिवायत किया है।"

[संदर्भ का अनुवाद]: "इसे इब्न अबी अद-दुनिया ने 'ज़म अल-गीबा' पुस्तक में, अबू याला ने 'मुसनद' में, और बैहक़ी ने 'शुअ़ब अल-ईमान' में हज़रत अनस बिन मालिक (रज़ियल्लाहु अन्हु) से और इब्न अदी ने 'कामिल' में हज़रत अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत किया है।" (त)

जब एक फ़ासिक़ की प्रशंसा करना खुदा को इतना नापसंद है, तो बिदअतियों (नया पंथ निकालने वालों) के सरदारों की प्रशंसा से उसे कितनी नाराज़गी होगी? बिदअतियों से प्रेम और श्रद्धा रखने से दूर रहना चाहिए; उनके पास जाना उनकी विचारधारा को बढ़ावा देना है।

---

1. अल-क़ुरआन 18/57
2. अल-क़ुरआन 2/217
3. अल-क़ुरआन 85/10
4. शुअ़ब अल-ईमान, ज़ुबान की हिफ़ाज़त का अध्याय, दारुल कुतुब अल-इल्मिया बेरूत 4/230 द्वारा प्रकाशित।

पृष्ठ 736 का 446

فتاوی رضویہ جلد ششم

عَلٰی قُلُوْبِهِمْ اَكِنَّةً اَنْ یَّفْقَهُوْهُ وَ فِیْۤ اٰذَانِهِمْ وَقْرًا ط۱ جو آگے بھیجا اس کے ہاتھوں نے ، بیشک ہم نے کر دے ان کے دلوں پر پردے اُس کے سمجھنے سے اور ان کے کانوں میں ٹینٹ۔

مسلمانوں کے ساتھ عیاری و چالاکی اور انہیں دھوکے دینا فریب میں ڈالنا ایسے افعال کر کے جن کے سبب لوگوں کی نماز ان کے پیچھے خراب ہو ان کی تسکین کے لئے بظاہر توبہ کرنا اور انہیں باتوں کا مرتکب رہنا فتنہ ہے کہ اللہ کے نزدیک قتل ناحق سے زیادہ سخت ہے اور عذاب جہنم کا موجب۔

قَالَ اللّٰهُ تَعَالٰی وَ الْفِتْنَةُ اَكْبَرُ مِنَ الْقَتْلِ ط۲ وَقَالَ اللہ تَعَالٰی اِنَّ الَّذِیْنَ فَتَنُوا الْمُؤْمِنِیْنَ وَ الْمُؤْمِنٰتِ ثُمَّ لَمْ یَتُوْبُوْا فَلَهُمْ عَذَابُ جَهَنَّمَ وَ لَهُمْ عَذَابُ الْحَرِیْقِ ط۳

اللہ تعالٰی کا ارشاد گرامی ہے اور فتنہ قتل سے بدتر ہے اور اللہ تعالٰی کا یہ بھی فرمان ہے بلاشبہ وہ لوگ جو مومن مردوں اور مومن خواتین کو فتنہ میں ڈالتے ہیں پھر توبہ نہیں کرتے ان کے لئے جہنم کا عذاب ہے اور ان کے لئے جلانے والا عذاب ہے۔(ت)

حدیث میں ہے رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں : " جب فاسق کی مدح کی جاتی ہے عرش خدا کانپ جاتا ہے اور حق سبحنہ، تعالٰی اس کی طرف سے منہ پھیر لیتا ہے 4"۔

رواہ ابن ابی الدنیا فی ذم الغیبة وابو یعلی فی مسندہ والبیھقی فی شعب الایمان عن انس بن مالک وابن عدی فی الکامل عن ابی ھریرة رضی اللہ تعالٰی عنھما۔

اس کو ابن ابی الدنیا نے کتاب ذم الغیبہ میں، ابویعلی نے مسند میں اور بیہقی نے شعب الایمان میں حضرت انس بن مالک رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے اور ابن عدی نے کامل میں حضرت ابوہریرہ رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے روایت کیا ہے۔ (ت)

جب فاسق کی مدح خدا کو اس قدر ناپسند ہے تو رؤسائے اہل بدعت کی تعریف کس قدر موجب اس کی ناراضگی کی ہوگی بدل اہل بدعت سے محبت و عقیدت سے دُور دُور سے انکے پاس جانا اُن کی ترویج ہے۔

---

۱ القرآن ۱۸ / ۵۷ ۲ القرآن ۲ / ۲۱۷ ۳ القرآن ۸۵ / ۱۰ ۴ شعب ایمان باب فی حفظ اللسان، مطبوعہ دارالکتب العلمیہ بیروت ۴ / ۲۳۰

Fatawa Razawiyya Volume VI

Remaining active in that [wrong] belief and censuring Sunnis by abusing them, declaring disassociation (tabarra) from that faith, and being double-faced (du-wajhain) is something upon which severe warnings have been issued. The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "The double-faced person will be given [tongues] of fire in Hell on the Day of Resurrection." 1. The Holy Quran is full of condemnation for such a heinous act.

Allah Almighty said: "They [seek to] deceive Allah and those who believe, but they deceive not except themselves and perceive [it] not." 2 (Urdu Translation): Allah Almighty said: They want to deceive God and the Muslims, and in reality, they do not deceive anyone but their own souls, and they are not aware.

And He says: "And when they meet those who believe, they say, 'We believe'; but when they are alone with their evil ones, they say, 'Indeed, we are with you; we were only jesters.'" 3 (Urdu Translation): When they meet Muslims, they say, "We are Muslims," and when they are alone with their devils (leaders), they say, "Indeed, we are with you; we were just mocking."

In short, there is no doubt that Zaid is a transgressor (fasiq), and prayer behind a transgressor is disliked (makruh). Scholars command not to pray behind him but to go to another mosque. For those who believe Friday prayer is not permissible in multiple mosques, they might permit following him for Friday prayer out of necessity if it's impossible to stop him from leading. Imam Allama Muhaqqiq Ali al-Itlaq Kamal al-Din Muhammad bin al-Humam (may Allah have mercy on him) says: Since the preferred scholarly opinion is that Friday prayer can be held in multiple mosques, then following him in Friday prayer is also disliked because going to another mosque is possible.

In al-Bahr al-Ra'iq, it is mentioned by the commentator and others: "When it is impossible to prevent a transgressor from leading, one may pray Friday prayer behind him, but for other prayers, one should move to another mosque." The reasoning given in al-Mi'raj is that for prayers other than Friday, one can find another imam, so it is said in... (Urdu Translation): In Bahr al-Ra'iq, the commentator and others have mentioned that when a transgressor leads the prayer, then for other prayers, one should go to another mosque. And in Mi'raj, the reason given was that besides Friday...

1. Majma' al-Zawa'id, Chapter on the Double-faced and Double-tongued, published by Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, 8/95.
2. Al-Quran 2/9.
3. Al-Quran 2/14.

फतावा रज़विया जिल्द शशुम (खंड 6)

उस [गलत] मत में सक्रिय रहना और सुन्नियों को गाली देकर उनकी प्रताड़ना करना, उस धर्म पर 'तबर्रा' (अलगाव) करना, दोमुंहा होना ऐसी बातें हैं जिन पर कड़ी चेतावनी दी गई है। अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया: "दोमुंहे व्यक्ति को कयामत के दिन जहन्नुम में आग की [ज़बानें] दी जाएंगी।" 1. पवित्र कुरान ऐसी घृणित हरकत की निंदा से भरा हुआ है।

अल्लाह अज़्ज़ व जल ने फरमाया: "वे अल्लाह और ईमान वालों को धोखा देना चाहते हैं, पर वे वास्तव में केवल अपने आप को धोखा दे रहे हैं और उन्हें इसका पता नहीं है।" 2 अल्लाह तआला ने फरमाया: वे खुदा और मुसलमानों को धोखा देना चाहते हैं और हकीकत में वे अपनी जानों के सिवा किसी को फरेब में नहीं डालते और उन्हें खबर नहीं।

और फरमाता है: "और जब वे ईमान वालों से मिलते हैं, तो कहते हैं, 'हम ईमान ले आए हैं'; लेकिन जब वे अपने शैतानों (नेताओं) के साथ अकेले होते हैं, तो कहते हैं, 'बेशक, हम तुम्हारे साथ हैं; हम तो केवल मज़ाक कर रहे थे'।" 3 जब मुसलमानों से मिलें कहते हैं हम मुसलमान हैं और जब अपने शैतानों के पास अकेले हों तो कहें हम तुम्हारे साथ हैं हम तो यूँही ठिठ्ठा (मजाक) करते हैं।

सारांश यह है कि ज़ैद के फासिक (पापी) होने में कोई संदेह नहीं है और फासिक के पीछे नमाज़ मकरूह (नापसंद) है। विद्वान आदेश देते हैं कि उसके पीछे नमाज़ न पढ़े बल्कि दूसरी मस्जिद में चला जाए, और जिन लोगों के नज़दीक जुमा कई मस्जिदों में जायज़ नहीं होता, वे मजबूरी में जुमा में उसका अनुसरण जायज़ समझते हैं अगर उसे इमामत से रोकना संभव न हो। इमाम अल्लामा मुहक़्क़िक़ अली अल-इतलाक़ कमालुद्दीन मुहम्मद बिन अल-हुमाम (अल्लाह उन पर रहम करे) फरमाते हैं कि चूँकि मुफ़्ती-बिह (मान्य) राय यह है कि जुमा भी कई मस्जिदों में हो जाता है, तो जुमा की नमाज़ में भी उसका अनुसरण मकरूह है क्योंकि दूसरी मस्जिद जाना संभव है।

'अल-बहर अल-राइक' में टीकाकार और अन्यों ने यह ज़िक्र किया है: "कि जब फासिक को इमामत से रोकना असंभव हो, तो उसके पीछे जुमा की नमाज़ पढ़ ली जाए, अलबत्ता दूसरी नमाज़ों के लिए किसी दूसरी मस्जिद में चला जाना चाहिए। और 'मेराज' में इसकी वजह यह बयान की गई कि जुमा के अलावा कोई अन्य इमाम मिल सकता है, तो कहा गया..." बहर अल-राइक में है कि व्याख्याकार वगैरह ने यह ज़िक्र किया है कि जब फासिक को इमामत में पढ़ लिया जाए, अलबत्ता दूसरी नमाज़ों

के लिए किसी दूसरी मस्जिद में चला जाना चाहिए, और मेराज में इसकी वजह यह बयान की कि जुमा के अलावा...

---

1. मजमा अल-ज़वाइद, दोमुंहे और दो ज़बान वाले के बारे में अध्याय, दारुल किताब अल-अरबी, बेरूत, 8/95।
2. अल-कुरान 2/9.
3. अल-कुरान 2/14.

فتاوی رضویہ جلد ششم

مذہب میں ساعی رہنا اور سنیوں کی تعزیر کو انھیں گالیاں دینا اُس مذہب پر تبرّا کرنا ذوالوجہین ہونا جس پر وعید شدید وارد ، رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں: "ذوالوجہین کو قیامت میں دوزخ میں آگ کی دی جائیں گی" 1۔ قرآن مجید اس حرکت شنیعہ کی مذمت سے مشحون ہے۔

قَالَ اللّٰہُ عَزَّ وَجَلَّ یُخٰدِعُوْنَ اللّٰہَ وَ الَّذِیْنَ اٰمَنُوْا وَ مَا یَخْدَعُوْنَ اِلَّآ اَنْفُسَھُمْ وَ مَا یَشْعُرُوْنَ ۲۔ اللہ تعالیٰ نے فرمایا دھوکا دینا چاہتے ہیں خدا اور مسلمانوں کو اور حقیقت میں نہیں فریب میں ڈالتے مگر اپنی جانوں کو اور انھیں خبر نہیں۔

اور فرماتا ہے: وَ اِذَا لَقُوا الَّذِیْنَ اٰمَنُوْا قَالُوْٓا اٰمَنَّا ۚ وَ اِذَا خَلَوْا اِلٰی شَیٰطِیْنِھِمْ ۙ قَالُوْٓا اِنَّا مَعَکُمْ ۙ اِنَّمَا نَحْنُ مُسْتَھْزِءُوْنَ ۳ جب مسلمانوں سے ملیں کہتے ہیں ہم مسلمان ہیں اور جب اپنے شیطانوں کے پاس اکیلے ہوں تو کہیں ہم تمہارے ساتھ ہیں ہم تو یونہی ٹھٹھا کرتے ہیں۔

الغرض زید کے فاسق ہونے میں کوئی شبہ نہیں اور نماز فاسق کے پیچھے مکروہ ہے۔ علماء حکم دیتے ہیں کہ اُس کے پیچھے نماز نہ پڑھے بلکہ دوسری مسجد میں چلا جائے، اور جن لوگوں کے نزدیک جمعہ چند مسجدوں میں جائز نہیں ہوتا وہ بضرورت جمعہ اُس کی اقتدا روا رکھتے ہیں اگر اس طرح اُس کا امامت سے روکنا نہ بن پڑے، امام علامہ محقق علی الاطلاق کمال الدین محمد بن الہمام رحمۃ اللہ تعالیٰ علیہ فرماتے ہیں جبکہ قول مفتی بہ یہ ٹھہرا کہ جمعہ بھی چند مسجدوں میں ہو جاتا ہے تو نماز جمعہ میں بھی اُس کی اقتدا مکروہ ہے کہ دوسری مسجد چلا جانا میسر ہے،

فی البحر الرائق وذکر الشارح وغیرہ ان الفاسق اذا تعذر منعہ یصلی الجمعۃ خلفہ وفی غیرہا ینتقل الی مسجد اخر وعلل لہ فی المعراج بان فی غیر الجمعۃ یجد اماما غیرہ فقال فی بحر الرائق میں ہے شارح وغیرہ نے یہ ذکر کیا ہے کہ جب فاسق کو امامت میں پڑھ لیا جائے البتہ دوسری نمازوں کے لئے کسی دوسری مسجد میں چلا جانا چاہئے، اور معراج میں اس کی علت یہ بیان کی کہ جمعہ کے علاوہ

---

1 مجمع الزوائد باب فی الوجہین واللسانین مطبوعہ دار الکتاب العربیہ بیروت ۹۵/۸ 2 القرآن ۹/۲ 3 القرآن ۱۴/۲

Fatawa-e-Razvia Volume VI

[Arabic Text]: Fath al-Qadir: "Based on this, it is disliked to follow him in Friday prayer as well, if it is performed in multiple places in the city according to Imam Muhammad's view, which is the fatwa. This is because switching to another place is possible then." [Urdu Translation]: In other prayers, another Imam can be found. Therefore, Fath al-Qadir states that following a transgressor (Fasiq) in Friday prayer will also be disliked (Makruh) because, according to Imam Muhammad, Friday prayer can be offered at multiple locations in a city. Since the fatwa is based on this view, moving to another place for Friday prayer is possible. (T)

Moreover, increasing the size of the congregation is desired by Sharia. This is why following those whose leadership might cause people to have less desire to join and thus decrease the congregation was deemed Makruh, such as a desert dweller, a slave, or an illegitimate person. Therefore, how could the Sharia approve the leadership of someone from whom people feel a complete aversion due to their religion, and whoever becomes aware of his state starts leaving the prayer?

[Arabic Text]: In Al-Bahr al-Ra'iq: "As for the dislike, it is based on the people's lack of desire to follow them, leading to a reduction in the congregation whereas increasing the reward is sought [by increasing the congregation]." [Urdu Translation]: It is written in Al-Bahr al-Ra'iq that the reason for the dislike is that people have less inclination to follow them. Because of this, attendance in the congregation will be low, whereas a large attendance is desired for greater reward. (T)

Furthermore, the mentioned actions of Zaid are not just simple transgression (fisq) but clear proof that he is a severe innovator (bid'ati), an extremist, a denier, and an enemy of the true faith, and one who misleads God's creation. Now the dislike is much greater than before, as there is a vast difference between transgression in actions and transgression in beliefs. It is stated in Kabiri, a commentary on Munyat al-Musalli:

[Arabic Text]: "It is also disliked to put forward an innovator [as Imam] because he is a transgressor in terms of belief, and this is more severe than transgression in terms of actions. [A practical transgressor] admits he is a transgressor, fears, and seeks forgiveness, unlike the innovator. By 'innovator' is meant one who holds beliefs contrary to those of the Ahl al-Sunnah wal-Jama'ah." [Urdu Translation]: Making an innovator the Imam is also Makruh because he is a Fasiq in terms of belief. Such a person is worse than a practical Fasiq because a practical Fasiq admits his

transgression, fears, and asks for Allah's forgiveness. This is contrary to an innovator. And by innovator is meant a person who holds beliefs contrary to the beliefs of the Ahl al-Sunnah wal-Jama'ah. (T)

1. Al-Bahr al-Ra'iq, Chapter on Imamate, published by H.M. Saeed Company Karachi, 1/349.
2. Al-Bahr al-Ra'iq, Chapter on Imamate, published by H.M. Saeed Company Karachi, 1/348.
3. Ghunyat al-Mustamli Sharh Munyat al-Musalli, Chapter on Imamate etc., published by Sohail Academy Lahore, p. 512.

फ़तावा-ए-रज़विया जिल्द छठी

[अरबी पाठ]: फ़तह अल-क़दीर: "इसके आधार पर, जुमे की नमाज़ में भी उसका अनुसरण करना नापसंद (मक़रूह) है, अगर इमाम मुहम्मद के विचार के अनुसार शहर में कई स्थानों पर जुमा अदा किया जाता है, जो कि फतवा है। ऐसा इसलिए है क्योंकि तब दूसरी जगह जाना संभव है।" [उर्दू अनुवाद]: अन्य नमाज़ों में दूसरा इमाम मिल सकता है। इसलिए फ़तह अल-क़दीर में कहा गया है कि जुमे की नमाज़ में भी एक फासिक (पापी) का अनुसरण करना मक़रूह होगा क्योंकि इमाम मुहम्मद के अनुसार, एक शहर में कई स्थानों पर जुमे की नमाज़ अदा की जा सकती है। चूँकि फतवा इसी विचार पर आधारित है, इसलिए जुमे के लिए दूसरी जगह जाना संभव है। (त)

इसके अलावा, जमात (मंडली) की संख्या बढ़ाना शरीयत द्वारा वांछित है। यही कारण है कि उन लोगों का अनुसरण करना मक़रूह माना गया जिनकी इमामत के कारण लोगों में शामिल होने की इच्छा कम हो सकती है और इस प्रकार जमात कम हो सकती है, जैसे कि कोई ग्रामीण, गुलाम, या अवैध संतान। इसलिए, शरीयत उस व्यक्ति की इमामत को कैसे स्वीकार कर सकती है जिससे लोग उसके धर्म के कारण पूरी तरह से विमुख महसूस करते हैं, और जो कोई भी उसकी स्थिति से अवगत होता है वह नमाज़ छोड़ना शुरू कर देता है?

[अरबी पाठ]: अल-बहर अल-राईक में: "जहाँ तक नापसंदगी की बात है, यह लोगों में उनका अनुसरण करने की इच्छा की कमी पर आधारित है, जिससे जमात में कमी आती है जबकि अधिक सवाब (इनाम) के लिए जमात की अधिकता वांछित है।" [उर्दू अनुवाद]: अल-बहर अल-राईक में लिखा है कि नापसंदगी का कारण यह है कि लोगों में उनका अनुसरण करने का झुकाव कम पाया जाता है। इस कारण से जमात में उपस्थिति कम होगी, जबकि अधिक पुण्य की दृष्टि से जमात में अधिक लोगों की उपस्थिति वांछित है। (त)

इसके अतिरिक्त, ज़ैद के उक्त कार्य केवल साधारण फस्क (पाप) नहीं हैं, बल्कि इस बात का स्पष्ट प्रमाण हैं कि वह एक घोर बिदअती (नवाचारी), कट्टरपंथी, झुठलाने वाला, सच्चे धर्म का शत्रु और ईश्वर की रचना को गुमराह करने वाला है। अब नापसंदगी पहले की तुलना में बहुत अधिक है, क्योंकि कर्मों के पाप और विश्वासों के पाप में जमीन-आसमान का अंतर है। मुन्यातुल मुसल्ली की व्याख्या कबीरी में लिखा है:

[अरबी पाठ]: "एक बिदअती को इमाम बनाना भी मक़रूह है क्योंकि वह विश्वास के मामले में फासिक है, और यह कर्म के मामले में फासिक होने से अधिक गंभीर है। [एक व्यावहारिक फासिक] स्वीकार करता है कि वह फासिक है, डरता है और क्षमा मांगता है, बिदअती के विपरीत। बिदअती से तात्पर्य उस व्यक्ति से है जो अहल-ए-सुन्नत वल-जमाअत के विश्वासों के विपरीत विश्वास रखता है।" [उर्दू अनुवाद]: बिदअती को इमाम बनाना भी मक़रूह है क्योंकि वह अकीदे (विश्वास) के लिहाज़ से फासिक है। ऐसा व्यक्ति व्यावहारिक फासिक से भी बदतर है क्योंकि व्यावहारिक फासिक अपने पाप को स्वीकार करता है, डरता है और अल्लाह से माफी मांगता है। बिदअती इसके विपरीत होता है। और बिदअती से मुराद वह शख्स है जो अहल-ए-सुन्नत वल-जमाअत के अकीदों के खिलाफ कोई दूसरा अकीदा रखता हो। (त)

1. अल-बहर अल-राईक, इमामत का अध्याय, प्रकाशक एच.एम. सईद कंपनी कराची, 1/349.
2. अल-बहर अल-राईक, इमामत का अध्याय, प्रकाशक एच.एम. सईद कंपनी कराची, 1/348.
3. गुन्यातुल मुस्तमली शरह मुन्यातुल मुसल्ली, इमामत आदि का अध्याय, प्रकाशक सुहैल अकादमी लाहौर, पृ. 512.

पृष्ठ 448 / 736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

فتح القدیر وعلی ھذا فیکرہ الاقتداء بہ في الجمعۃ اذا تعددت اقامتھا في المصر علی قول محمد وھو المفتی بہ لانہ سبیل من التحول ح (حینئذ)1 بقیہ نمازوں میں دوسرا امام میسر آسکتا ہے، تو فتح القدیر میں کہا کہ اس بنا پر نماز جمعہ میں بھی فاسق کی اقتدا مکروہ ہوگی کیونکہ امام محمد کے قول کے مطابق شہر میں متعدد جگہ جمعہ ادا کیا جا سکتا ہے۔ اور اسی قول پر فتوٰی ہے لہٰذا جمعہ میں بھی دوسری جگہ منتقل ہونا ممکن ہے (ت)

معہذا تکثیر جماعت شرع کو مطلوب ہے اسی واسطے جن کی امامت میں احتمال لوگوں کی قلت رغبت و کمی جماعت کا تھا انکی اقتداء مکروہ ٹھہری مثل اعرابی و غلام ولدالزنا پس جس شخص سے لوگ اپنے دین کو وجہ سے تنفر تام رکھیں اور جو اُس کے حال سے آگاہ ہوتا جائے نماز چھوڑتا جائے اس کی امامت شرع کو کیونکر پسند آئے گی۔

فی البحر الرائق واما الکرھۃ فمبنیۃ علی قلۃ رغبۃ الناس فی الاقتداء بھؤلاء فیؤدی الی تقلیل الجماعۃ المطلوب تکثیر الاجر2۔ البحر الرائق میں ہے کراہت کی وجہ یہ ہے کہ ان کی اقتدا کی رغبت لوگوں میں کم پائی جاتی ہے اس وجہ سے جماعت میں حاضری کم لوگوں کی ہوگی اور حالانکہ کثرت اجر کے پیش نظر جماعت میں کثیر افراد کی حاضری مطلوب ہے (ت)

علاوہ بریں افعال مذکورہ زید مجرد فسق ہی نہیں بلکہ دلیل واضح ہیں اس پر کہ وہ سخت بدعتی غالی مکذب اور مذہب حق کا دشمن اور خلق خدا کو گمراہ کرنے والا ہے تو اب کراہت بہ نسبت پہلے کے بہت زائد ہوگئی کہ فسق فی الاعمال و فسق فی العقائد میں زمین و آسمان کا فرق ہے، کبیری شرح منیہ میں ہے :

ویکرہ تقدیم المبتدع ایضا لانہ فاسق من حیث الاعتقاد وھواشد من الفسق من حیث العمل یعترف بانہ فاسق ویخاف ویستغفر بخلاف المبتدع والمراد بالمبتدع من یعتقد شیئا علی خلاف ما یعتقدہ اھل السنۃ والجماعۃ3۔ بدعتی کو امام بنانا بھی مکروہ ہے کیونکہ وہ اعتقاد کے لحاظ سے فاسق ہے اور ایسا آدمی عملی فاسق سے بدتر ہے کیونکہ عملی فاسق اپنے فسق کا اعتراف کرتا ہے اور ڈرتا ہے اور اللہ سے معافی کا خواستگار ہوتا ہے۔ بخلاف بدعتی کے اور بدعتی سے مراد وہ شخص ہے جو اہلسنت وجماعت کے عقائد کے خلاف کوئی دوسرا عقیدہ رکھتا ہوں۔ (ت)

1 البحر الرائق ، باب الامامۃ، مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی، ۱/۳۴۹ 2 البحر الرائق باب الامامۃ مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱/۳۴۸ 3 غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل فی الامامۃ الخ مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۵۱۲

Up to this point it was just a matter of mere dislike (karahat). Now that it has become known from his circumstances that he does not hold any belief of his own, but rather, whatever some innovators (ahl-e-bid'at) say is acceptable to him, to the extent that he regards their blasphemies (kufriyat) as acceptable and strives heart and soul for their promotion, it is clear that his innovation (bid'at) has reached the level of disbelief (kufr). The extent of his deviating belief cannot be known. In fact, when he insults even those leaders and renounces their path, it is apparent from his state that he is a pure heretic (zindiq), atheist, and irreligious person who is not concerned with any specific religion but merely intends to oppose the religion of Islam and the path of the Ahl-e-Sunnah. Praying behind such a person is absolutely void and forbidden.

Arabic Quote	Urdu Translation
In Al-Bahr al-Ra'iq, it is restricted in Al-Muhit, Al-Khulasa, Al-Mujtaba, etc., that his innovation should not be one that renders him an unbeliever. If it renders him an unbeliever, then praying behind him is not permissible.[1]	In Al-Bahr al-Ra'iq, it is mentioned from Al-Muhit, Al-Khulasa, Al-Mujtaba, etc., that if his innovation has reached the level of disbelief—if his innovation has reached the level of disbelief, then praying behind him will not be permissible. (T)

In Kabirî it is said:

Arabic Quote	Urdu Translation
Indeed, following him is permissible with dislike only if what he believes does not lead to disbelief. But if it leads to disbelief, then it is not permissible at all.[2]	Following him with dislike is permissible only in the case when his belief does not reach the level of disbelief. If it leads to the level of disbelief, then praying behind him will not be permissible at all. (T)

And after testing and experience, it is clear that he repents to deceive Muslims and does not desist from those beliefs and machinations. His repentance will never be relied upon, especially in the matter of prayer, which is the most superior and complete of all actions. Those who rely on such repentance should be asked: If you were certain that someone was a thief, and he repeatedly repented and then stole again, would you be so satisfied with his repentance that you would hand over your property to him again? Alas, worldly wealth, which is merely insignificant and lowly in the eyes of Allah, has become so dear in your sight that you avoid anything even suspected of causing its loss. Yet, in prayer, which is extremely beloved to Allah and

most great in His sight, you show such compromise? Even if, for the sake of argument, his repentance is true and from the bottom of his heart, still, when his state has become doubtful, who has made it obligatory or necessary to pray behind him regardless? Can't such a person be found who is free from these faults and behind whom prayer is correct without any doubt? And...

---

1. Al-Bahr al-Ra'iq, Chapter on Imamate, printed by H.M. Saeed Company Karachi, 1/329.
2. Ghunyat al-Mustamli Sharh Munyat al-Musalli, Chapter on Imamate, etc., printed by Suhail Academy Lahore, p. 512.

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

यहाँ तक तो केवल कराहत (नापसंदगी) थी, अब जबकि उसकी स्थितियों से ज्ञात हुआ है कि वह अपना कोई अकीदा (विश्वास) नहीं रखता, बल्कि कुछ बिदअती (नवाचारी) जो बात कह दें, वह उसके नज़दीक स्वीकार्य होती है, यहाँ तक कि वह उनके कुफ़्रियात (कुफ़्र भरी बातों) को भी स्वीकार्य मानता है और उनके प्रचार में दिल-ओ-जान से कोशिश करता है, तो ज्ञात हुआ कि उसकी बिदअत कुफ़्र की सीमा तक पहुँच गई है। और उसके भटकते हुए अकीदे की कोई सीमा नहीं जानी जा सकती। बल्कि जब वह अपने उन पेशवाओं को भी गालियाँ देता है और उनके धर्म से तबर्रा (घृणा प्रकट) करता है, तो उसकी स्थिति से स्पष्ट है कि वह मात्र एक ज़ंदीक, मुलहिद और अधर्मी है, जिसे किसी विशेष धर्म से कोई सरोकार नहीं, बल्कि उसे केवल इस्लाम धर्म और अहल-ए-सुन्नत के पंथ का विरोध करना ही मंज़ूर है। ऐसे व्यक्ति के पीछे नमाज़ पढ़ना पूर्णतः बातिल (अमान्य) और हराम है।

अरबी उद्धरण

अल-बहर अल-रायिक में है, अल-मुहीत, अल-ख़ुलासा, अल-मुजतबा आदि में यह शर्त लगाई गई है कि उसकी बिदअत उसे काफ़िर बनाने वाली न हो। यदि वह उसे काफ़िर बनाने वाली है, तो उसके पीछे नमाज़ जायज़ नहीं होगी।[1]

उर्दू अनुवाद

अल-बहر अल-रायिक में है, अल-मुहीत, अल-ख़ुलासा, अल-मुजतबा आदि में है कि उसकी बिदअत कुफ़्र की सीमा तक पहुँच गई हो, अगर उसकी बिदअत कुफ़्र की सीमा तक पहुँच गई तो उसके पीछे नमाज़ जायज़ नहीं होगी। (त)

कबीरी में है:

अरबी उद्धरण

निश्चित रूप से कराहत के साथ उसका अनुसरण केवल उसी स्थिति में जायज़ है जब उसका विश्वास कुफ़्र की सीमा तक न पहुँचा दे। यदि वह कुफ़्र की सीमा तक पहुँचाता है, तो उसके पीछे नमाज़ बिल्कुल भी जायज़ नहीं होगी।[2]

उर्दू अनुवाद

कराहत के साथ उसका अनुसरण केवल उसी स्थिति में जायज़ है जब उसका विश्वास कुफ़्र की सीमा तक न पहुँचा दे। अगर वह कुफ़्र की सीमा तक पहुँचाता है, तो उसके पीछे नमाज़ बिल्कुल भी जायज़ नहीं होगी। (त)

और जाँच और अनुभव के बाद यह स्पष्ट है कि वह मुसलमानों को धोखा देने के लिए तौबा करता है और उन अकीदों और चालों से बाज़ नहीं आता, उसकी तौबा पर कभी विश्वास नहीं किया जाएगा,

विशेष रूप से नमाज़ के मामले में जो सभी कर्मों में सबसे श्रेष्ठ और पूर्ण है। जो लोग ऐसी तौबा पर भरोसा करते हैं उनसे पूछा जाना चाहिए कि यदि आपको किसी व्यक्ति के चोर होने का यकीन हो जाए और वह बार-बार तौबा करके फिर चोरियाँ करता हो, तो क्या आप उसकी तौबा पर इतने संतुष्ट हो जाएँगे कि फिर से अपना धन उसके हवाले कर देंगे? अफ़सोस! दुनिया का माल जो अल्लाह के नज़दीक मात्र तुच्छ और ज़लील है, वह तुम्हारी नज़रों में इतना प्रिय हो गया कि जिस काम में उसके नुकसान का ज़रा सा भी संदेह हो, उससे परहेज़ करते हो। और नमाज़ जो अल्लाह को अत्यंत प्रिय और उसके नज़दीक महान है, उसमें यह दिखावा? अगर मान भी लिया जाए कि उसकी तौबा सच्ची और अंतर्मन से है, फिर भी जब उसकी स्थिति संदेहास्पद हो चुकी है, तो किसने उसके पीछे नमाज़ पढ़ना अनिवार्य या आवश्यक कर दिया है? क्या ऐसा कोई व्यक्ति नहीं मिलता जो इन दोषों से मुक्त हो और जिसके पीछे नमाज़ बिना किसी संदेह के सही हो? और...

---

1. अल-बرهر अल-रायिक, बाब अल-इमामत, मुद्रित एच.एम. सईद कंपनी कराची, 1/329।
2. ग़ुनयतुल मुस्तमली शरह मुनयतुल मुसल्ली, फ़स्ल फ़िल इमामत आदि, मुद्रित सुहैल एकेडमी लाहौर, पृ. 512।

पृष्ठ 449/736

فتاوی رضویہ جلد ششم

یہاں تک تو مجرد کراہت تھی اب جبکہ اس کے حالات سے معلوم ہوا کہ اپنا وہ کوئی عقیدہ نہیں رکھتا بلکہ بعض اہل بدعت جو بات کہہ دیں وہ اس کے نزدیک مسلم ہوتی ہے حتی کہ ان کے کفریات کو مسلم رکھتا ہے اور اس کی ترویج میں بجان و دل ساعی ہوتا ہے تو معلوم ہوا کہ بدعت اس کی حد کفر تک پہنچی ہے اور انتہا اس کے عقیدہ زالغہ کی نہیں معلوم ہو سکتی بلکہ جب اپنے ان پیشواؤں کو بھی گالیاں دیتا اور ان کے مذہب سے تبرا کرتا ہے تو ظاہر اس کے حال سے یہ ہے کہ وہ محض زندیق ملحد بے دین ہے جسے کسی خاص کسی مذہب سے غرض نہیں بلکہ مجرد مخالفت دین اسلام و مذہب اہل سنت منظور ہے ایسے شخص کے پیچھے نماز قطعاً باطل وحرام ہے۔

عربی متن	اردو ترجمہ
فی البحر الرائق قیدہ فی المحیط و الخلاصۃ والمجتبی و غیرھا بأن لا یکون بدعتہ تکفرہ فأن کانت تکفرہ فالصلاۃ خلفہ لا تجوز- 1	بحرالرائق میں ہے محیط، خلاصہ، مجتبی وغیرہ میں ہے اس کی بدعت حد کفر تک پہنچی ہو، اگر اس کی بدعت حد کفر تک پہنچی تو اس کے پیچھے نماز جائز نہ ہوگی۔ (ت)

کبیری میں ہے:

عربی متن	اردو ترجمہ
	کراہت کے ساتھ اس کی اقتداء اسی صورت میں جائز ہے جب اس کا اعتقاد حد کفر تک نہ پہنچا دے اگر وہ حد کفر

عربی متن	اردو ترجمہ
انما یجوز الاقتداء به مع الکراهة اذا لم یکن ما یعتقده یؤدي الی الکفر اما لو کان مؤدیا الی الکفر فلا یجوز اصلا- 2 (ت)	تک پہنچاتا ہے تو بالکل اس کے پیچھے نماز جائز نہ ہوگی۔

اور بعد امتحان و تجربہ کے ظاہر کہ فریب مسلمانوں کے لئے توبہ کرتا ہے اور ان عقائد و مکائد سے باز نہیں آتا ہر گز اس کی توبہ پر اعتبار نہ ہوگا خصوصاً امر نماز میں تمام اعمال سے افضل واتم ہے جو لوگ ایسی توبہ پر اعتماد کرتے ہیں ان سے پوچھا جائے اگر کسی شخص کے چور ہونے کا تمہیں یقین ہو گیا اور وہ بار بار توبہ کر کے پھر چوریاں کرتا ہو، آیا اس کی توبہ پر مطمئن ہو کہ پھر بھی اپنا مال اسے سپرد کر دو گے افسوس مال دنیوی کہ اللہ کے نزدیک محض حقیر و ذلیل ہے تمہاری نگاہ میں ایسا عزیز و ٹھہرا کہ جس امر میں اس کے نقصان کا وہم بھی ہوا اس سے پرہیز کرو اور نماز کہ اللہ کو نہایت محبوب اور اس کے نزدیک بس عظیم ہے اس میں یہ مداہنت اگر بالفرض اس کی توبہ سچی اور صدقِ باطن سے ہو تاہم جب حال اس کا مشتبہ ہو چکا تو خواہ مخواہ اس کے پیچھے نماز پڑھنے کا کس نے فرض و واجب کیا، کیا ایسا کوئی شخص نہیں ملتا جو ان معائب سے بری اور اس کے پیچھے نماز بلا اشتباہ درست ہو، اور

---

1. بحر الرائق، باب الامامة مطبوعه ایچ ایم سعید کمپنی کراچی، ۳۲۹/۱
2. غنیة المستملی شرح منیة المصلی فصل فی الامامة الخ مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۵۱۲

Fatawa Rizvia, Volume 6 Those who support such a person are enemies of prayer and desire the desolation of mosques and the ruin of the excellent symbol of Islam, i.e., prayer. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 595: From Rangoon, sent by Nizam Ali Sahib, 15 Dhu al-Hijjah 1312 AH. What do the scholars of religion and jurists of the firm Shariah say regarding the following matter: A person's right hand is broken, due to which while tying the intention (takbir), his hand does not reach the ear to touch it. For this reason, some people refuse to follow him in prayer. According to them, can prayer not be performed behind him?

The Answer: The aforementioned thought is wrong; there is no discourse regarding the validity of prayer behind him. Yes, the ultimate point is that it is less preferable (ghair awla), and even that is in the condition when this person does not possess more knowledge of the issues of prayer and purification than all those present; otherwise, he is the most deserving and preferable.

Arabic Text

In *Radd al-Muhtar*, under his statement: it is disliked (makruh) behind a beardless youth, a fool, a paralyzed person, and a leper, etc. Similarly, a lame person who stands on part of his foot; thus, following someone else is better. *Tatar Khaniya*. And similarly, a leper. *Birjandi*, *Mahbub*, and one who suppresses the urge to urinate, and one who has only one hand. *Fatawa al-Sufiyyah* from *al-Tuhfah*. In *al-Durr*, the imamate of a blind person is disliked unless he is the most knowledgeable of the people, then he is more worthy. Summarized, and Allah Subhanahu wa Ta'ala knows best.

Urdu Translation/Explanation

In *Radd al-Muhtar*, under the author's statement "it is disliked behind a beardless youth, a fool, a paralyzed person, and a leper," etc., it is stated: the same ruling applies to a lame person who stands on only a part of his foot; thus, in this case, following a non-lame person is better. In *Tatar Khaniya*, the ruling for a leper is also the same. *Birjandi*: An impotent person, one who suppresses the urge to urinate, and that person who has only one hand, for him also the ruling is the same. In *Fatawa Sufiyyah*, citing *al-Tuhfah*, it is the same. And in *al-Durr al-Mukhtar* it is stated: the imamate of a blind person is disliked except in the case where he is the most knowledgeable in the community, then in that case he is the most worthy and excellent for imamate. Summarized, and Allah Almighty knows best. (T)

Problem 596: A person's young wife goes out without a veil, rather she sits in the market and sells some goods; so for him...

---

1. *Radd al-Muhtar*, Chapter on the Imamate of a Beardless Youth, published by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/416.
2. *al-Durr al-Mukhtar*, Chapter on Imamate, published by Matba' Mujtabai, Delhi, 1/83.

फतावा रजविया, छठा खंड जो लोग ऐसे व्यक्ति का समर्थन करते हैं, वे नमाज़ के दुश्मन हैं और मस्जिदों की वीरानी और इस्लाम के उत्कृष्ट प्रतीक यानी नमाज़ की बर्बादी चाहने वाले हैं। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला नंबर 595: रंगून से, प्रेषक निज़ाम अली साहब, 15 ज़ुल-हिज्जा 1312 हिजरी। दीन के विद्वान और सुदृढ़ शरीयत के मुफ्ती इस मसले में क्या फरमाते हैं: एक व्यक्ति का दाहिना हाथ टूट गया है, इस कारण नियत बांधते समय उसका हाथ कान तक नहीं पहुंचता कि उसे छुए। इस वजह से कुछ लोग उसके पीछे नमाज़ पढ़ने से इनकार करते हैं। क्या उनके अनुसार उसके पीछे नमाज़ नहीं हो सकती?

उत्तर: उक्त विचार गलत है; उसके पीछे नमाज़ की वैधता में कोई संदेह नहीं है। हाँ, अंतिम बात यह है कि उसका इमाम बनना 'ग़ैर-औला' (कम बेहतर) है, और वह भी उस स्थिति में जब यह व्यक्ति उपस्थित लोगों में नमाज़ और पवित्रता के मसलों का सबसे अधिक ज्ञान न रखता हो; अन्यथा यही सबसे अधिक हकदार और श्रेष्ठ है।

अरबी पाठ

'रद्दुल मुहतार' में उनके कथन के तहत: दाढ़ीविहीन युवक, मूर्ख, लकवाग्रस्त और कोढ़ी आदि के पीछे नमाज़ मकरूह है। इसी तरह, वह लंगड़ा जो अपने पैर के एक हिस्से पर खड़ा होता है; अतः किसी अन्य का अनुसरण करना बेहतर है। 'तातार खानिया'। और इसी तरह एक कोढ़ी। 'बिरजंदी', 'महबूब', और वह जो पेशाब को रोकता है, और वह जिसका एक ही हाथ हो। 'फतावा अल-सूफिया' 'अल-तुहफा' से। 'अल-दुर्र' में, एक अंधे व्यक्ति की इमामत तब तक मकरूह है जब तक कि वह लोगों में सबसे अधिक ज्ञानी न हो, तब वह अधिक योग्य है।

उर्दू अनुवाद/व्याख्या

'रद्दुल मुहतार' में लेखक के कथन "दाढ़ीविहीन युवक, मूर्ख, लकवाग्रस्त और कोढ़ी के पीछे नमाज़ मकरूह है" आदि के तहत है: यही नियम उस लंगड़े व्यक्ति के लिए भी है जो अपने पैर के केवल एक हिस्से पर खड़ा होता है; अतः इस स्थिति में गैर-लंगड़े के पीछे नमाज़ पढ़ना बेहतर होगा। 'तातार खानिया' में कोढ़ी के लिए भी यही नियम है। 'बिरजंदी': नपुंसक, पेशाब रोकने वाले और उस व्यक्ति के लिए भी यही नियम है जिसका एक ही हाथ हो। 'फ़तावा सूफिया' में 'तुहफा' के हवाले से यही है। और 'दुर्रे मुख्तार' में है कि अंधे व्यक्ति की इमामत मकरूह है सिवाय उस स्थिति के जब वह पूरी कौम में सबसे अधिक ज्ञानी हो, तो उस स्थिति में वही इमामत के लिए सबसे योग्य

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद/व्याख्या
संक्षेप में, और अल्लाह सुब्हानहू व तआला सबसे बेहतर जानता है।	और श्रेष्ठ है। संक्षेप में, और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है। (त)

मसला 596: एक व्यक्ति की जवान पत्नी बिना पर्दे के बाहर निकलती है, बल्कि बाज़ार में बैठकर कुछ सामान बेचती है; तो उसके लिए...

---

1. रद्दुल मुहतार, दाढ़ीविहीन युवक की इमामत का प्रकरण, मुस्तफा अल-बाबी प्रेस, मिस्र, 1/416.
2. दुर्रे मुख्तार, इमामत का अध्याय, मत्तबा मुज्तबाई प्रेस, दिल्ली, 1/83.

فتاوی رضویہ جلد ششم جو لوگ ایسے شخص کی حمایت کرتے ہیں نماز کے دشمن اور مسجد کی ویرانی اور اہلِ اسلام کے عمدہ شعار یعنی نماز کی بربادی چاہنے والے ہیں۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۵۹۵: از رنگون مرسلہ نظام علی صاحب ۱۵ ذی الحجہ ۱۳۱۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرعِ متین مرجہ ذیل مسئلہ میں: ایک شخص کا دہنا ہاتھ ٹوٹ گیا ہے اس وجہ سے نیت باندھتے وقت ہاتھ اسکا گوش تک نہیں پہنچتا کہ اس کو مس کرے، اس سبب سے بعض لوگ اس کے پیچھے اقتداء کرنے سے انکار کرتے ہیں کیا موافق ان لوگوں کے اس کے پیچھے نماز نہیں ہو سکتی؟

الجواب: خیال مذکور غلط ہے اُس کے پیچھے جوازِ نماز میں کلام نہیں، ہاں غایت یہ ہے کہ اسکا غیر اولیٰ ہونا ہے وہ بھی اس حالت میں کہ یہ شخص تمام حاضرین سے علم مسائل نماز و طہارت میں زیادہ نہ رکھتا ہو ورنہ یہی احق و اولیٰ ہے۔

| فی ردالمحتار تحت قولہ تکرہ خلف امرد وسفیہ ومفلوج وابرص الخ وکذلک اعرج یقوم ببعض قدمہ فالاقتداء بغیرہ اولی تاتار خانیۃ وکذااجذم برجندی ومحبوب وحاقن ومن لہ ید واحد فتاوی الصوفیۃ عن التحفۃ ۱ اہ وفی الدر یکرہ امامۃ الاعمی الا ان یکون اعلم القوم فھو اولی اہ ۲ ملخصا واللہ سبحنہ وتعالیٰ اعلم۔ | رد المحتار میں ماتن کے قول "امرد، بیوقوف، مفلوج اور ابرص کے پیچھے نماز مکروہ ہے" الخ کے تحت ہے یہی حکم اس لنگڑے کا ہے جو اپنے قدم کے بعض حصے پر قیام کرتا ہو، پس اس صورت میں غیر لنگڑے کی اقتداء بہتر ہوگی، تاتار خانیہ صاحب جذام کا بھی یہی حکم ہے۔ برجندی، مقطوع الذکر ، پیشاب روک رکھنے والا اور وہ شخص جس کا ایک ہی ہاتھ ہو اس کا بھی یہی حکم ہے۔ فتاوی صوفیہ میں تحفہ کے حوالے سے یہی ہے اھ اور در مختار میں ہے نابینا شخص کی امامت مکروہ ہے سوائے اس صورت کے کہ وہ قوم میں سب سے

زیادہ عالم ہو تو اس صورت میں وہی امامت کے زیادہ لائق وافضل ہے اھ ملخصاً واللہ تعالٰی اعلم (ت) |

مسئلہ ۵۹۶: ایک شخص کی جوان بی بی بے پردہ باہر نکلی ہے بلکہ بازار میں بیٹھ کر کچھ سودا بیچا کرتی ہے پس اُس

۱۔ ردالمحتار مطلب فی امامۃ الامرد مطبوعہ مصطفٰی البابی مصر ۱/ ۴۱۶ ۲۔ درمختار باب الامامۃ مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۸۳/۱

Fatawa Razawiyya Volume Six What is the ruling on praying behind [such a] person?

The Answer:

If when she goes out, her clothes are against the Shariah, for example, thin so the body is visible, or short so they do not cover the 'awrah properly like a high shirt leaving the belly exposed, or worn carelessly like a dupatta slipping from the head, or some part of the hair is exposed, or wearing flashy clothes that attract gaze and carry a risk of fitna, or if signs of immodesty are found in her gait or speech, and the husband is aware of these things but does not take measures despite having the power to do so, then he is a 'dayyuth' (cuckold), and praying behind him is Makruh (disliked).

Arabic Text	Urdu Translation
[1]For the 'dayyuth' is one who has no sense of honor regarding his wife or his mahram women, as mentioned in 'al-Durr al-Mukhtar'. He is a 'fasiq' (transgressor) for whom punishment (ta'zir) is obligatory. In 'al-Durr' it says: if someone confesses to being a dayyuth himself or becomes known for this repulsive act, he shall not be killed unless he deems 'dayyuthat' (shamelessness) permissible, but the punishment shall be severe[2] etc. And praying behind a fasiq is Makruh.	A dayyuth is every person who has no sense of honor regarding his wife and mahram women (by letting non-mahram men approach them), as mentioned in 'Durr-e-Mukhtar'. Such a person is a fasiq and punishment for him is obligatory. In 'Durr-e-Mukhtar' it is stated that if someone confesses to being a dayyuth himself or becomes famous for this repulsive act, he shall not be killed unless he considers dayyuthat to be permissible, but there shall be exaggeration in his punishment etc. And praying behind a fasiq is Makruh. (T)

And if he is free from these vilenesses, then there is no harm in praying behind him.

Arabic Text	Urdu Translation
For a woman herself does not become a fasiq merely by being 'barza' (one who goes out and interacts) and interacting with men, to the extent that she remains qualified to verify and judge the character of witnesses. Therefore, there is no blame	Because a woman herself does not become a fasiq merely by remaining unveiled and interacting with men, to the extent that she possesses the ability to verify and judge the character of witnesses. Therefore, on this basis, there

Arabic Text	Urdu Translation
on her husband for that. In 'al-Hindiyyah' it states: A woman's character testimony for her husband and others will be accepted if she is a 'barza' woman who interacts with people and conducts business with them. Similar is mentioned in 'al-Muhit al-Sarakhsi'[3]. And Allah Almighty knows best.	will be no objection to her husband. In 'Hindiyyah' it is stated that the woman's character testimony regarding her husband etc. will be accepted when she is such that she comes out veiled and interacts and deals with men. Similar is in 'Muhit Sarakhsi'. And Allah Almighty knows best. (T)

[1] Durr-e-Mukhtar, Chapter of Ta'zir, printed at Mujtabai Press, Delhi, 1/328 [2] Durr-e-Mukhtar, Chapter of Ta'zir, printed at Mujtabai Press, Delhi, 1/328 [3] Fatawa Hindiyyah, Second Chapter on Jarh and Ta'dil, printed at Noorani Kutub Khana, Peshawar, 3/528

फतावा-ए-रज़विया जिल्द छठा उस व्यक्ति के पीछे नमाज़ का क्या हुक्म है?

उत्तर:

अगर बाहर निकलने में उसके कपड़े शरीअत के खिलाफ होते हैं, जैसे कि बारीक जिससे बदन झलके, या इतने छोटे कि सतर-ए-औरत (गुप्त अंगों का पर्दा) न हो सके जैसे ऊँची कुर्ती जिससे पेट खुला रहे, या लापरवाही से पहने हुए जैसे दुपट्टा सर से ढलका हुआ हो, या बालों का कुछ हिस्सा खुला हो, या चटक-मटक वाले कपड़े जिस पर नज़र पड़े और फितना (बुराई) की संभावना हो, या उसकी चाल-ढाल और बातचीत में बद-वज़ई (अशिष्टता) के लक्षण पाए जाएं, और शौहर इन बातों से वाकिफ होने के बावजूद रोकने की शक्ति रखते हुए भी उन्हें नहीं रोकता, तो वह 'दयुस' है और उसके पीछे नमाज़ मकरूह (नापसंदीदा) है।

अरबी पाठ

[1]दयुस वह है जिसे अपनी पत्नी या महरम के प्रति आत्मसम्मान (गैरत) न हो, जैसा कि 'दुर्र-ए-मुख़्तार' में है। वह एक फासिक है जिस पर सज़ा (ताज़ीर) वाजिब है। 'दुर्र' में है: यदि कोई स्वयं के दयुस होने का स्वीकार करता है या इस घिनौने कार्य के लिए प्रसिद्ध हो जाता है, तो उसे तब तक नहीं मारा जाएगा जब तक कि वह 'दयुसत' को वैध न माने, लेकिन सज़ा देने में सख्ती की जाएगी[2] इत्यादि। और फासिक के पीछे नमाज़ मकरूह है।

उर्दू अनुवाद

दयुस हर वह व्यक्ति है जिसे अपनी पत्नी और महरम पर गैरत न आई हो (गैर मर्दों के पास आने-जाने से), जैसा कि 'दुर्र-ए-मुख़्तार' में है। ऐसा व्यक्ति फासिक है और उस पर ताज़ीर वाजिब है। 'दुर्र-ए-मुख़्तार' में है कि अगर कोई अपनी ज़ात के बारे में दयुस होने का इकरार करता है या इस फेल-ए-कबीह (बुरे काम) में मशहूर हुआ तो उसे कत्ल नहीं किया जाएगा जब तक वह दयुसत को हलाल न जाने, लेकिन ताज़ीर में मबालगा (सख्ती) किया जाएगा इत्यादि। और फासिक के पीछे नमाज़ मकरूह है। (त)

और अगर वह इन बुराइयों से पाक है, तो उसके पीछे नमाज़ पढ़ने में कोई हर्ज नहीं है।

अरबी पाठ

क्योंकि स्त्री स्वयं महज़ 'बरज़ा' (बाहर निकलने और लोगों से मिलने वाली) होने और पुरुषों के साथ मेलजोल के कारण फासिक नहीं होती, यहाँ तक

उर्दू अनुवाद

क्योंकि औरत खुद महज़ बे-परदा रहने और मर्दों से मेलजोल की वजह से फासिक नहीं होती यहाँ तक कि वह गवाहों की चरित्र

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद
कि वह गवाहों के चरित्र सत्यापन की योग्यता रखती है। अतः उसके पति पर इसके लिए कोई दोष नहीं है। 'हिन्दिया' में है: पति और अन्य के लिए महिला का चरित्र सत्यापन स्वीकार किया जाएगा यदि वह ऐसी 'बरज़ा' महिला हो जो लोगों के साथ मेलजोल रखती हो और उनके साथ व्यवहार (लेन-देन) करती हो। 'मुहीत सरखसी'[3] में भी इसी तरह है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।	सत्यापन और शुद्धि (तज़्किया) की सलाहियत रखती है, तो इस बिना पर उसके पति पर कोई ऐतराज़ न होगा। 'हिन्दिया' में है कि उस औरत की पति वगैरह के बारे में गवाही स्वीकार की जाएगी जब वह ऐसी हो कि पर्दे के साथ बाहर आए और मर्दों से मेलजोल और मामलात करे। 'मुहीत सरखसी' में इसी तरह है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

[1] दुर्र-ए-मुख़्तार, बाबूत्ताज़ीर, मुतबा मुजतबाई दिल्ली, 1/328 [2] दुर्र-ए-मुख़्तार, बाबूत्ताज़ीर, मुतबा मुजतबाई दिल्ली, 1/328 [3] फतावा हिन्दिया, अल-बाबुस-सानी फ़िल जरहि वत्तअदील, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/528

فتاویٰ رضویہ جلد ششم شخص کے پیچھے نماز کا کیا حکم ہے؟

الجواب:

اگر باہر نکلنے میں اس کے کپڑے خلافِ شرع ہوتے ہیں مثلاً باریک کہ بدن چمکے یا اوچھے کہ سترِ عورت نہ کریں جیسے اونچی کُرتی پیٹ کُھلا ہوا یا بے طوری سے اوڑھے پہنے جیسے دوپٹہ سر سے ڈھلکا، یا کچھ حصہ بالوں کا کُھلا، یا زرق برق پوشاک جس پر نگاہ پڑے اور احتمالِ فتنہ ہو یا اسکی چال ڈھال بول چال میں آثارِ بد وضعی پائے جائیں اور شوہر ان باتوں پر مطلع ہو کر باوصفِ قدرت بندوبست نہیں کرتا تو وہ دیوث ہے اور اسکے پیچھے نماز مکروہ،

عربی متن

فان الدیوث [1] من لایغار علی امرأته اومحرمه کما فی الدرالمختار وهو فاسق واجب التعزیر في الدر لواقرعلی نفسه بالدیاثة او عرف بها لایقتل مالم یستحل ویبالغ في تعزیره [2] الخ والفاسق تکره الصلاة خلفه۔

اردو ترجمہ

دیوث ہر وہ شخص ہے جس کو اپنی بیوی اور محرم پر غیرت نہ آئی ہو (اس کے پاس غیر مرد کے آنے سے) جیسا کہ دُرِّ مختار میں ہے ایسا شخص فاسق ہے اور اس پر تعزیر واجب ہے۔ دُرِّ مختار میں ہے اگر کوئی اپنی ذات کے بارے میں دیوث ہونے کا اقرار کرتا ہے یا اس فعل قبیح میں معروف ہوا تو اسے قتل نہیں کیا جائے گا جب تک وہ دیوثت کو حلال نہ جانے لیکن تعزیر میں مبالغہ کیا جائے گا الخ اور فاسق کے پیچھے نماز مکروہ ہے۔ (ت)

اور اگر ان شناعتوں سے پاک ہے تو اس کے پیچھے نماز میں کوئی حرج نہیں،

| عربی متن | اردو ترجمہ | | فان المرأة نفسها لا تفسق بمجرد كونها برزة تخالط الرجال حتى انها تصلح مزكية معدلة للشهود فلا شنعته بذلك على زوجها فی الهندية يقبل تعديل المرأة لزوجها وغيره اذا كانت امرأة برزة تخالط الناس وتعاملهم كذافی المحيط السرخسی [3] والله تعالیٰ اعلم۔ | کیونکہ عورت بذاتہا بے پردہ رہنے اور مردوں سے اختلاط کی وجہ سے فاسق نہیں ہوتی حتیٰ کہ وہ گواہوں کی تعدیل اور تزکیہ کی صلاحیت رکھتی ہے تو اس بنا پر اس کے خاوند پر کوئی اعتراض نہ ہوگا۔ ہندیہ میں ہے کہ اس عورت کی خاوند وغیرہ کے بارے میں تعدیل قبول کی جائے گی جب وہ ایسی ہو کہ باپردہ باہر آئے اور مردوں سے اختلاط اور معاملات کرے، محیط سرخسی میں اسی طرح ہے واللہ تعالیٰ اعلم (ت) |

[1] در مختار باب التعزیر مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۳۲۸/۱ [2] در مختار باب التعزیر مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۳۲۸/۱ [3] فتاویٰ ہندیہ الباب الثانی فی الجرح والتعدیل مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور ۵۲۸/۳

Volume Six Fatawa Razawiyya Issue No. 579 to 599: From Maharah Mutahharah, sent by Hazrat Mian Sahib Qibla Syed Shah Abul Hussain Ahmad Noori Mian (may his sacred shadow be prolonged), 30 Dhu al-Hijjah 1312 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: (1) How is the prayer behind a person who lisps? (2) How is the prayer behind a person who stammers? (3) A person takes a small amount of opium for medicinal purposes and it does not cause him intoxication; is it disliked (Makruh) for him to lead the prayer or not? The Answer: (1) In the correct school of thought, the prayer of a non-lisper behind a lisper is invalid. It is stated in Al-Khayriyya: "The leadership (Imamah) of a person with a lisp for one who speaks clearly is invalid according to the more correct and sound view." (Note: leading prayer by a lisper for a person with clear speech is invalid according to the preferred and correct opinion. -t) (2) If a stammerer does not stammer during prayer—for instance, some people's stammering is specific to times of anger, they only start stammering in anger and otherwise speak clearly; or some stammering is due to carelessness, and if they take care and caution, their speech is clear. Such people have been seen to stammer in conversation, but no effect of it is found in the Adhan, prayer, or recitation. In such a case, there is no question that they are clear-spoken regarding the rights of the prayer. As for one who stammers everywhere, there are three types: i. One whose repetition involves specific letters, for example, 'Kaf', 'Che', or 'Pe', so that wherever they pause, they repeat those same letters, or they start saying 'een-een' out of nervousness. Behind them, the invalidity of the prayer is obvious. ii. The second type is those who, when they pause on a word, repeat the first letter of that word. In this case, although an extra letter is not added, rather a part of the same word is uttered repeatedly, since the letter becomes redundant, meaningless, and outside of the Quranic text due to repetition, the prayer behind them is also invalid. In 'Durr al-Mukhtar', after writing the ruling on the invalidity of prayer behind a lisper, it is stated: "This is the correct preferred view regarding the ruling on one with a lisp, and similarly for one who cannot pronounce correctly." Regarding the lisper, this is the preferred and correct ruling, and it applies similarly to a person who is unable to pronounce any of the letters of the alphabet.

1. Fatawa Khayriyya, Book of Prayer, Dar al-Ma'rifah, Beirut, 10/1 Page 452 of 736

जिल्द छठी फ़तावा रज़विया मसला नंबर 579 से 599: माहरा मुतहरा से, हज़रत मियां साहब क़िबला सैयद शाह अबुल हुसैन अहमद नूरी मियां (मदज़िल्लहूल अक़दस) द्वारा प्रेषित, 30 ज़िल हिज्जा 1312 हिजरी। धर्म के विद्वान इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि: (1) तोतले के पीछे नमाज़ कैसी है? (2) हकलाने वाले के पीछे नमाज़ कैसी है? (3) एक व्यक्ति औषधि के रूप में थोड़ी सी अफीम खाता है और उसके कारण उसे नशा नहीं होता, क्या ऐसे व्यक्ति की इमामत मकरूह है या नहीं? अल-जवाब (उत्तर): (1) सही मज़हब (विचारधारा) में, एक गैर-तोतले व्यक्ति की नमाज़ तोतले के पीछे बातिल (अमान्य) है। 'खैरिय्या' में लिखा है: "इमामतुल् अल-सग़ बिल-फसीह फासिदतुन फिल राजिह अल-सहीह" (तोतले की इमामत फसीह (स्पष्ट बोलने वाले) के लिए राजिह और सही कौल (मत) के अनुसार फासिद (अमान्य) है।—त)। (2) यदि हकलाने वाला नमाज़ में न हकलाए, जैसे कि कुछ लोगों का हकलाना केवल क्रोध के समय होता है, वे केवल गुस्से में हकलाने लगते हैं अन्यथा साफ़ बोलते हैं; या कुछ का हकलाना लापरवाही के कारण होता है, यदि वे सावधानी बरतें तो कलाम साफ़ अदा होता है। ऐसे लोगों को देखा गया है जो बातों में हकलाते हैं परंतु अज़ान, नमाज़ और तिलावत में इसका कोई असर नहीं पाया जाता। ऐसी स्थिति में तो कोई संदेह नहीं कि वह नमाज़ के अधिकारों के संबंध में स्वयं फसीह (स्पष्ट) है। और जो हर जगह हकलाता हो उसकी तीन किस्में हैं: i. एक वे जिनकी पुनरावृत्ति में कुछ विशिष्ट अक्षर होते हैं, जैसे 'काफ़' या 'चे' या 'पे', कि जहाँ भी वे रुकेंगे उन्हीं अक्षरों को दोहराएंगे, या घबराकर 'ईं-ईं' करने लगते हैं। उनके पीछे नमाज़ का फासिद होना स्पष्ट है। ii. दूसरे वे हैं कि जिस शब्द पर रुकते हैं, उसी के पहले अक्षर की पुनरावृत्ति करते हैं। इस स्थिति में हालांकि कोई अतिरिक्त अक्षर बाहर से नहीं बढ़ता, बल्कि उसी शब्द का एक भाग दोहराया जाता है, लेकिन चूंकि पुनरावृत्ति के कारण वह अक्षर निरर्थक और कुरान के पाठ से बाहर रह गया, इसलिए उनके पीछे भी नमाज़ फासिद (अमान्य) है। 'दुर्रे मुख्तार' में तोतले के पीछे नमाज़ के फासिद होने का हुक्म लिखकर फ़रमाते हैं: "हज़ा हुवल सहीहुल् मुख्तारी फी हुक्मिल् अल-सग़ि व कज़ा मन ला यक़दिरु अलत्तलफ़्फ़ुज़" तोतले के बारे में मुख्तार और सही हुक्म यही है और इसी प्रकार वह व्यक्ति होगा जो अक्षरों (हुरूफ़-ए-तहज्जी) में से किसी अक्षर के सही उच्चारण पर [अक्षम हो]।

1. फ़तावा खैरिय्या, किताबुस सलात, दारुल मारिफ़ा, बेरुत, 10/1 पेज 452 ऑफ़ 736

جلد ششم فتاویٰ رضویہ مسئلہ نمبر ۵۷۹ تا ۵۹۹: ازماہرہ مطہرہ مرسلہ حضرت میاں صاحب قبلہ سید شاہ ابوالحسین احمد نوری میاں مدظلہ الاقدس ۳۰ ذی الحجہ ۱۳۱۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ : (۱) توتلے کے پیچھے نماز کیسی ہے ؟ (۲) ہکلے کے پیچھے نماز کیسی ہے ؟ (۳) ایک شخص تھوڑی سی افیون بغرضِ دوا کھاتا ہے اور اسکے سبب اسے نشہ نہیں ہوتا اسے ایسی کی امامت مکروہ ہے یا نہیں ؟ الجواب: (۱) مذہب صحیح میں غیر توتلے کی نماز اس کے پیچھے باطل ہے ، خیریہ میں ہے : "امامۃ الالثغ بالفصیح فاسدۃ فی الراجح الصحیح" (توتلے کی امامت فصیح (غیر توتلے) کے لئے راجح اور صحیح قول کے مطابق فاسد ہے۔ت) (۲) اگر ہکلا نماز میں نہ ہکلائے جیسے بعض لوگوں کا ہکلانا وقت غضب سے مخصوص ہوتا ہے صرف غصہ میں ہکلانے لگتے ہیں ویسے صاف بولتے ہیں یا بعض کا ہکلانا بے پروائی کے ساتھ ہوتا ہے اگر تحفظ و احتیاط کریں تو کلام صاف ادا ہوایسے لوگوں کو دیکھا گیا کہ باتوں میں ہکلاتے ہیں اور اذان و نماز و تلاوت میں اس کا کچھ اثر نہیں پایا جاتا ایسی صورت میں تو کلام نہیں کہ وہ حقِ نماز میں خود فصیح ہے اور جو ہو جگہ ہکلائے اس کی تین قسمیں ہیں : ا۔ ایک وہ کہ ان کی تکرار میں بعض حروفِ معین ہیں مثلاً کاف یا چ یا پ کہ جہاں رُکیں گے ان ہی حروف کی تکرار کریں گے یا گھبرا کر ایں ایں کرنے لگتے ہیں ان کے پیچھے فسادِ نماز بدیہی ہے۔ ۲۔ دوسرے وہ کہ جس کلمہ پر رُکتے ہیں اُسی کے اول حرف کی تکرار کرتے ہیں، اس صورت میں اگر چہ حرف خارج نہیں بڑھتا بلکہ اُسی کلمہ کا ایک جز و مکرر ادا ہوتا ہے مگر از انجا کہ حرف بوجہ تکرار لغو و مہمل وخارج عن القرآن رہ گیا ان کے پیچھے بھی نماز فاسد ہے ، در مختار میں توتلے کے پیچھے فسادِ نماز کا حکم لکھ کر فرماتے ہیں : ھذا ھو الصحیح المختار فی حکم الالثغ

وکذا من لا یقدر علی التلفظ توتلے کے بارے میں مختار اور صحیح حکم یہی ہے اور اسی طرح وہ شخص ہوگا جو حروفِ تہجی میں سے کسی حرف کی ادا پر [قادر نہ ہو]

فتاویٰ خیر یہ کتاب الصلوۃ دار المعرفہ بیروت ۱۰/۱ Page 452 of 736

Fatawa Ridawiyyah, Volume 6. ...with a letter of the alphabet, or he is unable to utter 'fa' without repeating it. (1) [Translation:] ...or he is unable to utter the letter 'Fa' without repetition. (T)

It is stated in 'Noor al-Idah' and 'Maraqi al-Falah': "It is not valid to follow someone who has 'fafa'ah' (stuttering 'fa'), by repeating the letter 'fa', or 'tamta'mah' (stuttering 'ta'), by repeating the letter 'ta', such that he cannot speak except with them [the repetitions]." (2) Summarized. [Translation:] It is not correct to follow a person who suffers from 'fafa'ah', meaning he reads 'fa' with repetition, or suffers from 'tamta'mah', meaning he reads 'ta' with repetition; that is, whenever he speaks such letters, the letter is uttered with repetition. (T) Summarized.

(3) Thirdly, those who, while stammering, do not produce any extraneous letter nor repeat the same letter, but simply pause, and when they do speak, they utter it correctly; praying behind such people is valid. It is in [Fatawa] Hindiyyah: "He who cannot utter letters except with effort, and does not have 'tamta'mah' or 'fafa'ah', so when he utters the letters, he utters them correctly, it is not disliked for him to be an Imam. Thus it is in al-Muheet." (3) [Translation:] That person who is not capable of uttering letters without effort, yet neither repeats 'ta' nor 'fa', so when he utters letters, he utters them correctly, then making such a person Imam is not disliked. It is likewise in [Fatawa] al-Muheet. (T)

As for whether there is any dislike (karahat) or not. It is apparent that if their pausing is not so long that a pillar (rukn) of prayer could be performed in it, then there is no reason for dislike. If it is that long, then although if such a silence is due to forgetfulness, it necessitates 'Sajdah-e-Sahw' (prostration of forgetfulness), and without an excuse, it is 'karahat-e-tahrim' (prohibitory dislike), as is evident from 'al-Tanweer', 'al-Durr', 'al-Ghaniyah', and 'Radd al-Muhtar'. (As its explanation is clear in Tanweer, Durr, Ghaniyah, and Radd al-Muhtar. T). And if their pausing is due to an excuse, just as sometimes silence for the duration of a pillar occurs due to excuses like yawning, sneezing, or coughing etc., then apparently that ruling [of dislike] does not apply here. Yes, there is no doubt that others are more worthy than them, provided they are not more knowledgeable in the rulings of purity and prayer than those present. And Allah Almighty knows best. (3) Intoxication, which in our common usage includes both 'sukr' (drunkenness) and 'tafteer' (languor), and both are forbidden by the text of Hadith, does not only mean that one cannot distinguish between earth and sky or man and woman. This is the extreme of it, and the beginning and end of intoxication are both equally forbidden. Therefore, if due to

opium, any defect arises in his intellect or any disruption in his senses, such that at some point drowsiness occurs...

1 Durr al-Mukhtar, Chapter of Imamah, printed Mujtabai Delhi, 1/85. 2 Maraqi al-Falah, commentary on Noor al-Idah with Hashiya al-Tahtawi, Chapter of Imamah, printed Noor Muhammad Tijarat-e-Kutub Karachi, p. 175. 3 Fatawa Hindiyyah, Third Section regarding the explanation of who is fit to be an Imam for others, printed Noorani Kutub Khana Peshawar, 1/86. Page 453 of 736

फ़तावा रज़विया जिल्द शश्म (छठा भाग) ... किसी अक्षर के साथ, या वह 'फ़' को बिना दोहराए निकालने में असमर्थ हो। (1) [अनुवाद:] वह समर्थ न हो या 'फ़' को बिना दोहराए अदा न कर सके। (त)

'नूर अल-ईदाह' और 'मराक़ी अल-फ़लाह' में है: "उस व्यक्ति की पैरवी (इक़्तिदा) सही नहीं है जिसे 'फ़ाफ़ाअह' (फ़ की हकलाहट) हो, यानी 'फ़' को दोहराने के साथ, या 'तमतामह' (त की हकलाहट) हो, यानी 'त' को दोहराने के साथ, इस तरह कि वह उनके बिना बोल ही न सके।" (2) सारांशित। [अनुवाद:] उस व्यक्ति की इक़्तिदा (नमाज़ में पैरवी) सही नहीं है जिसे 'फ़ाफ़ाअह' का रोग हो यानी 'फ़' को दोहराव के साथ पढ़ता हो, या 'तमतामह' का रोग हो यानी 'त' को दोहराव के साथ पढ़ता हो; यानी जब भी ऐसे अक्षर बोलता है तो वह अक्षर दोहराव के साथ अदा होता है। (त) सारांशित।

(3) तीसरे वे जो हकलाते समय न कोई अलग अक्षर निकालते हैं और न उसी अक्षर को दोहराते हैं, बल्कि सिर्फ रुक जाते हैं, और जब अदा करते हैं तो ठीक अदा करते हैं, ऐसे लोगों के पीछे नमाज़ सही है। 'हिन्दिया' में है: "वह जो परिश्रम के बिना अक्षर निकालने में समर्थ नहीं है, और उसे न तो 'तमतामह' है और न ही 'फ़ाफ़ाअह', तो जब वह अक्षर निकालता है तो उन्हें सही तरीक़े से निकालता है, तो ऐसे व्यक्ति का इमाम होना मकरूह (नापसंद) नहीं है। 'मुहीत' में इसी तरह है।" (3) [अनुवाद:] वह व्यक्ति जो बिना कोशिश के अक्षरों को अदा करने में सक्षम न हो, न तो वह 'त' को दोहराता हो और न ही 'फ़' को, तो जब वह अक्षर अदा करता है तो सही अदा करता है, तो ऐसे व्यक्ति को इमाम बनाना मकरूह नहीं है। मुहीत में भी ऐसा ही है। (त)

रहा यह कि कोई कराहत (नापसंदगी) भी है या नहीं। ज़ाहिर है कि अगर उनका रुकना इतनी देर न हो जिसमें नमाज़ का एक रुकन (अंग) अदा किया जा सके तो कराहत की कोई वजह नहीं। और अगर इतनी देर हो, तो भले ही भूलवश इतनी देर का मौन 'सजदा-ए-सह्व' का कारण बनता है, और बिना किसी बहाने के'कराहत-ए-तहरीम' (हराम के करीब नापसंदगी) है, जैसा कि 'तनवीर', 'दुर्र', 'ग़नियाह' और 'रद्द अल-मुह्तार' से ज़ाहिर होता है। (जैसा कि तनवीर, दुर्र, ग़नियाह और रद्द अल-मुह्तार में इसका वर्णन स्पष्ट है। त)। और अगर उनका रुकना किसी मज़बूरी के कारण हो, जैसे उबासी, छींक या खांसी आदि कारणों से कभी-कभी एक रुकन अदा करने जितनी देर का मौन हो जाता है, तो ज़ाहिर तौर पर यहाँ वह हुक्म नहीं है। हाँ, इसमें कोई संदेह नहीं कि दूसरे लोग उनसे बेहतर हैं, बशर्ते कि वे मौजूद लोगों में से पवित्रता और नमाज़ के नियमों को उनसे अधिक जानने वाले न हों। और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है। (3) नशा, जो हमारी बोलचाल में 'सुक्र' और

'तफ़्तीर' दोनों के लिए आम है, और हदीस के स्पष्ट प्रमाण से दोनों हराम हैं, इसका अर्थ केवल यही नहीं है कि ज़मीन-ओ-आसमान या पुरुष-ओ-स्त्री में अंतर न रहे। यह तो उसकी पराकाष्ठा है, और नशे की शुरुआत और अंत दोनों ही हराम होने में समान हैं। इसलिए, यदि अफ़ीम के कारण उसकी बुद्धि में कोई दोष या इंद्रियों में कोई विकार उत्पन्न हो, जिससे किसी समय पीनक (ऊँघ) आती हो...

1 दुर्र अल-मुह्तार, इमामत का अध्याय, मुजतबाई दिल्ली द्वारा प्रकाशित, 1/85। 2 मराक़ी अल-फ़लाह शर्ह नूर अल-ईदाह, हाशियह अत-तहतावी के साथ, इमामत का अध्याय, नूर मुहम्मद तिज़ारत-ए-कुतुब कराची द्वारा प्रकाशित, पृ. 175। 3 फ़तावा हिन्दिया, तीसरा खंड, दूसरों के लिए इमाम बनने की योग्यता के वर्णन में, नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर द्वारा प्रकाशित, 1/86। पेज 453 ऑफ़ 736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم بحرف من الحروف اولایقدر علی اخراج الفاء الابتکرار۔ 1 قادر نہ ہو یا ف کو بدون مکرر کرنے کے ادا نہ کرسکے۔ (ت)

نور الایضاح و مراقی الفلاح میں ہے: لا یصح اقتداء من بہ الفأفأۃ بتکرار الفاء والتمتمۃ بتکرار التاء فلا یتکلم الا بہ 2 اہ ملخصاً اس شخص کی اقتداء درست نہیں جس کو فأفأۃ کا عارضہ ہو یعنی ف کو تکرار سے پڑھتا ہو یا تمتمۃ کا عارضہ ہو یعنی ت کو تکرار سے پڑھتا ہو یعنی جب بھی ایسے حروف کو بولتا ہے تو وہ حرف تکرار سے ادا ہوتا ہے اھ ملخصاً (ت)

3 تیسرے وہ کہ ہکلاتے وقت نہ کوئی حرف غیر نکالتے ہیں نہ اسی حرف کی تکرار کرتے ہیں بلکہ صرف رک جاتے ہیں اور جب ادا کرتے تو ٹھیک ادا کرتے ہیں ایسوں کے پیچھے نماز صحیح ہے۔ ہندیہ میں ہے: الذی لایقدر علی اخراج الحروف الا بالجھد ولم یکن لہ تمتمۃ او فأفأۃ فاذا اخرج الحروف اخرجھا علی الصحۃ لایکرہ ان یکون اماما ھکذا في المحیط 3 وہ شخص جو کوشش کے بغیر ادائے حروف پر قادر نہ ہو نہ تو وہ تکرار ت کرتا ہو اور نہ ہی تکرار ف تو جب حروف ادا کرتا صحیح ادا کرتا ہے، تو ایسے شخص کو امام بنانا مکروہ نہیں۔ محیط میں یونہی ہے۔ (ت)

رہا یہ کہ کوئی کراہت بھی ہے یا نہیں۔ ظاہر ہے کہ اگر ان کا رکنا اتنی دیر نہ ہوتا جس میں ایک رکن ادا کر لیا جائے جب تو کراہت کی کوئی وجہ نہیں اور اگر اتنی دیر ہو تو اگر چہ بوجہ سہو اس قدر سکوت موجب سجدہ سہو ہے اور بلا عذر کراہت تحریم کما یظھر من التنویر والدر والغنیۃ وردالمحتار (جیسا کہ تنویر، در، غنیہ اور ردالمحتار میں اس کا بیان واضح ہے۔ ت) اور اگر ان کا رکنا بعذر ہے جس طرح جمائی یا چھینک یا کھانسی و غیر ہا اعذار کے باعث بعض اوقات سکوت بقدر ادائے رکن ہو جاتا ہے تو ظاہر ا یہاں وہ حکم نہیں، ہاں اس میں شک نہیں کہ ان کا غیر ان سے اولی ہے جبکہ بہ سبب حاضرین سے اعلم باحکام طہارت و نماز نہ ہوں۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ (۳)

نشہ جو ہمارے محاورہ میں سکر و تفتیر دونوں کو عام ہے اور بنص حدیث دونوں حرام اس کے یہی معنی نہیں کہ زمین و آسمان یا مرد و عورت میں امتیاز نہ رہے یہ تو اس کی انتہا اور نشہ کی ابتدا انتہا دونوں حرمت میں یکساں پس اگر افیون کے سبب کچھ بھی اس کی عقل میں فتور یا حواس میں اختلال پیدا ہو تو کسی وقت پینک آتی ہو

1 در مختار باب الامامۃ مطبوعہ مجتبائی دہلی ۸۵/۱ 2 مراقی الفلاح شرح نور الایضاح مع حاشیہ الطحطاوی باب الامامۃ مطبوعہ نور محمد تجارت کتب کراچی ص ۱۷۵ 3 فتاوٰی ہندیہ الفصل الثالث فی بیان من یصلح اماما لغیرہ مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور ۸۶/۱ Page 453 of 736

Fatawa Razawiya Volume Six

If someone doses off while sitting, their neck droops at times, or eyes roll up and red streaks appear in them, which these people call 'euphoria' (kaif-o-suroor) in their terminology, then all these forms are forbidden (haram). The perpetrator is a transgressor (fasiq), and praying behind them is disliked (makruh). In fact, even if it were only so much that on the day he doesn't consume it, he gets yawns, body aches, and dizziness, there is still no doubt about the prohibition. The emergence of withdrawal symptoms (khumaar) upon quitting clearly indicates that the use is not for medicinal purposes; the self has become accustomed to it and seeks it out of desire and craving without the purpose of illness. This situation itself is impermissible even if there is no intoxication. In reality, this condition will only arise in someone whose brain is being affected by opium in an illicit manner, otherwise, quitting a proven medicine does not cause withdrawal symptoms. Yes, if he is free from all these states and uses it in such a small quantity strictly for medicinal purposes during illness that neither its consumption brings pleasure nor quitting it causes withdrawal symptoms, then praying behind him is not disliked. It is in Rad al-Muhtar:

[Arabic Text Block]: "The consumption of henbane (bhang) and opium in large quantities that intoxicate is absolutely forbidden. As for small quantities, if it is for entertainment, it is forbidden, and if it is for medical treatment, then it is not [forbidden]." Finished summary - And Allah the Almighty knows best.

Problem No. 600: 24 Safar al-Muzaffar 1313 AH.

Question: What do the scholars of religion say regarding this matter: Zaid endowed (waqf) a piece of land in the name of a mosque. For a time, it remained in the possession of the mosque's manager (muhtamim), and the rent was spent on the mosque. Later, at the instigation of some Hindus, Zaid claimed in court to receive the rent himself. The mosque's manager, who was responsible for the land and also the imam of the mosque, had the rent agreements and other documents in the mosque's name. In that court, the ruling was in favor of the mosque and the claim was dismissed. Zaid again filed a claim of ownership in another court. Now, that manager has sided with Zaid and did not pursue the case, nor did he present the evidence documents on behalf of the mosque. Due to lack of pursuit, the case was decided against the mosque. Muslims appealed on behalf of the mosque. In this court, the manager flatly denied [the mosque's rights] saying that the land had gone out of the mosque's possession. In this situation, is the aforementioned manager fit to be kept

as manager or imam of the mosque? How is it to appoint him as imam? And now that the Muslims are displeased due to his actions, how is it to make him imam? Explain and be rewarded.

The Answer: In the mentioned case, the manager is a treacherous, criminal, and transgressor (fasiq). Keeping him as manager is forbidden, and making him imam is a sin. To [make] him imam...

---

1 Rad al-Muhtar, Kitab al-Ashriba, published by Mustafa al-Babi Egypt 325/5.

फ़तावा रज़विया जिल्द शशम (छठा खंड)

अगर कोई बैठे-बैठे ऊंघ जाता हो, किसी समय गर्दन ढुलक जाती हो या आँखें चढ़ जाती हों और उनमें लाल डोरे पड़ते हों, जिसे ये लोग अपनी शब्दावली में 'कैफ़-ओ-सुरूर' (आनंद और उमंग) कहते हैं, तो ये सभी स्थितियाँ हराम हैं। इनका अपराधी फ़ासिक (पापी) है और उसके पीछे नमाज़ पढ़ना मकरूह (नापसंद) है। बल्कि, अगर बात सिर्फ इतनी ही होती कि जिस दिन वह इसे न खाए, उसे उबासियाँ आएं, अंग-भंग (बदन टूटना) हो, सिर चकराए, तब भी इसकी हरामता में कोई संदेह नहीं है। क्योंकि छोड़ने पर खुमार (नशे का उतरना) पैदा होना साफ बताता है कि इसका उपयोग दवा के तौर पर नहीं है; मन इसका आदी हो गया है और बिना बीमारी के उद्देश्य के, अपनी तलब और शौक से इसे मांगता है। और यह स्थिति स्वयं नाजायज़ है, भले ही नशा न हो। वास्तव में, यह स्थिति उसी के मस्तिष्क में पैदा होगी जिसमें अफ़ीम अपना नाजायज़ प्रभाव डाल रही हो, अन्यथा जाँची-परखी हुई दवा को छोड़ने से खुमार नहीं आता। हाँ, अगर वह इन सभी स्थितियों से मुक्त है और वास्तव में केवल बीमारी की स्थिति में दवा के उद्देश्य से इतनी कम मात्रा में उपयोग करता है कि न तो इसके खाने से आनंद आता है और न ही छोड़ने से खुमार, तो उसके पीछे नमाज़ मकरूह नहीं है। 'रद्दुल मुहतार' में है:

[अरबी पाठ का अनुवाद]: "भांग और अफ़ीम का अधिक मात्रा में सेवन, जिससे नशा पैदा हो, हर हाल में हराम है। यदि कम मात्रा में हो, तो मनोरंजन (खेल-तमाशे) के लिए हराम है और इलाज के लिए हराम नहीं है।" समाप्त सारांश - और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला नंबर 600: 24 सफ़र अल-मुज़फ़्फ़र 1313 हिजरी

सवाल: इस मसले में दीन के विद्वान क्या कहते हैं कि ज़ैद ने अपनी एक ज़मीन मस्जिद के नाम वक्फ़ की। एक समय तक वह मस्जिद के प्रबंधक (मुहत्तममिम) के कब्ज़े में रही और उसका किराया मस्जिद के खर्चों में उपयोग होता रहा। फिर कुछ हिंदुओं के बहकावे में आकर ज़ैद ने एक कचहरी में स्वयं किराया पाने का दावा किया। मस्जिद का प्रबंधक, जिसके पास उस ज़मीन का प्रबंधन था और वही मस्जिद का इमाम भी है, उसके पास मस्जिद के नाम के किरायानामा आदि दस्तावेज़ थे। उस कचहरी में फैसला मस्जिद के पक्ष में रहा और दावा खारिज हो गया। ज़ैद ने फिर दूसरी कचहरी में मालिकाना हक का दावा किया। अब वह प्रबंधक ज़ैद से मिल गया और उसने मुकदमे की पैरवी नहीं की, न ही मस्जिद की ओर से सबूत के दस्तावेज़ पेश किए। पैरवी न होने के कारण मुकदमा

मस्जिद के खिलाफ तय हुआ। मुसलमानों ने मस्जिद की ओर से अपील की। इस कचहरी में प्रबंधक ने साफ इनकार कर दिया कि ज़मीन मस्जिद के कब्ज़े से निकल गई है। इस स्थिति में क्या उक्त प्रबंधक मस्जिद का प्रबंधक या इमाम रखे जाने के योग्य है या नहीं? उसे इमाम नियुक्त करना कैसा है? और अब जबकि मुसलमान उसकी इस हरकत के कारण उससे नाराज़ हैं, उसे इमाम बनाना कैसा है? बयान फ़रमाएं, पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: उपर्युक्त स्थिति में प्रबंधक धोखेबाज़, अपराधी और फ़ासिक है। उसे प्रबंधक रखना हराम है और इमाम बनाना गुनाह है। उसे इमाम...

---

1 रद्दुल मुहतार, किताबुल अश्रिबा, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र द्वारा प्रकाशित 325/5

بیٹھے بیٹھے اونگھ جاتا ہو کسی وقت گردن ڈھلتے یا آنکھیں چڑھ جاتیں اُن میں لال ڈورے پڑتے ہوں جیسے یہ لوگ اپنی اصطلاح میں کیف و سرور کہتے ہیں تو یہ سب صورتیں حرام ہیں اور اُن کا مرتکب فاسق اور اس کے پیچھے نماز مکروہ بلکہ اگر صاف اتنا ہی ہوتا کہ جس دن نہ کھائے جمائیاں آئیں، اعضا شکنی ہو، دورانِ سر ہو، تاہم حرمت میں شک نہیں کہ ترک پر خمار پیدا ہونا صاف بتا رہا ہے کہ استعمال بطور دوا نہیں، نفس اس کا خوگر ہو گیا ہے اور بلا غرض مرض اپنی طلب و شوق سے اُسے مانگتا ہے اور یہ صورت خود ناجائز ہے اگرچہ نشہ نہ ہو بلکہ حقیقتۃً یہ حالت اُسی کو پیدا ہو گی جس دماغ میں افیون اپنا عمل ناجائز کرتی ہو ورنہ مجرب دوا کا ترک خمار نہیں لاتا، ہاں اگر ان سب حالتوں سے پاک ہے اور واقعی صرف حالتِ مرض میں بقصدِ دوا اتنی قلیل مقدار پر استعمال کرتا ہے کہ نہ اُس کے کھانے سے سرور آتا ہے اور نہ چھوڑنے سے خمار، تو اس کے پیچھے نماز مکروہ نہیں۔ ردالمحتار میں ہے:

البنج والافیون استعمال الکثیر المسکر منه حرام مطلقاً واما قلیل فان کان لهو حرم وان للتداوی فلا انتہی ملتقطاً۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

بھنگ اور افیون کا استعمال کثیر کہ اس سے نشہ پیدا ہو تو ہر حال میں حرام ہے، اگر قلیل ہو تو لہو کے لئے حرام ہے اور بطور دوائی حرام نہیں انتہی تلخیصاً (ت)

مسئلہ نمبر ۶۰۰: ۲۴ صفر المظفر ۱۳۱۳ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید نے ایک زمین اپنی بنام مسجد وقف کی ایک زمانے تک مہتمم مسجد کے قبضہ میں رہی اور کرایہ مسجد میں خرچ ہوتا رہا پھر باغوائے بعض

ہنود زید نے ایک کچہری میں کرایہ دار پر خود کرایہ پانے کا دعویٰ کیا مہتمم مسجد جس کے متعلق اس زمین کا اہتمام تھا اور وہی مسجد کا امام ہے مسجد کے نام کے کرایہ نامہ وغیرہ کاغذات اُس کے پاس تھے اس کچہری میں موافق مسجد رہا کہ دعویٰ خارج ہوا زید نے پھر دوسری کچہری میں دعویٰ ملکیت کیا اب وہ مہتمم زید سے مل گیا مقدمہ کی پیروی نہ کی نہ مسجد کی طرف سے کاغذات ثبوت پیش کئے عدم پیروی کی وجہ سے مقدمہ خلاف مسجد تجویز ہوا مسلمانوں نے مسجد کی طرف سے اپیل کیا اس کچہری میں کاغذات مہتمم نے صاف انکار کر دیا کہ زمین قبضہ مسجد سے نکل گئی اس صورت میں مہتمم مذکور مسجد کا مہتمم یا امام رکھے جانے کے قابل ہے یا نہیں؟ اسے امام مقرر کرنا کیسا ہے؟ اور اب کہ مسلمان اس کی حرکت کے باعث ناراض ہیں اُسے امام بنانا کیسا ہے؟ بینوا توجروا۔

الجواب: صورتِ مذکورہ میں مہتمم خائن مجرم فاسق ہے اسے مہتمم رکھنا حرام، امام بنانا گناہ، اسے امام

---

1 ردالمحتار کتاب الاشر بہ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۳۲۵/۵

Fatawa Rizwia - Volume 6

Making him (a sinner) an Imam is not permissible, if someone does so, their prayer will not be accepted. In Mukhtar, it is stated: [Box Text]: "He must be removed as a duty, as mentioned in Bazaziya, if the waqif (endower) is like what is in Durar and others. More so if he is not trustworthy." - (The property must be taken back as a duty if he is not trustworthy, meaning a traitor, as in Bazaziya and Durar. In case of betrayal by someone other than the endower, taking back the property is even more permissible. G (T))

In Ghuniya, it is stated: "If they put forward a transgressor (fasiq), they commit a sin." (If people appoint a transgressor as Imam, they will be sinful. T) The Messenger of Allah (peace be upon him) says: "There are three types of people whose prayer is not accepted: one of them is he who leads a people while they dislike him, meaning this dislike is due to some religious deficiency in him, as mentioned in Al-Durr and others." (T) And Allah Almighty knows best. (T)

Issue Number 601: From Mundia, District Bareilly, 1st Muharram al-Haram 1317 AH. What do the scholars of religion say regarding a person who takes bribes? Is it permissible to pray behind him? And what about a person whose wife goes out without a veil and he does not prevent her or command her to observe the veil? Is it permissible to pray behind him or not?

The Answer: Taking bribes is forbidden (Haraam). Praying behind a bribe-taker is severely disliked (Makruh Tahrimi), and if he goes out with an uncovered head (like in Bilad-e-Hind where women go out without proper veiling), and the husband, despite having knowledge and power, does not stop her, he is a transgressor (fasiq), and praying behind him is severely disliked. And Allah Almighty knows best.

Issue Number 602: From Pilibhit, Mohalla Munir Khan, sent by Maulana Wasi Ahmad Sahib Muhaddith Surti, 22 Rabi al-Awwal 1317 AH. After the obligatory (fard) prayers of Dhuhr, Maghrib, and Isha, while turning the face to the right and left for Salaam, say "Allahumma Antas-Salam wa Minkas-Salam..." and then read the Sunnahs. Maulvi Habib-ur-Rahman Saharanpuri said to me...

[Footnotes]: 1. Durr-e-Mukhtar, Kitab al-Waqf, Matbu'a Mujtabai Delhi, 1/383. 2. Ghunyat-ul-Mustamli Sharh Munyat-ul-Musalli, Fasl fi al-Imamah, Sohail Academy Lahore, p. 513. 3. Al-Mu'jam al-Kabir, Li-Ibni Abi Umayya, Translation 215, Matbu'a Al-

Maktaba Al-Faisaliya Beirut, 2/282. 4. Durr-e-Mukhtar, Bab al-Imamah, Matbu'a Mujtabai Delhi, 1/83.

फ़तावा रज़विया - जिल्द शशम

बनाना ना-जायज़, अगर इमामत करेगा तो उस की नमाज़ क़बूल न होगी। दर-ए-मुख़्तार में है: [बॉक्स टेक्स्ट]: "यन्ज़'अ वुजूबन बज़ाज़िया लो अल-वाक़िफ़ दरर वग़ैरहु बिल-उला ग़ैर मामून" - (वक़्फ़ शुदा माल छीनना वाजिब है जैसा कि बज़ाज़िया में है, अगर वाक़िफ़ पर इत्मीनान न हो यानी ख़ाइन हो जैसा कि दरर में है, तो ख़यानत की सूरत में ग़ैर-वाक़िफ़ से माल छीनना बतरीक़-ए-औला जायज़ होगा। ग (त))

गुनिया में है: "लौ क़द्दमु फ़ासिक़न याथुमुन" (अगर लोगों ने फ़ासिक़ को इमामत के लिए मुक़द्दम कर दिया तो गुनहगार होंगे। त) रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं: "तीन शख़्सों की नमाज़ क़बूल नहीं होती, उन में से एक वो है जो किसी क़ौम की इमामत करे और वो उस की इमामत से राज़ी न हों, यानी जबकि यह नाराज़गी उस में किसी नक़्स-ए-शरई की वजह से हो जैसा कि यहाँ है कमा फ़ि अल-दरर वग़ैरहु" (जैसा कि दरर वग़ैरह में है। त) वल्लाहु तआला आलम।

मसला नंबर 601: अज़ मुंडिया ज़िला बरेली, ग़र्रह मुहर्रम अल-हराम 1317 हिजरी। क्या फ़रमाते हैं उलमा-ए-दीन इन मसाइल में कि जो शख़्स रिश्वत लेता है उस के पीछे नमाज़ पढ़ना कैसा है और जो शख़्स अपनी ज़ौजा को बाहर निकलने से मना नहीं करता और पर्दा नहीं कराता उस के पीछे नमाज़ पढ़ना चाहिए या नहीं?

अल-जवाब: रिश्वत लेना हराम है, रिश्वत लेने वाले के पीछे नमाज़ सख़्त मकरूह है, और अगर औरत बे-सत्र निकलती है जैसे बिलाद-ए-हिंद में कि नंगे कपड़े और शौहर उस का बावजूद इत्तला'अ व क़ुदरत बाज़ नहीं रखता तो फ़ासिक़ है और इस के पीछे नमाज़ मकरूह-ए-तहरीमी है। वल्लाहु तआला आलम।

मसला नंबर 602: अज़ पीलीभीत महल्ला मुनीर ख़ां, मुरसला मौलाना वसी अहमद साहब मुहद्दिस सूरती 22 रबी-उल-अव्वल 1317 हिजरी। मैं बा'द फ़र्ज़ ज़ोहर, मग़रिब व इशा के सलाम फेरते ही यमीन-ओ-यसार की जानिब रुख़ कर के"अल्लाहुम्मा अन्तस-सलाम व मिन्कस-सलाम" पढ़ कर सुन्नतें पढ़ा करता हूँ, मौलवी हबीबुर्रहमान सहारनपुरी ने मुझ से कहा...

[फ़ुटनोट]: 1. दर-ए-मुख़्तार, किताब अल-वक़्फ़, मतबुआ मुजतबाई दिल्ली, 1/383. 2. ग़ुनियत-उल-मुस्तमली शरह मुनियत-उल-मुसल्ली, फ़स्ल फ़ि अल-इमामह, सुहैल एकेडमी लाहौर, पृ. 513. 3.

अल-मु'जम अल-कबीर, लि-इब्नी अबी उमैया, तर्जुमा 215, मतबुआ अल-मक्तबा अल-फ़ैसलिया बेरूत, 2/282. 4. दर-ए-मुख़्तार, बाब अल-इमामह, मतबुआ मुजतबाई दिल्ली, 1/83.

بنانا ناجائز، اگر امامت کرے گا تو اس کی نماز قبول نہ ہوگی۔ درمختار میں ہے: [باکس ٹیکسٹ]: ینزع وجوبا بزازیة لو الواقف درر وغیرہ بالاولی غیر مامون - (وقف شدہ مال چھیننا واجب ہے کذافی البزازیہ اگر واقف پر اطمینان نہ ہو یعنی خائن ہو کہ کذا فی الدرر تو خیانت کی صورت میں غیر واقف سے مال چھیننا بطریق اولی جائز ہوگا۔ گ (ت))

غنیہ میں ہے: لو قدموا فاسقا یاثمون (اگر لوگوں نے فاسق کو امامت کے لئے مقدم کر دیا تو گنہگار ہوں گے۔ ت) رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں: تین شخصوں کی نماز قبول نہیں ہوتی ان میں سے ایک وہ ہے جو کسی قوم کی امامت کرے اور وہ اس کی امامت سے راضی نہ ہوں یعنی جبکہ یہ ناراضی اس میں کسی نقص شرعی کی وجہ سے ہو جیسا کہ یہاں ہے کما فی الدر وغیرہ (جیسا کہ درمختار وغیرہ میں ہے۔ ت) واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۶۰۱: از مونڈیا ضلع بریلی غرہ محرم الحرام ۱۳۱۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین ان مسائل میں کہ جو شخص رشوت لیتا ہے اس کے پیچھے نماز پڑھنا کیسا ہے اور جو شخص اپنی زوجہ کو باہر نکلنے سے منع نہیں کرتا اور پردہ نہیں کراتا اس کے پیچھے نماز پڑھنا چاہئے یا نہیں؟

الجواب: رشوت لینا حرام ہے رشوت لینے والے کے پیچھے نماز سخت مکروہ ہے، اور اگر عورت بے ستر نکلتی ہے جیسے بلاد ہند یہ کہ ننگے کپڑے اور شوہر اس کا با وصف اطلاع و قدرت باز نہیں رکھتا تو فاسق ہے اور اس کے پیچھے نماز مکروہ رو نہ نہیں۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۶۰۲: از پیلی بھیت محلہ منیر خاں مرسلہ مولانا وصی احمد صاحب محدث سورتی ۲۲ ربیع الاول ۱۳۱۷ھ میں بعد فرض ظہر مغرب و عشاء کے سلام پھیرتے ہی یمین و یسار کی جانب رخ کرکے اللھم انت السلام ومنك السلام پڑھ کر سنتیں پڑھا کرتا ہوں مولوی حبیب الرحمن سہارن پوری نے مجھ سے کہا

[حواشی]: ۱۔ درمختار، کتاب الوقف، مطبوعہ مجتبائی دہلی، ۱/ ۳۸۳ ۲۔ غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل فی الامامۃ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۵۱۳ ۳۔ المعجم الکبیر جنادۃ بن ابی امیۃ ترجمہ ۲۱۵ مطبوعہ المکتبۃ الفیصلیۃ بیروت ۲/ ۲۸۲ ۴۔ درمختار باب الامامۃ مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱/ ۸۳

Fatawa Rizvia Volume VI That the jurists (Fuqaha) write that after those obligatory (Fard) prayers which are followed by voluntary (Tatowwu) prayers, it is prohibited to turn away from facing the Qibla. They state that after these Fard prayers, one should remain in the same posture and immediately engage in voluntary prayers. To this, Khalil-ur-Rahman stated that the practice in the Two Holy Sanctuaries (Haramain) is also the same. When I searched in the books, I did not find any such prohibition; I only found that after Fard prayers followed by voluntary ones, one should not pause longer than the duration of 'Allahumma Antas-Salam'. Please provide guidance on what is correct in your view regarding this issue so that I may act accordingly; indeed, it would be appropriate if you record this concisely in Arabic text.

The Answer:

Arabic Column

Praise be to Allah alone. The inherited Sunnah for the Imam, from the time of the Leader of Mankind, the Chief of the Noble Messengers (upon him and them be the best of blessings and peace), is to turn away from the Qibla for anyone who intends to stay after the Salam. All prayers are equal in this regard. This, and the dislike of remaining facing the Qibla after completion, has been clearly stated by more than one of the great scholars. So the truth is with you, and what your opponent claimed is a fabrication against the noble jurists. The master researcher Muhammad bin Muhammad bin Muhammad, famous as Ibn Amir al-Hajj, said in 'Al-Hilyah Sharh al-Munyah', quoting from 'Al-Dhakhira': When the Imam finishes his prayer, they have reached a consensus that he should not remain in his place facing the Qibla; all

Urdu Column

All praise is for Allah, Who is One and without partner. From the physical life of the Leader of Mankind, the Chief of Prophets, the Holy Prophet (may the best blessings and peace of Allah Almighty be upon him and them) until now, it is narrated as Sunnah for the Imam that whoever intends to stay for a while after the Salam should turn his face from the Qibla. This ruling has been consistent in all prayers since ancient times, and it is disliked for him to remain facing the Qibla after the completion of the prayer. Both these points have been explained by great scholars of Islam; thus, the truth is on your side, and whatever your opponent said is a slander against the honorable jurists. Our highly learned researcher Muhammad bin Muhammad bin Muhammad, known as Ibn Amir al-Hajj, writes in 'Hilyah Sharh Munyah' with reference to 'Dhakhira' that when the Imam finishes the prayer, all scholars agree that he should not stay in his place facing the Qibla, and all prayers are equal in this ruling.

Arabic Column	Urdu Column
prayers are equal in this regard. He said: More than one has explicitly stated that it is disliked, end of quote. And Imam Abu Dawud narrated in Sunan...	And he said that many scholars have explicitly mentioned the dislike of remaining facing the Qibla, end of quote. And Imam Abu Dawud in Sunan, and Hakim in Mustadrak, [narrate from] Abu Rimtha (may Allah be pleased with him)...

[1] Hilyat-ul-Mahalla Sharh Munyat-ul-Musalli Page 456 of 736

फ़तावा रिज़विया, छठा खंड कि फ़ुक़हा (धर्मशास्त्री) उन फ़र्ज़ों के बाद जिनके बाद नफ़्ल (स्वैच्छिक) नमाज़ है, क़िबला की ओर से मुड़ने को वर्जित लिखते हैं। वे लिखते हैं कि इन फ़र्ज़ों के बाद उसी स्थिति में रहे और तुरंत नफ़्ल नमाज़ में लग जाए। इस पर ख़लील-उर-रहमान ने कहा कि हरमैन (मक्का और मदीना) में भी यही व्यवहार है। मैंने किताबों में देखा तो कहीं मनाही नहीं मिली, बस इतना मिला कि जिन फ़र्ज़ों के बाद नफ़्ल है, 'अल्लाहुम्मा अन्तास सलाम' की अवधि से ज़्यादा न रुके। इस मसले में जो हुज़ूर के नज़दीक सही हो, मार्गदर्शन फरमाएं ताकि मैं उसके अनुसार अमल करूँ। बल्कि उचित तो यह होगा कि आप इसे अरबी इबारत में संक्षेप में लिखें।

उत्तर:

अरबी खंड

सारी प्रशंसा अकेले अल्लाह के लिए है। मानव जाति के नेता, श्रेष्ठ रसूलों के सरदार (उन पर और उन सब पर अल्लाह की श्रेष्ठ कृपा और शांति हो) के समय से ही इमाम के लिए सुन्नत के तौर पर यह चला आ रहा है कि जो व्यक्ति सलाम के बाद कुछ देर रुकने का इरादा रखता हो, वह क़िबला से चेहरा फेर ले। इस मामले में सभी नमाज़ें बराबर हैं। और कई महान विद्वानों ने नमाज़ पूरी होने के बाद क़िबला की ओर मुँह करके रहने की कराहत (नापसंदगी) को स्पष्ट किया है। अतः सत्य तुम्हारे साथ है और तुम्हारे विरोधी ने जो दावा किया है वह महान फ़ुक़हा पर आरोप है। प्रतिष्ठित विद्वान मुहम्मद बिन मुहम्मद बिन मुहम्मद, जो इब्न अमीरुल हज के नाम से प्रसिद्ध हैं, 'अल-हिलया शरह अल-मुनिया' में 'अज़-ज़खीरा' से उद्धृत करते हुए कहते हैं: जब इमाम अपनी नमाज़ पूरी कर ले, तो विद्वानों की इस पर सहमति है कि वह

उर्दू खंड

सारी प्रशंसा अल्लाह के लिए है जो अकेला और ला-शरीक है। मानव जाति के नेता, नबियों के सरदार, नबी अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि व आलिही वसल्लम) के भौतिक जीवन से लेकर अब तक इमाम के लिए सुन्नत के तौर पर यह वर्णित है कि जो व्यक्ति सलाम के बाद कुछ देर रुकने का इरादा रखता हो, वह क़िबला से चेहरा फेर ले। प्राचीन काल से ही यह नियम सभी नमाज़ों में बराबर चला आ रहा है और नमाज़ पूरी होने के बाद उसके लिए क़िबला-मुख रहना मकरूह है। इन दोनों बातों को इस्लाम के बड़े विद्वानों ने स्पष्ट किया है, अतः सत्य तुम्हारे साथ है और तुम्हारे विरोधी ने जो कुछ कहा वह फ़ुक़हा-ए-किराम पर तोहमत है। हमारे अत्यंत विद्वान शोधकर्ता मुहम्मद बिन मुहम्मद बिन मुहम्मद, जिन्हें इब्न अमीरुल हज के नाम से जाना जाता है, 'हिलया शरह मुनिया' में 'ज़खीरा' के हवाले से लिखते हैं कि जब इमाम नमाज़ से फ़ारिग हो जाए तो सभी विद्वानों का इस पर इत्तेफ़ाक़ है कि

अरबी खंड

अपनी जगह पर क़िबला की ओर मुँह करके न रहे; सभी नमाज़ें इस मामले में समान हैं। उन्होंने कहा: कई विद्वानों ने स्पष्ट किया है कि ऐसा करना मकरूह है, समाप्त। और इमाम अबू दाऊद ने वर्णन किया है...

उर्दू खंड

वह अपनी जगह क़िबला-मुख न रहे और इस नियम में सभी नमाज़ें बराबर हैं। और उन्होंने कहा कि क़िबला-मुख रहने की कराहत पर कई विद्वानों ने स्पष्ट रूप से लिखा है, समाप्त। और इमाम अबू दाऊद ने सुनन में, हाकिम ने मुस्तदरक में अबू रिम्सा (रज़ी अल्लाहु अन्हु) से...

[1] हिलयत-उल-मुहल्ला शरह मुनियत-उल-मुसल्ली पृष्ठ 456 का 736

فتاوی رضویہ جلد ششم کہ فقہاء بعد ان فرضوں کے جن کے بعد تطوع ہے ترک استقبال قبلہ کو منع لکھتے ہیں اور لکھتے ہیں کہ ان فرضوں کے بعد اسی ہیئت پر رہے اور فوراً تطوع میں مصروف رہے اس پر خلیل الرحمٰن نے یہ کہا کہ تعامل حرمین میں بھی یوں ہی ہے۔ میں نے کتابوں میں دیکھا تو کہیں ممانعت نہ ملی صرف اتنا ملا کہ جن فرضوں کے بعد تطوع ہے مقدار اللہم انت السلام سے زیادہ توقف نہ کرے اس مسئلہ میں جو حضور کے نزدیک صواب ہو افادہ فرمائے تاکہ میں اس کے مطابق عمل کروں بلکہ مناسب تو یہ ہوگا کہ عربی عبارت میں بطور اختصار اس کو قلمبند فرمائیے۔

الجواب:

عربی متن	اردو ترجمہ
الحمد لله وحده السنة المتوارثة للامام من	سب تعریف اللہ کے لئے جو وحدہ، لاشریک ہے امام الانام
لدن امام الانام سيد الرسل الكرام عليه	سید الانبیاء نبی اکرم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وعلیہم افضل
وعليهم افضل الصلوة والسلام هو	الصلوۃ والسلام کی ظاہری حیات سے لے کر اب تک امام
الانصراف من القبلة لمن اراد مكثا مابعد	کے لئے بطور سنت منقول ہے کہ جو شخص سلام کے
السلام، كل الصلوة في ذلك متساوية	بعد کچھ ٹھہرنے کا ارادہ رکھتا ہو تو قبلہ سے رخ
الاقدام وصرح بذلك وبكراهة بقائه	پھیرے۔ قدیم زمانہ سے یہ حکم تمام نمازوں میں برابر
مستقبل القبلة بعد التمام غير واحد من	چلا آرہا ہے اور تکمیل نماز کے بعد اس کے لئے قبلہ رُخ
العلماء العظام فالحق معكم ومارعم	رہنا مکروہ ہے۔ ان دونوں باتوں کی تصریح بڑے بڑے
مخالفكم فقد افترى فيه على الفقهاء الفخام	علمائے اسلام نے فرمائی، پس حق تمہارا ساتھ ہے، اور
قال المولى المحقق محمد بن محمد بن	تمہارے مخالف نے جو کچھ کہا وہ فقہائے کرام پر تہمت

عربی متن	اردو ترجمہ
محمد الشهير بابن امير الحاج في الحلية شرح المنية ناقلا عن الذخيرة: اذا كان فرغ الامام من صلاته اجمعوالی انه لا يمكث في مكانه مستقبل القبلة، سائر الصلوات في ذلك على السواء قال وقد صرح غير واحد بانه يكره ذلك اهـ، وقد اخرج الامام ابو داؤد	ہے، ہمارے نہایت ہی فاضل محقق محمد بن محمد بن محمد المعروف ابن امیر الحاج حلیہ شرح منیہ میں ذخیرہ کے حوالے سے لکھتے ہیں جب امام نماز سے فارغ ہوجائے تو سب علماء کا اتفاق ہے کہ وہ اپنی جگہ قبلہ رُخ نہ ٹھہرا رہے اور اس حکم میں تمام نمازیں برابر ہیں اور فرمایا کہ قبلہ رُخ رہنے کی کراہت پر متعدد علماء نے تصریح کی ہے اھ، اور امام ابوداؤد نے سنن میں، حاکم نے مستدرک میں ابو رمثہ رضی اللہ

1 حلية المحلى شرح منية المصلى Page 456 of 736

Volume Six Fatawa Razvia

(Arabic Text) In his Sunan and Al-Hakim in Al-Mustadrak narrated from Abu Rimtha (may Allah be pleased with him), who said: "I offered this prayer or a prayer like it with the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him). Abu Bakr and Umar (may Allah be pleased with them both) used to stand in the front row to his right. A man who had joined the prayer from the first takbir stood up to perform two (additional) units of prayer. Umar immediately rushed to him, grabbed him by the shoulder, shook him, and said, 'Sit down! The People of the Book were destroyed only because there was no interval between their prayers.' The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) raised his eyes and said, 'Allah has guided you aright, O Ibn al-Khattab.'" [Summary] I say (the author): This is a clear text from the Lawgiver (peace and blessings of Allah be upon him) regarding turning away from the Qibla after a prayer followed by voluntary prayers. Therefore, there is no reason to prohibit it, even though some scholars have restricted the dislike of remaining facing the Qibla to situations where one does not intend to perform any prayer after it, as mentioned in Al-Ghunya citing Al-Khulasa. And Allah, Glory be to Him and Most High, knows best.

(Urdu Column) Narrated from [Abu Rimtha] (may Allah be pleased with him), who said: I offered this or a prayer like it with the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him). He said that Hazrat Abu Bakr and Hazrat Umar (may Allah be pleased with them both) used to stand in the first row near the Imam. A man who had joined the prayer from the first Takbir stood up and started to offer two rak'ahs of prayer. Hazrat Umar immediately went towards him, grabbed him by the shoulder, shook him, and said: "Sit down! The People of the Book were only destroyed because they did not create an interval between their prayers." The Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) raised his blessed eyes and said: "O Ibn al-Khattab! Allah has guided you." I say (the author): This is a clear proof from the Lawgiver (peace and blessings of Allah be upon him) that in a prayer after which there are voluntary (Nafl) prayers, the Imam should also turn his face from the Qibla, and there is no prohibition against turning away from the Qibla (i.e., there is no reason to forbid turning away). Although some scholars have restricted the dislike of sitting facing the Qibla to the case where the Imam does not wish to perform any prayer after sitting, as is mentioned in Ghunya with reference to Khulasa. And Allah, Glory be to Him and Most High, knows best. (T)

Footnote: 1. Sunan Abi Dawud, Chapter on the man performing voluntary prayers in his place etc., printed at Aftab-e-Alam Press Lahore, 1/144; Al-Mustadrak by Al-Hakim, Book of Prayer, 'The People of the Book were not destroyed' etc., printed at Dar al-Fikr Beirut, 1/207.

(अरबी पाठ) अपनी सुनन में और अल-हाकिम ने अल-मुस्तदरक में अबू रिम्था (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत की है, उन्होंने कहा: "मैंने यह नमाज़ या इसके जैसी नमाज़ नबी-ए-अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के साथ पढ़ी। हज़रत अबू बक्र और हज़रत उमर (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) पहली सफ़ में उनके दाईं ओर खड़े होते थे। एक व्यक्ति जिसने नमाज़ की पहली तकबीर में शिरकत की थी, दो अतिरिक्त रकअत नमाज़ पढ़ने के लिए खड़ा हुआ। उमर फ़ौरन उसकी ओर बढ़े, उसका कंधा पकड़कर हिलाया और कहा, 'बैठ जाओ! अहले किताब सिर्फ इसलिए बर्बाद हुए क्योंकि वे अपनी नमाज़ों के बीच फासला नहीं करते थे।' नबी-ए-अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने अपनी मुबारक नज़र उठाई और फ़रमाया, 'ऐ इब्न अल-ख़त्ताब! अल्लाह ने तेरी रहनुमाई फ़रमाई है'।" [सारांश] मैं कहता हूँ (लेखक): यह साहिबे शरीयत (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की ओर से इस बात पर स्पष्ट प्रमाण है कि जिस नमाज़ के बाद नवाफ़िल हों, उसमें भी इमाम को क़िबला से रुख मोड़ लेना चाहिए। अतः इसे प्रतिबंधित करने का कोई कारण नहीं है, भले ही कुछ विद्वानों ने क़िबला की ओर मुँह करके बैठने की नापसंदगी को उस स्थिति तक सीमित रखा है जब व्यक्ति उसके बाद कोई नमाज़ न पढ़ना चाहता हो, जैसा कि 'ग़ुनिया' में 'ख़ुलासा' के हवाले से उल्लेख है। और अल्लाह, जो महिमावान और सर्वोच्च है, सबसे बेहतर जानता है।

(उर्दू कॉलम) [अबू रिम्था] (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत है, उन्होंने कहा: मैंने यह या इसके जैसी नमाज़ नबी-ए-अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के साथ अदा की। उन्होंने फ़रमाया कि हज़रत अबू बक्र और हज़रत उमर (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) इमाम के पास पहली सफ़ में खड़े होते थे। एक व्यक्ति जिसने पहली तकबीर से नमाज़ में शिरकत की थी, उठकर दो रकअत नमाज़ पढ़ने लगा। हज़रत उमर फ़ौरन उसकी ओर बढ़े, कंधे से पकड़कर हिलाया और कहा, "बैठ जाओ! अहले किताब सिर्फ इसलिए तबाह हुए क्योंकि वे अपनी नमाज़ों के बीच फासला नहीं करते थे।" नबी-ए-अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने अपनी मुबारक नज़र उठाकर देखा और फ़रमाया, "ऐ इब्न अल-ख़त्ताब! अल्लाह तआला ने तेरी रहनुमाई फ़रमाई है।" मैं कहता हूँ (लेखक): यह साहिबे शरीयत (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की ओर से इस बात पर स्पष्ट प्रमाण है कि जिस नमाज़ के बाद नवाफ़िल हों, उसमें भी इमाम क़िबला से रुख मोड़े, और क़िबला रुख से मोड़ने पर कोई मनाही नहीं है (अर्थात मुड़ने से रोकने की कोई वजह नहीं है)। हालाँकि कुछ हज़रात ने क़िबला रुख बैठने की

नापसंदगी को उस सूरत के साथ खास किया है जबकि इमाम बैठने के बाद कोई नमाज़ न पढ़ना चाहता हो जैसा कि 'ग़ुनिया' में 'ख़ुलासा' के हवाले से है। वल्लाहु सुब्हानहू व तआला आलम। (त)

पाद-टिप्पणी: 1. सुनन अबू दाऊद, बाब: अपनी जगह पर नफ़्ल नमाज़ पढ़ने वाले आदमी के बारे में आदि, आफ़ताब-ए-आलम प्रेस लाहौर 1/144; अल-मुस्तदरक अल-हाकिम, नमाज़ की किताब, 'अहले किताब तबाह नहीं हुए' आदि, दारुल फ़िक्र बेरूत 1/207।

فی سننہ والحاکم فی المستدرک عن ابی رمثۃ رضی اللہ تعالٰی عنہ قال صلیت ھذہ الصلوۃ اومثل ھذہ الصلوۃ مع النبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم وکان ابوبکر وعمر یقومان فی الصف المقدم عن یمینہ ۔ و کان رجل قد شھد التکبیرۃ الاولی من الصلاۃ یشفع فوثب الیہ عمر فاخذ بمنکبہ فھزہ ثم قال اجلس فانہ لم یھلک اھل الکتٰب الا انھم لم یکن بین صلوتھم فصل فرفع النبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم بصرہ فقال اصاب اللہ بک یابن الخطاب (ملخصاً) قلت فھذا نص عن صاحب الشریعۃ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فی انفتالہ عن القبلۃ بعد صلوۃ یتبعھا تطوع فلا وجہ للنھی عنہ وان خص بعض کراھۃ المکث مستقبلا بمالاتھوی بعدہ کما فی الغنیۃ عن الخلاصیۃ واللہ سبحنہ وتعالی اعلم ۔

تعالٰی عنہ سے روایت کیا، فرمایا کہ میں نے یہ یا اسکی مثل نماز نبی اکرم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کے ساتھ ادا کی اور فرمایا کہ حضرت ابوبکر اور حضرت عمر رضی اللہ تعالٰی عنہما امام کے پاس صفِ اول میں کھڑے ہوتے تھے اور ایک آدمی جو تکبیرِ اولٰی سے نماز میں شامل ہوا تھا اٹھ کر دو رکعت نماز ادا کرنی شروع کردی حضرت عمر اس کی طرف فی الفور بڑھے اور کاندھے سے پکڑ کر حرکت دی اور کہا بیٹھ جاؤ اہل کتاب نہیں ہلاک ہوئے مگر اس لئے کہ وہ اپنی نمازوں کے درمیان فاصلہ نہ کرتے تھے۔ نبی اکرم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے نظر مبارک اٹھا کر دیکھا اور فرمایا اے ابن خطاب اللہ تعالٰی نے تیری رہنمائی فرمائی ہے قلت (میں کہتا ہوں) یہ صاحبِ شریعت صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کی طرف سے اس بات پر نص ہے کہ جس نماز کے بعد نوافل ہوں اس میں بھی امام قبلہ سے رُخ موڑے اور قبلہ رُخ سے موڑنے پر کوئی نہی وارد نہیں (یعنی انصراف سے منع کرنے کی کوئی وجہ نہیں) اگر چہ بعض حضرات نے قبلہ رُخ

بیٹھنے کی کراہت کو اس صورت کے ساتھ خاص کیا جبکہ امام بیٹھنے کے بعد کوئی نماز نہ پڑھنا چاہتا ہو جیسا کہ غنیہ میں خلاصہ کے حوالے سے ہے واللہ سبحنہ وتعالٰی اعلم (ت)

1 سنن ابوداؤد باب فی الرجل یتطوع فی مکانہ الخ مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور 1 / 144،

المستدرک للحاکم کتاب الصلوٰۃ لم یھلک اھل الکتٰب الخ مطبوعہ دارالفکر بیروت 1 / 207

Fatawa-e-Razviya, Volume 6 Issue No. 603: From Tehsil Jalgaon Jamod, District Akola, Berar region, sent by Ji Sheikh Abdul Rahim son of Taj Muhammad Sahib, 21st Rabi-ul-Awwal 1314 AH. What do the scholars of religion say regarding the issue of whether praying behind a person with leprosy (Baras) is permissible or not? That is, what is the ruling for the Imamate of a person whose entire body has turned white due to leprosy? Furthermore, in this region of Deccan, many people during the month of Muharram seat a mount at their house, calling it the "Fa'el Sahib" mount. Many people make vows to it and offer various offerings. Is it permissible to pray behind a person who seats such a mount at their house or not? Clarify and you shall be rewarded.

The Answer: Praying behind such a person with leprosy is disliked (Makruh). It is in "Al-Durr al-Mukhtar": Praying behind a leper whose leprosy has spread is disliked. (Reference: Al-Durr al-Mukhtar, Chapter of Imamate). Establishing the aforementioned mount and making vows to it is an innovation of the ignorant, which is not free from corruption of belief or corruption of action. Praying behind innovators and transgressors is severely disliked. It is in "Al-Durr al-Mukhtar": The transgressor is like the innovator; his Imamate is disliked in every situation. (Reference: Radd al-Muhtar, Chapter of Imamate). And Allah knows best.

Issue No. 604: From Badaun, Madrasa Qadiria, 6th Jumada al-Ukhra 1312 AH. What has the pure Shariah stated regarding the issue of whether a believer born out of wedlock (Walad-ul-Haram) will be forgiven or not? And if capable, can he be appointed as an Imam for prayer or not? According to the rules of Sufism (Tariqah), can he achieve the rank of spiritual knowledge (Irfan) compared to others? And is his succession in this path permissible or not? That is, can he become the successor of his Sheikh if he achieves capability? And would it be permissible for the Sheikh to grant him a certificate of succession (Khalifa)? Clarify and you shall be rewarded.

The Answer: Every believer whose life ends on faith is a believer in the sight of Allah and is deserving of forgiveness, and their end is certainly Paradise, as stated by the religious texts and agreed upon by the scholars of the Ahl al-Sunnah wa al-Jama'ah. The Imamate of a person born out of wedlock (Walad-al-Zina) is "Makruh Tanzihi" (mildly disliked/not preferred) if he does not possess more knowledge of the issues of purity and prayer among all those present.

1. Al-Durr al-Mukhtar, Chapter of Imamate, published by Matba' Mujtabai Delhi, 1/83.

2. Radd al-Muhtar, Chapter of Imamate, published by Mustafa al-Babi Egypt, 1/414.

फ़तावा-ए-रज़विया, जिल्द 6 मसला नंबर 603: तहसील जलगाँव जामोद, जिला अकोला, बरार क्षेत्र से, जी शेख अब्दुल रहीम वल्द ताज मोहम्मद साहब द्वारा प्रेषित, 21 रबी-उल-अव्वल 1314 हिजरी। धर्म के विद्वान इस विषय में क्या कहते हैं कि कोढ़ (बरस) से पीड़ित व्यक्ति के पीछे नमाज़ जायज़ है या नहीं? यानी जिस व्यक्ति का पूरा शरीर कोढ़ के कारण सफेद हो गया हो, उसकी इमामत के लिए क्या आदेश है? इसके अतिरिक्त, दक्कन के इस क्षेत्र में मुहर्रम के महीने में अक्सर लोग अपने घर पर एक सवारी बिठाते हैं और उसे "फ़ेल साहब" की सवारी कहते हैं। बहुत से लोग उससे मन्नतें मांगते हैं और कई तरह के चढ़ावे चढ़ाते हैं। क्या ऐसे व्यक्ति के पीछे नमाज़ जायज़ है जो अपने घर पर ऐसी सवारी बिठाता है या नहीं? स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिलेगा।

उत्तर: ऐसे कोढ़ वाले व्यक्ति के पीछे नमाज़ पढ़ना मकरूह (नापसंद) है। "अद-दुर्र अल-मुख्तार" में है: उस कोढ़ी के पीछे नमाज़ मकरूह है जिसका कोढ़ फैल गया हो। (त) उपरोक्त सवारी बिठाना और उससे मन्नतें माँगना अज्ञानियों की बिदअत (नवाचार) है, जो विश्वास के भ्रष्टाचार या कर्म के भ्रष्टाचार से खाली नहीं है। और बिदअतियों एवं अवज्ञाकारियों (फ़ासिक़) के पीछे नमाज़ पढ़ना अत्यंत मकरूह है। "अद-दुर्र अल-मुख्तार" में है: फ़ासिक़, बिदअती की तरह है; उसकी इमामत हर हाल में मकरूह है। (रद्द अल-मुह्तार)। और अल्लाह बेहतर जानता है।

मसला नंबर 604: बदायूँ, मदरसा क़ादरिया से, 6 जमादी अल-उखरा 1312 हिजरी। पवित्र शरीयत ने इस मसले में क्या फ़रमाया है कि क्या किसी मोमिन (ईमान वाले) अवैध संतान (वलद-उल-हराम) की क्षमा होगी या नहीं? और योग्यता की स्थिति में उसे नमाज़ में इमाम बनाया जा सकता है या नहीं? और तरीक़त के नियमों के अनुसार क्या वह दूसरों की तुलना में आध्यात्मिक ज्ञान (इरफ़ान) का पद प्राप्त कर सकता है या नहीं? और इस मार्ग में उत्तराधिकार (इस्तिख़लाफ़) जायज़ है या नहीं? यानी क्या वह योग्यता प्राप्त होने की स्थिति में अपने शेख का उत्तराधिकारी बन सकता है या नहीं? और क्या शेख के लिए उसे खिलाफ़त की सनद (प्रमाणपत्र) देना जायज़ होगा या नहीं? स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिलेगा।

उत्तर: हर वह मोमिन जिसका अंत ईमान पर हो, अल्लाह के निकट मोमिन है और वही क्षमा के योग्य है, और उसका अंत निश्चित रूप से जन्नत है जैसा कि धार्मिक ग्रंथों (नसूस) में वर्णित है और सुन्नत व जमाअत के विद्वानों की सर्वसम्मति है। अवैध संतान (वलद-अज़-ज़िना) की इमामत 'मकरूह-ए-

तन्ज़ीही' (हल्की नापसंदगी/प्राथमिकता के विरुद्ध) है, बशर्ते कि वह उपस्थित सभी लोगों में पवित्रता और नमाज़ के मसलों का सबसे अधिक ज्ञान न रखता हो।

1. अद-दुर्र अल-मुख्तार, बाबुल इमामत, मुतबूआ मतबा मुजतबाई दिल्ली, 1/83।
2. रद्द अल-मुह्तार, बाबुल इमामत, मुतबूआ मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 1/414।

पृष्ठ 458/736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم مسئلہ نمبر ۶۰۳: از تحصیل جل گاؤں جامود ضلع اکولہ ملک برار مرسلہ جی شیخ عبدالرحیم ولد تاج محمد صاحب ۲۱ ربیع الاول شریف ۱۳۱۴ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ مبروص کے پیچھے نماز جائز ہے یا نہیں یعنی جس کا تمام جسم عارضہ برص سے سفید ہو گیا ہو اس کی امامت کے لئے کیا حکم ہے اور اس ملک دکن میں اکثر لوگ ماہ محرم الحرام میں سواری اپنے مکان پر بٹھالیتے ہیں اور اس کو فعل صاحب کی سواری کہتے ہیں اکثر لوگ اس سے منتیں مانگتے ہیں اور چڑھاو ا وغیرہ بہت کچھ چڑھاتے ہیں کیا ایسے شخص کے پیچھے جو اپنے مکان پر سواری بٹھائے نماز جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا الجواب: ایسے برص والے کے پیچھے نماز مکروہ ہے فی الدرالمختار تکرہ خلف ابرص شاع برصہ (درمختار میں ہے ایسے برص والے کے پیچھے نماز مکروہ ہے جس کا برص پھیل گیا ہو۔ ت) سواری مذکور بٹھانا اور اس سے منتیں مانگنا بدعتِ جہال ہے کہ فسق عقیدہ یا فسق عمل سے خالی نہیں اور اہل بدعت و فساق کے پیچھے نماز سخت مکروہ فی الدرالمحتار الفاسق کالمبتدع تکرہ امامتہ بکل حال الخ (ردالمحتار میں ہے کہ فاسق بدعتی کی طرح ہے اس کی امامت ہر حال میں مکروہ ہے۔ ت) واللہ تعالٰی اعلم مسئلہ نمبر ۶۰۴: از بدایوں مدرسہ قادریہ ۶ جمادی الاخری ۱۳۱۲ھ کیا فرمایا ہے شرع مطہر نے اس مسئلہ میں کہ بخشش ولد الحرام المومن کی ہوگی یا نہیں اور بشرط قابلیت امامت کے نماز میں امام بنایا جائے گا یا نہیں؟ اور طریقہ از روئے قواعد طریقت کے بانسبت اور مرتبہ عرفان پاسکتا ہے یا نہیں؟ اور استخلاف اس طریقہ کا جائز ہے یا نہیں؟ یعنی شیخ اپنے کا درصورت حصول قابلیت جانشین ہوسکتا ہے یا نہیں؟ اور شیخ کو سند خلافت اس کو دینا جائز ہوگا یا نہیں؟ بینوا توجروا الجواب: ہر مومن جس کا خاتمہ ایمان پر ہو اور مومن عنداللہ وہی قابل مغفرت ہے اور اس کا انجام یقینا جنت کما نطقت بہ النصوص واجمعت علیہ علماء السنۃ

والجماعة (جیسا کہ اس پر نصوص کی تصریح اور علماء اہلسنت و جماعت کا اجماع ہے۔ ت) ولد الزنا کی امامت مکروہ تنزیہی یعنی خلافِ اولیٰ ہے جبکہ وہ سب حاضرین میں مسائل طہارت و نماز کا علم زائد نہ رکھتا ہو،

۱ درمختار ، باب الامامۃ مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ، ۱/ ۸۳ ۲ ردالمحتار باب الامامۃ مطبوعہ مصطفیٰ البابی مصر ۱/ ۴۱۴

Fatawa Razawiyya Volume VI

[Arabic Text]: Fi al-Durr al-Mukhtar karuha imamat abd wa a'rabi wa walad al-zina ila qawlihi illa an yakuna a'lam al-qawm. 1 [Urdu Translation]: In Durr al-Mukhtar, it is stated that the leadership (imamat) of a slave, a nomad (Arab), and an illegitimate child is disliked (makruh); however, it is not disliked in the case where he is more knowledgeable than the rest of the congregation. (T)

Furthermore, this is also in the case where another person suitable for leadership is present. If among those present, only he is fit for leadership, then making him the Imam becomes obligatory. According to those with spiritual insight (arifun), the status is as follows: "And Allah chooses for His mercy whom He wills" (Quran 2:105). (And Allah specifically chooses for His mercy whomever He wishes. T). The blame for the sin does not lie on the illegitimate child himself; the blame is on the adulterer and the adulteress.

[Arabic Text]: Wa qad su'ila Sayyid al-Ta'ifa Junayd al-Baghdadi radiyallahu ta'ala 'anhu hal yazni al-'arif fa-atraqa mullabiyan thumma qala wa kana amrullahi qadaran maqdurun. [Urdu Translation]: Sayyid al-Ta'ifa Junayd Baghdadi (may Allah be pleased with him) was asked, "Can a gnostic (arif) commit adultery?" He proceeded while reciting the Talbiya and said, "Allah's command is predestined and fixed." (T)

His appointment as a deputy, provided he is capable, depends on the insight of a perceptive spiritual guide. If the guide sees a benefit, it is not forbidden. However, if his condition is well-known and the general public is repelled by him, and it is understood that the work of calling to Allah and guiding the people will not be organized due to public aversion, then he should abstain. And Allah knows best.

Question No. 605: What do the scholars of religion say regarding this matter: Zaid has an unmarried woman named Zainab and two married wives, Sughra and Kubra. For eight years, Zaid has been living and having relations with the unmarried Zainab without regard for her status and without any shame or modesty before his peers and associates. In this situation, is Zaid's leadership (imamat) permissible or not? Please clarify and be rewarded.

The Answer: If his being an adulterer is proven and established, then it is absolutely not permissible to make him an Imam, as an adulterer is a transgressor (fasiq), and appointing a transgressor as an Imam is prohibited. It is stated in Ghunyah:

[Arabic Text]: Law qaddamoo fasiqan yathimoon bina'an 'ala anna al-karahata... [Urdu Translation]: If people appoint a transgressor as an Imam, they will be sinners.

1. Al-Durr al-Mukhtar, Chapter of Imamat, published by Mujtabai Press, Delhi, 1/83.
2. The Quran, 2:105.

फ़तावा रज़विया खंड छह (جلد ششم)

[अरबी पाठ]: 'अल-दुर्रुल मुख़्तार' में है: गुलाम, देहाती (बद्दू) और अवैध संतान (वलद-उज़-ज़िना) का इमामत करना मकरूह है... जब तक कि वह क़ौम में सबसे अधिक ज्ञानी न हो। 1 [उर्दू अनुवाद]: दुर्रुल मुख़्तार में है कि गुलाम, देहाती और अवैध संतान की इमामत मकरूह है; बेशक, इस स्थिति में मकरूह नहीं है जब वह दूसरी क़ौम से ज़्यादा साहब-ए-इल्म (ज्ञानी) हो। (त)

फिर यह भी उस स्थिति में है जब इमामत के योग्य कोई दूसरा व्यक्ति मौजूद हो। और अगर उपस्थित लोगों में केवल वही इमामत के लायक हो, तो उसे इमाम बनाना वाजिब होगा। हक़ की पहचान रखने वालों (आरिफ़ीन) के नज़दीक मर्तबा वही है: "और अल्लाह जिसे चाहता है अपनी रहमत के लिए विशिष्ट फरमा लेता है।" (कुरान 2:105)। (त) अवैध संतान पर खुद उस गुनाह का इल्ज़ाम नहीं है; इल्ज़ाम व्यभिचारी (ज़ानी) और व्यभिचारिणी (ज़ानिया) पर है।

[अरबी पाठ]: सैय्यद अल-ताइफ़ा जुनैद बग़दादी (रज़ियल्लाहु अन्हु) से पूछा गया: क्या आरिफ़ ज़िना कर सकता है? आपने सिर झुका लिया, तल्बिया पढ़ते हुए कहा: और अल्लाह का हुक्म तयशुदा और निश्चित है। [उर्दू अनुवाद]: सैय्यद अल-ताइफ़ा जुनैद बग़दादी (रज़ियल्लाहु अन्हु) से पूछा गया कि क्या आरिफ़ ज़िना कर सकता है? आप तल्बिया कहते हुए चल पड़े और कहा अल्लाह का हुक्म मुक़द्दर और मुक़र्रर हो चुका है। (त)

उसका उत्तराधिकारी (इमामत के लिए) बनाया जाना, जबकि वह उसका योग्य हो, एक सूक्ष्मदृष्टि वाले आरिफ़ शेख की नज़र पर निर्भर है। अगर वह इसमें मसलहत (भलाई) देखे तो मना नहीं है। लेकिन अगर उसकी स्थिति प्रसिद्ध हो और आम लोग उससे नफ़रत करते हों, और यह समझा जाए कि लोगों की नफ़रत के कारण अल्लाह की तरफ़ दावत और लोगों के मार्गदर्शन का काम सुव्यवस्थित नहीं रहेगा, तो उसे बचना चाहिए। और अल्लाह बेहतर जानता है।

मसाला नंबर 605: धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं कि ज़ैद की एक बीवी ज़ैनब बिना निकाह (गैर-मनकूहा) के है और दो बीवियाँ सुग़रा और कुबरा निकाह वाली हैं। ज़ैद आठ साल से बिना निकाह वाली ज़ैनब के साथ, उसके बिना निकाह होने की परवाह किए बिना और अपने साथियों के सामने बिना किसी शर्मो-हया के शारीरिक संबंध और सहवास में रहता है। क्या इस स्थिति में ज़ैद की इमामत जायज़ है या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य पाएँ।

उत्तर (अल-जवाब): अगर उसका ज़ानी (व्यभिचारी) होना सिद्ध और प्रमाणित हो जाए, तो उसे इमाम बनाने की हरगिज़ अनुमति नहीं है, क्योंकि ज़ानी 'फ़ासिक़' है और फ़ासिक़ को इमाम बनाना मना है। 'ग़ुनिया' में है:

[अरबी पाठ]: लो क़द्दमु फ़ासिक़न याथमून... [उर्दू अनुवाद]: अगर लोगों ने फ़ासिक़ को इमाम बनाया तो लोग गुनहगार होंगे।

1. दुर्रुल मुख़्तार, बाबुल इमामत, मुतबा मुजतबाई, दिल्ली, 1/83.
2. अल-कुरान, 2:105.

पेज 459/736

فتاوی رضویہ جلد ششم

فی الدرالمختار کرہ امامۃ عبد واعرابی وولدالزنا الی قولہ الا ان یکون اعلم القوم ۔ ۱ در مختار میں ہے غلام، اعرابی، ولد الزنا کی امامت مکروہ ہے، البتہ اس صورت میں مکروہ نہیں جبکہ وہ دوسری قوم سے زیادہ صاحبِ علم ہو۔ (ت)

پھر یہ بھی اس صورت میں ہے کہ دوسرا قابل امامت موجود ہو اور اگر حاضرین میں صرف وہی لائق امامت ہے تو اسے امام بنانا واجب ہوگا مرتبہ عرفان اہلِ حق کے نزدیک وہی ہے وَاللّٰہُ یَخْتَصُّ بِرَحْمَتِہٖ مَنْ یَّشَآءُ ط ۲، (اور اللہ تعالی جسے چاہتا ہے اپنی رحمت کے لئے مختص فرمالیتا ہے۔ت) ولد الزنا پر خود اس گناہ کا الزام نہیں الزام زانی اور زانیہ پر ہے،

وقد سئل سید الطائفۃ جنید البغدادی رضی اللہ تعالی عنہ ہل یزنی العارف فاطرق ملبیا ثم قال وکان امر اللہ قدرا مقدورا ۔ سید الطائفہ جنید بغدادی رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے پوچھا گیا کیا عارف زنا کر سکتا ہے؟ آپ تلبیہ کہتے ہوئے چل پڑے اور کہا اللہ کا امر مقدر و مقرر ہو چکا ہے۔ (ت)

اس کا استخلاف جبکہ وہ اس کا اہل ہو نظر شیخ عارف بصیر پر ہے اگر مصلحت دیکھے تو ممنوع نہیں اگر حال اس کا مشہور اور عامہ خلائق اس سے نفور ہوں اور سمجھے کہ کارِ دعوت الی اللہ اور ہدایتِ خلق اللہ بسبب تنفر ناس منتظم نہ ہوگا تو احتراز فرمائے۔ واللہ تعالی اعلم

مسئلہ نمبر ۶۰۵: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید کی ایک بی بی زینب غیر منکوحہ اور دو بیبیاں صغریٰ اور کبریٰ منکوحہ ہیں زید عرصہ آٹھ سال سے بی بی زینب غیر منکوحہ سے بلا لحاظ و پاس اس کی عدم منکوحیت اور بلا شرم و حجاب اپنے ہمسروں اور

ہمچشموں کے مباشر اور ہم صحبت رہتا ہے اس صورت میں زید کی امامت جائز ہے یا نہیں؟ بینوا وتوجروا

الجواب: اگر اس کا زانی ہونا ثابت و متحقق ہو تو اسے امام بنانے کی ہرگز اجازت نہیں کہ زانی فاسق ہے اور فاسق کو امام کرنا منع ہے غنیہ میں ہے:

لو قدموا فاسقا یا ثمون بناء علی ان الکراھۃ اگر لوگوں نے فاسق کو امام بنایا تو لوگ گنہگار ہوں گے

۱ در مختار باب الامامۃ مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱ / ۸۳ ۲ القرآن ۱۰۵/۲

Fatawa Razvia Volume 6

(Arabic) Its precedence (for Imamate) is macroh tahrimi (prohibitively disliked) due to his lack of care for religious matters and negligence in fulfilling its requirements. It is not far-fetched that he might neglect some conditions of prayer or perform an act contrary to it; in fact, such a thing is likely considering his open sinfulness. (1)	**(Urdu) Because his precedence for leadership is prohibitively disliked (makruh-e-tahrimi) as he is negligent in religious matters and careless in fulfilling their requirements. It is possible that he may not fulfill some conditions of prayer (i.e., omit them) or perform an action contrary to prayer; rather, doing so is most probable in view of his open sinfulness (fisq). (T)**

And if he is generally notorious as an adulterer among the people, then one should still abstain from making him an Imam because in this case, people will feel aversion towards his Imamate. This matter will lead to a reduction in the congregation, which is contrary to the objectives of Sharia.

(Arabic) Just as they disliked the Imamate of a child of adultery for that reason, even if the sin was not from him.	**(Urdu) As the jurists have declared the leadership of a person born out of wedlock as disliked (makruh) in view of this wisdom, even though the sin is not of his own doing. (T) And Allah Almighty knows best.**

Problem No. 606: From Gorakhpur, Mohalla Shah Maroof, residence of Molvi Muhammad Masood (may his end be good), Muhammad Abdul Qayyum Sahib deceased, 27 Rabi-ul-Awwal Sharif 1315 AH: Is the Imamate of a deaf person permissible or not? State the ruling and be rewarded.

The Answer: There is no reason for non-permissibility as there is no preventing factor. However, a person who is not deaf and is not inferior to a deaf person in the preferred qualities of Imamate is superior and better. Just as the sense of sight is needed in prayer for the protection of the purity of the body, clothing, and place of prayer, and for correcting the direction of the Qibla, due to which a sighted person is given preference over a blind or visually impaired person.

(Arabic) In Durr al-Mukhtar, the Imamate of the blind and similar cases, like the 'Asha' (night-blind), is disliked (2). In Radd al-Muhtar, it is said that 'Asha' means a person with poor eyesight night and day.

(Urdu) In Durr al-Mukhtar, the Imamate of a blind person is disliked, as is that of an 'Asha' (visually impaired). (2) In Radd al-Muhtar, the meaning of 'Asha' is written as one who sees less during the night and day.

---

1. Ghunya al-Mustamli Sharh Munya al-Musalli, Chapter on Imamate, etc., published by Sohail Academy Lahore, p. 513.
2. Durr al-Mukhtar, Chapter on Imamate, published by Matba Mujtabai Delhi, 1/83.

फतावा रज़विया जिल्द 6

(अरबी) उसकी प्राथमिकता (इमामत के लिए) मकरूह-ए-तहरीमी है क्योंकि वह धार्मिक मामलों में लापरवाही बरतता है और इसकी आवश्यकताओं को पूरा करने में कोताही करता है। यह असंभव नहीं है कि वह नमाज़ की कुछ शर्तों को छोड़ दे या कोई ऐसा कार्य करे जो इसके विपरीत हो; वास्तव में, उसकी अवज्ञा (फ़िस्क़) को देखते हुए ऐसा होना ही अधिक संभावित है। (1)

(उर्दू) इसलिए कि उसकी प्राथमिकता इमामत के लिए मकरूह-ए-तहरीमी है क्योंकि वह धार्मिक मामलों में लापरवाही बरतता है और नमाज़ के लाज़मात (आवश्यकताओं) की अदायगी में तसाहुल (कोताही) से काम लेता है। मुमकिन है वह नमाज़ की बाज़ शरायत (शर्तों) को अदा न करे (यानी छोड़ दे) या ऐसा अमल कर दे जो नमाज़ के मनाफ़ी (विपरीत) हो, बल्कि ऐसा करना उसके फ़िस्क़ के पेश-ए-नज़र अग़लब (अधिक संभावित) है। (त)

और अगर वह लोगों में आम तौर पर ज़ानी (व्यभिचारी) के रूप में प्रसिद्ध हो, तब भी उसे इमाम बनाने से परहेज़ करना चाहिए क्योंकि इस सूरत में लोग उसकी इमामत से नफ़रत करेंगे। यह अम्र (बात) जमात में तक़लील (कमी) का बाइस (कारण) होगा जो मक़ासिद-ए-शरअ (शरीयत के उद्देश्यों) के खिलाफ है।

(अरबी) जैसे उन्होंने उसी कारण से अवैध संतान की इमामत को नापसंद किया, भले ही वह पाप उसकी ओर से न हुआ हो।

(उर्दू) जैसा कि फ़ुक़्हा (धर्मशास्त्रियों) ने इसी हिकमत के मद्देनज़र वल्द-ए-ज़िना (अवैध संतान) की इमामत को मकरूह क़रार दिया है, चाहे वह गुनाह उसकी अपनी ज़ात की तरफ से न हुआ हो। (त) और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 606: गोरखपुर, मोहल्ला शाह मारूफ़, मौलवी मुहम्मद मसूद अल-आक़िबा के मकान से, मुहम्मद अब्दुल क़य्यूम साहब मरहूम, 27 रबी-उल-अव्वल शरीफ 1315 हिजरी: बहरे की इमामत जायज़ है या नहीं? बयान फरमाएं ताकि अज्र (पुण्य) मिले।

जवाब: इसके अदम-ए-जवाज़ (नाजायज़ होने) का कोई कारण नहीं है क्योंकि कोई रुकावट नहीं है। हाँ, एक व्यक्ति जो बहरा न हो और इमामत के मुराज्जेहात-ए-राज्जेहात (वरीयता प्राप्त गुणों) में बहरे से कम न हो, वह अफ़ज़ल और औला (बेहतर) है। क्योंकि नमाज़ में जिस तरह बदन, कपड़ों और

नमाज़ की जगह की पाकी (शुद्धता) बनाए रखने और क़िबला की दिशा सही करने के लिए हासा-ए-बसर (देखने की शक्ति) की हाजत (आवश्यकता) होती है, जिसके कारण बीना (देखने वाले) को अंधे बल्कि ज़ईफ़-उल-बसर (कमज़ोर दृष्टि वाले) पर तरजीह दी गई है।

(अरबी) 'दुर्र-ए-मुख्तार' में है कि अंधे और उसके समान 'अशा' (जिसकी दृष्टि कमज़ोर हो) की इमामत मकरूह है। (2) 'रद्दुल मुहतार' में अशा का अर्थ दिन और रात में कम देखने वाला लिखा है।

(उर्दू) दर मुख्तार में है नाबीने (अंधे) की इमामत मकरूह है, इसी तरह 'अशा' (ज़ईफ़-उल-बसर) की भी। (2) रद्दुल मुहतार में 'अशा' का मानी रात और दिन को कम देखने वाला लिखे हैं।

---

1. गुन्यातुल मुस्तमली शरह मुन्यातुल मुसल्ली, फ़स्ल इमामत आदि, सोहेल अकादमी लाहौर द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 513।
2. दुर्र-ए-मुख्तार, बाबुल इमामत, मतबा मुजतबाई दिल्ली द्वारा प्रकाशित, 1/83।

تقدیمه کراهة تحریم لعدم اعتنائه بأموردینه وتساهله فی الاتیان بلوازمه فلا یبعد منه الاخلال ببعض شروط الصلاة وفعل ماینافیها بل هو الغالب بالنظر الی فسقه 1۔

اس لئے کہ اس کی تقدیم برائے امامت مکروہِ تحریمی ہے کیونکہ وہ امورِ دینیہ میں لاپرواہی برتتا ہے اور نماز کے لوازمات کی ادائیگی میں تساہل سے کام لیتا ہے ممکن ہے وہ نماز کی بعض شرائط ادا نہ کرے (یعنی چھوڑ دے) یا ایسا عمل کر دے جو نماز کے منافی ہو، بلکہ ایسا کرنا اس کے فسق کے پیشِ نظر اغلب ہے (ت)

اور اگر وہ لوگوں میں عام طور پر زانی مشہور ہو جب بھی اس کے امام بنانے سے احتراز چاہئے کہ اس صورت میں لوگ اس کی امامت سے نفرت کریں گے یہ امر باعث تقلیلِ جماعت ہوگا کہ مقاصدِ شرع کے خلاف ہے،

کما کرهوا امامة ولد الزنا لاجل ذلك وان لم یکن الاثم منه۔

جیسا کہ فقہاء نے اسی حکمت کے پیشِ نظر ولدِ زنا کی امامت کو مکروہ قرار دیا ہے اگرچہ گناہ اس کی اپنی ذات کی طرف سے نہیں ہوا۔ (ت) واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ نمبر ۶۰۶: از گھور کھپور محلہ شاہ معروف مکان مولوی محمد مسعود العاقبہ محمد عبدالقیوم صاحب مرحوم ۲۷ ربیع الاول شریف ۱۳۱۵ھ: بہرے کی امامت جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: عدم جواز کی کوئی وجہ نہیں حیث لا مانع، ہاں غیر بہرا کہ مرجحاتِ راجحاتِ امامت میں بہرے سے کم نہ ہو افضل واولی ہے کہ نماز میں جس طرح حفظِ طہارتِ بدن وثوب ومصلی و

تصحیح جہت قبلہ کے لئے حاسہ بصر کی حاجت ہوتی ہے جس کے سبب بینا کو اندھے بلکہ ضعیف البصر پر ترجیح دی گئی،

فی الدر یکرہ امامۃ الاعمی ونحوہ الاعشی نہر 2. فی ردالمحتار ھو سیئ البصر لیلا ونہارا	**در مختار میں ہے نابینے کی امامت مکروہ ہے، اسی طرح اعشی (ضعیف البصر) کی بھی، نہر۔ ردالمحتار میں اعشی کا معنی رات اور دن کو کم دیکھنے والا لکھے ہیں۔**

---

1 غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل فی الامامۃ الخ مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۵۱۳ 2 در مختار باب الامامۃ مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱ / ۸۳

Fatawa Razawiyya, Volume 6

[Arabic Box]: Qamus mentioned this in 'Al-Nahr' as a discussion, taking from the reasoning regarding the blind person that they cannot protect themselves from impurity.[1] [Urdu Translation]: Qamus, its mention has been made in 'Nahr' based on the cause of the blind person, that they too cannot remain protected from impurity. (T)

Similarly, the sense of hearing is also necessary, even if it is not constantly needed, it is not rare because forgetfulness in humans is not rare. At the time of an Imam's error, correction happens through the prompting of the followers, which depends on hearing. When his sense of hearing is impaired, there is an expectation of situations where, due to his not hearing, the prayer becomes invalid, disliked (makruh), or disliked to a prohibitive degree (makruh tahrimi) necessitating repetition. For example, he gets up omitting the final sitting (qa'da akhira) and does not hear the followers' reminder, performs an extra prostration, rendering the obligatory (fard) prayer void; or he omits the first sitting and, not being aware of the prompting, performs salaam; or when told to do the prostration of forgetfulness (sajda sahw), he thinks someone is talking and starts speaking himself, so the prayer remains necessitating repetition due to the omission of a mandatory (wajib) act; or he makes such a mistake in recitation that changes the meaning and causes invalidity of prayer; if he had heard the followers' prompt and corrected himself, it would have been rectified.

[Arabic Box]: According to what is mentioned in 'Al-Hilyah' as one of two opinions, and it is the easier and gentler one, as is not hidden. [Urdu Translation]: Based on this opinion which is one of two mentioned in 'Hilyah', and this is the easier and gentler one, as is not hidden. (T)

He did not hear and rendered the prayer invalid, and other numerous reasons besides these. (Besides this, there are multiple reasons. T) Therefore, for Imamate, the most suitable and preferable person is the one who is free from causes of deficiency. Naturally, Imam Zaylai stated in 'Tabyin al-Haqa'iq': "Everyone who is more perfect is more excellent."[2] (Whoever is most perfect in every aspect will be the most excellent. T). And Allah Almighty knows best.

Issue No. 170: One person has a harsh voice and is deaf; another person recites the Noble Quran better than him, does not have a harsh voice, and is not deaf, meaning his five senses are sound. In a state of equal knowledge, who among these two is

religiously preferable and fit for Imamate? Explain with proofs and the Book of Allah, may you be rewarded on the Day of Reckoning. (Explain with proofs and evidence and the Book of Allah and receive reward on the day of account. T)

The Answer: If by this person "reciting the Quran better" it is meant that he pronounces the letters from their correct articulation points (makharij) and the other does not—as is a widespread epidemic today where no distinction is made between ا (Alif) and ع ('Ayn), ہ (Ha) and ح (Ha), ت (Ta) and ط (Ta), ث (Tha), س (Sin), and ص (Sad), ذ (Zal), ز (Za), and ظ (Za)—then prayer behind that deaf person is not valid at all. If, despite having the ability to learn, he could have articulated correctly but did not learn and recites incorrectly, then neither is his own prayer valid nor is the prayer of anyone behind him. And if he is helpless, like having a lisp, etc.

---

[1] Radd al-Muhtar, Chapter of Imamate, printed by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/412 [2] Tabyin al-Haqa'iq, Chapter of Imamate and Hadith in Prayer, printed by Matba' Kubra Amiriyah Bulaq, Egypt, 1/133

फ़तावा रज़विया, जिल्द 6

[अरबी बॉक्स]: क़ामूस, इसका उल्लेख 'नहर' में एक अंधे व्यक्ति के कारण के आधार पर किया गया है कि वह भी अशुद्धता (नजासत) से सुरक्षित नहीं रह सकता।[1] [उर्दू अनुवाद]: क़ामूस, इसका उल्लेख 'नहर' में अंधे व्यक्ति की इल्लत (वजह) के आधार पर किया गया है कि वह भी नजासत से सुरक्षित नहीं रह सकता। (त)

इसी तरह, सुनने की शक्ति (हस्से-समअ) की भी आवश्यकता होती है, भले ही वह हर समय न हो लेकिन दुर्लभ भी नहीं है क्योंकि मनुष्य से भूल (निस्यान) होना दुर्लभ नहीं है। इमाम की चूक के समय, सुधार मक्तदियों (पीछे नमाज़ पढ़ने वालों) के बताने से होता है और वह सुनने पर निर्भर है। जब उसकी श्रवण शक्ति अक्षम होती है, तो ऐसी स्थितियों के होने की संभावना होती है जिनमें उसके न सुनने के कारण नमाज़ फ़ासिद (अमान्य), मक़रूह, या मक़रूह-तहरीमी (निषिद्ध स्तर तक नापसंद) हो जाए जिसे दोहराना वाजिब (अनिवार्य) हो। उदाहरण के तौर पर, अंतिम बैठक (क़ादा अख़ीरा) छोड़कर खड़ा हो गया और मक्तदियों की चेतावनी नहीं सुनी, अतिरिक्त सजदा कर लिया, तो फ़र्ज़ नमाज़ फ़ासिद हो गई; या पहली बैठक छोड़ दी और बताए जाने पर अवगत न होकर सलाम फेर दिया; सजदा-ए-सह्व (भूल का सजदा) के लिए बताया गया तो समझा कि कोई बात कर रहा है और खुद बोलने लगा, तो वाजिब छोड़ने के कारण नमाज़ वाजिब-उल-इआदा (दोहराने योग्य) रही; या क़िरात (पाठ) में ऐसी गलती की जिससे अर्थ बदल गया और नमाज़ फ़ासिद हो गई; यदि वह मक्तदियों का 'फत्ह' (सुधार) सुनकर सही इरादा कर लेता तो सुधार हो जाता।

[अरबी बॉक्स]: इस राय के आधार पर जो 'अल-हिलिया' में वर्णित दो रायों में से एक है, और यही आसान और सौम्य है जैसा कि गुप्त नहीं है। [उर्दू अनुवाद]: इस क़ौल (राय) के आधार पर जो 'हिलिया' में दो क़ौलों में से एक वर्णित है, और यही आसान और नरम है जैसा कि पोशीदा नहीं है। (त)

उसने नहीं सुना और नमाज़ फ़ासिद कर ली, इसके अलावा और भी कई कारण हैं। (इसके अलावा अनेक कारण हैं। त) इसलिए इमामत के लिए सबसे उपयुक्त और बेहतर वही है जो कमियों के कारणों से मुक्त हो। स्वाभाविक रूप से, इमाम ज़ैलई ने 'तबीन अल-हक़ाएक़' में फरमाया: "जो भी अधिक पूर्ण (अकमल) है, वह अधिक श्रेष्ठ (अफ़ज़ल) है।"[2] (जो भी हर लिहाज़ से अकमल होगा, वही अफ़ज़ल होगा। त)। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 170: एक व्यक्ति अप्रिय आवाज़ (करिह-उस-सौत) वाला और बहरा है; दूसरा व्यक्ति उससे बेहतर कुरान पढ़ता है, उसकी आवाज़ अप्रिय नहीं है और वह बहरा भी नहीं है, यानी उसकी पाँचों इंद्रियाँ सही हैं। समान ज्ञान होने की स्थिति में, इन दोनों में से शरीयत के अनुसार इमामत के लिए कौन अधिक उपयुक्त हो सकता है? प्रमाणों और अल्लाह की किताब के साथ स्पष्ट करें, आपको कयामत के दिन प्रतिफल मिले। (दलीलों और प्रमाणों और अल्लाह की किताब से बयान करो और हिसाब के दिन अज्र (पुण्य) पाओ। त)

उत्तर: यदि इस व्यक्ति के"कुरान बेहतर पढ़ने" से तात्पर्य यह है कि वह अक्षरों का उच्चारण उनके सही स्थानों (मख़ारिज) से करता है और दूसरा नहीं करता - जैसा कि आज एक वैश्विक महामारी फैली हुई है जहाँ। (अलिफ़) और ع (ऐन), ہ (हा) और ح (हा), ت (ता) और ط (तोय), ث (सा), س (सीन) और ص (साद), ذ (ज़ाल), ز (ज़ा) और ظ (ज़ोय) में भेद नहीं करते - तब तो उस बहरे व्यक्ति के पीछे नमाज़ ही नहीं होती। यदि सीखने की क्षमता होने के बावजूद वह सही उच्चारण कर सकता था लेकिन नहीं सीखा और गलत पढ़ता है, तो न तो उसकी अपनी नमाज़ हुई और न ही उसके पीछे किसी दूसरे की। और अगर वह मजबूर है, जैसे हकलाना आदि।

---

[1] रद-उल-मुहतार, बाब-उल-इमामत, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र, 1/412 [2] तबीन-उल-हक़ाएक़, बाब-उल-इमामत वल-हदीस फिस-सलात, मतबा कुबरा अमीरिया बुलाक़ मिस्र, 1/133

فتاوٰی رضویہ ، جلد ششم

قاموس فهذا ذكره في النهر بحثا اخذا من تعليل الاعمى بأنه لايتوقى النجاسة[1] | قاموس، اس کا ذکر نہر میں اعمیٰ کی علت کی بناء پر کیا گیا ہے کہ یہ بھی نجاست سے محفوظ نہیں رہ سکتا۔ (ت)

یوں ہی حاسہ سمع کی بھی ضرورت پڑتی ہے اگر چہ نہ دولتا مگر نادر، بھی نہیں کہ انسان سے نسیان نادر نہیں اور وقت سہو امام ، اصلاح مقتدیوں کے بتانے سے ہوتی ہے اور وہ سمع پر موقوف ، جب اس کا حس سامعہ موقوف ہے تو ان صورتوں کا وقوع متوقع جن میں اس کے نہ سننے کے سبب نماز فاسد یا مکروہ یا مکروہ تحریمی واجب الاعادہ ہو جائے مثلاً قعدہ اخیرہ چھوڑ کر اٹھا مقتدیوں کا بتانانہ سنا، زائد کا سجدہ کر لیا، فرض باطل ہو گئے یا اولیٰ چھوڑا اور بتانے پر مطلع نہ ہو کر سلام پھیر دیا سجدہ سہو کے لئے بتایا گیا تو سمجھا کہ کوئی کچھ بات کرتا ہے تکلم کر بیٹھا، نماز بوجہ ترک واجب واجب الاعادہ رہی یا قرات میں وہ غلطی کی جس سے معنی میں تغیر اور نماز میں فساد ہو فتح مقتدیوں سن کر صحیح ارادہ کر لیتا تو اصلاح ہو جاتی

على ماذكر في الحلية من احد القولين وهو الايسر الارفق كما لا يخفى۔ | اس قول کی بنا پر جو حلیہ میں دو قولوں میں سے ایک ذکر ہے اور یہی آسان اور نرم ہے جیسا کہ مخفی نہیں (ت)

اس نے نہ سنا اور نماز فاسد کر لی الی غیر ذلک من وجوہ کثیرۃ (اس کے علاوہ متعدد وجوہ ہیں۔ ت) تو امامت کے لئے اصلح واولیٰ وہی ہے جو وجوہ نقص سے خالی ہو لاجرم امام زیلعی نے تبیین الحقائق میں فرمایا کل من کان اکمل فھو افضل[2]۔ (جو بھی ہر لحاظ سے اکمل ہوگا وہی افضل ہوگا، ت) واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۱۷۰ : ایک شخص کریہ الصوت اور بہرا ہے ، دوسرا شخص کلام شریف اس سے اچھا پڑھتا ہے اور کریہ الصوت نہیں ہے اور بہرا بھی نہیں ہے یعنی حواس خمسہ اس کے صحیح ہیں تو حالت مساوی العلم ہونے کے ان دونوں میں شرعاً مرجح لائق امامت کون ہو سکتا ہے بینوا بالبراھین والکتاب توجروا یوم الحساب (دلائل وبراہین اور کتاب اللہ سے بیان کرو اور روز حساب اجر پاؤ۔ ت)

الجواب : اگر اس شخص کے اس سے قرآن مجید اچھا پڑھنے سے مراد یہ حروف مخارج سے صحیح ادا کرتا ہے اور وہ نہیں جیسے آج کل عالمگیر وبا پھیلی ہے ا، ع، ہ، ح، ت، ط، ث، س، ص، ذ، ز، ظ میں تمیز نہیں کرتے جب تو اس بہرے کے پیچھے نماز ہی نہیں ہوتی اگر باوصف قدرت کے سیکھے تو ادا کر سکے مگر نہ سیکھا غلط پڑھتا ہے جب تو نہ اس کی اپنی نماز ہوئی نہ اس کے پیچھے کسی دوسرے کی، اور اگر عاجز ہے جیسے توتلا وغیرہ

---

۱۸ ردالمحتار باب الامامۃ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/ ۴۱۲ ۲۸ تبیین الحقائق باب الامامۃ والحدیث فی الصلوۃ مطبوعہ مطبع کبریٰ امیریہ بولاق مصر ۱/ ۱۳۳

Fatawa Razawiyya, Volume 6

...then his own prayer will be valid, whereas if he cannot find an opportunity to follow a correct reciter, nor any verse that he can read correctly—and these two scenarios are quite rare—nonetheless, according to the correct school of thought, his prayer behind a correct reciter is not valid at all. As we have investigated this in our Fatawa. In Durr-e-Mukhtar:

Arabic	Urdu
His prayer is not valid if it is possible for him to follow someone who recites well, or if he abandoned his effort, or if he found the amount of obligatory recitation in which there is no lisp. This is the correct chosen view regarding the ruling of a lisper. Similarly, for one who is unable to pronounce a letter from the alphabet. 1 -	His prayer will not be valid in this case when it is possible for him to follow a person who can read the Quran in an excellent manner, or if he abandoned hard work and effort for the correctness of letters, or if he acquired the amount of obligatory recitation in those verses in which stammering is not found. This is the correct clarification and chosen view regarding a lisper, and the same ruling applies to a person who is not capable of correctly pronouncing any letter of the alphabet. (T)

It is in Khayriyya etc:

Arabic	Urdu
The preferred fatwa is the invalidity of the leadership in prayer of a lisper for others who do not have a lisp. 2 -	The preferred and fatwa-standard view is that the leadership of a lisper for a non-lisper is not valid. (T)

And if it means that he also reads correctly, but the recitation and Tajweed of the other person is better than his, then in this case, if the dislike for him is to such an extent that it creates hatred among the people, then his leadership is disliked (Makruh).

Arabic	Urdu
For some issues of the dislike of the Imam are branched from this principle, which is that whoever causes repulsion in people and lessens their inclination, his leadership is disliked, such as an	Because some issues of the dislike of leadership are based on this principle, and that principle is that every person with whom people have hatred and less inclination, his leadership is disliked, for

Arabic	Urdu
illegitimate child or a leper whose leprosy has become widespread, and others.	example, a child born out of wedlock and a person with leprosy whose disease has spread, etc. (T)

Therefore, it is stated in Tabyeen:

Arabic	Urdu
Everyone who is more complete is superior because	Every person who is more complete in every aspect will be superior because

1 Durr-e-Mukhtar, Chapter of Leadership, printed by Mujtabai Press, Delhi, 1/85 2 Fatawa Khayriyya, Book of Prayer, printed by Dar al-Ma'rifah, Beirut, 10/1

फ़तावा रज़विया, जिल्द 6

...तो उसकी अपनी नमाज़ हो जाएगी, जबकि वह किसी सही पढ़ने वाले (सही ख़्वान) के पीछे इक़्तेदा न पा सके और न ही ऐसी कोई आयत मिले जिसे वह सही पढ़ सके—और ये दोनों बातें बहुत दुर्लभ नहीं हैं—ताहम सही मज़हब पर सही ख़्वान के पीछे उसकी नमाज़ किसी तरह सही नहीं। जैसा कि हमने इसकी तहक़ीक़ अपने फ़तावा में की है। दर-ए-मुख़्तार में:

अरबी	उर्दू
उसकी नमाज़ सही नहीं होगी जब उसे किसी ऐसे व्यक्ति की इक़्तेदा संभव हो जो इसे अच्छी तरह पढ़ सकता हो, या उसने अपनी कोशिश छोड़ दी हो, या उसे फ़र्ज़ की मात्रा के बराबर ऐसी आयत मिल गई हो जिसमें तुतलाना न हो। तुतले के हुक्म में यही सही और मुख़्तार कौल है। और यही हुक्म उस व्यक्ति का भी है जो वर्णमाला के किसी अक्षर के सही उच्चारण में असमर्थ हो। 1 -	उसकी नमाज़ इस सूरत में सही न होगी जब उसे ऐसे शख़्स की इक़्तेदा मुमकिन हो जो अहसन (बेहतर) अंदाज़ में क़ुरआन पढ़ सकता है या उसने हुरूफ की सेहत (सही उच्चारण) के लिए मेहनत व कोशिश तर्क (छोड़) कर दी या वह बक़द्र-ए-फ़र्ज़ क़िरात वह आयतें हासिल कर ले जिसमें तुतलाना नहीं पाया जाता, तोतले के बारे में यही सही तनक़ीह व मुख़्तार है और उस शख़्स का भी यही हुक्म है जो हुरूफ-ए-तहज्जी में किसी हर्फ़ के सही तलफ़्फ़ुज़ पर क़ादिर न हो। (त)

ख़ैरिया वग़ैरह में है:

अरबी	उर्दू
राज़ेह और मुफ़्ती-बेह कौल यही है कि तुतले की इमामत ग़ैर-तुतले के लिए सही नहीं है। 2 -	राज़ह और मुफ़्ती बेह क़ौल यही है कि तोतले की इमामत ग़ैर तोतले के लिए सही नहीं है। (त)

और अगर यह मानी कि सही वह भी पढ़ता है मगर उसकी क़िरात व तजवीद इससे बेहतर है तो इस सूरत में अगर उसकी कराहत इस हद तक है कि लोगों में नफ़रत पैदा करे तो उसकी इमामत मकरूह है।

अरबी	उर्दू
क्योंकि इमाम की कराहत के कुछ मसाइल इसी सिद्धांत पर आधारित हैं, और वह यह	क्योंकि कराहत-ए-इमामत के बाज़ मसाइल इस ज़ाबता (नियम) पर मबनी (आधारित) हैं वह ज़ाबता यह

अरबी	उर्दू
है कि जिस किसी में लोगों को दूर करने और उनकी रुचि की कमी का कारण हो, तो उसकी इमामत मकरूह है, जैसे ज़िना की औलाद और कोढ़ी जिसका कोढ़ फैल गया हो, आदि।	है कि हर वह शख़्स जिसके साथ लोगों को नफ़रत और क़िल्लत-ए-रग़बत (रुचि की कमी) हो उसकी इमामत मकरूह है मसलन वल्द-उज़-ज़िना और बरसो (कोढ़) वाला ऐसा शख़्स कि जिसका मर्ज़-ए-बरस फैल गया हो वग़ैरह हुमा (त)

लिहाज़ा तबीइन में फ़रमाया:

अरबी	उर्दू
जो कोई भी अधिक पूर्ण है वह श्रेष्ठ है क्योंकि	हर वह शख़्स जो हर लिहाज़ से अकमल (पूर्ण) हो वही अफ़ज़ल (श्रेष्ठ) होगा क्योंकि

1 दर्रे मुख़्तार बाब अल-इमामत, मुतबूआ मतबा मुज्तबाई दिल्ली 85/1 2 फ़तावा ख़ैरिया, किताब अस-सलात, मुतबूआ दार अल-माआरिफ़ बेरुत, 10/1

تو اس کی اپنی ہو جائے گی جبکہ کسی صحیح خواں کے پیچھے اقتدا نہ پاسکے نہ ایسی کوئی آیت ملے جسے وہ صحیح پڑھ سکے اور یہ دونوں بہت نادر نہیں تاہم صحیح مذہب پر صحیح خواں کے پیچھے اس کی نماز کسی طرح صحیح نہیں۔ کما حققناہ فی فتاوانا (جیسا کہ ہم نے اس کی تحقیق اپنے فتاوی میں کی ہے۔ت) درمختار میں:

عربی	اردو
لا تصح صلاته اذا امكنه الاقتداء بمن يحسنه او ترك جهده او وجد قدر الفرض مما لا لثغ فيه هذا هو الصحيح المختار في حكم الالثغ وكذا من لا يقدر على التلفظ بحرف من الحروف 1 -	اس کی نماز اس صورت میں صحیح نہ ہوگی جب اسے ایسے شخص کی اقتداء ممکن ہو جو احسن انداز میں قرآن پڑھ سکتا ہے یا اس نے محنت و کوشش برائے صحت حروف ترک کردی یا وہ بقدرِ فرض قرات وہ آیتیں حاصل کر لے جس میں تتلانا نہیں پایا جاتا، توتلے کے بارے میں یہی صحیح تنقیح و مختار ہے اور اس شخص کا بھی یہی حکم ہے جو حروف تہجی میں کسی حرف کے صحیح تلفظ پر قادر نہ ہو ۔ (ت)

خیریہ وغیرہ میں ہے:

عربی	اردو
الراجح المفتى عدم صحة امامة الالثغ لغيره ممن ليس به لثغة 2 -	راجح اور مفتی بہ قول یہی ہے کہ توتلے کی امامت غیر توتلے کے لئے صحیح نہیں ہے۔ (ت)

اور اگر یہ معنی کہ صحیح وہ بھی پڑھتا ہے مگر اس کی قرات و تجوید اس سے بہتر ہے تو اس صورت میں اگر اس کی کراہت اس حد تک ہے کہ لوگوں میں نفرت پیدا کرے تو اس کی امامت مکروہ ہے۔

عربی	اردو
فان من مسائل کراھة الامام مفرعة علی ھذا الاصل وھو ان من کان فیه تنفیر الناس وقلة رغبتھم فامامته مکروھة کولد بغي و ابرص شاع برصه وغیرھا -	کیونکہ کراہتِ امامت کے بعض مسائل اس ضابطہ پر مبنی ہیں وہ ضابطہ یہ ہے کہ ہر وہ شخص جس کے ساتھ لوگوں کو نفرت اور قلتِ رغبت ہو اس کی امامت مکروہ ہے مثلاً ولد الزنا اور برص والا ایسا شخص کہ جس کا مرضِ برص پھیل گیا ہو و غیر ہما (ت)

ولہذا تبیین میں فرمایا:

عربی	اردو
کل من کان اکمل فھو افضل لان ہر وہ شخص جو ہر لحاظ سے اکمل ہو وہی افضل ہوگا کیونکہ	

1 در مختار باب الامامة مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱/۸۵ 2 فتاوٰی خیریہ، کتاب الصلوٰۃ مطبوعہ دار المعرفۃ بیروت، ۱/۱۰

Fatawa Razawiya Volume 6

“The purpose is the multitude of the congregation and people's increased inclination towards it.”[1] (T)

And even if this is not the case, if knowledge is equal, the one who is not deaf is more entitled and preferred. Firstly, he excels in the Tajweed of recitation. It is mentioned in 'Durr-ul-Mukhtar': “The one more deserving of being put forward for leadership (Imamate), or rather being permanently appointed as an Imam, is the one most knowledgeable about the rules of prayer's validity and invalidity. Then (if equal in knowledge), the one who is better in recitation and Tajweed of the Qur'an.”[2] (T)

Secondly, his being hearing is also a reason for preference, as we explained in the first problem. (T)

Thirdly, compared to him, having a pleasant voice is even more supportive, which is why it is also counted among the preferences for Imamate. It is stated in 'Noorul Izah' and 'Maraqi-ul-Falah': “Then the one with the best voice, to create an inclination to listen to it for the sake of humility.”[3] (T) If people appoint a deaf person as an Imam in the presence of such a person, they would be doing something religiously undesirable. In 'Durr-ul-Mukhtar' it is stated: “If they put forward someone other than the most entitled, they have done wrong without committing a sin.”[4] (i.e., they did wrong by abandoning a Sunnah, but are not sinners). And Allah Almighty knows best.

Problem No. 608: From Ibrahimpur, 21st Rabi-ul-Akhir Sharif, 1315 AH What do the scholars of religion say regarding this matter: Is prayer behind an opium addict permissible or not? And if there is a command to repeat that prayer, should only Zuhr and Isha be repeated, or Fajr, Asr, and Maghrib as well? How is the consumption of opium? Is an opium addict a transgressor (fasiq) deserving of punishment or not? Explain and be rewarded.

---

[1] Tabyin al-Haqa'iq, Chapter of Imamate and Hadath in Prayer, printed at Al-Matba'at al-Kubra al-Amiriyya, Bulaq, Egypt, 1/134. [2] Durr-ul-Mukhtar, Chapter of Imamate, printed at Matba' Mujtabai, Delhi, 1/82. [3] Maraqi-ul-Falah with Hashiyah al-Tahtawi, Section explaining the one most entitled to Imamate, printed at Noor Muhammad Kar-khana Tijarat Kutub, Karachi, p. 164. [4] Durr-ul-Mukhtar, Chapter of Imamate, printed at Matba' Mujtabai, Delhi, 1/83.

फ़तावा रिज़विया खंड 6

“उद्देश्य जमात (समूह प्रार्थना) की अधिकता और उसमें लोगों की अधिक रुचि है।”[1] (त)

और यदि ऐसा न भी हो, तो भी ज्ञान की समानता की स्थिति में जो बहरा नहीं है, वह अधिक हकदार और श्रेष्ठ है। प्रथम, वह क़िरात (पाठ) के तजवीद में उससे श्रेष्ठ है। 'दुर्रे मुख्तार' में है: “इमामत (प्रार्थना का नेतृत्व) के लिए आगे बढ़ाने, बल्कि स्थायी रूप से इमाम नियुक्त करने के लिए वह व्यक्ति अधिक हकदार और योग्य है, जो नमाज़ की वैधता और अवैधता के नियमों से सबसे अधिक अवगत हो। (यदि ज्ञान में बराबर हों तो) फिर इमामत के लिए वह व्यक्ति अधिक योग्य है, जो पाठ और तजवीद के मामले में अच्छा हो।”[2] (त)

दूसरा, उसका सुनने में सक्षम होना भी उसकी प्राथमिकता का एक कारण है, जैसा कि हमने पहले मसले में बयान किया है। (त)

तीसरा, उसके मुकाबले मधुर आवाज़ होना और भी अधिक सहायक है, और इसीलिए इसे भी इमामत की प्राथमिकताओं में गिना गया है। 'नूरुल इज़ाह' और 'मराक़िल फ़लाह' में है: “फिर वह व्यक्ति जिसकी आवाज़ सुंदर हो ताकि उसे सुनने में रुचि और विनम्रता पैदा हो।”[3] (त) यदि लोग ऐसे व्यक्ति की उपस्थिति में एक बहरे व्यक्ति को इमाम बनाते हैं, तो वे धार्मिक रूप से बुरा करेंगे। 'दुर्रे मुख्तार' में है: “यदि लोगों ने सबसे योग्य के अलावा किसी और को आगे कर दिया, तो उन्होंने बिना गुनाह के बुरा किया।”[4] (अर्थात सुन्नत छोड़ने के कारण बुरा किया लेकिन गुनहगार नहीं हुए)। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला नंबर 608: इब्राहिमपुर से, 21 रबी-उल-आखिर शरीफ, 1315 हिजरी धर्म के विद्वान इस मसले में क्या कहते हैं कि अफ़ीम खाने वाले के पीछे नमाज़ जायज़ है या नहीं? और अगर उस नमाज़ को दोहराने का हुक्म हो तो क्या केवल ज़ोहर और ईशा को दोहराया जाए या फ़ज्र, अस्र और मग़रिब को भी? और अफ़ीम खाना कैसा है? क्या अफ़ीम खाने वाला फ़ासिक़ (पापी) और सज़ा का हक़दार है या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

---

1. तबयीन अल-हक़ाएक़, बाब अल-इमामा वल-हदाथ फ़ी अल-सलात, अल-मतबअतुल कुबरा अल-अमीरिया, बुलाक, मिस्र, 1/134।
2. दुर्रे मुख्तार, बाब अल-इमामा, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 1/82।

3. मराक़िल फ़लाह मअ हाशिया अल-तहतावी, इमामत के सबसे अधिक हक़दार के बयान में, नूर मुहम्मद कारख़ाना तिज़ारत कुतुब कराची, पृष्ठ 164।
4. दुर्रे मुख्तार, बाब अल-इमामा, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 1/83।

पृष्ठ 463 का 736

المقصود کثرۃ الجماعۃ ورغبۃ الناس فیہ اکثر[1]- مقصود کثرتِ جماعت اور اس میں اکثر لوگوں کو رغبت ہے۔ (ت)

اور اگر یہ بھی نہیں تاہم تساوی علم یہ غیر بہرا اس سے احق و اولٰی ہے۔ اولاً تجویدِ قرات میں اس سے زائد ہے دُر مختار میں ہے: الاحق بالامامۃ تقدیماً بل نصبا الاعلم بأحکام الصلوۃ ثم الاحسن تلاوۃ وتجویدا للقرأۃ[2]۔ امامت میں آگے بڑھنے کے بلکہ ہمیشہ کے لئے امام مقرر کرنے میں زیادہ مستحق ولائق وہ شخص ہے جو صحت و فسادِ نماز کے مسائل سے زیادہ آگاہ ہو (علم میں اگر برابر ہوں تو) پھر زیادہ لائق امامت وہ شخص ہے جو تلاوت اور تجوید قرات کے لحاظ سے اچھا ہو۔ (ت)

ثانیاً اسکا بہرا ہونا بھی اس کی ترجیح کی ایک وجہ ہے کما بیناہ فی المسئلۃ الاولی (جیسا کہ مسئلہ اولٰی میں ہم اسے بیان کر آئے ۔ ت)

ثالثاً بہ نسبت اس کے خوش آواز بھی اور زیادہ مؤید ہے والہٰذا وہ بھی مرجحاتِ امامت سے شمار کی گئی۔ نور الایضاح مراقی الفلاح میں ہے: ثم الاحسن صوتا للرغبۃ في سماعہ للخضوع[3] (پھر وہ شخص جس کی آواز حسین ہو کیونکہ اس کے سننے میں رغبت اور خضوع پیدا ہوتا ہے۔ت) لوگ اگر اس کے ہوتے ہوئے بہرے کو امام کریں گے شرعاً برا کریں گے ، در مختار میں ہے: لو قدموا غیر الاولی ساء وا بلا اثم[4] (اگر لوگوں نے غیر اولٰی کو مقدم (پیش امام) کر دیا تو بغیر گناہ کے ان لوگوں نے برا کیا (یعنی ترکِ سنت کی وجہ سے بُرا کیا اور گنہگار نہ ہوئے۔ ت) واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۶۰۸: از براہیم پور ۲۱ ربیع الآخر شریف ۱۳۱۵ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ افیونی کے پیچھے نماز جائز ہے یا نہیں، اور اگر اس نماز کے پھیرنے کا حکم ہو تو فقط ظہر و عشاء کی پھیری جائے یا فجر و عصر و مغرب کی بھی ، اور افیون کھانی کیسی ہے افیونی فاسق مستحقِ عذاب ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

---

[1] تبیین الحقائق باب الامامة والحدث في الصلوة مطبوعہ المطبعۃ الکبری الامیریہ بولاق مصر ۱ / ۱۳۴ [2] در مختار باب الامامة مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۸۲/۱ [3] مراقی الفلاح مع حاشیۃ الطحطاوی فصل فی بیان الاحق بالامامة مطبوعہ نور محمد کارخانہ تجارت کتب کراچی ص ۱۶۴ [4] در مختار باب الامامة مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۸۳/۱

Fatawa Rizwiya Volume 6

Answer: He is certainly a transgressor (fasiq) and deserves punishment. It is stated in an authentic (Sahih) Hadith:

[Arabic]: The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) forbade every intoxicant and everything that causes languor (mufattir). - Narrated by Imam Ahmad and Abu Dawood from the Mother of the Believers, Umm Salamah (may Allah be pleased with her), with a sound chain of narration. [Urdu]: The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) declared every thing that intoxicates and every thing that causes weakness in the mind as forbidden (Haram). Imam Ahmad and Imam Abu Dawood have narrated this with a Sahih chain from the Mother of the Believers, Umm Salama (may Allah be pleased with her).

If an opium addict is under the intense influence of the drug, then his own prayer is invalid and the prayer of others behind him is also completely invalid. Allah Almighty says:

[Arabic]: Do not approach prayer while you are in a state of intoxication until you know what you are saying. - 2 [Urdu]: Do not go near prayer in a state where you are intoxicated until you know what you are saying. (T)

And even if he is conscious, praying behind him is prohibited:

[Arabic]: Because prayer behind a transgressor (fasiq) is disliked with a dislike that borders on prohibition (Makruh Tahrimi), as has been researched in 'Al-Ghunya' and other works. - 3 [Urdu]: Because praying behind a transgressor is Makruh Tahrimi, as the research on this issue is mentioned in Ghunya and others. (T)

If the prayer has been performed, it is necessary to repeat it, even if it is the time of Fajr, Asr, or Maghrib.

[Arabic]: For every prayer performed with a severe dislike (Makruh Tahrimi) must be repeated as an obligation (Wajib), as stated in 'Al-Durr [al-Mukhtar]' and others. In fact, this is also the ruling according to the one who considers it a mild dislike (Makruh Tanzihi), because repetition is for perfection, not superfluous and useless, as is clear. And Allah, Glorified and Exalted, knows best. - 4 [Urdu]: That every prayer performed with Makruh Tahrimi, its repetition is Wajib, as it is in Durr-e-Mukhtar etc. In fact, according to the one who considers it Makruh Tanzihi, the command is the

same, because repetition is for perfection, it is not extra or useless as is clear. And Allah, the Glorious and Most High, knows best. (T)

1 Sunan Abi Dawood, Kitab al-Ashribah, Chapter on Intoxicants, published by Aftab-e-Alam Press, Lahore, 2/163. 2 Al-Quran, 4/43. 3 Ghunyat al-Mustamli Sharh Munyat al-Musalli, Chapter on Leadership (Imamat) etc., published by Suhail Academy, Lahore, p. 513. 4 Durr al-Mukhtar, Chapter on the Characteristics of Prayer, published by Matba' Mujtabai, Delhi, 1/71.

फ़तावा रिज़विया जिल्द 6

अल-जवाब (उत्तर): वह निश्चित रूप से एक फासिक (पापी) और दंड का पात्र है, एक सही हदीस में है:

[अरबी]: अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने हर नशीली चीज़ और हर उस चीज़ से मना फ़रमाया है जो बुद्धि में खलल डाले (मुफ़त्तिर)। - इसे इमाम अहमद और अबू दाऊद ने मोमिनों की माँ हज़रत उम्मे सलमा (रज़ियल्लाहु अन्हा) से सही सनद के साथ रिवायत किया है। [उर्दू]: रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने हर उस चीज़ को जो नशा लाए और हर उस चीज़ को जो अक्ल में फितूर (खलल) डाले, हराम फ़रमाया। इसे इमाम अहमद और इमाम अबू दाऊद ने सही सनद के साथ उम्मुल मोमिनीन हज़रत उम्मे सलमा (रज़ियल्लाहु अन्हा) से रिवायत किया है।

यदि कोई अफीमची नशे की तीव्रता में हो, तो उसकी अपनी नमाज़ बातिल (अमान्य) है और उसके पीछे दूसरों की नमाज़ भी पूरी तरह बातिल है। अल्लाह तआला फ़रमाता है:

[अरबी]: नमाज़ के करीब न जाओ जब तुम नशे की हालत में हो, यहाँ तक कि तुम जान लो कि तुम क्या कह रहे हो। - 2 [उर्दू]: नमाज़ के करीब न जाओ उस हालत में कि तुम नशे में हो, यहाँ तक कि जान लो कि तुम क्या कह रहे हो। (त)

और यदि वह होश में हो, तब भी उसके पीछे नमाज़ पढ़ना वर्जित है:

[अरबी]: क्योंकि फासिक के पीछे नमाज़ पढ़ना मकरूह-ए-तहरीमी (सख्त नापसंद) है, जैसा कि इस मसले की तहकीक (शोध) 'ग़ुनिया' आदि में की गई है। - 3 [उर्दू]: क्योंकि फासिक के पीछे नमाज़ मकरूह-ए-तहरीमी है, जैसा कि इस मसले की तहकीक ग़ुनिया वगैरह में की गई है। (त)

यदि नमाज़ पढ़ ली गई हो, तो उसे दोहराना ज़रूरी है, चाहे वह फज्र, असर या मग्रिब का समय ही क्यों न हो।

[अरबी]: क्योंकि हर वह नमाज़ जो मकरूह-ए-तहरीमी के साथ अदा की गई हो, उसका दोहराना (आदा) वाजिब (अनिवार्य) होता है, जैसा कि 'दुर्रे मुख़्तार' आदि में है। बल्कि उस व्यक्ति के कथन के अनुसार भी यही हुक्म है जो इसे मकरूह-ए-तन्ज़ीही मानता है, क्योंकि दोहराना पूर्णता के लिए है, फालतू और बेकार नहीं है जैसा कि स्पष्ट है। और अल्लाह सुब्हानहू व तआला बेहतर जानता है। - 4 [उर्दू]: कि हर वह नमाज़ जो कराहत-ए-तहरीमी के साथ अदा की गई हो उसका आदा वाजिब होता

है जैसा कि दुर्रे मुख़्तार वगैरह में है बल्कि उसके कौल पर भी यही हुक्म है जो इसे मकरूह-ए-तन्ज़ीही करार देता है क्योंकि आदा कमाल है फालतू और बेफायदा नहीं जैसा कि वाज़ेह (स्पष्ट) है। वल्लाह सुब्हानहू व तआला आलम। (त)

1 सुनन अबी दाऊद, किताबुल अशरिबा, बाब मा जाअ फिस सकर, मत्तबुआ आफ़ताब-ए-आलम प्रेस, लाहौर, 2/163. 2 अल-कुरान, 4/43. 3 ग़ुनियतुल मुस्तमली शरह मुनियतुल मुसल्ली, फ़स्ल फ़िल इमामत वगैरह, मत्तबुआ सुहैल एकेडमी, लाहौर, पृ. 513. 4 दुर्रे मुख़्तार, बाब सिफ़तुल सलात, मत्तबुआ मतबअ मुजतबाई, दिल्ली, 1/71.

पृष्ठ 464 का 736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

الجواب: ضرور فاسق و مستحق عذاب ہے، صحیح حدیث میں ہے:

نھی رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم سن کل مسکر و مفتر - رواہ امام احمد و ابوداؤد عن ام المؤمنین ام سلمۃ رضی اللہ تعالی عنھا بسند صحیح- رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے ہر چیز کہ نشہ لائے اور ہر چیز کہ عقل میں فتور ڈالے حرام فرمائی۔ اسے امام احمد، اور امام ابوداؤد نے بسند صحیح ام المؤمنین حضرت ام سلمہ رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا ہے۔

اگر افیونی پینک کی زور میں ہو جب تو اس کی خود نماز باطل اور اس کے پیچھے اوروں کی بھی محض باطل۔ اللہ تعالٰی فرماتا ہے:

لَا تَقْرَبُوا الصَّلٰوۃَ وَ اَنْتُمْ سُکٰرٰی حَتّٰی تَعْلَمُوْا مَا تَقُوْلُوْنَ - 2 نماز کے قریب نہ جاؤ اس حالت میں کہ تم نشہ میں ہو یہاں تک کہ جان لو کہ تم کیا کہہ رہے ہو۔ (ت)

اور اگر ہوش میں ہو جب بھی اس کے پیچھے نماز ممنوع ہے:

لان الصلوٰۃ خلف الفاسق تکرہ کراھۃ تحریم 3 کما حققہ فی الغنیۃ وغیرھا کیونکہ فاسق کے پیچھے نماز مکروہ تحریمی ہے جیسا کہ اس مسئلہ کی تحقیق غنیہ وغیرہ میں کی ہے۔ (ت)

اگر پڑھ لی ہو تو نماز پھیرنی ضروری ہے اگرچہ فجر خواہ عصر خواہ مغرب کا وقت ہو،

فان کل صلاۃ ادیت مع کراھۃ تحریم تعاد وجوباً 4 کما في الدر وغیرہ بل وکذا علی قول من قال بالتنزیہ فان الاعادۃ اکمل لا تنفل کما لا یخفی واللہ سبحنہ وتعالی اعلم۔ کہ ہر وہ نماز جو کراہت تحریمی کے ساتھ ادا کی گئی ہو اس کا اعادہ واجب ہوتا ہے جیسا کہ در مختار وغیرہ میں ہے بلکہ

اس کے قول پر بھی یہی حکم ہے جو اسے مکروہ تنزیہی قرار دیتا ہے کیونکہ اعادہ کمال ہے فالتو اور بے فائدہ نہیں جیسا کہ واضح ہے واللہ سبحٰنہ تعالٰی اعلم (ت)

1 سنن ابی داؤد کتاب الاشربہ باب ما جاء فی السکر مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور ۲ / ۱۶۳ 2 القرآن ۴ / ۴۳ 3 غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل فی الامامۃ الخ مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۵۱۳ 4 در مختار باب صفۃ الصلوۃ مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱ / ۷۱

Volume Six Fatawa Razawiyya Problem No. 609 to 612: From Calcutta, Masjid Dharmatala, sent by Hafiz Muhammad Azeem Sahib, 12 Jumadi al-Ula 1315 AH. After respectful greetings, I am expressing to your noble service that my pen is incapable of describing your praiseworthy attributes. I am neither worthy nor capable of presenting anything in your presence, but since there is an urgent need for your signature and seal on a fatwa at this time, I request you to grace it with your special signature and seal, as it is considered significant before Allah and His Messenger. This humble person has an immense desire to kiss your feet. Please pray for me. The fatwa (question) is as follows:

[Question Section] (Original Arabic/Persian): What is your opinion, may Allah have mercy on you, regarding which person is most suitable for leading the prayer (Imamat)? Is the Imamat of an illegitimate child (haramzada) macrooh-e-tahrimi (forbiddenly disliked) or not? Is the Imamat of a person whom the community considers bad macrooh-e-tahrimi or what? If there is someone more virtuous than the resident imam of the mosque present, who is more worthy of leading the prayer? Clarify and you shall be rewarded.

(Urdu Translation): May Allah's mercy be upon you. What is your opinion regarding this matter: who is the most superior person for leading the prayer? Is the Imamat of an illegitimate child macrooh-e-tahrimi or not? What is the status of the Imamat of a person whom the people think ill of—is it macrooh-e-tahrimi or something else? If a person more virtuous than the resident imam of the mosque is present, who is more entitled to be made the imam? (T)

[Answer Section] The Answer: (Arabic Text): (1) Whoever is more knowledgeable in the laws and methods of prayer is most suitable for Imamat. After him, the best reciter (Qari), then the most pious (muttaqi), then the eldest is most entitled to lead. It is mentioned similarly in Al-Hidaya, Al-Alamgiriyah, Multaqa al-Abhur, and Jami' al-Rumuz. (2) The Imamat of an illegitimate child is macrooh-e-tahrimi. It is stated in Al-Hidaya: The leadership of a slave, a bedouin, a transgressor (fasiq), a blind person, and a child of adultery is disliked (makrooh). This is because he does not have a compassionate father to educate him, thus ignorance might prevail over him. Secondly, appointing such individuals might cause the congregation to feel aversion, therefore making each of them an imam is disliked. And in Al-Alamgiriyah, it is said that the Imamat of a bedouin is permissible.

(Urdu Translation): (1) Whoever is more knowledgeable and aware of the method of prayer is most suitable for Imamat. After him, the best reciter, then the most pious, then the elder is entitled to lead. It is mentioned similarly in Al-Hidaya, Al-Alamgiriyah, Multaqa al-Abhur, and Jami' al-Rumuz. (2) The Imamat of an illegitimate child is macrooh-e-tahrimi. It is mentioned in Al-Hidaya: The Imamat of a slave, a bedouin, a transgressor, a blind person, and an illegitimate child is disliked, because he does not have a compassionate father who would educate him, hence ignorance will prevail upon him. Secondly, by appointing such individuals, people will feel aversion from the congregation, therefore it is disliked for each of them to become an imam.

1 Al-Hidaya, Chapter on Imamat, published by Al-Maktabah al-Arabiyyah Karachi, 1/101. Page 465 of 736

खंड छह फ़तावा रज़विया मसला नंबर ६०९ से ६१२: कलकत्ता, मस्जिद धरमतल्ला से, प्रेषक हाफ़िज़ मोहम्मद अज़ीम साहिब, १२ जमादी-उल-अव्वल १३१५ हिजरी। आदरपूर्ण अभिवादन के बाद, मैं आपकी महान सेवा में निवेदन कर रहा हूँ कि मेरी लेखनी आपके प्रशंसनीय गुणों का वर्णन करने में असमर्थ है। मैं आपकी सेवा में कुछ भी प्रस्तुत करने के योग्य या समर्थ नहीं हूँ, लेकिन चूँकि इस समय एक फ़तवे पर आपके हस्ताक्षर और मोहर की अत्यंत आवश्यकता है, इसलिए मैं आपकी सेवा में प्रार्थना करता हूँ कि इसे अपने विशेष हस्ताक्षर और मोहर से सुशोभित करें, जैसा कि अल्लाह और उसके रसूल के निकट महत्वपूर्ण है। इस विनम्र व्यक्ति को आपके चरण स्पर्श की अत्यधिक इच्छा है। कृपया दुआ करें। फ़तवा (प्रश्न) इस प्रकार है:

[प्रश्न अनुभाग] (मूल अरबी/फ़ारसी): अल्लाह आप पर रहम करे, इस बारे में आपकी क्या राय है कि नमाज़ के नेतृत्व (इमामत) के लिए कौन सा व्यक्ति सबसे श्रेष्ठ है? क्या एक नाजायज संतान (हरामज़ादा) की इमामत मकरूह-ए-तहरीमी (कड़ाई से नापसंद) है या नहीं? जिस व्यक्ति को कौम (समुदाय) बुरा समझती हो, उसकी इमामत मकरूह-ए-तहरीमी है या क्या है? यदि मस्जिद में मोहल्ले के इमाम से अधिक गुणी व्यक्ति मौजूद हो, तो इमाम किसे बनाना बेहतर है? उत्तर दें और पुण्य प्राप्त करें।

(उर्दू अनुवाद): आप पर अल्लाह की रहमत हो। इस मसले के बारे में आपकी क्या राय है कि इमामत के लिए श्रेष्ठ व्यक्ति कौन होता है? हरामज़ादे की इमामत मकरूह-ए-तहरीमी है या नहीं? जिस व्यक्ति को कौम बुरा जाने, उसकी इमामत मकरूह-ए-तहरीमी है या क्या है? अगर मस्जिद में मोहल्ले के इमाम से कोई श्रेष्ठ व्यक्ति मौजूद हो, तो इमाम किसको बनाना अधिक उचित है? (त)

[उत्तर अनुभाग] उत्तर: (अरबी पाठ): (१) जो व्यक्ति नमाज़ के नियमों और तरीकों में अधिक ज्ञानी है, वह इमामत के लिए सबसे अधिक योग्य है। उसके बाद सबसे अच्छा क़ारी, फिर सबसे अधिक संयमी (मुत्तक़ी), फिर अधिक आयु वाला इमामत के योग्य है। अल-हिदाया, अल-आलमगीरिया, मुल्तक़ा अल-अभुर और जामे' अल-रुमूज़ में इसी तरह उल्लेख है। (२) हरामज़ादे की इमामत मकरूह-ए-तहरीमी है। हिदाया में है: गुलाम, देहाती, पापी (फ़ासिक़), नेत्रहीन और ज़िना की औलाद की इमामत मकरूह है, क्योंकि उसका कोई कृपालु पिता नहीं है जो उसे शिक्षित करे, इसलिए उस पर अज्ञानता हावी होगी। दूसरी बात यह है कि ऐसे व्यक्तियों को आगे बढ़ाने से जमात (मंडली) के लोग नफरत करेंगे, इसलिए उनमें से प्रत्येक का इमाम बनना मकरूह है। और अल-आलमगीरिया में है कि देहाती की इमामत जायज़ है।

(उर्दू अनुवाद): (१) हर वह व्यक्ति जो तरीक़ा-ए-नमाज़ में ज़्यादा आलिम और आगाह है, वह इमामत के ज़्यादा लायक़ है। उसके बाद सबसे अच्छा क़ारी, फिर सबसे ज़्यादा साहिब-ए-तक़वा, फिर ज़्यादा उम्र वाला लाइक़-ए-इमामत है। हिदाया, आलमगीरिया, मुल्तक़ा-अल-अबहुर और जामे-अल-रुमूज़ में इसी तरह है। (२) हरामज़ादा की इमामत मकरूह-ए-तहरीमी है। हिदाया में है: गुलाम, एराबी (देहाती), फ़ासिक़, नाबीना और वल्द-उल-ज़िना की इमामत मकरूह है, क्योंकि उसका कोई शफ़ीक़ बाप नहीं है जो उसे तालीम देता, लिहाज़ा उस पर जहालत ग़ालिब होगी। दूसरी बात यह है कि ऐसे अफ़राद की तक़दीम से लोग जमात से नफ़रत करेंगे, लिहाज़ा उनमें से हर एक का इमाम बनना मकरूह है।

१ अल-हिदाया, बाबुल इमामत, मकतबा-तुल-अरबिय्या कराची द्वारा प्रकाशित १०१/१ पृष्ठ ४६५/७३६

جلد ششم فتاویٰ رضویہ مسئلہ نمبر ۶۰۹ تا ۶۱۲: از کلکتہ مسجد دھرم تلہ مرسلہ حافظ محمد عظیم صاحب ۱۲ جمادی الاولی ۱۳۱۵ھ تسلیم بصد تکریم کے بعد خدمت عالی میں عرض رساں ہوں اپ کے اصاف حمیدہ کی تحریر سے بندہ قاصر ہے جناب کی خدمت میں نہ عرض کے لائق نہ طاقت چونکہ اس وقت ایک فتویٰ پر آپ کے دستخط اور مہر کی اشد ضرورت ہوئی خدمت عالی میں عرض رساں ہوں کہ عنداللہ و عندالرسول اپنے خاص دستخط اور مہر سے زینت بخشیں اس عاجز کو آپ کی قدم بوسی کی ازحد تمنا ہے دُعا فرمائیں، فتویٰ یہ ہے:

[سوال کا حصہ] ما قولکم رحمکم اللہ تعالیٰ اندریں کہ بامت 'کدام شخص اولٰی است وامامت حرام زادہ مکروہ تحریمی است یانہ و امامت شخص بد پنداشتہ قوم مکروہ تحریمی است یاچہ واگر کسے در مسجد از امام حی افضل باشد بامامت کدام اولٰی است بینوا توجروا

تم پر اللہ تعالیٰ کی رحمت ہو اس مسئلہ کے بارے میں آپ کی کیا رائے ہے کہ امامت کے لئے افضل شخص کون ہوتا ہے؟ حرامزادہ کی امامت مکروہ تحریمی ہے یا نہیں؟ جس شخص کو قوم بُرا جانے اس کی امامت مکروہ تحریمی ہے یا کیا ہے؟ اگر مسجد میں محلہ کے امام سے کوئی افضل شخص موجود ہو تو امام کس کو بنانا اولیٰ ہے (ت)

[جواب کا حصہ] الجواب: (۱) ہر کہ عالم تر در سنت نماز بود در امامت آں اولٰی است پست ازاں اقراء ثم اورع ثم معمر است کما فی الھدایۃ والعالمگیریۃ وملتقی الابحر وجامع الرموز (۲) امامت حرام زادہ مکروہ تحریمی است لما فی الھدایۃ یکرہ تقدیم العبد والاعرابی والفاسق والاعمیٰ وولد الزنا لانہ لیس لہ اب یشفقہ فیغلب علیہ الجھل ولان فی تقدیم ہؤلاء تنفیر الجماعۃ فیکرہ ۱ و فی العالمگیریۃ و تجوز امامۃ الاعرابی

(۱) ہر وہ شخص جو طریقہ نماز میں زیادہ عالم وآگاہ ہے وہ امامت کے زیادہ لائق ہے اس کے بعد سب سے اچھا قاری، پھر سب سے صاحبِ تقویٰ، پھر زیادہ عمر والا لائق امامت ہے ہدا یہ ، عالمگیری ، ملتقی الابحر اور جامع الرموز میں اسی طرح ہے۔ (۲) حرام زادہ کی امامت مکروہ تحریمی ہے ہدایہ میں ہے غلام ، اعرابی ، فاسق، نابینا اور ولد زنا کی امامت مکروہ ہے کیونکہ اس کا شفیق باپ نہیں جو اسے تعلیم دیتا لہٰذا اس پر جہالت غالب ہوگی اور (دوسری بات یہ ہے کہ ایسے افراد کی تقدیم سے لوگ جماعت سے نفرت کریں گے لہٰذا ان میں سے ہر ایک کا امام بننا مکروہ ہے،

۱ الہدایۃ باب الامامۃ مطبوعہ المکتبۃ العربیہ کراچی ۱۰۱/۱ Page 465 of 736

Fatawa Razawiya Volume 6

Main Text: (Right Column) It is stated in 'Alamgiri' that the leadership (Imamat) of a Bedouin, a blind person, a slave, an illegitimate child, and a transgressor (Fasiq) is permissible. Similarly, it is stated in 'Al-Khulasah', but it is considered disliked (Makruh). In 'Sharh al-Wiqayah', the Imamat of a slave, a Bedouin, a blind person, an innovator (Mubtadi'), and an illegitimate child is permissible but disliked. In 'Jami' al-Rumuz', it says that if a slave, a Bedouin, a blind person, a transgressor, an innovator, or an illegitimate child (meaning a son born from an act of unlawful intercourse) leads the prayer, his leadership is disliked. In 'Multaqa al-Abhur', the Imamat of a slave, a Bedouin, a blind person, a transgressor, an innovator, and an illegitimate child is all disliked, etc.

(3) If the reason for disliking the Imam is due to a matter of Shari'ah, his Imamat will be prohibitively disliked (Makruh Tahrimi). This is because in 'Alamgiri' and 'Qazi Khan', it is stated regarding a man who leads a group while they dislike him: if the dislike is due to some corruption in that person himself, or because other individuals are more entitled to the leadership than him, then in both these cases, it is disliked for the said person to lead the prayer [5].

(Left Column - Arabic/Urdu Source Text) "And the blind, the slave, the illegitimate child, and the transgressor, as stated in 'Al-Khulasah', except that it is disliked [1]. In 'Sharh al-Wiqayah', the Imamat of a slave, a Bedouin, a transgressor, a blind person, an innovator, and an illegitimate child is permissible but disliked [2]. In 'Jami' al-Rumuz', if a slave, a Bedouin, a transgressor, a blind person, an innovator, or an illegitimate child leads [3] (meaning a child resulting from unlawful intercourse itself), it is disliked. In 'Multaqa al-Abhur', it is disliked for a slave, a Bedouin, a blind person, a transgressor, an innovator, and an illegitimate child to lead [4], etc. (3) If the dislike is due to a Shari'ah matter, the Imamat of a person disliked by the people is prohibitively disliked. As stated in 'Al-Alamgiriyyah' and 'Qazi Khan', a man leads a people while they dislike him: if the dislike is due to corruption in him or because others are more worthy of Imamat than him, it is disliked for him [5]."

Footnotes: 1. Fatawa Hindiyyah, Third Chapter, explaining who is fit to be an Imam for others, published by Noorani Kutub Khana Peshawar, 1/85. 2. Sharh al-Wiqayah, Chapter on the Congregation (Al-Jama'ah), published by Al-Maktabah al-Rashidiyyah Delhi, 1/157. 3. Jami' al-Rumuz, Chapter on the Imam's standing, published by Maktabah Islamiyah Gonbad-e-Qabus Iran, 1/127. 4. Multaqa al-Abhur, Chapter on

the Ruling of the Congregation, published by Mu'assasat al-Risalah Beirut, 1/92. 5. Fatawa Hindiyyah, Third Chapter, explaining who is fit to be an Imam for others, published by Noorani Kutub Khana Peshawar, 1/86-87. F: The respondent (may Allah have mercy on him) did not quote the exact Arabic text of 'Sharh al-Wiqayah', but only explained its meaning in Persian. Also, in the subsequent phrase, the text of 'Jami' al-Rumuz' is quoted within parentheses, while the text outside the parentheses is from 'Niqayah', which is the base text for 'Jami' al-Rumuz'. The text of 'Sharh al-Wiqayah' is also similar to that of 'Niqayah'. (Nazeer Ahmed Saeedi)

फ़तावा रज़विया जिल्द 6

मुख्य पाठ: (दायां कॉलम) 'आलमगीरी' में है कि देहाती (अरबी), अंधे, गुलाम, नाजायज संतान और फासिक़ की इमामत जायज़ है, इसी तरह 'खुलासा' में है लेकिन मकरूह (नापसंद) है। 'शराह अल-विक़ाया' में है कि गुलाम, देहाती, अंधे, बिदअती और नाजायज संतान की इमामत जायज़ है मगर मकरूह है। 'जामे अल-रुमुज़' में है कि अगर गुलाम, देहाती, अंधे, फासिक़, बिदअती और नाजायज संतान (यानी वह बेटा जो सीधे तौर पर हराम संभोग से पैदा हुआ हो) ने इमामत कराई तो उसकी इमामत मकरूह है। 'मुल्तक़ा अल-अब्बुर' में है कि गुलाम, देहाती, अंधे, फासिक़, बिदअती और नाजायज संतान, इन सब की इमामत मकरूह है इत्यादि।

(3) उसे बुरा समझने की वजह अगर किसी शरीअत के मामले के कारण हो तो उसकी इमामत मकरूह-ए-तहरीमी (कड़ाई से वर्जित) होगी, क्योंकि 'आलमगिरी' और 'काज़ी खान' में है कि वह व्यक्ति जिसने किसी कौम की इमामत कराई जबकि वह कौम उसे पसंद नहीं करती, अतः यदि नापसंदगी स्वयं उस व्यक्ति में किसी बुराई की वजह से हो या इस वजह से कि दूसरे व्यक्ति इमामत के अधिक योग्य हों, तो इन दोनों स्थितियों में उक्त व्यक्ति को इमामत कराना मकरूह है [5] ।

(बायां कॉलम - अरबी/उर्दू स्रोत पाठ) "और अंधा, गुलाम, नाजायज संतान और फासिक़, जैसा कि 'अल-खुलासा' में है, लेकिन यह मकरूह है [1]। 'शराह अल-विक़ाया' में है कि गुलाम, देहाती, फासिक़, अंधा, बिदअती और नाजायज संतान की इमामत जायज़ है मगर मकरूह है [2]। 'जामे अल-रुमुज़' में है कि यदि गुलाम, देहाती, अंधा, फासिक़, बिदअती या नाजायज संतान इमामत कराए [3] (यानी वह बच्चा जो ऐन हराम संभोग से हासिल हुआ हो), तो मकरूह है। 'मुल्तक़ा अल-अब्बुर' में है कि गुलाम, देहाती, अंधे, फासिक़, बिदअती और नाजायज संतान की इमामत मकरूह है [4] इत्यादि। (3) अगर नापसंदगी शरीअत के किसी मामले के कारण हो, तो उस व्यक्ति की इमामत जिसे लोग नापसंद करते हैं, मकरूह-ए-तहरीमी है। जैसा कि 'अल-आलमगीरिय्या' और 'काज़ी खान' में है, एक आदमी लोगों की इमामत करता है जबकि वे उसे नापसंद करते हैं: यदि नापसंदगी उसमें खराबी के कारण हो या इसलिए कि दूसरे उससे अधिक इमामत के हकदार हों, तो उसके लिए यह मकरूह है [5]।"

पादलेख (Footnotes): 1. फ़तावा हिन्दिया, तीसरा अध्याय, दूसरों के लिए इमाम बनने के योग्य लोगों के वर्णन में, प्रकाशित नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 1/85. 2. शराह अल-विक़ाया, जमाअत का

अध्याय, प्रकाशित अल-मकतबा अल-रशीदिया दिल्ली, 1/157. 3. जामे अल-रुमुज़, इमाम की स्थिति का अध्याय, प्रकाशित मकतबा इस्लामिया गोनबाद-ए-क़बूस ईरान, 1/127. 4. मुल्तक़ा अल-अब्हुर, जमाअत के हुक्म का अध्याय, प्रकाशित मुअस्ससत अल-रिसाला बेरूत, 1/92. 5. फ़तावा हिन्दिया, तीसरा अध्याय, दूसरों के लिए इमाम बनने के योग्य लोगों के वर्णन में, प्रकाशित नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 1/86-87. फ़: उत्तरदाता (अल्लाह उन पर रहम करे) ने शराह विक़ाया की अरबी इबारत उद्धृत नहीं की है, केवल उसका अर्थ फारसी भाषा में बताया है। साथ ही बाद वाली इबारत में कोष्ठक के बीच जामे अल-रुमुज़ की इबारत उद्धृत की है, जबकि कोष्ठक के बाहर वाली इबारत 'निकाया' यानी जामे अल-रुमुज़ के मूल पाठ की है और शराह विक़ाया की इबारत भी निकाया की इबारत जैसी है। (नज़ीर अहमद सईदी)

عبارتِ صفحہ: (دائیں کالم) عالمگیری میں ہے اعرابی، نابینا، غلام، ولدزنا اور فاسق کی امامت جائز ہے، اسی طرح خلاصہ میں ہے مگر مکروہ ہے۔ شرح الوقایہ میں ہے غلام، اعرابی، نابینا، بدعتی اور ولدالزنا کی امامت جائز ہے مگر مکروہ ہے جمع الرموز میں ہے اگر غلام ، اعرابی، نابینا، فاسق، بدعتی اور ولدالزنا (یعنی وہ بیٹا جو وطی حرام بعینہ سے حاصل ہو) نے امامت کرائی تو اس کی امامت مکروہ ہے۔ ملتقی الابحر میں ہے غلام، اعرابی، نابینا، فاسق، بدعتی اور ولدزنا سب کی امامت مکروہ ہے الخ۔

(۳) اسے برا جاننے کی وجہ اگر کسی امر شرعی کے باعث ہو تو اس کی امامت مکروہ تحریمی ہوگی، کیونکہ عالمگیری اور قاضی خان میں ہے وہ شخص جس نے کسی قوم کی امامت کرائی حالانکہ وہ قوم اسے پسند نہیں کرتی پس اگر کراہت خود اس شخص میں کسی فساد کی وجہ سے ہو یا اس وجہ سے کہ اس سے دوسرے افراد امامت کے زیادہ لائق ہوں تو ان دونوں صورتوں میں شخص مذکور کو امامت کرانا مکروہ ہے۔

(بائیں کالم - اصل عربی/فارسی عبارت) والاعمیٰ والعبد و ولد الزنا والفاسق کذا فی الخلاصة الا انها تکره ۱ وفی شرح فالوقایة امامة بنده و اعرابی وفاسق واعمی ومبتدع وولد الزنا جائز بودے مکروه باشد ۲ وفی جامع الرموز فان ام عبد او اعرابی اوفاسق او اعمی او مبتدع او ولد الزنا ۳ (ای ولد یحصل من وطئ حرام لعینہ) کره وفی ملتقی الابحر تکره امامة العبد والاعرابی والاعمیٰ والفاسق والمبتدع و ولد الزنا ۴ الخ (۳) اگر بد پنداشتن بباعث امر شرعی باشد امامت شخص بد پنداشتہ قوم مکروہ تحریمی ست لما في العلمگیریة وقاضی خان رجل ام قوما وهم له کارهون فان کانت الکرة لفساد فیه اولانهم احق بالامامة منه کره لہ ذلك ۔ ۵

حواشی: ۱ فتاویٰ ہندیہ الفصل الثالث فی بیان من یصلح اماما لغیرہ مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور ۸۵/۱ ۲ شرح الوقایہ فصل فی الجماعۃ مطبوعہ المکتبۃ الرشیدیہ دہلی ۱/۱۵۷ ۳ جامع الرموز فصل بمجر الامام مطبوعہ مکتبہ اسلامیہ گنبد قاموس ایران ۱/۱۲۷ ۴ ملتقی الابحر فصل حکم الجماعۃ مطبوعہ مؤسسۃ الرسالۃ بیروت ۹۲/۱ ۵ فتاویٰ ہندیہ الفصل فی بیان من یصلح اماما لغیرہ مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور ۱/۸۷-۸۶ ف: مجیب رحمۃ اللہ علیہ نے شرح وقایہ کی عبارت نقل نہیں کی صرف مفہوم بزبان فارسی ذکر کیا ہے نیز بعد والی عبارت میں قوسین کے درمیان جامع الرموز عبارت نقل کی ہے جسے قوسین سے باہر والی عبارت نقایہ یعنی جامع الرموز کے متن کی ہے اور شرح وقایہ کی عبارت بھی نقایہ کی عبارت جیسی ہے۔ (نذیر احمد سعیدی)

Fatawa Rizwia Volume Six

(4) It is preferable to make the appointed imam of the locality the leader of the prayer, even if another person present in the mosque is more virtuous. As stated in Alamgiriya: if a person enters a mosque who is more deserving of leading the prayer than the appointed imam, it is still better for the local imam to lead the prayer. And in Al-Munya it says: if someone enters the mosque who is more deserving of leading the prayer, the imam of the locality is still more deserving. This is the ruling of the book, and to Allah is the return and refuge. And Allah knows best. [Extracted by the sinner Abu Nuaim Muhammad Naqi (may Allah forgive him), Islamabad. The answer is correct, the poor servant Muhammad Amanatullah Ghazipuri. Correct answer, servant Rashid Ahmed (may Allah forgive him). Correct answer, Muhammad Qadir Bakhsh Sahsrami (may Allah forgive him). Verified by the writer, the needy Abu Al-Barakat Ghazipuri. Whatever is in it is the truth, Imamuddin (may Allah forgive him).]

Answer: The most deserving of imamat is the person who is most knowledgeable about the issues of prayer and purification (Taharat). In Tanwir it is stated: the most entitled to lead the prayer is the one most learned in the rules of prayer. In Durr-e-Mukhtar it is stated with the condition that they avoid obvious major sins. In Radd-ul-Muhtar, citing Al-Kafi etc., it is stated that the person most knowledgeable about the Sunnah (i.e., the method of prayer) is better for imamat, provided no one criticizes their religious character. (T)

---

1. Fatawa Hindiyya, Second Chapter on the Explanation of Who is Most Entitled to Imamat, published by Noorani Kutub Khana, Peshawar, 1/83.
2. Munya: Despite extensive search, this text could not be found in the famous Munyat al-Musalli. It seems another Munya is intended which is not available to me. – Nazir Ahmed Saeedi.
3. Durr-e-Mukhtar, Chapter on Imamat, published by Mujtabai, Delhi, 1/82.
4. Durr-e-Mukhtar, Chapter on Imamat, published by Mujtabai, Delhi, 1/82.
5. Radd-ul-Muhtar, Chapter on Imamat, published by Mustafa Al-Babi, Egypt, 1/412.

फतावा रज़विया खंड छह

(४) मोहल्ले के नियुक्त इमाम को इमाम बनाना बेहतर है, भले ही कोई दूसरा व्यक्ति अधिक श्रेष्ठ उपस्थित हो। जैसा कि आलमगीरिया में है: यदि कोई व्यक्ति मस्जिद में प्रवेश करता है जो मस्जिद के इमाम की तुलना में इमामत के अधिक योग्य है, तो स्थानीय इमाम को ही प्राथमिकता दी जाएगी। और मुनिया में उल्लेख है कि यदि मस्जिद में कोई ऐसा व्यक्ति आता है जो नियुक्त इमाम से श्रेष्ठ है, तो मोहल्ले का इमाम ही बेहतर होगा। यह पुस्तक का निर्णय है, और अल्लाह की ओर ही लौटना है। और अल्लाह ही बेहतर जानता है। [निष्कर्षक अपराधी अबू नुईम मुहम्मद नकी (अल्लाह उन्हें क्षमा करे), इस्लामाबाद। उत्तर सही है, फकीर मुहम्मद अमानतुल्लाह गाजीपुरी। उत्तर सही है, बंदा रशीद अहमद (अल्लाह उन्हें क्षमा करे)। सही जवाब देने वाला, मुहम्मद कादिर बख्श सहसरामी (अल्लाह उन्हें क्षमा करे)। लेखक द्वारा प्रमाणित, जरूरतमंद अबू अल-बरकात गाजीपुरी। इसमें जो कुछ है वह सत्य है, इमामुद्दीन (अल्लाह उन्हें क्षमा करे)।]

उत्तर: इमामत के लिए वह व्यक्ति सबसे अधिक योग्य और बेहतर है जो नमाज़ और पवित्रता (तहारत) के मसलों में अधिक जानकारी रखता हो। तनवीर में है: इमामत का सबसे अधिक हकदार वह है जो नमाज़ के नियमों को सबसे अधिक जानता हो। दुर्रे मुख्तार में एक शर्त के साथ है: बशर्ते कि वह प्रत्यक्ष गुनाहों से बचने वाला हो। रद उल मुख्तार में अल-काफी आदि के हवाले से है कि सुन्नत (यानी नमाज़ का तरीका) की सबसे अधिक जानकारी रखने वाला व्यक्ति इमामत के लिए बेहतर है, बशर्ते कि उसके दीन (धर्म) पर कोई आक्षेप न हो। (त)

---

1. फतावा हिंदिया, दूसरा अध्याय, इमामत के हकदार के वर्णन में, नूरानी कुतुब खाना पेशावर द्वारा प्रकाशित, 1/83।
2. मुनिया: काफी खोजबीन के बाद भी यह इबारत मशहूर मुनियातुल मुसल्ली में नहीं मिली, लगता है इससे कोई और मुनिया मुराद है जो मुझे उपलब्ध नहीं है। - नजीर अहमद सईदी।
3. दुर्रे मुख्तार, इमामत का अध्याय, मुजतबाई दिल्ली द्वारा प्रकाशित, 1/82।
4. दुर्रे मुख्तार, इमामत का अध्याय, मुजतबाई दिल्ली द्वारा प्रकाशित, 1/82।
5. रद उल मुख्तार, इमामत का अध्याय, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र द्वारा प्रकाशित, 1/412।

पृष्ठ 467/736

فتاوی رضویہ جلد ششم

(۴) امامت امام حی اولی بود اگرچہ غیرش در مسجد افضل است لمانی | محلہ کے مقرر امام کو امام بنانا اولی ہے اگرچہ کوئی دوسرا شخص افضل العلمگیریہ دخل مسجد امن هواولی بالامامة من امام | موجود ہو جیسا کہ عالمگیری میں ہے ایک ایسا شخص مسجد میں داخل ہوا جو المسجد فامام المحلة اولی 1 وفي المنية : لو دخل في | محلہ کے امام سے افضل ہے تو محلہ کے امام ہی کو امام بنانا اولی ہے۔ اور المسجد من هو اولی بالامامة فامام المحلة 2 اولی هكذا | منیہ میں ہے اگر مسجد میں ایسا شخص آیا جو امام مقرر سے افضل ہو تو محلے کا حکم الکتاب والیه المرجع والمآب والله اعلم | امام ہی بہتر ہوگا، کتاب کا حکم بھی یہی ہے اور وہی مرجع اور جائے پناہ ہے بالصواب۔ المستخرج المذنب ابونعیم محمد نقی عفی | والله اعلم بالصواب المستخرج المذنب ابو نعیم محمد نقی عفی عنہ اسلام عنه اسلام آبادی المجیب المصیب فقیر محمد امانت الله غازی پوری ۔ | آبادی المجیب المصیب فقیر محمد امانت الله غازی پوری۔ الجواب صحیح بنده الجواب صحیح بنده رشید احمد عفی عنہ اصاب من اجاب محمد قادر بخش | رشید احمد عفی عنہ اصاب من اجاب محمد قادر بخش سہسرامی عفی عنہ سہسرامی عفی عنہ صح من اجاب حرر الفقیر ابوالبرکات | ۔صح من اجاب حرر الفقیر ابو البرکات غازیپوری۔ اس میں جو کچھ ہے غازیپوری۔ مافیہ حق ، امام الدین عفی عنہ۔ | وہ حق ہے۔ امام الدین عفی عنہ۔

الجواب: اولی بامامت کسے است که مسائل نماز وطہارت دانا تر است در تنویر است | امامت کے لئے وہ شخص اور لائق اور بہتر ہے جو مسائل نماز و طہارت الاحق بالامامة الاعلم باحکام الصلوة 3 در درمختار | میں زیادہ آگاہی رکھتا ہو ، تنویر میں ہے امامت کا زیادہ حقدار وہ ہے جو است بشرط اجتنابه للفواحش الظاهرة 4 ۔ در ردالمحتار | احکام نماز سے زیادہ آگاہ ہو۔ در مختار میں

بشرطیکہ وہ ظاہری گناہوں سے ازکافی وغیرہ است الاعلم بالسنة اولی ان یطعن علیه في | بچنے والا ہو۔ ردالمحتار میں کافی کے حوالے سے ہے سنت (یعنی طریقہ دینه 5 ۔ | نماز) سے زیادہ آگاہی رکھنے والا شخص امامت کے لئے بہتر ہے بشرطیکہ اس کے دین پر کوئی طعن نہ کرتا ہو(ت)

---

1 فتاوٰی ہندیہ الفصل الثانی فی بیان من ہو احق بالامامة مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور ۱ / ۸۳ 2 منیہ : یہ عبارت سعیِ بسیار کے باوجود مشہور منیہ المصلی سے نہ مل سکی، معلوم ہوتا ہے اس سے کوئی اور منیہ مراد ہے جو مجھے دستیاب نہیں۔ نذیر احمد سعیدی 3 در مختار باب الامامة مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱ / ۸۲ 4 در مختار باب الامامة مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱ / ۸۲ 5 ردالمحتار باب الامامة مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱ / ۴۱۲

Fatawa Razawiyya Volume Six

Answer to Question Two: The ruling for a slave, a villager, and a blind person is the same. If there is no one else among those present who is capable of leading the prayer (Imamat), then it will become mandatory to put them forward; otherwise, the congregational prayer, which is mandatory, would be missed, and missing the congregation is not permissible. However, if there is someone else present who is capable of leading the prayer, but these individuals (the slave, villager, or blind person) possess superior knowledge of the rules of prayer and purification (Taharat) compared to him, then it is still preferable to make them the Imam. Far from there being any dislike (Karahat), in such a situation, it would be disliked to prefer the other person because he is inferior to them in knowledge. Of course, if the other person is more knowledgeable and wise, or if both are equal in the aforementioned knowledge, then their (the slave's etc.) leadership would be disliked, and that too is only "Makruh Tanzihi" (mildly disliked), not more. That is, it would be "Khilaf-e-Aula" (contrary to what is best). If they are made Imam, it is valid and there is no harm. It is stated in 'Tanwir al-Absar' and 'Durr al-Mukhtar' that the leadership of a slave, a nomad (Arabi), or a blind person is Makruh Tanzihi; however, when these individuals are more knowledgeable than others (excluding the transgressor/Fasiq), then they are the ones most deserving of leading the prayer. (And the child of adultery) i.e., the leadership of a child born out of wedlock is also disliked. The leadership of the aforementioned individuals is disliked only when there is another person present who is capable of leading the prayer; otherwise, there is no dislike. The discussion of this matter is in 'Bahr al-Ra'iq'.

1. Durr al-Mukhtar, Chapter on Imamat, published by Mujtabai Press, Delhi, 1/83.
2. Bahr al-Ra'iq, Chapter on Imamat, published by H.M. Saeed Company, Karachi, 1/349. Page 468 of 736

जवाब व सवाल दोम: ग़ुलाम, देहाती और अंधे का हुक्म भी यही है। अगर हाज़िरीन में से कोई दूसरा इमामत के लायक़ न हो, तो ख़ुद-ब-ख़ुद उन्हें आगे करना वाजिब होगा, वरना जमात फ़ौत (छूट) हो जाएगी जो वाजिब है, और जमात को फ़ौत करना जायज़ नहीं है। और अगर कोई दूसरा भी इमामत के लायक़ हाज़िर हो, लेकिन ये लोग नमाज़ और पाकी (तहारत) के मसाइल में उस पर फ़ौक़ियत (श्रेष्ठता) रखते हों, तो फिर भी इन्हीं को इमाम बनाना बेहतर (औला) है। कराहत की बात तो दूर, बल्कि ऐसी सूरत में दूसरे को आगे करना मकरूह होगा, क्योंकि वह दूसरा उनसे कम दर्जे का है। अलबत्ता अगर दूसरा उनसे ज़्यादा दाना और साहिबे-इल्म हो या दोनों ज़िक्र किए गए इल्म में बराबर हों, तो उस वक़्त उनकी इमामत मकरूह होगी और वह भी 'मकरूह-ए-तन्ज़ीही' (हल्का नापसंद), उससे ज़्यादा नहीं, यानी 'खिलाफ़-ए-औला' (बेहतरीन के ख़िलाफ़) होगी। अगर उन्हें इमाम बना लिया जाए तो जायज़ है, कोई हर्ज नहीं। 'तन्वीरुल अबसार' और 'दुर्रे मुख़्तार' में है कि ग़ुलाम, देहाती और अंधे की इमामत मकरूह-ए-तन्ज़ीही है; लेकिन जब वे ज़िक्र किए गए अफ़राद फ़ासिक़ के अलावा दूसरों से ज़्यादा इल्म वाले हों, तो यही लोग इमामत के लायक़ हैं। (और वल्दे ज़िना) यानी वल्दे ज़िना की इमामत भी मकरूह है। ज़िक्र किए गए अफ़राद की इमामत उस वक़्त मकरूह है जब उनके सिवा कोई और इमामत के लायक़ शख़्स मौजूद हो, वरना कोई कराहत नहीं। इस मसले की बहस 'बह्रुर्रायिक़' में है।

1. दुर्रे मुख़्तार, बाबुल इमामत, मतबुआ मतबा-ए-मुजतबाई दिल्ली, 1/83
2. बह्रुर्रायिक़, बाबुल इमामत, मतबुआ एच.एम. सईद कंपनी कराची, 1/349 पेज 468 ऑफ़ 736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

جواب و سوال دوم: وہم چنیں غلام و دہقانی و کور اگر در حاضرین غیر ایناں کسے صالح امامت نیست خود واجب بود قدیم ایناں زیرا کہ اگر نکند جماعت است رود واجب فوت شود وایں ناروا بود اگر دیگرے نیز حاضر است اما ایناں در علم مسائل نماز و طہارت بر ورجان و زیادت دارند ہم ایناں احق و اولی بامامتی باشد چہ جائے کراہت باشد بلکہ کراہت در تقدیم دیگرے باشد کہ کمتر از ایشان است آرے اگر آں دیگر از ایشاں داناتر یا ہر دو در علم مذکور ہمسر و برابر اند آں گاہ امامت ایشاں مکروہ باشد و از مکروہے تنزیہی بیش نیست یعنی خلاف اولٰی است و اگر امام نمایند رواہ باشد و باک ندارد در تنویر الابصار ودر مختار است یکرہ تنزیھا امامۃ عبد واعرابی واعمی الا ان یکون ای غیر الفاسق اعلم القوم فھو اولی (وولد الزنا)ھذا ان وجد غیرھم والا فلا کرھۃ بحر بحثاً ملخصاً ۔ در بحر الرائق از مجتبیٰ شرح قدوری و معراج الدرایہ شرح ہدایہ ست ھذہ الکراہۃ تنزیہیۃ لقولہ فی الاصل امامۃ غیرہم احب الیٰ 2۔ ہمدر آں باز در فتاوٰی اسعدیہ وغیرہ است فالحاصل انہ یکرہ لھؤلاء التقدم ویکرہ الاقتداء بہم کواہیۃ تنزیہ ان وجد

جواب و سوال دوم: غلام، دیہاتی اور نابینا کا حکم بھی یہی ہے اگر حاضرین میں سے کوئی دوسرا امامت کے لائق نہ ہو تو خود بخود ان کو مقدم کرنا واجب ہوگا اور جماعت فوت ہو جائے گی جو واجب ہے اور جماعت کو فوت کرنا جائز نہیں اور اگر کوئی دوسرا بھی لائق امامت حاضر ہو لیکن یہ لوگ مسائل نماز و طہارت میں اس پر فوقیت رکھتے ہوں تو پھر بھی انہی کو امام بنانا اولیٰ ہے چہ جائیکہ ان میں کراہت ہو بلکہ ایسی صورت میں دوسرے کو مقدم کرنا مکروہ ہوگا، کیونکہ وہ دوسرا ان سے ادنیٰ ہے البتہ اگر دوسرا ان سے زیادہ دانا اور صاحب علم ہو یا دونوں مذکورہ علم میں ہمسر اور برابر ہوں تو اس وقت ان کی امامت مکروہ ہوگی اور وہ بھی مکروہ تنزیہی، اس

سے زیادہ نہیں، یعنی خلاف اولیٰ ہوگی، اگر ان کو امام بنالیا جائے تو جائز ہے، کوئی حرج نہیں، تنویر الابصار اور در مختار میں ہے امامتِ غلام، اعرابی، نابینا، مکروہ تنزیہی ہے مگر جب وہ مذکورہ افراد فاسق کے علاوہ دوسروں سے زیادہ صاحب علم ہوں تو یہی لوگ امامت کے لائق ہیں (اور ولد زنا) یعنی ولد زنا کی امامت بھی مکروہ ہے، مذکورہ افراد کی امامت اس وقت مکروہ ہے جب ان کے سوا کوئی شخص لائق امامت موجود ہو ورنہ کوئی کراہت نہیں اس مسئلہ کی بحث بحر الرائق میں

1 در مختار باب الامامة مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۸۳/۱ 2 بحر الرائق باب الامامة مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۳۴۹/۱ Page 468 of 736

Fatawa Razawiyyah Volume Six

[Left Column Text Translation]: ...otherwise it is disliked. It is mentioned in Radd al-Muhtar, from Al-Ikhtiyar Sharh al-Mukhtar, Sharh al-Multaqa by al-Bahansi, and Sharh Durar al-Bihar: If the cause of dislike is absent—meaning if the desert-dweller (Bedouin) is superior to the city-dweller, the slave to the free man, the person of illegitimate birth to the person of legitimate birth, and the blind to the sighted—then the ruling is the opposite. Summarized in Jami' al-Rumuz: If a slave, a Bedouin, or a person of illegitimate birth leads, it is disliked with 'tanzih' (minor) dislike. In Al-Ikhtiyar, if they are superior to their opposites, the ruling is reversed. In Khaniyah: The imamate (leadership in prayer) of a Bedouin, a blind person, a slave, a person of illegitimate birth, and others is permissible, but someone other than them is preferable. In Sharh al-Nuqayah by Allama Birjandi: What is meant by dislike is 'tanzih' dislike, as explicitly stated in Al-Zahidi. In the marginalia of Durar wa Ghurar by Allama Shurunbulali: The imamate of a person of illegitimate birth is disliked. I say: the dislike...

[Right Column Text Translation]: ...is [disliked], etc. In Bahr al-Ra'iq, from Mujtaba Sharh al-Quduri and Mi'raj al-Dirayah Sharh al-Hidayah, it is stated: This dislike is 'tanzih' (minor) because the author's statement in the original text is: "I prefer the imamate of others over them." Then, the wording in Fatawa Asadiyyah and others is: The summary is that putting them forward as imams is disliked, and if no one else is available, then following them is 'makruh tanzih' (mildly disliked), otherwise there is no dislike. In Radd al-Muhtar, citing Ikhtiyar Sharh al-Mukhtar, Sharh al-Multaqa by al-Bahansi, and Sharh Durar al-Bihar: If the reason for dislike is absent—for instance, if the Bedouin is more virtuous than the urbanite, the slave than the free man, the illegitimate-born than the legitimate-born, and the blind than the sighted—the ruling will be the opposite. In Jami' al-Rumuz: If a slave, Bedouin, or person of illegitimate birth becomes an imam, it is 'makruh tanzih'. And in Al-Ikhtiyar: If these mentioned individuals are superior to their counterparts, the ruling will be reversed. In Khaniyah: The imamate of the Bedouin, blind, slave, and illegitimate-born is permissible, and someone other than them is better. In Allama Birjandi's Sharh al-Nuqayah: 'Dislike' refers to 'makruh tanzih' as clarified by Zahidi.

Footnotes: 1. Bahr al-Ra'iq, Chapter on Imamate, printed by H.M. Saeed Company Karachi, 1/349; Fatawa Asadiyyah, printed by Matba' Khairiya Egypt, 10/1. Note: The last part of this text, i.e., "in wujida etc.," is summarized and modified. For details, refer to both books. Aziz Ahmed. 2. Radd al-Muhtar, Chapter on Imamate, printed by

Mustafa al-Babi Egypt, 1/412. 3. Jami' al-Rumuz, section "Yabjur al-Imam," printed by Maktaba Islamia Gumbad Qamus Iran, 1/173-174. 4. Fatawa Qazi Khan, section on those whose following is valid, etc., printed by Nawal Kishore Lucknow, 1/44. 5. Sharh al-Nuqayah by Allama Birjandi, section "Yabjur al-Imam fi al-Jumu'ah," etc., printed by Nawal Kishore Lucknow, 1/11. Page 469 of 736

फ़तावा रज़विया छठा भाग

[बाएँ कॉलम के पाठ का अनुवाद]: ...अन्यथा यह नापसंद (मक़रूह) है। 'रद्द अल-मुह्तार' में 'अल-इख़्तियार शराह अल-मुख्तार', 'शराह अल-मुल्तक़ा' लि-अल-बहंसी और 'शराह दुरर अल-बिहार' के हवाले से है: "यदि नापसंदगी (कराहियत) का कारण समाप्त हो जाए—जैसे कि यदि ग्रामीण (बदुआ) शहरवासी से, गुलाम आज़ाद से, अवैध संतान वैध संतान से और अंधा दृष्टि वाले से अधिक योग्य हो—तो आदेश इसके विपरीत होगा।" 'जामे अल-रुमूज़' में सारांशित है: "यदि कोई गुलाम, ग्रामीण या अवैध संतान इमाम बनता है, तो यह 'कराहियत-ए-तन्ज़ीही' (हल्की नापसंदगी) है। और 'अल-इख़्तियार' में है कि यदि ये उल्लिखित व्यक्ति अपने विरोधियों से अधिक योग्य हों, तो आदेश विपरीत होगा।" 'ख़ानिया' में है: "ग्रामीण, अंधे, गुलाम और अवैध संतान की इमामत जायज़ है और उनके अलावा अन्य श्रेष्ठ हैं।" अल्लामा बिरजंदी की 'शराह नुक़ाया' में है: "नापसंदगी से तात्पर्य 'कराहियत-ए-तन्ज़ीही' है जैसा कि 'ज़ाहिदी' में स्पष्ट किया गया है।" अल्लामा शुरुनबुलानी की 'दुरर व ग़ुरर' के हाशिये में है: "अवैध संतान की इमामत मक़रूह है। मैं कहता हूँ कि नापसंदगी..."

[दाएँ कॉलम के पाठ का अनुवाद]: ...है (मक़रूह), आदि सारांशित। 'बहर अल-राइक़' में 'मुज्तबा शराह क़ुदूरी' और 'मेराज अल-दिरयाह शराह हिदाया' से है: यह कराहियत तन्ज़ीही है क्योंकि मूल (पुस्तक) में उनका कथन है: "मुझे उनके अलावा दूसरों की इमामत अधिक प्रिय है।" फिर इसके बाद 'फ़तावा असदिया' आदि की इबारत इस प्रकार है: सार यह है कि उन्हें आगे करना मक़रूह है, और यदि उनके अलावा कोई और मौजूद न हो, तो उनका इकतदा (अनुसरण) मक़रूह-ए-तन्ज़ीही है, अन्यथा कोई कराहियत नहीं है। 'रद्द अल-मुह्तार' में 'इख़्तियार शराह मुख्तार', 'शराह अल-मुल्तक़ा' लि-बहंसी और 'शराह दुरर अल-बिहार' से है: यदि कराहियत की वजह समाप्त हो जाए, उदाहरण के लिए ग्रामीण शहरी से, गुलाम आज़ाद से, अवैध संतान वैध संतान से और अंधा दृष्टि वाले से श्रेष्ठ हो, तो हुक्म इसके विपरीत होगा। 'जामे अल-रुमूज़' में है: यदि गुलाम या ग्रामीण या अवैध संतान इमाम बनता है, तो यह मक़रूह-ए-तन्ज़ीही है। और 'इख़्तियार' में है: यदि ये व्यक्ति अपने विपरीत व्यक्तियों से श्रेष्ठ हों, तो हुक्म इसके विपरीत होगा। 'ख़ानिया' में है: ग्रामीण, अंधे, गुलाम और अवैध संतान की इमामत जायज़ है और उनके अलावा की इमामत औली (बेहतर) है। अल्लामा बिरजंदी की 'शराह नुक़ाया' में है: कराहियत से मुराद कराहियत-ए-तन्ज़ीही है जैसा कि ज़ाहिदी ने स्पष्ट किया है।

पाद-टिप्पणी: 1. बहर अल-राइक़, बाबू-अल-इमामत, एच.एम. सईद कंपनी कराची १/३४९; फ़तावा असदिया, मतबा खैरिया मिस्र १०/१। नोट: इस इबारत का अंतिम भाग यानी 'इन वुजिदा आदि'

सारांशित और परिवर्तित है, विवरण के लिए दोनों पुस्तकें देखें। अज़ीज़ अहमद। 2. रद्द अल-मुह्तार, बाबू-अल-इमामत, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र १/४१२। 3. जामे अल-रुमूज़, फ़स्ल यबजुर अल-इमाम, मकतबा इस्लामिया गुम्बद क़ामूस ईरान १/१७३-१७४। 4. फ़तावा क़ाज़ी ख़ान, फ़स्ल फ़ीमन यसह अल-इक़्तिदा आदि, नवल किशोर लखनऊ १/४४। 5. शराह अल-नुक़ाया लि-अल्लामा बिरजंदी, फ़स्ल यबजुर अल-इमाम फ़ी अल-जुमुआ आदि, नवल किशोर लखनऊ १/११। पृष्ठ ४६९/७३६

فتاویٰ رضویہ جلد ششم

[بائیں کالم کی عبارت]: غیرھم والافلاکراھة -١- در ردالمحتار از اختیار شرح مختار شرح الملتقی للبھنسی و شرح دررالبحاراست لو عدمت ای علة الکراھة بان کان الاعرابی افضل من الحضرٰی والعبد من الحر وولدالزنا من ولدالرشدة والاعمی من البصیر فالحکم بالضد -٢- ملخصاً در جامع الرموز است فان امر عبد او اعرابی او ولد الزنا کرہ ذلك کراھة تنزیھة وفی الاختیار لوکانوا افضل من ضدھم فالحکم بالضد -٣- در خانیہ است تجوز امامة الاعرابی والاعمی والعبد و ولد الزنا وغیرھم -٤- اولی درشرح نقایہ علامہ برجندی است المرادبہ الکراھة التنزیھیة علی ما صرح بہ فی الزاہدی -٥- در حاشیہ درر وغرر للعلامة الشرنبلانی است وکرہ امامة ولد الزنا اقول الکراھة

[دائیں کالم کی عبارت]: ہے اھ ملخصاً بحر الرائق میں مجتبی شرح قدوری اور معراج الدرایہ شرح ہدایہ سے ہے یہ کراہت تنزیہی ہے کیونکہ اصل (کتاب) میں ان کا قول ہے ان کے علاوہ کی امامت مجھے زیادہ پسند ہے ، پھر اس کے بعد فتاویٰ اسعدیہ وغیرہ کی عبارت یوں ہے حاصل یہ ہے کہ ان کی تقدیم مکروہ ہے اور ان کا غیر موجود ہو تو اقتداء مکروہ تنزیہی ہے ورنہ کوئی کراہت نہیں۔ ردالمحتار میں اختیار شرح مختار، شرح الملتقٰی للبھنسی اور شرح درر البحار سے ہے اگر علت کراہت معدوم ہو مثلاً اعرابی شہری سے ، غلام آزاد سے ، ولد زنا ولد رشد سے اور نابینا بینا سے افضل ہو تو حکم اس کے برعکس ہوگا۔ جامع الرموز میں ہے اگر غلام یا اعرابی یا ولد زنا امام بنتا تو یہ مکروہ تنزیہی ہے۔ اور اختیار میں ہے اگر یہ افراد مذکورہ اپنے مخالف سے افضل ہوں تو حکم اس کے برعکس ہو گا خانیہ میں ہے اعرابی ، نابینا، غلام اور ولد زنا کی امامت جائز ہے اور ان کے علاوہ کی اولٰی ہے۔ علامہ برجندی کی شرح نقایہ میں ہے کراہت سے مراد کراہت تنزیہی ہے جیسا کہ اس بات کی تصریح زاہدی

حواشی: 1. بحر الرائق باب الامامة مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱ / ۳۴۹ ، فتاوی اسعدیہ مطبوعہ مطبع خیریہ مصر ۱/۱۰ نوٹ: اس عبارت کے آخری حصہ یعنی ان وجد الخ میں تلخیص اور تبدیلی ہے تفصیل کے لئے دونوں کتابیں ملاحظہ ہوں۔ عزیز احمد 2. رد المحتار باب الامامة مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/ ۴۱۲ 3. جامع الرموز فصل یبحر الامام مطبوعہ مکتبہ اسلامیہ گنبد قاموس ایران ۱ / ۱۷۴-۱۷۳ 4. فتاویٰ قاضی خان فصل فیمن یصح الاقتداء الخ مطبوعہ نولکشور لکھنؤ ۱/ ۴۴ 5. شرح النقایہ للعلامة البر جندی فصل یجحر الامام فی الجمعۃ الخ مطبوعہ نولکشور لکھنؤ ۱/ ۱۱ Page 469 of 736

Fatawa Razawiyya - Volume 6

[Right Column] ...did. It is in Hashiya Durar wa Ghurar of Allama Shurunbulali that the leadership (imamat) of one born of adultery is disliked (makruh). I say: what is meant by this is 'makruh tanzihi' (mildly disliked), as is mentioned in Al-Bahr. In the marginalia of Allama Sayyid Ahmad Tahtawi on Maraqi al-Falah, citing the commentary of Allama Sayyid Muhammad Azhari who cited Allama Sayyid Ahmad Hamawi: "Following a slave and those conjoined with him is 'makruh tanzihi' provided another suitable person for leadership is present; otherwise, it is not even 'makruh tanzihi'." (End quote). Despite these clear clarifications, it is not appropriate to issue a fatwa of 'karahat-e-tahrim' (prohibitive dislike), as occurred in the statements of the two clerics from Gangoh and Ghazipur against the validity of the leadership [of such people], which is pure falsehood and has no basis. It seems they were misled by the general use of 'dislike' in Al-Hidayah and others, and remained ignorant of the clarifications of the commentators regarding this specific issue and other similar ones—that interpreting an absolute term [like 'makruh'] as a total prohibition is not a universal rule. Rather, most of the time they mention 'dislike' absolutely while meaning 'makruh tanzihi'. Many times they mention 'dislike' absolutely and intend the generality of both types (tahrimi and tanzihi). Do you not see that when jurists list the disliked acts of prayer, they bring all of them under the heading of the word "kuriha" (it is disliked)?

[Left Column] "It is tanzihi as in Al-Bahr."[1] In the marginalia of Allama Sayyid Ahmad Tahtawi on Maraqi al-Falah, from the commentary of Allama Sayyid Muhammad Azhari from Allama Sayyid Ahmad Hamawi, it is written: "The dislike of following a slave and what is conjoined to it is tanzihi if others are found, otherwise not."[2] (End quote). Despite these magnificent clarifications, claiming prohibitive dislike is out of place. For instance, what happened with the two clerics from Gangoh and Ghazipur regarding the correctness of leadership is pure falsehood and has no origin. It is as if they were deceived by the absolute application of 'dislike' in Al-Hidayah and others, being ignorant of what the commentators clarified concerning this specific issue and others, that applying the absolute to prohibition is not universal. Rather, they often use it absolutely and mean specifically tanzihi, and sometimes they use it absolutely while the intent is broader, meaning what includes both types. Do you not see that they list the disliked acts of prayer in a sequence and include everything under their saying "it is disliked," while it contains both types? For this reason, it is said in Al-Durr

al-Mukhtar: "This includes tanzihi whose reference is 'contrary to the better way' (khilaf al-awla), so the difference..."

[Footnotes] 1. Hashiya Durar wa Ghurar of Allama Shurunbulali, Section on Imamat, published by Ahmad Kamil Press in Dar al-Sa'adah, Egypt, 1:85-86. 2. Hashiya al-Tahtawi on Maraqi al-Falah, Section on who is most deserving of Imamat, published by Nur Muhammad Kutub Khana Tijarat Kitab Ghar, Karachi, p. 164.

फ़तावा रज़विया - जिल्द छठी

[दायां कॉलम] ...की। अल्लामा शरनबुलाली की 'हाशिया दुरर व ग़ुरर' में है कि ज़िना से पैदा हुए व्यक्ति (वल्द-ए-ज़िना) की इमामत मकरूह है। मैं कहता हूँ कि इससे मकरूह-ए-तन्ज़ीही मुराद है जैसा कि 'अल-बहर' में है। 'मराक़ी अल-फ़लाह' के हाशिए में अल्लामा सैय्यद अहमद तहतावी ने अल्लामा सैय्यद मुहम्मद अज़हरी की शरह से और उन्होंने अल्लामा सैय्यद अहमद हमावी के हवाले से लिखा कि गुलाम और उसके अन्य मातहतों की इक़्तदा करना मकरूह-ए-तन्ज़ीही है बशर्ते कि उनके अलावा कोई दूसरा अहल (योग्य) व्यक्ति मौजूद हो, अन्यथा मकरूह-ए-तन्ज़ीही भी नहीं है। (इति)। इन स्पष्ट स्पष्टीकरणों के बावजूद 'कराहत-ए-तहरीम' (निषेधात्मक नापसंदगी) का फ़तवा जोड़ देना उचित नहीं है, जैसा कि गंगोह और ग़ाज़ीपुर के दो मुल्लाओं की ओर से सही इमामत के विरुद्ध जो बयान सामने आया, वह पूरी तरह निराधार है और उसका कोई आधार नहीं है। ऐसा लगता है कि वे 'हिदाया' आदि में 'कराहत' के सामान्य प्रयोग से धोखे में आ गए और विशेष रूप से इस मसले और इसके जैसे अन्य मसलों के तहत व्याख्याकारों (शारेहीन) के इन स्पष्टीकरणों से अनभिज्ञ रहे कि 'मुतलक़' (सामान्य) को 'मनाही' पर आधारित करना सार्वभौमिक नहीं है। बल्कि अक्सर वे मुतलक़ रूप से 'कराहत' का उल्लेख करते हैं और मुराद मकरूह-ए-तन्ज़ीही होती है। कई बार वे मुतलक़ रूप से कराहत का उल्लेख करते हैं और उससे उद्देश्य तहरीमी और तन्ज़ीही दोनों का सामान्य अर्थ होता है। क्या आप नहीं देखते कि फ़ुक़्हा (धर्मशास्त्री) जब नमाज़ के मकरूहात का वर्णन करते हैं, तो उन सभी को "कुरुहा" (इसे मकरूह कहा गया है) शब्द के शीर्षक के तहत लाते हैं।

[बायां कॉलम] "तन्ज़ीहिया है जैसा कि 'अल-बहर' में है।"[1] 'मराक़ी अल-फ़लाह' पर अल्लामा सैय्यद अहमद तहतावी के हाशिए में, अल्लामा सैय्यद मुहम्मद अज़हरी की शरह के माध्यम से अल्लामा सैय्यद अहमद हमावी से उद्धृत है: "गुलाम और उसके अन्य मातहतों की इक़्तदा की कराहत तन्ज़ीहिया है यदि उनके अलावा कोई और मिल जाए, अन्यथा नहीं।"[2] (इति)। इन महान स्पष्टीकरणों के बावजूद कराहत-ए-तहरीम का दावा करना बेजा है। उदाहरण के लिए, गंगोह और ग़ाज़ीपुर के दो मुल्लाओं की ओर से इमामत की शुद्धता के विरुद्ध जो कुछ हुआ, वह पूरी तरह असत्य है और इसका कोई मूल नहीं है। मानो वे 'हिदाया' आदि में 'कराहत' के मुतलक़ प्रयोग से भ्रमित हो गए, और इस विशेष मसले और अन्य में व्याख्याकारों के स्पष्टीकरणों से अनजान रहे कि 'मुतलक़' को निषेध पर ले जाना सार्वभौमिक नहीं है। बल्कि वे अक्सर इसे मुतलक़ रूप से उपयोग करते हैं और मुराद विशेष रूप से तन्ज़ीह होती है, और कभी-कभी वे इसे मुतलक़ रूप से उपयोग करते हैं जबकि उद्देश्य

व्यापक होता है, यानी जो दोनों प्रकारों को सम्मिलित करता है। क्या आप नहीं देखते कि वे नमाज़ के मकरूहात को एक क्रम में सूचीबद्ध करते हैं और सब कुछ उनके इस कथन के तहत शामिल करते हैं कि "यह मकरूह है," जबकि इसमें दोनों प्रकार शामिल होते हैं? इसी कारण 'अल-दुर्र अल-मुख़्तार' में कहा गया है: "यह तन्ज़ीहिया को सम्मिलित करता है जिसका संदर्भ 'बेहतर के विपरीत' (ख़िलाफ़-ए-औला) है, अतः अंतर..."

[पाद टिप्पणियाँ] 1. अल्लामा शरनबुलाली की 'हाशिया दुरर व ग़ुरर', इमामत पर अनुभाग, अहमद कामिल प्रेस, दार अल-सआदाह, मिस्र, 1:85-86 द्वारा प्रकाशित। 2. 'मराक़ी अल-फ़लाह' पर अल्लामा तहतावी का हाशिया, इमामत के सबसे अधिक पात्र कौन है, इस पर अनुभाग, नूर मुहम्मद कुतुब ख़ाना तिज़ारत किताब घर, कराची, पृष्ठ 164 द्वारा प्रकाशित।

[دایاں کالم] نے کی، حاشیہ درر و غرر للعلامہ شرنبلالی میں ہے کہ ولد زنا کی امامت مکروہ ہے۔ میں کہتا ہوں اس سے کراہت تنزیہی مراد ہے جیسا کہ بحر میں ہے، مراقی الفلاح کے حاشیہ میں علامہ سید احمد طحطاوی نے شرح علامہ سید محمد ازہری سے اور انہوں نے علامہ سید احمد حموی کے حوالے سے لکھا کہ غلام اور اسکے دیگر معطوفات کی اقتداء کرنا مکروہ تنزیہی ہے بشرطیکہ ان کے علاوہ کوئی دوسرا لائق امت موجود ہو ورنہ مکروہ تنزیہی بھی نہیں۔ اھ ان واضح تصریحات کے باوجود کراہت تحریم کے ساتھ فتویٰ جڑ دینا مناسب نہیں ہے جیسا کہ دو ملّا حضرات گنگوہی اور غازی پوری سے درست امامت کے خلاف جو بیان سرزد ہوا وہ باطل محض ہے اس کی کوئی اصل نہیں، گویا انہوں نے ہدایہ وغیرہ میں کراہت کے اطلاق سے دھوکا کھایا اور خصوصاً اس مسئلہ اور اس جیسے دیگر مسائل کے تحت شارحین کی ان تصریحات سے جاہل رہے کہ مطلق کا منع پر محمول کرنا کلی نہیں بلکہ اکثر اوقات مطلقاً کراہت ذکر کرتے اور مراد کراہت تنزیہی ہوتی ہے بہت دفعہ کراہت کو مطلقاً ذکر کرتے ہیں اور اس سے مقصود تحریمی اور تنزیہی دونوں کا عموم ہوتا ہے کیا آپ نہیں دیکھتے کہ فقہاء جب مکروہاتِ نماز بیان کرتے ہیں تو تمام کو وہ لفظ "کرہ" کے عنوان کے تحت لاتے ہیں

[بایاں کالم] تنزیهية كما في البحر[1] در حاشیہ علامہ سید احمد طحطاوی بر مراقی الفلاح از شرح علامہ سید محمد ازہری از علامہ سید احمد حموی است کراهة الاقتداء بالعبد و ما عطف علیه تنزیهية ان وجد غیرهم والا فلا[2] اه باوصف ایں تصریحات جلیلہ بکراہت تحریم جائے زدن چنانچہ از دو ملایان گنگوہی و غازی پوری بر خلاف رشد امامت سرزدہ باطل محض است واصلے ندارد و کأنهما اغترابا بإطلاق الكراهة في الهداية وغيرها جاهلين بما صرح به الشراح في خصوص المسألة وغيرها

من ان حمل المطلق على المنع غير كلي بل كثيراً ما يطلقون والمراد خصوص التنزيه وربما يطلقون والمقصود الاعم اعني ما يشتمل النوعين الا ترى انهم يسردون مكروهات الصلاة سردا ويدخلون الكل تحت قولهم كره وفيها من كلا النوعين ولذا قال في الدر المختار هذه تعم التنزيهية التي مرجعها خلاف الاولى فالفارق

[حواشى] 1 حاشيہ درر و غرر للعلامہ الشرنبلالى فصل فى الامامة مطبوعہ مطبعہ احمد كامل الكائنہ فى دار السعادة مصر ۱/۸۶-۸۵ 2 حاشية الطحطاوى على مراقى الفلاح، فصل فى بيان الاحق بالامامة مطبوعہ نور محمد كتب خانہ تجارت كتاب گھر كراچى ص ۱۶۴

[Arabic Quote]: "The evidence, if it is a prohibition with speculative proof and there is no shifting factor, then it is prohibitive (Tahrimi), otherwise it is cautionary (Tanzihi). Imam al-Shami said, quoting Al-Bahr: Makruh Tanzihi refers to what is better left undone. Often they mention it absolutely (without specification), as mentioned in Al-Hilyah. Therefore, when they mention a Makruh, it is necessary to examine its evidence." [Footnote 1, 2]

[Urdu Explanation]: Although both types of dislikes (Makruhat) occur in these, this is why it is stated in Durr-e-Mukhtar that this includes Makruh-e-Tanzihi, the end result of which is 'leaving what is better' (Tark-e-Awla). Thus, the difference between the two will be based on evidence. That is, if the evidence for dislike and Sharia prohibition has speculative proof and there is no factor shifting it from prohibition to recommendation, then it is Makruh-e-Tahrimi; otherwise, it is Tanzihi. [End quote]

Imam Shami, quoting Al-Bahr, stated that the outcome of Makruh-e-Tanzihi is Tark-e-Awla (leaving what is better), and most of the time it is mentioned absolutely. It is mentioned similarly in Al-Hilyah. Therefore, when jurists mention Makruh at any place, it is necessary to look deeply into its evidence, etc. (T)

[Bottom Section - Persian text/Original]: Answer to the third question: If the congregation's dislike is without a Sharia-valid reason, such as considering the leadership (imamate) of a righteous scholar disliked due to some of their worldly disputes, or considering the leadership of a slave, a blind person, and their likes as bad even though they are the most virtuous and knowledgeable of the congregation, then their dislike is observed but has no effect on the right of leadership. If it is for a Sharia reason, such as the Imam being a transgressor (fasiq) or an innovator, or in the case of a lack of knowledge of one of the four aforementioned types—namely a slave, a bedouin, one born of adultery, and a blind person—or if there is someone in the congregation who is more entitled and better due to Sharia preferences such as increased knowledge and quality of recitation, etc., then in this case, for such a person to proceed with leadership despite the congregation's dislike...

[Bottom Section - Urdu translation]: Answer to the third question: If the congregation's dislike is without a Sharia-valid excuse, such as considering the leadership of a righteous person and a scholar disliked because of some of their worldly disputes, or considering the leadership of a slave, a blind person, etc., as disliked even though they are better than the congregation, then in such a case, the

congregation's own dislike holds no meaning. Therefore, it will not have an effect on the leadership of those individuals. If the dislike is due to some Sharia-valid excuse—for example, the Imam is a transgressor (fasiq) or an innovator, or the four aforementioned individuals (slave, bedouin, one born of adultery, and the blind) are not more virtuous or knowledgeable than others, or if there is someone present in the congregation who possesses Sharia-based preferences, for example, has more knowledge, is an expert in Tajwid and recitation—then he himself [is more suited] for leadership.

[Footnotes]: 1. Durr-e-Mukhtar, Chapter on 'What Spoils the Prayer', etc., published by Mujtabai Press, Delhi, 1/91. 2. Radd al-Muhtar, Chapter on 'What Spoils the Prayer', etc., published by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/472.

[अरबी उद्धरण]: "प्रमाण, यदि वह सट्टा सबूत के साथ निषेध है और कोई स्थानांतरण कारक नहीं है, तो यह निषेधात्मक (तहरीमी) है, अन्यथा यह चेतावनीपूर्ण (तंज़ीही) है। इमाम अल-शामी ने अल-बहर को उद्धृत करते हुए कहा: मकरूह तंज़ीही उस चीज़ को संदर्भित करता है जिसे छोड़ देना बेहतर है। अक्सर वे इसे पूरी तरह से (बिना विनिर्देश के) उल्लेख करते हैं, जैसा कि अल-हिलिया में उल्लेख किया गया है। इसलिए, जब वे मकरूह का उल्लेख करते हैं, तो इसके प्रमाण की जांच करना आवश्यक है।" [फुटनोट 1, 2]

[उर्दू स्पष्टीकरण]: हालांकि इन दोनों में दोनों प्रकार की नापसंदियाँ (मक़रूहात) होती हैं, इसीलिए दुर्रे-मुख़्तार में कहा गया है कि इसमें मक़रूह-ए-तंज़ीही शामिल है, जिसका अंतिम परिणाम 'तर्कए-औला' (बेहतर छोड़ना) है। इस प्रकार, दोनों के बीच का अंतर साक्ष्य पर आधारित होगा। अर्थात्, यदि नापसंदगी और शरई मनाही का साक्ष्य ज़न्नी (अनुमानित) हो और इसे तहरीम से इस्तेहबाब (सिफ़ारिश) की ओर मोड़ने वाला कोई कारक न हो, तो यह मक़रूह-ए-तहरीमी है; अन्यथा, यह तंज़ीही है। [समाप्त]

इमाम शामी ने बहर से उद्धृत करते हुए फ़रमाया है कि मक़रूह-ए-तंज़ीही का परिणाम तर्कए-औला (बेहतर छोड़ना) होता है, और अधिकांश समय इसका उल्लेख निरपेक्ष रूप से किया जाता है। हिलिया में भी इसी तरह का उल्लेख है। इसलिए, जब फ़क़ीह किसी स्थान पर मक़रूह का उल्लेख करते हैं, तो उसके प्रमाण पर गहराई से नज़र डालना आवश्यक होता है, आदि। (त)

[निचला भाग - फ़ारसी पाठ/मूल]: तीसरे प्रश्न का उत्तर: यदि समुदाय की नापसंदगी बिना किसी शरई कारण के हो, जैसे कि उनके कुछ सांसारिक विवादों के कारण एक नेक विद्वान के नेतृत्व (इमामत) को नापसंद समझना, या दास, अंधे व्यक्ति और उनके जैसों के नेतृत्व को बुरा समझना, भले ही वे समुदाय के सबसे गुणी और ज्ञानी हों, तो उनकी नापसंदगी देखी जाती है लेकिन नेतृत्व के अधिकार पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। यदि यह शरई कारण से है, जैसे कि इमाम फ़ासिक (पापी) या बिदअती (नवाचारी) हो, या उपरोक्त चार प्रकार के लोगों—अर्थात् दास, ग्रामीण, व्यभिचार से उत्पन्न और अंधा व्यक्ति—में से किसी एक के पास ज्ञान की कमी हो, या यदि समुदाय में कोई ऐसा व्यक्ति हो जो शरई प्राथमिकताओं जैसे कि अधिक ज्ञान और क़ुरान पाठ की गुणवत्ता आदि के कारण

अधिक हकदार और बेहतर हो, तो इस मामले में, ऐसे व्यक्ति के लिए समुदाय की नापसंदगी के बावजूद नेतृत्व के साथ आगे बढ़ना...

[निचला भाग - उर्दू अनुवाद]: तीसरे प्रश्न का उत्तर: यदि समुदाय की नापसंदगी बिना किसी शरई बहाने के हो, जैसे कि एक नेक व्यक्ति और विद्वान के नेतृत्व को उनके कुछ सांसारिक विवादों के कारण नापसंद समझना, या दास, अंधे व्यक्ति आदि के नेतृत्व को नापसंद समझना, भले ही वे समुदाय से बेहतर हों, तो ऐसे मामले में समुदाय की अपनी नापसंदगी का कोई अर्थ नहीं है। इसलिए, उन व्यक्तियों के नेतृत्व पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। यदि नापसंदगी किसी शरई बहाने के कारण है—उदाहरण के लिए, इमाम फ़ासिक या बिदअती है, या उपरोक्त चार व्यक्ति (दास, ग्रामीण, व्यभिचार से उत्पन्न और अंधा) दूसरों की तुलना में अधिक गुणी या ज्ञानी नहीं हैं, या यदि समुदाय में कोई ऐसा व्यक्ति मौजूद है जिसके पास शरई-आधारित प्राथमिकताएं हैं, उदाहरण के लिए, अधिक ज्ञान है, तजवीद और क़ुरान पाठ में विशेषज्ञ है—तो वह स्वयं इमामत के लिए [अधिक उपयुक्त] है।

[फ़ुटनोट्स]: 1. दुर्रे-मुख़्तार, अध्याय 'नमाज़ को क्या खराब करता है', आदि, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, 1/91. 2. रद्दे मुहतार, अध्याय 'नमाज़ को क्या खराब करता है', आदि, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 1/472.

الدلیل فان نہیاً ظني الثبوت ولاصارف فتحریمیة والا فتنزیھیة 1 قال الشامی نقلا عن البحر المکروہ تنزیھا مرجعه الی ما ترکه اولی وکثیرا ما یطلقونه کما ذکرہ فی الحلیة فحینئذ اذا ذکروا مکروھا فلابد من النظر فی دلیله 2 الخ

حالانکہ ان میں دونوں نوعیت کے مکروہات ہوتے ہیں، اسی لئے دُرِّمختار میں کہا کہ یہ مکروہِ تنزیہی کو شامل ہے جس کا انجام و مآل ترک اولیٰ ہوتا ہے، پس ان دونوں میں فرق دلیل کی بنیاد پر ہوگا، یعنی اگر دلیل کراہت وممانعت شرعی ہو جس کا ثبوت ظنی اور نہ ہی تحریم سے استجاب کی طرف پھیر نے والا کوئی امر ہو تو مکروہِ تحریمی ورنہ تنزیہی اھ

امام شامی نے بحر سے نقل کرتے ہوئے فرمایا ہے مکروہِ تنزیہی کا مآل ترکِ اولیٰ ہوتا ہے اور اکثر اوقات اس کو مطلقاً ذکر کرتے ہیں، حلیہ میں اسی طرح مذکور ہے، لہٰذا جب فقہاء کسی مقام پر مکروہ کا تذکرہ کریں تو اس کی دلیل میں نظرِ غائر کرنا ہوتا ہے الخ (ت)

جواب سوال سوم: کراہت قوم اگر بلاوجہ شرعی ست چنانکہ امامت عالمی صالح را بسبب بعض منازعات دنیویہ خود شاں مکروہ دارند یا امامت عبداوعمی وامثالھما رابانکہ افضل و اعلم قوم باشند بد پندارند نگاہ کراہت ایشان باشد و در حق امامت اثرے ندارد، واگر بوجه شرعی است چنانکہ امام فاسق یا مبتدع ست یا بحال عدم علمیت یکی ازاربعہ مذکورین اعنی عبدا و اعرابی و ولد الزنا و اعمی است یا آنکه در قوم کسی ست بوجه مرجحات شرعیہ مثل زیادت علم وجودت قرات و غیر ہما احق و اولی ازوست دریں حالت ہمچو کس را باوصف مکروہ داشتن قوم بامامت پیش رفتن

جواب سوال سوم: اگر قوم کی کراہت شرعی عذر کے بغیر ہو جیسا صالح اور عالم کی امامت کو اپنے بعض دنیوی تنازعے کی وجہ سے مکروہ سمجھتے ہوں یا غلام، نابینا وغیرہ کی امامت کو مکروہ سمجھتے ہوں حالانکہ وہ قوم سے افضل ہوں، تو ایسی صورت میں قوم کی اپنی ناپسندیدگی کوئی معنی نہیں رکھتی لہٰذا ان افراد کی امامت میں وہ اثر نہ ہوگی، اگر کراہت کسی شرعی عذر سے ہو مثلاً امام فاسق یا بدعتی ہو یا چار مذکورہ افراد غلام، اعرابی، ولد زنا اور نابینا دوسروں سے افضل واعلم نہ ہوں یا قوم میں کوئی ایسا شخص موجود ہو جس میں شرعی ترجیحات ہوں، مثلاً علم زیادہ رکھتا ہے، تجوید و قرات کا ماہر ہے تو یہ خود امامت کے

---

1 درمختار باب مایفسد الصلوۃ الخ مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱/۹۱ 2 ردالمختار باب مایفسد الصلوۃ الخ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/۴۷۲

Fatawa Razvia, Volume 6

[Left Column] ...is prohibited and Makruh Tahrimi. It is stated in the text of Muhaqqiq Ghaznavi and the commentary of Mudaqqiq Ala'i: "If a person leads a people while they dislike him, if the dislike is due to a corruption in him or because they are more entitled to the imamate than him, then it is disliked for him to do so as Tahrim (prohibited dislike), due to the Hadith of Abu Dawood: 'Allah does not accept the prayer of one who leads a people while they dislike him.' But if he is more entitled, it is not [disliked for him], and the dislike is on them [the people]." In Maraqi al-Falah, Allama Shurunbulali quotes from the book Al-Tajnīs wa al-Mazīd by Imam Sahib al-Hidaya: "If he leads a people while they dislike him, it is of three types: if the dislike is due to corruption in him, or if they were more entitled to the imamate than him, it is disliked. But if he is more entitled to it than them and there is no corruption in him, yet they dislike him, it is not disliked for him to step forward, because the ignorant and the wicked dislike the scholar and the righteous."

I say (Aqool): The research of the matter is that there are two things here: one is the action of that person who, of his own accord, went ahead despite the community's displeasure and kept them reluctantly following him; the second is the prayer behind him. The scholars who have ruled it as Makruh Tahrimi in the mentioned case were looking at the first part, meaning it is not permissible for that person to do such a thing, and if he does...

[Right Column] ...is more worthy and deserving. In such a situation, if a person is disliked by the community to be made an Imam, then it is prohibited and severely disliked (Makruh Tahrimi) for that person to become the Imam. It is mentioned in the text of Muhaqqiq Ghaznavi and the commentary of Mudaqqiq that if a person leads a community in prayer while they dislike him, if their dislike is due to some flaw within the Imam or if they are more deserving of the imamate than the Imam, then in such a case, it is Makruh Tahrimi for him to be the Imam. The evidence for this is the Hadith of Abu Dawood in which it is stated: "Allah Almighty does not accept the prayer of a person who leads people while they dislike him." And if the Imam himself is more entitled to the imamate, then there is no dislike for him, rather the people's dislike will be considered Makruh. Allama Shurunbulali in Maraqi al-Falah, citing Imam Sahib al-Hidaya's book Al-Tajnīs wa al-Mazīd, has mentioned that if someone leads a community while they dislike him, there are three scenarios: (1) If the dislike is due to some corruption in the Imam himself; (2) Or if other people are more worthy and deserving of the imamate than him, then it is disliked for him to be the

Imam; (3) And if the Imam himself is more deserving of the imamate than others and there is no corruption in him personally, yet people dislike him...

---

1 Durr al-Mukhtar, Chapter on Imamate, printed at Matba' Mujtabai Delhi, 1/83. 2 Maraqi al-Falah with commentary of al-Tahtawi, printed at Nur Muhammad Karkhana-e-Tijarat-e-Kutub Karachi, p. 162.

फतावा रज़विया, खंड 6

[बायां कॉलम] ...वर्जित और मकरूहे तहरीमी है। मुहक़्क़िक़ ग़ज़नवी के मूल पाठ और मुदक़्क़िक़ अलाई की व्याख्या में है: "यदि कोई किसी कौम की इमामत करे और वे उसे नापसंद करते हों, यदि नापसंदगी उसमें किसी खराबी के कारण हो या इसलिए कि वे उससे अधिक इमामत के हकदार हैं, तो उसके लिए ऐसा करना तहरीमन मकरूह है, अबू दाऊद की हदीस के कारण: 'अल्लाह उस व्यक्ति की नमाज़ स्वीकार नहीं करता जो किसी कौम का नेतृत्व करता है जबकि वे उसे नापसंद करते हैं।' लेकिन यदि वह अधिक हकदार है, तो यह [उसके लिए मकरूह] नहीं है, और नापसंदगी उन पर [लोगों पर] है।" 'मराक़ी अल-फलाह' में अल्लामा शुरुनबुलाली ने इमाम साहिब हिदाया की पुस्तक 'अल-तजनीस वल-मजीद' से उद्धृत किया है: "यदि वह किसी कौम का नेतृत्व करता है जबकि वे उसे नापसंद करते हैं, तो यह तीन प्रकार का है: यदि नापसंदगी उसमें खराबी के कारण है, या वे उससे अधिक इमामत के हकदार थे, तो यह मकरूह है। लेकिन यदि वह उनसे अधिक इसका हकदार है और उसमें कोई खराबी नहीं है, फिर भी वे उसे नापसंद करते हैं, तो उसके लिए आगे बढ़ना मकरूह नहीं है, क्योंकि अज्ञानी और दुष्ट लोग विद्वान और धर्मी को नापसंद करते हैं।"

मैं कहता हूँ (अक़ूल): मामले का शोध यह है कि यहाँ दो चीजें हैं: एक उस व्यक्ति का कार्य है जो अपनी मर्जी से कौम की नाराजगी के बावजूद आगे बढ़ा और उन्हें अनिच्छा से अपने पीछे रखा; दूसरा उसके पीछे नमाज़ है। जिन विद्वानों ने उपर्युक्त मामले में मकरूहे तहरीमी का आदेश दिया है, वे पहले भाग को देख रहे थे, अर्थात उस व्यक्ति के लिए ऐसा करना जायज़ नहीं है, यदि वह ऐसा करता है...

[दायां कॉलम] ...अधिक योग्य और हकदार है। ऐसी स्थिति में जिस व्यक्ति को इमाम बनाना कौम (समुदाय) नापसंद करे, उस व्यक्ति का इमाम बनना वर्जित और मकरूहे तहरीमी (गंभीर रूप से नापसंद) है। मुहक़्क़िक़ ग़ज़नवी के मूल पाठ और मुदक़्क़िक़ की व्याख्या में है कि यदि किसी व्यक्ति ने कौम की इमामत की जबकि वे लोग उसे नापसंद करते हों, तो यदि लोगों की नफरत इमाम के अंदर किसी बुराई के कारण हो या वे लोग इमाम की तुलना में इमामत के अधिक हकदार हों, तो ऐसी स्थिति में उस व्यक्ति का इमाम होना मकरूहे तहरीमी है। इसका प्रमाण अबू दाऊद की हदीस है जिसमें कहा गया है: "अल्लाह तआला उस व्यक्ति की नमाज़ स्वीकार नहीं करता जो लोगों का इमाम बना जबकि लोग उसे नापसंद करते थे।" और यदि वह इमाम ही इमामत का अधिक हक रखता हो तो उस पर नापसंदगी (कराहत) नहीं होगी, बल्कि लोगों का नफरत करना मकरूह होगा।

अल्लामा शुरुनबुलाली ने 'मराक़ी अल-फलाह' में इमाम साहिब हिदाया की किताब 'अल-तजनीस वल-मजीद' के हवाले से उल्लेख किया है कि यदि कोई व्यक्ति कौम की इमामत करता है जबकि वे उसे नापसंद करते हों, तो इसकी तीन स्थितियाँ हैं: (1) यदि नापसंदगी स्वयं इमाम में किसी खराबी के कारण हो; (2) या अन्य लोग उससे अधिक इमामत के योग्य और हकदार हों, तो उसका इमाम बनना मकरूह है; (3) और यदि वह इमाम ही दूसरों से अधिक इमामत के योग्य हो और स्वयं उसमें कोई खराबी भी न हो, इसके बावजूद लोग उसे नापसंद करते हों...

---

1 दुर्रे मुख्तार, इमामत का अध्याय, मत्तबा मुज्तबाई दिल्ली में मुद्रित, 1/83। 2 मराक़ी अल-फलाह मय हाशियह अत-तहावी, नूर मोहम्मद कारखाना-ए-तिजारत-ए-कुतुब कराची में मुद्रित, पृष्ठ 162।

فتاویٰ رضویہ، جلد ششم

[بایاں کالم] ممنوع و مکروہ تحریمی ست، در متن محقق غزنوی و شرح مدقق علائی ست ولوام قوماً وھم لہ کارھون ان الکرھة لفساد فیہ اولانھم احق بالإمامة منہ کرہ لہ ذلك تحریماً لحدیث ابوداؤد ولا یقبل اللہ صلوة من تقدم قوماً وھم لہ کارھون وان ھو احق لا والکرھة علیھم در مراقی الفلاح علامہ شرنبلالی از کتاب التجنیس والمزید للامام صاحب الہدایہ ست لو امر قوماً وھم لہ کارھون فھو علی ثلثہ اوجہ ان کانت الکراھة لفساد فیہ اوکانوا احق بالإمامة منہ یکرہ وان کان ھو احق بھا منھم ولافاد فیہ ومع ھذا یکرھونہ لا یکرہ لہ التقدم لان الجاھل والفاسق یکرہ العالم والصالح اقول: تحقیق مقام آنست کہ ایجاد و چیزیست یکے فعل آنکس کہ بخودی خود بناگواری قوم پیش رفت وایشاں را مکروہانہ براقتدائے خود داشت دوم نماز را پس او علماء کہ در صورت مذکورہ حکم بکراہت تحریم فرمودہ اند بر اطلاق خودش ناظر بہ اول ست یعنی آنکس را ایس چنیں کردن روانست اگر میکند

[دایاں کالم] زیادہ لائق اور حقدار ہے ایسی صورت میں جس شخص کو امام بنانا قوم مکروہ جانے اس شخص کو امام بننا ممنوع اور مکروہ تحریمی ہے۔ محقق غزنوی کے متن اور شرح مدقق میں ہے اگر کسی شخص نے قوم کی امامت کی حالانکہ وہ لوگ اسے ناپسند کرتے ہوں تو اگر لوگوں کی نفرت امام کے اندر کسی خرابی کی بنا پر ہو یا وہ لوگ بہ نسبت امام کے امامت کے زیادہ حقدار ہوں تو ایسی صورت میں اس شخص کا امام ہونا مکروہ تحریمی ہے اس کی دلیل حدیث ابوداؤد ہے جس میں فرمایا ہے: "اللہ تعالیٰ اس شخص کی نماز قبول نہیں فرماتا جو لوگوں کا امام بنا حالانکہ لوگ اسے ناپسند کرتے تھے"۔ اور اگر وہ امام ہی امامت کا زیادہ حق رکھتا ہو تو اس پر کراہت نہیں بلکہ لوگوں کا نفرت کرنا مکروہ ہوگا۔ علامہ شرنبلالی نے مراقی الفلاح میں صاحب ہدایہ کی کتاب التجنیس والمزید کے حوالے سے ذکر کیا ہے اگر کسی شخص نے قوم کی امامت کی

حالانکہ وہ لوگ اسے ناپسند کرتے ہوں تو اس کی تین صورتیں ہیں: (۱) اگر کراہت خود امام میں فساد کی وجہ سے ہو (۲) یا دوسرے لوگ اس سے امامت کے زیادہ حقدار اور لائق ہوں تو اس کا امام بننا مکروہ ہے (۳) اور اگر وہ امام ہی دوسروں سے زیادہ لائق امامت ہو اور بذات خود اس میں کوئی فساد بھی نہ ہو اس کے باوجود لوگ اسے ناپسند کرتے

---

1 در مختار باب الامامۃ مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱/۸۳ 2 مراقی الفلاح مع حاشیہ الطحطاوی مطبوعہ نور محمد کارخانہ تجارت کتب کراچی ص ۱۶۲

Fatawa Razawiya, Volume Six

[Right Column] ...he becomes a sinner and his own prayer goes void of reward. This is the meaning of their saying: "Kariha lahu dhalik wa yakrahu lahu al-taqaddum" (It is disliked for him that, and it is disliked for him to step forward). As for the second, it follows that Sharia reason which is present in that person and leads them (the congregation) towards dislike in a rightful way, as we have listed. If a rightful reason is a cause for prohibitive dislike in prayer, like wickedness (Fisq), innovation (Bid'at), etc., then the prayer will also be prohibitively disliked (Makruh-e-Tahrimi). Otherwise, it is merely lightly disliked (Tanzihi) as in the case of a slave and similar cases. Do you not see that they explicitly state the dislike for the leadership of these people as 'Tanzihi'? They state this generally and do not restrict their stepping forward to the consent of the people; rather, they justify it by saying it causes the congregation to be repelled. This repulsion arises from their dislike of it. This shows that the prayer is only lightly disliked (Tanzihi), even if stepping forward was prohibitively disliked (Tahrimi) for him because they dislike [him]. If the 'Tanzihi' were restricted by their consent, such that if they disliked it, the prayer would also become prohibitively disliked, then their dislike arising from a Sharia reason would also return to them as a burden/sin, as you would fall into committing a sin which would not have existed if it were not for [their dislike]. This is as you see. And the return to them is in terms of dislike, not based on a correct source as you have known. In short, the cause of dislike is twofold: one is intrinsic, where there is a reason in the person himself that by Sharia makes his leadership generally prohibited or contrary [to preference] in a present congregation...

[Left Column] ...then his being the Imam is not disliked because the ignorant and the wicked dislike the scholar and the righteous people, etc. I say: (I say) the research into this matter is that there are two things here: one is that a person steps forward on his own despite the hatred of the people and forces people to offer prayer under his leadership. The second thing is the matter of the prayer behind such an Imam. The scholars who have ruled it as prohibitively disliked (Makruh-e-Tahrimi) in the mentioned case, its application returns to the first one, meaning for that person it is not permissible to do so; if he did so, he would be a sinner and his prayer would be devoid of reward. This is the meaning of the words "Kariha lahu dhalik wa yakrahu lahu al-taqaddum" mentioned by the jurists. The second thing is following that Sharia reason which is present in the person and motivates the people towards dislike in a rightful way, as we have mentioned some of them. If this reason causes prohibitive

dislike in prayer, for example, wickedness and innovation, etc., then the prayer will also be prohibitively disliked; otherwise, it is lightly disliked (Tanzihi), as is 'Tanzihi' in the case of a slave and his likeness. Don't you see that the jurists have explicitly stated the leadership of these people to be lightly disliked, and the jurists have used general and unrestricted terms in this, and did not restrict their stepping forward to the consent of the people, but rather explained its cause as it necessitates repelling the congregation, and hatred arises because of their dislike. Now this has clarified the matter that the prayer will only be lightly disliked even though his becoming Imam was prohibitively disliked because people disliked him. If lightly disliked...

फतवा रज़विया, छठा खंड

[दायाँ कॉलम] ...वह गुनहगार हो जाता है और उसकी अपनी नमाज़ सवाब से खाली रह जाती है और यही मतलब है उनके कौल 'करिहा लहू ज़ालिक व यकरहु लहू अत-तक़द्दुम' (उसके लिए यह नापसंद है और उसके लिए आगे बढ़ना नापसंद है) का। जहाँ तक दूसरे का सवाल है, तो यह उस शरई वजह के अधीन है जो उस व्यक्ति में मौजूद है और उन्हें हक़ के तौर पर नापसंदगी की ओर ले जाती है, जैसा कि हमने कुछ गिनाए हैं। अगर कोई हक़ वजह नमाज़ में कराहत-ए-तहरीमी (कठोर नापसंदगी) का कारण बनती है जैसे कि फ़िस्क (अधर्म) और बिदअत (नवाचार) आदि, तो नमाज़ भी मकरूह-ए-तहरीमी होगी। वरना सिर्फ़ तन्ज़ीही (हल्की नापसंदगी) होगी जैसा कि गुलाम और उसके जैसे अन्य लोगों के मामले में है। क्या आप नहीं देखते कि वे इन लोगों की इमामत के मकरूह-ए-तन्ज़ीही होने को स्पष्ट करते हैं? वे इसे सामान्य रूप से कहते हैं और उनके आगे बढ़ने को लोगों की सहमति तक सीमित नहीं रखते; बल्कि वे इसका कारण यह बताते हैं कि इसमें जमात (समूह) का बिदकना है। और यह बिदकना उनकी नापसंदगी से ही पैदा होता है। तो यह दर्शाता है कि नमाज़ केवल मकरूह-ए-तन्ज़ीही है, भले ही उनका आगे बढ़ना उनके लिए मकरूह-ए-तहरीमी था क्योंकि वे उन्हें नापसंद करते हैं। अगर तन्ज़ीही उनकी सहमति तक सीमित होती, यहाँ तक कि अगर वे नापसंद करते तो नमाज़ भी मकरूह-ए-तहरीमी हो जाती, तो उनकी नापसंदगी जो शरई वजह से पैदा हुई थी, वह उन पर एक बोझ/पाप के रूप में वापस आती, क्योंकि आप एक पाप करने में पड़ जाते जो तब तक नहीं होता जब तक... यह वैसा ही है जैसा आप देख रहे हैं। और उन पर वापसी कराहत के मामले में है न कि किसी सही दलील के आधार पर जैसा कि आप जानते हैं। संक्षेप में, कराहत का कारण दो प्रकार का है: एक ज़ाती (व्यक्तिगत) है जहाँ व्यक्ति में स्वयं कोई ऐसी वजह हो कि शरीअत के अनुसार उसकी इमामत सामान्य रूप से या मौजूद जमात में निषिद्ध या विरुद्ध हो...

[बायाँ कॉलम] ...तो उसका इमाम होना मकरूह नहीं है क्योंकि जाहिल और फ़ासिक (पापी), विद्वान और नेक लोगों को नापसंद करते हैं आदि। अक़ूल: (मैं कहता हूँ) तहक़ीक़ (शोध) यह है कि यहाँ दो चीज़ें हैं, एक यह कि कोई व्यक्ति लोगों की नफरत के बावजूद खुद-ब-खुद आगे बढ़े और लोगों को अपनी इक़्तेदा (नेतृत्व) में नमाज़ पढ़ने पर मजबूर करे। दूसरी चीज़ ऐसे इमाम के पीछे नमाज़ का मामला है। उलेमा ने उक्त सूरत में जो मकरूह-ए-तहरीमी का हुक्म लगाया है, उसका प्रयोग पहले वाले पर होता है, यानी उस व्यक्ति के लिए ऐसा करना जायज़ नहीं है; अगर उसने ऐसा किया तो वह गुनहगार होगा और उसकी नमाज़ सवाब से खाली रहेगी। फ़ुक़हा द्वारा उल्लेखित शब्दों "करिहा लहू

ज़ालिक व यकरहु लहू अत-तक़द्दुम" का यही अर्थ है। दूसरी चीज़ उस शरई वजह के अधीन है जो उस आदमी में हासिल है और लोगों को हक़ के रास्ते पर कराहत की ओर प्रेरित करती है जैसा कि हमने इसमें कुछ का बयान किया है। अगर यह वजह नमाज़ में कराहत-ए-तहरीमी का कारण हो, जैसे फ़िस्क और बिदअत आदि, तो नमाज़ भी मकरूह-ए-तहरीमी होगी वरना मकरूह-ए-तन्ज़ीही है, जैसा कि गुलाम और उसके हम-मिस्ल (समान) में तन्ज़ीही है। क्या आप नहीं देखते कि फ़ुक़हा ने इन लोगों की इमामत के मकरूह-ए-तन्ज़ीही होने पर स्पष्टीकरण दिया है और फ़ुक़हा ने इसमें सामान्यता से काम लिया और उनके आगे बढ़ने को कौम की रज़ा के साथ शर्तबद्ध नहीं किया बल्कि इसकी वजह यह बयान की कि इसमें जमात को दूर करना लाज़िम आता है और नफरत उनके नापसंद करने की वजह से पैदा होती है। अब इस बात को साफ़ कर दिया कि नमाज़ सिर्फ़ मकरूह-ए-तन्ज़ीही होगी चाहे उसका इमाम बनना मकरूह-ए-तहरीमी था क्योंकि लोग उसे नापसंद करते थे, अगर मकरूह-ए-तन्ज़ीही...

पृष्ठ ७३६ में से ४७३

فتاوٰی رضویہ ، جلد ششم

[دایاں کالم] گناہگار می شود و نماز خود او خالی از ثواب رود و ہذا معنی قولہم کرہ لہ ذلک ویکرہ لہ التقدم و اما الثانی پس تابع آں وجہ شرعی است کہ در آنکس حاصل واینناں را بر وجہ حق بر کراہت حامل است کما عددناہ۔ بعض وجہِ حق اگر نماز موجب کراہت تحریم است کالفسق والبدعۃ وغیرہما نماز نیز مکروہ تحریمی باشد و رنہ مجرد تنزیہی کما فی العبد و نظرائہ الاتری انھم یصرحون بکراھۃ امامۃ ھؤلاء تنزیھا ویرسلون ذلك ارسالا ولا یقیدونہ بتقدمھم برضی القوم بل یعللونہ بأن فیہ تنفیر الجماعۃ وانما النفرۃ تنشؤ عن کراھتھم ذلك فدل ان الصلاۃ لاتکرہ الا تنزیھا وان کان التقدم مکروھا لہ تحریما لانھم کارھون ولو ان التنزیہ کان مقیدا برضاھم حتی لو کرھوا کرھت الصلاۃ ایضا تحریما لکانت کراھتھم التي نشأت عن وجہ شرعی ایضا عائدۃ علیھم بالوبال حیث وقعتم في ارتکاب مأثم لم یکن لولم تکن وھو کما تری و انما العود علیھم في کراھۃ لاعن مستند صحیح کما علمت۔ بالجملہ موجب کراہت دوگونہ است یکے ذاتی کہ خود در آنکس وجہ باشد کہ شرعاً امامت او مطلقاً یا در جماعت حاضرہ ممنوع یا خلاف

[بایاں کالم] ہوں تو اس کا امام ہونا مکروہ نہیں کیونکہ جاہل اور فاسق عالم اور صالح افراد کو ناپسند کرتے ہیں الخ۔ اقول: (میں کہتا ہوں) تحقیق مقام یہ ہے کہ یہاں دو چیزیں ہیں، ایک یہ کہ کوئی شخص خود بخود لوگوں کی نفرت کے باوجود آگے بڑھے اور لوگوں کو اپنی اقتدا میں نماز ادا کرنے پر مجبور کرے دوسری چیز ایسے امام کے پیچھے نماز کا معاملہ ہے، علماء نے صورتِ مذکورہ میں جو مکروہِ تحریمی کا حکم لگایا ہے اس کا اطلاق پہلے کی طرف لوٹ رہا ہے یعنی اس شخص کے لئے ایسا کرنا جائز نہیں ، اگر اس نے ایسا کیا تو گناہگار ہو گا اور اس کی نماز ثواب سے خالی رہے گی فقہا کے ذکر کردہ الفاظ "کرہ لہ ذلك ویکرہ لہ التقدم" کا یہی معنی ہے

دوسری چیز کہ اس شرعی وجہ کے تابع ہے جو اس آدمی میں حاصل ہے اور لوگوں کو کراہت پر بطریقِ حق راغب کرتی ہے جیسا کہ ہم نے اس میں بعض کا بیان کیا ہے اگر یہ وجہ نماز میں کراہتِ تحریمی کا موجب ہو مثلاً فسق اور بدعت وغیرہ تو نماز بھی مکروہِ تحریمی ہو گی ورنہ مکروہِ تنزیہی ہے، جیسا غلام اور اس کے ہم مثل میں تنزیہی ہے۔ کیا آپ نہیں دیکھتے کہ فقہا نے ان لوگوں کی امامت کے مکروہِ تنزیہی ہونے پر تصریح کی ہے اور فقہا نے اس میں ارسال و اطلاق سے کام لیا اور ان کے تقدم کو قوم کی رضا کے ساتھ مقید نہیں کیا بلکہ اس کی علت یہ بیان کی اس میں جماعت کو متنفر کرنا لازم آتا ہے اور نفرت ان کے ناپسند کرنے کی وجہ سے پیدا ہوتی ہے اب اس بات کو واضح کردیا کہ نماز صرف مکروہِ تنزیہی ہو گی اگرچہ اس کا امام بننا مکروہِ تحریمی تھا کیونکہ لوگ اسے ناپسند کرتے تھے، اگر مکروہِ تنزیہی

صفحہ 736 کا 473

[Left Column Text]: ...it was better. As seen in previous examples, the second type is 'Khariji' (extrinsic), which is the community's dislike of his leading the prayer. Again, 'Zati' (intrinsic) is of two types: one due to the 'Haqq' (right) of Shariah, such as transgression (fisq), innovation (bid'at), and ignorance (jahal). The second is due to the 'Haqq' of another person, such as the presence of the owner of the house, the neighborhood Imam, a judge, or a ruler. Since he lacks the merit that the other possesses, it leads to dislikability. This is intrinsic dislikability, and its reason is the consideration of another's right. Thus, this category is like a 'Barzakh' (barrier/ isthmus) between intrinsic and extrinsic. The relationship between these two types of the first classification is 'Amum-o-Khusus min Wajh' (partial overlap). In some cases, it is intrinsic but not extrinsic, such as the community being pleased with the leading of a common slave. In other cases, it is the opposite, such as the community disliking the leading of a pious scholar due to personal enmity. When both occur together, the intrinsic effect is on the prayer itself, while the extrinsic effect is on the person of the Imam or the community, not the prayer. The occurrence of its effect on the Imam is conditional on the first form, otherwise, it reverts to the community. This is contrary to the first, where the effect on the prayer is not dependent on the second form. If the community consents to be led by a sinner, an illegitimate child, or an ignorant person, the prayer is not freed from dislikability. Similarly, if guests choose one from among themselves to lead with their consent but without the owner's consent, the dislikability remains. The first ruling varies between prohibition (tahrim) and light dislike (tanzihi). The second ruling always implies a prohibition for the Imam, but it is removed by the consent of the community because the cause is removed. This is unlike the first category where the consent or dissent of anyone has no role as it is the right of the Pure Shariah. However, in the second category, the consent of the right-holder removes the dislikability even if others do not consent, according to the words of Allah the Almighty.

[Right Column Text]: It should be bound by their consent, so much so that if they dislike it, the prayer will also be 'Makruh-e-Tahrimi' (highly disliked). Therefore, the dislike of the community that arose due to a Shari'i reason, its burden will also fall upon them [the leaders], because if it were not so, then this sin would not exist. And as you have seen the matter, and the returning of the sin upon them is in that dislike which is established by authentic proof. As you have come to know. In short, the cause of 'karahat' (dislikability) is of two types: one is 'Zati' (intrinsic), meaning that a

certain quality is found in the person such that his leading the prayer is absolutely or in the current congregation prohibited or contrary to what is best, as seen in the previous examples. The second is an external cause ('Khariji'), which is that a specific community dislikes him being the Imam. Then, there are two forms of intrinsic cause: one is based on the right of Shariah, for example, being a transgressor, an innovator, or ignorant. Second is due to the right of another person, such as the presence of the master of the house, the locality's Imam, a judge, or a ruler. This is because in this case, this person lacks that additional quality which the other possesses; therefore, dislikability will arise for this reason. Hence, this is intrinsic, and its cause is the consideration of someone else's right. It is as if this category is like a 'Barzakh' (barrier) between intrinsic and extrinsic. And there is a relationship of 'Amum-o-Khusus min Wajh' (partial overlap) between the two types of the first classification: in one instance it is intrinsic but not extrinsic, for example, the community's satisfaction with an ordinary slave leading them; and in another place it is the opposite, for example, the community's dislike for a God-fearing scholar leading them due to personal enmity; and in some places both...

[बायां कॉलम]: ...बेहतर था। जैसा कि पिछले उदाहरणों में देखा गया है, दूसरा प्रकार 'ख़ारिजी' (बाहरी) है, जो समुदाय द्वारा उनके नमाज़ पढ़ाने की नापसंदगी है। फिर, 'ज़ाती' (स्वयं/आंतरिक) दो प्रकार का होता है: एक शरीयत के'हक़' (अधिकार) के कारण, जैसे कि फ़िस्क़ (पाप), बिदअत (नवाचार) और जहल (अज्ञान)। दूसरा किसी अन्य व्यक्ति के'हक़' के कारण, जैसे घर के मालिक, मोहल्ले के इमाम, काज़ी या शासक की उपस्थिति। चूंकि उसमें वह गुण नहीं है जो दूसरे के पास है, इसलिए यह अरुचि (कराहत) का कारण बनता है। यह आंतरिक अरुचि है, और इसका कारण दूसरे के अधिकार का सम्मान है। इस प्रकार, यह श्रेणी आंतरिक और बाहरी के बीच एक 'बरज़ख़' (अंतराल) की तरह है। प्रथम वर्गीकरण के इन दो प्रकारों के बीच का संबंध 'अमूम-ओ-ख़ुसूस मिन वज्ह' (आंशिक समानता) है। कुछ मामलों में, यह आंतरिक होता है लेकिन बाहरी नहीं, जैसे कि एक साधारण गुलाम के नेतृत्व से समुदाय का प्रसन्न होना। अन्य मामलों में, यह इसके विपरीत होता है, जैसे व्यक्तिगत शत्रुता के कारण एक धर्मपरायण विद्वान के नेतृत्व को समुदाय द्वारा नापसंद करना। जब दोनों एक साथ होते हैं, तो आंतरिक प्रभाव स्वयं नमाज़ पर होता है, जबकि बाहरी प्रभाव इमाम या समुदाय पर होता है, नमाज़ पर नहीं। इमाम पर इसके प्रभाव की घटना पहले रूप पर सशर्त है, अन्यथा, यह समुदाय पर वापस आ जाता है। यह पहले के विपरीत है, जहाँ नमाज़ पर प्रभाव दूसरे रूप पर निर्भर नहीं होता है। यदि समुदाय किसी पापी, अवैध संतान या अज्ञानी व्यक्ति के नेतृत्व में नमाज़ पढ़ने के लिए सहमत हो जाता है, तो नमाज़ अरुचि से मुक्त नहीं होती है। इसी तरह, यदि मेहमान अपनी सहमति से इमामत के लिए अपने में से किसी एक को चुनते हैं लेकिन घर के मालिक की सहमति के बिना, तो अरुचि बनी रहती है। पहला नियम निषेध (तहरीम) और हल्की अरुचि (तन्ज़ीही) के बीच भिन्न होता है। दूसरा नियम हमेशा इमाम के लिए निषेध का अर्थ रखता है, लेकिन समुदाय की सहमति से इसे हटा दिया जाता है क्योंकि कारण समाप्त हो जाता है। यह पहली श्रेणी के विपरीत है जहाँ किसी की सहमति या असहमति की कोई भूमिका नहीं है क्योंकि यह शुद्ध शरीयत का अधिकार है। हालाँकि, दूसरी श्रेणी में, अधिकार धारक की सहमति अरुचि को दूर कर देती है, भले ही अन्य लोग सहमत न हों, अल्लाह सर्वशक्तिमान के शब्दों के अनुसार।

[दायां कॉलम]: यह उनकी सहमति के साथ बँधा होना चाहिए, यहाँ तक कि यदि वे नापसंद करें, तो नमाज़ भी 'मक़रूहे तहरीमी' (अत्यधिक नापसंदीदा) होगी। इसलिए, समुदाय की वह नापसंदगी जो शरीयत के किसी कारण से उत्पन्न हुई है, उसका बोझ भी उन्हीं [इमामों] पर पड़ेगा, क्योंकि यदि ऐसा

न होता, तो यह पाप अस्तित्व में नहीं होता। और जैसा कि आपने मामला देखा है, और उन पर पाप का लौटना उस अरुचि में है जो प्रामाणिक प्रमाण से स्थापित है। जैसा कि आप जान गए हैं। संक्षेप में, 'कराहत' (अरुचि) का कारण दो प्रकार का होता है: एक 'ज़ाती' (आंतरिक/स्वयं) है, जिसका अर्थ है कि व्यक्ति में ऐसा कोई गुण पाया जाता है जिससे उसका नमाज़ पढ़ाना पूर्णतः या वर्तमान जमात में वर्जित या श्रेष्ठता के विरुद्ध हो, जैसा कि पिछले उदाहरणों में देखा गया है। दूसरा एक बाहरी कारण ('ख़ारिजी') है, जो यह है कि एक विशिष्ट समुदाय उसके इमाम बनने को नापसंद करता है। फिर, आंतरिक कारण के दो रूप हैं: एक शरीयत के अधिकार पर आधारित है, उदाहरण के लिए, पापी होना, नवाचारी होना, या अज्ञानी होना। दूसरा किसी अन्य व्यक्ति के अधिकार के कारण है, जैसे घर के मालिक, इलाके के इमाम, काज़ी या शासक की उपस्थिति। ऐसा इसलिए है क्योंकि इस मामले में, इस व्यक्ति में वह अतिरिक्त गुण नहीं है जो दूसरे के पास है; इसलिए, इस कारण से अरुचि उत्पन्न होगी। अतः, यह आंतरिक है, और इसका कारण किसी और के अधिकार का सम्मान है। यह ऐसा है मानो यह श्रेणी आंतरिक और बाहरी के बीच एक 'बरज़ख़' (बाधा) की तरह है। और प्रथम वर्गीकरण के दो प्रकारों के बीच 'अमूम-ओ-ख़ुसूस मिन वज्ह' (आंशिक समानता) का संबंध है: एक उदाहरण में यह आंतरिक है लेकिन बाहरी नहीं, उदाहरण के लिए, एक साधारण गुलाम द्वारा नेतृत्व किए जाने पर समुदाय की संतुष्टि; और दूसरी जगह यह इसके विपरीत है, उदाहरण के लिए, व्यक्तिगत शत्रुता के कारण एक धर्मपरायण विद्वान के नेतृत्व को समुदाय की नापसंदगी; और कुछ स्थानों पर दोनों...

[بایاں کالم]: اولیٰ بود چنانچہ امثلہ اش گزشتہ دوم خارجی و آں مکروہ پنداشتن قوم است مر تقدم او را، باز ذاتی بر دو صنف است یکے لحق الشرع چوں فسق وابداع و جہل، دوم لحق الغیر چوں حضور صاحب البیت یا امام الحیہ یا قاضی یا سلطان کہ خلو بہ بیکس از مزیتی کہ دیگری دارد حامل بر کراہت شد ازیں کراہت ذاتی است و وجہ او مراعات حق غیر است پس گویا ایں صنف برزخ است میاں ذاتی و خارجی، و نسبت میاں اینہا یعنی ہر دو قسم تقسیم اول عموم و خصوص من وجہ است، جائے ذاتی یافت شود نہ خارجی چوں رضائے قوم بتقدم غلامے عامی وجائے بالعکس چوں کراہت قوم تقدم عالمی تقی را بعداوت نفسانی و جاہا باہم آیند و تاثیر ذاتی در نفس نماز است واثر خارجی بر ذات امام یا قوم نہ بر نماز، و وقوع اثرش بر امام مشروط بوجہ اول ست ورنہ خود بر قوم باز گردد، بخلاف اول کہ تاثیرش در نماز موقوف بر وجہ ثانی نیست، اگر قوم بتقدم فاسق و ولد الزنا وجاہل راضی شوند نماز از کراہت بری نشود، ہمچناں اگر میہماناں برضائے خود شاں یکے از ایشاں را بامامت بر گیرند بے رضائے صاحب خانہ کراہت نہ رود، و حکم اول متنوع بتحریم و تنزیہ است و حکم دوم در حق امام دائماً تحریم دارد و مندفع میشود برضائے قوم لارتفاع العلیہ بخلاف اول کہ در صنف اول اور ضائے و عدم رضائے کسے را دخلی نیست لکونہ حقاً للشرع المطہر آرے در صنف ثانی رضائے صاحب حق نافی کراہت شود گو رضائے دیگران نباشد لقولہ صلی اللہ تعالیٰ۔

[دایاں کالم]: ان کی رضا کے ساتھ مقید ہو حتیٰ کہ اگر وہ ناپسند کریں تو نماز بھی مکروہ تحریمی ہوگی، تو قوم کی وہ کراہت جو کسی وجہ شرعی کی بنا پر پیدا ہوئی اس کا وبال بھی انہی پر ہوگا کیونکہ ایسا نہ ہوتا تو یہ گناہ بھی نہ ہوتا اور جیسا معاملہ آپ نے دیکھ لیا اور ان پر گناہ کا لوٹنا اس

کراہت میں ہے جو مستند دلیل سے ثابت ہے۔ جیسا کہ آپ نے جان لیا۔ الغرض کراہت کا سبب دو طرح پر ہے، ایک ذاتی کہ اس شخص کے اندر ایسی بات پائی جاتی ہو کہ اس کی امامت مطلقاً یا جماعت حاضرہ میں ممنوع یا خلاف اولیٰ ہو ، جیسا کہ اس کی مثالیں گزریں۔ دوم سبب خارجی ہے وہ یہ کہ قوم خاص اس کے امام بننے کو ناپسند جانتی ہو پھر ذاتی کی دو صورتیں ہیں ایک حق شرع کی بنا پر مثلاً فاسق ہونا ، بدعتی ہونا اور جاہل ہونا۔ دوم غیر کے حق کی وجہ سے مثلاً صاحب خانہ، امام محلہ ، قاضی یا سلطان کا موجود ہونا، کیونکہ اس صورت میں یہ شخص اس اضافی چیز سے خالی ہے جو دوسرے میں ہے لہٰذا اس وجہ سے کراہت آئے گی اس وجہ سے یہ ذاتی ہے اور اس کی وجہ حق غیر کی رعایت ہے گویا یہ قسم ذاتی اور خارجی کے درمیان برزخ کی طرح ہے، اور تقسیم اول کی دو اقسام کے درمیان عموم و خصوص من وجہ کی نسبت ہے ، ایک جگہ ذاتی ہو خارجی نہ ہو مثلاً قوم کا عام غلام کے تقدم پر راضی ہونا، اور دوسری جگہ اس کا عکس ہے مثلاً قوم کا عداوت نفسانی کی وجہ سے متقی عالم کے تقدم کو ناپسند کرنا، اور بعض مقامات پر ان دونوں کا

Fatawa Rizvia Volume 6

[Right Column] ...there is a gathering. The personal (dhaati) effect falls on the prayer itself, while the external (khariji) effect will be on the person of the Imam or the congregation, not on the prayer. The occurrence of an external effect on the Imam is conditional on the existence of the first [occurrence], otherwise, the effect would return to the congregation themselves. This is contrary to the first case (i.e., personal), where its influence on the prayer does not depend on the second aspect. If any congregation agrees to the precedence of a sinner (fasiq), an ignorant person (jahil), or a child born out of wedlock (walad-al-zina), the prayer will not be exempt from dislike (karahat). Similarly, if guests appoint one from among themselves as Imam without the consent of the master of the house, the dislike will not be removed. The ruling for the first category is divided into prohibited (tahrimi) and undesirable (tanzihi), and for the second category, the ruling of prohibition is permanent in favor of the Imam, and this ruling will be lifted upon the congregation's consent because, in this case, the cause (illat) will end with the congregation's consent. This is unlike the first category, where no one's consent or lack thereof has any influence because it is the right of the Pure Sharia. Yes, in the second category, the consent of the right-holder will negate the dislike, even if other people do not agree, because the saying of the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) is that he can be an Imam with his permission.

[Left Column] ...upon him except with his permission (1). And in Rad al-Muhtar from al-Tatarkhaniyah: Guests in a house want one of them to step forward [as Imam]; it is appropriate for the owner [of the house] to step forward. If he puts forward one of them due to his knowledge and age, then that is better (2) etc. Treasure this writing, for perhaps you will not find this fine detail except in this writing. For example, if a blind person is not the most learned of the congregation and the congregation is not pleased with his precedence, then his precedence for him was prohibited dislike (makruh tahrimi) and the prayer behind him is undesirable dislike (makruh tanzihi). And if the congregation is pleased with his precedence, the first dislike will be removed and the second remains. And if he is the most learned of the congregation, then in the state of the congregation's pleasure, there is no dislike at all. And the state of dislike itself is upon the priest (kahin), and the Imam and Imamate are free from the like of that in those three analogues according to what was discussed in al-Bahr and chosen in al-Durr. It has been established explicitly in al-Ikhtiyar and others as mentioned before, even if it is contradicted in al-Nahr. So, there is no saying for

anyone against the explicit text. And Allah Almighty knows best the truth of the situation.

[Bottom Paragraph] In Rad al-Muhtar, it is cited from Tatar Khaniya that if guests in a house want to make someone an Imam, it is appropriate that the owner of the house should be made the Imam. If the owner of the house makes one of them the Imam based on knowledge or seniority, it is better etc. So consider this detailed discussion as a blessing, because besides this writing, you will not find a detailed discussion related to this issue anywhere else. Then, for example, a blind person who is not more learned than the congregation, and the congregation is not pleased with his precedence, making him the Imam will be prohibited dislike (makruh tahrimi) and the prayer behind him will be undesirable dislike (makruh tanzihi). If the congregation is pleased with his precedence, the first dislike will fall away and the second will remain. And if he is more learned than the congregation, then in case of the congregation's pleasure, there will be no dislike. If the congregation dislikes...

[Footnotes] 1. Jami' al-Tirmidhi, Chapter: Who is more entitled to Imamate, printed by Amin Company, Kutub Khana Rashidiyah Delhi, 1/32. 2. Rad al-Muhtar, Chapter on Imamate, printed by Mustafa al-Babi Egypt, p. 413.

[दायां कॉलम] ...एकत्रित होता है, व्यक्तिगत (जाती) प्रभाव नमाज़ पर पड़ता है, जबकि बाहरी (ख़ारजी) प्रभाव इमाम के व्यक्तित्व या समुदाय पर होगा, नमाज़ पर नहीं। बाहरी प्रभाव का घटित होना इमाम के पहले अस्तित्व पर सशर्त है, अन्यथा प्रभाव स्वयं समुदाय पर वापस आ जाएगा। इसके विपरीत पहली (यानी व्यक्तिगत) के मामले में, नमाज़ पर इसका प्रभाव दूसरे पहलू पर निर्भर नहीं है। यदि कोई समुदाय किसी पापी (फासिक), अज्ञानी (जाहिल) या अवैध संतान (वल्द-उल-ज़िना) को आगे करने पर सहमत हो जाता है, तो नमाज़ नापसंदगी (कराहत) से मुक्त नहीं होगी। इसी तरह, यदि मेहमान घर के मालिक की अनुमति के बिना अपने में से किसी एक को इमाम बनाते हैं, तो नापसंदगी खत्म नहीं होगी। पहली श्रेणी का हुक्म तह्रीमी (निषिद्ध) और तंज़ीही (अवांछनीय) में विभाजित है, और दूसरी श्रेणी में इमाम के हक में हमेशा तह्रीमी का हुक्म है, और समुदाय की सहमति पर यह हुक्म हटा लिया जाएगा क्योंकि इस स्थिति में समुदाय की सहमति से कारण (इल्लत) समाप्त हो जाएगा। पहली श्रेणी के विपरीत, जिसमें किसी की सहमति या असहमति का कोई दखल नहीं है क्योंकि वह शरीयत-ए-मुताहरा का अधिकार है। हाँ, दूसरी श्रेणी में हकदार की सहमति नापसंदगी के विपरीत होगी, भले ही अन्य लोग सहमत न हों, क्योंकि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फरमान है कि वह उनकी अनुमति से इमाम हो सकता है।

[बायां कॉलम] ...उन पर सिवाय उनकी अनुमति के(1)। और रद-अल-मुह्तार में तातारखनिया से उद्धृत है: एक घर में मेहमानों में से कोई एक आगे बढ़ना चाहता है; घर के मालिक के लिए आगे बढ़ना उचित है। यदि वह उनके ज्ञान और उम्र के कारण उनमें से किसी एक को आगे बढ़ाता है, तो वह बेहतर है (2) इत्यादि। इस लेखन को गनीमत समझें, क्योंकि शायद आपको यह सूक्ष्म विवरण इस लेखन के अलावा कहीं और नहीं मिलेगा। उदाहरण के लिए, यदि एक अंधा व्यक्ति समुदाय में सबसे अधिक जानकार नहीं है और समुदाय उसे आगे करने पर प्रसन्न नहीं है, तो उसे आगे करना उसके लिए मकरूह-ए-तह्रीमी (निषिद्ध नापसंदगी) था और उसके पीछे नमाज़ मकरूह-ए-तंज़ीही (अवांछनीय) थी। और यदि समुदाय उसे आगे करने पर प्रसन्न हो जाता है, तो पहली नापसंदगी दूर हो जाएगी और दूसरी बनी रहेगी। और यदि वह समुदाय में सबसे अधिक जानकार है, तो समुदाय की प्रसन्नता की स्थिति में कोई नापसंदगी नहीं है। और स्वयं नापसंदगी की स्थिति काहिन (पुरोहित) पर है, और इमाम और इमामत वैसी ही चीज़ों से मुक्त हैं, जैसा कि 'अल-बह्र' में चर्चा की गई है और 'अद-दुर्र' में चुना गया है। यह 'अल-इख़्तियार' और अन्य में स्पष्ट रूप से सिद्ध हो चुका है जैसा कि

पहले बताया गया है, भले ही 'अन-नह्र' में इसका विरोध किया गया हो। इसलिए, स्पष्ट पाठ (नस्स) के विरुद्ध किसी का कोई कहना मान्य नहीं है। और अल्लाह तआला वास्तविकता को सबसे बेहतर जानता है।

[निचला पैराग्राफ] रद-अल-मुह्तार में तातारखनिया से है कि यदि मेहमान किसी घर में किसी को इमाम बनाना चाहें, तो उचित यही है कि घर के मालिक को इमाम बनाया जाए। यदि घर का मालिक उनमें से किसी को ज्ञान या बुजुर्गियत के आधार पर इमाम बनाता है तो वह बेहतर है इत्यादि। अतः इस विस्तृत चर्चा को गनीमत जानें, क्योंकि इस लेखन के अलावा इस मसले से संबंधित विस्तृत चर्चा कहीं नहीं मिलेगी। फिर उदाहरण के लिए एक अंधा व्यक्ति जो समुदाय से अधिक जानकार न हो और समुदाय उसके आगे बढ़ने पर सहमत न हो, तो उसे इमाम बनाना मकरूह-ए-तह्रीमी होगा और उसके पीछे नमाज़ मकरूह-ए-तंज़ीही होगी। यदि समुदाय उसके आगे बढ़ने पर सहमत हो, तो पहली नापसंदगी समाप्त हो जाएगी और दूसरी बनी रहेगी। और यदि वह समुदाय से अधिक जानकार हो, तो समुदाय की सहमति की स्थिति में कोई नापसंदगी नहीं होगी, यदि समुदाय नापसंद...

[पाद टिप्पणियाँ] 1. जामी अल-तिर्मिज़ी, अध्याय: इमामत का अधिक हकदार कौन है, मुद्रित अमीन कंपनी, कुतुब खाना रशीदिया दिल्ली, 1/32। 2. रद-अल-मुह्तार, इमामत का अध्याय, मुद्रित मुस्तफा अल-बाबी मिस्र, पृष्ठ 413।

[دایاں کالم] اجتماع ہوتا ہے، ذاتی کا اثر نماز پر پڑتا ہے، خارجی کا اثر ذاتِ امام یا قوم پر ہوگا نماز پر نہیں خارجی کا وقوع اثر امام پر وجودِ اول سے مشروط ہے ورنہ خود قوم پر اثر لوٹ جائے گا۔ بخلاف پہلی (یعنی ذاتی) کے کہ اس کی تاثیر نماز پر وجہِ ثانی پر موقوف نہیں، اگر کوئی قوم فاسق یا جاہل ولدالزنا کے تقدم پر راضی ہو جاتی ہے تو نماز کراہت سے بری (خالی) نہیں ہوگی۔ اسی طرح اگر مہمان صاحبِ خانہ کی رضا کے بغیر اپنے میں سے کسی ایک کو امام بنائیں تو کراہت ختم نہ ہوگی۔ پہلی صنف کا حکم تحریم و تنزیہ پر منقسم ہے اور دوسری صنف امام کے حق میں دائماً تحریم کا حکم ہے اور قوم کی رضامندی پر یہ حکم مرفوع ہوگا کیونکہ اس صورت میں قوم کی رضامندی سے علت ختم ہو جائے گی۔ بخلاف پہلی صنف کے کہ اس میں کسی کی رضا یا عدمِ رضا کے دخل نہیں کیونکہ وہ شریعتِ مطہرہ کا حق ہے، ہاں دوسری صنف میں صاحبِ حق کی رضا کراہت کے منافی ہو جائیگی اگرچہ دیگر لوگ راضی نہ ہوں، کیونکہ حضور صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کا فرمان ہے کہ اس کے اذن سے امام ہو سکتا ہے۔

[بایاں کالم] علیہ وسلم الا باذنہ ۱ وفی ردالمحتار عن التتارخانیہ اضیاف فی دار یرید ان یتقدم احدہم ینبغی ان یتقدم المالک فان قدم واحدا منھم لعلمہ و کبرہ فھوافضل ۲ الخ اغتنم ھذا التحریر فلعلك لاتجدہ ھذہ التحبیر غیر ھذا التحریر پس اعمی مثلاً اعلم قوم نباشد و قوم ہم بتقدیم او راضی نہ انگاہ تقدم مر او را مکروہ تحریمی بود و نماز پس او مکروہ تنزیہی و اگر قوم بتقدیم او راضی شود کراہت اولی مرتفع شود وثانیہ باقی واگرا علم قوم است پس بحال رضا و رضائے قوم ہیچ کراہتے نیست و حال کراہت خود بر کاہن است و امام وامامت بری مثلہ فی ذلك نظیرانہ الثلاثۃ علی مابحثہ فی البحر

واختارہ فی الدر وقد ثبت منصوصا فی الاختیار وغیرہ کما مروان خالفہ فی النہر فلیس مع النص لا حد مقال واللہ تعالٰی اعلم بحقیقۃ الحال۔

[نچلا پیرا گراف] ردالمحتار میں تاتار خانیہ سے ہے کہ کسی گھر میں اگر مہمان کسی کو امام بنانا چاہیں تو مناسب یہی ہے کہ صاحبِ خانہ کو امام بنایا جائے، اگر صاحبِ خانہ ان میں سے کسی کو علم یا بزرگی کی بنا پر امام بنائے تو افضل ہے الخ۔ پس اسی تفصیلی گفتگو کو غنیمت جان، کیونکہ اس تحریر کے علاوہ اس مسئلہ سے متعلق تفصیلی گفتگو کہیں نہیں ملے گی، پھر نابینا مثلاً جو قوم سے زیادہ عالم نہ ہو اور قوم اس کے تقدم پر راضی نہ ہو تو اس کا امام بنانا مکروہِ تحریمی ہوگا اور اس کے پیچھے نماز مکروہِ تنزیہی ہوگی، اگر قوم اس کے تقدم پر راضی ہو تو پہلی کراہت ساقط دوسری باقی رہے گی۔ اور اگر قوم سے زیادہ عالم ہو تو قوم کی رضا کی صورت میں کوئی کراہت نہ ہوگی، اگر قوم ناپسند

[حواشی] ۱ جامع الترمذی باب من احق بالامامۃ مطبوعہ امین کمپنی کتب خانہ رشیدیہ دہلی ۱/۳۲ ۲ ردالمحتار باب الامامۃ مطبوعہ مصطفیٰ البابی مصر ص ۴۱۳

Fatawa Razawiyya Volume 6

If the hatred is present, it will fall upon those who dislike him, and both the Imam and the leadership will be free from this (hatred). The ruling for the other three is also the same as stated in *Al-Bahr*, and *Durr al-Mukhtar* has preferred it, and there is a clear text (nass) on this in *Al-Ikhtiyar* etc., as previously mentioned. Although there is opposition to this in *An-Nahr*, no one's statement can stand against a clear text, and Allah Almighty knows the reality of the situation best. (T)

Answer to the fourth question:

If the Imam of the locality is free from causes and reasons of defect, then he is most entitled. However, in the presence of the Sultan of Muslims, the Judge of Sharia, and the Governor of Islam, they have precedence over him. In *Ad-Durr al-Mukhtar*: "Know that the owner of the house and likewise the permanent Imam of the mosque are more entitled to the leadership than others absolutely, unless there is a sultan or a judge with him, in which case they are preferred over him due to the generality of their authority." Al-Haddadi explicitly stated the precedence of the governor over the permanent Imam. Allama At-Tahtawi said in the marginalia of *Al-Maraqi*: "It is stated in *Al-Binayah* that this ruling was for the past era because the rulers used to be scholars and righteous people; in our time, most governors are oppressors and ignorant." I recall writing a footnote on this, the text of which is: "I say (Aqul): This is correct, but fitna (strife) is worse than killing; yes, if..."

Answer to the fourth question:

If the Imam of the locality is free from causes and reasons of defect, then it is better for him to remain the Imam. However, in the case where the ruler of the Muslims, the Sharia judge, and the governor of Islam are present, they have the right of precedence over the local Imam. In *Durr al-Mukhtar*, it is stated: "Be clear that the owner of the house and likewise the permanent Imam of the mosque are more entitled to the leadership than others in every case, except in the situation where there is a sultan or a judge with the owner of the house or the appointed Imam, then they will be preferred due to the generality of the ruler's and judge's authority and governance." And Haddadi has explicitly mentioned prioritizing the governor over the designated Imam. And Allama Tahtawi stated in the footnotes of *Al-Maraqi*: "It is stated in *Al-Binayah* that this ruling was for the past era because the rulers (people of authority) used to be scholars and righteous people; in our era, governors are often oppressors and ignorant." I recall that I have written a marginal note on this, the text of which is: "I say (Aqul): This is correct, but strife (fitna) is worse than killing, yes if..."

1. *Durr al-Mukhtar*, Chapter on Imamate, printed at Mujtabai Press, Delhi, 1/83.
2. *Hashiyat al-Tahtawi 'ala al-Maraqi al-Falah*, Section regarding the explanation of who is most entitled to Imamate, printed at Nur Muhammad Karkhana Tijarat Kutub, Karachi, p. 163.

यदि नफरत मौजूद है, तो यह उन लोगों पर होगी जो नापसंद करते हैं, और इमाम और इमामत दोनों इस (नफरत) से बरी होंगे। बाकी तीनों का भी यही हुक्म है जैसा कि अल-बह्र में बताया गया है, और दुर-ए-मुख़्तार ने इसे पसंद किया है, और अल-इख़्तियार आदि में इस पर स्पष्ट पाठ (नस्स) मौजूद है जैसा कि पहले बताया जा चुका है। हालाँकि नह्र में इसका विरोध है, लेकिन स्पष्ट पाठ के सामने किसी का कथन नहीं चल सकता और अल्लाह तआला वास्तविकता को सबसे बेहतर जानता है। (त)

चौथे सवाल का जवाब:

यदि मोहल्ले का इमाम दोष के कारणों और वजहों से मुक्त है, तो वही सबसे उपयुक्त है। लेकिन मुसलमानों के सुल्तान, शरीयत के काज़ी और इस्लाम के गवर्नर की मौजूदगी में, उन्हें उस पर प्राथमिकता प्राप्त है। अद-दुर अल-मुख़्तार में है: "जान लें कि घर का मालिक और उसी तरह मस्जिद का स्थायी इमाम दूसरों की तुलना में इमामत के लिए पूर्णतः अधिक हकदार हैं, सिवाय इसके कि उनके साथ सुल्तान या काज़ी हो, ऐसी स्थिति में उनके शासन की व्यापकता के कारण उन्हें प्राथमिकता दी जाएगी।" अल-हद्दादी ने स्थायी इमाम पर गवर्नर की प्राथमिकता को स्पष्ट किया है। अल्लामा अत-तहतावी ने अल-मराकी के हाशिये में कहा: "अल-बिनाया में उल्लेख है कि यह हुक्म पुराने समय के लिए था क्योंकि शासक विद्वान और नेक लोग हुआ करते थे; हमारे समय में, अधिकांश गवर्नर अत्याचारी और अज्ञानी हैं।" मुझे याद आ रहा है कि मैंने इस पर एक हाशिया लिखा है, जिसका पाठ है:

चौथे सवाल का जवाब:

अगर मोहल्ले का इमाम दोष के कारणों और वजहों से खाली हो तो उसी का इमाम बनना बेहतर है मगर इस सूरत में जब मुसलमानों का हाकिम, काज़ी-ए-शरअ और वाली-ए-इस्लाम मौजूद हों क्योंकि इन हज़रात को इमाम-ए-मोहल्ला पर तक़दीम (प्राथमिकता) का हक़ हासिल है। दुर-ए-मुख़्तार में है, वाज़ेह रहे कि साहब-ए-ख़ाना और इसी तरह मस्जिद का मुक़र्ररा इमाम इमामत के लिए हर हाल में दूसरे लोगों से औला (बेहतर) है, मगर इस सूरत में कि जब साहब-ए-ख़ाना या इमाम-ए-मुअय्यन के साथ सुल्तान या काज़ी हो तो बादशाह और काज़ी के तसर्रूफ व विलायत के आम होने की वजह से इन को मुक़द्दम किया जाएगा और हद्दादी ने वाली को इमाम-ए-मुअय्यन पर मुक़द्दम करने की तसरीह की है। और अल्लामा तहतावी ने हाशिया मराकी में फ़रमाया बिनाया में है यह हुक्म ज़माना-ए-माज़ी में था क्योंकि हुक्मरान (अस्हाब-ए-इख़्तियार) उलमा और सुलहा होते थे, हमारे दौर में वाली अक्सर ज़ालिम और जाहिल हैं। मुझे याद आ रहा है इस पर मैंने हाशिया लिखा है जिस की इबारत यह है अकुल:

चौथे सवाल का जवाब:

"अकुल: (मैं कहता हूँ) यह सही है, लेकिन फ़ितना (कलह) कत्ल से भी बदतर है; हाँ, अगर..."

चौथे सवाल का जवाब:

(मैं कहता हूँ) यह ठीक है लेकिन फ़ितना क़त्ल से बढ़ कर है, हाँ अगर...

---

1. दुर-ए-मुख़्तार, बाब अल-इमामत, मतबूआ मतबा मुजतबाई देहली, 1/83।
2. हाशिया अत-तहतावी अलल मराकी अल-फ़लाह, फ़स्ल फ़ी बयान अल-अहक़ बिल-इमामत, मतबूआ नूर मुहम्मद कारखाना तिज़ारत कुतुब कराची, पृ. 163।

पृष्ठ 736 का 476

کرتی ہو تو کراہت ان لوگوں پر ہوئی جو ناپسند کر رہے ہیں اور امام اور امامت دونوں اس (کراہت) سے بری ہوں گے، باقی تینوں کا بھی یہی حکم ہے جیسا کہ بحر میں بیان کیا، اور درمختار میں اسے پسند کیا ہے، اور اختیار وغیرہ میں اس پر نص موجود ہے جیسا گزرا، اگرچہ نہر میں اس کی مخالفت ہے مگر نص کے مقابل کسی کا قول نہیں چل سکتا اور اللہ تعالٰی حقیقت حال سے زیادہ آگاہ ہے۔ (ت)

جواب سوال چہارم:

اگر امام المحہ از وجوہ خلل خالی است ہموں اولی است مگر در حضرت سلطان مسلمین و قاضی شرع و والی اسلام کہ ایناں را بر و تقدیم ست فی الدر المختار، اعلم ان صاحب البیت ومثلہ امام المسجد الراتب اولی بالامامۃ من غیرہ مطلقا الا ان یکون معہ سلطان او قاض فیقدم علیہ لعموم ولایتھما وصرح الحدادي بتقدیم الوالی علی الراتب اہ قال العلامۃ الطحطاوی فی حاشیۃ المراقی قال فی البنایۃ ھذا فی الزمن الماضی لان الولاۃ کانو علماء وغالبھم کانوا صلحاء وامافي زماننا فاکثر الولاۃ ظلمۃ

جواب سوال چہارم:

اگر محلہ کا امام اسباب و وجوہ خلل سے خالی ہو تو اسی کا امام بننا بہتر ہے مگر اس صورت میں جب مسلمانوں کا حاکم، قاضی شرع اور والی اسلام موجود ہوں کیونکہ ان حضرات کو امام محلہ پر تقدیم کا حق حاصل ہے۔ درمختار میں ہے، واضح رہے کہ صاحب خانہ اور اسی طرح مسجد کا مقررہ امام امامت کے لئے ہر حال میں دوسرے لوگوں سے اولٰی مگر اس صورت میں کہ جب صاحب خانہ یا امام معین کے ساتھ سلطان یا قاضی ہو تو بادشاہ اور قاضی کے تصرف و ولایت کے عام ہونے کی وجہ سے ان کو مقدم کیا جائیگا اور حدادی نے والی کو امام معین پر مقدم کرنے کی تصریح کی ہے اھ اور علامہ طحطاوی نے حاشیہ

جواب سوال چہارم:

جهلة اه ورأيتنى كتبت على هامشه مانصه اقول: نعم ولكن الفتنة اكبر من القتل بببلى ان رضوا بتقديم غيرهم فلا كلام وان كانو علماء صلحاء كما اذا اذن صاحب البيت لغيره والله تعالى اعلم اه ما كتبت عليه

جواب سوال چہارم:

مراقی میں فرمایا بنایہ میں ہے یہ حکم زمانہ ماضی میں تھا کیونکہ حکمران (اصحاب اختیار) علماء اور صلحاء ہوتے تھے، ہمارے دور میں والی اکثر ظالم اور جاہل ہیں اھ مجھے یاد آرہا ہے اس پر میں نے حاشیہ لکھا ہے جس کی عبارت یہ ہے اقول: (میں کہتا ہوں) یہ ٹھیک ہے لیکن فتنہ قتل سے بڑھ کر ہے، ہاں اگر

---

1 درمختار باب الامامۃ مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱ / ۸۳ 2 حاشیہ الطحطاوی علی المراقی الفلاح فصل فی بیان الاحق بالامامۃ مطبوعہ نور محمد کارخانہ تجارت کتب کراچی ص ۱۶۳

Fatawa Razawiyya (Volume 6)

[Top Right Box] And Allah, the Exalted and Praised, knows best.

[Top Left Box] If they themselves are willing to make someone an Imam, then there is no dispute, even if these gentlemen are themselves scholars and righteous people. Just as if the owner of the house gives permission to someone other than himself, there is no objection. And Allah Almighty knows best. Ah! My footnote ends, and Allah be praised and exalted.

Problem 613: Sent by Hafiz Maulvi Amirullah Sahib, 3 Shaban 1315 AH. What do the scholars of religion say in this matter that Zaid has memorized the Holy Quran and his age is approximately 15 years, meaning 3 months short, and he claims not to have had nocturnal emissions (wet dreams). 'The rule of the whole applies to the majority' (And for the majority, the rule of the whole applies. -Translator). Can he, upon reaching puberty, lead the Taraweeh prayer for the purpose of completing the Quran for adults? And can adults perform Taraweeh behind him in case he is not yet pubescent? For example, the guardian of the aforementioned Zaid hired a mature Hafiz and later asked him to listen to this minor's recitation of the Holy Quran in Taraweeh. This employee, due to following this minor, intended to repeat his Taraweeh prayer afterwards. Is there any dislike (karahat) on the doer of this act through this stratagem or not? Most minors lead Taraweeh prayers according to the recommendation of the scholars of Balkh. In case it is not permissible, what is the ruling for those adults who perform Taraweeh following a minor—should they repeat it or not? In case of repetition, is there any wrongdoing (asa'at) on them? Especially if this follower is a Hafiz and leads a congregation of minors because he is their teacher, and then repeats it himself, what is the awkwardness and ugliness in that?

The Answer: Since fifteen years are not yet complete and he manifests that he has not had nocturnal emissions, there is no reason to deny him; his statement is mandatory to accept. And in definitions (legal limits), one cannot say 'the rule of the whole applies to the majority', otherwise the definition would become void, and even at eight years, the rule of puberty would apply because that is also the majority of fifteen. In short, complete fifteen years are required; if even one day is less, then without confession or appearance of signs, the rule of puberty cannot be applied.

[Table Header] In Al-Durr al-Mukhtar: "If neither of them exhibits any signs, then until each of them completes fifteen years; this is the fatwa." | In Durr-e-Mukhtar, it is

stated that if no sign is found in either of them (i.e., boy or girl), it is necessary for each of them to complete fifteen years of age, and the fatwa is based on this. (T)

A minor can lead even obligatory (fara'id) prayers, let alone Taraweeh.

In Radd al-Muhtar: "The non-pubescent, if he is male..." | In Radd-ul-Muhtar, it is stated that if a non-pubescent is male, then his leadership (imamat)...

1 Durr-e-Mukhtar, Chapter on Puberty of a Boy, etc., published by Matba' Mujtabai, Delhi, 3/199. Page 477 of 736

फतावा रज़विया (जिल्द छठा)

[ऊपरी दायां बॉक्स] और अल्लाह, पवित्र और महान, सबसे बेहतर जानता है।

[ऊपरी बायां बॉक्स] अगर वे खुद किसी को इमाम बनाने पर राजी हों तो कोई बात ही नहीं, भले ही ये सज्जन खुद विद्वान और नेक लोग हों। जैसे अगर घर का मालिक अपने अलावा किसी और को अनुमति दे दे तो कोई आपत्ति नहीं। और अल्लाह ताला सबसे बेहतर जानता है। मेरा हाशिया समाप्त हुआ, और अल्लाह पवित्र और महान है।

समस्या 613: प्रेषित हाफिज़ मौलवी अमीरुल्लाह साहिब, 3 शाबान 1315 हिजरी। धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं कि ज़ैद ने पवित्र कुरान कंठस्थ कर लिया है और उसकी आयु लगभग 15 वर्ष है, यानी 3 महीने कम है, और वह दावा करता है कि उसे स्वप्नदोष नहीं हुआ है। 'बहुमत के लिए संपूर्ण का नियम लागू होता है' (और बहुमत के लिए संपूर्ण का नियम लागू होता है। -त)। क्या वह यौवन की आयु में प्रवेश करने पर वयस्कों के लिए कुरान पूरा करने के उद्देश्य से तरावीह की नमाज़ का नेतृत्व कर सकता है? और क्या वयस्क उसकी गैर-यौवन की स्थिति में तरावीह की नमाज़ उसके पीछे पढ़ सकते हैं? उदाहरण के लिए, उपरोक्त ज़ैद के संरक्षक ने एक परिपक्व हाफ़िज़ को काम पर रखा और बाद में कहा कि वह तरावीह में इस नाबालिग के पवित्र कुरान को सुने। इस कर्मचारी ने, इस नाबालिग का अनुसरण करने के कारण, अपनी तरावीह को दोहराने का इरादा किया। क्या इस युक्ति का उपयोग करने के लिए इस व्यक्ति पर कोई नापसंदगी (कराहियत) है या नहीं? अधिकांश नाबालिग बल्ख के शेखों के प्रस्ताव के अनुसार तरावीह की नमाज़ का नेतृत्व करते हैं। यदि यह जायज़ नहीं है, तो उनका क्या हुक्म है, यानी वे वयस्क जो नाबालिग का अनुसरण करते हुए तरावीह पढ़ते हैं, क्या उन्हें इसे दोहराना चाहिए या नहीं? दोहराने की स्थिति में, क्या उन पर कोई बुराई (असात) है? विशेष रूप से यदि यह अनुयायी एक हाफ़िज़ है और शिक्षक होने के कारण नाबालिगों की एक जमात बनाता है और इसे दोहराता है, तो इसमें क्या अजीबोगरीब और बुराई है?

उत्तर: चूंकि अभी पंद्रह साल पूरे नहीं हुए हैं और वह प्रकट करता है कि उसे स्वप्नदोष नहीं हुआ है, इसलिए उसे झुठलाने का कोई कारण नहीं है; उसका कथन स्वीकार करना अनिवार्य है। और परिभाषाओं (सीमाओं) में, कोई यह नहीं कह सकता कि 'बहुमत के लिए संपूर्ण का नियम लागू होता है', अन्यथा परिभाषा शून्य हो जाएगी, और आठ साल में भी यौवन का नियम लागू होगा क्योंकि वह

भी पंद्रह का बहुमत है। संक्षेप में, पूरे पंद्रह साल आवश्यक हैं; यदि एक दिन भी कम हो, तो बिना स्वीकारोक्ति या संकेतों की उपस्थिति के, यौवन का नियम लागू नहीं किया जा सकता।

[तालिका] अल-दुर्र अल-मुख्तार में: "यदि उनमें से किसी में भी कोई संकेत नहीं मिलता है, तो जब तक कि उनमें से प्रत्येक पंद्रह वर्ष पूरे नहीं कर लेता; इसी पर फतवा है।" | दुर्र-ए-मुख्तार में कहा गया है कि यदि उनमें से किसी (यानी लड़का या लड़की) में कोई लक्षण नहीं पाया जाता है, तो उनमें से प्रत्येक के लिए पंद्रह साल की उम्र पूरी करना आवश्यक है, और फतवा इसी पर आधारित है। (त)

नाबालिगों की इमामत तरावीह तो दूर की बात है, एक नाबालिग अनिवार्य (फ़राज़) नमाज़ों का भी नेतृत्व कर सकता है।

रद अल-मुह्तार में: "गैर-यौवन प्राप्त, यदि वह पुरुष है..." | रद-उल-मुह्तार में कहा गया है कि यदि कोई गैर-यौवन प्राप्त पुरुष है, तो उसकी इमामत...

1 दुर्र-ए-मुख्तार, लड़के के यौवन का अध्याय आदि, मुतबा मुजतबाई, दिल्ली द्वारा प्रकाशित, 3/199। पेज 736 में से 477

[اوپر دائیں خانہ] واللہ سبحٰنہ وتعالٰی اعلم۔

[اوپر بائیں خانہ] یہ خود کسی کو امام بنانے ہر رضا مند ہوں تو کوئی کلام ہی نہیں، اگرچہ یہ حضرات خود علماء و صلحاء ہی ہوں جیسا کہ صاحب خانہ اگر اپنے غیر کو اجازت دے دے تو کوئی اعتراض نہیں واللہ تعالٰی اعلم اھ میرا حاشیہ ختم ہوا، واللہ سبحٰنہ وتعالٰی۔

مسئلہ ۶۱۳: مرسلہ حافظ مولوی امیر اللہ صاحب ۳ شعبان ۱۳۱۵ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید نے حفظ قرآن شریف کیا اور عمر اس کی تقریباً ۱۵ برس کی ہے یعنی ۳ ماہ کم ہیں اور احتلام نہ ہونا ظاہر کرتا ہے ولا اکثر حکم الکل (اور اکثر کے لئے کل کا حکم ہوتا ہے۔ت) حد بلوغ میں داخل ہو کر امامت تراویح بغرض ختم قرآن رجال کی کرا سکتا ہے، اور بالغین کی در صورت عدم بلوغ امامت تراویح کرا سکتا ہے مثلاً زید مذکور کے ولی نے کسی حافظِ بالغ کو نوکر رکھا اور بعد کہا کہ اس نابالغ کا قرآن شریف تراویح میں سن اس اجیر نے بوجہ اقتدا اس نابالغ کے قصد کیا کہ میں تراویح کا اعادہ کروں گا اس حیلہ سے اس فاعل پر کوئی کراہت ہے یا نہیں، اکثر نابالغین امامتِ تراویح حسب تجویزِ مشائخِ بلخ کرتے ہیں در صورت عدمِ جوازِ کیا ان کا حکم یعنی ان رجال کا جو تراویح باقتدائے نابالغ ادا کریں اعادہ ہے یا نہیں؟ در صورت اعادہ ان پر کوئی اساءت ہے یا نہیں؟ خصوصاً یہ مقتدی حافظ ہو کر جماعت نابالغ کرے بوجہ استاد ہونے کے اور اعادہ کرے تو اسپر کیا ہجنت و قباحت؟

الجواب: جبکہ ہنوز پندرہ سال کامل نہیں اور وہ احتلام نہ ہونا ظاہر کرتا ہے تو اس کی تکذیب کی کوئی وجہ نہیں قول اس کا واجب القبول ہے اور تحدیدات میں وللا کثر حکم الکل نہیں کہہ سکتے

ورنہ تحدید باطل ہو جائے اور آٹھ برس میں بھی حکم بلوغ ہو کہ پندرہ کا اکثر وہ بھی ہے غرض پورے تمام پندرہ درکار ہیں ایک دن بھی کم ہو تو بے اقرار یا ظہور آثار حکم بلوغ نہیں ہو سکتا،

[جدول] في الدرالمختار فان لم یوجد فیهما شیئی فحتی یتم لکل منهما خمس عشرة سنة به یفتی-1 | درمختار میں ہے اگر دونوں (یعنی لڑکا اور لڑکی) میں کوئی علامت نہ پائی جائے تو ہر ایک کے لئے پندرہ سال عمر کا کامل ہونا ضروری ہے اور اسی پر فتوی ہے (ت)

نابالغوں کی امامت تراویح تو درکنار ،فرائض بھی کر سکتا ہے،

في ردالمحتار غیر البالغ فان کان | ردالمحتار میں ہے غیر بالغ اگر مذکر ہو تو اس کی امامت

1 درمختار فصل بلوغ الغلام الخ مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۳/ ۱۹۹ Page 477 of 736

Fatawa-e-Razvia Volume Six

Mention of the validity of his leadership for those like him, such as males, females, and hermaphrodites. | It is correct, meaning it is correct for him to be the Imam for his peers who are male, female, or hermaphrodites (T).

But he cannot lead adults at all according to the most correct school of thought, even in Tarawih and voluntary prayers.

In Radd al-Muhtar, it is not valid for a man to follow a child absolutely, even in voluntary prayers according to the most correct view.[2] | In Radd al-Muhtar, according to the most correct opinion, it is not correct for an adult male to follow a child in any case, even if it is a voluntary prayer (T).

It is in al-Hidayah:

The preferred view is that it is not permissible in all prayers.[3] | The preferred opinion is that his leadership is not valid in all prayers. (T)

There is certainly dislike for this adult Hafiz in this stratagem based on the most correct school of thought because he is engaged in what is invalid (due to being occupied in an action that is not correct. T). It is in Durr al-Mukhtar:

The Eid prayer in villages is prohibitively disliked (Makruh Tahrimi), meaning because it is an engagement in what is invalid.[4] | Performing Eid prayers in villages is prohibitively disliked because it involves engaging in an action that is incorrect. (T)

According to the most correct school of thought, there is no wrong in repeating these prayers for these adults; rather, there is wrong in omitting the repetition. Teacher and non-teacher are all equal in this ruling. However, if a Hafiz who recites correctly is not available except for a non-adult, then by following the Mashaykh of Balkh, they should complete the Sunnah (of finishing the Quran). Because performing it according to one opinion is better than omitting it entirely (T). It is in Durr al-Mukhtar:

Performing it, which is valid according to some, is better than omitting it, as in al-Qunyah and others.[5] | According to some, performing it is permissible and better than omitting it, as mentioned in Qunyah etc. (T)

Then it is appropriate that, considering the most correct school of thought, they repeat the Tarawih prayer to achieve precaution to the extent possible (so that precaution is achieved as much as possible. T).

---

1. Radd al-Muhtar, Chapter on Imamate, published by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/427
2. Durr al-Mukhtar, Chapter on Imamate, published by Mujtabai, Delhi, 1/84
3. Al-Hidayah, Chapter on Imamate, published by al-Maktabah al-Arabiyyah, Karachi, 1/103
4. Durr al-Mukhtar, Chapter on Eidain, published by Matba' Mujtabai, Delhi, 1/114
5. Durr al-Mukhtar, Book of Prayer, published by Matba' Mujtabai, Delhi, 1/61

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

उसकी इमामत की वैधता का उल्लेख उसके जैसे लोगों के लिए, जैसे पुरुष, महिला और उभयलिंगी।[1] | यह सही है, यानी उसका अपने हम-नस्ल पुरुष, महिला और उभयलिंगी का इमाम बनना सही है (त)।

लेकिन बालिग़ों की इमामत मज़हब-ए-असह (सबसे सही विचारधारा) में बिल्कुल नहीं कर सकता, यहाँ तक कि तरावीह और नफ़ल नमाज़ों में भी।

रद-उल-मुह्तार में है, किसी भी स्थिति में बच्चे के पीछे बालिग़ की इमामत वैध नहीं है, चाहे वह नफ़ल ही क्यों न हो।[2] | रद-उल-मुह्तार में है, सबसे सही कथन के अनुसार, बालिग़ पुरुष का बच्चे के पीछे नमाज़ पढ़ना किसी भी हाल में सही नहीं है, भले ही वे नफ़ल हों (त)।

हिदाया में है:

पसंदीदा राय यह है कि सभी नमाज़ों में यह जायज़ नहीं है।[3] | पसंदीदा कथन यह है कि सभी नमाज़ों में उसकी इमामत सही नहीं है। (त)

इस बालिग़ हाफ़िज़ पर इस बहाने में मज़हब-ए-असह के आधार पर निश्चित रूप से नापसंदगी (कराहियत) है, क्योंकि वह उस काम में व्यस्त है जो सही नहीं है (ऐसे काम में लगे होने के कारण जो सही नहीं है। त)। दुर्रे मुख्तार में है:

गाँवों में ईद की नमाज़ मकरूह-ए-तहरीमी (कड़ी मनाही) है, क्योंकि यह एक ऐसे कार्य में संलग्न होना है जो वैध नहीं है।[4] | देहातों में ईद अदा करना मकरूह-ए-तहरीमी है क्योंकि यह ऐसे काम में मशरूफ़ होना है जो ग़लत है (त)।

सबसे सही विचारधारा (मज़हब-ए-असह) में इन बालिग़ों पर (नमाज़) दोहराने में कोई बुराई नहीं होती, बल्कि न दोहराने में बुराई है। उस्ताद और ग़ैर-उस्ताद सभी इस हुक्म में बराबर हैं। हाँ, अगर बालिग़ के सिवा कोई सही पढ़ने वाला हाफ़िज़ न मिले, तो बल्ख के मशायख़ (बुज़ुर्गों) के अनुसरण में सुन्नत ख़त्म (कुरआन पूरा करना) कर लें। क्योंकि एक कथन के अनुसार अदा करना बिल्कुल छोड़ देने से बेहतर है (त)। दुर्रे मुख्तार में है:

अदा करना, जो कुछ के अनुसार जायज़ है, छोड़ देने से बेहतर है, जैसा कि कुनिया आदि में है।[5] | कुछ के नज़दीक अदा करना जायज़ है और छोड़ देने से बेहतर है, जैसा कि कुनिया वग़ैरह में है। (त)

फिर उचित यह है कि सबसे सही विचारधारा के लिहाज़ से तरावीह को दोहरा लें ताकि यथासंभव सावधानी (एहतियात) हासिल हो जाए (ताकि जितनी मुमकिन हो एहतियात हासिल हो जाए। त)।

---

1. रद-उल-मुह्तार, बाब अल-इमामत, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 1/427
2. दुर्रे मुख्तार, बाब अल-इमामत, मुजतबाई, दिल्ली, 1/84
3. अल-हिदाया, बाब अल-इमामत, अल-मकतब-तुल-अरबिया, कराची, 1/103
4. दुर्रे मुख्तार, बाब अल-ईदैन, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 1/114
5. दुर्रे मुख्तार, किताबुस-सलात, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 1/61

ذکر اصح امامته لمثله من ذکر وانثی وخنثٰی۔[1] | درست ہے یعنی اس کا اپنے ہم مثل مذکر، مؤنث اور خنثٰی کا امام بننا درست ہے (ت)۔

مگر بالغوں کی امامت مذہب اصح میں مطلقاً نہیں کر سکتا حتٰی کہ تراویح و نافلہ میں بھی۔

فی ردالمحتار لایصح اقتداء الرجل بصبی مطلقا ولو فی نفل علی الاصح۔[2] | ردالمحتار میں ہے اصح قول کے مطابق بالغ مرد کا بچے کی اقتداء کرنا ہر حال میں درست نہیں اگرچہ نفل ہوں (ت)

ہدایہ میں ہے:

المختار انه لا یجوز فی الصلوات کلها۔[3] | مختار قول یہ ہے کہ سب نمازوں میں اس کی امامت درست نہیں۔ (ت)

اس حافظ بالغ پر اس حیلہ میں بربنائے مذہب اصح ضرور کراہت ہے لاشتغاله بما لایصح (بسبب ایسے عمل میں مشغول ہونے کے جو صحیح نہیں ہے۔ت) در مختار میں ہے:

صلاة العید فی القری تکره تحریما ای لانه اشتغال بما لایصح۔[4] | دیہاتوں میں عید ادا کرنا مکروہ تحریمی ہے کیونکہ یہ ایسے عمل میں مصروف ہونا ہے جو نادرست ہے(ت)

مذہب اصح میں ان بالغین پر اعادہ میں اساءت کیا ہوتی بلکہ ترک اعادہ میں اساءت ہے استاذ غیر استاذ سب اس حکم میں برابر ہیں، ہاں اگر حافظ صحیح خواں سوا نابالغ کے نہ ملتا ہو تو باتباع مشائخ بلخ سنّت ختم حاصل کرلیں فان الاداء علی قول خیر من الترك مطلقا (کیونکہ ایک قول کے مطابق ادا کرنا مطلقاً ترک کرنے سے بہتر ہے ۔ ت) در مختار میں ہے:

الاداء الجائز عند البعض اولی من الترك کما فی القنیة وغیرها۔[5] | بعض کے نزدیک جائز ادا، ترک سے اولیٰ ہے، جیسا کہ قنیہ وغیرہ میں ہے۔ (ت)

پھر مناسب یہ ہے کہ بلحاظ مذہب اصح اعادہ تراویح کرلیں لیحصل الاحتیاط بالمقدر المیسور (تاکہ بقدر میسر احتیاط حاصل ہو جائے۔ ت)

---

1 ردالمحتار باب الامامة مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/ ۴۲۷ 2 درمختار باب الامامة مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱/ ۸۴ 3 الهداية باب الامامة مطبوعہ المکتبة العربیة کراچی ۱/ ۱۰۳ 4 درمختار باب العیدین مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۱۱۴ 5 درمختار کتاب الصلوة مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۶۱

Fatawa Razawiyya - Volume 6

...so that ease and caution are achieved. (T) And Allah Almighty knows best.

Problem 614: What do the scholars of religion say regarding this matter? Hindah, the wife of Zaid, lived separately for some days. Now, leaving Zaid, she wanted to marry Bakr. After staying with Zaid for a few days, she obtained a divorce certificate from him. There is a gentleman who is the local prayer leader (Pesh Imam) and also acts as the Qazi (Judge). She showed him the divorce certificate. The Pesh Imam read it himself, and others also read it out to him. Everyone, including Hindah's mother, told the Pesh Imam that a marriage cannot take place until the days of 'Iddah (waiting period) are complete. The Pesh Imam said, "You people do not know; the marriage will definitely take place." Consequently, at night, the Maulvi Sahib (Pesh Imam) went to Bakr's house himself and performed the marriage. In fact, Hindah's mother did not even come when called for this marriage. The marriage was performed out of carnal desire, and the Imam Sahib has performed a few more such marriages before. The Imam Sahib is a Maulvi and often gives fatwas of this nature.

2- Inside the mosque, due to a pump, there is plenty of water. People from the market and the neighborhood wash their home clothes there. Splashes of clean and unclean water fall on the mosque's vessels, pots, and floor. When someone forbids people from washing clothes, the Maulvi Sahib speaks ill of the one who forbids and is ready to hit that person. A laundry (dhobi ghat) exists daily in the mosque. Many people also get their hair shaved or beards trimmed inside the mosque, but the Maulvi Sahib does not stop anyone.

3- The Maulvi Sahib has been appointed to this mosque from a distance. He stays here for four months, and for the remaining eight months, he stays outside in cities delivering sermons and collecting donations. In short, he takes his salary from here for the entire year. When anyone tells him, "Maulvi Sahib, there is no one available to lead prayers here in your absence, we face great difficulty," he replies, "I will remain like this; I don't care about the salary of this mosque [idiom: I hit it with a tuft of wool]." And he allows those men whose women wander outside to lead the prayers. That is all, please honor us with an answer.

The Answer: The person whose circumstances, habits, words, and actions are as described is not just a transgressor (fasiq), but a clear deviant and irreligious person. Marriage within the 'Iddah period is unlawful and strictly forbidden (haraam-e-qati), the prohibition of which is proclaimed by the Great Speaker (the Quran) itself:

“And divorced women shall wait [concerning] themselves for three monthly periods.” (1)	**It is the command of Allah Almighty: Those women who are divorced should keep themselves waiting for three menstrual cycles. (T)**

It is obligatory (fard) upon Muslims to remove him from the mosque. It is a sin to make him an Imam, and praying behind him is, at the very least, severely [disliked].

---

1. Al-Quran 2/228 Page 479 of 736

फ़तावा रज़विया - जिल्द छठी

...ताकि आसानी और एहतियात हासिल हो जाए। (त) और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 614: दीन के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं कि हिन्दा, जो ज़ैद की पत्नी थी, कुछ दिनों के लिए अलग रही। अब वह ज़ैद को छोड़कर बक्र से निकाह करना चाहती थी। ज़ैद के पास कुछ दिन रहकर उसने उससे तलाकनामा लिखवा लिया। उस जगह के जो पेश इमाम साहब हैं और वही काज़ी भी हैं, उन्हें तलाकनामा दिखाया गया। पेश इमाम साहब ने खुद भी पढ़ा और अन्य लोगों ने भी पढ़कर उन्हें सुनाया। हिन्दा की माँ समेत सबने पेश इमाम साहब से कहा कि जब तक इद्दत (प्रतीक्षा अवधि) के दिन पूरे न हो जाएं निकाह नहीं हो सकता। पेश इमाम साहब ने कहा कि तुम लोग नहीं जानते, निकाह ज़रूर हो जाएगा। चुनाँचे रात को मौलवी साहब पेश इमाम ने खुद बक्र के घर जाकर निकाह पढ़ा दिया, यहाँ तक कि हिन्दा की माँ बुलाने पर भी इस निकाह में नहीं आई। निकाह नफ़्सानी लालच में पढ़ाया गया और इमाम साहब पहले भी इस तरह के दो-चार निकाह पढ़ा चुके हैं। इमाम साहब मौलवी हैं और अक्सर इस तरह के फतवे भी देते रहते हैं।

2- मस्जिद के अंदर पंप होने की वजह से पानी की अधिकता है। बाज़ार और मोहल्ले के लोग अपने घर के कपड़े वहाँ धोते हैं। मस्जिद के घड़ों, लोटों और फर्श पर पाक-नापाक छींटे पड़ते हैं। जब कोई दूसरा व्यक्ति कपड़े धोने वालों को मना करता है, तो मौलवी साहब मना करने वाले को बुरा-भला कहते हैं और उस आदमी को मारने को तैयार हो जाते हैं। मस्जिद में रोज़ाना धोबी घाट लगा रहता है। अक्सर लोग मस्जिद के अंदर ख़त यानी हजामत भी बनवाते हैं, लेकिन मौलवी साहब किसी को नहीं रोकते।

3- मौलवी साहब इस मस्जिद में दूर से नियुक्त हैं। वह यहाँ चार महीने रहते हैं और बाकी आठ महीने बाहर शहरों में वाज़ (प्रवचन) करते हैं और अपनी उगाही करते हैं। संक्षेप में, यहाँ से भी पूरे साल का वेतन लेते हैं। जो कोई उनसे कहता है कि "मौलवी साहब, आपके पीछे यहाँ नमाज़ पढ़ाने वाला मयस्सर (उपलब्ध) नहीं होता, हम लोगों को बहुत तकलीफ़ होती है," तो वे कहते हैं, "हम तो ऐसे ही रहेंगे, मैं इस मस्जिद की तनख्वाह को पश्म (ऊन के रेशों) पर मारता हूँ [मुहावरा: परवाह नहीं करता]।" और जिन लोगों की औरतें बाहर घूमने फिरने वाली हैं, उन्हें मौलवी साहब नमाज़ पढ़ाने की इजाज़त देते हैं। बस, जवाब से नवाज़ें।

अल-जवाब: जिस व्यक्ति की ऐसी हालत, आदतें, बातें और काम हों, वह न केवल फासिक (पापी) है बल्कि एक खुला हुआ गुमराह और बेदीन है। इद्दत के अंदर निकाह नाजायज़ और कतई हराम है, जिसकी हुरमत (निषेध) पर खुद अज़ीम नातिक (महान बोलने वाला - कुरान) गवाह है:

وَالْمُطَلَّقٰتُ يَتَرَبَّصْنَ بِاَنْفُسِهِنَّ ثَلٰثَةَ قُرُوْٓءٍ (1)	**अल्लाह तआला का फरमान है, वे औरतें जो तलाकशुदा हो जाएँ वे अपने आप को तीन हैज़ (मासिक धर्म) तक रोके रखें। (त)**

मुसलमानों पर फ़र्ज़ है कि उसे मस्जिद से बेदखल करें, उसे इमाम बनाना गुनाह है और उसके पीछे नमाज़ कम से कम सख्त [मक़रूह है]।

---

1. अल-कुरान 2/228 पेज 479 of 736

آسانی احتیاط حاصل ہوجائے ۔ت) واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۶۱۴ : کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ہندہ زید کی بیوی کچھ روز علیحدہ رہی اب اس نے زید کو چھوڑ کر بکر سے نکاح کرنا چاہا اور اب ہندہ زید کے پاس جاکر دو چار روز رہی اس سے طلاق نامہ لکھوا لائی اس جگہ کے جو صاحب پیش امام ہیں اور وہی قاضی بھی ہیں ان کو طلاق نامہ دکھایا پیش امام صاحب نے خود بھی پڑھا اور لوگوں نے بھی پڑھ کر پیش امام صاحب کو سنایا اور سب نے مع مادر ہندہ پیش امام صاحب سے کہا جب تک عدت کے دن پورے نہ ہوں نکاح نہیں ہو سکتا پیش امام صاحب نے فرمایا کہ تم لوگ نہیں جانتے ہو ضرور نکاح ہو جائے گا۔ چنانچہ رات کو مولوی صاحب پیش امام نے بکر کے خود گھر جاکر نکاح پڑھا دیا بلکہ ہندہ کی والدہ اس نکاح میں بلانے سے بھی نہیں آئی نکاح بطمع نفسانی پڑھایا گیا اور پہلے بھی اس قسم کے دو چار نکاح امام صاحب اور پڑھ چکے ہیں۔ امام صاحب مولوی ہیں اور اکثر اس قسم کے فتوے بھی دیتے رہتے ہیں۔

۲- مسجد کے اندر بوجہ پمپ ہونے کے پانی کی کثرت ہے بازار اور محلہ کے آدمی اپنے گھروں کے کپڑے دھوتا ہیں پاک ناپاک چھینٹیں مسجد کے گھڑے لوٹے فرش مسجد پر پڑتی ہیں دوسرا آدمی کپڑے دھونے والوں کو منع کرتا ہے تو مولوی صاحب منع کرنے والے کو برا کہتے ہیں اور مارنے کو اس آدمی کے آمادہ ہوتے ہیں مسجد میں روزمرہ دھوبی گھاٹ رہتا ہے اکثر لوگ مسجد کے اندر خط یعنی حجامت بھی بنواتے ہیں مگر مولوی صاحب کسی کے مانع نہیں آتے،

۳- دور سے مولوی صاحب اس مسجد میں مقرر ہیں چار مہینے اس جگہ رہتے ہیں باقی آٹھ ماہ باہر اور شہروں میں وعظ کہتے ہیں اور اپنی اوگھائی کرتے ہیں غرض یہاں سے بھی اپنی تنخواہ سال تمام کی لیتے ہیں۔ جو کوئی ان سے کہتا ہے کہ مولوی صاحب پیچھے آپ کے یہاں پر نماز پڑھانے والا میسر نہیں آتا ہم لوگوں کو بہت تکلیف ہوتی تو فرماتے ہیں ہم تو ایسے ہی رہیں گے اس مسجد کی تنخواہ میں پشم پر مارتا ہوں۔ اور جن لوگوں کی عورتیں باہر کی پھرنے والی ہیں ان کو مولوی صاحب نماز پڑھانے کی اجازت فرماتے ہیں۔ فقط، جواب سے مشرف فرمائیے۔

الجواب : جس شخص کے وہ حالات و عادات و اقوال وافعال ہوں وہ نہ را فاسق ہی نہیں بلکہ کھلا گمراہ بددین ہے۔ عدت کے اندر نکاح ناجائز و حرام قطعی ہے جس کی حرمت پر خود عظیم ناطق :

وَالْمُطَلَّقٰتُ يَتَرَبَّصْنَ بِاَنْفُسِهِنَّ ثَلٰثَةَ قُرُوْۗءٍ (1)

اللہ تعالیٰ کا فرمان ہے وہ عورتیں جو مطلقہ ہوجائیں وہ اپنے آپ کو تین حیض تک روکے رکھیں۔ (ت)

مسلمانوں پر فرض ہے کہ اس کو مسجد سے معزول کریں، اسے امام بنانا گناہ ہے اور اس کے پیچھے نماز کم از کم سخت

---

1 القرآن ۲/۲۲۸

Volume 6 Fatawa Razawiyya Abominable (Makruh). When the state of his sinfulness and audacity is such, what assurance is there that he might lead prayers without ablution (Wudu), or out of laziness in taking a bath (Ghusl) during winter or otherwise, lead the congregation without bathing? After all, praying without a bath is no less a sin than validating a marriage during the waiting period (Iddah). It is stated in Ghunyah Sharh Munyah:

Arabic Text

If they appoint a sinful person (Fasiq), they would be sinning because the abomination of appointing him is of a prohibitively disliked nature (Makruh Tahrimi). This is because he is negligent in religious matters and lax in fulfilling its requirements and obligations. It is not far-fetched that he might omit some conditions of the prayer or perform acts contrary to it. In fact, considering his sinfulness, such behavior is most likely. For this reason, according to Imam Malik, prayer behind him is not valid at all. There is also a similar narration from Imam Ahmad bin Hanbal. (T)

Urdu Translation

Because if people appoint a sinful person (Imam), they will be sinners because the abomination of this appointment is Makruh-e-Tahrimi. This is because he exhibits carelessness in religious matters and acts with negligence in fulfilling the requirements and obligations of religious affairs. It is not far-fetched that he may commit the omission of some conditions of prayer and perform some acts contrary to prayer. Rather, in view of his sinfulness, doing so is a strong presumption. For this reason, according to Imam Malik, prayer is not valid behind him at all. There is also a narration from Imam Ahmad bin Hanbal to this effect. (T)

And his audacity in the matter of prayer and his disregard for purity and impurity are evident from the account given by the questioner: that he does not stop those who wash impure clothes in the mosque, but rather considers it bad to stop them and becomes ready to fight. Given this condition, prayer behind him cannot be permitted at all. And Allah the Almighty knows best.

Problem 615: From Banaras, Kandi Garhtola neighborhood, Bibi Raji Mosque, near the clinic, sent by Maulvi Hakim Abdul Ghafoor Sahib, 20 Muharram-ul-Haram 1316 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter? In the city of Banaras, there is a mosque near the civil court where daily and Friday prayers are held. For a long time, at the suggestion of the district magistrate, a meeting of Muslims was held for the purpose of demolishing the said mosque. Among other things, it was stated that digging up the mosque in exchange for another property is permissible

according to the books of jurisprudence (Fiqh), so this mosque should be dug up and another mosque should be prepared by the government in its place, even though digging up a mosque is not permissible according to Fiqh. It is stated in Alamgiriyah:

Arabic Text	Urdu Translation
If there were a mosque in a neighborhood that became too narrow for its residents and they could not expand it, then some asked them...	If a neighborhood mosque has become narrow for its residents and they are unable to expand it, then regarding this issue, some...

1. Ghunyatul Mustamli Sharh Munyatul Musalli, Chapter on Imamate, etc., published by Suhail Academy Lahore, p. 513. Page 480 of 736

खण्ड 6 फ़तावा रज़विया मक़रूह (घृणित), जब उसकी अवज्ञा और ढिठाई की यह स्थिति है तो क्या भरोसा कि वह बिना वज़ू नमाज़ पढ़ा देता हो या सर्दियों के दिनों में या वैसे ही नहाने के आलस्य के कारण बिना नहाए इमामत (नेतृत्व) कर लेता हो, आखिरकार बिना ग़ुस्ल (स्नान) के नमाज़ पढ़ना इद्दत में निकाह जायज़ कर देने से ज़्यादा नहीं है। ग़ुनिया शरह मुनिया में है:

अरबी पाठ

अगर उन्होंने किसी पापी को इमाम बनाया तो वे पापी होंगे क्योंकि उसे नियुक्त करने की मक़रूहत 'मक़रूह-ए-तहरीमी' है क्योंकि वह धार्मिक मामलों में लापरवाही बरतता है और धार्मिक आवश्यकताओं और अनिवार्यताओं को पूरा करने में सुस्ती दिखाता है। यह असंभव नहीं है कि वह नमाज़ की कुछ शर्तों को छोड़ देता हो और नमाज़ के विरुद्ध कुछ कार्य करता हो, बल्कि उसकी अवज्ञा को देखते हुए ऐसा होना ही प्रबल संभावना है। इसीलिए इमाम मालिक के अनुसार उसके पीछे नमाज़ बिल्कुल नहीं होती। इमाम अहमद बिन हंबल से भी एक रिवायत इसी तरह है। (त)

उर्दू अनुवाद

क्योंकि अगर लोगों ने किसी पापी (फ़ासिक़) को इमाम बना दिया तो इस आधार पर पापी होंगे कि उसकी नियुक्ति की मक़रूहत मक़रूह-ए-तहरीमी है, क्योंकि वह धार्मिक मामलों में लापरवाही बरतता है और धार्मिक मामलों की आवश्यकताओं और अनिवार्यताओं को पूरा करने में सुस्ती से काम लेता है। यह दूर की बात नहीं है कि वह नमाज़ की कुछ शर्तों को खाली छोड़ने का अपराध करता हो और नमाज़ के विपरीत कुछ कार्य करता हो, बल्कि उसकी अवज्ञा को देखते हुए ऐसा करना प्रबल संभावना है। इसीलिए इमाम मालिक के निकट उसके पीछे नमाज़ होती ही नहीं। इमाम अहमद बिन हंबल से भी एक रिवायत इसी तरह है। (त)

और स्वयं नमाज़ के मामले में उसकी ढिठाई और पवित्रता-अपवित्रता के प्रति उसकी लापरवाही प्रश्नकर्ता के इस बयान से स्पष्ट है कि वह मस्जिद में नापाक कपड़े धोने वालों को नहीं रोकता, बल्कि रोकने को बुरा मानता है और लड़ने पर उतारू हो जाता है। जिसकी यह स्थिति हो, उसके पीछे नमाज़ की कतई अनुमति नहीं दी जा सकती। और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

मसला 615: बनारस, मोहल्ला कंडी गढ़टोला, बीवी राजी मस्जिद, शफ़ाख़ाने के पास से, प्रेषक मौलवी हकीम अब्दुल ग़फ़ूर साहब, 20 मुहर्रम-उल-हराम 1316 हिजरी। धर्म के विद्वान इस विषय में क्या कहते हैं कि बनारस शहर में दीवानी कचहरी के पास एक मस्जिद है जहाँ दैनिक और जुमे की नमाज़ होती है। लंबे समय से ज़िला मजिस्ट्रेट के सुझाव पर मुसलमानों की एक बैठक उक्त मस्जिद

को ढहाने के उद्देश्य से हुई थी। अन्य बातों के अलावा यह कहा गया कि फ़िक़्ह (इस्लामी न्यायशास्त्र) की किताबों के अनुसार किसी अन्य स्थान के बदले मस्जिद को खोदना जायज़ है, इसलिए इस मस्जिद को खोद दिया जाए और इसके बदले सरकार की ओर से दूसरी मस्जिद तैयार कर दी जाए, जबकि फ़िक़्ह के अनुसार मस्जिद को खोदना जायज़ नहीं है। आलमगीरिया में है:

अरबी पाठ	**उर्दू अनुवाद**
यदि किसी मोहल्ले की मस्जिद वहाँ के लोगों के लिए तंग हो जाए और वे उसमें विस्तार न कर सकें तो उनमें से कुछ ने पूछा...	अगर मोहल्ले की मस्जिद मोहल्ले वालों के लिए तंग हो गई हो और वे उसमें विस्तार न कर सकते हों, तो इस मसले के संबंध में कुछ...

1. ग़ुनियातुल मुस्तमली शरह मुनियातुल मुसल्ली, इमामत का अध्याय आदि, सुहैल एकेडमी लाहौर द्वारा प्रकाशित, पृ. 513 पृष्ठ 480/736

جلد ششم فتاوی رضویہ مکروہ ، جب اس کے فسق و بیباکی کی یہ حالت ہے تو کیا اعتبار کہ بے وضو نماز پڑھا دیتا ہو یا جاڑے کے دنوں میں خواہ ویسے ہی نہانے کی کاہلی سے بے نہائے امامت کر لیتا ہو ، آخر بے غسل کے نماز پڑھنا عدت میں نکاح جائز کر دینے سے زیادہ نہیں ہے۔ غنیہ شرح منیہ میں ہے :

عربی عبارت	اردو ترجمہ
انھم لو قدموا فاسقاً یا ثمون بناء علی ان کراھة تقدیمه کراھة تحریم لعدم اعتنائه بامور دینه وتساھله فی الاتیان بلوازمه فلا یبعد منه الاخلال ببعض شروط الصلاة وفعل بما ینا فیھا بل ھو غالب بالنظر الی فسقه ولذا لم تجز الصلوة خلفه اصلا عند مالك وھو روایة عن احمد١ -	کیونکہ اگر لوگوں نے کسی فاسق کو مقدم (امام) کر دیا تو اس بنا پر گنہ گار ہوں گے کہ اس تقدیم کی کراہت مکروہ تحریمی ہے کیونکہ امور دینیہ میں لاپرواہی برتتا ہے اور امور دینیہ کے تقاضوں اور لوازمات کو پورا کرنے میں تساہل سے کام لیتا ہے ، بعید نہیں کہ وہ نماز کے بعض شرائط کو خالی چھوڑنے کا ارتکاب کرتا ہو اور نماز کے منافی بعض اعمال بجالاتا ہو، بلکہ اس کے فسق کے پیش نظر ایسا کرنا غالب گمان ہے اسی لئے امام مالک کے نزدیک اس کے پیچھے نماز ہوتی ہی نہیں۔ امام احمد بن حنبل سے بھی ایک روایت یوں ہی ہے (ت)

اور خود معاملہ نماز میں اس کی بیباکی اور طہارت نجاست سے بے پروائی اسی بیان سے ظاہر جو سائل نے لکھے کہ ناپاک کپڑے مسجد میں دھونے والوں کو منع نہیں کرتا بلکہ منع کرنے کو برا کہتا ہے اور لڑنے پر آمادہ ہوتا ہے تو جس کی یہ حالت ہے اس کے پیچھے نماز کی اصلاً اجازت نہیں ہو سکتی واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۶۱۵ : از بنارس محلہ کندی گڑ ٹولہ مسجد بی بی راجی متصل شفاخانہ مرسلہ مولوی حکیم عبدالغفور صاحب ۲۰ محرم الحرام ۱۳۱۶ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ شہر بنارس میں ایک مسجد متصل کچہری دیوانی جس میں نماز وقتیہ وجمعہ ہوتا ہے، عرصہ دراز سے ایک جلسہ بائے رائے حاکم ضلع بغرض انہدام مسجد مذکور اہل اسلام نے کیا منجملہ اور باتوں کے بیان کیا گیا کہ مسجد کا کھودنا بمعاوضہ مکان دیگر از روئے کتب فقہ جائز ہے تو یہ مسجد کھود ڈالی جائے بعوض اس کے دوسری مسجد سرکار کی جانب سے تیار کر دی جائے حالانکہ مسجد کا کھودنا از روئے فقہ جائز نہیں ہے۔ عالمگیریہ میں ہے :

عربی عبارت	اردو ترجمہ
لو كان مسجد في محلة ضاق على اهله ولا يسعهم ان يزيد وا فيه فسألهم بعض بعض	اگر محلہ کی مسجد اہل محلہ پر تنگ ہو گئی ہو اور وہ لوگ اس میں کشادگی نہ کر سکتے ہوں تو اس مسئلہ کے متعلق

۱ غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل فی الامامۃ الخ مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۵۱۳

Fatawa Rizvia, Volume Six

[Arabic Box Text]: Neighbors suggest that one of them takes the mosque, includes it in his house, and in exchange gives a better place for the mosque so that the local people gain expansion. Imam Muhammad (may Allah have mercy on him) said: It is not permissible for them to do so. (T)

In this meeting, some people were present who are called the Maulvi Sahabs of Banaras. For unknown reasons, they gave an opinion and also signed for the excavation of the aforementioned mosque. In fact, when people inquired from the said Maulvi, he replied, "If I hadn't given the opinion for excavation, would I have been put in chains? In a state of duress (ikrah), even abusing two gods and the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) is permissible." However, there was no duress of any kind from the district administrator; rather, an opinion was sought on the aforementioned matter from the people of Islam. The Maulvi Sahab did not restrict duress to 'dismemberment or killing', nor did he use 'tawriya' (ambiguity), as is defined in books of jurisprudence. In short, the Maulvi Sahab expressed such things that lead to the concern of the common people being led astray. Many taunts from opponents have started against Hanafis, saying "you have such filthy issues." Should the Maulvi Sahab be made an Imam of prayers according to Sharia and wisdom or not? Explain according to the Book and be rewarded on the Day of Reckoning.

Answer: This person is a sinner and transgressor (fasiq and fajir) by the absolute text of the Quran. Allah Almighty said: "And who is more unjust than he who prevents the mosques of Allah from having His name mentioned therein and strives for their destruction?" (Quran 2:114)

The excuse of duress (ikrah) is a mere lie. The committees formed for giving opinions are by no means held with a knife to the throat by the authorities, such that if you don't give an opinion this way, you'll be killed, your tongue cut out, or hands chopped off. Instead, the meaning of 'opinion-giving' is for everyone to express their opinion freely. Yes, world-worshipping, carcass-eating flatterers in their sycophancy...

---

1. Fatawa Hindiyyah, Chapter 11 on Mosques etc., published by Nurani Kutub Khana Peshawar 2/475.
2. Quran 2/114.

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

[बॉक्स का पाठ]: पड़ोसी यह कहते हों कि मस्जिद को उनमें से कोई एक हासिल करे और अपने घर में शामिल करे और उसके बदले में मस्जिद के लिए बेहतर जगह खरीदे ताकि मोहल्ले के लोग मस्जिद में विस्तार पा सकें। इमाम मुहम्मद (रहमतुल्लाह अलैहि) ने फरमाया कि उनके लिए ऐसा करना जायज़ नहीं है। (त)

इस बैठक में कुछ लोग शामिल थे जो बनारस के मौलवी साहब कहलाते हैं। उन्होंने न जाने किस उद्देश्य से उक्त मस्जिद को खोदने के लिए राय दी और हस्ताक्षर भी किए। बल्कि जब लोगों ने मौलवी साहब से पूछा तो उन्होंने उत्तर दिया, "अगर मैं खोदने के लिए राय न देता तो क्या पैरों में बेड़ियाँ डाल दी जातीं? ज़बरदस्ती (इकराह) की स्थिति में तो दो खुदा और पैगंबर मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) को अपशब्द कहना भी जायज़ है।" हालाँकि, ज़िला अधिकारी की ओर से किसी प्रकार की ज़बरदस्ती नहीं थी, केवल इस्लाम के लोगों से उक्त मामले में राय माँगी गई थी। मौलवी साहब ने ज़बरदस्ती को 'अंग भंग या हत्या' तक सीमित नहीं किया और न ही 'तोरिया' (द्विअर्थी बात) का प्रयोग किया, जिसका उल्लेख फिक़्ह (इस्लामी न्यायशास्त्र) की किताबों में है। संक्षेप में, मौलवी साहब ने ऐसी बातें कहीं जिनसे आम लोगों के गुमराह होने का डर है। विरोधियों द्वारा हनफियों पर अक्सर ताने भी दिए जाने लगे हैं कि "तुम्हारे यहाँ ऐसे गंदे मसले हैं।" क्या मौलवी साहब को शरीयत और हिकमत के अनुसार नमाज़ का इमाम बनाना चाहिए या नहीं? किताब (कुरान) के अनुसार बताएं और हिसाब के दिन इसका प्रतिफल प्राप्त करें।

उत्तर: यह व्यक्ति कुरान के स्पष्ट पाठ (नस्से क़तई) के अनुसार फासिक और फाजिर (पापी) है। अल्लाह तआला ने फरमाया: "और उससे बढ़कर ज़ालिम कौन होगा जो अल्लाह की मस्जिदों को उनमें उसका नाम लिए जाने से रोके और उनकी वीरानी के लिए कोशिश करे?"

ज़बरदस्ती (इकराह) का बहाना कोरा झूठ है। राय देने के लिए जो कमेटियाँ बनाई जाती हैं, उनमें अधिकारियों की तरफ से गले पर छुरी नहीं रखी जाती कि अगर तुमने ऐसी राय न दी तो कत्ल कर दिए जाओगे या ज़ुबान काट ली जाएगी या हाथ काट दिए जाएंगे, बल्कि राय देने का मतलब यह होता है कि हर व्यक्ति स्वतंत्र रूप से अपनी राय व्यक्त करे। हाँ, दुनिया के पुजारी और लाशखोर खुशामद में...

1. फ़तावा हिन्दिया, बाब 11 मस्जिद के बारे में, नूरानी कुतुब खाना पेशावर 2/475.
2. अल-कुरान 2/114.

पेज 481/736

الجیران ان یجعلوا ذلك المسجد لہ لید خلہ في پٹروسی یہ کہتے ہوں کہ مسجد کو ان میں سے کوئی ایک حاصل دارہ ویعطیھم مکانہ عوضاً ماھو خیر لہ فیسع کرے اور اپنے گھر میں شامل کرے اور اس کے عوض متبادل فیہ اھل المحلۃ قال محمد رحمہ اللہ تعالی بہتر جگہ مسجد کے لئے خریدے تا کہ اہل محلہ مسجد میں کشادگی لایسعھم ذلك ۱- حاصل کر سکیں۔ امام محمد رحمہ اللہ تعالیٰ نے فرمایا ایسا کرنا ان کے لئے جائز نہیں ہے۔ (ت)

اُس جلسہ میں بعض وہ شریک تھے جو بنارس کے مولوی صاحب کہلاتے ہیں انھوں نے معلوم نہیں کس غرض سے مسجد مذکور کے کھودنے کے واسطے رائے دی اور دستخط بھی کئے بلکہ مولوی صاحب موصوف سے لوگوں نے دریافت کیا تو مولوی صاحب نے جواب دیا کھودنے کے واسطے رائے نہ دیتا تو کیا بیڑیاں پیروں میں ڈالتا، حالتِ اکراہ میں تو دو خدا اور جناب رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کو گالیاں دینا جائز ہیں۔ حالانکہ کسی قسم کا اکراہ حاکم ضلع کی جانب سے نہ تھا صرف اہل اسلام سے امر مذکور الصدر میں رائے طلب کی گئی تھی، مولوی صاحب نے اکراہ کو قَطْعٌ اَوْ قَتْلٌ کے ساتھ مقید نہیں کیا اور نہ توریہ کو کہا جس کی قید کتبِ فقہ میں ہے۔ الغرض ایسی ایسی باتیں مولوی صاحب نے بیان کیں جس سے عوام کے گمراہ ہو جانے کا خیال ہے۔ حنفیوں پر اکثر طعنے بھی مخالفین کے ہونے لگے کہ تمھارے یہاں ایسے ایسے گندے مسائل ہیں۔ مولوی صاحب کو امامِ نماز کا از روئے شرع و مصلحت بنانا چاہئے یا نہیں؟ بینوابالکتاب وتوجروا یوم الحساب۔

الجواب: یہ شخص بنصِ قطعی قرآن شریف فاسق وفاجر ہے۔ قال اللہ تعالیٰ: وَمَنْ اَظْلَمُ مِمَّنْ مَّنَعَ مَسٰجِدَ اللّٰہِ اَنْ یُّذْکَرَ فِیْھَا اسْمُہٗ اس سے بڑھ کر ظالم کون ہوگا جو باز رکھے خدا کی مسجدوں کو وَ سَعٰی فِیْ خَرَابِھَا ۲ ان میں نامِ خدا لئے جانے سے اور کوشش کرے ان کی ویرانی میں۔

عذرِ اکراہ محض جھوٹا ہے، جو کمیٹیاں رائے زنی کے لئے مقرر کی جاتی ہیں ہر گز حکام کی طرف سے گلے میں چھری نہیں رکھی جاتی کہ اگر تم نے یوں رائے نہ دی تو قتل کر دیئے جاؤگے یا زبان کاٹ لی جائے گی یا ہاتھ قلم کر دیئے جائیں گے، بلکہ رائے زنی کے معنی یہ ہوتے ہیں کہ ہر شخص آزادانہ اپنی رائے ظاہر کرے۔ ہاں دنیا پرست جیفہ خور خوشامد میں

---

1 فتاوی ہندیہ الباب الحادی عشر فی المسجد الخ مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور ۲/ ۴۷۵ 2 القرآن ۲/ ۱۱۴

Fatawa Razawiyya, Volume 6

They come, lose their religion and faith, and create a storm of false claims of compulsion by rulers. Under the pretext of a lie, they want to justify compulsion, whether they demolish a mosque or hurl insults at God and His Messenger, or even if they deceptively chant slogans three times. “And the wrongdoers will soon know to what [final] return they will return.” (1) (Soon the oppressors will know which way they will be turned. T) Such people can neither be excused in the sight of God nor considered compelled by the rulers.

May that wretched person never be happy, who gives away his religion to the wind for the sake of the world. (May the heart of this mean person never be happy who surrenders religion to the wind for the sake of the world. T)

Even in the eyes of wise and just rulers, a seller of religion is extremely humiliated and disgraced. He who has bid farewell to something as precious as religion for a little flattery, whatever he gains from it is little. What expectation of well-wishing is there from him towards a worldly ruler, who has turned away from the True Ruler (Allah), Jalla Jalaaluhu, for some petty greed? “He has lost this world and the Hereafter. That is the manifest loss.” (2) (Loss of this world and the hereafter is a clear loss. T) And regarding the issue of compulsion, the unconstrained words this person spoke against God and His Messenger also indicate his lack of manners and deficiency in religion. In the Pure Shariah, even in times of fear for one's life, the command of 'Azimat (resoluteness) is that one should not utter a word of disbelief at all. And the 'Rukhsat' (concession) is that one should save his life by using 'Tawriya' (double entendre/ambiguous speech) as much as possible. If he was capable of 'Tawriya' but abandoned it and spoke an explicit word of disbelief, he will definitely and certainly become a disbeliever. It is stated in Durr al-Mukhtar:

[Table content] (Arabic side): If one is compelled to commit disbelief in Allah Almighty or to insult the Prophet, peace and blessings of Allah be upon him, under threat of amputation or death, a concession is granted to him to manifest what he was commanded with on his tongue while practicing 'Tawriya', and his heart remains content with faith. If the thought of 'Tawriya' occurred to his mind but he did not practice it, he commits disbelief, and [the marriage] is annulled religiously and judicially. (Nawazil and Jalaliyah). He would be rewarded if he remained patient to avoid uttering the forbidden words... etc. briefly. (3) (Urdu side): If someone is forced to commit blasphemy against Allah, God forbid, or to insult the Holy Prophet (peace

and blessings of Allah be upon him), God forbid, otherwise he will be killed or one of his limbs will be cut off, then he is allowed to utter the words that were demanded of him, but he should use 'Tawriya' (meaning save his life through ambiguous speech as much as possible) and his heart should remain satisfied and firm in faith. And if the thought of 'Tawriya' came to his heart but he did not do 'Tawriya', then he will become a disbeliever and his wife [will be separated from him] judicially and...

(1) Al-Quran 26/227 (2) Al-Quran 22/11 (3) Durr al-Mukhtar, Kitab al-Ikrah, printed by Matba' Mujtabai, Delhi 2/196

फ़तावा रज़विया, खंड 6

वे आते हैं, अपना दीन और ईमान गंवा देते हैं और शासकों पर मजबूरी का झूठा आरोप लगाते हैं। झूठ के बहाने वे मजबूरी जताना चाहते हैं, चाहे वे मस्जिद ढहा दें या ईश्वर और उसके रसूल को गालियां दें, या धोखे में आकर तीन बार नारे लगाएं। "और ज़ुल्म करने वाले जल्द ही जान लेंगे कि वे किस ओर पलटेंगे।" (1) (अनकरीब ज़ालिम लोग जान लेंगे कि किस करवट पलटा खाएंगे। त) ऐसे लोग न तो ईश्वर की दृष्टि में क्षमा योग्य हो सकते हैं और न ही शासकों के सामने मजबूर।

वह अधम व्यक्ति कभी सुखी न हो, जो दुनिया के लिए अपने दीन को हवा में उड़ा देता है। (उस नीच का दिल कभी खुश न हो जो दुनिया की खातिर धर्म को हवा के हवाले कर देता है। त)

बुद्धिमान और न्यायप्रिय शासकों की दृष्टि में भी दीन बेचने वाला अत्यंत अपमानित और तिरस्कृत होता है। जिसने ज़रा सी चापलूसी के लिए दीन जैसी अनमोल चीज़ को विदा कह दिया, उसे इससे जो मिला वह बहुत कम है। जिसने तुच्छ लोभ के कारण वास्तविक शासक (अल्लाह) जल्ल जलालुहू से मुंह मोड़ लिया, उससे इस सांसारिक शासक के प्रति शुभचिंतन की क्या आशा की जा सकती है? "उसने दुनिया और आख़िरत दोनों खो दीं। यही स्पष्ट हानि है।" (2) (दुनिया व आख़िरत का घाटा यही स्पष्ट नुकसान है। त) और मजबूरी के मसले के बारे में, उस व्यक्ति ने ईश्वर और रसूल के प्रति जो बेलगाम शब्द कहे, वे भी उसकी असभ्यता और धर्म की कमी को दर्शाते हैं। पवित्र शरीयत में, जान के खतरे के समय भी 'अजीमत' (दृढ़ता) का आदेश यही है कि किसी भी तरह से ज़ुबान से कुफ़्र (अविश्वास) का शब्द न निकाला जाए। और 'रुक्सत' (छूट) यह है कि जहाँ तक संभव हो 'तौ्रिया' (द्विअर्थी शब्द) का उपयोग करके अपनी जान बचाई जाए। यदि वह तौ्रिया करने में सक्षम था और उसने इसे छोड़कर स्पष्ट कुफ़्र कहा, तो वह निश्चित रूप से काफ़िर हो जाएगा। 'दुर्रुल मुख्तार' में है:

[तालिका सामग्री] (अरबी पक्ष): यदि किसी को अल्लाह सर्वशक्तिमान के साथ कुफ़्र करने या पैगंबर (उन पर अल्लाह की शांति और कृपा हो) को गाली देने के लिए मजबूर किया जाता है, इस धमकी के साथ कि उसके अंग काट दिए जाएंगे या उसे मार दिया जाएगा, तो उसे अनुमति है कि वह अपनी ज़ुबान से वही कहे जो उसे करने का आदेश दिया गया है, जबकि वह तौ्रिया का अभ्यास करे और उसका दिल ईमान पर स्थिर रहे। यदि तौ्रिया का विचार उसके मन में आया लेकिन उसने तौ्रिया नहीं की, तो उसने कुफ़्र किया, और धार्मिक और कानूनी तौर पर उसका विवाह समाप्त हो गया। (नवाज़िल और जलालिया)। उसे इनाम मिलता अगर वह हराम शब्दों को बोलने से बचने के लिए धैर्य

रखता... संक्षेप में। (3) (उर्दू पक्ष): यदि किसी को मजबूर किया जाता है कि वह अल्लाह तआला के साथ कुफ्र करे (ईश्वर न करे) या नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को गाली दे (ईश्वर न करे), अन्यथा उसे मार दिया जाएगा या उसका कोई अंग काट लिया जाएगा, तो उसे अनुमति है कि वह उन शब्दों को ज़ुबान पर लाए जिनकी मांग की गई है, लेकिन उसे तौ्रिया (यानी जहाँ तक संभव हो द्विअर्थी बात के माध्यम से जान बचाना) का सहारा लेना चाहिए और उसका दिल ईमान पर संतुष्ट और अडिग रहे। और यदि उसके दिल में तौ्रिया का विचार आया लेकिन उसने तौ्रिया नहीं किया, तो वह काफिर हो जाएगा और उसकी पत्नी न्यायिक रूप से...

(1) अल-कुरआन 26/227 (2) अल-कुरआन 22/11 (3) दुर्रे मुख़्तार, किताबुल इकरा, मतबुआ मतबा मुजतबाई दिल्ली 2/196

آ کر دین و ایمان گنوا کر حکام پر جبر و اکراہ کا طوفان اٹھا کر بحیلہ کاذبہ اکراہ چاہیں مسجد ڈھائیں چاہے خدا اور رسول کو گالیاں سنائیں چاہے دھوکے آتے تین گائیں وَ سَیَعْلَمُ الَّذِیْنَ ظَلَمُوْٓا اَیَّ مُنْقَلَبٍ یَّنْقَلِبُوْنَ (۱) (عنقریب ظالم لوگ جان لیں گے کہ کس کروٹ پلٹا کھائیں گے۔ ت) ایسے لوگ نہ عنداللہ معذور ہو سکتے ہیں نہ عندالحکام مجبور۔

مباد اول آں فرومایہ شاد کہ از بہر دنیا دہد دیں بباد (اس کمینے کا دل کبھی خوش نہ ہو جو دنیا کی خاطر دین کو ہوا کے حوالے کر دیتا ہے۔ ت)

خرد مند انصاف پسند حاکموں کی نگاہ میں بھی دین فروش نہایت ذلیل و خوار ہوتا ہے کہ جس نے ذرا سی خوشامد کے لئے دین جیسی عزیز چیز کو خیر باد کہا اس سے جو پائے تھوڑا ہے، جس نے ادنیٰ طمع کے واسطے حاکم حقیقی جل جلالہ سے روگردانی کی اس حاکم دنیوی کے ساتھ خیر خواہی کی توقع کیا ہے خَسِرَ الدُّنْیَا وَالْاٰخِرَۃَ ذٰلِكَ هُوَ الْخُسْرَانُ الْمُبِیْنُ (۲) (دنیا و آخرت کا گھاٹا یہی صریح نقصان ہے۔ ت) اور مسئلہ اکراہ یوں بے قید الفاظ جو خدا اور رسول کی جانب منہ بھر کر اس شخص نے کہے وہ بھی اسکے سوئے ادب وقلتِ دین پر دال ہیں شرع مطہر میں خوفِ جان کے وقت بھی حکمِ عزیمت یہی ہے کہ کسی طرح اصلاً کلمہ کفر زبان سے نہ نکالے اور رخصت یہ کہ حتی الامکان توریہ کر کے پہلو دار بات سے جان بچائیں، اگر توریہ پر قادر تھا اور اسے چھوڑ کر صریح کلمہ کفر بولا قطعاً یقیناً کافر ہو جائے گا، دُر مختار میں ہے:

[جدول] (عربی): ان اکرہ علی الکفر باللہ تعالٰی اوبسب النبی صلّی اللہ تعالٰی علیہ وسلم بقطع او قتل رخص لہ ان یظھر ما امر بہ علی لسانہ ویوری وقلبہ مطمئن بالایمان، وان خطر بباله التوریة ولم یور

كفرو بانت ديانة وقضاء نوازل وجلالية ويوجر لوصبر لتركه الاجراء المحرم الخ باختصار۔ (۳)

(اردو): اگر کسی کو مجبور کر دیا گیا کہ وہ اللہ تعالٰی کے ساتھ معاذاللہ کفر کرے یا نبی اکرم صلٰی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کو معاذاللہ گالی دے ورنہ اسے قتل کر دیا جائے گا یا اس کا کوئی عضو کاٹ لیا جائے گا تو اسے اجازت ہے کہ زبان پر ایسے کلمات کو جاری کر دے جن کا مطالبہ کیا گیا ہو لیکن توریہ (یعنی حتی الامکان پہلو دار بات کے ذریعے جان بچائے) سے کام لے اور اس کا دل ایمان پر مطمئن اور قائم رہے اور اگر اس کے دل میں توریہ کا خیال آیا مگر اس نے توریہ نہ کیا تو وہ کافر ہو جائے گا اور اس کی عورت قضاءً و

۱۔ القرآن ۲۶ / ۲۲۷ ۲۔ القرآن ۲۲ / ۱۱ ۳۔ در مختار کتاب الاکراہ مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۲ / ۱۹۶

Fatawa Razawiya, Volume 6

...it will be religiously severed (Nawazil and Jalaliyah). If one practices patience and courage, they will be rewarded because they refrained from committing a forbidden act, etc. (abbreviated). (T) Making such an intense sinner (fasiq) an imam in the best of deeds—prayer and supplication in the court of the Need-free Lord—is extreme foolishness and a lack of caution and audacity in religion. When he is ready to demolish a mosque for a meager greed or flattery, what does it matter to him if he leads prayer without bathing or without ablution due to minor discomfort or laziness? Those who appoint such a person as an imam will be sinners. Muslims should absolutely never pray behind him. If they have prayed out of ignorance, they should repeat it. It is stated in Ghunya Sharh Munya:

[Boxed Text] Arabic: If they put forward a sinner (as imam), they commit a sin, based on the fact that prioritizing him is prohibited (Makruh Tahrimi) because of his lack of concern for religious matters and his laxity in fulfilling its requirements. Thus, it is not far-fetched for such a person to omit some conditions of prayer or perform actions that invalidate it; rather, this is most likely given his sinfulness.1

Urdu: If people put forward a sinner (as imam), they commit a sin, based on the fact that prioritizing him is prohibited (Makruh Tahrimi) because of his lack of concern for religious matters and his laxity in fulfilling its requirements. Thus, it is not far-fetched for such a person to omit some conditions of prayer or perform actions that invalidate it; rather, this is most likely given his sinfulness. (T)

Let alone making him an imam, the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says: "Flee from the company of such a person, keep him away from you, lest he mislead you or put you in trial." It is in Sahih Muslim: "Beware of them, lest they mislead you or put you in trial."2 (Protect yourselves from these sinners so they do not misguide you or cast you into trial. -T). May Allah Almighty grant guidance and success to Muslims. And Allah the Pure and Exalted knows best.

Problem 616: From Upper Burma Cantonment, Mankina, sent by Haji Hadi Yar Khan, 6 Safar 1361 AH. What do the scholars and supporters of the religion say about this issue: In this country, it is customary for women to keep shops in the market and go out with their heads uncovered. Instead of trousers (pajamas), they tie a sarong (tehband), and while walking, their bodies up to the thighs are visible to men, and men do not stop them. When their husbands were told that according to Sharia...

1 Ghunyat al-Mustamli Sharh Munyat al-Musalli, Chapter on Imamate, etc., printed by Suhail Academy Lahore, p. 513. 2 Sahih Muslim, Chapter on Prohibition of Narrating from the Weak, etc., printed by Nur Muhammad Karkhana Tijarat Kutub Karachi, 1/10. Page 483 of 736

फ़तावा रज़विया, खंड छठा

...धार्मिक रूप से अलग हो जाएगा (नवाज़िल और जलालिया)। यदि कोई धैर्य और साहस से काम ले तो उसे पुण्य मिलेगा क्योंकि उसने हराम कार्य करने से परहेज किया है, आदि। संक्षेप में। (त) ऐसे गंभीर पापी (फ़ासिक़) को सबसे उत्तम कार्य—प्रार्थना और बेनियाज़ खुदा की दरगाह में मुनाजात—में अपना इमाम बनाना घोर मूर्खता और दीन में असावधानी तथा दुस्साहस है। जब वह मामूली लालच या चापलूसी के लिए मस्जिद ढहाने को तैयार है, तो मामूली तकलीफ या आलस्य के कारण बिना स्नान किए या बिना वज़ू के नमाज़ पढ़ाने से उसे क्या फर्क पड़ता है? ऐसे व्यक्ति को इमाम बनाने वाले गुनहगार होंगे। मुसलमानों को चाहिए कि हरगिज़ उसके पीछे नमाज़ न पढ़ें। यदि अनजाने में पढ़ ली हो, तो उसे फिर से पढ़ें। ग़ुनिया शरह मुनिया में है:

[बॉक्स] अरबी: यदि लोगों ने किसी पापी (फ़ासिक़) को इमाम बनाया तो वे पापी होंगे, इस आधार पर कि उसे आगे बढ़ाना मकरूह-ए-तहरीमी है, क्योंकि वह धार्मिक मामलों में लापरवाही बरतता है और दीन की अनिवार्यताओं को पूरा करने में सुस्ती करता है। अतः ऐसे व्यक्ति से यह दूर नहीं कि वह नमाज़ की कुछ शर्तों को छोड़ दे और नमाज़ के विपरीत कार्य करे, बल्कि उसके पाप (फ़िस्क़) को देखते हुए ऐसा करना ही अधिक संभावित है। 1

उर्दू: यदि लोगों ने किसी पापी (फ़ासिक़) को इमाम बनाया तो वे पापी होंगे, इस आधार पर कि उसे आगे बढ़ाना मकरूह-ए-तहरीमी है, क्योंकि वह धार्मिक मामलों में लापरवाही बरतता है और दीन की अनिवार्यताओं को पूरा करने में सुस्ती करता है। अतः ऐसे व्यक्ति से यह दूर नहीं कि वह नमाज़ की कुछ शर्तों को छोड़ दे और नमाज़ के विपरीत कार्य करे, बल्कि उसके पाप (फ़िस्क़) को देखते हुए ऐसा करना ही अधिक संभावित है। (त)

इमाम बनाना तो दूर, अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं: "ऐसे की सोहबत से दूर भागो, उसे अपने से दूर रखो, कहीं वह तुम्हें गुमराह न कर दे, फितने में न डाल दे।" सहीह मुस्लिम शरीफ में है: "उनसे बचो, कहीं वे तुम्हें गुमराह न कर दें और फितने में न डाल दें।" 2 (स्वयं को इन पापियों से बचाओ ताकि वे तुम्हें गुमराह न करें और फितने में न डाल दें। -त) अल्लाह तआला मुसलमानों को हिदायत और तौफीक दे। वल्लाह सुब्हानहु व तआला आलम।

मसला ६१६: अपर बर्मा छावनी, मनकीना से, हाजी हादी यार खान द्वारा भेजा गया, ६ सफ़र १३६१ हिजरी। दीन के विद्वान और दीन के समर्थक इस मसले में क्या फरमाते हैं कि: इस देश में यह रिवाज

है कि औरतें बाज़ार में दुकान करती हैं और बाहर निकलती हैं सिर खोलकर, और पाजामे के बजाय तहबंद बांधती हैं, चलते समय उनके शरीर का जांघ तक का हिस्सा पुरुषों को दिखाई देता है, और पुरुष उन्हें नहीं रोकते। और जब उनके पतियों से कहा गया कि शरीयत के अनुसार...

---

1 ग़ुनियातुल मुस्तमली शरह मुनियतुल मुसल्ली, इमामत का अध्याय, आदि, सुहैल अकादमी लाहौर द्वारा मुद्रित, पृ. ५१३। 2 सहीह मुस्लिम, कमज़ोरों से रिवायत करने की मनाही का अध्याय, आदि, नूर मुहम्मद कारख़ाना तिज़ारत कुतुब कराची द्वारा मुद्रित, १/१०। पृष्ठ ७३६ का ४८३

دیانۃً بائنہ ہو جائیگی نواز ل اور جلالیہ ، اور اگر صبر وہمت سے کام لے تو اجر پائے گا کیونکہ اس نے حرام کام کے ارتکاب کا ترک کیا ہے الخ اختصاراً (ت) ایسے شدید فاسق کو افضل الاعمال نماز و مناجات بارگاہ بے نیاز میں اپنا امام بنانا سخت حماقت اور دین میں بے احتیاطی و جرات ہے ، جب وہ ادنٰی طمع یا خوشامد کے لئے مسجد ڈھانے کے لئے موجود ہے تو ادنٰی تکلیف یا کاہلی کے باعث بے نہائے یا بے وضو نماز پڑھاتے اسے کیا لگتا ہے ، ایسے کو امام بنانے والے گناہگار ہوں گے ، مسلمانوں کو چاہئے ہر گز ہرگز اس کے پیچھے نماز نہ پڑھیں۔ اگر نا واقفی میں پڑھ لی تو اعادہ کریں۔ غنیہ شرح منیہ میں ہے:

[باکس] عربی: لو قدموا فاسقاً یأثمون بناء علی ان کراھة تقدیمه کراھة تحریم لعدم اعتنائه بامور دینه وتساھله في الاتیان بلوازمه فلا یبعد منه الاخلال ببعض شروط الصلوة وفعل ما ینافیھا بل ھو الغالب بالنظر الی فسقه 1

اردو: اگر لوگوں نے فاسق کو امام بنادیا تو اس بنا پر گناہگار ہوں گے کہ ایسے شخص کو امام بنانا مکروہ تحریمی ہے کیونکہ فاسق امور دینیہ میں لاپرواہی برتتا ہے اور دین کے لوازمات کو بجالانے میں سستی کرتا ہے۔ پس ایسے شخص سے یہ بعید نہیں کہ وہ نماز کے بعض شرائط چھوڑ دے اور نماز کے منافی عمل کو بجالائے، بلکہ ایسا کرنا اس کے فسق کے پیش نظر اغلب ہے۔ (ت)

امام بنانا در کنار ، رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں : "ایسے کی صحبت سے دور بھاگو، اسے اپنے سے دور رکھو کہیں وہ تمہیں بہکا نہ دے ، فتنہ میں نہ ڈال دے "۔ صحیح مسلم

شریف میں ہے : ایاکم ایاھم لایضلونکم ولا یفتنونکم 2 (تم اپنے آپ کو ان فساق سے بچاؤ تا کہ وہ تمہیں گمراہ نہ کر دیں اور فتنہ میں نہ ڈال دیں۔ت) اللہ تعالیٰ مسلمانوں کو ہدایت و توفیق بخشے۔ واللہ سبحنہ و تعالٰی واعلم۔

مسئلہ ۶۱۶: از ملک اپر برہما چھاؤنی منکینہ مرسلہ حاجی ہادی یار خان ۶ صفر ۱۳۶۱ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و حامیانِ دین اس مسئلہ میں کہ اس ملک میں رسم ہے کہ عورتیں بازار میں دُکان کرتی ہیں اور باہر نکلتی ہیں سر کھول کر ، اور بجائے پاجامہ کے تہبند باندھتی ہیں ، چلتے میں ان کا جسم ران تک معلوم ہوتا ہے مردوں کو ، اور مرد ان کو منع نہیں کرتے ، اور جب ان کے شوہروں سے کہا گیا کہ شرع کے

---

1 غنیۃ المستملی شرح منیہ المصلی فصل فی الامامۃ الخ مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۵۱۳ 2 صحیح مسلم باب النہی عن الروایۃ عن الضعفاء الخ مطبوعہ نور محمد کارخانہ تجارت کتب کراچی ۱ / ۱۰ صفحہ 483 از 736

Fatawa Razawiya Volume VI

...is contrary [to Sharia]. Avoid such women. They say, "We are young; when we feel desire, what should we do? We get married." And there, most men are in agreement with the women already mentioned. How is the prayer behind such a man and his leadership (imamat)?

Answer: Exposing the thigh is forbidden (haram), and it is also forbidden for a free woman to expose her head. Those women, due to these actions, are transgressors (fasiqah). It is obligatory (fard) for the husband to stop his wife from transgression. Allah Almighty says:

"O you who have believed, protect yourselves and your families from a Fire" (Surah At-Tahrim 66:6).

And the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

"Every one of you is a shepherd and every one of you is responsible for his flock." (Sahih Bukhari). This means you are all leaders and rulers of your subordinates, and every ruler will be questioned on the Day of Judgment regarding his flock.

So, this man who does not stop them is himself a transgressor (fasiq). Praying behind a fasiq is disliked (makruh), and making him an Imam is a sin. It is mentioned in Ghunyah:

"If they put a fasiq forward [as an Imam], they are sinning."

In fact, when his wife roams the market with her thighs exposed and he does not stop her, then he is a dayyuth (cuckold).

In Ad-Durr al-Mukhtar: "A dayyuth is one who feels no protective jealousy (ghayrah) for his wife or mahram relatives."

Yes, if he forbids her, stops her to the best of his ability to eradicate this repulsive custom, and then the woman does not obey, then the man will not be blamed. Allah Almighty says: "And no bearer of burdens will bear the burden of another." (Surah Al-An'am 6:164). And Allah Almighty knows best.

Footnotes: 1. Al-Quran 66/6 2. Sahih Bukhari, Chapter of Friday Prayer in Villages and Towns, printed by Qadeemi Kutub Khana As-sah al-Matabi Karachi 1/122 3. Ghunyat al-Mustamli Sharh Munyat al-Musalli, Section on Imamat, printed by Suhail Academy

Lahore, p. 513 4. Durr-e-Mukhtar, Chapter of Tazir, printed by Matba' Mujtabai Delhi 1/328 5. Al-Quran 6/164

...इसके विपरीत है। ऐसी औरतों से परहेज़ करो। तो वे कहते हैं, "हम जवान हैं; जब हमें कामोत्तेजना (शहवत) होती है, तो हम क्या करें? हम निकाह कर लेते हैं।" और वहां अक्सर मर्द उन औरतों के अनुकूल हो गए हैं जिनका उल्लेख किया गया है। ऐसे आदमी के पीछे नमाज़ पढ़ना और उसकी इमामत कैसी है?

उत्तर: जांघ खोलना हराम है, और एक आज़ाद औरत के लिए अपना सिर खोलना भी हराम है। वे औरतें इन हरकतों की वजह से फ़ासिक़ा (गुनाहगार) हैं। शौहर (पति) पर फ़र्ज़ है कि वह अपनी औरत को गुनाह (फ़िस्क़) से रोके। अल्लाह तआला फ़रमाता है:

"ऐ ईमान वालों! अपने आप को और अपने घर वालों को आग से बचाओ" (सूरह अत-तहरीम 66:6)।

और अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

"तुम में से हर एक चरवाहा है और तुम में से हर एक से उसकी रियाया (प्रजा/अधीनस्थों) के बारे में सवाल किया जाएगा।" (सहीह बुखारी)। इसका मतलब है कि तुम सब अपने मातहतों के सरदार और हाकिम हो, और हर हाकिम से क़यामत के दिन उसकी रियाया के बारे में सवाल किया जाएगा।

तो वह मर्द जो उन्हें नहीं रोकता, वह खुद फ़ासिक़ है, और फ़ासिक़ के पीछे नमाज़ मकरूह है, और उसे इमाम बनाना गुनाह है। 'गुनिया' में है:

"अगर लोगों ने फ़ासिक़ को इमाम बनाया तो वे गुनहगार होंगे।"

बल्कि जब उसकी औरत बाज़ार में जांघें खोलकर फिरती है और वह उसे नहीं रोकता, तो वह 'दयूष' है।

'अद-दुर्रुल मुख्तार' में है: "दयूष वह व्यक्ति है जो अपनी पत्नी या किसी महरम रिश्तेदार पर ग़ैरत (स्वाभिमान) महसूस नहीं करता।"

हाँ, अगर वह मना करे, अपनी पूरी ताकत से इस घिनौनी रस्म को मिटाने की कोशिश करे और फिर औरत न माने, तो मर्द पर कोई दोष नहीं रहेगा। अल्लाह तआला फ़रमाता है: "और कोई बोझ उठाने वाला किसी दूसरे का बोझ नहीं उठाएगा।" (सूरह अल-अनाम 6:164)। और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

पाद-टिप्पणियाँ: 1. अल-क़ुरान 66/6 2. सहीह बुखारी, बाब अल-जुमुअह फ़िल-क़ुरा वल-मुदुन, कराची 1/122 3. ग़ुनियातुल मुस्तमली शरह मुनियातुल मुसल्ली, लाहौर, पृ. 513 4. दुर्रे मुख्तार, बाब अत-ताज़ीर, दिल्ली 1/328 5. अल-क़ुरान 6/164

خلاف ہے ایسی عورتوں سے پرہیز کرو۔ تو وہ کہتے ہیں ہم جوان ہیں جب ہم کو شہوت ہوتی ہے تو ہم کیا کریں نکاح پڑھا لیتے ہیں ۔ اور وہاں اکثر آدمی اسی کے موافق پڑے ہوئے ہیں جن عورتوں کا ذکر ہو چکا اس کے پیچھے نماز اور امامت اس آدمی کی کیسی ہے؟ الجواب : ران کھولنا حرام ہے، اور اس آزاد عورت کو سر کھولنا بھی حرام ہے۔ وہ عورتیں ان حرکات کی وجہ سے فاسقہ ہیں اور شوہر پر فرض ہے کہ اپنی عورت کو فسق سے روکے۔ اللہ تعالیٰ فرماتا ہے : یٰٓاَیُّھَا الَّذِیْنَ اٰمَنُوْا قُوْٓا اَنْفُسَکُمْ وَ اَھْلِیْکُمْ نَارًا 1 | اے ایمان والو! بچاؤ اپنی جانوں کو اور اپنے گھر والوں کو آگ سے۔ اور رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں : کلکم راع وکلکم مسؤل عن رعیتہ 2 | تم سب اپنے متعلقین کے سردار و حاکم ہو اور ہر حاکم سے روز قیامت اس کی رعیت کے باب میں سوال ہو گا۔ تو یہ مرد کہ انہیں منع نہیں کرتے خود فاسق ہیں اور فاسق کے پیچھے نماز مکروہ ہے اور اسے امام بنانا گناہ ہے۔ غنیہ میں ہے : لو قدموا فاسقا یأثمون 3 | اگر لوگوں نے فاسق کو امام بنایا تو وہ گنہ گار ہوں گے (ت) بلکہ جب اس کی عورت بازار میں ران کھولے پھرتی ہے اور وہ منع نہیں کرتا تو دیوث ہے۔ فی الدرالمختار دیوث من لا یغار علی امرأتہ او محرمہ 4 | درمختار میں ہے کہ وہ شخص دیوث ہوتا ہے جو اپنی بیوی اور کسی محرم پر غیرت نہ کھائے۔(ت) ہاں اگر یہ منع کرے روکے جس قدر اپنی قدرت اس رسم شنیع کے مٹانے سے ہے صرف کرے اور پھر عورت نہ مانے تو مرد پر الزام نہ رہے گا، قال اللہ تعالیٰ : لَا تَزِرُ وَازِرَۃٌ وِّزْرَ اُخْرٰی 5 (کوئی بوجھ اٹھانے والا کسی دوسرے کا بوجھ نہیں اٹھائے گا۔) واللہ تعالٰی اعلم

حواشی: 1 القرآن ۶۶/۶ 2 صحیح بخاری باب الجمعۃ فی القریٰ والمدن مطبوعہ قدیمی کتب خانہ اصح المطابع کراچی ۱/۱۲۲ 3 غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل فی الامامۃ مطبوعہ سہیل

اکیڈمی لاہور ص ۵۱۳ 4 در مختار باب التعزیر مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۳۲۸/۱ 5 القرآن ۱۶۴/۶

Fatawa Razawiya Volume VI

Question 617: What do the scholars of religion say regarding this matter: A person is an Imam of a mosque and earns his living from the following tasks: bathing a corpse and taking wages for it, reciting the Quran on the third day (Soyem) and making unlettered people recite the Quran and taking wages for it, taking the clothes etc. of a deceased person and selling them, and eating usury (interest) secretly. Is it permissible or impermissible to pray behind him? And as for another person who common people know earns an unlawful livelihood, is it permissible to pray behind him or not? Please explain and you will be rewarded.

The Answer: Taking usury (interest) is a major sin (Kabira). Similarly, any unlawful way through which livelihood is obtained will either be a major sin itself from the start or will become a major sin once it becomes a habit. Regarding taking wages by making unlettered people recite, the questioner explained that he calls those who cannot read and deceptively presents their Quranic recitation to take wages; this situation itself is a major sin. Moreover, taking wages for the recitation of the Holy Quran is impermissible, as verified by the Investigating Master al-Shami in Radd al-Muhtar and Shifa al-Alil (as Investigating Master al-Shami has discussed in detail in Radd al-Muhtar and Shifa al-Alil. -T). As for taking wages for bathing or carrying a corpse or digging a grave, there are two scenarios: If this act is not dependent solely on this person and there are other people who can do it if he doesn't, then taking wages is permissible for them. However, if it's specifically this person, or these few people for carrying the funeral bier, such that if they don't do it, the task won't be completed, then taking wages is forbidden.

(Arabic): In Al-Hindiyya, from Al-Khulasa: A man hired some people to carry a funeral bier or wash a corpse. If it is in a place where no one else can be found to wash it except them, then they have no reward (wages). If there are other people there, then they have a reward (wages). And the grave-digger is treated similarly. In a place where they have no reward, if they took the reward, it is not wholesome for them.

(Urdu Translation of Arabic): In Hindiyya, quoting Khulasa, it is stated that if a man hired some people to carry a funeral bier or give a bath to a deceased, then if it's in a place where there is no one else besides them to give the bath or carry the bier, then it is not permissible for them to take any rent/wages. And if there are other people there, then it is permissible for them to take wages. The matter of the grave digger is the same; if it's in a place where taking wages was not permissible for them and they took wages, then it is not a good deed for them. (T)

Fatawa Hindiyya, Chapter 16, On issues of commonality etc., Published by Noorani Kutub Khana, Peshawar, 4/452 Page 485 of 736

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

मसला ६१७: उलेमा-ए-दीन इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि एक शख़्स एक मस्जिद का इमाम है और वह दर्ज-ज़ैल कामों से रोज़ी कमाता है: मुर्दा नहलाना और उसकी उजरत लेना, सोयम में क़ुरान मजीद पढ़ना और नाख़्वांदा (अनपढ़) लोगों से क़ुरान मजीद पढ़वाना और उसकी उजरत लेना, मुर्दे के कपड़े वग़ैरा लेना और उन्हें बेचना, और पोशीदा तौर पर सूद खाना। उसके पीछे नमाज़ जायज़ है या नाजायज़? और दूसरा शख़्स जिसके बारे में आम लोग जानते हैं कि उसकी रोज़ी नाजायज़ है, उसके पीछे नमाज़ जायज़ है या नहीं? बयान फ़रमाएं सवाब पायें।

अल-जवाब: सूद लेना गुनाह-ए-कबीरा (बड़ा गुनाह) है। इसी तरह, जिस भी नाजायज़ तरीके से रोज़ी हासिल की जाए, वह या तो शुरू से ही कबीरा होगी या आदत बन जाने के बाद कबीरा हो जाएगी। नाख़्वांदा लोगों से पढ़वाकर उजरत लेने का मतलब साहिल (सवाल करने वाले) ने यह बयान किया कि वह बे-पढ़े लोगों को बुलाता है और धोखे से उनकी क़ुरान ख्वानी ज़ाहिर करके उजरत लेता है; यह सूरत खुद गुनाह-ए-कबीरा है। और तिलावत-ए-क़ुरान करीम पर उजरत लेना ही नाजायज़ है जैसा कि सैय्यद मोहक़्क़िक़ शामी ने 'रद्दुल मुहतार' और 'शिफ़ा-उल-अलील' में इसकी तस्दीक़ की है (जैसा कि सैय्यद मोहक़्क़िक़ शामी ने 'रद्दुल मुहतार' और 'शिफ़ा-उल-अलील' में इस पर तफ़्सीली गुफ्तगू की है -त)। और मुर्दे को नहलाने या उठाने या क़ब्र खोदने की उजरत लेने में दो सूरतें हैं: अगर यह काम सिर्फ़ इसी शख़्स पर मौक़ूफ़ (निर्भर) न हो और दूसरे लोग भी हों कि अगर यह न करे तो वह कर सकते हैं, तब तो उन पर उजरत लेना जायज़ है। और अगर ख़ास यही शख़्स या जनाज़ा उठाने के लिए यही दो-चार लोग हों कि अगर यह न करें तो काम न होगा, तो उजरत लेना हराम है।

(अरबी इबारत): अल-हिन्दिया में 'अल-ख़ुलासा' से नक़ल है: एक आदमी ने कुछ लोगों को जनाज़ा उठाने या मैयत को ग़ुस्ल देने के लिए किराए पर लिया। अगर वह ऐसी जगह है जहाँ उनके अलावा कोई और ग़ुस्ल देने वाला नहीं मिल सकता, तो उनके लिए कोई उजरत (मज़दूरी) नहीं है। और अगर वहाँ दूसरे लोग मौजूद हैं, तो उनके लिए उजरत जायज़ है। और क़ब्र खोदने वाले का हुक्म भी यही है। और जिस जगह उनके लिए उजरत जायज़ नहीं, अगर वे उजरत ले लें तो वह उनके लिए तैय्यब (पाकीज़ा/हलाल) नहीं है।

(अरबी का उर्दू अनुवाद): हिन्दिया में 'ख़ुलासा' से है कि एक आदमी ने कुछ लोगों को जनाज़ा उठाने या मैयत को ग़ुस्ल देने के लिए किराए पर लिया, अगर तो वह ऐसी जगह है जहाँ उनके अलावा और कोई दूसरा ग़ुस्ल देने वाला नहीं और न ही जनाज़ा उठाने वाला कोई है, तो उनके लिए कोई किराया लेना जायज़ नहीं है। और अगर वहाँ दूसरे लोग हैं, तो फिर उनके लिए किराया लेना जायज़ है। क़ब्र खोदने वाले का मामला भी यही है, अगर वह ऐसी जगह है जहाँ किराया लेना उनके लिए जायज़ न था और उन्होंने किराया ले लिया, तो यह उनके लिए अच्छा काम नहीं है। (त)

फ़तावा हिन्दिया, बाब १६, मसाइल-ए-शियूअ वग़ैरा में, मतबुआ नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर ४/४५२

فتاوی رضویہ جلد ششم

مسئلہ ۶۱۷: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ایک شخص ایک مسجد کا امام ہے اور وہ کام ہائے مندرجہ ذیل سے روزی پیدا کرتا ہے: مُردہ نہلانا اس کی اجرت لینا، سوم میں قرآن مجید پڑھنا اور ناخواندہ لوگوں سے قرآن مجید پڑھوانا اور اس کی اجرت لینا، مُردے کے کپڑے وغیرہ لینا اور فروخت کرنا، اور سود کھانا خفیہ طور سے۔ اس کے پیچھے نماز جائز ہے یا ناجائز؟ اور دوسرا شخص جس کو عام لوگ جانتے ہیں کہ اس کی روزی ناجائز ہے اس کے پیچھے نماز جائز ہے یا نہیں۔ بینوا توجروا۔

الجواب: سود لینا گناہ کبیرہ ہے، یوں ہی جس ناجائز طریقہ سے روزی حاصل کی جائے وہ یا تو سرے سے خود ہی کبیرہ ہوگا یا بعد عادت کے کبیرہ ہو جائے گا۔ ناخواندہ لوگوں سے پڑھوا کر اجرت لینا ہے کے معنی سائل نے یہ بیان کیا کہ بے پڑھوں کو بلاتا ہے اور براہِ فریب اُن کی قرآن خوانی ظاہر کر کے اُجرت لیتا ہے یہ صورت خود کبیرہ کی ہے اور تلاوت قرآن کریم پر اُجرت لینا ہی ناجائز ہے کما حققہ السید المحقق الشامی فی ردالمحتار وشفاء العلیل (جیسا کہ سید محقق شامی نے ردالمحتار اور شفاء العلیل میں اس پر تفصیلی گفتگو کی ہے۔ت) اور مردے کو نہلانے یا اٹھانے یا قبر کھودنے کی اجرت لینے میں دو صورتیں ہیں اگر یہ فعل اسی شخص پر موقوف نہ ہو اور لوگ بھی ہیں کہ یہ نہ کرے تو وہ کر سکتے ہیں جب تو ان پر اجرت لینی جائز ہے اور اگر خاص یہی شخص یا جنازہ اٹھانے کو یہی دو چار اشخاص ہیں کہ یہ نہ کریں تو کام نہ ہو گا اُجرت لینی حرام ہے،

فی الہندیۃ عن الخلاصۃ رجل استأجر قوماً یحملون جنازۃ او یغسلون میتاً ان کان فی موضع لایوجد من یغسلہ غیر ھؤلاء فلا اجر لھم وان کان ثمۃ اناس فلھم الاجر وحفر الحفار علی ھذا وفی موضع لااجرھم لو اخذوا الاجر لا یطیب لھم۔

ہندیہ میں خلاصہ سے ہے کہ ایک آدمی نے کچھ لوگوں کو جنازہ اٹھانے یا میت کو غسل دینے کے لئے کرایہ پر حاصل کیا اگر تو وہ ایسی جگہ ہے جہاں ان کے علاوہ اور کوئی دوسرا غسل دینے والا نہیں اور نہ ہی جنازہ اٹھانے والا کوئی ہے تو ان کے لئے کوئی کرایہ لینا روا نہیں ہے، اور اگر وہاں دوسرے لوگ ہیں تو پھر ان کے لئے کرایہ لینا جائز ہے۔ قبر کھودنے والے کا معاملہ بھی یہی ہے اگر وہ ایسی جگہ ہے جہاں کرایہ لینا ان کے لئے جائز نہ تھا اور انہوں نے کرایہ لے لیا تو یہ ان کے لئے اچھا کام نہیں ہے۔(ت)

فتاوی ہندیۃ الباب السادس عشر فی مسائل الشیوع الخ مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور ۴ / ۴۵۲

Fatawa Razawiyya Volume 6

And the clothes of the deceased etc. are given with the intention of charity. If the recipient is needy or wealthy, and the giver knows about their wealth, or if these things are given as a custom to the Imam of the prayer or the cleric of the mosque, whether they are needy or not, then taking them is permissible, although for a wealthy person it is not free from dislike (karahat). And if this person is wealthy and the giver wants to give to a needy person, and he presents himself as needy and takes it from him, then it is haraam (forbidden).

كما لايخفى وقد نبه في الحديقة الندية شرح الطريقة المحمدية على ادق من هذا۔ As is not hidden, and in al-Hadiqa al-Nadiyya Sharh al-Tariqa al-Muhammadiyya, attention has been drawn to something even subtler than this. As it is not hidden, and in Hadiqa Nadiyya Sharh Tariqa Muhammadiyya, there is an even more severe warning than this. (T)

And a major sin, whether it is major from the beginning or becomes major after it becomes a habit, is a cause of transgression (fisq). Praying behind an open transgressor (fasiq-e-mu'lan) is 'makruh-e-tahrimi' (strongly disliked/prohibited-like), and appointing him as an Imam is a sin, as verified by Muhaqqiq al-Halabi in 'Al-Ghunya' (T). Yes, a major sin whether secret or open is equal in making one a 'fasiq', but a secret sin which people are not aware of, they cannot judge him because how is judgment possible without knowing, as explained in 'Al-Durr al-Mukhtar' regarding testimony where they stated that jurists have conditioned the drinking of wine with persistence/addiction (T). And harboring ill thoughts about a Muslim is itself forbidden unless there is legal (Shari'i) proof. And Allah Almighty knows best.

Question Number 618: What do the scholars of religion and jurists of the clear Sharia say about this matter: Should prayer be performed behind a person who considers Ismail Dehlvi, the author of 'Taqwiyat-ul-Iman', to be on the truth? Explain, and may you be rewarded.

Answer:

If one is aware of his misguidance and blasphemies and still considers him among the people of truth, then he himself is misguided and irreligious like him, and prayer behind him is not permitted. If prayed unknowingly, then upon becoming aware, repetition is obligatory.

كما هو الحكم سائر اعداء الدين من المبتدين الفسقة المرتدة المفسدين۔ As is the ruling for all other enemies of religion among the innovators, the transgressors, the apostates, and the mischief-makers. As this is the same ruling for all those enemies of religion who are innovators, transgressors, apostates, and spreaders of corruption. (T)

And if he is not aware, then his deviant sayings should be shown to him, his misguidance should be pointed out, and the treatise 'Al-Kawkaba al-Shahabiya' should be given to him as a sample to study. If even after being informed he still calls him among the people of truth, the same ruling applies. And if he finds the guidance towards the truth, then "they are your brothers in religion" (T). And Allah, Glory be to Him, knows best, and His knowledge, may His glory be exalted, is most complete and most perfect.

और मृतक के कपड़े आदि सदक़ा (दान) की नीयत से दे दिए जाते हैं। यदि यह लेने वाला मोहताज (ज़रूरतमंद) है या धनी है, और देने वाले को उसका धनी होना मालूम है, या वहाँ रिवाज़ के तौर पर नमाज़ के इमाम या मस्जिद के मुल्ला को ये चीज़ें दी जाती हैं चाहे वह मोहताज हो या नहीं, तो लेना जाइज़ है हालाँकि धनी के लिए कराहत (नापसंदगी) से खाली नहीं। और अगर यह व्यक्ति धनी है और देने वाला मोहताज को देना चाहता है और उसने अपने आप को मोहताज जताकर उससे ले लिए तो हराम है।

كما لايخفى وقد نبه في الحديقة الندية شرح الطريقة المحمدية على ادق من هذا۔ (जैसा कि गुप्त नहीं है, और अल-हदिक़ा अन-नदिया शरह अत-तरीक़ा अल-मुहम्मदिया में इससे भी अधिक सूक्ष्म बात पर ध्यान दिलाया गया है।) जैसा कि छिपा नहीं है कि हदिक़ा नदिया शरह तरीक़ा मुहम्मदिया में इससे भी अधिक सख्त चेतावनी है। (त)

और गुनाह-ए-कबीरा (बड़ा पाप) चाहे शुरू से कबीरा हो या आदत के बाद कबीरा हो जाए, फ़िस्क़ (उल्लंघन) का कारण है, और खुले तौर पर फ़ासिक़ के पीछे नमाज़ पढ़ना मकरूह-ए-तहरीमी है, उसे इमाम बनाना गुनाह है, जैसा कि मुहाक़्क़िक़ अल-हलबी ने 'अल-ग़ुनिया' में इसकी तहक़ीक़ (शोध) की है (त)। हाँ, गुनाह-ए-कबीरा चाहे छिपा हुआ हो या ज़ाहिर, फ़ासिक़ बनाने में बराबर है, लेकिन ऐसा गुप्त जिस पर लोग जानकार न हों, लोग उस पर हुक्म (फैसला) नहीं कर सकते क्योंकि बिना जाने हुक्म कैसे मुमकिन है, जैसा कि 'अल-दुर्रुल मुख़्तार' में गवाही से संबंधित चर्चा में स्पष्ट किया गया है जहाँ उन्होंने फ़ुक़हा (धर्मशास्त्रियों) के शराब पीने को निरंतर पीने की शर्त के साथ बयान किया है (त)। और मुसलमान पर बुरा गुमान (शंका) करना स्वयं हराम है जब तक कि शरई प्रमाण न हो, वल्लाहु तआला आलम (और अल्लाह तआला बेहतर जानता है)।

मसला नंबर 618: दीन के विद्वान और शरीयत के मुफ़्ती इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि जो व्यक्ति 'तक़वियत-उल-ईमान' के लेखक इस्माइल देहलवी को हक़ (सत्य) पर जानता हो, उसके पीछे नमाज़ पढ़नी चाहिए या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य पाएँ।

जवाब:

यदि उसकी गुमराहियों और कुफ़्रियात (ईश-निंदा) पर जानकारी होने के बाद भी उसे हक़ पर जानता हो, तो वह स्वयं उसी की तरह गुमराह और बेदीन है और उसके पीछे नमाज़ की अनुमति नहीं। यदि अनजाने में पढ़ ली हो, तो जब सूचना मिले, दोहराना वाजिब (अनिवार्य) है।

كما هو الحكم سائر اعداء الدين من المبتدين الفسقة المرتدة المفسدين۔ (जैसा कि दीन के अन्य सभी दुश्मनों जैसे बिदअतियों, फ़ासिक़ों, मुर्तदों और फ़सादियों के लिए यही हुक्म है।) जैसा कि यही हुक्म दीन के उन तमाम दुश्मनों का है जो बिदअती, फ़ासिक़, मुर्तद और फ़साद फैलाने वाले हैं। (त)

और अगर जागरूक नहीं है, तो उसे उसके गुमराह करने वाले कथन दिखाए जाएँ, उसकी गुमराही बताई जाए, और नमूने के तौर पर 'अल-कौकबतुश शहाबिया' नामक पत्रिका पढ़ाई जाए। अगर अब सूचना मिलने के बाद भी वह उसे हक़ वाला कहे, तो वही हुक्म है, और अगर उसे हक़ की ओर तौफ़ीक़ (प्रेरणा) मिल जाए तो "वे तुम्हारे दीनी भाई हैं" (त)। और अल्लाह सुब्हानहु तआला बेहतर जानता है और उसका ज्ञान, उसका प्रताप बुलंद हो, सबसे पूर्ण और सबसे मज़बूत है।

पृष्ठ 486 / 736

اور مردے کے کپڑے وغیرہ بہ نیت تصدّق دے دیئے جاتے ہیں اگر یہ لینے والا محتاج ہے یا غنی ہے اور دینے والے کو اس کا غنی ہونا معلوم ہے یا وہاں بطورِ رسم امام نماز یا ملائے مسجد کو یہ چیزیں دی جاتی ہیں خواہ محتاج ہو یا نہیں تو لینا جائز ہے اگرچہ غنی کے لئے کراہت سے خالی نہیں، اور اگر یہ شخص غنی ہے اور دینے والا محتاج کو دینا چاہتا ہے اور اس نے اپنے آپ کو محتاج جتا کر اس سے لے لئے تو حرام ہے۔

کما لایخفی وقد نبہ في الحدیقة الندیة شرح الطریقة المحمدیة علی ادق من ھذا۔ جیسا کہ مخفی نہیں کہ اور حدیقہ ندیہ شرح طریقہ محمدیہ میں اس سے بھی بڑھ کر سخت تنبیہ ہے۔ (ت)

اور گناہِ کبیرہ خواہ ابتداءً کبیرہ ہو یا بعد عادت کبیرہ ہو جائے موجبِ فسق ہے ، اور فاسقِ معلن کے پیچھے نماز مکروہِ تحریمی ، اسے امام بنانا گناہ ہے کما حققہ المحقق الحلبي في الغنیة (جیسا کہ محقق حلبی نے غنیہ میں اس کی تحقیق کی ہے۔ت) ہاں گناہِ کبیرہ خفیہ ہو یا علانیہ فاسق کر دینے میں برابر ہے مگر ایسا خفیہ جس پر بندے مطلع نہ ہوں بندے اس پر حکم نہیں کر سکتے کہ بے جانے حکم کیونکر ممکن کما اوضحہ في الدر المختار من الشھادة في بیان تقییدھم شرب الخمر بالادمان (جیسا کہ دُرِ مختار میں شہادت سے متعلق گفتگو میں جہاں انھوں نے فقہاء کا شربِ خمر کو دوامِ شرب کے ساتھ مقید کرنے کو بیان کیا ہے۔ت) اور مسلمان پر بد گمانی خود حرام ہے جب تک ثبوتِ شرعی نہ ہو ، واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۶۱۸: کیا فرماتے ہیں علمائے دین ومفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ جو شخص اسمعیل دہلوی مصنفِ تقویۃ الایمان کو حق جانتا ہو اس کے پیچھے نماز پڑھنا چاہئے یا نہیں؟ بینوا توجروا الجواب:

اگر اس کے ضلالت وکفریات پر آگاہی ہو کر اسے اہلِ حق جانتا ہو تو خود اُس کی مثل گمراہ بددین ہے اور اُس کے پیچھے نماز کی اجازت نہیں، اگر نادانستہ پڑھ لی ہو تو جب اطلاع ہو اعادہ واجب ہے،

کما ھو الحکم سائر اعداء الدین من المبتدین الفسقۃ المرتدۃ المفسدین۔ جیسا کہ یہی حکم تمام ان اعداء دین کا ہے جو بدعتی ، فاسق ، مرتد اور فساد پھیلانے والے ہیں۔ (ت)

اور اگر آگاہ نہیں تو اُسے اس کے اقوالِ ضالہ دکھائے جائیں، اس کی گمراہی بتائی جائے ، رسالہ الکوکبۃ الشھابیہ بطورِ نمونہ مطالعہ کرایا جائے۔ اگر اب بعدِ اطلاع بھی اُسے اہلِ حق کہے وہی حکم ہے ، اور اگر توفیق پائے حق کی طرف فاخوانکم فی الدین (تو وہ تمہارے دینی بھائی ہیں۔ ت) واللہ سبحنہ تعالٰی اعلم وعلمہ جل مجدہ اتم واحکم۔

Fatawa Razawiyya, Volume 6

Problem 619: 6 Jumada al-Ula 1317 AH. What do the scholars of religion and muftis of the clear Sharia say regarding this issue: A person who, for professional purposes, creates images of Hindu deities like Tesu, Rawan, Ramchandra, Sita, etc., and is a photographer, a sodomite, a perpetrator of forbidden acts, and generally, those whose women roam the markets unveiled; is it permissible to offer prayer behind such mentioned persons or not? And if prayer was offered, is it necessary to repeat it or not? Explain and you will be rewarded.

The Answer: Making a picture of a living being, whether hand-drawn or photographic, is forbidden (Haraam). And making images of the deities of the infidels is even more severely forbidden and a graver major sin. The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

"Indeed, the people most severely punished on the Day of Resurrection will be the picture-makers." (Reported by the Imams and the Two Sheikhs [Bukhari and Muslim] from Abdullah bin Masood, from the Mother of the Believers, Aisha al-Siddiqah [may Allah be pleased with her].)

Truly, the severest punishment on the Day of Judgment will be for the picture-makers. This was narrated by the Imams and Bukhari and Muslim from Hazrat Abdullah bin Masood on the authority of the Mother of the Believers Sayyidah Aisha al-Siddiqah (may Allah be pleased with her).

Similarly, a sodomite, a transgressor (fasiq), and a wicked person (fajir) are committers of major sins. It is in the Hadith that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

"Cursed is he who does the act of the people of Lot." (Reported by Ahmad from Ibn Abbas [may Allah be pleased with them both].)

Cursed is the one who does the work of the people of Lot. Imam Ahmad narrated this from Hazrat Ibn Abbas (may Allah be pleased with them both).

One whose woman goes out without proper covering (satar) – such that her arms, neck, stomach, hair, or calf are exposed, or she wears thin clothing through which the body is visible – and he, being aware of this situation, does not stop the woman to the best of his ability and does not make arrangements, he is also a transgressor

(fasiq) and a cuckold (dayyuth). The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

"Three [types of] people will not enter Paradise: the one who is disobedient to his parents, the cuckold (dayyuth), and the woman who imitates men." (Reported by al-Hakim and al-Bayhaqi with a sound [sahih] chain of narration from Ibn Umar [may Allah be pleased with them both].)

Three persons will not enter Paradise: the one who causes pain to parents, the cuckold (dayyuth), and the woman who takes the appearance of men. Al-Hakim and Al-Bayhaqi have narrated this from Hazrat Ibn Umar (may Allah be pleased with them both) with a sahih chain.

---

1. Sahih al-Bukhari, Chapter: Punishment of picture-makers on the Day of Judgment, printed by Qadeemi Kutub Khana, Karachi, 2/880
2. Musnad Ahmad bin Hanbal, narrated from Ibn Abbas (may Allah be pleased with him), printed by Dar al-Fikr, Beirut, 1/317
3. Al-Sunan al-Kubra by al-Bayhaqi, Chapter: A man taking a farmer and a singing slave girl, etc., printed by Dar Sadir, Beirut, 10/226

फ़तावा रज़विया, जिल्द छठा

मसाला ६१९: ६ जमादी-उल-अव्वल १३१७ हिजरी। दीन के विद्वान और शरीयत के मुफ़्ती इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि पेशे के उद्देश्य से जो व्यक्ति हिंदू देवताओं जैसे टेसू, रावण, रामचंद्र, सीता आदि की मूर्तियाँ या चित्र बनाता है और फ़ोटोग्राफ़र है, और जो सोडोमाइट (मलअम) है, हराम काम करने वाला है और सामान्यतः वे व्यक्ति जिनकी महिलाएँ बाज़ारों में बेपर्दा घूमती हैं; तो ऐसी स्थिति में उक्त व्यक्तियों के पीछे नमाज़ पढ़ना जायज़ है या नहीं? और अगर पढ़ ली तो क्या उसे दोबारा पढ़ना चाहिए या नहीं? बयान फ़रमाएँ, पुण्य मिलेगा।

जवाब: जानदार का चित्र बनाना चाहे हाथ से हो या फ़ोटो के रूप में, हराम है। और काफ़िरों के आराध्यों के चित्र बनाना और भी अधिक हराम और बड़ा गुनाह (कबीरा) है। अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

"बेशक क़यामत के दिन सबसे कठोर अज़ाब (दंड) चित्रकारों को होगा।" (इसे इमामों और बुखारी व मुस्लिम ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसूद के हवाले से मोमिनों की माँ हज़रत आयशा सिद्दीक़ा [रज़ियल्लाहु अन्हा] से नक़ल किया है।)

बेशक क़यामत के दिन सबसे सख़्त अज़ाब चित्र बनाने वालों पर होगा। इसे अइम्मा और बुख़ारी व मुस्लिम ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद के हवाले से उम्मुल मोमिनीन सैयदा आयशा सिद्दीक़ा रज़ियल्लाहु तआला अन्हा से नक़ल किया है।

इसी तरह मलअम (सोडोमाइट), फ़ासिक़, फ़ाजिर बड़े गुनाहों के अपराधी हैं। हदीस में है कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

"धिक्कार (मलऊन) है उस पर जो लूत की क़ौम वाला काम करे।" (इसे इमाम अहमद ने हज़रत इब्ने अब्बास [रज़ियल्लाहु अन्हुमा] से रिवायत किया है।)

धिक्कार है उस पर जो कौमे लूत का काम करे। इसे इमाम अहमद ने हज़रत इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु तआला अन्हुमा से रिवायत किया।

जिसकी औरत बे-सतर (बिना पर्दे के) बाहर घूमती है, जैसे कि हाथ, गला, पेट, सर के बाल या पिंडलियों का हिस्सा, संक्षेप में शरीर का वह हिस्सा जिसे छिपाना फ़र्ज़ है, वह खुला हो या उस पर इतना बारीक कपड़ा हो कि बदन चमकता हो, और वह व्यक्ति इस स्थिति को जानते हुए अपनी पूरी

क्षमता के अनुसार उसे न रोकता हो और कोई प्रबंध न करता हो, वह भी फ़ासिक़ और दय्यूथ है। अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

"तीन व्यक्ति जन्नत में नहीं जाएँगे: माता-पिता की नाफ़रमानी करने वाला, दय्यूथ और पुरुषों का रूप धारण करने वाली स्त्री।" (इसे हाकिम और बैहक़ी ने सही सनद के साथ हज़रत इब्ने उमर [रज़ियल्लाहु अन्हुमा] से रिवायत किया है।)

तीन व्यक्ति जन्नत में नहीं जाएँगे: माँ-बाप को दुःख देने वाला, दय्यूथ और मर्दों की सूरत बनाने वाली औरत। इसे हाकिम और बैहक़ी ने हज़रत इब्न-ए-उमर रज़ियल्लाहु तआला अन्हुमा से सही सनद के साथ रिवायत किया है।

---

1. सहीह अल-बुख़ारी, बाब: अज़ाबुल मुसव्विरीन यौमुल क़ियामह, मुद्रित: क़दीमी कुतुब ख़ाना, कराची, २/८८०
2. मुसनद अहमद बिन हंबल, हज़रत इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु से वर्णित, मुद्रित: दारुल फ़िक्र, बेरुत, १/३१७
3. अल-सुनन अल-कुब्रा लिल-बैहक़ी, मुद्रित: दार सादिर, बेरुत, १०/२२६

فتاویٰ رضویہ، جلد ششم

مسئلہ ۶۱۹: ۶ جمادی الاولی ۱۳۱۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ بغرض پیشہ کے جو شخص تصاویر دیوتائے اہل ہنود کی مثل ٹیسو و راون و رام چندر و سیتا وغیرہ کی بناتا ہے اور فوٹو گرافر اور مغلم اور حرامی اور علی العموم جن اشخاص کی عورت بے پردہ سر بازار پھرتی ہیں تو اس حالت میں اشخاص مذکورین کے پیچھے پڑھنا نماز کا جائز ہے یا نہیں؟ اور اگر پڑھ لی تو اعادہ اس کا چاہئے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: جاندار کی تصویر بنانی دستی ہو یا خواہ عکسی حرام ہے، اور معبودانِ کفار کی تصویریں بنانا اور سخت تر حرام واشد کبیرہ ہے، رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں۔

ان اشد الناس عذاباً یوم القیمۃ المصورون (رواہ الائمۃ والشیخان عن عبد اللہ بن مسعود عن ام المؤمنین عائشۃ الصدیقۃ رضی اللہ تعالٰی عنہا۔)

بیشک سب سے زیادہ سخت عذاب روز قیامت مصوروں پر ہوگا۔ اس کو ائمہ اور بخاری ومسلم نے حضرت عبد اللہ بن مسعود کے حوالے سے حضرت ام المومنین سیدہ عائشہ صدیقہ رضی اللہ تعالیٰ عنہا سے نقل کیا ہے۔

یوں ہی مغلم، فاسق، فاجر مرتکبِ کبائر ہے۔ حدیث میں ہے کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

ملعون من یعمل عمل قوم لوط (رواہ احمد عن ابن عباس رضی اللہ تعالٰی عنہما۔)

ملعون ہے جو قوم لوط کا کام کرے۔ اس کو امام احمد نے حضرت ابن عباس رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے روایت کیا۔

جس کی عورت بے ستر باہر پھرتی ہے کہ بازو یا گلا یا پیٹ یا سر کے بال یا پنڈلی کا حصہ غرض جس جسم کا چھپانا فرض ہے کھلا ہوا ہے یا اس پر ایک باریک کپڑا ہو کہ بدن چمکتا ہو اور وہ اس حالت پر مطلع ہو کر عورت کو اپنی حد مقدور تک نہ روکتا ہو بندوبست نہ کرتا ہو وہ بھی فاسق و دیوث ہے۔ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

ثلثة لایدخلون الجنّة العاق لوالدیه والدیوث ورجلة النساء (رواہ الحاکم والبیھقی بسند صحیح عن ابن عمر رضی اللہ تعالٰی عنہما۔)

تین شخص جنت میں نہ جائیں گے ماں باپ کو ایذا دینے والا اور دیوث اور مردوں کی صورت بنانے والی عورت۔ اس کو حاکم اور بیہقی نے حضرت ابن عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے بسند صحیح روایت کیا ہے۔

---

1 صحیح البخاری باب عذاب المصورین یوم القیمۃ مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۲/۸۸۰ 2 مسند احمد بن حنبل مروی عن ابن عباس رضی اللہ تعالیٰ عنہ مطبوعہ دارالفکر بیروت ۱/۳۱۷ 3 السنن الکبری للبیہقی باب الرجل یتخذ الفلاح والجاریۃ المتغنیین الخ مطبوعہ دار صادر بیروت ۱۰/۲۲۶

Fatawa Razawiyya Volume 6

In Durr al-Mukhtar, it is stated:

“A 'Dayyuth' is one who feels no jealousy/protectiveness over his wife or any female relative (Mahram).” [1] One who does not have protective honor for his woman or any of his Mahrams is a 'Dayyuth'.

Similarly, if a woman is young and a source of temptation (Fitnah), and her going out causes trouble, and her guardian, being aware of this, does not stop her, then he is an open 'Dayyuth', even if she goes out fully covered. It is a sin to make such people an Imam (leader in prayer), and praying behind them is 'Makruh Tahrimi' (strongly disliked, close to forbidden). Prayer should not be performed behind them, and if performed, it must be repeated. As researched in 'Al-Ghaniyah' and as we have detailed in our Fatawa (as it is in this research of Ghaniyah and we have discussed it in detail in our Fatawa - T). And praying behind a person born out of wedlock is 'Makruh Tanzihi' (disliked) and against the best practice, provided he does not know the issues of prayer and purification more than all others present. If no other Imam is found, then one must necessarily pray behind him. Abandoning the congregational prayer for this excuse is not permissible, for an obligatory act (Wajib) cannot be abandoned for any reason (T). To avoid dislike and for the sake of following the better way, repeating the prayer is recommended as stated in 'Al-Durr al-Mukhtar' (as explained in Durr al-Mukhtar - T). And Allah knows best.

Problem No. 620: From Najibabad, sent by Hafiz Muhammad Ayaz Sahib, 20 Jumada al-Ukhra 1317 AH. What do the scholars of religion and jurists of the clear Shari'ah say about this problem: Zaid has the disease of hemorrhoids, and many warts have developed. A yellowish discharge comes out of them, and due to the large number of warts, wind is expelled along with stool stains which get on the clothes, as some stool remains stuck inside due to the warts during defecation. In both these situations, the clothes remain impure at all times. Zaid has tried every arrangement like wearing a loincloth, keeping two or three trousers and washing them from time to time to keep them pure, but nothing worked. Especially during travel, more difficulties arise, and particularly regarding leading the prayer. Although he avoids imamate, what can he do if he stands for obligatory prayer and other worshipers join him as followers? What else can he do but perform the prayer? In these difficult circumstances, what should Zaid do so that he can perform prayer without dislike and his clothes are considered pure? Provide a ruling, may you be rewarded.

The Answer: If the situation is such that if he cleans or changes the clothes, he won't be able to complete the obligatory prayer before they become impure again—meaning stool more than four and a half mashas (approx. 4.4 grams) or that yellow water covering an area more than a silver rupee coin—then there is no need to wash...

---

[1] Al-Durr al-Mukhtar, Bab al-Tazirāt, Published by Mujtabai Press, Delhi, 1/328. [2] Al-Durr al-Mukhtar, Bab Sifat al-Salat, Published by Mujtabai Press, Delhi, 11/1.

फ़तावी रज़विया जिल्द ६

दुर्रे मुख्तार में है:

“दयूष वह है जो अपनी स्त्री या अपनी किसी महरम पर गैरत न रखे।” [१] जो अपनी औरत या अपनी किसी महरम पर ग़ैरत न रखे वह दयूष है।

इसी तरह अगर औरत जवान और फ़ितना का कारण है और उसके बाहर फिरने से फ़ितना उठता है और यह जानते हुए भी उसे नहीं रोकता तो वह खुला दयूष है, चाहे वह पूरी तरह ढकी हुई बाहर निकलती हो। ऐसे लोगों को इमाम बनाना गुनाह है और उनके पीछे नमाज़ 'मक़रूहे तहरीमी' (हराम के करीब) है। नमाज़ नहीं पढ़ी जानी चाहिए और अगर पढ़ ली जाए तो उसे दोहराना ज़रूरी है। जैसा कि 'अल-ग़निया' में शोध किया गया है और हमने अपने फ़तावा में इसका विस्तार से वर्णन किया है। और एक अवैध संतान के पीछे नमाज़ 'मक़रूहे तनज़ीही' और श्रेष्ठता के विरुद्ध है, बशर्ते कि वह उपस्थित लोगों में सबसे अधिक नमाज़ और पवित्रता के मसलों को न जानता हो। अगर इमाम न मिले तो उसके पीछे नमाज़ पढ़ना ज़रूरी है। इस बहाने जमाअत छोड़ना जायज़ नहीं है क्योंकि एक वाजिब काम को किसी वजह से नहीं छोड़ा जा सकता (त)। श्रेष्ठता के विरुद्ध और नापसंदगी को दूर करने के लिए नमाज़ दोहराना मुस्तहब (पसंदीदा) है, जैसा कि 'दुर्रे मुख्तार' में बताया गया है (त)। और अल्लाह बेहतर जानता है।

मसला नंबर ६२०: नजीबाबाद से हाफ़िज़ मोहम्मद अयाज़ साहब द्वारा भेजा गया, २० जमादी अल-उखरा १३१७ हिजरी। दीन के विद्वान और शरीअत के मुफ्ती इस मसले में क्या फरमाते हैं कि ज़ैद को बवासीर की बीमारी है और बहुत सारे मस्से हो गए हैं। उनमें से पीले रंग की गंदगी निकलती है और मस्सों की अधिकता के कारण हवा निकलने के साथ मल का धब्बा भी कपड़ों पर लग जाता है, क्योंकि मस्सों की वजह से कुछ मल अंदर अटका रह जाता है। इन दोनों स्थितियों में कपड़े हर समय नापाक रहते हैं। ज़ैद ने हर तरह के इंतज़ाम किए जैसे लंगोट बांधना, दो या तीन पाजामे रखना और उन्हें समय-समय पर धोकर पाक रखना, लेकिन कुछ न हो सका। खासकर सफर में और भी दिक्कतें आती हैं और विशेष रूप से इमामत करने में। हालाँकि वह इमामत से बचता है, लेकिन इस सूरत में वह क्या कर सकता है जब वह फ़र्ज़ नमाज़ के लिए खड़ा हो और दूसरे नमाज़ी आकर उसके पीछे शामिल हो जाएं? इसके अलावा उसके पास नमाज़ अदा करने के सिवा क्या चारा है? इन

दिक्कतों की स्थिति में ज़ैद को क्या करना चाहिए ताकि वह बिना किसी नापसंदगी के नमाज़ अदा कर सके और उसके कपड़ों को पाक माना जाए? फ़तवा दें, आपको सवाब मिलेगा।

जवाब: अगर स्थिति ऐसी है कि कपड़ा पाक करने या बदलने पर फ़र्ज़ नमाज़ पूरी नहीं हो पाएगी और वह फिर नापाक हो जाएगा—यानी मल साढ़े चार माशा से अधिक या वह पीला पानी एक रुपया के सिक्के के आकार से अधिक आ जाए—तो धोने की कोई ज़रूरत...

---

[१] दुर्रे मुख्तार, बाब अल-ताज़ीरात, मुद्रित मुतबई प्रेस, दिल्ली, १/३२८। [२] दुर्रे मुख्तार, बाब सिफ़त अल-सलात, मुद्रित मुतबई प्रेस, दिल्ली, ११/१।

पृष्ठ ४८८ का ७३६

در مختار میں ہے:

دیوث من لا یغار علی امرأتہ او محرمہ ۱۔ | جو اپنی عورت یا اپنی کسی محرم پر غیرت نہ رکھے وہ دیوث ہے۔

اسی طرح اگر عورت جوان اور محلِ فتنہ ہے اور اس کے باہر پھرنے سے فتنہ اٹھتا ہے اور یہ مطلع ہو کر باز نہیں رکھتا جب بھی کھلا دیوث ہے اگرچہ پورے ستر کے ساتھ باہر نکلتی ہو، ان سب لوگوں کو امام بنانا گناہ ہے اور ان کے پیچھے نماز مکروہِ تحریمی قریب بحرام ہے نہ پڑھی جائے اور پڑھ لی تو اعادہ ضرور ہے۔ کما حققہ فی الغنیۃ وفصلناہ فی فتاونا (جیسا کہ اس تحقیق غنیہ میں ہے اور ہم نے اپنے فتاوٰی میں اس کی تفصیلی گفتگو کی ہے۔ت) اور حرامی کے پیچھے نماز مکروہِ تنزیہی اور خلافِ اولٰی ہے جبکہ وہ سب حاضرین سے زیادہ مسائلِ نماز و طہارت نہ جانتا ہو، اگر امام نہ ملے تو ضرور اس کے پیچھے پڑھی جائے۔ اس عذر سے ترکِ جماعت جائز نہیں فان الواجب لا یترک لأجل (واجب کو کسی وجہ سے ترک نہیں کیا جا سکتا۔ت) خلافِ اولٰی اور دفعِ کراہت کے لئے اعادہ مستحب حکمًا بینہ فی الدرالمختار (جیسا کہ درمختار میں اس کو بیان کیا ہے۔ت) واللہ سبحانہ وتعالٰی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۶۲۰: از نجیب آباد مرسلہ حافظ محمد ایاز صاحب ۲۰ جمادی الاخرٰی ۱۳۱۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اور مفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ زید کو مرضِ بواسیر کا ہے اور مسے کثرت سے ہو گئے ان میں سے آلائش رنگ زردی مائل خارج ہوتی ہے و نیز کثرتِ مستوں سے اخراجِ ریح فضلہ براز کا دھبہ بھی کپڑے پر آ جاتا ہے کہ جو ہجوم مستوں کی وجہ سے وقتِ

اجابت کسی جگہ اندر الجھا ہوا رہ جاتا ہے ان دونوں حالتوں میں کپڑا ہر وقت نجس رہتا ہے، زید مذکور ہر طرح انتظام مثل لنگوٹ باندھنا، دو یا تین پاجامے رکھنا اور ان کا وقفتاً فوقتاً دھو کر پاک رکھنا یہ سب کچھ کر چھوڑا مگر کچھ نہ ہو سکا خاص کر سفر میں اس سے زیادہ دقتیں پیش آتی ہیں اور خصوصاً امامت کرنا اگرچہ وہ امامت سے درگزر کرتا ہے مگر اس صورت میں وہ کیا کر سکتا ہے کہ ادائے نماز فرض کے واسطے کھڑا ہو اور بعد کو اور نمازی آ کر مقتدی بن گئے۔ بجز اس کے کیا چارہ کہ نماز ادا کرے، ان دقتوں کی حالت میں زید مذکور کو کیا کرنا چاہئے کہ جس سے بے کراہت نماز ادا کرے اور وہ کپڑا حکمِ پاکی کا رکھے؟ بینوا توجروا۔

الجواب: اگر حالت ایسی ہے کہ کپڑا پاک کرے یا بدلے تو فرض نہ پڑھنے پائے گا کہ پھر نجس ہو جائے گا یعنی براز ساڑھے چار ماشہ سے زائد یا وہ زرد پانی روپیہ بھر کی مساحت سے زیادہ آجائے گا تو دھونے کی کوئی ضرورت

۱۔ درمختار باب التعزیرات مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۳۲۸/۱ ۲۔ درمختار ، باب صفة الصلوة مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱۱/۱

Fatawa Razawiyya Volume Six

...otherwise, without washing, his own prayer will not be valid. And while he is in a state of disability (Ma'zoor), meaning an entire prayer time passed from beginning to end such that he did not find an opportunity to perform ablution and pray the obligatory prayer, and ever since, this impurity keeps appearing at all times during prayer, even if only once in the designated time, then he cannot lead the prayer in such a state. If people come and join him, he should not create hindrance, nor should he say the Takbir loudly. Those people will separate on their own. If they still don't separate, then after the Salam, he should inform them: "I am a Ma'zoor (ritually disabled), the prayer behind me is not valid, you should pray yours again."

[Boxed Section] Arabic Text: In Ad-Durr al-Mukhtar: "If [impurity] flows onto the clothes of a disabled person more than the amount of a Dirham, it is permissible for him not to wash it if, were he to wash it, it would become impure again before finishing it, meaning the prayer. If it does not become impure before finishing, then it is not permissible to omit washing it. This is the chosen opinion for Fatwa. And Allah Almighty knows best."

Urdu Translation of Boxed Section: It is in Durre Mukhtar: "If impurity more than a Dirham flows onto the clothes of a disabled person, then not washing it is permissible for him in the case where, if he washes it, the clothes become impure before he finishes the prayer. If they do not become impure before finishing, then omitting the washing is not permissible for him. This is the chosen opinion for Fatwa. (T)"

Problem No. 621: From Daler Ganj, Pargana Jahanabad, District Pilibhit, sent by Khalifa Ilahi Bakhsh, 18 Rajab 1317 AH. What do the scholars of the religion say about this issue: should a person who is unaware of the rules of Tajwid (correct pronunciation of Quran) be made an Imam or not? And if he is made one, will the prayer of a person who knows the rules be valid behind him or not? And will the prayer of common people, i.e., those who do not know the rules, also be valid behind him? Please clarify and be rewarded.

The Answer: If he makes such mistakes that cause corruption in the meaning, for example, the change of a letter like reciting 'Ain, Ta, Sad, Ha, Za instead of Hamza, Ta, Sin, Ha, Za, such that the word remains meaningless or a grave change in meaning occurs, or the ignorance of vowel lengths such that the movements (harakaat) increase to become letters of prolongation (Huruf al-Maddah) and the same

abominations follow, just as some ignorant people recite 'Nasta'een' as 'Nasta-een' which is meaningless, or recite 'La ilallaahi tuhsharun' with a 'Lam' of emphasis as 'Laa ilallaahi tuhsharun' with a 'Lam' of negation, which changes the meaning; then according to the school of our early Imams and the correct and reliable opinion of researchers, his own prayer is absolutely void, as established and preferred by the researcher in 'Al-Fath' and Halabi in 'Al-Ghunya' and others (the researcher in Fath and Halabi in Ghunya and others have researched this in their books...

---

1. Ad-Durr al-Mukhtar, Chapter of Menstruation, printed by Mujtabai Delhi, 1/53.

फ़तावा रज़विया छठा खंड

...नहीं तो बिना धोए स्वयं उसकी अपनी नमाज़ नहीं होगी। और जबकि वह माज़ूरी (अशक्तता) की स्थिति में है, यानी नमाज़ का कोई पूरा समय शुरू से अंत तक ऐसा बीत गया कि उसे वज़ू करके फ़र्ज़ पढ़ लेने की मोहलत नहीं मिली और जब से बराबर हर समय नमाज़ में यह नजासत (गंदगी) आती रहती है, चाहे समय में एक ही बार हो, तो वह ऐसी स्थिति में इमामत नहीं कर सकता। लोग अगर आकर शामिल हों तो वह उन्हें रोके नहीं, न ही ज़ोर से तकबीर कहे। वे लोग खुद अलग हो जाएँगे। और अगर फिर भी वे अलग न हों, तो सलाम के बाद सूचित कर दे कि "मैं माज़ूर हूँ, मेरे पीछे नमाज़ जायज़ नहीं है, तुम अपनी फिर से पढ़ लो।"

[बॉक्स वाला हिस्सा] अरबी पाठ: दुर्रे मुख़्तार में है: "यदि किसी अक्षम व्यक्ति के कपड़ों पर एक दिरहम से अधिक अशुद्धि बह जाए, तो उसके लिए उसे न धोना अनुमेय है यदि उसे धोने से नमाज़ पूरी करने से पहले ही वह फिर से अशुद्ध हो जाए। यदि वह पूरा करने से पहले अशुद्ध न हो, तो धोना छोड़ना अनुमेय नहीं है। फतवे के लिए यही पसंदीदा मत है। और अल्लाह सर्वशक्तिमान बेहतर जानता है।"

उर्दू अनुवाद (बॉक्स): दुर्रे मुख़्तार में है: "अगर माज़ूर के कपड़े पर दिरहम से ज़्यादा नजासत बह गई, तो उसके लिए इसे न धोना उस सूरत में जायज़ है जब इसे धोने पर नमाज़ से फ़ारिग (निवृत्त) होने से पहले ही कपड़े फिर से नापाक हो जाएँ। अगर फ़ारिग होने से पहले नापाक न हों, तो धोने को छोड़ना जायज़ नहीं है। फ़तवा के लिए यही कौल (कथन) मुख़्तार (चुना हुआ) है। (त)"

मसला नंबर 621: दलेर गंज, परगना जहानाबाद, ज़िला पीलीभीत से, प्रेषक खलीफ़ा इलाही बख्श, 18 रजब 1317 हिजरी। धर्म के विद्वान इस मसले में क्या कहते हैं कि जो व्यक्ति तज्वीद (कुरान पढ़ने के नियम) के नियमों से अनभिज्ञ हो, उसे इमाम बनाया जाए या नहीं? और अगर बनाया जाए, तो क्या उसके पीछे नियमों को जानने वाले की नमाज़ होगी या नहीं? और क्या आम लोगों, यानी जो नियमों को नहीं जानते, उनकी नमाज़ भी उसके पीछे होगी या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: अगर वह ऐसी गलतियाँ करता है जिससे अर्थ में बिगाड़ आता है, उदाहरण के लिए अक्षरों का बदलना जैसे 'ऐन, ता, साद, हा, ज़ा' की जगह 'अलिफ़, ता, सीन, हा, ज़ा' पढ़ना कि शब्द निरर्थक रह जाए या अर्थ में भारी परिवर्तन आ जाए, या मात्राओं की अज्ञानता कि हरकतें बढ़कर 'हुरूफ-ए-मद्दा' (लंबे स्वर) बन जाएँ और वही बुराइयाँ पैदा हों, जैसे कुछ अज्ञानी 'नस्तईन' को 'नस्तआइन' पढ़ते हैं

जो अर्थहीन है, या 'ला इलल्लाहि तोहशरून' (निश्चित ही अल्लाह की ओर जमा किए जाओगे) को 'ला-इलल्लाहि तोहशरून' (अल्लाह की ओर जमा नहीं किए जाओगे) पढ़ते हैं जो अर्थ का अनर्थ है; तो हमारे प्राचीन इमामों के मज़हब और शोधकर्ताओं के सही और विश्वसनीय मत के अनुसार उसकी अपनी नमाज़ ही पूरी तरह से बातिल (अमान्य) है, जैसा कि 'अल-फ़तह' में शोधकर्ता ने और 'अल-ग़ुनिया' में हलबी और अन्य ने इसे प्रमाणित और श्रेष्ठ बताया है (शोधकर्ता ने फ़तह में और हलबी ने ग़ुनिया में और अन्य लोगों ने अपनी किताबों में इसकी शोध की है...

---

1. दुर्रे मुख़्तार, बाब अल-हैज़ (मासिक धर्म का अध्याय), मुजतबाई दिल्ली द्वारा मुद्रित, 53/1.

نہیں ورنہ بے دھوئے خود اس کی اپنی نماز نہ ہوگی اور جبکہ وہ حالتِ معذوری میں ہے یعنی کوئی وقتِ کامل نماز کا ایسا گزر گیا شروع سے ختم تک کہ اُسے وضو کرکے فرض پڑھ لینے کی فرصت نہیں ملی اور جب سے برابر ہر وقت نماز میں یہ نجاست آتی رہتی ہے اگرچہ وقت میں ایک ہی بار تو وہ ایسی حالت میں امامت نہیں کرسکتا، لوگ اگر آکر شامل ہوں جسر نہ کرے تکبیرِ آواز سے نہ کہے وہ لوگ خود الگ ہوجائیں گے۔ اور اس پر بھی جُدا نہ ہوں تو بعد سلام اطلاع کردے کہ میں معذور ہوں میرے پیچھے نماز جائز نہیں تم اپنی پھر پڑھ لو۔

[خانہ] فی الدرالمختار ان سال علی ثوبہ فوق الدرھم جازلہ ان لا یغسلہ ان کان لوغسلہ تنجس قبل الفراغ منھا ای الصلاۃ والایتنجس قبل فراغہ فلا یجوز ترک غسلہ ھوالمختار للفتوٰی واللہ تعالٰی اعلم۔

دُرِ مختار میں ہے اگر معذور کے کپڑے پر درہم سے زیادہ نجاست بہہ گئی تو اس کے لئے اس کا نہ دھونا اس صورت میں جائز ہے جبکہ اس کو دھونے تو نماز سے فارغ ہونے سے پہلے کپڑے اس کے نجس ہوجاتے ہیں اگر اس کے فارغ ہونے سے پہلے نجس نہ ہو تو اس کے لیے دھونے کو ترک کرنا جائز نہیں۔ فتوٰی کے لئے یہی قول مختار ہے (ت)

مسئلہ نمبر ۶۲۱: از دلیر گنج پرگنہ جہاں آباد ضلع پیلی بھیت مرسلہ خلیفہ الٰہی بخش ۱۸ رجب ۱۳۱۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں جو شخص قواعدِ تجوید سے ناواقف ہو اُس کو امام کیا جائے یا نہیں؟ اور اگر کیا جائے تو اس کے پیچھے قواعد داں کی نماز ہوگی یا نہیں؟ اور عام لوگوں یعنی غیر قواعد داں کی نماز بھی اس کے پیچھے ہوگی یا نہیں؟ بینوا توجروا۔ الجواب: اگر ایسی غلطیاں کرتا ہے کہ معنی میں فساد آتا ہے مثلاً حرف کی تبدیل جیسے ع ط ص ح ظ کی

جگہ ء ت س ہ ز پڑھنا کہ لفظ مہمل رہ جائے یا معنی میں تغیرِ فاحش راہ پائے یا کھڑا پڑا کی بدتمیزی کہ حرکات بڑھ کر حروفِ مدہ ہو جائیں اور وہی قباحتیں لازم آئیں، جس طرح بعض جاہل نستعین کو نستاعین پڑھتے ہیں کہ بے معنی یا لا الی اللہ تحشرون بلامِ تاکید کو لالی اللہ تحشرون بلائے نافیہ کہ تغیرِ معنی ہے تو ہمارے ائمہ متقدمین کے مذہب صحیح و معتمد محققین پر مطلقاً خود اس کی نماز باطل ہے کما حققہ ورجحہ المحقق فی الفتح والحلبی فی الغنیۃ وغیرھما (محقق نے فتح میں اور حلبی نے غنیہ میں اور دیگر لوگوں نے اپنی کتب میں اس کی تحقیق

---

۱ در مختار باب الحیض مطبوعہ مجتبائی دہلی ۵۳/۱

Fatawa Rizvia Volume Six

...is done. T) And when his own [prayer] is not [valid], then that of the people behind him and others cannot be [valid] because "the prayer of the follower is based on the prayer of the imam." (T) And if the error is such that a letter cannot be pronounced correctly, as is the case today with common villagers and many city dwellers, then the fatwa of the majority of later scholars is also that the prayer of a correct reciter behind him is void, as explained by Allama Al-Ghazzi and Allama Al-Khayr Al-Ramli and others. (T) And when his own [prayer] is not [valid], and if the inability is such that he did not try to learn or left it after a few days, whereas if he had persisted, there was hope he would learn, then according to them, such an error will also invalidate his own prayer. As stated in "Al-Khulasa," "Al-Fath," and other general books. (T) In short, such a person is not fit to be made an imam. "And we have detailed the statement on these issues in several places in our fatwas." (T) And if he does not make such an error that results in a corruption of meaning, then his prayer is correct for himself and correct for everyone behind him. Furthermore, if the situation is such that the necessary matters of Tajweed (proper recitation) and Sharia obligations are not fulfilled, the omission of which is a sin—such as "Madd Muttasil" to the extent of one Alif etc., as we have detailed in our fatwas specifically regarding "Al-Tarteel" (T)—then even then, if he is made an imam, the prayer behind him will be severely disliked (Makruh), because it involves a sinful act and makes him a transgressor (Fasiq) due to his persistence in abandoning a mandatory duty. (T) And if all the essentials are fulfilled, and the difference is only in supplementary refinements like "Izhar," "Ikhfa," "Rawm," "Ishmam," "Tafkhim," "Tarqiq," etc., then there is no harm; indeed, based on rules, their imamate is preferable because "the more perfect the imam is, the more virtuous he is." (T) And Allah, the Glorified and Exalted, knows best.

Problem No. 622: From Bengal, Sylhet, village Payam, sent by Mr. Suraj Miyan Sahib through Maulvi Sultanuddin, 13 Shaban 1317 AH. What do the scholars of religion say in this matter: There was a dispute between Amr and Zaid regarding a shared property. A court case was filed, and Amr was successful. Zaid is the imam of that village. Now, Amr, out of prejudice and enmity, told all his followers that Zaid told lies in court for the success of his case, so you should not pray behind him now, he is no longer fit for imamate. Then the followers said to Amr: "Present some proof of his lying." As of yet, no witness has been presented; it is a claim without evidence, and until today, Zaid has never spoken a word of lie from his tongue...

फतावा रिज़विया छठा खंड

...की है। त) और जब उसकी अपनी (नमाज़) नहीं होगी तो उसके पीछे किसी की (नमाज़) नहीं हो सकेगी, क्योंकि "मक्तदी (पीछे चलने वाले) की नमाज़ इमाम की नमाज़ पर आधारित है"। (त) और अगर गलती ऐसी है कि अक्षर को सही ढंग से अदा नहीं किया जा सकता, जैसा कि आज के आम ग्रामीणों और बहुत से शहरियों का हाल है, तो अब अधिकांश बाद के विद्वानों (मुताखिरीन) का भी यही फतवा है कि उसके पीछे सही पढ़ने वाले की नमाज़ बातिल (अमान्य) है, जैसा कि अल्लामा अल-ग़ज़ी और अल्लामा अल-खैर अल-रमली और अन्य विद्वानों ने स्पष्ट किया है। (त) और जब उसकी अपनी नहीं होगी और अगर असमर्थता ऐसी है कि सीखने की कोशिश नहीं की या कुछ दिनों तक करके छोड़ दी, जबकि अगर वह लगा रहता तो उम्मीद थी कि सीख जाता, तो ऐसी गलती उनके अनुसार स्वयं उसकी अपनी नमाज़ को भी बातिल कर देगी। जैसा कि 'अल-खुलासा', 'अल-फतह' और अन्य सामान्य पुस्तकों में है। (त) संक्षेप में, ऐसा व्यक्ति इमाम बनाने के योग्य नहीं है। "और हमने इन मसलों पर अपने फतवों में कई स्थानों पर विस्तार से बयान किया है।" (त) और अगर वह ऐसी गलती नहीं करता जिससे अर्थ में बिगाड़ पैदा हो, तो नमाज़ खुद उसकी भी सही है और उसके पीछे सब की भी सही है। फिर यदि स्थिति ऐसी है कि तजवीद (सही उच्चारण) के आवश्यक मामले और शरीयत के वाजिब (अनिवार्य) कार्य अदा नहीं होते जिनका छोड़ना गुनाह का कारण है, जैसे 'मद मुत्तसिल' एक अलिफ की मात्रा तक आदि, जैसा कि हमने अपने फतवों में विशेष रूप से 'अल-तरतील' के तहत विस्तार से उल्लेख किया है (त), तब भी जब उसे इमाम बनाया जाएगा तो उसके पीछे नमाज़ पढ़ना सख्त मकरूह (नापसंद) होगा, क्योंकि इसमें गुनाह का काम शामिल है और एक अनिवार्य कर्तव्य को छोड़ने पर अड़े रहने के कारण वह फासिक (उल्लंघनकारी) है। (त) और अगर सभी आवश्यक चीजें अदा हो जाती हैं, और केवल अतिरिक्त सौंदर्य जैसे 'इज़हार', 'इखफा', 'रौम', 'इशमाम', 'तफ़्खीम', 'तरक़ीक़' आदि में अंतर पड़ता है, तो कोई हर्ज नहीं; हाँ, नियमों के अनुसार उनकी इमामत बेहतर है क्योंकि "इमाम जितना अधिक पूर्ण होगा, उतना ही अधिक श्रेष्ठ होगा।" (त) और अल्लाह सुब्हानहु व तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला नंबर 622: बंगाल, सिलहट, गाँव पयाम से, श्री सूरज मियां साहिब द्वारा प्रेषित, मौलवी सुल्तानुद्दीन के माध्यम से, 13 शाबान 1317 हिजरी। इस मसले में धर्म के विद्वान क्या कहते हैं: एक साझा संपत्ति के बारे में अमर और ज़ैद के बीच विवाद था। कचहरी में मामला चला और अमर विजयी हुआ। ज़ैद उस गाँव का इमाम है। अब अमर ने द्वेष और शत्रुता के कारण उसके सभी अनुयायियों से

कहा कि ज़ैद ने अपने मुकदमे की सफलता के लिए कचहरी में झूठ बोला है, इसलिए अब तुम लोग उसके पीछे नमाज़ मत पढ़ो, वह अब इमामत के काबिल नहीं रहा। तब अनुयायियों ने अमर से कहा: "तुम उसके झूठ बोलने का कोई सबूत पेश करो।" अभी तक कोई गवाह पेश नहीं किया गया है; यह बिना प्रमाण के दावा है, और आज तक कभी ज़ैद ने अपनी ज़बान से झूठ का शब्द नहीं निकाला...

पृष्ठ 490/736

کی ہے۔ت) اور جب اس کی اپنی نہ ہوگی تو قواداں وغیرہ کسی کی اس کے پیچھے نہ ہوسکے گی فان صلوۃ المأموم مبتنیۃ علی صلوۃ الامام (کیونکہ مقتدی کی نماز امام کی نماز پر مبنی ہے۔ت) اور اگر غلطی یوں ہے کہ حرف بروجہ صحیح ادا نہیں کر سکتا جس طرح آج کل عام دہقانوں اور بہت شہریوں کا حال ہے تو اب جمہور متأخرین کا بھی فتوٰی اسی پر ہے کہ اس کے پیچھے صحیح خواں کی نماز باطل کما افادہ العلامۃ الغزی والعلامۃ الخیر الرملی وغیر ھما (جیسے علامہ غزی اور علامہ خیر رملی اور دیگر علماء نے اس کا فخر کیا ہے۔ت) اور جب اس کی اپنی نہ ہو گی اور اگر عجز یوں ہے کہ سیکھنے کی کوشش نہ کی یا کچھ دنوں کر کے چھوڑ دی اگر لپٹا رہتا تو امید تھی کہ آجاتا جب تو ایسی غلطی ان کے نزدیک بھی خود اس کی اپنی نماز بھی باطل کرے گی کما فی الخلاصۃ والفتح وغیرھما عامۃ الکتب (جیسے خلاصہ، فتح اور ان کے علاوہ عام کتب میں ہے۔ ت) غرض ایسا شخص امام بنانے کے لائق نہیں وقد فصلنا القول فی تلك المسائل فی عدۃ مواضع من فتاونا (ہم نے ان مسائل پر اپنے فتاوٰی میں متعدد جگہ پر تفصیل سے لکھا ہے۔ت) اور اگر ایسی غلطی نہیں کرتا جس سے فساد معنی ہو تو نماز خود اس کی بھی صحیح اور اس کے پیچھے اور سب کی صحیح، پھر اگر حالت ایسی ہے کہ تجوید کے امور ضروریہ واجبات شرعیہ ادا نہیں ہوتے جن کا ترک موجب گناہ ہے جیسے مد متصل بقدر ایک الف وغیرہ فما فصلنا فی فتاوٰی لنا فی خصوص الترتیل (جس کا ہم نے اپنے فتاوٰی میں ترتیل کے تحت تفصیلاً ذکر کیا ہے۔ت) جب بھی اسے امام بنایا جائے گا نماز اس کے پیچھے بشدت مکروہ ہو گی لاشتمالھا علی امر موثم و کونہ فاسقاً بتادیہ علی ترک واجب متحتم (کیونکہ وہ ایسے امر پر مشتمل ہے جو گناہ ہے اور اس کا فاسق ہونا اس شک میں ڈالتا ہے کہیں وہ حتمی واجب کا ترک نہ کر بیٹھے۔ت) اور اگر ضروریات سب

ادا ہو لیتے ہیں صرف محسنات زائدہ مثل اظہار اخفا و روم و اشمام و تفخیم و ترقیق و غیرہا میں فرق پڑتا ہے تو حرج نہیں، ہاں قواعد ان کی امامت اولی ہے لان الامام کلما کان اکمل کان افضل (وہ شخص جو ہر لحاظ سے اکمل ہو وہی افضل امام ہو گا ت) واللہ سبحنہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۶۲۲ : از بنگالہ سلہٹ موضع پیام مرسلہ جناب سورج میاں صاحب معرفت مولوی سلطان الدی ۱۳ شعبان ۱۳۱۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ عمرو سے زید درباره جائداد مشترک فیہ بینھما نزاع مقدمہ کچہری کیا عمرو فتح یاب ہوا زید اس گاؤں کا امام ہے ابعمرو نے بوجہ تعصب و مخاصمت کے تمام اس کے مقتدیوں کو کہا کہ زید نے کچہری میں واسطے فتحیابی اپنے مقدمہ کر کے جھوٹ بولا تم لوگ اب اسکے پیچھے نماز مت پڑھو وہ اب امامت کے قابل نہیں رہا، تب مقتدیوں نے عمرو سے کہا کہ تم اس کے جھوٹ بولنے کا کوئی ثبوت پیش کرو ہنوز کوئی شاہد پیش نہیں کیا گیا، دعویٰ بلا دلیل ہے اور آج تک کبھی زید نے جھوٹ کلمہ اپنی زبان سے...

Fatawa Ridawiyya Volume VI

...nor has anyone ever suspected him of lying. If, for the sake of argument, a witness proves his lying, will Zaid remain eligible for imamat (leading prayer)? Will the prayer behind him be valid? Please clarify and be rewarded.

Answer: There is absolutely no doubt about the validity of prayer behind him, based on the principle "Pray behind every righteous person and every sinner." Furthermore, losing a case in court does not prove one to be a liar.

In courts, thousands of times liars are declared truthful and truthful ones are declared liars. English courts have no relation with the pure Shariah; even the Islamic departments here have explicitly distanced themselves from full compliance with Shariah. Even where there were complete Shariah courts, although jurists write 'became legally a liar' for the one against whom the Shariah Qadi (judge) rules to resolve contradictions, one cannot call a plaintiff or defendant a liar, sinner, or committer of major sin solely on this basis. A judge's ruling is based on outward appearances; it doesn't necessarily mean a lie occurred in reality. The Messenger of Allah (peace be upon him) says:

[Arabic Text Box] Left (Arabic): "Innama ana basharun wa innakum takhtasimuna ilayya wa la'alla ba'dakum an yakuna alhana bi hujjatihi min ba'din fa aqdi lahu 'ala ma nahwa ma asma'u minhu faman qadaytu lahu bi shay'in min haqqi akhihi fala ya'khudhunnahu fa innama aqta'u lahu qit'atan minan nar" - Narrated by the two Shaikhs (Bukhari and Muslim) from Umm Salama (may Allah be pleased with her).

Right (Translation): "I am but a human, and you bring your disputes to me. It may be that one of you is more eloquent in presenting his case than the other, and I may judge in his favor based on what I hear. So, if I judge in favor of someone from his brother's right, he should not take it, for I am only cutting off a piece of fire for him." - (T)

Moreover, sometimes a person makes a claim or defense believing themselves to be in the right due to some doubt, oversight, or ignorance. Even if the statement is factually incorrect, if they did not intend to lie, the ruling of sinfulness (fisq) does not apply to them.

[Second Box] Left (Arabic): "Wa mithlu dhalika kathirun fi khusumatil sahabati radiyallahu ta'ala 'anhum bal huwal muta'ayyinu fihim."

Right (Translation): "There are many examples of this in the disputes of the Companions (may Allah be pleased with them), rather this is what is determined regarding them." - (T)

---

1 Sahih al-Bukhari, Chapter on one who establishes proof after taking an oath, published by Qadimi Kutub Khana, Karachi, 10/2. F: The detailed words of the Hadith are: Pray behind every righteous person and sinner, offer funeral prayer for every righteous person and sinner, and strive (Jihad) alongside every righteous person and sinner. - Nazir Ahmad Saeedi

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

...और न ही किसी ने कभी उन पर झूठ बोलने का संदेह किया। यदि, तर्क के लिए, उनकी झूठ बोलने पर कोई गवाह साबित हो जाए, तो क्या ज़ैद इमामत (प्रार्थना का नेतृत्व) के लिए पात्र रहेगा? क्या उसके पीछे नमाज़ मान्य होगी? कृपया स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: उनके पीछे नमाज़ की वैधता के बारे में बिल्कुल कोई संदेह नहीं है, इस सिद्धांत के आधार पर कि "हर नेक और गुनहगार के पीछे नमाज़ पढ़ो।" इसके अलावा, अदालत में मुकदमा हारने से कोई झूठा साबित नहीं होता।

अदालतों में हज़ारों बार झूठे सच्चे और सच्चे झूठे ठहराए जाते हैं। अंग्रेज़ी अदालतों का तो शरीयत-ए-मुतह्हरा (पवित्र शरीयत) से कोई संबंध ही नहीं है; बल्कि यहाँ के इस्लामी विभाग ही पूरी तरह से शरीयत के पालन से स्पष्ट रूप से दूर हो गए हैं। जहाँ पूर्ण शरीयत अदालतें थीं, वहाँ भी हालांकि शरा (शरीयत) के काज़ी जिसके खिलाफ फैसला सुनाते हैं, उसे फकीह (विधिवेत्ता) विरोधाभास दूर करने के लिए 'शराई तौर पर झूठा हो गया' लिखते हैं, लेकिन किसी वादी या प्रतिवादी को केवल इस आधार पर झूठा, फासिक़ (पापी) या कबीरा गुनाह का मुर्तकिब (बड़ा पापी) नहीं कहा जा सकता। हाकिम (न्यायाधीश) का फैसला ज़ाहिरी तौर पर होता है; इससे वास्तविकता में झूठ का होना आवश्यक नहीं आता। अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं:

[अरबी टेक्स्ट बॉक्स] बायाँ (अरबी): "इन्नमा अना बशरुन व इन्नकुम तख्तसिमूना इलैय्या व लअल्ला बाअदकुम अन यकूना अल्हना बि हुज्जतिही मिन बाअदिन फ अक्दी लहू अला मा नहवा मा अस्माउ मिन्हु फमन कदैतु लहू बि शय-इन मिन हक्क़ि अख़ीहि फला याखुज़ुन्नहू फ इन्नमा अक़्तउ लहू क़ित-अतन मिनन नार" - इसे बुखारी और मुस्लिम ने हज़रत उम्मे सलमा (रज़ियल्लाहु अन्हा) से रिवायत किया है।

दायाँ (अनुवाद): "मैं केवल एक इंसान हूँ और तुम मेरे पास अपने मुक़दमे लेकर आते हो। संभव है कि तुम में से कोई व्यक्ति दलील पेश करने में होशियार हो और दलील की वजह से दूसरे पर हावी हो जाए और मैं दलीलें सुनने के बाद उसके अनुसार फैसला कर दूँ। तो जिसके पक्ष में फैसला हुआ हो, वह उसे न ले क्योंकि वह आग का एक टुकड़ा है।" - (त)

इसके अलावा, कभी-कभी व्यक्ति किसी संदेह, भूल या अज्ञानता के कारण स्वयं को सही समझकर दावा या बचाव करता है। यदि बात वास्तव में गलत भी है, लेकिन उसने जानबूझकर झूठ नहीं बोला, तो उस पर फिस्क़ (पाप) का हुक्म लागू नहीं होगा।

[दूसरा बॉक्स] बायाँ (अरबी): "व मिस्लु ज़ालिका कसीरुन फ़ी खुसूमातिस सहाबाति रज़ियल्लाहु तआला अन्हुम बल हुवल मुतअय्यिनु फ़ीहिम।"

दायाँ (अनुवाद): "इसके उदाहरण सहाबा (रज़ियल्लाहु अन्हुम) के विवादों में बहुत हैं, बल्कि उनके बारे में यही निर्धारित है।" - (त)

---

1 सहीह अल-बुखारी, अध्याय: शपथ के बाद गवाह पेश करने वाला, प्रकाशित: कदीमी कुतुब खाना, कराची, 10/2। फ़: हदीस के शब्द विस्तार से इस प्रकार हैं: हर नेक और फाजिर (पापी) के पीछे नमाज़ पढ़ो, हर नेक और फाजिर की नमाज़-ए-जनाज़ा पढ़ो, और हर नेक और फाजिर के साथ मिलकर जिहाद करो। - नज़ीर अहमद सईदी

فتاوی رضویہ جلد ششم

نہ نکالا اور نہ کسی نے اس پر دروغ گوئی کا کبھی شک کیا ، اگر بالفرض اس کی کذب گوئی پر کوئی گواہ ثابت ہوجائے تو زید قابل امامت رہے گا یا نہیں؟ اس کے پیچھے نماز ہوگی یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: نماز اس کے پیچھے ہوجانے میں تو اصلاً شبہ نہیں، بحیثیت صلوا خلف کل بر وفاجر اور کچہری میں مقدمہ ہار جانے سے جھوٹا ہونا ثابت نہیں ہوتا،

کچہریوں میں ہزاروں بار جھوٹے سچے اور سچے جھوٹے ٹھہرتے ہیں، انگریزی کچریاں تو شرع مطہر سے علاقہ رکھتی ہی نہیں بلکہ یہاں کے اسلامی محکمے ہی پوری پابندی شرع سے صراحتہ کنارہ گزیں، جہاں کامل شرعی عدالتیں تھیں وہاں بھی باآنکہ قاضی شرع جس کے خلاف حکم فرمادے اسے فقہاء دفع تناقض کے لئے صار مکذ با شرعاً لکھتے ہیں مگر کسی مدعی یا مدعی علیہ کو صرف اس بنا پر کاذب و فاسق و مرتکب کبیرہ نہیں کہہ سکتے کہ حکم حاکم بنظر ظاہر ہوتا ہے اس سے واقع میں کذب لازم نہیں آتا۔ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں :

انما انا بشر وانکم تختصمون الی ولعل بعضکم ان یکون الحن بحجتہ من بعض فاقضی لہ علی مانحوما اسمع منہ فمن قضیت لہ بشیئ من حق اخیہ فلا یاخذ نہ فانما اقطع قطعۃ من النار 1 - رواہ الشیخان عن ام سلمۃ رضی اللہ تعالٰی عنھما ۔ میں ایک انسان ہوں اور تم میرے پاس اپنے مقدمات لے کر آتے ہو ممکن ہے تم میں سے کوئی آدمی دلیل پیش کرنے میں ہوشیار ہو اور دلیل کی وجہ سے دوسرے پر غالب آجائے اور میں دلائل سننے کے بعد اس کے مطابق فیصلہ کردوں، تو جس کے حق میں

فیصلہ ہوا ہو وہ اس کو نہ لے کیونکہ وہ ایک آگ کا ایک ٹکڑا ہے ۔ اسے بخاری و مسلم نے حضرت ام سلمہ رضی اللہ تعالٰی عنہا سے روایت کیا ۔ (ت)

علاوہ بریں بعض وقت آدمی کسی شبہ یا سہو یا جہل کے باعث اپنے آپ کو حق پر جان کر دعوٰی یا جواب دہی کرتا ہے تو بات واقع میں اگر چہ خلاف ہے مگر اس نے قصد کذب نہ کیا حکم فسق اس پر نہ ہوا،

ومثل ذلك كثير فی خصومات الصحابة رضی اللہ تعالٰی عنهم بل هوالمتعين فيهم ۔ اس کی مثالیں مقدمات صحابہ میں بہت ہیں بلکہ یہی ان میں متعین ہیں۔ (ت)

---

1 صحیح البخاری باب من اقام البینۃ بعد الیمین مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۲/ ۱۰ ف: حدیث کے الفاظ تفصیلاً یوں ہیں: صلوا خلف کل بر وفاجر وصلوا علی کل بر وفاجر وجاھد وامع کل بر وفاجر۔ نذیر احمد سعیدی

Fatawa Razawiyya Volume Six

Furthermore, when a person's right is being usurped and it cannot be obtained without making a statement that outwardly seems contrary to the fact, then stating such a thing is Shari'a-permissible for the restoration of one's right, even if the listener perceives it as a lie. It is stated in Durr-e-Mukhtar:

[Boxed Text] Arabic: اکذب مباح لاحیاء حقہ ودفع الظلم عن نفسہ Urdu: Lying is permissible for obtaining one's right and for removing oppression from oneself, etc. And its complete detail, referencing Imam Hujjat al-Islam's 'Tabyin al-Maharim', is in 'Radd al-Muhtar'. Arabic Reference: 1 الخ و تمام تحقیقہ فی ردالمحتار عن تبیین المحارم عن الامام حجۃ الاسلام۔ (T)

In summary, in the mentioned situation, the defendant's statement alone is nothing. If it is proven by any witness that Zaid said something contrary in his claim or in support of his claim, it does not prove that he is truly a liar and a sinner (fasiq). Yes, if through legal (Shar'i) evidence Zaid's being a liar, sinner, and dishonorable person is proven, then indeed making him an Imam (prayer leader) is prohibited and praying behind him will be disliked (makruh) as is the ruling for a sinner (as is the ruling of a fasiq). And Allah Almighty knows best.

Issue Number 623: From the Old City, sent by Sayyid Abdul Wahid Mathrawi, 20 Dhu al-Qi'dah 1317 AH. Question: What is the ruling for a woman praying the obligatory prayer with her husband on the same prayer mat, such that the husband is the Imam and the woman is the follower?

Answer: If the woman is standing so far back that her calf is not parallel (muhazi) to the man's calf or any other body part, then following (iqtida) is correct and the prayer of both will be valid. And if she is level such that there is neither a barrier in between nor a distance enough for a person to stand, and the woman's calf is parallel to the man's calf or any body part, then in this case, if the man did not intend to lead her (at the beginning of prayer), the man's prayer is valid and the woman's is invalid (fasid). And if the man had intended the leadership of the woman at the time of Takbir Tahrimah, then the prayer of both is void. It is stated in Fatawa Imam Qazi Khan:

[Boxed Text] Arabic: المرأۃ اذاصلت مع زوجھا فی البیت ان کان قدماھا بحذاء قدم الزوج لاتجوز صلاتھما بالجماعۃ وان کان قدماھا خلف قدمی الزوج جازت صلاتھا بالاعتبار۔ Urdu: When a woman performs prayer with her husband at home, if her feet are parallel to the

husband's feet, then the congregational prayer for both will not be permissible. If her feet are behind the husband's feet, then (it is permissible).

1 Durr al-Mukhtar, Section on Sale from the Book of Prohibition and Permission, printed by Mujtabai Delhi, 2/254.

फ़तावा रज़विया खंड छह

इसके अलावा, जब किसी व्यक्ति का अधिकार छीना जा रहा हो और वह किसी ऐसे कथन के बिना प्राप्त न हो सके जो बाहरी तौर पर तथ्य के विपरीत लगता हो, तो अपने अधिकार की बहाली के लिए ऐसी बात कहना शरीयत के अनुसार जायज़ है, भले ही सुनने वाला इसे झूठ समझे। 'दुर-ए-मुख्तार' में है:

[बक्से में पाठ] अरबी: اكذب مباح لاحياء حقہ ودفع الظلم عن نفسہ। उर्दू: अपने अधिकार की प्राप्ति और खुद से ज़ुल्म को दूर करने के लिए झूठ जायज़ है इत्यादि। और इसका पूरा विवरण इमाम हुज्जतुल इस्लाम की 'तबीन अल-महारिम' के हवाले से 'रद्द अल-मुह्तार' में है। अरबी संदर्भ: 1 و الخ। تمام تحقیقہ فی ردالمحتار عن تبیین المحارم عن الامام حجۃ الاسلام۔ (त)

संक्षेप में, उल्लेखित स्थिति में केवल प्रतिवादी का बयान कुछ भी नहीं है। यदि किसी गवाह से भी यह साबित हो जाए कि ज़ैद ने अपने दावे या दावे के समर्थन में कोई बात विपरीत कही है, तो इससे उसका वास्तव में झूठा और फ़ासिक (पापी) होना सिद्ध नहीं होता। हाँ, अगर शरई साक्ष्य से ज़ैद का झूठा, फ़ासिक और अपमानित होना साबित हो जाए, तो निस्संदेह उसे इमाम बनाना मना है और उसके पीछे नमाज़ पढ़ना मकरूह (नापसंद) होगा जैसा कि फ़ासिक का हुक्म है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 623: पुराने शहर से, सैयद अब्दुल वाहिद मथुरावी द्वारा भेजा गया, 20 ज़ुल-क़ादा 1317 हिजरी। प्रश्न: एक ही मुसल्ले (नमाज़ की चटाई) पर पति के साथ अनिवार्य नमाज़ पढ़ने का क्या हुक्म है, इस स्थिति में कि पति इमाम हो और पत्नी मुक्तदी?

जवाब: यदि महिला इतनी पीछे खड़ी है कि उसकी पिंडली (सक) पुरुष की पिंडली या किसी अंग के बराबर (मुहाज़ी) नहीं है, तो इक़्तिदा (अनुसरण) सही है और दोनों की नमाज़ हो जाएगी। और अगर वह बराबर है कि बीच में न कोई आड़ है और न ही इतना फासला जिसमें एक आदमी खड़ा हो सके, और महिला की पिंडली पुरुष की पिंडली या किसी अंग के बराबर है, तो इस स्थिति में यदि पुरुष ने महिला की इमामत की नियत नहीं की थी, तो पुरुष की नमाज़ सही है और महिला की फ़ासिद (अमान्य), और अगर पुरुष ने तकबीर-ए-तहरीमा के समय महिला की इमामत की नियत की थी, तो दोनों की नमाज़ गई (अमान्य हो गई)। फ़तावा इमाम क़ाज़ी खान में है:

[बक्से में पाठ] अरबी: المرأة اذاصلت مع زوجها فی البیت ان کان قدماها بحذاء قدم الزوج لاتجوز صلاتهما بالجماعۃ وان کان قدماها خلف قدمی الزوج جازت صلاتها بالاعتبار۔ उर्दू: जब किसी महिला ने घर में अपने पति के साथ नमाज़ अदा की, अगर उसके कदम पति के कदम के बराबर हों तो दोनों की बा-जमात नमाज़ जायज़ नहीं होगी और अगर उसके कदम पति के कदम से पीछे हों तो (जायज़ है)।

1 'दुर-ए-मुख्तार', किताबुल हज़र वल इबाहत के फसल फिल बैय से, मुज्तबाई दिल्ली द्वारा मुद्रित, 2/254।

पृष्ठ 492 / 736

علاوہ بریں جب آدمی کا حق مارا جاتا ہو اور وہ بغیر کسی ایسے اظہار کے جو بظاہر خلاف واقع ہے حاصل نہ ہو سکتا ہو تو اپنے احیائے حق کے لئے ایسی بات کا بیان شرعاً جائز ہے اگرچہ سامع اسے کذب پر محمول کرے۔ در مختار میں ہے :

[باکس] اکذب مباح لاحیاء حقہ ودفع الظلم عن نفسہ اپنے حق کے حصول اور اپنے آپ سے ظلم کو دور کرنے کے لئے کذب مباح ہے الخ اور اس کی پوری تفصیل امام حجتہ الاسلام کی تبیین المحارم کے حوالے سے ردالمختار میں ہے۔ 1 الخ و تمام تحقیقہ فی ردالمحتار عن تبیین المحارم عن الامام حجۃ الاسلام۔ (ت)

بالجملہ صورت مذکورہ میں صرف بیان مدعاعلیہ کوئی چیز نہیں اگر کسی گواہ سے بھی ثابت ہو کہ زید نے اپنے دعوٰی یا تائید دعوٰی میں کئی بات خلاف کہی تو اس سے واقعی کاذب و فاسق ہونا ثابت نہیں ہوتا، ہاں اگر شہادت شرعیہ سے زید کا کذاب فاسق بے حرمت ہونا پایہ ثبوت کو پہنچے تو بے شک اسے امام بنانا ممنوع اور اس کے پیچھے نماز پڑھنا مکروہ ہوگا کما ھو حکم الفاسق (جیسا کہ فاسق کا حکم ہے) واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۶۲۳ : از شہر کہنہ مرسلہ سید عبد الواحد متھراوی ۲۰ ذیقعدہ ۱۳۱۷ھ عورت کا اپنے خاوند کے ساتھ ایک ہی مصلے پر فرض نماز پڑھنا بایں صورت کہ خاوند امام ہو اور عورت مقتدی، کیا حکم رکھتا ہے؟

الجواب: اگر عورت اس قدر پیچھے کھڑی ہے کہ اس کی ساق مرد کی ساق یا کسی عضو کے محاذی نہیں تو اقتدا صحیح ہے اور دونوں کی نماز ہوجائے گی اور اگر برابر ہے کہ بیچ میں کوئی

حائل ہے نہ کوئی اتنا فاصلہ جس میں ایک آدمی کھڑا ہوسکے اور عورت کی ساق مرد کی ساق یا کسی عضو کے محاذی ہے تو اس صورت میں اگر مرد نے اس کی امامت کی نیت نہ کی تو مرد کی نماز صحیح ہے اور عورت کی فاسد، اور اگر مرد نے تحریمہ نیت امامت زن کی تھی تو دونوں کی گئی۔ فتاویٰ امام قاضی خان میں ہے :

[باکس] المرأۃ اذاصلت مع زوجھا فی البیت ان کان قدماھا بحذاء قدم الزوج لاتجوز صلاتھما بالجماعۃ وان کان قدماھا خلف قدمی الزوج جازت صلاتھا بالاعتبار۔ کسی خاتون نے جب اپنے خاوند کے ساتھ گھر میں نماز ادا کی ہو اگر اس کے قدم خاوند کے قدم کے مقابل ہوں تو دونوں کی نماز باجماعت جائز نہ ہوگی اور اگر اس کے قدم خاوند کے قدم سے پیچھے ہوں تو (جائز ہے)۔

1 درمختار فصل فی البیع من کتاب الحظر والاباحت مطبوعہ مجتبائی دہلی ۲/ ۲۵۴

Fatawa Razawiyya, Volume 6

[Box 1] Arabic: Behind the husband's foot, but she is tall so that her head falls in prostration before the husband's head, their prayer is valid because the consideration is for the feet[1]. Urdu: If a woman is behind her husband's feet, but due to her height, her head in prostration is ahead of her husband's head, even then the prayer of both will be correct because the consideration is of the feet. (T)

[Box 2] In Radd al-Muhtar it says: Arabic: Al-Zayla'i said: The more correct opinion regarding alignment (muhazah) is that the consideration is for the calf and the ankle, while some consider the foot. Thus, according to some, if a part of her foot is behind the man, the prayer is invalidated even if her calf and ankle are behind his calf and ankle. According to the more correct opinion, it is not invalidated even if part of her foot is aligned with part of his foot[2] etc. Urdu: Zayla'i says that according to the most correct saying, in alignment (muhazah), the calf and ankle are considered, and some have considered the foot. Thus, according to some's saying, if some part of the foot is behind the man, the prayer will be invalidated even if her calf and ankle are behind the man's calf and ankle. And the correct view is that the prayer will not be invalidated even if some part of the woman's foot is aligned with some part of the man's foot etc. (T)

[Box 3] In Durr al-Mukhtar it says: Arabic: A desirable woman stood beside him, and there is no barrier between them, the minimum of which is the size of an arm in height and thickness of a finger, or a gap that accommodates a man, in a general prayer joined in takbir and performance, and the direction is united. His prayer is invalidated if he is accountable (mukallaf), provided the imam intended to lead her at the time of commencement, not after starting it; otherwise, her prayer is invalidated[3] brief. Urdu: A woman who is an object of desire stands beside a man, and there is no man or barrier between them. The barrier should be at least one arm in height and one finger in thickness, or the distance between the two is so small that it can fit one person (in the presence of a barrier or distance, the prayer will not be invalidated). And that the prayer is absolute (i.e., with bowing and prostration). Both should be common in Takbir-e-Tahrimah and performance, and the direction should also be the same, then the man's [prayer] will be invalidated if he is accountable (i.e., sane and adult) and the Imam had intended the leadership of that woman at the time of starting, not after starting the prayer; and if the Imam [intended] the woman's leadership...

Footnotes: 1. Fatawa Qadi Khan, Section on those whose following is correct, etc., published by Naval Kishore Lucknow, 1/45. 2. Radd al-Muhtar, Chapter on Imamat, published by Mustafa al-Babi Egypt, 1/423. 3. Durr al-Mukhtar, Chapter on Imamat, published by Matba' Mujtabai Delhi, 1/84.

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

[बॉक्स 1] अरबी: पति के पैरों के पीछे, लेकिन वह लंबी है ताकि उसका सिर पति के सिर से पहले सज्दे में गिर जाए, उनकी प्रार्थना मान्य है क्योंकि पैरों का ही एतबार है[1]। उर्दू: पति के पैरों के पीछे अगर महिला का कद लंबा होने के कारण उसका सिर सज्दे की स्थिति में पति के सिर से आगे हो जाता है, तो भी दोनों की नमाज़ सही होगी क्योंकि पैरों का ही एतबार (विचार) है। (त)

[बॉक्स 2] रद्द अल-मुह्तार में है: अरबी: ज़ैलाई ने कहा: मुहाज़ात (संरेखण) में अधिक सही राय यह है कि पिंडली और टखने का विचार किया जाता है, जबकि कुछ पैर पर विचार करते हैं। इस प्रकार, कुछ के अनुसार, यदि उसके पैर का एक हिस्सा पुरुष के पीछे है, तो प्रार्थना अमान्य हो जाती है, भले ही उसकी पिंडली और टखने उसकी पिंडली और टखने के पीछे हों। अधिक सही राय के अनुसार, यह अमान्य नहीं होती है भले ही उसके पैर का हिस्सा उसके पैर के हिस्से के साथ संरेखित हो[2] आदि। उर्दू: ज़ैलाई कहते हैं कि सबसे सही कौल (कथन) के अनुसार मुहाज़ात में पिंडली और टखने का एतबार है और कुछ ने पैर का एतबार किया है। तो कुछ के कौल पर अगर पैर का कुछ हिस्सा पुरुष से पीछे हो तो नमाज़ फ़ासिद (अमान्य) हो जाएगी, चाहे उसकी पिंडली और टखने पुरुष की पिंडली और टखने से पीछे हों। और सही यह है कि नमाज़ फ़ासिद नहीं होगी चाहे महिला के पैर का कुछ हिस्सा पुरुष के पैर के कुछ हिस्से के बराबर हो आदि। (त)

[बॉक्स 3] दुर्रे मुख्तार में है: अरबी: एक वांछनीय महिला उसके बगल में खड़ी हुई, और उनके बीच कोई अवरोध नहीं है, जिसकी न्यूनतम ऊंचाई एक हाथ और मोटाई एक उंगली के बराबर है, या एक खाली जगह है जिसमें एक पुरुष समा सकता है, एक सामान्य प्रार्थना में जो तकबीर और प्रदर्शन में शामिल है, और दिशा एक ही है। यदि वह मुकल्लफ (जवाबदेह) है तो उसकी प्रार्थना अमान्य हो जाती है, बशर्ते कि इमाम ने शुरुआत के समय उसका नेतृत्व करने का इरादा किया हो, इसे शुरू करने के बाद नहीं; अन्यथा, उसकी प्रार्थना अमान्य हो जाती है[3] संक्षिप्त। उर्दू: पुरुष के बराबर ऐसी महिला हो जाए जो कामोत्तेजक हो और उनके बीच कोई पुरुष या आड़ न हो। आड़ कम से कम ऊंचाई में एक हाथ के बराबर और मोटाई में एक उंगली के बराबर हो या यह कि दोनों के बीच फासला इतना छोटा हो जो एक आदमी की गुंजाइश रखता हो (कि आड़ और फासले की सूरत में नमाज़ फ़ासिद न होगी)। और यह कि नमाज़ मुतलक (यानी रुकू और सज्दे वाली) हो। तक्बीर-ए-तहरीमा और अदा में दोनों साझा हों और दिशा भी एक हो तो पुरुष की नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी अगर वह मुकल्लफ हो (यानी समझदार और वयस्क हो) और इमाम ने शुरू के समय उस महिला

की इमामत की नियत की हो न कि नमाज़ शुरू करने के बाद; और अगर इमाम ने औरत की इमामत...

पाद-टिप्पणियाँ: 1. फ़तावा काज़ी खान, फ़स्ल फीमन यसिह अल-इक़्तिदा आदि, नवल किशोर लखनऊ द्वारा प्रकाशित, 1/45। 2. रद्द अल-मुह्तार, बाब अल-इमामत, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र द्वारा प्रकाशित, 1/423। 3. दुर्रे मुख्तार, बाब अल-इमामत, मतबा मुजतबाई दिल्ली द्वारा प्रकाशित, 1/84।

فتاوی رضویہ جلد ششم

[پہلا خانہ] خلف قدم الزوج الا انها طویلة تقع رأس المرأة فی السجود قبل رأس الزوج جازت صلاتهما لان العبرة للقدم ۱۸ - خاوند کے قدم سے پیچھے اگر خاتون کا قد لمبا ہونے کے وجہ اس کا سر حالت سجدہ میں خاوند کے سر سے آگے ہوتا تو پھر بھی دونوں کی نماز درست ہوگی کیونکہ اعتبار قدموں کا ہے۔ (ت)

[دوسرا خانہ] ردالمحتار میں ہے: الزیلعی قال المعتبر فی المحاذاة الساق والکعب فی الاصح وبعضهم اعتبر القدم اه فعلی قول البعض لو تأخرت عن الرجل ببعض القدم تفسد وان کان ساقها وکعبها متأخرًا عن ساقه وکعبه وعلی الاصح لا تفسدوان کان بعض مها محاذیًا لبعض قدمه ۲۸ الخ زیلعی کہتے ہیں کہ اصح قول کے مطابق محاذات میں پنڈلی اور ٹخنے کا اعتبار ہے اور بعض نے قدم کا اعتبار کیا ہے اھ تو بعض کے قول پر اگر قدم کا کچھ حصہ مرد سے پیچھے ہو نماز فاسد ہوگی اگرچہ اس کی پنڈلی اور ٹخنے مرد کی پنڈلی اور ٹخنے سے پیچھے ہوں، اور اصح یہ ہے کہ نماز فاسد نہیں ہوگی اگرچہ بعض قدم عورت کا مرد کے بعض قدم کا محاذی ہو الخ (ت)

[تیسرا خانہ] در مختار میں ہے: حاذته مشتهاة ولا حائل بینهما اقله قدر ذراع في غلظ اصبع او فرجة تسع رجلا في صلاة مطلقة مشترکة تحریمة واداء واتحدث الجهة فسدت صلاته لو مکلفاً ان نوی الامام وقت شروعه لابدعه امامتها والا ینوها فسدت صلاتها ۳۸ اه مختصرا مرد کے محاذی ایسی خاتون ہو گئی جو صاحب شہوت ہو اور ان کے درمیان کوئی مرد اور آڑ حائل نہ ہو، اڑ کم از کم بلندی میں ایک ہاتھ کے برابر موٹائی میں ایک انگلی کے برابر کا اعتبار ہے یا یہ کہ دونوں کے درمیان فاصلہ اتنا چھوٹا ہو جو ایک آدمی کی گنجائش رکھتا ہو (کہ آڑ اور فاصلہ کی صورت میں نماز فاسد نہ ہوگی) اور یہ کہ نماز مطلق (یعنی رکوع سجدہ والی) ہو۔ تکبیر تحریمہ و ادا میں دونوں

مشترک ہوں اور جہت بھی ایک ہو تو مرد کی فاسد ہو جائے گی اگر وہ مکلف ہو (یعنی عاقل بالغ ہو) اور امام نے شروع کے وقت اس خاتون کی امامت کی نیت کی ہو نہ کہ نماز شروع کرنے کے بعد ، اور اگر امام نے عورت کی امامت

حواشی: ۱۸ فتاوی قاضی خان فصل فیمن یصح الاقتداء الخ مطبوعہ نولکشور لکھنو ۱/ ۴۵ ۲۸ رد المحتار باب الامامۃ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/ ۴۲۳ ۳۸ در مختار باب الامامۃ مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۸۴

Fatawa Razawiya, Volume Six

...did not make the intention, then that woman's prayer will be invalid. Summary. (T) And Allah Almighty knows best.

Issue Number 622: 29 Dhu al-Qi'dah 1317 AH What do the scholars of religion say regarding this issue: is it permissible to pray behind someone who consumes interest (usury), takes bribes, whose wife remains unveiled (without hijab), who gives false witness, and who only prays occasionally? What is the evidence for its permissibility or impermissibility?

The Answer: Those who consume interest, take bribes, give false witness, and intentionally miss some prayers are all 'fasiq' (sinners/transgressors), and praying behind a 'fasiq' is 'makruh tahrimi' (prohibitively disliked).

Arabic	Urdu
كما في الغنية عن الحجة واقره في ردالمحتار وتفصيله في رسالتنا النهي الاكيد عن الصلاة وراى عدى التقليد۔	As narrated in 'Al-Ghunya' from 'Al-Hujja' and confirmed in 'Radd al-Muhtar', and the details are in our treatise "An-Nahy al-Akeed 'an as-Salati wa Ra'yi 'Adiy al-Taqleed". (T)

And the one whose woman goes out unveiled—such that parts that are mandatory to cover are revealed, for example, hair of the head, or arms, or wrists, or throat, or stomach, or part of the calf, whether because there is no cloth on those parts or it is so thin that it doesn't cover—or she doesn't go out but non-mahrams visit the house frequently and she remains in that state, and the husband does not correct her on these matters, then he himself is a 'dayyuth' (cuckold) and a 'fasiq'.

Arabic	Urdu
فان الديوث كما في الحديث وكتب الفقه كالدر وغيره من لايغار على اهله ۔ 1	According to Hadith and books of Fiqh like 'Durr al-Mukhtar' etc., a 'dayyuth' is a person who has no sense of honor (ghayrah) regarding his wife. (T)

And if this is not the case, but she stays at home with full 'satr-e-aurat' (covering of the body) in front of any non-mahram, for example, the husband's elder brother (jeth), younger brother (devar), brother-in-law (bahnoi), or sons of paternal/maternal uncles and aunts; or women of lower-class people who wear thick and loose clothes covering their whole body and go out for their needs; or the woman acts unveiled like this but the man tries his best to stop and forbid her and she just doesn't listen, then in these cases, there is no blame on the husband, and for this reason...

1 Durr al-Mukhtar, Chapter of Ta'zir, printed at Matba' Mujtabai, Delhi, 1/328. Page 494 of 736

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

...नियत नहीं की तो उस महिला की नमाज़ फासिद (अमान्य) हो जाएगी। संक्षेप में। (त) और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 622: 29 ज़ुल-कादा 1317 हिजरी धर्म के विद्वान इस मसले में क्या फरमाते हैं कि जो व्यक्ति ब्याज खाता है, रिश्वत लेता है, जिसकी पत्नी बे-पर्दा (बिना हिजाब) रहती है, जो झूठी गवाही देता है और जो केवल कभी-कभी नमाज़ पढ़ता है, क्या इन सबके पीछे नमाज़ जायज़ है या नहीं? इसके जायज़ या नाजायज़ होने का क्या प्रमाण है?

उत्तर: ब्याज खाने वाला, रिश्वत लेने वाला, झूठी गवाही देने वाला और जानबूझकर कभी-कभी नमाज़ छोड़ने वाला—ये सब 'फासिक' (पापी) हैं, और फासिक के पीछे नमाज़ पढ़ना 'मक़रूहे तहरीमी' (सख्ती से मना) है।

अरबी	उर्दू
كما في الغنية عن الحجة واقره في ردالمحتار وتفصيله في رسالتنا النهي الاكيد عن الصلاة وراى عدى التقليد۔	जैसा कि 'गुनिया' में 'अल-हुज्जा' से वर्णित है और 'रद्दुल मुहतार' में इसकी पुष्टि की गई है, और इसका विवरण हमारे अपने शोध पत्र "अन्-नह्युल अकीद अनिस सलाति व राय अदि अल-तक्लीद" में है। (त)

और वह व्यक्ति जिसकी पत्नी बे-पर्दा बाहर निकलती है—इस तरह कि शरीर के वे अंग जिनका ढकना अनिवार्य है, उनमें से कुछ दिखाई देते हैं, जैसे सिर के बाल, हाथ, कलाई, गला, पेट या पिंडली का हिस्सा, चाहे उन अंगों पर कपड़ा ही न हो या इतना बारीक हो कि ढका न जा सके—या वह बाहर तो नहीं निकलती लेकिन घर में गैर-मेहरमों का बहुत आना-जाना रहता है और वह उसी स्थिति में रहती है, और पति उसे इन बातों पर नहीं रोकता, तो वह स्वयं 'द़य्यूष' (अधर्मी/निर्लज्ज) है और 'फासिक' है।

अरबी	उर्दू
فان الديوث كما في الحديث وكتب الفقه كالدر وغيره من لايغار على اهله ۔ 1	हदीस और फ़िक़्ह की किताबों जैसे 'दुर्रे मुख़्तार' आदि के अनुसार, द़य्यूष वह व्यक्ति होता है जिसे अपनी पत्नी के प्रति कोई गैरत (सम्मान/शर्म) नहीं होती। (त)

और यदि ऐसा नहीं है, बल्कि वह पूरे 'सत्र-ए-औरत' (शरीर को ढंकने) के साथ घर में किसी गैर-मेहरम जैसे जेठ, देवर, बहनोई या अपने चाचा, खाला, मामू, फूफी के बेटों के सामने होती है; या कम दर्जे के लोगों की महिलाएं जो मोटे और ढीले कपड़े पहनकर अपना पूरा शरीर ढंककर अपनी ज़रूरतों के लिए बाहर आती-जाती हैं; या महिला तो इस तरह बे-पर्दा रहती है लेकिन पुरुष अपनी पूरी शक्ति भर उसे रोकता है और मना करता है और वह फिर भी नहीं मानती, तो इन स्थितियों में पति पर कोई आरोप नहीं है, और इस कारण...

---

1 दुर्रे मुख़्तार, ताज़ीर का अध्याय, मतबा मुजतबाई दिल्ली में मुद्रित, 1/328. पृष्ठ 736 का 494

فتاوی رضویہ، جلد ششم

کی نیت نہیں کی تو اس خاتون کی نماز فاسد ہوگی اھ اختصاراً (ت) واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۶۲۲ : ۲۹ ذیقعدہ ۱۳۱۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ سود خور اور رشوت خور اور جس شخص کی بی بی بے حجاب رہتی ہے اور جو شخص جھوٹی گواہی دیتا ہے اور جو شخص بعض اوقات نماز پڑھتا ہے ان سب کے پیچھے نماز جائز ہے یا نہیں ؟ جواز و عدم جواز کی کیا دلیل ہے؟

الجواب: سود خور اور رشوت خور اور جھوٹی گواہی دینے والا اور قصداً بعض اوقات نماز چھوڑ دینے والا یہ سب فاسق ہیں اور فاسق کے پیچھے نماز مکروہ تحریمی ہے۔

عربی

كما في الغنية عن الحجة واقره في ردالمحتار وتفصيله في رسالتنا النهي الاكيد عن الصلاة وراى عدى التقليد۔

اردو

جیسا کہ غنیہ میں فتاویٰ حجہ سے مروی ہے ردالمحتار میں اسے ثابت رکھا، اور اس کی تفصیل ہمارے اپنے رسالے "النہی الاکید عن الصلوٰۃ وراى عدى التقليد" میں ہے۔(ت)

اور جس کی عورت بے پردہ نکلتی ہے اسی طرح کہ جن اعضاء کا چھپانا فرض ہے ان میں سے کچھ ظاہر ہوتا ہے مثلاً سر کے بال یا بازو یا کلائی یا گلا یا پیٹ یا پنڈلی کا حصہ خواہ ہّوں کہ ان مواقع پر کپڑا ہی نہ ہو یا ہو تو باریک کہ ستر نہ کرسکے یا باہر نہیں نکلتی مگر گھر میں غیر محرم بکثرت آتے جاتے ہیں اور وہ ایسی ہی حالت میں رہتی ہے اور شوہر ان امور پر مطلع نہیں کرتا تو وہ خود دیوث ہے فاسق ہے۔

عربی **اردو**

فان الديوث كما في الحديث وكتب الفقه حدیث اور کتب فقہ مثل در مختار وغیرہ کے مطابق دیوث کالدر وغیرہ من لایغار علی اھلہ ۔ 1 وہ شخص ہوتا ہے جو اپنی بیوی پر غیرت نہیں کھاتا۔ (ت) اور اگر ت ایسا نہیں بلکہ تمام بدن کے پورے ستر عورت کے ساتھ گھر میں کسی نامحرم مثلاً جیٹھ ، دیور ، بہنوئی یا اپنے چچا خالہ ماموں پھوپھی کے بیٹوں کے سامنے ہوتی ہے یا کم قوم لوگوں کی عورت جو خوب موٹے اور ڈھیلے کپڑے پہنے سارا بدن ڈھانکے اپنی ضرورتوں کے لئے باہر آتی جاتی ہیں یا عورت تو بے حجابی اسی طرح کرتی ہے مگر مرد اسے اپنی حد قدرت تک روکتا ہے منع کرتا ہے اور وہ یو نہی نہیں مانتی، تو ان صورتوں میں شوہر پر کچھ الزام نہیں اور اس وجہ سے

---

1 در مختار، باب التعزیر، مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی، ۱/ ۳۲۸ Page 494 of 736

Fatawa Rizwia Volume VI

There can be no dislike (makruhtiyat) in praying behind him. Allah the Almighty says: 'And no bearer of burdens will bear the burden of another.' (1) (The noble saying of Allah the Almighty is that no one will carry the load of someone else. T) And Allah the Almighty knows best.

Problem No. 625, 626: From Basoli, District Budaun, sent by Khalil ur Rehman Sahib, 9 Shaban al-Muazzam 1319 Hijri What do the scholars of religion say regarding these matters: (1) Who are the people among Muslims behind whom prayer is not valid? (2) In which case is prayer behind a blind person valid, or is it completely impermissible?

Answer: (1) There are many people, including non-conformists (Ghair-Muqallid), Rafidis, and Wahhabis whose innovation has reached the limit of disbelief. Our master, Imam-e-Azam (may Allah be pleased with him) says: 'Prayer behind followers of whims/desires is not permissible.' (T) One who recites the Holy Qur'an incorrectly such that the meaning is corrupted, one whose purification (taharah) is not correct even if due to a valid excuse, for example, may Allah forbid, one who suffers from urinary incontinence (sals-ul-baul) or constant passing of wind, or blood or yellow water flowing from a wound or boil. Similarly, for example, a follower of the Shafi'i school whose purification is correct by his standards but not in the Hanafi school; for instance, if he only wiped one hair of the head or did not repeat ablution (wudhu) after bloodletting (fasad); a Hanafi's prayer will not be valid behind him. There are many other cases besides these, the details of which are in the books of the school of law. (2) If there is impurity on a blind person's clothes to the extent that it prevents prayer and he is unaware of it, or blood flowed from his wound or boil and he did not see it, then in this case, prayer behind him is impermissible. Otherwise, it is only Makruh Tanzîhî (mildly disliked) and against what is preferable (khilaf-e-awla), provided he does not possess more knowledge than all those present; otherwise, he shall be made the Imam. And Allah the Exalted knows best.

Problem No. 627: From Gora Bazaar, 22 Jumadi al-Ula 1318 Hijri We praise Him and send blessings upon His Noble Messenger. What do the scholars of religion and jurists of the firm Shariah say regarding this matter: that Hafiz Karim Bakhsh, the Imam of Gora Bazaar mosque, was involved in secretly taking the property of orphans and also confessed to it, and there is nothing else besides this. For this reason, the followers (muqtadis) stopped following him and the Imam followed someone else. Then the first Imam brought a Maulvi and gave him something, and it

was also heard that he agreed to pay eight annas monthly. He made the Maulvi say something, and he also spoke some truth...

---

1 Al-Qur'an 6/164 Page 495 of 736

फ़तावा रज़विया, जिल्द 6

उनके पीछे नमाज़ में कोई कराहत नहीं हो सकती। अल्लाह तआला का इरशाद है: 'और कोई बोझ उठाने वाला किसी दूसरे का बोझ नहीं उठाएगा।' (1) (अल्लाह तआला का पाक फरमान है कि कोई किसी दूसरे का बोझ नहीं उठाएगा। त) और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 625, 626: बसौली, ज़िला बदायूँ से, मुरसिला ख़लीलुर्रहमान साहिब, 9 शाबानुल मुअज़्ज़म 1319 हिजरी। दीन के उलेमा इन मसलों में क्या फरमाते हैं: (1) मुसलमानों में वे कौन-कौन से लोग हैं जिनके पीछे नमाज़ दुरुस्त नहीं है? (2) किस सूरत में अंधे व्यक्ति के पीछे नमाज़ दुरुस्त है या बिल्कुल नाजायज़ है?

जवाब: (1) बहुत से लोग हैं, जिनमें ग़ैर-मुक़ल्लिद, राफ़िज़ी और वहाबी शामिल हैं जिनकी बिदअत कुफ्र की हद तक पहुँच गई है। हमारे आका इमाम-ए-आज़म (रज़ियल्लाहु अन्हु) फरमाते हैं: 'अहले-हवा (इच्छाओं के पीछे चलने वालों) के पीछे नमाज़ जायज़ नहीं है।' (त) जो क़ुरान मजीद गलत पढ़ता हो जिससे अर्थ बिगड़ जाए, जिसकी तहारत (पवित्रता) सही न हो भले ही वह किसी उज्र (मजबूरी) के कारण हो, जैसे अल्लाह न करे, जिसे पेशाब के कतरों की बीमारी (सलसुल बोल) हो या हर समय हवा ख़ारिज होने की समस्या हो, या ज़ख़्म या फोड़े से खून या पीला पानी बहता हो। इसी तरह, मिसाल के तौर पर, शाफई मज़हब का व्यक्ति जिसने अपने तौर पर सही तहारत की हो लेकिन हनफी मज़हब में वह सही न हो; मिसाल के तौर पर, उसने सिर के सिर्फ एक बाल का मसह किया या फसद (रक्तमोक्षण) के बाद वज़ू दोबारा नहीं किया; उनके पीछे हनफी की नमाज़ नहीं होगी। इनके अलावा और भी बहुत सी सूरतें हैं जिनका विवरण मज़हब की किताबों में है। (2) अंधे व्यक्ति के कपड़ों पर अगर नमाज़ से रोकने वाली मात्रा में नजासत (अशुद्धि) लगी हो और उसे पता न हो, या उसके ज़ख़्म या फोड़े से खून बहा और उसने नहीं देखा, तो इस सूरत में उसके पीछे नमाज़ नाजायज़ है। वर्ना यह सिर्फ मकरूह-ए-तन्ज़ीही और खिलाफ-ए-औला (बेहतर के खिलाफ) है, बशर्ते कि वह मौजूद लोगों में सबसे ज़्यादा इल्म (ज्ञान) न रखता हो; वर्ना उसी को इमाम बनाया जाएगा। और अल्लाह सुब्हानहू व तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 627: गोरा बाज़ार से, 22 जमादी-उल-उला 1318 हिजरी। हम उसकी प्रशंसा करते हैं और उसके सम्मानित रसूल पर दरूद भेजते हैं। दीन के उलेमा और मतीन शरीयत के मुफ़्ती इस मसले में क्या फरमाते हैं कि हाफ़िज़ करीम बख़्श, जो गोरा बाज़ार मस्जिद के इमाम हैं, यतीमों का

माल चोरी-छिपे ले जाने में शरीक हुए और इसका इक़रार भी किया, और इसके अलावा और कुछ नहीं है। इस कारण से मुक़्तदियों (पीछे नमाज़ पढ़ने वालों) ने उनकी इक़्तिदा करना छोड़ दिया और इमाम ने दूसरे की इक़्तिदा की। तब पहले इमाम ने एक मौलवी को बुलाया और उसे कुछ दिया, और यह भी सुना गया कि आठ आना महीने देने का वादा किया, मौलवी साहिब से कुछ बयान कराया और उन्होंने भी कुछ हक़ (सच) बयान किया...

---

1 क़ुरान 6/164 पेज 495 ऑफ़ 736

فتاوی رضویہ جلد ششم

اسکے پیچھے نماز میں کراہت نہیں ہوسکتی۔ قال اللہ تعالیٰ لَا تَزِرُ وَازِرَةٌ وِزْرَ أُخْرٰی 1۔ (اللہ تعالیٰ کا ارشاد گرامی ہے کوئی کسی دوسرے کا بوجھ نہیں اٹھائے گا۔ت) واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۶۲۵،۶۲۶: از بسولی ضلع بدایوں مرسلہ خلیل الرحمن صاحب ۹ شعبان المعظم ۱۳۱۹ ہجری کیا فرماتے ہیں علمائے دین ان مسائل میں : (۱) وہ کون کون شخص ہیں مسلمانوں میں جن کے پیچھے نماز درست نہیں ؟ (۲) کون سی صورت میں نابینا کے پیچھے نماز درست ہے یا بالکل ناجائز؟

الجواب: (۱) بہت لوگ ہیں از انجملہ غیر مقلدین اور رافضی اور وہابی جن کی بدعت حد کفر تک پہنچی ہے، سید نا امام اعظم رضی اللہ تعالیٰ عنہ فرماتے ہیں : الصلوۃ خلف اھل الھواء لا تجوز (اہلِ ہواء کے پیچھے نماز جائز نہیں۔ ت) جو قرآن مجید غلط پڑھتا ہو جس سے فسادِ معنیٰ ہو، جس کی طہارت صحیح نہ ہو اگر چہ معذوری کی وجہ سے، مثلاً جسے معاذ اللہ سلس البول یا ہر وقت ریح خارج ہونے کا عارضہ ہے یا زخم یا پھوڑے سے خون یا زرد آب بہتا ہے۔ اسی طرح وہ شافعی المذہب مثلاً جس نے اپنے طور پر طہارت صحیحہ کی مگر مذہب حنفی میں صحیح نہ ہوئی، مثلاً سر کے صرف ایک بال کا مسح کر لیا یا فصد لگوا کر وضو کا اعادہ نہ کیا کہ حنفی کی نماز اس کے پیچھے نہ ہوگی۔ ان کے سوا اور بکثرت صورتیں ہیں کہ کتب مذہب میں اس کی تفصیل ہے۔ (۲) نابینا کے کپڑے پر اگر نجاست بقدرِ منعِ نماز لگی ہے اور اسے خبر نہیں یا اس کے زخم یا پھوڑے سے خون بہا اور اس نے نہ دیکھا تو اس صورت میں اس کے پیچھے نماز ناجائز ہے ورنہ صرف مکروہ تنزیہی اور خلافِ اولیٰ ہے جبکہ سب حاضرین سے زیادہ علم نہ رکھتا ہے ورنہ وہی امام کیا جائے گا۔ واللہ سبحنہ و تعالٰی اعلم

مسئلہ نمبر ۶۲۷: از گورا بازار ۲۲ جمادی الاولیٰ ۱۳۱۸ھ نحمدہ و نصلی علی رسولہ الکریم کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین اس مسئلہ میں کہ حافظ کریم بخش امام مسجد گورا بازار یتیموں کا مال پوشیدہ لے جانے میں شریک ہوئے اور اقرار بھی کیا اور ماسوا اس کے اور کچھ بھی نہیں اس سبب سے مقتدیوں نے اقتدا کرنا چھوڑ دیا اور امام دوسرے کی اقتدا کی تب امام اول ایک مولوی کو بلا کر لایا اور کچھ دے کر اور یہ بھی سنا گیا کہ آٹھ آنہ ماہواری بھی دینے کا اقرار کیا، مولوی صاحب سے کچھ بیان کرایا اور اس نے کچھ حق بھی بیان کیا

---

1 القرآن ۱۶۴/۶ Page 495 of 736

Fatawa Razawiyya Volume VI

...and showed some partiality, did the Maulana fall under the injunction of this verse: 'And do not sell My signs for a small price'? The Maulana persuaded the congregation and re-established his leadership (Imamat). The Imam sought forgiveness from the congregation, and they kept both Imams. Does the congregation's forgiveness for the first Imam's error also waive the violation of orphans' rights he committed, or will the first Imam still have to return the orphans' rights? Also, is melodious recitation considered a necessary condition for an Imam according to Sharia? One person who doesn't observe prayers strictly but is proficient in Persian wants the first Imam to stay, while not wanting the second. The reality of the second Imam is that he has expertise in Hadith, Tafsir, Fiqh, and Arabic principles. Now, for the congregation's emulation, whose leadership is superior and better? It is said that praying behind a scholar is like praying behind the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him); is there proof for this in Sharia? Some people still consider following the first Imam as disliked (Makruh). Explain and you shall be rewarded, with references.

The Answer: Taking someone else's property without Shari'a permission is theft and a major sin. The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says: 'The thief is not a believer at the time he is stealing.' [1] A thief is detached from faith while committing theft. Taking the property of orphans unjustly is an even more severe major sin. Allah Almighty says:

| Indeed, those who consume the property of orphans | Those who consume the property of orphans | | unjustly are only consuming fire into their | unjustly eat nothing but fire into their | | bellies, and they will burn in a Blaze. [2] | bellies and soon they will enter Hell. |

The rights of orphans cannot be waived by anyone's forgiveness. Even if an orphan's grandfather or mother, or the parents of a minor, waive their right to someone, it will never be waived. 'For guardianship is for looking after (their interests), not for causing harm.' (T) In fact, the orphans and minors themselves cannot waive it, nor is their forgiveness of any consequence. 'Due to the complete restriction from engaging in matters that are harmful (to them).' (T) The orphans' rights must absolutely be returned, and anyone who can recover it should do so. Yes, if the orphan waives it after reaching adulthood, only then can it be forgiven. The congregation, because of such improper actions...

---

[1] Sahih al-Bukhari, Book of Drinks, etc., published by Qadimi Kutub Khana, Karachi, 2/836. [2] Al-Quran 4:10 (cited as 10/4).

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

...और कुछ पक्षपात भी किया, क्या मौलवी साहब इस आयत के हुक्म में शामिल हुए या नहीं: 'और मेरी आयतों को थोड़े मूल्य पर न बेचो'? मौलवी साहब ने नमाज़ियों को समझाया और अपनी इमामत (नेतृत्व) बहाल करा ली। इमाम ने नमाज़ियों से माफ़ी माँगी और उन्होंने दोनों इमामों को बनाए रखा। क्या नमाज़ियों द्वारा पहले इमाम की ग़लती माफ़ करने से यतीमों (अनाथों) के हक़ का हनन भी माफ़ हो गया, या पहले इमाम को यतीमों का हक़ लौटाना पड़ेगा? साथ ही, क्या शरीयत के अनुसार इमाम के लिए मधुर स्वर में पाठ करना एक आवश्यक शर्त है? एक व्यक्ति जो नमाज़ की पाबंदी नहीं करता लेकिन फ़ारसी में माहिर है, वह चाहता है कि पहला इमाम ही रहे। दूसरे इमाम की वास्तविकता यह है कि उन्हें हदीस, तफ़सीर, फ़िक़्ह और अरबी सिद्धांतों का ज्ञान है। अब पैरवी के लिए किसकी इमामत अफ़ज़ल और बेहतर है? कहा जाता है कि आलिम (विद्वान) के पीछे नमाज़ पढ़ना ऐसा है जैसे नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के पीछे पढ़ना; क्या शरीयत में इसका कोई प्रमाण है? कुछ लोग अब भी पहले इमाम की पैरवी को मकरूह (नापसंद) मानते हैं। सप्रमाण उत्तर दें।

उत्तर: बिना शरीअती अनुमति के किसी और की संपत्ति लेना चोरी और गुनाह-ए-कबीरा (बड़ा पाप) है। अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं: 'चोर चोरी करते समय मोमिन (आस्तिक) नहीं रहता।' [1] चोरी करते समय चोर ईमान से अलग हो जाता है। यतीमों का माल नाहक़ (अन्यायपूर्वक) खाना और भी बड़ा पाप है। अल्लाह तआला फ़रमाता है:

| बेशक जो लोग यतीमों का माल नाहक़ खाते हैं वे अपने | जो लोग यतीमों का माल नाहक़ खाते हैं वे अपने | | पेट में केवल आग भरते हैं और जल्द ही दहकती हुई | पेट में कोरी आग भरते हैं और जल्द ही दोज़ख | | आग में प्रवेश करेंगे। [2] | में जाएँगे। |

यतीमों का हक़ किसी के माफ़ करने से माफ़ नहीं हो सकता। यहाँ तक कि यतीम का दादा या माँ, या किसी नाबालिग के माता-पिता भी उसका हक़ माफ़ कर दें तो वह हरगिज़ माफ़ नहीं होगा। 'क्योंकि विलायत (संरक्षण) भलाई के लिए होती है, नुक़सान पहुँचाने के लिए नहीं।' (त) बल्कि यतीम और नाबालिग ख़ुद भी माफ़ नहीं कर सकते और न ही उनकी माफ़ी का कोई मूल्य है। 'क्योंकि नुक़सानदेह मामलों में हस्तक्षेप करने से उन्हें पूरी तरह रोक दिया गया है।' (त) यतीमों का हक़ हर हाल में देना होगा और जो इसे वापस दिला सकता है उसे ज़रूर दिलाना चाहिए। हाँ, यदि यतीम

बालिग (वयस्क) होने के बाद माफ़ कर दे, तभी वह माफ़ हो सकेगा। नमाज़ियों ने कि ऐसी अशोभनीय हरकतों के कारण...

---

[1] सहीह अल-बुख़ारी, किताब अल-अशरबा, पुरानी कुतुब ख़ाना कराची द्वारा प्रकाशित, 2/836.
[2] अल-क़ुरआन 4:10 (ग्रंथ में 10/4 उद्धृत है).

اور کچھ طرف داری بھی کی، آیا مولوی صاحب اس آیت کے حکم میں داخل ہوئے یا نہیں ولا تشتروا بِاٰیٰتِیْ ثَمَنًا قَلِیْلًا، اور مولوی صاحب نے مقتدیوں کو سمجھایا اور ان کی امامت قائم کرا دی اور امام نے مقتدیوں سے معافی چاہی مقتدیوں نے دونوں اماموں کو قائم رکھا اور امام اول کی خطا مقتدیوں کے معاف کرنے سے یتیموں کی حق تلفی جو کی وہ بھی معاف ہوئی یا نہیں یا امام اول کو یتیموں کا حق دینا پڑے گا اور دلوانا پڑے گا یا نہیں، اور ایک آدمی خوش الحانی کو ضروریات سے جاننے والا ہے امام کی آیا یہ شرط ہے ازروئے شرع شریف کے یا نہیں؟ اور ایک شخص پابندی نماز نہیں کرتا ہے فارسی میں دخل بہت ہے وہ امام اول کو چاہتے ہیں کہ یہ رہے اور دوسرے کو نہیں چاہتے، اور امام دوسرے کی حقیقت یہ ہے کہ علم حدیث و تفسیر وفقہ واصول عربی میں دخل ہے اب اتقادواسطے مقتدیوں کے کس کی امامت افضل اور بہتر ہے اور عالم کے پیچھے نماز پڑھنا ایسی ہے جیسے نبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے پیچھے پڑھی، آیا اس کا ثبوت شرع شریف میں ہے یا نہیں؟ اور امام اول کی اقتداء ابھی تک بعض لوگ مکروہ جانتے ہیں۔ بینوا توجروا مع حوالہ کتاب۔

الجواب: پرایا مال بے اذن شرعی لینا چوری اور گناہ کبیرہ ہے، رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں لا یسرق السارق حین یسرق وھو مؤمن [1] چور چوری کرتے وقت ایمان سے الگ ہو جاتا ہے، اور یتیموں کا مال ناحق لینا سخت تر کبیرہ ہے، اللہ تعالیٰ فرماتا ہے:

| اِنَّ الَّذِیۡنَ یَاۡکُلُوۡنَ اَمۡوَالَ الۡیَتٰمٰی ظُلۡمًا اِنَّمَا یَاۡکُلُوۡنَ | جو لوگ یتیموں کا مال ناحق کھاتے ہیں وہ اپنے پیٹ میں نری | | فِیۡ بُطُوۡنِہِمۡ نَارًا ؕ وَسَیَصۡلَوۡنَ سَعِیۡرًا ﴿۱۰﴾ [2] | آگ کھاتے ہیں اور عنقریب دوزخ میں جائیں گے۔ |

یتیموں کا حق کسی کے معاف کئے معاف نہیں ہو سکتا یہاں تک کہ خود یتیم کا دادا یا ماں کسی نابالغ کے ماں باپ اس کا حق کسی کو معاف کر دیں ہرگز معاف نہ ہوگا فان الولایۃ للنظر لا للضرر (کیونکہ ولایت نگرانی کے لئے حاصل ہوتی ہے نقصان دینے کے لئے نہیں۔ ت) بلکہ خود یتیم و نابالغ بھی معاف نہیں کر سکتے نہ ان کی معافی کا کچھ اعتبار ہے للحجر التام عما ھو ضرر (کیونکہ نقصان دہ معاملہ میں تصرف کرنے سے انہیں مکمل روک دیا گیا ہے۔ ت) محض یتیموں کا حق ضرور دینا پڑے گا اور جو نکلوا سکتا ہے اسے چاہیے کہ ضرور دلوا دے، ہاں یتیم بالغ ہونے کے بعد معاف کرے تو اس وقت معاف ہوسکے گا۔ مقتدیوں نے کہ ایسی حرکات ناشائستہ کے باعث

---

[1] صحیح البخاری کتاب الاشربہ الخ مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۸۳۶/۲ [2] القرآن ۱۰/۴

Fatawa-e-Razawiyyah - Volume 6

He did very well to stop praying behind the first Imam; that was the command for him, as verified in 'Al-Ghunyah' from 'Fatawa al-Hujjah' and endorsed in 'Radd al-Muhtar'. This explanation has been repeated many times in our Fatawa. (Note: As verified in 'Ghunyah' with reference to 'Fatawa al-Hujjah' and maintained in 'Radd al-Muhtar'. The statement of this issue is present in several places in our Fatawa. -T). The person who, for some gain, added some false points in favor of the first Imam, surely became subject to the noble verse "And do not exchange My verses for a small price" [1] and the verse "And do not mix the truth with falsehood" [2]. A melodious voice is not necessary for an Imam; whoever makes it a necessity or a condition is committing slander against the pure Shari'ah. In fact, a melodious voice is sometimes harmful because it makes a person proud, or at the very least, he stays focused on making his melodies instead of humility and submission in prayer. It is stated in 'Fatawa Qazi Khan' and 'Fatawa Alamgiri':

Arabic Text	Urdu Translation
It is not appropriate for the people to put forward a 'Khush-khwan' (one with a melodious voice) for Taraweeh, but they should put forward a 'Durust-khwan' (one who recites correctly). For when the Imam recites with a beautiful voice, it distracts him (the listener) from humility, contemplation, and reflection. [3]	It is not appropriate for the people to make such a person Imam in Taraweeh who has a melodious voice; however, they can make a person who recites correctly as the Imam, because when the Imam recites, his good voice will make one heedless of humility, contemplation, and reflection. (T)

Leadership in prayer (Imamat) is the specific right of a scholar (Alim). In his presence, no one else should be given preference, provided that scholar recites correctly, holds correct beliefs, and is not a transgressor (fasiq). The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

Arabic Text	Urdu Translation
If it pleases you that your prayers be accepted, then your scholars should lead you, for they are your delegates between you and your Lord, Mighty and Majestic. [4] - Narrated by al-Tabarani in 'al-Mu'jam al-Kabir' from	If you like your prayers to be accepted, then your scholars should lead you; they are your intermediaries between you and your Lord, Almighty and Majestic. This has been narrated by al-Tabarani in 'Al-Mu'jam al-Kabir' from Hazrat Marthad bin Abi al-

Arabic Text	Urdu Translation
Marthad bin Abi Marthad al-Ghanawi (may Allah be pleased with him).	Ghanawi (may Allah be pleased with him). (T)

[1] Al-Quran 2/41 [2] Al-Quran 2/42 [3] Fatawa Hindiyyah, Chapter on Taraweeh, printed by Noorani Kutub Khana, Peshawar, 1/116 [4] Al-Mu'jam al-Kabir, narrated from Marthad al-Ghanawi, printed by Al-Maktabah al-Faysaliyyah, Beirut, 2/328

Note: In the original book, instead of 'falyu'ummukum 'ulama'ukum', it is 'falyu'ummukum khiyarukum'. - Nazir Ahmed Saeedi

प्रथम इमाम के पीछे नमाज़ पढ़ना छोड़ दिया, बहुत अच्छा किया, उन्हें इसी का आदेश था, जैसा कि 'फ़तावा अल-हुज्जाह' के हवाले से 'अल-ग़ुनिया' में सत्यापित किया गया है और 'रद्द अल-मुहतार' में इसकी पुष्टि की गई है। इस मसले का वर्णन हमारे फ़तावा में कई जगहों पर मौजूद है। (त). जिस व्यक्ति ने कुछ स्वार्थ के लिए प्रथम इमाम के पक्ष में कुछ गलत बातें मिला दीं, वह निश्चित रूप से पवित्र आयत "और मेरी आयतों को थोड़े मूल्य पर न बेचो" [1] और आयत "और सत्य को असत्य के साथ न मिलाओ" [2] का पात्र बन गया। इमाम के लिए मधुर स्वर (खुश अलहानी) कुछ आवश्यक नहीं है, जो इसे आवश्यक या शर्त बताए, वह पवित्र शरीयत पर झूठ गढ़ता है, बल्कि मधुर स्वर कभी-कभी हानिकारक होता है क्योंकि इसके कारण व्यक्ति में अहंकार आ जाता है या कम से कम इतना होता है कि वह नमाज़ में विनय और नम्रता के बजाय अपनी धुन बनाने के विचार में रहता है। 'फ़तावा काज़ी खान' और 'फ़तावा आलमगीरी' में है:

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद
लोगों के लिए तरावीह में ऐसे व्यक्ति को आगे करना उचित नहीं है जो मधुर स्वर वाला हो, बल्कि सही पढ़ने वाले को आगे करना चाहिए क्योंकि जब इमाम सुंदर स्वर में पाठ करेगा, तो वह उसे विनय, चिंतन और विचार से विमुख कर देगा। [3]	लोगों के लिए तरावीह में ऐसे व्यक्ति को इमाम बनाना उचित नहीं है जो मधुर स्वर वाला हो, हालांकि वे सही पढ़ने वाले को इमाम बना सकते हैं क्योंकि जब इमाम पाठ करेगा, तो उसकी मधुर आवाज़ विनय, चिंतन और विचार से गाफ़िल (अचेत) कर देगी। (त)

इमामत विद्वान (आलिम) का विशेष अधिकार है। उनकी उपस्थिति में किसी अन्य को प्राथमिकता नहीं दी जानी चाहिए, बशर्ते कि वह विद्वान सही पाठ करने वाला, सही अक़ीदा (विश्वास) रखने वाला हो और फ़ासिक़ (पापी) न हो। अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) फ़रमाते हैं:

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद
यदि तुम्हें अपनी नमाज़ों का स्वीकार होना पसंद हो, तो चाहिए कि तुम्हारे विद्वान तुम्हारी इमामत करें, क्योंकि वे तुम्हारे और तुम्हारे महान और प्रतापी रब के बीच तुम्हारे प्रतिनिधि (वसीला) हैं।	यदि तुम्हें अपनी नमाज़ों का स्वीकार होना पसंद हो तो चाहिए कि तुम्हारे विद्वान तुम्हारी इमामत करें, वे तुम्हारे और तुम्हारे रब अज़्ज़वजल के बीच तुम्हारे माध्यम (सफ़ायर) हैं। इसे तबरानी ने

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद
[4] - इसे तबरानी ने 'अल-मुअजम अल-कबीर' में हज़रत मरशद बिन अबी अल-ग़नवी (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है।	'अल-मुअजम अल-कबीर' में हज़रत मरशद बिन अबी अल-ग़नवी रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत किया है। (त)

[1] अल-क़ुरान 2/41 [2] अल-क़ुरान 2/42 [3] फ़तावा हिन्दिया, तरावीह का अध्याय, नूरानी कुतुब खाना, पेशावर द्वारा मुद्रित, 1/116 [4] अल-मुअजम अल-कबीर, मरशद अल-ग़नवी से रिवायत, अल-मकतबा अल-फ़ैसलिया, बेरूत द्वारा मुद्रित, 2/328

नोट: मूल पुस्तक में 'falyu'ummukum 'ulama'ukum' के स्थान पर 'falyu'ummukum khiyarukum' है। - नज़ीर अहमद सईदी

امام اول کے پیچھے نماز پڑھنی چھوڑ دی، بہت اچھا کیا انھیں اسی کا حکم تھا کما حققه في الغنية عن فتاوی الحجة واقره في ردالمحتار وقد تكرر بيانه فی فتاؤنا (جیسا کہ فتاوٰی حجۃ کے حوالے سے غنیہ میں اس کی تحقیق کی ہے اور ردالمحتار میں اسے برقرار رکھا۔ اس مسئلہ کا بیان ہمارے فتاوٰی میں متعدد جگہ پر موجود ہے۔ ت) جس شخص نے کچھ لے کر بعض ناحق باتیں امام اول کی طرفداری کے حق میں ملادیں وہ ضرور آیہ کریمہ وَلَا تَشْتَرُوْا بِاٰیٰتِیْ ثَمَنًا قَلِیْلًا (1) اور آیہ کریمہ لَا تَلْبِسُوا الْحَقَّ بِالْبَاطِلِ (2) کا مورد ہوا، امام کے لئے خوش الحانی کچھ ضرور نہیں جو اسے ضروری و شرط بتائے، شرع مطہر پر افتراء کرتا ہے، بلکہ خوش الحانی بعض وقت مضر ہوتی ہے کہ اس کے سبب آدمی اتراتا ہے یا کم سے کم اتنا ہوتا ہے کہ نماز میں خشوع و خضوع کے بدلے اپنے الحان بنانے کا خیال رہتا ہے۔ فتاوٰی قاضی خان و فتاوٰی عالمگیری میں ہے:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
لا ينبغی للقوم ان يقدموا فی التراويح الخوشخوان ولكن يقدموا الدرستخوان فان الامام اذا قرأ بصوت حسن يشغله عن الخشوع والتدبر والتفكر (3)	قوم کے لئے ایسے شخص کو تراویح میں امام بنانا جو خوش الحان ہو مناسب نہیں البتہ درست پڑھنے والے کو امام بنا سکتے ہیں کیونکہ امام جب قرأت کرے گا تو اس کو اچھی آواز خشوع، تدبر اور تفکر سے غافل کردے گی۔ (ت)

امامت عالم کا خاص حق ہے اس کے ہوتے ہوئے دوسرے کو ترجیح نہیں جبکہ وہ عالم صحیح خواں و صحیح العقیدہ ہو، فاسق نہ ہو۔ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
ان سرکم ان تقبل صلاتکم فلیؤمکم علماؤکم فانھم وفدکم فیما بینکم وبین ربکم (4)- رواہ الطبراني في الکبیر عن مرثد بن ابی مرثد الغنوی رضی اللہ تعالی عنہ۔	اگر تمہیں اپنی نمازوں کا قبول ہونا پسند ہو تو چاہئے کہ تمہارے علماء تمہاری امامت کریں وہ تمہارے واسطہ سفیر ہیں تمہارے اور تمہارے رب عزوجل کے درمیان۔ اس کو طبرانی نے المعجم الکبیر میں حضرت مرثد بن ابی الغنوی رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا ہے۔ (ت)

1 القرآن ۴۱/۲ 2 القرآن ۴۲/۲ 3 فتاویٰ ہندیہ فصل فی التراویح مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور ۳۲۸/۲ 4 المعجم الکبیر مروی عن مرثد الغنوی مطبوعہ المکتبۃ الفیصلیۃ بیروت ۱/۱۱۶

نوٹ: اصل کتاب میں فلیؤمکم علماؤکم کی جگہ فلیؤمکم خیارکم ہے۔ نذیر احمد سعیدی

Fatawa Razawiyya Volume VI

Specifically, the wording that "praying behind a scholar is like praying behind the Noble Prophet (may Allah's peace and blessings be upon him)" has not been seen in any Hadith. However, there is a Sahih Hadith stating: "The scholars are the heirs of the Prophets" (Scholars are the successors of the Prophets, peace and blessings be upon them) and it is mentioned in Hidayah:

Whoever prays behind a pious scholar, it is as if they prayed behind a Prophet.	**Whoever prayed behind a pious scholar, it is as if he prayed behind a Prophet.**
But the verifiers of Hadith do not know it, and al-Zayla'i said it is 'Gharib'.	(However, this Hadith is not well-known among the scholars of verification; Imam Zayla'i has declared it 'Gharib' [strange]. - T)

The first Imam definitely became a 'Fasiq' (transgressor) due to that action of his, and praying behind a Fasiq is certainly 'Makruh' (disliked) as long as he does not perform sincere repentance. And the repentance of one who takes money is not valid at all without returning the money. So, until he returns the right of the orphans, praying behind him is indeed Makruh.

Issue Number 628: 3 Shaban al-Muazzam 1318 AH: Is it permissible to pray behind Nadwis or not?

The Answer: Among the Nadwis, some are Naturalists (Nechari), some are deniers of the essentials of religion (Rafidis). These are, by consensus, disbelievers and apostates, and praying behind them is purely void. Some are non-disbelieving Rafidis, Wahhabis, Tafzilis, Ghair Muqallids, etc., who are innovators. Some are ruined, corrupted, and astray individuals who have now established 'Nadwa' to uproot their religion. Those whose words of misguidance have been published in the reports and lectures of Nadwa are all astray and misguiding, irreligious people, and praying behind them is impermissible, just like the general Ghair Muqallids.

| As we have investigated in 'Al-Nahy al-Akeed 'an al-Salat wara' 'Adi al-Taqlid' | As we have investigated in 'Al-Nahy al-Akeed 'an al-Salat wara' 'Adi al-Taqlid'. (T) |

It is a sin and 'Makruh Tahrimi' (prohibitively disliked), as we have explained in various places in our Fatawa (As we have explained in multiple places in our Fatawa. - T). Similarly, even if they themselves were not innovators before and have not spoken words of innovation now, but [associated] with those lecturers...

1 Sahih al-Bukhari, Chapter: Knowledge before Speech and Action, etc., printed at Qadimi Kutub Khana, Karachi, 16/1 2 Al-Hidayah, Chapter: Leadership (Imamah), printed at Al-Maktabah al-Arabiyyah, Karachi, 101/1

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

विशेष रूप से यह शब्द कि "एक विद्वान (आलिम) के पीछे नमाज़ पढ़ना ऐसा है जैसे पैगंबर (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) के पीछे नमाज़ पढ़ना" किसी हदीस में नहीं मिला है। हाँ, सहीह हदीस में है: "विद्वान पैगंबरों के वारिस हैं" (उलेमा अंबिया अलैहिमुस्सलातु वस्सलाम के वारिस हैं) और हिदाया में उल्लेख है:

जिसने एक परहेज़गार विद्वान के पीछे नमाज़ पढ़ी, मानो उसने एक पैगंबर के पीछे नमाज़ पढ़ी।	**जिसने किसी मुत्तक़ी आलिम के पीछे नमाज़ पढ़ी, गोया नबी के पीछे**
लेकिन हदीस की जाँच करने वालों ने इसे नहीं पहचाना और ज़ैलई ने कहा कि यह ग़रीब (दुर्लभ) है।	पढ़ी। (लेकिन तख़रीज करने वालों के पास यह हदीस प्रसिद्ध नहीं है; इमाम ज़ैलई ने इसे ग़रीब करार दिया है। - त)

पहला इमाम अपने उस कृत्य से निश्चित रूप से 'फ़ासिक़' (पापी) हो गया और जब तक वह सच्ची तौबा न करे, फ़ासिक़ के पीछे नमाज़ निश्चित रूप से मकरूह (नापसंद) है। और धन लेने वाले की तौबा तब तक मान्य नहीं है जब तक वह धन वापस न कर दे। अतः जब तक वह अनाथों का अधिकार वापस नहीं करता, तब तक उसके पीछे नमाज़ पढ़ना वास्तव में मकरूह है।

मसला संख्या 628: 3 शाबान अल-मुअज़्ज़म 1318 हिजरी: क्या नदवियों के पीछे नमाज़ पढ़ना जायज़ है या नहीं?

उत्तर: नदवियों में कुछ नीचरी हैं, कुछ दीन की बुनियादी बातों के मुनकिर राफ़ज़ी हैं; सर्वसम्मति से ये काफ़िर और मुर्तद हैं और इनके पीछे नमाज़ पढ़ना सरासर बातिल (शून्य) है। कुछ ऐसे राफ़ज़ी, वहाबी, तफ़ज़ीली, ग़ैर-मुक़ल्लिद आदि हैं जो काफ़िर तो नहीं पर बद-मज़हब (भ्रष्ट विचारधारा वाले) हैं। कुछ वे भटके हुए गुमराह लोग हैं जिन्होंने अब नदवा (एक संस्था) बनाकर अपने धर्म की जड़ें खोदी हैं। नदवा की रिपोर्टों और भाषणों में जिनके गुमराह करने वाले शब्द छापे गए हैं, वे सभी गुमराह, पथभ्रष्ट और अधर्मी हैं, और उनके पीछे नमाज़ पढ़ना नाजायज़ है, जैसे कि आम ग़ैर-मुक़ल्लिदों के पीछे।

| जैसा कि हमने 'अल-नह्युल अकीद अनिस सलाति वराअ अदित तक़लीद' में इसकी पुष्टि की है। | जैसा कि हमने इसकी तहक़ीक़ 'अन-नह्युल अकीद अनिस सलाति वराअ अदित तक़लीद' में की है (त) |

या गुनाह और मकरूह-ए-तहरीमी है, जैसा कि हमने अपने फ़तावा में अन्य स्थानों पर स्पष्ट किया है (जैसा कि हमने इसे अपने फ़तावा में विभिन्न स्थानों पर बयान किया है। - त)। इसी तरह, भले ही वे पहले स्वयं बद-मज़हब न रहे हों और न ही अब बद-मज़हबी के शब्द कहे हों, लेकिन उन भाषण देने वालों के..

---

1 सहीह अल-बुखारी, बाब अल-इल्म क़ब्ल अल-क़ौल व अल-अमल आदि, पुराने कुतुबखाना कराची द्वारा मुद्रित, 16/1 2 अल-हिदाया, बाब अल-इमामह, मकतबा अल-अरबिया कराची द्वारा मुद्रित, 101/1

पृष्ठ 498/736

خاص یہ لفظ کہ عالم کے پیچھے نماز ایسی ہے جیسے نبی اکرم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کے پیچھے کسی حدیث میں نظر سے نہیں گزری، ہاں یہ صحاح کی حدیث ہے کہ: العلماء ورثۃ الانبیاء1 (علماء انبیاء علیہم الصلوۃ والسلام کے وارث ہیں) اور ہدایہ میں ہے:

من صلی خلف عالم تقی فکانما صلی خلف نبي2	**جس نے کسی عالم متقی کے پیچھے نماز پڑھی گویا نبی کے پیچھے**
لکن لم یعرفه المخرجون وقال الزیعلی ھو غریب	پڑھی۔ (لیکن اصحاب تخریج کے ہاں یہ حدیث معروف نہیں امام زیلعی نے اسے غریب قرار دیا ہے۔ ت)

امام اول اپنی اُس حرکت سے ضرور فاسق ہوا اور فاسق کے پیچھے نماز ضرور مکروہ ہے جبکہ سچی توبہ نہ کرے اور مال لینے والے کی توبہ بغیر مال واپس دئے ہر گز صحیح نہیں تو جب تک وہ یتیموں کا حق نہ پھیرے نماز اس کے پیچھے بیشک مکروہ۔

مسئلہ نمبر ۶۲۸: ۳ شعبان المعظم ۱۳۱۸ھ: ندویوں کے پیچھے نماز جائز ہے یا نہیں؟

الجواب: ندویوں میں کچھ نیچری ہیں کچھ منکرانِ ضروریاتِ دین رافضی یہ بالاجماع کافر مرتد ہیں اور ان کے پیچھے نماز محض باطل، کچھ غیر کافر رافضی وہابی تفضیلی غیر مقلد وغیرہ ہم بد مذہب ہیں کچھ وہ مٹے بگڑے گمراہ ہیں جنہوں نے اب ندوہ جمائے اپنے دین کی بیخ کنی کی، ندوے کی رُودادوں لکچروں میں جن کے کلماتِ ضلالت چھاپے گئے یہ سب ضال مفضل گمراہ بددین ہیں اور ان کے پیچھے نماز نا جائز جیسے عامہ غیر مقلدین،

| کما حققناه في النهی الاکید عن الصلوۃ وراء عدی التقلید | جیسا کہ ہم نے اس کی تحقیق "النهی الاکید عن الصلوۃ وراء عدی التقلید" میں کی ہے (ت) |

یا گناہ و مکروہ تحریمی، کما بیناہ فی غیر موضع من فتاونیا (جیسا کہ ہم نے اسے اپنے فتاویٰ میں متعدد جگہ بیان کیا ہے۔ ت) یوں ہی وہ خود نہ پہلے بد مذہب تھے اور نہ اب کلمات بد مذہب ہی کہے مگر ان لکچرروں کے

---

1 صحیح البخاری باب العلم قبل العلم والعمل الخ مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/۱۶ 2 الہدایہ باب الامامۃ مطبوعہ المکتبۃ العربیہ کراچی ۱/۱۰۱

Fatawa Razawiyya Volume 6 They heard misguiding words, liked them, were pleased with them, and supported their dissemination. All of these, due to their approval and support of falsehood, have become like the people of falsehood and misguidance and are included in the same ruling. Some are poor souls who were unaware of what those oppressors said and joined simply after hearing it was a gathering of scholars; they are excused as long as they remain uninformed. If they remain involved after being informed, then they are at least surely 'Fasiq' (transgressors). Praying behind a 'Fasiq' is also disliked ('Makruh'). In 'Fatawa Hijja', 'Ghunia Shuruh Munia' etc., it is clarified that this dislike is 'Tahrimi' (prohibitively disliked). And Allah Almighty knows best.

Problem No. 629: From Bareilly, Muhalla Surkha, 27 Muharram-ul-Haram 1319 AH. What do the scholars of religion and jurists of the firm Shariah say about this matter: Is the group of Wahhabis, i.e., the sect of 'Ghair Muqallideen' (non-conformists), included in the 'Ahl-e-Sunnat wal-Jamaat' or excluded from them and part of the misguided sects? Is it permissible for us 'Muqallideen' (conformists) to mix and sit with them, and to allow them to enter our mosques despite the fear of discord? And how is it to pray behind them? Explain in detail, and may you be rewarded with a great reward.

The Answer: In reality, the sect of 'Ghair Muqallideen' are misguided, irreligious, straying, and mischief-makers. Making them Imams is forbidden (Haram); praying behind them is prohibited. Mixing with them is like fire. In the situation mentioned in the question, they should never be allowed to enter mosques. Allah Almighty says: "And We covenanted with Ibrahim and Isma'il, that they should sanctify My House..." (Quran 2:125). We took a promise from Ibrahim and Ismail that they would keep My House clean. (T)

It is in the Hadith: The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) commanded the building of mosques in residential areas and that they be kept clean and fragrant. (Sunan Abu Dawood). The Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) ordered the building of mosques in neighborhoods and to keep them tidy, clean, and fragrant. (T)

Leave aside impurities, even things like saliva and nasal mucus, although they are pure, it is obligatory to keep them away from the mosque. So, the people of wrong beliefs and the misguided are worse impurities than any physical impurity. In a Hadith, the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

1 Quran 2:125 2 Sunan Abu Dawood, Chapter: Building Mosques in Houses, printed at Aftab Alam Press, Lahore, 1/26 Page 499 of 736

फ़तावा रज़विया जिल्द छठा गुमराह करने वाली बातें सुनीं, उन्हें पसंद किया और उनसे सहमत हुए, उनके प्रचार-प्रसार का समर्थन किया; ये सभी, असत्य की सहमति और समर्थन के कारण, असत्य के लोगों और गुमराहों की श्रेणी में शामिल हो गए हैं और उनके समान ही दंड के पात्र हैं। कुछ ऐसे बेचारे हैं जिन्हें जानकारी नहीं थी कि उन अत्याचारियों ने क्या कहा है, वे केवल मौलवियों का जलसा सुनकर शामिल हो गए; जब तक वे अनभिज्ञ हैं तब तक वे क्षमा के पात्र हैं। यदि जानकारी होने के बाद भी वे जुड़े रहते हैं, तो वे कम से कम 'फ़ासिक़' (पापी) ज़रूर हैं। और फ़ासिक़ के पीछे नमाज़ पढ़ना भी मकरूह (नापसंद) है। 'फ़तावा हिज्जा', 'ग़ुनिया शरुह मुनिया' आदि में स्पष्ट किया गया है कि यह मकरूह होना 'तहरीमी' (निषिद्ध के करीब) है। और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

मसला नंबर 629: बरेली, मोहल्ला सुर्ख़ा, 27 मुहर्रम-उल-हराम 1319 हिजरी। दीन के विद्वान और सुदृढ़ शरीयत के मुफ़्ती इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि वहाबियों का समूह, यानी 'ग़ैर मुक़ल्लिद' फ़िरक़ा, 'अहले सुन्नत व जमाअत' में शामिल है या उनसे अलग और गुमराह फ़िरक़ों में से है? क्या हम 'मुक़ल्लिदों' के लिए उनके साथ मेल-जोल और उठना-बैठना और फ़साद के डर के बावजूद उन्हें अपनी मस्जिदों में आने देना जायज़ है या नहीं? और उनके पीछे नमाज़ पढ़ना कैसा है? विस्तार से समझाएं, आपको महान प्रतिफल मिले।

उत्तर: वास्तव में 'ग़ैर मुक़ल्लिद' फ़िरक़ा गुमराह, बे-दीन, पथभ्रष्ट और फ़सादी हैं। उन्हें इमाम बनाना हराम है, उनके पीछे नमाज़ पढ़ना मना है, और उनके साथ मेल-जोल आग की तरह है। प्रश्न में वर्णित स्थिति में उन्हें मस्जिदों में बिल्कुल न आने दिया जाए। अल्लाह तआला फ़रमाता है: "और हमने इब्राहीम और इस्माईल से वादा लिया कि वे मेरे घर को पाक-साफ़ रखें..." (क़ुरआन 2:125)। हमने इब्राहिम और इस्माइल से यह वादा लिया कि वे मेरे घर को साफ़ रखेंगे। (त)

हदीस में है: नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने मोहल्लों में मस्जिदें बनाने और उन्हें साफ़-सुथरा और सुगन्धित रखने का हुक्म दिया। (सुनन अबू दाऊद)। हुज़ूर अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने मोहल्लों में मस्जिदें बनाने और उन्हें सुथरा, स्वच्छ और खुशबूदार रखने का हुक्म दिया। (त)

नजासतें (गंदगियाँ) तो दूर की बात हैं, थूक और नाक के पानी जैसी चीज़ें, हालांकि वे पाक हैं, उन्हें भी मस्जिद से दूर रखना वाजिब है। तो बद-मज़हब गुमराह लोग तो हर गंदगी से बदतर गंदगी हैं। हदीस में रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

1 क़ुरआन 2/125 2 सुनन अबू दाऊद, बाब: घरों में मस्जिदें बनाना, आफ़ताब आलम प्रेस, लाहौर, 1/26 पेज 499 का 736

فتاوی رضویہ جلد ششم اقوال ضلالت سنے ، پسند کئے اور ان پر راضی ہوئے، ان کی اشاعت کی حمایت کی، یہ سب کل بوجہ رضا و نصرتِ باطل اہلِ باطل وارِ بابِ ضلال اور اسی حکم میں ان کے شریک حال ہو گئے ، کچھ وہ ہیں جن بیچاروں کو اطلاع نہیں کہ ان ظلمہ نے کیا کہا ہے صرف مولویوں کا جلسہ سُن کر شریک ہو گئے جب تک مطلع نہ ہوئے معذور ہیں بعد اطلاع پھر شریک رہے تو اقل درجہ فاسق ضرور ہیں اور فاسق کے پیچھے بھی نماز مکروہ۔ فتاوٰی حجہ وغنیہ شرح منیہ وغیرہما میں تصریح فرمائی کہ یہ کراہت تحریم ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ نمبر ۶۲۹: از بریلی محلہ سر خہ ۲۷ محرم الحرام ۱۳۱۹ھ علمائے دین و مفتیانِ شرعِ متین کیا فرماتے ہیں اس مسئلہ میں کہ گروہ وہابیین یعنی فرقہ غیر مقلدین داخل ہے اہلِ سنت و جماعت میں خارج ان سے اور فرقوں ضالہ سے اور ہم مقلدوں کو ان کے ساتھ مخالطت اور مجالست کرنا اور ان کو اپنی مساجد میں باوجود خوفِ فساد کے آنے دینا درست ہے یا نہیں، اور ان کے پیچھے نماز پڑھنا کیسا ہے؟ بینوا بالتفصیل توجروا بالاجر الجزیل۔

الجواب: فی الواقع فرقہ غیر مقلدین گمراہ بد دین ضالین مفسدین ہیں انھیں امام بنانا حرام ہے ان کے پیچھے نماز پڑھنا منع ہے، ان کی مخالطت آگ ہے۔ صورتِ مذکورہ سوال میں انھیں مساجد میں ہرگز نہ آنے دیا جائے۔ قال اللہ تعالٰی: وَعَهِدْنَا إِلَىٰ إِبْرَاهِيمَ وَإِسْمَاعِيلَ أَن طَهِّرَا بَيْتِيَ 1 | ہم نے ابراہیم و اسماعیل سے یہ وعدہ لیا کہ وہ میرے گھر کو صاف رکھیں گے۔ (ت)

حدیث میں ہے: امر النبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم ببناء المساجد فی الدور وان تنظف وتطیب 2 | حضور اکرم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے محلوں میں مساجد بنانے اور انھیں ستھرا و نظیف اور خوشبودار رکھنے کا حکم دیا۔ (ت)

نجاستیں در کنار قاذورات مثلِ آبِ دہن و آبِ بینی با آنکہ پاک ہیں مسجد سے ان کو دور کرنا واجب تو بد مذہب گمراہ لوگ کہ ہر نجس سے بدتر نجس ہیں۔ حدیث میں رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

1 القرآن ۱۲۵/۲ 2 سنن ابوداؤد باب اتخاذ المساجد فی الدور مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور ۲۶/۱

Fatawa Ridawiyya, Volume Six

'Ahl al-Bid'a (The people of innovation) are the worst of creation and creatures' - Heretics are worse than all creatures, worse than the whole world.

In another Hadith it is mentioned: 'As-hab al-Bid'a (The companions of innovation) are the dogs of the fire dwellers' - Heretical people are the dogs of the hell-dwellers.

So how can such people, especially during times of turmoil and corruption—which is an old habit of the Wahhabis—be allowed into mosques despite having the power to prevent them? Allah Almighty said: 'And fitna (persecution/discord) is worse than killing' - Discord is even more severe than murder.

It is clarified in 'Ayni Sharh Bukhari' and 'Durr al-Mukhtar' etc., that a troublemaker should be expelled from the mosque, even if their harm is only verbal. Impurities become pure by washing, but a heretic— 'Whatever you wash, it becomes more impure' (No matter how many times it is washed, it remains impure).

'May Allah protect us from them, from their state, their beliefs, and their actions, for the sake of His Noble Prophet, peace and blessings be upon him and his family.' May Allah Almighty, for the sake of His beloved Prophet (peace and blessings be upon him and his family), keep us safe from them and from their state, beliefs, and actions. (T)

Issue No. 630: From Jais, District Bareilly, neighborhood below the mosque, house of Haji Muhammad Ibrahim, sent by Haji Waliullah Sahib, 2nd Rabi-ul-Awwal 1320 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: if a man's wife moves around unveiled like common women, and her husband does not stop her, is it permissible to pray behind him and call him a 'Dayyuth' (cuckold) or not? Explain and you will be rewarded.

The Answer: If a woman goes out unveiled in thin clothes such that the body is visible through them, or the neck, or arms, or stomach, or calves...

---

1. Kanz al-Ummal, Al-Bid'a wal-Rafd min al-Ikmal, printed by Mu'assasat al-Risalah, Beirut, 1/223 and Jami' al-Saghir with Fayd al-Qadir, printed by Dar al-Ma'rifah, Beirut, 3/64.
2. Kanz al-Ummal, chapter on innovations, printed by Mu'assasat al-Risalah, Beirut, 1/218 and Jami' al-Saghir with Fayd al-Qadir, printed by Dar al-Ma'rifah, Beirut, 1/528.
3. Al-Quran, 2/191.

फतावा रज़विया, छठा खंड

'अहल-उल-बिदअ शर-उल-ख़ल्क़ वल-ख़लीक़ह' - कुमार्गी तमाम सृष्टि से बुरे, पूरी दुनिया से बदतर हैं।

दूसरी हदीस में है: 'असहब-उल-बिदअ किलाबा अहल-इन-नार' - कुमार्गी लोग नरकवासियों के कुत्ते हैं।

तो ऐसे लोगों को, विशेष रूप से फ़ितना और भ्रष्टाचार के समय—जो वहाबियों की पुरानी आदत है—मस्जिदों में आने की अनुमति कैसे दी जा सकती है जबकि उन्हें रोकने की शक्ति हो? अल्लाह तआला ने फ़रमाया: 'वल-फ़ितनतु अशद्दु मिनल-क़त्ल' - फ़ितना (अशांति) कत्ल से भी ज़्यादा सख़्त है।

'ऐनी शरह बुखारी' और 'दुर्र-ए-मुख्तार' आदि में स्पष्ट किया गया है कि मस्जिद से कष्ट देने वाले को निकाल दिया जाए, भले ही वह केवल ज़बानी तकलीफ़ देता हो। अशुद्धियाँ धोने से शुद्ध हो जाती हैं, लेकिन कुमार्गी— 'हर चह शुई पलीद तर बाशद' (जितनी बार धोया जाए, वह अशुद्ध ही रहता है)।

'अल्लाह हमें उनसे, उनकी स्थिति से, उनके विश्वासों और उनके कार्यों से सुरक्षित रखे, अपने महान नबी (उन पर और उनके परिवार पर शांति हो) के सम्मान में।' अल्लाह तआला अपने प्यारे नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के सदके में हमें उनसे और उनके हाल, अक़ीदे और आमाल से सुरक्षित रखे। (त)

मसला नंबर 630: जायस, ज़िला बरेली, मस्जिद के नीचे वाला मोहल्ला, हाजी मुहम्मद इब्राहिम का घर, प्रेषक हाजी वलीउल्लाह साहब, 2 रबी-उल-अव्वल 1320 हिजरी। धर्म के विद्वान इस विषय में क्या कहते हैं: जिसकी पत्नी आम औरतों की तरह बेपरदा घूमती हो और उसका पति उसे न रोकता हो, तो क्या उसके पीछे नमाज़ पढ़ना और उसे 'दयूष' (Dayyuth) कहना जायज़ है या नहीं? स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिलेगा।

उत्तर: यदि स्त्री बाहर बेपरदा और बारीक कपड़ों में घूमती हो जिससे उसका शरीर झलके या गर्दन, हाथ, पेट या पिंडलियाँ...

1. कंज़ अल-उम्माल, अल-बिदअ वर-रफ़्ज़ मिन अल-इकमल, मुद्रित मुअस्सत अल-रिसाला, बेरुत, 1/223 और जामि अल-सग़ीर मय फ़ैज़ अल-क़दीर, मुद्रित दार अल-मारिफ़ा, बेरुत, 3/64।
2. कंज़ अल-उम्माल, नवाचारों पर अध्याय, मुद्रित मुअस्सत अल-रिसाला, बेरुत, 1/218 और जामि अल-सग़ीर मय फ़ैज़ अल-क़दीर, मुद्रित दार अल-मारिफ़ा, बेरुत, 1/528।
3. अल-कुरान, 2/191।

पृष्ठ 500/736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

اھل البدع شر الخلق والخلیقة - بد مذہب تمام مخلوق سے بد تمام جہان سے بدتر ہیں۔

دوسری حدیث میں ہے: اصحاب البدع کلاب اھل النار - بد مذہب لوگ جہنمیوں کے کتے ہیں۔

تو ایسے لوگوں کو خصوصاً بحال فتنہ و فساد وہابیہ کی عادت قدیم ہے با وصف قدرت مساجد میں کیونکہ آنے دیا جا سکتا ہے۔ قال اللہ تعالٰی: وَالْفِتْنَةُ أَشَدُّ مِنَ الْقَتْلِ - فتنہ قتل سے بھی سخت تر ہے۔

عینی شرح بخاری و در مختار وغیرہما میں تصریح ہے کہ مسجد سے موذی نکال دیا جائے ولو بلسانہا اگرچہ صرف زبانی ایذا دیتا ہو۔ نجاستیں دھونے سے پاک ہو جاتی ہیں اور بد مذہب ع ہرچہ شوئی پلید تر باشد (جتنی بار دھویا جائے پلید ہی رہتا ہے)

اعاذنا اللہ منہم ومن حالھم وعقائدھم و اعمالھم بجاہ نبیہ الکریم علیہ وعلی الہ افضل الصلوۃ والتسلیم۔ اللہ تعالٰی اپنے پیارے نبی علیہ وآلہ افضل الصلوۃ والسلام کے صدقے میں ان سے ان کے حال اور عقائد اعمال محفوظ رکھے۔ (ت)

مسئلہ نمبر ۶۳۰: از جائس ضلع بریلی محلہ زیر مسجد مکان حاجی محمد ابراہیم مرسلہ حاجی ولی اللہ صاحب ۲ ربیع الاول شریف ۱۳۲۰ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ جس کی عورت بے پردہ عام عورتوں کی طرح پھرتی ہو اور اس کا شوہر اسے منع نہ کرتا ہو اس کے پیچھے نماز پڑھنا اور اس کو دیوث کہنا جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: عورت اگر باہر بے پردہ باریک کپڑوں میں پھرتی ہو کہ ان سے بدن چمکے یا گلے یا بازو یا پیٹ یا پنڈلیوں---

1 كنز العمال البدع والرفض من الاكمال مطبوعہ موسسۃ الرسالۃ بیروت ۱/ ۲۲۳ وجامع الصغیر مع فیض القدیر مطبوعہ دار المعرفۃ بیروت ۳/ ۶۴ 2 كنز العمال فصل فی البدع مطبوعہ موسسۃ الرسالۃ بیروت ۱/ ۲۱۸ وجامع الصغیر مع فیض القدیر مطبوعہ دار المعرفۃ بیروت ۱/ ۵۲۸ 3 القرآن ۱۹۱/ ۲

Fatawa Razawiya Volume 6

...or keeps some part of the hair of her head uncovered and the husband is aware of it and despite having the power he does not forbid it, then he is a 'dayyooth' (cuckold/shameless person) and praying behind him is 'makruh' (disliked), otherwise not. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 631: From Jais, District Raebareli, locality under the mosque, house of Haji Ibrahim, sent by Waliullah Sahib, 2nd Rabi-ul-Awwal Sharif 1320 AH. What do the scholars of religion say in this matter that there are two persons and both are scholars and observant of fasting and prayer, but one is of low birth and one is noble; which of them will be preferred in terms of status and leadership etc. Explain so that you may be rewarded.

The Answer: In Imamate, after this, if two persons meet the conditions of Imamate, are of Sunni belief, and are not open transgressors, read the Great Quran correctly, pronouncing letters from their points of articulation with sufficient distinction; the most prioritized is the one who has more knowledge of the issues of prayer and purification. Then if they are equal in this knowledge, then the one whose recitation is better, then the one who is more pious and avoids doubts more, then the one who is older in age, then the one who has good character, then the one who is more regular in Tahajjud (night prayer), to the extent that noble lineage is not considered here. When they are equal in these matters, then preference is given based on noble lineage.

Arabic Original

In 'Tanwir' and 'Ad-Durr [al-Mukhtar]': The one most entitled to the Imamate is the most knowledgeable in the rulings of prayer, provided he avoids manifest indecencies. Then the one best in Tajweed (recitation). Then the most pious. Then the eldest. Then the best in character (with a damma on the 'kha'), meaning being friendly with people. Then the one who performs Tahajjud the most. Then the most noble in lineage. (Summarized)

Urdu Translation

In 'Tanwir' and 'Dur-re-Mukhtar', it is stated that the person most deserving of Imamate is the one who is most knowledgeable about the rules of prayer, provided that he avoids obscene sins. After that, the one who is better in the Tajweed of recitation. Then the possessor of piety (Taqwa), then the one older in age, then the one who is best in character. The commentator said 'Khuluq' (with a damma on the letter Kha) refers to friendliness with people. Then the one who is

Arabic Original	Urdu Translation
	more regular in Tahajjud prayer, then the one with noble family status. (Summarized)

Yes, if the person of low birth is of such a degree that common people dislike his Imamate and it causes disruption in the congregation, then his Imamate should not be desired,

Arabic Original	Urdu Translation
because causing aversion (repelling people) is among the things most to be avoided here.	Because here, it is most necessary to avoid that which causes aversion.

---

1. Ad-Durr al-Mukhtar, Chapter of Imamate, published by Mujtabai Delhi, 1/74.

फ़तावा रज़विया जिल्द 6

...या सिर के बालों का कोई हिस्सा खोलकर घूमती है और शौहर को पता है और शौहर सामर्थ्य होने के बावजूद मना नहीं करता, तो वह दय्यूथ है और उसके पीछे नमाज़ मकरूह है, वरना नहीं। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 631: जाइस जिला रायबरेली, मस्जिद के नीचे वाला मोहल्ला, हाजी इब्राहिम का मकान, मुर्सला वली उल्लाह साहिब, 2 रबी-उल-अव्वल शरीफ 1320 हिजरी। दीन के उलेमा इस मसले में क्या फरमाते हैं कि दो व्यक्ति हैं और दोनों आलिम हैं और रोज़ा-नमाज़ के पाबंद हैं, मगर एक रज़ील (नीच कुल का) और एक शरीफ़ (कुलीन) है, दोनों में से किसे मर्तबे और इमामत वगैरह में प्राथमिकता दी जाएगी? बयान करें, सवाब पाएं।

अल-जवाब: इमामत में, इसके बाद कि दो व्यक्ति इमामत की शर्तों को पूरा करने वाले, सुन्नी अकीदा वाले और खुले तौर पर गुनाह न करने वाले हों, महान कुरान को मखराज (उच्चारण स्थान) से सही तौर पर पढ़ते हों, सबसे पहले वह है जिसे नमाज़ और पाकीज़गी के मसलों का ज़्यादा ज्ञान हो। फिर अगर इस ज्ञान में दोनों बराबर हों, तो जिसकी क़िरात (कुरान पाठ) बेहतर हो, फिर जो ज़्यादा परहेज़गार हो और संदेहों से ज़्यादा बचता हो, फिर जो उम्र में बड़ा हो, फिर जो खुश-अख्लाक (अच्छे व्यवहार वाला) हो, फिर जो तहज्जुद का ज़्यादा पाबंद हो, यहाँ तक कि खानदानी कुलीनता का ध्यान नहीं रखा जाएगा। जब इन बातों में बराबर हों, तो अब खानदानी शराफत से प्राथमिकता दी जाएगी।

अरबी मूल

तनवीर और दुर्रे मुख्तार में है: इमामत का ज़्यादा हक़दार वह है जो नमाज़ के अहकाम (नियमों) से ज़्यादा वाकिफ हो, बशर्ते कि वह अश्लील गुनाहों से बचने वाला हो। उसके बाद वह जो क़िरात और तिलावत की तजवीद में ज़्यादा अच्छा हो, फिर तक़वा (परहेज़गारी) वाला, फिर उम्र में बड़ा, फिर जो अख्लाक (व्यवहार) में सबसे अच्छा हो, व्याख्याकार ने कहा 'खुलुक' (खा पर पेश के साथ) लोगों से मिलनसारिता को कहते हैं। फिर ज़्यादा

उर्दू अनुवाद

तनवीर और दुर्रे मुख्तार में है कि इमामत का ज़्यादा हकदार वह है जो नमाज़ के नियमों से ज़्यादा वाकिफ हो, बशर्ते कि वह अश्लील गुनाहों से बचने वाला हो। उसके बाद वह जो कुरान पाठ की तजवीद में ज़्यादा अच्छा हो, फिर परहेज़गार, फिर उम्र में बड़ा, फिर जो व्यवहार में सबसे अच्छा हो। व्याख्याकार ने कहा 'खुलुक' (खा पर पेश के साथ) लोगों से मिलनसारिता को कहते हैं। फिर ज़्यादा तहज्जुद

अरबी मूल	उर्दू अनुवाद
तहज्जुद गुज़ार, फिर खानदानी शराफत वाला। (संक्षेप में)	गुज़ार, फिर खानदानी शराफत वाला। (संक्षेप में)

हाँ, अगर रज़ील उस दर्जे का है कि उसकी इमामत से आम लोग नफरत करते हैं और जमात में खलल पड़ता है, तो उसकी इमामत नहीं होनी चाहिए,

अरबी मूल	उर्दू अनुवाद
क्योंकि यहाँ सबसे ज़्यादा जिस बात से बचना ज़रूरी है (वह है लोगों को दीन से दूर करना)।	क्योंकि यहाँ सबसे ज़्यादा जिस बात से बचना ज़रूरी है।

---

1. दुर्रे मुख्तार, बाब-उल-इमामत, मुतबूआ मुजतबाई दिल्ली 1/74

یا سر کے بالوں کا کوئی حصہ کھولے پھرتی ہے اور شوہر مطلع ہے اور شوہر باوصف قدرت منع نہیں کرتا تو دیوث ہے اور اس کے پیچھے نماز مکروہ ورنہ نہیں۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۶۳۱: از جائس ضلع رائے بریلی محلہ زیر مسجد مکان حاجی ابراہیم مرسلہ ولی اللہ صاحب ۲ ربیع الاول شریف ۱۳۲۰ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ دو شخص ہیں اور دونوں عالم اور پابند صوم و صلوۃ کے ہیں مگر ایک رذیل ایک شریف، دونوں میں سے کس کو ترجیح ہوگی مرتبہ اور امارت وغیرہ میں۔ بینوا توجروا۔

الجواب: امامت میں بعد اس کے دو شخص جامع شرائط امامت سُنی العقیدہ غیر فاسق مجاہر ہوں، قرآن عظیم صحیح پڑھتے حروف مخارج سے بقدر تمیز ادا کرتے ہوں، سب سے مقدم وہ ہے کہ نماز و طہارت کے مسائل کا علم زیادہ رکھتا ہو پھر اگر اس علم میں دونوں برابر ہوں تو جس کی قرات اچھی ہو، پھر جو زیادہ پرہیزگار ہو شبہات سے زیادہ بچتا ہو، پھر جو عمر میں بڑا ہو، پھر جو خوش خلق ہو، پھر جو تہجد کا زیادہ پابند ہو، یہاں تک شرف نسب کا لحاظ نہیں۔ جب ان باتوں میں برابر ہوں تو اب شرافت نسب سے ترجیح ہے۔

عربی عبارت	اردو ترجمہ
فی التنویر والدرّ اَلْاَحَقُّ بِالْاِمَامَةِ الاعلم باحکام الصلوٰۃ بشرط اجتنابہ للفواحش الظاھرۃ ثم الاحسن تجویدا ثم الاورع ثم الاسن ثم الاحسن خلقاً	تنویر اور درمختار میں ہے امامت کا زیادہ حقدار وہ ہے جو احکام نماز سے زیادہ آگاہ ہو بشرطیکہ وہ فحش گناہوں سے اجتناب کرنے والا ہو، اس کے بعد جو قرات و تلاوت کی تجوید میں زیادہ اچھا ہو، پھر صاحبِ تقوٰی، پھر عمر میں بڑا، پھر جو

عربی عبارت	اردو ترجمہ
بالضم الفۃ بالناس ثم اکثرھم تھجدا ثم الاشرف نسباً اھ مختصرا۔	اخلاق میں سب سے اچھا ہو، شارح نے کہا خُلق ضمہ خاء کے ساتھ لوگوں سے ملنساری کو کہتے ہیں۔ پھر زیادہ تہجد گزار، پھر خاندانی شرف والا اھ اختصارًا (ت)

ہاں اگر رذیل اس درجہ کا ہے کہ اس کی امامت سے عام لوگ نفرت کرتے ہیں، جماعت میں خلل پڑتا ہے تو اس کی امامت نہ چاہئے۔

عربی عبارت	اردو ترجمہ
لان التنفیر من اشد ما یحترز عنہ کیونکہ یہاں سب سے زیادہ جس بات سے بچنا ضروری ہے	

---

1 درمختار باب الامامۃ مطبوعہ مجتبائی دہلی ۱/ ۷۴

Fatawa Razawiya, Volume Six

Here, and indeed he (peace and blessings of Allah be upon him) said generally: [It is to avoid hatred among people. The Master of the Universe (peace and blessings of Allah be upon him) said (in all cases), 'Give glad tidings and do not spread hatred.' And Allah Almighty knows best. (T)] Give glad tidings and do not repel.

Case No. 532: 22 Jamadi-ul-Ula 1319 AH. What do the scholars of religion say in this matter, whether the prayer behind a person who does not attend the assembly of Milad Sharif and who feels aversion towards standing [Qiyam] is valid or not?

The Answer: Absence from the blessed assembly and aversion to standing, if it is not based on Wahhabism—for example, one does not have the opportunity to attend at that moment, is busy with an important matter, or the person reciting there will recite baseless traditions or poetry and prose contrary to Sharia, or there is religious or worldly opposition with the owner of the house, the blame for which according to Sharia lies with the owner of the house, or other such obstacles (T). And if the aversion to standing is only due to an error in this specific matter and not by accepting Wahhabi principles, then in these cases, praying behind him is valid without any dislike. However, in these cities, the form of denial and aversion is not found without the misguidance of Wahhabi principles. Only those who are misguided and losing Wahhabis are deniers of the blessed and holy assembly here, and prayer behind Wahhabis is impermissible and a sin. As we have established in several places in our Fatawa and our treatise 'Al-Nahy al-Akeed' and others. (We have researched this thoroughly in multiple places in our Fatawa and in our treatise 'Al-Nahy al-Akeed' etc. - T). And Allah Almighty knows best.

Case No. 333: 7 Rabi-ul-Akhir Sharif 1320 AH. What do the scholars of religion say in this matter, that a Hafiz weaver [Noorbaf] knows a few rules of prayer and has been an Imam of a mosque for some time. People have seen him reciting elegies [Marsiyas] in Taziya processions. Another Hafiz, Sheikh Siddiqui Punjabi, knows all the rules of prayer but comes to the mosque, and in his presence, would there be any deficiency in praying behind this appointed Imam? And if both are present, who should lead the prayer?

The Answer: Reciting in Taziya processions and today's elegies [Marsiyas] is not free from innovation [Bid'at] or transgression [Fisq], and in both cases...

1 Sahih al-Bukhari, Chapter: How the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) used to attend to them with exhortation, etc., printed by Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/121.

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

यहाँ, और वास्तव में उन्होंने (अल्लाह की शांति और उन पर आशीर्वाद हो) सामान्य रूप से कहा: [वह लोगों के बीच घृणा से बचना है। विश्व के स्वामी (अल्लाह की शांति और उन पर आशीर्वाद हो) ने फ़रमाया (हर हाल में), 'खुशखबरी देने वाले बनो, नफरत फैलाने वाले न बनो।' और अल्लाह सर्वशक्तिमान सबसे बेहतर जानता है। (त)] खुशखबरी दो और डराओ मत।

मसला नंबर 532: 22 जमादी-उल-उला 1319 हिजरी। धर्म के विद्वान इस विषय में क्या कहते हैं कि क्या उस व्यक्ति के पीछे नमाज़ पढ़ना सही है या नहीं जो मीलाद शरीफ की महफ़िल में शामिल नहीं होता और कयाम (खड़े होने) से नापसंदगी ज़ाहिर करता है?

जवाब: मुबारक महफ़िल में अनुपस्थिति और कयाम से नापसंदगी अगर वहाबियत की वजह से न हो —उदाहरण के लिए उस समय हाज़िर होने की फुर्सत न हो, किसी महत्वपूर्ण काम में व्यस्त हो, या वहां पढ़ने वाला निराधार परंपराएं या शरीयत के विरुद्ध कविता और गद्य पढ़ेगा, या मकान मालिक से धार्मिक या सांसारिक विरोध हो जिसका दोष शरीयत के अनुसार उसी मकान मालिक पर है, या अन्य बाधाएं(त)। और यदि कयाम से नापसंदगी केवल इस मसले में गलती के कारण है न कि वहाबी सिद्धांतों को मानकर, तो इन स्थितियों में उनके पीछे नमाज़ बिना किसी नापसंदगी के सही है। लेकिन इन शहरों में, इनकार और नापसंदगी का रूप वहाबी सिद्धांतों की गुमराह के बिना नहीं पाया जाता है। मुबारक और पवित्र महफ़िल के वही लोग यहाँ मुनकिर (इनकार करने वाले) हैं जो वहाबी गुमराह और नुकसान में हैं, और वहाबियों के पीछे नमाज़ नाज़ायज़ और गुनाह है। जैसा कि हमने अपने फ़तावा के कई स्थानों पर और अपने रिसाले 'अल-नही अल-अकीद' और अन्य में सिद्ध किया है। (हमने अपने फ़तावा में कई स्थानों पर और अपने रिसाले 'अल-नही अल-अकीद' आदि में इसका अच्छी तरह से शोध किया है - त)। और अल्लाह सर्वशक्तिमान सबसे बेहतर जानता है।

मसला नंबर 333: 7 रबी-उल-आख़िर शरीफ 1320 हिजरी। धर्म के विद्वान इस मसले में क्या कहते हैं कि एक हाफ़िज़ बुनकर (नूरबाफ़) नमाज़ के कुछ मसले जानता है और कुछ समय से एक मस्जिद का इमाम है। लोगों ने उसे ताज़ियों में मरसिया पढ़ते देखा है। दूसरा हाफ़िज़ शेख सिद्दीकी पंजाबी नमाज़ के सभी मसलों से वाकिफ है लेकिन मस्जिद में आता है, और उसकी उपस्थिति में इसी नियुक्त इमाम के पीछे नमाज़ में कोई कमी तो नहीं होगी? और अगर दोनों हों तो इमामत कौन करे?

जवाब: ताज़ियों और आजकल के मरसिया पढ़ना बिदअत (नवाचार) या फ़िस्क (अधर्म) से खाली नहीं है और दोनों स्थितियों में...

---

1 सहीह अल-बुखारी, अध्याय: कैसे नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम उन्हें नसीहत के साथ ध्यान देते थे आदि, मुद्रित कदीमी कुतुब खाना, कराची, 1/121।

ھھنا وقد قال صلی اللہ تعالی علیہ وسلم مطلقا [وہ لوگوں میں نفرت سے بچنا ہے۔ سرور عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا (ہر حال میں) خوشخبری دینے والے بنو نفرت پھیلانے والے نہ بنو۔ واللہ تعالٰی اعلم (ت)] بشروا ولا تنفروا۔

مسئلہ نمبر ۵۳۲: ۲۲ جمادی الاولٰی ۱۳۱۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس امر میں کہ میلاد شریف کی مجلس کے حاضر نہ ہونے والے کے پیچھے اور قیام سے کراہت کرنے والے کے پیچھے نماز درست ہے یا نہیں؟

الجواب: مجلس مبارک کی عدم حاضری اور قیام سے کراہت اگر بر بنائے وہابیت نہ ہو مثلاً اس وقت حاضری کی فرصت نہیں کسی امر اہم میں مصروف ہے یا وہاں پڑھنے والا روایات بے اصل یا نظم و نثر خلاف شرع پڑھے گا یا صاحب مکان سے دینی یا دنیوی مخالفت ہے جس کا الزام شرعاً اسی صاحب مکان پر ہے وغیر ذلک من الموانع (ت)۔ اور قیام سے کراہت صرف اس مسئلے میں خطا کے باعث ہے نہ اصول وہابیت مان کر، تو ان صورتوں میں اُس کے پیچھے درست بلا کراہت ہے، مگر ان بلاد میں صورت انکار و کراہت بے ضلال اصول وہابیت نہیں پائی جاتی مجلس مبارک و مقدس سے یہاں وہی منکر ہیں جو وہابی گمراہ خاسر ہیں اور وہابیہ کے پیچھے نماز ناجائز و گناہ۔ کما حققناہ فی عدۃ مواضع من فتاوانا ورسالتنا النھي الاکید وغیرھا (ہم نے اس کی تحقیق اپنے فتاوٰی میں متعدد مقامات پر اپنے رسالے النہی الاکید وغیرہ میں خوب کی ہے ۔ ت) واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۳۳۳: ۷ ربیع الآخر شریف ۱۳۲۰ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلے میں کہ ایک حافظ نور باف نماز کے چند مسائل جانتا ہے چند مدت سے ایک مسجد کا امام ہے لوگوں نے اسے تعزیوں میں مرثیے پڑھتے دیکھا ہے دوسرا حافظ شیخ صدیقی پنجابی کلی مسائل نماز سے واقف ہے مگر مسجد میں آتا ہے اور اس کی موجودگی میں اسی معین امام کے پیچھے نماز میں کچھ قصور تو نہ ہو گا اور دونوں ہوں تو کون امامت کرے؟

الجواب: تعزیوں اور آج کل مرثیوں کا پڑھنا بدعت یا فسق سے خالی نہیں اور دونوں صورتوں میں...

---

1 صحیح البخاری باب ماکان محمد النبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم یتخولہم بالموعظہ الخ مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/۱۲۱

Fatawa-e-Razvia Volume 6 Performing prayer behind such a person is Makruh (disliked). And if that second Hafiz comes to the mosque congregation sometimes and sometimes not without a Shariah-compliant excuse, then abandoning the congregation is also a sin (fisq); prayer behind him is also Makruh. In such a case, a third person should be made the Imam who is a complete Sunni in belief, recites the Holy Quran correctly, is not a sinner (fasiq), and is well-acquainted with the rules of prayer and purification. If the second Hafiz is a Sunni of correct belief, a correct reciter, and not a sinner, and when he does not come to this mosque's congregation he goes to another mosque or leaves it due to some Shariah-compliant excuse, then there is no harm in following him; while he is present, the appointed Imam should not lead the prayer. And Allah Almighty knows best.

Problem 634: 22 Shaban al-Muazzam 1330 AH What do the scholars of religion say regarding this matter: can another person lead the prayer without the permission of the appointed Imam present in the mosque? Explain and be rewarded.

Answer: Without his permission, someone else should not lead the prayer while that designated Imam is fit for leading prayer, i.e., a Sunni of correct belief who recites the Great Quran correctly and whose sin is not apparent. It is in Durr-e-Mukhtar:

[Arabic Quote Table] Arabic: The permanent Imam of the mosque is more worthy of leading the prayer than anyone else unconditionally... and in Radd al-Muhtar from Tatarkhaniya there is that which signifies prohibition if he leads without permission. And Allah Almighty knows best. Urdu Translation: The appointed Imam of the mosque is superior to others in every case... what is mentioned from Tatarkhaniya in Radd al-Muhtar is useful for prohibition if another leads without permission. (T) And Allah Almighty knows best.

Problem 635: 28 Rajab 1321 AH What do the scholars of religion say regarding this matter: a person lives in a mosque and is appointed to lead prayers, but his condition is such that he has an affection for beardless boys and always keeps one boy; when he leaves one, he arranges for another. Boys sit with him even in seclusion, and sometimes they have been seen being fondled. Complaints led this person to be reported even to the police, but he did not desist despite police threats. Finally, Muslims expelled him from their mosque, saying we do not like such indecency in our mosque. Now he has come to another mosque, and here too the situation is the

same. In such a case, is it permissible to make him an Imam or perform prayer behind him? Explain and be rewarded.

1. Durr-e-Mukhtar, Chapter on Imamat, published by Mujtabai Press, Delhi, 1/83
2. Radd al-Muhtar, referring to Tatarkhaniya, Chapter on Imamat, published by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/213

फ़तावा रज़विया जिल्द 6 ऐसे व्यक्ति के पीछे नमाज़ पढ़ना मकरूह है। और वह दूसरा हाफ़िज़ यदि बिना किसी शरीयत के बहाने के कभी मस्जिद की जमाअत में आता है और कभी नहीं आता, तो जमाअत छोड़ना भी फ़िस्क (पाप) है और उसके पीछे नमाज़ भी मकरूह है। ऐसी स्थिति में किसी तीसरे व्यक्ति को इमाम बनाया जाए जो पूर्णतः सुन्नी अकीदे वाला हो, कुरआन मजीद सही पढ़ता हो, फ़ासिक न हो और नमाज़ व पवित्रता के मसलों से अच्छी तरह वाकिफ़ हो। और अगर दूसरा हाफ़िज़ सुन्नी सही अकीदा, सही पढ़ने वाला और गैर-फ़ासिक है और जिस समय वह इस मस्जिद की जमाअत में नहीं आता, दूसरी मस्जिद में जाता है या किसी शरीयत के बहाने के कारण छोड़ता है, तो उसके पीछे नमाज़ पढ़ने में कोई हर्ज नहीं है; उसके होते हुए वह नियुक्त इमाम नमाज़ न पढ़ाए। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 634: 22 शाबान अल-मुअज़्ज़म 1330 हिजरी धार्मिक विद्वान इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि जिस मस्जिद में नियुक्त इमाम मौजूद हो, उसकी अनुमति के बिना क्या कोई दूसरा व्यक्ति नमाज़ पढ़ा सकता है या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: उसकी अनुमति के बिना दूसरे को इमाम नहीं बनना चाहिए जबकि वह नियुक्त इमाम इमामत के योग्य हो, यानी सुन्नी सही अकीदा हो, कुरआन-ए-अज़ीम सही पढ़ता हो और उसका फ़िस्क (गुनाह) प्रकट न हो। दुर्रे मुख़्तार में है:

[अरबी उद्धरण तालिका] अरबी: मस्जिद का नियुक्त इमाम हर हाल में दूसरों से इमामत के लिए अधिक योग्य होता है... और रद-उल-मुहतार में ततारखानिया के हवाले से वह सब वर्णित है जो बिना अनुमति के इमामत करने के निषेध को दर्शाता है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। उर्दू अनुवाद: मस्जिद का नियुक्त इमाम हर हाल में दूसरों से अफ़ज़ल होता है... रद-उल-मुहतार में ततारखानिया से जो कुछ मज़कूर है वह मुफ़ीद-ए-मना है अगर दूसरा बिना इजाज़त इमामत कराए। (त) और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 635: 28 रजब 1321 हिजरी धार्मिक विद्वान इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि एक व्यक्ति मस्जिद में रहता है और इमामत पर नियुक्त है, लेकिन उसकी स्थिति यह है कि वह अम्रद (दाढ़ी-मूंछ रहित) लड़कों से लगाव रखता है और एक लड़का ज़रूर पास रखता है; जब उसे छोड़ता है, तो दूसरा चुन लेता है। एकांत में भी लड़के उसके पास बैठते हैं, कभी-कभी उन्हें प्यार करते हुए देखा गया है। उसकी शिकायत में उक्त व्यक्ति को पुलिस तक भी पहुँचना पड़ा, लेकिन पुलिस की

धमकी पर भी वह बाज़ नहीं आया। अंततः मुसलमानों ने उसे अपनी मस्जिद से निकाल दिया कि हम मस्जिद में ऐसी अश्लीलता पसंद नहीं करते। अब वह दूसरी मस्जिद में आया है, यहाँ भी वही हाल है। ऐसी स्थिति में उसे इमाम बनाना या उसके पीछे नमाज़ पढ़ना जायज़ है या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

1. दुर्रे मुख़्तार, बाबुल इमामत, मुतबूआ मतबअ मुजतबाई दिल्ली, 1/83
2. रद-उल-मुहतार, बहवाला ततारखानिया, बाबुल इमामत, मुतबूआ मुस्तफा अल-बाबी मिस्र, 1/213

فتاویٰ رضویہ جلد ششم ایسے شخص کے پیچھے نماز مکروہ ہے۔ اور وہ دوسرا حافظ اگر بلا عذر شرعی جماعت مسجد میں کبھی آتا ہے کبھی نہیں تو ترکِ جماعت بھی فسق ہے اس کے پیچھے بھی نماز مکروہ۔ ایسی صورت میں تیسرے شخص کو امام کیا جائے جو عقیدہ پورا سنی ہو، قرآن مجید صحیح پڑھتا ہو، فاسق نہ ہو، مسائل نماز و طہارت سے خوب واقف ہو۔ اور اگر دوسرا حافظ سنی صحیح العقیدہ صحیح خواں غیر فاسق ہے جماعت کو جس وقت اس مسجد میں نہیں آتا دوسری مسجد میں جاتا ہے یا کسی عذرِ شرعی کے سبب ترک کرتا ہے تو اس کی اقتداء میں حرج نہیں، اس کے ہوتے ہوئے وہ امام مقرر نماز نہ پڑھائے۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۶۳۴: ۲۲ شعبان المعظم ۱۳۳۰ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ جس مسجد میں امام مقرر موجود ہو اس کی بغیر اجازت دوسرا شخص نماز پڑھا سکتا ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: بے اس کی اجازت کے دوسرے کو امامت نہ چاہئے جبکہ وہ امام معین صالح امامت ہو یعنی سنی صحیح العقیدہ کہ قرآن عظیم صحیح پڑھے اور اس کا فسق ظاہر نہ ہو۔ دُرِّ مختار میں ہے:

امام المسجد الراتب الاولی بالامامة من غیرہ مطلقاً 1 الخ وفی رد المحتار من التتارخانیة مایفید المنع ان امر بلا اذن 2 ۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔ مسجد کا مقررہ امام ہر حال میں دوسروں سے افضل ہوتا ہے الخ ردالمحتار میں تتارخانیہ سے جو کچھ مذکور ہے وہ مفید منع ہے اگر دوسرا بلا اجازت امامت کرائے (ت) واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ نمبر ۶۳۵: ۲۸ رجب ۱۳۲۱ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ایک شخص مسجد میں رہتا ہے اور امامت پر مقرر ہے اور اس کی حالت یہ ہے کہ امرد لڑکوں سے محبت رکھتا ہے اور ایک لڑکا ضرور رکھتا ہے جب اس کو چھوڑ دیتا ہے دوسرا تجویز کر لیتا ہے، خلوت میں بھی لڑکے اس کے پاس بیٹھتے ہیں، بعض وقت انہیں پیار کرتے دیکھا گیا اس کی شکایت میں شخص مذکور کو پولیس تک بھی پہنچنا ہوا مگر پولیس کی دھمکی پر بھی باز نہ آیا، آخر مسلمانوں نے اپنی مسجد سے نکال دیا کہ ہم مسجد میں ایسی ناشائستگی پسند نہیں کرتے۔ اب دوسری مسجد میں آیا، یہاں بھی وہی حال ہے ایسی صورت میں اسے امام بنانا اس کے پیچھے نماز پڑھنا جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

1 دُرِّ مختار باب الامامۃ مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۸۳/۱ 2 رد المحتار بحوالہ تاتارخانیہ باب الامامۃ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۲۱۳/۱

Fatawa Razawiyya, Volume 6

Answer: A person who is accused [of some wrongdoing] should not be appointed as an Imam, because being accused leads to a decrease in the congregation, which is contrary to the purpose of Sharia. (Since accusation causes a reduction in the size of the congregation, and that is against the aim of Sharia.) Muslims should appoint another person as Imam, one who is Sunni, of correct belief, not a transgressor (fasiq), not accused, recites the Great Quran correctly, and is knowledgeable about the matters of prayer and purification. This person, who does not refrain from this habit in any way, should be removed from the position of Imam and should not reside in the mosque, because "abominable seclusion with a beardless youth is worse than seclusion with an unrelated woman, so the mosque must be purified from him." (Because vile seclusion with a beardless boy is worse than with a strange woman, therefore it is necessary to keep the mosque clean from it.) And Allah Almighty knows best.

Problem 636: From Hyderabad Deccan, Yaqutpura Masjid Kamila House 2890, sent by Syed Abdul Latif via Maulvi Abul Masakeen Muhammad Ziauddin, manager of Tohfa-e-Hanfia, 2nd Rabi-ul-Akhir Sharif 1322 Hijri. What do the scholars of the religion of Muhammad, the beneficiaries of the Mustafa Sharia, and the followers of the Hanafi school say regarding this matter: One young man is handsome, worthy of leadership, well-acquainted with recitation (qirat), and knowledgeable about the issues through which prayer becomes valid (ma tajozo bihi al-salat), and is a follower of the Hanafi school. The second person has recently abandoned the Hanafi school and adopted the Hanbali school; he is less knowledgeable in the art of recitation compared to the first person, but he knows the issues through which prayer becomes valid and has a small beard. In the above-mentioned situation, according to Hanafi rules, who between these two can be preferred for Imamate without any cause or dislike, in a place where the majority of followers at the time of the congregation are from the Hanafi school? Requester: Hussain Khan Hanafi.

Answer: The wording of the question contains ambiguity, summary, and multiple possibilities. The second person's lack of knowledge in the art of recitation compared to the first person might only be in additional matters on which the validity or invalidity of prayer does not depend, even if they are among the essentials of Tajweed, or even legal obligations (wajibat) of Sharia. Or, whether legally or according to Tajweed, they might only be beautifications and improvements, such as stopping (waqf) and connecting (wasl), lengthening (madd) and shortening (qasr),

manifesting (izhar) and hiding (ikhfa), emphasis (tafkhim) and thinning (tarqiq), 'rawm' and 'ishmam', etc. Most of these are part of the essentials of Tajweed, and observing things like 'Madd Muttasil' is also legally obligatory and its abandonment is forbidden (haram), but abandoning any of these does not fundamentally invalidate the prayer. On the other hand, it's possible the lack of knowledge is in necessary matters, such as the confusion of letters (talbees-e-huroof) where a change causes a corruption of the meaning. In the second case, the prayer behind the second person would be null and void, unlike the first case. Furthermore, the second person has a small beard; here too there are two possibilities: one is that a little beard has grown, while the first person is completely beardless. Under this estimation, praying behind the first person would be 'Makruh Tanzîhî' (mildly disliked).

फ़तावा रज़विया, खंड 6

जवाब: ऐसे व्यक्ति को जिस पर आरोप (दोष) हो, इमाम नहीं बनाना चाहिए, क्योंकि आरोपित होना जमात (प्रार्थना करने वालों की संख्या) में कमी का कारण बनता है, जो शरीयत के उद्देश्य के विरुद्ध है। (चूंकि आरोप जमात की कमी का कारण है और वह शरीयत के उद्देश्य के खिलाफ है। त) मुसलमानों को चाहिए कि वे किसी दूसरे व्यक्ति को इमाम नियुक्त करें जो सुन्नी हो, सही अकीदा (विश्वास) वाला हो, फासिक (पापी) न हो, आरोपित न हो, क़ुरआन-ए-अज़ीम सही पढ़ता हो और नमाज़ व तहारत (पवित्रता) के मसलों से वाकिफ हो। और यह व्यक्ति जो किसी तरह इस आदत से बाज़ नहीं आता, उसे इमामत से अलग कर दिया जाए, न ही वह मस्जिद में रहे, क्योंकि "एक अमर्द (बिना दाढ़ी वाले युवक) के साथ बुरी एकांतवास एक अजनबी महिला के साथ एकांतवास से भी बदतर है, इसलिए मस्जिद को उससे पाक करना ज़रूरी है।" (चूंकि बिना दाढ़ी वाले लड़के के साथ घृणित एकांतवास एक पराई औरत के साथ एकांतवास से भी बुरा है, इसलिए मस्जिद को इससे पाक रखना ज़रूरी है। त) और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला ६३६: हैदराबाद दकन, याकूतपुरा मस्जिद कमीला मकान २८९० से, सैय्यद अब्दुल लतीफ़ द्वारा मौलवी अबुल मसाकीन मुहम्मद ज़ियाउद्दीन, प्रबंधक तोहफा-ए-हनफिया के माध्यम से, २ रबी-उल-आख़िर शरीफ़ १३२२ हिजरी। मुहम्मदी दीन के विद्वान, मुस्तफ़वी शरीयत के लाभार्थी और हनफी मज़हब के अनुयायी इस मसले में क्या फ़रमाते हैं: एक साहब जवान हैं, खूबसूरत हैं, इमामत के लायक हैं, किराअत (क़ुरआन पाठ) से अच्छी तरह वाकिफ़ हैं और उन मसलों (मा तजुज़ु बिहि अल-सलात) से भी वाकिफ़ हैं जिनसे नमाज़ जायज़ होती है और हनफी मज़हब के पाबंद हैं। दूसरे साहब हाल ही में हनफी मज़हब छोड़ कर हंबली मज़हब इख़्तियार कर चुके हैं, किराअत की कला में पहले साहब के मुकाबले ना वाकिफ़ हैं लेकिन उन मसलों को जानते हैं जिनसे नमाज़ जायज़ होती है और थोड़ी दाढ़ी भी रखते हैं। ऊपर बताई गई स्थिति में, हनफी नियमों के अनुसार, इमामत के लिए बिना किसी कारण और नापसंदगी के इन दोनों में से किसे प्राथमिकता दी जा सकती है, उस स्थान पर जहाँ जमात के समय हनफी मज़हब के अनुयायी बड़ी संख्या में मौजूद हों? प्रार्थी: हुसैन खान हनफी।

जवाब: सवाल की इबारत में अस्पष्टता, संक्षिप्तता और कई संभावनाएँ हैं। दूसरे साहब की किराअत की कला में नावाकिफ़ियत पहले साहब के मुकाबले में संभव है कि केवल उन अतिरिक्त बातों में हो जिन पर नमाज़ का सही या गलत होना निर्भर नहीं है, भले ही वे तजवीद के वाजिबात में से हों, या

यहाँ तक कि शरीयत के वाजिबात में से भी हों। या शरीयत या तजवीद के अनुसार वे केवल सुंदरता और सुधार (मोहसिनात व मुस्तहसनात) हों जैसे वक़्फ़ और वस्ल, मद और क़स्र, इज़हार और इख़फ़ा, तफ़ख़ीम और तरक़ीक़, रउम और इश्माम वगैरह, जिनमें से अधिकांश तजवीद के वाजिबात हैं, और मद मुत्तसिल जैसी चीज़ों का ध्यान रखना शरीयत के अनुसार भी वाजिब है और उसे छोड़ना हराम है, लेकिन इनमें से किसी को भी छोड़ना मूल रूप से नमाज़ को खराब (मुफ़्सिद) नहीं करता। और यह भी संभव है कि वह ज़रूरी बातों (अमूर-ए-लाज़मा) में हो जैसे अक्षरों का घालमेल (तल्बीस-ए-हुरूफ) जहाँ बदलाव से अर्थ बिगड़ जाता हो। दूसरी स्थिति में, दूसरे साहब के पीछे नमाज़ बातिल और फ़ासिद (अमान्य) होगी, पहली स्थिति के विपरीत। और दूसरे साहब थोड़ी दाढ़ी भी रखते हैं, इसमें भी दो संभावनाएँ हैं: एक यह कि उनकी थोड़ी-थोड़ी दाढ़ी निकल आई है, जबकि पहले साहब पूरी तरह अमर्द (बिना दाढ़ी के) हैं। इस आधार पर, पहले साहब के पीछे नमाज़ मकरूह-ए-तन्ज़ीही (हल्की नापसंदगी) होगी।

पृष्ठ 504/736

الجواب: ایسے شخص کو کہ متہم ہے امام بنانا نہ چاہئے لان التھمۃ توجب تقلیل الجماعۃ وھو عکس مقصود الشریعۃ (کیونکہ تہمت جماعت کی قلت کا سبب ہے اور وہ مقصود شریعت کے خلاف ہے۔ ت) مسلمانوں کو چاہئے کہ دوسرے شخص سنی صحیح العقیدہ غیر فاسق و غیر متہم کو کہ قرآن عظیم صحیح پڑھاتا ہو اور نماز و طہارت کے مسائل سے آگاہی رکھتا ہو امام مقرر کریں، اور یہ شخص کہ کسی طرح اس عادت سے باز نہیں آتا امامت سے جدا کر دیا جائے، نہ مسجد میں سکونت کرے لان الخلوۃ القبیحۃ بالأمرد اخبث من الخلوۃ بالأجنبیۃ فینزہ المسجد عنہ (کیونکہ بے ریش لڑکے کے ساتھ خلوت قبیحہ ، اجنبیہ خاتون سے بھی بدتر ہے، لہذا اس سے مسجد کو پاک کرنا ضروری ہے۔ ت) واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۶۳۶: از حیدرآباد دکن یاقوت پورہ مسجد کمیلہ مکان ۲۸۹۰ مرسلہ سید عبداللطیف صاحب بتوسط مولوی ابوالمساکین محمد ضیاء الدین صاحب مہتمم تحفہ حنفیہ ۲ ربیع الآخر شریف ۱۳۲۲ ہجری کیا فرماتے ہیں علمائے دین محمدی و مستفیدان شریعت مصطفوی و تابعین مذہب حنفی اس مسئلہ میں کہ ایک صاحب نوجون ، خوبصورت ، لائق امامت، قرات سے بخوبی واقفیت رکھتے ہیں اور مسائل ما تجوز بہ الصلوۃ سے واقف مذہب حنفی کے تابع ہیں، دوسرے صاحب حال میں مذہب حنفی ترک کر کے مذہب حنبلی اختیار فرمائے ہیں، فن قرات سے بمقابلہ صاحب اول کے ناواقف ہیں مگر مسائل ما تجوز بہ الصلوۃ اور قدرے ریش بھی رکھتے ہیں پس حالت مندرجہ بالا میں حسب قواعد حنفیہ بغرض امامت بلا کسی علت و کراہت کے ہر دو صاحب میں سے کس کو ترجیح دی جا سکتی ہے جس مقام پر کثرت سے مقتدی تابعین مذہب حنفی کے بوقت جماعت موجود ہوں۔

السائل حسین خاں حنفی

الجواب: عبارت سوال ابہام و اجمال و تعداد احتمال رکھتی ہے دوسرے صاحب فن قرات سے بمقابلہ صاحب اول کے ناواقف ہیں ممکن یہ ناواقفی صرف امور زائدہ میں ہو جن پر صحت و فساد نماز مبنی نہیں اگرچہ واجبات تجوید بلالکہ واجبات شرع سے بھی ہوں یا شرعاً خواہ تجویداً بھی صرف محسنات و مستحسنات ہوں جیسے وقف و وصل و مد و قصر و اظہار و اخفا و تفخیم و ترقی و روم واشمام و غیرہا کہ اکثر ان میں واجبات تجوید سے ہیں اور امثال و مد متصل کی رعایت شرعاً بھی واجب اور ترک حرام مگر ان میں کسی کا ترک اصلاً مفسد نماز نہیں اور ممکن کہ امور لازمہ میں ہو جیسے تلبیس حروف جہاں تغیر موجب فساد معنی ہو، صورت ثانیہ میں صاحب دوم کے پیچھے نماز باطل و فاسد ہو گی بخلاف صورت اولیٰ، اور دوسرے صاحب قدرے ریش بھی رکھتے ہیں اس میں بھی دو احتمال ہیں ایک یہ کہ ان کے تھوڑی تھوڑی داڑھی نکلی ہے، پہلے صاحب محض امر د ہیں اس تقدیر پر پہلے صاحب کے پیچھے نماز مکروہ تنزیہی ہوگی،

Fatawa Razawiyya, Volume 6

[Boxed Text] In Al-Durr al-Mukhtar: Praying behind a beardless boy is disliked (Makruh). In Radd al-Muhtar: The apparent view is that this is Makruh Tanzihi (mildly disliked). It is also apparent, as Sheikh Rahmati stated, that it refers to a handsome boy because he is a source of temptation (Fitna).

Secondly, the other gentleman keeps some beard, although they trim it excessively, unlike the first gentleman who has none at all. On this premise, praying behind both would be Makruh Tahrimi (prohibitively disliked), and making them an Imam is a sin because shaving the beard or trimming it below the Shariah limit is both forbidden (Haram) and a public transgression (Fisq). Their transgression is openly manifest, as if 'Fasiq' (transgressor) is written in bold letters on their faces. Leading prayer by a public transgressor is forbidden and sinful, as explicitly mentioned in Al-Ghunyah on the authority of Al-Hujjah, and we have researched this in our Fatawa. There are several scenarios regarding a Hanafi following an Imam of another of the four righteous schools of thought:

(1) If it is known in this specific prayer that the Imam did not observe a necessary obligation or condition of wudu, prayer, or leadership according to the Hanafi school. (We have mentioned some of this with its pros and cons in detail in our Fatawa along with objections and answers). In this case, the Hanafi's prayer behind him is absolutely invalid.

(2) The state of that specific prayer is unknown, but his habit is known; that he generally does not observe the aforementioned matters of the Hanafi school. Then, praying behind him is Makruh Tahrimi.

(3) Even the habit is not known. Then his leadership is disliked, and the more preferred view is that this dislike is not Tahrimi.

(4) It is known from habit that he always commits to observing these matters. Then the ruling is lighter than the third case, but it is still not entirely free from some degree of dislike.

(5) It is known for a fact in this specific prayer that he observed all aforementioned matters. Then, according to the majority of scholars (Jamhoor), there is no dislike at all. Even if he previously had a habit of non-observance, it is still better to follow someone of the same school if possible.

1. Durr al-Mukhtar, Chapter on Leadership (Imamat), published by Matba Mujtabai Delhi, 1/83
2. Radd al-Muhtar, Chapter on Leadership (Imamat), published by Mustafa Al-Babi Egypt, 1/415

फ़तावा रज़विया, जिल्द 6

[बॉक्स टेक्स्ट] अल-दुर अल-मुख्तार में है: दाढ़ी रहित लड़के के पीछे नमाज़ मकरूह है। रद्द अल-मुह्तार में है: ज़ाहिर यही है कि यह मकरूह तंज़ीही (हल्की नापसंदगी) है। और यह भी ज़ाहिर है जैसा कि शैख रहमती ने कहा कि इससे मुराद वह लड़का है जिसका चेहरा खूबसूरत हो क्योंकि वह फ़ितने (भटकाव) का केंद्र है।

दूसरे यह कि दूसरे साहब कुछ दाढ़ी रखते हैं, चाहे वह उसे बहुत अधिक कटवा देते हैं, पहले साहब के विपरीत जो बिल्कुल नहीं रखते। इस अनुमान पर दोनों के पीछे नमाज़ मकरूह तहरीमी (निषिद्ध नापसंदगी) होगी और उन्हें इमाम बनाना गुनाह है क्योंकि दाढ़ी मुंडवाना और कटवाकर शरीयत की सीमा से कम कराना, दोनों हराम और फ़िस्क (पाप) हैं। उनका फ़िस्क सरेआम ज़ाहिर है जैसे ऐसे लोगों के चेहरे पर बड़े अक्षरों में 'फ़ासिक' (पापी) लिखा हो। एक घोषित फ़ासिक का इमामत करना मना और गुनाह है, जैसा कि 'अल-ग़ुनिया' में 'हुज्जत' के हवाले से स्पष्ट है और हमने अपने फ़तावा में इस पर शोध किया है। चार हक़ मज़ाहिब (संप्रदायों) में से किसी दूसरे मज़हब वाले के पीछे हनफ़ी के नमाज़ पढ़ने की कई स्थितियाँ हैं:

(१) यदि इस विशेष नमाज़ में ज्ञात हो कि इमाम ने हनफ़ी मज़हब के अनुसार वज़ू, नमाज़ या इमामत की किसी शर्त या फ़र्ज़ का पालन नहीं किया है। (हमने अपने फ़तावा में इस पर विस्तार से आपत्तियों और उत्तरों के साथ चर्चा की है)। इस स्थिति में उसके पीछे हनफ़ी की नमाज़ सिरे से बातिल (अमान्य) है।

(२) विशेष नमाज़ की स्थिति का पता न हो, लेकिन उसकी आदत पता हो कि वह अक्सर उपर्युक्त बातों में हनफ़ी मज़हब का ध्यान नहीं रखता, तो उसके पीछे नमाज़ मकरूह तहरीमी है।

(३) आदत का भी पता न हो, तो उसकी इमामत मकरूह है और सही राय यह है कि अब यह कराहत (नापसंदगी) तहरीमी नहीं है।

(४) यह ज्ञात हो कि वह हमेशा इन बातों का पालन करने का नियम रखता है, तो तीसरी स्थिति से हुक्म हल्का है, लेकिन फिर भी कुछ न कुछ कराहत से मुक्त नहीं है।

(५) विशेष रूप से इस नमाज़ की स्थिति ज्ञात है कि उसने इसमें उपर्युक्त सभी बातों का पालन किया है, तो अब जमहूर (बहुमत विद्वानों) के अनुसार कोई कराहत नहीं है। चाहे पहले उसकी आदत

पालन न करने की रही हो, फिर भी श्रेष्ठ यही है कि यदि संभव हो तो अपने ही मज़हब वाले के पीछे नमाज़ पढ़े।

---

1. दुर्रे मुख्तार, बाबुल इमामत, मुतबा मुजतबाई दिल्ली, 1/83
2. रद्दुल मुह्तार, बाबुल इमामत, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र, 1/415

[کھانے کی عبارت] فی الدرالمختار تکرہ خلف امرد ۱ فی ردالمحتار الظاہر انھا تنزیھیة والظاہر ایضاً کما قال الرحمتی ان المراد بہ الصبیح الوجہ لانہ محل الفتنة ۲۔ درالمحتار میں ہے بے ریش لڑکے کے پیچھے نماز مکروہ ہے۔ ردالمحتار میں ہے ظاہر یہی ہے کہ یہ مکروہ تنزیہی ہے۔ اور یہ بھی ظاہر ہے جیسے کہ شیخ رحمتی نے کہا کہ وہ لڑکا مراد ہے جو خوبصورت چہرے والا ہو کیونکہ وہ فتنے کا محل ہے۔ (ت)

دوسرے یہ کہ دوسرے صاحب قدرے ریش باقی رکھتے ہیں اگرچہ زیادہ کتروا دیتے ہیں بخلاف صاحب اول کہ اصلاً نہیں رکھتے اس تقدیر پر دونوں کے پیچھے نماز مکروہ تحریمی ہوگی اور انھیں امام بنانا گناہ کہ داڑھی منڈانا اور کتروا کر حد شرع سے کم کرانا دونوں حرام و فسق ہیں اور اس کا فسق بالاعلان ہونا ظاہر کہ ایسوں کے منہ پر جلی قلم سے فاسق لکھا ہوتا ہے اور فاسق معلن کی امامت ممنوع و گناہ ہے کما نص علیہ فی الغنیة عن الحجة وحققناہ فی فتاؤنا (غنیہ میں حجت کے حوالے سے اس پر تصریح ہے اور ہم نے اپنے فتاوٰی میں اس کی تحقیق کی ہے۔ت) اور مذاہب اربعہ حقہ سے کسی دوسرے مذہب والے کے پیچھے حنفی کی اقتداء میں بھی چند صورتیں ہیں :

(۱) اس خاص نماز میں معلوم ہو کہ امام نے کسی فرض یا شرط وضو یا نماز یا امامت مطابق مذہب حنفی کی رعایت نہ کی وقد المسنا ببیان بعضہ مع مالہ و علیہ فی فتاؤنا (ہم نے اپنے فتاوٰی میں اس پر کچھ تفصیل سے اعتراضات مع جوابات ذکر کئے ہیں۔ت) اس صورت میں اس کے پیچھے حنفی کی نماز محض باطل۔

(۲) خاص نماز کا حال معلوم نہ ہو مگر اس کی عادت معلوم ہے کہ غالباً امور مذکورہ میں مذہب حنفی کی مراعات نہیں کرتا تو اس کے پیچھے نماز مکروہ تحریمی ہے۔

(۳) عادت بھی معلوم نہیں تو اس کی امامت مکروہ ہے اور ارجح یہ کہ اب یہ کراہت تحریمی نہیں۔

(۴) عادت یہ معلوم ہے کہ ہمیشہ مراعات کا التزام کرتا ہے تو صورت سوم سے حکم اخف ہے مگر ایک گونہ کراہت سے ہنوز خالی نہیں۔

(۵) خاص اس نماز کا حال معلوم ہے کہ اس میں اس نے جمیع امور مذکورہ کی رعایت کی ہے تو اب عند الجمہور کراہت اصلاً نہیں اگرچہ پہلے عادت عدم مراعات رکھتا ہو پھر بھی افضل یہی ہے کہ مل سکے تو موافق المذہب کی اقتداء کرے۔

---

1 درمختار باب الامامۃ مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۸۳ 2 ردالمحتار باب الامامۃ مطبوعہ مصطفیٰ البابی مصر ۱/ ۴۱۵

In al-Durr al-Mukhtar, it is mentioned that praying behind someone of a different school of thought (Madhab) is disliked (Makruh), for example, a Shafi'i. In the discussion on Witr in al-Bahr al-Ra'iq, the detail is as follows: If the follower is certain that the Shafi'i imam observes the conditions and pillars of the follower's Madhab, then there is no dislike in following him. If it is certain that he does not observe them, then following him is not valid. If there is doubt about whether he observes them or not, it is disliked (Makruh). We have discussed this in detail in our marginalia on Radd al-Muhtar. (T)

(Arabic Text): In al-Durr al-Mukhtar: It is disliked behind an opponent like a Shafi'i, but in the Witr section of al-Bahr: if he is certain of observance, it is not disliked, or if he is certain of non-observance, it is not valid, and if he doubts, it is disliked. We have detailed the speech regarding this in [our commentary] on Radd al-Muhtar.

In Radd al-Muhtar:

The statement in the text "In Witr of Bahr etc." is the reliable view because researchers lean towards it and the principles of the Madhab testify to it. Many scholars say that if it is the habit of that Imam to observe precautions in matters of difference, then following him is permissible, otherwise not. The statement "if he is certain of observance" means he observes the obligatory acts of prayer, i.e., conditions and pillars, even if he doesn't observe the essentials (Wajibāt) and Sunnahs, as is apparent from the context of Bahr al-Ra'iq. This is also apparent from the text of Sharh al-Munyah. In Mulla Ali Qari's treatise, it is mentioned that most of our scholars are in favor of the permissibility of following an imam who exercises caution and observance in matters of disagreement; otherwise, following him is not permissible. The meaning is that following one who observes is permissible without dislike, and following one who does not is permissible with dislike. Summary. (T)

(Arabic Text): His statement "In Witr of al-Bahr etc.": This is the reliable view because researchers have leaned towards it and the principles of the Madhab testify to it. Many scholars said: If his habit is to observe points of disagreement, it is permissible, otherwise not. His statement "if he is certain of observance," i.e., in the obligations (fara'id) of conditions and pillars in that prayer, even if he does not observe the essentials (wajibat) and sunnahs, as is apparent from the context of the speech in al-Bahr and apparent from the speech of Sharh al-Munyah as well. In the treatise of Mulla 'Ali al-Qari: General of our masters went towards permissibility if he is cautious

in the place of disagreement, otherwise not. And the meaning is that it is permissible behind the observer without dislike, and behind others with it [dislike]. Summarized.

1. Durr al-Mukhtar, Chapter of Imamah, Published by Mutba' Mujtabai Delhi, 1/83
2. Radd al-Muhtar, Chapter of Imamah, Published by Mustafa al-Babi, 1/416 Page 506 of 736

'दुर्र-ए-मुख़्तार' में है कि भिन्न संप्रदाय (मज़हब) के पीछे नमाज़ पढ़ना मकरूह (नापसंद) है, जैसे कि शाफ़ई संप्रदाय वाला। 'बहर-उर-राइक' में वित्र की चर्चा में विस्तार इस प्रकार है: यदि मुक्तदी (पीछे नमाज़ पढ़ने वाला) को विश्वास हो कि शाफ़ई इमाम दूसरे संप्रदाय की शर्तों और स्तंभों (अर्कान) का पालन करता है, तो अनुसरण करने में कोई बुराई नहीं है। यदि यह विश्वास हो कि वह पालन नहीं करता, तो अनुसरण सही नहीं है। और यदि पालन करने या न करने में संदेह हो, तो यह मकरूह है। इस बारे में हमने 'रद्द-उल-मुहतार' पर अपने हाशिये में विस्तार से चर्चा की है। (त)

(अरबी पाठ): 'अल-दुर्र अल-मुख्तार' में: शाफ़ई जैसे मुख़ालिफ के पीछे नमाज़ मकरूह है, लेकिन 'अल-बहर' के वित्र में है: यदि वह पालन के प्रति आश्वस्त है तो मकरूह नहीं है, या पालन न करने के प्रति आश्वस्त है तो वैध नहीं है, और यदि वह संदेह करता है तो मकरूह है। हमने 'रद्द-उल-मुहतार' पर इस विषय में विस्तार से बात की है।

'रद्द-उल-मुहतार' में है:

पाठ का कथन 'वित्र-ए-बहर आदि' में यही विश्वसनीय विचार है क्योंकि शोधकर्ताओं का झुकाव इसी ओर है और संप्रदाय के सिद्धांत भी इसके गवाह हैं। कई विद्वानों का कहना है कि यदि मतभेद के स्थानों पर उस इमाम की आदत पालन करने की हो, तो अनुसरण करना जायज़ है, अन्यथा नहीं। पाठ का कथन 'यदि पालन के प्रति आश्वस्त हो' से तात्पर्य यह है कि वह नमाज़ के फ़राइज़ यानी शर्तों और स्तंभों का पालन करता हो, भले ही वह वाजिबात और सुन्नतों का पालन न करता हो, जैसा कि 'बहर-उर-राइक' के संदर्भ से स्पष्ट है। 'शराह-उल-मुन्या' के पाठ से भी यही स्पष्ट होता है। मुल्ला अली क़ारी के शोध-पत्र में है कि हमारे अधिकांश विद्वान उन इमामों के पीछे नमाज़ पढ़ने के पक्ष में हैं जो मतभेद के स्थानों पर सावधानी बरतते हैं और पालन करते हैं, अन्यथा अनुसरण जायज़ नहीं है। और अर्थ यह है कि पालन करने वाले का अनुसरण बिना किसी नापसंदगी (कराहियत) के जायज़ है और पालन न करने वाले का अनुसरण नापसंदगी के साथ जायज़ है। संक्षिप्त में। (त)

(अरबी पाठ): उनका कथन 'अल-बहर के वित्र आदि में': यही विश्वसनीय है क्योंकि शोधकर्ताओं ने इसकी ओर झुकाव किया है और संप्रदाय के नियम इस पर साक्ष्य हैं। और कई उलेमाओं ने कहा: यदि उनकी आदत मतभेद के स्थानों का पालन करना है तो यह जायज़ है, अन्यथा नहीं। उनका कथन 'यदि वह पालन के प्रति आश्वस्त है', यानी उस नमाज़ में शर्तों और स्तंभों के दायित्वों (फ़राइज़)

में, भले ही वह अनिवार्यताओं (वाजिबात) और सुन्नतों का पालन न करे जैसा कि 'अल-बहर' के संदर्भ से स्पष्ट है और 'शराह अल-मुन्या' के भाषण से भी स्पष्ट है। और मुल्ला अली अल-क़ारी के ग्रंथ में है: हमारे अधिकांश बुजुर्गों ने जायज़ होने की ओर रुख किया यदि वह मतभेद के स्थान पर सावधानी बरतता है, अन्यथा नहीं। और अर्थ यह है कि पालन करने वाले में बिना कराहियत के जायज़ है और दूसरों में उसके साथ [कराहियत] के साथ। संक्षेप में।

1. 'दुर्र-ए-मुख़्तार', बाब-अल-इमामा, मुत्बा मुजतबाई दिल्ली, 1/83
2. 'रद्द-उल-मुहतार', बाब-अल-इमामा, मुस्तफा अल-बाबी, 1/416 पृष्ठ 506/736

دُر مختار میں ہے مخالف مذہب کے پیچھے نماز مکروہ ہے مثلاً شافعی المسلک ------ بحر الرائق کی وتر کی بحث میں یوں تفصیل ہے اگر مقتدی کو اس بات کا یقین ہو کہ شافعی المذہب دوسرے مسلک کی شرائط وارکان کی رعایت کرتا ہے تو اقتداء میں کراہت نہیں ، اور عدم رعایت کا یقین ہو تو اقتداء صحیح نہیں ہے اور اگر رعایت اور عدم رعایت میں شک ہو تو مکروہ اھ اس بارے میں ہم نے رد المحتار پر اپنے حاشیہ میں تفصیلاً گفتگو کی ہے ۔ (ت)

(عربی عبارت): فی الدر المختار تکرہ خلف مخالف کشافعی لکن فی وتر البحر ان تیقن المراعاۃ لم یکرہ او عدمہا لم یصح وان شک کرہ اھ وقد فصلنا القول فیہ فیما علی رد المحتار۔

ردالمحتار میں ہے:

متن کا قول فی وتر البحر الخ یہی قول معتمد ہے کیونکہ محققین کا اس کی طرف میلان ہے اور قواعد مذہب بھی اسی پر شاہد ہیں اور کثیر مشائخ کا قول ہے اگر اس امام کی عادت موضع اختلاف میں رعایت کرنا ہو تو اقتداء جائز ورنہ جائز نہیں، متن کا قول ان تیقن المراعاۃ سے مراد یہ ہے کہ وہ فرائض نماز یعنی شروط و ارکان کی رعایت کرتا ہو اگرچہ واجبات و سنن کی رعایت نہ کرتا ہو جیسا کہ بحر الرائق کے سیاق کلام سے ظاہر ہے شرح المنیہ کی عبارت سے بھی یہی ظاہر ہوتا ہے۔ ملا علی قاری کے رسالے میں ہے کہ جو امام مواضع اختلاف میں احتیاط اور رعایت کرتا ہو تو ہمارے اکثر مشائخ جواز اقتداء کے قائل ہیں ورنہ اقتداء جائز نہیں اور معنی یہ ہے کہ رعایت کرنے والے کی اقتداء بلا کراہت جائز اور نہ رعایت کرنے والے کی اقتداء کراہت کے ساتھ جائز ہے اھ مختصراً (ت)

(عربی عبارت): قولہ فی وتر البحر الخ ہذا ہو المعتمد لان المحققین جنحوا الیہ وقواعد المذہب شاہدۃ علیہ وقال کثیر من المشائخ ان عادتہ مراعاۃ مواضع الخلاف جاز والا فلا ، قولہ ان تیقن المراعاۃ ای فی الفرائض من شروط واركان فی تلک الصلاۃ وان لم یراع فی الواجبات والسنن کما ہو ظاہر سیاق کلام البحر وظاہر کلام شرح المنیۃ ایضاً وفی رسالۃ الملا علی قاری ذہب عامۃ مشائخنا الی الجواز اذا کان یحتاط فی موضع الخلاف والا فلا والمعنی انہ یجوز فی المراعی بلا کراہۃ وفی غیر معہا اھ مختصرا

1 دُر مختار باب الامامۃ مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی 1 / 83 2 رد المحتار باب الامامۃ مطبوعہ مصطفی البابی 1 / 416 Page 506 of 736

Fatawa Rizvia (Volume 6) Imam Bahr al-Raiq (relayed) from Mujtaba: And if he is observant (of the Hanafi school), then following him is correct according to the most correct opinion, though it is disliked (Makruh). Otherwise, it is not correct at all. (Summary) I say (Ahmad Raza): The reconciliation is that the negation of 'Makruh Tahrimi' (prohibitively disliked) and the affirmation of 'Makruh Tanzihi' (mildly disliked) is for the one who observes (the conditions).

Furthermore, it is stated in Bahr: Following a Shafi'i imam has three scenarios: First, if it is known that he exercises caution according to the Hanafi school, then there is no dislike (Karaha). Second, if it is known that he lacks this caution, then it is not valid. However, scholars differ on whether the knowledge of lack of caution must be specific to the prayer being followed or in general. Al-Nihaya corrected the first view, while others chose the second. In Fatawa al-Zahidi, it is stated: If (a Hanafi) sees (a Shafi'i) having cupping therapy and then he disappears, the most correct view is that following him is valid because it is possible he performed ablution out of caution, and maintaining a good opinion of him is better and more appropriate. Third, if nothing is known, then it is disliked.

1. Bahr al-Raiq, Chapter of Imamat, H.M. Saeed Company Karachi, 1/351.
2. Bahr al-Raiq, Chapter of Witr and Nawafil, H.M. Saeed Company Karachi, 2/46. Note: In this text, the phrasing within parentheses has been added as necessary; the original summarized text is outside the parentheses. Nazir Ahmad Page 507 of 736

फ़तावा रज़विया (छठा खंड) इमाम बहर अल-राइक ने मुज्तबा से (नकल किया) है: और यदि वह (शाफ़ई होने के बावजूद हनफ़ी नियमों का) पालन करने वाला है, तो सबसे सही राय के अनुसार उसके पीछे नमाज़ पढ़ना सही है, हालांकि यह मकरूह है। अन्यथा, यह बिल्कुल भी सही नहीं है। (सारांश) मैं (अहमद रज़ा) कहता हूँ: सामंजस्य यह है कि पालन करने वाले के पीछे नमाज़ पढ़ने में 'मकरूह-ए-तहरीमी' का निषेध है और 'मकरूह-ए-तंजीही' की पुष्टि है।

साथ ही बहर में है: शाफ़ई इमाम के पीछे नमाज़ पढ़ने की तीन स्थितियाँ हैं: पहली, यदि यह ज्ञात हो कि वह हनफ़ी मज़हब के अनुसार सावधानी बरतता है, तो कोई मकरूहियत नहीं है। दूसरी, यदि यह ज्ञात हो कि वह सावधानी नहीं बरतता, तो (उसके पीछे नमाज़) सही नहीं है। हालाँकि, विद्वानों में इस बात पर मतभेद है कि क्या सावधानी की कमी का ज्ञान विशेष रूप से उस नमाज़ के लिए होना चाहिए जिसमें उसका अनुसरण किया जा रहा है, या सामान्य रूप से। अल्-निहाया में पहले मत को सही माना गया है, जबकि अन्य पुस्तकों ने दूसरे मत को अपनाया है। फ़तावा अल-ज़ाहिदी में है कि जब कोई हनफ़ी किसी शाफ़ई को देखे कि उसने पछाने लगवाए हैं और फिर वह ओझल हो जाए, तो सबसे सही मज़हब यह है कि उसके पीछे नमाज़ सही है क्योंकि संभव है कि उसने एहतियातन वज़ू कर लिया हो, और उसके बारे में अच्छा विचार रखना बेहतर और उचित है। तीसरी स्थिति, यदि कुछ भी ज्ञात न हो, तो मकरूह है।

1. बहर अल-राइक, इमामत का अध्याय, एच.एम. सईद कंपनी कराची, १/३५१।
2. बहर अल-राइक, वित्र और नवाफ़िल का अध्याय, एच.एम. सईद कंपनी कराची, २/४१। नोट: इस इबारत में कोष्ठक के बीच वाली इबारत आवश्यकतानुसार बढ़ाई गई है; मूल सारांशित इबारत कोष्ठक के बाहर है। नज़ीर अहमद पृष्ठ ५०७/७३१

فتاوٰی رضویہ (جلد ششم) امام بحر الرائق (نے) مجتبٰی سے (نقل کیا) ہے: وذا کان مراعیاً فالاقتداء به صحیح علی الاصح ویکره والا فلا یصح اصلاً ۱ اه (ملخصاً) اقول: والتوفیق بنفی کراهة التحریم في المراعی واثبات کراهة التنزیه۔ اگر وہ شافعی المذہب رعایت کرنے والا ہو تو اصح قول کے مطابق اسکی نماز صحیح اور مکروہ ہے ورنہ بالکل صحیح نہیں اه ملخصاً (ت) اقول: (میں کہتا ہوں) ان میں موافقت یوں ہے کہ رعایت کرنے والے کی اقتداء میں کراہت تحریمی کی نفی اور کراہت تنزیہی کا اثبات ہو۔ (ت)

نیز بحر میں ہے: الاقتداء بالشافعي علی ثلثة اقسام الاول ان یعلم منه الاحتیاط في مذهب الحنفي فلا کراهة ،الثانی ان یعلم منه عدمه فلا صحة ، لکن اختلفوا هل یشترط ان یعلم منه عدمه في خصوص ما یقتدی به او في الجملة صحح في النهایة الاول وغیره اختار الثانی ، وفي فتاوی الزاهدی (اذا راه احتجم) ثم غاب فالاصح انه یصح (الاقتداء به لانه یجوز ان یتوضأ احتیاطاً) وحسن الظن به اولی، الثالث ان لا یعلم شیئاً فالکراهة ۲ ۔ شافعی امام کی اقتداء کی تین صورتیں ہیں، پہلی صورت یہ ہے کہ شافعی سے مذہب حنفی کی رعایت کرنا معلوم ہو تو اس کی اقتداء میں کراہت نہیں ۔ دوسری صورت یہ ہے کہ اس سے عدم رعایت معلوم ہو تو اسکی اقتداء درست نہیں، لیکن فقہاء کا اس میں اختلاف ہے کہ آیا یہ شرط ہے کہ اس سے عدم رعایت کا علم خاص اس نماز کے اعتبار سے ہے جس میں اقتداء مطلوب ہے یا فی الجملہ کا اعتبار ہے۔ نہایہ میں پہلے قول کو صحیح قرار دیا ہے اور دیگر کتب نے دوسرے قول کو اختیار کیا ہے اور فتاوٰی زاہدی میں ہے کہ جب کوئی حنفی شافعی کو دیکھے کہ اس نے پچھنے لگوائے پھر وہ غائب ہو گیا تو اصح مذہب یہ ہے کہ اس کی اقتداء درست ہے کیونکہ ممکن ہے اس نے احتیاطاً وضو کر لیا ہو اور اس کے ساتھ حسن ظن رکھنا بہتر اور اولٰی ہے۔ تیسری

۱ بحر الرائق باب الامامة مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱/ ۳۵۱ ۲ بحر الرائق باب الوتر والنوافل مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۲/ ۴۶ ف: اس عبارت میں قوسین کے درمیان والی عبارت کا اضافہ ضرورت کے تحت کیا ہے اصل میں عبارت ملخصاً مذکور ہے جو قوسین سے باہر ہے۔ نذیر احمد Page 507 of 736

The situation is such that if there is no knowledge of any kind regarding the Imam (i.e., whether he observes [the requirements of other schools] or not), then in this case, following him (iqtida) would be disliked (makruh). (T)

Therefore, in the inquired case, if there is any factor in the second person that nullifies the prayer, such as misrecitation of the Great Quran to the point of corrupting the meaning, or the absence of any condition of prayer or leadership (imamate) like purity at the time of that specific prayer, then it is obvious that his leadership has no meaning. Now, if there is no reason for 'prohibitively disliked' (makruh tahrimi) in the first person, then there is no harm in his leadership. However, due to the combination of beardlessness (amradiyat) and handsomeness, the superior option is to make someone else the Imam who is sound in belief and a correct reciter, in whom there is no reason for dislike at all. And if there is 'prohibitory dislike' in the first person, then it is mandatory to leave both and follow some other righteous person in imamate. Similarly, if there is anything in the second person that causes 'prohibitory dislike', such as keeping the beard shorter than the Shariah limit or disregarding the Hanafi school in the duties and conditions of prayer, even if this was observed in his actions once or twice, and there is no prohibition in the first person, then the same ruling applies: if a better Imam than the first person is not found, it is necessary to make him the Imam. If both have a reason for 'prohibitory dislike', then find a third Imam besides them. And if there is no reason for 'prohibitory dislike' in the second person but there is in the first, the ruling will be the opposite: if a righteous, clean Hanafi Imam is found, follow him; otherwise, pray behind the second person, provided it is known from his habit that he adheres to the Hanafi requirements, or it is known that at that specific time he fulfills all conditions of imamate according to the Hanafi school. If there is no 'prohibitory dislike' in either, then if it is known that the second person fulfills the Hanafi conditions at that specific time, then in the absence of another righteous Hanafi, his leadership is better because, in this estimation, his leadership is without dislike. If he were a Hanafi, it would be even more superior. In the first person, there is dislike due to beardlessness and handsomeness. If the specific conditions of completeness and the habit of observance are not known at that time, then in the absence of any other clean Imam, the first person should be preferred. This is because now, according to the majority's opinion and the victorious path, both share in 'mild dislike' (makruh tanzihi), and in the case of one from a different school, there is an added factor that,

according to one saying, prayer behind him is absolutely 'prohibitively disliked' even if he observes the conditions, to the extent that some have preferred praying alone and leaving the congregation over following him. It is stated in Al-Durr al-Mukhtar:

[Arabic Box Text] Scholar Sheikh Ibrahim al-Biri disagreed with them based on the dislike of following them due to their lack of observance regarding obligatory acts and sunnahs, and that praying alone is better if one does not find an Imam of his own school. Scholar Sheikh Al-Sindi (may Allah have mercy on him), a student of Ibn al-Humam, also disagreed with them and said that caution lies in...

[Urdu Box Text] Allama Sheikh Ibrahim al-Biri has opposed these gentlemen on the basis that following them is disliked because they do not observe the obligatory acts and sunnahs, and if an Imam of one's own school is not found, then praying alone is superior. Sheikh Sindi (may Allah have mercy on him), a student of Imam Ibn al-Humam, also opposed these gentlemen, saying that...

स्थिति यह है कि यदि इमाम के बारे में किसी भी प्रकार का ज्ञान न हो (यानी [अन्य मज़हब की] शर्तों के पालन या न पालन के बारे में), तो इस स्थिति में उसका अनुसरण (इक़्तिदा) मकरूह (नापसंद) होगा। (त)

अतः पूछी गई स्थिति में यदि दूसरे व्यक्ति में नमाज़ को अमान्य करने वाली कोई बात है, जैसे महान कुरआन को इस हद तक गलत पढ़ना कि अर्थ बिगड़ जाए, या उस विशेष नमाज़ के समय शुद्धता (तहारत) आदि जैसी नमाज़ या इमामत की किसी शर्त का अभाव, तो यह स्पष्ट है कि उसकी इमामत का कोई अर्थ नहीं है। अब यदि पहले व्यक्ति में 'मकरूह तहरीमी' (सख्त नापसंदगी) का कोई कारण नहीं है, तो उसकी इमामत में कोई हर्ज नहीं है। लेकिन अम्रदियत (दाढ़ी न होना) और सुंदरता के कारण बेहतर यह है कि किसी और सही अक़ीदा और सही पढ़ने वाले को इमाम बनाया जाए, जिसमें नापसंदगी का कोई कारण बिल्कुल न हो। और यदि पहले व्यक्ति में 'मकरूह तहरीमी' है, तो अनिवार्य है कि दोनों को छोड़ें और किसी अन्य नेक इमाम का अनुसरण करें। इसी तरह यदि दूसरे व्यक्ति में 'मकरूह तहरीमी' उत्पन्न करने वाली कोई बात है, जैसे दाढ़ी को शरीयत की सीमा से कम रखना या नमाज़ के फ़राएज़ और शरायत में हनफ़ी मज़हब की परवाह न करना, भले ही यह उसके कार्यों में एक या दो बार देखा गया हो, और पहले व्यक्ति में कोई मकरूहियत न हो, तब भी यही हुक्म है कि यदि पहले व्यक्ति से बेहतर इमाम न मिले तो उसी को इमाम बनाना लाज़िम है। और यदि दोनों में 'मकरूह तहरीमी' का कारण है, तो दोनों के अलावा तीसरा इमाम ढूँढें। और यदि दूसरे व्यक्ति में 'मकरूह तहरीमी' का कारण नहीं है और पहले में है, तो हुक्म इसके विपरीत होगा कि यदि कोई नेक, साफ़-सुथरा हनफ़ी इमाम मिले तो उसी का अनुसरण किया जाए, अन्यथा दूसरे व्यक्ति के पीछे ही नमाज़ पढ़ें, बशर्ते उसकी आदत से ज्ञात हो कि वह हनफ़ी मज़हब की शर्तों का पालन करता है, या ज्ञात हो कि उस विशेष समय में वह हनफ़ी मज़हब के अनुसार इमामत की सभी शर्तों को पूरा करता है। यदि दोनों में से किसी में भी 'मकरूह तहरीमी' नहीं है, तो यदि ज्ञात हो कि दूसरा व्यक्ति उस विशेष समय में हनफ़ी शर्तों को पूरा करता है, तो किसी अन्य नेक हनफ़ी के न मिलने की स्थिति में उसकी इमामत बेहतर है, क्योंकि इस स्थिति में उसकी इमामत बिना किसी नापसंदगी के है। यदि वह हनफ़ी होता तो अधिक श्रेष्ठ होता। और पहले व्यक्ति में अम्रदियत और सुंदरता के कारण नापसंदगी है। और यदि उस विशेष समय में शर्तों की पूर्णता और पालन की आदत ज्ञात नहीं है, तो किसी अन्य साफ़-सुथरे इमाम के न होने की स्थिति में पहले व्यक्ति को ही प्राथमिकता दी जानी

चाहिए। क्योंकि अब जम्हूर के मज़हब और मशहूर तरीक़े पर दोनों 'मकरूह तनज़ीही' (हल्की नापसंदगी) में शामिल हुए, और दूसरे मज़हब वाले के मामले में इतनी अधिकता है कि एक कथन के अनुसार उसके पीछे नमाज़ बिल्कुल 'मकरूह तहरीमी' है चाहे वह शर्तों का पालन भी करे, यहाँ तक कि कुछ ने उसके पीछे नमाज़ पढ़ने पर अकेले नमाज़ पढ़ने और जमात छोड़ने को प्राथमिकता दी है। 'अद-दुरुल मुख्तार' में है:

[अरबी बॉक्स टेक्स्ट] विद्वान शेख इब्राहिम अल-बीरी ने उनके प्रति नापसंदगी के आधार पर उनसे असहमति जताई क्योंकि वे वाजिब और सुन्नत कार्यों का पालन नहीं करते थे, और यदि कोई अपने स्वयं के मज़हब का इमाम नहीं पाता है तो अकेले प्रार्थना करना बेहतर है। विद्वान शेख अल-सिंदी (अल्लाह उन पर दया करे), इब्न अल-हुमाम के छात्र, ने भी उनसे असहमति जताई और कहा कि सावधानी इसमें है कि...

[उर्दू बॉक्स टेक्स्ट] अल्लामा शेख इब्राहिम अल-बीरी ने इन सज्जनों का इस आधार पर विरोध किया है कि उनका अनुसरण करना मकरूह है क्योंकि वे वाजिबात और सुन्नत में रियायत (पालन) नहीं करते और यदि अपने मज़हब का इमाम न मिले तो अकेले नमाज़ पढ़ना अफ़ज़ल (बेहतर) है। इमाम इब्न-ए-हुमाम के शागिर्द शेख सिंधी रहमतुल्लाह अलैह ने भी इन हज़रात का विरोध करते हुए कहा कि...

صورت یہ ہے کہ امام کے بارے میں کسی قسم کا علم نہ ہو (یعنی رعایت کانہ عدم رعایت کا) تو اس صورت میں اس کی اقتداء مکروہ ہوگی۔ (ت)

پس صورت مستفسرہ میں اگر صاحب دوم میں کوئی امر مفسد نماز ہے مثلاً قرآن عظیم کی غلط خوانی بحد افساد معنی یا اس خاص نماز کے وقت طہارت وغیرہ باکسی شرط نماز یا شرط امامت کا فوت، جب تو ظاہر ہے کہ اس کی امامت کے کوئی معنی ہی نہیں۔ اب اگر صاحب اول میں کوئی وجہ کراہت تحریمیہ نہ ہو تو اس کی امامت میں حرج نہیں، مگر بوجہ اجتماع امر دیت وحسن صورت اولیٰ یہ ہے کہ کسی اور صحیح العقیدہ صحیح خواں کو امام کریں جس میں اصلاً کوئی وجہ کراہت نہ ہو اور اگر صاحب اول میں کراہت تحریمیہ ہے تو واجب کہ دونوں کو چھوڑیں اور کسی اور صالح امامت کی اقتداء کریں، اسی طرح اگر صاحب دوم میں کوئی امر موجب کراہت تحریمیہ ہے مثلاً داڑھی حد شرع سے کم کرنا یا فرائض و شرائط نماز میں مذہب حنفی کی پروانہ کرنا اگرچہ یہ دو یا ایک بار اس کے افعال سے مشاہدہ ہوا ہو اور صاحب اول میں کوئی تحریم نہیں جب بھی یہی حکم ہے کہ صاحب اول سے بہتر امام نہ ملے تو اسی کو امام کرنا لازم اور دونوں میں کوئی وجہ کراہت تحریم ہے تو دونوں کے سوا تیسرا امام پیدا کریں، اور اگر صاحب دوم میں کوئی وجہ کراہت تحریم نہیں اور صاحب اول میں ہے تو حکم بالعکس ہوگا کہ اگر کوئی حنفی صالح امام نظیف ملے تو اسی کی اقتداء کی جائے ورنہ صاحب دوم ہی کے پیچھے پڑھیں جبکہ اس کی عادت سے معلوم ہے کہ مذہب حنفی کی رعایت کا التزام رکھتا ہے یا معلوم ہو کہ اس خاص وقت میں جامع جملہ شرائط امامت مطابق مذہب حنفی ہے اور اگر دونوں میں کوئی کراہت تحریم نہیں تو اگر معلوم ہو کہ صاحب دوم خاص اس وقت شرائط حنفیہ ہے تو اور کوئی حنفی صالح نہ

ملنے کی حالت میں اس کی امامت اولیٰ کہ اس تقدیر پر اس کی امامت بلا کراہت ہے اور اگر حنفی ہوتا تو افضل ہوتا اور صاحب اول میں بوجہ امردیت و حسن کراہت ہے اور اگر خاص اس وقت شرائط جامعیت معلوم نہیں اور عادت مراعاۃ معلوم نہیں تو اور کوئی امام نظیف نہ ہونے کی حالت میں صاحب اول ہی کو ترجیح چاہئے کہ اب مذہب جمہور و مشرب منصور پر کراہت تنزیہ میں دونوں شریک ہوئے اور مخالف المذہب میں اس قدر زیادت ہے کہ اس کے پیچھے ایک قول پر مطلقاً نماز مکروہ تحریمی ہے اگرچہ مراعاۃ شرائط بھی کرے یہاں تک کہ اس کی اقتداء پر تنہا نماز پڑھنے اور جماعت چھوڑنے کو بعض نے ترجیح دی۔ الدرالمختار میں ہے:

خالفهم العلامة الشيخ ابراهيم البيرى بناء على كراهة الاقتداء بهم لعدم مراعاتهم فى الواجبات والسنن وان الانفراد افضل لولم يدرك امام مذهبه وخالفهم ايضا العلامة الشيخ رحمه الله السندى تلميذ ابن الهمام فقال الاحتياط فى

علامہ شیخ ابراہیم البیری نے ان حضرات کی اس بناء پر مخالفت کی ہے کہ ان کی اقتداء مکروہ ہے کیونکہ یہ واجبات وسنن میں رعایت نہیں کرتے اور اگر اپنے مذہب کا امام نہ ملے تو تنہا نماز پڑھنا افضل ہے۔ امام ابن ہمام کے شاگرد شیخ سندھی رحمہ اللہ تعالیٰ نے بھی ان حضرات کی مخالفت کرتے ہوئے کہا کہ

Fatawa Rizwia Volume Six

Non-compliance with following him (as Imam) even if he is observant - And Allah Subhanu wa Ta'ala knows best. Even if an opponent is observant, there is caution in following him (in prayer). (T)

Question 637: From Manogajah, Piraag region, sent by Niaz Muhammad Khan Badauni, 3rd Rabi-ul-Akhar, Tuesday, 1322 AH. What do the scholars of religion and the muftis of the firm Shariah say about this matter: that all Muslims of the Shafi'i madhhab in general, among whom some have performed Hajj once or several times, are omitters of Sunnat prayers? No one ever offers the Sunnat prayers of any time; they only perform the obligatory (Fard) ones. How is their leading the prayer (Imamat) for a Hanafi spiritual guide (Pir) and Imam?

Answer: In a day and night, there are twelve rak'ahs of Sunnat Mu'akkada: two before Fajr, four before Zuhr and two after, and two each after Maghrib and Isha. Anyone who omits any of these once or twice deserves blame and reprimand. One who is habitual in omitting any of them is a sinner, a transgressor (fasiq), and deserves punishment. To pray behind an open transgressor (fasiq-e-mu'lan) is Makruh Tahrimi (prohibitively disliked), and to make such a person an Imam is a sin. This has been explicitly stated in Al-Ghunyah from Al-Hujjah (T). And Allah Ta'ala knows best.

Question No. 638: From Manogajah, Piraag region, sent by Niaz Muhammad Khan Badauni, 3rd Rabi-ul-Akhar, Tuesday, 1322 AH. What do the scholars of religion and the muftis of the firm Shariah say about this matter: that the general custom and practice of this country is that women go out. There is neither the custom of using a doli or palanquin nor do they know it. In short, there is absolutely no pardah (veiling). They go on foot for some function, visiting the sick, or out of some necessity. Their clothing, instead of trousers (pajama), is a loincloth (tehband) like a pillowcase from waist to knees; on the body, they do not use anything like Indian short clothes or a dupatta. They wear something like a cloak (chugha) which is long, reaching below the feet. As for the head covering, when they have to go out, they put on a loincloth like the one mentioned above over the body, covering the head and down to the waist. But they have the habit of keeping their faces open, although their hands certainly remain carefully veiled. Their going out is with the permission of general heirs; in fact, husbands or heirs are with them. This is a common way, whether they are nobles (Nawabs) or poor. How is the leadership in prayer (Imamat) of such people?

Answer: If a woman appears before a non-mahram (a man she could marry) in such a way that her hair, neck, throat, back, wrist, or any part of her calf is visible, or if the clothing is so thin that any part of these things shows through, then this is unanimously forbidden (haram). Women who are habitual in such appearance and dress are transgressors (fasiqat). And if their husbands are pleased with this or according to their capacity...

---

1 Radd al-Muhtar, Chapter on Leadership (Imamat), printed by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/417. Page 509 of 736

फ़तावा रज़विया जिल्द शशम

अनुकरण न करना चाहे वह पालन करने वाला हो - और अल्लाह सुब्हानहू व तआला बेहतर जानता है। चाहे विपक्षी पालन करने वाला हो, फिर भी अनुकरण करने में सावधानी है। (त)

मसला ६३७: मानोगजह, पीराग क्षेत्र से, प्रेषक नियाज़ मुहम्मद खाँ बदायूँनी, ३ रबी-उल-आख़िर, मंगलवार, १३२२ हिजरी। धर्म के विद्वान और सुदृढ़ शरीयत के मुफ्ती इस मामले में क्या कहते हैं: कि शफीई संप्रदाय के सभी आम मुसलमान, जिनमें से कुछ एक या कई बार हज भी कर आए हैं, सुन्नत नमाज़ छोड़ देते हैं? कोई भी किसी समय की सुन्नत नमाज़ अदा नहीं करता, केवल फ़र्ज़ अदा कर लेते हैं। एक हनफी पीर और इमाम के लिए उनका नेतृत्व (इमामत) कैसा है?

जवाब: दिन और रात में बारह रकात सुन्नत-ए-मुअक्कदा हैं: फ़ज्र से पहले दो, ज़ुहर से पहले चार और बाद में दो, और मग्रिब और ईशा के बाद दो-दो। जो इनमें से किसी को एक या दो बार छोड़े वह भर्त्सना और फटकार का पात्र है। इनमें से किसी को छोड़ने की आदत डालने वाला पापी, उल्लंघनकर्ता (फ़ासिक़) और दंड का पात्र है। एक खुले उल्लंघनकर्ता (फ़ासिक़-ए-मुअलन) के पीछे नमाज़ पढ़ना मकरूह-ए-तहरीमी है, और उसे इमाम बनाना पाप है। अल-ग़ुन्याह में अल-हुज्जह के हवाले से इसे स्पष्ट रूप से कहा गया है। (त) और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर ६३८: मानोगजह, पीराग क्षेत्र से, प्रेषक नियाज़ मुहम्मद खाँ बदायूँनी, ३ रबी-उल-आख़िर, मंगलवार, १३२२ हिजरी। धर्म के विद्वान और सुदृढ़ शरीयत के मुफ्ती इस मामले में क्या कहते हैं: कि इस देश का आम दस्तूर और रिवाज यह है कि महिलाएँ बाहर निकलती हैं। न डोली या पालकी का रिवाज है और न ही वे इसे जानती हैं। संक्षेप में, परदा बिल्कुल नहीं है। वे किसी समारोह, बीमार की तीमारदारी या किसी ज़रूरत के लिए पैदल जाती हैं। उनके वस्त्र, पायजामा के बजाय तकिए के कवर की तरह कमर से घुटनों तक एक तहबंद है; शरीर पर हिंदुस्तानी छोटे कपड़ों या दुपट्टे जैसा कुछ इस्तेमाल नहीं करतीं। वे एक चोगा (चुग़ा) जैसा पहनती हैं जो पैरों के नीचे तक लंबा होता है। सिर के परदे की बात करें, तो जब उन्हें बाहर निकलना होता है, तो वे ऊपर बताए अनुसार एक तहबंद शरीर पर पहन लेती हैं, जिससे सिर और कमर तक का परदा हो जाता है। लेकिन चेहरा खुला रखने की आदत है, हालाँकि हाथ निश्चित रूप से सावधानी से परदे में रहते हैं। उनका बाहर निकलना आम वारिसों की अनुमति से होता है; बल्कि पति या वारिस साथ होते हैं। यह एक सामान्य तरीका है, चाहे वे नवाब हों या गरीब। ऐसे लोगों की इमामत कैसी है?

जवाब: यदि कोई महिला किसी ग़ैर-महरम के सामने इस तरह आए कि उसके बाल, गला, गर्दन, पीठ, कलाई या पिंडली का कोई हिस्सा दिखाई दे, या कपड़ा इतना बारीक हो कि इन चीजों में से कोई भी हिस्सा उसमें से झलके, तो यह सर्वसम्मति से हराम (प्रतिबंधित) है। ऐसी वेशभूषा और पहनावे की आदी महिलाएँ उल्लंघनकर्ता (फ़ासिक़ात) हैं। और यदि उनके पति इस पर सहमत हों या अपनी क्षमता के अनुसार...

---

1 रद अल-मुह्तार, अध्याय इमामत, मुस्तफा अल-बाबी द्वारा मुद्रित, मिस्र, १/४१७। पृष्ठ ५०९/७३६

عدم الاقتداء بہ ولو مراعیاً- واللہ سبحنہ و تعالی اعلم۔ اگرچہ مخالف رعایت کرنے والا ہو پھر بھی اقتداء کرنے میں احتیاط ہے (ت)

مسئلہ ۶۳۷: از مانوگاجہ ملک پیراگ مرسلہ نیاز محمد خاں بدایونی ۳ ربیع الآخر یوم سہ شنبہ ۱۳۲۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ جمیع اہل اسلام شافعی مذہب میں عام جن میں ایک مرتبہ اور چند مرتبہ حج بھی کر آئے ہیں مگر تارکِ نماز سنت ہیں کوئی بھی کسی وقت کی نماز سنت ادا نہیں کرتا صرف فرض ادا کر لیتے ہیں، ان کی امامت واسطے پیر و امام حنفی کے کیسی ہے؟

الجواب: شبانہ روز میں بارہ رکعتیں سنت مؤکدہ ہیں، دو صبح سے پہلے، اور چار ظہر سے پہلے اور دو بعد، اور دو مغرب و عشاء کے بعد، جوان میں سے کسی کو ایک آدھ بار ترک کرے مستحقِ ملامت و عتاب ہے اور ان میں سے کسی کے ترک کا عادی گناہگار و فاسق و مستوجبِ عذاب ہے اور فاسقِ معلن کے پیچھے نماز مکروہِ تحریمی، اور اس کو امام بنانا گناہ ہے۔ صرح بہ الغنیۃ عن الحجۃ (اس کے بارے میں حجہ کے حوالے سے غنیہ میں تصریح ہے۔ ت) واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۶۳۸: از مانو گاجہ ملک پیراگ مرسلہ نیاز محمد خاں بدایونی ۳ ربیع الآخر یوم سہ شنبہ ۱۳۲۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ عام دستور اور رواج اس ملک کا ہے کہ مستورات باہر نکلتی ہیں ڈولی یا پالکی کا نہ دستور ہے نہ جانتی ہیں غرضکہ پردہ قطعی نہیں ہے کسی تقریب یا عیادت یا کسی ضرورت کو پا پیادہ جانا، پوشش ان کی

بجائے پاجامہ ایک تہبند مثل غلاف تکیہ کمر سے گھٹنوں تک بدن پر مثل ہندوستانی چھوٹے کپڑے یا دو پٹہ کے استعمال میں نہیں ، ایک چغہ کے مثل پہنتی ہیں جو نیچا پیر کے تلے تک ہوتا ہے۔ رہا سر کا پردہ، جب گھر سے نکلنا ہوا تو ایک تہبند مثل بالا تحریر کے اندر جسم میں پہن لیا، سر اور کمر تک کا پردہ ہو جاتا ہے۔ مگر چہرہ کھلے رکھنے کی عادت ہے، ہاتھ البتہ بحفاظت پردہ میں رہتے ہیں، ان کا نکلنا عام وارثوں کی اجازت سے ہے بلکہ خاوند یا وارث ہمراہ ہوتے ہیں، یہ طریقہ عام ہے خواہ نواب ہو خواہ غریب، ان لوگوں کی امامت کیسی ہے؟

الجواب: عورت اگر نامحرم کے سامنے اس طرح آئے کہ اُس کے بال گلے اور گردن یا پیٹھ یا کلائی یا پنڈلی کا کوئی حصہ ظاہر ہو یا لباس ایسا باریک ہو کہ ان چیزوں سے کوئی حصہ اُس میں سے چپکے تو یہ بالاجماع حرام اور ایسی وضع و لباس کی عادی عورتیں فاسقات ہیں، اور ان کے شوہر اگر اس پر راضی ہوں یا حسب مقدور

---

1 ردالمحتار باب الامامۃ مطبوعہ مصطفیٰ البابی مصر ۱/ ۴۱۷ Page 509 of 736

Fatawa Razawiya Volume 6

If they do not make arrangements [for covering], they are *dayooth* (cuckolds), and making such people Imams is a sin. And if the entire body from head to toe is well hidden in thick clothes, with only the face visible in a way that no part of the ear, below the chin, or forehead hair is showing, then the Fatwa is still against its prohibition. If this matter is with the consent of the husbands, then it is more appropriate to avoid their Imamat because preventing Fitna (strife/trial) is among the most important Sharia obligations. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 639: From Manogajah, Malik Peerag, sent by Niyaz Muhammad Khan Badayuni, 3 Rabi-ul-Akhir, Tuesday, 1322 AH. What do the scholars of religion and jurists of the firm Sharia say on this issue: a person does not perform *istinja* (cleaning) with clods of earth immediately after urinating, but straight away performs *istinja* with water. How is their Imamat?

The Answer: In this case, a Sunnah is indeed omitted, but if water alone stops the drops and provides satisfaction to people, then this matter does not reach the extent where their leadership in prayer is called impermissible, provided their intention is not some abominable act like disrespecting the Sunnah of the Leader of the Believers, Farooq-e-Azam (Radi Allahu Ta'ala Anhu). And Allah Almighty knows best.

Problem No. 640: From Hyderabad Deccan, sent by Hussain Khan via Molvi Ziauddin Sahib, 5 Rabi-ul-Akhir 1322 AH. What do the scholars of religion and jurists of the firm Sharia of Mustafa say on this issue: A Molvi Sahib has abandoned the Hanafi school and adopted the Hanbali school. The reason he gives for changing his school is that close to his time, His Eminence Hazrat Sayyid Abdul Qadir Gilani (Quddisa Sirruhul Aziz) had adopted the Hanbali school, so he also changed his school. Given that the Molvi's statement about changing his school is true, is following him in prayer valid according to Hanafi principles, while there are many capable Hanafi Imams present there?

The Answer: In those lands where there are neither scholars of the Hanbali school nor its books, leaving Hanafism to adopt Hanbalism is absolutely not permissible. If the person transferring was a scholar of the Hanafi school, then this transfer would be clearly contrary to the objective of the Sharia, as Sharia has commanded the pursuit of knowledge, while this is abandoning knowledge and seeking ignorance. God forbid, Hanbalism is not ignorance; all four schools of thought are truth, guidance, and righteousness. But where there are neither scholars nor books of a

particular school, adopting it is clearly choosing one's own ignorance. If he was ignorant from the start, he closes the door of knowledge and practice for himself. If he was not aware of the rulings of Hanafism, he was capable of following "So ask the people of knowledge" (Holy Quran 16:43). Now that he adopts a school whose people of knowledge are not even present here, he clearly meets helplessness along with ignorance and shuts the door of the pure Sharia on himself. And Allah is the Guide.

---

1. Al-Quran 16/43

फ़तावा रज़विया खण्ड 6

यदि वे [पर्दे का] प्रबंध नहीं करते हैं तो वे दयूस हैं, और ऐसे लोगों को इमाम बनाना गुनाह है। और यदि पूरा शरीर सिर से पाँव तक मोटे कपड़ों में अच्छी तरह छिपा हुआ है, केवल चेहरे का घेरा खुला है जिसमें कान का कोई हिस्सा, ठुड्डी के नीचे का हिस्सा या माथे के बाल दिखाई नहीं दे रहे हैं, तो अब फतवा इसकी भी मनाही पर है। और यदि यह मामला शौहरों की रज़ामंदी से हो तो उनकी इमामत से भी बचना ही बेहतर है क्योंकि फितने (उपद्रव) को रोकना महत्वपूर्ण शरीयत के कर्तव्यों में से है। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला नंबर 639: मानों गाजा, मुल्क पीराग से, प्रेषक नियाज़ मुहम्मद खाँ बदायूँनी, 3 रबी-उल-आखिर, मंगलवार, 1322 हिजरी। धर्म के विद्वान और सुदृढ़ शरीयत के मुफ्ती इस मसले में क्या कहते हैं: एक व्यक्ति पेशाब करने के तुरंत बाद ढेले से इस्तेन्जा (सफाई) नहीं करता है, बल्कि सीधे पानी से इस्तेन्जा कर लेता है। उनकी इमामत कैसी है?

जवाब: इस स्थिति में सुन्नत का त्याग ज़रूर है, लेकिन अगर केवल पानी से बूंदों का आना बंद हो जाता है और लोगों को संतोष मिल जाता है, तो यह मामला उस हद तक नहीं है जहाँ उनकी इमामत को नाजायज़ कहा जाए, बशर्ते कि उनका इरादा कोई बुरा कार्य जैसे अमीरल मोमिनीन हज़रत फारूक-ए-आज़म (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) की सुन्नत का अपमान करना न हो। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला नंबर 640: हैदराबाद दकन से, प्रेषक हुसैन खाँ वसीला मौलवी ज़ियाउद्दीन साहब, 5 रबी-उल-आखिर 1322 हिजरी। मुस्तफा की सुदृढ़ शरीयत के विद्वान और मुफ्ती इस मसले में क्या कहते हैं: एक मौलवी साहब ने हनफी मज़हब छोड़ कर हम्बली मज़हब अपना लिया है। मज़हब बदलने का कारण वे यह बताते हैं कि उनके समय के करीब हज़रत जनाब सैयद अब्दुल कादिर जिलानी (कुद्दसा सिर्रहुल अज़ीज़) ने हम्बली मज़हब अपनाया था, इसलिए मैंने भी मज़हब बदल लिया। मौलवी साहब के मज़हब बदलने के बयान के सच होने की सूरत में, क्या हनफी सिद्धांतों के अनुसार उन मौलवी साहब के पीछे नमाज़ पढ़ना (इक्तिदा) सही है, जबकि वहाँ इक्तिदा के लायक बहुत से हनफी लोग मौजूद हैं?

जवाब: उन देशों में जहाँ न हम्बली मज़हब के विद्वान हैं और न ही उसकी किताबें, हनफियत छोड़ कर हम्बलियत अपनाना कतई जायज़ नहीं है। यदि मज़हब बदलने वाला हनफी मज़हब का विद्वान

था, तो यह बदलाव स्पष्ट रूप से शरीयत के उद्देश्य के विपरीत होगा क्योंकि शरीयत ने ज्ञान प्राप्ति का आदेश दिया है, जबकि यह ज्ञान का त्याग और अज्ञानता की खोज है। खुदा न करे, हम्बलियत अज्ञानता नहीं है; चारों मज़हब सत्य, मार्गदर्शन और भलाई के रास्ते हैं। लेकिन जहाँ किसी मज़हब के न विद्वान हों और न किताबें, वहाँ उसे अपनाना स्पष्ट रूप से अपनी अज्ञानता को चुनना है। और अगर वह शुरू से ही जाहिल था, तो उसने अपने लिए ज्ञान और कर्म का दरवाज़ा बंद कर लिया। यदि वह हनफियत के नियमों से वाकिफ नहीं था, तो वह "ज़िक्र वालों (विद्वानों) से पूछो" (कुरान 16:43) का पालन करने में सक्षम था। अब जबकि वह ऐसा मज़हब अपनाता है जिसके विद्वान भी यहाँ नहीं हैं, तो स्पष्ट रूप से अज्ञानता के साथ लाचारी जुड़ जाती है और वह अपने मुँह पर शरीयत-ए-मुतहरा का दरवाज़ा बंद कर लेता है। और अल्लाह ही मार्गदर्शक है।

---

1. अल-कुरान 16/43

فتاوی رضویہ جلد ششم بندوبست نہ کریں تو دیوث ہیں، اور ایسوں کو امام بنانا گناہ۔ اور اگر تمام بدن سر سے پاؤں تک موٹے کپڑے میں خوب چھپا ہوا ہے صرف منہ کی ٹکلی کھلی ہوئی جس میں کوئی حصہ کان کا یا ٹھوڑی کے نیچے کا یا پیشانی کے بال کا ظاہر نہیں تو اب فتویٰ اس سے بھی ممانعت پر ہے اور یہ امر شوہروں کی رضا سے ہو تو ان کی امامت سے بھی احتراز انسب کہ سد فتنہ اہم واجبات شرعیہ سے ہے واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۶۳۹: از مانو گاجہ ملک پیراگ مرسلہ نیاز محمد خاں بدایونی ۳ ربیع الاخریٰ یوم سہ شنبہ ۱۳۲۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین اس مسئلہ میں کہ استنجاء کلوخ سے نہیں اسی وقت پیشاب کیا اور فوراً پانی سے استنجاء لے لیا ان کی امامت کیسی ہے؟

الجواب: اس صورت میں ترک سنت ضرور ہے مگر صرف پانی اگر انقطاع قطرہ ہو جاتا اور ان لوگوں کو اطمینان مل جاتا ہے تو یہ امر اس حد کا نہیں جس کے ترک پر ان کی امامت کو نا جائز کہا جائے جبکہ ان کا منشاء کوئی امر قبیح مثل استخفاف سنت حضرت امیر المؤمنین فاروق اعظم رضی اللہ تعالیٰ عنہ نہ ہو۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۶۴۰: از حیدر آباد دکن مرسلہ حسین خاں بوساطت مولوی ضیاء الدین صاحب ۵ ربیع الآخر ۱۳۲۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین مصطفیٰ اس مسئلہ میں کہ ایک مولوی صاحب نے مذہب حنفی ترک کر کے مذہب حنبلی اختیار کیا ہے اور وجہ تبدیل مذہب یہ بتاتے ہیں کہ قریب زمانہ وقت حضرت جناب سید عبدالقادر جیلانی قدس سرہ العزیز نے مذہب حنبلی اختیار فرمایا اس لئے میں نے بھی تبدیل مذہب کیا۔ بس بصورت صحت بیان مولوی صاحب

نسبت تبدیل مذہب اقتدائے مولوی صاحب حسب اصول حنفیہ درست ہے یا نہیں جبکہ وہاں کثرت سے حنفی لوگ لائق اقتدا موجود ہوں۔

الجواب: ان بلاد میں کہ جہاں نہ حنبلی مذہب کے عالم ہیں نہ کتابیں، حنفیت چھوڑ کر حنبلیت اختیار کرنا ہرگز جائز نہیں، انتقال کرنے والا مذہب حنفی کا عالم تھا تو یہ انتقال صراحۃً مراد شرع کے مضاد ہو گا کہ شرع نے طلب علم کا حکم فرمایا اور یہ ترک علم و طلب جہل کرتا ہے حاشا اللہ حنبلیت جہلیت نہیں چاروں مذہب حق و ہدی و رشاد ہیں مگر جہاں نہ جس مذہب کے عالم نہ کتابیں وہاں اس کا اختیار صراحۃً اپنے جہل کا اختیار ہے اور اگراول سے جاہل تھا تو اپنے لئے علم و عمل کا دروازہ بند کرتا ہے احکام حنفیت سے آگاہ نہ تھا تو فَسْئَلُوْا اَهْلَ الذِّكْرِ (اہل ذکر سے پوچھو۔ ت) کے امتثال پر تو قادر تھا اب کہ وہ مذہب اختیار کرتا ہے جس کے اہل ذکر بھی یہاں نہیں تو صراحۃً جہل کے ساتھ عجز ملتا اور اپنے منہ پر شریعتِ مطہرہ کا بند کرتا ہے واللہ الھادی

---

1 القرآن ۱۶ / ۴۳

Fatawa Razawiyya, Volume 6 Problem No. 631: From Kalli Nagar, Pargana Puran, District Pilibhit, sent by Akbar Ali, 5 Jumada al-Ukhra 1322 AH.

Question: What do the scholars of religion and muftis of the clear Sharia say about this matter? Not finding proof of the word 'divorce' being uttered to the wife of Zaid, fifteen to twenty Muslim men consulted and appointed their prayer leader (Imam). They saw a ruling (fatwa) on which endorsements from famous religious scholars were present. These scholars had granted Zaid permission to lead prayers. The Imam has been leading prayers for a long time, including Friday prayers. He also advises those who commit unlawful acts. Due to his advice, the wrongdoers have split into two groups. Now, a new Maulvi has arrived and is staying with those who slaughter animals in the name of other than Allah, and he eats with them. On Friday, the people who were estranged from the [original] Imam brought this Maulvi to the mosque. When the Maulvi arrived, the Imam stood up and sat on the pulpit (minbar) and ordered the call to prayer (Adhan). Those estranged from the Imam told him to step down from the pulpit, saying this [new] Maulvi would lead the prayer. The people who had appointed the Imam were present, and the Adhan was called in front of the Imam on the pulpit. Upon this, the Maulvi said that this Imam's marriage is invalid (due to divorce), so praying behind him is not permissible. At that moment, the Imam presented the ruling [allowing him to lead prayers] endorsed by scholars. The Maulvi saw the ruling, threw it away, and said it was incorrect. Hearing this from the Maulvi, the Muslims who had appointed the Imam told him to lead the prayer. They told the Maulvi, "We trust this ruling because it bears the seals of famous scholars. If it were wrong, why would they endorse it? If your prayer cannot be performed behind him, so be it, but our prayer can be." Hearing this from the Muslims, the Maulvi left the mosque. After the Friday prayer was completed, he returned to the mosque and performed the sermon and Friday prayer a second time. In summary, can a second Friday prayer be performed after the first one is finished? And is the newly arrived Maulvi fit for leadership (Imamat)? Explain and you shall be rewarded.

The Answer: The Imam for Friday prayer can only be one whose appointment comes from the Islamic ruler, or one whom the general Muslim community appoints out of necessity. Intentionally leaving the Friday prayer and then, after the congregation has finished, bringing a few people back to the same mosque to hold the sermon and prayer again is not permissible at all. This second prayer is not valid. This second person is a sinner, and by throwing the Sharia fatwa on the ground, his ruling

becomes very severe. In books like Alamgiri, it is even described as reaching the level of disbelief (kufr). This new person is not fit to be made an Imam. And Allah Almighty knows best.

फतावा रज़विया, छठा खंड मसला नंबर 631: कल्ली नगर, परगना पूरन, जिला पीलीभीत से, प्रेषक अकबर अली, 5 जमादी अल-उखरा 1322 हिजरी।

सवाल: इस मामले में दीन के विद्वान और शरीयत के मुफ्ती क्या कहते हैं? ज़ैद की पत्नी को 'तलाक' शब्द कहे जाने का प्रमाण न पाकर, पंद्रह-बीस मुसलमान पुरुषों ने परामर्श किया और अपना पेश इमाम नियुक्त किया। उन्होंने वह मसला (फतवा) देखा जिस पर प्रसिद्ध धार्मिक विद्वानों की मुहरें लगी थीं और विद्वानों ने ज़ैद को नमाज़ पढ़ाने की अनुमति दी थी। पेश इमाम लंबे समय से इमामत कर रहे हैं और जुमे की नमाज़ भी पढ़ाते हैं। वे गलत काम करने वालों को नसीहत भी देते हैं। उनकी नसीहत के कारण गलत काम करने वालों ने दो समूह बना लिए हैं। अब एक मौलवी साहब उनके यहाँ आकर रुके हुए हैं जो गैर-अल्लाह के नाम पर जानवर ज़बह करते हैं, और मौलवी साहब भी उनके यहाँ खाना खाते हैं। जुमे के दिन जो लोग इमाम से नाराज थे, वे मौलवी साहब को मस्जिद में ले आए। मौलवी साहब के आने पर पेश इमाम खड़े हुए और मिंबर पर बैठ गए और अज़ान देने का आदेश दिया। जो लोग इमाम से नाराज थे और मौलवी साहब को लाए थे, उन्होंने इमाम से कहा कि मिंबर से नीचे उतरो, ये मौलवी साहब नमाज़ पढ़ाएंगे। जिन मुसलमानों ने पेश इमाम को नियुक्त किया था, उनकी मौजूदगी में मिंबर पर बैठे इमाम के सामने अज़ान दी गई। इस पर मौलवी साहब बोले कि यह इमाम तलाकशुदा (जिसका निकाह टूट चुका हो) है, इसके पीछे नमाज़ जायज़ नहीं है। पेश इमाम ने उसी समय विद्वानों की मुहरों वाला अनुमति पत्र पेश किया। मौलवी साहब ने उसे देखकर फेंक दिया और कहा कि यह मसला सही नहीं है। मौलवी साहब की यह बात सुनकर जिन मुसलमानों ने अपना पेश इमाम नियुक्त किया था, उन्होंने इमाम से कहा कि आप नमाज़ पढ़ाएँ और मौलवी साहब से कहा कि हमें इस मसले पर भरोसा है क्योंकि इस पर प्रसिद्ध विद्वानों की मुहरें हैं। अगर यह गलत होता तो विद्वान इस पर मुहर क्यों लगाते? अगर आपकी नमाज़ उनके पीछे नहीं हो सकती तो न हो, हमारी नमाज़ हो सकती है। मुसलमानों की यह बात सुनकर मौलवी साहब मस्जिद से बाहर चले गए और जुमे की नमाज़ पूरी होने के बाद फिर मस्जिद में आए और दूसरी बार खुतबा पढ़ा और जुमे की नमाज़ पढ़ाई। सारांश यह कि पहली जुमे की नमाज़ हो जाने के बाद क्या दूसरी जुमे की नमाज़ हो सकती है? और क्या ये नए मौलवी साहब इमामत के लायक हैं या नहीं? बयान फरमाएँ और पुण्य प्राप्त करें।

जवाब: जुमे के लिए इमाम वही हो सकता है जिसकी नियुक्ति इस्लामी सुल्तान की ओर से चली आ रही हो, या जिसे आम मुसलमानों ने ज़रूरत के समय नियुक्त किया हो। जानबूझकर जुमे की नमाज़

छोड़ देना और फिर जमात खत्म होने के बाद अपने कुछ लोगों को लाकर उसी मस्जिद में दोबारा खुतबा और नमाज़ कायम करना बिल्कुल जायज़ नहीं है। यह बाद वाली नमाज़ नहीं हुई। और यह दूसरा व्यक्ति गुनहगार हुआ, और शरीयत के फतवे को ज़मीन पर फेंक देने से उसका हुक्म बहुत सख्त हो गया। आलमगीरी वगैरह में इसे कुफ्र तक लिखा गया है। यह नया व्यक्ति इमाम बनाने के लायक नहीं है। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

पृष्ठ 511 का 736

فتاویٰ رضویہ جلد ششم مسئلہ نمبر ۶۳۱: از کلی ناگر پرگنہ پورن ضلع پیلی بھیت مرسلہ اکبر علی ۵ جمادی الاخری ۱۳۲۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ منکوحہ زید کو لفظ طلاق کہنے کا ثبوت نہ پاکر پندرہ بیس مردمانِ اہل اسلام نے مشورہ کرکے اپنا پیش امام مقرر کیا اور مسئلہ دیکھا کہ جس پر مشاہیر علمائے دین چسپاں تھیں اور علمائے دین نے نماز پڑھانے کی اجازت زید کو دی اور پیش امام مدت دراز سے امامت کرتے ہیں اور نماز جمعہ بھی پڑھاتے ہیں اور پیش امام حرام کاروں کو بھی نصیحت کرتے ہیں اور حرام کاروں نے نصیحت کرنے کے سبب سے دو جماعتیں کرلی ہیں۔ اب ایک مولوی صاحب ان کے یہاں وارد حال مقیم ہیں کہ جو غیر اللہ کا جانور ذبح کرتے ہیں مولوی صاحب بھی انکے یہاں کھاتے ہیں جمعہ کے روز وہ لوگ جو امام سے برگشتہ تھے مولوی صاحب کو مسجد میں لائے اور بوقت آنے مولوی صاحب کے پیش امام اٹھے اور منبر پر بیٹھ گئے اور اذان کا حکم دیا کہ اذان پڑھو ، اور جو لوگ پیش امام سے برگشتہ تھے اور مولوی صاحب کو لائے تھے پیش امام سے کہا منبر سے تم اترو یہ مولوی صاحب نماز پڑھائیں گے، جن مردمانِ اہل اسلام نے کہ پیش امام اپنا مقرر کیا تھا اور جو پیش امام منبر پر بیٹھے تھے ان کے روبرو اذان کہی گئی اس پر مولوی صاحب بولے کہ یہ پیش امام طلاقی ہے اس کے پیچھے نماز جائز نہیں ہے، پیش امام نے اسی وقت مسئلہ باجازت نماز بمواہیر علمائے دین پیش کیا مولوی صاحب نے مسئلہ دیکھ کر پھینک دیا اور کہا کہ یہ مسئلہ درست نہیں، یہ کلام مولوی صاحب کا سن کر جن اہل اسلام نے اپنا پیش امام مقرر کیا تھا پیش امام سے کہا کہ نماز پڑھاؤ اور مولوی صاحب سے کہا کہ ہم کو اعتبار اس مسئلہ کا ہے کہ جس پر مشاہیر علمائے دین موجود اور چسپاں ہیں اگر یہ مسئلہ غلط ہوتا تو مشاہیر علمائے دین کیونکر اس پر چسپاں کرتے، اگر تمہاری نماز ان کے پیچھے نہیں ہو سکتی ہے تو نہ ہو ہماری نماز ہو سکتی

ہے، یہ کلام اہل اسلام کا سن کر مولوی صاحب مسجد سے باہر چلے گئے اور بعد ہو جانے نماز جمعہ کے پھر مسجد میں آئے اور دوسری مرتبہ مولوی صاحب نے خطبہ پڑھا اور جمعہ کی نماز پڑھائی، تو حاصل کلام یہ کہ اول جمعہ کی نماز ہو جانے کے بعد دوسری نماز جمعہ کی ہو سکتی ہے اور مولوی صاحب جدید وارد حال امامت کے لائق ہیں یا نہیں؟ بینوا توجروا الجواب: جمعہ کے لئے امام وہی ہو سکتا ہے جس کا تقرر بادشاہِ اسلام سے چلا آتا ہے یا وہ کہ جسے بضرورت عام مسلمان مقرر کر لیں نماز جمعہ قصداً چھوڑ کر چلا جانا اور پھر بعد ختمِ جماعت اپنے چند آدمیوں کو لاکر اُسی مسجد میں دوبارہ خطبہ و نماز قائم کرنا ہرگز جائز نہیں، یہ پچھلی نماز نہ ہوئی، اور یہ دوسرا شخص گناہگار ہوا، اور فتویٰ شرعی کو زمین پر پھینک دینے سے اس کا حکم بہت سخت ہو گیا۔ عالمگیری وغیرہ میں اسے کفر تک لکھا ہے۔ یہ جدید شخص امام بنانے کے لائق نہیں، واللہ تعالٰی اعلم۔

Fatawa Rizviya, Volume 6

Issue Number 622: From Kali Nagar, Pargana Puranpur, District Pilibhit, sent by Akbar Ali Sahib, 5 Jamadi-ul-Akhirah. What do the scholars of religion say about a person who has been leading prayers for a long time and is the congregational leader (Imam) by the advice of Muslims? After becoming the Imam, he caused an unlawful act (haram) to occur in his house and had an unlawful pregnancy of a woman buried in his house. Should he continue to lead prayers or not?

The Answer: If it is proven that he caused the unlawful act, or gathered the means for it, or was in any way involved or satisfied with it, then he is a transgressor (fasiq) and must never lead the prayers. If none of these occurred, but rather the woman, God forbid, became involved in the unlawful act and became pregnant, and he caused an abortion to conceal her shame before the fetus had life, then there is no blame on him; rather, concealing shame is a good deed. And Allah Almighty knows best.

Issue Number 623: From Kali Nagar, Pargana Puranpur, District Pilibhit, sent by Akbar Ali Khan, 5 Jamadi-ul-Akhirah 1322 AH. What do the scholars of religion and the jurists of the clear Shari'ah say in this matter: The Imam lied for his own benefit and said, "My house caught fire." Has this caused any difference in the Imam's leadership, and is this Imam fit for leadership or not?

The Answer: If he lied and deceived the people to collect some money from them, then he is a transgressor (fasiq) and should be removed from leadership. If this was not the intention, then the intention should be clarified so that an answer can be given. Writing such vague words in a question is foolishness. And Allah Almighty knows best.

Issue Number 624: From Pilibhit, Mohalla Munir Khan, sent by Janab Maulana Molvi Wasi Ahmad Sahib Muhaddith Surati (may Allah Almighty have mercy on him): What do the scholars of religion say in these matters: (1) Is inheritance legally applicable in the position of Imam, such that if an Imam dies, someone from his offspring or family must necessarily become the Imam, and if a stranger becomes the Imam, it is an interference in their rights? (2) Is the position of Imam a family right in the school of thought of Ahl-us-Sunnah, such that after an Imam, going outside his family is an infringement on their rights? (3) Does the original right to the position of Imam belong to the scholars of religion or to the ignorant? (4) If the scholars of religion are legally the most entitled and appropriate for the position of Imam, then those who, despite the presence of religious, pious, devout scholars who meet all the conditions

of leadership, make or want to make ignorant people Imams, or strive for this, are they legally blamed or not? (5) Is the ruling for leading the five daily prayers, Friday prayers, and Eid prayers the same, or is there a difference?

फ़तावा रज़विया, खंड 6

मसला नंबर 622: कली नागर, परगना पूरनपुर, जिला पीलीभीत से अकबर अली साहब द्वारा प्रेषित, 5 जमादी-उल-आखिरह। धर्म के विद्वान क्या कहते हैं कि एक व्यक्ति लंबे समय से इमामत (प्रार्थना का नेतृत्व) कर रहा है और मुसलमानों की सलाह से पेश इमाम (नमाज़ पढ़ाने वाला) है। इमामत करने के बाद, उस पेश इमाम ने अपने घर में हराम (अवैध कार्य) कराया और एक महिला के हराम गर्भ को अपने घर में दफन करवाया। तो अब उसे इमामत करनी चाहिए या नहीं?

अल-जवाब (उत्तर): यदि यह सिद्ध हो जाए कि उसने हराम कराया या हराम का सामान जुटाया या हराम में किसी तरह का प्रयास किया या उस पर प्रसन्न हुआ, तो वह फासिक (पापी) है और उसे कभी भी इमामत नहीं करनी चाहिए। और यदि इनमें से कुछ भी नहीं था, बल्कि महिला किसी तरह (अल्लाह की पनाह) हराम में शामिल हो गई और गर्भवती हो गई, और उसने उसकी पर्दापोशी (पर्दा रखने) के लिए गर्भपात कराया जबकि अभी भ्रूण में जान नहीं पड़ी थी, तो उस पर कोई आरोप नहीं है, बल्कि पर्दापोशी एक अच्छा कार्य है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 623: कली नागर, परगना पूरनपुर, जिला पीलीभीत से अकबर अली खान द्वारा प्रेषित, 5 जमादी-उल-उखरा 1322 हिजरी। धर्म के विद्वान और शरीअत के मुफ़्ती इस मसले में क्या कहते हैं कि पेश इमाम ने अपने फायदे के लिए झूठ बोला और कहा कि "मेरे घर में आग लग गई है", तो क्या इससे पेश इमाम की इमामत में कोई अंतर आया और क्या यह पेश इमाम इमामत के योग्य है या नहीं?

अल-जवाब (उत्तर): यदि उसने झूठ बोलकर लोगों को धोखा दिया और उनसे कुछ धन प्राप्त किया, तो वह फासिक (पापी) है और उसे इमामत से हटा दिया जाना चाहिए। और यदि इसका अर्थ यह नहीं है, तो अर्थ स्पष्ट किया जाना चाहिए ताकि उसका उत्तर दिया जा सके, प्रश्न में ऐसे अस्पष्ट शब्द लिखना मूर्खता है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 624: पीलीभीत, मोहल्ला मुनीर खान से, जनाब मौलाना मौलवी वसी अहमद साहब मुहद्दिस सूरती (अल्लाह तआला उन पर रहम फरमाए) द्वारा प्रेषित: धर्म के विद्वान इन मसलों में क्या कहते हैं: (1) क्या इमामत में शरीअत के अनुसार विरासत (उत्तराधिकार) लागू होती है कि यदि इमाम मर जाए तो उसके बाद उसकी ही संतान या परिवार से इमाम होना आवश्यक है, और यदि कोई अन्य व्यक्ति इमाम बने तो यह उनके अधिकार में हस्तक्षेप माना जाएगा? (2) क्या अहले सुन्नत के पंथ

में इमामत एक पारिवारिक अधिकार है कि इमाम के बाद उसके परिवार से बाहर जाना उनके अधिकारों का हनन है? (3) इमामत का असली अधिकार धर्म के विद्वानों का है या अज्ञानियों (जाहिलों) का? (4) यदि शरीअत के अनुसार इमामत के सबसे अधिक पात्र और योग्य विद्वान हैं, तो जो लोग धर्म के विद्वान, नेक, धर्मनिष्ठ और इमामत की सभी शर्तों को पूरा करने वाले लोगों की उपस्थिति में अज्ञानियों को इमाम बनाएं या बनाना चाहें या इसके लिए प्रयास करें, क्या शरीअत के अनुसार उन पर कोई आरोप है या नहीं? (5) पांच वक्त की नमाज़ की इमामत और जुमा व ईदैन (ईद की नमाज़ों) की इमामत का आदेश एक ही है या इनमें कोई अंतर है?

فتاوی رضویہ جلد ششم

مسئلہ نمبر ۶۲۲ : از کلی ناگر پر گنہ پورن پور ضلع پیلی بھیت مرسلہ اکبر علی صاحب ۵ جمادی الآخرہ۔ کیا فرماتے ہیں علمائے دین کہ ایک شخص مدت دراز سے امامت کرتا ہے اور بہ مشورہ اہل اسلام پیش امام ہے اور بعد اس امامت کرنے کے پیش امام نے اپنے گھر میں حرام کرایا اور ایک عورت کا حرام پیٹ اپنے گھر میں گڑوایا تو اب اس کو امامت کرنی چاہئے یا نہیں ؟

الجواب: اگر ثابت ہو کہ اس نے حرام کروایا یا حرام کا سامان جمع کیا یا حرام میں کسی طرح ساعی ہوا یا اس پر راضی ہوا تو وہ فاسق ہے اُسے ہرگز امامت نہ کرنی چاہئے اور اگر ان میں سے کچھ نہ تھا بلکہ عورت کسی طرح معاذ اللہ حرام میں مبتلا ہوئی اور اُسے حمل رہا اُس نے اس کی پردہ پوشی کے لئے اسقاط حمل کروایا جبکہ بچہ میں جان نہ پڑی تھی تو اس پر الزام نہیں بلکہ پردہ پوشی امر حسن ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۶۲۳ : از کلی ناگر پر گنہ پورن پور ضلع پیلی بھیت مرسلہ اکبر علی خان ۵ جمادی الاخری ۱۳۲۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین ومفتیان شرع متین اس مسئلہ میں کہ پیش امام نے اپنے نفس کے واسطے جھوٹ بولا اور یہ کہا میرے گھر آگ لگ گئی ہے تو اس سے پیش امام کی امامت میں فرق تو نہیں آیا اور یہ پیش امام امامت کے لائق ہے یا نہیں ؟

الجواب: اگر اس نے جھوٹ بول کر لوگوں کو دھو کہ دیا اُن سے کچھ مال وصول کیا تو وہ فاسق ہے امامت سے معزول کیا جائے اور اگر مراد یہ نہیں تو مراد واضح کی جائے کہ اُس کا جواب دیا جائے، ایسے گول الفاظ سوال میں لکھنا نادانی ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۶۲۴: از پیلی بھیت محلہ منیر خاں مرسلہ جناب مولانا مولوی وصی احمد صاحب محدث سورتی رحمۃ اللہ تعالیٰ : کیا فرماتے ہیں علمائے دین ان مسائل میں : (۱) کیا امامت میں شرعاً وراثت جاری ہے کہ امام مر جائے تو اُس کے بعد اُسی کی اولاد یا خاندان سے امام ہونا ضرور ہے، غیر شخص امام ہو تو ان کے حق میں دست اندازی ہو۔ (۲) کیا اہلسنت کے مذہب میں امامت حق خاندانی ہے کہ امام کے بعد اُس کے خاندان سے باہر جانا اُن کی حق تلفی ہے۔ (۳) امامت اصل حق علمائے دین کا ہے یا جاہلوں کا۔ (۴) اگر امامت کے شرعاً احق و الیق علماء ہیں تو جو لوگ عالم دین، صالح، متدین، جامع جملہ شرائط امامت کے ہوتے ہوئے جاہلوں کو امام بنائیں یا بننا چاہیں یا اس میں کوشش کریں اُن پر شرعاً الزام ہے یا نہیں۔ (۵) امامت پنجگانہ و امامت جمعہ و عیدین کا ایک ہی حکم ہے یا کیا فرق ہے۔

(6) If imamate (leadership in prayer) has been in a certain family since long ago, then the Muslims became displeased with one person from them and removed him from the imamate, and despite there being two or three other similar persons in that family, they chose a religious scholar for the imamate, and for years that scholar or his deputy led the Friday prayer, and the people of that family also performed the Friday prayer behind him without dispute. Then after many years, those people suddenly claim that the imamate is our hereditary right and on this basis want to take away the imamate from the scholar, then is this act of theirs commendable or blameworthy and forbidden, and is this claim admissible or forbidden and rejected? And if these people now present a sealed document from the era of Islamic rule showing that the imamate belongs to our family, is that document Sharia-valid or not?

(7) If these people, in order to reject the preference of religious knowledge over themselves, present the Hadith "Pray behind every righteous person and sinner," is their reasoning correct or invalid? Clarify and you shall be rewarded.

The Answer:

(1) Inheritance is not applicable in imamate; otherwise, it would be distributed according to the shares of inheritance, and according to the command of the noble verse: "Allah instructs you concerning your children: for the male, what is equal to the share of two females" [Surah An-Nisa 4:11] (i.e., sons get a double share and daughters a single share). And according to the command of the noble verse: "But if you leave a child, then for them [the wives] is an eighth of what you leave" [Surah An-Nisa 4:12]. On the eighth day, their imamate would go to the wife, rather, even unborn children would get a share of the imamate as they too are legal heirs. The fact that women and children are fundamentally not eligible for imamate is a clear proof that there is no inheritance in imamate, as hereditary inheritance can only occur in something that can reach every heir; rather, it must reach all of them together, and multiplicity in imamate is impossible. So on what basis can it be said that after an Imam, the imamate must remain among his heirs? This is blatant and manifest ignorance. It is stated in Radd al-Muhtar:

Translation of Arabic Text

Their belief that the father's livelihood is for his son is not beneficial because it involves changing the ruling of Sharia, violating the donor's (waqif's) condition, and granting stipends for teaching, imamate, etc., to those who are ineligible. Similarly, their belief that when the most prudent person, in his terminal illness...

Original Urdu Text

Their belief that the father's livelihood is for his son is not beneficial, because in it is the change of the Sharia command and opposition to the donor's condition, and the granting of stipends for teaching, imamate etc. to the undeserving. Similarly, their belief that the most sensible person, in his terminal illness when his...

1. Al-Quran 4:11
2. Al-Quran 4:12
3. Radd al-Muhtar, Topic regarding what has become common in our time about delegating the oversight of endowments to a minor, printed by Mustafa al-Babi, Egypt 3/422.

(६) अगर किसी घराने में पहले से इमामत रही हो, फिर उनमें से एक व्यक्ति से मुसलमान नाराज़ होकर उसे इमामत से हटा दें, और बावजूद इसके कि उस खानदान में दो-तीन और उसी जैसे व्यक्ति मौजूद हों, उनके होते हुए एक आलिम-ए-दीन (धार्मिक विद्वान) को इमामत के लिए चुना गया हो और बरसों उस आलिम या उसके प्रतिनिधि ने जुमे की नमाज़ पढ़ाई हो और उस घराने वालों ने भी बिना किसी विवाद के उसके पीछे जुमे की नमाज़ पढ़ी हो, फिर कई साल बाद अचानक वे लोग दावा करें कि इमामत हमारा खानदानी हक़ है और इस आधार पर आलिम से इमामत छीनना चाहें, तो उनका यह कृत्य प्रशंसनीय है या निंदनीय और वर्जित? और क्या यह दावा सुनवाई के योग्य है या वर्जित और निरस्त? और अगर अब ये लोग इस्लामी हुकूमत के दौर का कोई मोहर लगा हुआ दस्तावेज़ पेश करें कि इमामत हमारे ही खानदान की है, तो वह दस्तावेज़ शरीयत की दृष्टि से मान्य है या नहीं।

(७) अगर ये लोग अपने ऊपर दीनी ज्ञान की प्राथमिकता को नकारने के लिए यह हदीस पेश करें: "हर नेक और गुनहगार के पीछे नमाज़ पढ़ लो," तो उनका यह तर्क सही है या गलत? स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिलेगा।

उत्तर:

(१) इमामत में विरासत (उत्तराधिकार) लागू नहीं होती, अन्यथा इसे निर्धारित हिस्सों (सहम) के अनुसार विभाजित किया जाता और पवित्र आयत के आदेशानुसार: "अल्लाह तुम्हें तुम्हारी औलाद के बारे में हुक्म देता है कि दो बेटियों के बराबर बेटे का हिस्सा होगा।" [सूरह अन-निसा ४:११] (अर्थात् बेटों को दोहरा हिस्सा और बेटियों को इकहरा हिस्सा मिलेगा)। और पवित्र आयत के आदेशानुसार: "फिर अगर तुम्हारी औलाद हो, तो उनके(पत्नियों) के लिए तुम्हारे छोड़े हुए माल का आठवां हिस्सा है।" [सूरह अन-निसा ४:१२]। आठवें दिन उनकी इमामत पत्नी को मिलती, बल्कि गर्भ में पल रहे बच्चे भी इमामत का हिस्सा पाते क्योंकि शरीयत के अनुसार वे भी वारिस हैं। महिलाओं और बच्चों का मौलिक रूप से इमामत के योग्य न होना ही इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि इमामत में विरासत नहीं है, क्योंकि खानदानी विरासत उसी वस्तु में चल सकती है जो हर वारिस तक पहुँच सके, बल्कि सबका एक साथ पहुँचना ज़रूरी है, और इमामत में बहुलता (तअद्दुद) असंभव है। तो किस आधार पर कहा जा सकता है कि इमाम के बाद उसके वारिसों में ही इमामत अनिवार्य है? यह सरासर घोर अज्ञानता है। रद्द-अल-मुह्तार में है:

अरबी पाठ का अनुवाद	मूल उर्दू पाठ
उनका यह विश्वास कि पिता की रोज़ी बेटे के लिए है, लाभकारी नहीं है क्योंकि इसमें शरीयत के आदेश को बदलना, वक़्फ़ करने वाले (वाक़िफ़) की शर्त का उल्लंघन करना और शिक्षण, इमामत आदि के पद अयोग्य लोगों को देना शामिल है। इसी प्रकार उनका यह विश्वास कि जब सबसे अधिक बुद्धिमान व्यक्ति अपनी मृत्युशैया पर...	उनका यह विश्वास कि पिता की रोज़ी बेटे के लिए है, फायदेमंद नहीं है, क्योंकि इसमें शरीयत के हुक्म का बदलाव है और वाक़िफ़ की शर्त का विरोध है और शिक्षण, इमामत आदि पर अयोग्य के लिए वज़ीफ़ा प्रदान करना है। इसी तरह उनका यह विश्वास कि ज़्यादा अक्ल वाला अपनी मौत की बीमारी में जब अपनी...

१ अल-क़ुरआन ४/११ २ अल-क़ुरआन ४/१२ ३ रद्द अल-मुह्तार, विषय: हमारे समय में नाबालिगों को वक़्फ़ की निगरानी सौंपने के बारे में जो प्रचलित है, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र ३/४२२ द्वारा मुद्रित।

पेज ५१३ / ७३६

(۶) اگر کسی گھرانے میں سابق سے امامت رہی پھر ان کے ایک شخص سے مسلمانوں نے ناراض ہو کر اسے امامت سے معزول کیا ہو اور باآنکہ اس خاندان میں دو تین شخص اور اسی کے مثل موجود ہوں ان کے ہوتے ہوئے ایک عالم دین کو امامت کے لئے منتخب کیا اور برسوں اس عالم یا اُس کے نائب نے جمعہ پڑھایا اور اس گھرانے والوں نے بھی بلا نزاع اُس کے پیچھے نمازِ جمعہ پڑھی ہو پھر کئی سال کے بعد دفعۃً وہ لوگ مدعی ہوں کہ امامت ہمارا حق خاندانی ہے اور اس بناء پر عالم کی امامت چھیننا چاہیں تو ان کا یہ فعل محمود یامذ موم و ممنوع، اور یہ دعویٰ مسموع ہے یا ممنوع و مدفوع، اور اگر اب یہ لوگ زمانہ ریاست اسلام کی کوئی سند مہری ظاہر کریں کہ امامت ہمارے ہی خاندان کی ہے تو وہ سند شرعاً مستند ہے یا نہیں۔

(۷) اگر یہ لوگ اپنے اوپر علمِ دین کی ترجیح دفع کرنے کو حدیث صلوا خلف کل بر وفاجر (ہر نیک اور فاجر کے پیچھے نماز ادا کرلو۔ت) پیش کریں تو ان کا استدلال صحیح ہے یا باطل۔ بینوا توجروا۔

الجواب:

(۱) امامت میں وراثت جاری نہیں ورنہ سہام فرائض پر تقسیم ہو اور بحکم آیہ کریمہ یُوْصِیْكُمُ اللّٰهُ فِیْۤ اَوْلَادِكُمْ لِلذَّكَرِ مِثْلُ حَظِّ الْاُنْثَیَیْنِ (۱) اللہ تعالیٰ تمہاری اولاد کے بارے میں حکم دیتا ہے کہ دو بیٹیوں کے برابر بیٹے کا حصہ ہو گا۔ت) دوہرا حصہ بیٹوں کو ملے اور اکہرا بیٹیوں کو اور بحکم آیہ کریمہ فَاِنْ كَانَ لَكُمْ وَلَدٌ فَلَهُنَّ الثُّمُنُ مِمَّا تَرَكْتُمْ (۲) (ان بیویوں کے لئے آٹھواں حصہ ہے اگر خاوند اولاد چھوڑ گئے ہوں۔ت) آٹھویں دن ان کی امامت بی بی کو ملے بلکہ پیٹ کے بچے بھی امامت کا

حصہ پائیں کہ شرعاً وارث تو وہ بھی ہیں، عورات و اطفال کا اصلاً اہل امامت نہ ہونا ہی دلیلِ واضح کہ امامت میں وراثت نہیں کہ وراثت خاندانی اُسی شئی میں جاری ہو سکتی ہے جو ہر وارث کو پہنچ سکے بلکہ سب کو معاً پہنچنا لازم، اور امامت میں تعدد محال، تو کس بنا پر کہا جاسکتا ہے کہ امام کے بعد اُس کے وارثوں ہی میں امامت ضرور ہے، یہ صریح جہلِ مبین ہے۔ ردالمحتار میں ہے:

عربی متن	اردو ترجمہ
اعتقادهم ان خبز الاب لابنه لايفيد لما فيه من تغير حكم الشرع ومخالفة شرط الواقف واعطاء الوظائف من تدريس وامامة وغيرها الى غير مستحقها وكذلک اعتقادهم ان الارشد اذا مات	ان کا یہ اعتقاد کہ باپ کی روزی بیٹے کے لئے ہے مفید نہیں، کیونکہ اس میں حکمِ شرع کی تبدیلی ہے اور واقف کی شرط کی مخالفت ہے اور تدریس، امامت وغیرہ پر غیر مستحق کے لئے وظائف کا عطا کرنا ہے۔ اسی طرح ان کا یہ اعتقاد کہ زیادہ صاحبِ عقل اپنی مرض موت میں جب اپنی

۱ القرآن ۴/۱۱ ۲ القرآن ۴/۱۲ ۳ ردالمحتار مطلب فیما شاع فی زماننا من تفویض نظر الاوقاف للصغیر مطبوعہ مصطفیٰ البابی مصر ۳/ ۴۲۲

Fatawa-e-Razviya Volume 6

[Arabic Text Section] If someone delegates and entrusts rights to whoever they wish during their death-bed illness, it is valid because the choice of a sensible person is correct. Thus, this [contrary view] is invalid because in matters of endowment (Waqf), 'Rushd' (maturity/discretion) is a quality inherent in the 'Rasheed' (mature person). It cannot be acquired by someone just because someone else prefers them, just as an ignorant person cannot become a scholar simply because someone else chooses them for a teaching position. All these matters stem from ignorance and following a custom that contradicts the clear truth due to the arbitration of an impaired intellect. There is no power or might except with Allah, the Most High, the Magnificent. (Summarized) And Allah Knows Best. (T)

(2) In the creed of the Ahl-us-Sunnah, leadership (Imamate) is not a family right; this is a view held by the ignorant among the Rawafid (Shiites). On this basis, according to them, the right to Imamate after the Presence of the Master of the Universe, peace and blessings of Allah be upon him, belonged to the Commander of the Faithful, Mawla Ali, may Allah honor his face. They claim that the Two Shaykhs (Abu Bakr and Umar), may Allah be pleased with them, attained it unjustly (Allah forbid) because Mawla Ali was from the noble family of the Prophet and the Two Shaykhs were not. To this day, they mislead their ignorant masses saying that a family matter cannot go outside the family; how then could Siddiq and Farooq be deserving? The Ahl-us-Sunnah reply that this is not a worldly inheritance but a religious office, and in it, the person who is most virtuous shall remain deserving and foremost. And Allah Knows Best.

(3) Imamate is originally the right of the Holy Prophet, peace and blessings of Allah be upon him, as a Prophet is the Imam of his Ummah. Allah Almighty says: "Indeed, I will make you a leader for the people" (2). (Allah's command is: Undoubtedly I am going to make you an Imam for the people. - T) (2) Now, the Holy Prophet, peace and blessings of Allah be upon him, is the Prophet of Prophets and the Imam of Imams. Every sane person knows that where the principal is not present, his deputy will stand in his place, not a stranger. All Muslims are aware that the scholars of the religion are the deputies of the Holy Prophet, peace and blessings of Allah be upon him, not the ignorant. Therefore, Imamate is the specific right of the scholars; the ignorant have no right to contest them in this at all. Hence, the noble scholars have explicitly stated: "The person most entitled to Imamate is the most knowledgeable of the people."

1. Radd al-Muhtar, topic regarding what is common in our time regarding delegating supervision of endowments to minors, published by Mustafa al-Babi Egypt 3/422.
2. Al-Quran 2/124.

फ़तावा-ए-रज़विया खंड 6

[अरबी पाठ अनुभाग] यदि कोई अपनी मृत्युशय्या की बीमारी के दौरान अपनी इच्छानुसार किसी को अधिकार सौंपता है और सौंपता है, तो यह सही है क्योंकि एक समझदार व्यक्ति का चुनाव सही होता है। अत; यह [विपरीत विचार] अमान्य है क्योंकि वक्फ (बंदोबस्ती) के मामलों में 'रुश्द' (परिपक्वता/विवेक) एक ऐसा गुण है जो 'रशीद' (परिपक्व व्यक्ति) में निहित होता है। यह किसी को केवल इसलिए प्राप्त नहीं हो सकता क्योंकि कोई दूसरा उसे पसंद करता है, ठीक उसी तरह जैसे एक अज्ञानी व्यक्ति केवल इसलिए विद्वान नहीं बन सकता क्योंकि किसी और ने उसे शिक्षण पद के लिए चुना है। ये सभी मामले अज्ञानता और एक ऐसी प्रथा का पालन करने से उत्पन्न होते हैं जो दोषपूर्ण बुद्धि के निर्णय के कारण स्पष्ट सत्य के विपरीत है। अल्लाह के अलावा कोई शक्ति या पराक्रम नहीं है, जो सबसे उच्च और महान है। (संक्षिप्त) और अल्लाह बेहतर जानता है। (त)

(२) अहल-उस-सुन्नत के पंथ में, इमामत (नेतृत्व) कोई पारिवारिक अधिकार नहीं है; यह राफ़िदियों (शियाओं) के बीच अज्ञानियों का विचार है। इसी आधार पर, उनके अनुसार, ब्रह्मांड के स्वामी, सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की उपस्थिति के बाद इमामत का अधिकार अमीर-उल-मोमिनीन, मौला अली, करम अल्लाहु वजहुह का था। उनके अनुसार शेखन (अबू बक्र और उमर), रज़ियल्लाहु अन्हुमा को यह अधिकार गलत तरीके से मिला (अल्लाह न करे) क्योंकि मौला अली नबी के पाक घराने से थे और शेखन नहीं थे। आज तक, वे अपने अज्ञानी जनसमूह को यह कहकर गुमराह करते हैं कि परिवार की चीज़ परिवार से बाहर नहीं जा सकती; फिर सिद्दीक और फारूक कैसे इसके हकदार हो गए? अहल-उस-सुन्नत यही उत्तर देते हैं कि यह सांसारिक विरासत नहीं बल्कि एक धार्मिक पद है, और इसमें वही व्यक्ति हकदार और अग्रणी रहेगा जो सबसे श्रेष्ठ हो। और अल्लाह बेहतर जानता है।

(३) इमामत वास्तव में पवित्र नबी, सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का अधिकार है, क्योंकि नबी अपनी उम्मत का इमाम होता है। अल्लाह तआला का फरमान है: "निश्चित रूप से, मैं तुम्हें लोगों के लिए एक इमाम (नेता) बनाऊँगा" (२)। (अल्लाह का फरमान है: निःसंदेह मैं तुम्हें लोगों का इमाम बनाने वाला हूँ। - त) (२) अब, पवित्र नबी, सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम, नबियों के नबी और इमामों के इमाम हैं। हर समझदार व्यक्ति जानता है कि जहाँ मूल व्यक्ति मौजूद न हो, वहाँ उनका प्रतिनिधि ही उनका स्थान लेगा, न कि कोई अजनबी। सभी मुसलमान जानते हैं कि दीन के विद्वान ही पवित्र नबी, सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के उत्तराधिकारी (प्रतिनिधि) हैं, न कि अज्ञानी। इसलिए, इमामत विद्वानों

का विशेष अधिकार है; अज्ञानियों को इसमें उनके साथ विवाद करने का कोई अधिकार नहीं है। इसीलिए, महान विद्वानों ने स्पष्ट रूप से कहा है: "इमामत का सबसे अधिक हकदार कौम (लोगों) में सबसे अधिक ज्ञानी व्यक्ति है।"

---

1. रद-अल-मुह्तार, हमारे समय में वक्फ के निरीक्षण को नाबालिगों को सौंपने के संबंध में प्रचलित विषय, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र द्वारा प्रकाशित ३/४२२।
2. अल-कुरान २/१२४।

पृष्ठ ७३६ का ५१४

فوض واسند فی مرض موتہ لمن اراد صح لان مختار الارشد ارشد فھو باطل لان الرشد صفة قائمة بالرشید لاتحصل له بمجرد اختیار غیره له کما لا یصیر الشخص الجاھل عالما بمجرد اختیار الغیرله فی وظیفة التدریس وکل ھذه امورنا شئة عن الجھل واتباع العادة المخالفة لصریح الحق بمجرد تحکیم العقل المختل ولا حول ولا قوة الا باللہ العلی العظیم ۱(ملخصاً) واللہ تعالٰی اعلم

مرضی کے مطابق کسی کو حقوق تفویض کردیتا ہے تو صحیح ہے کیونکہ عقلمند کا اختیار درست ہی ہوتا ہے، پس یہ باطل کیونکہ وقف کے معاملات میں رشد ایسی صفت ہے جو رشید کے ساتھ قائم ہوتی ہے، یہ محض غیر کی پسندیدگی کی وجہ سے کسی کو حاصل نہیں ہوجاتی، جیسا کہ جاہل شخص کے لئے غیر کے محض وظیفہ تدریس پسند کرنے سے جاہل عالم نہیں بن سکتا، یہ تمام امور جہالت اور ایسی عادت پر مبنی ہیں جو عقل میں خلل کی بنا پر صریح حق خلاف حکم جاری کرتی ہے لا حول ولا قوۃ الا باللہ العلی العظیم (ملخصاً) واللہ تعالیٰ اعلم (ت)

(۲) اہل سنت کے مذہب میں امامت حق خاندانی نہیں کہ یہ رافضیوں میں جاہل رافضیوں کا خیال ہے۔ اسی بنا پر ان کے نزدیک امامت بعد حضور سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے حق امیر المومنین مولیٰ علی کرم اللہ وجہہ تھی۔ شیخین رضی اللہ تعالیٰ عنہما کو معاذ اللہ ناحق پہنچی کہ مولیٰ علی حضور کے خاندانِ اقدس میں سے تھے نہ شیخین رضی اللہ تعالیٰ عنہم اجمعین، آج تک ان کے جاہل عوام کو یہی بہکاتے ہیں کہ خاندان کی چیز خاندان سے باہر نہیں جا سکتی صدیق و فاروق کیونکر مستحق ہو گئے، اور اہل سنت یہی جواب دیتے ہیں کہ یہ دنیوی وراثت نہیں دینی منصب ہے اور میں وہی مستحق و مقدم رہے گا جو افضل ہو۔ واللہ تعالیٰ اعلم

(۳) امامت اصل حق حضور اقدس صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کا ہے کہ نبی اپنی امت کا امام ہوتا ہے قال اللہ تعالیٰ اِنِّیْ جَاعِلُكَ لِلنَّاسِ اِمَامًا ۲ (اللہ تعالیٰ کا فرمان ہے بلاشبہ میں آپ کو لوگوں کا امام بنانے والا ہوں۔ ت) (۲) اب حضور اقدس صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم تو نبی الانبیاء و امام الائمہ ہیں صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم، اور ہر عاقل جانتا ہے جہاں اصل تشریف فرما نہ ہو وہاں اس کا نائب ہی قائم ہوگا نہ کہ غیر اور تمام مسلمان آگاہ ہیں کہ علمائے دین ہی نائبان حضور صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم ہیں نہ جہال، تو امامت خاص حق علماء ہے اس میں جہال کو ان سے منازعت کا اصلاً حق نہیں، ولہذا علمائے کرام نے تصریح فرمائی ہے الحق بالامامۃ اعلم قوم ہے۔

---

۱ ردالمحتار مطلب فیما شاع فی زماننا من تفویض نظر الاوقاف للصغیر مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۳/ ۴۲۲ ۲ القرآن ۲/ ۱۲۴

Fatawa Ridawiyya, Volume 6

It is stated in Tanwir al-Absar, Durr al-Mukhtar, and others:

The one most worthy of precedence in leadership, or rather explicitly appointed according to Majma' al-Anhur, is the one most knowledgeable in the rules of prayer.[1]

For leadership, to be prioritized or rather appointed, the most rightful according to Majma' al-Anhur is the person who is most aware of the rules of prayer. (T)

(4) Indeed, whoever strives to make ignorant people Imams in opposition to a religious scholar is an opponent of the pure Sharia and a traitor to Allah, His Messenger, and all Muslims. Hakim, Uqayli, Tabarani, Ibn Adi, and Khatib Baghdadi narrated from Hazrat Abdullah bin Abbas (may Allah be pleased with them) that the Radiant Prophet, Master of the World (peace and blessings of Allah be upon him), said:

"Whoever appoints a man from a group when there is among them someone more pleasing to Allah than him, has betrayed Allah, His Messenger, and the believers."[2]

Whoever appoints a person from a group for a task while there is someone among them more beloved to Allah Almighty than him, indeed has committed treachery against Allah, the Messenger, and all Muslims. (T)

(5) The leadership (Imamat) of Friday (Jumu'ah), the two Eids, and solar eclipses (Kusuf) is much more restricted than the leadership of the five daily prayers. In the five daily prayers, every person who has correct faith, correct recitation, correct purification, is a sane, adult male, and not excused can lead the prayer; meaning the prayer behind him will be valid even if it is 'Makruh Tahrimi' (prohibitively disliked) and obligatory to repeat due to sinfulness etc. 'Prayer is permissible behind every righteous and sinful person' (T) has this very meaning. But in Jumu'ah, Eidayn, and Kusuf, no one can lead the prayer, even if he is a Hafiz, Qari, pious, and possesses all virtues, except for the one who is the Imam of the general Muslims by the command of Sharia, having a general right to leadership over them, or one authorized and appointed by such an Imam. And this right is established in order only in three ways: First: He is the Sultan (Ruler) of Islam. Second: Where there is no Islamic rule, the general leadership belongs to the most learned of the scholars of that city. Third: Where even this is not possible, the general Muslims can appoint someone out of necessity. Without these cases, the person who neither himself...

[1] Durr al-Mukhtar, Chapter on Leadership, printed by Mujtabai Delhi, 1/82. [2] Al-Mustadrak 'ala al-Sahihayn, leadership is a trust, printed by Dar al-Fikr Beirut, 4/92. Note: In Mustadrak, the word 'fi tilka al-'asaba' is used instead of 'fihim'. Nazir Ahmad Saeedi.

फ़तावा रज़विया, खंड 6

'तनवीर अल-अबसार', 'दुर्रे मुख्तार' आदि में है:

इमामत (नेतृत्व) के लिए प्राथमिकता के योग्य, बल्कि 'मजमा अल-अन्हुर' के अनुसार स्पष्ट रूप से नियुक्त, वह है जो नमाज़ के नियमों को सबसे अधिक जानता हो।[1]

इमामत के लिए प्राथमिकता देने, बल्कि नियुक्त करने में अधिक हकदार 'मजमा अल-अन्हुर' के अनुसार वह व्यक्ति है जो नमाज़ के नियमों से अधिक अवगत हो। (त)

(4) वास्तव में, जो कोई धार्मिक विद्वान के मुकाबले अज्ञानियों को इमाम बनाने की कोशिश करता है, वह पवित्र शरीयत का विरोधी है और अल्लाह, उसके रसूल और सभी मुसलमानों का गद्दार है। हाकिम, उकैली, तबरानी, इब्न अदी और खतीब बगदादी ने हजरत अब्दुल्ला बिन अब्बास (अल्लाह उन दोनों से प्रसन्न हो) से रिवायत की है कि हुज़ूर पुर नूर सैयदे आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया:

"जिसने किसी समूह में से एक व्यक्ति को नियुक्त किया जबकि उनमें कोई ऐसा व्यक्ति मौजूद था जो अल्लाह को उससे अधिक प्रिय है, तो उसने अल्लाह, उसके रसूल और ईमान वालों के साथ विश्वासघात किया।"[2]

जो किसी जमात में से किसी व्यक्ति को काम के लिए नियुक्त करे और उनमें वह मौजूद हो जो अल्लाह अज़्ज़-व-जल्ल को उससे अधिक पसंदीदा है, तो बेशक उसने अल्लाह, रसूल और मुसलमानों, सभी के साथ खयानत की। (त)

(5) जुमा, ईदैन और कुसूफ (सूर्य ग्रहण) की इमामत, पांच वक्त की नमाज़ की इमामत से बहुत अधिक संकुचित है। पांच वक्त की नमाज़ में हर व्यक्ति जो सही ईमान वाला, सही क़िरत (पाठ) करने वाला, सही पाकी वाला, बुद्धिमान पुरुष, बालिग और गैर-माज़ूर (अक्षम नहीं) हो, इमामत कर सकता है; यानी उसके पीछे नमाज़ हो जाएगी, चाहे वह फिक़ (पाप) आदि के कारण मकरूहे तहरीमी और फिर से पढ़ने के योग्य हो। 'हर नेक और गुनहगार के पीछे नमाज़ जायज़ है' (त) का यही अर्थ है। लेकिन जुमा, ईदैन और कुसूफ में कोई इमामत नहीं कर सकता, चाहे वह हाफ़िज़, क़ारी, मुत्तकी (परहेजगार) आदि गुणों का संग्रह ही क्यों न हो, सिवाय उसके जो शरीयत के हुक्म से आम मुसलमानों का खुद इमाम हो कि आमतौर पर उन पर इमामत का अधिकार रखता हो, या ऐसे इमाम द्वारा अधिकृत और नियुक्त किया गया हो। और यह अधिकार क्रमानुसार केवल तीन तरह से सिद्ध

होता है: पहला: वह सुल्तान-ए-इस्लाम (इस्लामी शासक) हो। दूसरा: जहाँ इस्लामी शासन नहीं है, वहाँ आम इमामत उस शहर के सबसे बड़े विद्वान (आलिम) को प्राप्त है। तीसरा: जहाँ यह भी न हो, वहाँ मजबूरी में आम मुसलमान जिसे नियुक्त कर लें। इन स्थितियों के बिना जो व्यक्ति न तो खुद...

---

[1] दुर्रे मुख्तार, बाब अल-इमामत, मुजतबाई दिल्ली द्वारा प्रकाशित, 1/82। [2] अल-मुस्तदरक अलल सहीहैन, अल-इमारत अमानत, दारुल फिक्र बेरूत द्वारा प्रकाशित, 4/92। टिप्पणी: मुस्तदरक में 'फीहिम' के स्थान पर 'फी तिल्कल असाबा' शब्द है। नज़ीर अहमद सईदी।

فتاوی رضویہ جلد ششم

تنویر الابصار ودرِ مختار وغیرہما میں ہے :

الاحق بالامامۃ تقدیما بل نصا امامت کے لئے مقدم ہونے بلالکہ مقرر کرنے میں زیادہ حقدار

مجمع الانہر الاعلم باحکام وہ ہے مجمع الانہر جو شخص احکام نماز سے زیادہ آگاہ ہو۔

الصلوۃ۔[1] (ت)

(۴) بیشک جو عالم دین کے مقابل جاہلوں کو امام بنانے میں کوشش کرے وہ شریعتِ مطہرہ کا مخالف اور اللہ و رسول اور مسلمانوں سب کا خائن ہے۔ حاکم، عقیلی، طبرانی وابن عدی وخطیب بغدادی نے حضرت عبداللہ بن عباس رضی اللہ تعالٰی عنہما سے روایت کی حضور پر نور سید عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا:

من استعمل رجلا من عصابۃ جو کسی جماعت سے ایک شخص کو کام مقرر کرے اور ان میں

وفیھم من ھوارضی اللہ منہ فقد وہ موجود ہو جو اللہ عزوجل کو اس سے زیادہ پسندیدہ ہے

خان اللہ ورسولہ و المؤمنین۔[2] بیشک اس نے اللہ ورسول اور مسلمانوں سب کے ساتھ خیانت کی۔ (ت)

(۵) امامتِ جمعہ و عیدین و کسوف، امامتِ نمازِ پنجگانہ سے بہت تنگ تر ہے۔ پنجگانہ میں ہر شخص صحیح الایمان، صحیح القراۃ، صحیح الطہارۃ، مرد عاقل، بالغ، غیر معذور امامت کر سکتا ہے یعنی اس کے پیچھے نماز ہو جائے گی اگر چہ بوجہ فسق وغیرہ مکروہِ تحریمی واجب الاعادہ ہو، تجوز الصلوۃ خلف کل بر و فاجر (نماز ہر نیک وفاجر کے پیچھے جائز ہے۔ت) کے یہی معنی ہیں مگر جمعہ و عیدین و کسوف میں کوئی امامت نہیں کر سکتا اگر چہ حافظ قاری متقی وغیرہ

فضائل کا جامع ہو مگر وہ جو بحکم شرع عام مسلمانوں کا خود امام ہو کہ بالعموم ان پر استحقاقِ امامت رکھتا ہو، یا ایسے امام کا ماذون ومقرر کردہ ہو اور یہ استحقاق علی الترتیب صرف تین طور پر ثابت ہوتا ہے۔ اول: وہ سلطانِ اسلام ہو۔ ثانی: جہاں سلطنتِ اسلام نہیں وہاں امامتِ عامہ اس شہر کے اعلم علمائے کو ہے۔ ثالث: جہاں یہ بھی نہ ہو وہاں بمجبوری عام مسلمان جسے مقرر کر لیں، بغیر ان صورتوں کے جو شخص نہ خود

---

[1] دُرِّمختار باب الامامۃ مطبوعہ مجتبائی دہلی ۸۲/۱ [2] المستدرک علی الصحیحین الامارۃ امانۃ مطبوعہ دارلفکر بیروت ۹۲/۴ ف: مستدرک میں فیھم کی جگہ فی تلک العصابۃ کا لفظ ہے۔ نذیر احمد سعیدی

Such is the Imam, neither a deputy, authorized, nor appointed by such an Imam. His leadership (Imamat) in these prayers is not valid at all; if he leads, the prayer will be absolutely void, and the obligation of the Friday prayer will remain unfulfilled. In those cities where an Islamic Sultan is not present and it is difficult for the entire country to agree on one scholar, the most learned of the city's scholars (A'lam 'Ulama-e-Balad), who is the greatest jurist (Faqih) among the Sunni scholars of that city, shall be their general leader (Imam-e-Aam) in the religious affairs of Muslims, similar to prayers. According to the command of the Great Quran, it is obligatory for them to refer to him and act upon his instructions. He shall lead the Friday (Jumu'ah), Eid prayers, and solar eclipse (Kusoof) prayers himself or appoint whom he deems appropriate. If the common people, on their own, appoint someone as Imam against his choice, it will not be valid because the appointment by commoners out of necessity is only allowed when a general leader (Imam-e-Aam) is not present. In his presence, their decision is of no significance. It is stated in Tanwir al-Absar and Dur al-Mukhtar, Chapter of Friday:

Seven things are stipulated for its validity: first, the city and its outskirts, and second, the Sultan or his appointee for establishing it.[1]	**For the validity of Friday prayer, seven things are a condition: first, the city and the city's outskirts; second, the King himself or the person whom the King of the time has given permission to establish Friday prayer. (T)**

In Fatawa of Imam 'Atabi, then in Hadiqa Nadiyya Sharh Muhammadiyya, printed in Egypt, Vol. 1, p. 440:

When a time is devoid of a competent Sultan, then affairs are entrusted to the scholars, and it is mandatory for the Ummah to refer to them; they become the rulers. If it is difficult to gather them all under one person, then every region becomes independent by following its scholars. If they are many, then the most knowledgeable among them is to be followed. If they are equal, then lots should be cast between them.[2]

When the time is void of a competent Sultan, the matters should be handed over to the scholars, and it will be mandatory for the Ummah to refer to these scholars, and they will be called the rulers. If it becomes difficult to reach a consensus on one person for any matter, then people of every region should follow their own scholars. If there are more scholars, then they should follow the one who is most knowledgeable among them. If everyone is equal, then lot casting should be done. (T)

Allah Almighty says:

Obey Allah and obey the Messenger and those...

Obey Allah and obey His Messenger.

[1] Dur al-Mukhtar, Chapter of Friday, printed by Mujtabai Press, Delhi, 1/109. [2] Hadiqa Nadiyya Sharh Tariqa Muhammadiyya, Third Type in explaining the recommended sciences, printed by Nooriya Rizviya, Faisalabad, 1/351.

फतावा रज़विया जिल्द छठी

ऐसा इमाम है न ऐसे इमाम का कोई नायब, अधिकृत या नियुक्त व्यक्ति, इन नमाज़ों में उसकी इमामत मूलतः सही नहीं है, यदि वह इमामत करेगा तो नमाज़ बिल्कुल बातिल (अमान्य) होगी, जुमा का फ़र्ज़ सिर पर ही रह जाएगा, उन शहरों में जहाँ इस्लामी सुल्तान मौजूद नहीं है और पूरे देश का एक आलिम (विद्वान) पर सहमत होना कठिन है, तो उस शहर के सुन्नी आलिमों में जो सबसे बड़ा फ़क़ीह (धर्मशास्त्र का जानकार) हो, नमाज़ की तरह मुसलमानों के धार्मिक कार्यों में उनका इमाम-ए-आम (सामान्य नेता) हो और क़ुरान-ए-अज़ीम के आदेशानुसार उन पर उसकी ओर रुजू करना और उसके निर्देश पर अमल करना फ़र्ज़ है। जुमा, ईदैन और कुसूफ़ की इमामत वह स्वयं करे या जिसे उचित समझे नियुक्त करे, इसके विरुद्ध यदि आम जनता अपनी मर्ज़ी से किसी को इमाम बनाएगी तो वह सही नहीं होगा क्योंकि मजबूरी में आम जनता द्वारा नियुक्ति तभी मान्य है जब इमाम-ए-आम मौजूद न हो, उसकी उपस्थिति में उनका निर्णय कुछ भी नहीं है। 'तन्वीरुल अबसार' और 'दुर्रे मुख़्तार', बाबुल जुमा में है:

इसकी वैधता के लिए सात चीज़ें अनिवार्य हैं: पहली शहर और उसके बाहरी क्षेत्र, और दूसरी सुल्तान या जुमा क़ायम करने के लिए उसका नियुक्त व्यक्ति।[1]

जुमा की सेहत (वैधता) के लिए सात चीज़ों का होना शर्त है: पहली शहर और फ़ना-ए-शहर (शहर के बाहरी इलाक़े), दूसरी स्वयं बादशाह या वह व्यक्ति जिसे उस समय के बादशाह ने जुमा क़ायम करने की अनुमति दी हो। (त)

'फ़तावा इमाम अताबी' और फिर 'हदीक़ा नदिय्या शरह मुहम्मदिया', मिस्र संस्करण, जिल्द 1, पृष्ठ 440 में है:

जब समय एक सक्षम सुल्तान से रहित हो जाए, तो मामले विद्वानों (उलेमा) को सौंप दिए जाते हैं और उम्मत पर उन विद्वानों की ओर रुजू करना अनिवार्य होगा; वे ही शासक कहलाएँगे। यदि उन सभी को एक व्यक्ति पर इकट्ठा करना कठिन हो जाए, तो प्रत्येक क्षेत्र अपने विद्वानों का अनुसरण करने में स्वतंत्र होगा। यदि विद्वान अधिक हों, तो उनमें जो सबसे अधिक ज्ञानी हो, उसका अनुसरण किया जाए। यदि वे बराबर हों, तो उनके बीच क़ुरआंदाज़ी (लॉटरी) की जाए।[2]

जब ज़माना सक्षम सुल्तान से खाली हो जाए तो मामले उलेमा के सुपुर्द किए जाएँ और उम्मत पर उन उलेमा की तरफ रुजू लाज़िम होगा और वही हुक्मरान कहलाएँगे, अगर किसी मामले पर सब का इत्तेफ़ाक़ मुश्किल हो जाए तो हर इलाक़े वाले अपने उलेमा का अनुसरण करें, अगर ज़्यादा आलिम हों तो जो उनमें सबसे ज़्यादा इल्म वाला हो उसका अनुसरण करें, अगर सब बराबर हों तो क़ुरआंदाज़ी कर ली जाए। (त)

अल्लाह अज़्ज़ व जल फ़रमाता है:

अल्लाह की आज्ञा का पालन करो और उसके रसूल की आज्ञा का पालन करो और उन लोगों की...

अल्लाह की इबादत करो और उसके रसूल की इबादत करो।

[1] दुर्रे मुख़्तार, बाबुल जुमा, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 1/109 [2] हदीक़ा नदिय्या शरह तरीक़ा मुहम्मदिया, अल-नौ-अत-सालिस... नूरिया रज़विया फैसलाबाद, 1/351

ایسا امام ہے نہ ایسے امام کا نائب و ماذون و مقرر کردہ، اس کی امامت ان نمازوں میں اصلاً صحیح نہیں، اگر امامت کرے گا نماز باطل محض ہوگی، جمعہ کا فرض سر پر رہ جائے گا، ان شہروں میں کہ سلطان اسلام موجود نہیں اور تمام ملک کا ایک عالم پر اتفاق دشوار ہے، اعلم علمائے بلد کہ اس شہر کے سنّی عالموں میں سب سے زیادہ فقیہ ہو، نماز کے مثل مسلمانوں کے دینی کاموں میں ان کا امام عام ہو اور بحکم قرآن عظیم ان پر اس کی طرف رجوع اور اس کے ارشاد پر عمل فرض ہے، جمعہ و عیدین و کسوف کی امامت وہ خود کرے یا جسے مناسب جانے مقرر کرے اس کے خلاف پر عوام بطور خود اگر کسی کو امام بنائیں گے صحیح نہ ہوگا کہ عوام کا تقرر بمجبوری اس حالت میں روا رکھا گیا ہے جب امام عام موجود نہ ہو، اس کے ہوتے ہوئے ان کی قرارداد کوئی چیز نہیں۔ تنویر الابصار و در مختار باب الجمعہ میں ہے:

یشترط لصحتھا سبعۃ اشیاء الاول جمعہ کی صحت کے لئے سات اشیاء کا ہونا شرط ہے پہلی شہر المصر وفناءہ والثانی السلطان او اور فناء شہر، دوسری خود بادشاہ یا وہ شخص جس کو بادشاہ مأمورہ بإقامتھا۔[1] وقت نے جمعہ قائم کرنے کی اجازت دی ہو۔ (ت)

فتاوٰی امام عتابی پھر حدیقہ ندیہ شرح محمدیہ مطبوعہ مصر جلد اول ص ۴۴۰ میں ہے:

اذا خلی الزمان من سلطان ذی کفایة فالا مور مؤکلة الی العلماء ویلزم الامة الرجوع الیھم یصیرون ولاة فاذا عسر جمعھم علی واحد استقل کل قطر باتباع علمائه فان کثروا فالمتبع اعلمھم فان استووا اقرع بینھم۔[2]	**جب زمانہ ذی کفایت سلطان سے خالی ہو جائے تو معاملات علماء کے سپرد کئے جائیں اور امت پر ان علماء کی طرف رجوع لازم ہوگا اور وہی حکمران کہلوائیں گے اگر کسی معاملہ پر سب کا اتفاق مشکل ہو جائے تو ہر علاقہ والے اپنے علماء کی اتباع کریں، اگر زیادہ علماء ہوں تو جو ان میں سب سے زیادہ صاحبِ علم ہو اس کی اتباع کریں، اگر سب برابر ہوں تو قرعہ اندازی کرلی جائے۔ (ت)**

اللہ عزوجل فرماتا ہے:

اَطِیْعُوا اللّٰہَ وَ اَطِیْعُوا الرَّسُوْلَ وَ اُولِی الامر کی اطاعت کرو اور اس کے رسول کی اطاعت کرو

[1] درمختار باب الجمعۃ مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱/۱۰۹ [2] حدیقہ ندیہ شرح طریقہ محمدیہ النوع الثالث فی بیان العلوم المندوب الیہا مطبوعہ نوریہ رضویہ فیصل آباد ۱/۳۵۱

Fatawa Ridawiyya, Volume 6 "...and those in authority among you." [Quran 4:59] | And obey those in authority from among yourselves. (T) Imams of religion state that correctly, "those in authority" (Uli al-Amr) in the noble verse refers to the scholars of religion. This has been explicitly stated by Allama al-Zarqani in Sharh al-Mawahib and others. (Allama Zarqani in Sharh al-Mawahib and other scholars in their books have clarified this. T). It is mentioned in Durr al-Mukhtar: The appointment of a khatib by the general public is not valid when the aforementioned individuals are present. | If the aforementioned individuals are not present, then it is permissible for the public to appoint a khatib out of necessity. (T) In Fatawa Qadi Khan, Durr al-Mukhtar, and others, it is stated: If someone delivers a sermon without the Imam's permission while the Imam is present, it is not permissible. | Unless the Imam has commanded him to do so. And Allah knows best. (T) (6) Their dispute with a scholar is blameworthy and forbidden, and their claim is rejected and unheard. It has become clear in previous answers that there is no inheritance in imamate, nor is it anyone's familial right. Rather, it is the right of the scholars of religion, and they are given precedence and preference, especially in the imamate of Friday and Eid prayers, which without their permission is utterly void. The fact that a scholar led the prayers for many years without them objecting is clear evidence that they had no firm entitlement even according to common ideas, that there should be no imam outside their family. At that time, they had no proof; otherwise, they would have presented it. If imamate were their familial right, they would never have remained silent while seeing someone else perform it for many years. Now, this dispute is a new matter. As the Imams of religion clarify, if a person manages something for years and another sees it and does not prevent it, then later claims it is his right, his claim will never be heard. It is in Uqud al-Durriya from the fatwas of Allama Ghazzi: A question was asked about a man who has a house in a residence where he lives...

1 Quran 4:59 2 Durr al-Mukhtar, Chapter of Friday, Mujtabai Press Delhi, 1/110 3 Radd al-Muhtar, Chapter of Friday, Mustafa al-Babi Egypt, 1/594 4 Fatawa Qadi Khan, Chapter of Friday Prayer, Naval Kishore Press Lucknow, 1/86 Page 517 of 736

फ़तावा रिज़विया, जिल्द छठी "...और अपनों में से 'उलिल अम्र' की ताअत करो।" [कुरान 4:59] | और अपने में से सत्ताधारियों (अधिकारियों) की आज्ञा का पालन करो। (त) दीन के इमाम फ़रमाते हैं कि सही यह है कि आयते करीमा में 'उलिल अम्र' से मुराद उलमा-ए-दीन (धार्मिक विद्वान) हैं। अल्लामा ज़रक़ानी ने 'शर्ह अल-मवाहिब' और अन्यों ने अपनी किताबों में इसकी तस्दीक की है। 'दुर्रे मुख्तार' में है: आम जनता द्वारा ख़तीब नियुक्त करना उस समय मान्य नहीं है जब उक्त व्यक्ति मौजूद हों। | अगर उक्त व्यक्ति मौजूद न हों, तो आवश्यकतावश जनता का ख़तीब नियुक्त करना जायज़ है। (त) 'फ़तावा क़ाज़ी ख़ान' और 'दुर्रे मुख्तार' आदि में है: अगर किसी ने इमाम की अनुमति के बिना खुतबा दिया जबकि इमाम मौजूद था, तो यह जायज़ नहीं है। | सिवाय इसके कि इमाम ने उसे ऐसा करने का आदेश दिया हो। और अल्लाह बेहतर जानता है। (त) (6) विद्वान से उनका विवाद निंदनीय और वर्जित है, और उनका दावा खारिज और अनसुना है। पिछले उत्तरों में स्पष्ट हो चुका है कि इमामत में कोई विरासत नहीं है, न ही यह किसी का पारिवारिक अधिकार है। बल्कि यह उलमा-ए-दीन का अधिकार है और उन्हें ही प्राथमिकता और वरीयता दी जाती है, विशेष रूप से जुमा और ईदैन की इमामत में, जो उनकी अनुमति के बिना बिल्कुल अमान्य है। वर्षों तक एक विद्वान का इमामत करना और उनका विरोध न करना इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि वे आम धारणा के अनुसार भी कोई पुख्ता हक नहीं रखते थे कि उनके परिवार के बाहर कोई इमाम न हो। उस समय उनके पास कोई प्रमाण नहीं था, अन्यथा वे उसे अवश्य प्रस्तुत करते। अगर इमामत उनका पारिवारिक अधिकार होता, तो वे वर्षों तक किसी और को इमामत करते देख चुप न रहते। अब यह विवाद एक नया मामला है। जैसा कि दीन के इमाम स्पष्ट करते हैं कि जब एक व्यक्ति किसी चीज़ पर वर्षों तक अधिकार रखता है और दूसरा उसे देखता है और उसे रोकता नहीं है, फिर दावा करता है कि यह उसका अधिकार है, तो उसका दावा कभी नहीं सुना जाएगा। 'उक़ूद अल-दुर्रिया' में अल्लामा ग़ज़्ज़ी के फ़तवों से है: एक ऐसे आदमी के बारे में पूछा गया जिसका एक घर में रहने का मकान है...

1 क़ुरान 4:59 2 दुर्रे मुख्तार, बाब अल-जुमा, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 1/110 3 रद अल-मुह्तार, बाब अल-जुमा, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र, 1/594 4 फ़तावा क़ाज़ी ख़ान, बाब सलात अल-जुमा, नवल किशोर प्रेस लखनऊ, 1/86 पृष्ठ 736 का 517

فتاوی رضویہ، جلد ششم لَاَمْرٍ مِنْکُمْ وج 1 | اور اپنوں میں سے اولی الامر کی اطاعت کرو۔ (ت) آئمہ دین فرماتے ہیں صحیح یہ ہے کہ آیہ کریمہ میں اولی الامر سے مراد علمائے دین ہیں نص علیہ العلامۃ الزرقانی فی شرح المواھب وغیرہ فی وغیرہ (اس پر علامہ زرقانی نے شرح المواہب اور دیگر علماء نے اپنی کتب میں تصریح کی ہے۔ ت) در مختار میں ہے : نصب العامۃ الخطیب غیر معتبر مع وجود من | عوام کا خطیب مقرر کرنا اس وقت معتبر نہیں ہے جبکہ مذکورہ ذکر اماماً مع عدمھم فیجوز للضرورۃ 2- | افراد موجود ہوں، اگر مذکورہ افراد نہ ہوں تو عوام کا خطیب مقرر کرنا ضرورت کے تحت جائز ہے۔ (ت) فتاوی قاضی خاں ودر مختار وغیرہما میں ہے : خطیب بلا اذن الامام والامام حاضر لم یجز 3 | اگر کسی نے امام کی اجازت کے بغیر خطبہ دیا حالانکہ امام حاضر الا ان یکون الامام امرہ بذلک 4 واللہ تعالٰی اعلم | تھا تو یہ جائز نہیں البتہ اس صورت میں جائز ہو گا جب امام نے اسے اس بات کا حکم دیا ہو۔ (ت) (۶) عالم سے ان کی منازعت مذموم و ممنوع اور ان کا دعوی مردود و نامسموع ، جوابات سابقہ میں واضح ہو لیا کہ امامت میں وراثت نہیں، نہ وہ کسی کا حق خاندانی ہے بلکہ حق علمائے دین ہے اور انھیں کو تقدیم و ترجیح ہے خصوصا امامت جمعہ و عیدین کہ یہاں بے ان کے اذن کے محض باطل ہے اور سالہا سال تک عالم کا امامت کرنا اور ان کا معترض نہ ہونا دلیل واضح ہے کہ وہ عامیانہ خیالات کے طور پر بھی کوئی استحقاق محکم اس کا نہ رکھتے تھے کہ ان کے خاندانی سے باہر کوئی امام نہ ہو، نہ اس وقت ان کے پاس کوئی سند تھی ورنہ ضرور ظاہر کرتے، امامت اگر ان کا خاندانی حق ہوتی ہرگز سالہا سال دوسرے کو اس میں تصرف کرتے دیکھ کر ساکت نہ رہتے، اب کہ منازعت تازی بات (نیا معاملہ) ہے جس طرح ائمہ دین تصریح فرماتے ہیں کہ جب ایک شخص کسی شے ی میں برسوں تصرف کرے اور دوسرا دیکھے اور مانع نہ ہو پھر دعوی کرے کہ میرا حق ہے تو

اس کا دعوی ہرگز مسموع نہ ہوگا۔ عقود الدریہ میں فتاوی علامہ غزی سے ہے : سئل عن رجل له بیت فی دار یسکنہ | ایک ایسے آدمی کے بارے میں پوچھا گیا جس کا ایک

1 القرآن ۵۹/۴ 2 درمختار باب الجمعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱۱۰/۱ 3 ردالمحتار باب الجمعہ مصطفی البابی مصر ۱/ ۵۹۴ 4 فتاوی قاضی خاں باب صلوۃ الجمعہ مطبوعہ نولکشور لکھنؤ ۸۶/۱

Fatawa Razawiya - Volume 6

[Legal Question and Answer Section] (Arabic Text): If a person has resided in a house for more than three years and has a neighbor next door, and said person performs various actions in that house like demolishing and building, while the neighbor is aware of these actions during said period, will the neighbor's lawsuit be heard or not? The answer given is: His lawsuit will not be heard according to the fatwa. - 1 (Urdu Translation): There is a house where someone has been living for more than three years. He has a neighbor on one side. The mentioned person performs all kinds of acts like demolishing and building in that house, and during this period, his neighbor is aware of his actions. Will his claim be heard or not? The answer given is that according to the reliable legal opinion, his claim is not admissible. (T)

In the same source it is stated: (Arabic Text): Merely being aware of the actions/ possession prevents the lawsuit. - 2 (Urdu Translation): Just having knowledge of the possession prevents the claim. (T)

And a mere document, even if sealed, is not a legal proof, nor is it at all fit to be presented as evidence. It is stated in Fatawa Imam Qazi Khan: (Arabic Text): Someone brought a document (sakk) which had the handwriting/signatures of past upright people and judges, and requested the current judge to pass a verdict based on that document. The jurists said: The judge does not have the right to decide based on that document because a judge only decides based on evidence (hujjah), and evidence consists of witnesses or a confession. As for the document, it is not fit to be evidence because one's handwriting can resemble another's. - 3 (Urdu Translation): A person presented an 'ashtam' (stamp paper/document) which bore the signatures of past rulers and judges and wanted a verdict from the judge according to that document. The jurists say that the judge cannot decide according to this document because a judge is bound by proof and evidence. Evidence is the name for witnesses or a confession. As for the matter of the document, it is not worthy of proof because handwriting can be similar to one another. (T)

In Al-Ashbah wa al-Nazair it is stated: "Handwriting is not to be relied upon nor acted upon." - 4 (Reliability cannot be placed on a piece of writing nor its...)

[Footnotes] 1 Al-Uqud al-Durriyya fi Tanqih al-Fatawa al-Hamidiyya, Book of Claims, Haji Abdul Ghaffar and Sons, Book Traders, Arg Bazaar, Kandahar (Afghanistan) 2/4. 2 Al-Uqud al-Durriyya fi Tanqih al-Fatawa al-Hamidiyya, Book of Claims, Haji Abdul Ghaffar and Sons, Book Traders, Arg Bazaar, Kandahar (Afghanistan) 2/4. 3 Fatawa

Qazi Khan, Section on Claims of Waqf and Witnessing upon it, Printed at Nawal Kishore, Lucknow 4/422. 4 Al-Ashbah wa al-Nazair, Book of Judiciary, Printed by Idara al-Quran wa al-Ulum al-Islamiyyah, Karachi 1/338.

फ़तावा रज़विया - भाग 6

[कानूनी प्रश्न और उत्तर अनुभाग] (अरबी पाठ): यदि कोई व्यक्ति तीन साल से अधिक समय से एक घर में रह रहा है और उसका एक पड़ोसी है, और उक्त व्यक्ति उस घर में गिराने और बनाने जैसे विभिन्न कार्य करता है, जबकि पड़ोसी उक्त अवधि के दौरान उसके कार्यों से अवगत है, तो क्या पड़ोसी का दावा सुना जाएगा या नहीं? उत्तर दिया गया है: फ़तवा के अनुसार उसका दावा नहीं सुना जाएगा। - 1 (उर्दू अनुवाद): एक घर है जहाँ कोई तीन साल से अधिक समय से रह रहा है। उसके एक तरफ एक पड़ोसी है। उक्त व्यक्ति उस घर में गिराने और बनाने जैसे हर तरह के कार्य करता है, और इस अवधि के दौरान उसका पड़ोसी उसके कार्यों से अवगत है। क्या उसका दावा सुना जाएगा या नहीं? उत्तर यह दिया गया है कि विश्वसनीय कानूनी राय के अनुसार उसका दावा स्वीकार्य नहीं है। (त)

उसी में कहा गया है: (अरबी पाठ): केवल कब्जे/कार्यों की जानकारी होना मुकदमे को रोकता है। - 2 (उर्दू अनुवाद): कब्जे की मात्र जानकारी ही दावे को रोकती है। (त)

और मात्र दस्तावेज़, भले ही मुहरबंद हो, कोई कानूनी प्रमाण नहीं है, और न ही यह सबूत के रूप में पेश किए जाने के योग्य है। फ़तावा इमाम क़ाज़ी खान में है: (अरबी पाठ): किसी ने एक दस्तावेज़ (सक्क) पेश किया जिसमें पिछले नेक लोगों और न्यायाधीशों के हस्ताक्षर थे, और वर्तमान न्यायाधीश से उस दस्तावेज़ के आधार पर फैसला सुनाने का अनुरोध किया। न्यायविदों ने कहा: न्यायाधीश को उस दस्तावेज़ के आधार पर निर्णय लेने का अधिकार नहीं है क्योंकि न्यायाधीश केवल साक्ष्य (हुज्जत) के आधार पर निर्णय लेता है, और साक्ष्य में गवाह या इकबालिया बयान शामिल होते हैं। जहाँ तक दस्तावेज़ की बात है, वह साक्ष्य बनने के योग्य नहीं है क्योंकि एक की लिखावट दूसरे के समान हो सकती है। - 3 (उर्दू अनुवाद): एक व्यक्ति ने एक स्टाम्प पेपर (दस्तावेज़) प्रस्तुत किया जिस पर पिछले शासकों और न्यायाधीशों के हस्ताक्षर थे और उस दस्तावेज़ के अनुसार न्यायाधीश से फैसला चाहा। न्यायविदों का कहना है कि न्यायाधीश इस दस्तावेज़ के अनुसार निर्णय नहीं ले सकता क्योंकि न्यायाधीश प्रमाण और साक्ष्य से बंधा होता है। साक्ष्य गवाह या इकबालिया बयान का नाम है। जहाँ तक दस्तावेज़ के मामले की बात है, वह प्रमाण के योग्य नहीं है क्योंकि लिखावट एक-दूसरे से मिलती-जुलती हो सकती है। (त)

अल-अशबाह वा अल-नज़ायर में है: "लिखावट पर भरोसा नहीं किया जाना चाहिए और न ही उस पर अमल किया जाना चाहिए।" - 4 (लिखावट पर भरोसा नहीं किया जा सकता और न ही उसके..)

[पादलेख (Footnotes)] 1 अल-उक़ूद अल-दुर्रिय्या फ़ी तन्क़ीह अल-फ़तावा अल-हामिदिय्या, दावा की पुस्तक, हाजी अब्दुल गफ्फार एंड संस, बुक ट्रेडर्स, अर्ग बाज़ार, कंधार (अफगानिस्तान) 2/4। 2 अल-उक़ूद अल-दुर्रिय्या फ़ी तन्क़ीह अल-फ़तावा अल-हामिदिय्या, दावा की पुस्तक, हाजी अब्दुल गफ्फार एंड संस, बुक ट्रेडर्स, अर्ग बाज़ार, कंधार (अफगानिस्तान) 2/4। 3 फ़तावा क़ाज़ी खान, वक़्फ़ के दावों और उस पर गवाही पर अनुभाग, नवल किशोर, लखनऊ 4/422 में मुद्रित। 4 अल-अशबाह वा अल-नज़ायर, न्यायपालिका की पुस्तक, इदारा अल-क़ुरान वा अल-उलूम अल-इस्लामिया, कराची 1/338 द्वारा मुद्रित।

पृष्ठ 518/736

فتاوی رضویہ - جلد ششم

مدة تزید علی ثلث سنوات وله جار بجانبه والرجل المذکور یتصرف فی البیت المذکور هدما وعمارة مع اطلاع جاره علی تصرفه فی المدة المذکورة تسمع دعواه ام لا اجاب لا تسمع دعواه علی ما علیه الفتوی

- 1 | گھر ہے وہ اس میں تین سال سے زائد عرصہ سے قیام پذیر ہے اور اس کی ایک جانب پڑوسی بھی ہے مذکورہ شخص اس گھر میں گرانے اور بنانے ہر طرح کا تصرف کرتا ہے اور مدت مذکورہ میں اس کا پڑوسی اس کے تصرف سے آگاہ بھی ہے تو کیا اس کا دعوی قابل سماعت ہو گا یا نہیں ؟ اس کا جواب یہ دیا گیا کہ مفتی بہ قول کے اس کا دعوی قابل سماعت نہیں۔ (ت)

اسی میں ہے: مجرد الاطلاع علی التصرف مانع من الدعوی - 2 | تصرف پر محض اطلاع ہی دعوی سے مانع ہوتی ہے۔ (ت) اور مجرد سند اگرچہ مہری ہو کوئی حجت شرعی نہیں، نہ ہرگز ثبوت میں پیش ہونے کے قابل۔ فتاوی امام قاضی خان میں ہے: احضر صکا فیه خطوط العدول والقضاة الماضیین وطلب من القاضی القضاء بذلك الصك قالوا لیس للقاضی ان یقضی بذلك الصك لان القاضی انما یقضی بالحجة والحجة هی البینة او الاقرار واما الصك فلا یصلح حجة لان الخط یشبه الخط - 3 | کسی شخص نے ایسا اشٹام پیش کر دیا جس میں ماضی کے حکمران اور قاضیوں کے دستخط تھے اور قاضی سے اس اشٹام کے مطابق فیصلہ چاہا تو فقہاء کہتے ہیں کہ قاضی اس اشٹام کے مطابق فیصلہ نہیں کر سکتا کیونکہ قاضی دلیل وحجت کا پابند ہوتا ہے اور حجت گواہ یا اقرار کا نام ہے، رہا معاملہ اشٹام کا وہ قابل حجت نہیں کیونکہ تحریر ایک دوسرے سے مشابہ ہو سکتی ہے۔ (ت)

اشباہ والنظائر میں ہے: لا یعتمد علی الخط ولا یعمل به - 4 (تحریر پر اعتماد نہیں کیا جا سکتا اور نہ اس کے

1 العقود الدرية فی تنقیح الفتاوی الحامدیة کتاب الدعوی حاجی عبدالغفار وپسران تاجران کتب ارگ بازار قندهار (افغانستان) ۲/۴ 2 العقود الدرية فی تنقيح الفتاوی الحامدية کتاب الدعوی حاجی عبدالغفار وپسران تاجران کتب ارگ بازار قندهار (افغانستان) ۲/۴ 3 فتاوی قاضی خان فصل فی دعوی الوقوف والشهادة علیه مطبوعہ نولکشور لکهنؤ ۴۲۲/۴ 4 الاشباه والنظائر، کتاب القضاء، مطبوعہ ادارة القرآن والعلوم الاسلامیه کراچی ۳۳۸/۱

Fatawa Ridawiyya Volume 6 ...action will be taken accordingly. (Transl: In Fatawa Alamgiri, it is mentioned:) "The book may be fabricated and forged, and handwriting may resemble handwriting, and the seal may resemble the seal.1 And Allah knows best." Sometimes a writing is fake and false; similarly, sometimes one handwriting resembles another and one seal resembles another. (Transl: And Allah Almighty knows best.) (7) During the times of the Caliphate, kings themselves used to lead prayers. And the Messenger of Allah, who knows what is and what will be (may Allah's peace and blessings be upon him), knew that among them there would be evildoers and sinners. He said: "There will be leaders over you who will delay the prayer from its time."2 (Transl: Leaders will come upon you who will delay prayers from their prescribed times. (Transl)) And he knew that the hearts of righteous people would feel aversion to following them in prayer. He also knew that opposing them would ignite the fire of discord (fitna), and preventing fitna was more important and greater than preventing the following of an evildoer. Allah Almighty says: "And discord is greater than killing."3 (Transl: Discord is worse than killing. (Transl)) Therefore, to close the door of discord, it was commanded: "Pray behind every righteous person and sinner."4 (Transl: Perform prayer behind every pious person and sinner. (Transl)) This falls under the principle: "Whoever is afflicted with two calamities should choose the lighter of the two." (Transl: Whoever finds himself in two troubles should choose the easier one. (Transl)) And the saying of the jurists (Fuqaha) "Prayer behind every righteous person and sinner is permissible" has the same meaning as mentioned above: that prayer is valid even behind a transgressor (fasiq), though it is Makruh Tanzihi behind one who does not publicize their sin and Makruh Tahrimi behind one who does. However, for those claimants, there is no argument or proof in this Hadith and legal issue. How does the equality in the essence of validity and correctness follow, such that it negates preference? Allah Almighty says: "Shall We treat the righteous like the wicked?"5 (Transl: Shall we make the possessors of piety equal to the sinful people? (Transl)) The same jurists clearly state that the right to lead the prayer belongs to the most learned of the people, and prayer behind a transgressor is Makruh. Furthermore, the permissibility is in prayers other than Friday, Eid, and solar eclipse (Kusuf). The condition for these prayers is so strict that they cannot be held behind any righteous, pious person without the general leadership (Imamat-e-Aammah) in the aforementioned sense, "as its explanation has passed." Then, it is a strange contradiction that to assert their own entitlement, they restrict the leadership (Imamat) specifically to their own family, not acknowledging the entitlement of any scholar outside the family, yet to remove the

preference of a scholar, they hold onto the hem of "every righteous person and sinner" and for this very leadership...

1 Fatawa Hindiyya, Chapter 23, Kitab al-Qadi ila al-Qadi, published by Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/381. 2 Musnad Imam Ahmad bin Hanbal, narrated from Ubada bin al-Samit, published by Dar al-Fikr Beirut, 5/312. 3 Al-Quran 2/217. 4 Sunan al-Daraqutni, Chapter on the description of those behind whom prayer is permissible, etc., published by Nashr al-Sunnah Multan, 2/75. 5 Al-Quran 38/28. Page 519 of 736

फ़तावा रिज़विया छठा खंड ...तदनुसार कार्य किया जाएगा। (अनुवाद: फ़तावा आलमगीरी में है:) "किताब बनाई और जाली की जा सकती है, और लिखावट लिखावट के समान हो सकती है, और मुहर मुहर के समान हो सकती है।1 और अल्लाह बेहतर जानता है।" लेखन कभी जाली और झूठा होता है, उसी तरह कभी लेखन लेखन के और मुहर मुहर के समान होती है। (अनुवाद: और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।) (७) खिलाफत के समय में सुल्तान खुद इमामत किया करते थे और हुज़ूर आलम-ए-मकान व मा-यकून (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) को मालूम था कि उनमें फासिक और फाजिर (पापी और दुराचारी) भी होंगे। फरमाया कि: "तुम पर ऐसे शासक आएंगे जो नमाजों को उनके वक्त से देर करेंगे।"2 (अनुवाद: तुम पर ऐसे अमीर आएंगे जो नमाजों को वक्त से देर करेंगे। (अनुवाद)) और मालूम था कि नेक लोगों के दिल उनकी पैरवी (इक्तिदा) से नफरत करेंगे। और मालूम था कि उनसे विरोध फितने (विवाद) की आग भड़काने वाला होगा और फितना रोकना, फासिक की इक्तिदा रोकने से अधिक महत्वपूर्ण और बड़ा था। अल्लाह तआला फरमाता है: "और फितना कत्ल से बड़ा है।"3 (अनुवाद: फितना कत्ल से भी बुरा होता है। (अनुवाद)) इसलिए फितने का दरवाजा बंद करने के लिए इरशाद हुआ: "हर नेक और बद के पीछे नमाज पढ़ो।"4 (अनुवाद: हर नेक और गुनहगार के पीछे नमाज अदा करो। (अनुवाद)) यह इस सिद्धांत से है: "जो व्यक्ति दो मुसीबतों में फंस जाए, तो उनमें से आसान को चुन ले।" (अनुवाद: जो व्यक्ति दो मुसीबतों में मुब्तला हो जाए, तो उनमें आसान को चुन ले। (अनुवाद)) और फुकहा (धर्मशास्त्रियों) का यह कहना "हर नेक और बद के पीछे नमाज जायज़ है" उसी अर्थ में है जो ऊपर गुजरा कि फासिक के पीछे भी नमाज हो जाती है, हालांकि गैर-घोषित पापी के पीछे मकरूह-ए-तन्ज़ीही और घोषित पापी के पीछे मकरूह-ए-तहरीमी होगी। मगर उन दावेदारों के लिए इस हदीस और मसले में कोई दलील और सनद नहीं। महज नमाज के होने और सही होने से समानता कैसे निकल आई कि वह वरीयता (तरजीह) के विपरीत हो? अल्लाह तआला फरमाता है: "क्या हम परहेजगारों को गुनहगारों के बराबर कर देंगे?"5 (अनुवाद: क्या हम तकवा वालों को गुनहगार लोगों के बराबर कर देंगे? (अनुवाद)) यही फुकहा स्पष्ट रूप से फरमाते हैं कि इमामत का हक कौम के सबसे बड़े जानकार (आलिम) को है और फासिक के पीछे नमाज मकरूह है। फिर, जायज़ होना भी जुमा, ईदैन और कुसूफ (सूर्य ग्रहण) की नमाजों के अलावा है। इन नमाजों की शर्त इतनी कठिन है कि उपरोक्त अर्थ में आम इमामत के बिना किसी नेक परहेजगार के पीछे भी नहीं हो सकतीं "जैसा कि इसका वर्णन पहले आ चुका है"। फिर अजीब विरोधाभास है कि अपना हक जताने के लिए तो इमामत को खास अपने खानदान के लिए सीमित

कर देते हैं कि खानदान के बाहर किसी आलिम-ए-दीन को भी उसका हकदार न मानें, और आलिम-ए-दीन की वरीयता खत्म करने के लिए "हर नेक और बद" का दामन थामें और इसी इमामत को...

1 फ़तावा हिन्दिया, अध्याय 23, किताबुल काज़ी इलल काज़ी, नूरानी कुतुब खाना पेशावर द्वारा प्रकाशित, 3/381। 2 मुसनद इमाम अहमद बिन हनबल, उबादा बिन सामित से रिवायत, दारुल फिक्र बेरुत द्वारा प्रकाशित, 5/312। 3 अल-कुरान 2/217। 4 सुनन दारकुतनी, नमाज जायज़ होने वालों के गुण आदि का अध्याय, नश्रुस सुन्ना मुल्तान द्वारा प्रकाशित, 2/75। 5 अल-कुरान 38/28। पेज 519 का 736

فتاوی رضویہ جلد ششم طابق عمل کیا جائے گا۔ ت) فتاوی عالمگیری میں ہے۔ الکتاب قد یفتعل ویزور والخط یشبہ الخط والخاتم یشبہ الخاتم ۱ واللہ تعالٰی اعلم۔ تحریر کبھی جعلی اور جھوٹی ہوتی ہے اسی طرح کبھی تحریر تحریر کے اور مُہر مُہر کے مشابہ ہوتی ہے۔ (ت) واللہ تعالٰی اعلم (۷) زمانہائے خلافت میں سلاطین خود امامت کرتے اور حضور عالم مکان وما یکون صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کو معلوم تھا کہ ان میں فساق و فجار بھی ہونگے فرمایا کہ ستکون علیکم امراء یؤخرون الصلوۃ عن وقتھا ۲ (تم پر ایسے امراء وارد ہوں گے جو نمازوں کو وقت سے مؤخر کرینگے۔ ت) اور معلوم تھا کہ اہل صلاح کے قلوب ان کی اقتداء سے تنفر کریں گے اور معلوم تھا کہ اُن سے اختلاف آتش فتنہ کو مشتعل کرنے والا ہو گا اور دفع فتنہ دفع اقتداء فاسق سے اہم و اعظم تھا۔ قال اللہ تعالٰی وَالْفِتْنَۃُ اَکْبَرُ مِنَ الْقَتْلِ ط ۳ ۔ (فتنہ قتل سے بڑا بدتر ہوتا ہے۔ت) لہذا دروازہ فتنہ بند کرنے کے لئے ارشاد ہوا: صلوا خلف کل بر وفاجر ۴ (ہر نیک و فاجر کے پیچھے نماز ادا کرو۔ت) یہ اس باب سے ہے: من ابتلی بلیتین اختار اھونھما (جو شخص دو مصیبتوں میں مبتلا ہو جائے تو ان میں آسان کو اختیار کرے۔ت) اور فقہا کا قول تجوز الصلاۃ خلف کل بر وفاجر (ہر نیک و فاجر کے پیچھے نماز ادا کرنا جائز ہے۔ت) اسی معنی پر ہے جو اوپر گزرے کہ نماز فاسق کے پیچھے بھی ہو جاتی ہے اگر چہ غیر معلن کے پیچھے مکروہ تنزیہی اور معلن کے پیچھے مکروہ تحریمی ہو گی مگر ان مدعیوں کے لئے اس حدیث و مسئلہ فقہ میں کوئی حجت وسند نہیں نفس جواز وصحت سے مساوات کیونکر نکلی کہ منافی ترجیح ہو، اللہ تعالٰی فرماتا ہے : اَمْ نَجْعَلُ الْمُتَّقِیْنَ کَالْفُجَّارِ ۵ (کیا ہم صاحب تقوی کو فاجر لوگوں کے برابر کر دیں گے۔ت) یہی فقہاء برابر تصریح فرماتے ہیں کہ امامت کا حق اعلم قوم کو ہے اور فاسق کے پیچھے نماز مکروہ ، پھر جواز بھی غیر نماز جمعہ و عیدین و کسوف میں ہے ان نمازوں کی شرط وہ تنگ ہے کہ بے امامت عامہ بمعنی مذکور کسی

صالح متقی کے پیچھے بھی نہیں ہو سکتی "کما تقدم بیانہ" پھر عجب تناقص ہے کہ اپنا استحقاق جتانے کے لئے تو امامت خاص اپنے خاندان کے لئے محصور کر دیں کہ خاندان سے باہر کسی عالم دین کو بھی اس کا استحقاق نہ مانیں اور عالم دین کی ترجیح رفع کرنے کو کل بر وفاجر کا دامن تھامیں اور اسی امامت کو

۱ فتاوی ہندیہ الباب الثالث والعشرون فی کتاب القاضی الی القاضی مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۳۸۱ ۲ مسند الامام احمد بن حنبل مروی عن عبادہ بن الصامت ، مطبوعہ دارالفکر بیروت ۳۱۲/۵ ۳ القرآن ۲/ ۲۱۷ ۴ سنن الدار قطنی باب صفة من تجوز الصلوة الخ مطبوعہ نشر السنة ملتان ۲/ ۷۵ ۵ القرآن ۳۸/ ۲۸ Page 519 of 736

Fatawa-e-Razvia Volume VI ...declare equal rights for every good and bad person. When the righteous and the wicked are equal in this regard, then where is the uniqueness of your family? And when you consider it permissible to pray behind every sinner and evildoer, why do you quarrel with a pious, trustworthy, and God-fearing religious scholar? It is known that they are merely followers of their own base desires; otherwise, may Allah Almighty grant the ability to follow the Shariah and obey the scholars of religion. And Allah Almighty knows best.

Issue No. 651: 21 Dhul-Qa'dah 1322 AH: Is praying behind a blind person Makruh Tanzihi (disliked) or Tahrimi (prohibitively disliked) or not? And is he worthy of leadership (Imamat) or not? And what is the meaning of this couplet by Maulana Rumi:

In Shariah, O wise one, it is disliked to put a blind person forward for Imamat. Even if he is a memorizer (Hafiz), agile, and a jurist, a clear-sighted eye is better than another that is foolish.

The Answer: If a blind person is not the most knowledgeable of religious issues among all those present, and besides him, there is another person present who has correct recitation, correct beliefs, and is not an open sinner, then the blind person's leadership is Makruh Tanzihi. And if he alone possesses the most knowledge of prayer, then his leadership is superior. If among those present, the other correct reciters are of bad belief or open sinners, and the blind person is free from all these faults, then his leadership is necessary. And if he is the only correct reciter, then no one else is essentially capable of leadership at all. It is stated in Durr-e-Mukhtar:

[Boxed Text] Arabic: The leadership of a blind person is Makruh Tanzihi unless he is the most knowledgeable of the people, then he is more worthy [of it]. (1) Urdu: The leadership of a blind person is Makruh Tanzihi; however, in this case, his leadership will be superior when he is more knowledgeable than others. [End of brief quote] (T)

Maulana [Rumi], may Allah sanctify his secrets with luminous sight, is speaking about those eyes with which they have work. He whose inner eye is bright, even if he hasn't acquired formal knowledge, is superior and more worthy of precedence than a formal scholar who lacks spiritual gnosis. Divinely bestowed knowledge (Ilm-e-Ladunni) is many degrees more glorious and complete than formal knowledge.

[Boxed Text] Arabic: Allah Almighty said: "And fear Allah, and Allah teaches you." (2) And Allah Almighty said: "Say, 'Are those who know equal...'" Urdu: It is the command

of Allah Almighty: adopt piety for Allah, and Allah Almighty Himself blesses you with the wealth of knowledge.

(1) Durr-e-Mukhtar, Chapter of Imamat, printed by Matba' Mujtabai, Delhi, 1/83. (2) Al-Quran 2/282.

फतवा-ए-रज़विया जिल्द छठी ...हर नेक और बद को बराबर अधिकार दें। जब नेक और बुरा उसमें एक समान हैं तो आपके खानदान की विशेषता कहाँ है और जब हर फासिक (पापी) और बदकार के पीछे नमाज़ जायज़ बताते हो तो आलिमे दीन, सालेह, भरोसेमंद, मुत्तक़ी (परहेज़गार) से क्यों उलझते हो, मालूम हुआ कि अपने नफ्स की ख्वाहिशों के पैरोकार हैं बाकी बस, अल्लाह तआला शरीयत की पैरवी और उलमा-ए-दीन की इताअत (आज्ञाकारी) की तौफीक अता फरमाए। वल्लाहु तआला आलम (अल्लाह बेहतर जानता है)।

मसला नंबर 651: 21 ज़ुल-क़ादा 1322 हिजरी: अंधे के पीछे नमाज़ पढ़ना मकरूह तंज़ीही है या तहरीमी या नहीं? और क्या यह इमामत के लिए योग्य है या नहीं? और मौलाना रूमी के इस शेर का क्या मतलब है:

शरीयत में, ऐ बुद्धिमान! इमामत के लिए अंधे को आगे करना मकरूह है। भले ही वह हाफिज़, चुस्त और फकीह हो, एक रोशन आँख दूसरे मूर्ख से बेहतर है।

अल-जवाब: अंधा अगर तमाम मौजूद लोगों में सबसे ज़्यादा मसाइल (धार्मिक नियम) जानने वाला न हो और उसके अलावा दूसरा सही क़िराअत (पाठ) करने वाला, सही अक़ीदे वाला, गैर-फासिक मुअल्लिन (जो खुलेआम पाप न करता हो) जमाअत में मौजूद हो तो अंधे की इमामत मकरूह तंज़ीही है। और अगर वही सबसे ज़्यादा नमाज़ का इल्म रखता है तो उसी की इमामत अफज़ल (बेहतर) है। अगर हाज़िरीन में दूसरा सही पढ़ने वाला बद-मज़हब या फासिक मुअल्लिन है और अंधा इन तमाम ऐबों (दोषों) से पाक है तो उसी की इमामत ज़रूरी है, और अगर सही पढ़ने वाला सिर्फ वही है तब तो असल में दूसरा इमामत के काबिल ही नहीं। दुर्र-ए-मुख़्तार में है:

[बक्से में लिखा पाठ] अरबी: अंधे की इमामत मकरूह तंज़ीही है मगर यह कि वह कौम में सबसे ज़्यादा आलिम हो तो वह ज़्यादा योग्य है। (1) उर्दू अनुवाद: नाबीना (अंधे) शख्स की इमामत मकरूह तंज़ीही है, अलबत्ता इस सूरत में उसकी इमामत औला (बेहतर) होगी जब वह दूसरों से ज़्यादा साहिब-ए-इल्म हो। (संक्षिप्त) (त)

हज़रत मौलवी (रूमी), अल्लाह उनके राज़ों को अपनी नूरानी नज़र से पवित्र करे, उन आँखों के बारे में बात करते हैं जिनसे उन्हें काम है। जिसकी चश्म-ए-बातिन (आंतरिक आँख) रोशन है, चाहे उसने औपचारिक तौर पर इल्म हासिल न किया हो, वह उस रस्मी आलिम से अफज़ल और इमामत के

लिए ज़्यादा हकदार है जिसे मारिफत (आध्यात्मिक ज्ञान) हासिल न हो। इल्म-ए-लदुन्नी (ईश्वरीय ज्ञान) रस्मी इल्म से कई दर्जे महान और कामिल (पूर्ण) है।

[बक्से में लिखा पाठ] अरबी: अल्लाह तआला ने फरमाया: "और अल्लाह से डरो और अल्लाह तुम्हें सिखाता है।" (2) और अल्लाह तआला ने फरमाया: "कहो, क्या वे जो जानते हैं बराबर हैं..." उर्दू अनुवाद: अल्लाह तआला का फरमान है: और अल्लाह से तक़वा (डर) अख्तियार करो और अल्लाह तआला ही तुम्हें इल्म की दौलत से नवाज़ता है।

(1) दुर्र-ए-मुख़्तार, बाबुल इमामत, मतबा मुज्तबाई दिल्ली द्वारा मुद्रित, 1/83 (2) अल-कुरान 2/282

فتاوٰی رضویہ جلد ششم ہر نیک و بد کا مساوی حق قرار دیں۔ جب صالح و طالح اُس میں یکساں ہیں تو تمہارے خاندان کی خصوصیت کہاں ہے اور جب ہر فاسق و بدکار کے پیچھے روا بتاتے ہو تو عالم دین صالح ثقہ متقی سے کیوں اُلجھتے ہو، معلوم ہوا کہ اپنے ہوائے نفس کے پیرو ہیں باقی بس، اللہ تعالٰی اتباعِ شرع واطاعتِ علمائے دین کی توفیق بخشے۔ واللہ تعالٰی اعلم مسئلہ نمبر ۶۵۱:

۲۱ ذی قعدہ ۱۳۲۲ھ: اندھے کے پیچھے نماز پڑھنا مکروہ تنزیہی یا تحریمی ہے یا نہیں اور یہ امامت کے واسطے سزاوار ہے یا نہیں اور مولانا روم کے اس شعر کا کیا مطلب ہے:

در شریعت ہست مکروہ اے کیا در امامت پیش کردن کور را گرچہ حافظ باشد و چست وفقیہ چشم روشن بہ دگر باشد سفیہ

الجواب: اندھا اگر تمام موجودین میں سب سے زیادہ مسائل کا جاننے والا نہ ہو اور اس کے سوا دوسرا صحیح القراۃ صحیح العقیدہ غیر فاسق معلن حاضر جماعت ہے تو اندھے کی امامت مکروہ تنزیہی ہے اور اگر وہی سب سے زیادہ علم نماز رکھتا ہے تو اسی کی امامت افضل ہے، اگر حاضرین میں دوسرا صحیح خواں بد مذہب یا فاسق معلن ہے اور اندھا ان سب عیوب سے پاک ہے تو اسی کی امامت ضرور ہے، اور اگر صحیح خواں صرف وہی ہے جب تو اصلاً دوسرا قابل امامت ہی نہیں۔ دُرِّ مختار میں ہے:

یکرہ تنزیھا امامۃ اعمٰی الا ان یکون اعلم القوم فھو اولٰی اھ[1] | نابینا شخص کی امامت مکروہ تنزیہی ہے البتہ اس صورت میں اس کی امامت اولٰی ہوگی جب وہ دوسروں سے زیادہ صاحب علم ہو اھ مختصرا (ت)

حضرت مولوی قدس اللہ تعالیٰ اسرارنا بصرہ النوری اِن آنکھوں میں کلام فرماتے ہیں جن سے انھیں کام ہے جس کی چشمِ باطن روشن ہے اگرچہ علم بطورِ رسمی حاصل نہ کیا ہو علمِ رسمی کے عالمِ غیر عارف سے افضل واحق بالتقدیم ہے علم لدنی علم رسمی سے بدرجہا جل واکمل ہے۔

قَالَ اللہ تَعَالٰی وَاتَّقُوا اللہَ وَ یُعَلِّمُکُمُ اللہُ[2] وَقَالَ اللہ تَعَالٰی قُلْ هَلْ یَسْتَوِي الَّذِینَ یَعْلَمُونَ | اللہ تعالیٰ کا فرمان ہے اور اللہ سے تقویٰ اختیار اور اللہ تعالیٰ ہی تمھیں علم کی دولت سے نوازتا ہے، اللہ

[1]دُرِّ مختار باب الامامۃ مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱/۸۳ [2]القرآن ۲/۲۸۲

'And those who do not know.' [1] And Allah Almighty knows best. It is the command of the Almighty: 'Can those who know and those who do not know be equal?' - And Allah Almighty knows best. (T)

Issue No. 652: From Gandah Nala, sent by Wazir Ahmad, 9 Jumadi al-Akhira, Saturday, 1323 AH. What do the scholars of religion and jurists of the clear Shari'ah say on this issue: Zaid gets interest-bearing bonds written and claims that he only gets them written. Four or five years ago, he filed a lawsuit for interest and obtained a decree. In this case, is prayer behind him permissible or not? Explain and you will be rewarded.

The Answer: Not at all. Just as taking interest is forbidden (Haram), so is getting it written down. In fact, the Hadith curses the one who writes the interest document for another, [2] and it was stated that he and the one taking interest are both equal. [3] So how would getting interest written for oneself not be a cause for a curse? And his claim that "I do not take it" is merely his own assertion which will not be accepted, and the previous lawsuit for interest is a witness to his falsehood. In short, he is a 'Fasiq' (transgressor), and prayer behind him is 'Makruh Tahrimi' (prohibitively disliked), close to 'Haram' and must be repeated. That is, if one prayed unknowingly, then once known, it is mandatory to repeat all those prayers offered behind him. And if prayed knowingly, then repeating the prayer is a separate obligation, besides the sin of praying behind him. Therefore, he should repent. And Allah Almighty knows best.

Issue No. 653: 9 Rajab al-Murajjab, Sunday, 1323 AH. What do the scholars of religion and jurists of the clear Shari'ah say on this issue: Is a person with the following characteristics fit for leadership (Imamate) or not? (1) While reciting the Holy Quran in prayer, sometimes he reads a lower verse before an upper one, and sometimes a verse is missed. (2) He often prays the Fajr prayer as 'Qada' (late). (3) The time for Zuhr sometimes passes in sleep; he prays at such a narrow time that as soon as the obligatory (Fard) part is finished, the time for Asr arrives. (4) The time for Maghrib passes in strolling in the market; he returns at a narrow time. When told to them...

---

1 Al-Quran 39:9 2 Sahih Muslim, Book of Usury, published by Qadimi Kutub Khana Karachi 2/27 3 Sahih Muslim, Book of Usury, published by Qadimi Kutub Khana Karachi 2/27

'और जो नहीं जानते।' [1] और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है। यह अल्लाह तआला का फ़रमान है: 'क्या जानने वाले और न जानने वाले बराबर हो सकते हैं?' - और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला नंबर 652: गंदा नाला से, वज़ीर अहमद द्वारा प्रेषित, 9 जमादी-उल-आखिरा, शनिवार, 1323 हिजरी। दीन के उलेमा और शरीयत के मुफ़्ती इस मसले पर क्या फ़रमाते हैं कि ज़ैद दस्तावेज़ों में सूद (ब्याज) लिखवा देता है और कहता है कि मैं सिर्फ लिखवा देता हूँ। चार-पाँच साल पहले उसने सूद समेत दावा करके डिक्री हासिल की थी। इस सूरत में उसके पीछे नमाज़ जायज़ है या नहीं? बयान फ़रमाएँ सवाब पायें।

जवाब: हरगिज़ नहीं, जिस तरह सूद लेना हराम है, वैसे ही सूद लिखवाना भी हराम है। बल्कि हदीस में दूसरे के लिए सूद का कागज़ लिखने वाले पर लानत फ़रमाई गई है, [2] और इरशाद फ़रमाया कि वह और सूद लेने वाला दोनों बराबर हैं। [3] तो खुद अपने लिए सूद लिखवाना लानत का सबब क्यों न होगा? और उसका यह गुमान कि "मैं लेता नहीं हूँ", यह महज़ उसका अपना दावा है जो कबूल नहीं होगा और पिछली सूद समेत नालिश (मुकदमा) उसके झूठ पर गवाह है। खुलासा यह कि वह फ़ासिक है और उसके पीछे नमाज़ मकरूहे तहरीमी (हराम के करीब) है जिसका दोहराना वाजिब है। यानी अनजाने में पढ़ ली तो जब मालूम हो तो जितनी नमाज़ें उसके पीछे पढ़ी हों उन सबका दोहराना वाजिब है। और अगर जानकर पढ़ी तो नमाज़ दोहराना अलग वाजिब है, और उसके पीछे पढ़ने का गुनाह अलग। लिहाज़ा उसे तौबा करनी चाहिए। वल्लाह तआला आलम।

मसला नंबर 653: 9 रजब-उल-मुरज्जब, इतवार, 1323 हिजरी। दीन के उलेमा और शरीयत के मुफ़्ती इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि जिस शख्स में दर्ज-ज़ैल औसाफ़ (विशेषताएं) हों, क्या वह इमामत के लायक है या नहीं? (१) नमाज़ में क़ुरान शरीफ़ पढ़ते हुए कभी नीचे की आयत ऊपर पढ़ जाते हैं, कभी आयत छूट जाती है। (२) फ़ज्र की नमाज़ अक्सर क़ज़ा (देर से) पढ़ा करते हैं। (३) ज़ुहर का वक़्त कभी सोने में गुज़र जाता है, ऐसे तंग वक़्त में नमाज़ पढ़ते हैं कि फ़र्ज़ पढ़ते ही असर का वक़्त आ जाता है। (४) मग़रिब का वक़्त बाज़ार की सैर में गुज़रता है, तंग वक़्त में वापस आते हैं, जब उनसे कहा जाता है...

1 अल-क़ुरान 39:9 2 सहीह मुस्लिम, बाब-उर-रिबा, मतबुआ क़दीमी कुतुब ख़ाना कराची 2/27 3 सहीह मुस्लिम, बाब-उर-रिबा, मतबुआ क़दीमी कुतुब ख़ाना कराची 2/27

وَالَّذِیْنَ لَا یَعْلَمُوْنَ ط ۱ وَاللہُ تَعَالٰی اَعْلَمُ - تعالیٰ کا یہ فرمان ہے کیا علم والے اور بے علم برابر ہو سکتے ہیں واللہ تعالیٰ اعلم (ت)

مسئلہ نمبر ۶۵۲: از گندہ نالہ مرسلہ وزیر احمد ۹ جمادی الاخریٰ یوم شنبہ ۱۳۲۳ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ زید تمسکات میں سُود لکھوا دیتا ہے اور بیان کرتا ہے کہ میں صرف لکھوا دیتا ہوں اور چار پانچ برس ہوئے کہ اُس نے مع سود نالش کرکے ڈگری کرائی تھی اس صورت میں اس کے پیچھے نماز جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: ہرگز نہیں، جس طرح سُود لینا حرام ہے یو نہی سُود لکھوانا حرام ہے بلکہ حدیث میں دوسرے کے لئے سُود کا کاغذ لکھنے پر لعنت فرمائی ۲ ، اور ارشاد فرمایا کہ وہ اور سود لینے والا دونوں برابر ہیں ۳، تو خود اپنے لئے سود لکھوانا کیونکر موجبِ لعنت نہ ہو گا اور یہ زعم کہ میں لیتا نہیں محض اس کا اپنا ادعا ہے کہ قبول نہ ہوگا اور اگلی نالش مع سود اس کے کذب پر گواہ ہے غرض وہ فاسق ہے اور اسکے پیچھے نماز مکروہِ تحریمی قریب بحرام واجب الاعادہ ہے یعنی نادانستہ پڑھ لی جب معلوم ہو جتنی نمازیں اس کے پیچھے پڑھی ہوں سب کا دہرانا واجب ہے اور دانستہ پڑھی تو نماز دہرانا جدا واجب ، اور اسکے پیچھے پڑھنے کا گناہ علاوہ۔ لہٰذا توبہ کرے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۶۵۳: ۹ رجب المرجب یوم یکشنبہ ۱۳۲۳ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ جس میں اوصاف حسبِ ذیل ہوں وہ شخص لائق امامت ہے یا نہیں؟ (۱) نماز میں قرآن شریف جو پڑھتے ہیں اس میں کبھی نیچے کی آیت اوپر پڑھ جاتے ہیں کبھی آیت چھوٹ

جاتی ہے۔ (۲) فجر کی نماز اکثر قضا پڑھا کرتے ہیں۔ (۳) ظہر کا وقت کبھی سونے میں گزر جاتا ہے ایسے تنگ وقت میں نماز پڑھتے ہیں کہ فرض پڑھتے ہی عصر کا وقت آجاتا ہے۔ (۴) مغرب کا وقت سیر بازار میں گزرتا ہے تنگ وقت میں واپس آتے ہیں، جب ان سے کہا جاتا ہے

---

۱ القرآن ۹/۳۹ ۲ صحیح مسلم باب الربا مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۲/ ۲۷ ۳ صحیح مسلم باب الربا مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۲/ ۲۷

Volume Six, Fatawa Razawiya

(5) They keep their ablution (wudu) ewer and bathing pitcher separate. (6) There is such familiarity with a Rafidhi (Shia) that they eat together, and in the mosque, they engage in informal and flirtatious joking with each other. (7) They are unaware of the rules (Masail) of prayer.

The Answer: Accidentally preceding or following an ayah or missing an ayah, if it happens rarely, is not a problem. But if it happens frequently, it is better to avoid the imamate of such a person, especially if another person who recites correctly, is sound in belief, clean, not an open transgressor (fasiq mu'lin), and capable of imamate is present. There is no accountability for the Fajr prayer being missed accidentally as long as there is no negligence on one's part. However, missing it frequently usually involves negligence. If there is no valid Sharia excuse, indifference will surely lead one to the limit of transgression (fisq), and making a fasiq an imam is forbidden. If a person sleeps before the start of Zuhr time (before the sun declines) and due to illness or fatigue, it accidentally happens that Zuhr time passes, they are not to be blamed. The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said:

"There is no negligence in sleep; negligence is only while awake." (There is no fault in sleeping; the fault is in being awake.)

And if the time for Zuhr came, meaning the sun declined from the meridian, and he slept after that and missed the entire time, then he is to be blamed, as specified in 'Radd al-Muhtar'. If he is habitual of this and it happens repeatedly, then he is certainly a fasiq and making him an imam is a sin. Similarly, if he is habitual of sleeping so much that as soon as he prays the obligatory Zuhr, the actual time for Asr arrives and he doesn't find time for the Sunnah, then in this case too, due to the habit of abandoning the Sunnah Mu'akkadah, he is a sinner and unworthy of being made an imam. Making the Maghrib time so short by roaming in the market that small stars appear—which is truly the end of the time—makes its being detestable (makruh) and prohibited clear. And even if it's not that much, there's no doubt that the congregation or at least the first congregation is surely abandoned. We have established in our Fatawa that 'what is obligatory is to attain the first congregation' (We have researched in our Fatawa that...)

---

1. Sunan Abu Dawood, Chapter on the one who sleeps through prayer or forgets it, published by Aftab-e-Alam Press Lahore, 63/1 Page 522 of 736

जिल्द छठा, फ़तावा रज़विया

(५) वे अपने वज़ू का लोटा और नहाने का घड़ा अलग रखते हैं। (६) एक राफ़ज़ी (शिया) से ऐसी बेतकल्लुफ़ी है कि उसके साथ खाना खाते हैं और मस्जिद में दोनों के बीच बेतकल्लुफ़ाना और आशिक़ाना मज़ाक़ हुआ करता है। (७) नमाज़ के मसाइल (नियम) मालूम नहीं हैं।

उत्तर: भूलवश किसी आयत को आगे-पीछे कर देना या किसी आयत का छूट जाना अगर कभी-कभार हो तो कोई हर्ज़ नहीं, और यदि अक्सर ऐसा होता है तो ऐसे व्यक्ति की इमामत से बचना बेहतर है, जबकि दूसरा सही पाठ करने वाला, सही अक़ीदे वाला, पाक-साफ़, खुला गुनाहगार (फ़ासिक़-ए-मोलिन) न हो और इमामत के क़ाबिल व्यक्ति मौजूद हो। फ़ज्र की नमाज़ इत्तेफ़ाक़ से कज़ा (छूट) हो जाने पर कोई पकड़ नहीं है जब तक कि अपनी ओर से लापरवाही न हो, लेकिन अक्सर कज़ा होना बिना लापरवाही के नहीं होता। यदि कोई सही शरीयती कारण न हो, तो लापरवाही उसे निश्चित रूप से फ़िस्क़ (गुनाह) की सीमा तक पहुँचा देगी, और फ़ासिक़ को इमाम बनाना मना है। जो व्यक्ति सूरज ढलने (ज़ुहर का समय शुरू होने) से पहले सो जाए और किसी बीमारी या थकान के कारण इत्तेफ़ाक़ से ऐसा हो जाए कि ज़ुहर का समय बीत जाए, तो उस पर कोई दोष नहीं है। अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

"नींद में कोई कोताही (लापरवाही) नहीं है, कोताही तो जागते हुए में है।" (सोने में कोई दोष नहीं, दोष जागने में है।)

और यदि ज़ुहर का समय आ गया यानी सूरज दोपहर के घेरे से ढल गया, उसके बाद वह सोया और पूरा समय गुज़ार दिया तो उस पर दोष है, जैसा कि 'रद अल-मुहतार' में स्पष्ट किया गया है। और यदि वह इसका आदी हो और बार-बार ऐसा होता हो, तो वह निश्चित रूप से फ़ासिक़ है, उसे इमाम बनाना गुनाह है। इसी तरह, अगर उसे इतने लंबे समय तक सोने की आदत है कि फ़र्ज़ ज़ुहर पढ़ते ही अस्र का वास्तविक समय आ जाता है और सुन्नत के लिए समय नहीं मिलता, तो इस स्थिति में भी सुन्नत-ए-मुअक्कदा को छोड़ने की आदत के कारण वह पापी और गुनाहगार है और इमाम बनाए जाने के योग्य नहीं है। बाज़ार की सैर में मग़रिब के समय को इतना कम कर देना कि छोटे-छोटे तारे भी दिखाई देने लगें—जो वास्तव में समय की तंगी है—तो इसका मकरूह (नापसंद) और वर्जित होना स्पष्ट है। और अगर इतना भी न हो, तो इसमें कोई संदेह नहीं है कि जमाअत (सामूहिक प्रार्थना) या

कम से कम पहली जमाअत निश्चित रूप से छूट गई। हमने अपने फ़तावा में यह शोध किया है कि 'अनिवार्य पहली जमाअत को पाना है' (हमने फ़तावा में इसकी तहक़ीक़ यह की है कि...)

---

1. सुनन अबू दाऊद, बाब फ़ी मन नामा अन सलात औ नसियहा, आफताब-ए-आलम प्रेस लाहौर, ६३/१ पृष्ठ ७३६ का ५२२

(۵) اپنے وضو کا لوٹا اور گھڑا نہانے کا علیحدہ رکھتے ہیں۔ (۶) ایک رافضی سے بے تکلفی ہے کہ اس کے ساتھ کھانا کھاتے ہیں اور مسجد باہم دونوں کے مذاق بے تکلفانہ اور معشوقانہ ہوا کرتا ہے۔ (۷) نماز کے مسائل معلوم نہیں ہیں۔

الجواب: سہواً کسی آیت میں تقدیم و تاخیر یا کسی آیت کا چھوٹ جانا اگر نادراً ہو تو مضائقہ نہیں اور اکثر ایسا ہوتا ہے تو ایسے شخص کی امامت سے احتراز اولیٰ ہے جبکہ دوسرا صحیح خواں صحیح العقیدہ صحیح الطہارت غیر فاسق معلن قابل امامت موجود ہو، نماز فجر اتفاقاً قضا ہو جانے پر مواخذہ نہیں جبکہ اپنی طرف سے تقصیر نہ ہو، مگر اکثر قضا ہونا بے تقصیر نہیں ہوتا، اگر کوئی علّت صحیح شرعی قابل قبول نہ رکھتا ہو تو بے پروائی ضرور اسے حدِ فسق تک پہنچائے گی، اور فاسق کو امام بنانا منع ہے۔ جو شخص آفتاب ڈھلنے ظہر کا وقت شروع ہونے سے پہلے سوئے اور کسی مرض یا ماندگی کے سبب اتفاقاً ایسا ہو جائے کہ ظہر کا وقت گزر جائے تو اس پر الزام نہیں رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

لا تفريط في النوم انما التفريط في اليقظة 1 | سونے میں قصور نہیں، قصور جاگنے میں ہے۔

اور اگر ظہر کا وقت آگیا یعنی آفتاب دائرہ نصف النہار سے ڈھل گیا اس کے بعد سویا اور وقت بالکل گزار دیا تو اس پر الزام ہے کما نص علیہ فی رد المحتار (جیسا کہ اس پر رد المحتار میں تصریح کی ہے۔ ت) اور جبکہ اس کا عادی ہو، بارہا ایسا واقع ہو تو ضرور فاسق ہے اُسے امام بنانا گناہ، یونہی اگر اتنے سونے کا عادی ہو کہ فرض ظہر پڑھتے ہی وقت عصر واقعی آجاتا ہے سنّت کا وقت نہیں ملتا تو اس صورت میں بھی ترک سنّتِ مؤکدہ کی عادت کے سبب آثم و گناہگار اور

امام بنانے کا ناسزا وار ہے، مغرب کا وقت سیر بازار میں تنگ کر دینا اگر اتنا ہو کہ چھوٹے چھوٹے ستارے بھی ظاہر ہو جائیں کہ حقیقتہً تنگ وقت یہی ہے جب تو اُس کا مکروہ و ممنوع ہونا ظاہر اور اگر اتنا بھی نہ ہو تو اس قدر میں شک نہیں کہ جماعت یا اقل درجہ جماعتِ اولیٰ ضرور متروک ہوئی وقد حققناہ فی فتاونا ان الواجب ھو ادراك الجماعة الاولی (ہم نے فتاوی میں اس کی تحقیق یہ کی ہے کہ

---

1. سنن ابو داؤد باب فی من نام عن صلوة او نسیہا مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور ۶۳/۱ Page 522 of 736

Fatawa Rizwia, Volume 6

Attaining the first congregation is obligatory. (T: Thus, the habit of abandoning it is also 'fisq' (sinfulness) and the leadership (Imamat) of such a person is prohibited. The statement "I am not somewhat observant of prayer" is, on the face of it, a worse and more heinous 'fisq'. Keeping separate utensils for ablution and bathing, if due to arrogance, is a severe major sin; and if due to delusion and obsession, it is still prohibited. The perpetrator is a 'fasiq afsiq' (extreme sinner) or a delusional fool. In Islam, there is no concept of untouchability or nurturing of obsessions. The 'Rafizis' (Shias) of this age are generally infidels and apostates, as we have researched in 'Radd-al-Rafidhah'. (T: And social interaction with apostates is forbidden. And in a mosque, such conduct with a Sunni of sound belief is also forbidden. Inevitably, the aforementioned person is a severe sinner, profligate, and committer of major sins, and his leadership is prohibited. Making him an Imam is forbidden; prayer behind him is 'Makruh-e-Tahrimi' (prohibitively disliked) and its repetition is obligatory. Not knowing essential prayer rulings is also 'fisq'. In any case, his leadership is never permitted. And Allah Almighty knows best.)

Issue No. 654: From Faizabad Post Office, Shahzadpur, sent by Abdullah, student, 24th Dhu al-Hijjah 1324 AH. What do the Muftis of the clear Shariah say: Is prayer behind an adulterer permissible or not? Because much conflict has arisen on this issue, to the point that the congregation for prayer has split. There should be a reference from Hadith and books. Explain and you will be rewarded.

Answer: An adulterer is a 'fasiq' (sinner), and prayer behind a sinner is forbidden. Making him an Imam is a sin. It is obligatory to repeat the prayers offered behind him. It is in Radd-al-Muhtar: [Arabic Text]: It is stated in Sharh al-Munyah that the dislike of putting him forward (meaning the sinner) is 'Karahat al-Tahrim' (prohibitive dislike). [1] Urdu Translation: It is stated in Sharh al-Munyah that putting him (the sinner) forward is 'Makruh-e-Tahrimi'. (T)

In Durr-e-Mukhtar: [Arabic Text]: Every prayer performed with 'Karahat al-Tahrim' (prohibitive dislike) must be repeated. [2] Urdu Translation: Every prayer performed with 'Makruh-e-Tahrimi' must be repeated. (T)

Issue No. 655: From Gonda, Oudh region, sent by the Muslims of Gonda generally and Hafiz Abdul Hafeez, teacher at Madrasa Anjuman Islamia, Gonda, Dhu al-Hijjah 1324 AH. Zaid is a man of sound knowledge, i.e., a scholar, a Sayyid, elderly, and observant of prayer, but mostly [performs] prayer [away from] the congregation...

1. Radd-al-Muhtar, Chapter of Imamat, printed by Mustafa al-Babi Egypt, 1/414.
2. Durr-e-Mukhtar, Chapter of Prayer Description, printed by Matba' Mujtabai Delhi, 1/71.

फ़तावा रज़विया, जिल्द छठी

पहली जमाअत पाना वाजिब है। (त: तो उसे छोड़ने की आदत भी फ़िस्क़ है और ऐसे की इमामत मना है, और यह लफ़्ज़ कि "मैं नमाज़ का कुछ पाबंद नहीं हूँ" अपने ज़ाहिर पर बदतर और शनीअ तर फ़िस्क़ है। अपने वुज़ू और नहाने के लिए बर्तन अलग रखना अगर तकब्बुर की वजह से हो तो सख़्त कबीरा है और अगर वहम और वसवसे की वजह से हो तब भी मना है। इसका मुर्तकिब फ़ासिक़-ए-अफ़सीक़ है या वहमी अहमक़। दीन-ए-इस्लाम में न छूत है न वसवसा परवरी। ज़माने के रवाफ़िज़ (शिया) आम तौर पर काफ़िर और मुर्तद हैं, जैसा कि हमने 'رَدُّ الرَّفَضَة' (रद्द-अर-रफ़ज़ा) में इसकी तहक़ीक़ की है। (त: और मुर्तदीन से मेल-जोल हराम है। और मस्जिद में ऐसा बर्ताव सुन्नी सहीहुल-अक़ीदा से भी हराम है। लाज़िम तौर पर ज़िक्र किया गया शख़्स सख़्त फ़ासिक़ व फ़ाजिर और कबीरा गुनाहों का मुर्तकिब है और उसकी इमामत मना है। उसे इमाम बनाना हराम है, उसके पीछे नमाज़ मकरूह-ए-तहरीमी और दोहराना वाजिब है। और नमाज़ के ज़रूरी मसाइल का न जानना भी फ़िस्क़ है। बहरहाल, ज़िक्र किए गए शख़्स की इमामत की हरगिज़ इजाज़त नहीं। वल्लाहु तआला आलम।)

मसला नम्बर 654: फ़ैज़ाबाद डाकख़ाना शहज़ादपुर से भेजा गया, अब्दुल्लाह तालिब-ए-इल्म, 24 ज़िल-हिज्जा 1324 हिजरी। मुफ़्तियान-ए-शरअ-ए-मतीन क्या फ़रमाते हैं कि क्या ज़ानी के पीछे नमाज़ जायज़ है या नहीं? क्योंकि इस मसले में बहुत झगड़ा पैदा हो गया है यहाँ तक कि नमाज़ जमाअत में तफ़रुक़ा हो गया है। हदीस और किताब की सनद होनी चाहिए। बयान करें, सवाब पाएँ।

अल-जवाब: ज़ानी फ़ासिक़ है और फ़ासिक़ के पीछे नमाज़ मना है। उसे इमाम बनाना गुनाह है। उसके पीछे जो नमाज़ें पढ़ी गई हों, उनका दोहराना वाजिब है। 'रद्दुल मुहतार' में है: [अरबी पाठ]: शरह अल-मुनया में इस पर अमल किया गया है कि उसे (यानी फ़ासिक़ को) आगे बढ़ाना मकरूह-ए-तहरीमी है। [1] हिन्दी अनुवाद: शरह अल-मुनिया में है कि फ़ासिक़ को आगे बढ़ाना मकरूह-ए-तहरीमी है। (त)

'दुर्रे मुख़्तार' में है: [अरबी पाठ]: हर वह नमाज़ जो मकरूह-ए-तहरीमी के साथ अदा की गई हो, उसका दोहराना वाजिब है। [2] हिन्दी अनुवाद: हर वह नमाज़ जो मकरूह-ए-तहरीमी के साथ अदा की जाए उसका लौटाना वाजिब है। (त)

मसला नम्बर 655: गोंडा, अवध क्षेत्र से भेजा गया, गोंडा के मुसलमानों की तरफ़ से और हाफ़िज़ अब्दुल हफ़ीज़ साहब, मुदर्रिस मदरसा अंजुमन इस्लामिया गोंडा, ज़िल-हिज्जा 1324 हिजरी। ज़ैद साहब-ए-इल्म-ए-मतीन हैं यानी आलिम हैं और सैय्यद व मुअम्मर और पाबंद-ए-सलात हैं मगर अक्सर जमाअत से नमाज़...

---

1. रद्दुल मुहतार, बाब अल-इमामत, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र द्वारा मुद्रित, 1/414
2. दुर्रे मुख़्तार, बाब सिफ़त-उस-सलात, मतबा मुज्तबाई दिल्ली द्वारा मुद्रित, 1/71

جماعتِ اولیٰ کا پانا واجب ہے۔ ت) تو اس کے ترک کی عادت بھی فسق ہے اور ایسے کی امامت ممنوع، اور وہ لفظ کہ میں نماز کا کچھ پابند نہیں ہوں اپنے ظاہر پر بدتر و شنیع تر فسق ہے، اپنے وضو اور نہانے کے لئے برتن علیحدہ رکھنا اگر براہِ تکبر ہو تو سخت کبیرہ اور براہِ وہم و وسوسہ ہو جب بھی ممنوع، اس کا مرتکب فاسقِ افسق ہے یا وہمی احمق، دینِ اسلام میں نہ چھوت ہے نہ وساوس پروری۔ روافضِ زمانہ علی العموم کفار و مرتد ہیں کما حققناہ فی رد الرفضۃ (جیسا کہ ہم نے رد الرفضہ میں اس کی تحقیق کی ہے۔ ت) اور مرتدین سے میل جول حرام۔ اور مسجد میں ایسا مذاق سُنّی صحیح العقیدہ سے بھی حرام۔ لاجرم شخص مذکور سخت فاسق و فاجر مرتکبِ کبائر ہے اور اس کی امامت ممنوع۔ اسے امام بنانا حرام، اس کے پیچھے نماز مکروہِ تحریمی واجب الاعادہ، اور نماز کے مسائلِ ضروریہ کا نہ جاننا بھی فسق ہے، بہر حال شخص مذکور کی امامت کی ہرگز اجازت نہیں۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۶۵۴: از فیض آباد ڈاکخانہ شہزاد پور مرسلہ عبداللہ طالب علم ۲۴ ذی الحجہ ۱۳۲۴ھ کیا فرماتے ہیں مفتیانِ شرعِ متین آیا زانی کے پیچھے نماز جائز ہے یا نہیں، کیونکہ اس مسئلہ میں بہت جھگڑا پیدا ہو گیا ہے یہاں تک کہ حالت گزر گئی کہ نماز جماعت میں تفرق ہو گیا ہے، حدیث اور کتاب کی سند ہونا چاہئے۔ بینوا توجروا

الجواب: زانی فاسق اور فاسق کے پیچھے نماز منع ہے، اسے امام بنانا گناہ ہے اس کے پیچھے جو نمازیں پڑھی ہوں ان کا پھیرنا واجب ہے ۔ ردالمحتار میں ہے: مشی فی شرح المنیۃ علی ان کراھۃ تقدیمہ (یعنی الفاسق) کراھۃ تحریم ۱۔ شرح المنیہ میں ہے کہ اس (فاسق) کی تقدیم مکروہِ تحریمی ہے (ت)

درِ مختار میں ہے: کل صلاۃ ادیت مع کراھۃ التحریم تجب اعادتھا ۲۔ ہر وہ نماز جو کراہتِ تحریمی کے ساتھ ادا کی جائے اس کا اعادہ واجب ہے۔ (ت)

مسئلہ نمبر ۶۵۵: از گونڈہ ملک اودھ مرسلہ مسلمانانِ گونڈہ عموماً و حافظ عبدالحفیظ صاحب مدرس مدرسہ انجمن اسلامیہ گونڈہ ذی الحجہ ۱۳۲۴ھ زید صاحب علمِ متین ہے یعنی عالم ہے اور سید و معمر و پابندِ صلوٰۃ ہے مگر اکثر جماعت سے نماز

---

۱ ردالمحتار، باب الامامۃ، مطبوعہ مصطفیٰ البابی مصر، ۱/۴۱۴ ۲ در مختار باب صفۃ الصلوٰۃ مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱/۷۱

Fatawa Razawiyyah Volume Six [The questioner asks:] He does not perform [prayers in congregation], but prays at home. However, on Friday, he leads the prayer in the mosque, and many people pray behind him. But some individuals object to praying behind him. These objectors are lower in status than Zaid in every respect, are neither cautious nor pious, and act out of egoism and stubbornness. Previously, these objectors also used to pray behind him. So, is it correct for the aforementioned persons to pray behind Zaid or not? Explain and you shall be rewarded.

The Answer: If Zaid's abandonment of the congregation is due to a valid Shar'i excuse, then there is no blame on Zaid, and praying behind him in every prayer is correct without any dislike, provided there is no other Shar'i impediment. The avoidance of following him by the mentioned persons in this case is mere ignorance and improper. However, if he is habitually abandoning the congregation without a Shar'i excuse, then this is certainly transgression (fisq). In this case, it is appropriate to avoid following him, provided that the Friday prayer can be found elsewhere behind a righteous and pious imam. Otherwise, one cannot be permitted to leave the Friday prayer solely on the excuse that the imam abandons the congregation. It is stated in Radd al-Muhtar:

- In "Al-Mi'raj," it is mentioned: Our companions, the Hanafis, have said that it is not appropriate to follow a transgressor (fasiq) except for the Friday prayer, because for prayers other than Friday, one can find another imam. It is said in "Al-Fath": Based on this, it can be said that Friday prayer would also be disliked when it is held in multiple places in a city according to the Fatwa-based opinion of Imam Muhammad, because in such a case, following another imam is possible. (T)

It is stated in Durr-e-Mukhtar:

- Congregation is a Sunnat-e-Mu'akkadah for men. Some have said it is Wajib (obligatory), and this is the view of most of our scholars and the preferred view among the people of the school of thought. Whether it is Sunnah or Wajib, its consequence (of sin) appears upon leaving it once. -2 End of excerpt. And Allah, Glory be to Him and the Most High, knows best.

1 Radd al-Muhtar, Chapter on Imamate, printed by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/414 2 Durr-e-Mukhtar, Chapter on Imamate, printed by Mujtabai Press, Delhi, 1/82

फतावा रज़विया खंड छह [सवाल:] वह [जमात से] नमाज़ अदा नहीं करता, अपने घर पर पढ़ लेता है, लेकिन जुमा के दिन मस्जिद में इमामत करता है और बहुत से लोग उसके पीछे नमाज़ पढ़ते हैं। मगर कुछ लोग उसके पीछे नमाज़ पढ़ने पर आपत्ति करते हैं। ये आपत्ति करने वाले ज़ैद से हर बात में कम रुतबा हैं, और न ही वे परहेज़गार और मुत्तकी (धार्मिक) हैं, और उनके मन में द्वेष और ज़िद भी है। पहले ये आपत्ति करने वाले भी उसके पीछे नमाज़ पढ़ते थे। तो क्या ऊपर बताए गए व्यक्तियों का ज़ैद के पीछे नमाज़ पढ़ना सही है या नहीं? स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिलेगा।

जवाब: यदि ज़ैद का जमात छोड़ना किसी वैध शरई (धार्मिक) कारण से है, तो ज़ैद पर कोई पकड़ नहीं है और उसके पीछे हर नमाज़ बिना किसी नापसंदगी (कराहियत) के सही है, जब तक कि कोई अन्य शरई रोक न हो। ऐसी स्थिति में उक्त व्यक्तियों का उसकी पैरवी (इक़्तेदा) से बचना केवल अज्ञानता और अनुचित है। और यदि वह बिना किसी शरई बहाने के जमात छोड़ने का आदी है, तो यह निश्चित रूप से 'फिस्क' (अवज्ञा) है। ऐसी स्थिति में उसकी पैरवी से बचना उचित है, बशर्ते कि जुमा की नमाज़ किसी दूसरी जगह किसी नेक और मुत्तकी इमाम के पीछे मिल रही हो। अन्यथा, केवल इस बहाने कि इमाम जमात छोड़ देता है, जुमा की नमाज़ छोड़ने की अनुमति नहीं दी जा सकती। रद-अल-मुह्तार में है:

- "अल-मिअराज" में है: हमारे असहाब-ए-अहनाफ ने कहा है कि फासिक (अवज्ञाकारी) की पैरवी नहीं की जानी चाहिए सिवाय जुमा के, क्योंकि जुमा के अलावा बाकी नमाज़ों में दूसरा इमाम मिल सकता है। "अल-फतह" में है: इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि जुमा भी उस समय मकरूह (नापसंद) होगा जब इमाम मुहम्मद के कथन (जिस पर फतवा है) के अनुसार शहर में कई जगहों पर जुमा होता हो, क्योंकि ऐसी स्थिति में दूसरे इमाम की पैरवी संभव है। (त)

दुर्रे मुख्तार में है:

- "पुरुषों के लिए जमात सुन्नत-ए-मुअक्कदा है। कुछ ने इसे वाजिब कहा है और हमारे अधिकांश विद्वान इसी पर हैं और यही मज़हब के लोगों के बीच भी बेहतर राय है। इसलिए जमात सुन्नत हो या वाजिब, इसका फल (गुनाह) एक बार छोड़ने पर ही स्पष्ट होगा।" -2 संक्षेपित - और अल्लाह सुभानहू व तआला सबसे बेहतर जानता है।

1 रद-अल-मुह्तार, बाब-अल-इमामत, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र द्वारा प्रकाशित, 1/414 2 दुर्रे मुख्तार, बाब-अल-इमामत, मुतबा मुज्तबाई दिल्ली द्वारा प्रकाशित, 1/82

पृष्ठ 524 का 736

فتاوی رضویہ جلد ششم ادا نہیں کرتا اپنے گھر پر پڑھ لیتا ہے لیکن جمعہ کے روز مسجد میں امامت کرتا ہے اور کثرت سے لوگ اس کے پیچھے نماز پڑھتے ہیں مگر بعض اشخاص اس کے پیچھے نماز سے اعتراض کرتے ہیں مگر اعتراض کنندہ زید سے ہر بات میں کم رتبہ ہیں اور محتاط و متقی بھی نہیں ہیں اور نفسانیت و ضد بھی ہے اور پیشتر یہ معترض بھی اس کے پیچھے نماز پڑھتے تھے تو پس زید کے پیچھے نماز پڑھنی ایسے اشخاص مذکورہ بالا کی درست ہے یا نہیں بینوا تو جروا۔

الجواب: زید کا ترک جماعت کرنا اگر کسی عذر صحیح شرعی کے سبب ہے تو زید پر مواخذہ نہیں اور اس کے پیچھے ہر نماز بلا کراہت درست ہے جبکہ کوئی مانع شرعی نہ ہو اشخاص مذکورین کا اس کی اقتداء سے احتراز اس صورت میں محض جہالت و بیجا ہے، اور اگر وہ بلا عذر شرعی ترک جماعت کا عادی ہے تو یہ ضرور فسق ہے اور اس تقدیر پر اس کی اقتداء سے بچنا بجا ہے جبکہ جمعہ دوسری جگہ صالح امامت متقی کے پیچھے مل جاتا ہو ورنہ صرف اس عذر سے کہ امام تارک جماعت ہے ترک جمعہ کی اجازت نہیں ہوسکتی۔ ردالمحتار میں ہے:

- فی المعراج قال اصحابنا لا ینبغی ان یقتدی بالفاسق الا فی جمعۃ لانہ فی غیرھا یجد اماماً غیرہ اھ قال فی الفتح و علیہ فیکرہ فی الجمعۃ اذا تعددت اقامتھا فی المصر علی قول محمد المفتی بہ لانہ بسبیل الی التحول-1 معراج میں ہے ہمارے اصحاب احناف نے کہا ہے کہ جمعہ کے علاوہ فاسق کی اقتداء نہ کی جائے کیونکہ جمعہ کے علاوہ باقی نمازوں میں دوسرا امام میسر آسکتا ہے۔ فتح میں ہے اس بنا پر یہ کہا جا سکتا ہے کہ جمعہ بھی اس وقت مکروہ نہ ہو گا جب امام محمد کے قول جو مفتی بہ ہے کے مطابق شہر میں متعدد جگہ جمعہ ہوتا ہو، کیونکہ ایسی صورت میں دوسرے امام کی اقتداء میسر ہو سکتی ہے (ت)

در مختار میں ہے:

- الجماعة سنة مؤكدة للرجال وقيل واجبة وعليه عامة مشائخنا و هو الراجح عند اهل المذهب فتسن او تجب ثمرته تظهر فی الاثم بترکها مرة-2 اهـ ملتقطاً - واللہ سبحانہ وتعالیٰ اعلم مردوں کے لئے جماعت سنت مؤکدہ ہے بعض نے واجب کہا ہے اور اکثر مشائخ اسی پر ہیں اور اہل مذہب کے ہاں بھی یہی راجح ہے پس جماعت سنت ہو یا واجب اس کا ثمر کسی ایک دفعہ ترک کی صورت میں ظاہر ہو گا اھ ملتقطاً۔ (ت) واللہ سبحانہ وتعالیٰ اعلم

1 ردالمحتار، باب لامامة، مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱ / ۴۱۴ 2 در مختار باب الامامۃ مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱ / ۸۲

Fatawa Rizvia, Volume VI

Problem 656: From Jaora State, residence of Mr. Abdul Majeed Khan, Registrar, 15 Dhu al-Hijjah 1315 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: How is the leadership in prayer (Imamat) of one who slaughters cows?

The Answer: It is permissible as long as there are no Sharia obstacles such as incorrect recitation, heresy, or immorality (fisq), etc. Slaughtering a cow is not an obstacle. And Allah Almighty knows best.

Problem 657: Khalid denies the 'Life of the Prophet' (Hayat-an-Nabi) and also the visitation to Medina the Radiant. The aforementioned Hafiz-e-Quran denies it to the extent that he brought many Muslims back from the Kaaba and did not let them go. Is prayer valid behind such a person or not? What is the ruling? Please clarify, and may you be rewarded.

The Answer: Khalid is misguided and irreligious; it is not permissible to make him an Imam. The life of the Radiant Prophet, Master of the World, peace and blessings of Allah be upon him, as well as all the Prophets, peace be upon them, is proven by the Quran, Hadith, and Consensus (Ijma). To maintain denial of the visitation to Medina the Radiant and to bring back Muslims is the work of Satan and contrary to the collective opinion of Muslims.

Allah Almighty says: 'And whoever follows a path other than that of the believers, We shall let him follow what he has turned to and cast him into Hell—and what an evil destination!' (Allah Almighty's command is that whoever follows a path other than that of the believers, We turn him in the direction he is turning, and We will throw him into Hell, and that is an evil destination. (T)) And Allah Almighty knows best.

Problem 658: Submitted by Abdul Rahim Sahib, Thalia Mohanpur, District Bareilly, 5 Muharram al-Haram, Sunday, 1326 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: a person is very deaf in both ears, he does not hear the first Takbeer with his ears, and he does not remember the Holy Quran correctly either. His wife sells lime at a shop without a veil. In the winter season, she wears a thick cloth dupatta, and in the summer season, she wears fine cotton (Khasa and Tanzeb), and she wears a shirt ten to eleven knots (greh) long but keeps both wrists exposed outside the wide sleeves. Her husband is aware of her overall condition and sees it with his own eyes, yet he does not provide any guidance. If he were to guide his wife regarding the veil, would he, given his condition of being deaf and not reciting

correctly, be eligible to be a prayer leader (Imam) or not? In addition to the above-mentioned points, he also has a very unpleasant voice, and to the person who guides him, then due to that reason and speech...

(1) Al-Quran 4/115 Page 525 of 736

फ़तावा रिज़विया, छठा खंड

मसला 656: रियासत जावरा से, अब्दुल मजीद खान साहब सररिश्तादार का निवास, 15 ज़िलहिज्जा 1315 हिजरी। धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं कि गाय का वध करने वाले (ज़ाबिह-उल-बक्र) की इमामत कैसी है?

जवाब: जायज़ है जब तक कि गलत पढ़ने (ग़लत ख्वानी), बद-मज़हबी या फ़िस्क़ (अधर्म) आदि जैसे कोई शरीयत संबंधी बाधक न हों। गाय का वध करना कोई बाधा नहीं है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 657: खालिद को हयात-उन-नबी (नबी के जीवित होने) से इंकार है और मदीना तैयबा की ज़ियारत से भी। उक्त हाफ़िज़-ए-क़ुरआन को यहाँ तक इंकार है कि उसने बहुत से मुसलमानों को खाना-ए-काबा से लौटा लाया और उन्हें जाने नहीं दिया। क्या ऐसे व्यक्ति के पीछे नमाज़ सही है या नहीं? क्या हुक्म है? बयान करें, आपको पुण्य मिलेगा।

जवाब: खालिद गुमराह और बद-दीन है, उसे इमाम बनाना जायज़ नहीं है। हुज़ूर पुर-नूर सैयदे आलम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम और साथ ही तमाम नबियों अलैहिमुस्सलाम की हयात (जीवन) कुरआन, हदीस और इज्मा (आम सहमति) से साबित है। मदीना तैयबा की ज़ियारत से इंकार रखना और मुसलमानों को लौटा लाना शैतान का काम है और मुसलमानों की राय के खिलाफ है।

अल्लाह तआला फ़रमाता है: 'और जो कोई मोमिनों के अलावा किसी और के रास्ते की पैरवी करेगा, हम उसे उसी ओर फेर देंगे जिस ओर वह फिरा है, और उसे जहन्नम में डाल देंगे—और वह बहुत बुरा ठिकाना है!' (अल्लाह तआला का फ़रमान है जो मोमिनों के अलावा किसी के रास्ते की पैरवी करता है हम उसे उस तरफ फेर देते हैं जिस तरफ वह फिरता है और उसे हम जहन्नम में डाल देंगे और वह बुरा ठिकाना है (त))। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 658: मुस्तौले अब्दुल रहीम साहब, थलिया मोहनपुर, जिला बरेली, 5 मुहर्रम-उल-हराम, रविवार, 1326 हिजरी। धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं कि एक व्यक्ति दोनों कानों से बहुत बहरा है, पहली तकबीर कानों से नहीं सुनता है और कुरआन शरीफ भी उसे सही से याद नहीं है। उसकी पत्नी बिना परदे के दुकान पर चूना बेचती है, सर्दियों के मौसम में वह मोटे कपड़े का दुपट्टा ओढ़ती है और गर्मी के मौसम में खासा और तंज़ेब (महीन कपड़ा) का ओढ़ती है। वह दस-ग्यारह गिरह लंबी कुर्ती पहनती है लेकिन अपनी दोनों कलाईयाँ चौड़ी आस्तीन के बाहर खुली रखती

है। उसके पति को उसकी पूरी हालत मालूम है, वह अपनी आँखों से देखता है लेकिन कोई हिदायत नहीं देता। अगर वह अपनी पत्नी को परदे के लिए हिदायत दे, तो क्या बहरा होने और सही न पढ़ने की अपनी हालत के बावजूद वह इमाम (नमाज़ का नेतृत्व करने वाला) बनने के योग्य है या नहीं? ऊपर दी गई बातों के अलावा उसकी आवाज़ भी बहुत बुरी है, और जो व्यक्ति उसे हिदायत देता है, तो उस वजह और तक़रीर...

(1) अल-कुरआन 4/115 पृष्ठ 525 में से 736

فتاوٰی رضویہ، جلد ششم

مسئلہ ۶۵۶: از ریاست جاوڑہ مکان عبدالمجید خان صاحب سررشتہ دار ۱۵ ذوالحجہ ۱۳۱۵ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ذابح البقر کی امامت کیسی ہے؟

الجواب: جائز ہے جبکہ غلط خوانی یا بد مذہبی یا فسق و غیرہما موانع شرعیہ نہ ہوں ذبح بقر کوئی مانع نہیں۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۶۵۷: حیات النبی ہونے سے خالد کو انکار ہے اور مدینہ طیبہ کی زیارت سے بھی، حافظ قرآن مذکور کو انکار ہے یہاں تک کہ بہت سے مسلمانوں کو خانہ کعبہ سے لوٹا لایا اور نہ جانے دیا ایسے شخص کے پیچھے نماز درست ہے یا نہیں، کیا حکم ہے؟ بینوا توجروا

الجواب: خالد گمراہ بد دین ہے اسے امام بنانا جائز نہیں، حضور پر نور سید عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم بلا لکہ جمیع انبیائے کرام علیہم الصلاۃ والسلام کی حیات قرآن و حدیث و اجماع سے ثابت ہے اور زیارت مدینہ طیبہ سے انکار رکھنا مسلمانوں کو لوٹا لانا کارِ شیطان و خلاف رائے مسلمانان ہے،

قال اللہ تعالٰی: وَيَتَّبِعْ غَيْرَ سَبِيلِ الْمُؤْمِنِينَ نُوَلِّهِ مَا تَوَلّٰى وَنُصْلِهِ جَهَنَّمَ وَسَآءَتْ مَصِيرًا (اللہ تعالٰی کا فرمان ہے جو مومنین کے علاوہ کسی کے راستے کی پیروی کرتا ہے ہم اسے اس طرف پھیر دیتے ہیں جس طرف وہ پھرتا ہے اور اسے ہم جہنم میں ڈال دیں گے اور وہ برا ٹھکانہ ہے (ت)) واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۶۵۸: مسئولہ عبدالرحیم صاحب ٹھلیا موہن پور ضلع بریلی ۵ محرم الحرام یوم یکشنبہ ۱۳۲۶ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ایک شخص دونوں کانوں سے بہت بہرا ہے

تکبیر اولٰی کانوں سے نہیں سنتا ہے اور قرآن شریف بھی اس کو صحیح یاد نہیں ہے، بیوی اس کی بے پردہ دکان پر چونے فروخت کرتی ہے، دو پٹہ موسم سرما میں گاڑھے کا اوڑھتی ہے اور موسم گرمی میں خاصہ و تن زیب کا اوڑھتی ہے اور کرتی دس گیارہ گرہ لانبی پہنتی ہے مگر کلائیاں ہر دو کھلی چوڑی آستینوں کے باہر رکھتی ہے اور اس کے شوہر کا کلیا حال معلوم ہے بچشم خود دیکھتا ہے مگر کچھ ہدایت نہیں کرتا ہے اگر وہ ہدایت اپنی بیوی کو پردے کی کرے تو اس کی حالت بہرے ہونے سے اور صحیح نہ پڑھنے سے قابلِ پیش امام ہونے کے ہے یا نہیں؟ علاوہ گزارش مندرجہ بالا کے نہایت بد آواز بھی ہے اور جو شخص اس کو ہدایت کرتا ہے تو اس جہت و تقریر

(۱) القرآن ۴ / ۱۱۵ صفحہ 525 از 736

Volume 6 Fatawa Rizwiya ...he does with ignorance. Explain, and you shall be rewarded.

The Answer: While his wife wanders outside with open wrists, works at a shop, or goes out in summer wearing thin clothes through which the body is visible, and her husband, being aware of these circumstances, does not make a complete arrangement to the best of his ability, then he is a 'Dayyuth' (cuckold). It is a sin to pray behind him and to make him an Imam. And even if he guides the woman and repents from this accusation and becomes pure, even in that state, since he recites the Holy Quran so incorrectly that it invalidates the prayer, his imamate is completely void and the prayer behind him will not be valid at all. However, only those who themselves recite correctly can level this accusation; otherwise, even their own prayer cannot be valid. They are all the same. It is obligatory for all of them to correct their pronunciation of the letters to the extent that the prayer becomes valid. Until they do so, the prayer of all of them will be void. And if his mistake is not such that it invalidates the prayer, and there is no other correct reciter there, then it is necessary that he be made the Imam, and his deafness should not be cared for, provided he makes arrangements for the woman. And if there is another person with sound beliefs and correct recitation present there, even if he is a transgressor (fasiq), then even if this [deaf] person recites correctly and manages his wife's modesty, the imamate of that other correct reciter will be superior. This is because, since he is so deaf that he does not hear the sound of the Takbir, if he happens to make a mistake or error in the prayer, he will not hear the prompts of the followers. And Allah Almighty knows best, and His knowledge, Glorious and Exalted be His Majesty, is most perfect and most wise.

Problem 659: From Bhikanpur, Aligarh district, sent by Jafar Ali Sahib, 24 Rabi-ul-Awwal 1327 AH. What do the scholars of the firm religion say regarding the leadership (imamate) of a person who is only a memorizer of the Quran (Hafiz) and a reader of Persian, and is a salaried Imam of a mosque, but fights with Muslims in the market, utters loud and foul language, and sometimes speaks harshly to the Muezzin in the mosque and insults his lineage in front of the congregation? He has harbored malice and a grudge against the Muezzin and some followers for a long time. Upon being cautioned, he accuses the followers, saying, "You are backbiting me and trying to snatch away my livelihood," and still does not admit his fault and has stopped greeting the Muezzin. Is following such an Imam permissible without dislike (karahat), or is there some dislike? Explain, and you shall be rewarded.

The Answer: It is forbidden (Haram) to harbor a grudge and hatred against a Muslim without a legitimate Shariah reason. And it is also forbidden to stop greeting and talking for more than three days without a Shariah-based benefit. The Messenger of Allah, peace and blessings be upon him, says: "Do not hate one another, do not envy one another, do not turn your backs on one another, and be servants of Allah, as brothers." Do not harbor hatred, do not be envious or backbite, and become brothers by being servants of Allah. (T)

1. Sahih al-Bukhari, Book of Migration, Hadith, published by Qadimi Kutub Khana Karachi 4/89. Page 526 of 736

जिल्द छठी फ़तावा रज़विया ...अज्ञानता के साथ करता है। बयान करें, आपको पुण्य मिलेगा।

उत्तर: चूंकि उसकी स्त्री की कलाइयां खुली बाहर फिरती हैं, दुकान करती है या गर्मियों में बारीक कपड़े पहनकर निकलती है जिनसे बदन झलकता है और उसका पति इन हालातों से वाकिफ होकर अपनी सामर्थ्य के अनुसार पूर्ण प्रबंधन नहीं करता, तो वह दय्यूथ (Dayyuth) है। उसके पीछे नमाज़ पढ़ना और उसे इमाम बनाना गुनाह है। और अगर वह औरत को हिदायत भी दे और इस इल्ज़ाम से तौबा करके पाक हो जाए, तो उस स्थिति में भी जबकि वह कुरआन मजीद इतना गलत पढ़ता हो जिससे नमाज़ फासिद (अमान्य) हो जाती है, तो उसकी इमामत बिल्कुल बातिल (शून्य) है और उसके पीछे नमाज़ मूलतः नहीं होगी। मगर यह इल्ज़ाम वही लगा सकते हैं जो स्वयं सही पढ़ते हों, अन्यथा उनकी अपनी नमाज़ भी नहीं हो सकती, वे सब एक समान हुए। इन सब पर फ़र्ज़ है कि अक्षरों का उच्चारण इतना शुद्ध कर लें जिससे नमाज़ सही हो जाए। जब तक ऐसा नहीं करेंगे, उन सबकी नमाज़ बातिल होगी। और अगर वह ऐसी गलती नहीं करता जिससे नमाज़ फासिद हो और उसके अलावा और कोई सही पढ़ने वाला वहाँ न हो, तो अनिवार्य है कि वही इमाम बनाया जाए और उसके बहरे होने की परवाह न की जाए, बशर्ते कि वह औरत का प्रबंधन कर ले। और अगर कोई अन्य सही अक़ीदे वाला फ़ासिक़ (पापी) भी सही पढ़ने वाला वहाँ मौजूद है, तो भले ही यह [बहरा व्यक्ति] सही पढ़े और औरत का पर्दा प्रबंध भी कर ले, उस दूसरे सही पढ़ने वाले की इमामत बेहतर होगी। क्योंकि जब यह ऐसा बहरा है कि तकबीर की आवाज़ नहीं सुनता, तो नमाज़ में अगर इससे कहीं भूल या गलती हो गई, तो वह मुक्तदियों (पीछे नमाज़ पढ़ने वालों) का बताना नहीं सुन पाएगा। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है, और उसका इल्म बहुत महान और पूर्ण है।

मसाला ६५९: भीकनपुर, ज़िला अलीगढ़ से, प्रेषक जाफ़र अली साहब, २४ रबी-उल-अव्वल १३२७ हिजरी। धर्म के विद्वान इस व्यक्ति की इमामत के बारे में क्या कहते हैं जो केवल हाफिज़-ए-कुरआन और फारसी पढ़ने वाला है, और एक मस्जिद का सवैतनिक इमाम है, लेकिन बाज़ार में मुसलमानों से लड़ता है, ज़ोर-ज़ोर से गंदी गालियां बकता है और कभी मस्जिद में मोअज़्ज़िन से कठोर व्यवहार करता है और मुक्तदियों की भीड़ में उसके वंश पर इल्ज़ाम लगाता है? वह मोअज़्ज़िन और कुछ मुक्तदियों से लंबे समय से द्वेष और घृणा रखता है। चेतावनी देने पर वह मुक्तदियों पर इल्ज़ाम लगाता है कि तुम मेरी ग़ीबत (चुगली) करते हो और मेरी रोज़ी छीनने की कोशिश करते हो, और अभी तक अपनी गलती स्वीकार नहीं करता और मोअज़्ज़िन को सलाम करना छोड़ दिया है। क्या ऐसे

इमाम के पीछे नमाज़ पढ़ना बिना किसी नफ़रत (कराहत) के जायज़ है या इसमें कुछ कराहत है? बयान करें, आपको पुण्य मिलेगा।

उत्तर: किसी मुसलमान से बिना किसी शरीअत के कारण के द्वेष और घृणा रखना हराम है, और बिना किसी धार्मिक लाभ के तीन दिन से अधिक बातचीत और सलाम बंद करना भी हराम है। अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं: "एक-दूसरे से नफ़रत न करो, एक-दूसरे से ईर्ष्या न करो, एक-दूसरे से मुँह न मोड़ो और अल्लाह के बंदे बनकर भाई-भाई हो जाओ।" द्वेष न रखो, ईर्ष्या और ग़ीबत न करो और अल्लाह के बंदे बनकर भाई-भाई बन जाओ। (त)

१ सही अल-बुखारी, अध्याय हिजरत, हदीस, प्रकाशित कदीमी कुतुब खाना कराची ४/८९ पेज ५२६ ऑफ़ ७३६

جلد ششم فتاوی رضویہ جہالت کے ساتھ کرتا ہے۔ بینوا توجروا

الجواب: جبکہ اس کی عورت کی کلائیاں کھلے باہر پھرتی دکان کرتی ہے یا گرمیوں میں باریک کپڑے پہنے نکلتی ہے جن سے بدن چمکتا ہے اور اس کا شوہر ان احوال سے واقف ہو کر حسب مقدور کامل بند وبست نہیں کرتا تو وہ دیوث ہے، اس کے پیچھے نماز پڑھنا اور اسے امام بنانا گناہ ہے اور اگر وہ عورت کو ہدایت بھی کرے اور اس الزام سے توبہ کر کے پاک ہو جائے تو اس حالت میں بھی جبکہ وہ قرآن مجید ایسا غلط پڑھتا ہو جس سے نماز فاسد ہوتی ہے تو اس کی امامت بالکل باطل ہے اور اس کے پیچھے نماز اصلاً نہ ہو گی مگر یہ الزام وہی لگا سکتے ہیں جو خود صحیح پڑھتے ہوں ورنہ ان کی خود بھی نماز نہیں ہو سکتی وہ سب ایک سے ہوئے، ان سب پر فرض ہے کہ حرفوں کی اتنی صحت کر لیں جس سے نماز صحیح ہو جائے، جب تک ایسا نہ کریں گے ان سب کی نماز باطل ہو گی اور اگر غلطی وہ ایسی نہیں کرتا جس سے نماز فاسد ہو اور اس کے سوا اور کوئی صحیح پڑھنے والا وہاں نہیں تو لازم ہے کہ وہی امام کیا جائے اور بہرا ہونے کی پرواہ نہ کی جائے جبکہ وہ عورت کا بند وبست کر لے اور اگر اور بھی صحیح العقیدہ وغیرہ فاسق صحیح پڑھنے والا وہاں موجود ہے تو یہ اگرچہ صحیح بھی پڑھے اور عورت کا بند وبست بھی کر لے اس دوسرے صحیح خواں کی امامت اولی ہو گی کہ جب یہ ایسا بہرا ہے کہ تکبیر کی آواز نہیں سنتا تو نماز میں اگر اس سے کہیں بھول یا غلطی واقع ہوئی مقتدیوں کا بتانا نہ سنے گا واللہ تعالیٰ اعلم وعلمہ وجل مجدہ اتم واحکم

مسئلہ ۶۵۹: از بھیکن پور ضلع علی گڑھ مرسلہ جعفر علی صاحب ۲۴ ربیع الاول ۱۳۲۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین متین بیچ امامت اس شخص کے کہ جو صرف حفظ قرآن و فارسی خواں ہو اور ایک مسجد کا امام تنخواہ دار لیکن بازار میں مسلمان سے لڑتا شور مغلظات الفاظ زبان پر لاتا

ہو اور کبھی مسجد میں مؤذن سے سخت کلامی اور اس کی حسب ونسب پر مجمع مقتدیان میں الزام لگاتا ہو مؤذن و بعض مقتدیوں سے عرصہ سے کدورت وکینہ رکھتا ہو تنبیہ کرنے پر مقتدیوں پر الزام لگاتا ہو کہ تم میری غیبت کرتے اور میری روزی چھیننے کی کوشش کرتے ہو اور اپنے قصور کا ہنوز اعتراف نہ کرتا ہو اور مؤذن سے سلام علیک ترک کر دی ہو ایسے امام کی اقتداء بلا کراہت جائز ہے یا کچھ کراہت ہے؟ بینوا توجروا

الجواب: مسلمان سے بلاوجہ شرعی کینہ وبغض رکھنا حرام ہے اور بلا مصلحت شرعیہ تین دن سے زیادہ ترک سلام وکلام بھی حرام ہے، رسول اللہ صلی اللہ علیہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں: لا تباغضوا ولا تحاسدوا ولا تدابروا وکونوا عباد اللہ اخواناً بغض نہ رکھو، حسد اور غیبت نہ کرو اور اللہ کے بندے بن کر بھائی بھائی ہو جاؤ۔ (ت)

۱ صحیح البخاری باب الہجرۃ حدیث مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۴ / ۸۹ Page 526 of 736

Fatawa Rizvia, Volume 6 And he (peace and blessings of Allah be upon him) says:

Arabic: لا يحل لمسلم ان يهجر اخاه فوق الثلث -1	**It is not permissible for a Muslim to cut off greetings and speech with another brother for more than three days. (T)**

And using foul language, especially in public markets, is a sin and transgression. It is in the Hadith that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

Arabic: ليس المؤمن بالطعان ولا الفحاش -2	**A believer is not one who taunts, nor is he one who uses foul language. (T)**

The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

Arabic: الحياء من الايمان والبذاء من النفاق -3	**Modesty is a part of faith and shamelessness is a part of hypocrisy. (T)**

Especially if in this foul language he attributes adultery to any Muslim man or woman, as is commonly prevalent in the abuses of foul-mouthed people today, then it is a most severe major sin.

Allah Almighty said: Allah Almighty commands you that you should never repeat such a thing again if you are believers. (T)

Arabic: 4 - يَعِظُكُمُ اللهُ اَنْ تَعُوْدُوْا لِمِثْلِهٖٓ اَبَدًا اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ ۚ ۱۷ (Allah admonishes you, lest you repeat the like of it ever, if you are believers. - 24:17)

In short, the aforementioned person is an open sinner (Fasiq-e-Mu'lin), and to make an open sinner an Imam is a sin, and the prayer behind him is Makruh Tahrimi, i.e., forbidden to offer, and if offered, it is obligatory to repeat it. It is in Fatawa Hindiyyah, then Ghunyah, then Radd al-Muhtar: "If they appoint a Fasiq (as Imam), they are sinners." - 5 (If people put a Fasiq forward, they will be sinners. - T)

Problem 660: From Sitapur, Dhu al-Hijjah 1337 AH. Question: What do the scholars of religion say regarding this matter that there is a suspicion of Rafd (Shi'ism) against a person, his association is with those...

1. Sahih al-Bukhari, Al-Hijrah Hadith 6077, published by Qadimi Kutub Khana Karachi 2/297.
2. Jami' al-Tirmidhi, Chapter 'What has come regarding Ghunyah', published by Amin Company Kutub Khana Rashidiyah Delhi 2/9, and Musnad Ahmad bin

Hanbal, Chapter 'Chain of Abdullah ibn Mas'ud RA', published by Dar al-Fikr Beirut 1/205.

3. Jami' al-Tirmidhi, Chapter 'What has come regarding Al-Itti', published by Amin Company Kutub Khana Rashidiyah Delhi 2/23.
4. Quran 24/17.
5. Ghunyat al-Mustamli Sharh Munyat al-Musalli, Section on Imamate, published by Suhail Academy Lahore p. 513. Note: 'F': In the text mentioned by A'la Hazrat, the word "Al-Fahhash" is used, while in the books of Hadith from which the reference is quoted, the word is "Al-Fuhsh". Nazir Ahmad Sa'idi.

फ़तावा रिज़विया, जिल्द छठी और आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं:

अरबी: لا یحل لمسلم ان یھجر اخاہ فوق الثلث -1 **किसी मुसलमान के लिए जायज़ नहीं कि वह दूसरे भाई से तीन दिन से ज़्यादा सलाम व कलाम खत्म करे। (त)**

और गालियां बकना ख़ासतौर पर सरे-बाज़ार गुनाह और फ़िस्क़ है। हदीस में है कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं:

अरबी: لیس المؤمن بالطعان ولا الفحاش -2 **मोमिन ताना देने वाला नहीं होता और न ही बेहूदा बातें बकता है। (त)**

रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं:

अरबी: الحیاء من الایمان والبذاء من النفاق -3 **हया ईमान का हिस्सा है और बेहयाई निफ़ाक़ (पाखंड) का हिस्सा है। (त)**

ख़ासतौर पर अगर इस बेहूदगी में किसी मुसलमान मर्द या औरत पर ज़िना (व्यभिचार) का इल्ज़ाम लगाया जाए, जैसा कि आजकल बदज़बान लोगों की गालियों में आम है, तो यह बहुत बड़ा गुनाह (कबीरा) है।

अल्लाह तआला का फरमान है: अल्लाह तआला तुम्हें हुक्म देता है कि आइंदा कभी ऐसी बात न करो अगर तुम ईमान वाले हो। (त)

अरबी आयत: 4 - ۝١٧ یَعِظُكُمُ اللّٰهُ اَنْ تَعُوْدُوْا لِمِثْلِهٖۤ اَبَدًا اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِیْنَ (अल्लाह तुम्हें नसीहत करता है कि अगर तुम मोमिन हो तो फिर कभी ऐसा न करना - 24:17)

खुलासा यह कि ज़िक्र किया गया शख्स फासिक़ेमुअलिन (खुलेआम गुनाह करने वाला) है और ऐसे शख्स को इमाम बनाना गुनाह है और उसके पीछे नमाज़ मकरूहे-तहरीमी है यानी पढ़ना मना है और अगर पढ़ ली जाए तो उसे दोहराना वाजिब है। फ़तावा हिंदीया, फिर गुनिया, फिर रद्दुल-मुहतार में है: "अगर लोगों ने फासिक़ को आगे बढ़ाया तो वे गुनहगार होंगे।" - 5 (त)

मसला ६६०: सीतापुर से, ज़िल-हज्जा १३३७ हिजरी। सवाल: उलेमा-ए-दीन इस मसले में क्या फरमाते हैं कि एक शख्स पर रफ़्ज़ (शिया मत) का शक है, उसकी नशस्त (बैठक) उन लोगों के..

1. सहीह अल-बुखारी, अल-हिजरा हदीस 6077, कदीमी कुतुब खाना कराची 2/297।

2. जामि' अत-तिर्मिज़ी, अध्याय 'गनीया के बारे में', अमीन कंपनी कुतुब खाना रशीदिया दिल्ली 2/9, और मुसनद अहमद बिन हंबल, अध्याय 'सनद अब्दुल्लाह इब्ने मसूद रज़ियल्लाहु अन्हु', दार अल-फ़िक्र बेरुत 1/205।
3. जामि' अत-तिर्मिज़ी, अध्याय 'अल-इत्ती के बारे में', अमीन कंपनी कुतुब खाना रशीदिया दिल्ली 2/23।
4. अल-क़ुरआन 24/17.
5. गुनिय्यतुल मुस्तमली शरह मुनियतुल मुसल्ली, इमामत का अध्याय, सुहैल एकेडमी लाहौर पृष्ठ 513। नोट: फ़: आला हज़रत की बयान की गई इबारत में "अल-फ़ह़्ह़ाश" लफ्ज़ है जबकि हदीस की किताबों में "अल-फुह़श" लफ्ज़ है। नजीर अहमद सईदी।

فتاوی رضویہ جلد ششم اور فرماتے ہیں صلی اللہ علیہ وسلم:

لا یحل لمسلم ان یھجر اخاہ کسی مسلمان کے لئے جائز نہیں کہ دوسرے بھائی سے تین دن سے فوق الثلث -1 زائد سلام و کلام قطع کرے۔ (ت)

اور فحش بکنا خصوصاً برسرِ بازار معصیت و فسق ہے حدیث میں ہے رسول اللہ صلی اللہ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

لیس المؤمن بالطعان ولا الفحاش مومن طعن کرنے والا نہیں ہوتا اور نہ ہی فحش بکتا ہے 2- (ت)

رسول اللہ صلی اللہ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

الحیاء من الایمان والبذاء من النفاق حیاء ایمان کا حصہ ہے اور بے حیائی نفاق کا حصہ ہے۔ 3- (ت)

خصوصاً اگر اس فحش میں کسی مسلمان مرد یا عورت کو زنا کی طرف نسبت کرتا ہو جیسے آج کل فحش لوگوں کی گالیوں میں عام طور پر رائج ہے جب تو اشدِ کبیرہ ہے۔

قال اللہ تعالیٰ اللہ تعالیٰ کا فرمان ہے: اللہ تعالیٰ تمہیں حکم دیتا ہے تم آئندہ کبھی ایسی بات نہ کرو اگر تم اہلِ ایمان ہو (ت)

یَعِظُکُمُ اللّٰہُ اَنْ تَعُوْدُوْا لِمِثْلِہٖٓ اَبَدًا اِنْ کُنْتُمْ مُّؤْمِنِیْنَ ۚ﴿۱۷﴾ - 4

با لجملہ شخص مذکور فاسق معلن ہے اور فاسق معلن کو امام بنانا گناہ اور اس کے پیچھے نماز مکروہِ تحریمی یعنی پڑھنی منع ہے اور پڑھ لی ہو تو پھیرنی واجب۔ فتاوٰی ہندیہ پھر غنیہ پھر

ردالمختار میں ہے: لو قدموا فاسقًا یأثمون -5 (اگر لوگ نے فاسق کو مقدم کردیا تو وہ گنہ گار ہونگے ۔ت)

مسئلہ ۶۶۰: از سیتا پور ذی الحجہ ۱۳۳۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ایک شخص پر رفض کا شبہ ہے اس کی نشست ان لوگوں کے

1. صحیح البخاری، الهجرة حدیث ۶۰۷۷ مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۲/ ۲۹۷
2. جامع الترمذی باب ما جاء فی الغنیہ مطبوعہ امین کمپنی کتب خانہ رشیدیہ دہلی ۹/۲ و مسند احمد بن حنبل باب سند عبد الله ابن مسعود رضی الله عنہ مطبوعہ دار الفکر بیروت ۱ / ۲۰۵
3. جامع الترمذی، باب ما جاء فی العتی، مطبوعہ امین کمپنی کتب خانہ رشیدیہ دہلی ۲/ ۲۳
4. القرآن ۲۴ / ۱۷
5. غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل فی الامامۃ مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۵۱۳ ف:

اعلحضرت کی ذکر کردہ عبارت میں "الفحاش" کا لفظ ہے جبکہ کتبِ احادیث جن سے حوالہ منقول ہے ان میں "الفحش" کا لفظ ہے۔ نذیر احمد سعیدی

Fatawa Rizvia, Volume Six

...is close to them and has been seen attending their special gatherings. When asked to repent, he does not repent. His state is such that among Shias (Rafidis) he is a Shia, and among Sunnis he is a Sunni. Some people have appointed him as a teacher for their boys and as an Imam of the mosque. In this situation, what is the ruling regarding him and those who appointed him? Is it mandatory to dismiss him due to suspicion? If so, what is the evidence? This is while he does not utter anything regarding the beliefs of Shias in front of the Ahl-ul-Sunnah. And if he repents, should he be kept [as Imam] afterwards or not? Explain and be rewarded.

Answer: When it is proven and established that he acts as a Shia among Shias and a Sunni among Sunnis, then it is evident that he is both a Shia and a hypocrite. Prayer behind him is absolutely void, just like behind any Jew, Christian, Hindu, or Magian, as we have explained in 'Al-Munha al-Akid'. (As we have explained in Al-Munha al-Akid. -T). In fact, the Tabarra-i Shias (Rafidis) of this era are worse than them, for they are original disbelievers, while this person is an apostate. The ruling for an apostate is much harsher and more severe, as we have investigated in the treatise 'Al-Maqala al-Musfira'. (We have investigated this in our treatise Musfira. -T). Even if his state is merely doubtful and ambiguous, it is still mandatory to dismiss him from the leadership (Imamate) based on numerous proofs.

I say: And with Allah's guidance (I say with the success granted by Allah): First Evidence: Scholars explicitly state that when there is hesitation between an act being an innovation (bid'ah) or a Sunnah, the Sunnah should be abandoned there. In 'Bahr al-Ra'iq', then in 'Radd al-Muhtar' under the section 'Disliked Acts of Prayer':

| Arabic: When a ruling wavers between being a Sunnah and an innovation (bid'ah), abandoning the Sunnah is preferred over performing the innovation[1]- summarized. | Urdu: When the ruling is hesitated between Sunnah and bid'ah, it is preferable to abandon the Sunnah instead of acting upon the bid'ah. (T) |

In 'Al-Muhit', then 'Fath al-Qadir' at the end of 'Prostrations of Forgetfulness' (Sujud al-Sahw):

| Arabic: Whatever wavers between innovation (bid'ah) and Sunnah, it should be abandoned because abandoning innovation is mandatory, while performing Sunnah is not mandatory.[2]- | Urdu: When there is hesitation between bid'ah and Sunnah, the

Sunnah should be abandoned because abandoning bid'ah is mandatory and performing Sunnah is not mandatory. (T) |

It is evident that if this person is actually a Sunni, then specifically appointing him as Imam is not a Sunnah either, and if he is a Shia (Rafidi), then appointing him as Imam is absolutely prohibited (Haraam-e-Qat'i).

---

[1] Radd al-Muhtar, topic 'If the ruling wavers between Sunnah and bid'ah', printed Mustafa al-Bab Egypt, 1/475. [2] Fath al-Qadir, chapter on Sujud al-Sahw, printed Maktaba Nooria Razvia Sukkur, 1/455.

फ़तावा रिज़विया, छठा खंड

...पास है और उनकी विशेष बैठकों में जाते भी उसे देखा गया है। यदि उससे तौबा करने को कहा जाए तो वह तौबा भी नहीं करता। उसकी स्थिति यह है कि वह राफ़िज़ियों (शियाओं) में राफ़िज़ी और सुन्नियों में सुन्नी बन जाता है। कुछ लोगों ने उसे अपने बच्चों का शिक्षक और मस्जिद का इमाम नियुक्त किया है। इस स्थिति में उसके और उसे नियुक्त करने वालों के बारे में क्या हुक्म है? क्या उसे संदेह के आधार पर बर्खास्त करना अनिवार्य है? यदि हाँ, तो किस दलील से? जबकि वह अहले सुन्नत के सामने राफ़िज़ियों के अकीदे (विश्वास) की कोई बात ज़बान से नहीं निकालता। और यदि वह तौबा कर ले तो क्या उसके बाद भी उसे पद पर रखा जाए या नहीं? बयां करें और सवाब पाएं।

उत्तर: जब यह सिद्ध और प्रमाणित है कि वह राफ़िज़ियों में राफ़िज़ी और सुन्नियों में सुन्नी बनता है, तो यह स्पष्ट है कि वह राफ़िज़ी भी है और मुनाफ़िक़ (पाखंडी) भी। उसके पीछे नमाज़ बिल्कुल बातिल (अमान्य) है, जैसे किसी यहूदी, ईसाई, हिंदू या पारसी के पीछे, जैसा कि हमने 'अल-मुन्हा अल-अकीद' में स्पष्ट किया है। (जैसा कि हमने इसे अल-मुन्हा अल-अकीद में बयान किया है। -त)। बल्कि इस ज़माने के तबराई राफ़िज़ी उनसे भी बदतर हैं क्योंकि वे असली काफ़िर हैं, और यह व्यक्ति मुरतद (धर्मत्यागी) है। मुरतद का हुक्म अधिक कठोर और गंभीर है, जैसा कि हमने अपने लेख 'अल-मक़ाला अल-मुसफ़िरा' में शोध किया है। (इसकी जांच हमने अपने लेख मुसफ़िरा में की है। -त)। और यदि स्थिति केवल इतनी ही संदिग्ध और अस्पष्ट हो, तब भी उसे इमामत से बर्खास्त करना कई प्रमाणों के आधार पर अनिवार्य है।

मैं कहता हूँ: और अल्लाह की तौफ़ीक़ से (मैं अल्लाह की दी हुई सफलता के साथ कहता हूँ): पहली दलील: विद्वान स्पष्ट करते हैं कि जब किसी कार्य के बिदअत (नवाचार) या सुन्नत होने में संदेह हो, तो वहां सुन्नत को छोड़ दिया जाना चाहिए। 'बहरुल राइक़' और फिर 'रद्दुल मुहतार' के नमाज़ के मकरूहात अनुभाग में है:

| अरबी: जब हुक्म सुन्नत और बिदअत के बीच संदिग्ध हो, तो सुन्नत को छोड़ना बिदअत पर अमल करने से बेहतर है[1]- संक्षेप में। | उर्दू: जब हुक्म सुन्नत और बिदअत के बीच संदिग्ध हो, तो बिदअत पर अमल करने के बजाय सुन्नत को छोड़ देना ही बेहतर है। (त) |

'अल-मुहीत' और फिर 'फ़तहुल क़दीर' के सुजूद-अस-सह्व के अंत में है:

| अरबी: जो बिदअत और सुन्नत के बीच संदिग्ध हो उसे छोड़ देना चाहिए क्योंकि बिदअत को छोड़ना अनिवार्य है और सुन्नत को निभाना अनिवार्य नहीं है।[2]- | उर्दू: जब बिदअत और सुन्नत के बीच संदेह हो, तो सुन्नत को छोड़ दिया जाए क्योंकि बिदअत को छोड़ना अनिवार्य है और सुन्नत का पालन अनिवार्य नहीं है। (त) |

यह स्पष्ट है कि यदि यह व्यक्ति वास्तव में सुन्नी हो, तो विशेष रूप से उसी को इमाम बनाना कोई सुन्नत भी नहीं है, और यदि वह राफ़िज़ी (शिया) है, तो उसे इमाम बनाना निश्चित रूप से हराम (वर्जित) है।

---

[1] रद्दुल मुहतार, विषय: 'जब हुक्म सुन्नत और बिदअत के बीच संदिग्ध हो', मुस्तफ़ा अल-बाब मिस्र द्वारा प्रकाशित, 1/475। [2] फ़तहुल क़दीर, सुजूद-अस-सह्व अध्याय, मकतबा नूरिया रिज़विया सुक्कुर द्वारा प्रकाशित, 1/455।

فتاوی رضویہ جلد ششم

پاس ہے اور ان کی خاص مجلسوں میں جاتے بھی اسے دیکھا اور اس سے توبہ کو کہا جائے تو توبہ بھی نہیں کرتا اور حالت اس کی یہ ہے کہ رافضیوں میں رافضی، سنیوں میں سنی اور اسے بعض لوگوں نے اپنے لڑکوں کا معلم اور مسجد کا امام مقرر کیا ہے اس صورت میں اس کا اور اس کے مقرر کرنے والوں کا کیا حکم ہے اور اس کا معزول کرنا بوجہ شبہ کے واجب ہے یا نہیں اگر ہے تو کس دلیل سے، حالانکہ وہ اہلسنت کے سامنے کوئی بات عقیدہ روافض کی زبان سے نہیں نکالتا اور اگر وہ توبہ کر لے تو اس کے بعد بھی رکھا جائے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: جبکہ ثابت و محقق ہو کہ رافضیوں رافضی اور سنیوں میں سنی بنتا ہے جب تو ظاہر ہے کہ وہ رافضی بھی ہے اور منافق بھی اور اس کے پیچھے نماز باطل محض، جیسے کسی یہودی نصرانی ہندو مجوسی کے پیچھے کما بیناہ فی المنہی الاکید (جیسا کہ ہم نے اسے المنہی الاکید میں بیان کیا ہے۔ت) بلا کہ تبرائی روافض زمانہ ان سے بھی بدتر ہیں کہ وہ کافرانِ اصلی ہیں اور یہ مرتد، اور مرتد کا حکم سخت تر و اشد کما حققناہ فی المقالۃ المسفرۃ (اس کی تحقیق ہم نے اپنے مقالے مسفرہ میں کی ہے۔ ت) اور اگر صرف اسی قدر ہو کہ اس کی حالت مشکوک و مشتبہ ہے جب بھی اسے امامت سے معزول کرنا بدلائل کثیرہ واجب ہے۔

فاقول: وباللہ التوفیق (پس میں اللہ کی توفیق سے کہتا ہوں) دلیل اول: علماء تصریح فرماتے ہیں کہ جب کسی امر کے بدعت وسنت ہونے میں تردد ہو تو وہاں سنت ترک کی جائے۔ بحر الرائق پھر ردالمحتار مکروہات الصلاۃ میں ہے:

| اذا تردد الحکم بین سنة وبدعة کان ترك السنة راجحا علی فعل البدعة[1]- مختصرا | جب حکم سنت اور بدعت کے درمیان متردد ہو تو بدعت پر عمل کی بجائے ترک سنت راجح ہے (ت) |

المحیط پھر فتح القدیر اواخر سجود السھو میں ہے:

| ما تردد بین البدعة والسنة ترکه لان ترك البدعة لازم و اداء السنة غیر لازم[2]- | جب بدعت اور سنت کے درمیان تردد ہو تو سنت کو ترک کردیا جائے کیونکہ ترک بدعت لازم اور اداء سنت غیر لازم ہے۔ (ت) |

ظاہر ہے کہ اگر یہ شخص واقع میں سنی ہو تو خاص اسی کو امام کرنا کچھ سنت بھی نہیں اور رافضی ہو تو اسے امام کرنا حرام قطعی۔

---

[1] رد المحتار مطلب اذا تردد الحکم بین سنۃ و بدعۃ مطبوعہ مصطفی الباب مصر ۱ / ۴۷۵ [2] فتح القدیر باب سجود السھو مطبوعہ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۱ / ۴۵۵

Fatawa Razawiyya Volume 6

When there is hesitation between following a Sunnah and a Makruh act, and it is known that abandoning the Sunnah is preferred, then why shouldn't it be mandatory to abandon something when the doubt is between being permissible and absolutely prohibited? Second argument: Scholars state that when there is doubt whether an act is obligatory or an innovation (bid'ah), it should not be abandoned. It is mentioned in Fath, Hulyah, Bahr, Radd al-Muhtar, etc.:

[Arabic Box] And the wording for this in the section on supererogatory prayers: It has been established that whatever revolves between being an innovation or obligatory shall not be abandoned. - 1

[Urdu Translation Box] In the section on supererogatory prayers, the words of this (Radd al-Muhtar) are: It is an established matter that an act whose occurrence is doubtful between being an innovation and obligatory, it (i.e., the obligatory act) should not be abandoned. (T)

It is clear that if this person is a Sunni, appointing another Imam in his place is not an innovation at all. And if he is a Rafidi, then removing him is an absolute obligation. When an action is necessary in the face of doubt between innovation and obligation, then why wouldn't removing him be even more critically necessary when the doubt is between what is permissible and an absolute obligation?

Third argument: A rule of the pure Sharia is established, stating: 'When the Halal (permissible) and Haram (prohibited) come together, the Haram prevails.' - 2 When both reasons for permissibility and prohibition are gathered in one thing, the dominance will be given to prohibition, and that thing will be considered prohibited. As in Al-Ashbah wal-Nazair (as mentioned in Ashbah wal-Nazair. T). If he is a Sunni, leading the prayer is permissible; if he is a Rafidi, it is prohibited. Thus, dominance will be given to prohibition.

Fourth argument: Caution is absolutely mandatory in acts of worship, especially prayer which is the most important and greatest of worships. Scholars state regarding it that if there is doubt about its validity or invalidity—being invalid for one reason but valid for several reasons—then relying on that single reason, they will rule it as invalid. In Fath al-Qadir, under 'Prayer of the Traveler', it says:

[Arabic Box] These are issues of Ziyadat (extra matters). A traveler and a resident; one of them intended to lead the other. When they began, they doubted who the Imam

was. They must restart, because when a prayer is invalid from one aspect and valid from multiple aspects, it is ruled as invalid. An imam following his follower is invalidating, and the possibility that each of them...

[Urdu Translation Box] These are from the issues of Ziyadat. One of a traveler and a resident led the other. When both started the prayer, they became doubtful regarding the Imam, whether 'I am the Imam or the other'. So they should perform the prayer afresh, because when a prayer is invalid from one direction and several reasons for invalidity and several reasons for...

---

1 Radd al-Muhtar, Chapter of Witr and Nawafil, printed by Mustafa al-Babi Egypt 1/516 2 Al-Ashbah wal-Nazair, The Second Rule: When Halal is joined, etc., Idaratul Quran Karachi 1/44 Page 529 of 736

फतावा रजविया जिल्द शशम (छठा)

जब सुन्नत और मक्रूह के संदेह में सुन्नत छोड़ने का ज्ञान हो, तो जायज़ और कतई हराम के संदेह में वह जायज़ क्यों न अनिवार्य रूप से त्यागने योग्य होगा? दूसरा तर्क विद्वान कहते हैं कि जब किसी बात के वाजिब या बिदअत होने में संदेह हो, तो उसे छोड़ा न जाए। फतह, हुलिया, बहर, रद अल-मुह्तार आदि में है:

[अरबी बॉक्स] नवाफिल के वर्णन में इसके शब्द ये हैं: यह स्थापित हो चुका है कि जो बात बिदअत और वाजिब होने के बीच संदिग्ध हो, उसे छोड़ा नहीं जाएगा। - १

[उर्दू अनुवाद बॉक्स] नवाफिल के बयान में इसके(रद अल-मुह्तार के) शब्द ये हैं कि यह बात मानी हुई है कि जिस काम का होना बिदअत और वाजिब के बीच संदिग्ध हो, उसे (यानी वाजिब को) छोड़ा नहीं जाएगा। (त)

ज़ाहिर है कि यदि यह व्यक्ति सुन्नी हो, तो उसके स्थान पर दूसरा इमाम नियुक्त करना कोई बिदअत नहीं है। और यदि वह राफ़ज़ी हो, तो उसे पदमुक्त करना कतई फ़र्ज़ है। जब बिदअत और वाजिब के संदेह में कोई कार्य आवश्यक होता है, तो जायज़ और कतई फ़र्ज़ के संदेह में उसे हटाना क्यों न अत्यधिक आवश्यक होगा?

तीसरा तर्क पवित्र शरीयत का एक नियम स्थापित है कि 'जब हलाल और हराम एकत्रित हो जाएँ तो हराम प्रबल होता है।' - २ जब एक चीज़ में हलाल और हराम दोनों पहलू एकत्र हों, तो प्रधानता हराम को दी जाएगी और वह चीज़ हराम समझी जाएगी। जैसा कि 'अल-अश्बाह वन-नज़ायर' में है (जैसा कि अश्बाह वन-नज़ायर में है। त)। यदि वह सुन्नी है तो इमामत हलाल है और राफ़ज़ी है तो हराम, तो प्रधानता हराम को ही दी जाएगी।

चौथा तर्क इबादतों में एहतियात (सावधानी) पूर्णतः अनिवार्य है, विशेषकर नमाज़ जो सबसे महत्वपूर्ण और महान इबादत है, जिसके लिए विद्वान फरमाते हैं कि यदि इसकी वैधता और अवैधता में संदेह हो जाए—एक कारण से अवैध हो और कई कारणों से वैध—तो उसी एक कारण का विचार करके उसकी अवैधता का ही हुक्म देंगे। फतह अल-कदीर 'सलातुल मुसाफिर' में है:

[अरबी बॉक्स] ये ज़ियादात के मसले हैं। एक मुसाफिर और एक मुकीम; उनमें से एक ने दूसरे की इमामत की। जब उन्होंने शुरू किया, तो उन्हें इमाम के बारे में संदेह हो गया। वे फिर से शुरू करेंगे,

क्योंकि जब नमाज़ एक पहलू से अवैध हो और कई पहलुओं से वैध, तो उसके अवैध होने का हुक्म दिया जाता है। मुक्तदी का इमाम बनना अमान्य करने वाला है, और इस बात की संभावना कि उनमें से प्रत्येक...

[उर्दू अनुवाद बॉक्स] ये ज़ियादात के मसले हैं। मुसाफिर और मुकीम में से एक ने दूसरे की इमामत की। जब दोनों ने नमाज़ शुरू की तो उन्हें इमाम के बारे में संदेह हो गया कि मैं इमाम हूँ या दूसरा, तो नमाज़ फिर से शुरू करेंगे क्योंकि नमाज़ जब एक दिशा से अवैध और कई कारणों से अमान्य और कई कारणों से...

---

१ रद अल-मुह्तार, बाब अल-वितर व अल-नवाफिल, मुद्रित मुस्तफा अल-बाबी मिस्र १/ ५१६ २ अल-अश्बाह वन-नज़ायर अल-क़ायदा अल-सानिया: इज़ा इज्तमअ अल-हलाल इख़, इदारतुल कुरान कराची १/ ४४ पेज ७३६ का ५२९

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

جب سنت و مکروہ کے تردد میں ترک سنت کی علم ہو تو جائز و حرامِ قطعی کے تردد میں وہ جائز کیوں نہ واجب الترک ہوگا۔ دلیل دوم علماء فرماتے ہیں کہ جب کسی بات کے واجب و بدعت ہونے میں تردد ہو تو ترک نہ کی جائے۔ فتح و حلیہ و بحر و ردالمحتار وغیرہ میں ہے:

[Arabic Box] واللفظ لهذا فی النوافل قد تقرر ان مادار بین وقوعه بدعة او واجبا لا یترك - ۱

[Urdu Translation Box] بیانِ نوافل میں اس (ردالمحتار) کے الفاظ یہ ہیں کہ یہ بات مسلمہ ہے جس کام کا وقوع بدعت اور واجب کے درمیان متردد ہو تو اسے (یعنی واجب کو) ترک نہیں کیا جائے گا۔ (ت)

ظاہر ہے کہ یہ شخص سنی ہو تو اس کی جگہ دوسرا امام مقرر کرنا کچھ بدعت بھی نہیں اور رافضی ہو تو اسے معزول کرنا فرض قطعی جب بدعت و واجب کے تردد میں فعل ضروری ہوتا ہے تو جائز و فرض قطعی کے تردد میں اسے معزول کرنا کیوں نہ اشد ضروری ہوگا۔

دلیل سوم: شرع مطہر کا قاعدہ مقرر ہے کہا اذا اجتمع الحلال والحرام غلب الحرام ۲- جب ایک چیز میں حلت و حرمت دونوں وجہیں جمع ہوں تو غلبہ حرمت کو رہے گا اور وہ شے حرام سمجھی جائے گی۔ کما فی الاشباہ والنظائر (جیسا کہ اشباہ والنظائر میں ہے۔ ت) یہ سنی ہو تو امامت حلال اور رافضی ہو تو حرام، تو غلبہ حرمت ہی کو دیا جائے گا۔

دلیل چہارم: عبادات میں احتیاط مطلقاً واجب ہے نہ کہ نماز کہ اہم و اعظم عبادات ہے جس کے لئے علماء فرماتے ہیں کہ اگر اس کی صحت و فساد میں اشتباہ پڑے ایک وجہ سے فاسد ہوتی ہو اور

متعدد وجوہ سے صحیح تو اس ایک ہی وجہ کا اعتبار کرکے اس کے فساد ہی کا حکم دیں گے، فتح القدیر صلاۃ المسافر میں ہے:

[Arabic Box] هذه مسائل الزيادات، مسافر و مقيم امر احدهما الاخر فلما شرعا شكافى الامام استقبلا لان الصلوة متى فسدت من وجه وجازت من وجوه حكم بفسادها وامامة المقتدى مفسدة، واحتمال كون كل منهما

[Urdu Translation Box] یہ مسائل زیادات کے ہیں مسافر اور مقیم میں سے ایک نے دوسرے کی امامت کی جب دونوں نے نماز شروع کی تو انھیں امام کے بارے میں شک ہوگیا کہ میں امام ہوں یا دوسرا تو نماز نئے سرے سے ادا کریں کیونکہ نماز جب ایک جہت سے فاسد اور کئی وجوہ کی فاسد اور کئی وجوہ کی

---

1 ردالمحتار، باب الوتر والنوافل، مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/ ۵۱۶ 2 الاشباہ والنظائر القاعدہ الثانیہ: اذا اجتمع الحلال الخ ادارۃ القرآن کراچی ۱/ ۴۴

[Box 1] Muqtadiyan qa'imun fatasfudu alaihima[1]. If it is correct on the basis [of this], then the ruling of the prayer becoming void will be given, and for a follower to act as an Imam is a spoiler of prayer. In such a situation, the possibility remains that each one is a follower; therefore, the prayer of both will become void. (T)

It is clear that assuming [the person is a] Sunni, the prayer behind him is correct, and assuming [he is a] Rafidi (Shia), it is void. Then how can his leadership (Imamat) be permissible? Fifth proof: Scholars state that a Qadi (judge) can issue discretionary punishment (ta'zir) based solely on accusation and the attainment of a strong suspicion. It is mentioned in Bahr, Nahr, Durr al-Mukhtar etc: "The judge has the right to punish the accused even if it is not proven against him.[2]" (A judge can issue punishment based on mere suspicion even if proof is absent. T) When suspicion is such a thing due to which permission is granted to punish a Muslim without explicit proof, where the default is prohibition, why would it not be mandatory to exercise caution for prayer, where the default is obligation? The person who, after being informed of his state, appointed him as an Imam for Muslims or a teacher for his boys, while clean and pure Imams and teachers can be found in abundance among the Ahl al-Sunnah, has betrayed Allah, His Messenger, and all Muslims. He is a wisher of ill for Muslims. It is necessary for him to repent for his action and dismiss the person he appointed. In Hakim's Sahih al-Mustadrak, and narrated by Ibn Adi, Uqayli, Tabarani, and Khatib from Hazrat Abdullah bin Abbas (may Allah be pleased with him), the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

[Box 2] Man ista'mala rajulan min asabatin wa fihim man huwa arda lillahi minhu faqad khana Allaha wa rasulahu wal-mu'minin[3]. Whoever appointed a person from a group to a task while there was someone present among them more pleasing to Allah than him, then he has betrayed Allah, His Messenger, and all Muslims. (T)

In al-Taysir, a commentary on al-Jami' al-Saghir, the explanation of this same Hadith says:

[Box 3] Ay nasabahu alayhim amiran aw qayyiman aw arifan aw imaman lissalah[4]. That is, he appointed him as a leader, guardian, overseer, or Imam for prayer over them. (T)

Then, even if this person repents, he cannot be made an Imam merely upon repentance; rather, it is necessary to keep him dismissed for an extended period and

observe his conduct. If multiple trials through situations of fear, greed, anger, and pleasure etc. prove that truly he...

---

[1] Fath al-Qadir, Chapter of the Prayer of the Traveler, published by Nooria Razawiyya, Sukkur, 4/12. [2] Durr al-Mukhtar, Chapter of Discretionary Punishment, published by Matba' Mujtabai, Delhi, 1/329. [3] Al-Mustadrak 'ala al-Sahihayn, Leadership and Trust, published by Dar al-Fikr, Beirut, 4/92. Note: In Mustadrak, the word "fi tilk al-asabah" is used instead of "fihim". - Nazir Ahmed Saidi. [4] Al-Taysir Sharh al-Jami' al-Saghir, under the mentioned Hadith, Maktaba al-Imam al-Shafi'i, Riyadh, 2/396. Page 530 of 736

[बॉक्स 1] मुक़्तदियन क़ाइम फ़तफ़सुद अलैहिमा[1]। (यदि यह इस आधार पर) सही हो तो नमाज़ के फ़ासिद (अमान्य) होने का हुक्म दिया जाएगा, और मुक़्तदी (अनुयायी) का इमाम होना नमाज़ को बिगाड़ने वाला है और ऐसी स्थिति में यहाँ हर एक के मुक़्तदी होने की संभावना बनी रहती है, इसलिए दोनों की नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी। (त)

ज़ाहिर है कि सुन्नियत की तक़दीर (मान्यता) पर उसके पीछे नमाज़ सही और रफ़्ज़ (राफ़िदीयत) की तक़दीर पर फ़ासिद, तो उसकी इमामत कैसे जायज़ हो सकती है। पाँचवीं दलील: उलमा फ़रमाते हैं कि क़ाज़ी केवल तहमत (आरोप) और गुमान (प्रबल धारणा) के प्राप्त होने पर ताज़ीर (सज़ा) दे सकता है। बहर, नह्र और दुर्र-ए-मुख़्तार आदि में है: "लिल-क़ाज़ी ताज़ीरुल मुत्तहम व इन लम यसबुत अलैहि[2]"। (क़ाज़ी केवल तहमत की बिना पर ताज़ीर जारी कर सकता है भले ही सुबूत न हो। त) जब तहमत ऐसी चीज़ है जिसके कारण बिना स्पष्ट सुबूत के एक मुसलमान को सज़ा देने की इजाज़त हो जाती है, जिसमें मूलतः हुरमत (प्रतिबंध) है, तो नमाज़ के लिए एहतियात (सावधानी) करना क्यों न वाजिब हो जाएगा जिसकी मूलतः फ़ज़ियत (अनिवार्यता) है। जिस शख़्स ने उसकी स्थिति से अवगत होकर उसे मुसलमानों का इमाम या अपने लड़कों का मुअल्लिम (शिक्षक) नियुक्त किया, जबकि अहले-सुन्नत में साफ़ और पाक इमाम व मुअल्लिम बहुतायत में मिल सकते हैं, उसने अल्लाह, उसके रसूल और सभी मुसलमानों के साथ खयानत (विश्वासघात) की। वह मुसलमानों का बदख्वाह (बुरा चाहने वाला) है। उस पर अपने इस कृत्य से तौबा करना और अपने नियुक्त किए हुए व्यक्ति को माज़ूल (पदच्युत) करना लाज़िम है। हाकिम की सहीह मुस्तदरक में है और इब्न अदी, उक़ैली, तबरानी और खतीब ने हज़रत अब्दुल्ला बिन अब्बास रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं:

[बॉक्स 2] मनि-स्तअमला र्जुलन मिन असाबतिन व फ़ीहिम मन हुवा अरज़ा लिल्लाहि मिन्हु फ़क़द खान-अल्लाह व रसूलाहु वल मोमिनीन[3]। जिसने किसी जमात में से एक शख़्स को काम पर नियुक्त किया और उनमें वह शख़्स मौजूद था जो उससे ज़्यादा अल्लाह को पसंद है, तो उसने अल्लाह, उसके रसूल और मुसलमानों, सब की खयानत की। (त)

तैसीर शरह जामे सगीर में इसी हदीस की शरह (व्याख्या) में है:

[बॉक्स 3] अय नसबाहु अलैहिम अमीरन औ क़ैयिमन औ अरीफ़न औ इमामन लिस्सलाह[4]। यानी उसने लोगों पर अमीर, निगहबान (रक्षक), मुहासब (हिसाब रखने वाला) या नमाज़ के लिए इमाम बनाया। (त)

फिर अगर यह शख्स तौबा भी कर ले तो महज़ तौबा से उसे इमाम नहीं बना सकते, बल्कि लाज़िम है कि एक लंबे समय तक उसे माज़ूल रखें और उसके अहवाल (स्थितियों) पर नज़र रहे, अगर खौफ़, लालच, गुस्से और प्रसन्नता आदि स्थितियों के कई अनुभव यह साबित कर दें कि वास्तव में यह...

---

1. फ़तह अल-क़दीर, बाबू सलातिल मुसाफ़िर, नूरिया रज़विया सुक्कुर, 12/4
2. दुर्र-ए-मुख़्तार, बाबुल ताज़ीर, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 329/1
3. अल-मुस्तदरक अलस-सहीहैन, अल-इमारत वल अमानत, दारुल फिक्र बेरुत, 92/4 नोट: मुस्तदरक में 'फ़ीहिम' की जगह 'फ़ी तिलक अल-असाबा' का लफ्ज़ है। - नज़ीर अहमद सईदी
4. अत-तैसीर शरह अल-जामे अल-सगीर, उल्लिखित हदीस के तहत, मकतबा अल-इमाम अश-शाफ़ई रियाद, 396/2 पेज 530 / 736

[Box 1] مقتدیا قائم فتفسد علیھما[1]۔ بناء پر صحیح ہو تو نماز کے فاسد ہونے کا حکم دیا جائیگا، اور مقتدی کا امام ہونا مفسد نماز ہے اور ایسی صورت میں یہاں ہر ایک کے مقتدی ہونے کا احتمال باقی ہے لہٰذا دونوں کی نماز فاسد ہو جائے گی۔ (ت)

ظاہر ہے کہ بر تقدیر سنیت اس کے پیچھے نماز صحیح اور بر تقدیر رفض فاسد، تو اس کی امامت کیونکر جائز ہو سکتی ہے، دلیل پنجم : علماء فرماتے ہیں قاضی محض تہمت و حصول ظن پر تعزیر دے سکتا ہے، بحر و نہر و در مختار و غیرہ میں ہے : للقاضی تعزیر المتھم و ان لم یثبت علیہ[2] ۔ (قاضی محض تہمت کی بناء پر تعزیر جاری کر سکتا ہے اگرچہ ثبوت نہ ہوت) جب تہمت ایسی چیز ہے جس کے سبب بے ثبوت صریح ایک مسلمان کو سزا دینے کی اجازت ہو جاتی ہے جس میں اصل حرمت ہے تو نماز کے لئے احتیاط کرنی کیوں نہ واجب ہو جائیگی جس کی اصل فرضیت ہے جس شخص نے اس کے حال سے مطلع ہو کر اسے مسلمانوں کا امام یا اپنے لڑکوں کا معلم مقرر کیا حالانکہ اہلسنت میں صاف و پاک امام و معلم بکثرت مل سکتے ہیں اس نے اللہ و رسول اور مسلمانوں سب کی خیانت کی وہ مسلمانوں کا بدخواہ ہے اس پر اپنے فعل سے توبہ اور اپنے مقرر کئے ہوئے کو معزول کرنا لازم حاکم صحیح مستدرک میں ہے اور ابن عدی و عقیلی و طبرانی و خطیب حضرت عبد اللہ بن عباس رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے راوی رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

[Box 2] من استعمل رجلا من عصابۃ وفیھم من ھو ارضی اللہ منہ فقد خان اللہ ورسولہ والمومنین[3] ۔ جس نے کسی جماعت سے ایک شخص کو کام پر مقرر کیا اور ان میں وہ شخص موجود تھا جو اس سے زیادہ اللہ کو پسند ہے تو اس نے اللہ و رسول اور مسلمانوں سب کی خیانت کی۔ (ت)

تیسیر شرح جامع صغیر میں اسی حدیث کی شرح میں ہے :

[Box 3] ای نصبه علیهم امیرا اوقیماً اوعریفاً او اماماً للصلوة[4]۔ یعنی اس نے لوگوں پر امیر، نگہبان، محاسب یا نماز کے لئے امام بنایا۔ (ت)

پھر اگر یہ شخص توبہ بھی کرلے تو بمجرد توبہ اسے امام نہیں بنا سکتے بلکہ لازم ہے کہ ایک زمانہ ممتد تک اسے معزول رکھیں اور اور اس کے احوال پر نظر رہے، اگر خوف و طمع و غضب و رضا و غیرہا حالات کے متعدد تجربے ثابت کر دیں کہ واقعی یہ

---

[1] فتح القدیر باب صلوۃ المسافر مطبوعہ نوریہ رضویہ سکھر ۱۲/ ۴ [2] در مختار باب التعزیر مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۳۲۹/۱ [3] المستدرک علی الصحیحین الامارۃ وامانۃ مطبوعہ دار الفکر بیروت ۹۲/۴ ف: مستدرک میں فیہم کی جگہ فی تلک العصابۃ کا لفظ ہے۔ نذیر احمد سعیدی [4] التیسیر شرح الجامع الصغیر حدیث مذکور کے تحت مکتبہ الامام الشافعی الریاض ۳۹۶/۲ Page of 736 530

Fatawa-e-Razvia, Volume 6 [He is] a Sunni with sound beliefs, steadfast, and maintains no association at all with the Rafidis (Shias), rather he is repelled by them and all misguided and irreligious people. At such a time, he can be made an Imam. In Fatawa Qazi Khan and then in Fatawa Alamgiri, it is stated:

[Arabic Text]: The transgressor (fasiq), when he repents, his testimony will not be accepted until such time has passed in which the effect of repentance becomes apparent. The correct view is that this is entrusted to the opinion of the judge. [1]

[Urdu Translation]: When a transgressor repents, his testimony will not be accepted until such time has passed in which the effect of repentance becomes apparent. The correct view is that this is entrusted to the opinion of the judge. (T)

The Commander of the Faithful, the one who enrages the hypocrites, the Imam of the just, our master Umar al-Faruq al-Azam (may Allah be pleased with him), when he took repentance from Sabigh—about whom there was fear of misguidance due to his discussions on ambiguous matters (mutashabihat)—after severe corporal punishment, he sent an order to Abu Musa al-Ash'ari (may Allah be pleased with him) that Muslims should not sit with him, should not trade with him, if he falls ill they should not visit him, and if he dies they should not attend his funeral. This order was followed for a period of time such that if a hundred people were sitting and he came, they would all disperse. When Abu Musa al-Ash'ari (may Allah be pleased with him) sent word that his condition had now improved, he (Umar) then gave permission.

[Arabic Text]: Abu al-Fath Nasr bin Ibrahim al-Maqdisi related in 'Kitab al-Hujjah' and Ibn Asakir related from Abu Uthman al-Nahdi from Sabigh that he asked Umar bin al-Khattab (may Allah be pleased with him) about [Surahs] al-Mursalat, al-Dhariyat, and al-Nazi'at. Umar said to him, "Remove what is on your head." When he removed it, he had two braids. Umar said, "If I had found you shaven (head), I would have struck that which contains your eyes." Then he wrote to the people of Basra, "Do not sit with Sabigh." Abu Uthman said, "If Sabigh would come and we were a hundred in number, we would immediately separate from him." [2] And Abu Bakr bin al-Anbari related in 'Kitab al-Masahif'...

[Urdu Translation]: Abu al-Fath Nasr bin Ibrahim al-Maqdisi in 'Kitab al-Hujjah' and Ibn Asakir from Abu Uthman al-Nahdi related from Sabigh that he asked Hazrat Umar about Surah al-Mursalat, al-Dhariyat, and al-Nazi'at. Hazrat Umar said to him, "Lift the cloth from your head." When he lifted the cloth, there were hairs in the form of two braids. Hazrat Umar said, "If I had found you with a shaved head, I would have

struck that (head) which contains your eyes." Then he wrote a letter to the people of Basra saying, "Do not sit with Sabigh." Abu Uthman states that if Sabigh would come and we were a hundred in number, we would immediately separate from him. And Abu Bakr bin al-Anbari in 'Kitab al-Masahif'...

1. Fatawa Hindiyya, Second Chapter, concerning those whose testimony is not accepted due to transgression, published by Noorani Kutub Khana, Peshawar, 3/428.
2. Kitab al-Hujjah

फ़तावा-ए-रज़विया, छठा खंड सुन्नी सहीह-उल-अक़ीदा (सही आस्था वाला) दृढ़ है और राफ़िज़ियों से उसका कोई मेल-जोल नहीं है, बल्कि वह उनसे और सभी गुमराहों और बे-दीनों से नफ़रत करता है। उस समय उसे इमाम बनाया जा सकता है। फ़तावा क़ाज़ी ख़ान और फिर फ़तावा आलमगीरी में है:

[अरबी पाठ]: फ़ासिक़ (पापी) जब तौबा कर ले, तो उसकी गवाही तब तक स्वीकार नहीं की जाएगी जब तक कि इतना समय न बीत जाए जिसमें तौबा का असर ज़ाहिर हो जाए। और सही बात यही है कि इसे क़ाज़ी (न्यायाधीश) की राय पर छोड़ दिया जाए। [1]

[उर्दू अनुवाद]: फ़ासिक़ जब तौबा कर ले, तो उस समय तक उसकी गवाही स्वीकार नहीं की जाएगी जब तक इतना समय न गुज़र जाए जिसमें तौबा का असर ज़ाहिर हो जाए और सही यही है कि यह क़ाज़ी की राय के सुपुर्द किया जाए। (त)

अमीरुल मोमिनीन, मुनाफ़िक़ों को क्रोध दिलाने वाले, न्यायियों के इमाम, हमारे स्वामी उमर फ़ारूक़-ए-आज़म (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने जब सबीग से—जिसके बारे में मुतशाबिहात (अस्पष्ट आयतों) पर चर्चा के कारण बद-मज़हबी का अंदेशा था—कड़ी सज़ा के बाद तौबा ली, तो अबू मूसा अशअरी (रज़ियल्लाहु अन्हु) को आदेश भेजा कि मुसलमान उसके पास न बैठें, उसके साथ ख़रीद-फ़रोख़्त न करें, बीमार पड़े तो उसकी मिज़ाज-पुर्सी के लिए न जाएँ और मर जाए तो उसके जनाज़े में शामिल न हों। आदेश का पालन एक समय तक इस तरह रहा कि अगर सौ लोग बैठे होते और वह आता, तो सब अलग हो जाते। जब अबू मूसा अशअरी (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने संदेश भेजा कि अब उसका हाल ठीक हो गया है, तब अनुमति दी।

[अरबी पाठ]: अबुल फ़तह नसर बिन इब्राहीम मक़दसी ने 'किताबुल हुज्जह' में और इब्न असाकिर ने अबू उस्मान नहदी से, उन्होंने सबीग से बयान किया कि उन्होंने हज़रत उमर बिन ख़त्ताब (रज़ियल्लाहु अन्हु) से सूरह अल-मुरसलात, अज़-ज़ारियात और अन-नाज़ियात के बारे में पूछा। उमर ने उनसे फ़रमाया, "अपने सिर का कपड़ा हटाओ।" जब उन्होंने हटाया तो उनके दो चोटियाँ थीं। उमर ने फ़रमाया, "अगर मैं तुम्हें मुंडा हुआ पाता (जैसे ख़ारजी होते हैं), तो मैं उसे उड़ा देता जिसमें तुम्हारी आँखें हैं।" फिर उन्होंने बसरा के लोगों को लिखा कि सबीग के साथ न बैठें। अबू उस्मान ने कहा, "अगर सबीग आता और हम सौ की संख्या में होते, तो हम तुरंत उससे अलग हो जाते।" [2] और अबू बक्र बिन अंबारी ने 'किताबुल मसाहिफ़' में...

[उर्दू अनुवाद]: अबुल फ़तह नसर बिन इब्राहीम मक़दसी ने 'किताबुल हुज्जह' में और इब्न असाकिर ने अबू उस्मान नहदी से, उन्होंने सबीग से बयान किया कि उन्होंने हज़रत उमर से सूरह अल-मुरसलात, अज़-ज़ारियात और अन-नाज़ियात के बारे में पूछा। हज़रत उमर ने उनसे फ़रमाया, "अपने सिर का कपड़ा उठाओ।" जब उन्होंने कपड़ा उठाया तो उनके दो चोटियों के रूप में बाल थे। हज़रत उमर ने फ़रमाया, "अगर मैं तुम्हें मुंडा हुआ (हलक़ किया हुआ) पाता, तो मैं वह (सिर) उड़ा देता जिसमें तुम्हारी आँखें हैं।" फिर आपने बसरा के लोगों को पत्र लिखा कि सबीग के साथ न बैठो। अबू उस्मान का बयान है कि अगर सबीग आ जाता और हम सौ की संख्या में होते, तो तुरंत हम सब उससे अलग हो जाते। और अबू बक्र बिन अंबारी ने 'किताबुल मसाहिफ़' में...

1. फ़तावा हिन्दिया, दूसरा अध्याय, उनके बारे में जिनकी गवाही उनके पाप (फ़िस्क़) के कारण स्वीकार नहीं की जाती, नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर द्वारा प्रकाशित, 3/428।
2. किताबुल हुज्जह

पृष्ठ 531/736

فتاوی رضویہ، جلد ششم سنی صحیح العقیدہ ثابت قدم ہے اور روافض سے اصلاً میل جول نہیں رکھتا بلکہ ان سے اور سب گمراہوں بد دینوں سے متنفر ہے اس وقت اسے امام کر سکتے ہیں فتاوی قاضی خاں پھر فتاوی عالمگیری میں ہے:

الفاسق اذا تاب لایقبل شهادته مالم یمض علیه زمان یظهر علیه اثر التوبة والصحیح ان ذلك مفوض الی راء القاضي 1-

فاسق جب تائب ہو جائے تو اس وقت تک اس کی شہادت قبول نہیں کی جائے گی جب تک اتنا زمانہ نہ گزر جائے جس میں توبہ کا اثر ظاہر ہو جائے اور صحیح یہی ہے کہ یہ قاضی کی رائے کے سپرد کیا جائے۔ (ت)

امیر المومنین غیظ المنافقین امام العادلین سید نا عمر فاروق اعظم رضی اللہ تعالی عنہ نے جب صبیغ سے جس پر بوجہ بحث تشابہات بد مذہبی کا اندیشہ تھا بعد ضرب شدید توبہ لی ابو موسیٰ اشعری رضی اللہ عنہ کو فرمان بھیجا کہ مسلمان اس کے پاس نہ بیٹھیں اس کے ساتھ خرید وفروخت نہ کریں بیمار پڑے تو اس کی عیادت کو نہ جائیں مر جائے تو اس کی جنازے پر حاضر نہ ہوں، تعمیل حکم ایک مدت تک یہ حال رہا کہ اگر سو آدمی بیٹھے ہوتے اور وہ آتا سب متفرق ہو جاتے جب موسیٰ اشعری رضی اللہ تعالی عنہ نے عرض بھیجی کہ اب اس کا حال اچھا ہو گیا اس وقت اجازت فرمائی۔

اخرج ابوالفتح نصر بن ابراهیم المقدسي في کتاب الحجة وابن عساکر عن ابي عثمان النهدي عن صبیغ انه سال عمر بن الخطاب رضي الله تعالی عنه عن المرسلات والذاریت و النازعات فقال له عمر الق ما علی راسك فاذا له ضفیرتان فقال لو وجدتك محلوقا لضربت الذي فیه عیناك ثم کتب الی اهل البصرة ان

لا تجالسوا صبيغاً قال ابو عثمان فلو جاء ونحن مائة تفرقنا عنه 2- واخرج ابوبكر بن الانباري في كتاب المصاحف

ابوالفتح نصر بن ابرا ہیم مقدسی نے کتاب الحجہ میں اور ابن عساکر نے ابو عثمان نہدی سے انہوں نے صبیغ سے بیان کیا کہ انہوں نے حضرت عمر سے سورہ المرسلات ، الذاریات، والنازعات کے بارے میں پوچھا تو حضرت عمر نے انھیں فرمایا اپنا سر کا کپڑا اٹھاؤ، جب اس نے کپڑا اٹھایا تو اس کے دو چوٹیوں کی صورت بال تھے، حضرت عمر نے فرمایا اگر میں تجھے حلق کیا ہوا پاتا تو میں وہ (سر) اڑا دیتا جس میں تیری آنکھیں ہیں۔ پھر اہل بصرہ کی طرف آپ نے خط لکھا کہ صبیغ کے ساتھ نہ بیٹھو۔ ابو عثمان کا بیان ہے اگر صبیغ آجاتا اور ہم سو کی تعداد میں ہوتے فورا ہم سب اس سے جدا ہو جاتے۔ اور ابوبکر بن انباری نے کتاب المصاحف

1 فتاوی ہندیہ الفصل الثانی فیمن لا تقبل شہادتہ لفسقہ مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۴۲۸ 2 کتاب الحجتہ

Fatawa Razawiyya Volume 6

And Ibn Asakir narrated from Muhammad bin Sirin that Umar bin Al-Khattab (may Allah be pleased with him) wrote to Abu Musa Ash'ari (may Allah be pleased with him) that: "Do not sit with Sabeegh, and let him be deprived of his allowance and provisions." [1] Al-Maqdisi narrated in 'Al-Hujjah' from Ishaq bin Bashir Al-Qurashi, who said that Ibn Ishaq or Abu Ishaq informed us that the Leader of the Believers (may Allah be pleased with him) wrote to Abu Musa: "After the praise of Allah and blessings, indeed Sabeegh bin Alim Al-Tamimi took upon himself what was sufficient for him and neglected what he was entrusted with. So, when this letter of mine reaches you, do not trade with him. If he falls ill, do not visit him. If he dies, do not attend his funeral." The narrator said: Sabeegh used to say, "I came to Basra and stayed there for twenty-five days, and there was no absent thing more beloved for me to meet than death. Then Allah inspired him with repentance and cast it into his heart. So I went to Abu Musa while he was on the pulpit and greeted him. He turned away from me. I said: O one who turns away! Verily, the One who is better than you and better than Umar has accepted repentance. And I repent to Allah, the Mighty and Sublime, from what angered the Leader of the Believers and the general Muslims." So he wrote about that to Umar, who said: "He has spoken the truth; accept from your brother." [2]

[Urdu Translation as provided on the page:] I, and Ibn Asakir, narrated from Imam Muhammad bin Sirin that Hazrat Umar bin Al-Khattab (may Allah be pleased with him) wrote a letter to Hazrat Abu Musa Ash'ari (may Allah be pleased with him) saying: Do not seat Sabeegh near you, and he should be deprived of grants and provisions. And Al-Maqdisi narrated from Ishaq bin Bashir Qurashi in 'Kitab al-Hujjah' that Ibn Ishaq or Abu Ishaq told us: The Leader of the Believers (may Allah be pleased with him) wrote to Abu Musa, after praise and salutation: Sabeegh bin Alim Tamimi burdened himself with what was sufficient for him and wasted his authority. When my message reaches you, do not engage in buy and sell with him. If he falls ill, do not visit him. If he dies, do not participate in his funeral. The narrator says Sabeegh used to say: I went to Basra and stayed there for twenty-five days; no absent thing was more beloved to me than death. Then Allah Almighty granted the guidance of repentance and created the thought of repentance in my heart. Then I came to Abu Musa while you were seated on the pulpit. I offered Salam, he turned away. I said, "O one who turns away! That Being has accepted repentance who is better than you and better than Umar. And I repent in the court of Allah from every

matter with which the Leader of the Believers and common Muslims were displeased." Then Abu Musa wrote this matter to Hazrat Umar (may Allah be pleased with him), so he said, "He speaks the truth, from your brother..."

[Footnotes:] 1. Kitab al-Masahif by Abu Bakr ibn al-Anbari 2. Kitab al-Hujjah Page 532 of 736

फतावा रज़विया जिल्द 6

इब्न असाकिर ने मुहम्मद बिन सीरीन से रिवायत की है कि उमर बिन अल-खत्ताब (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने अबू मूसा अशअरी (रज़ियल्लाहु अन्हु) को लिखा: "सबीग के साथ न बैठें, और उसे उसके वजीफे और प्रावधानों से वंचित रखा जाए।" [1] अल-मक़दसी ने 'अल-हुज्जाह' में इसहाक बिन बशीर अल-कुरैशी से रिवायत की है, जिन्होंने कहा: इब्न इसहाक या अबू इसहाक ने हमें सूचित किया कि अमीरुल मोमिनीन (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने अबू मूसा को पत्र लिखा: "अल्लाह की हम्द और दुरूद के बाद, बेशक सबीग बिन अलीम अल-तमीमी ने उस चीज़ में तकल्लुफ किया जो उसके लिए काफी थी और उसने अपनी ज़िम्मेदारी को बर्बाद कर दिया। तो जब मेरा यह पत्र आप तक पहुँचे, तो उसके साथ खरीद-फरोख्त न करें; यदि वह बीमार हो जाए, तो उसकी इयादत न करें; और यदि वह मर जाए, तो उसके जनाजे में शामिल न हों।" रावी कहता है: सबीग कहा करता था, "मैं बसरा आया और वहाँ पच्चीस दिन रहा, और मेरे लिए मौत से बढ़कर कोई और चीज़ प्रिय नहीं थी। फिर अल्लाह ने उसे तौबा करने की तौफीक दी और उसे उसके दिल में डाल दिया। तो मैं अबू मूसा के पास गया जब वह मिम्बर पर थे और उन्हें सलाम किया। उन्होंने मुझसे मुँह फेर लिया। मैंने कहा: ऐ मुँह फेरने वाले! वास्तव में, उसने तौबा कबूल कर ली है जो तुझसे और उमर से बेहतर है। और मैं अल्लाह के हुज़ूर हर उस बात से तौबा करता हूँ जिससे अमीरुल मोमिनीन और आम मुसलमान नाराज़ थे।" तो उन्होंने इस बारे में उमर को पत्र लिखा, जिन्होंने फरमाया: "उसने सच कहा है; अपने भाई से (तौबा) स्वीकार करें।" [2]

[पृष्ठ पर दिया गया उर्दू अनुवाद:] मैंने, और इब्न असाकिर ने इमाम मुहम्मद बिन सीरीन से नकल किया कि हज़रत उमर बिन अल-खत्ताब (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने हज़रत अबू मूसा अशअरी (रज़ियल्लाहु अन्हु) की तरफ पत्र लिखा कि सबीग को अपने पास न बिठाओ, उसे अता और रिज़्क़ से महरूम रखा जाए। और अल-मक़दसी ने इसहाक बिन बशीर कुरैशी से 'किताबुल हुज्जाह' में नकल किया है कि हमसे इब्न इसहाक या अबू इसहाक ने बयान किया: अमीरुल मोमिनीन (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने अबू मूसा को पत्र लिखा, हम्द और सलात के बाद: सबीग बिन अलीम तमीमी ने उस चीज़ में तकल्लुफ किया जो उसके लिए काफी थी और उसने अपनी विलायत (ज़िम्मेदारी) को ज़ाया (बर्बाद) कर दिया। जब आपके पास मेरा संदेश पहुँच जाए तो उसके साथ खरीद-फरोख्त न करें। अगर वह बीमार हो जाए तो इयादत न करें। अगर वह मर जाए तो उसके जनाजे में शामिल न हों। रावी कहता है सबीग कहता था: मैं बसरा गया वहाँ पच्चीस दिन ठहरा; मुझे मौत से बढ़कर कोई गायब चीज़ महबूब न थी।

फिर अल्लाह तआला ने तौबा की तौफीक दी और दिल में तौबा का ख्याल पैदा किया। फिर मैं अबू मूसा के पास आया जब आप मिम्बर पर तशरीफ फरमा थे। मैंने सलाम किया, उन्होंने एराज़ किया। मैंने कहा, "ऐ एराज़ करने वाले! उस ज़ात ने तौबा कबूल कर ली जो तुझसे और उमर से बेहतर है। और मैं अल्लाह की बारगाह में हर उस मामले से तौबा करता हूँ जिस पर अमीरुल मोमिनीन और आम मुसलमान नाराज़ थे।" फिर अबू मूसा ने हज़रत उमर (रज़ियल्लाहु अन्हु) की तरफ यह मामला लिखा, तो आपने फरमाया, "वह सच कहता है, अपने भाई..."

[पाद टिप्पणियाँ:] १. किताबुल मसाहिफ, अबू बक्र इब्नुल अंबारी द्वारा २. किताबुल हुज्जाह पृष्ठ ७३६ में से ५३२

وابن عساکر عن محمد بن سیرین قال کتب عمر بن الخطاب الی ابی موسی اشعری رضی اللہ تعالٰی عنہ ان لاتجا لسوا صبیغاو ان یحرم عطاء ہ لا ورزقہ ۱ واخرج المقدسي في الحجة عن اسحق بن بشیر القریشی قال اخبرنا ابن اسحق او ابو اسحق قال کتب ای امیرالمؤمنین رضی اللہ تعالٰی عنہ الی ابی موسی اما بعد فان الاصبیغ بن علیم التیمی تکلف ما کفی وضیع ما ولی فاذا جاءك کتابی ھذا فلا تبایعوہ وان مرض فلا تعودوہ وان مات فلا تشھدوہ - قال فکان الاصبیغ یقول قدمت البصرۃ فاقمت بھا خمسۃ وعشرین یوما وما من غائب احب الی ان القیہ من الموت ثم ان اللہ الھمہ التوبۃ وقذ فھا فی قلبہ فاتیت اباموسٰی وھو علی المنبر فسلمت علیہ فاعرض عنی فقلت ایھا المعرض انہ قد قبل التوبۃ من ھو خیر منك ومن عمر و انی اتوب الی اللہ عزوجل مما اسخط امیر المؤمنین وعامۃ المسلمین فکتب بذلک الی عمر فقال صدق اقبلوا من اخیکم ۲

میں، اور ابن عسا کر نے امام محمد سیرین سے نقل کیا کہ حضرت عمر بن الخطاب رضی اللہ تعالٰی عنہ نے حضرت ابو موسٰی اشعری رضی اللہ تعالٰی عنہ کی طرف خط لکھا کہ صبیغ کو پاس نہ بٹھاؤ، اس کو عطا اور رزق سے محروم رکھا جائے اور المقدسی نے اسحاق بن بشر قرشی سے کتاب الحجہ میں نقل کیا ہے کہ ہم سے ابن اسحق یا ابو اسحق نے بیان کیا امیر المؤمنین رضی اللہ تعالٰی عنہ نے ابو موسٰی کو خط لکھا حمد و صلوٰۃ کے بعد اصبیغ بن علیم تمیمی نے جو کچھ اسے کافی تھا اس میں تکلف کیا اور اس نے اپنی ولایت کو ضائع کیا جب آپ کے پاس میرا پیغام آجائے تو اس کے ساتھ خرید و فروخت نہ کرو، اگر وہ بیمار ہو جائے تو عیادت نہ کرو اگر وہ مر جائے تو جنازہ میں شریک نہ ہونا۔ راوی کہتا ہے اصبیغ کہتا تھا میں بصرہ گیا وہاں پچیس دن ٹھہرا، مجھے موت سے بڑھ کر کوئی غائب شیء محبوب نہ تھی، پھر اللہ تعالٰی نے توبہ کی توفیق دی اور

دل میں توبہ کا خیال پیدا کیا تو پھر میں ابو موسیٰ کے پاس آیا آپ منبر پر تشریف فرما تھے میں نے سلام کیا انھوں نے اعراض کیا، میں نے کہا اے اعراض کرنے والے! اس ذات نے توبہ قبول کر لی جو تجھ سے اور عمر سے بہتر ہے اور میں ہر اس معاملہ سے اللہ کی بارگاہ میں توبہ کرتا ہوں جس پر امیر المؤمنین اور عام مسلمان ناراض تھے، پھر ابو موسیٰ نے حضرت عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہ کی طرف یہ معاملہ لکھا تو آپ نے فرمایا وہ سچ کہتا ہے اپنے بھائی...

(Arabic Text Column) And Al-Darami and Nasr Al-Asbahani narrated in both 'Al-Hujjah', Ibn Al-Anbari in 'Al-Masahif', Al-Lalaka'i in 'Al-Sunnah', and Ibn Asakir in 'Al-Tarikh' from Sulayman bin Yasar that a man from Bani Tamim called Sabigh bin Asal came to Medina. He had books with him and used to ask about the ambiguous verses (mutashabihat) of the Quran. News of this reached Umar (may Allah be pleased with him). He sent for him, having prepared date-palm branches for him. When he entered upon him, he (Umar) said: "Who are you?" He replied: "I am the servant of Allah, Sabigh." Umar (may Allah be pleased with him) said: "And I am the servant of Allah, Umar." Then he gestured towards him and began to strike him with those branches, continuing until he wounded his head and blood began to flow over his face. He said: "Enough, O Commander of the Faithful! By Allah, that which I felt in my head has gone."[1] And Al-Darimi, Ibn Abd al-Hakam, and Ibn Asakir narrated from the freed slave of Ibn Umar that Sabigh al-Iraqi began to ask about certain things in the Quran among the Muslim armies (and the hadith continues until it says) Umar sent for a branch and beat him with it until his back was covered in wounds. Then he left him until he healed, then he returned to him, then he left him until he healed, then he called him back to repeat it, so Sabigh said: "O Commander..."

(Urdu Text Column) ...accept it. Darami and Nasr Asbahani both in 'Al-Hujjah', Ibn Anbari in 'Al-Masahif', Lalaka'i in 'Al-Sunnah', and Ibn Asakir in 'Al-Tarikh' narrated from Sulayman bin Yasar that there was a person from the tribe of Banu Tamim named Sabigh bin Asal. He came to Medina. He had some books with him and used to ask about the ambiguous verses of the Quran. Information about this reached Hazrat Umar (may Allah be pleased with him), so he summoned him and prepared two date-palm branches for him. When he arrived, you asked, "Who are you?" He said, "I am Allah's servant, Sabigh." You said, "I am Allah's servant, Umar." After that, you gestured towards him and beat him with those two branches until he was wounded and blood began to flow from his face. He started saying, "O Commander of the Faithful! Leave me, this is enough. By Allah, whatever was in my mind has gone." And Darami, Ibn Abd al-Hakam, and Ibn Asakir narrated from the freed slave of Hazrat Ibn Umar that Sabigh Iraqi used to ask different groups of Muslims about certain things in the Quran. (Further on it is said) Hazrat Umar asked for a stick from me and beat him until his back was left wounded. Then he beat him and left him until he recovered, then again beat him until he recovered. Then you called him so that he could be beaten again, so he said...

[1] Sunan al-Darimi, Chapter: Those who avoid arguments and dislike affectation and innovation, published by Nashr-ut-Sunnah Multan, 51/1.

(अरबी पाठ स्तंभ) और अल-दारमी और नस्र अल-असबहानी दोनों ने 'अल-हुज्जाह' में, इब्न अल-अंबारी ने 'अल-मसाहिफ़' में, अल-ललाकाई ने 'अल-सुन्ना' में, और इब्न असाकिर ने 'अल-तारीख़' में सुलेमान बिन यसार से रिवायत की है कि बनी तमीम का एक व्यक्ति, जिसका नाम सबीग़ बिन असल था, मदीना आया। उसके पास कुछ किताबें थीं और वह कुरान की संदिग्ध आयतों (मुतशाबिहात) के बारे में पूछा करता था। इसकी खबर उमर (रज़ियल्लाहु अन्हु) तक पहुँची। उन्होंने उसे बुलवाया और उसके लिए खजूर की टहनियाँ तैयार कीं। जब वह उनके पास आया, तो उन्होंने (उमर) पूछा: "तुम कौन हो?" उसने जवाब दिया: "मैं अल्लाह का बंदा सबीग़ हूँ।" उमर (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने कहा: "और मैं अल्लाह का बंदा उमर हूँ।" फिर उन्होंने उसकी ओर इशारा किया और उन टहनियों से उसे मारना शुरू कर दिया, तब तक मारते रहे जब तक कि उसके सिर पर घाव नहीं हो गया और उसके चेहरे पर खून बहने लगा। उसने कहा: "बस कीजिए, ऐ अमीरुल मोमिनीन! अल्लाह की कसम, जो कुछ मेरे दिमाग में था वह चला गया है।"[1] और अल-दरमी, इब्न अब्दुल हकीम और इब्न असाकिर ने इब्न उमर के आज़ाद किए हुए गुलाम से बयान किया कि सबीग़ अल-इराक़ी मुस्लिम सेनाओं के बीच कुरान की कुछ चीज़ों के बारे में सवाल करने लगा (और हदीस आगे जारी रही यहाँ तक कि उन्होंने कहा) उमर ने एक टहनी मँगवाई और उससे उसे पीटा यहाँ तक कि उसकी पीठ ज़ख्मों से भर गई। फिर उन्होंने उसे छोड़ दिया जब तक कि वह ठीक नहीं हो गया, फिर वह उसके पास लौटे, फिर उसे छोड़ दिया जब तक कि वह ठीक नहीं हो गया, फिर उसे दोबारा बुलाने के लिए कहा, तो सबीग़ ने कहा: "ऐ अमीर..."

(उर्दू पाठ स्तंभ) ...स्वीकार करो। दारमी और नस्र असबहानी दोनों ने 'हुज्जाह' में, इब्न अंबारी ने 'मसाहिफ़' में, ललाकाई ने 'सुन्नत' में और इब्न असाकिर ने 'तारीख़' में सुलेमान बिन यसार से रिवायत की कि बनू तमीम का एक व्यक्ति था जिसका नाम सबीग़ बिन असल था। वह मदीना आया। उसके पास कुछ किताबें थीं और वह कुरान के मुतशाबिहात के बारे में पूछता था। इस बात की सूचना हज़रत उमर (रज़ियल्लाहु अन्हु) को मिली, तो उन्होंने उसे बुलाया और उसके लिए खजूर की दो छड़ियाँ तैयार कीं। जब वह आया, तो आपने पूछा: "तुम कौन हो?" उसने कहा: "मैं अल्लाह का बंदा सबीग़ हूँ।" आपने फ़रमाया: "मैं अल्लाह का बंदा उमर हूँ।" उसके बाद आपने उसकी ओर इशारा किया और उन दो छड़ियों के साथ उसे मारा यहाँ तक कि वह ज़ख्मी हो गया और चेहरे से खून बहने लगा। वह कहने लगा, "ऐ अमीरुल मोमिनीन! मुझे छोड़ दो, यही काफी है। अल्लाह की कसम, जो

कुछ मेरे दिमाग में (ख़ुमार) था वह जाता रहा।" और दारमी, इब्न अब्दुल हकीम और इब्न असाकिर ने हज़रत इब्न उमर के आज़ाद किए हुए गुलाम से बयान किया कि सबीग़ इराकी मुसलमानों के विभिन्न समूहों से कुरान की कुछ चीज़ों के बारे में सवाल करता था। (आगे चलकर कहा गया) हज़रत उमर ने मुझसे छड़ी मँगवाई और उसे पीटा यहाँ तक कि उसकी पीठ को ज़ख्मी छोड़ दिया। फिर मारा फिर छोड़ दिया यहाँ तक कि वह सही हो गया, फिर दोबारा उसको मारा यहाँ तक कि वह सही हो गया। फिर आपने उसे बुलाया ताकि फिर उसकी पिटाई की जाए, तो उसने कहा...

[1] सुनन अल-दारमी, अध्याय: वे लोग जो बहस से बचते हैं और दिखावे और नवाचार को नापसंद करते हैं, प्रकाशक नश्र-उस-सुन्ना मुल्तान, 51/1।

واخرج الدراھمی ونصرو الاصبھانی فی کلاھما فی الحجۃ وابن الانباری فی المصاحف واللالکائی فی السنۃ وابن عساکر فی التاریخ عن سیلم بن یساران رجلا من بنی تمیم یقال لہ صبیغ بن عسل قدم المدینۃ وکان عندہ کتب فکان یسئل عن متشابہ القران فبلغ ذلک عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہ فبعث الیہ وقد اعد لہ اعراجین النخل فلما دخل علیہ قال من انت قال انا عبد اللہ صبیغ قال عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہ وانا عبد اللہ عمر واوماً الیہ فجعل یضربہ بتلک العراجین فمازال یضربہ حتی شجہ وجعل الدم یسیل علی وجھہ، فقال حسبک یا امیر المؤمنین واللہ فقد ذھب الذی اجد فی راسی 1 واخرج الدارمی و ابن عبدالکلیم وابن عساکر من مولی ابن عمر ان صبیغ العراقی جعل یسئل عن اشیاء من القران فی اجناد المسلمین (وساق الحدیث الی ان قال) فارسل عمر الیٰ یطلب الجرید فضربہ بھا حتی ترک ظھرہ دبرۃ ثم ترك حتی بری، ثم عادلہ ثم ترکہ حتی بری، ثم دعا بہ لیعود بہ فقال صبیغ یا امیر

کو قبول کرو۔ دارمی، نصر اصبہانی دونوں نے حجہ میں اور ابن انباری نے مصاحف میں، لالکائی نے سنت میں اور ابن عساکر نے تاریخ میں سیلمان بن یسار سے روایت کیا کہ بنو تمیم کا ایک شخص تھا جس کا نام صبیغ بن عسل تھا وہ مدینہ آیا اس کے پاس کچھ کتب تھیں وہ قرآن کے متشابہات کے بارے میں پوچھتا تھا اس بات کی اطلاع حضرت عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہ کو پہنچی تو آپ نے اسے بلایا اور اس کے لئے کھجور کی دو چھڑیاں تیار کیں، آیا تو آپ نے پوچھا: تو کون ہے؟ اس نے کہا: میں اللہ کا بندہ صبیغ ہوں۔ آپ نے فرمایا: میں اللہ کا بندہ عمر ہوں، اس کے بعد آپ نے اس کی طرف اشارہ کیا اور ان دو چھڑیوں کے ساتھ اسے مارا حتی کہ وہ زخمی ہو گیا اور چہرے سے خون بہنے لگا۔ وہ کہنے لگا اے امیر المومنین! مجھے چھوڑ دو یہی کافی ہے اللہ کی قسم جو کچھ میرے دماغ میں (خمار) تھا وہ جاتا رہا۔ اور دارمی، ابن عبدالکلیم اور ابن عساکر نے

حضرت ابن عمر کے آزاد کردہ غلام سے بیان کیا کہ صبیغ عراقی مسلمانوں کے مختلف گروہوں سے قرآن کی بعض اشیاء کے بارے میں سوال کرتا تھا (آگے چل کر کہا) حضرت عمر نے مجھ سے چھڑی منگوائی اور اسے پیٹا حتی کہ اس کی پشت کو زخمی چھوڑ دیا پھر مارا پھر چھوڑ دیا حتی کہ وہ صحیح ہو گیا، پھر آپ نے دوبارہ اس کو مارا حتی کہ وہ صحیح ہو گیا] پھر آپ نے اسے بلایا تاکہ پھر اس کی پٹائی کی جائے، تو اس نے کہا

1 سنن الدارمی باب من حاب القنیا کرہ التنطع و التبدع مطبوعہ نشر السنة ملتان ۵۱/۱

Fatawa Rizvia Volume 6

Arabic Text: المؤمنين ان كنت تريد قتلى فاقتلنى قتلا جميلا وان كنت تريد تداويني فقد والله برئت فأذن له الى ارضه وكتب الى ابى موسى الاشعرى ان لا يجالسه احد من المسلمين فاشتد ذلك على الرجل فكتب ابو موسى الاشعرى الى عمر ان قد حسنت توبته ، فكتب ان يأذن للناس في مجالسته[1]۔ Urdu Translation: O Commander of the Faithful! If you wish to kill me, then kill me in a good manner, and if you are treating me, then by Allah, I am now cured. You (Umar RA) gave him permission to go to his region and wrote to Abu Musa al-Ash'ari that no Muslim should sit with him in any gathering. This became hard for the man, until Abu Musa al-Ash'ari wrote to Hazrat Umar that his repentance has become sincere. So Hazrat Umar wrote that people should now be allowed to sit with him. (T)

In fact, if his cunning, force, lying, and deception are manifest and famous, then even after repentance, he should never be made an Imam, for making him Imam is not necessary. And what means do we have to trust the repentance of a well-known liar? Especially the Rawafid (may Allah Ta'ala forsake them), as Taqiya (dissimulation) is their primary tenet and its first foundational stone, especially where greed for a job etc. or some fear comes into play. In the book 'Badai' of Imam Malik al-Ulama Abu Bakr Mas'ud Kashani (may his secret be sanctified), and then in Fatawa Alamgiri, it is stated:

Arabic Text: المعروف بالكذب لا عدالة له فلا تقبل شهادته ابدا وان تاب بخلاف من وقع في الكذب سهوا او ابتلى به مرة ثم تاب[2] اه و نسال الله حسن التوبة والعفو والعافية۔ Urdu Translation: A person known for lying has no uprightness (Adalah), so his testimony should never be accepted, even if he has repented. This is unlike a person who lied inadvertently or out of compulsion once and then repented. We ask Allah Ta'ala for good repentance, forgiveness, and safety. (T)

The same ruling exactly applies to the Wahabiyyah Deobandiyyah, as they too, like modern Rafd (Shi'ism), are in a state of clear apostasy, and their subordinates, like the Rawafid, practice Taqiya. So, whomsoever you see associating with these people, attending their gatherings and sermons, his condition is doubtful. Never make him an Imam even if he calls himself a Sunni. And Allah Ta'ala knows best.

[1] Sunan al-Darimi, Chapter: On one who dreads giving a fatwa and dislikes hair-splitting and innovation, published by Nashr-us-Sunnah Multan, 1/51. [2] Fatawa Hindiyya, Second Chapter: On those whose testimony is not accepted due to their transgression, published by Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/468.

फतावा रज़विया जिल्द 6

अरबी पाठ: المؤمنين ان كنت تريد قتلى فاقتلنى قتلا جميلا وان كنت تريد تداويني فقد والله برئت فأذن له الى ارضه وكتب الى ابى موسى الاشعرى ان لا يجالسه احد من المسلمين فاشتد ذلك على الرجل فكتب ابو موسى الاشعرى الى عمر ان قد حسنت توبته ، فكتب ان يأذن للناس في مجالسته[1]। उर्दू अनुवाद: हे अमीरुल मोमिनीन! यदि आप मुझे मारना ही चाहते हैं तो अच्छे तरीके से मारें, और यदि आप मेरा इलाज कर रहे हैं तो अल्लाह की कसम, अब मैं ठीक हूँ। आपने उसे उसके क्षेत्र में जाने की अनुमति दे दी और अबू मूसा अल-अशअरी को लिखा कि मुसलमानों की किसी भी सभा में उसे न बैठने दें। यह बात उस व्यक्ति के लिए बहुत कठिन हो गई, यहाँ तक कि हज़रत अबू मूसा अल-अशअरी ने हज़रत उमर को पत्र लिखा कि उसका पश्चाताप (तौबा) सच्चा हो गया है। तब हज़रत उमर ने लिखा कि अब लोग उसे अपने पास बैठने की अनुमति दे दें। (त)

बल्कि, यदि उसकी मक्कारी, ज़ोर, झूठ और धोखाधड़ी स्पष्ट और प्रसिद्ध हो, तो तौबा के बाद भी उसे कभी इमाम न बनाया जाए, क्योंकि उसे इमाम बनाना कोई आवश्यक नहीं है। और एक प्रसिद्ध झूठे की तौबा पर हमें विश्वास करने का क्या साधन है? विशेष रूप से रवाफ़िज़ (अल्लाह उन्हें त्याग दे) के लिए, क्योंकि तक़िया (धर्म छिपाना) उनका मूल सिद्धांत है और इसकी पहली आधारशिला है, विशेष रूप से जहाँ नौकरी आदि का लालच या किसी प्रकार का भय हो। इमाम मलिकुल उलमा अबू बक्र मसूद काशानी (उनकी कब्र पवित्र हो) की पुस्तक 'बदाइ' और फिर फ़तावा आलमगीरी में है:

अरबी पाठ: المعروف بالكذب لا عدالة له فلا تقبل شهادته ابدا وان تاب بخلاف من وقع في الكذب سهوا او ابتلى به مرة ثم تاب[2] اه و نسال الله حسن التوبة والعفو والعافية। उर्दू अनुवाद: वह व्यक्ति जो झूठ बोलने के लिए प्रसिद्ध हो, उसमें सत्यनिष्ठा (अदालत) नहीं होती, इसलिए उसकी गवाही कभी स्वीकार न की जाए, भले ही उसने तौबा कर ली हो। इसके विपरीत उस व्यक्ति के लिए है जिसने भूलवश या मजबूरी में कभी एक बार झूठ बोला हो और फिर तौबा कर ली हो। हम अल्लाह तआला की दरगाह से सच्ची तौबा, क्षमा और कुशलता की प्रार्थना करते हैं। (त)

ठीक यही हुक्म वहाबिय्या देवबंदिया का है कि वे भी वर्तमान रफ़्ज़ (शिया मत) की तरह स्पष्ट धर्मत्याग की स्थिति में हैं, और उनके छोटे अनुयायी रवाफ़िज़ की तरह तक़िया करते हैं। इसलिए, जिसे भी आप देखें कि वह इन लोगों से मेल-जोल रखता है, उनकी सभाओं और उपदेशों में जाता है,

उसकी स्थिति संदिग्ध है। उसे हरगिज़ इमाम न बनाएं चाहे वह खुद को सुन्नी ही क्यों न कहता हो। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

[1] सुनन अल-दारमी, अध्याय: फतवा देने से डरने और बाल की खाल निकालने तथा नवाचार को नापसंद करने के बारे में, नश्र-उस-सुन्नत मुल्तान द्वारा प्रकाशित, 1/51। [2] फ़तावा हिंदीया, दूसरा अध्याय: उन लोगों के बारे में जिनकी गवाही उनके अनाचार के कारण स्वीकार नहीं की जाती, नूरानी कुतुब खाना पेशावर द्वारा प्रकाशित, 3/468।

المؤمنین ان کنت ترید قتلی فاقتلنی قتلا جمیلا وان کنت ترید تداویني فقد واللہ برئت فأذن لہ الی ارضہ وکتب الی ابی موسی الاشعری ان لا یجالسہ احد من المسلمین فاشتد ذلك علی الرجل فکتب ابو موسی الاشعری الی عمر ان قد حسنت توبتہ ، فکتب ان یأذن للناس في مجالستہ [1]۔ اے امیر المومنین! اگر آپ مجھے قتل کرنا ہی چاہتے ہیں تو بہتر انداز میں قتل کیجئے اور اگر میرا علاج فرما رہے ہیں تو اللہ کی قسم اب میں درست ہوں ، آپ نے اسے اپنے علاقے میں جانے کی اجازت دے دی اور ابو موسیٰ اشعری کو لکھا کہ اسے مسلمانوں کی کسی مجلس میں نہ بیٹھنے دو۔ اس شخص پر یہ معاملہ گراں گزرا حتی کہ حضرت ابو موسیٰ اشعری نے حضرت عمر کی طرف خط لکھا کہ آپ نے اس کی توبہ درست کر دی ہے، تو حضرت عمر نے لکھا کہ اب لوگ اسے اپنے پاس بیٹھنے کی اجازت دے دیں ۔(ت)

بلا لکہ اگر اس کا مکر و زور و کذب و فریب ظاہر و مشہور ہو تو بعد توبہ بھی کبھی امام نہ کریں کہ اسے امام کرنا کچھ ضرور نہیں اور معروف کذاب کی توبہ پر ہمیں اعتبار کا کیا ذریعہ ہے خصوصاً روافض خذلہم اللہ تعالٰی کہ تقیہ ان کا اصل مذہب اور اس کی بنیاد کا سب سے پہلا پتھر ہے خصوصاً جہاں نوکری وغیرہ کی طمع یا کسی خوف کا قدم در میان ہو۔ امام ملک العلماء ابو بکر مسعود کاشانی قدس سرہ کی کتاب بدائع پھر فتاوٰی عالمگیری میں ہے:

المعروف بالکذب لا عدالۃ لہ فلا تقبل شھادتہ ابدا وان تاب بخلاف من وقع في الکذب سھوا او ابتلی بہ مرۃ ثم تاب[2] اھ و نسال اللہ حسن التوبۃ والعفو والعافیۃ۔ جو شخص جھوٹ بولنے میں مشہور ہو اس کی عدالت ثابت نہیں لہذا اس کی شہادت کبھی قبول نہ کی جائے اگرچہ اس نے توبہ کر لی ہو۔

بخلاف اس شخص کے جس نے سہواً یا وقت مجبوری کبھی ایک دفعہ جھوٹ بولا ہو اور پھر توبہ کر لی ہو اھ ہم اللہ تعالٰی کی بارگاہ سے حسن توبہ، معافی اور عافیت کا سوال کرتے ہیں(ت)

بعینہ یہی حکم وہابیت دیو بندیہ کا ہے کہ وہ بھی مثل رفض زمانہ ارتداد مبین اور اس کے اصاغر مثل روافض تقیہ گزیں تو جسے دیکھیں کہ ان لوگوں سے میل جول رکھتا، ان کی مجالس و وعظ میں جاتا ہے، اس کا حال مشتبہ ہے ہر گز اسے امام نہ کریں اگرچہ اپنے کو سنی کہتا ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم

[1] سنن الدارمی باب من ہاب الفتیا و کرہ التنطع والتبدع مطبوعہ نشر السنہ ملتان ۱ / ۵۱ [2] فتاوی ہندیہ الفصل الثانی فیمن لا تقبل شہاتہ لفسقہ مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۴۶۸

Fatawa-e-Razviya, Volume 6

Problem 661: Zaid holds Wahhabi beliefs, and his minor son, approximately 12 years old, has become a Hafiz of the Quran this year. He is forcing and pressuring us, who follow the Hanafi school of Ahl al-Sunnah wal-Jama'ah, to listen to the Quran behind his aforementioned son. Is it valid to perform Tarawih etc. behind him or not? Explain and you shall be rewarded.

The Answer: No prayer, including Tarawih etc., is permissible behind this boy because, in the correct school of thought, a minor cannot lead adults in any prayer. And if he also holds Wahhabi beliefs, as is apparent, then prayer behind a Wahhabi is absolutely invalid anyway, even if he were an adult. And Allah Almighty knows best.

Problem 662: From the old city, Rohili Tola neighborhood, requested by Mr. Hidayatullah Khan Sahib, 19 Shawwal 1329 AH. What do the scholars of religion say regarding this issue: at the time of prayer, several individuals are gathered, but none are fully observant of Shariah. One is a Hafiz and is also familiar with issues, but his beard is somewhat trimmed, not according to Shariah. Another's dress and appearance are according to Shariah, and he has some knowledge of issues, but he cannot recite the Holy Quran as correctly as the Hafiz, nor can he deliver the Friday sermon. A third person is not a Hafiz but is familiar with the issues of prayer, recites the Holy Quran correctly, has served in the police, and receives a pension. In short, such is the state of every person. In this situation, who should be considered worthy of leadership (Imamat)? Explain and you shall be rewarded.

The Answer: Among them, the person who performs purification (Wudu, Ghusl, etc.) correctly, performs prayer correctly, and does not recite the Holy Quran so incorrectly that meanings change, even if he is a sinner (fasiq), prayer will be valid behind him. However, for it to be permissible to appoint him as an Imam, it is also necessary that he be a pure Sunni in creed and not an open sinner (fasiq-e-mu'lin), meaning he should not commit any sin publicly; even a minor sin becomes major through habit and persistence. A person who combines all these qualities, even if he cannot recite the Holy Quran like a Hafiz or receives a police pension, there is no harm in making him Imam. And if trimming the beard below the Shariah limit is done, he is an open sinner; making him Imam is a sin. Being a Sunni, which we have included in the conditions for the permissibility of Imamat (appointing as Imam) and not for the validity of prayer (the prayer itself being valid), means that even behind a person of bad belief whose deviation does not reach the level of disbelief (kufr), making such a

person an Imam is a sin, although the obligatory duty (fard) will be discharged. But behind those whose deviation has reached the level of disbelief, such as common Rafidis, Wahhabis, Nechariyya, Qadianis, and Ghayr-Muqallids of today, the prayer is absolutely void, just like praying behind a Hindu or a priest. We seek refuge with Allah Almighty. And Allah Almighty knows best.

फ़तावा-ए-रज़विया, छठा खंड

मसला 661: ज़ैद वहाबी अकीदा (विश्वास) रखता है और उसका नाबालिग लड़का, जिसकी उम्र लगभग 12 साल है, इस साल कुरान का हाफिज़ हुआ है। वह हम लोगों को, जो हनफी मज़हब अहले सुन्नत व जमाअत के हैं, मजबूर करता है और ज़ोर डालता है कि मेरे उपर्युक्त लड़के के पीछे कुरान शरीफ सुन लिया जाए। उसके पीछे तरावीह वगैरह दुरुस्त है या नहीं? स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिलेगा।

अल-जवाब: इस लड़के के पीछे तरावीह वगैरह कोई भी नमाज़ जायज़ नहीं है, क्योंकि सही मज़हब में नाबालिग किसी भी नमाज़ में बालिगों की इमामत नहीं कर सकता। और अगर वह अकीदा भी वहाबी रखता हो, जैसा कि ज़ाहिर है, तो वहाबी के पीछे वैसे भी नमाज़ बिल्कुल नाजायज़ है, चाहे वह बालिग ही क्यों न हो। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 662: पुराने शहर, रोहिली टोला मोहल्ले से, श्री हिदायतुल्ला खान साहब द्वारा पूछा गया, 19 शव्वाल 1329 हिजरी। दीन के उलेमा इस मसले में क्या फरमाते हैं कि नमाज़ के समय कुछ लोग जमा हैं लेकिन वे शरीयत के पूर्ण पाबंद नहीं हैं। एक हाफिज़ है और मसलों से भी वाकिफ़ है, लेकिन उसकी दाढ़ी कुछ कटी हुई है, शरीयत के मुताबिक नहीं है। दूसरे का लिबास और रहन-सहन तो शरीयत के मुताबिक है और वह कुछ मसलों की जानकारी भी रखता है, लेकिन वह हाफिज़ के मुकाबले में कुरान मजीद सही नहीं पढ़ सकता और न ही जुमे का खुतबा दे सकता है। एक तीसरा व्यक्ति हाफिज़ तो नहीं है लेकिन नमाज़ के मसलों से वाकिफ़ है, कुरान-ए-अज़ीम सही पढ़ता है, पुलिस में नौकरी कर चुका है और पेंशन पाता है। संक्षेप में, हर व्यक्ति की ऐसी ही हालत है। इस स्थिति में इमामत के लायक किसे समझा जाए? स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिलेगा।

अल-जवाब: उनमें से जो व्यक्ति वज़ू और गुस्ल वगैरह तहारत (पवित्रता) ठीक से करता हो, नमाज़ सही पढ़ता हो, कुरान मजीद को इतना गलत न पढ़ता हो जिससे अर्थ बदल जाएं चाहे वह फासिक (गुनहगार) हो, उसके पीछे नमाज़ हो जाएगी। लेकिन इमाम बनाने के जायज़ होने के लिए यह भी ज़रूरी है कि मज़हब का सुन्नी खालिस हो, फासिक-ए-मुअ़लिन न हो, यानी कोई भी गुनाह खुलेआम न करता हो; छोटा गुनाह भी आदत और ज़िद से बड़ा बन जाता है। जो व्यक्ति इन सभी बातों का समावेश रखता हो, भले ही वह हाफिज़ की तरह कुरान न पढ़ सके या पुलिस की पेंशन पाता हो, उसे इमाम बनाने में कोई हर्ज नहीं है। और दाढ़ी शरीयत की सीमा से कम रखना खुला गुनाह है, उसे

इमाम बनाना गुनाह है। सुन्नी होना जो हमने इमामत की जायज़ होने की शर्तों में रखा है न कि नमाज़ की शुद्धता की शर्तों में, उससे मुराद यह है कि ऐसा बद-मज़हब (भटका हुआ) भी जिसकी बद-मज़हबी कुफ़्र की हद तक न पहुँची हो, ऐसे को इमाम बनाना गुनाह है, हालांकि फर्ज़ अदा हो जाएगा। और जिसकी बद-मज़हबी कुफ़्र की हद तक पहुँच गई हो, जैसे आज कल के आम राफज़ी, वहाबी, नीचरी, कादियानी, गैर-मुक़ल्लिद, उनके पीछे तो नमाज़ बिल्कुल बातिल (अमान्य) है, जैसे किसी हिंदू या पादरी के पीछे। खुदा की पनाह। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

पेज 535 ऑफ 736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

مسئلہ ۶۶۱: زید وہابی عقیدہ رکھتا ہے اور اس کا لڑکا نا بالغ بعمر تخمیناً ۱۲ سال امسال قرآن حافظ ہوا ہے اور وہ ہم لوگ مذہب حنیفہ اہلسنت وجماعت کو مجبور کرتا ہے اور زور ڈالتا ہے کہ میرے لڑکے مذکورہ بالا کے پیچھے قرآن شریف سن لیا جائے ، اس کے پیچھے تراویح وغیرہ درست ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: اس لڑکے کے پیچھے تراویح وغیرہ کوئی نماز جائز نہیں کہ صحیح مذہب میں نابالغ بالغوں کی امامت کسی نماز میں نہیں کر سکتا اور اگر وہ عقیدہ بھی وہابیہ رکھتا ہو جیسا کہ ظاہر یہی ہے تو وہابی کے پیچھے ویسے بھی نماز نا جائز محض ہے اگر چہ بالغ ہو۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۶۶۲: از شہر کہنہ محلہ روہیلی ٹولہ مسئولہ جناب ہدایت اللہ خان صاحب ۱۹ شوال ۱۳۲۹ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ وقت نماز چند اشخاص جمع ہیں لیکن کامل پابند شریعت نہیں ہیں ایک حافظ ہے اور مسائل سے بھی واقف ہے مگر داڑھی اس کی کسی قدر کتری ہوئی ہے موافق شرع نہیں دوسرے کا لباس و وضع تو موافق شریعت ہے اور کچھ مسائل سے کسی قدر واقفیت رکھتا ہے مگر قرآن مجید بمقابلہ حافظ کے صحیح نہیں پڑھ سکتا نہ خطبہ جمعہ کا یہ کوئی شخص حافظ تو نہیں مگر مسائل نماز سے واقف ہے قرآن عظیم صحیح پڑھتا ہے ملازمت پولیس کر چکا ہے پنشن پاتا ہے غرض ایسی ہی حالت ہر شخص کی ہے اس حالت میں کون شخص امامت کے لائق سمجھا جائے؟ بینوا توجروا

الجواب: ان میں جو شخص وضو و غسل وغیرہ طہارت ٹھیک کرتا ہو نماز صحیح پڑھتا ہو قرآن مجید ایسا غلط نہ پڑھتا ہو جس سے معنی بدلیں فاسق ہوں اس کے پیچھے نماز ہو جائے گی مگر

امام بنانا جائز ہونے کے لئے یہ بھی ضروری ہے کہ مذہب کا سنی خالص ہو فاسق علی الاعلان نہ ہو یعنی کوئی گناہ کبھی اعلان کے ساتھ نہ کرتا ہو صغیرہ بھی عادت واصرار سے کبیرہ ہو جاتا ہے، جو شخص ان سب باتوں کا جامع ہو اگر چہ قرآن عظیم حافظ کی مثل نہ پڑھ سکے یا پولیس کی پنشن پائے اسے امام بنانے میں حرج نہیں، اور داڑھی حد شرع سے کم کرانا ہو وہ فاسق معلن ہے اسے امام بنانا گناہ ہے، سنی ہونا جو ہم نے جواز امامت کی شرطوں میں رکھا ہے نہ صحت نماز کی ، اس سے مراد یہ ہے کہ ایسا بد مذہب بھی جس کی بد مذہبی حد کفر تک نہ پہنچے کہ ایسے کو امام بنانا گناہ ، اگر چہ فرض ساقط ہو جائے گا اور جس کی بد مذہبی حد کفر تک پہنچی ہو جیسے آج کل کے عام رافضی، وہابی، نیچری، قادیانی، غیر مقلد کے پیچھے تو نماز محض باطل ہے جیسے کسی ہندو یا پادری کے پیچھے والعیاذ باللہ تعالیٰ واللہ تعالیٰ اعلم۔

Fatawa Ridawiyya Volume 6

Problem 663: From Mayurbhanj district Baripada, sent by Abdul Rahim Sahib, 21 Dhu al-Qi'dah 1329 AH. If a person has advanced leprosy (judham) but is not limping, his fingers have not fallen off, and he can sit and stand properly, is it valid to pray behind him? And for one who has gonorrhea (suzāk), or his face has become crooked (paralysis), or is so weak that he takes a long time to sit and stand—how is it to pray behind these people?

Answer: The ruling regarding leprosy is that as long as it has not started dripping, if it has reached a level that causes public aversion, leading to a decrease in the congregation during his leadership, then his leading (imamat) is disliked (makruh); otherwise, it is not. If it starts dripping and reaches the level of being 'excused' (ma'zur)—meaning an entire prayer time passes without him having enough time to perform ablution (wudhu) and pray the obligatory (fard) prayer—then as long as even a single drop is found during every prayer time, he is considered 'excused.' Performing fresh wudhu for each of the five prayer times is sufficient for him. Prayer behind him will only be valid for someone with the same condition; it is not valid for others. The same ruling applies to gonorrhea: if pus flows, [the same as above applies]; if pus does not come out, there is no harm in praying behind him. For one whose face has become crooked (God forbid), if due to this he cannot recite correctly and the letters are mispronounced, prayer behind him is not permissible. If he can pronounce letters correctly but the recitation appears very unsightly, his leading is not preferable; otherwise, there is no harm. There is no harm in praying behind someone who takes time to sit and stand due to weakness, provided the condition is not such that, for example, he cannot stand up until he has remained sitting after prostration for the duration of saying 'Subhan Allah' three times. If such is the case, then praying behind him is disliked (makruh). And Allah the Almighty knows best.

Problem 664: 8 Dhu al-Hijjah 1329 AH What do the scholars of religion say regarding this matter: A person is an Imam of a Sunni mosque (Ahl-e-Sunnat-wa-Jama'at) and also claims to be a Sunni. However, he has family ties and kinship with Rafidhis (Shiites); his paternal aunts were married into Rafidhi families, his sisters' marriages were also performed with Rafidhis, and he himself married among Rafidhis. In such a case, will his claim be accepted or not? Taqiyyah (dissimulation), which is a characteristic of Rafidhis and through which they consider destroying the worship of Sunnis as a means of salvation—should it be assumed that it is permissible for Sunnis to pray behind such a person or not? Even if his claim is assumed true and he

is considered Sunni, were his marriage and his sisters' marriages valid or not? And is it necessary to repeat the prayers performed behind him? Please explain, may you be rewarded.

Answer: Although marrying among Rafidhis does not automatically prove that the person himself is a Rafidhi, because...

फ़तावा रज़विया छठा खंड

मसला 663: मयूरभंज ज़िला बारीपदा से, प्रेषक अब्दुल रहीम साहब, 21 ज़िल-क़ादा 1329 हिजरी। जिस व्यक्ति को कोढ़ (जज़ाम) की तीव्रता हो गई हो, लेकिन वह लंगड़ाता न हो, उंगलियां न गिरी हों और वह अच्छी तरह से उठ-बैठ सकता हो, क्या उसके पीछे नमाज़ सही है या नहीं? और जिसे सुज़ाक (गोनोरिया) हो या जिसका मुँह टेढ़ा हो गया हो या वह इतना कमज़ोर हो कि उठने-बैठने में बहुत समय लगता हो, ऐसे लोगों के पीछे नमाज़ पढ़ना कैसा है?

उत्तर (अल-जवाब): कोढ़ के बारे में नियम यह है कि जब तक रिसाव (टपकना) शुरू न हुआ हो, अगर यह लोगों की नफ़रत की सीमा तक पहुँच गया है जिससे उसकी इमामत (नेतृत्व) में जमात कम हो जाती है, तो उसकी इमामत मकरूह (नापसंद) है, अन्यथा नहीं। और अगर रिसाव होने लगे, तो यदि वह 'माज़ूर' (विवश) की सीमा तक पहुँच गया है—कि एक पूर्ण नमाज़ का समय ऐसा बीत गया कि वज़ू करके फ़र्ज़ पढ़ने की मोहलत न मिली—तो जब तक हर नमाज़ के समय कम से कम एक बार रिसाव पाया जाए, वह माज़ूर है। उसके लिए पाँचों समय ताज़ा वज़ू करना पर्याप्त है, और उसके पीछे केवल वैसे ही व्यक्ति की नमाज़ होगी जिसकी स्थिति उसके समान हो। बाकी लोगों की नमाज़ नहीं हो सकती। सुज़ाक का भी यही नियम है: यदि पीप बहता हो तो [उपरोक्त नियम लागू होगा], और यदि पीप न निकले तो उसके पीछे नमाज़ में कोई हर्ज नहीं। जिसका मुँह (ईश्वर न करे) टेढ़ा हो गया हो, अगर उसके कारण वह क़िरअत सही न पढ़ सकता हो और अक्षरों का उच्चारण ग़लत होता हो, तो उसके पीछे नमाज़ जायज़ नहीं। और अगर अक्षर सही निकलते हों लेकिन पढ़ने में बहुत भद्दापन पैदा हो गया हो, तो उसकी इमामत बेहतर नहीं है, अन्यथा कोई हर्ज नहीं। कमज़ोरी के कारण जो देर से उठता-बैठता हो, उसके पीछे नमाज़ में कोई हर्ज नहीं, बशर्ते कि स्थिति ऐसी न हो कि उदाहरण के लिए, जब तक वह सजदे से उठकर तीन बार 'सुब्हान अल्लाह' कहने के बराबर बैठा न रहे, तब तक खड़ा न हो पाए। और जब ऐसी स्थिति हो, तो उसके पीछे नमाज़ मकरूह है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 664: 8 ज़िल-हिज्जा 1329 हिजरी उलेमा-ए-दीन इस मसले में क्या फ़रमाते हैं: एक व्यक्ति अहले सुन्नत व जमात की मस्जिद का इमाम है और वह यह भी दावा करता है कि मैं सुन्नी हूँ, लेकिन उसकी रिश्तेदारी और नातेदारी राफ़ज़ियों (शियाओं) से हुई है। उसकी बुआएँ भी राफ़ज़ियों से ब्याही गईं और उसकी बहनों के निकाह राफ़ज़ियों से हुए और उसने अपना निकाह भी राफ़ज़ियों में किया। ऐसी स्थिति में क्या उसका दावा स्वीकार किया जाएगा या नहीं? तक़िया, जो राफ़ज़ियों का प्रतीक है

और जिसके माध्यम से वे अहले सुन्नत की इबादतों को बर्बाद करना मुक्ति का साधन समझते हैं— क्या ऐसे व्यक्ति के पीछे अहले सुन्नत को नमाज़ पढ़ना जायज़ है या नहीं? यदि मान लिया जाए कि उसका दावा सच है और उसे सुन्नी माना जाए, तो उसका और उसकी बहनों का निकाह सही हुआ या नहीं? और जो नमाज़ें उसके पीछे पढ़ी गईं, क्या उन्हें दोहराना ज़रूरी है या नहीं? बयान फ़रमाएँ, सवाब पाएँ।

उत्तर (अल-जवाब): हालांकि राफ़ज़ियों के यहाँ शादी-ब्याह करने से स्वयं उस व्यक्ति का राफ़ज़ी होना स्पष्ट नहीं होता, क्योंकि...

पृष्ठ 536 / 736

فتاوی رضویہ جلد ششم

مسئلہ ۶۶۳: از مور بھنج ضلع بریپدہ مرسلہ عبدالرحیم صاحب ۲۱ ذی القعدہ ۱۳۲۹ھ جس شخص کو جذام کا گاڑھ ہو گیا ہو لیکن لنگڑایا انگلیاں گرا نہ ہو اچھی طرح اٹھ بیٹھ سکتا ہے اس کے پیچھے نماز درست ہے یا نہیں ؟ اور جس کو سوزاک ہو یا منہ بانکا ہو گیا ہو یا ضعیف اس قدر ہو کہ اٹھنے بیٹھنے میں دیر لگتی ہو ان اشخاص کے پیچھے نماز پڑھنا کیسا ہے؟

الجواب: جذام میں جب تک ٹپکنا نہ شروع ہوا ہو یہ حکم ہے کہ اگر لوگوں کی نفرت کی حد تک ہے جس کے سبب اس کی امامت میں جماعت کی کمی ہو تو اس کی امامت مکروہ ہے ورنہ نہیں ، اور اگر ٹپکنے لگا تو اگر معذور کی حد تک پہنچ گیا کہ ایک وقت کامل کسی نماز کا اس پر ایسا گزرا کہ وضو کر کے فرض پڑھ لینے کی مہلت نہ تھی تو جب تک ہر نماز کے وقت اگرچہ ایک ایک ہی بار ٹپکنا پایا جائے وہ معذور ہے اسے پانچ وقت تازہ وضو کرنا کافی ہے اور اس کے پیچھے صرف ایسے ہی عارضہ والے کی جو اسی کی سی حالت رکھتا ہو نماز ہو جائے گی باقی لوگوں کی نماز نہیں ہو سکتی یہی حکم سوزاک کا ہے اگر پیپ بہتا ہو اور اگر پیپ نہ نکلے تو اس کے پیچھے نماز میں کچھ حرج نہیں ، جس کا منہ معاذ اللہ ٹیڑھا ہو گیا ہو اگر اس کے سبب قرآت صحیح نہ پڑھ سکتا ہو حروف غلط ادا ہوتے ہوں تو اس کے پیچھے نماز جائز نہیں اور اگر حروف صحیح نکلتے ہوں مگر پڑھنے میں بہت بدنما ئی پیدا ہو گئی ہو تو اس کی امامت اولیٰ نہیں ورنہ کچھ حرج نہیں جو ضعف کے سبب دیر میں اٹھتا بیٹھتا ہو اس کے پیچھے نماز میں کوئی حرج نہیں جبکہ ایسی حالت نہ ہو کہ مثلاً جب تک سجدہ سے اٹھ کر بقدر تین بار سبحن اللہ کہنے کے بیٹھا رہے کھڑا نہیں ہوتا اور جب ایسی حالت ہو تو اس کے پیچھے نماز مکروہ ہے ۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۶۶۴: ۸ ذی الحجہ ۱۳۲۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں ایک شخص مسجد اہلسنت و جماعت کا امام اور وہ بھی مدعی ہے کہ میں سنی ہوں مگر اس کی رشتہ داری و قرابت روافض سے ہوئی ہے، اس کی پھوپھیاں بھی روافض کو منسوب ہوئیں اور اس کی ہمشیرگان کے روافض سے نکاح ہوئے اور اس نے اپنا نکاح بھی روافض میں کیا ایسی حالت میں اس کا دعویٰ قبول ہو گا یا نہیں، تقیہ جو روافض کا شعار ہے اور اس کے ذریعہ سے اہلسنت کے عبادات کو ضائع کرنا باعث نجات خیال کرتے ہیں محمول ہو کہ ایسے شخص کے پیچھے اہلسنت کو نماز پڑھنا جائز ہے یا نہیں، بفرض محال اس کے دعویٰ کو سچ سمجھا جائے اور اس کو سنی خیال کیا جائے تو نکاح اس کا اور اس کی ہمشیرگان کا صحیح ہوا یا نہیں، اور جو نمازیں اس کے پیچھے پڑھیں اس کا اعادہ ضروری ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: اگرچہ رافضیوں کے یہاں بیاہت کرنے سے خود اس شخص کا خواہی نہ خواہی رافضی ہونا واضح نہیں ہوتا کہ

Fatawa Ridawiyya - Volume 6

Some foolish, ignorant Sunnis are also involved in this great calamity purely due to their ignorance. And some are those who consider it bad but then get involved in it because of previous relationships or other absurd reasons. One might offer an excuse regarding the marriages of paternal aunts or sisters, saying it was an act of their forefathers, or perhaps they might even say the same about their own marriage—that their father arranged it. One cannot pass a judgment on someone's heart and belief based on such reasons. When a person calls himself a Sunni and none of his actions or words are against the creed of the Ahl al-Sunnah, it is not permissible to harbor ill suspicion and declare him a Rafidi (Shia). Allah Almighty says:

'And do not say to him who offers you peace, "You are not a believer."' - (Quran 4:94) (T)

The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says: 'Did you tear open his heart (to see what was inside - T)?' However, to make someone an Imam (leader of prayer), merely being considered a Sunni is not enough; rather, it is essential that he is not an open transgressor (Fasiq Mu'lan). His condition should be observed. If he maintains relations, mixes, and behaves with friendship and unity towards Rafidis, then even if he is not a Rafidi, he is at the very least a severe transgressor. Performing prayer behind a transgressor is Makruh Tahrimi (highly disliked, bordering on forbidden), and making him an Imam is a sin. Any prayers performed behind him must be repeated, as stated in Fatawa al-Hujjah, al-Ghunyah, and other numerous books. We have investigated this in 'An-Nahy al-Akeed' (as it is in Fatawa al-Hujjah, Ghunyah, and other numerous books, and we have researched it in An-Nahy al-Akeed. T). And if, despite these marriages, he is completely separate from those people, he should be informed that today's tabarrai (those who insult companions) Rafidis are generally disbelievers and apostates. Marriage with them, whether it be a man or a woman, is absolutely void. Any intimacy within such a marriage is pure adultery, and the offspring are illegitimate. If he does not understand this, he should be shown the treatise 'Radd al-Rafadah', in which their disbelief is proven from clear statements of many reliable books. If he still refuses to accept, he will be a rebellious and defiant transgressor. Keeping a Rafidi woman will make him an adulterer, and it will be mandatory to remove him from the position of Imamate. If he is not ignorant but knows that the person is an apostate—since the marriage of an apostate man or woman cannot be valid with anyone—and he still does not separate from that woman, then he himself is a transgressor and an

adulterer, and his removal from the Imamate is obligatory. Furthermore, if he is aware of the purely blasphemous beliefs of the Rafidis and still considers them Muslims, then far from being a mere transgression, it is disbelief (Kufr) itself. It is mentioned in Bazzaziyyah, Majma' al-Anhur, Durr al-Mukhtar, etc.: 'Whoever doubts their disbelief and punishment, indeed he has committed disbelief.' (Whoever)

---

1 Al-Quran 94/4 [Reference to Surah 4, Verse 94] 2 Musnad Ahmad bin Hanbal, narrated from Usama bin Zaid, printed by Dar al-Fikr Beirut, 5/207 3 Durr al-Mukhtar, Chapter of the Apostate, printed by Mujtabai Press Delhi, 1/356

कुछ मूर्ख और अज्ञानी सुन्नी भी अपनी अज्ञानता के कारण इस महान विपत्ति में फँसे हुए हैं। और कुछ ऐसे भी हैं जो इसे बुरा समझते हैं लेकिन पुरानी रिश्तेदारियों या अन्य बेतुके कारणों से इसमें शामिल हो जाते हैं। कोई अपनी बुआओं या बहनों के विवाह के बारे में यह बहाना बना सकता है कि यह उनके पूर्वजों का कृत्य है, या शायद अपने विवाह के बारे में भी यही कहे कि उनके पिता ने कराया था। ऐसे कारणों से किसी के हृदय और आस्था पर निर्णय नहीं दिया जा सकता। जब कोई व्यक्ति स्वयं को सुन्नी कहता है और उसका कोई भी कार्य या वचन अहले सुन्नत की आस्था के विरुद्ध नहीं है, तो दुर्भावना रखना और उसे राफ़ज़ी (शिया) घोषित करना जायज़ नहीं है। अल्लाह तआला फ़रमाता है:

'और जो तुम्हें सलाम करे, उससे यह न कहो कि तू मोमिन नहीं है।' - (क़ुरआन 4:94) (त)

अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं: 'क्या तुमने उसका दिल चीर कर देखा था? - त)' परंतु इमाम बनाने के लिए केवल सुन्नी समझा जाना ही काफ़ी नहीं है, बल्कि यह आवश्यक है कि वह खुले तौर पर गुनाह करने वाला (फ़ासिक़ मुअ्लन) न हो। उसकी स्थिति देखी जानी चाहिए। यदि वह राफ़ज़ियों के साथ मेल-जोल, मेल-मिलाप और दोस्ती तथा एकता का व्यवहार रखता है, तो भले ही वह राफ़ज़ी न हो, कम से कम एक घोर अपराधी (फ़ासिक़) ज़रूर है। अपराधी के पीछे नमाज़ पढ़ना मकरूह-ए-तहरीमी है और उसे इमाम बनाना पाप है। उसके पीछे पढ़ी गई नमाज़ों को दोहराना अनिवार्य है, जैसा कि फ़तावा अल-हुज्जाह, अल-ग़ुनियाह और कई अन्य पुस्तकों में वर्णित है। हमने इस पर 'अन-नहीं अल-अकीद' में शोध किया है (जैसा कि फ़तावा अल-हुज्जाह, ग़ुनियाह और अन्य कई पुस्तकों में है, और हमने इसकी तहक़ीक़ अन-नहीं अल-अकीद में की है। त)। और यदि इन विवाहों के बावजूद वह उन लोगों से पूरी तरह अलग है, तो उसे बताया जाना चाहिए कि आज के तबर्रई राफ़ज़ी आम तौर पर काफ़िर और धर्मत्यागी (मुरतद) हैं। उनके साथ विवाह, चाहे वह पुरुष का हो या महिला का, पूर्णतः अमान्य (बातिल) है। ऐसे विवाह में निकटता शुद्ध व्यभिचार (ज़िना) है और संतानें अवैध हैं। यदि वह इसे नहीं समझता है, तो उसे 'रद्द अल-राफ़ज़ह' पुस्तिका दिखाई जानी चाहिए, जिसमें कई विश्वसनीय पुस्तकों के स्पष्ट विवरणों से उनका कुफ़्र साबित किया गया है। यदि वह फिर भी मानने से इंकार करता है, तो वह एक विद्रोही और उद्दंड अपराधी होगा। राफ़ज़िया महिला को अपने पास रखने से वह व्यभिचारी होगा और उसे इमामत के पद से हटाना अनिवार्य होगा। यदि वह अज्ञानी नहीं है बल्कि जानता है कि वह धर्मत्यागी है—चूंकि एक धर्मत्यागी पुरुष या

महिला का विवाह किसी के साथ भी वैध नहीं हो सकता—और फिर भी वह उस महिला को अलग नहीं करता है, तो वह स्वयं अपराधी और व्यभिचारी है और इमामत से हटाए जाने के योग्य है। इसके अलावा, यदि वह राफ़ज़ियों के शुद्ध कुफ़्रिया अक़ीदों (ईश-निंदापूर्ण धारणाओं) से अवगत है और फिर भी उन्हें मुसलमान मानता है, तो अपराधी होना तो दूर, यह स्वयं कुफ़्र (अविश्वास) है। बज़ाज़िया, मजमा अल-अन्हुर और दुर्र अल-मुख़्तार आदि में वर्णित है: 'जिसने उनके कुफ़्र और सज़ा में संदेह किया, उसने स्वयं कुफ़्र किया।' (जिसने)

---

1 अल-क़ुरआन 94/4 [सूरह 4, आयत 94 का संदर्भ] 2 मुसनद अहमद बिन हंबल, ओसामा बिन ज़ैद से रिवायत, दारुल फ़िक्र बेरूत द्वारा मुद्रित, 5/207 3 दुर्र अल-मुख़्तार, बाबुल मुरतऽ, मुजतबाई प्रेस दिल्ली द्वारा मुद्रित, 1/356

بعض احمق نادان جاہل سنی بھی اس بلائے عظیم میں محض اپنی جہالت سے مبتلا ہیں اور بعض وہ بھی ہیں کہ اسے برا سمجھتے ہیں اور پھر اپنی اگلی رشتہ داریوں وغیرہ بیہودہ وجوہ کے سبب اس میں مبتلا ہوتے ہیں اور پھپھیوں بہنوں کے نکاح میں وہ بھی عذر کر سکتا ہے کہ یہ فعل اس کے باپ دادا کا ہے بلکہ شاید اپنے نکاح میں بھی یہی کہے کہ باپ نے کر دیا اور ایسی وجوہ سے کسی کے قلب و عقیدہ پر حکم نہیں لگا سکتے، اور جب وہ اپنے آپ کو سنی کہتا ہے اور اس کی کوئی بات عقیدہ اہلسنت کے خلاف نہیں تو بد گمانی کر کے رافضی ٹھہرا دینے کی اجازت نہیں۔ اللہ تعالٰی فرماتا ہے:

وَلَا تَقُولُوا لِمَنْ أَلْقَى إِلَيْكُمُ السَّلَمَ لَسْتَ مُؤْمِنًا - اور جو تمھیں سلام کرے اس سے یہ نہ کہو کہ تو مومن نہیں۔ (ت)

رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں : افلا شققت عن قلبه (کیا تو نے اس کا دل پھاڑ کر دیکھ لیا تھا۔ ت) مگر امام بنانے کے لئے فقط سنی تصور کرنا ہی کافی نہیں بلکہ فاسق معلن نہ ہونا ضرور ہے اس کی حالت دیکھی جائے اگر رافضیوں سے میل جول خلا ملا دوستی اتحاد کے برتاؤ کرتا ہے تو اگر رافضی نہیں تو کم از کم سخت فاسق ہے اور فاسق کے پیچھے نماز مکروہ تحریمی اور اسے امام بنانا گناہ، اور جو نمازیں اس کے پیچھے پڑھی ہوں ان کا پھیرنا واجب کما فی فتاوی الحجة والغنية وغیرھما من الاسفار الکثیرة وقد حققناہ فی النھی الاکید (جیسا کہ فتاوی الحجہ ، غنیہ اور دیگر متعدد کتب میں ہے، اور ہم نے اس کی تحقیق النہی الاکید میں کی ہے۔ ت) اور اگر باوصف ان بیاہتوں کے ان لوگوں سے بالکل جدا ہے تو اسے بتایا جائے کہ آج کل کے تبرائی رافضی علی العموم کافر و مرتد ہیں اور ان سے نکاح مرد کا ہو یا عورت کا محض باطل ہے اور

اس میں قربت زنائے خالص اور اولاد اولاد الزنا ہے، یوں نہ سمجھے تو اسے رسالہ ردالرفضہ دکھایا جائے جس میں بکثرت کتب معتمدہ کی صاف تصریحوں سے کفر ثابت کیا گیا ہے اگر پھر بھی نہ مانے تو متمرد و سرکش فاسق ہوگا اور رافضیہ عورت کے رکھنے سے زنا کار ہوگا اور اسے امامت سے معزول کرنا واجب ہوگا اور اگر جاہل نہیں بلکہ جانتا ہے کہ وہ مرتد ہے اور مرتد مرد خواہ عورت کا نکاح کسی سے نہیں ہو سکتا پھر اس عورت کو جدا نہیں کرتا آپ ہی فاسق وزانی اور امامت سے واجب العزل ہے اور اگر رافضیوں کے عقائد کفریہ خالص پر مطلع ہے اور پھر ان کو مسلمان جانتا ہے جب تو فسق در کنار خود کفر ہے۔ بزازیہ و مجمع الانہر ودرمختار وغیرہما میں ہے: من شك فی کفرہ وعذابہ فقد کفر (جس نے)

---

1 القرآن ۹۴/۴ 2 مسند احمد بن حنبل مروہ عن اسامہ بن زید مطبوعہ دارالفکر بیروت ۲۰۷/۵ 3 در مختار باب المرتد مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۳۵۶/۱

Fatawa Ridawiyya Volume VI (Anyone who doubts his disbelief and punishment becomes a disbeliever himself) And Allah knows best.

Problem 665: From Post Office Choubka, Tehsil and District Mater Pur, Mohra Kanhiyalal. Queried by Ghulam Muhammad Sahib, 28 Safar 1321 AH. Respected Master of Sharia, Maulana Sahib, may your shadow be long. After the honor of kissing your feet, I submit that my humble ancestors were all imams of the village and have been performing the imamate from ancient times. My humble grandfather was also the village teacher, and my humble father was also a teacher and performed the imamate. After them, I also maintain the teaching method, providing education in the Holy Quran and other books to many village boys, and I have also been leading the five daily prayers as an imam. Now, a person, a landlord of the village, said that if it is willed, he will keep the imam, otherwise not, because an imam is in the place of a servant, whether prayers are performed behind a servant or not. In short, he used very vulgar abuses and spoke disrespectful words. Now, this humble person reaches out to you; please write and send a fatwa based on Hadith and Sharia regarding this person, so that he may be punished. It would be a great kindness. Does this humble person have a right over the village or not? And what is the ruling in Sharia for him? They want to dismiss me from the imamate now. Please send a fatwa with verses and Hadiths.

The Answer: Harming any Muslim without a Sharia-compliant reason is forbidden (Haram), and swearing is strictly forbidden. Some abuses can never be permissible at any time, and the one who utters them is a severe transgressor (Fasiq) and, in an Islamic state, deserves eighty (80) lashes. Even a milder abuse without a Sharia reason is forbidden. The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says: "Whoever harms a Muslim has harmed me, and whoever harms me has harmed Allah." (One who gave Sharia-less harm to a Muslim, he gave me harm, and one who gave me harm, he gave Allah harm.)

And the right of a teacher of religious knowledge is even greater than that of a father. One who troubles them becomes disobedient (Aaq). Interfering with the livelihood of any Muslim without a Sharia reason is very severe, unjust, and groundless harm. Such people do not fear that they are interfering with a Muslim's sustenance without cause; may the Almighty disrupt their sustenance and narrow their livelihood. The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him)

says: "As you do (unto others), so shall it be done unto you." (As you will do with others, Allah will do the same with you).

1. Kanz al-Ummal, The Second Chapter on Warnings, Mu'assasat al-Risala, Beirut 16/10
2. Kanz al-Ummal, The First Chapter on Advices and Incentives, Mu'assasat al-Risala, Beirut 2/15, 77

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी (जिसने उसके कुफ़्र और अज़ाब में शक किया वह खुद काफ़िर हो गया) वल्लाहु तआला आलम।

मसला ६६५: डाकखाना चौबका, तहसील और जिला मटरपुर, मोहरा कन्हैयालाल से। सायल: गुलाम मोहम्मद साहब, २८ सफ़र १३२१ हिजरी। मसनद नशीन शरीयत जनाब मौलाना साहब दाम ज़िल्लुकुम, कदमबोसी की सआदत के बाद अर्ज़ यह है कि खाकसार के आबा-ओ-अजदाद सब गाँव के इमाम थे और पुराने समय से इमामत करते चले आ रहे हैं। खाकसार के दादा साहब भी खुद गाँव के उस्ताद थे और वालिद बुज़ुर्गवार भी उस्ताद थे और इमामत करते थे। उनके बाद मैं भी उस्तादी का तरीका रखता हूँ, गाँव के बहुत से लड़कों को कुरान मजीद और दीगर किताबों की तालीम दी है और पाँचों नमाज़ें भी हम इमाम होकर पढ़वाते रहे हैं। अब गाँव के एक ज़मींदार शख्स ने कहा कि अगर मर्जी होगी तो इमाम रखेंगे वर्ना नहीं रखेंगे, क्योंकि इमाम नौकर की जगह होता है, चाहे नौकर के पीछे नमाज़ अदा करें या न करें। गरज यह कि उसने बहुत बेहूदा गालियां भी दीं और गुस्ताखी भरे अल्फाज़ बोले। अब खाकसार आपकी तरफ दरखास्त पेश करता है; इस शख्स के बारे में हदीस और शरीयत की रोशनी में फ़तवा लिखकर भेजें ताकि उसे ताज़ीर (सज़ा) दी जाए, बड़ी मेहरबानी होगी। क्या गाँव पर खाकसार का हक है या नहीं? और शरीयत में उसके लिए क्या हुक्म है? वे अब इमामत से बर्खास्त करना चाहते हैं। आयतों और हदीसों के साथ फ़तवा भेजें।

जवाब: किसी मुसलमान को बिना किसी शरई वजह के तकलीफ देना हराम है और गाली देना सख्त हराम है। कुछ गालियां तो कभी भी जायज़ नहीं हो सकतीं और उन्हें देने वाला सख्त फासिक है और इस्लामी सल्तनत में अस्सी (८०) कोड़ों का मुस्तहिक होता है। उनसे हल्की गाली भी बिना शरई वजह के हराम है। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम फरमाते हैं: "मन् अज़ा मुस्लिमन फ़क़द अज़ानी व मन् अज़ानी फ़क़द अज़ल्लाह" (जिसने किसी मुसलमान को बिना शरई वजह के तकलीफ दी, उसने मुझे तकलीफ दी और जिसने मुझे तकलीफ दी, उसने अल्लाह को तकलीफ दी)।

और दीन के उस्ताद का हक बाप से भी ज़्यादा है। उन्हें सताने वाला 'आक' (नाफरमान) होता है। बिना शरई वजह के किसी मुसलमान की रोज़ी में खलल डालना बहुत सख्त, गलत और बेजा तकलीफ है। ऐसे लोगों को डर नहीं लगता कि वे किसी मुसलमान की रोज़ी में बिना वजह खलल डाल रहे हैं; अल्लाह कादिर-ए-मुतलक उनकी रोज़ी में खलल डाले और उनकी रोज़ी तंग कर दे।

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम फरमाते हैं: "कमा तदीनु तुदान" (जैसा तुम दूसरों के साथ करोगे, वैसा ही अल्लाह तुम्हारे साथ करेगा)।

1. कंज़ुल उम्माल, बाब २, डराने के बयान में, मुअस्ससतुर रिसाला, बैरूत, १६/१०
2. कंज़ुल उम्माल, बाब १, नसीहतों के बयान में, मुअस्ससतुर रिसाला, बैरूत, २/१५, ७७

فتاوی رضویہ جلد ششم اس کے کفر اور عذاب میں شک کیا وہ خود کافر ہوگیا) واللہ تعالی اعلم

مسئلہ ۶۶۵: از ڈاکخانہ چوبکہ تحصیل و ضلع مٹر پور موہرہ کنھیالالمسئولہ غلام محمد صاحب ۲۸ صفر ۱۳۲۱ھ مسند نشین شریعت غراجناب مولینا صاحب دام ظلکم بعد حصول سعادت قدمبوسی عرض یہ ہے کہ جو کہ کمترین کے آباؤ اجداد تھے وہ سب گاؤں کے امام تھے اور قدیم ایام سے امامت کرتے چلے آئے ہیں اور کمترین کے جناب دادا صاحب بھی خود گاؤں کے استاد تھے اور کمترین کے جناب والد بزرگوار بھی استاد ہی اور امامت کرتے تھے اور ان کے بعد میں بھی استادی طریقہ رکھتا ہوں کہ گاؤں کے بہت سے لڑکوں کو قرآن مجید کی تعلیم اور کتابوں وغیرہ کی بھی دی ہے اور پانچ نماز بھی ہم امام ہو کر پڑھواتے رہے ہیں اور اب گاؤں کے ایک شخص زمیندار نے کہا اگر مرضی ہو تو امام رکھیں ورنہ نہ رکھیں کہ امام نوکر کی جگہ ہوتا ہے خواہ نوکر کے پیچھے نماز ادا کریں یا نہ کریں اور غرضیکہ اس نے بہت بیہودہ گالی بھی نکالی ہیں اور بے ادب لفظ بولے ہیں اور اب کمترین جناب کی جانب دراز دست ہے اس شخص کی نسبت فتوی حدیث اور شریعت کے تحریر کرکے ارسال فرمائیں کہ اس کو تعزیر لگائی جائے از حد مہربانی ہوگی اور کمترین کا حق گاؤں پر ہے یا نہیں اور شریعت میں اس کے واسطے کیا حکم ہے وہ اب امامت سے برخاست کرنا چاہتے ہیں فتوی مع آیات واحادیث کے ارسال فرمائیں۔

الجواب: کسی مسلمان کو بلاوجہ شرعی ایذا دینا حرام ہے اور گالی دینا سخت حرام ہے اور بعض گالیاں تو کسی وقت حلال نہیں ہو سکتی اور ان کا دینے والا سخت فاسق اور سلطنت اسلامیہ میں اس (۸۰) کوڑوں کا مستحق ہوتا ہے ان سے ہلکی گالی بھی بلاوجہ شرعی حرام ہے۔ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں : من اذٰی مسلماً فقد اذانی ومن اذانی فقد اذٰی اللہ ۱۔ (جس نے

کسی مسلمان کو بلا وجہ شرعی ایذا دی اس نے مجھے ایذا دی اور جس نے مجھے ایذا دی اس نے اللہ کو ایذا دی۔)

اور علم دین کے استاد کا حق باپ سے بھی زائد ہے ستانے والا عاق ہوتا ہے اور بلاوجہ شرعی کسی مسلمان کے رزق میں خلل اندازی بہت سخت بے جا اور بلاوجہ ایذا ہے اور ایسوں کو خوف نہیں آتا کہ وہ کسی مسلمان کے رزق میں بلاوجہ خلل ڈالیں، اللہ قادر مطلق ان کی روزی میں خلل ڈالے ان کا رزق تنگ کر دے۔ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں: کما تدین تدان ۲ (جیسا تو اوروں کے ساتھ کریگا ویسا ہی اللہ تیرے ساتھ)

۱ کنز العمال الباب الثانی فی الترہیبات، مؤسسة الرساله بیروت ۱۶ / ۱۰ ۲ کنز العمال الباب الاول فی مواعظ الترغیبات مؤسسة الرساله بیروت ۲ / ۱۵ ۷۷

Fatawa-e-Razvia Volume VI (will do). It is mandatory for these people to ask for forgiveness from the Imam, and seek a pardon for the mistake from the teacher. If there is no Sharia-related objection, do not suspend him without reason. Yes, if there is a Sharia-related reason, speak to him gently. If he does not or cannot rectify it, then separate him with kindness. At that time, it is also not appropriate for the Imam to be stubborn. Imamat (leading prayer) is no one's right or inheritance. If the people of the congregation are dissatisfied with someone's leadership due to a Sharia-compliant reason, it is a sin for him to be the Imam, and his prayer is not accepted. And Allah Almighty knows best.

Problem 666: 8 Rabi-ul-Awwal 1331 AH What do the scholars of religion say regarding this matter: A person married a woman. After some time, he married his wife's sister. Both women stayed with him. After some time, a boy was born to the second one. When he reached adulthood, he studied the Holy Quran. Is it permissible to pray behind him now or not?

The Answer: This boy is 'Walad al-Haram' (child of a forbidden act), not 'Walad al-Zina' (child of adultery/illegitimacy). He cannot be called illegitimate (Harami) because in common usage, 'Harami' refers to a child of adultery, whereas Sharia-wise, he is the son of this same father. There is no harm in praying behind him. Yes, if the congregation feels aversion to praying behind him due to him being born of a forbidden act, then his leadership would be disliked (Makruh) as it would decrease the size of the congregation. However, if this boy has more knowledge of the issues of prayer and purification than all those present, then his leadership is superior. Now, if the public feels aversion, they should be explained that their aversion is contrary to the rule, misplaced, and unjustified. Even if someone is a child of adultery, if he exceeds the attendees in knowledge, he is the one entitled to lead. It is in al-Alamgiriyyah:

| If he married both in two separate contracts, then the later marriage is invalid (fasid). | If someone married two sisters in two separate contracts, the second marriage will be invalid (fasid). | | And it is mandatory upon him to separate from her. And if he separates from her after consummation, | It will be mandatory for him to separate from this last one. If he separated after consummation, | | Then 'Iddah (waiting period) is mandatory for her, and the lineage is established. (Summarized) | then the waiting period is mandatory for that lady, and the lineage will be established. (Summarized) |

It is in al-Hidaya:

| It is disliked to put forward a slave because he does not find free time for learning, and a desert Arab because ignorance is predominant among them, and a child of adultery. | Putting forward a slave is disliked because he does not get time for acquiring knowledge, and putting forward a desert Arab is also disliked because mostly... |

1. Fatawa-e-Hindiyya, Section Three, Matters related to fosterage, published by Noorani Kutub Khana Peshawar, 2/277. Page 539 of 736

फ़तावा-ए-रज़विया जिल्द छठी (करेगा)। इन लोगों के लिए ज़रूरी है कि वे इमाम से माफ़ी मांगें, उस्ताद से अपनी ग़लती बख़्शवाएं और अगर कोई शरीअत की मनाही न हो, तो उसे बिना कारण न हटाएँ। हाँ, अगर शरई कारण हो तो नरमी से उससे कहें, यदि वह उसका सुधार न करे या न कर सके तो उसे नरमी के साथ अलग कर दें। उस समय उस इमाम के लिए भी हठ करना उचित नहीं है। इमामत किसी का हक़ या विरासत नहीं है, और शरई वजह से यदि जमाअत के लोग जिसकी इमामत से नाराज़ हों, तो उसका इमाम बनना गुनाह है, उसकी नमाज़ क़बूल नहीं होती। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला ६६६: ८ रबी-उल-अव्वल १३४१ हिजरी दीन के विद्वान इस मसले में क्या कहते हैं कि एक व्यक्ति ने एक महिला से निकाह किया, कुछ समय बाद अपनी पत्नी की बहन से दूसरा निकाह कर लिया। दोनों महिलाएँ उसके साथ रहीं। कुछ समय बाद उस दूसरी से एक लड़का पैदा हुआ। जब वह बालिग हुआ, उसने क़ुरान मजीद पढ़ा, अब उसके पीछे नमाज़ पढ़ना जायज़ है या नहीं?

जवाब: यह लड़का 'वलद-उल-हराम' है, 'वलद-उज़-ज़िना' (अवैध संतान) नहीं। उसे 'हरामी' नहीं कह सकते क्योंकि आम बोलचाल में हरामी वलद-उज़-ज़िना को कहते हैं और यह शरीअत के अनुसार अपने इसी बाप का बेटा है। उसके पीछे नमाज़ पढ़ने में कोई हर्ज नहीं। हाँ, अगर जमाअत को उसके वलद-ए-हराम होने के कारण उसके पीछे नमाज़ पढ़ने से नफ़रत हो, तो उसकी इमामत 'मकरूह' (नापसंद) होगी क्योंकि इससे जमाअत कम होगी। लेकिन इस सूरत में यदि यह लड़का तमाम हाज़िरीन से ज़्यादा नमाज़ और पाकी के मसाइल जानता हो, तो उसी की इमामत बेहतर है। अब अगर अवाम को नफ़रत हो, तो उन्हें समझाया जाए कि उनकी यह नफ़रत हुक्म के ख़िलाफ़, बेमौक़ा और बेजा है। यहाँ तक कि अगर कोई वलद-उज़-ज़िना भी हो, तो जब वह हाज़िरीन से इल्म में ज़्यादा हो, तो वही इमामत का हक़दार है। 'आलमगीरिया' में है:

| यदि उसने दो अलग-अलग अक़्द (अनुबंध) में दो बहनों से निकाह किया, तो बाद वाला निकाह फ़ासिद (अमान्य) है। | यदि किसी ने दो बहनों से दो अलग-अलग अनुबंधों में निकाह किया, तो दूसरा निकाह फ़ासिद होगा। | | और उस पर उससे अलग होना अनिवार्य है। और यदि उसने संभोग के बाद उसे अलग किया, | उस पर इस आख़िरी वाली से अलग होना अनिवार्य होगा। यदि उसने संभोग के बाद अलग किया, | | तो उस महिला पर इद्दत अनिवार्य है और वंश (नसब) स्थापित हो जाता है। (संक्षेप में) | तो उस महिला पर इद्दत अनिवार्य होगी और नसब साबित हो जाएगा। (संक्षेप में) |

'हिदाया' में है:

| ग़ुलाम को आगे करना مکروہ है क्योंकि उसे शिक्षा के लिए समय नहीं मिलता, और देहाती अरब को भी क्योंकि उनमें अज्ञानता प्रबल होती है, और वलद-उज़-ज़िना को भी। | ग़ुलाम को आगे करना मकरूह है क्योंकि उसे इल्म हासिल करने के लिए समय नहीं मिलता, और देहाती अरब को आगे करना भी मकरूह है क्योंकि अक्सर... |

1. फ़तावा-ए-हिन्दिया, तीसरा भाग, दूध के रिश्तों से संबंधित मामले, नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर द्वारा प्रकाशित, २/२७४। पृष्ठ ५३९/७३६

فتاویٰ رضویہ جلد ششم کریگا) ان لوگوں پر لازم ہے کہ امام سے معافی مانگیں، استاد سے خطا بخشوائیں اور اگر کوئی حرج شرعی نہ ہو تو بے سبب اسے موقوف نہ کریں، ہاں اگر سبب شرعی ہو تو بہ نرمی، اس سے کہیں اگر وہ اس کا علاج نہ کرے یا نہ کر سکے تو نرمی کے ساتھ الگ کر دیں اس وقت اس امام کو بھی بے جاہٹ مناسب نہیں، امامت کسی کا حق و میراث نہیں، اور وجہ شرعی کے سبب اہلِ جماعت جس کی امامت سے ناراض ہوں اسے امام بننا گناہ ہوتا ہے اس کی نماز قبول نہیں ہوتی۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۶۶۶: ۸ ربیع الاول ۱۳۳۱ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ایک شخص نے اپنا نکاح ایک عورت سے کیا کچھ عرصہ بعد اپنی عورت کی ہمشیرہ سے دوسرا نکاح کیا دونوں عورتیں اس کے پاس رہیں کچھ مدت کے بعد اس دوسری سے ایک لڑکا پیدا ہوا جب وہ بالغ ہوا اس نے کلام مجید پڑھا اب اس کے پیچھے نماز جائز ہے یا نہیں؟

الجواب: یہ لڑکا ولد الحرام ہے ولد الزنا نہیں اسے حرامی نہیں کہہ سکتے کہ عرف میں حرامی ولد الزنا کو کہتے ہیں اور یہ شرعاً اپنے اسی باپ کا بیٹا ہے اس کے پیچھے نماز میں حرج نہیں، ہاں اگر جماعت کو اس کے ولد حرام ہونے کے باعث اس کے پیچھے نماز پڑھنے سے نفرت ہو تو اس کی امامت مکروہ ہوگی کہ وجہ تقلیلِ جماعت ہوگی مگر اس صورت میں کہ یہ لڑکا سب حاضرین سے زیادہ مسائل نماز وطہارت کا علم رکھتا ہو تو اسی کی امامت اولٰی ہے اور اب اگر عوام کو نفرت ہو تو انہیں سمجھایا جائے کہ ان کی یہ نفرت خلاف حکم و بے محل و بے جا ہے یہ تو یہ اگر کوئی ولد الزنا بھی ہو تو جب حاضرین سے علم میں زائد ہو وہی مستحق امامت ہے۔ عالمگیریہ میں ہے:

| ان تزوجهما في عقد تين فنكاح الاخيرة فاسدة | اگر دو بہنوں کا کسی نے دو عقدوں میں نکاح کیا تو دوسرا نکاح | | ویجب علیه ان یفارقها و ان فارقها بعد | فاسد ہوگا اس پر اس آخری کی تفریق واجب ہوگی اگر اس نے | | الدخول فعلیها العدة و یثبت النسب[1] (ملخصاً) | دخول کے بعد تفریق کی تو اس خاتون پر عدت لازم ہوگی اور نسب ثابت ہوجائے گا۔ ملخصاً(ت) |

ہدایہ میں ہے:

| یکره تقدیم العبد لانه لا یتفرغ للتعلم و الاعرابي لان الغالب فیهم الجهل وولد الزنا | غلام کی تقدیم مکروہ ہے کیونکہ اسے حصول علم کے لئے وقت نہیں ملتا، اور اعرابی کی تقدیم بھی مکروہ ہے کیونکہ اکثر |

1. فتاوٰی ہندیۃ القسم الثالث المربات بالرضاع مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور ۲۷۷/۲ Page 539 of 736

Fatawa Razawiya Volume 6

[Arabic Text]: Because he has no father to care for him, ignorance overcomes him, and because putting such individuals forward repels the congregation, it is disliked (Summarized). [Urdu Translation]: Usually, such people are ignorant. The leadership (imamat) of a person born out of wedlock is disliked because he has no compassionate father to arrange for his education. Such individuals often remain ignorant, and putting them forward will cause people to feel aversion toward joining the congregation. Therefore, making them an imam is disliked. (T)

It is mentioned in 'Ikhtiyar Sharh Mukhtar': [Arabic Text]: If a bedouin is more virtuous than a city dweller, a slave than a free man, a person born out of wedlock than one born of a lawful marriage, and a blind person than a sighted person, then the ruling will be the opposite. [Urdu Translation]: If a bedouin is superior to a city dweller, a slave to a free man, an illegitimate child to a legitimate child, and a blind person to a sighted person, then the ruling will be reversed. (T)

It is mentioned in 'Radd al-Muhtar': [Arabic Text]: Similar to this is in 'Sharh al-Multaqa' by Al-Bahnasi and 'Sharh Durar al-Bihar'. Perhaps the reason is that the repulsion of the congregation by putting him forward vanishes if he is more virtuous than others; rather, the repulsion would be in putting someone else forward. [Urdu Translation]: It is similarly stated in 'Sharh al-Multaqa' by Al-Bahnasi and 'Sharh Durar al-Bihar'. It is possible that the reason for this is that when he is superior to others, the congregation's aversion to his becoming an imam will be removed; instead, in this case, putting someone else forward will cause aversion. (T)

It is mentioned in 'Durr al-Mukhtar': [Arabic Text]: Unless he is more knowledgeable than others (besides the transgressor), then he is more worthy. [Urdu Translation]: However, if he is more learned than the rest of the people (besides the transgressor), then he is more deserving of the imamat. (T)

In the same book: [Arabic Text]: If he leads a people while they dislike him, if the dislike is due to some corruption in him or because they are more deserving of the imamat than him... [Urdu Translation]: If someone led the prayer while people disliked him, if the dislike was due to some fault in himself or...

---

1. Al-Hidayah, Book of Leadership (Imamat), published by Al-Maktaba al-Arabiyya, Karachi, 101/1.

2. Al-Ikhtiyar li-Ta'lil al-Mukhtar, Chapter on Congregation, published by Dar Firas for Publishing and Distribution, 58/1.
3. Radd al-Muhtar, Chapter on Congregation, published by Mustafa al-Babi, Egypt, 414/1.
4. Durr al-Mukhtar, Chapter on Congregation, published by Matba' Mujtabai, Delhi, 731/1.

फ़तवा-ए-रज़विया खंड 6

[अरबी पाठ]: क्योंकि उसका कोई पिता नहीं है जो उसकी देखभाल करे, इसलिए अज्ञानता उस पर हावी हो जाती है, और क्योंकि ऐसे व्यक्तियों को आगे करने से जमाअत (समूह) में अरुचि पैदा होती है, इसलिए यह मकरूह (नापसंद) है (संक्षिप्त)। [उर्दू अनुवाद]: आम तौर पर ये लोग अज्ञानी होते हैं। अवैध संतान (वल्द-ए-ज़िना) की इमामत इसलिए मकरूह है क्योंकि उसका कोई दयालु पिता नहीं होता जो शिक्षा का प्रबंध करे। ऐसे व्यक्ति अक्सर अज्ञानी रह जाते हैं और उन्हें आगे करने से लोगों में जमाअत में शामिल होने के प्रति नफरत पैदा होगी, इसलिए उन्हें इमाम बनाना मकरूह है। (त)

'इख्तियार शरह मुख्तार' में है: [अरबी पाठ]: यदि एक ग्रामीण शहर निवासी से, गुलाम आज़ाद से, अवैध संतान वैध संतान से, और अंधा व्यक्ति देखने वाले से अधिक श्रेष्ठ हो, तो नियम इसके विपरीत होगा। [उर्दू अनुवाद]: यदि ग्रामीण शहरी से, गुलाम आज़ाद से, वल्द-ए-ज़िना वल्द-ए-निकाह से और अंधा देखने वाले से अधिक श्रेष्ठ हो, तो नियम इसके विपरीत होगा। (त)

'रद्द अल-मुह्तार' में है: [अरबी पाठ]: इसके जैसा ही बहनसी की 'शरह अल-मुल्तका' और 'शरह दुरर अल-बिहार' में है। शायद इसका कारण यह है कि यदि वह दूसरों से अधिक श्रेष्ठ है, तो उसे आगे बढ़ाने से जमाअत की नफरत खत्म हो जाएगी; बल्कि ऐसी स्थिति में किसी और को आगे बढ़ाना नफरत का कारण बनेगा। [उर्दू अनुवाद]: 'शरह अल-मुल्तका' लिल-बहनसी और 'शरह दुरर अल-बिहार' में भी इसी तरह है, संभव है कि इसका कारण यह हो कि जब वह दूसरे से श्रेष्ठ हो तो उसके इमाम बनने की स्थिति में जमाअत से लोगों की नफरत दूर हो जाएगी, बल्कि इस स्थिति में दूसरे को आगे करना नफरत का कारण बनेगा। (त)

'दुर्र अल-मुख्तार' में है: [अरबी पाठ]: सिवाय इसके कि वह (दुराचारी के अलावा) दूसरों से अधिक जानकार हो, तो वह अधिक योग्य है। [उर्दू अनुवाद]: लेकिन अगर वह दुराचारी (फ़ासिक़) के अलावा कौम से ज्यादा आलिम (विद्वान) हो तो वही इमामत के ज्यादा लायक है। (त)

इसी पुस्तक में है: [अरबी पाठ]: यदि वह लोगों की इमामत करे जबकि वे उसे नापसंद करते हों, यदि वह नापसंदगी खुद उसमें किसी खराबी के कारण हो या इसलिए कि वे इमामत के उससे अधिक हकदार हों... [उर्दू अनुवाद]: अगर किसी ने इमामत कराई जबकि लोग उसे नापसंद करते थे, अगर नापसंदगी खुद उसमें किसी खराबी की वजह से हो या...

1. अल-हिदाया, किताबुल इमामत, अल-मकतबा अल-अरबिया, कराची, 101/1 द्वारा प्रकाशित।
2. अल-इख्तियार ली-तालील अल-मुख्तार, बाबू अल-जमाअह, दार फ़िरास फॉर पब्लिशिंग एंड डिस्ट्रीब्यूशन, 58/1 द्वारा प्रकाशित।
3. रद्द अल-मुह्तार, बाबू अल-जमाअह, मुस्तफा अल-बाबी, मिस्र, 414/1 द्वारा प्रकाशित।
4. दुर्र अल-मुख्तार, बाबू अल-जमाअह, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 731/1 द्वारा प्रकाशित।

पृष्ठ 540/736

[عربی متن]: لانه لیس له اب یشفقه فیغلبه علیه الجهل ولان فی تقدیم هؤلاء تنفیرالجماعة فیکره (ملخصاً) [اردو ترجمہ]: طور پر یہ لوگ جاہل ہوتے ہیں، ولدزنا کی امامت اس لئے مکروہ ہے کہ اس کا والد شفیق نہیں جو تعلیم کا انتظام کرے ، ایسے افراد اکثر طور پر جاہل رہتے ہیں اور ان کی تقدیم سے لوگوں کو جماعت میں شمولیت سے نفرت پیدا ہو گی لہٰذا انکو امام بنانا مکروہ ہے (ت)

اختیار شرح مختار میں ہے : [عربی متن]: ان کان الاعرابي افضل من الحضری ، و العبد من الحر، وولد الزنا من ولد الرشدة والاعمی من البصیر فالحکم بالضد۔ [اردو ترجمہ]: اگر عرابی شہری سے غلام آزاد سے ، ولد زنا ولد نکاح سے اور نابینا بینا افضل ہو تو حکم اس کے برعکس ہو گا۔ (ت)

ردالمحتار میں ہے : [عربی متن]: نحوه فی الشرح الملتقی للبهنسی وشرح درر البحار ولعل وجه ان تنفیر الجماعة بتقدیمه یزول اذا کان افضل من غیره بل التنفیر یکون فی تقدیم غیره۔ [اردو ترجمہ]: شرح الملتقی للبہنسی اور شرح درر البحار میں ہے بھی اسی طرح ہے ، ممکن ہے اس کی وجہ یہ ہو کہ جب وہ دوسرے سے افضل ہے تو اس کے امام بننے کی صورت میں جماعت سے لوگوں کی نفرت کا ازالہ ہو جائے گا بلکہ اس صورت میں دوسرے کو مقدم کرنا نفرت کا سبب بنے گا۔ (ت)

در مختار میں ہے : [عربی متن]: الا ان یکون غیر الفاسق اعلم فهو اولی۔ [اردو ترجمہ]: مگر یہ فاسق کے علاوہ قوم سے زیادہ عالم ہو تو وہی امامت کے زیادہ لائق ہے (ت)

اسی میں ہے : [عربی متن]: لوام قوما وهم له کارهون ان الکراهة لفساد فیه اولانهم احق بالامة منه [اردو ترجمہ]: اگر کسی نے امامت کرائی حالانکہ لوگ اسے ناپسند کرتے تھے اگر کراہت خود اس میں کسی خرابی کی بنا پر ہو یا

1 الہدایہ کتاب الامامۃ مطبوعہ المکتبہ العربیہ کراچی ۱۰۱/۱ 2 الاختیار لتعلیل المختار باب الجماعۃ مطبوعہ دار فراس للنشر والتوزیع ۵۸/۱ 3 رد المحتار ، باب الجماعۃ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۴۱۴/۱ 4 در مختار باب الجماعۃ مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۷۳۱/۱

Volume 6 Fatawa Razawiyyah

...disliked it (makruh tahrimi), even if he were more deserving, because other people were more deserving of the Imamate than him. In both cases, there will be tahrimi dislike for him. If he himself were more deserving, then there will be no dislike for him, but there will be dislike for the people. (t) 1. And Allah Almighty knows best.

Problem 667: 1331 Hijri What do the scholars of religion and the muftis of the firm Shariah say regarding this matter: A person is the Imam of a mosque and he denies Fatiha (prayers for the deceased) and the Knowledge of the Unseen (Ilm-ul-Ghaib) etc. Rather, he says the tasbih in prostration (sajdah) and bowing (ruku) so loudly that the people in the first row can hear it well and those behind also hear it. In such a situation, where no other Imam is available, how should the congregational prayer be performed so that the reward of the congregation is obtained and no deficiency occurs in the prayer?

The Answer: If he denies the vast and abundant knowledge of the unseen granted by Allah concerning many things, attributes, rulings, the life in the grave (Barzakh), the Hereafter (Ma'ad), the signs of the Last Hour, and the past and future, then he is an explicit deviant, irreligious, and a denier of the Great Quran and Mutawatir Hadiths. Knowledge of thousands of unseen matters among these being granted to the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) is among the essentials of religion (Dharuriyat-e-Deen). A denier of the essentials of religion is certainly a disbeliever (Kafir). Similarly, if he deceptively accepts some while holding the beliefs of the Wahhabis, then he is a deviant and irreligious. One who adheres to specific Deobandi beliefs is a disbeliever and an apostate. Likewise, one who does not state these beliefs are his own but, having knowledge of their blasphemous beliefs, considers them good or considers them Muslims, is himself a disbeliever. It is stated in Durr-ul-Mukhtar, Majma' al-Anhur, Bazzaziyah, etc.: 'Whoever doubts his disbelief, then he has become a disbeliever itself.' (Whoever doubted his disbelief, he himself became a disbeliever. - t). Yes, if he is free from all impurities and believes in the vast and abundant knowledge of the unseen as mentioned, and acknowledges it with reverence, only debating the encompassing of 'all that was and all that will be' (Jami' Ma Kana wa Ma Yakun) while maintaining respect and sanctity, then he is not a deviant but merely in error. However, nowadays, the denial of Fatiha is specifically the hallmark of the Wahhabis, and the Wahhabis are from the 'Ahl-e-Hawa' (people of deviant desires/innovators). Prayer behind the Ahl-e-Hawa is not permissible. It is

stated in Fath-ul-Qadir: 'Prayer behind the people of deviant desires is not permissible.'3 - Prayer behind the Ahl-e-Hawa is not permissible. (t)

1 Durr-ul-Mukhtar, Chapter of Imamate, printed by Mujtabai Press Delhi, 1/37 2 Durr-ul-Mukhtar, Chapter of the Apostate, printed by Mujtabai Press Delhi, 1/356 3 Fath-ul-Qadir, Chapter of Imamate, printed by Maktaba Nooria Rizvia Sukkur, 1/302

जिल्द छठा (Volume 6) फ़तावा रज़विया

...उसे मकरूह-ए-तहरीमी (कठोर नापसंदगी) माना गया है, भले ही वह अधिक हकदार हो, क्योंकि दूसरे लोग उससे अधिक इमामत के हकदार थे। दोनों स्थितियों में उस पर कराहत-ए-तहरीमी होगी। यदि वह स्वयं अधिक हकदार होता, तो उस पर कोई कराहत नहीं होती, लेकिन लोगों पर कराहत होती। (त) १. और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला ६६७: १३३१ हिजरी क्या फरमाते हैं उलेमा-ए-दीन और मुफ़्तियान-ए-शरअ-ए-मतीन इस मसले में कि एक व्यक्ति मस्जिद का इमाम है और वह फातिहा और इल्म-ए-ग़ैब (परोक्ष ज्ञान) आदि का मुनकिर (इनकारी) है। बल्कि सजदे और रुकू में तस्बीह इतनी ज़ोर से कहता है कि अगली सफ़ वाले अच्छी तरह सुन लेते हैं और पीछे वाले भी सुन लेते हैं। ऐसी स्थिति में जहाँ कोई दूसरा इमाम उपलब्ध न हो, तो किस प्रकार जमाअत के साथ नमाज़ पढ़ी जाए कि जमाअत का सवाब मिले और नमाज़ में भी कोई कमी न रहे?

अल-जवाब: यदि वह अल्लाह द्वारा प्रदान किए गए प्रचुर और व्यापक इल्म-ए-ग़ैब, वस्तुओं, गुणों, आदेशों, बरज़ख़ (कब्र का जीवन), परलोक (मआद), प्रलय के संकेतों, और अतीत और भविष्य का मुनकिर है, तो वह स्पष्ट रूप से पथभ्रष्ट, अधर्मी और महान कुरान और मुतवातिर हदीसों का मुनकिर है। इनमें से हजारों ग़ैब की बातों का ज्ञान हुज़ूर अकदस (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) को मिलना दीन की अनिवार्यताओं (ज़रूरियात-ए-दीन) में से है। दीन की अनिवार्यताओं का मुनकिर निश्चित रूप से काफ़िर है। इसी तरह, यदि वह छलपूर्वक कुछ को स्वीकार करता है और वहाबियों का विश्वास रखता है, तो वह पथभ्रष्ट और अधर्मी है। जो विशेष देवबंदी अक़ीदों पर हो, वह काफ़िर और मुर्तद (धर्मत्यागी) है। इसी तरह, जो इन अक़ीदों को अपना नहीं बताता, लेकिन उनके कुफ़्रिया अक़ीदों से अवगत होकर उन्हें अच्छा समझता है या उन्हें मुसलमान ही समझता है, वह स्वयं भी काफ़िर है। दुर्रे मुख्तार, मजमा अल-अन्हुर और बज़ाज़िया आदि में है: 'मन शक्का फ़ी कुफ़्रिही फ़क़द कफ़र' २ (जिसने उसके कुफ़्र में शक किया वह स्वयं काफ़िर हो गया। - त)। हाँ, यदि वह तमाम बुराइयों से पाक हो और बताए गए अनुसार व्यापक इल्म-ए-ग़ैब पर ईमान रखे और सम्मान के साथ उसे स्वीकार करे, केवल 'जमीअ मा काना व मा यकून' (जो कुछ हुआ और जो कुछ होगा) के घेरे के बारे में बात करे और उनमें अदब और हुरमत का ध्यान रखे, तो वह पथभ्रष्ट नहीं है बल्कि केवल गलती पर है। लेकिन आजकल यहाँ फ़ातिहा का इनकार विशेष रूप से वहाबियों का ही प्रतीक है, और वहाबी अहले-हवा (इच्छाओं के अनुयायी/नवाचारी) में से हैं, और अहले-हवा के पीछे नमाज़ जायज़ नहीं है।

फतह अल-कदीर में है: 'ला तजूज़ुस सलातु ख़ल्फ अह्लिल अहवा' ३ - अहले-हवा के पीछे नमाज़ जायज़ नहीं। (त)

१ दुर्रे मुख्तार, बाबू इमामत, मुतबूआ मतबअ मुज्तबाई दिल्ली १/३७ २ दुर्रे मुख्तार, बाबू मुर्तद, मुतबूआ मतबअ मुज्तबाई दिल्ली १/३५६ ३ फतह अल-कदीर, बाबू इमामत, मुतबूआ मकतबा नूरया रज़विया सुक्कुर १/३०२

पृष्ठ ७३६ में से ५४१

کرہ ذلك تحریماً وان ھو احق لا والکراھة علیھم اس بنا پر کہ دوسرے لوگ اس سے امامت کے زیادہ حقدار تھے دونوں صورتوں میں اس پر کراہت تحریمی ہو گی اگر وہ خود امامت کا زیادہ حقدار تھا تو اس پر کوئی کراہت نہ ہو گی اور لوگوں پر کراہت ہوگی۔(ت) ۱۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۶۶۷ : ۱۳۳۱ ہجری کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین اس مسئلہ میں کہ ایک شخص امام مسجد ہے اور وہ فاتحہ و علم غیب وغیرہ سے منکر ہے بلکہ سجدہ میں اور رکوع میں تسبیح اس قدر زور سے کہتا ہے کہ اگلی صف والے بخوبی سن لیتے ہیں اور پیچھے والے بھی سن لیتے ہیں اور ایسے مقام پر کوئی دوسرا امام میسر نہیں آتا تو اس حالت میں کس طرح باجماعت نماز پڑھی جائے کہ ثواب جماعت کا ہو اور نماز میں بھی کوئی نقص نہ ہونے پائے۔

الجواب: اگر علم غیب عطائے الٰہی کثیر و وافر اشیاء و صفات و احکام و برزخ و معاد و اشراطِ ساعت و گزشتہ و آئندہ کا منکر ہے تو صریح گمراہ بددین و منکرِ قرآن عظیم و احادیث متواترہ ہے اور ان میں ہزاروں غیب وہ ہیں جن کا علم حضور اقدس صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کو ملنا ضروریات دین سے ہے اور ضروریات دین کا منکر یقینا کافر ، یوں ہی تلبیسی طور پر بعض کا اقرار کرتا اور وہابیہ کا اعتقاد رکھتا ہے تو گمراہ بددین ہے اور جو خاص دیو بندی عقائد پر ہو وہ کافر و مرتد ہے ، یوں ہی جو ان عقائد پر اپنا ہونا نہ بتائے مگر ان لوگوں کے عقائد کفریہ پر مطلع ہو کر ان کو اچھا جانے یا مسلمان ہی سمجھے جب بھی خود کافر ہے ، درمختار و مجمع الانہر و بزازیہ و غیر ہما میں ہے : من شک فی کفرہ فقد کفر ۲ (جس نے اس کے کفر میں شک کیا وہ خود کافر ہو گیا۔ت) ہاں اگر تمام خباثتوں سے پاک ہو اور علم غیب کثیر و وافر بقدر مذکور پر ایمان رکھے اور عظمت کے ساتھ اس کا اقرار کرے صرف احاطہ جمیع ماکان و ما یکون میں کلام کرے

اور ان میں ادب و حرمت ملحوظ رکھے تو گمراہ نہیں صرف خطا پر ہے مگر آج کل یہاں فاتحہ کا انکار خاص وہابیہ ہی کا شعار ہے اور وہابیہ اہل ہوا سے ہیں اور اہل ہوا کے پیچھے نماز ناجائز ہے ، فتح القدیر میں ہے : لا تجوز الصلاۃ خلف اھل الاھواع ۳ - اہل ہوا کے پیچھے نماز جائز نہیں۔ (ت)

۱ درمختار باب الامامۃ مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۳۷ ۲ درمختار باب المرتد مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۳۵۶ ۳ فتح القدیر باب الامامۃ مطبوعہ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۱/ ۳۰۲

Fatawa Razawiyya Volume Six So if an Imam is available, it is better; otherwise, pray alone. Yes, if there were no Wahhabism there, then merely for the fact that he says the glorifications (Tasbihat) of bowing (Ruku) and prostration (Sajda) loudly and insists on it, praying behind him would be disliked (Makruh) such that if another Imam were not found, the command would be to pray behind him. However, in the presence of Wahhabism, following him in prayer is not permissible at all. And Allah the Almighty knows best.

Issue 668: From Najibabad, Bijnor District, near the Tehsil. Sent by Muhammad Zafarullah Sahab Hanafi, 16 Dhul-Hijjah 1331 AH. (1) A person who is the Imam of this mosque, about whom it is said that he takes Sadqa-e-Fitr, even though he himself is a person eligible to pay Zakat (Sahib-e-Nisab). If he is not given anything from the charities or if there is a delay in giving, he gets angry. Is it permissible to leave the congregational prayer in such a place or not? (2) A person who is chronically ill, whose ablution (Wudu) is often in doubt, and who does not recite the Holy Quran with correct pronunciation but recites it incorrectly, despite the presence of Qaris and Hafiz there. Should one avoid joining the congregation led by such a person or not? (3) People who show undue favoritism and partiality, are jealous of Quranic teachers, are included in that congregation, and backbite the common people—is it permissible to skip the congregation in such a situation or not? (4) If a person, fearing mischief, prays in a room that is located some distance from the mosque off a public road, is it permissible or not? If he forms a separate congregation in the room, it causes unnecessary trouble. What should be done now? In what way and in what place should the prayer be performed now? (5) The Imam who is invited for leading prayers in this mosque, his followers always remember him with foul language, and then the followers are angry with him. Is their prayer valid behind him or not, and is it permissible for him to lead the prayers there or not? (6) Is it permissible to gather inside the mosque and talk about worldly matters or not, and are those who do so at fault or not? (7) For the leading of prayers in a mosque, is an ignorant or doubtful Imam sufficient, so that the prayer is completed with all its obligatory (Faraid), necessary (Wajibat), and Sunnah components? That's all.

The Answer: (1) It is prohibited (Haram) for a wealthy person (Ghani) to take Sadqa-e-Fitr. If the Imam is wealthy and takes Sadqa-e-Fitr, to the extent that he gets angry if there is a delay in receiving it, then he is an open sinner (Fasiq-e-Maulin). Praying behind him is strongly disliked (Makruh-e-Tahrimi). If they cannot remove him, then this excuse for leaving the congregation is valid. And Allah the Almighty knows best.

फ़तावा रज़विया खंड छह तो अगर इमाम उपलब्ध हो तो बेहतर है, वरना अकेले नमाज़ पढ़ी जाए। हाँ, अगर वहाँ वहाबियत न होती तो केवल इतनी बात पर कि वह रुकू और सुजूद की तस्बीहात ऊँची आवाज़ में कहता है और उस पर अड़ा रहता है, उसके पीछे नमाज़ पढ़ना मकरूह (नापसंद) होता कि अगर कोई और इमाम न मिलता तो उसी के पीछे पढ़ने का हुक्म दिया जाता। लेकिन वहाबियत की स्थिति में उसके पीछे इक़्तिदा (अनुसरण) करना कदापि जायज़ नहीं होगा। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला ६६८: नजीबाबाद, ज़िला बिजनौर, तहसील के पास से। प्रेषक: मुहम्मद ज़फ़रुल्लाह साहब हनफ़ी, १६ ज़ुल-हिज्जा १३३१ हिजरी। (१) एक व्यक्ति जो इस मस्जिद का इमाम है, जिसके बारे में यह बात है कि वह सदक़ा-ए-फ़ित्र लेता है जबकि वह स्वयं साहिब-ए-निसब (ज़कात देने योग्य) है। यदि उसे दान में से कुछ न दिया जाए या देने में देरी हो जाए तो वह नाराज़ हो जाता है। क्या ऐसी जगह से जमात (नमाज़) छोड़ना जायज़ है या नहीं? (२) एक व्यक्ति जो स्थायी रूप से बीमार है, और जिसके वज़ू के बारे में भी काफ़ी संदेह रहता है, और वह कुरान शरीफ़ को सही उच्चारण के साथ नहीं पढ़ता बल्कि ग़लत पढ़ता है, बावजूद इसके कि वहाँ क़ारी और हाफ़िज़ मौजूद हों। क्या ऐसे व्यक्ति की जमात में शामिल होने से बचना चाहिए या नहीं? (३) जो लोग अनुचित पक्षपात करते हैं और कुरानी शिक्षकों से ईर्ष्या करते हैं, और वे उस जमात में शामिल हों और आम लोगों की ग़ीबत (पीठ पीछे बुराई) करते हों, तो ऐसे अवसर पर जमात छोड़ना जायज़ है या नहीं? (४) वह व्यक्ति जो फ़साद (झगड़े) के डर से उस हुजरे (कमरे) में नमाज़ पढ़ ले जो सार्वजनिक सड़क से कुछ दूरी पर मस्जिद से हटकर स्थित है, तो क्या यह जायज़ है या नहीं? यदि वह हुजरे में अलग जमात करता है तो नाहक़ फ़साद पैदा होता है। अब क्या करना चाहिए? अब नमाज़ किस तरह और किस जगह अदा करे? (५) वह इमाम जिसे इस मस्जिद में इमामत के लिए बुलाया जाता हो, उसके मुक्तदी (अनुयायी) उसे हमेशा अपशब्दों से याद करते हों, और फिर मुक्तदी उससे नाराज़ हों, तो क्या उनके पीछे उनकी नमाज़ होती है या नहीं और क्या उसका वहाँ इमामत करना उचित है या नहीं? (६) मस्जिद के अंदर इकट्ठा होकर दुनियावी बातें करना जायज़ है या नहीं और जो ऐसा करते हैं वे दोषी हैं या नहीं? (७) मस्जिद की इमामत के लिए क्या अनपढ़ या संदेहास्पद इमाम काफ़ी है, कि नमाज़ सभी फ़राइज़, वाजिबात और सुन्नत के साथ पूरी हो जाए? बस।

जवाब: (१) धनी (ग़नी) व्यक्ति के लिए सदक़ा-ए-फ़ित्र लेना हराम है। अगर इमाम धनी है और सदक़ा-ए-फ़ित्र लेता है, यहाँ तक कि मिलने में देरी होने पर नाराज़ होता है, तो वह फ़ासिक़-ए-मोलिन (खुला

गुनहगार) है। उसके पीछे नमाज़ मकरूह-ए-तहरीमी (कड़ाई से नापसंद) है। अगर वे उसे पद से नहीं हटा सकते, तो जमात छोड़ने का यह बहाना सही है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

पृष्ठ 542 का 736

فتاوی رضویہ جلد ششم تو اگر امام میسر ہو بہتر ہے ورنہ تنہا نماز پڑھی جائے۔ ہاں اگر وہاں وہابیت نہ ہوتی تو فقط اتنی بات پر کہ تسبیحات رکوع و سجود با آواز کہتا اور اس پر اصرار رکھتا ہو نماز اس کے پیچھے مکروہ ہوتی کہ اگر اور امام نہ ملتا تو اسی کے پیچھے پڑھنے کا حکم دیا جاتا مگر بحال وہابیت ہرگز اقتداء جائز نہ ہوگی۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۶۶۸: از نجیب آباد ضلع بجنور متصل تحصیل مرسلہ محمد ظفر اللہ صاحب حنفی ۱۶ ذی الحجہ ۱۳۳۱ھ (۱) ایک شخص اس مسجد کا جو امام ہے جس کی بابت یہ قصہ ہے کہ صدقہ فطر لیتا ہے حتی کہ وہ خود صاحب زکوۃ ہے اگر اس کو صدقات سے کچھ نہ دیا جائے یا دینے میں دیر ہو جائے تو ناراض ہو جاتا ہے ایسی جگہ سے نماز ترک کرنا جائز ہے یا نہیں؟ (۲) دائم المریض اور جس کے وضو کا بھی کافی طور سے احتمال ہو اور قرآن شریف کو صحت الفاظی کے ساتھ نہ پڑھتا ہو بلکہ غلط پڑھتا ہو باوجود اس کے کہ وہاں قاری اور حافظ موجود ہوں تو ایسے شخص کی شمولیت جماعت سے اجتناب چاہئے یا نہیں؟ (۳) جو اشخاص ناحق رعایت و پاسداری کرتے ہوں اور مدرس تدریس قرآنی سے حاسد ہوں اور وہ اس جماعت میں شامل ہوں اور عوام کی غیبت کرتے ہوں تو ایسے موقع پر ترک جماعت جائز ہے یا نہیں؟ (۴) وہ شخص اس بنائے فساد سے مخوف ہو کر اس حجرے میں جو شارع عام سے کچھ فاصلہ مسجد سے واقع ہے نماز پڑھ لے تو جائز ہے یا نہیں ۔ اگر حجرہ میں جماعت علیحدہ کرتا ہے تو ناحق مفسدہ پیدا ہوتا ہے اب کیا کرنا چاہئے؟ آیا نماز اب کس طریق پر اور کس جگہ پر ادا کرے؟ (۵) وہ امام جو اس مسجد میں امامت کے واسطے بلائے جاتے ہوں اس کے مقتدی ہمیشہ فحش کلامی سے یاد کرتے ہوں اور اس سے پھر مقتدی ناراض ہوں تو اس کے پیچھے ان کی نماز ہوتی ہے یا نہیں اور اس کو وہاں امامت کرنا روا ہے یا نہیں؟ (۶) اندر مسجد جمع ہو کر دنیا داری کی باتیں کرنا جائز ہے یا نہیں اور جو کرتے

ہیں وہ خطا وار ہیں یا نہیں؟ (۷) مسجد کی امامت کے واسطے امام بے علم یا مشتبہ کافی ہے یا نہیں کہ نماز مع کل فرائض، واجبات، سنن کے پوری ہو جائے۔ فقط

الجواب: (۱) غنی کو صدقہ فطر لینا حرام ہے اگر امام غنی ہے اور صدقات فطر لیا کرتا ہے یہاں تک کہ ملنے میں دیر سے ناراض ہوتا ہے تو وہ فاسق معلن ہے اس کے پیچھے نماز مکروہ تحریمی ہے اگر اسے معزول نہ کر سکیں تو وہاں ترک جماعت کا یہ عذر صحیح ہے واللہ تعالیٰ اعلم

(2) If someone recites the Holy Quran so incorrectly that the prayer becomes void, for instance, not differentiating between Aleph and 'Ain, or Ta and Ta, or Sa, Sin and Sad, or Ha and Ha, or Zal, Za, Zha and Zad, then the prayer behind him is invalid. In this situation, not performing prayer behind him is not considered abandoning the congregation because that congregation is not a valid prayer at all. Similarly, if his ablution remains doubtful, even then there is no blame in not praying behind him. Allah the Exalted knows best.

(3) It is not permissible to abandon the congregation because of the sins of the followers. Their sins are their own, and abandoning the congregation would be his sin. Allah the Exalted knows best.

(4) If the imam of the mosque is an open transgressor (fasiq-e-mu'allin), or an innovator (bad-mazhab), or lacks ritual purity, or recites incorrectly, and one does not have the power to replace him or lead a separate congregation in a room without causing fitna (discord), then in such a case, one is allowed to pray alone. However, it is very difficult that fitna would arise even if one prays in a room with just one or two people. Allah the Exalted knows best.

(5) In this situation, the followers are sinners; there is no blame on the imam. He can lead the prayer and their prayer behind him is permissible. Allah the Exalted knows best.

(6) Sitting in the mosque for worldly talk is forbidden (haram), and gathering in it to talk about the world is harmful and erroneous. Allah the Exalted knows best.

(7) Several conditions are necessary for an imam: Firstly, he must not recite the Great Quran so incorrectly that the prayer becomes invalid, such as those people who do not differentiate between Aleph and 'Ain, or Ta and Ta, or Sa, Sin and Sad, or Ha and Ha, and Zal, Za, Zha and Zad. Secondly, he must maintain correct ablution, bath, and purity. Thirdly, he must be a Sunni of correct belief according to the doctrines of the scholars of the two holy sanctuaries (Haramain Shareefain), not an innovator like a Tafzili, etc., and certainly not a Wahhabi, especially a Deobandi, who are not Muslims at all, or someone who considers them good, for he is also like them. It is stated in Shifa Shareef, Bazzaziyah, Majma-ul-Anhar, Durr-ul-Mukhtar, etc.:

And whoever doubts his disbelief (kufr) and his punishment has indeed disbelieved.	He who doubts his disbelief and punishment will himself become a disbeliever. (t)

Fourthly, he should not be an open transgressor, and similarly, he should be free from other matters that contradict the requirements of leading the prayer. After these, being knowledgeable is not a condition for the validity or lawfulness of the prayer, but a condition of priority. If he is ignorant but fulfills the aforementioned conditions, the prayer behind him will be valid, though not preferable. Allah the Exalted knows best.

---

1. Durr-ul-Mukhtar, Chapter on Apostates, printed at Matba' Mujtabai, Delhi, 1/356.

(२) यदि कोई पवित्र कुरान का पाठ इस तरह गलत करता है जिससे नमाज़ अमान्य (फ़ासिद) हो जाती है, उदाहरण के लिए अलिफ़-ऐन, ता-ता, सा-सीन-साद, हा-हा, या ज़ाल-ज़ा-ज़ा-ज़ा में अंतर नहीं करता, तो उसके पीछे नमाज़ अमान्य है। ऐसी स्थिति में उसके पीछे नमाज़ न पढ़ना जमात छोड़ना नहीं माना जाएगा, क्योंकि वह जमात नमाज़ ही नहीं है। इसी प्रकार, यदि उसका वज़ू संदिग्ध रहता है, तब भी उसके पीछे न पढ़ने में कोई दोष नहीं है। अल्लाह (उच्चतम) बेहतर जानता है।

(३) मुक्तदियों (अनुयायियों) के पापों के कारण जमात छोड़ना जायज़ नहीं है। उनके पाप उनके अपने हैं, और जमात छोड़ना एक अलग पाप होगा। अल्लाह (उच्चतम) बेहतर जानता है।

(४) यदि मस्जिद का इमाम खुला अपराधी (फ़ासिक़-ए-मुअल्लीन), या कुमार्गगामी (बद-मज़हब), या अशुद्ध, या गलत पाठ करने वाला है और उसे हटाने या अलग कमरे में जमात करने की क्षमता नहीं है बल्कि फ़ितना (विवाद) पैदा होने का डर है, तो ऐसी स्थिति में अकेले नमाज़ पढ़ने की अनुमति होगी। लेकिन यह बात बहुत कठिन है कि कमरे में एक-दो व्यक्तियों के साथ जमात करने में भी फ़ितना हो। अल्लाह (उच्चतम) बेहतर जानता है।

(५) इस स्थिति में मुक्तदी गुनहगार हैं, इमाम पर कोई आरोप नहीं है, वह इमामत कर सकता है और उनके पीछे उनकी नमाज़ जायज़ है। अल्लाह (उच्चतम) बेहतर जानता है।

(६) मस्जिद में दुनियावी बातों के लिए बैठना हराम है और उसमें इकट्ठा होकर दुनिया की बातें करना हानिकारक और गलत है। अल्लाह (उच्चतम) बेहतर जानता है।

(७) इमाम में कुछ शर्तें ज़रूरी हैं: पहली यह कि वह अज़ीम कुरान को इतना गलत न पढ़ता हो जिससे नमाज़ फ़ासिद हो जाए, जैसे वे लोग जो अलिफ़-ऐन, ता-ता, सा-सीन-साद, हा-हा, और ज़ाल-ज़ा-ज़ा-ज़ा में अंतर नहीं करते। दूसरी बात यह कि उसका वज़ू, ग़ुस्ल और पाकी सही हो। तीसरी बात यह कि वह हरमैन शरीफ़ैन के विद्वानों के अकीदे के अनुसार सही अकीदे वाला सुन्नी हो, तफ़ज़ीली आदि जैसा कुमार्गगामी न हो और न ही वहाबी विशेष रूप से देवबंदी हो क्योंकि वे मुसलमान ही नहीं हैं, या उन्हें अच्छा समझने वाला क्योंकि वह भी उन्हीं की तरह है। शिफ़ा शरीफ़, बज़्ज़ाज़िया, मजमा-उल-अनहर और दुर्रे मुख़्तार आदि में है:

व मन शक्का फ़ी कुफ़रिही व अज़ाबिही फ़क़द कफ़रा।	जिसने उसके कुफ़्र और सज़ा में शक किया वह खुद काफ़िर हो जाएगा। (त)

चौथी बात यह कि वह खुला अपराधी न हो, और इसी तरह इमामत के विपरीत अन्य मामलों से पाक हो। इनके बाद, ज्ञानी होना नमाज़ की वैधता की शर्त नहीं है, बल्कि प्राथमिकता की शर्त है। यदि वह अज्ञानी है लेकिन उक्त शर्तें पूरी करता है, तो उसके पीछे नमाज़ हो जाएगी, हालाँकि यह बेहतर नहीं है। अल्लाह (उच्चतम) बेहतर जानता है।

---

1. दुर्रे मुख़्तार, बाबुल मुर्तद, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, १/३५६।

पृष्ठ ५४३ / ७३६

فتاوی رضویہ جلد ششم

(۲) اگر قرآن مجید ایسا غلط پڑھتا ہے جس سے نماز فاسد ہوتی ہے مثلاً ا، ع یا ت، ط، ث، س، ص یا ح، ہ یا ذ، ز، ظ، ض میں فرق نہیں کرتا تو اس کے پیچھے نماز باطل ہے اور اس صورت میں اس کے پیچھے نماز نہ پڑھنا ترکِ جماعت نہیں کہ وہ جماعت کیا نماز ہی نہیں، یونہی اگر اس کا وضو مشکوک رہتا ہے جب بھی اس کے پیچھے نہ پڑھنے میں مواخذہ نہیں واللہ تعالیٰ اعلم

(۳) مقتدیوں کے گناہ کے باعث ترکِ جماعت جائز نہیں ان کے گناہ ان کے گناہ ہیں اور ترکِ جماعت اس کا گناہ ہو گا، واللہ تعالیٰ اعلم۔

(۴) اگر امام مسجد فاسقِ معلن یا بد مذہب یا بے طہارت یا غلط خواں ہے اسے آگے پیچھے یا اس سے الگ حجرہ میں جماعت پر بھی قدرت نہیں بلکہ فتنہ اٹھتا ہے تو اس صورت میں تنہا پڑھنے کی اسے اجازت ہو گی مگر یہ بات بہت دشوار ہے کہ حجرہ میں دو ایک شخص کے ساتھ جماعت کرنے میں بھی فتنہ ہو واللہ تعالیٰ اعلم

(۵) اس صورت میں مقتدی گنہگار ہیں امام پر کچھ الزام نہیں وہ امامت کر سکتا ہے اور ان کی نماز اس کے پیچھے روا ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

(۶) مسجد میں دنیا کی بات کے لئے بیٹھنا حرام ہے اور اس میں جمع ہو کر دنیا کی بات کرنا ضرر و خطا ہے واللہ تعالیٰ اعلم

(۷) امام میں چند شرطیں ضروری ہیں اولاً قرآن عظیم ایسا غلط نہ پڑھتا ہو جس سے نماز فاسد ہو جیسے وہ لوگ کہ مثلاً ا، ع یا ت، ط یا ث، س، ص یا ح، ہ و ذ، ز، ظ، ض میں فرق نہیں کرتے، دوسرے وضو، غسل، طہارت صحیح رکھتا ہو، سوم سنی صحیح العقیدہ مطابق عقائد علمائے

حرمین شریفین ہو تفصیلی وغیرہ بد مذہب نہ ہو نہ کہ وہابی خصوصاً دیو بندی کہ سرے سے مسلمان ہی نہیں، یا ان کو اچھا جانے والا کہ وہ بھی انھیں کے مثل ہے شفا شریف و بزازیہ و مجمع الانہر و در مختار وغیرہما میں ہے:

ومن شك في كفره وعذابه فقد كفر[1]۔ جس نے اس کے کفر اور عذاب میں شک کیا وہ خود کافر ہو جائے گا۔ (ت)

چہارم فاسقِ معلن نہ ہو، اسی طرح اور امور منافیِ امامت سے پاک ہو، ان کے بعد ذی علم ہونا شرطِ صحت وحلت نہیں شرطِ اولیت ہے اگر جاہل ہے اور شرط مذکورہ رکھتا ہے اس کے پیچھے نماز ہو جائیگی۔ اگرچہ اولیٰ نہیں۔ واللہ تعالیٰ اعلم

---

[1] در مختار باب المرتد مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱/۳۵۶

Fatawa Razvia, Volume 6

Mas'alah 675: What is the Islamic legal ruling for a person who keeps their beard shorter than the amount prescribed by Sharia and consistently trims it, becoming an Imam for prayer?

The Answer: Such a person is an open sinner (fasiq-e-mu'lan). Appointing him as an Imam is a sin, and praying behind him is Makruh-e-Tahrimi (prohibitively disliked). It is mentioned in Ghunyah: "If people put forward a sinner [as an Imam], they will be committing a sin." The detailed evidences regarding the issue of the beard are in our treatise 'Lum'at al-Duha fi I'fa' al-Lihya'. And Allah Almighty knows best.

Mas'alah 676: From Sitapur, district Bareilly, sent by Mir Ali Sahib Rizvi, 16 Shawwal 1330 AH. Is it permissible to perform congregational prayer behind a person who has missed a single time's prayer (qaza)? The prayer was missed accidentally.

The Answer: There is no harm in praying behind someone whose prayer was missed without intent.

Mas'alah 677: If everyone has missed a prayer from different times and they all want to offer their respective missed prayers, would congregational prayer (imamat) be valid in such a situation? This is because in some places, due to agricultural work, most people's prayers are missed, and everyone is in the same condition. Should these people appoint an Imam, perform their prayers individually, or should one among them lead the prayer?

The Answer: Missing a prayer for farming or any other work is strictly forbidden (Haram) and a major sin (Gunah-e-Kabira). Those who do this are all sinners (fasiq). Immediate repentance (tawbah) is obligatory upon everyone. Do they not know that farming is also in the control of Him who made prayer the greatest obligation? If He destroys your farming due to neglecting prayer, what can you do? Prayer does not take hours; if you stop farming work for a short while for prayer, then the Owner of prayer and farming will grant great blessings in your fields. In places where everyone is in such a state, repentance is mandatory for all anyway. Once they have repented, whoever among them is eligible for leadership should lead the prayer, and they should not pray separately like the Rafidis. Yes, it is necessary that the missed prayers of the Imam and the followers be the same; for example, everyone's Zuhr of today or everyone's Asr of yesterday. In that case, congregation is possible. If the prayers are

different, for instance, the Imam's Zuhr and the follower's Asr, or the Imam's today's...

---

1. Ghunyat al-Mustamli Sharh Munyat al-Musalli, Section on Imamat, published by Suhail Academy Lahore, p. 513.

फ़तावा रज़विया, जिल्द छठा

मसअला ६७५: जो व्यक्ति अपनी दाढ़ी शरीयत की मात्रा से कम रखता है और हमेशा कतरवाता (ट्रिम कराता) रहता है, नमाज़ में उसका इमाम बनना शरअन क्या हुक्म रखता है?

अल-जवाब: वह फ़ासिक़-ए-मुअ्लन (खुलेआम गुनाह करने वाला) है और उसे इमाम बनाना गुनाह है, और उसके पीछे नमाज़ पढ़ना मकरूह-ए-तहरीमी है। ग़ुनिया में है: "अगर लोगों ने फ़ासिक़ को आगे बढ़ाया तो वे गुनहगार होंगे।" दाढ़ी के मसले के दलीलों का विवरण हमारे रिसाले 'लुमअ़त-उद-दुहा फ़ी इअ़फ़ा-इल-लिह्या' में है। और अल्लाह तआ़ला बेहतर जानता है।

मसअला ६७६: सीतापुर ज़िला बरेली, प्रेषक: मीर अली साहब रिज़वी, १६ शव्वाल १३३० हिजरी। जिस व्यक्ति की एक वक़्त की नमाज़ क़ज़ा हो गई हो, उसके पीछे नमाज़ (इमामत) दुरुस्त होगी या नहीं? संयोग से क़ज़ा हो गई हो।

अल-जवाब: बिना इरादे के जिसकी नमाज़ क़ज़ा हो जाए, उसके पीछे नमाज़ पढ़ने में कोई हर्ज नहीं।

मसअला ६७७: हर एक आदमी की नमाज़, किसी की किसी वक़्त की और किसी की किसी वक़्त की क़ज़ा हो और सब अपनी-अपनी क़ज़ा पढ़ लें, ऐसी हालत में इमामत होगी या नहीं? क्योंकि कुछ जगहों पर खेती-बाड़ी के काम की वजह से अधिकतर लोगों की नमाज़ क़ज़ा हो जाती है और सब ऐसी ही हालत में हैं। ये लोग इमाम मुक़र्रर करें या अपनी-अपनी नमाज़ अलग-अलग अदा करें या कोई उनमें इमाम होकर नमाज़ अदा करे?

अल-जवाब: खेती-बाड़ी या किसी भी काम के लिए नमाज़ क़ज़ा कर देना सख़्त हराम और गुनाह-ए-कबीरा है। जो ऐसा करते हैं वे सब फ़ासिक़ हैं, सब पर फ़ौरन तौबा फ़र्ज़ है। क्या नहीं जानते कि खेती भी उसी के इख़्तियार में है जिसने नमाज़ सब से बढ़ कर फ़र्ज़ की है? अगर नमाज़ खोने में तुम्हारी खेती बर्बाद कर दे तो तुम क्या कर सकते हो? नमाज़ घंटों में नहीं होती, थोड़ी देर के लिए नमाज़ के वास्ते खेती का काम रोक दो तो नमाज़ और खेती का मालिक तुम्हारी खेतियों में बहुत बरकत देगा। जहाँ सब इसी तरह के हों, वहाँ उन सब पर तौबा तो फ़र्ज़ है ही, जब तौबा कर लें तो उनमें से जो इमामत के क़ाबिल हो वह इमामत करे और राफ़िज़ियों की तरह अलग-अलग न पढ़ें। हाँ, यह ज़रूर है कि इमाम और मुक्तदी सब की क़ज़ा मुत्तहिद (एक समान) हो, मिसाल के तौर पर सब की आज की ज़ुहर या सब की कल की असर, तो जमाअ़त हो सकती है। और अगर नमाज़ मुख़्तलिफ़ (अलग) हो, मिसाल के तौर पर इमाम की ज़ुहर और मुक्तदी की असर या इमाम की आज की...

1. गुनियत अल-मुस्तमली शरह मुनियत अल-मुसल्ली, इमामत का अध्याय, सुहैल अकादमी लाहौर द्वारा मुद्रित, पृ. ५१३।

पृष्ठ ७३६ का ५४४

فتاوی رضویہ جلد ششم

مسئلہ ۶۷۵: جو شخص ڈاڑھی اپنی مقدارِ شرع سے کم رکھتا ہے اور ہمیشہ ترشواتا ہے، اس کا امام بننا نماز میں شرعاً کیا حکم رکھتا ہے؟

الجواب: وہ فاسقِ معلن ہے اور اسے امام بنانا گناہ، اور اسے کے پیچھے نماز پڑھنی مکروہِ تحریمی۔ غنیہ میں ہے : لو قدموا فاسقا یاثمون (اگر لوگوں نے فاسق کو مقدم کیا تو وہ لوگ گناہ گار ہونگے ۔ت) اور دلائلِ مسئلہ لحیہ کی تفصیل ہمارے رسالہ لمعۃ الضحیٰ فی اعفاء اللحی میں ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۶۷۶: از سیتا پور ضلع بریلی مرسولہ میر علی صاحب رضوی ۱۶ شوال ۱۳۳۰ھ ایک وقت کی نماز جس شخص کی قضاء ہو گئی ہو اس کے پیچھے نماز امامت درست ہو گی یا نہیں؟ اتفاق سے قضا ہو گئی ہو۔

الجواب: بلا قصد جس کی نماز قضا ہو جائے اس کے پیچھے نماز میں حرج نہیں۔

مسئلہ ۶۷۷: ہر ایک آدمی کی نماز کسی کی کسی وقت کی اور کسی کی کسی وقت کی قضا ہو اور سب اپنی اپنی قضا پڑھ لیں ایسی حالت میں امامت ہو گی یا نہیں؟ کیونکہ بعض بعض جگہ بوجہ کاشتکاری کے کام کے اکثر لوگوں کی نماز قضا ہو جاتی ہے اور سب ایسی ہی حالت میں ہیں یہ لوگ امام کریں یا اپنی اپنی نماز علیحدہ ادا کریں یا کوئی ان میں امام ہو کر نماز ادا کریں۔

الجواب: کاشتکاری خواہ کسی کام کے لئے نماز قضا کر دینا سخت حرام و گناہِ کبیرہ ہے جو ایسا کرتے ہیں سب فاسق ہیں، سب پر فوراً توبہ فرض ہے، کیا نہیں جانتے کہ کھیتی بھی اسی کے اختیار میں ہے جس نے نماز سب سے بڑھ کر فرض کی ہے اگر نماز کھونے میں تمہاری کھیتی

برباد کر دے تو تم کیا کر سکتے ہو، نماز گھنٹوں میں نہیں ہوتی تھوڑی دیر کے لئے نماز کے واسطے کھیتی کے کام کو روک دو تو نماز اور کھیتی کا مالک تمہاری کھیتیوں میں بہت برکت دے، جہاں سب اسی طرح کے ہوں وہاں ان سب پر توبہ تو فرض ہے ہی، جب توبہ کرلیں ان میں سے جو قابلِ امامت ہے امامت کرے اور رافضیوں کی طرح الگ الگ نہ پڑھیں، ہاں یہ ضرور ہے کہ امام اور مقتدی سب کی قضا متحد ہو مثلاً سب کی آج کی ظہر یا سب کی کل کی عصر، تو جماعت ہو سکتی ہے اور اگر نماز مختلف ہو مثلاً امام کی ظہر اور مقتدی کی عصر یا امام کی آج کی

---

1 غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل فی الامامۃ مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۵۱۳

Fatawa Razawiyya, Volume 6 Dhuhr prayer cannot be offered in congregation [under certain conditions mentioned before]; they should pray individually. And Allah Almighty knows best.

Problem 678: If the Imam's prayer for one time happened to be missed (qada) by chance, can he lead the prayer or should someone else stand? Explain, and may you be rewarded.

The Answer: The same person should lead the prayer provided he did not intentionally miss it. If he intentionally missed it, even if by chance, he has become a 'fasiq' (transgressor). If he does not repent, then someone else should lead the prayer. And Allah Almighty knows best.

Problem 679: What do the scholars of religion and muftis of the firm Shariah say regarding this matter: Zaid's age is eighteen years and he is a Hafiz, but he has no beard. Is prayer behind him valid or not?

The Answer: If he is handsome and good-looking such that he becomes an object of desire for transgressors, then leading the prayer by him is 'khilaf-e-awla' (contrary to the better option), otherwise it is not. It is stated in Durr al-Mukhtar: "Prayer behind an 'amrad' (a beardless youth) is 'makruh' (disliked)." In Radd al-Muhtar it is stated: "Sheikh Rahmati said that by 'amrad' is meant a boy with a beautiful face because he is a place of 'fitna' (temptation)." And Allah Almighty knows best.

Problem 680: From town Dham Pur, district Bijnor, Mohalla Band-o-Qachiyan, sent by Muhammad Saeed Sahab, 16 Dhu al-Hijjah 1331 AH. What do the scholars of religion say in this regard: the permanent Imam of a Jami Masjid who leads the prayer, a large congregation prays behind him, and all the townspeople and villagers are happy with him. However, ten or five people, due to personal enmity, do not pray behind this Imam. While the congregation is ongoing, they stand in the mosque's courtyard or near the wall, waiting for the congregation to finish so they can offer their own second congregation. If they arrive earlier, they stand on the Imam's prayer mat, lead the prayer, and leave. Is this act permissible or not? That is all.

The Answer: If the Imam is a Sunni with correct beliefs according to the creeds of the scholars of the Haramayn Sharifayn, and opposes the beliefs of Non-Muqallids, Wahhabis, Deobandis, etc., whom we consider misguided, and he recites the Holy Quran correctly for the validity of prayer, and is not an open transgressor ('fasiq-e-mu'lin'). In short, if any...

1. Durr al-Mukhtar, Chapter on Imamat, printed by Mujtabai Press, Delhi, 1/37.
2. Radd al-Muhtar, Chapter on Imamat, printed by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/415.

फ़तावा रज़विया, छठा खंड ज़ुहर की नमाज़ तो जमाअत से नहीं हो सकती [कुछ स्थितियों में], वे अपनी-अपनी अलग पढ़ें। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला ६७८: यदि संयोग से इमाम की एक वक्त की नमाज़ क़ज़ा हो गई हो, तो क्या वह नमाज़ पढ़ा सकता है या कोई दूसरा व्यक्ति खड़ा हो? स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिलेगा।

उत्तर: वही इमामत करे यदि उसने जानबूझकर क़ज़ा न की हो। और यदि जानबूझकर क़ज़ा की हो, चाहे संयोग से ही सही, तो वह फ़ासिक़ (पापी) हो गया। यदि वह तौबा न करे, तो कोई दूसरा व्यक्ति इमामत करे। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला ६७९: धर्म के विद्वान और सुदृढ़ शरीयत के मुफ़्ती इस मामले में क्या कहते हैं: ज़ैद की उम्र अठारह वर्ष है और वह हाफ़िज़ है लेकिन उसकी दाढ़ी नहीं है, क्या उसके पीछे नमाज़ पढ़ना सही है या नहीं?

उत्तर: यदि वह बहुत सुंदर और रूपवान हो कि पापियों के लिए कामवासना का केंद्र बने, तो उसकी इमामत 'ख़िलाफ़-ए-औला' (बेहतर के विरुद्ध) है, अन्यथा नहीं। 'दुर्र-ए-मुख़्तार' में है: "अमरद (बिना दाढ़ी वाले युवक) के पीछे नमाज़ मकरूह (नापसंद) है।" 'रद्द अल-मुह्तार' में है: "शेख रहमती ने कहा कि 'अमरद' से तात्पर्य सुंदर चेहरे वाले लड़के से है क्योंकि वह फ़ित्ना (प्रलोभन) का स्थान है।" और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला ६८०: कस्बा धामपुर, जिला बिजनौर, मोहल्ला बंद-ओ-क़चियाँ, प्रेषक मुहम्मद सईद साहब, १६ ज़ुल-हिज्जा १३३१ हिजरी। धर्म के विद्वान इस बारे में क्या कहते हैं: एक जामा मस्जिद के स्थायी इमाम जो नमाज़ पढ़ाते हैं, उनके पीछे एक बड़ी जमाअत नमाज़ पढ़ती है और पूरे कस्बे और गांवों के लोग उनसे प्रसन्न हैं। लेकिन दस या पाँच लोग निजी शत्रुता के कारण इस इमाम के पीछे नमाज़ नहीं पढ़ते। जब जमाअत चल रही होती है, तो वे मस्जिद के आँगन में या दीवार के पास खड़े रहते हैं, इस इंतज़ार में कि जमाअत खत्म हो जाए तो हम अपनी दूसरी जमाअत करके नमाज़ पढ़ें। और यदि वे पहले आ जाएँ तो इमाम के मुसल्ले (नमाज़ पढ़ने की चटाई) पर खड़े होकर नमाज़ पढ़ाकर चले जाते हैं। क्या यह कार्य नाजायज़ है या नहीं? बस।

उत्तर: यदि इमाम सही अक़ीदा (आस्था) रखने वाला सुन्नी है, जो हरमैन शरीफ़ैन के विद्वानों की मान्यताओं के अनुसार है, और ग़ैर-मुक़ल्लिद, वहाबी, देवबंदी आदि जैसे पथभ्रष्ट लोगों की मान्यताओं

का विरोधी है, और पवित्र क़ुरआन का सही पाठ करता है जो नमाज़ की वैधता के लिए आवश्यक है, और वह कोई प्रकट पापी ('फ़ासिक़-ए-मुअलिन') नहीं है। संक्षेप में, यदि कोई बात...

---

1. दुर्र-ए-मुख़्तार, इमामत का अध्याय, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली १/३७।
2. रद्द अल-मुह्तार, इमामत का अध्याय, मुस्तफ़ा अल-बाबी प्रेस, मिस्र १/४१५।

فتاویٰ رضویہ جلد ششم کی ظہر تو جماعت نہیں ہو سکتی اپنی اپنی الگ پڑھیں واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۶۷۸ : امام کی اتفاق سے ایک وقت کی نماز قضاء ہو گئی ہے تو وہ نماز پڑھا سکتا ہے یا دوسرا شخص کھڑا ہو ؟ بینوا توجروا الجواب: وہی امامت کرے جبکہ قصداً قضا نہ کی ہو۔ اور اگر قصداً قضا کی اگرچہ اتفاق سے تو فاسق ہو گیا۔ اگر توبہ نہ کرے تو دوسرا شخص امامت کرے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۶۷۹: کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین اس مسئلہ میں کہ زید کی عمر اٹھارہ سال کی ہے اور حافظ ہے داڑھی نہیں ہے آیا اس کے پیچھے نماز درست ہے یا نہیں ؟ الجواب: اگر حسین و جمیل خوب صورت ہو کہ فساق کے لئے محل شہوت ہو تو اس کی امامت خلاف اولی ہے ورنہ نہیں۔ درمختار میں ہے : تکرہ خلف امرد ۱ (امرد کے پیچھے نماز مکروہ ہے۔ت) ردالمختار میں ہے : قال الرحمتی المراد بہ الصبیح الوجہ لانہ محل الفتنۃ ۲۔ واللہ تعالیٰ اعلم شیخ رحمتی نے کہا امرد سے مراد خوبصورت چہرے والا لڑکا ہے کیونکہ وہ فتنے کا محل ہے۔ (ت)

مسئلہ ۶۸۰: از قصبہ دھام پور ضلع بجنور محلہ بند و قچیاں مرسلہ محمد سعید صاحب ۱۶ ذی الحجہ ۱۳۳۱ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس بارہ میں کہ ایک جامع مسجد کا امام جو ابدی نماز پڑھاتا ہے وہ جماعت کثیرہ اس کے پیچھے نماز پڑھے اور جملہ قصبہ والے اور دیہات والے خوش ہوں اور دس پانچ آدمی بسبب خصومت نفسی کے اس پیش امام کے پیچھے نہ پڑھیں اور جماعت ہوتی رہے اور وہ مسجد کے صحن میں یا دیوار کے پاس کھڑے رہیں اس انتظار میں کہ جماعت ہو جائے تو ہم دوسری جماعت اپنی کر کے نماز پڑھیں اور اگر وہ لوگ قبل آجائیں تو امام کے مصلے پر کھڑے ہو کر نماز پڑھ کر چلے جائیں یہ فعل ناجائز ہے یا نہیں۔ فقط الجواب: اگر امام سنی صحیح العقیدہ مطابق عقائد علمائے حرمین شریفین و مخالف عقائد غیر مقلدین و وہابیہ دیو

بندیہ وغیرہ ہم گمراہان ہے اور قرآن مجید صحیح قابل جواز نماز پڑھتا ہے اور فاسق معلن نہیں۔

غرض اگر کوئی بات

---

۱ درمختار باب الامامة مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۳۷ ۲ ردالمختار باب الامامة مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/ ۴۱۵

Fatawa Razawiyyah Volume 6

...in it [the imam's conduct] is not such that would invalidate his imamat or make it a sin. Then those who, out of personal animosity, do not pray behind him while the congregation continues, and do not join, are severe sinners; repentance is obligatory for them. By making a habit of this, they have become transgressors (fasiq). However, if the imam has any of these defects and because of that they avoid praying behind him, then it is correct and proper. And Allah knows best.

Problem 681: From Bisalpur, Pilibhit district, Mohalla Dargah Parshad, House of Fakhruddin Sahab, sent by Hafiz Shamsuddin Sahab, 23 Dhu al-Hijjah 1331 AH.

(1) A person who writes interest-based documents but does not take interest, and government employees like Thandar (police inspector) or Sub-Registrar, and also octroi (chungi) employees - if they are not punctual with five times daily prayers, can they lead the prayer (imamat) or not?

(2) At what distance, minimum or maximum, should the Imam stand from the congregation when the rows of followers are full?

Answer: (1) Writing interest-based documents is making an agreement for interest, and that too is forbidden (haram). It is in a Sahih Hadith:

Arabic Quote: "The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) cursed the one who consumes interest, the one who pays it, the one who writes it down, and the two who witness it, and he said: they are all equal."

Translation: The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) cursed the consumer of interest, its provider, its scribe, and its witnesses, and said they are all equal. (T)

When writing its bond is a cause for curse and is equal to consuming interest, then how much more foul and worse is making the agreement itself. Such a person should not be made an imam. Every job in which one has to give orders contrary to Sharia is haram. The situation of registration has just been mentioned, that it involves writing and verifying interest bonds. If a Thandar takes bribes, makes up false cases, gets false testimonies, or obtains money by threatening people, then it is obvious that all these acts are strictly haram; otherwise, it is certainly assisting in un-Islamic orders in challans. In such a state, he is Sharia-wise unfit for imamat. Yes, if an octroi employee

is employed to collect octroi and has the intention to make it easy for people and save them from those who overcharge, then...

---

1 Sahih Muslim, Chapter on Riba, published by Qadimi Kutub Khana, Karachi, 2/27.

फ़तावा रज़विया छठा खंड

...उसमें ऐसा नहीं है जिसके कारण उसकी इमामत अमान्य हो या पाप हो। फिर जो लोग अपनी नफ़्सानियत के कारण उसके पीछे नमाज़ नहीं पढ़ते और जमाअत होती रहती है और वे शामिल नहीं होते, वे घोर पापी हैं; उन पर तौबा फ़र्ज़ है। इसकी आदत डालने से वे फ़ासिक़ हो गए हैं। लेकिन अगर इमाम में इन दोषों में से कोई दोष हो और उस कारण ये लोग उसके पीछे नमाज़ पढ़ने से बचते हों, तो यह सही और उचित है। और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

मसाला 681: बीसलपुर, पीलीभीत ज़िला, मोहल्ला दरगाह परशाद, फ़ख़रुद्दीन साहब का मकान, प्रेषक हाफ़िज़ शम्सुद्दीन साहब, 23 ज़िलहिज्जा 1331 हिजरी।

(1) वह व्यक्ति जो ब्याज (सूद) के दस्तावेज़ लिखता हो लेकिन ब्याज लेता न हो, और सरकारी कर्मचारी जैसे थानेदार या सब-रजिस्ट्रार और चुंगी कर्मचारी - यदि वे पाँच वक़्त की नमाज़ के पाबंद न हों, तो क्या वे इमामत कर सकते हैं या नहीं?

(2) इमाम जमाअत से कितनी दूरी पर, कम से कम या ज़्यादा से ज़्यादा खड़ा हो, जब मुक्तदियों की सफ़ (पंक्ति) पूरी हो?

जवाब: (1) सूदी दस्तावेज़ लिखना सूद का समझौता करना है और वह भी हराम है, सही हदीस में है:

अरबी उद्धरण: "रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने सूद खाने वाले, सूद देने वाले, उसे लिखने वाले और उस पर गवाही देने वालों पर लानत भेजी और फ़रमाया कि वे सब बराबर हैं।"

अनुवाद: रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने सूद खाने वाले और सूद लेने वाले और उसका काग़ज़ लिखने वाले और उस पर गवाहियाँ करने वालों पर लानत फ़रमाई, और फ़रमाया कि वे सब बराबर हैं। (त)

जब इसका दस्तावेज़ लिखना लानत का कारण और सूद खाने के बराबर है, तो खुद उसका समझौता करना कितना घृणित और बुरा है। ऐसे व्यक्ति को इमाम नहीं बनाया जाना चाहिए। हर वह नौकरी जिसमें शरीयत के ख़िलाफ़ हुक्म देना पड़ता हो, हराम है। रजिस्ट्री का हाल अभी बताया गया कि उसमें सूदी दस्तावेज़ों को लिखना और उनकी तस्दीक़ (सत्यापन) करनी पड़ती है। अगर थानेदार रिश्वत लेता है, झूठे मुक़दमे बनाता है, झूठी गवाहियाँ दिलवाता है, लोगों को डरा-धमका कर माल हासिल करता है, तो ज़ाहिर है कि ये सब कार्य सख़्त हराम हैं; वरना चालान में शरीयत के ख़िलाफ़

आदेशों की सहायता ज़रूर होती है। ऐसी स्थिति में वह शरीअत के अनुसार इमामत के लायक नहीं है। हाँ, अगर चुंगी का कर्मचारी चुंगी वसूल करने के लिए नौकर है और उसका इरादा यह है कि लोगों के लिए आसानी करे और उन्हें उन लोगों से बचाए जो बोझ डालकर ज़्यादा पैसा वसूल करते हैं, तो...

---

1 सहीह मुस्लिम, बाब अल-रिबा, कदीमी कुतुब खाना कराची द्वारा प्रकाशित, 2/27.

فتاوی رضویہ جلد ششم

اس میں ایسی نہیں جس کے سبب اس کی امامت باطل یا گناہ ہو پھر جو لوگ براہ نفسانیت اس کے پیچھے نماز نہ پڑھیں اور جماعت ہوتی رہے اور شامل نہ ہوں وہ سخت گناہ گار ہیں ان پر توبہ فرض ہے اور اس کی عادت ڈالنے سے فاسق ہو گئے لیکن اگر امام میں ان عیوب میں سے کوئی عیب ہوا اور اس کے سبب یہ لوگ اس کے پیچھے نماز سے احتراز کرتے ہوں تو درست و بجا ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۶۸۱ : از بیسلپور ضلع پیلی بھیت محلہ درگاہ پر شاد مکان فخر الدین صاحب مرسلہ حافظ شمس الدین صاحب ۲۳ ذی الحجہ ۱۳۳۱ھ

(۱) جو شخص کہ سودی دستاویز لکھتا ہو لیکن لیتانہ ہو اور جو ملازمان گورنمنٹ مثلا تھانیدار یا سب رجسٹرار اور نیز ملازمان چونگی اگر پنچوقتہ نماز کے پابند نہیں وہ امامت کر سکتے ہیں یا نہیں؟

(۲) امام جماعت سے کس قدر فاصلہ سے کم سے کم یا زیادہ سے زیادہ کھڑا ہو اس صورت میں کہ مقتدیوں کی صف پوری ہو۔

فقط الجواب: (۱) سودی دستاویز لکھنا سود کا معاہدہ کرنا ہے اور وہ بھی حرام ہے، صحیح حدیث میں ہے:

لعن رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم اکل الربوا و موکلہ وکاتبہ وشاھدیہ وقال ھم سواء ۱

رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے لعنت فرمائی سود کھانے والے اور سود لینے والے اور اس کا کاغذ لکھنے والے اور اس پر گواہیاں کرنے والو پر، اور فرمایا وہ سب برابر ہیں۔(ت)

جب اس کا تمسک لکھنا موجب لعنت اور سود کھانے کے برابر ہے تو خود اس کا معاہدہ کرنا کس درجہ خبیث و بد تر ہے ایسے شخص کو امام نہ کیا جائے، ہر نوکری جس میں خلاف شریعت حکم دینا پڑتا ہو حرام ہے اور رجسٹرا ری کا حال ابھی گزر چکا کہ اس میں سودی تمسکوں کا لکھنا اور ان کو تصدیق کرنا پڑتی ہے۔ تھانیدار اگر رشوت لے یا جھوٹ مقدمے بنائے، جھوٹی گواہیاں دلوائے، لوگوں سے دبا دھمکا کر مال حاصل کرے جب تو ظاہر ہے کہ یہ سب افعال سخت حرام ہیں ورنہ چالان میں خلاف شریعت احکام کی اعانت ضرور ہوتی ہے تو ایسی حالت میں شرعاً امامت کے لائق نہیں۔ ہاں چونگی کا ملازم اگر چونگی تحصیل کرنے پر نوکر ہے اور اس میں یہ نیت رکھتا ہے کہ لوگوں پر آسانی کرے اور لوگ جو باؤ ڈال کر زیادہ روپیہ وصول کرتے ہیں اس سے بچائے تو اس

---

۱ صحیح مسلم باب الربا مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۲/ ۲۷

Fatawa Rizvia Volume 6

...there is no harm as in al-Durr al-Mukhtar (as it is in Durr-e-Mukhtar). If he is worthy of leadership (Imamat), then there is no issue in his leading the prayer.

(2) The Imam should stand far enough ahead of the row that the follower (muqtadi) behind him can easily perform prostration (sajdah) according to the Sunnah. Keeping less distance than this without necessity, causing difficulty for the followers in prostration, is prohibited. Similarly, leaving a large unnecessary gap is against the Sunnah Mu'akkadah. And Allah Almighty knows best.

Problem 682: From Sarkada, District Moradabad, asked by Abdul Aziz Sahib, 5 Muharram-ul-Haram 1332 AH.

(1) A father disowned (declared 'Aaq') his son and then later forgave his mistake. Is his mistake forgiven or not, and is prayer valid behind him?

(2) If a person misses four consecutive Friday (Jumu'ah) prayers due to illness, is it permissible to pray behind him on the fifth Friday?

The Answer:

(1) Yes, if he desisted from disobeying and upsetting his father and repented with a sincere heart, then his mistake is forgiven and prayer behind him is now permissible. But if he did not stop disobeying and hurting his father, then he is surely a severe 'fasiq' (sinner), and prayer behind him is 'makruh tahrimi' (forbidden-like dislike), which must be repeated. Appointing him as an Imam is a sin even if the father, out of his kindness, forgives the mistake a thousand times. This is because it is not just a mistake against the father, but also a grave and severe major sin (Kabirah) against Allah Almighty. How can it be forgiven just by the father's forgiveness? And Allah Almighty knows best.

(2) If the illness was such that he was unable to attend Jumu'ah, then there is no blame on him. But if he could have attended and did not due to laziness and lack of resolve, then he is a 'fasiq' (sinner). Appointing him as Imam is a sin. And Allah Almighty knows best.

Problem 683: From Bithu, District and Post Office Bithu, sent by Hakim Raza Husain Sahib.

What do the scholars of religion say regarding this matter: A person born out of wedlock (walad-ul-zina) had a valid marriage and had children. Is it correct to follow those children in prayer or not? Just that.

The Answer:

The son of a person born out of wedlock, who himself is born from a valid marriage, is not 'walad-ul-zina'. There is no dislike (karahat) in praying behind him. Yes, if the congregation members despise him and it leads to a decrease in the congregation, then he should not be made Imam, even though he himself is blameless. Just as, God forbid, the leadership of one with leprosy or vitiligo is disliked when it causes repulsion in the congregation, even though the disease...

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

...इसमें कोई हर्ज नहीं जैसा कि अल-दुर्र अल-मुख्तार (जैसा कि दुर्रे मुख्तार में है) में है। अगर वह इमामत (प्रार्थना का नेतृत्व) के योग्य है, तो उसकी इमामत में कोई बुराई नहीं है।

(२) इमाम पंक्ति से इतना आगे खड़ा हो कि उसके पीछे वाला मुक़्तदी (पीछे नमाज़ पढ़ने वाला) सुन्नत के अनुसार आसानी से सजदा (सिजदा) कर सके। बिना ज़रूरत इससे कम दूरी रखना जिसके कारण मुक़्तदियों को सजदे में तंगी हो, मना है। इसी तरह बहुत ज़्यादा फासला, व्यर्थ छोड़ना सुन्नत-ए-मुअक्कदा के खिलाफ है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला ६८२: सरकड़ा, ज़िला मुरादाबाद, सवालकर्ता अब्दुल अज़ीज़ साहिब, ५ मुहर्रम-उल-हराम १३३२ हिजरी।

(१) एक पिता ने अपने बेटे को बेदखल कर दिया और फिर उसकी गलती माफ भी कर दी, तो क्या उसकी गलती माफ हुई या नहीं और उसके पीछे नमाज़ हो जाएगी?

(२) अगर किसी व्यक्ति से बीमारी की हालत में लगातार चार जुमे छूट गए, तो पांचवें जुमे में उसके पीछे नमाज़ पढ़ना जायज़ है या नहीं?

अल-जवाब (उत्तर):

(१) हाँ, अगर वह पिता की नाफरमानी और पिता को नाराज़ करने से बाज़ आ गया और सच्चे दिल से तौबा (प्रायश्चित) की, तो गलती माफ हो गई और अब उसके पीछे नमाज़ जायज़ हो जाएगी। और अगर वह नाफरमानी और पिता को दुख पहुँचाने से बाज़ न आया तो वह निश्चित रूप से बहुत बड़ा फासिक़ (पापी) है और उसके पीछे नमाज़ 'मकरूह-ए-तहरीमी' (अत्यंत अप्रिय/निषेध के निकट) है, जिसे दोहराना वाजिब (अनिवार्य) है। उसे इमाम बनाना गुनाह है, चाहे पिता अपनी मेहरबानी से हज़ार बार गलती माफ कर दे, क्योंकि यह सिर्फ पिता की गलती नहीं है, बल्कि अल्लाह तआला का भी बड़ा गुनाह और सख्त गुनाह-ए-कबीरा (बड़ा पाप) है, तो केवल पिता के माफ करने से कैसे माफ हो सकता है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

(२) अगर बीमारी ऐसी थी कि वह जुमे में शामिल होने के काबिल नहीं था, तो उस पर कोई इल्ज़ाम नहीं। और अगर वह हाज़िर हो सकता था और आलस व बेहिम्मती से नहीं आया तो फासिक़ है, उसे इमाम बनाना गुनाह है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला ६८३: बीथू, ज़िला व डाकखाना बीथू, प्रेषक हकीम रज़ा हुसैन साहिब।

दीन के विद्वान इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि एक व्यक्ति जो वलद-उल-ज़िना (अवैध संतान) था, उसका निकाह सही हुआ और उससे औलाद हुई, तो उस औलाद के पीछे इक़्तेदा (अनुसरण) करना दुरुस्त है या नहीं? बस।

अल-जवाब (उत्तर):

वलद-उल-ज़िना का बेटा जो सही निकाह से पैदा हुआ, वह वलद-उल-ज़िना नहीं है। उसके पीछे नमाज़ पढ़ने में कोई कराहत (नापसंदगी) नहीं। हाँ, अगर जमाअत के लोग उससे नफ़रत करें और इस कारण जमाअत कम हो जाए, तो उसे इमाम न बनाया जाए, हालाँकि वह खुद बेक़ुसूर है। जैसे माज़-अल्लाह (अल्लाह की पनाह) सफेद दाग या कोढ़ वाले की इमामत मकरूह है जब वह जमाअत में नफ़रत का कारण हो, चाहे बीमारी...

पृष्ठ ५४७ / ७३६

میں حرج نہیں کما فی الدرالمختار (جیسا کہ در مختار میں ہے۔ ت) وہ اگر قابل امامت ہو تو اس کی امامت میں مضائقہ نہیں۔

(۲) امام صف سے اتنا آگے کھڑا ہو کہ جو مقتدی اس کے پیچھے ہے اس کا سجدہ بطور مسنون باسانی ہو جائے بلا ضرورت اس سے کم فاصلہ رکھنا جس کے سبب مقتدیوں کو سجدہ میں تنگی ہو منع ہے یوں ہی فاصلہ کثیر، عبث چھوڑنا خلاف سنت مؤکدہ ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۶۸۲ : سر کڑہ ضلع مراد آباد مسئولہ عبد العزیز صاحب ۵ محرم الحرام ۱۳۳۲ھ

(۱) باپ نے بیٹے کو عاق کردیا اور پھر اس کی خطا معاف بھی کردی تو اس کی خطا معاف ہوئی یا نہیں اور اس کے پیچھے نماز ہو جائے گی ؟

(۲) اگر کسی شخص سے چار جمعہ حالت مرض میں پے در پے ساقط ہوگئے تو پانچویں جمعہ میں نماز اس کے پیچھے جائز ہے یا نہیں ؟

الجواب :

ہاں اگر وہ باپ کی نافرمانی اور باپ کو ناراض کرنے سے باز آگیا اور سچے دل سے توبہ کی تو خطا معاف ہوگئی اور اب اس کے پیچھے نماز جائز ہوجائے گی۔ اور اگر وہ نافرمانی وایذائے پدر سے باز نہ آیا تو ضرور سخت اشد فاسق ہے اور اس کے پیچھے نماز مکروہ تحریمی، جس کا پھیرنا واجب ہے اور اسے امام بنانا گناہ اگرچہ باپ اپنی مہربانی سے ہزار بار خطا معاف کردے کہ یہ صرف باپ کی خطا نہیں اللہ اللہ عزوجل کا بھی گناہ اور سخت گناہ شدید کبیرہ ہے، تو فقط باپ کے معاف کئے کیونکر معاف ہوسکتا ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

(۲) اگر مرض ایسا تھا کہ قابل حاضری جمعہ نہ تھا تو اس پر کچھ الزام نہیں، اور اگر حاضر ہو سکتا تھا اور کاہلی اور بے ہمتی سے نہ آیا تو فاسق ہے اسے امام کرنا گناہ ہے واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۶۸۳ : از بپتھو ضلع و ڈاکخانہ بپتھو مرسلہ حکیم رضا حسین صاحب

کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ایک شخص ولد الزنا کا نکاح صحیح ہوا اور اس سے اولاد ہوئی تو اس اولاد کے پیچھے اقتدا درست ہے یا نہیں ۔ فقط

الجواب :

ولد الزنا کا بیٹا کہ نکاح صحیح سے پیدا ہوا ولد الزنا نہیں اس کے پیچھے نماز میں کچھ کراہت نہیں۔ ہاں اگر اہل جماعت اس سے نفرت کریں اور اس کے باعث جماعت کی تقلیل ہو تو اسے امام نہ کیا جائے اگر چہ وہ خود بے قصور ہے جیسے معاذ اللہ برص وجذام والے کی امامت مکروہ ہے جبکہ باعث تنفیر جماعت ہو اگر چہ مرض

Fatawa Razawiya, Volume 6 What is his fault in this? It is in Durr-ul-Mukhtar: "It is disliked to pray behind a person with spreading vitiligo (leucoderma)." [1] (Such a person with vitiligo whose vitiligo has spread, praying behind him is disliked. - Trans.) It is in Radd-ul-Muhtar: "The same is the ruling for one with leprosy, according to Birjandi. Apparently, the reason is the aversion [it causes]. Therefore, vitiligo was restricted with the condition of being widespread so that it becomes apparent." [2] And Allah knows best. (Trans.: Similarly is the ruling for a leper, according to Birjandi. And apparently, the reason is aversion only. That is why the condition of 'spreading' has been added with vitiligo so that it becomes clear.)

Problem 675: From town Nehtaur, district Bijnor, sent by Muhammad Abdul Hai, leather merchant, 29 Muharram 1332 Hijri. What do the scholars of religion and jurists of the firm Shariah say about this matter: Inayatullah Khan owns property, and to buy other property or to get a heir's property transferred to his name, he took a loan from a grocer by writing an interest-bearing bond. How is it to make such a person an Imam in the Hanafi school, especially an Imam for Friday and Eid prayers? Inayatullah Sahab is a possessor of Nisab (wealthy). Only.

The Answer: The mentioned person had no Sharia necessity to buy property. Giving and taking interest without a state of extreme necessity and compulsion are both equal; both the giver and the taker are cursed. In Sahih Muslim Sharif, it is narrated from the Commander of the Faithful, Mawla Ali (Karam Allahu Wajhahu al-Karim): "The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) cursed the one who consumes interest, the one who pays it, the one who writes its contract, and its witnesses, and said: They are all equal." [3] (Trans.: The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) cursed those who eat interest, those who feed interest, those who write its documents, and those who bear witness to it. And said they are all equal.) Such a person is not worthy of being made an Imam for Friday, Eid, five daily prayers, or any prayer. Making him an Imam is a sin, and praying behind him is Makruh Tahrimi (prohibitively disliked). And Allah knows best.

Problem 686: Asked by Alauddin Sahab, petition writer, Civil Court, Pratapgarh, 22 Safar 1332 AH. What do the scholars of religion and jurists of the firm Shariah say about standing (Qiyam) in the gathering of the birth of the Best of Mankind (Prophet) and after Taraweeh prayers...

---

1 Durr-ul-Mukhtar, Chapter on Imamate, printed at Mujtabai Delhi, 1/71. 2 Radd-ul-Muhtar, Chapter on Imamate, Mustafa al-Babi Egypt, 1/616. 3 Sahih Muslim, Chapter

on Interest (Riba), printed at Qadimi Kutub Khana Karachi, 2/71. F: In Sahih Muslim, Chapter on Interest, the Hadith is mentioned on the authority of Hazrat Jabir (Radi Allahu Anhu). Nazir Ahmed.

फ़तावा रज़विया, छठा खंड इसमें उसका क्या दोष है, दुर्र-ए-मुख्तार में है: "विस्तृत श्वेतकुष्ठ (कोढ़) वाले व्यक्ति के पीछे नमाज़ पढ़ना मकरूह (नापसंद) है।" [1] (ऐसा श्वेतकुष्ठ वाला व्यक्ति जिसका कुष्ठ फैल गया हो, उसके पीछे नमाज़ मकरूह है। - अनुवाद) रद्दुल मुख्तार में है: "इसी तरह कोढ़ी का हुक्म है, बिरजंदी के अनुसार। और स्पष्टतः इसका कारण घृणा ही है। इसीलिए श्वेतकुष्ठ के साथ फैलने की शर्त जोड़ी गई है ताकि यह स्पष्ट हो जाए।" [2] और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है। (अनुवाद: इसी तरह कोढ़ी का हुक्म है, बिरजंदी के अनुसार, और स्पष्टतः कारण घृणा ही है, इसी लिए कोढ़ के साथ फैल जाने की शर्त का इज़ाफ़ा है ताकि स्पष्ट हो जाए।)

मसला 675: कस्बा नेहटौर, जिला बिजनौर से प्रेषक मुहम्मद अब्दुल हई सौदागर जुफ़्त, 29 मुहर्रम 1332 हिजरी। धर्म के विद्वान और सुदृढ़ शरीयत के मुफ्ती इस मसले में क्या कहते हैं कि इनायत उल्लाह खान साहब के पास जायदाद है और दूसरी जायदाद खरीदने के लिए या किसी वारिस की जायदाद अपने नाम कराने के लिए उन्होंने एक बनिये से सूदी दस्तावेज़ (बॉन्ड) लिखकर कर्ज लिया। ऐसे व्यक्ति को हनफी मज़हब में इमाम बनाना कैसा है, विशेष रूप से जुमे और ईदैन का इमाम बनाना। इनायत उल्लाह साहब साहिबे-निसब (धनी) हैं। केवल।

उत्तर: उक्त व्यक्ति को जायदाद खरीदने की कोई शरीय ज़रूरत नहीं थी और बिना अत्यधिक मजबूरी और विवशता की स्थिति के ब्याज देना और लेना दोनों समान हैं; देने और लेने वाले दोनों शापित हैं। सहीह मुस्लिम शरीफ में अमीरुल मोमिनीन मौला अली (करम अल्लाह वजहुह अल-करीम) से वर्णित है: "अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वासल्लम) ने ब्याज खाने वाले, खिलाने वाले, उसका दस्तावेज़ लिखने वाले और उसके गवाहों पर लानत भेजी और फरमाया: वे सब बराबर हैं।" [3] (अनुवाद: अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वासल्लम) ने लानत फरमाई है सूद खाने वाले और सूद खिलाने वाले और उसका कागज़ लिखने वाले और उसकी गवाहियां करने वालों पर। और फरमाया वे सब बराबर हैं।) ऐसा व्यक्ति जुमा, ईद, पंजगाना (पांच वक्त की नमाज़), किसी भी नमाज़ में इमाम बनाने के योग्य नहीं है। उसे इमाम बनाना गुनाह है और उसके पीछे नमाज़ मकरूह-ए-तहरीमी (कड़ाई से नापसंद) है। और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है।

मसला 686: प्रेषक अलाउद्दीन साहब, अर्जी नवीस कचहरी दीवानी प्रतापगढ़, 22 सफ़र 1332 हिजरी। धर्म के विद्वान और सुदृढ़ शरीयत के मुफ्ती क्या कहते हैं कि ख़ैरुल अनाम (पैगंबर) की मिलाद की महफ़िल में कयाम करना और तरावीह की नमाज़ के बाद...

1 दुर्रे मुख्तार, बाबुल इमामह, मुजतबाई दिल्ली, 1/71 2 रद्दुल मुख्तार, बाबुल इमामह, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र, 1/616 3 सहीह मुस्लिम, बाबुर रिबा, कदीमी कुतुब खाना कराची, 2/71 सूचना: सहीह मुस्लिम, बाबुर रिबा में हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु के हवाले से हदीस वर्णित है। नज़ीर अहमद।

पेज 548 / 736

جلد ششم فتاویٰ رضویہ میں اس کا کیا قصور ہے ، در مختار میں ہے ، تکرہ خلف ابرص شاع برصہ 1 (ایسا برص والا شخص جس کا برص پھیل گیا ہو اس کے پیچھے نماز مکروہ ہے۔ت) ردالمختار میں ہے : کذا اجزم برجندی والظاہر ان لعلۃ النفرۃ ولذا قید الابرص بالشیوع لیکون ظاہرا 2۔ واللہ تعالٰی اعلم اسی طرح جذام والے کا حکم ہے ،، برجندی، اور ظاہر ا علت نفرت ہی ہے اسی لئے ابرص کے ساتھ پھیل جانے کی قید کا اضافہ ہے تاکہ واضح ہو جائے ۔ (ت)

مسئلہ ۶۷۵ : از قصبہ نیٹھور ضلع بجنور مرسلہ محمد عبدالحئی سوداگر جفت ۲۹ محرم ۱۳۳۲ ہجری کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین اس مسئلہ میں کہ عنایت اللہ خاں صاحب جائداد ہے اور دوسری جائداد خریدنے کے لئے یا کسی وارث کی جائداد اپنے نام کرانے کے لئے روپیہ سودی تمسک لکھ کر بقال سے قرض لیا ایسے شخص کو امام بنانا مذہب حنفیہ میں کیسا ہے خصوصاً جمعہ و عیدین کا امام بنانا۔ عنایت اللہ صاحب نصاب ہے۔ فقط

الجواب : شخص مذکور کو جائداد خرید نا کوئی ضرورت شرعی نہ رکھتا تھا اور بے حالت اضطرار و مجبوری محض سود دینا اور لینا دونوں یکساں ہیں دینے لینے والے دونوں ملعون ۔ صحیح مسلم شریف میں امیر المومنین مولی علی کرم اللہ وجہہ الکریم سے ہے : لعن رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم اکل الربوا و موکلہ و کاتبہ و شاہدیہ و قال ھم سواء 3۔ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے لعنت فرمائی ہے سود کھانے والے اور سود کھلانے والے اور اس کا کاغذ لکھنے والے اور اس کی گواہیاں کرنے والوں پر۔ اور فرمایا وہ سب برابر ہیں ۔ (ت)

ایسا شخص جمعہ ، عید، پنجگانہ ، کسی نماز میں امام بنانے کے قابل نہیں اسے امام بنانا گناہ ہے اور اس کے پیچھے نماز مکروہ تحریمی ہے ۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۶۸۶ : مسئولہ علاؤ الدین صاحب عرضی نویس کچہری دیوانی پرتاب گڑھ ۲۲ صفر ۱۳۳۲ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین کہ قیام کرنا محفل مولد خیر الانام اور نماز تراویح کے بعد

---

1 در مختار باب الامامة مطبوعہ مجتبائی دہلی ۷۱/۱ 2 رد المحتار باب الامامة مصطفیٰ البابی مصر ۶۱۶/۱ 3 صحیح مسلم باب الربا مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۷۱/۲ ف: صحیح مسلم، باب الربا میں حضرت جابر رضی اللہ عنہ کے حوالے سے حدیث مذکور ہے۔ نذیر احمد

Fatawa Ridawiyyah Volume Six

Question: Is it permissible or an innovation (bid'ah) to distribute sweets from one's own pocket or from donations after the completion of the Quran (Khatam-e-Quran)? And what is the ruling according to the Hanafi school of thought regarding following an imam in prayer who denies the standing (Qiyam) and considers the distribution of sweets after Khatam-e-Quran in Tarawih to be an innovation and impermissible? Does the prayer behind such an imam become disliked (Makruh) or something else? Only.

Answer: The standing (Qiyam) at the time of mentioning the birth of the Master of Mankind (peace and blessings be upon him and his family), as is prevalent and practiced in the noble Harams (Makkah and Madinah), Egypt, Syria, and all other Islamic lands, is certainly recommended (mustahsan) and accepted. Allama Sayyid Ja'far Barzanji (may Allah's mercy be upon him), whose treatise on the blessed Mawlid is recited in the noble Harams and other Arab and non-Arab lands, states in this treatise:

"Indeed, the standing at the mention of the noble birth of the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) has been deemed recommended by imams who possessed narration and understanding. So, glad tidings to him whose utmost goal and objective is the veneration of Muhammad (peace and blessings of Allah be upon him)." (T)

Here today, those who call this blessed standing an innovation and impermissible are the Wahhabis, may Allah disgrace them. And the Wahhabis of this era have progressed from innovation and misguidance to the peak of disbelief. In any case, prayer behind them is impermissible and making them imams is forbidden (haram). Similarly, the distribution of sweets among Muslims at the time of the completion of the Great Quran is also a good and praised act. Calling it an innovation is based on their principles of Wahhabi misguidance. Allah Almighty has stated this criterion for obligation and prohibition:

"And whatever the Messenger has given you - take it; and what he has forbidden you - refrain from." [Quran 59:7]

But the Wahhabi masters have set the criterion for prohibition as: avoid what we forbid, even if Allah and His Messenger have not forbidden it anywhere. In short, this is his shirk (association) in the Messengership. Prayer should never be performed

behind him, and refuge is sought with Allah Almighty, the Lord of the worlds. And Allah Almighty knows best.

---

1. Risala Milad Mubarak by Al-Allama Sayyid Barzanji, may Allah's mercy be upon him, regarding Qiyam at the time of mentioning the birth of the Best of Mankind, Jamia Islamia Lahore, p. 25 & 16.
2. Al-Quran 59/7. Page 549 of 736

फतावा रज़विया जिल्द छठी

प्रश्न: ख़त्म-ए-क़ुरआन मजीद के मौक़े पर अपनी तरफ़ से या चंदे से ख़ुशी-ख़ुशी मिठाई बांटना जायज़ है या बिदअत? और ऐसे शख़्स के पीछे नमाज़ पढ़ना हनफ़ी मज़हब के मुताबिक़ कैसा है जो क़ियाम का मुनकिर हो और तरावीह के बाद ख़त्म-ए-क़ुरआन की मिठाई बांटने को बिदअत और नाजायज़ कहता हो? ऐसे इमाम के पीछे नमाज़ मकरूह होती है या नहीं या क्या हुक्म है? फ़क़त।

उत्तर: अल-जवाब: हुज़ूर सैयदुल अनाम (अलैहि व अला आलिही अफ़ज़लुल सलात वल तस्लीम) की विलादत के ज़िक्र के वक़्त क़ियाम करना, जैसा कि हरमैन तय्यबैन, मिस्र, शाम और दीगर इस्लामी मुल्कों में राइज और मामूल है, यक़ीनन मुस्तहसन और मक़बूल है। अल्लामा सैय्यद जाफ़र बरज़ंजी (रहमतुल्लाहि तआला अलैहि), जिनका रिसाला-ए-मीलाद मुबारक़ हरमैन तय्यबैन और दीगर अरब व अजम के शहरों में पढ़ा जाता है, उस रिसाले में फ़रमाते हैं:

"बेशक ज़िक्र-ए-विलादत-ए-अकदस के वक़्त क़ियाम करना उन इमामों ने मुस्तहसन जाना जो रिवायत और दरायत वाले थे। तो उसके लिए बहुत ख़ुशी और शादमानी है जिसकी आख़िरी मुराद और मक़्सद मोहम्मद (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) की ताज़ीम हो।" (त)

यहाँ आज कल इस क़ियाम-ए-मुबारक़ को बिदअत और नाजायज़ कहने वाले हज़रात वहाबिया हैं (अल्लाह उन्हें रुसवा करे)। और मौजूदा दौर के वहाबी बिदअत और गुमराही से तरक़्क़ी करके कुफ़्र की मेराज तक पहुँच चुके हैं। बहरहाल उनके पीछे नमाज़ नाजायज़ है और उन्हें इमाम बनाना हराम है। इसी तरह ख़त्म-ए-क़ुरआन अज़ीम के वक़्त मुसलमानों में मिठाई बांटना भी एक नेक और पसंदीदा काम है। इसे बिदअत कहना उनके वहाबी गुमराही के उसूलों पर मबनी है। अल्लाह अज़्ज़वजल ने तो हुक्म और पाबंदी का ये मेयार बताया था:

"और जो कुछ रसूल तुम्हें दें उसे ले लो, और जिससे तुम्हें रोकें उससे रुक जाओ।" (अल-क़ुरआन 59/7)

मगर वहाबी साहबों ने पाबंदी का मेयार ये रखा है कि "जिसे हम मना कर दें उससे बचो, चाहे अल्लाह और रसूल ने कहीं मना न फ़रमाया हो"। संक्षेप में ये उसकी 'रिसालत में शिर्क है। उसके पीछे हरगिज़ नमाज़ न पढ़ी जाए। वल-इयाज़ु बिल्लाहि तआला रब्बिल आलमीन। वल्लाहु तआला आलम।

1. रिसाला मीलाद मुबारक़, अल्लामा सैय्यद बरज़ंजी रहमतुल्लाहि अलैहि, क़ियाम बवक़्त ज़िक्र तवल्लुद खैरुल अनाम, जामिया इस्लामिया लाहौर, पृ. 25 और 16।
2. अल-क़ुरआन 59/7। पृष्ठ 549 का 736

فتاوی رضویہ جلد ششم

ختم قرآن مجید کے اپنے پاس سے خواہ چندہ سے بخوشی اپنے شیرنی تقسیم کرنا جائز ہے یا بدعت ؟ اور ایسے شخص جو قیام کا منکر اور جو تراویح کے بعد ختم قرآن مجید کی شیرنی کا تقسیم کرنا بدعت سمجھتا ہو اور ناجائز کہتا ہو اس کے پیچھے نماز کی اقتداء کرنا بروئے مذہب حنفی کیا ہے ؟ ایسے امام کے پیچھے نماز مکروہ ہوتی ہے یا نہیں یا کیا ہے ؟ فقط

الجواب: قیام وقت ذکر ولادت حضور سید الانام علیہ وعلی آلہ افضل الصلاۃ والتسلیم جس طرح حرمین طیبین و مصر و شام و سائر بلاد اسلام میں رائج و معمول ہے ضرور مستحسن و مقبول ہے۔ علامہ سید جعفر برزنجی رحمۃ اللہ تعالیٰ جن کا رسالہ میلاد مبارک حرمین طیبین و دیگر بلاد عرب و عجم میں پڑھا جاتا ہے اس رسالہ میں فرماتے ہیں:

قد استحسن القیام عند ذکر مولد الشریف صلی اللہ تعالی علیہ وسلم ائمۃ ذوو روایۃ ودرایۃ فطوبی لمن کان تعظیمہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم غایۃ مرامہ ومرماہ -1 بے شک ذکر ولادت اقدس کے وقت قیام کرنا ان اماموں نے مستحسن جانا جو اصحاب روایت وارباب درایت تھے تو خوشی اور شادمانی ہو اس کے لئے جس کی نہایت مراد و غایت مقصود محمد صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی تعظیم ہو۔ (ت)

یہاں آج کل اس قیام مبارک کو بدعت و ناجائز کہنے والے حضرات وہابیہ ہیں خذلہم اللہ تعالی (اللہ تعالی انھیں خوار کرے۔ت) اور وہابیہ زمانہ اب بدعت وضلالت سے ترقی کرکے معراج کفر تک پہنچ چکے ہیں بہر حال ان کے پیچھے نماز ناجائز اور انھیں امام بنانا حرام، یوں ہی ختم قرآن عظیم

کے وقت مسلمانوں میں شیرنی کی تقسیم بھی ایک امر حسن و محمود ہے اسے بدعت بتانا انھیں اصول ضلالہ وہابیت پر مبنی ہے اللہ عزوجل نے تو وجوب و ممانعت کی یہ معیار بتائی تھی:

وَمَا اٰتٰىكُمُ الرَّسُوْلُ فَخُذُوْهُ وَمَا نَهٰىكُمْ عَنْهُ فَانْتَهُوْا 2 رسول جس بات کا تمھیں حکم دیں وہ اختیار کرو اور جس بات سے منع فرمائیں باز رہو۔ (ت)

مگر وہابی صاحبوں نے معیار ممانعت یہ رکھی ہے کہ جسے ہم منع کر دیں اسے بچو اگر چہ اللہ و رسول نے کہیں منع نہ فرمایا ہو، غرض یہ اس کا شرک فی الرسالت ہے اس کے پیچھے ہرگز نماز پڑھی نہ جائے ، والعیاذ باللہ تعالیٰ رب العالمین - واللہ تعالی اعلم۔

---

1 رسالہ میلاد مبارک العلامہ سید برزنجی رحمۃ اللہ تعالیٰ علیہ قیام بوقت ذکر تولد خیر الانام ، جامعہ اسلامیہ لاہور ص ۲۵ و ۱۶ 2 القرآن ۷/۵۹ Page 549 of 736

Fatawa Razawiyyah Volume 6

Problem 687: From District Bhandara, Mohalla Kam Talab, sent by Hakim Hidayatullah Khan Sahib, Mutawalli of the Mosque, 27 Safar al-Muzaffar 1332 AH.

What do the scholars of religion and jurists of the clear Sharia say regarding this issue that: (1) A person is a Hafiz-e-Quran and wants to forcibly become the prayer leader (Imam), even though the Muslim congregation is unhappy with his following actions and does not want to make him their Imam. The Hafiz Sahib was previously a government employee; he was punished for taking bribes but was acquitted on appeal by stroke of luck. (2) This Hafiz Sahib took eight annas from someone and wrote a receipt, later deceitfully burnt the receipt and denied it in court, claiming he hadn't taken the eight annas, which caused a heavy loss to that person. Even though it was true that the Hafiz Sahib had taken the money, he flatly denied it and had previously sworn an oath on the Holy Quran regarding this matter. (3) Hafiz Sahib taunts and criticizes his own spiritual guide (Pir-o-Murshid), saying regarding a Mohalla or Madrasa Islamiya established by his guide that it is his ancestors' inheritance. He brings fatwas against his guide's words, although the late guide had appointed him as a deputy (Khalifa) orally, not in writing. After this taunting and criticism of the late guide, does Hafiz Sahib's deputyship (Khilafat) remain, or has it become void, or has he been removed from it? (4) Hafiz Sahib promised to give the skins of sacrificial animals, belonging to wealthy individuals (Sahib-e-Nisab), to the Madrasa Islamiya, but deceitfully took them for his own use. (5) And is it permissible for a Sayyid to take Zakat money? All these traits are present in Hafiz Bano Ali Sahib, which every person in this neighborhood knows well. Despite this, he wants to become the Imam by force and creates discord, saying, "I am a Hafiz, I am a Khalifa, my right is greater, I will be the Imam," while the majority of the congregation does not want to make him their Imam. Therefore, I am sending this humble letter to your honorable presence, requesting you to endure the trouble and write a detailed answer to each question: Is such a forced Imamate, where the followers are unhappy, correct or not? What more can I say? Respect limits.

The Answer: The prayer of an Imam with whom the followers are displeased due to some fault of his is not accepted. It is stated in a Hadith: "There are three types of people whose prayer does not rise even a span above their heads." (Three people whose prayer is not even a span above their ears)

फ़तावा रज़विया जिल्द 6

मसाला 687: जिला भंडारा, मोहल्ला कम तालाब से, प्रेषक हकीम हिदायतुल्ला खान साहब, मुतवल्ली मस्जिद, 27 सफ़र अल-मुज़फ़्फ़र 1332 हिजरी।

विद्वान और शरीयत के मुफ़्ती इस मामले में क्या कहते हैं कि: (1) एक व्यक्ति हाफ़िज़-ए-क़ुरआन है और ज़बरदस्ती इमाम बनना चाहता है, जबकि मुस्लिम जमात उसकी निम्नलिखित बातों से नाख़ुश है और उसे अपना इमाम नहीं बनाना चाहती। हाफ़िज़ साहब पहले सरकारी कर्मचारी थे; रिश्वत लेने के लिए उन्हें सज़ा मिली थी, लेकिन किस्मत के ज़ोर से अपील में रिहा हो गए। (2) इस हाफ़िज़ साहब ने किसी से आठ आने लिए और रसीद लिख दी, बाद में धोखा देकर रसीद जला दी और अदालत में इनकार कर दिया कि आठ आने नहीं लिए, जिससे उस व्यक्ति को बड़ा नुकसान हुआ। हालांकि यह सच था कि हाफ़िज़ साहब ने पैसे लिए थे और साफ इनकार कर दिया और इसी मामले में पहले भी क़ुरआन शरीफ़ की कसम खा चुके थे। (3) हाफ़िज़ साहब अपने पीर-ओ-मुर्शिद पर ताना-कशी और आलोचना करते हैं, और उनके द्वारा स्थापित मोहल्ले या मदरसा इस्लामिया के बारे में कहते हैं कि यह उनके बाप-दादा की विरासत है। वह अपने पीर की बात पर फ़तवा ले आते हैं, हालांकि दिवंगत पीर ने उन्हें ज़बानी तौर पर अपना ख़लीफ़ा नियुक्त किया था, लिखित में नहीं। दिवंगत पीर पर इस ताना-कशी और आलोचना के बाद, क्या हाफ़िज़ साहब की ख़िलाफ़त (प्रतिनिधित्व) बनी रहती है या बातिल (अमान्य) हो गई है या वह ख़िलाफ़त से निकल गए हैं? (4) हाफ़िज़ साहब ने कुर्बानी के जानवरों की खालें, जो साहिब-ए-निसाब (धनी व्यक्तियों) की थीं, मदरसा इस्लामिया में देने को कहा था, लेकिन धोखा देकर अपने निजी इस्तेमाल में ले आए। (5) और क्या सैय्यद के लिए ज़कात का पैसा लेना जायज़ है? ये सारी बातें हाफ़िज़ बनो अली साहब में मौजूद हैं, जिन्हें इस मोहल्ले का हर व्यक्ति अच्छी तरह जानता है। इसके बावजूद वह ज़बरदस्ती इमाम बनना चाहते हैं और फसाद पैदा करते हैं कि "मैं हाफ़िज़ हूँ, ख़लीफ़ा हूँ, मेरा हक ज़्यादा है, मैं इमाम बनूँगा", जबकि जमात के बहुमत की राय उन्हें अपना इमाम बनाने की नहीं है। इसलिए हुज़ूर की खिदमत में यह तहरीर भेज रहा हूँ कि तकलीफ़ गवारा फरमाकर हर एक सवाल का तफ़सील से जवाब तहरीर फरमाएँ कि ऐसी ज़बरदस्ती की इमामत जिससे मुक्तदी (पीछे नमाज पढ़ने वाले) नाखुश हों, दुरुस्त है या नहीं? ज़्यादा क्या अर्ज़ करूँ?अदब की सीमा है।

जवाब: जिससे मुक्तदी उसके किसी दोष के कारण नाराज़ हों, उसकी नमाज़ कुबूल नहीं होती। हदीस में फ़रमाया गया है: "तीन व्यक्ति ऐसे हैं जिनकी नमाज़ उनके सिर से एक बालिश्त ऊपर भी नहीं उठती।" (तीन शख्सों की नमाज उनके कानों से बालिश्त भर भी नहीं)

पृष्ठ 550 / 736

فتاوی رضویہ جلد ششم

مسئلہ ۶۸۷: از ضلع بھنڈارہ محلہ کم تالاب مرسلہ حکیم ہدایت اللہ خاں صاحب متولی مسجد ۲۷ صفر المظفر ۱۳۳۲ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ: (۱) ایک شخص حافظ قرآن ہے اور جبراً پیش امام بننا چاہتا ہے حالانکہ جماعت مسلمین اسکی مندرجہ ذیل باتوں سے ناخوش ہے اور اپنا پیش امام نہیں بنانا چاہتے، حافظ صاحب پہلے گورنمنٹ کے ملازم تھے رشوت کھا کر سزا پائی مگر قسمت کے زور سے اپیل میں رہائی پائی۔ (۲) اس حافظ صاحب نے ایک سے آٹھ آنہ لے کر رسید لکھ دی تھی بعد میں دھوکا دے کر رسید جلادی کچہری میں انکار کیا کہ آٹھ آنہ نہیں لیا جس سے اس شخص کو بڑا بھاری نقصان ہوا حالانکہ یہ بات سچ تھی کہ پیسے حافظ صاحب لے چکے تھے اور صاف انکار کر دیا اور اسی معاملہ میں پہلے بھی قسم قرآن شریف کی کھا چکے تھے۔ (۳) حافظ صاحب نے اپنے پیر و مرشد پر طعن و تشنیع کرتا ہے کہ محلہ میں یا مدرسہ اسلامیہ میں جو خاص ان کے پیر و مرشد کا ایجاد کردہ ہے کہتے ہیں کہ ان کے باپ دادا کا میراث ہے کیا اور اپنے پیر کی بات پر فتویٰ بلوا لاتا ہے حالانکہ پیر مرحوم نے ان کو اپنا خلیفہ زبانی مقرر کیا ہے نہ کہ تحریری، بعد اس طعنہ و تشنیع کے پیر مرحوم پر حافظ صاحب کی خلافت باقی ہے یا باطل ہوئی یا خلافت سے نکل گئے۔ (۴) حافظ صاحب نے چمڑا قربانی کا جو کہ صاحب نصاب ہیں مدرسہ اسلامیہ میں دینے کو کہا تھا دھوکا دے کر اپنے صرف میں لے آئے۔ (۵) اور سید کو زکوۃ کا پیسہ لینا درست ہے یا نہیں؟ اتنی باتیں حافظ بنو علی صاحب میں موجود ہیں جس کو ہر فرد بشر اس محلہ کا بخوبی جانتا ہے تو اس پر بھی وہ پیش امام بننا چاہتے ہیں جبر اور فساد برپا کرتے ہیں کہ میں حافظ ہوں خلیفہ ہوں میرا حق زیادہ ہے پیش امام میں بنوں گا اور جماعتِ

کثیرہ کی رائے نہیں ہے کہ اس کو اپنا پیش امام بنائے اس لئے جناب والا کی خدمت میں نا قابل یہ تحریر ارسال کرتا ہوں کہ تکلیف گوارا فرما کر اس کا جواب تفصیل وار ہر ایک سوال کا تحریر فرمائیں گے کہ ایسی زبردستی پیش امام جس سے مقتدی ناراض ہوں درست ہے یا نہیں؟ زیادہ کیا عرض کروں زیادہ حد ادب۔

الجواب: جس سے مقتدی اس کے کسی عیب کی وجہ سے ناراض ہوں اس کی نماز قبول نہیں ہوتی۔ حدیث میں ارشاد فرمایا: ثلثۃ لا ترفع صلاتھم فوق اذانھم شبر (تین شخصوں کی نماز ان کے کانوں سے بالشت بھر بھی)

Fatawa Razawiya - Volume 6

...one of them is a person who leads a people in prayer while they are displeased with him. [1] [The prayer] does not rise, meaning reaching the court of honor is a great matter. One such person is he who leads people in prayer while they are displeased with him, specifically due to some legal (Sharia-compliant) shortcoming in him.

Otherwise, the burden of sin will be upon them, as mentioned in Al-Durr al-Mukhtar etc. (Or else the burden will be on those people as mentioned in Al-Durr al-Mukhtar etc. - T) [2]

And it is evident that in the queried situation, there are multiple shortcomings in this person. Taking a bribe, if proven, is a major sin. The Hadith states: 'The bribe-taker and the bribe-giver are both in the fire.' [3]. Taking money and then reneging, and swearing a false oath on the Great Quran over it, and burning a receipt to make a false claim against a Muslim and causing them harm—these are all major sins. For these reasons, praying behind the aforementioned Hafiz is 'Makruh Tahrimi' (prohibitively disliked), and making him an Imam is a sin. When he becomes an Imam by force, his own prayer is also ruined until he openly repents from all these heinous acts. If someone gave him a sacrificial animal's skin to give to a madrasa and he deceitfully used it for himself, that is also treachery, breach of trust, and a major sin. And if he promised to give his own animal's skin to the madrasa and then didn't, it is improper, but not as blameworthy, provided it was due to a valid Sharia excuse. Otherwise, it is a breach of promise with Allah Almighty, and its consequence is very severe.

[Boxed Text] Allah Almighty says: "So He followed up their [actions] by putting hypocrisy into their hearts until the Day they meet Him, because they broke their word with Allah and because they used to lie." (T) [4]

Slandering and criticizing a spiritual guide (Pir) is apostasy from the path (Irtidad-e-Tariqat). Because of this, let alone the vicegerency (Khilafat), he is even excluded from the initial pledge (Bay'at). To the needy Sayyid...

---

1. Sunan Ibn Majah, Chapter on 'Those who lead a people while they dislike him', published by H.M. Saeed Company, Karachi, p. 69. F: In the books from which the Hadith is cited, instead of "fauqa adhanihim" (above their ears), it is "fauqa ru'usihim" (above their heads). - Nazir Ahmad Sa'idi

2. Al-Durr al-Mukhtar, Chapter on Imamate, published by Matba' Mujtabai, Delhi, 1/83.
3. Kanz al-Ummal, Section Three on Gifts and Bribes, published by Mu'assasat al-Risalah, Beirut, 6/113. F: In the book from which the reference is given, the word "kilahuma" (both of them) is not present. - Nazir Ahmad Sa'idi
4. Al-Quran 9/77

फतावा रज़विया - छठा खंड

...उनमें से एक वह व्यक्ति जो लोगों की इमामत करे और वे उससे नाखुश हों। [1] [उनकी दुआ/नमाज़] ऊँची नहीं होती, यानी इज़्ज़त की बारगाह तक रसाई (पहुँच) तो बड़ी चीज़ है। एक वह है जो कुछ लोगों की इमामत करे और वे लोग उससे नाराज़ हों, यानी उसमें किसी शरई क़ुसूर (कमी) की वजह से।

वरना वबाल उन लोगों पर होगा जैसा कि दुर्रे मुख्तार वग़ैरह में है। (वरना वबाल उन लोगों पर होगा जैसा कि दुर्रे मुख्तार वग़ैरह में है। - त) [2]

और ज़ाहिर है कि पूछे गए मामले में उस व्यक्ति में कई कमियां हैं। रिश्वत लेना अगर साबित हो जाए तो वह गुनाह-ए-कबीरा (महापाप) है। हदीस में फरमाया: 'रिश्वत लेने वाला और देने वाला दोनों जहन्नमी हैं।' [3]। पैसे लेकर मुकर जाना और उस पर क़ुरान मजीद की झूठी कसम खाना और रसीद जलाकर मुसलमान पर झूठा दावा करना और उसे नुकसान पहुँचाना, ये सब गुनाह-ए-कबीरा हैं। इन कारणों से उक्त हाफ़िज़ के पीछे नमाज़ पढ़ना 'मकरूह-ए-तहरीमी' (सख्ती से वर्जित) है और उसे इमाम बनाना गुनाह है। और ज़बरन इमाम बनने की सूरत में उसकी अपनी नमाज़ भी बर्बाद है जब तक कि वह इन तमाम घिनौने कामों से सार्वजनिक रूप से तौबा न करे। अगर किसी और ने मदरसे में देने के लिए कुर्बानी की खाल उसे दी थी और उसने धोखा देकर अपने इस्तेमाल में ले ली, तो यह भी दगाबाज़ी, खयानत और गुनाह-ए-कबीरा है। और अगर अपनी कुर्बानी की खाल मदरसे में देने को कहा था फिर नहीं दी, तो यह अनुचित है लेकिन उतना बड़ा आरोप नहीं है, बशर्ते किसी शरई मज़बूरी की वजह से ऐसा किया हो। वरना अल्लाह अज़्ज़वजल से वादाखिलाफी है, जिसका परिणाम बहुत गंभीर है।

[बॉक्स का टेक्स्ट] अल्लाह तआला का इरशाद है: 'तो उसके बदले में अल्लाह तआला ने उनके दिलों में उस दिन तक के लिए निफ़ाक़ (पाखंड) डाल दिया जिस दिन वे उससे मिलेंगे, इस वजह से कि उन्होंने अल्लाह से किया हुआ अपना वादा झूठा किया और इस वजह से कि वे झूठ बोलते थे।' (त) [4]

पीर पर ताना और तशनीअ (आलोचना) करना 'इरतिदाद-ए-तरीक़त' (आध्यात्मिक मार्ग से फिर जाना) है। इससे वह खिलाफत तो दरकिनार, बैअत से भी बाहर हो जाता है। हाजत मंद सैयद को...

1. सुनन इब्ने माजह, बाब: मन अम्मा क़ौमन वहुम लहू कारिहूँ, प्रकाशित: एच. एम. सईद कंपनी, कराची, पृ. 69 फ: जिस किताब से हदीस का संदर्भ दिया है उसमें "फ़ौक़ा आज़ानिहिम" की जगह "फ़ौक़ा रु'ऊसिहिम" है। - नज़ीर अहमद सईदी
2. दुर्रे मुख्तार, बाबुल इमामत, प्रकाशित: मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 1/83
3. कंज़ुल उम्माल, फ़स्ल 3, हिदया और रिश्वत के बारे में, प्रकाशित: मुअस्ससतुर रिसाला, बेरूत, 6/113 फ: जिस किताब से संदर्भ दिया है उसमें "किलाहुमा" शब्द नहीं है। - नज़ीर अहमद सईदी
4. अल-कुरान 9/77

اوعد منھم من امّ قوماً وھم لہ کارھون 1- اونچی نہیں ہوتی یعنی بارگاہ عزت تک رسائی تو بڑی چیز ہے ایک وہ جو کچھ لوگوں کی امامت کرے اور وہ لوگ اس ناراض ہوں یعنی اس میں کسی قصور شرعی کے سبب۔

والافالو بال علیھم کما فی الدر المختار 2 وغیرہ (ورنہ وبال ان لوگوں پر ہوگا جیسا کہ در مختار وغیرہ میں ہے۔ت)

اور ظاہر ہے کہ صورت مستفسرہ میں اس شخص میں معتدد قصور ہیں رشوت لینا اگر ثابت ہو تو وہ گناہ کبیرہ ہے، حدیث میں فرمایا: الراشی والمرتشی کلاھما فی النار 3۔ رشوت لینے والا اور رشوت دینے والا دونوں دوزخی ہیں۔ پیسے لے کر مکر جانا اور اس پر قرآن عظیم کی جھوٹی قسم کھانا اور رسید جلا کر مسلمان پر جھوٹا دعوٰی کرنا اور اسے نقصان پہنچانا یہ سب گناہ کبیرہ ہیں، ان وجوہ سے حافظ مذکور کے پیچھے نماز مکروہ تحریمی ہے اور اسے امام بنانا گناہ، اور جبراً امام بننے میں خود اس کی نماز بھی تباہ جب تک وہ ان تمام افعال شنیعہ سے علانیہ توبہ نہ کرے، قربانی کی کھال اگر دوسرے نے اسے مدرسہ میں دینے کو دی تھی اور اس نے دھوکا دے کر اپنے صرف میں کرلی تو یہ بھی دغا اور خیانت اور گناہ کبیرہ ہے، اور اگر اپنی قربانی کی کھال مدرسہ میں دینے کو کہی تھی پھر نہ دی تو بیجا ہے مگر چنداں الزام نہیں جبکہ کسی عذر شرعی سے ایسا کیا ہو ورنہ اللہ عزوجل سے وعدہ خلافی ہے، چنانچہ نتیجہ بہت شدید ہے

[جدول] قال اللہ تعالی فَأَعْقَبَهُمْ نِفَاقًا فِي قُلُوبِهِمْ إِلَى يَوْمِ يَلْقَوْنَهُ بِمَا أَخْلَفُوا اللَّهَ مَا وَعَدُوهُ وَبِمَا كَانُوا يَكْذِبُونَ 4 اللہ تعالیٰ دارشاد ہے : تو اس کے پیچھے اللہ تعالیٰ نے ان کے دلوں میں نفاق رکھ دیا اس دن تک

کہ اس سے ملیں گے بدلہ اس کا کہ انھوں نے اللہ تعالیٰ سے وعدہ جھوٹا کیا اور بدلہ اس کا کہ جھوٹ بولتے تھے (ت)

پیر پر طعنہ و تشنیع ارتداد طریقت ہے اس سے خلافت در کنار بیعت سے بھی خارج ہو جاتا ہے۔

سید حاجت مند کو

---

1 سنن ابن ماجہ باب من ام قوماً وھم لہ کارھون مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ص ۶۹ ف: جس کتب سے حدیث کا حوالہ دیا ہے اس میں "فوق اذانھم" کی جگہ "فوق رؤسھم" ہے۔ نذیر احمد سعیدی 2 در مختار باب الامامۃ مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۸۳/۱ 3 کنز العمال الفصل الثالث فی الھدیۃ والرشوۃ مطبوعہ مؤسسۃ الرسالۃ بیروت ۱۱۳/۶ ف: جس کتاب سے حوالہ دیا ہے اس میں "کلاھما" کا لفظ نہیں ہے۔ نذیر احمد سعیدی 4 القرآن ۹/ ۷۷

Fatawa Razawiyya Volume Six

Regarding giving Zakat, some have written permission, but the correct and reliable view from Zahir al-Riwayah is non-permissibility, as we explained in 'Al-Zahr al-Basim'. (As we described it in Al-Zahr al-Basim). And Allah Almighty knows best.

Problem 692 to 694: What do the scholars of religion and muftis of the solid Sharia say about a person who is involved in a major sin, and then, following guidance, refrains from the sin, repents before the most perfect excellence of religion and Islam, and by the grace of Allah Almighty, attains salvation from that sin? Is his faith complete? (2) Is it permissible for him to lead prayers (Imamat)? (3) What is the ruling for those who criticize him after his repentance? That is all.

Answer: Allah Almighty accepts repentance. "He is the One Who accepts repentance from His servants."[1] (He is Allah Almighty Who accepts the repentance of His servants).

And after true repentance, sins do not remain at all. It is mentioned in a Hadith that the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said: "The one who repents from sin is like one who has no sin."[2]

There is absolutely no harm in his leading prayers after repentance. It is not permissible to criticize him for the sin after repentance. It is mentioned in a Hadith that the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Whoever reproaches his brother for a sin from which he has repented will not die until he himself commits it."[3] This was narrated by Tirmidhi from Mu'adh bin Jabal (may Allah be pleased with him) and classified as Hasan (good). And Allah Almighty knows best.

Problem 695: From: Meerut Cantonment, Wheeler Club, sent by Umar Bakhsh Khansaman, 4 Rabi al-Awwal 1332 AH. What do the scholars of religion and muftis of the solid Sharia say about a person who has been the Imam of a mosque for several years...

1. Al-Quran 42/25
2. Sunan Ibn Majah, Chapter on Repentance, Published by H.M. Saeed Company Karachi, p. 323
3. Jami' at-Tirmidhi, Chapter from the Chapters of the Description of the Day of Judgment, Amin Company Kutub Khana Rashidiyah Delhi 2/47

फतावा रज़विया खंड छह

ज़कात देने के बारे में कुछ लोगों ने अनुमति लिखी है, लेकिन ज़ाहिर अल-रिवाया का सही और विश्वसनीय मत इसकी अनुमति न होना है, जैसा कि हमने 'अल-ज़हर अल-बासिम' में स्पष्ट किया है। (जैसा कि हमने इसे अल-ज़हर अल-बासिम में वर्णित किया है)। और अल्लाह सर्वशक्तिमान बेहतर जानता है।

मसला ६९२ से ६९४: धर्म के विद्वान और शरिया के मुफ्ती इस मसले में क्या कहते हैं कि जो व्यक्ति बड़े पाप (गुनाह-ए-कबीरा) में लिप्त हो और वह मार्गदर्शन के अनुसार पाप से रुक जाए और धर्म और इस्लाम के पूर्ण विद्वानों के सामने पश्चाताप (तौबा) करे और अल्लाह सर्वशक्तिमान की कृपा से उस पाप से मुक्ति पा ले, तो क्या उसका ईमान पूरा हुआ? (२) क्या उसका इमामत (प्रार्थना का नेतृत्व) करना जायज़ है? (३) जो लोग तौबा के बाद उस पर आपत्ति करते हैं, उनके लिए क्या हुक्म है? बस।

उत्तर: अल्लाह सर्वशक्तिमान तौबा स्वीकार करता है। "और वही है जो अपने बंदों की तौबा स्वीकार करता है।"[1] (वह अल्लाह सर्वशक्तिमान है जो अपने बंदों की तौबा स्वीकार करता है)।

और सच्ची तौबा के बाद गुनाह बिल्कुल नहीं रहते। हदीस में है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम फरमाते हैं: "गुनाह से तौबा करने वाला उस व्यक्ति की तरह है जिसने कोई गुनाह किया ही न हो।"[2]

तौबा के बाद उसकी इमामत में कोई हर्ज नहीं है, तौबा के बाद उस पर गुनाह का आरोप लगाना जायज़ नहीं है। हदीस में है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम फरमाते हैं: "जो अपने किसी भाई को ऐसे गुनाह का ताना दे जिससे वह तौबा कर चुका है, तो वह ताना देने वाला तब तक नहीं मरेगा जब तक वह खुद उस गुनाह में शामिल न हो जाए।"[3] इसे तिरमिज़ी ने हज़रत जाबिर (रज़िअल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है और इसे हसन करार दिया है। और अल्लाह सर्वशक्तिमान बेहतर जानता है।

मसला ६९५: मेरठ छावनी, व्हीलर क्लब, प्रेषक उमर बख्श खानसामां, ४ रबी अल-अव्वल १३३२ हिजरी। धर्म के विद्वान और शरिया के मुफ्ती क्या कहते हैं कि एक व्यक्ति जो कई वर्षों से मस्जिद का इमाम रहा है...

1. अल-कुरान २५/४२
2. सनन इब्न माजा, तौबा का बयान, एच.एम. सईद कंपनी कराची, पृष्ठ ३२३

3. जामिउत तिरमिज़ी, कयामत के लक्षणों के अध्यायों में से, अमीन कंपनी कुतुब खाना रशीदिया दिल्ली २/४७

पृष्ठ ७३६ का ५५२

فتاوی رضویہ جلد ششم

زکوٰۃ دینے میں بعض نے اجازت لکھی ہے اور صحیح و معتمد ظاہر الروایہ عدم جواز کما بیناہ فی الزھر الباسم (جیسا کہ ہم نے اس کو الزھر الباسم میں بیان کیا ہے۔ ت) واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۶۹۲ تا ۶۹۴: کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین اس مسئلہ میں کہ جو شخص گناہ کبیرہ میں مبتلا رہتا ہو اور وہ حسب ہدایت گناہ سے باز آکر اکمل الفضلاء دین و اسلام کے روبرو توبہ کرے اور اس گناہ سے بفضلہ تعالٰی نجات پائے تو کیا اس کا ایمان کامل ہوا؟ (۲) اس کی امامت جائز ہے؟ (۳) جو لوگ بعد توبہ اس پر اعتراض کریں ان کے واسطے کیا حکم ہے؟ فقط

الجواب: اللہ عزوجل توبہ قبول فرماتا ہے هُوَ الَّذِي يَقْبَلُ التَّوْبَةَ عَنْ عِبَادِهِ۱ (وہ اللہ تعالٰی ہے جو اپنے بندوں کی توبہ قبول فرماتا ہے۔ ت)

اور سچی توبہ کے بعد گناہ بالکل باقی نہیں رہتے۔ حدیث میں ہے نبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں: التائب من الذنب کمن لا ذنب لہ ۲ - گناہ سے توبہ کرنے والا بے گناہ کے مثل ہے۔

توبہ کے بعد اس کی امامت میں اصلاً حرج نہیں، بعد توبہ اس پر گناہ کا اعتراض جائز نہیں۔ حدیث میں ہے نبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں: من عیر اخاہ بذنب لم یمت حتی یعملہ و فی روایتہ من ذنب قد تاب منہ ۳ ، بہ فسرا بن منیع ، رواہ الترمذی وحسنہ عن معاذ بن جبل رضی اللہ تعالٰی عنہ۔ واللہ تعالٰی اعلم

جو کسی اپنے بھائی کو ایسے گناہ سے عیب لگائے جس سے توبہ کر چکا ہے تو یہ عیب لگانے والا نہ مرے گا جب تک خود اس گناہ میں مبتلا نہ ہو جائے اس کو ترمذی نے حضرت جابر رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کرکے حسن قرار دیا۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۶۹۵: از میرٹھ چھاؤنی ویلر کلب مرسلہ عمر بخش خانساماں ۴ ربیع الاول شریف ۱۳۳۲ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین کہ ایک شخص عرصہ چند سال سے امام مسجد رہ کر باعث

1 القرآن ۲۵/۴۲ 2 سنن ابن ماجہ باب ذکر التوبہ مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ص ۳۲۳ 3 جامع الترمذی باب از ابواب صفۃ القیامہ امین کمپنی کتب خانہ رشیدیہ دہلی ۲/۴۷

Fatawa Razawiya Volume 6 He was removed for the following reasons: (1) Accusation of adultery. (2) Accusation of theft of mosque property such as rugs etc., which were related to the mosque and under his supervision. (3) Engaging in the act of the people of Lot (homosexuality), for which several reliable witnesses have observed and testified, etc. Now that person, without the permission of the mosque's main founder and trustee, wants to be the Imam based on the say-so of a few individuals who are residents of a different neighborhood. Furthermore, the person whom the founder and trustee have currently appointed as Imam is more knowledgeable in Sunnah and Hadith, a proficient scholar, whereas the dismissed person's level of knowledge is only limited to 'Kanz al-Daqaiq'. Is it permissible for such a person to be an Imam despite all the above reasons or not? Only.

The Answer: Accusation and suspicion are not permissible according to Sharia: Allah Almighty says: "O you who have believed, avoid much [negative] assumption. Indeed, some assumption is sin." (1) Allah Almighty says: O you who believe! Avoid much suspicion, indeed some suspicion becomes a sin. And the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Beware of suspicion, for suspicion is the worst of false tales." (2) The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: Avoid suspicion because suspicion is the biggest lie. (Hadith translation).

However, the matter for which reliable witnesses are cited for observation is sufficient for prohibition of leadership (Imamat). Moreover, if one has been accused of such heinous acts and natures begin to dislike him, even if there is no proof, there will certainly be a reduction in the congregation (Jama'at) during his Imamat. This amount of dislike is enough for Imamat, even if he is actually innocent, as jurists have stated regarding someone whose leprosy has spread, and we seek refuge in Allah Almighty, as mentioned in 'Al-Durr' etc. (Just as the jurists have specified this issue regarding a person whose leprosy has spread—and we seek refuge in Allah Almighty. As in Durr-e-Mukhtar. Trans.). In any case, compared to a pious scholar who recites correctly, he can in no way be deserving of Imamat, especially when the founder of the mosque and the locals have a dislike for him. For the matter of Imamat is entrusted to the founder, then to the congregation, and outsiders have no say in it (Because appointing the Imam is the right of the founder, then the followers have no right for outsiders to appoint the Imam. Trans.). So, for those not from the neighborhood...

1 Al-Quran 49/12 2 Sahih al-Bukhari, Kitab al-Wasaya, published by Qadimi Kutub Khana Karachi, 1/382 Page 553 of 736

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी निम्नलिखित कारणों से उसे पदच्युत (हटा) दिया गया है: (१) ज़िना (व्यभिचार) का आरोप। (२) मस्जिद के सामान जैसे दरी आदि की चोरी का आरोप, जो मस्जिद से संबंधित और उनके नियंत्रण में थे। (३) कौम-ए-लूत के कार्य (समलैंगिकता) में लिप्त होना, जिसके कई विश्वसनीय व्यक्ति प्रत्यक्षदर्शी और गवाह हैं आदि-आदि। अब वह व्यक्ति, मस्जिद के मुख्य संस्थापक और ट्रस्टी की अनुमति के बिना, कुछ व्यक्तियों के कहने पर जो दूसरे मोहल्ले के निवासी हैं, इमाम बनना चाहता है। इसके अलावा, संस्थापक और ट्रस्टी ने वर्तमान में जिसे इमाम नियुक्त किया है, वह सुन्नत और हदीस का अधिक ज्ञाता और एक कुशल विद्वान है, जबकि हटाए गए व्यक्ति का ज्ञान केवल 'कन्ज़ुद्दक़ाइक़' तक सीमित है। क्या ऊपर दिए गए सभी कारणों के बावजूद ऐसे व्यक्ति का इमाम होना जायज़ है या नहीं? बस।

जवाब: आरोप और बदगुमानी (बुरा गुमान) शरई तौर पर जायज़ नहीं है: अल्लाह तआला का फ़रमान है: "ए ईमान वालो! बहुत गुमानों से बचो, बेशक कुछ गुमान गुनाह होते हैं।" (१) अल्लाह तआला फ़रमाता है: ए ईमान वालो! बहुत से गुमानों से बचो, यकीनन कुछ गुमान गुनाह हो जाते हैं। अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया: "बदगुमानी से बचो, क्योंकि बदगुमानी सबसे बड़ी झूठी बात है।" (२) रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फरमाया: बदगुमानी से बचो क्योंकि बदगुमानी सबसे बड़ी झूठी बात होती है। (अनुवाद)

लेकिन जिस बात के गवाहों को विश्वसनीय बताया गया है, वही इमामत (प्रार्थना का नेतृत्व) की मनाही के लिए काफी है। बल्कि ऐसे घिनौने कार्यों के आरोपी होने से जब स्वभाविक रूप से लोगों के मन में उससे नफरत पैदा होने लगे, तो भले ही प्रमाण न भी हो, फिर भी उसकी इमामत से जमाअत (नमाज़ियों की संख्या) में कमी ज़रूर आएगी। इमामत के लिए इतनी कराहत (नापसंदगी) ही काफी है, भले ही वह वास्तव में निर्दोष हो। जैसा कि फुकहा (धर्मशास्त्रियों) ने उस व्यक्ति के बारे में स्पष्ट किया है जिसे कोढ़ (बरस) फैल गया हो, और अल्लाह की पनाह, जैसा कि 'दुर्र' आदि में है। (जैसा कि न्यायविदों ने इस मुद्दे को उस व्यक्ति के बारे में स्पष्ट किया है जिसका कोढ़ फैल गया हो—और हम अल्लाह सर्वशक्तिमान की शरण चाहते हैं। जैसा कि दुर-ए-मुख्तार में है। अनुवाद)। बहरहाल, वह एक मुत्तक़ी (परहेज़गार) और सही कुरान पढ़ने वाले विद्वान के मुकाबले किसी भी तरह इमामत का हकदार नहीं हो सकता, खासकर जब मस्जिद के संस्थापक और मोहल्ले वाले उससे नफरत करते हों। क्योंकि इमाम नियुक्त करना संस्थापक का अधिकार है, फिर मकतदी (जमाअत) का, और इसमें अजनबियों (बाहर वालों) का कोई दखल नहीं है (क्योंकि इमाम नियुक्त करना संस्थापक का

अधिकार है, फिर मकतदियों का, बाहरी लोगों का इमाम नियुक्त करने में कोई अधिकार नहीं है। अनुवाद)। तो गैर मोहल्ले वालों का...

---

1 अल-कुरान 49/12 2 सहीह अल-बुखारी, किताब अल-वसाया, प्रकाशित पुरानी कुतुब खाना कराची, 1/382 पेज 553 ऑफ 736

فتاوی رضویہ جلد ششم وجوہات ذیل کے معزول کر دیا گیا ہے: (۱) اتہام زنا (۲) اتہام سرقہ دریاء مسجد وغیرہ اسباب مسجد جو متعلق مسجد اس کے ماتحت تھا۔ (۳) بعمل عمل قوم لوط، جس کے مشاہدہ و معائنہ کے چند اشخاص معتبر ان شاہد ہیں وغیرہ وغیرہ، اب وہ شخص بغیر اجازت بانی مبانی مسجد و متولی مسجد چند اشخاص کے کہنے پر جو ساکنان غیر محلہ اس مسجد کے ہیں امام ہونا چاہتا ہے علاوہ اس کے جو بالفعل امام مسجد بانی و متولی مسجد نے مقرر کیا ہوا ہے اعلم بالسنۃ والحدیث ہونے پر سوا جامع عالم جید ہے اور معزول شدہ کا مبلغ علم صرف کنز الدقائق۔ ایسے شخص کا امام ہونا باوجود جمیع وجوہات بالا کے جائز ہے یا نہ فقط

الجواب: اتہام اور بد گمانی تو شرعاً جائز نہیں: قال اللہ تعالٰی یَا أَیُّهَا الَّذِینَ آمَنُوا اجْتَنِبُوا کَثِیرًا مِّنَ الظَّنِّ إِنَّ بَعْضَ الظَّنِّ إِثْمٌ (1) اللہ تعالٰی کا فرمان ہے: اے ایمان والو! بہت گمانوں سے بچو بیشک کوئی گمان گناہ ہو جاتا ہے۔ وقال صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم ایاکم والظن فإن الظن اکذب الحدیث (2) رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا: بد گمانی سے بچو کیونکہ بد گمانی سب سے بڑی جھوٹی بات ہوتی ہے الحدیث (ت)

مگر جس بات کے معاینہ کے گواہان ثقہ بتائے جاتے ہیں وہی ممانعت امامت کو بس ہیں بلکہ ایسے افعال شنیعہ سے متہم ہو چکا اور طبائع اس سے نفرت کرنے لگیں اگر اگر ثبوت نہ بھی ہو تاہم اس کی امامت میں تقلیل جماعت ضرور ہے اور اسی قدر کراہت امامت کو بس ہے اگر چہ وہ واقع میں بے قصور ہو کما نصوا علیہ فی من شاع برصہ والعیاذ باللہ تعالٰی کما فی الدر وغیرہ (جیسے کہ فقہاء نے اس مسئلہ کی تصریح کی ہے اس شخص کے بارے میں جس کا برص پھیل گیا ہو والعیاذ باللہ تعالٰی۔ جیسا کہ در مختار میں ہے۔ت) بہر حال وہ علم متقی صحیح خواں کے مقابل کسی طرح مستحق امامت نہیں ہو سکتا خصوصاً جبکہ بانی مسجد واہل محلہ کو اس سے کراہت ہے فان امر

الامامۃ مفوض الی البانی ثم الی الجماعۃ ولا دخل فیہ للا جانب (کیونکہ امام کا مقرر کرنا بانی کا حق ہے پھر مقتدی حضرت کا امام مقرر کرنے میں اجنبی لوگوں کا کوئی حق نہیں ت) تو غیر اہل محلہ کا

---

1 القرآن ۴۹/ ۱۲ 2 صحیح البخاری کتاب الوصایا مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۳۸۲

Fatawa Razawiyya, Volume 6 Appointing him is not valid at all, nor is it permissible for him to become an Imam in the aforementioned state when the community dislikes him for a Shari'a reason. The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says: "There are three people whose prayers do not rise even a span above their ears... and among them is the one who leads a people while they dislike him." (Trans.) And Allah Almighty knows best.

Problem 696: From Kanpur, Artillery Old Market, Three-Minaret Mosque, 20 Rabi' al-Awwal 1332 AH. What do the scholars of religion and muftis of the clear Shari'a say in this matter? A person is a scholar, meaning he knows the science of Fiqh and Hadith well, but the aforementioned scholar is disabled in his left foot, which is called limping. He can only touch his toes of the said foot to the ground, while his right foot is sound. He can perform standing, bowing, and prostration well. Can this scholar lead the five daily prayers whether another scholar is present or not? Please write with expressions and proofs so that the listeners have no doubt. Give your verdict and be rewarded.

The Answer: In the questioned situation, the leadership (imamate) of such a person is undoubtedly permissible. Then, if he is the only scholar, he is more deserving. In his presence, an ignorant person should never be preferred. And if another scholar is also present, even then there is no harm in his leadership, but the other one is better. All this is if both individuals possess the conditions for the validity and permissibility of leadership: correct recitation, correct purification, Sunni, correct belief, and not an open sinner. Otherwise, whoever fulfills the conditions will be the Imam. It is stated in Durr-e-Mukhtar: "The following of a standing person behind a hunchbacked person is correct according to the chosen opinion, even if his hunching reaches the limit of bowing. Likewise is the ruling for a lame person, although the leadership of the other person is superior and better." (Trans.) And Allah Almighty knows best.

1. Sunan Ibn Majah, chapter on one who leads a people while they dislike him, published by H.M. Saeed Company Karachi, p. 69. Note: In the book from which the reference is given, instead of 'fawqa adhanihim', it is 'fawqa ru'usihim'. Nazir Ahmad Saidi.
2. Durr-e-Mukhtar, chapter on Imamate, published by Mujtabai Press Delhi, 1/58. Page 554 of 736

फतावा रज़विया, जिल्द छठा उसे नियुक्त करना मूलतः मान्य नहीं हो सकता और न ही उपरोक्त स्थिति में जब कौम (समुदाय) शरीयत के कारण उससे घृणा करती हो, स्वयं उसे इमाम बनना जायज़ है। अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं: "तीन आदमियों की नमाज़ उनके कानों से एक बालिश्त भी ऊपर नहीं जाती (यानी बारगाहे इज़्ज़त में पहुंचना तो बहुत बड़ी चीज़ है), उनमें से एक वह व्यक्ति है जो कुछ लोगों की इमामत करे जबकि वे उसे नापसंद करते हों।" (त) वल्लाहु तआला आलम।

मसला ६९६: कानपुर तोपखाना बाज़ार कदीम, मस्जिद सह-मीनारा से, 20 रबी उल अव्वल 1332 हिजरी। दीन के विद्वान और शरीयत के मुफ्ती इस मसले में क्या फरमाते हैं कि एक व्यक्ति आलिम (विद्वान) है, यानी फिक़्ह और हदीस का इल्म अच्छी तरह जानता है, मगर उक्त आलिम बाएं पैर से मजबूर है जिसे लंगड़ा कहते हैं, वह ज़मीन पर उस पैर की केवल उंगलियां ही लगा सकता है और दाहिना पैर ठीक है। वह क़याम, रुकूअ, और सुजूद अच्छी तरह कर सकता है। क्या यह आलिम पांच वक्त की नमाज़ की इमामत कर सकता है, चाहे दूसरा आलिम मौजूद हो या न हो? इबारत और दलीलों के साथ लिखें ताकि सुनने वालों को किसी प्रकार का संदेह न रहे। जवाब दें और सवाब पाएं।

अल-जवाब: पूछी गई स्थिति में ऐसे व्यक्ति की इमामत निस्संदेह जायज़ है। फिर अगर वही आलिम है तो वही अधिक हकदार है, उसकी उपस्थिति में किसी जाहिल (अज्ञानी) को प्राथमिकता नहीं दी जानी चाहिए। और यदि दूसरा आलिम भी मौजूद है, तब भी उसकी इमामत में कोई हर्ज नहीं, लेकिन दूसरा व्यक्ति बेहतर है। यह सब उस स्थिति में है जब दोनों व्यक्ति इमामत की वैधता और स्वास्थ्य की शर्तों को पूरा करते हों: सही पाठ करने वाला, शुद्ध पवित्रता वाला, सुन्नी, सही अकीदा (विश्वास) वाला और खुल्लम-खुल्ला गुनहगार न हो। अन्यथा, जो शर्तों को पूरा करेगा वही इमाम होगा। दुर्रे मुख्तार में है: "मुख्तार (चुने हुए) कौल के अनुसार सीधे खड़े होने वाले की नमाज़ कूबड़े व्यक्ति के पीछे सही है, भले ही उसका कूबड़ापन रुकूअ की सीमा तक हो। इसी तरह लंगड़े का हुक्म है, अलबत्ता दूसरे आदमी की इमामत अफज़ल (श्रेष्ठ) और औला (बेहतर) है।" (त) वल्लाहु तआला आलम।

1. सुनन इब्न माजा, बाब: मन अम्मा कौमन वहुम लहू कारिहून, एच.एम. सईद कंपनी कराची द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 69। नोट: जिस किताब से संदर्भ दिया गया है उसमें 'फौका अज़ानिहिम' की जगह 'फौका रू'उसिहिम' है। नज़ीर अहमद सईदी।
2. दुर्रे मुख्तार, इमामत का अध्याय, मुजतबाई प्रेस दिल्ली द्वारा प्रकाशित, 1/58। पृष्ठ 554/736

فتاوی رضویہ جلد ششم اسے مقرر کرنا اصلاً معتبر نہیں ہو سکتا نہ حالت مذکورہ میں کہ قوم بموجہ شرعی اس سے کراہت رکھتی ہے خود اسے امام بننا جائز۔ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں : ثلثة لا ترفع صلاتهم فوق اذانهم شبرا وعد منهم من ام قوما وهم له كارهون 1- تین آدمیوں کی نماز ان کے کانوں سے ایک بالشت بھی اوپر نہیں جاتی (یعنی بارگاہ عزت میں رسائی تو بڑی چیز ہے) ان میں ایک شخص ہے جو کچھ لوگوں کی امامت کرے حالانکہ وہ اسے ناپسند کرتے ہوں۔ (ت) واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۶۹۶: از کانپور توپ خانہ بازار قدیم مسجد سہ منارہ ۲۰ ربیع الاول شریف ۱۳۳۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع مبین اس مسئلہ میں کہ ایک شخص عالم ہے یعنی علم فقہ وحدیث بخوبی جانتے ہیں مگر عالم موصوف بائیں پیر سے مجبور ہیں جس کو لنگڑا کہتے ہیں زمین میں پیر مذکور کا فقط انگشت لگا سکتے ہیں اور دہنا پیر درست ہے قیام، رکوع، سجود بخوبی کر سکتے ہیں، یہ عالم مذکور پانچ وقتی نماز کی امامت کر سکتے ہیں اگر چہ عالم دیگر موجود ہو یا نہیں؟ باعبارت و دلائل کے تحریر فرمائیں کہ سامعین کو کسی قسم کا شبہ نہ رہے۔

بینوا توجروا الجواب: صورت مستفسرہ میں ایسے شخص کی امامت بلا شبہ جائز ہے پھر اگر وہی عالم ہے تو وہی زیادہ مستحق ہے اس کے ہوتے جاہل کی تقدیم ہرگز نہ چاہئے اور اگر دوسرا عالم بھی موجود ہے جب بھی اس کی امامت میں حرج نہیں مگر بہتر وہ دوسرا ہے، یہ سب اس صورت میں کہ دونوں شخص شرائط صحت وجواز امامت کے جامع ہوں صحیح خواں صحیح الطہارۃ سنی صحیح العقیدہ غیر فاسق معلن ورنہ جامع شرائط ہو گا وہی امام ہوگا۔ درمختار میں ہے : صح اقتداء قائم باحدب وان بلغ حد به الركوع على المعتمد وكذا باعرج وغيره اولیٰ 2- واللہ تعالیٰ اعلم مختار قول پر سیدھا کھڑے ہونے والے کی نماز کبڑے شخص کے پیچھے درست ہے اگر چہ اس کا کبڑا پن

رکوع کی حد تک ہو، اسی طرح لنگڑے کا حکم ہے، البتہ دوسرے آدمی کی امامت افضل واولیٰ ہے۔ (ت)

1 سنن ابن ماجہ باب من ام قوما وہم لہ کارہون مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ص ۶۹ ف: جس کتاب سے حوالہ دیا ہے اس میں "فوقھم اذنھم" کی جگہ "فوقھم رؤسھم" ہے۔ نذیر احمد سعیدی 2 درمختار باب الامامۃ مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱/۵۸ Page 554 of 736

Fatawa Rizvia Volume 6 Issue 79: From Tehsil Chunian, District Lahore, requested by Anwaar-ul-Haq Sahib, 21 Rabi-ul-Awwal Sharif 1332 AH.

Question: In this land of Punjab, religion is taken very lightly, especially in villages where there is almost no knowledge of the faith or sect. For instance, in every village, the Imam of the mosque has no knowledge beyond memorizing a few Surahs. The intention of the followers is also merely to have an Imam who can wash their dead, perform marriages, or knows two or three Surahs for leading prayers, with no further interest. Thus, in a village named Tirth, an Imam with such qualities arrived in the morning and passed away there. In that same village, an old man who used to call himself a Hanafi, then followed the Wahhabi sect for some years, and then the Chakralvi sect for the past few years. Now, upon the death of the aforementioned Imam, with the thought of becoming the mosque's Imam so that the income from the houses associated with the mosque would come to him, he declared that he had repented from the Chakralvi sect and requested to be appointed as the Imam. Consequently, some of his like-minded friends honored him and appointed him as the Imam. Now, some Muslims rose against him, aggrieved by his frequent changes of sect, and wished to remove him. Since he possesses some knowledge, he said, "I have repented sincerely and have now come to the Hanafi sect. If you still want to remove me, show me the ruling of Sharia, and I will step aside." He argues that if a disbeliever's repentance is accepted, why wouldn't mine be? Devout Muslims feel that if he remains the Imam, he will cause a rift in religion, and many people will align with him, after which they won't have the strength to correct them. With this in mind, they want a fatwa regarding such a suspicious person so he can be removed and they can be free from his mischief. Only.

Answer: Prayer is a vital act of worship and requires extreme caution, so much so that our scholars have explicitly stated that if a prayer is valid from some perspectives but invalid from one, it should be declared invalid. Imam Ibn al-Humam states in 'Fath al-Qadir':

"لان الصلوة متى فسدت من وجه وجازت من وجوه حكم بفسادها ١" "Because when a prayer is invalid from one aspect and valid from several aspects, the ruling of its invalidity is given." (T)

A person who is so unstable that he has changed his sect three times in these many days, in accepting his repentance in this sense...

1. Fath al-Qadir, Chapter on the Prayer of the Traveler, published by Maktaba Nooria Rizvia Sukkur, 1/412. Page 555 of 736

फ़तावा रज़विया जिल्द शशुम (छठा) मसला ७९: तहसील चुनियाँ, जिला लाहौर से, सायल अनवारुल हक़ साहिब, २१ रबी-उल-अव्वल शरीफ़ १३३२ हिजरी।

सवाल: इस पंजाब के इलाक़े में दीन की बहुत कमी है, ख़ासकर देहातों में तो दीन और मज़हब का कुछ पता ही नहीं है। चुनांचे हर देहात में मस्जिद का इमाम चन्द सूरतों के याद रखने के अलावा और कोई इल्म नहीं रखता और मुक्तदियों (नमाज़ पढ़ने वालों) का मक़सद भी यही होता है कि मस्जिद का इमाम ऐसा हो जो हमारे मय्यत (मृतक) को ग़ुस्ल दे सके या निकाह पढ़ा सके या नमाज़ पढ़ाने के लिए दो-तीन सूरतें याद हों, इसके अलावा और कोई शौक़ नहीं होता। चुनांचे 'तीरथ' नामी एक गाँव में एक इमाम साहब इन्हीं खूबियों के साथ सुबह आए और वहीं वफ़ात पा गए। उसी गाँव में एक बूढ़ा व्यक्ति था जो पहले खुद को हनफी कहता था, फिर कुछ सालों तक वहाबी रहा और फिर पिछले कुछ सालों से चकरालवी मज़हब पर है। अब इमाम साहब की वफ़ात पर उसने इस ख़याल से कि मैं मस्जिद का इमाम बन जाऊँ और मस्जिद से जुड़े घरों की आमदनी मेरे काम आए, यह ज़ाहिर किया कि मैंने चकरालवी मज़हब से तौबा कर ली है, मुझे मस्जिद का इमाम मुक़र्रर किया जाए। चुनांचे उसके कुछ हम-ख़याल दोस्तों ने उसे पगड़ी पहनाई और उसे मस्जिद का इमाम बना दिया। अब कुछ मुसलमान उसके ख़िलाफ़ खड़े हुए जिन्हें उसके बार-बार मज़हब बदलने का दुख था, उन्होंने उसे हटाना चाहा। चूँकि वह कुछ इल्म रखता है, उसने कहा कि मैंने सच्ची तौबा कर ली है और अब मैं हनफी मज़हब पर आ गया हूँ, अगर तुम अब भी मुझे हटाना चाहते हो तो मुझे शरीयत का हुक्म दिखाओ, मैं खुद हट जाऊँगा। उसका कहना है कि जब एक काफ़िर की तौबा क़बूल होती है, तो मेरी क्यों नहीं होगी? पक्के मुसलमानों का मानना है कि अगर यह शख्स इमाम बना रहा तो दीन में बिगाड़ पैदा करेगा और कई लोग उसके साथ हो जाएँगे, फिर हमारे पास इतनी ताक़त नहीं होगी कि उन्हें सीधा कर सकें। इस ख़याल से वे चाहते हैं कि अगर ऐसे संदिग्ध व्यक्ति के बारे में कोई हुक्म हो तो हमें फ़तवा दिया जाए ताकि उसे निकाला जाए और उसके फ़ितने से बेफ़िक्र हो सकें। फ़क़त।

जवाब: नमाज़ एक अहम इबादत है और इसके लिए बहुत ज़्यादा एहतियात की ज़रूरत है, यहाँ तक कि हमारे उलेमा (विद्वानों) ने साफ़ तौर पर फ़रमाया है कि अगर नमाज़ चन्द वजहों से सही हो रही हो और एक वजह से फ़ासिद (खराब), तो उसे फ़ासिद ही क़रार देंगे। इमाम इब्ने हुमाम 'फ़तहुल क़दीर' में फ़रमाते हैं:

"لان الصلوة متى فسدت من وجه وجازت من وجوه حكم بفسادها ١" "क्योंकि जब नमाज़ एक पहलू से फ़ासिद हो और कई वजहों से सही हो, तो नमाज़ के फ़ासिद होने का हुक्म दिया जाता है।" (त)

जो शख्स इतना चंचल स्वभाव का हो कि इतने दिनों में तीन मज़हब बदल चुका हो, उसकी तौबा इस मायने में क़बूल करने में...

---

1. फ़तहुल क़दीर, बाब सलातुल मुसाफ़िर, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर १/४१२ पृष्ठ ७३६ का ५५५

فتاوٰی رضویہ جلد ششم مسئلہ ۷۹: از تحصیل چونیاں ضلع لاہور مسئولہ انوار الحق صاحب ۲۱ ربیع الاول شریف ۱۳۳۲ھ

اس ملک پنجاب میں دین کی بہت سستی ہے خاصکر دیہات میں تو دین مذہب کا کچھ پتا ہی نہیں، چنانچہ ہر ایک دیہات میں امام مسجد سوائے چند سورتوں کے یاد رکھنے کے اور کوئی علم نہیں رکھتا اور مقتدیوں کی غرض بھی یہی ہوتی ہے کہ امام مسجد ایسا ہو جو کہ ہماری میت کو غسل دے سکے یا نکاح پڑھ سکے یا دو تین سورتیں نماز پڑھانے کے واسطے یاد ہوں اور کوئی شوق نہیں، چنانچہ ایک گاؤں بنام تیر تھ میں ایک امام مسجد ایسی ہی صفتوں والا صبح کو گیا اور وہیں وفات پائی ، اسی مذکورہ گاؤں میں ایک دہر کبارہ جو کہ اپنے آپ کو حنفی کہتا تھا اور پھر بعد میں چند سال وہابی مذہب رہا بعد ازیں چند سال سے چکڑالوی مذہب ہے، اب مذکور امام مسجد فوتیدگی پر اس نے اس خیال سے کہ میں امام مسجد بن جاؤں مسجد کے متعلقہ گھروں کی آمدنی میرے کام آئے یہ ظاہر کیا کہ میں نے چکڑالوی مذہب سے توبہ کی مجھے امام مسجد مقرر کرو، چنانچہ اس کے ہم خیال چند دوستوں نے اس کو پگڑی پہنائی اور اس کو امام مسجد مقرر کردیا۔ اب چند مسلمان اس کے مخالف اٹھے جن کو اس کے چند مذہب بدلنے کا رنج تھا انہوں نے اس کو معزول کرنا چاہا، اب چونکہ وہ کچھ علم رکھتا ہے اس نے کہا کہ میں نے توبہ خالص کر دی ہے اور اب میں حنفی مذہب پر آگیا ہوں اگر تم اب بھی معزول کرتے ہو تو مجھے شریعت کا حکم دکھاؤ میں کنارے ہو جاؤں گا۔ چنانچہ وہ کہتا ہے کہ کافر کی توبہ منظور ہے میری کیونکر نہ منظور ہوگی، پکے مسلمانوں کا خیال ہے کہ اگر یہ امام مسجد مقرر رہا تو یہ دین میں رخنہ انداز ہوگا پھر کئی آدمی اس کے موافق ہو جائیں گے پھر ہم میں اتنی طاقت نہ ہوگی کہ ان کو سیدھا

کریں اس خیال سے وہ چاہتے ہیں کہ اگر کوئی حکم ایسے مشکوک آدمی کے بارے میں ہو تو ہمیں فتویٰ دیا جائے کہ اس کو نکالا جائے اور اس کے فتنہ سے بے فکر ہو جائیں۔ فقط

الجواب: نماز اہم عبادت ہے اور اس کے لئے غایت احتیاط درکار ہے یہاں تک کہ ہمارے علماء نے تصریح فرمائی کہ اگر نماز چند وجہ سے صحیح ٹھہرتی ہو اور ایک سے فاسد ، تو اسے فاسد ہی قرار دیں گے۔ امام ابن الہمام کی فتح القدیر میں فرماتے ہیں:

لان الصلوۃ متی فسدت من وجہ وجازت من وجوہ حکم بفسادھا ۱ کیونکہ جب ایک جہت سے نماز فاسد ہو اور کئی وجوہ کی بنا پر صحیح ہو تو نماز کے فاسد ہونے کا حکم دیا جاتا ہے۔ (ت)

جو شخص ایسا مضطرب الحال ہو کہ اتنے دنوں میں تین مذہب بدل چکا اس کی توبہ بایں معنی قبول کرنے میں---

---

۱ فتح القدیر باب صلوٰۃ المسافر مطبوعہ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۱/ ۴۱۲ Page 555 of 736

Fatawa Razawiyya - Volume 6

There is no excuse; if you have repented from the heart, then Allah is the One who accepts repentance. Furthermore, while expressing this Sunnism and Hanafism, if he dies, we will treat his funeral in the same way as is done with a Sunni Hanafi, for "We are only bound to judge by what is apparent, and Allah Almighty knows best what is in the secret hearts" (T). However, it does not follow from this acceptance of repentance that we should make such an unsettled person, in such a doubtful state, the Imam of our important religious duties. If in reality he has repented with a true heart, then the prayer behind him will be valid. But if he displays repentance just to obtain the imamate, then that prayer will be void and corrupt. His doubtful state and the greed for profit supporting it, in no way meet the requirement of sound reason and caution that he should be made an Imam. Regarding testimony in matters of money, the noble scholars exercise this caution: even if a transgressor (fasiq) repents, his testimony will not be accepted until a period of time has passed in which the effects of sincere repentance, righteousness, and piety become apparent in him. Since he is a transgressor, it is possible that he is expressing repentance at that moment just to get his testimony accepted. It is stated in Fatawa Alamgiri and Fatawa Qazi Khan:

Arabic Text	Urdu Translation
If a transgressor repents, his testimony is not accepted until a time passes where the effect of repentance appears on him. The correct view is that this matter is entrusted to the opinion of the judge. [1]	If a transgressor repents, his testimony should not be accepted until sufficient time has passed for the effect of sincere repentance to appear in him. And the correct view is that this matter be left to the judge's discretion. (T)

In fact, regarding one who is famous for lying, they explicitly state that his testimony will never be accepted even if he repents a hundred times. Bada'i' of Imam Malik al-Ulama Abu Bakr Mas'ud al-Kasani, then again in Fatawa Hindiyya it is stated:

Arabic Text	Urdu Translation
One known for lying has no uprightness (adalah), so his testimony is never accepted even if he repents. This is contrary to one who falls into	One who is famous for lying cannot be considered upright; his testimony will never be accepted even if he repents. This is in contrast to the person who lied

Arabic Text	Urdu Translation
lying accidentally or was afflicted by it once and then repented. [2]	unintentionally or fell into lying once and then repented. (T)

When such precautions are taken for two pennies worth of property, then for prayer, which after faith is the greatest pillar of religion, to what degree is caution mandatory?

---

[1] Fatawa Hindiyya, Chapter 2, regarding those whose testimony is not accepted due to transgression, published by Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/268. [2] Fatawa Hindiyya, Chapter 2, regarding those whose testimony is not accepted due to transgression, published by Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/268.

कोई उज़्र नहीं कि अगर तुमने दिल से तौबा की है तो अल्लाह क़बूल फ़रमाने वाला है। साथ ही इसी सुन्नियत और हनफ़ियत का इज़हार करते हुए अगर वह मर जाए, तो हम उसके जनाज़े के साथ वही तरीक़ा अपनाएंगे जो एक सुन्नी हनफ़ी के साथ अपनाया जाता है, क्योंकि "हम ज़ाहिर पर हुक्म लगाने के पाबंद हैं, और अल्लाह तआला ही दिलों के भेदों को बेहतर जानता है" (त)। लेकिन तौबा की इस क़बूलियत से यह लाज़िम नहीं आता कि हम ऐसे मुज़्तरिब शख़्स और ऐसी मश्कूक हालत वाले को अपना इमाम-ए-दीन बना लें। अगर वास्तव में वह सच्चे दिल से ताइब हुआ है, तो उसके पीछे नमाज़ हो जाएगी। लेकिन अगर वह इमामत हासिल करने के लिए तौबा का इज़हार करता है, तो वह नमाज़ बातिल और फ़ासिद होगी। उसकी शक पैदा करने वाली हालत और मुनाफ़े की लालच इसकी ताईद करने वाली किसी भी तरह अक़्ल-ए-सलीम और एहतियात का तक़ाज़ा हरगिज़ नहीं कि उसे इमाम बनाया जाए। पैसे के मामले में गवाही के लिए उलमा-ए-किराम यह एहतियात फ़रमाते हैं कि फ़ासिक़ (पापी) अगरचे तौबा कर ले, उसकी गवाही तब तक क़बूल नहीं होगी जब तक एक ज़माना उस पर न गुज़र जाए जिससे उसकी तौबा की सच्चाई, भलाई और परहेज़गारी के आसार उस पर ज़ाहिर हों। क्योंकि वह फ़ासिक़ है, तो मुमकिन है कि वह उस वक़्त अपनी गवाही क़बूल करवाने के लिए तौबा का इज़हार कर रहा हो। फ़तावा आलमगीरी और फ़तावा क़ाज़ी ख़ान में है:

अरबी पाठ	**उर्दू अनुवाद**
फ़ासिक़ अगर तौबा कर ले तो उसकी गवाही तब तक क़बूल नहीं की जाएगी जब तक कि उस पर तौबा का प्रभाव स्पष्ट न हो जाए। और सही यह है कि यह मामला क़ाज़ी की राय पर निर्भर है। [1]	फ़ासिक़ अगर तौबा कर ले तो जब तक इतना वक़्त न गुज़र जाए जिसमें उस पर तौबा की सच्चाई का असर ज़ाहिर हो, उसकी गवाही क़बूल न की जाए। और सही यह है कि यह मामला क़ाज़ी की राय के सुपुर्द किया जाए। (त)

बल्कि जो झूठ के साथ मशहूर है, उसके बारे में स्पष्ट फ़रमाते हैं कि उसकी गवाही कभी क़बूल न होगी चाहे वह सौ बार तौबा करे। बदाइ' इमाम मलिकुल उलमा अबू बक्र मसूद कसानी, फिर फ़तावा हिंदिया में है:

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद
जो झूठ के लिए जाना जाता है उसमें कोई सदाचार (अदालत) नहीं है, इसलिए उसकी गवाही कभी क़बूल नहीं की जाएगी चाहे वह तौबा कर ले। इसके विपरीत वह व्यक्ति है जिसने अनजाने में झूठ बोला हो या एक बार झूठ में फँसा हो और फिर तौबा कर ली हो। [2]	जो झूठ में मशहूर हो वह आदिल नहीं हो सकता, उसकी हमेशा गवाही क़बूल न होगी चाहे वह ताइब हो जाए। इसके विपरीत उस शख़्स के लिए जिससे झूठ भूल-चूक से सरज़द हुआ हो या वह झूठ में किसी एक बार मुब्तला हुआ हो फिर उसने तौबा कर ली हो। (त)

जब दो पैसे के माल में ये एहतियातें हैं, तो नमाज़ जो ईमान के बाद दीन का सबसे बड़ा रुक्न है, उसके लिए किस दर्जे की एहतियात वाजिब होगी?

---

[1] फ़तावा हिंदिया, दूसरा अध्याय, उन लोगों के बारे में जिनकी गवाही उनके पाप के कारण स्वीकार नहीं की जाती, नूरानी कुतुब खाना पेशावर द्वारा प्रकाशित, 3/268. [2] फ़तावा हिंदिया, दूसरा अध्याय, उन लोगों के बारे में जिनकी गवाही उनके पाप के कारण स्वीकार नहीं की जाती, नूरानी कुतुब खाना पेशावर द्वारा प्रकाशित, 3/268.

کوئی عذر نہیں کہ اگر تو نے دل سے توبہ کی ہے تو اللہ قبول فرمانے والا ہے نیز اسی سنیت حنفیت کا اظہار کرتے ہوئے اگر وہ مر جائے گا ہم اس کے جنازہ کے ساتھ وہ طریقہ برتیں گے جو ایک سنی حنفی کے ساتھ کیا جاتا ہے لان انما نحکم بالظاھر واللہ تعالی اعلم بالسرائر (کیونکہ ہم ظاہر پر حکم لگانے کے پابند ہیں، دلوں کا حال اللہ ہی جانتا ہے۔ ت) مگر اس قبول توبہ سے یہ لازم نہیں کہ ہم ایسے مضطرب شخص ایسے مشکوک حالت والے کو اپنے ایسے اہم فرض دینی کا امام بھی بنالیں اگر واقع میں وہ سچے دل سے تائب ہوا ہے تو اس کے پیچھے نماز ہو جائے گی اور اگر امامت لینے کے لئے توبہ ظاہر کرتا ہے تو وہ نماز باطل وفاسد ہوگی اور اس کی حالت شک ڈالنے والی اور نفع کی طمع اس کی تائید کرنے والی کسی طرح عقل سلیم و احتیاط کا مقتضا ہرگز نہیں کہ اسے امام کیا جائے وہ پیسہ کے معاملے میں گواہی کے لئے تو علمائے کرام یہ احتیاط فرماتے ہیں کہ فاسق اگرچہ توبہ کرلے اس کی گواہی مقبول نہ ہوگی جب تک ایک زمانہ اس پر نہ گزرے جس سے صدق توبہ وصلاح و تقوٰی کے آثار اس پر ظاہر ہوں کہ جب وہ فاسق ہے تو ممکن کہ اس وقت اپنی گواہی قبول کرا دینے کے لئے توبہ کا اظہار کرتا ہو فتاوٰی عالمگیری و فتاوٰی قاضی خاں میں ہے:

عربی عبارت	**اردو ترجمہ**
الفاسق اذا تاب لا تقبل شھادتہ مالم یمض علیہ زمان یظھر علیہ اثر التوبۃ والصحیح ان ذلك مفوض الی راء القاضی - 1	فاسق اگر توبہ کرلے تو جب تک اتنا وقت نہ گزر جائے جس میں اس پر توبہ صدق کا اثر ظاہر ہو اس کی گواہی قبول نہ کی جائے، اور صحیح یہ ہے کہ یہ معاملہ قاضی کی رائے کے سپرد کیا جائے۔ (ت)

بلکہ جو جھوٹ کے ساتھ مشہور ہے اس کی نسبت تصریح فرماتے ہیں کہ اس کی گواہی کبھی مقبول نہ ہوگی اگرچہ سو بار توبہ کرے - بدائع امام ملک العلماء ابوبکر مسعود کا سانی پھر فتاوٰی ہندیہ میں ہے:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
والمعروف بالكذب لا عدالة له فلا تقبل شهادته ابدا وان تاب بخلاف من وقع في الكذب سهوا او ابتلى به مرة ثم تاب - 2	جو جھوٹ میں مشہور ہو وہ عادل نہیں ہو سکتا اس کی ہمیشہ گواہی قبول نہ ہوگی اگرچہ وہ تائب ہو جائے۔ بخلاف اس شخص کے جس سے جھوٹ سہواً سر زد ہوا ہو یا وہ جھوٹ میں کسی ایک دفعہ مبتلا ہوا ہو پھر اس نے توبہ کرلی ہو۔ (ت)

جب دو پیسے کے مال میں یہ احتیاطیں ہیں تو نماز کہ بعد ایمان اعظم ارکان دین ہے اس کے لئے کس درجہ احتیاط واجب

---

1 فتاوٰی ہندیہ الفصل الثانی فیمن لا تقبل شہادتہ لفستہ مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور ۳/۲۶۸ 2 فتاوٰی ہندیہ الفصل الثانی فیمن لا تقبل شہادتہ لفستہ مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور ۳/۲۶۸

Fatawa Razawiya - Volume Six

Pure Sharia never likes to make such a doubtful person an Imam. Those who strive for his leadership will be traitors to Allah, His Messenger, and all Muslims. It is stated in a Hadith that the Master of the World (peace and blessings of Allah be upon him) says:

"Whoever appoints a person over a group when there is someone among them who is more pleasing to Allah than that person, then he has betrayed Allah, His Messenger, and the believers." - Narrated by Al-Hakim, who graded it as authentic, and also by Ibn Adi, Al-Uqayli, Al-Tabarani, and Al-Khatib from Hazrat Ibn Abbas (may Allah be pleased with them).

Question 698: From Sadar Bazar Station and Post Office Raniganj, District Burdwan, sent by Muzaffar Hussain, 23 Rabi al-Awwal 1332 AH. What is your opinion, may Allah have mercy on you? What do the scholars of religion and jurists of the firm Sharia say regarding this issue: Zaid is appointed as both Muazzin and Imam in a mosque. This Zaid beats his mother. Some people advised him, "How can you beat your mother? How will your prayers and recitations serve you before Allah Almighty?" In response, Zaid said, "Just as other people commit adultery with non-mahram women and drink wine, in the same way, my sitting in the mosque for recitation and prayer is." Thus, Zaid compared prayer and recitation with foul deeds. In this situation, is it permissible according to Sharia for Zaid to call the Azan in the mosque and to pray behind him without him repenting? And in what category will this be counted, in major sins or in the degree of disbelief (kufr)? If this sin falls into the category of disbelief, will Zaid's wife be out of his marriage contract or not? And will Zaid, after repenting, need to renew the marriage contract with his wife or not? Please advise with references from authentic books. Explain and be rewarded.

Answer: In the inquired situation, that person is a severe transgressor (fasiq) and profligate (fajir), a committer of major sins, deserving of hellfire and the wrath of the Mighty. Harassing a mother is a major sin, let alone beating her, which even a non-Muslim, let alone a Muslim, would avoid and feel disgusted by. It is stated in a Hadith:

1. Al-Mustadrak 'ala al-Sahihayn, Book of Leadership (Al-Imarah), published by Dar al-Fikr, Beirut, 4/72. Note: In Mustadrak, the word "fi tilka al-'asabah" is used instead of "fihim". - Nazir Ahmed Saeedi.

शरीयत-ए-मुतहरा कभी भी ऐसे संदिग्ध व्यक्ति को इमाम बनाना पसंद नहीं करती। जो लोग उसकी इमामत के लिए प्रयासरत हैं, वे अल्लाह, उसके रसूल और सभी मुसलमानों के धोखेबाज़ (गद्दार) होंगे। हदीस में है कि सैयदुल आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं:

"जिसने किसी जमात (समूह) पर किसी व्यक्ति को नियुक्त किया, जबकि उनमें कोई ऐसा व्यक्ति मौजूद था जो उस व्यक्ति से अधिक अल्लाह को प्रिय था, तो निस्संदेह उसने अल्लाह, उसके रसूल और मोमिनों के साथ खयानत (धोखा) की।" - इसे अल-हाकिम ने रिवायत किया और सही करार दिया, और इब्न अदी, अल-उकैली, अल-तबरानी और अल-खतीब ने इसे हज़रत इब्न अब्बास (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत किया है।

मसाला (प्रश्न) ६९८: सदर बाज़ार स्टेशन और डाकखाना रानीगंज, जिला बर्दवान, प्रेषक मुजफ्फर हुसैन, २३ रबी-उल-अव्वल १३३२ हिजरी। आपका क्या फरमान है, अल्लाह आप पर रहम करे। दीन के उलेमा और मज़बूत शरीयत के मुफ्ती इस मसले में क्या कहते हैं: जैद एक मस्जिद में मोअज़्ज़िन और इमाम दोनों पदों पर नियुक्त है। और उक्त जैद अपनी माँ को मारता-पीटता है। कुछ लोगों ने नसीहत के तौर पर कहा कि तुम अपनी माँ को किस तरह मारते हो, तुम्हारी नमाज़ और वज़ीफ़ा अल्लाह ताला के सामने क्या काम आएंगे? जवाब में उक्त जैद ने कहा कि जिस तरह दूसरे लोग पराई औरत से ज़िना करते हैं और शराब पीते हैं, उसी तरह मेरा मस्जिद में बैठ कर वज़ीफ़ा और नमाज़ करना है। तो उक्त जैद ने नमाज़ और वज़ीफ़े की तुलना घिनौने कार्यों (ज़िना और शराबखोरी) से की। तो इस सूरत में जैद का मस्जिद में अज़ान देना और उसके पीछे नमाज़ पढ़ना शरीयत के अनुसार बिना तौबा किए जायज़ है या नहीं? और यह किस दर्जे में गिना जाएगा, गुनाह-ए-कबीरा में या कुफ्र के दर्जे में? यदि यह गुनाह कुफ्र के दर्जे में आता है, तो क्या जैद की पत्नी उसके निकाह से बाहर हो जाएगी या नहीं? और क्या जैद को तौबा करने के बाद अपनी पत्नी से नए सिरे से निकाह करने की ज़रूरत होगी या नहीं? मुस्तनद (विश्वसनीय) किताबों के हवाले से जवाब इनायत फरमाएं। बयान करें और सवाब पाएं।

जवाब: पूछी गई स्थिति में, वह व्यक्ति घोर फासिक और फाजिर (पापी), कबीरा गुनाहों का अपराधी और नरक की आग तथा जब्बार (अल्लाह) के क्रोध का पात्र है। माँ को सताना घोर कबीरा गुनाह है,

उसे मारना तो दूर की बात है जिससे मुसलमान तो क्या काफिर भी परहेज करेगा और घिन महसूस करेगा। हदीस में इरशाद हुआ है:

1. अल-मुस्तदरक अलस सहीहैन, किताबुल इमाराह, दारुल फिक्र बेरूत द्वारा प्रकाशित ४/७२। नोट: मुस्तदरक में "फीहिम" के स्थान पर "फी तिल्कल असाबा" शब्द है। - नजीर अहमद सईदी।

पृष्ठ ५५७ / ७३६

شریعت مطہرہ ہرگز ایسے مشکوک شخص کو امام بنانا پسند نہیں فرماتی جو لوگ اس کی امامت میں کوشاں ہیں وہ اللہ ورسول اور مسلمانوں سب کے خائن ہوں گے۔ حدیث میں ہے حضور سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں :

من استعمل رجلا من عصابة وفیھم من ھو ارضی اللہ منہ فقد خان اللہ ورسولہ والمؤ منین جو کسی جماعت پر ایک شخص کو مقرر کرے اور ان میں وہ ہو جو اس شخص سے زیادہ اللہ کو پسندیدہ ہے تو بے شک اس نے اللہ ورسول اور مسلمانوں سب کے ساتھ خیانت کی، اس کو حاکم نے روایت کرکے صحیح قرار دیا۔ ابن عدی، عقیلی، طبرانی اور خطیب نے اسے حضرت ابن عباس رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے روایت کیا ہے

مسئلہ ۶۹۸ : از صدر بازار اسٹیشن و ڈاکخانہ رانی گنج ضلع بردوان مرسلہ مظفر حسین ۲۳ ربیع الاول ۱۳۳۲ھ ما قولکم رحمکم اللہ (آپ کا کیا ارشاد ہے اللہ آپ پر رحم کرے۔ت) کی فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین اس مسئلہ میں کہ زید ایک مسجد میں مؤذن و امام یعنی دونوں کام پر امور ہے اور زید مذکور اپنی والدہ کو زدو کوب کرتا ہے اس کو چند آدمیوں نے بطور پند کے کہا کہ تم اپنی والدہ کو کس طرح مارتے ہو تو تمہاری نماز وظیفہ کرنا تمہارا اللہ تعالیٰ کے روبرو کیا کام دیں گے؟ درجواب اس کے زید مذکور نے کہا کہ جس طرح سے اور لوگ غیر عورت سے زنا کرتے ہیں و شراب پیتے ہیں اسی طور سے ہمارا مسجد میں بیٹھ کے وظیفہ و نماز کرنا ہے، تو زید مذکور نے نماز و وظیفہ کو تشبیہ دیا ساتھ افعال قبیحہ کے، تو اس صورت میں زید کا مسجد اذان کہنا و نماز اس کے عقب پڑھنا عند الشرع جائز ہے یا نہیں بغیر توبہ کئے ہوئے ۔ اور یہ کس درجہ میں شمار ہوگا، آیا گناہ کبیرہ میں یا کہ درجہ کفر میں، در صورت اگرچہ یہ گناہ داخل ہو

درجہ کفر میں، تو یہ زید کی زوجہ اس کے عقد سے خارج ہوجائے گی یا نہیں؟ اور زید مذکور کو بعد تائب ہونے کے زوجہ سے از سر نو ضرورت در تنگی عقد کی پڑے گی یا نہیں؟ جواب بحوالہ کتب معتبر ارشاد ہو۔ بینوا توجروا

الجواب: صورت مستفسرہ میں وہ شخص سخت فاسق و فاجر مرتکب کبائر مستحق عذاب نار و غضب جبار ہے۔ ماں کو ایذا دینا سخت کبیرہ ہے نہ کہ مارنا جس سے مسلمان تو مسلمان کافر بھی پرہیز کرے گا اور گھن کھائے گا۔ حدیث میں ارشاد ہوا:

۱ لمستدرک علی الصحیحین الامارۃ امانتہ مطبوعہ دارالفکر بیروت ۴/ ۷۲ ف: مستدرک میں "فیهم" کی جگہ "فی تلك العصابة" کا لفظ ہے۔ نذیر احمد سعیدی

Fatawa Rizwia Volume 6

“Three people will not enter Paradise,” and among them is the one who disobeys his parents. (T)

Such a person is not fit for leadership in prayer (Imamat). It is stated in 'Fatawa Hujjah' and 'Ghunyah': "If they put forward a sinful person (Fasiq), they will be sinners." It is also mentioned in 'Tabyin al-Haqa'iq' etc.:

"Because in putting him forward for Imamat, there is honor for him, whereas sharia-wise, it is obligatory to humiliate him." (T)

Praying behind him is Makruh Tahrimi (highly disliked to the point of being sinful). To pray behind him is a sin, and if prayed, it is mandatory to repeat the prayer. When he is so bold that he hits his mother, then what is the surprise if he leads prayer without Wudu or leads prayer without Ghusl when it becomes necessary? And what he said in response to advice is extremely absurd and meaningless, but Takfir (declaring him an infidel) cannot be done based on it as an interpretation is possible. And Allah the Almighty knows best.

Problem 699: From Syed Ashraf Ali Sahib, 14 Jumada al-Ula 1332 AH.

What do the scholars of religion and muftis of the firm sharia say regarding this issue: Is it permissible for a Hanafi to pray behind a Shafi'i or not? And if a Shafi'i is leading the prayer and a Hanafi comes, should he join the congregation or not? That's all.

Answer: If the Shafi'i observes the obligatory acts (Fara'id) and pillars (Arkan) of the Hanafi school in purification and prayer, then praying behind him is permissible without any dislike (Karahat), although praying behind a Hanafi is superior. If the state of observance is not known, it is permissible with a slight degree of dislike. If the habit of non-observance is known, the dislike is severe. And if it is known that in this particular prayer he did not observe the requirements, then the Hanafi's following him is not permissible; the prayer will not count. In the first and second cases, one should join; in the third case, one should not join, and in the fourth case, the prayer is void. And Allah the Almighty knows best.

Problem 700: Sent by Mafkhar Hussain Sahib from Badaun, Mohalla Sarai Chaudhary, 16 Jumada al-Ula 1331 AH.

Honorable, esteemed, and dear Molvi Sahib, may your shadow be long. After the greeting of the Sunnah of Islam, I present to your blessed service:

1. Al-Mu'jam al-Kabir, Hadith 13180, narrated by Salim from Ibn 'Umar, published by Al-Maktabah al-Faysaliyyah, Beirut, 12/302.
2. Ghunyah al-Mustamli Sharh Munyah al-Musalli, chapter on Imamat, published by Suhail Academy Lahore, p. 513.
3. Tabyin al-Haqa'iq Sharh Kanz al-Daqa'iq, chapter on Imamat and ritual impurity in prayer, published by Al-Matba'ah al-Kubra al-Amiriyyah, Bulaq, Egypt, 1/134.

फतावा रज़विया जिल्द छठी

"तीन व्यक्ति जन्नत में नहीं जाएँगे," और उनमें से एक वह है जो अपने माता-पिता को सताए। (त)

ऐसा व्यक्ति इमामत के योग्य नहीं हो सकता। 'फ़तावा हुज्जा' और 'गुन्या' में है: "अगर लोगों ने किसी फ़ासिक (पापी) को इमाम बनाया तो वे गुनहगार होंगे।" 'तबीनुल हक़ाएक़' आदि में है:

"क्योंकि इमामत के लिए उसे आगे करने में उसका सम्मान है, जबकि शरीअत के अनुसार उसका अपमान आवश्यक है।" (त)

उसके पीछे नमाज़ पढ़ना मकरूह-ए-तहरीमी है, पढ़ना गुनाह है और अगर पढ़ ली तो उसे दोबारा पढ़ना वाजिब है। जब वह इतना निडर है कि माँ को मारता है, तो इसमें क्या आश्चर्य कि बिना वज़ू नमाज़ पढ़ा दे या नहाने की ज़रूरत होने पर बिना ग़ुस्ल के पढ़ा दे? और जो उसने नसीहत के जवाब में कहा वह अत्यंत निरर्थक और बेतुका है, लेकिन उससे तकफ़ीर (काफिर करार देना) नहीं की जा सकती क्योंकि उसमें तावील (व्याख्या) संभव है। वल्लाहु तआला आलम।

मसला ६९९: प्रेषक सैयद अशरफ अली साहब, १४ जमादी-उल-उला १३३२ हिजरी।

धर्म के विद्वान और शरीअत के मुफ़्ती इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि क्या हनफी का शाफ़ई के पीछे नमाज़ पढ़ना जायज़ है या नहीं? और अगर शाफ़ई नमाज़ पढ़ा रहा है और हनफी आए तो वह जमाअत में शरीक हो या नहीं? फ़क़त।

जवाब: अगर शाफ़ई पाकी (तहारत) और नमाज़ में हनफी मज़हब के फ़राइज़ और अरकान की रियायत (ध्यान) रखता है, तो उसके पीछे नमाज़ बिना कराहत (नापसंदगी) के जायज़ है, हालांकि हनफी के पीछे पढ़ना अफ़ज़ल (बेहतर) है। और अगर रियायत का हाल मालूम न हो तो थोड़े कराहत के साथ जायज़ है। और अगर रियायत न करने की आदत मालूम हो तो कराहत शदीद (सख्त) है। और अगर मालूम हो कि विशेष रूप से इस नमाज़ में रियायत नहीं की, तो हनफी को उसका इत्तेबा (पीछे चलना) जायज़ नहीं, उसके पीछे नमाज़ नहीं होगी। पहली और दूसरी स्थिति में शरीक हो जाए, तीसरी स्थिति में शरीक न हो और चौथी स्थिति में तो नमाज़ ही बातिल (अमान्य) है। वल्लाहु तआला आलम।

मसला ७००: प्रेषक मफ़ख़र हुसैन साहब, बदायूँ, मोहल्ला सराय चौधरी से, १६ जमादी-उल-उला १३३१ हिजरी।

जनाब मख़दूम मुकर्रम बंदा मौलवी साहब, दाम जिल्लुकुम। सुन्नत-ए-इस्लाम के सलाम के बाद आपकी बरकत वाली सेवा में अर्ज़ है:

1. अल-मुअजमुल कबीर, हदीस १३१८०, सालेम ने इब्ने उमर से रिवायत की, मक़तबतुल फैसलिया बैरुत ३०२/१२।
2. गुन्यातुल मुस्तमली शरह मुन्यतुल मुसल्ली, इमामत का बाब, सुहैल एकेडमी लाहौर पृष्ठ ५१३।
3. तबीनुल हक़ाएक़ शरह कंज़ुद दक़ाएक़, इमामत और नमाज़ में हदस का बाब, अल-मतबअतुल कुबरा अमीरिय्या, बोलाक़ मिस्र १/१३४।

पृष्ठ ७३६ में से ५५८

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

ثلاثہ لایدخلون الجنۃ وعد منہم العاق لوالدیہ | تین شخص جنت میں نہ جائیں گے ان میں سے ایک وہ جو اپنے ماں باپ کو ستائے۔ (ت)

ایسا شخص قابل امامت نہیں ہوسکتا۔ فتاوٰی حجۃ وغنیہ میں ہے: لوقدموا فاسقاً یا ثمنوا (اگر فاسق کو لوگوں نے امام بنایا تو وہ گناہگار ہوں گے ت) تبیین الحقائق وغیرہ میں ہے:

لان فی تقدیمہ للامامۃ تعظیمہ وقد وجب علیہم اھانتہ شرعاً | کیونکہ امامت کے لئے اس کو مقدم کرنے میں اس کی تعظیم ہے حالانکہ شرعاً اس کی اہانت لازم ہے (ت)

اس کے پیچھے نماز مکروہ تحریمی ہے کہ پڑھنا گناہ اور پڑھی تو پھیرنی واجب، جب وہ ایسا بیباک ہے کہ ماں کو مارتا ہے تو اس سے کیا تعجب کہ بے وضو نماز پڑھائے یا نہانے کی ضرورت ہو جائے کے سبب بے غسل پڑھا دے اور وہ جو اس نے پند کے جواب میں کہا سخت بیہودہ بے معنی مگر اس سے تکفیر نہیں ہوسکتی اس میں تاویل ممکن ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۶۹۹: مسئولہ سید اشرف علی صاحب ۱۴ جمادی الاولٰی ۱۳۳۲ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین ومفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ حنفی شافعی کے پیچھے نماز پڑھے تو جائز ہے یا نہیں؟ اور اگر شافعی نماز پڑھا رہا ہے اور حنفی آیا تو اس جماعت میں شریک ہو یا نہیں؟ فقط

الجواب: اگر شافعی طہارت و نماز میں فرائض وارکانِ مذہبِ حنفی کی رعایت کرتا ہے اس کے پیچھے نماز بلا کراہت جائز ہے اگرچہ حنفی کے پیچھے افضل اور اگر حالِ رعایت معلوم نہ ہو تو قدرے کراہت کے ساتھ جائز ، اور اگر عادتِ عدمِ رعایت معلوم ہو تو کراہت شدید ہے اور اگر

معلوم ہو کہ خاص اس نماز میں رعایت نہ کی تو حنفی کو اس کی اقتدا جائز نہیں اس کے پیچھے نماز نہ ہوگی، صورت اول و دوم میں شریک ہو جائے اور صورتِ سوم میں شریک نہ ہو اور چہارم میں تو نماز ہی باطل ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۷۰۰: مرسلہ مفخر حسین صاحب از بدایوں محلہ سرائے چودھری ۱۶ جمادی الاولٰی ۱۳۳۱ھ

جناب مخدوم مکرم بندہ مولوی صاحب دام ظلکم بعد سلامِ سنت الاسلام کے عرض خدمتِ با برکت میں ہے

1 المعجم الکبیر حدیث ۱۳۱۸۰ اما اسند سالم عن ابن عمیر مطبوعہ المکتبۃ الفیصلیۃ بیروت

۳۰۲/۱۲ 2 غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل فی الامامۃ، مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص

۵۱۳ 3 تبیین الحقائق شرح کنز الدقائق باب الامامۃ والحدث فی الصلوۃ مطبوعہ المطبعۃ الکبریٰ الامیر یۃ بولاق مصر ۱۳۴/۱

Fatawa Ridawiyya, Volume 6

Question: A matter needs to be inquired about: if a person's parents tell him never to come even to their funeral, should that person be made an Imam (prayer leader) or not? And should the followers offer prayer behind him or not? With utmost respect. Finis.

Answer: If the parents are angry without a Shari' (legal-religious) reason and this person does not fall short in trying to please them to the best of his ability, then there is no blame on him, and there is no harm in praying behind him. But if he causes them pain and they are angry for that reason, then he is disobedient ('aq). A disobedient person is a committer of a grave sin (kabira). Praying behind him is Makruh Tahrimi (prohibitively disliked), and making him an Imam is a sin. And if their anger was without a Shari' reason but he did not care about it, and if they pulled away, he also pulled away, then even this is against the command of Allah and His Messenger. He was not commanded to behave with equality towards them; rather, it was commanded: "And lower to them the wing of humility out of mercy"[1] [Quran 17:24]. By acting contrary to this and persisting, he becomes a fasiq (transgressor), and praying behind him is Makruh. And Allah Almighty knows best.

Problem 701: From Bareilly, Madarsa Manzar-e-Islam, asked by respected teacher Maulvi Rahmullah Sahib, 15 Safar 1337 AH. Question: What do the scholars of religion say in this matter that Khalid holds a grudge against Zaid both outwardly and inwardly, to the extent that when Zaid enters the mosque and says "Salam-Alaik," Khalid does not even reply to the greeting, and Khalid himself leads the prayer. In such a situation, will Zaid's prayer behind Khalid be valid or not? And can Zaid abandon the congregation and pray separately before or after the congregation while Khalid holds a grudge in his heart? What is the ruling for him? Explain and be rewarded.

Answer: There is no harm in praying behind him merely because of worldly grudge, and abandoning the congregation for this reason is Haram (forbidden). If Khalid's grudge and refusal to greet Zaid are due to some worldly reason, then it is forbidden beyond three days. And if it is for some religious reason and the fault lies with Khalid, then it is even more severely forbidden. If the fault lies with Zaid, then there is no blame on Khalid; Zaid himself is the culprit. And Allah Almighty knows best.

Problem 702: From town Labi Rah Station, Sarband Government Patiala, asked by Sheikh Sher Muhammad Sahib, 16 Safar 1337 AH. Question: What do the scholars of

religion and muftis of the firm Shariah say in this matter that it has been publicized regarding Zaid and Bakr that...

[1] Al-Quran 17/24 Page 559 of 736

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

प्रश्न: एक मसला पूछने की ज़रूरत पड़ी है कि जिस व्यक्ति के माता-पिता उससे कहें कि मेरे जनाज़े पर भी कभी मत आना, उस व्यक्ति को इमाम बनाना चाहिए या नहीं? और क्या मुक़्तदी (पीछे नमाज़ पढ़ने वाले) उसके पीछे नमाज़ पढ़ें या नहीं? बहुत अदब के साथ। फ़क़त।

उत्तर: यदि माता-पिता बिना किसी शरई (धार्मिक-कानूनी) कारण के नाराज़ हों और यह व्यक्ति अपनी सामर्थ्य भर उन्हें प्रसन्न करने में कोई कमी नहीं करता है, तो उस पर कोई दोष नहीं है और उसके पीछे नमाज़ पढ़ने में कोई हर्ज नहीं है। लेकिन यदि वह उन्हें कष्ट पहुँचाता है और वे इस कारण से नाराज़ हैं, तो वह अवज्ञाकारी (आक़) है। माता-पिता का अनादर करने वाला घोर पाप (कबीरा) का अपराधी है। उसके पीछे नमाज़ पढ़ना 'मकरूह तहरीमी' (सख्ती से नापसंद) है और उसे इमाम बनाना गुनाह है। और यदि उनकी नाराज़गी तो बिना शरई कारण के थी, लेकिन उसने इसकी परवाह नहीं की, अगर वे खिंचे तो यह भी खिंच गया, तो यह भी अल्लाह और उसके रसूल के आदेश के विरुद्ध है। उसे उनके साथ बराबरी का व्यवहार करने का आदेश नहीं दिया गया था, बल्कि यह आदेश दिया गया है: "और उनके लिए दया से विनम्रता का बाजू झुका दो"[1] (कुरान 17:24)। इसके विपरीत आचरण करने और इस पर अड़े रहने से भी वह 'फ़ासिक़' (पापी) हो जाता है और उसके पीछे नमाज़ पढ़ना 'मकरूह' है। वल्लाहु तआला आलम (अल्लाह ही बेहतर जानता है)।

मसला ७०१: बरेली, मदरसा मंज़रे इस्लाम से, आदरणीय शिक्षक मौलवी रहमतुल्ला साहब द्वारा पूछा गया, १५ सफ़र १३३७ हिजरी। प्रश्न: विद्वान इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि खालिद, ज़ैद के प्रति ज़ाहिरी और बातिनी (प्रकट और गुप्त) तौर पर द्वेष रखता है, यहाँ तक कि जब ज़ैद मस्जिद में दाखिल होकर "सलाम अलेक" कहता है, तो खालिद सलाम का जवाब भी नहीं देता, और खालिद ही इमामत करता है। ऐसी स्थिति में, क्या ज़ैद की नमाज़ खालिद के पीछे होगी या नहीं? और क्या ज़ैद जमात छोड़ कर जमात से पहले या बाद में अलग से नमाज़ पढ़ सकता है, जबकि खालिद दिल में द्वेष रखता है? उसके लिए क्या हुक्म है? बयान करें और पुण्य पायें।

उत्तर: केवल दुनियावी द्वेष के कारण उसके पीछे नमाज़ पढ़ने में कोई हर्ज नहीं है, और इसके लिए जमात छोड़ना हराम है। खालिद का ज़ैद से द्वेष और सलाम न करना अगर किसी दुनियावी कारण से है, तो तीन दिन से अधिक हराम है। और अगर किसी दीनी (धार्मिक) कारण से है और दोष खालिद

का है, तो यह और भी सख्त हराम है। और अगर दोष ज़ैद का है, तो खालिद पर कोई इल्ज़ाम नहीं है, ज़ैद खुद मुजरिम है। वल्लाहु तआला आलम।

मसला ७०२: कस्बा लबी राह स्टेशन, सरबंद गवर्नमेंट पटियाला से, शेख शेर मोहम्मद साहब द्वारा पूछा गया, १६ सफ़र १३३७ हिजरी। प्रश्न: विद्वान और शरीयत के मुफ़्ती इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि ज़ैद और बक्र के बारे में यह प्रचारित किया गया है कि...

[1] अल-कुरान १७/२४ पृष्ठ ७३६ का ५५९

کہ ایک مسئلہ دریافت کرنے کی ضرورت پڑی وہ یہ ہے کہ جس شخص کے والدین اس شخص سے کہیں کہ میرے جنازہ پر بھی ہرگز ہرگز نہ آئے اس شخص کو امام کرنا چاہئے یا نہیں؟ اور مقتدی اس شخص کے پیچھے نماز پڑھیں یا نہیں؟ زیادہ حد ادب۔ فقط الجواب: والدین اگر بلاوجہ شرعی ناراض ہوں اور یہ ان کی استرضاء میں حد مقدور تک کمی نہیں کرتا تو اس پر الزام نہیں اور اس کے پیچھے نماز میں کوئی حرج نہیں اور اگر یہ ان کو ایذا دیتا ہے اس وجہ سے ناراض ہیں تو عاق ہے اور عاق سخت مرتکب کبیرہ ہے اور اس کے پیچھے نماز مکروہ تحریمی اور امام بنانا گناہ اور اگر ناراضی تو ان کی بلاوجہ شرعی تھی مگر اس نے اس کی پرواہ نہ کی وہ کھینچے تو یہ بھی کھینچ گیا جب بھی مخالف حکم خدا و رسول ہے اسے حکم یہ نہیں دیا گیا کہ ان کے ساتھ برابری کا برتاؤ کرے بلکہ یہ حکم فرمایا ہے: وَاخْفِضْ لَهُمَا جَنَاحَ الذُّلِّ مِنَ الرَّحْمَةِ[1] (بچھادے ماں اور باپ کے لئے ذلت و فروتنی کا بازو رحمت سے) اس کے خلاف و اصرار سے بھی فاسق ہے اور اس کے پیچھے نماز مکروہ۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۷۰۱: از بریلی مدرسہ منظر اسلام مسئولہ جناب استاذی مولوی رحم اللہ صاحب ۱۵ صفر ۱۳۳۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید سے خالد ظاہر و باطناً کدورت رکھتا ہے حتیٰ کہ زید جس وقت مسجد میں داخل ہو کر سلام علیک کہتا ہے خالد جواب سلام بھی نہیں دیتا اور خالد ہی امامت کرتا ہے، ایسی حالت میں زید کی نماز خالد کے پیچھے ہوگی یا نہیں اور زید جماعت ترک کرکے قبل یا بعد جماعت علیحدہ نماز پڑھ سکتا ہے یا نہیں جبکہ خالد دل میں کدورت رکھتا ہے، اس کے واسطے کیا حکم ہوتا ہے؟ بینوا توجروا الجواب: محض دنیوی کدورت کے سبب اس کے پیچھے نماز میں حرج نہیں اور اس کے واسطے جماعت ترک کرنا حرام، خالد کی زید

سے کدورت اور ترک سلام اگر کسی دنیوی سبب سے ہے تو تین دن سے زائد حرام، اور کسی دینی سبب سے ہے اور قصور خالد کا ہے تو سخت تر حرام، اور قصور زید کا ہے تو خالد کے ذمے الزام نہیں زید خود مجرم ہے واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۷۰۲: از قصبہ لبی رہ اسٹیشن سر بند گورنمنٹ پٹیالہ مسئولہ شیخ شیر محمد صاحب ۱۶ صفر ۱۳۳۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین اس مسئلہ میں کہ زید و بکر کی نسبت یہ مشتہر کیا گیا ہے کہ

Fatawa Razawiyya, Volume 6

Question: Both were involved as active and passive participants in sodomy. Zaid's other relatives, such as his father and brother, lead prayers in this town. They were aware of Zaid's heinous acts through written communications, yet they never stopped Zaid from this illicit act nor reprimanded him. Rather, it is said that they themselves benefited from Zaid's illicit income. No one personally saw the act of intercourse, but circumstances point to it; for example, Bakr's brother saw them together all night and Bakr was reprimanded, letters were sent to the public via mail, Zaid publicly confessed to being the passive partner and recorded an admission before the police, which his brother supported. Despite being a man of modest means, Zaid maintained a high level of ornamentation, which his father and brother ignored. The question is: is it Sharia-permissible for someone who commits or facilitates a forbidden act to lead prayers? And if the passive partner's father and brother are aware of this and turn a blind eye without stopping him, what is the Sharia ruling regarding their leading of prayers? It is requested that the fatwa be provided with references from books.

Answer: This is a severe and grave major sin. Both the active and passive participants, if they are adults and not forced, are open transgressors (fasiq). This is their status if it is reliably well-known or if they confess, as Zaid's confession is mentioned here. It is not based on mere conjecture and suspicion, which have no standing in Sharia; rather, those who attribute major sins based on such grounds are themselves committers of major sins. Allah Almighty says:

'Why then, when you heard it, did not the believing men and believing women think good of one another...' (1)

The Messenger of Allah (peace and blessings be upon him) says:

'Beware of suspicion, for suspicion is the most false of speech.' (2)

It is not permissible to take action based on such [rumors]; rather, if it is proven and known through valid Sharia reasons, then they are open transgressors. Appointing them as Imams is a sin, praying behind them is 'Makruh-e-Tahrimi' (prohibitively disliked) such that it is a sin to pray and mandatory to repeat it. However, if there is no Sharia-compliant proof or valid confession, but rumors have spread among the people because of which...

1. Al-Quran 24/12
2. Sahih al-Bukhari, Chapter: Word of Allah Almighty regarding after a legacy or debt, published by Qadeemi Kutub Khana Karachi, 1/384.

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

प्रश्न: दोनों आपस में सक्रिय और निष्क्रिय रूप से अप्राकृतिक कृत्य (सॉडॉमी) में शामिल थे। ज़ैद के अन्य रिश्तेदार, जैसे उसके पिता और भाई, इस कस्बे में नमाज़ का नेतृत्व (इमामत) करते हैं। ज़ैद के इन घृणित कार्यों की जानकारी उसके पिता, भाई और अन्य रिश्तेदारों को लिखित रूप में दी गई थी, लेकिन इसके बावजूद उन्होंने ज़ैद को इस अवैध कार्य से कभी नहीं रोका और न ही उसे डांटा-फटकारा। बल्कि यह कहा जाता है कि ज़ैद की अवैध कमाई से वे स्वयं भी लाभ उठाते थे। किसी ने उन्हें स्वयं इस कृत्य को करते हुए नहीं देखा, लेकिन परिस्थितियाँ इस ओर इशारा करती हैं; जैसे कि बक्र के भाई ने दोनों को पूरी रात एक साथ देखा और बक्र की पिटाई की, पत्रों के माध्यम से जनता को सूचित किया गया, और ज़ैद ने सार्वजनिक रूप से और पुलिस के सामने स्वयं के निष्क्रिय साथी होने का स्वीकारनामा दिया, जिसका उसके भाई ने समर्थन किया। मामूली हैसियत होने के बावजूद ज़ैद का सजना-संवरना और उसके पिता और भाई द्वारा इस पर ध्यान न देना। प्रश्न यह है कि जो व्यक्ति शरीयत के विरुद्ध और हराम कार्य करता है या करवाता है, क्या उसकी इमामत जायज़ है? और यदि ज़ैद के पिता और भाई को इसकी जानकारी हो और वे अनदेखी करें, तो उनकी इमामत के संबंध में शरीयत का क्या आदेश है? कृपया संदर्भों के साथ जवाब दें।

उत्तर: यह एक अत्यंत गंभीर और बड़ा पाप (गुनाह-ए-कबीरा) है। यदि सक्रिय और निष्क्रिय दोनों पात्र वयस्क हों और मजबूर न हों, तो वे खुले पापी (फ़ासिक़-ए-मुअल्लिन) हैं। उनकी यह स्थिति तब मानी जाएगी जब यह प्रमाणित रूप से प्रसिद्ध हो या वे स्वयं इसे स्वीकार करें, जैसा कि यहाँ ज़ैद के कबूलनामे का उल्लेख है। यह केवल अनुमानों और शंकाओं पर आधारित नहीं है, जिनका शरीयत में कोई स्थान नहीं है; बल्कि इन आधारों पर बड़े पापों का आरोप लगाने वाले स्वयं भी बड़े पाप के दोषी होते हैं। अल्लाह तआला फ़रमाता है:

"क्यों न हुआ जब तुमने इसे सुना कि मोमिन मर्दों और मोमिन औरतों ने अपनों पर नेक गुमान किया होता।" (1)

अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

"बदगुमानी (शंका) से बचा करो क्योंकि बदगुमानी सबसे बड़ा झूठ है।" (2)

इस आधार पर कार्रवाई करना जायज़ नहीं है; बल्कि यदि सही शरई वजह से साबित और ज्ञात हो तो वे खुले पापी हैं। उन्हें इमाम बनाना गुनाह है, उनके पीछे नमाज़ पढ़ना मकरूह-ए-तहरीमी है कि

पढ़ना गुनाह और दोबारा पढ़ना वाजिब है। और यदि शरई प्रमाण या स्वीकारोक्ति न हो, लेकिन लोगों में अफवाहें फैल गई हों जिनके कारण...

---

1. अल-क़ुरआन 24/12
2. सहीह अल-बुखारी, कराची, 1/384

पृष्ठ 560/736

ہر دو باہم فاعل و مفعول تھے یعنی اغلام کرتے تھے زید مفعول کے دیگر رشتہ داران مثل پدر و برادر قصبہ ہٰذا میں امامت کرتے میں زید کے افعال قبیحہ کی خبر اس کے پدر و برادر اور دیگر رشتہ داران کو بھی تھی جس کی اطلاع ان کو بذریعہ تحریرات کے دی گئی مگر باایں ہمہ انہوں نے کبھی زید کو اس فعلِ ناجائز سے نہیں روکا اور نہ کسی قسم کی زجر و توبیخ کی بلکہ یہ کہا جاتا ہے کہ زید کی ناجائز آمدنی سے وہ خود بھی فائدہ اٹھاتے تھے فاعل و مفعول کو ہنگام اختلاط کسی شخص نے بچشم خود نہیں دیکھا مگر واقعات اس امر کو پایہ ثبوت پر پہنچا رہے ہیں مثلاً برادرِ بکر کا تمام شب دونوں کو ایک جادیکھنا اور بکر کی گوشمالی کرنا اور تحریرات کا عام لوگوں میں بذریعہ ڈاک روانہ کیا جانا اور زید کا عام لوگوں میں اپنی مفعولیت کا اقرار کرنا اور راہِ ہماں پولیس کے رو برو زید کا اقبالِ بیان تحریر کرانا اور اس کے برادر کا تائید کرنا زید کا معمولی حیثیت کا آدمی ہونا مگر زیب و زینت اس درجہ رکھنا اور اس کے پدر و برادر کا اس طرف توجہ نہ کرنا، پس دریافت طلب یہ امر ہے کہ جو شخص خلافِ وضع و حرام فعل کریں یا کرائیں ان کی امامت شرعاً جائز ہے یا نہیں؟ اور اگر مفعول کے پدر و برادر وغیرہ کو اس امر کی خبر ہو اور وہ چشم پوشی کر کے ان کو منع نہ کریں تو ان کی امامت کے متعلق شرعاً کیا حکم ہے؟ امید کہ قولِ مفتی بہ بحوالہ کتب تحریر فرما کر مشکور فرمائیں۔

الجواب: یہ سخت شدید گناہ کبیرہ ہے اور فاعل و مفعول بھی اگر بالغ و غیر مجبور ہوں فاسق ہیں ان کی یہ حالت اگر صحیح طور پر معروف و مشہور ہو یا وہ خود اقرار کرتے ہوں جس طرح یہاں زید کا اقرار مذکور ہے نہ صرف قیاسات و وسوسہ ظن جن کا شرع میں اعتبار نہیں بلکہ ان وجوہ پر کبیرہ کی نسبت کرنے والے خود ہی مرتکبِ کبیرہ ہوتے ہیں اللہ عزوجل فرماتے ہیں:

لَوْلَا إِذْ سَمِعْتُمُوهُ ظَنَّ الْمُؤْمِنُونَ وَالْمُؤْمِنَاتُ بِأَنْفُسِهِمْ خَيْرًا (1) کیوں نہ ہوا جب تم نے اسے سنا کہ مومن مردوں اور خواتین نے اپنوں پر نیک گمان کیا ہوتا۔ (ت)

رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

اِیاکم والظن فان الظن اکذب الحدیث (2) بدگمانی سے بچا کرو کیونکہ بدگمانی سب سے بڑا جھوٹ ہے الحدیث (ت)

اس پر لحاظ و کاروائی جائز نہیں بلکہ وجہِ صحیح شرعی سے ثابت و معروف ہو تو فاسق معلن ہیں ان کو امام بنانا گناہ، ان کے پیچھے نماز مکروہ تحریمی کہ پڑھنا گناہ اور پھیرنا واجب، اور اگر ثبوتِ شرعی و اقرارِ معروف نہ ہو مگر لوگوں میں افواہ اڑ گئی ہو جن کے سبب

---

1 القرآن ۲۴/۱۲ 2 صحیح البخاری باب قول اللہ عزوجل من بعد وصیۃ یوصی بھا او دین مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/۳۸۴

Fatawa-e-Razvia Volume 6

If people harbor hatred towards them and their leadership results in a small congregation, then leading the prayer in such a state is Makruh Tanzihi (mildly disliked),

Even if the sin is not proven, or even if it does not exist, because the basis is the aversion, like a person whose leprosy has spread, and refuge is sought with Allah the Almighty. -(T)

If the father and brother are capable of stopping it and do not stop it or are pleased with this act, they are also transgressors (Fasiq):

Allah the Almighty says: "O you who have believed, protect yourselves and your families from a Fire whose fuel is people and stones."[1] And Allah the Almighty says: "They used not to prevent one another from any wrongdoing they did."[2] (T)

If this condition of theirs is well-known, then the ruling for them is also the same: making them Imam is a sin and praying behind them is Makruh Tahrimi (prohibitively disliked). It is stated in Fatawa Hujjah and Ghunyah: "If they put forward a transgressor, they are sinning."[3] (If they chose a transgressor as a leader, they will be sinners. T). And if benefiting from that forbidden income is proven by Shari'ah evidence in the same way, not just that it is said 'it's nothing'. The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

"Wretched is the vehicle of a man: 'they asserted' (i.e., using hearsay)."[4] - Reported by Ahmad and Abu Dawood from Hudhayfah (may Allah be pleased with him). Giving news based on doubt and estimation is loathsome. Imam Ahmad and Abu Dawood have narrated this on the authority of Hazrat Hudhayfah (may Allah be pleased with him).

[1] Al-Quran 66/6 [2] Al-Quran 5/79 [3] Ghunyah al-Mustamli Sharh Munyah al-Musalli, Chapter on Imamah, printed at Sohail Academy, Lahore, p. 513 [4] Musnad Ahmad bin Hanbal, Narrated from Hudhayfah (may Allah be pleased with him), printed at Dar al-Fikr Beirut 5/401; Sunan Abu Dawood, Chapter on a man saying 'they asserted', printed at Aftab-e-Alam Press Lahore 2/324

फ़तावा-ए-रज़विया जिल्द 6

उनसे नफरत और उनकी इमामत में जमात की कमी हो तो इस हालत में उनकी इमामत मकरूह तंज़ीही (हल्का नापसंद) है,

चाहे गुनाह साबित न हो बल्कि हो ही न क्योंकि बुनियाद तो नफरत है उस शख़्स की तरह जिसका बरसो (सफेद दाग) फैल गया हो, और अल्लाह तआला की पनाह। -(त)

बाप और भाई अगर उसे रोकने में समर्थ हैं और नहीं रोकते या इस काम पर राजी हैं तो वे भी फासिक़ (पापी) हैं:

अल्लाह तआला का फरमान है: "ऐ ईमान वालों! अपने आप को और अपने घर वालों को उस आग से बचाओ जिसका ईंधन इंसान और पत्थर हैं।"[1] और अल्लाह तआला का यह फरमान भी है: "वे एक-दूसरे को उन बुरे कामों से नहीं रोकते थे जो वे करते थे।"[2] (त)

उनकी यह हालत अगर मशहूर हो तो उनके लिए भी वही हुक्म है कि उन्हें इमाम बनाना गुनाह है और उनके पीछे नमाज़ मकरूह तहरीमी (सख़्त नापसंद) है। फ़तावा हुज्जह और ग़ुनया में है: "अगर उन्होंने फासिक़ को आगे बढ़ाया तो वे गुनहगार होंगे।"[3] (त) और अगर उस हराम कमाई से उनका फायदा लेना इसी तरह शरई सबूत से साबित हो, न कि सिर्फ इतना कि कहा जाता है 'यह कुछ नहीं है'। अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं:

"किसी आदमी के लिए सबसे बुरा सहारा 'लोग कहते हैं' (अफ़वाहें) है।"[4] - इसे अहमद और अबू दाऊद ने हज़रत हुज़ैफा (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) के हवाले से बयान किया है। शक और अनुमान की बुनियाद पर खबर देना बुरा है। इसे इमाम अहमद और अबू दाऊद ने हज़रत हुज़ैफा (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) के हवाले से बयान किया है।

[1] अल-कुरान 66/6 [2] अल-कुरान 5/79 [3] ग़ुनया अल-मुस्तमली शरह मुनया अल-मुसल्ली, इमामत का अध्याय, मुद्रित सुहैल एकेडमी लाहौर, पृष्ठ 513 [4] मुसनद अहमद बिन हंबल, हज़रत हुज़ैफा (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) से रिवायत, मुद्रित दारुल फिक्र बेरुत 5/401; सुनन अबू दाऊद, बाब: उस आदमी के बारे में जो कहता है 'लोग कहते हैं', मुद्रित आफ़ताब-ए-आलम प्रेस लाहौर 2/324

ان سے نفرت اور ان کی امامت میں جماعت کی قلت ہو تو اس حالت میں ان کی امامت مکروہ تنزیہی ہے،

وان لم یثبت الذنب بل لولم یکن لان المناط النفرۃ کمن شاع برصہ والعیاذ باللہ تعالی۔ -(ت) اگرچہ گناہ ثابت نہ ہو بلکہ ہو ہی نہ کیونکہ بنیاد تو نفرت ہے اس شخص کی طرح جس کا برص پھیل گیا ہو، والعیاذ باللہ تعالٰی ۔ -(ت)

پدر و برادر اگر اس کے روکنے پر قادر ہیں اور نہیں روکتے یا اس فعل پر راضی ہیں وہ بھی فاسق ہیں:

قال اللہ تعالی یَا أَیُّهَا الَّذِینَ آمَنُوا قُوا أَنفُسَکُمْ وَأَهْلِیکُمْ نَارًا وَقُودُهَا النَّاسُ وَالْحِجَارَةُ 1 وقال تعالی کَانُوا لَا یَتَنَاهَوْنَ عَن مُّنکَرٍ فَعَلُوهُ 2 اللہ تعالٰی کا فرمان ہے: اے اہلِ ایمان اپنے آپ کو اور اپنے اہلِ کو اس آگ سے بچاؤ جس کا ایندھن لوگ اور پتھر ہوں گے۔ اور اللہ تعالٰی کا یہ فرمان بھی ہے: وہ اس برے کام سے منع نہیں کرتے تھے جو برا کام لوگ کرتے تھے (ت)

ان کی یہ حالت اگر معروف ہو تو ان کا بھی وہی حکم ہے کہ انہیں امام بنانا گناہ اور ان کے پیچھے نماز مکروہ تحریمی۔ فتاوٰی حجہ وغنیہ میں ہے: لو قدموا فاسقاً یاثمون 3 (اگر انہوں نے فاسق کو مقدم کر دیا تو وہ گنہگار ہوں گے۔ت) اور اگر اس حرام کمائی سے ان کا فائدہ لینا اسی طرح بہ ثبوت شرعی ثابت ہو نہ فقط اتنا کہ کہا جاتا ہے یہ کوئی چیز نہیں۔ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

بئس مطية الرجل زعموا 4- رواه حمد و ابوداؤد عن حذيفه رضی الله تعالیٰ عنہ شک اور تخمینہ کی بنیاد پر خبر دینا قبیح ہے۔ اس کو امام احمد اور ابو داؤد نے حضرت حذیفہ رضی الله تعالیٰ عنہ کے حوالے سے بیان کیا ہے۔

1 القرآن ۶/۶۶ 2 القرآن ۷۹/۵ 3 غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل فی الامامۃ مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۵۱۳ 4 مسند احمد بن حنبل ماروی عن حذیفہ رضی الله تعالیٰ عنہ مطبوعہ دارالفکر بیروت ۴۰۱/۵، سنن ابوداؤد باب فی الرجل یقول زعموا مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور ۳۲۴/۲

Fatawa Razawiyyah Volume 6 If they do not benefit from this cursed income, they are not blamed.

Allah the Almighty says: "And no bearer of burdens will bear the burden of another."[1] (Quran 6:164) Allah the Almighty's command is: that no soul-carrying burden will carry the burden of another. (t)

However, if public rumors cause hatred and decrease in the congregation, then their leadership (Imamat) is Makruh Tanzihi (mildly disliked) and inappropriate, although it is not Makruh Tahrimi (prohibitively disliked) or a sin like the first case. By the grace of Allah, no fee is charged for fatwas here. By the grace of Allah, inquiries (istifta) come from all over India and other countries like China, Africa, America, and even from Arabia and Iraq, and at one time four hundred fatwas accumulate. By the grace of Allah, since the time of my great-grandfather (may his secret be sanctified) until 1237 AH, fatwas have been issued from this door for ninety-one (91) years. And for this humble servant (may he be forgiven), it has been almost fifty-one (51) years since fatwas began flowing from my pen; specifically, on the 14th of Safar, it will be fifty (50) years and six (6) months. In these ninety-one (9 less than 100) years, how many thousands of fatwas have been written; twelve volumes are just the fatwas of this humble servant. By the grace of Allah, not a single penny has ever been taken here, nor will it be taken, with the help of Allah and all praise belongs to Him. It is unknown who those low-natured and lowly-motivated people are who have made this (issuing fatwas) a profession, due to which distant uninformed Muslims have asked many times, "What will be the fee?"

"And I do not ask you for it any reward. My reward is only from the Lord of the worlds."[2] (Quran 26:127) I ask no reward from you for this; my reward is with the Lord of all the worlds, if He wills. And Allah the Almighty knows best.

Problem 703: From Bombay, Qasaban area, Post 30, sent by Abdul Razzaq, 17 Shaban 1330 AH: What do the scholars of religion and jurists of the clear Shariah say regarding this matter: Zaid led prayers in a mosque for several months. Some of Zaid's actions became known there, such as not using a clay clod (for cleaning) after urinating, but instead performing istinja with water immediately at the same spot after urinating and defecating, then wearing a loincloth (langot) to pray, and mingling, joking, and mocking with market women. Before these matters could spread among the congregation, Zaid moved to another mosque. There too, his actions continued as before. When people asked him about wearing a loincloth and

not using clay clods, he said, "I have an excuse; I cannot take clay clods and I wear the loincloth due to my excuse, but I change clothes for prayer." And the mingling with women continues as before. People are severely fed up with such actions and are strongly against praying behind him; in fact, people have stopped praying behind him. A few people, out of their own personal whims, are adamant about supporting this deceiver despite knowing about his excuses and these actions.

---

[1] Al-Quran 6/164 [2] Al-Quran 26/127

फतावा रज़विया जिल्द 6 यदि वे इस शापित कमाई से लाभ नहीं उठाते हैं, तो उन पर कोई आरोप नहीं है।

अल्लाह तआला का इरशाद है: "और कोई बोझ उठाने वाली जान दूसरे का बोझ नहीं उठाएगी।"[1] (कुरान 6:164) अल्लाह तआला का फरमान है: कि कोई भी बोझ उठाने वाली आत्मा दूसरे का बोझ नहीं उठाएगी। (त)

लेकिन अगर आम अफवाहों के कारण नफरत और जमात (मंडली) में कमी हो, तो उनकी इमामत 'मकरूह तंज़ीही' (हल्का नापसंद) और अनुचित होगी, हालांकि यह पहली स्थिति की तरह 'मकरूह तहरीमी' या गुनाह नहीं है। यहाँ अल्लाह के शुक्र से फतवे पर कोई शुल्क नहीं लिया जाता है। अल्लाह के फ़ज़ल से पूरे भारत और चीन, अफ्रीका, अमेरिका और खुद अरब और इराक जैसे अन्य देशों से इस्तफ़ता (सवाल) आते हैं और एक समय में चार-चार सौ फतवे जमा हो जाते हैं। अल्हम्दुलिल्लाह, मेरे परदादा (अल्लाह उनके रहस्य को पवित्र करे) के समय से 1237 हिजरी तक, इस द्वार से फतवे जारी किए जा रहे हैं इकानवे (91) वर्षों से। और खुद इस विनम्र सेवक (अल्लाह उसे क्षमा करे) की कलम से फतवे निकलते हुए इक्यावन (51) साल होने को हैं, यानी इस सफर की 14 तारीख को पचास (50) साल छह (6) महीने बीत गए। इन इकानवे (100 में 9 कम) वर्षों में हजारों फतवे लिखे गए; बारह खंड तो केवल इस सेवक के फतवों के हैं। अल्हम्दुलिल्लाह, यहाँ कभी एक पैसा भी नहीं लिया गया और न ही लिया जाएगा, अल्लाह की मदद और प्रशंसा के साथ। पता नहीं वे कौन से निम्न स्वभाव और नीच हिम्मत वाले लोग हैं जिन्होंने इसे पेशा बना लिया है, जिसके कारण दूर-दराज के अनजान मुसलमान कई बार पूछ चुके हैं कि फीस क्या होगी?

"और मैं तुमसे इस पर कोई बदला नहीं माँगता। मेरा बदला तो केवल दुनिया के पालनहार पर है।"[2] (कुरान 26:127) मैं तुमसे इस पर कोई प्रतिफल नहीं माँगता, मेरा प्रतिफल तो सारे जहान के परवरदिगार पर है, अगर वह चाहे। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 703: बॉम्बे, कसाबां मुहल्ला, पोस्ट 30 से, अब्दुल रज्जाक द्वारा प्रेषित, 17 शाबान 1330 हिजरी: धर्म के विद्वान और शरीयत के मुफ्ती इस मामले में क्या कहते हैं कि ज़ैद पहले कुछ महीनों तक एक मस्जिद में इमामत करता रहा। वहाँ ज़ैद की कई हरकतें पता चलीं, जैसे पेशाब करने के बाद ढेला (सफाई के लिए) न लेना, बल्कि पेशाब और पाखाने के तुरंत बाद उसी जगह पानी से इस्तिन्जा करना और लंगोट बांधकर नमाज़ पढ़ना, और बाज़ारू औरतों के साथ घुलना-मिलना,

मज़ाक और मस्करी करना। इन बातों की चर्चा जमात के लोगों में होने ही वाली थी कि ज़ैद दूसरी मस्जिद में चला गया। वहाँ भी उसकी वही हरकतें बदस्तूर जारी रहीं। जब लोगों ने उससे लंगोट बांधने और ढेला न लेने के बारे में पूछा, तो उसने कहा, "मैं मजबूर हूँ, ढेला नहीं ले सकता और लंगोट मजबूरी के कारण बांधता हूँ, लेकिन नमाज़ के समय कपड़े बदल लेता हूँ।" और औरतों से मिलना-जुलना पहले की तरह जारी है। लोग उसकी ऐसी हरकतों से बहुत तंग हैं और उसके पीछे नमाज़ पढ़ने के सख्त खिलाफ हैं; बल्कि लोगों ने उसके पीछे नमाज़ पढ़ना छोड़ दिया है। कुछ लोग अपनी व्यक्तिगत पसंद के कारण इस धोखेबाज़ का समर्थन कर रहे हैं, बावजूद इसके कि उसकी मज़बूरी और ये हरकतें उन्हें पता हैं।

---

[1] अल-कुरान 6/164 [2] अल-कुरान 26/127

पृष्ठ 562/736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم اس ملعون کمائی سے فائدہ نہیں لیتے تو ان پر الزام نہیں۔

قال اللہ تعالٰی لَا تَزِرُ وَازِرَةٌ وِّزْرَ أُخْرٰی ۱- (القرآن ۱۶۴/۶) اللہ تعالٰی کا ارشاد ہے: کہ کوئی بوجھ اٹھانے والی جان دوسرے کا بوجھ نہیں اٹھائے گی (ت)

لیکن افواہ عام کی بنا پر نفرت و تقلیل جماعت ہو تو ان کی امامت مکروہ تنزیہی ہے اور نامناسب ہوگی اگرچہ پہلی صورت کی طرح مکروہ تحریمی اور گناہ نہیں، یہاں بحمد اللہ تعالٰی فتوٰی پر کوئی فیس نہیں لی جاتی بفضلہ تعالٰی بفضلہ تعالٰی تمام ہندستان و دیگر ممالک مثل چین وافریقہ وامریکہ وخود عرب شریف وعراق سے استفتآ آتے ہیں اور ایک وقت میں چار چار سو فتوے جمع ہو جاتے ہیں بحمد اللہ تعالٰی حضرت جد امجد قدس سرہ العزیز کے وقت سے اس ۱۲۳۷ھ تک اس دروازے سے فتوے جاری ہوئے اکانوے ۹۱ برس اور خود اس فقیر غفرلہ کے قلم سے فتوے نکلتے ہوئے اکاون ۵۱ برس ہونے آئے یعنی اس صفر کی ۱۴ تاریخ کو پچاس ۵۰ برس چھ ۶ مہینے گزرے، اس نو ۹ کم سو ۱۰۰ برس میں کتنے ہزار فتوے لکھے گئے، بارہ مجلد تو صرف اس فقیر کے فتاوے کے ہیں بحمد اللہ یہاں کبھی ایک پیسہ نہ لیا گیا نہ لیا جائے گا بعونہ تعالٰی وللہ الحمد معلوم نہیں کون لوگ ایسے پست فطرت و دنی ہمت ہیں جنھوں نے یہ صیغہ کسب کا اختیار کر رکھا ہے جس کے باعث دور دور کے ناواقف مسلمان کئی بار پوچھ چکے ہیں کہ فیس کیا ہوگی ؟

وَمَا أَسْئَلُكُمْ عَلَيْهِ مِنْ اَجْرٍ إِنْ أَجْرِیَ إِلَّا عَلَی رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ ۲ میں تم سے اس پر کوئی اجر نہیں مانگتا میرا اجر تو سارے جہاں کے پروردگار پر ہے اگر وہ چاہے۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۷۰۳ : از بمبئی محلہ قصابان پوست ۳۰ مرسلہ عبد الرزاق ۱۷ شعبان ۱۳۳۰ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین اس مسئلہ میں کہ زید چند ماہ تک پہلے ایک مسجد میں امامت کرتا رہا اور وہاں پر زید کی کئی حرکتیں معلوم ہوئیں کہ پیشاب کر کے ڈھیلا نہ لینا بلکہ پیشاب و پاخانہ کر کے اسی وقت اسی جگہ پانی سے استنجاء کر کے اور لنگوٹ باندھ کر نماز پڑھنا اور بازاری عورتوں کے ساتھ خلا ملا مزاح و تمسخر کرنا، ان باتوں کا چرچا اہل جماعت میں ہونے کو تھا کہ زید دوسری مسجد میں منتقل ہو گیا وہاں بھی اس کی وہی حرکتیں بدستور قائم رہیں، جب لوگوں نے اس کو لنگوٹ باندھنے اور ڈھیلے نہ لینے کی نسبت پوچھا تو کہا میں معذور ہوں ڈھیلا نہیں لے سکتا اور لنگوٹ میں بوجھ عذر کے باندھتا ہوں مگر نماز کے وقت صرف کپڑے بدل لیتا ہوں۔ اور خلا ملا عورتوں سے بدستور ہے، لوگ اس کی ایسی حرکتوں سے سخت بےزار ہیں اور اس کے پیچھے نماز پڑھنے سے بھی سخت ناراض ہیں، بلکہ لوگوں نے اس کے پیچھے نماز پڑھنا ترک کر دیا چند لوگ اپنی نفسانیت سے اس مکار کی حمایت پر اڑے ہیں باوجود اس کے معذور ہونے اور یہ حرکتیں معلوم ہونے کے۔

---

۱ القرآن ۶/۱۶۴ ۲ القرآن ۲۶/۱۲۷

Fatawa Razawiya, Volume 6

...nor do they want to remove him from this position. Now Zaid, due to his ruthlessness and lack of religiosity, has taught them this lesson that it is stated in the Hadith: "Leave what makes you doubt for what does not make you doubt, even if the muftis give you a fatwa."[1] His aim with this statement is: if someone seeks a fatwa regarding me, then do not accept that fatwa and leave it. And during his speech, he made this slander against the people of Islam in a sermon gathering that there is no house or street in Mumbai where adultery does not take place day and night. Now tell, how is it to pray behind a person in such a state who does not use a clod of earth (for purification), is 'ma'zur' (has a valid excuse), leads prayers in impure clothes, is a liar, a slanderer, and a deceiver who torments Muslims and prevents the mention of good? And what is the ruling for one who supports him? Should such a person be removed from this position or not? And what is the meaning of this Hadith "Leave what makes you doubt..." etc.? What is the ruling for one who misleads people by fabricating from such a matter? Please clarify and be rewarded.

Answer:

Yes, several matters are worth considering: (1) For a man, after urination, 'Istibra' (ensuring the traces of urine are gone) to the point of achieving heart's contentment that the flow has stopped is obligatory (Farz), i.e., a practical obligation (Farz-e-Amali) which is a higher category of necessary (Wajib), without which the action is not valid. Therefore, some have called it Farz, some Wajib, and some Lazim (mandatory), which includes both Farz and Wajib. Furthermore, temperaments vary in this: for some, the moisture that appears at the opening of the organ after urination disappears immediately, providing contentment that nothing more will come; for some, coughing just two or three times is enough; for some, rubbing the organ from top to bottom once or twice; and some need to walk from ten steps up to four hundred steps; some need to lie on their left side; some need to press the organ by placing one thigh over the other; in short, there are different methods and every person and their temperament (is different). It is stated in Durr-al-Mukhtar:

It is necessary to end the effect of urine, whether by walking, coughing, or lying on the left side, and due to the different temperaments of people, the ruling varies (i.e., some achieve purity quickly, others late). (T)

Istibra is necessary, whether by walking, or coughing, or sleeping on the left side, and it varies according to people's temperaments.[2]

---

1 Al-Mu'jam al-Kabir, Musnad Wathilah bin al-Asqa', published by Al-Maktabah al-Fasliyah, Beirut, 8/22; Majma' al-Zawa'id, Chapter on Scrupulousness regarding Testimonies, published by Dar al-Kitab, Beirut, 10/294. 2 Durr-al-Mukhtar, Chapter on Istinja, published by Matba' Mujtabai, Delhi, 1/57.

फ़तावा रज़विया, खंड 6

...न ही वे उसे इस पद से हटाना चाहते हैं। अब ज़ैद ने अपनी क्रूरता और अधर्म के कारण उन्हें यह सबक सिखाया है कि हदीस में है: "उसे छोड़ दो जो तुम्हें संदेह में डाले उसके लिए जो तुम्हें संदेह में न डाले, भले ही मुफ्ती तुम्हें फतवा दें।"[1] इस बयान से उसका उद्देश्य यह है कि यदि कोई मेरे संबंध में फतवा मांगे, तो उस फतवे को स्वीकार न करो और उसे छोड़ दो। और अपने भाषण के दौरान, उसने एक उपदेश सभा में इस्लाम के लोगों पर यह लांछन लगाया कि मुंबई में कोई घर या गली ऐसी नहीं होगी जहाँ दिन-रात व्यभिचार (ज़िना) न होता हो। अब बताइए कि जिस व्यक्ति की ऐसी स्थिति हो कि वह ढेला न लेता हो, माज़ूर (लाचार) हो, अशुद्ध कपड़ों में नमाज़ पढ़ाता हो, झूठा हो, लांछन लगाने वाला हो और मुसलमानों को सताने वाला फ़रेबी हो, जो नेक चर्चा से रोकता हो, ऐसे व्यक्ति के पीछे नमाज़ पढ़ना कैसा है? और जो उसका समर्थन करे उसका क्या हुक्म है? और क्या ऐसे व्यक्ति को इस पद से बर्खास्त किया जाना चाहिए या नहीं? और इस हदीस "उसे छोड़ दो जो तुम्हें संदेह में डाले..." आदि का क्या अर्थ है? जो ऐसे मसले से अपनी मनगढ़ंत बातें जोड़कर लोगों को गुमराह करे उसका क्या हुक्म है? स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिलेगा।

जवाब:

हाँ, कई बातें विचारणीय हैं: (1) पुरुष के लिए पेशाब के बाद 'इस्तिबरा' (पेशाब के निशान पूरी तरह खत्म होने का इत्मीनान कर लेना) अनिवार्य (फ़र्ज़) है, यानी व्यावहारिक फ़र्ज़ (फ़र्ज़-ए-अमली) जो वाजिब की उच्च श्रेणी है, जिसके बिना कार्य (नमाज़) सही नहीं होता। इसीलिए कुछ ने इसे फ़र्ज़, कुछ ने वाजिब और कुछ ने लाज़िम (अनिवार्य) कहा है, जिसमें फ़र्ज़ और वाजिब दोनों शामिल हैं। फिर इसमें स्वभाव अलग-अलग होते हैं, कुछ को वह नमी जो पेशाब के बाद लिंग के छिद्र पर आती है, हटते ही इत्मीनान हो जाता है कि अब कुछ नहीं आएगा; कुछ के लिए सिर्फ दो-तीन बार खंखारना पर्याप्त होता है; कुछ के लिए लिंग को ऊपर से नीचे की ओर एक या दो बार मलना; और कुछ को टहलने की आवश्यकता होती है, दस कदम से लेकर चार सौ कदम तक; कुछ को बाईं करवट लेटना; कुछ को जांघ पर जांघ रखकर लिंग को दबाना; संक्षेप में, विभिन्न तरीके हैं और हर व्यक्ति और उसका स्वभाव (अलग होता है)। 'दुर्रे मुख्तार' में है:

पेशाब का प्रभाव खत्म करना लाज़िम है, चाहे पैदल चलने, चाहे खंखारने या बाईं ओर लेटने से हो, और लोगों के विभिन्न स्वभावों के कारण हुक्म भिन्न होता है (यानी किसी को शीघ्र पवित्रता प्राप्त होती है, किसी को देर से)। (त)	**'यज़िबुल इस्तिबराउ बि-मश्यिन औ तनहनहुइन औ नौमिन अला शक़्क़िहिल ऐसरि व यख़्तलिफ़ु बि-तबाइ'इन नासि'[2]**

---

1 अल-मुअजम अल-कबीर, मुसनद वाथिला बिन अल-असका, प्रकाशित अल-मकतबा अल-फसलिया बेरूत, 8/22; मजमा अल-ज़वाइद, गवाही के संबंध में परहेजगारी का अध्याय, प्रकाशित दार अल-किताब बेरूत, 10/294। 2 दुर्रे मुख्तार, इस्तिंजा का अध्याय, प्रकाशित मतबा मुजतबाई दिल्ली, 1/57।

पृष्ठ 563/736

بھی اس کو علیحدہ اس منصب سے نہیں کرنا چاہتے اب زید نے اپنی سفاکی اور بے دینی کی وجہ ان کو یہ سبق پڑھارکھا ہے کہ حدیث میں ہے: دع مایر یبک الی مایر یبک وان افتاک المفتون 1۔ کہ تجھے کسی چیز میں شک یا شبہ آجائے تو اس کو چھوڑ دے اگرچہ مفتی لوگ فتویٰ دیں تو تو اس کو نہ مان غرض اس کی اس بیان سے یہ ہے کہ میری نسبت اگر کوئی شخص فتویٰ طلب کرے تو اس فتوے کو قبول مت کرو اور چھوڑ دو اور اثنائے بیان میں یہ افتراء اہل اسلام پر مجلس وعظ میں کیا کہ بمبئی میں کوئی مکان یا کوئی گلی کوچہ ایسانہ ہو گا کہ جس میں شبانہ روز زنا نہ ہوتا ہو۔ اب بتلائے کہ جس شخص کی ایسی حالت ہو کہ ڈھیلا نہ لیتا ہو معذور ہو ہو نجس کپڑوں سے نماز پڑھاتا ہو ، دروغ گو ہو ، مفتری ہو اور مسلمانوں کو گھلنے والا فریبی ہو ذکر خیر سے مانع ہو، ایسے کے پیچھے نماز پڑھنا کیسا ہے؟ اور جو اس کی حمایت کرے اس کا کیا حکم ہے اور ایسے کو اس منصب سے خارج کرنا چاہیے یا نہیں؟ اور اس حدیث دع مایر یبک الخ کا کیا مطلب ہے؟ جو ایسے مسئلے سے اپنی گھڑت لگا کر لوگوں کو گمراہ کرے اس کا کیا حکم ہے؟ بینوا توجروا

الجواب:

ہاں چند امور قابل لحاظ : (۱) مرد کو پیشاب کے بعد استبراء کہ اثر بول منقطع ہو جانے پر اطمینان قلب حاصل ہو جائے فرض ہے یعنی عملی کہ واجب کی قسم اعلیٰ ہے جس کے بغیر عمل صحیح نہیں ہوتا ولذا بعض نے فرض بعض نے واجب بعض نے لازم فرمایا کہ فرض و واجب دونوں کو شامل ہے، پھر اس میں طبائع مختلف ہیں، بعض کو وہ نم کہ سوراخ ذکر پر بعد بول زائل ہوتے ہی

اطمینان ہو جاتا ہے کہ اب کچھ نہ آئے گا، بعض کو صرف دو تین بار کھنکھار نا کافی ہوتا ہے بعض کو ذکر کو دو یا ایک بار اوپر سے نیچے کو مل دینا اور بعض کو ٹہلنے کی حاجت ہوتی ہے دس قدم سے چار سو قدم تک بعض کو بائیں کروٹ پر لیٹنا ، بعض کو ران پر ران رکھ کر ذکر کو دبانہ ، غرض مختلف طریقے ہیں اور ہر شخص اور اس کی طبیعت (مختلف ہوتی ہے) در مختار میں ہے:

بول کا اثر ختم کرنا لازم ہے خواہ پیدل چلنے ، خواہ کھنکھارنے یا بائیں جانب لیٹنے سے ہو اور لوگوں کی مختلف طبائع کی وجہ سے حکم مختلف ہوتا ہے (یعنی کسی کو جلد پاکیزگی حاصل ہوتی ہے کسی کو دیر سے).(ت)

یجب الاستبراء بمشی او تنحنح او نوم علی شقہ الایسر ویختلف بطبائع الناس 2.

---

1 المعجم الکبیر مالسند واثلۃ بن اسقع مطبوعہ المکتبہ الفصلیہ بیروت ۸/۲۲، مجمع الزوائد باب التورع عن الشہادات مطبوعہ دارالکتاب بیروت ۱۰/ ۲۹۴ 2 درمختار، فصل فی الاستنجاء مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ، ۱/ ۵۷

Fatawa Ridawiyyah Volume 6

It is stated in Radd al-Muhtar:

[Arabic Text Block] In Al-Ghaznawiyyah, a woman is like a man except regarding istibra (cleansing after urination); for istibra is not obligatory for her. Rather, as soon as she finishes, she should wait a brief moment and then perform istinja (washing). A similar view is in Al-Imdad. It was expressed with the word "obligation" (wujub) following Al-Durar and others. Some expressed it as "mandatory" (fard), and some used the word "yanbaghi" (it is appropriate) and "'alayhi" (it is upon him), indicating it is recommended (mandub), as some Shafi'is have explicitly stated. This applies when there is no fear of anything leaking afterward; then it is recommended for excessive istibra. Or, istibra refers specifically to these things like walking and coughing. As for the essence of istibra until the heart is satisfied that the dripping has ceased, that is mandatory (fard). This is what is meant by "obligation". Therefore, Shurunbulali said: "It is binding (yalzam) on a man to perform istibra until the trace of urine is gone and his heart is satisfied." He said: "I expressed it with the word 'luzum' (binding) because it is stronger than 'wajib' (obligatory), since if it is missed, the validity (of the prayer) is lost. Thus, it is not correct for a worshiper to start wudu until his heart is satisfied that the dripping has ceased." (End of quote).

[Urdu Translation Column] In Ghaznawiyyah, it is stated that a woman is like a man, however, istibra is not binding upon a woman. Rather, as soon as she is finished, she can perform istinja after waiting a short while. A similar view is in Imdad. Following Durar etc., it has been expressed with the word "wujub" (obligation). Some people have expressed it with the word "fard" (mandatory), and some with the words "yanbaghi" and "alayhi". Thus, it is mandub (recommended), as some Shafi'is have clarified. Its context is when there is no fear of anything exiting after it, then it is mandub for exaggeration in istibra. Or, istibra refers to these specific things such as walking and coughing. As for the essence of istibra, to the extent that the heart becomes satisfied with the cessation of drops, that is fard, and this is also what is meant by wujub. That is why Shurunbulali said it is binding on a man to perform istibra until the trace of urine is removed and the heart becomes satisfied, and said I have expressed it with the word "luzum" because it is stronger than wajib, because its loss causes the loss of validity. Therefore, it is not correct for a person praying to start wudu until the heart is satisfied by the removal of urine splashes. (T)

If Zaid is such that he achieves correct satisfaction by just sitting there and coughing or rubbing, and performs istinja with only water after istibra, then this fard is fulfilled and wudu is correct. And if, for example, walking etc. is required by him and he washes with water without performing it, then he is a forsaker of a fard, and if he performs wudu in this state, then the wudu is invalid and his prayer is void.

1 Radd al-Muhtar, Chapter on Istinja, Printed by Mustafa al-Babi, Egypt 1/253

फतावा रिज़विया जिल्द 6

रद्द अल-मुह्तार में है:

[अरबी पाठ] 'अल-ग़ज़नविया' में है कि औरत मर्द की तरह है, अलबत्ता औरत पर इस्तिबराह (पेशाब के बाद पाकी हासिल करना) लाज़िम नहीं है, बल्कि जैसे ही फ़ारिग हो, थोड़ी देर के बाद इस्तिंजा (धोना) कर सकती है। इसी तरह 'अल-इमदाद' में भी है। उसने 'दुरर' वगैरह की पैरवी करते हुए लफ़्ज़ 'वुजूब' (अनिवार्यता) से ज़िक्र किया है। और कुछ लोगों ने लफ़्ज़ 'फ़र्ज़', और कुछ ने लफ़्ज़ 'यन्बग़ी' (उचित है) और 'अलैहि' (उस पर है) से ज़िक्र किया है, तो यह 'मंदूब' (पसंदीदा) है जैसा कि कुछ शाफ़ईया ने स्पष्ट किया है। इसका मक़सद यह है कि जब उसके बाद किसी चीज़ के निकलने का ख़ौफ़ न हो, तो यह इस्तिबराह में मुबालग़ा (अतिशयता) के लिए मंदूब है। या इस्तिबराह से मुराद ये विशेष चीज़ें हैं जैसे चलना और खंखारना। रहा असल इस्तिबराह यहाँ तक कि कतरों के ख़त्म होने के साथ दिल मुतमईन (संतुष्ट) हो जाए, तो वह फ़र्ज़ है, और वुजूब से भी यही मुराद है। इसीलिए शरुन्बुलाली ने कहा: "आदमी पर इस्तिबराह लाज़िम है यहाँ तक कि पेशाब का असर ज़ाइल (खत्म) हो जाए और दिल मुतमईन हो जाए।" और कहा कि मैंने इसे लफ़्ज़ 'लुज़ूम' (अनिवार्यता) के साथ इसलिए ज़िक्र किया क्योंकि यह वाजिब से ज़ियादा मज़बूत है, क्योंकि इसके छूटने से नमाज़ का जाइज़ होना फ़ौत (खत्म) हो जाता है। अतः नमाज़ी के लिए वुज़ू शुरू करना उस वक़्त तक दुरुस्त नहीं जब तक कि पेशाब के कतरों के ज़ाइल होने से दिल मुतमईन न हो जाए। (अंतिम)

[उर्दू अनुवाद स्तंभ] ग़ज़नविया में है कि औरत मर्द की तरह है, अलबत्ता औरत पर इस्तिबराह लाज़िम नहीं है, बल्कि जैसे ही फ़ारिग हो, थोड़ी देर के बाद इस्तिंजा कर सकती है। इसी तरह 'इमदाद' में भी है। उसने 'दुरर' वगैरह की पैरवी करते हुए लफ़्ज़ 'वुजूब' से ताबीर किया है। और कुछ लोगों ने लफ़्ज़ 'फ़र्ज़', और कुछ ने लफ़्ज़ 'यन्बग़ी' और 'अलैहि' से ताबीर किया है, तो यह 'मंदूब' है जैसा कि कुछ शाफ़ईया ने तसरीह (स्पष्ट) की है। इसका महल यह है कि जब उसके बाद किसी चीज़ के निकलने का ख़ौफ़ न हो, तो यह इस्तिबराह में मुबालग़ा के लिए मंदूब है। या इस्तिबराह से मुराद ये मखसूस (विशेष) चीज़ें हैं मसलन चलना और खंखारना। रहा नफ़्स-ए-इस्तिबराह यहाँ तक कि कतरों के ज़ाइल होने के साथ दिल मुतमईन हो जाए, तो वह फ़र्ज़ है, और वुजूब से भी यही मुराद है। इसीलिए शरुन्बुलाली ने कहा कि आदमी पर इस्तिबराह लाज़िम है यहाँ तक कि पेशाब का असर ज़ाइल हो जाए और दिल मुतमईन हो जाए, और कहा कि मैंने इसे लफ़्ज़ 'लुज़ूम' के साथ इसलिए ताबीर किया क्योंकि यह वाजिब से अक़वा (मज़बूत) है, क्योंकि इसके फ़ौत होने से जवाज़ फ़ौत हो

जाता है। पस नमाज़ी के लिए वुज़ू में शुरू होना उस वक़्त तक दुरुस्त नहीं जब तक कि पेशाब की छींटों के ज़ाइल होने से दिल मुतमईन न हो जाए। (त)

ज़ैद अगर ऐसा हो कि वहीं बैठे-बैठे खंखारने या मलने से उसे सही इत्मीनान हो जाता हो और इस्तिबराह के बाद सिर्फ़ पानी से इस्तिंजा करे, तो यह फ़र्ज़ अदा हो गया और वुज़ू सही हो जाता है। और अगर मसलन टहलना वगैरह उसे दरकार है और वह उसे किए बिना पानी से धो लेता है, तो वह फ़र्ज़ का तारिक (छोड़ने वाला) है, और इसी हालत में वुज़ू करे तो वुज़ू नाजाइज़ और उसकी नमाज़ बातिल (अमान्य) है।

1 रद्द अल-मुह्तार, फ़स्ल अल-इस्तिंजा, मुद्रित मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र 1/253

فتاوی رضویہ جلد ششم

ردالمحتار میں ہے :

في الغزنوية المرأة كالرجل الا في الاستبراء فانه لا استبراء عليها بل كما فرغت تصبر ساعة لطيفة ثم تستنجي ومثله في الامداد وعبر بالوجوب تبعاً للدرر وغيرها وبعضهم عبر بانه فرض وبعضهم بلفظ ينبغي وعليه فهو مندوب كما صرح به بعض الشافعية ومحله اذا امن خروج شيئ بعده فيند ب ذلك مبالغة في الا ستبراء او المراد بالاستبراء بخصوص هذه الاشياء من نحو المشي والتنحنح اما نفس الا ستبراء حتى يطمئن قلبه بزوال الرشح فهو فرض ، وهو المراد بالوجوب ولذا قال الشرنبلالي يلزم الرجل الاستبراء حتى يزول اثر البول ويطمئن قلبه وقال عبرت باللزوم لكونه اقوى من الواجب لان هذا يفوت الجواز لفوته فلا يصح له الشروع في الوضو، حتى يطمئن بزوال الرشح اھ

غزنویہ میں ہے عورت مرد کی طرح ہے البتہ عورت پر استبراء لازم نہیں بلکہ جیسے ہی فارغ ہو تھوڑی دیر کے بعد استنجاء کر سکتی ہے۔ اس کی مثل امداد میں بھی ہے اس نے درر وغیرہ کی اتباع کرتے ہوئے لفظ وجوب سے تعبیر کیا ہے اور بعض لوگوں نے لفظ فرض بعض نے لفظ " ینبغی " اور "علیہ" سے تعبیر کیا ہے پس یہ مندوب ہے جیسا کہ بعض شافعیہ نے تصریح کی ہے اس کا محل یہ ہے کہ جب اس کے بعد کسی شئی کے خروج کا خوف نہ ہو تو یہ استبراء میں مبالغہ کے لئے مندوب ہے، یا استبراء سے مراد یہ مخصوص اشیاء ہیں مثلاً چلنا اور کھنکارنا، رہا نفس استبراء یہاں تک کہ قطروں کے زائل ہونے کے ساتھ دل مطمئن ہو جائے تو وہ فرض ہے اور وجوب سے بھی یہی مراد ہے اس لئے شرنبلالی نے کہا آدمی پر استبراء لازم ہے یہاں تک کہ بول کا اثر زائل ہو جائے اور دل مطمئن ہو جائے اور کہا کہ میں نے اسے لفظ "لزوم" کے ساتھ اس لئے تعبیر کیا کہ یہ واجب سے اقوی ہے کیونکہ اس کے فوت ہونے سے جواز فوت ہو جاتا ہے پس

نمازی کے لئے وضو میں شروع ہونا اس وقت تک درست نہیں جب تک کہ پیشاب کی چھینٹوں کے زائل ہونے سے دل مطمئن نہ ہو جائے (ت)

زید اگر ایسا ہو کہ وہیں بیٹھے بیٹھے کھنکھارنے یا ملنے سے اسے اطمینان صحیح ہو جاتا ہو اور بعد استبراء صرف پانی سے استنجاء کرے جب تو یہ فرض ادا اور وضو صحیح ہو جاتا ہے اور اگر مثلاً ٹہلنا وغیرہ اسے درکار ہے بے اسے ادا کئے پانی سے دھولیتا ہے تو فرض کا تارک ہے اور اسی حالت میں وضو کرے تو وضو ناجائز اور اس کی نماز باطل

1 رد المحتار فصل الاستنجاء مطبوعہ مصطفیٰ البابی مصر ۱/ ۲۵۳

Fatawa Razviya, Volume 6

Leading the prayer is a separate matter. Zaid's condition became doubtful; moreover, upon inquiry, his failure to state that he performs Istibra (purity check) as lightly as needed and doesn't require more, but instead presenting his disability as an excuse, makes his condition even more suspicious. He has himself read the Hadith that one should leave doubtful things even if people give a ruling (Fatwa). Thus, he has himself acknowledged that Muslims are commanded to avoid such leadership. Even if a Mufti gives a ruling in favor of his leadership, it should not be accepted.

(2) Up to this point, his leadership was only doubtful, and according to the Hadith he read, he was commanded to leave it. However, the subsequent statement explicitly renders his leadership completely invalid. He claims to be excused from using clods of earth (for cleaning) and habit is no excuse for not using them, unless there is a wound at the site of cleaning or there are boils that are ripe or about to ripen and contain pus, due to which he cannot bear the friction of the clods. The condition of a wound was obvious, as it would invalidate both Wudu (ablution) and the purity of clothes. In the case of boils, there was a possibility they might not yet be oozing fluid or pus. But his statement that he wears a loincloth due to his excuse but only changes clothes at prayer time is clear evidence that those boils ooze fluid and pus, and to such an extent that the clothes are constantly soiled. This is why he needs to change clothes for prayer. Now it is clear that he is "excused" in Sharia (Ma'zoor Shar'i), and the leadership of a Sharia-excused person for those who are not excused is certainly completely invalid, as stated in all books. (T)

(3) After this major atrocity, there isn't much need to focus on other matters; otherwise, there are further reasons for which the pure Sharia prohibits making him an Imam. For example, excessive mingling, joking, and mocking with immoral women. It is mentioned in 'Al-Ashbah' etc.: "Khalwa (seclusion) with a non-mahram woman is prohibited." (Seclusion, i.e., meeting a non-mahram woman in private, is prohibited. T). So, he is a perpetrator of a forbidden act, persistent in it, and well-known for it. Thus, he is a public sinner (Fasiq Mu'lan), and making a public sinner an Imam is a sin. In Fatawa Hujjah and Ghunyah, it says: "If people appoint a sinner [as Imam], they are committing a sin." (T) In Tabyin al-Haqa'iq etc., it is stated:

Because in putting him forward for leadership, there is an honor for him, whereas according to Sharia, it is mandatory to humiliate him. (T)

Because in putting him forward for leadership, there is an honor for him, whereas according to Sharia, it is mandatory to humiliate him. (T)

1. Al-Ashbah wa al-Naza'ir, Kitab al-Hazr wa al-Ibahah, printed by Idara-tul-Quran wa al-Uloom al-Islamiyyah, Karachi, 2/111, 512.
2. Ghunyat al-Mustamli Sharh Munyat al-Musalli, Section on Imamat, printed by Suhail Academy, Lahore, p. 513.
3. Tabyin al-Haqa'iq, Chapter on Imamat and Hadath in Prayer, printed by Al-Matba'at al-Kubra al-Amiriyah, Bulaq, Egypt, 1/134.

फ़तावा रिज़विया, खंड 6

इमामत तो दूसरी चीज़ है, तो ज़ैद की हालत संदिग्ध हो गई। बल्कि पूछताछ करने पर उसका यह न बताना कि मुझे जितने हल्के इस्तिबरा (शुद्धि जांच) की ज़रूरत है मैं कर लेता हूँ और अधिक की आवश्यकता नहीं है, बल्कि अपनी विकलांगता का बहाना पेश करना उसकी हालत को और भी संदिग्ध बना देता है। वह स्वयं वह हदीस पढ़ चुका है कि संदेह वाली चीज़ छोड़ देनी चाहिए चाहे लोग कुछ भी फ़तवा दें। तो उसने स्वयं स्वीकार कर लिया कि मुसलमानों को ऐसी इमामत से बचने का आदेश है। और अगर कोई मुफ्ती उसकी इमामत पर फ़तवा दे भी दे, तो उसे नहीं माना जाना चाहिए।

(२) यहाँ तक तो उसकी इमामत केवल संदिग्ध रही और स्वयं उसके द्वारा पढ़ी गई हदीस से इसे छोड़ने का आदेश हुआ। मगर अगला बयान स्पष्ट रूप से उसकी इमामत को पूरी तरह से अमान्य (बातिल) कर रहा है। वह स्वयं को ढेला लेने (सफाई के लिए) से लाचार बताता है और आदत ढेला न लेने का कोई बहाना नहीं है, सिवाय इसके कि इस्तिन्जा के स्थान पर घाव हो या फोड़े हों जो पक गए हों या पकने वाले हों जिनमें मवाद हो, जिनके कारण वह ढेले की रगड़ सहन न कर सके। घाव की स्थिति तो स्पष्ट थी कि उससे न वुज़ू रहता न कपड़े पाक रहते। फोड़ों के मामले में संभावना थी कि शायद अभी वे पानी या मवाद न छोड़ते हों। लेकिन उसका यह कहना कि वह लाचारी के कारण लंगोट भी बांधता है मगर नमाज़ के समय केवल कपड़े बदल लेता है, यह स्पष्ट प्रमाण है कि वे फोड़े पानी और मवाद छोड़ते हैं और इतना कि कपड़ा हर समय नापाक रहता है। इसीलिए उसे नमाज़ के समय कपड़े बदलने की आवश्यकता पड़ती है। अब यह स्पष्ट हो गया कि वह शरई तौर पर "मज़ूर" (विवश) है, और विवश व्यक्ति की इमामत उन लोगों के लिए जो विवश नहीं हैं, निश्चित रूप से पूरी तरह अमान्य है, जैसा कि सभी पुस्तकों में स्पष्ट रूप से उल्लेख है। (त)

(३) इस बड़ी घिनौनी हरकत के बाद बाकी बातों पर ध्यान देने की अधिक आवश्यकता नहीं है, अन्यथा और भी कारण हैं जिनके आधार पर पवित्र शरीयत उसे इमाम बनाने से मना करती है। उदाहरण के लिए, अनैतिक महिलाओं के साथ घुलना-मिलना, मज़ाक और उपहास करना। 'अल-अशबाह' आदि में है: "ग़ैर-महरम महिला के साथ ख़लवत (एकांत में मिलना) हराम है।" (त)। तो वह एक वर्जित कार्य का अपराधी है, उस पर अड़ा हुआ है और उसके लिए प्रसिद्ध है, इसलिए वह एक सार्वजनिक पापी (फासिक मुअलान) है, और एक सार्वजनिक पापी को इमाम बनाना पाप है। 'फ़तावा

हुज्जह' और 'ग़ुनिया' में है: "यदि लोगों ने किसी पापी को आगे किया तो वे गुनहगार होंगे।" (त)। 'तबीन अल-हक़ाइक' आदि में है:

क्योंकि इमामत के लिए उसे आगे करने में उसका सम्मान है, जबकि शरीयत के अनुसार उसे अपमानित करना अनिवार्य है। (त)

क्योंकि इमामत के लिए उसे आगे करने में उसका सम्मान है, जबकि शरीयत के अनुसार उसे अपमानित करना अनिवार्य है। (त)

1. अल-अशबाह वल नज़ाइर, किताब अल-हज़्र वल इबाहह, मुद्रित इदारा-तुल-क़ुरान वल उलूम अल-इस्लामिया, कराची १११/२, ५१२
2. ग़ुनियातुल मुस्तमली शरह मुनियातुल मुसल्ली, इमामत पर अध्याय, मुद्रित सुहैल अकादमी, लाहौर पृ. ५१३
3. तबीन अल-हक़ाइक, नमाज़ में इमामत और हदस पर अध्याय, मुद्रित अल-मत्बतुल कुबरा अल-अमीरिया, बुलाक, मिस्र १३४/१

पृष्ठ ७३६ का ५६५

امامت تو دوسری چیز ہے تو حالت زید مشکوک ہوئی بلکہ دریافت کرنے پر اس کا یہ نہ بتانا کہ مجھے جتنے خفیف استبراء کی حاجت ہے کر لیتا ہوں زیادہ کی ضرورت نہیں بلکہ اپنی معذوری کا عذر پیش کرنا اس کی حالت کو مشتبہ تر کرتا ہے اور وہ خود حدیث پڑھ چکا ہے کہ شبہ کی بات چھوڑوا گرچہ لوگ کچھ فتوٰی دیں تو اس نے خود مان لیا کہ مسلمانوں کو اس امامت سے احتراز کا حکم ہے اور اگر کوئی مفتی اس کی امامت پر فتوٰی بھی دے تو نہ مانا جائے

(۲) یہاں تک تو اس کی امامت صرف مشتبہ ٹھہری اور خود اس کی پڑھی ہوئی حدیث سے اس کے چھوڑنے کا حکم ہوا مگر اگلا بیان صراحۃً اس کی امامت کو باطل محض کر رہا ہے اور وہ اپنے آپ کو ڈھیلا لینے سے معذور بتاتا ہے اور عادت کوئی عذر ڈھیلا لینے سے مانع نہیں مگر یہ کہ محل استنجاء پر زخم ہو یا دانے پکے یا پکنے پر ہیں جن میں ریم ہے ان کے سبب ڈھیلے کی رگڑ کی تاب نہیں زخم کی حالت تو ظاہر تھی کہ اس سے نہ وضو رہتا نہ کپڑے پاک، دانوں میں احتمال تھا کہ شاید ابھی آب و ریم نہ دیتے ہوں مگر اس کا کہنا کہ لنگوٹ بھی بوجہ عذر کے باندھتا ہوں مگر نماز کے وقت صرف کپڑے بدل لیتا ہوں صاف دلیل روشن ہے کہ وہ دانے آب و ریم دیتے ہیں اور اتنا جس سے ہر وقت کپڑا نجس ہوتا ہے جب تو نماز کے وقت اسے کپڑے بدلنے کی ضرورت پڑتی ہے تو اب کھل گیا کہ وہ معذور شرعی ہے اور معذور کی امامت غیر معذوروں کے لئے یقینا باطل محض ہے کما نص علیہ فی الکتب کلھا (جیسا کہ تمام کتب میں اس پر تصریح موجود ہے۔ ت)

(۳) اس شناعت کبرٰی کے بعد باقی امور کی طرف توجہ کی زیادہ حاجت نہیں ورنہ اس میں اور بھی وجوہ ہیں جن پر شرع مطہر اسے امام بنانے سے منع فرماتی ہے مثلاً فاحشہ عورتوں سے خلا

ملا مزاح تمسخر ۔ اشباہ و غیرہ میں ہے : الخلوۃ بالا جنبیۃ۱ حرام (اجنبی عورت کے ساتھ خلوت (یعنی تنہائی میں ملنا) حرام ہے۔ ت) تو یہ حرم کا مرتکب پھر اس پر مصر پھر اس میں مشتہر ہے تو فاسق معلن ہے اور فاسق معلن کا امام بنانا گناہ۔ فتاوی حجہ وغنیہ میں ہے لوقدموا فاسقاً یأثمون ۲ (اگر لوگوں نے فاسق کو مقدم کیا تو وہ گنہ گار ہوں گے۔ ت) تبیین الحقائق وغیرہ میں ہے:

لان في تقديمه للامامة تعظيمه وقد كيونکہ امامت کے لئے اس کو مقدم کرنے میں اس کی تعظیم

وجب عليهم اهانته شرعاً ۳۔ ہے حالانکہ شرعاً اس کی اہانت لازم ہے (ت)

۱ الاشباہ والنظائر کتاب الحظر والاباحۃ مطبوعہ ادارۃ القرآن والعلوم الاسلامیہ کراچی ۲/۱۱۱،

۲ غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل فی الامامۃ مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۵۱۲ ۳ ۵۱۳

تبیین الحقائق باب الامامۃ والحدث فی الصلوٰۃ مطبوعہ المطبعۃ الکبری الامیریہ بولاق مصر ۱/۱۳۴

Fatawa Razawiyya Volume 6

Praying behind him is Makruh Tahrimi (prohibitively disliked) as mentioned in Al-Ghunyah etc., and affirmed in Radd al-Muhtar. (In Al-Ghunyah etc., it is stated as such and in Radd al-Muhtar it has been established. - T). Thus, however many prayers have been performed behind him in this state, it is mandatory (Wajib) for all followers to repeat them. If they do not repeat them, they will remain sinners, even if it were ten years' worth of prayers, just as the ruling for every prayer performed with Makruh Tahrimi applies. 1 - As in Ad-Durr al-Mukhtar etc. (As is the ruling for every prayer performed with prohibitively disliked status; it is in Durr-e-Mukhtar).

(4) If the followers are displeased with his leadership due to his faults, the prayer of such a person does not rise above his ears. That is, reaching the heavens and presenting it in the Court of Honor is a far-off matter; it is folded up right there like an old rag and thrown back in his face, and his leadership is Makruh Tahrimi. The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

Arabic	Urdu Translation
ثلثة لا ترفع صلاتهم فوق رؤسهم شبرا رجل ام قوما وهم له كارهون وامراة باتت وزوجها عليها ساخط واخوان متصارمان رواه ابن ماجة وابن حبان عن ابن عباس رضی اللہ عنہما بسند حسن۔	The prayer of three men is not raised even a handspan above their heads: first, the person who becomes the Imam of a group while people do not like him. Second, a woman who passes the night while her husband is displeased with her. And third, two brothers who are quarreling with each other. This was narrated by Ibn Majah and Ibn Hibban from Hazrat Ibn Abbas (may Allah be pleased with him) with a good (Hasan) chain. (T)

In another Hadith, the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

Arabic	Urdu Translation
ثلثة لا يقبل الله منهم صلاة من تقدم قوما وهم له كارهون ، ورجل اتى الصلوة دبارا والد بار ان ياتيها بعد ان تفوته و	Allah Almighty does not accept the prayer of three persons: first, the one who became the Imam of a group while people do not like him. Second, the person who comes to the prayer after (the congregation) is missed or after the time of prayer has passed.

1. Ad-Durr al-Mukhtar, Chapter on the Description of Prayer, published by Mujtabai Press, Delhi, 1/71

2. Sunan Ibn Majah, Chapter on One who Leads a Group while they Dislike him, published by Aftab Alam Press, Lahore, p. 69

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

उनके पीछे नमाज़ पढ़ना 'मकरूह-ए-तहरीमी' (वर्जित के करीब नापसंदगी) है जैसा कि अल-ग़ुनिया आदि में है और रद-अल-मुह्तार में इसकी पुष्टि की गई है। (ग़ुनिया आदि में इसी तरह है और रद-अल-मुह्तार में इसे साबित रखा गया है। - त)। तो इस स्थिति में उनके पीछे जितनी भी नमाज़ें पढ़ी गई हों, सभी मुक़्तदियों (अनुयायियों) पर उन सबको दोहराना वाजिब (अनिवार्य) है। यदि वे नहीं दोहराएंगे तो वे गुनहगार रहेंगे, चाहे वह दस साल की नमाज़ें ही क्यों न हों, जैसा कि मकरूह-ए-तहरीमी के साथ अदा की गई हर नमाज़ का हुक्म है। 1 - जैसा कि दुर-ए-मुख़्तार आदि में है। (जैसा कि मकरूह-ए-तहरीमी के साथ अदा की गई हर नमाज़ का हुक्म है, दुर-ए-मुख़्तार में है)।

(४) मुक़्तदियों का उनके दोषों के कारण उनकी इमामत (नेतृत्व) से नाराज़ होना ऐसी स्थिति है कि उनकी नमाज़ उनके कानों से ऊपर नहीं जाती। यानी आसमानों पर जाना और बारगाह-ए-इज़्ज़त में पेश होना तो बड़ी बात है, वहीं की वहीं पुराने चीथड़े की तरह लपेट कर उनके मुँह पर मार दी जाती है और उनकी इमामत मकरूह-ए-तहरीमी है। रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

अरबी	उर्दू अनुवाद
ثلثة لا ترفع صلاتهم فوق رؤسهم شبرا رجل ام قوما وهم له كارهون وامراة باتت وزوجها عليها ساخط واخوان متصارمان رواه ابن ماجة وابن حبان عن ابن عباس رضى اللہ عنہما بسند حسن۔	तीन आदमियों की नमाज़ उनके सिरों से एक बालश्त बराबर ऊपर नहीं उठाई जाती, एक वह व्यक्ति जो कौम का इमाम बने मगर लोग उसे पसंद न करते हों। एक वह औरत जो इस हाल में रात बसर करे कि उसका खाविंद (पति) उस पर नाराज़ हो। और दो भाई जो आपस में झगड़ा करने वाले हों। इसको इब्न माजा और इब्न हिब्बान ने हज़रत इब्न अब्बास रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से सनद-ए-हसन के साथ रिवायत किया है। (त)

दूसरी हदीस में है रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

अरबी	उर्दू अनुवाद
ثلثة لا يقبل الله منهم صلاة من تقدم قوما وهم له كارهون ،	तीन अशख़ास (व्यक्तियों) की नमाज़ अल्लाह तआला कुबूल नहीं फ़रमाता: एक वह शख़्स जो कौम का इमाम बना हालांकि लोग उसे पसंद न करते हों। दूसरा वह शख़्स जो नमाज़ की तरफ़

अरबी	उर्दू अनुवाद
ورجل اتى الصلوة دبارا والد بار ان ياتيها بعد ان تفوته و	(जमात के) फ़ौत (छूट) होने के बाद या नमाज़ का वक़्त फ़ौत होने के बाद आए।

1. दुर-ए-मुख़्तार, बाब सिफ़त-उस-सलात, मतबुआ मतबा-ए-मुजतबाई दिल्ली, १/७१
2. सुनन इब्न माजा, बाब मन अम्मा क़ौमन व हुम लहू कारिहून, मतबुआ आफ़ताब-ए-आलम प्रेस लाहौर, सफ़ा ६९

اس کے پیچھے نماز مکروہِ تحریمی کمافی الغنیہ وغیرہا واقرہ فی ردالمحتار (غنیہ وغیرہ میں اسی طرح ہے اور ردالمحتار میں اس کو ثابت رکھا ہے۔ت) تو جتنی نمازیں اس کے پیچھے اس حالت میں پڑھیں ہوں سب مقتدیوں پر ان سب کا پھیرنا واجب اگر نہ پھیریں گے گنہگار رہیں گے اگرچہ دس برس کی نمازیں ہوں کما حکم کل صلاۃ ادیت مع کراھۃ التحریم ۱۔ کما فی الدرمختار وغیرہ (جیسا کہ کراہتِ تحریمی کے ساتھ ادا کی گئی ہر نماز کا حکم ہے، درمختار میں ہے)

(۴) مقتدیوں کا اس کے عیوب کے باعث اس کی امامت سے ناراض ہونا ایسی کی نماز اس کے کانوں سے اوپر نہیں جاتی یعنی آسمانوں پر جانا اور بارگاہِ عزت میں حاضر ہونا تو بڑی بات ہے وہیں کی وہیں پرانے چیتھڑے کی طرح لپیٹ کر اس کے منہ پر مار دی جاتی ہے اور اس کی امامت مکروہِ تحریمی ہے۔ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

عربی	اردو ترجمہ
ثلثۃ لا ترفع صلاتھم فوق رؤسھم شبرا رجل ام قوما وھم لہ کارھون وامراۃ باتت وزوجھا علیھا ساخط واخوان متصارمان ۲ رواہ ابن ماجۃ وابن حبان عن ابن عباس رضی اللہ عنہما بسند حسن۔	تین آدمیوں کی نماز ان کے سروں سے ایک بالشت برابر اوپر نہیں اٹھائی جاتی، ایک وہ شخص جو قوم کا امام بنے مگر لوگ اسے پسند نہ کرتے ہوں۔ ایک وہ عورت جو اس حال میں رات بسر کرے کہ اس کا خاوند اس پر ناراض ہو۔ اور دو بھائی جو آپس میں جھگڑا کرنے والے ہوں اس کو ابن ماجہ اور ابن حبان نے حضرت ابن عباس رضی اللہ تعالٰی عنہ سے سند حسن کے ساتھ روایت کیا ہے۔(ت)

دوسری حدیث میں ہے رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

عربی	اردو ترجمہ
ثلثة لا یقبل اللہ منھم صلاۃ من تقدم قوما وھم لہ کارھون ، ورجل اتی الصلوۃ دبارا والد بار ان یاتیھا بعد ان تفوتہ و	تین اشخاص کی نماز اللہ تعالیٰ قبول نہیں فرماتا ایک وہ شخص جو قوم کا امام بنا حالانکہ لوگ اسے پسند نہ کرتے ہوں۔ دوسرا وہ شخص جو نماز کی طرف (جماعت کے) فوت ہونے کے بعد یا نماز کا وقت فوت ہونے کے (بعد آئے۔)

۱ در مختار باب صفة الصلوۃ مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۷۱ ۲ سنن ابن ماجہ باب من ام قوماً وھم لہ کارھون مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور ص ۶۹

Fatawa-e-Razawiyya Volume 6

- A man who enslaves a free person - Reported by Abu Dawood and Ibn Majah from Ibn Umar (may Allah be pleased with them both). | And then comes the third, the person who makes a free man a slave. Abu Dawood and Ibn Majah have narrated this from Hazrat Ibn Umar (may Allah be pleased with them both). (T)

In the third Hadith, the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says: - "If any man leads a people in prayer while they dislike him, his prayer does not rise above his ears." - Reported by al-Tabarani in al-Mu'jam al-Kabir from Talha bin Ubaidullah (may Allah be pleased with him). | Whoever becomes the Imam of a people while they dislike him, then his prayer does not go above his ears. Al-Tabarani narrated it in Mu'jam al-Kabir from Hazrat Talha bin Ubaidullah (may Allah be pleased with him). (T)

In the fourth Hadith, the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says: - "There are three whose prayer Allah does not accept, and it does not ascend to heaven, nor does it pass their heads: a man who leads a people while they dislike him; a man who leads a funeral prayer without being authorized; and a woman whose husband calls her at night but she refuses him." - Reported by Ibn Khuzaymah from Ata ibn Dinar, and with another chain from Anas bin Malik (may Allah be pleased with him) continuously. | Allah the Almighty does not accept the prayer of three individuals, it neither ascends to the sky nor rises above their heads: one is the person who leads a people as Imam while they dislike him; second is the person who leads a funeral prayer while he was not given permission. Third is the woman who, when her husband calls her at night, refuses him. Ibn Khuzaymah narrated it from Ata bin Dinar and with another chain from Hazrat Anas bin Malik (may Allah be pleased with him) continuously. (T)

In the fifth Hadith, the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says: - "Three whose prayer does not pass their ears..." | The prayer of three persons does not rise above their ears.

Footnotes: 1. Sunan Abu Dawood, Chapter: A man who leads a people while they dislike him, published by Aftab Alam Press Lahore, 1/88; Sunan Ibn Majah, Chapter: One who leads a people while they dislike him, published by Aftab Alam Press Lahore, p. 69. 2. Al-Mu'jam al-Kabir, what is narrated from Talha bin Ubaidullah,

Hadith 410, published by Maktabat al-Faysaliyyah Beirut, 1/115. 3. Sahih Ibn Khuzaymah, Chapter: Warning against woman's refusal etc., Hadith 1518, published by Al-Maktab al-Islami Beirut, 3/11.

फ़तावा रज़विया खंड 6

- वह व्यक्ति जो किसी स्वतंत्र को दास बना ले - इसे अबू दाऊद और इब्न माजा ने इब्न उमर (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत किया है। | इसके बाद तीसरा वह व्यक्ति आता है जो एक स्वतंत्र व्यक्ति को गुलाम बनाता है। इसे अबू दाऊद और इब्न माजा ने हज़रत इब्न उमर रज़ियल्लाहु तआला अन्हुमा से रिवायत किया है। (त)

तीसरी हदीस में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं: - "जो व्यक्ति किसी कौम की इमामत करे जबकि वे उसे नापसंद करते हों, तो उसकी नमाज़ उसके कानों से ऊपर नहीं जाती।" - इसे तबरानी ने अल-कबीर में तलहा बिन उबैदुल्ला रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत किया है। | जो कोई भी कौम का इमाम बने जबकि वे उसे नापसंद करते हों, तो उसकी नमाज उसके कानों से ऊपर नहीं जाती। इसे तबरानी ने मुअजम कबीर में हज़रत तलहा बिन उबैदुल्लाह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है। (त)

चौथी हदीस में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं: - "तीन लोग ऐसे हैं जिनकी नमाज़ अल्लाह क़बूल नहीं फ़रमाता, और न ही वह आसमान की तरफ़ चढ़ती है और न ही उनके सिरों से ऊँची होती है: वह व्यक्ति जो किसी कौम का इमाम बने जबकि वे उसे नापसंद करते हों; वह व्यक्ति जिसने जनाज़े की नमाज़ पढ़ाई जबकि उसे अनुमति नहीं थी; और वह महिला जिसका पति उसे रात को बुलाए और वह इनकार कर दे।" - इसे इब्न खुज़ैमा ने अता इब्न दीनार से रिवायत किया है और एक दूसरी सनद के साथ हज़रत अनस बिन मालिक रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से मुत्तसिल रिवायत किया है। | तीन व्यक्तियों की नमाज़ अल्लाह तआला क़बूल नहीं फ़रमाता, न वह आसमान की तरफ़ चढ़ती है और न ही उनके सिरों से बुलंद होती है: एक वह व्यक्ति जो कौम का इमाम बने जबकि वे उसे नापसंद करते हों; दूसरा वह व्यक्ति जो जनाज़ा पढ़ाए जबकि उसे इजाज़त न दी गई हो। तीसरी वह महिला जिसे रात को पति बुलाए तो वह इनकार कर दे। इसे इब्न खुज़ैमा ने अता बिन दीनार से और एक दूसरी सनद के साथ हज़रत अनस बिन मालिक रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से मुत्तसिलन रिवायत किया है। (त)

पाँचवीं हदीस में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं: - "तीन लोग जिनकी नमाज़ उनके कानों से आगे नहीं बढ़ती..." | तीन व्यक्तियों की नमाज़ उनके कानों से बुलंद नहीं होती।

फुटनोट्स: 1. सुनन अबू दाऊद, बाब: अल-रजुल यौम व हुम लहू कारिहून, आफ़ताब आलम प्रेस लाहौर, 1/88; सुनन इब्न माजा, बाब: मन अम्मा क़ौमन व हुम लहू कारिहून, आफ़ताब आलम प्रेस लाहौर, पृष्ठ 69. 2. अल-मुअजम अल-कबीर, मा असनदा तलहा बिन उबैदुल्लाह, हदीस 410, मक्तबा अल-फ़ैसलिया बेरूत, 1/115. 3. सहीह इब्न खुज़ैमा, बाब: अल-ज़जर अन इमालत अल-मर'अह आदि, हदीस 1518, अल-मक्तब अल-इस्लामी बेरूत, 3/11.

رجل اعتبد محرراً- ۱ رواہ ابوداؤد وابن ماجۃ عن ابن عمر رضی اللہ تعالٰی عنہما- | بعد آئے تیسرا وہ شخص جو آزاد کو غلام بنائے۔ اسے ابو داؤد اور ابن ماجہ نے حضرت ابن عمر رضی اللہ تعالٰی عنہما سے روایت کیا ہے۔ (ت)

تیسری حدیث میں ہے رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں : ایما رجلا ام قوما وھم کرھون لم تجز صلاتہ اذنہ ۲- رواہ الطبرانی فی الکبیر عن طلحۃ ابن عبید اللہ رضی اللہ تعالٰی عنہ - | جو شخص بھی قوم کا امام بنے حالانکہ وہ اسے ناپسند کرتے ہوں تو اس کی نماز کانوں سے اوپر نہیں جاتی اسے طبرانی نے معجم کبیر میں حضرت طلحہ بن عبید اللہ رضی اللہ عنہ سے روایت کیا ہے (ت)

چوتھی حدیث میں ہے رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں : ثلاثۃ لا یقبل اللہ منھم صلاۃ ، والاتصعد الی السماء ولا تجاوز رؤسھم رجل ام قوماً وھم لہ کارھون ورجل صلی علی جنازۃ ولم یؤمر وامراۃ دعاھا زوجھا من اللیل فأبت علیہ ۳ - رواہ ابن خزیمۃ عن عطاء ابن دینار وبسند اخر عن انس بن مالك متصلا رضی اللہ تعالٰی عنہ- | تین افراد کی نماز اللہ تعالٰی قبول نہیں فرماتا نہ وہ آسمان کی طرف چڑھتی ہے اور نہ ان کے سروں سے بلند ہوتی ہے ایک وہ شخص جو قوم کا امام بنے حالانکہ وہ اسے ناپسند کرتے ہوں، دوسرا وہ شخص جو جنازہ پڑھائے حالانکہ اسے اجازت نہ دی گئی ہو۔ تیسری وہ خاتون جسے رات کو خاوند طلب کرے تو وہ انکار کر دے اسے ابن خزیمہ نے عطاء بن دینار سے اور ایک دوسری سند کے ساتھ حضرت انس بن مالک رضی اللہ تعالٰی عنہ سے متصلاً روایت کیا ہے۔ (ت)

پانچویں حدیث میں ہے رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں : ثلاثة لا تجاوز صلاتهم اذانهم | تین اشخاص کی نماز ان کے کانوں بلند نہیں ہوتی

حواشی: ۱ سنن ابو داؤد باب الرجل یوم و ہم لہ کارھون مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور ۸۸/۱، سنن ابن ماجہ باب من ام قوماً و ہم لہ کارھون مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور ص ۶۹ ۲ المعجم الکبیر ، ما اسند طلحة بن عبید اللہ حدیث ۴۱۰، مطبوعہ مکتبۃ الفیصلیہ بیروت ، ۱۱۵/۱ ۳ صحیح ابن خزیمہ باب الزجر عن امالۃ المرء الخ حدیث ۱۵۱۸ مطبوعہ المکتب الاسلامیہ بیروت ۱۱/۳

Fatawa Razvia Volume Six

(Hadith excerpt): A runaway slave until he returns, a woman who spends the night while her husband is angry with her, and an imam of a people who dislike him. [1] Narrated by Tirmidhi from Abu Umama (RA), and he said it is a 'Hasan Gharib' hadith. (T)

In 'Tanweer al-Absar' and 'Durr-e-Mukhtar' it is stated: "If one leads the prayer of a people while they dislike him, if the dislike is due to some flaw in him or because others are more deserving of the imamate than him, then it is 'Makruh Tahrimi' (prohibitively disliked) for him to do so." [2] (T)

(5) Due to the division of the congregation as mentioned in the question, people have stopped praying behind him. Because this leads to the division of the congregation, it is forbidden to make him the Imam, and praying behind him is 'Makruh' (disliked) even if he himself is blameless, such as one with vitiligo, as it is not he who is creating the discord. It is stated in 'Durr-e-Mukhtar':

"Likewise, it is disliked to pray behind a person with vitiligo (leprosy) whose condition has spread." [3] In 'Radd al-Muhtar' it is clarified that the reason for this is 'Nafrah' (aversion/disgust), which is why the condition of spreading (shuyu') was added to vitiligo so the matter becomes clear. [4]

I say: This is not a matter for clarification, rather the reason is indeed this aversion; there is no doubt about it. Furthermore, it became apparent to me that praying behind someone with vitiligo is 'Makruh Tanzihi' (mildly disliked), as is the implication of Al-Shami's words under the statement of 'Al-Durr' "and likewise...".

---

1. Jami' at-Tirmidhi, Chapter on those who lead a people who dislike him, Amin Company, Kutub Khana Rashidiyah, Delhi, 1/74.
2. Durr-e-Mukhtar, Chapter on Imamate, Matba Mujtabai, Delhi, 1/83.
3. Durr-e-Mukhtar, Chapter on Imamate, Matba Mujtabai, Delhi, 1/83.
4. Radd al-Muhtar, Mustafa al-Babi, Egypt, 1/416.

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

(हदीस का अंश): एक भगोड़ा गुलाम जब तक कि वह वापस न आ जाए, दूसरी वह महिला जो रात इस हाल में बिताए कि उसका पति उससे नाराज़ हो, और तीसरा वह व्यक्ति जो ऐसी क़ौम का इमाम बने जो उसे नापसंद करती हो। [1] इसे तिर्मिज़ी ने हज़रत अबू उमामा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है और कहा है कि यह 'हसन ग़रीब' है। (त)

'तन्वीर अल-अबसार' और 'दुर-ए-मुख्तार' में है: "अगर किसी ने क़ौम की इमामत की जबकि वह क़ौम उसे नापसंद करती थी, यदि यह नापसंदगी खुद उसमें किसी दोष के कारण हो या इसलिए कि दूसरे लोग उससे इमामत के अधिक योग्य थे, तो इस स्थिति में उसका इमाम बनना 'मक़रूहे तहरीमी' होगा।" [2] (त)

(5) जमात में फूट के कारण जैसा कि प्रश्न में है, लोगों ने उसके पीछे नमाज़ पढ़ना छोड़ दिया है। क्योंकि इसके कारण जमात में फूट पैदा हो रही है, इसलिए उसे इमाम बनाना मना है और उसके पीछे नमाज़ पढ़ना 'मक़रूह' है, चाहे वह स्वयं निर्दोष हो, जैसे सफ़ेद दाग (बर्स) वाला व्यक्ति, क्योंकि वह स्वयं फसाद नहीं कर रहा है। 'दुर-ए-मुख्तार' में है:

"इसी तरह उस व्यक्ति के पीछे नमाज़ पढ़ना मक़रूह है जिसका सफ़ेद दाग (बर्स) फैल गया हो।" [3] 'रद्द अल-मुह्तार' में है कि इसका कारण 'नफ़रत' (घृणा/अरुचि) करार दिया गया है, इसीलिए बर्स के साथ 'शुयूअ' (फैलने) की शर्त लगाई गई ताकि मामला स्पष्ट हो जाए। [4]

मैं कहता हूँ: यह स्थान स्पष्ट करने का नहीं है बल्कि कारण यही नफ़रत है, इसमें कोई संदेह नहीं है। फिर मुझ पर यह बात स्पष्ट हुई कि बर्स वाले के पीछे नमाज़ पढ़ना 'मक़रूहे तन्ज़ीही' है, जैसा कि शामी के शब्दों का तात्पर्य है जब वे 'अल-दुर' के कथन "और इसी तरह..." के नीचे कहते हैं।

---

1. जामे तिर्मिज़ी, बाब मा जाअ मन अमा कौमन व हुम लहू कारिहून, अमीन कंपनी कुतुब खाना रशीदिया, दिल्ली, 1/74।
2. दुर-ए-मुख्तार, बाब अल-इमामह, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 1/83।
3. दुर-ए-मुख्तार, बाब अल-इमामह, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 1/83।
4. रद्द अल-मुह्तार, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 1/416।

العبد الابق حتی یرجع وامرأۃ باتت وزوجھا علیھا ساخط وامام قوم وھم لہ کارھون 1 رواہ الترمذی عن ابی امامۃ رضی اللہ تعالٰی عنہ وقال حسن غریب۔ ایک بھگوڑے غلام کی حتی کہ وہ لوٹ آئے ، دوسری وہ خاتون جو رات اس حال میں بسر کرے کہ اس کا خاوند اس پر ناراض ہو تیسرا وہ شخص جو قوم کا امام بنا حالانکہ لوگ اسے ناپسند کرتے تھے۔ اسے ترمذی نے حضرت ابو امامہ رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کر کے کہا یہ حسن غریب ہے۔ (ت)

تنویر الابصار و در مختار میں ہے: ولوام قوماً وھم لہ کارھون ان الکراھۃ لفساد فیہ اولانھم احق بالامامۃ منہ کرہ لہ ذلك تحریماً 2۔ اگر کسی نے قوم کی امامت کرائی حالانکہ وہ قوم اسے ناپسند کرتی تھی اگر خود اس میں خرابی کی وجہ سے کراہت ہو یا اس لئے کہ دوسرے لوگ اس سے امامت کے زیادہ اہل تھے تو اس صورت میں اس کا امام بننا مکروہ تحریمی ہوگا۔ (ت)

(۵) اس کے سبب تفریق جماعت کہ سوال میں ہے لوگوں نے اس کے پیچھے نماز پڑھنا ترک کر دیا جس کے سبب تفریق جماعت ہوا سے امام بنانا منع ہے اور اس کے پیچھے نماز پڑھنا مکروہ ہے اگر چہ وہ خود بے قصور ہو جیسے برص والا نہ کہ وہ خود فساد رکھتا ہے ، درمختار میں ہے :

کذا تکرہ خلف ابرص شاع برصہ 3 اھ واستظھر في ردالمحتار ان العلۃ النفرۃ ولذاقید الابرص بالشیوع ولیکون ظاھرا 4 اھ اسی طرح اس صاحب برص کے پیچھے نماز مکروہ ہے جس کا برص پھیل گیا ہو اھ ردالمحتار میں ہے اس کی علت نفرت قرار دیال اس لئے برص کے ساتھ الشیوع (یعنی پھیلنے) کی قید لگائی تاکہ معاملہ واضح ہو جائے اھ

اقول: ليس محل الاستظهار بل العلة هي هي لا شك ثم الذي يظهر لی ان كراهة الصلاة خلفه تنزيهية كما هو قضية كلام الشامي اذ يقول تحت قول الدرهذا وكذلك میں کہتا ہوں یہ مقام ظاہر کرنے کا نہیں بلکہ علت یہی نفرت ہے اس میں کوئی شک نہیں، پھر مجھ پر یہ بات واضح ہوئی کہ ابرص کے پیچھے نماز مکروہ تنزیہی ہے

---

1 جامع الترمذی باب ماجاء من ام قوما وهم له كارهون مطبوعہ امین کمپنی کتب خانہ رشیدیہ دہلی ۱/ ۷۴ 2 در مختار باب الامامة مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۸۳/۱ 3 در مختار ، باب الامامة ، مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ، ۸۳/۱ 4 رد المحتار ، مطبوعہ مصطفی البابی مصر، ۱/ ۴۱۶

Fatawa Ridawiyya, Volume 6

A lame person who stands on part of his foot; following someone else is better [Tatar Khaniya]. Similarly, for one with a cut hand [Burjandi]. I haven't seen this in Burjandi's commentary on Naqaya under the chapter of Imamate, but if his appointment causes such aversion that people start leaving the congregational prayer (as mentioned in the question), then it should be considered prohibitively disliked (Makruh Tahrimi). This is because it constitutes a clear contradiction of the Lawgiver's (blessings and peace be upon Him) purpose for legislating and mandating the congregation. The Prophet (blessings and peace be upon Him) said: "Give glad tidings and do not create aversion." The aversion cited in 'Al-Hidayah' as a reason for the dislike of the imamate of a slave, a blind person, or a desert dweller doesn't even reach a tenth of this. Those are rare possibilities, while this is predominant and certain. Therefore, the difference between the two is established. This is my view, and true knowledge is with my Lord Almighty. (T)

(6) His statement that there is no house or street in Bombay where adultery does not occur day and night. If he had generalized and specified, it would have been a direct and cursed accusation of adultery against millions of Muslim men and pious Muslim women in Bombay. Consequently, he would have committed millions of acts of 'Qazf' (false accusation of adultery), and even a single 'Qazf' is a major sin, and the accuser is cursed. Thus, he would have committed millions of major sins and deserved millions of curses in one breath. However, by using the words 'house and street' and the phrase 'will not be', he avoided total generalization and absolute certainty. Nevertheless, there is no doubt that he smeared the honor of the common Muslim men and women there. By saying this in a special sermon assembly, he wrongly defamed Muslims, took the burden of spreading obscenity upon himself, and caused undue religious distress to many Muslims. The Messenger of Allah (blessings and peace be upon Him) says: "Whoever hurts a Muslim has hurt me..." | "Whoever wrongly causes distress to a Muslim has caused distress to me."

1 Radd al-Muhtar, Chapter of Imamate, printed by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/216.
Page 569 of 736

फ़तावा रज़विया, जिल्द 6

एक लंगड़ा व्यक्ति जो अपने पैर के कुछ हिस्से पर खड़ा होता है; उसके अलावा किसी और का अनुसरण करना बेहतर है [ततार खानिया]। इसी तरह, कटे हुए हाथ वाले व्यक्ति के लिए [बुर्जंदी]। मैंने बुर्जंदी की नकया की व्याख्या में इमामत के अध्याय के तहत यह मसला नहीं देखा है, लेकिन यदि उसकी इमामत से इतनी नफरत फैल जाए कि लोग जमात (नमाज़) छोड़ना शुरू कर दें (जैसा कि प्रश्न में है), तो इसे मकरूहे तहरीमी (कठोरता से नापसंद) माना जाना चाहिए। क्योंकि यह अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) द्वारा जमात को अनिवार्य और कानून सम्मत बनाने के उद्देश्य का स्पष्ट उल्लंघन है। नबी ए करीम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "लोगों को खुशखबरी सुनाओ और उनमें नफरत न फैलाओ।" 'अल-हिदाया' में गुलाम, अंधे या देहाती की इमामत को नापसंद करने के कारण के रूप में जिस नफरत का उल्लेख किया गया है, वह इसका दसवां हिस्सा भी नहीं है। वे दुर्लभ संभावनाएं हैं, जबकि यह प्रबल और निश्चित है। अतः दोनों के बीच का अंतर सिद्ध हो गया। यह मेरा विचार है, और वास्तविक ज्ञान मेरे प्रभु के पास है। (त)

(6) उनका यह कहना कि बॉम्बे में कोई भी घर या गली ऐसी नहीं होगी जहाँ दिन-रात ज़िना (व्यभिचार) न होता हो। यदि उन्होंने इसे सामान्यीकृत और विशिष्ट किया होता, तो यह बॉम्बे के लाखों मुसलमान पुरुषों और पवित्र मुसलमान महिलाओं पर ज़िना का सीधा और शापित आरोप (तोहमत) होता। इसके परिणामस्वरूप, वह लाखों 'क़ज़्फ़' (व्यभिचार का झूठा आरोप) के दोषी होते, और एक ही 'क़ज़्फ़' महापाप (गुनाह-ए-कबीरा) है, और क़ज़्फ़ करने वाले पर लानत आती है। इस प्रकार, वह एक ही सांस में लाखों महापाप के दोषी होते और लाखों लानतों के पात्र बनते। हालाँकि, 'घर और गली' शब्दों और "नहीं होगा" वाक्यांश का उपयोग करके, उन्होंने पूर्ण सामान्यीकरण और निश्चितता से परहेज किया। फिर भी, इसमें कोई संदेह नहीं है कि उन्होंने वहां के सामान्य मुसलमान पुरुषों और महिलाओं के सम्मान पर दाग लगाया। एक विशेष प्रवचन सभा में ऐसा कहकर, उन्होंने गलत तरीके से मुसलमानों को बदनाम किया, अश्लीलता फैलाने का बोझ अपने गले पर लिया और बिना किसी धार्मिक कारण के कई मुसलमानों को कष्ट पहुँचाया। अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं: "जिसने किसी मुसलमान को दुःख पहुँचाया, उसने मुझे दुःख पहुँचाया..." | "जिसने किसी मुसलमान को नाहक (बेवजह) दुःख पहुँचाया, उसने मुझे दुःख पहुँचाया।"

1 रद-उल-मुहतार, बाब-उल-इमामत, मुस्तफा अल-बाबी द्वारा मुद्रित, मिस्र, 1/216। पृष्ठ 569/736

فتاوی رضویہ، جلد ششم

اعرج یقوم ببعض قدمہ فالا قتداء بغیرہ اولی تتار خانیۃ وکذا اجزم بر جندی اھوان لم ارہ في امامۃ البرجندی من شرحہ للنقایۃ لکن کراھۃ تقدیمہ اذا بلغ التنفیر الی ترک الناس الجماعۃ کما في السوال ینبغی ان تکون کراھۃ فتحریم لما فیہ من النقض الصریح لمقصود الشارع صلی اللہ تعالی علیہ وسلم من شرعیۃ الجماعۃ وا یجا بھا وقد قال صلی اللہ تعالی علیہ وسلم بشرو ا ولا تنفر وا والتنفیر المعلل بہ في الھدایۃ کراھۃ تقدیم العبد والاعمی والاعرابی لا یبلغ عشر ھذا بل ھونا در محتمل وھذا غالب متحقق فافترقا فھذا ما عندی والعلم بالحق عند ربی عز وجل ۔ جسے علامہ شامی کے کلام کا تقاضا ہے کیونکہ وہ درمختار کے اسی قول کے تحت لکھتے ہیں اسی طرح وہ لنگڑا ہے جو اپنے پاؤں کے کچھ حصہ پر کھڑا ہوتا ہو اس کے غیر کی اقتداء بہتر واولی ہے تاتار خانیہ اور اسی طرح ہاتھ کٹے کا معاملہ ہے، برجندی اگرچہ میں نے بر جندی مع شرح نقایہ بر جندی کے باب الامامۃ میں یہ مسئلہ نہیں پایا لیکن جب اس کی تقدیم کی ناپسندیدگی اتنی بڑھ جائے کہ لوگ جماعت کو چھوڑنا شروع کر دیں جیسا کہ سوال میں ہے تو ایسی صورت میں اسے کراہت تحریمی قرار دینا چاہئے کیونکہ اس میں تو شارع صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے مقصود کی صریح مخالفت ہے اور وہ مقصود جماعت کا مشروع اور واجب ہونا ہے حالانکہ نبی اکرم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کا ارشاد ہے: لوگوں میں محبت و بشارت پیدا کرو نفرت نہ پھیلاؤ۔ اور وہ نفرت جس کی بناء پر صاحبِ ہدایت نے غلام، نابینا اور اعرابی کی امامت کو مکروہ قرار دیا ہے وہ تو اس کے دسویں حصے کو بھی نہیں پہنچتی بلکہ وہ نادر اور ایک احتمال ہے اور یہ غالب وثابت ہے پس ان دونوں میں فرق ثابت ہو گیا یہ میرے نزدیک ہے اور حق علم میرے رب کے ہاں ہے۔(ت)

(۶) اس کا کہنا کہ بمبئی میں کوئی مکان یا گلی کوچہ ایسانہ ہو گا جس میں شبانہ روز زنا نہ ہوتا ہو، اگر وہ تعمیم و تخصیص کرتا تو بمبئی کے لاکھوں مسلمانوں مردوں، مسلمان پارسا بیبیوں پر صریح تہمت ملعونہ زنا تھی جس کے سبب وہ لاکھوں قذف کا مرتکب ہوتا اور ایک ہی قذف گناہِ کبیرہ ہے اور قذف کرنے والے پر لعنت آئی ہے تو وہ ایک سانس میں لاکھوں گناہِ کبیرہ کا مرتکب ہوتا اور لاکھوں لعنتوں کا استحقاق پاتا ہے مگر اس نے مکان اور کوچہ میں تردید سے تعمیم کو روکا اور "نہ ہوگا" کے لفظ سے جزم میں فرق ڈالا پھر بھی اس قدر میں شک نہیں کہ اس نے وہاں کے عام مسلمانوں مردوں بیبیوں کی حرمت پر دھبالگا یا اور اسے خاص مجلس وعظ میں کہ کر مسلمانوں کو ناحق بدنام کرنے اور ان میں اشاعت فاحشہ کا بوجھ اپنی گردن پر اٹھایا اور بکثرت مسلمانوں کو بلاوجہ شرعی ایذادی، رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں: من اذی مسلما فقد اذانی ومن | جس نے کسی مسلمان کو ناحق ایذا دی اس نے مجھے ایذا دی

1 ردالمحتار باب الامامة مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/۲۱۶ Page 569 of 736

Fatawa Rizwia Volume 6

"He who has hurt me, has indeed hurt Allah (Almighty)." This has been narrated by al-Tabarani in al-Mu'jam al-Awsat from Hazrat Anas (may Allah be pleased with him) with a sound (hasan) chain of narration. (Footnote 1)

Allah Almighty says: "Indeed, those who like that immorality should spread among those who have believed will have a painful punishment in this world and the Hereafter." (Footnote 2)

When there is a warning of severe punishment in both worlds for this, it is also a major sin (Kabirah), and the one who commits a major sin is a transgressor (Fasiq). And since this transgression occurred openly in a public assembly and sermon, for this reason, he is also a public transgressor (Fasiq Mu'lin), and praying behind him is macrooh-e-tahrimi (prohibitively disliked).

(7) It is clear that he is ignorant, yet despite his ignorance, he dared to issue a fatwa, distorted the holy words of the Hadith, declared the fatwas of the jurists of the pure Shari'ah as unreliable, and emboldened the common people to reject Shari'ah fatwas. Therefore, he is undoubtedly astray and misleading (Zall-o-Muzill) — himself lost and leading others astray. The Messenger of Allah (may Allah send peace and blessings upon him) says:

"People will take the ignorant as leaders and ask them questions (on religious matters). They will give fatwas without knowledge; thus, they themselves will go astray and lead others astray." This was narrated by the Imams Ahmad, Bukhari, Muslim, Tirmidhi, and Ibn Majah from Hazrat Abdullah bin Umar (may Allah be pleased with them both). (Footnote 3)

In this situation, forget about following him in prayer, even sitting near him is forbidden. The Messenger of Allah (may Allah send peace and blessings upon him) says:

"Stay away from them and keep them away from you, lest they mislead you or put you into trial." (Footnote 4)

---

1. Al-Mu'jam al-Awsat, Hadith No. 3632, Maktabat al-Ma'arif, Riyadh, 4/383.
2. Al-Quran 24/19.
3. Sahih al-Bukhari, Chapter on eagerness for Hadith, published by Qadeemi Kutub Khana Karachi, 1/20; Sahih Muslim, Chapter on the lifting of knowledge

and its withdrawal, etc., published by Noor Muhammad Asah al-Matabi' Karachi, 2/420; Jami' at-Tirmidhi, Chapter on what was narrated regarding recommending those who seek knowledge, published by Amin Company Kutub Khana Rasheediya Delhi, 2/90.

4. Sahih Muslim, Chapter on the prohibition of narrating from weak narrators, etc., published by Noor Muhammad Asah al-Matabi' Karachi, 1/10.

फ़तावा रज़विया जिल्द 6

"जिसने मुझे कष्ट दिया, उसने अल्लाह (अज़्ज़वजल) को कष्ट दिया।" इसे तबरानी ने मुअजम औसत में हज़रत अनस (रज़ियल्लाहु अन्हु) से सनदे हसन के साथ रिवायत किया है। (पाद-टिप्पणी 1)

अल्लाह अज़्ज़वजल फ़रमाता है: "जो लोग यह चाहते हैं कि मुसलमानों में बे-हयाई (अश्लीलता) की बात का चर्चा फैले, उनके लिए दुनिया और आख़िरत में दर्दनाक अज़ाब है।" (पाद-टिप्पणी 2)

जब इस पर दोनों जहाँ में शदीद (कठोर) अज़ाब की धमकी है, तो यह भी कबीरा गुनाह हुआ और कबीरा गुनाह करने वाला फ़ासिक़ है। और चूँकि यह फ़िस्क़ (उल्लंघन) सरेआम मजलिस और वअज़ (प्रवचन) में हुआ, इसलिए वह 'फ़ासिक़े मुअलिन' (खुला उल्लंघन करने वाला) हुआ और उसके पीछे नमाज़ पढ़ना 'मकुरूहे तहरीमी' है।

(7) स्पष्ट है कि वह जाहिल (अज्ञानी) है और जहल (अज्ञानता) के बावजूद उसने फ़तवा देने का साहस किया और हदीस के पवित्र शब्दों को उलट दिया, और शरिया के मुफ़्तियों के फ़तवों को अविश्वसनीय कहा और आम जनता को शरीअत के फ़तवों को नकारने के लिए निडर बनाया। तो निस्संदेह वह 'ज़ाल व मुज़िल्ल' (स्वयं गुमराह और दूसरों को गुमराह करने वाला) हुआ। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम फरमाते हैं:

"लोग जाहिलों को सरदार बना लेंगे और उनसे मसला पूछेंगे, वे बिना ज्ञान के फ़तवा देंगे, जिससे वे खुद भी गुमराह होंगे और दूसरों को भी गुमराह करेंगे।" इसे इमाम अहमद, बुखारी, मुस्लिम, तिर्मिज़ी और इब्न माजा ने हज़रत अब्दुल्ला बिन उमर (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत किया है। (पाद-टिप्पणी 3)

इस स्थिति में उसकी इमामत तो दूर की बात है, उसके पास बैठना भी मना है। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम फरमाते हैं:

"उनसे दूर रहो और उन्हें अपने से दूर करो, कहीं वे तुम्हें गुमराह न कर दें या आज़माइश (फ़ितने) में न डाल दें।" (पाद-टिप्पणी 4)

---

1. अल-मुअजम अल-औसत, हदीस संख्या 3632, मकतबत अल-माआरिफ़, रियाद, 4/383.
2. अल-क़ुरान 19/24 (सूरत अन-नूर 24:19).

3. सहीह अल-बुखारी, हदीस के लिए उत्सुकता पर अध्याय, प्रकाशित: कदीमी कुतुब खाना कराची, 1/20; सहीह मुस्लिम, ज्ञान के उठाने और उसके वापस लेने पर अध्याय, आदि, प्रकाशित: नूर मोहम्मद असहा अल-मताबी कराची, 2/420; जामी अत-तिर्मिज़ी, ज्ञान चाहने वालों के लिए वसीयत के बारे में अध्याय, प्रकाशित: अमीन कंपनी कुतुब खाना रशीदिया दिल्ली, 2/90.
4. सहीह मुस्लिम, कमज़ोरों से रिवायत करने की मनाही पर अध्याय, आदि, प्रकाशित: नूर मोहम्मद असहा अल-मताबी कराची, 1/10.

اذانی فقد اذی اللہ رواہ الطبرانی فی الاوسط عن انس رضی اللہ تعالٰی عنہ بسند حسن۔ اور جس نے مجھے ایذا دی اس نے اللہ عزوجل کو ایذا دی۔ اسے طبرانی نے معجم اوسط میں حضرت انس رضی اللہ تعالٰی عنہ سے سند حسن کے ساتھ روایت کیا ہے

اللہ عزوجل فرماتا ہے: اِنَّ الَّذِیْنَ یُحِبُّوْنَ اَنْ تَشِیْعَ الْفَاحِشَۃُ فِی الَّذِیْنَ اٰمَنُوْا لَھُمْ عَذَابٌ اَلِیْمٌ ۙ فِی الدُّنْیَا وَالْاٰخِرَۃِ جو یہ چاہتے ہیں کہ مسلمانوں میں بے حیائی کی بات کا چرچا پھیلے ان کے لئے دنیا و آخرت میں دردناک عذاب ہے۔

جب اس پر دونوں جہاں میں عذابِ شدید کی وعید ہے تو یہ بھی کبیرہ ہوا اور مرتکبِ کبیرہ فاسق ہے اور یہ فسق بالا علان برسرِ مجلس و وعظ ہوا تو اس وجہ سے وہ بھی فاسق معلن ہوا اور اس کے پیچھے نماز مکروہِ تحریمی۔

(۷) ظاہر ہے کہ وہ جاہل ہے اور باوجودِ جہل اس نے فتوے پر اقدام کیا اور ارشادِ اقدس حدیث کو الٹایا اور مفتیانِ شریعتِ مطہرہ کے فتووں کو بے اعتبار کہا اور عوامِ جہاں کو ردِ فتاوٰی شریعت پر دلیر کیا تو بلا شبہ وہ ضال و مضل ہوا خود گمراہ اور اوروں کو گمراہ کرے۔ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

اتخذ الناس رؤسا جھا لا فسئلوا فافتوا بغیر علم فضلوا واضلوا رواہ الائمۃ احمد والبخاری ومسلم والترمذی و ابن ماجۃ عن عبداللہ بن عمر رضی اللہ تعالٰی عنہما لوگ جاہلوں کو سردار بنالیں گے اور ان سے مسئلہ پوچھیں گے وہ بے علم فتوٰی دیں گے آپ بھی گمراہ ہوئے اوروں کو بھی گمراہ

کریں گے۔ اس کو ائمہ کرام احمد بخاری، مسلم، ترمذی اور ابن ماجہ نے حضرت عبداللہ بن عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا ہے۔

اس صورت میں اس کی امامت در کنار اس کے پاس بیٹھنا منع ہے۔ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں: ایاکم و ایاہم لا یضلونکم ولا یفتنونکم ان سے دور رہو اور انھیں اپنے سے دور کرو کہیں وہ تمھیں

1۔ المعجم الاوسط حدیث نمبر ۳۶۳۲ مکتبہ المعارف الریاض ۳۸۳/۴ 2۔ القرآن ۱۹/۲۴ 3۔ صحیح البخاری باب الحرص علی الحدیث مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۲۰/۱، صحیح مسلم باب رفع العلم و قبضہ الخ مطبوعہ نور محمد اصح المطابع کراچی ۴۲۰/۲، جامع الترمذی باب ماجاء فی الاستیصاء بمن یطلب العلم مطبوعہ امین کمپنی کتب خانہ رشیدیہ دہلی ۹۰/۲ 4۔ صحیح مسلم باب النہی عن الروایۃ عن الضعفاء الخ مطبوعہ نور محمد اصح المطابع کراچی ۱۰/۱

Fatawa-e-Razviya Volume 6

[Arabic] Narrated by Muslim from Abu Huraira (may Allah be pleased with him). [Urdu] Lest they mislead you or put you into trial. This is narrated by Muslim from Hazrat Abu Huraira (may Allah be pleased with him).

Those who support him in such circumstances and wish to maintain his leadership (imamat) are ill-wishers of Muslims and seekers of the corruption, even destruction and ruin of their prayers, and are traitors to Allah. Allah, the Mighty and Sublime, says:

[Arabic] "And do not cooperate in sin and aggression."[1] [Urdu] Do not help each other in sin and exceeding limits.

It is in the Hadith that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said:

[Arabic] "Whoever walks with an oppressor to aid him, while knowing that he is an oppressor, has indeed exited Islam."[2] Narrated by al-Tabarani in al-Kabir and also in Sahih al-Mukhtarah from Aws ibn Shurahbil (may Allah be pleased with him). [Urdu] One who knowingly goes to help an oppressor will leave Islam. Al-Tabarani narrated it in Mu'jam al-Kabir and it is also in Sahih al-Mukhtarah from Hazrat Aws ibn Shurahbil (may Allah be pleased with him):

In another Hadith, the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said:

[Arabic] "Whoever appoints a man over a group when there is someone among them who is more pleasing to Allah than him, has indeed betrayed Allah, His Messenger, and the believers."[3] Narrated by al-Hakim, Ibn Adi, al-Uqayli, al-Tabarani, and al-Khatib from Ibn Abbas (may Allah be pleased with him). [Urdu] Whoever appoints a person over a group while there is someone in that group who is more beloved to Allah Almighty than him, then indeed he has committed treachery against Allah, the Messenger, and all Muslims. Al-Hakim, Ibn Adi, Uqayli, Tabarani, and Khatib narrated it from Hazrat Ibn Abbas (may Allah be pleased with him).

It is necessary for these people to repent and desist from supporting him, and it is obligatory upon Muslims to dismiss him from the imamat and appoint a pious person as Imam. And the Hadith is for the Mujtahid (jurist) who finds conflicting evidences in any matter.

1 Al-Quran 5/2 2 Al-Mu'jam al-Kabir, narrations from Aws ibn Shurahbil RA, Hadith 619, printed by Al-Maktaba al-Faysaliyyah Beirut, 1/22 3 Al-Mustadrak 'ala al-Sahihayn, Al-Imarah Amanah etc., printed by Dar al-Fikr Beirut, 4/92 Note: In Mustadrak, instead of "among them", it is "in that group". Nazir Ahmad Sa'idi

फतवा-ए-रज़विया खंड 6

[अरबी] मुस्लिम ने अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है। [उर्दू] ताकि वे आपको गुमराह न करें और आपको फितने (आज़माइश) में न डालें। इसे मुस्लिम ने हज़रत अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है।

ऐसी स्थितियों में जो उसका समर्थन करते हैं और उसकी इमामत को कायम रखना चाहते हैं, वे मुसलमानों के शुभचिंतक नहीं हैं और उनकी नमाज़ों की खराबी बल्कि तबाही और बर्बादी चाहने वाले और अल्लाह के धोखेबाज़ हैं। अल्लाह अज़्ज़वजल फरमाता है:

[अरबी] "और गुनाह और ज़्यादती में एक-दूसरे की मदद न करो।"[1] [उर्दू] गुनाह और हद से आगे बढ़ने पर एक-दूसरे की मदद न करो।

हदीस में है कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया:

[अरबी] "जो व्यक्ति किसी ज़ालिम की मदद के लिए उसके साथ चला, जबकि वह जानता हो कि वह ज़ालिम है, तो वह इस्लाम से बाहर हो गया।"[2] इसे तबरानी ने 'अल-कबीर' में और 'सहीह अल-मुख्तारा' में भी हज़रत औस बिन शुरहबील (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है। [उर्दू] जो जानबूझकर किसी ज़ालिम की मदद के लिए चलेगा, वह इस्लाम से निकल जाएगा। इसे तबरानी ने 'मोजम कबीर' में और 'सहीह अल-मुख्तारा' में भी हज़रत औस बिन शुरहबील (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है।

दूसरी हदीस में है कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया:

[अरबी] "जिसने किसी समूह पर किसी व्यक्ति को नियुक्त किया, जबकि उनमें कोई ऐसा व्यक्ति मौजूद हो जो अल्लाह को उससे अधिक प्रिय हो, तो उसने अल्लाह, उसके रसूल और ईमान वालों के साथ खयानत की।"[3] इसे हाकिम, इब्ने अदी, अकीली, तबरानी और खतीब ने इब्ने अब्बास (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है। [उर्दू] जो किसी समूह में एक व्यक्ति को उन पर नियुक्त करे और उस समूह में वे मौजूद हों जो अल्लाह अज़्ज़वजल को उससे ज़्यादा पसंद हैं, तो बेशक उसने अल्लाह, रसूल और सब मुसलमानों के साथ खयानत की। इसे हाकिम, इब्ने अदी, अकीली, तबरानी और खतीब ने हज़रत इब्ने अब्बास (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है।

इन लोगों के लिए ज़रूरी है कि वे तौबा करें और उसका समर्थन करना छोड़ दें, और मुसलमानों पर वाजिब है कि उसे इमामत से हटा दें और किसी नेक व्यक्ति को इमाम बनाएँ। और हदीस मुजतहिद के लिए है जिसे किसी मामले में विरोधाभासी दलीलें मिलती हों।

---

1 अल-क़ुरआन 5/2 2 अल-मोजम अल-कबीर, हज़रत औस बिन शुरहबील (रज़ियल्लाहु अन्हु) की रिवायतें, हदीस 619, मकतबा अल-फैसलिया बैरुत, 1/22 3 अल-मुस्तदरक अलल सहीहैन, अल-इमारा अमानत इत्यादि, दारुल फिक्र बैरुत, 4/92 नोट: मुस्तदरक में "उनमें" की जगह "उस समूह में" है। नज़ीर अहमद सईदी

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

رواہ مسلم عن ابی ھریرۃ رضی اللہ تعالٰی عنہ۔ گمراہ نہ کردیں وہ تمھیں فتنہ میں نہ ڈال دیں اسے مسلم نے حضرت ابوہریرہ رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا ہے۔

ایسی حالتوں میں جو اس کی حمایت کریں اس کی امامت قائم رکھنا چاہیں مسلمانوں کے بدخواہ ہیں اور ان کی نمازوں کی خرابی بلکہ تباہی و بربادی چاہنے والے اور اللہ کے خائن۔ اللہ عزوجل فرماتا ہے:

وَلَا تَعَاوَنُوا عَلَى الْإِثْمِ وَالْعُدْوَانِ ص 1۔ گناہ اور حد سے بڑھنے پر ایک دوسرے کی مدد نہ کرو۔

حدیث میں ہے رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

من مشی مع ظالم لیعینہ وھو یعلم انہ ظالم فقد خرج من الاسلام 2 رواہ الطبرانی فی الکبیر وایضا في صحیح لمختارہ عن اوس بن شرحبیل رضی اللہ تعالٰی عنہ۔ جو دانستہ کسی ظالم کی مدد کو چلے وہ اسلام سے نکل جائے گا۔ اسے طبرانی نے معجم کبیر میں اور صحیح المختارہ میں بھی حضرت اوس بن شرحبیل رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا ہے:

دوسری حدیث میں ہے رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

من استعمل رجلا من عصابۃ وفیھم من ھو ارضی اللہ منہ فقد خان اللہ ورسولہ و لمؤمنین 3۔ رواہ الحاکم وابن عدی و العقیلی والطبرانی و الخطیب من ابن عباس رضی اللہ تعالٰی عنہ۔ جو کسی جماعت میں ایک شخص کو ان پر مقرر کرے اور اس جماعت میں وہ موجود ہوں جو اللہ عزوجل کو اس سے زیادہ پسند ہے بیشک اس نے اللہ رسول اور مسلمانوں سب کی خیانت کی اسے حاکم، ابن عدی، عقیلی، طبرانی اور خطیب نے حضرت ابن عباس رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا ہے۔

ان لوگوں پر لازم ہے کہ توبہ کریں اور اس کی حمایت سے باز آئیں اور مسلمانوں پر واجب ہے کہ اسے امامت سے معزول کریں اور کسی صالح امامت کو امام بنائیں اور حدیث مجتہد کے لئے ہے جسے کسی امر میں دلائل متعارض معلوم ہوں

---

1 القرآن 2/5 2 المعجم الکبیر ما اسند اوس بن شرحبیل رضی اللہ تعالیٰ عنہ حدیث 619 مطبوعہ المکتبہ الفیصلیۃ بیروت 1/ 22 3 المستدرک علیٰ الصحیحین الامارۃ امانۃ الخ مطبوعہ دار الفکر بیروت 4/ 92 ف: مستدرک میں "فیهم" کی جگہ "فی تلک العصابۃ" ہے۔ نذیر احمد سعیدی

Fatawa Razawiyya Volume 6

He will abandon it, and the imitation of another Mujtahid is not binding upon him; this applies to people of piety (war'a) in those specific subtle matters where the apparent pure Shari'ah might give a fatwa of permissibility, but the heart of a cautious, pious person remains unsatisfied with it. He will avoid it not because the fatwa is unreliable, but because in such instances, the station of piety is higher than the fatwa. A lady came to our leader Imam Ahmad (may Allah be pleased with him) and asked a question: "The King's procession passes by; can I thread my needle by its light?" The Imam looked towards her and asked, "Who are you?" She replied, "I am the sister of Bishr al-Hafi (may Allah be pleased with him)." He said, "Such piety has indeed emerged from your house. And success is from Allah, and Allah Subhanahu wa Ta'ala knows best."

Problem 704: From Chopra Post Office, Bansi, sent by Muhammad Kaleemuddin Sahib, 14 Rabi al-Akhir 1336 AH. What do the scholars of religion and jurists of the firm Shari'ah say on this matter: On Friday, after Fajr prayer and before the Friday obligatory prayer, is it permissible to offer any prayer on the Imam's prayer spot (Musalla), whether it be Ishraq or pre-Friday sunnah etc., or not? Some scholars say it is forbidden, while others say it is permissible. Clarify and be rewarded.

The Answer: If the endower (waqif) dedicated that Musalla specifically for the purpose of leading prayers (Imamate), then neither the Imam nor anyone else can use it for any other purpose, whether this prohibition is explicit or implicit due to local custom. If it was endowed specifically for the Imam as mentioned, then the Imam can also offer optional (nafl) prayers on it, but no one else. If it was endowed generally—meaning there is no explicit or implicit restriction—then outside the time of the congregational prayer, anyone can use it for both obligatory and optional prayers, and even for teaching and instruction, as stated in Al-Qunya. And Allah Subhanahu wa Ta'ala knows best.

Problem 705: From Hasanpur, District Moradabad, sent by Tufail Ahmad Sahib Qadri Barakati Razvi (may Allah strengthen him), 18 Rabi al-Akhir 1336 AH. Huzoor (Honorable Master), I have learned that prayer behind a Deobandi is not valid. So, what should be done about the prayers we have offered behind them in ignorance? Moreover, in all the mosques of Hasanpur, those same people are Imams. So now what should we do? Even if we offer our individual prayers, what about the Friday prayer? Because wherever Friday prayer is held, they are the Imams. They also lead

the Eid prayers, funeral prayers, and Taraweeh prayers. Furthermore, when we die, they will lead our funeral prayers; so Huzoor, will we be buried without prayer? Because if they lead it, what kind of prayer would that even be? And we Sunnis are only two or three people. First, Huzoor, please prescribe a way so that the prayers we prayed behind them are forgiven because our faith is so weak that we can't even manage the five daily prayers regularly; so Huzoor, what is the way to make up for them, he...

वह इसे छोड़ देगा और दूसरे मुजतहिद की तक़लीद उस पर लाज़िम नहीं, या अहल-ए-वरअ (परहेज़गारों) के लिए उन ख़ास बारीक मामलों में है जिन पर ज़ाहिर शरीयत-ए-मुतह्हरा से जवाज़ का फ़तवा होगा और मुतवर्रिअ मोहतात (एहतियात करने वाले परहेज़गार) का दिल उस पर मुतमइन न होगा, वह उससे बचेगा। यह इसलिए नहीं कि फ़तवा मोतबर नहीं बल्कि इसलिए कि ऐसी जगह तक़वे का मक़ाम फ़तवे से आला है। एक बीवी सैय्यदुना इमाम अहमद की ख़िदमत में हाज़िर हुईं (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) और मसला पूछा कि बादशाह की सवारी निकलती है, क्या मैं उसकी रोशनी में सुई में धागा डाल सकती हूँ? इमाम ने उनकी तरफ़ नज़र उठाई और फ़रमाया, "आप कौन हैं?" कहा, "मैं बिश्र हाफ़ी की बहन हूँ (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु)।" फ़रमाया, "ऐसा वरअ (परहेज़गारी) तुम्हारे घर से निकला है। और तौफ़ीक़ अल्लाह ही की तरफ़ से है और अल्लाह सुब्हानहू व तआला बेहतर जानता है।"

मसला ७०४: चोपड़ा डाकख़ाना, बांसी से, प्रेषक मुहम्मद कलीमुद्दीन साहब, १४ रबी-उल-आख़िर १३३६ हिजरी। दीन के उलमा और शरीयत-ए-मतीन के मुफ़्ती इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि जुमे के दिन फ़ज्र की नमाज़ के बाद और जुमे के फ़र्ज़ से पहले, मुसल्ले (नमाज़ पढ़ने की जगह) पर कोई भी नमाज़ पढ़ना, चाहे इशराक़ हो या जुमे से पहले की सुन्नतें वग़ैरह, जायज़ है या नहीं? कुछ उलमा मना करते हैं और कुछ जायज़ कहते हैं। बयान फ़रमाएं, सवाब पायें।

अल-जवाब: वह मुसल्ला अगर वाक़िफ़ (वक़्फ़ करने वाले) ने सिर्फ़ इमामत के लिए वक़्फ़ किया है, तो इमाम और ग़ैर-इमाम कोई भी उसे दूसरे काम में नहीं ला सकता, चाहे मनाही स्पष्ट रूप से हो या वहां के चलन की वजह से इशारे में हो। और अगर सिर्फ़ इमाम के लिए वक़्फ़ हुआ है जैसा कि ऊपर बताया गया, तो इमाम उस पर नवाफ़िल भी पढ़ सकता है, दूसरा कोई नहीं। और अगर आम तौर पर वक़्फ़ हुआ है यानी न स्पष्ट तौर पर और न ही इशारे में कोई ख़ास शर्त है, तो इमामत के समय के अलावा हर शख़्स उसे फ़राइज़ और नवाफ़िल सब के काम में ला सकता है, बल्कि दरस-ओ-तदरीस (शिक्षा) के लिए भी, जैसा कि 'कुनया' में है। और अल्लाह सुब्हानहू तआला बेहतर जानता है।

मसला ७०५: हसनपुर ज़िला मुरादाबाद से, प्रेषक तुफैल अहमद साहब क़ादरी बरकाती रज़वी (अल्लाह उन्हें मज़बूत रखे), १८ रबी-उल-आख़िर १३३६ हिजरी। हुज़ूर, मुझे मालूम हुआ है कि देवबंदी के पीछे नमाज़ नहीं हो सकती। तो हुज़ूर, हमने जो अनजाने में उनके पीछे नमाज़ें पढ़ी हैं,

उनका क्या किया जाए? और हुज़ूर, हसनपुर की सभी मस्जिदों में वही लोग इमाम हैं, तो अब हम क्या करें? और अगर अपनी-अपनी नमाज़ पढ़ भी ली, तो जुमे की नमाज़ का क्या किया जाए क्योंकि जहां भी जुमा होता है वही इमाम हैं। ईद की नमाज़, जनाज़े की नमाज़ और तरावीह की नमाज़ भी वही पढ़ाते हैं। फिर यह कि जब हम मरेंगे तो हमारे जनाज़े की नमाज़ भी वही पढ़ाएंगे, तो हुज़ूर क्या हम बे-नमाज़ी ही दफ़न होंगे, क्योंकि अगर उन्होंने पढ़ाई भी तो वह नमाज़ ही क्या हुई। और हम सुन्नी बस दो-तीन लोग हैं। पहले तो हुज़ूर कोई ऐसी तरकीब बताइये कि जो नमाज़ें हमने उनके पीछे पढ़ी हैं वे माफ़ हो जाएँ, क्योंकि हमारा ईमान इतना कमज़ोर है कि हमसे पांच वक़्त की नमाज़ भी अदा नहीं होती; तो हुज़ूर उनकी अदा (क़ज़ा) की क्या सूरत है, वह...

पृष्ठ ५७२ / ७३६

وہ اسے ترک کرے گا اور دوسرے مجتہد کی تقلید اس پر نہیں یا اہل ورع کے لئے ان خاص امور دقیقہ میں ہے جن پر ظاہر شریعت مطہرہ سے فتوٰی جواز ہوگا اور متورع محتاط کا قلب اس پر مطمئن نہ ہوگا وہ اس سے بچے گا نہ اس لئے کہ فتوٰی معتبر نہیں بلکہ اس لئے کہ ایسی جگہ مقام تقوٰی فتوٰی سے اعلٰی ہے۔ ایک بی بی سیدنا امام احمد کے پاس حاضر ہوئیں رضی اللہ تعالٰی عنہ، اور مسئلہ پوچھا کہ بادشاہ کی سواری نکلتی ہے کیا میں اس کی روشنی میں سوئی میں ڈورا ڈال سکتی ہوں۔ امام نے ان کی طرف نظر اٹھائی اور فرمایا آپ کون ہیں؟ کہا میں بشر حافی کی بہن ہوں رضی اللہ تعالٰی عنہ۔ فرمایا ایسا ورع تمہارے گھر سے نکلا ہے وباللہ التوفیق واللہ سبحنہ وتعالٰی اعلم

مسئلہ ۷۰۴: از چوپڑا ڈاک خانہ بانسی مرسلہ محمد کلیم الدین صاحب ۱۴ ربیع الآخر ۱۳۳۶ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین اس مسئلہ میں کہ بروز جمعہ بعد نماز فجر قبل فرضِ جمعہ کوئی نماز پیش مصلّٰی پر خواہ اشراق ہو یا قبل الجمعہ غیرہ پڑھنا جائز ہے یا نہیں؟ بعض علماء فرماتے ہیں منع ہے بعض فرماتے ہیں جائز ہے۔ بینوا توجروا

الجواب: وہ مصلّٰی اگر واقف نے صرف امامت کے لئے وقف کیا ہے تو امام و غیر امام کوئی اسے دوسرے کام میں نہیں لا سکتا اگر چہ صراحتہً یا وہاں کے عرف کے سبب دلالتہً ممانعت ہو اور اگر صرف امام کے لئے بطور مذکور وقف ہوا ہے تو امام اس پر نوافل بھی پڑھ سکتا ہے دوسرا کچھ نہیں اور اگر عام طور پر وقف ہوا یعنی صراحتہً تخصیص ہے نہ دلالتہً تو غیر وقت امامت

میں ہر شخص اس کو فرائض و نوافل سب کے کام میں لا سکتا ہے بلکہ درس و تدریس کے بھی ، کما فی القنیہ۔ (جیسا کہ قنیہ میں ہے ۔ ت) واللہ سبحنہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۷۰۵: از حسن پور ضلع مراد آباد مرسلہ طفیل احمد صاحب قادری برکاتی رضوی سلمہ اللہ القوی ۱۸ ربیع الآخر ۱۳۳۶ھ حضور مجھ کو معلوم ہوا ہے کہ دیوبندی کے پیچھے نماز نہیں ہو سکتی تو حضور ہم نے جو بے خبری میں ان کے پیچھے نمازیں پڑھی ہیں ان کا کیا کیا جائے، اور حضور حسن پور سب مسجدوں میں وہی لوگ امام ہیں تو اب ہم کیا کریں اور اگر اپنی اپنی نماز پڑھ بھی لی تو نماز جمعہ کو کیا کیا جائے کیونکہ جہاں جہاں جمعہ ہوتا ہے وہی امام ہیں ، اور عیدیں بھی وہی پڑھاتے ہیں اور جنازہ کی بھی اور نماز تراویح بھی۔ پھر یہ کہ جب ہم مریں گے تو ہمارے جنازوں کی نماز بھی یہی پڑھائیں گے تو حضور ہم بے نماز ہی دفن ہوں گے کیونکہ اگر انھوں نے پڑھائی بھی تو وہ نماز ہی کیا ہوئی؟ اور سنی بس ہم دو تین شخص ہیں، اول حضور کوئی ایسی ترکیب ارشاد ہو کہ جو نمازیں ہم نے ان کے پیچھے پڑھی ہیں معاف ہو جائیں کیونکہ ہمارے ایمان ایسے کمزور ہیں کہ ہم سے پنج وقتہ نماز بھی ادا نہیں ہوتی تو حضور ان کی ادا کی کیا صورت ہے، وہ

Fatawa Razviya Volume 6

...should be forgiven, because such a mistake happened in ignorance, and it is also impossible to leave Hasanpur. Please pay some attention to this and find a way out. And if a problem needs to be inquired about immediately, from whom should it be asked? Because the scholars there are the same ones, even though Mawlid Sharif, Teeja, Daswan, Chaliswan, etc., are performed in abundance in Hasanpur, but it's not known that prayer shouldn't be offered behind them.

The Answer:

Praying behind those with Deobandi beliefs is absolutely void; it won't happen at all. The obligation (Farz) will remain on one's head, and praying behind them is a severe and great sin. Furthermore, Imam Muhaqqiq Al-Al-Itlaq in Fath al-Qadir, a commentary on Hidayah, narrates from our three Imams of the school of thought—Imam Azam, Imam Abu Yusuf, and Imam Muhammad (may Allah be pleased with them): "Verily, prayer behind the people of innovation (Ahl al-Ahwa) is not permissible."[1] (T) In this regard, all prayers are equal, whether it's the five daily prayers, Jumu'ah (Friday prayer), Eid, Janazah (funeral), or Tarawih; no prayer can be valid behind them. In fact, setting aside considering them fit for leadership (Imamate) or as Muslims, if someone even doubts their disbelief (kufr) while being aware of their vile statements, he himself becomes a disbeliever. The scholars of the Two Holy Sanctuaries (Makkah and Madinah) unanimously state:

[Boxed Text] Arabic: Whoever doubts his punishment and his disbelief, has indeed disbelieved.[2] Urdu: He who doubts their being disbelievers is also a disbeliever. (T)

When there are many people performing Mawlid Sharif and the third-day rituals (soom) etc. there, then surely those people are not Deobandis. Show them the fatwas of the noble scholars of Makkah and Madinah (which have been printed and published throughout the country for ten years) and read out the treatise "Tamheed-e-Iman" to them. Al-Hamdu Lillah, Muslims are not such that they would consider prayer permissible behind someone who insults Muhammad, the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him), or consider him a Muslim. Insha'Allah, Allah the Almighty will surely grant guidance and effect, and Muslims, being cautious, will stop praying behind them and Sunnis will appoint their own for the five daily prayers, Jumu'ah, Eid, and funerals. And if, for argument's sake, no one listens, then two people together can perform congregational prayer in all prayers except Jumu'ah, such as the five daily prayers, Eid, and Janazah etc.; an Imam and one

follower are sufficient. For Jumu'ah, appoint a person of merit as Imam to also lead the Eid prayers, and if there are at least three followers in Jumu'ah, it will be valid. If more cannot be found, it doesn't matter, but it is necessary that Jumu'ah and Eid be announced.

---

1 Fath al-Qadir, Chapter of Imamate, printed by Maktaba Nooria Razvia Sukkur, 2/304
2 Durr al-Mukhtar, Chapter of the Apostate, printed by Matba Mujtabai Delhi 1/356, Hussam al-Haramain ala Manhar al-Kufr wal-Main, Maktaba Nabawiya Lahore, p. 31

फ़तावा रज़विया जिल्द 6

...तो माफ़ होनी चाहिए, क्योंकि अनजाने में ऐसी गलती हुई, और यह भी असंभव है कि हसनपुर छोड़ दिया जाए। हुज़ूर इस पर कुछ ध्यान दें और कोई रास्ता निकालें। और फ़ौरन जो मसला पूछना हो वह किससे पूछा जाए क्योंकि वहां जो आलिम हैं वो वही हैं, हालांकि हसनपुर में मिलाद शरीफ, तीजा, दसवां, चालीसवां वगैरह बहुतायत से होता है मगर ये खबर नहीं कि उनके पीछे नमाज़ भी न पढ़ी जाए।

उत्तर:

देवबंदी अकीदे वालों के पीछे नमाज़ बिल्कुल बातिल (अमान्य) है, होगी ही नहीं, फ़र्ज़ सिर पर रहेगा और उनके पीछे पढ़ना बहुत बड़ा गुनाह है। इसके अलावा, इमाम मुहक़्क़िक़ अलल इतलाक फ़तह उल क़दीर (हिदाया की व्याख्या) में हमारे मज़हब के तीनों इमामों—इमाम आज़म, इमाम अबू यूसुफ़ और इमाम मुहम्मद (अल्लाह उन पर प्रसन्न हो)—से नक़ल फरमाते हैं: "बेशक, बिदअतियों (अहले अह्वा) के पीछे नमाज़ जायज़ नहीं है।"[1] (त) इसमें सभी नमाज़ें बराबर हैं, चाहे पांच वक्त की नमाज़ हो, जुमा हो, ईद हो, जनाज़ा हो या तरावीह; उनके पीछे कोई नमाज़ हो ही नहीं सकती। बल्कि (उन्हें इमामत के लायक या मुसलमान समझना तो दूर की बात), अगर कोई उनके गंदे बयानों से वाकिफ होने के बावजूद उनके कुफ्र में शक करे, तो वह खुद काफिर है। हरमैन शरीफैन के उलेमा सर्वसम्मति से फरमाते हैं:

[Boxed Text] अरबी: जिसने उनके अज़ाब और उनके कुफ्र में शक किया, उसने यकीनन कुफ्र किया।[2] उर्दू: जो व्यक्ति उनके काफिर होने में शक करे वह भी काफिर है। (त)

जब वहां मिलाद शरीफ और सोम (तीजा) वगैरह करने वाले बहुत लोग हैं, तो यकीनन वे लोग देवबंदी नहीं हैं। उन्हें मक्का मुअज़्ज़मा और मदीना तैयबा के उलेमा के फतवे (जो दस साल से छपकर पूरे देश में फैल रहे हैं) दिखाइए और "तमहीद-ए-ईमान" रिसाला पढ़-पढ़कर सुनाइए। अल्हम्दुलिल्लाह, मुसलमान ऐसे नहीं हैं कि मुहम्मद रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) को गालियां देने वाले के पीछे नमाज़ जायज़ मानें या उसे मुसलमान मानें। इंशाअल्लाह तआला, अल्लाह अज़्ज़वजल ज़रूर हिदायत और असर देगा, और मुसलमान सतर्क होकर उनके पीछे नमाज़ छोड़ देंगे और सुन्नी जनता अपने लिए पांच वक्त की नमाज़, जुमा, ईदैन और जनाज़ा के लिए अपना इमाम तय करेगी। और अगर मान लें कि कोई बात न माने, तो दो आदमी मिलकर जुमा के अलावा सभी नमाज़ों (पांच वक्त,

ईद, जनाज़ा आदि) में जमात कर सकते हैं; एक इमाम और एक मुक़्तदी (पीछे पढ़ने वाला) काफी है। और जुमा के लिए किसी योग्य व्यक्ति को इमाम नियुक्त करें जो ईद की भी इमामत करे, और जुमा में कम से कम तीन मुक़्तदी हों तो जुमा हो जाएगा। अगर ज़्यादा न मिल सकें तो कोई बात नहीं, लेकिन यह ज़रूरी है कि जुमा और ईद का ऐलान किया जाए।

---

1 फ़तह उल क़दीर, बाबुल इमामत, मक्तबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, 2/304 2 दुर्रे मुख़्तार, बाबुल मुर्तद, मतबा मुजतबाई दिल्ली 1/356, हुसामुल हरमैन अला मनहरुल कुफ़्रे वल मैन, मक्तबा नबविया लाहौर पृ. 31

पृष्ठ 573 (कुल 736)

تو معاف ہونی چاہئیں، کیونکہ بے خبری میں ایسی خطا ہوئی، اور یہ بھی ناممکن ہے کہ حسن پور چھوڑ دیا جائے۔ حضور اس پر کچھ توجہ فرمائی جائے اور کوئی سبیل نکال دی جائے۔ اور فوراً جو مسئلہ دریافت کرنا ہو وہ کس سے دریافت کیا جائے کیونکہ وہاں جو عالم ہیں وہ وہی ہیں، گو حسن پور میں میلاد شریف، تیجہ، دسواں، چالیسواں وغیرہ کثرت سے ہوتا ہے مگر یہ خبر نہیں کہ ان کے پیچھے نماز بھی نہ پڑھی جائے۔

الجواب:

دیوبندی عقیدے والوں کے پیچھے نماز باطل محض ہے، ہوگی ہی نہیں، فرض سر پر رہے گا اور ان کے پیچھے پڑھنے کا شدید عظیم گناہ۔ علاوہ امام محقق علی الاطلاق فتح القدیر شرح ہدایہ میں ہمارے تینوں ائمہ مذہب امام اعظم و امام ابو یوسف و امام محمد رضی اللہ تعالٰی عنہم سے نقل فرماتے ہیں: ان الصلٰوۃ خلف اھل اھواء لا تجوز ۱۔ اہل بدعت کے پیچھے نماز جائز نہیں۔ (ت) اس میں سب برابر ہیں نماز پنجگانہ ہو خواہ جمعہ یا عید یا جنازہ یا تراویح، کوئی نماز ان کے پیچھے ہو ہی نہیں سکتی بلکہ اگر (ان کو قابل امامت یا مسلمان جاننا بھی درکنار) ان کے کفر میں شک ہی کرے تو خود کافر ہے جبکہ ان کے خبیث اقوال پر مطلع ہو علمائے حرمین شریفین بالاتفاق فرماتے ہیں:

[Boxed Text] من شک فی عذابہ و کفرہ فقد کفر ۲۔ | جو شخص ان کے کافر ہونے میں شک کرے وہ بھی کافر ہے۔ (ت)

جب وہاں میلاد شریف اور سوم وغیرہ کرنے والے بکثرت ہیں تو ضرور وہ لوگ دیوبندی نہیں، انھیں علمائے کرام مکہ معظمہ و مدینہ طیبہ کے فتوے (کہ دس برس سے چھپ کر تمام ملک میں شائع ہو رہے ہیں) دکھائیے اور رسالہ "تمہیدِ ایمان" پڑھ پڑھ کر سنائیے الحمد اللہ مسلمان ایسے نہیں کہ محمد رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کو گالیاں دینے والے کے پیچھے نماز جائز مانیں یا اسے مسلمان مانیں ان شاء اللہ تعالیٰ اللہ عزوجل ضرور ہدایت واثر بخشے گا اور مسلمان ہوشیار ہو کر ان کے پیچھے نماز چھوڑ دیں گے اور سنی عوام اپنے لئے پنجگانہ وجمعہ وعیدین و جنازہ سب کے لئے مقرر کریں گے اور اگر بالفرض کوئی نہ سنے تو دو آدمی مل کر سوائے جمعہ سب نمازوں پنجگانہ و عید و جنازہ وغیرہ میں جماعت کر سکتے ہیں ایک اور ایک مقتدی بس کافی ہے اور جمعہ کے لئے ایک شخص اہل کو امام مقرر کیجئے کہ وہی عیدین کی بھی امامت کرے اور جمعہ میں کم سے کم تین مقتدی ہوں جمعہ ہوجائے گا زیادہ نہ مل سکیں تو کچھ حرج نہیں مگر یہ ضرور ہے کہ جمعہ و عیدین اعلان کے

---

۱ فتح القدیر باب الامامۃ مطبوعہ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۲/ ۳۰۴ ۲ در مختار باب المرتد مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۳۵۶، حسام الحرمین علی منحر الکفر والمین مکتبہ نبویہ لاہور ص ۳۱

Fatawa Rizwia Volume 6

...It should be clearly expressed that the Friday and Eid prayers of the Muslims will be at such and such a place, so that whoever Allah Almighty guides may participate. Regarding the prayers offered in ignorance, the remedy is first repentance, and secondly, it is necessary to perform Qada (makeup) for those prayers; an estimate should be made so that no prayer remains outstanding. If a person resides in Dar-ul-Harb (land of war), specifically in a settlement of infidels where, for example, only Hindus reside, and he says he cannot leave this residence, then tell me, from whom should he ask about matters of immediate need? Should he be told to ask the Pandit? 'To Allah we belong and to Him we shall return'. And Allah Almighty knows best.

Problem 706: From the village of Saraya, Post Office Tilo Thu, District Shahabad Ara, sent by Sheikh Madar Bakhsh, 18 Rabi-ul-Akhir 1336 AH. What do the scholars of religion and the masters of the clear Sharia say about this issue? There is a person who reads ordinary Urdu and also performs the Imamat (leading prayer). This same person collects and consumes Sadqa, Fitra, Zakat money, skins of sacrificial animals, etc., from house to house. He also takes the small change, coins, and charity given at the graveyard, and this is his profession. Is prayer valid behind such a person or not? What are the conditions for being an Imam? What kind of person should be an Imam? If, instead of the mentioned person, there is another person who is cautious in these matters, is it more virtuous to pray behind him or not?

The Answer: If he is poor and not a Sahab-e-Nisab (owner of wealth requiring Zakat), and not a Syed Hashmi, then taking those funds is permissible for him, and for this reason, there is no harm in his leading the prayer. For leading the prayer, being a practicing Muslim, correct purity, correct recitation, and being a Sunni of correct belief and not an open sinner (Fasiq-e-Mu'allin) is required. If a person possesses these qualities, the prayer behind him will not be deficient nor will it be Makruh-e-Tehrimi (prohibitively disliked). If this person lacks any of these qualities, then his Imamat is not permissible. It is necessary to appoint another person as Imam who combines these qualities. If all these qualities are present in him, then there is no harm in his Imamat. Furthermore, if another person knows the rules of prayer and purity better than him, then that other person is more worthy (awla), and if this one knows more, then he is better. And Allah Almighty knows best.

Problems 707 to 710: From Karachi, Gari Ahata, Muhalla Ram Bagh, sent by Noor Ahmed Molidenah Wakani Mambiz, 18 Rabi-ul-Akhir 1336 AH. (1) If an Imam is asked

about his beliefs and he does not disclose them, is it permissible to follow him in prayer or not? (2) What should be understood about an Imam who does not adhere to the fixed time, meaning he says regarding the fixed prayer time, 'Is it written on the Arsh-e-Azam (Highest Throne)?', even though the congregation had fixed a time for the convenience of the worshipers? (3) If some members of the congregation are angry with an Imam and some flatter him, is it permissible to follow such a person or not?

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

...यह ज़ाहिर कर दिया जाए कि मुसलमानों का जुमा और ईदैन फ़लां जगह होगी, जिसे अल्लाह तआला हिदायत दे वह शरीक हो जाए। जो नमाज़ें उसने बे-ख़बरी में पढ़ीं, उनका इलाज एक तौबा है, दूसरे यह ज़रूरी है कि उन नमाज़ों की क़ज़ा पढ़ी जाए, अंदाज़ा इतना कर लिया जाए कि कोई नमाज़ बाक़ी न रहे। अगर कोई शख़्स दारुल हर्ब ख़ास कुफ़्फ़ार की बस्ती में बसे जहाँ मशा सिर्फ़ हिन्दू हों और वह कहे कि मैं यहाँ की सकूनत नहीं छोड़ सकता, तो बताओ फ़ौरी ज़रूरत के मसले किस से पूछों? तो क्या इस से कह दिया जाए कि पंडित से पूछ लिया करो? 'इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन'। वल्लाहु तआला आलम।

मसला ७०६: मौज़अ सरया, डाकख़ाना तिलो थू, ज़िला शाहबाद आरा से, मुर्सला शेख़ मदार बख़्श, १८ रबीउल आख़िर १३३६ हि.। क्या फ़रमाते हैं उलमा-ए-दीन और मुफ़्तियान-ए-शरअ-ए-मतीन इस मसले में कि एक शख़्स मामूली उर्दू पढ़ता है और इमामत भी करता है और वही शख़्स घर-घर से सदक़ा, फ़ितरा, माल-ए-ज़कात व खाल-ए-क़ुरबानी वगैरह लेता और खाता है और क़ब्रिस्तान में जो गुल्ला-पैसा कौड़ी ख़ैरात किया जाता है वह भी ले लेता है और इसका पेशा यही है। ऐसे शख़्स के पीछे नमाज़ दुरुस्त है या नहीं? इमाम के लिए कौन-कौन सी शर्तें हैं? कैसे शख़्स को इमाम होना चाहिए? अगर बजाए शख़्स मज़कूर के दूसरा शख़्स जो इन बातों से मोहतात हो उसके पीछे नमाज़ पढ़ना अफ़ज़ल है या नहीं?

अल-जवाब: अगर वह फ़क़ीर है साहिब-ए-निसाब नहीं, न सैय्यद हाशमी है तो उन अमवाल का लेना उसे जाइज़ है और इस वजह से उसकी इमामत में कोई हर्ज नहीं। इमामत के लिए सहीह उल-इस्लाम, सहीह अत-तहारत, सहीह अल-क़िरात, सुन्नी सहीह उल-अक़ीदा ग़ैर फ़ासिक मुअल्लेन दरकार है। जिस में ये बातें हों उस के पीछे नमाज़ कम न होगी न मकरूह-ए-तहरीमी होगी। इस शख़्स में इन बातों से कोई बात कम है तो उसकी इमामत जाइज़ नहीं। वाजिब है कि दूसरे को जो इन बातों का जामे हो इमाम करें और ये सब बातें इस में हैं तो उसकी इमामत में हर्ज नहीं। फिर दूसरा अगर नमाज़ व तहारत के मसाइल इस से ज़्यादा जानता है तो वह दूसरा ही औला है और अगर यह ज़्यादा जानता है तो यही बेहतर। वल्लाहु तआला आलम।

मसला ७०७ ता ७१०: कराची गाड़ी अहाता मुहल्ला राम बाग़ से, मुर्सला नूर अहमद मौलीदीना वाकानी मम्बिज़, १८ रबीउल आख़िर १३३६ हि.। (१) जिस इमाम को उसके अक़ाएद पूछे जाएँ और

वह न बताए तो उसकी इक़्तिदा जाइज़ है या नहीं? (२) जो इमाम वक़्त-ए-मुक़र्ररह का पाबंद न हो यानी कहे कि नमाज़ मुक़र्ररह वक़्त पर 'अर्शे अज़म' पर लिखा हुआ है क्या, हालाँकि मुसलियों की आसानी के लिए जमाअत ने वक़्त मुक़र्रर किया, उसे क्या समझना चाहिए? (३) जिस इमाम से जमाअत के कुछ आदमी नाराज़ हों और कुछ उसकी ख़ुशामद करते हों तो ऐसे की इक़्तिदा करना जाइज़ है या नहीं?

पृष्ठ ५७४ का ७३६

ساتھ ہوں ظاہر کردیا جائے کہ مسلمانوں کا جمعہ وعیدین فلاں جگہ ہوگی، جسے اللہ تعالی ہدایت دے گا شریک ہوجائے گا ان کے پیچھے جو نمازیں بے خبری میں پڑھیں ان کا علاج ایک توبہ ہے، دوسرے یہ ضرور ہے کہ ان نمازوں کی قضا پڑھی جائے، اندازہ اتنا کرلیا جائے کہ کوئی نماز باقی نہ رہ جائے زیادہ ہو جائیں تو حرج نہیں۔ اگر کوئی شخص دارالحرب خاص کفار کی بستی میں بسے جہاں مثلا صرف ہندو ہوں اور وہ کہے کہ میں یہاں کی سکونت تو چھوڑ نہیں سکتا یہ بتاؤ فوری ضرورت کے مسئلے کس سے پوچھوں تو کیا اس سے کہہ دیا جائے گا کہ پنڈت سے پوچھ لیا کرو انا اللہ وانا الیہ راجعون۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۷۰۶: از موضع سریا ڈاکخانہ تیلو تھو ضلع شاہ آباد آرہ مرسلہ شیخ مدار بخش ۱۸ ربیع الآخر ۱۳۳۶ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین ومفتیان شرع متین اس مسئلہ میں کہ ایک شخص معمولی اردو خواں مؤذنی بھی کرتا ہے اور امامت بھی کرتا ہے اور وہی شخص گھر گھر سے صدقہ فطر مال زکوۃ وخال قربانی وغیرہ لیتا اور کھاتا ہے اور قبرستان میں جو غلہ پیسہ کوڑی خیرات کیا جاتا ہے وہ بھی لیتا ہے اور اس کا پیشہ یہی ہے، ایسے شخص کے پیچھے نماز درست ہے یا نہیں؟ امام کے لئے کون کون شرائط ہیں؟ کیسے شخص کو امام ہونا چاہئے؟ اگر بجائے شخص مذکور کے دوسرا شخص جوان باتوں سے محتاط ہو اس کے پیچھے نماز پڑھنا افضل ہے یا نہیں؟

الجواب: اگر وہ فقیر ہے صاحب نصاب نہیں، نہ سید ہاشمی ہے تو ان اموال کا لینا اسے جائز ہے اور اس وجہ سے اس کی امامت میں کوئی حرج نہیں۔ امامت کیلئے صحیح الاسلام صحیح

الطہارت ، صحیح القرأت ، سنی صحیح العقیدہ غیر فاسق معلن درکار ہے۔ جس میں ان باتوں سے کوئی بات کم ہوگی اسکے پیچھے نماز ہوگی ہی نہیں مکروہ تحریمی ہوگی اس شخص میں ان باتوں سے کوئی بات کم ہے تو اس کی امامت جائز نہیں، واجب کہ دوسرے کو جو ان باتوں کا جامع ہو امام کریں اور یہ سب باتیں اس میں ہیں تو اس کی امامت میں حرج نہیں، پھر دوسرا اگر نماز وطہارت کے مسائل اس سے زیادہ جانتا ہے تو وہ دوسرا ہی اولی ہے اور اگر یہ زیادہ جانتا ہے تو یہی بہتر۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۷۰۷ تا ۷۱۰: از کراچی گاڑی احاطہ محلہ رام باغ مرسلہ نور احمد مولیڈ نہ واکانی ممبیز ۱۸ ربیع الآخر ۱۳۳۶ھ (۱) جس امام کو اس کے عقائد پوچھے جائیں اور وہ نہ بتائے تو اس کی اقتداء جائز ہے یا نہیں؟ (۲) جو امام وقت مقررہ کا پابند نہ ہو یعنی کہے کہ نماز مقررہ وقت پر پڑھنا عرش اعظم پر لکھا ہوا ہے کیا، حالانکہ مصلیوں کی آسانی کے لئے جماعت نے وقت مقرر کیا، اس کو کیا سمجھنا چاہئے؟ (۳) جس امام سے جماعت کے بعض آدمی ناراض ہوں اور بعض اس کی خوشامد کرتے ہوں تو ایسے کی اقتداء کرنا جائز یا نہیں؟

صفحہ ۵۷۴ از ۷۳۶

Fatawa Rizvia Volume 6 (4) Can a person who has both hands, but one hand, specifically the right hand, is useless, and he performs purification (istinja), wudu, and eats with his left hand, be an Imam or not? The Answer: (1) Not revealing one's belief and school of thought upon inquiry makes it apparent that there is some corruption in it, otherwise, is religion something to be hidden? One should never follow him in prayer as there is a strong possibility of the prayer being void. Prayer is one of the greatest obligations of Islam, and strict caution is required for it, to the extent that the Absolute Researcher stated in Fath al-Qadir:

Indeed, when a prayer is invalid from one aspect and valid from multiple aspects, the ruling of invalidity of the prayer shall be given. And Allah knows best. | When a prayer is invalid due to one reason and correct based on multiple reasons, the ruling of the prayer being invalid will be given. (T)

(2) There are two aspects to this. Some followers (muqtadis) have such a harsh temperament that they do not tolerate even a few minutes' delay or advancement. In such a situation, if the Imam refused or made excuses, and if there is laziness on the Imam's part without a Sharia-compliant reason, causing distress to the congregation, then he is to blame. And Allah knows best. (3) The resentment should be examined. If it is due to some Sharia-related flaw in him, then it is a sin for him to be an Imam, and according to the Hadith, his prayer will not be accepted.

There are three people whose prayer is not raised even a span above their ears... until he (Peace and blessings of Allah be upon him) said: and one who leads a people while they dislike him. | The prayer of three persons does not rise even a span above their ears. The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) went as far as to say: one of them is a person who becomes the Imam of a people while they dislike him. (T)

If there is no Sharia-related flaw in him, then there is no harm in his leading the prayer, and the burden is upon those who are resentful, as explicitly stated in Al-Durr al-Mukhtar (as the text exists in Durr al-Mukhtar. T). And Allah knows best. (4) It is possible; rather, if he is the most knowledgeable among those present, he shall be made the Imam, as they have explicitly stated in the texts (mutun), commentaries (shuruh), and fatwa collections (fatawa) regarding this issue.

1. Fath al-Qadir, Chapter of the Prayer of a Traveler, published by Maktaba Nooria Rizvia, Sukkur, 12/14.

2. Sunan Ibn Majah, Chapter on one who leads a people while they dislike him, published by H.M. Saeed Company, Karachi, p. 69. F: In Sunan Ibn Majah, instead of "above their ears," it is "above their heads." Nazir Ahmad Saeedi. Page 575 of 736

फ़तवा रिज़विया जिल्द 6 (4) जिस इमाम के दोनों हाथ हों मगर एक हाथ सीधा यानी सीधा हाथ बेकार हो और वह बाएं हाथ से इस्तंजा करता हो, वुज़ू करता हो और खाना खाता हो, वह इमाम हो सकता है या नहीं? अल-जवाब (उत्तर): (1) अपना अकीदा और मज़हब पूछने पर न बताने से ज़ाहिर यही है कि इसमें कुछ फ़साद है, वरना दीन भी क्या छुपाने की चीज़ है? उसकी पैरवी (इक़्तेदा) हरगिज़ न की जाए क्योंकि नमाज़ के बातिल (अमान्य) होने की मज़बूत संभावना है। नमाज़ इस्लाम के महानतम फ़र्ज़ों में से है, इसके लिए कड़ी एहतियात ज़रूरी है, यहाँ तक कि मुहाक़्क़िक़ अली अल-इतलाक़ ने फ़तहुल क़दीर में फ़रमाया:

जब किसी एक वजह से नमाज़ फ़ासिद (अमान्य) हो और कई वजहों से सही हो, तो नमाज़ के फ़ासिद होने का हुक्म दिया जाएगा। अल्लाह बेहतर जानता है। | जब किसी एक वजह पर नमाज़ फ़ासिद हो और कई वजहों की बिना पर सही हो, तो नमाज़ के फ़ासिद होने का हुक्म होगा। (त)

(2) इसमें दोनों ही बातें हैं। कुछ मुक़्तदियों (पीछे नमाज़ पढ़ने वालों) का स्वभाव इतना कठोर होता है कि वे कुछ मिनटों का भी आगे-पीछे बर्दाश्त नहीं करते। ऐसी स्थिति में अगर इमाम ने इस पर इनकार किया या बहाना बनाया, और अगर इमाम की ओर से बिना किसी शरीअती वजह के सुस्ती है और जमाअत को तकलीफ़ होती है, तो उस पर इल्ज़ाम है। वल्लाह तआला आलम। (3) नाराज़गी देखी जाएगी। अगर वह किसी शरीअती कमी की वजह से है, तो उसका इमाम बनना गुनाह है और हदीस के हुक्म के अनुसार उसकी नमाज़ स्वीकार नहीं होगी।

तीन व्यक्ति ऐसे हैं जिनकी नमाज़ उनके कानों से एक बालिश्त ऊपर भी नहीं उठती... यहाँ तक कि आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: और वह शख्स जो किसी कौम का इमाम बने जबकि वे उसे नापसंद करते हों। | तीन व्यक्तियों की नमाज़ उनके कानों से एक बालिश्त बराबर भी बुलंद नहीं होती, आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने यहाँ तक फ़रमाया कि एक वह व्यक्ति जो किसी कौम का इमाम बन जाए जबकि लोग उसे नापसंद करते हों। (त)

अगर उसमें कोई शरीअती कमी नहीं है, तो उसकी इमामत में कोई हर्ज नहीं है और बोझ उन नाराज़ होने वालों पर है, जैसा कि अल-दुर्रुल मुख्तार में स्पष्ट किया गया है। वल्लाह तआला आलम। (4) हो सकता है; बल्कि अगर वह हाज़िर लोगों में सबसे ज़्यादा इल्म (ज्ञान) रखता हो, तो उसी को इमाम बनाया जाएगा, जैसा कि मुतून, शरुहात और फ़तावा में इस मसले के बारे में बताया गया है।

1. फ़तहुल क़दीर, बाब सलातुल मुसाफ़िर, मकबूल नूरिया रिज़विया, सुक्कुर 12/14।

2. सुनन इब्न माजा, बाब मन अम्मा क़ौमन वहम लहू कारिहून, एच.एम. सईद कंपनी, कराची, पृष्ठ 69। एफ: सुनन इब्न माजा में "कानों के ऊपर" की जगह "सिरों के ऊपर" है। नज़ीर अहमद सईदी। पृष्ठ 575/736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم (۴) جس امام کے دونوں ہاتھ ہوں مگر ایک ہاتھ سیدھا یعنی سیدھا ہاتھ نکما ہو اور بائیں ہاتھ سے آبدست لیتا ہو استنجا کرتا ہوں وضو کرتا ہو اور کھانا کھاتا ہو امام ہو سکتا ہے یا نہیں؟ الجواب: (۱) اپنا عقیدہ و مذہب دریافت کرنے پر نہ بتانے سے ظاہر یہی ہے کہ اس میں کچھ فساد ہے ورنہ دین بھی کچھ چھپانے کی چیز ہے، اس کی اقتداء ہرگز نہ کی جائے کہ بطلان نماز کا احتمال قوی ہے اور نماز اعظم فرائض اسلام سے ہے اس کے لئے سخت احتیاط مطلوب، یہاں تک کہ محقق علی الاطلاق نے فتح القدیر میں فرمایا:

لان الصلوۃ متی فسدت من وجہ و جازت من وجوہ حکم بفسادھا واللہ تعالٰی اعلم | جب کسی ایک وجہ پر نماز فاسد ہو اور متعدد وجوہ کی بنا پر درست تو فسادِ نماز کا حکم ہوگا۔ (ت)

(۲) اس میں دونوں ہی باتیں ہیں بعض مقتدیوں کے مزاج میں تشدد اس قدر ہوتا کہ وہ چند منٹ کا آگا پیچھا روانہیں رکھتے ایسی حالت میں اگر امام نے اس پر انکار کیا بہا نہ کیا اور اگر امام کی طرف سے بلا وجہ شرعی تکاسل ہے اور اس جماعت کو تکلیف پہنچتی ہے تو اس پر الزام ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم (۳) رنجیدگی دیکھی جائے گی اگر اس میں کسی قصور شرعی کی وجہ سے ہے تو اسے امام بننا گناہ ہے اور بحکم حدیث اس کی نماز مقبول نہ ہوگی۔

ثلثۃ لا ترفع صلاتھم فوق اذانھم شبرا الی ان قال صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم و من ام قوما وھم لہ کارھون۔ | تین اشخاص کی نماز ان کے کانوں سے ایک بالشت برابر بھی بلند نہیں ہوتی، آپ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے یہاں تک فرمایا کہ ایک وہ شخص جو کسی قوم کا امام بن جائے حالانکہ وہ لوگ اسے نا پسند کرتے ہوں (ت)

اور اگر اس میں کوئی قصور شرعی نہیں تو اس کی امامت میں کوئی حرج نہیں اور ان رنج والوں پر وبال ہے کما نص فی الدر المختار (جیسا کہ در مختار میں اس پر نص موجود ہے۔ ت) واللہ تعالیٰ اعلم (۴) ہو سکتا ہے بلکہ اگر وہی حاضرین میں سب سے زیادہ علم رکھتا ہوں وہی امام کیا جائے گا کما نصو علیہ فی المتون والشروح والفتاوٰی (جیسا کہ متون، شروحات اور فتاوٰی جات میں اس مسئلہ کے متعلق

1 فتح القدیر، باب صلوٰۃ المسافر، مطبوعہ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۱۲ / ۱۴ 2 سنن ابن ماجہ باب من ام قوتم وھم لہ کارھون مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ص ۶۹ ف: سنن ابن ماجہ میں "فوق اذانھم" کی جگہ "فوق رؤوسھم" ہے۔ نذیر احمد سعیدی Page 575 of 736

Fatawa Razawiyya Volume 6 Texts are present. (T) And Allah Almighty knows best.

Issue 711: From Karachi Port, Sadar Bazaar, shop of Seth Haji Ahmed, Haji Karim, Muhammad Sharif General Merchant, sent by Abdullah son of Haji, 23 Rabi al-Akhir 1336 AH. The hand of the Imam of Sadar has become paralyzed and motionless due to falling from a horse. For this reason, he cannot raise his affected hand to his earlobe at the time of Takbir al-Tahrimah. In this situation, is his leading the prayer (imamat) permissible without any dislike (karahat) or not? (T)

The Answer: It is permissible; rather, if he is the most learned of the people, he is the most rightful for the imamat. And Allah Almighty knows best. (T)

Issue 712: From Sitapur, Muhalla Qaziyara, sent by Ilyas Hussain Sahib, 23 Rabi al-Akhir 1336 AH. When there is one scholar who is noble but not a Sayyid, and another scholar who is of lower status, in the presence of an ignorant or less noble Sayyid, which of these two types of scholars is more deserving of imamat? Does only a Sayyid have the right?

The Answer: A scholar is in any case more deserving of imamat provided he is not an innovator (mubtadi) or an open sinner (fasiq mu'lin). Between two scholars, the one who has preference in the knowledge of prayer and purification is prioritized. If they are equal in that, then after factors like recitation, piety, and age, preference is given to noble lineage. Calling a scholar 'vile' or 'lowly' is a very harsh word; a scholar of any community, if he is a religious scholar, is superior in the sight of Allah to any ignorant person, no matter how noble he may be. Allah Almighty says: "Say: Are those who know and those who do not know equal?" (Never). (T) "Say: Are those who know equal to those who do not know?" 1 It is stated generally that one who is not a scholar cannot be equal to a scholar; no specification of lineage etc. was made in this. And Allah Almighty knows best.

1. Al-Quran 39:9 Page 576 of 736

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी नस्सूस मौजूद हैं। त) वल्लाह तआला आलम

मसअला 711: कराची बंदर सदर बाज़ार, सेठ हाजी अहमद, हाजी करीम, मुहम्मद शरीफ़ जनरल मर्चेंट की दुकान से, अब्दुल्ला वल्द हाजी द्वारा प्रेषित, 23 रबी उल-आख़िर 1336 हिजरी। सदर के इमाम का हाथ घोड़े से गिरने के कारण सुन्न और गतिहीन हो गया है। इस वजह से वह तकबीर-ए-तहरीमा के समय अपना प्रभावित हाथ कान की लौ तक नहीं उठा सकते। क्या इस स्थिति में उनका नमाज़ पढ़ाना (इमामत) बिना किसी नापसंदगी (कराहियत) के जायज़ है या नहीं? (त)

अल-जवाब: जायज़ है, बल्कि अगर वह कौम में सबसे ज़्यादा आलिम (विद्वान) हैं, तो इमामत के वही सबसे ज़्यादा हक़दार हैं। वल्लाह तआला आलम। (त)

मसअला 712: सीतापुर, मोहल्ला क़ज़ियारा से, इलियास हुसैन साहब द्वारा प्रेषित, 23 रबी उल-आख़िर 1336 हिजरी। जब एक आलिम और शरीफ़ व्यक्ति हो लेकिन सैय्यद न हो, और एक आलिम कमतर सामाजिक पृष्ठभूमि का हो, तो एक जाहिल या कम कुलीन सैय्यद की मौजूदगी में इन दोनों तरह के आलिमों में से इमामत का ज़्यादा हक़दार कौन है? क्या सिर्फ सैय्यद को ही यह हक़ है?

अल-जवाब: आलिम हर हाल में इमामत का ज़्यादा हक़दार है, बशर्ते कि वह कोई बिदअती या खुला गुनहगार (फ़ासिक़-ए-मुअलिन) न हो। और दो आलिमों के बीच, जिसे नमाज़ और पाकी (तहारत) के इल्म में प्राथमिकता प्राप्त हो, उसे आगे रखा जाएगा। अगर वे इसमें बराबर हैं, तो क़िरात, परहेज़गारी और उम्र आदि के बाद कुलीन वंश (शरीफ़ नसब) को प्राथमिकता दी जाएगी। किसी आलिम को 'रज़ील' कहना बहुत सख़्त शब्द है; किसी भी कौम का आलिम, अगर वह दीनी आलिम है, तो अल्लाह के नज़दीक वह हर जाहिल से बेहतर है, चाहे वह कितना ही कुलीन क्यों न हो। अल्लाह तआला का इरशाद-ए-गिरामी है: क्या इल्म वाले और बे-इल्म बराबर हो सकते हैं? (हरगिज़ नहीं)। (त) "क़ुल हल यस्तविल्लज़ीना यअ'लमूना वल्लज़ीना ला यअ'लमून" (कह दो, क्या वे जो जानते हैं और वे जो नहीं जानते, बराबर हैं?) 1 मुतलक़ (सामान्य रूप से) फ़रमाया गया कि जो आलिम नहीं है, वह आलिम के बराबर नहीं हो सकता। इसमें नसब (वंश) आदि की कोई विशिष्टता नहीं बताई गई। वल्लाह तआला आलम।

1. अल-क़ुरआन 39/9 पृष्ठ 576 (736 में से)

فتاوی رضویہ جلد ششم نصوص موجود ہیں۔ ت) واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۷۱۱: از کراچی بندر صدر بازار دکان سیٹھ حاجی احمد، حاجی کریم، محمد شریف جنرل مرچنٹ مرسلہ عبد اللہ ولد حاجی ۲۳ ربیع الآخر ۱۳۳۶ھ امام صدر را باعث افتادن از ستور در یک دست تشنج واقع شدہ است ازیں وجہ دست ماؤفہ او بوقت تکبیر تحریمہ مس مزمہ گوش نمی شود آیا دریں صورت امامت او بلا کراہت جائز است یا نہ؟ صدر کے امام کا ہاتھ گھوڑے سے گرنے کی وجہ سے بے حس وحرکت ہو گیا ہے اس وجہ سے وہ اپنا ماؤف ہاتھ بوقت تکبیر تحریمہ کان کی لو تک نہیں اٹھا سکتا، اس صورت میں اس کی امامت بلا کراہت جائز ہے یا نہیں؟ (ت)

الجواب: جائز است بلکہ اگر اعلم قوم است ہموں احق بامامت است واللہ تعالیٰ اعلم۔ جائز ہے بلکہ اگر وہ قوم سے زیادہ عالم ہے تو امامت کا مستحق وہی ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم (ت)

مسئلہ ۷۱۲: از سیتا پور محلہ قضیارہ مرسلہ الیاس حسین صاحب ۲۳ ربیع الآخر ۱۳۳۶ھ جب ایک عالم اور شریف ہے مگر سید نہیں ایک عالم رذیل ہے جاہل یا کم نجیب الطرفین سید کی موجودگی میں ان دونوں قسموں کے عالموں سے کون زیادہ مستحق امامت ہے؟ صرف سید ہی کو استحقاق ہے؟

الجواب: عالم بہر حال زیادہ مستحق امامت ہے جبکہ مبتدع یا فاسق معلن نہ ہو، اور دونوں عالموں میں جسے علم نماز وطہارت میں ترجیح ہو وہ مقدم ہے او اس میں مساوی ہوں تو قراءت و ورع وسن وغیرہا مرجحات کے بعد شریف نسب سے ترجیح دی جائے گی، عالم رذیل کہنا بہت سخت لفظ ہے عالم کسی قوم کا جو اگر عالم دین ہے اللہ کے نزدیک ہر جاہل سے اگر چہ کتنا ہی شریف ہو افضل ہے۔ قال اللہ تعالیٰ: اللہ تعالیٰ کا ارشاد گرامی ہے: کیا علم والے اور بے علم برابر ہو

سکتے ہیں؟ (ہر گز نہیں)۔ (ت) قُلْ هَلْ يَسْتَوِي الَّذِينَ يَعْلَمُونَ وَالَّذِينَ لَا يَعْلَمُونَ ط ۱- مطلق فرمایا کہ جو عالم نہیں عالم کے برابر نہیں ہو سکتا اس میں کوئی تخصیص نسب وغیرہ کی نہ فرمائی۔ واللہ تعالٰی اعلم

Fatawa Razawiyyah Volume Six Question 713: From Tarsai, Kathiawar, sent by Mr. Ahmad Dawood, 2 Jumada al-Ula 1326 AH. (1) Can a follower (Muqallid) of any one of the four Imams pray behind or follow another follower of any of the four Imams? Meaning, can a Shafi'i pray behind a Hanafi Imam, or a Hanafi behind a Shafi'i Imam, or a Hanbali behind a Hanafi, or a Hanafi behind a Hanbali Imam? (2) If a Shafi'i becomes the Imam of a Hanafi, is it necessary for him to stop doing Raf'ul Yadain (raising hands) or saying Amin aloud for the sake of the Hanafi? Or should every person, whether Imam or follower, follow their own respective Imam?

The Answer: (1) If it is known that the Imam currently has a condition which, according to my school of thought (Madhab), renders his purification or prayer invalid, then following him is forbidden (Haram) and the prayer is void (Batil). If the specific state at that time is unknown, but it is known that this Imam does not take precautions regarding the obligations (Fara'id) and conditions (Shara'it) of my school of thought, then following him is prohibited and praying behind him is severely disliked (Makruh-e-Tahrimi). If it is known that he also observes the precautions and considerations of my school of thought, or it is known that he has observed them in this particular prayer, then praying behind him is permissible without any dislike, provided he is a Sunni of correct belief and not a non-conformist (Ghair Muqallid) pretending to be a Shafi'i. If nothing is known, then following him is slightly disliked (Makruh-e-Tanzihi). Allah Almighty knows best. (2) Every person should follow their own Imam. Allah Almighty knows best.

From Bareilly Question 714: Zaid is the Imam of a mosque and he told a lie. Because of this, a person stopped praying behind him and started praying every prayer before time. That same person is also the Muezzin and says the Takbir. Will this Takbir be valid or not? And is praying behind such an Imam permissible or not? And what about all the prayers offered behind him since he told the lie; are they valid or not?

The Answer: The questioner stated that the lie attributed to the Imam is that when asked "What time is it?", he said "It's quarter past eight," while it was actually quarter past nine. This is not the kind of lie for which one should stop praying behind him. If it's quarter past nine, then quarter past eight has certainly already passed. It is written in Al-Alamgiriyah that if someone buys something for ten rupees and says they bought it for five when asked, this is not a lie deserving of accountability. Similarly, quarter past eight is included within quarter past nine. The Muezzin who abandons the congregational prayer over such a trivial matter is a double sinner: first

for the sin of abandoning the congregation, and secondly for the grave sin of calling others to prayer (Adhan) but abstaining himself.

फ़तावा रज़विया खंड छह मसला 713: तरसाई, काठियावाड़ से, प्रेषक अहमद दाऊद साहब, 2 जमादी-उल-उला 1326 हिजरी। (1) अइम्मा अरबा (चारों इमामों) में से किसी एक इमाम के मुकल्लिद की इमामत या मुताअबत (अनुसरण), चाहे वह चारों इमामों में से किसी एक इमाम का मुकल्लिद हो, यानी क्या शाफई हनफी इमाम के पीछे, या हनफी शाफई इमाम के पीछे, या हनबली हनफी के पीछे, या हनफी हनबली इमाम के पीछे नमाज़ पढ़ सकता है या नहीं? (2) अगर हनफी का इमाम शाफई बने, तो क्या यह ज़रूरी है कि वह हनफी की खातिर रफ़-ए-यदैन (हाथ उठाना) या आमीन बिल-जहर (ज़ोर से आमीन कहना) छोड़ दे, या यह कि हर व्यक्ति, चाहे वह इमाम हो या मुक्तदी, अपने-अपने इमाम की पैरवी करे?

अल-जवाब (उत्तर): (1) अगर मालूम है कि इस समय इमाम में वह बात है जिसके कारण मेरे मज़हब (विचारधारा) में उसकी पाकी (तहारत) या नमाज़ फासिद (अमान्य) है, तो इक़्तेदा (पीछे नमाज़ पढ़ना) हराम और नमाज़ बातिल (शून्य) है। और अगर उस विशेष समय का हाल मालूम नहीं, लेकिन यह मालूम है कि यह इमाम मेरे मज़हब के फ़राएज़ और शरायत (अनिवार्यता और शर्तों) की एहतियात (सावधानी) नहीं करता, तो उसकी इक़्तेदा मना है और उसके पीछे नमाज़ सख़्त मकरूह (नापसंद) है। और अगर मालूम है कि वह मेरे मज़हब की भी रिआयत और एहतियात करता है, या मालूम हो कि इस विशेष नमाज़ में उसने रिआयत की है, तो उसके पीछे नमाज़ बिना किसी कराहत के जायज़ है, बशर्ते कि वह सुन्नी सही-उल-अक़ीदा हो, न कि ग़ैर-मुकल्लिद जो खुद को शाफई ज़ाहिर करे। और अगर कुछ मालूम न हो, तो उसकी इक़्तेदा मकरूह-ए-तंज़ीही है। वल्लाहु तआला आलम (अल्लाह सबसे बेहतर जानता है)। (2) हर व्यक्ति अपने इमाम की पैरवी करे। वल्लाहु तआला आलम।

बरेली से मसला 714: ज़ैद मस्जिद का इमाम है और उसने झूठ बोला। इस पर एक व्यक्ति ने उसके पीछे नमाज़ पढ़ना छोड़ दिया और किसी भी समय की नमाज़ वह व्यक्ति पहले ही पढ़ लेता है। मुअज़्ज़िन भी वही व्यक्ति है और तकबीर भी वही कहता है। तो क्या यह तकबीर सही होगी या नहीं? और ऐसे इमाम के पीछे नमाज़ जायज़ है या नहीं? और उस समय तक जितनी नमाज़ें उसके पीछे पढ़ी गईं, जब से उसने झूठ बोला, तो क्या वे नमाज़ें हो गईं या नहीं?

अल-जवाब (उत्तर): साहिल (प्रश्नकर्ता) ने यह बयान किया कि इमाम के ज़िम्मे यह झूठ लगाया जाता है कि उससे पूछा गया कि क्या बजा है? उसने कहा सवा आठ बजे हैं, जबकि बजे थे सवा नौ। यह कोई ऐसा झूठ नहीं है जिसके कारण उसके पीछे नमाज़ छोड़ दी जाए। अगर सवा नौ बजे हैं तो

यकीनन सवा आठ भी बज चुके हैं। आलमगीरी में है कि अगर कोई चीज़ दस रुपये में खरीदी और पूछने पर कहा कि पाँच में ली है, तो यह कोई ऐसा झूठ नहीं है जो सज़ा के काबिल हो। इसी तरह सवा नौ में सवा आठ शामिल हैं। मुअज़्ज़िन जो इतनी सी बात पर जमात तर्क(छोड़ना) करता है, वह दोहरा गुनहगार है: एक जमात छोड़ने का गुनाह और दूसरा सख़्त गुनाह यह कि दूसरों को अज़ान देकर बुलाना और खुद उससे बाज़ रहना।

पृष्ठ 577 का 736

فتاویٰ رضویہ جلد ششم مسئلہ ۷۱۳ : از تر سائی کاٹھیاواڑ مرسلہ احمد داؤد صاحب ۲ جمادی الاولیٰ ۱۳۲۶ھ (۱) ائمہ اربعہ میں سے کسی ایک امام کے مقلد کی امامت یا متابعت خواہ چار اماموں میں سے کوئی ایک امام کا مقلد ہو یعنی شافعی حنفی امام کے پیچھے یا حنفی شافعی امام کے پیچھے یا حنبلی حنفی کے یا حنفی حنبلی کے پیچھے نماز پڑھ سکتا ہے یا نہیں؟ (۲) اگر حنفی کا شافعی امام بنے تو کیا یہ ضرور ہے کہ حنفی کی خاطر رفع یدین یا آمین بالجہر ترک کر دے یا یہ کہ ہر شخص امام ہو یا مقتدی اپنے اپنے امام کی پیروی کرے؟

الجواب: (۱) اگر معلوم ہے کہ اس وقت امام میں وہ بات ہے جس کے سبب میرے مذہب میں اس کی طہارت یا نماز فاسد ہے تو اقتداء حرام اور نماز باطل، اور اگر اس وقت خاص کا حال معلوم نہیں مگر یہ معلوم ہے کہ یہ امام میرے مذہب کے فرائض و شرائط کی احتیاط نہیں کرتا تو اس کی اقتداء ممنوع اور اس کے پیچھے نماز سخت مکروہ اور اگر معلوم ہے کہ میرے مذہب کی بھی رعایت و احتیاط کرتا ہے یا معلوم ہو کہ اس نماز خاص میں رعایت کئے ہوئے ہے تو اس کے پیچھے نماز بلا کراہت جائز ہے جبکہ سنی صحیح العقیدہ ہو نہ غیر مقلد کہ اپنے آپ کو شافعی ظاہر کرے اور اگر کچھ نہیں معلوم تو اس کی اقتداء مکروہ تنزیہی۔ واللہ تعالیٰ اعلم (۲) ہر شخص اپنے امام کی پیروی کرے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

از بریلی مسئلہ ۷۱۴ : زید امام مسجد ہے اور اس نے جھوٹ بولا اس پر ایک شخص نے ان کے پیچھے نماز پڑھنا ترک کر دی اور کسی وقت کی نماز وہ شخص قبل پڑھ لیتے ہیں اور موذن بھی وہی شخص ہیں اور تکبیر بھی کہتے ہیں تو آیا یہ تکبیر صحیح ہو گی یا نہیں؟ اور نماز ایسے امام کے پیچھے جائز ہے یا نہیں؟ اور اس وقت تک جتنی نمازیں ان کے پیچھے پڑھی گئیں جس وقت سے انھوں نے جھوٹ بولا تو نمازیں ہو گئیں یا نہیں؟

الجواب: سائل نے یہ بیان کیا کہ امام کے ذمے یہ جھوٹ رکھا جاتا ہے کہ اس سے پوچھا گیا کیا بجا ہے؟ کہا سوا آٹھ بجے ہیں، اور بجے تھے سوا نو۔ یہ کوئی جھوٹ ایسا نہیں جس کے سبب اس کے پیچھے نماز چھوڑ دی جائے۔ سوا نو بجے ہیں تو ضرور سوا آٹھ بھی بج چکے۔ عالمگیری میں ہے کہ اگر کوئی دس روپیہ کو خریدی اور پوچھنے پر کہا پانچ کو لی ہے تو یہ کوئی جھوٹ قابل مواخذہ نہیں۔ یونہی سوا نو میں سوا آٹھ داخل داخل ہیں۔ مؤذن کہ اتنی سی بات پر ترک جماعت کرتا ہے دہر اگنہگار ہے ایک جماعت چھوڑنے کا گناہ دوسرا سخت گناہ یہ کہ اوروں کو اذن دے کر بلانا اور خود باز رہنا

Fatawa Razawiyya Volume Six Allah the Almighty says: "O you who have believed, why do you say what you do not do? Great is hatred in the sight of Allah that you say what you do not do." - And Allah the Almighty knows best. Allah the Almighty said: O you who believe! Why do you say that which you (yourself) do not do. It is most hateful to Allah that you should say that which you do not do.

Mas'ala 715: From the town of Zarang, Lahore, asked by Abu Rasheed Muhammad Abdul Aziz. What do the scholars of religion say regarding this matter: if an Imam occasionally performs the washing of a corpse, is prayer behind him permissible or not? Please clarify and be rewarded.

The Answer: Washing a deceased Muslim is an obligation (fard), and there is a reward in fulfilling this obligation. If there is someone else capable of washing the body, it is permissible to take a fee for washing it; in any case, this does not cause any defect in leading the prayer (Imamat). However, if there is no one else there capable of washing the body, then washing it becomes a personal obligation (fard al-ayn) for him, and taking a fee for it is prohibited (haram). If he does so, he will become a sinner (fasiq), and performing prayer behind him will be prohibitively disliked (makruh tahrimi), and appointing him as an Imam is a sin. And Allah the Almighty knows best.

Mas'ala 716: From Rupetti Dih, District Bahraich, Nepal Ganj Market, sent by Syed Ali, coconut seller, 8 Muharram al-Haram 1336 AH. Zaid committed adultery with Bakr's wife. Bakr, after fully learning the circumstances, gave an irrevocable divorce (talaq al-ba'in) to the said wife and he himself also repented. Bakr is also the presiding Imam of the central mosque here. Is it correct to pray behind Bakr now or not?

The Answer: In the mentioned case, Bakr's leadership in prayer (Imamat) is not affected by his wife's adultery, provided that he is Sharia-compliant for Imamat due to correctness of creed, purity, correctness of recitation, etc. And Allah the Almighty knows best.

Mas'ala 717: From the locality of Kotana, District Meerut, sent by Sheikh Wajihuddin Ahmad, Muhammad Abdullah Khan, and Muhammad Ismail Khan, 7 Rabi' al-Awwal 1337 AH. What do the scholars of the religion of Muhammad and the Muftis of the law of Ahmad, Hanafi school, Ahl al-Sunnat wa'l-Jama'at, say regarding this matter: a person from the Wahhabi sect has been the presiding Imam of a mosque in the Ahl al-Sunnat wa'l-Jama'at neighborhood for a month and a few days. His father and grandfather also died in that same Wahhabi sect. By chance, two preaching scholars

visited this mosque and in their sermon, they praised the Prophet, the Beloved of the Lord of the worlds, the Intercessor for sinners, peace and blessings of Allah be upon him, and the Imam of the mosque...

[1] Al-Quran 61/2 Page 578 of 736

फ़तावा रज़विया, जिल्द छठी। अल्लाह तआला ने फ़रमाया: "ऐ ईमान वालो! वह बात क्यों कहते हो जो (स्वयं) नहीं करते? अल्लाह को यह बात सख़्त नापसंद है कि तुम वह बात कहो जो न करो।" - और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। अल्लाह तआला ने फ़रमाया: ऐ ईमान वालो! क्यों कहते हो वह जो (स्वयं) नहीं करते, अल्लाह को सख़्त नापसंद है यह बात कि वह कहो जो न करो।

मसला 715: कस्बा जरंग लाहौर से, सायल अबू रशीद मोहम्मद अब्दुल अज़ीज़। उलेमा-ए-दीन इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि अगर कोई इमाम कभी-कभी मुर्दा धोने (गुस्ल-ए-मय्यित) का काम करे, तो क्या उसके पीछे नमाज़ जाइज़ है या नहीं? बयान फ़रमाएँ और सवाब पाएँ।

जवाब: मुसलमान मय्यित को नहलाना फर्ज़ है और फर्ज़ अदा करने में सवाब है। और अगर वहाँ कोई और भी इस काबिल हो जो नहला सके, तो नहलाने पर उजरत (पारिश्रमिक) लेना भी जाइज़ है। बहरहाल, इससे इमामत में कोई ख़लल (कमी) नहीं आता। और अगर वहाँ कोई दूसरा नहलाने वाला न हो, तो अब उस पर नहलाना फर्ज़-ए-ऐन है और उस पर उजरत लेना हराम है। ऐसा करने वाला फ़ासिक (पापी) होगा और उसके पीछे नमाज़ मकरूह-ए-तहरीमी होगी, और उसे इमाम बनाना गुनाह है। वल्लाह तआला आलम।

मसला 716: रूपटी डीह, जिला बहराइच, नेपालगंज बाज़ार से, मुरसिला सैय्यद अली नारियल फ़रोश, 8 मुहर्रम अल-हराम 1336 हिजरी। ज़ैद ने बक्र की बीवी से ज़िना (व्यभिचार) किया। बक्र ने हक़ीक़त जानकर अपनी उक्त बीवी को तलाक़-ए-बाइन दे दी और खुद भी तौबा की। बक्र यहाँ की जामा मस्जिद का पेश इमाम भी है। अब बक्र के पीछे नमाज़ पढ़ना दुरुस्त है या नहीं?

जवाब: ज़िक्र की गई सूरत में बीवी के ज़िना की वजह से बक्र की इमामत में कोई रुकावट नहीं है, जब तक कि वह मज़हब की सच्चाई, तहारत (पवित्रता), और क़िराअत (पाठ) की शुद्धता आदि के कारण शरीयत के अनुसार इमामत के लिए योग्य हो। वल्लाह तआला आलम।

मसला 717: मौज़ा कोटाना, जिला मेरठ से, मुरसिला शैख़ वजीहुद्दीन अहमद और मोहम्मद अब्दुल्ला ख़ान और मोहम्मद इस्माइल ख़ान, 7 रबी-उल-अव्वल 1337 हिजरी। मोहम्मदी दीन के उलेमा और अहमदी शरीयत के मुफ़्ती हनफी मज़हब अहले सुन्नत व जमात इस मसले में क्या फरमाते हैं कि: एक व्यक्ति वहाबी संप्रदाय का, अहले सुन्नत व जमात के मोहल्ले की मस्जिद में एक महीने और कुछ दिनों से इमाम है। उसके बाप-दादा भी इसी वहाबी संप्रदाय में मरे। खुशकिस्मती से इस मस्जिद में दो वाज़ (प्रवचनकर्ता) आलिम तशरीफ लाए और वाज़ में हज़रत रसूले मक़बूल, रब्बुल आलमीन के

महबूब, गुनाहगारों के शफीअ (सिफ़ारिशी) सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम की हम्द ओ सना बयान फ़रमाई, और इमाम मस्जिद...

[1] अल-क़ुरआन 61/2 पृष्ठ 578/736

فتاویٰ رضویہ جلد ششم قال اللہ تعالیٰ یٰۤاَیُّهَا الَّذِیْنَ اٰمَنُوْا لِمَ تَقُوْلُوْنَ مَا لَا تَفْعَلُوْنَ ۝ كَبُرَ مَقْتًا عِنْدَ اللّٰهِ اَنْ تَقُوْلُوْنَ مَا لَا تَفْعَلُوْنَ ۝ - واللہ تعالیٰ اعلم اللہ تعالیٰ نے فرمایا اے ایمان والو! کیوں کہتے ہو وہ جو (خود) نہیں کرتے اللہ کو سخت ناپسند ہے یہ بات کہ وہ کہو جو نہ کرو

مسئلہ ۷۱۵: از قصبہ زرنگ لاہور مسئولہ ابورشید محمد عبدالعزیز۔ کیا فرماتے ہے علمائے دین اس مسئلہ میں کہ اگر کوئی امام گاہے گاہے مردہ شوئی کرے تو کیا اس کے پیچھے نماز جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا الجواب: میت مسلم کو نہلانا فرض ہے اور فرض کے ادا کرنے میں اجر ہے، اور اگر وہاں اور بھی کوئی اس قابل ہو کہ نہلا سکے تو اس کے نہلانے پر اجرت لینا بھی جائز ہے بہر حال اس سے امامت میں کوئی خلل نہیں آتا اور اگر وہاں کوئی دوسرا ایسا نہ ہو کہ نہلا سکے تو اب اس پر نہلانا فرضِ عین ہے اور اس پر اجرت لینا حرام، ایسا کرے گا تو فاسق ہوگا اور اس کے پیچھے نماز مکروہِ تحریمی اور اس کا امام بنانا گناہ۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۷۱۶: از روپٹی ڈیہہ ضلع بہرائچ بازار نیپال گنج مرسلہ سید علی ناریل فروش ۸ محرم الحرام ۱۳۳۶ھ زید نے بکر کی زوجہ سے زنا کیا، بکر نے یہ حالات کما حقہ معلوم کر کے زوجہ مذکور کو طلاقِ بائن دی اور خود بھی تائب ہوا۔ بکر یہاں کی جامع مسجد کا پیش امام بھی ہے، اب بکر کے پیچھے نماز پڑھنا درست ہے یا نہیں؟ الجواب: صورتِ مذکورہ میں زنائے زوجہ کے سبب بکر کی امامت میں کوئی خلل نہیں جبکہ وہ بوجہ صحتِ مذہب وطہارت وصحتِ قراءۃ وغیرہ شرعاً قابلِ امامت ہو۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۷۱۷: از موضوع کوتا نہ ضلع میرٹھ مرسلہ شیخ وجیہ الدین احمد ومحمد عبداللہ خاں ومحمد واسمعیل خاں ۷ ربیع الاول شریف ۱۳۳۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین محمدی ومفتیانِ شرع احمدی حنفی المذہب اہلسنت وجماعت اس مسئلہ میں کہ ایک شخص وہابی فرقہ کا حنفی المذہب اہل

سنت وجماعت کے محلہ کی مسجد کا ایک ماہ وچند روز سے پیش امام ہے اور اس کے باپ دادا بھی اسی فرقہ وہابیہ میں مر گئے۔ حسن اتفاق سے اس مسجد میں دو عالم واعظ تشریف لائے اور وعظ میں حضرت رسول مقبول محبوب رب العالمین شفیع المذنبین صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی حمد وثنا بیان فرمائی اور امامِ مسجد...

Fatawa-e-Razvia, Volume 6.

People stopped praying behind him. That same night, a resident of the neighborhood organized a gathering for the Mawlid Sharif (commemoration of the Prophet's birth) at his house with newly arrived scholars. The mosque's Imam did not attend. The next morning at Zuhr time, he was asked, "What do you say regarding the gathering of Mawlid Sharif?" He replied, "I say it is good." Then he was asked, "If you say it is good, then why don't you do it?" The Imam replied, "My ancestors did not do this act, so I also do not do it." Then he was asked, "Why didn't you join the gathering held last night?" He replied, "There is standing (Qiyam) and poetry praising the Prophet (Na'at) there, that's why I didn't join." Then he was asked, "The meaning of Na'at is praise and glorification. Why do you run away from the praise of the Noble Messenger, Mercy to the Worlds?" He gave no answer and remained silent. On the 15th of Rabi' al-Awwal 1337 AH, after the Fajr prayer, in front of all the congregants, the Imam was told, "This book 'Tajalli al-Yaqeen' from the writings of Maulana and Maulvi Haji Qari Ahmad Raza Khan Sahib is available, which entirely praises all the Prophets, peace and blessings be upon them, and the Noble Prophet, may Allah the Almighty bless him and grant him peace. Why do you avoid the praise and Na'at of the Prophet?" He gave no answer and remained silent. A few passages from this blessed book 'Tajalli al-Yaqeen' were read to him, but it had no effect. Now, Your Honor, please provide a detailed and explained written ruling on whether it is permissible or impermissible to pray behind such an ill-believing Wahhabi-minded person according to the Hanafi school of thought of the Ahlus Sunnah wal Jama'ah, with proofs and evidence from the Holy Quran and Hadith. May Allah the Almighty keep Your Honor's praiseworthy personage bright and radiant like the world-illuminating sun until the Day of Resurrection. Again, it is submitted that the humble servant Wajihuddin or any other neighborhood resident has no worldly connection, nor is any relative worthy of leadership (Imamate). It is only acting upon 'hatred for the sake of Allah and love for the sake of Allah'.

Answer: It is clear from the description of the question that the person is a Wahhabi, in fact, one of the top-ranking Wahhabis. The core belief of the Wahhabis is to be jealous of the sacred Na'at (praise), but they don't say it so clearly to deceive Muslims. What he said, "There is Na'at there, that's why I didn't join," shows that he hates the Prophet (peace and blessings be upon him). Only a disbeliever would do such a thing, and prayer behind a disbeliever is purely void. If he were a Muslim, he would hold the

sacred Na'at as correct. The Messenger of Allah (peace and blessings be upon him) says:

Whoever loves a thing mentions it often. (Narrated by Abu Nu'aym, then al-Daylami from Muqatil ibn Hayyan from Da'ud ibn Abi Hind from al-Sha'bi from the Mother of the Believers al-Siddiqah [Aisha], may Allah the Almighty be pleased with her.)

Whoever loves a thing mentions it often. He who loves something mentions it more frequently. Abu Nu'aym narrated it, then al-Daylami from Muqatil ibn Hayyan, he from Da'ud ibn Abi Hind, he from al-Sha'bi, and he from the Mother of the Believers, Hazrat Aisha al-Siddiqah, may Allah be pleased with her.

1. Ithaf al-Sa'dah al-Muttaqin, citing Abu Nu'aym then al-Daylami, Fazilat al-Sheikh, printed by Dar al-Fikr Beirut, 2015, Page 579 of 736

लोगों ने उनके पीछे नमाज़ पढ़ना छोड़ दिया। उसी दिन रात को मोहल्ले के एक निवासी ने अपने घर पर नवनिर्वाचित मौलवियों से महफ़िल-ए-मौलूद शरीफ़ करवाई। मस्जिद का इमाम इसमें शामिल नहीं हुआ। अगले दिन ज़ुहर के समय उनसे पूछा गया, "आप मौलूद शरीफ़ की महफ़िल के बारे में क्या कहते हैं?" उन्होंने जवाब दिया, "मैं इसे अच्छा कहता हूँ।" फिर उनसे कहा गया, "जब आप इसे अच्छा कहते हैं, तो आप इसे क्यों नहीं करते?" इमाम ने उत्तर दिया, "मेरे बाप-दादा ने यह काम नहीं किया था, इसलिए मैं भी नहीं करता।" फिर पूछा गया, "कल रात जो महफ़िल हुई थी, आप उसमें शामिल क्यों नहीं हुए?" जवाब मिला, "वहाँ कयाम और नात (प्रशंसा के पद) होते हैं, इसलिए मैं शामिल नहीं हुआ।" फिर कहा गया, "नात का अर्थ प्रशंसा और गुणगान है। आप रहमतुल-लिल-आलमीन हज़रत रसूल-ए-करीम की प्रशंसा से क्यों भागते हैं?" उन्होंने कोई उत्तर नहीं दिया और चुप रहे। 15 रबी-उल-अव्वल 1337 हिजरी को फ़ज्र की नमाज़ के बाद सभी नमाज़ियों के सामने इमाम से कहा गया कि हज़रत मौलाना और मौलवी हाजी कारी अहमद रज़ा खाँ साहब की रचनाओं में से यह पुस्तक "तजल्ली अल-यकीन" मौजूद है, जो पूरी तरह से सभी नबियों और हज़रत नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की प्रशंसा करती है। आप हज़रत की प्रशंसा और नात से क्यों बचते हैं? कोई जवाब नहीं दिया, खामोश रहे। इस बरकत वाली किताब "तजल्ली अल-यकीन" के कुछ अंश पढ़कर सुनाए गए, लेकिन कोई असर नहीं हुआ। अब हुज़ूर वाला विस्तार से और स्पष्ट रूप से लिखकर बताएँ कि सुन्नी हनफ़ी मसलक के अनुसार ऐसे बुरे अकीदे वाले वहाबी विचारधारा के व्यक्ति के पीछे नमाज़ पढ़ना जायज़ है या नाजायज़? कृपया कुरान और हदीस के प्रमाणों के साथ उत्तर दें। अल्लाह तआला हुज़ूर की प्रशंसनीय हस्ती को कयामत के दिन तक सूरज की तरह रोशन और चमकदार रखे। फिर से निवेदन है कि अदना से वजीहुद्दीन या मोहल्ले के किसी अन्य निवासी का कोई दुनियावी संबंध नहीं है और न ही उनका कोई रिश्तेदार इमामत के लायक है। यह केवल 'अल्लाह के लिए नफ़रत और अल्लाह के लिए प्यार' पर अमल करना है।

जवाब: सवाल के बयान से साफ़ है कि वह व्यक्ति वहाबी है, बल्कि वहाबियों में भी ऊँचे दर्जे का है। वहाबियों का असली अकीदा नात-ए-अकदस से जलना है, लेकिन वे मुसलमानों को धोखा देने के लिए इसे इतनी साफ़ तरह से नहीं कहते जैसा कि उन्होंने कहा कि "वहाँ नात होती है इसलिए शामिल नहीं हुआ"। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से नफ़रत नहीं करेगा तो और क्या करेगा, और

काफ़िर के पीछे नमाज़ बिल्कुल बातिल (अमान्य) है। अगर वह मुसलमान होता तो नात-ए-अकदस को सही मानता। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं:

من احب شیئا اکثر ذکرہ - رواہ ابو نعیم ثم الدیلمی عن مقاتل ابن حیان عن داؤد ابن ابی ھند عن الشعبی عن ام المؤمنین الصدیقۃ رضی اللہ تعالیٰ عنھا

जो किसी चीज़ से मोहब्बत करता है, उसका ज़िक्र ज़्यादा करता है। इसे अबू नुऐम और फिर दैलमी ने मुकातिल बिन हय्यान, उन्होंने दाऊद बिन हिंद, उन्होंने शेअबी से, उन्होंने उम्मुल मोमिनीन हज़रत आयशा सिद्दीका रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत किया है।

1. इतहाफ़ुस सादातुल मुत्तकीन, अबू नुऐम और फिर दैलमी के हवाले से, फ़ज़ीलतुश शेख, दारुल फ़िक्र बेरूत द्वारा प्रकाशित, 2015, Page 579 of 736

نے ان کے پیچھے نماز پڑھنی ترک کر دی اسی روز شب کو ایک شخص باشندہ محلہ نے اپنے مکان پر مولوی صاحبانِ نو وارد سے مجلس مولود شریف کرائی۔ امام مسجد شامل نہ ہوا، صبح کو بوقت ظہر دریافت کیا کہ تم مجلس مولود شریف کی نسبت کیا کہتے ہو؟ جواب دیا کہ اچھا کہتا ہوں، پھر کہا گیا تم اچھا کہتے ہو تو تم کیوں نہیں کرتے ہو؟ امام نے جواب دیا کہ میرے باپ دادا نے اس فعل کو نہیں کیا میں بھی نہیں کرتا، پھر کہا گیا کہ شب کو جو مجلس ہوئی تھی اس میں شامل کیوں نہ ہوئے؟ جواب دیا کہ وہاں پر قیام و نعت ہوتی ہے اس لئے میں شامل نہیں ہوا۔ پھر کہا گیا کہ نعت کے معنی حمد و ثناء تعریف کے ہیں۔ حضرت رسول کریم رحمۃ للعالمین کی تعریف سے کیوں بھاگتے ہو؟ کچھ جواب نہ دیا سکوت کیا ۱۵ ربیع الاول ۱۳۳۷ ھ مقدسہ کو بعد نماز فجر بمواجہہ جملہ نمازیان مسجد امام سے کہا کہ جناب مولانا و مولوی حاجی قاری احمد رضا خان صاحب کی تصنیفات سے یہ کتاب "تجلی الیقین" موجود ہے تمام و کمال انبیاء علیہم الصلوۃ والسلام حضرت نبی کریم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کی تعریف فرماتے ہیں تم حضرت کی تعریف و نعت سے کیوں گریز کرتے ہوں؟ جواب نہ دیا خاموش رہا؟ اس مبارک کتاب "تجلی الیقین" کے چند موقع پڑھ کر سنائے مگر کچھ اثر نہ ہوا اب حضور والا مفصل و مشرح تحریر فرمائیں کہ حنفی المذہب اہلسنت و جماعت کی نماز ایسے بد عقیدہ وہابی مذہب کے پیچھے جائز ہے یا ناجائز ہے بدلائل و برہان قرآن شریف و حدیث شریف جواب مرحمت فرمائیں اللہ جل شانہ نے حضور والا کی ذات ستودہ صفات کو مثل آفتاب عالمتاب کے روشن و منور کیا ہے اسی طرح تالیوم القیامۃ روشن رکھے، مکرر عرض ہے کہ کمترین وجیہ الدین کا یا اور کسی باشندہ محلہ کا کوئی دنیاوی تعلق نہیں ہے نہ کسی کا کوئی عزیز امامت کے لائق ہے صرف بغض للہ و حب للہ پر عمل ہے۔

الجواب: بیان سوال سے ظاہر کہ وہ شخص وہابی بلکہ وہابیوں میں بھی اونچی چوٹی کا ہے، وہابیہ کا اصل عقیدہ نعت اقدس سے جلنا ہے مگر مسلمانوں کو دھوکا دینے کے لئے یوں صاف نہیں کہتے جو اس نے کہی کہ "وہاں نعت ہوتی ہے اس لئے شامل نہ ہوا" رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم سے نفرت نہ کرے گا مگر کافر اور کافر کے پیچھے نماز محض باطل، اگر مسلمان ہوتا تو نعت اقدس کو درست رکھتا۔ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں :

من احب شیئا اکثر ذکرہ - رواہ ابو نعیم ثم الدیلمی عن مقاتل ابن حیان عن داؤد ابن ابی ھند عن الشعبی عن ام المؤمنین الصدیقۃ رضی اللہ تعالیٰ عنھا

جو کسی شئی سے محبت رکھتا ہے اس کا ذکر زیادہ کرتا ہے اسے ابو نعیم پھر دیلمی نے مقاتل بن حیان، انھوں نے داؤد بن ہند ، انھوں نے شعبی سے، انھوں نے ام المومنین حضرت عائشہ صدیقہ رضی اللہ تعالیٰ عنہا سے

1 اتحاف السادۃ المتقین بحوالہ ابی نعیم ثم الدیلمی، فضیلۃ الشیخ، مطبوعہ دارالفکر بیروت ، ۲۰۱۵ ، Page 579 of 736

Fatawa Razawiya - Volume 6

| (Arabic): Thalatathum min rijali Muslim wa al-Arba'ah. | (Urdu translation): Three of its narrators are from (those in) Sahih Muslim and the four (Sunan books). (T) |

(That is, high-ranking traditionists have narrated from them, hence the narrators are reliable. - Nazir Ahmad) It is obvious that one who expresses hatred instead of love does not love the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him). Then how can he be a Muslim? The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

| (Arabic): La yu'minu ahadukum hatta akuna ahabba ilaihi min walidihi wa waladihi wa an-nasi ajma'in (1). Narrated by the Imams Ahmad, al-Bukhari, Muslim, an-Nasa'i, and Ibn Majah on the authority of Anas (may Allah be pleased with him). | (Urdu translation): None of you becomes a (true) believer until I am dearer to him than his father, his children, and all mankind. This has been narrated by the eminent Imams: Imam Ahmad, Bukhari, Muslim, Nasa'i, and Ibn Majah from Hazrat Anas (may Allah be pleased with him). |

Not being affected after hearing the words of "Tajalli al-Yaqeen" and remaining silent on those questions of the Na't Sharif is manifesting the suppressed fire in his heart even more.

| (Arabic): Qal Allah: Qad badat al-baghda'u min afwahihim wa ma tukhfi suduaruhum akbaru. Qad bayyanna lakum al-ayati in kuntum ta'qilun (2). | (Urdu translation): Allah Almighty says: Hatred has already appeared from their mouths, and what their hearts conceal (of grudge and enmity) is even greater. We have made clear to you the signs, if you would use your reason. (T) |

In short, he is definitely a Wahhabi, and Wahhabis are absolutely irreligious, and praying behind an irreligious person is simply impermissible. It is stated in 'Fath al-Qadeer':

| (Arabic): Ruwiya Muhammad 'an Abi Hanifah wa Abi Yusuf (may Allah be pleased with them) anna as-salata khalfa ahl al-ahwa'i la tajuzu (3). | (Urdu translation): Imam Muhammad narrated from Imam Abu Hanifa and Imam Abu Yusuf (may Allah be pleased with them) that prayer behind people of innovation (Ahl al-Ahwa) is not permissible. (T) |

1. Sahih al-Bukhari, Chapter on Love for the Prophet (pbuh) as part of Faith, published by Qadeemi Kutub Khana, Karachi, 1/7.
2. Al-Quran, 3/118.
3. Fath al-Qadeer, Chapter on Imamate, published by Maktaba Nooriya Razawiya, Sukkur, 2/304.

| (अरबी): थलाथथुम मिन रज़ाली मुस्लिम व अल-अर्बअह। | (उर्दू अनुवाद): इसके तीनों रावी मुस्लिम शरीफ के और असहाबे अरबा के रिज़ाल हैं। (त) |

(यानी इसे उच्च श्रेणी के मुहाद्दिसीन ने उनसे रिवायत किया है, इसलिए रावी भरोसेमंद हैं। - नज़ीर अहमद) जिसे मुहब्बत तो दूर, नफरत ज़ाहिर हो, ज़ाहिर है कि उसे हुज़ूर अनवर सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम से मुहब्बत नहीं, फिर वह मुसलमान कैसे हो सकता है? अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम फरमाते हैं:

| (अरबी): ला युमिनु अहदुकुम हत्ता अकुना अहब्बा इलैहि मिन वालिदिही व वलदिही वन-नासि अजमईन (1)। इमाम अहमद, बुखारी, मुस्लिम, नसाई और इब्ने माजह ने हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है। | (उर्दू अनुवाद): तुम में से कोई व्यक्ति (पूर्ण) ईमान वाला नहीं होता जब तक कि मैं उसे उसके माता-पिता, संतान और सभी लोगों से अधिक प्रिय न हो जाऊं। इसे आईमा-ए-किराम इमाम अहमद, बुखारी, मुस्लिम, नसाई और इब्ने माजह ने हज़रत अनस रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत किया है। |

"तजल्ली-ए-यक़ीन" के शब्द सुनकर असर न होना और नात शरीफ के उन सवालों पर खामोश रहना, उसके दिल की दबी हुई आग को और अधिक ज़ाहिर कर रहा है।

| (अरबी): क़ाल अल्लाह: क़द बदल बुग़दाउ मिन अफ़वाहिहिम वमा तुख़्फ़ी सुदुरुहुम अकबर। क़द बय्यन्ना लकुमुल् आयाती इन कुंतुम ताक़िलून (2)। | (उर्दू अनुवाद): अल्लाह तआला ने फरमाया: उनके मुँह से दुश्मनी ज़ाहिर हो चुकी है और जो उनके सीनों में (द्वेष और शत्रुता) छिपा है, वह उससे भी बड़ा है। हमने तुम्हारे लिए निशानियाँ खोल दी हैं, यदि तुम बुद्धि रखते हो। (त) |

संक्षेप में, वह निश्चित रूप से वहाबी है, और वहाबियत पूर्णतः धर्महीनता है, और धर्महीन के पीछे नमाज़ पढ़ना सरासर नाजायज़ है। 'फतह अल-क़दीर' में है:

| (अरबी): रुविया मुहम्मद 'अन अबी हनीफ़ा व अबी यूसुफ़ रज़ियल्लाहु अन्हुमा अन्नस सलाता ख़ल्फ़ा अहलिल अह्वाइ ला तजुज़ु (3)। | (उर्दू अनुवाद): इमाम मुहम्मद ने इमाम अबू हनीफ़ा और इमाम अबू यूसुफ़ रज़ियल्लाहु अन्हुमा से रिवायत किया है कि बिदअतियों (अहल-ए-अहवा) के पीछे नमाज़ जायज़ नहीं है। (त) |

1. सहीह अल-बुखारी, बाब हुब्बे रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम मनल ईमान, मक़बूआ कदीमी कुतुब खाना कराची, 1/7
2. अल-कुरान, 3/118
3. फतह अल-कदीर, बाबुल इमामत, मक़बूआ मकतबा नूरियह रज़विया सुक्कुर, 2/304

| ثلاثتھم من رجال مسلم والاربعۃ۔ | روایت کیا ہے اس کے تینوں روای مسلم شریف کے اور اصحاب اربعہ کے رجال ہیں۔ (ت) |

(یعنی اسے بلند مرتبہ محدثین نے ان سے روایت کی ہے لہٰذا راوی معتمد ہیں۔ نذیر احمد) جسے محبت درکنار نفرت ہو ظاہر ہے کہ اسے حضور انور صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم سے محبت نہیں پھر وہ مسلمان کیسے ہوسکتا ہے، رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

| لا یؤمن احدکم حتی اکون احب الیہ من والدہ وولدہ والناس اجمعین ۱۔ رواہ الائمۃ احمد والبخاری ومسلم والنسائی وابن ماجۃ عن انس رضی اللہ تعالٰی عنہ۔ | تم میں سے کوئی شخص مسلمان نہیں ہوتا جب تک میں اسے اس کے ماں باپ اولاد اور تمام آدمیوں سے زیادہ پیارا نہ ہوں ۔اسے ائمہ کرام امام احمد، بخاری، مسلم، نسائی۔ اور ابن ماجہ نے حضرت انس رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا ہے |

"تجلی الیقین" کے کلمات سن کر اثر نہ ہونا اور نعت شریف کے ان سوالوں پر خاموش رہنا اس کے دل کی دبی آگ کو اور ظاہر کر رہا ہے۔

| قال اللہ قد بدت البغضآء من افواہہم وما تخفی صدورہم اکبر ط قدبینالکم الآیت ان کنتم تعقلون ۲ | اللہ تعالٰی نے فرمایا: دشمنی ان کے مونہوں سے ظاہر ہوگئی اور وہ جو ان کے سینوں میں (غیظ و عناد) چھپا ہے اور زیادہ ہے ہم نے تم پر نشانیاں کھول دیں اگر تمہیں عقل ہو۔ (ت) |

بالجملہ وہ یقیناً وہابی ہے اور وہابیہ قطعاً بے دین، اور بے دین کے پیچھے نماز محض ناجائز۔ فتح القدیر میں ہے:

| روی محمد عن ابی حنیفة وابی یوسف رضی اللہ تعالٰی عنہما ان الصلاۃ خلف اھل الاھواء لا تجوز ۳ | امام محمد نے امام ابو حنیفہ اور امام ابو یوسف رضی اللہ تعالٰی عنہما سے روایت کیا کہ اہل بدعت کے پیچھے نماز جائز نہیں ہے۔ (ت) |

---

۱ صحیح البخاری باب حب الرسول صلی اللہ علیہ وسلم من الایمان مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/۷ ۲ القرآن ۱۱۸/۳ ۳ فتح القدیر باب الامامۃ مطبوعہ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۲/۳۰۴

Fatawa Razawiyyah Volume Six Sitting near him is forbidden according to the explicit text of the Great Quran.

Allah Almighty says: "And if Satan causes you to forget, then do not sit after the remembrance with the wrongdoing people."[1] And Allah Almighty knows best. Allah Almighty's blessed command is: And if Satan somehow makes you forget, then do not sit with the wrongdoers after remembering. (T)

Question 718: From Oopal Post Office, District Kheri, sent by Maulana Khuda Bakhsh Sahib, 10th Jamadi-ul-Awwal 1337 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: I encourage ignorant people towards fasting and prayer, and by the grace of Allah, they have turned towards it. However, some individuals—non-prayers, Tazia followers, grave worshippers, and some who only pray Friday, Ramadan, and Eid prayers—make these people distrustful of me. They present the argument to them that I have a cataract in my eye, although I can see because it is not on the pupil. Another accusation they make is that my father had two marriages, and one woman was not legally married but kept without marriage; whereas all of this is purely nonsense and lies. They don't even know how many marriages my father had. My late father had three marriages. If they prove it, my social interaction (hookah) should be stopped; otherwise, the social interaction of those who level the accusation should be stopped.

Answer: Having a cataract in the eye, as long as it is separate from the pupils and does not hinder vision, is not even a cause for dislike (karahat) in prayer at all. And accusing the questioner's father of having two marriages and keeping one woman without marriage: firstly, attributing adultery to a Muslim without investigation is a severe major sin (kabira), and Sharia mandates the punishment of "80" lashes for the accuser. Secondly, how is this an accusation against the questioner unless they provide definitive proof that his birth was out of wedlock? Now, the mockers deserve severe punishment; until they repent, their social interactions (hookah and water) should be cut off. And Allah Almighty knows best.

Question 719: From Cochin, Malabar District, Mattancherry neighborhood, house of Seth Suleman Qasim, sent by Memon Haji Tahir Muhammad Maulana, 20th Jamadi-ul-Awwal 1337 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: What is the ruling on praying behind someone who attributes a physical body to God?

---

[1] Al-Quran 6/68 Page 581 of 736

फ़तावा रज़विय्या जिल्द शशुम (छठा भाग) महान कुरान के स्पष्ट पाठ के अनुसार उसके पास बैठना हराम है।

अल्लाह तआला फरमाता है: "और अगर शैतान तुझे भुला दे, तो याद आने के बाद ज़ालिम लोगों के पास मत बैठ।"[1] और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है। अल्लाह तआला का मुबारक फरमान है: और जो कहीं तुझे शैतान भुला दे तो याद आने पर ज़ालिमों के पास मत बैठ (त)

मसला 718: ओपल डाकखाना खास, जिला खीरी, प्रेषक मौलवी खुदा बख्श साहब, 10 जमादी-उल-उला 1337 हिजरी। धर्म के विद्वान इस विषय में क्या कहते हैं कि मैं अज्ञानी लोगों को रोज़ा और नमाज़ की ओर प्रेरित करता हूँ और उन्होंने अल्लाह के फज़ल से इस ओर ध्यान दिया है, लेकिन कुछ व्यक्ति—बे-नमाज़ी, ताज़ियादार, कब्र पूजक और कुछ सिर्फ जुमा के नमाज़ी, रमज़ान शरीफ के नमाज़ी, ईद के नमाज़ी उन लोगों को मेरे प्रति आशंकित करते हैं और उनके सामने यह बात रखते हैं कि मेरी आँखों में फुल्ली (मोतियाबिंद) है लेकिन पुतली पर न होने के कारण मुझे दिखाई देता है, दूसरा आरोप लगाते हैं कि उनके पिता के दो निकाह हुए और एक महिला बिना निकाह के रखी, जबकि यह सब सरासर बकवास और झूठ है, उन्हें यह भी नहीं मालूम कि मेरे पिता के कितने निकाह हुए, जनाब वालिद साहब मरहूम के तीन निकाह हुए, अगर ये साबित कर दें तो मेरा हुक्का तर्क(बंद) वरना तोहमत लगाने वालों का हुक्का तर्क होना चाहिए।

उत्तर: आँख में फुल्ली होना जबकि वह पुतलियों से अलग हो और देखने में बाधक न हो, नमाज़ में बिल्कुल भी कराहत (नापसंदगी) का कारण नहीं है। और पूछने वाले के पिता पर यह आरोप लगाना कि उनके दो निकाह हुए और एक महिला बिना निकाह के रखी, पहली बात तो यह है कि बिना तहकीकात के एक मुसलमान की ओर ज़िना (व्यभिचार) का आरोप लगाना सख्त हराम और कबीरा गुनाह है और तोहमत लगाने वाले पर शरीअत के अनुसार वही '80' कोड़े का हुक्म है। दूसरी बात यह कि पूछने वाले पर इसका क्या आरोप जब तक वे यह पुख्ता सबूत न दें कि उसका जन्म बिना निकाह के हुआ है। अब ताना मारने वाले कड़ी सज़ा के हकदार हैं; जब तक वे तौबा न करें उनका हुक्का-पानी बंद किया जाए। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला 719: कोचीन से, जिला मलाबार, मट्टनचेरी मोहल्ला, सेठ सुलेमान कासिम का मकान, प्रेषक मेमन हाजी ताहिर मुहम्मद मौलाना, 20 जमादी-उल-उला 1337 हिजरी। धर्म के विद्वान इस मसले में

क्या कहते हैं कि जो खुदा को मुजस्सम (शरीर वाला) ठहराए, उसकी इक्तदा (पीछे) करके नमाज़ पढ़ना कैसा है?

---

[1] अल-कुरान 68/6 पेज 581 का 736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم نماز در کنار بنص قرآن عظیم اس کے پاس بیٹھنا حرام۔

قَالَ اللّٰہُ تَعَالٰی وَ اِمَّا یُنْسِیَنَّکَ الشَّیْطٰنُ فَلَا تَقْعُدْ بَعْدَ الذِّکْرٰی مَعَ الْقَوْمِ الظّٰلِمِیْنَ[1]۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ اللہ تعالٰی کا فرمانِ مبارک ہے: اور جو کہیں تجھے شیطان بھلا دے تو یاد آنے پر ظالموں کے پاس مت بیٹھ (ت)

مسئلہ ۷۱۸: از اوپل ڈاکخانہ خاص ضلع کھیری مرسلہ مولوی خدا بخش صاحب ۱۰ جمادی الاولٰی ۱۳۳۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ میں جہلاء لوگوں کو صوم و صلوٰۃ کی جانب رجوع کرتا ہوں اور انھوں نے خدا کے فضل سے اس جانب توجہ فرمائی ہے لیکن بعض اشخاص بے نمازی تعزیہ دار قبر پرست اور بعض صرف جمعہ کے نمازی، رمضان شریف کے نمازی، عید کے نمازی ان لوگوں کو میری جانب سے بدظن کرتے ہیں اور ان کے سامنے یہ بات پیش کرتے ہیں کہ میری آنکھوں میں پھلی ہے لیکن پتلی پر نہ ہونے کے سبب دکھائی دیتا ہے، دوسری تہمت لگاتے ہیں کہ ان کے والد کے دو نکاح ہوئے ایک عورت کا نکاح نہیں ہوا بلکہ انھوں نے ویسے ہی رکھا ہے حالانکہ یہ سب محض لغو اور جھوٹ بیان ہے انھیں یہ بھی نہیں معلوم کہ میرے والد کے کتنے نکاح ہوئے، جناب والد صاحب مرحوم کے تین نکاح ہوئے، اگر یہ ثابت کردیں تو میرا حقہ ترک ورنہ تہمت لگانے والوں کا حقہ ترک ہونا چاہئے

الجواب: آنکھ میں پھلی ہونا جبکہ وہ پتلیوں سے الگ ہو اور دیکھنے کو مانع نہ ہو نماز میں اصلاً کراہت کا بھی موجب نہیں اور سائل کے باپ پر یہ الزام لگانا کہ ان کے دو نکاح ہوئے اور ایک عورت بے نکاحی رکھی، اول تو ایک مسلمان کی طرف نسبت زنا بلا تحقیق ہے اور یہ سخت حرام کبیرہ ہے اور تہمت رکھنے والے پر شرعاً اسی "۸۰" کوڑے کا حکم ہے۔ ثانیاً سائل پر اس کا کیا

الزام تک یہ ثبوت قطعی نہ دیں کہ اس کی ولادت بے نکاح ہے اب طعن کرنے والے مستحق سزائے شدید سے ہیں جب تک توبہ نہ کریں ان کا حقہ پانی بند کیا جائے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۷۱۹: از کوچین ضلع ملیبار محلہ مٹانچیر مکان سیٹھ سلیمان قاسم مرسلہ میمن حاجی طاہر محمد مولانا ۲۰ جمادی الاولیٰ ۱۳۳۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ جو خدا کو مجسم ٹھہرادے اس کی اقتداء کر کے نماز پڑھنا کیسا ہے؟

---

[1] القرآن ۶/۶۸ Page 581 of 736

Fatawa Razviya Volume 6

Answer: Following him is forbidden and the prayer behind him is void. And Allah the Almighty knows best.

Problem 720: From Delhi, Chandni Chowk, near the Clock Tower, Bagh Wali Mosque, sent by Maulvi Abdul Manan Sahab, 16 Rajab al-Murajab 1337 AH.

What do the scholars of religion say regarding this matter: Zaid had been the prayer leader (Imam) of a mosque for a long time. Now some residents of the locality, being opposed to him, have appointed another Imam. No legal (Shari'i) defect was found in the first Imam for which he could be dismissed. The first Imam is displeased with the appointment of the second one and claims that praying behind him without his permission is disliked (Makruh). Is the first Imam's statement correct, that prayer behind the second Imam is Makruh or not?

Answer: If in reality the first Imam is not a Wahhabi, nor a Ghair-Muqallid, nor a Deobandi, nor of any kind of deviant sect, and there is no reason for dislike (karahat) due to his purification (taharat), recitation (qira'at), or actions, etc., then dismissing him without cause is prohibited. Even a judge (Hakim Shar'a) has not been given the authority for this. It is stated in Radd al-Muhtar:

"The judge does not have the authority to dismiss a functionary (post holder) without an offense." - A judge cannot dismiss an appointed Imam without any cause. (T)

And if there truly is a reason for dislike in him, then his leadership (Imamat) is Makruh and his prayer is unacceptable. It is mentioned in the authentic Sahah Hadiths:

"Three persons whose prayer is not raised even a span above their ears: (and among them is) one who leads a group while they dislike him." - The prayers of three people are not elevated even a handspan above their ears (and one of them is the person) who leads a congregation in prayer while they dislike him. (T)

And if there is any factor that invalidates the prayer, such as being a Ghair-Muqallid or Deobandi, or having incorrect purification or incorrect recitation, then it is clear that his leadership is invalid and the prayer behind him is void. In such a case, dismissing him is mandatory. And Allah the Almighty knows best.

1. Radd al-Muhtar, Book of Waqf, Topic: It is not valid to dismiss a functionary, published by Mustafa al-Babi, Egypt 3/423. Note: In Radd al-Muhtar, this text

appears in multiple places with different wordings but the same meaning: 3/422, 459, 452 ed. Nazir Ahmad.

2. Sunan Ibn Majah, Chapter: Whoever leads a people while they dislike him, published by H.M. Saeed Company, Karachi, p. 69. Note: In Sunan Ibn Majah, instead of "above their ears," it is "above their heads" - Nazir Ahmad Saidi.

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

जवाब: उसकी इक़्तिदा हराम है और उसके पीछे नमाज़ बातिल है। वल्लाहु तआला आलम (और अल्लाह तआला बेहतर जानता है)।

मसला ७२०: दिल्ली चांदनी चौक, घंटाघर के पास, बाग़ वाली मस्जिद से, मुरसिला मौलवी अब्दुल मन्नान साहब, १६ रजबुल मुरज्जब १३३७ हिजरी।

उलेमा-ए-दीन इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि ज़ैद क़दीम ज़माने से एक मस्जिद का इमाम था। अब मोहल्ले के कुछ लोगों ने उसके ख़िलाफ़ होकर एक दूसरे इमाम को खड़ा कर दिया है, जबकि पहले इमाम में कोई ऐसा शरीई ऐब नहीं पाया गया जिससे उसे माज़ूल (हटाया) किया जा सके। पहला इमाम दूसरे इमाम को खड़ा किए जाने पर नाराज़ है और कहता है कि मेरी इजाज़त के बग़ैर उसके पीछे नमाज़ मकरूह है। क्या पहले इमाम का यह कहना सही है कि दूसरे इमाम के पीछे नमाज़ मकरूह है या नहीं?

जवाब: अगर असल में पहला इमाम न वहाबी है, न ग़ैर-मुक़ल्लिद, न देवबंदी और न ही किसी क़िस्म का बद-मज़हब, और न ही उसकी तहारत (पाकीज़ागी), क़िरात (क़ुरान पढ़ना) या आमाल वगैरह की वजह से कराहत की कोई वजह है, तो बिना वजह उसे हटाना मना है, यहाँ तक कि हाकिम-ए-शरा को भी इसका इख़्तियार नहीं दिया गया। रद-उल-मुहतार में है:

"क़ाज़ी को किसी मुक़र्रर अहदेदार को बिना किसी जुर्म के हटाने का हक़ नहीं है।" - बिना किसी वजह के क़ाज़ी मुक़र्रर इमाम को माज़ूल नहीं कर सकता। (त)

और अगर वाकई उसमें कोई कराहत की वजह है तो उसकी इमामत मकरूह है और उसकी नमाज़ नाक़बूल है। सहाह अहादीस में है:

"तीन लोग ऐसे हैं जिनकी नमाज़ उनके कानों से एक बालिश्त (हाथ की लंबाई) भी ऊपर नहीं उठती: (उनमें से एक वह है) जो किसी क़ौम की इमामत करे और वे लोग उसे नापसंद करते हों।" (त)

और अगर उसमें नमाज़ के फ़ासिद (ख़राब) होने की कोई वजह है, जैसे ग़ैर-मुक़ल्लिद या देवबंदी होना या तहारत और क़िरात का सही न होना, तो ज़ाहिर है कि उसकी इमामत फ़ासिद है और उसके पीछे नमाज़ बातिल है। ऐसी सूरत में उसे हटाना फ़र्ज़ है। वल्लाहु तआला आलम।

1. रद-उल-मुहतार, किताबुल वक़्फ़, मतलब: अहदेदार को हटाना सही नहीं, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र ३/४२३। फ़: रद-उल-मुहतार में यह इबारत अलग-अलग लफ़्ज़ों के साथ कई जगह मौजूद है, मानी एक ही है ३/४२२, ४५९, ४५२ नज़ीर अहमद एडिशन।
2. सुनन इब्न माजा, बाब: जो किसी क़ौम की इमामत करे और वे उसे नापसंद करें, एच.एम. सईद कंपनी कराची, पृ. ६९। फ़: सुनन इब्न माजा में "कानों के ऊपर" की जगह "सिरों के ऊपर" है - नज़ीर अहमद सईदी।

पेज ५८२ / ७३६

فتاوی رضویہ جلد ششم

الجواب: اس کی اقتداء حرام ہے اور اس کے پیچھے نماز باطل ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۷۲۰: از دہلی چاندنی چوک متصل گھنٹہ گھر مسجد باغ والی مرسلہ مولوی عبدالمنان صاحب ۱۶ رجب المرجب ۱۳۳۷ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید قدیم الایام سے ایک مسجد کا پیش امام تھا اب بعض اہل محلہ نے اس سے برخلاف ہو کر ایک دوسرے امام کو کھڑا کردیا ہے اور اس سے پہلے امام میں کوئی عیب شرعی جس سے معزول ہو سکے نہیں پایا گیا اور پہلا امام ثانی کے کھڑا کرنے پر ناراض ہے اور کہتا ہے کہ میری اجازت کے سوا اس کے پیچھے نماز مکروہ ہے کیا اس امام اول کا کہنا ٹھیک ہے کہ امام ثانی کے پیچھے نماز مکروہ ہے یا نہیں؟

الجواب: اگر واقع میں امام اول نہ وہابی ہے نہ غیر مقلد نہ دیوبندی نہ کسی قسم کا بد مذہب، نہ اس کی طہارت یا قرات یا اعمال وغیرہ کی وجہ سے کوئی وجہ کراہت، بلاوجہ اس کو معزول کرنا ممنوع ہے حتی کہ حاکم شرع کو اس کا اختیار نہیں دیا گیا۔ ردالمحتار میں ہے:

لیس للقاضی عزل صاحب وظیفہ بغیر جنحۃ - بغیر کسی وجہ کے قاضی مقرر امام کو معزول نہیں کر سکتا (ت)

اور اگر واقعی اس میں کوئی وجہ کراہت ہے تو اس کی امامت مکروہ ہے اور اس کی نماز نامقبول۔ صحاح احادیث میں ہے:

ثلاثة لاترفع صلاتھم فوق اذانھم شبرا (وعد منھم) من ام قوما وھم لہ کارھون [2] - تین اشخاص کی نماز ان کی کانوں سے ایک بالشت برابر بلند نہیں ہوتی (اور ان میں سے ایک وہ شخص ہے) جو کسی قوم کی امامت کروائے حالانکہ وہ لوگ اسے پسند نہ کرتے ہوں۔ (ت)

اور اگر اس میں کوئی وجہ فسادِ نماز ہے مثلاً غیر مقلد یا دیوبندی یا غیر صحیح الطھارۃ یا غیر صحیح القراۃ ہونا، جب تو ظاہر ہے کہ اس کی امامت فاسد اور اس کے پیچھے نماز باطل، محض اس کا معزول کرنا فرض ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم

1 ردالمحتار کتاب الوقف مطلب لایصح عزل صاحب وظیفہ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۳/ ۴۲۳ ف: ردالمحتار میں یہ عبارت اختلاف الفاظ کے ساتھ متعدد جگہ پر موجود ہے معنی متحد ہے ۳/ ۴۲۲، ۴۵۹، ۴۵۲ ط نذیر احمد 2 سنن ابن ماجہ باب من ام قوما وھم لہ کارھون مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ص ۶۹ ف: سنن ابن ماجہ میں "فوق اذانھم" کی جگہ "فوق رؤسھم" ہے نذیر احمد سعیدی

Fatawa Razawiya Volume 6 Problem 721: From Bandikui, sent by Munshi Abdul Rahman, traveling postal employee. 8 Shaban 1337 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: Zaid was appointed in a mosque for the service of leading prayers (Imamat) and for teaching the Quran to the children of the followers of Islam (Sunni Jama'at) because he is a Hafiz-e-Quran. After some time, as no apparent difference was observed, a group of ignorant people became his followers and obedient to him. When Zaid had helped two or three boys complete their memorization (Hifz) and had fully established his influence, he began to pride himself on his position as Imam and, considering the mosque as his inheritance, started saying that no one could remove him from this mosque. In short, a distinguished student of Zaid named Bakr, who had completed his Hifz, got married. After his marriage, Bakr's father appointed Zaid himself to teach the Quran to Bakr's wife. Within a short period, fingers began to be pointed (rumors started), until after years, the matter became prolonged and came to light, resulting in Bakr being made to divorce her. Zaid then married the divorcee himself and proudly says, "Now it is not forbidden according to Sharia." Since the woman was young and Zaid was elderly, she did not remain under Zaid's control, adopted an independent lifestyle, discarded the veil (purdah), and began socializing freely with Zaid's young former students. Because Zaid is a follower of Nawab Siddiq Hasan Bhopali, he would twist the truth at every opportunity, presenting right as wrong and wrong as right to straighten out (manipulate) the ignorant. There were a few people who recognized the truth; he began to stay away from them. In the meantime, an illegitimate child (born out of wedlock) was born. An Aqiqah ceremony was performed for him. This same Zaid, the Imam, participated in the Aqiqah and, for the sake of getting the goat's skin, ate the pilaf heartily and began shouting that eating Aqiqah meat is permissible and not at all forbidden. When people objected to his leading the prayers because of this, Zaid himself, in a fit of rage, shouted out, "Curse be upon leading prayers! I will certainly not lead prayers anymore. Let those who object to me lead them themselves. A poor man's anger only harms himself." He refrained from leading prayers for a week, but finally, yielding, he started leading prayers again himself, and people prayed behind him. Therefore, looking at all these matters, it should be known whether it is permissible to pray behind such a person or not?

The Answer: Although the pointing of fingers by people is not reliable as it is often based on mere false suspicion, Zaid's statement after marriage, "Now it is not forbidden," apparently indicates that it was forbidden before. Thus, this is an

admission of something forbidden, although it could also mean, "Previously, you used to unjustly consider my suspicion forbidden; now it's not even [allegedly] forbidden." Regarding what is written about Zaid's wife, if it is with Zaid's consent or if Zaid does not manage her behavior despite having the power to do so, then he is a 'Dayyuth' (cuckold). A Dayyuth is a severe and most evil transgressor (Fasiq), and praying behind a public transgressor is 'Makruh Tahrimi' (strongly disliked to the point of being prohibited). Making him an Imam is not lawful, and praying behind him is a sin; if one has prayed, it is obligatory to repeat the prayer. The questioner did not specify whose illegitimate child it was. If this incident happened at someone else's place and the woman is married, and the husband accepted it as his child and performed Aqiqah, then there was certainly no harm in it, nor any harm in eating it. The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says: Page 583 of 736

फ़तावा रज़विया खंड 6 मसला 721: बांदीकुई से, प्रेषक मुंशी अब्दुल रहमान, डाक कर्मचारी। 8 शाबान 1337 हिजरी। धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं: जैद को हाफ़िज़-ए-कुरान होने के कारण एक मस्जिद में इमाम के रूप में और सुन्नी जमात के बच्चों को कुरान पढ़ाने के लिए नियुक्त किया गया था। कुछ समय बाद तक ज़ाहिर तौर पर कोई अंतर न दिखने से अज्ञानी लोगों का एक समूह जैद का अनुयायी और आज्ञाकारी बन गया। जब जैद ने दो-तीन लड़कों का हिफ़्ज़ (कंठस्थ करना) पूरा करा दिया और अपना प्रभाव पूरी तरह जमा लिया, तो वह अपने इमामत के पद पर गर्व करने लगा और मस्जिद को अपनी विरासत समझकर कहने लगा कि मुझे इस मस्जिद से कोई नहीं हटा सकता। संक्षेप में, जैद का एक होनहार छात्र जिसका नाम बक्र था, जिसने अपना हिफ़्ज़ पूरा कर लिया था, उसकी शादी होने के बाद बक्र के पिता ने जैद को ही बक्र की पत्नी को कुरान पढ़ाने के लिए नियुक्त किया। कुछ ही समय में उंगलियाँ उठने लगीं (चर्चाएँ शुरू हो गईं), यहाँ तक कि वर्षों बाद मामला बढ़ गया और सामने आया, तो बक्र से तलाक दिलवाया गया और जैद ने उस तलाकशुदा महिला से स्वयं निकाह कर लिया और गर्व से कहता है, "अब तो शरीयत के अनुसार हराम नहीं है।" चूँकि महिला जवान थी और जैद अधिक आयु का था, वह जैद के दबाव में नहीं रही और स्वतंत्र आचरण अपनाकर पर्दा त्याग दिया और जैद के पुराने जवान छात्रों के साथ मेल-जोल रखने लगी। चूँकि जैद नवाब सिद्दीक हसन भोपाली का अनुयायी है, वह हर मौके पर सच को झूठ और झूठ को सच बताकर अज्ञानी लोगों को बहका दिया करता था। इस पर कुछ लोग जो सत्य को पहचानने वाले थे, वह उनसे अलग रहने लगा। इसी बीच एक अवैध संतान पैदा हुई। उसका अकीका किया गया। यही जैद इमाम साहब अकीका में शरीक हुए और बकरे की खाल के लालच में खूब पुलाव उड़ाकर चिल्लाने लगे कि अकीका खाना जायज़ है, बिल्कुल हराम नहीं है। जब इस पर भी लोग उनकी इमामत पर आपत्ति करने लगे, तो खुद जैद साहब गुस्से में आकर चिल्ला उठे कि "इमामत करने पर लानत है! मैं तो अब बिल्कुल नमाज़ नहीं पढ़ाऊँगा, जो मुझ पर ऐतराज करते हैं वही पढ़ाएँ। गरीब का गुस्सा खुद को ही नुकसान पहुँचाता है।" वह एक हफ्ते तक नमाज़ पढ़ाने से रुके रहे, आखिरकार हार मानकर खुद ही नमाज़ पढ़ाने लगे और लोगों ने उनके पीछे नमाज़ पढ़ी। अत; इन सभी बातों को देखते हुए यह जानना चाहिए कि ऐसे व्यक्ति के पीछे नमाज़ पढ़ना जायज़ है या नहीं?

उत्तर: हालाँकि लोगों की उंगलियाँ उठाने (अफवाहों) का कोई एतबार नहीं है क्योंकि अक्सर यह केवल झूठी बदगुमानी पर आधारित होती है, लेकिन निकाह के बाद जैद का यह कहना कि "अब तो हराम नहीं है", ज़ाहिर तौर पर इस ओर इशारा करता है कि पहले हराम था, तो यह हराम का इकरार

हुआ। हालाँकि इसके यह अर्थ भी हो सकते हैं कि "पहले तुम मुझ पर नाहक बदगुमानी को हराम कहते थे, अब तो हराम नहीं है।" जैद की पत्नी के संबंध में जो लिखा गया है, यदि वह जैद की सहमति से है या जैद सामर्थ्य होने के बावजूद उसे नहीं रोकता, तो वह 'दय्यूथ' (अपनी महिलाओं की बेपर्दगी पर मौन रहने वाला) है। दय्यूथ एक अत्यंत बुरा और दुष्ट फासिक (पापी) है, और खुले तौर पर पाप करने वाले (फासिक-ए-मुअलन) के पीछे नमाज़ पढ़ना 'मकरूह-ए-तहरीमी' (अत्यंत नापसंद) है। उसे इमाम बनाना हलाल नहीं है और उसके पीछे नमाज़ पढ़ना गुनाह है, और यदि पढ़ ली तो उसे दोहराना वाजिब (अनिवार्य) है। प्रश्नकर्ता ने यह नहीं लिखा कि अवैध संतान किसकी पैदा हुई। यदि यह घटना किसी और के यहाँ की है और वह महिला विवाहित है, और उसके पति ने उसे अपना बच्चा मानकर अकीका किया, तो इसमें निश्चित रूप से कोई हर्ज नहीं था, और न ही उसे खाने में कोई हर्ज था। अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं: पृष्ठ 583/736

فتاوی رضویہ جلد ششم مسئلہ ۷۲۱ : از باندی کوئی مرسلہ منشی عبدالرحمن ملازم ڈاک سفری ۸ شعبان ۱۳۳۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید بوجہ حافظ قرآن ایک مسجد میں بخدمت پیش امام و برائے تعلیم قرآن طفلان اہل اسلام سنت و جماعت کے مقرر کیا گیا چند عرصہ بعد تک بظاہر کسی قسم کا فرق نہ معلوم ہونے سے ایک گروہ جاہلوں کے معتقد و مطیع زید ہو گئے۔ جب زید دو تین لڑکوں کا حافظ ختم کرا چکا اور اپنا رسوخ پورا پورا جما چکا تو اپنے منصب امامت پر فخر کرنے لگا اور مسجد کو اپنی میراث جان کر کہنے لگا کہ مجھ کو اس مسجد سے کوئی ہٹا نہیں سکتا، غرض زید کا ایک شاگرد رشید بکر نامی جس کا حافظہ ختم ہو چکا تھا اس کی شادی ہو جانے کے بعد اس کے والد نے زید ہی کو زوجہ بکر کی تعلیم قرآن کے لئے مقرر کیا چند ہی عرصہ میں انگشت نمائی ہونے لگی یہاں تک کہ برسوں کے بعد معاملہ طول ہو کر ظاہر ہوا تو بکر سے طلاق دلایا گیا اور زید نے مطلقہ کو خود نکاح میں لاکر فخر یہ کہتا ہے اب تو موافق شرع کے حرام نہیں ہے چونکہ عورت جوان زید سن رسیدہ تھا زید کے دباؤ میں نہ رہ کر آزادانہ روش اختیار کرکے پردہ بھی بالائے طاق رکھا اور زید کے جو جوان پرانے شاگرد تھے ان سے خلا ملا رہنے لگا، چونکہ زید دیکھنے والا نواب صدیق حسن بھوپالی کا ہے ہر موقع پر حق کو ناحق اور ناحق کو حق بتا کر جاہلوں کی سیدھا کرلیا کرتا تھا اس پر تھوڑے لوگ حق شناس تھے ان سے الگ رہنے لگا اس کے درمیان ایک لڑکا ولد الزنا پیدا ہوا اس کا عقیقہ کیا گیا، یہی زید پیش امام صاحب شریک عقیقہ ہو کر بکرے کی کھال کی غرض سے خوب پلاؤ پر ہاتھ مار کر پکارنے لگے کہ عقیقہ کھانا جائز ظاہر گز حرام نہیں جب اس پر بھی لوگ ان کی پیش امامی پر معترض ہوئے تو خود ہی زید صاحب غیظ وغضب میں آکر چلا اٹھے کہ پیش امامی کرنے پر لعنت ہے میں تو ہر گز نماز نہیں پڑھاؤں گا جو مجھ پر اعتراض کرتے ہیں وہی پڑھائیں قہر

درویش برجان درویش ایک ہفتہ تک نماز پڑھانے سے رکے رہے آخر جھک مار کر خود ہی نماز پڑھانے لگے اور لوگوں نے نماز پڑھی، پس ان سب باتوں پر نظر ڈالتے ہوئے معلوم ہونا چاہئے کہ ایسے شخص کے پیچھے نماز جائز ہے یا نہیں؟

الجواب: اگر چہ لوگوں کی انگشت نمائی کا اعتبار نہیں اکثر محض باطل بدگمانی پر ہوتی ہے مگر زید کا بعد نکاح کہنا اب تو حرام نہیں ظاہرًا اس پر دلالت کرتا ہے کہ پہلے حرام تھا تو یہ اقرار حرام ہوا، اگر چہ یہ معنی بھی ہو سکتے ہیں کہ پہلے تم مجھ پر ناحق بدگمانی حرام کرتے تھے اب تو حرام نہیں۔ زن زید کی نسبت جو لکھا گیا ہے اگر برضائے زید ہے یا زید بقدر قدرت بند و بست نہیں کرتا تو دیوث ہے اور دیوث سخت اخبث فاسق ، اور فاسق معلن کے پیچھے نماز مکروہ تحریمی۔ اسے امام بنانا حلال نہیں اور اس کے پیچھے نماز پڑھنی گناہ ، اور پڑھی تو پھیرنا واجب، سائل نے کچھ نہ لکھا کہ زنا سے لڑکا کس کے پیدا ہوا، اگر کسی دوسرے کے یہاں کا یہ واقعہ ہے اور وہ عورت شوہر دار ہے ، شوہر نے اسے اپنا بچہ ٹھہرا کر عقیقہ کیا تو بیشک اس میں کوئی حرج نہ تھا، نہ اس کے کھانے میں کوئی حرج۔ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں : Page 583 of 736

Fatawa Razawiyya Volume 6

"The child belongs to the [marital] bed, and for the adulterer is the stone."[1] For the one in marriage is the child (lineage), and for the fornicator is a stone. (T)

And if the woman was without a husband and she performed Aqiqa, then since lineage is absolutely established through it, and lineage in itself is a blessing: "And He has made for him lineage and marriage relations"[2] (Allah Almighty made for man relationships and in-laws). Although this situation is a severe calamity from the perspective of its cause, the prohibition of this Aqiqa or the prohibition of eating it is not apparent. Especially when scholars have explicitly stated that if one says 'Bismillah' upon drinking alcohol, he becomes a disbeliever (kafir), but if he says 'Alhamdulillah' after drinking it, he does not. Because even though alcohol is a calamity, its passing down the throat and not getting stuck in the throat at that moment to take one's life is a blessing of the Lord Almighty in this state of severe disobedience. It is in Fusul Imadi and Fatawa Hindiyya:

Arabic Text	**Urdu Translation**
Whoever eats haraam food and says Bismillah at the time of eating,	The one who ate haraam and said "Bismillah" at the time of eating,
the ruling of the Imam known as Mushtamali (Hindiyya) is that he	Imam known as Mushtamali (Hindiyya) said he is a disbeliever, and
becomes a disbeliever. And if he says Alhamdulillah upon finishing, some of the	if he says "Alhamdulillah" after finishing, some of the
later scholars said he does not commit disbelief.[3]	later scholars said he will not be a disbeliever. (T)

However, if a fornicator performed Aqiqa, the reason for it being a blessing is essentially absent. Still, thankfulness is not understood from it; rather, many ignorant people do not even know that thankfulness is intended by Aqiqa, they do it considering it a custom. In this case, participating in it and eating its food was definitely objectionable and vile. Cursing the Imamate is clear disbelief, but the intention behind it could be that if this person leads the prayer, then a curse be upon him. What a slightly impure word this is. Zaid's Imamate is inappropriate, especially if he follows the school of Siddiq Hasan Khan, for in these circumstances he is definitely irreligious and making him an Imam is forbidden (haraam). And Allah Almighty knows best.

Question 727: Zaid goes to court to file a case and remains busy in its efforts and pursuit. His son's wedded wife is an orphan and has no other means of livelihood. He and his son eat and drink together, but they do not call the son's wedded wife to their home, due to which she is in severe distress. Zaid has also performed a second marriage for his son. Is it permissible to pray behind him or not? What is the ruling in the noble Shariah regarding this?

1. Sahih Muslim, Chapter: The child belongs to the bed, printed by Noor Muhammad, Asah al-Matabi', Karachi, 1/704.
2. Al-Quran, 25/54.
3. Fatawa Hindiyya, Chapter 9 regarding rulings on apostates, printed by Noorani Kutub Khana, Peshawar, 2/372.

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

"बच्चा [वैवाहिक] बिस्तर का है और व्यभिचारी के लिए पत्थर है।"[1] विवाहित व्यक्ति के लिए बच्चा (वंश) है और व्यभिचारी के लिए पत्थर है। (त)

और यदि स्त्री बिना पति के थी और उसने अक़ीक़ा किया, तो चूँकि इससे वंश पूर्णतः सिद्ध है और वंश स्वयं में एक नेमत है: "और उसने उसके लिए वंश और ससुराल के रिश्ते बनाए"[2] (अल्लाह तआला ने मनुष्य के लिए रिश्ते और ससुराल बनाए)। यद्यपि कारण की दृष्टि से यह स्थिति एक भारी विपदा है, लेकिन इस अक़ीक़ा की मनाही या इसे खाने की मनाही स्पष्ट नहीं होती। विशेषकर जब विद्वानों ने स्पष्ट रूप से कहा है कि यदि कोई शराब पीने पर 'बिस्मिल्लाह' कहे तो वह काफ़िर (अविश्वासी) है, लेकिन यदि वह पीने के बाद 'अल्हम्दुलिल्लाह' कहे तो नहीं। क्योंकि यद्यपि शराब एक विपदा है, लेकिन उसका गले से नीचे उतर जाना और उसी समय गले में फंसकर जान न निकल जाना, इस गंभीर अवज्ञा की स्थिति में भी रब अज़-व-जल की एक नेमत है। फ़ुसूल इमादी और फ़तावा हिन्दिया में है:

अरबी पाठ	**उर्दू अनुवाद**
जिसने हराम भोजन खाया और खाते समय बिस्मिल्लाह कहा,	जिसने हराम खाया और खाते समय "बिस्मिल्लाह" पढ़ा,
मुश्तमिली (हिन्दिया) के रूप में जाने जाने वाले इमाम का फैसला है कि वह	प्रसिद्ध इमाम मुश्तमिली (हिन्दिया) ने कहा कि वह काफ़िर है, और
काफ़िर हो जाता है। और यदि उसने समाप्त करने पर अल्हम्दुलिल्लाह कहा, तो कुछ	यदि उसने समाप्त करने के बाद "अल्हम्दुलिल्लाह" कहा, तो कुछ
बाद के विद्वानों ने कहा कि वह काफ़िर नहीं होता।[3]	बाद के विद्वानों ने कहा कि वह काफ़िर नहीं होगा। (त)

हालाँकि, यदि किसी व्यभिचारी ने अक़ीक़ा किया, तो नेमत का कारण मूल रूप से अनुपस्थित है। फिर भी, इससे कृतज्ञता समझ में नहीं आती; बल्कि बहुत से अज्ञानी लोग यह जानते भी नहीं कि अक़ीक़ा से कृतज्ञता का उद्देश्य है, वे इसे एक रिवाज समझकर करते हैं। इस स्थिति में इसमें शामिल होना और उसका खाना खाना निश्चित रूप से दोषपूर्ण और घृणित था। इमामत पर लानत भेजना तो स्पष्ट कुफ़्र (अविश्वास) है, लेकिन इससे यह उद्देश्य हो सकता है कि यदि यह व्यक्ति इमामत करे तो

उस पर लानत हो। यह कितना अशुद्ध शब्द है। ज़ैद की इमामत अनुचित है, विशेषकर यदि वह सिद्दीक़ हसन ख़ान के पंथ पर हो, क्योंकि इन परिस्थितियों में वह निश्चित रूप से अधर्मी है और उसे इमाम बनाना हराम है। और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

मसला 727: ज़ैद कचहरी में जाकर मुक़दमा दायर करता है और उसकी कोशिश और पैरवी में व्यस्त रहता है। उसके बेटे की निकाह की हुई पत्नी अनाथ है और आजीविका का कोई दूसरा साधन भी नहीं है। वह और उसका बेटा साथ खाते-पीते हैं और बेटे की पत्नी को अपने यहाँ नहीं बुलाते, जिसके कारण वह भारी संकट में है। ज़ैद ने बेटे का दूसरा निकाह भी करा दिया है। क्या उसके पीछे नमाज़ जायज़ है या नहीं? इसके लिए शरीयत शरीफ़ में क्या हुक्म है?

1. सहीह मुस्लिम, बाब: अल-वलदु लिल-फ़िराश, मुद्रित नूर मोहम्मद असहुल मताबे, कराची, 1/704।
2. अल-क़ुरान, 25/54।
3. फ़तावा हिन्दिया, बाब 9, मुर्तदों के हुक्म में, मुद्रित नूरानी कुतुब ख़ाना, पेशावर, 2/372।

فتاوی رضویہ جلد ششم

الولد للفراش وللعاھر الحجر 1 صاحب نکاح کیلئے ولد (نسب) اور زانی کے لئے پتھر ہے (ت)

اور اگر عورت بے شوہر تھی اور اس نے عقیقہ کیا تو ازانجا کہ اس سے نسب قطعاً ثابت ہے اور نسب فی نفسہ نعمت ہے فَجَعَلَهُ نَسَبًا وَصِهْرًا 2 (اللہ تعالٰی نے آدمی کے لئے رشتے اور سسرال بنائے) اگرچہ جہت سبب سے یہ صورت سخت بلا ہے، اس عقیقہ کی تحریم یا اس کے کھانے کی حرمت ظاہر نہیں ہوتی خصوصاً جبکہ علماء نے تصریح فرمائی ہے کہ شراب پینے پر بسم اللہ کہے تو کافر ہے اور پی کر الحمدللہ کہے تو نہیں کہ شراب اگرچہ بلا ہے مگر اس کا حلق سے اتر جانا اور اسی وقت گلے میں پھنس کر دم نہ نکال دینا، اس شدید عصیان کی حالت میں رب عزوجل کی نعمت ہے۔ فصول عمادی و فتاوٰی ہندیہ میں ہے:

عربی عبارت	**اردو ترجمہ**
من اکل طعاماً حراماً وقال عند الاکل بسم اللہ	جس نے حرام کھایا اور کھانے کے وقت "بسم اللہ" پڑھی
حکم الامام المعروف بمشتملی (ھندیہ) انہ یکفر ولوقال عند الفراغ الحمدللہ قال بعض المتاخرین لایکفر 3	امام معروف مشتملی (ہندیہ) نے کہا کہ وہ کافر ہے اور فراغت کے بعد اگر "الحمدللہ" کہا تو بعض متاخرین نے کہا کہ اس سے وہ کافر نہیں ہوگا۔ (ت)

البتہ اگر زانی نے عقیقہ کیا تو وجہ نعمت اصلاً منتفی ہے پھر بھی شکراً اس سے مفہوم نہیں ہوتا بلکہ بہت جاہل یہ جانتے بھی نہیں کہ عقیقہ سے شکر مقصود ہے ایک رسم سمجھ کر کرتے ہیں اس صورت میں شرکت اور اس کا کھانا ضرور معیوب و شنیع تھا۔ امامت پر لعنت تو صریح کفر ہے مگر اس سے یہ مقصود ہو سکتا ہے کہ اگر یہ شخص امامت کرے تو اس شخص پر لعنت ہے یہ کیا تھوڑا ناپاک لفظ ہے، زید کی امامت نامناسب ، خصوصاً اگر صدیق حسن خاں کے مذہب پر ہو کہ ان حالات میں ضرور بد دین ہے اور اسے امام بنانا حرام۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۷۲۷: زید کچہری میں جا کر مقدمہ دائر کرتا ہے اور اس کی کوشش اور پیروی میں مصروف رہتا ہے اس کے لڑکے کی منکوحہ بیوی یتیم ہے اور کوئی دوسرا ذریعہ معاش کا بھی نہیں ہے اور اس کا لڑکا باہم کھاتے پیتے ہیں اور لڑکے کی منکوحہ بیوی کو اپنے یہاں بلاتے نہیں جس کی وجہ سے وہ سخت تکلیف میں ہے، زید نے لڑکے کا نکاح ثانی بھی کر لیا آیا اس کے پیچھے نماز جائز ہے یا نہیں؟ اس کے واسطے شرع شریف میں کیا حکم ہے؟

1 صحیح مسلم باب الولد للفراش مطبوعہ نور محمد اصح المطابع کراچی ۱/ ۷۰۴ 2 القرآن، ۲۵ / ۵۴ 3 فتاوٰی ہندیہ الباب التاسع فی احکام المرتدین مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور ۲/ ۳۷۲

Fatawa Rizvia Volume VI

The Answer: It is the husband's responsibility to call the wife, provide maintenance, and treat her well. It is not her father's responsibility. Allah does not hold one person accountable for another's sins. Yes, if the father prevents her from being called back without a valid Sharia reason, or if he is content with this injustice, then he himself is a partner in the injustice. If he does this openly and is well-known among people for committing such acts, he should not be made an Imam, as he is a public sinner (Fasiq-e-Mu'lin). And Allah Almighty knows best.

Problem 723: From Qutubpur Post Office, Pirganj, District Rangpur, submitted by Muhammad Rahmatullah, 5th Ramadan-ul-Mubarak 1339 AH. Is prayer behind someone who consumes interest (usurer) and someone who gives interest valid or not? Please state and be rewarded.

The Answer: Praying behind a usurer is 'Makruh Tahrimi' (prohibitively disliked) and must be repeated. As for the one who pays interest, if he does so out of a truly valid Sharia necessity, then no blame lies upon him. In 'Durr-e-Mukhtar' it is stated:

[Arabic Box]: It is permissible for a person in need to take a loan based on interest/ profit. [Urdu Box]: It is permissible for a needy person to obtain a loan on the basis of profit. (T)

And if one pays interest without a Sharia-sanctioned necessity—for example, taking an interest-based loan to expand business, increase property, build a tall mansion, or spend excessively on children's weddings—then he is just like the usurer. Appointing him as an Imam is also a sin, and the ruling for the prayer is the same [i.e., it must be repeated]. And Allah Almighty knows best.

Problem 724 to 766: From Dungarpur, Mewar, Rajputana, house of Samandar Khan Jamadar, submitted by Abdul Rauf Khan, 5th Ramadan 1339 AH. What do the scholars of religion say regarding: (1) If a person stops coming to the mosque because a scholar (Alim) has arrived and feels envy, yet he is the prayer leader (Imam), is prayer behind him permissible or not? (2) If a person is a scholar, the prayer leader, and the city judge (Qazi), explains issues to everyone himself, but then goes before everyone else to eat meat slaughtered by Bohras, is prayer behind him valid or not? (3) If a person always talks about worldly matters in the mosque and is the prayer leader, is prayer behind him valid or not? Please state and be rewarded.

1 Al-Ashbah wa al-Nazair, Fifth Principle, Warding off Mischiefs, published by Idara-tul-Quran Karachi 1/126. Page 585 of 736

उत्तर: पत्नी को बुलाना, भरण-पोषण देना और उसके साथ अच्छा व्यवहार करना पति की ज़िम्मेदारी है। यह उसके पिता की ज़िम्मेदारी नहीं है। अल्लाह एक का गुनाह दूसरे पर नहीं डालता। हाँ, अगर पिता बिना किसी शरीय कारण के उसे बुलाने से रोकता है या इस अन्याय पर राज़ी है, तो वह स्वयं अन्याय में शरीक है। अगर वह खुलेआम ऐसा करता है और लोगों के बीच इस काम के लिए बदनाम है, तो उसे इमाम नहीं बनाया जाएगा क्योंकि वह एक प्रकट पापी (फ़ासिक़-ए-मुअ्लिन) है। और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

मसाला ७२३: कुतुबपुर डाकखाना पीरगंज ज़िला रंगपुर से प्रेषित, मुहम्मद रहमतुल्लाह द्वारा, ५ रमज़ानुल मुबारक १३३९ हिजरी। क्या सूद खाने वाले और सूद देने वाले दोनों के पीछे नमाज़ जायज़ है या नहीं? बयान फ़रमाएं और सवाब पाएं।

उत्तर: सूदखोर के पीछे नमाज़ 'मक़रूहे तहरीमी' (कड़ाई से नापसंद) है और उसे दोहराना ज़रूरी है। सूद देने वाले के बारे में, अगर वह वास्तव में किसी सही शरीय मजबूरी के कारण सूद देता है, तो उस पर कोई दोष नहीं है। 'दुर्रे मुख्तार' में उल्लेख है:

[अरबी बॉक्स]: ज़रूरतमंद के लिए ब्याज के आधार पर ऋण लेना जायज़ है। [उर्दू बॉक्स]: ज़रूरतमंद के लिए नफ़े(ब्याज) की बुनियाद पर क़र्ज़ हासिल करना जायज़ है। (त)

और अगर बिना किसी शरीय मजबूरी के सूद देता है, जैसे व्यापार बढ़ाने, संपत्ति बढ़ाने, ऊँचा महल बनवाने या बच्चों की शादी में बहुत ज़्यादा ख़र्च करने के लिए सूदी कर्ज़ लेता है, तो वह भी सूद खाने वाले की तरह ही है। उसे इमाम बनाना भी गुनाह है, और नमाज़ का वही हुक्म है। और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

मसाला ७२४ से ७६६: डूंगरपुर, मेवाड़, राजपूताना, समंदर ख़ाँ जमादार का मकान, प्रेषित अब्दुल रऊफ़ ख़ाँ, ५ रमज़ान १३३९ हिजरी। उलेमा-ए-दीन क्या फ़रमाते हैं कि: (१) क्या कोई व्यक्ति किसी आलिम के आने पर मस्जिद में आना छोड़ दे और हसद (ईर्ष्या) करे और वह इमाम भी हो, तो उसके पीछे नमाज़ जायज़ है या नहीं? (२) कोई आलिम हो और शहर का इमाम व क़ाज़ी भी हो, ख़ुद लोगों को शरीय मसाइल समझाए और फिर ख़ुद ही सब से पहले जाकर बोहरों का ज़बह किया हुआ गोश्त

खाए, तो क्या उसके पीछे नमाज़ जायज़ है या नहीं? (३) जो व्यक्ति मस्जिद में हमेशा दुनियावी बातें करता हो और इमाम हो, तो उसके पीछे नमाज़ जायज़ है या नहीं? बयान फ़रमाएं और सवाब पाएं।

---

१ अल-अशबाह वन-नज़ायर, पाँचवाँ नियम, बुराइयों को दूर करना, प्रकाशित इदारा-तुल-क़ुरआन कराची १२६/१। पृष्ठ ७३६ का ५८५

فتاوی رضویہ جلد ششم

الجواب: عورت کو بلانا، نان و نفقہ دینا، اچھا برتاؤ کرنا شوہر کے ذمہ ہے۔ اس کے باپ کے ذمہ نہیں۔ اللہ تعالیٰ ایک کا گناہ دوسرے پر نہیں رکھتا۔ ہاں اگر بلاوجہ شرعی باپ اسے بلانے سے منع کرتا ہے یا اس کے اس ظلم پر راضی ہے تو خود شریکِ ظلم ہے۔ اگر وہ بات باعلان کرتا ہے لوگوں میں اس کے ارتکاب سے مشہور ہے تو اسے امام نہ بنایا جائے گا کہ فاسق معلن ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۷۲۳: از قطب پور ڈاکخانہ پیر گنج ضلع رنگ پور مسئولہ محمد رحمت اللہ ۵ رمضان المبارک ۱۳۳۹ھ سود کھانے والے اور دینے والے دونوں کے پیچھے نماز درست ہے یا نہیں؟ بینواتوجروا۔

الجواب: سود خور کے پیچھے نماز مکروہِ تحریمی واجب الاعادہ ہے اور سود دینے والا اگر حقیقۃً صحیح شرعی مجبوری کے سبب دیتا ہے اس پر الزام نہیں۔ در مختار میں ہے:

[Arabic Box]: یجوز للمحتاج الاستقراض بالربح۔ [Urdu Box]: ضرورت مند کے لئے نفع کی بنیاد پر قرض حاصل کرنا جائز ہے۔ (ت)

اور اگر بلا مجبوریِ شرعی سود دیتا ہے مثلاً تجارت بڑھانے یا جائداد میں اضافہ کرنے یا اونچا محل بنوانے یا اولاد کی شادی میں بہت کچھ لگانے کے واسطے سودی قرض لیتا ہے تو وہ بھی سود کھانے والے کے مثل ہے اور اسے امام بنانا بھی گناہ، اور نماز کا وہی حال۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۷۲۴ تا ۷۶۶: از ڈونگر پور ملک میواڑ راجپوتانہ مکان سمندر خاں جمعدار مسئولہ عبدالرؤف خاں ۵ رمضان ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین کہ: (۱) کوئی آدمی عالم کے آنے

سے مسجد میں آنا چھوڑ دے اور حسد کرے اور وہ پیش امام بھی ہو اس کے پیچھے نماز جائز ہے یا نہیں؟ (۲) کوئی عالم ہو اور پیش امام و قاضی شہر ہو خود سب سے مسائل بیان کرے اور سب کو سنائے اور سب کے پہلے جا کر بوہروں کے یہاں کا ذبح کیا ہوا گوشت کھائے اور اس کے پیچھے نماز درست ہے یا نہیں؟ (۳) جو شخص ہمیشہ مسجد میں دنیا کی باتیں کرتا ہو اور وہ پیش امام ہو اس کے پیچھے نماز درست ہے یا نہیں؟ بینواتوجروا۔

---

1 الاشباہ والنظائر قاعدہ خمسہ درء المفاسد مطبوعہ ادارۃ القرآن کراچی ۱/۱۲۶. Page 585 of 736

The Answer: (1) A ruling cannot be given on such summary matters. What kind of scholar was he and what was the cause of jealousy until the details are known; a summary matter cannot be answered. Scholars are scholars of religion, and the Wahhabis and others are also called scholars, and the reasons for disputes are also different. And Allah Almighty knows best. (2) A person who knowingly eats the slaughtered meat of Bohras eats carrion; it is not permissible to make him an Imam, and praying behind him is forbidden. And Allah Almighty knows best. (3) Just that someone talks about worldly matters in the mosque does not absolutely warrant a prohibition of leadership (Imamate), as long as it is not proven to have reached the limit of open transgression (fisq). If he does not go to the mosque intentionally to talk about the world but is sitting for prayer and happens to talk about some worldly matters which do not involve obscenity or other sins, though it should not be so, it does not affect the Imamate. And Allah Almighty knows best.

Problem 772 to 782: From Sahawanpur village, Gopal Ganj, near Darwah, post office Darwah, Tehsil Gunda, District Pratapgarh. Asked by Bekhud Shah, 8 Ramadan 1339 AH. (1) What do the scholars of religion say: can a Hanafi's prayer be performed behind a Shafi'i, or is it disliked (Makruh)? (2) And those who forbid the Milad-e-Sharif and call it an innovation (Bid'at), can a Hanafi pray behind them or is it Makruh? Please explain and be rewarded.

The Answer: If it is known that in this particular prayer, he is omitting any obligatory act (Fard) of purification or an obligatory act of prayer according to the Hanafi school, then this prayer of a Hanafi cannot be valid behind him. And if it is known that in this prayer he is not omitting any obligation or condition of the Hanafi school, then this prayer can certainly be performed behind him, although praying behind a Hanafi is superior. And if the state of this prayer is not known, but his habit is known to be that he observes the obligations and conditions of the Hanafi school, then there is no harm in following him, although a Hanafi is superior. And if his habit is known to be that he does not observe the obligations and conditions of the Hanafi school in obligatory acts and conditions, then the prayer behind him is Makruh, and the dislike is severe. Then, in both these cases, if it is discovered later that he did not observe the rules in that prayer, then that prayer will have to be repeated, as the correct view is that the school of the follower (Muqtadi) is what matters. And if it is proven later that he did observe the rules in that specific prayer, then the prayer is valid and there is no need for repetition. And if nothing is known about his habit at all, then following

him is Makruh; however, if a prayer behind a Hanafi Imam is not available, one should not leave the congregation; later, when the situation becomes clear...

उत्तर: (१) ऐसी संक्षिप्त बातों पर कोई निर्णय नहीं दिया जा सकता। वह किस तरह का विद्वान था और ईर्ष्या का कारण क्या था, जब तक विवरण ज्ञात न हो; संक्षिप्त बात का उत्तर नहीं दिया जा सकता। विद्वान धर्म के विद्वान होते हैं और वहाबी आदि धर्मत्यागी भी विद्वान कहलाते हैं, और विवाद के कारण भी भिन्न होते हैं। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (२) जो व्यक्ति जानबूझकर बोहरों का ज़बह किया हुआ मांस खाता है, वह मुर्दार (मरा हुआ जानवर) खाता है; उसे इमाम बनाना जायज़ नहीं है और उसके पीछे नमाज़ पढ़ना वर्जित है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (३) केवल इतना कि कोई मस्जिद में दुनियावी बातें करता है, पूर्ण रूप से इमामत (नेतृत्व) की मनाही का कारण नहीं है, जब तक कि खुले तौर पर गुनाह (फ़िस्क़) की सीमा तक पहुँचना साबित न हो जाए। यदि वह मस्जिद में दुनियावी बातें करने के उद्देश्य से नहीं जाता है, बल्कि नमाज़ के लिए बैठा है और कुछ दुनियावी बातें कर लेता है जिनमें अश्लीलता या अन्य पाप न हों, हालांकि ऐसा भी नहीं होना चाहिए, लेकिन इससे इमामत पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला ७७२ से ७८२: ग्राम सहावनपुर, गाँव गोपालगंज, निकट दरुआ, डाकघर दरुआ, तहसील गुंडा, ज़िला प्रतापगढ़। प्रश्नकर्ता: बेखुद शाह, ८ रमज़ान १३३९ हिजरी। (१) धर्म के विद्वान क्या फ़रमाते हैं कि क्या हनफ़ी की नमाज़ शाफ़ई के पीछे हो सकती है या मकरूह (नापसंद) है? (२) और जो लोग मौलूद शरीफ़ को मना करते हैं और उसे बिदअत (नवाचार) कहते हैं, क्या उनके पीछे हनफ़ी की नमाज़ हो सकती है या मकरूह है? स्पष्ट करें और पुण्य पाएँ।

उत्तर: यदि यह ज्ञात है कि इस विशेष नमाज़ में वह हनफ़ी मज़हब की किसी फ़र्ज़ पवित्रता (तहारत) या फ़र्ज़ नमाज़ को छोड़ रहा है, तो हनफ़ी की यह नमाज़ उसके पीछे नहीं हो सकती। और यदि यह ज्ञात है कि वह इस नमाज़ में हनफ़ी मज़हब के फ़र्ज़ और शर्तों को नहीं छोड़ रहा है, तो यह नमाज़ उसके पीछे अवश्य हो सकती है, यद्यपि हनफ़ी के पीछे पढ़ना श्रेष्ठ है। और यदि इस नमाज़ की स्थिति ज्ञात नहीं है, लेकिन उसकी आदत ज्ञात है कि वह फ़र्ज़ और शर्तों में हनफ़ी मज़हब का पालन करता है, तो उसके पीछे चलने (इक़्तिदा) में कोई हर्ज नहीं है, यद्यपि हनफ़ी इमाम श्रेष्ठ है। और यदि उसकी आदत ज्ञात है कि वह फ़राएज़ और शर्तों में हनफ़ी मज़हब का पालन नहीं करता है, तो उसके पीछे नमाज़ मकरूह है, और यह मकरूह-ए-शदीद (अत्यंत नापसंद) है। फिर यदि इन दोनों स्थितियों में बाद में पता चले कि उसने उस नमाज़ में पालन नहीं किया था, तो वह नमाज़ फिर से पढ़नी होगी, क्योंकि सही यही है कि मुक़्तदी (पीछे नमाज़ पढ़ने वाले) के मज़हब का विचार किया

जाता है। और यदि बाद में सिद्ध हो जाए कि उसने उस विशेष नमाज़ में पालन किया था, तो नमाज़ हो गई, उसे दोहराने की कोई आवश्यकता नहीं है। और यदि उसकी आदत के बारे में कुछ भी ज्ञात न हो, तो उसकी इक़्तिदा मकरूह है; हालाँकि, यदि हनफ़ी इमाम के पीछे नमाज़ न मिले, तो जमात न छोड़ें; बाद में स्थिति स्पष्ट होने पर...

पृष्ठ ७३६ में से ५८६

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

الجواب: (۱) ایسی اجمالی باتوں پر حکم نہیں ہوسکتا وہ کیسا عالم اور وجہ حسد کیا تا وقتیہ تفصیل نہ معلوم ہوا اجمالی بات کا جواب نہیں دیا جاسکتا عالم علمائے دین ہیں اور وہابیہ و غیر ہم مرتدین بھی عالم کہلاتے ہیں اور وجوہ منازعت بھی مختلف ہوتی ہیں۔ واللہ تعالٰی اعلم (۲) جو شخص دانستہ بوہروں کا ذبیحہ کھاتا ہے مردار کھاتا ہے اسے امام بنانا جائز نہیں اور اس کے پیچھے نماز منع۔ واللہ تعالٰی اعلم (۳) فقط اتنا کہ دنیا کی بات مسجد میں کرتا ہے علی الاطلاق ممانعت امامت کا موجب نہیں جب تک علانیہ حد فسق کو پہنچنا ثابت نہ ہو اگر دنیا کی بات کرنے کے لئے بالمقصد مسجد نہیں جاتا نماز کے لئے بیٹھا ہے اور کوئی دنیا کی باتیں بھی کرلیں جن میں فحش وغیرہ معاصی نہ ہوں اگر چہ ایسا بھی نہ چاہئے مگر اس سے امامت پر کوئی اثر نہیں پڑتا۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۷۷۲ تا ۷۸۲ : از موضع سہاون پور گاؤں گوپال گنج متصل ڈروہ ڈاکخانہ ڈروہ تحصیل گنڈہ ضلع پرتاب گڑھ مسئولہ بیخود شاہ ۸ رمضان ۱۳۳۹ھ (۱) کیا فرماتے ہیں علمائے دین کہ حنفی کی نماز شافعی کے پیچھے ہوسکتی ہے یا مکروہ ہوتی ہے ؟ (۲) اور جو لوگ مولود شریف کو منع کرتے ہیں اور بدعت کہتے ہیں ان کے پیچھے حنفی کی نماز ہوسکتی ہے یا مکروہ ہوتی ہے؟ بینوا توجروا۔

الجواب: اگر معلوم ہے کہ اس خاص نماز میں حنفی مذہب کے کسی فرض طہارت یا فرض نماز کا تارک ہے تو حنفی کی یہ نماز اس کے پیچھے نہیں ہوسکتی ، اور اگر معلوم ہے کہ وہ اس نماز فرض و شرط مذہب حنفی کا تارک نہیں تو یہ نماز اس کے پیچھے ضرور ہو سکتی ہے اگر چہ حنفی کے پیچھے اولٰی ہے ، اور اگر اس نماز کا حال معلوم نہیں مگر اس کی عادت معلوم ہے کہ

فرض و شرائط میں مذہب حنفی کی رعایت کرتا ہے تو اس کی اقتداء میں حرج نہیں اگر چہ حنفی اولیٰ ہے اور اگر اس کی عادت معلوم ہے کہ فرائض و شرائط میں مذہب حنفی کی رعایت نہیں کرتا تو اس کے پیچھے نماز مکروہ ہے اور کراہت شدید ہے پھر اگر ان دونوں صورتوں میں بعد کو معلوم ہو کہ اس نماز میں اس نے رعایت نہ کی تھی وہ نماز پھر پڑھنی ہوگی کہ صحیح یہی ہے کہ مذہب مقتدی کا اعتبار ہے اور اگر بعد کو ثابت ہے کہ اس نماز خاص میں رعایت کی تھی تو نماز ہو گئی اعادہ کی کچھ حاجت نہیں، اور اگر اس کی عادت ہی کچھ معلوم نہ ہو تو اس کی اقتداء مکروہ ہے ، مگر حنفی امام کے پیچھے نماز نہ ملے تو جماعت نہ چھوڑے بعد کو ظہور حال کا

Fatawa Rizwiya, Volume 6

The ruling is the same as just mentioned. And Allah Almighty knows best.

(2) Now, those who say that the gathering of Milad Mubarak is absolutely impermissible are none but Wahabis, and Wahabis are apostates, and prayer behind an apostate is void. And Allah Almighty knows best.

Problem 729 to 734: From Bhusawal, District Khandesh, Mohalla Sitara, asked by Hafiz Elys Mahbub, 7 Ramadan 1349 AH.

What do the scholars of religion say: (1) If Zaid obeys Christians, is he fit for leadership (imamat) or not? (2) If he is, then whose prayer is valid and whose is not? (3) If Zaid creates hypocrisy/division among Muslims, is he fit for imamat or not? (4) If Zaid is caught in theft from the ruler of the time, is he fit for imamat or not? (5) If Zaid is inwardly a Ghair-Muqallid (one who doesn't follow a school of law) and says to Sunnis just to show them that "I follow the Hanafi school" and says this with pride as well, is he fit for imamat or not? (6) If a respectable Muslim is leading the prayer, but due to the turning away of a few Muslims, a person levels an accusation against him that "this person is not fit for imamat" and those people are unaware of Hadith etc. and create discord among Muslims, what is the ruling for them? Are they deserving of seeking forgiveness or not? Explain and be rewarded.

The Answer: (1) The questioner has used a vague and general word for "obeying". Whether it is obeying Christians, Hindus, or Muslims, it is permissible in permissible matters, forbidden in forbidden matters, and disbelief in matters of disbelief. Whoever obeys anyone in matters of disbelief is a disbeliever and prayer behind him is void. Whoever follows someone in forbidden matters is a transgressor (fasiq) and prayer behind him is disliked (makruh). Whoever obeys in permissible matters is not to be blamed, nor is there any harm in his imamat for this reason. And Allah Almighty knows best. (2) Behind one who is fit for imamat, everyone's prayer is valid. Special cases do not apply here where a person can only lead a specific type of people and the prayer of others behind him is not valid, like a disabled person (ma'zoor) who can lead another disabled person like himself but not others. And Allah Almighty knows best. (3) This is a vague question. Many times, by stating a matter of truth, differences arise among the ignorant, and foolish or irreligious people call it creating hypocrisy/division. This cannot be a reason for accusation. The questioner should write in detail what he says and what division he creates. And Allah Almighty knows

best. (4) If he has repented and there is no hatred left for him in the hearts, and there is no other reason preventing imamat, then there is no harm in his imamat.

फतावा रज़विया, छठा खंड

आदेश वही है जो अभी गुज़रा। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

(२) अब मिलाद मुबारक की महफिल को बिल्कुल नाजायज कहने वाले कोई और नहीं बल्कि वहाबी हैं, और वहाबी मुर्तद (धर्मत्यागी) हैं और मुर्तद के पीछे नमाज़ बातिल (अमान्य) है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला ७२९ से ७३४: भुसावल, जिला खानदेश, मोहल्ला सितारा से, हाफिज़ एलिस महबूब द्वारा पूछा गया, ७ रमज़ान १३४९ हिजरी।

दीन के विद्वान क्या कहते हैं: (१) ज़ैद ईसाइयों की ताबेदारी (आज्ञापालन) करता हो, क्या वह इमामत के लायक है या नहीं? (२) अगर है तो किन लोगों की नमाज़ होती है और किन लोगों की नहीं? (३) ज़ैद मुसलमानों में निफाक (फूट) डाले तो वह इमामत के काबिल है या नहीं? (४) ज़ैद वक्त के शासक की चोरी में पकड़ा गया हो तो वह इमामत के काबिल है या नहीं? (५) ज़ैद अंदरूनी तौर पर गैर-मुक़ल्लिद हो और सुन्नियों को दिखाने के लिए कहे कि "मैं हनफ़ी मज़हब रखता हूँ" और इस पर गर्व भी करे, तो वह इमामत के लायक है या नहीं? (६) एक सम्मानित मुसलमान इमामत करता हो लेकिन दो-चार मुसलमानों के बहकाने से एक व्यक्ति उस पर आरोप लगाए कि "यह व्यक्ति इमामत के लायक नहीं है" और वे लोग हदीस आदि से अनभिज्ञ हों और मुसलमानों में अनबन पैदा करें, तो उनके लिए क्या हुक्म है? क्या वे तौबा के हकदार हैं या नहीं? बयान करें और पुण्य पाएं।

जवाब: (१) पूछने वाले ने 'ताबेदारी' का एक गोल-मोल और अस्पष्ट शब्द लिखा है। ताबेदारी ईसाइयों की हो या हिंदुओं की या मुसलमानों की, हलाल में हलाल है, हराम में हराम है, और कुफ्र में कुफ्र है। जो कुफ्र में किसी की ताबेदारी करे वह काफिर है और उसके पीछे नमाज़ बातिल है, और जो हराम में अनुसरण करता हो वह फासिक है और उसके पीछे नमाज़ मकरूह (नापसंद) है, और जो हलाल में आज्ञा पालन करे उस पर कोई दोष नहीं, न ही इस वजह से उसकी इमामत में कोई हर्ज है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (२) जो इमामत के लायक है, उसके पीछे सबकी नमाज़ हो सकती है। इस मामले में कोई विशेष नियम लागू नहीं होता कि एक व्यक्ति केवल एक विशेष प्रकार के लोगों की इमामत कर सकता हो और दूसरों की नमाज़ उसके पीछे जायज न हो, जैसे कि माज़ूर (दिव्यांग/अक्षम) व्यक्ति जो अपने जैसे माज़ूर की इमामत कर सकता है लेकिन दूसरों की नहीं। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (३) यह एक अस्पष्ट सवाल है। कई बार सत्य बताने से अज्ञानियों में मतभेद

हो जाता है और मूर्ख या अधर्मी लोग इसे 'निफाक' (फूट) डालना कहते हैं। यह आरोप का आधार नहीं हो सकता। पूछने वाले को विस्तार से लिखना चाहिए कि वह क्या कहता है और क्या फूट डालता है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (४) अगर वह तौबा कर चुका है और दिलों में उसके प्रति नफरत नहीं रही है, और इमामत में बाधा डालने वाला कोई और कारण नहीं है, तो उसकी इमामत में कोई हर्ज नहीं है।

पृष्ठ ७३६ का ५८७

فتاوٰی رضویہ، جلد ششم

حکم وہی ہے جو ابھی گزرا۔ واللہ تعالٰی اعلم

(۲) اب مجلس میلاد مبارک مطلقاً ناجائز کہنے والے نہیں مگر وہابیہ، اور وہابیہ مرتدین ہیں اور مرتد کے پیچھے نماز باطل۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۷۲۹ تا ۷۳۴: از بھوساول ضلع خاندیس محلہ ستارہ مسئولہ حافظ الیس محبوب ۷ رمضان ۱۳۴۹ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین: (۱) زید نصاریٰ کی تابعداری کرتا ہو وہ امامت کے لائق ہے یا نہیں؟ (۲) اگر ہے تو کن لوگوں کی نماز ہوتی ہے کن لوگوں کی نہیں؟ (۳) زید مسلمانوں میں نفاق ڈالے تو وہ قابل امامت ہے یا نہیں؟ (۴) زید حاکم وقت کی چوری میں گرفتار ہوا تو وہ قابل امامت ہے یا نہیں؟ (۵) زید باطنی غیر مقلد ہو اور اہلسنت کے دکھانے کو کہے کہ میں حنفی مذہب رکھتا ہوں اور اس پر یہ بھی ساتھ فخر کے کہے تو وہ امامت لائق یا نہیں؟ (۶) ایک مسلمان عزت دار امامت کرتا ہو مگر دو چار مسلمانوں کے منحرف کر دینے سے ایک شخص اس پر الزام لگائے کہ یہ شخص امامت کے لائق نہیں اور وہ لوگ احادیث وغیرہ سے واقف نہ ہوں اور مسلمانوں میں نا اتفاقی کرائیں تو ان کے لئے کیا حکم ہے آیا وہ استغفار کے حقدار ہیں یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: (۱) سائل نے تابعداری کا گول اور مجمل لفظ لکھا تابعداری نصاریٰ کی ہو یا ہنود کی یا مسلم کی، حلال میں حلال ہے، حرام میں حرام ہے، کفر میں کفر۔ جو کفر میں کسی کی تابعداری کرے وہ کافر ہے اور اس کے پیچھے نماز باطل، اور جو حرام میں اتباع کرتا ہو فاسق ہے اور اس کے پیچھے نماز مکروہ، اور جو حلال میں اطاعت کرے اس پر الزام نہیں، نہ اس وجہ سے اس کی

امامت میں حرج۔ واللہ تعالٰی اعلم (۲) جو امامت کے لائق ہے اس کے پیچھے سب کی نماز ہو سکتی ہے اس صورت میں خاصہ کو یہاں دخل نہیں کہ آدمی ایک خاص قسم کے لوگوں کی امامت کر سکتا ہو دوسرے لوگوں کی اس کے پیچھے نماز جائز نہ ہو جیسے معذور کہ اپنے مثل معذور کی امامت کر سکتا اوروں کی نہیں۔ واللہ تعالٰی اعلم (۳) مجمل سوال ہے بارہا مسئلہ حق بیان کرنے سے جاہلوں میں اختلاف پڑتا ہے اور احمق یا بد دین لوگ اسے نفاق ڈالنا کہتے ہیں یہ وجہ الزام نہیں ہو سکتا، سائل مفصل لکھے کہ کیا کہتا اور کیا نفاق ڈالتا ہے واللہ تعالٰی اعلم (۴) اگر توبہ کر چکا اور اس سے نفرت قلوب میں نہ رہی اور کوئی وجہ مانع امامت نہ ہو تو اس کی امامت میں حرج

Fatawa Ridawiyyah Volume 6 No, and Allah Almighty knows best. (5) The imamate of a non-Muqallid is void and praying behind him is purely impermissible. When it is proven and verified that he is a non-Muqallid, then his claiming to be a Hanafi by way of Taqiyyah (dissimulation) is of no benefit. Allah Almighty said: "When the hypocrites come to you, [O Muhammad], they say, 'We testify that you are the Messenger of Allah.' And Allah knows that you are His Messenger, and Allah testifies that the hypocrites are liars." Allah Almighty stated: When the hypocrites come into your presence, they say, 'We testify that indeed you are surely the Messenger of Allah,' and Allah knows that indeed you are His Messenger, and Allah testifies that indeed the hypocrites are certainly liars. And Allah Almighty knows best. (6) Every Muslim is entitled to seek forgiveness. Allah Almighty said: "And ask forgiveness for your sin and for the believing men and believing women." Allah Almighty stated: And O Beloved! Seek forgiveness for the sins of your special ones and common Muslim men and women. (T) If they have leveled a false accusation, they are grave sinners entangled in violating the rights of servants. The answer regarding creating discord has already been given in number 3. We cannot make a fatwa a supporter of some carnal motive by giving a definitive ruling on ambiguous matters. "He who does not know the people of his time is ignorant." (T) And Allah Almighty knows best. Issue 735: From Tehsil Sikandra Rao, District Aligarh, questioned by Muhammad Latif Qarq Amin, 10 Ramadan 1339 AH. What do the scholars of religion say on this issue: Is it correct or not to pray, especially Tarawih, behind someone who is not of pure descent, i.e., born out of wedlock, but is a Hafiz of the Quran? Explain and be rewarded. The Answer: It is Makruh-e-Tanzihi (disliked but not sinful) if he is not superior to all those present in the knowledge of the rules of purification and prayer. Otherwise, he is preferable if he fulfills all the conditions of imamate, as stated in Dur al-Mukhtar etc. (T) And Allah Almighty knows best. Issue 736: From Bareilly, Kankar Tola near Old City Police Post, questioned by Abdul Ghani Sahib, 7 Ramadan 1339 AH. What do the scholars of religion say about behind whom is it permissible to pray and behind whom not, furthermore, regarding the village...

1. Al-Quran 63/1
2. Al-Quran 47/19 Page 588 of 736

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी नहीं, और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (५) ग़ैर-मुक़ल्लिद की इमामत बातिल (अमान्य) है और उसके पीछे नमाज़ बिल्कुल नाजायज़ है। जब उसका ग़ैर-मुक़ल्लिद होना साबित और तहक़ीक़ (सत्यापित) हो जाए, तो तक़िया (दिखावे) के तौर पर खुद को हनफ़ी कहना कोई फ़ायदा नहीं देता। अल्लाह तआला ने फ़रमाया: "जब मुनाफ़िक़ आपके पास आते हैं, तो वे कहते हैं, 'हम गवाही देते हैं कि आप निश्चित रूप से अल्लाह के रसूल हैं।' और अल्लाह जानता है कि आप उसके रसूल हैं, और अल्लाह गवाही देता है कि मुनाफ़िक़ झूठे हैं।" अल्लाह तआला ने फ़रमाया: जब मुनाफ़िक़ आपके हुज़ूर हाज़िर होते हैं तो कहते हैं कि हम गवाही देते हैं कि बेशक हुज़ूर ज़रूर अल्लाह के रसूल हैं, और अल्लाह जानता है कि बेशक आप उसके रसूल हैं और अल्लाह गवाही देता है कि बेशक मुनाफ़िक़ ज़रूर झूठे हैं। वल्लाहू तआला आलम (और अल्लाह तआला बेहतर जानता है)। (६) इस्तिग़फ़ार (क्षमा याचना) का हक़दार हर मुसलमान है। अल्लाह तआला ने फ़रमाया: "और अपने गुनाहों के लिए और मोमिन पुरुषों और मोमिन स्त्रियों के लिए क्षमा माँगिए।" अल्लाह तआला ने फ़रमाया: और ऐ महबूब! अपने ख़ास लोगों और आम मुसलमान मर्दों और औरतों के गुनाहों की माफ़ी माँगो। (त) अगर उन्होंने बेजा इल्ज़ाम लगाया है तो वे सख़्त गुनहगार और हक़-उल-अब्द (बन्दों के अधिकारों के हनन) में गिरफ़्तार हैं। नफ़ाक़ (फूट) डालने का जवाब नंबर ३ में हो चुका है। मुजमल (अस्पष्ट) बातों पर क़तई हुक्म देकर फ़तवे को किसी नफ़्सानी (स्वार्थी) मक़सद का समर्थक नहीं बनाया जा सकता। "जो अपने ज़माने के हालात से वाक़िफ़ नहीं, वह जाहिल है।" (त) वल्लाहू तआला आलम। मसला ७३५: तहसील सिकंदरा राव, ज़िला अलीगढ़ से, सवालकर्ता मुहम्मद लतीफ़ क़र्क़ अमीन, १० रमज़ान १३३९ हिजरी। उलेमा-ए-दीन इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि किसी ग़ैर-सही-उल-नस्ल यानी किसी ज़ादे (नाजायज़ औलाद) के पीछे, जो हाफ़िज़-ए-क़ुरआन हो, नमाज़ पढ़ना और ख़ास तौर पर तरावीह अदा करना सही है या नहीं? बयान कीजिए सवाब पाइए। जवाब: यह मकरूह-ए-तंज़ीही है अगर वह पाक-साफ़ रहने और नमाज़ के मसाइल के इल्म में हाज़िरीन में सबसे बढ़ा हुआ न हो। वरना वही बेहतर है अगर उसमें इमामत की तमाम शर्तें मौजूद हों, जैसा कि दुर-ए-मुख़्तार वग़ैरह में है। (त) वल्लाहू तआला आलम। मसला ७३६: बरेली, कांकर टोला, पुरानी शहर पुलिस चौकी के पास से, सवालकर्ता अब्दुल ग़नी साहब, ७ रमज़ान १३३९ हिजरी। उलेमा-ए-दीन क्या फ़रमाते हैं कि किस शख़्स के पीछे नमाज़ पढ़ना जायज़ है और किसके पीछे नहीं, मज़ीद यह कि गाँव के..

1. अल-क़ुरआन ६३/१

2. अल-क़ुरआन ४७/१९ पृष्ठ ५८८/७३६

فتاوی رضویہ جلد ششم نہیں، واللہ تعالیٰ اعلم (۵) غیر مقلد کی امامت باطل ہے اور اس کے پیچھے نماز محض ناجائز، اور جب اس کا غیر مقلد ہونا ثابت و تحقیق ہے تو اس کا براہِ تقیہ اپنے آپ کو حنفی کہنا کچھ مفید نہیں۔ قال اللہ تعالیٰ إِذَا جَاءَكَ الْمُنَافِقُونَ قَالُوا نَشْهَدُ إِنَّكَ لَرَسُولُ اللَّهِ وَاللَّهُ يَعْلَمُ إِنَّكَ لَرَسُولُهُ وَاللَّهُ يَشْهَدُ إِنَّ الْمُنَافِقِينَ لَكَاذِبُونَ ۱ ۔ اللہ تعالیٰ نے فرمایا: جب منافق تمہارے حضور حاضر ہوتے ہیں تو کہتے ہیں کہ ہم گواہی دیتے ہیں بیشک حضور ضرور اللہ کے رسول ہیں، اور اللہ جانتا ہے کہ بیشک تم اس کے رسول ہو اور اللہ گواہی دیتا ہے کہ بیشک منافق ضرور جھوٹے ہیں۔ واللہ تعالیٰ اعلم (۶) استغفار کا حقدار ہر مسلمان ہے۔ قال اللہ تعالیٰ وَاسْتَغْفِرْ لِذَنبِكَ وَلِلْمُؤْمِنِينَ وَالْمُؤْمِنَاتِ ۲ ۔ اللہ تعالیٰ نے فرمایا: اور اے محبوب ! اپنے خاصوں اور عام مسلمان مردوں اور عورتوں کے گناہوں کی معافی مانگو۔(ت) اگر انھوں نے بیجا الزام لگایا ہے سخت گنہگار حق العبد میں گرفتار، نفاق ڈالنے کا جواب نمبر ۳ میں ہوچکا مجمل باتوں پر قطعی حکم دے کر فتویٰ کو کسی غرضِ نفسانی کا مؤید نہیں کرسکتے و من لم یعرف اھل زمانہ فھو جاھل (جو اپنے زمانے کے احوال سے واقف نہیں وہ جاہل ہے۔ ت) واللہ تعالیٰ اعلم مسئلہ ۷۳۵: از تحصیل سکندرہ راؤ ضلع علی گڑھ مسئولہ محمد لطیف قرق امین ۱۰ رمضان ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ کسی غیر صحیح النسل یعنی کسی زادہ کے پیچھے جو حافظ قرآن ہو نماز پڑھنا اور خاص کر تراویح ادا کرنا درست ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا الجواب: مکروہِ تنزیہی ہے اگر وہ سب حاضرین سے علمِ مسائلِ طہارت و صلاۃ میں زائد نہ ہو ، ورنہ وہی اولیٰ اگر جملہ شرائطِ امامت کا جامع ہو کما فی الدرالمختار وغیرہ (جیسا کہ درمختار وغیرہ میں ہے ت) واللہ تعالیٰ اعلم مسئلہ ۷۳۶: از بریلی کا نکر ٹولہ متصل چوکی پولیس پرانا شہر مسئولہ عبدالغنی صاحب ۷ رمضان ۱۳۳۹ھ کیا

فرماتے ہیں علمائے دین کہ کس شخص کے پیچھے نماز پڑھنا جائز ہے اور کس کس کے نہیں،

دیگر یہ کہ گاؤں کے

Fatawa-e-Razviya, Volume 6

Question: Is it permissible or not to pray behind an official (Karinda) who is currently working in that capacity? And you are well aware of how these officials manage their means of livelihood. Please clarify, and may you be rewarded.

The Answer: It is permissible, without any dislike (karahat), to pray behind every Sunni who has correct beliefs, correct recitation, correct purification, and who is not an open sinner (fasiq mu'lin), provided there is nothing in him that causes aversion among people or leads to a decrease in the congregation. As for village officials (karinday) whose embezzlement and illegal taking of money from tenants and others are well-known and public, making them imams is a sin, and praying behind them is prohibitively disliked (makruh tahrimi). Otherwise, being an official is not a sin in itself. And Allah Almighty knows best.

Problem 737: From the city, Mohalla Bagh Ahmad Ali Khan, asked by Niyaz Ali, 4 Rabi al-Akhir 1339 AH. What do the scholars of religion and muftis of the firm Sharia say regarding this matter: five people, despite a congregation being held in the mosque, do not join; after the large congregation ends, these five people pray separately or do not come to the mosque at all. They speak ill of the mosque's Imam who has been leading prayers for a long time and describes his belief as follows. What is the ruling for such people and how should they be treated? (The belief of the mosque's Imam is): "I follow the religion of the Ahl-e-Sunnat-o-Jama'at. This is my path, and I am a follower (muqallid) of Imam Abu Hanifa (may Allah have mercy on him). I believe in the oneness of Allah Almighty and consider the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) as the most superior of all creation after God, and I believe in the miracles of saints and elders of religion." If such an Imam goes to study in a Wahhabi school (as they are famously called nowadays), is his leadership (imamat) permissible or not?

The Answer: In the described situation, the leadership (imamat) of the mentioned Imam is undoubtedly correct and valid. When the Imam states he is a Hanafi and claims to hold beliefs according to the Ahl-e-Sunnat-o-Jama'at, and nothing contrary is proven from his words or actions, then merely studying at a Wahhabi school, or for that matter at any pathshala or school, can never be a detractor from the validity of his imamat. This is because Sharia rulings are based on the apparent; we are not commanded to split open hearts. Those individuals who separate themselves from the congregation, if they have a valid Sharia excuse, they will be excused. But if they

do not join the congregation merely out of prejudice and selfishness, they are sinners (fasiq), their testimony is rejected, and they deserve punishment. The people of the neighborhood should stop greeting and talking to them. The respondent, servant Muhammad Abdullah, may Allah be with him. Correct, Muhammad Munawar al-Ali, may he be forgiven. The answer is correct, Muhammad Wahid Noor, may he be pardoned.

The Answer: This fatwa is purely wrong. It has evaded the core discussion and quoted unrelated narrations which are absolutely futile.

फ़तावा-ए-रज़विया, जिल्द 6

प्रश्न: क्या उस कारिंदे (अधिकारी) के पीछे नमाज़ पढ़ना जायज़ है जो वर्तमान में कारिंदगी कर रहा हो? और हुज़ूर को अच्छी तरह मालूम होगा कि कारिंदा अपनी गुज़र-बसर के लिए किस तरह के साधन अपनाते हैं। स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिलेगा।

अल-जवाब (उत्तर): हर उस सुन्नी, जिसका अक़ीदा (विश्वास) सही हो, क़िरात (कुरान पाठ) सही हो, पवित्रता का तरीका सही हो, और जो खुल्लम-खुल्ला गुनहगार (फ़ासिफ़-ए-मुअ़लिन) न हो और जिसमें कोई ऐसी बात न हो जो लोगों के लिए नफरत का कारण बने या जमाअ़त (नमाज़ियों की संख्या) कम होने की वजह बने, उसके पीछे बिना किसी कराहत (नापसंदगी) के नमाज़ जायज़ है। गाँव के कारिंदे जिनका गबन और किसानों वगैरह से नाजायज़ पैसा लेना जगज़ाहिर हो, उन्हें इमाम बनाना गुनाह है और उनके पीछे नमाज़ मकरूह-ए-तहरीमी (कड़ी नापसंदगी) है, वर्ना कारिंदगी खुद कोई गुनाह नहीं है। और अल्लाह तआ़ला बेहतर जानता है।

मसाला 737: शहर, मोहल्ला बाग़ अहमद अली खान से, प्रेषक नियाज़ अली, 4 रबी-उल-आख़िर 1339 हिजरी। धर्म के विद्वान और मुफ्ती इस मामले में क्या फरमाते हैं कि पाँच आदमी मस्जिद में जमाअ़त होते हुए भी उसमें शामिल नहीं होते, बड़ी जमाअ़त खत्म होने के बाद ये पाँचों अलग जमाअ़त पढ़ते हैं या मस्जिद में पढ़ने आते ही नहीं। मस्जिद के इमाम, जो लंबे समय से इमामत कर रहे हैं और अपना अक़ीदा नीचे दिए अनुसार बताते हैं, वे उन इमाम को बुरा कहते हैं। ऐसे लोगों के लिए क्या हुक्म है और उनके साथ कैसा व्यवहार होना चाहिए? (इमाम का अक़ीदा यह है): "मैं अहल-ए-सुन्नत-व-जमाअ़त के मज़हब पर अमल करता हूँ। यही मेरा मज़हब है और मैं इमाम अबू हनीफ़ा (रहमतुल्लाह अलैहि) का मुक़ल्लिद (अनुयायी) हूँ। मैं अल्लाह अज़्ज़-व-जल्ल की तौहीद और रसालत-मआ़ब (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) को खुदा के बाद तमाम मखलूक़ से अफज़ल (श्रेष्ठ) मानता हूँ, और औलिया-ए-किराम व बुज़ुर्गान-ए-दीन की करामात का क़ायल हूँ।" क्या ऐसे इमाम का किसी वहाबी (जैसा कि आजकल मशहूर हैं) मदरसे में पढ़ने जाना उनकी इमामत को नाजायज़ बना देता है?

उत्तर: अल-जवाब (उत्तर): पूछी गई सूरत में, संबंधित इमाम की इमामत निस्संदेह सही और दुरुस्त है। जब इमाम खुद को हनफी बताता है और अहल-ए-सुन्नत-व-जमाअ़त के मुताबिक अक़ीदा रखने का दावा करता है, और उसके किसी बोल या काम से इसके खिलाफ कुछ साबित नहीं होता, तो

महज़ किसी वहाबी के मदरसे में पढ़ना या मान लीजिए किसी पाठशाला या स्कूल में शिक्षा प्राप्त करना इमामत की सेहत (वैधता) के लिए कतई बाधक नहीं हो सकता। क्योंकि शरीअ़त के फैसलों का आधार ज़ाहिर (दिखने वाली चीज़ों) पर है, हमें किसी के दिल चीरकर देखने का हुक्म नहीं है। वे लोग जो जमाअ़त से अलग रहते हैं, अगर उनके पास कोई धार्मिक कारण है तो वे क्षम्य होंगे, लेकिन अगर वे महज़ पक्षपात और स्वार्थ के कारण जमाअ़त में शामिल नहीं होते, तो वे फ़ासिफ़ हैं, उनकी गवाही खारिज है और वे सज़ा के पात्र हैं। मोहल्ले वालों को उनसे सलाम और बातचीत बंद कर देनी चाहिए। उत्तर देने वाला बंदा मुहम्मद अब्दुल्लाह, अल्लाह उनके साथ हो। सही है, मुहम्मद मुनव्वर अल-अली, अल्लाह उन्हें माफ़ करे। उत्तर सही है, मुहम्मद वाहिद नूर, अल्लाह उन्हें क्षमा करे।

अल-जवाब (उत्तर): यह फतवा सरासर गलत है। इसमें मुख्य मुद्दे को नज़रअंदाज़ किया गया है और असंबद्ध हदीसों या उल्लेखों को व्यर्थ में शामिल किया गया है।

पृष्ठ 589/736

فتاویٰ رضویہ، جلد ششم

سوال: کارندے کے پیچھے جو حال میں کارندگی کر رہا ہو نماز پڑھنا جائز ہے یا نہیں؟ اور حضور کو خوب روشن ہوگا کہ جس طرح کارندہ اپنی گزر اوقات کے ذرائع نکالتے ہیں۔ بینوا توجروا

الجواب: ہر سنی صحیح العقیدہ صحیح القراۃ صحیح الطہارۃ غیر فاسق معلن جس میں کوئی بات ایسی نہ ہو کہ لوگوں کے لئے باعث نفرت اور جماعت کے لئے وجہ قلت ہو اس کے پیچھے نماز بلا کراہت جائز ہے۔ گاؤں کے کارندے جن کا غبن اور اسامی وغیرہ ہم سے ناجائز پیسہ لینا ظاہر و معروف ہو ان کو امام بنانا گناہ ہے اور ان کے پیچھے نماز مکروہ تحریمی، ورنہ کارندگی خود کوئی گناہ نہیں۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۷۳۷: از شہر محلہ باغ احمد علی خاں مسئولہ نیاز علی ۴ ربیع الآخر ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ پانچ آدمی باوجود مسجد میں جماعت ہو رہی ہے شامل نہیں ہوتے، بعد ختم جماعت کثیر پانچوں آدمی علیحدہ جماعت پڑھتے ہیں یا مسجد میں پڑھنے آتے ہی نہیں۔ امام مسجد جو عرصہ سے امامت کر رہا ہے اور اپنا عقیدہ ذیل بیان کرتا ہے اس کو وہ برا کہتے ہیں ایسے کے لئے کیا حکم ہے اور ان کے ساتھ کیا برتاؤ ہونا چاہئے (عقیدہ پیش امام مسجد کا یہ ہے) "میں مذہب اہلسنت و جماعت پر عمل کرتا ہوں۔ میرا یہی مذہب ہے اور امام ابو حنیفہ رحمۃ اللہ علیہ کا مقلد ہوں، اللہ عزوجل کی توحید اور جناب رسالتمآب صلی اللہ علیہ وسلم کو بعدِ خدا کے تمام مخلوق سے افضل جانتا ہوں، کرامات اولیاء و بزرگگان دین کا قائل ہوں۔" ایسا امام اگر وہابی (جو فی زمانہ مشہور کر دئے گئے ہیں) کے مدرسہ میں پڑھنے کو چلا جائے اس کی امامت جائز ہے یا نہیں؟

الجواب: صورت مسئولہ میں پیش امام موصوف کی امامت بلاشبہ صحیح و درست ہے جب پیش امام اپنا حنفی ہونا بیان کرتا ہے اور عقیدہ مطابق اہلسنت و جماعت رکھنے کا مدعی ہے اور اس کے کسی قول و فعل سے اس کا خلاف ثابت نہیں ہوتا تو محض کسی وہابی کے مدرسہ میں پڑھنا یا بالفرض کسی پاٹ شالہ یا اسکول میں تعلیم حاصل کرنا ہرگز صحت امامت کے لئے قادح نہیں ہو سکتا کیونکہ احکامِ شرعیہ کا مدار ظاہر پر ہے ہم شق قلب پر مامور نہیں، وہ اشخاص جو مختلف عن الجماعت ہیں اگر کوئی عذر شرعی رکھتے ہوں تو معذور رہیں گے اور اگر محض عصبیت و نفسانیت کی جہت سے شریکِ جماعت نہیں ہوتے تو وہ فاسق مردود الشہادۃ قابل تعزیر ہیں اہل محلہ کو ان سے سلام و کلام ترک کر دینا چاہئے۔ العبد المجیب محمد عبد اللہ کان اللہ لہ۔ صحیح ہے محمد منور العلی غفرلہ۔ الجواب صحیح محمد واحد نور عفی عنہ۔

الجواب: یہ فتویٰ محض غلط ہے اس میں اصل بحث سے پہلو تہی کی گئی ہے اور بے علاقہ روایتیں محض فضول نقل کردیں۔

صفحہ 589 از 736

Fatawa-e-Razvia Volume 6

On this, there are signatures of those very people who themselves are of Deobandi thought or at least do not call Deobandis 'kafir' (infidels). They would naturally want to say so, even though the scholars of the two holy sanctuaries (Haramain Sharifain) have unanimously issued a fatwa that Gangohi, Nanotwi, Ambethwi, and Thanwi are all apostates (murtad). And with reference to Fatawa al-Bazzaziya, Majma' al-Anhur, and Durr al-Mukhtar, it has been written that anyone who doubts their disbelief is also an infidel. Claiming to follow the beliefs of the Ahl-e-Sunnat, or calling oneself a Hanafi, or professing belief in the oneness of God, prophethood, excellence, and miracles—which of these do the Wahhabis and Deobandis not affirm? Yet they are such infidels that anyone doubting their disbelief is also an infidel. In fact, even the Qadianis affirm these four things and call themselves followers of Imam Abu Hanifa; does that remove their disbelief? Sharia undoubtedly judges based on the apparent, and the apparent fact is that a person will not study the knowledge of religion from someone they know to be an infidel or apostate. Comparing it to a school or college is ignorance; does anyone go to pandits or priests to study the Great Quran, Hadith, and Fiqh? And even if, hypothetically, someone studying from a Wahhabi does not incline towards Wahhabi beliefs and considers them infidels and apostates, making them a teacher still involves showing them respect. The leaders of religion have said that anyone who addresses a Magian (fire-worshipper) as "O Teacher" out of respect becomes an infidel. In Fatawa-e-Zahiriyya, Al-Ashbah wa al-Naza'ir, Tanwir al-Absar, Minah al-Ghaffar, Durr al-Mukhtar, and others, it is stated: "ولو قال لمجوسی یا استاذ تبجیلاً کفر" (If someone addresses a Magian as 'O Teacher' for glorification, he becomes an infidel. T: If someone calls a Magian 'O Teacher' out of respect, he will become an infidel). When this is the ruling for just saying "O Teacher" out of respect, then what would be the state of actually making an apostate one's teacher and performing various types of veneration? Undoubtedly, such a person is not worthy of being made an Imam. One who has the greatness of religion in their heart will never make him an Imam nor pray behind him. Yes, someone who considers religion a game or amusement may do as they please. May Allah Almighty guide Muslims so they do not waste their prayers. We provide an easy way to identify them: ask those whose signatures are on this fatwa, "The Wahhabis whom all the scholars of the two holy sanctuaries have named as infidels and apostates in 'Husam al-Haramayn' and stated that whoever doubts their disbelief is also an infidel—do you also call them infidels and apostates?" See, they will never say so. Thus, it becomes clear that they

too are accomplices. So how can taking a fatwa from them be lawful, and under which Sharia is acting upon it permissible? And Allah Almighty knows best.

Problem No. 387: From Balbisak, asked by Qazi Muhammad Saleem, 27 Jamadi-ul-Ukhra 1339 AH. If a Hanafi Imam joins a wedding procession (Barat) and feast (Walima) in which there is a Qadiani (Mirzai) and a person who performed the marriage ceremony of his son with a woman who had been given three divorces six years ago and the marriage was performed without 'halala' (remarriage after an intervening marriage). Is prayer valid behind such an Imam or not? The summary is that an Imam who is knowledgeable and of the Hanafi faith, if he joins such a Barat or Walima...

---

1 Durr al-Mukhtar, Kitab al-Hazr wa al-Ibahah, Section on Sale, printed at Mujtabai Delhi, 2/251. Page 590 of 736

इस पर उन्हीं लोगों के दस्तखत हैं जो खुद देवबंदी ख्याल के हैं या कम से कम देवबंदियों को काफ़िर नहीं कहते, वे तो ऐसा कहना ही चाहेंगे हालाँकि हरमैन शरीफ़ैन के उलमा मुत्तफ़िका तौर पर फतवा दे चुके हैं कि गंगोही, नानोतवी, अंबेतवी और थानवी सब मुर्तद (धर्मत्यागी) हैं और बज़ाज़िया, मज्मउल अनहर और दुर्रे मुख्तार के हवाले से तहरीर फ़रमाया है कि जो उनके कुफ़्र (अधर्म) में शक करे वह भी काफ़िर है। अहले सुन्नत के अक़ायदे का दावा करना या अपने आप को हनफ़ी कहना या तौहीद, रिसालत, फ़ज़ीलत और करामत का मानने वाला बताना, इनमें से कौन सी बात का वहाबिया और देवबंदिया इकरार नहीं करते? फिर भी वे ऐसे काफ़िर हैं कि जो उनके कुफ़्र में शक करे वह भी काफ़िर है, बल्कि इन चारों बातों के मानने वाले क़ादियानी तक हैं और अपने आप को इमाम अबू हनीफ़ा का मुक़ल्लिद भी कहते हैं, क्या इससे उनका कुफ़्र खत्म हो गया? शरीअत बेशक ज़ाहिर (प्रकट) पर हुक्म फ़रमाती है और ज़ाहिर यही है कि आदमी जिसे काफ़िर और मुर्तद जानेगा उससे दीनी इल्म नहीं पढ़ेगा, पाठशाला और स्कूल की मिसाल जहालत (अज्ञानता) है; क्या कोई पंडितों या पादरियों से क़ुरआन अज़ीम, हदीस और फ़िक़्ह पढ़ने जाता है? और फ़र्ज़ कर लें अगर वहाबी से पढ़ने वाला वहाबी अक़ायदे की तरफ़ मायल (झुका हुआ) न भी हो और उन्हें काफ़िर व मुर्तद समझता हो, तब भी उन्हें उस्ताद बनाना उनकी ताज़ीम (सम्मान) करना है, और आइम्मा-ए-दीन ने फ़रमाया कि जो किसी मजूसी (अग्निपूजक) को ताज़ीमन (सम्मानपूर्वक) "या उस्ताद" कहे वह काफ़िर हो जाता है, फ़तावा ज़हीरिया, अश्बाह वन-नज़ायर, तनवीरुल अबसार, मिनहुल ग़फ़्फ़ार और दुर्रे मुख्तार वगैरह में है: "वलौ काला लि-मजूसी-यिन या उस्तादुन तब्जीलन कफ़रा" (अगर किसी ने मजूसी को सम्मानवश "या उस्ताद" कहा तो काफ़िर हो जाएगा। त)। जब सिर्फ़ ताज़ीमन "या उस्ताद" कहने पर यह हुक्म है तो असल में मुर्तद को उस्ताद बनाना और विभिन्न प्रकार की ताज़ीम बजा लाना कैसा होगा? निःसंदेह ऐसा व्यक्ति इमाम बनाने के योग्य नहीं है, जिसके दिल में दीन की अज़मत (महिमा) है वह हरगिज़ उसे इमाम नहीं बनाएगा और न उसके पीछे नमाज़ पढ़ेगा। हाँ, जो व्यक्ति दीन को हँसी-खेल समझे वह जो चाहे करे। अल्लाह तआला मुसलमानों को हिदायत दे कि अपनी नमाज़ें बर्बाद न करें। हम इसकी एक आसान पहचान बता देते हैं: इस फतवे में जिन-जिन लोगों के दस्तखत हैं उनसे सवाल करो कि "हुसामुल हरमैन शरीफ़" में हरमैन शरीफ़ैन के तमाम उलमा ने जिन-जिन वहाबियों को नाम-ब-नाम काफ़िर और मुर्तद लिखा है और फ़रमाया है कि जो उनके कुफ़्र में शक करे वह भी काफ़िर है, क्या तुम लोग भी उन्हें काफ़िर और मुर्तद कहते हो?

देखो, वे हरगिज़ नहीं कहेंगे, तो साफ़ मालूम हुआ कि ये भी उन्हीं के सहायक हैं, तो उनसे फतवा लेना किस तरह हलाल हुआ और इस पर अमल करना किस शरीअत ने जायज़ किया? वल्लाहु तआला अअलम (अल्लाह सबसे बेहतर जानता है)।

मसला नम्बर 387: अज़ बालबिस्क, मस्ऊला काज़ी मोहम्मद सलीम, 27 जमादी-उल-उख़रा 1339 हिजरी। अगर हनफ़ी मज़हब का इमाम उस बरात और वलीमे में शामिल हो जिसमें मिर्ज़ाई (क़ादियानी) हो और वह व्यक्ति हो जिसने अपने लड़के का निकाह उस औरत से पढ़ा दिया जिसे छह साल पहले तीन तलाक़ें दी जा चुकी थीं और बिना हलाला के निकाह पढ़ा दिया गया हो, ऐसे इमाम के पीछे नमाज़ जायज़ है या नहीं? खुलासा यह कि जो इमाम इल्म वाला और हनफ़ी मज़हब का हो और ऐसी बरात या वलीमे में शामिल हो...

---

1 दुर्रे मुख्तार, किताबुल हज़्र वल इबाहत, फ़स्ल फ़िल बै, मतबुआ मुज्तबाई देहली, 2/251। पेज 590/736

اس پر انہی لوگوں کے دستخط ہیں جو خود دیوبندی خیال کے ہیں یا کم از کم دیوبندیوں کو کافر نہیں کہتے وہ تو ایسا کہا ہی چاہیں حالانکہ علمائے حرمین شریفین بالاتفاق فتوی دے چکے کہ گنگوہی و نانوتوی و انبیٹھوی و تھانوی سب مرتد ہیں اور بحوالہ بزازیہ و مجمع الانہر ودرمختار تحریر فرمایا ہے کہ جو ان کے کفر میں شک کرے وہ بھی کافر ہے۔ عقائد اہلسنت کا مدعی ہونا یا اپنے آپ کو حنفی کہنا یا توحید و رسالت و فضیلت و کرامت کا اپنے آپ کو قائل بتانا، ان میں سے کون سی بات کا وہابیہ و دیوبندیہ اقرار نہیں کرتے اور پھر کافر ہیں ایسے کہ جوان کے کفر میں شک کرے وہ بھی کاف، بلکہ چاروں باتوں کے مقر قادیانی تک ہیں اور اپنے آپ کو مقلد امام ابو حنیفہ بھی کہتے ہیں کیا اس سے ان کا کفر اٹھ گیا۔ شریعت بیشک ظاہر پر حکم فرماتی ہے اور ظاہر یہی ہے کہ آدمی جسے کافر مرتد جا نے گا اس سے علم دین نہ پڑھے گا، پاٹ شالہ اور اسکول کی مثال جہالت ہے، کیا کوئی پنڈتوں، پادریوں سے قرآن عظیم و حدیث و فقہ پڑھنے جاتا ہے اور بفرض غلط اگر وہابیہ سے پڑھنے والا عقائد وہابیہ کی طرف مائل نہ بھی ہو اور انہیں کافر مرتد جانتا ہو جب بھی انہیں استاد بنانا ان کی تعظیم کرنا ہے، اور ائمہ دین نے فرمایا جو کسی مجوسی کو تعظیماً "یا استاذ" کہے وہ کافر ہوجاتا ہے، فتاوی ظہیریہ واشباہ والنظائر و تنویر الابصار ومنح الغفار و درمختار و غیرہا میں ہے: ولو قال لمجوسی یا استاذ تبجیلا کفر (اگر کسی نے مجوسی کو تعظیماً "یا استاذ" کہا تو کافر ہو جائیگا۔ ت) جب صرف تعظیماً "یا استاذ" کہنے پر یہ حکم ہے تو مرتد حقیقۃً استاذ بنانا اور اقسام تعظیم بجالانا کیسا ہو گا بلاشبہ ایسا شخص امام بنانے کے قابل نہیں جس کے دل میں دین کی عظمت ہے ہرگز اسے امام نہ بنائے گا نہ اس کے پیچھے نماز پڑھے گا، ہاں جو شخص دین کو ہنسی کھیل سمجھے وہ جو چاہے کرے، اللہ تعالیٰ مسلمانوں

کو ہدایت دے کہ اپنی نمازیں برباد نہ کریں، ہم اس کی ایک آسان پہچان بتادیتے ہیں اس فتویٰ میں جن جن لوگوں کے دستخط ہیں ان سے سوال کرو کہ "حسام الحرمین شریف" میں تمام علمائے حرمین شریفین نے جن جن وہابیوں کو نام بنام کافر و مرتد لکھا ہے اور فرمایا ہے جو ان کے کفر میں شک کرے وہ بھی کافر، آیا تم لوگ بھی انہیں کافر و مرتد کہتے ہو، دیکھو ہر گز نہ کہیں گے، تو صاف معلوم ہوا کہ یہ بھی متمم ہیں تو ان سے فتوی لینا کس طرح حلال ہوا اور اس پر عمل کون سی شریعت نے جائز کیا۔ واللہ تعالیٰ اعلم مسئلہ نمبر ۳۸۷: از بالبسک مسئولہ قاضی محمد سلیم ۲۷ جمادی الاخریٰ ۱۳۳۹ھ اگر حنفی مذہب کا امام اس برات اور ولیمہ میں شامل ہو جس میں مرزائی اور وہ شخص ہو جس نے کہ اپنے لڑکے کا نکاح اس عورت سے پڑھا لیا جس کو طلاق ثلاثہ چھ سال دی رکھی اور بغیر حلالہ کے نکاح پڑھا لیا ہو ایسے امام کے پیچھے نماز درست ہے یا نہیں؟ خلاصہ یہ کہ جو امام علم والا حنفی مذہب کا اس برات یا ولیمہ میں شامل

---

1 در مختار، کتاب الحظر والاباحۃ فصل فی البیع مطبوعہ مجتبائی دہلی ۲۵۱/۲ Page 590 of 736

Fatawa Razawiya Volume 6

...[is it permissible to join a gathering] in which Mirza'is (Qadianis) etc. are participants, is the prayer behind him valid or not? Is there any punishment etc. for him? And the person in whose house the wedding is taking place also considers these accursed Mirza'is to be good Muslims in his beliefs. That is all.

The Answer: Just the fact that he participated in a wedding procession (Barat) or a wedding feast (Walima) in which there was a Qadiani apostate (murtad) - who committed a transgression by marrying a woman divorced three times without *halala* - does not make his leading of prayers (Imamat) impermissible. However, if the homeowner considers Mirza'is to be Muslims, then he himself is an apostate and attending a function at his place is prohibited (haram). If the Imam knew this and still participated, and if this was because the Imam himself does not consider Mirza'is to be disbelievers (kafir), then he himself is a disbeliever and the prayer behind him is void (batil). If he participated while knowing them to be disbelievers, then he has committed a sin and should be asked to repent (tawba). If he refuses to repent or has participated in such events repeatedly, then it is a sin to make him an Imam; he should be removed from the position of leadership. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 739: From Nagpur, Central Provinces, Mahalla Ganja Ka Khet, asked by Chand Miyan Lal Muhammad Saudagar, 7 Ramadan 1339 AH.

What do the scholars of religion say about a person whose profession is to put bangles on women? He was made an Imam. Someone objected that following him is impermissible due to his profession of putting on bangles and the Imamat is *Makruh Tahrimi* (highly undesirable). The objector himself practices medicine; will the same objection apply to him due to feeling the pulse and touching other parts of women? A large portion of the congregation is satisfied with following this Imam. Does any Sharia-based detriment remain or not? Clarify and be rewarded.

The Answer: The satisfaction or dissatisfaction of the congregation is considered only when there is no Sharia-based detriment. Where there is a lack of Sharia-based permissibility, what use can the satisfaction of the followers be? Undoubtedly, putting bangles on non-mahram (stranger) women, looking at their wrists, or touching their hands is prohibited (haram). A person whose profession is this is an open transgressor (*fasiq mu'lin*). Making him an Imam is a sin, and the prayer behind him is *Makruh Tahrimi*, such that performing it is a sin and repeating it is mandatory. Comparing a physician to him is incorrect. A physician checks the pulse out of

necessity, and under such necessity and need, touching other body parts is also permissible. As for him having corrupt intentions, that is certainly prohibited for him, but only Allah Almighty knows that. Yes, if he practices touching and looking without necessity, then he too is a transgressor and deserves the same objection. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 740: From Bhandara, Mahalla Kham Talab, asked by Najmuddin, Reader to Deputy Collector, 19 Ramadan 1339 AH.

What do the scholars of religion say about a Hafiz who is the Imam of the five daily prayers and Friday prayers, whose physical condition due to illness is as follows: Is prayer valid behind him or not? (1) While going for prostration (Sajda) in every prayer, upon bending half or less than half, the Imam says "Allahu Akbar"...

...जिसमें मिर्ज़ाई आदि कार्यकर्ता हों, उसके पीछे नमाज़ सही है या नहीं? क्या उसके लिए कोई सज़ा (ताज़ीर) आदि है? और जिसके घर शादी हो, वह भी अपने अक़ीदे में इन शापित मिर्ज़ाइयों को अच्छा मुसलमान समझता है। बस।

उत्तर: केवल इतनी सी बात कि जिस बारात या वलीमे में वह शरीक हुआ, उसमें कोई क़ादियानी मुर्तद (धर्मत्यागी) भी था - जो हलाला के बिना तीन तलाक़ वाली महिला से निकाह करने वाला फ़ासिक़ था - इससे उसकी इमामत नाजायज़ नहीं हो गई। हाँ, अगर घर का मालिक मिर्ज़ाइयों को मुसलमान समझता है, तो वह स्वयं ही मुर्तद है और उसके यहाँ समारोह में जाना हराम है। अगर इमाम जानता था और फिर भी इसमें शरीक हुआ, और अगर यह इस आधार पर हुआ कि इमाम स्वयं भी मिर्ज़ाई को काफ़िर नहीं समझता, तो वह स्वयं ही काफ़िर है और उसके पीछे नमाज़ बातिल (अमान्य) है। और अगर उन्हें काफ़िर जानकर ही शरीक हुआ, तो वह गुनहगार हुआ और उससे तौबा कराई जाए। अगर वह तौबा करने से इनकार करे या बार-बार ऐसी शिरकत कर चुका हो, तो उसे इमाम बनाना गुनाह है; उसे इमामत से हटा दिया जाए। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 739: नागपुर, मध्य प्रांत, मोहल्ला गांजा का खेत से, प्रार्थी चाँद मियाँ लाल मोहम्मद सौदागर, 7 रमज़ान 1339 हिजरी।

धर्म के विद्वान क्या कहते हैं कि एक व्यक्ति जो चूड़ियाँ पहनाने का पेशा करता है, उसे इमाम बनाया गया। एक साहब ने आपत्ति की कि चूड़ियाँ पहनाने के कारण उनका अनुसरण करना नाजायज़ है और इमामत मकरूह-ए-तहरीमी (अत्यंत नापसंद) है। स्वयं आपत्ति करने वाले व्यक्ति हकीमी (चिकित्सा) का पेशा करते हैं; क्या नब्ज़ देखने और महिलाओं के अन्य अंगों को छूने के कारण वही आपत्ति उन पर भी लागू होगी या नहीं? जमात का एक बड़ा हिस्सा इस इमाम का अनुसरण करने पर सहमत है, तो क्या कोई शरीअत संबंधी नुक़सान रहता है या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: जमात की रज़ा (सहमति) या असहमति को उस समय देखा जाता है जब शरीअत संबंधी कोई नुक़सान न हो। जहाँ शरीअत के अनुसार अनुमति नहीं है, वहाँ मुक़्तदियों (अनुयायियों) की सहमति क्या काम दे सकती है? निःसंदेह ग़ैर-महरम महिलाओं को चूड़ियाँ पहनाना, उनकी कलाई देखना या उनके हाथ को छूना हराम है। और जिसका यह पेशा हो, वह 'फ़ासिक़-ए-मुअ्लिन' (खुला उल्लंघन करने वाला) है। उसे इमाम बनाना गुनाह है और उसके पीछे नमाज़ मकरूह-ए-तहरीमी है, जिसका

पढ़ना गुनाह है और उसे दोहराना वाजिब (अनिवार्य) है। हकीम की तुलना उससे करना सही नहीं है। हकीम का नब्ज़ देखना ज़रूरत के लिए है, और ऐसी ज़रूरत में शरीर के अन्य अंगों को छूना भी जायज़ है। रही बात उसकी नीयत ख़राब होने की, तो वह निश्चित रूप से उसके लिए हराम है, लेकिन उसका ज्ञान केवल अल्लाह अज़्ज़वजल को है। हाँ, अगर वह बिना ज़रूरत छूना और देखना जायज़ समझता हो, तो वह भी फ़ासिक़ है और उसी आपत्ति का पात्र है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 740: भंडारा, मोहल्ला खम तालाब से, प्रार्थी नजमुद्दीन, रीडर डिप्टी कलेक्टर, 19 रमज़ान 1339 हिजरी।

धर्म के विद्वान क्या कहते हैं कि एक हाफ़िज़ साहब जो पाँच वक्त की नमाज़ और जुमा के इमाम हैं, जिनकी शारीरिक स्थिति बीमारी के कारण इस प्रकार है: क्या उनके पीछे नमाज़ होती है या नहीं? (1) पेश इमाम साहब हर नमाज़ में सजदा जाते समय आधा या आधे से कम झुक जाने पर "अल्लाहु अकबर" कहते हैं...

ہو جائے جس میں کہ مرزائی وغیرہ کارکن ہوں اس کے پیچھے نماز درست ہے یا نہیں، آیا اس کے لئے کوئی تعزیر وغیرہ ہے اور جس کے گھر شادی ہو وہ بھی اپنے عقائد کا پورا لعین مرزائیوں کو اچھا مسلمان سمجھتا ہے۔ فقط

الجواب: فقط اتنی بات کہ جس برات یا ولیمہ میں یہ شریک ہوا اس میں قادیانی مرتد اپنی تین طلاق کی مطلقہ سے بے حلالہ نکاح کرنے والا فاسق بھی تھا ایسا نہیں کہ اس نے اس کی امامت ناجائز کر دی، ہاں اگر صاحب خانہ مرزائیوں کو مسلمان جانتا ہو تو وہ خود ہی مرتد ہے اور اس کے یہاں تقریب میں جانا حرام، اگر امام جانتا تھا اور پھر اس کا مرتکب ہوا تو یہ اگر اس بنا پر ہوا کہ امام خود بھی مرزائی کو کافر نہیں جانتا تو وہ آپ ہی کافر ہے اور اس کے پیچھے نماز باطل، اور اگر اس کو کافر جان کر ہی شریک ہوا تو گنہگار ہوا اور اس سے توبہ لی جائے، اگر توبہ سے انکار کرے یا بارہا ایسی شرکت کر چکا ہو تو اسے امام بنانا گناہ ہے، امامت سے معزول کیا جائے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۷۳۹: از ناگپور ممالک متوسط محلہ گانجہ کا کھیت، مسئولہ چاند میاں لعل محمد سودا گر ۷ رمضان ۱۳۳۹ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین کہ ایک شخص جو چوڑی پہنانے کا پیشہ کرتے ہیں ان کو امام بنایا، ایک صاحب نے اعتراض کیا کہ ان کی اقتدا بوجہ چوڑی پہنانے کے ناجائز اور امامت مکروہ تحریمی ہے اور خود معترض پیشہ طبابت کرتے ہیں، بوجہ نباضی و مس دیگر اعضاء مستورات

وہی اعتراض اس پر واقع ہوگا یا نہیں، بہت زیادہ حصہ جماعت کا اس امام کی اقتداء پر رضامند ہے تو کوئی نقصان شرعی قائم رہتا ہے یا نہیں؟ بینوا وجروا۔

الجواب: جماعت کی رضا عدم رضا کو اس وقت دیکھا جاتا ہے جب شرعی نقصان نہ ہو، جہاں شرعی عدم جواز ہے مقتدیوں کی رضا کیا کام دے سکتی ہے، بلاشبہ اجنبیات کو چوڑی پہنانا ان کی کلائی کا دیکھنا یا ہاتھ کا مس کرنا حرام ہے اور اس کا پیشہ رکھنے والا فاسق معلن، اور اسے امام بنانا گناہ اور اسے کے پیچھے نماز مکروہ تحریمی کہ پڑھنی گناہ اور پھیرنی واجب، اور طبیب کا اس پر قیاس صحیح نہیں، طبیب کا نبض دیکھنا حاجت کے لئے ہے اور ایسی حاجت و ضرورت کہ دیگر اعضاء مس بھی جائز ہے، رہا یہ کہ وہ نیت فاسدہ کرے یہ ضرور اسے حرام ہے مگر اس کا علم اللہ عزوجل کو ہے، ہاں بلا حاجت مس و نظر جائز کرتا ہو تو وہ بھی فاسق ہے اور اسی اعتراض کا مستحق ۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۷۴۰: از بھنڈارا محلہ کھم تالاب مسئولہ نجم الدین ریڈر ڈپٹی کلکٹر ۱۹ رمضان ۱۳۳۹ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین کہ ایک حافظ نماز پنجگانہ و جمعہ کے امام ہیں جن کی جسمی حالت بسبب مرض حسب ذیل ہے، آیا ان کے پیچھے نماز ہوتی ہے یا نہیں؟ (۱) پیش امام صاحب ہر نماز میں سجدہ جاتے وقت نصف یا نصف سے کم جھک جانے پر اللہ اکبر کی

Fatawa-e-Razviya, Volume 6

(1) [The Imam] begins the Takbir, and when rising from prostration or going into it, he starts 'Allahu Akbar' after having risen halfway or more. He does this so that the followers (Muqtadis) do not precede him in rising from or going into prostration.

(2) According to the Hanafi school of thought, while keeping hands on both knees, he absolutely cannot place his knees on the ground first and then his hands etc. for prostration, and similarly, he cannot stand up in that manner either.

(3) While going into prostration, he suddenly stretches out and places both hands on the ground and levels his feet, and similarly while rising from prostration, he rises in a stretched-out manner because both of his feet have become disabled due to illness.

(4) The left foot is mostly disabled below the knee, therefore he faces difficulty in spreading the foot in every sitting (Jalsa). Most of the time, he lifts and spreads the foot with his hand before sitting, or on some occasions, he performs the second prostration after sitting in a manner like the sitting of a camel.

(5) During recitation (Qira'at), he gets out of breath and repeatedly exhales through his mouth, leading to misplaced pauses. Is prayer valid behind such an Imam or not? Give a ruling and be rewarded.

The Answer: None of these five points mentioned in the question are obstacles to the validity of the prayer, nor do they involve 'excessive movement' (fi'l-e-kathir); this is merely a wrong assumption. None of them involve the omission of a mandatory act (Wajib) except for that part of the fourth scenario where sometimes he does not sit upright between the two prostrations. Only this case constitutes omission of a Wajib, and he should be prevented from it. If he is superior in knowledge and piety, then let him continue the leadership (Imamat). Yes, if he has no inherent right and others more deserving than him are present, then it is better for the one who is more deserving to lead.

In a Hadith from the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him):

"Make your leaders (Imams) from the best among you, for they are your delegation

The blessed saying of the Noble Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) is:

"Make Imams from those who are better than you, because they are

In a Hadith from the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him):	The blessed saying of the Noble Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) is:
(representatives) between you and your Lord." 1. And Allah Almighty knows best.	representatives between you and your Lord." (T)

And he should begin the 'Allahu Akbar' when starting to go into prostration or rising from it, and finish it at the end of the transition. The consideration he shows for the followers is contrary to the intent of the Shari'ah. It is stated in the Hadith: "The Imam is only appointed to be followed." 2 (Imam)

---

1 Sunan al-Daraqutni, Chapter on shortening the recitation and need, published by Nashr-us-Sunnah Multan, 2/88. 2 Sahih al-Bukhari, Chapter on prayer on roofs etc., published by Qadimi Kutub Khana Karachi, 1/55.

फ़तावा-ए-रज़विया, छठा खंड

(1) [इमाम] तकबीर शुरू करते हैं, और सिजदे से उठते समय या उसमें जाते समय आधा या उससे अधिक उठ जाने पर 'अल्लाहू अकबर' कहना शुरू करते हैं। वे ऐसा इसलिए करते हैं ताकि मुक्तदी (पीछे नमाज़ पढ़ने वाले) उनसे पहले सिजदे से उठने या सिजदे में जाने न पाएं।

(2) हनफी मत के अनुसार, दोनों घुटनों पर हाथ रखते हुए, वे सिजदे के लिए पहले जमीन पर घुटने और उसके बाद हाथ आदि बिल्कुल नहीं रख सकते और इसी तरह वे खड़े भी नहीं हो सकते।

(3) सिजदे में जाते समय वे अचानक लंबे होकर दोनों हाथ जमीन पर रखते हैं और पैरों को बराबर करते हैं, और इसी तरह सिजदे से उठते समय भी लंबे होकर उठते हैं क्योंकि उनके दोनों पैर बीमारी के कारण बेकार हो गए हैं।

(4) बाएं पैर का घुटना नीचे से ज्यादातर बेकार है, इसलिए हर जलसे में पैर बिछाने में उन्हें कठिनाई होती है। अक्सर वे हाथ से पैर उठाकर बिछाते हैं तब बैठते हैं, या कुछ अवसरों पर ऊंट की बैठक की तरह बैठकर दूसरा सिजदा कर लेते हैं।

(5) क़िरअत के दौरान उनकी सांस फूलती है और वे बार-बार मुंह से सांस छोड़ते हैं, जिससे बेमौका रुकना (वक्फ) हो जाता है। क्या ऐसे इमाम के पीछे नमाज़ हो जाती है या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: प्रश्न में लिखी ये पाँचों बातें नमाज़ की वैधता में बाधक नहीं हैं, और न ही इनमें कहीं 'फ़ेल-ए-कसीर' (अत्यधिक हलचल) है; यह केवल एक गलत धारणा है। इनमें कहीं भी वाजिब (अनिवार्य कार्य) को छोड़ना शामिल नहीं है, सिवाय चौथी स्थिति के उस हिस्से के जहाँ कभी-कभी दो सिजदों के बीच सीधे नहीं बैठा जाता। केवल यही स्थिति वाजिब छोड़ने की है और इसके लिए उन्हें रोका जाना चाहिए। यदि वे ही ज्ञान और धर्मपरायणता में श्रेष्ठ हैं, तो उन्हीं को इमाम रहने दें। हाँ, यदि उनका कोई विशेष अधिकार नहीं है और दूसरे उनसे अधिक योग्य मौजूद हैं, तो जो अधिक योग्य है, वही इमामत के लिए बेहतर है।

नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की एक हदीस में है:

"अपने इमामों को अपने में से सबसे अच्छे लोगों को बनाओ, क्योंकि वे तुम्हारे और तुम्हारे रब के बीच प्रतिनिधि होते हैं।" 1. और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है।

नबी-ए-करीम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का मुबारक इरशाद है:

"अपने में से बेहतर लोगों को इमाम बनाओ क्योंकि वे तुम्हारे और तुम्हारे रब के बीच प्रतिनिधि होते हैं।" (त)

और उसे चाहिए कि सिजदे में जाते या सिजदे से उठते समय 'अल्लाहू अकबर' शुरू करे और स्थिति परिवर्तन के अंत पर इसे समाप्त करे। मुक्तदियों का ख्याल रखते हुए जो वह करता है, वह शरीयत के उद्देश्य के विपरीत है। हदीस में फरमाया गया है: "इमाम केवल इसलिए बनाया गया है ताकि उसका अनुसरण किया जाए।" 2 (इमाम)

---

1 सुनन अल-दाराकुतनी, आवश्यकता और क़िरअत को छोटा करने का अध्याय, नश्र-उस-सुन्नत मुल्तान द्वारा प्रकाशित, 2/88. 2 सहीह अल-बखारी, छतों पर नमाज़ आदि का अध्याय, कदीमी कुतुब खाना कराची द्वारा प्रकाशित, 1/55.

فتاوی رضویہ جلد ششم

ابتدا کیا کرتے ہیں اور سجدہ سے اٹھتے وقت نصف یا زائد اُٹھجانے پر اللہ اکبر کی ابتداء کیا کرتے ہیں یہ اس لئے کرتے ہیں کہ مقتدی ان سے پہلے سجدے سے اٹھنے یا سجدے میں جانے نہ پائیں۔ (۲) بقاعدہ مذہب حنفی دونوں زانوں پر ہاتھ رکھتے ہوئے پہلے زمین پر گھٹنے بعد ازاں ہاتھ وغیرہ سجدے کے لئے مطلق نہیں رکھ سکتے اور اسی طرح کھڑے بھی نہیں ہو سکتے۔ (۳) سجدہ میں جاتے وقت ایک دم لمبے ہو کر دونوں ہاتھ زمین پر رکھتے ہیں اور پیروں کو برابر کیا کرتے اور اسی طرح سجدے سے اٹھتے وقت بھی لمبا ہو کر اٹھا کرتے ہیں کیونکہ ان کے دونوں پیر مرض سے بیکار ہو گئے ہیں۔ (۴) بایاں پیر گھٹنے کے نیچے زیادہ تر بیکار ہے اس لئے ہر جلسہ میں پیر بچھانے کے لئے انہیں دقت ہوتی ہے اکثر ہاتھ سے پیر اٹھا کر بچھاتے ہیں تب بیٹھتے ہیں یا بعض موقع پر اونٹ کی بیٹھک کی مانند بیٹھ کر دوسرا سجدہ کر لیتے ہیں۔ (۵) قرات میں دم پھولتا ہے دم بدم منہ سے سانس خارج کرتے ہیں بے محل وقف ہو جایا کرتا ہے، ایسے امام کے پیچھے نماز ہو جاتی ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا الجواب: یہ پانچوں باتیں کہ سوال میں لکھی ان میں سے کوئی مانع صحت نماز نہیں، نہ ان میں کہیں فعل کثیر ہے، یہ محض گمان غلط ہے، ان میں کہیں ترک واجب بھی نہیں سوائے صورتِ چہارم کی اس شق کے کہ بعض وقت دو سجدوں کے درمیان سیدھے نہیں بیٹھتے صرف یہ صورت ترکِ واجب کی ہے اس سے اسے ممانعت کی جائے، اگر وہی علم و تقویٰ میں زائد ہے تو اسی کی امامت رکھیں، ہاں اگر اسی کا کوئی استحقاق نہیں اور دوسرے اس سے احق موجود ہیں تو جو احق ہے اُسی کی امامت اولیٰ ہے۔

ففی الحدیث عن النبی صلی اللہ تعالٰی نبی اکرم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کا ارشادِ مبارک ہے:

علیہ وسلم اپنے

اجعلو ائمتکم خیارکم فانھم وفد کم فیما امام اپنے سے بہتر لوگوں کو بناؤ کیونکہ وہ تمہارے اور بینکم و بین ربکم 1۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔ تمہارے رب کے درمیان نمائندہ ہوتے ہیں (ت)

اور اسے چاہئے کہ سجدہ کو جاتے یا سجدہ سے اٹھتے وقت اللہ اکبر کی ابتداء کرے اور ختمِ انتقال پر ختم کرے مقتدیوں کی رعایت جو وہ کرتا ہے عکسِ مقصودِ شرع ہے: حدیث میں فرمایا: انما جعل الامام لیو تم بہ 2 (امام)

---

1 سنن الدار قطنی، ب تخفیف القراءۃ و الحاجۃ، مطبوعہ نشر السنۃ ملتان، ۸۸/۲ 2 صحیح البخاری باب الصلوۃ فی السطوح الخ مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۵۵/۱

Fatawa Razawiyyah Volume 6 ...therefore he is made [an Imam] so that he may be followed. (T) The point is that if he doesn't do so, the followers (muqtadis) will prostrate before him. This must be considered by the followers. When it takes him time to reach prostration, they should wait and bend for prostration at such a time that they reach prostration along with him. *Bi dhalika amara al-Nabiyyu Sallallahu Ta'ala Alayhi wa Sallam ashabahu Radiya Allahu Ta'ala Anhum* (The Holy Prophet, peace and blessings of Allah be upon him, gave this same command to his companions, may Allah be pleased with them. T). And Allah knows best. Question No. 741: From Howrah Post Office, Salkhia Ghari Mohalla, Bhote Bagan, Asghar Chai Wale ka Bara, asked by Sheikh Saman, 23 Ramadan 1339 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: Is prayer permissible behind those who call the scholars of the Two Holy Sanctuaries (Haramain Tayyibain) innovators (Bid'ati)? Please explain and be rewarded.

The Answer: Generally, only a Wahhabi will call the scholars of the Two Holy Sanctuaries innovators, and prayer behind a Wahhabi is absolutely void. And Allah knows best. Question No. 742: From Shams al-Mutale' Printing Press, Farrukhnagar District, Gurgaon, asked by Hakim Shamsuddin, owner of the press, 28 Ramadan 1339 AH. What do the scholars of religion say in this matter: Is the leadership (Imamat) of a person who does the following things permissible or not, and what is the ruling regarding him? Despite not knowing the Holy Quran by heart, he starts reciting from various parts of the Quran during the Friday prayer, due to which frequently, rather usually, the Friday prayer has to be repeated because of forgetting. He does not even recite the sermon (Khutbah) with correct pronunciation. When advised, he uses abusive language. Due to being out of chess [game], he sits with those playing and suggests moves. He plays games like gambling by drawing various grids with charcoal lines and using pebbles with base people without any pre-set condition. He maintains social ties, interaction, and secrets with a person who commits adultery with his own nephew's widow while his own wife is alive and wishes to marry her in future, for which reasons he has been expelled from the community. Sitting in the mosque and speaking obscenely and abusively about his domestic matters or to advisors. What is the ruling regarding those who help the aforementioned person, while their help is purely based on ego? Given the above circumstances, is the Friday prayer permissible in another mosque, given that it is an old town like a city whose foundation as a city and a military camp is proven historically for hundreds of years along with Muslim population, and the number of

worshippers exceeds the Shariah requirement? Also, such a person shouting eight to ten times during fasting, which indicates impatience. Obtaining a fatwa by hiding the actual matter and seeking support for one's own goal. Please explain and be rewarded.

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी ...इसलिए बनाया जाता है कि उसकी इत्तिबा (अनुसरण) की जाए। (त) यह बात कि ऐसा न करे तो मुक़्तदी उससे पहले सज्दा कर लेंगे, इसका लिहाज़ मुक़्तदियों पर ज़रूर है। जब उसे सज्दे तक पहुँचने में देर होती हो तो ये इंतज़ार करें और ऐसे वक़्त सज्दे को झुकें कि उसके साथ सज्दे में पहुँचें। बि ज़ालिका अमरा अन-नबिय्यू सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम अस्हाबहु रज़ियल्लाहु तआला अन्हुम (नबी अकरम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने अपने अस्हाब रज़ियल्लाहु तआला अन्हुम को यही हुक्म दिया है। त) वल्लाहु तआला आलम (और अल्लाह तआला बेहतर जानता है) मसला नंबर 741: अज़ हावड़ा डाक खाना सलखिया घड़ी मोहल्ला, भोटे बागान असग़र चाय वाले का बाड़ा, मसूला शेख समन, 23 रमज़ान 1339 हिजरी। क्या फरमाते हैं उलमा-ए-दीन इस मसले में कि जो लोग उलमा-ए-हरमैन तय्यिबैन को बिदअती बताएं, उनके पीछे नमाज़ जायज़ है या नहीं? बयान फरमाएं ताकि सवाब पाएं।

अल-जवाब: मुतलक़न उलमा-ए-हरमैन शरीफैन को बिदअती वही बताएगा जो वहाबी हो और वहाबी के पीछे नमाज़ बातिल (अमान्य) महज़ है। वल्लाहु तआला आलम। मसला नंबर 742: अज़ मतबा शम्सुल मुताले' फ़र्रुखनगर ज़िला गुड़गाँव, मसूला हकीम शम्सुद्दीन मालिक मतबा, 28 रमज़ान 1339 हिजरी। क्या फरमाते हैं उलमा-ए-दीन इस मसले में कि उमूर-ए-ज़ैल (निम्नलिखित कार्य) करने वाले की इमामत जायज़ है या नहीं और उसके बाबत क्या हुक्म है? बावजूद क़ुरआन करीम याद न होने के वह क़ुरआन मजीद के दरम्यान से कई कई याद पर नमाज़-ए-जुमा में किरात (पाठ) शुरू कर देता है, जिसकी वजह से अक्सर बल्कि उमूमन नमाज़-ए-जुमा में भूल जाने की वजह से नमाज़ दोहराई जाती है। खुतबा भी सेहत-ए-लफ़्ज़ी के साथ नहीं पढ़ता है। समझाने पर लोगों को मग़ल्लज़ात (गालियां) बकता है। शतरंज से बाहर होने के सबब खेलने वालों के पास बैठकर चाल बताना। हजू क़िस्म के लोगों के साथ कोयले वग़ैरह की लकीरों से तरह-तरह के पांसे बना कर कंकरियों के ज़रिये से मिस्ल-ए-क़ुमार बाज़ान (जुआरी की तरह) बग़ैर किसी शर्त क़ायम के खेल का खेलना। ऐसे शख़्स के साथ मेल-जोल, नशिस्त-ओ-बर्ख़ास्त, राज़दारी रखनी जो अपने हक़ीक़ी भतीजे की बेवा से अपनी ज़ौजा (पत्नी) की ज़िंदगी में ज़िना (व्यभिचार) करता है और आइंदा निकाह की ख़्वाहिश रखता है, जिसको हालात-ए-मज़कूरा की वजह से अहल-ए-बिरादरी ने भी ख़ारिज कर दिया है। मस्जिद में बैठकर अपने खानगी (घरेलू) मुआमलात में या नासेह (सलाहकार) आदमियों को फ़ुहश (अश्लील) और मग़ल्लज़ात सुनाना। शख़्स-ए-मुन्दरजा सदर (उपरोक्त व्यक्ति) की एआनत (मदद) करने वाले की बाबत क्या हुक्म है जबकि उसकी एआनत महज़ नफ़सानियत से करते हों? बसूरत-ए-हालात-ए-

मुन्दरजा सदर नमाज़-ए-जुमा दूसरी मस्जिद में जायज़ है या नहीं जबकि एक पुराना क़स्बा मिस्ल-ए-शहर के हो जिसकी बुनियाद शहर और फ़रूदगाह-ए-अफ़वाज (सैनिक छावनी) तवारीख़ी हिसाब से सदहा (सैकड़ों) साल से मा आबादी अहल-ए-इस्लाम साबित है और नमाज़ी भी तादाद-ए-शरई से ज़्यादा हो जाते हों? रोज़ा की हालत में ऐसे शख्स का आठ दस दफ़ा ग़ुल (चिल्लाना) करना जो बेसब्री पर दाल (प्रमाण) है। असली मुआमला पोशीदा (गुप्त) रख कर अपने मतलब की ताईद में फ़तवा हासिल करना। बयान फरमाएं ताकि सवाब पाएं।

पेज 736 का 593

فتاوی رضویہ جلد ششم اس لئے بنایا جاتا ہے کہ اس کی اتباع کی جائے۔ (ت) یہ بات کہ ایسا نہ کرے تو مقتدی اس سے پہلے سجدہ کر لیں گے اس کا لحاظ مقتدیوں پر ضرور ہے جب اسے سجدہ تک پہنچنے میں دیر ہوتی تو یہ انتظار کریں اور ایسے وقت سجدہ کو جھکیں کہ اس کے ساتھ سجدہ میں پہنچیں بذلک امر النبی صلی اللہ تعالی علیہ وسلم اصحابہ رضی اللہ تعالیٰ عنہم (نبی اکرم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے اپنے اصحاب رضی اللہ تعالیٰ عنہم کو یہی حکم دیا ہے۔ ت) واللہ تعالیٰ اعلم مسئلہ نمبر ۷۴۱ : از ہوڑہ ڈاک خانہ سلکھیا گھڑی محلہ بھوٹے بگان اصغر چائے والے کا باڑا مسئولہ شیخ سمن ۲۳ رمضان ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ جو لوگ علمائے حرمین طیبین کو بدعتی بتائیں ان کے پیچھے نماز جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: مطلقاً علمائے حرمین شریفین کو بدعتی وہی بتائے گا جو وہابی ہو اور وہابی کے پیچھے نماز باطل محض ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم مسئلہ نمبر ۷۴۲ : از مطبع شمس المطالع فرخ نگر ضلع گڑگاؤں مسئولہ حکیم شمس الدین مالک مطبع ۲۸ رمضان ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ امور ذیل کرنے والے کی امامت جائز ہے یا نہیں اور اس کی بابت کیا حکم ہے

باوجود نہ یاد ہونے قرآن کے کریم کے درمیان کلام مجید سے کئی کئی یاد پر نماز جمعہ میں قرات شروع کر دیتا ہے جس کی وجہ سے اکثر بلکہ عموماً نماز جمعہ میں بھول جانے کی وجہ سے نماز دہرائی جاتی ہے خطبہ بھی صحت لفظی کے ساتھ نہیں پڑھتا ہے سمجھانے پر لوگوں کو مغلظات بکنا شطرنج سے باہر ہونے کے سبب کھیلنے والوں کے پاس بیٹھ کر چال بتانا ہجو قسم کے لوگوں کے ساتھ کوئلے وغیرہ کی لکیروں سے طرح طرح کے پانسے بنا کر کنکریوں کے ذریعہ سے مثل قمار بازان بغیر کسی شرط قائم کے کھیل کا کھیلنا، ایسے شخص کے ساتھ میل جول نشست برخاست راز داری رکھنی جو اپنے حقیقی پسرہ کی بیوہ سے اپنی زوجہ کی زندگی میں زنا کرتا

ہے اور آئندہ خواہش نکاح رکھتا ہے جس کو حالات مذکورہ کی وجہ سے اہل برادری نے بھی خارج کردیا ہے مسجد میں بیٹھ کر اپنے خانگی معاملات میں یا ناصح آدمیوں کو فحش اور مغلظات سنانا شخص مندرج صدر کی اعانت کرنے والے کی بابت کیا حکم ہے جبکہ اس کی اعانت محض نفسانیت سے کرتے ہوں بصورت حالات مندرجہ صدر نماز جمعہ دوسری مسجد میں جائز ہے یا نہیں جبکہ ایک پرانا قصبہ مثل شہر کے ہو جس کی بنیاد شہر اور فرودگاہ افواج تواریخی حساب سے صدہا سال سے مع آبادی اہل اسلام ثابت ہے اور نمازی بھی تعداد شرعی سے زیادہ ہو جاتے ہوں۔ روزہ کی حالت میں ایسے شخص کا آٹھ دس دفعہ غل کرنا جو بے صبری پر دال ہے۔ اصلی معاملہ پوشیدہ رکھ کر اپنے مطلب کی تائید میں سے فتویٰ حاصل کرنا۔ بینوا توجروا

The Answer: It is mandatory for the Imam to recite those Surahs or verses in prayer that he has memorized firmly. If he makes a mistake due to incomplete memorization, it must be seen what type of mistake it is—whether it leads to a corruption of meaning or necessitates the abandonment of an obligatory (Wajib) act or not. If not, then repeating the prayer is meaningless, and the blame for it lies on ignorance rather than on the recitation itself. And if yes, then indeed such a person is not worthy of being an Imam. Correctness of words in a sermon (Khutbah) is not a condition like in prayer; however, such a sermon is contrary to the Sunnah. Uttering obscenities is transgression (fisq). It is mentioned in the Hadith that speaking foul language does not suit the character of a Muslim(1). The leadership (imamate) of such a person is disliked (Makruh). Advising moves to chess players, if not done in private but openly in a public place, or if done habitually, is also transgression. Playing with dice like gamblers is also a sin, even if no bet is placed. Scholars of Islam have stated that drinking water in the manner of a wine-drinking circle is forbidden. The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Whoever imitates a people is one of them."(2) (T: Whoever adopts a resemblance to a people, he is from among them). If the incident regarding the widowed daughter-in-law is true and is not just people's suspicion according to the custom of the times—for which those who accuse would themselves deserve 80 lashes each—but rather is proven by sound Sharia evidence, then such a person is not at all worthy of social interaction. Muslims are prohibited from sitting with him:

Allah the Almighty says: "And if the devil should cause you to forget, then do not remain after the reminder with the wrongdoing people."(3) Allah the Almighty's blessed command is: And O listener, whenever the devil makes you forget, then after remembering, do not sit with the unjust people. (T)

And making him an Imam is forbidden. It is stated in Fatawa-e-Hujjah: "If they put forward a transgressor (fasiq) for leadership (imamate), they will be sinners."(4) If people appoint a transgressor for leadership, they will be sinners. (T)

Giving insults in a mosque is strictly forbidden and a sign of disrespect towards the House of Allah. Giving insults in response to the advice of these advisors is even more vile and...

1 Jami` at-Tirmidhi, Chapter on what has been narrated regarding obscenity, printed by Amin Company, Rashidiyah Bookstore, Delhi, 19/2. 2 Musnad Ahmad bin Hanbal,

from Musnad Abdullah ibn Umar, printed by Dar al-Fikr, Beirut, 2/92, 50. 3 Al-Quran, 6/68. 4 Ghunyat al-Mustamli, Sharh Munyat al-Musalli, Section on Imamate, printed by Suhail Academy, Lahore, p. 513.

उत्तर: इमाम के लिए यह अनिवार्य है कि वह नमाज़ में वही सूरत या आयतें पढ़े जो उसे अच्छी तरह याद हों। यदि अधूरी याददाश्त के कारण वह गलती करता है, तो यह देखना होगा कि गलती किस प्रकार की है—क्या उससे अर्थ बिगड़ जाता है या किसी अनिवार्य (वाजिब) कार्य का त्याग आवश्यक हो जाता है या नहीं। यदि नहीं, तो नमाज़ को दोहराना अर्थहीन है और इसका दोष अज्ञानता पर है, न कि पाठ (क़िरात) पर। और यदि हाँ, तो वास्तव में ऐसा व्यक्ति इमामत के योग्य नहीं है। प्रवचन (ख़ुत्बा) में शब्दों की शुद्धता नमाज़ की तरह शर्त नहीं है; हाँ, ऐसा ख़ुत्बा सुन्नत के विरुद्ध है। अपशब्द बकना फ़िस्क़ (पाप) है। हदीस में कहा गया है कि अश्लीलता बकना मुसलमान की गरिमा नहीं है(1)। ऐसे व्यक्ति की इमामत मकरूह (नापसंद) है। शतरंज खेलने वालों को चाल बताना, यदि अकेले में नहीं बल्कि सार्वजनिक स्थान पर सबके सामने है या इसे लगातार किया जा रहा है, तो यह भी फ़िस्क़ है। जुआरियों की तरह पासे बनाकर उनसे खेलना भी पाप है, भले ही कोई शर्त न लगाई गई हो। विद्वानों ने कहा है कि शराब पीने के तरीके से पानी पीना हराम है। नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं: "जो किसी कौम की नकल करता है, वह उन्हीं में से है।"(2) (त: जो किसी कौम से समानता पैदा करे वह उन्हीं में से है)। यदि विधवा बहू वाली घटना सच है और समय के रिवाज के अनुसार लोगों की केवल बदगुमानी (संदेह) नहीं है—जिसके लिए आरोप लगाने वाले खुद ही 80-80 कोड़ों के पात्र होंगे—बल्कि सही शरीयत के साक्ष्य से सिद्ध है, तो ऐसा व्यक्ति मेलजोल के योग्य बिल्कुल नहीं है। मुसलमानों को उसके पास बैठने से मना किया गया है:

अल्लाह तआला फ़रमाता है: "और यदि शैतान आपको भुला दे, तो याद आने के बाद उन ज़ालिम लोगों के साथ न बैठें।"(3) अल्लाह तआला का मुबारक फरमान है: और ऐ सुनने वाले, जब कभी शैतान तुझे भुला दे, तो याद आने के बाद ज़ालिमों के पास मत बैठ। (त)

और उसे इमाम बनाना हराम है, फ़तावा-ए-हुज्जाह में है: "यदि लोगों ने किसी फ़ासिक़ (पापी) को इमामत के लिए आगे किया तो वे गुनहगार होंगे।"(4) अगर लोगों ने फ़ासिक़ को इमामत के लिए आगे किया तो वे गुनहगार होंगे। (त)

मस्जिद में गालियाँ देना सख़्त हराम और अल्लाह के घर की बेअदबी है, इन नसीहत करने वालों की सलाह पर गालियाँ देना और भी अधिक घृणित और...

1 जामी-अत-तिर्मिज़ी, अध्याय अश्लीलता के संबंध में, मुद्रित अमीन कंपनी, रशीदिया बुक डिपो, दिल्ली, 19/2। 2 मुसनद अहमद बिन हनबल, मुसनद अब्दुल्ला इब्न उमर से, मुद्रित दारुल फ़िक्र, बेरूत, 2/92, 50। 3 अल-क़ुरआन, 6/68। 4 ग़ुन्यत अल-मुस्तमली, शरह मुन्यत अल-मुसल्ली, इमामत पर खंड, मुद्रित सुहैल अकादमी, लाहौर, पृष्ठ 513।

الجواب: امام کو لازم ہے کہ نماز میں وہ سورت یا آیات پڑھے جو اُسے پختہ طور پر یاد ہوں کچے یاد ہونے کی وجہ سے اگر غلطی کرتا ہے تو یہ دیکھا جائے کہ وہ غلطی کس قسم کی ہے اُس سے فسادِ معنی یا کسی واجب کا ترک لازم آتا ہے یا نہیں، اگر نہیں تو نماز دہرانا بے معنی ہے اور اس کا الزام جہالت پر ہے نہ کہ قرات پر، اور اگر ہاں تو بے شک ایسا شخص قابلِ امامت نہیں، خطبہ میں صحتِ لفظی ہونا نماز کی طرح شرط نہیں۔ ہاں ایسا خطبہ خلافِ سنّت ہے۔ مغلظات بکنا فسق ہے۔ حدیث میں ارشاد ہوا کہ فحش بکا کرنا مسلمان کی شان نہیں ۱۸ ایسے شخص کی امامت مکروہ ہے۔ شطرنج کھیلنے والوں کو چال بتانا اگر گوشہ تنہائی میں نہیں بلکہ برملا عام نظر گاہ میں ہے یا اس پر مداومت ہے تو یہ بھی فسق ہے، قمار بازوں کی طرح پانسے بنا کر اُن سے کھیلنا بھی گناہ ہے اگرچہ کوئی شرط نہ لگائی جائے۔ علمائے کرام نے فرمایا کہ شراب کے دور کی طرح پانی پینا حرام ہے، نبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں۔ من تشبہ بقوم فھو منھم ۲۸ (جو کسی قوم سے مشابہت پیدا کرے وہ انہیں میں سے ہے۔ت) بیوہ پسر کا جو واقعہ لکھا اگر واقعی ہے اور حسب عادتِ زمانہ لوگوں کی بد گمانی نہیں جس پر وہ تہمت لگانے والے خود اسی ۸۰ ۸۰ کوڑوں کے مستحق ہوں بلکہ ثبوتِ صحیح شرعی سے ثابت ہے تو ایسا شخص ہر گز میل جول کے قابل نہیں، مسلمانوں کو اُس کے پاس بیٹھنا منع ہے:

قال اللہ تعالٰی وَ اِمَّا یُنْسِیَنَّکَ الشَّیْطٰنُ فَلَا تَقْعُدْ بَعْدَ الذِّکْرٰی مَعَ الْقَوْمِ الظّٰلِمِیْنَ ۳۸ اللہ تعالٰی کا ارشادِ مبارک ہے: اور اے سننے والے جب کہیں تجھے شیطان بھلا دے تو یاد کر آنے کے بعد ظالموں کے پاس مت بیٹھ۔ (ت)

اور اسے امام بنانا حرام، فتاویٰ حجہ میں ہے: لو قدموا فاسقا یا ثمن۔ ۴۸ اگر لوگوں نے فاسق کو امامت کے لئے مقدم کیا تو وہ گناہ گار ہوں گے۔ (ت)

مسجد میں گالیاں دینا سخت حرام اور بیت اللہ کی بے ادبی ہے، ان ناصحوں کی نصیحت پر گالیاں دینا اور بھی زیادہ خبیث اور

۱۸ جامع الترمذی باب ماجاء فی الفحش مطبوعہ امین کمپنی کتب خانہ رشیدیہ دہلی ۲/۱۹ ۲۸ مسند احمد بن حنبل از مسند عبداللہ ابن عمر مطبوعہ دارالفکر بیروت ۲/۹۲، ۵۰ ۳۸ القرآن ۶/۲۸ ۴۸ غنیہ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل فی الامامۃ، مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۵۱۳

Fatawa Razviya, Volume 6 Defying the pure Shari'ah is prohibited, and assisting in falsehood is forbidden. Allah Almighty says: "And do not cooperate in sin and transgression." (Quran 5:2) (T)

If a person whose leadership (Imamate) is prohibited by Shari'ah leads the Friday prayer, one should offer the Friday prayer at another location, provided it is a town or city where the Friday prayer is valid and permissible according to Shari'ah. It is stated in Fath al-Qadir: "Because transferring to another place is possible."[2] (T). Raising a hue and cry and displaying impatience during fasting is disliked (Makruh). Obtaining a false fatwa from scholars by hiding the actual facts is deceiving the Shari'ah and is strictly forbidden. And Allah Almighty knows best.

Issue No. 743, 744: From Mansurpur, District Muzaffarnagar, asked by Abdul Samad Sahib, Sunni Hanafi Sufi, 28 Ramadan 1339 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: (1) Is the prayer offered behind a person who, due to greed, is covetous and habitual in begging with humiliation despite receiving a reasonable salary, complete according to Shari'ah or not? (2) Is a person fit for Imamate who says, "I am an employee specifically for leading prayers for a certain person; what do I have to do with leading funeral prayers or obeying any follower (muqtadi)?" Please clarify and be rewarded.

The Answer: (1) Begging without necessity is forbidden. Such a person is an open sinner (Fasiq-e-Mo'lin). Appointing him as an Imam is a sin. The prayer of both the learned and the ignorant behind him is Makruh Tahrimi (prohibitively disliked). It is a sin, and repeating the prayer is obligatory. And Allah Almighty knows best. (2) It is not obligatory for an Imam to obey a follower without reason, nor is it necessary for him to lead the funeral prayer. His saying this does not cause any defect in his eligibility for Imamate. And Allah Almighty knows best.

Issue No. 745, 746: From Madrasa Ahle Sunnat Manzar-e-Islam, asked by Maulvi Abdullah Sahib, teacher of the aforementioned school, 3 Shawwal 1339 AH. What do the scholars of religion say in these matters: (1) In a mosque, a congregation is ready, but there isn't enough time to inquire whether the Imam is a Sunni or a Wahabi. Should the prayer be offered with the congregation or separately?

---

1 Quran 5/2 2 Fath al-Qadir, Bab al-Imamate, Maktaba Nuriya Razviya Sukkur, 1/302

फ़तावा-ए-रज़विया, छठा खंड शरीअत-ए-मुतह्हरा (पवित्र शरीयत) की अवहेलना करना और असत्य की सहायता करना हराम है। अल्लाह तआला का फरमान है: "पाप और ज़्यादती के कामों में एक-दूसरे की मदद न करो।" (अल-क़ुरान ५/२) (त)

यदि कोई ऐसा व्यक्ति जिसकी इमामत (नमाज़ का नेतृत्व करना) शरीयत के अनुसार वर्जित है, जुमे की नमाज़ पढ़ाता है, तो किसी दूसरी जगह जुमे की नमाज़ पढ़ें, बशर्ते वह कोई कस्बा या शहर हो जहाँ शरीयत के अनुसार जुमे की नमाज़ सही और जायज़ हो। 'फ़तह अल-क़दीर' में लिखा है: "क्योंकि दूसरी जगह जाना मुमकिन है।"[2] (त). रोज़े के दौरान शोर मचाना और धैर्य खोना नापसंद (मक़रूह) है। विद्वानों से असली बात छिपाकर गलत फ़तवा लेना शरीयत के साथ धोखा देना है और सख्त हराम है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसाला संख्या ७४३, ७४४: मंसूरपुर, ज़िला मुज़फ़्फ़रनगर से प्रेषित, अब्दुल समद साहिब सुन्नी हनफ़ी सूफ़ी द्वारा पूछा गया, २८ रमज़ान १३३९ हिजरी। धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं: (१) क्या उस व्यक्ति के पीछे शरीयत के अनुसार नमाज़ मुकम्मल (पूर्ण) होगी जो लालच के कारण लोभी है और अच्छी तनख्वाह मिलने के बावजूद अपमान के साथ भीख मांगने का आदी है? (२) जो व्यक्ति यह कहे कि "मैं किसी खास व्यक्ति के लिए केवल नमाज़ पढ़ाने के लिए मुलाज़िम (कर्मचारी) हूँ, मुझे जनाज़े की नमाज़ पढ़ाने या किसी मुक्तदी (अनुयायी) की बात मानने से क्या लेना-देना", क्या ऐसा व्यक्ति इमामत के योग्य है? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: (१) बिना ज़रूरत भीख माँगना हराम है। ऐसा व्यक्ति फासिक़-ए-मोइलिन (खुला अपराधी) है, उसे इमाम बनाना गुनाह है। उसके पीछे विद्वान और अज्ञानी सभी की नमाज़ 'मक़रूह-ए-तहरीमी' (अत्यधिक नापसंद) होगी। यह गुनाह है और नमाज़ को फिर से पढ़ना वाजिब (अनिवार्य) है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (२) इमाम के लिए बिना किसी कारण के मुक्तदी की आज्ञा मानना अनिवार्य नहीं है, और न ही उसके लिए जनाज़े की नमाज़ पढ़ाना ज़रूरी है। उसके ऐसा कहने से उसकी इमामत की योग्यता में कोई कमी नहीं आती। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसाला संख्या ७४५, ७४६: मदरसा अहले सुन्नत मंज़र-ए-इस्लाम से प्रेषित, मौलवी अब्दुल्लाह साहिब (उपरोक्त मदरसा के शिक्षक) द्वारा पूछा गया, ३ शव्वाल १३३९ हिजरी। धर्म के विद्वान इन मसलों में क्या कहते हैं: (१) किसी मस्जिद में जमाअत तैयार है, लेकिन इतना समय नहीं है कि यह पता लगाया जा सके कि इमाम सुन्नी है या वहाबी, तो जमाअत के साथ नमाज़ पढ़नी चाहिए या अपनी अलग?

१ अल-क़ुरान ५/२ २ फ़तह अल-क़दीर, बाब अल-इमामत, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, १/३०२ पृष्ठ ७३६ का ५९५

فتاوی رضویہ، جلد ششم شریعت مطہرہ سے سرتابی ہے باطل پر اعانت حرام ہے قَالَ اللہ تعالی وَلَا تَعَاوَنُوا عَلَی الْإِثْمِ وَالْعُدْوَانِ ص - ۱ اللہ تعالیٰ کا فرمان ہے: گناہ اور زیادتی پر باہم تعاون نہ کرو۔ (ت)

ایسا شخص جس کی امامت شرعاً ممنوع ہے اگر جمعہ پڑھاتا ہو تو دوسری جگہ جمعہ پڑھیں جبکہ وہ قصبہ مصر شرعی ہو جہاں جمعہ صحیح و جائز ہے۔ فتح القدیر میں ہے: لانہ بسبیل من التحول ۲ (کیونکہ دوسری جگہ منتقل ہونا ممکن ہے۔ت) اور روزہ میں غل مچانا اور اظہار بے صبری کرنا مکروہ ہے، حقیقت واقعہ چھپا کر علماء سے غلط فتویٰ لینا شریعت کو دھوکا دینا اور سخت حرام ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۷۴۳، ۷۴۴: از منصور پور ضلع مظفر نگر مسئولہ عبد الصمد صاحب سنی حنفی صوفی ۲۸ رمضان ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ: (۱) جس شخص میں بوجہ حرص کے طمع ہو اور ذلت کے ساتھ سوال کرنے کا عادی ہو باوجود معقول تنخواہ پانے کے ایسے بے حرمت آدمی کے پیچھے شرعاً کیا نماز کامل ہو سکتی ہے یا نہیں۔ (۲) جو شخص یہ کہے کہ میں فلاں آدمی کا معین صورت میں محض نماز پڑھانے کے واسطے ملازم ہوں نماز جنازہ پڑھانے سے یا کسی مقتدی کی اطاعت سے مجھے کیا کام ایسا آدمی قابل امامت ہے یا نہیں۔ بینوا توجروا

الجواب: (۱) بے ضرورت سوال حرام ہے ایسا شخص فاسق معلن ہے اسے امام بنانا گناہ ہے اس کے پیچھے عالم و جاہل سب کی نماز مکروہ تحریمی کی پڑھی گئی گناہ اور پھیرنی واجب۔ واللہ تعالیٰ اعلم (۲) امام پر بلاوجہ مقتدی کی اطاعت لازم نہیں ، نہ اسے نماز جنازہ پڑھانا ضرور، اس کے کہنے سے اس کی قابلیت امامت میں کوئی خلل نہیں۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۷۴۵، ۷۴۶: از مدرسہ اہلسنت منظر اسلام مسئولہ مولوی عبد اللہ صاحب مدرس مذکور ۳ شوال ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین ان مسئلوں میں : (۱) کسی مسجد میں جماعت تیار ہے لیکن اتنا وقت نہیں کہ دریافت کیا جائے کہ امام سنی ہے یا وہابی ، تو جماعت سے نماز پڑھنا چاہئے یا اپنی علیحدہ۔

---

۱ القرآن ۲/۵ ۲ فتح القدیر باب الامامۃ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۱/ ۳۰۲

Fatawa Razawiya Volume 6 (2) If a congregational prayer is ongoing in a mosque and the Imam has a legal (Shariah) defect, can one leave the congregation and immediately pray their obligatory (fard) prayer or not? (3) Is prayer valid behind someone who has been disowned (by parents)? Explain and you shall be rewarded.

The Answer: (1) As long as there is no strong reason for suspicion, one should pray with the congregation. If it is later confirmed that the Imam was a Wahhabi, then repeat the prayer. Allah Almighty knows best. (2) If the Imam has such a defect that prayer behind him is void (batil), for example, he is a Wahhabi, or recites the Great Quran incorrectly, or his purification is not correct, then that prayer is not valid at all. If one can establish a correct congregation, they should do so while that congregation is ongoing, provided it doesn't cause strife (fitna). If one cannot find their own congregation, they should pray alone. If the defect is such that prayer behind him is prohibitively disliked (Makruh Tahrimi), like a public sinner (fasiq mu'lin), then one should go to another place for congregation; otherwise, no. After this congregation, one should form another congregation or pray alone. If it is only slightly disliked (Makruh Tanzihi), then abandoning this congregation is not permissible; one should join it. Allah Almighty knows best. (3) Legally, 'disowned' (aaq) is one who, without a valid Shariah reason, causes distress to parents or is disobedient to them. Such a person is a sinner (fasiq). Furthermore, if he commits this sin openly, he is a public sinner; prayer behind him is prohibitively disliked (Makruh Tahrimi), meaning praying behind him is a sin and repeating the prayer is mandatory. If he does not do it openly, then prayer behind him is slightly disliked (Makruh Tanzihi), meaning praying is permissible but repeating it is recommended. If he does not cause them distress and does not disobey them except in acts of disobedience to God, even if he doesn't listen to them in matters of sin and it causes them distress, he is not 'disowned', even if they say a hundred times "We have disowned you." When there is no legal accountability on him, there is no harm in praying behind him, even if the ignorant consider him disowned. Allah Almighty knows best.

Problem No. 278: From Sehram Bartla, District Arrah, questioned by Qudratullah, 5 Shawwal 1339 AH. What do the scholars of religion say regarding this issue: Zaid is very knowledgeable in Sunnah, a practicing scholar, but he listens to music with instruments (sama' bil-mazamir). Is it permissible to have him as Imam, and is there any dislike (karahat) in his imamate or not? Explain and you shall be rewarded.

The Answer: Musical instruments are forbidden; listening to them is not the work of a practicing scholar, as we have explained in "Ajal al-Tahbir fi Hukm al-Sama' bil-Mazamir". (t) If he commits this openly, do not make him Imam, and it is not free from dislike in any case. Allah Almighty knows best.

Problem No. 279: From the government of Ajmer Sharif, Langar Gali, questioned by Hakim Ghulam Ali, 6 Shawwal 1339 AH. What do the scholars of religion say regarding this issue: that the Imam of the Jamia Dargah Sharif of Khwaja Gharib Nawaz (may Allah Almighty have mercy on him)...

फ़तावा रज़विया जिल्द शशम (भाग 6) (२) मस्जिद में जमात हो रही है और इमाम में शरीयत के हिसाब से कोई कमी है, तो क्या जमात छोड़कर तुरंत अपनी फ़र्ज़ नमाज़ पढ़ सकते हैं या नहीं? (३) क्या आक़ (माता-पिता द्वारा बेदख़ल) किए गए व्यक्ति के पीछे नमाज़ जायज़ है या नहीं? बयान करें, आपको पुण्य मिलेगा।

उत्तर: (१) जब तक संदेह का कोई पुख्ता कारण न हो, जमात के साथ नमाज़ पढ़ें। फिर यदि जाँच के बाद पता चले कि इमाम वहाबी था, तो नमाज़ दोहराएँ। अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है। (२) यदि इमाम में ऐसी कमी है कि उसके पीछे नमाज़ बातिल (अमान्य) है, उदाहरण के लिए वह वहाबी है या कुरान का पाठ गलत करता है या उसकी पवित्रता (तहारत) सही नहीं है, तो वह नमाज़ नमाज़ ही नहीं है। यदि कोई सही जमात कर सकता हो, तो उस जमात के होते हुए अपनी जमात कायम करे बशर्ते कि कोई फितना (विवाद) न हो, और यदि अपनी जमात न मिल सके तो अकेले पढ़े। और यदि कमी ऐसी है कि उसके पीछे नमाज़ मकरूह-ए-तहरीमी (कड़ाई से मना) है जैसे कि सार्वजनिक रूप से पाप करने वाला (फ़ासिक़-ए-मुअ्लिन), तो दूसरी जगह जमात के लिए चला जाए अन्यथा नहीं। इस जमात के बाद दूसरी जमात करे या अकेले पढ़े। और यदि केवल मकरूह-ए-तंज़ीही (हल्की नापसंदगी) है, तो इस जमात को छोड़ना जायज़ नहीं है, उसमें शामिल हो जाए। अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है। (३) शरीयत के अनुसार 'आक़' वह है जो बिना किसी शरीई कारण के माता-पिता को कष्ट दे, उनकी आज्ञा का उल्लंघन करे। ऐसा व्यक्ति फ़ासिक़ (पापी) है। फिर यदि वह यह पाप खुलेआम करता है, तो वह फ़ासिक़-ए-मुअ्लिन है, उसके पीछे नमाज़ पढ़ना मकरूह-ए-तहरीमी है कि पढ़ना पाप है और दोहराना वाजिब (अनिवार्य)। और यदि खुलेआम नहीं करता, तो उसके पीछे नमाज़ मकरूह-ए-तंज़ीही है कि पढ़ना जायज़ है और दोहराना मुस्तहब (पसंदीदा)। और यदि वह उन्हें कष्ट नहीं देता और अल्लाह की नाफ़रमानी वाले कामों के अलावा उनकी आज्ञा मानता है, भले ही वह पाप के कामों में उनकी बात न माने और चाहे इससे उन्हें कष्ट हो, तो वह 'आक़' नहीं है, चाहे वे सौ बार कहें कि "हमने तुझे आक़ कर दिया"। जब उस पर कोई शरीई जवाबदेही नहीं है, तो उसके पीछे नमाज़ पढ़ने में कोई हर्ज नहीं है, भले ही अज्ञानी उसे आक़ समझें। अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला नंबर २७८: सेहराम बरतला, जिला आरा से, प्रेषक कुदरत उल्लाह, ५ शव्वाल १३३९ हिजरी। धर्म के विद्वान इस मसले में क्या कहते हैं कि ज़ैद सुन्नत का बहुत बड़ा जानकार और अमल करने वाला विद्वान है, लेकिन वह साज़ों के साथ संगीत (समा' बिल-मज़ामीर) सुनता है। क्या उसकी इमामत

जायज़ है और उसकी इमामत में कोई नापसंदगी (कराहत) है या नहीं? बयान करें, आपको पुण्य मिलेगा।

उत्तर: वाद्य यंत्र (मज़ामीर) हराम हैं, उन्हें सुनना किसी अमल करने वाले विद्वान का काम नहीं है, जैसा कि हमने "अजल अल-तहरीर फ़ी हुक्म अस-समा' बिल-मज़ामीर" में स्पष्ट किया है। (त) यदि वह सार्वजनिक रूप से ऐसा करता है, तो उसे इमाम न बनाएँ, और यह किसी भी हाल में नापसंदगी से खाली नहीं है। अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला नंबर २७९: सरकार अजमेर शरीफ, लंगर गली से, प्रेषक हकीम गुलाम अली, ६ शव्वाल १३१९ हिजरी। धर्म के विद्वान इस मसले में क्या कहते हैं कि ख्वाजा गरीब नवाज़ (अल्लाह उन पर दया करे) की दरगाह शरीफ की जामा मस्जिद के इमाम...

पृष्ठ ५९६ / ७३६

فتاویٰ رضویہ جلد ششم (۲) مسجد میں جماعت ہو رہی ہے اور امام میں نقص شرعی ہے تو جماعت چھوڑ کر فوراً ہی اپنے فرض پڑھ سکتا ہے یا نہیں۔ (۳) عاق شدہ کے پیچھے نماز جائز ہے یا نہیں۔ بینوا توجروا

الجواب: (۱) جبکہ شبہ کی کوئی وجہ قوی نہ ہو جماعت سے پڑھے، پھر اگر تحقیق ہو کہ امام وہابی تھا نماز پھیرے واللہ تعالیٰ اعلم (۲) اگر امام میں ایسا نقص ہے کہ اسکے پیچھے نماز باطل ہے مثلاً وہابی ہے یا قرآن عظیم غلط پڑھتا ہے یا طہارت صحیح نہیں جب تو وہ نماز نماز ہی نہیں اگر صحیح جماعت کر سکتا ہو تو اس جماعت کے ہوتے ہوئے اپنی جماعت قائم کرے اگر فتنہ نہ ہو، اور اپنی جماعت نہ مل سکے تو تنہا پڑھے، اور اگر نقص ایسا ہے کہ اس کے پیچھے نماز مکروہ تحریمی ہے جیسے فاسق معلن، تو دوسری جگہ جماعت کو چلا جائے ورنہ نہیں، اس جماعت کے بعد دوسری جماعت کرے یا تنہا پڑھے، اور اگر صرف کراہت تنزیہی ہے تو اس جماعت کا ترک جائز نہیں شامل ہو جائے۔ واللہ تعالیٰ اعلم (۳) شرعاً عاق وہ ہے جو بلا وجہ شرعی ماں باپ کو ایذا دے، ان کی نافرمانی کرے۔ ایسا شخص فاسق ہے۔ پھر اگر وہ یہ گناہ علانیہ کرتا ہے فاسق معلن ہے اس کے پیچھے نماز مکروہ تحریمی ہے کہ پڑھنی گناہ اور پھیرنی واجب، اور اگر علانیہ نہیں کرتا تو اس کے پیچھے نماز مکروہ تنزیہی ہے کہ پڑھنی جائز اور پھیرنی مستحب، اور اگر یہ ان کو ایذا نہیں دیتا غیر معصیت میں ان کی نافرمانی نہیں کرتا اگر چہ معصیت میں ان کا کہنا نہ مانتا ہو اگرچہ اس سے ایذا ہو تو وہ عاق نہیں اگر چہ وہ سو بار کہیں کے ہم نے تجھے عاق کیا، جب اس کے ذمہ مواخذہ شرعی نہ ہو تو اس کے پیچھے نماز میں حرج نہیں اگر چہ جاہل اسے عاق شدہ سمجھیں۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۲۷۸: از سہرام برتلہ ضلع آرہ مسئولہ قدرت اللہ ۵ شوال ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید اعلم باسنۃ عالم با عمل سماع بالمزامیر سنتا ہے اور اس کی امامت جائز ہے اور اس کی امامت میں کراہت ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: مزامیر حرام ہیں ان کا سننا عالم با عمل کا کام نہیں کما بیناہ فی اجل التحبیر فی حکم السماع بالمزامیر (جیسا کہ اسے اجل التحبیر فی حکم السماع بالمزامیر میں بیان کیا گیا ہے۔ ت) اگر اعلانیہ اس کا مرتکب ہو اسے امام نہ کریں، اور کراہت سے کسی حال خالی نہیں۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ نمبر ۲۷۹: از سرکار اجمیر مقدس لنگر گلی مسئولہ حکیم غلام علی ۶ شوال ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ امام جامع درگاہ شریف خواجہ غریب نواز رحمۃ اللہ تعالٰی

Fatawa Razawiyya Volume 6

Question: After every prayer, he says, "O Merciful Lord! Make the false, shaven-faced claimants of the Caliphate into true claimants. And whenever Wahhabis are mentioned, he strongly speaks ill of their scholars—those who make the Caliphate a business for their bellies—and all their followers. Is it permissible to offer prayer behind him according to the purified Shariah? And what is the Shariah ruling for the scholar who declares praying behind him forbidden (Haram)? If this discussion takes place in a mosque, is it a desecration of the mosque? Clarify in detail, you will be rewarded by the Great Lord."

The Answer:

There is no harm in this prayer, and it is obligatory to describe the evils of the Wahhabis. Similarly, it is necessary to warn Muslims against the spread of false claimants to the Caliphate and those who sustain themselves through this name. A mosque, being a gathering place for Muslims, is the best venue for such discourses. There is no desecration of the mosque in this, as mosques are built for the remembrance of Allah, and forbidding evil and describing the spread of misguidance are among the greatest forms of Allah's remembrance and the most magnificent commands of Allah's Shariah. It is in the Hadith that the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) says:

[Hadith Box] "Do you refrain from mentioning the wicked person when people know him? Mention the wicked with what is in him so that people may avoid him."

In Sahih Bukhari, it is recorded that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) used to place a pulpit in the Noble Mosque of Medina for Hazrat Hassan bin Thabit Ansari (may Allah be pleased with him) so that he could stand upon it and refute the polytheists. 2

1. Nawadir al-Usul by al-Tirmidhi, Original 66, etc., published by Dar Sadir Beirut, p. 213. Note: The first word of this Hadith in Nawadir al-Usul is "Atu-ra'una," while in many other books it is mentioned as "Atara'una." - Nazir Ahmad Saeedi.
2. Mishkat al-Masabih, Chapter 3 from the Book of Eloquence and Poetry, published by Matba' Mujtabai Delhi, Part 2, 410/2. Note: This Hadith is present in many books such as Tirmidhi 14/7, Sunan Abi Dawud 328/2, Mustadrak 8/3, 17 Ibn Asakir 129/4, Sharh al-Sunnah 112/12, 3, etc. I could not find this specific part of the Hadith in Sahih Bukhari. The author of Tuhfat al-Ahwadhi writes

under this same Hadith: "The author of al-Mishkat said after mentioning this Hadith that Bukhari narrated it. Al-Hafiz said in al-Fath after mentioning it and attributing it to Tirmidhi: 'Al-Mizzi mentioned in al-Atraf that Bukhari narrated a similar version as a Mu'allaq (suspended) report, more complete than it, but I did not see it in there. End.'" (Tuhfat al-Ahwadhi, published Beirut 32/4) - Nazir Ahmad Saeedi. Page 597 of 736

फ़तावा रज़विया छठा खंड

प्रश्न: हर नमाज़ के बाद वह कहता है कि ऐ खुदावंद-ए-करीम! गैर-शरई दाढ़ी मुंडे झूठे खिलाफत के दावेदारों को सच्चा खिलाफत का दावेदार बना दे। और जब कभी वहाबियों का ज़िक्र आता है तो उनके मौलवियों को जो खिलाफत को अपना पेट भरने का पेशा बनाते हैं और उनके सब पैरोकारों को खूब बुरा कहता है, क्या उसके पीछे शरीयत-ए-मुतहरा के अनुसार नमाज़ पढ़ना जायज़ है? और जो मौलवी उसके पीछे नमाज़ पढ़ना हराम बताए उसके लिए शरीयत का क्या हुक्म है? अगर यह बहस मस्जिद में हो तो क्या यह मस्जिद का अपमान है या नहीं? विस्तार से स्पष्ट करें, आपको महान प्रभु द्वारा पुरस्कृत किया जाएगा।

उत्तर:

इस दुआ में कोई हर्ज नहीं है और वहाबियों की बुराई बयान करना फर्ज़ है। इसी तरह, खिलाफत के झूठे दावेदारों और इस नाम पर अपना पेट पालने वालों की आफत की खबर से मुसलमानों को आगाह करना ज़रूरी है। मस्जिद, जो मुसलमानों का जमावड़ा स्थल है, इन बयानों के लिए सबसे अच्छा स्थान है। इसमें मस्जिद का कोई अपमान नहीं है, क्योंकि मस्जिदें अल्लाह के ज़िक्र के लिए बनाई गई हैं और बुराई से रोकना (नही अनिल मुनकर) तथा गुमराहों की बुराई बयान करना अल्लाह के ज़िक्र के महान तरीकों और अल्लाह की शरीयत के सबसे ऊंचे आदेशों में से है। हदीस में है कि नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

[हदीस बॉक्स] "क्या तुम फजिर (पापी) का ज़िक्र करने से बचते हो जबकि लोग उसे जानते हैं? फजिर की बुराइयों को बयान करो ताकि लोग उससे बचें।"

सहीह बुखारी में है कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) हज़रत हस्सान बिन साबित अंसारी (रज़ियल्लाहु अन्हु) के लिए मदीना तैयबा की मस्जिद-ए-करीम में मिंबर (मंच) बिछवाते थे ताकि वह उस पर खड़े होकर मुशरिकों (बहुदेववादियों) का खंडन करें। 2

1. नवादिरुल उसूल तिर्मिज़ी द्वारा, मूल 66, आदि, दार सादिर बेरूत द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 213। नोट: नवादिरुल उसूल में इस हदीस का पहला शब्द "अतुरुऔन" है, जबकि कई अन्य पुस्तकों में "अतरऔन" का उल्लेख है। - नज़ीर अहमद सईदी।

2. मिश्कातुल मसाबीह, अध्याय 3, बयान और कविता के पाठ से, मतबा मुजतबाई दिल्ली द्वारा प्रकाशित, भाग 2, 410/2। नोट: यह हदीस तिर्मिज़ी 14/7, सुनन अबी दाऊद 328/2, मुस्तदरक 8/3, 17 इब्न असाकिर 129/4, शरह अस-सुन्नाह 112/12, 3 आदि जैसी कई पुस्तकों में मौजूद है। मुझे सहीह बुखारी में हदीस का यह हिस्सा नहीं मिल सका। तुहफतुल अहवज़ी के लेखक इसी हदीस के तहत लिखते हैं: "मिश्कात के लेखक ने इस हदीस का उल्लेख करने के बाद कहा कि बुखारी ने इसे उद्धृत किया है। अल-हाफ़िज़ ने 'अल-फतह' में इसका उल्लेख करने और इसे तिर्मिज़ी को जिम्मेदार ठहराने के बाद कहा: 'अल-मिज्ज़ी ने 'अल-अतराफ़' में उल्लेख किया है कि बुखारी ने इसे मुअल्लक (निलंबित) रूप में उद्धृत किया है, जो इससे अधिक पूर्ण है, लेकिन मैंने इसे वहां नहीं देखा। समाप्त।'" (तुहफतुल अहवज़ी, बेरूत द्वारा प्रकाशित 32/4) - नज़ीर अहमद सईदी। पृष्ठ 597 / 736

فتاوی رضویہ جلد ششم

علیہ بعد ہر نماز یہ کہتا ہے کہ اے خداوندِ کریم ! غیر شرع داڑھی منڈے جھوٹے دعویدارانِ خلافت کو سچا دعویدارِ خلافت بنا دے۔ اور جب کبھی وہابیوں کا ذکر آتا ہے تو اُن کے مولویوں کو جو مولوی خلافت کو اپنے پیٹ بھرنے کا پیشہ بناتے ہیں اور ان کے سب پیروؤں کو خوب بُرا کہتا ہے اس کے پیچھے بموجبِ شریعتِ مطہرہ نماز پڑھنا جائز ہے اور جو مولوی اس کے پیچھے نماز پڑھنا حرام بتائے اُس کے لئے شرعاً کیا حکم ہے ، اگر یہ بحث مسجد میں ہو تو مسجد کی توہین ہوتی ہے یا نہیں ؟ بینوا بالنفصیل توجروا عندالرب الجلیل۔

الجواب:

اس دُعا میں کوئی حرج نہیں اور وہابیہ کی بُرائی بیان کرنا فرض ہے، یونہی جھوٹے مدعیانِ خلافت اور اس نام سے شکم پروران پر آفت کی شاعت سے مسلمانوں کو آگاہ کرنا ضرور ہے اور مسجد کہ مجمع مسلمانان ہو ان بیانوں کا بہتر موقع ہے اور اس میں مسجد کی کچھ توہین نہیں کہ مساجد ذکر اللہ کے لئے بنائی گئی ہیں اور نہی عن المنکر اور بیانِ شاعتِ گمراہاں اعظمِ طرقِ ذکر اللہ واجلِ احکامِ شریعۃ اللہ سے ہے۔ حدیث میں ہے نبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں :

[Arabic/Urdu Text in Box] اَتَرعُوْنَ عَن ذِکرِ الفَاجِرِ متی یعرفہ النَّاس اذکروا الفاجر بما فیہ یحذرہ النَّاس 1۔ کیا فاجر کو بُرا کہنے سے پرہیز کرتے ہو لوگ اسے کب پہچانیں گے فاجر کی بُرائیاں بیان کرو کہ لوگ اُس سے بچیں

صحیح بخاری میں ہے رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم حضرت حسان بن ثابت انصاری رضی اللہ تعالیٰ عنہ کے لئے مسجدِ کریم مدینہ طیبہ میں منبر بچھاتے کہ وہ اس پر کھڑے ہو کر مشرکین کا رد فرماتے۔ 2

1 نوادر الاصول للترمذی الاصل السادس والستون والمائۃ الخ مطبوعہ دار صادر بیروت ص ۲۱۳ ف: اس حدیث کا پہلا لفظ نوادر الاصول میں " أتورعون " ہے جبکہ دیگر متعدد کتابوں میں " أترعون " مذکور ہے۔ نذیراحمد سعیدی 2 مشکوۃ المصابیح الفصل الثالث از باب البیان والشعر مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی حصہ دوم ۴۱۰/۲ ف: یہ حدیث ترمذی ۷/۱۴، سنن ابی داؤد ۳۲۸/۲، مستدرک ۸/۳، ۱۷ ابن عساکر ۱۲۹/۴، شرع السنۃ ۱۱۲/۱۲، ۳ وغیرہ متعدد کتابوں میں موجود ہے حدیث کا یہ حصہ صحیح بخاری سے مجھے نہیں مل سکا اور صاحب تحفۃ الاحوذی اسی حدیث کے تحت لکھتے ہیں: قال صاحب المشکوۃ بعد ذکر ھذا الحدیث اخرجہ البخاری وقال الحافظ فی الفتح بعد ذکرہ وعزوہ الی الترمذی مالفظہ وذکر المزی فی الاطراف ان البخاری اخرجہ تعلیقاً نحوہ واتم منہ لکنہ لم ارہ فیہ انتہی (تحفۃ الاحوذی مطبوعہ بیروت ۳۲/۴) نذیر احمد سعیدی Page of 736 597

Fatawa Razawiya Volume Six

In the aforementioned reasons, there is no defect or even dislike in his leading prayer (Imamat). Whoever declares prayer behind him to be prohibited (haram) based on these reasons commits slander against Allah (the Exalted), His Prophet (peace and blessings be upon him), and the pure Sharia. It is obligatory for such a person to repent; otherwise, they will deserve the severe punishment of fire and the wrath of the Almighty.

Allah the Exalted said: "Indeed, those who invent falsehood against Allah will not succeed. [It is but] a brief enjoyment, and they will have a painful punishment." (1)

And Allah the Exalted said: "Woe to you! Do not invent a lie against Allah, lest He eradicate you with a punishment." (2)

And refuge is sought with Allah. And Allah the Exalted knows best.

Problem Number 750: From Takwandi Rai, Ludhiana District, Punjab, submitted by Iqbal Muhammad, 7 Shawwal 1339 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: We have a Sayyid Sahib here who recites the Holy Quran quite correctly. He is a disciple of a very eminent elder from whom he received the status of Caliphate (Khilafat). Due to his good recitation, he often leads prayers in the mosque. However, the said Sayyid has adopted a practice: a respectable, regular prayer-goer, Tahajjud-performer, and pious youth is his fellow disciple (pir-bhai). A few days ago, the Sayyid Sahib considered him a friend outwardly and inwardly, but now he is inciting people to sever ties with a few individuals despite their innocence. To humiliate them without reason, the Sayyid Sahib sat in a large gathering with the Holy Quran in the middle and publicly told the attendees to swear an oath on the Great Quran to sever ties with those few individuals for life. Is the said Sayyid Sahib fit for Imamat or not? If he is, can those people also pray behind him against whom such treatment was meted out without cause? Please explain and be rewarded.

The Answer: If it is a fact that the mentioned Sayyid Sahib severed ties with those Muslims without any Sharia-compliant reason, purely for some worldly specialty, from his fellow disciple and other Muslims, and did so permanently and publicly in a gathering, then he is no longer fit for Imamat.

1. Al-Quran 16 / 116 & 117
2. Al-Quran 20 / 61

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

उल्लिखित कारणों में उनकी इमामत में मूल रूप से कोई दोष या नापसंदगी भी नहीं है। और जो इस कारण से उनके पीछे नमाज़ को हराम बताता है, वह अल्लाह अज़्ज़-व-जल्ल, उसके नबी (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) और पाकीज़ा शरीयत पर बोहतान (झूठ) बाँधता है। उस पर तौबा फ़र्ज़ है, अन्यथा वह आग के कड़े अज़ाब और जज़्बार (अल्लाह) के क्रोध का पात्र होगा।

अल्लाह तआला ने फ़रमाया: "बेशक जो अल्लाह पर झूठ बाँधते हैं वे कामयाबी नहीं पायेंगे। (यह) दुनिया का थोड़ा सा फ़ायदा है और उनके लिए दर्दनाक अज़ाब है।" (1)

अल्लाह तआला ने फ़रमाया: "तुम्हारी बर्बादी हो, अल्लाह पर झूठ न बाँधो, वरना वह तुम्हें अज़ाब के ज़रिए मिटा देगा।" (2)

अल्लाह की पनाह। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 750: तकुंदी राय, ज़िला लुधियाना, पंजाब से, मुस्तौफ़ा (पूछा गया) इक़बाल अहमद, 7 शव्वाल 1339 हिजरी। दीन के उलेमा इस मसले में क्या फ़रमाते हैं: यहाँ हमारे पास एक सैयद साहब हैं जो क़ुरआन करीम काफ़ी सही पढ़ते हैं। वे एक बहुत ही ऊँचे दर्जे के बुज़ुर्ग के मुरीद हैं, जिनसे उन्हें खिलाफ़त का मर्तबा मिला है। क़ुरआन मजीद अच्छा पढ़ने की वजह से वे अक्सर मस्जिद में इमामत करते हैं। लेकिन उक्त सैयद साहब ने एक तरीका अपनाया है: एक सम्मानित नमाज़ी, तहज्जुद गुज़ार और परहेज़गार नौजवान उनका पीर-भाई है। कुछ दिन पहले तक सैयद साहब उसे ज़ाहिरी और बातिनी तौर पर अपना दोस्त समझते थे, लेकिन अब वे लोगों को उनके चंद साथियों के ख़िलाफ़ ताल्लुक तोड़ने (کتہ تعلق) की तरग़ीब दे रहे हैं, हालाँकि वे बेगुनाह हैं। बिलावजह सैयद साहब आदि ने उन्हें ज़लील करने के लिए यह हरकत की है कि एक बड़ी सभा में सैयद साहब ने बीच में क़ुरआन शरीफ़ रखकर सभा के लोगों से सार्वजनिक रूप से कहा कि उन चंद लोगों से ताल्लुक तोड़ने की कसम खाओ और अज़ीम क़ुरआन पर हाथ रखो कि हमारा यह कहना जीवन भर रहेगा। क्या उक्त सैयद साहब इमामत के लायक हैं या नहीं? अगर हैं, तो क्या वे लोग भी उनके पीछे नमाज़ पढ़ सकते हैं जिनके साथ बिना किसी कारण के ऐसा व्यवहार किया गया है? बयान करें और पुण्य पायें।

अल-जवाब: अगर यह वास्तव में सच है कि उक्त सैयद साहब ने उन मुसलमानों से बिना किसी शरई कारण के, महज़ किसी दुनियावी विशेषता की वजह से अपने पीर भाई और मुसलमानों से संबंध विच्छेद किया और हमेशा के लिए किया और सार्वजनिक रूप से सभा में किया, तो वे इमामत के योग्य नहीं रहे।

1. अल-क़ुरआन 16/116 और 117
2. अल-क़ुरआन 20/61

पृष्ठ 598/736

ان وجوہ مذکور کی امامت میں اصلاً کوئی خلل کیا کراہت بھی نہیں اور جو اس سبب سے اس کے پیچھے نماز حرام بتاتا ہے اللہ عزوجل و نبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم و شریعت مطہرہ پر افترا کرتا ہے اس پر توبہ فرض ہے ورنہ سخت عذاب نار وغضب جبار کا مستحق ہوگا۔

قال اللہ تعالٰی: اللہ تعالٰی نے فرمایا: وہ جو اللہ پر جھوٹا افترا اٹھاتے ہیں فلاح نہ پائیں گے دنیا کا تھوڑا برت لینا ہے اور ان کے لئے دردناک عذاب ہے۔ إِنَّ الَّذِينَ يَفْتَرُونَ عَلَى اللَّهِ الْكَذِبَ لَا يُفْلِحُونَ ۝ مَتَاعٌ قَلِيلٌ وَلَهُمْ عَذَابٌ أَلِيمٌ ۝ ۱

وقال اللہ تعالٰی: اللہ تعالٰی نے فرمایا: تمہاری خرابی ہو اللہ پر جھوٹ نہ باندھو کہ تمہیں عذاب میں بھون ڈالے گا۔ وَيْلَكُمْ لَا تَفْتَرُوا عَلَى اللَّهِ كَذِبًا فَيُسْحِتَكُمْ بِعَذَابٍ ۝ ۲

والعیاذ باللہ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۷۵۰: از تکوندی رائے ضلع لودھیانہ پنجاب مسئولہ اقبال محمد ۷ شوال ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ہمارے یہاں ایک سید صاحب ہیں قرآن کریم کو کافی درست پڑھتے ہیں ایک نہایت ہی اعلٰی بزرگ کے مرید ہیں ان بزرگ سے ان کو خلافت کا رتبہ مل گیا ہے قرآن مجید اچھا پڑھنے کی وجہ سے اکثر مسجد میں امامت کرتے ہیں لیکن سید موصوف نے ایک شغل اختیار کیا ہے وہ یہ کہ ایک باعزت نمازی تہجد خواں پرہیز گار نوجوان کا پیر بھائی ہے اور دو چار یوم پہلے سید صاحب نا معلوم ظاہری و باطنی اس کو دوست سمجھتے تھے مگر اب لوگوں کو ان کے چند آدمیوں کے خلاف قطع تعلق کی ترغیب دیتے ہیں حالانکہ وہ بے قصور ہیں اور بلاوجہ سید صاحب وغیرہ نے ان کو ذلیل کرنے کے لئے یہ حرکت کی ہے کہ ایک بڑے

مجمع میں سید صاحب نے بیٹھ کر قرآن شریف درمیان رکھ کر اہل مجلس کو اعلانیہ کہا کہ ان چند آدمیوں سے قطع تعلق کی قسم کھاؤ اور قرآن عظیم کو ہاتھ لگاؤ کہ ہمارا یہ قول تازندگی رہے گا۔ آیا سید صاحب موصوف امامت کے قابل ہیں یا نہیں، اگر ہیں تو کیا وہ بھی ان کے پیچھے نماز پڑھ سکتے ہیں جن کے ساتھ خواہ مخواہ بلاوجہ ایسا سلوک کیا گیا ہے۔ بینوا توجروا

الجواب: اگر یہ واقعی بات ہے کہ سید صاحب مذکور نے ان مسلمانوں سے بلاوجہ شرعی محض کسی خصوصیت دنیوی کے سبب اپنے پیر بھائی اور مسلمانوں سے قطع تعلق کیا اور ہمیشہ کے لئے کیا اور علانیہ بر سر مجلس کیا تو قابل امامت نہ رہے

۱ القرآن ۱۶/ ۱۱۶ و ۱۱۷ ۲ القرآن ۲۰/ ۶۱

Fatawa Ridawiyya, Volume Six And it is prohibited to appoint them as Imams until they publicly repent for this action, because severing ties with Muslims for more than three days without a valid religious reason is forbidden (haram). The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

[Table 1] Arabic: It is not lawful for a man to boycott his brother for more than three nights; when they meet, this one turns away and that one turns away. The better of the two is the one who initiates the greeting (Salam). (1) - Narrated by Bukhari and Muslim from Abu Ayyub al-Ansari (may Allah be pleased with him). Urdu: It is not lawful for a person to leave his Muslim brother for more than three nights. If they meet on the way, this one turns his face away and that one turns his face away, and the better of them is the one who greets first, i.e., takes the initiative in meeting.

Bukhari and Muslim have narrated this from Hazrat Abu Ayyub Ansari (may Allah be pleased with him). In another Hadith, he (peace and blessings of Allah be upon him) says:

[Table 2] Arabic: It is not lawful for a believer to boycott a believer for more than three (days/nights). If three pass, let him meet him and greet him. If he responds to the greeting, they both share the reward. If he does not respond, he bears the sin, and the one who greeted is free from the sin of boycotting. (2) - Narrated by Abu Dawud from Abu Hurairah (may Allah be pleased with him). Urdu: It is not lawful for any Muslim to sever ties with another Muslim for more than three nights. When three nights have passed, it is mandatory to meet him and greet him. If he answers the greeting, both will share in the reward, and if he does not answer, then all the sin remains on his head; this greeting person has come out of the calamity of severing ties. Abu Dawud narrated this from Hazrat Abu Hurairah (may Allah be pleased with him).

In a third Hadith, he (peace and blessings of Allah be upon him) says:

[Table 3] Arabic: It is not lawful for a Muslim to boycott his brother for more than three. Whoever boycotts for more than three and then dies, enters the Fire (Hell). (3) - Narrated by Ahmad and Abu Dawud. Urdu: It is haram (prohibited) for a Muslim to leave his Muslim brother for more than three nights. Whoever leaves for more than three nights and in that [state dies, enters Hell]...

(1) Sahih Bukhari, Chapter of Boycott (Al-Hijrah) from the Book of Etiquette (Kitab al-Adab), printed by Qadimi Kutub Khana, Asah-ul-Matabi' Karachi, 7/89; Sahih Muslim,

Chapter of the Prohibition of Boycott beyond three days, printed by Nur Muhammad Asah-ul-Matabi' Karachi, 2/316. (2) Sunan Abi Dawud, Chapter on a man boycotting his brother, printed by Aftab Alam Press Lahore, 2/317. (3) Musnad Ahmad bin Hanbal from Musnad Abi Hurairah (may Allah be pleased with him), printed by Dar al-Fikr Beirut, 2/392; Sunan Abu Dawud, Chapter on a man boycotting his brother, printed by Aftab Alam Press Lahore, 2/317.

Note: The words in Musnad Ahmad bin Hanbal are as follows: "No boycott beyond three; so whoever dies [in such a state] enters the Fire." - Nazir Ahmad.

फतावा रिज़विया, खंड छह और उन्हें इमाम बनाना मना है जब तक कि वे इस हरकत से खुलेआम तौबा न करें क्योंकि बिना किसी शरई वजह के तीन दिन से ज़्यादा मुसलमानों से संबंध तोड़ना हराम है। अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं:

[तालिका 1] अरबी: किसी आदमी के लिए यह हलाल नहीं है कि वह अपने मुस्लिम भाई को तीन रातों से ज़्यादा छोड़ दे। जब वे मिलें, तो यह अपना चेहरा फेर ले और वह अपना चेहरा फेर ले। और उनमें से बेहतर वह है जो पहले सलाम करे। (1) - बुखारी और मुस्लिम ने अबू अय्यूब अल-अंसारी (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया। उर्दू: आदमी को हलाल नहीं कि अपने मुसलमान भाई को तीन रात से ज़्यादा छोड़े, राह में मिलें तो यह इधर मुँह फेर ले वह उधर मुँह फेर ले और उनमें बेहतर वह है जो पहले सलाम करे यानी मिलने की पहल करे।

बुखारी और मुस्लिम ने इसे हज़रत अबू अय्यूब अंसारी (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है। दूसरी हदीस में आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं:

[तालिका 2] अरबी: किसी मोमिन के लिए यह हलाल नहीं है कि वह किसी मोमिन से तीन (दिनों) से ज़्यादा संबंध विच्छेद करे। यदि तीन दिन बीत जाएँ तो उसे उससे मिलना चाहिए और उसे सलाम करना चाहिए। यदि वह सलाम का जवाब देता है, तो वे दोनों सवाब (पुण्य) में भागीदार होते हैं। और यदि वह जवाब नहीं देता है, तो वह गुनाह का भागीदार होता है, और सलाम करने वाला संबंध विच्छेद के दोष से मुक्त हो जाता है। (2) - अबू दाऊद ने अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया। उर्दू: किसी मुसलमान को हलाल नहीं कि किसी मुसलमान से तीन रात से ज़्यादा संबंध तोड़े, जब तीन रातें गुज़र जाएँ तो लाज़िम है कि उससे मिले और उसे सलाम करे, अगर सलाम का जवाब दे तो दोनों सवाब में शरीक होंगे और वह जवाब न देगा तो सारा गुनाह उसी के सर रहा यह सलाम करने वाला संबंध तोड़ने के वबाल से निकल गया। इसे अबू दाऊद ने हज़रत अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया।

तीसरी हदीस में आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं:

[तालिका 3] अरबी: किसी मुसलमान के लिए यह हलाल नहीं है कि वह अपने भाई से तीन (दिनों) से ज़्यादा संबंध विच्छेद करे। जो तीन (दिनों) से ज़्यादा संबंध विच्छेद करता है और मर जाता है, वह आग (जहन्नुम) में प्रवेश करता है। (3) - अहमद और अबू दाऊद ने रिवायत किया। उर्दू: मुसलमान

को हराम है कि मुसलमान भाई को तीन रात से ज़्यादा छोड़े, जो तीन रात से ज़्यादा छोड़े और उसी (हालत में मर जाए तो आग में दाखिल होगा)...

(1) सही बुखारी, किताबुल अदब का अध्याय अल-हिजरह, मुद्रित कदीमी कुतुब खाना, असहुल् मताबी कराची, 7/89; सही मुस्लिम, तीन दिनों से अधिक संबंध विच्छेद की मनाही का अध्याय, मुद्रित नूर मुहम्मद असहुल् मताबी कराची, 2/316। (2) सुनन अबू दाऊद, आदमी के अपने भाई से संबंध विच्छेद करने का अध्याय, मुद्रित आफताब आलम प्रेस लाहौर, 2/317। (3) मुसनद अहमद bin हंबल, मुसनद अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से, मुद्रित दारुल फिक्र बेरूत, 2/392; सुनन अबू दाऊद, आदमी के अपने भाई से संबंध विच्छेद करने का अध्याय, मुद्रित आफताब आलम प्रेस लाहौर, 2/317।

नोट: मुसनद अहमद bin हंबल के शब्द इस तरह हैं: "तीन से ज़्यादा कोई संबंध विच्छेद नहीं; तो जो मर गया, वह आग में प्रवेश कर गया।" - नज़ीर अहमद।

पृष्ठ 599 का 736

فتاوی رضویہ جلد ششم اور ان کو امام بنانا منع ہے جب تک اس حرکت سے علانیہ توبہ نہ کریں کہ بلاوجہ شرعی تین دن سے زیادہ مسلمانوں سے قطع تعلق حرام ہے۔ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں :

[Table 1] لا یحل لرجل یھجر اخاہ فوق ثلث لیال یلتقیان فیعرض ھذا ویعرض ھذا وخیرھما الذی یبدأ بالسلام 1- رواہ الشیخان عن ابی ایوب انصاری رضی اللہ تعالٰی عنہ۔ آدمی کو حلال نہیں کہ اپنے مسلمان بھائی کو تین رات سے زیادہ چھوڑے راہ میں ملیں تو یہ ادھر منہ پھیر لے وہ ادھر منہ پھیر لے اور ان میں بہتر وہ ہے جو پہلے سلام کرے یعنی ملنے کی پہل کرے۔

بخاری و مسلم نے اسے حضرت ابو ایوب انصاری رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا ہے۔

دوسری حدیث میں فرماتے ہیں صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم :

[Table 2] لا یحل لمؤمن ان یھجر مؤمنا فوق ثلث فان مرت بہ ثلث فلیلقہ فلیسلم علیہ وان رد علیہ السلام فقد اشترکا فی الاجر فان لم یرد علیہ فقد باء بالاثم وخرج السلم من الھجرۃ 2- رواہ ابوداؤد عن ابی ہریرہ رضی اللہ تعالٰی عنہ۔ کسی مسلمان کو حلال نہیں کہ کسی مسلمان سے تین رات سے زیادہ قطع کرے، جب تین راتیں گزر جائیں تو لازم ہے کہ اس سے ملے اور اسے سلام کرے، اگر سلام کا جواب دے تو دونوں ثواب میں شریک ہوں گے اور وہ جواب نہ دے گا تو سارا گناہ اسی کے سر رہا یہ سلام کرنے والا قطع کے وبال سے نکل گیا۔ اسے ابو داؤد نے حضرت ابو ہریرہ رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا۔

تیسری حدیث میں فرماتے ہیں صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم :

[Table 3] لا یحل لمسلم ان یجھر اخاہ فوق ثلث فمن ھجر فوق ثلث فمات دخل النار 3- رواہ احمد وابوداؤد مسلمان کو حرام ہے کہ مسلمان بھائی کو تین رات سے زیادہ چھوڑے، جو تین رات سے زیادہ چھوڑے اور اسی

1 صحیح بخاری باب الھجرۃ از کتاب الادب مطبوعہ قدیمی کتب خانہ اصح المطابع کراچی ۷/۸۹، صحیح مسلم باب تحریم الھجرۃ فوق ثلاثہ ایام مطبوعہ نور محمد اصح المطابع کراچی ۳۱۶/۲ 2 سنن ابی داؤد باب فی ھجرۃ الرجل اخاہ مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور ۲/۳۱۷ 3 مسند احمد بن حنبل از مسند ابی ہریرہ رضی اللہ تعالٰی عنہ مطبوعہ دار الفکر بیروت ۲/۳۹۲، سنن ابو داؤد باب ھجرۃ الرجل اخاہ مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور ۲/۳۱۷

ف: مسند احمد بن حنبل کے الفاظ اس طرح ہیں لا ھجرۃ فوق ثلاث فمات دخل النار۔ نذیر احمد

Fatawa Razawiyya Volume 6

[...may Allah be pleased with him.] If someone dies in this state, he will enter Hell. Imam Ahmad bin Hanbal and Abu Dawud have narrated this from Hazrat Abu Huraira (may Allah be pleased with him). (T)

It is known that this is a major sin because there is a threat of fire (Hell) for it. One who openly commits a major sin is an 'open sinner' (Fasiq Mu'lin). Appointing an open sinner as an Imam is a sin, and praying behind him is 'Makruh Tahrimi' (prohibitively disliked), such that it is a sin to pray behind him and mandatory to repeat the prayer. It is stated in Fatawa al-Hujja: "If they put forward a Fasiq (as Imam), they are sinners." (T). It is stated in Tabyin al-Haqa'iq:

"For in presenting him for the Imamate is his glorification, whereas his degradation is religiously mandatory." (T)

In this regard, those whom the Sayyid has cut ties with and those with whom he has not, are all equal; praying behind all of them will be 'Makruh Tahrimi' until they repent. Allah Almighty knows best.

Question No. 51, 57: From Richha Road town, District Bareilly, asked by Hakim Muhammad Ahsan Sahib, 9 Shawwal 1339 AH.

What do the scholars of religion say regarding these issues: (1) Is it permissible to pray behind a Fasiq/Fajir (sinner/evildoer) when there is no one else to lead the prayer or not? (2) Is prayer behind a fisherman permissible or not? Explain and you shall be rewarded.

Answer: (1) If he openly commits sins and evildoing, and no one else worthy of the Imamate can be found, then pray alone.

"For putting forward a Fasiq is a sin, and praying behind him is Makruh Tahrimi, and the congregational prayer is Wajib (mandatory). Thus, they are both at the same level, but averting harms is more important and necessary than attaining benefits." (T)

And if someone commits a sin secretly, then pray behind him and do not leave the congregation due to his sin.

---

1 Ghuniyat al-Mustamli Sharh Munyat al-Musalli, Chapter on Imamate, printed by Suhail Academy Lahore, p. 513. 2 Tabyin al-Haqa'iq, Chapter on Imamate, al-Matba'a al-Kubra al-Amiriyyah, Bulaq, Egypt, 1/134.

फतावा रज़विया जिल्द 6

[...अल्लाह उनसे राज़ी हो।] अगर कोई इस हालत में मर गया, तो वह जहन्नुम में जाएगा। इमाम अहमद बिन हंबल और अबू दाऊद ने इसे हज़रत अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है। (त)

इससे मालूम हुआ कि यह गुनाह-ए-कबीरा है क्योंकि इस पर आग की धमकी दी गई है। गुनाह-ए-कबीरा को खुल्लम-खुल्ला करने वाला 'फ़ासिक़-ए-मुअ्लिन' (खुला गुनहगार) है। फ़ासिक़-ए-मुअ्लिन को इमाम बनाना गुनाह है और उसके पीछे नमाज़ पढ़ना 'मकरूह-ए-तहरीमी' है, यानी पढ़ना गुनाह है और दोहराना वाजिब है। 'फ़तावा-ए-हुज्ज' में है: "अगर उन्होंने फ़ासिक़ को आगे बढ़ाया तो वे गुनहगार होंगे।" (त)। 'तबईनुल हक़ाएक़' में है:

"क्योंकि इमामत के लिए फ़ासिक़ को आगे बढ़ाने में उसकी ताज़ीम (सम्मान) है, हालांकि शरीअत के मुताबिक़ उसकी तौहीन (अपमान) वाजिब है।" (त)

और इसमें वे लोग बराबर हैं जिनसे सैय्यद साहब ने ताल्लुक़ तोड़ लिया और वे जिनसे नहीं तोड़ा, उन सभी के पीछे नमाज़ पढ़ना मकरूह-ए-तहरीमी होगा जब तक कि वे तौबा न कर लें। अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 51, 57: क़स्बा रिच्छा रोड, ज़िला बरेली से, मुस्तौले (पूछने वाले) हकीम मुहम्मद अहसन साहब, 9 शव्वाल 1339 हिजरी।

उलेमा-ए-दीन इन मसलों में क्या फरमाते हैं कि: (1) फ़ासिक़-ओ-फ़ाजिर के पीछे, जब कोई और नमाज़ पढ़ाने वाला न हो, नमाज़ पढ़ना जायज़ है या नहीं? (2) क्या मछुआरे के पीछे नमाज़ जायज़ है या नहीं? बयान कीजिए, आपको सवाब मिलेगा।

अल-जवाब (उत्तर): (1) अगर वह खुल्लम-खुल्ला गुनाह और बदकारी करता है और दूसरा कोई इमामत के क़ाबिल न मिल सके तो तन्हा (अकेले) नमाज़ पढ़ें।

"क्योंकि फ़ासिक़ को आगे बढ़ाना गुनाह है और उसके पीछे नमाज़ पढ़ना मकरूह-ए-तहरीमी है, और जमाअत वाजिब है। तो ये दोनों एक ही दर्जे में हुए, लेकिन फ़ायदों को हासिल करने से ज़्यादा ज़रूरी नुक़सान को खत्म करना है।" (त)

और अगर कोई गुनाह छुपा कर करता है, तो उसके पीछे नमाज़ पढ़ें और उसके फ़िस्क़ (गुनाह) के कारण जमाअत न छोड़ें।

---

1 ग़ुनियतुल मुस्तमली शरह मुनियतुल मुसल्ली, फ़सल फ़िल इमामत, मतबुआ सुहैल एकेडमी लाहौर, पृ. 513. 2 तबईनुल हक़ाएक़, बाबुल इमामत, अल-मतबअतुल कुबरा अल-अमीरिया बुलाक़ मिस्र, 1/134.

فتاوی رضویہ جلد ششم

عنہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ ۔ حالت میں مرے وہ جہنم میں جائے گا۔ امام احمد بن حنبل اور ابوداؤد نے اسے حضرت ابوہریرہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا ہے۔ (ت)

معلوم ہوا کہ یہ کبیرہ ہے کہ اس پر وعید نار ہے اور کبیرہ کا اعلانیہ مرتکب فاسق معلن، اور فاسق معلن کو امام بنانا گناہ اور اس کے پیچھے نماز مکروہ تحریمی کہ پڑھنی گناہ اور پھیرنی واجب۔ فتاویٰ حجہ میں ہے: "لو قد موا فاسقایأثمون" (اگر انھوں نے فاسق کو مقدم کیا تو گنہ گار ہوں گے۔ ت) تبیین الحقائق میں ہے:

لان فی تقدیمه للامامة تعظیمة وقد وجب علیهم اهانته شرعاً۔ کیونکہ امامت کے لئے فاسق کی تقدیم میں اس کی تعظیم ہے حالانکہ اس کی اہانت شرعاً واجب ہے (ت)

اور اس میں برابر ہیں وہ جن سے سید صاحب نے قطع تعلق کیا اور وہ جن سے قطع نہ کیا سب کی نماز ان کے پیچھے مکروہ تحریمی ہوگی جب تک توبہ نہ کریں۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۵۱، ۵۷: از قصبہ رچھا روڈ ضلع بریلی مسئولہ حکیم محمد احسن صاحب ۹ شوال ۱۳۳۹ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین ان مسئلوں میں کہ: (۱) فاسق فاجر کے پیچھے جب کوئی نماز پڑھانے والا نہ ہو نماز پڑھنا جائز ہے یا نہیں۔ (۲) ماہی گیر کے پیچھے نماز جائز ہے نہیں۔ بینوا توجروا

الجواب: (۱) اگر اعلانیہ فسق وفجور کرتا ہے اور دوسرا کوئی امامت کے قابل نہ مل سکے تو تنہا نماز پڑھیں۔

فان تقديم الفاسق اثم والصلاة خلفه مكروهة تحريماً والجماعة واجبة فهما في درجة واحدة ودرء المفاسد اهم من جلب المصالح۔ کیونکہ تقدیم فاسق گناہ ہے اور اس کے پیچھے نماز پڑھنا مکروہ تحریمی ہے اور جماعت واجب ہے، پس دونوں کو درجہ ایک ہوا، لیکن مصالح کے حصول سے مفاسد کو ختم کرنا اہم اور ضروری ہوتا ہے۔ (ت)

اور اگر کوئی گناہ چھپا کر کرتا ہے تو اس پیچھے نماز پڑھیں اور اس کے فسق کے سبب جماعت نہ چھوڑیں،

---

1 غنیة المستملی شرح منیة المصلی فصل فی الامامة مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۵۱۳ 2 تبیین الحقائق باب الامامة المطبعة الکبری الامیریہ بولاق مصر ۱/ ۱۳۴

Fatawa Razawiyya, Volume 6

[Top Box Left - Arabic]: لان الجماعة واجبة والصلاة خلف فاسق غير معلن لا تكره الا تنزيها - واللہ تعالیٰ اعلم [Top Box Right - Urdu]: Because the congregational prayer is obligatory, and praying behind an unannounced (non-public) sinner is at most "Makruh Tanzihi" (mildly disliked). (T)

(2) It is permissible. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 753, 754, 755: From Sanatorium, District Nainital, requested by Siraj Ali Khan Sahib Razvi Barelwi, 16 Shawwal 1339 AH. What do the scholars of religion say regarding these issues: (1) What is the definition of a 'Fasiq' (sinner)? Is there a difference between 'Fasiq' and 'Fajir'? How is the prayer behind a Fasiq? When is someone called a 'Fasiq-e-Mu'lin' (public sinner), and how is the prayer behind him? What is the ruling for the person who intentionally makes him an Imam? (2) What is the ruling for wearing rings or bands on hands or feet, meaning wearing more than one single-stone ring according to the pure Sharia? How is the prayer behind such a person? To what degree of sin is a person who insists that "prayer is not harmed by these small things"? (3) Two or three persons gather and want to pray in congregation: One is completely ignorant, but his appearance, clothing, etc., are all according to Sharia, and he is regular in prayer, but he does not know how to recite the Holy Quran, and his pronunciation is not correct at all. The second one is literate, can recite the Quran, and knows necessary issues, but is a 'Fasiq'. The third is a traveler for whom shortened prayer (Qasr) is obligatory; in terms of lack of knowledge, he is at the same level as the first person, but he can recite in a mediocre way only those surahs that frequently occur in prayer, like Al-Hamd Sharif or Qul Huwallah Sharif, etc. Who among them should be made the Imam? And if no one is capable of leading, should they pray individually? Please clarify and be rewarded.

The Answer: (1) A 'Fasiq' is one who has committed a major sin (Kabeera), and he is also a 'Fajir'. Sometimes 'Fajir' specifically refers to an adulterer. Prayer behind a Fasiq is disliked (Makruh). If he is not 'Mu'lin' (public), i.e., he commits the sin secretly and is not well-known for it, then the dislike is 'Tanzihi' (mild), meaning it's better not to. If he is a 'Fasiq-e-Mu'lin', meaning he openly commits major sins or persists in minor sins, then making him an Imam is a sin, and praying behind him is 'Makruh Tahrimi' (prohibitively disliked), which is a sin. If one has prayed behind him, repeating the prayer is obligatory (Wajib). And Allah Almighty knows best. (2) Wearing it once or twice is a minor sin (Saghira), and if he wore it and then took it off, there is

no harm in the prayer behind him. But if he wears it during prayer, making him an Imam is prohibited and prayer behind him is Makruh. Similarly, if someone habitually wears it, he is a 'Fasiq-e-Mu'lin', and making him an Imam is a sin, even if he is not wearing it at the time of prayer. Calling a sin "a small thing", even if it is a minor one, is a very severe crime. Repentance is obligatory for this person. And Allah Almighty knows best. (3) In the mentioned case, the traveler should be made the Imam, as making a Fasiq an Imam is a sin, and prayer behind one who recites incorrectly...

फतवा-ए-रजविया, खंड 6

[शीर्ष बॉक्स - अरबी]: لان الجماعة واجبة والصلاة خلف فاسق غير معلن لا تكره الا تنزيها - والله تعالىٰ اعلم [शीर्ष बॉक्स - उर्दू अनुवाद]: क्योंकि जमात वाजिब है और फासिक़-ए-गैर-मुअलिन (अघोषित पापी) के पीछे नमाज़ पढ़ना ज़्यादा से ज़्यादा मकरूह-ए-तन्ज़ीही है। (त)

(2) जायज़ है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 753, 754, 755: सैनिटोरियम, ज़िला नैनीताल से, मुस्तौला सिराज अली खान साहब रिज़वी बरेलवी, 16 शव्वाल 1339 हिजरी। धर्म के विद्वान इन मसलों में क्या कहते हैं कि: (1) 'फासिक़' (पापी) की परिभाषा क्या है? क्या 'फासिक़' और 'फ़ाजिर' में कोई अंतर है? फासिक़ के पीछे नमाज़ कैसी है? किसी को 'फासिक़-ए-मुअलिन' (सार्वजनिक पापी) कब कहा जाएगा और उसके पीछे नमाज़ कैसी है? उसे जानकर इमाम बनाने वाले का क्या हुक्म है? (2) हाथ या पैर में अंगूठियां या छल्ले पहनना, यानी शरीयत-ए-मुताहरा के अनुसार एक नग वाली एक अंगूठी से अधिक पहनने वाले का क्या हुक्म है? उसके पीछे नमाज़ कैसी है? इस बात पर अड़ने वाला कि "इन छोटी-छोटी बातों से नमाज़ में कोई खराबी नहीं आती", किस दर्जे का गुनहगार है? (3) दो या तीन व्यक्ति इकट्ठा होकर जमात से नमाज़ पढ़ना चाहते हैं: एक बिल्कुल जाहिल है लेकिन उसकी सूरत, लिबास आदि सब शरीयत के मुताबिक है और नमाज़ी भी है, मगर उसे कुरान पाक की तिलावत नहीं आती और तलफ़्फ़ुज़ बिल्कुल सही नहीं होता। दूसरा पढ़ा-लिखा है, कुरान की तिलावत कर सकता है और ज़रूरी मसले भी जानता है, लेकिन 'फासिक़' है। तीसरा मुसाफिर है जिस पर क़स्र (नमाज़ छोटी करना) वाजिब है; अज्ञानता में वह पहले व्यक्ति के बराबर है, लेकिन वह केवल उन सूरतों को मामूली तरीके से पढ़ सकता है जो नमाज़ में बार-बार आती हैं जैसे अल-हम्द शरीफ या क़ुल हुवल्लाहु शरीफ आदि। इनमें से किसे इमाम बनाया जाए? और अगर कोई भी इमामत के लायक नहीं है, तो क्या अलग-अलग पढ़ें? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: (1) 'फासिक़' वह है जिसने किसी गुनाह-ए-कबीरा (बड़ा पाप) को किया हो और वही 'फ़ाजिर' है। कभी-कभी 'फ़ाजिर' विशेष रूप से ज़ानी (व्यभिचारी) को कहते हैं। फासिक़ के पीछे नमाज़ मकरूह है। फिर अगर वह 'मुअलिन' न हो, यानी वह गुनाह छुप कर करता हो और मशहूर न हो, तो कराहत-ए-तन्ज़ीही है यानी खिलाफ-ए-औला (बेहतर यह है कि न किया जाए)। अगर वह 'फासिक़-ए-मुअलिन' है कि खुलेआम कबीरा का इर्तिकाब करता है या गुनाह-ए-सगीरा (छोटा पाप) पर अड़ा

रहता है, तो उसे इमाम बनाना गुनाह है और उसके पीछे नमाज़ मकरूह-ए-तहरीमी है, जिसे पढ़ना गुनाह है और अगर पढ़ ली तो उसे दोहराना वाजिब है। वल्लाहु तआला आलम। (2) एक-आध बार पहनना गुनाह-ए-सगीरा है और अगर पहनी और उतार दी तो उसके पीछे नमाज़ में कोई हर्ज़ नहीं। लेकिन अगर नमाज़ में पहने हो तो उसे इमाम बनाना मना है और उसके पीछे नमाज़ मकरूह है। इसी तरह जो पहनने का आदी है वह 'फासिक़-ए-मुअलिन' है और उसका इमाम बनाना गुनाह है, चाहे वह उस वक़्त नमाज़ में न भी पहने हो। गुनाह चाहे सगीरा ही क्यों न हो, उसे छोटी बात कहना बहुत बड़ा जुर्म है। इस शख्स पर तौबा फर्ज़ है। वल्लाहु तआला आलम। (3) उक्त स्थिति में मुसाफिर को इमाम बनाया जाए क्योंकि फासिक़ को इमाम बनाना गुनाह है और गलत पढ़ने वाले के पीछे नमाज़...

لان الجماعة واجبة والصلٰوة خلف فاسق غیر معلن لا تکرہ الا تنزیھا - واللہ تعالٰی اعلم کیونکہ جماعت واجب ہے اور فاسق غیر معلن کے پیچھے نماز پڑھنا زیادہ سے زیادہ مکروہ تنزیہی ہے (ت)

(۲) جائز ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم مسئلہ نمبر ۷۵۳، ۷۵۴، ۷۵۵: از سینوٹوریم ضلع نینی تال مسئولہ سراج علی خان صاحب رضوی بریلوی ۱۶ شوال ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین ان مسائل میں کہ: (۱) فاسق کی کیا تعریف ہے؟ فاسق و فاجر میں کوئی فرق ہے؟ فاسق کے پیچھے نماز کیسی ہے؟ فاسق معلن کب کہا جائے گا اور اس کے پیچھے نماز کیسی ہے، اسے جان کر امام بنانے والے کا کیا حکم ہے؟ (۲) ہاتھ یا پیر میں انگوٹھی چھلے پہننا یعنی ایک نگ کی ایک انگوٹھی موافق شریعت مطہرہ سے زائد پہننے والے کا کیا حکم ہے، اُس کے پیچھے نماز کیسی، اس پر اصرار کرنے والا کہ ان چھوٹی چھوٹی باتوں سے نماز میں کوئی خرابی نہیں آتی کس درجہ موردِ گناہ ہے۔ (۳) دو یا تین ۳ شخص ایسے جمع ہو کر جماعت سے نماز پڑھنا چاہتے ہیں کہ ایک بالکل جاہل مگر صورت ہیئت لباس وغیرہ سب شریعت کے مطابق ہے اور نمازی بھی ہے مگر قرآن پاک کی تلاوت اس کو نہیں آتی اور تلفظ بالکل ادا نہیں ہوتا، دوسرا خواندہ قرآن کی قرات کر سکتا ہے ضروری مسائل بھی جانتا ہے مگر فاسق ہے، تیسرا مسافر ہے جس پر قصر واجب ہے بے علمی میں پہلے شخص کا درجہ رکھتا ہے مگر صرف ان سورتوں میں معمولی طریقہ سے پڑھ سکتا ہے جو نماز میں بار بار آتی ہیں مثلاً الحمد شریف یا قل ھواللہ شریف وغیرہ، ان میں سے کس کو امام بنایا جائے، اور اگر کوئی بھی امامت کے قابل نہیں تو کیا علیحدہ علیحدہ پڑھیں۔ بینوا توجروا

الجواب: (۱) فاسق وہ کہ کسی گناہِ کبیرہ کا مرتکب ہوا اور وہی فاجر ہے، اور کبھی فاجر خاص زانی کو کہتے ہیں، فاسق کے پیچھے نماز مکروہ ہے پھر اگر معلن نہ ہو یعنی وہ گناہ چھپ کر کرتا ہو معروف و مشہور نہ ہو تو کراہت تنزیہی ہے یعنی خلافِ اولٰی، اگر فاسق معلن ہے کہ علانیہ کبیرہ کا ارتکاب یا صغیرہ پر اصرار کرتا ہے تو اسے امام بنانا گناہ ہے اور اس کے پیچھے نماز مکروہِ تحریمی کے پڑھنی گناہ اور پڑھ لی تو پھیرنی واجب۔ واللہ تعالٰی اعلم (۲) ایک آدھ بار پہننا گناہِ صغیرہ اور اگر پہنی اور اتار ڈالی تو اس کے پیچھے نماز میں حرج نہیں اور اگر نماز میں پہنے ہو تو اسے امام بنانا ممنوع اور اس کے پیچھے نماز مکروہ، یوں ہی جو پہنا کرتا ہے اُس کا عادی ہے فاسق معلن ہے اور اس کا امام بنانا گناہ اگر اس وقت نماز میں نہ بھی پہنے ہو۔ گناہِ اگرچہ صغیرہ ہو اسے چھوٹی بات کہنا بہت سخت جرم ہے، اس شخص پر توبہ فرض ہے واللہ تعالٰی اعلم۔ (۳) صورت مذکور میں اس مسافر کو امام کیا جائے کہ فاسق کو امام بنانا گناہ ہے اور غلط خواں کے پیچھے نماز

Fatawa Razawiyya Volume Six Void. And Allah Almighty knows best. Problem No. 756, 757: From Meerut City, District Jodhpur, asked by Fakhruddin Shah, 19 Dhu al-Qi'dah 1339 AH. What do the scholars of religion say regarding: (1) Is the prayer valid behind someone who troubles orphans, engages in backbiting, swears false oaths, and creates discord among Muslims, or not? (2) A person here in Meerut is called a Pirzada. He divorced his wife. He was advised for three consecutive days but did not listen. He was asked to give the dower (Mahr). He said, "I have had the dower forgiven." Then we inquired from the girl, she replied that "I have forgiven the dower." Then her uncle etc. sent the girl back to his house without remarriage. Has the divorce occurred or not? A child was born to them; is that child illegitimate or not? Is it correct to pray behind him? He has great enmity towards an orphan. Explain and you will be rewarded. Answer: (1) Troubling orphans without a legal (Shari'i) reason is strictly forbidden (Haram). Similarly, backbiting is worse than adultery, provided it is backbiting according to Shari'ah; for instance, backbiting an openly sinful person (fasiq-e-mu'allin) is not backbiting. Describing the evils of a person with deviant beliefs is itself a Shari'i command. A false oath leaves houses desolate. Creating discord among Muslims without a Shari'i reason is the work of Satan, and "fitna" (discord/trial) is worse than killing. Fitna is sleeping; the curse of Allah is upon the one who awakens it. It is a sin to make someone who openly commits these acts an Imam, and praying behind him is Makruh Tahrimi (prohibitively disliked). Such a prayer is a sin and must be repeated. And Allah Almighty knows best. (2) The divorce has occurred and if the woman has forgiven the dower, it is forgiven. If the child is born within two years of the divorce, it is legitimate and belongs to that husband. Divorcing does not affect the eligibility for leading the prayer. Having baseless enmity towards an orphan is a severe sin; if his baseless enmity is publicly known, then he is not fit to be made an Imam. And Allah Almighty knows best. Problem No. 758: From Ferozepur Cantonment, Kabari Bazaar, asked by Haji Khwaja-ud-Din Tailor Master, 29 Dhu al-Qi'dah 1339 AH. What do the scholars of religion say about whether prayer is permissible at any time behind an adulterer and a drunkard? When the resident Imam appoints everyone as an Imam, is this permissible or not? Explain and you will be rewarded. Answer: It is not permissible to offer prayer behind an adulterer and a drunkard at any time, except where Friday (Jumu'ah) and Eid prayers are held in only one place and the Imam is an open sinner (fasiq). In that case, they may be offered behind him, but for Friday prayer, repeat it as four units (Rakat) of Zuhr prayer. In prayers other than Jumu'ah and Eid, if... Page 602 of 736

फ़तावा रज़विया जिल्द छठा बातिल। वल्लाहु तआला आलम मसला नम्बर ७५६, ७५७: अज़ मेरठ सिटी ज़िला जोधपुर मस्ऊला फ़ख़रुद्दीन शाह १९ ज़ीक़ाद १३३९ हिजरी क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन कि: (१) यतीमों को तकलीफ़ देना और ग़ीबत करना और झूठी क़सम खाना मुसलमानों में नफ़ाक़ डलवाने वाले के पीछे नमाज़ दुरुस्त है या नहीं। (२) एक शख़्स यहाँ मेरठ में पीरज़ादा कहलाते हैं उस ने अपनी औरत को तलाक़ दी तीन रोज़ बराबर उस को समझाया पर नहीं माना, कहा कि महर दे, कहा कि महर मैंने माफ़ करवाया, फिर हमने उस लड़की से तलाश किया, जवाब दिया कि महर तो मैंने माफ़ कर दिया, और फिर उसके चचा वग़ैरह ने उस लड़की को उसके घर भिजवा दिया बग़ैर निकाह करे, तलाक़ हुई या नहीं, उसके बच्चा पैदा हुआ वह हराम का है या नहीं, उसके पीछे नमाज़ दुरुस्त है या नहीं, यतीम से बहुत अदावत रखता है। बय्यिनू तूजिरू। अल-जवाब: (१) यतीमों को बिला वजह शरई तकलीफ़ देना सख़्त हराम है, यूँही ग़ीबत ज़िना से सख़्त तर है जबकि शरअन ग़ीबत हो मसलन फ़ासिक़-ए-मुअल्लन की ग़ीबत ग़ीबत नहीं, और बद मज़हब की बुराइयां बयान करने का ख़ुद शरअन हुक्म है, झूठी क़सम घरों को वीरान कर छोड़ती है, और मुसलमानों में बिला वजह शरई तफ़रक़ा डालना शैतान का काम है, और फ़ितना क़त्ल से सख़्त तर है, फ़ितना सो रहा है उसके जगाने वाले पर अल्लाह की लानत है, जो इन अफ़आल का अलानिया मुर्तकिब हो उसे इमाम बनाना गुनाह है और उसके पीछे नमाज़ मकरूह-ए-तहरीमी की पढ़ी गई गुनाह और फेरनी वाजिब। वल्लाहु तआला आलम। (२) तलाक़ हो गई और महर औरत ने माफ़ कर दिया है माफ़ हो गया। बच्चा अगर तलाक़ से दो २ बरस के अंदर पैदा हुआ हलाली है उसी शौहर का है। तलाक़ देने से नमाज़ की इमामत में कोई ख़लल नहीं आता। यतीम से बिला वजह अदावत सख़्त गुनाह है, अगर उसकी बिला वजह अदावत अलानिया मशहूर है तो इमाम बनाने के क़ाबिल नहीं। वल्लाहु तआला आलम। मसला नम्बर ७५८: अज़ छावनी फ़ीरोज़पुर कबाड़ी बाज़ार मस्ऊला हाजी ख़्वाजाुद्दीन टेलर मास्टर २९ ज़ीक़ाद १३३९ हिजरी क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन कि ज़िनाकार और शराबी के पीछे नमाज़ किसी वक़्त जाइज़ है या नहीं जब इमाम मुक़ीम हो वह हर एक को इमाम मुक़र्रर कर देता है यह जाइज़ है कि नहीं। बय्यिनू तूजिरू। अल-जवाब: ज़ानी और शराबी के पीछे किसी वक़्त नमाज़ पढ़ने की इजाज़त नहीं मगर जहाँ जुमा व ईदैन एक ही जगह होते हों और इमाम फ़ासिक़ हो उस के पीछे पढ़ लिये जाएं और जुमा का इआदा को चार रकत ज़ोहर पढ़ें, इमाम ग़ैर जुमा व ईदैन में अगर... पेज ६०२ ऑफ़ ७३६

فتاویٰ رضویہ جلد ششم باطل۔ واللہ تعالیٰ اعلم مسئلہ نمبر ۷۵۶، ۷۵۷: از میرٹھ سٹی ضلع جودھ پور مسئولہ فخر الدین شاہ ۱۹ ذیقعد ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین کہ : (۱) یتیموں کو تکلیف دینا اور غیبت کرنا اور جھوٹی قسم کھانا مسلمانوں میں نفاق ڈلوانے والے کے پیچھے نماز درست ہے یا نہیں۔ (۲) ایک شخص یہاں میرٹھ میں پیرزادہ کہلاتے ہیں اس نے اپنی عورت کو طلاق دی تین روز برابر اس کو سمجھایا پر نہیں مانا، کہا کہ مہر دے، کہا کہ مہر میں نے معاف کروایا، پھر ہم نے اس لڑکی سے تلاش کیا، جواب دیا کہ مہر تو میں نے معاف کر دیا، اور پھر اس کے چچا وغیرہ نے اس لڑکی کو اس کے گھر بھجوا دیا بغیر نکاح کرے، طلاق ہوئی یا نہیں، اس کے بچہ پیدا ہوا وہ حرام کا ہے یا نہیں، اس کے پیچھے نماز درست ہے یا نہیں، یتیم سے بہت عداوت رکھتا ہے۔ بینوا توجروا الجواب: (۱) یتیموں کو بلاوجہ شرعی تکلیف دینا سخت حرام ہے، یونہی غیبت زنا سے سخت تر ہے جبکہ شرعاً غیبت ہو مثلاً فاسق معلن کی غیبت غیبت نہیں، اور بد مذہب کی برائیاں بیان کرنے کا خود شرعاً حکم ہے، جھوٹی قسم گھروں کو ویران کر چھوڑتی ہے، اور مسلمانوں میں بلاوجہ شرعی تفرقہ ڈالنا شیطان کا کام ہے، اور فتنہ قتل سے سخت تر ہے، فتنہ سو رہا ہے اس کے جگانے والے پر اللہ کی لعنت ہے، جو ان افعال کا علانیہ مرتکب ہو اسے امام بنانا گناہ ہے اور اس کے پیچھے نماز مکروہ تحریمی کی پڑھی گئی گناہ اور پھیرنی واجب۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔ (۲) طلاق ہو گئی اور مہر عورت معاف کر دیا ہے معاف ہو گیا۔ بچہ اگر طلاق سے دو ۲ برس کے اندر پیدا ہوا حلالی ہے اسی شوہر کا ہے۔ طلاق دینے سے نماز کی امامت میں کوئی خلل نہیں آتا۔ یتیم سے بلاوجہ عداوت سخت گناہ ہے، اگر اس کی بلاوجہ عداوت علانیہ مشہور ہے تو امام بنانے کے قابل نہیں۔ واللہ تعالیٰ اعلم مسئلہ نمبر ۷۵۸: از چھاؤنی فیروز پور کباڑی بازار مسئولہ حاجی خواج الدین ٹیلر ماسٹر ۲۹ ذیقعد ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین کہ زناکار اور

شرابی کے پیچھے نماز کسی وقت جائز ہے یا نہیں جب امام مقیم ہو وہ ہر ایک کو امام مقرر کر دیتا ہے یہ جائز ہے کہ نہیں۔ بینوا توجروا۔ الجواب: زانی اور شرابی کے پیچھے کسی وقت نماز پڑھنے کی اجازت نہیں مگر جہاں جمعہ و عیدین ایک ہی جگہ ہوتے ہوں اور امام فاسق ہو اس کے پیچھے پڑھ لئے جائیں ور جمعہ کا اعادہ کو چار رکعت ظہر پڑھیں، امام غیر جمعہ وعیدین میں اگر

Fatawa-e-Razvia Volume 6

...to another who is fit for leadership (Imamate) and appoints him as Imam, there is no harm; rather, if that person exceeds him in knowledge and virtue, then this is better. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 59: From Alipur Tipra, sent by Mansab Ali, 12 Shaban 1337 AH. A person who learned the recitation (Qira'at) from Makkah al-Mukarramah and stayed there for several years as a teacher, but he trims his beard. Is it permissible to perform the five daily prayers and Friday prayers behind him or not? State the ruling and be rewarded.

The Answer: To make a person who trims their beard an Imam is a sin, and prayer behind him is 'Makruh Tahrimi' (prohibitively disliked), meaning it is a sin to offer it and mandatory (Wajib) to repeat it. Staying in Makkah al-Mukarramah and learning recitation does not turn a 'Fasiq' (transgressor) into a non-transgressor. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 60: From Fatehpur, District Shahjahanpur, sent by Maqbool Hasan Khan, Assistant Teacher Municipal School, 17 Shaban 1337 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: if a person has missed their Fajr prayer, can they lead the Dhuhr prayer or other prayers as an Imam or not?

The Answer: If he is a 'Sahib-e-Tarteeb' (a person required to offer prayers in sequential order), then he cannot lead the Dhuhr prayer until he makes up for the missed Fajr prayer; otherwise, he can. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 61, 62: From Pilibhit, Mohalla Ahmadzai, sent by Maulvi Abdul Subhan Sahib, 12 Ramadan-ul-Mubarak 1337 AH. What do the scholars of religion say in these matters: (1) Is it permissible to pray Taraweeh or obligatory prayers behind a deaf person or not? (2) Is there any specific condition for a deaf person or not?

The Answer: (1) It is permissible, though someone else is better unless this person is superior to others in knowledge and recitation. And Allah Almighty knows best. (2) It is the same as mentioned in the first answer. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 73: From Sahswani Tola, sent by Muhammad Yamin, 6 Shawwal 1337 AH. Amr is a big joker and frequently makes jokes with very foul language. Is prayer behind him correct or not?

The Answer: To make him an Imam is a sin, and prayer behind him is 'Makruh Tahrimi'. And Allah Almighty knows best.

फ़तावा-ए-रज़विया खंड 6

...दूसरे को जो इमामत के योग्य है और उसे इमाम बना देता है, तो इसमें कोई हर्ज नहीं है; बल्कि यदि वह उससे ज्ञान और गुण में अधिक हो, तो यही बेहतर है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 59: अलीपुर टिपरा से, प्रेषक मनसब अली, 12 शाबान 1337 हिजरी। मक्का मुअज्जमा से क़िरात (कुरान पाठ) सीखा हुआ एक व्यक्ति वहां कई वर्षों तक शिक्षक रहा, लेकिन वह दाढ़ी कटवाता है। क्या उसके पीछे पांच वक्त की नमाज़ और जुमा की नमाज़ जायज़ है या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

अल-जवाब: दाढ़ी कटवाने वाले को इमाम बनाना गुनाह है और उसके पीछे नमाज़ 'मक़रूहे तहरीमी' है, जिसे पढ़ना गुनाह और उसे दोहराना वाजिब (अनिवार्य) है। मक्का मुअज्जमा में रहकर क़िरात सीखना किसी 'फासिक' (पापी) को 'गैर-फासिक' नहीं बना देगा। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 60: फतेहपुर, जिला शाहजहांपुर से, प्रेषक मकबूल हसन खान, सहायक शिक्षक म्युनिसिपल स्कूल, 17 शाबान 1337 हिजरी। धर्म के विद्वान इस विषय में क्या कहते हैं कि जिस व्यक्ति की फज्र की नमाज़ कज़ा (छूट गई) हो गई हो, क्या वह ज़ुहर या अन्य समय की नमाज़ों में इमाम हो सकता है या नहीं?

अल-जवाब: यदि वह 'साहिबे तरतीब' (क्रम का पालन करने वाला) है, तो जब तक वह फज्र की कज़ा नमाज़ अदा नहीं कर लेता, तब तक वह ज़ुहर की इमामत नहीं कर सकता, अन्यथा कर सकता है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 61, 62: पीलीभीत, मोहल्ला अहमदज़ई से, प्रेषक मौलवी अब्दुल सुभान साहब, 12 रमज़ान-उल-मुबारक 1337 हिजरी। धर्म के विद्वान इन मसलों में क्या कहते हैं: (1) क्या बहरे के पीछे तरावीह या फर्ज़ नमाज़ पढ़ना जायज़ है या नहीं? (2) क्या बहरे के लिए कोई विशेष शर्त है या नहीं?

अल-जवाब: (1) जायज़ है और उसके अलावा दूसरा व्यक्ति बेहतर है, बशर्ते कि वह व्यक्ति ज्ञान और क़िरात में दूसरों से श्रेष्ठ न हो। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (2) वही है जो पहले उत्तर में बताई गई है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 73: सहस्वानी टोला से, प्रेषक मोहम्मद यामीन, 6 शव्वाल 1337 हिजरी। अम्र बहुत मज़ाकिया है और बहुत गंदी गालियों के साथ मज़ाक करता रहता है। क्या उसके पीछे नमाज़ सही है या नहीं?

अल-जवाब: उसे इमाम बनाना गुनाह है और उसके पीछे नमाज़ 'मक़रूहे तहरीमी' है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

دوسرے کو کہ صالح امامت ہے اور امام کردیتا ہے حرج نہیں بلکہ وہ اگر اس سے علم و فضل میں زائد ہو تو اسے یہی بہتر ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۵۹: از علی پور ٹپرا مسئولہ منصب علی ۱۲ شعبان ۱۳۳۷ھ قاری مکہ معظمہ کا قرات سیکھا ہوا اور وہاں پر چند سال رہ کر معلمی کیا لیکن داڑھی ترشواتا ہے آیا اس کے پیچھے نماز پنجگانہ اور جمعہ جائز ہے یا نہیں۔ بینوا توجروا

الجواب: داڑھی ترشوانے والے کو امام بنانا گناہ ہے اور اس کے پیچھے نماز مکروہ تحریمی کہ پڑھنی گناہ اور پھیرنی واجب، اور مکہ معظمہ میں رہ کر قرات سیکھنا فاسق کو غیر فاسق نہ کر دے گا، واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۶۰: از فتح پور ضلع شاہجہاں پور مرسلہ مقبول حسن خان نائب مدرس میونسپل اسکول ۱۷ شعبان ۱۳۳۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ جس شخص کی نماز فجر قضا ہو وہ نمازِ ظہر یا دیگر اوقات کی نمازوں میں امام ہو سکتا ہے یا نہیں؟

الجواب: اگر صاحب ترتیب ہے تو جب تک قضائے فجر ادا نہ کرلے ظہر کی امامت نہیں کرسکتا ورنہ کرسکتا ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۶۱، ۶۲: از پیلی بھیت محلہ احمد زئی مرسلہ مولوی عبد السبحان صاحب ۱۲ رمضان المبارک ۱۳۳۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین ان مسائل میں: (۱) بہرے کے پیچھے تراویح یا فرض نماز پڑھنا جائز ہے یا نہیں؟ (۲) بہرے کی کوئی تخصیص ہے یا نہیں؟

الجواب: (۱) جائز ہے اور اس کا غیر بہتر ہے اگر یہ علم و قرات میں اس سے افضل نہ ہو۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔ (۲) اُتنی ہی ہے کہ جواب اوّل میں گزری۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۷۳: از سہسوانی ٹولہ مسئولہ محمد یامین ۶ شوال ۱۳۳۷ھ عمرو بہت مسخرا ہے اور بہت فحش گالی کے ساتھ مذاق کرتا رہتا ہے اُس کے پیچھے نماز درست ہے یا نہیں۔

الجواب: اُسے امام بنانا گناہ ہے اور اسکے پیچھے نماز مکروہ تحریمی ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

صفحہ ۶۰۳ از ۷۳۶

Volume Six Fatawa Rizvia Question Number 764: From Meerut Cantonment, Kankar Khera, sent by Pir Sakhawat Hussain, member of the Jamia Masjid, 9 Shawwal 1337 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: A person is a Hafiz of the Holy Quran, leads the prayers at the Jamia Masjid, is regular in fasting and prayer, and his wife observes purdah (veiling). However, by caste, the said person is a butcher (Qasab). Is it permissible to pray behind such an Imam or not? **Answer:** If his purification and prayer are correct, and his creed is not that of a heretical sect like Wahhabi or Deobandi etc., but he is a Sunni with correct beliefs and not an open sinner (fasiq-e-mu'lin), then it is certainly permissible to pray behind him. Being a butcher is not a hindrance to leading the prayer; many religious elders have practiced this profession. Yes, if the congregation feels aversion towards him and the congregation decreases due to his leadership, and another Sunni Imam with correct beliefs who is worthy of leading prayer is available, then the leadership of that second person is preferable.

Indeed, they disliked (praying) behind a person with leucoderma whose condition is widespread, for the sake of avoiding aversion, despite the fact that he has no sin in it.

The jurists have declared prayer behind a person with leucoderma whose condition is prominent (has spread) as disliked (Makruh) due to public aversion, despite the fact that there is no personal sin of his in it. (T)

And Allah Almighty knows best.

Question Number 675 to 678: From Mewandi Buzurg, Pargana Ajaon, Shahi Post Office, Bareilly District, sent by Syed Amir Alam Hasan, 16 Shawwal 1337 AH. What do the scholars of religion say regarding these issues: (1) If a person commits adultery and proof is also established, are the prayers of those who prayed behind him valid or not? (2) If such an adulterer repents, is praying behind him correct or not? (3) If an adulterer repents for his deeds but the villagers do not accept his repentance, then what crime are those villagers guilty of and what is their status? (4) If a woman rebelled against her husband, disobeyed his command, hurt him, and was insolent towards him, is it obligatory to divorce such a woman or not? And if the husband is satisfied with his wife's insolence and rebellion and leads prayers, is it correct to pray behind such a person or not? **Answer:** (1) Proof of adultery is very difficult to establish; what the general public considers as proof are often mere suspicions. As long as this state (of being a proven adulterer) was not established, there was no

harm in praying behind him, and there is no need to repeat those prayers. For indeed...

छठा खंड फ़तावा रज़विया मसला नंबर 764: छावनी मेरठ, कस्बा कंकरखेड़ा से, प्रेषक पीर सखावत हुसैन, सदस्य जामा मस्जिद, 9 शव्वाल 1337 हिजरी। धर्म के विद्वान इस विषय में क्या कहते हैं कि: एक व्यक्ति हाफिज़-ए-क़ुरान है, जामा मस्जिद में इमामत करता है, नमाज़ और रोज़े का पाबंद है, उसकी पत्नी पर्दा करती है, लेकिन वह व्यक्ति बिरादरी से कसाई (क़साब) है। क्या ऐसे इमाम के पीछे नमाज़ पढ़ना जायज़ है या नहीं? **उत्तर:** यदि उसकी पाकी (शुद्धता) और नमाज़ सही है और उसका मत वहाबी या देवबंदी आदि जैसा विधर्मी नहीं है, वह सही अक़ीदे वाला सुन्नी है और खुल्लम-खुल्ला गुनहगार (फ़ासिक़-ए-मुअ्लिन) नहीं है, तो उसके पीछे नमाज़ पढ़ना निश्चित रूप से जायज़ है। कसाई होना इमामत के लिए कोई रुकावट नहीं है; धर्म के कई महान बुज़ुर्गों ने यह पेशा अपनाया है। हाँ, अगर जमात (नमाज़ी) उससे नफरत करती हो और उसकी इमामत के कारण जमात में कमी आती हो और कोई दूसरा सही अक़ीदे वाला सुन्नी इमाम उपलब्ध हो जो इमामत के योग्य हो, तो उस दूसरे की इमामत बेहतर है।

उन्होंने उस कोढ़ी के पीछे नमाज़ को नापसंद किया है जिसका कोढ़ फैला हुआ हो, ताकि नफरत से बचा जा सके, बावजूद इसके कि इसमें उसका अपना कोई दोष नहीं है।

फ़क़ीहों ने नफ़रत के मद्देनज़र ऐसे सफ़ेद दाग़ (बरस) वाले व्यक्ति के पीछे नमाज़ को मकरूह (नापसंद) क़रार दिया है जिसका दाग़ मशहूर (फैल गया) हो, बावजूद इस बात के कि इसमें उसका अपना कोई व्यक्तिगत गुनाह नहीं है। (त) अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 675 से 678: म्योंडी बुज़ुर्ग, परगना अजाओं, पोस्ट ऑफिस शाही, जिला बरेली से, प्रेषक सैयद अमीर आलम हसन, 16 शव्वाल 1337 हिजरी। धर्म के विद्वान इन मसलों में क्या कहते हैं कि: (1) जो व्यक्ति व्यभिचार (ज़िना) करता हो और उसका सबूत भी मिल गया हो, तो जो उसके पीछे नमाज़ पढ़ें, वे हुईं या नहीं? (2) जब ऐसा व्यभिचारी तौबा (प्रायश्चित) कर ले तो उसके पीछे नमाज़ दुरुस्त है या नहीं? (3) यदि व्यभिचारी अपने कृत्य से तौबा करता है और गाँव वाले उसकी तौबा को नहीं मानते, तो वे गाँव वाले किस अपराध के पात्र हैं और किस दर्जे में गिने जाएँगे? (4) जिस स्त्री ने अपने पति से विद्रोह किया, उसका आदेश नहीं माना, पति का दिल दुखाया और उस पर ज़बान दराज़ी (बदतमीज़ी) की, तो ऐसी स्त्री को तलाक़ देना वाजिब है या नहीं? और अगर पति अपनी पत्नी की ज़बान दराज़ी और विद्रोह पर राज़ी है और वह इमामत करता है, तो ऐसे व्यक्ति के पीछे नमाज़ दुरुस्त है या नहीं? **उत्तर:** (1) व्यभिचार का सबूत बहुत कठिन है; जिसे आम लोग सबूत

समझते हैं, वे अक्सर केवल वहम (शंकाएं) होते हैं। जब तक उसकी यह स्थिति (साबित व्यभिचारी होना) नहीं थी, तब तक उसके पीछे नमाज़ पढ़ने में कोई हर्ज नहीं था, उन्हें दोबारा पढ़ने की भी कोई आवश्यकता नहीं है। क्योंकि...

पृष्ठ 604 / 736

جلد ششم فتاویٰ رضویہ مسئلہ نمبر ۷۶۴: از مقام چھاؤنی میرٹھ قصبہ کنکر کھڑہ مرسلہ پیر سخاوت حسین صاحب ممبر جامع مسجد ۹ شوال ۱۳۳۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ایک شخص حافظِ قرآن پاک ہے اور امامتِ جامع مسجد کی کرتا ہے اور پابندِ صوم صلوٰۃ ہے زوجہ اس کی پردہ نشین ہے مگر قوم سے شخص مذکور قصاب ہے کیا ایسے امام کے پیچھے نماز پڑھنا جائز ہے یا نہیں؟ **الجواب:** اگر اس کی طہارت و نماز صحیح ہے اور مذہب کا وہابی یا دیو بندی وغیرہ بے دین وبد دین نہیں سنّی صحیح العقیدہ ہے اور فاسق و معلن نہیں تو اس کے پیچھے نماز پڑھنی بیشک جائز ہے، قصاب ہونا کوئی مانع امامت نہیں، متعدد اکابر دین نے یہ پیشہ کیا ہے، ہاں اگر جماعت والے اس سے نفرت کرتے ہوں اور اس کی امامت کے باعث جماعت میں کمی پڑے اور دوسرا امام سنّی صحیح العقیدہ قابل امامت موجود ہو تو اس دوسرے کی امامت اولیٰ ہے۔

فقد کرھوا خلف ابرص شاع برصه لاجل التنفیر مع انه لا خطیئة له فیه۔

فقہاء نے نفرت کے پیش نظر ایسے صاحب برص کے پیچھے نماز کو مکروہ قرار دیا ہے جس کا برص مشہور (پھیل گیا) ہو، باوجود اس بات کے کہ اس میں اس کا اپنا ذاتی کوئی گناہ نہیں (ت)

واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ نمبر ۶۷۵ تا ۶۷۸: از میونڈی بزرگ پرگنہ اجاؤں ڈاکخانہ شاہی ضلع بریلی مرسلہ سید امیر عالم حسن صاحب ۱۶ شوال ۱۳۳۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین ان مسائل میں کہ : (۱) جو شخص زنا کرتا ہو اور اس کا ثبوت بھی ہو گیا ہو تو جو اُس کے پیچھے نماز پڑھیں وہ ہوئیں یا نہیں۔ (۲) جب زانی ایسا شخص توبہ کرلے تو اس کے پیچھے نماز درست ہے یا نہیں۔ (۳) زانی اپنے افعال سے توبہ کرتا ہے اور گاؤں والے اُس کی توبہ کو نہیں مانتے تو وہ گاؤں والے کس جرم کے

مستحق اور کس درجہ شمار ہیں (۴) جس عورت نے اپنے شوہر سے سرکشی کی اور اُس کے حکم کو نہ مانا اور شوہر کا دل دکھایا اور شوہر پر زبان درازی کی تو ایسی عورت کو طلاق دینا واجب ہے یا نہیں، اور اگر شوہر اپنی بی بی کی زبان درازی اور سرکشی پر راضی ہے اور وہ امامت کراتا ہے تو ایسے شخص کے پیچھے نماز درست ہے یا نہیں۔ **الجواب:** (۱) زنا کا ثبوت سخت دشوار ہے جسے عوام ثبوت سمجھتے ہیں وہ اوہام ہوتے ہیں، جب تک اس کی یہ حالت نہ تھی اس وقت تک اُس کے پیچھے نماز میں کوئی حرج نہ تھا اُن کا اعادہ کی بھی کچھ حاجت نہیں فانہ ان

Fatawa Razawiyya Volume VI

"If he is a hidden transgressor, then praying behind him is at most disliked (Makruh Tanzihi)." (Because if that person is an unannounced transgressor, then performing prayer under his leadership is at most Makruh Tanzihi. - T)

(2) When improvement of condition becomes apparent after repentance, there is no harm in praying behind him, provided there is no Sharia prohibition.

(3) Allah Almighty accepts the repentance of His servants and forgives sins. "It is He Who accepts repentance from His servants and forgives the sins" (It is He who accepts the repentance of His servants and forgives sins. - T). Those who do not accept repentance are sinners. Yes, if his condition is not satisfactory based on experience, and it is said, "You repented, may Allah accept your repentance. We will make you the Imam at the time when your improvement of condition becomes apparent," then this is appropriate.

(4) It is not obligatory to divorce her definitively as a punishment, and the one who remains patient in this regard does a very virtuous deed if the intention is for Allah. In any case, this matter does not interfere with leadership (Imamat), as this is overlooking one's own right, and there is no harm in it. Here, 'consenting' does not mean that he likes her actions which are contrary to Sharia, which would render him unfit for leadership. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 76, 77: From Mewandi, from Syed Sahab.

(1) Zaid commits adultery with his step-mother-in-law, and Zaid's father-in-law also knows this but does not stop him out of fear that she will leave his house. So, what punishment does he deserve? And Zaid, who is committing adultery with his mother-in-law, also leads the prayers. So, what degree of punishment does this Zaid deserve, and how is it to pray behind him or maintain social relations?

(2) One whose spiritual guide (Pir) is such that all his actions are forbidden, such as committing adultery etc., and smoking 'sulfa' (tobacco/hashish) etc., and often participating in dance and music gatherings etc. And the scholars of religion declare taking allegiance (bay'ah) from him as forbidden and order those who have already taken allegiance to revoke it. Now the scholars of religion should state, what is the ruling for one who has taken allegiance to such a Pir, and has faith in such a Pir, and acts against the order of the scholars of religion? While the scholars order to avoid such a Pir, he does not obey, he follows him and leads the prayer. How is it to pray

behind him, have him recite Milad, and be a partner in his state? Is it correct or incorrect? And some say that the prayers performed behind him are incorrect and it is obligatory to repeat them because he did not follow the scholars. Explain and be rewarded.

Answer: (1) He who, despite having the power, does not stop or prevent his woman from this shamelessness is a cuckold (Dayyuth). And he who commits adultery...

फ़तावा रज़विया खंड VI

"यदि वह गुप्त पापी (फ़ासिक़ ग़ैर मुअ्लिन) है, तो उसके पीछे नमाज़ पढ़ना अधिक से अधिक मकरूह तंज़ीही है।" (क्योंकि यदि वह व्यक्ति गुप्त पापी हो, तो उसके नेतृत्व में नमाज़ पढ़ना ज़्यादा से ज़्यादा मकरूह तंज़ीही है। - त)

(2) जब तौबा के बाद हालत में सुधार ज़ाहिर हो, तो उसके पीछे नमाज़ पढ़ने में कोई हर्ज नहीं, यदि कोई शरई रुकावट न हो।

(3) अल्लाह अज़्ज़वजल अपने बंदों की तौबा कुबूल फरमाता है और गुनाह बख्शता है। "वही है जो अपने बंदों की तौबा कुबूल करता है और गुनाहों को माफ़ करता है।" (वही अपने बंदों की तौबा कुबूल करता है और गुनाह माफ़ करता है। - त) जो लोग तौबा नहीं मानते, वे गुनहगार हैं। हाँ, अगर उसकी हालत अनुभव से संतोषजनक न हो और यह कहा जाए कि "तुमने तौबा की, अल्लाह तौबा कुबूल करे। हम तुम्हें इमाम तब बनाएंगे जब तुम्हारी हालत का सुधार ज़ाहिर हो," तो यह उचित है।

(4) उसे सज़ा के तौर पर निश्चित रूप से तलाक देना वाजिब नहीं है, और इस पर सब्र करने वाला बहुत नेक काम करता है अगर नीयत अल्लाह के लिए हो। बहरहाल, यह बात इमामत (नेतृत्व) में बाधा नहीं डालती क्योंकि यह अपने अधिकार को छोड़ देना है, और इसमें कोई हर्ज नहीं है। यहाँ 'राज़ी होने' का मतलब यह नहीं था कि वह उसके शरीयत के खिलाफ कार्यों को पसंद करता है, जिससे वह इमामत के लायक न रहे। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 76, 77: मेवंडी से, सैयद साहब द्वारा।

(1) ज़ैद अपनी सौतेली सास के साथ ज़िना (व्यभिचार) करता है, और ज़ैद के ससुर को भी यह पता है, लेकिन वह उसे इस डर से नहीं रोकता कि वह मेरे घर से चली जाएगी। तो वह किस सज़ा का हकदार है? और ज़ैद, जो अपनी सास के साथ ज़िना कर रहा है, वही इमामत (नमाज़ का नेतृत्व) भी करता है। तो यह ज़ैद किस दर्जे की सज़ा का हकदार है? और उसके पीछे नमाज़ पढ़ना कैसा है या मेल-जोल रखना कैसा है?

(2) जिसका पीर ऐसा हो कि उसके तमाम काम हराम हों, जैसे ज़िना करना आदि, और सुल्फा आदि पीना, और अक्सर नाच-गाने की महफिलों में शामिल होना आदि। और दीन के उलेमा (विद्वान) उससे बैअत (दीक्षा) लेने को हराम करार दें और जो बैअत कर चुके हों उन्हें उसे तोड़ने का हुक्म दें। तो

अब दीन के उलेमा बताएं कि जो ऐसे पीर से बैअत किए हुए हो और ऐसे पीर पर विश्वास रखता हो और दीन के उलेमा के हुक्म के खिलाफ करता हो? जबकि उलेमा तो ऐसे पीर से बचने का हुक्म देते हैं, और वह नहीं मानता, वह उसका अनुयायी है और इमामत करता है। उसके पीछे नमाज़ पढ़ना, मीलाद पढ़वाना और उसके साथ शरीक होना कैसा है? सही है या गलत? और कुछ लोग कहते हैं कि जो नमाज़ें उसके पीछे पढ़ी गई हैं वे ग़लत हैं, उनका दोहराना वाजिब है क्योंकि उसने उलेमा का अनुसरण नहीं किया। बयान फरमाएं और पुण्य पाएं।

जवाब: (1) जो सामर्थ्य होने के बावजूद अपनी औरत को इस बेशर्मी से नहीं रोकता, वह दय्यूथ है। और वह जो ज़िना करता है...

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

کان فاسقا غیر معلن فما لکراھۃ خلفہ الا تنزیھیۃ (کیونکہ اگر وہ شخص فاسق غیر معلن ہو تو اسکی اقتداء میں نماز پڑھنا زیادہ سے زیادہ مکروہ تنزیہی ہے۔ ت)

(۲) جب بعد توبہ صلاح حال ظاہر ہواس کے پیچھے نماز میں حرج نہیں اگر کوئی مانع شرعی نہ ہو۔

(۳) اللہ عزوجل اپنے بندوں کی توبہ قبول فرماتا ہے اور گناہ بخشتا ہے ھوالذی یقبل التوبۃ عن عبادہ و یعفوعن السیآت (وہی اپنے بندوں کی توبہ قبول کرتا ہے اور گناہ معاف کرتا ہے۔ ت) جو لوگ توبہ نہیں مانتے ہیں گنہگار ہیں، ہاں اگر اس کی حالت تجربہ سے قابل اطمینان نہ ہو اور یہ کہیں کہ تونے توبہ کی اللہ توبہ قبول کرے۔ ہم تجھے امام اس وقت بنائیں جب تیری صلاح حال ظاہر ہو تو یہ بجا ہے۔

(۴) اسے جر ما طلاق دینا واجب نہیں اور اس پر صبر کرنے والا نہایت نیک کام کرتا ہے اگر نیت اللہ کے لئے ہو بہر حال یہ امر امامت میں خلل انداز نہیں کہ یہ اپنے حق سے درگزر ہے اور اس میں حرج نہیں اور یہاں راضی ہونا بایں معنی نہیں تھا کہ اس کے افعال خلاف شرع کو پسند کرتا ہے جس سے وہ قابل امامت نہ رہے۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ نمبر ۷۶، ۷۷: از میونڈی از سید صاحب۔

(۱) زید اپنی سوتیلی ساس سے زنا کرتا ہے اور زید کے سسر کو بھی یہ معلوم ہے لیکن اس کو منع نہیں کرتا اس خوف سے کہ میرے گھر سے نکل جائے گی، تو وہ کس مجرم کا مستحق ہے اور

زید جو اپنی ساس سے زنا کر رہا ہے وہی امامت بھی کرتا ہے تو یہ زید کس درجہ کا مستحق ہے اور اس کے پیچھے نماز پڑھنا کیسا یا میل جول رکھنا کیسا ہے؟

(۲) جس کا پیر ایسا ہو کہ جملہ افعالِ حرام ہوں جیسے زنا وغیرہ کرنا اور سُلفہ وغیرہ پینا اور اکثر محافل ناچ رنگ میں شامل ہونا وغیرہ وغیرہ ہوں اور علمائے دین اس سے بیعت کرنا حرام فرما دیں اور جو بیعت حاصل کر چکا ہو اس کو فسخ کرنے کا حکم دیں تو اب علمائے دین فرمائیں کہ جو ایسے پیر سے بیعت کئے ہوئے ہو اور ایسے پیر پر اعتقاد رکھتا ہو اور علمائے دین کے حکم کے خلاف کرتا ہو کہ علما تو ایسے پیر سے بچنے کا حکم فرمائیں اور وہ نہ مانے اور وہ متبع ہو اور امامت کرتا ہو اس کے پیچھے نماز پڑھنا اور میلاد پڑھوانا اور شریک حال ہونا کیسا ہے، درست یا غیر درست، اور بعض کہتے ہیں کہ جو نمازیں اس کے پیچھے پڑھی ہیں وہ نادرست ہیں ان کا بھی پھیرنا واجب ہے کیونکہ اس نے اتباعِ علماء نہیں کیا۔ بینوا توجروا

الجواب: (۱) جو باوصف قدرت اپنی عورت کو اس بیحیائی سے منع نہیں کرتا نہیں روکتا وہ دیوث ہے، اور وہ جو زنا کرتا ہے

Fatawa Razawiyya, Volume 6

(1) If such a state about someone is widely and correctly known, then performing prayer behind him is Makruh (disliked); one should not socialize with him. If it's just a rumor among the common folk that people find faults without reason, then it is not credible. Yet, if because of it, people have an aversion to his leadership (Imamat) and the congregation behind him becomes small, he should not be made an Imam even if he is free from that accusation; as is widespread regarding a person with leprosy, as mentioned in 'al-Durr' (just like the ruling for a person whose leprosy has spread, it is the same in 'al-Durr al-Mukhtar'. - Translator)

(2) If a person is like this, he is a transgressor (Fasiq); prayer should not be performed behind him. One should not have the Milad Sharif recited by him, because in presenting him for Imamat, there is honor for him, while legally his debasement is mandatory. (Because in presenting a transgressor for Imamat, there is honor for him, while shari'ah-wise his debasement is mandatory. - Translator). In 'Tabyeen al-Haqa'iq' etc., it is stated that prayers performed behind him should be repeated with an excuse. It is forbidden to associate with such a person; one should not socialize with him. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 77: From the city of Bareilly, Madrasa Manzar-ul-Islam, inquired by Maulana Muhammad Zahoor-ul-Haq Sahib, 3 Dhu al-Hijjah 1337 AH.

Question: What do the scholars of the religion say regarding a person who is a Hafiz of the Quran but eats opium and does not keep the fasts of the blessed month of Ramadan? Can he lead the prayer or not? Is the prayer valid behind him or not? Inform us from the Book and be rewarded on the Day of Judgment.

The Answer: An opium addict and one who abandons the fasts of Ramadan without a Sharia-compliant excuse is a transgressor (Fasiq), and prayer behind them is Makruh Tahrimi (prohibitively disliked). Performing it is a sin and repeating it is mandatory when their transgression is open and manifest. If it is hidden, it is still not free from dislike (Karaha). If an opium addict is in a state of intoxication (peing), then the prayer behind him is absolutely void. Allah Almighty says: "...until you know what you are saying" (The noble command of Allah is: until you know what you are saying. - Translator). And Allah Almighty knows best.

Problem No. 78: From the city, Madrasa Ahl-e-Sunnat, inquired by Maulana Zahoor-ul-Haq Sahib, student, 12 Dhu al-Hijjah 1337 AH.

Question: In this question, the response mentioned above is contrary to the facts and based purely on envy. "Opium addict", "one who abandons fasts", and then "without excuse" - these three terms and their applicability require investigation because the conclusion of the answer is based on them. From this answer, it is not known...

---

1 Tabyeen al-Haqa'iq, Bab al-Imamah, printed at al-Matba'at al-Kubra al-Amiriyya, Bulaq Egypt, 1 / 134. 2 Al-Quran 4 / 43

फ़तवा रज़विया, छठा खंड

(1) अगर किसी का यह हाल सही मशहूर है तो उसके पीछे नमाज़ मकरूह है, उससे मेल-जोल नहीं रखना चाहिए। अगर आम लोगों की अफ़वाह है कि ख़्वाह-मख़्वाह ऐब लगाते हैं तो उसका ऐतबार नहीं। फिर भी अगर उसके कारण लोगों को उसकी इमामत से नफ़रत और उसके पीछे जमाअत की कमी हो, तो उसे इमाम न करें, हालाँकि वह उस इल्ज़ाम से बरी है; जैसा कि एक कोढ़ी के बारे में फैला हुआ है, जैसा कि 'दुर' में है (जैसे उस व्यक्ति का हुक्म है जिसका कोढ़ फैल गया हो, 'दुर्र-ए-मुख़्तार' में ऐसा ही है। - अनुवादक)

(2) ऐसा व्यक्ति हो तो वह फ़ासिक़ है, उसके पीछे नमाज़ न पढ़ी जाए। उससे मिलाद शरीफ़ न पढ़वाया जाए क्योंकि उसे इमामत के लिए आगे बढ़ाने में उसकी ताज़ीम (सम्मान) है, जबकि शरीअत के तौर पर उसकी इहानत (अपमान) लाज़िम है। (क्योंकि इमामत के लिए फ़ासिक़ को आगे बढ़ाने में उसकी ताज़ीम है, जबकि शरीअत के तौर पर उसकी इहानत लाज़िम है। - अनुवादक)। 'तबीनुल हक़ाइक़' वग़ैरह में है कि उसके पीछे पढ़ी हुई नमाज़ें फिर उज़्र व एआदा (दोहराई) की जाएँ। ऐसे ज़िक्र किए गए व्यक्ति का साथ देना हराम है, उससे मेल-जोल नहीं रखना चाहिए। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसाला नंबर 77: शहर बरेली, मदरसा मंज़र-उल-इस्लाम से, प्रश्नकर्ता मौलवी मोहम्मद ज़हूर-उल-हक़ साहब, 3 ज़िलहिज्जा 1337 हिजरी।

प्रश्न: क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन ऐसे व्यक्ति के लिए जो हाफ़िज़-ए-क़ुरआन है लेकिन अफ़ीम खाता है और रमज़ानुल मुबारक का रोज़ा नहीं रखता? क्या वह इमामत कर सकता है या नहीं? उसके पीछे नमाज़ जायज़ है या नहीं? किताब के साथ स्पष्ट करें और क़यामत के दिन प्रतिफल पाएँ।

उत्तर: अफ़ीमी और बिना शरीई उज़्र (कारण) के रमज़ान के रोज़े छोड़ने वाला फ़ासिक़ है और उनके पीछे नमाज़ मकरूह-ए-तहरीमी है, यानी पढ़ना गुनाह है और फिर से पढ़ना (एआदा) वाजिब है, बशर्ते कि उनका फ़िस्क़ (पाप) ज़ाहिर व स्पष्ट हो। और अगर छिपा हुआ हो तब भी वह कराहत से खाली नहीं। और अफ़ीमी अगर पींग (नशे) में हो तो उसके पीछे नमाज़ बिल्कुल बातिल (अमान्य) है। अल्लाह तआला का फ़रमान है: "...हत्ता तलमू मा तक़ूलून" (अल्लाह तआला का इरशाद-ए-गिरामी है: यहाँ तक कि तुम जान लो कि तुम क्या कह रहे हो। - अनुवादक)। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसाला नंबर 78: शहर मदरसा अहले सुन्नत से, प्रश्नकर्ता मौलवी ज़हूर-उल-हक़ साहब, विद्यार्थी, 12 ज़िलहिज्जा 1337 हिजरी।

प्रश्न: इस सवाल के जवाब में जो ऊपर ज़िक्र हुआ, वह हक़ीक़त के ख़िलाफ़ सिर्फ़ हसद (ईर्ष्या) पर आधारित है। "अफ़ीमी", "रोज़ा छोड़ने वाला", और फिर उस पर "बिना उज़्र" - ये तीनों शब्द और उनके पात्र जाँच के योग्य हैं, क्योंकि जवाब का परिणाम उन्हीं पर आधारित है। इस जवाब से यह मालूम नहीं हुआ...

---

1 तबीनुल हक़ाइक़, बाब अल-इमामह, मुद्रित अल-मत्बा अल-कुबरा अल-अमीरिया बुलाक़ मिस्र, 1 / 134। 2 अल-क़ुरआन 4 / 43

فتاوٰی رضویہ، جلد ششم

(۱) اگر کسی کا یہ حال صحیح مشہور ہے تو اُس کے پیچھے نماز مکروہ ہے اس سے میل جول نہ چاہئے اگر عوام کی افواہ ہے کہ خواہ مخواہ عیب لگاتے ہیں تو اسکا اعتبار نہیں پھر بھی اگر اس کے سبب لوگوں کو اس کی امامت سے نفرت اور اسکے پیچھے جماعت کی قلت ہو تو اسے امام نہ کریں اگرچہ وہ الزام سے بری ہے، کما شاع برصہ کما فی الدر (جیسے اس شخص کا حکم ہے جس کا برص پھیل گیا ہو، در مختار میں ایسا ہی ہے۔ت)

(۲) ایسا شخص ہو تو وہ فاسق ہے اُکے پیچھے نماز نہ پڑھی جائے اس سے میلاد شریف نہ پڑھوایا جائے لان فی تقدیمہ للامامۃ تعظیمہ وقد وجب علیھم اھانۃ شرعاً (کیونکہ امامت کے لئے فاسق کی تقدیم میں اس کی تعظیم ہے حالانکہ شرعی طور پر اس کی اہانت لازم ہے۔ت) تبیین الحقائق وغیرہ میں اس کے پیچھے پڑھی ہوئی نمازیں پھر عذر واعادہ کی جائیں اس کا شریک حال مذکور ہونا حرام ہے اس سے میل جول نہ چاہئے۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ نمبر ۷۷ : از شہر بریلی مدرسہ منظر الاسلام مسئولہ مولوی محمد ظہور الحق صاحب ۳ ذی الحجہ ۱۳۳۷ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین ایسے شخص کے واسطے کہ وہ حافظ قرآن ہے مگر افیون کھاتا ہے اور رمضان المبارک کا روزہ نہیں رکھتا ہے ، آیا وہ امامت کر سکتا ہے یا نہیں اس کے پیچھے نماز جائز ہے یا نہیں بینوا بالکتاب وتوجروا یوم الحساب۔

الجواب: افیونی اور بلا عذر شرعی تارک صوم رمضان فاسق اور اُن کے پیچھے نماز مکروہِ تحریمی ہے کہ پڑھنا گناہ اور پھیر نا واجب جبکہ اُن کا فسق ظاہر و آشکار ہو ، اور اگر مخفی ہو

جب بھی کراہت سے خالی نہیں اور افیونی اگر پینگ میں ہو جب تو اس کے پیچھے نماز باطل محض ، قال تعالیٰ حَتّٰی تَعْلَمُوْا مَا تَقُوْلُوْنَ (اللہ تعالیٰ کا ارشادِ گرامی ہے : حتیٰ کہ تم جان لو کہ تم کیا کہہ رہے ہو۔ ت) واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۷۸ : از شہر مدرسہ اہلسنت مسئولہ مولوی ظہور الحق صاحب طالب علم ۱۲ ذی الحجہ ۱۳۳۷ھ

اس سوال میں جواب پر مذکورہ خلافِ واقعہ محض حسد پر کیا گیا ہے افیونی تارک صوم اور پھر محض اُس پر بلا عذر یہ تینوں لفظ اور ان کے مصداق تحقیق طلب ہیں کیونکہ نتیجہ جواب اُنھیں پر مبنی ہے اس جواب سے یہ نہیں معلوم ہوا

---

1 تبیین الحقائق باب الامامۃ ، مطبوعہ المطبعۃ الکبریٰ الامریہ بولاق مصر ، ۱ / ۱۳۴ 2 القرآن ۴ / ۴۳

Fatawa Razawiyya Volume 6 Whether doctors prescribing a corrected amount of opium for illnesses like cold, discharge, etc., is permissible within a Sharia excuse or not? If not, what is the Sharia ruling? Secondly, if a person misses a Ramadan fast due to travel or illness, will they be considered a fast-deserter (tarik-e-saum) or not, and is there a Sharia excuse for them? Thirdly, is a Hafiz-e-Quran superior for leading prayers among the illiterate (unlettered in religious sciences) according to Sharia or not? Fourthly, if a person, after being a follower (muqtadi) for a long time, purely out of jealousy levels an accusation of such a major sin, what discretionary punishment (ta'zir) are they liable to under Sharia?

Answer: Opium in a quantity that causes intoxication is absolutely forbidden (haram). It cannot be lawful for any illness, nor by any physician's prescription. Who is a wiser healer than Allah and His Messenger? They forbid it, and what they have forbidden cannot become permissible by anyone's prescription. This is neither a Sharia excuse nor is it written in a fatwa regarding opium; rather, regarding repeating the fast, it is in Durr-e-Mukhtar: "Zahir al-Madhab al-Man'"[1] (meaning, treatment with a forbidden thing is prohibited according to the apparent view of the school of thought - T). It is in Radd al-Muhtar:

The Imam answered because the reference in this is to the physicians, and their word is not a proof unless a forbidden thing is specifically identified as a prevention for destruction; then it becomes lawful, like carrion and wine at the time of necessity.[2] (Summary)	**Imam-e-Azam gave this answer: that in this matter, recourse will be had to physicians, but their word is not a definitive proof unless a forbidden thing becomes essential to ward off death; then it will become permissible, just like carrion and wine in a time of extreme necessity (Summary). (T)**

Yes, travel and illness, where it is proven and established that fasting is harmful, are Sharia excuses for missing the fast. A Hafiz is superior to the illiterate only when he is not a transgressor (fasiq); and a transgressor, even if a scholar, is not superior, let alone a Hafiz. It is in Durr-e-Mukhtar:

Unless someone other than the transgressor is the most learned of the group, then he is more entitled.[3]	**But in the case where, besides the transgressor (i.e., from the aforementioned individuals), someone is more knowledgeable than the group, then he alone will be more worthy for leading the prayer (Imamat). (T)**

If the accusation is false, it is a severe major sin and has a harsh punishment. And if the accusation is true, then remaining silent for a long duration...

[1] Durr-e-Mukhtar, Bab al-Miyah, published by Matba' Mujtabai Delhi, 1/38 [2] Radd al-Muhtar, Bab al-Miyah, published by Mustafa al-Babi Egypt, 1/154 [3] Durr-e-Mukhtar, Bab al-Imamah, published by Matba' Mujtabai Delhi, 1/83 Page 607 of 736

फ़तावा रज़विया छठा खंड कि चिकित्सकों ने ज़ुकाम और प्रदर (discharge) आदि रोगों में अफ़ीम को सुधार की मात्रा में निर्धारित किया हो, क्या वह शरई उज़्र (धार्मिक बहाना/छूट) के अंतर्गत जायज़ है या नहीं? यदि नहीं, तो शरई उज़्र क्या है? दूसरा यह कि यदि कोई व्यक्ति यात्रा या बीमारी के कारण रमज़ान का रोज़ा कज़ा (छोड़) दे, तो क्या वह रोज़ा छोड़ने वाला माना जाएगा या नहीं, और क्या उसके लिए शरई उज़्र है या नहीं? तीसरा, क्या क़ुरान को कंठस्थ करने वाला (हाफ़िज़) अनपढ़ों के बीच इमामत (प्रार्थना का नेतृत्व) के लिए शरीअत के अनुसार श्रेष्ठ है या नहीं? चौथा, यदि कोई व्यक्ति लंबे समय तक मुक़्तदी (पीछे नमाज़ पढ़ने वाला) रहने के बाद केवल ईर्ष्या के कारण ऐसे बड़े पाप (कबीरा गुनाह) का आरोप लगाता है, तो वह शरीअत के अनुसार किस ताज़ीर (सज़ा) का पात्र है?

उत्तर: अफ़ीम इतनी मात्रा में जिससे नशा हो, पूर्णतः हराम है। यह न तो किसी बीमारी के लिए हलाल हो सकती है और न ही किसी हकीम (चिकित्सक) के परामर्श से। अल्लाह और उसके रसूल से बड़ा हकीम कौन है? वे मना फरमाते हैं, उनके द्वारा मना की गई चीज़ किसी के परामर्श से जायज़ नहीं हो सकती। यह न तो शरई उज़्र है और न ही अफ़ीम के संबंध में फतवे में ऐसा लिखा गया था, बल्कि रोज़े के दोहराने के बारे में 'दुर्रे मुख़्तार' में है: "ज़ाहिर अल-मज़हब अल-मनअ" [1] (अर्थात, हराम चीज़ से इलाज मज़हब के स्पष्ट दृष्टिकोण के अनुसार वर्जित है। - त)। 'रद्दुल मुहतार' में है:

इमाम ने उत्तर दिया क्योंकि इसमें संदर्भ चिकित्सक हैं और उनकी बात प्रमाण नहीं है, जब तक कि कोई हराम वस्तु विनाश को रोकने के लिए निश्चित न हो जाए; तब वह हलाल हो जाती है, जैसे आवश्यकता के समय मृत पशु का मांस और शराब। [2] (संक्षिप्त)

इमाम-ए-आज़म ने यह उत्तर दिया कि इस मामले में चिकित्सकों की ओर रुख किया जाएगा और उनकी बात प्रमाण नहीं है, जब तक कि कोई हराम चीज़ विनाश को दूर करने के लिए अनिवार्य न हो जाए; तब वह हलाल हो जाएगी, जैसे कि आवश्यकता के समय मुर्दार और शराब (संक्षिप्त)। (त)

हाँ, यात्रा और बीमारी, जिसमें रोज़ा रखना हानिकारक होना प्रमाणित और सिद्ध हो, रोज़ा कज़ा करने के लिए शरई उज़्र हैं। हाफ़िज़ अनपढ़ों से तब श्रेष्ठ है जब वह फासिक़ (पापी) न हो; और फासिक़ तो विद्वान (आलिम) भी श्रेष्ठ नहीं है, हाफ़िज़ की तो बात ही क्या। 'दुर्रे मुख़्तार' में है:

सिवाय इसके कि फासिक़ के अलावा कोई और व्यक्ति कौम में सबसे अधिक ज्ञानी हो, तो वह अधिक योग्य है। [3]	**मगर उस स्थिति में जब फासिक़ के अलावा (यानी ऊपर बताए गए व्यक्तियों में से) कोई व्यक्ति कौम में सबसे अधिक ज्ञान रखने वाला हो, तो वही इमामत के लिए अधिक योग्य होगा। (त)**

यदि आरोप झूठा लगाया गया है तो यह बहुत बड़ा पाप (कबीरा गुनाह) है और इसकी कठोर सज़ा है, और यदि आरोप सच है, तो इतने समय तक मौन रहने का...

[1] दुर्रे मुख़्तार, बाबुल मियाह, मतबा मुज्तबाई दिल्ली द्वारा प्रकाशित, ३८/१ [2] रद्दुल मुहतार, बाबुल मियाह, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र द्वारा प्रकाशित, १/१५४ [3] दुर्रे मुख़्तार, बाबुल इमामत, मतबा मुज्तबाई दिल्ली द्वारा प्रकाशित, ८३/१ पृष्ठ ७३६ का ६०७

فتاویٰ رضویہ جلد ششم کہ اطباء نے امراض نزلہ وجریان وغیرہ میں افیون بقدر اصلاح تجویز فرمائی ہو وہ عذر شرعی کے اندر مجوز ہے یا نہیں، اگر نہیں تو عذر شرعی کیا ہے ، دوسرے یہ کہ اگر کوئی شخص بباعث سفر یا مرض روزہ رمضان قضا کرے تو تارک صوم ہوگا یا نہیں ، اور عذر شرعی اس کے لئے ہے یا نہیں، اور حافظ کلام مجید امیّوں میں امامت کے لئے شرعاً افضل ہے یا نہیں ، اگر کوئی شخص ایک مدّت تک مقتدی رہ کر محض حسد سے الزام لگائے ایسے کبیرہ گناہ کے تو وہ عندالشرع مستوجب کس تعزیر کا ہے۔

الجواب: افیون اتنی کہ پینک لائے مطلقاً حرام ہے، نہ کسی مرض کے لئے حلال ہو سکتی ہے نہ کسی طبیب کی تجویز سے۔ اللہ ورسول کے برابر حکیم کون ہے وہ منع فرماتے ہیں ان کا منع فرمایا ہوا کسی کی تجویز سے جائز نہیں ہو سکتا، یہ عذر شرعی ہے نہ عذر شرعی فتویٰ میں در بارہ افیون لکھا تھا بلکہ دوبارہ صوم در مختار میں ہے: ظاھر المذھب المنع [1] (یعنی حرام چیز سے علاج ظاہر مذہب پر منع ہے۔ت) ردالمحتار میں ہے:

اجاب الامام لان المرجع فیه الاطباء و قولهم لیس بحجة حتی لوتعین الحرام مدفعا للهلاك یحل کالمیتة والخمر عند الضرورة [2]۔ (ملخصا)

امام اعظم نے یہ جواب دیا کہ اس میں اطباء کی طرف رجوع کیا جائے گا اور ان کے قول حجت نہیں، حتیٰ کہ اگر کوئی حرام چیز ہلاکت کو دُور کرنے کے لئے متعین ہو جائے تو وہ حلال ہو جائے گی جیسا کہ ضرورت کے وقت مردار اور شراب (ملخصاً)۔ (ت)

ہاں سفر اور مرض جس میں روزہ کا مضر ہونا ثابت و محقق ہو روزہ قضا کرنے کے لئے عزر شرعی ہیں، حافظ امیوں سے جب افضل ہے کہ فاسق نہ ہو اور فاسق تو عالم بھی افضل نہیں چہ جائے حافظ در مختار میں ہے:

الا ان یکون غیر الفاسق اعلم القوم فھو اولی [3]

مگر اس صورت میں کہ جب فاسق کے علاوہ (یعنی مذکورہ افراد میں سے) کوئی شخص قوم سے زیادہ صاحب علم ہو وہی امامت کے لئے اولیٰ ہوگا۔ (ت)

اگر الزام جھوٹا لگائے تو سخت کبیرہ ہے اور اس کی سخت سزا ہے اور اگر الزام سچا ہے تو مدت تک خاموش رہنے کا اس

[1] دُر مختار، باب المیاہ، مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی، ۱/۳۸ [2] ردالمحتار باب المیاہ مطبوعہ مصطفیٰ البابی مصر ۱/۱۵۴ [3] در مختار باب الامامۃ مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱/۸۳ Page 607 of 736

Fatawa Razviya, Volume 6

The follower is accused and deserves punishment for this reason, but that Imam cannot be absolved of the accusation on the basis that the follower has remained silent until now. Allah Almighty knows best.

Problem No. 777: From Aurangabad, District Gayam, Salama Muhammad Ismail, Teacher, Madrasa Islamia, 14 Safar-ul-Muzaffar 1338 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: Amr shows great reverence for Tazia and participates in the 'Akhara' (martial arts display). He organizes the Milad gathering of Hazrat Sayyid-ush-Shuhada Husain (may Allah be pleased with him) and Hazrat Ali (may Allah noble his face), where he has people recite "Ya Husain Salam Alaik", "Ya Zaki Salam Alaik", "Ya Ali Salam Alaik", etc., while standing. In the gathering of Sama' (devotional music), he plays all kinds of musical instruments (mazamir), such as English bands, Roshan Chauki, Khurok, Shehnai, Mushki band, etc. He does not come to the mosque for the five daily prayers or Friday prayers, but only leads the Eid prayers. Due to these actions, the followers have a strong dislike for him. Is Amr eligible for the Imamate (leadership of prayer), and what is the ruling in the Shariah regarding Amr's actions?

The Answer: Musical instruments are prohibited (haram). It is stated in a Hadith from Sahih Bukhari 'F': "They will consider wine, swine, and musical instruments as lawful." (T) It is stated in al-Hidayah: "Because prohibited trials occur [through forbidden means]." (T) Therefore, organizing a gathering of music is 'fisq' (sinful disobedience). Coming to the Eid prayer with these satanic instruments is 'fisq'. Not attending the congregational prayer without a valid Sharia excuse is 'fisq'. Not attending the Friday prayer without necessity is a more severe 'fisq'. Revering the Tazia is an innovation (bid'at). Amr is absolutely not eligible for the Imamate. It is stated in Tabyin al-Haqa'iq: "Because putting him forward for the Imamate is an act of honor, while it is religiously mandatory upon them to humiliate him." (T)

1. Sahih al-Bukhari, Book of Drinks, Chapter on what has been narrated regarding those who consider wine lawful, etc., published by Qadimi Kutub Khana, Karachi, 2/837.
2. Al-Hidayah, Book of Disliked Matters, published by Matba' Yusufi, Lucknow, 4/453.
3. Tabyin al-Haqa'iq, Chapter on Imamate, published by Al-Matba' al-Kubra al-Amiriyya, Bulaq, Egypt, 1/134. F: The words in Bukhari are as follows: "They will

consider illegal sexual intercourse (حر), silk (حرير), wine, and musical instruments as lawful," etc. This Hadith has been mentioned with different wordings in numerous other books: Sunan Abu Dawood 2/204, Sunan al-Kubra by al-Bayhaqi 10/221, Kanz al-Ummal 11/331, Al-Mu'jam al-Kabir 3/282, Ithaf al-Sada al-Muttaqin 6/277, At-Targhib wa't-Tarhib 3/102. Nazir Ahmad.

फतावा रज़विया, खंड 6

मुक्तदी (अनुगामी) पर आरोप है और वह इस वजह से सजा का पात्र है, लेकिन वह इमाम इस आधार पर आरोप से बरी नहीं हो सकता कि मुक्तदी अब तक क्यों खामोश रहा। अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 777: औरंगाबाद, जिला गयाम से, सलमा मुहम्मद इस्माइल, शिक्षक मदरसा इस्लामिया, 14 सफ़र अल-मुजफ्फर 1338 हिजरी। धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं: अम्र ताज़िया का बहुत सम्मान करता है और अखाड़े में भाग लेता है। वह हज़रत सैय्यद-उश-शुहदा हुसैन (रज़ियल्लाहु अन्हु) और हज़रत अली (कर्रमल्लाहु वज्हहुल करीम) की मिलाद की महफ़िल आयोजित करता है और उसमें खड़े होकर "या हुसैन सलाम अलैका", "या ज़की सलाम अलैका", "या अली सलाम अलैका" आदि पढ़वाता है। समाअ (भक्ति संगीत) की महफ़िल में वह हर तरह के वाद्ययंत्र (मज़ामीर) बजवाता है, जैसे अंग्रेजी बैंड, रोशन चौकी, खुरोक, शहनाई, मुश्की बैंड आदि। वह पाँच समय की नमाज़ और जुमे के लिए मस्जिद नहीं आता, केवल ईदैन की इमामत करता है। इन हरकतों के कारण मुक्तदी उससे सख्त नफरत करते हैं। तो क्या अम्र इमामत के लायक है, और शरीयत में अम्र के इन कार्यों का क्या हुक्म है?

जवाब: वाद्ययंत्र (मज़ामीर) हराम हैं, सहीह बुखारी शरीफ 'फ़' की हदीस में है: "वे शराब, सूअर और वाद्ययंत्रों को हलाल समझेंगे।" (त) हिदाया में है: "क्योंकि हराम परीक्षाएँ[निषिद्ध साधनों के माध्यम से] ही होती हैं।" (त) तो वाद्ययंत्रों की महफ़िल आयोजित करना फिस्क (गुनाह) है। ईद की नमाज़ के लिए इन शैतानी बाजों के साथ आना फिस्क है। बिना किसी शरीई मजबूरी के जमात के लिए हाज़िर न होना फिस्क है। बिना किसी मजबूरी के जुमे में न आना और भी गंभीर फिस्क है। ताज़िया का सम्मान करना बिदअत (नवाचार) है। अम्र किसी भी हाल में इमामत के लायक नहीं है। तब्यीन अल-हकाइक में लिखा है: "क्योंकि इमामत के लिए उसे आगे करना उसका सम्मान करना है, जबकि शरीयत के अनुसार उन पर उसका अपमान करना अनिवार्य है।" (त)

1. सहीह अल-बुखारी, किताबुल अशरिबा, उन लोगों के बारे में क्या आया है जो शराब को हलाल समझते हैं, आदि, कदीमी कुतुब खाना, कराची द्वारा प्रकाशित, 2/837।
2. अल-हिदाया, किताबुल कराहिया, मतबा यूसुफी, लखनऊ द्वारा प्रकाशित, 4/453।

3. तब्यीन अल-हकाइक, बाबल इमामा, अल-मतबा अल-कुबरा अल-अमीरिया, बुलाक, मिस्र द्वारा प्रकाशित, 1/134। फ़: बुखारी के शब्द इस प्रकार हैं: "वे अवैध यौन संबंध (حر), रेशम (حرير), शराब और वाद्ययंत्रों को हलाल समझेंगे," आदि। इस हदीस को विभिन्न शब्दों के साथ कई अन्य पुस्तकों में भी उल्लेख किया गया है: सुनन अबू दाऊद 2/204, सुनन अल-कुबरा अल-बहाकी द्वारा 10/221, कज़ुल उम्माल 11/331, अल-मुअजम अल-कबीर 3/282, इत्हाफ़ अल-सादात अल-मुत्तकीन 6/277, अत-तरगीब वत-तरहीब 3/102। नज़ीर अहमद।

فتاوی رضویہ جلد ششم

مقتدی پر الزام ہے اور وہ اس وجہ سے سزاوار سزا ہے مگر وہ امام اس بنا پر الزام سے بری نہیں ہوسکتا کہ اب تک مقتدی کیوں خاموش رہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۷۷۷: از اورنگ آباد ضلع گیام سلمہ محمد اسمعیل مدرس مدرسہ اسلامیہ ۱۴ صفر المظفر ۱۳۳۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ عمرو تعزیہ کی نہایت عظمت کرتا ہے اور اکھاڑے میں شریک ہوتا ہے اور حضرت سید الشہداء حسین رضی اللہ تعالیٰ عنہ و حضرت علی کرم اللہ تعالیٰ وجہہ کی مجلس میلاد منعقد کرتا ہے اور اس میں یا حسین سلام علیک، یا ذکی سلام علیک، یا علی سلام علیک وغیرہ بحالت قیام پڑھواتا ہے اور مجلس سماع میں ہر قسم کے مزامیر یعنی انگریزی با جا، روشن چوکی خروک شہنائی مشکی با جا وغیرہ بجواتا ہے اور نماز پنجگانہ و جمعہ کے لئے مسجد میں نہیں آتا صرف عیدین کی امامت کرتا ہے مقتدی اس سے بسبب ان افعال کے سخت نفرت رکھتے ہیں تو عمرو قابل امامت ہے یا نہیں، اور عمرو کے یہ افعال شرع شریف میں کیا حکم رکھتے ہیں۔

الجواب: مزامیر حرام ہیں، صحیح بخاری شریف 'ف' کی حدیث میں ہے: یستحلون الخمر والخنزیر والمعازف ۱- وہ لوگ شراب، خنزیر اور مزامیر کو حلال جانیں گے۔ (ت) ہدایہ میں ہے: لان الابتلاء المحرم یکون ۲- (امتحان و ابتلاء حرام ہی سے ہوتا ہے۔ ت) تو مجلس مزامیر منعقد کرنا فسق ہے، اور نماز عید کو ان شیطانی باجوں کے ساتھ آنا فسق اور جماعت کے لئے بلا عذر شرعی حاضر نہ ہونا کرنا فسق اور جمعہ میں بلا مجبوری نہ آنا سخت تر فسق اور تعزیہ کی تعظیم بدعت، عمرو ہرگز قابل امامت نہیں۔ تبیین الحقائق میں ہے : لان فی تقدیمہ للامامۃ تعظیما و قد وجب کیونکہ

امامت کے لئے اس کی تقدیم میں تعظیم ہے حالانکہ ان علیھم اھانۃ شرعاً ۳۔ پر شرعاً اس کی اہانت لازم ہے۔ (ت)

۱ صحیح البخاری کتاب الاشربہ باب ماجاء فیمن یستحل الخمر الخ مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۲/ ۸۳۷ ۲ الہدایہ کتاب الکراہیہ مطبوعہ مطبع یوسفی لکھنؤ ۴/ ۴۵۳ ۳ تبیین الحقائق باب الامامۃ مطبوعہ المطبعۃ الکبری الامیریہ بولاق مصر ۱/ ۱۳۴ ف: بخاری کے الفاظ اس طرح ہیں: یستحلون الحر والحریر والخمر والمعازف الخ۔ اس حدیث کو مختلف الفاظ کے ساتھ دیگر متعدد کتابوں نے ابھی ذکر کیا ہے سنن ابو داؤد ۲/ ۲۰۴، سنن الکبری للبیہقی ۱۰/ ۲۲۱، کنز العمال ۱۱/ ۳۳۱، المعجم الکبیر ۲۸۲/۳، اتحاف السادۃ المتقین ۶/ ۲۷۷، الترغیب والترہیب ۳/ ۱۰۲۔ نذیر احمد

Fatawa Razawiya - Volume 6

Holding a gathering for the remembrance (dhikr) of Hazrat Sayyid al-Shuhada (Imam Husain) and Hazrat Maula Mushkil-Kusha (Ali ibn Abi Talib) (may Allah be pleased with them both), and saying 'Ya Ali Salam Alayk' and 'Ya Zaki Salam Alayk', is not objectionable, provided it is free from acts prohibited by Sharia. And Allah Almighty knows best.

Issue No. 777: From Guna, Central India, Gwalior State, sent by Muhammad Siddiq, Secretary of Anjuman-e-Islamiya, 17 Safar 1338 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: Zaid's second wife fled with another man and is committing acts of immorality, yet Zaid continues to keep her, and that wife dominates Zaid. Zaid tells others, "Prevent such-and-such person, whom my wife calls, from coming to my house." When Zaid is told, "It is better for you to divorce her," he gets angry, uses harsh words, and says, "My first wife also used to call people; should I divorce her too? I will never do such a thing." With such persistence, is Zaid a 'dayyuth' (cuckold) or not? And should the Muslims remove him if he serves as an Imam (prayer leader)? Zaid, who is the Imam of the mosque, has made some ignorant people his supporters. One of them, named Bakr, said, "Even if our Imam drinks two bottles of wine and keeps four prostitutes, he will remain our Imam." What is the Sharia ruling regarding Bakr, and what is the ruling regarding those people who support such an Imam and insist on keeping him as the Imam? Give a ruling and be rewarded.

The Answer: If Zaid is pleased with such actions of his wife or does not take measures to prevent them despite having the power to do so, then he is undoubtedly a 'dayyuth'. It is obligatory to remove him from the position of Imamat. Praying behind him is a sin, repeating such prayers is mandatory, and his supporters are sinners.

Allah Almighty says: "And do not cooperate in sin and transgression." [1] The command of Allah Almighty is: Do not help each other in sin and excess. (T)

And if he is not pleased with these actions and takes measures to prevent them to the best of his ability, then the blame for the woman's actions does not lie with him.

Allah Almighty says: "No bearer of burdens will bear the burden of another." [2] The honorable saying of Allah Almighty is: No one carrying a load shall carry the load of another. (T)

Nor is it mandatory for him to divorce her. It is stated in a Hadith: A man came to the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him)...

---

[1] Al-Quran 5/2 [2] Al-Quran 6/164 Page 609 of 736

फ़तावा रज़विया - छठा खंड

हज़रत सय्यद अल-शुहदा और हज़रत मौला मुश्किल-कुशा (अल्लाह उन दोनों से प्रसन्न हो) के स्मरण (ज़िक्र) की सभा आयोजित करने और 'या अली सलाम अलैक' और 'या ज़की सलाम अलैक' कहने में कोई हर्ज नहीं है, जब तक कि यह शरीयत द्वारा निषिद्ध कार्यों से मुक्त हो। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला नंबर ७७७: गुना, मध्य भारत, ग्वालियर राज्य से, प्रेषक मोहम्मद सिद्दीक, सचिव अंजुमन-ए-इस्लामिया, १७ सफ़र १३३८ हिजरी। धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं: ज़ैद की दूसरी पत्नी दूसरे आदमी के साथ भाग गई और अनैतिकता के कार्य कर रही है, फिर भी ज़ैद उसे रखे हुए है, और वह पत्नी ज़ैद पर हावी है। ज़ैद दूसरों से कहता है, "तुम उस व्यक्ति को जिसे मेरी पत्नी बुलाती है, मेरे घर आने से रोको।" जब ज़ैद से कहा जाता है कि उसे तलाक़ दे देना बेहतर है, तो वह गुस्सा हो जाता है, कठोर शब्द कहता है और कहता है, "मेरी पहली पत्नी भी लोगों को बुलाती थी; क्या मैं उसे भी तलाक़ दे दूँ? मैं ऐसा कभी नहीं करूँगा।" इस तरह की ज़िद के साथ, क्या ज़ैद 'दयूष' (Cuckold) है या नहीं? और क्या मुसलमानों को, यदि वह इमामत करता है, तो उसे पद से हटाना चाहिए या नहीं? ज़ैद, जो मस्जिद का इमाम है, ने कुछ अज्ञानियों को अपना पक्षधर बना लिया है। उनमें से एक व्यक्ति बक्र ने कहा कि "हमारा इमाम चाहे दो-दो बोतल शराब पिए और चार वेश्याएं रखे, वही इमाम रहेगा।" बक्र के बारे में शरीयत का क्या हुक्म है और जो लोग ऐसे इमाम का पक्ष लेते हैं और उसे इमाम बनाए रखने पर ज़ोर देते हैं, उनके बारे में क्या हुक्म है? बयान करें और पुण्य कमाएं।

उत्तर: यदि ज़ैद अपनी पत्नी के ऐसे कार्यों से प्रसन्न है या अपनी सामर्थ्य के अनुसार रोकथाम नहीं करता है, तो वह निस्संदेह 'दयूष' है और उसे इमामत से हटाना अनिवार्य है। उसके पीछे नमाज़ पढ़ना गुनाह है, और उसे दोहराना ज़रूरी है, और उसके समर्थक पापी हैं।

अल्लाह तआला फरमाता है: "और पाप और ज़्यादती में एक दूसरे का सहयोग न करो।" [१] अल्लाह तआला का फरमान है: पाप और ज़्यादती पर एक-दूसरे की सहायता न करो। (त)

और अगर वह इन कार्यों से प्रसन्न नहीं है और जहाँ तक संभव हो रोकथाम करता है, तो औरत के कार्यों का दोष उस पर नहीं है।

अल्लाह तआला का इरशाद है: "कोई बोझ उठाने वाला किसी दूसरे का बोझ नहीं उठाएगा।" [२] अल्लाह तआला का महान वचन है: कोई भी बोझ उठाने वाला किसी दूसरे का बोझ नहीं उठाएगा। (त)

न ही उस पर तलाक़ देना अनिवार्य है। हदीस में है: एक व्यक्ति अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की सेवा में आया...

---

[१] अल-कुरान ५/२ [२] अल-कुरान ६/१६४ पृष्ठ ७३६ का ६०९

فتاویٰ رضویہ جلد ششم حضرت سید الشہداء اور حضرت مولیٰ مشکلکشا رضی اللہ تعالیٰ عنہما کی مجلس ذکر شریف منعقد کرنا اور یا علی سلام علیک و یا ذکی سلام علیک کہنا کچھ حرج نہیں رکھتا جبکہ منکرات شرعیہ سے خالی ہو۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔ مسئلہ نمبر ۷۷۷: از گونا سنٹرل انڈیا ریاست گوالیار مرسلہ محمد صدیق سیکریٹری انجمن اسلامیہ ۱۷ صفر ۱۳۳۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید کی زوجہ ثانی ایک دوسرے شخص کے ساتھ فرار ہوگئی اور فسق و فجور کرتی ہے اور زید اُس کو رکھے ہوئے ہے اور وہ زوجہ زید، زید پر حاوی ہے، زید دوسروں سے کہتا ہے کہ تم فلاں شخص جس کو میری زوجہ بلاتی ہے میرے گھر آنے سے روکو۔ جب زید سے کہا جائے تم اس کو طلاق دیدو تو بہتر ہے۔ اس پر زید غصہ کرے اور کلمات سخت کہے اور کہے کہ میری زوجہ اولیٰ بھی تو لوگوں کو بلواتی ہے کیا اس کو بھی طلاق دیدوں ایسا ہرگز نہیں کروں گا۔ تو ایسے اصرار سے زید دیوث ہے یا نہیں اور مسلمانوں کو ، زید کو اگر وہ پیش امامی کرتا ہو معزول کرنا چاہئے یا نہیں۔ زید جو پیش امام مسجد ہے اس نے چند جاہلوں کو اپنا طرفدار بنالیا ہے اُن میں سے ایک شخص بکر نے کہا کہ ہمارا پیش امام دو دو بوتلیں شراب کی پیئے گا اور چار رنڈیاں رکھے گا اور وہی پیش امام رہے گا۔ پس بکر کی بابت شرعاً کیا حکم ہے اور جو لوگ ایسے امام کی طرفداری کریں اور اس کو پیش امام رکھنے پر اصرار کریں ان کی بابت کیا حکم ہے؟ بینوا توجروا۔

الجواب: زید اپنی زوجہ کے ایسے افعال پر اگر راضی ہے یا بقدرِ قدرت بند وبست نہیں کرتا تو بلاشبہ دیوث ہے اور اسے امامت سے معزول کرنا واجب، اور اسکے پیچھے نماز پڑھنا گناہ، اور اسکا پھیرنا لازم، اور اس کے حامی گنہ گار۔

قال اللہ تعالٰی وَلَا تَعَاوَنُوْا عَلَی الْاِثْمِ وَالْعُدْوَانِ ۱ اللہ تعالیٰ کا فرمان ہے: گناہ اور زیادتی پر ایک دوسرے سے تعاون نہ کیا کرو۔ (ت)

اور اگر وہ ان افعال پر راضی نہیں اور جہاں تک اسکا امکان ہے بند وبست کرتا ہے تو عورت کے افعال پر اسکا الزام نہیں۔

قال اللہ تعالٰی لَا تَزِرُ وَازِرَۃٌ وِّزْرَ اُخْرٰی ج ۲ اللہ تعالیٰ کا ارشاد گرامی ہے: کوئی بوجھ اٹھانے والا کسی دوسرے کا بوجھ نہیں اٹھائے گا۔ (ت)

نہ اس پر طلاق دینا لازم۔ حدیث میں ہے: جاء رجل الی النبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم ایک شخص رسول خدا صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کی خدمت میں آیا۔۔۔

---

۱ القرآن ۵/۲ ۲ القرآن ۶/۱۶۴

He said: "My wife does not prevent the hand of any toucher." He said: "Then divorce her." He said: "Indeed, I love her." He said: "Then benefit from her." Narrated by Abu Dawud.

And it was submitted: "My wife does not stop any toucher." He (the Prophet) said: "Divorce her." He submitted: "I love her." He said: "Benefit from her (keep her)." Abu Dawud (T).

In Durr-e-Mukhtar, it is stated: "It is not mandatory for a husband to divorce a profligate woman." (T)

The impure words spoken by Bakr clearly manifest animosity towards the Pure Sharia; repentance is obligatory for him. Allah Almighty knows best.

Issue No. 775: From Jaipur Ghat State, Gate of Madrasa Qadriya Takia Azam Shah, sent by Haji Abdul Jabbar Sahib Razvi. What is the ruling of the Pure Sharia in this matter: Zaid leads the prayer (Imam) and his hair is long, i.e., below the shoulders reaching near the chest. Amr says that growing hair below the shoulders is forbidden (Haram) and praying behind such a person is prohibitively disliked (Makruh Tahrimi), requiring repetition. Zaid says that keeping such long hair, i.e., below the shoulders, is permissible and it is the style of spiritual masters and Sayyids. For instance, Ala Hazrat Fazil-e-Barelvi (may his shadow be lengthened) wrote in his treatise 'Al-Harf al-Hasan fi al-Kitaba ala al-Kafan' on page 19, line 19 regarding Hazrat Sayyiduna Imam Ali Raza (may Allah be pleased with him) that two of his tresses were hanging over his shoulders. Therefore, the question is whether Zaid's statement is correct or Amr's. If Amr's statement is correct, should we followers recalculate and repeat all the prayers we offered behind Zaid, or not?

The Answer: Muslims should follow Sharia. Command belongs only to Allah and His Messenger. Growing hair down to the chest is Shari'ly forbidden for a man; it is imitation of women and, according to numerous authentic hadiths, it is a cause for God's curse, Allah forbid.

The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Allah has cursed the men who imitate women..." etc.

(T) The Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said: Allah's curse is upon those men who resemble women. etc.

Mother of the Believers Siddiqa (may Allah be pleased with her) saw a woman wearing men's shoes and informed her of the curse. The Holy Prophet...

1. Sunan Abu Dawud, Book on Marrying Virgins, published by Aftab Alam Press, Lahore, 1/280; Sunan Nasai, Marrying an Adulteress, Nur Muhammad Kutub Khana, Karachi, 1/2. Note: The words in these references are different but the meaning is the same. - Nazir Ahmad Saidi.
2. Durr-e-Mukhtar, Book of Prohibition and Permission, Section on Sale, published by Matba Mujtabai, Delhi, 2/254.
3. Al-Mu'jam al-Kabir, narrated by Ibn Abbas (may Allah be pleased with him), published by Al-Maktaba al-Faysaliyyah, Beirut, 11/252.

उसने कहा: "मेरी पत्नी किसी छूने वाले का हाथ नहीं रोकती।" उसने कहा: "तो उसे तलाक दे दो।" उसने कहा: "मैं उससे प्रेम करता हूँ।" उसने कहा: "तो उससे लाभ उठाओ (उसे अपने पास रख)।" अबू दाऊद द्वारा वर्णित।

और अर्ज़ की: "मेरी बीवी किसी स्पर्श करने वाले को मना नहीं करती।" फ़रमाया: "उसे तलाक़ दे दे।" अर्ज़ किया: "मैं उससे मुहब्बत करता हूँ।" फ़रमाया: "उससे इस्तेफ़ादा (लाभ) कर, अबू दाऊद (त)।"

दुर्रे मुख्तार में है: "पति पर बदचलन औरत को तलाक़ देना वाजिब नहीं है।" (त)

बक्र ने जो नापाक शब्द कहे हैं, उनसे शरीयत-ए-मुतहरा से स्पष्ट द्वेष झलकता है, उस पर तौबा फ़र्ज़ है। वल्लाह तआला आलम।

मसला नंबर ७७५: रियासत जयपुर घाट, मदरसा क़ादरिया का दरवाज़ा, तकिया आज़म शाह से, प्रेषक हाजी अब्दुल जब्बार साहब रिज़वी। शरीयत-ए-मुतहरा का इस मसले में क्या हुक्म है कि ज़ैद इमामत करता है और उसके सिर के बाल लंबे हैं यानी कंधों से नीचे सीने के करीब तक हैं। अम्र कहता है कि कंधों से नीचे बाल बढ़ाना हराम है और ऐसे व्यक्ति के पीछे नमाज़ 'मक़रूहे तहरीमी' (सख़्त नापसंद) है जिसका दोहराना अनिवार्य है। ज़ैद कहता है कि इतने लंबे बाल रखना यानी कंधों से नीचे जायज़ है और यह बुज़ुर्गों और सैयदों का तरीक़ा रहा है, जैसा कि आला हज़रत फ़ाज़िल-ए-बरेलवी (उनका साया बना रहे) ने अपने रिसाले 'अल-हर्फ़ अल-हसन फ़ी अल-किताबति अलल-कफ़न' के सफ़हा १९ सतर १९ में हज़रत सैयदुना इमाम अली रज़ा (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) के बारे में लिखा है कि उनके दो ज़ुल्फ़ें कंधों पर लटक रहे थे। लिहाज़ा सवाल यह है कि ज़ैद की बात सही है या अम्र की? अगर अम्र की बात सही है तो जितनी नमाज़ें हम मुक़्तदियों ने ज़ैद के पीछे पढ़ी हैं, उनका हिसाब लगाकर सबको दोहराएँ या नहीं?

अल-जवाब: मुसलमानों को शरीयत का अनुसरण करना चाहिए। हुक्म सिर्फ़ अल्लाह और उसके रसूल के लिए है। सीने तक बाल रखना पुरुष के लिए शरअन हराम है, और औरतों की नकल करना है और अनेक सही हदीसों के अनुसार अल्लाह की पनाह, यह लानत का कारण है।

नबी अकरम (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "अल्लाह की लानत उन मर्दों पर जो औरतों के साथ समानता (मुशाबहत) करें..." इत्यादि।

(त) नबी अकरम (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: अल्लाह तआला की लानत उन मर्दों पर जो औरतों के साथ समानता करें। इत्यादि।

उम्मुल मोमिनीन सिद्दीक़ा (रज़ियल्लाहु तआला अन्हा) ने एक औरत को मर्दाना जूता पहने देखा तो उसे लानत की ख़बर दी। नबी अकरम...

1. सुनन अबू दाऊद, बाब फ़ी तज़ुवजुल अबकार, मयूबुआ आफ़ताब आलम प्रेस लाहौर १/२८०, सुनन नसाई तज़ुवजुल ज़ानिया, नूर मुहम्मद कुतुब खाना कराची १/२। फ़: इन हवालों में वर्णित शब्द भिन्न हैं लेकिन अर्थ एक ही है। - नज़ीर अहमद सईदी।
2. दुर्रे मुख्तार, किताबुल हज़र वल इबाहत, फ़स्ल फ़िल बै, मतबुआ मतबा मुज्तबाई दिल्ली २/२५४।
3. अल-मुअजम अल-कबीर, मरवी इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु तआला अन्हु, मतबुआ अल-मक्तबतुल फ़ैसलिया बैरूत ११/२५२।

فتاوی رضویہ جلد ششم

فقال ان امرأتی لا تمنع ید لامس قال فطلقہا قال انی احبہا فاستمتع بہا رواہ ابوداؤد۔

اور عرض کی امیری بیوی کسی مس کرنے والے کو منع نہیں کرتی۔ فرمایا : اسے طلاق دے دے۔ عرض کیا : میں اس سے محبت کرتا ہوں۔ فرمایا : اس سے استفادہ کر، ابوداؤد (ت)

در مختار میں ہے : لا یحب علی الزوج تطلیق الفاجرۃ (خاوند پر فاجرہ عورت کو طلاق دینا واجب نہیں۔ت)

بکر جس نے وہ ناپاک کلمات کہے ان سے صراحۃ شریعت مطہرہ سے عناد ٹپکتا ہے اس پر توبہ فرض ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۷۷۵: از ریاست جے پور گھاٹ ، دروازہ مدرسہ قادریہ تکیہ اعظم شاہ ، مرسلہ حاجی عبدالجبار صاحب رضوی۔ کیا حکم ہے شریعت مطہرہ کا اس مسئلہ میں کہ زید امامت کرتا ہے اور اس کے سر کے بال لمبے یعنی دوش سے نیچے قریب سینہ تک ہیں ، عمرو کہتا ہے کہ دوش سے نیچے بال بڑھانا حرام ہیں اور ایسے شخص کے پیچھے نماز مکروہ تحریمی واجب الاعادہ ہے ، زید کہتا ہے کہ اتنے لمبے بال رکھنا یعنی دوش سے نیچے جائز ہے اور مشائخ سادات کا یہ شعار ہے چنانچہ اعلٰی حضرت فاضل بریلوی مدظلہ نے اپنے رسالہ الحرف الحسن فی الکتابۃ علی الکفن کے صفحہ ۱۹ سطر میں حضرت سیدنا امام علی رضا رضی اللہ تعالٰی عنہ کے متعلق لکھا ہے کہ ان کے دو گیسوشانہ پر لٹک رہے تھے لہذا سوال یہ ہے کہ زید کا کہنا صحیح یا عمرو کا ، اگر قول عمرو کا صحیح ہے تو جتنی نمازیں ہم مقتدیوں نے زید کے پیچھے پڑھی ہیں حساب کر کے سب کا اعادہ کریں یا نہیں؟

الجواب: مسلمانوں کو اتباعِ شریعت چاہئے۔ حکم نہیں من مگر اللہ ورسول کے لئے۔ سینہ تک بال رکھنا شرعاً مرد کو حرام ، اور عورتوں سے تشبہ اور بحکم احادیث صحیحہ کثیرہ معاذ اللہ باعث لعنت ہے۔

قال صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم لعن اللہ المشتھبین من الرجال بالنساء الخ۔

نبی اکرم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا : اللہ تعالیٰ کی لعنت ان مردوں پر جو عورتوں کے ساتھ مشابہت کریں (ت) الخ۔

ام المؤمنین صدیقہ رضی اللہ تعالیٰ عنہا نے ایک عورت کو مردانہ جوتا پہنے دیکھا اسے لعنت کی خبر دی۔ نبی اکرم...

1 سنن ابوداؤد باب فی تزوج الابکار مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور ۲۸۰/۱ ، سنن نسائی تزوج الزانیہ النور محمد کتب خانہ کراچی ۱/۲ ف : ان حوالوں میں مذکور الفاظ مختلف ہیں لیکن مفہوم ایک ہے۔ نذیر احمد سعیدی 2 در مختار کتاب الحظر والاباحۃ فصل فی البیع مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۲۵۴/۲ 3 المعجم الکبیر مروی ابن عباس رضی اللہ تعالیٰ عنہ مطبوعہ المکتبۃ الفیصلیہ بیروت ۲۵۲/۱۱

Fatawa Razawiya, Volume VI

(The Prophet) peace and blessings of Allah be upon him saw a woman carrying a bow and said: "May Allah's curse be upon women who imitate men and men who imitate women." 1- While shoes are not part of the body, they are part of clothing, and a bow is not even part of clothing but an external object. When he cursed for imitation in these, then hair is a part of the body; to what extent would imitation in it be forbidden and a cause for curse? It is mentioned in 'Al-Harf al-Hasan' that they were hanging on the shoulders or that they descended from the shoulder to the chest. Having long tresses up to the shoulder so that they grow further for correction is certainly permissible, even among the Sunan al-Zawa'id. Prayers should be repeated after calculation, and it is hoped from the Imam that by accepting the Shar'i ruling, he will himself avoid disobedience and save his and the followers' prayer from detestability (karahat). And Allah Almighty knows best.

Issue No. 776: From Maniyawala, Post Office Qasimpur Garhi, District Bijnor, sent by Sayyid Kifayat Ali Sahib, 3 Rabi al-Awwal Sharif 1338 AH. What do the scholars of religion say on this issue: if the Imam and one follower (muqtadi) are praying and another follower arrives, should the Imam stay where he is or move forward? (provided there is space to move forward). Clarify and be rewarded.

The Answer: If the first follower is knowledgeable about the ruling and has space to move back, he should move back so the second follower can stand beside him. If he is not knowledgeable or doesn't have space to move back, then the Imam should move forward. If the Imam also doesn't have space to move forward, the second follower should stand on the left side. However, a third follower should not join them now; otherwise, everyone's prayer will become prohibitively disliked (Makruh Tahrimi) and repeating it for all will be mandatory. And Allah Almighty knows best.

Issue No. 777: From Bareilly, asked by Mahmood Hasan Sahib, student at Madrasa Manzar-e-Islam Bareilly, 19 Rabi al-Awwal 1338 AH.

Question (Arabic): What do the scholars of Ahl al-Sunnah wa al-Jama'ah, may Allah have mercy on you, say about whether prayer is permissible behind a beardless youth (amrad) who is sixteen years old? Benefit us with an answer, may Allah the Bestower protect you.

Question (Urdu Translation): What is the ruling of the scholars of Ahl-e-Sunnat wa Jama'at, may Allah Almighty have mercy on them, regarding whether the prayer

behind a sixteen-year-old beardless youth is permissible or not? Let us benefit from the answer, may Allah the Bestower have mercy on you. (T)

Footnotes: 1. Sahih al-Bukhari, Chapter on Men Imitating Women, printed by Qadimi Kutub Khana, Karachi, 2/874. 2. Radd al-Muhtar, Discussion on the Imamate of a Beardless Youth, printed by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/415.

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

(पैग़ंबर) सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने एक महिला को कमान लटकाए हुए देखा, तो फ़रमाया: "अल्लाह की लानत हो उन औरतों पर जो मर्दों की नकल करें और उन मर्दों पर जो औरतों की नकल करें।" 1- जबकि जूता शरीर का हिस्सा नहीं बल्कि पहनावे का हिस्सा है और कमान तो पहनावे का हिस्सा भी नहीं, एक बाहरी चीज़ है। जब इन चीज़ों में नकल करने पर लानत फ़रमाई, तो बाल शरीर का हिस्सा हैं; उनमें नकल किस हद तक हराम और लानत का कारण होगी। 'अल-हर्फ़ अल-हसन' में है कि वे कंधों पर लटक रहे थे या यह कि कंधे से उतरकर सीने तक पहुँचते थे। कंधों तक लंबे बाल होना ताकि वे सुधार के लिए आगे बढ़ें, निश्चित रूप से जायज़ है, बल्कि सुनन ज़वाइद में से है। नमाज़ों की गिनती करके उन्हें फिर से पढ़ना चाहिए, और इमाम साहब से उम्मीद है कि शरई हुक्म स्वीकार करके खुद गुनाह से बचेंगे और अपनी तथा मुक़्तदियों (नमाज़ियों) की नमाज़ को कराहत (नापसंदगी) से बचाएंगे। वल्लाहु तआला आलम (और अल्लाह बेहतर जानता है)।

मसला नंबर 776: मनियावाला, डाकखाना कासिमपुर गढ़ी, जिला बिजनौर से, सैयद किफ़ायत अली साहिब द्वारा भेजा गया, 3 रबी-उल-अव्वल शरीफ़ 1338 हिजरी। दीन के उलेमा इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि यदि इमाम और एक मुक़्तदी नमाज़ पढ़ रहे हों और दूसरा मुक़्तदी आ जाए, तो इमाम को वहीं रहना चाहिए या आगे बढ़ जाना चाहिए? (यदि आगे बढ़ने की जगह हो)। बयान करें, पुण्य (सवाब) मिलेगा।

उत्तर: यदि पहला मुक़्तदी मसले का जानकार है और उसके पास पीछे हटने की जगह है, तो उसे पीछे हट जाना चाहिए ताकि दूसरा मुक़्तदी उसके बराबर खड़ा हो सके। और यदि वह मसले का जानकार नहीं है या उसे पीछे हटने की जगह नहीं है, तो इमाम आगे बढ़ जाए। और अगर इमाम के पास भी आगे बढ़ने की जगह नहीं है, तो दूसरा मुक़्तदी बाईं ओर खड़ा हो जाए। लेकिन अब तीसरा मुक़्तदी आकर न मिले, वरना सबकी नमाज़ मकरूह तहरीमी (कठोर रूप से नापसंद) हो जाएगी और सबका नमाज़ दोहराना वाजिब होगा। वल्लाहु तआला आलम।

मसला नंबर 777: बरेली से, महमूद हसन साहिब, छात्र मदरसा मंज़र-ए-इस्लाम बरेली, 19 रबी-उल-अव्वल 1338 हिजरी द्वारा पूछा गया।

अरबी प्रश्न: अहले सुन्नत वल जमात के उलेमा का क्या कहना है, अल्लाह आप पर रहम करे, क्या सोलह साल के अम्रद (बिना दाढ़ी वाले युवक) के पीछे नमाज़ पढ़ना जायज़ है? हमें जवाब से लाभान्वित करें, अल्लाह वहाब (दाता) आप पर रहम करे।

उर्दू प्रश्न का अनुवाद: अहले सुन्नत व जमात के उलेमा, अल्लाह तआला उन पर रहम करे, का इस बारे में क्या फ़रमान है कि क्या सोलह वर्षीय अम्रद के पीछे नमाज़ जायज़ है या नहीं? हमें जवाब से लाभान्वित किया जाए, रहमकुमुल्लाह अल-वहाब। (त)

फुटनोट्स: 1. सहीह अल-बुखारी, महिलाओं की नकल करने वालों पर अध्याय, पुराना कुतुब खाना, कराची, 2/874 द्वारा प्रकाशित। 2. रद अल-मुह्तार, अम्रद की इमामत पर चर्चा, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 1/415 द्वारा प्रकाशित।

فتاویٰ رضویہ، جلد ششم

صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے ایک عورت کو کمان لٹکائے ملاحظہ فرمایا، ارشاد فرمایا: "اللہ کی لعنت ہو ان عورتوں پر کہ مردوں سے تشبہ کریں اور ان مردوں پر کہ عورتوں سے مشابہت کریں۔" 1۔ حالانکہ جوتا کوئی جزو بدن نہیں جزو لباس ہے اور کمان جزو لباس بھی نہیں ایک خارج شے ہے جب ان مشابہت پر لعنت فرمائی تو بال جزو بدن ہیں ان میں مشابہت کس درجہ حرام اور باعث لعنت ہوگی۔ الحرف الحسن میں یہ ہے کہ شانہ پر لٹک رہے تھے یا یہ کہ شانہ سے اتر کر سینہ تک پہنچے تھے۔ شانہ تک لمبے گیسووں کا ہونا کہ آگے اصلاحاً بڑھے لں ضرور جائز بلکہ سنن زوائد سے ہے حساب کر کے نمازوں کا اعادہ چاہئے اور امام صاحب سے امید ہے کہ حکم شرع قبول فرما کر خود معصیت سے بچیں گے اور اپنی اور مقتدیوں کی نماز کراہت سے بچائیں گے۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۷۷۶: از مانیاوالا ڈاکخانہ قاسم پور گڑھی ضلع بجنور مرسلہ سید کفایت علی صاحب ۳ ربیع الاول شریف ۱۳۳۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ امام اور ایک مقتدی نماز پڑھتے ہوں دوسرا مقتدی آگیا تو امام کو وہیں رہنا چاہئے یا آگے چلا جائے یا نہیں (اور آگے بڑھنے کی جگہ ہو) بینوا توجروا

الجواب: اگر پہلا مقتدی مسئلہ دان ہے اور اسے پیچھے ہٹنے کی جگہ ہے تو وہ ہٹ آئے دوسرا مقتدی اس کی برابر کھڑا ہو جائے اور اگر یہ مسئلہ دان نہیں یا اسے پیچھے ہٹنے کو جگہ نہیں تو امام آگے بڑھ جائے، اور اگر امام کو بھی آگے بڑھنے کی جگہ نہیں تو دوسرا مقتدی بائیں ساتھ کو کھڑا ہو جائے مگر اب تیسرا مقتدی آکر نہ ملے ورنہ سب کی نماز مکروہ تحریمی اور سب کا پھیرنا واجب۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۷۷۷: از بریلی مسئولہ محمود حسن صاحب طالب علم مدرسہ منظر اسلام بریلی ۱۹ ربیع الاول ۱۳۳۸ھ

سوال (عربی): ما قول علماء اهل السنة والجماعة رحمكم الله هل تجوز الصلاة خلف الامرد الذی هوابن ستة عشر سنة افیدونا الجواب احمكم الله الوهاب 2-

سوال کا اردو ترجمہ: علمائے اہلسنت و جماعت رحمہم اللہ تعالیٰ کا اس بارے میں کیا ارشاد ہے کہ سولہ سالہ امرد کے پیچھے نماز جائز ہوتی ہے یا نہیں؟ ہمیں جواب سے مستفید کیا جائے، رحمکم اللہ الوہاب۔(ت)

حواشی: 1۔ صحیح البخاری، باب المتشبہین بالنساء مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۲/۸۷۴ 2۔ ردالمحتار مطلب فی امامۃ الامرد مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/۴۱۵

Fatawa Razvia Volume Six

Answer: Yes, it is permissible provided there is no Sharia-legal barrier because he is Sharia-legally an adult even if signs of puberty haven't appeared. However, if he is a handsome beardless youth, then the prayer will be disliked (Makruh) because it is a place of temptation. It is mentioned as such in Radd al-Muhtar from Ar-Rahmati. (T)

Question number 782, 787: From Kot Daska, sent by Muhammad Hayat Sahab, Teacher High School, 16 Jamadi-ul-Ukhra 1338 AH. What do the respected scholars of Islam say about an Imam of a mosque who has the following explicit defects: (1) He is a washer of the dead and a slaughterer; if he doesn't receive anything from the family of the deceased, he continues to complain. (2) He does not take care of the mosque's belongings at all, nor does he encourage people to repair them. Therefore, mosque items continue to deteriorate and get damaged, and are lost or misappropriated. He resides in a house belonging to the mosque, which is separate but adjacent to the mosque. If asked to protect the mosque's belongings, he becomes enraged. (3) He only leads the congregation for the Maghrib prayer; for the other prayers, people pray individually on their own. If told otherwise, he gets angry. (4) He has suffered from hemorrhoids for a long time. To protect against drops of urine, pus, and blood, he wears a loincloth underneath. The ailment hasn't completely gone, nor is it likely to. (5) He is employed in a lowly position as a head sweeper (Jamadar) in the Municipal Committee of Kot Daska for 8 rupees monthly. Due to poor performance, local officers and committee members are often displeased with him, which is unpleasant for Muslims. (6) Adjacent to Mian Ji's houses in the inner city is an old mosque. Due to the passage of time, there are no longer any Muslim houses in that neighborhood, and the mosque has become deserted. Now, Mian Ji has turned this mosque into a stable for livestock and a storehouse for buffalo dung. Ironically, he continues to take his due (salary/rights) from this mosque as well. (7) Even if he observes fasts in the blessed month of Ramadan despite being elderly, he comes to lead the Tarawih prayers because there is an incentive (payment/service) for the one leading Tarawih. However, congregational obligatory prayers are non-existent except for Maghrib. How is it to pray behind such an Imam?

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

जवाब: हाँ जायज़ है बशर्ते कि कोई शरई रुकावट न हो क्योंकि वह शरई तौर पर बालिग़ है चाहे बालिग़ होने के लक्षण प्रकट न हुए हों। अलबत्ता अगर वह ख़ूबसूरत अम्रद (बिना दाढ़ी वाला युवक) है तो फिर नमाज़ मकरूह होगी क्योंकि वह फ़ितना (आकर्षण) का स्थान है। रद-उल-मुहतार में शैख़ रहमती से ऐसा ही ज़िक्र है। (त)

मसला नंबर 782, 787: कोज़ डस्का से प्रेषक मुहम्मद हयात साहब, शिक्षक हाई स्कूल, 16 जमादी-उल-उख़रा 1338 हिजरी। क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-किराम ऐसे इमाम-ए-मस्जिद के बारे में जिसमें निम्नलिखित दोष स्पष्ट रूप से हों: (1) वह मुर्दों को नहलाने वाला (ग़साल) और ज़बह करने वाला है; अगर किसी मृतक के परिवार से कुछ न मिले तो वह शिकायत करता रहता है। (2) मस्जिद के सामान की बिलकुल हिफाज़त नहीं करता और न ही उनकी मरम्मत आदि के लिए लोगों को प्रेरित करता है, इसलिए मस्जिद की चीजें बिगड़ती और खराब होती रहती हैं और गायब या खुर्द-बुर्द होती रहती हैं। वह मस्जिद से संबंधित मकान में रहता है जो मस्जिद से अलग लेकिन जुड़ा हुआ है। अगर उसे मस्जिद के सामान की हिफाज़त के लिए कहा जाए तो वह आगबबूला हो जाता है। (3) जमात की नमाज़ सिर्फ मग़रिब की पढ़ाते हैं, बाकी नमाज़ें लोग खुद-ब-खुद अलग-अलग पढ़ते हैं। अगर उन्हें कहा जाए तो वह नाराज़ हो जाते हैं। (4) बवासीर की बीमारी लंबे समय से है। पेशाब की बूंदों, पीप और खून से बचने के लिए नीचे लंगोटी पहनते हैं। बवासीर की शिकायत पूरी तरह खत्म नहीं हुई है और न ही जाने वाली है। (5) वह म्युनिसिपल कमेटी कस्बा कोट डस्का में सफाई कर्मचारियों के जमादार के एक छोटे पद पर 8 रुपये मासिक वेतन पर कार्यरत हैं। काम अच्छा न होने पर स्थानीय अधिकारी और कमेटी के सदस्य अक्सर उनसे नाराज़ रहते हैं, जो मुसलमानों के लिए नागवार है। (6) मियां जी के शहर के अंदर स्थित मकानों के बिलकुल पास एक पुरानी मस्जिद है। समय के बदलाव के कारण अब उस मोहल्ले में मुसलमानों के घर नहीं रहे और मस्जिद वीरान हो गई है। अब मियां जी ने इस मस्जिद को पशुशाला और भैंसों के गोबर का घर बना रखा है। अजीब बात यह है कि वह इस मस्जिद का हक (वेतन/अधिकार) बराबर ले रहे हैं। (7) रमजान के मुबारक महीने में अगर बुढ़ापे के बावजूद भी रोजे रखते हों, तो तरावीह की नमाज़ पढ़ाने के लिए आते हैं क्योंकि तरावीह पढ़ाने वाले की सेवा (पारिश्रमिक) होती है, लेकिन फर्ज नमाज़ की जमात मग़रिब के अलावा कहीं नहीं होती। ऐसे इमाम के पीछे नमाज़ पढ़ना कैसा है?

पेज 612 का 736

الجواب: نعم تجوز ان لم یکن مانع شرعی لانہ بالغ شرعاً وان لم تظھر الاثار نعم تکرہ انکان صبیحاً محل الفتنۃ کما فی ردالمحتار عن الرحمتی۔(ت) ہاں جائز ہے بشرطیکہ کوئی مانع شرعی موجود نہ ہو کیونکہ وہ شرعی طور پر بالغ ہے اگر بلوغ کے آثار ظاہر نہ ہوئے ہوں البتہ اگر وہ امرد خوبصورت ہے تو پھر نماز مکروہ ہوگی کیونکہ وہ محل فتنہ ہوتا ہے۔ ردالمحتار میں شیخ رحمتی سے یوں ہی ذکر ہے۔ (ت)

مسئلہ نمبر ۷۸۲، ۷۸۷: از کوٹ ڈسکہ مرسلہ محمد حیات صاحب مدرس ہائی اسکول ۱۶ جمادی الاخری ۱۳۳۸ھ کیا فرماتے ہیں حضرات علمائے کرام ایسے امام مسجد کے بارے میں جس میں مفصلہ ذیل نقص صریحاً ہوں، (۱) غسال وذایح ہے اگر کسی صاحب میت سے کچھ نہ ملے تو شاکی رہتا ہے۔ (۲) سامان مسجد کے مطلق حفاظت نہیں کرتا اور نہ ان کی مرمت وغیرہ کی لوگوں کو ترغیب دیتا ہے اس لئے اشیاء مسجد بگڑتی اور خراب ہوتی رہتی ہیں اور ضائع اور غبن ہوتی رہتی ہیں اور مسجد کے متعلقہ مکان میں رہائش رکھتے ہیں جو کہ مسجد سے علیحدہ متصل مسجد ہے اگر حفاظت سامان مسجد کو کہیں تو برافروختہ ہو جاتے ہیں۔ (۳) جماعت نماز صرف مغرب کی کرتے ہیں باقی نمازیں متفرق طور پر لوگ خود بخود پڑھتے ہیں، اگر کہیں تو ناراض۔ (۴) مرض بواسیر عرصہ سے ہے تقاطر بول اور پیپ اور خون سے محفوظ رہنے کے لئے نیچے لنگوٹی رکھتے ہیں پورے طور پر شکایت مرض بواسیر نہیں گئی اور نہ یہ جانے والی ہے۔ (۵) میونسپل کمیٹی قصبہ کوٹ ڈسکہ میں ایک ادنیٰ آسامی جمعداری خاکروبان ۸ روپے ماہوار پر ملازم ہیں، کام اچھا نہ ہونے پر مقامی افسر اور ممبران کمیٹی اکثر ناراض رہتے ہیں جو کہ مسلمانوں کو ناگوار گزرتا ہے۔ (۶) میاں جی کے اندرون شہر میں جو مکانات ہیں ان کے بالکل

متصل ایک پرانی مسجد ہے انقلاب زمانہ سے اس محلہ میں مسلمانوں کے گھر نہ رہے اور مسجد غیر آباد ہوگئی، اب میاں جی اس مسجد کو مال مویشی خانہ اور گوبر بھینس خانہ بنا رکھا ہے، طرفہ یہ کہ حق اس مسجد کا برابر لے رہے ہیں۔ (۷) روزہ ماہ رمضان المبارک اگر معمر ہونے کی وجہ سے بھی رکھتے ہوں تو نماز تراویح پڑھانے کے لئے آتے ہیں کیونکہ تراویح پڑھانے والے کی خدمت ہوتی ہے مگر نماز فرض کی جماعت سوائے مغرب ندارد، ایسے امام کے پیچھے نماز پڑھنی کیسی ہے؟

Fatawa-e-Razvia, Volume 6 Answer: If these statements are correct, then only points 3 and 6 are sufficient for him to be considered a 'Fasiq Mu'lin' (an open sinner), as he consistently misses the congregational prayer in all four prayers every day and defiles the mosque. Appointing an open sinner as an Imam and praying behind him is 'Makruh Tahrimi' (prohibitively disliked), meaning praying behind him is a sin and repeating the prayer is mandatory. It is stated in 'Fatawa al-Hujjah' and 'Ghunyah': "If they put forward a sinner (as Imam), they will be sinning."[1] (If they prioritized a sinner for leadership, they would be sinners - Translated from Arabic). Furthermore, if urinary incontinence or bleeding cannot be stopped by a loincloth, it constitutes a severe case of being a 'Fasiq'. In any case, he should be removed from the position of Imam. And Allah Almighty knows best.

Issue No. 875: From the city, sent by Ghulam Muhammad Sahib, tailor, dated 21 Rajab al-Murajjab 1338 AH. What do the scholars of religion and jurists of the firm Shariah say about this matter: Zaid's shirt was stolen, and Bakr was accused of the theft based on some circumstantial evidence. Since the day the suspicion of theft fell on Bakr, everyone in the neighborhood has completely stopped praying behind him. Is it permissible or not to pray behind Bakr based on this doubt without his repentance? Another request is that Bakr's father said that if Zaid takes an oath, they will return the stolen goods, and Zaid said he would take an oath but then did not. Will praying behind Zaid without his repentance be permissible or not? Explain and be rewarded.

Answer: There is no blame on Zaid, and theft cannot be proven against Bakr based on mere suspicion alone, nor can praying behind him be forbidden. And Allah Almighty knows best.

Issue No. 876: From Calcutta, Narkel Danga Lindo Godown, sent by Sheikh Irfan Ali Sahib, 21 Rajab al-Murajjab 1338 AH. What do the scholars of religion and jurists of the firm Shariah say about this matter: Zaid gave his wife Hindah 'Talaq-e-Mughallazah' (irrevocable divorce), and the divorcee remained for a year. Then her husband took her back into his marriage without a legal Sharia contract, and a daughter was born to them. Eventually, that daughter became an adult. Now, if a Muslim marries this girl, can the offspring from this lineage lead prayers as an Imam or not? And is it permissible to pray behind him or not? Explain and be rewarded.

Answer: Her mother is the one born of adultery (due to the invalid union), but she herself is not. There is no harm in praying behind him as long as his creed and actions...

[1] Ghunyatul Mustamli Sharh Munyatul Musalli, Chapter on Imamat, printed by Sohail Academy Lahore, page 513. Page 613 of 736

फ़तावा-ए-रज़विया, जिल्द 6 उत्तर: यदि ये बयान सही हैं, तो केवल बिंदु संख्या 3 और 6 ही उसे 'फासिक़ मु'लिन' (खुलेआम गुनाह करने वाला) मानने के लिए पर्याप्त हैं, क्योंकि वह रोज़ाना चारों नमाज़ों में जमाअत छोड़ता है और मस्जिद को अपवित्र करता है। एक खुलेआम गुनाह करने वाले को इमाम बनाना और उसके पीछे नमाज़ पढ़ना 'मक़रूहे तहरीमी' (सख़्त नापसंदीदा) है, जिसका मतलब है कि उसके पीछे नमाज़ पढ़ना गुनाह है और उसे दोहराना वाजिब है। 'फ़तावा अल-हुज्जह' और 'ग़ुनियाह' में है: "यदि वे एक पापी को (इमाम के रूप में) आगे बढ़ाएँगे, तो वे गुनहगार होंगे।"[1] (अगर उन्होंने फासिक़ को इमामत के लिए आगे किया तो वे गुनहगार होंगे। - अनुवाद)। इसके अलावा, यदि पेशाब का टपकना या खून का बहना लंगोट से नहीं रुकता है, तो वह गंभीर रूप से 'फासिक़' है। किसी भी स्थिति में, उसे इमाम के पद से हटा दिया जाना चाहिए। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नम्बर 875: शहर से, भेजने वाले गुलाम मुहम्मद साहब दर्जी, दिनांक 21 रजब अल-मुरज्जब 1338 हिजरी। दीन के विद्वान और शरीअत के मुफ्ती इस मामले में क्या कहते हैं: ज़ैद की कमीज़ चोरी हो गई और कुछ सबूतों के आधार पर बक्र पर चोरी का संदेह जताया गया। जिस दिन से बक्र पर चोरी का संदेह हुआ, उस दिन से पूरे मुहल्ले वालों ने बक्र के पीछे नमाज़ पढ़ना बिल्कुल छोड़ दिया। क्या इस संदेह के आधार पर बिना तौबा के बक्र के पीछे नमाज़ पढ़ना जायज़ है या नहीं? एक और निवेदन यह है कि बक्र के पिता ने कहा कि अगर ज़ैद कसम खाए तो हम चोरी का माल दे देंगे, और ज़ैद ने कहा हम कसम खाएंगे लेकिन कसम नहीं खाई। क्या ज़ैद के पीछे बिना तौबा के नमाज़ जायज़ होगी या नहीं? वर्णन करें और पुण्य पायें।

उत्तर: ज़ैद पर कोई दोष नहीं है और केवल संदेह के आधार पर बक्र पर चोरी साबित नहीं हो सकती, और न ही उसके पीछे नमाज़ पढ़ना वर्जित है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नम्बर 876: कलकत्ता, नारकल डांगा लिंडो गोदाम से, भेजने वाले शेख इरफ़ान अली साहब, 21 रजब अल-मुरज्जब 1338 हिजरी। दीन के विद्वान और शरीअत के मुफ्ती इस मामले में क्या कहते हैं: ज़ैद ने अपनी पत्नी हिन्दा को 'तलाक-ए-मुग़ल्लज़ा' (अंतिम तलाक) दे दी और तलाकशुदा एक साल तक बैठी रही। फिर उसके पति ने बिना किसी शरिया निकाह के उसे अपनी पत्नी के रूप में वापस रख लिया और उससे एक लड़की पैदा हुई। यहाँ तक कि वह लड़की बड़ी हो गई। यदि कोई मुसलमान उस लड़की से निकाह कर ले, तो उस वंश से जो संतान पैदा होगी क्या वह इमामत कर सकता है या नहीं? और उसके पीछे नमाज़ पढ़ना जायज़ है या नहीं? बयान करें और पुण्य पायें।

उत्तर: उसकी माँ 'वल्द-उज़-ज़िना' (अवैध संतान वाली स्थिति में) हुई, वह खुद नहीं है। उसके पीछे नमाज़ पढ़ने में कोई हर्ज नहीं है जब तक कि उसका अकीदा और अमल...

[1] गुनयतुल मुस्तमली शरह मुनयतुल मुसल्ली, इमामत का अध्याय, सुहेल अकादमी लाहौर द्वारा मुद्रित, पृष्ठ 513। पृष्ठ 613 / 736

فتاویٰ رضویہ، جلد ششم الجواب: اگر یہ بیانات صحیح ہوں تو صرف نمبر ۳ و نمبر ۶ اس کے فاسق معلن ہونے کے لئے کافی ہیں کہ چاروں نمازوں میں روزانہ تارکِ جماعت ہے اور مسجد کو ناپاک و ملوث کرنے والا اور فاسق معلن کو امام بنانا اور اسکے پیچھے نماز پڑھنی مکروہِ تحریمی کہ پڑھنی گناہ اور پھیرنی واجب۔ فتاویٰ الحجہ وغنیہ میں ہے: لو قدموا فاسقاً یاثمون (اگر انھوں نے فاسق کو امامت کے لئے مقدم کیا تو گناہگار ہوں گے۔ ت) اور تقاطر بول اور جریانِ خون اگر لنگوٹ سے بند نہیں ہوتے تو سخت شدید فاسق ہے بہر حال اسے امامت سے معزول کرنا چاہئے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۸۷۵: از شہر مرسلہ غلام محمد صاحب درزی مورخہ ۲۱ رجب المرجب ۱۳۳۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین ومفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ زید کا قمیص چوری ہوا اور بکر چند قرائن کی وجہ سے بطورِ شبہ کے چوری ثابت کیا گیا اور جس روز سے بکر پر چوری ثابت ہوئی اس روز سے تمام محلہ والوں نے بکر کے پیچھے نماز پڑھنا قطعی چھوڑ دی اور بوجہ شک کے اور اسی شک کو لے کر بکر کے پیچھے نماز پڑھنا بلا توبہ جائز ہے یا نہیں، دیگر گزارش یہ ہے کہ بکر کے باپ نے کہا کہ زید اگر قسم کھائے تو مال مسروقہ ہم دیں گے اور زید نے کہا ہم قسم کھائیں گے لیکن قسم نہیں کھائی اور زید کے پیچھے بلا توبہ نماز جائز ہوگی یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: زید پر کوئی الزام نہیں اور خالی شبہ کے سبب بکر پر چوری ثابت نہیں ہو سکتی نہ اس کے پیچھے نماز منع نہ ہو۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۸۷۶: از کلکتہ نارکل ڈانگا رلنڈو گودام مرسلہ شیخ عرفان علی صاحب ۲۱ رجب المرجب ۱۳۳۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ زید نے اپنی بیوی ہندہ کو طلاقِ مغلظہ دی و مطلقہ مدت ایک سال تک بیٹھی رہی پھر اس کے شوہر نے اس کو

بلا عقدِ شرعیہ اپنی زوجیت میں رکھ لیا اور اس سے ایک لڑکی پیدا ہوئی یہاں تک کہ لڑکی مذکور بالغ ہوئی پس اس لڑکی سے کسی مسلمان نے اگر عقدِ شادی کر لی اور اس نسل سے اولاد جو پیدا ہو وہ امامت کر سکتا ہے یا نہیں اور اسکے پیچھے نماز پڑھنا جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: اس کی ماں ولد الزنا ہوئی وہ خود ولد الزنا نہیں، اس کے پیچھے نماز میں حرج نہیں جبکہ مذہب و اعمال و

1 غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل فی الامامۃ مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۵۱۳ Page of 736 613

Fatawa-e-Razvia Volume Six

...is capable in recitation and purity etc. Yes, if the common people detest his leadership and this causes a decrease in the congregation, then do not make him the Imam. And Allah Almighty knows best.

Mas'ala No. 787: From Calcutta, Lower Chitpur Road No. 125, sent by Haji Jan Muhammad Sahib, 14 Ramadan 1338 AH. (1) The trustees of a mosque employed Zaid for fifty rupees a month for three years. The condition was that we could dismiss him after three years. The Imam accepted this through a written agreement and signed it. (2) Despite the trustees' prohibition and formal prevention—unless we know the views and religious beliefs of any preacher or lecturer—he gives permission to anyone to preach or lecture in the mosque without informing the trustees. Consequently, during the previous riots in Calcutta, he even allowed Hindus inside the mosque. (3) The said Imam is often absent from leading the mosque's prayers and goes for sightseeing and invitations without the trustees' permission, and completely ignores the trustees' prohibitions. (4) After the expiration of the agreement period and formal written notification, the trustees have now appointed another Imam in his place, who is a resident of Medina Munawwarah and from the family of the Imam of Masjid Nabawi and has previously led prayers in Masjid Nabawi. He (Zaid) is obstructing and preventing him and is ready for mischief and discord, and continues to publish false, defamatory accusations and slanders against the trustees. Can the mosque trustees legally dismiss such an Imam according to Sharia or not?

The Answer: They can certainly dismiss him; in fact, for these actions, he must be dismissed. "A position holder is not dismissed except for a transgression, and this is a transgression."[1] (A holder of a position and stipend cannot be dismissed without cause, and this is cause. T). And Allah Almighty knows best.

Mas'ala No. 8810: Shawwal 1338 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: Zaid had studied, for example, two or three lessons of Gulistan and Bostan under Amr in childhood. Now there has been some resentment between them and Amr has disowned (aaq) him. Is prayer valid behind Zaid or not?

The Answer: If the student's fault reaches the level of transgression (fisq) and is well-known and famous due to public announcement, then it is not permissible to make him an Imam, and his...

[1] Radd al-Muhtar, Topic: The dismissal of a position holder is not valid, published by Mustafa Al-Babi, Egypt, 3/223.

फ़तावा-ए-रज़विया जिल्द शशम (छठा)

...क़िरात और तहारत वग़ैरह में क़ाबिल हो। हाँ, अगर अवाम उसकी इमामत से नफ़रत करें और यह बात जमात में कमी का बाइस बने, तो उसे इमाम न बनाएँ। वल्लाहु तआला आलम।

मसअला नम्बर 787: अज़ कलकत्ता लोर चितपुर रोड नम्बर 125, मुर्सला हाजी जान मोहम्मद साहब, 14 रमज़ान 1338 हिजरी। (1) एक मस्जिद के मुतवलियों ने ज़ैद को पचास रुपये माहवार तीन साल के लिए मुलाज़िम रखा। यह शर्त थी कि हम तीन साल बाद माज़ूल (बर्खास्त) कर सकते हैं। इमाम ने तहरीर के ज़रिये इक़रारनामा मंज़ूर करके अपने दस्तख़त कर दिये। (2) मुतवलियों की मनाही और बाज़ाबता रोक के बावजूद—जब तक हमें किसी वाइज़ या लेक्चरर के ख़यालात और मज़हब का इल्म न हो जाए—वह बिना मुतवलियों को इत्तिला दिए मस्जिद में वाज़ और लेक्चर देने की इजाज़त दे देता है। चुनाँचे पिछले फ़साद के मौक़े पर कलकत्ता में उसने मस्जिद के अंदर हिंदुओं तक को आने दिया। (3) मज़कूर इमाम अक्सर मस्जिद की इमामत से ग़ैर-हाज़िर रहता और सैर व दावतों में मुतवलियों की इजाज़त के बिना चला जाता है और मुतवलियों के मना करने की बिल्कुल परवाह नहीं करता। (4) इक़रारनामे की मीयाद गुज़रने और बाज़ाबता तहरीरी इत्तिला देने के बाद मुतवलियों ने दूसरे इमाम को, जो मदीना मुनव्वरा का साकिन और मस्जिद-ए-नबवी के इमाम के ख़ानदान से है और मस्जिद-ए-नबवी में इमामत कर चुका है, अब उसकी जगह मुक़र्रर किया है। वह (ज़ैद) रुकावट डाल रहा है और फ़ित्ना व फ़साद पर आमादा है, और मुतवलियों पर ख़िलाफ़-ए-वाक़या तोहमत और बहतान वाली बातें मशहूर कर रहा है। क्या शरअन मुतवलियान-ए-मस्जिद ऐसे इमाम को माज़ूल कर सकते हैं या नहीं?

अल-जवाब: ज़रूर माज़ूल कर सकते हैं, बल्कि इन हरकात पर उसको माज़ूल करना ही चाहिए। "ला युअज़लु साहिबु वज़ीफ़तिन इल्ला बि-जुन्हतिन व हाज़िही जुन्हतुन"[1] (वज़ीफ़ा और ओहदा रखने वाले को बिना किसी जुर्म के हटाया नहीं जा सकता, और यह एक जुर्म है। त)। वल्लाहु तआला आलम।

मसअला नम्बर 8810: शव्वाल 1338 हिजरी। क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन इस बारे में: ज़ैद ने अम्र से मसलन बचपन में बोस्तान-ए-गुलिस्ताँ के दो या तीन सबक़ पढ़े थे। अब उनमें रंजिश हो गई और अम्र ने उसे आक़ (बेदख़ल) कर दिया, तो ज़ैद के पीछे नमाज़ दुरुस्त है या नहीं?

अल-जवाब: अगर शागिर्द का क़ुसूर फ़िस्क (उल्लंघन) की हद तक है और ऐलान की वजह से मशहूर व मारूफ़ है, तो उसे इमाम बनाना जाइज़ नहीं और उसके..

[1] रद-अल-मुह्तार, मतलब ला यस़िह्हु अज़्लु साहिबि वज़ीफ़ह, मतबुआ मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 3/223.

قرات و طہارت وغیرہ میں قابل ہو، ہاں اگر عوام اس کی امامت سے نفرت کریں اور یہ امر باعثِ قلتِ جماعت ہو تو اسے امام نہ کریں۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۷۸۷: از کلکتہ لورچت پور روڈ نمبر ۱۲۵ مرسلہ حاجی جان محمد صاحب ۱۴ رمضان ۱۳۳۸ھ (۱) ایک مسجد کے متولیوں نے زید کو پچاس روپے ماہوار تین سال کے لئے ملازم رکھا یہ شرط تھی کہ ہم تین سال بعد معزول کر سکتے ہیں اسے امام نے بذریعہ تحریری اقرار نامہ کے منظور کر کے اپنے دستخط کر دیئے۔ (۲) باوجود متولیوں کے منع کرنے اور باضابطہ روکنے کے جب تک ہم کو کسی واعظ یا لکچرار کے خیالات اور مذہب کا علم نہ ہو جائے کسی کو مسجد میں وعظ لکچر دینے کی اجازت نہ دو بے اطلاع متولیوں کے خود اجازت دیتا ہے چنانچہ گزشتہ فساد کے موقع پر کلکتہ میں اس نے مسجد کے اندر ہندوؤں تک کو آنے دیا۔ (۳) امام مذکور اکثر مسجد کی امامت سے غیر حاضر ہوتا اور سیر و یاد عوتوں میں بے اجازت متولیوں کے چلا جاتا ہے اور متولیوں کے منع کرنے کی بالکل پرواہ نہیں کرتا۔ (۴) متولیوں نے بعد گزرنے میعاد اقرار نامہ اور باضابطہ تحریری اطلاع دہی کے دوسرے امام کو جو مدینہ منورہ کا ساکن اور مسجد نبوی کے امام کے خاندان سے ہے اور مسجد نبوی میں امامت کر چکا ہے اب بجائے اس کے مقرر کیا ہے وہ مزاحم و مانع ہے اور آمادہ فتنہ و فساد ہے اور متولیوں پر خلاف واقعہ توہین آمیز الزام و بہتان مشتہر کرتا آیا ایسے کو امام شرعاً متولیان مسجد معزول کر سکتے ہیں یا نہیں؟

الجواب: ضرور معزول کر سکتے ہیں بلکہ ان حرکات پر اس کو معزول کرنا ہی چاہئے ، لا یعزل صاحب وظیفۃ الا بجنحۃ و ھذہ جنحۃ ۱ (صاحب وظیفہ بغیر معزول نہیں کیا جا سکتا اور یہ مقررہ ہے۔ ت) واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۸۸۱۰: شوال ۱۳۳۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس بارے میں زید نے عمرو سے مثلاً بوستان گلستان کے بچپن میں دو یا تین سبق پڑھے تھے اب ان میں رنج ہو گیا اور عمرو نے اسے ہاک (عاق) کر دیا تو زید کے پیچھے نماز درست ہے یا نہیں؟

الجواب: اگر شاگرد کا قصور تاحد فسق ہے اور بوجہ اعلان مشہور و معروف ہے تو اسے امام بنانا جائز نہیں اور اس کے

---

۱ ردالمحتار، مطلب لایصح عزل صاحب وظیفہ مطبوعہ مصطفی البابی مصر، ۲۲۳/۳

Fatawa Razawiyya Volume 6

...praying behind him is a sin. If it is not his fault, or doesn't reach the level of open transgression (fisq), or he does not commit it openly, then in the first two cases, there is no dislike (karahat) in praying behind him for this reason. In the latter case, it is 'Makruh Tanzihi' (mildly disliked) and against what is preferable. As for disowning, it is of no consequence.

And Allah Almighty knows best.

Issue No. 789: From Rab Garh, Sadar Bazaar, at the shop of Ameer Bakhsh Tailor, sent by Sheikh Talib Hussain, 14th Shawwal, Thursday, 1338 AH.

What do the scholars of religion and jurists of the bright Sharia say about this issue: In Rab Garh, there are two mosques. The trustee (Mutawalli) of one mosque, who himself does not adhere to fasting and prayers, removed a prayer leader (Imam) who belonged to the Siddiqui community, was a Hafiz of knowledge, and a Molvi Hakim, without any reason. Instead of him, without consulting the congregants (muqtadis), he appointed another Imam who is only a Hafiz and belongs to the Qasab (butcher) community, whose family still continues that profession. When I asked the Mutawalli on what fault the previous Imam was removed, Mutawalli Abdul Samad Sahab replied very angrily, "This is our mosque, we will do whatever we want, the congregants cannot question us." Is prayer valid behind such an Imam and in such a mosque or not? Explain and be rewarded.

The Answer:

If the first Imam was, Allah forbid, of a corrupt belief (bad-mazhab), then removing him was extremely necessary. And if the second one is of a corrupt belief, then appointing him is forbidden (haram), and his removal is mandatory. Similarly, if any of them recites the Holy Quran incorrectly or does not perform purification (taharat) correctly, removing him is obligatory (fard), whether it's one or both. If their beliefs, recitation, and purification are sufficient for the validity of prayer, and the Imam receives a stipend, then removing the first one without a fault is a sin, because it causes unnecessary distress to a Muslim. "A stipend holder cannot be removed without a crime/offense." 1 (A stipend holder cannot be removed without any sin. - Translator). And the Mutawalli's statement that "the mosque is ours, we will do whatever we want" is purely false. Mosques belong to Allah Almighty: "And [He revealed] that the masjids are for Allah, so do not invoke with Allah anyone." 2

(Certainly, mosques belong to Allah Almighty, so do not worship anyone with Allah. - Translator). In the mosque, only what is according to Sharia command will be done. His false assumption that congregants cannot ask is wrong; in fact, the Mutawalli has no authority in appointing the Imam and Muezzin when the founder (Bani) of the mosque or his relatives are not present. In the appointment of the Imam and Muezzin, the first right belongs to the founder, then his children and relatives. The second right belongs to the congregants. This is also when both the one the founder wants and the one the congregants want are equal. If the one the congregants want is Sharia-wise more deserving, then their choice will be accepted. The Mutawalli is nothing in this regard. It is in Durr-e-Mukhtar:

1. Rad al-Muhtar, Matlub la yasihhu 'azlu sahibi wazifah, printed by Mustafa al-Babi Egypt, 3/443.
2. Al-Quran, 72/18.

फ़तावा रज़विया खंड 6

...उनके पीछे नमाज़ गुनाह है, और अगर उनकी कोई गलती नहीं है या वे 'फ़िस्क़' (खुले उल्लंघन) की सीमा तक नहीं पहुँचे हैं या वे इसे खुलेआम नहीं करते हैं, तो पहली दो स्थितियों में इस कारण से उनके पीछे नमाज़ पढ़ने में कोई बुराई (कराहत) नहीं है। अंतिम स्थिति में यह 'मक़रूहे तंज़ीही' (हल्का नापसंद) और बेहतर के खिलाफ है। जहाँ तक बेदखल करने की बात है, तो इसका कोई महत्व नहीं है।

और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है।

प्रश्न संख्या 789: राब गढ़, सदर बाज़ार, अमीर बख्श टेलर की दुकान से, प्रेषक शेख़ तालिब हुसैन, 14 शव्वाल, गुरुवार, 1338 हिजरी।

धर्म के विद्वान और उज्ज्वल शरीयत के मुफ़्ती इस मुद्दे पर क्या कहते हैं: राब गढ़ में दो मस्जिदें हैं। एक मस्जिद का मुतवल्ली (ट्रस्टी), जो स्वयं रोज़े और नमाज़ का पाबंद नहीं है, उसने एक इमाम को, जो सिद्दीकी समुदाय से थे, हाफ़िज़-ए-इल्म और मौलवी हकीम थे, बिना किसी कारण के हटा दिया। उनकी जगह, नमाज़ियों (मुक़्तदियों) की राय के बिना, एक दूसरा इमाम नियुक्त कर दिया जो केवल हाफ़िज़ है और कसाब (कसाई) समुदाय से है, और उनका परिवार अभी भी वही पेशा कर रहा है। जब मैंने मुतवल्ली साहब से पूछा कि पिछले इमाम को किस गलती पर हटाया गया, तो मुतवल्ली अब्दुल समद साहब ने बहुत गुस्से में जवाब दिया, "यह हमारी मस्जिद है, हम जो चाहेंगे सो करेंगे, मुक़्तदी पूछ नहीं सकते।" क्या ऐसे इमाम के पीछे और ऐसी मस्जिद में नमाज़ जायज़ है या नहीं? बयान करें, सवाब पायें।

उत्तर:

अगर पहला इमाम, अल्लाह न करे, गुमराह (बद-मज़हब) था, तो उसे हटाना अत्यंत आवश्यक था। और अगर दूसरा गुमराह है, तो उसे नियुक्त करना हराम है, और उसे हटाना अनिवार्य (लाज़िम) है। इसी तरह, उनमें से जो कुरान मजीद गलत पढ़ता हो या पवित्रता (तहारत) सही ढंग से न करता हो, उसे हटाना फर्ज़ है, चाहे एक हो या दोनों। और अगर उनकी अकीदा (विश्वास), किराअत और तहारत नमाज़ की वैधता के लिए पर्याप्त है और इमाम को वजीफ़ा (वेतन) मिलता है, तो बिना किसी गलती के पहले वाले को हटाना गुनाह है, क्योंकि बिना किसी कारण के मुसलमान को तकलीफ देना है। "वजीफ़ा पाने वाले को बिना किसी अपराध के हटाया नहीं जा सकता।" 1 (किसी वजीफ़ा पाने

वाले को बिना किसी गुनाह के हटाया नहीं जा सकता। - अनु.) और मुतवल्ली का यह कहना कि "मस्जिद हमारी है, हम जो चाहें करें" सरासर गलत है। मस्जिदें अल्लाह अज़्ज़-व-जल्ल की हैं: "और ये कि मस्जिदें अल्लाह की हैं, तो अल्लाह के साथ किसी को न पुकारो।" 2 (यकीनतः मस्जिदें अल्लाह की हैं, तो अल्लाह के साथ किसी की इबादत न करो। - अनु.) मस्जिद में वही किया जाएगा जो शरीयत के हुक्म के अनुसार हो। उसका यह गुमान गलत है कि मुक़्तदी पूछ नहीं सकते; वास्तव में, इमाम और मुअज़्ज़िन नियुक्त करने में मुतवल्ली का कोई अधिकार नहीं है जब तक कि मस्जिद बनाने वाला (बानी) या उसके रिश्तेदार न हों। इमाम और मुअज़्ज़िन की नियुक्ति में पहला अधिकार बानी का है, फिर उसके बच्चों और रिश्तेदारों का। और दूसरा अधिकार मुक़्तदियों का है। यह भी तब है जब बानी जिसे चाहता है और मुक़्तदी जिसे चाहते हैं, दोनों बराबर हों। और अगर जिसे मुक़्तदी चाहते हैं वही शरीयत के अनुसार अधिक योग्य है, तो उन्हीं की बात मानी जाएगी। मुतवल्ली इस मामले में कुछ नहीं है। दुर्र-ए-मुख्तार में है:

1. रद्द अल-मुहतार, मतलब ला यसिह्हू अजलु साहिबे वजीफा, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र द्वारा मुद्रित, 3/443।
2. अल-कुरान, 72/18।

पृष्ठ 615 का 736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

...پیچھے نماز گناہ، اور اگر اس کا قصور نہیں یا حدِ فسق تک نہیں یا وہ بالا اعلان اس کامر تکب نہیں تو ان پہلی دو صورتوں میں اس کے پیچھے نماز میں اس وجہ سے کوئی کراہت نہیں اور پچھلی صورت میں مکروہِ تنزیہی خلافِ اولیٰ ہے باقی عاق کردینا کوئی شے نہیں۔

واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۷۸۹: از راب گڑھ صدر بازار بر دکان امیر بخش ٹیلر مرسلہ شیخ طالب حسین ۱۴ شوال بروز پنجشنبہ ۱۳۳۸ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ راب گڑھ میں دو مسجدیں ہیں جن میں سے ایک مسجد کا متولی جو روزہ نماز کا پابند نہیں ہے اُس نے ایک پیش امام جو قوم کا صدیقی اور علم کا حافظ مولوی حکیم مقرر تھا اس کو متولی نے بلاوجہ الگ کردیا اور بجائے اس کے بلا رائے مقتدیوں کے دوسرا امام جو صرف حافظ و قوم کا قصاب ہے اور ہنوز ان کے یہاں پیشہ جاری ہے مقرر کردیا جس پر میں نے متولی صاحب سے پوچھا کہ سابق پیش امام کس قصور پر علیحدہ کئے گئے تو متولی عبد الصمد صاحب نے بہت غصہ کے ساتھ جواب دیا کہ ہماری مسجد ہم جو چاہیں سو کریں مقتدی پوچھ نہیں سکتے، ایسے امام کے پیچھے اور ایسی مسجد میں نماز جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب:

اگر پہلا امام معاذ اللہ بد مذہب ہو تو اُس کا معزول کرنا اشد ضروری تھا اور اگر دوسرا بد مذہب ہو تو اس کا مقرر کرنا حرام ہوا، اور معزول کرنا لازم ہے، یوں ہی اُن میں جو قرآنِ مجید غلط پڑھتا

ہو یا طہارت صحیح نہ کرتا ہو اُس کا معزول کرنا فرض ہے، ایک ہو یا دونوں، اور اگر صحتِ مذہب و قرات و طہارت میں بقدرِ جواز نماز ہیں اور امام وظیفہ پاتا ہے تو بلا قصور پہلے کو معزول کرنا گناہ ہوا کہ بلاوجہ ایذائے مسلم کہ لا یعزل صاحب وظیفہ بغیر جنحۃ 1 (کسی صاحبِ وظیفہ کو بغیر کسی گناہ کے معزول نہیں کیا جاسکتا۔ت) اور متولی کا کہنا کہ مسجد ہماری ہے ہم جو چاہیں کریں محض باطل ہے، مسجدیں اللہ عزوجل کی ہیں وَاَنَّ الْمَسٰجِدَ لِلّٰہِ فَلَا تَدْعُوا مَعَ اللّٰہِ اَحَدًا 2 (یقیناً مسجدیں اللہ تعالٰی کی ہیں تو اللہ کے ساتھ کسی کی بندگی نہ کروت) اس میں وہی کیا جائے گا جو بحکمِ شرع ہے اور اس کا یہ زعم باطل ہے کہ مقتدی پوچھ نہیں سکتے بلکہ امام و مؤذن مقرر کرنے میں متولی کا اختیار نہیں جبکہ خود بانیِ مسجد اس کے اقارب میں نہ ہو امام و مؤذن کے نصب میں پہلا اختیار بانی پھر اس کی اولاد و اقارب کا ہے اور دوسرا اختیار مقتدیوں کا ہے یہ بھی جبکہ جس کو بانی مقرر کرنا چاہتا ہے اور جسے مقتدی چاہتے ہیں دونوں یکساں ہوں، اور اگر جسے یہ چاہتے ہیں وہی شرعاً اولٰی ہے تو انہیں کا اختیار مانا جائے گا متولی اس بارے میں کوئی چیز نہیں۔ دُرِّ مختار (میں ہے):

1. ردالمحتار، مطلب لا یصح عزل صاحب وظیفہ مطبوعہ مصطفٰی البابی مصر، ۳/ ۴۴۳

2. القرآن، ۷۲/ ۱۸

Fatawa Razawiyya (Volume 6)

[Box text] (Arabic): Al-bani lil-masjid awla min al-qawm binasb al-imam wal-muadhin fil-mukhtar (wa kadha waladuhu wa 'ashiratuhu awla min ghayrihim Ashbah ah Shami) illa idha 'ayyan al-qawm aslah mimman 'ayyanahu al-bani (lianna manfa'at dhalik tarji' ilayhim, Anfa' al-Wasail ah Sh).

(Urdu Translation): According to the preferred view, the founder of the mosque has a greater right to appoint the Imam and Muezzin than other people (similarly, his children and family are also more entitled than others - Shami). However, in the event that the congregation appoints an Imam who is more superior and righteous than the one appointed by the founder, then that would be better, (because its benefit will reach the congregation - Anfa-ul-Wasail) (T).

And if the Imamat (leadership of prayer) is without a stipend and the first Imam was Sharia-wise superior to the second one, then the trustee (mutawalli) has committed a double injustice: removing the superior and promoting the inferior. If both are equal, he is still guilty of causing harm to the first without reason. And if this second one is superior in the sense that there was some dislike in praying behind the first and none behind him, then the trustee did well; the objection of the followers (muqtadis) is misplaced. Prayer behind him is absolutely permissible as long as the creed, recitation, purification, and actions are correct, and there is no harm to the mosque; it is permissible in any case. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 790: From Nathdwara, Udaipur State, Mewar region, Sirajuddin Sahab, June 22, 1920. What do the scholars of religion and jurists of the firm Sharia say regarding a person who has some knowledge of the issues of prayer and fasting, but for some time his hearing has decreased, i.e., he is hard of hearing? Is it permissible to pray behind such a person or not? Please write the summary of the reason. And if a deaf Imam made a mistake in prayer and did not hear the correction (luqma) from his follower, does it cause any defect in the prayer or not? Please write the correct answer along with references from books of Fiqh and Hadith. May Allah grant you a great reward. June 22, 1920, from Nathdwara, Udaipur State, Mewar region, Sirajuddin.

The Answer: Prayer behind a deaf person is permissible, but someone else is preferable provided they are not less knowledgeable in the issues of prayer and purification than him, and...

1. Durr-e-Mukhtar, Kitab al-Waqf, Section on observing the conditions of the waqif in hiring, published by Mujtabai Press, Delhi, 1/390.
2. Radd al-Muhtar, Kitab al-Waqf, Section on observing the conditions of the waqif in hiring, Mustafa al-Babi, Egypt, 3/454.
3. Durr-e-Mukhtar, Kitab al-Waqf, Section on observing the conditions of the waqif in hiring, published by Mujtabai Press, Delhi, 1/390.
4. Radd al-Muhtar, Kitab al-Waqf, Section on observing the conditions of the waqif in hiring, Mustafa al-Babi, Egypt, 3/454.

फ़तावा रज़विया (जिल्द छठा)

[बॉक्स टेक्स्ट] (अरबी): अल-बानी लिल-मस्जिद औला मिनल क़ौम बिनस्ब अल-इमाम वल-मुअज़्ज़िन फ़िल-मुख़्तार (व कज़ा वलदुहु व अशिरातुहु औला मिन ग़ैरिहिम अश्बाह अह शामी) इल्ला इज़ा अय्यनल क़ौम अस्लह मिम्मन अय्यनहु अल-बानी (लिअन्ना मन्फ़अत ज़ालिक तर्जिअ इलैहिम, अनफ़उल वसाईल अह श)।

(उर्दू अनुवाद): मुख़्तार क़ौल के मुताबिक इमाम और मुअज़्ज़िन मुक़र्रर करने का हक़ दीगर लोगों की बनिस्बत बानी-ए-मस्जिद को ज़्यादा है (इसी तरह उसकी औलाद और खानदान भी दीगर हज़रात से ज़्यादा हक़दार हैं अह् शामी)। अलबत्ता इस सूरत में कि जब क़ौम बानी-ए-मस्जिद से आला व सालेह इमाम मुक़र्रर करे तो ही बेहतर होगा, (क्योंकि इसका नफ़ा क़ौम को पहुंचेगा - अनफ़उल वसाईल अह् श) (त)।

और अगर इमामत बिला वज़ीफ़ा है और पहला इमाम शरअन इस दूसरे इमाम से औला था तो मुतवल्ली ने दोहरा ज़ुल्म किया, राज़ेह को हटाना और मरजूह को बढ़ाना, और दोनों बराबर हैं जब भी बिलावजह पहले को ईज़ा दही का मुर्तकिब हुआ। और अगर यह दूसरा औला बा-इन्हीं मानी पहले के पीछे नमाज़ में कुछ कराहत थी इसके पीछे नहीं तो मुतवल्ली ने अच्छा किया, मक़्तदियों का इस पर एतराज़ बेजा है, नमाज़ इसके पीछे ही मुतलक़न जायज़ है जबकि मज़हब व क़िरात व तहारत व आमाल सही हों, और मस्जिद को तो कोई जुर्म ही नहीं इसमें बहरहाल जायज़ है। वल्लाहु तआला आलम।

मसला नंबर 790: अज़ नथद्वारा रियासत उदेपुर मुल्क मेवाड़ सिराजुद्दीन साहब 22 जून 1920 ई. क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन व मुफ़्तियान-ए-शरअ मतीन कि एक शख़्स मसाइल-ए-नमाज़ रोज़ा के थोड़ा बहुत वाक़फ़ियत है मगर चंद अर्सा से इसके कानों में समाअत कम हो गई है यानी ऊँचा सुनते हैं, तो ऐसे शख़्स के पीछे नमाज़ पढ़ना जायज़ है या नहीं, होने को सबब खुलासा तहरीर फ़रमाएं और अगर बहरे पेश इमाम ने नमाज़ में ग़लती की और अपने मक़्तदी का लुक़्मा न सुना तो नमाज़ में कोई ख़लल तो नहीं आता है या आता है? इसका जवाब बा-सवाब मअ फ़िक़्ह व हदीस और कुतुब-ए-फ़िक़्ह व हदीस का हवाला भी ज़रूर तहरीर फ़रमाएं अल्लाह तआला आपको अज्र-ए-अज़ीम अता फ़रमाएगा। 22 जून 1920 ई. अज़ नथद्वारा रियासत उदेपुर मुल्क मेवाड़ सिराजुद्दीन।

अल-जवाब: बहरे के पीछे नमाज़ जायज़ है मगर इसका ग़ैर औला है जबकि इल्म-ए-मसाइल नमाज़ व तहारत में उससे कम न हो और...

---

1. दुर्रे मुख़्तार किताबुल वक़्फ़ फ़स्ल युराओ शर्तुल वाक़िफ़ फ़ी इजारतह मतबूआ मुतबा मुजतबाई देहली 390/1
2. रद्दुल मुहतार किताबुल वक़्फ़ फ़स्ल युराओ शर्तुल वाक़िफ़ फ़ी इजारतह मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र 3/454
3. दुर्रे मुख़्तार किताबुल वक़्फ़ फ़स्ल युराओ शर्तुल वाक़िफ़ फ़ी इजारतह मतबूआ मुतबा मुजतबाई देहली 390/1
4. रद्दुल मुहतार किताबुल वक़्फ़ फ़स्ल युराओ शर्तुल वाक़िफ़ फ़ी इजारतह मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र 3/454

पृष्ठ 616 का 736

فتاوٰی رضویہ (جلد ششم)

[Box content] (Arabic): البانی للمسجد اولی من القوم بنصب الامام والمؤذن فی المختار (وکذا ولدہ وعشیرتہ اولی من غیرھم اشباہ اہ شامی) الا اذاعین القوم اصلح ممن عینہ البانی (لان منفعۃ ذلك ترجع الیھم، انفع الوسائل اھـ ش)

(Urdu Side): مختار قول کے مطابق امام اور مؤذن مقرر کرنے کا حق دیگر لوگوں کی بہ نسبت بانی مسجد کو زیادہ ہے (اسی طرح اس کی اولاد اور خاندان بھی دیگر حضرات سے زیادہ حقدار ہیں اھ شامی) البتہ اس صورت میں کہ جب قوم بانی مسجد سے اعلٰی و صالح امام مقرر کرے تو ہی بہتر ہوگا، (کیونکہ اس کا نفع قوم کو پہنچے گا انفع الوسائل اھ ش) (ت)

اور اگر امامت بلا وظیفہ ہے اور پہلا امام شرعاً اس دوسرے امام سے اولٰی تھا تو متولی نے دوہرا ظلم کیا راجح کو ہٹانا اور مرجوح کو بڑھانا، اور دونوں برابر ہیں جب بھی بلاوجہ پہلے کو ایذا دہی کا مرتکب ہوا اور اگر یہ دوسرا اولٰی بایں معنی پہلے کے پیچھے نماز میں کچھ کراہت تھی اس کے پیچھے نہیں تو متولی نے اچھا کیا مقتدیوں کا اس پر اعتراض بے جا ہے نماز اس کے پیچھے ہی مطلقاً جائز ہے جبکہ مذہب و قرات و طہارت و اعمال صحیح ہوں، اور مسجد کو تو کوئی جرم ہی نہیں اس میں بہرحال جائز ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۷۹۰: از ناتھ دوار ریاست اودے پور ملک میواڑ سراج الدین صاحب ۲۲ جون ۱۹۲۰ء کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین کہ ایک شخص مسائل نماز روزہ کے تھوڑا بہت واقفیت ہے مگر چند عرصہ سے اس کے کانوں میں سماعت کم ہوگئی ہے یعنی اونچا سنتے ہیں، تو ایسے شخص کے پیچھے نماز پڑھنا جائز ہے یا نہیں، ہونے کو سبب خلاصہ تحریر فرمائیں، اور

اگر بہرے پیش امام نے نماز میں غلطی کی اور اپنے مقتدی کا لقمہ نہ سنا تو نماز میں کوئی خلل تو نہیں آتا ہے یا آتا ہے؟ اس کا جواب باصواب مع فقه و حدیث اور کتب فقہ و حدیث کا حوالہ بھی ضرور تحریر فرمائیں، اللہ تعالیٰ آپ کو اجر عظیم عطا فرمائے گا۔ ۲۲ جون ۱۹۲۰ء از ناتھ دوار ریاست اودے پور ملک میواڑ سراج الدین۔

الجواب: بہرے کے پیچھے نماز جائز ہے مگر اس کا غیر اولیٰ ہے جبکہ علم مسائل نماز و طہارت میں اُس سے کم نہ ہو اور

---

1 در مختار کتاب الوقف فصل یراعی شرط الواقف فی اجارتہ مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱/۳۹۰

2 ردالمحتار کتاب الوقف فصل یراعی شرط الواقف فی اجارتہ مصطفی البابی مصر ۳/ ۴۵۴ 3 در مختار کتاب الوقف فصل یراعی شرط الواقف فی اجارتہ مطبع مجتبائی دہلی ۱/۳۹۰ 4 ردالمحتار کتاب الوقف فصل یراعی شرط الواقف فی اجارتہ مصطفی البابی مصر ۳/ ۴۵۴

An error upon which a correction (luqma) was not taken; if it was prayer-invalidating (mufsid), then the prayer is invalid, otherwise not. And Allah Almighty knows best.

Issue No. 791: From Hasanpur, Muradabad, Madrasa sent by Maulvi Abdul Rahman, Teacher, 8 Dhu al-Qi'dah 1338 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter, whether it is necessary to verify the beliefs of the Imam while traveling or not?

The Answer: Verification is necessary if there is a reason for doubt. For example, if it's heard from someone that this Imam is a Wahabi, even if the speaker is not just ('adil) but merely whose state is unknown (mastoor), investigation is definitely required. The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said: "How can it not be so, while it has been said."[1] | His Excellency (peace and blessings of Allah be upon him) said: How can it not be possible, while this has been said. (T) Or if that settlement belongs to Wahabis, then investigate. If there is no reason for doubt, then pray. If it is later proven that he was, for example, a Wahabi, then repeating the prayer is obligatory (fard). And Allah Almighty knows best.

Issue No. 792 to 794: What do the scholars of religion and the jurists of the clear Shari'ah say regarding: (1) A mosque was built by a non-muqallid sect in a neighborhood of Sunni Hanafi people after somehow getting a sale deed for the land. On its door, they installed a stone engraved with the word "Ahle Hadith" and started praying. Some ignorant people, despite being Sunni Hanafi, join their congregation most of the time and pray. Will their prayer behind a non-muqallid Imam be valid or not? (2) If in this mosque, people pray behind a Sunni Hanafi Imam after or before the congregation of non-muqallids every day or on Friday, will the prayer be valid or not? (3) And if a non-muqallid person joins the congregation behind a Sunni Hanafi Imam in the same mosque and prays according to his own method, i.e., says "Ameen" loudly and performs "Raf' al-Yadayn" (raising hands), will any defect occur in the prayer of the Hanafis or not? Explain and be rewarded.

The Answer: (1) Prayer behind a non-muqallid will be absolutely void, it will not happen at all, and it will be a great sin upon the one who prays. In Fath al-Qadir, it is from Imam Azam (may Allah be pleased with him): "Indeed, prayer behind the people of whims (heresy) is not permissible."[2] | Prayer behind the people of whims and innovation is not permissible. (T)

1 Sahih al-Bukhari, Chapter on Traveling for a Recurring Problem, printed by Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/19 2 Fath al-Qadir, Chapter on Imamat, printed by Maktaba Nooria Razawiyya, Sukkur, 1/304

गलती जिस पर लुक्मा न लिया गया हो, अगर वह नमाज़ बिगाड़ने वाली (मुफ़्सिद) थी तो नमाज़ जाती रही, वरना नहीं। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला नंबर ७९१: हसनपुर मुरादाबाद से मदरसा, मौलवी अब्दुल रहमान मुदर्रिस द्वारा भेजा गया, ८ ज़ी क़दा १३३८ हिजरी। दीन के उलेमा इस मसले में क्या फरमाते हैं कि सफ़र में इमाम के अक़ीदों (मान्यताओं) की पुष्टि करना ज़रूरी है या नहीं।

अल-जवाब: ज़रूरत है अगर शक की जगह हो, मिसाल के तौर पर किसी से सुना कि यह इमाम वहाबी है, वह कहने वाला चाहे आदिल न हो सिर्फ मस्तूर हो, तहक़ीक़ (जांच) ज़रूर है। हुज़ूर सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया: कैसे नहीं हो सकता, जबकि यह कहा गया है।[1] | हुज़ूर सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया: कैसे नहीं हो सकता, हालांकि यह कहा गया है। (त) या वह बस्ती वहाबियों की हो तो तहक़ीक़ करो और अगर कोई शक की वजह नहीं तो नमाज़ पढ़ो, फिर अगर बाद में साबित हो कि मिसाल के तौर पर वह वहाबी था, तो नमाज़ दोहराना फ़र्ज़ है। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला नंबर ७९२ से ७९४: दीन के उलेमा और शरीयत के मुफ़्ती क्या फरमाते हैं कि: (१) एक मस्जिद गैर-मुक़ल्लिद फ़िरक़े ने सुन्नी हनफ़ी लोगों के मुहल्ले में किसी तरह ज़मीन का बैनामा करा के तामीर कराई और उसके दरवाज़े पर एक पत्थर जिस पर लफ़्ज़ 'अहल-ए-हदीस' खुदा हुआ है, नसब (लगा) दिया और नमाज़ पढ़ने लगे। इस मस्जिद में कुछ ना-वाक़िफ़ लोग सुन्नी हनफ़ी होकर भी अक्सर उनके साथ जमाअत में शरीक होकर नमाज़ पढ़ लेते हैं, उनकी नमाज़ गैर-मुक़ल्लिद इमाम के पीछे होगी या नहीं? (२) अगर इस मस्जिद में लोग सुन्नी हनफ़ी इमाम के पीछे गैर-मुक़ल्लिदों की जमाअत के बाद या पहले हर रोज़ या जुमा के रोज़ नमाज़ अदा करें तो नमाज़ होगी या नहीं? (३) और अगर सुन्नी हनफ़ी इमाम के पीछे गैर-मुक़ल्लिद शख्स इसी मस्जिद में जमाअत में शरीक होकर नमाज़ अपने तरीके पर पढ़े यानी 'आमीन बिल-जहर' (ज़ोर से) कहे और 'रफ़'उल-यदैन' (हाथ उठाना) करे तो हनफ़ियों की नमाज़ में कोई नुक़्स (कमी) आएगा या नहीं? बयान फरमाएं सवाब मिलेगा।

अल-जवाब: (१) गैर-मुक़ल्लिद के पीछे नमाज़ बिल्कुल बातिल (अमान्य) होगी, हरगिज़ नहीं होगी और पढ़ने वाले के सर पर बड़ा गुनाह होगा। फ़त्हुल क़दीर में इमाम-ए-आज़म रज़ियल्लाहु तआला अन्हु

से है: "बेशक अहले अहवा के पीछे नमाज़ जाइज़ नहीं।"[2] | अहले अहवा और बिदअत के पीछे नमाज़ जाइज़ नहीं। (त)

१ सहीह अल-बुखारी, बाबू र-रिहलह फ़िल मसअतल नाज़िलह, मुद्रित क़दीमी कुतुब खाना कराची, १/१९ २ फ़त्हुल क़दीर, बाबुल इमामत, मुद्रित मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, १/३०४

पृष्ठ ६१७/७३६

غلطی جس پر لقمہ نہ لیا اگر مفسد نماز تھی نماز جاتی رہی ورنہ نہیں۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ نمبر ۷۹۱ : از حسن پور مرادآباد مدرسہ مرسلہ مولوی عبدالرحمٰن مدرس ۸ ذی قعدہ ۱۳۳۸ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ سفر میں امام کے عقائد کی تصدیق کی ضرورت ہے یا نہیں۔

الجواب: ضرورت ہے اگر محل شبہ ہو مثلاً کسی سے سنا کہ یہ امام وہابی ہے وہ کہنے والا اگرچہ عادل نہ ہو صرف مستور ہو تحقیق ضرور ہے۔ قال صلی اللہ تعالی علیہ وسلم کیف وقد قیل [1]۔ | حضور صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا : کیسے نہیں ہوسکتا ، حالانکہ یہ کہا گیا ہے۔ (ت) یا وہ بستی وہابیہ کی ہو تو تحقیق کرو اور اگر کوئی وجہ شبہ نہیں تو نماز پڑھو پھر اگر بعد کوئی ثابت ہو کہ مثلاً وہابی تھا اعادہ فرض ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۷۹۲ تا ۷۹۴ : کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین کہ: (۱) ایک مسجد فرقہ غیر مقلد نے سنی حنفی اشخاص کے محلہ میں کسی طرح پر اراضی کا بیعنامہ کرا کے تعمیر کرائی اور اس کے دروازے پر ایک پتھر جس پر لفظ اہل حدیث کندہ ہے نصب کرادیا اور نماز پڑھنے لگے اس مسجد میں بعض ناواقف لوگ سنی حنفی ہو کر بھی اکثر اوقات ان کی جماعت میں شریک ہو کر نماز پڑھ لیتے ہیں ان کی نماز غیر مقلد امام کے پیچھے ہوگی یا نہیں؟ (۲) اگر اس مسجد سنی حنفی امام کے پیچھے لوگ حنفی غیر مقلدوں کی جماعت کے بعد یا اول ہر روز یا جمعہ کے روز ادا کریں تو نماز ہوگی یا نہیں؟ (۳) اور اگر سنی حنفی امام کے پیچھے غیر مقلد

شخص اسی مسجد میں جماعت میں شریک ہو کر نماز اپنے طریقہ پر پڑھے یعنی آمین بالجہر کرے اور رفع یدین کرے تو حنفیوں کی نماز میں کوئی نقص عائد ہوگا یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: (۱) غیر مقلد کے پیچھے نماز باطل محض ہو گی ہر گز نہ ہو گی اور پڑھنے والے کے سر پر گناہِ عظیم ہوگا۔ فتح القدیر میں امام اعظم رضی اللہ تعالٰی عنہ سے ہے: ان الصلوۃ خلف اھل الاھواء لا تجوز [2] ۔ | اہل اہواء و بدعت کے پیچھے نماز جائز نہیں۔ (ت)

1 صحیح البخاری باب الرحلۃ فی المسألۃ النازلہ مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/۱۹ 2 فتح القدیر ، باب الامامۃ ، مطبوعہ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ، ۱/۳۰۴

Fatawa Razawiyya Volume 6 And Allah knows best. (2) Prayer behind a Sunni Imam will be valid, but praying in that mosque will not yield the reward of a mosque, as it is not a mosque in the eyes of Shariah. Neglecting the mosque without a valid Sharia excuse is a sin; it is mentioned in the Hadith:

There is no prayer for the neighbor of the mosque except in the mosque. 1 - And Allah | The prayer of a neighbor of the mosque can only be in the mosque. (T) Knows Best.

(3) The participation of a non-conformist (Ghair-Muqallid) in the congregation definitely creates a deficiency in the prayer. Firstly, the mind will be disturbed by his loud 'Ameen', and the second great deficiency is that his participation will break the row (saff), because his prayer is no prayer at all. A non-praying person will be standing in the row, and this is breaking the row. Breaking the row is impermissible; it is stated in a Sahih Hadith:

Whoever breaks a row, May Allah cut him off (from His mercy). 2 | Whoever breaks a row, May Allah Almighty cut him off (from His mercy). (T)

Furthermore, praying with people of bad beliefs (heretics) has also been forbidden in the Hadith: *La tusallu ma'ahum* 3 (Do not pray with them. T). And Allah Almighty knows best.

Question No. 795 to 797: From the city, Shah Dana neighborhood, sent by Mr. Mir Fida Hussain Sahab, dated 2nd Dhu al-Hijjah 1338 AH. What do the scholars of religion and jurists of the clear Shariah say regarding this matter: (1) Will the congregational prayer of Sunni Hanafi individuals be [valid] behind the students of Madrasa Madari Darwaza and Sarai Khamin, or not? (2) If a permanent Imam is not appointed in a mosque and the attendees select someone from among themselves, what kind of respect and adherence to rules and what things are necessary in this regard? (3) Can an Imam be selected from people of any class present at the time by a majority vote? Even if the selected person does not consider himself worthy of leadership (imamat), but there is a consensus (ijma) on his imamat, can he lead the prayer or not? Explain and be rewarded.

1. Al-Mustadrak 'ala al-Sahihayn, Kitab al-Salah, 'La salata li-jar al-masjid...' etc., published by Dar al-Fikr, Beirut, 1/266
2. Sunan Abi Dawud, Bab Taswiyat al-Sufuf, published by Aftab-e-Alam Press, Lahore, 1/79

3. Kanz al-Ummal, Bab al-Thalith fi dhikr al-Sahaba, Hadith (32528, 32529), published by Muassasat al-Risala, Beirut, 11/540

फ़तावा रज़विया जिल्द 6 और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है। (२) सुन्नी इमाम के पीछे नमाज़ हो जाएगी मगर उस मस्जिद में पढ़ने से मस्जिद का सवाब न मिलेगा क्योंकि वह शरई तौर पर मस्जिद नहीं है, और बिना किसी शरई उज़्र (बहाने) के मस्जिद को छोड़ना गुनाह है, हदीस में है:

मस्जिद के पड़ोसी की नमाज़ मस्जिद ही के अलावा कहीं और नहीं होती। १ - और अल्लाह | मस्जिद के पड़ोसी की नमाज़ मस्जिद ही में हो सकती है। (त) तआला सबसे बेहतर जानता है।

(३) जमाअत में ग़ैर-मुक़ल्लिद के शरीक होने से नमाज़ में ज़रूर नुक्स (कमी) पैदा होता है। अव्वल तो उसकी ऊँची आवाज़ में 'आमीन' कहने से तबियत परेशान होगी, और दूसरा बड़ा नुक्स यह है कि उसकी शिरकत से सफ़ (क़तार) टूट जाएगी क्योंकि उसकी नमाज़, नमाज़ नहीं है। एक बे-नमाज़ी शख़्स सफ़ में खड़ा होगा और यह सफ़ का काटना है, और सफ़ का काटना नाजायज़ है; सही हदीस में फ़रमाया गया:

जिसने सफ़ तोड़ी, अल्लाह उसे काट दे २ | जिसने सफ़ काटी, उसे अल्लाह तआला (अपनी रहमत से) काट दे (त)

इसके अलावा बद-मज़हबों (विधर्मियों) के साथ नमाज़ पढ़ने से भी हदीस में मना फ़रमाया गया है: ला तुसल्लू म'अहुम ३ (उनके साथ नमाज़ न पढ़ो। त)। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर ७९५ ता ७९७: शहर मोहल्ला शाह दाना से, मुर्सला जनाब मीर फ़िदा हुसैन साहब, तारीख़ २ ज़िल-हिज्जा १३३८ हिजरी। उलमा-ए-दीन और मुफ़्तियान-ए-शरह मतीन इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि: (१) नमाज़ जमाअत सुन्नी हनफ़ी अश्ख़ास (व्यक्तियों) की मदरसा मदारी दरवाज़ा और सराये ख़ामिन के तालिब-ए-इल्मों के पीछे होगी या नहीं? (२) अगर किसी मस्जिद में पेश इमाम मुक़र्रर न हो तो हाज़िरीन-ए-मस्जिद किसी शख़्स को अपने में से मुन्तख़ब (चुनें) करें तो इसमें किस-किस एहतराम व इल्तिज़ाम और किस-किस बात की ज़रूरत है? (३) इमाम हर तबक़े के लोगों में से जो कि उस वक़्त मौजूद हों, कसरत-ए-राय (बहुमत) से मुन्तख़ब हो सकता है? बावजूद इसके कि वह मुन्तख़ब शुदा शख़्स अपने आप को इमामत के अहल (योग्य) न समझता हो मगर इज्मा (आम

सहमति) उसकी इमामत पर हो जाए तो वह इमामत कर सकता है या नहीं? बयान फरमाएं और सवाब पायें।

1. अल-मुस्तदरक अल-सहीहैन, किताब अस-सलात, ला सलाता लि-जारिल मस्जिद... इत्यादि, प्रकाशक: दारुल फ़िक्र, बेरूत, १/२६६
2. सुनन अबू दाऊद, बाब तस्वियत-उस-सफ़ूफ़, प्रकाशक: आफ़ताब-ए-आलम प्रेस, लाहौर, १/७९
3. कंज़ुल उम्माल, बाब अल-सालिस फ़ी ज़िक्र अल-सहाबा, हदीस (३२५२८, ३२५२९), प्रकाशक: मुअस्ससतुर रिसाला, बेरूत, ११/५४०

فتاوی رضویہ جلد ششم واللہ تعالیٰ اعلم۔ (۲) سنی امام کے پیچھے نماز ہو جائے گی مگر اس مسجد میں پڑھنے سے مسجد کا ثواب نہ ملے گا کہ شرعاً مسجد نہیں اور بلا عذر شرعی ترکِ مسجد گناہ ہے، حدیث میں ہے:

لا صلوٰۃ لجار المسجد الّا فی المسجد ۱۔ واللہ | مسجد کے پڑوسی کی نماز مسجد ہی میں ہوسکتی ہے۔ (ت) تعالٰی اعلم

(۳) جماعت میں غیر مقلد کے شریک ہونے ضرور نماز میں نقص پیدا ہوتا ہے اول تو اُس کے آمین بالجہر سے طبیعت مشوش ہوگی، اور دوسرا عظیم نقص یہ ہے کہ اس کی شرکت سے صف قطع ہو گی کہ اس کی نماز نماز نہیں ایک بے نمازی شخص صف میں کھڑا ہوگا اور یہ صف کا قطع ہے اور صف کا قطع ناجائز ہے صحیح حدیث میں فرمایا:

من قطع صفاً قطعہ اللہ ۲۔ | جس نے صف قطع کی اُسے اللہ تعالیٰ (اپنی رحمت سے) قطع کردے (ت)

مع ہذا بد مذہبوں کے ساتھ نماز پڑھنے سے بھی حدیث میں منع فرمایا ہے : لا تصلوا معہم ۳ (اُن کے ساتھ نماز نہ پڑھو۔ت) واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۷۹۵ تا ۷۹۷: از شہر محلہ شاہ دانامرسلہ جناب میر فدا حسین صاحب مورخہ ۲ ذی الحجہ ۱۳۳۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ: (۱) نماز جماعت سُنی حنفی اشخاص کی طالبِ علمان مدرسہ مداری دروازہ وسرائے خامن کے پیچھے ہوگی یا نہیں ۔ (۲) اگر کسی مسجد میں پیش امام مقرر نہ ہو تو حاضرین مسجد کسی شخص کو اپنے میں سے منتخب کریں تو اس میں کس کس احترام والتزام اور کس کس بات کی ضرورت ہے؟ (۳) امام

ہر طبقہ کے لوگوں میں سے جو کہ اس وقت موجود ہوں کثرتِ رائے سے منتخب ہوسکتا ہے باوجودیکہ وہ منتخب شدہ شخص اپنے آپ کو امامت کا اہل نہ سمجھتا ہو مگر اجماع اس کی امامت پر ہو جائے تو وہ امامت کرسکتا ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

۱ المستدرک علی الصحیحین کتاب الصلوٰۃ لا صلوٰۃ لجار المسجد الخ مطبوعہ دارالفکر بیروت ۱/ ۲۶۶ ۲ سنن ابوداؤد باب تسویۃ الصفوف مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور ۱/۷ ۹ ۳ کنز العمال، الباب الثالث فی ذکر الصحابہ حدیث (۳۲۵۲۸، ۳۲۵۲۹) مطبوعہ موسسۃ الرسالۃ بیروت ۱۱/ ۵۴۰

Fatawa Rizvia, Volume 6

Answer: (1) Students of a madrasa that is contrary to the Sunni sect cannot be made Imams. Allah the Almighty knows best. (2) A person should be made Imam whose purification (Taharat) is correct, recitation (Qira'at) is correct, who is a Sunni with sound beliefs (Sahih-ul-Aqida), is not a transgressor (Fasiq), has nothing in him that causes aversion to the followers (Muqtadis), and is aware of the rulings of prayer and purification. Allah the Almighty knows best. (3) The person who possesses the aforementioned conditions should be made Imam even if he calls himself unworthy. And one who is actually unworthy cannot be an Imam even if it is everyone's opinion. Allah the Almighty knows best.

Issue No. 798: From the Muslims of Shehar Kuhna Rohilla Tola, 12 Dhu al-Hijjah 1338 AH What do the scholars of religion and jurists of the clear Sharia say regarding this issue: Zaid wears a shirt (kurta) whose sleeves are level with the elbows or even slightly higher, meaning the elbows remain exposed. Can Zaid be made an Imam while wearing such a shirt, and is there any deficiency in praying behind him? Zaid also has the means to have shirts with full sleeves made and worn, yet he does not wear a long coat (angarkha) etc., at the time of leading the prayer. Furthermore, Zaid has good knowledge and is acquainted with every issue.

Answer: From the statement of the issue, it appears that he makes shirts with half-sleeves and could wear a long coat (angarkha) during prayer but does not, though he wears it to the market. In this case, although the prayer behind Zaid is valid, it is not free from dislike (karahat), for "it is among the clothes of labor (working clothes), and praying in them is disliked (makruh)." (Since these are his work clothes and it is disliked to offer prayer in them - Translator). Since he is a man of knowledge, he should be explained that the Divine Court is more worthy of respect and humility than the market. Allah the Almighty says: "Take your adornment at every place of prostration (mosque)." [1] And Ibn Umar said, "Allah is more deserving that you should adorn yourself for Him." (The command of Allah the Almighty is: when you go to the mosque for prayer, adopt your adornment. And Hazrat Ibn Umar said: Allah the Almighty is most deserving that you should adopt adornment in His presence - Translator). Allah the Almighty knows best.

Issue No. 799 to 807: From Town Umari, Post Office Khas, District Muradabad, requested by Ghulam Mustafa Asrar al-Haq Ansari Qadri, 12 Muharram al-Haram

1339 AH What do the scholars of religion and jurists of the clear Sharia say in the following detailed cases:

1 Quran 7:31 Page 619 of 736

फ़तावा रज़विया, जिल्द 6

उत्तर: (1) जो मदरसा अहले सुन्नत के मज़हब के खिलाफ हो, उसके छात्रों को इमाम नहीं बनाया जा सकता। अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (2) इमाम ऐसे व्यक्ति को बनाया जाए जिसकी तहारत (पवित्रता) सही हो, क़िरअत (पाठ) सही हो, जो सुन्नी सही-उल-अक़ीदा हो, फ़ासिक़ (पापी) न हो, उसमें कोई ऐसी बात न हो जिससे मुक़्तदियों को नफ़रत हो, और वह नमाज़ और तहारत के मसाइल से वाक़िफ़ हो। अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (3) जो व्यक्ति उपर्युक्त शर्तों का जामे (पात्र) है, उसे इमाम बनाया जाए चाहे वह खुद को नाअहल (अयोग्य) कहे। और जो वास्तव में नाअहल है, वह इमाम नहीं हो सकता चाहे सबकी यही राय हो। अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 798: मुसलमानों द्वारा, शहर कुहना रोहिला टोला, 12 ज़िल-हिज्जा 1338 हिजरी दीन के उलेमा और मज़बूत शरीयत के मुफ़्तियान इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि ज़ैद ऐसा कुर्ता पहनता है जिसकी आस्तीनें कोहनियों के बराबर या कुछ ऊँची होती हैं, यानी कोहनियां खुली रहती हैं। क्या ऐसा कुर्ता पहने हुए ज़ैद को इमाम बनाया जा सकता है या नहीं, और उसके पीछे नमाज़ पढ़ने में कोई नुक्स (कमी) तो नहीं आता? ज़ैद के पास इतनी सामर्थ्य भी है कि वह पूरी आस्तीनों के कुर्ते बनवाकर पहन सकता है, फिर भी वह इमामत के वक्त अंगरखा आदि नहीं पहनता। इसके अलावा ज़ैद पढ़ा-लिखा भी अच्छा है और हर एक मसले से वाक़िफ़ है।

उत्तर: मसाइल के बयान से मालूम होता है कि वह कुर्ता ही आधी आस्तीन का बनवाता है और नमाज़ के वक्त अंगरखा पहन सकता है मगर नहीं पहनता, जबकि बाज़ार अंगरखा पहनकर जाता है। इस सूरत में ज़ैद के पीछे नमाज़ अगरचे हो जाती है, मगर कराहत (नापसंदगी) से खाली नहीं, क्योंकि "यह मेहनत-मज़दूरी वाले कपड़ों में से है और उनमें नमाज़ पढ़ना मकरूह है।" (चूँकि ये उसके कामकाज वाले कपड़े होंगे और उनके साथ नमाज़ अदा करना मकरूह है। - तर्जुमा)। जब वह ज़ी-इल्म (ज्ञानी) है तो उसे समझाया जाए कि अल्लाह का दरबार बाज़ार से ज़्यादा ताज़ीम (सम्मान) और तज़ल्लुल (विनम्रता) के लायक़ है। अल्लाह तआला का फ़रमान है: "हर मस्जिद के वक्त अपनी ज़ीनत (सजावट/अच्छे कपड़े) लो।" [1] और इब्ने उमर ने कहा, "अल्लाह इस बात का ज़्यादा हक़दार है कि उसके लिए ज़ीनत अख्तियार की जाए।" (अल्लाह तआला का इरशाद है: जब तुम नमाज़ के लिए मस्जिद जाओ तो अपनी ज़ीनत अख्तियार करो। और हज़रत इब्ने उमर ने फ़रमाया: अल्लाह तआला सबसे ज़्यादा हक़दार है कि तू उसकी बारगाह में ज़ीनत अख्तियार करे। - तर्जुमा)। अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 799 से 807: क़स्बा उमरी, डाकखाना ख़ास, ज़िला मुरादाबाद, सायल (पूछने वाला) गुलाम मुस्तफ़ा असरारुल हक़ अंसारी क़ादरी, 12 मुहर्रमुल हराम 1339 हिजरी दीन के उलेमा और मज़बूत शरीयत के मुफ़्तियान नीचे दी गई तफ़्सीली सूरतों में क्या फ़रमाते हैं कि:

1 अल-क़ुरआन 7/31 पेज 619 का 736

الجواب: (۱) جو مدرسہ خلافِ مذہبِ اہلِ سنت ہو اسکے طلباء کو امام نہیں بنا سکتے۔ واللہ تعالیٰ اعلم (۲) امام ایسا شخص کیا جائے جس کی طہارت صحیح ہو قرات صحیح ہو سنّی صحیح العقیدہ ہو فاسق نہ ہو اس میں کوئی بات نفرتِ مقتدیان کی نہ ہو مسائلِ نماز و طہارت سے آگاہ ہو واللہ تعالیٰ اعلم (۳) جو شخص شرائطِ مذکورہ کا جامع ہے اور وہ امام کیا جائے اگرچہ وہ اپنے آپ کو نااہل کہے، اور جو واقعی نااہل ہے وہ امام نہیں ہوسکتا اگرچہ سب کی رائے ہو۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۷۹۸: مسئولہ مسلمانانِ شہر کہنہ روہیل ٹولہ ۱۲ ذی الحجہ ۱۳۳۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرعِ متین اس مسئلہ میں کہ زید کرتا اس طرح کا پہنتا ہے جس کی آستیں کہنیوں کے برابر بلکہ کچھ اونچی ہوتی ہیں یعنی کہنیاں کھلی رہتی ہیں ایسا کرتا پہننے ہوئے پر زید کو امام بنایا جاسکتا ہے یا نہیں اور کوئی نقص اس کے پیچھے نماز پڑھنے میں تو نہیں آتا؟ زید کو اس قدر مقدر بھی ہے کہ وہ پوری آستینوں کے کرتے بنوا کر پہن سکتا ہے اور امامت کرنے کے وقت انگرکھا وغیرہ نہیں پہنتا، علاوہ اس کے زید کو علم بھی اچھا ہے اور ہر ایک مسائل سے واقفیت رکھتا ہے۔

الجواب: بیانِ مسائل سے معلوم ہوتا ہے کہ وہ کرتا ہی آدھے آستین کے بناتا ہے اور نماز کے وقت انگرکھا پہن سکتا ہے مگر نہیں پہنتا اور بازار کو انگرکھا پہن کر جاتا ہے، اس صورت میں زید کے پیچھے نماز اگرچہ ہو جاتی ہے مگر کراہت سے خالی نہیں فانہ اذن من ثیاب محنتہ والصلاۃ فیھا مکروہۃ (کیونکہ یہ اس کے کام کاج والے کپڑے ہوں گے اور ان کے ساتھ نماز ادا کرنا مکروہ ہے۔ت) جب وہ ذی علم ہے اور اسے سمجھایا جائے کہ دربارِ الٰہی بازار سے زیادہ قابلِ تعظیم و تذلّل ہے قال اللہ تعالی خُذُوْا زِیْنَتَکُمْ عِنْدَ کُلِّ مَسْجِدٍ ۱ وقال ابن عمر اللہ احق تتزین لہ (اللہ تعالیٰ کا

ارشادِ گرامی ہے: جب تم نماز کے لئے مسجد میں جاؤ اپنی زینت اختیار کرو۔ اور حضرت ابنِ عمر نے فرمایا: اللہ تعالیٰ سب سے زیادہ حقدار ہے کہ تو اس کی بارگاہ میں زینت اختیار کرے۔ت) واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۷۹۹ تا ۸۰۷: از قصبہ عمری ڈاک خانہ خاص ضلع مراد آباد مسئولہ غلام مصطفیٰ اسرار الحق انصاری قادری ۱۲ محرم الحرام ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرعِ متین صورت ہائے مفصلی ذیل میں کہ:

Fatawa-e-Razvia Volume 6 (1) What is the correct ruling for a member of the Ahl-e-Sunnat wa Jama'at following a Wahhabi imam in prayer, whether it be the five daily prayers, Taraweeh, Friday (Jumu'ah), Eid prayers, supererogatory (Nafil) prayers, or funeral prayers? (2) Zaid considers the scholars of the Deobandi Wahhabi sect to be religious scholars and also honors and respects them, although he himself is not a scholar. Can the aforementioned Zaid now lead the prayers for the Ahl-e-Sunnat wa Jama'at, and is a Sunni's prayer valid behind him, or what is the ruling? (3) Zaid considers the Deobandi Wahhabi sect to be bad and says so, but he prays behind them without hesitation. Amru is a Sunni Hanafi and avoids praying behind a Wahhabi, believing the prayer would not be valid. Therefore, will Amru's prayer be valid behind the aforementioned Zaid or not, and why? (4) The Imam for the Friday prayer holds Wahhabi beliefs and there is only one mosque where Friday prayer is held. Can a Sunni perform the Friday prayer under his leadership or not? And if not, should he perform the Dhuhr prayer instead? (5) If the Imam for Friday prayer is one of those mentioned in cases (2) or (3), can members of the Ahl-e-Sunnat wa Jama'at pray behind him or not, and will the prayer be valid? Also, what is the ruling regarding the Eid prayers in such a case? (6) The Imam is of the Sunni school of thought and there are four followers, one of whom is a complete Sunni, while the other three are of the types mentioned in cases (2) and (3). In such a situation, can they establish the Friday prayer or not? (7) If the Maghrib prayer or any congregational prayer is being held behind an Imam of the types mentioned in (1), (2), or (3), can a person of the Sunni school of thought join the congregation or not? And will his prayer be valid if he prays alone? (8) Is the leadership (Imamate) of a blind Hafiz permissible in the five daily prayers or Taraweeh, provided that no other Hafiz-e-Quran is present besides him, though there are several who can recite by looking at the book (Nazira-khwan)? (9) In cases (2) or (3) mentioned above, if such a person is the Imam, is it permissible to follow him in Taraweeh prayer or not? **The Answer:** (1) No prayer, whether obligatory (Fard) or supererogatory (Nafil), can be valid behind a Wahhabi for anyone. Nor is the funeral prayer fulfilled by praying behind him. Although congregation and leadership (Imamate) are not conditions for funeral prayer, therefore if a woman is the Imam and the follower, the obligation of funeral prayer will be fulfilled because even if it didn't happen for the followers behind her, it happened for herself, and that much is sufficient for Fard-e-Kifayah (communal obligation). But for a Wahhabi, the prayer itself is void because "he has no religion, and there is no prayer for one who has no religion" (because he has no religion at all, and for one who...

फ़तावा-ए-रज़विया जिल्द छठा (१) वहाबी इमाम के पीछे अहले सुन्नत व जमाअत की इक्तिदा (पीछे नमाज़ पढ़ना) चाहे पंचगाना (पाँच वक़्त की नमाज़) हो या तरावीह या जुमा या ईदैन या नवाफ़िल या नमाज़े जनाज़ा, इसमें दुरुस्त हुक्म है या क्या हुक्म है? (२) ज़ैद वहाबी देवबंदी फ़िरक़े के मौलवियों को आलिमे दीन समझता है और उनकी ताज़ीम व तक़रीम (इज़्ज़त और सम्मान) भी करता है लेकिन खुद आलिम नहीं है। अब ज़ैद मज़कूर (उल्लेखित ज़ैद) अहले सुन्नत व जमाअत की इमामत कर सकता है या नहीं और उसकी इमामत से सुन्नी की नमाज़ सही है या क्या? (३) ज़ैद वहाबी देवबंदी फ़िरक़े को बुरा समझता है और कहता है लेकिन उनकी इमामत में नमाज़ बेतकल्लुफ़ (बिना किसी हिचकिचाहट) पढ़ता है। और अम्र सुन्नी हनफ़ी है और वहाबियों के पीछे नमाज़ पढ़ने से परहेज़ करता है, इस ख़याल से कि नमाज़ जाइज़ नहीं होगी। लिहाज़ा ज़ैद मज़कूर की इमामत से अम्र मज़कूर की नमाज़ सही होगी या नहीं और क्यों? (४) जुमा का इमाम वहाबी अक़ीदों का है और सिर्फ एक ही मस्जिद में जुमा होता है। क्या सुन्नी उसकी इमामत में नमाज़े जुमा पढ़ सकता है या नहीं और अगर नहीं तो क्या नमाज़े ज़ुहर अदा करे? (५) अगर जुमा का इमाम नंबर (२) या (३) में ज़िक्र किए गए लोगों में से कोई हो तो अहले सुन्नत व जमाअत उसके पीछे नमाज़ पढ़ सकता है या नहीं और नमाज़ सही होगी या क्या? और ऐसी सूरत में ईदैन की नमाज़ के बारे में क्या हुक्म है? (६) इमाम सुन्नी मज़हब का है और चार मुक्तदी (पीछे नमाज़ पढ़ने वाले) हैं जिनमें से एक कामिल (पूर्ण) सुन्नी है, बाक़ी तीन ज़िक्र किए गए नंबर (२) और (३) की सूरतों वाले हैं। ऐसी हालत में जुमा क़ायम कर सकते हैं या नहीं? (७) नमाज़े मग़रिब या किसी वक़्त की बा-जमाअत नमाज़ ज़िक्र की गई सूरतों (१) या (२) या (३) के इमामों के साथ हो रही है, तो क्या सुन्नी मज़हब वाला जमाअत में शरीक हो सकता है या नहीं? और अकेले पढ़ने की हालत में नमाज़ सही होगी या नहीं? (८) क्या नाबीना (अंधे) हाफ़िज़ की इमामत पंचगाना नमाज़ या तरावीह में जायज़ है, बशर्ते कि उसके अलावा और कोई हाफ़िज़-ए-क़ुरआन मौजूद न हो, अलबत्ता नाज़िरा ख़्वाँ (देखकर पढ़ने वाले) चंद लोग हैं? (९) ऊपर ज़िक्र की गई सूरतों नंबर (२) या (३) में से अगर कोई इमाम हो, तो तरावीह की नमाज़ में उसकी इक्तिदा जायज़ है या नहीं? **अल जवाब:** (१) वहाबी के पीछे कोई नमाज़, चाहे फ़र्ज़ हो या नफ़्ल, किसी की नहीं हो सकती। न ही उसके पीछे पढ़ने से नमाज़े जनाज़ा अदा हुई। हालाँकि नमाज़े जनाज़ा में जमाअत और इमामत शर्त नहीं है, लिहाज़ा अगर औरत इमाम और मुक्तदी है तो नमाज़े जनाज़ा का फ़र्ज़ अदा हो जाएगा क्योंकि भले ही उसके पीछे मुक्तदियों की नमाज़ न हुई हो, उसकी खुद की हो गई। और फ़र्ज़-ए-किफ़ाया की अदायगी के लिए इतना काफ़ी है। मगर वहाबी की तो अपनी नमाज़

ही बातिल (अमान्य) है, क्योंकि "उसका कोई दीन नहीं है, और उसकी कोई नमाज़ नहीं जिसका कोई दीन नहीं" (क्योंकि उसका तो कोई दीन नहीं और जिसका...

पृष्ठ ६२०/७३६

فتاوی رضویہ جلد ششم (۱) وہابی امام کے پیچھے اہلسنت وجماعت کی اقتداء نماز خواہ پنجگانہ یا تراویح یا جمعہ یا عیدین یا نوافل یا نماز جنازہ میں درست حکم ہے یا کیا حکم ہے؟ (۲) زید مولویانِ فرقہ وہابیہ دیوبند کو عالمِ دین سمجھتا ہے اور ان کی تعظیم و تکریم بھی کرتا ہے لیکن خود عالم نہیں اب زید مذکور اہلسنت و جماعت کی امامت کر سکتا ہے یا نہیں اور اس کی امامت سے نماز سنّی کی صحیح ہے یا کیا؟ (۳) زید فرقہ وہابیہ دیوبندیہ کو برا سمجھتا ہے اور کہتا ہے لیکن ان کی امامت سے نماز بلا تکلف پڑھتا ہے اور عمرو سنّی حنفی ہے اور وہابیہ کے پیچھے نماز پڑھنے سے احتراز کرتا ہے بخیال نہ ہونے نماز جائز کے ، لہذا زید مذکور کی امامت سے عمرو مذکور کی نماز صحیح ہو گی یا نہیں اور کیوں؟ (۴) امام جمعہ وہابی عقائد کا ہے اور صرف ایک ہی مسجد میں جمعہ ہوتا ہے آیا سنّی اس کی امامت میں نمازِ جمعہ پڑھ سکتا ہے یا نہیں اور اگر نہیں تو کیا نماز ظہر ادا کرے؟ (۵) اگر امام جمعہ نمبر ان (۲) یا (۳) مذکورہ میں سے کوئی ہو تو اہلِ سنت و جماعت اس کے پیچھے نماز پڑھ سکتا ہے یا نہیں اور نماز صحیح ہو گی یا کیا ۔ نیز نماز عیدین کے بارے میں ایسی صورت میں کیا حکم ہے؟ (۶) امام سنّی المذہب ہے اور چار مقتدی جن میں سے ایک سنّی کامل ہے باقی تین صورتہائے متذکرہ نمبر (۲) اور (۳) کے ہیں ایسی حالت میں جمعہ قائم کر سکتے ہیں یا نہیں؟ (۷) نمازِ مغرب یا کسی وقت کی بہ جماعت نماز ساتھ امام صورتہائے متذکرہ ان (۱) یا (۲) یا (۳) کے ہو رہی ہے تو کیا سنّی المذہب شریکِ جماعت ہو سکتا ہے یا نہیں اور تنہا پڑھنے کی حالت میں نماز صحیح ہو گی یا نہیں؟ (۸) حافظ نابینا کی امامت جائز ہے یا نہیں نمازِ پنجگانہ یا تراویح میں بشرطیکہ سوائے اس کے اور کوئی حافظ قرآن موجود نہیں ہے البتہ ناظرہ خواں چند ہیں؟ (۹) صورت ہائے مذکورۃ الصدر نمبر ان (۲) یا (۳) میں سے اگر امام ہو تو نماز تراویح میں اس کی اقتداء جائز ہے یا نہیں؟ **الجواب:** (۱) وہابی کے پیچھے

کوئی نماز فرض خواہ نفل کسی کی نہیں ہو سکتی نہ اس کے پڑھنے سے نماز جنازہ ادا ہوا اگر چہ نماز جنازہ میں جماعت و امامت شرط نہیں و لہذا اگر عورت امام اور مقتدی ہے نماز جنازہ کا فرض ادا ہو جائے گا کہ اک رچہ مقتدیوں کی اس کے پیچھے نہ ہوئی خود اس کی ہو گئی، اور اسی قدر فرضِ کفایہ کی ادا کافی ہے مگر وہابی تو نماز خود باطل ہے لانہ لا دین لہ ولا صلوۃ لمن لا دین لہ (کیونکہ اس کا تو کوئی دین نہیں اور جس کا

Fatawa Razawiya - Volume 6 ...he has no religion, his prayer is not valid. (T) Neither can his own prayer be valid, nor can anyone's prayer behind him be valid, even if they are of his own sect or any other deviant sect, or even if they are Sunnis. And Allah Almighty knows best.

(2) Regarding the Deobandis, the noble scholars of the Haramin Sharifain (Mecca and Medina) have unanimously declared that they are apostates. Citing 'Shifa' of Qadi Iyad, 'Bazzaziyya', 'Majma' al-Anhur', 'Durr al-Mukhtar', etc., they stated: "Whoever doubts their disbelief (kufr) and their punishment becomes a disbeliever himself."[1] (T: Whoever doubts their kufr and punishment also becomes a kafir.) Anyone who is aware of their statements and still doubts their disbelief is also a disbeliever. Their state of disbelief and misguidance and their blasphemous and cursed statements have become public knowledge. Anyone who is not completely ignorant is aware of their state. Therefore, anyone who considers them scholars of religion is certainly suspect, and prayer behind them is absolutely void. And Allah Almighty knows best.

(3) It was just mentioned that whoever doubts the disbelief of the Deobandis is also a disbeliever. Just considering them bad is not enough. So, whoever considers them worthy of leading the prayer (Imamat), the prayer behind him is definitely absolutely void, "for he is one of them." (T) And Allah Almighty knows best.

(4) It is obligatory upon the Ahl al-Sunnah to appoint an Imam for Friday and Eid prayers who is a Sunni with correct beliefs. Prayer behind a Wahhabi is absolutely void, and abandoning Friday prayers in cities is forbidden (haram). And Allah Almighty knows best.

(5) Its answer has already passed in these numbers.

(6) In such a situation, the Friday prayer cannot be established because at least three followers (Muqtadis) besides the Imam are required, and here there is only one; the other three are not there, they are just statues of brick and stone. And Allah Almighty knows best.

(7) It has been stated many times that prayer behind them is void, and their own prayer is void; they are not prayers but futile movements. Muslims should establish their own congregation at that time, and if a congregation is not available, they should pray alone.

(8) The leadership (Imamat) of a blind person is permissible; however, if someone better than him is present, then it is contrary to what is best (Khilaf-e-Aula). And Allah Almighty knows best.

(9) How many times must it be said that it is not permissible at all in any prayer. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 808: From Dongarpur City, Mewar Rajputana, at the house of Jamadar Sikandar Khan, questioned by Abdul Rauf Khan, 13 Muharram 1339 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: if someone pays a fee to an astrologer, a soothsayer, or someone who performs fortunetelling...

---

[1] Durr al-Mukhtar, Chapter on the Apostate, printed by Matba' Mujtabai, Delhi, 1/356

फतावा रज़विया - छठा खंड ...उसका कोई धर्म नहीं, उसकी नमाज़ नहीं। त) न तो उसकी अपनी नमाज़ हो सकती है और न ही उसके पीछे किसी और की, चाहे वह उसके अपने संप्रदाय का हो या किसी अन्य प्रकार का पथभ्रष्ट हो, भले ही वह सुन्नी ही क्यों न हो। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

(२) देवबंदियों के संबंध में, हरमैन शरीफैन (मक्का और मदीना) के प्रतिष्ठित विद्वानों ने सर्वसम्मति से घोषणा की है कि वे धर्मत्यागी (मुरतद) हैं। काजी अयाज़ की 'शिफा', 'बज़्ज़ाज़िया', 'मजमा अल-अन्हुर' और 'दुर-ए-मुख्तार' आदि का हवाला देते हुए उन्होंने कहा: "जिसने उनके कुफ्र (अधर्म) और उनकी सजा में संदेह किया, वह भी काफिर हो गया।"१ (त: जिसने उसके कुफ्र और अज़ाब में शक किया वह भी काफिर हो गया।) जो कोई भी उनके कथनों से अवगत होने के बावजूद उनके कुफ्र में संदेह करता है, वह भी काफिर है। उनके कुफ्र और गुमराह होने की स्थिति और उनके कुफ्र और शापित कथन सार्वजनिक हो चुके हैं। कोई भी व्यक्ति जो पूरी तरह से अज्ञानी नहीं है, उनकी स्थिति से अवगत है। अत; जो उन्हें धर्म का विद्वान मानता है वह निश्चित रूप से संदिग्ध है, और उनके पीछे नमाज़ पूर्णतः अमान्य (बातिल) है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

(३) अभी बताया गया कि जो देवबंदियों के काफिर होने में संदेह करे, वह भी काफिर है। केवल उन्हें बुरा जानना पर्याप्त नहीं है। अत; जो उन्हें इमामत (नमाज़ का नेतृत्व) के योग्य समझता है, उसके पीछे नमाज़ निश्चित रूप से पूर्णतः अमान्य है, "क्योंकि वह भी उन्हीं में से है।" (त) और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

(४) सुन्नियों पर अनिवार्य (फ़र्ज़) है कि वे जुमे और ईद की नमाज़ के लिए अपना सुन्नी और सही अकीदे (सही विश्वास) वाला इमाम नियुक्त करें। वहाबी के पीछे नमाज़ पूर्णतः अमान्य है और शहरों में जुमे की नमाज़ छोड़ना हराम है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

(५) इसका उत्तर इन्हीं नंबरों में बीत चुका है।

(६) ऐसी स्थिति में जुमा की नमाज़ कायम नहीं हो सकती क्योंकि इसके लिए इमाम के अलावा कम से कम तीन मुक्तदियों (अनुयायियों) की आवश्यकता होती है, और यहाँ केवल एक ही है; बाकी तीन नहीं हैं, वे तो ईंट-पत्थर की मूर्तियाँ हैं। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

(७) बार-बार बताया गया है कि उनके पीछे नमाज़ अमान्य है और उनकी अपनी नमाज़ भी अमान्य है; वे नमाज़ नहीं बल्कि निरर्थक क्रियाएँ हैं। मुसलमान उसी समय अपनी जमात कायम करें, और यदि जमात न मिले तो अपनी नमाज़ अकेले पढ़ें।

(८) एक नेत्रहीन व्यक्ति का इमामत करना जायज़ है; हाँ, यदि उससे बेहतर व्यक्ति मौजूद हो, तो यह 'खिलाफ-ए-औला' (सर्वोत्तम के विरुद्ध) है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

(९) कितनी बार कहा जाए कि किसी भी नमाज़ में यह मूलतः जायज़ नहीं है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर ८०८: डूँगरपुर शहर, मेवाड़ राजपूताना से, जमादार सिकंदर खान के निवास पर, अब्दुल रऊफ खान द्वारा पूछा गया, १३ मुहर्रम १३३९ हिजरी। धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं: यदि कोई व्यक्ति किसी ज्योतिषी, रमाल (भविष्यवक्ता) या फ़ाल देखने वाले को उस पर मज़दूरी (शुल्क) देता है...

---

१ दुर-ए-मुख्तार, बाबुल मुरतद, मतबा मुज्तबाई दिल्ली १/३५६ द्वारा प्रकाशित पृष्ठ ६२१ / ७३६

فتاوٰی رضویہ - جلد ششم دین نہیں اس کی نماز نہیں۔ ت) نہ تو اس کی اپنی ہو سکتی ہے نہ اس کے پیچھے کسی کی اگرچہ اس کا ہم مذہب ہو یا اور کسی قسم بد مذہب ہو سنی ہو تو سنی ،واللہ تعالٰی اعلم۔

(۲) دیوبندیہ کی نسبت علمائے کرام حرمین شریفین نے بالاتفاق فرمایا کہ وہ مرتد ہیں۔ اور شفائے قاضی عیاض وبزازیہ و مجمع الانہر ودرّ مختار وغیرہ ہاکے حوالے سے فرمایا من شك فی کفرہ و عذابہ فقد کفر ۱ (جس نے اس کے کفر وعذاب میں شک کیا وہ بھی کافر ہو گیا۔ ت) جو ان کے اقوال پر مطلع ہوکر ان کے کفر میں شک کرے وہ بھی کافر اور ان کی حالت کفر وضلال اور ان کے کفری وملعون اقوال طشت از بام ہوگئے ہر شخص کہ نرا جنگلی نہ ہو اُن کی حالت سے آگاہ ہے پھر انہیں عالم دین جانے تو ضرور متہم ہے اور اس کے پیچھے نماز باطل محض ۔واللہ تعالٰی اعلم۔

(۳) ابھی گزرا کہ دیوبندیہ کے کافر ہونے میں جو شک کرے وہ بھی کافر ہے صرف انہیں برا جاننا کافی نہیں تو جو انہیں قابل امامت سمجھتا ہے اس کے پیچھے نماز بیشک باطل محض ہے فانہ منھم (کیونکہ وہ بھی انہی میں سے ہے۔ ت) واللہ تعالٰی اعلم

(۴) اہلسنت پر فرض ہے کہ اپنا امام سنّی صحیح العقیدہ جمعہ وعیدین کے لئے مقرر کریں وہابی کے پیچھے نماز باطل محض ہے اور شہروں میں جمعہ کاترک حرام ہے۔واللہ تعالٰی اعلم۔

(۵) اس کا جواب انھیں نمبروں میں گزرا۔

(۶) ایسی صورت میں جمعہ قائم نہیں ہوسکتا کہ اس کے لئے امام کے سوا کم از کم تین مقتدی درکار ہیں اور یہاں ایک ہی ہے باقی تین نہیں اینٹ پتھر کی مورتیں ہیں۔ واللہ تعالٰی اعلم

(۷) بارہا بتادیا گیا کہ انکے پیچھے نماز باطل اور خود ان کی نماز باطل وہ نماز ہی نہیں لغو حرکات ہیں مسلمان اُسی وقت اپنی جماعت قائم کریں اور جماعت نہ ملے تو اپنی تنہا پڑھے۔

(۸) نابینا کی امامت جائز ہے ، ہاں ، مگراُس سے افضل موجود ہو تو خلافِ اولیٰ ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

(۹) کتنی بار کہا جائے کہ کسی نماز میں اصلاً جائز نہیں۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۸۰۸ : از شہر ڈونگر پور ملک میوڑ اراجپوتانہ بر مکان جمعدار سکندر خاں مسئولہ عبدالرؤف خاں ۱۳ محرم ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ اگر کوئی شخص نجومی یا رمال یا فال دیکھنے والا اس پر اجرت

---

۱ درمختار باب المرتد مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۳۵۶ Page 621 of 736

Fatawa Razawiyya Volume Six Question: Is prayer valid behind someone who is a [palm reader] and leads the prayer or not? The Answer: Astrologers and palm readers are not fit for leadership in prayer (Imamat), nor are those who use fake fortune-telling books. However, if one looks at omens in a permissible way without believing in them or making others believe in them, then there is no harm. And Allah Almighty knows best.

Issue No. 809: From Old City, queried by Sayyid Mumtaz Ali Sahab Razawi, 14 Muharram-ul-Haram 1339 AH. The unanimous belief of the Ahl al-Sunnah wa al-Jama'ah is that Sayyiduna Abu Bakr Siddiq (May Allah be pleased with him) is the best of humans after the Prophets (Peace be upon them). Zaid and Khalid are both from the Sayyid family. Zaid says that prayer behind someone who gives preference to Hazrat Ali (May Allah be pleased with him) over Hazrat Abu Bakr Siddiq (May Allah be pleased with him) is disliked (Makruh). Khalid says, "I declare openly that Hazrat Ali (May Allah be pleased with him) has superiority over Hazrat Abu Bakr Siddiq (May Allah be pleased with him), and every Sayyid is a 'Tafzili' (one who gives preference), and prayer behind a Tafzili is not disliked; rather, whoever says prayer behind a Tafzili is disliked, prayer behind him himself becomes disliked." The Answer: It is the consensus belief of all Ahl al-Sunnah that Siddiq-e-Akbar and Farooq-e-Azam (May Allah be pleased with them) are superior to Mawla Ali (May Allah be pleased with his noble countenance). It is explicitly stated by the Imams of religion that whoever gives preference to Mawla Ali over them is an innovator (Mubtadi') and of a wrong school of thought (Bad-Mazhab); prayer behind such a person is disliked. It is mentioned in Fatawa Khulasa, Fath al-Qadir, Bahr al-Ra'iq, Fatawa 'Alamgiriyyah, and many other books: "If one prefers 'Ali over the two of them, he is an innovator."[1] (Note: If someone gives preference to Hazrat Ali over Siddiq and Farooq, then he is an innovator). It is in Ghunyah and Radd al-Muhtar: "Prayer behind an innovator is disliked in all cases."[2] (Note: Prayer behind a bad-religionist is disliked in every case). It is in Arkan-e-Arba'ah: "Prayer behind them is severely disliked."[3] (Note: Following them, i.e., the Tafzili Shias, in prayer is severely disliked). Prayer behind Tafzilis is strongly disliked, meaning it is Makruh Tahrimi (prohibitively disliked), such that performing it is a sin and repeating it is obligatory. And Allah Almighty knows best.

[1] Khulasat al-Fatawa, Kitab al-Salah, chapter on following people of desires, published by Maktabah Habibiyyah, Quetta, 1/149. F: In Khulasat al-Fatawa, it says "if he prefers Ali over others". [2] Radd al-Muhtar, Chapter on Imamat, published by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/414. [3] Rasa'il al-Arkan, Section on the Congregation, published by Matba'

'Alawi, India, p. 99. F: The text is quoted in meaning, not verbatim. The words are: "So prayer behind them is permissible but it is severely disliked." Page 622 of 736

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी सवाल: लेने वाला (हस्तरेखा देखने वाला) हो और इमामत करता हो उसके पीछे नमाज़ दुरुस्त है या नहीं? अल-जवाब: नजूमी (ज्योतिषी) और रताल इमामत के क़ाबिल नहीं, इसी तरह झूठे फ़ालनामों वाले, हाँ अगर जायज़ तौर पर फ़ाल देखे और न उस पर यक़ीन करे न यक़ीन दिलाये तो हरज नहीं। वल्लाहु तआला आलम।

मस्अला नंबर ८०९: अज़ शहर-ए-कुहना मस्ऊला सैयद मुमताज़ अली साहब रज़वी १४ मुहर्रम-उल-हराम १३३९ हिजरी। अहले सुन्नत व जमाअत का मुत्तफ़िक़ा अक़ीदा है कि सय्यदना अबू बक्र सिद्दीक़ (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) बाद-ए-अंबिया (अलैहिमुस्सलात वस्सलाम) अफ़ज़ल-उल-बशर हैं, ज़ैद और ख़ालिद दोनों अहल-ए-सादात हैं, ज़ैद कहता है कि जो शख़्स हज़रत अली (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) को हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) पर फ़ज़ीलत देता है उसके पीछे नमाज़ मकरूह होती है। ख़ालिद कहता है कि मैं अलल-ए-ऐलान कहता हूँ कि हज़रत अबा बक्र सिद्दीक़ (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) पर हज़रत अली (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) को फ़ज़ीलत है और हर सैयद तफ़्ज़ीलिया है और तफ़्ज़ीलिया के पीछे नमाज़ मकरूह नहीं होती बल्कि जो तफ़्ज़ीलिया के पीछे नमाज़ मकरूह बताये ख़ुद उसके पीछे मकरूह होती है। अल-जवाब: तमाम अहले सुन्नत का अक़ीदा इज्माईया है कि सिद्दीक़-ए-अकबर व फ़ारूक़-ए-आज़म (रज़ियल्लाहु तआला अन्हुमा) मौला अली (करमल्लाहु तआला वज्हहुल करीम) से अफ़ज़ल हैं, अइम्मा-ए-दीन की तसरीह है जो मौला अली को उन पर फ़ज़ीलत दे मुब्तदअ (बिदअती) बद-मज़हब है, उसके पीछे नमाज़ मकरूह है। फ़तावा ख़ुलासा, फ़त्हुल क़दीर, बहरुर राईक़ और फ़तावा आलमगीरिया वग़ैरा कुतुब-ए-कसीरा में है: "इन फज़्ज़ला अलिय्यन अलैहिमा फ़-मुब्तदअ"[1] (अगर कोई हज़रत अली को सिद्दीक़ व फ़ारूक़ पर फ़ज़ीलत दे तो वह बिदअती है - त)। गुनिया और रद-उल-मुहतार में है: "अस्सलातु ख़ल्फ़ल मुब्तदअ तुकरहु बिकुल्लि हाल"[2] (बद-मज़हब के पीछे हर हाल में मकरूह है)। अरकान-ए-अरबआ में है: "अस्सलातु ख़ल्फ़हुम तुकरहु कराहतन शदीदा"[3] (इन यानी तफ़्ज़ीलिया शिया की इक़्तिदा में नमाज़ शदीद मकरूह है - त)। तफ़्ज़ीलियों के पीछे नमाज़ सख़्त मकरूह यानी मकरूह तहरीमी है कि पढ़नी गुनाह और फेरनी वाजिब। वल्लाहु तआला आलम।

[1] ख़ुलासतुल फ़तावा, किताब-उस-सलात, अल-इक़्तिदा बि-अहलिल अहवाई, मतबूआ मकतबा हबीबिया क्वेटा, १/१४९ फ़: ख़ुलासतुल फ़तावा में "इन फज़्ज़ला अलिय्यन अला ग़ैरिही" है। [2] रद-उल-मुहतार, बाब-उल-इमामत, मतबूआ मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र १/४१४ [3] रसाइल-उल-अरकान, फ़स्ल

फ़िल जमाअत, मतबूआ मतबा अलवी इंडिया, स ९९ फ़: इबारत मफ़हूमन मनक़ूल है लफ़्ज़न नहीं। अल्फ़ाज़ यूँ हैं: फ़-यजौज़ु ख़ल्फ़हुम अस्सलातु लाकिन युकरहु कराहतन शदीदा- सफ़हा ६२२/७३६

فتاویٰ رضویہ جلد ششم لینے والا ہو اور امامت کرتا ہو اس کے پیچھے نماز درست ہے یا نہیں؟

الجواب: نجومی ورتال قابلِ امامت نہیں، یونہی جھوٹے فالناموں والے، ہاں اگر جائز طور پر فال دیکھے اور نہ اس پر یقین کرے نہ یقین دلائے تو حرج نہیں۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ نمبر ۸۰۹: از شہر کہنہ مسئولہ سید ممتاز علی صاحب رضوی ۱۴ محرم الحرام ۱۳۳۹ھ

اہلسنت و جماعت کا متفق علیہ عقیدہ ہے کہ سیدنا ابو بکر صدیق رضی اللہ تعالٰی عنہ بعدِ انبیاء علیہم الصلوٰۃ والسلام افضل البشر ہیں، زید و خالد دونوں اہل سادات ہیں، زید کہتا ہے کہ جو شخص حضرت علی رضی اللہ تعالٰی عنہ کو حضرت ابو بکر صدیق رضی اللہ تعالٰی عنہ پر فضیلت دیتا ہے اُس کے پیچھے نماز مکروہ ہوتی ہے۔ خالد کہتا ہے کہ میں علی الاعلان کہتا ہوں کہ حضرت ابا بکر صدیق رضی اللہ تعالٰی عنہ پر حضرت علی رضی اللہ تعالٰی عنہ کو فضیلت ہے اور ہر سید تفضیلیہ ہے اور تفضیلیہ کے پیچھے نماز مکروہ نہیں ہوتی بلکہ جو تفضیلیہ کے پیچھے نماز مکروہ بتائے خود اس کے پیچھے مکروہ ہوتی ہے۔ الجواب: تمام اہلسنت کا عقیدہ اجماعیہ ہے کہ صدیقِ اکبر و فاروقِ اعظم رضی اللہ تعالٰی عنہما مولیٰ علی کرم اللہ تعالٰی وجہہ الکریم سے افضل ہیں، ائمہ دین کی تصریح ہے جو مولیٰ علی کو اُن پر فضیلت دے مبتدع بد مذہب ہے، اس کے پیچھے نماز مکروہ ہے۔ فتاویٰ خلاصہ وفتح القدیر و بحر الرائق وفتاویٰ عالمگیریہ و غیرہا کتبِ کثیرہ میں ہے: ان فضل علیاً علیھما فمبتدع[1] (اگر کوئی حضرت علی کو صدیق و فاروق پر فضیلت دے تو ہے تو وہ بدعتی ہے۔ت) غنیہ و ردالمختار میں ہے: الصلوٰۃ خلف المبتدع تکرہ بکل حال[2] (بدمذہب کے پیچھے ہر حال میں مکروہ ہے) ارکانِ اربعہ میں ہے: الصلوۃ خلفھم تکرہ کراھۃ شدیدۃ[3] (ان یعنی تفضیلی شیعہ کی اقتداء میں نماز شدید مکروہ ہے۔ت) تفضیلیوں کے پیچھے نماز سخت مکروہ یعنی مکروہ تحریمی ہے کہ پڑھنی گناہ اور پھیرنی واجب۔ واللہ تعالٰی اعلم

[1] خلاصہ الفتاویٰ کتاب الصلوٰۃ الاقتداء باھل الہوائی مطبوعہ مکتبہ حبیبیہ کوئٹہ ۱ / ۱۴۹ ف:

خلاصۃ الفتاویٰ میں " ان فضل علیاً علی غیرہ " ہے۔ [2] ردالمحتار باب الامامۃ مطبوعہ مصطفیٰ

البابی مصر ۱/ ۴۱۴ [3] رسائل الارکان فصل فی الجماعتہ مطبوعہ مطبع علوی انڈیا ص ۹۹ ف:

عبارت مفہوماً منقول ہے لفظاً نہیں۔ الفاظ یوں ہیں: فیجوز خلفھم الصلوۃ لکن یکرہ کراھۃ شدیدۃ۔

Fatawa Rizvia, Volume Six

Issue No. 810: Old City, Kankar Tola neighborhood, questioned by Nanhe Khan, 15 Muharram-ul-Haram 1339 AH. What do the scholars of religion say regarding this issue: is the leadership (Imamat) of a shopkeeper permissible or not? **The Answer:** Selling permissible things and selling them in a permissible manner holds no harm, nor does it cause any disruption in Imamat due to it. Yes, if he sells impermissible things or commits deceit, lies, or invalid contracts like 'rilo' (usury/interest) etc., then he becomes a transgressor (fasiq), and prayer behind a transgressor is disliked (makruh). And Allah Almighty knows best. From Sadar Bazaar, Bareilly, questioned by Naimatullah Khan, scribe of Pond, 16 Muharram 1339 AH.

Issue No. 811, 812: What do the scholars of religion and muftis of the firm Sharia say regarding this issue that: (1) Zaid is from the Ahl-e-Sunnat-wal-Jama'at; is Zaid's prayer behind a Wahhabi permissible or not? (2) Bakr is a Wahhabi and Zaid is from the Ahl-e-Sunnat-wal-Jama'at; can Bakr's prayer behind Zaid take place or not? **The Answer:** A Sunni's prayer cannot take place behind a Wahhabi. It is narrated from Imam Muhammad, Imam Abu Yusuf, and Imam Azam (may Allah be pleased with them): "Indeed, prayer behind the people of deviant desires (innovators and those of bad sects) is not permissible." (t) In fact, a Wahhabi's prayer is not valid behind anyone nor alone. No one's prayer can be valid behind a Wahhabi even if they are of the same sect, because the first condition for the validity of prayer is Islam, and Wahhabis are outside the fold of Islam due to insulting God and the Prophet. It is stated in the fatwas of the noble scholars of the Two Holy Sanctuaries: "Whoever doubts their disbelief and punishment has also become a disbeliever." (t)

Issue No. 813: From village Bartapur, district Bareilly, questioned by Gulzar Shah, 21 Muharram-ul-Haram 1339 AH. What do the scholars of religion say regarding this issue: there are a few people who are completely illiterate, and among those men is one man who is somewhat literate in Arabic but his profession is beggary (faqiri). Is his Imamat permissible or not? **The Answer:** The profession of beggary, such that people go around begging while healthy, is forbidden (haram) and its earning is impure and it...

---

1. Fath al-Qadir, Chapter on Imamat, printed by Maktaba Nooriya Razavia, Sukkur, 3/304

2. Durr al-Mukhtar, Chapter on the Apostate, Mujtabai Press, Delhi, 1/206; Husam al-Haramayn ala Manhar al-Kufr wal-Mayn, Maktaba Nabawiya, Lahore

फतावा रज़विया, छठा खंड

मसला नंबर 810: पुराना शहर, मोहल्ला कांकर टोला, सवाल करने वाले नन्हे खान, 15 मुहर्रम-उल-हराम 1339 हिजरी। क्या फरमाते हैं उलमा-ए-दीन इस मसले में कि दुकानदार आदमी की इमामत जायज़ है या नहीं? **अल-जवाब:** जायज़ चीज़ बेचना और जायज़ तरीके से बेचना कोई हर्ज नहीं रखता, न ही इसके कारण इमामत में कोई खराबी आती है। हाँ, अगर वह नाजायज़ चीज़ बेचे या धोखेबाजी, झूठ या फासिद अक़ूद (गलत अनुबंधों) जैसे मिलावट आदि का शिकार हो, तो वह फासिक (गुनहगार) हो जाएगा और फासिक के पीछे नमाज़ मकरूह है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। सदर बाज़ार बरेली से, सवाल करने वाले नेमतुल्लाह खान मोहर्रिर पौंड, 16 मुहर्रम 1339 हिजरी।

मसला नंबर 811, 812: क्या फरमाते हैं उलमा-ए-दीन और मुफ़्तियान-ए-शरा मतीन इस मसले में कि: (1) ज़ैद अहल-ए-सुन्नत वल-जमाअत है, ज़ैद की नमाज़ वहाबी के पीछे जायज़ है या नहीं? (2) बक्र वहाबी है और ज़ैद अहल-ए-सुन्नत वल-जमाअत है, तो बक्र की नमाज़ ज़ैद के पीछे हो सकती है या नहीं? **अल-जवाब:** सुन्नी की नमाज़ वहाबी के पीछे नहीं हो सकती। इमाम मोहम्मद, इमाम अबू यूसुफ और इमाम आज़म (रज़ियल्लाहु अन्हुम) से रिवायत है: "बेशक बिदअती और गुमराह फिरके के लोगों के पीछे नमाज़ जायज़ नहीं है।" (त) बल्कि वहाबी की नमाज़ न किसी के पीछे हो सकती है और न ही अकेले। वहाबी के पीछे किसी की नमाज़ नहीं हो सकती चाहे वह उसके अपने ही संप्रदाय का क्यों न हो, क्योंकि नमाज़ की सेहत (वैधता) के लिए पहली शर्त इस्लाम है और वहाबी अल्लाह और रसूल की तौहीन के कारण इस्लाम से खारिज हैं। हरमैन शरीफैन के उलमा-ए-किराम के फतवों में है: "जिसने उनके कुफ़्र और अज़ाब में शक किया, वह भी काफ़िर हो गया।" (त)

मसला नंबर 813: ग्राम बरतापुर जिला बरेली से, सवाल करने वाले गुलज़ार शाह, 21 मुहर्रम-उल-हराम 1339 हिजरी। क्या फरमाते हैं उलमा-ए-दीन इस मसले में कि कुछ लोग बिल्कुल अनपढ़ हैं और उन लोगों में एक आदमी अरबी में थोड़ा पढ़ा-लिखा है लेकिन उसका पेशा फकीरी (भीख मांगना) है, उसकी इमामत जायज़ है या नहीं? **अल-जवाब:** फकीरी का पेशा जिसमें तंदुरुस्त होने के बावजूद भीख मांगते फिरते हैं, हराम है और उसकी कमाई खबीस (नापाक) है और उसे...

---

1. फतह अल-कादिर, बाब अल-इमामत, मकतबा नूरिया रज़विया, सुक्कुर, 3/304

2. दुर्रे मुख्तार, बाब अल-मुरतद, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 1/206; हुसाम अल-हरमैन अला मनहर अल-कुफ्र वल-मैन, मकतबा नबविया लाहौर

पृष्ठ 623/736

فتاوی رضویه، جلد ششم

مسئلہ نمبر ۸۱۰: شہر کہنہ محلہ کانکر ٹولہ مسئولہ ننھے خاں ۱۵ محرم الحرام ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ دکاندار آدمی اس کی امامت جائز ہے یا نہیں ؟ **الجواب:** جائز چیز بیچنا اور جائز طور بیچنا کچھ حرج نہیں رکھتا، نہ اسکے سبب امامت میں کوئی خلل آئے، ہاں اگر ناجائز چیز بیچے یا مکروفریب کذب یا عقود فاسدہ مثل رلو وغیرہ کا ارتکاب کرے تو آپ بھی فاسق اور فاسق کے پیچھے نماز مکروہ۔ واللہ تعالیٰ اعلم از صدر بازار بریلی مسئولہ نعمت اللہ خاں محرر پونڈ ۱۶ محرم ۱۳۳۹ھ

مسئلہ نمبر ۸۱۱، ۸۱۲: کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین اس مسئلہ میں کہ : (۱) زید اہل سنت وجماعت ہے زید کی نماز وہابی کے پیچھے جائز ہے یا نہیں ؟ (۲) بکر وہابی اور زید اہلسنت وجماعت ہے، تو بکر کی نماز زید کے پیچھے ہو سکتی ہے یا نہیں ؟ **الجواب:** سنی کی نماز وہابی کے پیچھے نہیں ہو سکتی، امام محمد وامام ابو یوسف و امام اعظم رضی اللہ تعالیٰ عنہم سے راوی : ان الصلوۃ خلف اھل الھواء لا تجوز (اہل بدعت وبد مذہب کے پیچھے نماز جائز نہیں ت) بلکہ وہابی کی نماز نہ کسی کے پیچھے ہو سکتی ہے نہ خود تنہا، وہابی کے پیچھے کسی کی نماز ہو سکتی ہے اگر چہ اس کا ہم مذہب ہو کہ صحت نماز کے لئے پہلی شرط اسلام ہے اور وہابیہ تو ہین خدا اور رسول کے سبب اسلام سے خارج ہیں۔ فتاوی علمائے کرام حرمین شریفین میں ہے : من شك فی کفرہ و عذابہ فقد کفر (جس نے اس کے کفر وعذاب میں شک کیا وہ بھی کافر ہو گیا۔ (ت))

مسئلہ نمبر ۸۱۳: از موضع برتا پور ضلع بریلی مسئولہ گلزار شاہ ۲۱ محرم الحرام ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ چند آدمی ناخواندہ قطعاً ہیں اور ان آدمیوں میں ایک آدمی

کچھ خواندہ عربی کا ہے لیکن پیشہ فقیری کا ہے اس کی امامت جائز ہے یا نہیں ؟ **الجواب:** فقیری کا پیشہ کہ تندرست ہوتے ہوئے بھیک مانگتے پھرتے ہیں حرام ہے اور اس کی کمائی خبیث اور اسے

---

1 فتح القدیر باب الامامۃ مطبوعہ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۳ / ۳۰۴ 2 در مختار باب المرتد مطبع مجتبائی دہلی ۱ / ۲۰۶، حسام الحرمین علی منحر الکفر والمین مکتبہ نبویہ لاہور

Fatawa Razawiyya Volume 6

Making [such a person] an Imam is a sin, and praying behind him is a sin. Instead, make someone who is pious, a Sunni with correct beliefs, performs wudu and ghusl properly, and prays correctly, the Imam. Allah Ta'ala knows best.

Issue No. 812: From Seoni District, Chhapara, Qazi neighborhood, Central Provinces. Submitted by Mr. Muhammad Zahoor-ul-Hasan on 23rd Muharram-ul-Haram, 1339 AH.

What do the scholars of religion say regarding the issue where some people call the following Hadith false? The Hadith is as follows:

[Table Header omitted for flow]

Narrated by Amr bin Salama (may Allah be pleased with him): When Mecca was conquered, every tribe hastened to embrace Islam. My father also hurried with his tribe to embrace Islam. When he returned from the presence of the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him), he said, "By Allah, I have come to you from the true Prophet and from the Truth. So, perform prayers at such and such times. When the time for prayer comes, one of you should call the Azan, and the one among you who knows the most Quran should lead you in prayer." They looked around and found no one who knew more Quran than me, because I used to learn it from the travelers who passed by us. So they made me their Imam, even though I was a small boy of seven years. I used to wear a sheet (wrap), and when I prostrated, it would shrink away from me. Then a woman from the tribe said, "Won't you cover the buttocks of your reciter from us?" So they bought cloth and made a shirt for me. I was never as happy with anything as I was with that shirt.[1] (Narrated by Bukhari, and in the narration of Nasai[2]: "I used to lead them in prayer when I was eight years old." And in the narration of Abu Dawood: "I was a boy of seven or eight years."[3] And in the narration of Ahmad and Abu Dawood: "I have not attended a gathering of Jurm since then except that I was their Imam until this day."[4])

[Footnotes] 1 Sahih Bukhari, Book of Al-Maghazi, 2/612 2 Sunan al-Nasa'i, Book of Al-Imamah, 1/91 3 Sunan Abu Dawood, Chapter on Who is Most Deserving of Imamah, 1/86 4 Musnad Ahmad bin Hanbal, Hadith of Amr bin Salama, 5/71

फ़तावा-ए-रज़विया, खंड 6

[ऐसे व्यक्ति को] इमाम बनाना गुनाह है और उसके पीछे नमाज़ पढ़ना गुनाह है। इसके बजाय किसी ऐसे व्यक्ति को इमाम बनाएँ जो परहेज़गार हो, सही अकीदे वाला सुन्नी हो, वुज़ू और गुस्ल ठीक से करता हो और नमाज़ सही पढ़ता हो। अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसाला नंबर 812: ज़िला सिवनी, छपारा, मोहल्ला क़ाज़ी, मध्य प्रांत। मोहम्मद ज़हूर-उल-हसन साहब द्वारा प्रस्तुत, 23 मुहर्रम-उल-हराम, 1339 हिजरी।

विद्वान इस मसले में क्या कहते हैं कि कुछ लोग निम्नलिखित हदीस शरीफ को झूठा कहते हैं? वह हदीस इस प्रकार है:

[तालिका का अनुवाद]

अम्र बिन सलमा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत है कि जब मक्का फतह हुआ, तो हर कबीले ने इस्लाम लाने में जल्दी की। मेरे पिता ने भी अपने कबीले के साथ इस्लाम लाने में जल्दी की। जब वे नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की खिदमत से वापस आए, तो उन्होंने कहा, "वल्लाह, मैं तुम्हारे पास सच्चे नबी और हक़ की ओर से आया हूँ। इसलिए तुम लोग ऐसे-ऐसे समय में नमाज़ें पढ़ा करो। जब नमाज़ का वक़्त आ जाए, तो तुममें से कोई एक अज़ान दे और तुममें से जिसे सबसे ज़्यादा क़ुरआन याद हो, वह तुम्हारी इमामत कराए।" उन्होंने देखा तो मुझसे ज़्यादा क़ुरआन पढ़ने वाला कोई नहीं मिला, क्योंकि मैं गुज़रने वाले काफिलों से इसे सीख लिया करता था। चुनाँचे उन्होंने मुझे अपना इमाम बना लिया, जबकि मैं सात साल का छोटा लड़का था। मैं एक चादर ओढ़ता था, और जब मैं सजदे में जाता तो वह सिमट जाती थी। तब कबीले की एक औरत ने कहा, "क्या तुम अपने क़ारी का पिछला हिस्सा हमसे नहीं ढकोगे?" तब उन्होंने कपड़ा खरीदा और मेरे लिए एक कुर्ता बनवाया। मैं उस कुर्ते से जितना खुश हुआ, उतना किसी और चीज़ से कभी खुश नहीं हुआ। बुखारी और नसाई की रिवायत में भी है कि मैं उनकी इमामत कराता था और मैं आठ साल का था। और अबू दाऊद की रिवायत में ज़्यादा है कि सात या आठ साल का लड़का था और अहमद।

[पादलेख] 1 सही बुखारी, किताब अल-मगाज़ी, 2/612 2 सुनन अन-नसाई, किताब अल-इमामाह, 1/91 3 सुनन अबू दाऊद, बाब: इमामत का सबसे ज़्यादा हकदार कौन है, 1/86 4 मुसनद अहमद बिन हंबल, हदीस अम्र बिन सलमा, 5/71

فتاویٰ رضویہ جلد ششم

امام بنانا گناہ، اس کے پیچھے نماز پڑھنی گناہ، اس میں سے کسی پر ہیز گار جو سنّی صحیح العقیدہ ہو وضو غسل ٹھیک کرتا ہو نماز صحیح پڑھتا ہو امام بنائیں۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۸۱۲: از ضلع سیونی چھپارہ محلہ قاضی ممالک متوسط مسئولہ محمد ظہور الحسن صاحب ۲۳ محرم الحرام ۱۳۳۹ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ بعض لوگ مندرجہ ذیل حدیث شریف کو جھوٹا کہتے ہیں وہ یہ ہے:

عن عمر و بن سلمة قال لما كانت وقعة الفتح بادر كل قوم بإسلامهم وبدر ابی قومی بإسلامهم فلما قدم قال جئتكم والله من عند النبي صلى الله عليه وسلم حقاً فقال صلوا صلاة كذا في حين كذا وصلاة كذا في حين كذا فإذا حضرت الصلاة فليؤذن احدكم ويؤمكم اكثركم قرآنا فنظر و افلم يكن احداً اكثر قرآنا منی لما كنت اتلقى من الركبان فقد مونی بين ايديهم وانا ابن ست اوسبع سنين وكانت على بردة كنت اذا سجدت تقلصت عنی فقالت امرأة من الحی الا تغطوا عنا است قارئكم فاشتروا فقطعوا لی قميصاً فما فرحت بشيئ فرحی بذلك القميص [1] (رواه البخاری و فی رواية النسائی [2] كنت اومهم و انا ابن ثمان سنين و فی رواية لابی داؤد و انا ابن سبع سنين او ثمان سنين [3] و فی رواية لاحمد و ابی داؤد فما شهدت مجمعاً من جرم الاكنت امامهم الی يوم هذا [4]۔)

عمرو بن سلمہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت ہے کہ جب مکہ فتح ہوا تو ہر ایک قوم نے اسلام لانے میں جلدی کی اور میرے والد نے اپنی قوم سے اسلام لانے میں جلدی کی پس جب وہ آں حضرت صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی خدمت سے واپس آئے تو انہوں نے فرمایا واللہ میں تمہارے

پاس اس سچے نبی اور حق کے پاس سے آیا ہوں پس تم لوگ نماز ایسے ایسے وقت میں پڑھا کرو پس جب نماز کا وقت آجائے تو تم میں سے ایک اذان کہے اور تم میں سے زیادہ قرآن پڑھا ہوا تمھاری امامت کرائے پس انہوں نے دیکھا تو مجھ سے زیادہ قرآن خواں کسی کو نہ پایا کیونکہ میں سواروں سے (جو ہمارے پاس سے گزرتے تھے) سیکھ لیا کرتا تھا انہوں نے مجھ کو اپنا امام بنالیا اور میں چھوٹا سات برس کا لڑکا تھا اور مجھ پر ایک چادر ہوتی تھی جب میں سجدہ کرتا تھا تو وہ چادر مجھ سے سکڑ جاتی تھی پس قبیلہ کی ایک عورت نے کہا تم ہم سے اپنے قاری کے سرین نہیں ڈھانکتے پس انہوں نے کپڑا خریدا اور انہوں نے میرے لئے کُرتا بنایا پس میں جیسا اُس کپڑے سے خوش ہوا اور کسی چیز سے خوش نہیں ہوا بخاری و نسائی کی روایت بھی ہے کہ میں ان کی امامت کراتا تھا اور میں آٹھ برس کا تھا۔ اور ابی داؤد کی روایت میں زیادہ ہے کہ سات یا آٹھ برس کا لڑکا تھا اور احمد۔

1 صحیح بخاری کتاب المغازی ۲/ ۶۱۲ 2 سنن نسائی کتاب الامامة ۱/ ۹۱ 3 سنن ابو داؤد باب من احق بالامامة ۱/ ۸۶ 4 مسند احمد بن حنبل حدیث عمرو بن سلمہ ۵/ ۷۱

...And in a narration of Abu Dawud it is added that "I did not attend any gathering of the Jurum tribe except that they made me their Imam until this day." From this Hadith it is proven that the Imamate (leading prayer) of a non-pubescent child is permissible, and it is also the school of thought of Imam Hasan al-Basri, Ishaq, Imam Shafi'i, and Imam Yahya. It is also written that there is no authentic Hadith prohibiting the Imamate of a child. The matter seeking clarification is whether this Hadith is authentic or not, and if someone calls this noble Hadith a lie, what is the Shariah ruling regarding them? And there is a boy who appears to be an adult and he says "I am an adult" and signs of puberty are found, and his age is 14 years. He recites the Holy Quran correctly with proper articulation of letters, but some people call him a minor and do not believe him. The matter seeking clarification is whether he can lead the prayer or not, and is the prayer behind him valid or not? May you be graced with the correct answers to both questions.

The Answer: A fourteen-year-old boy, when he says "I am an adult," his statement must be accepted and he will be considered an adult. Prayer behind him will be valid as long as the apparent state does not contradict him. According to our Imams, a non-pubescent child cannot be an Imam for an adult because he is performing a voluntary (nafl) prayer while the adult is performing an obligatory (fard) prayer, and a voluntary prayer cannot encompass an obligatory one. The mentioned Hadith is authentic, and calling it a lie is due to ignorance or stubbornness. Its answers are mentioned in Fath al-Qadir and 'Ayni Sharh Hidayah. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 815: From the city, neighborhood of Qaraolan, asked by Abdul Karim Khayyat Qadri Razavi, 23 Muharram al-Haram 1339 AH. What is the decree of the sacred Shariah in this matter that Zaid openly eats at the places of those of deviant beliefs, and keeps social relations with them, but claims to be a Sunni himself. How is the prayer behind him and how is listening to his Taraweeh? Explain and be rewarded.

The Answer: In this case, he is a public sinner (fasiq mu'lin) and is not fit for Imamate. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 816: From the city, neighborhood of Zakhira, asked by Munshi Shaukat Ali Sahib, Octroi Clerk, 24 Muharram 1339 AH. What is the ruling of the people of Shariah in this matter: whose Imamate is permissible, whose is impermissible and disliked (makruh), and who is the best person for Imamate?

The Answer: One who recites incorrectly such that it corrupts the meaning, or does not perform Wudu or Ghusl correctly, or denies any of the essentials of the religion, such as a Wahhabi, Rafidhi, non-conformist (Ghayr Muqallid), Nechari, Qadiyani, Chakralavi, etc., or one who, having knowledge of their beliefs, is inclined towards them...

...और अबू दाऊद की एक रिवायत में ज़्यादा है कि "मैं जुर्म कबीले के किसी मजमे में नहीं हाज़िर हुआ मगर वो आज के दिन तक वहाँ मुझको इमाम बनाते हैं।" इस हदीस से साबित होता है कि नाबालिग बच्चे की इमामत जायज़ है और इमाम हसन बसरी, इसहाक, इमाम शाफ़ई और इमाम यहया का भी यही मज़हब है। और यह भी लिखा है कि बच्चे की इमामत की मनाही में कोई सही हदीस नहीं है। दरयाफ़्त तलब अम्र यह है कि आया यह हदीस सही है या नहीं, और कोई शख़्स इस हदीस शरीफ़ को झूठा कहे तो उसके लिए शरीयत की तरफ़ से क्या हुक्म है? और एक लड़का है जो देखने में बालिग मालूम होता है और वह कहता है कि "मैं बालिग हूँ" और बालिग की अलामत (निशानी) पाई जाती है और उसकी उम्र १४ बरस की है। वह क़ुरआन शरीफ़ को ठीक तौर से हुरूफ़ की अदायगी (मख़ारिज) के साथ पढ़ता है, लेकिन कुछ लोग उसको नाबालिग कहते हैं और उसकी बात का यक़ीन नहीं करते। दरयाफ़्त तलब यह बात है कि वह नमाज़ पढ़ा सकता है या नहीं और उसके पीछे नमाज़ जायज़ है या नहीं? हर दो सवालों के जवाब बा-सवाब से मुशर्रफ़ फ़रमाया जाए।

अल-जवाब: चौदह बरस की उम्र का लड़का जब कहे कि "मैं बालिग हूँ" तो उसका क़ौल (बात) वाजिब-उल-क़बूल (स्वीकार्य) है और उसे बालिग माना जाएगा। उसके पीछे नमाज़ जायज़ होगी, बशर्ते कि ज़ाहिरी हाल उसकी तक़ज़ीब (झुठलाना) न करता हो। और नाबालिग हमारे आइम्मा के नज़दीक बालिग का इमाम नहीं हो सकता क्योंकि वह मुतफ़्फ़िल (नफ़्ल पढ़ने वाला) है और बालिग मुफ़्तरिज़ (फ़र्ज़ पढ़ने वाला), और नफ़्ल, फ़र्ज़ का मुतज़म्मन नहीं हो सकता। ज़िक्र की गई हदीस सही है और इसे झूठा कहना जहल (अज्ञानता) या अिनाद (ज़िद) है। इसके जवाबात 'फ़तहुल क़दीर' और 'ऐनी शरह हिदाया' में मज़कूर (वर्णित) हैं। वल्लाहु तआला आलम।

मसला नंबर ८१५: शहर महल्ला क़रावलाँ से, मसूला (पूछा गया) अब्दुल करीम खय्यात कादरी रज़वी, २३ मुहर्रम अल-हराम १३३९ हिजरी। क्या इर्शाद है शरीयत-ए-मुक़द्दसा का इस मसले में कि ज़ैद बद-मज़हबों के यहाँ ऐलानिया खाता है, बद-मज़हबों से मेल-जोल रखता है मगर ख़ुद सुन्नी है। उसके पीछे नमाज़ कैसी और उसकी तरावीह सुनना कैसा है? बय्यिनू तूजिरू (बयान फ़रमाएं सवाब पाएँ)।

अल-जवाब: इस सूरत में वह 'फ़ासिक़ मुअ़लिन' (खुलेआम गुनाह करने वाला) है और इमामत के लायक़ नहीं। वल्लाहु तआला आलम।

मसला नंबर ८१६: शहर महल्ला ज़ख़ीरा से, मसूला मुंशी शौकत अली साहब, मुहर्रिर चूँगी, २४ मुहर्रम १३३९ हिजरी। क्या हुक्म है अहल-ए-शरीयत का इस मसले में कि इमामत किन-किन शख़्सों की जायज़ है और किन-किन की नाजायज़ और मकरूह, और सब से बेहतर इमामत किस शख़्स की है?

अल-जवाब: जो क़िरात ग़लत पढ़ता हो जिससे मानी मुफ़्सिद (बिगाड़ने वाले) हों, वज़ू या ग़ुस्ल सही न करता हो या ज़रूरीयात-ए-दीन से किसी चीज़ का मुन्किर हो जैसे वहाबी, राफ़ज़ी, ग़ैर-मुक़ल्लिद, नेचरी, क़ादियानी, चक्रालवी वग़ैरहुम, या वह जो उनमें से किसी के अक़ाइद पर मुत्तला होकर उसके..

पृष्ठ ६२५ / ७३६

اور ابوداؤد کی ایک روایت میں زیادہ ہے کہ میں جرم قبیلے کے کسی مجمع میں نہیں حاضر ہوا مگر وہ آج کے دن تک وہاں مجھ کو امام بناتے ہیں۔ اس حدیث سے ثابت ہوتا ہے کہ بچہ نابالغ کی امامت جائز ہے اور امام حسن بصری اور اسحاق اور امام شافعی اور امام یحییٰ کا بھی مذہب ہے اور یہ بھی لکھا ہے کہ بچے کی امامت کے منع میں کوئی حدیث صحیح نہیں ہے۔ دریافت طلب امر یہ ہے کہ آیا یہ حدیث صحیح ہے یا نہیں ، اور کوئی شخص اس حدیث شریف کو جھوٹا کہے تو اس کے واسطے شریعت کی طرف سے کیا حکم ہے، اور ایک لڑکا ہے جو دیکھنے میں بالغ معلوم ہوتا ہے اور وہ کہتا ہے کہ میں بالغ ہوں اور بالغ کی علامت پائی جاتی ہے اور اس کی عمر ۱۴ برس کی ہے اور وہ قرآن شریف کو ٹھیک طور سے حروف کی ادائیگی کے ساتھ پڑھتا ہے لیکن بعض لوگ اس کو نابالغ کہتے ہیں اس کی بات کا یقین نہیں کرتے ، دریافت طلب یہ بات ہے کہ وہ نماز پڑھا سکتا ہے یا نہیں اور اس کے پیچھے نماز جائز ہے یا نہیں؟ ہر دو سوالوں کے جواب باصواب سے مشرف فرمایا جائے۔

الجواب: چودہ برس کی عمر کا لڑکا جب کہے کہ میں بالغ ہوں اس کا قول واجب القبول ہے اور اسے بالغ مانا جائے گا اور اس کے پیچھے نماز جائز ہوگی جبکہ ظاہر حال اس کی تکذیب نہ کرتا ہو ، اور نابالغ ہمارے ائمہ کے نزدیک بالغ کا امام نہیں ہوسکتا کہ وہ متنفل ہے یہ مفترض ، اور نفل متضمن فرض نہیں ہوسکتا۔ حدیث مذکور کو صحیح ہے اور جھوٹا کہنا جہل یا عناد، اور اس کے جوابات فتح القدیر و عینی شرح ہدایہ میں مذکور ہیں۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ نمبر ۸۱۵: از شہر محلہ قراولان مسئولہ عبدالکریم خیاط قادری رضوی ۲۳ محرم الحرام ۱۳۳۹ھ کیا ارشاد ہے شریعت مقدسہ کا اس مسئلہ میں کہ زید بد مذہبوں کے یہاں علانیہ کھاتا ہے بد مذہبوں سے میل جول رکھتا ہے مگر خود سُنی ہے اس کے پیچھے نماز کیسی اور اسکے تراویح سننا کیسا ہے؟ بینوا توجروا۔

الجواب: اس صورت میں وہ فاسق معلن ہے اور امامت کے لائق نہیں۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ نمبر ۸۱۶: از شہر محلہ ذخیرہ مسئولہ منشی شوکت علی صاحب محرر چونگی ۲۴ محرم ۱۳۳۹ھ کیا حکم ہے اہل شریعت کا اس مسئلہ میں کہ امامت کن کن شخصوں کی جائز ہے اور کن کن کی ناجائز اور مکروہ، اور سب سے بہتر امامت کس شخص کی ہے؟

الجواب: جو قرات غلط پڑھتا ہو جس سے معنی مفسد ہوں وضو یا غسل صحیح نہ کرتا ہو یا ضروریات دین سے کسی چیز کا منکر ہو جیسے وہابی، رافضی، غیر مقلد، نیچری، قادیانی، چکڑالوی و غیرہم یا وہ جوان میں سے کسی کے عقائد پر مطلع ہو کر اس کے...

Fatawa Razawiyya, Volume Six

If someone doubts their disbelief (kufr) or hesitates to call them a disbeliever, the prayer (Salah) behind them is null and void. And those whose deviation has not reached the level of disbelief, such as the 'Tafdhiliya' (who consider Hazrat Ali superior to the first two caliphs, may Allah be pleased with them) or 'Tafsiqiya' (who speak ill of some companions like Amir Muawiya, Amr bin al-Aas, Abu Musa al-Ash'ari, and Mughira bin Shu'bah, may Allah be pleased with them)—performing prayer behind them is strictly forbidden (Makruh-e-Tahrimi). It is prohibited (Haram) to appoint them as Imams, and praying behind them is a sin. Any prayers performed behind them must be repeated. Similar to them is the 'Fasiq-e-Mu'lan' (open sinner), for example, one who shaves their beard or keeps it very short (Khaskhashi) or trims it below the sharia limit, or keeps long hair like women below the shoulders, especially those who braid it or use hairpieces (mobaf), or those who wear silk clothes or heavily embroidered (mughraq) caps, or a gold ring weighing more than four and a half masha (approx. 4.37g), or multiple rings of different colors, or even two rings of one stone if their combined weight is less than four and a half masha, or one who consumes usury (Riba) or watches dances. Praying behind them is also Makruh-e-Tahrimi. As for those who are not 'Fasiq-e-Mu'lan' or who commit mistakes in Quranic recitation that do not invalidate the prayer, or those who are blind, ignorant, a slave, born out of wedlock, a handsome beardless youth, or someone with leprosy or vitiligo that causes people to feel aversion or hatred—praying behind such people is 'Makruh-e-Tanzihi' (disliked but not sinful). It is better not to pray behind them, but if one does, there is no harm. However, if people of this latter group possess the most knowledge of the rules of prayer and purity among those present, then their leadership (Imamat) is preferable. This is unlike the first two categories; even if such an individual is a profound scholar, the ruling of dislike (karahat) remains. But in places where Friday (Jumu'ah) or Eid prayers are held in only one location and the Imam is an innovator (bid'ati) or an open sinner, and no other Imam is available, then the Jumu'ah and Eid prayers may be performed behind them. This is contrary to the very first category (like Deobandis etc.); neither is their prayer valid nor is prayer valid behind them. In short, if only such a person is available as an Imam for Jumu'ah or Eid and no other Muslim can be found for leadership, then forgoing Jumu'ah and Eid is mandatory. One should pray Zuhr instead of Jumu'ah, and there is no substitute for Eid prayers. An Imam should be one who is a Sunni in belief, correct in purity, correct in recitation, knowledgeable about the rules of prayer

and purity, not a 'fasiq' (transgressor), and free from any physical or spiritual defect that causes people to feel aversion. This is the concise answer to this issue; a detailed explanation would lead to lengthy discourse. And Allah knows best what is correct.

Issue No. 81: From Katharia Mohanpur, District Bareilly, questioned by Hafiz Ibrahim Khan, 28th Muharram al-Haram 1339 AH.

What do the scholars of religion say regarding the issue: if the Imam's prayer mat (musalla) is placed in a doorway, which doorway should it be? If it is placed in the left doorway, is it permissible or not?

The Answer: The Sunnah is for the Imam to stand in the middle of the mosque. If, for example, the inner part of the mosque is small and the outer part is more spacious towards the south or north, then when praying inside, the Imam should stand in the middle of that section. When praying outside, he should stand in the middle of that section, whether it aligns with any doorway or is outside of all the doorways. And Allah Almighty knows best.

फतावा रज़विया, जिल्द छठा

यदि कोई उनके कुफ्र (अविश्वास) में संदेह करता है या उन्हें काफिर कहने में हिचकिचाता है, तो उनके पीछे नमाज़ पढ़ना पूरी तरह से बातिल (अमान्य) है। और जिसकी गुमराहियत कुफ्र की हद तक नहीं पहुँची हो, जैसे 'तफ्ज़ीलिया' (जो हज़रत अली को पहले दो खलीफाओं से श्रेष्ठ बताते हैं, अल्लाह उन पर प्रसन्न हो) या 'तफ्सीकिया' (जो कुछ सहाबा जैसे अमीर मुआविया, अम्र बिन अल-आस, अबू मूसा अल-अशअरी और मुगीरा बिन शुबा के बारे में बुरा कहते हैं) - उनके पीछे नमाज़ पढ़ना सख्त मकरूह-ए-तहरीमी है। उन्हें इमाम बनाना हराम है, उनके पीछे नमाज़ पढ़ना गुनाह है और जितनी भी नमाज़ें उनके पीछे पढ़ी गई हों, उन्हें दोहराना वाजिब है। उनके समान ही 'फासिक़-ए-मुअलन' (खुला पापी) है, उदाहरण के लिए दाढ़ी मुंडवाने वाला या उसे बहुत छोटा (खशखशी) रखने वाला या शरीयत की सीमा से कम छोटा करवाने वाला, या महिलाओं की तरह कंधों से नीचे लंबे बाल रखने वाला, विशेष रूप से वे जो चोटी गूंथते हैं और उसमें बाल के टुकड़े (मोबाफ) डालते हैं, या रेशमी कपड़े पहनने वाला या कढ़ी हुई (मुग्रक़) टोपी पहनने वाला, या साढ़े चार माशा (लगभग 4.37 ग्राम) से अधिक वजन की अंगूठी पहनने वाला, या कई रंगों की अंगूठियां पहनने वाला, या एक ही पत्थर की दो अंगूठियां पहनने वाला भले ही उनका कुल वजन साढ़े चार माशा से कम हो, या सूदखोर (ब्याज खाने वाला) या नाच-गाना देखने वाला। उनके पीछे भी नमाज़ पढ़ना मकरूह-ए-तहरीमी है। और जो 'फासिक़-ए-मुअलन' नहीं है, या जो कुरान पढ़ने में ऐसी गलतियां करता है जिससे नमाज़ बातिल नहीं होती, या जो अंधा, अनपढ़, दास, नाजायज औलाद, सुंदर किशोर (अमर्ड), या कुष्ठ या सफेद दाग (बरस) वाला हो जिससे लोगों को घृणा या नफरत हो - ऐसे लोगों के पीछे नमाज़ पढ़ना 'मकरूह-ए-तन्ज़ीही' है, जिसका अर्थ है कि न पढ़ना बेहतर है, लेकिन अगर पढ़ ली जाए तो कोई हर्ज नहीं है। लेकिन अगर इसी बाद वाली श्रेणी के लोग उपस्थित लोगों में नमाज़ और पाकीज़गी (तहारत) के नियमों का सबसे अधिक ज्ञान रखते हों, तो उनकी इमामत ही बेहतर है। यह पहली दो श्रेणियों के विपरीत है; भले ही वह व्यक्ति बहुत बड़ा विद्वान क्यों न हो, कराहत (नापसंदगी) का वही नियम लागू होगा। लेकिन जहाँ जुमा या ईद की नमाज़ केवल एक ही स्थान पर होती हो और वहाँ का इमाम बिदअती या खुला पापी (फासिक़-ए-मुअलन) हो और दूसरा इमाम उपलब्ध न हो, तो वहाँ उनके पीछे जुमा और ईद की नमाज़ पढ़ लेनी चाहिए। यह पहली श्रेणी (जैसे देवबंदी आदि) के विपरीत है; न तो उनकी नमाज़ मान्य है और न ही उनके पीछे नमाज़ मान्य है। संक्षेप में, यदि जुमा या ईद के लिए केवल वही इमाम हो और इमामत के लिए कोई अन्य मुसलमान न मिल सके तो जुमा

और ईद को छोड़ना अनिवार्य है। जुमा के बदले ज़ुहर की नमाज़ पढ़ें, और ईद की नमाज़ का कोई विकल्प नहीं है। इमाम उसे बनाया जाना चाहिए जो सुन्नी अकीदे वाला हो, पाकीज़गी (तहारत) का सही पालन करने वाला हो, जिसका कुरान पाठ सही हो, जो नमाज़ और पाकीज़गी के नियमों का ज्ञाता हो, फासिक़ न हो और उसमें कोई ऐसा शारीरिक या आध्यात्मिक दोष न हो जिससे लोग घृणा करें। यह इस मसले का संक्षिप्त उत्तर है, विस्तार से विवरण लंबा हो जाएगा। और अल्लाह ही बेहतर जानता है।

मसला नंबर 81: कटहरिया मोहनपुर, जिला बरेली से, मुस्तौ़ला (पूछने वाले) हाफिज इब्राहिम खान, 28 मुहर्रम अल-हराम 1339 हिजरी।

दीन के विद्वान इस मसले में क्या कहते हैं कि इमामत का मुसल्ला अगर दरवाजे में रखा जाए तो कौन से दरवाजे में रखा जाए? अगर बाएं दरवाजे में रखा जाए तो यह जायज़ है या नहीं?

जवाब: सुन्नत यह है कि इमाम मस्जिद के बीच में खड़ा हो। उदाहरण के लिए, यदि अंदर की मस्जिद छोटी हो और बाहर की मस्जिद दक्षिण या उत्तर की ओर अधिक विस्तृत हो, तो जब अंदर नमाज़ पढ़ाएँ तो उस हिस्से के बीच में इमाम खड़ा हो, और जब बाहर पढ़ाएँ तो उस हिस्से के बीच में खड़ा हो, चाहे वह किसी दरवाजे के सामने हो या सभी दरवाजों से बाहर हो जाए। वल्लाहु तआला आलम (अल्लाह ही बेहतर जानता है)।

کفر میں شک کرے یا اسکے کافر کہنے میں تامل کرے اُن کے پیچھے نماز محض باطل ہے، اور جس کی گمراہی حدِ کفر تک نہ پہنچی ہو جیسے تفضیلیہ : مولیٰ علی کو شیخین سے افضل بتاتے ہیں رضی اللہ تعالیٰ عنہم یا تفسیقیہ کہ بعض صحابہ کرام مثل امیر معاویہ و عمرو بن عاص وابوموسیٰ اشعری و مغیرہ بن شعبہ رضی اللہ تعالیٰ عنہم کو بُرا کہتے ہیں ان کے پیچھے نماز بکراہتِ شدیدہ تحریمیہ مکروہ ہے کہ انہیں امام بنانا حرام ان کے پیچھے نماز پڑھنی گناہ اور جتنی پڑھی ہوں سب کا پھیرنا واجب، اور انہیں کے قریب ہے فاسقِ معلن مثلاً داڑھی منڈایا خضخاشی رکھنے والا یا کتروا کر حدِ شرع سے کم کرنے والا یا کندھوں سے نیچے عورتوں کے سے بال رکھنے والا خصوصاً وہ جو چوٹی گوندھوائے اور اس میں موباف ڈالے یا ریشمی کپڑے یا مغرق ٹوپی یا ساڑھے چار ماشے زائد کی انگوٹھی یا کئی رنگ کی انگوٹھی یا ایک نگ کی دو ۱۲ انگوٹھی اگرچہ مل کر ساڑھے چار ماشے سے کم وزن کی ہوں یا سُود خور یا ناچ دیکھنے والا اُن کے پیچھے بھی نماز مکروہِ تحریمی ہے اور جو فاسقِ معلن نہیں یا قرآن میں وہ غلطیاں کرتا ہے جن سے نماز فاسد نہیں ہوتی یا نابینا یا جاہل یا غلام یا ولد الزنا یا خوبصورت امرد یا جذامی یا برص والا جس سے لوگ کراہت و نفرت کرتے ہوں اس قسم کے لوگوں کے پیچھے نماز مکروہِ تنزیہی ہے کہ پڑھنی خلافِ اولیٰ اور پڑھ لیں تو کوئی حرج نہیں، اور اگر یہی قسم اخیر کے لوگ حاضرین میں سب سے زائد مسائلِ نماز و طہارت کا علم رکھتے ہوں تو انہیں کی امامت اولیٰ ہے۔ بخلاف ان سے پہلی دو قسم والوں سے کہ اگرچہ عالمِ متبحر ہو وہی حکم کراہت رکھتا ہے مگر جہاں جمعہ یا عیدین ایک ہی جگہ ہوتے ہوں اور ان کا امام بدعتی یا فاسقِ معلن ہے اور دوسرا امام نہ مل سکتا ہو وہاں ان کے پیچھے جمعہ و عیدین پڑھ لئے جائیں۔ بخلاف قسم اول مثل دیوبندی

وغیرہ ہم، نہ ان کی نماز نماز ہے نہ اُن کے پیچھے نماز نماز، الغرض وہی جمعہ یا عیدین کا امام ہو اور کوئی مسلمان امامت کے لئے نہ مل سکے تو جمعہ و عیدین کا ترک فرض ہے جمعہ کے بدلے ظہر پڑھیں اور عیدین کا کچھ عوض نہیں، امام اُسے کیا جائے جو سُنی العقیدہ صحیح الطھارۃ صحیح القراۃ مسائلِ نماز و طہارت کا عالم غیر فاسق ہو نہ اُس میں کوئی ایسا جسمانی یا روحانی عیب ہو جس سے لوگوں کو تنفر ہو یہ ہے اس مسئلہ کا اجمالی جواب اور تفصیل موجبِ تطویل واطناب واللہ تعالیٰ اعلم بالصواب۔

مسئلہ نمبر ۸۱: از کٹہریا موہن پور ضلع بریلی مسئولہ حافظ ابراہیم خاں ۲۸ محرم الحرام ۱۳۳۹ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ امامت کا مصلیٰ اگر در میں ڈالا جائے تو کون سے در میں ڈالا جائے اگر بائیں در میں ڈالا جائے تو جائز ہے یا نہیں؟

الجواب: سنّت یہ ہے کہ امام مسجد کے وسط میں کھڑا ہو، اگر مثلاً اندر کی مسجد چھوٹی ہو اور باہر کی مسجد جنوب یا شمال کی طرف زیادہ وسیع ہو تو جب اندر پڑھائیں اُس حصہ کے وسط میں امام کھڑا ہو اور جب باہر پڑھائیں تو اس حصہ کے وسط میں خواہ وہ کسی در کے مقابل ہو یا سب دروں سے باہر ہو جائے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

Fatawa-e-Razviya, Volume 6

Fatwa No. 818: From Old City, Mohalla Lodhi Tola, Questioned by Habib Ullah Khan Sahib, 29 Muharram al-Haram 1339 AH. What do the scholars of religion say regarding a person who expresses false religious issues; is it permissible to pray behind him or not? Answer: If he intentionally gave a false fatwa, then he is not fit for imamate as he has committed a grave sin. If he interfered in fatwa matters out of ignorance once or twice, he should be advised. If he repents and refrains in the future, then there is no harm in his leading the prayer. But if it is a habit and he does not stop, then he is a 'Fasiq' (transgressor) and not worthy of imamate. And Allah Almighty knows best.

Fatwa No. 819: From the city, Mohalla Bhor, Questioned by Hashmat Ali, 21 Safar 1339 AH. What do the scholars of religion say regarding Zaid who prays behind Wahhabis; is it permissible for the people of Ahl-e-Sunnat wal Jama'at to pray behind Zaid or not? Explain and you shall be rewarded. Answer: One who prays behind a Wahhabi knowing him to be a Wahhabi, if he considers the Wahhabi fit for imamate, then he himself is a Wahhabi and his prayer behind him is absolutely null and void. Otherwise, he is one who invalidates his own prayer and is at least a public 'Fasiq'. Making him an Imam is a sin, and the prayer behind him is 'Makruh-e-Tahrimi' (prohibitively disliked), meaning it is a sin to perform it and obligatory to repeat it. And Allah Almighty knows best.

Fatwa No. 820: Basharat Ganj, District Bareilly, Questioned by Haji Ghani Raza Khan Sahib, 28 Safar 1339 AH. What do the scholars of religion say regarding whether a man who shaves his beard should join the first row or the back row in a congregation? Zaid says there is no prohibition in Sharia anywhere, and a man who shaves his beard can also lead the congregation because praying behind a 'Fasiq' is also permissible. Please also state how long an Imam's beard should be, and is there any difference in the prayer of a man who shaves his beard when he prays alone? Answer: Shaving the beard is 'fisq' (sin), and praying without repentance while being involved in sin causes the prayer to be disliked ('karahat'), just like wearing silk clothes or wearing only trousers (pajamas) without a shirt. And a man who shaves his beard is a public 'Fasiq'; the prayer being valid only means the obligation is fulfilled, otherwise he will be a sinner. Making him an Imam and praying behind him is 'Makruh-e-Tahrimi', performing it is a sin and repeating it is mandatory. Furthermore, if he comes to the first row, there is no command to remove him. And Allah Almighty knows best.

Fatwa No. 821: What do the scholars of religion and muftis of the solid Sharia say regarding a person who also abandons the congregation and demands a wage or salary in the form of donations from Muslims for leading the five daily prayers; is Friday prayer behind him permissible or not? And he is of the grave...

फ़तावा-ए-रज़विया, छठा खंड

मसला नंबर 818: शहर कोहना, मोहल्ला लोधी टोला, मसाउला हबीब उल्लाह खां साहब, 29 मुहर्रम उल हराम 1339 हिजरी। क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन इस मसले में कि जो शख़्स झूठे मसले ज़ाहिर करे, उसके पीछे नमाज़ जाइज़ है या नहीं? जवाब: अगर जानबूझकर (क़स्दन) झूठा फ़तवा दिया तो वह इमामत के क़ाबिल नहीं क्योंकि उसने संगीन गुनाह (सख़्त कबीरा) किया है। और अगर अनजाने में एक-दो बार फ़तवे के मामले में दख़ल दिया, तो उसे समझाया जाए। अगर वह तौबा कर ले और भविष्य में इससे बाज़ रहे, तो उसकी इमामत में कोई हर्ज नहीं। लेकिन अगर यह उसकी आदत है और वह इसे नहीं छोड़ता, तो वह 'फ़ासिक़' है और इमामत के लायक़ नहीं। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 819: शहर मोहल्ला भोर, मसाउला हशमत अली, 21 सफ़र 1339 हिजरी। क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन इस मसले में कि ज़ैद वहाबियों के पीछे नमाज़ पढ़ता है; क्या अहल-ए-सुन्नत व जमाअत के लोगों के लिए ज़ैद के पीछे नमाज़ पढ़ना जाइज़ है या नहीं? बयान फ़रमाएँ और पुण्य पाएँ। जवाब: जो शख़्स वहाबी को वहाबी जानकर उसके पीछे नमाज़ पढ़े, अगर वह उस वहाबी को इमामत के क़ाबिल मानता है, तो वह ख़ुद वहाबी है और उसके पीछे उसकी नमाज़ पूरी तरह बातिल (अमान्य) है। अन्यथा, वह अपनी नमाज़ को बेकार करने वाला और कम से कम एक सार्वजनिक 'फ़ासिक़' (फ़ासिक़-ए-मुअ़लिन) है। उसे इमाम बनाना गुनाह है और उसके पीछे नमाज़ 'मक़रूहे-तहरीमी' है, यानी उसे पढ़ना गुनाह है और दोहराना वाजिब (अनिवार्य) है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 820: बशारत गंज, ज़िला बरेली, मसाउला हाजी ग़नी रज़ा ख़ान साहब, 28 सफ़र 1339 हिजरी। क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन इस मसले में कि दाढ़ी मुंडाने वाले को जमाअत में पहली सफ़ में शामिल होना चाहिए या पिछली सफ़ में? ज़ैद कहता है कि इसकी मनाही शरीयत में कहीं नहीं है और दाढ़ी मुंडाने वाला जमाअत भी पढ़ा सकता है क्योंकि फ़ासिक़ के पीछे भी नमाज़ जाइज़ है। यह भी तहरीर फ़रमाएँ कि इमाम की दाढ़ी कितनी बड़ी होनी चाहिए और क्या दाढ़ी मुंडाने वाले की नमाज़ अकेले पढ़ने में कोई अंतर आता है या नहीं? जवाब: दाढ़ी मुंडाना 'फ़िस्क़' (पाप) है और बिना तौबा किए पाप में लिप्त रहकर नमाज़ पढ़ना नमाज़ में कराहत (नापसंदगी) का कारण है, जैसे रेशमी कपड़े पहनना या बिना कुर्ते के सिर्फ़ पाजामा पहनना। दाढ़ी मुंडाने वाला सार्वजनिक 'फ़ासिक़' है; नमाज़ हो जाने का अर्थ सिर्फ़ इतना है कि फ़र्ज़ अदा हो जाएगा, अन्यथा वह गुनहगार होगा। उसे

इमाम बनाना और उसके पीछे नमाज़ पढ़ना 'मक़रूहे-तहरीमी' है, इसे पढ़ना गुनाह है और दोहराना वाजिब है। इसके अलावा, अगर वह पहली सफ़ में आ जाए, तो उसे वहाँ से हटाने का हुक्म नहीं है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 821: क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन और मुफ़्तियान-ए-शरअ-ए-मतीन इस मसले में कि जो शख़्स जमाअत छोड़ने वाला भी हो और पाँच वक़्त की नमाज़ पढ़ाने के लिए मुसलमानों से चंदे के तौर पर मज़दूरी या वेतन की माँग करे; क्या उसके पीछे जुमे की नमाज़ जाइज़ है या नहीं? और वह क़ब्र की...

فتاویٰ رضویہ، جلد ششم

مسئلہ نمبر ۸۱۸: شہر کہنہ محلہ لودھی ٹولہ مسئولہ حبیب اللہ خاں صاحب ۲۹ محرم الحرام ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ جو شخص جھوٹے مسئلے ظاہر کرے اس کے پیچھے نماز جائز ہے یا نہیں؟ الجواب: اگر قصداً جھوٹا فتویٰ دیا تو قابل امامت نہیں کہ سخت کبیرہ کا مرتکب ہوا اور جہالت سے ایک آدھ بار فتویٰ میں دخل دیا اسے سمجھایا جائے تائب ہو اور آئندہ باز رہے تو اس کی امامت میں حرج نہیں اور اگر عادی ہے اور نہیں چھوڑتا تو فاسق ہے اور لائق امامت نہیں۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۸۱۹: از شہر محلہ بھوڑ مسئولہ حشمت علی ۲۱ صفر ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید وہابیہ کے پیچھے نماز پڑھتا ہے اہل سنت و جماعت کا زید کے پیچھے نماز پڑھنا جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔ الجواب: جو وہابی کو وہابی جان کر اس کے پیچھے نماز پڑھے اگر وہابی کو قابل امامت جانتا ہے تو خود وہابی ہے اور اس کے پیچھے نماز باطل محض، ورنہ اپنی نماز کا باطل کرنے والا اور کم از کم فاسق معلن ہے۔ اسے امام بنانا گناہ ہے اور اس کے پیچھے نماز مکروہ تحریمی کہ پڑھنی گناہ اور پھیرنی واجب۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۸۲۰: بشارت گنج ضلع بریلی مسئولہ حاجی غنی رضا خاں صاحب ۲۸ صفر ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ داڑھی منڈانے والے کو اول صف میں شریک ہونا چاہیے یا پچھلی صف میں۔ زید کہتا ہے کہ اس کی ممانعت کسی جگہ شرع میں نہیں ہے اور داڑھی منڈانے والا جماعت بھی پڑھا سکتا ہے کیونکہ نماز فاسق کے پیچھے بھی جائز ہے، اور یہ بھی تحریر فرمائیے گا کہ امام کی داڑی کتنی بڑی ہونی چاہیے اور داڑی منڈانے والے کی نماز میں تنہا پڑھنے میں کچھ فرق آتا ہے کہ نہیں؟ الجواب: داڑھی منڈانا فسق ہے اور فسق سے متلبس ہو کر بلا

توبہ نماز پڑھنا باعث کراہت نماز ہے جیسے ریشمی کپڑے پہن کر یا صرف پاجامہ پہن کر، اور داڑھی منڈانے والا فاسق معلن ہے، نماز ہو جانا بایں معنی ہے، کہ فرض ساقط ہو جائے گا ورنہ گنہگار ہو گا اسے امام بنانا اور اس کے پیچھے نماز مکروہ تحریمی کہ پڑھنی گناہ اور پھیرنی واجب، باقی اگر وہ صف اول میں آئے تو اسے ہٹانے کا حکم نہیں۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۸۲۱: کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین اس مسئلہ میں جو شخص تارک الجماعت بھی ہو اور نماز پنجوقتہ پڑھانے کی اجرت یا تنخواہ بطور چندہ مسلمانوں سے طلب کرے اس کے پیچھے نماز جمعہ جائز ہے یا نہیں، اور وہ قبر کی

Fatawa Rizvia Volume Six ...also does a job.

Answer: From the questioner's statement, it is clear that this person, despite having the ability, does not join the congregation at all and makes his coming conditional upon being paid a salary to lead the prayer. He also works by reciting the Holy Quran on graves. Working for the recitation of the Holy Quran is unlawful and forbidden, as established by Allama Shami in 'Ijarah' of 'Radd al-Muhtar'. (As Allama Shami has researched in the chapter of Ijarah in Radd al-Muhtar. -T) Although working for the imamate is now permissible as stated in the basic texts (As stated in the texts. -T), however, someone who stays away from the congregation in such a way that he doesn't come unless paid, such a person who abandons the congregation despite having the ability is undoubtedly a transgressor (fasiq) whose testimony is rejected. This has been explicitly stated by senior scholars and attested to by Hadith and traditions (Senior scholars have stated this explicitly and Hadith and traditions bear witness to this. -T). Praying behind him is Makruh Tahrimi (strongly disliked, close to forbidden), as established by the master researcher Ibrahim al-Halabi in 'Ghunyah Sharh al-Munyah' (As the learned researcher Ibrahim Halabi has researched in Ghunyah Sharh al-Munyah. -T). In places where Friday prayers are held in multiple mosques, one should never offer Friday prayers behind him, because it is possible to move from there [to another mosque], as mentioned in 'Fath al-Qadir' and others (Because it is possible to move from there. It is mentioned as such in Fath al-Qadir. -T). Appointing such a person as an Imam is a sin, as derived from 'Fatawa al-Hujjah' (As derived from Fatawa al-Hujjah. -T). And Allah Almighty knows best.

Problem No. 822: From Pilibhit, Mohalla Bhainsa Bhar, house of Abdul Karim Sahib Rangrez, sent by Abdul Hakim Sahib, 3rd Rabi al-Akhir 1320 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: A person suffers from urinary drops, but it doesn't happen all the time. When he urinates, it continues to drop for a while after. Cleaning with a clay clod doesn't dry it, but after cleaning with water and wearing a loincloth for half an hour, it dries up. Then, until he urinates again, it doesn't come. However, sometimes on the second or third day after urinating, it comes at other times too, but not every day. Is it correct to offer obligatory prayers behind such a person or not? And this person is also a Hafiz of the Quran, is Taraweeh correct behind him or not?

Answer: Offering obligatory prayers, Taraweeh, etc., behind him is correct. It is in 'Durr al-Mukhtar': "It is mandatory for the excused person to stop or minimize his excuse to the best of his ability."

1. Fath al-Qadir, Chapter on Imamate, published by Maktaba Nooria Rizvia Sukkur, 1/304. Page 628 of 736

फ़तावा रिज़विया छठा खंड ...नौकरी भी करता है।

उत्तर: प्रशनकर्ता के कथन से स्पष्ट है कि यह व्यक्ति, सामर्थ्य होने के बावजूद, बिल्कुल भी जमात (सामूहिक नमाज़) में नहीं आता है और अपना आना इस शर्त पर निर्भर करता है कि 'अगर मुझे वेतन दोगे तो मैं इमामत (नमाज़ का नेतृत्व) करूँगा'। वह कब्रों पर क़ुरान मजीद पढ़ने का काम भी करता है। क़ुरान मजीद की तिलावत (पाठ) के लिए नौकरी करना अवैध और हराम है, जैसा कि अल्लामा शामी ने 'रद्द अल-मुह्तार' के'इजारा' अध्याय में प्रमाणित किया है। (जैसा कि अल्लामा शामी ने रद्द अल-मुह्तार के अध्याय इजारा में इसकी जांच की है। -त) हालांकि इमामत के लिए नौकरी अब जायज़ है जैसा कि मूल ग्रंथों (मुतून) में स्पष्ट किया गया है (जैसा कि मुतून में इस पर स्पष्टीकरण है। -त), लेकिन इस तरह कि नौकरी न होने पर जमात में ही न आए, ऐसा जमात छोड़ने वाला व्यक्ति सामर्थ्य होने के बावजूद निश्चित रूप से 'फ़ासिक़' (पापी) और 'मर्दुद अल-शहादा' (जिसकी गवाही स्वीकार न हो) है। बड़े विद्वानों ने इस पर स्पष्ट रूप से लिखा है और हदीस व परंपराएं इसकी गवाह हैं (इस पर वरिष्ठ विद्वानों ने स्पष्टीकरण दिया है और हदीस व आसार इस पर गवाह हैं। -त)। उसके पीछे नमाज़ पढ़ना 'मकरूह-ए-तहरीमी' (अत्यंत नापसंद, हराम के करीब) है, जैसा कि शोधकर्ता मौला इब्राहिम अल-हलबी ने 'गुनिया शराह अल-मुनिया' में सिद्ध किया है (जैसा कि फाजिल शोधकर्ता इब्राहिम हलबी ने गुनिया शराह मुनिया में शोध किया है। -त)। जहाँ जुमे की नमाज़ कई मस्जिदों में होती है, वहाँ उसके पीछे जुमे की नमाज़ कभी न पढ़ी जाए, क्योंकि वहां से दूसरी जगह जाना संभव है, जैसा कि 'फ़तह अल-क़दीर' आदि में उल्लेख है (क्योंकि वहां से स्थानांतरित होना संभव है। फ़तह अल-क़दीर में ऐसा ही है। -त)। ऐसे व्यक्ति को इमाम बनाना पाप है, जैसा कि 'फ़तावा अल-हुज्जाह' से प्राप्त होता है (जैसा कि फ़तावा अल-हुज्जाह से लाभ उठाया गया है। -त)। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला नंबर ८२२: पीलीभीत, मोहल्ला भैंसा भार, अब्दुल करीम साहब रंगरेज़ के मकान से, अब्दुल हकीम साहब द्वारा प्रेषित, ३ रबी-उल-आख़िर १३२० हिजरी। धर्म के विद्वान इस विषय में क्या कहते हैं: एक व्यक्ति को पेशाब की बूंदों की बीमारी है, लेकिन यह हर समय नहीं होता। जब वह पेशाब करता है, तो उसके बाद लगातार बूंदें आती रहती हैं और मिट्टी के ढेले से साफ़ करने पर नहीं सूखता, लेकिन पानी से साफ़ करके आधा घंटा लंगोट बाँध लेने से सूख जाता है। फिर जब तक दोबारा पेशाब नहीं करता, तब तक बूंदें नहीं आतीं। हालांकि, कभी-कभी पेशाब करने के दूसरे या तीसरे दिन, अन्य समय पर भी बूंदें आ जाती हैं, पर रोज़ाना नहीं आतीं। क्या ऐसे व्यक्ति के पीछे फ़र्ज़

नमाज़ पढ़ना सही है या नहीं? और यह व्यक्ति क़ुरान का हाफ़िज़ भी है, क्या उसके पीछे तरावीह पढ़ना सही है या नहीं?

उत्तर: उसके पीछे फ़र्ज़, तरावीह आदि सभी नमाज़ें सही हैं। 'दुर्र अल-मुह्तार' में है: "मज़ूर (मजबूर/बीमार) व्यक्ति के लिए अपनी सामर्थ्य के अनुसार अपनी बीमारी को रोकना या कम करना अनिवार्य है।"

1. फ़तह अल-क़दीर, इमामत का अध्याय, मकतबा नूरिया रिज़विया सुक्कुर द्वारा प्रकाशित १/३०४। पेज ६२८ ऑफ़ ७३६

فتاوی رضویہ جلد ششم نوکری بھی کرتا ہے۔

الجواب: بیان سائل سے واضح ہوا کہ یہ شخص باوصف قدرت اصلا جماعت میں نہیں آتا اور اپنا آنا اس شرط پر مشروط کرتا ہے کہ مجھے تنخواہ دو تو امامت کروں، اور قبر پر قرآن مجید پڑھنے کی نوکری کیا کرتا ہے، تلاوت قرآن مجید کی نوکری تو ناجائز حرام ہے کما حققہ العلامۃ الشامی فی اجارۃ ردالمحتار (جیسا کہ علامہ شامی نے ردالمحتار کے باب الاجارہ میں اس کی تحقیق کی ہے۔ ت) اور امامت کی نوکری اگر چہ اب جائز ہے کما صرح بہ فی المتون (جیسا کہ متون میں اس پر تصریح ہے۔ ت) مگر اس طرح کہ نوکری نہ ہو جماعت ہی کو نہ آئے ایسا تارک جماعت باوصف قدرت بیشک فاسق مردود الشہادۃ ہے نص علیہ العلماء الکبار وشہدت بھا الحدیث والاثار (اس پر اکابر علما نے تصریح کی اور احادیث و آثار اس پر شاہد ہیں۔ ت) اس کے پیچھے نماز مکروہ تحریمی قریب بحرام ہے کما حققہ المولی المحقق ابراہیم الحلبی فی الغنیۃ شرح المنیۃ (جیسا کہ فاضل محقق ابراہیم حلبی نے غنیہ شرح منیہ میں تحقیق کی ہے۔ ت) جہاں کہ جمعہ متعدد مساجد میں ہوتا ہے نماز جمعہ بھی ہر گز نہ پڑھی جائے ، لانہ بسبیل من التحول، کما فی فتح القدیر و غیرہ (کیونکہ وہاں سے منتقل ہونا ممکن ہے۔ فتح القدیر میں ایسا ہی ہے۔ ت) ایسے شخص کو امام بنانا گناہ ہے کما افادہ فی فتاوی الحجۃ (جیسا کہ فتاوی الحجۃ سے مستفاد ہے۔ ت) واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ نمبر ۸۲۲: از پیلی بھیت محلہ بھینسا بھاڑ مکان عبدالکریم صاحب رنگریز مرسلہ عبدالحکیم صاحب ۳ ربیع الآخر شریف ۱۳۲۰ھ علمائے دین اس مسئلہ میں کیا فرماتے ہیں ایک شخص کو قطرہ کا عارضہ ہے مگر ہر وقت نہیں آتا جس وقت پیشاب پھرتا ہے اس کے بعد میں برابر آتا رہتا ہے اور ڈھیلے سے استنجا نہیں سوکھتا مگر پانی سے استنجا کر کے نصف گھنٹہ لنگوٹ باندھ لیتا ہے سوکھ جاتا ہے پھر جب تک پیشاب نہیں پھرتا ہے نہیں آتا ہے مگر کبھی دوسرے تیسرے دن

پیشاب پھرے، غیر وقت بھی آ جاتا ہے، ہر روز نہیں آتا ہے ایسے شخص کے پیچھے فرض پڑھنا درست ہے یا نہیں اور یہ شخص حافظ قرآن بھی ہے اس کے پیچھے تراویح بھی درست ہے یا نہیں۔

الجواب: اس کے پیچھے فرض و تراویح و غیر ہا سب درست ہیں۔ در مختار میں ہے: یجب رد عذرہ او تقلیلہ بقدر قدرتہ (معذور پر عذر کا روکنا یا کم کر دینا اس کی اپنی قدرت کے موافق لازم ہے)

۱ فتح القدیر باب الامامۃ مطبوعہ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۱/ ۳۰۴ Page 628 of 736

Fatawa Razvia Volume 6

...even if by praying with signs and by its removal, the excuse does not remain.1 - And Allah Almighty knows best. It is obligatory according to [the text], even if the excuse can be ended by praying through signs. If the excuse is removed, that person will no longer be considered excused. (T) And Allah Almighty knows best.

Issue No. 823: What do the scholars of Islam say about this matter: if the Imam stands on a prayer mat (Musalla) and the follower stands without a mat, i.e., just on the floor of the courtyard, is the prayer disliked (Makruh) in this case or not? Explain and be rewarded.

The Answer: There is no dislike in the prayer because its prohibition is not found anywhere in Hadith or Fiqh. Neither is honoring the Imam prohibited by Sharia, nor does this fall under the category of 'standing alone on a platform'. It is stated in Al-Bahr al-Ra'iq: "For dislike, there must be a specific evidence."2 (Specific evidence is necessary for a thing to be considered Makruh. -T). It is stated in Minh al-Ghaffar: "Dislike is not established by such things as there must be specific evidence for it."3 (Dislike is not proven from such a thing because a specific evidence is required for it. -T). However, if the Imam desires such a distinction out of pride and arrogance, then this intention of his is a severe sin, forbidden, and a major sin. Allah Almighty says: "Is there not in Hell an abode for the arrogant?"4 May Allah, glorified and exalted is He, protect us through His grace and perfect generosity. (T) May Allah grant us all refuge from this through His grace and kindness. Amen. (T) Amen. And Allah Almighty knows best.

Issue No. 824 to 826: From Sarwar town, Kishangarh area, near Ajmer, Mosque of the Hoshiyars, asked by Mr. Qazi Akbar Sahib, 20 Dhu al-Qi'dah 1330 AH. What do the scholars of religion and jurists of the firm Sharia say regarding these matters: (1) Is our prayer valid behind non-Muqallids (those who don't follow a specific school of jurisprudence) or not? (2) Is it permissible to let non-Muqallids enter our mosques of Muqallids or not?

---

1 Durr-e-Mukhtar, Chapter on Menstruation, published by Mujtabai Delhi, 1/53. 2 Al-Bahr al-Ra'iq, Chapter on the Two Eids, published by H.M. Saeed Company Karachi, 2/163. 3 Radd al-Muhtar, referring to Minh al-Ghaffar, Chapter on the Two Eids, published by Mustafa al-Babi Egypt, 1/614. 4 Al-Quran 39/60.

फ़तावा रज़विया खंड 6

...चाहे संकेतों के साथ नमाज़ पढ़ने और इसे हटाने से बहाना शेष न रहे।1 - और अल्लाह सर्वशक्तिमान बेहतर जानता है। के अनुसार वाजिब है, चाहे संकेत के साथ नमाज़ पढ़ने से बहाना ख़त्म हो सके। बहाना हटाने की स्थिति में वह व्यक्ति 'मज़ूर' (अक्षम) नहीं रहेगा। (त) और अल्लाह सर्वशक्तिमान बेहतर जानता है।

मसाला नंबर 823: उलमा इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि इमाम मुसल्ले पर खड़ा हो और मुक़्तदी बिना मुसल्ले के यानी केवल सहन (आँगन) में खड़ा हो, इस सूरत में नमाज़ मकरूह है या नहीं? बयान करें, सवाब पाएँ।

जवाब: नमाज़ में कोई कराहत नहीं है क्योंकि हदीस और फ़िक़्ह में कहीं इसकी मनाही नहीं है। न तो इमाम का सम्मान शरीयत में वर्जित है और न ही यह 'अकेले चबूतरे पर खड़े होने' की श्रेणी में आता है। 'बहरुर राइक़' में है: "कराहत के लिए एक विशेष प्रमाण (दलील) का होना आवश्यक है।"2 (कराहत के लिए स्वतंत्र प्रमाण होना ज़रूरी है। -त)। 'मिन्हा अल-ग़फ़्फ़ार' में है: "ऐसी चीज़ से कराहत साबित नहीं होती क्योंकि इसके लिए विशेष प्रमाण का होना आवश्यक है।"3 (ऐसी चीज़ से कराहत साबित नहीं होती क्योंकि इसके लिए स्वतंत्र प्रमाण होना ज़रूरी है। -त)। हाँ, अगर इमाम गर्व और अहंकार के कारण ऐसा भेद (विशेष दर्जा) चाहता है, तो उसकी यह नियत घोर पाप, हराम और गुनाह-ए-कबीरा (बड़ा पाप) है। अल्लाह तआला का फ़रमान है: "क्या घमंडी लोगों का ठिकाना जहन्नुम में नहीं है?"4 अल्लाह सुब्हानहू व तआला हमें अपने फ़ज़्ल और पूर्ण उदारता से सुरक्षित रखे। (त) अल्लाह तआला अपने फ़ज़्ल और करम से हम सबको इससे पनाह दे। आमीन। (त) आमीन। और अल्लाह सर्वशक्तिमान बेहतर जानता है।

मसाला नंबर 824 से 826: क़स्बा सरवाड़ इलाक़ा किशनगढ़, अजमेर के पास, होशियारों की मस्जिद, मुस्तफ़िल जनाब क़ाज़ी अकबर साहब, 20 ज़िल-क़ादा 1330 हिजरी। दीन के विद्वान और शरीयत के मुफ़्ती इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि: (१) ग़ैर-मुक़ल्लिदीन के पीछे हमारी नमाज़ होती है या नहीं? (२) ग़ैर-मुक़ल्लिदीन को हमारी मुक़ल्लिदीन की मस्जिद में आने देना जायज़ है या नहीं?

---

1 दुर्रे मुख़्तार, बाबुल हैज़, मुजतबाई दिल्ली द्वारा प्रकाशित, 1/53। 2 बहरुर राइक़, बाबुल ईदैन, एच.एम. सईद कंपनी कराची द्वारा प्रकाशित, 2/163। 3 रदुल मुहतार, मिन्हा अल-ग़फ़्फ़ार के हवाले से, बाबुल ईदैन, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र द्वारा प्रकाशित, 1/614। 4 अल-क़ुरआन 39/60।

ولو بصلاته مؤمئاً وبرده لایبقی ذاعذر ۱- واللہ تعالی اعلم کے مطابق واجب ہے خواہ اشارہ کر کے نماز پڑھنے سے عذر موقوف ہوسکے، عذر ہٹانے کی صورت میں وہ شخص معذور نہ رہے گا۔ (ت) واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ نمبر ۸۲۳: کیا فرماتے ہیں علماء اس مسئلہ میں کہ امام مصلی پر کھڑا ہو اور مقتدی بغیر مصلیٰ یعنی فقط صحن میں کھڑا ہو اس صورت میں نماز مکروہ ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: نماز میں کچھ کراہت نہیں کہ حدیث وفقہ میں کہیں اس کی ممانعت نہیں، نہ امام کی تعظیم شرعاً ممنوع ہے نہ یہ انفراد علی الدکان کی قبیل سے ہے، بحرالرائق میں ہے: الکراھة لابد لھا من دلیل خاص ۲ (کراہت کے لئے مستقل دلیل کا ہونا ضروری ہے۔ت) منح الغفار میں ہے: بمثل ھذا لاتثبت الکراھة اذلا بد لھا من دلیل خاص ۳- (اس طرح کی چیز سے کراہت ثابت نہیں ہوتی کیونکہ اس کے لئے مستقل دلیل کا ہونا ضروری ہے۔ت) البتہ اگر امام براہ تکبر و استعلا ایسا امتیاز چاہے تو اُس کی یہ نیت سخت گناہ و حرام وکبیرہ ہے۔ قال اللہ تعالی اَلَیْسَ فِیْ جَھَنَّمَ مَثْوًی لِّلْمُتَکَبِّرِیْنَ ۴۔ اللہ تعالیٰ کا فرمان ہے کیا متکبرین کا ٹھکانہ جہنم میں نہیں ہے؟ اعاذنا اللہ سبحانہ وتعالی بمنہ وکمال کرمہ (ت) اللہ تعالیٰ اپنے فضل و کرم کے ذریعے اس سے ہم سب کو پناہ عطا فرمائے۔ آمین (ت) امین۔واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۸۲۴ تا ۸۲۶: از قصبہ سرواڑ علاقہ کشن گڑھ متصل اجمیر ہوشیاروں کی مسجد مسئولہ جناب قاضی اکبر صاحب ۲۰ ذی القعدہ ۱۳۳۰ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین ومفتیانِ شرع

متین اس مسئلہ میں کہ: (۱) غیر مقلدین کے پیچھے ہماری نماز ہوتی ہے یا نہیں؟ (۲) غیر مقلدین کو ہماری متقلدین کی مسجد میں آنے دینا درست ہے یا نہیں؟

---

۱ درمختار، باب الحیض، مطبوعہ مجتبائی دہلی، ۱/ ۵۳ ۲ بحر الرائق باب العیدین مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۲/ ۱۶۳ ۳ ردالمحتار بحوالہ منح الغفار باب العیدین مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/ ۶۱۴ ۴ القرآن ۳۹/ ۶۰

(3) In a neighborhood mosque where the Hanafi residents have unanimously appointed a Muezzin and an Imam for their mosque, and at the time of prayer, the Muezzin is waiting for the time to start calling the Adhan, and the said Imam is sitting in the mosque or on the specific prayer mat in a state of ablution; in such a state, is it permissible for someone else from the same neighborhood, another neighborhood, or another village to give the Adhan or lead the prayer without the consent of the appointed Imam? If giving the Adhan or leading the prayer by anyone other than the appointee without consent is impermissible, and the said residents forbid it but he does not listen, what is the ruling for them according to the Noble Sharia? Only.

The Answer:

(1) Praying behind them is absolutely invalid, just as praying behind a Jew. It is stated in Fath al-Qadir: Arabic Quote: "Indeed, prayer behind the people of innovation (desires) is not permissible." (1) And Allah Almighty knows best. Urdu Translation: Prayer behind the people of innovation and those of bad beliefs is not permissible. (T) And Allah Almighty knows best.

(2) It has become known that they have no right in prayer, their prayer is not prayer at all, so they have no right to come to the mosque. Their arrival causes fitna (strife), and stopping fitna is mandatory. They intentionally cause distress to Muslims, at the very least by raising their voices for 'Ameen bi al-Jahr' (saying Ameen loudly) which they intentionally raise beyond moderation. There is a command to stop a nuisance-causer from the mosque. It is stated in Durr al-Mukhtar: Arabic Quote: "He shall be prevented from it, and likewise every nuisance-causer even if it be with his tongue." (2) And Allah Almighty knows best. Urdu Translation: Such a person should be prevented from entering the mosque, and similarly, every person who causes distress will be prevented, even if he causes distress with his tongue. (T)

(3) When an appointed Imam is present and available, then someone else becoming the Imam forcibly without his consent and without a Shariah-compliant reason is impermissible and a sin. It is stated in the Hadith: Arabic Quote: "A man should not lead another man in prayer where the latter has authority, except with his permission." (3) Urdu Translation: No man should lead in prayer where someone else has authority and control (meaning the person in charge, whether the owner of the house, the host of a gathering, or the Imam of a mosque) without his permission. (T)

1. Fath al-Qadir, Chapter of Imamate, published by Maktaba Nooria Rizvia, Sukkur, 2/304
2. Durr al-Mukhtar, Chapter on what invalidates prayer, published by Matba Mujtabai, Delhi, 1/94
3. Sahih Muslim, Chapter on who is most worthy of Imamate, published by Noor Muhammad Asah al-Matabi, Karachi, 1/236

(3) जिस किसी मोहल्ले की मस्जिद में मोहल्ले के हनफ़ी निवासियों ने सर्वसम्मति से अपने मोहल्ले की मस्जिद में एक मुअज़्ज़िन और एक पेश इमाम नियुक्त किया हो और नमाज़ के वक्त मुअज़्ज़िन समय होने की राह देख रहा हो कि वक्त हो जाए तो अज़ान दे और उक्त पेश इमाम वुज़ू की स्थिति में उक्त मस्जिद में या विशेष जाए-नमाज़ (मुसल्ला) पर बैठा हो; ऐसी स्थिति में, क्या उक्त नियुक्त इमाम की सहमति के बिना उसी मोहल्ले का या दूसरे मोहल्ले का या दूसरे गाँव का कोई अन्य व्यक्ति अज़ान दे या नमाज़ पढ़ाए तो क्या यह जायज़ है? यदि अज़ान देना या नमाज़ पढ़ाना नियुक्त व्यक्ति के अलावा किसी और के लिए बिना सहमति के नाजायज़ हो और उक्त मोहल्ले वाले मना करते हों और वह न माने, तो शरई शरीफ़ के अनुसार उनके लिए क्या हुक्म है? फ़क़त।

उत्तर:

(1) उनके पीछे नमाज़ पूरी तरह बातिल (अमान्य) है जैसे किसी यहूदी के पीछे, फ़तह अल-क़दीर में है: अरबी उद्धरण: "निश्चय ही, नवाचार करने वालों (बिदअतियों) के पीछे नमाज़ जायज़ नहीं है।" (1) और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। उर्दू अनुवाद: बिदअती और ग़लत अक़ीदे वालों के पीछे नमाज़ जायज़ नहीं है। (त) और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

(2) यह तो मालूम हो चुका कि नमाज़ में उनका कोई अधिकार नहीं है, उनकी नमाज़ नमाज़ ही नहीं है, तो उन्हें मस्जिद में आने का अधिकार नहीं है और उनके आने से फ़ितना (कलह) होता है और फ़ितने को रोकना फ़र्ज़ है और वे जानबूझकर मुसलमानों को कष्ट देते हैं, कम से कम अपनी 'आमीन बिल-जहर' (ज़ोर से आमीन कहना) की आवाज़ों से जो जानबूझकर सामान्य से भी अधिक निकालते हैं और कष्ट देने वाले (मूज़ी) को मस्जिद से रोके जाने का हुक्म है। दुर्रे मुख्तार में है: अरबी उद्धरण: "उसे उससे रोका जाएगा, और इसी तरह हर कष्ट देने वाले को चाहे वह अपनी जुबान से ही क्यों न हो।" (2) और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। उर्दू अनुवाद: ऐसे व्यक्ति को मस्जिद में प्रवेश करने से मना किया जाए और इसी तरह हर कष्ट देने वाले को मना किया जाएगा चाहे वह ज़ुबान ही से ईज़ा (कष्ट) दे। (त)

(3) जब नियुक्त इमाम मौजूद और हाज़िर हो, तो उसकी मर्ज़ी के बिना दूसरे का ज़बरदस्ती बिना किसी शरई कारण के इमाम बन जाना नाजायज़ और गुनाह है। हदीस में फ़रमाया गया: अरबी उद्धरण: "कोई आदमी दूसरे आदमी की सत्ता (अधिकार क्षेत्र) में इमामत न कराए सिवाय उसकी

अनुमति के।" (3) उर्दू अनुवाद: कोई आदमी सुल्तान और हाकिम (तात्पर्य अधिकार रखने वाला, चाहे घर का मालिक हो या महफ़िल का मालिक या मस्जिद का इमाम कोई भी हो) की इजाज़त के बिना इमामत न कराए। (त)

---

1. फ़तह अल-क़दीर, बाब अल-इमामत, प्रकाशक मकतबा नूरिया रिज़विया, सुक्कुर 2/304
2. दुर्रे मुख्तार, बाब मा युफ़्सिदुस सलात, प्रकाशक मतबा मुजतबाई, दिल्ली 1/94
3. सहीह मुस्लिम, बाब मन अहाक्कु बिल-इमामत, प्रकाशक नूर मुहम्मद असहा उल-मताबे, कराची 1/236

पृष्ठ 630/736

(۳) جس کسی محلہ کی مسجد میں محلہ داران حنفیہ نے متفق ہو کر اپنے محلہ کی مسجد میں ایک مؤذن اور ایک پیش امام مقرر کر رکھا ہو اور نماز کے وقت مؤذن کی راہ دیکھتا ہے کہ وقت ہو جائے تو اذان کہے اور پیش امام مذکور باوضو مسجد مذکور میں یا خاص مصلّے پر بیٹھا ہوا اس حالت میں بلا رضا مندی پیش امام مقررہ کے دوسرا کوئی مسجد مذکور میں اسی محلہ کا یا دوسرے محلہ کا یا دوسرے گاؤں کا اذان دے یا نماز پڑھائے تو جائز ہے یا نہیں، اگر بلا رضا مندی اذان دینا یا نماز پڑھنا مقررہ کے سوائے ناجائز ہو اور محلہ داران مذکور منع کرتے ہوں اور وہ نہ مانے تو شرع شریف سے اُن کے لئے کیا حکم ہے؟ فقط

الجواب:

(۱) ان کے پیچھے نماز محض باطل ہے جیسے کسی یہودی کے پیچھے، فتح القدیر میں ہے: ان الصلوٰۃ خلف اھل الاھواء لا تجوز (1) واللہ تعالٰی اعلم اہل بدعت و بد مذہب کے پیچھے نماز جائز نہیں (ت) واللہ تعالٰی اعلم

(۲) یہ تو معلوم ہو چکا کہ نماز میں ان کا کوئی حق نہیں، ان کی نماز نماز ہی نہیں، تو مسجد میں انھیں آنے کا حق نہیں اور ان کے آنے سے فتنہ ہوتا ہے اور فتنہ کا بند کرنا فرض ہے اور وہ قصداً مسلمانوں کو ایذا دیتے ہیں کم از کم اپنی آمین بالجہر کی آوازوں سے جو قصدًا اعتدال سے بھی زائد نکالتے ہیں اور موذی کو مسجد سے روکے جانے کا حکم ہے۔ در مختار میں ہے: یمنع منہ وکذا کل موذ ولو بلسانہ (2) واللہ تعالٰی اعلم ایسے شخص کو دخول مسجد سے منع کیا جائے اور اسی طرح ہر تکلیف دینے والے کو منع کیا جائے گا اگرچہ وہ زبان ہی سے ایذا دے۔ (ت)

(۳) امام معین موجود و حاضر ہے تو بے اس کی مرضی کے دوسرا زبردستی بلاوجہ شرعی امام بن جانا ناجائز و گناہ ہے۔ حدیث میں فرمایا: الا لایؤ من الرجل فی سلطانه الا باذنے (3) کوئی آدمی سلطان اور حاکم (مراد صاحب تصرف ہے صاحب خانہ ہو یا صاحب مجلس یا امام مسجد کوئی بھی ہو) کی اجازت کے بغیر امامت نہ کروائے۔ (ت)

---

1. فتح القدیر باب الامامۃ مطبوعہ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۲/ ۳۰۴
2. در مختار باب مایفسد الصلوٰۃ مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۹۴
3. صحیح مسلم باب من احق بالامامۃ مطبوعہ نور محمد اصح المطابع کراچی ۱/ ۲۳۶

Fatawa Rizvia, Volume Six And giving the call to prayer (Adhan) against the will of the appointed Muazzin without any Shari'i reason is an unjust interference in his right and a cause for generating hatred. It is forbidden in the Sahih Hadith: "Give good tidings and do not repel (create hatred) [1]". Such people are mischief-makers; if they do not comply, the command is to expel them from the mosque. Yes, if the Imam is unfit for leadership (Imamat), for example, he recites incorrectly or follows a deviant sect like Wahhabism etc., then he is neither an Imam nor is his leading valid. Similarly, if a Muazzin is in such a state that Sharia mandates the repetition of his Adhan, then it is appropriate to prevent such people from giving Adhan and leading prayer. And Allah Almighty knows best.

Mas'alah No. 827: From the city’s Jami Masjid, Maulana Muhammad Afzal Sahib. Question (Persian): What do the scholars of religion and jurists of the firm Sharia say about a person who does not consider the Imam good according to his own beliefs and prays at home? Is it permissible or not? Question (Urdu): What do the scholars of religion and jurists of the firm Sharia say about a person who does not consider the Imam good according to his own beliefs and prays at home? Is it permissible or not?

Answer: Answer (Persian): If in reality the Imam is of a deviant sect, an open sinner, or recites incorrectly, and he cannot be replaced, nor can another congregation be held in the mosque, then in such a case, one should establish a congregation at home with his family members or perform it alone if no one else is available. Answer (Urdu): If in reality the Imam is of a deviant sect, an open sinner, or recites incorrectly, and he cannot be replaced, nor can another congregation be held in the mosque, then in such a case, one should establish a congregation at home with his family members or perform it alone if no one else is in the house. (T)

Mas'alah No. 828: What do the scholars of religion say regarding this issue: if the followers (muqtadi) are wearing turbans ('amama) and the Imam is wearing only a cap, will it be disliked (makruh) or not? Explain and be rewarded.

Answer: There is no doubt that prayer with a turban is superior to prayer without a turban, as it is a means of adornment (tajammul). Here, adornment is beloved and suitable for the place of respect. Therefore, wearing a turban is recommended at the time of Quran recitation, as stated in Fatawa Qazi Khan. In prayer, which is presence in the grand court of the Lord of the Heavens and the Earth (Jalla Jalaluhu), observing etiquettes is more important than during recitation. And the Imam, who is the obeyed leader of the community, is most entitled and deserving of it. Thus,

cleanliness of clothes and purity of attire are established as grounds for priority in the right to lead prayer, as stated in al-Durr al-Mukhtar. However, despite this, in the queried situation, it is merely 'tark al-awla' (omitting the better option).

[1] Sahih al-Bukhari, Kitab al-Adab, Chapter: The saying of the Prophet (PBUH) "Make things easy...", published by Qadeemi Kutub Khana, Karachi, 2/904. Page 631 of 736

फ़तावा रज़विया, छठा खंड और नियुक्त मुअज़्ज़िन की इच्छा के विरुद्ध बिना किसी शरई कारण के अज़ान देना उसके अधिकार में अन्यायपूर्ण हस्तक्षेप है और नफ़रत पैदा करना है। सहीह हदीस में इससे मना किया गया है: "खुशखबरी दो और नफ़रत मत फैलाओ [1]"। ऐसे लोग फ़सादी हैं; यदि वे न मानें तो उन्हें मस्जिद से बाहर निकाल देने का आदेश है। हाँ, यदि इमाम इमामत के अयोग्य है, उदाहरण के तौर पर गलत पढ़ने वाला या वहाबी आदि, तो न वह इमाम है और न ही उसका इमामत कराना सही है। इसी प्रकार, यदि मुअज़्ज़िन ऐसी स्थिति में है कि उसकी अज़ान को शरीयत के अनुसार दोहराने का आदेश है, तो ऐसे लोगों को अज़ान और इमामत से रोकना उचित है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 827: जामे मस्जिद के मौलवी मुहम्मद अफ़ज़ल साहब की ओर से। प्रश्न (फ़ारसी): दीन के विद्वान और सुदृढ़ शरीयत के मुफ्ती क्या कहते हैं कि एक व्यक्ति अपनी आस्था के अनुसार इमाम को अच्छा नहीं समझता और घर में नमाज़ पढ़ता है, क्या यह जायज़ है या नहीं? प्रश्न (उर्दू): दीन के विद्वान और सुदृढ़ शरीयत के मुफ्ती क्या कहते हैं कि एक व्यक्ति अपनी आस्था के अनुसार इमाम को अच्छा नहीं समझता और घर में नमाज़ पढ़ता है, क्या यह जायज़ है या नहीं?

उत्तर: उत्तर (फ़ारसी): यदि वास्तव में इमाम बद-मज़हब, खुला पापी या गलत क़िराअत करने वाला हो और उसे बदला न जा सके, न ही मस्जिद में दूसरी जमात कराई जा सके, तो ऐसी स्थिति में उसे अपने घर वालों के साथ जमात कायम करनी चाहिए या अकेला पढ़ना चाहिए यदि कोई दूसरा न हो। उत्तर (उर्दू): यदि वास्तव में इमाम बद-मज़हब, खुला पापी या गलत क़िराअत करने वाला हो और उसे बदला न जा सके, न ही मस्जिद में दूसरी जमात कराई जा सके, तो ऐसी स्थिति में उसे अपने घर वालों के साथ जमात कायम करनी चाहिए या अकेला पढ़ना चाहिए यदि घर में कोई दूसरा न हो। (त)

मसला नंबर 828: इस मसले में दीन के विद्वान क्या कहते हैं कि यदि मुक़्तदी इमामा (पगड़ी) बाँधे हुए हों और इमाम केवल टोपी पहने हो, तो क्या यह मकरूह (नापसंद) होगा या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: इसमें कोई संदेह नहीं कि इमामे के साथ नमाज़, बिना इमामे की नमाज़ से श्रेष्ठ है क्योंकि यह सौंदर्य (तजम्मुल) का साधन है। यहाँ सौंदर्य प्रिय है और सम्मान के स्थान के अनुकूल है, इसीलिए क़ुरआन की तिलावत के समय इमामा बाँधना मुस्तहब (पसंदीदा) है, जैसा कि फ़तावा क़ाज़ी ख़ाँ में है। और नमाज़ में, जो कि आसमानों और ज़मीन के मालिक हज़रत अल्लाह (जल जलालुहू) के महान

दरबार में उपस्थिति है, आदाब का पालन करना तिलावत की तुलना में अधिक महत्वपूर्ण है। और इमाम, जो कि क़ौम का सरदार और आज्ञाकारी नेता है, इसके लिए सबसे अधिक हक़दार और योग्य है। अतः कपड़ों की सफ़ाई और पहनावे की पवित्रता को इमामत की पात्रता में प्राथमिकता का कारण माना गया है, जैसा कि 'दुर्रे मुख़्तार' में है। लेकिन इन सबके बावजूद, पूछी गई स्थिति में यह केवल 'तर्कए-औला' (बेहतर विकल्प को छोड़ना) है।

[1] सहीह अल-बुख़ारी, किताब अल-अदब, अध्याय: नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का कथन "आसानी करो...", पुरानी कुतुब खाना कराची, 2/904 द्वारा प्रकाशित। पृष्ठ 736 का 631

فتاویٰ رضویہ جلد ششم اور مؤذن مقرر کئے ہوئے کے خلاف مرضی بلاوجہ شرعی اذان دینا اس کے حق میں ناحق دست اندازی، اور نفرت دلانا ہے اور صحیح حدیث میں اس سے منع فرمایا بشرو ولا تنفروا 1 (لوگوں کو خوش کرو اور نفرت نہ پھیلاؤ۔ت) ایسے لوگ مفسد ہیں اگر نہ مانیں تو مسجد سے باہر کر دینے کا حکم ہے، ہاں اگر امام نا قابل امامت ہے مثلاً غلط خواں یا وہابی وغیرہ تو نہ وہ امام ہے نہ اسکا پڑھانا امامت۔ یونہی اگر موذن ایسی حالت پر جس کی اذان کے لئے شرعاً حکم اعادہ ہے تو ایسوں کو اذان و امامت سے باز رکھنا بجا ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۸۲۷: از شہر جامع مسجد مولوی محمد افضل صاحب چہ می فرمایند علمائے دین ومفتیان شرع متین کہ شخص امام را خوب نمی داند باعتقاد خود در خانہ نماز میگذارد روا ہست یا نہ ؟ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین کہ ایک شخص اپنے عقائد کے مطابق امام کو اچھا نہیں سمجھتا اور نماز گھر میں پڑھنا جائز ہے یا نہیں؟

الجواب: اگر فی الواقع امام بد مذہب یا فاسق معلن یا فاسق القراۃ است و تبدیلش نتواند نہ جماعت دیگر در مسجد می تواں کرد آنگاہ بخانہ با اہل خود اقامت جماعت باید کردیا تنہا گزارد اگر دیگرے ندارد۔ اگر واقعی امام بد مذہب یا فاسق معلن یا فاسق القراۃ ہو اور اس کو تبدیل نہ کر سکتا ہو، نہ مسجد میں دوسری جماعت کرواسکتا ہو تو اس صورت میں گھر میں اپنے اہل کے ساتھ جماعت قائم کرے یا تنہا ادا کرے اگر کوئی دوسرا گھر نہ ہو۔(ت)

مسئلہ نمبر ۸۲۸: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ اگر مقتدی عمامہ باندھے ہوں اور امام فقط ٹوپی پہنے تو مکروہ ہوگی یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: اس میں شک نہیں کہ نماز عمامہ کے ساتھ نماز بے عمامہ سے افضل ہے کہ وہ اسبابِ تجمل ہے ہی اور یہاں تجمل محبوب اور مقام ادب کے مناسب اس لئے تلاوت قرآن کے وقت تعمم مندوب ہوا کما فی فتاوی قاضیخاں (جیسا کہ فتاویٰ قاضی خان میں ہے۔ت) اور نماز میں کہ گو یہ دربار عظیم الشان حضرت ملک السموات والارض جل جلالہ کی حاضری ہے رعایت آداب بہ نسبت تلاوت کے اہم اور امام کہ سردار مطاع قوم ہے اس کے ساتھ احق والیق، لہذا نظافت ثوب و پاکیزگی لباس وجوہ تقدیم استحقاق امامت سے قرار پائی کما فی الدرالمختار (جیسا کہ درِ مختار میں ہے۔ت) مگر بایں ہمہ صورت مستفسرہ میں صرف ترک اولیٰ

1 صحیح البخاری کتاب الادب باب قول النبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم یسر والخ مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۲/ ۹۰۴ Page 631 of 736

Fatawa Razawiyya, Volume 6

Therefore, it does not necessitate detestability (karahat) unless it is proven by a specific Shari'ah evidence, otherwise, abandoning every recommended (mustahabb) act, like Chasht and Ishraq prayers, would be considered detestable (makruh), and this is not correct. It is cited in Hashiyah Shami from Bahr al-Ra'iq:

[Boxed Text] Arabic: لا یلزم من ترك المستحب ثبوت الكراهة اذ بد لها من دلیل خاص ، وفیها عن تحریر الاصول ، خلاف اولی مالیس فیه صیغة نهی كترك صلاة الضحی بخلاف المكروه تنزیها 1 انتهی و تمامه فیها- Urdu: Abandoning a recommended act does not necessitate the establishment of detestability (karahat); for this, a specific and independent evidence is required. In the same [source], citing Tahrir al-Usul, it states: 'Khilaf al-Awla' (contrary to the best) is that which does not contain a prohibition formula, such as abandoning the Duha (Chasht) prayer, unlike 'Makruh Tanzihi' (mildly disliked). End. Look for full details there. (T)

In short, as long as a prohibition is not proven in this regard, detestability will not be accepted. Allah Almighty knows best, and His knowledge is most complete and most firm.

Problem No. 829: From the noble court of Marehra, District Etah, Dargah-e-Kalan, asked by the honorable Sahibzada, the virtuous Syed Shah Muhammad Miyan Sahib (may his glory increase), 20 Dhu al-Qi'dah 1330 AH.

Source of perfections and spring of blessings, respected Maulana (may his blessings increase), after the Sunnah greeting, I present: What is the status of the leadership (imamah) of sinners (fusaq) according to the school of thought (madhab) and the fatwa—is it 'Makruh Tahrimi' (prohibitively disliked) necessitating repetition of the prayer, or 'Makruh Tanzihi' (mildly disliked), or is there some detail? If both the pious and the sinners offer prayers behind a sinner, according to the repetition ruling, is it only for the pious that the 'Makruh Tahrimi' prayer must be repeated, or for both? And if the pious are unable to prevent the sinners from leading, is it better to pray the five daily prayers alone or behind the sinners? It is stated in Durr al-Mukhtar that the leadership of sinners, the blind, slaves, and children of adultery etc., is detestable only when better people are available, otherwise not. Now the matter to be inquired about is whether those who call it detestable hold the same view, or something else? Please explain and be rewarded.

The Answer: Regarding the leadership (imamah) of sinners, there are two opinions of the scholars: 'Karahat Tanzihi' as in Durr, and 'Karahat Tahrimi' as in al-Ghunyah, Fatawa al-Hujjah, al-Tabyin, Abi al-Su'ud, and al-Tahtawi on Maraqi al-Falah, etc. The reconciliation between them is that it is 'Makruh Tanzihi' behind a non-public sinner (ghayr mu'lin) and 'Tahrimi' behind an open sinner (mu'lin). As for the innovator (mubtadi'), if his innovation reaches the level of disbelief (kufr) according to the jurists—meaning if he denies definitive matters even if they are not essential parts of the faith—then the correct view is that prayer behind him is invalid, as stated in Fath al-Qadir.

---

1. Radd al-Muhtar, Chapter on 'Does abandoning the recommended act constitute Makruh Tanzihi?', published by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/91.

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

इसलिए, इससे कराहत (नापसंदगी) आवश्यक नहीं होती जब तक कि इसका प्रमाण किसी विशेष शरई दलील से न हो, अन्यथा चाश्त और इशराक़ आदि जैसे हर मुस्तहब (पसंदीदा) कार्य को छोड़ना मकरूह (नापसंद) ठहरेगा, और यह सही नहीं है। हाशिया शामिया में बहर-उल-रैक से उद्धृत किया गया है:

[बॉक्स टेक्स्ट] अरबी: لا یلزم من ترك المستحب ثبوت الكراهة اذ بد لها من دلیل خاص ، وفیها عن تحریر الاصول ، خلاف اولی مالیس فیه صیغة نهی كترك صلاة الضحی بخلاف المكروه تنزیها 1 انتهی و تمامه فیها- उर्दू: मुस्तहब को छोड़ने से कराहत का प्रमाण आवश्यक नहीं होता, इसके लिए विशेष और स्वतंत्र प्रमाण की आवश्यकता होती है। और उसी में तहरीर-उल-उसूल के हवाले से है: 'खिलाफ़-ए-अवला' (श्रेष्ठ के विपरीत) वह है जिसमें मनाही का शब्द न हो, जैसे चाश्त की नमाज़ छोड़ना, 'मकरूह-ए-तन्ज़ीही' के विपरीत। समाप्त। पूरी जानकारी वहाँ देखें। (त)

संक्षेप में, जब तक इस बारे में कोई मनाही सिद्ध नहीं होती, कराहत स्वीकार नहीं की जाएगी। अल्लाह तआला बेहतर जानता है, और उसका ज्ञान सबसे पूर्ण और दृढ़ है।

प्रश्न संख्या ८२९: मारहरा मुतहरा, जिला एटा, दरगाह-ए-कलां से माननीय साहबज़ादा सैयद शाह मुहम्मद मियां साहब (ज़ैद मजदुहुम) द्वारा पूछा गया, २० ज़ीक़अदा १३३० हिजरी।

गुणों के भंडार और बरकतों के स्रोत आदरणीय मौलाना (बरकतें बढ़ती रहें), सुन्नत सलाम के बाद अर्ज है: पापियों (फुसाक़) की इमामत के बारे में मज़हब और फतवे के अनुसार क्या हुक्म है—क्या यह 'मकरूह-ए-तहरीमी' है जिससे नमाज़ दोहराना ज़रूरी होता है, या 'मकरूह-ए-तन्ज़ीही', या कोई विस्तार है? यदि पापियों की इमामत में नेक लोग और पापी दोनों नमाज़ पढ़ें, तो नमाज़ दोहराने के हुक्म के अनुसार क्या केवल नेक लोगों के लिए 'मकरूह-ए-तहरीमी' नमाज़ दोहराना अनिवार्य है या दोनों के लिए? और यदि नेक लोग पापियों को इमामत से रोकने में असमर्थ हों, तो पांचों नमाज़ें जमात के बिना पढ़ना बेहतर है या पापियों की इमामत में? दुर्र-ए-मुख़्तार में है कि पापियों, अंधों, दासों और अवैध संतानों आदि की इमामत तब मकरूह है जब उनसे बेहतर लोग मौजूद हों, अन्यथा नहीं। अब पूछने वाली बात यह है कि जो लोग इसे मकरूह कहते हैं, उनके नज़दीक भी यही हुक्म है या कुछ और? विस्तार से बताएं और पुण्य पाएं।

उत्तर: पापियों (फ़ुसाक़) की इमामत के बारे में विद्वानों के दो मत हैं: 'कराहत-ए-तन्ज़ीही' जैसा कि दुर्र में है, और 'कराहत-ए-तहरीमी' जैसा कि अल-ग़ुनिया, फतावा-उल-हुज्जह, अत-तबईन, अबी अल-सऊद और अत्तहतावी आदि में है। उनके बीच समन्वय यह है कि गुप्त पापी (ग़ैर मुअलिंन) के पीछे नमाज़ 'मकरूह-ए-तन्ज़ीही' है और खुले पापी (मुअलिंन) के पीछे'तहरीमी'। जहाँ तक बिदअती (नया आविष्कार करने वाला) का सवाल है, यदि उसकी बिदअत फ़ुक़हा के अनुसार कुफ़्र (अविश्वास) की सीमा तक पहुँच गई हो—अर्थात यदि वह निश्चित बातों (क़तइयात) का खंडन करता हो, भले ही वे धर्म की अनिवार्यताओं में से न हों—तो सही बात यह है कि उसके पीछे नमाज़ अमान्य (बातिल) है, जैसा कि फतह-उल-क़दीर में है।

---

1. रद-उल-मुहतार, अध्याय 'क्या मुस्तहब छोड़ने से मकरूह-ए-तन्ज़ीही होती है?' आदि, मुस्तफ़ा अल-बाबी प्रेस, मिस्र १/९१।

ہوا تو اس سے کراہت لازم نہیں آتی تا وقتی کہ اس کا ثبوت کسی خاص دلیل شرعی سے نہ ہو ورنہ نمازِ چاشت و اشراق وغیرہما ہر مستحب کا ترک مکروہ ٹھہرے اور یہ صحیح نہیں، حاشیہ شامیہ میں بحر الرائق سے نقل کیا:

[خانہ] عربی: لا یلزم من ترك المستحب ثبوت الكراهة اذ بد لها من دلیل خاص ، وفیها عن تحریر الاصول ، خلاف اولی مالیس فیه صیغة نهی كترك صلاة الضحی بخلاف المكروه تنزیها 1 انتهی و تمامه فیها- اردو: ترکِ مستحب سے ثبوتِ کراہت لازم نہیں آتا اس کے لئے خاص اور مستقل دلیل کی ضرورت ہوتی ہے اور اسی میں تحریر الاصول کے حوالے سے ہے، خلافِ اولٰی یہ ہے کہ جس میں صیغۂ نہی نہ ہو مثلاً نمازِ چاشت کا ترک کرنا بخلافِ مکروہِ تنزیہی کے اھ اس کی پوری تفصیل وہاں ملاحظہ کیجئے۔ (ت)

بالجملہ جب تک اس بارہ میں نہی ثابت نہ ہوگی کراہت مانی جائے گی، واللہ تعالٰی اعلم و علمہ اتم واحکم۔

مسئلہ نمبر ۸۲۹ : از سرکار مارہرہ مطہرہ ضلع ایٹہ درگاہ کلاں مسئولہ حضرت صاحبزادہ والا مرتبت با منقبت حضرت سید شاہ محمد میاں صاحب زید مجدہم ۲۰ ذیقعدہ ۱۳۳۰ھ

جامع کمالات منبع برکات مولانا معظم زادت برکاتہم، پس از سلام مسنون عارض ہوں فساق کی امامت علی المذہب مفتی بہ مکروہِ تحریمی قابلِ اعادہ یا مکروہِ تنزیہی یا کچھ تفصیل، اگر فساق کی امامت سے صلحا بھی اور فساق دونوں نمازیں پڑھیں برتقدیرِ اعادہ صرف صلحا کے لئے نمازِ مکروہِ تحریمی قابلِ اعادہ ہے یا صلحا و فساق دونوں کے لئے ، اور صلحا اگر منعِ فساق عن

الامامۃ سے عاجز ہوں تو صلوات خمسہ بے جماعت پڑھنا یا فساق کی امامت سے پڑھنا اولیٰ، در مختار میں ہے کہ فساق واعمیٰ و عبد و ولد الزنا وغیرہ کی امامت تب مکروہ ہے جب دوسرے ان سے اچھے موجود ہوں ورنہ نہیں ، اب دریافتِ طلب امر یہ ہے کہ جو لوگ مکروہ کہتے ہیں ان کے نزدیک بھی یہی حکم ہے یا کچھ اور ؟ بینوا توجروا۔

الجواب: امامتِ فساق کی نسبت علما کے دونوں قول ہیں کراہتِ تنزیہی کما فی الدر اور کراہتِ تحریمی کما فی الغنیۃ وفتاوی الحجۃ والتبیین وابی السعود والطحطاوی علی مراقی الفلاح وغیرہا، اور ان میں توفیق یہ ہے کہ فاسقِ غیر معلن کے پیچھے مکروہِ تنزیہی اور معلن کے پیچھے تحریمی ، مبتدع کی بدعت اگر حدِ کفر کو پہنچی ہوا گر عند الفتہا یعنی منکرِ قطعیات ہو اگرچہ منکرِ ضروریات نہ ہو، تو صحیح یہ ہے کہ اس کے پیچھے نماز باطل ہے کما فی فتح القدیر

---

1. ردالمحتار مطلب ترک المندوب ھل تکرہ تنزیہا الخ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱ / ۹۱

صفحہ 632 / 736

Fatawa Razvia Volume 6

And [in] Miftah al-Sa'adah, Al-Ghiyathiyyah and others (similarly in Fath al-Qadir, Miftah al-Sa'adah and Ghiyathiyyah etc. - Ed.), the same precaution that prevents theologians from declaring him a disbeliever (takfir) will lead to a ruling on the invalidity of the prayer behind him; because when a prayer is valid from many aspects but invalid from one aspect, it is ruled as invalid[1]. (When a prayer is correct for several reasons but invalid for one reason, it will be declared invalid - Ed.). Otherwise, it is 'Makruh Tahrimi' (prohibitively disliked). In cases where the ruling is prohibitively disliked, it is obligatory for the righteous and the general public to repeat the prayer. If no other imam except an innovator (mubtadi) or an open sinner (fasiq mu'lan) is available, then pray individually because congregation is 'Wajib' (obligatory) and leading it with prohibitively disliked status, and both obligatory and prohibitively disliked statuses appearing at once, 'ward-ul-mafasid ahammu min jalb-il-masalih'[2] (preventing corruption is more important than attaining benefits - Ed.). Yes, if in Friday prayer (Jumu'ah) another imam is not found, then pray the Friday prayer behind him because it is 'Farz' (obligatory) and 'Farz' is more important.

Similarly, if not praying behind him causes strife (fitna), then pray and repeat the prayer, for 'Al-Fitnatu Akbaru Minal Qatl'[3] (Strife is worse than killing - Ed.). And Allah Almighty knows best.

Problem No. 830: 12 Safar 1329 AH. What do the scholars of religion say on this matter: if a teacher is a Wahhabi, can a student pray behind him or not? Explain and be rewarded.

The Answer: Prayer behind a Wahhabi is not permissible even if he is one's teacher; rather, considering him a teacher is worse than deadly poison for him. One should refrain immediately because bad company makes a person bad, let alone receiving teachings from a bad person. The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says: 'Stay away from them and keep them away from you, lest they misguide you and put you into strife'[4]. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 831: From Faizabad, Post Office Shahzadpur, sent by Abdullah, a student, 4 Safar 1327 AH. What do the scholars of religion and jurists of the clear Shari'ah say: is prayer behind an adulterer (zani) permissible or not, because much dispute has arisen in this matter to the extent that division has occurred in the congregational prayer. There should be evidence from Hadith and books. Explain and be rewarded.

The Answer: Prayer behind an adulterer is forbidden as he is an open sinner (fasiq mu'lan). To make him an imam is a sin. The prayers offered behind him...

---

[1] Fath al-Qadir, Chapter: Prayer of the Traveler, Published by Nooriya Razvia, Sukkur, 1/12 [2] Al-Ashbah wal-Nazair, The Fifth: Repelling corruption is prior to seeking benefits, Published by Idarat al-Qur'an wal-Ulum al-Islamiyyah, 1/125 [3] Al-Qur'an 2/191 [4] Sahih Muslim, Chapter: Prohibition of Narrating from the Weak, Published by Noor Muhammad Asah al-Matabi', Karachi, 1/10

फ़तावा रज़विया जिल्द 6

और [में] मिफ्ताह अल-सआदा, अल-ग़ियाथिय्या और अन्य (फ़तह अल-क़दीर, मिफ्ताह अल-सआदा और ग़ियाथिय्या आदि में इसी तरह है। -संपादक) वही सावधानी जो धर्मशास्त्रियों को उसे काफ़िर कहने से रोकती है, उसके पीछे नमाज़ के अमान्य होने का हुक्म देगी; क्योंकि जब एक नमाज़ कई पहलुओं से सही हो लेकिन एक पहलू से अमान्य हो, तो उसे अमान्य ही माना जाता है[1]। (जब नमाज़ कई कारणों से सही हो लेकिन एक कारण से अमान्य हो, तो उसे अमान्य घोषित किया जाएगा। -संपादक)। अन्यथा, यह 'मक़रूह तहरीमी' (सख़्त नापसंद) है। जिन मामलों में हुक्म मक़रूह तहरीमी का है, वहां नेक लोगों और आम जनता पर नमाज़ दोहराना वाजिब है। यदि किसी बिदअती (नवाचारी) या खुले गुनहगार (फ़ासिक़ मु'लन) के अलावा कोई दूसरा इमाम न मिल सके तो अकेले नमाज़ पढ़ें क्योंकि जमात वाजिब है और मक़रूह तहरीमी के साथ उसकी इमामत, और वाजिब व मक़रूह तहरीमी दोनों का एक साथ आना, 'वर्द-उल-मफ़ासिद अहममु मिन जल्ब-इल-मसालिह'[2] (नुकसान को दूर करना लाभ प्राप्त करने से अधिक महत्वपूर्ण है। -संपादक)। हाँ, अगर जुमे की नमाज़ में दूसरा इमाम न मिले, तो उसके पीछे जुमा पढ़ लें क्योंकि वह फ़र्ज़ है और फ़र्ज़ अधिक महत्वपूर्ण है।

इसी तरह अगर उसके पीछे नमाज़ न पढ़ने में फितना (अशांति) हो तो पढ़ लें और दोहरा लें क्योंकि 'अल-फितनतु अकबरु मिनल क़त्ल'[3] (फितना हत्या से बड़ी बुराई है। -संपादक)। वल्लाहु तआला आलम।

मसला नंबर 830: 12 सफ़र 1329 हिजरी। धर्म के विद्वान इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि अगर उस्ताद वहाबी हो तो शागिर्द उसके पीछे नमाज़ पढ़ सकता है या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

अल-जवाब: वहाबी के पीछे नमाज़ जायज़ नहीं है चाहे वह अपना उस्ताद ही क्यों न हो, बल्कि उसे उस्ताद मानना ही उसके हक में कातिल ज़हर से भी बदतर है। तुरंत परहेज़ करें क्योंकि बुरी संगत आदमी को बुरा बना देती है, फिर बुरे की शिक्षा का तो कहना ही क्या। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं: 'उनसे दूर रहो और उन्हें अपने से दूर रखो, कहीं वे तुम्हें गुमराह न कर दें और तुम्हें फितने में न डाल दें'[4]। वल्लाहु तआला आलम।

मसला नंबर 831: फ़ैज़ाबाद डाकखाना शहजादपुर से, प्रेषक अब्दुल्लाह तालिब-उल-इल्म, 4 सफ़र 1327 हिजरी। धर्म के विद्वान और शरीअत के मुफ्ती क्या फ़रमाते हैं कि क्या ज़ानी (व्यभिचारी) के पीछे नमाज़ जायज़ है या नहीं, क्योंकि इस मसले में बहुत विवाद पैदा हो गया है यहाँ तक कि जमात की नमाज़ में फूट पड़ गई है। हदीस और किताब का प्रमाण होना चाहिए। स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

अल-जवाब: ज़ानी फ़ासिक़ है और फ़ासिक़-ए-मु'लन के पीछे नमाज़ मना है, उसे इमाम बनाना गुनाह है। उसके पीछे जो नमाज़ें...

---

[1] फ़तह अल-क़दीर, बाब: मुसाफ़िर की नमाज़, मुद्रित नूरिया रज़विया सुक्कुर, 1/12 [2] अल-अशबाह वन-नज़ायर, अल-खामिसा: मफ़ासिद को दूर करना मसालिह को प्राप्त करने से बेहतर है, मुद्रित इदारतुल क़ुरआन वल-उलूमल इस्लामिया, 1/125 [3] अल-क़ुरआन 2/191 [4] सहीह मुस्लिम, बाब: कमज़ोरों से रिवायत करने की मनाही, मुद्रित नूर मुहम्मद असहा उल-मताबे कराची, 1/10

فتاوی رضویہ جلد ششم

ومفتاح السعادۃ والغیاثیۃ و غیرہا (فتح القدیر، مفتاح السعادۃ اور غیاثیہ وغیرہ میں اسی طرح ہے۔ت) کہ وہی احتیاط جو متکلمین کو اُس کی تکفیر سے باز رکھے گی اُس کے پیچھے نماز کے فساد کا حکم دے گی فان الصلوٰۃ اذا صحت من وجوہ و فسدت من وجہ حکم بفسادھا[1] (نماز جب کئی وجوہات کی بنا پر صحیح مگر ایک وجہ سے فاسد تو اس کو فاسد قرار دیا جائے گا۔ت) ورنہ مکروہ تحریمی، جن صورتوں میں کراہت تحریم کا حکم ہے صلحاء وفاق سب پر اعادہ واجب ہے ، جب مبتدع یا فاسق معلن کے سوا کوئی امام نہ مل سکے تو منفردًا پڑھیں کہ جماعت واجب ہے اور اس کی تقدیم بکراہت تحریم اور واجب و مکروہ تحریم دونوں ایک مرتبہ میں ہیں و درء المفاسد اھم من جلب المصالح[2] (مفاسد کا دُور کرنا مصالح کے حصول سے اہم اور ضروری ہوتا ہے۔ت) ہاں اگر جمعہ میں دوسرا امام نہ مل سکے تو جمعہ پڑھیں کہ وہ فرض ہے اور فرض اہم۔

اسی طرح اگر اُس کے پیچھے نہ پڑھنے میں فتنہ ہو تو پڑھیں اور اعادہ کریں کہ اَلْفِتْنَۃُ اَکْبَرُ مِنَ الْقَتْلِ[3] (فتنہ قتل سے بڑی برائی ہے۔ت) واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ نمبر ۸۳۰: ۱۲ صفر ۱۳۲۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ اگر استاد وہابی ہو تو شاگرد اُس کے پیچھے نماز پڑھ سکتا ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: وہابی کے پیچھے نماز جائز نہیں اگر چہ اپنا استاد ہو بلکہ اُسے استاد بتانا ہی اُس کے حق میں زہرِ قاتل سے بدتر ہے فوراً پر ہیز کرے کہ صحبتِ بد آدمی کو بد بنادیتی ہے نہ کہ بد کی تعلیم۔ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں : ایاکم وایاھم لا یضلونکم ولا یفتنونکم[4]۔ واللہ تعالٰی

اعلم (اُن سے دُور بھاگو اور اُن کو اپنے سے دُور کرو کہیں وہ تم کو گمراہ نہ کردیں کہیں وہ تم کو فتنہ میں نہ ڈال دیں۔)

مسئلہ نمبر ۸۳۱: از فیض آباد ڈاک خانہ شہزاد پور مرسلہ عبداللہ طالب العلم ۴ صفر ۱۳۲۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین کہ آیا زانی کے پیچھے نماز جائز ہے یا نہیں، کیونکہ اس مسئلہ میں بہت جھگڑا پیدا ہے یہاں تک حالت گزر گئی کہ نماز جماعت میں تفرق ہو گیا ہے حدیث اور کتاب کی سند ہونا چاہیے۔ بینوا توجروا۔

الجواب: زانی فاسق اور فاسقِ معلن کے پیچھے نماز منع ہے اُسے امام بنانا گناہ ہے اُس کے پیچھے جو نمازیں

---

1 فتح القدیر باب صلوٰۃ المسافر ، مطبوعہ نوریہ رضویہ سکھر ۱/ ۱۲ 2 الاشباہ والنظائر الخامسۃ درء المفاسد اولی من جلب المصالح مطبوعہ ادارۃ القرآن والعلوم الاسلامیہ ۱/ ۱۲۵ 3 القرآن ۲/ ۱۹۱ 4 صحیح مسلم باب النہی عن الروایۃ عن الضعفاء مطبوعہ نور محمد اصح المطابع کراچی ۱/ ۱۰

Fatawa Rizvia Volume 6

...the prayers performed must be repeated; it is stated in Radd al-Muhtar:

Table 1: | 1- مشی فی شرح المنیۃ علی ان کراھۃ تقدیمہ (یعنی الفاسق) کراھۃ تحریم | It is stated in the commentary of Al-Munyah that giving precedence to a transgressor (Fasiq) i.e., making him the Imam, is macrooh-e-tahrimi (prohibitively disliked). (T) |

It is stated in Durr al-Mukhtar:

Table 2: | کل صلاۃ ادیت مع کراھۃ التحریم تجب اعادتھا 2 - واللہ تعالٰی اعلم۔ | Every prayer performed with macrooh-e-tahrimi must be repeated - And Allah Almighty knows best. (T) |

Problem No. 832: From Kangunj, District Etah, Nawab Mohalla, sent by Ibadullah Sahib, Vaccinator, 6 Shaban 1337 AH.

What do the scholars of religion say regarding this matter: Zaid, claiming leadership (imamat) for the five daily obligatory prayers and Friday prayers with a large congregation, habitually wears ordinary shoes that he wears all the time while leading the prayer. At the time of objection, he shows Bakr the translation of a Hadith from Mishkat Sharif claiming that the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) continuously did so. Since there is no collection of religious books here to verify and satisfy, nor is there any scholar through whom proof can be established, it is requested that you kindly provide a scholarly response with references to the book, chapter, page, and line according to the rule.

The Answer:

Honor and disrespect depend on custom ('urf). In Arab countries, people address their father with the letter 'kaf' and 'anta,' which translates to 'tu' (informal 'you' in Urdu). Here, if someone says 'tu' to their father, they are undoubtedly disrespectful and rude, and act against this noble verse: "Say not to them [so much as] 'uff', and do not repel them but speak to them a noble word" (Quran 17:23). For hundreds of years, it has been a common custom to consider entering a mosque wearing used shoes as a sign of disrespect. The leaders of the religion have explicitly stated it to be disrespectful. Imam Burhan-ul-Millah wad-Din, the author of Hidaya, in his book Al-Tajnees wal-Mazeed, and the researcher of Al-Bahr, Zain ibn Nujaym in Bahr-al-Raiq, and Fatawa Sirajiyya, and Alamgiriyya (Volume 5, page 122, Chapter on Disliked

Matters, Fifth Chapter) state: "Entering the mosque while wearing shoes is macrooh (disliked)." (T). Today, if in the court of any Nawab...

1 Radd al-Muhtar, Chapter on Imamat, published by Mustafa al-Babi Egypt 1/414 2 Durr al-Mukhtar, Chapter on Description of Prayer, Mujtabai Press Delhi 1/61 3 Al-Quran 17/23 4 Fatawa Hindiya, Chapter on Manners of the Mosque and Qibla, published by Noorani Kutub Khana Peshawar 5/321 Page 634 of 736

फ़तावा रज़विया खण्ड 6

...जो नमाज़ें पढ़ी गई हैं उनका लौटाना वाजिब है, रद-अल-मुह्तार में है:

सारणी 1: | 1- كراهة تحريم (يعنى الفاسق) كراهة تقديمہ على ان كراهة المنية فى شرح مشى | शरह अल-मुन्या में है कि फ़ासिक़ (यानी गुनाहगार) को आगे करना (यानी उसे इमाम बनाना) कराहते तहरीमी (सख्त नापसंद) है। (त) |

दुर-ए-मुख़्तार में है:

सारणी 2: | 2 - واللہ تعالٰی اعلم۔ كل صلاة اديت مع كراهة التحريم تجب اعادتها | हर वह नमाज़ जो कराहते तहरीमी के साथ अदा की गई हो, उसका लौटाना वाजिब है - और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त) |

मसला नंबर 832: कांगंज, जिला एटा, मोहल्ला नवाब, प्रेषक इबादुल्लाह साहब, वैक्सीनेटर, 6 शाबान 1337 हिजरी।

धर्म के विद्वान इस विषय में क्या कहते हैं: ज़ैद इमामत के दावे के साथ पाँचों समय की अनिवार्य नमाज़ और जुमे की नमाज़ बड़ी जमात के साथ पढ़ाते समय वही साधारण जूते पहने रहता है जो वह हर समय पहनता है। आपत्ति करने पर वह बक्र को मिश्कात शरीफ की एक हदीस का अनुवाद दिखाता है कि हुज़ूर अक़दस (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने हमेशा ऐसा किया। चूँकि यहाँ धार्मिक पुस्तकों का कोई भंडार नहीं है जिससे देखकर इत्मीनान किया जा सके और न ही कोई विद्वान है जिसके माध्यम से प्रमाण तक पहुँचा जा सके, इसलिए आपसे विनती है कि कृपया नियम के अनुसार पुस्तक, अध्याय, पृष्ठ और पंक्ति के संदर्भ के साथ विद्वत्तापूर्ण उत्तर देने की कृपा करें।

उत्तर:

सम्मान और अपमान का आधार रीति-रिवाज (उर्फ़) पर है। अरब में पिता को 'काफ़' और 'अंता' से संबोधित करते हैं जिसका अनुवाद "तू" है। यहाँ यदि कोई पिता को "तू" कहे तो वह निश्चित रूप से असभ्य और गुस्ताख है और इस आयत-ए-करीमा के खिलाफ है: "तो उनसे उफ़ भी न कहना और न उन्हें झिड़कना और उनसे इज़्ज़त की बात कहना" (क़ुरआन 17:23)। सैकड़ों वर्षों से यह आम रीति-रिवाज है कि इस्तेमाल किए हुए जूते पहनकर मस्जिद में जाने को असभ्यता माना जाता है। धर्म के इमामों ने इसके असभ्य होने को स्पष्ट रूप से बताया है। इमाम बुरहान-उल-मिल्लह वद-दीन, हिदाया

के लेखक, अपनी पुस्तक 'अल-तजनीस वल-मजीद' में और 'अल-बहर' के शोधकर्ता ज़ैन इब्न नुजैम ने 'बहर-उर-राइक़' में और 'फ़तावा सिराजिया' और 'आलमगीरिया' (खण्ड 5, पृष्ठ 122, किताब अल-कराहिया, पाँचवाँ अध्याय) में कहा है: "जूते पहनकर मस्जिद में प्रवेश करना मकरूह (नापसंद) है।" (त)। आज अगर किसी नवाब के दरबार...

1 रद अल-मुह्तार, बाब अल-इमामाह, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र द्वारा प्रकाशित 1/414 2 दुर अल-मुख़्तार, बाब सिफ़त अल-सलाह, मुजतबाई प्रेस दिल्ली 1/61 3 अल-क़ुरआन 17/23 4 फ़तावा हिंदिया, बाब फ़ी आदाब अल-मस्जिद वल-क़िबला, नूरानी कुतुब खाना पेशावर द्वारा प्रकाशित 5/321 पृष्ठ 634 का 736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

پڑھی ہوں ان کا پھیرنا واجب ہے، ردالمحتار میں ہے:

جدول 1: | مشی فی شرح المنیۃ علی ان کراھۃ تقدیمہ (یعنی الفاسق) کراھۃ تحریم -1 | شرح منیہ میں ہے کہ فاسق کی تقدیم (یعنی اس کو امام بنانا) کراہتِ تحریمی ہے۔ (ت) |

درِ مختار میں ہے:

جدول 2: | کل صلاۃ ادیت مع کراھۃ التحریم تجب اعادتھا 2 - واللہ تعالٰی اعلم۔ | ہر وہ نماز جو کراہتِ تحریمی کے ساتھ ادا کی گئی ہو اس کا اعادہ واجب ہے۔ (ت) |

مسئلہ نمبر ۸۳۲: از کان گنج ضلع ایٹہ محلہ نواب مرسلہ عباد اللہ صاحب ویکسینٹر ۶ شعبان ۱۳۳۷ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید بزعم امامت نمازِ فرض پنجگانہ و نمازِ جمعہ بجماعت کثیر معمولی جوتا جو ہر وقت پہنا کرتا ہے پہن کر پڑھاتا ہے وقتِ اعتراض بکر کو ترجمہ حدیث مشکوٰۃ شریف دکھاتا ہے کہ حضور اقدس صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے الدوام پڑھی ہے چونکہ یہاں نہ کوئی ذخیرہ کتب دینیہ ہے جو دیکھ کر اطمینان کرایا جائے اور نہ کوئی عالم ہے جس کے ذریعہ سے پایہ ثبوت کو پہنچیں لہٰذا آپ سے التجا کی جاتی ہے کہ براہِ نوازش عالمانہ آپ مع حوالہ کتاب و باب و صفحہ و سطر حسبِ قاعدہ مرحمت فرمائیے۔

الجواب:

تعظیم و توہین کا مدار عرف پر ہے عرب میں باپ کو کاف اور انت سے خطاب کرتے ہیں جس کا ترجمہ "تو" ہے اور یہاں باپ کو "تو" کہے بیشک بے ادب گستاخ اور اس ایہ کریمہ کا مخالف ہے فَلا تَقُلْ لَّهُمَا أُفٍّ وَّلا تَنْهَرْهُمَا وَ قُلْ لَّهُمَا قَوْلاً كَرِيْمًا 3 (ماں باپ کو ہوں نہ کہہ نہ جھڑک اور ان سے عزت کی بات کہہ) صد ہا سال سے عرفِ عام ہے کہ استعمالی جوتے پہن کر مسجد میں جانے کو بے ادبی سمجھتے ہیں ائمہ دین نے اس کے بے ادبی ہونے کی تصریح فرمائی، امام برہان الملۃ والدین صاحب ہدایہ کی کتاب التجنیس والمزید اور محقق بحر زین ابن نجیم کی بحر الرائق اور فتاویٰ سراجیہ اور عالمگیریہ جلد پنجم ص ۱۲۲ کتاب الکراہیۃ باب خامس میں ہے: دخول المسجد متنعلا مکروہ 4 (مسجد میں جوتا پہن کر داخل ہونا مکروہ ہے۔ت) آج اگر کسی نواب کے دربار

1 ردالمحتار، باب الامامۃ، مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/ ۴۱۴ 2 در مختار باب صفۃ الصلوٰۃ مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۶۱ 3 القرآن ۱۷/ ۲۳ 4 فتاویٰ ہندیہ باب فی آداب المسجد والقبلہ مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور ۵/ ۳۲۱ Page 634 of 736

Going into it with shoes on is considered disrespectful. Prayer is the court of Allah, the One, the Subduer. To go against the way of Muslims, to create strife and corruption among them, and to make them feel aversion is haram (forbidden) and strictly haram according to the definitive texts of the Great Quran and authentic Hadiths. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 833: From Tarpol Solul post office Harwal district Darbhanga Bilgar Charsa sent by Abdul Hakim Sahib 21 Jamadi-ul-Awwal 1336 AH. If a Muslim has a house in another neighborhood outside the settlement and he is also an Imam, and sometimes he accidentally comes to pray and lead the five daily prayers, but he always stays in his own neighborhood and does not care about his five daily prayers and leading them, and only comes to the mosque once a week to lead the Friday (Jumu'ah) prayer, and always seeks the position of Imam (with pride) saying "I am the Imam," is the prayer behind such an Imam valid or not? And are the prayers valid behind those who join this Imam?

The Answer: The person who has been appointed as the Friday Imam, if he comes to lead only on Fridays, or also comes occasionally or doesn't come, and performs congregational prayers regularly in his own neighborhood, then there is no blame on him, nor on those who join him, and he is certainly the Friday Imam. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 834: From city Frashi neighborhood, requested by the residents via Hidayatullah Najar, 12 Muharram-ul-Haram 1339 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: A person who is said to be a "Tafdhiliya" (one who favors Ali over Abu Bakr and Umar without denying their caliphate), and it is also said that he openly maintains relationships contrary to Sharia with prostitutes, etc., and also has hair hanging down his shoulders like women. If such a person, without permission, goes to a prayer place and leads the Friday prayer as an Imam and then leaves with his companions, and after that, the remaining crowd at the same place and time prays the Friday prayer a second time under the leadership of a designated Imam, then in such a case, is the prayer led by the first Imam valid, or the second Imam's, or were neither valid?

The Answer: Muslims! Prayer is a divine command; it can only be performed according to the rules of Sharia. It is not a private matter that anyone can do whenever they want. The Sharia rule is that for the establishment of the Friday

prayer, the Sultan of Islam or his deputy or his authorized person is a condition. And where there is no Sultan of Islam, a reliable, learned scholar (Faqih) who is the most knowledgeable among the people of the city can be appointed as the Imam of Friday and Eid prayers with permission, and where even this is not possible...

उसमें आदमी जूता पहनकर जाए तो अदब के ख़िलाफ़ होगा, नमाज़ अल्लाह वाहिद क़हार का दरबार है, मुसलमानों की राह के ख़िलाफ़ चलना और उनमें फ़िल्ला व फ़साद पैदा करना और उन्हें नफ़रत दिलाना क़ुरआन-ए-अज़ीम और अहादीस-ए-सहीहा के नुक़ूस-ए-क़ातेआ से हराम और सख़्त हराम है। वल्लाहु तआला आलम।

मसअला नंबर 833: अज़ तरपोल सोलोल डाकखाना हरवल ज़िला दरभंगा बिलगर चरसः मुर्सला अब्दुल हकीम साहब 21 जमादी-उल-अउला 1336 हिजरी। अगर किसी मुसलमान का बस्ती से बाहर दूसरे मोहल्ले में मकान हो और वो इमाम भी हो और कभी पंचवक्ता नमाज़ में धोखे से आकर नमाज़ पढ़े और इमामत करे और वो हमेशा अपने मोहल्ले में मौजूद रहता है और अपनी नमाज़-ए-पंचवक्ता और इमामत का ख़याल नहीं करता है और मस्जिद में एक हफ़्ते में जुमा की नमाज़ पढ़ाने के वास्ते आया करता है और हमेशा इमामत की जुस्तजू (फ़ख़्र) रखता है कि हम इमाम हैं, ऐसे इमाम के पीछे नमाज़ दुरुस्त है या नहीं? और इस इमाम की शिरकत करने वाले जो लोग हैं उनके पीछे नमाज़ दुरुस्त है या नहीं?

अल-जवाब: जिस शख़्स को जुमा का इमाम मुक़र्रर किया है वो अगर फ़क़त जुमा ही को आकर इमामत करता है या और भी कभी-कभी आ जाता है या नहीं आता और अपने मोहल्ले में नमाज़ बा-जमाअत पाबंदी से पढ़ता है तो उस पर कोई इल्ज़ाम नहीं, न उसके शरीकों पर कोई इल्ज़ाम है और वो ज़रूर जुमा का इमाम है। वल्लाहु तआला आलम।

मसअला नंबर 834: अज़ शहर फ़राशी मोहल्ला मसऊला अहल-ए-मोहल्ला मारफ़त हिदायतउल्लाह नज्जार 12 मुहर्रमुल हराम 1339 हिजरी। क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन इस मसअले में कि एक शख़्स जिसकी निस्बत तफ़्ज़ीलीया होना कहा जाता है और यह भी कहा जाता है कि तवाइफ़ों के साथ अलानिया ख़िलाफ़-ए-शरअ राह-ओ-रस्म वग़ैरह रखता है नीज़ जिसके सर के बाल भी मिस्ल औरतों के शानों से नीचे लटकते हों, वो किसी जाए-नमाज़ पर बिला इजाज़त मौक़े के पेश इमाम के अगर नमाज़-ए-जुमा अदा करने की ग़रज़ से ब-हैसियत इमाम बन कर नमाज़-ए-जुमा अदा कर के मय अपने हमराहियों के चला जाए, बाद इसके बाक़ी अम्बो (भीड़) उसी मौक़े और जगह पर वहीं मुजव्वज़ा इमाम की तक़लीद से उसके पीछे दूसरी बार नमाज़-ए-जुमा अदा करें तो ऐसी सूरत में पहले इमाम की नमाज़ जो उसने अदा की है जायज़ है या दूसरे इमाम की या दोनों न हुईं।

अल-जवाब: मुसलमानों! नमाज़ हुक्म-ए-शरई है अहकाम-ए-शरअ के मुताबिक़ ही हो सकती है कोई ख़ानगी मामला नहीं कि जिसने जब चाहा कर लिया, हुक्म-ए-शरई यह है कि इक़ामत-ए-जुमा के लिए सुल्तान-ए-इस्लाम या उसका नायब या उसका माज़ून शर्त है और जहाँ सुल्तान-ए-इस्लाम न हो आलिम-ए-दीन फ़क़ीह मोअतमद आलम अहल-ए-बलद के इज़्न से इमाम-ए-जुमा व ईदैन मुक़र्रर हो सकता है और जहाँ यह भी न हो...

میں آدمی جوتا پہنے جائے تو بے ادب ٹھہرے، نماز اللہ واحد قہار کا دربار ہے، مسلمانوں کی راہ کے خلاف چلنا اور ان میں فتنہ و فساد پیدا کرنا اور انھیں نفرت دلانا قرآن عظیم واحادیث صحیحہ کے نصوص قاطعہ سے حرام اور سخت حرام ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۸۳۳: از ترپول سولول ڈاکخانہ ہرول ضلع دربھنگہ بلگر چرسہ مرسلہ عبدالحکیم صاحب ۲۱جمادی الاولی ۱۳۳۶ھ اگر کسی مسلمان کا بستی سے باہر دوسرے محلہ میں مکان ہو اور وہ امام بھی ہو اور کبھی پنجوقتی نماز میں دھوکے سے آکر نماز پڑھے اور امامت کرے اور وہ ہمیشہ اپنے محلہ میں موجود رہتا ہے اور اپنی نماز پنجوقتی اور امامت کا خیال نہیں کرتا ہے اور مسجد میں ایک ہفتہ میں جمعہ کی نماز پڑھانے کے واسطے آیا کرتا ہے اور ہمیشہ امامت کا جستجو (فخر) رکھتا ہے کہ ہم امام ہیں ایسے امام کے پیچھے نماز درست ہے یا نہیں؟ اور اس امام کی شرکت کرنے والے جو لوگ ہیں ان کے پیچھے نماز درست ہے یا نہیں؟

الجواب: جس شخص کو جمعہ کا امام مقرر کیا ہے وہ اگر فقط جمعہ ہی کو آکر امامت کرتا ہے یا اور بھی کبھی کبھی آ جاتا ہے یا نہیں آتا اور اپنے محلہ میں نماز باجماعت پابندی سے پڑھتا ہے تو اس پر کوئی الزام نہیں، نہ اس کے شریکوں پر کوئی الزام ہے اور وہ ضرور جمعہ کا امام ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۸۳۴: از شہر فراشی محلہ مسئولہ اہل محلہ معرفت ہدایت اللہ نجار ۱۲ محرم الحرام ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ایک شخص کہ جس کی نسبت تفضیلیہ ہونا کہا جاتا ہے اور یہ بھی کہا جاتا ہے کہ طوائفوں کے ساتھ علانیہ خلاف شرع راہ و رسم وغیرہ

رکھتا ہے نیز جسکے سرکے بال بھی مثل عورتوں کے شانوں سے نیچے لٹکتے ہوں وہ کسی جائے نماز پر بلا اجازت موقع کے پیش امام کے اگر نماز جمعہ ادا کرنے کی غرض سے بحیثیت امام بن کر نماز جمعہ ادا کر کے مع اپنے ہمراہیوں کے چلا جائے بعد اس کے باقی انبواہ اسی موقع اور جگہ پر وہیں مجوزہ امام کی تقلید سے اس کے پیچھے دوسری بار نماز جمعہ ادا کریں تو ایسی صورت میں پہلے امام کی نماز جو اس نے ادا کی ہے جائز ہے یا دوسرے امام کی یا دونوں نہ ہوئیں۔

الجواب: مسلمانو! نماز حکم شرعی ہے احکام شرع کے مطابق ہی ہو سکتی ہے کوئی خانگی معاملہ نہیں کہ جس نے جب چاہا کر لیا، حکم شرعی یہ ہے کہ اقامت جمعہ کے لئے سلطان اسلام یا اس کا نائب یا اس کا مأذون شرط ہے اور جہاں سلطان اسلام نہ ہو عالم دین فقیہ معتمد اعلم اہل بلد کے اذن سے امام جمعہ وعیدین مقرر ہو سکتا ہے اور جہاں یہ بھی نہ ہو

And out of necessity, whoever is selected by the general Muslims there can lead the Friday or Eid prayers. Every person does not have the authority to become the Imam of Friday or Eid prayers on their own, or by the word of one, two, ten, twenty, or fifty to a hundred people. Such a person, even if their belief is correct and there is no open sin or transgression in their actions, still cannot lead Friday and Eid prayers. If they do, the prayer behind them will be absolutely void, because the presence of an Imam according to one of those three ways was a condition for the validity of the prayer here. When the condition is missing, the conditioned act (the prayer) is missing. Therefore, in the questioned situation, the Friday prayer of the first group of people was absolutely void and that of the second group was correct. It is stated in Durr al-Mukhtar:

"The Sultan or his appointee for its establishment is a condition for its (Friday prayer's) validity."[1] | For the validity of Friday prayer, the Sultan or the person authorized by the Sultan to establish Friday prayer is necessary. (T)

It is stated in Hadiqa-e-Nadiya:

"When the era is devoid of a competent Sultan, then matters are entrusted to the scholars, and it is obligatory for the Ummah to refer to them, and they become the governors. If their gathering upon one individual becomes difficult, then every region becomes independent by following its scholars. If they are many, then the most knowledgeable among them is to be followed."[2] | When the era becomes devoid of a perfect Sultan, then matters will be handed over to the scholars, and it will be mandatory for the Ummah to turn towards the scholars, and the scholars will become the guardians. And when the consensus and agreement of scholars on any single matter becomes difficult, then people should follow the scholars of their respective regions. If there is a plurality of scholars in the region, then they should follow the greatest scholar among them. (T)

It is stated in Tanwir al-Absar and Durr al-Mukhtar:

"(The public's appointment) of a Khateeb is not considered valid in the presence of those mentioned."[3] And Allah Almighty knows best. | (The appointment by common people) of a preacher is not valid while any one of the aforementioned people is present. (T)

Issue No. 835: From Kanpur, Prathi Nath School, asked by Qazi Muhammad Shamsuddin, 21 Safar 1339 AH. What do the scholars of Bareilly say regarding this: if a person belonging to the Hanafi school of thought, who believes in the miracles of the saints of Allah, is well-versed in religious knowledge and the art of Tajweed, has become blind in old age, how is his leadership (Imamat)? It is written in Sharh Wiqayah, Volume 1, Chapter of Friday, page 242 that:

---

[1] Durr al-Mukhtar, Chapter of Friday, printed by Matba' Mujtabai Delhi, 1/109. [2] Hadiqa-e-Nadiya Sharh Tariqa-e-Muhammadiyya, Third Type from the Second Type of Knowledge, etc., printed by Nooriya Razawiyya Faisalabad, 1/351. [3] Durr al-Mukhtar Sharh Tanwir al-Absar, Chapter of Friday, printed by Matba' Mujtabai Delhi, 1/110.

फ़तावा-ए-रज़विया जिल्द छठी

और मजबूरी में जिसे वहाँ के आम मुसलमान चुन लें, वह जुमा या ईद की नमाज़ पढ़ा सकता है। हर व्यक्ति को यह अधिकार नहीं है कि वह स्वयं या एक, दो, दस, बीस, या सौ पचास लोगों के कहने पर जुमा या ईद का इमाम बन जाए। ऐसा व्यक्ति, भले ही उसका अकीदा (आस्था) सही हो और आचरण में भी कोई खुला पाप न हो, तब भी जुमा और ईद की इमामत नहीं कर सकता। यदि वह ऐसा करता है, तो उसके पीछे की नमाज़ बिल्कुल अमान्य होगी, क्योंकि नमाज़ की वैधता के लिए उन तीन तरीकों में से एक प्रकार का इमाम होना शर्त (अनिवार्य) था। जब शर्त गायब है, तो शर्त पर आधारित कार्य (नमाज़) भी गायब (अमान्य) है। इसलिए, पूछे गए मामले में, पहले लोगों का जुमा बिल्कुल अमान्य हुआ और दूसरे लोगों का सही। दुर्रे मुख़्तार में है:

"जुमा की वैधता के लिए सुल्तान या उसकी ओर से नियुक्त व्यक्ति का होना शर्त है।"[1] | जुमा की वैधता के लिए सुल्तान या उस व्यक्ति का होना जिसे सुल्तान ने जुमा कायम करने की अनुमति दी हो, आवश्यक है। (त)

हदीक़ा नदिया में है:

"जब ज़माना सक्षम सुल्तान से खाली हो जाए, तो मामले विद्वानों (उलेमा) को सौंप दिए जाएंगे और उम्मत पर उलेमा की ओर रुख करना अनिवार्य होगा और वे (विद्वान) शासक बन जाएंगे। फिर यदि उनका किसी एक व्यक्ति पर एकत्र होना कठिन हो जाए, तो हर क्षेत्र अपने उलेमा के अनुसरण से स्वतंत्र हो जाएगा। यदि वे अधिक हों, तो उनमें से सबसे बड़े विद्वान का अनुसरण किया जाए।"[2] | जब ज़माना पूर्ण सुल्तान से खाली हो जाए तो मामले उलेमा के सुपुर्द होंगे और उम्मत पर उलेमा की तरफ रुजू (रुख) करना लाज़िम होगा और उलेमा हाकिम बन जाएंगे। और जब उलेमा का किसी एक मामले पर इजमा (सहमति) और इत्तेफाक मुश्किल हो जाए, तो लोग अपने-अपने क्षेत्र के उलेमा का अनुसरण करें, अगर क्षेत्र के उलेमा की संख्या अधिक हो तो फिर उनमें से बड़े आलिम (विद्वान) का अनुसरण करें। (त)

तन्वीरुल अबसार और दुर्रे मुख़्तार में है:

"(आम जनता द्वारा) खतीब नियुक्त करना तब मान्य नहीं है जब ऊपर वर्णित लोगों में से कोई एक मौजूद हो।"[3] और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। | (आम लोगों का मुकर्रर करना) खतीब को मोतबर (मान्य) नहीं मानता जबकि उल्लेखित लोगों में से कोई एक मौजूद हो। (त)

मसला नंबर ८३५: कानपुर से, प्रथी नाथ स्कूल, प्रेषक काज़ी मोहम्मद शम्सुद्दीन, २१ सफ़र १३३९ हिजरी। बरेली के विद्वान इस बारे में क्या कहते हैं कि यदि कोई व्यक्ति हनफ़ी पंथ का अनुयायी हो, अल्लाह के वलियों के चमत्कारों (करामतों) को मानने वाला हो, धार्मिक ज्ञान और तजवीद की कला में पारंगत हो, और बुढ़ापे में अंधा हो गया हो, तो उसकी इमामत कैसी है? शरह विकाया, जिल्द पहली, जुमा का अध्याय, पृष्ठ २४२ में लिखा है कि:

---

[1] दुर्रे मुख़्तार, जुमा का अध्याय, मतबा मुजतबाई दिल्ली १/१०९। [2] हदीक़ा नदिया शरह तरीक़ा-ए-मुहम्मदिया, तीसरे प्रकार के ज्ञान का दूसरा प्रकार आदि, नूरिया रज़विया फैसलाबाद १/३५१। [3] दुर्रे मुख़्तार शरह तन्वीरुल अबसार, जुमा का अध्याय, मतबा मुजतबाई दिल्ली १/११०।

وبمجبوری جسے وہاں کے عامہ مسلمین انتخاب کرلیں وہ امامت جمعہ یا عیدین کرسکتا ہے ہر شخص کو اختیار نہیں کہ بطور خود یا ایک دو یا دس بیس یا سو پچاس کے کہے سے امام جمعہ یا عیدین بن جائے ایسا شخص اگرچہ اس کا عقیدہ بھی صحیح ہو اور عمل میں بھی فسق وفجور نہ ہو جب بھی امامتِ جمعہ و عیدین نہیں کرسکتا اگر کرے گا نماز اس کے پیچھے باطل محض ہوگی کہ اُن تین طریقوں میں سے ایک وجہ کا امام یہاں شرطِ صحتِ نماز تھا جب شرطِ مفقود مشروط مفقود ولہٰذا صورتِ مسئولہ میں پہلے لوگوں کا جمعہ باطل محض ہوا اور دوسرے لوگوں کا صحیح۔ دُرِ مختار میں ہے:

یشترط لصحتھا السلطان او مأمورہ بإقامتھا[1]- | جمعہ کی صحت کے لئے سلطان یا اس شخص کا ہونا جس کو سلطان نے اقامتِ جمعہ کی اجازت دی ہو ضروری ہے (ت)

حدیقہ ندیہ میں ہے:

اذا خلا الزمان من سلطان ذی کفایۃ فالامور موکلۃ الی العلماء ویلزم الامۃ الرجوع الیھم ویصیرون ولاۃ فاذاعسر جمعھم علی واحد استقل کل قطر بأتباع علمائہ فان کثروا فالمتبع اعلمھم [2]- | جب زمانہ کامل سلطان سے خالی ہو جائے تو معاملاتِ علماء کے سپرد ہوں گے اور امّت پر علماء کی طرف رجوع لازم ہوگا اور علماء والی بن جائیں گے اور جب علماء کا کسی ایک معاملہ پر اجماع و اتفاق مشکل ہوجائے تو لوگ اپنے اپنے علاقے کے علماء کی اتباع کریں، اگر علاقے کے علماء کی کثرت ہو تو پھر ان میں سے بڑے عالم کی اتباع کریں (ت)

تنویر الابصار ودرِ مختار میں ہے:

(نصب العامة) الخطیب غیر معتبر مع وجود من ذکر [3]- واللہ تعالیٰ اعلم | (عام لوگوں کا مقرر کرنا) خطیب کو معتبر نہیں جبکہ مذکورہ لوگوں میں سے کوئی ایک موجود ہو۔ (ت)

مسئلہ نمبر ۸۳۵: از کانپور پر تھی ناتھ اسکول مسئولہ قاضی محمد شمس الدین ۲۱ صفر ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے بریلی اس بارہ میں کہ اگر کوئی شخص حنفی المذہب و کراماتِ اولیاء اللہ کا قائل، علم دین وفنِ تجوید سے بہرہ ور حالتِ پیری میں نابینا ہوگیا ہو تو اس کی امامت کیسی ہے، شرح وقایہ جلد اول، باب الجمعہ صفحہ ۲۴۲ میں مرقوم ہے کہ:

---

[1] دُرِ مختار ، باب الجمعۃ ، مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱ / ۱۰۹ [2] حدیقہ ندیہ شرح طریقہ محمدیہ النوع الثالث من انواع العلوم الثانی الخ مطبوعہ نوریہ رضویہ فیصل آباد ۱ / ۳۵۱ [3] دُرِ مختار شرح تنویر الابصار باب الجمعہ مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱ / ۱۱۰

Fatawa Razawiyya Volume Six

[Boxed Text] Arabic: Whoever is fit to be an Imam in other than it (other than the Friday prayer) is fit in it, meaning if a traveler or a slave leads the Friday prayer, it is valid etc. Urdu translation: One who has the capacity to be an Imam (besides the Friday prayer) can also be an Imam in it; i.e., if a traveler, a sick person, or a slave leads the Friday prayer, the Friday prayer will be valid, etc. (T)

Does this brief text from 'Mukhtasar al-Wiqaya' and 'Sharh al-Wiqaya' imply a criticism that the prayer of followers is not valid behind a blind person who possesses all the aforementioned qualities? The text of 'Bahr al-Ra'iq' Volume 1, Page 369 clearly indicates that Ibn Umm Maktum, who was blind, was appointed as an Imam. Please provide a reference from the books.

The Answer: A blind Sunni who is correct in belief, correct in purity (tahara), and correct in recitation (qira'at) can undoubtedly be an Imam. It is only that someone 'other' than him is more preferable (awla) if the blind person does not have more knowledge of the issues of prayer and purity than him, otherwise he himself is more preferable, as in 'al-Durr' etc. (as the ruling for the blind is stated in 'Durr al-Mukhtar' etc. - T). The text mentioned in the question has no relation to the negation of a blind person's imamate. Yes, in Friday and Eid prayers, whether seeing or blind, only that person can be the Imam who is either the Sultan of Islam himself, or his authorized representative, or the scholar of the people of the city there, or his authorized representative. Otherwise, out of necessity, if the common Muslims have appointed someone as Imam in these prayers, and if a blind person is among those five, Friday and Eid prayers can be performed behind him, and if a seeing person is not among them, they will not be performed behind him. And Allah Ta'ala knows best.

Problem No. 846: From Basharat Ganj, District Bareilly, questioned by Haji Raza Khan Sahib, 4 Rajab 1339 AH. What do the scholars of religion say regarding this issue that Zaid is from the Sadaat (descendants of the Prophet) and also leads prayers? He considers Wahhabis and Sunni scholars as equal. When the issue of the 'Knowledge of the Unseen' (Ilm al-Ghayb) is mentioned, he says in response that this issue is not new, it has been disputed since ancient times, and scholars have been debating and arguing with each other. We cannot say anything about this issue. And regarding the practices of a Sunni Mufti scholar that pertain to obligations (wajib), Sunnah, and recommended (mustahabb) acts, he says that if one does them there is reward, and if not, there is no harm. And for the purpose of providing aid to the opposition

committee formed by Wahhabi scholars, he makes great efforts to collect and provide donations. And when it is said that Sunni scholars refuse, he says in response, 'Whose mouth should we shut? People call Sunni scholars partisans of the English and employees.' Amr is a disciple of a Sunni Mufti scholar.

---

1 Sharh al-Wiqaya, Chapter on Friday, printed by Al-Maktabah al-Rashidiyya, Delhi, 1/222 2 Durr al-Mukhtar, Chapter on Imamate, printed by Mujtabai Press, Delhi, 1/83

फतावा रज़विया जिल्द छठी

[बॉक्स टेक्स्ट] अरबी: जो इसके अलावा (जुमे की नमाज़ के अलावा) इमाम बनने की योग्यता रखता है, वह इसमें भी इमाम बन सकता है, यानी अगर मुसाफिर या गुलाम ने जुमे की इमामत कराई तो जुमा सही होगा आदि। उर्दू अनुवाद: जो इस (नमाज़-ए-जुमा के अलावा) इमाम बनने की योग्यता रखता है, वह इसमें भी इमाम बन सकता है; यानी अगर मुसाफिर, बीमार या गुलाम ने जुमे की इमामत कराई तो जुमा सही होगा, आदि। (त)

क्या 'मुख्तसर अल-विक़ाया' और 'शराह अल-विक़ाया' की इस संक्षिप्त इबारत से यह आलोचना निकलती है कि जो अंधा व्यक्ति उपर्युक्त सभी गुणों से संपन्न हो, उसके इमाम बनने से मुक्तदियों की नमाज़ नहीं होती? 'बहर अर-रइक' जिल्द 1, पेज 369 की इबारत स्पष्ट रूप से दर्शाती है कि इब्न उम्मे मकतूम, जो अंधे थे, इमाम बनाए गए थे। कृपया किताबों के हवाले से उत्तर दें।

जवाब: एक अंधा सुन्नी जो सही अकीदा (विश्वास), सही तहारत (पवित्रता) और सही क़िरात (पाठ) वाला हो, वह निस्संदेह इमाम हो सकता है। केवल इतना है कि उसके अलावा कोई 'दूसरा' व्यक्ति अधिक बेहतर (औला) है यदि वह अंधा व्यक्ति नमाज़ और तहारत के मसलों में उससे अधिक ज्ञान न रखता हो, अन्यथा वह स्वयं ही अधिक बेहतर है, जैसा कि 'अद-दुर्र' आदि में है (जैसा कि 'दुर्रे मुख्तार' आदि में अंधे का हुक्म बयान किया गया है - त)। सवाल में उल्लिखित इबारत का अंधे की इमामत के निषेध से कोई संबंध नहीं है। हाँ, जुमा और ईदैन की नमाज़ों में, चाहे वह आँखों वाला हो या अंधा, वही व्यक्ति इमाम हो सकता है जो स्वयं सुल्तान-ए-इस्लाम हो या उसका अधिकृत प्रतिनिधि, या वहाँ के शहर के लोगों का आलिम या उसका अधिकृत प्रतिनिधि। अन्यथा ज़रूरत पड़ने पर जिसे आम मुसलमानों ने इन नमाज़ों में इमाम नियुक्त किया हो, अगर अंधा इन पांच में से है तो जुमा और ईदैन उसके पीछे हो सकेंगे और अगर आँखों वाला उनमें से नहीं है तो उसके पीछे नहीं होंगे। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 846: बशारत गंज, जिला बरेली से, हाजी रज़ा खान साहब द्वारा पूछा गया, 4 रजब 1339 हिजरी। धर्म के विद्वान इस मसले में क्या कहते हैं कि ज़ैद सादात (पैगंबर के वंशज) कौम से है और इमामत भी करता है, वह वहाबी और सुन्नी आलिम को एक जैसा समझता है। जब 'इल्म-ए-ग़ैब' के मसले का ज़िक्र आता है, तो वह जवाब में कहता है कि यह मसला नया नहीं है, प्राचीन काल से इसी तरह झगड़ा चला आ रहा है और आलिम आपस में बहस और दलीलें करते आ रहे हैं। हम इस

मसले के बारे में कुछ नहीं कह सकते। और एक सुन्नी मुफ्ती आलिम के उन कार्यों के बारे में, जो वाजिब, सुन्नत और मुस्तहब से संबंधित हैं, वह कहता है कि करे तो सवाब है, न करे तो कोई हर्ज नहीं। और वहाबी आलिमों द्वारा बनाई गई विरोध समिति की मदद के उद्देश्य से वह बड़ी मेहनत से चंदा इकट्ठा करके पहुँचाता है। और जब यह कहा जाता है कि सुन्नी आलिम इनकार करते हैं, तो वह जवाब में कहता है कि हम किसका मुँह पकड़ें? लोग तो सुन्नी आलिमों को अंग्रेज़ों के पक्षधर और मुलाज़िम कहते हैं। अम्र एक सुन्नी मुफ्ती आलिम का मुरीद है।

---

1 शराह अल-विक़ाया, बाब अल-जुमुआ, अल-मकतबतुल रशीदिया दिल्ली 1/ 222 2 दुर्रे मुख्तार, बाब अल-इमामा, मतबा मुज्तबाई दिल्ली 1/ 83 पृष्ठ 637 का 736

فتاوی رضویہ جلد ششم

[Boxed Text] من صلح اماماً في غيرها (في غير صلوة الجمعة) صلح فيها اي ان ام المسافر او العبد في الجمعة صحت الخ جو اس (نماز جمعہ کے علاوہ) امام بننے کی صلاحیت رکھتا ہے وہ اس میں بھی امام بن سکتا ہے، یعنی اگر مسافر، مریض یا غلام نے جمعہ کی امامت کرائی تو جمعہ صحیح ہو گا الخ (ت)

کیا اس عبارت مختصر مختصر وقایہ و شرح وقایہ سے یہ تنقید مترشح ہوتی ہے کہ جو نابینا متصف بہمہ اوصاف مذکورہ بالا ہو اُس کے امام بننے سے مقتدیوں کی نماز نہیں ہوتی، نسخہ بحر الرائق جلد اول ص ۳۶۹ کی عبارت صاف دال ہے کہ ابن ام مکتوم جو نابینا تھے امام بنائے گئے تھے بحوالہ کتب مرحمت فرمائیے۔

الجواب: نابینا سنی صحیح العقیدہ صحیح الطہارۃ صحیح القراءۃ بلاشبہ امام ہو سکتا ہے صرف اس کا "غیر" اولیٰ ہے کہ اگر یہ اُس سے مسائل نماز و طہارت میں علم زیادہ نہ رکھتا ہو ورنہ یہی اولیٰ ہے کما فی الدر وغیرہ (جیسا کہ دُر مختار وغیرہ میں نابینا کا حکم بیان کیا گیا ہے۔ت) عبارت مذکورہ سوال کو امامت نابینا کی نفی سے کوئی تعلق نہیں، ہاں جمعہ و عیدین میں بینا ہو یا نابینا وہی شخص امام ہو سکتا ہے جو خود سلطان اسلام ہو یا اُس کا ماذون یا وہاں کا عالم اہل بلد یا اُس کا ماذون ہو ورنہ بضرورت جسے عام مسلمانوں نے ان نمازوں میں امام مقرر کیا نابینا اگر ان پانچ میں سے ہے تو جمعہ و عیدین اس کے پیچھے ہو سکیں گے اور بینا اگر ان میں سے نہیں تو اُس کے پیچھے نہ ہوں گے۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ نمبر ۸۴۶: از بشارت گنج ضلع بریلی مسئولہ حاجی رضا خان صاحب ۴ رجب ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید قوم سادات سے ہے اور امامت بھی کرتا ہے وہابیہ اور سنی عالم کو یکساں سمجھتا ہے، مسئلہ علم غیب کا جب ذکر آتا ہے جواب میں کہتا ہے یہ مسئلہ جدید نہیں ہے قدیم سے اسی طرح جھگڑا ہوتا چلا آیا ہے اور عالم باہمی تقریر اور حجت کرتے چلے آئے ہیں اس مسئلہ کے بارے میں ہم کچھ نہیں کہہ سکتے اور سائل ایک مفتی سنی عالم کے جو کہ واجبات سنت و مستحب سے تعلق رکھتے ہیں اُن کے بارے میں کہتا ہے کہ کرے تو ثواب ہے نہ کرے تو حرج نہیں اور خلاف کمیٹی جو علمائے وہابیہ کر رہے ہیں اُن کی امداد پہنچانے کی غرض سے نہایت کوشش سے چندہ فراہم کر کے پہنچاتا ہے اور جب یہ کہا جاتا ہے کہ سنی عالم انکار کرتے ہیں تو جواب میں کہتا ہے کہ ہم کس کا منہ پکڑیں لوگ تو سنی عالموں کو طرفدار انگریز و ملازم کہتے ہیں عمرو ایک سنی مفتی عالم کا مرید ہے۔

---

1 شرح وقایہ باب الجمعہ مطبوعہ المکتبۃ الرشید دہلی ۱/ ۲۲۲ 2 در مختار باب الامامۃ مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۸۳ Page 637 of 736

Zaid, being repelled by these matters, abandons the Friday prayer and prays Zuhr. Is Zaid fit for leadership (imamat) in this situation or not? Evidence should be provided from reliable books. State the ruling and be rewarded.

The Answer: The person who considers Wahhabis and Sunni scholars as equal, this much alone is sufficient for him to be outside the fold of Islam. Prayer behind him is void, just like prayer behind a Hindu or a Christian. If Friday prayer cannot be found elsewhere and he cannot be removed from leadership, then it is obligatory to pray Zuhr. If one performs Friday prayer behind him, they will commit a severe and major sin, even if they pray Zuhr afterwards. And if they do not pray [Zuhr], neither Friday nor Zuhr will be valid, and the obligation will remain on their head. It is stated in Fath al-Qadir:

Muhammad narrated from Abu Hanifa and Abu Yusuf (may Allah be pleased with them) that prayer behind the people of deviant desires is not permissible.

Imam Muhammad narrated from Imam Abu Hanifa and Imam Abu Yusuf (may Allah be pleased with them) that prayer behind innovators and those of a deviant religion is not permissible. (T)

And Allah Almighty knows best.

Problem No. 83: From Marehra Sharif, District Etah, sent by Mr. Syed Zahoor Haider Mian Sahib, 4 Jumada al-Ukhra 1312 AH. What do the scholars of religion say regarding this problem: a person always performs Tayammum for prayer instead of Ghusl due to frequent nocturnal emissions (ihtilam) or some other physical illness. Is it permissible for him to lead the prayer with Tayammum while other followers have performed Wudu? State the ruling and be rewarded.

The Answer: Frequent nocturnal emission is not in itself a valid reason for Tayammum unless bathing is harmful. If one prays with Tayammum without a sound fear of harm, their own prayer will not be valid, let alone those who follow him. Yes, if there is an actual existing illness in which bathing will be harmful, or there is a fear of developing an illness from bathing—and this harm and fear are known through one's own experience or by the advice of a skilled, non-transgressive Muslim physician—then at that time prayer with Tayammum will be permissible for him. And now, the prayer of all followers behind him is correct. In short, the imam's performing Tayammum while the followers have purified with water does not interfere with the

validity of the leadership (imamat). However, if the imam performed Tayammum without Shariah permission, then neither his prayer nor the prayer of those behind him will be valid. In Tanwir it is stated: صح اقتداء متوضئ بمتيمم (The prayer of one who has performed Wudu is valid behind one who has performed Tayammum. T). Bahr al-Raiq.

1. Fath al-Qadir, Chapter on Imamat, published by Nooriya Razviya Sukkur, 2/304.
2. Durr al-Mukhtar, commentary on Tanwir al-Absar, Mujtabai Press Delhi, 1/85.

फ़तावा-ए-रज़विया जिल्द छठी

ज़ैद की इन बातों से मुतनफ़्फ़िर होकर जुमा की नमाज़ तर्क करके जोहर पढ़ता है, क्या इस सूरत में ज़ैद इमामत के क़ाबिल है या नहीं? मोतबर किताबों से सुबूत होना चाहिए। बयान फ़रमाएं, सवाब पायें।

अल-जवाब: जो शख़्स वहाबिया और अहले सुन्नत उलेमा को यकसां समझता है, इतनी बात उसके इस्लाम से ख़ारिज होने के लिए बहुत है। उसके पीछे नमाज़ बातिल है जैसे किसी हिंदू या ईसाई के पीछे। जुमा अगर और जगह न मिल सके और न उसे इमामत से अलग किया जा सके तो फ़र्ज़ है कि जोहर पढ़े। उसके पीछे जुमा पढ़ेगा तो सख़्त शदीद और कबीरा गुनाह करेगा, अगरचे बाद में जोहर भी पढ़ ले। और अगर नहीं पढ़ेगा तो न जुमा होगा न जोहर, फ़र्ज़ सर पर रह जाएगा। फ़तह अल-क़दीर में है:

मुहम्मद ने अबू हनीफ़ा और अबू यूसुफ़ (रज़ी अल्लाहु तआला अन्हुम) से रिवायत की कि अहल-ए-अहवा (गुमराहों) के पीछे नमाज़ जायज़ नहीं है।

इमाम मुहम्मद ने इमाम अबू हनीफ़ा और इमाम अबू यूसुफ़ (रज़ी अल्लाहु तआला अन्हुम) से रिवायत किया कि अहल-ए-बिदअत और बद-मज़हब के पीछे नमाज़ जायज़ नहीं। (त)

वल्लाहु तआला आलम।

मसला नंबर 83: अज़ मारहरा शरीफ़ ज़िला एटा, मुरसला जनाब सैयद ज़हूर हैदर मियां साहब, 4 जमादी अल-उख़रा 1312 हिजरी। क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन इस मसले में कि एक शख़्स हमेशा कसरत-ए-एहतिलाम या किसी और मर्ज़-ए-जिस्मानी की वजह से ग़ुस्ल के बजाय तयम्मुम से नमाज़ अदा करता है। क्या उसके लिए तयम्मुम के साथ दूसरे मुक़्तदियों के मुक़ाबले में इमामत करना जायज़ है या नहीं? बयान फ़रमाएं, सवाब पायें।

अल-जवाब: कसरत-ए-एहतिलाम ख़ुद तयम्मुम के जवाज़ की कोई वजह नहीं है जब तक नहाने से नुक़सान न हो। बिना नुक़सान के सही अंदेशे के तयम्मुम से नमाज़ पढ़ेगा तो उसकी अपनी नमाज़ नहीं होगी, फिर दूसरे की उसके पीछे क्या होगी। हाँ, जिसे वाक़ई ऐसा मर्ज़ हो जिसमें नहाना नुक़सानदेह हो या नहाने से किसी मर्ज़ के पैदा होने का ख़ौफ़ हो, और यह नुक़सान और ख़ौफ़ अपने तजुर्बे से मालूम हो या किसी मुसलमान माहिर तबीब के बताने से, तो उस वक़्त उसे तयम्मुम से

नमाज़ जायज़ होगी। और अब उसके पीछे तमाम मुक़्तदियों की नमाज़ सही है। ग़रज़ यह कि इमाम का तयम्मुम करना और मुक़्तदियों का पानी से पाक होना इमामत की सेहत में ख़लल पैदा नहीं करता। हाँ, अगर इमाम ने बग़ैर शरई इजाज़त के तयम्मुम किया हो, तो न उसकी नमाज़ होगी और न उसके पीछे दूसरों की। तनवीर में है: वज़ू वाले की इक़्तिदा तयम्मुम वाले के पीछे सही है। (त)। बहर अल-राइक़।

1. फ़तह अल-क़दीर, बाबुल इमामा, मतबुआ नूरिया रज़विया सक्खर, 2/304.
2. दुर्र-ए-मुख़्तार शरह तनवीर अल-अबसार, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 1/85.

सफ़हा 638/736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

زید کی ان باتوں سے متنفر ہو کر نمازِ جمعہ ترک کرکے ظہر پڑھتا ہے آیا اس صورت میں زید قابلِ امامت ہے یا نہیں، معتبر کتب سے ثبوت ہونا چاہئے۔ بینوا توجروا

الجواب: جو شخص وہابیہ اور اہلِسنت علماء کو یکساں سمجھتا ہے اسی قدر بات اُس کے خارج از اسلام ہونے کو بہت ہے اُس کے پیچھے نماز باطل ہے جیسے کسی ہندو یا نصرانی کے پیچھے ۔ جمعہ اگر اور جگہ نہ مل سکے نہ اُسے امامت سے جدا کرسکے تو فرض ہے کہ ظہر پڑھے اُس کے پیچھے جمعہ پڑھے گا تو سخت شدید و کبیرہ گناہ کرے گا اگرچہ بعد کو ظہر بھی پڑھ لے اور اگر نہ پڑھے تو جمعہ ہو گا نہ ظہر، فرض سر پر رہ جائے گا۔ فتح القدیر میں ہے:

روی محمد عن ابی حنیفۃ وابی یوسف رضی اللہ تعالٰی عنھم ان الصلاۃ خلف اھل الاھواء لاتجوز

امام محمد نے امام ابو حنیفہ اور امام ابو یوسف رضی اللہ تعالٰی عنہم سے روایت کیا کہ اہل بدعت و بد مذہب کے پیچھے نماز جائز نہیں۔ (ت)

واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ نمبر ۸۳: از مارہرہ شریف ضلع ایٹہ مرسلہ جناب سید ظہور حیدر میاں صاحب ۴ جمادی الاخرٰی ۱۳۱۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ایک شخص ہمیشہ بوجہ کثرت احتلام یا کسی اور مرض جسمی کے بجائے غسل تیمم سے نماز ادا کرتا ہے امامت کرنا اس کو تیمم سے بمقابلہ اور مقتدیوں کے جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: کثرت احتلام تو خود کوئی وجہ جوازِ تیمم کی نہیں جب تک نہانے سے مضرت نہ ہو بے صحیح اندیشہ مضرت کے تیمم سے پڑھے تو اس کی خود نماز نہ ہوگی دوسرے کی اس کے

پیچھے کیا ہو، ہاں جسے بالفعل ایسا مرض موجود ہو جس میں نہانا نقصان دے گا یا نہانے میں کسی مرض کے پیدا ہو جانے کا خوف ہے اور یہ نقصان و خوف تو اپنے تجربے سے معلوم ہوں یا طبیبِ حاذق مسلمان غیر فاسق کے بتائے سے، تو اُس وقت اُسے تیمم سے نماز جائز ہوگی اور اب اس کے پیچھے سب مقتدیوں کی نماز صحیح ہے، غرض امام کا تیمم اور مقتدیوں کا پانی سے طہارت سے ہونا صحت امامت میں خلل انداز نہیں ، ہاں امام نے تیمم ہی بے اجازتِ شرع کیا ہو تو آپ ہی نہ اس کی ہوگی نہ اُس کے پیچھے اوروں کی ۔ تنویر میں ہے: صح اقتداء متوضئ بمتیمم 2 (وضو والے کی اقتداء تیمم والے کے ساتھ صحیح ہے۔ ت)۔ بحر الرائق

1 فتح القدیر باب الامامۃ مطبوعہ نوریہ رضویہ سکھر ۲/ ۳۰۴ 2 در مختار شرح تنویر الابصار مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۸۵

Fatawa Razawiyyah Volume Six

[Top Left Box (Arabic)] Preferring the school of thought (madhhab) based on the action of Amr ibn al-Aas (may Allah be pleased with him) when he led his people in prayer after performing tayammum due to fear of cold instead of ghusl al-janabah, while they had performed wudu, and the Prophet (peace and blessings be upon him) did not order them to repeat the prayer when he came to know.

[Top Right Box (Urdu translation of the Arabic)] The action of Hazrat Amr ibn al-Aas (may Allah be pleased with him) is the reason for preferring this school of thought, that he performed tayammum instead of ghusl due to the cold and led his people in prayer, although the people had performed wudu. And when this matter was presented to the Prophet (peace and blessings be upon him), he did not command the prayer to be repeated (T). And Allah knows best.

Issue Number 838: 27 Shawwal 1318 AH What do the scholars of religion say regarding this issue: An Imam only leads the Friday prayer and never leads the five daily prayers. In exchange for this Friday leadership, at the end of the year on the last Friday of Ramadan, and also after the Eid prayers, he demands a fee for leading the Friday and Eid prayers from the worshippers. Is this fee lawful (halal) or unlawful (haram) for him? Despite being forbidden, he does not stop taking the fee. Is the Friday and Eid prayer behind such a person disliked (makruh) or impermissible? Please explain and be rewarded.

The Answer: If a fee for the leadership (imamat) has been agreed upon with this person—such as paying a certain amount per Friday, monthly, or annually—or if it wasn't specifically agreed with him but a fixed salary for this position exists, and he knew it, he became Imam for that, and the ones appointing him also knew and accepted it; in short, if the fee was determined explicitly or implicitly, then this fee is lawful for him. Because of this, there is no dislike in praying behind him, as the Imams have declared it permissible to take a fee for leading prayers, calling the adhan, teaching jurisprudence, and teaching the Quran due to the necessity of the times, as they have explicitly stated in books collectively (as definitive proofs are present in books on this matter). And when the determination has taken place, the contract (ijarah) is valid, in which there is no harm. However, if the contract did not occur either explicitly or implicitly—meaning he led for a fee and the community considered him an employee, but the determination of the fee was neither stated nor clear from the circumstances—then it is a corrupt contract (ijarah fasidah). That fee is

'khabith' (impure) for him, and the ruling is to give it in charity. But the original contract is still not void, nor is demanding the fee an act of oppression. If he repeats such an arrangement multiple times, he will become a 'fasiq' (sinner), and prayer behind him will be makruh (disliked).

Footnote: 1. Al-Bahr al-Ra'iq, Bab al-Imamah, published by H.M. Saeed Company Karachi, 1/363.

फ़तावा रज़विया खंड छह

[ऊपर बायाँ बॉक्स (अरबी)] अम्र इब्न अल-आस (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) के कार्य के आधार पर मज़हब को प्राथमिकता देना, जब उन्होंने ठंड के डर से ग़ुस्ल-ए-जनाबत के बजाय तयम्मुम करके अपनी क़ौम की इमामत की, जबकि उन लोगों ने वज़ू किया हुआ था, और हुज़ूर (उन पर शांति और आशीर्वाद हो) ने उन्हें नमाज़ दोहराने का आदेश नहीं दिया जब उन्हें इसके बारे में पता चला।

[ऊपर दायाँ बॉक्स (उर्दू अनुवाद)] हज़रत अम्र इब्न अल-आस (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) का अमल इस मज़हब की प्राथमिकता का कारण है कि उन्होंने ठंड की वजह से ग़ुस्ल की जगह तयम्मुम किया और अपनी क़ौम की इमामत की, हालांकि लोगों ने वज़ू किया हुआ था। और जब यह मामला हुज़ूर (उन पर शांति और आशीर्वाद हो) की सेवा में पेश किया गया, तो आपने नमाज़ लौटाने का हुक्म नहीं फ़रमाया (त)। और अल्लाह बेहतर जानता है।

मसला नंबर 838: 27 शव्वाल 1318 हिजरी धर्म के विद्वान इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि एक इमाम केवल जुमे की नमाज़ पढ़ाता है, अन्य पांच समय की नमाज़ों में कभी इमामत नहीं करता। और इस जुमे की इमामत के बदले साल भर बाद रमज़ान-उल-मुबारक के आख़िरी जुमे में और ईदैन (दोनों ईदों) की नमाज़ के बाद नमाज़ियों से जुमे और ईदैन की इमामत का शुल्क (उजरत) मांगता है। क्या यह शुल्क उसके लिए हलाल है या हराम? और मना करने के बावजूद वह शुल्क लेने से बाज़ नहीं आता। ऐसे व्यक्ति के पीछे जुमे और ईदैन की नमाज़ मकरूह है या नाजायज़? बयान फ़रमाएं, पुण्य पाएं।

उत्तर: अल-जवाब: इमामत की उजरत (शुल्क) अगर उस व्यक्ति से तय हो गई है कि प्रति जुमा, या मासिक या वार्षिक इतना देंगे, या विशेष रूप से उससे तय न हो लेकिन इस इमामत का वेतन निश्चित है और उसे पता था, वह इसी के लिए इमाम बना और इमाम बनाने वालों ने भी जाना और स्वीकार किया; संक्षेप में, यदि स्पष्ट रूप से या संकेतों से शुल्क निर्धारित हो गया, तो यह शुल्क उसके लिए हलाल है। और इस वजह से उसके पीछे नमाज़ में कोई मकरूहियत नहीं है, क्योंकि इमामों ने समय की ज़रूरत के अनुसार इमामत, अज़ान, फ़िक़्ह और कुरान की शिक्षा पर शुल्क लेने को जायज़ माना है, जैसा कि उन्होंने सर्वसम्मति से अपनी किताबों में स्पष्ट किया है (जैसा कि इस पर किताबों में स्पष्ट प्रमाण मौजूद हैं)। और जब निर्धारण हो गया तो अनुबंध (इजारा) सही हुआ, जिसमें कोई बुराई नहीं है। और अगर अनुबंध न तो स्पष्ट रूप से और न ही संकेतों से हुआ—अर्थात उसने शुल्क के लिए

इमामत की और क़ौम ने भी उसे कर्मचारी समझा लेकिन शुल्क का निर्धारण न तो बयान में आया और न ही परिस्थितियों से स्पष्ट हुआ—तो यह इजारा-ए-फासिदा (दोषपूर्ण अनुबंध) है। वह शुल्क उसके हक़ में 'ख़बीस' (अपवित्र) है, उसे दान (सदक़ा) करने का हुक्म है। लेकिन मूल अनुबंध अभी भी शून्य नहीं है, और न ही शुल्क मांगना ज़ुल्म है। यदि वह ऐसा अनुबंध बार-बार करेगा तो वह फ़ासिक़ (पापी) होगा और उसके पीछे नमाज़ मकरूह होगी।

पाद-टिप्पणी: 1. बहर-उर-राइक़, बाब-उल-इमामत, मुद्रित एच.एम. सईद कंपनी कराची, 1/363।

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

[اوپر والا خانہ (عربی)] ترجیح المذھب بفعل عمرو بن العاص رضی اللہ تعالی عنہ حین صلی بقومہ بالتیمم لخوف البرد من غسل الجنابۃ وھم متوضؤن ولم یأمرھم علیہ الصلوۃ والسلام بالاعادۃ حین علم

[دائیں جانب والا خانہ (اردو)] حضرت عمرو بن العاص رضی اللہ تعالٰی عنہ کا عمل اس مذہب کی ترجیح کا سبب ہے کہ انہوں نے سردی کی وجہ سے غسل جنابت کی جگہ تیمم کرکے اپنی قوم کی امامت کی حالانکہ لوگوں نے وضو کیا ہوا تھا۔ اور جب حضور علیہ الصلوۃ والسلام کی خدمت میں یہ معاملہ پیش ہوا تو آپ نے نماز لوٹانے کا حکم نہیں فرمایا (ت) واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ نمبر ۸۳۸: ۲۷ شوال ۱۳۱۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ایک امام فقط نماز جمعہ پڑھاتا ہے دیگر اوقات پنجگانہ نماز میں کبھی امامت نہیں کرتا اور اس امامت جمعہ کے عوض میں سال بھر کے بعد رمضان المبارک کے آخری جمعہ میں اور نیز عیدین کی نماز کے بعد اجرت امامت جمعہ و امامت عیدین مصلین سے طلب کرتا ہے یہ اُجرت اُس کو حلال ہے یا حرام، اور باوجود منع بھی اخذ اُجرت سے باز نہیں آتا ایسے شخص کے پیچھے نماز جمعہ و عیدین مکروہ ہے یا ناجائز؟ بینوا توجروا۔

الجواب: اُجرت امامت اگر اس شخص سے قرار پاگئی ہے کہ فی جمعہ یا ماہوار یا سالانہ اس قدر دیں گے یا خاص اس سے قرار داد نہ ہو مگر اس امامت کی تنخواہ معین ہے اسے بھی معلوم تھی یہ اُسی کے لئے امام بنا اور امام بنانے والوں نے بھی جانا اور مقبول رکھا غرض صراحتًا یا دلالتًا تعیین اجرت ہو لیا تو یہ اُجرت اُسے حلال ہے اور اس وجہ سے اس کے پیچھے نماز میں کچھ کراہت نہیں کہ امامت و اذان و تعلیم فقہ و تعلیم قرآن پر اُجرت لینے کو ائمہ نے بضرورت زمانہ

جائز قرار دیا ہے کما نصوا علیہ فی الکتب قاطبۃ (جیسا کہ اس پر کتب میں نصوص قاطعہ موجود ہیں۔ت) اور جب تعیین ہو لیا تو اجارہ صحیح ہوا جس میں کوئی مضائقہ نہیں اور اگر اجارہ صراحتًا خواہ دلالتًا واقع تو نہ ہوا یعنی اس نے اُجرت کے لئے امامت کی اور قوم نے بھی اسے اجیر سمجھا مگر تعیین اجرت نہ بیان میں آئی نہ قرائن سے واضح ہوا تو اجارہ فاسدہ ہے وہ اُجرت اُس کے حق میں خبیث ہے اُسے تصدق کردینے کا حکم ہے مگر اصل اجارہ اب بھی باطل نہیں، نہ طلب اُجرت ظلم ہے، ایسا اجارہ اگر متعدد بار کرے گا فاسق ہوگا اور اس کے پیچھے نماز مکروہ،

حاشیہ: 1۔ بحر الرائق باب الامامۃ مطبوعہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱/ ۳۶۳

And if there is no agreement at all, neither explicitly nor implicitly, and now he demands wages, then it is clear oppression, transgression, and a major sin. Here, prayers should absolutely not be offered behind him. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 839: 2 Dhu al-Qi'dah 1318 AH What do the scholars of religion say regarding this matter: the Imam of the mosque says that shaking hands (Musafahah) specifically after the Fajr prayer is not correct, while the local residents say it is correct. They say that if you do not acknowledge its permissibility, we will not pray behind you because your creed is against ours. Therefore, please state how it is in the noble Sharia and what is the ruling? Explain and be rewarded.

The Answer: The correct view is that shaking hands after prayer is permissible. Allama al-Khafaji has explicitly validated this in 'Nasim al-Riyadh'. (Allama Khafaji declared it correct in Nasim al-Riyadh. - Tr.) If the Imam is of the Sunni creed and his opinion on this issue is based on certain jurisprudential texts, then he should be made to understand that the validation and preference lean towards permissibility. He does not deserve to have people stop following him in prayer based on this point alone. However, if he rejects it on the basis of Wahhabism, then a Wahhabi is undoubtedly not fit for leadership in prayer (Imamate). The local residents should never pray behind him. And Allah Almighty knows best.

Problem No. 840: 28 Rabi' al-Thani 1320 AH What do the scholars of religion say regarding this matter: is it permissible to fix a fee for leading prayers or not? Explain and be rewarded.

The Answer: It is permissible, but it is better to avoid it. He should lead prayers for the sake of Allah, and the worshippers, seeing him in need, should assist him for the sake of Allah. If it is clearly settled that no wage will be taken or given for the Imamate, then it is purely lawful and good without any hesitation. Because an explicit negation removes the implication of the current state, as "the explicit supersedes the implicit," as mentioned in Qazi Khan 1. (Since explicit negation removes the implication because explicitness holds superiority over implication; it is mentioned similarly in Qazi Khan. - Tr.) And Allah Almighty knows best.

---

1 Durr-e-Mukhtar, Kitab al-Hiba, printed in Mujtabai Delhi, 2/159. F: Despite great effort, this text could not be found in Fatawa Qazi Khan; it was found conceptually in Durr-e-Mukhtar, so its reference is given. - Nazir Ahmad Saeedi

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

और अगर शुरू से कोई अनुबंध ही न हो, न स्पष्ट रूप से और न ही परोक्ष रूप से, और अब वह पारिश्रमिक मांगता है, तो यह स्पष्ट अन्याय, पाप और बड़ा गुनाह है। यहाँ उसके पीछे कतई नमाज़ न पढ़ें। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

प्रश्न संख्या 839: 2 ज़िल-क़ादा 1318 हिजरी इस मामले में धर्म के विद्वान क्या कहते हैं: मस्जिद के इमाम का कहना है कि फज्र की नमाज़ के बाद विशेष रूप से हाथ मिलाना (मुसाफ़हा) सही नहीं है, जबकि मोहल्ले के लोग कहते हैं कि यह सही है। वे कहते हैं कि यदि आप इसकी अनुमति को स्वीकार नहीं करते हैं, तो हम आपके पीछे नमाज़ नहीं पढ़ेंगे क्योंकि आपका पंथ हमारे पंथ के खिलाफ है। इसलिए कृपया बताएं कि शरीयत में यह कैसा है और क्या आदेश है? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: सही यह है कि नमाज़ के बाद हाथ मिलाना जायज़ है। अल्लामा खफाजी ने 'नसीम अल-रियाज़' में इसकी पुष्टि की है। (अल्लामा खफाजी ने नसीम अल-रियाज़ में इसे सही ठहराया है। - अनु.) यदि इमाम सुन्नी पंथ का है और इस मुद्दे पर उसका विचार कुछ फ़िक़ही इबारतों के कारण है, तो उसे समझाया जाना चाहिए कि पुष्टिकरण और प्राथमिकता अनुमति की ओर है। केवल इसी बात पर वह इक़्तेदा (पीछे नमाज़ पढ़ने) को छोड़ने के योग्य नहीं है। और यदि वह वहाबियत के आधार पर इसका खंडन करता है, तो वहाबी निस्संदेह इमामत के लायक नहीं है। मोहल्ले के लोगों को उसके पीछे कतई नमाज़ नहीं पढ़नी चाहिए। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

प्रश्न संख्या 840: 28 रबी-उल-आखिर 1320 हिजरी धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं कि नमाज़ पढ़ाने के लिए शुल्क निर्धारित करना सही है या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: सही है लेकिन इससे बचना बेहतर है। वह अल्लाह के लिए पढ़ाए और नमाज़ी उसे ज़रूरतमंद देखकर अल्लाह के लिए उसकी सहायता करें। यह स्पष्ट कर लिया जाए कि इमामत का कोई वेतन नहीं लिया-दिया जाएगा, तो इस तरह यह बिना किसी संशय के हलाल और पाक है। क्योंकि स्पष्ट निषेध वर्तमान स्थिति के निहितार्थ को समाप्त कर देता है, क्योंकि "स्पष्टता निहितार्थ पर श्रेष्ठता रखती है," जैसा कि काज़ी खान 1 में है। (चूंकि स्पष्ट रूप से मना करना निहितार्थ को समाप्त कर देता है क्योंकि स्पष्टता निहितार्थ से श्रेष्ठ है; काज़ी खान में इसी तरह है। - अनु.) और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

1 दुर्रे मुख्तार, किताब अल-हिबा, मुज्तबाई दिल्ली में छपी, 2/159। फ: बहुत प्रयासों के बावजूद यह पाठ फतावा काज़ी खान में नहीं मिल सका; दुर्रे मुख्तार में यह अर्थगत रूप से मिला है, इसलिए उसका संदर्भ दिया गया है। - नज़ीर अहमद सईदी

पृष्ठ 640 / 736

فتاویٰ رضویہ جلد ششم

اور اگر سرے سے اجارہ ہی نہ ہو صراحۃً نہ دلالۃً اور اب اجرت مانگتا ہے تو صریح ظلم و فسق وکبیرہ ہے یہاں مطلقاً اس کے پیچھے نماز نہ پڑھیں۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۸۳۹: ۲ ذی قعدہ ۱۳۱۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ امام مسجد یہ کہتے ہیں کہ نماز کے بعد مصافحہ بہ تخصیص نمازِ فجر درست نہیں اور اہل محلہ کہتے ہیں درست ہے اور کہتے ہیں کہ اگر تم اس کے جواز کے قائل نہ ہوگے تم ہم تمہارے پیچھے نماز نہیں پڑھیں گے اس لئے کہ تمہارا مذہب ہمارے مذہب کے خلاف ہے لہذا فرمائیے کہ شرع شریف میں کس طرح ہے اور کیا حکم ہے؟ بینوا توجروا

الجواب: صحیح یہ ہے کہ مصافحہ بعد نماز مباح ہے نص علی تصحیحہ العلامۃ الخفاجی فی نسیم الریاض (علامہ خفاجی نے نسیم الریاض میں اسے صحیح قرار دیا ہے۔ت) امام اگر سنی المذہب ہے صرف اس مسئلہ میں اس کا خیال بنظر بعض عبارات فقہیہ یہ ہے تو اسے سمجھا دینا چاہئے کہ تصحیح و ترجیح جانب جواز ہے صرف اتنی بات پر وہ ترک اقتدا کا مستحق نہیں، اور اگر بربنائے وہابیت اس کا انکار کرتا ہے تو وہابی بلاشبہ لائق امامت نہیں اہل محلہ کو چاہئے ہر گز اس کے پیچھے نماز نہ پڑھیں۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۸۴۰: ۲۸ ربیع الآخر شریف ۱۳۲۰ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ نماز کی پڑھائی معین کر کے لینا درست ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: درست ہے مگر بچنا بہتر ہے اللہ کے واسطے پڑھائے اور نمازی اسے حاجت مند دیکھ کر اللہ کے لئے اس کی اعانت کریں یہ صاف کر لیا جائے کہ امامت کی اجرت کچھ نہ لی دی جائے

گی یوں بلادغدغہ حلال طیب ہے لان النفی الصریح یزیل حکم دلالۃ الحال فان الصریح یفوق الدلالۃ کما فی قاضی خان ۱ (کیونکہ صراحتہً نفی ، دلالت کو زائل کردیتی ہے کیونکہ صراحت ، دلالت سے فوقیت رکھتی ہے قاضی خاں میں اسی طرح ہے۔ت) واللہ تعالیٰ اعلم

---

۱ درمختار کتاب الھبۃ مطبوعہ مجتبائی دہلی ۲/ ۱۵۹ ف: سعی بسیار کے باوجود یہ عبارت فتاویٰ قاضی خان سے نہیں مل سکی ، در مختار سے یہ عبارت مفہوماً ملی ہے اس لئے اس کا حوالہ دیا ہے۔ نذیر احمد سعیدی

Fatawa Razawiyya, Volume 6

Issue No. 841: From Moradabad, sent by Maulvi Muhammad Abdul Bari Sahab, 7 Safar 1338 AH. Question: What do the noble scholars say regarding this issue: if after finishing the prayer, the Imam forces the followers (muqtadis) to remain seated following him and not get up, causing nearly half an hour of the followers' time to be wasted, and in case of non-participation due to necessity, he levels the aforementioned accusation against them? Where is this practice established? Which explicit Hadith supports it? And where in the noble Shariah is it mentioned to name this practice Sunnah of the Prophet and to force them to the point of accusing them, not just with 'tuhab' (avoidance) but with 'talhab' (burning accusation)?

The Answer: After the salam, the Imam has no authority of compulsion over the followers. With the salam, his authority is severed. Even during the prayer, while he was the one being followed and following him was obligatory for the followers, at that time too it was forbidden (haram) for him to do anything beyond the Sunnah that would be burdensome or heavy for the followers. On this, the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) expressed severe anger and called such a person a 'fattan', meaning a grave troublemaker. Therefore, to compel people after the prayer without a Shariah-compliant necessity and to level false accusations against those who do not comply is a severe prohibition and an extreme injustice. Furthermore, to name this injustice and prohibition as 'Sunnah', God forbid, is extremely severe and clear misguidance and a fabrication against the Sunnah. And Allah Almighty knows best.

Issue No. 842: Questioned by respected Ahmadullah Sahab, Sadar Bazaar Hardoi. Question: To what degree is a person a sinner who abandons Fara'id (obligations), Wajib (essentials), Sunnah Mu'akkadah, or abandons Mustahabb (recommended) and Mubah (permissible) acts? Is prayer valid behind someone who abandons these five matters or abandons Mustahabb and Mubah acts? Explain so you may be rewarded.

The Answer: Abandoning a Fard once makes one a 'fasiq' (transgressor), as does the habit of abandoning a Wajib. The ruling for Sunnah Mu'akkadah is close to Wajib. Prayer behind a fasiq is 'makruh' (disliked). If he is an open transgressor, making him the Imam is a sin, and prayer behind him is 'Makruh Tahrimi' (prohibitively disliked), such that it is a sin to pray it and obligatory to repeat it. There is no sin in abandoning Mustahabb or Mubah acts, nor is there any deficiency in the leadership (imamat) of one who abandons them. And Allah Almighty knows best.

Issue No. 843: From Shahr-e-Kuhna, 7 Rajab 1320 AH. Question: What is your statement, may Allah Almighty have mercy on you, regarding this issue: the Imam delays so much in reciting an additional surah (damm-e-surah) that after saying 'Ameen', one could recite the 'Kalima Tayyiba'. Is it permissible for the Imam to delay this much or not? He was told not to delay so much, but he says it takes time to think of a Surah and does not stop delaying. Therefore, in following this Imam in prayer, is there any...

फ़तावा रज़विया, जिल्द छठी

मसला नंबर 841: मुरादाबाद से मुर्सला मौलवी मोहम्मद अब्दुल बारी साहब, 7 सफ़र 1338 हिजरी। प्रश्न: उलेमा-ए-किराम इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि नमाज़ पूरी होने के बाद अगर इमाम मुक्तदियों को मजबूर करे कि वे उसकी पैरवी में वैसे ही बैठे रहें और न उठें, जिससे मुक्तदियों का लगभग आधा घंटा ज़ाया हो गया, और मजबूरी के कारण शामिल न होने की स्थिति में उन पर उक्त आरोप लगाए, तो यह बात कहाँ साबित है? इसके लिए कौन सी स्पष्ट हदीस है? और इस चीज़ का नाम 'सुन्नते नबवी' रखना और उन्हें मजबूर करना यहाँ तक कि उन पर 'तुहब' (बचने) का ही नहीं बल्कि 'तलहब' (जलन भरा आरोप) लगाना शरीयत में किस स्थान पर वर्णित है?

उत्तर: सलाम फेरने के बाद इमाम को मुक्तदियों पर जबरदस्ती करने का कोई अधिकार नहीं है। सलाम के साथ ही उसकी विलायत (अधिकार) समाप्त हो गई। नमाज़ के दौरान भी, जब वह मुक्तदिय (अनुगामी) था और उसकी पैरवी मुक्तदियों पर वाजिब थी, उस समय भी उसके लिए हराम था कि वह सुन्नत से ज़्यादा कोई ऐसी चीज़ करे जो मुक्तदियों पर बोझिल और भारी हो। इस पर हुज़ूर अकदस सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने कड़ा क्रोध व्यक्त किया और ऐसा करने वाले को 'फ़त्तान' यानी बड़ा फ़ितना फैलाने वाला बताया। तो नमाज़ के बाद बिना किसी शरीयत की मजबूरी के लोगों को विवश करना और न मानने वालों पर झूठा आरोप लगाना कितना सख़्त हराम और घोर अन्याय है। फिर इस ज़ुल्म और हराम का नाम अल्लाह की पनाह (माज़ अल्लाह) सुन्नत रखना अत्यंत घोर और स्पष्ट गुमराह और सुन्नत पर इफ़्तरा (आरोप) है। और अल्लाह ताला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 842: पूछने वाले मुकर्रम अहमद उल्लाह साहब, सदर बाज़ार हरदोई। प्रश्न: फ़र्ज़ और वाजिब को छोड़ने वाला और साथ ही सुन्नते मोक्कदा, मुस्तहब और मुबाह को छोड़ने वाला किस दर्जे का गुनहगार है? इन पाँचों चीज़ों को छोड़ने वाले या मुस्तहब और मुबाह को छोड़ने वाले के पीछे नमाज़ जायज़ है या नहीं? बयान करें और पुण्य कमाएँ।

उत्तर: फ़र्ज़ को एक बार छोड़ने से इंसान फ़ासिक़ हो जाता है और वाजिब छोड़ने की आदत से भी। सुन्नते मोक्कदा का हुक्म वाजिब के क़रीब है। फ़ासिक़ के पीछे नमाज़ मकरूह है। और अगर वह खुलेआम गुनाह करने वाला (फ़ासिक़-ए-मो'लन) हो तो उसे इमाम बनाना गुनाह है और उसके पीछे नमाज़ 'मकरूह-ए-तहरीमी' है, जिसे पढ़ना गुनाह और दोहराना वाजिब है। मुस्तहब और मुबाह को

छोड़ने में कोई गुनाह नहीं है और न ही उन्हें छोड़ने वाले की इमामत में कोई दोष है। और अल्लाह ताला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 843: शहर-ए-कुहना से, 7 रजब 1320 हिजरी। प्रश्न: आपका क्या कहना है, अल्लाह ताला आप पर रहम करे, इस मसले में कि इमाम सूरह मिलाने (ज़म-ए-सूरह) में इतनी देर करता है कि आमीन कहने के बाद कलमा तैयबा पढ़ लिया जाए। इतनी देर करना इमाम के लिए जायज़ है या नहीं? उसे मना किया गया कि इतनी देर न किया करो, तो वह कहता है कि सूरह सोचने में देर हो जाती है और वह देर करना नहीं छोड़ता। तो इस इमाम के पीछे नमाज़ पढ़ने में किसी...

فتاویٰ رضویہ جلد ششم

مسئلہ نمبر ۸۴۱: از مراد آباد مرسلہ مولوی محمد عبدالباری صاحب ۷ صفر ۱۳۳۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے کرام اس مسئلہ میں کہ بعد فراغتِ نماز اگر مقتدیوں کو مجبور کرے کہ با تباع اُس کے ویسے ہی بیٹھے رہیں اور نہ اُٹھیں تاخیر میں مقتدیوں کا قریب نصف گھنٹہ کے ضائع ہوا اور در صورت عدم شرکت بوجہ مجبوری اُن پر اتہام مذکور کو بجالگا ئے تو یہ چیز کہاں ثابت ، اس کے لئے کون سی حدیث ناطق، اور اس چیز کا نام سنتِ نبوی رکھنا اور اُن کو مجبور کرنا حتیٰ کہ ان پر الزام تہب کا نہیں بلکہ تلہب کا لگانا شرع شریف میں کس مقام پر وارد ہے؟

الجواب: امام کو سلام کے بعد مقتدیوں پر کوئی جبر کا اختیار نہیں، سلام سے تو اس کی ولایت منقطع ہو چکی عین نماز میں جب تک وہ متبوع تھا اور اس کی پیروی مقتدیوں پر واجب تھی اُس وقت بھی اُسے حرام تھا کہ سنت سے زیادہ کوئی بات ایسی کرے جو مقتدیوں پر ثقیل و گراں ہو، اس پر حضور اقدس صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے غضب شدید فرمایا اور ایسا کرنے والے کو فتان بتایا یعنی سخت فتنہ گر، تو بعد نماز بلاوجہ شرعی مجبوری کرنا اور نہ ماننے والے کو جھوٹا اتہام لگانا کیسا سخت حرام شدید اور ظلم بعید ہے۔ پھر اس ظلم و حرام کا نام معاذ اللہ سنت رکھنا نہایت سخت اشد اور صریح گمراہی اور سنت پر افترا ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۸۴۲: مسئولہ مکرم احمد اللہ صاحب صدر بازار ہردوئی تارکِ فرض و واجب نیز سنتِ مؤکدہ اور تارک مستحب و مباح کس درجہ کا گنہگار ہے۔ تارک امور خمسہ یا تارک مستحب و مباح کے پیچھے نماز جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: فرض کے ایک بار ترک سے فاسق ہے اور ترکِ واجب کی عادت سے، سنتِ مؤکدہ کا حکم میں قریب واجب ہے، فاسق کے پیچھے نماز مکروہ ہے، اور فاسق بالاعلان ہو تو اسے امام بنانا گناہ اور اس کے پیچھے نماز مکروہِ تحریمی کہ پڑھنی گناہ اور پھیرنی واجب، مستحب و مباح کے ترک میں کچھ گناہ نہیں، نہ ان کے تارک کی امامت میں کچھ نقص۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ نمبر ۸۴۳: از شہر کہنہ ۷ رجب ۱۳۲۰ھ ما قولکم رحمکم اللہ تعالیٰ اس مسئلہ میں کہ امام ضمِ سورہ میں اس قدر دیر کرتا ہے کہ بعد آمین کہنے کے کلمہ طیبہ پڑھ لیا اس قدر دیر کرنا امام کو جائز ہے یا نہیں۔ اس کو منع کیا گیا کہ اس قدر دیر نہ کیا کرو، وہ کہتا ہے کہ سورۃ سوچنے میں دیر ہو جاتی ہے اور دیر کرنے کو نہیں چھوڑتا ہے۔ پس اس امام کی اقتدا سے نماز میں کسی

Fatawa Razawiyya Volume 6 ...does some kind of dislike (karahat) occur or not?

The Answer: Thinking for so long while reciting a Surah that one could say "Subhan Allah" three times constitutes an omission of a Wajib (obligatory act) and necessitates Sajda Sahw (prostration of forgetfulness), as stated in At-Tanwir, Ad-Durr, Al-Ghunya, and others. (As mentioned in Tanwir, Durr, Ghunya etc. - T). Therefore, it is certainly disliked (Makruh) to pray behind someone for whom this is a habit. It is mentioned in Alamgiriyyah and Al-Muhit:

One who pauses where he should not and does not pause where he should,	**it is not appropriate for him to lead the prayer. Similarly is the ruling**
it is not appropriate for him to lead the prayer. Similarly is the ruling for one who coughs excessively during recitation. (T)	for one who coughs excessively during recitation.

When it is said that someone who incorrectly pauses and connects words, or clears their throat repeatedly while reading, is not fit for leadership in prayer—even though observing the rules of pausing and connecting is not among the Wajib acts of prayer—then someone who is habitually negligent in a Wajib act of prayer, such as connecting the Surah and Fatiha without an external interruption, is all the more unworthy of leadership. However, after Fatiha, staying still for enough time to take a breath, say "Amen," or to recite "Bismillah-ir-Rahman-ir-Rahim" if starting a new Surah, is permissible, sunnah, and commendable, as this duration is approximately equal to the time taken to recite the Kalima Tayyiba. Allah Almighty knows best.

Issue No. 842: From the Old City, 28 Rabi' al-Akhir 1312 AH What do the scholars of religion say regarding this: Zayd says, "What is the need for 'Muhammadur Rasulullah' after the Kalima 'La ilaha illa Allah'? If he doesn't go to Paradise, won't he at least go to Al-A'raf?" Zayd remains standing after the prayer for a duration equal to saying 'Allahu Akbar' seven times. He says that the prayer is valid just by saying 'Subhan Allah wa bi-Hamdihi'. He performs prayer without a shirt or cap, saying that prayer is valid with just trousers. He also says there is no need for Al-Hamdu (Surah Fatiha) and a Surah in prayer. Is prayer behind such a person valid or not? Should such a person be considered a Muslim or not? How should the people of Islam treat him? Write the answer with evidence from the Quran, Hadith, and Jurisprudence. Explain and be rewarded.

The Answer: Performing prayer wearing only trousers, leaving the upper part of the body naked, results in the prayer being valid in the sense that the obligation is discharged, but it is Makruh Tahrimi (highly disliked).

1. Ghunyat al-Mustamli Sharh Munyat al-Musalli, Chapter on Sajdah al-Sahw, published by Suhail Academy Lahore, p. 465; Durr-e-Mukhtar, Chapter on Sajdah al-Sahw, Mujtabai Press Delhi, 1/103.
2. Fatawa Hindiyyah, Third Chapter on Explaining Who is Fit to be an Imam, etc., published by Noorani Kutub Khana Peshawar, 1/86.

फ़तावा रज़विया जिल्द 6 ...किस प्रकार की कराहत (नापसंदगी) हो जाती है या नहीं?

उत्तर: सूरा (क़ुरआन की आयत) सोचने में इतनी देर लगाना जिसमें तीन बार "सुब्हान अल्लाह" कहा जा सके एक वाजिब (अनिवार्य कार्य) को छोड़ना है और यह सज्दा सहव (भूल की माफी का सजदा) का कारण बनता है, जैसा कि अत-तनवीर, अद-दुर्र, अल-ग़ुनिया आदि में स्पष्ट किया गया है। (तनवीर, दुर्र, ग़ुनिया आदि में इस पर निर्देश दिए गए हैं। - त)। इसलिए जिसकी यह आदत हो, उसके पीछे नमाज़ पढ़ना यक़ीनन मकरूह (नापसंद) है। आलमगीरिया और अल-मुहीत में लिखा है:

जो व्यक्ति वहां रुके जहां नहीं रुकना चाहिए और वहां न रुके जहां रुकना चाहिए,

उसे इमाम नहीं बनना चाहिए, और इसी तरह उस व्यक्ति का हुक्म है जो क़िरअत (पाठ) के दौरान बहुत अधिक खाँसता हो। (त)

उसे इमाम (नमाज़ का नेतृत्व करने वाला) नहीं बनना चाहिए,

और इसी तरह उस व्यक्ति का हुक्म है जो क़िरअत के दौरान बहुत अधिक खाँसता हो।

जब यह कहा जाता है कि जो व्यक्ति गलत तरीके से रुकता है या शब्दों को जोड़ता है, या पढ़ते समय बार-बार गला साफ़ करता है, वह नेतृत्व के योग्य नहीं है—भले ही रुकने और जोड़ने के नियमों का पालन करना नमाज़ के वाजिब कार्यों में से नहीं है—तो वह व्यक्ति जो नमाज़ के वाजिब कार्य, यानी बिना किसी बाहरी व्यवधान के सूरा और फ़ातिहा को जोड़ने की उपेक्षा करने का आदी हो, वह तो और भी अधिक नेतृत्व के अयोग्य है। हाँ, फ़ातिहा के बाद इतनी देर रुकना कि सांस ले सके, "आमीन" कह सके, या नई सूरा शुरू करने से पहले "बिस्मिल्लाह-इर-रहमान-इर-रहीम" पढ़ सके, निस्संदेह जायज़, सुन्नत और मुस्तहब (प्रशंसनीय) है, क्योंकि यह समय लगभग कलिमा तय्यिबा पढ़ने में लगने वाले समय के बराबर है। अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला नंबर 842: पुराने शहर से, 28 रबी' अल-आखिर 1312 हिजरी धर्म के विद्वान इस बारे में क्या कहते हैं: ज़ैद कहता है कि कलिमा 'ला इलाहा इल्लल्लाह' के बाद 'मुहम्मदुर रसूलुल्लाह' की क्या ज़रूरत है? अगर वह जन्नत में नहीं जाएगा, तो क्या कम से कम आराफ़ (जन्नत और जहन्नम के बीच की जगह) में नहीं जाएगा? ज़ैद नमाज़ के बाद क़ियाम (खड़े होने) में उतनी देर रुकता है जितनी देर में सात बार 'अल्लाहू अकबर' कहा जा सके। वह कहता है कि नमाज़ केवल 'सुब्हान अल्लाह व बि-हम्दिही' कहने से हो जाती है। वह बिना कुरते और टोपी के नमाज़ पढ़ता है और कहता है कि नमाज़ केवल पाजामे (पतलून) से हो जाती है। वह यह भी कहता है कि नमाज़ में अल-हम्द (सूरा फ़ातिहा)

और सूरा की कोई ज़रूरत नहीं है। क्या ऐसे व्यक्ति के पीछे नमाज़ सही है या नहीं? क्या ऐसे व्यक्ति को मुसलमान समझा जाना चाहिए या नहीं? इस्लाम के लोगों को उसके साथ कैसा व्यवहार करना चाहिए? क़ुरआन, हदीस और फ़िक़्ह (इस्लामी न्यायशास्त्र) के प्रमाणों के साथ उत्तर लिखें। स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: केवल पाजामा पहनकर शरीर के ऊपरी हिस्से को नंगा रखकर नमाज़ पढ़ना इस मायने में तो हो जाती है कि फ़र्ज़ (अनिवार्य कर्तव्य) अदा हो गया, लेकिन यह मकरूह-ए-तहरीमी (अत्यधिक नापसंद) है।

1. ग़ुनियातुल मुस्तमली शरह मुनियतुल मुसल्ली, अध्याय सज्दा सहव, सुहैल अकादमी लाहौर द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 465; दुर्र-ए-मुख़्तार, अध्याय सज्दा सहव, मुज्तबाई प्रेस दिल्ली, 1/103।
2. फ़तावा हिंदिया, इमाम बनने के योग्य कौन है आदि के वर्णन में तीसरा अध्याय, नूरानी कुतुब खाना पेशावर द्वारा प्रकाशित, 1/86।

पृष्ठ 642 / 736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم قسم کی کراہت ہو جاتی ہے یا نہیں؟

الجواب: سورہ سوچنے میں اتنی دیر جس میں تین بار سبحان اللہ کہہ لیا جائے ترکِ واجب وموجب سجدہ سہو ہے کما نص علیہ فی التنویر والدر والغنیہ وغیرہما (تنویر، در، غنیہ وغیرہ میں اس پر نص کی جاتی ہے۔ ت) تو یہ جس کی عادت ہے اس کے پیچھے نماز میں ضرور کراہت ہے۔ عالمگیریہ ومحیط میں ہے:

من یقف فی غیر مواضعہ ولایقف فی مواضعہ

جو نہ ٹھہرنے کی جگہ وقف کرے اور وقف کی جگہ وقف نہ

لا ینبغی لہ ان یؤم وکذا من یتنحنح عند القراءۃ کثیراً2۔

کرے اسے چاہئے کہ وہ امام نہ بنے، اور اسی طرح اس شخص کا حکم ہے جو قرات کرتے وقت کثرت سے کھانستا ہو۔ (ت)

جو وقف ووصل بے جا کرے یا پڑھتے وقت بار بار کھنکارے جب اسے فرماتے ہیں کہ اس کی امامت سزوار نہیں حالانکہ مراعاتِ وقف ووصل واجباتِ نماز سے نہیں۔ تو جو واجبِ نماز یعنی وصل سورہ و فاتحہ بے اجنبی کے ترک کا عادی ہو بدرجہ اولٰی لائق امامت نہیں، ہاں فاتحہ کے بعد اتنی دیر کہ دم راست کرے آمین کہے، کوئی سورۃ ابتداء سے پڑھنی ہو تو بسم اللہ الرحمن الرحیم پڑھے کہ یہ دیر بھی تقریباً کلمہ طیبہ پڑھنے کے برابر ہو جائے گی، بلاشبہ مباح وسنت ومستحب ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ نمبر ۸۴۲: از شہر کہنہ ۲۸ ربیع الآخر شریف ۱۳۱۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس بارے میں کہ زید کہتا ہے کہ بعد کلمہ لا الہ الا اللہ کے محمد رسول اللہ کی کیا ضرورت ہے، اگر جنت نہ جائے گا تو کیا اعراف میں بھی نہ جائے گا۔ زید قیام میں نماز کے بعد بقدر سات بار اللہ

اکبر کہنے کے ٹھہرتا ہے۔ کہتا ہے کہ صرف سبحان اللہ وبحمدہ کہنے سے نماز ہو جاتی ہے، بے کرتا ٹوپی کے نماز ادا کرتا ہے کہتا ہے کہ صرف پائجامہ سے نماز ہو جاتی ہے۔ یوں بھی کہتا ہے کہ نماز میں الحمد وسورۃ کی کچھ حاجت نہیں۔ ایسے شخص کے پیچھے نماز درست ہے یا نہیں؟ ایسے شخص کو مسلمان سمجھنا چاہئے یا نہیں؟ اہل اسلام کا سابرتاؤ اس سے چاہئے یا نہیں؟ جواب بدلیل قرآن وحدیث وفقہ سے تحریر فرمائیں۔ بینوا توجروا

الجواب: صرف پائجامہ پہنے بالائی حصہ بدن کا ننگا رکھ کر نماز بایں معنی تو ہو جاتی ہے فرض ساقط ہو گیا، مگر مکروہِ تحریمی

1 غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل سجود السہو مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۴۶۵، در مختار باب سجود السہو مطبع مجتبائی دہلی ۱ / ۱۰۳ 2 فتاویٰ ہندیہ الفصل الثالث فی بیان من یصلح اماما وغیرہ مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور ۱ / ۸۶

Fatawa Razawiyyah, Volume 6

...is. It is an omission of a mandatory (Wajib) act, and the doer becomes a sinner. It remains mandatory to wrap it over the neck [shoulders]; if not wrapped, another sin is incurred. However, if one only possesses that much clothing, then in such a state of need, it is excused. The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

[Arabic]: La yusalli ahadukum fi al-thawb al-wahid laysa 'ala 'atiqihi min shay' (1). Rawahu al-Shaykhan 'an Abi Hurayrah radi Allahu ta'ala 'anhu. [Translation]: None of you should pray in a single garment such that there is nothing of it on his shoulder. It was narrated by Al-Bukhari and Muslim from Abu Hurairah (may Allah be pleased with him).

Khatib Baghdadi narrates from Jabir bin Abdullah (may Allah be pleased with him):

[Arabic]: Naha Rasulullah salla Allahu ta'ala 'alayhi wa sallama 'an al-salati fi al-sarawili wahdahu (2). [Translation]: (Meaning) The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) forbade praying in trousers alone.

In Al-Khulasah al-Hindiyyah and similar works, it is stated:

[Arabic]: Law salla ma'a al-sarawili wa al-qamisu 'indahu yukrahu (3). [Translation]: If someone offered prayer only in trousers while they had a shirt available, the prayer would be disliked (Makruh). (T)

Denying the obligation of recitation (Qirat) in prayer is a rejection of numerous authentic and explicit Hadiths of the radiant Prophet, the Leader of the Messengers (peace and blessings of Allah be upon him), and a violation of the consensus (Ijma) of the Imams (may Allah be pleased with them). Rather, after the cessation of irregular (shadh) opinions, it is a contradiction of established consensus, and now it is clear misguidance and error. Imam Abdul Wahhab Sha'rani says in 'Mizan al-Shari'ah al-Kubra':

[Arabic]: Ajma'a al-aimmatu radi Allahu ta'ala 'anhum 'ala anna al-salata la tasihhu illa ma'a al-'ilmi bi-dukhul al-waqti wa 'ala anna li-lsalati arkanan dakhilatan fiha wa 'ala anna al-niyyata fardun wa kadhalika takbirat al-ihram wa al-qiyamu ma'a al-qudrati wa al-qira'atu wa al-ruku'u wa al-sujudu wa al-julusu fi al-tashahhud al-akhir (ila an qala). [Translation]: All the Imams (may Allah be pleased with them) agree that for the validity of prayer, it is necessary for the worshipper to know that the prayer time has

started. There is also consensus that the pillars (Arkan) of prayer are integral to it. There is also consensus that the intention (Niyyah) is mandatory, as are the Opening Takbir (Takbir Tahrimah), standing (Qiyam) with ability, recitation (Qirat), bowing (Ruku), prostration (Sujud), and the final sitting (Tashahhud al-Akhir).

1. Sahih Bukhari, Chapter: When praying in a single garment, etc., published by Qadimi Kutub Khana Karachi 1/52; Sahih Muslim, Chapter: Prayer in a single garment, etc., published by Noor Muhammad Asah al-Matabi Karachi 1/198.
2. Tarikh Baghdad, Hadith 2564, published by Dar al-Kitab al-Arabi Beirut 5/138.
3. Fatawa Hindiyyah, Second Chapter regarding what is disliked in prayer and what is not, published by Noorani Kutub Khana Peshawar 1/106.

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

...है। वाजिब का तर्क(छोड़ना) है, ऐसा करने वाला गुनहगार होता है। इसे गर्दन (कंधों) पर फेरना वाजिब रहता है, अगर न फेरे तो दूसरा गुनाह सिर पर आता है। हाँ, अगर इतने ही कपड़े की सामर्थ्य है, तो ऐसी मोहताजी (कमी) में मजबूरी व माफ़ी है। रसूल अल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

[अरबी]: ला युसल्ली अहदुकुम फ़िल थौबिल वाहिद लैसा 'अला आतीकिही मिन शय' (1)। रवाहू शैखान 'अन अबी हुरैराह रज़ियल्लाहु तआला 'अन्हु। [अनुवाद]: हरगिज़ तुम में से कोई व्यक्ति एक ही कपड़ा पहन कर नमाज़ न पढ़े कि उसके कंधे पर उसका कोई हिस्सा न हो। इसे इमाम बुखारी और मुस्लिम ने अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया।

खतीब बगदादी जाबिर बिन अब्दुल्लाह (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रावी (रिवायत करने वाले) हैं:

[अरबी]: न्हा रसूल्लुलाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लमा 'अनिस्सलाती फ़िस सरावीली वहदहू (2)। [अनुवाद]: (यानी) सिर्फ पाजामा पहनकर नमाज़ पढ़ने से रसूल अल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने मना फरमाया।

खुलासा हिन्दिया आदि में है:

[अरबी]: लव सल्ला मअस्सरावीली वल कमीसु इन्दहू युकरहू (3)। [अनुवाद]: अगर किसी ने केवल शलवार (पाजामा) में नमाज़ अदा की, जबकि उसके पास कमीज़ मौजूद हो, तो नमाज़ मकरूह (नापसंदीदा) होगी। (त)

नमाज़ में किराअत (कुरान पाठ) की फर्ज़ियत (अनिवार्यता) का इंकार, हुज़ूर पुर नूर सैयदुल मुरसलीन (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की अनेक सहीह और स्पष्ट अहादीस का खंडन है और आइम्मा (रज़ियल्लाहु अन्हुम) के इजमा (सहमति) का उल्लंघन है। बल्कि अलग-थलग (शाज़) बयानों के खत्म होने के बाद, यह स्थापित इजमा का विरोध है और अब यह स्पष्ट रूप से गुमराही और भटकाव है। इमाम अब्दुल वहाब शेरानी 'मीज़ान अल-शरिया अल-कुबरा' में फ़रमाते हैं:

[अरबी]: अजम'अल आइम्मतु रज़ियल्लाहु तआला 'अन्हुम 'अला अन्नस सलाता ला तसिह्हू इल्ला म'अल 'इल्मी बिदुखूलिल वक़्ती व 'अला अन्ना लिस्सलाती अरकानन दाखिलतन फ़ीहा व 'अला अन्नन निय्यता फर्दुन व कजालिका तकबीरतुल एहराम वल क़ियामु मअल क़ुदरती वल किराअतु वर्रुकुउ

वस्सुजूद्दु वल जुलूसु फ़ित्तशह्हदिल आख़िर (इला अन क़ाला)। [अनुवाद]: तमाम आइम्मा (रज़ियल्लाहु अन्हुम) का इत्तेफाक (सहमति) है कि नमाज़ के सही होने (सिहत) के लिए नमाज़ी को इस बात का ज्ञान होना ज़रूरी है कि नमाज़ का वक़्त शुरू हो चुका है। इस पर भी इत्तेफाक है कि नमाज़ के अरकान (स्तंभ) नमाज़ में शामिल हैं। इस पर भी इत्तेफाक है कि नियत फर्ज़ है, इसी तरह तकबीर-ए-तहरीमा, सामर्थ्य के साथ क़ियाम (खड़े होना), किराअत, रुकू सुजूद और आखिरी तशहुद।

1. सहीह बुखारी, अध्याय: जब एक कपड़े में नमाज़ पढ़ी जाए आदि, प्रकाशित पुरानी कुतुब खाना कराची 1/52; सहीह मुस्लिम, अध्याय: एक कपड़े में नमाज़, प्रकाशित नूर मुहम्मद असहुत मताबे कराची 1/198।
2. तारीख़ बग़दाद हदीस 2564, प्रकाशित दारुल किताब अल अरबी बेरुत 5/138।
3. फ़तावा हिन्दिया, दूसरा अध्याय उन चीज़ों के बारे में जो नमाज़ में मकरूह हैं और जो नहीं हैं, प्रकाशित नूरानी कुतुब खाना पेशावर 1/106।

पृष्ठ 643 का 736

ہوتی ہے۔ واجب ترک ہوتا ہے فاعل گنہگار ہوتا ہے اس کا پھیرنا گردن پر واجب رہتا ہے نہ پھیرے تو دوسرا گناہ سر پر آتا ہے ، ہاں اگر اتنے ہی کپڑے کی قدرت ہے تو ایسی محتاجی میں مجبوری و معافی ہے۔ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں :

لا یصلّی احدکم فی الثوب الواحد لیس علی عاتقه من شئ۱۔ رواہ شیخان عن ابی ھریرۃ رضی اللہ تعالی عنہ۔ ہرگز تم میں کوئی شخص ایک ہی کپڑا پہن کر نماز نہ پڑھے کہ کندھے پر اس کا کوئی حصہ نہ ہو۔ اسے امام بخاری و مسلم نے ابوہریرہ رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا۔

خطیب بغدادی جابر بن عبداللہ رضی اللہ تعالٰی عنہ سے راوی :

نھی رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیه وسلم عن الصلوۃ فی السراویل وحدہ ۲ (یعنی صرف پاجامہ سے نماز پڑھنے سے رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے منع فرمایا۔

خلاصہ ہندیہ وغیرہ ہما میں ہے :

لوصلی مع السراویل والقمیص عندہ یکرہ ۳۔ اگر کسی نے فقط شلوار میں نماز ادا کی حالانکہ اس کے پاس قمیص موجود ہو تو نماز مکروہ ہو گی۔ (ت)

نماز میں فرضیت قرات کا انکار احادیث کثیرہ صحیحہ صریحہ حضور پُر نور سید المرسلین صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کار داور اجماع ائمہ رضی اللہ تعالٰی عنہم کا خرق بلکہ بعد انقطاع اقوال شاذہ اجماع مستقر کا خلاف اور اب گمراہی و ضلالت صاف صاف ہے۔ امام عبدالوہاب شعرانی میزان الشریعۃ الکبرٰی میں فرماتے ہیں :

اجمع الائمة رضی اللہ تعالی عنهم علی ان الصلوة لاتصح الامع العلم بدخول الوقت وعلی ان للصلوة ارکانًا داخلةً فیها وعلی ان النیة فرض وکذلك تکبیرة الاحرام والقیام مع القدرة والقرأة والرکوع والسجود والجلوس فی التشهد الاخیر (الی ان قال) تمام ائمہ رضی اللہ تعالیٰ عنهم کا اتفاق ہے کہ صحتِ نماز کے لئے نمازی کو اس بات کا علم ہونا ضروری ہے کہ نماز کا وقت شروع ہو چکا ہے، اس پر بھی اتفاق ہے کہ نماز کے ارکان نماز میں داخل ہیں، اسپر بھی اتفاق ہے کہ نیت فرض ہے، اسی طرح تکبیر تحریمہ اور قدرت کے ساتھ قیام، قرات، رکوع، سجود، اخیری تشہد

1 صحیح بخاری باب اذا صلی فی الثوب الواحد الخ مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱ / ۵۲، صحیح مسلم باب الصلوة فی ثوب واحد الخ مطبوعہ نور محمد اصح المطابع کراچی ۱ / ۱۹۸ 2 تاریخ بغداد حدیث ۲۵۶۴ مطبوعہ دار الکتاب العربی بیروت ۵ / ۱۳۸ 3 فتاویٰ ہندیہ الفصل الثانی فیما یکرہ فی الصلوة مالا یکرہ مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور ۱ / ۱۰۶

Fatawa Razawiyya Volume 6

(Arabic) This is what I found among the issues of consensus (ijma) which are not suitable to be included in my two levels of Mizan. (1)	**(Urdu) ...to sit in (Later he said) These are the issues on which I found consensus; it is not correct to include them in my compiled book 'Al-Mizan'. (T)**

It is in 'Rahmat al-Ummah fi Ikhtilaf al-A'immah': | (Arabic) They agreed that recitation (qira'at) is obligatory (fard) for the Imam and the individual in the two units (rak'ahs) of Fajr and in the first two units of other prayers. (2) | (Urdu) The jurists are in agreement that recitation is obligatory for the Imam and the individual performer in both rak'ahs of Fajr and the first two rak'ahs of other prayers. (T) |

Rather, Imam Ibn al-Haj states in 'Hilyah': | (Arabic) The author of 'Ghayat al-Bayan' attributed 'breaking of consensus' to Al-Asamm, and this indicates that consensus on the obligatoriness (of recitation) preceded his deviation towards its non-obligatoriness. (3) | (Urdu) The author of 'Ghayat al-Bayan' has attributed the breaking of consensus to Al-Asamm, and this clearly states that consensus on its obligatoriness had already been established before Al-Asamm gave the opinion of its non-obligatoriness. (T) |

It is in 'Alamgiri': | (Arabic) Whoever denies a solitary report (khabar al-wahid) does not become a disbeliever (kafir), however, he becomes a sinner for not accepting it. This is how it is in 'al-Zahiriyyah'. (4) | (Urdu) One who denies 'khabar al-wahid' is not a disbeliever, although he will be a sinner for abandoning its acceptance. It is stated similarly in 'Zahiriyyah'. (T) |

It is in 'Tahtawi': | (Arabic) Whoever is outside of these four (schools of thought) in this era is among the people of innovation (bid'ah) and the Fire. (5) | (Urdu) Meaning, whoever is outside these four schools in this age is an innovator and destined for Hell. (T) |

Not believing in the necessity of reciting Al-Hamd (Surah Al-Fatiha) and a Surah in prayer is also a vile ignorance and (contrary to) the instructions of the luminous Presence, peace and blessings of Allah be upon him.

Footnotes: 1 Al-Mizan al-Kubra, Chapter: Description of Prayer, published by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/126. 2 Rahmat al-Ummah fi Ikhtilaf al-A'immah, on the margin of Mizan al-Kubra, Section: Requirements of Prayer, etc., published by Mustafa al-Babi, Egypt, p. 38. 3 Hilyat al-Mahalli, Commentary on Munyat al-Musalli. 4 Fatawa

Hindiyyah, topic: Causes of Disbelief, various types, published by Noorani Kutub Khana, Peshawar, 2/265. 5 Hashiyat al-Tahtawi 'ala al-Durr al-Mukhtar, Book of Slaughtering, published by Dar al-Ma'rifah, Beirut, 4/153.

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

(अरबी) यह वह बातें हैं जो मैंने आम सहमति (इज्मा) के मुद्दों में पाईं जिन्हें 'मिज़ान' के मेरे दो स्तरों में शामिल करना उचित नहीं है। (1)

(उर्दू) ...में बैठना (आगे चलकर कहा) ये वो मसले हैं जिन पर मैंने इज्मा पाया, इन्हें मेरी संकलित किताब अल-मिज़ान में शामिल करना सही नहीं है। (त)

'रहमतुल उम्माह फ़ी इख़्तिलाफ़िल अइम्माह' में है: | (अरबी) उन्होंने सहमति व्यक्त की कि फज्र की दो रकातों में और अन्य नमाज की पहली दो रकातों में इमाम और अकेले नमाज पढ़ने वाले के लिए तिलावत (किरात) अनिवार्य (फर्ज) है। (2) | (उर्दू) फ़ुक़हा (न्यायविदों) का इस बात पर इत्तेफ़ाक़ (सहमति) है कि इमाम और मुनफ़रिद (अकेले नमाज़ पढ़ने वाले) पर फ़ज्र की दोनों रकात और इसके अलावा अन्य नमाज़ों की पहली दो रकात में क़िरात फ़र्ज़ है। (त) |

बल्कि इमाम इब्न अल-हाज 'हुलिया' में फ़रमाते हैं: | (अरबी) 'ग़ायत अल-बयान' के लेखक ने अल-असम्म की ओर इज्मा तोड़ने का श्रेय दिया है, और यह इस बात का संकेत है कि इसकी अनिवार्यता पर इज्मा उसके इनकार से पहले ही हो चुका था। (3) | (उर्दू) साहिबे ग़ायतुल बयान ने असम्म की तरफ़ ख़र्क़े इज्मा (आम सहमति तोड़ने) का श्रेय दिया है और यह बात स्पष्ट कर रही है कि असम्म के फ़र्ज़ न होने का कौल (कथन) करने से पहले इसकी फर्ज़ियत पर इज्मा हो चुका है। (त) |

'आलमगीरी' में है: | (अरबी) जो 'ख़बर-ए-वाहिद' (अकेली रिवायत) का इनकार करे वह काफ़िर नहीं होता, अलबत्ता उसे स्वीकार न करने के कारण गुनहगार होगा। 'ज़हीरिया' में इसी तरह है। (4) | (उर्दू) खबर वाहिद का मुनकिर काफ़िर नहीं अलबत्ता तर्कए-क़बूल की वजह से गुनहगार होगा। ज़हीरिया में इसी तरह है। (त) |

'तहतावी' में है: | (अरबी) जो इस ज़माने में इन चारों (विचारधाराओं) से बाहर है, वह बिदअती (नवाचारी) और आग (जहन्नम) वालों में से है। (5) | (उर्दू) यानी जो इन चारों मज़हब से इस ज़माना में बाहर है वह बदअती और जहन्नमी है। (त) |

नमाज़ में अल-हम्द (सूरह फातिहा) और सूरह की ज़रूरत न मानना भी जहल-ए-क़बीह (घोर अज्ञानता) है और हुज़ूर पुरनूर सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम के इरशादात के(विपरीत है)।

पादलेख (Footnotes): 1 अल-मिज़ान अल-कुबरा, बाब सफ़तुल सलात, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 1/126. 2 रहमतुल उम्माह फ़ी इख़्तिलाफ़िल अइम्माह, हाशिए मिज़ान कुबरा पर, अरबाब शुफ़्तुल सलात आदि, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, पृ. 38. 3 हुलियत अल-मुहल्ली शरह मुनियतुल मुसल्ली. 4 फ़तावा हिंदीया, मतलूब मौजिबातल कुफ़्र अनवाअ, नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर, 2/265. 5 हाशियत अल-तहतावी अलद दुर्रुल मुख़्तार, किताबुज़ ज़बायह, दारुल मआरिफ़ा बैरुत, 4/153.

पेज 644/736

فتاوی رضویہ جلد ششم

(عربی) هذا ماوجدته من مسائل (اردو) میں بیٹھنا (آگے چل کر کہا) یہ وہ مسائل ہیں جن پر الاجتماع التي لايصح دخولها في میں نے اجماع پایا ان کو میری مرتب کردہ کتاب المیزان میں مرتبتي الميزان۔ 1 داخل کرنا صحیح نہیں۔(ت)

رحمۃ الامہ فی اختلاف الائمہ میں ہے: | (عربی) اتفقوا علی ان القرأۃ فرض علی الامام والمنفرد في رکعتي الفجر وفي الرکعتین الاولیین من غیرھما۔ 2 | (اردو) فقہاء کا اس بات پر اتفاق ہے کہ امام اور منفرد پر فجر کی دونوں رکعات اور اس کے علاوہ دیگر نمازوں کی پہلی دو رکعت میں قرأت فرض ہے۔ (ت) |

بلکہ امام ابن الحاج حلیہ میں فرماتے ہیں: | (عربی) نسب صاحب غایۃ البیان الاصم الی خرق الاجتماع وھو یفید سبق الاجتماع علی الافتراض قبل ذھابہ الی عدمہ۔ 3 | (اردو) صاحب غایۃ البیان نے اصم کی طرف خرق اجماع کی طرف نسبت کی ہے اور یہ بات واضح کررہی ہے کہ اصم کے عدم فرضیت کا قول کرنے سے پہلے اس کی فرضیت پر اجماع ہو چکا ہے۔ (ت) |

عالمگیری میں ہے: | (عربی) من انکر خبر الواحد لا یکفر غیر انہ یأثم بترک القبول ھکذا في الظھیریۃ۔ 4 | (اردو) خبر واحد کا منکر کافر نہیں البتہ ترک قبول کی وجہ سے گنہگار ہوگا۔ ظہیریہ میں اسی طرح ہے۔ (ت) |

طحطاوی میں ہے: | (عربی) من کان خارجاً عن ھذہ الاربعۃ في ھذا الزمان فھو من اھل البدعۃ والنار۔ 5 | (اردو) یعنی جو ان چاروں مذہب سے اس زمانہ میں باہر ہے وہ بدعتی اور جہنمی ہے (ت) |

نماز میں الحمد و سورۃ کی حاجت نہ ماننا بھی جہلِ قبیح اور ارشاداتِ حضورِ پُرنور صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کا

حواشی: 1 المیزان الکبری باب صفۃ الصلوۃ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/ ۱۲۶ 2 رحمۃ الامہ فی اختلاف ائمہ برحاشیہ میزان کبری ارباب شروط الصلوۃ الخ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ص ۳۸ 3 حلیۃ المحلی شرح منیۃ المصلی 4 فتاوی ہندیہ مطلب موجبات الکفر انواع مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور ۲/ ۲۶۵ 5 حاشیہ الطحطاوی علی الدرالمختار کتاب الذبائح مطبوعہ دارالمعرفۃ بیروت ۴/ ۱۵۳

صفحہ 644 من 736

Fatawa Razawiyya Volume Six

It is an explicit denial. The Messenger of Allah (may peace and blessings of Allah be upon him) says: "There is no prayer for one who does not recite the Opening of the Book (Surah Al-Fatihah)." [1] - That is, a prayer without Surah Al-Fatihah is deficient. Recorded by the Imams Ahmad and the Six [compilers of Hadith] from Ubadah bin As-Samit (may Allah be pleased with him). (Recorded by Imam Ahmad and the authors of the Sahah Sittah from Hazrat Ubadah bin Samit, may Allah be pleased with him. - T) (In another Hadith, he (peace and blessings of Allah be upon him) says:

| "Whoever offers a prayer in which he does not recite the Opening of the Book, it is deficient (khidaj)." [2] - Narrated by Ahmad, Muslim, Abu Dawood, Tirmidhi, and Nasai from Abu Hurairah, and by Ahmad and Ibn Majah from the Mother of the Believers, as-Siddiqah (may Allah be pleased with both). | That is, the prayer which is without Surah Al-Fatihah is deficient. Imam Ahmad, Muslim, Abu Dawood, Tirmidhi, and Nasai narrated it from Hazrat Abu Hurairah (may Allah be pleased with him), and Imam Ahmad and Ibn Majah narrated it from the Mother of the Believers, Sayyidah Aisha Siddiqah (may Allah be pleased with her). |

The third Hadith is from Abu Hurairah (may Allah be pleased with him):

| The Prophet (may peace and blessings of Allah be upon him) commanded him to go out and announce that there is no prayer without the recitation of the Opening of the Book and something more. [3] - Narrated by Ahmad and Abu Dawood. | That is, the Messenger of Allah (may peace and blessings of Allah be upon him) commanded him to go out and make a public announcement that a prayer without Surah Al-Fatihah and some additional recitation is deficient. Imam Ahmad and Abu Dawood narrated this. |

In the fourth Hadith, he (peace and blessings of Allah be upon him) says:

| "A prayer is not sufficient except with the Opening of the Book and something else along with it." [4] - Narrated by Imam al-A'zam Abu Hanifa (may Allah be pleased with him) from our leader Abu Sa'id al-Khudri (may Allah's pleasure be upon him), and its meaning [is found elsewhere too]. | Prayer does not work without [Surah] Fatihah and with it other recitation. Imam al-A'zam Abu Hanifa (may Allah be pleased with him) narrated this from Sayyiduna Abu Sa'id al-Khudri (may Allah's pleasure be upon him), and in terms of meaning, Tirmidhi and Ibn Majah similarly. |

[1] Sahih Bukhari, Chapter: The obligation of recitation for the Imam etc., published by Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/102. [2] Sahih Muslim, Chapter: The obligation of reciting Al-Fatihah in every Rak'ah etc., published by Noor Muhammad, Asah ul-Matabi, Karachi, 1/170. [3] Al-Musnad by Ahmad bin Hanbal, from Musnad Abi Hurairah, published by Dar al-Fikr, Beirut, 2/428. [4] Musnad al-Imam al-A'zam with Tansiq al-Nizam, Book of Prayer, published by Noor Muhammad, Asah ul-Matabi, Karachi, p. 58.

यह एक स्पष्ट इनकार है। अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) फरमाते हैं: "उसकी कोई नमाज़ नहीं जिसने किताब की शुरुआत (सूरह अल-फातिहा) नहीं पढ़ी।" [1] - यानी सूरह फातिहा के बिना नमाज़ अधूरी है। इसे इमाम अहमद और छह (हदीस के संकलनकर्ताओं) ने उबादा बिन अस-सामित (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है। (इमाम अहमद और सहाह सित्तह के लेखकों ने हज़रत उबादा बिन सामित रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है। - टी) (दूसरी हदीस में आप (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) फरमाते हैं:

| "जिसने कोई नमाज़ पढ़ी जिसमें उसने किताब की शुरुआत नहीं पढ़ी, तो वह अधूरी (खिदाज) है।" [2] - अहमद, मुस्लिम, अबू दाऊद, तिर्मिज़ी और नसाई ने अबू हुरैरा से रिवायत किया, और अहमद और इब्न माजह ने उम्मुल मोमिनीन अस-सिद्दीका (रज़ियल्लाहु अन्हा) से। | यानी जो नमाज़ सूरह फातिहा के बिना हो वह अधूरी है। इमाम अहमद, मुस्लिम, अबू दाऊद, तिर्मिज़ी और नसाई ने इसे हज़रत अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु से और इमाम अहमद और इब्न माजह ने उम्मुल मोमिनीन सैयदा आयशा सिद्दीका रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत किया है। |

तीसरी हदीस अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से है:

| नबी (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने उन्हें हुक्म दिया कि वे बाहर जाकर घोषणा करें कि सूरह अल-फातिहा की तिलावत और कुछ और अधिक पढ़े बिना कोई नमाज़ नहीं है। [3] - अहमद और अबू दाऊद द्वारा रिवायत। | यानी अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने उन्हें हुक्म दिया कि वे बाहर जाकर मुनादी (घोषणा) कर दें कि सूरह फातिहा और कुछ अतिरिक्त किरात (पाठ) के बिना नमाज़ अधूरी है। इसे इमाम अहमद और अबू दाऊद ने रिवायत किया है। |

चौथी हदीस में है, आप (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) फरमाते हैं:

| "नमाज़ पर्याप्त नहीं है सिवाय सूरह अल-फातिहा और उसके साथ कुछ और के।" [4] - इमाम आज़म अबू हनीफ़ा (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने हमारे सरदार अबू सईद अल-खुदरी (रज़ियल्लाहु अलैह) से रिवायत किया, और इसका अर्थ [अन्यत्र भी है]। | नमाज़ फातिहा और उसके साथ और किरात के बिना काम नहीं देती। इसे इमाम आज़म अबू हनीफ़ा रज़ियल्लाहु अन्हु ने सैयदुना अबू सईद खुदरी रज़ियल्लाहु अलैह से रिवायत किया और अर्थ के आधार पर इसी तरह तिर्मिज़ी और इब्न माजह। |

[1] सहीह बुखारी, बाब: इमाम के लिए किरात की अनिवार्यता आदि, पुरानी कुतुब खाना कराची द्वारा प्रकाशित, 1/102। [2] सहीह मुस्लिम, बाब: हर रकात में अल-फातिहा पढ़ने की अनिवार्यता आदि, नूर मोहम्मद, असद उल-मताबे, कराची द्वारा प्रकाशित, 1/170। [3] अहमद बिन हंबल की अल-मुसनद, मुसनद अबी हुरैरा से, दार अल-फिक्र बेरूत द्वारा प्रकाशित, 2/428। [4] मुसनद इमाम आज़म मा तनसीक अल-निज़ाम, किताबुस सलात, नूर मोहम्मद, असद उल-मताबे, कराची द्वारा प्रकाशित, पृ. 58।

فتاوی رضویہ جلد ششم

انکار صریح ہے۔ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں: لا صلوۃ لمن لم یقرأ بفاتحۃ الکتاب 1 - یعنی بے سورہ فاتحہ کے نماز ناقص ہے رواہ الائمۃ احمد والستۃ عن عبادۃ بن الصامت رضی اللہ تعالیٰ عنہ (اسے امام احمد اور اصحاب صحاح ستہ نے حضرت عبادہ بن صامت رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا ہے ۔ ت) (دوسری حدیث میں فرماتے ہیں صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم:

| من صلی صلاۃ لم یقرأ فیہا بفاتحۃ الکتاب فہی خداج 2 - رواہ احمد ومسلم وابوداؤد والترمذی والنسائی عن ابی ہریرۃ واحمد وابن ماجۃ عن ام المؤمنین الصدیقۃ رضی اللہ تعالیٰ عنہا۔ | یعنی جو نماز بے سورہ فاتحہ کے ہو وہ ناقص ہے ۔ اس کو امام احمد ، مسلم ، ابو داؤد ، ترمذی اور نسائی نے حضرت ابو ہریرہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے اور امام احمد اور ابن ماجہ نے حضرت ام المؤمنین سیدہ عائشہ صدیقہ رضی اللہ تعالیٰ عنہا سے روایت کیا ہے۔ |

تیسری حدیث میں ابو ہریرہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے ہے۔

| ان النبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم امرہ ان یخرج فینادی ان لا صلوۃ الابقرأۃ فاتحۃ الکتاب فما زاد 3 - رواہ احمد و ابو داؤد ۔ | یعنی رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے انہیں حکم دیا کہ باہر جا کر منادی کردیں کہ بے سورہ فاتحہ اور کچھ زائد قرأت کی نماز ناقص ہے ۔ اس کو امام احمد اور ابو داؤد نے روایت کیا ہے۔ |

چوتھی حدیث میں ہے ، فرماتے ہیں صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم :

| لا تجزئی صلاۃ الا بفاتحۃ الکتاب ومعہا غیرہا 4 - رواہ الامام الاعظم ابو حنیفۃ رضی اللہ تعالیٰ عنہ عن سیدنا ابی سعید الخدری رضوان اللہ تعالیٰ علیہ و معناہ | نماز کام نہیں دیتی بے فاتحہ اور

اس کے ساتھ اور قرأت کے ۔ اس کو امام اعظم ابو حنیفہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ نے سیدنا ابو سعید خدری رضوان اللہ تعالیٰ علیہ سے روایت کیا اور معنًا اسی طرح ترمذی اور ابن ماجہ |

1 صحیح بخاری باب وجوب القرأة للامام الخ مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱ / ۱۰۲ 2 صحیح مسلم باب وجوب قرأة الفاتحہ فی کل رکعۃ الخ مطبوعہ نور محمد اصح المطابع کراچی ۱ / ۱۷۰ 3 المسند لاحمد بن حنبل از مسند ابی ہریرہ مطبوعہ دارالفکر بیروت ۲ / ۴۲۸ 4 مسند الامام اعظم مع تنسیق النظام کتاب الصلوۃ مطبوعہ نور محمد اصح المطابع کراچی ص ۵۸

It has been narrated similarly by At-Tirmidhi and Ibn Majah.

And even more severe and filthier than all of them is that rejected statement of his, that what is the need for saying "Muhammad Rasulullah" (Muhammad is the Messenger of Allah, peace and blessings of Allah be upon him) in the Kalima Tayyiba (the creed of purity)? (Dust in his mouth). If he means by this that for entering Islam, believing in "La ilaha illa Allah" (There is no god but Allah) alone is sufficient and there is no need for "Muhammad Rasulullah", then he is absolutely, definitely a pure disbeliever and an apostate. His wife is separated from his marriage; if he goes near her, it will be adultery (zina), and any children born will be illegitimate (walad al-zina). The woman has the right to marry whomever she wishes. Even if this is not the intended meaning, the filthy style of street-talk indicates severe insolence and boldness. And that phrase "If he doesn't go to heaven, won't he even go to A'raf?" indicates mockery of the solid faith (Deen-e-Mateen). In any case, there is no doubt that the aforementioned person is a sinful, transgressor, deviated, and adherent of a bad sect; praying behind him is unlawful and prohibited, as we have established in our treatise "An-Nahy al-Akeed" and mentioned in several places in our Fatawa. (We have detailed this in our treatise Al-Nahy al-Akeed and in numerous places in our Fatawa - Note). Muslims should demand repentance from him; if he repents, then well and good, otherwise they should deal with him as one should deal with the irreligious. And Allah is the Guide, and Allah, the Exalted, knows best.

तिर्मिज़ी और इब्न माजह ने इसी तरह की रिवायत की है।

और उन सबसे ज़्यादा सख़्त और नापाक उसका वह मरदूद (तिरस्कृत) कौल (कथन) है कि कलमा तैय्यबा में (खाक उसके मुँह में) "मुहम्मद रसूलुल्लाह" (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) कहने की क्या ज़रूरत! अगर इससे उसका यह मतलब है कि इस्लाम लाने के लिए सिर्फ"ला इलाहा इल्लल्लाह" मानना काफी है और "मुहम्मद रसूलुल्लाह" की ज़रूरत नहीं, तो वह निश्चित रूप से नितांत काफ़िर और मुर्तद (धर्मत्यागी) है। उसकी पत्नी उसके निकाह से बाहर निकल गई; अगर वह उसके पास जाएगा तो वह ज़िना (व्यभिचार) होगा, और संतान हुई तो वह वलद-उज़-ज़िना (अवैध संतान) होगी। औरत को अधिकार है कि जिससे चाहे निकाह करे। और अगर यह मतलब नहीं है, फिर भी नापाक कलाम का बाज़ारी अंदाज़ सख़्त गुस्ताखी और निडरता की ख़बर दे रहा है। और वह जुमला "जन्नत में नहीं जाएगा तो क्या आराफ़ में नहीं जाएगा" दीन-ए-मतीन (मज़बूत धर्म) के साथ मज़ाक का पता देता है। बहरहाल, इसमें कोई शक नहीं कि उक्त व्यक्ति फ़ासिक़, फाजिर, गुमराह और बद-मज़हब है; उसके पीछे नमाज़ पढ़ना नाजायज़ और मना है, जैसा कि हमने अपने रिसाले (पत्र) "अन-नही अल-अकीद" में प्रमाणित किया है और अपने फ़तावा में कई जगहों पर इसका ज़िक्र किया है। (इसका विवरण हमने अपने रिसाले 'अल-नही अल-अकीद' और अपने फ़तावा में अनेक स्थानों पर दिया है। - सं.) मुसलमानों को उससे तौबा (पश्चाताप) करानी चाहिए; अगर वह तौबा कर ले तो बेहतर है, वरना उसके साथ वैसा ही व्यवहार करें जैसा कि बेदीनों के साथ किया जाना चाहिए। और अल्लाह ही हिदायत देने वाला है, और अल्लाह सुब्हानहु व तआला बेहतर जानता है।

पृष्ठ 646 का 736

نحوہ عند الترمذی و ابن ماجہ نے روایت کیا ہے۔

اور ان سب سے سخت ترونا پاک تر اُس کا وہ قول مردود ہے کہ کلمہ طیبہ میں (خاکش بدہن) محمد رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کہنے کی کیا ضرورت ! اگر اس سے یہ مراد لیتا ہے کہ اسلام لانے کو صرف لا الہ الا اللہ ماننا کافی ہے محمد رسول اللہ کی حاجت نہیں جب تو قطعاً یقینا نرا کافر مرتد ہے۔ عورت اُس کی اُس کے نکاح سے نکل گئی پاس جائے گا تو زنا ہوگا، اولاد ہو تو ولد الزنا ہوگی۔ عورت کو اختیار ہے جس سے چاہے نکاح کرے۔ اور اگر یہ مراد نہیں تاہم ناپاک کلام کی طرزِ سوق سخت گستاخی وبے باکی سے خبر دے رہی ہے۔ اور وہ لفظ "جنت میں نہ جائے گا تو کیا اعراف میں نہ جائے گا" دین متین کے ساتھ استہزا کا پتا دیتا ہے۔ بہر حال اس قدر میں شک نہیں کہ شخص مذکور فاسق فاجر گمراہ بد مذہب ہے اس کے پیچھے نماز پڑھنا ناجائز و ممنوع ہے کما حققناہ فی رسالتنا النھی الاکید وذکرنا فی عدۃ مواضع من فتاونا (اس کی تفصیل ہم نے اپنے رسالہ النہی الاکید اور اپنے فتاوی میں متعدد جگہ پر کی ہے۔ ت) مسلمان اس سے توبہ لیں اگر توبہ کرلے فبہا ورنہ اس کے ساتھ وہ معاملہ برتیں جو بددینوں کے ساتھ چاہئے واللہ الھادی واللہ سبحانہ و تعالٰی اعلم۔

صفحہ 646 از 736

Fatawa-e-Razvia Volume 6

The Strong Prohibition of Praying Behind Opponents of Taqlid (1305 AH) (It is strictly forbidden to offer prayer behind an enemy of Taqlid)

In the name of Allah, the Most Gracious, the Most Merciful.

All praise is for Allah who guided us to the Sunnahs and protected us from trials. And placed among us every virtuous and noble leader through whom people find guidance and upon whom they rely. And enriched us such that we do not follow the people of fitna (mischief). And the most tender blessings and peace be upon the trustworthy Imam, the sanctuary and the safe one. Muhammad, the nourisher of soul and body, and upon his family and companions in secret and in public. And upon the Mujtahid Imams, the lamps of the time. Revealers of what was hidden and manifestors of what was concealed. The trustworthy noble ones, the guides of the Sunnahs. The water-bearers who draw from the sweet river of the Sunnahs, and through them, O Bestower of Great Favors, bestow upon us as well. I bear witness that...

Page 647 of 736

फ़तावा-ए-रज़विया जिल्द छठा

तक़लीद के विरोधियों के पीछे नमाज़ पढ़ने का कड़ा निषेध (1305 हिजरी) (तक़लीद के दुश्मन के पीछे नमाज़ पढ़ना सख़्त मना है)

अल्लाह के नाम से, जो अत्यंत दयालु और कृपाशील है।

तमाम प्रशंसा उस अल्लाह के लिए है जिसने हमें सुन्नतों की ओर मार्गदर्शन दिया और हमें परीक्षाओं से बचाया। और हमारे बीच हर नेक और उच्च इमाम बनाया जिसके माध्यम से लोग मार्ग पाते हैं और जिन पर भरोसा किया जाता है। और हमें समृद्ध किया कि हम फ़ित्ना (उपद्रव) फैलाने वालों का अनुसरण न करें। और अत्यंत करुणामयी दुरूद और सलाम हो उस भरोसेमंद इमाम पर जो शरण और अमन देने वाले हैं। मुहम्मद (स.अ.व.), जो आत्मा और शरीर के पालनहार हैं, और उनके परिवार और साथियों पर गुप्त और प्रकट रूप में। और उन मुजतहिद इमामों पर जो अपने समय के दीपक हैं। छिपी हुई बातों को खोलने वाले और गुप्त मामलों को प्रकट करने वाले। भरोसेमंद कुलीन, सुन्नतों के मार्गदर्शक। वे पिलाने वाले जो सुन्नतों की मीठी नहर से भर-भर कर लाते हैं, और हे महान उपकार करने वाले, उनके माध्यम से हम पर भी दया कर। मैं गवाही देता हूँ कि...

पेज 647 का 736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

النہی الاکید عن الصلاۃ وراء عدی التقلید ۱۳۰۵ھ (دشمن تقلید کے پیچھے نماز ادا کرنا سخت منع ہے)

بسم اللہ الرحمن الرحیم

الحمد للہ الذی ھدانا السنن * ووقانا المحن * وجعل فینا کل امام حسن * بہ یُتأشی وعلیہ یؤتمن * واغنانا ان نقتدی بأھل الفتن * والصلاۃ والسلام الاَحَنّ * علی الامام الامین الامان الامن * محمد مربی الروح والبدن * وآلہ وصحبہ فی السر والعلن * والائمۃ المجتھدین مصابیح الزمن * کاشفی ما خفی ومظھری ما بطن * الثقات السراۃ ھداۃ السنن * السقاۃ الفراۃ من فرات السنن وعلینا بھم یا عظیم المنن * واشھد ان

تمام خوبیاں اس ذاتِ اقدس کے لئے جس نے ہمیں صحیح راہ کی ہدایت عطا کی اور ہمیں محنت و مشقت سے بچا لیا، ہم میں اچھے و اعلیٰ امام بنائے جن کی اقتدا کی جاتی ہے اور ان پر اعتماد کیا جاتا ہے، ہمیں اہل فتن کی اقتداء سے محفوظ کیا۔ نہایت ہی عاجزانہ طور پر صلاۃ و سلام ہو اس امام و مقتدا پر جو امین، جائے پناہ اور سب سے بڑے محسن ہیں جن کا اسم مبارک محمد ہے جو روح و بدن کے مربی ہیں، ان کی آل و اصحاب پر بھی سرًا و جہرًا، ان ائمہ مجتہدین پر بھی جو اپنے زمانے کے لئے چراغ ہیں، مخفی امور کھولنے اور باطنی معاملات کو ظاہر کرنے والے، رازوں کے پختہ محافظ، سنن نبی کی طرف ہادی، سنن کی نہر فرات سے مشکیزے بھر بھر کر پلانے والے، اے احسان فرمانے والے ان کے ساتھ ہم پر بھی رحمتوں کا نزول ہو۔ میں گواہی

Fatawa Razawiyya, Volume 6

[Boxed Text] Arabic: There is no god but Allah, alone, without partner, and I bear witness that Muhammad is His servant and messenger, peace be upon him and his Lord's blessings and grace be upon them. (t) Urdu: I testify to the fact that there is no deity except Allah Almighty, He has no partner in His essence or attributes, and I bear witness that Hazrat Muhammad (peace and blessings of Allah be upon him) is His chosen servant and messenger. May blessings, peace, grace, and kindness from their Lord be upon them. (T)

Furthermore, these few lines are 'Shaftah al-Sutur Jaliyah al-Fa'idah Jamilah al-A'idah' (Manifest Benefit, Beautiful Return), expressing the correct answer to a question sent to this humble named servant, Abdul Mustafa Ahmad Raza Muhammadi Sunni Hanafi Qadri Barkati Bareilly (may Allah forgive him, fulfill his hopes, and reform his actions), by Molvi Fazlur Rahman Sahib (may he be protected from evils), Imam of the Jamia Mosque of Ferozepur, from camp Ferozepur, Punjab. In those days, this humble servant was busy writing a blessed treatise in response to a question from Munger, Bengal, named 'Tajalli al-Yaqin ban Nabiyina Sayyid al-Mursalin.' Since that and a few other issues from different cities had priority over the Punjab issue, this one came in its turn when I was free from them. 'Al-Nahy al-Akid an al-Salat wara' Ada al-Taqlid' (The Firm Prohibition of Prayer behind the Enemies of Taqlid) (1305 AH) is the name of this writing and also its date of beginning and end. In this treatise, the primary goal is to show that praying behind non-followers (ghair-muqallids) is improper. In this context, some of their beliefs, states, ruses, and other benefits are written very briefly. It is prayed to the Lord that He may accept it and benefit the people of Islam and Sunnah. Since the theme of the treatise is not the refutation of opponents, therefore, avoiding polemical debate, it is a fatwa restricted to the limits of answering the issue and manifesting a ruling for its supporters. Those who desire such discourse should refer to the works of eminent scholars or other treatises of this humble one included in the collection 'Al-Bariqah al-Shariqah ala Mariqah al-Mashariqah.' And Allah is sufficient for us, and He is the best Disposer of affairs. And the best blessings be upon the Beautiful Beloved, his family, and companions with thousands of exaltations. Ameen Ameen, O Mighty, O Glorious.

Copy of the Inquiry Text Issue 825: In His Holy Name, to the blessed presence of Hazrat Maulana, of excellence and perfection, our master, honored and revered, Hazrat Maulana Ahmad Raza Khan Sahib (may the Merciful protect him). After offering Sunnah greetings joined with humble needs, it is requested that for the sake

of Allah, please grant an answer to this inquiry so that you may be rewarded by Allah and thanked by people. Molvi Ghulam Nabi Sahib, Imam of the Qasaban Khurd Mosque, who is a student of the scholars of Lucknow in the Ferozepur region, first [presented] the treatise 'Shah Tuyur,' in which the takfir (declaration of disbelief) of Hazrat Ibn Arabi, Maulana Rumi, and Maulana Abdul Rahman Jami (may mercy be upon them) was recorded. That treatise was printed at the Ferozepur press by Hafiz Muhammad Sahib Lucknawi.

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

[बॉक्स किया हुआ पाठ] अरबी: अल्लाह के सिवा कोई पूज्य नहीं, वह अकेला है, उसका कोई साथी नहीं, और मैं गवाही देता हूँ कि मुहम्मद उसके बंदे और रसूल हैं, उन पर उनके रब की ओर से दरूद-ओ-सलाम और अनुग्रह हो। (त) उर्दू: मैं इस बात की गवाही देता हूँ कि अल्लाह तआला के सिवा कोई माबूद नहीं, ज़ात और सिफ़ात में उसका कोई साझी नहीं, और मैं गवाही देता हूँ कि हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम उसके चुने हुए बंदे और रसूल हैं, उन पर उनके रब की तरफ़ से दरूद-ओ-सलाम और करम-ओ-लुत्फ़ हो। (त)

इसके बाद, ये कुछ पंक्तियाँ 'शफ़्ताह अल-सुतूर जलियत अल-फ़ायदा जमीलत अल-आइदा' हैं, जो इस फ़क़ीर अहमद रज़ा मुहम्मदी सुन्नी हनफ़ी क़ादरी बरकाती बरेलवी (अल्लाह उन्हें क्षमा करे, उनकी उम्मीदें पूरी करे और उनके कार्यों को सुधारे) के पास मौलवी फ़ज़लुर रहमान साहब (बुराइयों से सुरक्षित रहें), इमाम जामे मस्जिद फ़िरोज़पुर द्वारा कैंप फ़िरोज़पुर, पंजाब से भेजे गए एक प्रश्न के सही उत्तर की अभिव्यक्ति में हैं। उन दिनों यह फ़क़ीर मुंगेर, बंगाल के एक प्रश्न के उत्तर में 'तजल्ली अल-यक़ीन बन नबियिना सैय्यद अल-मुरसलीन' नामक एक मुबारक रिसाला लिखने में व्यस्त था, और उसे तथा अन्य विभिन्न शहरों के कुछ अन्य मसलों को पंजाब के मसले पर प्राथमिकता प्राप्त थी। जब उनसे फ़ुर्सत मिली, तो इसकी बारी आई। 'अन-नह्युल अकीद अनिस सलात वराअ अदत तक़लीद' (१३०५ हिजरी) इस लेख का नाम है और यही इसकी शुरुआत और अंत की तारीख़ भी है। इस रिसाले में मुख्य उद्देश्य यह दिखाना है कि ग़ैर-मुक़ल्लिदों के पीछे नमाज़ पढ़ना अनुचित है। इसके अंतर्गत उनके कुछ अक़ीदों, स्थितियों, चालों और अन्य लाभों को संक्षेप में लिखा गया है। मौला से प्रार्थना है कि वह इसे स्वीकार करे और इस्लाम और सुन्नत के लोगों को लाभ पहुँचाए। चूँकि रिसाले का विषय विरोधियों का खंडन नहीं है, इसलिए बहसबाज़ी से बचते हुए, यह मसले के जवाब की सीमा तक सीमित एक फ़तवा है और अपने समर्थकों के लिए एक हुक्म का इज़हार है। जो लोग इस प्रकार के कलाम के इच्छुक हैं, वे प्रतिष्ठित विद्वानों की रचनाओं या इस तुच्छ फ़क़ीर के संग्रह 'अल-बारिक़तुल शारिक़ा अल मारिक़तुल मशारिक़ा' में शामिल अन्य रिसालों की ओर रुजू करें। अल्लाह हमारे लिए काफ़ी है और वह बेहतरीन कार्यसाधक है। और बेहतरीन दरूद उस ख़ूबसूरत महबूब, उनके परिवार और साथियों पर हज़ारों सम्मानों के साथ। आमीन आमीन, ऐ अज़ीज़, ऐ जलील।

इस्तफ़्ता (प्रश्न) की इबारत की नक़ल मसला ८२५: बासमे सुब्हानहू, बरकत वाले हज़रत मौलाना, फ़ज़ल और कमाल के मालिक, हमारे मख़दूम, मुकर्रम, मोअज़्ज़म हज़रत मौलाना अहमद रज़ा खाँ साहब (सल्लमाहुर रहमान) की खिदमत में। सुन्नत के अनुसार सलाम और नियाज़ के बाद अर्ज़ है कि अल्लाह के लिए इस इस्तफ़्ता का जवाब इनायत फ़रमाएं ताकि आप अल्लाह के नज़दीक अज्र के हक़दार और लोगों के नज़दीक शुक्रगुज़ार हों। मौलवी ग़ुलाम नबी साहब, इमाम मस्जिद क़साबान ख़ुर्द, जो फ़िरोज़पुर क्षेत्र में लखनऊ के मौलवियों के छात्र हैं, उन्होंने पहले रिसाला 'शाह तुयूर' प्रस्तुत किया, जिसमें हज़रत इब्न अरबी, मौलाना रूमी और मौलाना अब्दुर रहमान जामी (रहमतुल्लाह अलैहिम) की तक़फ़ीर (कुफ़्र का फ़तवा) दर्ज थी। और वह रिसाला हाफ़िज़ मुहम्मद साहब लखनवी ने फ़िरोज़पुर के छापाखाने में छापा था।

पृष्ठ ७३६ का ६४८

لا الہ الا اللہ وحدہ لا شریك لہ واشہد ان محمدا عبدہ ورسولہ صلی اللہ علیہ ربہم وسلم ومن دیتا ہوں اس بات کی کہ اللہ تعالیٰ کے سوا کوئی معبود نہیں، ذات وصفات میں اس کا کوئی شریک نہیں، اور میں گواہی دیتا ہوں کہ حضرت محمد صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم اس کے برگزیدہ بندے اور رسول ہیں، ان پر ان کے رب کی طرف سے صلوۃ وسلام اور کرم ولطف ہو۔ (ت)

اما بعد یہ چند سطور کا شفتہ السطور جلیۃ الفائدۃ جمیلۃ العائدہ ہیں اظہار صواب میں اس سوال کے جواب میں جو فقیر نامزا عبدالمصطفٰی احمد رضا محمدی سنی حنفی قادری برکاتی بریلوی غفر اللہ لہ وحقق املہ واصلح عملہ کے پاس مولوی فضل الرحمن صاحب حفظ عن الشرور امام جامع مسجد فیروز پور کا بھیجا کیمپ فیروز پور ملک پنجاب سے آیا، فقیر ان دنوں ایک مبارک رسالہ بجواب سوال مونگیر بنگالہ مسمّٰی بہ تجلی الیقین بان نبینا سید المرسلین لکھنے میں مشتغل، اور اس کے اور چند مسائل دیگر بلاد کو مسئلہ پنجاب پر حق تقدم حاصل جب ان سے فراغت پائی اس کی نوبت آئی النہی الاکید عن الصلاۃ وراء عدی التقلید (۱۳۰۵ھ) اس تحریر کا نام اور یہی اس کی تاریخ آغاز وانجام، اس رسالہ میں اصل مقصود یہ ظاہر کرنا ہے کہ غیر مقلدوں کے پیچھے نماز ناروا ہے اس کے ضمن میں ان کے بعض عقائد واحوال ومکائد و دیگر فوائد بنہایت اجمال تحریر میں آئے، مولیٰ سے مسئول کہ قبول فرمائے اہل اسلام وسنت کو نفع پہنچائے، از انجا کہ موضوع رسالہ رد مخالف نہیں، لہذا الحاظ مجادل سے کنارہ گزیں کہ وہ تو ایک فتوی ہے جواب مسئلہ کی حد پر مقتصر اور اپنے موافقوں پر ایک حکم کا مظہر جسے اس رنگ کا کلام مشتاق بنائے تصانیف افاضل یا فقیر حقیر کے دیگر رسائل مندرجہ مجموعہ "البارقۃ الشارقۃ علی مارقۃ المشارقۃ" کی طرف رجوع

لائے وحسبنا اللہ ونعم الوکیل وافضل الصلوۃ علی الحبیب الجمیل والہ وصحبہ بالوف التبجیل آمین آمین یاعزیز یاجلیل۔

نقل عبارت استفتاء مسئلہ ۸۲۵: باسمہ سبحانہ، بخدمت بابرکت حضرت مولینا وبالفضل والکمال اولنا مخدوم مکرم معظم حضرت مولینا احمد رضا خاں صاحب سلمہ الرحمن۔ سلام مسنون بہ نیاز مقرون کے بعد عرض ہے کہ للہ اس استفتاء کا جواب مرحمت فرمائیں کہ عند اللہ ماجور وعند الناس مشکور ہوں۔ مولوی غلام نبی صاحب امام مسجد قصابان خورد جو شاگرد مولویان لکھنؤ کے علاقہ فیروز پور کے ہیں اول انھوں نے رسالہ شاہ طیور جس میں حضرت ابن عربی اور مولینا روم و مولانا عبدالرحمن جامی علیہم الرحمۃ کی تکفیر درج تھی اور وہ رسالہ مطبع فیروز پور میں حافظ محمد صاحب لکھنوی نے چھاپا تھا

Fatawa Ridawiyya Volume 6

...had put his signature on its confirmation, for which many witnesses are present, and some mention of this is recorded in the text and footnotes of page 41 of the treatise 'Tasreeh Abhath Faridkot'. Then, when the debate of the Muqallid scholars took place in the state of Faridkot, this Maulvi Sahib was also present among the Ghair-Muqallid scholars, and he returned from the state with a discharge letter in their category, as evidenced by the advertisement dated 11 February 1883 printed by the State of Faridkot, and his name is also included in the category of Ghair-Muqallideen on page 7 of the treatise. Furthermore, issues and events regarding him are also clear evidence of his non-conformity (Ghair-Muqallidi), an example of which is that when Ms. Fatima bint Imam-ud-Din Khan was divorced by her husband and the divorce deed was written, just twenty-two days later, within the waiting period ('Iddah), the aforementioned Maulvi performed her marriage to a person named Maskoot Lal Kurti, an employee in Babu. As justification, he showed Maulvi Jamal-ud-Din, the Imam of Masjid Bojhran Kalan, that it is proven from a Hadith in Tirmidhi that the 'Iddah for Khula is one menstrual period. In response, it was stated that in religious books like Fath al-Qadir etc., it is clearly written based on the authority of Hadith Bukhari etc. that Khula is a divorce, and this is the creed of the majority of past and present Imams, as detailed in the chapter on Khula (as has been explained in detail in the chapter on Khula. -Tr.) and mentioned in the chapter on 'Iddah as well, that the 'Iddah for divorce, Khula, and Li'an is all three menstrual periods. Therefore, according to Hanafi, Maliki, and Shafi'i schools, this marriage within the 'Iddah is invalid. Is it permissible to follow such a Ghair-Muqallid person as an Imam who adopts such manners and goes to the extent of making the forbidden permissible or not? Please clarify and be rewarded. Written by Muhammad Fazlur Rahman, Imam of Jamia Masjid Sadar Bazaar Ferozepur, Punjab, 10 Shawwal 1305 AH, Muhammad Fazlur Rahman.

O Allah, guidance to the truth and rightness. The Answer: This poor person (may Allah forgive him) is not concerned with the personalities of Zaid and Amr. The answer to saying that cursed word against the great status of the holy saints (Awliya), after the truth has become clear, will be received on the Day of Judgment. What complaint can be made against those bold and audacious people whose methodology is to call the general Imams and great scholars polytheists (mushrik), for not reaching the subtle understandings of the realities of the saints? Besides, this

issue itself is worthy of being written as an independent treatise, and if God gives justice, then the Hadith of Bukhari says:

[Arabic]: "Hatta ahbabtuhu fa-kuntu sam'ahulladhi yasma'u bihi wa-basarahulladhi yubsiru bihi wa-yadahu..." [Urdu translation]: "When I make a servant My beloved, I become his hearing (ear) with which he hears, his sight (eye) with which he sees, his hand..."

...उसकी तस्दीक़ (पुष्टि) पर अपने हस्ताक्षर कर दिए थे, जिसके बहुत से गवाह मौजूद हैं और इसका कुछ ज़िक्र 'तसरीह अब्हात फ़रीदकोट' नामक पुस्तिका के पृष्ठ 41 के मूल पाठ और हाशिये में दर्ज है। फिर जब फ़रीदकोट रियासत में मुक़ल्लिद (परंपरा का पालन करने वाले) विद्वानों का शास्त्रार्थ हुआ, तब भी ये मौलवी साहब ग़ैर-मुक़ल्लिद विद्वानों के साथ थे और उनके समूह में शामिल होकर रियासत से विदाई पत्र लेकर लौटे थे, जैसा कि फ़रीदकोट रियासत द्वारा मुद्रित 11 फरवरी 1883 के विज्ञापन से प्रमाणित है, और पुस्तिका के पृष्ठ 7 में भी उनका नाम ग़ैर-मुक़ल्लिदों की श्रेणी में शामिल है। इसके अलावा, उनसे जुड़े मसले और घटनाएँ भी उनकी ग़ैर-मुक़ल्लिदी (परंपरा न मानने) का स्पष्ट प्रमाण हैं, जिसका एक उदाहरण यह है कि जब फातिमा बिंत इमाम-उद-दीन खान को उनके पति ने तलाक दिया और तलाकनामा लिखा गया, तो उसके ठीक बाईस दिन बाद, इद्दत (प्रतीक्षा अवधि) के दौरान ही उक्त मौलवी ने उस महिला का निकाह बाबू में कार्यरत मस्कूट लाल कुर्ती से करा दिया। इसके प्रमाण के रूप में उन्होंने मस्जिद बोझरां कलां के इमाम मौलवी जमाल-उद-दीन को दिखाया कि तिरमिज़ी की हदीस से साबित है कि खुला (स्त्री द्वारा चाहा गया तलाक) की इद्दत केवल एक मासिक धर्म है। इस पर उत्तर दिया गया कि 'फ़तह अल-क़दीर' आदि धार्मिक पुस्तकों में स्पष्ट रूप से लिखा है, बुख़ारी शरीफ़ की हदीस आदि के प्रमाण के साथ, कि खुला एक तलाक है और पूर्व और वर्तमान के अधिकांश इमामों का यही मत है, जैसा कि 'बाब अल-खुला' में विस्तार से बताया गया है (जैसा कि खुला के अध्याय में विस्तार से वर्णित है। -अनुपादक) और इद्दत के अध्याय में भी उल्लेख है कि तलाक, खुला और लिआन, सभी की इद्दत तीन मासिक धर्म है। अतः हनफी, मालिकी और शाफई सभी के अनुसार इद्दत के भीतर यह निकाह अवैध है। क्या ऐसे ग़ैर-मुक़ल्लिद व्यक्ति के पीछे नमाज़ पढ़ना जायज़ है जो ऐसे व्यवहार रखे और हराम को हलाल बनाने तक की नौबत लाए? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें। लिखित: मुहम्मद फ़ज़लुर रहमान, इमाम जामा मस्जिद सदर बाज़ार फ़िरोज़पुर, पंजाब, 10 शव्वाल 1305 हिजरी, मुहम्मद फ़ज़लुर रहमान।

ऐ अल्लाह! सत्य और सही मार्ग की ओर मार्गदर्शन कर। उत्तर: इस दीनहीन (अल्लाह उसे क्षमा करे) को ज़ैद और उम्र (व्यक्तियों) की जात से कोई सरोकार नहीं है। सत्य स्पष्ट होने के बाद महान संतों (औलिया-ए-कराम) की शान में उस शापित शब्द को कहने का उत्तर क़यामत के दिन मिल जाएगा, बस इतना ही पर्याप्त है। उन धृष्ट और साहसी लोगों के बारे में क्या शिकायत की जाए, जिनका पंथ बड़े इमामों और विद्वानों को मुशरिक (बहुदेववादी) कहना है, कि वे संतों की हकीक़त की सूक्ष्मताओं

तक नहीं पहुँच पा रहे हैं? इसके अलावा, यह मसला स्वयं इस योग्य है कि इस पर एक स्वतंत्र शोध पत्र लिखा जाए, और यदि ईश्वर न्याय दे, तो बुख़ारी की हदीस है:

[अरबी]: "हत्ता अहबब्तुहु फ-कुन्तु सम-अहुल्लज़ी यस्म-अु बिही व-बसरहुल्लज़ी युब्सिरु बिही व-यदहु..." [हिन्दी अनुवाद]: "जब मैं अपने बंदे को प्रिय बना लेता हूँ, तो मैं उसका कान बन जाता हूँ जिससे वह सुनता है, उसकी आँख बन जाता हूँ जिससे वह देखता है, उसका हाथ..."

पृष्ठ 649 / 736

فتاوی رضویہ جلد ششم اس کی تصدیق پر اپنے دستخط کر دیے تھے جس کے شاہد بہت لوگ موجود ہیں اور اس کا کسی قدر ذکر رسالہ تصریح ابحاث فرید کوٹ کے صفحہ ۴۱ کے متن و حاشیہ میں مندرج ہے۔ پھر جب ریاست فرید کوٹ میں علمائے مقلدین کا مناظرہ ہوا تھا تب بھی یہ مولوی صاحب بشمول علماء غیر مقلدین کے تھے اور ان کے زمرہ میں ریاست سے رخصت نامہ لے کر واپس آئے تھے جیسا کہ اشتہار ۱۱ فروری ۱۸۸۳ء مطبوعہ ریاست فرید کوٹ اس پر شاہد ہے اور رسالہ کے صفحہ ۷ میں بھی اس کا نام بزمرہ غیر مقلدین شامل ہے۔ پھر مسائل اور واقعات اس کے بھی صریح غیر مقلدی کی دلیل ہیں جس کا نمونہ ایک یہ ہے کہ مسماۃ فاطمہ بنت امام الدین خاں کو جب اس کے شوہر نے مطلقہ کیا اور طلاق نامہ تحریر ہوا تو بائیس روز بعد ازاں عدت کے اندر ہی مولوی مشار الیہ نے اس مطلقہ کا نکاح بابو میں ملازم مسکوٹ لال کرتی سے منعقد کر دیا اور اس کی دلیل مولوی جمال الدین امام مسجد بوجھڑاں کلاں کو دکھلائی کہ حدیث ترمذی سے ثابت ہے کہ خلع کی عدت ایک حیض ہوتا ہے، اس پر جواب دیا گیا کہ دینی کتابوں میں مثل فتح القدیر وغیرہ کے صریح لکھا ہے کہ خلع طلاق ہے بسند حدیث بخاری وغیرہ کے اور جمہور امامان سلف و خلف کا یہی مذہب ہے کما فصل فی باب الخلع (جیسا کہ باب خلع میں تفصیل سے بیان کیا گیا ہے۔ ت) اور باب عدت میں بھی مذکور ہے اور طلاق اور خلع اور لعان سب کی عدت تین حیض ہیں اھ مترجماً، پس یہ نکاح عدت کے اندر حنفی مالکی شافعی سب کے نزدیک ناروا ہے جو شخص غیر مقلد ایسے اطوار کا طور رکھے اور حرام کو حلال بنا دینے تک نوبت پہنچائے تو اس کے پیچھے اقتدا روا ہے یا نہیں ؟ بینوا توجروا۔ حررہ محمد فضل الرحمن امام جامع مسجد صدر بازار فیروز پور پنجاب ۱۰ شوال ۱۳۰۵ھ محمد فضل الرحمن

اللھم ھدایۃ الحق والصواب الجواب: فقیر غفر اللہ تعالی لہ کو زید وعمرو کی ذات سے غرض نہیں اور حضرات اولیائے کرام قدست اسرارہم کی شان عظیم میں بعد وضوح حق اس کلمہ ملعونہ کہنے کا جواب جو روز قیامت ملے گا بس ہے، وہ حضرات جرات شعار جسارت و ثار جن کا مسلک عامہ ائمہ وعلمائے کبار کو عیاذا باللہ مشرک بتائے ان سے مدارک دقیقہ حقائق اولیاء تک نہ پہنچنے کی کیا شکایت کی جائے علاوہ بریں یہ مسئلہ خود اس قابل کہ اس میں ایک رسالہ مستقلہ تصنیف میں آئے اور خدا انصاف دے تو حدیث بخاری:

حتی احببتہ فکنت سمعہ الذی یسمع بہ وبصرہ الذی یبصر بہ ویدہ جب میں بندے کو محبوب بنا لیتا ہوں تو میں اس کی سمع (کان) بن جاتا ہوں جس سے وہ سنتا ہے، اس کی آنکھ بنتا ہوں جس سے وہ دیکھتا ہے، اس کا ہاتھ

- (Hadith extract) ...by which he seizes, and his legs by which he walks (until the Word of the Almighty). "And I do not hesitate in doing anything I do as much as I hesitate in taking the soul of a believer; he dislikes death and I dislike causing him distress." - 1 Translation: ...I become [the hand] with which he seizes. I become his legs with which he walks. (In the end, this is also a command of Allah Almighty) "I never hesitate in performing anything as I hesitate while taking the soul of a believer; he dislikes death and I consider his disliking it as bad." (T)

2nd Hadith of Muslim: "O son of Adam, I was sick and you did not visit Me. O son of Adam, I asked you for food and you did not feed Me. O son of Adam, I asked you for water and you did not give Me water." - 2 Both (Bukhari and Muslim) narrated this from Abu Hurairah (may Allah be pleased with him). Translation: O son of Adam! I was ill, you did not visit me. O son of Adam! I asked you for food, you did not give me food. O son of Adam! I sought water from you, you did not give me water. Both Bukhari and Muslim have narrated these from Sayyiduna Abu Hurairah (may Allah be pleased with him). (T)

3rd Famous Hadith: "Stand up towards Me, I will walk towards you. Walk towards Me, I will run towards you." - 3 Reported by Ahmad (f1) from a man among the companions, and by Bukhari with its meaning from Anas and from Abu Hurairah. Translation: O servant! Stand up towards Me, I will start walking towards you. Walk towards Me, I will start running towards you. Imam Ahmad narrated it from a companion and Imam Bukhari narrated it with its meaning from Hazrat Anas and Hazrat Abu Hurairah.

Footnotes: 1 - Sahih Bukhari, Kitab al-Riqaq, Bab al-Tawadu, published by Qadimi Kutub Khana Karachi, 2/963. 2 - Sahih Muslim, Bab Fadl 'Iyadat al-Marid, published by Noor Muhammad Asah al-Matabi', 2/318. 3 - Musnad Ahmad bin Hanbal, Hadith from companions of the Prophet (SAW), published by Dar al-Fikr Beirut, 13/784. f1: In the narration of Bukhari Sharif, it is "concerning the soul of the believer", the word "taking (qabd)" is not present in Bukhari Sharif. However, in Fath al-Bari published in Egypt Vol 12, p. 131, this phrase is present "it occurred in al-Hilyah" and at the end "concerning taking the soul of the believer etc." - Nazir Ahmad. f2: In Musnad Ahmad bin Hanbal, the beginning of the hadith is like this: Allah Almighty said, "O son of Adam, stand up towards Me etc." - Nazir Ahmad.

- (हदीस का अंश) ...जिससे वह पकड़ता है और उसके पैर जिससे वह चलता है (अल्लाह के इस कथन तक) "और मैं किसी भी चीज़ को करने में इतना संकोच नहीं करता जितना कि मोमिन (आस्तिक) की जान लेने में संकोच करता हूँ। वह मौत को नापसंद करता है और मैं उसे कष्ट देना नापसंद करता हूँ।" - 1 अनुवाद: ...[मैं वह हाथ] बन जाता हूँ जिससे वह पकड़ता है। उसके पैर बन जाता हूँ जिससे वह चलता है (अंत में अल्लाह तआला का यह भी फ़रमान है) "मैं किसी चीज़ के करने में कभी इस तरह संकोच नहीं करता जिस तरह जान-ए-मोमिन क़ब्ज़ करते वक़्त संकोच करता हूँ, वह मौत को नापसंद करता है और मैं उसके नापसंद करने को बुरा जानता हूँ।" (त)
- सहीह मुस्लिम की हदीस: "ऐ आदम के बेटे! मैं बीमार हुआ और तूने मेरी मिज़ाज-पुर्सी नहीं की, ऐ आदम के बेटे! मैंने तुझसे खाना माँगा और तूने मुझे खाना नहीं खिलाया, ऐ आदम के बेटे! मैंने तुझसे पानी माँगा और तूने मुझे पानी नहीं पिलाया।" - 2 इन दोनों को बुखारी और मुस्लिम ने हज़रत अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है। अनुवाद: ऐ इब्ने आदम! मैं बीमार हुआ, तूने मेरी इयादत नहीं की, ऐ इब्ने आदम! मैंने तुझसे खाना माँगा तूने मुझे खाना नहीं दिया, ऐ इब्ने आदम! मैंने तुझसे पानी तलब किया, तूने मुझे पानी नहीं दिया। इन दोनों को बुखारी व मुस्लिम दोनों ने सय्यदुना अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत किया है। (त)
- प्रसिद्ध हदीस: "मेरी तरफ खड़े हो जाओ, मैं तुम्हारी तरफ चलूँगा। मेरी तरफ चलो, मैं तुम्हारी तरफ दौड़ूँगा।" - 3 इसे अहमद (f1) ने सहाबा में से एक व्यक्ति से और बुखारी ने इसी भाव (अर्थ) के साथ अनस और अबू हुरैरा से रिवायत किया है। अनुवाद: ऐ बंदे! तू मेरी तरफ उठ मैं तेरी तरफ चल पड़ूँगा, तू मेरी तरफ चल मैं तेरी तरफ दौड़ पड़ूँगा। इसको इमाम अहमद ने एक सहाबी से और इमाम बुखारी ने माना (अर्थात) इसे हज़रत अनस और हज़रत अबू हुरैरा से [रिवायत किया है]।

पाद-टिप्पणियाँ: 1 - सहीह बुखारी, किताबुल रिकाक, बाबूत्तवाज़ो, प्रकाशित: कदीमी कुतुब खाना कराची, 2/963. 2 - सहीह मुस्लिम, बाब फ़ज़्ल इयादतुल मरीज़, प्रकाशित: नूर मुहम्मद असहुल मताबे, 2/318. 3 - मुसनद अहमद बिन हंबल, हदीस सहाबा-ए-नबी (स.अ.व.), प्रकाशित: दारुल

फ़िक्र बैरुत, 13/784. f1: बुखारी शरीफ की रिवायत में "मोमिन की जान के बारे में" है, "क़ब्ज़" (लेना) शब्द बुखारी शरीफ में मौजूद नहीं है, अलबत्ता फ़तहुल बारी प्रकाशित मिस्र जिल्द 12, पृ. 131 पर यह इबारत है "अल-हिलया में आया है" अंत में "मोमिन की रूह क़ब्ज़ करने के बारे में आदि" - नज़ीर अहमद। f2: मुसनद अहमद बिन हंबल में हदीस की शुरुआत इस तरह है: अल्लाह तआला ने फ़रमाया: ऐ इब्ने आदम मेरी तरफ उठ आदि। - नज़ीर अहमद।

पृष्ठ 650/736

التی یبطش بھا ورجلہ التی یمشی بھا(الی قولہ تعالٰی) وما ترددت عن شیئ انا فاعلہ ترددی عن قبض نفس المؤمن یکرہ الموت وانا اکرہ مساءتہ - 1 ترجمہ: بن جاتا ہوں جس سے وہ گرفت کرتا ہے۔ اس کے پاؤں بنتا ہوں جس سے چلتا ہے (آخر میں اللہ تعالٰی کا یہ بھی فرمان ہے) میں کسی شئی کے بجالانے میں کبھی اس طرح تردّد نہیں کرتا جس طرح جانِ مومن قبض کرتے وقت تردّد کرتا ہوں وہ موت کو نا پسند کرتا ہے اور میں اس کے مکروہ سمجھنے کو برا جانتا ہوں۔ (ت)

و2 حدیثِ مسلم: یا ابن ادم مرضت فلم تعدنی، یاابن ادم استطعمتك فلم تطعمنی، یا ابن ادم استسقیتك فلم تسقنی - 2 اخرجاھما عن ابی ھریرۃ رضی اللہ تعالٰی عنہ۔ ترجمہ: اے ابنِ آدم! میں بیمار ہوا، تو نے میری عیادت نہیں کی، اے ابنِ آدم! میں نے تجھ سے کھانا مانگا تو نے مجھے کھانا نہیں دیا، اے ابنِ آدم! میں نے تجھ سے پانی طلب کیا، تو نے مجھے پانی نہیں دیا ان دونوں کو بخاری و مسلم دونوں نے سیدنا ابو ہریرہ رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا ہے (ت)

و3 حدیث مشہور: قم الیّ امش الیك وامش الیّ اھرول الیك - 3 اخرجہ احمد ف1 عن رجل من الصحابۃ والبخاری بمعناہ عن انس وعن ابی ھریرۃ ترجمہ: اے بندے! تو میری طرف اٹھ میں تیری طرف چل پڑوں گا ، تو میری طرف چل میں تیری طرف دوڑ پڑوں گا۔ اس کو امام احمد نے ایک صحابی سے اور امام بخاری نے معناً اسے حضرت انس اور حضرت ابوہریرہ سے

1 - صحیح بخاری کتاب الرقاق باب التواضع مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۲/ ۹۶۳ 2 - صحیح مسلم ، باب فضل عیادۃ المریض، مطبوعہ نور محمد اصح المطابع، ۲/ ۳۱۸ 3 - مسند احمد بن حنبل حدیث من اصحاب النبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم مطبوعہ دارالفکر بیروت ، ۱۳/ ۷۸۴ ف۱:

بخاری شریف کی روایت میں "عن نفس المؤمن" ہے "قبض" کا لفظ بخاری شریف میں موجود نہیں

البتہ فتح الباری مطبوعہ مصر جلد ۱۲ ص ۱۳۱ پر یہ عبارت ہے "اوقع فی الحلیة" آخر میں "عن قبض روح المؤمن الخ" نذیر احمد ف۲: مسند احمد بن حنبل میں آغازِ حدیث یوں ہے: قال اللہ تعالٰی یا ابن آدم قم الی الخ ۔ نذیر احمد

Fatawa Ridawiyya Volume 6

And al-Tabarani recorded in al-Mu'jam al-Kabir from Salman (may Allah be pleased with them). [Translation]: And Imam al-Tabarani narrated in al-Mu'jam al-Kabir from Hazrat Salman (may Allah be pleased with them). (T)

Hadith 7: "When Allah loves a servant, no sin harms him." Recorded by al-Daylami, the great Imam al-Qushayri, and Ibn al-Najjar in Al-Tarikh from Anas (may Allah be pleased with him). [Translation]: When Allah the Almighty makes a servant beloved, no sin causes him harm. This has been narrated by al-Daylami, the great Imam al-Qushayri, and Ibn al-Najjar in Al-Tarikh from Hazrat Anas (may Allah be pleased with him). (T)

Hadith 8: "The world and the hereafter are forbidden for the people of Allah." Recorded in Musnad al-Firdaws from Ibn Abbas (may Allah be pleased with them both). [Translation]: This world and the hereafter are forbidden for the people of Allah. This has been narrated in Musnad al-Firdaws from Hazrat Ibn Abbas (may Allah be pleased with them both). (T)

Hadith 9: "The Quran was revealed in seven modes (dialects), every mode has an outer and an inner meaning, every mode has a limit, and every limit has a vantage point." Recorded by al-Tabarani in al-Kabir. [Translation]: The Quran was revealed in seven dialects. For every dialect there is an apparent and a hidden meaning, for every dialect there is a limit (ultimate meaning), and for every limit there is a point of clarity.

Footnotes: 1. Al-Risala al-Qushayriyya, Chapter on Repentance, published by Dar al-Kutub al-Ilmiyyah al-Kubra, Mustafa al-Babi, Egypt, p. 45; Al-Firdaws bi-Ma'thur al-Khitab, Hadith 2432, published by Dar al-Kutub al-Ilmiyyah Beirut, 2/127. 2. Al-Firdaws bi-Ma'thur al-Khitab, Hadith 3110, published by Dar al-Kutub al-Ilmiyyah Beirut, 2/230. 3. Al-Mu'jam al-Kabir narrated from Abdullah ibn Mas'ud, Hadith 10107, published by al-Maktabat al-Faysaliyyah Beirut 10/110; Al-Mu'jam al-Kabir narrated from Abdullah ibn Mas'ud, Hadith 8626 and 8628, published by al-Maktabat al-Faysaliyyah Beirut 9/126.

F (Note): The complete Hadith could not be found in one place in al-Mu'jam al-Kabir; rather, it was found in two parts at different locations. However, in Jami' al-Saghir with Fayd al-Qadir, volume 3, published in Beirut, p. 54, this Hadith is present in its entirety with these exact words, and the reference is also given to Tabarani from

Abdullah ibn Mas'ud. It is possible that Ala Hazrat (mercy of Allah be upon him) copied this Hadith after seeing it in Jami' al-Saghir. This Hadith is also narrated from Abdullah ibn Mas'ud in Majma' al-Zawa'id, volume 7, published in Beirut, pp. 53-54. - Nazir Ahmad.

फतावा रिज़विया खंड 6

और अल-तबरानी ने अल-मुअजम अल-कबीर में सलमान (अल्लाह उन सब से प्रसन्न हो) से रिवायत की है। [अनुवाद]: और इमाम तबरानी ने अल-मुअजम अल-कबीर में हज़रत सलमान (अल्लाह उन सब से प्रसन्न हो) से रिवायत की है (त)।

हदीस 7: "जब अल्लाह किसी बंदे को अपना महबूब बना लेता है, तो उसे कोई गुनाह नुकसान नहीं पहुँचाता।" अल-दैलामी, महान इमाम अल-कुशयरी और इब्न अल-नज्जार ने 'अल-तारीख' में अनस (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) के हवाले से इसे दर्ज किया है। [अनुवाद]: जब अल्लाह तआला किसी बंदे को अपना महबूब बना लेता है तो उसे कोई गुनाह नुकसान नहीं देता। इसे दैलामी, इमाम अल-अजल कुशयरी और इब्न नज्जार ने तारीख में हज़रत अनस (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) से रिवायत किया है। (त)

हदीस 8: "दुनिया और आख़िरत अल्लाह वालों के लिए हराम हैं।" इसे मुसनद अल-फिरदौस में इब्न अब्बास (अल्लाह उन दोनों से प्रसन्न हो) से रिवायत किया गया है। [अनुवाद]: दुनिया और आख़िरत अल्लाह वालों पर हराम हैं। इसे मुसनद अल-फिरदौस में हज़रत इब्न अब्बास (अल्लाह उन दोनों से प्रसन्न हो) से रिवायत किया गया है (त)।

हदीस 9: "कुरान सात लहजों (बोलियों) में अवतरित हुआ है, हर लहजे का एक बाहरी और एक आंतरिक अर्थ है, हर लहजे की एक सीमा है, और हर सीमा का एक स्पष्ट बिंदु है।" अल-तबरानी ने 'अल-कबीर' में इसे दर्ज किया है। [अनुवाद]: कुरान सात लहजों (बोलियों) पर नाजिल हुआ, हर लहजे के लिए ज़ाहिर और बातिन है, हर लहजे के लिए एक हद (अंतिम अर्थ) है और हर हद के लिए एक ज़ाहिर (स्पष्ट बिंदु) है।

पाद-टिप्पणियाँ: 1. अल-रिसाला अल-कुशयरीया, तौबा का अध्याय, दार अल-कुतुब अल-इल्मिय्या अल-कुबरा द्वारा प्रकाशित, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, पृष्ठ 45; अल-फिरदौस बि-मातूर अल-ख़िताब, हदीस 2432, दार अल-कुतुब अल-इल्मिय्या बेरूत, 2/127 द्वारा प्रकाशित। 2. अल-फिरदौस बि-मातूर अल-ख़िताब, हदीस 3110, दार अल-कुतुब अल-इल्मिय्या बेरूत, 2/230 द्वारा प्रकाशित। 3. अल-मुअजम अल-कबीर, अब्दुल्ला इब्न मसूद से रिवायत, हदीस 10107, अल-मक्तबत अल-फैसलिया बेरूत 10/110 द्वारा प्रकाशित; अल-मुअजम अल-कबीर, अब्दुल्ला इब्न मसूद से रिवायत, हदीस 8626 और 8628, अल-मक्तबत अल-फैसलिया बेरूत 9/126 द्वारा प्रकाशित।

फ (टिप्पणी): अल-मुअजम अल-कबीर में पूरी हदीस एक ही जगह नहीं मिल सकी, बल्कि दो हिस्सों में अलग-अलग जगहों पर मिली है। जबकि जामे सगीर मअ फैज़ अल-क़दीर, खंड 3, बेरूत संस्करण, पृष्ठ 54 पर यह हदीस इन्हीं शब्दों के साथ पूरी तरह मौजूद है और संदर्भ भी तबरानी अन अब्दुल्ला इब्न मसूद का दिया गया है। हो सकता है कि आला हज़रत (अल्लाह की उन पर रहमत हो) ने जामे सगीर से देखकर यह हदीस नकल की हो। मजमा-अज़-ज़वाइद, खंड 7, बेरूत संस्करण, पृष्ठ 53-54 पर भी यह हदीस अब्दुल्ला इब्न मसूद से रिवायत है। - नज़ीर अहमद।

पृष्ठ 651 का 736

فتاوی رضویہ جلد ششم

والطبرانی فی الکبیر عن سلمان رضی اللہ تعالی عنہم۔ اور امام طبرانی نے المعجم الکبیر میں حضرت سلمان رضی اللہ تعالی عنہم سے روایت کیا ہے (ت)

وحدیث ۷: واذا احب اللہ عبداً لم یضرہ ذنب ۱- اخرجہ الدیلمی والامام الاجل القشیری وابن النجار فی التاریخ عن انس رضی اللہ تعالی عنہ۔ جب اللہ تعالٰی کسی بندے کو محبوب بنا لیتا ہے تو اسے کوئی گناہ ضرر نہیں دیتا۔ اسے دیلمی، امام اجل قشیری اور ابن نجار نے تاریخ میں حضرت انس رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا ہے۔ (ت)

وحدیث ۸: الدنیا والآخرۃ حرام علی اھل اللہ ۲- اخرجہ فی مسندالفردوس عن ابن عباس رضی اللہ تعالی عنہما۔ دنیا وآخرت اہل اللہ پر حرام ہیں۔ اسے مسند الفردوس میں حضرت ابن عباس رضی اللہ تعالٰی عنہما سے روایت کیا ہے (ت)

وحدیث ۹: انزل القرآن علی سبعۃ احرف، لکل حرف منھا ظھر وبطن ولکل حرف حد ولکل حد مطلع ۳- اخرجہ الطبرانی فی اکبر قرآن سات حروف (لغتوں) پر نازل ہوا، ہر حرف کے لئے ظاہر اور باطن ہے ہر حرف کے لئے ایک حد (انتہائی معنی) ہے اور ہر حد کے لئے ظاہر

۱ الرسالۃ القشیریۃ باب التوبۃ مطبوعہ دارالکتب العلمیہ الکبری مصطفی البابی مصر ص ۴۵، الفردوس بماثور الخطاب حدیث ۲۴۳۲ مطبوعہ دار الکتب العلمیہ بیروت ۱۲۷/۲ ۲ الفردوس بماثور الخطاب حدیث ۳۱۱۰ مطبوعہ دارالکتب العلمیہ بیروت ۲۳۰/۲ ۳ المعجم الکبیر مروی از عبداللہ ابن مسعود حدیث ۱۰۱۰۷ مطبوعہ المکتبۃ الفیصلیۃ بیروت ۱۱۰/ ۱۰، المعجم الکبیر مروی از عبداللہ ابن مسعود حدیث ۸۶۲۸ و ۸۶۲۶ مطبوعہ المکتبۃ الفیصلیۃ بیروت ۱۲۶/۹

ف: معجم کبیر میں مکمل حدیث ایک جگہ پر دستیاب نہیں ہو سکی بلکہ دو حصوں میں مختلف مقامات سے ملی ہے جبکہ جامع صغیر مع فیض القدیر جلد ۳ مطبوعہ بیروت صفحہ ۵۴ پر یہ حدیث مکمل انہی الفاظ کے ساتھ موجود ہے اور حوالہ بھی طبرانی عن عبداللہ بن مسعود کا دیا ہے، ہو سکتا ہے اعلیحضرت رحمۃ اللہ نے جامع صغیر سے دیکھ کر یہ حدیث نقل کی ہو مجمع الزوائد جلد ۷ مطبوعہ بیروت ص ۵۳-۵۴ پر بھی یہ حدیث از عبداللہ ابن مسعود منقول ہے۔ نذیر احمد

His miracles related by Abdullah bin Mas'ud (may Allah be pleased with him). And it is a station of information from the inner self. Imam Tabarani narrated it in Al-Mu'jam al-Kabir from Hazrat Abdullah bin Mas'ud (may Allah be pleased with him). (T)

Hadith 10: The saying of Allah Almighty: "I grant them from My forbearance and My knowledge." Narrated by Ahmad and Tabarani in Al-Kabir, Al-Hakim in Al-Mustadrak, and Al-Bayhaqi in Shu'ab al-Iman with an authentic chain from Abu Darda (may Allah be pleased with him). (T)

Hadith 11: "Whoever practices asceticism in the world, Allah teaches him without learning and guides him without seeking guidance, and makes him insightful and removes from him blindness." Narrated by Abu Nu'aym in Hilyat al-Awliya from the master of the Awliya, the Commander of the Faithful, Ali (may Allah honor his face). (T)

Hadith 12: "Leave the saying of Mu'adh, for indeed Allah boasts of him to the angels." He said this to a man to whom Mu'adh bin Jabal (may Allah be pleased with him) had said, "Come, let us believe for an hour," and the man complained about him to the Prophet (peace be upon him).

Abandon (critiquing) the saying of Mu'adh (meaning do not think ill of Mu'adh's saying) because Allah Almighty boasts of him among the angels. This was said to the person to whom Mu'adh bin Jabal (may Allah be pleased with him) had said, "Come, let us spend a moment in faith."

Footnotes: 1. Musnad Ahmad bin Hanbal, remaining Hadith of Abu Darda (may Allah be pleased with him), published by Dar al-Fikr, Beirut, 6/450; Nawadir al-Usul, 21st principle regarding the specialty of this Ummah, published by Dar Sader, Beirut, pp. 29 and 33. 2. Hilyat al-Awliya, Virtues and Merits of Ali bin Abi Talib (may Allah be pleased with him), published by Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, 1/72.

अब्दुल्लाह बिन मसूद (रज़ियल्लाहु अन्हु) से उनके चमत्कार। और यह आंतरिक सूचना प्राप्त करने का स्थान है। इसे इमाम तबरानी ने 'अल-मुअजम अल-कबीर' में हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसूद (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है। (त)

हदीस 10: अल्लाह अज़्वजल का फरमान है: "मैं उन्हें अपना हिल्म (धैर्य) और इल्म (ज्ञान) अता करता हूँ।" इसे अहमद और तबरानी ने 'कबीर' में, हाकिम ने 'मुस्तदरक' में और बैहक़ी ने 'शुअ़बुल ईमान' में सही सनद के साथ हज़रत अबू दरदा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है। (त)

हदीस 11: "जो दुनिया से बेज़ार (ज़ुहद) रहा, अल्लाह उसे बिना सीखे इल्म और बिना हिदायत माँगे हिदायत देता है, और उसे अंतर्दृष्टि वाला बनाता है और उसकी अज्ञानता और अंधेरा दूर कर देता है।" इसे इमाम अबू नुऐम ने 'हिल्यतुल औलिया' में औलिया के सरदार अमीरुल् मोमिनीन हज़रत अली (करमल्लाहु वजहुल् करीम) से रिवायत किया है। (त)

हदीस 12: "मुआज़ की बात को छोड़ो (यानी मुआज़ की बात को बुरा न जानो) क्योंकि अल्लाह तआला फरिश्तों में उसके साथ फ़ख्र (गर्व) फरमाता है।" यह बात आपने उस व्यक्ति से कही जिसे मुआज़ बिन जबल (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने कहा था कि आओ, हम एक घड़ी ईमान लाएं..

पाद-टिप्पणियाँ: 1. मुसनद अहमद बिन हंबल, हदीस अबू दरदा (रज़ियल्लाहु अन्हु) का शेष भाग, दारुल फिक्र, बेरूत 6/450; नवाद़िरुल उसूल, इस उम्मत की विशिष्टता के संबंध में 21वां सिद्धांत, दार सादिर, बेरूत, पृष्ठ 29 और 33। 2. हिल्यतुल औलिया, अली बिन अबी तालिब (रज़ियल्लाहु अन्हु) के गुण और गौरव, दारुल किताब अल-अरबी, बेरूत 1/72।

معاجیبہ عن عبد اللہ بن مسعود رضی اللہ تعالٰی عنہ۔ اور باطن سے اطلاع کا مقام ہے۔ اس کو امام طبرانی نے المعجم الکبیر میں حضرت عبداللہ بن مسعود رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا ہے۔ (ت)

وحدیث ۱۰: قولہ عزوجل اعطیھم من حلمی وعلمی اخرجہم احمد والطبرانی فی الکبیر والحاکم فی المستدرک والبیہقی فی شعب الایمان باسناد صحیح عن ابی الدرداء رضی اللہ تعالیٰ عنہ۔ اللہ عزوجل کا فرمان ہے میں انھیں اپنا حلم و علم عطا کرتا ہوں ۔ اس کو احمد و طبرانی نے کبیر میں ، حاکم نے مستدرک اور بیہقی نے شعب ایمان میں صحیح سند کے ساتھ حضرت ابو درداء رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا ہے۔ (ت)

وحدیث ۱۱: من زھد فی الدنیا علمہ اللہ بلا تعلم و ھداہ بلا ھدایۃ وجعلہ بصیرا وکشف عنہ العمٰی اخرجہم ابو نعیم فی الحلیۃ الاولیاء عن سید الاولیاء امیر المؤمنین علی کرم اللہ وجھہ۔ جو دنیا سے محفوظ رہا اسے اللہ بغیر حصول علم کے علم اور بغیر حصول ہدایت ہدایت دیتا ہے۔ اسے صاحب بصیرت بناتا ہے اور اس کی گمراہی اور تاریکی دور کر دیتا ہے۔ اسے امام ابو نعیم نے حلیۃ الاولیاء میں سید الاولیاء امیر المومنین حضرت علی کرم اللہ وجہہ سے روایت کیا ہے۔ (ت)

وحدیث ۱۲: دع عنک قول معاذ فان اللہ یباہی بہ الملئکۃ قالہ لرجل قال لہ معاذ بن جبل رضی اللہ تعالیٰ عنہ تعال حتّٰی نؤمن ساعۃ فشکاہ الرجل الی النبی صلی اللہ۔ قولِ معاذ کو چھوڑو (یعنی قولِ معاذ کو برا نہ جانو) کیونکہ اللہ تعالیٰ ملائکہ میں اس کے ساتھ فخر فرماتا ہے۔ یہ بات آپ نے اس شخص سے فرمائی جسے معاذ بن جبل رضی اللہ تعالیٰ عنہ نے کہا تھا کہ آؤ ہم ایک گھڑی ایمان (لائیں)۔

حواشی: ۱ مسند احمد بن حنبل بقیہ حدیث ابی الدرداء رضی اللہ تعالیٰ عنہ مطبوعہ دار الفکر بیروت ۶ / ۴۵۰، نوادر الاصول الاصل الحادی والعشرون فی خصوصیتہ ہذہ الامۃ مطبوعہ دار صادر بیروت ص ۲۹ و ۳۳ ۲ حلیۃ الاولیاء فضائل و مناقب علی بن ابی طالب رضی اللہ تعالیٰ عنہ مطبوعہ دار الکتاب العربیہ بیروت ۱/ ۷۲

Fatawa Rizviya Volume 6

[Top section continued from previous page] (Arabic): ...may Allah grant him peace and blessings. And he said, "Or are we not believers?" Then the Messenger of Allah, may Allah grant him peace and blessings, said that to him [1]. Narrated by my master Muhammad ibn Ali al-Tirmidhi from Mu'adh, may Allah be pleased with him. (Urdu explanation): [To increase faith] that person presented a complaint in the holy presence of the Prophet (peace be upon him) asking, "Are we not among the believers?" On this occasion, the Messenger of Allah (peace be upon him) spoke the aforementioned sentence. My master Muhammad ibn Ali Tirmidhi narrated this from Hazrat Mu'adh (may Allah be pleased with him). (T)

Hadith 13: (Arabic): Abdullah bin Rawahah (may Allah be pleased with him), whenever he met a man from the companions of the Prophet (peace be upon him), used to say, "Come, let us believe in our Lord for an hour." One day he said that to a man, and the man became angry and went to the Prophet (peace be upon him) and said, "O Messenger of Allah, do you not see Ibn Rawahah, who is turning away from faith in you to faith for an hour?" The Prophet (peace be upon him) said, "May Allah have mercy on Ibn Rawahah; he loves the gatherings that the angels [2] (peace be upon them) boast about." Narrated by Ahmad with a good (hasan) chain from Anas bin Malik (may Allah be pleased with him). (Urdu explanation): It was the practice of Hazrat Abdullah bin Rawahah (may Allah be pleased with him) that whenever he met a companion of the Prophet, he would say, "Come, let us have faith with our Lord for a moment." One day he said this to a person who got angry, presented himself in the Prophetic court and said, "O Messenger of Allah! Have you not heard about Abdullah bin Rawahah? Instead of faith in you, he invites towards faith for a moment." The Holy Prophet (peace be upon him) said, "May Allah have mercy on Abdullah bin Rawahah, he loves such gatherings which even the angels take pride in." Imam Ahmad has narrated this with a good chain from Hazrat Anas bin Malik (may Allah be pleased with him). (T)

Hadith 14: Abu Huraira (may Allah be pleased with him): (Arabic): I have preserved from the Messenger of Allah (peace be upon him) two vessels [of knowledge]; as for one of them... (Urdu explanation): I have obtained two vessels of knowledge from the Messenger of Allah (peace be upon him). I describe one of them, if...

[Footnotes] 1. Nawadir al-Usul, the seventy-second principle regarding Remembrance, published by Dar Sader Beirut, p. 110. 2. Musnad Ahmad bin Hanbal,

from Musnad Anas bin Malik (may Allah be pleased with him), published by Dar al-Fikr Beirut, 3/265.

फ़तावा रिज़विया जिल्द 6

[शीर्ष अनुभाग पिछले पृष्ठ से जारी] (अरबी): ...अल्लाह उन पर कृपा और शांति बनाए रखे। और उन्होंने कहा, "या क्या हम मोमिन नहीं हैं?" तो अल्लाह के रसूल, अल्लाह उन पर कृपा और शांति बनाए रखे, ने उनसे यह कहा [1]। मेरे आका मुहम्मद इब्न अली अल-तिर्मिज़ी ने मुआज़, अल्लाह उनसे प्रसन्न हो, से रिवायत की है। (उर्दू स्पष्टीकरण): [ईमान बढ़ाने के लिए] उस व्यक्ति ने हुज़ूर (स.अ.व.) की पाक बारगाह में शिकायत करते हुए अर्ज़ किया, "क्या हम ईमान वाले नहीं हैं?" इस अवसर पर अल्लाह के रसूल (स.अ.व.) ने उक्त वाक्य फ़रमाया था। इसे मेरे आका मुहम्मद बिन अली तिर्मिज़ी ने हज़रत मुआज़ (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है। (त)

हदीस 13: (अरबी): अब्दुल्ला बिन रवाहा (रज़ियल्लाहु अन्हु) जब भी नबी (स.अ.व.) के साथियों में से किसी से मिलते, तो कहते, "आओ, हम अपने रब पर एक घड़ी के लिए ईमान लाएं।" एक दिन उन्होंने एक आदमी से ऐसा कहा, तो वह आदमी नाराज़ हो गया और नबी (स.अ.व.) के पास गया और कहा, "हे अल्लाह के रसूल, क्या आप इब्न रवाहा को नहीं देखते, जो आप पर ईमान लाने के बजाय एक घड़ी के ईमान की ओर बुला रहा है?" नबी (स.अ.व.) ने फ़रमाया, "अल्लाह इब्न रवाहा पर रहम करे; वह ऐसी सभाओं को पसंद करता है जिन पर फ़रिश्ते [2] (अलैहिमुस्सलाम) भी गर्व करते हैं।" इसे अहमद ने हज़रत अनस बिन मालिक (रज़ियल्लाहु अन्हु) से हसन सनद के साथ रिवायत किया है। (उर्दू स्पष्टीकरण): हज़रत अब्दुल्ला बिन रवाहा (रज़ियल्लाहु अन्हु) का यह मामूल था कि जब भी वे किसी सहाबी-ए-रसूल से मिलते तो कहते, "आओ हम अपने रब के साथ एक घड़ी ईमान लाएं।" एक दिन उन्होंने यही बात एक व्यक्ति से कही तो वह नाराज़ हो गया और बारगाह-ए-नबवी में हाज़िर होकर अर्ज़ किया, "या रसूल अल्लाह! क्या आपने अब्दुल्ला बिन रवाहा के बारे में नहीं सुना, वह तो आप पर ईमान लाने के बजाय एक घड़ी के ईमान की तरफ राग़िब करता है।" नबी-ए-अकरम (स.अ.व.) ने फ़रमाया, "अल्लाह तआला अब्दुल्ला बिन रवाहा पर रहम फ़रमाए, वह ऐसी महफ़िलों को पसंद करता है जिन पर फ़रिश्ते भी फ़ख्र करते हैं।" इसे इमाम अहमद ने हसन सनद के साथ हज़रत अनस बिन मालिक (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है। (त)

हदीस 14: अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु): (अरबी): मैंने अल्लाह के रसूल (स.अ.व.) से [ज्ञान के] दो बर्तन याद रखे हैं; जहाँ तक उनमें से एक का सवाल है... (उर्दू स्पष्टीकरण): मैंने अल्लाह के रसूल (स.अ.व.) से इल्म (ज्ञान) के दो बर्तन हासिल किए हैं, मैं उनमें से एक को बयान करता हूँ अगर...

[पाद-टिप्पणियाँ] 1. नवादिर अल-उसूल, ज़िक्र के संबंध में बहत्तरवाँ सिद्धांत, दार सादिर बेरूत द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 110। 2. मसनद अहमद बिन हंबल, मसनद अनस बिन मालिक (रज़ियल्लाहु अन्हु) से, दार अल-फ़िक्र बेरूत द्वारा प्रकाशित, 3/265।

[پچھلے صفحہ سے تسلسل] (عربی): ...تعالٰی علیہ وسلم ، وقال اومانحن بمؤمنین ، فقال لہ رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم ذلک۱۔ اخرجہ سیدی محمد بن علی الترمذی عن معاذ رضی اللہ تعالٰی عنہ۔ (اردو وضاحت): لائیں اس شخص نے حضور علیہ السلام کی خدمت اقدس میں شکایت کرتے ہوئے عرض کیا کیا ہم اہلِ ایمان نہیں؟ اس موقعہ پر رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے مذکورہ جملہ فرمایا تھا۔ اس کو سیدی محمد بن علی ترمذی نے حضرت معاذ رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا ہے۔ (ت)

وحدیث ۱۳: (عربی): کان عبداللہ بن رواحۃ رضی اللہ تعالٰی عنہ اذا لقی الرجل من اصحاب النبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم یقول تعال نؤمن بربنا ساعۃ فقال ذات یوم لرجل فغضب الرجل فجاء الی النبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فقال یا رسول اللہ الاتری الی ابن رواحۃ یرغب عن ایمانک الی ایمان ساعۃ فقال النبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم یرحم اللہ ابن رواحۃ انہ یحب المجالس التی تباھی بھا الملئکۃ ۲ علیہم السلام۔ رواہ احمد بسند حسن عن انس بن مالک رضی اللہ تعالٰی عنہ۔ (اردو وضاحت): حضرت عبداللہ بن رواحہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ کا معمول تھا جب بھی کسی صحابیِ رسول سے ملاقات ہوتی تو کہتے آؤ ہم اپنے رب کے ساتھ ایک گھڑی ایمان لائیں ، ایک دن آپ نے یہی بات ایک شخص سے کہی تو وہ ناراض ہو گیا اور بارگاہ نبوی میں حاضر ہو کر عرض کیا یا رسول اللہ ! آپ نے عبداللہ بن رواحہ کے بارے میں نہیں سنا وہ تو آپ پر ایمان لانے کے بجائے ایک گھڑی ایمان کی طرف رغبت دلاتا ہے۔ نبی اکرم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا عبداللہ بن رواحہ پر اللہ تعالٰی رحم فرمائے وہ ایسی مجالس کو پسند کرتا ہے جس پر ملائکہ بھی فخر کرتے

ہیں۔ اسے امام احمد نے سندِ حسن کے ساتھ حضرت انس بن مالک رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا ہے۔ (ت)

وحدیث ۱۴: ابوہریرہ رضی اللہ تعالٰی عنہ: (عربی): حفظت عن رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم وعائین فاما احدہما (اردو وضاحت): میں نے رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم سے علم کے دو برتن حاصل کئے ہیں ایک کو بیان کرتا ہوں اگر

[حواشی] ۱ نوادر الاصول الاصل الثانی والسبعون فی الذکر لتقی مطبوعہ دار صادر بیروت ص ۱۱۰ ۲ مسند احمد بن حنبل از مسند انس بن مالک رضی اللہ تعالٰی عنہ مطبوعہ دار الفکر بیروت ۳/ ۲۶۵

صفحہ 736 کا 653

Fatawa Razawiyya Volume Six

...but as for the other, if I were to spread it, this throat would be cut. [1] - Reported by al-Bukhari. | If I relate the second account, this throat of mine will be cut. Bukhari has narrated it. (T)

Verse:

The Hand of Allah is over their hands. [2] | Allah's Hand is upon their hands. (T)

Verse:

And you threw not when you threw, but it was Allah who threw. [3] | And O Beloved! That dust which you threw, you did not throw it, but rather Allah Almighty threw it. (T)

Verse:

So wherever you [might] turn, there is the Face of Allah. [4] | So whichever direction you turn your face, there is the Face of Allah (God's mercy is attentive towards you). (T)

Verse:

Say, "The soul is of the affair of my Lord. And mankind have not been given of knowledge except a little." [5] | Say that the soul is a thing by the command of my Lord, and you have not been given knowledge except a little. (T)

Verse:

...to whom We had given mercy from Us and whom We had taught from Us a [certain] knowledge. [6] | (Then they found one of Our servants) to whom We had given mercy from Our presence and taught him knowledge from Our own. (T)

Verse:

He said, "Indeed, with me you will never be able to have patience. [7] And how can you have patience for what you do not encompass in knowledge?" [8] | He said, "You will by no means be able to stay with me, and how can you have patience with that which your knowledge does not encompass?" (T)

---

1. Sahih Bukhari, Kitab al-Ilm, Bab Hifz al-Ilm, printed by Qadeemi Kutub Khana Asah al-Matabi Karachi 1/23.
2. Al-Quran 10/48

3. Al-Quran 8/17
4. Al-Quran 2/115
5. Al-Quran 17/85
6. Al-Quran 18/65
7. Al-Quran 18/67
8. Al-Quran 18/68

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

...लेकिन जहाँ तक दूसरे का सवाल है, अगर मैं उसे फैलाता, तो यह गला काट दिया जाता। [1] - बुखारी द्वारा वर्णित। | अगर मैं दूसरा बयान करूँ तो मेरा यह गला काट दिया जाएगा। इसे बुखारी ने रिवायत किया है। (त)

आयत:

अल्लाह का हाथ उनके हाथों के ऊपर है। [2] | उनके हाथ पर अल्लाह का हाथ है। (त)

आयत:

और तुमने नहीं फेंका जब तुमने फेंका, बल्कि अल्लाह ने फेंका था। [3] | और ऐ महबूब! वह धूल जो तुमने फेंकी थी, तुमने नहीं फेंकी थी बल्कि अल्लाह तआला ने फेंकी थी। (त)

आयत:

तो तुम जहाँ कहीं भी मुड़ो, वहीं अल्लाह का चेहरा (वजह) है। [4] | तो तुम जिधर मुँह करो उधर 'वजह-अल्लाह' है (ईश्वर की कृपा तुम्हारी ओर उन्मुख है)। (त)

आयत:

कह दो, "आत्मा मेरे रब के हुक्म से है। और तुम्हें बहुत थोड़ा ज्ञान दिया गया है।" [5] | तुम फ़रमाओ रूह मेरे रब के हुक्म से एक चीज़ है और तुम्हें उसका इल्म न मिला मगर थोड़ा सा। (त)

आयत:

...जिसे हमने अपने पास से रहमत प्रदान की थी और जिसे हमने अपने पास से एक विशेष ज्ञान सिखाया था। [6] | (तो हमारे बंदों में से एक बंदा पाया) जिसे हमने अपने पास से रहमत दी और उसे अपना इल्म-ए-लदुन्नी अता किया। (त)

आयत:

उसने कहा, "बेशक, तुम मेरे साथ कभी सब्र नहीं कर सकोगे।" [7] और तुम उस चीज़ पर सब्र कैसे कर सकते हो जिसकी तुम्हें पूरी जानकारी नहीं है? [8] | कहा आप मेरे साथ हरगिज़ न ठहर सकेंगे, और उस बात पर क्योंकर सब्र करेंगे जिसे आपका ज्ञान घेरे हुए नहीं है। (त)

1. सही बुखारी, किताबुल इल्म, बाब हिफ्ज़ुल इल्म, मुद्रित कदीमी कुतुब खाना असहुल् मताबे कराची 1/23
2. अल-कुरान 10/48
3. अल-कुरान 8/17
4. अल-कुरान 2/115
5. अल-कुरान 17/85
6. अल-कुरान 18/65
7. अल-कुरान 18/67
8. अल-कुरान 18/68

فتاوی رضویہ جلد ششم

فبثثته، واماالآخر فلو بثثته قطع هذا البلعوم 1۔ اخرجہ البخاری۔ | دوسرا بیان کروں تو میرا یہ گلا کاٹ دیا جائے گا۔ اس کو بخاری نے روایت کیا ہے (ت)

آیت:

یَدُ اللّٰہِ فَوْقَ اَیْدِیْھِمْ ۚ 2 | ان کے ہاتھ پر اللہ کا ہاتھ ہے۔ (ت)

آیت:

وَ مَا رَمَیْتَ اِذْ رَمَیْتَ وَ لٰکِنَّ اللّٰہَ رَمٰی ۚ 3 | اور اے محبوب! وہ خاک جو تم نے پھینکی تھی تم نے نہ پھینکی بلکہ اللہ تعالٰی نے پھینکی تھی۔ (ت)

آیت:

فَاَیْنَمَا تُوَلُّوْا فَثَمَّ وَجْہُ اللّٰہِ ؕ 4 | تو تم جدھر منہ کرو ادھر وجہ اللہ (خدا کی رحمت تمھاری طرف متوجہ ہے (ت)

آیت:

قُلِ الرُّوْحُ مِنْ اَمْرِ رَبِّیْ وَمَا اُوْتِیْتُمْ مِّنَ الْعِلْمِ اِلَّا قَلِیْلًا 5 | تم فرماؤ روح میرے رب کے حکم سے ایک چیز ہے اور تمھیں اس کا علم نہ ملا مگر تھوڑا۔ (ت)

آیت:

اٰتَیْنٰہُ رَحْمَۃً مِّنْ عِنْدِنَا وَ عَلَّمْنٰہُ مِنْ لَّدُنَّا عِلْمًا 6 | (تو ہمارے بندوں میں سے ایک بندہ پایا) جسے ہم نے اپنے پاس سے رحمت دی اور اسے اپنا علم لدنی عطا کیا۔ (ت)

آیت:

قَالَ اِنَّكَ لَنْ تَسْتَطِيْعَ مَعِیَ صَبْرًا 7 وَ كَيْفَ تَصْبِرُ عَلٰی مَا لَمْ تُحِطْ بِهٖ خُبْرًا 8 | کہا آپ میرے ساتھ ہر گز نہ ٹھہر سکیں گے، اور اس بات پر کیونکر صبر کریں گے جسے آپ کا علم محیط نہیں۔ (ت)

---

1 صحیح بخاری کتاب العلم باب حفظ العلم مطبوعہ قدیمی کتب خانہ اصح المطابع کراچی ۱/ ۲۳ 2 القرآن ۱۰/ ۴۸ 3 القرآن ۸/ ۱۷ 4 القرآن ۲/ ۱۱۵ 5 القرآن ۱۷/ ۸۵ 6 القرآن ۱۸/ ۶۵ 7 القرآن ۱۸/ ۶۷ 8 القرآن ۱۸/ ۶۸

Fatawa Razawiyya, Volume 6

Verse: He said: "Then if you follow me, do not ask me about anything until I mention it to you yourself." (t) [1]

Verse: So they set out, until when they had embarked on the ship, he made a hole in it. [Moses] said, "Have you punctured it to drown its people? You have certainly done a grave thing." [2] [Al-Khidr] said, "Did I not say that with me you would never be able to have patience?" [3] Now both set out, until when they boarded a boat, that servant (of Allah) tore it open. Musa (peace be upon him) said: "Have you torn it open to drown its passengers? Indeed, you have done a very bad thing." He said: "Did I not tell you that you would never be able to remain patient with me?" (t)

Verse: So they set out, until when they met a boy, he killed him. [Moses] said, "Have you killed a pure soul for other than [having killed] a soul? You have certainly done a deplorable thing." [4] [Al-Khidr] said, "Did I not tell you that with me you would never be able to have patience?" [5] Then both set out, until when they met a boy, that servant (of Allah) killed him. Musa (peace be upon him) said: "Have you killed a pure soul without [it being in retaliation for] any other soul? Indeed, you have done a very evil thing." He said: "Did I not tell you that you would never be able to remain patient with me?" (t)

Verse: [[Al-Khidr] said, "This is parting between me and you. I will inform you of the interpretation of that about which you could not have patience." [6] He said: "This is (the time of) separation between me and you. Now I will tell you the explanation (i.e., cause and reason) of those things for which you could not be patient." (t)

1 Al-Quran 18 / 70 2 Al-Quran 18 / 71 3 Al-Quran 18 / 72 4 Al-Quran 18 / 74 5 Al-Quran 18 / 75 6 Al-Quran 18 / 78

Page 655 of 736

फ़तावा रज़विया, जिल्द 6

आयत: उसने कहा: "तो अगर आप मेरे साथ रहते तो मुझसे किसी बात को न पूछना जब तक मैं खुद उसका ज़िक्र न करूँ।" (त) [1]

आयत: फिर वे दोनों चले, यहाँ तक कि जब वे नाव में सवार हुए, तो उसने उसे फाड़ डाला। (मूसा ने) कहा, "क्या आपने इसे इसलिए फाड़ा है कि इसके सवारों को डुबो दें? बेशक आपने बहुत बुरी बात की है।" [2] उसने कहा, "क्या मैंने नहीं कहा था कि आप मेरे साथ हरगिज़ सब्र नहीं कर सकेंगे?" [3] अब दोनों चले यहाँ तक कि जब कश्ती में सवार हुए तो उस बन्दे ने उसे चीर डाला। मूसा अलैहिस्सलाम ने कहा क्या तुम ने इसे इसलिए चीरा है कि इस के सवारों को डुबो दूँ? बे शक यह तुम ने बहुत बुरी बात की। कहा मैं न कहता था कि आप मेरे साथ हर गुज़ न ठहर सकेंगे। (त)

आयत: फिर वे दोनों चले, यहाँ तक कि जब उन्हें एक लड़का मिला, तो उसने उसे कत्ल कर दिया। (मूसा ने) कहा, "क्या आपने एक मासूम जान को बिना किसी जान के बदले कत्ल कर दिया? बेशक आपने बहुत ही बुरी बात की है।" [4] उसने कहा, "क्या मैंने आपसे नहीं कहा था कि आप मेरे साथ हरगिज़ सब्र नहीं कर सकेंगे?" [5] फिर दोनों चले यहाँ तक कि जब एक लड़का मिला उस बन्दे ने उसे कत्ल कर दिया। मूसा अलैहिस्सलाम ने कहा क्या तुम ने एक सुथरी जान बे किसी जान के बदले कत्ल कर दी, बेशक तुम ने बहुत बुरी बात की, कहा मैंने आप से न कहा था कि आप हर गुज़ मेरे साथ न ठहर सकेंगे। (त)

आयत: उसने कहा, "यह मेरे और आपके बीच जुदाई का समय है। अब मैं आपको उन बातों की हकीकत (यानी इल्लत व वजह) बताऊँगा जिन पर आप सब्र न कर सके।" [6] कहा यह (वक्त) मेरी और आप की जुदाई का है अब मैं आप को इन बातों का फेर (यानी इल्लत व वजह) बताऊंगा जिन पर आप से सब्र न हो सका। (त)

1 अल-कुरान 18 / 70 2 अल-कुरान 18 / 71 3 अल-कुरान 18 / 72 4 अल-कुरान 18 / 74 5 अल-कुरान 18 / 75 6 अल-कुरान 18 / 78

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

آیت: قَالَ فَإِنِ اتَّبَعْتَنِي فَلَا تَسْأَلْنِي عَنْ شَيْءٍ حَتَّىٰ أُحْدِثَ لَكَ مِنْهُ ذِكْرًا 1 کہا تو اگر آپ میرے ساتھ رہتے تو مجھ سے کسی بات کو نہ پوچھنا جب تک میں خود اس کا ذکر نہ کروں (ت)

آیت: فَانْطَلَقَا حَتَّىٰ إِذَا رَكِبَا فِي السَّفِينَةِ خَرَقَهَا ۖ قَالَ أَخَرَقْتَهَا لِتُغْرِقَ أَهْلَهَا لَقَدْ جِئْتَ شَيْئًا إِمْرًا 2 قَالَ أَلَمْ أَقُلْ إِنَّكَ لَنْ تَسْتَطِيعَ مَعِيَ صَبْرًا 3 اب دونوں چلے یہاں تک کہ جب کشتی میں سوار ہوئے تو اس بندہ نے اسے چیر ڈالا موسٰی علیہ السلام نے کہا کیا تم نے اسے اس لیے چیرا ہے کہ اس کے سواروں کو ڈبو دوں بے شک یہ تم نے بہت بری بات کی کہا میں نہ کہتا تھا کہ آپ میرے ساتھ ہر گز نہ ٹھہر سکیں گے۔ (ت)

آیت: فَانْطَلَقَا حَتَّىٰ إِذَا لَقِيَا غُلَامًا فَقَتَلَهُ قَالَ أَقَتَلْتَ نَفْسًا زَكِيَّةً بِغَيْرِ نَفْسٍ لَقَدْ جِئْتَ شَيْئًا نُكْرًا 4 قَالَ أَلَمْ أَقُلْ لَكَ إِنَّكَ لَنْ تَسْتَطِيعَ مَعِيَ صَبْرًا 5 پھر دونوں چلے یہاں تک کہ جب ایک لڑکا ملا اس بندہ نے اسے قتل کر دیا ۔ موسٰی علیہ السلام نے کہا کیا تم نے ایک ستھری جان بے کسی جان کے بدلے قتل کر دی، بیشک تم نے بہت بری بات کی، کہا میں نے آپ سے نہ کہا تھا کہ آپ ہر گز میرے ساتھ نہ ٹھہر سکیں گے (ت)

آیت: قَالَ هَٰذَا فِرَاقُ بَيْنِي وَبَيْنِكَ ۚ سَأُنَبِّئُكَ بِتَأْوِيلِ مَا لَمْ تَسْتَطِعْ عَلَيْهِ صَبْرًا 6 کہا یہ (وقت) میری اور آپ کی جدائی کا ہے اب میں آپ کو ان باتوں کا پھیر (یعنی علت ووجہ) بتاؤں گا جن پر آپ سے صبر نہ ہو سکا ۔ (ت)

1 القرآن ۱۸ / ۷۰ 2 القرآن ۱۸ / ۷۱ 3 القرآن ۱۸ / ۷۲ 4 القرآن ۱۸ / ۷۴ 5 القرآن ۱۸ / ۷۵ 6 القرآن ۱۸ / ۷۸

Fatawa Ridawiyya Volume Six Verse: "And I did it not of my own accord. That is the interpretation of that about which you could not have patience." (Quran 18:82) And I did not do this by my own command; this is the reality (the reason and cause) of those matters about which you could not remain patient. (T)

Et cetera. Such verses and hadiths are sufficient for those with understanding to indicate internal knowledge (ilm-e-batin) and its masters, the intricate paths and realities, the sayings and the subtleties of actions.

"And he for whom Allah has not appointed light, for him there is no light." (Quran 24:40) And to whom Allah does not give light, for him there is no light anywhere. (T)

Neither is there a shore for this deep sea, nor are these people capable of exploring it, nor was this the original purpose of the questioner. Therefore, this humble servant (the author), setting aside those other matters, turns towards the actual matter asked about: what is the ruling regarding following (doing iqtida of) non-conformists (Ghair-Muqallideen) in prayer? Since its clarification depends on exposing some of their innovations, I am writing a brief introduction on this matter before turning the pen towards the answer. Although various scholars have already written on this subject, I hope that by the power of Allah the Almighty, this concise writing will be sufficient, adequate, comprehensive, complete, healing, beneficial, pure, and sincere. And with Allah is success, and through Him is the attainment of the heights of research. Indeed, He is the best Master and the best Helper. And praise be to Allah, the Lord of all worlds.

Introduction to the general discussion on the innovation of non-conformists (Ghair-Muqallideen) O community of Muslims! This sect of Ghair-Muqallideen, who are enemies of following the Imams of religion and highwaymen for the poor common Muslims, portray the four schools of jurisprudence as crossroads. They label the Imams and saints as rabbis and monks. They declare truthful Muslims as disbelievers and polytheists. They claim that understanding the Quran and Hadith and scrutinizing the sayings of the Imams is the job of every ignorant commoner. By going astray and acting arrogantly like strangers, they make the forbidden of Allah lawful and call the lawful of Allah forbidden. Their being innovators, of bad religion, astray, disrespectful, deviants, misleading, rebellious, and nullifiers is extremely clear and obvious; rather, in total fairness, this ruinous group is more evil, harmful, hideous, and detrimental than many sects of people of innovation, as is not hidden from anyone with insight (T). It is narrated as a hanging comment (ta'liqan) in Sahih

al-Bukhari, and connectedly (mawsulan) in Sharh al-Sunnah by Imam Baghawi and Tahdhib al-Athar by Imam Tabari: "Ibn Umar used to consider them the worst of Allah's creation, and he said..." Meaning, Abdullah bin Umar (may Allah be pleased with them both) used to consider the Kharijites the worst.

1 Al-Quran 18/82 2 Al-Quran 24/40 Page 656 of 736

फ़तावा रज़विया खंड छठा आयत: "और मैंने उसे अपनी ओर से नहीं किया। यह उस बात की वास्तविकता है जिस पर तुम सब्र न कर सके।" (क़ुरआन 18:82) और यह कुछ मैंने अपने हुक्म से न किया, यह फेर (कारण और तर्क) है उन बातों का जिस पर आप से सब्र न हो सका। (त)

इत्यादि। ऐसी आयतें और हदीसें समझने वालों के लिए बातिनी इल्म (गुप्त ज्ञान) और उसके विशेषज्ञों, जटिल रास्तों और वास्तविकताओं, कथनों और कार्यों की सूक्ष्मताओं का पता देने के लिए बहुत हैं।

"और अल्लाह जिसे नूर (प्रकाश) न दे, उसके लिए कोई नूर नहीं है।" (क़ुरआन 24:40) और जिसे अल्लाह तआला नूर न दे उसके लिए कहीं नूर नहीं। (त)

न इस गहरे समुद्र का कोई तट है, न ये लोग इसकी सैर के योग्य हैं, न ही सवाल करने वाले का मूल उद्देश्य इस अर्थ से था। इसलिए, यह फ़क़ीर (लेखक) इधर-उधर की बातों को छोड़ कर पूछे गए मुख्य उद्देश्य की ओर ध्यान देता है, यानी नमाज़ में गैर-मुक़ल्लिदीन (परंपरागत अनुयायियों के अलावा) के पीछे नमाज़ पढ़ने का क्या हुक्म है। चूँकि इसकी स्पष्टता उनके कुछ नवाचारों (बिदअतों) को उजागर करने पर निर्भर है, इसलिए इस बारे में एक संक्षिप्त प्रस्तावना लिखकर कलम को उत्तर की ओर मोड़ता हूँ। हालाँकि इस विषय पर अनेक विद्वानों ने कई लेख लिखे हैं, लेकिन मुझे आशा है कि अल्लाह तआला की शक्ति से यह संक्षिप्त लेख पर्याप्त, सक्षम, व्यापक, पूर्ण, उपचारकारी, लाभकारी, शुद्ध और ईमानदार साबित होगा। और सफलता अल्लाह ही की ओर से है, और उसी के माध्यम से अनुसंधान की ऊँचाइयों तक पहुँचना संभव है। वास्तव में वह सबसे अच्छा स्वामी और सबसे अच्छा सहायक है। और समस्त प्रशंसा अल्लाह के लिए है जो सारे जगत का पालनहार है।

ग़ैर-मुक़ल्लिदीन के नवाचार (बिदअत) पर सामान्य चर्चा की प्रस्तावना ऐ मुसलमानों के समुदाय! यह ग़ैर-मुक़ल्लिदीन का फ़िरक़ा जो धर्म के इमामों के अनुसरण का दुश्मन और बेचारे आम मुसलमानों का लुटेरा है, चारों विचारधाराओं (मज़ाहिब-ए-अर्बा) को चौराहा बताता है, इमामों और संतों को पादरी और साधु ठहराता है, सच्चे मुसलमानों को काफ़िर और मुशरिक बनाता है। वे कहते हैं कि क़ुरआन और हदीस को समझना और इमामों के कथनों को जाँचना-परखना हर आम और अज्ञानी व्यक्ति का काम है। गलत राह पर चलकर और अजनबियों की तरह ज़िद करके, वे अल्लाह की हराम की हुई चीज़ों को हलाल कर देते हैं और अल्लाह की हलाल की हुई चीज़ों को हराम कहते हैं। उनका बिदअती, कुमार्गगामी, अभद्र, पथभ्रष्ट करने वाला, बागी और विनाशकारी होना अत्यंत स्पष्ट और ज़ाहिर है; बल्कि निष्पक्षता की बात यह है कि यह विनाशकारी समूह बिदअती लोगों के कई

फ़िरक़ों से अधिक बुरा, हानिकारक, घृणित और विनाशकारी है, जैसा कि किसी भी अंतर्दृष्टि रखने वाले व्यक्ति से छिपा नहीं है। (त) सही बुखारी शरीफ़ में 'तअ़लीक़न' और इमाम बग़वी की 'शरह अल-सुन्नाह' तथा इमाम तबरी की 'तहज़ीब अल-आसार' में 'मौसूलन' वर्णित है: "इब्ने उमर उन्हें अल्लाह की मख्लूक (सृष्टि) में सबसे बुरा समझते थे और उन्होंने कहा..." यानी अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ियल्लाहु तआला अन्हुमा) ख़ारिजियों को सबसे बुरा समझते थे।

1 अल-क़ुरआन 18/82 2 अल-क़ुरआन 24/40 पेज 656 of 736

فتاوی رضویہ جلد ششم وآیت: وَمَا فَعَلْتُهٗ عَنْ اَمْرِیْ ط ذٰلِكَ تَاْوِیْلُ مَا لَمْ تَسْطِعْ عَّلَیْهِ صَبْرًا (1) اور یہ کچھ میں نے اپنے حکم سے نہ کیا، یہ پھیر (علت ووجہ) ہے ان باتوں کا جس پر آپ سے صبر نہ ہو سکا (ت)

وغیرہ ذلک آیت واحادیث سمجھ والوں کے لئے علم باطن اور اُس کے رجال و مضائق مجال و حقائق ، اقوال و دقائق افعال کا پتا دینے کو بہت ہیں،

وَمَنْ لَّمْ یَجْعَلِ اللّٰهُ لَهٗ نُوْرًا فَمَا لَهٗ مِنْ نُّوْرٍ (2) اور جسے اللہ تعالی نور نہ دے اس کے لئے کہیں نور نہیں (ت)

یا نہ اس بحرِ عمیق کے لئے ساحل، نہ یہ حضرات اس کی سیر کے قابل، نہ اس معنی سے اصل غرض سائل، لہذا فقیر این وآں سے قطع نظر کرکے نفس مرام مسئول عنہ کی طرف متوجہ ہوتا ہے یعنی نماز میں حضرات غیر مقلدین کی اقتداء کا حکم کیا ہے، اور از انجا کہ اسکی تنقیح ان کی کشفِ بعض بدعات پر موقوف، لہذا اس بارے میں ایک اجمالی مقدمہ لکھ کر عنان قلم جانب جواب مصروف، ہر چند اس باب میں علماء متعدد تحریریں کر چکے مگر میں امید کرتا ہوں کہ بحول اللہ تعالی یہ موجز تحریر کافی و کافل وافی و کامل شافی و نافع صافی و ناصح واقع ہو وباللہ التوفیق وبہ الوصول الی ذری التحقیق انہ نعم المولی ونعم المعین والحمد للہ رب العلمین۔

مقدمہ فی الکلام الاجمالی علی بدعۃ غیر المقلدین یا معشر المسلمین یہ فرقہ غیر مقلدین کہ تقلید ائمہ دین کے دشمن اور بیچارہ عوام اہل اسلام کے رہزن ہیں، مذاہب اربعہ کو چوراہا بتائیں ائمہ وبدلی کو احبار ورہبان ٹھہرائیں، سچے مسلمانوں کو کافر مشرک بنائیں، قرآن وحدیث کی آپ سمجھ رکھنا، ارشاداتِ ائمہ کو جانچنا پرکھنا ہر عامی جاہل کا کام کہیں، بے راہ چل کر، بیگانہ مچل کر،

حرام خدا کو حلال کر دیں حلال خدا کو حرام کہیں، ان کا بدعتی بد مذہب گمراہ بے ادب ضال مضل غوی مبطل ہونا نہایت جلی واظہر بلکہ عین الانصاف یہ طائفہ تالفہ بہت فرق اہل بدعت سے اشر واضر واشنع وانجر کما یخفی علی ذی بصر (جیسا کہ کسی بھی صاحب بصیرت پر مخفی نہیں ۔ ت) صحیح بخاری شریف میں تعلیقاً اور شرح السنۃ امام بغوی و تہذیب الآثار امام طبری میں موصولاً وارد: کان ابن عمر یراھم شرار خلق اللہ وقال یعنی عبداللہ بن عمر رضی اللہ تعالٰی عنہما خوارج کو بدترین

Fatawa Razawiya, Volume 6

- They proceeded to verses revealed regarding the disbelievers and applied them to the believers. | Creation of Allah knows that they took those verses which were revealed for the disbelievers and applied them to the Muslims.

Exactly the same is the condition of these gentlemen. The noble verse:

- They took their rabbis and their monks as lords besides Allah. | They took their priests and yogis as gods besides Allah the Almighty. (T)

That [the verse] was revealed about the disbelievers of the People of the Book and their leaders and lords; always these bold people point to the Ahl al-Sunnah and the Imams of the Ahl al-Sunnah as its referent. Mercy of the Forgiver be upon Allama Tahir, who in Majma' Bihar al-Anwar, after quoting the saying of Ibn Umar (may Allah be pleased with them both), says:

- The sinner (may Allah relent towards him) said: And the worst of them is he who applies Allah's verses about the evil ones of the Jews to the scholars of the infallible, mercy-granted Ummah. May Allah cleanse the earth of their filth. | The sinner says, may Allah Almighty have mercy on him, worse than these Kharijites are those people who cast the verses revealed regarding the evil Jews upon the scholars of the protected and blessed Ummah. May Allah Almighty cleanse the earth of their wickedness. (T)

The origin of this unjust-seeking group emerged from Najd; it is in Sahih Bukhari Sharif:

- On the authority of Nafi', on the authority of Ibn 'Umar (may Allah be pleased with them both), he said: The Prophet (may Allah's peace and blessings be upon him) mentioned and said: "O Allah, bless us in our Sham (Syria), O Allah, bless us in our Yemen." They said: "O Messenger of Allah, and in our Najd?" He said: "O Allah, bless us in our Sham, O Allah, bless us in our Yemen." They said: "O Messenger of Allah, and in our Najd?" So I think he said on the third time: "There are the earthquakes and the afflictions, and from there the horn of Satan rises." | Narrated by Nafi' from Ibn Umar (may Allah be pleased with them both) that the Prophet (may Allah's peace and blessings be upon him) prayed: O Allah! give us blessing in our Sham, keep blessing for us in our Yemen. The companions submitted: O Messenger of Allah! in our Najd. The Prophet

repeated the same prayer: O Allah! make blessing for us in our Sham, O Allah! grant blessing for us in our Yemen. The companions again submitted: O Messenger of Allah! in our Najd. Abdullah bin Umar (may Allah be pleased with him) says: In my estimation, the third time the Prophet said regarding Najd: There are earthquakes and trials, and from there will emerge the horn of Satan. (T)

---

1. Sahih al-Bukhari, Book of Seeking Repentance of the Obstinate, Chapter on Fighting the Kharijites and Apostates, etc., published by Qadimi Kutub Khana Karachi 2/1051.
2. Al-Quran 9/31.
3. Majma' Bihar al-Anwar under the word Hadith, published by Nawal Kishore Lucknow 1/232.
4. Sahih al-Bukhari, Book of Trials, Chapter on the saying of the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him), 'Trial is from the East', published by Qadimi Kutub Khana Karachi 2/1050; Sahih al-Bukhari, Chapter on what is said about Earthquakes and Signs, Trial is from the East, published by Qadimi Kutub Khana Karachi 1/121.

फ़तावा रज़विया, खंड 6

- वे उन आयतों पर चले जो काफ़िरों के बारे में उतरी थीं और उन्हें मोमिनों (मुसलमानों) पर लागू कर दिया। | अल्लाह की मखलूक जानती है कि उन्होंने उन आयतों को, जो काफ़िरों के हक में उतरी थीं, उठाकर मुसलमानों पर रख दिया।

यही स्थिति इन हज़रात की है। आयत-ए-करीमा:

- उन्होंने अपने अहबार (विद्वानों) और रुहबान (सन्यासियों) को अल्लाह के अलावा रब बना लिया। | उन्होंने अपने पादरियों और जोगियों को अल्लाह तआला के सिवा खुदा बना लिया। (त)

कि काफ़िर अहले किताब और उनके बड़े लोगों और सरदारों के बारे में उतरी, हमेशा ये बेबाक लोग अहले सुन्नत और अइम्मा-ए-अहले सुन्नत को इसका मिस्दाक (जिस पर वह आयत खरी उतरती हो) बताते हैं। अल्लामा ताहिर पर ग़ाफ़िर (क्षमा करने वाले अल्लाह) की रहमत हो कि मजमा' बिहारुल अनवार में इब्ने उमर रज़ियल्लाहु अन्हा का कौल (कथन) नक़ल करके फ़रमाते हैं:

- गुनाहगार ने कहा (अल्लाह उसकी तौबा स्वीकार करे): और उनमें सबसे बुरा वह है जो यहूदियों के दुष्टों के बारे में अल्लाह की आयतों को इस मासूम और रहमत पाई हुई उम्मत के उलेमा पर लागू करता है। अल्लाह ज़मीन को उनकी गंदगी से पाक करे। | गुनाहगार कहता है अल्लाह तआला उस पर रहमत फरमाए, इन खारजियों से बदतर वे लोग हैं जो अबरार-ए-यहूद के हक में जो आयतें उतरीं उन्हें उम्मत-ए-महफूज़ा मरहूमा के उलेमा पर ढालते हैं अल्लाह तआला ज़मीन को उनकी खबासत (बुराई) से पाक करे (त)

इस नाहक़-पजोह (झूठ खोजने वाले) गिरोह की असल नज्द से निकली, सहीह बुखारी शरीफ में है:

- नाफ़े से रिवायत है कि इब्ने उमर रज़ियल्लाहु अन्हा ने कहा कि नबी सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने जिक्र फरमाया और कहा: ऐ अल्लाह! हमारे लिए हमारे शाम में बरकत दे, ऐ अल्लाह! हमारे लिए हमारे यमन में बरकत दे। उन्होंने (सहाबा ने) अर्ज़ की: ऐ अल्लाह के रसूल, और हमारे नज्द में? आपने फरमाया: ऐ अल्लाह! हमारे लिए हमारे शाम में बरकत दे, ऐ अल्लाह! हमारे लिए हमारे यमन में बरकत दे। उन्होंने फिर अर्ज़ की: ऐ अल्लाह के रसूल, और

हमारे नज्द में? तो मेरा ख्याल है कि तीसरी बार आपने फरमाया: वहाँ जलज़ले (भूकंप) और फ़ितने होंगे और वहीं से शैतान का सींग निकलेगा। | नाफ़े से इब्ने उमर रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत है कि हुज़ूर पुर नूर सैय्यद-ए-आलम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने दुआ फरमाई: इलाही! हमारे लिए बरकत दे हमारे शाम में, हमारे लिए बरकत रख हमारे यमन में, सहाबा ने अर्ज़ की या रसूल अल्लाह! हमारे नज्द में हुज़ूर ने दोबारा वही दुआ की इलाही! हमारे लिए बरकत कर हमारे शाम में इलाही! हमारे लिए बरकत बख्श हमारे यमन में, सहाबा ने फिर अर्ज़ की या रसूल अल्लाह हमारे नज्द में। अब्दुल्ला बिन उमर रज़ियल्लाहु तआला फरमाते हैं मेरे गुमान में तीसरी दफा हुज़ूर ने नज्द की निस्बत फरमाया: वहाँ जलज़ले और फ़ितने हैं और वहीं से निकलेगा शैतान का सींग (त)

---

1. सहीह अल-बुखारी, किताब इस्तिताबा अल-मुआनिदीन, बाब क़िताल अल-खवारिज व अल-मुलहिदीन आदि, पुरानी कुतुब खाना कराची द्वारा प्रकाशित 2/1051.
2. अल-कुरान 9/31.
3. मजमा' बिहारुल अनवार, लफ़्ज़ हदीस के तहत, नवल किशोर लखनऊ द्वारा प्रकाशित 1/232.
4. सहीह अल-बुखारी, किताब अल-फितन, नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के इस कौल पर बाब 'फितना पूर्व की ओर से है', पुरानी कुतुब खाना कराची द्वारा प्रकाशित 2/1050; सहीह अल-बुखारी, जलज़ले और आयतों के बारे में जो कहा गया है उस पर बाब, फितना पूर्व की ओर से है, पुरानी कुतुब खाना कराची द्वारा प्रकाशित 1/121.

فتاوٰی رضویہ ، جلد ششم

انھم انطلقو الی ایات نزلت فی الکفار فجعلوھا علی المؤمنین -1 | خلق اللہ جانتے کہ انہوں نے وہ آیتیں جو کافروں کے حق میں اتریں اٹھا کر مسلمانوں پر رکھ دیں۔

بعینہ یہی حالت ان حضرات کی ہے۔ آیہ کریمہ :

اتَّخَذُوْا أَحْبَارَھُمْ وَرُھْبَانَھُمْ أَرْبَابًا مِنْ دُوْنِ اللہِ -2 | انہوں نے اپنے پادریوں اور جوگیوں کو اللہ تعالٰی کے سوا خدا بنا لیا۔ (ت)

کہ کفار اہل کتاب اور ان کے عمائد وارباب میں اتری ہمیشہ یہ بیباک لوگ اہلسنت وائمہ اہلسنت کو اس کا مصداق بتاتے ہیں۔ علامہ طاہر پر رحمت غافر کہ مجمع بحار الانوار میں قول ابن عمر رضی اللہ تعالٰی عنہما نقل کرکے فرماتے ہیں:

قال المذنب تاب اللہ علیہ واشرمنھم من یجعل آیات اللہ فی شرار الیہود علی علماء الامۃ المعصومۃ المرحومۃ طہر اللہ الارض عن رجسہم۔ -3 | مذنب کہتا ہے اللہ تعالٰی اس پر رحم فرمائے، ان خارجیوں سے بدتر وہ لوگ ہیں کہ اشرار یہود کے حق میں جو آیتیں اتریں انھیں امت محفوظہ مرحومہ کے علماء پر ڈھالتے ہیں اللہ تعالٰی زمین کو ان کی خباثت سے پاک کرے (ت)

اصل اس گروہ ناحق پژوہ کی نجد سے نکلی، صحیح بخاری شریف میں ہے:

عن نافع عن ابن عمر رضی اللہ تعالٰی عنہما قال ذکر النبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فقال اللہم بارک لنا فی شامنا اللہم بارک لنا فی یمننا قالوا یارسول اللہ وفی نجدنا قال اللہم بارک لنا فی شامنا اللہم بارک لنا فی یمننا قالوا یارسول اللہ وفی نجدنا فاظنہ قال فی الثالثۃ ہناک الزلزال والفتن وبہا یطلع قرن الشیطان۔ -4 | نافع سے ابن عمر رضی اللہ تعالٰی عنہما سے روایت ہے کہ حضور پر نور سید عالم

صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے دعا فرمائی الہی ! ہمارے لئے برکت دے ہمارے شام میں، ہمارے لئے برکت رکھ ہمارے یمن میں، صحابہ نے عرض کی یارسول اللہ ! ہمارے نجد میں حضور نے دوبارہ وہی دعا کی الہی ! ہمارے لئے برکت کر ہمارے شام میں الہی ! ہمارے لئے برکت بخش ہمارے یمن میں، صحابہ نے پھر عرض کی یارسول اللہ ہمارے نجد میں۔ عبداللہ بن عمر رضی اللہ تعالیٰ فرماتے ہیں میرے گمان میں تیسری دفعہ حضور نے نجد کی نسبت فرمایا: وہاں زلزلے اور فتنے ہیں اور وہیں سے نکلے گا شیطان کا سینگ (ت)

1 صحیح البخاری کتاب استتابہ المعاندین باب قتال الخوارج والملحدین الخ، مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۲ / ۱۰۵۱ 2 القرآن ۹ / ۳۱ 3 مجمع بحار الانوار تحت لفظ حدیث مطبوعہ نولکشور لکھنؤ ۱ / ۲۳۲ 4 صحیح البخاری کتاب الفتن باب قول النبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم الفتنۃ من قبل المشرق مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۲ / ۱۰۵۰ ، الصحیح البخاری باب ما قیل فی الزلزال والآیات الفتنۃ من قبل المشرق مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱ / ۱۲۱

Fatawa Ridawiyyah Volume 6 According to the truthful report of the Truthful Messenger (peace and blessings of Allah be upon him), the son and followers of Abdul Wahhab Najdi, following the maxim "If the father cannot, the son shall complete," revolted against the Two Holy Sanctuaries (Haramayn Sharifayn) in the thirteenth century. They left no stone unturned in creating turmoil and unspeakable strife through acts that should not have been done and words that should not have been said.

"And those who have wronged are going to know to what [kind of] return they will be returned." (Al-Quran, 26:227) | And now the oppressors will know what turn they will take. (T)

The gist of their extremist beliefs was that only this humble handful are monotheistic Muslims in the world, while all other believers—God forbid—are polytheists (Mushriks). Based on this, they declared the Sanctuary of God and the Precinct of Mustafa (peace and blessings be upon him) as Dar al-Harb (House of War), and deemed its noble residents, the neighbors of God and His Messenger, as disbelievers and polytheists (may the mouths of the insolent be filled with dust). In the name of Jihad and rebellion, they raised the flag of grand satanic mischief under the banner of supreme sedition. The erudite scholar, the seal of researchers, Maulana Aminuddin Muhammad bin Abidin Shami (may his secret be sanctified), has made some mention of this horrific incident in 'Radd al-Muhtar', the marginalia of 'Durr al-Mukhtar', in the third volume, Book of Jihad, Chapter on Rebels, while discussing the Kharijites:

"As it happened in our time among the followers of Ibn Abd al-Wahhab, who emerged from Najd and seized control of the two Holy Sanctuaries. They claimed to follow the Hanbali school of thought, but they believed that they were the only Muslims, and that whoever opposed their belief was a polytheist (Mushrik). For this reason, they permitted the killing of the people of the Sunnah (Ahl al-Sunnah) and their scholars, until Almighty Allah broke their power, destroyed their lands, and the Muslim armies gained victory over them in the year 1233 AH. And praise be to Allah, Lord of the worlds." | That is, the Kharijites are like what happened in our time with the followers of Abdul Wahhab, who emerged from Najd and gained control over the Two Holy Sanctuaries. They claimed to be Hanbalis, but their belief was that only they were Muslims and whoever was not on their religion was a polytheist. Due to this, they declared the killing of Ahl al-Sunnah and the scholars of Ahl al-Sunnah as

permissible, until Almighty Allah broke their might and desolated their cities and granted the Muslim armies victory over them in 1233 AH.

1. Al-Quran, 26/227
2. Radd al-Muhtar, Kitab al-Jihad, printed by Mustafa al-Babi, Egypt, 3/339

फ़तावा रिज़विया छठा खंड सच्चे समाचार देने वाले सच्चे पैगंबर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की खबर के अनुसार, अब्दुल वहाब नजदी के पुत्र और अनुयायियों ने इस नियम के तहत कि "यदि पिता पूरा न कर सके तो पुत्र पूरा करेगा", तेरहवीं शताब्दी में हरमैन शरीफैन (मक्का और मदीना) के खिलाफ विद्रोह किया और न कहने योग्य बातों और न करने योग्य कामों से अशांति और फितने का कोई अवसर नहीं छोड़ा।

"और जल्द ही ज़ालिमों को पता चल जाएगा कि वे किस ओर पलटने वाले हैं।" (अल-कुरान, 26/227) | और अब ज़ालिम जान जाएंगे कि वे किस करवट बदलेंगे। (त)

उनके अतिरंजित अकीदों का सार यह था कि दुनिया में केवल यही मुट्ठी भर लोग एकेश्वरवादी मुसलमान हैं, बाकी सभी मोमिन—अल्लाह की पनाह—मुशरिक (बहुदेववादी) हैं। इसी आधार पर उन्होंने खुदा के हरम और मुस्तफा (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की दहलीज को—अल्लाह की पनाह—दारुल हरब (युद्ध का घर) घोषित किया और वहां के सम्मानित निवासियों, खुदा और रसूल के पड़ोसियों को (गुस्ताखों के मुँह में धूल) काफिर और मुशरिक ठहराया। जिहाद और विद्रोह के नाम पर उन्होंने बड़ी शैतानी का परचम लहराया। महान विद्वान, अल्लामा अमीन अल-दीन मोहम्मद बिन आबिदीन शामी (रहि.) ने इस भयानक घटना का उल्लेख 'रद्द अल-मुह्तार' (दुर्रे मुख्तार का हाश्या) के तीसरे खंड, किताबुल जिहाद, बाबुल बुगात में खारिजी लोगों का वर्णन करते हुए किया है:

"जैसा कि हमारे समय में इब्न अब्द अल-वहाब के अनुयायियों के साथ हुआ, जो नजद से निकले और हरमैन शरीफैन पर कब्जा कर लिया। वे खुद को हनबली कहते थे, लेकिन उनका मानना था कि केवल वे ही मुसलमान हैं और जो कोई उनके अकीदे के खिलाफ है, वह मुशरिक है। इस कारण से उन्होंने अहले सुन्नत और उनके उलेमा की हत्या को जायज़ ठहराया, यहाँ तक कि अल्लाह तआला ने उनकी शक्ति को तोड़ दिया, उनके शहरों को वीरान कर दिया और साल 1233 हिजरी में मुस्लिम सेनाओं को उन पर विजय प्रदान की। और तमाम तारीफ अल्लाह के लिए है जो तमाम जहानों का रब है।" | यानी बाहरी ऐसे होते हैं जैसा हमारे जमाने में अब्दुल वहाब के अनुयायियों से हुआ, जिन्होंने नजद से विद्रोह कर हरमैन शरीफैन पर कब्ज़ा किया। वे खुद को हनबली कहते थे, मगर उनका अकीदा यह था कि बस वही मुसलमान हैं और जो उनके मज़हब पर नहीं वह मुशरिक हैं। इस वजह से उन्होंने अहले सुन्नत और अहले सुन्नत के उलेमा का कत्ल जायज़ ठहरा दिया, यहाँ तक कि

अल्लाह तआला ने उनकी ताकत तोड़ दी और उनके शहर वीरान किए और मुस्लिम सेनाओं को उन पर 1233 हिजरी में विजय दी।

1. अल-कुरान, 26/227
2. रद्द अल-मुह्तार, किताबुल जिहाद, मुस्तफा अल-बाबी प्रेस, मिस्र, 3/339

पृष्ठ 658 का 736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم اس خبرِ صادق مخبرِ صادق صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کے مطابق عبد الوہاب نجدی کے پسر واتباع نے بحکم آنکہ ع پدراگر نتواند پسر تمام کند (باپ اگر نہ کر سکا تو بیٹا تمام (مکمل) کر دے گا) تیرھویں صدی میں حرمین شریفین پر خروج کیا اور نا کردنی کاموں نا گفتنی باتوں سے کوئی دقیقہ زلزلہ و فتنہ کا اٹھا نہ رکھا،

وَ سَیَعْلَمُ الَّذِیْنَ ظَلَمُوْۤا اَیَّ مُنْقَلَبٍ یَّنْقَلِبُوْنَ ﴿۲۲۷﴾ | اور اب جان جائیں گے ظالم کہ کس کروٹ پلٹا کھائیں گے۔ (ت)

حاصل ان کے عقائدِ زائدہ کا یہ تھا کہ عالم میں وہی مشتِ ذلیل موحد مسلمان ہیں باقی تمام مؤمنین معاذ اللہ مشرک۔ اسی بناء پر انہوں نے حرم خدا و حریم مصطفی علیہ افضل الصلوۃ والثناء کو عیاذاً باللہ دار الحرب اور وہاں کے سُکّانِ کرام ہمسایگانِ خدا و رسول کو (خاکم بدہن گستاخاں) کافر و مشرک ٹھہرایا اور بنام جہاد و خروج کر کے لوائے فتنہ عظمٰی پر شیطنت کبرٰی کا پرچم اڑایا۔ علامہ فہامہ خاتمۃ المحققین مولانا امین الدین محمد بن عابدین شامی قدس سرہ السامی نے کچھ تذکرہ اس واقعہ ہائلہ کا فرمایا ردالمختار حاشیہ در مختار کی جلد ثالث کتاب الجہاد باب البغاۃ میں زیرِ بیانِ خوارج فرماتے ہیں :

کما وقع فی زماننا فی اتباع بن عبدالوہاب الذین خرجوا من نجد وتغلبوا علی الحرمین وکانوا ینتحلون مذھب الحنابلۃ لکنھم اعتقدوا انھم ھم المسلمون وان من خالف اعتقاد ھم مشرکون واستباحوا بذلک قتل اھل السنۃ وقتل علمائھم حتی کسر اللہ تعالٰی شوکتھم وخرب بلادھم وظفر بھم عساکر المسلمین عام ثلث وثلثین ومائتین والف ۲ ۔ والحمد للہ رب العلمین۔ | یعنی خارجی ایسے ہوتے ہیں جیسا ہمارے زمانے میں پیروانِ عبد الوہاب سے واقع ہوا جنہوں نے نجد سے خروج کر کے حرمین محترمین پر تغلب کیا اور وہ اپنے آپ کو کہتے تو حنبلی تھے مگر ان کا عقیدہ یہ تھا کہ بس وہی مسلمان اور

جو ان کے مذہب پر نہیں وہ مشرک ہیں اس وجہ سے انہوں نے اہلسنت و علمائے اہلسنت کا قتل مباح ٹھہرا لیا یہاں تک کہ اللہ تعالیٰ نے انکی شوکت توڑ دی اور ان کے شہر ویران کئے اور لشکرِ مسلمین کو ان پر فتح بخشی ۱۲۳۳ھ میں۔

۱ القرآن، ۲۶ / ۲۲۷ ۲ ردالمختار کتاب الجہاد مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۳ / ۳۳۹

Fatawa Ridawiyya Volume 6

In short, this abominable fitna (discord), being expelled from there and rejected and driven away from the holy cities of God and His Messenger, was seeking a place for itself when its eyes fell upon the soft soil of this abode of trials, India, from the hills of Najd. Upon arrival, it established its foothold. The founder of the fitna, who became the second teacher of this uncultured religion, adopted the same tone and color of disbelief and polytheism, claiming that all Muslims except a select few are polytheists. Here, this group, according to the command of 'Indeed, those who have divided their religion and become sects'[1] (those people who carved out separate paths in their religion and became many groups), became divided itself. One faction, outwardly in subsidiary matters, continued to take the name of following the Imams (Taqleed), while the other...

(Poetic line: Taking a step forward in love is better)

...set it aside too. They started fighting amongst themselves; one called the other misguided, and the other called them polytheists. However, in opposition to the Ahl al-Sunnah and enmity towards the people of truth, they remained a single nation. Although these followers did not hold back in declaring Muslims as disbelievers, yet the 'Kalam al-Imam, Imam al-Kalam' (the speech of the Imam is the Imam of speeches), their imam, founder, and second-in-command, was so intensely seized by the fever of polytheism and disbelief that he quoted a Hadith from Sahih Muslim[2]: 'Night and day will not cease until Lat and Uzza are worshipped... Allah will send a pleasant wind which will take the soul of everyone who has in his heart faith the weight of a grain of mustard seed, and only those in whom there is no good will remain and they will return to the religion of their forefathers', from the chapter 'The Hour will not be established except upon the worst of people' in Mishkat[3], and boldly applied it to the present era. In it, the Master of the World (peace and blessings of Allah be upon him) said: 'The era of destruction will not come until Lat and Uzza are worshipped again. It will happen like this: Allah Almighty will send a pure wind that will take away Muslims from all over the world. Whoever has faith equal to a mustard seed in their heart will pass away. When only pure disbelievers remain on earth, then the worship of idols will resume as before.' After quoting this Hadith, he clearly wrote that it happened according to the saying of the Prophet of God, 'To Allah we belong and to Him we shall return.' The intelligent person did not even see that if this is indeed the era foretold in the Hadith, then it would be mandatory that no trace or name of a Muslim remain on the face of the earth. O simpleton, now you and your...

[1] Al-Quran 6/159 [2] Sahih Muslim, Book of Fitnas and Portents of the Hour, published by Nur Muhammad Asah al-Matabi' Karachi 2/394 [3] Mishkat al-Masabih, Book of Fitnas, Chapter: The Hour will not be established except upon the worst of people, published by Mujtabai Delhi p. 480

फतावा रज़विया छठा खंड

संक्षेप में, यह घृणित फितना (उपद्रव) वहां से निष्कासित और ईश्वर और उसके रसूल के पवित्र शहरों से तिरस्कृत और खदेड़ा होकर अपने लिए जगह तलाश ही रहा था कि नज्द की पहाड़ियों से इसे इस परीक्षण गृह हिंदुस्तान की नरम मिट्टी दिखाई दी। आते ही इसने यहाँ अपने पैर जमा लिए। फितने के संस्थापक, जो इस असभ्य धर्म के दूसरे शिक्षक बने, ने वही कुफ्र (अविश्वास) और शिर्क(बहुदेववाद) का रंग और स्वर अपनाया कि चुनिंदा लोगों के अलावा सभी मुसलमान मुशरिक (बहुदेववादी) हैं। यहाँ यह गिरोह "बेशक, वे लोग जिन्होंने अपने धर्म में मतभेद पैदा किए और वे कई गुटों में बंट गए"[1] के आदेशानुसार स्वयं विभाजित हो गया। एक गुट जाहिरा तौर पर गौण मामलों में इमामों के अनुसरण (तक़लीद) का नाम लेता रहा, जबकि दूसरे ने...

(इश्क का कदम आगे बढ़ाना ही बेहतर है)

...कहकर इसे भी ताक पर रख दिया। वे आपस में लड़ने लगे; एक ने दूसरे को गुमराह कहा और दूसरे ने उन्हें मुशरिक कहा। लेकिन अहले सुन्नत के विरोध और सत्य के लोगों के प्रति शत्रुता में वे फिर से एक राष्ट्र बन गए। हालाँकि इन अनुयायियों ने भी मुसलमानों को काफ़िर घोषित करने में कोई कसर नहीं छोड़ी, फिर भी "कलाम अल-इमाम, इमाम अल-कलाम" (इमाम का वचन, वचनों का इमाम होता है) उनके इमाम, संस्थापक और दूसरे नेता को शिर्क और कुफ्र का ऐसा तेज़ बुखार चढ़ा कि उन्होंने मुसलमानों को मुशरिक और काफ़िर बनाने के लिए सहीह मुस्लिम[2] की हदीस: "रात और दिन तब तक खत्म नहीं होंगे जब तक लात और उज़्ज़ा की फिर से पूजा न होने लगे... अल्लाह एक सुखद हवा भेजेगा जो हर उस व्यक्ति की जान ले लेगी जिसके दिल में राई के दाने के बराबर भी ईमान होगा, और केवल वही लोग बचेंगे जिनमें कोई भलाई नहीं होगी और वे अपने पूर्वजों के धर्म की ओर लौट जाएंगे", को मिश्कात[3] के अध्याय "कयामत केवल बुरे लोगों पर ही आएगी" से उद्धृत करके बेधड़क वर्तमान युग पर थोप दिया। जिसमें दुनिया के आका (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने फरमाया कि "विनाश का समय तब तक नहीं आएगा जब तक लात और उज़्ज़ा की फिर से पूजा न होने लगे और वह इस तरह होगी कि अल्लाह तआला एक पाक हवा भेजेगा जो पूरी दुनिया से मुसलमानों को उठा लेगी। जिसके दिल में राई के दाने के बराबर ईमान होगा, उसका देहांत हो जाएगा। जब ज़मीन पर सिर्फ काफ़िर ही रह जाएंगे, तो फिर बुतों की पूजा दस्तूर के मुताबिक शुरू हो जाएगी।" इस हदीस को नकल करके साफ़ लिख दिया कि यह खुदा के पैगंबर के फरमान के

मुताबिक हुआ, इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन। अकलमंद ने इतना भी नहीं देखा कि अगर यह वही समय है जिसकी खबर हदीस में दी गई है, तो यह लाज़िमी हो गया कि रूए ज़मीन पर मुसलमान का नामोनिशान बाकी न रहे। भले मानस, अब तू और तेरे...

---

[1] अल-कुरान 6/159 [2] सहीह मुस्लिम, किताबुल फितन व अशरतुल सा'आह, प्रकाशित नूर मुहम्मद असहा अल-मताबे कराची 2/394 [3] मिश्कातुल मसाबीह, किताबुल फितन, अध्याय: कयामत केवल बुरे लोगों पर ही आएगी, प्रकाशित मुजतबाई दिल्ली पृ. 480

736 का पृष्ठ 659

غرض یہ فتنہ شنیعہ وہاں سے مطرود اور خدا اور رسول کے پاک شہروں سے مدفوع و مردود ہو کر اپنے لئے جگہ ڈھونڈتا ہی تھا کہ نجد کے ٹیلوں سے اس دار الفتن ہندوستان کی نرم زمین اسے نظر پڑی، آتے ہی یہاں قدم جمائے، بانی فتنہ نے کہ اس مذہب نامہذب کا معلم ثانی ہوا وہی رنگ آہنگ کفر و شرک پکڑا کہ ان معدودے چند کے سوا تمام مسلمان مشرک، یہاں یہ طائفہ بحکم اِنَّ الَّذِیْنَ فَرَّقُوْا دِیْنَھُمْ وَکَانُوْا شِیَعًا[1] (وہ لوگ جنہوں نے اپنے دین میں جدا جدا راہیں نکالیں اور کئی گروہ ہو گئے۔ت) خود متفرق ہوگیا ایک فرقہ بظاہر مسائل فرعیہ میں تقلید ائمہ کا نام لیتا رہا دوسرے نے ع

قدم عشق پیشتر بہتر (عشق کا قدم آگے بڑھانا ہی بہتر ہے)

کہہ کر اسے بھی بالائے طاق رکھا، چلے آپس میں چل گئی وہ انہیں گمراہ یہ انہیں مشرک کہنے لگے مگر مخالفتِ اہلسنت وعداوتِ اہل حق میں پھر ملتِ واحدہ رہے، ہر چند ان اتباع نے بھی تکفیر مسلمین میں اپنی چلتی گئی نہ کی لیکن پھر کلام الامام امام الکلام (امام کا کلام، کلام کا امام ہوتا ہے۔ت) ان کے امام و بانی وثانی کو شرک وکفر کی وہ تیز وتند چڑھی کہ مسلمانوں کے مشرک کافر بنانے کو حدیث صحیح مسلم[2]: لا یذھب اللیل والنھار حتی یعبد اللات والعزٰی (الی قولہ) یبعث اللہ ریحا طیبۃ فتوفی کل من کان فی قلبہ مثقال حبۃ من خردل من ایمان فیبقی من لا خیر فیہ فیرجعون الی دین آبائھم مشکوۃ کے باب لا تقوم الساعۃ شرار الناس[3] سے نقل کر کے بے دھڑک زمانہ موجودہ پر جمادی جس میں حضور سید عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا کہ "زمانہ فنانہ ہو گا جب تک لات وعزٰی کی پھر سے پرستش نہ ہو اور وہ یوں ہوگی کہ اللہ تعالٰی ایک پاکیزہ ہوا بھیجے گا جو ساری دنیا سے مسلمانوں کو اٹھا لے گی جس کے دل میں رائی کے دانے کے برابر

ایمان ہو گا انتقال کرے گا جب زمین میں نرے کافر رہ جائیں گے پھر بتوں کی پوجا بدستور جاری ہو جائے گی"۔ اس حدیث کو نقل کر کے صاف لکھ دیا سو پیغمبر خدا کے فرمانے کے موافق ہوا، انا للہ وانا الیہ راجعون۔ ہوشمند نے اتنا بھی نہ دیکھا کہ اگر یہ وہی زمانہ ہے جس کی خبر حدیث میں دی تو واجب ہوا کہ روئے زمین پر مسلمان کا نام و نشان باقی نہ ہو بھلے مانس اب تو اور تیرے

---

1 القرآن ۶ / ۱۵۹ 2 صحیح مسلم کتاب الفتن واشراط الساعة مطبوعہ نور محمد اصح المطابع کراچی ۲ / ۳۹۴ 3 مشکوة المصابیح کتاب الفتن باب لا تقوم الساعة الا علی شرار الناس مطبوعہ مجتبائی دہلی ص ۴۸۰

Fatawa Rizwia Volume 6 Where do the companions slip away? Does your group live somewhere separate from the veil of the world? You too are among those 'Shirar-un-Nas' (worst of people) and the worst of creation, in whose hearts there is not even a grain of mustard seed's worth of faith, and they have turned back towards the religion of the disbelievers and are busy worshipping idols. True came the saying of Mustafa (peace and blessings of Allah be upon him): "Your love for something makes you blind and deaf." [1] The love of polytheism made this sensible person so blind and deaf that he confessed to his own disbelief. The goal is that somehow all Muslims—God forbid—be declared polytheists, even if one's own face has to be smoothed over by an alien omen. And the extreme cunning of this bold and clever person is that in the same chapter 'The Hour will only be established upon the worst of people' [2] of the same 'Mishkat', another detailed Hadith of Muslim was present right next to this one, without any gap, through which the meaning of this Hadith becomes clear. In it, it was explicitly mentioned when this time will come, how it will come, and what will be the origin of the beginning of idol worship. That Hadith, in brief, is this:

Arabic

On the authority of Abdullah bin 'Umar (may Allah be pleased with them both), he said: The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "The Dajjal (Antichrist) will emerge in my nation and will remain for forty [note]... then Allah will send 'Isa bin Maryam (peace and blessings be upon him), who will destroy him. Then he will remain among the people for seven years, and there will be no enmity between any two hearts. Then Allah will send a cold wind from the direction of Syria, such that there will not remain on the face of the earth anyone in whose heart there is an atom's weight of good or faith, but it (the wind) will seize him, even if one of you were to enter..."

Urdu

That is, it is narrated from Abdullah bin Umar (may Allah be pleased with them both) that the radiant Presence, Master of the Worlds (peace and blessings of Allah be upon him) says: Dajjal will emerge in my community and stay for forty [Note]... then Allah the Almighty will send Jesus, son of Mary (peace and blessings be upon him), he will destroy him. Then he will grace the people for seven years in such a way that no two hearts will bear enmity towards each other. After that, Allah the Almighty will send a cold wind from the direction of Syria so that on the face of the earth, whichever heart has an atom's weight of faith...

[Note]: The narrator said: I do not know whether he said forty 'days' or 'years'. End. And in another Hadith, forty days are specified: that the first day will be like a year, the second like a month, the third like a week, and the remaining days like ordinary days. Narrated by Muslim from Al-Nawwas bin Sam'an (may Allah be pleased with him) in a long Hadith. 12 Minhu (m). (Imam Muslim narrated it from Hazrat Nawwas bin Sam'an (may Allah be pleased with him) in a long Hadith. - Translator)

---

1 Musnad Ahmad bin Hanbal, Remaining Hadith of Abu Darda (may Allah be pleased with him), published by Dar-ul-Fikr Beirut, 5/194. 2 Mishkat al-Masabih, Book of Tribulations, Chapter: The Hour shall not be established etc., published by Matba' Mujtabai Delhi, p. 480.

फ़तावा रज़विया, खंड 6 साथी किधर खिसक जाते हैं, क्या तुम्हारा गिरोह दुनिया के पर्दे से कहीं अलग बसता है, तुम सब भी उन्हीं 'शरार-उन-नास' (लोगों में सबसे बुरे) और निकृष्टतम सृष्टि में हुए जिनके दिल में राई के दाने के बराबर ईमान का नाम नहीं और दीन-ए-कुफ़्फ़ार (काफिरों के धर्म) की ओर मुड़कर बुतों (मूर्तियों) की पूजा में व्यस्त हैं। मुस्तफ़ा (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का यह इरशाद सच साबित हुआ कि "किसी चीज़ की मोहब्बत तुम्हें अंधा और बहरा कर देती है।" [1] शिर्क की मोहब्बत ने इस होशमंद इंसान को ऐसा अंधा-बहरा कर दिया कि वह खुद अपने कुफ़्र का इकरार कर बैठा। उद्देश्य तो यह है कि किसी तरह तमाम मुसलमान—अल्लाह न करे—मुशरिक ठहरें, चाहे पराए शगुन को अपना ही चेहरा हमवार (समतल) करना पड़े। और इस बेबाक-चालाक व्यक्ति की अत्यंत धूर्तता यह है कि इसी 'मिशकात' के उसी अध्याय 'क़यामत केवल बुरे लोगों पर ही आएगी' [2] में इसी 'मुस्लिम' की हदीस के बिल्कुल पास ही बिना किसी अंतराल के दूसरी विस्तृत हदीस मौजूद थी, जिससे इस हदीस के अर्थ स्पष्ट होते हैं और उसमें स्पष्ट रूप से बताया गया था कि यह समय कब आएगा और कैसे आएगा और मूर्ति पूजा की शुरुआत का कारण क्या होगा। वह हदीस संक्षेप में यह है:

अरबी	**उर्दू अनुवाद**
हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: मेरी उम्मत में दज्जाल निकलेगा और चालीस नोट तक रहेगा। फिर अल्लाह तआला ईसा इब्न मरियम (अलैहिस्सलाम) को भेजेगा, वे उसे हलाक (नष्ट) करेंगे। फिर वे सात साल तक लोगों में इस तरह रहेंगे कि किन्हीं दो दिलों के बीच कोई दुश्मनी नहीं होगी। फिर अल्लाह तआला शाम की ओर से एक ठंडी हवा भेजेगा, जिससे रूए ज़मीन (धरती की सतह) पर ऐसा कोई भी शख़्स बाकी नहीं रहेगा जिसके दिल में ज़र्रा बराबर भी खैर या ईमान हो, मगर वह (हवा) उसे कब्ज़ कर लेगी, यहाँ तक कि अगर तुम में से कोई शख़्स दाखिल हो जाए...	यानी अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत है कि हुज़ूर पुरनूर सैय्यद-ए-आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं: मेरी उम्मत में दज्जाल निकलकर चालीस नोट तक ठहरेगा, फिर अल्लाह तआला ईसा इब्न मरियम (अलैहिस्सलाम) को भेजेगा, वे उसे हलाक करेंगे। फिर वे सात बरस तक लोगों में इस तरह तशरीफ़ रखेंगे कि कोई दो दिल आपस में अदावत (शत्रुता) न रखते होंगे। उसके बाद अल्लाह तआला शाम की तरफ़ से एक ठंडी हवा भेजेगा कि रूए ज़मीन पर जिस दिल में ज़र्रा बराबर ईमान...

1 मुसनद अहमद बिन हंबल, बाकी हदीस अबी दरदा (रज़ियल्लाहु अन्हु), दार-उल-फ़िक्र बेरुत, 5/194. 2 मिशकातुल मसाबीह, किताबुल फ़ितन, बाब: ला तक़ुमुस साअतु अलख, मतबा मुजतबाई दिल्ली, पृ. 480.

فتاویٰ رضویہ جلد ششم ساتھی کدھر پچ کر جاتے ہیں، کیا تمہارا طائفہ دنیا کے پردے سے کہیں الگ بستا ہے، تم سب بھی انہیں شرار الناس و بدترین خلق میں ہوئے جن کے دل میں رائی کے دانے کے برابر ایمان کا نام نہیں اور دینِ کفار کی طرف پھر کر بتوں کی پوجا میں مصروف ہیں، سچ آیا "حدیثِ مصطفیٰ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کا ارشاد کہ حبک الشیئ یعمی ویصم^1 (شیئ کی محبت تجھے اندھا اور بہرا کر دے گی۔ت) شرک کی محبت نے اس ذی ہوش کو ایسا اندھا بہرا کردیا کہ خود اپنے کفر کا اقرار کر بیٹھا، غرض تو یہ ہے کہ کسی طرح تمام مسلمان معاذ اللہ مشرک ٹھہریں اگرچہ پرائے شگون کو اپنا ہی چہرہ ہموار ہو جائے، اور اس بیباک چالاک کی نہایت عیاری یہ ہے کہ اسی مشکوٰۃ کے اُسی باب لا تقوم الساعۃ الا علی شرار الناس^2 میں اسی حدیثِ مسلم کے برابر متصل بلا فصل دوسری حدیث مفصل۔ اسی صحیح مسلم کی عبداللہ بن عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے وہ موجود تھی جس سے اس حدیث کے معنیٰ واضح ہوتے اور اس میں صراحتہ ارشاد ہوا تھا کہ یہ وقت کب آئے گا اور کیونکر آئے گا اور آغازِ بُت پرستی کا منشا کیا ہوگا، وہ حدیث مختصراً یہ ہے:

عربی متن	اردو ترجمہ
وعن عبداللہ بن عمر رضی اللہ تعالی	یعنی عبداللہ بن عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے روایت
عنہما قال قال رسول اللہ صلی اللہ تعالی	ہے کہ حضور پُرنور سیدِ عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم
علیہ وسلم یخرج الدجال فی أمتي فیمکث	فرماتے ہیں میری امت میں دجال نکل کر چالیس ^8عہ
اربعین فیبعث اللہ عیسی بن مریم فیھلکه ثم	تک ٹھہرے گا پھر اللہ تعالیٰ عیسیٰ بن مریم علیہم الصلوٰۃ
یمکث في الناس سبع سنین لیس بین اثنین	والسلام کو بھیجے گا وہ اُس کو ہلاک کریں گے پھر
عداوۃ ثم یرسل اللہ ریحا باردۃ من قبل	سات برس تک لوگوں میں اس طرح تشریف رکھیں گے

عربی متن	اردو ترجمہ
الشام فلا یبقی علی وجه الارض احد فی قلبه مثقال ذرة من خیر او ایمان الاقبضته حتی لوان واحد کم دخل	کہ کوئی دو دل آپس میں عداوت نہ رکھتے ہوں گے اس کے بعد اللہ تعالیٰ شام کی طرف سے ایک ٹھنڈی ہوا بھیجے گا کہ روئے زمین پر جس دل میں ذرہ برابر ایمان

عہ: راوی نے کہا مجھے نہیں معلوم کہ چالیس "دن فرمایا یا برس انتھی، اور دوسری حدیث میں چالیس دن کی تصریح ہے کہ پہلا دن سال بھر کا، دوسرا ایک مہینہ کا، تیسرا ایک ہفتہ کا، باقی دن عام دنوں کی طرح رواہ مسلم عن النواس بن سمعان رضی اللہ تعالیٰ عنه في حدیث طویل ۱۲ منہ (م) (اسے امام مسلم نے حدیثِ طویل میں حضرت نواس بن سمعان رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا۔ ت)

---

1۸ مسند احمد بن حنبل باقی حدیث ابی الدرداء رضی اللہ تعالیٰ عنہ مطبوعہ دارالفکر بیروت ۵/ ۱۹۴ ۲۸ مشکوٰۃ المصابیح کتاب الفتن باب لا تقوم الساعة الخ مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ص ۴۸۰

Fatawa Razvia - Volume 6

[Arabic Text]: ...in the core of a mountain, it (the wind/angel) would enter it until it seizes his soul. He said: Then the worst of people will remain, light like birds (in sin/haste) and with the dreams of predators (in cruelty). They will not recognize any good nor forbid any evil. Satan will appear to them and say, 'Will you not be ashamed?' They will say, 'What do you command us?' Then he will command them to worship idols. Then the Trumpet will be blown. (Summarized) - (Narrated by Muslim).

[Urdu Translation]: His soul will be seized, even if one of you were to enter the core of a mountain, it (the wind/angel) would go there and take his life. Now only the worst of creation will remain, light and agile like birds in immorality and lust, and heavy and harsh like predators in oppression and severity. They will neither be aware of any good nor will they forbid any evil. Satan will come to them in the form of a man and say, 'Are you not ashamed?' They will say, 'What do you command us?' He will command them to worship idols. After that, the Trumpet (Sur) will be blown. (Summarized).

The clever deceiver will try to avoid this Hadith, because here all deception is exposed and it is clearly revealed that the time foretold in the Hadith will come after the emergence and destruction of Dajjal and the passing of Isa (Peace be upon him). Regarding that time, the Prophet (Peace and blessings of Allah be upon him) said that no Muslim will remain on the face of the earth, as stated in the Hadith of Ahmad, Muslim, and Tirmidhi from Anas (may Allah be pleased with him), where the Master of the Universe (Peace and blessings of Allah be upon him) said:

[Arabic]: The Hour will not be established until 'Allah, Allah' is no longer said on earth.
[Urdu]: The Resurrection will not occur until there is someone left on earth who says 'Allah, Allah'.

'Allah Allah'—this Hadith is also at the beginning of the same chapter in Mishkat, citing Muslim. If the cunning and deceptive proponent of Shirk had quoted similar Hadiths, how could he have branded Muslims as disbelievers and polytheists, and where would he have found room for this false claim? He said about his own time: 'So it happened according to the command of the Prophet of God.' Muslims should observe how this deceiver carries out such semantic distortions in clear, explicit, and widely circulated Hadiths, excelling even his inner teacher in spreading baseless rumors. They manufacture false meanings from their hearts and present them as the intent of Mustafa (Peace and blessings of Allah be upon him), whereas the Master of

the Universe (Peace and blessings of Allah be upon him) stated in a Mutawatir Hadith:

[Arabic]: Whoever intentionally attributes a lie to me, let him take his seat (in the Fire). [Urdu]: Whoever deliberately attributes a lie to me, let him take his place in Hell.

Footnotes: 1. Sahih Muslim, Book of Tribulations, Chapter on Dajjal, printed by Noor Muhammad Asah al-Matabi, Karachi, 2/403. 2. Sahih Muslim, Chapter on the Departure of Faith at the End of Time, printed by Noor Muhammad Asah al-Matabi, Karachi, 1/84; Musnad Ahmad bin Hanbal from Musnad Anas (may Allah be pleased with him), printed by Dar al-Fikr, Beirut, 3/268, 201, 107.

[अरबी पाठ]: ...पहाड़ के जिगर (बीच) में भी, वह उसमें प्रवेश करेगा यहाँ तक कि उसकी आत्मा को पकड़ ले। उसने कहा: फिर लोगों में सबसे बुरे बचेंगे, पाप और कामुकता में पक्षियों की तरह हल्के और अत्याचार और क्रूरता में हिंसक जानवरों की तरह भारी। वे न तो किसी अच्छाई को पहचानेंगे और न ही किसी बुराई को रोकेंगे। शैतान उनके सामने प्रकट होगा और कहेगा, 'क्या तुम्हें शर्म नहीं आएगी?' वे कहेंगे, 'तुम हमें क्या हुक्म देते हो?' तब वह उन्हें मूर्तियों की पूजा करने का आदेश देगा। फिर सूर (तुरही) फूँका जाएगा। (संक्षिप्त) - (मुस्लिम द्वारा वर्णित)।

[उर्दू अनुवाद]: उसकी रूह कब्ज़ कर ली जाएगी, यहाँ तक कि अगर तुममें से कोई पहाड़ के जिगर में चला जाए, तो वह (हवा/फ़रिश्ता) वहाँ जाकर भी उसकी जान निकाल लेगी। अब केवल सृष्टि के सबसे बुरे लोग रह जाएँगे, जो बदचलन और वासना में पक्षियों की तरह हल्के और फुर्तीले होंगे, और ज़ुल्म और सख्ती में दरिंदों की तरह भारी और कठोर होंगे। वे न तो कभी किसी अच्छाई से वाकिफ होंगे और न ही किसी बुराई को मना करेंगे। शैतान उनके पास आदमी के रूप में आएगा और कहेगा, 'क्या तुम्हें शर्म नहीं आती?' वे कहेंगे, 'तुम हमें क्या हुक्म देते हो?' वह उन्हें मूर्तिपूजा का हुक्म देगा। इसके बाद सूर फूँका जाएगा। (संक्षिप्त)।

चतुर धोखेबाज इस हदीस को अलग बचाने की कोशिश करेगा, क्योंकि यहाँ सारा छल खुल जाता है और साफ ज़ाहिर होता है कि हदीस में जिस ज़माने की खबर दी गई है वह दज्जाल के निकलने और विनाश और ईसा (अलैहिस्सलाम) के निधन के बाद आएगा। उस समय के लिए हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया कि धरती पर कोई मुसलमान नहीं बचेगा, जैसा कि अहमद, मुस्लिम और तिर्मिज़ी की हदीस में अनस (रज़ियल्लाहु अन्हु) से आया है कि सैय्यद-ए-आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया:

[अरबी]: कयामत तब तक नहीं आएगी जब तक धरती पर 'अल्लाह अल्लाह' कहना बंद न हो जाए।
[उर्दू]: कयामत तब तक नहीं आएगी जब तक धरती पर कोई 'अल्लाह अल्लाह' कहने वाला बाकी रहे।

'अल्लाह अल्लाह'—यह हदीस भी मिश्कात में मुस्लिम के हवाले से इसी अध्याय की शुरुआत में है। यदि चालाक धोखेबाज शिर्क का समर्थक समान हदीसों को उद्धृत करता, तो वह मुसलमानों को काफ़िर और मुशरिक कैसे बनाता और उसे इस झूठे दावे की गुंजाइश कहाँ से मिलती? उसने अपने

समय के बारे में कहा: 'तो यह ईश्वर के पैगंबर के आदेश के अनुसार हुआ।' मुसलमान देखें कि यह धोखेबाज स्पष्ट और प्रसिद्ध हदीसों में ऐसे अर्थगत हेरफेर कैसे करता है, निराधार बातें फैलाने में अपने आंतरिक गुरु से भी आगे निकल जाता है। वे अपने दिल से झूठे अर्थ गढ़ते हैं और उन्हें मुस्तफा (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का उद्देश्य ठहराते हैं, जबकि हुज़ूर सैय्यद-ए-आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने मुतवातिर हदीस में फरमाया:

[अरबी]: जो जानबूझकर मुझ पर झूठ बोले, वह अपना स्थान (आग में) ले ले। [उर्दू]: जो जानबूझकर मुझ पर झूठ बांधे, वह अपना ठिकाना जहन्नुम में बना ले।

पाद-टिप्पणियाँ: 1. सहीह मुस्लिम, किताबुल फितन, दज्जाल का अध्याय, मुद्रित नूर मुहम्मद असहुल मताबे, कराची, 2/403। 2. सहीह मुस्लिम, आख़िरी ज़माने में ईमान के चले जाने का अध्याय, मुद्रित नूर मुहम्मद असहुल मताबे, कराची, 1/84; मुसनद अहमद बिन हंबल, मुसनद अनस (रज़ियल्लाहु अन्हु) से, मुद्रित दारुल फिक्र, बेरुत, 3/268, 201, 107।

पृष्ठ 661 का 736

فِي كبد جبل لدخلته عليه حتى تقبضه قال فيبقى شرار الناس في خفة الطير واحلام السباع لا يعرفون معروفا ولا ينكرون منكرا فيتمثل لهم الشيطان فيقول الاتستحيون فيقولون فما تأمرنا فيأمرهم بعبادة الاوثان ثم ينفخ في الصور (ملخصا)۔ (رواہ مسلم)۔

ہو گا اس کی روح قبض کر لے گی یہاں تک کہ اگر تم میں کوئی پہاڑ کے جگر میں چلا جائے گا تو وہ ہوا وہاں جا کر بھی اُس کی جان نکال لے گی اب بدترین خلق باقی رہ جائیں گے فسق و شہوت میں پرندوں کی طرح ہلکے سُبک اور ظلم و شدت میں درندوں کی طرح گراں و سخت جو اصلا نہ کبھی بھلائی سے آگاہ ہوں گے نہ کسی بدی پر انکار کریں گے شیطان ان کے پاس آدمی کی شکل بن کر آئے گا اور کہے گا تمہیں شرم نہیں آتی یہ کہیں گے تم ہمیں کیا حکم کرتا ہے وہ انہیں بُت پرستی کا حکم دے گا اس کے بعد نفخِ صور ہوگا۔ (ملخصاً)۔

عیار ہوشیار اس حدیث کو الگ بچائیگا کہ یہاں تو سارے مکر کی قلعی کھلتی اور صاف ظاہر ہوتا کہ حدیث میں جس زمانے کی خبر دی ہے وہ بعد خروج وہلاک دجال وانتقال عیسیٰ علیہ الصلوٰۃ والسلام کے آئے گا اُس وقت کے لئے حضور صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا کہ روئے زمین پر کوئی مسلمان نہ رہے گا جس طرح احمد ومسلم وتر مذی کی حدیث میں انس رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے آیا سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا:

لا تقوم الساعة حتى لا يقال في الارض الله الله — قیامت نہ آئے گی جب تک زمین میں کوئی اللہ اللہ کہنے والا رہے۔

اللہ اللہ یہ حدیث بھی مشکوۃ بحوالہ مسلم اسی باب کے شروع میں ہے مزوّر چالاک دلداده اشتراک برابر کی حدیثیں نقل کرتا تو مسلمانوں کو کافر مشرک کیونکر بناتا اور اس جھوٹے دعوے کی گنجائش کہاں سے پاتا اپنے زمانے کی نسبت کہہ دیا: سو پیغمبر خدا کے فرمانے کے موافق ہوا۔ مسلمان دیکھیں کہ جو عیار صریح واضح متداول حدیثوں میں ایسی معنوی تحریفیں کریں بے پر کی اڑانے میں اپنے باطنی معلم کے بھی کان کتریں جھوٹے مطلب دل سے بنائیں اور انھیں مصطفیٰ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کا مقصود ٹھہرائیں حالانکہ حضور سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم متواتر حدیث میں ارشاد فرمائیں:

من کذب علیّ متعمدا فلیتبوأ مقعده — جو جان بوجھ کر مجھ پر جھوٹ باندھے وہ اپنا ٹھکانا (جہنم میں بنائے)۔

۱ صحیح مسلم کتاب الفتن باب الدجال مطبوعہ نور محمد اصح المطابع کراچی ۲ / ۴۰۳ ۲ صحیح مسلم باب ذهاب الایمان آخر الزمان مطبوعہ نور محمد اصح المطابع کراچی ۱ / ۸۴ ، مسند احمد بن حنبل از مسند انس رضی اللہ تعالیٰ عنہ مطبوعہ دارالفکر بیروت ۳ / ۲۶۸ ، ۲۰۱ ، ۱۰۷

Fatawa Razawiyya Volume Six Minan-Naar (From the Fire) - 1 Let him make his abode in Hell. (T)

The religion of such people is known, and their way of acting upon the Hadith is known. "Judge their spring by their garden." When this is the state of their principles, it is obvious how they would mistreat Hadiths in the derivative branches of jurisprudence (Fiqh). Yet, they claim to follow Khair al-Bariyyah, meaning the Quran and the sayings of Khair al-Bariyyah (peace and blessings of Allah be upon him), which is the Hadith. Glory be to Allah! What a face and what a claim! The Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) spoke the truth:

[Boxed Text] "In the end of times, there will appear a people who are young in age and foolish in mind. They will speak the best words of creation, yet they will leave Islam as an arrow leaves the game (target). Their faith will not pass beyond their throats." 2 - Reported by Bukhari, Muslim, and others from the Commander of the Faithful, Ali (may Allah honor his face). The wording is from Bukhari in the 'Virtues of the Quran' section of al-Jami' al-Sahih.

In the last days, some people young of age and foolish of intellect will come, who in their own assumption will take proof from the Quran or Hadith. They will exit from Islam just as an arrow passes through its target. Faith will not descend below their throats. This was narrated by Bukhari, Muslim, and other scholars of Hadith from the Commander of the Faithful, Hazrat Ali (may Allah honor his face), and the mentioned words are taken from the chapter on 'Virtues of the Quran' in Sahih al-Bukhari. [End Boxed Text]

Indeed, these people are the exact remnants and reminders of those old Kharijites. The same issues, the same claims, the same style, the same mannerisms. It was the way of the Kharijites to make their outward appearance so observant of the Sharia that common Muslims would consider them extremely bound by it. Then, the claim of acting upon the Quran was a strange trap in green pastures. Their methodology was the same: "We are Muslims and all others are polytheists (Mushriks)." The same color is seen in these gentlemen; you are monotheists (Muwahhid) and everyone else is a polytheist, you are followers of Muhammad (Muhammadi) and everyone else is irreligious, you act upon the Quran and Hadith and everyone else is this and that in an evil assembly. Furthermore, most of their speakers are no less than the Kharijites in their outward adherence to Sharia. Let the Ahl as-Sunnah listen with open ears and

not fall prey to the veil of deception. Our Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said in a Sahih Hadith:

1. Jami` at-Tirmidhi, Chapter on the Greatness of Lying against the Messenger of Allah (peace be upon him), published by Amin Company, Delhi, 1/90.
2. Sahih al-Bukhari, Book of the Virtues of the Quran, Chapter on whoever recites the Quran, etc., published by Qadimi Kutub Khana, Karachi, 2/756. Page 662 of 736

फ़तावा रज़विया खंड छह मिनन-नार (आग से) - 1 जहन्नुम में अपना ठिकाना बना ले। (त)

ऐसों का मज़हब मालूम है और हदीस पर अमल करने का तरीका भी मालूम है। "उनके बाग़ से उनके वसंत का अंदाज़ा लगाओ।" जब उसूलों (सिद्धांतों) में यह हाल है, तो ज़ाहिर है कि फ़िक़्ह (धर्मशास्त्र) के उप-मसलों में हदीसों के साथ वे क्या सुलूक करते होंगे। फिर दावा यह है कि हम तो 'खैरुल बरिया' यानी क़ुरआन और 'खैरुल बरिया' (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के कौल (कथन) यानी हदीस पर चलते हैं। सुब्हानअल्लाह! क्या चेहरा है और क्या दावा! अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने सच फ़रमाया:

[बॉक्स किया हुआ पाठ] "आख़िरी ज़माने में ऐसे लोग आएंगे जो उम्र में कम और अक्ल में कच्चे होंगे। वे मख्लूक की बेहतरीन बातें कहेंगे, फिर भी इस्लाम से वैसे ही निकल जाएंगे जैसे तीर निशाने से निकल जाता है। उनका ईमान उनके गले से नीचे नहीं उतरेगा।" 2 - इसे बुखारी, मुस्लिम और अन्यों ने अमीर-उल-मोमिनीन अली (करामल्लाहु वज्हहुल करीम) से रिवायत किया है और ये शब्द जामे सहीह बुखारी के'फ़ज़ाइलुल क़ुरआन' अध्याय से लिए गए हैं।

आख़िरी ज़माने में कुछ लोग कम उम्र और कम अक्ल आएंगे, जो अपने गुमान में क़ुरआन या हदीस से दलील पकड़ेंगे। वे इस्लाम से ऐसे निकल जाएंगे जैसे तीर निशाने से निकल जाता है। ईमान उनके गले से नीचे नहीं उतरेगा। इसे बुखारी और मुस्लिम और अन्य मुहद्दिसीन ने अमीर-उल-मोमिनीन हज़रत अली (करामल्लाहु वज्हहु) से रिवायत किया है और उपरोक्त शब्द जामे सहीह बुखारी के बाब 'फ़ज़ाइलुल क़ुरआन' से लिए गए हैं। [बॉक्स किया हुआ पाठ समाप्त]

वाक़ई ये लोग उन पुराने खारजियों के बिल्कुल अवशेष और यादगार हैं। वही मसले, वही दावा, वही अंदाज़, वही रवैया। खारजियों का तरीका था कि वे अपना बाहरी रूप इतना शरीयत का पाबंद दिखाते थे कि आम मुसलमान उन्हें शरीयत का बहुत पाबंद समझते थे। फिर हर बात पर क़ुरआन पर अमल का दावा हरियाली में एक अजीब जाल था। उनका मसलक वही था कि "हम ही मुसलमान हैं, बाकी सब मुशरिक (मूर्तिपूजक) हैं।" यही रंग इन हज़रात का है; आप मुवह्हिद (एकेश्वरवादी) और बाकी सब मुशरिक, आप मोहम्मदी और बाकी सब बददीन (अधर्मी), आप क़ुरआन व हदीस पर अमल करने वाले और बाकी सब इधर-उधर की फ़ुज़ूल बातें करने वाली गंदी जमात। फिर उनके अधिकांश वक्ता बाहरी शरीयत की पाबंदी में खारजियों से कम नहीं हैं। अहले सुन्नत कान खोलकर

सुन लें कि वे धोखे के जाल में फंसकर शिकार न हो जाएं। हमारे नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने सहीह हदीस में फ़रमाया:

1. जामे तिर्मिज़ी, अल्लाह के रसूल पर झूठ बोलने की सख़्ती का बाब, अमीन कंपनी, दिल्ली द्वारा प्रकाशित, 1/90.
2. सहीह बुखारी, फ़ज़ाइलुल क़ुरआन की किताब, क़ुरआन की तिलावत के बारे में बाब, आदि, कदीमी कुतुब खाना, कराची द्वारा प्रकाशित, 2/756. पेज 736 का 662

فتاوٰی رضویہ جلد ششم مِنَ النَّارِ - 1 دوزخ میں بنالے۔ (ت)

ایسوں کا مذہب معلوم اور عمل بالحدیث کا مشرب معلوم ع قیاس کُن ز گلستانِ شانِ بہارِ شاں جب اصول میں یہ حال ہے تو ظاہر ہے کہ فروع مسائل فقہیہ میں حدیثوں کی کیا کچھ گت نہ بناتے ہوں گے۔ پھر دعوٰی یہ ہے کہ ہم تو خیر البریہ یعنی قرآن اور قول خیر البریہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم یعنی حدیث پر چلتے ہیں، سبحٰن اللہ یہ منہ اور یہ دعوٰی۔ سچ فرمایا صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے:

[خانہ دار تحریر] يَأْتِي فِي آخِرِ الزَّمَانِ قَوْمٌ حُدَثَاءُ الْأَسْنَانِ سُفَهَاءُ الْأَحْلَامِ يَقُولُونَ مِنْ خَيْرِ قَوْلِ الْبَرِيَّةِ يَمْرُقُونَ مِنَ الْإِسْلَامِ كَمَا يَمْرُقُ السَّهْمُ مِنَ الرَّمِيَّةِ لَا يُجَاوِزُ إِيمَانُهُمْ حَنَاجِرَهُمْ 2-اخرجہ البخاری ومسلم وغیرہما عن امیر المومنین علی کرم اللہ تعالٰی وجہہ واللفظ للبخاری فی فضائل القران من الجامع الصحیح۔

آخر زمانہ میں کچھ لوگ حدیث السن سفیہ العقل آئیں گے کہ اپنے زعم میں قرآن یا حدیث سے سند پکڑیں گے وہ اسلام سے ایسے نکل جائیں گے جیسے تیر نشانہ سے نکل جاتا ہے ایمان ان کے گلوں سے نیچے نہ اترے گا۔ اسے بخاری و مسلم اور دیگر محدثین نے امیر المومنین حضرت علی کرم اللہ تعالٰی وجہہ سے روایت کیا اور مذکورہ الفاظ حدیث جامع صحیح للبخاری کے باب فضائل القرآن سے لئے گئے ہیں۔ [خانہ دار تحریر کا اختتام]

واقعی یہ لوگ اُن پرانے خوارج کے ٹھیک ٹھیک بقیہ و یادگار ہیں وہی مسئلے وہی دعوی وہی انداز وہی وتیرے، خارجیوں کا داب تھا، اپنا ظاہر اس قدر متشرع بناتے کہ عوام مسلمین انہیں نہایت پابندِ شرع جانتے پھر بات پر عمل بالقرآن کا دعوٰی عجب دام در سبزہ تھا مسلک وہی کہ ہمیں مسلمان ہیں باقی سب مشرک۔ یہی رنگ ان حضرات کے ہیں آپ موحد اور سب مشرکین، آپ

محمدی اور سب بددین، آپ عامل بالقرآن والحدیث اور سب چنیں و چناں بزم خبیث، پھر ان کے اکثر مکلمین ظاہری پابندی شرع میں خوارج سے کیا کم ہیں اہل سنت کان کھول کر سُن لیں دھوکے کی پٹی میں شکار نہ ہوجائیں، ہمارے نبی صلی اللہ علیہ وسلم نے صحیح حدیث میں فرمایا:

1 جامع الترمذی باب ماجاء فی تعظیم الکذب علی رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم مطبوعہ امین کمپنی دہلی ۱/ ۹۰ 2 صحیح البخاری کتاب فضائل القرآن باب من را یا بقرأۃ القرآن الخ مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۲/ ۷۵۶ صفحہ 662 از 736

Fatawa Razawiyya, Volume 6

“You will consider your prayers insignificant compared to their prayers, and your fasting compared to their fasting, and your deeds compared to their deeds.” 1 You will regard your prayers as inferior in front of their prayers, your fasting in front of theirs, and your actions in comparison to their actions.

Along with this, it was stated: “They will recite the Quran, but it will not pass beyond their throats; they will pass through the religion as an arrow passes through prey.” 2 - Narrated by Bukhari and Muslim from Abu Sa'id al-Khudri (may Allah be pleased with him). Despite these deeds, their condition will be such that they will recite the Quran, but it will not transcend their throats; they will exit the religion just as an arrow exits the prey. Both Bukhari and Muslim narrated this from Hazrat Abu Sa'id al-Khudri (may Allah be pleased with him).

Then, by the glory of Allah, besides following the footsteps of the Kharijites in these religious matters, there is a complete resemblance even in external matters. In the same Hadith of Abu Sa'id (may Allah be pleased with him), it is stated: It was asked, “What will be their sign?” He said, “Their sign is head-shaving.” 3 - Narrated by Bukhari, and after this in the Sahih compilation, there is not a single Hadith. It was requested, “O Messenger of Allah! What will be their identifying mark?” He said, “Shaving the head.” That is, most of them will have shaved heads (Note: Ah). Bukhari narrated this; after it in the Sahih Jami', there is only one Hadith, meaning this Hadith is the one just before the very last Hadith of Sahih Bukhari.

Note (Ah): In some Hadiths, it also mentions that the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) identified them as 'mushammir al-izar' 4 (f) (those with short loincloths reaching the shins), or as it has been reported from him (peace and blessings of Allah be upon him). (Or as narrated from the Noble Prophet, peace and blessings of Allah be upon him. - T). Countless blessings of Allah be upon the Master of the world of what was and what will be, peace and blessings of Allah be upon him.

Note (Ah): It is evident that the sign of a people is that which is found in the entire group or in most of them. 12 Minhu (M)

1. Sahih al-Bukhari, Kitab al-Fada'il, Chapter: One who reads with the recitation of the Quran, published by Qadimi Kutub Khana Karachi, 2/567

2. Sahih al-Bukhari, Kitab al-Fada'il, Chapter: One who reads with the recitation of the Quran, published by Qadimi Kutub Khana Karachi, 2/567
3. Sahih al-Bukhari, Kitab al-Fada'il, Chapter: One who reads with the recitation of the Quran, published by Qadimi Kutub Khana Karachi, 2/567, 58
4. Sahih al-Bukhari, Kitab al-Tawhid, Chapter: Recitation of the wicked and hypocrite etc., published by Qadimi Kutub Khana Karachi, 2/1128 (f): Rather, on page 624, some other signs are also mentioned. The full text is: “Sunken eyes, prominent cheekbones, protruding forehead, thick beard, shaved head, and short loincloth.” This Hadith mentions the signs of those who disrespect the Messenger. - Nazir Ahmad

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

"तुम अपनी नमाज़ों को उनकी नमाज़ों के सामने और अपने रोज़ों को उनके रोज़ों के सामने और अपने कर्मों को उनके कर्मों के सामने तुच्छ समझोगे।" 1 तुम अपनी नमाज़ों को उनकी नमाज़ों के सामने और अपने रोज़ों को उनके रोज़ों के सामने और अपने कर्मों को उनके कर्मों के मुक़ाबले में तुच्छ जानोगे।

इसके साथ ही इरसाद फ़रमाया: "वे कुरान पढ़ेंगे, लेकिन वह उनके गले से नीचे नहीं उतरेगा; वे धर्म से वैसे ही निकल जाएंगे जैसे तीर शिकार से निकल जाता है।" 2 - इसे बुखारी और मुस्लिम ने हज़रत अबू सईद अल-खुद्री (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है। इन आमाल (कर्मों) पर उनकी यह हालत होगी कि वे कुरान पढ़ेंगे पर वह गले से आगे नहीं बढ़ेगा, दीन (धर्म) से ऐसे निकल जाएंगे जैसे तीर शिकार से। इसे बुखारी और मुस्लिम दोनों ने हज़रत अबू सईद खुद्री रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत किया।

फिर ख़ुदा की शान कि इन मज़हबी बातों में खारजियों के कदम-ब-कदम होना तो दूर, बाहरी बातों में भी बिल्कुल समानता है। उन्हीं अबू सईद रज़ियल्लाहु तआला अन्हु की हदीस में है: पूछा गया, "उनकी निशानी क्या होगी?" फ़रमाया, "सिर मुंडवाना।" 3 - इसे बुखारी ने रिवायत किया और इसके बाद जामे सहीह में एक भी हदीस नहीं है। अर्ज़ की गई: या रसूल अल्लाह! उनकी पहचान क्या होगी? फ़रमाया सिर मुंडवाना। यानी उनमें से अधिकतर सिर मुंडवाए हुए होंगे (टिप्पणी: 'अह')। इसे बुखारी ने रिवायत किया, इसके बाद जामे सहीह में केवल एक हदीस है यानी यह हदीस सहीह बुखारी की आखिरी हदीस से पहले वाली हदीस है।

टिप्पणी (अह): कुछ हदीसों में यह भी आया है कि हुज़ूर अक़दस सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने उनका पता "मुशम्मिरुल अज़ार" 4 (फ़) (पिंडलियों तक तहबंद वाले) बताया, या जैसा कि हुज़ूर सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम से वर्णित हुआ। (या जैसा कि हुज़ूर अकरम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम से रिवायत हुआ है। - त)। अल्लाह तआला की बेशुमार दुरूदें हुज़ूर पर, जो दुनिया के होने वाले और हो चुके सब हाल के मालिक हैं, सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम।

टिप्पणी (अह): ज़ाहिर है कि किसी क़ौम की पहचान वह होती है जो पूरी क़ौम या उसके अधिकांश हिस्से में पाई जाए। 12 मिन्हु (म)

1. सहीह अल-बुखारी, किताबुल फ़ज़ाइल, बाब: मन रा'आ बि-क़िरात अल-कुरान, पुरानी कुतुब खाना कराची द्वारा प्रकाशित, 2/567
2. सहीह अल-बुखारी, किताबुल फ़ज़ाइल, बाब: मन रा'आ बि-क़िरात अल-कुरान, पुरानी कुतुब खाना कराची द्वारा प्रकाशित, 2/567
3. सहीह अल-बुखारी, किताबुल फ़ज़ाइल, बाब: मन रा'आ बि-क़िरात अल-कुरान, पुरानी कुतुब खाना कराची द्वारा प्रकाशित, 2/567, 58
4. सहीह अल-बुखारी, किताबुल तौहीद, बाब: क़िरातुल फ़ाजिर वल मुनाफ़िक़ आदि, पुरानी कुतुब खाना कराची द्वारा प्रकाशित, 2/1128 (फ़): बल्कि 624 पर कुछ अन्य संकेतों का भी उल्लेख है। पूरी इबारत इस प्रकार है: "धंसी हुई आँखें, उभरी हुई गाल की हड्डियाँ, उभरा हुआ माथा, घनी दाढ़ी, मुंडा हुआ सिर और ऊँचा तहबंद।" इस हदीस में रसूल की गुस्ताखी करने वालों के संकेतों का ज़िक्र है। - नज़ीर अहमद

पृष्ठ 663/736

تحقرون صلاتکم مع صلاتھم وصیامکم مع صیامھم وعملکم مع عملھم۔ 1 تم حقیر جانوگے اپنی نمازوں کو ان کی نمازوں کے سامنے اور اپنے روزے ان کے روزوں کے سامنے اور اپنے اعمال کو ان کے اعمال کے مقابل۔

با اینہمہ ارشاد فرمایا: ویقرءون القران لایجاوز حناجرھم یمرقون من الدین کما یمرق السھم من الرمیۃ 2- رواہ البخاری و مسلم عن ابی سعید الخدری رضی اللہ تعالٰی عنہ۔ ان اعمال پر ان کا یہ حال ہوگا کہ قرآن پڑھیں گے پر گلوں سے تجاوز نہ کرے گا دین سے نکل جائیں گے جیسے تیر شکار سے۔ اسے بخاری و مسلم دونوں نے حضرت ابوسعید خدری رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا۔

پھر شانِ خدا کہ ان مذہبی باتوں میں خارجیوں کے قدم بقد قدم ہونا درکنار خارجی باتوں میں بھی بالکل یک رنگی ہے انھیں ابوسعید رضی اللہ تعالٰی عنہ کی حدیث میں ہے: قیل ماسیماھم قال سیماھم التحلیق 3- رواہ البخاری ولیس بعدہ فی الجامع الصحیح الاحادیث واحد۔ عرض کی گئی: یا رسول اللہ! ان کی علامت کیا ہوگی؟ فرمایا سر منڈانا۔ یعنی ان کے اکثر سر منڈے ہونگے عہ۔ اسے بخاری نے روایت کیا، اس کے بعد جامع صحیح میں فقط ایک حدیث ہے یعنی یہ حدیث صحیح بخاری کی آخری حدیث سے پہلے والی حدیث ہے۔

عہ بعض احادیث میں یہ بھی آیا کہ حضور اقدس صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے ان کا پتا بتایا مشمری الازار 4 ف۔ (گھٹنی ازار والے) او کما ورد عنہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم (یا جیسا کہ حضور اکرم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم سے مروی ہوا ہے۔ ت) اللہ تعالٰی کے بے شمار درودیں حضور عالم ماکان ومایکون پر، صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم۔

عہ ظاہر ہے علامت قوم سے ہے وہ جو تمام قوم یا اکثر میں ہو ۱۲ منہ (م)

1 صحیح البخاری کتاب الفضائل باب من را یا بقرأة القرآن مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۲ / ۵۶۷ 2 صحیح البخاری کتاب الفضائل باب من را یا بقرأة القرآن مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۲ / ۵۶۷ 3 صحیح البخاری کتاب الفضائل باب من را یا بقرأة القرآن مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۲ / ۵۶۷ ، ۵۸ 4 صحیح البخاری کتاب التوحید باب قراءة الفاجر والمنافق الخ مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۲ / ۱۱۲۸ ف: بلکہ ۶۲۴ پر دیگر چند علامات کا بھی ذکر ہے پوری عبارت یوں ہے: غائر العنین مشرف الوجنتین ناشز الجبهة کث اللحیة محلوق الرأس مشمر الازار۔ اس حدیث میں گستاخ رسول کی علامتوں کا ذکر ہے۔ نذیر احمد

In short, these gentlemen are the direct successors of the Khawarij of Nahrawan; rather, in exaggeration and audacity, they are even ahead of them. Even they (the Khawarij) did not think of what these mindless people have used as an argument from this Hadith to claim Shirk and Kufr for all Muslims.

Couplet: What a strange student who teaches the lesson to the teacher! (How good a student who teaches the teacher the lesson too)

However, the beautiful revenge of Allah, the Almighty and Majestic, is worthy of being an example. As the saying goes, 'The pit-digger finds the pit before him,' or 'He who digs a pit for his brother, surely falls into it.' (T) They brought evidence from Hadith to make Muslims disbelievers and polytheists, but by the grace of Allah, they ended up confessing to being polytheists and disbelievers themselves. Since the claim is that at this time there is no Muslim left on the face of the earth, then this claimant is also one of those disbelievers. 'A man's judgment against himself' (T) holds; 'the confession of a man is the undoing of a man,' and 'a person is held accountable by his own confession.' (T) The poor senseless person got caught in the proverb 'there is no remedy for what one does oneself.' And for the Muslims, they are in God's protection; for them, there has come a true glad tiding from their true Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) that this blessed Ummah will never worship anyone other than God. Imam Ahmad in Musnad, Ibn Majah in Sunan, Al-Hakim in Mustadrak, and Bayhaqi in Shu'ab al-Iman narrate from Hazrat Shaddad bin Aws (may Allah be pleased with him) that the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said regarding his Ummah:

“Verily, they will not worship the sun, nor the moon, nor stones, nor idols, but they will show off in their deeds.”[1] Beware! Indeed they will not worship the sun, nor the moon, nor stones, nor idols; yes, it will be that they perform deeds to show off.

For this reason, when the Day of Resurrection is near and a time of pure Shirk is about to come, a wind will be sent to take away the souls of the Muslims. All praise is due to Allah, the Lord of the worlds. Furthermore, there is a special glad tiding for the people of Arabia that they will never fall into satanic worship. Imam Ahmad and Muslim narrate from Hazrat Jabir bin Abdullah (may Allah be pleased with them) that the Master of the World (peace and blessings of Allah be upon him) said:

“Indeed, Satan has despaired of being worshipped by those who pray in the Arabian Peninsula, but [he hopes to sow] discord among them.”[2] Indeed, Satan has become hopeless that the worshippers of the Arabian Peninsula would worship him; yes, he has the greed of raising quarrels among them.

---

1. Al-Musnad by Imam Ahmad bin Hanbal, Hadith of Shaddad bin Aws (may Allah be pleased with him), published by Dar al-Fikr, Beirut, 4/124.
2. Al-Musnad by Imam Ahmad bin Hanbal, from Musnad Jabir bin Abdullah (may Allah be pleased with him), published by Kutub Khana Rashidiya 3/354; Sahih Muslim, Chapter on the Incitement of Satan, etc., published by Nur Muhammad Asah al-Matabi’, Karachi 2/376; Jami’ al-Tirmidhi, Chapter on what has been narrated about mutual hatred, published by Amin Company, Delhi 2/16.

संक्षेप में, ये सज्जन नहरवान के खवारिज के प्रत्यक्ष उत्तराधिकारी हैं; बल्कि, अतिशयोक्ति और धृष्टता में वे उनसे भी आगे हैं। यहाँ तक कि उन्हें भी वह नहीं सूझा था जो इन बुद्धिहीन लोगों ने सभी मुसलमानों के लिए शिर्क और कुफ्र साबित करने के लिए इस हदीस से दलील के रूप में पेश किया।

शेर: कैसा अजीब शिष्य है जो उस्ताद को ही सबक सिखाता है! (कितना अच्छा शिष्य है कि उस्ताद को भी सबक सिखाता है)

किन्तु अल्लाह तआला का प्रतिशोध का सुंदर तरीका शिक्षाप्रद है। जैसा कि कहावत है, 'गड्ढा खोदने वाले के सामने गड्ढा होता है,' या 'जो अपने भाई के लिए गड्ढा खोदता है, वह स्वयं उसमें गिरता है।' (त) वे मुसलमानों को काफिर और मुशरिक बनाने के लिए हदीस से प्रमाण लाए थे, लेकिन अल्लाह के फज़्ल से उन्होंने स्वयं अपने मुशरिक और काफिर होने का स्वीकार कर लिया। चूँकि दावा यह है कि इस समय धरती पर कोई मुसलमान नहीं बचा है, तो यह दावेदार भी उन्हीं काफिरों में से एक है। 'व्यक्ति का स्वयं के विरुद्ध निर्णय' (त) लागू होता है; 'एक व्यक्ति का बयान ही उसके खिलाफ जाता है,' और 'व्यक्ति अपने बयान से ही पकड़ा जाता है।' (त) वह बेचारा सुध-बुध खोया हुआ 'अपने किए का कोई इलाज नहीं' वाली कहावत में फँस गया। और मुसलमानों के लिए तो खुदा की पनाह है; उनके लिए उनके सच्चे नबी (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) से सच्ची खुशखबरी आई है कि यह उम्मत कभी भी खुदा के सिवा किसी और की इबादत नहीं करेगी। इमाम अहमद ने मसनद में, इब्न माजा ने सुनन में, अल-हाकिम ने मुस्तदरक में और बैहक़ी ने शुआब अल-ईमान में हज़रत शद्दाद बिन औस (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत की है कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने अपनी उम्मत के बारे में फरमाया:

“बेशक वे सूरज की इबादत नहीं करेंगे, न चाँद की, न पत्थर की, और न ही बुत की, लेकिन वे अपने कर्मों में दिखावा करेंगे।”[1] सावधान! वास्तव में वे न सूरज को पूजेंगे, न चाँद को, न पत्थर को, और न ही बुत को; हाँ, यह होगा कि वे दिखावे के लिए कर्म करेंगे।

इसी कारण जब कयामत करीब होगी और शुद्ध शिर्क का समय आने वाला होगा, तो एक हवा भेजी जाएगी जो मुसलमानों की रूहों को ले जाएगी। समस्त प्रशंसा अल्लाह के लिए है, जो तमाम जहानों का रब है। इसके अलावा, अरब के लोगों के लिए विशेष खुशखबरी दी गई है कि वे कभी भी शैतानी

पूजा में शामिल नहीं होंगे। इमाम अहमद और मुस्लिम हज़रत जाबिर बिन अब्दुल्लाह (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत करते हैं कि आका-ए-दो-जहाँ (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने फरमाया:

“बेशक शैतान इस बात से निराश हो गया है कि जज़ीरा-ए-अरब के नमाज़ी उसकी इबादत करेंगे, लेकिन वह उनके बीच फूट डालने की उम्मीद रखता है।”[2] वास्तव में शैतान इससे निराश हो गया है कि जज़ीरा-ए-अरब के नमाज़ी उसे पूजें; हाँ, वह उनमें झगड़े पैदा करने का लालच रखता है।

---

1. अल-मुसनद इमाम अहमद बिन हंबल, हदीस शद्दाद बिन औस (रज़ियल्लाहु अन्हु), मक़तब अल-अस्रिया, बेरुत, 4/124।
2. अल-मुसनद इमाम अहमद बिन हंबल, मुसनद जाबिर बिन अब्दुल्लाह (रज़ियल्लाहु अन्हु) से, मतबूआ कुतुब खाना रशीदिया 3/354; सहीह मुस्लिम, बाब तहरीश अल-शैतान आदि, मतबूआ नूर मुहम्मद अल-मताबे, कराची 2/376; जामे अल-तिर्मिज़ी, बाब मा जा फ़िल-तिबाअज़, मतबूआ अमीन कंपनी दिल्ली 2/16।

पृष्ठ 664/736

بالجملہ یہ حضرات خوارج نہروان کے رشید پس ماندے بلکہ غلو و بیباکی میں ان سے بھی آگے ہیں یہ انھیں بھی نہ سوجھی تھی کہ شرک و کفر تمام مسلمین کا دعوٰی اس حدیث سے ثابت کر دکھاتے جس سے ذی ہوش مذکور نے استدلال کیا ع طرفہ شاگردے کہ میگوید سبق استاد را (کتنا اچھا شاگرد کہ استاد کو بھی سبق سکھاتا ہے) مگر حضرت حق عزوجل کا حسن انتقام لائق عبرت ہے چاہ کن را چاہ در پیش من حفر بئرا لا خیہ فقد وقع فیہ (جو شخص کسی کے لئے کنواں کھودتا ہے خود اسی میں گرتا ہے۔ ت) حدیث سے سند لائے تھے مسلمانوں کو کافر و مشرک بنانے کو اور بحمد اللہ خود اپنے مشرک و کافر ہونے کا اقرار کر لیا کہ جب یہ وقت وہی ہے کہ روئے زمین پر کوئی مسلمان نہیں تو یہ مستدل بھی انھیں کافروں میں کا ایک ہے قضی الرجل علی نفسہ (آدمی نے اپنے خلاف فیصلہ کیا۔ ت) اقرار مرد آزار مرد، المرء مواخذ باقرارہ (آدمی اپنے اقرار پر گرفتار ہوتا ہے۔ ت) مدہوش بیچارہ خود کردہ را علاجی نیست میں گرفتار ہوا، اور مسلمانوں کو تو خدا کی امان ہے ان کے لئے ان کے سچے نبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم سے سچی بشارت آئی ہے کہ یہ امت مرحومہ ہرگز شرک اور غیر خدا کی پرستش نہ کرے گی۔ امام احمد مسند اور ابن ماجہ سنن اور حاکم مستدرک اور بیہقی شعب الایمان میں حضرت شداد بن اوس رضی اللہ تعالٰی عنہ سے راوی حضور پُر نور سید عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم اپنی امت کی نسبت فرماتے ہیں: اما انھم لا یعبدون شمسًا ولا قمرا ولا حجرًا ولا وثنًا ولکن یراؤن باعمالھم - 1 خبردار ہو بیشک وہ نہ سورج کو پوجیں گے نہ چاند کو نہ پتھر کو نہ بت کو، ہاں یہ ہوگا کہ دکھاوے کے لئے اعمال کریں گے۔ اسی لئے جب قیامت آنے کو ہوگی اور شرک محض کا وقت آئیگا ہوا بھیج کر مسلمانوں کو اٹھا لیں گے والحمد للہ رب العلمین۔ پھر اہل عرب کے لئے خاص مژدہ ارشاد ہوا ہے کہ وہ ہرگز شیطانی پرستش

میں مبتلا نہ ہوں گے۔ 2 امام احمد و مسلم حضرت جابر بن عبداللہ رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے راوی سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں: ان الشیطن قد یئس ان یعبدہ المصلون فی جزیرۃ العرب ولکن فی التحریش بینھم - 2 بیشک شیطان اس سے ناامید ہو گیا کہ جزیرہ عرب کے نمازی اسے پوجیں، ہاں ان میں جھگڑے اٹھانے کی طمع رکھتا ہے۔

---

1 المسند لامام احمد بن حنبل حدیث شداد بن اوس رضی اللہ عنہ مطبوعہ دارالفکر بیروت 4/ 124

2 المسند لامام احمد بن حنبل از مسند جابر بن عبداللہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ مطبوعہ کتب خانہ رشیدیہ 3/ 354، صحیح مسلم باب تحریش الشیطان الخ مطبوعہ نور محمد اصح المطابع کراچی 2/ 376، جامع الترمذی باب ماجاء فی التباغض مطبوعہ امین کمپنی دہلی 2/ 16 Page 664 of 736

Fatawa Razawiya --- Volume 6 Abu Ya'la narrates from Hazrat Abdullah bin Mas'ood (may Allah be pleased with him) that the Holy Prophet (may Allah's peace and blessings be upon him) said:

[Box Section 1] Left (Arabic): Verily, Satan has despaired of idols being worshipped in the land of the Arabs, but he will be pleased with you for something less than that, regarding the minor sins (Al-Hadith). Its origin is narrated from him by Ahmad and Tabarani with a fair (Hasan) chain. Right (Urdu): That is, Satan has no hope that idols will be worshipped again in the land of the Arabs, but he will consider it a gain to make you commit sins of a lower degree which are considered insignificant and easy (Al-Hadith). Imam Ahmad and Tabarani have narrated it from them with a good chain of transmission.

Bayhaqi narrates from (27) Hazrat Mu'adh bin Jabal (may Allah be pleased with him) as a reminder and (28) Hazrat Abdur Rahman bin Ghanam (may Allah be pleased with him) as a confirmation, that the Master of Messengers (may Allah's peace and blessings be upon him) said at the time of farewell:

[Box Section 2] Left (Arabic): Verily, Satan has despaired of being worshipped in this island of yours, but he will be obeyed in those of your deeds which you deem insignificant, and he is satisfied with that (2). Right (Urdu): That is, Satan has no hope that he will be worshipped in your island, but you will obey him in those deeds which you consider trivial; he considers that much to be a gain.

(29) Imam Ahmad narrates from Hazrat Ubadah bin Samit and (30) Abu Darda (may Allah be pleased with both of them) together that the Master of the Two Worlds (may Allah's peace and blessings be upon him) said:

[Box Section 3] Left (Arabic): Verily, Satan has despaired of being worshipped in the Arabian Peninsula (3). Right (Urdu): Indeed, Satan is despaired of being worshipped in the Arabian Peninsula.

These are the traditions of six companions, may Allah be pleased with them all. Yes, hearing these, a Muslim should say, "See, it happened according to the command of the Prophet of God (may Allah's peace and blessings be upon him); since disbelief and polytheism left the Arabian Peninsula, that day and today, it has not been destined to face that way again, and all praise is for Allah, Lord of the worlds." Then for the blessed region of Hijaz, namely the Two Holy Cities (Haramain Tayyibain) and

their outskirts, an even more magnificent and greater glad tiding came. (31) In Jami` at-Tirmidhi, from Amr bin Awf (may Allah be pleased with him)...

[Footnotes] 1. Musnad Abu Ya'la, from Musnad Abdullah ibn Mas'ood (RA), Hadith 5100, published by Dar al-Qiblah Jeddah, Foundation of Quranic Sciences Beirut, 5/29. 2. Shu'ab al-Iman, Chapter on Sincerity of Actions etc., Hadith 6852, published by Dar al-Kutub al-Ilmiyyah Beirut, 5/340. 3. Musnad Ahmad bin Hanbal, Hadith Shaddad bin Aws (RA), published by Dar al-Fikr Beirut, 4/126.

फतावा रज़विया --- छठा खंड अबू यअला हज़रत अब्दुल्ला बिन मसूद (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत करते हैं कि हुज़ूर अकदस (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं:

[बॉक्स खंड 1] बाएं(अरबी): निश्चय ही शैतान अरब की धरती पर मूर्तियों की पूजा किए जाने से निराश हो चुका है, लेकिन वह तुमसे इससे कम दर्जे के गुनाह कराने में ही संतुष्ट हो जाएगा, जिन्हें तुच्छ समझा जाता है (अल-हदीस)। इसकी मूल रिवायत इमाम अहमद और तबरानी ने हसन सनद के साथ उनके माध्यम से की है। दाएं(उर्दू): यानी शैतान यह उम्मीद नहीं रखता कि अब अरब की धरती पर बुत पूजे जाएंगे, लेकिन वह इससे कम दर्जे के गुनाह तुम से करा देने को गनीमत (लाभ) समझेगा जो तुच्छ और आसान समझे जाते हैं (अल-हदीस)। इसे इमाम अहमद और तबरानी ने उन्हीं से सनद हसन के साथ रिवायत किया है।

बैहकी ने (२७) हज़रत मुआज़ बिन जबल (रज़ियल्लाहु अन्हु) से याद दिलाने के तौर पर और (२८) हज़रत अब्दुर रहमान बिन ग़नम (रज़ियल्लाहु अन्हु) से तस्दीक (पुष्टि) के तौर पर रिवायत की है कि सय्यिदुल मुरसलीन (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने विदाई के समय इरशाद फरमाया:

[बॉक्स खंड 2] बाएं(अरबी): बेशक शैतान तुम्हारे इस जज़ीरे (प्रायद्वीप) में अपनी इबादत किए जाने से मायूस हो चुका है, लेकिन उन कामों में तुम्हारी इताअत (आज्ञापालन) की जाएगी जिन्हें तुम मामूली समझते हो, और वह इसी पर खुश है (२)। दाएं(उर्दू): यानी शैतान को यह उम्मीद नहीं कि अब तुम्हारे जज़ीरे में उसकी इबादत होगी, हाँ उन कामों में उसकी इताअत करोगे जिन्हें तुम हकीर (तुच्छ) जानोगे, वह इसी कद्र को गनीमत समझता है।

(२९) इमाम अहमद हज़रत उबादा बिन सामित और (३०) अबू दरदा (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से एक साथ रिवायत करते हैं कि हुज़ूर सय्यिदुल कौनैन (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया:

[बॉक्स खंड 3] बाएं(अरबी): बेशक शैतान अरब के प्रायद्वीप में पूजे जाने से मायूस हो चुका है (३)। दाएं(उर्दू): बेशक शैतान इससे मायूस है कि जज़ीरा-ए-अरब में उसकी परस्तश (पूजा) हो।

ये छह सहाबियों की हदीसें हैं (रज़ियल्लाहु अन्हुम अजमईन)। हाँ इन्हें सुन कर मुसलमान कहे कि देखो पैग़म्बर-ए-ख़ुदा (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के फरमान के मुताबिक हुआ, कुफ्र और शिर्क जब से जज़ीरा-ए-अरब से निकले, वह दिन और आज का दिन फिर उधर का रुख़ करना नसीब न हुआ और अल्हम्दुलिल्लाहि रब्बिल आलमीन। फिर हिजाज़ के मुबारक़ ख़ित्ते यानी हरमैन तैयबैन

और उनके आस-पास के इलाकों के लिए इससे भी अजल (महान) और अज़ीम (बड़ी) बशारत (खुशखबरी) आई। (३१) जामे तिर्मिज़ी में अम्र बिन औफ़ (रज़ियल्लाहु अन्हु)...

[पादटिप्पणियाँ] 1. मुसनद अबू यअला, मुसनद अब्दुल्ला इब्न मसूद (रज़ियल्लाहु अन्हु) से, हदीस ५१००, मुद्रित दार अल-क़िबला जेद्दाह, मुअस्ससत उलूम अल-क़ुरान बेरूत, ५/२९। 2. शेबुल ईमान, यह आमाल के इखलास आदि पर एक अध्याय है, हदीस ६८५२, मुद्रित दार अल-कुतुब अल-इल्मिय्या बेरूत, ५/३४०। 3. मुसनद अहमद बिन हंबल, हدیस शद्दाद बिन औस (रज़ियल्लाहु अन्हु), मुद्रित दार अल-फिक्र बेरूत, ४/१२६।

पृष्ठ ६६५/७३६

فتاویٰ رضویہ --- جلد ششم ابویعلیٰ حضرت عبداللہ بن مسعود رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے راوی حضوراقدس صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

[جدول ۱] بائیں خانہ (عربی): ان الشیطان قد یئس ان تعبد الاصنام فی ارض العرب ولکنہ سیرضی منکم بدون ذلک بالمحقرات الحدیث۔ واصلہ عنہ عند احمد والطبرانی بسند حسن۔ دائیں خانہ (اردو): یعنی شیطان یہ امید نہیں رکھتا کہ اب زمین عرب میں بت پوجے جائیں مگر وہ اس سے کم درجہ گناہ تم سے کرا دینے کو غنیمت جانے گا جو حقیر وآسان سمجھے جاتے ہیں (الحدیث) اسے امام احمد اور طبرانی نے انہیں سے سند حسن کے ساتھ روایت کیا ہے۔

بیہقی ۲۷حضرت معاذ بن جبل رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے تذکیر اً اور ۲۸ حضرت عبدالرحمن بن غنم رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے تقریراً راوی حضور سید المرسلین صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے وداع کرتے وقت ارشاد فرمایا:

[جدول ۲] بائیں خانہ (عربی): ان الشیطان قد یئس ان یعبد فی جزیرتکم ھذہ ولکن یطاع فیما تحتقرون من اعمالکم فقد رضی بذلک ۲۔ دائیں خانہ (اردو): یعنی شیطان کو یہ امید نہیں کہ اب تمہارے جزیرے میں اس کی عبادت ہو گی ہاں ان اعمال میں اس کی اطاعت کرو گے جنہیں تم حقیر جانو گے وہ اسی قدر کو غنیمت سمجھتا ہے۔

۲۹ امام احمد حضرت عبادہ بن صامت و ۳۰ ابو درداء رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے معاً راوی حضور سید الکونین صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا:

[جدول ۳] بائیں خانہ (عربی): ان الشیطان قد یئس ان یعبد فی جزیرۃ العرب ۳ دائیں خانہ (اردو): بیشک شیطان اس سے مایوس ہے کہ جزیرہ عرب میں اس کی پرستش ہو۔

یہ چھ صحابیوں کی حدیثیں ہیں رضی اللہ تعالیٰ عنہم اجمعین۔ ہاں انھیں سن کر مسلمان کہے کہ دیکھو پیغمبر خدا صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے فرمان کے مطابق ہوا، کفر و شرک جب سے جزیرہ عرب سے نکلے، وہ دن اور آج کا دن پھر ادھر کامنہ کرنا نصیب نہ ہوا والحمدللہ رب العلمین۔ پھر خطہ مبارک حجاز یعنی حرمین طیبین اور ان کے مضافات کے لئے اس سے اجل وا عظم بشارت آئی ۳۱ جامع ترمذی میں عمرو بن عوف رضی اللہ تعالیٰ عنہ

[حواشی] 1 مسند ابویعلیٰ از مسند عبداللہ ابن مسعود رضی اللہ تعالیٰ عنہ حدیث ۵۱۰۰ مطبوعہ دارالقبلہ جدہ موسسۃ علوم القرآن بیروت ۵/ ۲۹ 2 شعب الایمان و ھو باب فی اخلاص العمل الخ حدیث ۶۸۵۲ مطبوعہ دارالکتب العلمیہ بیروت ۵/ ۳۴۰ 3 مسند احمد بن حنبل، حدیث شداد بن اوس رضی اللہ تعالیٰ عنہ، مطبوعہ دارالفکر بیروت، ۴/ ۱۲۶

Fatawa Razawiya - Volume Six

It is narrated from the radiant presence of the Master of the World (may Allah the Exalted grant him peace and blessings), who said:

| Arabic: Inna ad-deena lay'arzu ilal-Hijazi kama ta'arzu al-hayyatu ila juhriha wa laya'qilan ad-deenu minal-Hijazi ma'qila al-arwiyyati minal-jabali. (1) | Urdu Translation: Verily, religion will retreat to Hijaz just as a snake retreats to its hole, and verily religion will make the Two Sacred Sanctuaries (Haramain) its dwelling and refuge just as a mountain goat takes refuge on a mountain peak. |

Then what to say of the Trustworthy Medina, for it is the most special of special places and the first and last refuge and sanctuary of the firm religion. May Allah the Exalted send blessings and peace upon the one who bestowed this honor upon the city of Medina. Specifically regarding it, it was stated:

| Arabic: Innal-imana lay'arzu ilal-Madinati kama ta'arzu al-hayyatu ila juhriha (2). - Rawahu al-A'immatu Ahmad wal-Bukhari wa Muslim wabnu Majatin 'an Abi Hurairata wa fil-babi 'an Sa'di ibni Abi Waqqasin wa ghairihim radiyallahu ta'ala 'anhum. | Urdu Translation: Verily, faith will retreat to Medina just as a snake retreats to its hole. This has been narrated by Imams Ahmad, Bukhari, Muslim, and Ibn Majah on the authority of Hazrat Abu Huraira (may Allah be pleased with him). Narrations on this matter are also recorded from Hazrat Sa'ad bin Abi Waqqas and other companions (may Allah be pleased with them). |

If you judge fairly, these Hadiths alone and those like them are sufficient, complete, and healing proofs in invalidating the sect of those foolish ones. For if their sect were the truth, then the people of Medina, the people of Mecca, the people of Hijaz, the people of Arabia, and the people of all the lands of Dar-ul-Islam would all be, Allah forbid, polytheists and irreligious; and only a few unbridled and highly oppressive individuals from India or some unruly remnants of the sword from Najd would be Muslims. To Allah we belong and to Him we shall return. Similarly, there are many mutawatir (consistently narrated) Hadiths which invalidate their sect, in which it is stated that a large portion of this blessed Ummah will never gather upon misguidance. Due to their great number and immense fame, I refrain from quoting them here. If Allah the Exalted wills, their overpowering glory will be showcased in a separate writing. Every Muslim and even these gentlemen themselves know that in all Islamic lands, there are millions and billions of people from the blessed Ummah of

Mustafa (may Allah the Exalted grant him peace and blessings). May Allah the Exalted bless them.

---

1. Jami' at-Tirmidhi, Chapter 'Indeed Islam began as something strange...', published by Amin Company, Kutub Khana Rashidiyah, Delhi, 4/87.
2. Sahih al-Bukhari, Chapter 'Faith retreats to Medina', published by Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/252.

फतावा रज़विया - छठा खंड

रिवायत है कि हुज़ूर पुरनूर, सरवर-ए-आलम (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं:

| अरबी: इनद-दीना लय'अर्ज़ु इलल-हिजाज़ी कमा त'अर्ज़ुल हय्यतु इला जुह्रिहा व लय'किलनद-दीनु मिनल हिजाज़ी म'किलल अरविय्यति मिनल जबलि। (1) | उर्दू अनुवाद: बेशक दीन हिजाज़ की तरफ इस तरह सिमट जाएगा जैसे साँप अपने बिल की तरफ, और बेशक दीन हरमैन तय्यबैन को अपना ऐसा ठिकाना और पनाहगाह बनाएगा जैसे पहाड़ी बकरी पहाड़ की चोटी को। |

फिर मदीना-ए-मुअज्जमा का कहना ही क्या, वह तो खास लोगों का खास और दीन-ए-मतीन का अव्वल व आखिर मलजा व मनास (शरण और ठिकाना) है। अल्लाह तआला उस ज़ात-ए-अकदस पर रहमतें, बरकतें और सलाम नाज़िल फरमाए जिसने मदीना शहर को यह सम्मान बख्शा। उसके बारे में विशेष रूप से फरमाया गया:

| अरबी: इन्नल-ईमाना लय'अर्ज़ु इलल-मदीनती कमा त'अर्ज़ुल हय्यतु इला जुह्रिहा (2)। - रवाह अल-अइम्मतु अहमद वल-बुखारी व मुस्लिम वबनु माजतिन 'अन अबी हुरैरता व फिल-बाबि 'अन स'दि इब्नि अबी वक्कासिन व गैर्रिहिम रज़ियल्लाहु तआला अन्हुम। | उर्दू अनुवाद: बेशक ईमान मदीने की तरफ इस तरह सिमट जाएगा जैसे साँप अपने बिल की तरफ। इसे इमाम अहमद, बुखारी, मुस्लिम और इब्न माजा ने हज़रत अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) से रिवायत किया है। इस विषय में हज़रत साद बिन अबी वक्कास और अन्य सहाबा (रज़ियल्लाहु तआला अन्हुम) से भी हदीसें मरवी हैं। |

इंसाफ कीजिए तो सिर्फ यही हदीसें और उनकी मिसालें उन मूर्खों के धर्म के खंडन में काफी और वाफी और पक्का सबूत हैं। क्योंकि अगर उनका धर्म हक है, तो मदीना, मक्का, हिजाज, अरब और दारुल इस्लाम के सभी शहरों के लोग, अल्लाह की पनाह, मुशरिक और बेदीन हैं, और मुसलमान सिर्फ हिंदुस्तान के कुछ बेलगाम और ज़ालिम लोग या नज्द के कुछ बचे-कुचे लोग हैं। 'इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन'। इसी तरह वे मुतवातिर हदीसें उनके धर्म को बातिल साबित करती हैं, जिनमें फरमाया गया है कि इस उम्मत-ए-मरहूमा का बड़ा हिस्सा कभी भी गुमराहियत पर जमा नहीं होगा। मैं उनकी अधिकता और शोहरत के कारण यहाँ उन्हें नकल करने से बचता हूँ, इंशा अल्लाह तआला एक अलग तहरीर में उनकी ज़बरदस्त शान दिखाई जाएगी। हर मुसलमान और ये लोग खुद भी

जानते हैं कि तमाम इस्लामी देशों में मुस्तफा (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) की उम्मत-ए-मरहूमा के करोड़ों-अरबों लोग हैं, अल्लाह उन्हें बरकत दे।

---

1. जामे अल-तिर्मिज़ी, अध्याय 'बेशक इस्लाम गरीब (अजनबी) के रूप में शुरू हुआ...', अमीन कंपनी, कुतुब खाना रशीदिया, दिल्ली द्वारा प्रकाशित, 4/87।
2. सही अल-बुखारी, अध्याय 'ईमान मदीने की तरफ सिमट जाता है', कदीमी कुतुब खाना, कराची द्वारा प्रकाशित, 1/252।

سے مروی حضور پرنور سرور عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں :

| ان الدین لیأرز الی الحجاز کما تأرز الحیة الی جحرھا ولیعقلن الدین من الحجاز معقل الاروية من الجبل (1) | بیشک دین حجاز کی طرف ایسا سمٹے گا جیسے سانپ اپنی بل کی طرف، اور بیشک دین حرمین طیبین کو ایسا اپنا مسکن و مامن بنائے گا جیسے پہاڑی بکری پہاڑ کی چوٹی کو۔ |

پھر مدینہ امینہ کا کہنا ہی کیا کہ وہ تو خاصوں کا خاص اور دین متین کا اول و آخر ملجا و مناص ہے صلی اللہ تعالیٰ علی من جعلھا ھکذا و بارک و سلم (اللہ تعالیٰ اس ذات اقدس پر رحمتیں برکتیں اور سلام نازل فرمائے جس نے شہر مدینہ کو یہ شرف بخشا) اُس کی نسبت بالتحصیص ارشاد ہوا،

| ان الایمان لیأرز الی المدینة کما تأرز الحیة الی جحرھا (2) - رواہ الائمة احمد والبخاری ومسلم وابن ماجة عن ابی ھریرة وفی الباب عن سعد بن ابی وقاص وغیرہ رضی اللہ تعالیٰ عنھم۔ | بیشک ایمان مدینے کی طرف یوں سمٹے گا جیسے سانپ اپنی بل کی طرف۔ اسے ائمہ کرام احمد، بخاری، مسلم اور ابن ماجہ نے حضرت ابوہریرہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا ہے۔ اس معاملہ میں حضرت سعد بن ابی وقاص اور دیگر صحابہ رضی اللہ تعالیٰ عنہم سے بھی حدیث مروی ہے۔ |

انصاف کیجئے تو صرف یہی حدیثیں اور اُن کی مثال ان سفہا کے ابطال مذہب میں کافی و وافی و برہان شافی کہ اگر ان کا مذہب حق ہے تو اہل مدینہ واہل مکہ واہل حجاز واہل عرب اہل بلاد دارالاسلام سب کے سب معاذ اللہ مشرکین بے دین ہیں اور مسلمان یہی ہند کے چند بے لجام کثیر الحیف یا نجد کے بعض بے مہار بقیۃ السیف انّا للہ و انا الیہ راجعون۔ اسی طرح وہ متواتر حدیثیں ان کی مبطل مذہب جن میں ارشاد ہوا کہ اس امت مرحومہ کا بڑا حصہ ہرگز گمراہی پر مجتمع نہ ہوگا،

میں اُن کی وفور کثرت و کمال شہرت کے سبب یہاں اُن کی نقل سے دست کشی کرتا ہوں ان شاء اللہ تعالیٰ تحریر جداگانہ میں اُن کی شوکت قاہرہ کو جلوہ دیا جائے گا، ہر مسلمان اور یہ حضرات خود بھی جانتے ہیں کہ تمام بلاد اسلامیہ میں اُمّت مرحومہ مصطفیٰ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے کروڑوں اربوں آدمی بارک اللہ تعالیٰ

---

1 جامع الترمذی باب ماجاء ان الاسلام بدا غریبًا الخ مطبوعہ امین کمپنی کتب خانہ رشیدیہ دہلی ۴/ ۸۷ 2 صحیح البخاری باب الایمان یأرز الی المدینہ مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۲۵۲

Fatawa Razawiyya Volume 6

“Fiihim wa 'Alaihim” (May Allah Almighty send blessings in them and upon them. - Trans.) are pure and free from this new religion. Its adherents are only these few, humiliated, and scarce groups of Indians and Najdis. The wonder is that some of their deniers take pride in their isolation, small numbers, and opposition to the congregation, and in opposition to the Hadiths regarding the congregation and the “Great Majority” (Savad-e-Azam), they read the verse: “Even though the abundance of evil might impress you” [Quran 5:100] (1) (even if the abundance of evil surprises you. - Trans.). This is a trick these gentlemen picked up from the collection of essences of all false religions, from the Rawafid, who consider their humiliation and scarcity as a proof of their truthfulness, and thus they make distortions in the Quranic verses to stubbornly establish their aim. Shah Abdul Aziz Sahib states in “Tuhfa Ithna Ashariyah”:

Persian Text

The eleventh trick is that they say the Ithna Ashariyah religion is the truth because the Ithna Ashariyah are few and humble, and the Ahl al-Sunnah are many and powerful, and Allah the Almighty says regarding the people of truth: “And few they are.” In this explanation, there is a distortion of the Word of Allah because Allah the Almighty has said regarding the Companions of the Right: “A large company from the former people and a large company from the later people.” And if small numbers and humiliation were a cause for truth, then the Nawasib and Khawarij would be more entitled to the truth, as they are very few and humble. Rather, Allah the Almighty has mentioned the prevalence, dominance, and manifestation of the people of truth in various places, and in the Hadiths, the following of the “Great Majority” of the

Urdu Translation

Their eleventh deception is that they say the Ithna Ashariyah religion is the truth because the Ithna Ashariyah are few and weak, and the Ahl al-Sunnah are many and dominant. Allah the Almighty said regarding the people of truth that they are very few. In this conversation, there is distortion in the Word of Allah because Allah the Almighty said regarding the Companions of the Right: “A large group from the first ones and a large group from the later ones.” If scarcity and weakness were more deserving of being the truth, [then they would be more so], because they are very few and extremely weak; rather, Allah the Almighty himself has mentioned the dominance, control, and manifestation of the people of truth in various places, and in the Hadiths, the following of the “Great Majority” of the Ummah and conformity with the

Persian Text	Urdu Translation
Ummah and conformity with the congregation has been emphasized in various places. (2) (Summary)	congregation has been emphasized in various places. (Summary)

The irony is that after this, Shah Sahib wrote about the conditions of the Rawafid and the fruits of their bad religion:

Persian Text	Urdu Translation
They have not recovered any country or region from the disbelievers and made it a Dar al-Islam; rather, if ever they got a state or region in their hands...	They have not liberated any country from the disbelievers and made it a Dar al-Islam; if ever any state came into their possession...

1. Al-Quran 5/100
2. Tuhfa Ithna Ashariyah, second chapter on the minor tricks of Rawafid etc., eleventh trick, published by Suhail Academy Lahore, p. 73

फ़तावा रज़विया जिल्द षष्ठम (6)

“फ़ीहिम व अलैहिम” (अल्लाह तआला उनमें और उन पर बरकत नाज़िल फ़रमाए। -अनुवाद) इस नए मज़हब से पाक और बरी हैं। इसके नाम लेवा केवल ये ही चंद ज़लील और थोड़े से हिंदी और नजद्री हैं। ताज्जुब की बात यह है कि उनके कुछ झुठलाने वाले अपनी इस अलग-थलग स्थिति, अल्पसंख्या और जमाअ़त के विरोध पर गर्व करते हैं और जमाअ़त और सवाद-ए-आज़म (बड़ी जमाअ़त) से संबंधित अ़हादीस के मुक़ाबले में यह आयत पढ़ते हैं: “वलौ अअ्जबका कसरतुल ख़बीस” (1) (चाहे तुम्हें ख़बीस की अधिकता अचंभित कर दे। -अनुवाद)। यह चाल इन साहबों ने तमाम बातिल मज़हबों के निचोड़ यानी रवाफ़िज़ (शियाओं) से उड़ाई है, जो अपनी ज़िल्लत और कमी को अपनी हक़्क़ानियत की दलील ठहराते हैं और क़ुरआनी आयतों में इसी तरह हेर-फेर करके ज़बरदस्ती अपना मक़सद साबित करते हैं। शाह अब्दुल अज़ीज़ साहब “तोहफ़ा इस्ना अशरिया” में फ़रमाते हैं:

फ़ारसी पाठ

ग्यारहवां मक्र यह है कि वे कहते हैं कि इस्ना अशरिया मज़हब हक़ है क्योंकि इस्ना अशरिया थोड़े और ज़लील हैं और अहले सुन्नत अधिक और अज़ीज़ हैं, और अल्लाह तआला हक़ वालों के बारे में फ़रमाता है: “वक़लीलुन मा हुम” (और वे थोड़े ही हैं)। इस तक़रीर में कलाम-ए-इलाही में तहरीफ़ (हेर-फेर) है क्योंकि अल्लाह तआला ने असहाबे यमीन के बारे में फ़रमाया है: “सुल्लतुम मिनल अव्वलीन व सुल्लतुम मिनल आख़िरीन” (उगलों में से एक बड़ा गिरोह और पिछलों में से एक बड़ा गिरोह)। और अगर कम होना और ज़लील होना हक़ होने का कारण होता, तो नवासिब और ख़वारिज हक़ के ज़्यादा हक़दार होते क्योंकि वे बहुत ही कम और ज़लील हैं। बल्कि अल्लाह तआला ने जगह-जगह हक़ वालों के ज़ुहूर, ग़लबा और तसल्लुत का ज़िक्र फ़रमाया है और

उर्दू अनुवाद

उनका ग्यारहवां फ़रेब यह है कि वे कहते हैं कि इस्ना अशरिया मज़हब हक़ है क्योंकि इस्ना अशरिया थोड़े और कमज़ोर हैं, और अहले सुन्नत अधिक और प्रभावी हैं। अल्लाह तआला ने हक़ वालों के बारे में यह इरशाद फ़रमाया कि वे बहुत थोड़े हैं। इस बातचीत में अल्लाह तआला के कलाम में तहरीफ़ है क्योंकि अल्लाह तआला ने असहाबे यमीन के बारे में फ़रमाया: उगलों में एक बड़ा गिरोह और पिछलों में से एक गिरोह। अगर कम होना और कमज़ोर होना हक़ होने के ज़्यादा लायक़ है, तो वे बहुत ही थोड़े और निहायत ही कमज़ोर हैं, बल्कि खुद अल्लाह तआला ने जगह-जगह हक़ वालों के ग़लबा, तसल्लुत और ज़ुहूर का ज़िक्र किया है और अ़हादीस में

फ़ारसी पाठ	उर्दू अनुवाद
अ़हादीस में जगह-जगह उम्मत के सवाद-ए-आज़म के इत्तिबा और जमाअ़त के साथ सहमति की ताकीद फ़रमाई गई है। (2) (संक्षिप्त)	जगह-जगह उम्मत के सवाद-ए-आज़म की इत्तिबा और जमाअ़त के साथ सहमति की ताकीद की गई है। (संक्षिप्त)

लुत्फ़ यह है कि इसके बाद शाह साहब ने रवाफ़िज़ के हालात और उनकी बद-मज़हबी के जो परिणाम लिखे हैं कि:

फ़ारसी पाठ	उर्दू अनुवाद
उन्होंने किसी मुल्क या इलाक़े को काफ़िरों से हासिल नहीं किया और न ही दारुल इस्लाम बनाया, बल्कि अगर कभी उनके हाथ में किसी इलाक़े की रियासत आई भी...	उन्होंने किसी मुल्क को काफ़िरों से छुड़ाकर दारुल इस्लाम नहीं बनाया, अगर कभी उनके क़ब्ज़े में कोई रियासत आई भी तो...

1. अल-क़ुरआन 5/100
2. तोहफ़ा इस्ना अशरिया, फ़स्ल-ए-दोम, रवाफ़िज़ की छोटी चालों के बयान में, ग्यारहवीं चाल, सुहैल एकेडमी लाहौर द्वारा प्रकाशित, पृ. 73

فیہم وعلیہم (اللہ تعالٰی ان میں اور ان پر برکت نازل کرے۔ت) اس نئے مذہب سے منزّہ و بری ہیں اس کے نام لیوا فقط یہی ذلیل و قلیل مشتے چند ہندی و نجدی ہیں طرفہ یہ کہ اُن کے بعض مکذبین اپنی اس شذوذ و قلت و مخالفتِ جماعت پر ناز کرتے اور احادیثِ جماعت وسوادِ اعظم کے مقابل آیہ وَلَوْ أَعْجَبَكَ كَثْرَةُ الْخَبِيثِ 1 (اگر تجھے خبیث کی کثرت تعجب میں نہ ڈال دے۔ ت) پڑھتے ہیں۔ یہ کید ان صاحبوں نے کہ تمام مذاہبِ باطلہ کے عطر مجموعہ میں حضراتِ روافض سے اڑایا وہ اپنی ذلّت و قلّت کو اپنی حقانیت کی حجت ٹھہراتے اور آیاتِ قرآنیہ میں یونہی تحریفیں کرکے خواہی نخواہی مدعا پر جماتے ہیں۔ شاہ عبدالعزیز صاحب تحفہ اثناء عشریہ میں فرماتے ہیں:

فارسی عبارت	اردو ترجمہ
کید یازدہم آنکہ گویند مذہب اثنا عشریہ حق ست زیرا کہ اثنا عشریہ قلیل و ذلیل اند واہل سنّت کثیر و عزیز و خدائے تعالٰی در حق اہل حق می فرماید وَقَلِيلٌ مَّا هُمْ و دریں تقریر تحریف کلام اللہ است زیرا کہ حق تعالٰی در حق اصحاب الیمین فرمودہ است ثُلَّةٌ مِّنَ الْأَوَّلِينَ وَثُلَّةٌ مِّنَ الْآخِرِينَ واگر قلت وذلت موجبِ حقیقت شود باید کہ نواصب وخوارج احق واولے بحق باشند کہ بسیار قلیل و ذلیل اند بلکہ حق تعالٰی جابجا ظہور	گیارھواں فریب ان کا یہ ہے کہ وہ کہتے ہیں مذہب اثنا عشریہ حق ہے کیونکہ اثنا عشریہ تھوڑے اور کمزور، اور اہلسنت کثیر و غالب، اللہ تعالٰی نے اہل حق کے بارے میں یہ ارشاد فرمایا وہ بہت تھوڑے ہیں۔ اس گفتگو میں اللہ تعالٰی کے کلام میں تحریف ہے کیونکہ اللہ تعالٰی نے اصحابِ یمین کے بارے میں فرمایا: اگلوں میں ایک بڑا گروہ اور پچھلوں میں سے ایک گروہ۔ اگر قلت وذلت حق ہونے کے زیادہ لائق ہیں کہ وہ بہت ہی تھوڑے اور نہایت ہی کمزور ہیں، بلکہ خود اللہ تعالٰی نے جابجا اہل حق کے غلبہ، تسلط

فارسی عبارت	اردو ترجمہ
و غلبہ وتسلط در شانِ اہل حق می فرماید و در احادیث جابجا باتباع سوادِ اعظم از امت وموافقت با جماعت تاکید فرمودہ اند 2اھ ملتقطا	اور ظہور کا ذکر کیا ہے اور احادیث میں جابجا امت کے سوادِ اعظم کی اتباع اور موافقت باجماعت کی تاکید کی گئی ہے اھ تلخیصیًا(ت)

لطف یہ ہے کہ اس کے بعد جو شاہ صاحب نے روافض کے حالات اور ان کی بد مذہبی کے ثمرات لکھے کہ:

فارسی عبارت	اردو ترجمہ
پیچ ملک ناحیہ را از کفار بدست نیاوردہ و دارالاسلام نساختہ بلکہ اگرگاہے ایشاں را ریاست ناحیہ بدست	انھوں نے کسی ملک کو کفار سے چھڑا کر دارالاسلام نہیں بنایا اگر کبھی ان کے قبضہ میں کوئی ریاست آئی بھی تو

1 القرآن ۵/ ۱۰۰ 2 تحفہ اثنا عشریہ فصل دوم در مکائد جزئیہ روافض الخ کید یازدہم مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۷۳

Fatawa Razawiyya Volume VI [Quoting Arabic/Persian]: "They have compromised with the infidels and turned the Abode of Islam into the Abode of Infidelity. Whenever Shi'ism becomes prevalent in a country, trials, tribulations, and hypocrisy rain down in abundance between factions. Look at the state of India and judge the state of Arab lands, Syria, and Rome by it." [Summary concluded] They worked through compromise with the infidels to turn the Abode of Islam (Dar al-Islam) into the Abode of Infidelity (Dar al-Kufr). Wherever the followers of Shi'ism gained dominance in any country, people split into groups due to mischief, corruption, and hypocrisy. Look at the condition of India and compare the lands of Arabia, Syria, and Rome to it. [Summary] (T)

All these things apply word-for-word to this new sect. Firstly, it has not been many days since they emerged, yet since they raised their heads, they have directed all their anger only at Muslims. They always called Muslims 'polytheists' (mushriks) and always had the ambition to kill and plunder Muslims. Eventually, they gained some power for a few days. They also acquired an army and followers. Then, which country did they take from the infidels? Which attack did they launch against the polytheists? Yes, they declared the cities of God and Mustafa (peace and blessings of Allah be upon him) as 'Dar al-Harb' (Abode of War). They shed the blood of those who believe in 'La ilaha illa Allah, Muhammadur Rasulullah'. When a person gains power, the suppressed fire in their heart flares up; they fell upon those with whom they had rage. They looted the cities of God and Mustafa (peace and blessings of Allah be upon him). "And the wrongdoers will soon know to what [final] place they will return." (T) When their star was caught in the 'House of Ruin' by the imperial army, those free lands, where there was no protector of Sunnah nor any well-wisher of the nation, said to them, "Your rope is on your shoulder" (i.e., you are on your own/divorced). Where would the blessings of [holy] steps go? When they left Najd in ruins and came to India, the mischief and chaos that spread because of them, and the springs of hypocrisy and discord that erupted among Muslims, are obvious and manifest; from whom are they hidden? Especially those cities face full calamity where their leaders are in majority, some fighting over the ancient religion, some having gone astray, some going astray. Father is Sunni, progeny is Wahhabi; husband is Sunni, wife is Wahhabi. Trials entered every house, daily chaos, life became miserable, peace was destroyed. From the beginning, the second founder also established the same pattern, declaring Muslim lands as 'Dar al-Kufr'. The year in which their elders were wiped out in Najd, as you heard above, was 1233 AH. In that same year, they issued

this fatwa regarding the cities here. The leader of the sect wrote in the context of encouraging Jihad:

"India, in this period and time, 1233 AH, two hundred and thirty-three, most of it in these days has become Dar al-Harb." (2) In India at this time, i.e., in 1233 AH, most of its parts have been declared as Dar al-Harb. (T)

1. Tuhfa Ithna Ashariyah, Section Two, on the partial deceptions of the Rafidis etc., eleventh key, printed by Sohail Academy, Lahore, p. 37.
2. Sirat-e-Mustaqim, Chapter Four, Benefit 5, printed by Al-Maktaba al-Salafiyya, Lahore, p. 65. Page 668 of 736

फ़तावा रज़विया जिल्द शशम (छठा) [अरबी/फ़ारसी उद्धरण]: "उन्होंने काफ़िरों के साथ समझौता किया और दारुल इस्लाम को दारुल कुफ़्र बना दिया। जब भी किसी देश में शिया मत प्रचलित हुआ, गुटों के बीच आज़माइशें, फ़साद और मुनाफ़िक़त (पाखंड) की बौछार हुई। हिंदुस्तान की हालत देखो और अरब, शाम (सीरिया) और रोम (तुर्की/यूरोप) की हालत का इसी से अंदाज़ा लगाओ।" [सारांश समाप्त] उन्होंने काफ़िरों से मेल-मिलाप करके दारुल इस्लाम को दारुल कुफ़्र बना दिया। जिस किसी देश में शिया मत का बोलबाला हुआ, फ़ितना-फ़साद और आपसी फूट के कारण लोग गुटों में बंट गए। हिंदुस्तान की हालत देख लो और अरब, शाम और रोम के देशों की इसी पर तुलना कर लो। [सारांश] (T)

ये सभी बातें अक्षरश: इस नए पंथ पर भी लागू होती हैं। पहली बात तो यह कि इन्हें उभरे हुए ज़्यादा दिन नहीं हुए, फिर भी जब से सिर उठाया, सारा गुस्सा सिर्फ़ मुसलमानों पर ही उतारा। हमेशा मुसलमानों को 'मुशरिक' (बहुदेववादी) कहा, मुसलमानों के ही कत्ल और लूटपाट का हौसला रहा। आखिरकार कुछ दिनों के लिए शान-ओ-शौकत भी मिल गई। सेना और अनुयायी भी हाथ आए। फिर, उन्होंने काफ़िरों से कौन सा देश जीता? मुशरिकों पर कौन सा हमला किया? हाँ, अल्लाह और मुस्तफ़ा (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के शहरों को 'दारुल हर्ब' (युद्ध का घर) बताया, 'ला इलाहा इल्लल्लाह मुहम्मदुर रसूलुल्लाह' मानने वालों का खून बहाया। जब इंसान को ताक़त मिलती है, तो दिल की दबी हुई आग भड़क उठती है; जिनसे नाराज़गी थी, उन्हीं पर टूट पड़े। अल्लाह और मुस्तफ़ा के शहरों को लूटा (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम)। "और ज़ालिमों को जल्द ही पता चल जाएगा कि उनका ठिकाना कहाँ है।" (T) जब वहाँ शाही सेना ने उनके सितारे को गर्दिश में डाल दिया, तो उन आज़ाद शहरों ने, जहाँ न सुन्नत का कोई रक्षक था न मिल्लत (क़ौम) का कोई शुभचिंतक, उनसे कह दिया "तुम्हारी रस्सी तुम्हारे कंधे पर है" (यानी तुम अपने हाल पर हो)। चरणों की बरकत कहाँ जाए? जब वे नजद को उजाड़कर हिंद में आए, तो यहाँ उनके कारण जो फ़ितना और फ़साद फैला, मुसलमानों के बीच मुनाफ़िक़त और फूट के जो सोते फूटे, वे ज़ाहिर और प्रत्यक्ष हैं; किससे छिपे हैं? ख़ासकर उन शहरों पर तो पूरी शामत है जिनमें उनके बड़े-बड़ों की बहुतायत है, कुछ पुराने दीन पर झगड़ रहे हैं, कुछ बिगड़ गए हैं, कुछ बिगड़ रहे हैं। बाप सुन्नी, संतान वहाबी; शौहर सुन्नी, बीवी वहाबी। घर-घर फ़ितने आए, रोज़ाना का फ़साद, ऐश-ओ-आराम छिन गया, चैन बर्बाद हो गया। शुरुआत से ही दूसरे संस्थापक ने भी वही रंग जमाया, इस्लामी देशों को 'दारुल कुफ़्र' ठहराया। जिस साल नजद में उनके बड़ों का सफ़ाया हुआ, जैसा कि आपने ऊपर सुना कि वह

1233 हिजरी था, उसी साल उन्होंने यहाँ के शहरों पर यह फ़तवा दिया। पंथ के इमाम ने जिहाद की प्रेरणा देते हुए लिखा:

"हिंदुस्तान, इस काल और समय में, 1233 हिजरी, दो सौ तैंतीस, इसका अधिकांश हिस्सा इन दिनों में दारुल हर्ब बन गया है।" (2) हिंदुस्तान को इस समय यानी 1233 हिजरी में, जबकि इसका अधिकांश हिस्सा दारुल हर्ब घोषित किया जा चुका है। (T)

1. तोहफ़ा इस्ना अशरिया, अध्याय दो, राफ़ज़ियों के आंशिक धोखे आदि पर, ग्यारहवीं कुंजी, मुद्रित सुहैल अकादमी, लाहौर, पृष्ठ 37।
2. सिराते मुस्तकीम, अध्याय चार, इफ़ादा 5, मुद्रित अल-मकतबा अल-सलफ़िया, लाहौर, पृष्ठ 65। पेज 668/736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم آمدہ با کفار مداہنہ نمودہ ودارالاسلام رادارالکفر ساختہ اند ہرگاہ در ملکے تشیع رائج شد فتنہ وفساد و نفاق فیما بین فوج فوج باریدہ، حالت ہندوستان باید دید وحالت ملک عرب و شام و روم را بادی بسنجید (اھ ملخصاً) انھوں نے مداہنت بالکفار سے کام لیتے ہوئے دارالاسلام کو دارالکفر بنادیا، جہاں کسی ملک میں اہل تشیع کا غلبہ ہوا فتنہ و فساد اور نفاق کے باعث لوگ آپس میں گروہوں میں بٹ گئے ، ہندوستان کی حالت دیکھ لو اور ملک عرب، شام اور روم کو اس پر قیاس کرلو اھ ملخصاً (ت)

یہ سب باتیں بھی حروف بحرف اس طائفہ جدیدہ پر منطبق، اول تو انھیں نکلے ایسے کے دن ہوئے تاہم جب سے سر ابھارا سارا غصہ مسلمانوں ہی پر اتارا ہمیشہ مسلمانوں کو مشرک کہا مسلمانوں ہی کے قتل و غارت کا حوصلہ رہا، آخر کچھ دنوں شوکت بھی پائی۔ فوج و جمعیت بھی ہاتھ آئی، پھر کون سا ملک کافروں سے لیا کون سا حملہ مشرکوں پر کیا ہاں خد او مصطفی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کے شہروں کو دارالحرب بتایا، لا الہ الا اللہ محمد رسول اللہ ماننے والوں کا خون بہایا، آدمی کو جب قوت ملتی ہے دل کی دبی بھڑک کر جلتی ہے جن سے غیظ تھا انھیں پر ٹوٹے، خد او مصطفی کے شہر لوٹے صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم وسیعلم الظالم این المثوٰی (عنقریب ظالم جان لے گا کہ اس کا ٹھکانہ کہاں ہے۔ت) جب وہاں ان کا ستارہ لشکر سلطانی نے گرفتار بیت الوبال کیا ان آزاد بلاد نے جہاں نہ کوئی پرسانِ سنت نہ خبرگانِ ملت اُنھیں حبلک علی غاربک (تیری رسی تیرے کاندھے پر ہے۔ت) کہہ کر لیا قدموں کی برکت کہاں جائے۔ جب نجد اجاڑ کر ہند میں آئے یہاں ان کے دم سے جو فتنہ و فساد پھیلے، باہم مسلمانوں میں نفاق و شقاق کے چشمے ابلے ، ظاہر و عیاں ہیں، کس پر نہاں ہیں، خصوصاً ان شہروں کو تو پوری شامت جن میں ان کے عمائد کی کثرت کچھ دینِ قدیم پر جھگڑ رہے ہیں کچھ بگڑ گئے کچھ بگڑ رہے ہیں ، باپ سنّی ذریت وہابی ،

شوہر سنّی عورت وہابی، گھر گھر فتنے آئے دن فساد، عیش منغص چین برباد ، ابتداء بانی ثانی نے بھی وہی رنگ جمائے ، بلادِ اسلام دارالکفر ٹھہرائے، جس سال نجد میں ان کے اکابر کا قلع قمع ہوا اوپر سُن چکے کہ ۱۲۳۳ ھ تھا اسی سال انھوں نے یہاں کے شہروں پر یہ فتویٰ دیا، امام الطائفہ نے ترغیبِ جہاد کے ضمن میں لکھا:

ہندوستان را دریں جز و ضمان کر ۱۲۳۳ ہ دوصدوسی و سوم اکثرش دریں ایام دارالحرب گردیدہ (۲)۔ ہندوستان کو اس وقت یعنی ۱۲۳۳ ھ میں کہ اس کا اکثر حصہ دارالحرب قرار دیا جاچکا ہے۔ (ت)

۱ تحفہ اثنا عشریہ فصل دوم در مکائد جزئیہ روافض الخ کلید یازدھم مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۲۳۷ ۲ صراط مستقیم فصل چہارم افادہ ۵ مطبوعہ المکتبۃ السلفیہ لاہور ص ۶۵ Page 668 of 736

But time did not allow much respite, the longing of the heart remained in the heart; there was no follower who could mend the broken world. Helplessly, the tongue of the pen and the pen of the tongue moved to vent the frustrations of the heart. Declaring Muslims as disbelievers is their original religion; 'Shirk' (polytheism) and 'Kufr' (disbelief) are their primary labels. Some of their bold ones have explicitly stated that the Ahl-us-Sunnah are 'Kuffar Harbi' (infidels in a state of war) and their blood and property are permissible; rather, they hold even more satanic sayings than this. If they were to find an opportunity, what would they not do?

Arabic Verse / Quote	Urdu Translation
"Hatred has already appeared from their mouths, and what their breasts conceal is greater." [Quran 3:118] There is no power or strength except with Allah; He is the one whose help is sought against every evil-doer.	Their grudge and enmity have become apparent from their talks, and that (wrath and malice) which they have hidden in their chests is even greater. (T) None has power and strength except that Allah Who is the helper against every evil. (T)

In short, somewhere they share closeness with the Kharijites, and somewhere they have similarity with the Rawafid (Shias). Hemistich: The religion is known and the followers of the religion are known. And the last sentences of Shah Sahib are worth weighing in pearls, that:

Persian Text	Urdu Translation
The state of Iran, Deccan, and India should be seen, and the state of the Arab lands, Syria, Rome, Turan, and Turkistan should be weighed against them.	See the state of Iran, Deccan, and India, and the state of the Arab countries, Syria, Rome, Turan, and Turkistan should be estimated based on them. (T)

Indeed, look at how much harm their freedom and lack of restraint causes to the true religion here, and there where there is no trace of them in general cities; and those who remained as survivors in Najd do not have the spirit to raise their heads. Upon what strength is the firm religion, Ma sha Allah la quwwata illa billah (As Allah willed, there is no power but with Allah). Ask these gentlemen, will you also accept this comparison of the Arab lands, Rome, and Syria with India like Shah Sahib? Or will you consider those blessed countries to be in an even worse state? For here, your religion has publicity and you have the authority to announce your creed, but there, if the name of this 'new religion' was even mentioned, disaster would strike. Praise be to

Allah, the High, the Glorious. In short, how long shall I speak; the discourse is long and time is short. The scholars of the Ahl-us-Sunnah of Arab and non-Arab lands—may Allah Almighty reward their beautiful efforts—have repeatedly given eloquent refutations to this deviant group. And this poor one (the author)—may Allah Almighty forgive him—has also presented fresh discourse and new benefits in various fatwas every time. As far as the questioner's query is concerned...

---

1. Al-Quran 3 / 118
2. Tuhfa Ithna Ashariyah, Second Chapter, Specific Deceits of Rawafid etc., Entry No. 11, published by Suhail Academy Lahore, p. 73.

फ़तावा रज़विया खंड 6

लेकिन ज़माने ने ज़्यादा मोहलत न दी, दिल की हसरत दिल ही में रही; पैरवी में कोई न हुआ कि टूटे जग को जोड़े। लाचार कलम की ज़बान और ज़बान की कलम से चले दिल के फफोले फोड़े। मुसलमानों को काफ़िर ठहराना उनका असल मज़हब है; कुफ़्र और शिर्क तो पहला लक़ब है। उनके कुछ बहादुरों ने साफ़ कहा है कि अहले सुन्नत 'कुफ़्फ़ारे हरबी' (युद्धरत काफ़िर) हैं, उनका खून और माल हलाल है, बल्कि इससे भी ज़्यादा शैतानी बातें; मौका मिले तो क्या कुछ न कर दिखाएँ।

अरबी आयत / उद्धरण	उर्दू अनुवाद
"उनके मुँह से नफरत ज़ाहिर हो चुकी है और जो कुछ उनके सीने छुपाए हुए हैं वह इससे भी बड़ा है।" [कुरान 3:118] अल्लाह के सिवा कोई ताक़त और कुव्वत नहीं है, वही हर बुराई के खिलाफ मदद करने वाला है।	उनके शब्दों से द्वेष और शत्रुता झलक उठी है और वह (क्रोध और विद्वेष) जो उन्होंने अपने सीने में छिपा रखा है, वह और भी बड़ा है। (त) उस अल्लाह के सिवा कोई शक्ति और सामर्थ्य नहीं है जो हर बुराई के विरुद्ध सहायक है। (त)

संक्षेप में, कहीं ख़ारिजियों से नज़दीकी है, कहीं रवाफ़िज़ (शिया) से समानता। मिसरा: मज़हब मालूम और मज़हब वाले मालूम। और शाह साहब के आखिरी जुमले तो मोतियों में तोलने के काबिल हैं कि:

फारसी पाठ	उर्दू अनुवाद
ईरान, दक्कन और हिन्दुस्तान की हालत देखनी चाहिए और अरब, शाम, रोम, तूरान और तुर्किस्तान के मुल्कों का उनसे मुक़ाबला करना चाहिए।	ईरान, दक्कन और हिन्दुस्तान की हालत देख लीजिए और अरब, शाम, रोम, तूरान और तुर्किस्तान के मुल्कों का उन पर अंदाज़ा लगा लेना चाहिए। (त)

वाकई देखिये यहाँ उनकी आज़ादी और बेक़ैदी से सच्चे मज़हब को कितना नुकसान है, और वहाँ जहाँ आम शहरों में उनका नामोनिशान नहीं; और नजद में जो बाकी बचे हैं उनमें सिर उठाने की हिम्मत नहीं। दीन-ए-मतीन किस ताक़त पर है, माशा अल्लाह ला कुव्वता इल्ला बिल्लाह। इन साहबों से पूछिये, क्या आप भी शाह साहब की तरह अरब, रोम और शाम का हिन्दुस्तान से मुक़ाबला मानेंगे? या उन बरकत वाले मुल्कों को इससे भी बदतर हाल में समझेंगे? क्योंकि यहाँ तो आपके मज़हब का विज्ञापन भी है और अपने अकीदे के प्रचार का अधिकार भी है, और वहाँ तो इस 'नए मज़हब' का नाम लिया और मुसीबत आ गई। और सारी तारीफें अल्लाह के लिए हैं जो बुलंद और

अज़मत वाला है। संक्षेप में, कहाँ तक कहें, बात लंबी है और वक़्त कम। अरब और अजम के अहले सुन्नत उलेमा ने—अल्लाह तआला उनके नेक कामों को कुबूल करे—बार-बार इस गुमराह गिरोह का मुंहतोड़ जवाब दिया है। और इस फ़क़ीर (लेखक) ने भी—अल्लाह तआला उसे माफ़ करे—अनेक फ़तावा में हर बार नई बातें और नए फायदे बयान किए हैं। यहाँ सायल (सवाल करने वाले) का जितना सवाल है...

---

1. अल-कुरान 3 / 118
2. तोहफ़ा इस्ना अशरिया, दूसरा अध्याय, रवाफ़िज़ की मकारियाँ आदि, प्रविष्टि संख्या 11, सुहैल एकेडमी लाहौर द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 73।

مگر زمانے نے زیادہ مہلت نہ دی، دل کی حسرت دل ہی میں رہی، اتباع میں کوئی نہ ہوا کہ ٹوٹے جگ کو جوڑے، ناچار زبان قلم و قلم زبان سے چلے دل کے پھپھولے پھوڑے، تکفیر مسلمین اصل مذہب ہے، کفر شرک تو پہلا لقب ہے، ان کے بعض دلاوروں نے تصریحیں کی ہیں کہ اہلسنت کفار حربی ہیں ان کے خون و مال حلال بلکہ اس سے زائد شیطانی اقوال، موقع پائیں تو کیا کچھ نہ کر دکھائیں،

عربی عبارت	اردو ترجمہ
قَدْ بَدَتِ الْبَغْضَآءُ مِنْ اَفْوَاہِہِمْ وَ مَا تُخْفِیْ صُدُوْرُہُمْ اَکْبَرُ- لا حول ولا قوۃ الا باللہ ھو المستعان علی کل ذي شر۔	بغض و بیر ان کی باتوں سے جھلک اٹھا اور وہ (غیظ و عناد) جو سینوں میں چھپائے ہیں اور بڑا ہے (ت) اس اللہ کے سوا کوئی طاقت وقوت نہیں رکھتا جو ہر شر کے خلاف مددگار ہے۔ (ت)

غرض کہیں خوارج کی ہمسگی کہیں روافض سے ہمرنگی ع: مذہب معلوم واہلِ مذہب معلوم اور شاہ صاحب کے اخیر فقرے تو موتیوں میں تولنے کے قابل کہ:

فارسی عبارت	اردو ترجمہ
حالتِ ایران و دکن و ہند وستان باید دید و حالتِ ملکِ عرب و شام و روم و توران و ترکستان را باوے باید سنجید-	ایران و دکن اور ہندوستان کی حالت دیکھ لیجئے اور ملک عرب و شام اور روم و توران و ترکستان کو ان پر قیاس کر لینا چاہئے -(ت)

واقعی دیکھئے یہاں ان کی آزادی و بے قیدی سے مذہبِ حق پر کتنا ضرر ہے اور وہاں جو عام بلاد میں ان کا نشان نہیں اور نجد میں جو بقیہ السیف رہے ان میں سر اٹھانے کی جان نہیں دین متین کس قوت پر ہے ماشاء اللہ لا قوۃ الا باللہ ان صاحبوں سے پوچھیئے آپ بھی شاہ صاحب کی طرح یہ عرب و روم و شام کا ہند وستان سے موازنہ مانیں گے یا ان برکت والے ملکوں کو اس سے بھی بدتر حال میں جانیں گے کہ یہاں آپ کے مذہب کو اشتہار بھی ہے اعلان مشرب کا اختیار بھی ہے اور وہاں تو یہ اعزاز مذہبِ جدید کا نام لیا اور آفت رسید والحمد للہ العلی المجید، غرض کہاں تک کہئے کلام طویل اور فرصت قلیل عرب و عجم کے علمائے اہلسنت شکر اللہ تعالیٰ مساعیم الجمیلہ نے بمرات ومرات اس طائفہ تالفہ کے رد بلیغ فرمائے ، اور فقیر غفر اللہ تعالیٰ کے بھی متعدد فتاوی میں ہر بار کلام تازہ و فوائد جدیدہ بیان میں آئے، یہاں سائل کا جس قدر سے سوال ہے

---

1. القرآن ۳ / ۱۱۸
2. تحفہ اثنا عشریہ فصل دوم مکائد جزئیہ روافض الخ قید نمبر ۱۱ مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۷۳

Fatawa Razawiyya Volume VI Attention is directed towards it, so I say, seeking help from the Near One, the Responder. And my success is only by Allah; in Him I trust and to Him I turn.

Beginning of the answer with the guidance of the Sovereign Giver.

Undoubtedly, praying behind a non-conformist (Ghayr Muqallid) is disliked (makruh), prohibited, and must be avoided. Making them an Imam by choice is never the act of any Sunni who loves the Sunnah and detests innovation. Where they are the Imam and one lacks the power to prevent it, a Sunni should follow a sound-creed Imam elsewhere, even for Friday prayers if another place is available. The verifying Imam Ibn al-Humam states in Fath al-Qadir Sharh al-Hidayah:

[Arabic Quote]: "It is disliked in Jumu'ah (Friday prayer) if its establishment is multiple in the city according to the opinion of [Imam] Muhammad, which is the fatwa-issued opinion, because it is in the way of transformation." [Urdu Explanation]: According to the fatwa-issued opinion of Imam Muhammad, following a transgressor or innovator in Jumu'ah is disliked when Jumu'ah is established in multiple places in the city, because in this case, moving to another location is possible. (T)

And if forced to pray behind them, or if the situation became clear after praying, then repeat the prayer even if the time has passed and a long duration has elapsed, as verified by the noble master, my master Amin al-Din Muhammad ibn Abidin al-Shami (may Allah have mercy on him) in Radd al-Muhtar. (As our great scholar, my master Amin al-Din Muhammad ibn Abidin al-Shami, may Allah have mercy on him, researched in Radd al-Muhtar. T). This humble servant (may Allah forgive him) clarifies this ruling with five proofs, and success is from Allah.

Proof 1: This is clear in itself and evident from our previous discourse that the aforementioned group is innovated, rather from the worst people of innovation. And the noble scholar, my master Ahmad al-Misri al-Tahṭawi (may Allah have mercy on him), narrates in Hashiya al-Durr al-Mukhtar:

[Arabic Quote]: "Whoever deviates from the consensus of the people of jurisprudence and knowledge and the great majority (Sawad al-A'zam), then he has deviated into what he enters." [Urdu Explanation]: Meaning, whoever separates from the majority of the people of knowledge, jurisprudence, and the great majority, he has become isolated with something that [leads] him...

1 Fath al-Qadir, Chapter of Imamate, printed by Maktabah Nuriyyah Razawiyyah Sukkur, 1/304. Page 670 of 736

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी उसकी ओर ध्यान है, तो मैं निकटवर्ती, उत्तरदाता (अल्लाह) की सहायता मांगते हुए कहता हूँ। और मेरी सफलता केवल अल्लाह के साथ है; उसी पर मेरा भरोसा है और उसी की ओर मैं मुड़ता हूँ।

संप्रभु दाता (अल-मलिक अल-वहाब) की तौफ़ीक़ (मार्गदर्शन) से उत्तर का आरंभ।

निस्संदेह, गैर-मुक़ल्लिद के पीछे नमाज़ पढ़ना मकरूह (नापसंद), निषिद्ध और इससे बचना अनिवार्य है। उन्हें अपनी मर्जी से इमाम बनाना कभी भी किसी सुन्नत प्रेमी और बिदअत (नवाचार) से घृणा करने वाले सुन्नी का काम नहीं है। जहाँ वे इमाम हों और उन्हें रोकने की शक्ति न हो, वहाँ सुन्नी को चाहिए कि वह किसी दूसरी जगह सही अकीदे (विश्वास) वाले इमाम का अनुसरण करे, यहाँ तक कि जुमा में भी अगर कहीं और जगह मिल सके। इमाम मुहक़्क़िक़ इब्न अल-हुमाम फ़तह अल-क़दीर शरह हिदाया में फ़रमाते हैं:

[अरबी उद्धरण]: "शहर में जुमा की नमाज़ कई जगह होने की स्थिति में इमाम मुहम्मद के मत के अनुसार (किसी बुरे व्यक्ति के पीछे पढ़ना) मकरूह है, और यही फ़तवा देने योग्य मत है, क्योंकि इसमें दूसरी जगह जाना संभव है।" [उर्दू स्पष्टीकरण]: इमाम मुहम्मद के मुफ़्ती-बिह (जिस पर फ़तवा दिया गया हो) मत के अनुसार जुमा में फ़ासिक़ और बिदअती का अनुसरण करना मकरूह है, जबकि शहर में कई जगहों पर जुमा स्थापित हो, क्योंकि इस स्थिति में दूसरी जगह जाना मुमकिन है। (त)

और यदि मज़बूरी में उनके पीछे नमाज़ पढ़ ली या पढ़ने के बाद स्थिति स्पष्ट हुई, तो नमाज़ फिर से पढ़े, चाहे समय बीत गया हो और लम्बा काल गुज़र चुका हो, जैसा कि मौला अल-फ़ाज़िल सैयदी अमीन अल-दीन मुहम्मद बिन आबिदीन अल-शमी (रहमतुल्लाह अलैहि) ने रद अल-मुहतार में प्रमाणित किया है। (जैसा कि हमारे महान विद्वान सैयदी अमीन अल-दीन मुहम्मद बिन आबिदीन अल-शमी रहमतुल्लाह अलैहि ने रद अल-मुहतार में इसकी शोध की है। त) यह फ़क़ीर (अल्लाह उसे क्षमा करे) इस नियम को पांच प्रमाणों से स्पष्ट करता है, और सफलता अल्लाह की ओर से है।

पहला प्रमाण: यह तो स्वयं स्पष्ट है और हमारे पिछले प्रवचन से प्रकट है कि उक्त समूह बिदअती है, बल्कि सबसे बुरे बिदअतियों में से है। और विद्वान अल्लामा सैयदी अहमद मिस्री तहतावी रहमतुल्लाह अलैहि हाशियह दुर्रे मुख्तार में उद्धृत करते हैं:

[अरबी उद्धरण]: "जो व्यक्ति न्यायशास्त्र (फ़िक़्ह) और ज्ञान के लोगों की सभा और सवाद-ए-आज़म (मुख्यधारा मुस्लिम समुदाय) से अलग हो गया, वह उसमें अलग हो गया जिसमें वह प्रवेश करता है।" [उर्दू स्पष्टीकरण]: यानी जो व्यक्ति जम्हूर (बहुसंख्यक) ज्ञान और न्यायशास्त्र के लोगों और सवाद-ए-आज़म से अलग हो जाए, वह ऐसी चीज़ के साथ अकेला हो गया जो उसे...

---

1 फ़तह अल-क़दीर, बाब अल-इमामाह, मुद्रित मकतबा नूरिय्या रज़विया सुक्कुर, 1/304. पृष्ठ 670 का 736

فتاوی رضویہ جلد ششم اُس کی طرف توجہ کا خیال ہے فاقول مستعیناً بالقریب المجیب وما توفیقی الا باللہ علیہ توکلت والیہ انیب۔

الشروع فی الجواب بتوفیق الملک الوھاب

بلا شبہ غیر مقلد کے پیچھے نماز مکروہ و ممنوع ولازم الاحتراز، اُنہیں باختیارِ خود امام کرنا ہر گز کسی سنّی محب سنت و کارہِ بدعت کا کام نہیں، اور جہاں وہ امام ہوں اور منع پر قدرت نہ ہو سنّی کو چاہئے دوسری جگہ امامِ صحیح العقیدہ کی اقتدا کرے حتی کہ جمعہ میں بھی جبکہ اور جگہ مل سکے۔ امام محقق ابن الہمام فتح القدیر شرح ہدایہ میں فرماتے ہیں:

[Arabic]: یکرہ فی الجمعۃ اذا تعددت اقامتھا فی المصر علی قول محمد وھو المفتی بہ لانہ بسبیل من التحول[1]۔ [Urdu]: امام محمد کے مفتیٰ بہ قول کے مطابق جمعہ میں فاسق وبدعتی کی اقتداء مکروہ ہے جبکہ شہر میں جمعہ متعدد مقامات پر قائم ہوتا ہو کیونکہ اس صورت میں دوسرے مقام پر منتقل ہونا ممکن ہے (ت)

اور اگر بمجبوری اُن کے پیچھے پڑھ لی یا پڑھنے کے بعد حال کھلا تو نماز پھیر لے اگرچہ وقت جاتا رہا ہو اگرچہ مدت گزر چکی ہو کما حققہ المولی الفاضل سیدی امین الدین محمد بن عابدین الشامی رحمہ اللہ تعالیٰ فی ردالمحتار (جیسا کہ ہمارے عظیم فاضل سیدی امین الدین محمد بن عابدین شامی رحمہ اللہ تعالیٰ نے ردالمحتار میں اس کی تحقیق کی ہے۔ ت) فقیر غفر اللہ تعالیٰ اس حکم کو پانچ دلیلوں سے روشن کرتا ہے، وباللہ التوفیق۔

دلیل اول: یہ تو خود واضح اور ہماری تقریر سابق سے لائخ کہ طائفہ مذکورہ بدعتی بلکہ بدترین اہل بدعت سے ہے، اور فاضل علامہ سیدی احمد مصری طحطاوی رحمۃ اللہ تعالیٰ حاشیہ دُرِ مختار میں ناقل:

[Arabic]: من شذّ عن جمهور اهل الفقه والعلم والسواد الاعظم فقد شذّ فيما يدخله [Urdu]: یعنی جو شخص جمہور اہل علم وفقہ وسواد اعظم سے جُدا ہو جائے وہ ایسی چیز کے ساتھ تنہا ہوا جو اُسے

---

1 فتح القدیر باب الامامۃ مطبوعہ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر 1/ 304 Page 670 of 736

...into the Fire. Therefore, O community of believers! It is incumbent upon you to follow the saved sect called Ahl al-Sunnah wa'l-Jama'ah. For indeed, the help, protection, and success from Allah Almighty lie in agreeing with them, while abandonment and His displeasure lie in opposing them. This saved group is today gathered within four schools of thought: the Hanafis, the Malikis, the Shafi'is, and the Hanbalis—may Allah Almighty have mercy on them all. In this age, whoever is outside of these four is among the people of innovation (Bid'ah) and the Fire. 1

Allama Shami's statement has passed, where he counted their ancestors from Najd among the Kharijites. This disagreement is because, despite being followers (muqallid) in principles (usool) and declaring lawlessness in sub-branches (furoo'), they also went beyond that, even though they outwardly claimed to be Hanbalis. They consider this name [Hanbali] as a sign of polytheism (shirk) and a severe insult to themselves. This is because they will not be included among the Kharijites nor become more misguided and invalid than their predecessors. Before these gentlemen, there was also a sect that rejected analogy (qiyas) and independent reasoning (ijtihad), called the Zahiriyyah, regarding whom Shah Abdul Aziz Dehlavi wrote:

To count Dawud al-Zahiri and his followers among the Ahl al-Sunnah is a level of ignorance and foolishness, etc. | To count Dawud al-Zahiri and his followers among the Ahl al-Sunnah is a great act of ignorance and stupidity, etc. (T)

But those poor people, despite all this, did not consider taqlid (imitation) as polytheism (shirk) and the followers of the Imams as polytheists. When, as per Shah Sahib's clarification, considering them Sunni is severe ignorance and stupidity, then—I seek Allah's forgiveness—how is it possible that those who are a thousand steps ahead in misguidance are not deemed misguided innovators? In short, their being innovators is clearer than the sun and more manifest than yesterday. There are clear statements in all books of jurisprudence, texts, commentaries, and fatwas regarding the people of innovation, that praying behind them is disliked (makruh), and the research is that this dislike...

1. Hashiyah al-Tahtawi 'ala al-Durr al-Mukhtar, Book of Slaughters, printed by Dar al-Ma'rifah, Beirut, 3/153. Page 671 of 736

...नरक में ले जाएगा। इसलिए ऐ मोमिनों के समूह! तुम पर 'फ़िरक़ा-ए-नाजीया' (मुक्ति पाने वाले समूह) यानी 'अहले सुन्नत वल जमाअत' का अनुसरण करना अनिवार्य है। क्योंकि अल्लाह तआला की सहायता, सुरक्षा और सफलता उनकी सहमति में है, और उसका त्याग और क्रोध उनकी मुखालफ़त (विरोध) में है। और यह मुक्ति पाने वाला समूह आज चार संप्रदायों (मज़ाहिब) में एकत्रित है: हनफ़ी, मालिकी, शाफ़ई और हंबली - अल्लाह तआला उन सब पर दया करे। इस ज़माने में जो भी इन चारों से बाहर है, वह बिदअती (नवाचारी) और जहन्नमी (नरक का पात्र) है। 1

अल्लामा शामी का बयान गुज़रा कि उन्होंने नज्द के उनके पूर्वजों को ख्वारिजों में गिना। यह विरोध इसलिए कि वे सिद्धांतों (उसूल) में मुक़ल्लिद थे और उप-शाखाओं (फ़ुरूअ) में बेलगाम होने के बावजूद, वे स्वयं को ऊपरी तौर पर हंबली कहते थे। वे इस नाम को शिर्क(बहुदेववाद) का चिह्न और अपने लिए बड़ी गाली मानते हैं, क्योंकि वे न तो ख्वारिजों में शामिल होंगे और न ही अपने पूर्वजों से अधिक गुमराह और बातिल होंगे। इन सज्जनों से पहले भी एक समूह था जो क़यास (तर्क) और इज्तिहाद (स्वतंत्र शोध) का विरोधी था, जिन्हें ज़ाहिरिया कहा जाता था, जिनके बारे में शाह अब्दुल अज़ीज़ देहलवी ने लिखा:

दाऊद ज़ाहिरी व मुताबाअ़श रा अज़ अहले सुन्नत शुमुरदन दर्जा मर्तबा अज़ जहल व सफ़ाहत अस्त अलख। | दाऊद ज़ाहिरी और उसके अनुयायियों को अहले सुन्नत में गिनना भारी अज्ञानता और मूर्खता है, इत्यादि। (त)

लेकिन वे बेचारे इसके बावजूद तक़लीद को शिर्क और इमामों के अनुयायियों को मुशरिक (बहुदेववादी) नहीं मानते थे। जब शाह साहब के स्पष्टीकरण के अनुसार उन्हें सुन्नी मानना भारी अज्ञानता और मूर्खता है, तो—अस्तग़फिरुल्लाह—यह कैसे संभव है कि जो पथभ्रष्टता में उनसे हज़ार कदम आगे हों, वे गुमराह बिदअती न ठहराए जाएँ संक्षेप में, उनका बिदअती होना सूर्य के समान स्पष्ट है। और बिदअतियों के संबंध में फिक़्ह (इस्लामी न्यायशास्त्र) की सभी पुस्तकों, मूल पाठों, व्याख्याओं और फतवों में स्पष्ट उल्लेख मौजूद हैं कि उनके पीछे नमाज़ पढ़ना मकरूह (नापसंदीदा) है, और शोध यह है कि यह कराहत...

1. हाशियह अत-तहतावी अलल-दुर्रुल मुख्तार, किताबुज़ ज़बाईह, दारुल मआरिफ़, बेरूत, 3/153. पृष्ठ 671 का 736

فی النار فعلیکم معاشر المؤمنین باتباع الفرقة الناجیة المسماة بأهل السنة والجماعة فإن نصرة الله تعالی وحفظه وتوفیقه في موافقتهم وخذلانه وسخطه في مخالفتهم وهذه الطائفة الناجیة قد اجتمعت الیوم في مذاهب اربعة وهم الحنفیون والمالکیون والشافعیون والحنبلیون رحمهم الله تعالی ومن کان خارجا عن هذه الاربعة في هذا الزمان فهو من اهل البدعة والنار - 1 | دوزخ میں لے جائے گی تو اے گروہ مسلمین ! تم پر فرقہ ناجیہ اہلسنت وجماعت کی پیروی لازم ہے کہ خدا کی مدد اور اس کا حافظ وکارساز رہنا موافقت اہلسنت میں ہے اور اس کو چھوڑ دینا اور غضب فرمانا اور دشمن بنانا سنیوں کی مخالفت میں ہے اور نجات والا گروہ اب چار مذاہب میں مجتمع ہے حنفی، مالکی، شافعی، حنبلی اللہ تعالیٰ ان سب پر رحمت فرمائے اس زمانے میں ان چار سے باہر ہونے والا بدعتی جہنمی ہے۔

علامہ شامی کا ارشاد گزرا کہ انھوں نے ان کے اسلاف نجد کو خارجیوں میں شمار فرمایا۔ یہ خلاف کہ اصول میں اُن کے مقلد اور فروع میں اعلانِ بے لگامی سے اُن پر بھی زائد کہ وہ بظاہر ادعائے حنبلیت رکھتے تھے یہ اس نام کو بھی سیمائے شرک اور اپنے حق میں دشنام سخت جانتے ہیں کیونکہ خوارج میں داخل اور اپنے اگلوں سے بڑھکر گمراہ و مبطل نہ ہوں گے۔ ان صاحبوں سے پہلے بھی ایک فرقہ قیاس واجتہاد کا منکر تھا جنہیں ظاہر یہ کہتے تھے جن کی نسبت شاہ عبدالعزیز صاحب دہلوی نے لکھا:

داؤد ظاہری و متابعانش را از اہلسنت شمردن درجہ مرتبہ از جہل و سفاہت است الخ۔ | داؤد ظاہری اور اس کے متبعین کو اہل سنت سے شمار کرنا بڑی جہالت و بیوقوفی ہے الخ (ت)

مگر وہ بیچارے با اینہمہ تقلید کو شرک اور مقلدان ائمہ کو مشرک نہ جانتے تھے جب بتصریح شاہ صاحب انھیں سنی جاننا سخت جہالت و حماقت ہے تو استغفر اللہ یہ کہ ضلالت میں اُن سے ہزار قدم آگے کیونکر ممکن کہ بدعتی گمراہ نہ ٹھہریں، بالجملہ ان کا مبتدع ہونا اظہر من الشمس وابین من الامس ہے اور اہل بدعت کی نسبت تمام کتبِ فقہ ومتون و شروح وفتاویٰ میں صریح تصریحیں موجود کہ ان کے پیچھے نماز مکروہ، اور تحقیق یہ ہے کہ یہ کراہت

1 حاشیہ الطحطاوی علی الدر المختار کتاب الذبائح مطبوعہ دار المعرفہ بیروت ۳/ ۱۵۳ Page 671 of 736

Fatawa Razawiyya - Volume 6

It is tahrimi, i.e., close to haram, attracting sin, and necessitates repeating the prayer.

[Arabic Text]: As we have established upon the throne of investigation by the power of our Lord, the Master of Success, in our independent, elegant treatise, and we have answered therein whatever appears contrary to this investigative opinion with the acceptance of the people of scrutiny. Let us mention a part of the discourse for further verification. (t) [Urdu Text]: As we have thoroughly investigated this in our independent and elegant composition by the grace and mercy of our Lord, and have answered the doubts against this researched opinion with great insight. For further verification, we present some discussion here. (t)

Scholars state that prayer is one of the greatest symbols of religion, and the humiliation of an innovator (mubtadi') is legally obligatory, while honoring and magnifying him in the imamate is completely contrary to the purpose of Shari'ah. Tabarani in Al-Mu'jam al-Kabir reported continuously from Abdullah bin Busr (may Allah be pleased with him), and Bayhaqi in Shu'ab al-Iman reported as a mursal tradition from Ibrahim bin Maysarah al-Makki, that the Master of the Universe (peace and blessings of Allah be upon him) said:

[Arabic Text]: Whoever honors an innovator has indeed assisted in the destruction of Islam. [Urdu Text]: Whoever honors an innovator has helped in the demolition of the religion of Islam.

I say: And with Allah is success. Firstly, it is evident that the Imam is the leader and the follower is his adherent. The Master of the Universe (peace and blessings of Allah be upon him) says:

[Arabic Text]: The Imam is only appointed to be followed. - Narrated by the Imams Ahmad, al-Bukhari, Muslim, and others from the Mother of the Believers, al-Siddiqah [Aisha], and from Anas bin Malik (may Allah be pleased with them both). [Urdu Text]: The Imam is appointed only so that he may be followed. It has been narrated by the noble Imams Ahmad, Bukhari, Muslim, etc., from the Mother of the Believers Aisha al-Siddiqah and Anas bin Malik (may Allah be pleased with them both).

And in the Hadith, the Master of the Universe (peace and blessings of Allah be upon him) says:

[Arabic Text]: When a transgressor (fasiq) is praised, the Lord becomes angry, and the Throne shakes because of that. - Narrated by Imam Abu Bakr bin Abi al-Dunya [Urdu Text]: When a transgressor is praised, the Lord (Almighty and Exalted) becomes angry, and due to that, the Divine Throne...

[Arabic Text]: ...in Dhamm al-Ghibah from Anas, the servant of the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him), and Ibn 'Adi in al-Kamil from Abi... [Urdu Text]: ...shakes. It was narrated by Imam Abu Bakr bin Abi al-Dunya in the book 'Dhamm al-Ghibah' from Hazrat Anas, the servant of the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him).

Footnotes: 1. Shu'ab al-Iman, Chapter 26, Section on Avoiding Transgressors and Innovators, published by Dar al-Kutub al-Ilmiyyah, Beirut, 7/61 2. Sahih al-Bukhari, Book of Adhan, Chapter: The Imam is only appointed to be followed, published by Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/95, 92 3. Al-Kamil by Ibn 'Adi, biography of S. ibn Abdullah al-Raqqi, published by Dar al-Fikr, Beirut, 3/1307 and 5/191; Shu'ab al-Iman, published in Beirut, 4/230; Tarikh Ibn Asakir, published in Beirut, 6/40; Tarikh Baghdad, published in Beirut, 7/298 and 8/428.

फ़तावा रज़विया - जिल्द 6

तहरीमी है यानी हराम के करीब, गुनाह लाने वाली, नमाज़ को दोहराने का कारण,

[अरबी पाठ]: जैसा कि हमने अपने प्रभु, सफलता के स्वामी की शक्ति से अपने स्वतंत्र, सुरुचिपूर्ण शोध ग्रन्थ में जांच के सिंहासन पर इसे स्थापित किया है, और हमने सूक्ष्मदर्शी लोगों की स्वीकृति के साथ इस खोजी राय के विपरीत जो कुछ भी दिखाई देता है उसका उत्तर दिया है। और अधिक पुष्टि के लिए चर्चा का एक भाग यहाँ उल्लेख करते हैं। (त) [उर्दू अनुवाद]: जैसा कि हमने इस पर अपनी स्वतंत्र और सुंदर कृति में अपने रब के फ़ज़्ल और करम से खूब शोध की है और इस शोधपूर्ण राय के खिलाफ संदेहों का जवाब बड़ी सूक्ष्म नज़र से दिया है, और अधिक पुष्टि के लिए कुछ चर्चा यहाँ कर देते हैं। (त)

विद्वान कहते हैं कि नमाज़ दीन के महान प्रतीकों में से एक है, और बिदअती (नवाचारी) का अपमान शरीअत की दृष्टि से अनिवार्य है, और इमामत में उसका सम्मान और गौरव शरीअत के उद्देश्य के बिल्कुल विपरीत है। तबरानी ने 'अल-मुअजम अल-कबीर' में अब्दुल्लाह बिन बुस्र (रज़ियल्लाहु अन्हु) से और बैहक़ी ने 'शुआब अल-ईमान' में इब्राहीम बिन मयसरह अल-मक्की से मुरसलन रिवायत की है कि हुज़ूर सिय्यद-ए-आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

[अरबी पाठ]: जिसने किसी बिदअती का सम्मान किया, उसने वास्तव में इस्लाम के विनाश में सहायता की। [उर्दू अनुवाद]: जो किसी बिदअती का सम्मान करे उसने दीन-ए-इस्लाम को गिराने में मदद की।

मैं कहता हूँ: और अल्लाह ही तौफ़ीक़ देने वाला है। पहली बात तो यह ज़ाहिर है कि इमाम सरदार होता है और मुक़्तदी उसका अनुयायी। हुज़ूर सिय्यद-ए-आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

[अरबी पाठ]: इमाम केवल इसलिए नियुक्त किया गया है कि उसका अनुसरण किया जाए। - इसे अइम्मा किराम अहमद, बुखारी, मुस्लिम और अन्य लोगों ने उम्मुल मोमिनीन सिद्दीका [आयशा] और अनस बिन मालिक (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत किया है। [उर्दू अनुवाद]: इमाम तो इसी लिए नियुक्त किया गया है कि उसकी पैरवी की जाए। इसे अइम्मा किराम अहमद, बुखारी, मुस्लिम आदि ने उम्मुल मोमिनीन आयशा सिद्दीका और अनस बिन मालिक (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत किया है।

और हदीस में है, हुज़ूर सिय्यद-ए-आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

[अरबी पाठ]: जब फ़ासिक़ (दुराचारी) की प्रशंसा की जाती है, तो प्रभु क्रोधित होता है और उसके कारण अर्श हिल जाता है। - इसे इमाम अबू बकर बिन अबी अल-दुनिया ने रिवायत किया। [उर्दू अनुवाद]: जब फ़ासिक़ की प्रशंसा की जाती है, तो रब तबारक व तआला क्रोध फ़रमाता है और उसके कारण अर्श-ए-इलाही...

[अरबी पाठ]: ...किताब 'ज़म अल-गीबत' में अनस, रसूल अल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के सेवक से, और इब्न अदी ने 'अल-कामिल' में अबी से... [उर्दू अनुवाद]: ...हिल जाता है। इसे इमाम अबू बकर बिन अबी अल-दुनिया ने किताब 'ज़म अल-गीबत' में हज़रत अनस, खादिम-ए-रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से रिवायत किया है।

पाद-टिप्पणियाँ: 1. शुआब अल-ईमान, अध्याय 26, अनुभाग: फ़ासिक़ों और बिदअतियों से दूर रहना, मुद्रित: दार अल-कुतुब अल-इल्मिया, बेरूत, 7/61 2. सहीह अल-बुखारी, किताबुल अज़ान, अध्याय: इमाम केवल अनुसरण के लिए बनाया गया है, मुद्रित: क़दीमी कुतुब खाना, कराची, 1/95, 92 3. अल-कामिल इब्न अदी, स. इब्न अब्दुल्लाह अल-रक़्क़ी की जीवनी, मुद्रित: दार अल-फ़िक्र, बेरूत, 3/1307 और 5/191; शुआब अल-ईमान, मुद्रित: बेरूत, 4/230; तारीख इब्न असाकिर, मुद्रित: बेरूत, 6/40; तारीख बगदाद, मुद्रित: बेरूत, 7/298 और 8/428।

تحریمی ہے یعنی حرام کی مقارب، گناہ کی جالب، اعادہ نماز کی موجب،

کما اثبتنا علیه عرش التحقیق بحول ربنا ولی التوفیق فی تحریر لنا مستقل انیق واجبنا فیه عما یتراءی من خلاف هذا القول التحقیقي بقبول اهل التدقیق ولنذکر طرفاً من الکلام افادة لمزیداً لتوثیق- جیسا کہ اس پر ہم نے اپنی مستقل تصنیف لطیف میں اپنے رب کے فضل و کرم سے خوب تحقیق کی ہے اور اس محقق قول کے خلاف شبہات کا جواب بڑی دقیق نظر سے دیا ہے، مزید توثیق کے لئے کچھ گفتگو یہاں کر دیتے ہیں۔ (ت)

علماء فرماتے ہیں نماز اعظم شعائر دین ہے اور مبتدع کی توہین شرعاً واجب، اور امامت میں اس کی توقیر و تعظیم مقصود شرع سے بالکل مجانب۔ طبرانی ۳۲ معجم کبیر میں عبداللہ بن بسر رضی اللہ تعالٰی عنہ سے موصولاً اور بیہقی ۳۳ شعب الایمان میں ابراہیم بن میسرہ مکی سے مرسلاروای حضور سید عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں۔

من وقر صاحب بدعة فقد اعان علی هدم الاسلام - جو کسی بدعتی کی توقیر کرے اس نے دین اسلام کے ڈھانے پر مدد کی۔

اقول: وباللہ التوفیق اولاً ظاہر ہے کہ امام سردار ہوتا ہے اور مقتدی اس کے پیرو۔ حضور سید عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

انما جعل الامام لیؤتم به - رواه الائمة واحمد والبخاری ومسلم وغیرهم عن ام المؤمنین الصدیقة وعن انس بن مالك رضی اللہ تعالٰی عنهما۔ امام تو اسی لئے مقرر ہوا ہے کہ اس کی پیروی کی جائے۔ اس

کو ائمہ کرام احمد، بخاری، مسلم وغیرہ نے ام المومنین عائشہ صدیقہ اور انس بن مالک رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے روایت کیا ہے۔

اور حدیث میں ہے حضور سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

اذامُدِحَ الفاسق غضب الرب واهتز لذلك العرش - رواہ الامام ابوبکر ابی الدنیا جب فاسق کی مدح کی جاتی ہے رب تبارک و تعالیٰ غضب فرماتا ہے اور اس کے سبب عرش الہی

فی ذم الغیبة عن انس خادم رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم وابن عدی فی الکامل عن ابی ہل جاتا ہے۔ اسے امام ابو بکر بن ابی الدنیا نے کتاب ذم الغیبت میں حضرت انس خادم رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم

1 شعب الایمان باب ۲۶ فصل فی مجانبة الفسقة والمبتدعة مطبوعہ دار الکتب العلمیہ بیروت ۷ / ۶۱

2 صحیح البخاری کتاب الاذان باب انما جعل الامام لیؤتم بہ مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱ / ۹۲، ۹۵ 3 الکامل لابن عدی ترجمہ س ابن عبداللہ الرقی مطبوعہ دارالفکر بیروت ۳ / ۱۳۰۷ اور ۵ / ۱۹۱، شعب الایمان مطبوعہ بیروت ۴ / ۲۳۰، تاریخ ابن عساکر مطبوعہ بیروت ۶ / ۴۰، تاریخ بغداد مطبوعہ بیروت ۷ / ۲۹۸ اور ۸ / ۴۲۸

Fatawa-e-Razawiyyah Volume Six ...from Barirah (may Allah be pleased with her). And Ibn 'Adi in Al-Kamil narrated from Hazrat Abu Hurairah (may Allah be pleased with him).

And Imam Abdul Azim Mundhiri Zaki al-Din (may Allah's mercy be upon him until the Day of Judgment) wrote in the book At-Targhib wat-Tarhib under a chapter regarding this: that a transgressor (fasiq) or an innovator (mubtadi') should not be referred to with honorific titles such as 'Sardar' (leader/master), etc.

Where he stated: 'The prohibition of saying to a transgressor or an innovator "O my master" or similar words that signify honor.' [1] | Their words are: It is forbidden to call a transgressor or an innovator by 'Ya Sayyid' (O Master) or other respectful words.

Then he quoted the Hadith of Buraidah (may Allah be pleased with him) that the Master of the World (peace and blessings be upon him) says: 'Do not say to a hypocrite "O Master" (Ya Sayyid), for if he were a master, you would have certainly displeased your Lord, Almighty and Majestic.' [2] Narrated by Abu Dawud and An-Nasa'i with an authentic chain. [3] | Do not call a hypocrite 'O Master', for if he is your leader, then surely you have displeased your Lord, Almighty and Majestic. Abu Dawud and An-Nasa'i have narrated this with an authentic chain.

And the words of Hakim are: 'When a man says to a hypocrite "O Master", he has certainly angered his Lord, Almighty and Majestic.' [4] I say: And likewise, Al-Bayhaqi has extracted it in Shu'ab al-Iman. | When any person calls a hypocrite 'Sardar', then surely he has brought his Lord, Almighty and Majestic, to anger. I say, and similarly Al-Bayhaqi has narrated it in Shu'ab al-Iman.

Subhan Allah! When verbal praise of a transgressor and innovator, and addressing them as 'Sardar' only in a specific context...

---

1 At-Targhib wat-Tarhib, from the saying regarding a transgressor... published by Mustafa Al-Babi, Egypt, 3/579 2 At-Targhib wat-Tarhib, from the saying regarding a transgressor... published by Mustafa Al-Babi, Egypt, 3/579 3 At-Targhib wat-Tarhib, from the saying regarding a transgressor... published by Mustafa Al-Babi, Egypt, 3/579 4 At-Targhib wat-Tarhib, from the saying regarding a transgressor... published by Mustafa Al-Babi, Egypt, 3/579 Page 673 of 736

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी ...बरीरा (रज़ियल्लाहु अन्हा) से। और इब्ने अदी ने 'अल-कामिल' में हज़रत अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है।

और इमाम अब्दुल अज़ीम मुन्दिरी ज़की-उद-दीन (रहमतुल्लाह अलैह) ने किताब 'अत-तर्गीब वत-तरहीब' में एक अध्याय में इस बारे में लिखा है कि फासिक (पापी) या बिदअती (नवाचारी) को 'सरदार' वगैरह जैसे सम्मानजनक शब्दों से याद न किया जाए,

जहाँ कहा: 'एक फासिक या बिदअती के लिए "या सय्यदी" या इसी तरह के सम्मान व्यक्त करने वाले शब्दों का निषेध है।' [1] | उनके शब्द ये हैं कि फासिक या बिदअती को 'या सय्यद' या अन्य सम्मानजनक शब्दों से पुकारना मना है।

फिर इसमें हज़रत बुरैदा (रज़ियल्लाहु अन्हु) की हदीस नक़ल की कि हुज़ूर सैयदे आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं: 'मुनाफ़िक़ को "या सय्यद" (ऐ सरदार) मत कहो, क्योंकि अगर वह सरदार हुआ, तो यक़ीनन तुमने अपने रब अज्ज़ वजल्ल को नाराज़ किया।' [2] इसे अबू दाऊद और नसाई ने सहीह सनद के साथ रिवायत किया है। [3] | मुनाफ़िक़ को 'ऐ सरदार' कहकर न पुकारो कि अगर वह तुम्हारा सरदार हुआ तो बेशक तुमने अपने रब अज्ज़ वजल्ल को नाराज़ किया, इसको अबू दाऊद और नसाई ने सहीह सनद के साथ रिवायत किया है।

और हाकिम के शब्द ये हैं: 'जब कोई व्यक्ति मुनाफ़िक़ को "या सय्यद" कहता है, तो उसने यक़ीनन अपने रब अज्ज़ वजल्ल को ग़ुस्से में ला दिया।' [4] मैं कहता हूँ: और इसी तरह इसे बेहाक़ी ने 'शुअ़बुल ईमान' में रिवायत किया है। | जब कोई शख़्स मुनाफ़िक़ को सरदार कह कर पुकारे तो बेशक वो अपने रब अज्ज़ व जल्ल को ग़ज़ब में लाया मैं कहता हूँ और यूँ ही इसको बेहक़ी ने शुअ़बुल ईमान में नक़ल किया है।

सुब्हान अल्लाह! जब फासिक और बिदअती की ज़बानी तारीफ और उन्हें सिर्फ खिताब के दौरान 'सरदार' शब्द से...

---

1 अत-तर्गीब वत-तरहीब, फासिक के बारे में कथन... मुस्तफ़ा अल-बाबी प्रेस, मिस्र, 3/579 2 अत-तर्गीब वत-तरहीब, फासिक के बारे में कथन... मुस्तफ़ा अल-बाबी प्रेस, मिस्र, 3/579 3 अत-तर्गीब वत-तरहीब, फासिक के बारे में कथन... मुस्तफ़ा अल-बाबी प्रेस, मिस्र, 3/579 4 अत-तर्गीब वत-तरहीब, फासिक के बारे में कथन... मुस्तफ़ा अल-बाबी प्रेस, मिस्र, 3/579 पेज 673 / 736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم بریرہ رضی اللہ تعالٰی عنہما۔ وسلم سے اور ابن عدی نے الکامل میں حضرت ابو ہریرہ رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا ہے۔

اور امام عبدالعظیم منذری زکی الدین علیہ الرحمۃ الی یوم الدین نے کتاب الترغیب والترہیب میں ایک ترتیب میں ایک بارے میں لکھی کہ فاسق یا بدعتی کو سردار وغیرہ کلماتِ تعظیم سے یاد نہ کیا جائے۔

حیث قال الترہیب من قولہ لفاسق او مبتدع یا سیدی اونحوہا من الکلمات الدالۃ علی التعظیم ۱۔ | ان کے الفاظ یہ ہیں کہ فاسق یا بدعتی کو یا سید وغیرہ تعظیم کے الفاظ سے پکارنا منع ہے۔

پھر اس میں حدیث بریدہ رضی اللہ تعالٰی عنہ نقل کی کہ حضور سید عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں: لا تقولوا للمنافق یاسید فانہ ان یکن سیدا فقد اسخطتم ربکم عزوجل ۲- رواہ ابوداؤد و النسائی باسناد صحیح ۳۔ | منافق کو 'اے سردار' کہہ کر نہ پکارو کہ اگر وہ تمہارا سردار ہوا تو بیشک تم نے اپنے رب عزوجل کو ناراض کیا، اسکو ابو داؤد اور نسائی نے صحیح سند کے ساتھ روایت کیا ہے۔

اور حاکم کے لفظ یہ ہیں: اذا قال الرجل للمنافق یاسید فقد اغضب ربہ عزوجل ۴- قلت وھکذا اخرجہ البیھقی فی شعب الایمان۔ | جب کوئی شخص منافق کو سردار کہہ کر پکارے تو بیشک وہ اپنے رب عزوجل کو غضب میں لایا میں کہتا ہوں اور یونہی اس کو بیہقی نے شعب الایمان میں نقل کیا ہے۔

سبحن اللہ! جب فاسق و بدعتی کی زبانی تعریف اور انہیں صرف محل خطاب میں بلفظ سردار

---

۱ الترغیب والترہیب من قولہ لفاسق الخ مطبوعہ مصطفٰی البابی مصر ۳/۵۷۹ ۲ الترغیب والترہیب من قولہ لفاسق الخ مطبوعہ مصطفٰی البابی مصر ۳/۵۷۹ ۳ الترغیب والترہیب من قولہ لفاسق الخ

مطبوعہ مصطفیٰ البابی مصر ۵۷۹/۳ ۴ الترغیب والترہیب من قولہ لفاسق الخ مطبوعہ مصطفیٰ

Calling [out to someone other than Allah] is a cause of divine wrath; so making such a person a true imam and leader in a state of choice, and becoming their follower and disciple, God forbid, how would it not be a cause of wrath? And undoubtedly, something that causes the wrath of the Merciful, the Mighty and Sublime, its lowest degree is prohibitive dislike (karahat al-tahrim).

Secondly, Abu Nu'aym (39) in 'Hilyah' relates from Anas bin Malik (may Allah be pleased with him) that the Master of the Universe (peace and blessings of Allah be upon him) says:

The people of innovation are the worst of creation and creatures. (1)	Innovators are worse than the entire world.

1. In a Hadith of Bayhaqi, the Master of the Universe (peace and blessings of Allah be upon him) says:

Allah does not accept from a follower of innovation prayer, nor fasting, nor charity, nor pilgrimage, nor Umrah, nor jihad, nor mandatory deeds, nor voluntary deeds. He exits from Islam just as a hair is pulled out of dough. (2)	Allah accepts neither the prayer of a person of bad religion, nor fasting, nor zakat, nor Hajj, nor Jihad, nor obligatory, nor supererogatory acts. A person of bad religion leaves Islam just like a hair from dough.

1. Imam Darqutni and Abu Hatim Muhammad bin Abdul Wahid Khuza'i in their Hadith compilation relate from Abu Umama al-Bahili (may Allah be pleased with him) that the Master of the Universe (peace and blessings of Allah be upon him) says:

The companions of innovation are the dogs of the people of hellfire. (3)	The people of innovation are the dogs of the hell-dwellers.

And besides these, many Hadiths have been narrated regarding the severe condemnation of those of bad religion. Furthermore, it is evident that prayer is a place of communion and secrets, and is honored and distinguished among all righteous deeds. Can a pure faith tolerate that in such a place, such wicked people be made one's leader and chief without excuse, regarding whom 'dogs of hell' has been narrated? Sound reason says that if the people of innovation and desires had

appeared during the time of the Holy Master of the Universe (peace and blessings of Allah be upon him), then behind them...

---

1. Hilyat al-Awliya, narrated from Abu Sa'id al-Mawsili, published by Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, 8/289.
2. Kanz al-Ummal, chapter on innovations, published by Mu'assasat al-Risalah, Beirut, 1/230; Al-Targhib wa al-Tarhib regarding leaving the Sunnah etc., published by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/86; Sunan Ibn Majah, chapter on innovations and arguments, published by Aftab Alam Press, Lahore, p. 6.
3. Kanz al-Ummal, chapter on innovations, published by Mu'assasat al-Risalah, Beirut, 1/218; Al-Jami' al-Saghir with Fayd al-Qadir, Hadith 1097, published by Dar al-Ma'rifah, Beirut, 1/528.

पुकारना ईश्वरीय क्रोध का कारण होता है; तो उसे अपनी इच्छा से वास्तव में इमाम और सरदार बनाना और स्वयं उसका अनुयायी और शिष्य बनना, ख़ुदा न करे, क्रोध का कारण क्यों नहीं होगा? और निस्संदेह, जो बात रहमान (अल्लाह) के क्रोध का कारण हो, उसका निम्नतम स्तर 'कराहत-ए-तहरीम' (निषेध के करीब नापसंदगी) है।

दूसरे, अबू नुऐम (39) ने 'हिलिया' में अनस बिन मालिक (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत की है कि हुज़ूर सैय्यद-ए-आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

बिदअती लोग तमाम सृष्टि और प्राणियों में सबसे बुरे हैं। (1) बिदअती लोग पूरी दुनिया से बदतर हैं।

1. बैहक़ी की एक हदीस में है, हुज़ूर सैय्यद-ए-आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

अल्लाह किसी बिदअती की न नमाज़ स्वीकार करता है, न रोज़ा, न सदक़ा, न हज, न उमराह, न जिहाद, न फ़र्ज़ और न ही नफ़्ल। वह इस्लाम से ऐसे निकल जाता है जैसे गूँथे हुए आटे से बाल निकल जाता है। (2)

अल्लाह किसी बद-मज़हब की न नमाज़ क़बूल करता है, न रोज़ा, न ज़कात, न हज, न जिहाद, न फ़र्ज़, न नफ़्ल। बद-मज़हब इस्लाम से यूँ निकल जाता है जैसे आटे से बाल।

1. इमाम दारकुतनी और अबू हातिम मुहम्मद बिन अब्दुल वाहिद खुज़ाई अपने हदीस संग्रह में अबू उमामा बाहिली (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत करते हैं कि हुज़ूर सैय्यद-ए-आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

बिदअत वाले जहन्नमियों के कुत्ते हैं। (3) बिदअती लोग जहन्नमियों के कुत्ते हैं।
और इनके अलावा बद-मज़हबों की कड़ी निंदा में बहुत सी हदीसें आई हैं। और फिर यह ज़ाहिर है कि नमाज़ मुनाजात (ईश्वर से बात करने) और रहस्यों का स्थान है और सभी नेक कामों में सम्मानित और विशिष्ट है। क्या ईमान की शुद्धता यह गवारा कर सकती है कि ऐसी जगह पर बिना किसी मजबूरी के ऐसे दुष्टों को अपना पेशवा और सरदार बनाया जाए जिनके लिए 'जहन्नम के कुत्ते' शब्द आए हैं? स्वस्थ बुद्धि तो यही कहती है कि अगर बिदअती और मनमानी करने वाले हुज़ूर अक़दस सैय्यद-ए-आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के ज़माने में प्रकट होते, तो उनके पीछे...

1. हिल्यतुल औलिया, अबू सईद मूसली से रिवायत, दारुल किताब अल-अरबिया, बेरूत, 8/289 द्वारा प्रकाशित।
2. कंज़ुल उम्माल, बिदअत का अध्याय, मुअस्सासातुर् रिसालाह, बेरूत, 1/230 द्वारा प्रकाशित; अत-तरग़ीब वत-तरहीब सुन्नत छोड़ने के बारे में आदि, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 1/86 द्वारा प्रकाशित; सुनन इब्न माजह, बिदअत और विवाद का अध्याय, आफ़ताब आलम प्रेस, लाहौर, पृष्ठ 6 द्वारा प्रकाशित।
3. कंज़ुल उम्माल, बिदअत का अध्याय, मुअस्सासातुर् रिसालाह, बेरूत, 1/218 द्वारा प्रकाशित; अल-जामिउल सग़ीर मय फ़ैज़ुल क़दीर, हदीस 1097, दारुल मारिफ़ा, बेरूत, 1/528 द्वारा प्रकाशित।

ندا کرنا موجبِ غضبِ الٰہی ہوتا ہے تو اُسے بحالتِ اختیار حقیقۃً امام و سردار بنانا اور آپ اُس کے تابع و پیرو بننا معاذ اللہ کیونکر موجبِ غضب نہ ہوگا اور بے شک جو بات باعثِ غضبِ رحمن عزوجل ہو اُس کا ادنیٰ درجہ کراہتِ تحریم ہے۔

ثانیاً ابو نعیم ۳۹ حلیہ میں انس بن مالک رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے راوی حضور سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

اھل البدعۃ شر الخلق والخلیقۃ 1 بدعتی لوگ تمام جہان سے بدتر ہیں۔

۴۰ بیہقی کی حدیث میں ہے حضور سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

لا یقبل اللہ لصاحب بدعۃ صلوۃ ولا صوما ولا صدقۃ ولا حجا ولا عمرۃ ولا جھادا ولا صرفا ولا عدلا یخرج من الاسلام کما تخرج الشعرۃ من العجین 2۔

اللہ کسی بد مذہب کی نماز قبول کرے نہ روزہ نہ زکوۃ نہ حج نہ جہاد نہ فرض نہ نفل، بد مذہب اسلام سے یوں نکل جاتا ہے جیسے آٹے سے بال۔

۴۱ امام دار قطنی وابو حاتم محمد بن عبد الواحد خزاعی اپنے جزء حدیثی میں ابو امامہ باہلی رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے راوی حضور سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

اصحاب البدع کلاب اھل النار 3۔ اہل بدعت دوزخیوں کے کتے ہیں۔

اور ان کے سوا بہت حدیثیں بد مذہبوں کی مذمتِ شدیدہ میں وارد ہوئیں اور پھر ظاہر کہ نماز مقامِ مناجات و راز اور تمام اعمالِ صالحہ میں معزز و ممتاز ہے کیا نظافتِ ایمانی گوارا کر سکتی ہے

کہ ایسی جگہ ایسے اشرار کو بلا عذر اپنا پیشوا و سردار کیا جائے جن کے حق میں سگانِ جہنم وارد ہوا عقلِ سلیم تو یہی کہتی ہے کہ اگر اہل بدعت واہوا زمانہ حضور اقدس سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم میں ظاہر ہوتے اُن کے پیچھے

---

1 حلیۃ الاولیاء، مروی از ابو سعید موصلی، مطبوعہ دار الکتاب العربیہ بیروت ۸ / ۲۸۹ 2 کنز العمال فصل فی البدع مطبوعہ مؤسسۃ الرسالۃ بیروت ۱ / ۲۳۰، الترغیب والترہیب من ترک السنۃ الخ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱ / ۸۶، سنن ابن ماجہ باب البدع والجدل مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور ص ۶ 3 کنز العمال فصل فی البدع مطبوعہ مؤسسۃ الرسالۃ بیروت ۱ / ۲۱۸، الجامع الصغیر مع فیض القدیر حدیث ۱۰۹۷ مطبوعہ دار المعرفۃ بیروت ۱ / ۵۲۸

Fatawa-e-Razvia, Volume 6

There is no prohibition against the prayer, nor is it merely against what is preferable; if you perform it, there is no harm.

Thirdly, an innovator is hated by Allah, and hatred and distance from those hated by Allah is mandatory. Therefore, the Holy Quran states:

“And if Satan causes you to forget, then after the remembrance, do not sit with the wrongdoing people.” [1] (Quran 6:68)

And for this reason, the prohibition of proximity and intermingling with false sects has appeared in the Hadiths. Ahmad, Abu Dawud, and Al-Hakim narrated from the Leader of the Believers, Umar Farooq the Great (may Allah be pleased with him), that the Master of the Universe (peace and blessings of Allah be upon him) said:

“Do not sit with the Qadariyah nor initiate conversation with them.” [2]

Uqayli and Ibn Hibban narrated from Anas (may Allah be pleased with him) that the Master of the Universe (peace and blessings of Allah be upon him) said:

“Indeed, Allah chose me and chose for me companions and in-laws. Soon a people will come who will revile them and belittle them. Do not sit with them, do not drink with them, do not eat with them, and do not marry with them.” [3]

How could the Shariah allow making those imams whose company is disliked by Allah and His Messenger (Exalted is He and peace and blessings of Allah be upon him)? “What is Makruh Tanzihi (slightly disliked) is permissible and legislated, combining with permissibility, as specified by the noble scholars. We have mentioned its investigation in our treatise ‘Jumal Mujliyah: That Makruh Tanzihi is not a Sin.’”

Makruh Tanzihi is legislated and includes permissibility, as the noble scholars have clarified. We have researched this in our treatise - “Jumal Mujliyah: That Makruh Tanzihi is not a Sin.” (T)

Rather, in this Hadith, the narration of Ibn Hibban is in these words:

---

[1] Al-Quran 6/68 [2] Sunan Abu Dawud, Chapter on the Children of Polytheists, printed by Aftab-e-Alam Press Lahore, 2/293; Musnad Ahmad bin Hanbal, from Musnad Umar Farooq (may Allah be pleased with him), printed by Dar al-Fikr Beirut, 1/30; Al-Mustadrak 'ala al-Sahihayn, End of the Book of Faith, printed by Dar al-Fikr Beirut,

1/85. [3] Kitab al-Du'afa al-Kabir (123), Ahmad bin Imran al-Akhnasi, printed by Dar al-Kutub al-Ilmiyah Beirut, 1/126. Page 675 of 736

फ़तावा-ए-रज़विया, जिल्द 6

नमाज़ से कोई मनाही नहीं है और न ही यह केवल श्रेष्ठता के विरुद्ध है; यदि आप इसे पढ़ते हैं, तो कोई हर्ज नहीं है।

तीसरा, एक बिदअती (नवाचारी) अल्लाह द्वारा घृणित है, और जिसे अल्लाह घृणा करता है उससे नफ़रत और दूरी रखना अनिवार्य है। इसलिए, पवित्र कुरान कहता है:

"और यदि शैतान तुम्हें भुला दे, तो याद आने के बाद उन ज़ालिम (अन्यायी) लोगों के साथ न बैठो।" [1] (कुरान 6:68)

और इसी कारण से, हदीसों में ग़लत संप्रदायों के साथ निकटता और मेलजोल की मनाही आई है। अहमद, अबू दाऊद और हाकिम ने अमीरुल मोमिनीन उमर फ़ारूक आज़म (रज़िअल्लाहु अन्हु) से रिवायत की है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फरमाया:

"क़दरियों के पास मत बैठो और न ही उनसे बातचीत शुरू करो।" [2]

उकैली और इब्न हिब्बान ने अनस (रज़िअल्लाहु अन्हु) से रिवायत की है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फरमाया:

"बेशक अल्लाह ने मुझे चुना और मेरे लिए साथियों और ससुराल वालों को चुना। जल्द ही ऐसे लोग आएंगे जो उन्हें बुरा कहेंगे और उनकी शान घटाएंगे। तुम उनके पास न बैठना, न उनके साथ पानी पीना, न खाना खाना और न ही उनके साथ शादी-ब्याह करना।" [3]

जिनके पास बैठना खुदा और रसूल (जल्ल जलालाहु व सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) को नापसंद हो, उन्हें इमाम बनाना शरीअत कैसे गवारा करेगी? "मकरूह तन्ज़ीही जायज़ और शरीअत संगत है, जो मुबाह (अनुमति) के साथ जुड़ता है, जैसा कि विद्वानों ने स्पष्ट किया है। हमने इसके बारे में अपने शोध पत्र 'जुमल मुजलियाह: कि मकरूह तन्ज़ीही गुनाह नहीं है' में चर्चा की है।"

मकरूह तन्ज़ीही शरीअत सम्मत है और इसमें अनुमति शामिल है, जैसा कि विद्वानों ने स्पष्ट किया है। हमने इसकी जांच अपने शोध पत्र - "जुमल मुजलियाह: कि मकरूह तन्ज़ीही गुनाह नहीं है" में की है (त)

बल्कि, इस हदीस में इब्न हिब्बान की रिवायत इन शब्दों में है:

[1] अल-कुरान 6/68 [2] सुनन अबू दाऊद, बाब ज़रारी अल-मुशरिकीन, आफताब-ए-आलम प्रेस लाहौर, 2/293; मसनद अहमद बिन हंबल, मसनद उमर फ़ारूक (रज़िअल्लाहु अन्हु) से, दार अल-फ़िक्र बेरुत, 1/30; अल-मुस्तदरक अलस सहीहैन, किताबुल ईमान के अंत में, दार अल-फ़िक्र बेरुत, 1/85। [3] किताब अल-दुअफ़ा अल-कबीर (123), अहमद बिन इमरान अल-अखनासी, दार अल-कुतुब अल-इल्मिया बेरुत, 1/126। पृष्ठ 736 का 675

فتاوٰی رضویہ، جلد ششم

نماز سے ممانعت آتی نہ یہ کہ صرف خلافِ اولٰی ہے پڑھ لو تو کچھ مضائقہ نہیں۔

ثالثاً بدعتی مبغوضِ خدا ہے اور مبغوضِ خدا سے نفرت و دوری واجب، ولہذا قرآن مجید میں ارشاد فرمایا:

وَ اِمَّا یُنْسِیَنَّكَ الشَّیْطٰنُ فَلَا تَقْعُدْ بَعْدَ الذِّكْرٰی مَعَ الْقَوْمِ الظّٰلِمِیْنَ ۱ اور اگر شیطان تجھے بھلا دے تو یاد آئے پر ظالموں کے پاس نہ بیٹھ۔

اور اسی لئے احادیث میں فرقِ باطلہ سے قرب و اختلاط کا منع آیا احمد و ۲، ۳ ابوداؤد و حاکم حضرت امیر المومنین عمر فاروقِ اعظم رضی اللہ تعالٰی عنہ سے راوی حضور سیدِ عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

لا تجالسوا اھل القدر ولا تفاتحوھم ۲۔ قدریوں کے پاس نہ بیٹھو نہ ان سے سلام کلام کی ابتدا کرو۔

عقیلی و ۳ ابن حبان انس رضی اللہ تعالٰی عنہ سے راوی حضور سرورِ عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

ان اللہ اختارنی واختارلی اصحاباً واصھاراً وسیاتی قوم یسبونہم وینتقصونہم فلا تجالسوہم ولا تشاربوہم ولا تؤاکلوھم ولا تناکحوھم ۳۔ بیشک اللہ تعالٰی نے مجھے پسند فرمایا اور میرے لئے اصحاب و اصہار چن لئے اور قریب ایک قوم آئے گی کہ انہیں برا کہے گی اور ان کی شان گھٹائے گی تم ان کے پاس نہ بیٹھنا نہ ان کے ساتھ پانی پینا نہ کھانا کھانا نہ شادی بیاہ کرنا۔

جن کے پاس بیٹھنا خدا اور رسول کو ناپسند ہو جل جلالہ و صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم انھیں امام بنانا شرع کیونکر گوار فرمائے گی والمکروہ تنزیھاً سائغ مشروع یجامع الاباحۃ کما نص علیہ العلماء الکرام و ذکرنا تحقیقہ في رسالتنا "جمل مجلیۃ ان المکروہ تنزیھا لیس بمعصیۃ"۔

مکروہ تنزیہی مشروع اور اباحت کو جامع ہے جیسا کہ علمائے کرام نے اس پر تصریح کی ہے۔ اس کی تحقیق ہم نے اپنے رسالہ - "جمل مجلیۃ ان المکروہ تنزیھا لیس بمعصیۃ" میں کی ہے (ت)

بلکہ اس حدیث میں روایت ابنِ حبان ان لفظوں سے ہے:

---

[1] القرآن ۶ / ۶۸ [2] سنن ابوداؤد باب ذراری المشرکین مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور ۲ / ۲۹۳، مسند احمد بن حنبل از مسند عمر فاروق رضی اللہ تعالیٰ عنہ مطبوعہ دار الفکر بیروت ۱ / ۳۰، المستدرک علی الصحیحین آخر کتاب الایمان مطبوعہ دار الفکر بیروت ۱ / ۸۵ [3] کتاب الضعفاء الکبیر (۱۲۳) احمد بن عمران الاخنسی مطبوعہ دار الکتب العلمیہ بیروت ۱ / ۱۲۶ صفحہ 675 از 736

Fatawa-e-Razvia, Volume 6

"Do not eat with them, nor drink with them, nor pray for them (funeral prayer), nor pray with them."[1] That is, the Holy Prophet (may Allah's peace and blessings be upon him) said: Neither eat with them, nor drink water with them, nor offer their funeral prayers, nor pray alongside them.

Fourthly, Ibn Majah narrates from Hazrat Jabir bin Abdullah (may Allah be pleased with him) that the Master of the World (may Allah's peace and blessings be upon him) said: "A profligate (fajir) should never lead a believer in prayer, unless he is coerced by a ruler whose sword or whip he fears."[2] Let no transgressor (fasiq) ever lead a Muslim in prayer, unless he is forced by the power of the state such that there is fear of its sword or whip.

Moreover, Ibn Shahin in the book 'Al-Afrad' narrates from Hazrat Abdullah bin Mas'ud (may Allah be pleased with him) that the Master of the World (may Allah's peace and blessings be upon him) says: "Seek nearness to Allah by hating the people of disobedience, and meet them with stern faces, and seek Allah's pleasure through their displeasure, and seek closeness to Allah by distancing yourselves from them."[3] Seek proximity to Allah through hatred of the transgressors, and meet them with a stern face, and seek Allah's pleasure in their anger, and desire closeness to Allah by keeping away from them.

If these are the rulings regarding transgressors (fasiqeen), then what of the innovators (mubtadi'een)? For they are a thousand times worse than transgressors. The disobedience of transgressors is in secondary matters (furoo'), while that of innovators is in fundamental principles (usool). Transgressors commit sins and know them to be bad; innovators are involved in what is much more severe and grave, yet they consider it exactly right and guided. Transgressors are occasionally remorseful and seek forgiveness; innovators are constantly persistent and arrogant. When transgressors reflect on their hearts, they see themselves as lowly and sinful, and view the righteous as dear and close to the Court (of Allah). The more innovators increase in their extremism and indulgence, the more they deem their arrogant selves as supreme and high, and consider the people of truth and guidance as lowly and mistaken. Therefore, in the Hadith, they are referred to as the worst...

---

[1] Kanz al-Ummal, Part 3, Mentioning the Companions etc., Hadith 32629, Published by Mu'assasat al-Risalah, Beirut, 11/520. Note: The author of Kanz al-Ummal cited

"Ibn al-Najjar from Anas". [2] Sunan Ibn Majah, Chapter on the Obligation of Friday, Published by Aftab-e-Alam Press, Lahore, p. 77. [3] Al-Firdaws bi Ma'thur al-Khitab, Hadith 1320, Chapter of 'Ta', Published by Dar al-Kutub al-Ilmiyyah, Beirut, 2/56; Kanz al-Ummal, Hadith 55818, 55855, citing Ibn Shahin, Published by Mu'assasat al-Risalah, Beirut, 3/76-81.

फ़तावा-ए-रज़विया, जिल्द 6

"न उनके साथ खाना खाओ, न पानी पियो, न उनके जनाज़े की नमाज़ पढ़ो, न उनके साथ नमाज़ पढ़ो।"[1] यानी हुज़ूर अक़दस सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया: न उनके साथ खाना खाओ, न पानी पियो, न उनके जनाज़े की नमाज़ पढ़ो, न उनके साथ नमाज़ पढ़ो।

चौथी बात, इब्ने माजा हज़रत जाबिर बिन अब्दुल्लाह रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से रावी हैं कि हुज़ूर सैयदे आलम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं: "हरगिज़ कोई फ़ासिक़ किसी मुसलमान की इमामत न करे, मगर यह कि वह उसे सल्तनत के ज़ोर पर मजबूर कर दे कि उसकी तलवार या कोड़े का डर हो।"[2] हरगिज़ कोई फ़ासिक़ (गुनहगार) किसी मुसलमान की इमामत न करे, मगर यह कि वह उसे सल्तनत के ज़ोर पर मजबूर कर दे कि उसकी तलवार या कोड़े का डर हो।

बल्कि इब्ने शाहीन ने किताबुल अफ़राद में हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसूद रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत की है कि हुज़ूर सैयदे आलम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं: "अल्लाह की तरफ़ तक़र्रुब हासिल करो गुनहगारों के बुग़्ज़ से, और उनसे तुर्श-रू होकर मिलो, और अल्लाह की रज़ामंदी उनकी ख़फ़गी में ढूँढो, और अल्लाह की नज़दीकी उनकी दूरी से चाहो।"[3] अल्लाह की तरफ़ तक़र्रुब (नज़दीकी) हासिल करो फ़ासिक़ों के बुग़्ज़ (नफ़रत) से, और उनसे तुर्श-रू (सख्त चेहरा बना कर) मिलो, और अल्लाह की रज़ामंदी उनकी ख़फ़गी (नाराज़गी) में ढूँढो, और अल्लाह की नज़दीकी उनकी दूरी से चाहो।

जब फ़ासिक़ों के मुताल्लिक़ ये अहकाम हैं, तो मुब्तदिओं (बिदअती लोगों) का क्या पूछना? कि ये तो फ़ासिक़ों से हज़ार दर्जा बदतर हैं। उनकी नाफ़रमानी फ़ुरूअ (शाखाओं) में है, इनकी उसूल (बुनियाद) में। वे गुनाह करते हैं और उसे बुरा जानते हैं, ये इस अशद्द (अत्यधिक) और आज़म (बड़े गुनाह) में मुब्तला हैं और इसे ऐन हक़ और हिदायत जानते हैं। वे कभी-कभी नादिम (शर्मिंदा) और मुस्तग़फ़िर (माफ़ी माँगने वाले) होते हैं, ये हर वक्त मुसिर (अड़े रहने वाले) और मुस्तक़बिर (घमंडी) हैं। वे जब अपने दिल की तरफ़ रुजूअ लाते हैं, तो अपने आप को हक़ीर और बदकार और नेक लोगों को अज़ीज़ और दरबार का मुक़र्रब (क़रीबी) बताते हैं। ये जितना ग़ुलू (अतिवाद) और तवग़्गुल बढ़ाते हैं, उतना ही अपने नफ़्से-मग़रूर को आला और बाला और अहल-ए-हक़ व हिदायत को ज़लील और बद-ख़ता (गलत राह पर) ठहराते हैं। लिहाज़ा हदीस में उनके मुताल्लिक़ बदतरीन...

[1] कन्ज़ुल उम्माल, बाब 3, सहाबा का ज़िक्र, हदीस 32629, मुअस्ससतुर रिसाला, बैरूत, 11/520। फ़: कन्ज़ुल उम्माल के लेखक ने "इब्नुल नज्जार अन अनस" का हवाला दिया है। [2] सुनन इब्ने माजा, बाब फ़र्ज़-ए-जुमा, आफ़ताबे आलम प्रेस, लाहौर, पृ. 77। [3] अल-फ़िरदौस बि-मअसूरिल ख़िताब, हदीस 1320, बाबुल ता, दारुल कुतुबुल इल्मिय्या, बैरूत, 2/56; कन्ज़ुल उम्माल हदीस 55818, 55855, ब-हवाला इब्ने शाहीन, मुअस्ससतुर रिसाला, बैरूत, 3/76-81।

पृष्ठ 676/736

فلا تواکلو ھم ولا تشاربو ھم ولا تصلوا علیھم ولا تصلوا معھم[1] ۔ یعنی حضور اقدس صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا نہ ان کے ساتھ کھانا کھاؤ نہ پانی پیو نہ ان کے جنازے کی نماز پڑھو نہ ان کے ساتھ نماز پڑھو۔

رابعاً ابن ماجہ[42] حضرت جابر بن عبد اللہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے راوی حضور سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں : لایوم فاجر مؤمنا الا ان یقھر ہ بسلطان یخاف سیفہ او سوطہ[2] ۔ ہر گز کوئی فاسق کسی مسلمان کی امامت نہ کرے مگر یہ کہ وہ اس کو بزور سلطنت مجبور کردے کہ اس کی تلوار یا کوڑے کا ڈر ہو۔

بلکہ ابن شاہین نے کتاب الافراد میں حضرت عبد اللہ بن مسعود رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت ہے کہ حضور سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں: تقربوا الی اللہ ببغض اھل المعاصی ولقوھم بوجوہ مکفھرۃ والتمسوا رضا اللہ بسخطھم وتقربوا الی اللہ بالتباعد منھم[3] ۔ اللہ کی طرف تقرب کرو فاسقوں کے بغض سے اور ان سے تُرش رُو ہو کر ملو اور اللہ کی رضامندی ان کی خفگی میں ڈھونڈو اور اللہ کی نزدیکی ان کی دُوری سے چاہو۔

جب فساق کی نسبت یہ احکام ہیں تو مبتدعین کا کیا پوچھنا ہے کہ یہ تو فساق سے ہزار درجہ بد تر ہیں ان کی نافرمانی فروع میں ہے انکی اصول میں وہ گناہ کرتے اور اسے برا جانتے ہیں یہ اس اشد و اعظم میں مبتلا ہیں اور اسے عین حق و ہدیٰ جانتے ہیں، وہ گاہ گاہ نادم و مستغفر، یہ گاہ وبے گاہ مصر ومستکبر، وہ جب اپنے دل کی طرف رجوع لاتے ہیں اپنے آپ کو حقیر وبد کار اور صلحا کو عزیز و مقرب دربار بتاتے ہیں، یہ جتنا غلو و توغل بڑھاتے ہیں اُتنا ہی اپنے نفس مغرور

کو اعلیٰ و بالا اور اہلِ حق و ہدایت کو ذلیل و بد خطا ٹھہراتے ہیں ولہٰذا حدیث میں ان کی نسبت بد ترین

---

[1] کنز العمال الباب الثالث فی ذکر الصحابہ الخ حدیث ۳۲۶۲۹ مطبوعہ موسستہ الرسالہ بیروت ۱۱/ ۵۲۰ ف: صاحب کنز العمال نے "ابن النجار عن انس" کا حوالہ دیا ہے۔ [2] سنن ابن ماجہ باب فرض الجمعتہ مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور ص ۷۷ [3] الفردوس بمأثور الخطاب حدیث ۱۳۲۰ باب التاء مطبوعہ دار الکتب العلمیہ بیروت ۲/ ۵۶، کنز العمال حدیث ۵۵۸۱۸، ۵۵۸۵۵ بحوالہ ابن شاہین مطبوعہ موسستہ الرسالہ بیروت ۳/ ۷۶-۸۱

Fatawa Rizwia Volume 6

...nature as has been mentioned in the narrations regarding it. (T) And in Ghuniya Sharh Munya, it is stated:

[Arabic Box 1]: The innovator (Mubtadi') is a transgressor (Fasiq) in terms of belief, which is worse than transgression in terms of action. This is because the transgressor in action admits his transgression, fears Allah, and seeks forgiveness, unlike the innovator. [1] [Urdu Box 1]: The innovator is a transgressor in terms of belief, which is far worse than transgression in terms of action, because the active transgressor admits his transgression, fears Allah Almighty, and seeks forgiveness, unlike the innovator. (T)

In short, being of a bad sect (misguided) is inherently something that is certainly contrary to religious leadership, and after that, there is little need for a second reason for prohibition. Whose heart would tolerate having a dog from among the dogs of Hell as their leader in divine supplication? Allama Yusuf Chalpi, in Dhakhira al-Uqba fi Sharh Sadr al-Shariah al-Uzma, states:

[Arabic Box 2]: The innovation of the innovator necessitates not following him, especially in the most important matters of religion. [2] [Urdu Box 2]: The innovation of the innovator demands not following him, especially in important matters of religion (i.e., in prayer). (T)

In Radd al-Muhtar, it is stated:

[Arabic Box 3]: The leadership (Imamate) of an innovator is disliked (Makruh) in all circumstances. [3] [Urdu Box 3]: The leadership of an innovator is disliked in every situation. (T)

Allama Ibrahim Halabi has clarified that the leadership of both the transgressor and the innovator is prohibited as 'Makruh Tahrimi' (strongly disliked bordering on forbidden). According to the school of Imam Malik and one narration from Imam Ahmad, prayer behind them is essentially invalid, just like behind a disbeliever. In Sharh Saghir Munya, it is stated:

[Arabic Box 4]: Giving precedence to a transgressor (for leadership) is prohibited as Makruh Tahrimi. According to Imam Malik, giving him precedence is not permissible, and this is also one narration from Imam Ahmad. The same applies to the innovator. [4] [Urdu Box 4]: Giving precedence (for leadership) to a transgressor is Makruh

Tahrimi. According to Imam Malik, giving him precedence (leadership) is not permissible, and this is also one narration from Imam Ahmad. The same applies to the innovator. (T)

Allama Tahtawi, in the commentary on Durr al-Mukhtar, in the chapter regarding prayer behind a transgressor and a person of a bad sect, states: The dislike (Al-Karahah)

---

[1] Ghuniyat al-Mustamli Sharh Munyat al-Musalli, Chapter on Imamate, published by Suhail Academy, Lahore, p. 514. [2] Dhakhirat al-Uqba, Chapter on Congregation, published by Matba' Islamiya, Lahore, 1/298. [3] Radd al-Muhtar, Chapter on Imamate, published by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/414. [4] Saghir Sharh Munyat al-Musalli, Discussions on Imamate, published by Matba' Mujtabai, Delhi, p. 264.

फ़तावा रज़विया खंड 6

...प्रकृति जैसा कि इसके संबंध में उल्लेखित रिवायतों में बताया गया है। (त) और गुनिया शरह मुनिया में है:

[अरबी बॉक्स 1]: नवाचारी (मुबतदी) विश्वास (अकीदा) के लिहाज़ से फासिक (पापी) होता है, जो कर्म (अमल) के लिहाज़ से फिसक (पाप) से कहीं अधिक बुरा है। क्योंकि कर्म में फासिक होने वाला अपने फासिक होने को स्वीकार करता है, अल्लाह से डरता है और क्षमा मांगता है, जबकि नवाचारी ऐसा नहीं करता। [1] [उर्दू बॉक्स 1]: नवाचारी, अकीदे के लिहाज़ से फासिक होता है जो अमल के एतबार से फिसक से कहीं बदतर है क्योंकि फासिक अपने फासिक होने का मोतरिफ (स्वीकार करने वाला) होता है और अल्लाह तआला से डरता और माफी मांगता है, बखिलाफ़ नवाचारी के। (त)

संक्षेप में, कुमार्गी (बद-मज़हब) होना स्वयं में एक ऐसी चीज़ है जो धार्मिक नेतृत्व (इमामत) के पूर्णतः विपरीत है। इसके बाद निषेध के लिए किसी दूसरे प्रमाण की अधिक आवश्यकता नहीं है। किसका हृदय यह स्वीकार करेगा कि नर्क के कुत्तों में से एक कुत्ता ईश्वरीय प्रार्थना (मुनाजात) में उसका नेतृत्व करे? अल्लामा यूसुफ़ चलपी 'ज़खीरा अल-उक़्बा फ़ी शरह सद्र अल-शरीया अल-उज़मा' में फ़रमाते हैं:

[अरबी बॉक्स 2]: नवाचारी की नवाचार उसे न मानने की माँग करती है, विशेष रूप से धर्म के महत्वपूर्ण मामलों में। [2] [उर्दू बॉक्स 2]: बदती की बिदअत उसकी अदम-इक्तिदा (न मानने) का तक़ाज़ा करती है खुसूसन (विशेषकर) अहम उमूर-ए-दीन में (यानी नमाज़ में)। (त)

रद्द अल-मुह्तार में है:

[अरबी बॉक्स 3]: नवाचारी का नेतृत्व (इमामत) हर स्थिति में मकरूह (नापसंद) है। [3] [उर्दू बॉक्स 3]: बदती की इमामत हर हाल में मकरूह है। (त)

अल्लामा इब्राहिम हलाबी ने स्पष्ट किया है कि फासिक और मुबतदी दोनों का नेतृत्व 'मकरूह तहरीमी' (कड़ाई से वर्जित) है। इमाम मालिक के मज़हब और इमाम अहमद की एक रिवायत के अनुसार, उनके पीछे नमाज़ मूलतः होती ही नहीं है, जैसे किसी काफ़िर के पीछे। शरह सगीर मुनिया में फ़रमाया:

[अरबी बॉक्स 4]: फासिक को नेतृत्व के लिए आगे करना 'मकरूह तहरीमी' है। इमाम मालिक के निकट उसे आगे करना जायज़ नहीं है और इमाम अहमद से भी एक रिवायत यही है, और यही हाल मुबतदी का भी है। [4] [उर्दू बॉक्स 4]: फासिक की तक़दीम (इमामत) मकरूह तहरीमी है और इमाम मालिक के नज़दीक इसकी तक़दीम (इमामत) जायज़ नहीं और इमाम अहमद से भी एक रिवायत यही है और यही हाल बदती का है। (त)

अल्लामा तहतावी हाशिया दुर्र-ए-मुख्तार में फासिक और कुमार्गी के पीछे नमाज़ के अध्याय में फ़रमाते हैं: मकरूह होना (अल-कराहह)

---

[1] गुनियात अल-मुस्तमली शरह मुनियत अल-मुसल्ली, इमामत का अध्याय, सुहैल अकादमी, लाहौर, पृष्ठ 514। [2] ज़खीरात अल-उक़्बा, जमात का अध्याय, मतबा इस्लामिया, लाहौर, 1/298। [3] रद्द अल-मुह्तार, इमामत का अध्याय, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 1/414। [4] सगीरी शरह मुनियत अल-मुसल्ली, इमामत पर चर्चा, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, पृष्ठ 264।

فتاوی رضویہ جلد ششم

خلق وارد ہوا مکروبینا (جیسا کہ اس سے متعلق روایت میں ذکر کر آئے ہیں۔ت) اور غنیہ شرح منیہ میں ہے:

[عربی باکس 1]: المبتدع نفاسق من حیث الاعتقاد وہواشد من الفسق من حیث العمل لان الفاسق من حیث العمل یعترف بأنه فاسق ویخاف ویستغفر بخلاف المبتدع۔ 1 [اردو باکس 1]: بدعتی، اعتقاد کے لحاظ سے فاسق ہوتا ہے جو عمل کے اعتبار سے فسق سے کہیں بدتر ہے کیونکہ فاسق اپنے فاسق ہونے کا معترف ہوتا ہے اور اللہ تعالٰی سے ڈرتا اور معافی مانگتا ہے بخلاف بدعتی کے (ت)

بالجملہ بد مذہب ہی فی نفسہ ایسی ہی چیز ہے جسے امامت دینی سے مباینت یقینی ہے اور اُسکے بعد منع پر دوسری دلیل کی چنداں حاجت نہیں، کس کا دل گوارا کرے گا کہ جہنم کے کتوں سے ایک کتا مناجات الٰہی میں اس کا مقتداء ہو۔ علامہ یوسف چلپی ذخیرہ العقبٰی فی شرح صدر الشریعہ لعظمی میں فرماتے ہیں:

[عربی باکس 2]: بدعة المبتدع یفضی الی عدم الاقتداء به سیمافی اهم امور الدین 2۔ [اردو باکس 2]: بدعتی کی بدعت اسکی عدم اقتدا کا تقاضا کرتی ہے خصوصاً اہم امور دین میں (یعنی نماز میں)۔ (ت)

ردالمحتار میں ہے:

[عربی باکس 3]: المبتدع تکره امامته بکل حال 3۔ [اردو باکس 3]: بدعتی کی امامت ہر حال میں مکروہ ہے (ت)

علامہ ابراہیم حلبی نے تصریح فرمائی کہ فاسق و مبتدع دونوں کی امامت مکروہِ تحریمی ہے اور امام مالک کے مذہب اور امام احمد کی ایک روایت میں اُن کے پیچھے نماز اصلاً ہوتی ہی نہیں جیسے کسی کافر کے پیچھے۔ شرح صغیر منیہ میں فرمایا:

[عربی باکس 4]: یکرہ تقدیم الفاسق کراھۃ تحریم وعند مالك لا یجوز تقدیمہ وھو روایۃ عن احمد وکذا المبتدع 4۔ [اردو باکس 4]: فاسق کی تقدیم (امامت) مکروہ تحریمی ہے اور امام مالک کے نزدیک اس کی تقدیم (امامت) جائز نہیں اور امام احمد سے بھی ایک روایت یہی ہے اور یہی حال بدعتی کا ہے۔(ت)

علامہ طحطاوی حاشیہ دُر مختار میں فاسق وبدمذہب کے پیچھے نماز کے باب میں فرماتے ہیں:

الکراھۃ

---

1 غنیہ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل فی الامامۃ مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۵۱۴ 2 ذخیرۃ العقبیٰ، فصل فی الجماعۃ مطبوعہ مطبع اسلامیہ لاہور ۱/ ۲۹۸ 3 ردالمحتار باب الامامۃ مطبوعہ مصطفیٰ البابی مصر ۱/ ۴۱۴ 4 صغیری شرح منیۃ المصلی مباحث الامامۃ مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ص ۲۶۴

صفحہ 736 کا 677

Fatawa Razawiyya Volume Six It contains prohibitory dislike (karahat tahrimi) as mentioned before. (T) Bahr al-Ulum Abdul Ali Lakhnawi stated in 'Arkan-e-Arba' regarding the Tafziliyya:

[Arabic]: As for the Shia who prefer Ali over the two Shaykhs (Abu Bakr and Umar) but do not insult them at all, like the Zaidiyyah, praying behind them is permissible but intensely disliked. (2) [Urdu]: Such Shia people who grant excellence to Hazrat Ali (may Allah be pleased with him) over the two Shaykhs and do not even insult them, like the Zaidiyyah sect, then praying behind them is permissible but has severe dislike. (T)

When the Tafziliyya, who merely by calling Mawla Ali (may Allah honor his face) superior to the Shaykhain, have gone against the Ahl al-Sunnah, yet they do not commit insolence towards them (God forbid), praying behind them has become severely disliked. Then what about those extreme innovators whose oppositions to the Ahl al-Sunnah are countless, and whose permanent habit is to revile and criticize the beloveds of God? Imagine what a great level of dislike there must be [in praying] behind them. Our Imam (may Allah be pleased with him) forbade praying behind two people and gave the reason that they are innovators:

[Arabic]: In the commentary of al-Fiqh al-Akbar, citing Miftah al-Sa'adah from Talkhis al-Zahidi, it is narrated from Imam Abu Yusuf from Imam Abu Hanifa (may Allah be pleased with both of them) that he said regarding two men who were disputing over the creation of the Quran: "Do not pray behind them." Abu Yusuf said: "I asked, as for the first one, yes (it is understood), for he does not believe in the eternity of the Quran. But what about the other, why should one not pray behind him?" He replied: "They are both disputing about religion, and disputing about religion is an innovation." Al-Qari said: "Perhaps the reason for censuring the other is because he spoke generally, for its descent is a created event." (3) I say: perhaps the Imam became aware from him... [Urdu]: In Sharh Fiqh-e-Akbar, citing Miftah al-Sa'adah via Talkhis-e-Zahidi, it is narrated from Imam Abu Yusuf that Imam Abu Hanifa (may Allah be pleased with him) said regarding two persons (who were disputing about the creation of the Quran): "Do not perform prayer under their leadership." Abu Yusuf says, "I submitted that I understand regarding one of them that he does not accept the Quran as eternal, but what is the reason for the other that prayer will not be [valid] behind him?" The Imam replied, "Both of them are disputing in religion,

whereas disputing in religion is an innovation." Ali Qari said regarding the condemnation of the second one, perhaps this...

1. Hashiya al-Tahtawi 'ala al-Durr al-Mukhtar, Chapter on Imamate, published by Dar al-Fikr Beirut, 1/244.
2. Rasa'il al-Arkan, section on Congregation, published by Maktaba Islamiyya Quetta, p. 99.
3. Sharh al-Fiqh al-Akbar by Mulla Ali al-Qari, section on the Science of Monotheism over other sciences, published by Mustafa al-Babi Egypt, p. 5.

फ़तावा रज़विया छठा खंड इसमें कराहत-ए-तहरीमी (निषिद्ध अरुचि) है जैसा कि पहले बताया जा चुका है। (त) बहर-उल-उलूम अब्दुल अली लखनवी ने 'अरकान-ए-अर्बा' में तफ़्ज़ीलिया के बारे में फ़रमाया:

[अरबी]: जहाँ तक उन शियाओं का सवाल है जो अली को दो शैख़ों (अबू बक्र और उमर) पर श्रेष्ठता देते हैं लेकिन उनका अपमान बिल्कुल नहीं करते, जैसे ज़ैदिया, उनके पीछे नमाज़ पढ़ना जायज़ है लेकिन सख्त मकरूह (नापसंद) है। (2) [उर्दू]: ऐसे शिया लोग जो हज़रत अली (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) को शैख़ैन पर श्रेष्ठता देते हैं और उन दोनों पर कोई कटाक्ष भी नहीं करते, जैसे ज़ैदिया संप्रदाय, तो उनके पीछे नमाज़ जायज़ है लेकिन इसमें तीव्र कराहत (अरुचि) है। (त)

जब तफ़्ज़ीलिया लोग, जो केवल मौला अली (करमल्लाहु वजहुहू) को शैख़ैन से श्रेष्ठ कहने मात्र से अहले सुन्नत के खिलाफ हो गए, जबकि वे उनकी शान में (ईश्वर न करे) गुस्ताखी नहीं करते, उनके पीछे नमाज़ पढ़ना सख्त मकरूह हो गया। तो फिर उन घोर बिदअतियों (नवाचारियों) के पीछे कितनी बड़ी कराहत होनी चाहिए, जिनका अहले सुन्नत से विरोध अनगिनत है और अल्लाह के प्यारों पर कटाक्ष और निंदा करना जिनका स्थायी दस्तूर है। हमारे इमाम (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) ने दो व्यक्तियों के पीछे नमाज़ पढ़ने से मना फ़रमाया और उसकी वजह यही बताई कि वे बिदअती हैं:

[अरबी]: शरह अल-फ़िक़्ह अल-अकबर में मिफ़्ताह अल-सआदा से तलख़ीस अल-ज़ाहीदी के हवाले से इमाम अबू यूसुफ से रिवायत है कि इमाम अबू हनीफा (रज़ियल्लाहु तआला अन्हुमा) ने उन दो व्यक्तियों के बारे में फ़रमाया जो कुरान के सृजित होने (ख़ल्क़-ए-क़ुरआन) के बारे में विवाद कर रहे थे: "उनके पीछे नमाज़ न पढ़ो।" अबू यूसुफ ने कहा: "मैंने अर्ज़ किया कि पहले के बारे में तो बात समझ आती है क्योंकि वह कुरान के प्राचीन (अनादि) होने को नहीं मानता, लेकिन दूसरे के साथ क्या मसला है कि उसके पीछे नमाज़ नहीं होगी?" उन्होंने जवाब दिया: "वे दोनों दीन में बहस कर रहे हैं, और दीन में बहस करना बिदअत है।" मुल्ला अली क़ारी ने कहा: "शायद दूसरे की निंदा की वजह यह है कि उसने स्पष्ट रूप से बात नहीं की, क्योंकि इसका उतरना (नुज़ूल) एक रचना है।" (3) मैं कहता हूँ: शायद इमाम को उससे पता चला... [उर्दू]: शरह फ़िक़्ह-ए-अकबर में मिफ़्ताह-उस-सआदा से तलख़ीस-ए-ज़ाहीदी के हवाले से इमाम अबू यूसुफ से वर्णित है कि इमाम अबू हनीफा (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) ने उन दो व्यक्तियों के बारे में फ़रमाया (जो क़ुरआन की सृष्टि के बारे में विवाद कर रहे थे) कि उनकी पैरवी में नमाज़ अदा न करो। अबू यूसुफ फ़रमाते हैं, मैंने अर्ज़ किया कि एक के बारे में तो बात समझ में आती है कि वह क़ुरआन को प्राचीन नहीं मानता, लेकिन दूसरे में

क्या वजह है कि उसकी पैरवी में नमाज़ नहीं होगी? तो इमाम साहब ने फ़रमाया कि वे दोनों दीन में विवाद कर रहे हैं जबकि दीन में विवाद बिदअत है। अली क़ारी ने फ़रमाया दूसरे की निंदा में शायद यह...

1. हाशिया अत-तहतावी अल अल-दुर्र अल-मुख्तार, इमामत का अध्याय, मुद्रित दारुल फ़िक्र बेरुत 1/244।
2. रसायल अल-अरकान, जमात का अध्याय, मुद्रित मकतबा इस्लामिया क्वेटा, पृ. 99।
3. शरह अल-फ़िक़्ह अल-अकबर मुल्ला अली क़ारी द्वारा, तौहीद के ज्ञान का अन्य विज्ञानों पर श्रेष्ठता का अध्याय, मुद्रित मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, पृ. 5।

فتاوٰی رضویہ جلد ششم فیہ تحریمیۃ علی ما سبق 1 (اس میں کراہت تحریمی ہے جیسا کہ پہلے گزرا۔ ت) بحرالعلوم عبدالعلی لکھنوی نے ارکان اربعہ میں درباره تفضیلیہ فرمایا :

اما الشیعة الذین یفضلون علیا علی الشیخین ولا یطعنون فیهما اصلا کالزیدیة فیجوز خلفهم الصلاة لکن تکره کراهة شدیدة 2 ۔ ایسے شیعہ لوگ جو حضرت علی رضی اللہ تعالٰی عنہ کو شیخین پر فضیلت دیتے ہوں اور ان دونوں پر طعن بھی نہ کرتے ہوں مثلاً فرقہ زیدیہ، تو ان کے پیچھے نماز جائز ہے لیکن شدید کراہت ہے (ت)

جب تفضیلیہ کہ صرف جناب مولٰی علی کرم اللہ تعالٰی وجہہ کو حضرات شیخین پر افضل کہنے سے مخالف اہلسنت ہوئے باقی اُن کی سرکار میں معاذ اللہ گستاخی نہیں کرتے اُن کے پیچھے نماز سخت مکروہ ہوگئی یہ تواشد مبتدعین جن کی اہلسنت سے مخالفتیں غیر محصور اور محبوان خدا پر طعن و تشنیع اُن کا دائمی دستور ان کے پیچھے کس عظیم درجہ کی کراہت چاہئے، ہمارے امام رضی اللہ تعالٰی عنہ نے دو شخصوں کے پیچھے نماز پڑھنے سے منع فرمایا اور اس کی وجہ یہی فرمائی کہ یہ بدعتی ہیں:

فی شرح الفقہ الاکبر عن مفتاح السعادة عن تلخیص الزاهدی عن الامام ابی یوسف عن الامام ابی حنیفة رضی الله تعالی عنهما انه قال فی رجلین یتنازعان فی خلق القرآن لاتصلوا خلفهما، قال ابویوسف فقلت اما الاول فنعم فأنه لا یقول بقدم القرآن واما الآخر فما باله لایصلی خلفه فقال انهما ینازعان فی الدین والمنازعة فی الدین بدعة قال القاری ولعل وجه ذم الآخر حیث اطلق، فانه محدث انزاله 3 اھ اقول لعل الامام اطلع منه شرح فقہ اکبر میں مفتاح السعادة سے تلخیص زاہدی کے حوالے سے امام ابویوسف سے منقول ہے کہ امام ابو حنیفہ رضی اللہ تعالٰی عنہ نے ان دو اشخاص (جو خلقِ قرآن کے بارے میں تنازع کرتے تھے) کے بارے میں فرمایا ان کی اقتداء میں نماز ادا نہ کرو۔ ابو یوسف فرماتے

ہیں میں نے عرض کیا ایک کے بارے میں تو بات سمجھ میں آتی ہے کہ قرآن کو قدیم نہیں مانتا، لیکن دوسرے میں کیا وجہ ہے کہ اس کی اقتداء میں نماز نہ ہوگی تو امام صاحب نے فرمایا وہ دونوں دین میں تنازع کر رہے ہیں حالانکہ دین میں تنازع بدعت ہے۔ علی قاری نے فرمایا دوسرے کی مذمت میں شاید یہ

1 حاشیہ الطحطاوی علی الدر المختار باب الامامة مطبوعہ دارالفکر بیروت ۱ / ۲۴۴ 2 رسائل الارکان فصل فی الجماعة مطبوعہ مکتبہ اسلامیہ کوئٹہ ص ۹۹ 3 شرح الفقه الاکبر لملا علی قاری فصل علم التوحید علی سائر العلوم مطبوعہ مصطفی البابی مصر ص ۵

Fatawa Ridawiyya, Volume 6

[Right Column Box] That he intends to argue to shame his companion, not to manifest the truth, and Allah Almighty knows best.

[Left Column Box] Wisdom may be that he called it eternal unconditionally, although its revelation is accidental (hadith). I say: perhaps the Imam (mercy of Allah be upon him) was aware of his intention, that his goal was not to reveal but to act out of vanity to shame the other companion, and Allah Almighty knows best. (T)

In fact, the codifier of the school, Imam Muhammad (mercy of Allah be upon him), narrated from Imam al-Azam and Imam Abu Yusuf (may Allah be pleased with them both) that praying behind an innovator (follower of misguidance) is not permissible at all. The researcher, Allama Kamal al-Din ibn al-Humam, says in Fath:

[Inner Table] - (Arabic): Muhammad narrated from Abu Hanifa and Abu Yusuf that prayer behind the people of innovations is not permissible. (1) - (Urdu): Imam Muhammad narrated from both Imam Abu Hanifa and Imam Abu Yusuf that prayer behind an innovator is not permissible. (T)

In the same work, while explaining the narration from Imam Abu Yusuf: "It is not permissible to follow a theologian even if he speaks the truth" (2) (Prayer is not permissible behind a theologian even if he speaks with the truth), it is quoted from Imam Abu Ja'far al-Hindwani:

[Lower Inner Table] - (Arabic): It is possible that Abu Yusuf's (mercy of Allah be upon him) intent was the one who debates the subtleties of the science of Kalam. (End quote) (3) - (Arabic): I say: Debating its subtleties does not exceed heresy or transgression, and in every case, it proves the non-permissibility [of praying] behind an innovator, as is not hidden. - (Urdu): This means Imam Abu Yusuf's intent is a person who debates the subtleties of Kalam. (End quote). - (Urdu): I say: Debating the subtleties of Kalam is, at most, a cause for innovation (Bid'at) or transgression (Fisq), and in every case, it clarifies that prayer behind an innovator is not permissible, as is not hidden. (T)

In Ghiyath al-Mufti, then Miftah al-Sa'adah, then in the commentary of Fiqh al-Akbar from the Second Imam (mercy of Allah be upon him), it says: "It is not permissible behind an innovator." (4) (Prayer is not permissible behind an innovator. T) I say: And with Allah is success. 'Permissibility' (Jawaz) is sometimes used in the sense of 'validity' (Sihhat). For example, you say, "Selling at the time of the Friday call to prayer

is permissible (jayiz) yet disliked (makruh)," meaning it is valid but prohibited (T). And sometimes it is in the sense of 'lawfulness' (Hilla), [as in] prayer is not permissible.

Footnotes: 1. Fath al-Qadir, Chapter on Imamate, published by Maktaba Nooriya Razawiyya, Sukkur, 1/304. 2. Fath al-Qadir, Chapter on Imamate, published by Maktaba Nooriya Razawiyya, Sukkur, 1/304. 3. Fath al-Qadir, Chapter on Imamate, published by Maktaba Nooriya Razawiyya, Sukkur, 1/304. 4. Sharh al-Fiqh al-Akbar by Mulla Ali al-Qari, section on the superiority of the science of Tawhid over other sciences, published by Mustafa al-Babi, Egypt, p. 5.

फतावा रज़विया, खंड 6

[दायां कॉलम बॉक्स] कि उसका इरादा अपने साथी को शर्मिंदा करने के लिए बहस करना है, सच्चाई को प्रकट करना नहीं, और अल्लाह सर्वशक्तिमान सबसे अच्छा जानता है।

[बायां कॉलम बॉक्स] हिकमत यह हो सकती है कि उसने इसे बिना किसी शर्त के कदीम (शाश्वत) कहा, हालांकि इसका अवतरण हाल (नया) है। मैं कहता हूँ: शायद इमाम साहब (रहमतुल्लाह अलैह) उसके इरादे से अवगत थे कि उसका उद्देश्य सच्चाई का इजहार नहीं बल्कि दिखावे के तौर पर दूसरे साथी को शर्मिंदा करना था, और अल्लाह सर्वशक्तिमान सबसे अच्छा जानता है। (त)

बल्कि संप्रदाय के संस्थापक इमाम मुहम्मद (रहमतुल्लाह अलैह) ने हज़रत इमाम आज़म और इमाम अबू यूसुफ (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत की है कि बद-मजहब (गलत अकीदे वाले) के पीछे नमाज़ पढ़ना मूल रूप से जायज़ नहीं है। शोधकर्ता अल्लामा कमालुद्दीन इब्न अल-हुमाम 'फतह' में फरमाते हैं:

[भीतरी तालिका] - (अरबी): मुहम्मद ने अबू हनीफ़ा और अबू यूसुफ से रिवायत की कि अहल-ए-अहवा (बिदतियों) के पीछे नमाज़ जायज़ नहीं है। (1) - (उर्दू): इमाम मुहम्मद ने इमाम अबू हनीफ़ा और इमाम अबू यूसुफ दोनों से रिवायत की है कि बद-मजहब के पीछे नमाज़ जायज़ नहीं है। (त)

इसी में इमाम अबू यूसुफ की रिवायत: "मुतकल्लिम (धर्मशास्त्री) के पीछे इक्तादा (नमाज़ में अनुसरण) जायज़ नहीं है, चाहे वह हक (सच्चाई) के साथ बात करे" (2) (कलमी के पीछे नमाज़ जायज़ नहीं है चाहे वह हक के साथ बोलने वाला हो) की व्याख्या में इमाम अबू जाफ़र हिंदवानी से उद्धृत किया गया है:

[निचली भीतरी तालिका] - (अरबी): यह संभव है कि इमाम अबू यूसुफ (रहमतुल्लाह अलैह) का इरादा उस व्यक्ति से हो जो इल्म-ए-कलाम की बारीकियों में बहस करता है। (समाप्त) (3) - (अरबी): मैं कहता हूँ: इसकी बारीकियों में बहस करना बिदअत या फिस्क (पाप) से ज़्यादा कुछ नहीं है और हर सूरत में यह बिदअती के पीछे नमाज़ न होने का फायदा देता है जैसा कि छिपा नहीं है। - (उर्दू): इससे इमाम अबू यूसुफ की मुराद वह व्यक्ति है जो इल्म-ए-कलाम की बारीकियों में मुनाजरा (बहस) करे। - (उर्दू): मैं कहता हूँ: इल्म-ए-कलाम की बारीकियों का मुनाजरा ज़्यादा से ज़्यादा बिदअत या फिस्क का कारण है और हर सूरत में यह स्पष्ट कर रहा है कि बिदअती के पीछे नमाज़ जायज़ नहीं है, जैसा कि छिपा नहीं है। (त)

'गियासुल मुफ्ती', फिर 'मिफ्ताहुस सआदत', फिर 'शरह फिकह-ए-अकबर' में इमाम सानी (रहमतुल्लाह अलैह) से है: "बिदअती के पीछे [नमाज़] जायज़ नहीं है।" (4) (बिदअती के पीछे नमाज़ जायज़ नहीं। त) मैं कहता हूँ: और अल्लाह की मदद से सफलता मिलती है। 'जवाज़' (वैधता) शब्द कभी 'सहत' (सही होने) के अर्थ में उपयोग होता है। जैसे आप कहें "जुमे की अज़ान के समय खरीद-फरोख्त जायज़ है और मकरूह है", यानी सही है मगर मना है (त)। और कभी 'हिल्लत' (हलाल होने) के अर्थ में होता है, [जैसे] नमाज़ जायज़ नहीं है।

पाद टिप्पणियाँ: 1. फतह अल-कादिर, बाबू अल-इमामह, प्रकाशित मकतबा नूरिया रज़विया, सुक्कुर, 1/304 2. फतह अल-कादिर, बाबू अल-इमामह, प्रकाशित मकतबा नूरिया रज़विया, सुक्कुर, 1/304 3. फतह अल-कादिर, बाबू अल-इमामह, प्रकाशित मकतबा नूरिया रज़विया, सुक्कुर, 1/304 4. शरह अल-फिकह अल-अकबर मुल्ला अली कारी, फस्ल इल्म अल-तौहीद, प्रकाशित मुस्तफा अल-बाबी, मिस्र, पृ. 5

पृष्ठ 679/736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

[دائیں کالم کا خانہ] علی انه یرید المراء لیخجل صاحبہ لا اظهار الحق واللہ تعالٰی اعلم۔

[بائیں کالم کا خانہ] حکمت ہو کہ اُس نے مطلقاً اسے قدیم کہا حالانکہ اس کا انزال حادث ہے اھ اقول (میں کہتا ہوں) شاید امام صاحب رحمۃ اللہ علیہ اس کے ارادے سے آگاہ ہوں کہ اس کا مقصد اظہار نہیں بلکہ ریاکاری کے طور پر دوسرے ساتھی کو شرمندہ کرنا ہو واللہ تعالٰی اعلم (ت)

بلکہ محرر المذہب امام محمد رحمۃ اللہ تعالٰی نے حضرت امام اعظم وامام ابویوسف رضی اللہ تعالٰی عنہما سے روایت کی کہ بد مذہب کے پیچھے نماز اصلاً جائز نہیں۔ محقق علامہ کمال الدین بن الہمام فتح میں فرماتے ہیں:

[اندرونی جدول] - روی محمد عن ابی حنیفۃ وابی یوسف ان الصلاۃ خلف اهل الاهواء لاتجوز ۱۔ - امام محمد نے امام ابو حنیفہ اور امام ابویوسف دونوں سے روایت کیا کہ بد مذہب کے پیچھے نماز جائز نہیں (ت)

اسی میں روایت امام ابو یوسف لا یجوز الاقتداء بالمتکلم وان تکلم بحق ۲ (کلامی کے پیچھے نماز جائز نہیں اگر چہ وہ حق کے ساتھ متکلم ہو۔ ت) کی شرح میں امام ابو جعفر ہندوانی سے نقل کیا:

[نچلا اندرونی جدول] - یجوز ان یکون مراد ابی یوسف رحمۃ اللہ تعالٰی من یناظر فی دقائق علم الکلام انتهی ۳۔ - اقول: المناظرۃ فی دقائقہ لایزید علی بدعۃ او فسق وعلی کل یفید عدم الجواز خلف المبتدع کمالیس بخاف۔ - اس سے امام ابویوسف کی مراد وہ شخص ہے جو علم کلام کے دقائق میں مناظرہ کرے۔ انتہٰی۔ - اقول: (میں کہتا ہوں) علم کلام کے دقائق مناظرہ زیادہ سے زیادہ بدعت یا

فسق کا سبب ہے اور ہر صورت میں یہ واضح کر رہا ہے کہ بدعتی کے پیچھے نماز جائز نہیں، جیسا کہ مخفی نہیں (ت)

غیاث المفتی پھر مفتاح السعادۃ پھر شرح فقہ اکبر میں امام ثانی رحمۃ اللہ تعالٰی علیہ سے ہے:

لاتجوز خلف المبتدع ۴ (بدعتی کے پیچھے نماز جائز نہیں۔ت) اقول: وباللہ التوفیق جواز کبھی بمعنی صحت مستعمل ہوتا ہے تقول البیع عند اذان الجمعۃ یجوز ویکرہ ای یصح ویمنع (جیسے تو کہے جمعہ کی اذان کے وقت خرید وفروخت جائز اور مکروہ ہے یعنی صحیح مگر منع ہے۔ ت) اور گاہے بمعنی حلّت لاتجوز الصلاۃ

حواشی: ۱ فتح القدیر باب الامامۃ مطبوعہ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۱/ ۳۰۴ ۲ فتح القدیر باب الامامۃ مطبوعہ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۱/ ۳۰۴ ۳ فتح القدیر باب الامامۃ مطبوعہ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۱/ ۳۰۴ ۴ شرح الفقہ الاکبر لملا علی قاری فصل علم التوحید علی سائر العلوم مطبوعہ مصطفٰی البابی مصر ص ۵

Fatawa Razawiyyah Volume 6

"In usurped land, that is, it is not permissible even if valid." (As in, prayer in usurped land is not permissible, meaning not lawful, although it may be valid. - Translator's note). If we take the latter meaning here, especially since it is most common in actions, just as the former meaning is most common in contracts, as stated in Rad al-Muhtar etc. (As it is specified in Rad al-Muhtar etc. that in contracts, the first meaning is more frequent. - T). Then these narrations would not be contradictory to the previous ones, because 'makruh tahrimi' (prohibitively disliked) is also impermissible in this sense.

"And it is known that showing agreement is better than maintaining disagreement, and therefore they have stated that reconciliation between narrations should be made as much as possible, as in Ash-Shamiya - and Allah knows best."	It is an accepted fact that expressing agreement is better than keeping disagreement. That is why scholars have specified that wherever possible, harmony should be created between narrations, as in Fatawa Shami. And Allah Almighty knows best.

Second Proof

Apart from being misdirected non-conformists (ghair-muqallid), they are also open, fearless, and blatant sinners. Praying behind a dissolute sinner is 'makruh tahrimi' (prohibitively disliked), as we have established in our writing. "I say, and through this, reconciliation is achieved, and Allah Almighty is the grantor of success." (As we have proved in our writing. I say: Success is obtained from Allah Almighty and Allah Almighty alone is the Master of success. - T). In the first proof, some discourse on this issue and the text of Sagheri and Tahtawi have passed. Towards this, Imam Allama Zayla'i in 'Tabyin al-Haqa'iq Sharh Kanz al-Daqa'iq', Allama Hasan Shurunbulali in 'Sharh Nur al-Idah', and Allama Sayyid Ahmad Misri in 'Hashiya Maraqi al-Falah' have mentioned. This is also the implication of 'Fatawa Hujjah' and is derived from the reasoning of the honorable scholars, to the extent that scholars have clearly stated that if a slave, a villager, an illegitimate person, or a blind person is superior in knowledge, they should be made the Imam. However, a sinner (fasiq), even if he is the most knowledgeable of all, should not be made an Imam because Imamate is a position of greatness, while according to Sharia, he deserves humiliation. Summarized from 'Imdad al-Fattah':

"Leading the prayer by a sinful scholar is disliked because of his lack of concern for religion. Therefore, shaming him is religiously obligatory, so he should not be honored by being put forward for leadership. And if it is difficult to prevent him, one should move to another mosque for Friday and other prayers."	Leading the prayer by a sinful scholar is disliked because he does not respect religion. Therefore, shaming him is religiously required; hence he should not be honored by giving him the position of Imamate. And if it is difficult to stop him, then for Friday and other prayers, one should go to another mosque. (T)

1. Maraqi al-Falah with Hashiya al-Tahtawi, Chapter on explaining who is most deserving of leadership, published by Nur Muhammad Karkhana Tijarat-e-Kutub Karachi, p. 165.

"हड़पी हुई ज़मीन में, यानी यह हलाल नहीं है चाहे सही हो।" (जैसा कि हड़पी हुई ज़मीन में नमाज़ जायज़ नहीं है यानी हलाल नहीं है हालाँकि वह सही हो सकती है। - त)। अगर यहाँ बाद वाला अर्थ लिया जाए, विशेष रूप से जब यह कार्यों में सबसे आम है, ठीक वैसे ही जैसे अनुबंधों में पहला अर्थ सबसे आम है, जैसा कि रद अल-मुह्तार आदि में स्पष्ट किया गया है। (जैसा कि रद अल-मुह्तार आदि में यह स्पष्ट किया गया है कि अनुबंधों में पहला अर्थ अधिक प्रचलित है। - त)। तो ये वर्णन पिछले वर्णनों के विरोधाभासी नहीं होंगे, क्योंकि 'मक़रूहे तहरीमी' (गंभीर रूप से नापसंद) भी इस अर्थ में नाजायज़ है।

"और यह सर्वविदित है कि मतभेद बनाए रखने की तुलना में सहमति दिखाना बेहतर है, और इसलिए उन्होंने स्पष्ट किया है कि जहाँ तक संभव हो वर्णनों के बीच तालमेल बिठाया जाना चाहिए, जैसा कि अल-शामिया में है - और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है।"	यह एक स्वीकृत तथ्य है कि मतभेद को बनाए रखने की तुलना में सहमति व्यक्त करना बेहतर है। इसीलिए विद्वानों ने यह स्पष्ट किया है कि जहाँ तक संभव हो वर्णनों के बीच तालमेल बनाया जाना चाहिए, जैसा कि फ़तावा शामी में है। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

दूसरा प्रमाण

ग़ैर-मुक़ल्लिद और कुमार्गी होने के अलावा, वे खुलेआम और निडर पापी (फ़ासिक़) भी हैं। एक दुराचारी पापी के पीछे नमाज़ पढ़ना 'मक़रूहे तहरीमी' है, जैसा कि हमने अपने लेखन में सिद्ध किया है। "मैं कहता हूँ, और इसके माध्यम से तालमेल प्राप्त होता है, और अल्लाह तआला ही सफलता देने वाला है।" (जैसा कि हमने अपने लेखन में इसे सिद्ध किया है। मैं कहता हूँ: अल्लाह तआला से ही सफलता प्राप्त होती है और अल्लाह तआला ही सफलता का मालिक है। - त)। पहले प्रमाण में इस विषय पर कुछ चर्चा और स़ग़ीरी व तह़तावी का मूल पाठ गुज़र चुका है। और इसी ओर इमाम अल्लामा ज़ैला'ई ने 'तबीन अल-ह़क़ा'इक़ शरह़ कन्स अद-दक़ा'इक़' में, अल्लामा हसन शुरूनबुलाली ने 'शरह़ नूर अल-ईज़ाह़' में और अल्लामा सैयद अहमद मिस्री ने 'ह़ाशिया मराक़ी अल-फ़लाह़' में निर्देश दिया है। यही 'फ़तावा ह़ुज्जह़' का अर्थ है और प्रतिष्ठित विद्वानों के तर्क से यही निष्कर्ष निकलता है, यहाँ तक कि विद्वानों ने स्पष्ट रूप से कहा है कि यदि कोई गुलाम, देहाती, नाजायज़ संतान या अंधा व्यक्ति ज्ञान में श्रेष्ठ हो, तो उन्हें इमाम बनाया जाना चाहिए। लेकिन एक पापी

(फ़ासिक़), चाहे वह सबसे बड़ा विद्वान ही क्यों न हो, उसे इमाम नहीं बनाया जाना चाहिए क्योंकि इमामत एक गरिमापूर्ण पद है, जबकि शरीअत के अनुसार वह अपमान का पात्र है। 'इमदाद अल-फ़त्ताह़' का सारांश इस प्रकार है:

"पापी विद्वान का इमामत करना नापसंद है क्योंकि वह धर्म की परवाह नहीं करता है। इसलिए शरीअत के अनुसार उसका अपमान करना अनिवार्य है, अतः उसे इमामत के लिए आगे बढ़ाकर उसका सम्मान नहीं किया जाना चाहिए। और यदि उसे रोकना कठिन हो, तो जुमा और अन्य नमाज़ों के लिए किसी दूसरी मस्जिद में चले जाना चाहिए।"

पापी विद्वान की इमामत मक़रूह (नापसंद) है क्योंकि वह धर्म का सम्मान नहीं करता है। अतः शरीअत के अनुसार उसका अपमान करना आवश्यक है; इसलिए उसे इमामत का पद देकर उसका सम्मान नहीं किया जाना चाहिए। और यदि उसे रोकना कठिन हो, तो जुमा और अन्य नमाज़ों के लिए किसी दूसरी मस्जिद में चला जाना चाहिए। (त)

---

1. मराक़ी अल-फ़लाह़ साथ में ह़ाशिया अल-तह़तावी, इमामत के सबसे योग्य व्यक्ति के वर्णन का अध्याय, प्रकाशित: नूर मुहम्मद कारखाना तिज़ारत-ए-कुतुब कराची, पृष्ठ 165।

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

فی الارض المغصوبہ ای لاتحل وان صحت (جیسے کہ ارض مغصوبہ میں نماز جائز نہیں یعنی حلال نہیں اگر چہ صحیح ہے۔ ت) اگر یہاں معنی اخیر مراد لیں لاسیما جبکہ افعال میں اکثر وہی ہے کما ان الاکثر فی العقود الاول کما صرح بہ فی ردالمحتار وغیرہ (جیسا کہ عقود میں اول معنی اکثر ہے ردالمحتار وغیرہ میں اس پر تصریح ہے۔ ت) تو یہ روایات بھی سابق کے منافی نہ ہوں گی کہ مکروہ تحریمی بھی بایں معنی ناجائز ہے،

ومعلوم ان ابداء الوفاق اولی ابقاء الخلاف ولذا صرحوا بأنہ یوفق بین الروایات مھما امکن کما فی الشامیۃ۔ واللہ تعالی اعلم

یہ بات مسلمہ ہے کہ اتفاق کا اظہار اختلاف کو باقی رکھنے سے اولٰی ہے اسی لئے علماء نے اس بات کی تصریح کی ہے کہ جہاں تک ممکن ہو روایات کے درمیان موافقت پیدا کی جائے جیسا کہ فتاوٰی شامی میں ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم

دلیل دوم

غیر مقلد بد مذہبی کے علاوہ فاسق معلن بیباک مجاہر بھی ہیں اور فاسقِ متہتک کے پیچھے نماز مکروہ تحریمی، کما اثبتناہ فی تحریرنا ذلک اقول و بہ یحصل التوفیق واللہ تعالٰی ولی التوفیق (جیسا کہ ہم نے اپنی تحریر میں اسے ثابت کیا ہے اقول : (میں کہتا ہوں) اللہ تعالٰی سے توفیق حاصل ہو جاتی ہے اور اللہ تعالٰی ہی توفیق کا مالک ہے۔ ت) دلیل اول میں اس مسئلے پر بعض کلام اور صغیری و طحطاوی کا نص گزرا اور اس طرف امام علامہ زیلعی نے تبیین الحقائق شرح کنز الدقائق اور علامہ حسن شرنبلالی نے شرح نور الایضاح اور علامہ سید احمد مصری نے حاشیہ مراقی الفلاح میں ارشاد فرمایا اور یہی فتاوٰی حجہ کا مفاد اور تعلیل مشائخ کرام سے مستفاد یہاں

تک کہ علماء نے تصریح فرمائی اگر غلام یا گنوار یا حرامی یا اندھا عالم میں افضل ہوں تو انہیں کو امام کیا چاہئے مگر فاسق اگرچہ سب سے زیادہ علم والا ہو امام نہ کیا جائے کہ امامت میں اس کی عظمت اور وہ شرعاً مستحق اہانت ، ملخص امداد الفتاح میں ہے:

کرہ امامۃ الفاسق العالم لعدم اھتمامہ بالدین فتجب اھانتہ شرعاً فلا یعظم کرتا تو شرعاً اس کی اہانت لازم ہے لہذا امامت کا منصب دے بتقدیمہ للامامۃ واذا تعذر منعہ ینتقل عنہ الی غیر مسجدہ للجمعۃ وغیرھا[1]

فاسق عالم کی امامت مکروہ ہے کیونکہ وہ دین کا احترام نہیں تو جمعہ اور دیگر نمازوں کے لئے کسی دوسری مسجد چلا جانا چاہئے (ت)

---

1 مراقی الفلاح مع حاشیۃ الطحطاوی فصل فی بیان الاحق بالامامۃ مطبوعہ نور محمد کارخانہ تجارت کتب کراچی ص ۱۶۵

Fatawa Rizvia Volume VI Sidi Ahmad Misri states in its marginalia: His statement: "Thus, his humiliation is Shari'i obligatory, so he should not be honored by being prioritized for the position of Imamate." Al-Zayla'i followed this, and its implication is that prioritizing a transgressor (fasiq) for Imamate is prohibitively disliked (Makruh Tahrimi). (T)

And it is stated in the marginalia of Sharh 'Ala'i: As for the transgressing great scholar, he should not be prioritized because in prioritizing him there is his glorification, whereas their Shari'i humiliation has become mandatory for the people. The fundamental reason for this is that glorifying a transgressor is prohibitively disliked (Makruh Tahrimi). [Abu al-Sa'ud, end quote]. (T)

Allama Muhaqqiq Halbi states in Ghuniya: A scholar is better for prioritization (Imamate) when he avoids major/shameless sins, even if there is someone more pious present there; this is mentioned in 'al-Muhit'. And if both are equal in knowledge and righteousness but one of them is a better reciter (Qari), then if people prioritize the other, they have done wrong but will not be sinners. This is because the wrongdoing is due to abandoning a Sunnah, and the absence of sin is because they did not abandon an obligatory (Wajib) act since they appointed a righteous man. It is stated similarly in 'Fatawa al-Hujjah', and it also contains an indication that if they prioritized a transgressor, they would be sinners, based on the fact that the dislike of prioritizing him is prohibitive (Tahrimi) due to his disregard [for religion].

1. Hashiyat al-Tahtawi 'ala Maraqi al-Falah, Section on clarifying who is most entitled to Imamate, published by Nur Muhammad Karkhana Tijarat Kutub Karachi, p. 165.
2. Hashiyat al-Tahtawi 'ala al-Durr al-Mukhtar, Chapter on Imamate, published by Dar al-Ma'rifah Beirut, 1/223.

फ़तावा रज़विया जिल्द शशम (छठा) सीदी अहमद मिसरी इसके हाशिये (टिप्पणी) में फरमाते हैं: उनका कथन: "चूँकि उसका अपमान शरीयत के अनुसार अनिवार्य है, इसलिए इमामत का पद देकर उसका सम्मान नहीं किया जाना चाहिए।" अल-ज़ैलई ने इसी का अनुसरण किया है, और इसका अर्थ यह है कि एक फासिक (पापी/अवज्ञाकारी) को इमामत के लिए आगे करना मकरूह तहरीमी (निषिद्ध के करीब नापसंद) है। (त)

और 'शराह अलाई' के हाशिये में फरमाते हैं: एक फासिक बड़े विद्वान को आगे नहीं बढ़ाया जाना चाहिए क्योंकि उसे आगे बढ़ाने में उसका सम्मान है, जबकि शरीयत के अनुसार लोगों पर ऐसे लोगों का अपमान करना अनिवार्य है। इसका मुख्य कारण यह है कि फासिक का सम्मान करना मकरूह तहरीमी है। [अबू अल-सऊद, समाप्त]। (त)

अल्लामा मुहक्किक हलबी 'गुनिया' में फरमाते हैं: विद्वान (आलिम) इमामत के लिए प्राथमिकता के योग्य उस समय है जब वह बड़े/निर्लज्ज पापों से बचता हो, भले ही वहां उससे अधिक धर्मनिष्ठ व्यक्ति मौजूद हो; इसका उल्लेख 'अल-मुहीत' में है। और यदि दोनों ज्ञान और धर्मनिष्ठा में बराबर हों लेकिन उनमें से एक बेहतर कारी (क़ुरान पढ़ने वाला) हो, तो ऐसी स्थिति में यदि लोगों ने दूसरे को आगे कर दिया, तो उन्होंने बुरा किया लेकिन वे पापी नहीं होंगे। ऐसा इसलिए है क्योंकि बुराई सुन्नत को छोड़ने के कारण है, और पाप की अनुपस्थिति इसलिए है क्योंकि उन्होंने किसी अनिवार्य (वाजिब) कार्य को नहीं छोड़ा क्योंकि उन्होंने एक नेक व्यक्ति को ही इमाम बनाया है। 'फ़तावा अल-हुज्जाह' में भी इसी तरह उल्लेख है, और इसमें इस बात का भी संकेत है कि यदि उन्होंने किसी फासिक को आगे कर दिया होता तो वे गुनहगार होते, इस आधार पर कि उसे आगे बढ़ाने की नापसंदगी उसकी धर्म के प्रति बेपरवाही के कारण मकरूह तहरीमी है।

1. हाशियत अत-तहातावी अला मराक़ी अल-फ़लाह, इमामत के हक़दार के वर्णन पर अनुभाग, नूर मोहम्मद कारखाना तिज़ारत कुतुब कराची द्वारा प्रकाशित, पृ. 165।
2. हाशियत अत-तहातावी अला अल-दुर्र अल-मुख्तार, इमामत का अध्याय, दारुल मारिफ़त बेरुत द्वारा प्रकाशित, 1/223।

पेज 736 का 681

فتاوٰی رضویہ جلد ششم سیدی احمد مصری اس کے حاشیہ میں فرماتے ہیں: قولہ فتجب اھانتہ شرعاً فلا یعظم بتقدیمہ للامامۃ تبع فیہ الزیلعي ومفادہ کون الکراھۃ في الفساق تحریمیۃ ۱ - اس کا قول "پس اس کی اہانت واجب ہے تو امامت کا منصب دے کر اس کی تعظیم نہ کی جائے" زیلعی نے اسی کی اتباع کی ہے اور اس کی وجہ یہ ہے کہ فاسق کی تقدیم (امامت) مکروہ تحریمی ہے (ت)

اور حاشیہ شرح علائی میں فرماتے ہیں: اما الفاسق الا علم فلا یقدم لان فی تقدیمہ تعظیمہ وقد وجب علیھم اھانتہ شرعاً ومفاد ھذا کراھۃ التحریم فی تقدیمہ اہ ابو السعود ۲ - انتہی فاسق بڑے عالم کو مقدم نہ کیا جائے کیونکہ اس کی تقدیم میں اس کی تعظیم ہے حالانکہ شرعاً لوگوں پر اس کی اہانت لازم ہے اس کی بنیادی وجہ یہی ہے کہ تعظیم فاسق مکروہ تحریمی ہے اہ ابو السعود انتہٰی (ت)

علامہ محقق حلبی غنیہ میں فرماتے ہیں: العالم اولی بالتقدیم اذ کان یجتنب الفواحش وان کان غیرہ اورع منہ ذکرہ فی المحیط ولو استویا فی العلم والصلاح واحدھما اقرأ فقدموا الآخر اساءوا ولا یأثمون فالا ساءۃ لترک السنۃ وعدم الاثم لعدم ترک الواجب لا نھم قدموا رجلاً صالحاً کذا فی فتاوی الحجہ وفیہ اشارۃ الی انھم لو قدموا فاسقاً یأثمون بناء علی ان کراھۃ تقدیمہ کراھۃ تحریم لعدم اعتنائہ عالم تقدیم (امامت) کے لئے بہتر اس وقت ہے جو وہ فاحش گناہوں سے بچنے والا ہو اگرچہ وہاں اس سے زیادہ کوئی صاحب تقوٰی موجود ہو، اس کا ذکر محیط میں ہے اور اگر دونوں علم و صلاح میں برابر ہوں مگر ایک اچھا قاری ہے اس صورت میں اگر لوگوں نے دوسرے کو مقدم کر دیا تو برا کیا مگر گناہ گار نہ ہوں گے کہ اساءت ترک سنت کی وجہ سے اور عدم گناہ واجب کو ترک نہ کرنے کی وجہ سے ہے کیونکہ انہوں نے صالح شخص کو ہی امام بنایا ہے، فتاوٰی حجہ میں اسی طرح ہے اور اس میں اس طرف بھی اشارہ ہے کہ اگر انہوں نے کسی فاسق کو مقدم کر دیا تو گنہگار ہوں گے

۱ حاشیة الطحطاوی علی مراقی الفلاح فصل فی بیان الاحق بالامامة، مطبوعہ نور محمد کارخانہ تجارت کتب کراچی، ص ۱۶۵ ۲ حاشیة الطحطاوی علی الدر المختار باب الامامة مطبوعہ دارالمعرفہ بیروت ۱/ ۲۲۳

Fatawa Rizvia, Volume 6

[Top Column - Arabic Text]: Regarding his religious matters and his negligence in fulfilling its requirements, it is not improbable that he might neglect some conditions of prayer or perform an act that invalidates it. Rather, this is more likely considering his open sinfulness. Therefore, prayer behind him is not permissible at all according to Malik, and it is a narration from Ahmad, etc.

[Top Column - Urdu Text]: On this basis, putting him forward (for imamat/leadership) is prohibitively disliked (Makruh Tahrimi) because he does not care about religious matters and is lazy in fulfilling religious requirements. Therefore, it is also not far-fetched that he might omit some condition of prayer or perform an action contrary to prayer; rather, given his sinfulness, this is most likely. For this reason, according to Imam Malik, praying behind him is not permissible at all, and one narration from Imam Ahmad bin Hanbal says the same. (T)

[Main Body Paragraph - Urdu Text]: As for the fact that the non-conformists (Ghair-Muqallid) are open sinners, who doesn't know this clearly? Generally, their minor and major ones spend their time insulting and belittling the Imams of Shariah, scholars of the nation, and saints of the community (may Allah Almighty have mercy on them). Insulting and reviling common Muslims is their hourly routine. Whoever knows it, knows it; and whoever doesn't know it should now look at their pamphlets or listen to their talk—God forbid you should hear their flowery speeches—especially when they are alone and find time for 'when they are alone together' (referring to a Quranic verse), they reveal themselves. Or they should see what some people of truth have quoted from their words in their books. This humble servant (may Allah Almighty forgive him) does not like to bring those accursed nonsense words onto his tongue or pen, nor would he quote them. So, the primary sin among them is insulting the people of Islam. The radiant Master of the World, peace and blessings of Allah be upon him, says in a famous Hadith:

[Bottom Section - Arabic Text]: Insulting a Muslim is an act of sin (fusuq). 2- Narrated by Ahmad, al-Bukhari, Muslim, at-Tirmidhi, an-Nasa'i, Ibn Majah, and al-Hakim from Ibn Mas'ud, and at-Tabarani in al-Kabir from him, and from Abdullah bin Mughaffal and from 'Amr.

[Bottom Section - Urdu Text]: Insulting a Muslim is sinfulness. This was narrated by Imam Ahmad, Bukhari, Muslim, Tirmidhi, Nasa'i, Ibn Majah, and Hakim from Hazrat

Ibn Mas'ud (may Allah be pleased with him); by Tabarani in Kabir from him and from Hazrat Abdullah bin Mughaffal (may Allah be pleased with him) and from Hazrat 'Amr.

[Footnotes]: 1. Ghunyat al-Mustamli Sharh Munyat al-Musalli, Chapter on Imamat, etc., published by Suhail Academy, Lahore, p. 513. 2. Sahih al-Bukhari, Book of Manners, Chapter on Prohibiting Insults and Curses, published by Qadimi Kutub Khana, Karachi, 2/937; Sahih Muslim, Chapter explaining the Prophet's (peace and blessings be upon him) saying 'Insulting a Muslim is sinfulness', etc., published by Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/57; Musnad Ahmad bin Hanbal from Musnad Abdullah ibn Mas'ud (may Allah be pleased with him), published by Dar al-Fikr, Beirut, 1/333, 411, 385; Al-Mu'jam al-Kabir, narrated from 'Amr ibn Nu'man bin Muqarrin, published by Maktaba Faisalia, Beirut, 17/39.

फ़तावा रज़विया, जिल्द 6

[शीर्ष स्तंभ - अरबी पाठ]: उसके धार्मिक मामलों और इसकी आवश्यकताओं को पूरा करने में उसकी लापरवाही के बारे में, यह असंभव नहीं है कि वह नमाज़ की कुछ शर्तों की उपेक्षा करे या ऐसा कोई कार्य करे जो नमाज़ को अमान्य कर दे। बल्कि, उसकी खुल्लम-खुल्ला पापपूर्णता को देखते हुए ऐसा होने की अधिक संभावना है। इसलिए, इमाम मालिक के अनुसार उसके पीछे नमाज़ बिल्कुल भी जायज़ नहीं है, और इमाम अहमद से भी एक रिवायत यही है, इत्यादि।

[शीर्ष स्तंभ - उर्दू पाठ]: इस आधार पर कि उसे आगे करना (इमामत के लिए) मकरूह-ए-तहरीमी है क्योंकि वह धार्मिक मामलों की परवाह नहीं करता और धर्म की आवश्यकताओं को पूरा करने में आलस्य करता है। इसलिए यह भी दूर की बात नहीं कि वह नमाज़ की कोई शर्त ही छोड़ दे या ऐसा कोई काम करे जो नमाज़ के विरुद्ध हो, बल्कि उसके फ़िस्क (पापपूर्णता) को देखते हुए ऐसा करना ही अधिक संभावित है। इसी कारण से इमाम मालिक के नज़दीक उसके पीछे नमाज़ जायज़ ही नहीं, इमाम अहमद बिन हंबल से भी एक रिवायत यही है। (त)

[मुख्य पैराग्राफ - उर्दू पाठ]: रहा यह कि गैर-मुकल्लिद खुल्लम-खुल्ला गुनहगार हैं, क्योंकि यह बात स्वयं स्पष्ट है और इसे कौन नहीं जानता कि उनके छोटे-बड़े आम तौर पर शरीयत के इमामों, मिल्लत के विद्वानों और उम्मत के औलिया (अल्लाह उन पर रहम फरमाए) की तौहीन और उन पर कटाक्ष करने में समय बिताते हैं। और आम मुसलमानों को अपशब्द कहना और गाली देना तो उनका हर समय का वज़ीफ़ा (नियमित कार्य) है। जिसने जाना उसने जाना और जिसने नहीं जाना वह अब उनके रिसालों (पुस्तिकाओं) को देखे, बातें सुने—विशेष रूप से उस समय के लच्छेदार शब्द अल्लाह न सुनाए—जब वे आपस में अकेले होते हैं और 'इज़ा ख़लौ' (जब वे अकेले होते हैं) का समय पाकर आपस में खुल जाते हैं। या सत्य मार्ग वाले लोगों ने जो अपनी रचनाओं में उनके शब्दों को उनकी किताबों से उद्धृत किया है वही देख ले। फ़कीर (लेखक), अल्लाह उसे माफ़ फरमाए, उन कोपभाजन बकवासों को ज़बान और कलम पर लाना पसंद नहीं करता और न ही उद्धृत करता है। तो उनमें प्राथमिक फ़िस्क (पाप) इस्लाम के लोगों को गाली देना है। हुज़ूर पुर नूर सैय्यदे आलम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम प्रसिद्ध हदीस में फरमाते हैं:

[नीचे का खंड - अरबी पाठ]: मुसलमान को गाली देना पाप (फिसुक़) है। 2- इसे अहमद, बुखारी, मुस्लिम, तिरमिज़ी, नसाई, इब्न माजह और हाकिम ने इब्न मसूद से, और तबरानी ने अल-कबीर में उनसे और अब्दुल्ला बिन मुग़फ़्फ़ल से और अम्र से रिवायत किया है।

[नीचे का खंड - उर्दू पाठ]: मुसलमान को गाली देना फ़िस्क (गुनाह) है। इसे इमाम अहमद, बुखारी, मुस्लिम, तिरमिज़ी, नसाई, इब्न माजह और हाकिम ने हज़रत इब्न मसूद (रज़ियल्लाहु अन्हु) से, तबरानी ने 'कबीर' में उनसे और हज़रत अब्दुल्ला बिन मुग़फ़्फ़ल (रज़ियल्लाहु अन्हु) से और हज़रत अम्र से रिवायत किया है।

[फ़ुटनोट्स]: 1. ग़ुन्यतुल मुस्तमली शरह मुन्यतुल मुसल्ली, फ़स्ल इमामत इत्यादि, प्रकाशक सुहैल अकादमी लाहौर, पृष्ठ 513। 2. सहीह बुखारी, किताबुल अदब, बाब गाली देने और लानत करने की मनाही, प्रकाशक कदीमी कुतुब खाना कराची 2/937; सहीह मुस्लिम, नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के इस कथन के वर्णन का बाब कि मुसलमान को गाली देना फ़िस्क है इत्यादि, प्रकाशक कदीमी कुतुब खाना कराची, 1/57; मुसनद अहमद बिन हंबल, मुसनद अब्दुल्ला बिन मसूद (रज़ियल्लाहु अन्हु) से, प्रकाशक दारुल फिक्र बेरुत 1/333, 411, 385; अल-मुअजमुल कबीर, अम्र बिन नोमान बिन मुक़र्रिन से रिवायत, प्रकाशक मकतबा फैसलिया बेरुत 17/39।

[اوپری کالم - عربی متن]: بامور دینه وتساهله فی الاتیان بلوازمه فلا یبعد منه الاخلال ببعض شروط الصلاۃ وفعل ما ینا فیها بل هو الغالب بالنظر الی فسقه ولذا لم تجز الصلاۃ خلفه اصلا عند مالك وروایة عن احمد الخ

[اوپری کالم - اردو متن]: اس بنا پر کہ اس کی تقدیم (امامت) مکروہ تحریمی ہے کیونکہ وہ امورِ دینی کی پروا نہیں کرتا اور لوازمات دین کو بجالانے میں کاہلی کرتا ہے لہذا یہ بھی بعید نہیں کہ وہ نماز کی کوئی شرط ہی چھوڑ دے یا ایسا فعل کرے جو نماز کے منافی ہو بلکہ اس کے فسق کے پیش نظر ایسا کرنا اغلب ہے اسی وجہ سے امام مالک کے نزدیک اس کے پیچھے نماز جائز ہی نہیں، امام احمد بن حنبل سے بھی ایک روایت یہی ہے (ت)

[درمیانی عبارت - اردو متن]: رہا یہ کہ غیر مقلد فساق مجاہر ہیں کیونکہ یہ خود واضح و بین کون نہیں جانتا کہ ان کے اصاغر عموماً و دولتاً ائمہ شریعت و علمائے ملت واولیائے امت رحمہم اللہ تعالٰی کی طعن و توہین میں گزارتے ہیں اور عام مسلمین کی سب وشتم توان کا وظیفہ ہر ساعت ہے جس نے جانا اس نے جانا اور جس نے نہ جانا وہ اب ان کے رسائل دیکھے، باتیں سنے خصوصاً اس وقت کے لچھے خدا نہ سنوائے۔ جب کہ باہم تنہا ہوتے ہیں اور اذا خلوا کا وقت پاکر آپس میں کھلتے ہیں یا بعض اہل حق نے جو اپنی تصانیف میں ان کے کلمات ان کی تواليف سے نقل کئے وہی دیکھے فقیر غفر اللہ تعالٰی لہ ان ہفواتِ مغضوبہ کا زبان و قلم پر لانا پسند نہیں کرتا اور نہ نقل کرلاتا ہے تو ان میں فسقِ اول سب و شتمِ اہلِ اسلام ہے حضور پر نور سید عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم حدیث مشہور میں فرماتے ہیں:

[نیچلا حصہ - عربی متن]: سباب المسلم فسوق 2- اخرجه احمد والبخاری ومسلم والترمذی والنسائی وابن ماجة والحاکم عن ابن مسعود و الطبرانی فی الکبیر عنہ وعن عبداللہ بن مغفل وعن عمرو

[نیچلا حصہ - اردو متن]: مسلمان کو سب وشتم کرنا فسق ہے۔ اسے امام احمد، بخاری، مسلم، ترمذی، نسائی، ابن ماجہ اور حاکم نے حضرت ابن مسعود رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے طبرانی نے کبیر میں ان سے اور حضرت عبداللہ بن مغفل رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے اور حضرت عمرو

[حواشی]: 1 غنیۃ المستملی شرح منیۃ المصلی فصل فی الامامۃ الخ مطبوعہ سہیل اکیڈمی لاہور ص ۵۱۳ 2 صحیح البخاری کتاب الادب باب ماینهی عن السباب واللعن مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۲ /۹۳۷، صحیح مسلم، باب بیان قول النبی صلی اللہ علیہ وسلم سباب المسلم فسوق الخ مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی، ۱ /۵۷، مسند احمد بن حنبل از مسند عبداللہ ابن مسعود رضی اللہ عنہ مطبوعہ دار الفکر بیروت ۱ /۳۳۳، ۴۱۱، ۳۸۵، المعجم الکبیر مروی از عمروبن نعمان بن مقرن مطبوعہ مکتبہ فیصلیہ بیروت ۱۷ /۳۹

Fatawa Razawiyya Volume Six

...from Nu'man bin Muqarrin, Ibn Majah narrated from Hazrat Abu Huraira (may Allah be pleased with him) and Hazrat Sa'ad bin Abi Waqqas (may Allah be pleased with him), and Dar Qutni narrated in "Al-Afrad" from Hazrat Jabir bin Abdullah (may Allah be pleased with them all). (T)

Second Sin (Fisq Dhum): Defaming scholars. In Al-Mu'jam al-Kabir with a good (hasan) chain, narrated from Abu Umama (may Allah be pleased with him), the Messenger of Allah (peace be upon him) says:

Arabic: "Three people's rights are not belittled except by a hypocrite: an elderly person in Islam, a person of knowledge, and a just leader." Urdu translation: "There are three people whom only a hypocrite would belittle: first, one who has grown old in Islam; second, a scholar; third, a just leader."

Ahmad narrated with a good chain (and the wording is his), and Tabarani and Hakim narrated from Ubada bin Samit (may Allah be pleased with him) that the Messenger of Allah (peace be upon him) says:

Arabic: "He is not of my nation who does not respect our elders, show mercy to our young ones, and recognize the rights of our scholars." Urdu translation: "He is not from my Ummah who does not respect the elders of the Muslims, show mercy to their young, and recognize the right of the scholar."

In Musnad al-Firdous, it is narrated from Hazrat Abu Dharr (may Allah be pleased with him) that the Messenger of Allah (peace be upon him) says:

Arabic: "The scholar is the authority of Allah on earth; so whoever insults him has indeed been destroyed." Urdu translation: "A scholar is Allah's authority on His earth; so he who insults him shall be destroyed. We seek refuge with Allah Almighty."

Third Sin (Fisq Som): General enmity towards the people of Arab and Hijaz. The prejudice they hold against them is well known to them.

Arabic: "Hatred has already appeared from their mouths, and what their breasts conceal is greater." Urdu translation: "Enmity is evident from their words, and that (hatred and malice) which they hide in their hearts is even greater. (T)"

And besides their opposition to religion, repeatedly the fatwas of the Arab scholars regarding their misguidance and humiliation have come, and their co-religionists

receiving humiliations and punishments many times, the story of which is famous among both the elite and the general public.

---

1. Al-Mu'jam al-Kabir, narrated by Abu Umamah al-Bahili, published by Al-Maktaba al-Faysaliya, Beirut, 8/238.
2. Musnad Ahmad bin Hanbal, Hadith of Ubada bin Samit, published by Dar al-Fikr, Beirut, 5/323.
3. Kanz al-Ummal, with reference to Musnad al-Firdous from Abu Dharr, Hadith 37286, Book of Knowledge, published by Mu'assasat al-Risala, Beirut, 10/134.
4. Al-Quran 3/118

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

...नुमान बिन मुक़र्रिन से इब्न माजा ने हज़रत अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) और हज़रत साद बिन अबी वक़्क़ास (रज़ियल्लाहु अन्हु) से, और दार क़ुत्नी ने 'अल-अफ़राद' में हज़रत जाबिर बिन अब्दुल्ला (रज़ियल्लाहु अन्हुम अजमईन) से रिवायत किया है। (त)

द्वितीय अनाचार (फ़िस्क़ दुम): उलेमा (विद्वानों) की निंदा। अल-मुजम अल-कबीर में हसन सनद के साथ, अबू उमामा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत है कि हुज़ूर सैयदे आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

अरबी: "तीन व्यक्ति ऐसे हैं जिनके अधिकारों को केवल एक मुनाफ़िक़ (पाखंडी) ही कम समझेगा: एक वह जो इस्लाम में बूढ़ा हुआ हो, दूसरा ज्ञान का धनी (विद्वान), और तीसरा न्यायप्रिय शासक।" उर्दू अनुवाद: "तीन व्यक्ति ऐसे हैं जिनकी तौहीन केवल मुनाफ़िक़ ही करेगा: पहला वह जो इस्लाम में बुढ़ापे को पहुँचा, दूसरा विद्वान, तीसरा न्यायप्रिय इमाम।"

अहमद ने हसन सनद के साथ (और ये शब्द उन्हीं के हैं), और तबरानी और हाकिम ने उबादा बिन सामित (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया कि हुज़ूर सैयदे आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

अरबी: "वह मेरी उम्मत में से नहीं जो हमारे बड़ों का सम्मान न करे, हमारे छोटों पर दया न करे और हमारे विद्वानों के अधिकारों को न पहचाने।" उर्दू अनुवाद: "मेरी उम्मत से नहीं है वह जो मुसलमानों के बड़ों की ताज़ीम न करे और उनके छोटों पर रहम न करे और विद्वान का हक़ न पहचाने।"

मसनद अल-फिरदौस में हज़रत अबू ज़र (रज़ियल्लाहु अन्हु) से है कि हुज़ूर पुरनूर सैयदे आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

अरबी: "विद्वान पृथ्वी पर अल्लाह की सत्ता है, अतः जो कोई उसमें गिर गया (अपमान किया) वह नष्ट हो गया।" उर्दू अनुवाद: "विद्वान अल्लाह की सल्तनत है उसकी ज़मीन में, तो जो उसकी शान में गुस्ताखी करे हलाक हो जाए। और अल्लाह तआला की पनाह।"

तृतीय अनाचार (फ़िस्क़ सोम): अरब और हिजाज़ के लोगों के प्रति सामान्य शत्रुता। उनके साथ जो पक्षपात है, वह इसे अच्छी तरह जानते हैं,

अरबी: "शत्रुता उनके मुँह से ज़ाहिर हो चुकी है और जो उनके सीने छिपाए हुए हैं वह और भी बड़ा है।" उर्दू अनुवाद: "बैर उनकी बातों से झलक उठा, वह (क्रोध और विद्वेष) जो सीनों में छुपाए हैं, वह बड़ा है। (त)"

और मज़हब की मुख़ालिफ़त (विरोध) के अलावा बार-बार अरब के उलेमा के फ़तवे उनकी गुमराह करने और अपमानित करने के बारे में आए हैं, और बार-बार उनके हम-मज़हबों का अपमान और सज़ाएँ पाना, जिसका वृत्तांत ख़ास और आम लोगों में प्रसिद्ध है।

---

1. अल-मुजम अल-कबीर, अबू उमामा अल-बाहीली से रिवायत, अल-मकतबा अल-फ़ैसलिया, बेरूत, 8/238।
2. मसनद अहमद बिन हंबल, हदीस उबादा बिन सामित, दारुल फ़िक्र, बेरूत, 5/323।
3. कंजुल उम्माल, मसनद अल-फिरदौस के हवाले से अबू ज़र से, हदीस 37286, इल्म की किताब, मुअस्सासतुर रिसाला, बेरूत, 10/134।
4. अल-क़ुरान 3/118

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

بن النعمان بن مقرن و۴۹ ابن ماجة وعن ابی هریرة وعن ۵۰ سعد بن ابی وقاص و ۵۱ الدارقطنی فی الافراد عن جابر بن عبداللہ رضی اللہ تعالٰی عنهم اجمعین ۔ بن نعمان بن مقرن سے ابن ماجہ نے حضرت ابوہریرہ رضی اللہ تعالٰی عنہ اور حضرت سعد بن ابی وقاص رضی اللہ تعالٰی عنہ سے دار قطنی نے افراد میں حضرت جابر بن عبداللہ رضی اللہ تعالٰی عنہم اجمعین سے روایت کیا ہے (ت)

فسق دوم : طعن علماء، طبرانی کبیر میں بسند حسن ۵۲ ابوامامہ رضی اللہ تعالٰی عنہ سے راوی حضور سید عالم صلی اللہ علیہ وسلم فرماتے ہیں :

ثلثة لا یستخف بحقهم الامنافق ذو الشیبة فی الاسلام ذوالعلم وامام مقسط ۔ ۱ تین شخص ہیں جن کی تحقیر نہ کرے گا مگر منافق ایک وہ جسے اسلام میں بڑھاپا آیا ، ۲ دوسرا ذی علم ، ۳تیسرا امام عادل۔

۵۳ احمد بسند حسن واللفظ لہ اور طبرانی و حاکم عباده بن صامت رضی اللہ تعالٰی عنہ سے راوی حضور سید عالم صلی اللہ علیہ وسلم فرماتے ہیں :

لیس من امتی من لم یبجل کبیرنا و یرحم صغیرنا ویعرف لعالمنا ۲۔ میری امت سے نہیں جو مسلمانوں کے بڑے کی تعظیم اور ان کے چھوٹے پر رحم نہ کرے اور عالم کا حق نہ پہچانے۔

۵۴ مسند الفردوس میں حضرت ابو ذر رضی اللہ تعالٰی عنہ سے ہے حضور پر نور سید عالم صلی اللہ علیہ وسلم فرماتے ہیں :

العالم سلطان اللہ فی الارض فمن وقع فیه فقد هلك ۳ ۔ والعیاذ باللہ تعالٰی۔ عالم اللہ کی سلطنت ہے اس کی زمین میں ، تو جو اس کی شان میں گستاخی کرے ہلاک ہو جائے۔

فسق سوم : عداوت عامہ اہل عرب و حجاز انہیں جو تعصب ان کے ساتھ ہے یہی خوب جانتے ہیں، قَدْ بَدَتِ الْبَغْضَاءُ مِنْ اَفْوَاهِهِمْ وَمَا تُخْفِیْ صُدُوْرُهُمْ اَكْبَرُ ۴ بیر ان کی باتوں سے جھلک اٹھا وہ (غیظ و عناد) جو سینوں میں چھپائے ہیں، وہ بڑا ہے۔ (ت)

اور اس کی مخالفت مذہب ہی کے علاوہ بار بار بنکر ارمائے عرب کے فتاوے ان کی تضلیل و تذلیل میں آنا اور بکرات و مرات کے ہم مذہبوں کا ذلتیں اور سزائیں پانا جس کی حکایت خواص و عوام میں مشہور و

---

۱ المعجم الکبیر مروی ابو امامہ باہلی مطبوعہ المکتبہ الفیصلیہ بیروت ۸/ ۲۳۸ ۲ مسند احمد بن حنبل حدیث عبادہ بن الصامت مطبوعہ دارالفکر بیروت ۵/ ۳۲۳ ۳ کنز العمال بحوالہ مسند الفردوس عن ابی ذر حدیث ۳۷۲۸۶ کتاب العلم مطبوعہ موسسۃ الرسالۃ بیروت ۱۰/ ۱۳۴ ۴ القرآن ۳/ ۱۱۸

Fatawa Ridawiyya Volume 6

It has been some time since five of their schools, operating under the name of 'Muhajir' (migrant), were established there and tried to spread their influence. As soon as their true nature was revealed, they were punished and expelled. Upon this, their sympathizers said that the people of the holy cities (Haramain), by expelling the 'Muhajir', have, God forbid, achieved "Sawad al-Wajh fi al-Darayn" (disgrace in both worlds). However, besides other things, these disrespectful fools did not even realize that moving from one land of Islam to another land of Islam is not migration ('hijrat'); this act is 'mujawarat' (residing nearby), and 'mujawarat' itself is 'makruh tahrimi' (prohibitively disliked), except for certain friends of Allah (Awliya), as we have researched by the grace of Allah Almighty in 'Al-Ataya al-Nabawiyya fi al-Fatawa al-Ridawiyya'. Thus, those claimants of excellence and perfection were sinful in this act as well, especially when they intended to spread innovations (bid'ah) there. Allah Almighty says:

"And whoever intends therein [in Mecca] any deviation [from the right path] by wrongdoing - We will make him taste of a painful punishment." (1) Whoever intends any deviation by way of wrongdoing in Mecca the Great, We shall make them taste a painful punishment.

And it is a recent matter that their 'Imam of the Age', whom these people used to call 'Sheikh al-Kull fi al-Kull' (the ultimate authority), went for Hajj carrying letters of recommendation from the commissioners of Delhi and Bombay due to fear of Arab Muslims. Ask him what happened there, if he speaks truthfully; otherwise, hundreds of attendees and observers are present, and the posters printed in Mecca itself have gained fame city by city. In short, no one can deny that they harbor severe hatred and enmity towards all the dignitaries and scholars of Arabia and Hejaz. In Tabarani's Mu'jam al-Kabir, with a good and authentic chain, narrated from Hazrat Abdullah ibn Abbas (may Allah be pleased with them), the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Hatred of the Arabs is hypocrisy" (2) - (Whoever bears enmity against the people of Arabia is a hypocrite).

Fourth transgression: Furthermore, this enmity leads to insults and abuse, an example of which we have written above, and (3) in Bayhaqi's Shu'ab al-Iman, narrated from the Leader of the Believers, Hazrat Umar Farooq the Great (may Allah be pleased with him), the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said:

"Whoever abuses the Arabs, they are the polytheists." (3) Those who insult and abuse the people of Arabia are specific polytheists.

Fifth transgression: Just as Medina the Radiant has excellence over the Arabian Peninsula, so does their enmity and ill-will towards the people of Medina...

---

1 Al-Quran 22/25 2 Al-Mu'jam al-Kabir, Hadith 11312, narrated from Abdullah ibn Abbas (may Allah be pleased with him), published by Maktaba Faisaliah Beirut, 11/426 3 Shu'ab al-Iman, chapter on sending blessings upon the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him), published by Dar al-Kutub al-Ilmiyah Beirut, 3/231

फतवा रज़विया खंड 6

कुछ समय पहले की बात है कि उनके पाँच स्कूल 'मुहाजिर' (प्रवासी) के नाम से वहां रहे और अपना जाल बिछाना चाहा, जैसे ही सच्चाई सामने आई, वे सज़ा पाकर निकाल दिए गए। इस पर उनके हमदर्द कहने लगे कि हरमैन के लोगों ने मुहाजिर को निकाल कर, अल्लाह न करे, "सवादुल वजह फिद दारैन" (दोनों जहानों में बेइज़्ज़ती) हासिल की। हालांकि अन्य बातों के अलावा, इन गुस्ताख मूर्खों को यह भी नहीं पता था कि एक दारुल इस्लाम से दूसरे दारुल इस्लाम में जाना हिजरत (प्रवास) नहीं है; यह 'मुजावरत' (पड़ोस में रहना) है और मुजावरत खुद 'मकरूह तहरीमी' (सख्ती से मना) है, सिवाय अल्लाह के वली लोगों के लिए, जैसा कि हमने अल्लाह की तौफीक से 'अल-अताया अन-नबविया फिल फतवा अर-रज़विया' में शोध किया है। तो वे फ़ज़ल और कमाल के दावेदार इस काम में भी गुनहगार थे, खासकर जब उन्होंने वहां जाकर बिदअतों (नवाचारों) का प्रचार करना चाहा। अल्लाह तआला फरमाता है:

"और जो कोई वहां [मक्का में] ज़ुल्म के ज़रिए किसी बेअदबी का इरादा करेगा, उसे हम दर्दनाक अज़ाब चखाएंगे।" (1) जो मक्का मुअज्जमा में ज़ुल्म के माध्यम से किसी बेइतदली (अन्याय) का इरादा करेगा, हम उसे दर्दनाक अज़ाब चखाएंगे।

और यह तो अभी की बात है कि उनके'इमाम-ए-अस्र', जिन्हें ये लोग 'शेखुल कुल फिल कुल' कहा करते थे, अरब मुसलमानों के डर से दिल्ली और बॉम्बे के कमिश्नरों की चिट्ठियां लेकर हज के लिए गए। वहां उनके साथ जो बीती, उन्हीं से पूछ कर देखिये अगर वे सच कहें; वर्ना सैकड़ों हाज़िरीन और देखने वाले मौजूद हैं और खुद मक्का मुअज्जमा के छपे हुए पोस्टर शहरों-शहरों प्रसिद्ध हो चुके हैं। संक्षेप में, कोई भी इस बात से इनकार नहीं कर सकता कि उन्हें अरब और हिजाज़ के तमाम गणमान्य व्यक्तियों और विद्वानों से सख्त नफरत और दुश्मनी है। तबरानी मुअजम कबीर में अच्छी और सही सनद के साथ हज़रत अब्दुल्ला इब्न अब्बास (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया: "अरबों से नफरत करना निफाक (पाखंड) है" (2) - (जो अरब के लोगों से दुश्मनी रखे वह मुनाफिक है)।

चौथा फिस्क (पाप): फिर यह दुश्मनी गाली-गलौज तक पहुँच जाती है, जिसका एक उदाहरण हम ऊपर लिख चुके हैं और (3) बेहाकी 'शोअतुल ईमान' में अमीरुल मोमिनीन हज़रत उमर फारूक

आज़म (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया:

"जो अरबों को गाली दे, वे मुशरिक (बहुदेववादी) हैं।" (3) जो अरब के लोगों को गाली-गलौज करें वे खास मुशरिक हैं।

पांचवां फिस्क: मदीना तय्यबा को जज़ीरा-ए-अरब पर जितनी श्रेष्ठता प्राप्त है, उतनी ही उनकी दुश्मनी और बदख्वाही मदीना के लोगों के प्रति...

---

1 अल-कुरान 25/22 2 अल-मुअजम अल-कबीर हदीस 11312, अब्दुल्ला इब्न अब्बास (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत, मकतबा फैसलाबाद बेरूत 11/426 द्वारा प्रकाशित। 3 शोअतुल ईमान, नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) पर दुरूद भेजने के अध्याय में, दार अल-कुतुब अल-इल्मिया बेरूत 3/231 द्वारा प्रकाशित।

مذکور کچھ مدت ہوئی کہ ان کے پانچ مکتب مجاہر بنام مہاجر وہاں رہے اور اپنے دام بچھانے چاہے، حال کھلتے ہی تعزیر پا کر نکالے گئے۔ جس پر ان کے ہمدردوں نے کہا کہ اہل حرمین نے مہاجر کو نکال کر معاذ اللہ سواد الوجہ فی الدارین (دونوں جہانوں میں کالا چہرہ۔ ت) حاصل کیا حالانکہ علاوہ اور باتوں کے ان سفیہان گستاخ نے یہ بھی نہ جانا کہ دار الاسلام سے دارالاسلام کو جانا مہاجرت نہیں یہ صورت مجاورت ہے اور مجاورت خود مکروہ تحریمی، مگر افراد اولیاء اللہ کے لئے، کما حققناہ بتوفیق اللہ تعالٰی فی العطایا النبویۃ فی الفتاوی الرضویۃ (اللہ کی توفیق سے ہم نے اس کی تحقیق اپنے فتاوٰی "العطایا النبویۃ فی الفتاوٰی الرضویۃ" میں کی ہے۔ ت) تو وہ جہاں مدعیان فضل و کمال اس فعل میں بھی اثم تھے خصوصاً جبکہ وہاں جا کر اشاعت بدعات چاہی، اللہ تعالٰی فرماتا ہے:

وَمَنْ يُرِدْ فِيهِ بِإِلْحَادٍ بِظُلْمٍ نُذِقْهُ مِنْ عَذَابٍ أَلِيمٍ (1) جو مکہ معظمہ میں براہ ظلم کسی بے اعتدالی کا ارادہ کرے گا اسے درد ناک عذاب چکھائیں گے۔

اور یہ تو ابھی کی بات ہے کہ ان کے امام العصر جنہیں یہ حضرات شیخ الکل فی الکل کہا کرتے ہیں بخوف مسلمانان عرب، کمشنران دہلی و بمبئی کی چٹھیاں لے کر حج کو گئے وہاں جو گزری انھیں سے پوچھ دیکھیے، اگر ایمان سے کہیں ورنہ صد ہا حاضرین و ناظرین موجود ہیں اور خود مکہ معظمہ کے چھپے ہوئے اشتہار شہروں شہروں شہرت پا چکے غرض کوئی انکار نہیں کر سکتا کہ ان کو تمام عمائد و علمائے عرب و حجاز سے سخت بغض و عداوت ہے اور طبرانی معجم کبیر میں بہ سند حسن صحیح حضرت عبداللہ بن عباس رضی اللہ تعالٰی عنہما سے راوی حضور سید

عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں : بغض العرب نفاق (2) - (جو اہل عرب سے عداوت رکھے منافق ہے)

فسق چہارم: پھر یہ عداوت منجر بہ سب و دشنام ہوتی ہے جس کی ایک نظیر ہم اوپر لکھ چکے اور (3) بیہقی شعب الایمان میں حضرت امیر المومنین عمر فاروق اعظم رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے راوی حضور سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

من سب العرب فاولئک هم المشرکون - (3) جو اہل عرب کو سب و شتم کریں وہ خاص مشرک ہیں۔

فسق پنجم: مدینہ طیبہ کو جزیرہ عرب پر جس قدر فضیلت ہے اسی قدر ان کی عداوت و بدخواہی کو اہل مدینہ

---

1 القرآن ۲۵/۲۲ 2 المعجم الکبیر حدیث ۱۱۳۱۲ مروی از عبداللہ ابن عباس رضی اللہ تعالیٰ عنہ مطبوعہ مکتبہ فیصلیہ بیروت ۱۱/ ۴۲۶ 3 شعب الایمان فصل فی الصلوۃ علی النبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم مطبوعہ دار الکتب العلمیہ بیروت ۳/ ۲۳۱

Volume Six Fatawa Ridawiyyah ...it is an excess against them, and the Master of the Worlds, the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him), says:

"No one will plot against the people of Madinah except that he will dissolve as salt dissolves in water." - Related by Bukhari and Muslim from Sa'd bin Malik (may Allah be pleased with him).

And he (peace and blessings of Allah be upon him) says:

"Whoever intends harm to the people of Madinah, Allah will dissolve him just as salt dissolves in water." - Related by Ahmad, Muslim, and Ibn Majah from Abu Hurayrah (may Allah be pleased with him).

[59] In another hadith, the Master of the Worlds, the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him), says:

"Whoever hurts the people of Madinah, Allah will hurt him, and upon him is the curse of Allah, the angels, and all mankind; neither his voluntary nor his obligatory deeds will be accepted." - Related by al-Tabarani in al-Mu'jam al-Kabir from Abdullah bin Amr bin al-Aas (may Allah be pleased with them).

If these gentlemen deny these matters, then what is the harm? Say to them, "Come to a word that is equitable between us and you" (Quran 3:64). Let us all together seal that regarding religious issues, whatever path the scholars...

---

[1] Sahih al-Bukhari, Virtues of Madinah, Chapter: Sin of those who plot against the people of Madinah, published by Qadeemi Kutub Khana, Karachi, 1/252. [2] Sahih Muslim, Book of Hajj, Chapter: Prohibition of intending harm to the people of Madinah, published by Nur Muhammad Asah al-Matabi, Karachi, 1/445; Musnad Ahmad bin Hanbal, from the Musnad of Abu Hurayrah (may Allah be pleased with him), published by Dar al-Fikr, Beirut, 2/357. [3] Kanz al-Ummal with reference to al-Tabarani from Ibn Umar, Virtues of Madinah and its surroundings etc., Hadith 34836, Muassasat al-Risalah, Beirut, 12/73; Majma' al-Zawa'id, Chapter: Regarding those who frighten the people of Madinah and intend harm to them, published by Dar al-Kitab, Beirut, 3/307; al-Targhib wa al-Tarhib, regarding frightening the people of Madinah etc., published by Mustafa al-Babi, Egypt, 2/241. [4] Al-Quran 3/64

खंड छह फ़तावा रज़विया ... उनके साथ ज़्यादती है और हुज़ूर सैयदे आलम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं:

"कोई शख़्स अहल-ए-मदीना के साथ बदअंदेशी (बुरा इरादा) न करेगा मगर यह कि ऐसा गल जाएगा जैसे नमक पानी में।" इसे बुखारी व मुस्लिम ने हज़रत साद बिन मालिक रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत किया है।

और फ़रमाते हैं सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम:

"जो अहल-ए-मदीना के साथ किसी तरह का बुरा इरादा करे अल्लाह तआला उसे ऐसा गला दे जैसे नमक पानी में गल जाता है।" इसे इमाम अहमद, मुस्लिम और इब्न माजह ने हज़रत अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत किया है।

[59] दूसरी हदीस में है हुज़ूर सैयदे आलम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं:

"जो मदीना वालों को ईज़ा (तकलीफ़) दे अल्लाह उसे मुसीबत में डाले और उस पर ख़ुदा और फ़रिश्तों और आदमियों की लानत है, अल्लाह तआला न उसका नफ़्ल क़बूल करे न फ़र्ज़।" इसे तबरानी ने "अल-मोअजम अल-कबीर" में हज़रत अब्दुल्लाह बिन अम्र बिन आस रज़ियल्लाहु तआला अन्हुमा से रिवायत किया है।

अगर ये हज़रात इन उमूर (बातों) से इंकार करें तो क्या मुज़ाइक़ा (हरज) उनसे कहिये "आओ एक ऐसी बात की तरफ़ जो हमारे और तुम्हारे बीच यकसां (बराबर) है।" (क़ुरआन ३/६४)। हम और तुम सब मिल कर मुहर (तय) कर दें कि मसाइल-ए-मज़हबी में जो मसलक उलमा-ए-...

---

[1] सहीह बुखारी, फ़ज़ाइलुल मदीना, बाब: मदीना वालों के खिलाफ साजिश करने वालों का गुनाह, पुरानी कुतुब खाना, कराची, १/२५२ [2] सहीह मुस्लिम, किताबुल हज, बाब: अहल-ए-मदीना के लिए बुरा इरादा करने की हुरमत, नूर मुहम्मद असहुत तबाअ, कराची, १/४४५; मुसनद अहमद बिन हंबल, हज़रत अबू हुरैरा के मुसनद से, दारुल फ़िक्र, बेरूत, २/३५७ [3] कंज़ुल उम्माल ब-हवाला तबरानी, हज़रत इब्न उमर से, फ़ज़ाइलुल मदीना व-मा हवलहा आदि, हदीस ३४८३६, मुअस्ससतुर रिसाला, बेरूत, १२/७३; मजमउज़ ज़वाइद, बाब: उन लोगों के बारे में जिन्होंने अहल-ए-मदीना को डराया और उनके लिए बुरा इरादा किया, दारुल किताब, बेरूत, ३/३०७; अत्तरगीब वत्तरहीब, अहल-ए-मदीना को डराने के बारे में, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, २/२४१ [4] अल-क़ुरआन ३/६४

جلد ششم فتاوی رضویہ کے ساتھ زیادتی ہے اور حضور ﷺ سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں :

| لایکید اھل المدینۃ احد الا انماع کما ینماع الملح فی الماء[1] - اخرجہ الشیخان عن سعد بن مالك رضی اللہ تعالیٰ عنہ۔ | کوئی شخص اہل مدینہ کے ساتھ بداندیشہ نہ کرے گا مگر یہ کہ ایسا گل جائے گا جیسے نمک پانی میں اسے بخاری و مسلم نے حضرت سعد بن مالک رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا ہے۔ |

اور فرماتے ہیں صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم :

| من اراد اھل المدینۃ بسوء اذابہ اللہ کما یذوب الملح فی الماء[2] ۔ اخرجہ احمد و مسلم و ابن ماجۃ عن ابی ھریرۃ رضی اللہ تعالیٰ عنہ۔ | جو اہل مدینہ کے ساتھ کسی طرح کا بُرا ارادہ کرے اللہ تعالیٰ اسے ایسا گلا دے جیسے نمک پانی میں گل جاتا ہے۔ اسے امام احمد، مسلم اور ابن ماجہ نے حضرت ابوہریرہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا ہے۔ |

[59] دوسری حدیث میں ہے حضور سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں :

| من اذی اھل المدینہ اذاہ اللہ وعلیہ لعنۃ اللہ والملئکۃ والناس اجمعین ، لا یقبل منہ صرف ولا عدل[3] ۔ اخرجہ الطبرانی فی الکبیر عن عبد اللہ بن عمر و بن العاص رضی اللہ تعالیٰ عنھما۔ | جو مدینہ والوں کو ایذا دے اللہ اسے مصیبت میں ڈالے اور اس پر خدا اور فرشتوں اور آدمیوں کی لعنت ہے اللہ تعالیٰ نہ اس کا نفل قبول کرے نہ فرض۔ اسے طبرانی نے "المعجم الکبیر" میں حضرت عبداللہ بن عمرو بن عاص رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا ہے۔ |

اگر یہ حضرات ان امور سے انکار کریں تو کیا مضائقہ ان سے کہیے تَعَالَوْا إِلَىٰ كَلِمَةٍ سَوَاءٍ بَيْنَنَا وَبَيْنَكُمْ [4] ۔ (ایسے کلمہ کی طرف آؤ جو ہم میں اور تم میں یکساں ہے۔ ت) ہم اور تم سب مل کر مہر کر دیں کہ مسائل مذہبی میں جو مسلک علمائے

---

[1] صحیح البخاری فضائل المدینہ باب اثم من کاد اھل المدینہ مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱ / ۲۵۲ [2] صحیح مسلم کتاب الحج باب تحریم ارادۃ اھل المدینہ بسوء مطبوعہ نور محمد اصح المطابع کراچی ۱ / ۴۴۵ ، مسند احمد بن حنبل از مسند ابوہریرہ رضی اللہ تعالٰی عنہ مطبوعہ دارالفکر بیروت ۲ / ۳۵۷ [3] کنز العمال بحوالہ طبرانی عن ابن عمر فضائل المدینہ وما حولھا الخ حدیث ۳۴۸۳۶ مؤسسۃ الرسالۃ بیروت ۱۲ / ۷۳ ، مجمع الزوائد باب فیمن اخاف اھل المدینۃ وارادھم بسوء مطبوعہ دارالکتاب بیروت ۳ / ۳۰۷ ، الترغیب والترہیب من اخافۃ اھل المدینہ الخ مطبوعہ مصطفٰی البابی مصر ۲ / ۲۴۱ [4] القرآن ۳ / ۶۴

Fatawa Ridawiyya Volume VI Regarding the two holy sanctuaries (Haramain Tayyibain), may Allah increase them in honor and greatness, it would be acceptable to both parties if they would readily agree to it; otherwise, know for certain that these people are absolutely against the creed of the people of the Haramain. Similar to the Sunnis of India, etc., they also consider the scholars of these holy and blessed cities, Allah forbid, as polytheists, deviated, and irreligious. Then, what does it mean to say there is no enmity or ill-will? What is the need to ask them directly? The fatwas of the scholars of Haramain (may Allah Almighty protect them) are available in abundance in refutation of these individuals. From these, the reality will be revealed that just as one calls the other among the opponents of the creed, the other holds the same opinion about him. Enmity or love, it is from both sides. When their prominent leaders have written about their elders that:

"They are the party of Satan. Beware! Truly, it is the party of Satan that are the losers."[1] | They are the party of Satan, indeed, it is the party of Satan that is at a loss. (T)

Then how is it rational that they would not be their enemies? After all, did you not see that the 'Imam of the Age' considered the safe and peaceful Haramain as a place of fear and danger for himself, and took refuge in the letters of the commissioners of Delhi and Bombay? And there is no power nor strength except with Allah, the Most High, the Most Great.

Section 6: Enmity towards the holy saints (may their secrets be sanctified), the details of which would require volumes. Anyone who has looked into their principles and branches knows well that the foundation of their creed is built upon not believing in the beloved ones of Allah and, as far as possible, diminishing and erasing their love and veneration. It went so far that the founder of their creed explicitly stated that one should believe in Allah and not in anyone else besides Him. End quote. And for common, lowly, and useless people, it is on the tip of their tongues; they plainly said about the Master of the Beloveds (Prophet Muhammad) himself, peace and blessings of Allah be upon him and his family, that after death, he turned to dust.

"The most severe wrath of Allah is upon everyone who bears enmity towards the Messenger of Allah, peace and blessings of Allah be upon him and his family." | The greatest displeasure of Allah is upon every person who holds enmity towards the Messenger of Allah, peace and blessings of Allah be upon him and his family. (T)

Allah Almighty says:

"And those who hurt the Messenger of Allah, for them is a painful punishment."[2] | Those who cause pain to the Messenger of Allah, for them is a painful punishment.

And He says:

1. Al-Quran 58/19
2. Al-Quran 9/61 Page 686 of 736

फ़तावा रिज़विया, छठा खंड हरमैन तैयबैन (मक्का और मदीना) के बारे में, अल्लाह उनकी प्रतिष्ठा और महानता बढ़ाए, यह दोनों पक्षों को स्वीकार्य होगा यदि वे स्वेच्छा से इस पर सहमत हों; अन्यथा, निश्चित रूप से जान लें कि ये लोग हरमैन के लोगों के मत के बिल्कुल विपरीत हैं। भारत के सुन्नियों आदि की तरह, वे इन पवित्र और धन्य शहरों के विद्वानों को भी, अल्लाह न करे, मुशरिक (बहुदेववादी), गुमराह और अधर्मी मानते हैं। फिर दुश्मनी और दुर्भावना न होने का क्या मतलब है? और उनसे खुद पूछने की क्या ज़रूरत है? हरमैन के विद्वानों (अल्लाह तआला उनकी रक्षा करे) के फ़तवे इन लोगों के खंडन में प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं। उनसे ही स्थिति स्पष्ट हो जाएगी कि धर्म के विरोधियों में जैसा एक दूसरे को कहता है, दूसरा भी उसके बारे में वैसा ही विचार रखता है। शत्रुता हो या प्रेम, दोनों तरफ से होता है। जब उनके बड़े नेताओं ने अपने बुज़ुर्गों के बारे में लिखा है कि:

"वे शैतान का गिरोह हैं। सावधान! निस्संदेह, शैतान का गिरोह ही घाटे में रहने वाला है।"[1] | वे शैतान का गिरोह हैं, बेशक शैतान का गिरोह ही घाटे में है। (त)

तो फिर यह कैसे तर्कसंगत है कि वे उनके दुश्मन नहीं होंगे? आखिर क्या आपने नहीं देखा कि उस समय के उनके'इमाम' ने सुरक्षित और शांतिपूर्ण हरमैन को अपने लिए डर और खतरे की जगह समझा और दिल्ली और बॉम्बे के कमिश्नरों के पत्रों को ढाल बनाया। और अल्लाह के बिना न कोई शक्ति है और न कोई सामर्थ्य, जो सबसे ऊंचा और महान है।

छठा बिंदु: पवित्र संतों (अल्लाह उनके रहस्यों को पवित्र करे) के प्रति शत्रुता, जिसका विवरण देने के लिए दफ्तरों की आवश्यकता होगी। जिसने भी उनके सिद्धांतों और शाखाओं पर नज़र डाली है, वह अच्छी तरह जानता है कि उनके धर्म की नींव अल्लाह के प्रियजनों को न मानने और जहाँ तक हो सके उनके प्रति प्रेम और सम्मान को कम करने और मिटाने पर टिकी है। यहाँ तक कि उनके धर्म के संस्थापक ने स्पष्ट कर दिया कि अल्लाह को मानो और उसके सिवा किसी और को न मानो। इति। और नीच और बेकार लोगों की जुबान पर तो यह आम है; उन्होंने खुद महबूबों के सरदार (हज़रत मुहम्मद) सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के बारे में साफ कह दिया कि वे भी मरकर मिट्टी में मिल गए।

"अल्लाह का सबसे कड़ा प्रकोप उस हर व्यक्ति पर है जो अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और उनके परिवार के प्रति शत्रुता रखता है।" | सबसे अधिक अल्लाह तआला की नाराज़गी उस हर व्यक्ति पर है जो अल्लाह तआला के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ शत्रुता रखे। (त)

अल्लाह तआला फरमाता है:

"और जो लोग अल्लाह के रसूल को सताते हैं, उनके लिए दुखद दंड है।"[2] | जो लोग अल्लाह के रसूल को तकलीफ देते हैं, उनके लिए दुखद मार है।

और फरमाता है:

1. अल-कुरान 58/19
2. अल-कुरान 9/61 पृष्ठ 736 का 686

فتاوی رضویہ جلد ششم حرمین طیبین زاد ہما اللہ شرفاً و تعظیماً کا ہے فریقین کو مقبول ہو گا اگر بے تکلف اس پر راضی ہو جائیں فنہا ورنہ جان لیجئے کہ یہ قطعاً اہل حرمین کے مخالف مذہب اور سنیان ہندو وغیرہ کے مثل ان پاک مبارک شہروں کے علماء کو بھی معاذ اللہ مشرک و گمراہ وبد دین جانتے ہیں پھر عداوت و بد خواہی نہ ہونا کیا معنے، اور خود ان سے پوچھنے کی حاجت کیا ہے علمائے حرمین حفظہم اللہ تعالیٰ کے فتاوے ان صاحبوں کے رد میں بکثرت موجود انھیں سے حال کھل جائے گا کہ مخالفان مذہب میں جیسا ایک دوسرے کو کہتا ہے دوسرا بھی اس کی نسبت وہی گمان رکھتا ہے، عداوت ہو خواہ محبت دونوں ہی طرف سے ہوتی ہے، جب وہ اکابر ان کے عمائد کو لکھ چکے کہ :

اُوْلٰئِكَ حِزْبُ الشَّيْطٰنِ ؕ اَلَآ اِنَّ حِزْبَ الشَّيْطٰنِ هُمُ الْخٰسِرُوْنَ 19 [1] | وہ شیطان کے گروہ ہیں، بیشک شیطان ہی کا گروہ گھاٹے میں ہے۔ (ت)

تو کیونکر معقول کہ یہ ان کے دشمن نہ ہوں، آخر نہ دیکھا کہ ان کے امام العصر نے امن و امان والی حرمین کو اپنے لئے محل خوف و خطر سمجھا اور کمشنر دہلی و بمبئی کی چٹھیوں کو سپر، ولا حول ولا قوۃ الا باللہ العلی العظیم۔

فق ششم: عداوت اولیائے کرام قدست اسرار ہم جس کی تفصیل کو دفتر درکار جس نے ان کے اصول و فروع پر نظر کی ہے وہ خوب جانتا ہے کہ ان کی بنائے مذہب محبوبان خدا کے نہ ماننے اور ان کی محبت و تعظیم کو جہاں تک بن پڑے گھٹانے مٹانے پر ہے یہاں تک کہ ان کے بانی مذہب نے تصریح کردی کہ اللہ کو مانے اور اس کے سوا کسی کو نہ مانے انتہی۔ اور چوہڑے چمار اور ناکارے لوگ تو نوک زبان پر ہے، خود حضور سید المحبوبین صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی نسبت صاف کہہ دیا کہ وہ بھی مر کر مٹی میں مل گئے،

اشد مقت اللہ علی کل من عادی رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وآلہ وسلم۔ | سب سے زیادہ اللہ تعالیٰ کی ناراضگی ہر اس شخص پر ہے جو اللہ تعالیٰ کے رسول صلی اللہ تعالیٰ علیہ وآلہ وسلم کے ساتھ عداوت رکھے۔ (ت)

اللہ تعالیٰ فرماتا ہے :

وَ الَّذِیْنَ یُؤْذُوْنَ رَسُوْلَ اللّٰہِ لَھُمْ عَذَابٌ اَلِیْمٌ 2 [2] | جو لوگ ایذا دیتے ہیں اللہ کے رسول کو اور ان کے لئے دکھ کی مار ہے۔

اور فرماتا ہے :

1 القرآن ۵۸/ ۱۹ 2 القرآن ۹/ ۶۱ Page 686 of 736

Fatawa Rizwia, Volume Six

'Allah has cursed them in this world and the Hereafter and has prepared for them a humiliating punishment.'[1] (Quran 33:57)

Subhan Allah, the Master of the World, may the peace and blessings of Allah be upon him, says: 'Indeed, Allah has forbidden the earth from consuming the bodies of the Prophets.'[2] Reported by Ahmad, Abu Dawood, Nasai, Ibn Majah, Ibn Hibban, Al-Hakim, and Abu Nu'aym, all from Hazrat Aws bin Abi Aws al-Thaqafi, may Allah be pleased with him.

And it is narrated that he (peace and blessings of Allah be upon him) says: 'The one to whom the Holy Spirit (Gabriel) has spoken, the earth is not permitted to consume any of his flesh.'[3] Reported by Al-Zubayr bin Bakkar in Akhbar al-Madina and Ibn Zabala from Al-Hasan as a mursal report.

Imam Abu al-Aliyah (Tabi'i) said: 'Indeed, the flesh of the Prophets is not reached by the earth, nor do beasts consume it.'[4] Reported by Al-Zubayr and Al-Bayhaqi.

And the Lord of the worlds, Glorified be His Majesty, says regarding His slaves, the noble martyrs: 'And do not say about those who are killed in the way of Allah, "They are dead."' (Translation: Do not call those who are killed in the way of God dead.)

---

[1] Al-Quran 33/57 [2] Sunan an-Nasa'i, 'Excellence of invoking blessings upon the Prophet on Friday', published by Maktaba Salafiyya Lahore, 1/162; Sunan Abi Dawood, 'Chapter on Friday Prayers', published by Aftab-e-Alam Press Lahore, 1/150; Musnad Ahmad bin Hanbal, Hadith of Aws bin Aws, may Allah be pleased with him, published by Dar al-Fikr Beirut, 8/4. [3] Ad-Durr al-Manthur under the verse 'And We aided him with the Holy Spirit', published by Manshurat Ayatollah al-Uzma, Qom Iran, 1/87. [4] Akhbar al-Madina by Al-Zubayr bin Bakkar.

फ़तवा रिज़विया, छठा खंड

'अल्लाह ने उन पर दुनिया और आख़िरत में लानत की है और उनके लिए अपमानजनक अज़ाब (दंड) तैयार कर रखा है।'[1] (क़ुरआन 33:57)

सुभान अल्लाह, हुज़ूर सैय्यद आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं: 'बेशक अल्लाह तआला ने ज़मीन पर पैग़म्बरों का जिस्म खाना हराम कर दिया है।'[2] इसे इमाम अहमद, अबू दाऊद, नसाई, इब्न माजा, इब्न हिब्बान, हाकिम और अबू नुऐम सभी ने हज़रत औस बिन अबी औस अल-सक़फ़ी (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है।

और वारिद है कि आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं: 'जिससे रूहुल क़ुदुस (जिब्रील) ने कलाम किया, ज़मीन को इजाज़त नहीं कि उसके पाक गोश्त में कुछ तसर्रुफ़ (बदलाव) करे।'[3] इसे हज़रत ज़ुबैर बिन बक्कार ने 'अख़बार अल-मदीना' में और इब्न ज़बाला ने इमाम हसन बसरी से मुरसलन रिवायत किया है।

इमाम अबू अल-आलिया (ताबीई) ने कहा: 'बेशक नबियों के गोश्त को ज़मीन नहीं गलाती और न ही दरिंदे गुस्ताख़ी करते (खाते) हैं।'[4] इसे ज़ुबैर और बैहक़ी ने रिवायत किया है।

और रब्बुल आलमीन (प्रशंसा उसकी हो) अपने गुलामों यानी शहीदों के बारे में फ़रमाता है: 'और जो ख़ुदा की राह में मारे गए उन्हें मुर्दा न कहो।'

---

[1] अल-क़ुरआन 33/57 [2] सुनन अन-नसाई, 'जुम्मे के दिन नबी पर दुरूद भेजने की अधिकता', मक्तबा सलफ़िया लाहौर, 1/162; सुनन अबी दाऊद, जुम्मा के अध्यायों का विवरण, आफ़ताब-ए-आलम प्रेस लाहौर, 1/150; मुसनद अहमद बिन हंबल, हदीस औस बिन औस (रज़ियल्लाहु अन्हु), दारुल फ़िक्र बेरूत, 8/4। [3] अद-दुरुल मंसूर आयत 'और हमने उसकी रूहुल क़ुदुस से मदद की' के अंतर्गत, प्रकाशक मंशूरात आयतुल्ला अल-उज़मा, कुम ईरान, 1/87। [4] अख़बार अल-मदीना ज़ुबैर बिन बक्कार द्वारा।

पृष्ठ 687/736

فتاوی رضویہ ، جلد ششم

لَعَنَهُمُ اللَّهُ فِي الدُّنْيَا وَالْآخِرَةِ وَأَعَدَّ لَهُمْ عَذَابًا مُّهِينًا[1] اللہ نے ان پر لعنت کی دنیا و آخرت میں اور ان کے لئے تیار رکھا ہے ذلت کا عذاب۔

سبحان اللہ حضور سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم ارشاد فرمائیں : ان اللہ حرم علی الارض ان تأکل اجساد الانبیاء[2] بیشک اللہ تعالیٰ نے زمین پر پیغمبروں کا جسم کھانا حرام کیا ہے۔ اس کو امام احمد، ابوداؤد، النسائی و ابن ماجۃ وابن حبان والحاکم و ابو نعیم کلھم عن اوس بن ابی اوس الثقفی رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا ہے۔

اور وارد کہ فرماتے ہیں صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم : من کلمہ روح القدس لم یؤذن للارض ان تأکل من لحمہ[3]۔ جس سے جبریل نے کلام کیا زمین کو اجازت نہیں کہ اس کے گوشت پاک میں کچھ تصرف کرے۔ اسے حضرت زبیر بن بکار نے اخبار المدینہ میں اور ابن زبالہ نے امام حسن بصری سے مرسلاً روایت کیا ہے۔

امام ابوالعالیہ تابعی نے کہا : ان لحوم الانبیاء لا تبلغھا الارض ولاتأکلھا السباع[4]۔ انبیاء کا گوشت زمین نہیں گلاتی نہ درندے گستاخی کریں۔ اسے زبیر اور بیہقی نے روایت کیا ہے۔

اور رب العالمین جل مجدہ ان کے غلاموں یعنی شہدائے کرام کی نسبت ارشاد فرمائے : وَلَا تَقُولُوا لِمَنْ يُقْتَلُ فِي سَبِيلِ اللَّهِ أَمْوَاتٌ ط جو خدا کی راہ میں مارے گئے انھیں مردہ نہ کہو

---

[1] القرآن ۳۳/ ۵۷ [2] سنن النسائی اکثر الصلوۃ علی النبی صلی اللہ علیہ وسلم یوم الجمعۃ مطبوعہ مکتبہ سلفیہ لاہور ۱/ ۱۶۲، سنن ابی داؤد باب تفریع ابواب الجمعۃ مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور ۱/ ۱۵۰، مسند احمد بن حنبل حدیث اوس بن اوس رضی اللہ عنہ مطبوعہ دارالفکر بیروت ۸/ ۴ [3]

الدر المنثور زير آية وايد ناه بروح القدس مطبوعہ منشورات آية الله العظمى، قم ايران ١/ ٨٧ [4] اخبار مدينہ لزبير بن بكار

Fatawa Razwiya - Volume 6

“Nay, they are alive, but you perceive [it] not.” (1) | Rather, they are alive, but you have no knowledge.

And He says:

“And think not of those who are killed in the way of Allah as dead. Nay, they are alive with their Lord, provided for, (2) rejoicing.” | Beware! Do not consider the martyrs dead; rather, they are alive with their Lord, receiving provision and are very happy.

And an ignorant, arrogant person, averse to the beloveds of Allah, uttered such filthy words regarding the luminous Holy Prophet himself, the most beloved (peace and blessings of Allah be upon him and upon all of them), and that too by distorting the meaning of the Holy Prophet's own Hadith to mean: “I too am one who will mix with dust in a grave (center).” By Allah’s will, on the Day of Judgment, the consequence of this “mixing with dust after death” will be revealed, and this root of falsehood will be exposed—as to which word of the Hadith contained even a scent of this filthy meaning which you, by saying so, fabricated against the Greatest Beloved (peace and blessings of Allah be upon him). Fabrication against the Prophet is fabrication against Allah, and fabrication against Allah is the starting point of the path to Hell.

“Indeed, those who invent falsehood against Allah will not succeed. (3) [It is but] a brief enjoyment, and for them is a painful punishment.” (4) | Indeed, those who attribute lies to Allah the Almighty will not find success. This world is but a brief provision, and for them (in the Hereafter) is a painful punishment.

When such treatment is meted out to the Holy Prophet himself (peace and blessings of Allah be upon him), then what can be said about the saintly friends (Awliya)? And the True Lord (Exalted and Majestic is His Glory) says:

“Whoever shows enmity to a friend of Mine, I have declared war against him.” (5) – Narrated by Imam Bukhari from Abu Hurairah from the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) from his Lord, the Mighty and Sublime. | Whoever bears enmity towards any of My saints, I have declared war on him. Imam Bukhari narrated this from Hazrat Abu Hurairah on the authority of the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) as coming from Allah the Mighty and Sublime (i.e., this is a Hadith Qudsi).

1. Al-Quran 2/154

2. Al-Quran 3/169
3. Al-Quran 16/116
4. Al-Quran 16/117
5. Sahih al-Bukhari, Kitab ar-Riqaq, Bab at-Tawadu’, published by Qadeemi Kutub Khana, Karachi, 2/903

"बल्कि वे जीवित हैं लेकिन तुम्हें खबर नहीं।" (1) | बल्कि वे जीवित हैं, पर तुम्हें इसका बोध नहीं।

और फ़रमाता है:

"और जो अल्लाह की राह में मारे गए उन्हें मृत न समझो, बल्कि वे अपने रब के पास जीवित हैं, उन्हें जीविका दी जा रही है, (2) वे प्रसन्न हैं।" | सावधान! शहीदों को मृत मत समझो, बल्कि वे अपने रब के पास जीवित हैं और उन्हें जीविका दी जाती है, वे अत्यंत हर्षित हैं।

और एक मूर्ख अहंकारी व्यक्ति जो ईश्वर के प्रियजनों से घृणा करता है, उसने स्वयं प्रकाशवान पैगंबर, सबसे प्रिय (उन पर और उन सभी पर अल्लाह की शांति और आशीर्वाद हो) के बारे में वे अपवित्र शब्द कहे, और वह भी इस तरह कि अल्लाह की शरण हो, पैगंबर की अपनी हदीस का यह अर्थ निकाला कि 'मैं भी एक केंद्र (कब्र) में मिट्टी में मिल जाने वाला हूँ'। अल्लाह ने चाहा तो कयामत में मरने के बाद मिट्टी में मिलने का मज़ा अलग से पता चलेगा और यह झूठ जड़ से उखड़ जाएगा कि हदीस के किस शब्द में उस गंदे अर्थ की गंध थी जो तूने कहकर सबसे महान प्रिय (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) पर मिथ्यारोप लगाया। पैगंबर पर मिथ्यारोप अल्लाह पर मिथ्यारोप है और अल्लाह पर मिथ्यारोप नर्क के मार्ग का आरंभ है।

"बेशक जो लोग अल्लाह पर झूठ गढ़ते हैं, वे सफल नहीं होंगे। (3) (यह) थोड़ा सा लाभ है और उनके लिए (परलोक में) दर्दनाक अज़ाब (दंड) है।" (4) | बेशक जो लोग अल्लाह तआला पर झूठ बाँधते हैं वे कल्याण नहीं पाएंगे। यह दुनिया थोड़ा सा सुख-सामान है और उनके लिए (परलोक में) दुखदायी दंड है।

जब स्वयं पवित्र पैगंबर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के साथ यह व्यवहार है, तो औलिया-ए-कराम (ईश्वर के मित्रों) का क्या ज़िक्र। और हज़रत हक़ अज़्ज़ा व जल्ला फ़रमाता है:

"जिसने मेरे किसी वली (मित्र) से शत्रुता की, मैंने उसके विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी।" (5) - इसे इमाम बुखारी ने हज़रत अबू हुरैरा से, नबी-ए-करीम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के माध्यम से अल्लाह अज़्ज़ा व जल्ला से वर्णित किया है। | जो मेरे किसी वली से शत्रुता रखे मैंने उससे लड़ाई का

ऐलान कर दिया। इसे इमाम बुखारी ने हज़रत अबू हुरैरा से नबी अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के हवाले से अल्लाह अज़्ज़ा व जल्ला से बयान किया है (अर्थात यह हदीस-ए-कुदसी है)।

1. अल-क़ुरआन 2/154
2. अल-क़ुरआन 3/169
3. अल-क़ुरआन 16/116
4. अल-क़ुरआन 16/117
5. सहीह अल-बुखारी, किताब अर-रिकाक़, बाब अत-तवाद्दु, मुद्रित कदीमी कुतुब खाना कराची 2/903

فتاوٰی رضویہ - جلد ششم

بَلْ اَحْیَآءٌ وَّلٰکِنْ لَّا تَشْعُرُوْنَ 1 | بلکہ وہ زندہ ہیں لیکن تمہیں خبر نہیں۔

اور فرمائے:

وَلَا تَحْسَبَنَّ الَّذِیْنَ قُتِلُوْا فِیْ سَبِیْلِ اللّٰہِ اَمْوَاتًا بَلْ اَحْیَاءٌ عِنْدَ رَبِّھِمْ یُرْزَقُوْنَ 2 فَرِحِیْنَ | خبردار شہیدوں کو مُردہ نہ جانیو بلکہ وہ اپنے رب کے پاس زندہ ہیں روزی دیئے جاتے ہیں شاد شاد ہیں۔

اور ایک سفیہ مغرور محبوبانِ خدا سے نفور خود حضور پر نور اکرم المحبوبین صلوات اللہ وسلامہ علیہ وعلیہم اجمعین کی نسبت وہ ناپاک الفاظ کہے اور وہ بھی یوں کہ معاذ اللہ حضور ہی کی حدیث کا یہ مطلب ٹھہرائے یعنی میں بھی ایک مرکز مٹی میں ملنے والا ہوں، قیامت میں ان شاء اللہ مر کر مٹی میں ملنے کا مزہ الگ کھلے گا اور یہ جڑاپو چھا جائے گا کہ حدیث کے کون سے لفظ میں اس ناپاک معنی کی بو تھی جو تو نے یعنی کہہ کر محبوبِ اعظم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم پر افتراء کیا حضور پر افتراء خدا پر افتراء ہے اور خدا پر افتراء جہنم کی راہ کا پرلاسرا،

اِنَّ الَّذِیْنَ یَفْتَرُوْنَ عَلَی اللّٰہِ الْکَذِبَ لَا یُفْلِحُوْنَ 3 | بیشک وہ لوگ جو اللہ تعالٰی پر جھوٹ باندھتے ہیں وہ فلاح نہیں پائیں گے۔ یہ دنیا متاع قلیل ہے اور ان کے لئے (آخرت میں) المناک عذاب ہے۔

مَتَاعٌ قَلِیْلٌ وَّلَھُمْ عَذَابٌ اَلِیْمٌ 4

بھلا جب خود حضور اقدس صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کے ساتھ یہ برتاؤ ہیں تو اولیائے کرام کا کیا ذکر ہے اور حضرت حق عز جلالہ فرماتا ہے:

من عادی لی ولیًا فقد اذنتہ بالحرب 5- اخرجہ امام البخاری عن ابی ہریرۃ عن النبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم عن ربہ عزوجل۔ | جو میرے کسی ولی سے عداوت رکھے میں نے اعلان دے دیا اس سے لڑائی کا۔ اسے امام بخاری نے حضرت ابوہریرہ سے نبی اکرم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے حوالے سے اللہ عزوجل سے بیان کیا ہے (یعنی یہ حدیث قدسی ہے)

1 القرآن ۲/ ۱۵۴ 2 القرآن ۳/ ۱۶۹ 3 القرآن ۱۶/ ۱۱۶ 4 القرآن ۱۶/ ۱۱۷ 5 صحیح البخاری کتاب الرقاق باب التواضع مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۲/ ۹۰۳

And by His grace and generosity, the respect and majesty of the Kalima Tayyiba (Pure Word) has been bestowed only upon us, the Ahl-e-Sunnat. While the misguided heretics declare us infidels (takfir), we do not step outside the bounds of the Kalima. They are always trying to find a way to label us polytheists (mushrik), while we are always trying, as much as possible, to consider them Muslims. Just like a hungry she-camel that sees green acacias behind her, but among them is a lion, and ahead is an open plain and then a populated city; she breaks her reins and turns back towards the greenery of the acacias, risking both her own destruction and leading the rider into danger. The rider spurs and lashes her to move forward, so that he may save himself and save her too.

Arabic Poetry: Haway Naqati Khalfii wa Qudaami Al-Hawa Wa Inni wa Iyyaha La Mukhtalifan (The desire of my mount is behind me and my desire is ahead, and both of us are different).

To a fair judge, this much is enough to show the difference between the people of truth and the falsifiers. And praise be to Allah, Lord of the worlds.

[Boxed Section] Quranic Verse: Say, "Each one acts according to his manner, but your Lord is most knowing of who is best guided in way." (17:84) | Translation: Say, everyone acts in their own way, then your Lord knows best who is more on the right path.

Caution: After reading the aforementioned text from Al-Ghunya, a thought may occur to some minds that although the group of non-conformists (Ghair-Muqallideen) are accustomed to these sinful acts, they do not do them knowing them to be sins; rather, in their own estimation, they consider it a rewarding and correct deed. This is due to the crookedness of their understanding and the evil of their sect. This does not prove the same level of audacity upon which the prohibition of a sinner's leadership (imamat) was based—that when he has no concern for religion, then it wouldn't be surprising if he leads prayers without ablution (wudu) or leaves out some other condition of prayer.

I say: Prohibiting a sinner from leading prayer was not based solely on that. Rather, a major reason was that leading prayer involves honor (taqdeem), and a sinner is shari'atically deserving of disdain. In any case, knowing existing flaws and sins as correct and rewarding makes them even more severe, which increases the sin

manifold. Therefore, the desert of disdain will increase proportionally, and with its increase, the disgrace of their leading prayer will intensify. Moreover, ask one who has experienced it; leave aside worldly matters, but in specific matters of religion, let alone the juniors, what heinous audacities and great atrocities are spreading among their seniors and reliable figures. May God protect even the most sinful of sinners from catching their wind. Did you not see that the 'Imam of the Age' of their sect, in his sealed fatwa, allowed a foster-uncle to marry his foster-niece?

---

1. Al-Quran 17/84 Page 690 of 736

और कलिमा तय्यिबा का अदब व जलाल अल्लाह के फ़ज़्ल और करम से हम अहले सुन्नत ही को अता फ़रमाया है कि बद-मज़हब गुमराह हमारी तकफ़ीरें (काफ़िर कहना) करें, हम कलिमा के पास से कदम बाहर न रखें। वे हर वक्त इस फ़िक्र में हैं कि किसी तरह हमें मुशरिक बनाएँ, हम हमेशा इस ख़्याल में कि जहाँ तक मुमकिन हो उन्हें मुसलमान ही बताएँ। जैसे वह भूखी ऊँटनी जिसके पीछे हरी बबूलें हों और उनमें शेर हो, और आगे साफ़ मैदान और फिर आबाद शहर, वह बबूलों की हरियाली पर लगाम तोड़ती और पलटती है कि खुद भी हलाक हो और सवार को भी तबाही में डाले, सवार उसे एड़ लगाता है और कोड़े मारकर आगे बढ़ाता है ताकि खुद भी निजात पाए और उसे भी बचा ले।

अरबी कविता: हवा नाक़ती ख़ल्फ़ी व क़ुदामी अल-हवा व इन्नी व इय्याहा ला मुख़्तलिफ़ान (मेरी सवारी की ख़्वाहिश मेरे पीछे है और मेरी ख़्वाहिश आगे है और मैं और वह दोनों मुख़्तलिफ़ हैं)।

इंसाफ़ पसंद के नज़दीक इतनी ही बात से अहले हक़ और बातिल वालों का फ़र्क ज़ाहिर है। और तमाम तारीफ़ें अल्लाह के लिए हैं जो तमाम जहानों का रब है।

[बॉक्स किया गया हिस्सा] क़ुरआनी आयत: कहो, "हर कोई अपने तरीक़े पर अमल करता है, तो तुम्हारा रब बेहतर जानता है कि कौन हिदायत के रास्ते पर ज़्यादा है।" (17:84) | अनुवाद: तुम फ़र्माओ सब अपने-अपने तरीक़े पर काम करते हैं तो तुम्हारा रब खूब जानता है कि कौन ज़्यादा राह पर है।

चेतावनी: 'गुनिया' की मज़कूरा इबारत देखकर बाज़ ज़ेहनों में यह ख़्याल आ सकता है कि ग़ैर-मुक़ल्लिदीन की जमात अगरचे इन गुनाहों की आदी है, मगर वे इन्हें गुनाह जानकर नहीं करते बल्कि अपने गुमान में सवाब और ऐन सही समझते हैं। यह उनकी समझ की कजी और मज़हब की बुराई है। इससे वह बेबाकी साबित न हुई जिसकी बिना पर फ़ासिक़ (पापी) की इमामत ममनू (वर्जित) हुई थी कि जब उसे दीन का एहतिमाम नहीं तो क्या अजब कि बे-वज़ू नमाज़ पढ़ाए या नमाज़ की शर्तों में से कोई और शर्त छोड़ जाए।

मैं कहता हूँ: फ़ासिक़ की इमामत की मनाही सिर्फ़ इसी पर मबनी न थी बल्कि उसकी बड़ी वजह यह थी कि आगे बढ़ाना (इमामत) इज़्ज़त की बात है और फ़ासिक़ शरीअत की रू से जिल्लत का मुस्तहक़

है। बहरहाल, मौजूद ऐबों और गुनाहों को सही और सवाब समझना तो और भी ज़्यादा संगीन है जिससे वह गुनाह कई गुना बढ़ जाता है। तो उसी कदर ज़िल्लत की मुस्तहक़ी बढ़ेगी और इसकी बढ़त पर इमामत की बुराई में शिद्दत आएगी। इसके अलावा जिसने तजुर्बा किया है उससे पूछें कि दुनिया तो दरकिनार, खुद दीन के ख़ास मामलात में छोटे तो क्या, उनके बड़े और मोतमिद लोगों में जो घिनौनी बेबाकियाँ और बड़ी संगदिलियाँ फैल रही हैं, खुदा न करे कि किसी बड़े से बड़े पापी को भी उनकी हवा लगे। क्या नहीं देखा कि उनके'इमामुल अस्र' (ज़माने के इमाम) ने अपने मुहर लगे फ़तवे में दूध के चचा को भतीजी दिला दी (निकाह जायज़ करार दिया)?

---

1. अल-क़ुरआन 17/ 84 पेज 736 का 690

اور کلمہ طیبہ کا ادب وجلال بمنہ و کرمہ ہم اہلسنت ہی کو عطا فرمایا ہے کہ بد مذہباں گمراہ ہماری تکفیریں کریں ہم پاس کلمہ سے قدم باہر نہ دھریں وہ ہر وقت اس فکر میں کہ کسی طرح ہم کو مشرک بنائیں ہم ہمیشہ اس خیال میں کہ جہاں تک ممکن ہو انہیں مسلمان ہی بتائیں۔ جیسے وہ بھوکی اونٹنی جس کے پیچھے ہری بولیں رہیں اور ان میں شیر اور آگے صاف میدان پھر آباد شہر ، وہ ببولوں کی ہریالی پر مہاریں توڑاتی اور پلٹی جاتی ہے کہ خود بھی ہلاک ہو اور سوار کو بھی مہلکہ میں ڈالے، سوار مہمیزیں کرتا تازیانے لگاتا آگے بڑھاتا ہے کہ آپ بھی نجات پائے اور اسے بھی بچالے۔

عربی اشعار: ھوی ناقتي خلفي وقدامي الھوی وإني وإياھا لمختلفان (میری سواری کی خواہش میرے پیچھے ہے اور میری خواہش آگے ہے اور میں اور وہ دونوں مختلف ہیں)

منصف کے نزدیک اتنی ہی بات سے اہل حق و مبطلین کا فرق ظاہر والحمد للہ رب العلمین O

[باکس شدہ عبارت] قُلْ كُلٌّ يَعْمَلُ عَلَى شَاكِلَتِهِ فَرَبُّكُمْ أَعْلَمُ بِمَنْ هُوَ أَهْدَى سَبِيلًا 1 | تم فرماؤ سب اپنے اپنے طریقے پر کام کرتے ہیں تو تمہارا رب خوب جانتا ہے کہ کون زیادہ راہ پر ہے۔

تنبیہ : عبارت مذکورہ غنیہ دیکھ کر بعض اذہان میں یہ خیال گزر سکتا ہے کہ طائفہ غیر مقلدین اگرچہ ان فسقیات کے عادی ہیں مگر وہ انہیں فسق جان کر نہیں کرتے بلکہ اپنے زعم میں کار ثواب و عین صواب سمجھتے ہیں یہ اُن کی فہم کی کجی اور مذہب کی بدی ہے اس سے وہ بیباکی ثابت نہ ہوئی جس کی بنا پر امامت فاسق ممنوع ہوئی تھی کہ جب اسے دین کا اہتمام نہیں تو کیا عجب کہ بے وضو نماز پڑھائے یا شرائط نماز سے کوئی اور شرط چھوڑ جائے۔

اقول : منع امامت فاسق صرف اسی پر مبنی نہ تھا بلکہ اس کی بڑی علت وہ تھی کہ تقدیم میں عظمت اور فاسق شرعاً مستحق اہانت، بہر حال موجود بلکہ عیوب و ذنوب کو صواب و ثواب جانتے ہیں اور زیادہ شدید الورود کہ اس سے فسق ہزار چند ہو جاتا ہے تو اسی قدر استحقاق اہانت ترقی پائے گا اور اس کی ترقی پر اتنا ہی شناعت امامت میں جوش آئے گا معہذا جس نے تجربہ کیا ہے اس سے پوچھے کہ دنیا در کنار خاص امور دین میں اصاغر بالائے طاق ان کے اکابر و معتمدین میں جو شنیع بیباکیاں عظیم سفاکیاں پھیل رہی ہیں خدا نہ کرے کہ کسی فاسق سے فاسق کو بھی ان کی ہوا لگے، کیانہ دیکھا کہ ان کے امام العصر نے اپنے مہری فتوے میں دودھ کے چچا کو بھتیجی دلائی،

---

1 القرآن 17/ 84 صفحہ 690 از 736

Fatawa Razawiyya Volume Six

Did you not know that his prominent student, in a published treatise, declared even a real paternal aunt as permissible? Did you not hear that another student made a step-maternal aunt lawful for a nephew, and with the fatwa of this calamity, the master himself performed the marriage ceremony? Then, the Imam of the age writing legal opinions for a fee, and in a single case, having his fatwa with both the plaintiff and the defendant – what a high degree of integrity! All these incidents were detailed by some friends of this humble servant in the treatise "Saif al-Mustafa 'ala Adyan al-Iftira" (1299 AH) and "Nishat al-Sikkeen 'ala Halq al-Baqar al-Sameen" (1303 AH). Then, to cover up, thousands of slanders and accusations were made against the living and the dead, citing fictitious books, fabricating names of imaginary scholars, cutting and pruning quotations, changing the lineage of Hadith critics, giving false references to Hadith and sayings, and thousands of types of deliberate deceptions were committed by their leaders and theologians in their religious writings. They faced setbacks, were blamed, yet did not desist. The treatise "Saif al-Mustafa" was authored to state and manifest these matters, in which my dear author (may Allah protect him) showcased one hundred and sixty [instances] of the integrity of the sect's leaders. Who then can imagine that their level of audacity and boldness is any less than that of a transgressor? Furthermore, test this: whichever issue they oppose, they will lean towards the comfort of the soul. That's why the school of thought where there was a bit of hardship did not become preferred in their view. In Tarawih, they abandoned twenty rak'ahs, but they did not go towards thirty-six, which is narrated from Imam Malik, nor forty, which is reported from Hazrat Ubayy ibn Ka'b (may Allah be pleased with him) and was the path of Imam Ishaq ibn Rahwayh and the people of Medina. They fell to eight because it was a source of comfort. A sample of some of their rulings will come soon, Insha Allah. Muslims! When the recklessness is such that whatever is desired is said, with no regard for the Quran, no concern for Hadith, and as for the consensus of the Imams, what's that? On the other hand, there is an absolute passion for seeking comfort; so what wonder if they declare prayer without ghusl or wudu as permissible, especially when it is winter and the water is cold? After all, this would not be stranger than the permissibility of a paternal aunt or maternal aunt's daughter/niece. The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) spoke the truth:

"Idha lam tastahi fasna' ma shi'ta"[1] - When you have no shame, do as you wish. (Tr)

Couplet: One who has no shame, nothing from him is surprising. (One who has no shame, nothing from him is surprising)

And refuge is sought with Allah the Almighty.

---

[1] Al-Mu'jam al-Kabir, narrated from Abu Mas'ud al-Ansari, Hadith 765, published by Maktaba Faisalia, Beirut, 17/23. Page 691 of 736

क्या आपने नहीं जाना कि उनके एक होनहार छात्र ने एक प्रकाशित शोधपत्र में सगी बुआ तक को हलाल (वैध) बताया? क्या आपने नहीं सुना कि दूसरे छात्र ने सौतेली मौसी को भांजे के लिए जायज़ कर दिया और इस आफ़त भरे फ़तवे से उस्ताद साहब ने ख़ुद निक़ाह पढ़ा दिया? फिर इमाम-ए-अस्त्र (युग के इमाम) का मुआवज़ा लेकर मसले लिखना, एक ही मुक़दमे में वादी और प्रतिवादी दोनों के पास हज़रत का फ़तवा होना—यह कैसी उच्च कोटि की सत्यनिष्ठा है। इन सभी घटनाओं का विवरण इस तुच्छ सेवक के कुछ मित्रों ने शोधपत्र 'सैफ़ अल-मुस्तफ़ा अला अद्यान अल-इफ़्तिरा' (1299 हिजरी) और 'निशात अस-सिक्कीन अला हलक़ अल-बक़र अस-समीन' (1303 हिजरी) में दिया है। फिर अपनी बात बनाने के लिए जीवितों और मृतकों पर हज़ारों झूठे आरोप और तोहमतें लगाना, फ़र्ज़ी किताबों के हवाले देना, काल्पनिक विद्वानों के नाम गढ़ना, लेखों के उद्धरणों में काट-छाँट करना, हदीस के आलोचकों की वंशावली बदल देना, हदीसों और कथनों के ग़लत संदर्भ देना और उनके प्रमुखों और धर्मशास्त्रियों द्वारा अपनी धार्मिक रचनाओं में जानबूझकर किए गए हज़ारों प्रकार के धोखे। उन्हें मुँह की खानी पड़ी, आरोप लगे, पर वे बाज़ न आए। शोधपत्र 'सैफ़ अल-मुस्तफ़ा' इन्हीं बातों के वर्णन और प्रकटीकरण के लिए लिखा गया था, जिसमें मेरे प्रिय लेखक (अल्लाह उनकी रक्षा करे) ने संप्रदाय के दिग्गजों की एक सौ साठ 'सत्यनिष्ठाओं' को उजागर किया। फिर कौन कल्पना कर सकता है कि साहस और निर्भीकता में उनका स्तर किसी पापी से कम है? इसके अतिरिक्त, यह आज़मा कर देखें कि वे जिस भी मसले में विरोध करेंगे, वे मन की सुख-सुविधा की ओर ही झुकेंगे। इसीलिए उनके नज़दीक वह पंथ कभी मान्य नहीं हुआ जिसमें ज़रा भी कठिनाई का पलड़ा भारी हो। तरावीह में उन्होंने बीस रकात छोड़ दीं, तो वे छत्तीस की ओर नहीं गए जो इमाम मालिक से वर्णित है, न ही चालीस को अपनाया जो हज़रत उबय बिन काब (रज़ियल्लाहु अन्हु) से वर्णित है और इमाम इसहाक़ बिन राहवैह और मदीना वालों का पंथ था। वे आठ पर आ गिरे क्योंकि उसमें आराम था। और उनके कुछ मसलों का नमूना इंशा अल्लाह जल्द ही सामने आएगा।
मुसलमानों! जब बेबाकी का यह आलम है कि जो चाहा कह दिया, न क़ुरान से मतलब न हदीस से सरोकार, इमामों की सर्वसम्मति (इज्मा) तो किस चीज़ का नाम है, उधर आराम-तलबी का पूरा जोश, तो क्या ताज्जुब कि वे बिना ग़ुस्ल या बिना वज़ू के नमाज़ को जायज़ कर लें, विशेष रूप से जब सर्दी का मौसम हो और पानी ठंडा हो; आख़िरकार यह बुआ और मौसी की हलालियत से ज़्यादा अजीब नहीं होगा। अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने सच फ़रमाया:

"इज़ालम तस्तहि फ़स्नअ मा शिअत"[1]—जब तुम निर्लज्ज हो जाओ, तो जो चाहो करो। (अनुवाद)

शेर: जिसके पास हया (शर्म) नहीं, उससे कुछ भी ताज्जुब की बात नहीं। (जिसे शर्म नहीं, उससे किसी भी बात पर ताज्जुब नहीं करना चाहिए)

और हम अल्लाह तआला की शरण माँगते हैं।

---

1. अल-मुअजम अल-कबीर, अबू मसूद अंसारी से वर्णित, हदीस 765, मक़्तबा फ़ैसलिया, बेरूत द्वारा प्रकाशित, 17/23। पृष्ठ 691 का 736

کیا نہ جانا کہ ان کے رشید شاگرد نے مطبوعہ رسالے میں حقیقی پھو پھی تک حلال بتائی، کیا نہ سنا کہ دوسرے شاگرد نے سوتیلی خالہ کو بھانجے کے حق میں مباح کر دیا اور اس آفت کے فتوے سے استاد صاحب نے اپنی مہر کا نکاح کر دیا پھر امام العصر کا اُجرت لے کر مسائل لکھنا، ایک ہی مقدمہ میں مدعی مدعا علیہ دونوں کے پاس حضرت کا فتویٰ ہونا کیسی اعلیٰ درجے کی دیانت ہے۔ ان سب وقائع کی تفصیل بعض احبابِ فقیر نے رسالہ سیف المصطفیٰ علی ادیان الافتراء (۱۲۹۹ھ) و رسالہ نشاط السکین علی حلق البقر السمین (۱۳۰۳ھ) میں ذکر کی، پھر بات بنانے کو احیاء و اموات پر ہزاروں افتراء و بہتان کرنا، فرضی کتابوں سے سندلانا، خیالی عالموں کے نام گھڑ لینا، نقلِ عبارت میں قطع و برید کرنا، جرح محدثین کو نسب بدل لینا، احادیث و اقوال کے غلط حوالے دینا اور ان کے سوادِ یدہ و دانستہ ہزاروں قسم کی عیار یاں ان کے عمائد و متکلمین اپنی مذہبی تصانیف میں کر گزرے، زکیں کھائیں الزام اٹھائے اور باز نہ آئے۔ رسالہ سیف المصطفیٰ انہیں امور کے بیان واظہار میں تالیف ہوا جس میں عزیزم مؤلف حفظہ اللہ نے اکابرِ طائفہ کی ایک سوساٹھ دیانتوں کو جلوہ دیا۔ پھر کون گمان کر سکتا ہے کہ جرات و جسارت میں ان کا پایا کسی فاسق سے گھٹا ہوا ہے، معہذا آزمایئے کہ یہ حضرات جس مسئلہ میں خلاف کریں گے آرامِ نفس ہی کی طرف کریں گے تبھی وہ مذہب ان کے نزدیک راجح نہ ہوا جس میں ذرا مشقت کا پلہ جھکا، تراویح میں بیس رکعت چھوڑیں تو چھتیس کی طرف نہ گئے جو امام مالک سے مروی، نہ چالیس لیں جو حضرت ابی بن کعب رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے منقول اور امام اسحٰق بن راہویہ واہلِ مدینہ کا مذہب تھا، آٹھ پر گرے کہ آرام کا سبب تھا۔ اور ان کے بعض مسائل کا نمونہ ان شاء اللہ تعالیٰ قریب آتا ہے۔ مسلمانو! جب بیباکی وہ ہے کہ جو چاہا کہہ دیا نہ قرآن سے غرض نہ حدیث سے کام،

اجماعِ ائمہ تو کس چیز کا نام، ادھر آرام طلبی کا جوشِ تام، تو کیا عجب کہ بے غسل یا بے وضو نماز جائز کر لیں خصوصاً جبکہ موسم سرما ہو اور پانی ٹھنڈا، آخریہ پھوپھی، بھتیجی خالہ کی حلت سے عجیب تر نہ ہوگا، سچ فرمایا رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے :

اذالم تستحی فاصنع ماشئت ۱۔ جب تو بے حیا ہو جائے تو جو چاہے کر۔ (ت)

ع: آنرام کہ حیانیست از ویچ عجب نیست (جس کو حیا نہیں اس سے کچھ بھی تعجب نہیں)

والعیاذ باللہ تعالٰی۔

---

۱ المعجم الکبیر مروی از ابو مسعود انصاری حدیث ۷۶۵ مطبوعہ مکتبہ فیصلیہ بیروت ۱۷ / ۲۳

Fatawa Razawiya, Volume 6

Third Proof

In its discourse, first hear what the jurisprudential issues related to prayer and purity are that these gentlemen have written in their own works, and how absolutely separate they are from the guided schools of thought or specifically the Hanafi school. Our beloved Maulana Wasi Ahmad Sahib Surti (may Allah Almighty protect him) in "Fatawa Jami' al-Shawahid fi Akhraj al-Wahhabiyyin 'an al-Masajid" (Comprehensive Proofs for the Expulsion of Wahhabis from Mosques) has quoted the beliefs of the non-conformists (Ghair-Muqallidin) and summarized some of their practices. Here I consider it sufficient to write a few words from it as a selection.

Issue (1): No matter how little water is, it does not become impure by the falling of filth into it unless the color, smell, or taste changes. Nawab Siddiq Hasan Khan Bahadur, husband of the ruler of Bhopal state, clarified this on page 76 of "Tariqa Muhammadiya", a translation of "Durar al-Bahiyyah" authored by Qazi Shawkani of the Zahiri school, printed by Matba' Faruqi Delhi. Maulana Nazir Husain Sahib put his seal on this book and wrote: "Unitarians (Muwahhidin) should act upon this without hesitation." And in the preface, the translator Nawab himself writes: "A follower of the Sunnah should act upon it blindly and teach it to his children and wives."[1] The same content is on page 5 of "Fath al-Mughith" printed by Matba' Siddiqi Lahore. This is the same book "Tariqa Muhammadiya" which Nawab Bhopal got printed repeatedly in Bhopal and Lahore after changing its name. The meaning of this ruling is that even if a well is small, if you pour two or three 'mashas' (units of weight) of your own or a dog's urine into a quarter-liter (pao) of water, it remains pure. Perform ablution with pleasure, offer prayer; there is no harm.

Issue (2): On page 5 of the same "Fath al-Mughith" and page 7 of "Tariqa Muhammadiya", it is written: "Impurity (Najis) is human feces and urine absolutely, except for the urine of a breastfed boy, and the saliva of a dog, and its droppings, and blood of menstruation and postpartum, and the meat of swine. Regarding things besides these, there is difference of opinion, and the original state of things is purity, and purity is not removed except by an authentic report (naql sahih) against which there is no other opposing report."[2]

Here, impurity has been clearly restricted to these seven things, and all other things are considered pure by default until an authentic non-contradictory report is received. I say, for example, if a non-conformist (Ghair-Muqallid) performs prayer

after spraying perfume and rose water on his face, beard, mustache (brooth), and clothes contaminated with chicken droppings, or swine urine, or dog semen, or if these things mix in water in whatever abundance, even if they change the color, taste, and smell, and the non-conformist gentleman...

---

1 Tariqa Muhammadiya, translation of Durar al-Bahiyyah (Note: Its second name is Fath al-Mughith. - Nazir Ahmad) 2 Fath al-Mughith

फ़तावा रज़विया, खंड 6

तीसरा तर्क

इसके विवरण में सबसे पहले यह सुनें कि इन हज़रात के नमाज़ और पाकी (पवित्रता) से संबंधित फ़िक़्ही मसले क्या हैं जो उन्होंने स्वयं अपनी रचनाओं में लिखे हैं, और वे आम तौर पर हिदायत वाले मज़ाहिब या विशेष रूप से हनफ़ी मज़हब से कितने अलग हैं। हमारे प्यारे मौलवी वसी अहमद साहब सूरती (अल्लाह तआला उन्हें सलामत रखे) ने 'फ़तावा जामे-उश-शवाहिद फ़ी इख़राज-उल-वहाबियीन अन-अल-मसाजिद' (मस्जिदों से वहाबियों को निकालने पर व्यापक दलीलें) में ग़ैर-मुक़ल्लिदीन के अक़ीदे नक़ल करके उनके कुछ अमल (प्रथाओं) का भी सारांश दिया है। यहाँ उसी में से कुछ शब्द चयन के तौर पर लिखना पर्याप्त समझता हूँ।

मसला (१): पानी चाहे कितना ही कम हो, उसमें गंदगी (नजासत) गिरने से वह नापाक नहीं होता जब तक कि उसका रंग, गंध या स्वाद न बदल जाए। भोपाल रियासत के नवाब सिद्दीक़ हसन ख़ान बहादुर ने क़ाज़ी शौकानी (ज़ाहिरी मज़हब के लेखक) की किताब 'दुरर-अल-बहीया' के अनुवाद 'तरीक़ा-ए-मुहम्मदिया' के पृष्ठ ७६ पर (जो मतबा फ़ारूक़ी दिल्ली से प्रकाशित है) इसकी स्पष्टता की है। इस किताब पर मौलवी नज़ीर हुसैन साहब ने अपनी मुहर लगाई और लिखा: 'मुवह्हिदीन (एकेश्वरवादी) इस पर बेझिझक अमल करें'। और प्रस्तावना (दीबाचा) में अनुवादक नवाब स्वयं लिखते हैं: 'सुन्नत का पालन करने वाला इस पर आँखें बंद करके अमल करे और अपनी औलाद और बीवियों को पढ़ाए'।[1] यही बात मतबा सिद्दीक़ी लाहौर की किताब 'फ़तह-उल-मुग़ीस' के पृष्ठ ५ पर भी है। यह वही किताब 'तरीक़ा-ए-मुहम्मदिया' है जिसका नाम बदलकर भोपाल के नवाब ने इसे भोपाल और लाहौर में बार-बार छपवाया। इस मसले का अर्थ यह हुआ कि कुआँ तो बड़ी चीज़ है, अगर एक पाव भर पानी में दो-तीन माशे अपना या कुत्ते का पेशाब डाल दें, तो भी वह पाक रहेगा। मज़े से वुज़ू कीजिए, नमाज़ पढ़िये, कोई हर्ज नहीं।

मसला (२): उसी 'फ़तह-उल-मुग़ीस' के पृष्ठ ५ और 'तरीक़ा-ए-मुहम्मदिया' के पृष्ठ ७ में है: 'नजासत (गंदगी) मनुष्य का मल और मूत्र है पूर्ण रूप से, सिवाय स्तनपान करने वाले लड़के के मूत्र के, और कुत्ते की लार, और उसकी लीद, और माहवारी और प्रसव (निफ़ास) का ख़ून, और सुअर का मांस। इनके अलावा अन्य चीज़ों में मतभेद है, और चीज़ों की मूल स्थिति पवित्रता है, और पवित्रता तब तक

नहीं जाती जब तक कि कोई सही प्रमाण (नक़ल सहीह) न मिले जिसके विरोध में कोई दूसरा प्रमाण न हो'।[2]

यहाँ स्पष्ट रूप से नजासत को इन सात चीज़ों तक सीमित कर दिया गया है और बाकी सभी चीज़ों को मूल रूप से पवित्र माना गया है जब तक कि कोई स्पष्ट विरोध के बिना सही प्रमाण न मिले। मैं कहता हूँ कि उदाहरण के तौर पर, यदि कोई ग़ैर-मुक़ल्लिद मुर्ग़ी की बीट या सुअर के मूत्र या कुत्ते की मनी (वीर्य) से अपने चेहरे, दाढ़ी, मूँछों (बरूत) और कपड़ों पर इत्र और गुलाब का छिड़काव करके नमाज़ पढ़ ले, या ये चीज़ें कितनी ही अधिक मात्रा में पानी में मिल जाएँ भले ही वे रंग, स्वाद और गंध को बदल दें, और ग़ैर-मुक़ल्लिद साहब...

---

1 तरीक़ा-ए-मुहम्मदिया, दुरर-अल-बहीया का अनुवाद (नोट: इसी का दूसरा नाम फ़तह-उल-मुग़ीस है। - नज़ीर अहमद) 2 फ़तह-उल-मुग़ीस

पृष्ठ 692 का 736

فتاویٰ رضویہ، جلد ششم

دلیل سوم

اس کی تقریر میں اولاً یہ سنئے کہ ان حضرات کی فقہی مسائل متعلقہ نماز و طہارت جو انہوں نے خود اپنی تصانیف میں لکھے کیا کیا ہیں اور وہ علی الاطلاق مذاہب راشدہ یا خاص مذہب حنفیہ سے کتنے جدا ہیں محبنا مولوی وصی احمد صاحب سورتی سلمہ اللہ تعالیٰ نے فتاوٰے جامع الشواہد فی اخراج الوھابیین عن المساجد (مساجد سے وہابیوں کو نکالنے پر جامع دلائل۔ت) میں عقائد غیر مقلدین نقل کرکے ان کے بعض عملیات بھی تلخیص کئے ہیں یہاں اسی کے چند کلمات بطور التقاط لکھنا کافی سمجھتا ہوں۔

مسئلہ (۱): پانی کتنا ہی کم ہو نجاست پڑنے سے ناپاک نہیں ہوتا جب تک رنگ یا ہو یا مزہ نہ بدلے نواب صدیق حسن خاں بہادر شوہر ریاست بھوپال نے طریقہ محمدیہ ترجمہ درر بہیہ مصنفہ قاضی شوکانی ظاہری المذہب مطبوعہ مطبع فاروقی دہلی کے صفحہ ۷۶ پر اس کی تصریح کی، اس کتاب پر مولوی نذیر حسین صاحب نے مہر کی اور لکھا اس پر موحدین بے دھڑک عمل کریں، اور دیباچے میں خود نواب مترجم لکھتے ہیں: متبع سنت اس پر آنکھ بند کرکے عمل کرے اور اپنی اولاد اور بیبیوں کو پڑھائے[1] اور یہی مضمون فتح المغیث مطبع صدیقی لاہور کے صفحہ ۵ میں ہے، یہ وہی کتاب طریقہ محمدیہ ہے جس کا نام بدل کر نواب بھوپال نے دوبارہ و سہ بارہ بھوپال اور لاہور میں چھپوایا۔ اس مسئلے کا مطلب یہ ہوا کہ کنواں توڑ ی چیز ہے اگر پاؤ بھر پانی میں دو تین ماشے اپنا یا کتے کا پیشاب ڈال دیجئے پاک رہے گا مزے سے وضو کیجئے، نماز پڑھئے کچھ مضائقہ نہیں۔

مسئلہ (۲): اسی فتح المغیث کے صفحہ ۵ اور طریقہ محمدیہ کے صفحہ ۷ میں ہے: نجاست گوہ اور موت ہے آدمی کا مطلق مگر موت لڑکے شیر خوار کا اور لعاب ہے کتے کا اور لینڈی بھی اور خون بھی حیض و نفاس کا اور گوشت ہے سور کا اور جو اس کے سوا ہے اس میں اختلاف ہے اور اصل اشیاء میں پاکی ہے اور نہیں جاتی پاکی مگر نقل صحیح سے کہ جس کے معارض کوئی دوسری نقل نہ ہو۔[2]

یہاں صاف صاف نجاست کو ان سات چیزوں میں حصر کردیا باقی تمام اشیاء کو اصل طہارت پر جاری کیا جب تک نقل صحیح غیر معارض وارد نہ ہو۔ میں کہتا ہوں اب مثلاً اگر کوئی غیر مقلد مرغی کے گوہ یا سور کے موت یا کتے کی منی سے اپنے چہرہ و ریش و بُروت (مونچھیں) و جامہ پر عطر و گلاب افشانی فرما کر نماز پڑھ لے یا یہ چیزیں کیسی ہی کثرت سے پانی میں مل جائیں اگر چہ رنگ و مزہ و بو کو بدل دیں اور غیر مقلد صاحب...

---

1 طریقہ محمدیہ ترجمہ درر بہیہ (ف: اسی کا دوسرا نام فتح المغیث ہے۔ نذیر احمد) 2 فتح المغیث

Fatawa Razawiyya, Volume Sixth Perform ablution with it; there is no harm at all because ultimately there is no impurity on the body's garment, nor have the qualities of the water been changed by any impure substance, so what is the objection? Everything is permissible and lawful. 'Truly to Allah we belong and truly to Him we shall return.' Then I say, the noble verse: 'Say, I find not in what has been revealed to me anything forbidden to an eater who eats it...' 1 (Beloved, say: I do not find in the revelation sent down to me any food forbidden for anyone to eat. - Translator). Except that this sufficient evidence exists. And just as impurity cannot be proven without a correct, non-conflicting narration, and the original state of things is purity, similarly the proof of prohibition will not exist without it. And since the original state of things is permissibility, then what objection does a non-follower (Ghair Muqallid) have in consuming these things? Couplet: 'If it is lawful for you, let it be your own lawful' (If drinking is lawful for you, it is your own declared lawful).

Issue (3): The aforementioned Nawab states on page 12 of Rawdhah Nadiyyah: 'The prohibition of wine, carcasses, and blood is not evidence of their impurity. Whoever claims they are impure should provide evidence.' (Summarized and translated) 2. I say the poet was mistaken to use the word 'drinking' against the Shariah. Had he known of this issue, he would have said: 'I never touch wine without Wudu, For the soul of a righteous person resides in my body.' In this, there would have been no contradiction with the 'New Shariah,' and through exaggeration, the beauty of the verse would have increased, as saying 'I do not touch' is a much greater exaggeration than 'I do not drink.'

Issue (4): The Nawab, in the name of his son, states on page 20 of 'Nahj al-Maqbool min Shara'i al-Rasul' printed in Bhopal: | (Persian Text) | (Urdu Translation) | |---|---| | Washing semen was for the sake of cleanliness/aversion, not because of impurity. There is no sound evidence for the impurity of wine and other intoxicants, and the origin of all things is purity. Regarding the impurity of pig's meat and flowing blood, there is disagreement. | It is necessary to wash semen because of aversion and for cleanliness, not because of being impure. There is no valid evidence for the impurity of wine and other intoxicants through which an argument can be made, and primarily, all things are pure. |

1. Al-Quran 6/145
2. Rawdhah Nadiyyah Sharh Durar Bahiyyah, Arabic, explanation of 'The origin of things is purity', printed by Farooqi Book House, Lahore 1/23.

फ़तावा रज़विया, जिल्द छठा इससे वज़ू करें, इसमें बिलकुल कोई हर्ज नहीं है क्योंकि अंततः शरीर के कपड़ों पर कोई अशुद्धता (नजासत) नहीं है, न ही किसी अशुद्ध चीज़ ने पानी के गुणों को बदला है, फिर क्या आपत्ति है? सब कुछ जायज़ और वैध है। "बेशक हम अल्लाह के लिए हैं और उसी की ओर लौटने वाले हैं।" फिर मैं कहता हूँ, पवित्र आयत: "कह दीजिए, जो वह्य (प्रकाशना) मेरी ओर आई है, उसमें मैं किसी खाने वाले पर कोई खाना हराम नहीं पाता..." 1 (महबूब फरमा दीजिए: जो वह्य मुझ पर उतरी है, उसमें मैं किसी खाने वाले पर कोई चीज़ हराम नहीं पाता। - अनु.)। यह प्रमाण पर्याप्त है। और जिस तरह अशुद्धता बिना किसी सही और निर्विवाद प्रमाण के सिद्ध नहीं हो सकती और वस्तुओं की मूल स्थिति पवित्रता है, उसी प्रकार निषेध (हुरमत) का प्रमाण भी इसके बिना नहीं होगा। और जब वस्तुओं की मूल स्थिति वैधता (इबाहत) है, तो गैर-मुक़ल्लिद को इन चीज़ों के सेवन में क्या आपत्ति है? शेर: "अगर तुझ पर पीना हलाल है तो तेरा अपना हलाल किया हुआ है।"

मसला (3): नवाब साहब 'रौज़ा नदिया' के पृष्ठ 12 पर फ़रमाते हैं: शराब, मुर्दार और खून की मनाही (हुरमत) उनकी अशुद्धता (नजासत) का प्रमाण नहीं है। जो उन्हें नापाक कहे, उसे प्रमाण प्रस्तुत करना चाहिए। (संक्षिप्त अनुवाद) 2। मैं कहता हूँ कि कवि ने अनजाने में शरीयत के विरुद्ध 'पीने' शब्द का प्रयोग किया। यदि वह इस मसले को जानता तो यों कहता: "मैं बिना वज़ू के कभी शराब को नहीं छूता, मेरे शरीर में किसी नेक इंसान की रूह है।" इसमें 'नई शरीयत' का विरोध भी नहीं होता और अतिशयोक्ति से कविता का सौंदर्य भी बढ़ जाता, क्योंकि 'पीता नहीं' से 'छूता नहीं' कहीं अधिक प्रभावशाली है।

मसला (4): नवाब साहब अपने साहबज़ादे के नाम से 'नहजुल मक़बूल मिन शराए-उर-रसूल' (भोपाल से प्रकाशित) के पृष्ठ 20 पर फरमाते हैं: | (फारसी पाठ) | (उर्दू अनुवाद) | |---|---| | मनी को धोना घृणा और स्वच्छता के लिए है, न कि अशुद्धता के कारण। शराब और अन्य नशीले पदार्थों की अशुद्धता पर कोई ठोस प्रमाण नहीं है, और मूल रूप से सभी वस्तुएं पवित्र हैं। सुअर के मांस और बहते खून की अशुद्धता पर मतभेद है। | मनी को नफरत और सफाई की वजह से धोना ज़रूरी है न कि नापाक होने की वजह से। शराब और अन्य नशीली चीज़ों के नापाक होने पर कोई ठोस दलील नहीं है जिससे तर्क दिया जा सके और असल में सभी चीज़ें पाक हैं। |

1. अल-क़ुरआन 6/145
2. रौज़ा नदिया शर्ह दुररे बहिया (अरबी)... फारूकी कुतुब खाना लाहौर 1/23

فتاوی رضویہ جلد ششم اس سے وضو کریں اصلاً حرج نہیں کہ آخر جامہ بدن پر کوئی نجاست نہیں ، نہ پانی کے اوصاف کسی نجس نے بدلے پھر کیا مضائقہ ہے سب مباح و روا ہے انا للہ وانا الیہ راجعون۔ ثم اقول آیہ کریمہ قُل لَّا اَجِدُ فِي مَا اُوحِيَ اِلَيَّ مُحَرَّمًا عَلٰى طَاعِمٍ يَّطْعَمُهٗ ۱ (محبوب فرمادیجئے میں اپنے اوپر نازل شدہ وحی میں نہیں پاتا کسی کھانے والے پر کوئی کھانا حرام۔ ت) الا یہ سند کافی موجود اور جس طرح نجاست بے نقل صحیح غیر معارض ثابت نہیں ہوسکتی اور اصل اشیاء میں طہارت ہے یوں ہی حرمت کا ثبوت بھی بے اس کے نہ ہوگا اور اصل اشیاء میں اباحت تو غیر مقلد کو ان چیزوں کے نوش کرنے میں کیا مضائقہ ہے ع : گر بر تو حلال ست حلالت بادا (اگر تجھ پر پینا حلال ہے تیرا اپنا حلال کیا ہوا ہے)

مسئلہ (۳): نواب موصوف روضہ ندیہ کے صفحہ ۱۲ میں فرماتے ہیں: شراب و مردار و خون کی حرمت ان کی نجاست پر دلیل نہیں جو انہیں ناپاک بتائے دلیل پیش کرے اھ ملخصاً متر جماً ۲۔ میں کہتا ہوں شاعر بھولا کہ ناحق خلافِ شرع پینے کا لفظ بولا اگر یہ مسئلہ سنتا تو یوں کہتا: چھوتا نہیں شراب کبھی بے وضو کے قالب میں میرے روح کسی پارسا کی ہے جس میں شریعت جدیدہ کا خلاف بھی نہ ہوتا اور زیادت مبالغہ سے حسن شعر بھی بڑھ جاتا کہ پینا نہیں سے چھوتا نہیں میں کہیں زیادہ مبالغہ ہے۔

مسئلہ (۴) نواب صاحب اپنے صاحبزادہ کے نام سے نہج المقبول من شرائع الرسول مطبوعہ بھوپال کے صفحہ ۲۰ پر فرماتے ہیں: | شستن منی از برائے استقذار بودہ است نہ بنابر نجاست | منی کو نفرت و نظافت کی وجہ سے دھونا ضروری ہے نہ کہ | | و در نجاست خمر و دیگر مسکرات دلیل کہ صالح تمسک باشد | ناپاک ہونے کی وجہ سے، شراب اور دیگر نشہ آور اشیاء کے | | موجود نیست و اصل در ہمہ چیز ہا طہارت ست و در نجاست لحم | ناپاک ہونے پر کوئی دلیل

صالح نہیں جس سے استدلال | | خوک خلاف ست و دم مسفوح | کیا جاسکے اور تمام اشیاء میں اصلاً طہارت ہے۔ |

---

1 القرآن ۶/ ۱۴۵ 2 روضہ ندیہ شرح درر بہیہ عربی بیان الاصل فی الاشیاء الطہارۃ مطبوعہ فاروقی کتب خانہ لاہور ۱/ ۲۳

Fatawa Ridawiyyah Volume Six

[Top Right Box]: There is a difference of opinion regarding the impurity of pig's meat; spilled blood is forbidden but not impure etc. summarized (T) [Top Left Box]: It is forbidden, not impure etc. summarized[1]

Issue (5): On page 6 of the same Fath al-Mugheeth, it says: It is sufficient to wipe over the turban. Meaning, do not wipe the head in ablution, just run your hands over the turban and ablution is complete, even though the Great Quran says: "and wipe over your heads"[3] (5:6).

Issue (6): Molvi Muhammad Saeed, a student of Molvi Nazir Hussain, writes on page 36 of Hidayat-ul-Quloob-ul-Qasiyah[4]: Whoever has intercourse with his wife and does not ejaculate, his prayer is valid without bathing (Ghusl).

Issue (7): In Fatawi Ibrahimiyyah[5] authored by Molvi Ibrahim, a non-conformist, published at Dharm Prakash Allahabad, on page 2 it states: In ablution, instead of washing the feet, wiping (Masah) is mandatory. They have stepped beyond even the Rafidis in the matter of the feet; those poor people only believe in its permissibility. Allah is the Helper against the evil of the Rafidis and the evil of the group that is worse than the Rafidis. (T)

Secondly, consider to what degree they hold prejudice against the Ahl-us-Sunnah. Prejudice is such a thing that, whether one likes it or not, a person becomes like a scorpion's sting, preparing by nature to inflict pain and harm. As far as possible, they love division and opposition. If it cannot be done openly, they do something secretly and laugh in their hearts. Famous are the tales of ignorant Rafidis that if an ignorant Sunni sat in their mourning assemblies (Majalis-e-Marsiya), they mixed sprinkles of 'Qultayn' into the syrup. Some wretched people wrote holy names on papers and placed them under the carpet so that Sunnis would sit and have them under their feet, even if unintentionally. Then, wherever such an opportunity arose where a special item was presented to an unaware Sunni guest or needy person for eating or drinking, their outward hospitality exceeded limits and they contaminated it with certain absolute impurities. All these are branches of prejudice. Then, the prejudice of the non-conformist gentlemen is no less than these Rafidis, rather it is more, for they are fresh enemies and their ambitions are new.

Footnotes: 1. Nahj al-Maqbul min Shara'i al-Rasul 2. Fath al-Mugheeth 3. Al-Quran 5/6 4. Hidayat al-Quloob al-Qasiyah 5. Fatawi Ibrahimiyyah

फ़तावा रज़विया खंड 6

[शीर्ष दायां बॉक्स]: सुअर के मांस की अशुद्धता के बारे में मतभेद है; बहाया गया रक्त वर्जित है लेकिन अशुद्ध नहीं आदि संक्षेप में (त) [शीर्ष बायां बॉक्स]: वर्जित है, अशुद्ध नहीं आदि संक्षेप में[1]

मसला (5): उसी फ़त्ह अल-मुग़ीस[2] के पृष्ठ 6 पर है: पगड़ी पर मसह करना काफी है। यानी वज़ू में सिर का मसह न करें, पगड़ी पर हाथ फेर लें और वज़ू हो गया, हालांकि महान कुरान फ़रमाता है: "और अपने सिरों का मसह करो"[3] (5:6)।

मसला (6): मौलवी नज़ीर हुसैन के शिष्य मौलवी मोहम्मद सईद हिदायत-उल-क़ुलूब-उल-क़ासिया[4] के पृष्ठ 36 में लिखते हैं: जो अपनी पत्नी के साथ संभोग करे और वीर्यपात न हो, तो उसकी नमाज़ बिना गुस्ल (स्नान) के सही है।

मसला (7): मौलवी इब्राहिम गैर-मुक़ल्लिद द्वारा लिखित फ़तावा इब्राहिमिया[5], धर्म प्रकाश इलाहाबाद में मुद्रित, के पृष्ठ 2 में है: वज़ू में पैर धोने के बजाय मसह करना फ़र्ज़ है। उन्होंने पैरों के मसले में राफ़िज़ियों से भी आगे कदम रखा है, वे बेचारे तो केवल इसके जायज़ होने को मानते हैं। अल्लाह ही राफ़िज़ियों की बुराई और उस गिरोह की बुराई से बचाने वाला मददगार है जो राफ़िज़ियों से भी बदतर है। (त)

दूसरे, विचार करें कि उन्हें अहले सुन्नत के प्रति किस हद तक पूर्वाग्रह (तास्सुब) है। पूर्वाग्रह ऐसी चीज़ है कि व्यक्ति चाहे या न चाहे बिच्छू के डंक की तरह स्वभाववश कष्ट और हानि पहुँचाने पर कमर कस लेता है और जहाँ तक हो सके फूट और विरोध को पसंद करता है। यदि खुलेआम न हो सके तो गुप्त रूप से ही कुछ कर गुज़रता है और मन ही मन हँसता है। अज्ञानी राफ़िज़ियों की कहानियाँ प्रसिद्ध हैं कि उनकी मर्सिया की महफ़िलों में जो अज्ञानी सुन्नी जा बैठे, उन्होंने 'कुलतैन' की छींटें शरबत में मिला दीं। कुछ दुष्टों ने पवित्र नाम पर्चों पर लिखकर कालीन के नीचे रख दिए ताकि सुन्नी बैठें तो वे पैरों के नीचे आएं, चाहे अनजाने में ही सही। फिर जहाँ ऐसा अवसर मिला कि कोई विशेष वस्तु किसी अनजान सुन्नी मेहमान या ज़रूरतमंद के खाने-पीने के लिए पेश की, तो दिखावटी खातिरदारी सीमा से बढ़ गई और उसे कुछ निश्चित अशुद्धियों से प्रदूषित कर दिया। ये सब पूर्वाग्रह की शाखाएँ हैं। फिर गैर-मुक़ल्लिद हज़रात का पूर्वाग्रह इन राफ़िज़ियों से कम नहीं बल्कि अधिक है, क्योंकि वे नए दुश्मन हैं और उनके हौसले नए हैं।

पादलेख: 1. नहज अल-मक़बूल मिन शराइ अल-रसूल 2. फ़त्ह अल-मुग़ीस 3. अल-कुरान 5/6 4. हिदायत अल-कुलूब अल-कासिया 5. फ़तावा इब्राहिमिया

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

[دائیں خانہ]: خنزیر کے گوشت کے نجس ہونے میں اختلاف ہے دم مسفوح حرام ہے مگر نجس نہیں اھ ملخصاً (ت) [بائیں خانہ]: حرام ست نہ نجس اھ ملخصاً[1]

مسئلہ (۵) اسی فتح المغیث[2] کے صفحہ ۶ پر ہے: کافی ہے مسح کرنا پگڑی پر۔ یعنی وضو میں سر کا مسح نہ کیجئے پگڑی پر ہاتھ پھیر لیجئے وضو ہو گیا اگر چہ قرآن عظیم فرمایا کرے وَامْسَحُوا بِرُءُوسِكُمْ[3] (اپنے سروں کا مسح کرو)

مسئلہ (۶) مولوی محمد سعید شاگرد مولوی نذیر حسین ہدایت قلوب قاسیہ[4] کے صفحہ ۳۶ میں لکھتے ہیں جو اپنی بیوی سے جماع کرے اور انزال نہ ہو تو اس کی نماز بغیر غسل کے درست ہے ۔

مسئلہ (۷) فتاوٰی ابراہیمیہ[5] مصنفہ مولوی ابراہیم غیر مقلد مطبوعہ دھرم پرکاش الہ آباد کے صفحہ ۲ میں ہے: وضو میں بجائے پاؤں دھونے کے مسح فرض ہے ۔ انہوں نے پاؤں کے مسئلے میں رافضیوں سے بھی آگے قدم رکھا وہ بیچارے بھی صرف جواز مانتے ہیں واللہ المستعان علی شر الروافض و قویم شر من الروافض (اللہ تعالٰی ہی مددگار ہے روافض کے شر پر اور اس قوم کے شر پر جو روافض سے بھی بدتر ہے۔ ت

ثانیاً یہ خیال کیجئے کہ انہیں اہلسنت کے ساتھ کس درجہ تعصب ہے، اور تعصب وہ شئی ہے کہ خواہی نخواہی آدمی نیش عقرب (بچھو کا ڈنگ) ہو کر بتقاضائے طبع ایذا و اضرار پر کمر کستا ہے اور جہاں تک بن پڑے شقاق و خلاف کو دوست رکھتا ہے، اگر علانیہ نہ ہو سکے تو خفیہ ہی کوئی بات کر گزرے اور آپ ہی آپ دل میں ہنس لے، جہال روافض کی حکایات مشہور ہیں کہ ان

کی مجالس مرثیہ میں جو جاہل سنی جا بیٹھے انہوں نے قلتین کے چھینٹے شربت میں ملائے، بعض اشقیا نے اسمائے طیبہ پرچوں پر لکھ کر فرش کے نیچے رکھ دئے کہ سنی بیٹھیں تو پاؤں کے نیچے آئیں اگر چہ نادانستہ ہی سہی۔ پھر جہاں ایسا موقع ہاتھ لگا کہ کوئی خاص چیز کسی مہمان یا حاجتمند سنی ناواقف کے کھانے پینے کو پیش کی ظاہری تکلف حد سے گزرا اور بعض نجاسات قطعیہ سے آلودہ کردی، یہ سب شاخیں تعصب کی ہیں، پھر حضرات غیر مقلدین کا تعصب ان روافض سے کم نہیں بلکہ زائد ہے کہ یہ دشمن تازہ ہیں اور ان کے حوصلوں کی نئی

حواشی: 1. نہج المقبول من شرائع الرسول 2. فتح المغیث 3. القرآن ۶/۵ 4. ہدایت قلوب قاسیہ 5. فتاویٰ ابراہیمیہ

صفحہ 694 کا 736

Fatawa Razawiyya Volume Six

The current situation is such that seeing their audacity, boldness, leniency in issues, and intense enmity, it's not just a possibility but a strong likelihood that if they are made Imams, they will surely act upon those mentioned issues. What interest would they have in refraining from those matters out of consideration for the sect of the followers, instead of acting out of prejudice to satisfy their hearts? Furthermore, if in some places they have to undergo the hardship of bathing etc., they consider it a benefit.

Thirdly, now consider what the scholars of religion (may Allah have mercy on them all) have discussed regarding following one another in the different sects of the people of truth and guidance, such as between the Hanafis and Shafi'is. This issue has always been a subject of great debate, and there has been a significant increase in branches and differences of opinion. Here, we are only concerned with the situation where someone from another sect does not observe the rules of our sect in prayer and purification, and does not care to avoid differences. What is the ruling on praying behind such a person? First, understand the meaning of this caution and consideration. Some matters are disputed among the guided sects (jurisprudential issues). For example, according to the Shafi'is, phlebotomy (bloodletting) and cupping do not break the ablution (Wudu), whereas according to us, they do. Touching the private parts or a woman does not break ablution according to us, but it does according to them. If impurity falls into 'two qullahs' (a large quantity) of water, it does not become impure according to their school *Note*, but according to ours, it becomes impure. According to them, wiping a single hair in Wudu is sufficient; for us, a quarter of the head is necessary. In our school, intention and sequence are not obligatory in Wudu; for them, they are. And so on and so forth. In such matters, by the consensus of the Imams, a person should adopt a path that does not lead to disagreement among scholars, as long as this caution does not lead to something disliked (makruh) in their own school. Thus, a cautious Shafi'i will perform Wudu after phlebotomy and cupping, and will not settle for wiping just a part of the head. Similarly, a cautious Hanafi will perform Wudu after touching the private parts or a woman and will not skip the sequence and intention. For although our Imam did not make Wudu obligatory in these cases, he did not forbid it either. By not doing it, our purification would be valid according to one school but not the other. By doing it, everyone would agree on the state of purity, and they would receive the reward of performing Wudu upon Wudu according to their own school.

Those who do not care for such caution and act contrary to or without regard for the consensus of the other school, according to the majority of scholars, following them in prayer is not permissible. This is because according to the correct school, the opinion of the follower (Muqtadi) is what matters. When there is a suspicion of invalidity in purification or any other reason for the corruption of the prayer based on his (the Muqtadi's) opinion, how can he base his prayer on such a prayer? This has been clarified in books like Khaniya, Khulasa, Sirajiya, Kifaya, Nazm, Bahr al-Fatawa, Sharh Nuqaya, Majma' al-Anhur, Hashiyah Maraqi al-Falah, etc. It was further detailed by Allama Sindhi, then Allama Halabi, then Allama Shami from many Mashayikh (scholars), and by Allama Qari from the generality of the noble Mashayikh.

Note: On the condition that none of the water's qualities, such as smell, color, or taste, are altered; otherwise, it will become impure by consensus. [Footnote] (M)

हालत अब यह है कि उनकी बेबाकी, जुर्रत, मसलों में ढिलाई और गहरी दुश्मनी को देखकर न केवल इसकी आशंका है, बल्कि प्रबल संभावना है कि यदि उन्हें इमाम बनाया गया, तो वे निश्चित रूप से उन उल्लिखित मसलों पर अमल करेंगे। उन्हें क्या पड़ी है कि वे मुक्तदियों (अनुयायियों) के मज़हब का लिहाज़ करते हुए उन बातों से बाज़ आएँ और पक्षपात बरतकर अपने दिल को ठंडा न करें? फिर कुछ जगहों पर अगर ग़ुस्ल (स्नान) आदि की मशक्कत उठानी पड़े, तो वे इसे अपना लाभ समझते हैं।

तीसरे, अब इस बात पर गौर करें कि दीन के विद्वानों (अल्लाह उन सब पर रहम करे) ने हक और हिदायत के अलग-अलग मज़हबों, जैसे हनफ़ियों और शाफ़इयों के बीच, एक-दूसरे के पीछे नमाज़ पढ़ने के बारे में क्या कहा है। यह मसला हमेशा से विवादस्पद रहा है और इसमें शाखाओं और मतभेदों की अत्यधिक वृद्धि हुई है। हमें यहाँ केवल उस स्थिति से मतलब है जहाँ दूसरे मज़हब वाला नमाज़ और पाकीज़गी (पवित्रता) में हमारे मज़हब का लिहाज़ न करे और मतभेदों से बचने की परवाह न करे, तो उसके पीछे नमाज़ पढ़ने का क्या हुक्म है। पहले इस सावधानी और लिहाज़ का अर्थ समझ लें। कुछ बातें हिदायत वाले मज़हबों में विवादित हैं (इख़्तिलाफ़ी मसले)। उदाहरण के लिए, शाफ़इयों के नज़दीक फ़स्द (नस खोलना) और हिजामा (कपिंग) से वज़ू नहीं टूटता, हमारे नज़दीक टूट जाता है। लिंग स्पर्श और स्त्री स्पर्श से हमारे नज़दीक वज़ू नहीं टूटता, उनके नज़दीक टूट जाता है। 'दो कुल्ला' (पानी की एक बड़ी मात्रा) पानी में अगर नजासत (अशुद्धि) गिर जाए, तो उनके मज़हब में वह नापाक नहीं होगा विशेष, हमारे नज़दीक नापाक हो जाएगा। उनके नज़दीक वज़ू में एक बाल का मसह (पोंछना) पर्याप्त है, हमारे यहाँ चौथाई सिर का होना ज़रूरी है। हमारे मज़हब में वज़ू में नियत (संकल्प) और तरतीब (क्रम) फ़र्ज़ नहीं हैं, उनके नज़दीक फ़र्ज़ हैं। और इसी तरह अन्य मसले। इस प्रकार के मसलों में, इमामों की सहमति से, आदमी को वह तरीका अपनाना चाहिए जिससे विद्वानों के बीच मतभेद पैदा न हो, जब तक कि यह सावधानी अपने मज़हब में किसी मकरूह (नापसंद) बात की ओर न ले जाए। अतः एक सावधान शाफ़ई फ़स्द और हिजामा के बाद वज़ू कर लेते हैं और मसह में केवल कुछ भाग पर संतोष नहीं करते। इसी तरह एक सावधान हनफ़ी लिंग स्पर्श और स्त्री स्पर्श के बाद वज़ू कर लेते हैं और तरतीब व नियत नहीं छोड़ते। क्योंकि यद्यपि हमारे इमाम ने इस स्थिति में वज़ू को अनिवार्य नहीं किया, लेकिन मना भी नहीं फ़रमाया। फिर न करने की सूरत में हमारी पाकीज़गी एक मज़हब के अनुसार होगी, दूसरे के अनुसार नहीं। और कर लेने से सर्वसम्मति से पवित्र हो जाएँगे और अपने मज़हब में 'वज़ू पर वज़ू' का सवाब (पुण्य) पाएंगे। जो

लोग ऐसी सावधानी का ख्याल नहीं रखते और दूसरे मज़हब के खिलाफ और असहमति से काम लेते हैं, अधिकांश विद्वानों के अनुसार उनके पीछे नमाज़ जायज़ नहीं है। क्योंकि सही मज़हब के अनुसार मुक्तदी (पीछे नमाज़ पढ़ने वाले) की राय का एतबार है। जब उसकी राय में पाकीज़गी में खलल या किसी अन्य कारण से नमाज़ के बिगड़ने का अंदेशा हो, तो वह ऐसी नमाज़ पर अपनी नमाज़ की बुनियाद कैसे रख सकता है? ख़ानिया, खुलासा, सिराजिया, किफ़ाया, नज़्म, बहरुल फ़तावा, शरह नुक़ाया, मज्मउल अनहुर और हाशिया मराक़िल फ़लाह आदि किताबों में इसकी स्पष्ट व्याख्या की गई है। और इसे अल्लामा सिंधी, फिर अल्लामा हलबी, फिर अल्लामा शामी ने बहुत से माशायिख (विद्वानों) से और अल्लामा क़ारी ने आम माशायिख-ए-किराम से उद्धृत किया है।

विशेष: इस शर्त पर कि पानी का कोई गुण जैसे गंध, रंग या स्वाद न बदले, अन्यथा सर्वसम्मति से नापाक हो जाएगा। (म)

اُٹھان ہے اب ان کی بیباکی و جرات و مسائل مساہلت و شدت عداوت دیکھ کر نہ صرف احتمال فوری بلکہ ظن غالب ہوتا ہے کہ اگر یہ امام کئے جائیں ضرور اپنے ان بعض مسائل مذکورہ پر عمل کریں گے انہیں کیا غرض پڑی ہے کہ مذہب مقتدیان کی رعایت کر کے ان امور سے باز آئیں اور تعصب برت کر دل ٹھنڈا نہ کریں پھر بعض جگہ غسل وغیرہ کی مشقت اٹھانی ہو وہ نفع میں۔

ثالثاً اب یہ غور کیجئے کہ علمائے دین رحمۃ اللہ تعالٰی علیہم اجمعین نے اہل حق و ہدی کے مذاہب مختلفہ مثلاً باہم حنفیہ و شافعیہ میں ایک کی دوسرے سے اقتدا پر کیا کلام کیا ہے یہ مسئلہ ہمیشہ سے معرکۃ الآراء رہا اور اس میں تکثر شقوق واختلاف اقوال بشدت ہوا ہمیں یہاں صرف اس صورت سے غرض ہے کہ دوسرے مذہب والا جو نماز و طہارت میں ہمارے مذہب کی مراعات نہ کرے اور خروج عن الخلاف کی پروانہ رکھے اس کے پیچھے نماز کا کیا حکم ہے۔ پہلے اس احتیاط و مراعات کے معنی سمجھ لیجئے بعض باتیں مذاہب راشدہ میں مختلف فیہ ہیں (اختلافی مسائل) مثلاً فصد و حجامت سے شافعیہ کے نزدیک وضو نہیں جاتا ہمارے نزدیک جاتا رہتا ہے۔ مس ذکر و مساس زن سے ہمارے نزدیک نہیں جاتا ان کے نزدیک ٹوٹ جاتا ہے، دو قلّہ پانی میں اگر نجاست پڑ جائے ان کے مذہب میں ناپاک نہ عہ ہوگا ہمارے نزدیک (ناپاک) ہو جائے گا، ان کے نزدیک ایک بال کا مسح وضو میں کافی ہے ہمارے یہاں ربع سر کا ضرور، ہمارے مذہب میں نیت و ترتیب وضو میں فرض نہیں ان کے نزدیک فرض، وعلٰی ہذا القیاس، اس قسم کے مسائل میں باجماع ائمہ آدمی کو وہ بات چاہئے جس کے باعث اختلاف علما میں واقع نہ ہو جب تک یہ احتیاط اپنے کسی مکروہ مذہب کی طرف نہ لے جائے تو محتاط شافعی فصد و حجامت سے وضو کر لیتے ہیں اور مسح میں بعض پر قناعت نہیں کرتے اور محتاط حنفی مس ذکر و مساس زن سے وضو کر

لیتے ہیں اور ترتیب و نیت نہیں چھوڑتے کہ اگرچہ ہمارے امام نے اس صورت میں وضو واجب نہ کیا منع بھی تو نہ فرمایا پھر نہ کرنے میں ہماری طہارت ایک مذہب پر ہوگی دوسرے پر نہیں اور کر لینے میں بالاتفاق طاہر ہو جائیں گے اور اپنے مذہب میں وضو علی الوضو کا ثواب پائیں گے، جو ایسی احتیاط کا خیال نہیں کرتے اور دوسرے مذہب کے خلاف ووفاق سے کام نہیں رکھتے، جمہور مشائخ کے نزدیک ان کی اقتدا جائز نہیں کہ صحیح مذہب پر رائے مقتدی کا اعتبار ہے جب اس کی رائے پر خلل طہارت یا اور وجہ سے فساد نماز کا مظنہ ہو یہ کیونکر ایسی نماز پر اپنی نماز بنا کر سکتا ہے خانیہ و خلاصہ و سراجیہ و کفایہ و نظم و بحر الفتاویٰ و شرح نقایہ و مجمع الانہر و حاشیہ مراقی الفلاح و غیر ہا کتب میں اس کی تصریح فرمائی اور اسے علامہ سندی پھر علامہ حلبی پھر علامہ شامی نے بہت مشائخ اور علامہ قاری نے عامہ مشائخ کرام

عہ: بشرطیکہ پانی کا کوئی وصف مثلاً بو یا رنگ یا مزہ متغیر نہ ہو جائے ورنہ بالاتفاق ناپاک ہو جائے گا ۱۲ منہ (م)

Fatawa Ridawiyya Volume 6

Quoted from Fatawa Alamgiri, it is stated: Following a Shafi'i Imam is only valid when the Imam takes precautions in matters of disagreement (between schools of thought), such as performing ablution (Wudu) upon the exit of impurity from parts other than the two natural passages (Sabilayn), like blood-letting. Furthermore, he should not be a fanatic, nor should he perform Wudu with a small amount of stagnant water (Footnote 1). He should wash clothes stained with semen and scrape off dried semen (Footnote 2). He should wipe (Masah) one-fourth of his head during Wudu (Footnote 3). This is similarly mentioned in Al-Nihayah and Al-Kifayah. Likewise, he should not perform Wudu with a small amount of water into which an impurity has fallen, as stated in Fatawa Qazi Khan, nor with used water (Ma-e-Musta’mal), as mentioned in Al-Sirajiyyah. (Summary)

In Fatawa Imam Qazi Khan, it is stated: Scholars have said regarding following a Shafi'i Imam that there is no harm in it, provided he is not a fanatic and that he performs Wudu upon the exit of impurity from other than the two natural passages, and does not perform Wudu with small amount of water into which impurity has fallen. (Summary)

Footnote 1: I say, this means at a time when the used wash-water falls into the water, based on the opinion that considers used water to be impure. (Ahmad Raza) Footnote 2: I say, this means when the impurity reaches the quantity that prohibits prayer. (Ahmad Raza) Footnote 3: I say, this means he should not suffice with less than that (one-fourth). (Ahmad Raza)

1. Fatawa Hindiyyah, Third Section regarding who is fit to be an Imam, etc., published by Noorani Kutub Khana Peshawar, 1/84.
2. Fatawa Qazi Khan, Section on who is fit to be followed in prayer and who is not, published by Munshi Naval Kishore Lucknow, 1/43.

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

'फ़तावा आलमगीरी' से उद्धृत, उसमें उल्लेख है: शाफ़ई मज़हब के इमाम का अनुसरण उस समय सही है जब इमाम मतभेद के स्थानों पर सावधानी बरतता हो, उदाहरण के लिए, दो प्राकृतिक मार्गों (सबीलैन) के अलावा किसी भी हिस्से से गंदगी निकलने पर वुज़ू करता हो, जैसे कि नस कटवाने (रक्त-विच्छेदन) पर। इसके अतिरिक्त, वह कट्टर न हो, और न ही वह थोड़े रुके हुए पानी से वुज़ू करने वाला हो (टिप्पणी 1)। वह वीर्य से सने कपड़ों को धोता हो और सूखे वीर्य को कपड़े से खुरच कर साफ़ करता हो (टिप्पणी 2)। वह वुज़ू के दौरान अपने सिर के एक चौथाई हिस्से का मसह (पोंछना) करता हो (टिप्पणी 3)। 'अन्-निहाया' और 'अल-किफ़ाया' में भी इसी तरह उल्लेख है। इसी तरह, वह उस थोड़े पानी से वुज़ू न करता हो जिसमें गंदगी गिर गई हो, जैसा कि 'फ़तावा क़ाज़ी ख़ान' में है, और न ही इस्तेमाल किए हुए पानी (मा-ए-मुस्तअमल) से वुज़ू करता हो, जैसा कि 'सिराजिया' में उल्लेख है। (संक्षिप्त)

'फ़तावा इमाम क़ाज़ी ख़ान' में है: विद्वानों ने शाफ़ई इमाम के अनुसरण के बारे में कहा है कि इसमें कोई हर्ज नहीं है, बशर्ते कि वह कट्टर न हो और यह कि वह प्राकृतिक मार्गों के अलावा किसी अन्य स्थान से गंदगी निकलने पर वुज़ू करता हो, और उस थोड़े पानी से वुज़ू न करता हो जिसमें गंदगी गिर गई हो। (संक्षिप्त)

टिप्पणी 1: मैं कहता हूँ, यानी उस समय जब इस्तेमाल किया हुआ पानी (ग़साला) पानी में गिरता हो, उस मत के आधार पर जो इस्तेमाल किए हुए पानी को नापाक मानते हैं। (अहमद रज़ा) टिप्पणी 2: मैं कहता हूँ, यानी जब वह नापाकी नमाज़ से रोकने वाली मात्रा तक पहुँच जाए। (अहमद रज़ा) टिप्पणी 3: मैं कहता हूँ, यानी वह इससे कम पर बस न करता हो। (अहमद रज़ा)

1. फ़तावा हिन्दिया, तीसरा खंड, इमाम बनने के योग्य व्यक्तियों के वर्णन में, नूरानी कुतुब खाना पेशावर द्वारा प्रकाशित, 1/84।
2. फ़तावा क़ाज़ी ख़ान, इक़्तिदा करने के योग्य और अयोग्य व्यक्तियों पर खंड, मुंशी नवल किशोर लखनऊ द्वारा प्रकाशित, 1/43।

पेज 696 ऑफ़ 736

سے نقل کیا، فتاوٰی عالمگیری میں ہے:

الاقتداء بشافعی المذھب انما یصح اذا کان الامام یتحامی مواضع الخلاف بأن یتوضأ من الخارج النجس، من غیر السبیلین کالفصد ولا یکون متعصباً ولا یتوضأ بالماء الراکد عہ۱ القلیل و ان یغسل ثوبہ من المنی عہ۲ ویفرك الیابس منہ ویمسح عہ۳ ربع رأسہ ھکذا فی النھایۃ والکفایۃ ولا یتوضأ بالماء القلیل الذی وقعت فیہ النجاسۃ کذا فی فتاوٰی قاضی خاں ولا بالماء المستعمل ھکذا فی السراجیۃ اھ ملخصا.

شافعی المذہب کی اقتداء اس وقت صحیح ہے جب وہ مقاماتِ اختلاف میں احتیاط سے کام لیتا ہو، مثلاً سبیلین کے علاوہ سے نجاست کے خروج پر وضو کرتا ہو جیسا کہ رگ کٹوانے پر، اور متعصب نہ ہو اور نہ ہی قلیل کھڑے پانی سے وضو کرنے والا ہو اور منی والا کپڑا دھوتا ہو، اور خشک منی کپڑے سے کھرچ دیتا ہو، سر کے چوتھائی کا مسح کرتا ہو، نہایہ، اور کفایہ میں اسی طرح ہے، اور ایسے ہی قلیل پانی جس میں نجاست گر گئی ہو اس سے وضو نہ کرتا ہو فتاوٰی قاضی خاں میں اسی طرح ہے اور نہ ہی ماء مستعمل سے وضو کرتا، جیسا کہ سراجیہ میں ہے اھ ملخصاً (ت)

فتاوٰی امام قاضی خاں میں ہے:

اما الاقتداء بشفعوی المذھب قالوا لابأس بہ اذالم یکن متعصبا و ان یکون متوضاً من الخارج النجس من غیر السبیلین ولا یتوضأ بالماء القلیل الذی وقعت فیہ النجاسۃ ۲ھ ملخصاً.

شافعی المذہب کی اقتداء کے بارے میں علماء نے فرمایا ہے کہ اس میں کوئی حرج نہیں بشرطیکہ وہ متعصب نہ ہو اور یہ کہ سبیلین کے علاوہ سے نجاست کے خروج پر وضو کرتا ہو اور اس قلیل پانی (جس میں نجاست گر گئی ہو) سے وضو نہ کرتا ہو۔ اھ ملخصاً (ت)

عہ۱ : قلت ای بحیث تقع الغسالة فیه بناء علی نجاسة الماء المستعمل ۱۲ منہ (م) میں کہتا ہوں یعنی اس وقت جب غسالہ پانی میں گرتا ہو اس قول کی بنا پر جو ماء مستعمل کو نجس قرار دیتے ہیں ۱۲ (ت)

عہ۲ : قلت ای اذا بلغ حد المنع ۱۲ منہ (م) میں کہتا ہوں یعنی جب مانع نماز کی حد تک پہنچ جائے ۱۲ (ت)

عہ۳ : قلت ای لا یجتزی باقل منه ۱۲ منه (م) میں کہتا ہوں یعنی اس سے اقل پر اکتفاء نہ کرتا ہو ۱۲ منہ (ت)

1 فتاوٰی ہندیہ، الفصل الثالث فی بیان من یصلح اماما وغیرہ، مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور، ۱/ ۸۴ 2 فتاوٰی قاضی خاں، فصل فی من یصلح الاقتداء وفی من لایصح مطبوعہ منشی نولکشور لکھنو، ۱/ ۴۳

Fatawa Razawiya, Volume 6

In Fatawa of Imam Tahir bin Abdur Rasheed Bukhari it is stated: Following a Shafi'i in prayer is permissible if he is not a fanatic, and he performs ablution (wudu) after the exit of impurity from other than the two usual paths (private parts), and he does not perform ablution with a small amount of water in which impurity has fallen, specifically if it is of the quantity of two qullahs. 1 End, summarized. Translation: Following a person of the Shafi'i school of thought is permissible if he is not a fanatic and if he performs ablution upon the discharge of impurity from other than the two paths (front and back), and does not perform ablution with that small amount of water in which impurity has fallen, and that is the quantity of two qullahs. End, summarized (T).

In Jami' al-Rumuz it is stated: This is when it is known that he avoids points of disagreement. If there is doubt about his avoidance, then following him is not permissible at all. As stated in 'An-Nazm', there is no harm in following him when there is no doubt about his faith and he is not a fanatic, meaning he does not harbor hatred for Hanafis. (The author continued the discourse on points of observance, gathered and encompassed the issues, then said) All of this is in Bahr al-Fatawa. 2 Translation: This is when he has the certainty of avoiding points of disagreement. If there is doubt about his avoidance, then following him is not permissible in any case, as it is in 'An-Nazm'. So at that time, there is no harm in following him when there is no doubt about his faith (i.e., he is not one who says 'I am a believer, if Allah wills') and he is not a fanatic, i.e., does not bear grudge against a Hanafi. (After this, while discussing points of observance, he collected the issues and then said) All of this is in Bahr al-Fatawa. (T)

In Sharh Multaqa al-Abhur it is stated: It is permissible for a Hanafi to follow a Shafi'i when the Imam is cautious regarding points of disagreement. 3 Translation: It is permissible for a Hanafi to follow a Shafi'i when the Shafi'i Imam is cautious regarding points of disagreement. (T)

Note: I say, the expression of others, such as 'Al-Khaniyah', using the term 'little' (qaleel) is better. 12 From him (M). Translation: I say, the expression of others is better, as 'Khaniyah' has expressed it with the word 'qaleel' (little). 12 From him (T).

1. Khulasat al-Fatawa, Kitab al-Salat, Al-Iqtida bi Ahl al-Ahwa, Published by Maktaba Habibia Quetta, 1/149

2. Jami' al-Rumuz, Chapter: It is permissible for the Imam, Published by Maktaba Islamia, Gonbad-e-Qabus, Iran, 1/171
3. Majma' al-Anhur Sharh Multaqa al-Abhur, Chapter: Witr and Nawafil, Published by Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 1/129

फतावा रज़विया, जिल्द 6

फतावा इमाम ताहिर बिन अब्दुर रशीद बुखारी में है: शाफई मज़हब के व्यक्ति की पैरवी (नमाज़ में) जायज़ है यदि वह कट्टर न हो, और वह पेशाब-पाखाने के रास्तों के अलावा किसी और हिस्से से नजासत (गंदगी) निकलने पर वुज़ू करने वाला हो, और वह उस थोड़े पानी से वुज़ू न करता हो जिसमें नजासत गिर गई हो, जबकि वह दो कुल्लतों की मात्रा हो। 1 संक्षेप में। अनुवाद: शाफई मजहब की इत्तेदा जायज है अगर वह मुतअस्सिब (कट्टर) न हो और गैर-सबीलैन (पेशाब-पाखाने के रास्तों के अलावा) से नजासत के निकलने पर वुज़ू करने वाला हो और उस थोड़े पानी से वुज़ू न करता हो जिसमें नजासत गिर गई हो और वह दो कुल्लतों की मिकदार है। संक्षेप में (त)।

जामे' अर-रमज़ में है: यह तब है जब यह ज्ञात हो कि वह मतभेद के स्थानों से परहेज करता है। यदि उसके परहेज में संदेह हो, तो फिर किसी भी हाल में इत्तेदा (पीछे नमाज़ पढ़ना) जायज़ नहीं है, जैसा कि 'अन-नज़्म' में है। अतः उस समय उसकी इत्तेदा में कोई हर्ज नहीं है जब उसके ईमान में कोई संदेह न हो और वह कट्टर न हो, अर्थात हनफी के प्रति द्वेष न रखता हो। (इसके बाद पालन किए जाने वाले बिंदुओं पर चर्चा करते हुए मसलों को एकत्र किया, फिर कहा) यह सब 'बहर अल-फतावा' में है। 2 अनुवाद: यह उस वक्त है जब वह मकामात-ए-इख्तिलाफ से बचने का यकीन रखता हो। अगर उसके एहतराज (परहेज) में शक हो तो फिर हर हाल में इत्तेदा जायज नहीं, जैसा कि नज़्म में है। पस उस वक्त उसकी इत्तेदा में कोई हर्ज नहीं जब उसके ईमान में शक न हो (यानी 'मैं इंशाअल्लाह मोमिन हूँ' कहने वाला न हो) और वह मुतअस्सिब न हो यानी हनफी के साथ बुग्ज़ (द्वेष) न रखता हो। (इसके बाद मकामात-ए-रियायत पर गुफ्तगू करते हुए मसाइल को इकट्ठा किया फिर फ़रमाया) ये तमाम 'बहर अल-फतावा' में है। (त)

शरह मुल्तका अल-अबहुर में है: हनफी का शाफई के पीछे नमाज़ पढ़ना उस समय जायज़ है जब इमाम मतभेद के स्थानों में सावधानी बरतने वाला हो। 3 अनुवाद: हनफी का शाफई की इत्तेदा करना उस वक्त जायज है जब शाफई इमाम मकामात-ए-इख्तिलाफ में मोहतात (सावधान) हो। (त)

नोट: मैं कहता हूँ कि दूसरों की अभिव्यक्ति बेहतर है, जैसे 'खानिया' ने 'थोड़ा' (क़लील) शब्द के साथ व्यक्त किया है। 12 उनकी ओर से (म)। अनुवाद: मैं कहता हूँ कि इसके गैर की ताबीर बेहतर है जैसे कि 'खानिया' ने 'कलील' के साथ ताबीर किया है। 12 मिन्हु (त)।

1. खुलासातुल फतावा, किताबुल सलात, अल-इत्तेदा बि अहलिल अहवा, मकतबा हबीबिया, क्वेटा, 1/149
2. जामे' अर-रमज़, फ़स्ल यजुल अल-इमाम, मकतबा इस्लामिया, गुंबद-ए-क़ाबूसा, ईरान, 1/171
3. मजमा अल-अन्हुर शरह मुल्तका अल-अबहुर, बाबुल वित्र वल नवाफिल, दार इहया अल-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 1/129

पेज 697/736

فتاوی رضویہ، جلد ششم

فتاوی امام طاہر بن عبدالرشید بخاری میں ہے: الاقتداء بشفعوی المذھب یجوز ان لم یکن متعصبا ویکون متوضأ من الخارج من غیر السبیلین ولا یتوضأ بماء الذی وقعت فیه النجاسة وھو قدر قلتین ۱ اھ ملخصا۔ شافعی المذہب کی اقتداء جائز ہے اگر وہ متعصب نہ ہو اور غیر سبیلین سے نجاست کے خروج پر وضو کرنے والا ہو اور اس تھوڑے پانی سے وضو نہ کرتا ہو جس میں نجاست گر گئی ہو اور وہ دو قلوں کی مقدار ہے اھ تلخیصاً (ت)

جامع الرموز میں ہے: ھذا اذا علم بالاحتراز عن مواضع الخلاف فلو شك فی الاحتراز لم یجز الاقتداء مطلقا کما فی النظم فلا بأس به اذا لم یشك فی ایمانه ولم یتعصب ای لم یبغض للحنفی (وساق الکلام فی مسائل المراعاۃ فجمع واوعی ثم قال) الکل فی بحر الفتاوی ۲۔ یہ اس وقت ہے جب وہ مقاماتِ اختلاف سے بچنے کا یقین رکھتا ہو اگر اس کے احتراز میں شک ہو تو پھر ہر حال میں اقتداء جائز نہیں ، جیسا کہ نظم میں ہے پس اس وقت اس کی اقتداء میں کوئی حرج نہیں جب اس کے ایمان میں شک نہ ہو (یعنی انا مؤمن ان شاء اللہ کہنے والا نہ ہو) اور وہ متعصب نہ ہو یعنی حنفی کے ساتھ بغض نہ رکھتا ہو (اس کے بعد مقاماتِ رعایت پر گفتگو کرتے ہوئے مسائل کو اکٹھا کیا پھر فرمایا) یہ تمام بحر الفتاوی میں ہے۔ (ت)

شرح ملتقی الابحر میں ہے: جواز اقتداء الحنفی بالشافعی اذا کان الامام یحتاط فی مواضع الخلاف ۳۔ حنفی کا شافعی کی اقتداء کرنا اس وقت جائز ہے جب شافعی امام مقاماتِ اختلاف میں محتاط ہو۔ (ت)

عہ: قلت الاولی تعبیر غیرہ کالغانیۃ بالقلیل ۱۲ منہ (م) میں کہتا ہوں اس کے غیر کی تعبیر بہتر ہے جیسے کہ خانیہ نے "قلیل" کے ساتھ تعبیر کیا ہے ۱۲ منہ (ت)

1 خلاصۃ الفتاوی کتاب الصلوۃ الاقتداء باھل الھواء مطبوعہ مکتبہ حبیبیہ کوئٹہ ۱/ ۱۴۹ 2 جامع الرموز فصل یجوز الامام مطبوعہ مکتبہ اسلامیہ گنبد قاموس ایران ۱/ ۱۷۱ 3 مجمع الانہر شرح ملتقی الابحر باب الوتر والنوافل مطبوعہ دار احیاء التراث العربی بیروت ۱/ ۱۲۹

Fatawa Razawiyya Volume 6

Allama Ahmad al-Misri states in the marginalia of *Sharh Nur al-Idah*: **[Arabic Text:]** *The validity of following is when he is cautious in the points of difference, such as renewing ablution upon the emergence of something like blood, and wiping his head, and washing his garment from semen or rubbing it if it dries... etc. (1)* The validity of following a Shafi'i [imam] depends on his being cautious in points of difference; for instance, he performs a new ablution upon the discharge of something like blood, performs the wiping of the head, washes a garment stained with semen or scrapes it off if it has dried, etc. (T)

In *Radd al-Muhtar*, it is mentioned: **[Arabic Text:]** *Many of the teachers (masha'ikh) said: if it is his habit to observe the point of difference, it is permissible, otherwise not. Al-Sindi, mentioned previously, recorded it. [H] (2). I say: this is based on the fact that consideration is given to the opinion of the follower, and it is the most correct... etc.* Most scholars have stated that if the Shafi'i imam's habit is to observe points of difference (meaning he respects the Hanafi school in matters of ablution and prayer), then following him is permissible, otherwise it is not. Sindi mentioned this, and it has been discussed previously. [H]. I say: this is because in this matter, the opinion of the follower is what counts, and this is the most correct view... etc. (T)

In the same work: **[Arabic Text:]** *In the treatise 'al-Ihtida' fi al-Iqtida' by Mulla Ali al-Qari: most of our teachers held the view of permissibility if he is cautious in points of difference, otherwise not. (3)* It is stated in Mulla Ali al-Qari's treatise "*al-Ihtida' fi al-Iqtida'*" that the majority of scholars are of the opinion that if a Shafi'i imam is cautious in points of difference, then following him is permissible, otherwise not. (T)

Similarly, it is clarified in other books: **[Arabic Text:]** *It remains that al-Shami quoted from al-Qari after his aforementioned statement: the meaning is that it is permissible regarding the one who observes...* The matter remains that al-Shami quoted from Ali al-Qari after his aforementioned statement: its meaning is that it is permissible in cases where observation is practiced...

---

1. *Hashiyat al-Tahtawi 'ala Maraqi al-Falah*, Chapter on Witr, printed by Nur Muhammad Karkhana-e-Tijarat-e-Kutub, Karachi, p. 210.
2. *Radd al-Muhtar*, section on following a Shafi'i etc., printed by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/416.

3. *Radd al-Muhtar*, section on following a Shafi'i etc., printed by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/416. Page 698 of 736

फ़तावा रज़विया जिल्द 6

अल्लामा अहमद मिस्री हाशिए शरह नूर अल-ईज़ाह में फ़रमाते हैं: **[अरबी मूल:]** इक़्तिदा *(अनुसरण)* की वैधता तब है जब वह मतभेद के स्थानों में सावधानी बरते, जैसे ख़ून निकलने पर नया वज़ू करना, सिर का मसह करना, और कपड़े को वीर्य *(मनी)* से धोना या सूखने पर उसे खुरचना... इत्यादि। *(1)* शाफ़ई की इक़्तिदा की शुद्धता इस पर निर्भर है कि वह मतभेद के स्थानों में सावधान हो, उदाहरण के लिए ख़ून जैसी चीज़ निकलने पर नया वज़ू करता हो, सिर का मसह करता हो, वीर्य वाले कपड़े को धोता हो या सूखने की स्थिति में उसे खुरच देता हो इत्यादि। (त)

रद अल-मुह्तार में है: **[अरबी मूल:]** अनेक गुरुओं *(मशाईख़)* ने कहा है: यदि मतभेद के स्थानों का पालन करना उसकी आदत है, तो यह जायज़ है, अन्यथा नहीं। पूर्वोक्त सिन्दी ने इसे दर्ज किया है। *[ह] (2)*। मैं कहता हूँ: यह इस तथ्य पर आधारित है कि इसमें मुक्तदी *(पीछे नमाज़ पढ़ने वाले)* की राय का ही एतबार किया जाता है और यही अधिक सही है... इत्यादि। अधिकांश विद्वानों ने कहा है कि यदि शाफ़ई इमाम की आदत मतभेद के स्थानों में सावधानी बरतने की है (अर्थात वह वज़ू और नमाज़ में ह़नफ़ी मज़हब का लिहाज़ रखता हो), तो उसकी इक़्तिदा जायज़ है, अन्यथा नहीं। सिन्दी ने इसका उल्लेख किया है और इसका विवरण पहले भी आ चुका है। [ह]। मैं कहता हूँ कि यह इस आधार पर है कि इस मामले में मुक्तदी की राय मान्य होती है और यही सबसे सही मत है... इत्यादि। (त)

उसी पुस्तक में है: **[अरबी मूल:]** मुल्ला अली क़ारी के रिसाले 'अल-एहतिदा फ़ी अल-इक़्तिदा' में: हमारे अधिकांश विद्वान इस विचार के थे कि यदि वह मतभेद के स्थानों में सावधान है तो इक़्तिदा जायज़ है, अन्यथा नहीं। *(3)* मुल्ला अली क़ारी के रिसाले "अल-एहतिदा फ़ी अल-इक़्तिदा" में लिखा है कि अधिकांश विद्वानों की राय यही है कि यदि इमाम शाफ़ई मतभेद के स्थानों में सावधान है तो इक़्तिदा जायज़ है, अन्यथा नहीं। (त)

इसी प्रकार अन्य पुस्तकों में भी स्पष्ट किया गया है: **[अरबी मूल:]** यह शेष है कि शामी ने अपने उपर्युक्त कथन के बाद क़ारी से उद्धृत किया है: इसका अर्थ यह है कि सावधानी बरतने वाले के मामले में यह जायज़ है... रही यह बात कि शामी ने अली क़ारी से उनके उपर्युक्त कथन के बाद यह उद्धृत किया है: इसका अर्थ यह है कि यह सावधानी बरतने के मामले में जायज़ है...

1. हाशिया अत-तह़तावी अला मराक़ी अल-फ़लाह, बाबुल वितर, मतबूआ नूर मुहम्मद कारख़ाना-ए-तिजारत-ए-कुतुब, कराची, पृ. 210।
2. रद अल-मुह्तार, मतलब फ़ी अल-इक़्तिदा बि शाफ़ई व नह़वहु इत्यादि, मतबूआ मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 1/416।
3. रद अल-मुह्तार, मतलब फ़ी अल-इक़्तिदा बि शाफ़ई व नह़वहु इत्यादि, मतबूआ मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 1/416। पृष्ठ 698 का 736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

علامہ احمد مصری حاشیہ شرح نورالایضاح میں فرماتے ہیں: صحة الاقتداء اذا کان یحتاط فی مواضع الاختلاف کأن یجدد الوضوء بخروج نحو دم وان یمسح رأسه وان یغسل ثوبه من منی او یفرکه اذا جف الخ ۱ صحت اقتدا شافعی کی اس پر موقوف ہے کہ وہ مواضع اختلاف میں محتاط ہو، مثلاً خون جیسی چیز کے خروج پر نیا وضو کرتا ہو اور سر کا مسح کرتا ہو، منی والے کپڑے کو دھوتا ہو یا خشک ہونے کی صورت میں اسے کھرچ دیتا ہو الخ (ت)

ردالمحتار میں ہے: قال کثیر من المشائخ ان کان عادته مراعاة موضع الخلاف جاز والا فلا ذکره السندی المتقدم ذکره ح ۲ قلت وهذا بناء علی ان العبرة لرأی المقتدی وهو الاصح الخ اکثر مشائخ نے فرمایا ہے کہ اگر شافعی امام کی عادت مقامات اختلاف میں احتیاط کی (یعنی وضو و نماز میں مذہب حنفی کی رعایت کرتا ہو) تو پھر اس کی اقتداء جائز ورنہ نہیں۔ سندی نے اس کو ذکر کیا اس کا تذکرہ پیچھے بھی گزرا ہے ح۔ میں کہتا ہوں یہ اس بنا پر ہے کہ اس مسئلہ میں اعتبار مقتدی کی رائے کا ہے اور یہی اصح ہے الخ (ت)

اُسی میں ہے: فی رسالة الاهتداء فی الاقتداء لملا علی القاری ذهب عامة مشائخنا الی الجواز اذا کان یحتاط فی موضع الخلاف والافلا۔ ۳ ملا علی قاری کے رسالہ "الاہتداء فی الاقتداء" میں ہے کہ اکثر مشائخ کی رائے یہی ہے کہ اگر امام شافعی مقامات اختلاف میں محتاط ہے تو اقتدا جائز ورنہ نہیں۔ (ت)

اسی طرح اور کتب میں تصریح ہے: بقی ان الشامی نقل عن القاری بعد قوله المذکور المعنی انه یجوز فی المراعی رہا یہ معاملہ کہ شامی نے علی قاری سے اپنے مذکور قول کے بعد یہ نقل کیا ہے: اس کا معنی یہ ہے کہ

---

۱ حاشیۃ الطحطاوی علی مراقی الفلاح، باب الوتر مطبوعہ نور محمد کارخانہ تجارت کتب کراچی ص ۲۱۰ ۲ ردالمحتار مطلب فی الاقتداء بشافعی ونحوه الخ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱ / ۴۱۶ ۳ ردالمحتار مطلب فی الاقتداء بشافعی ونحوه الخ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱ / ۴۱۶ Page of 736 698

Fatawa Razawiyya - Volume 6

It is permissible without dislike behind one who observes (the conditions), and with dislike behind one who does not. (End of quote)

I say: (I say) this contradicts the explicit statement of Fatawa al-Hindiyyah, in which they have mentioned non-validity (lack of correctness). However, this point does not bind me because I have expressed it with "lack of permissibility," which encompasses both corruption (nullification) and prohibitive dislike (karahat al-tahrim). Therefore, it is in accordance with both the interpretation of Ali al-Qari and the explicit statement of al-Hindiyyah. What has become apparent to me, and I hope - if Allah Almighty wills - that it is the correct view, is that the invalidity of the prayer only occurs in the case where the Shafi'i Imam specifically does not observe the precautions in the prayer (and the Hanafi is certain of this). This is what Allama Saghnaqi adopted, and he stated it definitively in the explanation of the Witr prayer in Al-Durr and other works. Otherwise, if it is not known whether he observes the precautions, then Ali al-Qari's opinion is correct: that the prayer will be valid because there is no knowledge of a nullifying factor, although it would be disliked (makruh) because he is not cautious. If the phrase "validity" in al-Hindiyyah's text is interpreted as "permissibility" (jawaz), even though there is a distance in this interpretation, then both statements would be in agreement. One evidence for this interpretation is that the author of al-Hindiyyah mentioned the statement of Qazi Khan under the issue of non-validity. And Al-Khaniyyah has explicitly stated, as you have already heard, that the negation of hardship (haraj) is contingent upon those conditions. Thus, by way of contrary implication, this means that hardship (dislike) will exist in the absence of those conditions.

---

1. Radd al-Muhtar, Chapter on Following a Shafi'i and the Like, published by Mustafa al-Babi, Egypt, 1/416.

फ़तावा रिज़विया - जिल्द 6

सावधानी बरतने वाले के पीछे बिना किसी नापसंदगी (कराहियत) के जायज़ है और सावधानी न बरतने वाले के पीछे नापसंदगी के साथ। (उद्धरण समाप्त)

मैं कहता हूँ: (मैं कहता हूँ) यह फ़तावा अल-हिन्दिया के उस स्पष्ट कथन के विरुद्ध है जिसमें उन्होंने अमान्यता (सही न होने) का उल्लेख किया है। हालाँकि, यह बात मुझ पर लागू नहीं होती क्योंकि मैंने इसे 'जवाज़ की कमी' (अनुमति की कमी) के रूप में व्यक्त किया है, जिसमें बिगाड़ (नष्ट होना) और निषेधात्मक नापसंदगी (कराहियत-ए-तहरीमी) दोनों शामिल हैं। इसलिए, यह अली अल-क़ारी की व्याख्या और हिन्दिया के स्पष्टीकरण दोनों के अनुकूल है। जो बात मुझे स्पष्ट हुई है, और मुझे आशा है कि - यदि अल्लाह सर्वशक्तिमान ने चाहा तो - वही सही विचार है, वह यह है कि नमाज़ की अमान्यता केवल उस स्थिति में होती है जब शाफ़ई इमाम विशेष रूप से नमाज़ में सावधानियों का पालन नहीं करता हो (और हनफ़ी को इसका यकीन हो)। अल्लामा सघनाक़ी ने इसी को अपनाया है, और उन्होंने 'अल-दुर' आदि में वित्र नमाज़ के वर्णन में इसकी दृढ़ता से पुष्टि की है। अन्यथा, यदि यह ज्ञात न हो कि वह सावधानियों का पालन करता है या नहीं, तो अली अल-क़ारी की राय सही है कि नमाज़ मान्य होगी क्योंकि बिगाड़ने वाले कारक का ज्ञान नहीं है, हालांकि यह नापसंद (मक़रूह) होगी क्योंकि इमाम सावधान नहीं है। यदि हिन्दिया के पाठ में 'मान्यता' (सिहहत) शब्द को 'जवाज़' (अनुमति) के अर्थ में लिया जाए, भले ही इस व्याख्या में दूरी हो, तो दोनों कथनों में सामंजस्य हो जाएगा। इस व्याख्या का एक प्रमाण यह है कि हिन्दिया के लेखक ने क़ाज़ी ख़ान के कथन को अमान्यता के मसले के अंतर्गत उद्धृत किया है। और जैसा कि आपने सुना है, ख़ानिया ने स्पष्ट किया है कि 'हर्ज' (कठिनाई/नापसंदगी) का न होना उन शर्तों पर निर्भर है। इस प्रकार, विपरीत निहितार्थ के सिद्धांत के अनुसार, इसका अर्थ है कि उन शर्तों की अनुपस्थिति में हर्ज (नापसंदगी) होगी।

---

1. रद-अल-मुह्तार, शाफ़ई और उसके समान का अनुसरण करने के विषय में अध्याय, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र द्वारा प्रकाशित, 1/416।

पृष्ठ 699 का 736

رعایت کرنے والے کے پیچھے بغیر کراہت جائز ہے اور رعایت نہ کرنے والے کے پیچھے بالکراہت اھ (ت)

اقول: (میں کہتا ہوں) یہ فتاوٰی ہندیہ کی اس تصریح کے مخالف ہے جس میں انہوں نے عدم صحت کا ذکر کیا ہے، لیکن یہ بات مجھ پر لازم نہیں آتی کیونکہ میں نے اسے عدم جواز کے ساتھ تعبیر کیا ہے جو فساد اور کراہت تحریمی دونوں کو شامل ہے، لہٰذا یہ علی قاری کی تفسیر اور ہندیہ کی تصریح دونوں کے موافق ہے، اور جو چیز مجھ پر ظاہر ہوئی ہے اور میں امید کرتا ہوں ان شاء اللہ وہی صواب ہے وہ یہ ہے کہ نماز کا باطل ہونا اس صورت میں جب امام شافعی بالخصوص نماز میں رعایت نہ کرتا ہو (اس بات کا حنفی کو یقین ہو) جیسا کہ اس کو علامہ سغناقی نے اختیار کیا اور در وغیرہ کے بیان وتر میں اس پر جزم کیا ہے ورنہ اگر علم نہ ہو کہ وہ رعایت کرتا ہے تو علی قاری کی رائے صواب ہے کہ نماز درست ہوگی کیونکہ مفسد کا علم نہیں البتہ مکروہ ہوگی، کیونکہ وہ محتاط نہیں، اور اگر ہندیہ کی عبارت میں صحت کو جواز پر محمول کر لیا جائے گا اگرچہ اس میں بعد ہے تو دونوں اقوال میں موافقت ہو جائے گی، اس حمل پر ایک دلیل یہ ہے کہ صاحب ہندیہ نے کلام قاضی خاں کو مسئلہ عدم صحت کے تحت ذکر کیا ہے، اور خانیہ نے تصریح کی ہے جیسا کہ آپ سن چکے کہ نفی حرج ان شرائط کے ساتھ معلق ہے اور یہ بات مفہوم مخالف کے طور پر اس بات کا فائدہ دیتی ہے کہ ان شرائط کے نہ پائے جانے کی صورت میں حرج یعنی کراہت ہوگی۔

---

1 ردالمحتار مطلب فی الاقتداء بشافعی و نحوہ الخ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/ ۴۱۶

Fatawa Razviya, Volume 6

...absence of it, and the presence of hardship does not necessarily imply invalidity. Yes, it is equivalent to non-permissibility in the sense of the absence of lawfulness, which encompasses prohibitive dislike (karahat al-tahrim). This is supported by what Al-Allama Al-Halabi stated in 'Al-Ghunya': "The disagreement is only regarding the dislike; otherwise, there is consensus on permissibility, meaning validity." Then, do not let it escape you that the dislike here refers to prohibition, as it is what correctly interprets 'non-permissibility' as Ali al-Qari did. So understand and be firm. This is what appeared to me, and there remain hidden aspects for this weak servant. He researched the discourse on this objective in his fatwas entitled 'Al-Ataya al-Nabawiyyah fi al-Fatawa al-Radawiyyah.' And with Allah is success. | It is beneficial to note that when the conditions are absent, hardship will necessarily arise, and the existence of hardship does not imply invalidity. Yes, it will be equivalent to non-permissibility in the sense of the absence of lawfulness, which encompasses prohibitive dislike (karahat tahrimi). This is supported by the words of Allama Halabi in 'Ghunya' that the disagreement is in dislike; otherwise, there is consensus on permissibility, i.e., validity. Furthermore, it should be kept in mind that prohibitive dislike is meant here because the interpretation of non-permissibility is correct with it, as Ali Qari has done. Understand well and remain firm on it. This was the detail that became clear to me, and some corners still remain. This weak servant, by the grace of Allah, has researched this objective in his Fatwa titled 'Al-Ataya al-Nabawiyyah fi al-Fatawa al-Radawiyyah'. (T)

Glory be to Allah! When prayer behind an incautious Shafi'i is impermissible according to the majority of Imams, then what comparison do these innovators, followers of Tanveer, have with the people of truth and guidance? It should be, by priority, more impermissible and prohibited behind them, as is not hidden.

Caution (Tanbih): You have heard the texts of Khania, Khulasa, Nihaya, Kifaya, Bahr al-Fatawa, Sharh-e-Nuqaya, and Hindiyya that prayer behind a biased (muta'assib) Shafi'i is not permissible. Its interpretation passed that a biased [footnote marker] person is he who harbors hatred for the Hanafis. Now consider how much intense hatred and long-standing malice the non-muqallids have not only for Hanafis but for all the followers of the Imams of religion. Especially the 'grace' they show towards the Hanafis, the enemies of Allah, in public and private, is beyond description. So, based on these narrations, this is a separate proof for the impermissibility of following them in prayer.

But the researcher said in 'Al-Fath': It is not hidden that his bias only necessitates his sinfulness (fisq). 1 (End) | But the researcher in 'Fath-ul-Qadir' said: Let it not be hidden that his being biased is a cause and reason for sinfulness (fisq). (End)

Note (Auh): I say, similarly, one who harbors hatred for Shafi'is, Malikis, or Hanbalis—in the view of one whom Allah has cleared of bias—knows that no one harbors hatred for the people of truth except a person of bad sect (bad-mazhab). And prayer behind a person of bad sect is prohibited. 12 Amina Salama (M)

1 Fath-ul-Qadir, Chapter on Witr Prayer, published by Maktaba Nooriya Razviya Sukkur, 1/381

फ़तावा रज़विया, जिल्द 6

...उसकी अनुपस्थिति, और कठिनाई की उपस्थिति अमान्यता (बतलान) को आवश्यक नहीं बनाती। हाँ, यह अदम-ए-जवाज़ (अ-अनुमेयता) के बराबर है, उस अर्थ में जो वैधता के अभाव को दर्शाता है और जिसमें कराहत-ए-तहरीमी (निषिद्ध अरुचि) शामिल है। इसका समर्थन अल्लामा हलबी के'अल-गुनिया' के शब्दों से होता है: "असहमति केवल कराहत (अरुचि) के बारे में है; अन्यथा, अनुमेयता यानी वैधता पर आम सहमति (इज्मा) है।" फिर, इसे न भूलें कि यहाँ कराहत से तात्पर्य तहरीम (निषेध) है, क्योंकि यही 'अदम-ए-जवाज़' की सही व्याख्या करता है जैसा कि अली अल-क़ारी ने किया है। अतः समझें और अडिग रहें। यह वह बात थी जो मुझ पर स्पष्ट हुई, और इस कमज़ोर सेवक के लिए अभी भी कुछ छिपे हुए पहलू बाकी हैं। उन्होंने इस उद्देश्य पर अपनी फ़तवा संग्रह 'अल-अताया अल-नबविया फ़िल-फ़तावा अर-रज़विया' में शोध किया है। और अल्लाह ही सफलता देने वाला है। | यह बात उपयोगी है कि जब शर्तें अनुपस्थित हों, तो कठिनाई (हरज) लाज़िमी होगी, और कठिनाई का होना अमान्यता को आवश्यक नहीं बनाता। हाँ, यह 'अदम-ए-जवाज़' के बराबर होगा, यानी वैधता का न होना, जिसमें कराहत-ए-तहरीमी शामिल है। इसकी पुष्टि अल्लामा हलबी के उन शब्दों से होती है जो 'गुनिया' में हैं कि मतभेद कराहत में है, अन्यथा अनुमेयता यानी वैधता पर इज्मा है। इसके अलावा, यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि यहाँ कराहत-ए-तहरीमी अभिप्रेत है क्योंकि 'अदम-ए-जवाज़' की व्याख्या इसी के साथ सही होती है, जैसा कि अली क़ारी ने किया है। इसे अच्छी तरह समझें और इस पर अडिग रहें। यह वह विस्तार था जो मुझ पर स्पष्ट हुआ और अभी कुछ पहलू रह गए हैं। इस कमज़ोर सेवक ने अल्लाह की कृपा से इस उद्देश्य पर अपने फ़तावा 'अल-अताया अल-नबविया फ़िल-फ़तावा अर-रज़विया' में शोध किया है। (त)

सुब्हान अल्लाह! जब बहुमत इमामों के अनुसार एक असावधान शाफ़ई के पीछे नमाज़ जायज़ नहीं है, तो इन नवाचार करने वालों (बिदअतियों), तनवीर के अनुयायियों की सत्य और मार्गदर्शन के लोगों से क्या तुलना! उनके पीछे नमाज़ पढ़ना, प्राथमिकता के आधार पर, और अधिक अमान्य और निषिद्ध होना चाहिए जैसा कि स्पष्ट है।

तन्बीह (सावधानी): आप खानिया, खुलासा, निहाया, किफ़ाया, बहरुल फ़तावा, शरह-ए-नुक़ाया और हिन्दिया के प्रमाण सुन चुके हैं कि पक्षपाती (मुतअस्सिब) शाफ़ई के पीछे नमाज़ जायज़ नहीं है। इसकी व्याख्या यह की गई है कि पक्षपाती [फुटनोट चिन्ह] वह है जो हनफ़ियों के प्रति द्वेष रखता है। अब विचार करें कि ग़ैर-मुक़ल्लिदों को न केवल हनफ़ियों बल्कि धर्म के सभी इमामों के अनुयायियों

के प्रति कितना तीव्र द्वेष और दीर्घकालिक शत्रुता है। विशेष रूप से हनफ़ियों, अल्लाह के शत्रुओं के प्रति वे जो 'कृपा' सार्वजनिक और निजी तौर पर दिखाते हैं, वह वर्णन से परे है। तो, इन वर्णनों के आधार पर, यह उनके पीछे नमाज़ पढ़ने की अमान्यता का एक अलग प्रमाण है।

लेकिन शोधकर्ता ने 'अल-फ़तह' में कहा: यह छिपा नहीं है कि उसका पक्षपात केवल उसके पाप (फ़िस्क) को आवश्यक बनाता है। 1 (समाप्त) | लेकिन 'फ़तहुल क़दीर' में शोधकर्ता ने कहा: यह छिपा न रहे कि उसका पक्षपाती होना उसके पाप (फ़िस्क) का कारण और आधार है। (समाप्त)

नोट (अह): मैं कहता हूँ, इसी प्रकार, शाफ़इयों, मलिकियों या हन्बलियों के प्रति द्वेष रखने वाला—उस व्यक्ति की दृष्टि में जिसे अल्लाह ने पक्षपात से मुक्त किया है—जानता है कि सत्य के लोगों से केवल एक कुमार्गी (बद-मज़हब) ही द्वेष रखता है। और कुमार्गी के पीछे नमाज़ पढ़ना निषिद्ध है। 12 आमिना सलमा (म)

1 फ़तहुल क़दीर, वित्र नमाज़ का अध्याय, मकतबा नूरिया रज़विया सक्खर द्वारा प्रकाशित, 1/381

فتاوی رضویه جلد ششم

عدمها، ووجود البأس لایستلزم البطلان نعم هو مساو لعدم الجواز بمعنی عدم الحل المجامع لکراهة التحریم، ویؤید ذلك مانص علیه العلامة الحلبی فی الغنیة الاختلاف انما هو فی الکراهة والافعلی الجواز یعنی الصحة الاجماع۔ ثم لا یذهبن عنك ان الکراهة ههنا للتحریم اذ هو الذی یصح تفسیر عدم الجواز به کما فعل القاری فافهم وتثبت هذا ما ظهرلی وقد بقی خبایا العبد الضعیف حقق الکلام فی هذا المرام فی فتاواه الملقبة بالعطایا النبویة فی الفتاوی الرضویة وبالله التوفیق۔ | بات کی مفید ہے کہ جب شرائط معدوم ہوں تو حرج لازم آئے گا اور وجود حرج بطلان کو مستلزم نہیں، ہاں وہ مساوی بنے گا عدم جواز بمعنی عدم حل کا جو کراہت تحریمی کو جامع ہے اور اس کی تائید علامہ حلبی کے ان الفاظ سے ہوتی ہے جو غنیہ میں ہیں کہ اختلاف کراہت میں ہے ورنہ جواز یعنی صحت پر اجماع ہے۔ پھر یہ بھی ذہن نشین رہنا چاہئے کہ یہاں کراہت تحریمی مراد ہے کیونکہ تفسیر عدم جواز کی اسی کے ساتھ درست ہوتی ہے جیسا کہ علی قاری نے کیا ہے، خوب سمجھ کر اس پر قائم رہو۔ یہ وہ تفصیل تھی جو مجھ پر واضح ہوئی اور ابھی کچھ گوشے رہ گئے ہیں بندہ ضعیف نے اللہ کی توفیق سے اس مقصد پر اپنے فتاوی الملقب بہ العطایا النبویہ فی الفتاوی الرضویہ میں تحقیق کی ہے۔ (ت)

سبحن اللہ جبکہ بے احتیاط شافعی کے پیچھے نماز جمہور ائمہ کے نزدیک ناجائز ، تو ان مبتدعین تنورین کو اہل حق و ہدایت سے کیا نسبت ان کے پیچھے بدرجہ اولٰی ناجائز و ممنوع تر ہونا چاہئے کما لا یخفی۔

تنبیہ : خانیہ و خلاصہ و نہایہ و کفایہ و بحر الفتاوی و شرح نقایہ و ہندیہ کے نصوص سن چکے کہ متعصب شافعی کے پیچھے نماز جائز نہیں اور اس کی تفسیر گزری کہ متعصب عہ وہ جو حنفیہ

سے بغض رکھتا ہو، اب غور کر لیجئے کہ غیر مقلدین کو نہ صرف حنفیہ بلکہ تمام مقلدین ائمہ دین سے کس قدر بغض شدید و کینہ مدید ہے خصوصا جو عنایت حضرات حنفیہ خصم اللہ بالاطافہ والحفیہ کے ساتھ ہے بیان سے باہر تو ان روایات پر یہ جداگانہ دلیل ہوئی ان کی اقتداء ناجائز ہونے کی ،

لکن قال المحقق فی الفتح لایخفی ان تعصبه انما یوجب فسقه 1 اه | لیکن محقق نے فتح القدیر میں فرمایا یہ مخفی نہ رہے کہ اس کا متعصب ہونا فسق کا موجب و سبب ہے ۱ھ

عہ : اقول ایسے ہی شافعیہ یا مالکیہ یا حنبلیہ سے بغض رکھنے والا عند من براہ اللہ من التعصب کہ اہل حق سے بغض نہ رکھے گا مگر بد مذہب، اور بد مذہب کے پیچھے نماز ممنوع ۱۲ امنہ سلمہ (م)

1 فتح القدیر باب صلوٰۃ الوتر مطبوعہ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۱ / ۳۸۱

Fatawa Razvia, Volume Six

I say: You have already known that 'non-permissibility' (adam al-jawaz) in the sense of 'lack of lawfulness' (adam al-hill) is applicable to 'prohibitive dislike' (karahah al-tahrimiyyah). Indeed, prayer behind an evildoer (fasiq) is prohibitedly disliked. If the objection is repeated based on what is in 'Al-Hindiyyah', we repeat the discourse previously mentioned. Thus, this evidence reverts back to the second evidence, as is not hidden. Through this interpretation, all narrations become supportive of what we have established: that the dislike of praying behind a transgressor (fasiq) or an innovator (mubtadi') is a prohibitive dislike (karahah al-tahrim). And Allah, Glory be to Him, is All-Knowing of everything.

I say: (I say) You have read earlier that non-permissibility means lack of lawfulness, which applies to prohibitive dislike. Prayer behind a transgressor is prohibitedly disliked. If the objection is repeated with the text of 'Al-Hindiyyah', then we will bring forward the previous discourse. At that time, this reason will return to the second reason as is not hidden. And with this interpretation, all narrations will support the research we have done, that the dislike of praying behind a transgressor and an innovator is prohibitive dislike. And Allah, Glory be to Him, is All-Knowing of everything. (T)

Fourth Argument

His Eminence, the Leader of Leaders, the Lamp of the Ummah, Imam al-A'zam (may Allah Almighty be pleased with him) says: The theologian who, in the discussion of essential beliefs (where a slip leads to disbelief), desires that his opponent should err in some way, he is a disbeliever (Note A), because he has...

Note A: 'Disbeliever' means there is a fear of disbelief for him. Seeking refuge in Allah Almighty. In 'Al-Khulasah', it is mentioned: I heard the Judge Imam (i.e., the most noble Imam, Qazi Khan) say that if someone intends to embarrass an opponent, should he be called a disbeliever? He said, in my view, he should not be called a disbeliever, although there is fear and apprehension of disbelief for him. Al-Allama Badr al-Rashid al-Hanafi, while detailing words of disbelief in his treatise, wrote that it is in 'Al-Muhit' that a person who is pleased with his own disbelief becomes a disbeliever, i.e., by consensus (ijma'). And whoever (continued on the next page)...

फ़तावा रज़विया, खंड छह

मैं कहता हूँ: आप जान चुके हैं कि 'अदम अल-जवाज़' (अनुमति का न होना) 'अदम अल-हिल' (अवैधता) के अर्थ में 'कराहते तहरीमी' (निषिद्ध अरुचि) पर लागू होता है। वास्तव में, फासिक (पापी) के पीछे नमाज़ पढ़ना कराहते तहरीमी है। यदि 'हिंदिया' में जो कुछ है उसके आधार पर आपत्ति दोहराई जाती है, तो हम अपनी पिछली बातों को फिर से दोहराएंगे। इस प्रकार, यह प्रमाण दूसरे प्रमाण की ओर लौट जाता है, जैसा कि छिपा नहीं है। इस व्याख्या के माध्यम से, सभी वर्णन हमारे द्वारा स्थापित किए गए शोध के समर्थक बन जाते हैं कि फासिक और बिदअती (नवाचारी) के पीछे नमाज़ पढ़ने की अरुचि कराहते तहरीमी है। और अल्लाह सुब्हानहु हर चीज़ का जानने वाला है।

मैं कहता हूँ: (मैं कहता हूँ) आपने पहले पढ़ लिया है कि 'अदम अल-जवाज़' का अर्थ 'अदम अल-हिल' है जो कराहते तहरीमी पर खरा उतरता है। और फासिक के पीछे नमाज़ कराहते तहरीमी है। यदि 'हिंदिया' के उद्धरण के साथ आपत्ति दोहराई जाए, तो हम पिछला कलाम सामने लाएंगे, तो उस समय यह दलील दूसरी दलील की ओर लौट जाएगी जैसा कि गुप्त नहीं है। और इस व्याख्या के साथ सभी रिवायतें उस शोध की समर्थक हो जाएंगी जो हमने की है कि फासिक और बिदअती के पीछे नमाज़ पढ़ने की अरुचि कराहते तहरीमी है। और अल्लाह सुब्हानहु हर चीज़ का जानने वाला है। (त)

चौथी दलील

हज़रत इमाम अल-अइम्मा, सिराज उल-उम्मा, इमाम ए आज़म (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) फरमाते हैं कि जो मुतकल्लिम (धर्मशास्त्री) आवश्यक अकीदों (विश्वासों) की चर्चा में (जिनमें चूक कुफ्र का कारण बनती है) यह चाहे कि किसी तरह उसका विरोधी गलती कर जाए, वह काफिर (नोट ए) है, क्योंकि उसने...

नोट ए: काफिर से अर्थ है कि उस पर कुफ्र का अंदेशा है। अल्लाह तआला की पनाह। 'अल-खुलासा' में है: मैंने काज़ी इमाम (यानी इमाम अल-अजल काज़ी खान) से सुना कि अगर कोई विरोधी को शर्मिंदा करने का इरादा रखता हो, तो क्या उसे काफिर कहा जाए? उन्होंने फरमाया, मेरे नज़दीक उसे काफिर न कहा जाए, अलबत्ता उस पर कुफ्र का खौफ और अंदेशा है। अल्लामा बदर अल-रशीद अल-हनफी ने अपने रिसाले (पत्र) में कुफ्र के शब्दों का विस्तार से वर्णन करते हुए लिखा है कि 'महीत' में है कि वह व्यक्ति जो अपने स्वयं के कुफ्र पर राज़ी हो गया, वह काफिर हो गया, यानी इज्मा (आम सहमति) के साथ। और जो कोई (बाकी अगले पृष्ठ पर)...

فتاوٰی رضویہ ، جلد ششم

اقول : قدعلمت ان عدم الجواز بمعنی عدم الحل الصادق بکراھۃ التحریم وان الصلاۃ خلف الفاسق مکروھۃ تحریمیۃ فان اعید الاشکال بما فی الھندیۃ اعدنا الکلام بماقدمنا وح یئول ھذا الدلیل الی الدلیل الثانی کما لایخفی وبھذا الحمل تکون الروایات مؤیدات لما حققنا من ان الکراھۃ خلف الفاسق و المبتدع کراھۃ تحریم واللہ سبحنہ بکل شیئ علیم۔

اقول: (میں کہتا ہوں) آپ نے پیچھے پڑھ لیا ہے کہ عدم جواز بمعنی عدم حلت ہے جو کراہت تحریمی پر صادق آتا ہے اور فاسق کے پیچھے نماز مکروہ تحریمی ہے اگر ہندیہ کی عبارت کے ساتھ اشکال کا اعادہ کیا جائے تو ہم سابقہ کلام سامنے لائیں گے تو اس وقت یہ دلیل دوسری دلیل کی طرف لوٹ جائے گی جیسا کہ مخفی نہیں، اور اس حمل کے ساتھ تمام روایات اس تحقیق کی مؤید ہو جائیں گی جو ہم نے کی ہے کہ فاسق اور بدعتی کے پیچھے نماز پڑھنے کی کراہت مکروہ تحریمی ہے واللہ سبحنہ بکل شیئ علیم۔ (ت)

دلیل چہارم

حضرت امام الائمہ سراج الامہ امام اعظم رضی اللہ تعالٰی عنہ فرماتے ہیں جو متکلم ضروریات عقائد کی بحث میں (جن میں لغزش موجب کفر ہوتی ہے) یہ چاہے کہ کسی طرح اس کا مخالف خطا کر جائے وہ کافر عہ ہے کہ اس نے اس کا

عہ: کافر سے مراد کہ اس پر کفر کا اندیشہ ہے۔ والعیاذ باللہ تعالٰی، خلاصہ میں ہے میں نے قاضی امام (یعنی امام اجل قاضی خاں) سے سنا کہ اگر کوئی مخالف کو شرمندہ کرنے کا ارادہ رکھتا تو اسے کافر کہا جائے فرمایا اور میرے نزدیک اسے کافر نہ کہا جائے، البتہ اس پر کفر کا خوف

واندیشہ ہے۔ علامہ بدرالرشید حنفی نے اپنے رسالہ میں کلمات کفر کی تفصیل بیان کرتے ہوئے لکھا ہے کہ محیط میں ہے وہ شخص جو اپنی ذات کے کفر پر راضی ہوگیا وہ کافر ہوگیا یعنی بالاجماع، اور جو کوئی (باقی اگلے صفحہ پر)

فی الخلاصۃ سمعت القاضی الامام (یرید الامام الاجل قاضی خاں) ان اراد تخجیل الخصم یکفر قال عندی لایکفر ویخشی علیه الکفر اه وقال العلامة بدرالرشید الحنفي في رسالته فی کلمات الکفر في المحیط من رضی بکفر نفسه فقد کفر ای اجماعا، وبکفر غیره

Fatawa Razawiyya - Volume 6

To desire to become a disbeliever (kafir) or to desire for a Muslim to fall into disbelief is 'Rida bi al-Kufr' (contentment with disbelief), and contentment with disbelief is itself disbelief. Scholars state that praying behind such a speaker (Mutakallim) is not permissible; it is mentioned in Fath al-Qadir:

[Arabic Box Text]: The author of al-Mujtaba said: "As for the statement of Imam Abu Yusuf that prayer behind a theologian (Mutakallim) is not permissible, it is possible that he intended what Imam Abu Hanifa established. When he saw his son Hammad debating in theology, he forbade him. Hammad said, 'I have seen you debating in theology, yet you forbid me from it?' He (Abu Hanifa) replied: 'We used to debate in such a state as if birds were perched on our heads (with extreme caution and stillness), fearing that our companion might slip (into error), whereas you debate wishing for your companion to slip; and whoever wishes for his companion to slip...'"

[Urdu Box Text]: The author of al-Mujtaba said: Regarding the statement of Imam Abu Yusuf that prayer behind a theologian is not permissible, it is possible that he meant what Imam Abu Hanifa had established. When he saw his son Hammad debating in theology, he forbade his son from it. His son submitted, 'I have seen you debating in theology, and you are forbidding me from it?' Upon this, he replied: 'We used to debate in such a state as if birds were perched on our heads...'

(Remainder of the footnote from the previous page): Regarding being content with the disbelief of another, there is a difference of opinion among the scholars. Then, citing Shaikh al-Islam, he wrote what is worthy of being inscribed upon chests (hearts). Its summary is that this constitutes disbelief only when one approves of it. Then he said: 'We have come across a narration from Imam Abu Hanifa stating that contentment with another's disbelief is disbelief without any further distinction.' I say: This is the same narration mentioned in al-Mujtaba. Al-Allama al-Qari, after quoting the text from Risala al-Badr, said: 'The answer is that indeed when a narration from Imam Abu Hanifa (may Allah have mercy on him) is brief (mujmal) or his statement is absolute (mutlaq), it is for us to detail it and restrict it according to the requirements of the Hanafi principles.' And Allah Almighty knows best. [12 (From him), May his Lord preserve him (M/T)]

---

1. Minah al-Rawd Sharh al-Fiqh al-Akbar, citing al-Muhit, Chapter on Disbelief, Mustafa al-Babi, Egypt, p. 180.

काफ़िर बनना चाहना या किसी मुसलमान का कुफ़्र में मुब्तिला होना चाहना 'रिज़ा बिल-कुफ़्र' (कुफ़्र पर राज़ी होना) है, और कुफ़्र पर रज़ा स्वयं कुफ़्र है। विद्वान फ़रमाते हैं कि ऐसे वक्ता (मुतकल्लिम) के पीछे नमाज़ जायज़ नहीं है; फ़तह अल-क़दीर में लिखा है:

[अरबी बॉक्स]: अल-मुज्तबा के लेखक ने कहा: "जहाँ तक इमाम अबू यूसुफ़ के इस कथन का प्रश्न है कि मुतकल्लिम (धर्मशास्त्री) के पीछे नमाज़ जायज़ नहीं है, तो संभव है कि उनका मतलब वही हो जिसे इमाम अबू हनीफ़ा ने स्थापित किया था। जब उन्होंने अपने पुत्र हम्माद को इल्म-ए-कलाम (धर्मशास्त्र) में बहस करते देखा, तो उन्होंने उन्हें मना किया। हम्माद ने कहा, 'मैंने आपको इल्म-ए-कलाम में मुनाज़रा (बहस) करते देखा है और आप मुझे इससे मना कर रहे हैं?' उन्होंने फ़रमाया: 'हम उस हाल में मुनाज़रा करते थे मानो हमारे सिरों पर पक्षी बैठे हों (अत्यंत सावधानी और स्थिरता के साथ), इस डर से कि कहीं हमारा साथी फिसल न जाए (गलती न कर बैठे), जबकि तुम इस तरह बहस करते हो कि तुम्हारा साथी फिसल जाए; और जो कोई अपने साथी के फिसलने की इच्छा रखता है...'"

[उर्दू बॉक्स]: अल-मुज्तबा के लेखक ने कहा: इमाम अबू यूसुफ़ का यह कहना कि मुतकल्लिम के पीछे नमाज़ जायज़ नहीं है, तो हो सकता है कि उनकी मुराद वह हो जिसे इमाम अबू हनीफ़ा ने मुक़र्रर किया है। उन्होंने जब अपने साहबज़ादे हम्माद को इल्म-ए-कलाम में मुनाज़रा करते देखा तो अपने बेटे को इससे मना किया। बेटे ने अर्ज़ किया कि मैंने आपको इल्म-ए-कलाम में मुनाज़रा करते देखा है और आप मुझे इससे रोक रहे हैं? इस पर आपने फ़रमाया: हम उस हाल में मुनाज़रा करते थे गोया हमारे सिरों पर परिंदे बैठे हों...

(पिछले पृष्ठ के हाशिए का शेष भाग): दूसरे के कुफ़्र पर राज़ी होने के बारे में उलेमा के बीच मतभेद है। फिर वहाँ शैखुल इस्लाम के हवाले से वह बात लिखी जो सीनों पर अंकित किए जाने योग्य है। उसका सारांश यह है कि यह कुफ़्र तभी है जब उसने उसे पसंद किया हो। फिर कहा: 'हमें इमाम अबू हनीफ़ा की एक ऐसी रिवायत मिली है जिसमें बिना किसी विस्तार के यह कहा गया है कि दूसरे के कुफ़्र पर राज़ी होना कुफ़्र है।' मैं कहता हूँ: यही वह रिवायत है जिसका ज़िक्र अल-मुज्तबा में है। अल्लामा अल-क़ारी ने रिसाला अल-बद्र के पाठ को उद्धृत करने के बाद कहा: 'इसका उत्तर यह है कि निस्संदेह जब इमाम अबू हनीफ़ा (रहमतुल्लाह अलैहि) की रिवायत संक्षिप्त (मुजमल) हो या

उनका कथन निरपेक्ष (मुतलक़) हो, तो हमें हनफ़ी नियमों की आवश्यकताओं के अनुसार उसका विस्तार करना और उसे प्रतिबंधित करना चाहिए।' और अल्लाह ही बेहतर जानता है। [12 (उनकी ओर से), उनका रब उन्हें सलामत रखे (M/T)]

---

1. मिनह अल-रौद शरह अल-फ़िक़्ह अल-अकबर, अल-मुहीत के हवाले से, कुफ़्र का अध्याय, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, पृष्ठ 180।

کافر ہونا چاہا اور مسلمان کو مبتلائے کفر چاہنا رضا بالکفر ہے اور رضا بالکفر آپ ہی کفر، علماء فرماتے ہیں ایسے متکلم کے پیچھے نماز جائز نہیں، فتح القدیر میں ہے:

[عربی عبارت]: قال صاحب المجتبی واما قول ابی یوسف لا تجوز الصلاۃ خلف المتکلم فیجوز ان یرید الذی قررہ ابوحنیفۃ حین رأی ابنہ حمادا یناظر في الکلام فنہاہ فقال رأیتك تناظر في الکلام وتنہاني فقال کنا نناظر وکأن علی رؤسنا الطیر مخافۃ ان یزل صاحبنا وانتم تناظرون وتریدون زلۃ صاحبکم ومن اراد زلۃ صاحبہ

[اردو ترجمہ]: صاحب مجتبی نے فرمایا امام ابو یوسف کا قول کہ کلامی کے پیچھے نماز جائز نہیں تو ہو سکتا ہے ان کی مراد وہ ہو جس کو امام ابو حنیفہ نے مقرر رکھا ہے کہ انہوں نے جب اپنے صاحبزادے حماد کو علم کلام میں مناظرہ کرتے ہوئے دیکھا تو اپنے بیٹے کو اس سے منع کیا، بیٹے نے عرض کی میں نے آپ کو علم کلام میں مناظرہ کرتے دیکھا ہے اور مجھے آپ اس سے منع کر رہے ہیں اس پر آپ نے فرمایا ہم اس حال میں مناظرہ کرتے تھے گویا ہمارے سروں پر پرندے ہیں

(بقیہ حاشیہ صفحہ گزشتہ): غیر کے کفر پر راضی ہوا اس میں مشائخ کا اختلاف ہے پھر وہاں شیخ الاسلام کے حوالے سے وہ لکھا جو سینوں پر لکھنے کے قابل ہے، اس کا حاصل یہ ہے کہ یہ کفر اس وقت ہے کہ جب اس نے اسے پسند کیا ہو پھر کہا ہم امام ابو حنیفہ کی اس روایت پر مطلع ہیں جس میں ہے کہ غیر کے کفر پر راضی ہونا کفر ہے بغیر کسی فرق کے اہ میں کہتا ہوں یہی وہ روایت ہے جو مجتبی میں مذکور ہے، علامہ علی قاری نے رسالہ بدر کی عبارت نقل کرنے کے

بعد کہا اس کا جواب یہ ہے کہ بیشک امام ابو حنیفہ رحمۃ اللہ علیہ کی روایت جب مجمل ہو یا اس کی عبارت مطلق ہو تو ہم کہتے ہیں ہم اس کی تفصیل کرتے ہیں اور قواعد احناف کے مقتضا کے مطابق اسے مقید کرتے ہیں اہ واللہ تعالٰی اعلم ۱۲ منہ سلمہ ربہ۔ (ت)

---

1 منح الروض شرح الفقہ الاکبر بحوالہ المحیط فصل فی الکفر مصطفی البابی مصر ص ۱۸۰

Fatawa Razawiyya, Volume Six

“Indeed, whoever intended his (companion's) disbelief, he himself has disbelieved before his companion. So this is the indulgence which is forbidden, and it is not permissible to follow this speaker in prayer. End.”

(The fear should be) that our companion might slip, but you debate with the intention of making your companion slip. And whoever intends to make his companion slip has desired his disbelief, so he committed disbelief before his companion. Thus, such speculation is forbidden and prayer behind such a speaker is not permissible. End. (T)

When prayer behind such a speaker became impermissible whose manner reflects satisfaction with the disbelief of another, then these blatant fanatics, whose primary goal is the excommunication (takfir) of Muslims, who strive in this day and night, and when they have already clarified this in speech and writing, and every stubborn person wants to have his own way at any cost, then definitely their wish is that as far as possible, Muslims should be deemed disbelievers. There is no doubt that if they find some way towards this in their false assumption, they become happy, and when by the grace of Allah, the protection of Muslims from disbelief is established, they are filled with grief and anger. Then how severe would be the decree against them and how can following them be permissible? And Allah is the Guide to the path of guidance.

Fifth Argument

Up to here, the discussion was based on their innovation and profligacy etc., but another even more severe and greater matter originates from their corrupt group, due to which there are thousands of difficulties in their actual Islam. To the extent that from the authentic traditions (hadiths) of the Master of the Universe, peace and blessings of Allah be upon him, and the sayings of the majority of noble jurists, may Allah Almighty have mercy on them, it emerges that they are explicit disbelievers and prayer behind them is absolutely void. What is that? Namely, their calling Taqlid (imitation) as Shirk (polytheism) and labeling all followers of the Hanafi, Maliki, Shafi'i, and Hanbali schools—may Allah encompass them all with His high graces—as polytheists. This is explicitly calling Muslims disbelievers, and not one or two, but millions and billions, and not just of today or tomorrow, but the general believers of eleven hundred years. Among them were great beloveds of the Honorable Presence, pillars of the Ummah, foundations of the nation, upholders of Shariah, and perfect

ones of the Path, may the pleasure of Allah Almighty be upon them all. Regarding the focus and leader, and father of lineage, knowledge, and emulation of the founder of their sect, Shah Waliullah Dehlavi writes in his treatise 'Al-Insaf':

“After the two centuries, following specific mujtahids appeared among them personally, and few remained who were [not following a specific imam's school].”

After two centuries, Taqlid-e-Shakhsi (personal imitation) emerged among Muslims. Scarcely anyone remained who was not on the school of a specific Imam.

---

1. Fath al-Qadir, Chapter on Imamate, printed by Maktaba Nooriya Razawiyya, Sukkur, 1/304.

फ़तावा रज़विया, जिल्द छठी

"जिसने अपने (साथी के) कुफ्र का इरादा किया, वह अपने साथी से पहले काफ़िर हो गया। तो यह वह बहस है जिससे मना किया गया है और इस वक्ता के पीछे नमाज़ जायज़ नहीं है। अंत।"

(इस डर से) कि कहीं हमारा साथी फिसल न जाए, लेकिन तुम अपने साथी को फिसलाने का इरादा करके मुनाज़रा करते हो। और जो व्यक्ति अपने साथी को फिसलाने का इरादा करे, उसने उसका कुफ्र चाहा, तो वह अपने साथी से पहले कुफ्र का अपराधी हुआ। अतः ऐसा सोच-विचार मना है और ऐसे वक्ता के पीछे नमाज़ जायज़ नहीं है। अंत। (त)

जब उस वक्ता के पीछे नमाज़ नाजायज़ हुई जिसके अंदाज़ से दूसरे के कुफ्र पर रज़ामंदी ज़ाहिर होती है, तो ये खुले तौर पर कट्टरपंथी जिनका असली मक़सद मुसलमानों की तकफ़ीर (काफ़िर कहना) है, दिन-रात इसी में लगे रहते हैं, और जब वे अपनी तक़रीर और तहरीर में इसकी सफ़ाई दे चुके हैं और हर ज़िद्दी इंसान हर तरह से अपनी ही बात ऊपर रखना चाहता है, तो निश्चित रूप से उनकी इच्छा यही है कि जहाँ तक संभव हो मुसलमान काफ़िर ठहरें। इसमें कोई शक नहीं कि यदि वे अपने झूठे गुमान में इसकी ओर कोई रास्ता पाते हैं तो खुश हो जाते हैं, और जब अल्लाह के फ़ज़ल से मुसलमानों का कुफ्र से सुरक्षित होना साबित होता है, तो वे दुख और गुस्से से भर जाते हैं। तो उनके खिलाफ हुक्म कितना सख़्त होगा और उनके पीछे इक़्तिदा (अनुसरण) कैसे जायज़ हो सकती है? और अल्लाह ही हिदायत के रास्ते की ओर ले जाने वाला है।

पाँचवीं दलील

यहाँ तक तो उनके बिदअत (नवाचार) और फ़िस्क (पाप) आदि के आधार पर बात थी, लेकिन एक और बात जो उनके भ्रष्ट गिरोह से पैदा होती है, वह इससे भी अधिक गंभीर और बड़ी है, जिसकी वजह से उनके असल इस्लाम में हज़ारों कठिनाइयाँ हैं। यहाँ तक कि हुज़ूर सैयदे आलम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की सही हदीसों और बड़े-बड़े फ़ुक़हा-ए-किराम के कथनों से यह बात निकलती है कि वे खुले तौर पर काफ़िर हैं और उनके पीछे नमाज़ पढ़ना बिल्कुल बातिल (अमान्य) है। वह क्या है? यानी उनका तक़लीद (अनुसरण) को शिर्क कहना और हनफ़ी, मालिकी, शाफ़ई, हंबली—अल्लाह उन सब पर अपनी मेहरबानियाँ करे—के सभी मुक़ल्लिदों (अनुयायियों) को मुशरिक (बहुदेववादी) बताना। यह साफ़ तौर पर मुसलमानों को काफ़िर कहना है, और एक या दो को नहीं बल्कि लाखों-करोड़ों को, और केवल आज या कल के नहीं बल्कि पिछले ग्यारह सौ वर्षों के आम

मोमिनों को। जिनमें महान अल्लाह के प्रिय, उम्मत के स्तंभ, राष्ट्र की नींव, शरीयत के रक्षक और तरीक़त के पूर्ण ज्ञानी शामिल थे, अल्लाह उन सब से राज़ी हो। उनके पंथ के संस्थापक के मरजा और मुक्तदा, और नसब, इल्म और इक़्तिदा के पिता शाह वलीउल्लाह देहलवी रिसाला 'इंसाफ़' में लिखते हैं:

"दो सदियों के बाद, उनके बीच विशिष्ट मुजतहिदों का अनुसरण व्यक्तिगत रूप से प्रकट हुआ और बहुत कम लोग ऐसे बचे जो..."

दो सदियों के बाद मुसलमानों में तक़लीद-ए-शख़्सी (व्यक्तिगत अनुसरण) ज़ाहिर हुई। बहुत कम कोई रहा जो किसी एक इमाम के मज़हब पर न हो।

---

1. फ़तहुल क़दीर, बाबुल इमामत, मक्तबा नूरुय्या रज़विय्या, सुक्कुर, 1/304।

فتاوی رضویہ، جلد ششم

فقد اراد کفرہ فھو قد کفر قبل صاحبہ فھذا ھو الخوض المنھی عنہ وھذا المتکلم لایجو ز الاقتداء بہ انتہیٰ۔

اس سے ڈرتے ہوئے کہ کہیں ہمارا ساتھی پھسل نہ جائے لیکن تم اپنے ساتھی کو پھسلانے کا ارادہ کرکے مناظرہ کرتے ہو اور جو شخص اپنے ساتھی کو پھسلانے کا ارادہ کرے اس نے اس کا کفر چاہا تو وہ اپنے ساتھی سے پہلے کفر کا مرتکب ہوا، پس ایسا غور و خوض ممنوع ہے اور ایسے کلامی کے پیچھے نماز جائز نہیں انتہی (ت)

جب اس متکلم کے پیچھے نماز نا جائز ہوئی جس کے انداز سے کفر غیر پر رضا نکلتی ہے تو یہ صریح متعصبین جن کا اصل مقصود تکفیر مسلمین دن رات اسی میں ساعی رہیں اور جب تقریر آو تحریر آ اس کی تصریحیں کر چکے اور مکا بر ہر طرح اپنی ہی بات بالا چاہتا ہے تو قطعاً ان کی خواہش یہی ہے کہ جہاں تک ممکن ہو مسلمان کافر ٹھہریں اور شک نہیں کہ اپنے زعم باطل میں اس کی طرف کچھ راہ پائیں تو خوش ہو جائیں اور جب بحمد اللہ مسلمانوں کا کفر سے محفوظ ہونا ثابت ہو غم و غصہ کھائیں تو ان کا حکم کس درجہ اشد ہو گا اور ان کی اقتدا کیونکر روا، واللہ الھادی الی الطریق الھدی۔

دلیل پنجم

یہاں تک تو ان کے بدعت و فسق و غیرہما کی بنا پر کلام تھا مگر ایک امر اور اشد و اعظم ان کے طائفہ تالفہ سے صادر ہوتا ہے جس کی بنا پر ان کے نفس اسلام میں ہزاروں دقتیں ہیں یہاں تک کہ احادیث صحیحہ حضور سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ و سلم و اقوال جماہیر فقہائے کرام رحمۃ اللہ

تعالیٰ علیہم سے ان کا صریح کافر ہونا اور نماز کا ان کے پیچھے محض باطل جانا نکلتا ہے وہ کیا یعنی ان کا تقلید کو شرک اور حنفیہ مالکیہ شافعیہ حنبلیہ عمھم اللہ جمیعاً بالطافہ العلیہ، سب مقلدانِ ائمہ کو مشرکین کو بتانا کہ یہ صراحتہً مسلمانوں کو کافر کہنا ہے اور پھر ایک کو نہ دو کو لاکھوں کروڑوں اور پھر آج ہی کل کے نہیں گیارہ سو برس کے عامہ مومنین کو جن میں بڑے بڑے محبوبانِ حضرت عزت و اراکینِ امت و اساطینِ ملت و حملہ شریعت و کملہ طریقت تھے رضوان اللہ تعالیٰ علیہم اجمعین ان کے بانی مذہب کے مرجع و مقتدا اور پدر نسب و علم واقتدا شاہ ولی اللہ صاحب دہلوی رسالہ انصاف میں لکھتے ہیں:

بعد المأتین ظھر بینھم التمذھب للمجتھدین باعیانھم وقل من کان

دو صدی کے بعد مسلمانوں میں تقلید شخصی نے ظہور کیا کم کوئی رہا جو ایک امام معین کے مذہب پر

---

1 فتح القدیر باب الامامۃ مطبوعہ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۱/ ۳۰۴

Fatawa Razawiyyah - Volume 6

He does not rely on the school (madhhab) of a specific mujtahid [independent legal scholar] - (He should not rely - T)

Imam Arif Billah Sayyidi Abdul Wahhab Sha'rani (may his divine secret be sanctified), from whose lofty works like 'Al-Mizan' etc. the Imam of the era and other elders of the group have cited extensively, states in the same 'Mizan':

(Arabic Section)

It is obligatory for a follower (muqallid) to act upon the more preponderant of two opinions within his school as long as he has not reached the knowledge of this scale (mizan) through intuition (dhawq) and unveiling (kashf), as has been the practice of people in every age. This is in contrast to one who has reached the station of intuition and sees all the statements of scholars and the seas of their knowledge springing from the first fountain of Sharia, beginning from it and ending at it. For such a person, devotion to a specific school is not commanded, because of his witnessing the equality of the schools in drawing from the source of Sharia. [End summary]

(Urdu Section)

Meaning, it is obligatory for a follower to act specifically on that which is determined as preponderant in his school; scholars in every age have practiced this. However, a saint of Allah who, through the path of intuition and spiritual knowledge, reaches that stage of unveiling where the primary fountain of the pure Sharia—which is the treasure of all the schools of the mujtahid Imams—becomes visible to him, upon reaching there, he will observe all the statements of the scholars, seeing that their rivers flowed from this fountain and return to it. Personal following (taqlid-e-shakhsi) will not be made binding on such a person, for he sees with his own eyes that all schools are receiving equal grace from the primary fountain. [End summary]

From this, it is proven that anyone who does not possess the status of ijtihad, nor has reached that grand rank of spiritual unveiling and sainthood, is absolutely obligated to follow a specific Imam. And this has been the practice of scholars in every age, to the point that Imam Hujjat al-Islam Muhammad Ghazali (may his high secret be sanctified) said in his noble book 'Kimiya-e-Sa'adat':

| Opposing the master of one's own school according to no one... | Opposing the founder of one's school according to anyone... |

| Note: I say: He only intended the consensus after the schools were established and the following of the Imams individually became apparent, as it is correct, for there is no comparison between common people and the masters of the schools. | I say: Their intention is the consensus after the establishment of schools and the emergence of following specific Imams, because this is correct; there is no comparison between common people and the founders of the schools. (Continued on next page) |

1. Risalah-e-Insaf with translation of Kashaf, printed by Mujtabai Delhi, p. 59.
2. Al-Mizan al-Kubra, chapter: "If someone asks, is it obligatory..." etc., printed by Mustafa al-Babi Egypt, 1/11.

फ़तावा रज़विया - खंड 6

किसी विशिष्ट मुजतहिद के मज़हब पर भरोसा न करे - (भरोसा न करे - त)

इमाम आरिफ़ बिल्लाह सय्यदी अब्दुल वहाब शेरानी (अल्लाह उनके रहस्य को पवित्र करे), जिनकी उच्च रचनाओं जैसे 'अल-मीज़ान' आदि से युग के इमाम और समूह के अन्य बड़ों ने जगह-जगह प्रमाण लिए हैं, उसी 'मीज़ान' में फ़रमाते हैं:

(अरबी अनुभाग)

एक मुक़ल्लिद (अनुयायी) के लिए अपने मज़हब के दो कथनों में से अधिक प्रबल पर अमल करना अनिवार्य है जब तक कि वह ज़ौक़ (अंतर्ज्ञान) और कश्फ़ (आध्यात्मिक रहस्योद्घाटन) के माध्यम से इस पैमाने (मीज़ान) के ज्ञान तक नहीं पहुँच जाता, जैसा कि हर युग में लोगों का चलन रहा है। इसके विपरीत, यदि कोई ज़ौक़ के मुकाम तक पहुँच गया है और विद्वानों के सभी कथनों और उनके ज्ञान के समुद्रों को शरीयत के पहले चश्मे (सोत) से निकलते हुए देखता है, वहीं से शुरू होते हुए और वहीं समाप्त होते हुए, तो ऐसे व्यक्ति को किसी विशिष्ट मज़हब की इबादत (अनुसरण) का आदेश नहीं दिया जाता, क्योंकि वह शरीयत के चश्मे से फ़ैज़ लेने में सभी मज़हबों की समानता का प्रत्यक्षदर्शी होता है। [संक्षेप]

(उर्दू अनुभाग)

यानी मुक़ल्लिद पर वाजिब है कि विशेष रूप से उसी बात पर अमल करे जो उसके मज़हब में राज़ेह (प्रबल) ठहरी हो; हर ज़माने में उलेमा का इसी पर अमल रहा है। अलबत्ता जो वली अल्लाह ज़ौक़ व मारिफ़त की राह से उस मक़ाम-ए-कश्फ़ तक पहुँच जाए कि शरीयत-ए-मुतह्हरा का पहला चश्मा जो सब मज़ाहिब-ए-अइम्मा-ए-मुजतहिदीन का खज़ाना है, उसे नज़र आने लगे, वहाँ पहुँच कर वह तमाम अक़वाल-ए-उलेमा का मुशाहिदा करेगा कि उनके दरिया इसी चश्मे से निकले और इसी में फिर आकर गिरते हैं। ऐसे शख़्स पर तक़लीद-ए-शख़्सी लाज़िम न की जाएगी कि वह तो आँखों देख रहा है कि सब मज़ाहिब चश्मा-ए-ऊला से यकसाँ फ़ैज़ ले रहे हैं। [संक्षेप]

यहाँ से साबित हुआ कि जो इज्तिहाद का दर्जा न रखता हो और न कश्फ़ व विलायत के उस अज़ीम रुतबे तक पहुँचा हो, उस पर एक इमाम-ए-मुअय्यन की तक़लीद (अनुसरण) निश्चित रूप से वाजिब है। और इसी पर हर ज़माने में उलेमा का अमल रहा, यहाँ तक कि इमाम हुज्जत-उल-इस्लाम मुहम्मद ग़ज़ाली (अल्लाह उनके उच्च रहस्य को पवित्र करे) ने अपनी उत्कृष्ट पुस्तक 'कीमिया-ए-सादात' में फ़रमाया:

| अपने मज़हब के इमाम की मुख़ालफ़त करना किसी के नज़दीक... | अपने साहब-ए-मज़हब की मुख़ालफ़त करना किसी के नज़दीक... |

| नोट: मैं कहता हूँ: उनका आशय केवल मज़हबों के स्थापित होने और व्यक्तिगत रूप से इमामों के अनुसरण के प्रकटीकरण के बाद का इज्मा (आम सहमति) है, क्योंकि यही सही है, क्योंकि आम लोगों और मज़हब के संस्थापकों के बीच कोई तुलना नहीं है। | मैं कहता हूँ कि उनकी मुराद तक़र्रुर-ए-मज़ाहिब और ज़ुहूर-ए-तक़लीद-ए-मुअय्यन अइम्मा के बाद का इज्मा है, क्योंकि यही सही है; आम लोगों और असहाब-ए-मज़ाहिब के दरमियान कोई निस्बत नहीं है। (बाकी अगले पन्ने पर) |

1. रिसाला-ए-इंसाफ़ मय तर्जुमा-ए-कश्शाफ़, मुजतबाई दिल्ली द्वारा मुद्रित, पृ. 59
2. अल-मीज़ान अल-कुबरा, अध्याय "यदि कोई कहने वाला कहे क्या वाजिब है..." आदि, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र द्वारा मुद्रित, 1/11

पृष्ठ 704 / 736

لا یعتمد علی مذھب مجتھد بعینہ 1 - اعتماد نہ کرتا ہو۔ (ت)

امام عارف باللہ سیدی عبدالوہاب شعرانی قدس سرہ الربانی جن کی میزان وغیرہ تصانیف عالیہ سے امام العصر ودیگر کبرائے طائفہ نے جابجا اسناد کیا اسی میزان میں فرماتے ہیں:

(عربی حصہ)

یجب علی المقلد العمل بالأرجح من القولین في مذھبه مادام لم یصل الی معرفة ھذه المیزان من طریق الذوق والکشف، کما علیه عمل الناس في کل عصر بخلاف ما اذا وصل الی مقام الذوق ورأی جمیع اقوال العلماء وبحور علومھم تنفجر من عین الشریعة الاولی تبتدیئ منھا وتنتھی الیھا فان مثل ھذا لا یؤمر بالتعبد بمذھب معین لشھوده تساوی المذاھب في الاخذ من عین الشریعة 2 اھ ملخصاً

(اردو حصہ)

یعنی مقلد پر واجب ہے کہ خاص اسی بات پر عمل کرے جو اس کے مذہب میں راجح ٹھہری ہو ہر زمانے میں علماء کا اسی پر عمل رہا ہے البتہ جو ولی اللہ ذوق و معرفت کی راہ سے اس مقام کشف تک پہنچ جائے کہ شریعتِ مطہرہ کا پہلا چشمہ جو سب مذاہبِ ائمہ مجتہدین کا خزانہ ہے اسے نظر آنے لگے وہاں پہنچ کر وہ تمام اقوالِ علماء کو مشاہدہ کرے گا کہ ان کے دریا اسی چشمے سے نکلے اور اسی میں پھر آکر گرتے ہیں ایسے شخص پر تقلیدِ شخصی لازم نہ کی جائے گی کہ وہ تو آنکھوں دیکھ رہا ہے کہ سب مذاہب چشمہ اولی سے یکساں فیض لے رہے ہیں اھ ملخصاً

یہاں سے ثابت کہ جو پایہ اجتہاد نہ رکھتا ہو نہ کشف و ولایت کے اس رتبہ عظمیٰ تک پہنچا اس پر تقلید امامِ معین قطعاً واجب ہے اور اسی پر ہر زمانے میں علماء کا عمل رہا، یہاں تک امام حجۃ الاسلام محمد غزالی قدس سرہ العالی نے کتاب مستطاب کیمیائے سعادت میں فرمایا:

| مخالفت کردن صاحب مذہب خویش نزدیک پیچکس عہ | اپنے صاحبِ مذہب کی مخالفت کرنا کسی کے نزدیک |

| عہ : اقول : وانما اراد الاجماع بعد تقرر المذاهب وظهور التمذهب للائمة باعيانهم اذ هو الصحيح لا اضافة بين الناس واصحاب | میں کہتا ہوں ان کی مراد تقررِ مذاہب اور ظہورِ تقلید معین ائمہ کے بعد کا اجماع ہے کیونکہ یہی صحیح ہے عام لوگوں اور اصحابِ مذاہب کے درمیان کوئی نسبت نہیں ہے۔ (باقی بر صفحہ آئندہ) |

1 رسالہ انصاف مع ترجمہ کشاف مطبوعہ مجتبائی دہلی ص ۵۹ 2 المیزان الکبری فصل فان قال قائل فهل يجب الخ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱ / ۱۱

Fatawa Razvia, Volume 6

...not permissible either. (T)

Subhan Allah! If personal taqlid (adhering to a specific legal school) is, God forbid, considered disbelief and polytheism, then according to you, the scholars of every age and the general mass of believers for the past eleven hundred years have all, God forbid, become disbelievers and polytheists. Even if you don't accept this, it is among the most obvious self-evident truths—denying it is like denying the sun—that for hundreds of years, hundreds of thousands of saints, scholars, Hadith experts, jurists, the general Ahl al-Sunnah, and the followers of truth and guidance have carried the mantle of following the four Imams on their shoulders of determination. Whoever you look at is either a Hanafi, Shafi'i, Maliki, or Hanbali. To the extent that the saved sect of Ahl al-Sunnah wal Jama'at became confined to these four schools of thought, as was quoted from Sayyid Allama Ahmad al-Misri (may Allah's mercy be upon him) at the beginning of the first argument, and as Qazi Thanaullah Panipati, among the reliable and authoritative figures of this group, writes in Tafsir-e-Mazhari:

[Arabic Quote]: "The Ahl al-Sunnah, after the [first] three or four centuries, divided into four schools of thought, and in branch issues (furu'), no school remained except these four." [Urdu translation of the quote]: "The Ahl al-Sunnah, after three or four centuries, were divided among these four schools of thought, and in the secondary legal issues, no school other than these four remained."

If you look at the scholarly biographies like 'Tabaqat al-Hanafiyyah' and 'Tabaqat al-Shafi'iyyah' etc., you will realize what kind of leaders of guidance and great beloveds of God were followers of these four schools, who always wrote volumes in their promotion. According to you, God forbid, all of them were such and such. Even if you don't act upon it, will you at least accept their word? How will you view those vast groups of scholars who commanded personal taqlid and whose transmitted position was this? Imam, the guide of mankind...

(Remainder of the footnote from previous page): [Arabic]: ...the schools of thought as is not hidden, and the lack of consideration in the claim of consensus for those who are rare and exceptional, and this [practice of ignoring the rare] is frequent and well-known, as is not hidden from those with insight. 12 Minhu (M) [Urdu]: ...as is clear, and in the claim of consensus, not taking into account the rare and exceptional

(opinions) is frequent and famous, as is not hidden from a person of insight. 12 Minhu (T)

1. Kimiya-e-Sa'adat, Ninth Principle: Enjoining Good and Forbidding Evil, published by Ganjineh Tehran, Iran, p. 395.
2. Tafsir-e-Mazhari, issue of 'When a Hadith is sound contrary to a school of thought' etc., published by Idara Isha'at-ul-Uloom, Delhi, 2/64.

फतावा रज़विया, जिल्द 6

...भी जायज़ नहीं है। (त)

सुब्हान अल्लाह! जब तकलीद-ए-शख़्सी (किसी एक इमाम का अनुसरण करना) माज़-अल्लाह कुफ़्र और शिर्क ठहरी, तो आपके नज़दीक हर दौर के उलमा और ग्यारह सौ साल के आम मोमिन माज़-अल्लाह सब काफ़िर और मुशरिक हो गए। अगर आप यह न भी मानें, तो कम से कम इतना तो सबसे ज़्यादा स्पष्ट सच्चाइयों में से है—जिसका इनकार सूरज का इनकार करने जैसा है—कि सैकड़ों वर्षों से लाखों औलिया, उलमा, मुहद्दिस, फ़ुकहा, आम अहले सुन्नत और हक़ व हिदायत के साथियों ने चारों इमामों की तकलीद का बोझ अपने कंधों पर उठाया हुआ है। आप जिसे भी देखें, वह या तो हनफ़ी है, शाफ़ई है, मालिकी है, या हनबली। यहाँ तक कि फिरका-ए-नाजिया अहले सुन्नत व जमाअत इन चार मज़हबों में सिमट कर रह गया, जैसा कि सैय्यद अल्लामा अहमद मिस्री (रहमतुल्लाहि अलैहि) के हवाले से पहली दलील की शुरुआत में गुज़रा और क़ाज़ी सनाउल्लाह पानीपती, जो इस जमात के विश्वसनीय और प्रमाणिक व्यक्तियों में से हैं, तफ़्सीर-ए-मज़हरी में लिखते हैं:

[अरबी उद्धरण]: "अहले सुन्नत तीन या चार सदियों के बाद इन चार मज़हबों पर विभाजित हो गए, और शाखा संबंधी विषयों (फ़ुरु) में इन चार मज़हबों के सिवा कोई मज़हब बाक़ी न रहा।" [उर्दू अनुवाद]: "अहले सुन्नत तीन चार सदियों के बाद इन चार मज़हबों पर विभाजित हो गए और शाखा संबंधी मसलों में इन चार मज़हबों के सिवा कोई मज़हब बाक़ी न रहा।"

अगर आप उलमा की 'तबकात-ए-हनफिया' और 'तबकात-ए-शाफ़िया' आदि जैसी कृतियों को देखेंगे, तो आपको पता चलेगा कि इन चारों मज़हबों के मुक़ल्लिद (अनुयायी) कैसे-कैसे हिदायत के इमाम और अल्लाह के प्यारे गुज़रे हैं, जिन्होंने हमेशा इसके प्रचार-प्रसार में ग्रंथ लिखे हैं। आपके नज़दीक माज़-अल्लाह ये सब ऐसे-वैसे थे। चलिए अमल न सही, कम से कम उनकी बात तो मानेंगे? उन बड़ी जमातों के उलमा के बारे में आप क्या कहेंगे जिन्होंने तकलीद-ए-शख़्सी के हुक्म दिए और यही उनका मंकूल (पारंपरिक) मज़हब हुआ, इमाम, मुर्शिद-ए-अनाम...

(पिछले पृष्ठ के फुटनोट का शेष भाग): [अरबी]: ...मज़हब जैसा कि छिपा नहीं है, और इज्मा (सहमति) के दावे में इक्का-दुक्का (शाज़ ओ नादिर) रायों का एतबार न करना बहुत आम और मशहूर है, जैसा कि समझदार लोगों से छिपा नहीं है। 12 मिन्हु (म) [हिन्दी/उर्दू]: ...जैसा कि स्पष्ट है,

और इज्मा (सहमति) के दावे में इक्का-दुक्का (शाज़ ओ नादिर) रायों का एतबार न करना बहुत आम और मशहूर है, जैसा कि समझदार लोगों से छिपा नहीं है। 12 मिन्हु (त)

1. कीमिया-ए-सआदत, नौवाँ सिद्धांत: अम्र बिल मारूफ़ व नही अनिल मुनकर, गंजीनह तेहरान, ईरान, पृष्ठ 395।
2. तफ़्सीर-ए-मज़हरी, मसला 'इज़ा सह्हल हदीसु अला ख़िलाफ़ि मज़हबिही' आदि, इदारा इशाअतुल उलूम, दिल्ली, 2/64।

पृष्ठ 705 / 736

روا نہ ہو ۱- | بھی جائز نہیں۔ (ت)

سبحان اللہ جب تقلیدِ شخصی معاذ اللہ کفر و شرک ٹھہری تو تمہارے نزدیک یہ ہر عصر کے علما اور گیارہ سو برس کے عامہ مومنین معاذ اللہ سب کفار و مشرکین ہوئے ، نہ سہی آخر اتنا تو اجلیٰ بدیہیات سے ہے جس کا انکار آفتاب کا انکار کہ صدہا برس سے لاکھوں اولیاء علماء ، محدثین، فقہا، عامہ اہلسنت و اصحاب حق و ہدیٰ غاشیہ تقلید ائمہ اربعہ اپنے دوشِ ہمت پر اٹھائے ہوئے ہیں جسے دیکھو کوئی حنفی، کوئی شافعی، کوئی مالکی، کوئی حنبلی یہاں تک کہ فرقہ ناجیہ اہلسنت و جماعت ان چار مذہب میں منحصر ہو گیا جیسا کہ اس کی نقل سید علامہ احمد مصری رحمۃ اللہ تعالیٰ سے شروع دلیل اول میں گزری اور قاضی ثناء اللہ پانی پتی کہ معتمدین و مستندینِ طائفہ سے ہیں۔ تفسیر مظہری میں لکھتے ہیں :

اہل السنۃ قد افترق بعد القرون الثلثۃ | اہل سنت تین چار قرن کے بعد ان چار مذاہب پر منقسم ہو گئے او الاربعۃ علی اربعۃ مذاہب و لم یبق مذہب فی | اور فروع مسائل میں ان مذاہب اربعہ کے سوا کوئی مذہب فروع المسائل سوی ھذہ الاربعۃ ۲- | باقی نہ رہا۔

طبقاتِ حنفیہ و طبقاتِ شافعیہ وغیرہا تصانیف علماء دیکھو گے تو معلوم ہوگا کہ ان چاروں مذہب کے مقلدین کیسے کیسے ائمہ ہدیٰ و اکابر محبوبانِ خدا گزرے جنہوں نے ہمیشہ اسی کی ترویج میں دفتر لکھے یہ سب تو معاذ اللہ تمہارے نزدیک چنین و چناں ہوئے۔ جانے دو عمل نہ سہی قول تو مانو گے اُن جماعتِ کثیرہ علماء کو کیا جانو گے جنہوں نے تقلیدِ شخصی کے حکم دیئے اور یہی ان کا مذہب منقول ہوا، امام مرشد الانام

(بقیہ حاشیہ صفحہ گزشتہ) | جیسا کہ واضح ہے اور دعویٰ اتفاق میں شاذ و نادر کا اعتبار نہ کرنا کثیر المذاهب كما لا يخفى وعدم الاعتداد في دعوى الاتفاق | وم مشہور ہے جیسا کہ صاحبِ بصیرت پر مخفی نہیں ۱۲ منہ (ت) بمن شذ وندر وكثير مشتهر كما لا يخفى على ذى بصر ۱۲ منہ (م)

۱ کیمیائے سعادت اصل نہم امر بمعروف و نہی از منکر مطبوعہ انتشارات گنجینہ تہران، ایران ص ۳۹۵ ۲ تفسیر مظہری مسئلہ اذا صح الحدیث علی خلاف مذہب الخ مطبوعہ ادارہ اشاعت العلوم دہلی ۲/ ۶۴

Fatawa Razawiya, Volume Six

Muhammad Ghazali (may his secret be sanctified) states in the noble *Ihya-ul-Uloom*:

Arabic	Urdu Translation
Mukhalafatuhu lil-muqallid muttafaqun 'ala kawnihi munkaran bayn al-muhassilin[1]	There is a consensus among all accomplished scholars that for a follower (muqallid) to oppose his school of thought's Imam is reprehensible and must be condemned.

It is quoted in *Sharh al-Nuqayah* from *Kashf al-Usul* of Imam Bazdawi:

Arabic	Urdu Translation
Man ja'ala al-haqqa muta'addidan kal-Mu'tazilah athbata lil-'aami al-khiyara min kulli madhhabin ma yahwah, wa man ja'ala wahidan ka-'ulama'ina alzama lil-'aami imaman wahida[2]	That is, those according to whom the truth is multiple in disputed issues—for example, if a thing is permissible in one school and forbidden in another, it is both permissible and forbidden in the sight of Allah—they grant the commoner the choice to take from any school what he desires. This is the stance of the Mu'tazilah and others. Those who consider the truth to be one make the imitation (taqlid) of a specific Imam obligatory upon the commoner. This is the stance of our scholars and others.

Allama Zain bin Nujaim Misri, author of *Bahr-ur-Ra'iq* and *al-Ashbah wa al-Naza'ir*, states in the treatise '*Kaba'ir wa Sagha'ir*':

Arabic	Urdu Translation
Amma al-kaba'ir fa-qalu hiya ba'da al-kufr az-zina wal-liwatata wa shurb al-khamr wa mukhalafata al-muqallid hukma muqallidih[3] *ah mukhtasaran*	That is, scholars have listed major sins such that, God forbid, first is disbelief (kufr), then adultery, sodomy, wine drinking, and a follower's opposition to his Imam. (summarized)

It is mentioned in *al-Milal wa al-Nihal*:

Arabic	Urdu Translation
'Ulama al-fariqayn lam yujawizu an ya'khudha al-'aami al-Hanafi illa bi-	Scholars of both parties do not consider it permissible for a common Hanafi to act upon a school other than that of Abu Hanifah, or a

Arabic	Urdu Translation
madhhab Abi Hanifah wal-'aami ash-Shafi'i illa bi-madhhab ash-Shafi'i[4]	common Shafi'i to act upon a school other than that of Shafi'i.

Shah Waliullah writes in *'Iqd al-Jid*:

Arabic	Urdu Translation
Al-murajjah 'inda al-fuqaha anna al-'aami al-muntasib...	According to the jurists, preference is given to the view that a common person who is affiliated [with a school]...

---

[1] *Ihya-ul-Uloom*, Second Chapter on the Pillars of Command etc., published by Matba'at al-Mashhad al-Husayni, Cairo, Egypt 2/366. [2] *Jami' ar-Rumuz* (*Sharh al-Nuqayah*), Book of Abominations, published by Maktabah Islamiyyah Gunbad Qamus, Iran 3/327. [3] *Ar-Rasa'il al-Fiqhiyyah* by the author of *al-Ashbah* with *al-Ashbah* etc., 34th Treatise etc., published by Idarat al-Qur'an wal-Uloom al-Islamiyyah, Karachi 12/94, 907. [4] *Al-Milal wa al-Nihal*, Ruling on Ijtihad and Taqlid etc., published by Mustafa al-Babi, Egypt 1/205.

फ़तावा रज़विया, जिल्द छठी

मुहम्मद ग़ज़ाली (कुद्दिसा सिर्रहु) इहया-उल-उलूम शरीफ़ में फ़रमाते हैं:

अरबी	उर्दू अनुवाद
मुख़ालिफ़तुहु लिल-मुक़ल्लिद मुत्तफ़कुन अला कौनिही मुन्करन बैन अल-मुहस्सलीन[1]	तमाम उच्च कोटि के विद्वानों का इज्मा (आम सहमति) है कि मुक़ल्लिद का अपने इमाम-ए-मज़हब की मुख़ालिफ़त करना घृणित और खंडन करने योग्य है।

शरह नक़ाया में कश्फ़-उल-उसूल इमाम बज़दवी से मनक़ूल है:

अरबी	उर्दू अनुवाद
मन जा'अला अल-हक़्क़ा मुतअद्दिदन कल-मोतज़िला अथ्बता लिल-आमी अल-ख़ियारा मिन कुल्लि मज़हबिन मा यहवाह, व मन जा'अला वाहिदन का-उलमाइना अलज़मा लिल-आमी इमामम वाहिदा[2]	यानी जिनके नज़दीक विवादास्पद मसलों में हक़ अनेक है कि एक चीज़ जो मिसाल के तौर पर एक मज़हब में हलाल और दूसरे में हराम हो तो वह अल्लाह के नज़दीक हलाल भी है और हराम भी, वे तो आम आदमी को अख़्तियार देते हैं कि हर मज़हब से जो चाहे ग्रहण कर ले। यह मोतज़िला वगैरह का मज़हब है। और जो हक़ को एक ही मानते हैं, वे आम आदमी पर एक विशिष्ट इमाम की तक़लीद (अनुसरण) को वाजिब करते हैं। यह हमारे और अन्य उलेमा का मज़हब है।

अल्लामा ज़ैन बिन नुजैम मिस्री साहब बह्र-उर-राइक़ व अशबाह व नज़ायर 'रिसाला कबायर व सग़ायर' में फ़रमाते हैं:

अरबी	उर्दू अनुवाद
अम्मा अल-कबायर फ़क़ालू हिया बा'द अल-कुफ़्र अज़-ज़िना वल-लिवाता व शुर्ब अल-ख़म्र व मुख़ालफ़ता अल-मुक़ल्लिद हुक्मा मुक़ल्लिदिह[3] अह मुख़्तसरन	यानी बड़े गुनाह उलेमा ने इस प्रकार गिनाए हैं कि अल्लाह की पनाह, सब में पहले तो कुफ़्र (अविश्वास) है फिर ज़िना, लौतत (अप्राकृतिक यौन संबंध), शराबखोरी और मुक़ल्लिद का अपने इमाम की मुख़ालिफ़त करना। (संक्षेप में)

मिलल व निहल में है:

अरबी	उर्दू अनुवाद
उलमा अल-फ़रीक़ैन लम युजवीज़ू अन या'ख़ुज़ा अल-आमी अल-हनफ़ी इल्ला बि-मज़हब अबी हनीफ़ा वल-आमी अश्-शाफ़ई इल्ला बि-मज़हब अश्-शाफ़ई[4]	दोनों पक्षों के विद्वान इसे जायज़ नहीं समझते कि आम हनफ़ी इमाम अबू हनीफ़ा के मज़हब या आम शाफ़ई इमाम शाफ़ई के मज़हब के अलावा दूसरे मज़हब पर अमल करे।

शाह वलीउल्लाह अक़्द-अल-जीद में लिखते हैं:

अरबी	उर्दू अनुवाद
अल-मुरज्जह इन्दा अल-फ़ुक़हा अन्ना अल-आमी अल-मुन्तसिब...	फ़ुक़हा के नज़दीक वरीयता (तरजीह) इसे है कि आम आदमी जो एक मज़हब [से सम्बद्ध है]...

---

[1] इहया-उल-उलूम, अल-बाब अत्तानी फ़ी अर्काल अल-अम्र अलख, मुद्रित मतबा अल-मशहद अल-हुसैनी, काहिरा, मिस्र 2/366. [2] जामे-उर-रुमुज़ (शरह नक़ाया), किताब-अल-कराहियत, मुद्रित मकतबा इस्लामिया गुम्बद क़ामूस, ईरान 3/327. [3] अर-रसाइल अल-फ़िक़्हिया, मुअल्लिफ़ अल-अशबाह मअल-अशबाह अलख, रिसाला 34 अलख, मुद्रित इदारत-उल-क़ुरान वल-उलूम अल-इस्लामिया, कराची 12/94, 907. [4] अल-मिलल वल-निहल, हुक्म अल-इज्तिहाद वत-तक़लीद अलख, मुद्रित मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र 1/205.

فتاوی رضویہ جلد ششم

محمد غزالی قدس سرہ العالی احیاء العلوم شریف میں فرماتے ہیں:

عربی عبارت	**اردو ترجمہ**
مخالفته للمقلد متفق على كونه منكرا بين المحصلين[1]۔	تمام منتہی فاضلوں کا اجماع ہے کہ مقلد کا اپنے امام مذہب کی مخالفت کرنا شنیع و واجب الانکار ہے۔

شرح نقایہ میں کشف اصول امام بزدوی سے منقول:

عربی عبارت	**اردو ترجمہ**
من جعل الحق متعددا كالمعتزلة اثبت للعامی الخيار من كل مذهب ما يهواه و من جعل واحدا كعلمائنا الزم للعامي اماما واحدا[2]۔	یعنی جن کے نزدیک مسائل نزاعیہ میں حق متعدد ہے کہ ایک شے جو مثلاً ایک مذہب میں حلال دوسرے میں حرام ہو تو وہ عند اللہ حلال بھی ہے اور حرام بھی، وہ تو عامی کو اختیار دیتے ہیں کہ ہر مذہب سے جو چاہے اخذ کرلے یہ مذہب معتزلہ وغیرہ کا ہے اور جو حق کو واحد مانتے ہیں وہ عامی پر امام معین کی تقلید واجب کرتے ہیں یہ مذہب ہمارے علماء غیر ہم کا ہے۔

علامہ زین بن نجیم مصری صاحب بحر الرائق و اشباہ و نظائر رسالہ کبائر و صغائر میں فرماتے ہیں:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
اما الكبائر فقالوا هي بعد الكفر الزنا واللواطة وشرب الخمر ومخالفة المقلد حكم مقلده[3] اه مختصرا	یعنی کبیرہ گناہ علماء نے یوں گنائے کہ عیاذاً باللہ سب میں پہلے تو کفر ہے پھر زنا و اغلام و شراب خوری اور مقلد کا اپنے امام کی مخالفت کرنا اھ مختصرا۔

ملل و نحل میں ہے:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
علماء الفريقين لم يجوزوا ان يأخذ العامي الحنفي الا بمذهب ابي حنيفة والعامي الشفعوی الا بمذهب الشافعي[4]۔	دونوں فریق کے علماء جائز نہیں رکھتے کہ عامی حنفی مذہب ابو حنیفہ یا عامی شافعی مذہب شافعی کے سوا دوسرے مذہب پر عمل کرے۔

شاہ ولی اللہ عقد الجید میں لکھتے ہیں:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
المرجح عند الفقهاء ان العامي المنتسب	فقہاء کے نزدیک ترجیح اسے ہے کہ عامی جو ایک مذہب

---

[1] احیاء العلوم، الباب الثانی فی ارکان الامرالخ مطبوعہ مطبعۃ المشہد الحسینی القاہرہ مصر ۲/ ۳۶۶

[2] جامع الرموز (شرح نقایہ) کتاب الکراہیتہ مطبوعہ مکتبہ اسلامیہ گنبد قاموس ایران ۳/ ۳۲۷ [3] الرسائل الفقہیہ لمؤلف الاشباہ مع الاشباہ الخ الرسالۃ الرابعۃ والثلاثون الخ مطبوعہ ادارۃ القرآن والعلوم الاسلامیہ کراچی ۱۲/ ۹۴، ۹۰۷ [4] الملل والنحل حکم الاجتہاد والتقلید الخ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۱/ ۲۰۵

Fatawa Razvia Volume 6 1 - الی مذهب له مذهب فلاتجوز له مخالفته | The school of thought to which one attributes oneself becomes their school, and going against it is not permissible for them.

Now tell me, all the high-ranking scholars from whom Imam Ghazali quotes that abandoning individual Taqleed (adherence to a specific school) is abominable and unlawful; the great Imams whose statements reveal that adhering to a specific Imam is obligatory; the revered masters whose speech the author of 'Bahr' acknowledges as saying that abandoning individual Taqleed is a major sin; the scholars of both sects and great jurists from whom Shah Waliullah relates in 'Milal wa Nihal' that opposing specific Taqleed is impermissible—are all these, God forbid, according to your way, clearly infidels and polytheists? Leave that aside, what belief do you hold regarding the noble services of those leaders of religion who themselves, in their glorious works and beautiful words, gave clear and explicit declarations about the necessity of specific Taqleed and other such matters, which according to your religion are pure infidelity and polytheism? You would have to name them one by one (may the mouths of the insolent be filled with dust), God forbid, as infidels and polytheists. This concise treatise is a brief fatwa for the information of the people of truth, which has fulfilled and continues to fulfill its duty, namely, expressing the jurisprudential ruling in the best possible way. Where is the space in it for those abundant sayings and overwhelming texts? But if Allah the Great wills and divine guidance assists, then this humble one is about to compile a comprehensive treatise on this subject, which will manifest all those numerous sayings in a new style, and if Allah Almighty wills, it will uproot the principles of the religion of the non-conformists (Ghayr-Muqallideen) one by one through the authentic words of their own authorities. I count here only a few names of the leaders of religion and authoritative scholars who, according to their own specific instructions and explanations, stand as infidels and polytheists in the religion of the non-conformists; and refuge is sought with Allah, Lord of the worlds. Among them are: 1 Imam Abu Bakr Ahmad bin Ishaq Juzjani, student of the student of Imam Muhammad, 2 Imam Ibn al-Sam'ani, 3 Imam Kiya al-Harrasi, 4 Imam al-Ajal Imam al-Haramayn, 5 Imam Muhammad Muhammad Muhammad Ghazali, 6 Imam Burhan al-Din author of 'Hidayah', 7 Imam Tahir bin Ahmad bin Abdul Rashid Bukhari author of 'Khulasah', 8 Imam Kamal al-Din Muhammad bin al-Humam, 9 Imam Ali Khawass, 10 Imam Abdul Wahhab Sha'rani, 11 Imam Shaykh al-Islam Zakariyya al-Ansari, 12 Imam Ibn Hajar Makki, 13 Allama Ibn Kamal Pasha author of 'Idah wa Islah', 14 Allama Ali bin Sultan Muhammad Qari Makki, 15 Allama

Shams al-Din Muhammad commentator on 'Niqayah', 16 Allama Zain al-Din Misri author of 'Bahr', 17 Allama Umar bin Nujaym Misri author of 'Nahr', 18 Allama Muhammad bin Abdullah Ghazi Timurtashi author of 'Tanwir al-Absar', 19 Allama Khair al-Din Ramli author of 'Fatawa Khayriyyah', 20 Allama Sayyidi Ahmad Hamawi author of 'Ghamz', 21 Allama Muhammad bin Ali Dimashqi author of 'Durr wa Khaza'in', 22 Allama Abdul Baqi Zarqani commentator on 'Mawahib', 23 Allama Burhan al-Din Ibrahim bin Abi Bakr bin Muhammad bin Husayn Husayni author of 'Jawahir al-Akhlati', 24 Allama Shaykh Muhaqqiq.

---

1 'Uqd al-Jid', Chapter Five, Categories of Muqallid, published by Quran Mahal, opposite Molvi Musafir Khana, Karachi, p. 158. Page 707 of 736

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी इला मज़हब लहू मज़हब फल-तज़ूज़ लहू मुखालिफ़तुहु - 1 | जिसकी ओर व्यक्ति का जुड़ाव हो, वह मज़हब उसका हो चुका, उसका विरोध करना उसके लिए जायज़ नहीं।

अब बताइए, वे सभी श्रेष्ठ विद्वान जिनसे इमाम ग़ज़ाली उद्धृत करते हैं कि व्यक्तिगत तक़लीद (किसी एक मत का अनुसरण) छोड़ना अनुचित और वर्जित है; वे महान इमाम जिनके कथनों से यह स्पष्ट है कि एक निश्चित इमाम की तक़लीद करना वाजिब है; वे प्रतिष्ठित सूफ़ी जिनके वचनों को 'बह्र' के लेखक स्वीकार करते हैं कि व्यक्तिगत तक़लीद छोड़ना गुनाह-ए-कबीरा है; दोनों पक्षों के विद्वान और महान न्यायविद् जिनसे शाह वलीउल्लाह 'मिलल व निहल' में वर्णन करते हैं कि निश्चित तक़लीद का विरोध करना नाजायज़ है—क्या ये सब, खुदा न करे, आपके मार्ग के अनुसार स्पष्ट काफ़िर और मुशरिक ठहरे? इसे भी छोड़िए, उन दीन के पेशवाओं की महान सेवाओं के बारे में आपका क्या विश्वास है जिन्होंने स्वयं अपनी महान कृतियों और सुंदर शब्दों में निश्चित तक़लीद की अनिवार्यता आदि बातों की स्पष्ट घोषणाएं कीं, जो आपके मज़हब में शुद्ध कुफ़्र और शिर्क हैं? आप इन सबको नाम-ब-नाम (ईश्वर करे कि गुस्ताख़ों के मुंह में धूल हो), खुदा न करे, काफ़िर और मुशरिक कहेंगे। यह संक्षिप्त शोध-पत्र सत्य के खोजी लोगों की जानकारी के लिए एक लघु फतवा है, जिसने अपना कर्तव्य यानी न्यायशास्त्रीय आदेश की अभिव्यक्ति को सर्वोत्तम तरीके से पूरा किया है और कर रहा है। इसमें उन प्रचुर कथनों और प्रबल प्रमाणों की गुंजाइश कहाँ? लेकिन यदि महान अल्लाह चाहे और ईश्वरीय सहायता प्राप्त हो, तो यह विनम्र सेवक इस विषय पर एक व्यापक ग्रंथ संकलित करने वाला है, जो उन अनेकों कथनों को एक नई शैली में प्रस्तुत करेगा, और इंशाअल्लाह तआला, गैर-मुक़ल्लिदीन (परंपरा विरोधियों) के धार्मिक सिद्धांतों को उनके ही प्रतिष्ठित विद्वानों के प्रामाणिक शब्दों से एक-एक करके जड़ से उखाड़ देगा। मैं यहाँ केवल उन दीन के पेशवाओं और प्रतिष्ठित विद्वानों के कुछ नाम गिनाता हूँ, जो स्वयं अपने निर्देशों और स्पष्टीकरणों के अनुसार गैर-मुक़ल्लिदीन के मज़हब में काफ़िर और मुशरिक ठहरते हैं; और हम अल्लाह, जो सारे संसार का पालनहार है, की शरण मांगते हैं। उनमें से हैं: 1 इमाम अबू बकर अहमद बिन इसहाक जौजानी, इमाम मुहम्मद के शिष्य के शिष्य, 2 इमाम इब्न अस-समा़नी, 3 इमाम किया हरासी, 4 इमाम अजल इमाम अल-हरमैन, 5 इमाम मुहम्मद मुहम्मद मुहम्मद ग़ज़ाली, 6 इमाम बुरहानुद्दीन साहब 'हिदाया', 7 इमाम ताहिर बिन अहमद बिन अब्दुल रशीद बुखारी साहब 'खुलासा', 8 इमाम कमालुद्दीन मुहम्मद बिन अल-हुमाम, 9 इमाम अली खवास, 10 इमाम अब्दुल वहाब शा़रानी, 11 इमाम शैखुल इस्लाम ज़करिया अंसारी, 12

इमाम इब्न हजर मक्की, 13 अल्लामा इब्न कमाल पाशा साहब 'ईदाह व इस्लाह', 14 अल्लामा अली बिन सुल्तान मुहम्मद कारी मक्की, 15 अल्लामा शम्सुद्दीन मुहम्मद व्याख्याकार 'निक़ाया', 16 अल्लामा ज़ैनुद्दीन मिस्री साहब 'बह्र', 17 अल्लामा उमर बिन नुजैम मिस्री साहब 'नह्र', 18 अल्लामा मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह ग़ज़ी तिमुर्ताशी साहब 'तन्वीर अल-अब्सार', 19 अल्लामा खैरूद्दीन रमली साहब 'फ़तावा खैरिया', 20 अल्लामा सैय्यदी अहमद हमवी साहब 'ग़म्ज़', 21 अल्लामा मुहम्मद बिन अली दमिश्की साहब 'दुर व खज़ाइन', 22 अल्लामा अब्दुल बाक़ी ज़रक़ानी व्याख्याकार 'मवाहिब', 23 अल्लामा बुरहानुद्दीन इब्राहीम बिन अबी बकर बिन मुहम्मद बिन हुसैन हुसैनी साहब 'जवाहर अल-अख्लाती', 24 अल्लामा शैख मोहक़्क़िक़।

---

1 'उक़्द अल-जीद', अध्याय पाँच, मुक़ल्लिद के प्रकार, मुद्रित कुरान महल, मौलवी मुसाफ़िर खाना के सामने, कराची, पृष्ठ 158। पृष्ठ 707 का 736

فتاوی رضویہ جلد ششم الی مذهب له مذهب فلاتجوز له مخالفته - 1 | کی طرف انتساب رکھتا ہے وہ مذہب اس کا ہو چکا اسے اس کا خلاف جائز نہیں۔

اب فرمائیے تمام منتہی فاضل جن سے امام غزالی ناقل کہ ترک تقلید شخصی کو منکر و ناروا بتاتے، اکابر ائمہ جن کے قول سے کشف کاشف کہ تقلید امام معین کو واجب ٹھہراتے مشائخ کرام جن کے صحاب کلام صاحب بحر معترف کہ ترک تقلید شخصی کو گناہ کبیرہ کہتے، علمائے فریقین وفقہائے عظام جن سے ملل و نحل وشاہ ولی اللہ حاکی کہ تقلید معین کی مخالفت نا جائز رکھتے، یہ سب تو معاذ اللہ تمہارے طور پر صریح کفار و مشرکین ٹھہرے، اس سے بھی در گزر کرو ان ائمہ دین کی خدمات عالیہ میں کیا اعتقاد ہے جنہوں نے خود اپنی تصانیف جلیلہ و کلمات جمیلہ میں وجوب تقلید معین وغیرہ ان باتوں کی صاف صریح تصریحیں فرمائیں جو تمہارے مذہب پر خالص کفر و شرک ہیں ان سب کو تو نام بنام بتعیین اسم (خاک بدہاں گستاخاں) معاذ اللہ کافر و مشرک کہئے گا۔ یہ موجز رسالہ کو اطلاع اہل حق کے لئے ایک مختصر فتوی ہے جو اپنے منصب یعنی اظہارِ حکم فقہی کو بنج احسن ادا کر چکا اور کرتا ہے اس میں ان اقوال وافرہ و نصوص متکاہرہ کی گنجائش کہاں۔ مگر ان شاء اللہ العظیم توفیق ربانی مساعدت فرمائے تو فقیر ایک جامع رسالہ اس باب میں ترتیب دینے والا ہے جو ان اقوال کثیرہ سے جملہ صالحہ کو ایک نئے طرز پر جلوہ دے گا اور ان شاء اللہ تعالیٰ غیر مقلدین کے اصول مذہبی کو ان کے مستندین ہی کے کلمات مستندہ سے ایک ایک کر کے مستاصل کرے گا۔ میں یہاں صرف ان ائمہ دین و علمائے مستندین کے چند اسماء شمار کرتا ہوں جو خاص اپنے ارشادات و تصریحات کے رو سے مذہب غیر مقلدین پر کافر و مشرک ٹھہرے، والعیاذ باللہ رب العالمین۔ ان میں سے ہیں: 1 امام ابوبکر احمد بن اسحاق جوزجانی تلمیذ التمیذ امام محمد، 2 امام ابن السمعانی، 3 امام کیا ہراسی، 4 امام اجل امام

الحرمین، 5 امام محمد محمد محمد غزالی، 6 امام برہان الدین صاحب ہدایہ، 7 امام طاہر بن احمد بن عبدالرشید بخاری صاحب خلاصہ، 8 امام کمال الدین محمد بن الہمام، 9 امام علی خواص، 10 امام عبدالوہاب شعرانی، 11 امام شیخ الاسلام زکریا انصاری، 12 امام ابن حجر مکی، 13 علامہ ابن کمال پاشا صاحب ایضاح واصلاح، 14 علامہ علی بن سلطان محمد قاری مکی، 15 علامہ شمس الدین محمد شارح نقایہ، 16 علامہ زین الدین مصری صاحب بحر، 17 علامہ عمر بن نجیم مصری صاحب نہر، 18 علامہ محمد بن عبداللہ غزی تمرتاشی صاحب تنویر الابصار، 19 علامہ خیر الدین رملی صاحب فتاوی خیریہ، 20 علامہ سیدی احمد حموی صاحب غمز، 21 علامہ محمد بن علی دمشقی صاحب در و خزائن، 22 علامہ عبدالباقی زرقانی شارح مواہب، 23 علامہ برہان الدین ابراہیم بن ابی بکر بن محمد بن حسین حسینی صاحب جواہر اخلاطی، 24 علامہ شیخ محقق

---

1 عقد الجید، باب پنجم اقسام مقلد مطبوعہ قرآن محل مقابل مولوی مسافر خانہ کراچی ، ص ۱۵۸

Fatawa Razawiyya Volume VI Maulana Abdul Haque Muhaddith Dehlavi, 25 Allama Ahmad Sharif Misri Tahtawi, 26 Allama Afandi Amin-ud-Din Muhammad Shami, 27 author of Maniah, 28 author of Sirajiah, 29 author of Jawahir, 30 author of Musaffa, 31 author of Adab-ul-Maqal, 32 author of Tatar-khaniyah, 33 author of Majma', 34 author of Kashf, 35 the authors of Alamgiriyah, who according to the author of Imdad-ul-Muslimeen were five hundred scholars, reaching up to 36 Janab Sheikh Mujaddid Alf Thani Shah Waliullah, 37 Shah Abdul Aziz Sahib, 38 Qazi Thanaullah Panipati, even 39 Mian Nazir Hussain Dehlavi and his followers and imitators. But it happened such that "**Allah came upon them from where they did not expect**" (1). So Allah's command came to them from where they had no inkling. **And praise be to Allah, Lord of the worlds.**

And the irony is that among them are also those from whom the Imam of the era and other speakers of the group have cited as authorities out of ignorance and feigning ignorance. They have hidden their radiant statements and compelling words, which were clear uprooters of the group's principles, in the mantle of cunning. I will, God willing, also prove in this treatise that their citing of predecessor scholars as authorities is purely a deception and trickery for the common people; their creed has no relation with them at all. Rather, the very statements they hold as their evidence bring down the foundations of their own creed's principles. But these gentlemen either lack the discernment between supporters and opponents, or they are intentionally showing green pastures (deluding) to lead the ignorant astray. By the power of Allah the Almighty, I will also caution in this treatise that bringing up the debate of the necessity or non-necessity of individual taqlid (imitation) in their discussion is an emphasized deception and ugly trickery, because both the proponents of specification (ta'yeen) and the proponents of choice (takhyir) have accepted the permissibility of specification and the lack of harm. For those who consider taqlid to be shirk (polytheism) and disbelief from the start, what does it have to do with their path? They should first settle the initial matter, i.e., the absence of shirk and permissibility, and then proceed. These clever people jump from here to there to make their path easy, and the scholars from our side, being unrestrained, start discussing it, whereas "the cat should be killed on the first day" (matters should be settled at the outset). Initially, the path of these clever ones should be blocked; first save yourselves from the charge of shirk then prohibition, after that intend to move forward. The statements of both sides are one in heart and tongue in refuting them, and according to the claim of the scholars of both sides, God forbid, they are

equally polytheists and misguided. Rather, by the grace of Allah the Almighty, I will prove that the statements of choice (takhyir) are more complete and perfect in refuting and falsifying them. Then, citing them as authority or mentioning them is a strange spectacle. With His help, I will also clarify that these gentlemen have not yet clarified their own path; they write contradictory words and conflicting rulings, and state whatever the occasion calls for. Something in the claim, something else in the evidence, something in the objection, something else in the answer; they never remain steadfast on one point. And indeed, this is the way of all innovators, especially those who...

(1) Al-Quran 59/2 Page 708 of 736

फतावा रज़विया जिल्द शश्म (छठा खंड) मौलाना अब्दुल हक़ मुहद्दिस देहलवी, २५ अल्लामा अहमद शरीफ मिस्री तहतावी, २६ अल्लामा अफ़ंदी अमीन-उद-दीन मुहम्मद शामी, २७ मुनिया के लेखक, २८ सिराजिया के लेखक, २९ जवाहिर के लेखक, ३० मुसफ़्फ़ा के लेखक, ३१ अदब-उल-मक़ाल के लेखक, ३२ तातार-खानिया के लेखक, ३३ मजमा के लेखक, ३४ कश्फ के लेखक, ३५ आलमगीरिया के लेखक, जो इमदाद-उल-मुस्लिमीन के लेखक के अनुसार पाँच सौ विद्वान थे, यहाँ तक कि ३६ जनाब शेख मुजद्दिद अल्फ़ थानी शाह वलीउल्लाह, ३७ शाह अब्दुल अज़ीज़ साहब, ३८ क़ाज़ी सनाउल्लाह पानीपती, यहाँ तक कि स्वयं ३९ मियाँ नज़ीर हुसैन देहलवी और उनके अनुयायी और अनुकरणकर्ता। लेकिन यह इस तरह हुआ कि "**अल्लाह उन पर वहाँ से आया जहाँ से उन्हें गुमान भी न था**" (१)। तो अल्लाह का हुक्म उनके पास वहाँ से आया जहाँ से उनका अंदाज़ा भी नहीं था। **और सारी प्रशंसा अल्लाह के लिए है जो तमाम जहानों का रब है।**

और विडंबना यह है कि उनमें वे भी हैं जिनसे स्वयं ज़माने के इमाम और इस समूह के अन्य वक्ताओं ने अज्ञानता और जानबूझकर अनभिज्ञता के कारण प्रमाण लिया है। उन्होंने उनके प्रखर कथनों और प्रभावशाली शब्दों को, जो इस समूह के सिद्धांतों की जड़ें काटने वाले थे, अपनी धूर्तता के आंचल में छिपा लिया है। मैं इंशाअल्लाह (ईश्वर ने चाहा तो) इस पत्र में यह भी साबित करूँगा कि पूर्वजों के विद्वानों से उनका प्रमाण लेना महज़ आम लोगों के लिए धोखा और छल है; उनके पंथ का उनसे कोई संबंध नहीं है। बल्कि जिन कथनों को वे अपना प्रमाण मानते हैं, वे स्वयं उनके अपने पंथ के सिद्धांतों की बुनियाद गिराते हैं। लेकिन इन सज्जनों को समर्थकों और विरोधियों में अंतर नहीं पता या फिर वे जानबूझकर अज्ञानी लोगों को गुमराह करने के लिए हरे बाग दिखा रहे हैं (धोखा दे रहे हैं)। मैं अल्लाह की शक्ति से इस पत्र में यह भी सचेत करूँगा कि अपनी बहस में इन सज्जनों का तक़लीद-ए-शख़्सी (व्यक्तिगत अनुकरण) की अनिवार्यता या अनावश्यकता की बहस छेड़ना एक ज़ोरदार फरेब और भद्दा छल है, क्योंकि नियत करने वाले (ता'यीन) और विकल्प देने वाले (तख़यीर) दोनों पक्ष नियत करने की अनुमति और उसमें हर्ज न होने को स्वीकार कर चुके हैं। जिनके नज़दीक सिरे से तक़लीद शिर्क(बहुदेववाद) और कुफ्र (अविश्वास) है, उनके मार्ग से इसका क्या लेना-देना? वे पहले शुरुआती मामला यानी शिर्क न होना और अनुमति को तय कर लें, उसके बाद आगे बढ़ें। ये चालाक लोग अपने लिए रास्ता आसान करने के लिए इधर से उधर छलांग लगा जाते हैं और हमारे पक्ष के विद्वान बेलगाम होकर उसमें चर्चा करने लगते हैं, हालांकि "बिल्ली पहले ही दिन मार देनी चाहिए" (मामला शुरू में ही सुलझा लेना चाहिए)। शुरुआत में ही इन होशियारों का रास्ता रोका जाना चाहिए; पहले शिर्क फिर

हराम होने से जान बचाइए, उसके बाद आगे बढ़ने का इरादा कीजिए। दोनों पक्षों के कथन उनके खंडन में एक दिल और एक ज़बान हैं, और दोनों पक्षों के विद्वानों के दावे के अनुसार, अल्लाह न करे, वे समान रूप से मुशरिक और गुमराह हैं। बल्कि मैं अल्लाह के फज़ल से यह साबित करूँगा कि तख़यीर (विकल्प) के कथन उनके खंडन और उन्हें झुठलाने में अधिक पूर्ण और मुकम्मल हैं। फिर उनसे प्रमाण लेना या उनका उल्लेख करना एक अजीब तमाशा है। मैं उसकी सहायता से यह भी स्पष्ट करूँगा कि इन सज्जनों का अभी अपना ही मार्ग स्पष्ट नहीं हुआ है; वे परस्पर विरोधी बातें और एक-दूसरे के विपरीत आदेश लिखते हैं और जहाँ जैसा मौका पाते हैं वैसा ही बयान कर जाते हैं। दावे में कुछ, दलील में कुछ, आपत्ति में कुछ, जवाब में कुछ; कभी एक बात पर कायम नहीं रहते। और निस्संदेह सभी बिदअतियों (नवाचार करने वालों) का यही तरीका है, विशेषकर वे जो...

(१) अल-कुरान ५९/२ पेज ७०८ ऑफ ७३६

فتاویٰ رضویہ جلد ششم مولینا عبدالحق محدث دہلوی، ۲۵ علامہ احمد شریف مصری طحطاوی، ۲۶ علامہ آفندی امین الدین محمد شامی، ۲۷ صاحب منیہ، ۲۸ صاحب سراجیہ، ۲۹ صاحب جواہر، ۳۰ صاحب مصفیٰ، ۳۱ صاحب ادب المقال، ۳۲ صاحب تاتارخانیہ، ۳۳ صاحب مجمع، ۳۴ صاحب کشف، ۳۵ مولفان عالمگیریہ کہ باقرار مؤلف امداد المسلمین پانچسو علماء تھے، یہاں تک کہ ۳۶ جناب شیخ مجدد الف ثانی شاہ ولی اللہ، ۳۷ شاہ عبدالعزیز صاحب، ۳۸ قاضی ثناء اللہ پانی پتی، حتیٰ کہ خود ۳۹ میاں نذیر حسین دہلوی اور ان کے اتباع و مقلدین مگر یوں کہ **فَاَتٰىهُمُ اللّٰهُ مِنْ حَیْثُ لَمْ یَحْتَسِبُوْا** (۱) تو اللہ کا حکم ان کے پاس آیا جہاں سے ان کا گمان بھی نہ تھا۔ **والحمدللہ رب العلمین۔**

اور لطف یہ ہے کہ ان میں وہ بھی ہیں جن سے خود امام العصر و دیگر متکلمینِ طائفہ نے براہ جہالت و تجاہل استناد کیا اور ان کے اقوال باہرہ و کلماتِ قاہرہ کو جو اصولِ طائفہ کے صریح بیخ کن تھے دامنِ عیاری میں چھپا لیا، میں ان شاء اللہ تعالیٰ اس رسالہ میں یہ بھی ثابت کروں گا کہ علمائے سلف سے ان کے استناد محض مغالطہ و تلبیس عوام ہیں، ان کے مذہب کو ان سے اصلاً علاقہ نہیں بلکہ خود ہی اقوال جنہیں اپنی سند ٹھہراتے ہیں ان کے اصولِ مذہب کی بنیاد گراتے ہیں مگر حضرات کو موافق و مخالف کی تمیز نہیں یا ہے تو قصداً اغوائے جہال کو سبز باغ دکھاتے ہیں۔ میں بحول اللہ تعالیٰ اس رسالے میں یہ بھی تنبیہ کروں گا کہ اپنے مباحثہ میں ان حضرات کا تقلید شخصی کے وجوب و عدم وجوب کی بحث چھیڑ دینا تاکید و فریب و تلبیسِ بد زیب ہے کہ اہل تعیین و اصحابِ تخییر دونوں فریق جوازِ تعیین و عدم حرج کو تسلیم کئے ہوئے ہیں جن کے نزدیک سرے سے تقلیدِ شرک و کفران کے مسلک سے اسے کیا تعلق، وہ امرِ ابتدائی یعنی عدم شرک و جواز کو طے کر لیں اس کے بعد آگے چلیں، یہ چالاک لوگ اپنے لئے راہ آسان کرنے کو ادھر سے ادھر طفرہ کر جاتے ہیں اور ہماری طرف کے ذی علم ارعناء للعنان اس میں گفتگو کرنے

لگتے ہیں حالانکہ گربہ کشتن روزِ اول باید، ابتداً ان ہوشیاروں کی راہ روکنا چاہئے کہ پہلے شرک پھر حرمت سے جان بچائیے اس کے بعد آگے قصد کیجئے ۔ فریقین کے اقوال کے اقوال کے رد میں یک دل و یک زبان، اور طرفین کے عالمان کے زعم پر معاذ اللہ مشرک و گمراہ ہوتے ہیں یکساں، بلکہ میں بفضلہ تعالیٰ ثابت کروں گا کہ اقوالِ تخییر ان کی رد و تکذیب میں اتم و اکمل ہیں پھر ان سے استناد یا ان کا تذکرہ عجب تماشا ہے، میں بعونہ یہ بھی واضح کروں گا کہ ان حضرات کو ابھی خود اپنا ہی مسلک منقح نہیں ہوا ہے متناقض کلام متخالف احکام لکھتے اور جہاں جیسا موقع پاتے ہیں ویسا ہی بیان کر جاتے ہیں، دعوے میں کچھ دلیل میں کچھ اعتراض میں کچھ جواب میں کچھ، کبھی ایک پائے برقرار نہیں کرتے اور بیشک تمام اہل بدعت کا یہی وتیرہ ہے خصوصاً جو۔

(۱) القرآن ۵۹/ ۲ Page 708 of 736

Fatawa Rizwia Volume 6 This is so new that it would take an era to eventually settle. I am not here for the debate and investigation of the actual conflict; rather, I want to clarify the ruling on following them [in prayer], so a return to that is appropriate.

In short, there is absolutely no room for doubt. These gentlemen, by calling taqlid (imitation/following school of thought) shirk (polytheism) and kufr (disbelief), and calling its followers kafir (disbeliever) and mushrik (polytheist), have openly declared nine out of ten parts of the blessed Ummah of Muhammad (peace and blessings be upon him and his master)—including millions of scholars, saints, righteous people, and elite—as kafirs and mushriks. Allamah Shami (may his secret be sanctified) said regarding their elders that they call the whole world mushrik except for their own corrupt group. And anyone who calls even one Muslim a kafir, based on the apparent meanings of authentic hadiths, becomes a kafir themselves. Ironically, this Zahiri sect makes great claims of acting upon the apparent hadiths. Imam Malik, Ahmad, Bukhari, Muslim, Abu Dawood, and Tirmidhi narrate from Abdullah bin Umar (may Allah be pleased with them both), and the wording is according to Muslim (the words are from Sahih Muslim - T): The Holy Prophet, Master of the World (peace and blessings of Allah be upon him), said:

Arabic	Urdu Translation
If any man says to his brother, 'O disbeliever,' it will definitely fall upon one of them. If he is as he said [it's true], otherwise it returns to him. - 1	Meaning, whoever calls a reciter of the Kalimah (a Muslim) a kafir, this calamity will surely fall on one of the two. If the one spoken to was truly a kafir, then it's fine; otherwise, this word will revert back to the one who said it.

It is narrated in Sahih Bukhari from Abu Huraira (may Allah be pleased with him) that the Holy Prophet, Master of the World (peace and blessings of Allah be upon him), said:

Arabic	Urdu Translation
When a man says to his brother, 'O disbeliever,' it will definitely return to one of them. - 2	When a person calls his fellow Muslim brother "O disbeliever," then it will certainly return to one of the two.

Imam Ahmad, Bukhari, and Muslim narrate from Abu Dharr (may Allah be pleased with him) that the Holy Prophet, Master of the World (peace and blessings of Allah be upon him), said:

Arabic	Urdu Translation
No man calls another man a disbeliever or calls him an enemy of Allah while he is not so, but it returns to him. And no man accuses another man of immorality or disbelief except that it recoils upon him if [the one accused] is not so. - 3	Whoever calls someone a kafir or an enemy of God and he is not such, then this statement will return to him. And no person will taunt another with immorality or disbelief but that it will flip back onto him if the one whom...

1. Sahih Muslim, Chapter: Clarification of the State of Faith etc., published by Noor Muhammad Asah al-Matabi', Karachi, 1/57.
2. Sahih al-Bukhari, Book of Manners, Chapter: Whoever declares his brother a disbeliever etc., published by Qadimi Kutub Khana, Karachi, 2/901.
3. Sahih Muslim, Chapter: Clarification of the State of Faith of one who says to his Muslim brother 'O disbeliever', published by Noor Muhammad Asah al-Matabi', Karachi, 1/57.

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी यह इतना नया है कि अंततः जमते-जमते एक ज़माना चाहिए। मैं यहाँ वास्तविक विवाद की बहस और जाँच-पड़ताल में नहीं हूँ, बल्कि उनके पीछे नमाज़ पढ़ने (इक़्तिदा) का हुक्म स्पष्ट करना है, इसलिए उसी की ओर लौटना उचित है।

संक्षेप में, इसमें संदेह की बिल्कुल भी गुंजाइश नहीं है कि इन साहबान ने तक़लीद को शिर्क और कुफ़्र कहा और मुक़ल्लिदीन को काफ़िर और मुशरिक कहकर लाखों-करोड़ों उलेमा, औलिया, नेक लोगों और चुने हुए लोगों, बल्कि उम्मते मुहम्मदिया (उन पर और उनके मालिक पर दरूद व सलाम हो) के दस हिस्सों में से नौ को खुलेआम काफ़िर और मुशरिक ठहरा दिया। अल्लामा शामी (अल्लाह उनकी रूह को पाक रखे) का उनके बड़ों के बारे में यही कहना था कि वे अपने भ्रष्ट गिरोह के अलावा पूरी दुनिया को मुशरिक कहते हैं। और जो व्यक्ति एक भी मुसलमान को काफ़िर कहे, सही हदीसों के ज़ाहिरी अर्थों के आधार पर वह स्वयं काफ़िर है। और विडंबना यह है कि यह 'ज़ाहिरी' संप्रदाय ज़ाहिर हदीसों पर अमल करने का बड़ा दावा करता है। इमाम मालिक, अहमद, बुखारी, मुस्लिम, अबू दाऊद और तिर्मिज़ी, हज़रत अब्दुल्ला बिन उमर (अल्लाह उन दोनों से राज़ी हो) से रिवायत करते हैं और शब्द मुस्लिम शरीफ़ के हैं: हुज़ूर अक़दस सैयदे आलम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं:

अरबी	**उर्दू अनुवाद**
"जो कोई व्यक्ति अपने भाई को काफ़िर कहे, तो उन दोनों में से एक पर यह बात ज़रूर पड़ेगी। यदि वह वैसा ही है जैसा उसने कहा, तो ठीक है; अन्यथा वह (कुफ़्र) कहने वाले की ओर लौट आएगा।" - 1	अर्थात्, जो व्यक्ति कलिमा पढ़ने वाले को काफ़िर कहे, तो उन दोनों में से एक पर यह बला ज़रूर आएगी। अगर जिसे कहा गया वह वास्तव में काफ़िर था तो ठीक, वरना यह शब्द कहने वाले पर ही पलट जाएगा।

सही बुखारी में अबू हुरैरा (अल्लाह उनसे राज़ी हो) से रिवायत है कि हुज़ूर सैयदे आलम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं:

अरबी	**उर्दू अनुवाद**
"जब कोई व्यक्ति अपने भाई को 'ऐ काफ़िर' कहता है, तो यह निश्चित रूप से उनमें से एक की ओर लौटता है।" - 2	जब कोई व्यक्ति अपने मुसलमान भाई को "ऐ काफ़िर" कहे, तो उनमें से एक की ओर इसका पलटना निश्चित है।

इमाम अहमद, बुखारी और मुस्लिम, हज़रत अबू ज़र (अल्लाह उनसे राज़ी हो) से रिवायत करते हैं कि हुज़ूर सैयदे आलम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं:

अरबी	उर्दू अनुवाद
"जिस किसी ने किसी व्यक्ति को कुफ़्र से पुकारा या उसे अल्लाह का दुश्मन कहा, जबकि वह ऐसा नहीं है, तो वह उसी पर लौट आता है। और कोई व्यक्ति किसी दूसरे पर पाप (फ़िस्क़) या कुफ़्र का आरोप नहीं लगाता, मगर यह कि वह उसी पर उल्टा फिर जाता है, यदि जिस पर (आरोप लगाया गया है)..." - 3	जो व्यक्ति किसी को काफ़िर या ख़ुदा का दुश्मन कहे और वह ऐसा न हो, तो यह कहना उसी पर पलट आएगा। और कोई व्यक्ति किसी को पाप या कुफ़्र का ताना नहीं देगा, मगर यह कि वह उसी पर वापस लौटेगा यदि वह व्यक्ति...

1. सही मुस्लिम, बाब: ईमान के हाल का बयान आदि, नूर मोहम्मद असहुत मताबे, कराची, 1/57 द्वारा प्रकाशित।
2. सही अल-बुखारी, किताबुल अदब, बाब: जिसने अपने भाई को काफ़िर कहा आदि, क़दीमी कुतुब खाना, कराची, 2/901 द्वारा प्रकाशित।
3. सही मुस्लिम, बाब: ईमान के हाल का बयान जिसने अपने मुसलमान भाई को 'ऐ काफ़िर' कहा, नूर मोहम्मद असहुत मताबे, कराची, 1/57 द्वारा प्रकाशित।

فتاوی رضویہ جلد ششم اس قدر نو پیدا ہو کہ آخر جمتے جمتے ایک زمانہ چاہئے۔ میں یہاں اصل نزاع کی بحث و تحقیق میں نہیں، ان کے اقتدا کا حکم واضح کرنا ہے لہذا اس کی طرف رجوع مناسب۔

بالجملہ اصلاً محل شبہ نہیں ان صاحبوں نے تقلید کو شرک و کفر اور مقلدین کو کافر و مشرک کہہ کر لاکھوں کروڑوں علماء و اولیاء و صلحاء و اصفیاء بلکہ امت مرحومہ محمدیہ علی مولیٰہا وعلیہ الصلوٰۃ والتحیۃ کے دس حصوں سے نو کو علی الاعلان کافر و مشرک ٹھہرایا، وہی علامہ شامی قدس سرہ السامی کا ان کے اکابر کی نسبت ارشاد کہ اپنے طائفہ تالفہ کے سوا تمام عالم کو مشرک کہتے اور جو شخص ایک مسلمان کو بھی کافر کہے ظواہر حدیث صحیحہ کی بنا پر وہ خود کافر ہے اور طرفہ یہ کہ اس فرقہ ظاہر یہ کو ظاہر احادیث ہی پر عمل کا بڑا دعوی ہے امام مالک واحمد و بخاری و مسلم وابو داؤد و ترمذی حضرت عبداللہ بن عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے راوی واللفظ لمسلم (الفاظ مسلم شریف کے ہیں۔ ت) حضور اقدس سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

عربی متن	اردو ترجمہ
ایمأ امرئ قال لا خیہ کافر فقد باء بھا احدھما ان کان کما قال و الار جعت علیہ - 1	یعنی جو شخص کلمہ گو کو کافر کہے تو ان دونوں میں ایک پر یہ بلا ضرور پڑے گی اگر جسے کہا وہ حقیقۃً کافر تھا جب تو خیر ورنہ یہ کلمہ اسی کہنے والے پر پلٹے گا۔

صحیح بخاری میں ابوہریرہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے مروی حضور سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

عربی متن	اردو ترجمہ
اذا قال الرجل لا خیہ یاکافر فقد باء بہ احدھما - 2	جب کوئی شخص اپنے بھائی مسلمان کو "یا کافر" کہے تو ان دونوں میں ایک کا رجوع اس طرف بیشک ہو۔

امام احمد و بخاری و مسلم حضرت ابوذر رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے راوی حضور سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

عربی متن	اردو ترجمہ
لیس من دعا رجلا بالکفر اوقال عدو اللہ ولیس کذلك الاحار علیہ ولا یرمي رجل رجلا بالفسق ولا یرمیہ بالکفر الا - 3	جو شخص کسی کو کافر یا دشمن خدا کہے اور وہ ایسا نہ ہو یہ کہنا اسی پر پلٹ آئے اور کوئی شخص کسی کو فسق یا کفر کا طعن نہ کرے گا مگر یہ کہ وہ اسی پر الٹا پھرے گا اگر جس پر

1 صحیح مسلم باب بیان حال ایمان الخ مطبوعہ نور محمد اصح المطابع کراچی ۱/ ۵۷ 2 صحیح البخاری کتاب الادب، باب من اکفر اخاہ الخ مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۲/ ۹۰۱ 3 صحیح مسلم باب بیان حال ایمان من قال لا خیہ المسلم یا کافر مطبوعہ نور محمد اصح المطابع کراچی ۱/ ۵۷

Fatawa Razawiyya - Volume Six

"...it returned to him if his companion was not like that." [1] This was criticized, it didn't happen like that. This is in brief. Briefly.

Imam Ibn Hibban, in his Sahih named 'Al-Taqasim wal-Anwa', narrates with a sound chain from Hazrat Abu Sa'id al-Khudri (may Allah be pleased with him), that the Master of the Universe (may peace and blessings of Allah be upon him) said:

[Arabic:] "No man ever calls another man a disbeliever but one of them returns with it; if he was a disbeliever, [then it is as he said], otherwise he becomes a disbeliever by his calling him a disbeliever." [2] **[Translation:]** Meaning, it never happens that one person calls another a disbeliever and both escape from it; rather, it must fall upon one of them. If the other person was indeed a disbeliever, then this person is saved, otherwise, by calling him a disbeliever, he himself becomes a disbeliever.

Scholars state that likewise calling someone a polytheist (Mushrik), heretic (Zindiq), atheist (Mulhid), or hypocrite (Munafiq) is similar. Allama Arif Billah Sayyidi Abdul Ghani bin Ismail Nabulsi (may his secret be sanctified), while commenting on the Hadith of Abu Dharr (may Allah be pleased with him) in 'Hadiqa Nadiyya', states:

[Arabic:] "Whoever calls a man a disbeliever in Allah Almighty, or a polytheist with Him, or likewise ascribes to him heresy, atheism, or the hypocrisy that amounts to disbelief." [3] - Finished briefly. **[Translation:]** To say about a person that he committed disbelief against Allah Almighty or polytheism with Him, or similarly to call him by attributing heresy, atheism, or hypocrisy of disbelief to him (then he himself will become a disbeliever). - Finished summarily. (T)

And under the Hadith of Ibn Umar (may Allah be pleased with them), he said: "Likewise 'O Polytheist' and its likes." [4] (Similarly, if he called him a polytheist etc., he himself will become a polytheist, T). I say: and with Allah is the success, this meaning is established from these very Hadiths that every polytheist is an enemy of Allah, and the command of calling someone 'Enemy of Allah' is explicitly mentioned in the Hadith itself. And the Holy Prophet (may peace and blessings of Allah be upon him) clarified that even calling someone a 'Fasiq' (transgressor) returns [if untrue]. Thus, 'Mushrik' is much worse, rather it is among the most foul types of disbelievers, so it naturally has priority in being included under 'O Disbeliever'. And refuge is sought with Allah, the Pure and Exalted. The reason for this 'returning' [of the label],

as the people of hearts (spiritual masters) have explained, is that the state of a Muslim is like a mirror.

[Poetry:] "The Turk and the Indian see in me what is in them." (The Turk and the Indian see in me exactly what is within themselves)

---

1. Sahih al-Bukhari, Book of Etiquette, Chapter on what is forbidden regarding abuse and cursing, published by Qadimi Kutub Khana Karachi, 2/893.
2. Al-Ihsan bi-Tartib Sahih Ibn Hibban, 'Whoever declares a person a disbeliever etc.', Hadith 228, published by Mu'assasat al-Risalah Beirut, 1/210.
3. Al-Hadiqa al-Nadiyya Sharh al-Tariqa al-Muhammadiyya, Fourth type of the sixty types: Lying, published by Maktaba Nooria Razawiyya Faisalabad, 2/211.
4. Al-Hadiqa al-Nadiyya Sharh al-Tariqa al-Muhammadiyya, Tenth type etc., published by Maktaba Nooria Razawiyya Faisalabad, 2/236.

फ़तावा रज़विया - खंड छठा

"...उस पर लौट आया अगर उसका साथी वैसा न था।" [1] यह आलोचना की गई थी, ऐसा नहीं हुआ। यह संक्षेप में है। संक्षेप में।

इमाम इब्न हिब्बान अपनी सहीह जिसका नाम 'अल-तक़ासीम वल-अनवा' है, में सहीह सनद के साथ हज़रत अबू सईद खुदरी (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत करते हैं कि हुज़ूर सैयदे आलम (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) फ़रमाते हैं:

[अरबी:] "किसी भी व्यक्ति ने दूसरे को काफ़िर नहीं कहा मगर उनमें से एक उस पर वापस आ गया; अगर वह काफ़िर था [तो वैसा ही है], वरना वह उसे काफ़िर कहने की वजह से खुद काफ़िर हो गया।" [2] **[अनुवाद:]** यानी कभी ऐसा नहीं हुआ कि एक व्यक्ति दूसरे की तक़फ़ीर (काफ़िर कहना) करे और वे दोनों उससे बच जाएँ बल्कि उनमें से एक पर ज़रूर गिरेगी। अगर वह (दूसरा) काफ़िर था तो यह बच गया, वरना उसे काफ़िर कहने से यह खुद काफ़िर हो गया।

विद्वान फ़रमाते हैं कि इसी तरह किसी को मुशरिक (बहुदेववादी) या ज़ंदीक़ (पाखंडी) या मुल्हिद (नास्तिक) या मुनाफ़िक़ (ढोंगी) कहना भी वैसा ही है। अल्लामा आरिफ़ बिल्लाह सैयदी अब्दुल ग़नी बिन इस्माइल नाबुलसी (क़ुद्दसा सिर्रहु) 'हद्दीक़ा नदिया' में हज़रत अबू ज़र (रज़ियल्लाहु अन्हु) की हदीस के तहत फ़रमाते हैं:

[अरबी:] "जिसने किसी व्यक्ति को अल्लाह तआला के साथ कुफ़्र करने वाला या उसके साथ शिर्क करने वाला कहा, और इसी तरह ज़ंदीक़, इल्हाद और कुफ़्रिया निफ़ाक़ की तरफ़ निस्बत की।" [3] - संक्षेप में समाप्त। **[अनुवाद:]** किसी व्यक्ति के बारे में कहना कि उसने अल्लाह तआला के साथ कुफ़्र किया या शिर्क किया, इसी तरह ज़ंदीक़, इल्हाद और कुफ़्रिया निफ़ाक़ की निस्बत करके पुकारा (तो वह खुद काफ़िर हो जाएगा)। - संक्षेप में समाप्त। (त)

और हदीस-ए-इब्ने उमर (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) के तहत फ़रमाया: "इसी तरह 'ऐ मुशरिक' और इसके जैसा।" [4] (इसी तरह उसे मुशरिक वग़ैरह कहा तो मुशरिक हो जाएगा, त)। मैं कहता हूँ: और अल्लाह की मदद से ही कामयाबी है, यह अर्थ खुद इन्हीं हदीसों से साबित है कि हर मुशरिक अल्लाह का दुश्मन है और 'अदुवुल्लाह' (अल्लाह का दुश्मन) कहने का हुक्म खुद हदीस में स्पष्ट है। और हुज़ूर अक़दस (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने स्पष्ट फ़रमाया कि 'फ़ासिक़' कहना भी पलटता है, तो मुशरिक तो बहुत बदतर बल्कि काफ़िरों की सबसे गंदी क़िस्मों में से है, तो सामान्यतः 'या

काफ़िर' में शामिल होने का यह और भी अधिक हक़दार है। और अल्लाह पाक और बुलंद की पनाह। इस पलटने की वजह, जैसा कि दिल वालों (आध्यात्मिक गुरुओं) ने बताई है, वह यह है कि मुसलमान का हाल आईने जैसा है।

[कविता:] "तुर्क और हिंद मुझमें वही देखते हैं जो उनमें है।" (तुर्क और हिंद मुझमें वही देखते हैं जो उनके अपने अंदर है)

---

1. सहीह अल-बुखारी, किताबुल अदब, बाब: गाली-गलौज और लानत की मनाही, मुद्रित: क़दीमी कुतुब ख़ाना कराची, २/८९३।
2. अल-इहसान बितरतीब सहीह इब्न हिब्बान, 'जिसने किसी इंसान को काफ़िर कहा आदि', हदीस २२८, मुद्रित: मुअस्ससतुर रिसाला बेरूत, १/२१०।
3. हद्दीक़ा नदिया शरह तरीक़ा मोहम्मदिया, साठ प्रकारों में से चौथा प्रकार: झूठ, मुद्रित: मकतबा नूरिया रज़विया फ़ैसलाबाद, २/२११।
4. हद्दीक़ा नदिया शरह तरीक़ा मोहम्मदिया, दसवाँ प्रकार आदि, मुद्रित: मकतबा नूरिया रज़विया फ़ैसलाबाद, २/२३६।

पृष्ठ ७१० का ७३६

ارتدت علیہ ان لم یکن صاحبہ کذلك ۱۔ ھذا طعن کیا تھا ایسا نہ ہوا۔ یہ اختصارا ہے۔ مختصراً۔

امام ابن حبان اپنی صحیح مسمی بالتقاسیم والانواع میں بسند صحیح حضرت ابوسعید خدری رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے راوی حضور سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں :

ما اکفر رجل رجلا قط الاباء بھا احدھما ان کان کافرا والا کفر بتکفیرہ ۲۔ | یعنی کبھی ایسا نہ ہوا کہ ایک شخص دوسرے کی تکفیر کرے اور وہ دونوں اس سے نجات پا جائیں بلکہ ان میں ایک پر ضرور گرے گی اگر وہ کافر تھا تو یہ بچ گیا ورنہ اسے کافر کہنے سے یہ خود کافر ہوا۔

علماء فرماتے ہیں یوں ہی کسی کو مشرک یا زندیق یا ملحد یا منافق کہنا، علامہ عارف باللہ سیدی عبدالغنی بن اسمعیل نابلسی قدس سرہ القدسی حدیقہ ندیہ میں زیر حدیث ابوذر رضی اللہ تعالیٰ عنہ فرماتے ہیں :

من دعا رجلا بالکفر باللہ تعالی اوالشرك بہ وکذلك بالزندقۃ والالحاد والنفاق الکفری ۳۔ اہ ملخصاً۔ | کسی شخص کے بارے میں کہنا کہ اس نے اللہ تعالیٰ کے ساتھ کفر کیا یا شرک کیا اسی طرح زندیق، الحاد اور نفاق کفری کی نسبت کرکے پکارا (تو خود کافر ہوجائے گا) اہ تلخیصاً (ت)

اور زیر حدیث ابن عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہما فرمایا: کذلك یامشرك ونحوہ ۴ (اسی طرح اسے مشرک وغیرہ کہا تو مشرک ہو جائے گا، ت) اقول: وباللہ التوفیق یہ معنی خود انہیں احادیث سے ثابت کہ ہر مشرک عدواللہ ہے اور عدواللہ کہنے کا حکم خود حدیث میں مصرح، اور حضور اقدس صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے تصریح فرمائی کہ فاسق کہنا بھی پلٹتا ہے تو مشرک تو بہت بدتر بلکہ اخبث اقسام کفار سے ہے تو عموماً یا کافر میں بھی دخول اولیٰ رکھتا ہے والعیاذ باللہ سبحنہ وتعالیٰ،

وجہ اس پلٹنے کی جس طرح ارباب قلوب نے افادہ فرمائی یہ ہے کہ مسلمان کا حال مثل آئینہ کے ہے ع

ترك و ہند در من آں بیند کہ اوست (ترک اور ہند مجھ میں وہی دیکھتا ہے جو اس میں ہے)

---

۱ صحیح البخاری کتاب الادب، باب ما ینھی عن السباب واللعن مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۸۹۳/۲ ۲ الاحسان بترتیب صحیح ابن حبان، من اکفر انسا نا الخ حدیث ۲۲۸ مطبوعہ مؤسسۃ الرسالۃ بیروت ۱/ ۲۱۰ ۳ حدیقہ ندیہ شرح طریقہ محمدیہ النوع الرابع من الانواع الستین الکذب ، مطبوعہ مکتبہ نوریہ رضویہ فیصل آباد، ۲/ ۲۱۱ ۴ حدیقہ ندیہ شرح طریقہ محمدیہ العاشر الانواع الخ مطبوعہ مکتبہ نوریہ رضویہ فیصل آباد ۲/ ۲۳۶

Fatawa Razawiyya Volume 6

“A man judges others by himself.” (Trans.) When he called someone a disbeliever (Kafir), polytheist (Mushrik), or transgressor (Fasiq), and that person was free of those defects, then in reality, those despicable traits were in the speaker himself, whose reflection was seen in that divine mirror. Out of his foolishness, he mistook this ugly, repulsive face for a shining mirror, even though the surface of the mirror is clean and pure from such filth and dust. This was the Hadith which, by the command “They say the best words of creation” (Trans.), is their verbal recitation, while the state of the heart is as stated in the Hadith: “It (Islam) will not pass beyond their throats.” (Trans.)

Now let us turn to jurisprudence (Fiqh). Many senior Imams, like Imam Abu Bakr al-A'mash and others, the general scholars of Balkh, and some Imams of Bukhara (may Allah Almighty have mercy on them), observing the aforementioned Hadiths, kept this ruling absolute and considered the Takfir (accusing of disbelief) of a Muslim to be a cause of disbelief (Kufr) absolutely. Sayyidi Ismail Nabulsi states in the commentary on 'Durar wa Ghurar' by Mulla Khusraw:

Arabic Text	**Urdu Translation**
If someone says to a Muslim, 'O disbeliever,' the jurist Abu Bakr al-A'mash would say he has committed Kufr, while other Sheikhs of Balkh said he has not. This issue occurred in Bukhara, and some Imams of Bukhara answered that he has committed Kufr. When the answer returned to Balkh that he has committed Kufr, those who had issued a fatwa contrary to the saying of the jurist Abu Bakr returned to his opinion. (Summarized)	If someone called a Muslim a disbeliever, the jurist Abu Bakr al-A'mash would declare him a disbeliever, whereas other scholars among the Sheikhs of Balkh would not say so. Coincidentally, this issue arose in Bukhara, and some Imams of Bukhara declared such a person a disbeliever. When this answer reached back to Balkh (i.e., that he should be called a disbeliever), then every jurist who had given a fatwa against Abu Bakr al-A'mash retracted and turned towards his opinion. (Summarized)

In the treatise of Allama Badr Rashid and then in the commentary on Fiqh al-Akbar by Mulla Ali Qari, it is stated:

Arabic Text	Urdu Translation
So everyone returned to the fatwas of Abu Bakr al-Balkhi and said the abuser has committed Kufr.[2]	All scholars, referring back to this fatwa of Abu Bakr al-Balkhi, declared the person who insults in this manner to be a disbeliever. (Trans.)

In 'Ahkam', after the aforementioned passage, it says:

Arabic Text	Urdu Translation
And it is appropriate not to declare Kufr according to the opinion of Abu al-Layth and some Imams of Bukhara.[3]	According to the opinion of Abu al-Layth and some Imams of Bukhara, it is appropriate that he not be called a disbeliever. (Trans.)

[1] Hadiqa al-Nadiyya, Commentary on Tariqa Muhammadiyya, The Fourth Type from the Sixty Types: Lying, Published by Nooria Razawiyya, Faisalabad, 2/212. [2] Sharh Fiqh al-Akbar by Mulla Ali Qari, Chapter on Kufr: Explicit and Allusive, Published by Mustafa al-Babi, Egypt, p. 181. [3] Hadiqa al-Nadiyya, Commentary on Tariqa Muhammadiyya, The Fourth Type from the Sixty Types: Lying, Published by Maktaba Nooria Razawiyya, Faisalabad, 2/212.

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

"मनुष्य दूसरों को अपने ऊपर क़यास करता है।" (अनु.) जब उसने उसे काफ़िर या मुशरिक या फ़ासिक कहा और वह उन दोषों से मुक्त था, तो वास्तव में ये घृणित गुण उसी कहने वाले में थे जिनका प्रतिबिंब उस ईश्वरीय दर्पण में दिखाई दिया और उसने अपनी मूर्खता से इस कुरूप चेहरे को चमकता हुआ दर्पण समझा, हालांकि दर्पण का दामन इस गंदगी और धूल से साफ और पवित्र है। यह तो वह हदीस थी जो इस हुक्म के तहत "वे सृष्टि की सबसे अच्छी बात कहते हैं" (अनु.) उनका ज़ुबानी वज़ीफ़ा है और दिल का वही हाल है जो हदीस में फरमाया गया: "यह (इस्लाम) उनके गले से नीचे नहीं उतरेगा।" (अनु.)

अब फ़िक़्ह (धर्मशास्त्र) की ओर चलें। कई बड़े इमाम जैसे इमाम अबू बक्र अअमश आदि, बल्ख के आम उलेमा और बुखारा के कुछ इमाम (अल्लाह उन पर रहमत फरमाए), उपरोक्त हदीसों पर नज़र फरमाकर इस हुक्म को ऐसे ही पूर्ण (absolute) रखते और मुसलमान की तकफ़ीर (काफ़िर कहना) को पूर्ण रूप से कुफ़्र का कारण मानते हैं। सैय्यदी इस्माइल नाबुलसी मुल्ला खुसरो की 'दुरर व ग़ुरर' की व्याख्या में फरमाते हैं:

अरबी इबारत	**उर्दू अनुवाद**
यदि किसी ने मुसलमान को काफ़िर कहा, तो फ़क़ीह अबू बक्र अअमश कहते कि उसने कुफ़्र किया, और बल्ख के अन्य शेखों ने कहा कि उसने कुफ़्र नहीं किया। यह मामला बुखारा में हुआ और बुखारा के कुछ इमामों ने जवाब दिया कि उसने कुफ़्र किया। जब यह जवाब बल्ख पहुँचा कि उसने कुफ़्र किया, तो जिस किसी फ़क़ीह ने फ़क़ीह अबू बक्र के कथन के विरुद्ध फतवा दिया था, वह उनके कथन की ओर लौट आया। (संक्षिप्त)	यदि किसी ने मुसलमान को काफ़िर कहा तो फ़क़ीह अबू बक्र अअमश उसे काफ़िर करार देते, और बल्ख के शेखों में से दूसरे उलेमा काफ़िर नहीं कहते थे। संयोग से यह मसला बुखारा में आया और बुखारा के कुछ इमामों ने ऐसे व्यक्ति को काफ़िर करार दिया, तो यह जवाब वापस बल्ख गया (यानी काफ़िर कहा जाएगा), तो जिस जिस फ़क़ीह ने अबू बक्र अअमश के खिलाफ फतवा दिया था, उन्होंने उनके कथन की ओर रुजू (वापसी) कर लिया। (संक्षिप्त)

अल्लामा बद्र रशीद के रिसाले और फिर मुल्ला अली क़ारी की 'शरह फ़िक़्ह अकबर' में है:

अरबी इबारत	उर्दू अनुवाद
सभी ने अबू बक्र अल-बल्खी के फतवों की ओर रुजू किया और कहा कि गाली देने वाले ने कुफ़्र किया।[2]	सभी उलेमा ने अबू बक्र बल्खी के इस फतवे की ओर रुजू करते हुए इस तरह गाली देने वाले को काफ़िर करार दिया। (अनु.)

'अहकाम' में उपरोक्त इबारत के बाद है:

अरबी इबारत	उर्दू अनुवाद
और अबू अल-लैथ और बुखारा के कुछ इमामों के कथन के अनुसार काफ़िर न कहना ही उचित है।[3]	अबू अल-लैथ और बुखारा के कुछ इमामों के कथन पर उचित यह है कि काफ़िर न कहा जाए। (अनु.)

[1] हदीक़ा नदिय्या शरह तरीक़ा मुहम्मदिय्या, साठ प्रकारों में से चौथा प्रकार: झूठ, प्रकाशित नूरिया रज़विया फैसलाबाद 2/212 [2] शरह फ़िक़्ह अकबर मुल्ला अली क़ारी, कुफ़्र का बयान: स्पष्ट और सांकेतिक, प्रकाशित मुस्तफा अल-बाबी मिस्र पृ. 181 [3] हदीक़ा नदिय्या शरह तरीक़ा मुहम्मदिय्या, साठ प्रकारों में से चौथा प्रकार: झूठ, प्रकाशित मकतबा नूरिया रज़विया फैसलाबाद 2/212

पेज 711/736

فتاوی رضویہ جلد ششم

المرء یقیس علی نفسہ (انسان دوسرے کو اپنے اوپر قیاس کرتا ہے۔ت) جب اس نے اسے کافریا مشرک یا فاسق کہا اور وہ ان عیوب سے پاک تھا تو حقیقۃً یہ اوصاف ذمیمہ اسی کہنے والے میں تھے جن کا عکس اس آئینہ الہی میں نظر آیا اور یہ اپنی سفاہت سے اس کریہہ بد نما شکل کو آئینہ تاباں کی صورت سمجھا حالانکہ دامن آئینہ اس لوث و غبار سے صاف و منزہ ہے۔ یہ تو حدیث تھی جو بحکم یقولون من خیر قول البریۃ (وہ ساری مخلوق سے بہتر کا قول کہتے ہیں۔ت) ان کا زبانی وظیفہ ہے اور دل کا وہی حال جو حدیث میں ارشاد فرمایا: لایجاوز تراقیھم (ان کے حلق سے (اسلام) تجاوز نہیں کرے گا ت)

اب فقہ کی طرف چلئے بہت اکابر ائمہ مثل امام ابوبکر اعمش وغیرہ عامہ علمائے بلخ و بعض ائمہ بخارا رحمۃ اللہ تعالی علیہم احادیث مذکورہ پر نظر فرما کر اس حکم کو یوں ہی مطلق رکھتے اور مسلمان کی تکفیر کو علی الاطلاق موجب کفر جانتے ہیں۔ سیدی اسمعیل نابلسی شرح درو غرر مولی خسرو میں فرماتے ہیں:

عربی عبارت	**اردو ترجمہ**
لو قال للمسلم کافر کان الفقیہ ابوبکر الاعمش یقول کفر و قال غیرہ من مشایخ بلخ لایکفر و اتفقت ھذہ المسئلۃ ببخارا فأجاب بعض ائمۃ بخارا انہ یکفر فرجع الجواب الی بلخ انہ یکفر فمن	اگر کسی نے مسلمان کو کافر کہا تو فقیہ ابوبکر اعمش اسے کافر قرار دیتے، اور مشائخ بلخ میں سے دوسرے علماء کافر نہیں کہتے۔ اتفاقاً یہ مسئلہ بخارا میں پیش آیا اور بعض ائمہ بخارا نے ایسے شخص کو کافر قرار دیا تو یہ جواب واپس بلخ گیا (یعنی کافر کہا جائے گا) تو جس جس

عربی عبارت	اردو ترجمہ
افتی بخلاف قول الفقیہ ابی بکر رجع	فقیہ نے ابوبکر اعمش کے خلاف فتوی دیا تھا انہوں نے ان
الی قولہ 1 الخ ملخصاً	کے قول کی طرف رجوع کرلیا اھ ملخصاً (ت)

رسالہ علامہ بدر رشید پھر شرح فقہ اکبر ملا علی قاری میں ہے:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
فرجع الکل الی فتاوی ابی بکر	تمام علماء نے ابوبکر بلخی کے اس فتوی کی طرف رجوع کرتے
البلخی وقالوا کفر الشاتم 2۔	ہوئے اس طرح گالی دینے والے کو کافر قرار دیا۔ (ت)

احکام میں بعد عبارت مذکورہ کے ہے:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
و ینبغی ان لایکفر علی قول ابی اللیث و	ابواللیث اور بعض ائمہ بخارا کے قول پر مناسب یہ ہے
بعض ائمۃ بخارا 3۔	کہ کافر نہ کہا جائے۔ (ت)

1 حدیقہ ندیہ شرح طریقہ محمدیہ النوع الرابع من الانواع الستین الکذب مطبوعہ نوریہ رضویہ فیصل آباد ۲/ ۲۱۲ 2 شرح فقہ اکبر لملا علی قاری فصل فی الکفر صریحاً و کنایۃ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ص ۱۸۱ 3 حدیقہ ندیہ شرح طریقہ محمدیہ النوع الرابع من الانواع الستین الکذب مطبوعہ مکتبہ نوریہ رضویہ فیصل آباد ۲/ ۲۱۲

Fatawa Ridawiyya, Volume 6

The correct, reliable, and preferred position among the noble jurists is detailed: if one calls someone an infidel (kafir) as a matter of insult and abuse without believing them to be one, then they do not become an infidel. This is like calling reckless and unrestrained people "unbridled donkeys" or "unchained dogs," where the literal meaning is not intended; otherwise, they would become infidels. Fatawa Dhakhira, Fusul 'Imadi, Sharh Durar wa Ghurar, Sharh Nuqaya by Barjandi, Sharh Nuqaya by Quhistani, Nahr al-Faiq, Sharh Wahbaniyya by 'Allama Abd al-Barr, Durr al-Mukhtar, Hadiqa Nadiyya, Jawahir Akhlati, Fatawa 'Alamgiri, Radd al-Muhtar, and other reliable books have explicitly stated that this is the chosen (mukhtar) position, the position for fatwa, and the one acted upon. Scholars state that when a person considers someone an infidel in their belief, while they are not an infidel but a Muslim, then that person has termed the religion of Islam as infidelity, and whoever says such a thing is an infidel.

I say, and with Allah is success, this argument according to their objectives (their purposes - Trans.) is that one is not an infidel unless their religion is infidelity. No person is devoid of a religion, nor can one person have two religions at the same time.

(Arabic)	**(Urdu Translation)**
For infidelity (kufr) and Islam are two contradictory poles regarding a human being; they can never coexist, nor can they both be absent. Allah Almighty said, "Indeed, We guided him to the way, be he grateful or be he ungrateful (kafir)."[1] And Allah Almighty said, "Allah has not made for any man two hearts in his interior."[2]	Because infidelity and Islam are at two opposite ends for a person, they can never be together nor can they both be absent. The noble command of Allah is: either he will be grateful or an infidel. In another place He said: and We have not made two hearts in a man's chest. (Trans.)

Now, when this person, for example, calls Zaid, a believer, an infidel, it means that his religion is infidelity. Since Zaid is indeed characterized by one religion, with which another religion cannot coexist, then inevitably he is calling that specific religion infidelity by which Zaid is characterized. And that religion is nothing but Islam. Therefore, of necessity, he has deemed the religion of Islam as infidelity, and whoever deems the religion of Islam as infidelity is certainly an infidel. Now listen to the statements of the scholars; it is in al-Hindiyya:

(Arabic)

The chosen (position) for fatwa in this category of issues is that the speaker of such statements, if he intended insult and does not believe the person to be an infidel, he does not commit infidelity. But if he believes him to be an infidel and addresses him thus based on...

(Urdu Translation)

In this kind of issues, the chosen (position) for fatwa is that if the speaker of these words intends them as an insult and does not regard him as an infidel by belief, then he is not an infidel. And if he calls him an infidel while regarding him as an infidel by belief, then this will be infidelity. As it is in...

[1] Al-Quran 76/3 [2] Al-Quran 33/4

फतावा रज़विया, खंड 6

महान न्यायविदों (फुकहा) के बीच सही, विश्वसनीय और पसंदीदा मत में विस्तार यह है कि यदि कोई बिना विश्वास के केवल गाली और अपमान के रूप में किसी को काफ़िर कहता है, तो वह काफ़िर नहीं होगा। जैसे कि बेबाक और अनियंत्रित लोगों को 'बिना लगाम का गधा' या 'बिना जंजीर का कुत्ता' कहा जाता है, जहाँ वास्तविक अर्थ अभिप्रेत नहीं होता; अन्यथा वह काफ़िर हो जाएगा। फतावा ज़खीरा, फ़ुसूल इमादी, शरह दुरर व ग़ुरर, शरह नकाया बरजंदी, शरह नकाया कुहिस्तानी, नहरुल फ़ाइक, शरह वहबानिया अल्लामा अब्दुल बर्र, दुर्रे मुख्तार, हदीक़ा नदिया, जवाहर अख़लाती, फतावा आलमगीरी, रददुल मुहतार और अन्य विश्वसनीय पुस्तकों में स्पष्ट किया गया है कि यही 'मज़हब मुख्तार' है और फतवे के लिए चुना गया है। विद्वान कहते हैं कि जब किसी ने अपने विश्वास में उसे काफ़िर समझा और वह काफ़िर नहीं बल्कि मुसलमान है, तो उसने इस्लाम धर्म को कुफ्र (धर्महीनता) ठहराया, और जो ऐसा कहे वह काफ़िर है।

मैं कहता हूँ, और अल्लाह ही सफलता देने वाला है, उनके उद्देश्यों (त.) के अनुसार इस दलील का अर्थ यह है कि काफ़िर वही है जिसका धर्म कुफ्र है और कोई भी व्यक्ति धर्म से खाली नहीं होता, और न ही एक व्यक्ति के पास एक ही समय में दो धर्म हो सकते हैं।

(अरबी)

क्योंकि कुफ्र और इस्लाम एक मनुष्य के संबंध में विरोधाभासी ध्रुव हैं; वे कभी एक साथ नहीं हो सकते और न ही दोनों अनुपस्थित हो सकते हैं। अल्लाह तआला ने फरमाया: "बेशक हमने उसे रास्ता दिखाया, चाहे वह शुक्रगुज़ार हो या नाशुकरा (काफ़िर)।"[1] और अल्लाह तआला ने फरमाया: "अल्लाह ने किसी व्यक्ति के सीने में दो दिल नहीं बनाए।"[2]

(उर्दू अनुवाद)

क्योंकि कुफ्र और इस्लाम एक इंसान के संबंध में विरोधाभास के दो छोरों पर हैं, न तो ये कभी एक साथ जमा हो सकते हैं और न ही समाप्त हो सकते हैं। अल्लाह तआला का पवित्र कथन है: या तो वह शुक्रगुज़ार होगा या काफ़िर। दूसरे स्थान पर फरमाया: और हमने एक आदमी के सीने में दो दिल नहीं बनाए। (त.)

अब जो व्यक्ति उदाहरण के तौर पर ज़ैद (जो मोमिन है) को काफ़िर कहता है, तो इसका अर्थ यह है कि उसका धर्म कुफ्र है। चूँकि ज़ैद वास्तव में एक धर्म से जुड़ा हुआ है, जिसके साथ दूसरा धर्म नहीं हो सकता, तो अनिवार्य रूप से वह उसी विशिष्ट धर्म को कुफ्र कह रहा है जिससे ज़ैद का संबंध है।

और वह धर्म इस्लाम के अलावा और कुछ नहीं है। इसलिए उसने निश्चित रूप से इस्लाम धर्म को कुफ्र ठहराया, और जो इस्लाम धर्म को कुफ्र करार दे, वह निश्चित रूप से काफ़िर है। अब विद्वानों के उद्धरण सुनिए; 'हिन्दिया' में है:

(अरबी)

इस प्रकार के मसलों में फतवे के लिए पसंदीदा राय यह है कि इन बातों को कहने वाला यदि गाली देना चाहता है और उसे विश्वास के आधार पर काफ़िर नहीं मानता, तो वह काफ़िर नहीं है। लेकिन अगर वह उसे विश्वास के आधार पर काफ़िर मानते हुए उसे काफ़िर कहता है तो...

(उर्दू अनुवाद)

इस प्रकार के मसलों में फतवे के लिए पसंदीदा राय यह है कि इन कथनों को कहने वाला यदि गाली देना चाहता है और उसे विश्वास के आधार पर काफ़िर नहीं मानता तो वह काफ़िर नहीं है। और यदि उसे विश्वास के आधार पर काफ़िर मानते हुए काफ़िर कहता है, तो फिर यह कुफ्र होगा। जैसा कि... में है।

[1] अल-कुरान 76/3 [2] अल-कुरान 33/4

पृष्ठ 712/736

اور مذہب صحیح و معتمد و مرجح فقہائے کرام میں تفصیل ہے کہ اگر بطور سب و دشنام بے اعتقاد تکفیر کہا تو کافر نہ ہوگا جیسے بیباکوں بے قیدوں کو خر بے لجام و سگ بے زنجیر کہیں کہ معنی حقیقی مراد نہیں ورنہ کافر ہو جائے گا۔ فتاوی ذخیرہ و فصول عمادی و شرح درر و غرر و شرح نقایہ بر جندی و شرح نقایہ قہستانی و نہر الفائق و شرح و بہانیہ علامہ عبدالبر و در مختار و حدیقہ ندیہ و جواہر اخلاطی و فتاوی عالمگیری و ردالمحتار و غیرہا کتب معتمدہ میں تصریح فرمائی کہ یہی مذہب مختار و مختار للفتوی و مفتی بہ ہے۔ علماء فرماتے ہیں جب اس نے اپنے اعتقاد میں اسے کافر سمجھا اور وہ کافر نہیں بلکہ مسلمان ہے تو اس نے دین اسلام کو کفر ٹھہرایا اور جو ایسا کہے وہ کافر ہے۔

اقول: وباللہ التوفیق اس دلیل کی علی حسب مرامھم (ان کے مقاصد کے مطابق ت) یہ ہے کہ کافر نہیں مگر وہ جس کا دین کفر ہے اور کوئی آدمی دین سے خالی نہیں، نہ ایک شخص کے ایک وقت میں دو دین ہو سکیں۔

| فان الکفر والاسلام علی طرفی النقیض بالنسبۃ الی الانسان لا یجتمعان ابدا ولا یرتفعان قال تعالٰی "اِنَّا ہَدَیْنٰہُ السَّبِیْلَ اِمَّا شَاکِرًا وَّاِمَّا کَفُوْرًا"[1] وقال تعالٰی "مَا جَعَلَ اللّٰہُ لِرَجُلٍ مِّنْ قَلْبَیْنِ فِیْ جَوْفِہٖ"[2] ۔ |

کیونکہ کفر اور اسلام ایک انسان کی بنسبت نقیض کی دو طرفوں پر ہیں، نہ تو یہ ہمیشہ جمع ہو سکتے ہیں اور نہ ہی مرتفع۔ اللہ تعالٰی کا ارشاد گرامی ہے: یا وہ شاکر ہوگا یا کافر۔ دوسرے مقام پر فرمایا: اور ہم نے ایک آدمی کے کے سینے میں دو دل نہیں بنائے۔ (ت) |

اب جو یہ شخص مثلاً زید مومن کو کافر کہتا ہے اس کے یہ معنی کہ اس کا دین کفر ہے اور زید واقع میں بیشک ایک دین سے متصف ہے جس کے ساتھ دوسرا دین ہو نہیں سکتا تو لا جرم یہ خاص اسی دین کو کفر بتا رہا ہے جس سے زید اتصاف رکھتا ہے اور وہ دین نہیں مگر اسلام تو بالضرورۃ اس نے دین اسلام کو کفر ٹھہرایا اور جو دین اسلام کو کفر قرار دے قطعاً کافر۔ اب عبارات علماء سنئے، ہندیہ میں ہے:

| المختار للفتوی فی جنس هذه المسائل ان القائل بمثل هذه المقالات ان کان اراد الشتم ولا یعتقده کافرا لا یکفرو ان کان یعتقده کافراً فخاطبہ بهذا بناءً علی | اس قسم کے مسائل میں فتوی کے لئے مختار یہ ہے کہ ان اقوال کا قائل اگر مراد گالی لیتا ہے اور اسے اعتقاداً کافر نہیں گردانتا تو وہ کافر نہیں اور اگر اسے اعتقاداً کافر گردانتے ہوئے اسے کافر کہتا ہے تو پھر یہ کفر ہوگا کذا فی |

[1] القرآن ۳/۷۶ [2] القرآن ۴/۳۳

Fatawa Rizvia, Volume 6

Arabic Text	English Translation / Urdu Meaning
His belief that he is a disbeliever makes him a disbeliever. Thus it is in Al-Dhakhira, ended. Al-Shami added from Al-Nahr from Al-Dhakhira: because when he believes a Muslim to be a disbeliever, he has indeed believed the religion of Islam to be disbelief.	Al-Dhakhira ended. Shami, referencing Al-Nahr from Al-Dhakhira, added this: because he considers a Muslim a disbeliever, it is as if he has deemed the religion of Islam as disbelief. (T)

In Durr al-Mukhtar it is:

Arabic Text	English Translation / Urdu Meaning
Punish (ta'zir) the one who reviles with "O disbeliever". Does he become a disbeliever if he believes a Muslim is a disbeliever? Yes, and if not, then no. On this is the fatwa.	Ta'zir (punishment) will be enforced upon the one who abuses by calling "O disbeliever". Will that person be a disbeliever who considers a Muslim a disbeliever? Yes, he will be a disbeliever, and if he does not consider him so, then he is not a disbeliever. The fatwa is on this. (T)

Allama Ibrahim al-Akhlati said:

Arabic Text	English Translation / Urdu Meaning
The chosen opinion for the fatwa in this category of issues is that if the speaker intended it as a slur, he does not become a disbeliever. If he believes in the disbelief of the addressee, he becomes a disbeliever. Because when he believes a Muslim to be a disbeliever, he has indeed believed that the religion of Islam is disbelief, and whoever believes this is a disbeliever.	In these matters, the chosen and fatwa-standard opinion is that if the speaker meant it as an abuse, he will not become a disbeliever. And when he considers the addressee a disbeliever, then he will become a disbeliever because when he considered a Muslim as a disbeliever, it is as if he considered the religion of Islam as disbelief, and whoever holds such a belief is a disbeliever. (T)

Allama Abd al-Ala said in Sharh Mukhtasar al-Wiqayah:

Arabic Text	English Translation / Urdu Meaning
There has been disagreement regarding the disbelief of one who attributes a Muslim to disbelief. In Al-Fusul al-	There is disagreement about the disbelief of that person who attributed a Muslim towards disbelief. It is in Al-Fusul al-

Arabic Text	English Translation / Urdu Meaning
Imadiyya: when someone says to another "O disbeliever", the jurist Abu Bakr al-Amash used to say the speaker becomes a disbeliever, while others said he does not.	Imadiyya that when someone said to another "O disbeliever", the jurist Abu Bakr al-Amash considered such a person a disbeliever, but other scholars do not consider him a disbeliever.

1. Fatawa Hindiyya, Chapter 9 regarding rulings on apostates, topic: causes of disbelief etc., printed by Noorani Kutub Khana Peshawar, 2/278.
2. Radd al-Muhtar, Chapter on Ta'zir, printed by Mustafa al-Babi Egypt, 3/201.
3. Durr al-Mukhtar, Chapter on Ta'zir, printed by Matba Mujtabai Delhi, 1/327.
4. Jawahir al-Akhlati, Book of Siyar, section on Jihad (manuscript), p. 69.

फ़तावा रज़विया, जिल्द छठा

अरबी पाठ

उसकी यह मान्यता कि वह काफ़िर है, उसे काफ़िर बना देती है। अल-ज़ख़ीरा में इसी तरह है, समाप्त। अल-शामी ने अल-नहर के हवाले से अल-ज़ख़ीरा से यह जोड़ा है: क्योंकि जब वह एक मुसलमान को काफ़िर मानता है, तो वास्तव में उसने इस्लाम धर्म को कुफ़्र (अविश्वास) मान लिया है।

हिंदी अनुवाद

अल-ज़ख़ीरा समाप्त। शामी ने अल-नहर के हवाले से अल-ज़ख़ीरा से यह इज़ाफ़ा (वृद्धि) नक़ल किया है: क्योंकि वह एक मुसलमान को काफ़िर मान रहा है, मानो उसने इस्लाम धर्म को कुफ़्र मान लिया है। (त)

दुर्रे मुख्तार में है:

अरबी पाठ

'ओ काफ़िर' कहकर गाली देने वाले पर ताज़ीर (सजा) लागू की जाएगी। क्या वह व्यक्ति काफ़िर होगा जो एक मुसलमान को काफ़िर मानता है? हाँ, वह काफ़िर होगा और यदि वह ऐसा नहीं मानता तो काफ़िर नहीं है। इसी पर फ़तवा है।

हिंदी अनुवाद

'या काफ़िर' के साथ गाली देने वाले पर ताज़ीर नाफ़िज़ (लागू) की जाएगी। क्या वह व्यक्ति काफ़िर होगा जो मुसलमान को काफ़िर समझता है? हाँ वह काफ़िर होगा और अगर काफ़िर नहीं समझता तो काफ़िर नहीं, इसी पर फ़तवा है। (त)

अल्लामा इब्राहिम अख़लाती ने फ़रमाया:

अरबी पाठ

इन मसलों में मुख्तार (चुना हुआ) और मुफ़्ती-बिह (जिस पर फ़तवा दिया जाए) राय यह है कि यदि वक्ता का इरादा गाली देना था, तो वह काफ़िर नहीं होगा। और जब वह संबोधित व्यक्ति को काफ़िर समझेगा, तो वह काफ़िर हो जाएगा क्योंकि जब उसने एक मुसलमान को काफ़िर समझा, तो मानो उसने इस्लाम धर्म को कुफ़्र समझा, और जो ऐसी बात का अक़ीदा (मान्यता) रखे वह काफ़िर होता है।

हिंदी अनुवाद

इन मसलों में मुख्तार और मुफ़्ती-बिह यह है कि अगर क़ायल (कहने वाले) ने इससे गाली मुराद (इरादा) ली तो काफ़िर नहीं होगा और जब मुख़ातब (संबोधित) को काफ़िर जानेगा तो काफ़िर हो जाएगा क्योंकि जब उसने एक मुसलमान को काफ़िर जाना तो गोया उसने दीन इस्लाम को कुफ़्र जाना और जो ऐसी बात का एतकाद (मान्यता) रखे वह काफ़िर होता है। (त)

अल्लामा अब्द अल-आला ने शरह मुख्तसर अल-विक़ाया में फ़रमाया:

अरबी पाठ

उस व्यक्ति के कुफ़्र के बारे में मतभेद है जिसने किसी मुसलमान को कुफ़्र की ओर मन्सूब किया (जोड़ा)। फ़ुसूल अल-इमादिया में है कि जब किसी ने दूसरे से कहा 'ओ काफ़िर', तो फ़क़ीह अबू बक्र अल-अमश ऐसे व्यक्ति को काफ़िर मानते थे, लेकिन अन्य विद्वान उसे काफ़िर नहीं मानते।

हिंदी अनुवाद

उस शख़्स के कुफ़्र के बारे में इख़्तिलाफ़ (मतभेद) है जिसने किसी मुसलमान की कुफ़्र की तरफ़ निस्बत (सम्बन्ध) की, फ़ुसूल इमादिया में है जब किसी ने ग़ैर को 'या काफ़िर' कहा तो फ़क़ीह अबू बक्र अमश ऐसे शख़्स को काफ़िर जानते थे लेकिन दीगर (अन्य) उलमा काफ़िर नहीं जानते।

1. फ़तावा हिन्दिया, अध्याय 9 मुर्तद (धर्मत्यागी) के अहकाम में, विषय: कुफ़्र के कारण आदि, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 2/278।
2. रद अल-मुह्तार, ताज़ीर का अध्याय, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 3/201।
3. दुर्रे मुख्तार, ताज़ीर का अध्याय, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 1/327।
4. ज़वाहर अख़लाती, किताबुस सियर, जिहाद का अध्याय (हस्तलिपि), पृष्ठ 69।

عربی عبارت	اردو ترجمہ
اعتقاده انه کافر یکفر کذا فی الذخیرة انتهی زاد الشامی عن النهر عن الذخیرة لانه لما اعتقد المسلم کافرا فقد اعتقد دین الاسلام کفرا۔	الذخیرة انتہی، شامی نے نہر کے حوالے سے ذخیرہ سے یہ اضافہ نقل کیا ہے کیونکہ وہ ایک مسلمان کو کافر مان رہا ہے گویا اس نے دین اسلام کو کفر گردانا ہے۔ (ت)

در مختار میں ہے:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
عزر الشاتم بیا کافر وهل "یا کافر" کے ساتھ گالی دینے والے پر تعزیر نافذ کی جائے گی، کیا وہ یکفر ان اعتقد المسلم کافرا شخص کافر ہوگا جو مسلمان کو کافر گردانتا ہے؟ ہاں وہ کافر ہوگا اور نعم والالا به یفتی۔	اگر کافر نہیں گردانتا تو کافر نہیں، اسی پر فتوٰی ہے (ت)

علامہ ابراہیم اخلاطی نے فرمایا:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
المختار للفتوی فی جنس هذه المسائل ان القائل اذا اراد به الشتم لا یکفرواذا اعتقد کفر المخاطب یکفر لانه لما اعتقد المسلم کافرا فقد اعتقد ان دین الاسلام کفر و من اعتقد هذا فهو کافر۔	ان مسائل میں مختار اور مفتی بہ یہ ہے کہ اگر قائل نے اس سے گالی مراد لی تو کافر نہیں ہوگا اور جب مخاطب کو کافر جانے گا تو کافر ہو جائے گا کیونکہ جب اس نے ایک مسلمان کو کافر جانا تو گویا اس نے دین اسلام کو کفر

عربی عبارت	اردو ترجمہ
	جانا اور جو ایسی بات کا اعتقاد رکھے وہ کافر ہوتا ہے۔ (ت)

علامہ عبدالاعلیٰ نے شرح مختصر الوقایہ میں فرمایا:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
قد اختلف فی کفر من ینسب مسلما الی الکفر ففی الفصول العمادیة اذا قال لغیرہ یا کافر کان الفقیه ابوبکر الاعمش یقول یکفر القائل وقال غیرہ لا یکفر	اس شخص کے کفر کے بارے میں اختلاف ہے جس نے کسی مسلمان کی کفر کی طرف نسبت کی، فصول عمادیہ میں ہے جب کسی نے غیر کو "یا کافر" کہا تو فقیہ ابوبکر اعمش ایسے شخص کو کافر جانتے لیکن دیگر علماء کافر نہیں جانتے،

1. فتاوی ہندیہ الباب التاسع فی احکام المرتدین مطلب موجبات الکفر الخ مطبوعہ نورانی کتب خانہ پشاور ۲/ ۲۷۸
2. رد المحتار باب التعزیر مطبوعہ مصطفی البابی مصر ۳ / ۲۰۱
3. در مختار، باب التعزیر، مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ، ۱/ ۳۲۷
4. جواہر اخلاطی کتاب السیر، فصل فی الجہاد (قلمی نسخہ) ص ۶۹

Fatawa Rizvia - Volume 6

“The chosen view for the fatwa in this category of issues, etc.” has been mentioned exactly as before from al-Dhakhira, citing both al-Hindiyyah and al-Nahr simultaneously and equally. (T)

Allama Shams al-Din Muhammad stated in Jami' al-Rumuz: “The chosen view is that if he intended this address as an insult, he does not commit disbelief (kufr). But if he believed the person addressed to be a disbeliever, he commits disbelief because he considered Islam to be disbelief, as mentioned in al-Imadi. And what is mentioned in al-Mawaqif that he does not commit disbelief by consensus, what is meant by it is the consensus of the theologians (mutakallimin).” (T)

In Majma' al-Anhur Sharh Multaqa al-Abhur, it is stated: “If someone slandered a Muslim by saying ‘O disbeliever!’ and intended it as an insult without believing him to be a disbeliever, then he shall be subjected to discretionary punishment (ta’zir) but is not considered a disbeliever. However, if he believed the person addressed to be a disbeliever, then he becomes a disbeliever because he considered Islam to be disbelief.” (T)

Allama Abdul Ghani, quoting legal rulings in Sharh al-Tariqa al-Muhammadiyya: “The chosen view for the fatwa (then he mentioned exactly what was quoted from al-Birjindi and added): And whoever believes that the religion of Islam is disbelief, he becomes a disbeliever.” (T)

1. Sharh Niqayah Birjindi, Kitab al-Hudood, published by Nawal Kishore, Lucknow, 4/68.
2. Jami' al-Rumuz, Chapter on Slander, published by Maktaba Islamiya, Gumbad Qamus, Iran, 4/535.
3. Majma' al-Anhur Sharh Multaqa al-Abhur, Chapter on Ta'zir, published by Dar al-Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 1/610.
4. Hadiqa Nadiyya Sharh Tariqa Muhammadiyya, Al-Naw' al-Rabi' min al-Anwa' al-Sittin al-Kadhib, published by Maktaba Nuriya Rizvia, Faisalabad, 2/212.

फ़तावा रज़विया - छठा खंड

“इस प्रकार के मुद्दों में फ़तवे के लिए पसंदीदा मत, आदि” का उल्लेख पिछले उद्धरण के अनुसार अल-ज़खीरा से अल-हिंदियाह और अल-नहर दोनों के हवाले से समान रूप से किया गया है। (त)

अल्लामा शम्स अल-दीन मुहम्मद ने जामि' अल-रुमूज़ में कहा: “पसंदीदा मत यह है कि यदि उसने इस संबोधन को गाली माना है, तो यह कुफ़्र (अविश्वास) नहीं है। लेकिन यदि उसने संबोधित व्यक्ति को काफ़िर (अविश्वासी) माना है, तो वह कुफ़्र होगा क्योंकि उसने इस्लाम को कुफ़्र माना है, जैसा कि अल-इमादी में है। और अल-मवाकिफ़ में जो उल्लेख है कि वह सर्वसम्मति (इज्मा) से काफ़िर नहीं है, तो उसका अर्थ धर्मशास्त्रियों (मुतक़ल्लिमीन) की सर्वसम्मति है।” (त)

मजमा' अल-अनहुर शरह मुल्तक़ा अल-अब्हुर में उल्लेख है: “यदि किसी ने किसी मुसलमान पर ‘ऐ काफ़िर!’ कहकर तोहमत लगाई और उसका इरादा गाली देना था और उसने उसे वास्तव में काफ़िर नहीं माना, तो उसे ताज़ीर (दंडात्मक सज़ा) दी जाएगी लेकिन वह काफ़िर नहीं होगा। और यदि उसने संबोधित व्यक्ति को काफ़िर माना, तो वह काफ़िर हो जाएगा क्योंकि उसने इस्लाम को कुफ़्र माना।” (त)

अल्लामा अब्दुल ग़नी शरह तरीक़ा मुहमदिया में अहकाम से उद्धृत करते हुए: “फ़तवे के लिए पसंदीदा मत यह है (फिर वही उल्लेख किया जो बिरजिंदी से गुज़रा है और यह जोड़ा): और जिसका यह विश्वास हो कि इस्लाम धर्म कुफ़्र है, वह काफ़िर हो गया।” (त)

1. शरह निक़ाया बिरजिंदी, किताब अल-हुदूद, नवल किशोर प्रेस, लखनऊ, 4/68।
2. जामि' अल-रुमूज़, फ़सल मन क़ज़फ़, मकतबा इस्लामिया, गुम्बद क़ामूस, ईरान, 4/535।
3. मजमा' अल-अनहुर शरह मुल्तक़ा अल-अब्हुर, फ़सल फ़ित-ताज़ीर, दार अल-इहया अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, 1/610।
4. हदीक़ा नदिया शरह तरीक़ा मुहमदिया, अल-नव' अर-राबे, मकतबा नूरिया रज़विया, फैसलाबाद, 2/212।

पृष्ठ 714 / 736

والمختار للفتوی في جنس هذه المسائل الخ اور مختار مفتی بہ ایسے مسائل میں یہ ہے الخ گزشتہ عبارت کے مطابق ذخیرہ سے ہندیہ اور نہر دونوں کے حوالے سے ذکر کیا ہے۔(ت) ذکر مثل مامر عن الذخیرۃ بنقل الھندیۃ والنھر معا سواء بسواء۔

علامہ شمس الدین محمد نے جامع الرموز میں فرمایا: المختار انہ لواعتقد ھذا الخطاب شتما لم یکفر ولو اعتقد المخاطب کافرا کفر لانہ اعتقد الاسلام کفرا کما في العمادي وما فی المواقف انہ لم یکفر بالا جماع ارید بہ اجماع المتکلمین۔ مختار یہ ہے کہ اگر اس خطاب سے گالی کا اعتقاد رکھتا ہے تو کفر نہیں اور اگر مخاطب کو کافر جانتا ہے تو کفر ہوگا کیونکہ اس صورت میں اس نے اسلام کو کفر جانا ہے، جیسا کہ عمادی میں ہے۔ اور مواقف میں جو آیا ہے کہ وہ بالاجماع کافر نہیں، تو اس سے اجماع متکلمین مراد ہے۔ (ت)

مجمع الانہر شرح ملتقی الابحر میں ہے: قذف مسلما بیاکافر واراد الشتم ولا یعتقدہ کفرا فانہ یعزر ولا یکفر ولو اعتقد المخاطب کافرا کفر لانہ اعتقد الاسلام کفرا۔ اگر کسی نے کسی مسلمان کو "یا کافر" کہہ کر تہمت لگائی اور مراد گالی لی اور اسے کافر نہ جانا تو ایسی صورت میں اس پر تعزیر نافذ کی جائے گی مگر کافر نہ ہوگا، اور اگر مخاطب کو کافر جانا تو کافر ہوجائے گا کیونکہ اس نے اسلام کو کفر جانا۔ (ت)

علامہ عبدالغنی شرح طریقہ محمدیہ میں احکام سے ناقل: المختار للفتوی (فذکر عین مامر عن البرجندی و زاد) ومن اعتقد ان دین الاسلام کفر کفر۔ مختار للفتوی یہ ہے (پھر بعینہ وہی ذکر کیا ہے

جو بر جندی سے گزرا ہے اور یہ اضافہ کیا) اور جس کا یہ اعتقاد ہو کہ دین اسلام کفر ہے وہ کافر ہوگیا۔ (ت)

1. شرح نقایہ بر جندی کتاب الحدود مطبوعہ نولکشور لکھنؤ ۴/ ۶۸
2. جامع الرموز، فصل من قذف، مطبوعہ مکتبہ اسلامیہ گنبد قاموس ایران ۴/ ۵۳۵
3. مجمع الانہر شرح ملتقی الابحر فصل فی التعزیر مطبوعہ دار احیاء التراث العربی بیروت ۱/ ۶۱۰
4. حدیقہ ندیہ شرح طریقہ محمدیہ النوع الرابع من الانواع الستین الکذب مطبوعہ مکتبہ نوریہ رضویہ فیصل آباد ۲/ ۲۱۲

Fatawa Razawiyyah Volume 6 Even on this mufta-bi (authorized fatwa) school of thought, this destructive group faces great difficulty because they definitely call Muslims infidels (kafir) and polytheists (mushrik) based on their own beliefs, and they write this in their books and issue fatwas on it. Therefore, by consensus of both schools of thought, it becomes necessary for them to be infidels themselves, and praying behind them is just like praying behind a Jew, Christian, Magian, or Hindu. There is no power or might except with Allah, the Most High, the Supreme. Glory be to Allah! What has he done who found no way but to dig a pit for others and fell into it himself. By unjustly calling Muslims polytheists, their own faith is now in peril according to authentic hadiths and the schools of the noble Imams and great jurists. You saw that the candle did not grant safety to the butterfly for the unjust shedding of its blood even to see the dawn of the night. O deluded one! What plunged you into danger until you perished? Would that the ant had not flown! (You saw that the candle did not grant refuge to the butterfly's unjust blood such that it could pass the night until dawn. O deluded one! What thing put you in danger until you perished? I wish the ant had not flown!) But God forbid, we will still not let go of the hem of caution, and no matter what these thousands say about us, we will never call them infidels. Yes, yes, we say so and will say in the presence of Allah and His Messenger that these people are sinners, mistaken, oppressors, innovators, astray, misleaders, deviant, and falsifiers, but alas, they are not infidels, not polytheists, not so far off the path; they are enemies of their own souls, not enemies of Allah. Our Prophet (may Allah's peace and blessings be upon him) says:

Refrain from [declaring] the people of 'La ilaha illa Allah' [as disbelievers]; do not declare them disbelievers due to a sin. (Meaning, do not call those who say 'La ilaha illa Allah' infidels for any sin.) Whoever declares a person of 'La ilaha illa Allah' to be a disbeliever, he is closer to disbelief himself. (Tabarani has narrated this in Al-Mu'jam al-Kabir from Hazrat Abdullah bin Umar (may Allah be pleased with them both) with a good chain of narration.)

And it is narrated that he (may Allah's peace and blessings be upon him) said:

Three things are from the root of faith: to refrain from [declaring] the one who says 'La ilaha illa Allah' [as a disbeliever], and not to declare him a disbeliever due to a sin, nor to expel him from Islam due to an action. (Meaning, it is from the root of faith to

hold one's tongue from [criticizing] those who say 'La ilaha illa Allah', not to call them infidels for any sin, and not to declare them outside the fold of Islam for any action.)

1. Al-Mu'jam al-Kabir, narrated from Abdullah ibn Umar (may Allah be pleased with them), published by Maktabah Faysaliyyah, Beirut, 12/272.
2. Sunan Abi Dawud, Book of Jihad, Chapter on Fighting alongside unjust rulers, published by Aftab-e-Alam Press, Lahore, 1/343. Page 715 of 736

फ़तावा रज़विया छठा खंड इस मुफ्ता-बि (प्रामाणिक फतवे वाले) मज़हब पर भी इस तबाह गुट को भारी मुश्किल है क्योंकि ये अपने अक़ीदे (विश्वास) के अनुसार निश्चित रूप से मुसलमानों को काफ़िर और मुशरिक कहते हैं और अपनी किताबों में लिखते हैं और इस पर फ़तवे देते हैं। तो सर्वसम्मति से दोनों मज़हबों के अनुसार उनका खुद काफ़िर होना लाज़िम आता है और उनके पीछे नमाज़ वैसी ही है जैसे किसी यहूदी, ईसाई, पारसी या हिंदू के पीछे। ला हौला वला क़ुव्वता इल्ला बिल्लाहिल अलीयिल अज़ीम। सुब्हान अल्लाह! जिसने दूसरों के लिए गड्ढा खोदा वह खुद उसी में गिर गया। मुसलमानों को नाहक़ (बिना कारण) मुशरिक कहने से, सही हदीसों और महान इमामों और फ़ुक़हा (धर्मशास्त्री) के मज़हबों के अनुसार खुद उनके अपने ईमान के लाले पड़ गए हैं। तुमने देखा कि परवाने (पतंगे) के नाहक़ ख़ून ने शमा (मोमबत्ती) को इतनी मोहलत नहीं दी कि वह रात की सुबह देख सके। ऐ मगरूर (अभिमानी)! तुझे किस चीज़ ने ख़तरे में डाल दिया यहाँ तक कि तू हलाक (बर्बाद) हो गया, काश चींटी न उड़ती! (तूने देखा कि परवाना के ख़ून-ए-नाहक़ ने शमा को इस तरह अमान नहीं दी कि वह रात को सहर (सुबह) कर दे, ऐ मगरूर! किस चीज़ ने तुझे ख़तरे में डाल दिया यहाँ तक कि तू हलाक हुआ काश चींटी न उड़ती!) लेकिन हश लिल्लाह (ईश्वर न करे), हम फिर भी एहतियात (सावधानी) का दामन हाथ से न छोड़ेंगे और ये हज़ारों हमें जो चाहें कहें, हम हरगिज़ उन्हें काफ़िर न कहेंगे। हाँ, हाँ, हम यूँ कहते हैं और अल्लाह और उसके रसूल के हुज़ूर कहेंगे कि ये लोग गुनहगार हैं, ग़लत हैं, ज़ालिम हैं, बिदअती (नए रस्म शुरू करने वाले) हैं, गुमराह (भटके हुए) हैं, गुमराह करने वाले हैं, बहके हुए हैं, बातिल (झूठे) हैं, मगर अफ़सोस, काफ़िर नहीं हैं, मुशरिक नहीं हैं, इतने राह से भटके हुए नहीं हैं; वे अपनी जानों के दुश्मन हैं, अल्लाह के दुश्मन नहीं हैं। हमारे नबी सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं:

ला इलाहा इल्लल्लाह कहने वालों से (ज़बान) रोको, उन्हें किसी गुनाह के कारण काफ़िर न कहो। (यानी ला इलाहा इल्लल्लाह कहने वालों को किसी गुनाह पर काफ़िर न कहो।) जो ला इलाहा इल्लल्लाह कहने वाले को काफ़िर कहे, वह खुद कुफ्र के अधिक करीब है। (इसे तबरानी ने अल-मुअजम अल-कबीर में हज़रत अब्दुल्ला बिन उमर रज़ियल्लाहु तआला अन्हुमा से सनद-ए-हसन के साथ रिवायत किया है।)

और रिवायत है कि आप सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

ईमान की जड़ से तीन बातें हैं: ला इलाहा इल्लल्लाह कहने वाले से हाथ (ज़बान) रोकना, उसे किसी गुनाह के कारण काफ़िर न कहना और उसे किसी अमल (कर्म) के कारण इस्लाम के दायरे से बाहर

न बताना। (यानी असल ईमान से है यह बात कि ला इलाहा इल्लल्लाह कहने वाले से ज़बान रोकी जाए, उसे किसी गुनाह के कारण काफ़िर न कहें और किसी अमल पर इस्लाम के दायरे से बाहर न बताएँ।)

1. अल-मुअजम अल-कबीर, अब्दुल्ला इब्न उमर रज़ियल्लाहु तआला अन्हुमा से रिवायत, मक्तबा फ़ैसुलिया बेरूत 12/272 द्वारा प्रकाशित।
2. सुनन अबी दाऊद, किताबुल जिहाद, बाबुल ग़ज़्व मा अइम्मतुल जौर, आफ़ताब आलम प्रेस लाहौर 1/343 द्वारा प्रकाशित। पृष्ठ 715/736

فتاوی رضویہ جلد ششم اس مذہب مفتی بہ پر بھی اس طائفہ تالفہ کو سخت دقت کہ یہ قطعاً اپنے اعتقاد سے مسلمانوں کو کافر و مشرک کہتے اور اپنی تصانیف میں لکھتے اور اس پر فتوے دیتے ہیں تو بالاتفاق ہر دو مذہب ان کا کافر ہونا لازم اور ان کے پیچھے نماز ایسی جیسے کسی یہودی اور نصرانی یا مجوسی یا ہندو کے پیچھے ولا حول ولا قوۃ الا باللہ العلی العظیم سبحٰن اللہ کہ کہ کرد کہ نیافت چاہ کن را چاہ در راہ، مسلمانوں کو ناحق مشرک کہا تھا احادیث صحیحہ و مذاہب ائمہ کرام و فقہاء عظام پر خود انہیں کے ایمان کے لالے پڑ گئے دیدی کہ خون ناحق پروانہ شمع را چندان اماں نداد کہ شب را سحر کند ماذا اخاضك یامغرور فی الخطر حتی ھلکت فلیت النمل لم تطر (تونے دیکھا کہ پروانہ کے خونِ ناحق نے شمع کو اس طرح اماں نہیں دی کہ وہ رات کو سحر کردے، اے مغرور! کس چیز نے تجھے خطرے میں ڈال دیا حتی کہ تو ہلاک ہوا کاش چیونٹی نہ اڑتی!) مگر حاش للہ ہم پھر بھی دامنِ احتیاط ہاتھ سے نہ دیں گے اور یہ ہزار ہمیں جو چاہیں کہیں ہم زنہار ان کو کافر نہ کہیں گے ہاں ہاں یوں کہتے ہیں اور خدا و رسول کے حضور کہیں یہ لوگ آثم ہیں خاطی ہیں ظالم ہیں بدعتی ہیں ضال ہیں مضل ہیں غوی ہیں مبطل ہیں مگر ہیہات کافر نہیں مشرک نہیں اتنے بدراہ نہیں، اپنی جانوں کے دشمن ہیں عدو اللہ نہیں، ہمارے نبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

کفوا عن اھل لا الہ الا اللہ لا تکفر وہم بذنب۔ (یعنی لا الہ الا اللہ کہنے والوں کو کسی گناہ پر کافر نہ کہو جو) فمن اکفر اھل لا الہ الا اللہ فہو الی الکفر اقرب۔ (لا الہ الا اللہ کہنے والے کو کافر کہے وہ خود کفر سے نزدیک تر ہے۔ اسے طبرانی نے المعجم الکبیر میں حضرت عبداللہ بن عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے سند حسن کے ساتھ روایت کیا ہے۔)

اور مروی کہ فرماتے ہیں صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم:

ثلث من اصل الایمان الکف عمن قال لا الہ الا اللہ ولا تکفرہ بذنب ولا تخرجۃ من الاسلام بعمل۔ (یعنی اصل ایمان سے ہے یہ بات کہ لا الہ الا اللہ کہنے والے سے زبان روکی جائے اسے کسی گناہ کے سبب کافر نہ کہیں اور کسی عمل پر دائرہ اسلام سے خارج نہ بتائیں)

1 المعجم الکبیر مروی از عبداللہ ابن عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہما مطبوعہ مکتبہ فیصلیہ بیروت ۱۲ / ۲۷۲ 2 سنن ابی داؤد کتاب الجہاد باب الغزو مع ائمۃ الجور مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور ۱ / ۳۴۳ صفحہ 715 از 736

Fatawa-e-Razawiyya, Volume 6

Abu Dawood narrated from Anas (may Allah be pleased with him) - Al-Hadith. Abu Dawood narrated this from Hazrat Anas (may Allah be pleased with him).

And it is reported that he (peace and blessings of Allah be upon him) says: "Islam prevails and is not prevailed over" [1]. Narrated by Al-Daraqutni, Al-Bayhaqi, and Al-Diya from 'Aa'idh bin 'Amr al-Muzani (may Allah be pleased with him). Islam is dominant, not submissive. Al-Daraqutni, Al-Bayhaqi, and Diya al-Maqdisi narrated it from Hazrat 'Aa'idh bin 'Amr al-Muzani (may Allah be pleased with him).

And it is mentioned that he (peace and blessings of Allah be upon him) says: "Do not declare any of the people of the Qibla to be disbelievers" [2]. Al-'Uqayli narrated it from Abu al-Darda' (may Allah be pleased with him). Do not call anyone from the people of the Qibla a disbeliever; Al-'Uqayli narrated this from Hazrat Abu al-Darda' (may Allah be pleased with him).

These hadiths of our Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) and the saying of our Imam-e-Azam (may Allah be pleased with him): "And we do not declare anyone from the people of the Qibla to be a disbeliever" [3]. We do not call anyone of the people of the Qibla a disbeliever. (Trans.)

And the statement of our research scholars: "Nothing takes a person out of Islam except the rejection of that which entered him into it" (A person cannot be excluded from Islam except by denying the very thing that brought him into Islam. Trans.). Remember, as long as even all possible weak avenues of interpretation and justification are not closed, one must refrain from declaring a claimant of Islam as a disbeliever. Furthermore, in these four hadiths, just like the previous four hadiths, there is a complete lament for the reform and piety of the group, and it is apparent from them how much these claimants of "acting upon the Hadith" nurture their personal whims and cast behind their backs various hadiths in front of it.

And I say: It appears to the weak servant, may Allah Almighty forgive him, that here in the words of the scholars there is absolute expression in a place of restriction, as is the habit of many authors in more than one place. Indeed, the occasion for declaring someone a disbeliever for declaring a Muslim as a disbeliever is when... I say, [this] weak servant, may Allah Almighty grant him forgiveness, that it has become clear that here in the place of restriction, there is absolute expression in the phrases of the scholars, as has been seen as the common method of most authors in many places.

Regarding declaring someone a disbeliever for calling a Muslim a disbeliever, at that time...

1. Sunan al-Daraqutni, Chapter on Mahr, printed by Nashr-us-Sunnah Multan, 2/252; Sahih al-Bukhari, Book of Funerals, Chapter on 'When a Child Embraces Islam etc.', printed by Qadeemi Kutub Khana Karachi, 1/180.
2. Kanz al-Ummal with reference to (Tabarani al-Awsat from Aisha), Hadith 1/108, printed by Maktabat al-Turath al-Islami, 1/215.
3. Sharh Fiqh al-Akbar, On the impermissibility of declaring people of the Qibla as disbelievers, printed by Mustafa al-Babi Egypt, p. 155.

फतावा-ए-रजविया, जिल्द छठा

अबू दाऊद अन अनस रज़ियल्लाहु तआला अन्हु - अल-हदीस। इसे अबू दाऊद ने हज़रत अनस रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत किया है।

और वारिद कि फरमाते हैं सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम: अल-इस्लाम य'लो वला यु'ला १। अख़रजहुद दार क़ुत्नी वल बैहक़ी वज़ ज़िया अन आइज़ बिन अम्र वल मुज़नी रज़ियल्लाहु तआला अन्हु - इस्लाम ग़ालिब है मग़लूब नहीं। इसे दार क़ुत्नी, बैहक़ी और ज़िया मक़दिसी ने हज़रत आइज़ बिन अम्र वल मुज़नी रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत किया है।

और मज़कूर कि फरमाते हैं सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम: ला तुकफ़्फ़िरू अहदम मिन अहलिल क़िब्ला २। अख़रजहुल उक़ैली अन अबिद दरदा रज़ियल्लाहु तआला अन्हु - अहल-ए-क़िब्ला से किसी को काफ़िर न कहो, इसे उक़ैली ने हज़रत अबु दरदा रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत किया है।

हमें अपने नबी सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम की ये हदीसें और अपने इमाम-ए-आज़म रज़ियल्लाहु तआला का इरशाद: वला नुकफ़्फ़िरु अहदम मिन अहलिल क़िब्ला ३ - अहल-ए-क़िब्ला से किसी को हम काफ़िर नहीं कहते। (त)

और अपने उलमा-ए-मुहक़्क़िक़ीन का फरमाना 'ला युख़रिजुल इंसानु मिनल इस्लामि इल्लल इजहूदु मा अदख़लहू फ़ीही' (इंसान को इस्लाम से कोई चीज़ ख़ारिज नहीं कर सकती मगर उस चीज़ का इनकार जिसने इस्लाम में दाख़िल किया था। त) याद रहे और जब तक तावील व तौजीह की सब क़ाबिल-ए-एहतिमाल ज़ईफ़ राहें भी बंद न हो जाएं मुद्दई-ए-इस्लाम की तकफ़ीर से गुरेज़ चाहिये, फिर इन चारों हदीसों में भी मिस्ल अहादीस-ए-अरबा साबिक़ा सलाह व दयानत ताइफ़ा के लिये पूरा मर्सिया और उन्हीं से ज़ाहिर कि ये मुद्दइयान-ए-अमल बिल-हदीस कहाँ तक हवा-ए-नफ़्स को पालते और उसके आगे कैसी-कैसी अहादीस को पस-पुश्त डालते हैं हाज़ा।

वक़ूलु: यज़हरू लिल अब्दिल ज़ईफ़ ग़फ़रल्लाहु तआला लहू अन्ना हाहुना फ़ी कलिमातिल उलमा इत्तलाक़न फ़ी मौज़िइत तक़यीद कमा हुवा दाबू कसीरिम मिनल मुसन्नीफ़ीन फ़ी ग़ैरि मा मक़ामिन व इन्नमा महल्लुल इकफ़ार बिकफ़ारिल मुस्लिम इज़ा काना ज़ालिक - मैं कहता हूँ अब्द-ए-ज़ईफ़, अल्लाह तआला उसकी बख़्शिश फरमाए, पर ये बात वाज़ेह हुई है कि यहाँ मक़ाम-ए-तक़यीद में

इबारात-ए-उलमा में इत्तलाक़ है जैसा कि बहुत से मक़ाम पर अक्सर मुसन्निफ़ीन का यही तरीक़ा देखा गया है किसी को किसी मुसलमान के काफ़िर क़रार देने पर उस वक़्त...

1. सुनन अद-दारक़ुत्नी बाब अल-महर मतबुआ नश्रुस सुन्ना मुल्तान 2/252, सहीह अल-बुखारी किताब अल-जनाइज़, बाब इज़ा अस्लमस सबीय अल-ख़ मतबुआ क़दीमी कुतुब ख़ाना कराची 1/180
2. कन्ज़ुल उम्माल बहवाला (तबरानी औसत अन आइशा) हदीस 1/108 मतबुआ मक्तबतुल तुरास अल-इस्लामी 1/215
3. शरह फ़िक़्ह अकबर अदम-ए-जवाज़ तकफ़ीर अहल-ए-क़िब्ला मतबुआ मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र स. 155

पेज 716 का 736

فتاوی رضویہ جلد ششم

ابوداؤد عن انس رضی اللہ تعالیٰ عنہ - الحدیث۔ اسے ابوداؤد نے حضرت انس رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا ہے۔

اور وارد کہ فرماتے ہیں صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم: الاسلام یعلو ولا یعلیٰ ۱ ۔ اخرجہ الدار قطنی و البیھقی والضیاء عن عائذ بن عمر و المزنی رضی اللہ تعالیٰ عنہ - اسلام غالب ہے مغلوب نہیں۔ اسے دار قطنی، بیہقی اور ضیاء مقدسی نے حضرت عائذ بن عمر والمزنی رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا ہے۔

اور مذکور کہ فرماتے ہیں صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم: لا تکفروا احدا من اھل القبلۃ ۲ ۔ اخرجہ العقیلی عن ابی الدرداء رضی اللہ تعالیٰ عنہ - اہل قبلہ سے کسی کو کافر نہ کہو، اسے عقیلی نے حضرت ابودرداء رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا ہے۔

ہمیں اپنے نبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی یہ حدیثیں اور اپنے امام اعظم رضی اللہ تعالیٰ کا ارشاد: ولا نکفر احدا من اھل القبلۃ ۳ - اہل قبلہ سے کسی کو ہم کافر نہیں کہتے۔ (ت)

اور اپنے علمائے محققین کا فرمانا لا یخرج الانسان من الاسلام الاجحود ما ادخلہ فیہ (انسان کو اسلام سے کوئی چیز خارج نہیں کر سکتی مگر اس شئی کا انکار جس نے اسلام میں داخل کیا تھا۔ ت) یاد رہے اور جب تک تاویل و توجیہ کی سب قابل احتمال ضعیف راہیں بھی بند نہ ہو جائیں مدعی اسلام کی تکفیر سے گریز چاہئے، پھر ان چاروں حدیثوں میں بھی مثل احادیث اربعہ سابقہ صلاح و دیانت طائفہ کے لئے پورا مرثیہ اور انہیں سے ظاہر کہ یہ مدعیان عمل بالحدیث کہاں تک ہوائے نفس کو پالتے اور اس کے آگے کیسی کیسی احادیث کو پس پشت ڈالتے ہیں ہٰذا

واقول: يظهر للعبد اللضعيف غفر الله تعالى له ان ههنا فى كلمات العلماء اطلاقاً في موضع التقييد كماهو داب كثير من المصنفين في غير ما مقام وانما محل الاكفار باكفار المسلم اذ كان ذلك میں کہتا ہوں عبد ضعیف، اللہ تعالیٰ اس کی بخشش فرمائے، پر یہ بات واضح ہوئی ہے کہ یہاں مقام تقیید میں عبارات علماء میں اطلاق ہے جیسا کہ بہت سے مقام پر اکثر مصنفین کا یہی طریقہ دیکھا گیا ہے کسی کو کسی مسلمان کے کافر قرار دینے پر اس وقت

۱ سنن الدار قطنی باب المهر مطبوعہ نشر السنة ملتان ۲/ ۲۵۲، صحیح البخاری کتاب الجنائز، باب اذا اسلم الصبی الخ مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۱۸۰ ۲ کنز العمال بحوالہ (طس عن عائشه) حدیث ۱/ ۱۰۸ مطبوعہ مکتبة التراث الاسلامی ۱/ ۲۱۵ ۳ شرح فقہ اکبر عدم جواز تکفیر اہل قبلہ مطبوعہ مصطفی البابی مصر ص ۱۵۵

Fatawa Rizwia, Volume 6

[Left Column (Arabic Text)] ...not out of doubt or interpretation, otherwise no [he is not a disbeliever], for he is a Muslim based on his outward appearance. We have not been commanded to split hearts open or to peer into the secret places of the unseen. We have not found in him any denial of the essentials of religion. So how can one rush to attack him in the same manner that fool attacked? This is the research according to the noble jurists as well. This is acknowledged by everyone who has encompassed their words and observed their objectives, may Allah Almighty have mercy on them all. Do you not see that the Kharijites (may Allah Almighty forsake them) had declared the Commander of the Faithful and Master of Muslims, Ali (may Allah Almighty be pleased with him), a disbeliever? Yet, according to us, they are not declared disbelievers, as stated in Al-Durr al-Mukhtar, Al-Bahr al-Raiq, Radd al-Muhtar, and other reliable books. As for the previously established proof for takfir (declaring someone a disbeliever), you know that the logical consequence of a school of thought is not necessarily the school of thought itself. Regarding the Hadiths, they are interpreted by the researchers and are not taken literally, as mentioned by the noble commentators. I say: One of the strongest proofs for it is the saying of the Prophet (peace and blessings of Allah Almighty be upon him) in the previously mentioned Hadith: "He is closer to disbelief." He did not call him a disbeliever, but rather stated he is close to disbelief because such audacity before Allah Almighty can sometimes signify an intent towards disbelief. May the Lord of the worlds grant us His refuge. There is no power or strength except with Allah, the Most High, the Almighty.

[Right Column (Urdu Translation)] ...can be declared a disbeliever only when there is no interpretation or doubt in it. Otherwise, if there is even one doubt possible there, he will not be a disbeliever because since he is outwardly a Muslim, we are not bound to split hearts open to see what's inside or to become aware of hidden matters of the unseen. Nor have we become aware of any such action of his that falls under the denial of the essentials of religion. And how can we attack him in such a way as that fool attacked someone else? This is the research of the noble jurists. Moreover, every person will gain the conviction of this who has encompassed the speech of the noble jurists (may Allah have mercy on them all) and become aware of their intent. Do you not know that the Kharijites (Allah disgrace them) declared the Commander of the Faithful, the Master of Muslims, Hadrat Ali (may Allah Almighty be pleased with him), a disbeliever? Yet they are not disbelievers in our view, as clarified in Durr al-Mukhtar,

Bahr al-Raiq, Radd al-Muhtar, and other reliable books. And the discourse on the proof for takfir that has passed, you know that the logical consequence of a school of thought is not the school of thought itself. As for the matter of the hadiths, they are interpreted by the researchers and not taken according to their literal appearance, as mentioned by the noble commentators. I say: (I say) the strongest proof for it is the previous noble saying of the Holy Prophet (peace and blessings of Allah Almighty be upon him) that he is closer to disbelief. You did not call him a disbeliever; rather, the reason for stating he is close to disbelief is that such an action is audacity and bravery before Allah Almighty because such words sometimes mean disbelief. May the Lord of the worlds grant His refuge (T).

फ़तावा रिज़विया, खंड 6

[बायाँ स्तंभ (अरबी पाठ)] ...संदेह या व्याख्या के कारण नहीं; अन्यथा, वह नहीं है, क्योंकि वह अपने बाहरी स्वरूप के आधार पर मुसलमान है। हमें दिलों को चीरकर देखने या परोक्ष (ग़ैब) के छिपे स्थानों को देखने का आदेश नहीं दिया गया है। हमने उसमें धर्म की अनिवार्यताओं (ज़रूरियात-ए-दीन) का कोई खंडन नहीं पाया है। तो कोई उस पर उसी तरह हमला करने के लिए कैसे दौड़ सकता है जैसे उस मूर्ख ने हमला किया था? महान न्यायविदों (फ़ुक़हा) के अनुसार भी यही शोध है। इसे हर वह व्यक्ति स्वीकार करता है जिसने उनके शब्दों को समझा है और उनके इरादों को देखा है, अल्लाह सर्वशक्तिमान उन सभी पर दया करे। क्या आप नहीं देखते कि खारीजियों (अल्लाह उन्हें त्याग दे) ने विश्वासियों के कमांडर और मुसलमानों के स्वामी, अली (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) को काफ़िर घोषित कर दिया था? फिर भी, हमारे अनुसार वे काफ़िर घोषित नहीं हैं, जैसा कि दुर्र-ए-मुख़्तार, बहर-उर-रैक़, रद्द-उल-मुह्तार और अन्य विश्वसनीय पुस्तकों में स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया है। जहाँ तक तक़्फ़िर (काफ़िर घोषित करने) के लिए प्रमाण की पिछली स्थापना का प्रश्न है, आप जानते हैं कि किसी विचारधारा का तार्किक परिणाम स्वयं वह विचारधारा नहीं होता। हदीसों के संबंध में, शोधकर्ताओं के अनुसार उनकी व्याख्या की जाती है और उन्हें शाब्दिक रूप से नहीं लिया जाता, जैसा कि महान टिप्पणीकारों ने उल्लेख किया है। मैं कहता हूँ: इसके लिए सबसे मज़बूत प्रमाणों में से एक नबी करीम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का पिछली हदीस में दिया गया कथन है: "वह कुफ़्र (अविश्वास) के अधिक निकट है।" आपने उन्हें काफ़िर नहीं कहा, बल्कि कुफ़्र के करीब बताया क्योंकि अल्लाह सर्वशक्तिमान के सामने ऐसा दुस्साहस कभी-कभी कुफ़्र की मंशा का संकेत हो सकता है। दुनिया का पालनहार हमें अपनी शरण दे। अल्लाह के अलावा कोई शक्ति या सामर्थ्य नहीं है, जो सबसे ऊँचा और महान है।

[दायाँ स्तंभ (उर्दू अनुवाद)] ...किसी को काफ़िर केवल तभी घोषित किया जा सकता है जब उसमें कोई व्याख्या या संदेह न हो। अन्यथा, यदि वहाँ एक भी संदेह संभव हो, तो वह काफ़िर नहीं होगा क्योंकि चूँकि वह बाहरी रूप से मुसलमान है, इसलिए हम दिलों को चीरकर अंदर देखने या परोक्ष के गुप्त मामलों से अवगत होने के लिए बाध्य नहीं हैं। न ही हम उसके किसी ऐसे कार्य से अवगत हुए हैं जो धर्म की अनिवार्यताओं के खंडन के अंतर्गत आता हो। और हम उस पर उस तरह कैसे हमला कर सकते हैं जैसे उस मूर्ख ने किसी और पर हमला किया था? महान न्यायविदों का यही शोध है। इसके अलावा, उस हर व्यक्ति को इस बात का विश्वास हो जाएगा जिसने न्यायविदों (अल्लाह उन पर दया

करे) के शब्दों का अध्ययन किया है और उनके उद्देश्य से अवगत हुआ है। क्या आप नहीं जानते कि खारीजियों (अल्लाह उन्हें अपमानित करे) ने विश्वासियों के नेता और मुसलमानों के स्वामी, हज़रत अली (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) को काफ़िर घोषित किया था? फिर भी वे हमारी दृष्टि में काफ़िर नहीं हैं, जैसा कि दुर्र-ए-मुख़्तार, बहर-उर-रैक़, रद्द-उल-मुह्तार और अन्य विश्वसनीय पुस्तकों में स्पष्ट किया गया है। और तक़्फ़िर के प्रमाण पर जो चर्चा बीत चुकी है, आप जानते हैं कि किसी विचारधारा का तार्किक परिणाम स्वयं वह विचारधारा नहीं होता। हदीसों के मामले में, शोधकर्ताओं द्वारा उनकी व्याख्या की जाती है और उन्हें उनके शाब्दिक अर्थ के अनुसार नहीं लिया जाता, जैसा कि महान टिप्पणीकारों ने उल्लेख किया है। मैं कहता हूँ: (मैं कहता हूँ) इसके लिए सबसे मज़बूत प्रमाण पवित्र नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का पिछला महान कथन है कि वह कुफ़्र के अधिक निकट है। आपने उन्हें काफ़िर नहीं कहा; बल्कि उसे कुफ़्र के करीब बताने का कारण यह है कि ऐसा कार्य अल्लाह सर्वशक्तिमान के सामने दुस्साहस और निर्भीकता है क्योंकि ऐसे शब्दों का अर्थ कभी-कभी कुफ़्र होता है। दुनिया का पालनहार अपनी शरण प्रदान करे (त)।

पृष्ठ 717/736

فتاویٰ رضویہ جلد ششم

[بایاں کالم (عربی متن)] لا عن شبهة او تأويل والا فلا فانه مسلم بظاهره ولم نؤمر بشق القلوب والتطلع الى اماكن الغيوب ولم نعثر منه على انكار شيئ من ضروريات الدين فكيف يهجم على نظير ما هجم عليه ذلك السفيه هذا هو التحقيق عند الفقهاء الكرام ايضاً يذعن ذلك من احاط بكلامهم واطلع على مرامهم رحمة الله تعالىٰ عليهم اجمعين الاترى ان الخوارج خذلهم الله تعالىٰ قد اكفروا امير المؤمنين ومولى المسلمين علياً رضى الله تعالىٰ عنه ثم هم عندنا لا يكفرون كما نص عليه فى الدر المختار والبحر الرائق ورد المحتار وغيرها من معتبرات الاسفار و اما ما مر من تقرير الدليل على التكفير فانت تعلم ان لازم المذهب ليس بمذهب واما الاحاديث فمؤولة عند المحققين كما ذكره الشراح الكرام اقول: ومن ادل دليل عليه قوله صلى الله تعالىٰ عليه وسلم فى الحديث المار فهو الى الكفر اقرب فلم يسمه كافراً وانما قربه الى الكفر لان الاجتراء على الله تعالى بمثل ذلك قد يكون يريد الكفر والعياذ بالله رب العلمين ولا حول ولا قوة الا بالله العلى العظيم۔

[دایاں کالم (اردو)] کا فر قرار دیا جاسکتا ہے جب اس میں کوئی تاویل و شبہ نہ ہو ورنہ اگر ایک وہاں شبہ ہو سکتا ہو تو کافر نہیں ہوگا کیونکہ جب وہ بظاہر مسلمان ہے تو ہم دل پھاڑ کر دیکھنے اور امور غیبیہ پر مطلع ہونے کے پابند نہیں اور نہ ہی ہم اس کے کسی ایسے عمل پر مطلع ہوئے ہیں جو ضروریاتِ دین کے انکار میں سے ہو اور ہم اس طرح اس پر حملہ آور کیسے ہو سکتے ہیں جس طرح وہ بیوقوف کسی دوسرے پر ہوا ہے، فقہاء کرام کی یہی تحقیق ہے نیز ہر اس شخص کو بھی اس بات کا اذعان حاصل ہوگا جس نے فقہاء رحمۃ اللہ علیہم اجمعین کے کلام کا احاطہ کیا اور ان کے مدعا سے آگاہ ہوا ہو ، کیا آپ نہیں جانتے کہ خوارج (اللہ انہیں رسوا کرے) نے امیر المؤمنین مولائے مسلمین حضرت علی رضی اللہ تعالیٰ عنہ کو کافر قرار دیا پھر وہ ہمارے نزدیک

کافر نہیں، جیسا کہ اس پر در مختار، بحر الرائق، رد المحتار اور دیگر معتبر کتب میں تصریح ہے، اور جو تکفیر پر تقریر دلیل گزری ہے آپ جانتے ہیں لازمِ مذہب ، مذہب نہیں ہوتا ، رہا معاملہ احادیث کا تو وہ محققین کے ہاں مؤول ہیں اپنے ظاہر پر نہیں جیسا کہ شارحینِ کرام نے ذکر کیا ہے اقول: (میں کہتا ہوں) سب سے قوی دلیل نبی کریم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کا گزشتہ ارشاد گرامی ہے کہ وہ کفر کے زیادہ قریب ہے، آپ نے اسے کافر نہیں فرمایا بلکہ کفر کے قریب فرمانے کی وجہ یہ ہے کہ ایسا عمل اللہ تعالٰی کے سامنے جرات و دلیری ہے کیونکہ ان جیسے الفاظ سے بعض اوقات کفر مراد ہوتا ہے رب العالمین اپنی پناہ عطا فرمائے (ت)

However, there is no dispute on the fact that these non-conformists and other followers of Najd, by unjustly declaring Muslims as infidels and polytheists, have themselves become infidels, just like the thousands of great leaders and imams. Isn't this enough of a calamity for them? May Allah protect us! Allama Ibn Hajar Makki states in "I'laam bi-Qawati' al-Islam":

| Arabic: Indeed, he becomes an apostate according to a group's opinion, and this is sufficient loss and deficiency. (1) | Urdu: According to a group's opinion, he has become an apostate, and this is sufficient loss and deficiency. (T) |

So, by Sharia law, repentance is obligatory for them and renewal of faith is necessary, after which they should re-contract their marriages with their wives.

| Arabic: In Al-Durr al-Mukhtar, from the commentary on Al-Wahbaniya by Allama Hasan al-Shurunbulali: what is unanimously considered disbelief renders deeds and marriage void; thus, his children are children of adultery. Regarding what there is disagreement on, he is commanded to seek forgiveness, repent, and renew the marriage. (2) | Urdu: In Durr-ul-Mukhtar, citing Allama Shurunbulali's commentary on Al-Wahbaniya, it is stated that whatever unanimously leads to infidelity renders every deed void, and similarly nullifies the marriage, and his children will be illegitimate; and regarding the one whose being an infidel is disputed, he should be commanded to seek forgiveness, repent, and renew the marriage. (T) |

Sunnis should avoid them strictly, not participate in their affairs, and not involve them in theirs. We have previously cited hadiths prohibiting the company and mixing with innovators and even transgressors. Indeed, those with wrong beliefs are like fire; company is influential, natures are prone to imitation, and hearts are fickle. The Master of the Universe (peace and blessings be upon him) says:

| Arabic: The example of a good companion and a bad companion is like that of a carrier of musk and a blower of bellows. The carrier of musk will either give you some, or you will buy from him, or you will find a pleasant scent from him. The blower of bellows will either burn your clothes or you will find a foul smell from him. (3) | Urdu: The example of a good companion and a bad companion is like this: one has musk and the other blows bellows. The musk-owner will either gift you musk or

you will buy from him, and even if nothing else, a fragrance will come. The other will either burn your clothes or you will get a foul smell from him. |

1. I'laam bi-Qawati' al-Islam with Subul al-Najat, printed by Maktaba Haqiqah, Istanbul, Turkey, p. 462.
2. Durr-ul-Mukhtar, Chapter on the Apostate, printed by Matba' Mujtabai, Delhi, 1/359.
3. Sahih al-Bukhari, Book of Slaughtering, Chapter on Musk, printed by Qadimi Kutub Khana Karachi 2/830; Sahih Muslim, Book of Virtue, Chapter on Desirability etc., printed by Nur Muhammad Asah al-Matabi Karachi 2/330.

फ़तावा-ए-रज़विया, जिल्द छठी

ख़ैर, बहरहाल इस बारे में कोई विवाद नहीं है कि ये ग़ैर-मुक़ल्लिदीन और नज्द के अन्य अनुयायी मुसलमानों को नाहक़ काफ़िर और मुशरिक ठहराकर हज़ारों महान नेताओं और इमामों की तरह स्वयं काफ़िर हो गए हैं। उनके लिए यह क्या कम मुसीबत है? अल्लाह पाक की पनाह! अल्लामा इब्ने हजर मक्की 'एलाम बि-क़वाती अल-इस्लाम' में फ़रमाते हैं:

| अरबी: बेशक, एक जमात के कौल के मुताबिक वह मुर्तद हो जाता है और यह नुकसान और कमी के लिए काफी है। (1) | उर्दू: एक जमात के कौल के मुताबिक यह मुर्तद हो गया और यह नुकसान और कमी में काफी है। (त) |

तो शरई हुक्म के अनुसार उन पर तौबा फ़र्ज़ और ईमान का नवीनीकरण (तजदीद-ए-ईमान) लाज़िम है, इसके बाद वे अपनी पत्नियों से नया निकाह करें।

| अरबी: 'दुर्र-ए-मुख्तार' में अल्लामा हसन शुरुनबुलाली की 'अल-वहनिया' की शरह के हवाले से: जो चीज़ सर्वसम्मति से कुफ्र (अधर्म) है, वह अमल और निकाह को बातिल (अमान्य) कर देती है; अतः उसकी औलाद ज़िना की औलाद होगी। और जिस पर मतभेद हो, उसे इस्तिगफ़ार, तौबा और निकाह के नवीनीकरण का आदेश दिया जाएगा। (2) | उर्दू: दुर्रे मुख्तार में अल्लामा शुरुनबुलाली की शरह अल-वहनिया के हवाले से है: जिससे सर्वसम्मति से कुफ्र लाज़िम आए, उसकी वजह से हर अमल बातिल है, इसी तरह निकाह बातिल है, और उसकी औलाद ज़िना की औलाद होगी; और जिसके काफ़िर होने में इख्तिलाफ़ हो, उस पर इस्तिगफ़ार, तौबा और तजदीद-ए-निकाह का हुक्म दिया जाए। (त) |

अहले सुन्नत को चाहिए कि उनसे बहुत परहेज़ रखें, उनके मामलात में शरीक न हों, और अपने मामलात में उन्हें शरीक न करें। हमने ऊपर हदीसें उद्धृत की हैं कि बिदअतियों और यहाँ तक कि फ़ासिक़ों (पापियों) की सोहबत और मेल-जोल से मना किया गया है। और बेशक ग़लत अकीदे वाले आग हैं और सोहबत का असर होता है, स्वभाव अनुकरण करने वाला होता है और दिल बदलने वाले होते हैं। हुज़ूर सैय्यद-ए-आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम फ़रमाते हैं:

| अरबी: अच्छे हमनशीन और बुरे हमनशीन की मिसाल मुश्क (कस्तूरी) रखने वाले और धौंकनी फूंकने वाले की तरह है। मुश्क वाला या तो तुम्हें तोहफ़ा देगा या तुम उससे खरीदोगे या तुम्हें उससे अच्छी खुशबू आएगी। और धौंकनी फूंकने वाला या तो तुम्हारे कपड़े जला देगा या तुम्हें उससे बदबू

आएगी। (3) | उर्दू: नेक हमनशीन और बद जलीस की मिसाल ऐसी ही है जैसे एक के पास मुश्क है और दूसरा धौंकनी धौंकता है। मुश्क वाला या तो तुझे मुश्क तोहफे में देगा या तू उससे खरीदेगा, और कुछ नहीं तो खुशबू तो आएगी। और दूसरा या तेरे कपड़े जला देगा या तू उससे बदबू (पाएगा)। |

1. एलाम बि-क़वाती अल-इस्लाम म'अ सुबुल अल-नजात, मकतबा हक़ीक़ा इस्तांबुल तुर्की, पृ. 462
2. दुर्रे मुख्तार, बाब अल-मुर्तद, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 1/359
3. सहीह बुखारी, किताबुज़ ज़बायह, बाबू अल-मुश्क, क़दीमी कुतुब खाना कराची, 2/830; सहीह मुस्लिम, किताबुल बिर्र, बाबू इस्तेहबाब इलख, नूर मुहम्मद असहुल मताबी कराची, 2/330

خیر تاہم اس قدر میں کلام نہیں کہ یہ حضرات غیر مقلدین وسائر اخلافِ نجد یہ مسلمانوں کو ناحق کافر و مشرک ٹھہرا کر ہزار ہا اکابر ائمہ کے طور پر کافر ہو گئے اس قدر مصیبت ان پر کیا کم ہے والعیاذ باللہ سبحنہ و تعالٰی، علامہ ابن حجر مکی اعلام بقواطع الاسلام میں فرماتے ہیں :

| انه یصیر مرتدا علی قول جماعة وکفی بهذا خسارا و تفریطاً ۱۔ | ایک جماعت کے قول کے مطابق یہ مرتد ہو گیا اور یہ خسارے اور کمی میں کافی ہے۔ (ت) |

تو بحکم شرع ان پر توبہ فرض اور تجدید ایمان لازم، اس کے بعد اپنی عورتوں سے نکاح جدید کریں۔

| في الدر المختار عن شرح الوهبانیة للعلامة حسن الشرنبلالی مایکون کفرا اتفاقاً یبطل العمل و النکاح فاولاده اولاد زنی و مافیه خلاف یؤمر بالاستغفار والتوبة وتجدید النکاح ۲۔ | درمختار میں علامہ شرنبلالی کی شرح الوھطانیہ کے حوالے سے ہے جس سے بالاتفاق کفر لازم آئے اس کی وجہ سے ہر عمل باطل، اسی طرح نکاح باطل، اور اس کی اولاد زنا کی اولاد ہو گی اور جس کے کافر ہونے میں اختلاف ہو اس پر استغفار، توبہ اور تجدید نکاح کا حکم کیا جائے ۔ (ت) |

اہلسنت کو چاہئے ان سے بہت پر ہیز رکھیں، ان کے معاملات میں شریک نہ ہوں، اپنے معاملات میں انہیں شریک نہ کریں، ہم اوپر احادیث نقل کر آئے کہ اہل بدعت بلکہ فساق کی صحبت و مخالطت سے ممانعت آئی ہے اور بیشک بد مذہب آگ ہیں اور صحبت مؤثر اور طبیعتیں سراقہ اور قلوب منقلب، حضور سید عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

| انما مثل الجليس الصالح و جليس السوء كحامل المسك و نافخ الكير فحامل المسك اما ان يحذيك و اما ان تبتاع منه و اما ان تجد منه ريحاً طيبة و نافخ الكير اما ان يحرق ثيابك و اما ان تجد منه ريحاً خبيثة ۳۔ | نیک ہم نشین اور بد جلیس کی مثال یونہی ہے جیسے ایک کے پاس مشک ہے اور دوسرا دھونکنی دھونکتا ہے مشک والا یا تو تجھے مشک ہبہ کرے گا یا تو اس سے خریدے گا، اور کچھ نہ ہو تو خوشبو تو آئے گی، اور وہ دوسرا یا تیرے کپڑے جلا دے گا یا تو اس سے بدبو (پائے گا)۔ |

۱ اعلام بقواطع الاسلام مع سبل النجاۃ مطبوعہ مکتبہ حقیقہ استنبول ترکی ص ۴۶۲ ۲ در مختار باب المرتد مطبوعہ مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۳۵۹ ۳ صحیح البخاری کتاب الذبائح، باب المسک مطبوعہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۲ / ۸۳۰، صحیح مسلم کتاب البر ، باب استحباب الخ مطبوعہ نور محمد اصح المطابع کراچی ۲ / ۳۳۰

Fatawa Rizvia, Volume 6

- Narrated by the two Sheikhs (Bukhari and Muslim) from Abu Musa al-Ash'ari (may Allah be pleased with him). - Bukhari and Muslim have narrated it from Hadrat Abu Musa al-Ash'ari (may Allah be pleased with him). (T)
- In the Hadith of Anas (may Allah be pleased with him), the Master of the Universe (peace and blessings of Allah be upon him) says: "The example of a bad companion is like a blacksmith's forge; if its soot doesn't touch you, its smoke will reach you."[1] - This was narrated by Abu Dawood and Nasa'i from Hadrat Anas (may Allah be pleased with him). Meaning, the company of evil is like a blacksmith's forge; even if your clothes don't turn black, the smoke will still reach you.
- The conclusion is that by sitting with evil-doers, a person only suffers loss, and seek refuge in Allah Almighty. And he (peace and blessings of Allah be upon him) says: "The heart is called 'qalb' because of its changing nature (tuqallub). The example of the heart is like a feather in a desert field attached to the root of a tree, which the winds keep turning upside down."[2] - Tabarani narrated it in al-Mu'jam with a good chain from Hadrat Abu Musa al-Ash'ari (may Allah be pleased with him). And the wording in Ibn Majah's report is: "The example of the heart is like that of a feather which the winds keep turning in a desert field." Its chain of narration is good.[3]
- And he (peace and blessings of Allah be upon him) says: "Judge a land by its names, and judge a person by his companion."[4] - Ibn Adi narrated it from Hadrat...
- Judge the land by its names and judge a man by his companion. - Ibn Adi narrated it from Hadrat...

---

1. Sunan Abi Dawud, Chapter on who is ordered to sit in the gatherings of the righteous, printed by Aftab-e-Alam Press Lahore, 2/308.
2. Shu'ab al-Iman, Eleventh Branch of Faith, Hadith 527, printed by Dar al-Kutub al-Ilmiyah Beirut, 1/473.
3. Sunan Ibn Majah, Chapter on Destiny, printed by Aftab-e-Alam Press Lahore, p. 10.

4. Shu'ab al-Iman, Section on avoiding the wicked, etc., Hadith 9440, printed by Dar al-Kutub al-Ilmiyah Beirut, 7/55. Page 719 of 736

फ़तावा रिज़विया, छठा खंड

- शेखन (बुखारी और मुस्लिम) ने अबू मूसा अल-अशअरी (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है। इसे बुखारी और मुस्लिम ने हज़रत अबू मूसा अल-अशअरी (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है। (त)
- हज़रत अनस (रज़ियल्लाहु अन्हु) की हदीस में है कि हुज़ूर सैयदे आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं: "बुरी सोहबत (साथ) की मिसाल लोहार की भट्टी की तरह है, अगर उसकी कालिख तुम तक न पहुंचे, तो उसका धुआं ज़रूर पहुंचेगा।"[1] इसे अबू दाऊद और नसाई ने हज़रत अनस (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है। यानी बुरे की सोहबत ऐसी है जैसे लोहार की भट्टी कि कपड़े काले न हुए तो धुआं तब भी पहुंचेगा।
- हासिल यह कि बदमाशों के पास बैठने से आदमी नुकसान ही उठाता है, और अल्लाह तआला की पनाह। और फरमाते हैं (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम): "दिल को कलब इसीलिए कहते हैं क्योंकि वह पलटता रहता है (तकलुब)। दिल की मिसाल ऐसी है जैसे किसी मैदान में किसी पेड़ की जड़ से एक पर (पंख) लिपटा हो जिसे हवाएँ कभी सीधा कभी उल्टा पलटती रहती हों।"[2] इसे तबरानी ने अल-मुअजम में सहीह सनद के साथ हज़रत अबू मूसा अल-अशअरी (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है और इब्न माजा के शब्द ये हैं: "दिल की मिसाल उस पर (पंख) की तरह है जिसे हवाएँ जंगल में पलटती रहती हों।" इसकी सनद अच्छी है।[3]
- और फरमाते हैं (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम): "जमीन को उसके नामों से पहचानो और आदमी को उसके साथी से।"[4] इसे इब्न अदी ने हज़रत...
- ज़मीन को उसके नामों पर क़यास करो और आदमी को उसके हमनशीन (साथी) पर। इसे इब्न अदी ने हज़रत...

---

1. सुनन अबू दाऊद, बाब: जिसे नेक लोगों की महफिलों में बैठने का हुक्म दिया गया है, आफताब-ए-आलम प्रेस लाहौर, 2/308।
2. शेबुल ईमान, ईमान की ग्यारहवीं शाखा, हदीस 527, दारुल कुतुब अल-इल्मिया बेरूत, 1/473।
3. सुनन इब्न माजा, तकदीर का बाब, आफताब-ए-आलम प्रेस लाहौर, पृष्ठ 10।

4. शेबुल ईमान, फासिकों से बचने का अध्याय आदि, हदीस 9440, दारुल कुतुब अल-इल्मिया बेरूत, 7/55। पृष्ठ 719 का 736

رواہ الشیخان عن ابی موسی الاشعری رضی اللہ تعالٰی عنہ۔ پائے گا۔ اسے بخاری و مسلم نے حضرت ابو موسٰی اشعری رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا ہے۔ (ت)

انس رضی اللہ تعالٰی عنہ کی حدیث میں ہے حضور سید عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں : مثل جلیس السوء کمثل صاحب الکیران لم یصبك من سواده اصابك من دخانه 1۔رواہ عنه ابو داود والنسائی یعنی بد کی صحبت ایسی ہے جیسے لوہار کی بھٹی کہ کپڑے کالے نہ ہوئے تو دھواں جب بھی پہنچے گا۔ اسے ابو داؤد اور نسائی نے حضرت انس رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا ہے۔

حاصل یہ کہ اشرار کے پاس بیٹھنے سے آدمی نقصان ہی اٹھاتا ہے والعیاذ باللہ تعالٰی۔ اور فرماتے ہیں صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم۔ انما سمی القلب من تقلبه انما مثل القلب مثل ریشة بالفلاة تعلقت في اصل شجرة تقلبها الریاح ظهرًا لبطن 2 - رواہ الطبرانی فی الکبیر بسند حسن عن ابی موسٰی الاشعری رضی اللہ تعالٰی عنہ ولفظه عن ابن ماجة مثل القلب مثل الریشة تقلبها الریاح بفلاة اسناده جید 3 - دل کو قلب اسی لئے کہتے ہیں کہ وہ انقلاب کرتا ہے، دل کی کہاوٹ ایسی ہے جیسے جنگل میں کسی پیڑ کی جڑ سے ایک پر لپٹا ہے کہ ہوا میں اسے پلٹا دے رہی ہیں کبھی سیدھا کبھی الٹا۔ اسے طبرانی نے المعجم میں سند حسن کے ساتھ حضرت ابو موسٰی اشعری رضی اللہ تعالٰی عنہ سے ہی روایت کیا اور اس روایت کے الفاظ ابن ماجہ میں یوں ہیں : دل کی مثال اس پر کی طرح ہے جسے ہوائیں جنگل میں پلٹا دے رہی ہوں۔ اس کی سند جید ہے۔

اور فرماتے ہیں صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم : اعتبروا الارض باسمائھا واعتبروا الصاحب بالصاحب 4 - اخرجہ ابن عدی عن زمین کو اس کے ناموں پر قیاس کرو اور آدمی کو اس کے ہم نشین پر۔ اسے ابن عدی نے حضرت

---

1 سنن ابوداؤد باب من یؤمر ان یجالس مجالسۃ الصالحین مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور ۲/ ۳۰۸ 2 شعب الایمان الحادی عشر من شعب الایمان ، حدیث ۵۲۷ مطبوعہ دارالکتب العلمیہ بیروت ۱/ ۴۷۳ 3 سنن ابن ماجہ باب فی القدر مطبوعہ آفتاب عالم پریس لاہور ص ۱۰ 4 شعب الایمان فصل فی مجانبۃ الفسقہ الخ حدیث ۹۴۴۰ مطبوعہ دارالکتب العلمیہ بیروت ۷/ ۵۵ Page 719 of 736

Fatawa Razviya Volume 6

- Ibn Mas'ud (may Allah be pleased with him) reported it marfu' (directly from the Prophet) and al-Bayhaqi narrated it from him as mawquf (stopping at the companion) in 'Shu'ab al-Iman'. It has supporting narrations through which it reaches the status of 'Hasan' (good). | Ibn Mas'ud (may Allah be pleased with him) narrated it marfu' and Bayhaqi narrated it from him as mawquf. Supporting narrations for this report exist, because of which it has obtained the rank of 'Hasan'.
- And it is narrated that he (peace and blessings of Allah be upon him) said:
- "Beware of an evil companion, for you will be known by him." [1] Narrated by Ibn 'Asakir from Anas bin Malik (may Allah be pleased with him). | Avoid a bad companion, for you will be recognized through him. Ibn 'Asakir has narrated this from Hazrat Anas bin Malik (may Allah be pleased with him).
- That is, as the people a person sits and associates with, so he is known. Association with people of wrong beliefs is a lethal poison. The great danger mentioned regarding this in numerous authentic and reliable Hadiths is extremely terrifying. We have mentioned those Hadiths in our treatise 'Al-Maqalah al-Musfarah 'an Ahkam Bid'ah al-Mufakkirah' (1301 AH). In short, staying away from them in every way is appropriate, especially avoiding prayer behind them is obligatory. No one will like their leadership in prayer except one who is compromising in religion or lacks intellect. Imam Bukhari in his history and Ibn 'Asakir from Abu Umamah al-Bahili (may Allah be pleased with him) narrate that the Master of the World (peace and blessings of Allah be upon him) said:
- "If it pleases you that your prayers be accepted, then let the best among you lead you." [2] | If you like your prayer to be accepted, then your righteous ones should lead your prayer.
- Hakim in 'Mustadrak' and Tabarani in 'Mu'jam' from Marthad Abi Marthad al-Ghanawi (may Allah be pleased with him) narrate that the Master of the World (peace and blessings of Allah be upon him) said:
- "If it pleases you that your prayers be accepted, then let the best among you lead you, for they are your delegation between you and your Lord." [3] | If you would be happy for your prayers to be accepted, then those who are good

among you should be your Imams, for they are your ambassadors between you and your Lord.

Footnotes: 1. Tahdhib Tarikh Ibn 'Asakir, biography of Husayn bin Ja'far al-Ghazzi al-Jurjani, published by Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut, 4/292. 2. Kanz al-Ummal with reference to Ibn 'Asakir from Abu Umamah, Hadith 24333, published by Mu'assasat al-Risalah Beirut, 7/596; Asrar al-Mawdu'ah, Hadith 568, published Beirut p. 148; Al-Fawa'id al-Majmu'ah, Prayer in Congregation, published Beirut p. 32. 3. Al-Mustadrak 'ala al-Sahihayn, mention of the virtues of Abu Marthad al-Ghanawi, published by Dar al-Fikr Beirut, 3/222.

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

- इब्ने मसूद (रज़ियल्लाहु अन्हु) से मरफ़ूअ़न और बैहक़ी ने उन्हीं से मौक़ूफ़न 'शुअ़बुल ईमान' में रिवायत किया है और इसके शवाहिद (गवाहियाँ) मौजूद हैं जिनके ज़रिए यह 'हसन' के दर्जे तक पहुँचती है। | इब्ने मसूद (रज़ियल्लाहु अन्हु) से मरफ़ूअ़न और बैहक़ी ने उन्हीं से मौक़ूफ़न रिवायत किया है, इस रिवायत के शवाहिद मौजूद हैं जिसकी वजह से इसे 'अहसन' (उत्तम) का दर्जा हासिल है।
- और रिवायत है कि हुज़ूर (सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:
- "बुरे साथी से बच क्योंकि तू उसी से पहचाना जाएगा।" [1] इसे इब्ने अ़साकिर ने अनस बिन मालिक (रज़ियल्लाहु अ़न्हु) से रिवायत किया है। | बुरे साथी से बच, तो उसी से पहचाना जाएगा। इसे इब्ने अ़साकिर ने हज़रत अनस बिन मालिक (रज़ियल्लाहु अ़न्हु) से रिवायत किया है।
- यानी जैसे लोगों के पास आदमी का बैठना-उठना होता है, वैसा ही उसे जाना जाता है, और बद-मज़हबों से मुहब्बत तो ज़हर-ए-क़ातिल है, इसके बारे में अनेक सहीह और मोतबर हदीसों में जो बड़ा ख़तरा बयान हुआ है वह बहुत ही भयानक है। हमने वे हदीसें अपने रिसाले 'अल-मक़ालतुल मुसफ़राह अ़न अहकाम बिदअ़तिल मुफ़क्किरह' (1301 हि.) में ज़िक्र की हैं। संक्षेप में यह कि हर तरह से उनसे दूरी उचित है, विशेष रूप से उनके पीछे नमाज़ से बचना अनिवार्य है। और उनकी इमामत वही पसंद करेगा जो दीन में समझौता करने वाला हो या जिसकी बुद्धि ठिकाने न हो। इमाम बुख़ारी ने तारीख़ में और इब्ने अ़साकिर ने अबू उमामा बाहिली (रज़ियल्लाहु अ़न्हु) से रावी हुज़ूर सिय्यद-ए-आ़लम (सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:
- "अगर तुम्हें पसंद हो कि तुम्हारी नमाज़ें क़बूल हों, तो चाहिए कि तुम में से जो सबसे अच्छे हों वे तुम्हारी इमामत करें।" [2] | अगर तुम्हें पसंद आता हो कि तुम्हारी नमाज़ क़बूल हो तो चाहिए कि तुम्हारे नेक तुम्हारी इमामत करें।
- हाकिम मुस्तदरक में और तबरानी मोअ़जम में मरथ़द अबी मरथ़द ग़नवी (रज़ियल्लाहु अ़न्हु) से रावी हुज़ूर सिय्यद-ए-आ़लम (सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

- "अगर तुम्हें अपनी नमाज़ों का क़बूल होना ख़ुश आता हो, तो चाहिए कि जो तुम में अच्छे हों वे तुम्हारे इमाम हों क्योंकि वे तुम्हारे और तुम्हारे रब के दरमियान तुम्हारे प्रतिनिधि हैं।" [3] | अगर तुम्हें अपनी नमाज़ों का क़बूल होना ख़ुश आता हो तो चाहिए जो तुम में अच्छे हों वो तुम्हारे इमाम हों कि वो तुम्हारे सफ़ीर (दूत) हैं तुम में और तुम्हारे रब में।

फ़ुटनोट्स: 1. तहज़ीब तारीख़ इब्ने अ़साकिर, तर्जुमा हुसैन बिन जाफ़र अल-ग़ज़ी अल-जुरजानी, मतबुआ दार इहयाउत तुराथिल अ़रबी बेरूत 4/292 2. कन्ज़ुल अ़म्माल बहवाला इब्ने अ़साकिर अ़न अबी उमामा, हदीस 24333, मतबुआ मुअ़स्ससतुर रिसाला बेरूत 7/596, असरारुल मौज़ूअ़ह हदीस 568 मतबुआ बेरूत पृ. 148, अल-फ़वाइद अल-मजमूअ़ह सलातुल जमाअ़त मतबुआ बेरूत पृ. 32 3. अल-मुस्तदरक अ़लस सहीहैन, ज़िक्र मनाक़िब अबू मरथ़द अल-ग़नवी, मतबुआ दारुल फ़िक्र बेरूत 3/222

पृष्ठ 720/736

- ابن مسعود رضی اللہ تعالیٰ عنہ مرفوعا و البیہقی فی الشعب عنہ موقوفا و لہ شواہد بہا یرتقی الی درجہ الحسن۔ | ابن مسعود رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے مرفوعا اور بیہقی نے انہی سے موقوفا روایت کیا ہے، اس روایت کے شواہد موجود ہیں جن کی وجہ سے اسے احسن کا درجہ حاصل ہے۔

- اور مروی کہ فرماتے ہیں صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم :

- ایّاک و قرین السوء فانک بہ تعرف۸1 - رواہ ابن عساکر عن انس بن مالک رضی اللہ تعالیٰ عنہ | بُرے مصاحب سے بچ تو اس سے پہچانا جائے گا۔ اسے ابن عساکر نے حضرت انس بن مالک رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا ہے۔

- یعنی جیسے لوگوں کے پاس آدمی کی نشست برخاست ہوتی ہے ویسا ہی جانتے ہیں، اور بد مذہبوں سے محبت تو زہر قاتل ہے اس کی نسبت احادیث کثیرہ صحیحہ معتبرہ میں جو خطر عظیم آیا سخت ہولناک ہے ہم نے وہ حدیثیں اپنے رسالہ المقالۃ المسفرۃ عن احکام بدعۃ المفکرۃ (۱۳۰۱ھ) میں ذکر کیں۔ بالجملہ ہر طرح ان سے دوری مناسب خصوصاً ان کے پیچھے نماز سے تو احتراز واجب، اور ان کی امامت پسند نہ کرے گا مگر دین میں مداہن یا عقل سے مجانب۔ امام بخاری تاریخ میں اور ابن عساکر ابو امامہ باہلی رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے راوی حضور سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

- ان سرکم ان تقبل صلاتکم فلیؤمکم خیارکم۸2 | اگر تمہیں پسند آتا ہو کہ تمہاری نماز قبول ہو تو چاہئے کہ تمہارے نیک تمہاری امامت کریں۔

- حاکم مستدرک اور طبرانی معجم میں مرثد ابی مرثد غنوی رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے راوی حضور سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں:
- ان سرکم ان تقبل صلاتکم فلیؤمکم خیارکم فانہم وفد کم فیما بینکم و بین ربکم[8]3 | اگر تمہیں اپنی نمازوں کا قبول ہونا خوش آتا ہو تو چاہئے جو تم میں اچھے ہوں وہ تمہارے امام ہوں کہ وہ تمہارے سفیر ہیں تم میں اور تمہارے رب میں۔

حواشی: 1 تہذیب تاریخ ابن عساکر ترجمہ حسین بن جعفر الغزی الجرجانی مطبوعہ دار احیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۲۹۲ 2 کنز العمال بحوالہ ابن عساکر عن ابی امامہ حدیث ۲۴۳۳۳ مطبوعہ موسسۃ الرسالۃ بیروت ۷/ ۵۹۶، اسرار الموضوعۃ حدیث ۵۶۸ مطبوعہ بیروت ص ۱۴۸، الفوائد المجموعۃ صلوۃ الجماعۃ مطبوعہ بیروت ص ۳۲ 3 المستدرک علی الصحیحین ذکر مناقب ابو مرثد الغنوی مطبوعہ دار الفکر بیروت ۳/ ۲۲۲

Fatawa Razawiyya Volume VI

Daraqutni and Bayhaqi in their Sunan narrate from Abdullah bin Umar (may Allah be pleased with them both) that the Master of the World (peace and blessings of Allah be upon him) said:

Make your best ones your Imams, for they are your intermediaries between you and your Lord[1].	**Make your righteous ones Imams, for they are your intermediaries between you and your Lord, the Almighty.**
I say: Although the hadiths are weak, they are strengthened because they have been reported from three Sahaba (companions); may the pleasure of the Lord, Glorious and Exalted, Most Holy and High, be upon them all.	**I say these hadiths, although weak, support each other because they are narrated from three companions, upon all of whom is the pleasure of Allah, the Glorious, Exalted, Holy, and High. (T)**

Praise be to Allah, this concise writing began at the end of Dhu al-Qi'dah and reached its completion on the fourth of Dhu al-Hijjah, a world-illuminating Monday, 1305 Hijri (upon its possessor be thousands upon thousands of prayers and salutations). May the blessings of Allah be upon the Seal of the Prophets, the full moon of the sky of Messengers, Muhammad, and his family, the mujtahid imams, and those who follow them in goodness until the Day of Judgment. Praise be to Allah, Lord of the Worlds. And Allah knows best, and His knowledge, glorious is His majesty, is most complete and most perfect.

---

[1] Sunan al-Daraqutni, Chapter on Shortening the Recitation for Need, published by Nashr-us-Sunnah, Multan, 2/88.

फ़तावा रज़विया, छठा खंड

दारकुतनी और बैहक़ी अपनी सुनन में अब्दुल्ला बिन उमर (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत करते हैं कि हुज़ूर सैय्यद-ए-आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

अपने में से बेहतरीन लोगों को अपना इमाम बनाओ, क्योंकि वे तुम्हारे और तुम्हारे रब के बीच तुम्हारे मध्यस्थ (वसीला) हैं।

अपने नेक लोगों को इमाम बनाओ क्योंकि वे तुम्हारे और तुम्हारे रब अज़्ज़वजल के बीच तुम्हारे वसीले हैं।

मैं कहता हूँ: हालाँकि ये हदीसें कमज़ोर (ज़ईफ़) हैं, फिर भी ये पुख्ता होती हैं क्योंकि ये तीन सहाबा से रिवायत की गई हैं; उन सभी पर अल्लाह जल्ला व आला और पाक व बरतर की रज़ा हो।

मैं कहता हूँ कि ये हदीसें अगरचे ज़ईफ़ हैं, मगर ये एक-दूसरे की ताईद (समर्थन) कर रही हैं क्योंकि ये तीन सहाबा से मरुवी (वर्णित) हैं, जिन पर अल्लाह जल्ल व आला की रज़ा हो। (त)

अल्हम्दुलिल्लाह कि यह संक्षिप्त लेखन ज़िल-क़ादा के अंत में शुरू हुआ और चार ज़िल-हिज्जा, सोमवार के दिन, 1305 हिजरी को पूरा हुआ (जिसके मालिक पर हज़ारों-हज़ार दुरूद ओ सलाम हों)। अल्लाह तआला का दरूद हो आख़िरी नबी, रसूलों के आसमान के चौदहवीं के चाँद, मुहम्मद और उनकी आल पर, मुजतहिद इमामों और क़यामत के दिन तक भलाई के साथ उनका अनुसरण करने वालों पर। सब तारीफें अल्लाह के लिए हैं जो तमाम जहानों का रब है। और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है, और उसका ज्ञान सबसे पूर्ण और सबसे मज़बूत है।

---

[1] सुनन अल-दारकुतनी, ज़रूरत के लिए किराअत को छोटा करने का अध्याय, नश्र-उस-सुन्नत मुल्तान द्वारा प्रकाशित, 2/88।

पृष्ठ 721/736

جلد ششم فتاویٰ رضویہ

دار قطنی و بیہقی اپنی سنن میں عبداللہ بن عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے راوی حضور سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

اجعلوا ائمتکم خیارکم فانھم وفدکم فیما بینکم وبین ربکم[1]۔

اپنے نیکوں کو امام کرو کہ وہ تمہارے وسائط ہیں درمیان تمہارے اور تمہارے رب عزوجل کے۔

اقول: والاحادیث وان ضعفت فقد تأیدت اذ عن ثلثۃ من الصحابۃ وردت علیھم جمیعا رضوان المولیٰ جل وعلا وتقدس وتعالیٰ۔

میں کہتا ہوں یہ احادیث اگرچہ ضعیف ہیں مگر یہ تائید کر رہی ہیں کیونکہ یہ تین صحابہ سے مروی جن پر اللہ جل وعلا وتقدس تعالیٰ کی رضا وارد ہے (ت)

الحمد للہ کہ یہ موجز تحریر سلخ ذی القعدہ میں شروع اور چہارم ذی الحجہ روز جہاں افروز دوشنبہ ۱۳۰۵ ہجری قدسیہ علی صاحبہا الف الف صلاۃ و تحیۃ کو بدر سمائے اختتام ہوئی، وصلی اللہ تعالیٰ علی خاتم النبیین بدر سماء المرسلین محمد وآلہ والائمۃ المجتہدین والمقلدین لھم باحسان الی یوم الدین والحمد للہ رب العلمین واللہ تعالیٰ اعلم وعلمہ جل مجدہ اتم واحکم۔

---

[1] سنن الدارقطنی باب تخفیف القراءۃ للحاجۃ مطبوعہ نشر السنۃ ملتان ۲/ ۸۸

Fatawa Ridawiyya - Volume Six

Sources and References

No.	Name (Title)	Author	Year of Death (Hijri)
1	Al-Ajza' fi al-Hadith	Abd al-Rahman bin Umar bin Muhammad al-Baghdadi, known as al-Nahhas	412
2	Al-Ajnas fi al-Furu'	Abu al-Abbas Ahmad bin Muhammad al-Natafi al-Hanafi	446
3	Al-Ikhtiyar Sharh al-Mukhtar	Abdullah bin Mahmud (bin Mawdud) al-Hanafi	683
4	Al-Adab al-Mufrad lil-Bukhari	Muhammad bin Isma'il al-Bukhari	256
5	Irshad al-Sari Sharh al-Bukhari	Shihab al-Din Ahmad bin Muhammad al-Qastallani	923
6	Irshad al-Aql al-Salim	Abu al-Sa'ud Muhammad bin Muhammad al-Imadi	951
7	Al-Arkan al-Arba'	Maulana Abd al-Ali Bahr al-Ulum	1225
8	Al-Ashbah wa al-Naza'ir	Shaykh Zayn al-Din bin Ibrahim ibn Nujaym	970
9	Ash'at al-Lam'at	Shaykh Abd al-Haqq al-Muhaddith al-Dihlawi	1052
10	Usul al-Bazdawi	Ali bin Muhammad al-Bazdawi	482
11	Al-Islah lil-Wiqaya fi al-Furu'	Ahmad bin Sulayman bin Kamal Pasha	940
12	Akam al-Marjan fi Ahkam al-Jann	Qadi Badr al-Din Muhammad bin Abdullah al-Shibli	769
13	Anfa' al-Wasa'il	Qadi Burhan al-Din Ibrahim bin Ali al-Tarsusi al-Hanafi	758
14	Imdad al-Fattah	Hasan bin Ammar al-Shurunbulali	1069
15	Anwar al-A'immah al-Shafi'iyya	Imam Yusuf al-Arabili al-Shafi'i	799
16	Al-Idah lil-Wiqaya fi al-Furu'	Ahmad bin Sulayman bin Kamal Pasha	940

No.	Name (Title)	Author	Year of Death (Hijri)
17	Amali fi al-Hadith	Abd al-Malik bin Muhammad bin Muhammad Bashran	432
18	Al-Ijaz fi al-Hadith	Ahmad bin Muhammad, known as Ibn al-Sunni	364
19	Alqab al-Ruwat	Ahmad bin Abd al-Rahman al-Shirazi	407

फतावा रज़विया - छठा खंड

स्रोत और सन्दर्भ

क्र.सं.	नाम (किताब का नाम)	लेखक	हिजरी मृत्यु वर्ष
१	अल-अजज़ा फ़िल हदीस	अब्दुर रहमान बिन उमर बिन मुहम्मद अल-बगदादी अल-मअरुफ़ बिन्नहास	४१२
२	अल-अजनास फ़िल फुरूह	अबुल अब्बास अहमद बिन मुहम्मद अन-नातिफी अल-हनाफी	४४६
३	अल-इख्तियार शरह अल-मुख्तार	अब्दुल्लाह बिन महमूद (बिन मवदूद) अल-हनाफी	६८३
४	अल-अदब अल-मुफ़रद लिल बुखारी	मुहम्मद बिन इस्माइल अल-बुखारी	२५६
५	इरशाद अल-सारी शरह अल-बुखारी	शिहाब अल-दीन अहमद बिन मुहम्मद अल-क़स्तलानी	९२३
६	इरशाद अल-अकल अस-सलीम	अबू सऊद मुहम्मद बिन मुहम्मद अल-एमादी	९५१
७	अल-अरकान अल-अर्बा	मौलाना अब्दुल अली बहरुल उलूम	१२२५
८	अल-अशबाह वन-नज़ैर	शैख़ ज़ैनुल आबेदीन बिन इब्राहीम इब्न नजीम	९७०
९	अशअतुल लमआत	शैख़ अब्दुल हक़ मुहद्दिस देहलवी	१०५२
१०	उसूल अल-बज़दवी	अली बिन मुहम्मद अल-बज़दवी	४८२
११	अल-इस्लाह लिल-विक़ाया फ़िल फुरूह	अहमद बिन सुलेमान बिन कमाल पाशा	९४०
१२	आकाम अल-मरजान फ़ी अहकाम अल-जान	काज़ी बद्र अल-दीन मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह अश्-शिबली	७६९
१३	अंफअ अल-वसाईल		७५८

क्र.सं.	नाम (किताब का नाम)	लेखक	हिजरी मृत्यु वर्ष
		काज़ी बुरहान अल-दीन इब्राहीम बिन अली अत्-तरसूसी अल-हनाफी	
१४	इमदाद अल-फ़त्ताह	हसन बिन अम्मर अश्-शुरुनबुलाली	१०६९
१५	अनवारुल अइम्मह अश-शाफ़इय्या	इमाम यूसुफ अल-अरबीली अश-शाफ़ई	७९९
१६	अल-ईदाह लिल-विक़ाया फ़िल फ़ुरूह	अहमद बिन सुलेमान बिन कमाल पाशा	९४०
१७	अमाली फ़िल हदीस	अब्दुल मलिक बिन मुहम्मद बिन मुहम्मद बशरान	४३२
१८	अल-ईजाज़ फ़िल हदीस	अहमद बिन मुहम्मद अल-मअरुफ़ बिन अस-सुन्नी	३६४
१९	अलक़ाब अर-रुवात	अहमद बिन अब्दुर रहमान अल-शीराज़ी	४०७

पृष्ठ ७२३ का ७३६

فتاوی رضویہ - جلد ششم

مآخذ و مراجع

نمبر نام	مصنف	سن وفات ہجری
۱ الاجزاء فی الحدیث	عبدالرحمن بن عمر بن محمد البغدادی المعروف بالنحاس	۴۱۲
۲ الاجناس فی الفروع	ابوالعباس احمد بن محمد الناطفی الحنفی	۴۴۶
۳ الاختیار شرح المختار	عبداللہ بن محمود (بن مودود) الحنفی	۶۸۳
۴ الادب المفرد للبخاری	محمد بن اسمعیل البخاری	۲۵۶
۵ ارشاد الساری شرح البخاری	شہاب الدین احمد بن محمد القسطلانی	۹۲۳
۶ ارشاد العقل السلیم	ابوسعود محمد بن محمد العمادی	۹۵۱
۷ الارکان الاربع	مولانا عبدالعلی بحر العلوم	۱۲۲۵
۸ الاشباہ والنظائر	شیخ زین الدین بن ابراہیم بابن نجیم	۹۷۰
۹ اشعۃ اللمعات	شیخ عبد الحق المحدث الدہلوی	۱۰۵۲
۱۰ اصول البزدوی	علی بن محمد البزدوی	۴۸۲
۱۱ الاصلاح للوقایۃ فی الفروع	احمد بن سلیمان بن کمال پاشا	۹۴۰
۱۲	قاضی بدر الدین محمد بن عبد اللہ الشبلی	۷۶۹

نمبر	نام	مصنف	سن وفات ہجری
	آکام المرجان فی احکام الجان		
۱۳	انفع الوسائل	قاضی برہان الدین ابراہیم بن علی الطر سوسی الحنفی	۷۵۸
۱۴	امداد الفتاح	حسن بن عمار الشرنبلالی	۱۰۶۹
۱۵	انوار الائمة الشافعیہ	امام یوسف الاربیلی الشافعی	۷۹۹
۱۶	الایضاح للوقایة فی الفروع	احمد بن سلیمان بن کمال پاشا	۹۴۰
۱۷	امالی فی الحدیث	عبدالملک بن محمد بن محمد بشران	۴۳۲
۱۸	الایجاز فی الحدیث	احمد بن محمد المعروف بابن السنی	۳۶۴
۱۹	القاب الروات	احمد بن عبدالرحمن الشیرازی	۴۰۷

صفحہ 723 کا 736

Fatawa Razawiyya Volume Six

[Section B] 20. Bada'i' al-Sana'i' — 'Ala' al-Din Abi Bakr bin Mas'ud al-Kasani — 587 21. Al-Bidayah (Bidayat al-Mubtadi) — 'Ali bin Abi Bakr al-Marghinani — 593 22. Al-Bahr al-Ra'iq — Shaykh Zayn al-Din bin Ibrahim bin Nujaym — 970 23. Al-Burhan Sharh Mawahib al-Rahman — Ibrahim bin Musa al-Tarabulsi — 922 24. Bustan al-'Arifin — Faqih Abu al-Layth Nasr bin Muhammad al-Samarqandi — 372 25. Al-Basit fi al-Furu' — Hujjat al-Islam Muhammad bin Muhammad al-Ghazali — 505 26. Al-Binayah Sharh al-Hidayah — Imam Badr al-Din Abu Muhammad al-'Ayni — 855

[Section T] 27. Taj al-'Arus — Sayyid Muhammad Murtada al-Zabidi — 1205 28. Tarikh Ibn 'Asakir — 'Ali bin al-Hasan al-Dimashqi ibn 'Asakir — 571 29. Tarikh al-Bukhari — Muhammad bin Isma'il al-Bukhari — 256 30. Al-Tajnis wal-Mazid — Burhan al-Din 'Ali bin Abi Bakr al-Marghinani — 593 31. Tahrir al-Usul — Kamal al-Din Muhammad bin 'Abd al-Wahid bin al-Humam — 861 32. Tuhfat al-Fuqaha' — Imam 'Ala' al-Din Muhammad bin Ahmad al-Samarqandi — 540 33. Tahqiq al-Husami — 'Abd al-'Aziz bin Ahmad al-Bukhari — 730 34. Al-Tarjih wal-Tashih 'ala al-Quduri — 'Allama Qasim bin Qutlubugha Hanafi — 879 35. Al-Ta'rifat li-Sayyid Sharif — Sayyid Sharif 'Ali bin Muhammad al-Jurjani — 816 36. Tafsir Ibn Jarir (Jami' al-Bayan) — Muhammad bin Jarir al-Tabari — 310 37. Tafsir al-Baydawi — 'Abd Allah bin 'Umar al-Baydawi — 691 38. Tafsir al-Jalalayn — 'Allama Jalal al-Din al-Mahalli and Jalal al-Din al-Suyuti — 911_8 39. Tafsir al-Jamal — Sulayman bin 'Umar al-'Ujayli al-Shahir bil-Jamal — 1202 40. Tafsir al-Qurtubi — Abu 'Abd Allah Muhammad bin Ahmad al-Qurtubi — 761 41. Al-Tafsir al-Kabir — Imam Fakhr al-Din al-Razi — 26

Page 724 of 736

फतावा रज़विया खंड छठा

[भाग ब] २०. बदाइ' अस-सनाइ' — अलाउद्दीन अबी बक्र बिन मसूद अल-कसानी — ५८७ २१. अल-बिदाया (बिदायत अल-मुब्तदी) — अली बिन अबी बक्र अल-मरग़ीनानी — ५९३ २२. अल-बहर अर-राइक़ — शेख ज़ैनुद्दीन बिन इब्राहीम बिन नुजैम — ९७० २३. अल-बुरहान शरह मवाहिब अर-रहमान — इब्राहीम बिन मूसा अत-तराबुलसी — ९२२ २४. बुस्तान अल-आरिफ़ीन — फ़क़ीह अबुल लैस नस्र बिन मुहम्मद अल-समरक़ंदी — ३७२ २५. अल-बसीत फ़िल-फ़ुर' — हुज्जतुल इस्लाम मुहम्मद बिन मुहम्मद अल-ग़ज़ाली — ५०५ २६. अल-बिनाया शरह अल-हिदाया — इमाम बद्रुद्दीन अबू मुहम्मद अल-ऐनी — ८५५

[भाग त] २७. ताज अल-अरूस — सैय्यद मुहम्मद मुर्तज़ा अज़-ज़बीदी — १२०५ २८. तारीख इब्न असाकिर — अली बिन अल-हसन अद-दमिश्क़ी इब्न असाकिर — ५७१ २९. तारीख अल-बुखारी — मुहम्मद बिन इस्माइल अल-बुखारी — २५६ ३०. अत-तजनीस वल-मज़ीद — बुरहानुद्दीन अली बिन अबी बक्र अल-मरग़ीनानी — ५९३ ३१. तहरीर अल-उसूल — कमालुद्दीन मुहम्मद बिन अब्दुल वाहिद बिन अल-हुमाम — ८६१ ३२. तोहफ़त अल-फ़ुक़हा — इमाम अलाउद्दीन मुहम्मद बिन अहमद अल-समरक़ंदी — ५४० ३३. तहक़ीक़ अल-हुसामी — अब्दुल अज़ीज़ बिन अहमद अल-बुखारी — ७३० ३४. अत-तरजीह वत-तसहीह अलल क़ुदूरी — अल्लामा क़ासिम बिन क़ुतलुबग़ा हनफ़ी — ८७९ ३५. अत-तारीफ़ात लि-सैय्यद शरीफ़ — सैय्यद शरीफ़ अली बिन मुहम्मद अल-जुर्जानी — ८१६ ३६. तफ़्सीर इब्न जरीर (जामे अल-बयान) — मुहम्मद बिन जरीर अत-तब़री — ३१० ३७. तफ़्सीर अल-बैज़ावी — अब्दुल्लाह बिन उमर अल-बैज़ावी — ६९१ ३८. तफ़्सीर अल-जलालैन — अल्लामा जलालुद्दीन अल-महल्ली व जलालुद्दीन अस-सुयूती — ९११_८ ३९. तफ़्सीर अल-जमल — सुलेमान बिन उमर अल-उजली अश्-शहीर बिल-जमल — १२०२ ४०. तफ़्सीर अल-क़ुरतुबी — अबू अब्दुल्लाह मुहम्मद बिन अहमद अल-क़ुरतुबी — ७६१ ४१. अत-तफ़्सीर अल-कबीर — इमाम फ़खरुद्दीन अर-राज़ी — २६

पृष्ठ ७२४ / ७३६

ب ۲۰۔ بدائع الصنائع ـــ علاء الدین ابی بکر بن مسعود الکاسانی ـــ ۵۸۷ ۲۱۔ البدایة (بدایة المبتدي) ـــ علی بن ابی بکر المرغینانی ـــ ۵۹۳ ۲۲۔ البحر الرائق ـــ شیخ زین الدین بن ابراہیم بابن نجیم ـــ ۹۷۰ ۲۳۔ البرہان شرح مواہب الرحمان ـــ ابراہیم بن موسی الطرابلسی ـــ ۹۲۲ ۲۴۔ بستان العارفین ـــ فقیہ ابو اللیث نصر بن محمد السمرقندی ـــ ۳۷۲ ۲۵۔ البسیط فی الفروع ـــ حجة الاسلام محمد بن محمد الغزالی ـــ ۵۰۵ ۲۶۔ البنایة شرح الہدایة ـــ امام بدر الدین ابو محمد العینی ـــ ۸۵۵

ت ۲۷۔ تاج العروس ـــ سید محمد مرتضی الزبیدی ـــ ۱۲۰۵ ۲۸۔ تاریخ ابن عساکر ـــ علی بن الحسن الدمشقی بابن عساکر ـــ ۵۷۱ ۲۹۔ تاریخ البخاری ـــ محمد بن اسمعیل البخاری ـــ ۲۵۶ ۳۰۔ التجنیس والمزید ـــ برہان الدین علی بن ابی بکر المرغینانی ـــ ۵۹۳ ۳۱۔ تحریر الاصول ـــ کمال الدین محمد بن عبد الواحد بن الہمام ـــ ۸۶۱ ۳۲۔ تحفة الفقہاء ـــ امام علاء الدین محمد بن احمد السمرقندی ـــ ۵۴۰ ۳۳۔ تحقیق الحسامی ـــ عبد العزیز بن احمد البخاری ـــ ۷۳۰ ۳۴۔ الترجیح والتصحیح علی القدوری ـــ علامہ قاسم بن قطلوبغا حنفی ـــ ۸۷۹ ۳۵۔ التعریفات لسید شریف ـــ سید شریف علی بن محمد الجرجانی ـــ ۸۱۶ ۳۶۔ تفسیر ابن جریر (جامع البیان) ـــ محمد بن جریر الطبری ـــ ۳۱۰ ۳۷۔ تفسیر البیضاوی ـــ عبد اللہ بن عمر البیضاوی ـــ ۶۹۱ ۳۸۔ تفسیر الجلالین ـــ علامہ جلال الدین المحلی وجلال الدین السیوطی ـــ ۹۱۱۔۸ ۳۹۔ تفسیر الجمل ـــ سلیمان بن عمر العجلی الشہیر بالجمل ـــ ۱۲۰۲ ۴۰۔ تفسیر القرطبی ـــ ابو عبد اللہ محمد بن احمد القرطبی ـــ ۷۶۱ ۴۱۔ التفسیر الکبیر ـــ امام فخر الدین الرازی ـــ ۲۶

Fatawa Rizvia Volume Sixth 42. At-Tafsir li-an-Naysaburi --- Nizam ad-Din al-Hasan b. Muhammad b. Husayn an-Naysaburi --- 728 43. Taqrib al-Qarib --- Abu Zakariyya Yahya b. Sharaf an-Nawawi --- 911 44. At-Tahrir wa-at-Tahbir --- Muhammad b. Muhammad b. Amir al-Hajj al-Halabi --- 879 45. At-Taysir lil-Munawi --- 'Abd ar-Ra'uf al-Munawi --- 1031 46. Tabyin al-Haqa'iq --- Fakhr ad-Din 'Uthman b. 'Ali az-Zayla'i --- 723 47. Taqrib at-Tahdhib --- Shihab ad-Din Ahmad b. 'Ali Ibn Hajar al-'Asqalani --- 852 48. Tanwir al-Miqyas --- Abu Tahir Muhammad b. Ya'qub al-Firuzabadi --- 817 49. Tanwir al-Absar --- Shams ad-Din Muhammad b. 'Abd Allah b. Ahmad at-Timurtashi --- 1002 50. Ta'zim as-Salah --- Muhammad b. Nasr al-Marwazi --- 294 51. Tarikh Baghdad --- Abu Bakr Ahmad b. 'Ali al-Khatib al-Baghdadi --- 463 52. At-Tawshih fi Sharh al-Hidayah --- 'Umar b. Ishaq as-Siraj al-Hindi --- 773 J 53. Jami' at-Tirmidhi --- Abu 'Isa Muhammad b. 'Isa at-Tirmidhi --- 279 54. Jami' ar-Rumuz --- Shams ad-Din Muhammad al-Khurasani --- 962 55. Al-Jami' as-Sahih lil-Bukhari --- Imam Muhammad b. Isma'il al-Bukhari --- 256 56. Al-Jami' as-Saghir fi al-Fiqh --- Imam Muhammad b. Hasan ash-Shaybani --- 189 57. Al-Jami' as-Sahih li-Muslim --- Muslim b. al-Hajjaj al-Qushayri --- 261 58. Jami' al-Fiqh (Jawami' al-Fiqh) --- Abu Nasr Ahmad b. Muhammad al-'Attabi --- 586 59. Jami' al-Fusulayn --- Shaykh Badr ad-Din Mahmud b. Isra'il b. Qadi --- 823 60. Al-Jami' al-Kabir --- Abu al-Hasan 'Ubayd Allah b. Husayn al-Karkhi --- 340 61. Jawahir al-Akhlati --- Burhan ad-Din Ibrahim b. Abu Bakr al-Akhlati --- . 62. Al-Jawahir az-Zakiyyah --- Ahmad b. Turki b. Ahmad al-Maliki --- 989 63. Jawahir al-Fatawa --- Rukn ad-Din Abu Bakr b. Muhammad b. Abi al-Mafakhir --- 565 64. Al-Jawharah an-Nayyirah --- Abu Bakr b. 'Ali b. Muhammad al-Haddad al-Yamani --- 800 65. Al-Jarh wa-at-Ta'dil fi Rijal al-Hadith --- Yahya b. Ma'in al-Baghdadi --- 233 66. Al-Jami' as-Saghir fi al-Hadith --- 'Allamah Jalal ad-Din 'Abd ar-Rahman b. Abi Bakr as-Suyuti --- 911

फ़तावा रज़विया छठा खंड 42. अत-तफ़्सीर लिन-निशापुरी --- निज़ामुद्दीन अल-हसन बिन मुहम्मद बिन हुसैन अन-निशापुरी --- 728 43. तक़रीब अल-क़रीब --- अबू ज़कारिया यहया बिन शरफ़ अन-नवावी --- 911 44. अत-तहरीर व अत-तहबीर --- मुहम्मद बिन मुहम्मद बिन अमीर अल-हज्ज अल-हलबी --- 879 45. अत-तयसीर लिल-मुनावी --- अब्दुर रऊफ़ अल-मुनावी --- 1031 46. तबीयन अल-हक़ाएक़ --- फ़खरुद्दीन उस्मान बिन अली अज़-ज़ैलाई --- 723 47. तक़रीब अत-तहज़ीब --- शिहाबुद्दीन अहमद बिन अली इब्न हजर अल-अस्क़लानी --- 852 48. तनवीर अल-मिक़यास --- अबू ताहिर मुहम्मद बिन यक़ूब अल-फ़िरोज़ाबादी --- 817 49. तनवीर अल-अब्सार --- शम्सुद्दीन मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह बिन अहमद अत-तिमुरताशी --- 1002 50. ताज़ीम अस-सलात --- मुहम्मद बिन नस्र अल-मरवज़ी --- 294 51. तारीख़ बग़दाद --- अबू बक्र अहमद बिन अली अल-ख़तीब अल-बग़दादी --- 463 52. अत-तौशीह फ़ी शरह अल-हिदाया --- उमर बिन इस्हाक़ अस-सिराज अल-हिंदी --- 773 ज 53. जामिअ अत-तिरमिज़ी --- अबू ईसा मुहम्मद बिन ईसा अत-तिरमिज़ी --- 279 54. जामिअ अर-रुमूज़ --- शम्सुद्दीन मुहम्मद अल-खुरासानी --- 962 55. अल-जामिअ अस-सहीह लिल-बुखारी --- इमाम मुहम्मद बिन इस्माईल अल-बुखारी --- 256 56. अल-जामिअ अस-सग़ीर फ़िल फ़िक़्ह --- इमाम मुहम्मद बिन हसन अश-शैबानी --- 189 57. अल-जामिअ अस-सहीह लि-मुस्लिम --- मुस्लिम बिन हज्जाज अल-कुशायरी --- 261 58. जामिअ अल-फ़िक़्ह (जवामिअ अल-फ़िक़्ह) --- अबू नस्र अहमद बिन मुहम्मद अल-अत्ताबी --- 586 59. जामिअ अल-फुसूलैन --- शैख़ बदरुद्दीन महमूद बिन इस्राईल बिन क़ाज़ी --- 823 60. अल-जामिअ अल-कबीर --- अबुल हसन उबैदुल्लाह बिन हुसैन अल-करखी --- 340 61. जवाहिर अल-अख़लाती --- बुरहानुद्दीन इब्राहिम बिन अबू बक्र अल-अख़लाती --- . 62. अल-जवाहिर अज़-ज़किया --- अहमद बिन तुर्की बिन अहमद अल-मालकी --- 989 63. जवाहिर अल-फ़तावा --- रुकनुद्दीन अबू बक्र बिन मुहम्मद बिन अबिल मफ़ाखिर --- 565 64. अल-जौहरा अन-नय्यारा --- अबू बक्र बिन अली बिन मुहम्मद अल-हद्दाद अल-यमनी --- 800 65. अल-जरह व अत-तादील फ़ी रिजाल अल-हदीस --- यहया बिन मईन अल-बग़दादी --- 233 66. अल-जामिअ अस-सग़ीर फ़िल हदीस --- अल्लामा जलालुद्दीन अब्दुर्रहमान बिन अबी बक्र अस-सुयूती --- 911

पृष्ठ 725 का 736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم ۴۲۔ التفسیر لنیشابوری --- نظام الدین الحسن بن محمد بن حسین النیشابوری --- ۷۲۸ ۴۳۔ تقریب القریب --- ابوزکریا یحیی بن شرف النووی --- ۹۱۱ ۴۴۔ التحریر والتجبیر --- محمد بن محمد بن امیر الحاج الحلبی --- ۸۷۹ ۴۵۔ التیسیر للمناوی --- عبدالرؤف المناوی --- ۱۰۳۱ ۴۶۔ تبیین الحقائق --- فخر الدین عثمان بن علی الزیلعی --- ۷۲۳ ۴۷۔ تقریب التھذیب --- شھاب الدین احمد بن علی ابن حجر العسقلانی --- ۸۵۲ ۴۸۔ تنویر المقیاس --- ابوطاھر محمد بن یعقوب الفیروزآبادی --- ۸۱۷ ۴۹۔ تنویر الابصار --- شمس الدین محمد بن عبد اللہ بن احمد التمر تاشی --- ۱۰۰۲ ۵۰۔ تعظیم الصلوٰۃ --- محمد بن نصر المروزی --- ۲۹۴ ۵۱۔ تاریخ بغداد --- ابوبکر احمد بن علی الخطیب البغدادی --- ۴۶۳ ۵۲۔ التوشیح فی شرح الھدایۃ --- عمر بن اسحق السراج الھندی --- ۷۷۳ ج ۵۳۔ جامع الترمذی --- ابوعیسیٰ محمد بن عیسی الترمذی --- ۲۷۹ ۵۴۔ جامع الرموز --- شمس الدین محمد الخراسانی --- ۹۶۲ ۵۵۔ الجامع الصحیح للبخاری --- امام محمد بن اسمعیل البخاری --- ۲۵۶ ۵۶۔ الجامع الصغیر فی الفقہ --- امام محمد بن حسن الشیبانی --- ۱۸۹ ۵۷۔ الجامع الصحیح لمسلم --- مسلم بن حجاج القشیری --- ۲۶۱ ۵۸۔ جامع الفقہ (جوامع الفقہ) --- ابونصر احمد بن محمد العتابی --- ۵۸۶ ۵۹۔ جامع الفصولین --- شیخ بدرالدین محمود بن اسرائیل بابن قاضی --- ۸۲۳ ۶۰۔ الجامع الکبیر --- ابی الحسن عبید اللہ بن حسین الکرخی --- ۳۴۰ ۶۱۔ جواہر الاخلاطی --- برہان الدین ابراہیم بن ابوبکر الاخلاطی --- . ۶۲۔ الجواھر الزکیۃ --- احمد بن ترکی بن احمد المالکی --- ۹۸۹ ۶۳۔ جواہر الفتاوٰی --- رکن الدین ابوبکر بن محمد بن ابی المفاخر --- ۵۶۵ ۶۴۔ الجوہرۃ النیرہ --- ابوبکر بن علی بن محمد الحداد الیمنی --- ۸۰۰ ۶۵۔ الجرح والتعدیل في رجال الحدیث --- یحییٰ بن معین البغدادی --- ۲۳۳ ۶۶۔ الجامع الصغیر فی الحدیث --- علامہ جلال الدین عبدالرحمن بن ابی بکر السیوطی --- ۹۱۱

Fatawa Razawiyya Volume 6

(Section: Haa - ح) 67. Hashiyah 'ala al-Durar — Muhammad bin Mustafa Abu Sa'id al-Khadimi — 1176 68. Hashiyah Ibn Shalabi 'ala al-Tabyin — Ahmad bin Muhammad al-Shalabi — 1021 69. Hashiyah 'ala al-Durar — 'Abd al-Halim bin Muhammad al-Rumi — 1013 70. Hashiyah 'ala al-Durar li-Mulla Khusraw — Qadi Muhammad bin Faramuz Mulla Khusraw — 885 71. Hashiyah 'ala al-Muqaddimah al-'Ashmawiyyah — 'Allamah Safati — " 72. Al-Hashiyah li-Sa'di Afandi — Sa'd Allah bin 'Isa al-Afandi — 945 73. Al-Hadiqah al-Nadiyyah Sharh Tariqah Muhammadiyyah — 'Abd al-Ghani al-Nabulsi — 1143 74. Al-Hawi al-Qudsi — Qadi Jamal al-Din Ahmad bin Muhammad Nuh al-Qabisi al-Hanafi — 600 75. Hasr al-Masa'il fi al-Furu' — Imam Abu al-Layth Nasr bin Muhammad al-Samarqandi al-Hanafi — 372 76. Hilyat al-Awliya — Abu Nu'aym Ahmad bin 'Abd Allah al-Asbahani — 430 77. Hilyat al-Mujalla — Muhammad bin Muhammad ibn Amir al-Hajj — 879

(Section: Khaa - خ) 78. Khizanat al-Riwayat — Qadi Jakan al-Hanafi — " 79. Khizanat al-Fatawa — Tahir bin Ahmad 'Abd al-Rashid al-Bukhari — 532 80. Khizanat al-Muftin — Husayn bin Muhammad al-Sam'ani al-Siqani — After 740 81. Khulasat al-Dala'il — Husam al-Din 'Ali bin Ahmad al-Makki al-Razi — 598 82. Khulasat al-Fatawa — Tahir bin Ahmad 'Abd al-Rashid al-Bukhari — 532 83. Khayrat al-Hisan — Shihab al-Din Ahmad bin Hajar al-Makki — 973

(Section: Daal - د) 84. Al-Dirayah fi Takhrij Ahadith al-Hidayah — Shihab al-Din Ahmad bin 'Ali ibn Hajar al-'Asqalani — 852 85. Al-Durar (Durar al-Hukkam) — Qadi Muhammad bin Faramuz Mulla Khusraw — 885 86. Al-Durr al-Mukhtar — 'Ala al-Din al-Haskafi — 1088 87. Al-Durr al-Nathir — 'Allamah Jalal al-Din 'Abd al-Rahman al-Suyuti — 911

फतावा रज़विया जिल्द छठी

(अनुभाग: हा - ح) 67. हाशिया अला अल-दुरर — मुहम्मद बिन मुस्तफा अबू सईद अल-खादिमी — 1176 68. हाशिया इब्न शलबी अला अत-तब्बीन — अहमद बिन मुहम्मद अल-शलबी — 1021 69. हाशिया अला अल-दुरर — अब्दुल हलीम बिन मुहम्मद अल-रूमी — 1013 70. हाशिया अला अल-दुरर लि-मुल्ला खुसरो — काजी मुहम्मद बिन फरामोज़ मुल्ला खुसरो — 885 71. हाशिया अला अल-मुक़द्दिमा अल-अशमाविया — अल्लामा सफती — " 72. अल-हाशिया ली-सादी अफंदी — साद अल्लाह बिन ईसा अल-अफंदी — 945 73. अल-हदीक़ा अन-नदिया शरह तरीक़ा मुहम्मदिया — अब्दुल गनी अन-नाबुलसी — 1143 74. अल-हावी अल-क़ुदसी — काजी जमालुद्दीन अहमद बिन मुहम्मद नूह अल-क़ाबिसी अल-हनाफ़ी — 600 75. हस्र अल-मसायल फी अल-फुरूअ — इमाम अबू अल-लैस नस्र बिन मुहम्मद अल-समरक़ंदी अल-हनाफ़ी — 372 76. हिल्यात अल-औलिया — अबू नुऐम अहमद बिन अब्दुल्लाह अल-असबहानी — 430 77. हिल्यात अल-मुजल्ला — मुहम्मद बिन मुहम्मद इब्न अमीर अल-हज — 879

(अनुभाग: खा - خ) 78. खिज़ानत अल-रिवायत — काजी जकन अल-हनाफी — " 79. खिज़ानत अल-फ़तावा — ताहिर बिन अहमद अब्दुर रशीद अल-बुखारी — 532 80. खिज़ानत अल-मुफ़्तीन — हुसैन बिन मुहम्मद अल-समानी अल-सीक़ानी — 740 के बाद 81. खुलासत अद-दलायल — हुसामुद्दीन अली बिन अहमद अल-मक्की अल-राज़ी — 598 82. खुलासत अल-फ़तावा — ताहिर बिन अहमद अब्दुर रशीद अल-बुखारी — 532 83. खैरात अल-हिसान — शहाबुद्दीन अहमद बिन हजर अल-मक्की — 973

(अनुभाग: दाल - د) 84. अद-दिराया फी तखरीज अहादीस अल-हिदाया — शहाबुद्दीन अहमद बिन अली इब्न हजर अल-असक़लानी — 852 85. अद-दुरर (दुरर अल-हुक्काम) — काजी मुहम्मद बिन फरामोज़ मुल्ला खुसरो — 885 86. अद-दुर अल-मुख्तार — अलाउद्दीन अल-हसकाफी — 1088 87. अद-दुर अन-नसीर — अल्लामा जलालुद्दीन अब्दुर्रहमान अल-सुयूती — 911

पृष्ठ 726/736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

ح ۶۷۔ حاشیۃ علی الدرر — محمد بن مصطفی ابو سعید الخادمی — ۱۱۷۶ ۶۸۔ حاشیۃ ابن شلبی علی التبیین — احمد بن محمد الشلبی — ۱۰۲۱ ۶۹۔ حاشیۃ علی الدرر — عبدالحلیم بن محمد الرومی — ۱۰۱۳ ۷۰۔ حاشیۃ علی الدرر لملا خسرو — قاضی محمد بن فراموز ملا خسرو — ۸۸۵ ۷۱۔ حاشیۃ علی المقدمۃ العشماویۃ — علامہ سفطی — ,, ۷۲۔ الحاشیۃ لسعدی آفندی — سعد اللہ بن عیسٰی الافندی — ۹۴۵ ۷۳۔ الحدیقۃ الندیۃ شرح طریقہ محمدیہ — عبدالغنی النابلسی — ۱۱۴۳ ۷۴۔ الحاوی القدسی — قاضی جمال الدین احمد بن محمد نوح القابسی الحنفی — ۶۰۰ ۷۵۔ حصر المسائل فی الفروع — امام ابواللیث نصر بن محمد السمرقندی الحنفی — ۳۷۲ ۷۶۔ حلیۃ الاولیاء — ابو نعیم احمد بن عبداللہ الاصبہانی — ۴۳۰ ۷۷۔ حلیۃ المجلی — محمد بن محمد ابن امیر الحاج — ۸۷۹

خ ۷۸۔ خزانۃ الروایات — قاضی جکن الحنفی — ,, ۷۹۔ خزانۃ الفتاوٰی — طاہر بن احمد عبدالرشید البخاری — ۵۳۲ ۸۰۔ خزانۃ المفتین — حسین بن محمد السمعانی السیقانی — ۷۴۰ کے بعد ۸۱۔ خلاصۃ الدلائل — حسام الدین علی بن احمد المکی الرازی — ۵۹۸ ۸۲۔ خلاصۃ الفتاوٰی — طاہر بن احمد عبدالرشید البخاری — ۵۳۲ ۸۳۔ خیرات الحسان — شہاب الدین احمد بن حجر المکی — ۹۷۳

د ۸۴۔ الدرایۃ فی تخریج احادیث الہدایۃ — شہاب الدین احمد بن علی ابن حجر العسقلانی — ۸۵۲ ۸۵۔ الدرر (درر الحکام) — قاضی محمد بن فراموز ملا خسرو — ۸۸۵ ۸۶۔ الدر المختار — علاء الدین الحصکفی — ۱۰۸۸ ۸۷۔ الدر النثیر — علامہ جلال الدین عبدالرحمن السیوطی — ۹۱۱

Fatawa Rizvia Volume Six

Section Zal (ذ) 88 - Zakhirat al-Uqba | Yusuf bin Junaid al-Jalabi (Chelebi) | 905 89 - Zakhirat al-Fatawa | Burhan al-Din Mahmud bin Ahmad | 616 90 - Dhamm al-Ghibah | Abdullah bin Muhammad ibn Abi al-Dunya al-Qurashi | 281

Section Ra (ر) 91 - Al-Rahmaniyah | - | - 92 - Radd al-Muhtar | Muhammad Amin ibn Abidin al-Shami | 1252 93 - Rahamat al-Ummah fi Ikhtilaf al-Aimmah | Abu Abdullah Muhammad bin Abdur Rahman al-Dimashqi | 781 94 - Ragha'ib al-Qur'an | Abu Marwan Abdul Malik bin Habib al-Sulami (al-Qurtubi) | 239 95 - Raf' al-Ghisha fi Waqt al-Asr wa al-Isha | Sheikh Zain al-Din ibn Nujaym | 970 96 - Radd 'ala al-Jahmiyyah | Uthman bin Sa'id al-Darimi | 280

Section Za (ز) 97 - Zad al-Fuqaha | Sheikh al-Islam Muhammad bin Ahmad al-Isbijabi (d. late 6th century) | 861 98 - Zad al-Faqir | Kamal al-Din Muhammad bin Abdul Wahid known as Ibn al-Humam | approx. 1012 99 - Zawajir al-Jawahir | Muhammad bin Muhammad al-Timurtashi | 189 100 - Ziyadat | Imam Muhammad bin Hasan al-Shaybani | -

Section Seen (س) 101 - Al-Siraj al-Wahhaj | Abu Bakr bin Ali bin Muhammad al-Haddad al-Yamani | 800 102 - Al-Sunan li-Ibn Majah | Abu Abdullah Muhammad bin Yazid ibn Majah | 273 103 - Al-Sunan li-Ibn Mansur | Sa'id bin Mansur al-Khorasani | 273 104 - Al-Sunan li-Abi Dawud | Abu Dawud Sulaiman bin Ash'ath | 275 105 - Al-Sunan li-Nasa'i | Abu Abdur Rahman Ahmad bin Shu'ayb al-Nasa'i | 303 106 - Al-Sunan li-Bayhaqi | Abu Bakr Ahmad bin Husayn bin Ali al-Bayhaqi | 458

Page 727 of 736

फ़तावा रज़विया छठा खंड

अनुभाग ज़ (ذ) ८८ - ज़खीरत-उल-उक़बा | यूसुफ़ बिन जुनैद अल-जलबी (चलबी) | ९०५ ८९ - ज़खीरत-उल-फ़तावा | बुरहान-उद-दीन महमूद बिन अहमद | ६१६ ९० - ज़म्म-उल-ग़ीबत | अब्दुल्ला बिन मुहम्मद इब्न अबी-उद-दुनिया अल-कुरशी | २८१

अनुभाग र (ر) ९१ - अल-रहनिया | - | - ९२ - रद्द-उल-मुख्तार | मुहम्मद अमीन इब्न आबिदीन अल-शामी | १२५२ ९३ - रहमत-उल-उम्मत फ़ी इख़्तिलाफ़-उल-अइम्मत | अबू अब्दुल्ला मुहम्मद बिन अब्दुर रहमान अल-दमश्की | ७८१ ९४ - रग़ाइब-उल-क़ुरान | अबू मरवान अब्दुल मलिक बिन हबीब अल-सुलमी (अल-कुर्तुबी) | २३९ ९५ - रफ़-उल-ग़िशा फ़ी वक़्त-इल-अस्र वल-इशा | शेख ज़ैन-उद-दीन इब्न नुजैम | १७० ९६ - रद्द अलल जहमिया | उस्मान बिन सईद अल-दारिमी | २८०

अनुभाग ज़ (ز) ९७ - ज़ाद-उल-फ़ुक़हा | शैखुल इस्लाम मुहम्मद बिन अहमद अल-असबीजाबी (मृत्यु छठी शताब्दी के अंत में) | ८६१ ९८ - ज़ाद-उल-फक़ीर | कमाल-उद-दीन मुहम्मद बिन अब्दुल वाहिद, जो इब्न अल-हुमाम के नाम से प्रसिद्ध हैं | लगभग १०१२ ९९ - ज़वाजिर-उल-जवाहिर | मुहम्मद बिन मुहम्मद अल-तिमरताशी | १८९ १०० - ज़ियादात | इमाम मुहम्मद बिन हसन अल-शैबानी | -

अनुभाग स (س) १०१ - अल-सिराज-उल-वहाज | अबू बक्र बिन अली बिन मुहम्मद अल-हद्दाद अल-यमनी | ८०० १०२ - अल-सुनन लि-इब्न माजा | अबू अब्दुल्ला मुहम्मद बिन यज़ीद इब्न माजा | २७३ १०३ - अल-सुनन लि-इब्न मंसूर | सईद बिन मंसूर अल-ख़ुरासानी | २७३ १०४ - अल-सुनन लि-अबी दाऊद | अबू दाऊद सुलैमान बिन अशअ़स | २७५ १०५ - अल-सुनन लि-नसाई | अबू अब्दुर रहमान अहमद बिन शुऐब अल-नसाई | ३०३ १०६ - अल-सुनन लि-बैहक़ी | अबू बक्र अहमद बिन हुसैन बिन अली अल-बैहक़ी | ४५८

पृष्ठ 727 / 736

ذ ۸۸- ذخیرۃ العقبیٰ | یوسف بن جنید الجلبی (چلبی) | ۹۰۵ ۸۹- ذخیرۃ الفتاوٰی | برہان الدین محمود بن احمد | ۶۱۶ ۹۰- ذم الغیبۃ | عبداللہ بن محمد ابن ابی الدنیا القرشی | ۲۸۱

ر ۹۱- الرحمانیۃ | | ۹۲- رد المحتار | محمد امین ابن عابدین الشامی | ۱۲۵۲ ۹۳- رحمۃ الامۃ فی اختلاف الائمۃ | ابو عبداللہ محمد بن عبدالرحمن الدمشقی | ۷۸۱ ۹۴- رغائب القرآن | ابو مروان عبدالملک بن حبیب السلمی (القرطبی) | ۲۳۹ ۹۵- رفع الغشاء فی وقت العصر والعشاء | شیخ زین الدین ابن نجیم | ۹۷۰ ۹۶- رد علی الجہمیۃ | عثمان بن سعید الدارمی | ۲۸۰

ز ۹۷- زاد الفقہاء | شیخ الاسلام محمد بن احمد الاسبیجابی المتوفی اواخر القرن السادس | ۸۶۱ ۹۸- زاد الفقیر | کمال الدین محمد بن عبدالواحد المعروف بابن الہمام | تقریباً ۱۰۱۲ ۹۹- زواجر الجواہر | محمد بن محمد التمر تاشی | ۱۸۹ ۱۰۰- زیادات | امام محمد بن حسن الشیبانی |

س ۱۰۱- السراج الوہاج | ابوبکر بن علی بن محمد الحداد الیمنی | ۸۰۰ ۱۰۲- السنن لابن ماجۃ | ابو عبداللہ محمد بن یزید ابن ماجۃ | ۲۷۳ ۱۰۳- السنن لابن منصور | سعید بن منصور الخراسانی | ۲۷۳ ۱۰۴- السنن لابی داؤد | ابو داؤد سلیمان بن اشعث | ۲۷۵ ۱۰۵- السنن للنسائی | ابو عبدالرحمن احمد بن شعیب النسائی | ۳۰۳ ۱۰۶- السنن للبیہقی | ابو بکر احمد بن حسین بن علی البیہقی | ۴۵۸

Fatawa-e-Razviyah Volume 6

107 - Sunan al-Daraqutni - Ali Umar al-Daraqutni - 385 108 - Sunan al-Darimi - Abdullah bin Abdul Rahman al-Darimi - 255

[Section] Sheen

109 - Al-Shafi - Shams al-A'immah Abdullah bin Mahmud al-Kardari 110 - Sharh al-Arba'in li'l-Nawawi - Shihab al-Din Ahmad bin Hajar al-Makki - 973 111 - Sharh al-Arba'in li'l-Nawawi - Ibrahim ibn Atiyyah al-Maliki - 1106 112 - Sharh al-Arba'in li'l-Nawawi - Allamah Ahmad bin al-Hijazi - 978 113 - Sharh al-Ashbah wa'l-Naza'ir - Ibrahim bin Hussain bin Ahmad bin Muhammad ibn al-Biri - 1099 114 - Sharh al-Jami' al-Saghir - Imam Qazi Khan Hussain bin Mansur - 592 115 - Sharh al-Durar - Sheikh Ismail bin Abdul Ghani al-Nabulsi - 1062 116 - Sharh Safar al-Sa'adah - Sheikh Abdul Haq Muhaddith Dehlavi - 1052 117 - Sharh al-Sunnah - Hussain bin Mansur al-Baghawi - 516 118 - Sharh Shir'at al-Islam - Yaqub bin Sidi Ali Zadah - 931 119 - Sharh Mukhtasar al-Tahawi li'l-Asibijabi - Abu Nasr Ahmad bin Mansur al-Hanafi al-Asibijabi - 480 120 - Sharh al-Gharibayn 121 - Sharh al-Muslim li'l-Nawawi - Sheikh Abu Zakariya Yahya bin Sharaf al-Nawawi - 676 122 - Sharh Ma'ani al-Athar - Abu Ja'far Ahmad bin Muhammad al-Tahawi - 321 123 - Sharh al-Manzumah li-ibn Wahban - Abdul Barr bin Muhammad ibn Shihnah - 921 124 - Sharh al-Manzumah fi Rasm al-Mufti - Muhammad Amin ibn Abidin al-Shami - 1252 125 - Sharh al-Munyat al-Saghir - Sheikh Muhammad Ibrahim al-Halabi - 956 126 - Sharh Mawahib al-Ladunniyyah - Allamah Muhammad bin Abdul Baqi al-Zurqani - 1122 127 - Sharh Muwatta Imam Malik - Allamah Muhammad bin Abdul Baqi al-Zurqani - 1122 128 - Sharh al-Muhadhdhab li'l-Nawawi - Sheikh Abu Zakariya Yahya bin Sharaf al-Nawawi - 676 129 - Sharh al-Nuqayah - Maulana Abdul Ali al-Barjandi - 932 130 - Sharh al-Wiqayah - Sadr al-Shari'ah Ubaydullah bin Mas'ud - 747

फ़तावा रज़विया जिल्द छठी

107 - अल-सुनन अल-दारकुतनी - अली उमर अल-दारकुतनी - 385 108 - अल-सुनन अल-दारिमी - अब्दुल्ला बिन अब्दुल रहमान अल-दारिमी - 255

[अनुभाग] शीन

109 - अल-शाफ़ी - शम्स अल-अइम्मा अब्दुल्ला बिन महमूद अल-करदरी 110 - शरह अल-अरबईन लिल-नवावी - शहाब अल-दीन अहमद बिन हजर अल-मक्की - 973 111 - शरह अल-अरबईन लिल-नवावी - इब्राहिम इब्न अतिया अल-मालिकी - 1106 112 - शरह अल-अरबईन लिल-नवावी - अल्लामा अहमद बिन अल-हिजाज़ी - 978 113 - शरह अल-अशबाह वल-नज़ाइर - इब्राहिम बिन हुसैन बिन अहमद बिन मोहम्मद इब्न अल-बीरी - 1099 114 - शरह अल-जामि अल-सगीर - इमाम काज़ी खान हुसैन बिन मंसूर - 592 115 - शरह अल-दुरर - शेख इस्माइल बिन अब्दुल गनी अल-नाबुलसी - 1062 116 - शरह सफर अल-सा'आदा - शेख अब्दुल हक मुहद्दिस देहलवी - 1052 117 - शरह अल-सुन्ना - हुसैन बिन मंसूर अल-बग़वी - 516 118 - शरह शिरअत अल-इस्लाम - याकूब बिन सीदी अली जादा - 931 119 - शरह मुख़्तसर अल-तहावी लिल-असीबीजाबी - अबू नसर अहमद बिन मंसूर अल-हनफी अल-असीबीजाबी - 480 120 - शरह अल-गरीबैन 121 - शरह अल-मुस्लिम लिल-नवावी - शेख अबू ज़करिया यहया बिन शरफ़ अल-नवावी - 676 122 - शरह मा'आनी अल-आसार - अबू जाफर अहमद बिन मोहम्मद अल-तहावी - 321 123 - शरह अल-मंज़ुमा ली-इब्न वहबान - अब्दुल बर्र बिन मोहम्मद इब्न शिहना - 921 124 - शरह अल-मंज़ुमा फ़ी रस्म अल-मुफ्ती - मोहम्मद अमीन इब्न आबिदीन अल-शामी - 1252 125 - शरह अल-मुनियत अल-सगीर - शेख मोहम्मद इब्राहिम अल-हलबी - 956 126 - शरह मवाहिब अल-लदुन्निया - अल्लामा मोहम्मद बिन अब्दुल बाकी अल-ज़ुरकानी - 1122 127 - शरह मुवत्ता इमाम मालिक - अल्लामा मोहम्मद बिन अब्दुल बाकी अल-ज़ुरकानी - 1122 128 - शरह अल-मुहज़्ज़ब लिल-नवावी - शेख अबू ज़करिया यहया बिन शरफ़ अल-नवावी - 676 129 - शरह अल-नुकाया - मौलाना अब्दुल अली अल-बरजंदी - 932 130 - शरह अल-विकाया - सद्र अल-शरिया उबैदुल्लाह बिन मसूद - 747

पृष्ठ 728 / 736

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

۱۰۷۔ السنن الدارقطنی - علی عمر الدارقطنی - ۳۸۵ ۱۰۸۔ السنن الدارمی - عبد اللہ بن عبدالرحمن الدارمی - ۲۵۵

ش

۱۰۹۔ الشافی - شمس الائمہ عبد اللہ بن محمود الکردری ۱۱۰۔ شرح الاربعین للنووی - شہاب الدین احمد بن حجر المکی - ۹۷۳ ۱۱۱۔ شرح الاربعین للنووی - ابراہیم ابن عطیہ المالکی - ۱۱۰۶ ۱۱۲۔ شرح الاربعین للنووی - علامہ احمد بن الحجازی - ۹۷۸ ۱۱۳۔ شرح الاشباہ والنظائر - ابراہیم بن حسین بن احمد بن محمد ابن البیری - ۱۰۹۹ ۱۱۴۔ شرح الجامع الصغیر - امام قاضی خان حسین بن منصور - ۵۹۲ ۱۱۵۔ شرح الدرر - شیخ اسمعیل بن عبد الغنی النابلسی - ۱۰۶۲ ۱۱۶۔ شرح سفر السعادۃ - شیخ عبد الحق المحدث الدہلوی - ۱۰۵۲ ۱۱۷۔ شرح السنۃ - حسین بن منصور البغوی - ۵۱۶ ۱۱۸۔ شرح شرعۃ الاسلام - یعقوب بن سیدی علی زادہ - ۹۳۱ ۱۱۹۔ شرح مختصر الطحاوی للاسیبیجابی - ابو نصر احمد بن منصور الحنفی الاسیبیجابی - ۴۸۰ ۱۲۰۔ شرح الغریبین ۱۲۱۔ شرح المسلم للنووی - شیخ ابوزکریا یحیٰی بن شرف النووی - ۶۷۶ ۱۲۲۔ شرح معانی الآثار - ابو جعفر احمد بن محمد الطحاوی - ۳۲۱ ۱۲۳۔ شرح المنظومۃ لابن وہبان - عبد البر بن محمد ابن شحنہ - ۹۲۱ ۱۲۴۔ شرح المنظومۃ فی رسم المفتی - محمد امین ابن عابدین الشامی - ۱۲۵۲ ۱۲۵۔ شرح المنیۃ الصغیر - شیخ محمد ابراہیم الحلبی - ۹۵۶ ۱۲۶۔ شرح مواہب اللدنیۃ - علامہ محمد بن عبد الباقی الزرقانی - ۱۱۲۲ ۱۲۷۔ شرح مؤطا امام مالک - علامہ محمد بن عبد الباقی الزرقانی - ۱۱۲۲ ۱۲۸۔ شرح المہذب للنووی - شیخ ابو زکریا یحیٰی بن شرف النووی - ۶۷۶ ۱۲۹۔ شرح النقایہ - مولانا عبد العلی البر جندی - ۹۳۲ ۱۳۰۔ شرح الوقایۃ - صدر الشریعۃ عبید اللہ بن مسعود - ۷۴۷

Fatawa Rizvia Volume Six 131- Sharh al-Hidayah - Muhammad bin Muhammad bin Muhammad Ibn Shuhna - 890 132- Shirat al-Islam - Imam al-Islam Muhammad bin Abi Bakr - 573 133- Shu'ab al-Iman - Abu Bakr Ahmad bin Husayn bin Ali al-Bayhaqi - 258 134- Sharh al-Jami' al-Saghir - Ahmad bin Mansur al-Hanafi al-Isbijabi - 280 135- Sharh al-Jami' al-Saghir - Umar bin Abd al-Aziz al-Hanafi - 536 (Sad) 136- Sihah al-Jawhari - Ismail bin Hammad al-Jawhari - 393 137- Sahih Ibn Hibban - Muhammad bin Hibban - 352 138- Sahih Ibn Khuzaymah - Muhammad bin Ishaq Ibn Khuzaymah - 311 139- Al-Surah - Abu Fazl Muhammad bin Umar bin Khalid al-Qurashi - Approx. 690 (Ta) 140- Al-Tahtawi 'ala al-Durr - Sayyid Ahmad al-Tahtawi - 1302 141- Al-Tahtawi 'ala al-Maraqi - Sayyid Ahmad al-Tahtawi - 1302 142- Al-Tariqah al-Muhammadiyyah - Muhammad bin Pir Ali al-ma'ruf bi-Birgili - 981 143- Tilbat al-Talabah - Najm al-Din Umar bin Muhammad al-Nasafi - 537 (Ayn) 144- Umdat al-Qari - Allama Badr al-Din Abi Muhammad Mahmud bin Ahmad al-Ayni - 855 145- Al-Inayah - Akmal al-Din Muhammad bin Muhammad al-Babarti - 786 146- Inayat al-Qadi - Shihab al-Din al-Khafaji - 1069 147- Uyun al-Masa'il - Abu al-Layth Nasr bin Muhammad al-Samarqandi - 378 148- Uqud al-Durriyah - Muhammad Amin Ibn Abidin al-Shami - 1252 149- Uddah - Kamal al-Din Muhammad bin Ahmad al-shahir bi-Tashkubri - 1030 150- ...

फ़तावा रज़विया खंड छह 131- शरह अल-हिदाया - मुहम्मद बिन मुहम्मद बिन मुहम्मद इब्न शुहना - 890 132- शिरत अल-इस्लाम - इमाम अल-इस्लाम मुहम्मद बिन अबी बक्र - 573 133- शुअब अल-ईमान - अबू बक्र अहमद बिन हुसैन बिन अली अल-बैहकी - 258 134- शरह अल-जामि अल-सगीर - अहमद बिन मंसूर अल-हनफी अल-इस्बिजाबी - 280 135- शरह अल-जामि अल-सगीर - उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ अल-हनफी - 536 (सद) 136- सिहाह अल-जौहरी - इस्माइल बिन हम्माद अल-जौहरी - 393 137- सहीह इब्न हिब्बान - मुहम्मद बिन हिब्बान - 352 138- सहीह इब्न खुज़ैमा - मुहम्मद बिन इसहाक इब्न खुज़ैमा - 311 139- अल-सुराह - अबू फज़ल मुहम्मद बिन उमर बिन खालिद अल-कुरैशी - लगभग 690 (त) 140- अल-तहतावी अला अद-दुर्र - सैयद अहमद अल-तहतावी - 1302 141- अल-तहतावी अला अल-मराकी - सैयद अहमद अल-तहतावी - 1302 142- अल-तरीक़ा अल-मुहम्मदिया - मुहम्मद बिन पीर अली अल-मारूफ बि-बिरगिली - 981 143- तिलबत अल-तलबा - नज्म अल-दीन उमर बिन मुहम्मद अल-नसफी - 537 (ऐन) 144- उम्दत अल-क़ारी - अल्लामा बद्र अल-दीन अबी मुहम्मद महमूद बिन अहमद अल-ऐनी - 855 145- अल-इनाया - अकमल अल-दीन मुहम्मद बिन मुहम्मद अल-बाबरती - 786 146- इनायत अल-क़ाज़ी - शिहाब अल-दीन अल-खफाजी - 1069 147- उयून अल-मसाइल - अबू अल-लैथ नस्र बिन मुहम्मद अल-समरकंदी - 378 148- उकूद अद-दुर्रिया - मुहम्मद अमीन इब्न आबिदीन अल-शामी - 1252 149- उद्दा - कमाल अल-दीन मुहम्मद बिन अहमद अल-शहीर बि-ताशकूबरी - 1030 150- ...

فتاوی رضویہ جلد ششم ۱۳۱- شرح الہدایہ - محمد بن محمد بن محمد ابن شحنہ - ۸۹۰ ۱۳۲- شرعۃ الاسلام - امام الاسلام محمد بن ابی بکر - ۵۷۳ ۱۳۳- شعب الایمان - ابوبکر احمد بن حسین بن علی البیہقی - ۲۵۸ ۱۳۴- شرح الجامع الصغیر - احمد بن منصور الحنفی الاسبیجابی - ۲۸۰ ۱۳۵- شرح الجامع الصغیر - عمر بن عبدالعزیز الحنفی - ۵۳۶ ص ۱۳۶- صحاح الجوہری - اسماعیل بن حماد الجوہری - ۳۹۳ ۱۳۷- صحیح ابن حبان - محمد بن حبان - ۳۵۲ ۱۳۸- صحیح ابن خزیمہ - محمد بن اسحاق ابن خزیمہ - ۳۱۱ ۱۳۹- الصراح - ابوفضل محمد بن عمر بن خالد القرشی - تقریباً ۶۹۰ ط ۱۴۰- الطحطاوی علی الدر - سید احمد الطحطاوی - ۱۳۰۲ ۱۴۱- الطحطاوی علی المراقی - سید احمد الطحطاوی - ۱۳۰۲ ۱۴۲- الطریقۃ المحمدیۃ - محمد بن پیر علی المعروف ببر کلی - ۹۸۱ ۱۴۳- طلبۃ الطلبۃ - نجم الدین عمر بن محمد النسفی - ۵۳۷ ع ۱۴۴- عمدۃ القاری - علامہ بدر الدین ابی محمد محمود بن احمد العینی - ۸۵۵ ۱۴۵- العنایۃ - اکمل الدین محمد بن محمد البابرتی - ۷۸۶ ۱۴۶- عنایۃ القاضی - شہاب الدین الخفاجی - ۱۰۶۹ ۱۴۷- عیون المسائل - ابواللیث نصر بن محمد السمرقندی - ۳۷۸ ۱۴۸- عقودالدریۃ - محمدامین ابن عابدین الشامی - ۱۲۵۲ ۱۴۹- عدۃ - کمال الدین محمد بن احمد الشہیر بطاشکبری - ۱۰۳۰ ۱۵۰- ...

Volume VI Fatawa Rizvia

Section: Ghayn (غ) 151. Ghayat al-Bayan - Shaykh Qawam al-Din Amir Katib ibn Amir al-Itqani - 758 152. Ghurar al-Ahkam - Qadi Muhammad bin Faramuz Mulla Khusraw - 885 153. Gharib al-Hadith - Abu al-Hasan Ali bin Mughira al-Baghdadi known as al-Athram - 230 154. Ghamz 'Uyun al-Basa'ir - Ahmad bin Muhammad al-Hamawi al-Hanafi - 1098 155. Ghunyat Dhu al-Ahkam - Hasan bin 'Ammar bin 'Ali al-Shurunbulali - 1069 156. Ghunyat al-Mustamli - Muhammad Ibrahim bin Muhammad al-Halabi - 956

Section: Fa (ف) 157. Fath al-Bari Sharh al-Bukhari - Shahab al-Din Ahmad bin 'Ali ibn Hajar al-'Asqalani - 852 158. Fath al-Qadir - Kamal al-Din Muhammad bin 'Abd al-Wahid ibn al-Humam - 861 159. Fatawa al-Nasafi - Imam Najm al-Din al-Nasafi - 537 160. Fatawa Bazaziya - Muhammad bin Muhammad bin Shahab ibn Bazzaz - 827 161. Fatawa Hujjah 162. Fatawa Khayriyya - Allama Khayr al-Din bin Ahmad bin 'Ali al-Ramli - 1081 163. Fatawa Sirajiyya - Siraj al-Din 'Ali bin 'Uthman al-Ushi - 575 164. Fatawa 'Ata bin Hamza - 'Ata bin Hamza al-Sughdi 165. Fatawa Ghiyathiyya - Dawud bin Yusuf al-Khatib al-Hanafi 166. Fatawa Qadi Khan - Hasan bin Mansur Qadi Khan - 592 167. Fatawa Hindiyya - Jam'iyyat 'Ulama Awrangzeb 'Alamgir 168. Fatawa Zahiriyya - Zahir al-Din Abu Bakr Muhammad bin Ahmad - 619 169. Fatawa al-Lu'lu' al-Wajih - 'Abd al-Rashid bin Abi Hanifa al-Walwaliji - 540 170. Fatawa al-Kubra - Imam Sadr al-Shahid Husam al-Din 'Umar bin 'Abd al-'Aziz - 536 171. Fiqh al-Akbar - Al-Imam al-A'zam Abi Hanifa Nu'man bin Thabit al-Kufi - 150 172. Fath al-Mu'in - Sayyid Muhammad Abi al-Sa'ud al-Hanafi

Page 730 of 736

जिल्द षष्ठम (खंड 6) फ़तावा रज़विया

भाग: ग़ैन (غ) 151. ग़ायत अल-बयान - शेख़ क़वाम अल-दीन अमीर कातिब इब्न अमीर अल-इत़क़ानी - 758 152. ग़ुरर अल-अहकाम - क़ाज़ी मुहम्मद बिन फ़रामुज़ मुल्ला खुसरो - 885 153. ग़रीब अल-हदीस - अबुल हसन अली बिन मुग़ीरा अल-बग़दादी अल-मारूफ़ बा-अतरम - 230 154. ग़म्ज़ उयून अल-बसायर - अहमद बिन मुहम्मद अल-हमवी अल-हनफ़ी - 1098 155. ग़ुनियत ज़ुल-अहकाम - हसन बिन अम्मार बिन अली अल-शुरुनबुलाली - 1069 156. ग़ुनियत अल-मुस्तमली - मुहम्मद इब्राहिम बिन मुहम्मद अल-हलबी - 956

भाग: फ़ा (ف) 157. फ़तह अल-बारी शरह अल-बुख़ारी - शहाब अल-दीन अहमद बिन अली इब्न हजर अल-अस्क़लानी - 852 158. फ़तह अल-क़दीर - कमाल अल-दीन मुहम्मद बिन अब्दुल वाहिद इब्न अल-हुमाम - 861 159. फ़तावा अल-नस्फ़ी - इमाम नज्म अल-दीन अल-नस्फ़ी - 537 160. फ़तावा बज़ाज़िया - मुहम्मद बिन मुहम्मद बिन शहाब इब्न बज़ाज़ - 827 161. फ़तावा हुज्जा 162. फ़तावा खैरिया - अल्लामा खैर अल-दीन बिन अहमद बिन अली अल-रमली - 1081 163. फ़तावा सिराजिया - सिराज अल-दीन अली बिन उस्मान अल-ओशी - 575 164. फ़तावा अता बिन हमज़ा - अता बिन हमज़ा अल-सुग़दी 165. फ़तावा ग़ियासिया - दाऊद बिन यूसुफ़ अल-खतीब अल-हनफ़ी 166. फ़तावा क़ाज़ी ख़ान - हसन बिन मन्सूर क़ाज़ी ख़ान - 592 167. फ़तावा हिन्दिया - जमीअत उलेमा औरंगज़ेब आलमगीर 168. फ़तावा ज़हीरिया - ज़हीर अल-दीन अबू बक्र मुहम्मद बिन अहमद - 619 169. फ़तावा अल-लुलु अल-वजीह - अब्दुल रशीद बिन अबी हनीफ़ा अल-वलवालिजी - 540 170. फ़तावा अल-कुबरा - इमाम सद्र अल-शहीद हुसाम अल-दीन उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ - 536 171. फ़िक़्ह अल-अकबर - अल-इमाम अल-आज़म अबी हनीफ़ा नोमान बिन साबित अल-कूफ़ी - 150 172. फ़तह अल-मुईन - सैयद मुहम्मद अबी अल-सऊद अल-हनफ़ी

पृष्ठ 730/736

جلد ششم فتاوٰی رضویہ

غ ۱۵۱۔ غایۃ البیان - شیخ قوام الدین امیر کاتب ابن امیر الاتقانی - ۷۵۸ ۱۵۲۔ غرر الاحکام - قاضی محمد بن فراموز ملا خسرو - ۸۸۵ ۱۵۳۔ غریب الحدیث - ابوالحسن علی بن مغیرہ البغدادی المعروف باثرم - ۲۳۰ ۱۵۴۔ غمز عیون البصائر - احمد بن محمد الحموی الحنفی - ۱۰۹۸ ۱۵۵۔ غنیۃ ذوالاحکام - حسن بن عمار بن علی الشرنبلالی - ۱۰۶۹ ۱۵۶۔ غنیۃ المستملی - محمد ابراہیم بن محمد الحلبی - ۹۵۶

ف ۱۵۷۔ فتح الباری شرح البخاری - شہاب الدین احمد بن علی ابن حجر العسقلانی - ۸۵۲ ۱۵۸۔ فتح القدیر - کمال الدین محمد بن عبد الواحد بابن الہمام - ۸۶۱ ۱۵۹۔ فتاوٰی النسفی - امام نجم الدین النسفی - ۵۳۷ ۱۶۰۔ فتاوٰی بزازیہ - محمد بن محمد بن شہاب ابن بزاز - ۸۲۷ ۱۶۱۔ فتاوٰی حجہ ۱۶۲۔ فتاوٰی خیریہ - علامہ خیر الدین بن احمد بن علی الرملی - ۱۰۸۱ ۱۶۳۔ فتاوٰی سراجیہ - سراج الدین علی بن عثمان الاوشی - ۵۷۵ ۱۶۴۔ فتاوٰی عطاء بن حمزہ - عطاء بن حمزہ السغدی ۱۶۵۔ فتاوٰی غیاثیہ - داؤد بن یوسف الخطیب الحنفی ۱۶۶۔ فتاوٰی قاضی خان - حسن بن منصور قاضی خان - ۵۹۲ ۱۶۷۔ فتاوٰی ہندیہ - جمعیت علماء اورنگ زیب عالمگیر ۱۶۸۔ فتاوٰی ظہیریہ - ظہیر الدین ابو بکر محمد بن احمد - ۶۱۹ ۱۶۹۔ فتاوٰی الولو الوجیہ - عبد الرشید بن ابی حنیفہ الوالوالجی - ۵۴۰ ۱۷۰۔ فتاوٰی الکبری - امام صدر الشہید حسام الدین عمر بن عبدالعزیز - ۵۳۶ ۱۷۱۔ فقہ الاکبر - الامام الاعظم ابی حنیفہ نعمان بن ثابت الکوفی - ۱۵۰ ۱۷۲۔ فتح المعین - سید محمد ابی السعود الحنفی

صفحہ ۷۳۰ از ۷۳۶

Volume Six

Fatawa Razawiyya

173- Fath al-Mu'in Sharh Qurrat al-Ain | Zain al-Din bin Ali bin Ahmad al-Shafi'i | 928 174- Al-Futuhat al-Makkiyya | Muhiy al-Din Muhammad bin Ali ibn Arabi | 638 175- Fawatih al-Rahmut | Abd al-Ali Muhammad bin Nizam al-Din al-Kanudi | 1225 176- Al-Fawa'id | Tamam bin Muhammad bin Abdullah al-Bajli | 414 177- Fawa'id al-Mukhasasah | Muhammad Amin ibn Abidin al-Shami | 1252 178- Fayd al-Qadir Sharh al-Jami' al-Saghir | Abd al-Ra'uf al-Munawi | 1031 179- Fawa'id Samawiyyah | Ismail bin Abdullah, known as Samawayh | 267

Q (ق)

180- Al-Qamus | Muhammad bin Yaqub al-Fayruzabadi | 817 181- Qurrat al-Ain | Allama Zain al-Din bin Ali al-Malibari | 928 182- Al-Qunyah | Najm al-Din Mukhtar bin Muhammad al-Zahidi | 658 183- Al-Quran

K (ک)

184- Al-Kafi fi al-Furu' | Hakim Shahid Muhammad bin Muhammad | 334 185- Al-Kamil li-Ibn Adi | Abu Ahmad Abdullah bin Adi | 365 186- Al-Kibrit al-Ahmar | Sayyid Abd al-Wahhab al-Sha'rani | 973 187- Kitab al-Athar | Imam Muhammad bin Hasan al-Shaybani | 189 188- Kitab al-Athar | Imam Abu Yusuf Yaqub bin Ibrahim al-Ansari | 182 189- Kitab al-Ilmam fi Adab Dukhul al-Hammam | Abu al-Mahasin Muhammad bin Ali 190- Kitab al-Siwak | Abu Nu'aym Ahmad bin Abdullah | 430 191- Kitab al-Hadiyyah li-Ibn Imad | Abd al-Rahman bin Muhammad Imad al-Din bin Muhammad al-Imadi | 1050 192- Kitab al-Tahur | Li-Abi Ubayd 193- Kitab al-Ilal ala Abwab al-Fiqh | Abu Muhammad Abd al-Rahman ibn Abi Hatim Muhammad al-Razi | 327 194- Kitab al-Asl | Imam Muhammad bin Hasan al-Shaybani | 189 195- Kitab al-Waswasah | Abu Bakr bin Abi Dawud

खंड छह

फ़तवा रज़विया

173- फ़तह अल-मुईन शरह कुर्रत अल-ऐन | ज़ैन अल-दीन बिन अली बिन अहमद अल-शाफ़ई | 928 174- अल-फ़ुतूहात अल-मक्किया | मुही अल-दीन मुहम्मद बिन अली इब्न अरबी | 638 175- फ़वातिह अल-रहमूत | अब्द अल-अली मुहम्मद बिन निज़ाम अल-दीन अल-कनूदी | 1225 176- अल-फ़वाइद | तमाम बिन मुहम्मद बिन अब्दुल्ला अल-बजली | 414 177- फ़वाइद अल-मुख़स्ससह | मुहम्मद अमीन इब्न आबिदीन अल-शामी | 1252 178- फ़ैज़ अल-क़दीर शरह अल-जामि अल-सग़ीर | अब्द अल-रऊफ़ अल-मुनावी | 1031 179- फ़वाइद समविया | इस्माइल बिन अब्दुल्ला, समवेह के नाम से विख्यात | 267

क़ (ق)

180- अल-क़ामूस | मुहम्मद बिन याकूब अल-फ़ैरूज़ाबादी | 817 181- कुर्रत अल-ऐन | अल्लामा ज़ैन अल-दीन बिन अली अल-मलीबारी | 928 182- अल-कुनिया | नज़्म अल-दीन मुख़्तार बिन मुहम्मद अल-ज़ाहीदी | 658 183- अल-क़ुरान

क (ک)

184- अल-काफ़ी फ़ी अल-फ़ुरू | हाकिम शहीद मुहम्मद बिन मुहम्मद | 334 185- अल-कामिल लि-इब्न अदी | अबू अहमद अब्दुल्ला बिन अदी | 365 186- अल-किबरीत अल-अहमर | सैयद अब्द अल-वहाब अल-शरानी | 973 187- किताब अल-आसार | इमाम मुहम्मद बिन हसन अल-शयबानी | 189 188- किताब अल-आसार | इमाम अबू यूसुफ याकूब बिन इब्राहिम अल-अंसारी | 182 189- किताब अल-इल्माम फ़ी आदाब दुख़ूल अल-हम्माम | अबू अल-महासीन मुहम्मद बिन अली 190- किताब अल-सिवाक | अबू नुऐम अहमद बिन अब्दुल्ला | 430 191- किताब अल-हदिया लि-इब्न इमाद | अब्द अल-रहमान बिन मुहम्मद इमाद अल-दीन बिन मुहम्मद अल-इमादी | 1050 192- किताब अल-तहूर | लि-अबी उबैद 193- किताब अल-इलाल अला अबवाब अल-फ़िक़्ह | अबू मुहम्मद अब्द अल-रहमान इब्न अबी हातिम मुहम्मद अल-राज़ी | 327 194- किताब अल-अस्ल | इमाम मुहम्मद बिन हसन अल-शयबानी | 189 195- किताब अल-वसवसा | अबू बक्र बिन अबी दाऊद

جلد ششم

فتاویٰ رضویہ

۱۷۳۔ فتح المعین شرح قرۃ العین | زین الدین بن علی بن احمد الشافعی | ۹۲۸ ۱۷۴۔ الفتوحات المکیۃ | محی الدین محمد بن علی ابن عربی | ۶۳۸ ۱۷۵۔ فواتح الرحموت | عبدالعلی محمد بن نظام الدین الکنودی | ۱۲۲۵ ۱۷۶۔ الفوائد | تمام بن محمد بن عبداللہ البجلی | ۴۱۴ ۱۷۷۔ فوائد المخصصۃ | محمد امین ابن عابدین الشامی | ۱۲۵۲ ۱۷۸۔ فیض القدیر شرح الجامع الصغیر | عبدالرؤف المناوی | ۱۰۳۱ ۱۷۹۔ فوائد سمویہ | اسمعیل بن عبداللہ الملقب بسمویہ | ۲۶۷

ق

۱۸۰۔ القاموس | محمد بن یعقوب الفیروزآبادی | ۸۱۷ ۱۸۱۔ قرۃ العین | علامہ زین الدین بن علی الملیباری | ۹۲۸ ۱۸۲۔ القنیۃ | نجم الدین مختار بن محمد الزاہدی | ۶۵۸ ۱۸۳۔ القرآن

ک

۱۸۴۔ الکافی فی الفروع | حاکم شہید محمد بن محمد | ۳۳۴ ۱۸۵۔ الکامل لابن عدی | ابواحمد عبداللہ بن عدی | ۳۶۵ ۱۸۶۔ الکبریت الاحمر | سید عبدالوہاب الشعرانی | ۹۷۳ ۱۸۷۔ کتاب الآثار | امام محمد بن حسن الشیبانی | ۱۸۹ ۱۸۸۔ کتاب الآثار | امام ابویوسف یعقوب بن ابراہیم الانصاری | ۱۸۲ ۱۸۹۔ کتاب الالمام فی آداب دخول الحمام | ابوالمحاسن محمد بن علی ۱۹۰۔ کتاب السواک | ابونعیم احمد بن عبداللہ | ۴۳۰ ۱۹۱۔ کتاب الھدیۃ لابن عماد | عبدالرحمن بن محمد عماد الدین بن محمد العمادی | ۱۰۵۰ ۱۹۲۔ کتاب الطہور | لابی عبید ۱۹۳۔ کتاب العلل علی ابواب الفقہ

| ابو محمد عبدالرحمن ابن ابی حاتم محمد الرازی | ۳۲۷ ۱۹۴۔ کتاب الاصل | امام محمد بن حسن الشیبانی | ۱۸۹ ۱۹۵۔ کتاب الوسوسۃ | ابوبکر بن ابی داؤد

Fatawa Razawiyya Volume 6

1. Kashf al-Asrar - 'Ala' al-Din 'Abd al-'Aziz bin Ahmad al-Bukhari - 730
2. Kashf al-Ramz - 'Allamah al-Maqdisi - 768
3. Kashf al-Astar 'an Zawa'id al-Bazzar - Amin al-Din 'Abd al-Wahhab bin Wahban al-Dimashqi - 975
4. Kanz al-'Ummal - 'Ala' al-Din 'Ali al-Muttaqi bin Husam al-Din - 800
5. Al-Kifayah - Jalal al-Din bin Shams al-Din al-Khwarazmi (approx.) - 973
6. Kaff al-Rua'a' - Shihab al-Din Ahmad bin Hajar al-Haytami - 710
7. Kanz al-Daqa'iq - 'Abd Allah bin Ahmad bin Mahmud - 405
8. Al-Kuna lil-Hakim - Abu 'Abd Allah al-Hakim - 786
9. Al-Kawakib al-Durari - Shams al-Din Muhammad bin Yusuf al-Shafi'i al-Kirmani - 352
10. Kitab al-Jarh wa al-Ta'dil - Muhammad bin Hibban al-Tamimi - 198
11. Kitab al-Maghazi - Yahya bin Sa'id al-Qattan - 281
12. Kitab al-Samt - 'Abd Allah bin Muhammad ibn Abi al-Dunya al-Qurashi - 180
13. Kitab al-Zuhd - 'Abd Allah bin Mubarak - 538
14. Al-Kashshaf 'an Haqa'iq al-Tanzil - Jar Allah Mahmud bin 'Umar al-Zamakhshari - 1052

L 210. Lama'at al-Tanqih - 'Allamah Shaykh 'Abd al-Haqq al-Muhaddith al-Dihlawi - 911 211. Laqt al-Marjan fi Akhbar al-Jann - 'Allamah Jalal al-Din 'Abd al-Rahman bin Muhammad al-Suyuti

M 212. Mabariq al-Azhar - Al-Shaykh 'Abd al-Latif bin 'Abd al-'Aziz Ibn al-Malik - 801 213. Mabsut Khwaharzadah - Bakr Khwaharzadah Muhammad bin Hasan al-Bukhari al-Hanafi - 483 214. Mabsut al-Sarakhsi - Shams al-A'immah Muhammad bin Ahmad al-Sarakhsi - 483 215. Majra al-Anhur Sharh Multaqa al-Abhur - Nur al-Din 'Ali al-Baqani - approx. 995 216. Majma' Bihar al-Anwar - Muhammad Tahir al-Siddiqi - 981 217. Majmu' al-Nawazil - Ahmad bin Musa bin 'Isa - 550 218. Majma' al-Anhur - Al-Shaykh 'Abd Allah bin Muhammad bin Sulayman known as Damad Afandi - 1078

फ़तावा रज़विया छठा भाग (जिल्द शशम)

1. कश्फ़ुल असरार - अलाउद्दीन अब्दुल अज़ीज़ बिन अहमद बुखारी - ७३०
2. कश्फ़ुर रम्ज़ - अल्लामा मुक़द्दसी - ७६८
3. कश्फ़ुल अस्तार अन ज़वाएदिल बज़्ज़ार - अमीनुल दीन अब्दुल वहाब बिन वहबान दमिश्क़ी - ९७५
4. कंज़ुल उम्माल - अलाउद्दीन अली मुत्तक़ी बिन हुसामुद्दीन - ८००
5. अल-किफ़ाया - जलालुद्दीन बिन शम्सुद्दीन ख्वारज़मी (लगभग) - ९७३
6. कफ़ुल रुआअ - शिहाबुद्दीन अहमद बिन हजर हेतमी - ७१०
7. कंज़ुद दक़ाएक - अब्दुल्लाह बिन अहमद बिन महमूद - ४०५
8. अल-कुना लिल-हाकिम - अबू अब्दुल्लाह हाकिम - ७८६
9. अल-कवाकिबुद दुरारी - शम्सुद्दीन मुहम्मद बिन यूसुफ शाफ़ई किरमानी - ३५२
10. किताबुल जरह वत तादील - मुहम्मद बिन हिब्बान तमीमी - १९८
11. किताबुल मगाज़ी - यहया बिन सईद क़त्तान - २८१
12. किताबुस सम्त - अब्दुल्लाह बिन मुहम्मद इब्न अबिद्दुनिया क़ुरैशी - १८०
13. किताबुज़ ज़ुहद - अब्दुल्लाह बिन मुबारक - ५३८
14. अल-कश्शाफ़ अन हक़ाएकित तंज़ील - जारुल्लाह महमूद बिन उमर ज़मखशरी - १०५२

ल २१०. लमआतित तनक़ीह - अल्लामा शेख अब्दुल हक़ मोहद्दिस देहलवी - ९११ २११. लक़्तुल मरजान फ़ी अख़बारिल जान - अल्लामा जलालुद्दीन अब्दुर रहमान बिन मुहम्मद सुयूती

म २१२. मबारेकुल अज़हार - अल-शेख अब्दुल लतीफ़ बिन अब्दुल अज़ीज़ इब्नुल मलिक - ८०१ २१३. मबसूत ख्वाहरज़ादा - बक्र ख्वाहरज़ादा मुहम्मद बिन हसन बुखारी हनफ़ी - ४८३ २१४. मबसूत सरखसी - शम्सुल अइम्मा मुहम्मद बिन अहमद सरखसी - ४८३ २१५. मजराल अनहुर शरह मुल्तक़ल अबहुर - नूरुद्दीन अली बाक़ानी - (लगभग ९९५) २१६. मजमा' बेहारुल अनवार - मुहम्मद ताहिर सिद्दीक़ी - ९८१ २१७. मजमू'अन नवाज़िल - अहमद बिन मूसा बिन ईसा - ५५० २१८. मजमउल अनहुर - अल-शेख अब्दुल्लाह बिन मुहम्मद बिन सुलेमान जो दामाद अफ़ंदी के नाम से जाने जाते हैं - १०७८

पृष्ठ ७३२ का ७३६

فتاوٰی رضویہ جلد ششم

۱۹۶۔ کشف الاسرار - علاء الدین عبدالعزیز بن احمد البخاری - ۷۳۰ ۱۹۷۔ کشف الرمز - علاۃ المقدسی - ۷۶۸ ۱۹۸۔ کشف الاستار عن زوائد البزار - امین الدین عبدالوہاب بن وہبان الدمشقی - ۹۷۵ ۱۹۹۔ کنزالعمال - علاء الدین علی المتقی بن حسام الدین - ۸۰۰ ۲۰۰۔ الکفایۃ - جلال الدین بن شمس الدین الخوارزمی تقریباً - ۹۷۳ ۲۰۱۔ کف الرعاع - شہاب الدین احمد بن حجر الہیتمی - ۷۱۰ ۲۰۲۔ کنزالدقائق - عبداللہ بن احمد بن محمود - ۴۰۵ ۲۰۳۔ الکنی للحاکم - ابوعبداللہ الحاکم - ۷۸۶ ۲۰۴۔ الکواکب الدراری - شمس الدین محمد بن یوسف الشافعی الکرمانی - ۳۵۲ ۲۰۵۔ کتاب الجرح والتعدیل - محمد بن حبان التمیمی - ۱۹۸ ۲۰۶۔ کتاب المغازی - یحییٰ بن سعید القطان - ۲۸۱ ۲۰۷۔ کتاب الصمت - عبداللہ بن محمد ابن ابی الدنیا القرشی - ۱۸۰ ۲۰۸۔ کتاب الزہد - عبداللہ بن مبارک - ۵۳۸ ۲۰۹۔ الکشاف عن حقائق التنزیل - جاراللہ محمود بن عمر الزمخشری - ۱۰۵۲

ل ۲۱۰۔ لمعات التنقیح - علامہ شیخ عبدالحق المحدث الدہلوی - ۹۱۱ ۲۱۱۔ لقط المرجان فی اخبار الجان - علامہ جلال الدین عبدالرحمن بن محمد السیوطی

م ۲۱۲۔ مبارق الازہار - الشیخ عبداللطیف بن عبدالعزیز ابن الملک - ۸۰۱ ۲۱۳۔ مبسوط خواہرزادہ - بکر خواہر زادہ محمد بن حسن البخاری الحنفی - ۴۸۳ ۲۱۴۔ مبسوط السرخسی - شمس الائمۃ محمد بن احمد السرخسی - ۴۸۳ ۲۱۵۔ مجری الانہر شرح ملتقی الابحر - نور الدین علی الباقانی - تقریباً ۹۹۵ ۲۱۶۔ مجمع بحار الانوار - محمد طاہر الصدیقی - ۹۸۱ ۲۱۷۔ مجموع النوازل - احمد بن موسیٰ بن عیسیٰ - ۵۵۰ ۲۱۸۔ مجمع الانہر - الشیخ عبداللہ بن محمد بن سلیمان المعروف بداماد آفندی - ۱۰۷۸

Fatawa Rizvia Volume 6

219- Al-Muhit al-Burhani — Imam Burhan al-Din Mahmud bin Taj al-Din — 616 220- Al-Muhit al-Radawi — Radi al-Din Muhammad bin Muhammad al-Sarakhsi — 71 221- Mukhtarat al-Nawazil — Burhan al-Din Ali bin Abi Bakr al-Marghinani — 593 222- Mukhtar al-Sihah — Muhammad bin Abi Bakr Abdul Qadir al-Razi — 660 223- Al-Mukhtarah fil-Hadith — Diya al-Din Muhammad bin Abdul Wahid — 643 224- Al-Mukhtasar — Allama Jalal al-Din al-Suyuti — 911 225- Madkhal al-Shar' al-Sharif — Ibn al-Hajj Abi Abdullah Muhammad bin Muhammad al-Abdari — 737 226- Maraqi al-Falah bi-Imdad al-Fattah Sharh Nur al-Idah — Hasan bin Ammar bin Ali al-Shurunbulali — 1069 227- Mirqat Sharh Mishkat — Ali bin Sultan Mulla Ali Qari — 1014 228- Mirqat al-Su'ud — Allama Jalal al-Din al-Suyuti — 911 229- Mustakhlis al-Haqa'iq — Ibrahim bin Muhammad al-Hanafi 230- Al-Mustadrak lil-Hakim — Abu Abdullah al-Hakim — 405 231- Al-Mustasfa — Hafiz al-Din Abdullah bin Ahmad al-Nasafi — 710 232- Musallam al-Thubut — Muhibbullah al-Bihari — 1119 233- Musnad Abi Dawud — Sulaiman bin Dawud al-Tayalisi — 202 234- Musnad Abi Ya'la — Ahmad bin Ali al-Mawsili — 307 235- Musnad Ishaq ibn Rahuyah — Hafiz Ishaq ibn Rahuyah — 238 236- Musnad al-Imam Ahmad bin Hanbal — Imam Ahmad bin Muhammad bin Hanbal — 241 237- Musnad al-Bazzar — Abu Bakr Ahmad bin Amr bin Abdul Khaliq al-Bazzar — 292 238- Musnad Abd bin Humayd — Abu Muhammad Abd bin Muhammad Humayd al-Kashi — 294 239- Musnad al-Firdaws — Shahrdar bin Shiruwayh al-Daylami — 558 240- Misbah al-Munir — Ahmad bin Muhammad bin Ali — 770 241- Al-Musaffa — Hafiz al-Din Abdullah bin Ahmad al-Nasafi — 710 242- Musannaf Ibn Abi Shaybah — Abu Bakr Abdullah bin Muhammad Ibn Abi Shaybah — 235 243- Musannaf Abdur Razzaq — Abu Bakr Abdur Razzaq bin Hammam al-San'ani — 211 244- Misbah al-Duja — Imam Hasan bin Muhammad al-Saghani al-Hindi — 650

Page 733 of 736

फ़तावा रज़विया जिल्द 6

219- अल-मुहीत अल-बुरहानी — इमाम बुरहान अल-दीन महमूद बिन ताज अल-दीन — 616 220- अल-मुहीत अल-रज़वी — रज़ी अल-दीन मुहम्मद बिन मुहम्मद अल-सरख़सी — 71 221- मुख़्तारात अल-नवाज़िल — बुरहान अल-दीन अली बिन अबी बक्र अल-मरग़ीनानी — 593 222- मुख़्तार अल-सिहाह — मुहम्मद बिन अबी बक्र अब्दुल क़ादिर अल-राज़ी — 660 223- अल-मुख़्तारा फ़िल-हदीस — ज़िया अल-दीन मुहम्मद बिन अब्दुल वाहिद — 643 224- अल-मुख़्तसर — अल्लामा जलाल अल-दीन अल-सुयूती — 911 225- मदख़ल अल-शर अल-शरीफ़ — इब्न अल-हाज अबी अब्दुल्लाह मुहम्मद बिन मुहम्मद अल-अब्दरी — 737 226- मराक़ी अल-फ़लाह बि-इमदाद अल-फ़त्ताह शरह नूर अल-ईज़ाह — हसन बिन अम्मार बिन अली अल-शुरुनबुलाली — 1069 227- मिरक़ात शरह मिश्क़ात — अली बिन सुल्तान मुल्ला अली क़ारी — 1014 228- मिरक़ात अल-सुऊद — अल्लामा जलाल अल-दीन अल-सुयूती — 911 229- मुस्तख़लिस अल-हक़ाएक़ — इब्राहिम बिन मुहम्मद अल-हनफ़ी 230- अल-मुस्तदरक लिल-हाकिम — अबू अब्दुल्लाह अल-हाकिम — 405 231- अल-मुस्तस्फ़ा — हाफ़िज़ अल-दीन अब्दुल्लाह बिन अहमद अल-नस्फ़ी — 710 232- मुसल्लम अल-सुबूत — मुहिबुल्लाह अल-बिहारी — 1119 233- मुसनद अबी दाऊद — सुलेमान बिन दाऊद अल-तयालिसी — 202 234- मुसनद अबी याला — अहमद बिन अली अल-मौसली — 307 235- मुसनद इसहाक़ इब्न राहुयह — हाफ़िज़ इसहाक़ इब्न राहुयह — 238 236- मुसनद अल-इमाम अहमद बिन हंबल — इमाम अहमद बिन मुहम्मद बिन हंबल — 241 237- मुसनद अल-बज़्ज़ार — अबू बक्र अहमद बिन अम्र बिन अब्दुल ख़ालिक़ अल-बज़्ज़ार — 292 238- मुसनद अब्द बिन हुमैद — अबू मुहम्मद अब्द बिन मुहम्मद हुमैद अल-कशी — 294 239- मुसनद अल-फ़िरदौस — शहरदार बिन शिरुवैह अल-दैलामी — 558 240- मिसबाह अल-मुनीर — अहमद बिन मुहम्मद बिन अली — 770 241- अल-मुसफ़्फ़ा — हाफ़िज़ अल-दीन अब्दुल्लाह बिन अहमद अल-नस्फ़ी — 710 242- मुसन्निफ़ इब्न अबी शैबा — अबू बक्र अब्दुल्लाह बिन मुहम्मद इब्न अबी शैबा — 235 243- मुसन्निफ़ अब्दुर रज़्ज़ाक़ — अबू बक्र अब्दुर रज़्ज़ाक़ बिन हम्माम अल-सनआनी — 211 244- मिसबाह अल-दुजा — इमाम हसन बिन मुहम्मद अल-सग़ानी अल-हिंदी — 650

पेज 733 ऑफ़ 736

فتاوی رضویہ جلد ششم

۶۱۶ --- ۲۱۹۔ المحیط البرہانی --- امام برہان الدین محمود بن تاج الدین ۷۱ --- ۲۲۰۔ المحیط الرضوی --- رضی الدین محمد بن محمد السرخسی ۵۹۳ --- ۲۲۱۔ مختارات النوازل --- برہان الدین علی بن ابی بکر المرغینانی ۶۶۰ --- ۲۲۲۔ مختار الصحاح --- محمد بن ابی بکر عبدالقادر الرازی ۶۴۳ --- ۲۲۳۔ المختارۃ فی الحدیث --- ضیاء الدین محمد بن عبدالواحد ۹۱۱ --- ۲۲۴۔ المختصر --- علامہ جلال الدین السیوطی ۷۳۷ --- ۲۲۵۔ مدخل الشرع الشریف --- ابن الحاج ابی عبد اللہ محمد بن محمد العبدری ۱۰۶۹ --- ۲۲۶۔ مراقی الفلاح بامداد الفتاح شرح نورالایضاح --- حسن بن عمار بن علی الشرنبلالی ۱۰۱۴ --- ۲۲۷۔ مرقات شرح مشکوۃ --- علی بن سلطان ملا علی قاری ۹۱۱ --- ۲۲۸۔ مرقات الصعود --- علامہ جلال الدین السیوطی --- ۲۲۹۔ مستخلص الحقائق --- ابراہیم بن محمد الحنفی ۴۰۵ --- ۲۳۰۔ المستدرک للحاکم --- ابو عبداللہ الحاکم ۷۱۰ --- ۲۳۱۔ المستصفی --- حافظ الدین عبداللہ بن احمد النسفی ۱۱۱۹ --- ۲۳۲۔ مسلم الثبوت --- محب اللہ البہاری ۲۰۲ --- ۲۳۳۔ مسند ابی داؤد --- سلیمان بن داؤد الطیالسی ۳۰۷ --- ۲۳۴۔ مسند ابی یعلی --- احمد بن علی الموصلی ۲۳۸ --- ۲۳۵۔ مسند اسحق ابن راہویۃ --- حافظ اسحق ابن راہویۃ ۲۴۱ --- ۲۳۶۔ مسند الامام احمد بن حنبل --- امام احمد بن محمد بن حنبل ۲۹۲ --- ۲۳۷۔ مسند البزار --- ابوبکر احمد بن عمرو بن عبدالخالق البزار ۲۹۴ --- ۲۳۸۔ مسند عبد بن حمید --- ابو محمد عبد بن محمد حمید الکشی ۵۵۸ --- ۲۳۹۔ مسند الفردوس --- شہردار بن شیرویہ الدیلمی ۷۷۰ --- ۲۴۰۔ مصباح المنیر --- احمد بن محمد بن علی ۷۱۰ --- ۲۴۱۔ المصفی --- حافظ الدین عبداللہ بن احمد النسفی ۲۳۵ --- ۲۴۲۔ مصنف ابن ابی شیبۃ --- ابوبکر عبداللہ بن محمد ابن ابی شیبہ ۲۱۱ --- ۲۴۳۔ مصنف عبدالرزاق --- ابوبکر عبدالرزاق بن ہمام الصنعانی ۶۵۰ --- ۲۴۴۔ مصباح الدجی --- امام حسن بن محمد الصغانی الہندی

Fatawa Rizvia Volume Six

245- Ma'rifat al-Sahaba - Abu Nu'aym Ahmad bin Abdullah al-Asfahani - 430 246- Al-Mu'jam al-Awsat - Sulayman bin Ahmad al-Tabarani - 360 247- Al-Mu'jam al-Saghir - Sulayman bin Ahmad al-Tabarani - 360 248- Al-Mu'jam al-Kabir - Sulayman bin Ahmad al-Tabarani - 360 249- Mi'raj al-Diraya - Qawam al-Din Muhammad bin Muhammad al-Bukhari - 729 250- Mishkat al-Masabih - Shaykh Wali al-Din al-Iraqi - 722 251- Al-Mughni fi al-Usul - Shaykh Umar bin Muhammad al-Khabbazi al-Hanafi - 691 252- Al-Maghrib - Abu al-Fath Nasir bin Abd al-Sayyid al-Mutarrizi - 610 253- Mukhtasar al-Quduri - Abu al-Husayn Ahmad bin Muhammad al-Quduri al-Hanafi - 428 254- Mafatih al-Jinan - Ya'qub bin Sidi Ali - 931 255- Al-Mufradat li al-Imam Raghib - Husayn bin Muhammad bin Mufaddal al-Asfahani - 502 256- Al-Muqaddimah al-Ashmawiyyah - Abu al-Abbas Abd al-Bari al-Ashmawi al-Maliki 257- Al-Multaqat (in Fatawa Nasiri) - Nasir al-Din Muhammad bin Yusuf al-Husayni - 556 258- Majma' al-Zawa'id - Nur al-Din Ali bin Abi Bakr al-Haythami - 807 259- Manaqib al-Kardari - Muhammad bin Muhammad bin Shihab Ibn Bazzaz - 827 260- Al-Muntaqa (in Hadith) - Abdullah bin Ali Ibn Jarud - 307 261- Al-Muntaqa fi Furu' al-Hanafiyyah - Al-Hakim al-Shahir Muhammad bin Muhammad bin Ahmad - 334 262- Minhat al-Khaliq - Muhammad Amin ibn Abidin al-Shami - 1252 263- Minah al-Ghaffar - Muhammad bin Abdullah al-Tamartashi - 1004 264- Multaqa al-Abhur - Imam Ibrahim bin Muhammad al-Halabi - 956 265- Minhaj - Shaykh Abu Zakariya Yahya bin Sharaf al-Nawawi - 676 266- Majma' al-Bahrayn - Muzaffar al-Din Ahmad bin Ali bin Tha'lab al-Hanafi - 694 267- Al-Mubtagha - Shaykh Isa bin Muhammad ibn Aynaj al-Hanafi 268- Al-Mabsut - Abd al-Aziz bin Ahmad al-Halwani - 456 269- Musnad fi al-Hadith - Al-Hafiz Abu al-Fath Nasr bin Ibrahim al-Harawi - 510

फ़तावा रज़विया छठा खंड

२४५- मारिफ़त अल-सहाबा - अबू नुएम अहमद बिन अब्दुल्ला अल-असफ़हानी - ४३० २४६- अल-मुअजम अल-औसत - सुलेमान बिन अहमद अल-तबरानी - ३६० २४७- अल-मुअजम अल-सगीर - सुलेमान बिन अहमद अल-तबरानी - ३६० २४८- अल-मुअजम अल-कबीर - सुलेमान बिन अहमद अल-तबरानी - ३६० २४९- मेराज अल-दिरया - क़वाम अल-दीन मुहम्मद बिन मुहम्मद अल-बुखारी - ७२९ २५०- मिश्कात अल-मसाबीह - शेख वली अल-दीन अल-इराकी - ७२२ २५१- अल-मुग़नी फ़िल उसूल - शेख उमर बिन मुहम्मद अल-खब्बाज़ी अल-हनफ़ी - ६९१ २५२- अल-मग़रिब - अबू अल-फ़तह नासिर बिन अब्द अल-सैयद अल-मुतरीज़ी - ६१० २५३- मुख्तसर अल-कुदुरी - अबू अल-हुसैन अहमद बिन मुहम्मद अल-कुदुरी अल-हनफ़ी - ४२८ २५४- मफातीह अल-जिनान - याकूब बिन सिदी अली - ९३१ २५५- अल-मुफ़्रदात लिल इमाम राग़िब - हुसैन बिन मुहम्मद बिन मुफ़द्दल अल-असफ़हानी - ५०२ २५६- अल-मुक़द्दिमा अल-अशमाविया - अबू अल-अब्बास अब्द अल-बारी अल-अशमावी अल-मालिकी २५७- अल-मुल्तकत (फ़तावा नासिरी में) - नासिर अल-दीन मुहम्मद बिन यूसुफ अल-हुसैनी - ५५६ २५८- मजमा अल-ज़वाइद - नूर अल-दीन अली बिन अबी बकर अल-हैथमी - ८०७ २५९- मनाकिब अल-करदरी - मुहम्मद बिन मुहम्मद बिन शिहाब इब्न बज़्ज़ाज़ - ८२७ २६०- अल-मुंतक़ा (हदीस में) - अब्दुल्ला बिन अली इब्न जरूद - ३०७ २६१- अल-मुंतक़ा फ़ी फ़ुरू अल-हनफ़िया - अल-हाकिम अल-शहीर मुहम्मद बिन मुहम्मद बिन अहमद - ३३४ २६२- मिन्नतुल खालिक - मुहम्मद अमीन इब्न आबिदीन अल-शमी - १२५२ २६३- मिनह अल-ग़फ़्फ़ार - मुहम्मद बिन अब्दुल्ला अल-तमरताशी - १००४ २६४- मुल्तक़ा अल-अभर - इमाम इब्राहिम बिन मुहम्मद अल-हलबी - ९५६ २६५- मिन्हाज - शेख अबू ज़करिया यहया बिन शरफ़ अल-नववी - ६७६ २६६- मजमा अल-बहरैन - मुज़फ़्फ़र अल-दीन अहमद बिन अली बिन थलब अल-हनफ़ी - ६९४ २६७- अल-मुबतगी - शेख ईसा बिन मुहम्मद इब्न ऐनाज अल-हनफ़ी २६८- अल-मबसूत - अब्द अल-अजीज़ बिन अहमद अल-हलवानी - ४५६ २६९- मुसनद फी अल-हदीस - अल-हाफ़िज़ अबू अल-फ़तह नसर बिन इब्राहिम अल-हरवी - ५१०

पृष्ठ ७३४ का ७३६

۲۴۵۔ معرفۃ الصحابۃ - ابو نعیم احمد بن عبد اللہ الاصفہانی - ۴۳۰ ۲۴۶۔ المعجم الاوسط - سلیمان بن احمد الطبرانی - ۳۶۰ ۲۴۷۔ المعجم الصغیر - سلیمان بن احمد الطبرانی - ۳۶۰ ۲۴۸۔ المعجم الکبیر - سلیمان بن احمد الطبرانی - ۳۶۰ ۲۴۹۔ معراج الدرایۃ - قوام الدین محمد بن محمد البخاری - ۷۲۹ ۲۵۰۔ مشکوۃ المصابیح - شیخ ولی الدین العراقی - ۷۲۲ ۲۵۱۔ المغنی فی الاصول - شیخ عمر بن محمد الخبازی الحنفی - ۶۹۱ ۲۵۲۔ المغرب - ابوالفتح ناصر بن عبدالسید المطرزی - ۶۱۰ ۲۵۳۔ مختصر القدوری - ابوالحسین احمد بن محمد القدوری الحنفی - ۴۲۸ ۲۵۴۔ مفاتیح الجنان - یعقوب بن سیدی علی - ۹۳۱ ۲۵۵۔ المفردات للامام راغب - حسین بن محمد بن مفضل الاصفہانی - ۵۰۲ ۲۵۶۔ المقدمۃ العشماویۃ - ابوالعباس عبدالباری العشماوی المالکی ۲۵۷۔ الملتقط (فی فتاوی ناصری) - ناصر الدین محمد بن یوسف الحسینی - ۵۵۶ ۲۵۸۔ مجمع الزوائد - نور الدین علی بن ابی بکر الہیثمی - ۸۰۷ ۲۵۹۔ مناقب الکردری - محمد بن محمد بن شہاب ابن بزاز - ۸۲۷ ۲۶۰۔ المنتقی (فی الحدیث) - عبد اللہ بن علی ابن جارود - ۳۰۷ ۲۶۱۔ المنتقی فی فروع الحنفیۃ - الحاکم الشہیر محمد بن محمد بن احمد - ۳۳۴ ۲۶۲۔ منحۃ الخالق - محمد امین ابن عابدین الشامی - ۱۲۵۲ ۲۶۳۔ منح الغفار - محمد بن عبد اللہ التمرتاشی - ۱۰۰۴ ۲۶۴۔ ملتقی الابحر - امام ابراہیم بن محمد الحلبی - ۹۵۶ ۲۶۵۔ منہاج - شیخ ابوزکریا یحیی بن شرف النووی - ۶۷۶ ۲۶۶۔ مجمع البحرین - مظفر الدین احمد بن علی بن ثعلب الحنفی - ۶۹۴ ۲۶۷۔ المبتغی - شیخ عیسی بن محمد ابن ایناج الحنفی ۲۶۸۔ المبسوط - عبد العزیز بن احمد الحلوانی - ۴۵۶ ۲۶۹۔ مسند فی الحدیث - الحافظ ابو الفتح نصر بن ابراہیم الہروی - ۵۱۰

Fatawa Razawiyya Volume Six

270- Al-Musnad al-Kabir - Yaqub ibn Shaybah al-Sadusi - 262 271- Munyat al-Musalli - Sadid al-Din Muhammad ibn Muhammad al-Kashghari - 705 272- Muwatta Imam Malik - Imam Malik ibn Anas al-Madani - 179 273- Mawarid al-Zam'an - Nur al-Din 'Ali ibn Abi Bakr al-Haythami - 807 274- Mushkilat - Ahmad ibn Muzaffar al-Razi - 632 275- Muhadhdhab - Abi Ishaq ibn Muhammad al-Shafi'i - 466 276- Mizan al-Shari'ah al-Kubra - 'Abd al-Wahhab al-Sha'rani - 973 277- Mizan al-I'tidal - Muhammad ibn Ahmad al-Dhahabi - 748 278- Al-Mustakhraj 'ala al-Sahih al-Bukhari - Ahmad ibn Musa ibn Marduyah - 410 279- Makarim al-Akhlaq - Muhammad ibn Ja'far al-Khara'iti - 327

N

280- Al-Nuqayah Mukhtasar al-Wiqayah - 'Abdullah ibn Mas'ud - 725 281- Nasb al-Rayah - Abu Muhammad 'Abdullah ibn Yusuf al-Hanafi al-Zayla'i - 762 282- Nur al-Idah - Hasan ibn 'Ammar ibn 'Ali al-Shurunbulali - 1069 283- Al-Nihayah - Husam al-Din Husayn ibn 'Ali al-Sighnaqi - 711 284- Al-Nihayah li-Ibn Athir - Majd al-Din Mubarak ibn Muhammad al-Jazari ibn al-Athir - 606 285- Al-Nahr al-Faiq - 'Umar ibn Nujaym al-Misri - 1005 286- Nawadir fi al-Fiqh - Hisham ibn 'Ubaydullah al-Mazini al-Hanafi - 201 287- Nur al-'Ayn - Muhammad ibn Ahmad al-Ma'ruf bin Nishanji Zadah - 1031 288- Al-Nawazil fi al-Furu' - Abu al-Layth Nasr ibn Muhammad ibn Ibrahim al-Samarqandi - 376 289- Nawadir al-Usul fi Ma'rifah Akhbar al-Rasul - Abu 'Abdullah Muhammad ibn 'Ali al-Hakim al-Tirmidhi - 255

फ़तावा रज़विया छठा खंड

270- अल-मुसनद अल-कबीर - याक़ूब बिन शयबा अल-सदूसी - 262 271- मुन्यात अल-मुसल्ली - सदीद अल-दीन मुहम्मद बिन मुहम्मद अल-काशगरी - 705 272- मुवत्ता इमाम मालिक - इमाम मालिक बिन अनस अल-मदनी - 179 273- मवारिद अल-ज़मआन - नूर अल-दीन अली बिन अबी बक्र अल-हैथमी - 807 274- मुशकिलात - अहमद बिन मुज़फ़्फ़र अल-राज़ी - 632 275- मुहज़्ज़ब - अबी इसहाक़ इब्न मुहम्मद अल-शाफ़ई - 466 276- मीज़ान अल-शरीआ अल-कुबरा - अब्द अल-वहाब अल-शरानी - 973 277- मीज़ान अल-एतिदाल - मुहम्मद बिन अहमद अल-ज़हबी - 748 278- अल-मुस्तख़रज अला अल-सहीह अल-बुख़ारी - अहमद बिन मूसा इब्न मरदूया - 410 279- मकारिम अल-अखलाक - मुहम्मद बिन जाफ़र अल-खरैती - 327

न

280- अल-नुक़ाया मुख़्तसर अल-विकाया - अब्दुल्ला बिन मसूद - 725 281- नसब अल-राया - अबू मुहम्मद अब्दुल्ला बिन यूसुफ़ अल-हनफ़ी अल-ज़ैलाई - 762 282- नूर अल-इदाह - हसन बिन अम्मार बिन अली अल-शुरुनबलाली - 1069 283- अल-निहाया - हुसाम अल-दीन हुसैन बिन अली अल-सिग्नाकी - 711 284- अल-निहाया लि-इब्न असीर - मजद अल-दीन मुबारक बिन मुहम्मद अल-जज़री इब्न अल-असीर - 606 285- अल-नहर अल-फ़ाइक़ - उमर बिन नुजैम अल-मिस्री - 1005 286- नवादिर फ़िल फिक़्ह - हिशाम बिन उबैदुल्लाह अल-माज़िनी अल-हनफ़ी - 201 287- नूर अल-ऐन - मुहम्मद बिन अहमद अल-मारूफ़ बिन निशानजी ज़ादा - 1031 288- अल-नवाज़िल फ़िल फ़ुरू - अबु अल-लैथ नस्र बिन मुहम्मद बिन इब्राहिम अल-समरक़ंदी - 376 289- नवादिर अल-उसूल फ़ी मारिफ़त अख़बार अल-रसूल - अबू अब्दुल्लाह मुहम्मद बिन अली अल-हाकिम अल-तिर्मिज़ी - 255

पृष्ठ 735 / 736

فتاوی رضویه جلد ششم

۲۷۰- المسند الکبیر - یعقوب بن شیبۃ السدوسی - ۲۶۲ ۲۷۱- منیۃ المصلی - سدید الدین محمد بن محمد الکاشغری - ۷۰۵ ۲۷۲- موطا امام مالک - امام مالک بن انس المدنی - ۱۷۹ ۲۷۳- موارد الظمآن - نور الدین علی بن ابی بکر الہیثمی - ۸۰۷ ۲۷۴- مشکلات - احمد بن مظفر الرازی - ۶۳۲ ۲۷۵- مہذب - ابی اسحق ابن محمد الشافعی - ۴۶۶ ۲۷۶- میزان الشریعۃ الکبری - عبد الوہاب الشعرانی - ۹۷۳ ۲۷۷- میزان الاعتدال - محمد بن احمد الذہبی - ۷۴۸ ۲۷۸- المستخرج علی الصحیح البخاری - احمد بن موسی ابن مردویۃ - ۴۱۰ ۲۷۹- مکارم اخلاق - محمد بن جعفر الخرائطی - ۳۲۷

ن

۲۸۰- النقایۃ مختصر الوقایۃ - عبد اللہ بن مسعود - ۷۲۵ ۲۸۱- نصب الرایۃ - ابو محمد عبد اللہ بن یوسف الحنفی الزیلعی - ۷۶۲ ۲۸۲- نور الایضاح - حسن بن عمار بن علی الشرنبلالی - ۱۰۶۹ ۲۸۳- النہایۃ - حسام الدین حسین بن علی السغناقی - ۷۱۱ ۲۸۴- النہایۃ لابن اثیر - مجد الدین مبارک بن محمد الجزری ابن اثیر - ۶۰۶ ۲۸۵- النہر الفائق - عمر بن نجیم المصری - ۱۰۰۵ ۲۸۶- نوادر فی الفقہ - ہشام بن عبید اللہ المازنی الحنفی - ۲۰۱ ۲۸۷- نور العین - محمد بن احمد المعروف بنشانجی زادہ - ۱۰۳۱ ۲۸۸- النوازل فی الفروع - ابواللیث نصر بن محمد بن ابراہیم السمر قندی - ۳۷۶ ۲۸۹- نوادر الاصول فی معرفۃ اخبار الرسول - ابو عبد اللہ محمد بن علی الحکیم الترمذی - ۲۵۵

Fatawa Razawiyya Volume Six

W 290- Al-Wafi fi al-Furu' | Abdullah bin Ahmad al-Nasafi | 710 291- Al-Wajiz fi al-Furu' | Abu Hamid Muhammad bin Muhammad al-Ghazali | 505 292- Al-Wiqaayah | Mahmud bin Sadr al-Shariah | 673 293- Al-Wasit fi al-Furu' | Abi Hamid Muhammad bin Muhammad al-Ghazali | 505

H 294- Al-Hidayah fi Sharh al-Bidayah | Burhan al-Din Ali bin Abi Bakr al-Marghinani | 593

Y 295- Al-Yawaqit wal-Jawahir | Sayyid Abdul Wahab al-Sha'rani | 973 296- Yanabi' fi Ma'rifat al-Usul | Abi Abdullah Muhammad ibn Ramadan al-Rumi | 769

Page 736 of 736

फ़तावा रज़विया खंड छठा

व 290- अल-वाफ़ी फ़ी अल-फ़ुरूअ | अब्दुल्ला बिन अहमद अल-नसाफ़ी | 710 291- अल-वजीज़ फ़ी अल-फ़ुरूअ | अबू हामिद मुहम्मद बिन मुहम्मद अल-ग़ज़ाली | 505 292- अल-विक़ाया | महमूद बिन सद्र अल-शरिया | 673 293- अल-वसीत फ़ी अल-फ़ुरूअ | अबी हामिद मुहम्मद बिन मुहम्मद अल-ग़ज़ाली | 505

ह 294- अल-हिदाया फ़ी शरह अल-बिदाया | बुरहान अल-दीन अली बिन अबी बक्र अल-मरग़ीनानी | 593

य 295- अल-यवाक़ीत वल-जवाहर | सैय्यद अब्दुल वहाब अल-शा'रानी | 973 296- यनाबी' फ़ी मारिफ़त अल-उसूल | अबी अब्दुल्ला मुहम्मद इब्न रमज़ान अल-रूमी | 769

पृष्ठ 736 का 736

و ۲۹۰- الوافی فی الفروع | عبد اللہ بن احمد النسفی | ۷۱۰ ۲۹۱- الوجیز فی الفروع | ابو حامد محمد بن محمد الغزالی | ۵۰۵ ۲۹۲- الوقایة | محمود بن صدر الشریعة | ۶۷۳ ۲۹۳- الوسیط فی الفروع | ابی حامد محمد بن محمد الغزالی | ۵۰۵

ھ ۲۹۴- الھدایة فی شرح البدایة | برہان الدین علی بن ابی بکر المرغینانی | ۵۹۳

ی ۲۹۵- الیواقیت والجواھر | سید عبد الوہاب الشعرانی | ۹۷۳ ۲۹۶- ینابیع فی معرفۃ الاصول | ابی عبد اللہ محمد ابن رمضان الرومی | ۷۶۹